

नास्ति विद्यासमं चक्षुः ॥

भारतवर्षीय
प्राचीन चरित्रकोश

म.म.सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव



भारतीय चरित्रकोश मण्डल पूना ४.

हमारा महत्त्वपूर्ण आगामी प्रकाशन

भारतवर्षीय

मध्ययुगीन चरित्रकोश

(मौर्य चंद्रगुप्त से अंग्रेजी साम्राज्य के प्रारंभ तक, ३२१ ई. पू.—१८१८ ई. स.)

इस ग्रंथ में भारतीय इतिहास के मध्ययुगीन कालखंड में उत्पन्न राज-कारण, धर्मकारण, समाजकारण, वाङ्मय, कला, सांप्रदाय आदि से संबंधित छः हजार से अधिक व्यक्तियों के जीवनचरित्र एवं तद्विषयक संदर्भसहित सामग्री ~~अक्षरादि क्रम~~ से एवं सप्रमाण प्रस्तुत की गयी है।

भारतीय इतिहास के एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण कालखंड से संबंधित व्यक्तियों की विस्तृत एवं सप्रमाण जानकारी प्रस्तुत करनेवाला यह ग्रंथ भारतीय इतिहास के प्रत्येक विद्यार्थी, अभ्येता, संशोधक एवं सर्वसामान्य पाठक के लिए अत्यंत उपादेय होगा।

‘मध्ययुगीन चरित्रकोश’ का मराठी संस्करण लगभग पच्चीस साल पहले प्रकाशित हो चुका था, जिसके संबंध में अपना अभिमत व्यक्त करते समय ‘टाईम्स ऑफ इंडिया’, बंबई, ने लिखा था :

‘It embodies long and painstaking research and as a work of reference it should prove indispensable to those interested in India's Past.’

Times of India,
28th Jan. 1938

मराठी में प्रसिद्ध हुए ‘मध्य-युगीन चरित्रकोश’ का परिवर्धित हिंदी संस्करण अब प्रकाशित हो रहा है, जिसमें मूल मराठी ग्रंथ से अधिक ६०० पृष्ठों की नयी जानकारी समाविष्ट की गयी है।

भारतवर्षीय
प्राचीन चरित्रकोश

(श्रुति, स्मृति, पुराण, सूत्र, वेदांग, उपनिषद्,
बौद्ध एवं जैन साहित्य में निर्दिष्ट व्यक्तियों
की साधार. ज्ञानकारी प्रस्तुत करनेवाला ग्रंथ)

महामहोपाध्याय विद्यानिधि
सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव



पु र स्का र :

श्री. भक्तदर्शन

उपशिक्षामंत्री, भारत सरकार, नयी दिल्ली.

२०२१ विक्रम संवत्]



[१९६४ ई. स.

भारतीय चरित्रकोश मण्डळ, पूना ४.

BHARATAVARSHIYA PRACHIN CHARITRAKOSHA

(Dictionary of Ancient Indian Biography, in Hindi)

by M. M. Sidheshwar Shastri Chitrao

Published by Bharatiya Charittrakosha Mandal, Poona 4.

Price : Rs. २००.

इस ग्रंथ के पुनर्मुद्रण, अनुवाद, रूपान्तर आदि के सारे
अधिकार भारतीय चरित्रकोश मण्डल, पूना ४ के अधीन हैं

मूल्य : रु. २००

प्रकाशक :

विनायक सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव,
कार्यवाह, भारतीय चरित्रकोश मंडल,
१२०६ अ/४५ जंगली महाराज पथ, पूना ४.

मुद्रक :

विद्याधर नीलकंठ पटवर्धन,
साधना प्रेस,
४३०-४३१ शनिवार पेठ, पूना २.



उपशिक्षामंत्री

भारत

DEPUTY EDUCATION MINISTER
INDIA

नयी दिल्ली-२

पुरस्कार

मुझे यह ज्ञान कर हर्ष हुआ कि भारतीय चरित्रकोश मण्डल, पूना, ने मराठी के 'प्राचीन चरित्रकोश' का हिन्दी संस्करण तैयार कर लिया है, और वह शीघ्र ही प्रकाशित हो रहा है।

मुझे ज्ञात हुआ है कि वह कोश तीस चालिस वर्ष पहले मराठी में प्रकाशित हो चुका है, और ख्याति प्राप्त कर चुका है। इसका हिन्दी संस्करण निकाल कर मण्डल ने बहुत ही सराहनीय कार्य किया है।

कोश के कुछ छपे हुए पृष्ठ मैंने देखे, और मुझे लगा कि यह कोश कई दृष्टियों से बहुत उपयोगी है। इस कोश के द्वारा पहली बार हमको एक स्थान पर अनेक पौराणिक चरित्र-नायकों की संक्षिप्त जीवितियाँ उपलब्ध हो जायेंगी।

इसी प्रकार के कोशों और संदर्भग्रंथों द्वारा हमको ज्ञान-विज्ञान की सामग्री सामान्य पाठकों के लिए सुलभ बनानी है। पिछले कुछ वर्षों में हिन्दी का संदर्भ-साहित्य समृद्ध हुआ है। कोशों और संदर्भ-ग्रंथों के निर्माण की इस परम्परा में मैं 'प्राचीन चरित्रकोश' का विशेष रूप से स्वागत करता हूँ, और आशा करता हूँ कि, मण्डल भविष्य में भी इस प्रकार के विशिष्ट कोशों और संदर्भ ग्रंथों से हिन्दी साहित्य को समृद्ध बनाने में योगदान देगा।

(भक्तदर्शन)

१०-११-६४

प्राक्थन

आधुनिक युग वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित अनुसंधान और अनुशीलन का युग है; अतः ज्ञान का एक निश्चित युक्तिसंगत रूप ही आज हमें ग्राह्य है। ज्ञान की एक पूर्वज्ञात शृंखला से हम आज नवोपलब्ध ज्ञान की नवीन शृंखला को जोड़ते जाते हैं, और इस प्रकार सभ्यता के विकास के पथ पर हम आगे बढ़ते जाते हैं।

प्राचीन ज्ञान का कितना अंश हमारे लिए ग्राह्य है, यह भी एक विचारणीय विषय है। फिर भी ज्ञान और विद्या की अनेक शाखायें हैं, जिनकी सामग्री प्राचीन भारतीय साहित्य में मरा पड़ी है। परन्तु यह बात सर्वज्ञात नहीं है। अधिकांशतः तो लोग प्राचीन भारतीय ज्ञान की विविध शाखाओं से भी परिचित नहीं हैं। अतः अनेक प्रकार से उन्हें निश्चित, संक्षिप्त एवं व्यवस्थित रूप में उपलब्ध कराना प्रत्येक भारतीय विद्वान् का कार्य है।

इस दिशा में अनेक संस्थाएँ एवं व्यक्तिगत रूप में अनेक विद्वान् कार्य कर रहे हैं। पूना नगर का 'भारतीय चरित्रकोश मण्डल' ऐसी ही संस्थाओं में से एक संस्था है, जो महामहोपाध्याय श्री. सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव की अध्यक्षता में कार्य कर रही है। इस संस्था को अन्य अनेक उत्कृष्ट विद्वानों का सहयोग एवं परामर्श भी प्राप्त है।

'भारतीय चरित्रकोश मण्डल' के द्वारा अभी तक मराठी में 'प्राचीन चरित्रकोश', 'मध्ययुगीन चरित्रकोश' तथा 'अर्वाचीन चरित्रकोश' प्रकाशित हुए हैं। परन्तु ऐसे कार्य की अखिल भारतीय उपयोगिता को ध्यान में रख कर इस प्रकार के कोशों एवं ग्रंथों को हिन्दी में भी प्रकाशित किया जाये, यह निर्णय किया गया, जिसके परिणामस्वरूप 'प्राचीन चरित्रकोश' अपने संशोधित एवं परिवर्द्धित रूप में हिन्दी में प्रस्तुत है।

हिन्दी के कोश-साहित्य के क्षेत्र में भी इधर कुछ वर्षों से महत्वपूर्ण कार्य हुआ है। इसके अन्तर्गत 'विश्वकोश' का संग्रहण-प्रकाशन कार्य चल रहा है। इसके अतिरिक्त 'साहित्यकोश', 'साहित्यकारकोश', 'पात्रकोश', 'मानक शब्दकोश', 'पारिभाषिक शब्दकोश' आदि प्रणीत एवं प्रकाशित हुए हैं। अन्य अनेक शब्दकोशों का भी निर्माण हुआ है; फिर भी सांस्कृतिक एवं दार्शनिक ज्ञानकोश, एवं चरित्रकोश-निर्माण के कार्य हिन्दीभाषी क्षेत्र में अभी नहीं हुए। इस प्रकार के कार्य यहाँ पूना नगर में मराठी में चल रहे हैं, और वे हिन्दी में रूपान्तरित होकर भी प्रकाशित होंगे। महामहोपाध्याय श्री. सिद्धेश्वरशास्त्री

चित्राव-द्वारा संपादित, प्रस्तुत 'प्राचीन चरित्रकोश' द्वारा एक प्रकार से इस कार्य का श्रीगणेश हो रहा है।

जहाँ तक सुझे ज्ञात है, इस विषय को लेकर अब तक हिन्दी में एक ही ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है, वह है ऋतु-बेदी पंडित द्वारिकाप्रसाद शर्मा-कृत 'भारतीय चरिता-म्बुधि'। यह बहुत पहले लखनऊ के नवलकिशोर प्रेस से प्रकाशित हुआ था, तथा अब वह अनुपलब्ध है। उस ग्रन्थ में विवरण थोड़ा पर संदर्भ नहीं। परन्तु प्रस्तुत 'प्राचीन भारतीय चरित्रकोश' तो १२०४ पृष्ठों का एक विशालकाय परिपूर्ण चरित्रकोश है। इस कोश की विशेषता इस बात में है कि, इसके अंतर्गत प्रत्येक चरित्र एवं चरित्रगत प्रसंगों के समस्त संदर्भ भी दिये गये हैं। इसके कारण यह कोश सामान्य सूचनात्मक कोश न रह कर एक विशिष्ट प्रामाणिक ज्ञानकोश बन गया है, जिसकी संदर्भ-सामग्री 'अनुसंधित्सु विद्वानों के लिए उनके शोधकार्य के हेतु उपयोगी संदर्भ-संकेत प्रस्तुत करती है। मेरा अपना विचार है कि, इस दृष्टि से यह कार्य अद्वितीय उपादेयता से युक्त है। इसके लिए हिन्दी संसार शास्त्रीजी का बड़ा ऋणी रहेगा।

इस मंडल के अंतर्गत दूसरे अन्य कोश ग्रंथ भी हिन्दी में शीघ्र ही प्रणीत एवं प्रकाशित होनेवाले हैं, जिनमें प्रमुख हैं:— 'प्राचीन स्थलकोश' तथा 'प्राचीन ग्रंथकोश'। इन ग्रन्थों के प्रकाशित होने पर हमें प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं इतिहास-संबंधी ज्ञान सरलता से उपलब्ध हो सकेगा। अभी तक हम अपने प्राचीन इतिहास तथा संस्कृति को विदेशी आँखों या चश्मे से देखते रहें हैं; परन्तु इस प्रकार के प्रामाणिक एवं निश्चित सूचना देनेवाले ग्रन्थों से हम स्वयं उसके संबंध में अनेक उपयोगी सूचनायें प्राप्त कर सकेंगे।

इन सूचनाओं तथा प्राचीन भारत की संस्कृति, साहित्य एवं इतिहास-संबंधी ज्ञान को व्यापक प्रसार देने के उद्देश्य से ही इन ग्रन्थों का प्रणयन तथा प्रकाशन किया जा रहा है। यदि विद्वानों तथा जिज्ञासुओं के द्वारा इन ग्रन्थों का स्वागत तथा उपयोग हो सका, तो हमें विशेष प्रसन्नता तथा प्रोत्साहन प्राप्त होगा, तथा 'मण्डल' अपना कार्य अधिक उत्साह से कर सकेगा। हम अपनी ओर से विद्वानों के मुझाओं तथा सम्मतियों का सहर्ष स्वागत करेंगे।

पूना विश्वविद्यालय
पूना
४-११-६४

भगीरथ मिश्र
प्रधान परामर्शकार, हिन्दी विभाग,
भारतीय चरित्रकोश मण्डल, पूना

प्रस्तावना

इतिहासोत्तमदरमात् जायन्ते कविवुद्धयः ।
नवीनराष्ट्रनिर्माणं संस्कृतेः प्रसरस्तथा ॥

(इतिहास के अध्ययन से मनुष्य बुद्धि प्रगल्भ हो जाती है । संस्कृति के प्रचार एवं नवीन राष्ट्र के निर्माण की प्रेरणा भी इतिहास के अध्ययन से प्राप्त होती है) ।

भूमिका—मानवीय बुद्धि को प्रगल्भ, क्रियाशील एवं उदयशील बनाने के लिए इतिहासाध्ययन जैसा अन्य कोई भी साधन नहीं है । यह तत्त्व महाभारत-रामायण-काल से ही समस्त भारतीय वाङ्मयों में दुहराया गया है । इतिहास का बाह्यावरण यद्यपि राजवंशों के नामा-बलियों अथवा रक्त की नदी बहा देनेवाली दुर्भाग्यपूर्ण लड़ाइयों के वृत्तान्त से बना है, फिर भी उसकी आत्मा संस्कृति की स्थापना एवं प्रसार से संबंध रखती है । इसी श्रद्धा से भारत के प्राचीन इतिहास के अध्ययन एवं संशोधन का कार्य स्वातंत्र्योत्तर काल में प्रारंभ हुआ है । उसी परंपरा में 'प्राचीन चरित्रकोश' को एक इतिहास ग्रंथ के रूप में हिन्दी पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करने में आज मुझे अपार हर्ष हा रहा है ।

महाभारत में ज्ञान को चर्मचक्षु से बढ़ कर अधिक श्रेष्ठ 'चक्षु' कहा गया है (नास्ति विद्यासमो चक्षुः म. शां. ३१६.६) । प्राचीन भारतीय इतिहास के संबंध में ऐसे ही 'चक्षु' का कार्य करने में इतिहास ग्रंथों से सहायता मिलती है । यदि इस ग्रंथ से इस कार्य की थोड़ी सी भी पूर्ति संभव हो सकी, तो मैं अपने प्रयास को कृतकृत्य समझूँगा ।

प्राचीन भारतीय इतिहास—भारतीय इतिहास के पृष्ठ अत्यंत उज्वल हैं । जब इजिप्त, रोम आदि पश्चिमी सभ्यताओं का जन्म भी नहीं हुआ था, उस समय यहाँ की सभ्यता एवं संस्कृति चर्मोत्कर्ष पर थी । ईसा से हजारों वर्ष पूर्व का भारतीय इतिहास वैदिक, पौराणिक, बौद्ध एवं जैन साहित्य में उपलब्ध है । भारत का परंपरागत इतिहास चंद्रगुप्त मौर्य से प्रारंभ माना जाता है, तथा भारत का पहला साम्राट् बही माना जाता है । उसके उत्तरकालीन अनेकानेक शिलालेख, ताम्रपत्र तथा अन्य साहित्य विविध रूपों में उपलब्ध हैं, जो इतिहास लेखन को सुलभ बनाते हैं । किंतु चंद्रगुप्त मौर्य के पूर्वकालीन

इतिहास की सामग्री वैदिक, पौराणिक, बौद्ध एवं जैन साहित्य मात्र में ही उपलब्ध है ।

इस लिए हमारे परंपरागत वेद, पुराण एवं बौद्ध-जैन आदि के धार्मिक ग्रंथ केवल धार्मिक साहित्य ही नहीं हैं, बल्कि उनमें इतिहास की भी प्रचुर उपयोगी सामग्रियाँ संचित हैं । यह तथ्य अब सभी विद्वानों द्वारा स्वीकार कर लिया गया है । उपरोक्त साहित्य में राजनैतिक, भौगोलिक एवं ऐतिहासिक ही नहीं, बरन् सांस्कृतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक सभी प्रकार की शोध सामग्रियाँ उपलब्ध हैं ।

मैक्स मूलर, रॉथ, ओल्डेनबर्ग आदि ने वैदिक साहित्य के, पार्सिटर, हाज़र्रा आदि ने पौराणिक साहित्य के, डॉ. रामकृष्ण भाण्डारकर, डॉ. वासुदेवशरण भगवत्वाल आदि ने पापीनीय-व्याकरण के, एवं डॉ. राईस डेविडज़ ने बौद्ध साहित्य के संबंध में युगप्रवर्तक संशोधन पिछली शताब्दी में किये हैं, एवं इन्हीं संशोधक विद्वानों के अथक परिश्रम के कारण इन ग्रंथों का अद्वितीय महत्त्व भारतीय इतिहास की सामग्री के लिए सिद्ध हो चुका है ।

आधुनिक दृष्टिकोण की आवश्यकता—यद्यपि प्राचीन भारतीय साहित्य में संचित सामग्री अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, फिर भी उनका विश्लेषण एवं समीक्षा आधुनिक इतिहास संशोधन की तर्कपूर्ण दृष्टि से यदि नहीं किया जाय तो उनका वर्तमान युग में कोई महत्त्व नहीं रह जाता है । इस महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त का प्रतिपादन भी उपर्युक्त विद्वानों के द्वारा ही किया गया है । इस प्रकार इन ग्रंथों के अध्ययन का एक नया युग उपर्युक्त संशोधकों के संशोधन के कारण प्रारंभ हुआ है ।

किसी भी देश का इतिहास प्रायः व्यक्ति चरित्रात्मक रहता है । इसी कारण इतिहास में निर्दिष्ट व्यक्तियों का सर्वांगीण अध्ययन करना इतिहास के अध्ययन का एक सत्र से अधिक लाभप्रद मार्ग है, यह तथ्य इतिहास के अध्येताओं एवं संशोधकों के बीच प्रस्थापित हो

चुका है। इसी ऐतिहासिक सामग्री को आधुनिक इतिहाससंशोधन की दृष्टि से जाँच कर, एवं इनसे संबंधित आज तक हुए महत्त्वपूर्ण शोध का यथा-योग्य उपयोग कर 'प्राचीन चरित्रकोश' आज पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है। प्राचीन भारतीय व्यक्तिव्ययक सामग्री को इतने व्यापक, परिपूर्ण एवं प्रामाणिक संदर्भों सहित संकलित करनेवाला भारतीय भाषाओं में यह सर्व प्रथम कोश कहा जा सकता है।

प्राचीन चरित्रकोश—इस ग्रन्थ में वेद, स्मृति, पुराण आदि प्राचीन भारतीय साहित्य में निर्दिष्ट व्यक्तियों के जीवनचरित्र, एवं तद्भिन्न संदर्भसहित सामग्री अक्षरालिपि क्रम से एवं सप्रमाण प्रस्तुत की गयी है। इस ग्रन्थ में संग्रहित चरित्रों की संख्या लगभग बारह हजार से भी अधिक है, एवं उनमें राजा, ऋषि, रानी, ऋषि-पत्नी, देवता, रिशर, नाग, सर्प, यक्ष, राक्षस, गंधर्व, किन्नर, भूत, अप्सरा, राजनीतिज्ञ, सूत्रकार, धर्मशास्त्रकार, गौत्रकार, मंत्रकार आदि विभिन्न प्रकार के चरित्रों का समावेश है। व्यक्ति-चरित्रों के अतिरिक्त लोक-समूह, जाति-समूह, गणराज्य एवं देशों की जानकारी भी व्यक्तिचरित्रों का ही अंगभूत भाग मान कर दी गयी है।

कालमर्यादा—ऐतिहासिक दृष्टि से इस ग्रंथ की काल-मर्यादा यद्यपि चंद्रगुप्त मौर्य तक ही सीमित है, फिर भी वेद, वेदांग एवं पुराणआदि ग्रंथ, जिनके आधार पर इस ग्रन्थ की रचना की गयी है, उनकी कालमर्यादा को ही यहाँ स्वीकार किया गया है। उदाहरणस्वरूप—मत्स्य, वायु आदि पुराणों में चंद्रगुप्त मौर्य के उत्तरालीन 'भविष्य-वक्त्रों' की दी गयी जानकारी को इस कोश में समाविष्ट किया गया है।

बौद्ध एवं जैन साहित्य—यद्यपि वेद, पुराण, महा-भारत आदि को आधार मान कर इस ग्रन्थ की रचना की गयी है, फिर भी इन ग्रन्थों में अनुपलब्ध गौतम बुद्ध, वर्धमान महावीर, सिद्धर आदि व्यक्तियों, एवं उनके समकालीन अन्य लोगों की जानकारी समकालीनत्व के कारण इस ग्रन्थ के परिशिष्ट में सम्मिलित की गयी है। पौराणिक राजाओं एवं ऋषियों की जानकारी उनके वंशों के जानकारी के बिना अर्थहीन प्रतीत होती है। इसी कारण इन वंशों की सविस्तृत जानकारी भी परिशिष्ट में दी गयी है। व्यक्तियों एवं ग्रन्थों के कालनिर्णय से संबंधित एक स्वतंत्र परिशिष्ट भी अंत में जोड़ दिया गया है।

हम आशा करते हैं कि, प्राचीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति के प्रत्येक विद्यार्थी, जिज्ञासु, संशोधक एवं सर्व-साधारण पाठक के लिए यह ग्रन्थ अत्यधिक उपादेय सिद्ध होगा।

आभासप्रदर्शन—इस ग्रन्थ का मराठी संस्करण आज से त्सीस वर्ष पूर्व प्रकाशित हुआ था, और मराठीभाषियों के बीच अत्यंत लोकप्रिय हुआ था। मराठी में प्रकाशित 'प्राचीन चरित्रकोश' के इस परिवर्धित और परिमार्जित हिन्दी संस्करण में मूल मराठी ग्रन्थ से अधिक ५५० पृष्ठों की जानकारी दी गयी है।

भारत सरकार एवं महाराष्ट्र सरकार के शिक्षा-मंत्रालयों के आर्थिक सहयोग से ही इतने परिवर्धित रूप में यह ग्रंथ आज प्रकाशित हो सका है। इसलिए मैं उनका एवं विशेष कर केंद्रीय सरकार के हिन्दी-निदेशालय का आभारी हूँ।

भारत सरकार के उपशिक्षामंत्री माननीय श्री. भक्तदर्शन ने 'पुरस्कार' लिख कर इस ग्रंथ का गौरव बढ़ाया है, इस लिए मैं उनका अत्यंत आभारी हूँ।

इस ग्रंथ के सृजन के हर स्तरों पर भारतीय चरित्रकोश मण्डल के कार्यकारिणी के अध्यक्ष श्री. पाण्डुरङ्ग जयराव चिन्मल्लगुन्द, आइ. सी. एस्. एवं मण्डल के हिन्दी विभाग के प्रमुखरामेशंकर डॉ. भगीरथ मिश्र एम. ए., पी. एच्. डी. से महत्त्वपूर्ण सहायता मिली है, जिनकी कृतज्ञता ज्ञापन करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ।

मण्डल के अन्य सदस्य श्री. के. पां. जोशी, वकील, डॉ. ग. रं. घडफले एवं श्री. वसंत अ. गाडगील का इस ग्रंथ के निर्माण में महत्त्वपूर्ण सहयोग रहा है।

इस ग्रंथ के निर्माण में प्रा. गोवर्धन परीश्वर, रेक्टर, त्र्यंबई विश्वविद्यालय, तर्फतीर्थ श्री. लक्ष्मणशास्त्री जोशी, अध्यक्ष, महाराष्ट्रराज्य साहित्य संस्कृति मंडळ, श्री. चिं. रा. बोद्रे, डॉ. वा. वि. मिराशी, श्री. बा. ना. तडवलकर, एवं डॉ. ना. कृ. मिडे, नयी दिल्ली के रचनात्मक सुझाव उपयोगी रहे।

इस ग्रंथ के अनुवादकार्य में प्रा. सुधारक रामचंद्र गोलवलकर, एम. ए., राजकुमार कॉलेज, रायपुर का सहयोग उल्लेखनीय है। प्रा. चारुचन्द्र द्विवेदी, एम. ए. एवं श्री. बलिराम सिंह के योगदान भी उपयोगी रहे।

इस ग्रन्थ के पुनर्लेखन, संग्रहन एवं मुद्रण के कार्य में चरित्रकोश मण्डल के श्री. विनायक चित्राव, श्री. अरविंद जामखेडकर एम. ए., श्रीमती विद्या चित्राव, बी. ए., एवं कुमारी कुंदा जामखेडकर के अथक परिश्रम के फल

स्वरूप ही यह ग्रन्थ इस रूप में आ पाया है। मैं इन सभी सहयोगियों का हृदय से आभारी हूँ।

ग्रन्थ की रूपसज्जा के लिए साधना प्रेस पूना के श्री. ह. म. गद्रे, श्री. वि. नी. पटवर्धन एवं श्री. दत्तोबा टिवे मेरे धन्यवाद के पात्र हैं।

अंत में, सन १९६१ ई. के मूठा नदी के पानशेत बाढ़ का उल्लेख कर देना अनावश्यक नहीं होगा, जिसमें भारतीय चरित्रकोश मण्डल को डेढ़ लाख से भी अधिक मूल्य की क्षति उठानी पड़ी। इस बाढ़ में मण्डल की दुर्लभ ग्रंथ सामग्रियों के अतिरिक्त 'प्राचीन स्थलकोश' की

पाण्डुलिपि भी नष्ट हो गयी। महाराष्ट्र सरकार एवं अनेकानेक हितैषियों के सहयोग से मण्डल के पुनर्स्थान का प्रयत्न जो पिछले तीन वर्षों में हुआ है, इस ग्रंथ का प्रकाशन उसकी एक कड़ी मात्र है। निकट भविष्य में ही 'प्राचीन स्थलकोश' भी प्रकाशित होगा, ऐसी में आशा रखता हूँ। इस पुनर्स्थानकार्य में सहायता पहुँचानेवाले हर व्यक्ति का मैं सदैव ऋणी रहूँगा।

भारतीय चरित्रकोश मण्डल
पूना ४.

५-११-१९६४

सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव

कोश कैसे देखें ?

(१) इस कोश में वेद, उपवेद, पुराण, उपनिषद् आदि प्राचीन साहित्य में निर्दिष्ट व्यक्तियों के जीवन-चरित्र वर्णमाला के क्रम से दिये गये हैं। इन साहित्यों में निर्दिष्ट प्राचीन भारतीय इतिहास चंद्रगुप्त मौर्य के राज्यकाल तक निर्दिष्ट है। इसी कारण, प्रागैतिहासिक काल से चंद्रगुप्त मौर्य तक के व्यक्तियों के जीवनचरित्र इस कोश में दिये गये हैं। फिर भी इस कोश की काल-मर्यादा अधिकतर प्राचीन भारतीय साहित्य से संबद्ध है। इसी कारण उस साहित्य में निर्दिष्ट चंद्रगुप्त मौर्य के उत्तरकालीन कई व्यक्तियों के जीवनचरित्र भी पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट होने के कारण समाविष्ट किये गये हैं।

इसी काल में समाविष्ट होनेवाले गौतम बुद्ध, वर्धमान महावीर एवं सिकंदर के एवं उनके समकालीन व्यक्तियों के जीवनचरित्र क्रमशः परिशिष्ट १, २, ३ में दिये गये हैं (पृष्ठ १११७-११३८)।

(२) इस कोश में व्यक्तियों के जीवनचरित्र के साथ प्राचीन साहित्य में निर्दिष्ट जातिसमूह, मानवसमूह, देवता-समूह, यक्ष, राक्षस, वानर आदि के चरित्र भी सम्मिलित किये गये हैं।

(३) उपर्युक्त सभी समूहों की जानकारी उनके परिवार एवं वंशों की जानकारी के बिना अपूर्ण सी प्रतीत होती है। इसी कारण, इन सारे समूहों के वंशों की सविस्तृत जानकारी परिशिष्ट ४, ५, ६ में दी गयी है (पृष्ठ ११३९-११६९)।

(४) हर एक व्यक्ति की जानकारी देते समय उसके निवासस्थान, कालनिर्णय एवं कर्तृत्व की समीक्षा पर विशेष जोर दिया गया है। इनके कालनिर्णय की जानकारी के लिए कालनिर्णयकोश का स्वतंत्र परिशिष्ट (परिशिष्ट ७) दिया गया है, जिसमें व्यक्ति एवं कालनिर्णय के ग्रंथों के संबंध में उपलब्ध जानकारी संक्षिप्त रूप में दी गयी है (पृष्ठ ११६९-११८०)।

व्यक्तियों के कर्तृत्व का यथायोग्य मूल्यमापन करने के लिए उनका ग्रंथकर्तृत्व, तत्त्वज्ञान, संवाद, पूर्वाचार्य, शिष्यपरंपरा, युद्धकर्तृत्व आदि की सविस्तृत जानकारी दी गयी है। जहाँ आवश्यक समझा गया वहाँ रामायण, महाभारत एवं पौराणिक साहित्य आदि मूल ग्रंथों के उद्धरण भी अर्थ के सहित दिये गये हैं। विशेष स्पष्टीकरण के लिए २४ तालिकाएँ भी ग्रंथ में समाविष्ट की गयी हैं, जिनकी अनुक्रमणिका ग्रंथ के आरंभ में ही प्राप्य है।

(५) जैसे पहले ही कहा जा चुका है, इस ग्रंथ में दिये गये व्यक्तिचरित्र, वर्णमाला के क्रम से दिये गये हैं। कोश के प्रायः सभी आधारभूत ग्रंथ संस्कृत भाषा के होने के कारण, इस ग्रंथ का सारा वर्णानुक्रम संस्कृतानुसार रखा गया है। लिपि एवं अंकक्रम देवनागरी पद्धति से दिये गये हैं।

वर्णमाला के हर एक वर्गों के अक्षरों के पूर्व के अनुस्वार उसी वर्ग के अनुनासिक ही होंगे, यह मान कर व्यक्ति चरित्रों का क्रम रखा गया है। किन्तु छपाई की

प्राचीन चरित्रकोश

सुविधा के लिए सर्वत्र अनुस्वार का प्रयोग किया गया है (उदा. 'अंग', 'विमांडक')।

य, र, ल, व, श, ष, स— इनके पहले आनेवाले अनुस्वार, तथा श, ष, स, ह इन अक्षरों के पूर्व में आनेवाले विसर्गयुक्त शब्द, हर एक वर्ण के पहले अनुस्वार एवं विसर्ग, इस क्रम से दिये गये हैं। 'क्ष' का अंतर्भाव 'क' वर्ण में, एवं ज का अंतर्भाव 'ज' वर्ण में किया गया है।

(६) व्यक्तियों के मूलशब्द चरित्र के प्रारंभ में मोटे अक्षरों में दिये हैं, एवं उनके पाठभेद भी वहाँ कोष्ठक में दिये गये हैं। पाठभेद जत्र एक से अधिक संख्या में प्राप्त है, वहाँ उनका स्वतंत्र निर्देश भी चरित्र के सर्वप्रथम परिच्छेद में दिया गया है।

(७) व्यक्तियों के नामों के बाद कोष्ठक में दिये गये 'सो. कुक', 'सो. पूर' जैसे 'संकेत' वंश से संबंधित है, जिनका सविस्तृत स्पष्टीकरण एवं संदर्भ अंत में दिये गये परिशिष्ट ४ एवं ५ (पृष्ठ ११३९-११६५) में प्राप्त हैं।

(८) इस कोश में चरित्रों की जानकारी प्रायः माता-पिता, जन्म, शिक्षा, विवाह, कार्य, वैशिष्ट्य, परिवार, ग्रंथपरिचय, वंशावलि, गोत्रकार आदि के क्रम से दी गयी है। संबंधित प्राचीन साहित्य में प्राप्त संदर्भ वही के वहाँ निर्दिष्ट किये गये हैं।

(९) इस ग्रंथ के चरित्र, सर्वप्रथम वैदिक सामग्री, एवं बाद में पौराणिक साहित्य में प्राप्त सामग्री पर आधारित प्रस्तुत किये गये हैं। इस प्रकार चरित्रों में प्राप्त विवरण ऋग्वेदसंहिता, अन्य वैदिकसंहिता, उपनिषद, सूत्र, वेदांग, बायु, ब्रह्मांड आदि प्राचीनतर पुराण, एवं पद्म, स्कंद आदि उत्तरकालीन पुराण इस क्रम से दिये गये हैं।

(१०) एक ही नाम के अनेक व्यक्तियों को उनके कालक्रम के अनुसार २, ३, ४ अंकों के साथ प्रस्तुत किया गया है।

(११) जानकारी एवं विवरण की पुनरावृत्ति से बचने के लिए अथवा परस्परसंबंध एवं साम्यता दिखाने के लिए 'विशिष्ट शब्द देखिये' ऐसा निर्देश कोष्ठकों में किया गया है।

(१२) 'पुत्र' इस शब्द का प्रयोग 'उत्तराधिकारी' के रूप में किया गया है। मातृक एवं पैतृक ये विशेषण नाम की व्युत्पत्ति के अनुसार प्रयुक्त किये गये हैं। किंतु इस संबंध में सारी जानकारी केवल तर्काधिष्ठित ही हो सकती है।

(१३) जातिसमूह एवं व्यक्ति के नाम जहाँ एक-सरोखे हों, वहाँ दोनों की जानकारी स्वतंत्र रूप से प्रस्तुत की गयी है।

(१४) प्रायः सभी व्यक्तिचरित्र उनके मूल संस्कृत नाम से प्रस्तुत किये गये हैं, किंतु व्यक्तियों के मूल संस्कृत नाम जहाँ अनुपलब्ध हैं, वहाँ उनके उपलब्ध नाम से ही जानकारी प्रस्तुत की गयी है। उदाहरण में निम्न-लिखित नामों का निर्देश किया जा सकता है:—अहीना आश्वत्थ्य, तौडमान, ब्रह्मविश्वामयस् आदि।

(१५) इस ग्रंथ के लिए प्रयुक्त आधारग्रंथ, उनके संस्करण, एवं उनके लिए कोश में प्रयुक्त किये गये संकेत ग्रंथ के आरंभ में दिये गये हैं।

(१६) ग्रंथ के अंत में व्यक्तिसूचि एवं विषयसूचि दी गयी है, जिस में प्रमुख व्यक्तियों एवं विषयों की जानकारी संकलित की गयी है।

आधार ग्रंथ, उनके लिए प्रयुक्त संकेत एवं संस्करण

संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण	संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण
अभि.	अभिपुराण	आनंदश्रम, पूना	आदि.	आदिपुराण	श्रीवेंकटेश्वर प्रेस
अध्या. रा.	अध्यात्मरामायण	गोरखपुर	आप. ध.	आपस्तंबधर्मसूत्र	विद्याभद्राक्षरशाला
अ. प्रा.	अथर्वप्रतिशाख्य	द्विटनेप्रत	आ. ध.		कुम्भकोणम्
अ. रा.	अद्भुतरामायण (उत्तर कांड)	मोदवृत्त प्रेस, आवृत्ति तीसरी	आप.श्री.	आपस्तंबश्रौतसूत्र	क्रिष्टल संस्करण
अ. वे.	अथर्ववेद		—आ. रा.	आनंदरामायण	
			--सार.	१—सारकांड	

आधारभूत ग्रंथ

संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण	संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण
--यात्रा.	२--यात्राकांड		गौ. गृ.	गौतम गृह्यसूत्र	आनंदाश्रम
याग.	३--यागकांड		गौ. ध.	गौतम धर्मसूत्र	"
--विलास.	४--विलासकांड		छां. उ.	छांदोग्य उपनिषद्	"
--जन्म.	५--जन्मकांड		जै. अ.	जैमिनि अश्वमेध	पुराण-प्रकाशक मंडल, वाई
--विवाह.	६--विवाहकांड		जै. उ. ब्रा.	जैमिनीय उपनिषद्-	
--राज्य.	७--राज्यकांड			ब्राह्मण	लाहौर, १९२१
-- १	---(पूर्वा)		जै. गृ.	जैमिनिगृह्यसूत्र	पंजाब संस्कृत सीरीज
-- २	---(उत्तरार्ध)		-- १	---पूर्वार्ध	
--मनोहर.	८--मनोहरकांड		-- २	---उत्तरार्ध	
--पूर्ण.	९--पूर्णकांड		जै. ब्रा.	जैमिनीय ब्राह्मण	
आश्व. गृ.	आश्वलायन गृह्यसूत्र	निर्णयसागर प्रेस	तां. ब्रा.	तांडव्य ब्राह्मण (इसे पंच-	
आश्व. श्री.	आश्वलायन श्रौतसूत्र	आनंदाश्रम पूना		विंश, एवं प्रौढ ब्राह्मण भी कहते हैं)	
आ. ब्रा.	आर्षेणब्राह्मण	बनैलप्रत		चौखम्बा	
ई. उ.	ईशावास्य उपनिषद्	अष्टेकर मंडली	तै. आ.	तैत्तिरीय आरण्यक	आनंदाश्रम
श्रु.	ऋग्वेद	मॅक्स मुल्लर २री आवृत्ति	तै. उ.	तैत्तिरीय उपनिषद्	आनंदाश्रम
ऋ. प्रा.	ऋग्वेदप्रतिशाख्य	मॅक्स मुल्लर संस्करण (सूत्रांक, क्वचित् पटल एवं श्लोक)	तै. प्रा.	तैत्तिरीय प्रतिशाख्य	म्हैसूर सीरीज
ऐ. आ.	ऐतरेय आरण्यक	आनंदाश्रम	तै. ब्रा.	तैत्तिरीय ब्राह्मण	आनंदाश्रम
ऐ. उ.	ऐतरेय उपनिषद्	आनंदाश्रम	तै. सं.	तैत्तिरीयसंहिता	आनंदाश्रम
ऐ. ब्रा.	ऐतरेयब्राह्मण	आनंदाश्रम	दे. भा.	देवी भागवत	
क. उ.	कठ उपनिषद्	अष्टेकर मंडली	द्रा. श्री.	द्राह्यायण श्रौतसूत्र	
क. सं.	कठसंहिता	लिपिज्ञिक, १९१२	ना. उ.	नारायण उपनिषद्	आनंदाश्रम, पूना ।
कापि. सं.	कापिष्ठलसंहिता		नारद.	नारद पुराण	वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई ।
कालि.	कालिकापुराण	श्रीवेंकटेश्वर प्रेस	- १	-पूर्व भाग	
कूर्म.	कूर्मपुराण	श्रीवेंकटेश्वर प्रेस	- २	-उत्तर भाग	
के. उ.	केन उपनिषद्		नि.	निरुक्त	वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई ।
कै. उ.	कैवल्य उपनिषद्		नृसिंह.	नृसिंहपुराण	गोपाल नारायण प्रेस ।
कौ.	कौशिकसूत्र	अमेरिकन ओरि.सो.सी.	पद्म.	पद्मपुराण	वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई, आनंदाश्रम (क्वचित्)
कौ. अ.	कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र		-सु.	१-सुष्टिखंड	
कौ. उ.	कौषीतकि उपनिषद्		-भृ.	२-भूमिखंड	
खा. गृ.	खादिर गृह्यसूत्र		-स्व.	३-स्वर्गखंड	
खा. श्री.	खादिर श्रौतसूत्र	म्हैसूर सीरीज	-ब्र.	४-ब्रह्मखंड	
गणेश.	गणेशपुराण	मोदवृत्त मुद्रणालय, शक १८२८	-पा.	५-पातालखंड	
गरुड.	गरुडपुराण	श्रीवेंकटेश्वर प्रेस	-उ.	६-उत्तरखंड	
ग. सं.	गर्गसंहिता	श्रीवेंकटेश्वर प्रेस	-क्रि.	७-क्रियायोग	
गो. गृ.	गोभिल गृह्यसूत्र		पं. ब्रा.	पंचविंश ब्राह्मण	
गो. ब्रा.	गोपथ ब्राह्मण	बिन्डिओथिका इंडिका	परा. मा.	पराशर माधव	निर्णयसागर प्रेस, बंबई

प्राचीन चरित्रकोश

संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण	संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण
पा. गृ.	पारस्कर गृह्यसूत्र	गुजराथ प्रेस, बंबई, १९१७	-व.	३-वनपर्व	दिये गये श्लोकों का
पा. सू.	पाणिनिसूत्र-अध्याय, पाद, सूत्र		-वि.	४-विराटपर्व	निर्देश अभिप्रेत है।
प्र. उ.	प्रश्न उपनिषद्	आनंदाश्रम, पूना	-उ.	५-उद्योगपर्व	महाभारत के
बृ. उ.	बृहदारण्यक उपनिषद् (काण्व)		-भी.	६-भीष्मपर्व	कुम्भकोणम्, कल्कत्ता,
बृहदे.	बृहदेवता	राजेंद्रलाल मित्र	-द्रो.	७-द्रोणपर्व	मुंबई एवं चित्रशाला
ब्रह्म. सू.	ब्रह्मसूत्र		-क.	८-कर्णपर्व	प्रेस पूना के द्वारा
बौ. ध.	बौधायन श्रौतसूत्र		-श.	९-शल्यपर्व	प्रकाशित संस्करणों का
ब्रह्म.	ब्रह्मपुराण	आनंदाश्रम, पूना	-सौ.	१०-सौप्तिकपर्व	उपयोग भी किया
ब्रह्मवै.	ब्रह्मवैवर्तपुराण	आनंदाश्रम, पूना	-स्त्री.	११-स्त्रीपर्व	गया है। इनमें से
-१	ब्रह्मखंड		-शां.	१२-शान्तिपर्व	चित्रशाला संस्करण में
-२	प्रकृति खंड		-अनु.	१३-अनुशासनपर्व	नीलकंठ चतुर्धर टीका
-३	गणपति खंड		-आश्व.	१४-आश्वमेधिकपर्व	प्राप्त है।
-४	कृष्णजन्म खंड		-आश्र.	१५-आश्रमवातिकपर्व	अनुशासनपर्व के
ब्रह्मांड.	ब्रह्मांड पुराण	श्री वैकटेश्वर प्रेस,	-मौ.	१६-मौसलपर्व	सारे संदर्भ चित्रशाला
-१	—प्रक्रियामाद	बंबई	-महा.	१७-महाप्रस्थानिकपर्व	संस्करण के लिये
-२	—अनुषंगपाद		-स्व.	१८-स्वर्गारोहणपर्व	गये हैं।
-३	—उपोद्घात पाद		मत्स्य.	मत्स्यपुराण	आनंदाश्रम, पूना
-४	—उपसंहार पाद		महा.	महाभाष्य १-३ खंड,	कीलहार्न संस्करण
भवि.	भविष्यपुराण	वैकटेश्वर प्रेस बंबई	मं. उ.	मांडूक्य उपनिषद्	
-ब्रह्म	१-ब्राह्मपर्व		मा. गृ.	मानव गृह्यसूत्र	
-मध्यम	२-मध्यमपर्व		मार्क.	मार्कंडेय पुराण	मोदहृत्त प्रेस, एवं
-प्रति	३-प्रतिसर्गपर्व		मा. श्रौ.	मानवश्रौतसूत्र	पार्गिंटर का इंग्रजी
-उत्तर	४-उत्तरपर्व		मिता.	मिताक्षरा	अनुवाद
भवि उ.	भविष्योत्तर पुराण	श्री वैकटेश्वर प्रेस, बंबई	सुं. उ.	मुंडक उपनिषद्	आनंदश्रम, पूना
भा.	भागवत	निर्णयसागर प्रेस श्रीधरी एवं विजय- ध्वजी टीकाओं का उपयोग भी किया गया है; गोरखपुर संस्करण	सुद्गल.	सुद्गल पुराण	हस्तलिखित
मा. श्रौ.	भारद्वाजश्रौतसूत्र		मै. उ	मैत्री उपनिषद्	
मा. सा.	भारतसावित्री	चित्रशाला प्रेस, पूना	मै. सं.	मैत्रायणी संहिता	
म.	महाभारत	भांडारकर संहिता।	याज्ञ.	याज्ञवल्क्य स्मृति	निर्णयसागर
-आ.	१-आदिपर्व	(*) चिन्ह से भांडारकर	यो. वा.	योगवासिष्ठ	
-स.	२-समापर्व	संहिता के पाठभेद में	र. बं.	रघुवंश	निर्णयसागर
			रेणु.	रेणुकामाहात्म्य	हस्तलिखित
			ला. श्रौ.	लाट्यायन श्रौतसूत्र	वाल्मीकि प्रेस
			लिंन.	लिंनपुराण	कल्कत्ता
			व. घ.	वसिष्ठ धर्मसूत्र	श्री वैकटेश्वर प्रेस, बंबई.

आधारभूत ग्रंथ

संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण	संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण
वं. ब्रा.	वंश ब्राह्मण	कलकत्ता	-पू.	(अ) पूर्वांघ	
वराह.	वराहपुराण	श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई.	-उ.	(आ) उत्तरांघ	
वामन.	वामनपुराण	श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई.	-कैलास	(६) कैलाससंहिता	
-१	-पूर्वांघ		-वायवीय	(७) वायवीयसंहिता	
-२	-उत्तरांघ		शु. प्रा.	शुकुयजुर्वेद	चौखंबा संस्कृत सीरीज
वायु.	वायुपुराण	आनंदाश्रम, पूना.		प्रातिशाख्य	वाराणसी
वा. रा.	वाल्मीकि रामायण		श्वे. उ.	श्वेताश्वतर उपनिषद्	आनंदाश्रम, पूना
-वा.	१-बालकांड		प. ब्रा.	षड्विंदा ब्राह्मण	
-अयो.	२-अयोध्याकांड		स. ग.	सत्याषाढ गृह्यसूत्र	
-अर.	३-अरण्यकांड		स. श्रौ.	सत्याषाढ श्रौतसूत्र	आनंदाश्रम, पूना
-कि.	४-किष्किंधाकांड		सां. आ.	सांख्यायन आरण्यक	आनंदाश्रम, पूना.
-सुं.	५-सुंदरकांड		सां. ग.	सांख्यायन गृह्यसूत्र	ओल्डेनबर्ग (सेक्रेड बुकस ऑफ दी ईस्ट)
-यु.	६-युद्धकांड		सां. ब्रा.	सांख्यायन ब्राह्मण	
-उ.	७-उत्तरकांड		सां. श्रौ.	सांख्यायन श्रौतसूत्र	
वारा. श्रौ.	वाराह श्रौतसूत्र		साम.	सामवेद	
वा. सं.	वाजसनेय संहिता	महीधर उबट माध्य, निर्णयसागर प्रेस.	सां. ब.	सां.पुराण	श्री. वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई.
विष्णुधर्म.	विष्णुधर्मोत्तर पुराण	श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई.	सू. सं.	सूतसंहिता	आनंदाश्रम, पूना.
वै. श्रौ.	वैखानस श्रौतसूत्र		स्कंद.	स्कंदपुराण	
श. ब्रा.	शतपथ ब्राह्मण (माध्यंदिन)	वेबर संस्करण, अनुवाद जे. एगलिंग (सेक्रेड बुक्स ऑफ दि ईस्ट)	-माहेश्वर	(१) माहेश्वर खंड	
शा.	(अभिज्ञान) शाकुंतल	निर्णयसागर प्रेस, बंबई	-१	(अ) केदारखंड	
शिव.	शिवपुराण	श्यामकाशी प्रेस, मथुरा	-२	(आ) कौमारिका खंड	
-विद्या	१. विद्येश्वर संहिता		-३	(इ) अरुणाचल महात्म्य	
-रुद्र	२. रुद्र संहिता			-१. पूर्वांघ	
-सू.	(अ) सृष्टि खंड			-२. उत्तरांघ	
-स.	(आ) सती खंड		-वैष्णव	(२) वैष्णव खंड	
-पा.	(इ) पार्वती खंड		-१	(अ) वेंकटाचल माहात्म्य	
-कु.	(ई) कुमार खंड		-२	(आ) जगन्नाथक्षेत्र माहात्म्य	
-यु.	(उ) युद्ध खंड		-३	(इ) बदरिकाश्रम माहात्म्य	
-शत.	(३) शतरुद्रसंहिता		-४	(ई) कार्तिकमासमाहात्म्य	
-कोटि.	(४) कोटिरुद्रसंहिता		-५	(उ) मार्गशीर्षमासमाहात्म्य	
-उमा	(५) उमासंहिता		-६	(ऊ) श्रीमद्भागवतमाहात्म्य	
			-७	(ओ) वैशाखमासमाहात्म्य	
			-८	(औ) अयोध्यामाहात्म्य	
			-९	(अं) वासुदेवमाहात्म्य	
			-ब्रह्म	(३) ब्रह्म खंड	
			-१	(अ) सेनुमाहात्म्य	
			-२	(आ) धर्मरण्यखंड	

प्राचीन चरित्रकोश

संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण	संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण
-३	(इ) ब्रह्मोत्तरखंड		-प्रभास	(७) प्रभास खंड	
-काशी	(४) काशी खंड		-१	(अ) प्रभासक्षेत्रमाहात्म्य	
-१	(अ) पूर्वार्ध		-२	(आ) ब्रह्मपथक्षेत्रमाहात्म्य	
-२	(आ) उत्तरार्ध		-३	(इ) अर्बुदाचलमाहात्म्य	
-अवंती	(५) अवंती खंड		-४	(ई) द्वारकामाहात्म्य	
-१	(अ) अवंतीक्षेत्रमाहात्म्य		स्मृतिचं.	स्मृतिचंद्रिका	
-२	(आ) चतुरशीतिलिंगमाहात्म्य		ह. वं.	हरिवंश चित्रशाळा प्रेस, पूना	
-३	(इ) रेवाखंड		-१	(अ) हरिवंशपर्व	
-नागर	(६) नागर खंड		-२	(आ) विष्णुपर्व	
			-३	(इ) मविष्यपर्व	

अंग्रेजी आधारग्रंथ

- | | |
|---|---|
| <p>(1) Altindische Leben—H. Zimmer, 1879, Berlin.</p> <p>(2) Ancient Indian Historical Tradition—F. E. Pargiter. Delhi.</p> <p>(3) Cambridge History of India, Vol. I—E. G. Rapson. 1922, Cambridge</p> <p>(4) Catalogous Catalogorum—Theodore Aufrecht.</p> <p>(5) Chronology of Ancient India—Dr. Sitantath Pradhan.</p> <p>(6) Concordance of Principle Upanishadas—Col. A. A. Jacob.</p> <p>(7) Constructive Survey of Upanishadic Philosophy—Dr. R. D. Ranade.</p> <p>(8) Dharmasutras of Apastamba, Gautama, Vasista and Baudhayana—G. Buhler, Sacred Books of the East Vols. II and XIV.</p> <p>(9) Dictionary of Pali Proper Names (2 Vols.)—G. P. Malalasekhara. 1960, London.</p> <p>(10) Geographical and Economic Studies in the Mahabharata—Upayana Parva—Dr. Motichandra.</p> <p>(11) Grihyasutras of Sankhyayana, Ashvalayana, Paraskara, Khadir, Gobhila,</p> | <p>Hiranyakeshin and Apastamba—H. Oldenberg, Sacred Books of the East, Vols. XXIX and XXX.</p> <p>(12) History and Culture of Indian People, Vol. I—Vedic Age—Dr. R. C. Majumdar, 1948, Bombay.</p> <p>(13) History of Ancient Sanskrit Literature—Max Muller. 1912, Allahabad.</p> <p>(14) History of Dharmashastra, Vols. I. V—Dr. P. V. Kane. Poona.</p> <p>(15) History of Indian Literature—Dr. Albrecht Weber.</p> <p>(16) History of Indian Literature, Vol. I—Vedic Age—M. Winternitz, 1927, Calcutta.</p> <p>(17) History of Sanskrit Literature—A. A. Macdonell.</p> <p>(18) History of Sanskrit Literature—C. V. Vaidya. 1930, Poona.</p> <p>(19) Index to the Names in Mahabharata—S. Sorenson. 1960, Delhi.</p> <p>(20) India as described by Early Greek Writers—B. N. Puri.</p> <p>(21) Kautilya's Arthashastra—R. Shamasastri. 1961, Mysore</p> |
|---|---|

आधारभूत ग्रंथ

- | | |
|---|--|
| (22) Markandeya Purana (English Translation with Notes)—F. E. Pargiter. | (29) Studies in the Upapuranas—Dr. R. C. Hazra. |
| (23) Political History of Ancient India—H. C. Raychaudhari. Calcutta. | (30) Twenty-five Hundred Years of Buddhism—Ed. Dr. P. V. Bapat. |
| (24) Purana Index—H. V. R. Dikshitar. Madras. | (31) Vaishnavism and Shaivism—Dr. R. G. Bhandarkar. Poona. |
| (25) Puranic Dynasties of Kali Age—F. E. Pargiter. Benaras. | (32) Vedic Index (2 Vols.)—Dr. A. A. Macdonell & Dr. A. B. Keith. Benaras. |
| (26) Studies in Epics and Puranas—Dr. A. D. Pusalkar. Bombay. | (33) Vedic Mythology—Dr. A. A. Macdonell. Benaras. |
| (27) Studies in Indian Antiquities—H. C. Raychaudhari. 1958, Calcutta. | (34) Vedische Studien—R. Pischel and K. F. Geldner. |
| (28) Studies in the Puranic Records on Hindu Rites and Customs—Dr. R. C. Hazra. Calcutta. | (35) Vishnu Purana—A System of Hindu Mythology and Tradition—H. H. Wilson. 1961, Calcutta. |

अंग्रेजी संशोधन-पत्रिका

- | | |
|--|---|
| A.B.O.R.I.—Annals of Bhandarkar Oriental Research Institute, | J.A.S.B.—Journal of Asiatic Society of Bombay. |
| I.A.—Indian Antiquary. | J.R.A.S.—Journal of Royal Asiatic Society of Great Britain. |

हिंदी आधारग्रंथ

- | | |
|--|---|
| (१) इतिहास प्रवेश—जयचंद्र विद्यालंकार, १९५७ | (७) मार्कंडेय पुराण—एक सांस्कृतिक अध्ययन—डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल, १९६१, इलाहाबाद |
| (२) पाणिनिकाळीन भारतवर्ष—डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल | (८) रामकथा—रे. फादर कामिल बुल्के, १९६२, प्रयाग |
| (३) प्राकृत साहित्य का इतिहास—डॉ. जगदीशचंद्र जैन, १९६० वाराणसी | (९) वैदिक वाङ्मय का इतिहास—पं. मगवदत्त |
| (४) भारतीय इतिहास—एक दृष्टि—डॉ. ज्योतिप्रसाद जैन, १९६१ वाराणसी | (१०) शैवमत—डॉ. यदुवंशी, १९५५, पटना |
| (५) भारतीय इतिहास की रूपरेखा—जयचंद्र विद्यालंकार | (११) संस्कृत व्याकरणशास्त्र का इतिहास—युधिष्ठिर मीमांसक |
| (६) महाभारत की नामानुक्रमणिका—गीता प्रेस, गोरखपुर | (१२) संस्कृत साहित्य का इतिहास—वाचस्पति मेरौली, १९६०, वाराणसी |

मराठी आधारग्रंथ

(१) आर्या रामायण-के. वि. गोडबोले	पूना	(८) भारतीय उद्योत्पिपशास्त्राचा इतिहास- शे. बा. दिक्षित	पूना
(२) ओरायन ऊर्फ आर्यांचे मूलस्थान- लो. बा. गं. टिळक	पूना	(९) भारतीय युद्धकाल निर्णय-के. ल. दत्तरी	नागपूर
(३) उपनिषद्ग्रहस्य-डॉ. रा. ड. रानडे	पूना	(१०) महाभारताचा उपसंहार-चि. वि. वैद्य	पूना
(४) गीतारहस्य-लो. बा. गं. टिळक	पूना	(११) रामचंद्र कालनिर्णय-के. ल. दत्तरी	नागपूर
(५) दत्त सांप्रदायाचा इतिहास-रा. चि. हेरे	पूना	(१२) रामायण समालोचना-महाराष्ट्रीय	पूना
(६) धर्मग्रहस्य-के. ल. दत्तरी	नागपूर	(१३) संशोधनमुक्तावलि-डॉ. बा. वि. मिराशी,	नागपूर
(७) पुराण निरीक्षण-त्र्यं. गु. काळे	पूना		

अनुक्रमणिका

	पृष्ठ
प्राक्कथन	१
प्रस्तावना	२-४
कोश कैसे देखे ?	४-५
आधारभूत ग्रंथों की नामावलि	५-११
अनुक्रमणिका एवं तालिका अनुक्रमणिका	११-१२
अधिक जानकारी	१२
प्राचीन चरित्रकोश	१-१११५
परिशिष्ट १-श्रीवर्धमान महावीर के समकालीन प्रमुख व्यक्ति	१११७-११२३
परिशिष्ट २-गौतमबुद्ध के समकालीन प्रमुख व्यक्ति	११२३-११३२
परिशिष्ट ३-सिकंदर के आक्रमण कालीन उत्तर पश्चिम भारतीय लोकसमूह एवं गणराज्य	११३२-११३८
परिशिष्ट ४-पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट राजवंश	११३९-११५६
१. सूर्यवंश ११३९-११४२	
२. सोमवंश ११४२-११५१	
३. स्वायंभुव मनु ११५१-११५२	
४. भविष्य वंश ११५२-११५५	
५. मानवैतर वंश ११५५-११५६	
परिशिष्ट ५-पुराणों में निर्दिष्ट राजाओं की तालिका	११५७-११६५
परिशिष्ट ६-पुराणों में निर्दिष्ट ऋषियों के वंश	११६५-११६९
परिशिष्ट ७-कालनिर्णयकोश...	११६९-११८०
१. प्राचीन कालगणनापद्धति	११६९-११७२
२. ग्रन्थों का कालनिर्णय	११७२-११७७
३. व्यक्तियों का कालनिर्णय	११७७-११८०
व्यक्तिसूचि	११८१-११९०
विषयसूचि	११९१-१२०२
सूचिपत्र	१२०३-१२०४

तालिका अनुक्रमणिका

१. नागपुर (पुराणों में) ... ३५६	१३. चतुर्व्यूह (विष्णु का एक अवतारसमूह) ... ८८५
२. दोहक राण ... ४५०	१४. व्यास की वैदिक शिष्यपरंपरा ... ९२१
३. सम्बन्तर पाठभेद ... ६०७	१५. उपलब्ध वैदिक धर्मग्रंथ ... ९२२
४. मरुत्गणों के स्थान ... ६२४	१६. महापुराणों की तालिका ... ९२६
५. यक्षप्रश्न (एवं युधिष्ठिर के उत्तर) ... ७००	१७. सप्तद्वीपात्मक पृथ्वी ... १०९६
६. भारतीय युद्धकालीन सेनागणनापद्धति ... ७०३	१८. जम्बूद्वीप विभाग ... १०९६
७. अष्ट रुद्र ... ७५९	१९. सूर्यवंश के उपविभाग ... ११३९
८. एकादश रुद्र ... ७५९	२०. सूर्य एवं सोम वंशों का विस्तार ... ११४४
९. अष्टवसुओं का परिवार (भागवत में) ... ८११	२१. कश्यप ऋषि की मानवोत्तर संतति ... ११५६
१०. अष्टवसुओं का परिवार (महाभारत एवं पुराणों में) ... ८१२	२२. पुराणों में निर्दिष्ट राजाओं की तालिका ... ११५७-११६५
११. विश्वामित्र की पत्नियाँ ... ८७४	२३. पौराणिक ऋषिवंशों की तालिका ... ११६७-११६९
१२. विष्णु की उपासना ... ८८४	२४. पौराणिक युगों की तालिका ... ११७०

अधिक जानकारी

पृष्ठ	पृष्ठ
१९. अद्रि—(सू. इ.) विश्वामित्र का पुत्र।	१९४ गोवासन (शैब्य)—युधिष्ठिर का श्वसुर।
३२ अरिष्टनेमि यादव—इसकी कन्या सगरपत्नी प्रभा (सुमति) (मत्स्य. १२.४२)।	१९९ घर्षरत्न—(मार्जारस्या देखिये)।
५१ असित—बाहु २०. देखिये	२०० घृताची—(कपिलजी)।
५२ आसितक्षणा—(मलय २. देखिये)।	२१२ चित्रशिखंडिन २.—यह स्वयंभुव नामक आँठवें मन्वन्तर का अधिपति था। इससे ही आगे चल कर समस्त सृष्टि एवं शास्त्रों का निर्माण हुआ।
८४ उद्दालकि २.—इसका पुत्र नचिकेतस् (म. अनु. ७१)।	२३९ झषाक्ष—रथाक्ष देखिये।
८५ उपचिन्ति—(केतुमाल देखिये)।	२४२ तरसाहर—रथंतर देखिये।
१०४ औपमन्यव—ऊर्जयत् का पैतृक नाम।	२७६ दीर्घिका—(मार्कंडेय २. देखिये) २. कौशिक १४. देखिये
११३ कर्पिजलि घृताची—(वसिष्ठ परिवार देखिये)।	२७९ दुर्दम ४.—(पद्म. उ. १७२)
१३३ कांपिजल्य—इंद्रप्रमति वसिष्ठ का नामांतर।	२९३ देवपन्न—(मांडव्य देखिये)।
१३३ कापित्य—(भृग्यश्च देखिये)।	२९९ देवहोत्र—योगेश्वर २. देखिये।
१३९ कालमार्ग—(कालभीति देखिये)	३०६ द्रुपद के पुत्र—श्रुतजय, बलानीक, जयानीक, जयाश्व, श्रुत, पृथप्र, चंद्रदेव (म. द्रो. १३१)।
१५८ कृमिलाश्व—(भृग्यश्च देखिये)।	३३७ ध्यजवती—यह पश्चिम में रहती थी।
१६० कृष्ण—अर्जुनद्वारा प्रणीत कृष्णाचरित्रकथन महाभारत में प्राप्त है (म. व. १३; १०-३६)	३५९ नाडायनी—इसे इंद्रसेना, नालायनी, एवं मुद्गञ्जनी नामांतर भी प्राप्त थे।
१७० कौसल्य—सुमनस् का पैतृक नाम।	३७१ निर्रति घर्षरत्न—मार्जारस्या का पुत्र (आ. रा. सार. १३)।
१७२ कौहल—श्रवणदत्त का पैतृक नाम।	
१८१ गन्दिनी—इसकी कन्या वसुदेवा।	
१८६ गवेषण २.—वसुदेव एवं श्रद्धादेवी का पुत्र (मत्स्य ४६.१९)।	

XX

मेरी स्वर्गीया पत्नी
सौ. यमुताई चिनाव
के पवित्र स्मृति में

XX

प्राचीन चरित्रकोश

भारतवर्षीय

प्राचीन चरित्र कोश



अ

अंश

अकंपन

अंश—अंशुमान आदित्य का नामांतर है।

२. (सो. यदु.) विष्णु के मत में यह पुरुहोत्र का पुत्र है।

३. तृषित नामक देवगणों में से एक है।

अंशुपायन—ब्रह्मदेव के मुष्करक्षेत्र के यज्ञ में यह अश्वयुगणों का उन्नायक था (पद्म. सू. ३४)।

अंशु—अदिवनों ने इसकी रक्षा की थी (ऋ. ८. ५. २६)।

२. कृष्ण तथा बलराम का गोकुल का सखा (भा. १०. २२. ३१)।

३. मार्गशीर्ष (अगहन) माह के सूर्य का नाम (भा. १२. ११. ४१)।

अंशु धानंजय—अमावास्या शांडिल्यायन का शिष्य (बं. ब्रा. १)।

अंशुमत्—एक आदित्य। इसे क्रिया नाम की स्त्री थी। यह आषाढ में प्रकाशित होता है। इसकी १५०० किरणें हैं (भवि. ब्राह्म. १६८)। अंशु (३.) तथा यह एक ही हैं।

२. पंचजन का पुत्र (पद्म. उ. २२. ७)।

३. (सू. इ.) असमंजस का पुत्र। पितरों की मानस-कन्या यशोदा इसकी स्त्री है। सगर का अश्वमेधीय अश्व इंद्र लाने के लिये असमंजस ने इसे भेजा। मार्ग में इसे इसके पितृव्य कपिलाश्रम के पास मृत पड़े हुए दिखे। वहीं वह अश्व भी दिखा। तब इसने कपिल की स्तुति की। परंतु कपिल ध्यानस्थ था। अतएव उसने इसकी

स्तुति न सुनी। इतने में उसका मामा गरुड वहां आया। भागीरथी के जल के स्पर्श से काम होगा, ऐसा बता कर वह चला गया। कपिल जागृत होने के बाद उसने अंशुमान को स्तुति करते हुए देखा। उसकी स्तुति से संतुष्ट हो कर उसने इसे भागीरथी की स्तुति करने को कहा। बाद में यह अश्व ले गया तथा पहले अश्वमेध यज्ञ पूरा करवाया। सगर ने तुरंत ही इसे राज्य दिया तथा वह वन में गया। इसने भी अपने पुत्र दिलीप को राजसिंहासन पर बिठाया तथा उसे प्रधान के हाथ में सौंप कर भागीरथी के प्राप्स्यर्थ संपूर्ण जीवन तप में बिताने के लिये यह वन में गया। परंतु सिद्धि के पूर्व ही इसकी मृत्यु हो गई (म. व. १०६; वा. रा. बा. ४१-४२)। यह शिवभक्त था। इसने ३०८०० साल राज किया (भवि. प्रति. १. ३१)।

४. द्रौपदी के स्वयंवर के लिये गया हुआ राजा (म. आ. १७७. १०)। इसे भारतीय युद्ध में द्रोणाचार्य ने मारा (म. क. ४. ६७)।

अंहोमुख चामदेव्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १२६)।

अकपि—तामसमन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अकपिवत्—तामसमन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अकंपन—कृतयुग का एक राजर्षि। इसको हरि नामक एक ही पराक्रमी पुत्र था। युद्ध में उसकी मृत्यु हो गई। अतीव दुःख के कारण यह शोक कर रहा था। इतने में नारद ऋषि वहाँ आये तथा, मृत्यु अनिवार्य है ऐसा

समझा कर उसका समाधान किया (म. द्रो. परि. १. ८. पंक्ति. ३५. ३५९)।

२. एक राक्षस। यह रावण का दूत था। जनस्थान में खरादिक राक्षसों के राम द्वारा बध की प्रथम सूचना। रावण को इसने ही दी थी (वा. रा. अर. ३१)। इसने सीता को चुरा कर लाने की सलाह रावण को दी। रावण ने युद्ध के संबंध में इसकी स्वतंत्र सिफारिश की थी (वा. रा. युद्ध. ५५. २; ९; २८)। रामरावणयुद्ध में हनुमान के द्वारा इसकी मृत्यु हुई (वा. रा. युद्ध. ५६. ३०)।

३. कल्पप तथा खशा का पुत्र।

अकर्कर—एक सर्प (म. आ. ३१. १५)।

अकर्ण—कल्पप तथा कद्रू का पुत्र।

अकल्मष—तामस मनु के पुत्रों में से एक।

अकृतव्रण—हिमालयस्थ शान्त ऋषि का पुत्र। एक बार व्याघ्र के आक्रमण से भयभीत हो कर यह चिलाता हुआ भागने लगा। इसी समय परशुराम, शंकर को प्रसन्न कर के बापस आ रहे थे। इसे भागते हुए देख कर परशुराम ने इसे अभय दिया तथा व्याघ्र को मार डाला। व्याघ्र के द्वारा इस बालक के शरीर पर व्रण न किये जाने के कारण इसका नाम अकृतव्रण प्रचलित हुआ। बाद में परशुराम ने इसको अपना शिष्य बनाया। यह निरंतर परशुराम के साथ रहता था (ब्रह्माण्ड ३. २५. ६६)।

२. युधिष्ठिरद्वारा किये गये राजसूय यज्ञ में यह उपद्रष्टा था। (भा. १०. ७४. ९)। इसने रोमहर्षण से सब पुराणों का अध्ययन किया (भा. १२. ७. ५-७; अंश देखिये)।

३. कृतयुग का एक ब्राह्मण। यह एक बार, जब सरोवर में स्नान कर रहा था, तब एक नरक ने इसका पैर पकड़ा तथा उसे जल में खींचने लगा। इस लिये इसने उस सरोवर के जल को एवं जलदेवता को शाप दिया कि, जो कोई इस पानी को स्पर्श करेगा वह तत्काल व्याध्री हो जायेगा। आगे पांडवों का अश्वमेधीय अश्व इस सरोवर में जलपान के लिये उतरने के कारण व्याध्री बन गया (जै. अ. २१)।

अकृताश्व वा अकृशाश्व—(सू. इ.) मत्स्य के मत में यह संहताश्व का पुत्र है।

अकृप्रमाथ—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९. ८६. १-१०; ३१-४०)।

अकोप—शरथ के अश्वप्रधानों में से एक (वा. रा. वा. ७)। इसका अशोक नामान्तर भी प्राप्त है।

अक्रिय—(सो. रंम.) गंभीर का पुत्र। इसकी संतति तब से ब्राह्मण बन गई थी (भा. ९. १७. १०)।

अकूर—(सो. वृष्णि.) श्वफल्क को गांदिनी से उत्पन्न पुत्र। इसको आसंग आदि ग्यारह वंधु तथा सुचिरा नामक भगिनी थी (भा. ९. २४; १५. १८)। आहुक की कन्या सुतनु इसकी पत्नी थी (म. स. १३. ३२)। इस पर कंस तथा राम-कृष्ण का समान ही विश्वास था। राम-कृष्ण का कांटा दूर करने के उद्देश्य से कंस ने उन्हे मथुरा लाने के लिये अकूर को भेजा। यह कार्य स्वीकार कर राम-कृष्ण को लेकर अकूर मथुरा आया। मार्ग में यमुना में स्नान करते समय डुबकी लगाने पर अकूर को राम-कृष्णका साक्षात्कार हुआ (भा. १०. ३९. ४१; ह. वं. २. २६)।

उसी प्रकार, धृतराष्ट्र पांडवों से अच्छा व्यवहार करता है या नहीं इसे शरीकी से देखने के लिये कृष्ण ने अकूर को ही हस्तिनापूर भेजा था (भा. १०. ४९)। कुन्ती ने भी अपनी स्थिति मुक्तहृदय से इसको बताई थी। उसी प्रकार, धृतराष्ट्र को भी कुछ उपदेश इसने दिया था, परंतु उसका कुछ लाभ न होगा, यह इसे धृतराष्ट्र के भाषण से मालूम हो गया (भा. १०. ४८)।

कृष्ण ने स्वमन्तक मणि के लिये शतवन्वा की हत्या की, इसकी सूचना मिलते ही भय से अकूर ने मथुरा का त्याग कर दिया। अकूर मथुरा से कहीं गया, इसका उल्लेख यद्यपि भागवत में नहीं है, तथापि वह काशी गया था ऐसी आख्यायिका है। काशीस्थित वर्तमान अकूरघाट से इस आख्यायिका की पुष्टि होती है। उस समय कृष्ण ने सौम्यता से अकूर को बताया कि, मेरे पास स्वमन्तक मणि है ऐसा संशय लोगों को है, इस लिये मणि दिखा कर तुम सब का संशयनिवारण कर दो। तब अकूर ने मणि दिखा कर सब का संशयनिवारण किया (भा. १०. ५६-५७)।

द्रौपदी के स्वयंवरार्थ आये हुए राजाओं में अकूर था (म. आ. १७७-१७)। युधिष्ठिर के दरबार में बैठनेवाले राजाओं में भी इसका उल्लेख है (म. स. ४. २७; १३-३२)। एक बार सूर्यग्रहण के पूर्वकाल में यह स्वमन्तपंचकक्षेत्र में गया था (भा. १०. ८२. ५)। याज्ञवी के समय अकूर एवं भोज में युद्ध हो कर दोनों मृत हो गये (भा. ११. ३०. १६)। वरु यह अकूर का नामान्तर है, ऐसा कहने के लिये आधार है (वृ. १०.) देखिये)। कई स्थानों पर इसको दानपति कहा गया है

(भा. १०. ३६. २८; ४९. २६)। इसको देववत् एवं उपदेव नामक दो पुत्र थे (भा. ९. २४. १८)।

२. कद्रुपुत्र।

अक्रोधन—(सो. पूर.) अयुतानायिपुत्र। इसकी माता भाला। इसकी पत्नी का नाम कण्डू। इसका पुत्र देवातिथि (म. आ. १०. २०)। भविष्य के मत में यह अयुतायू का पुत्र है। इसने १०५०० वर्षों तक राज्य किया।

अक्ष—रावण को मन्दोदरी से उत्पन्न पुत्र। अशोकवन के ध्वंस समय रावण ने हनुमान को पकड़ने के लिये पांच सेनापति भेजे थे। हनुमान द्वारा वे मारे जाने पर इसको भेजा गया। आठ अश्वों से युक्त रथ में बैठ कर यह अशोकवन में गया तथा हनुमान से युद्ध करते अन्त में उसी के हाथों मारा गया (वा. रा. सं. ४७)।

भक्ष मौजवत—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ३४)।

भक्षपाद—शिवावतार सोम का शिष्य। (गौतम देखिये)।

भक्षमाला—त्रिसिद्ध की पत्नी (म. उ. ११५. ११)। अरुंधती का नामान्तर।

भक्षीण—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ४. ५०)।

अगस्ति—(स्वा.) पुलस्त्य को हविर्भू से उत्पन्न पुत्र।

२. अगस्त्य, दृढद्युम्न और इंद्रबाहु को अगस्ति संज्ञा है (मत्स्य १४५. ११४-११९)।

अगस्त्य—वसिष्ठ के समान यह भी मित्रावरुणों का पुत्र है (ऋ. ७. ३३. १३)। उर्वशी को देख कर मित्रावरुणों का रेत कमल पर स्खलित हुआ तथा उससे वसिष्ठ एवं अगस्त्य उत्पन्न हुए (बृहदे. ५. १३४)। ऋग्वेद में अगस्त्य के काफी सूक्त तथा मंत्र हैं (ऋ. १. १६५. १३-१५; १६६-१६९; १७०. २, ५, १७१-१७८; १७९. ३-४; १८०-१९१)। अगस्त्य कुलनाम होने के कारण अगस्त्य कुल के लोगों द्वारा रचित सूक्त अगस्त्य के नाम से प्रसिद्ध हैं। एक स्थान पर अगस्त्य का सुमेधस नाम आया है (ऋ. १. १८५. १०)। मान्य तथा मान्यार्य ये पैतृक नाम भी अगस्त्य के लिये दिये हुए मिलते हैं (ऋ. १. १६५. १४-१५; १६६. १५)। मरुतों के लिये लाये गये पशु का इन्द्र ने हरण किया, तब वे वज्र लेकर इन्द्र को मारने के लिये उद्युक्त हुए। उस समय, अगस्त्य ने मरुतों का सांत्वन किया तथा इन्द्र-मरुतों में मैत्रीभाव निर्माण किया। जिस सूक्त के द्वारा यह मैत्रीभाव सिद्ध किया वह अगस्त्य का कयाशुभीय सूक्त है (ऐ. ब्रा. ५. १६)।

कयाशुभीय सूक्त में इन्द्र-मरुतों का विवाद है (ऋ. १. १६५) तथा अन्त में मरुतों का सांत्वन है। यह विवाद वैदिक ग्रंथों में काफी प्रसिद्ध प्रतीत होता है (तै. सं. ७. ५. ५. २; तै. ब्रा. २. ७. ११. १; मै. सं. २. १. ८; ऋ. सं. १०. ११; पं. ब्रा. २१. १४. ५)। इन्द्र पर भी इसका काफी प्रभाव था (ऋ. १. १७०)।

इसकी पत्नी का नाम लोपामुद्रा (ऋ. १. १७९. ४)। ऋग्वेद के इस सूक्त में अगस्त्य-लोपामुद्रा संवाद है। वहाँ यह वृद्ध है तथा लोपामुद्रा इसे संभोग के लिये प्रवृत्त कर रही है।

यह खेल नृप का पुरोहित होगा (ऋ. १. १८२. १)। अगस्त्यशिष्य (ऋ. १. १७९. ५-६) तथा अगस्त्यस्वयु (ऋ. १०. ८०. ८) के नाम पर कुछ ऋचाएँ हैं। ऋषियों में वृद्धतम जान कर इन्द्र ने इसे गायत्र्युपनिषद् का उपदेश दिया तथा इसने वह उपदेश इषा को बता कर परंपरा प्रारंभ की (जै. उ. ब्रा. ४. १५. १; १६. १)। जैमिनीय उपनिषद्-ब्राह्मण ही गायत्र्युपनिषद् है।

पौराणिक बाह्यय में उपरोक्त वर्णन के विरुद्ध कुछ विशेष जानकारी प्राप्त नहीं होती है। समुद्र में छिपे हुए असुरों ने इन्द्रादिकों को जन्न सताना प्रारंभ किया तब देवताओं ने अग्नि तथा वायु को समुद्र का शोषण करने को कहा। परन्तु समुद्र के प्राणियों का नाश होने की संभावना से उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया। तब इन्द्र के द्वारा दिये गये शाप से मित्रावरुणों के वीर्य से यह कुंभ में उत्पन्न हुआ। उनमें से अगस्त्य, अग्नि है। इसी कारण इसको मैत्रावरुण तथा कुंभयोनि नाम मिले (मत्स्य ६१. २०१; पद्म. सू. २२. २२; म. व. ९६; द्रो. १३२; १८५; शां. ३४४; ब्रह्माण्ड. ३. ३५)।

अगस्त्य विरक्त था तथापि पितरों की आज्ञानुसार विटर्भाषिपति की कन्या लोपामुद्रा के साथ इसका विवाह हुआ (लोपामुद्रा देखिये)। वह राजकन्या होने के कारण उसे अगस्त्य की अपेक्षा ऐश्वर्य में विशेष ऋचि थी। अपने तपःसामर्थ्य से जो चाहे वह प्राप्त करने की शक्ति होते हुए भी तप का व्यय करने की अगस्त्य की इच्छा न थी। परन्तु लोपामुद्रा की तीव्र इच्छा देख कर श्रुतर्वन्, ब्रन्थश्च तथा त्रसदस्यु इन तीन राजाओं के पास से संपत्ति प्राप्त करने का इसने प्रयत्न किया; परन्तु इसे यश प्राप्त नहीं हुआ। तथापि त्रसदस्यु ने अगस्त्य को इत्थल की अपरंपार संपत्ति का वर्णन बताया। तब तीनों राजाओं को साथ ले कर यह इत्थल के पास गया तथा अपने अतुल सामर्थ्य से इत्थल की संपत्ति प्राप्त कर इसने लोपामुद्रा को संतुष्ट किया।

समुद्र में रहनेवाले कालकेयों ने लोगों को काफी त्रस्त करना प्रारंभ किया तब इसने समुद्र का प्राशन कर लिया। तदनंतर देवताओं ने कालकेयों की हत्या कर के राव को यातनामुक्त किया। परन्तु इसको समुद्र को बाहर निकालने की सूचना देने पर इसने बताया कि, वह उदर में हजम हो गया। (पद्म. सू. १९-१८६; म. व. १०३)।

अग का अर्थ है पर्वत। पर्वत का स्तंभन करनेवाला ऐसी अगस्त्य शब्द की व्युत्पत्ति है (वा. रा. अ. ११)। यह विंध्य का गुरु था। अगस्त्य के दक्षिण जाने के समय विंध्य ने इसे नमस्कार किया। तब इसने विंध्य को कहा कि, मेरे लौटते तक तुम इसी प्रकार पड़े रहो। इस कथनानुसार विंध्य नम्र बन कर पड़ा रहा तथा उत्तर का दक्षिण से आवागमन प्रारंभ हुआ (म. व. १०२; दे. भा. १०. ३. ७)। यह प्रथम काशी में रहता था परन्तु विंध्याचल से मार्ग निकाल कर आवागमन को प्रारंभ करने के लिये, इसने काशीवास का त्याग किया। इस प्रसंग में अगस्त्य को दिये हुए अभिवचन के अनुसार काशी-विश्वेश्वर, रामेश्वर में आ कर रहने लगे (आ. रा. सार. १०)। काशी क्षेत्र में रहने की इच्छा अपूर्ण रह जाने के कारण, उन्तीसवें द्वापर युग में यह व्यास बन कर काशी में वास करेगा, ऐसा वरदान इसे गोदावरी तट पर लक्ष्मी ने दिया (स्कंद ४. १. ५)। दक्षिण में आने के बाद, इसने एक द्वादशवर्षीय सत्र मनाया। इस सत्र के ब्राह्मणों को पिप्पल तथा अश्वत्थ नामक असुर खा डाला करते थे। उनका नाश शनी ने किया (ब्रह्म. ११८)।

नहुष ने वाहन बना कर इसका अपमान करने के कारण अगस्त्य की जटा में स्थित भृगु ने, नहुष को दस हजार वर्षों तक सौंप बन कर जीवन यापन करने का शाप दिया (म. अतु. १००-२५; स्कन्द. १. १. १५)।

वनवास के समय दशरथी राम इसके दर्शन के लिये आया था। अगस्त्य ने राम को सोने तथा हीरों से सुशोभित सुन्दर धनुष, अमोघ बाण, अक्षय तूणीर तथा स्वर्ण के खड्गकोष सहित स्वर्ण का खड्ग दिया (वा. रा. अर. १२. ३१-३५)। अगस्त्य के आश्रम में ब्रह्मा, अग्नि, विष्णु, इन्द्र, सूर्य, सोम, भग, कुबेर, श्वाता, विधाता, वायु, नागराज, अनन्त, गायत्री, अष्टवसु, पाशहस्त, वरुण, कार्तिकेय तथा धर्म के लिये योजित विभिन्न स्थान, राम को इष्टिगोचर हुए (वा. रा. अर. १२. १७. २१)। इसने भद्राश्व को गीता सुनाई (वराह. ३५) इसने अपने लिये निकाला हुआ कमलकन्द एक

भूखे चांडाल को दिया (पद्म. सू. १९)। प्रजाहित के हेतु से अगस्त्य ने समस्त मृग देवताओं के लिये प्रोक्षण किये। इसीसे देवकार्य एवं पितृकार्य में मृग मांस अर्पण करने के लिये कुछ आपत्ति नहीं है (म. अतु. ११५)। परन्तु आगे अगस्त्य ने द्वादशवर्षीय सत्र का प्रारंभ किया तथा पशुहिंसा टाल कर इन्द्र को बर्षा करने के लिये विवश किया (म. आश्व. ९५)।

लोपामुद्रा को इधमवाह नाम से प्रसिद्ध दृढस्यु नामक पुत्र था (म. व. ९७. २३-२४)। दृढस्यु को, दृढ-सुम्न, इन्द्रबाहु इ. नामान्तर होने चाहिये (मत्स्य. १४५. ११४)।

पुलस्त्य, पुलह तथा ऋतु अगस्त्य गोत्रीय न होने हुए भी, इनकी संतति अगस्त्य गोत्रीय मानी जाती है। क्यों कि वैवस्वत मन्वन्तर का ऋतु निपुत्रिक होने के कारण उसने अगस्त्यपुत्र इधमवाह को दत्तक लिया था। पुलह की संतति राक्षस थी अतएव उसने अगस्त्यपुत्र दृढस्यु को दत्तक लिया। पौलस्त्य ने भी इसी प्रकार अगस्त्य-पुत्रों में से दत्तक लिया (मत्स्य. २०२. ८. १२)।

परन्तु ब्रह्मांडपुराण में अय, दृढस्यु तथा विष्मवाह नामक पुत्रों का वर्णन है (२. ३२. ११९)। अगस्त्य की गोत्र परंपरा आगे दी गई है। उसे ही अगस्त्यवंश कहा गया है (मत्स्य. २०२. ६)। यह मंत्रकार तथा ऋषिक था (वायु. १. ५९. ९२-९४)।

अगस्त्य का संबंध नित्य दक्षिण से ही आता है (वा. रा. अर. ११; ब्रह्म. ८४. ११८. २)। लंका के साथ भी अगस्त्य का संबंध आया है। इसे लेकावासी कहा गया है (मत्स्य. ६१. ५१)। अगस्त्य को दक्षिण का स्वामी तथा विजेता कहा गया है (ब्रह्म. ११८. १५९)। अगस्त्य का आश्रम दक्षिण में मलय पर्वत पर था (मत्स्य. ६१. ३७; पद्म. सू. २२; वा. रा. क्रि. ४१. १५-१६)। पाण्ड्य तथा महानदी के पास महेंद्र के साथ भी अगस्त्य का संबंध है (वा. रा. क्रि. ४१)। आजकल अगस्त्य के मंदिर, आवा इ. द्वीपों में प्राप्य है। वहाँ प्राप्य महाभारत भी दक्षिणाल्य पाठसे मिलता जुलता है। अगस्त्याश्रम नाशिक के पास है (म. व. ९४. १)। दुर्जया तथा मणिमती वातापी के नगर थे (म. आर. ९४. १-४)। वातापी का स्थान दक्षिण में है, ऐसा अभी तक समझा जाता है। वातापी ही ब्रह्मी है। परन्तु नन्दलाल डे ने वेरुल के पास का स्थान दिया है। विंध्य की कथा से दक्षिण का संबंध स्पष्ट है। विदर्भ (महाराष्ट्र) दक्षिण का देश है तथा वहाँ

के राजा की कन्या लोपामुद्रा इसकी पत्नी है। यह सब प्रसंग इसका दक्षिण के साथ अधिक संबंध दर्शाते हैं। यह दक्षिण का ही वासी था ऐसा भी कहा जा सकता था, परन्तु उत्तर की ओर यमुना, प्रयाग, गंगा इ. के साथ इसका संबंध आया है (मत्स्य. १०३; म. भा. २३६. २; व. ९५. ११)। इससे यह विधाचल को नम्र बना कर दक्षिण में आया, इस कथा की पुष्टि होती है। अगस्त्य नामक तारा भाद्रपद माह में दक्षिण की ओर उदित होता है तथा इसके उदय के बाद पानी निर्दोष हो जाता है, इस कथा का संबंध अगस्त्य व्यक्ति से जोड़ा गया है (मत्स्य. ६१)।

अगस्त्यद्वारा रचित ग्रंथ— १. बराहपुराण में पशु-पालोख्यान में प्राप्त अगस्त्यगीता, २. पंचरात्र की अगस्त्य संहिता, ३. स्कन्दपुराण की अगस्त्य संहिता, ४. शिव-संहिता (०.०), ५. भास्कर संहिता का त्रैधनिर्णयतंत्र (ब्रह्मवे. २.१६)।

अगस्त्य वंश के गोत्रकार—

करंभ (करंभय), कौशल्य (ग), ऋतुवंशोद्भव, गांधारकायन, पौलस्त्य, पौलह, मयोभुव, शकट (करट), मुमेधस ये गोत्रकार अगस्त्य, मयोभुव, तथा महेन्द्र इन तीन प्रवरों के हैं।

अगस्त्य (ग), पौर्णिमास (ग) ये गोत्रकार अगस्त्य, पारण, पौर्णिमास इन तीन प्रवरों के हैं (मत्स्य. २०२)।

अगस्त्यगोत्रीय मंत्रकार

मत्स्य. १४५. ११४-११५; ब्रह्मांड. २. ३२, ११८-१२०

अगस्त्य अगस्त्य

अगस्त्य

अय

इन्द्रबाहु

दृढायु

दृढद्युम्न

विष्मवाह

इन में से अगस्त्य, इन्द्रबाहु तथा दृढद्युम्न को अगस्ति संज्ञा है (मत्स्य. १४५. ११४-११५)।

अगस्त्य की पत्नी लोपामुद्रा विदभेराज निमि की कन्या थी। निमि ने उस को लोपामुद्रा के साथ राज्य भी दिया था (म. अनु. १३. ११)। काशी का नृप प्रतर्दन का पोता तथा वत्स का पुत्र अलर्क ने लोपामुद्रा की कृपा से दीर्घायु प्राप्त की थी (वायु. ९२. ६७; ब्रह्माण्ड. ११. ५३)।

इस से ज्ञात होता है की अगस्त्य, निमि तथा अलर्क का समकालीन था।

अगस्त्यशिष्य—ऋग्वेद की कुछ ऋचाएँ इसके नाम पर हैं (ऋ. १. १७९. ५-६)।

अगस्त्यस्वस्वस्—मंत्रद्रष्टी (ऋ. १०. ९०. ९)।

अग्नि—इन्द्र का शिष्य। इसका शिष्य काश्यप (वं. ब्रा. २)।

२. एक आचार्य। इसने सोम की विशेष परंपरा सन्श्रुत को कथन की (ऐ. ब्रा. ७. ३४)।

३. धर्म तथा वसु का पुत्र। इसको वसोर्धारा नामक पत्नी से द्रविणक इ. पुत्र हुए तथा कृत्तिका नामक पत्नी से स्कन्द नामक पुत्र हुआ (भा. ६. ६. ११)।

४. स्वरोचिप मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (मनु देखिये)।

५. तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (मनु देखिये)।

६. ब्रह्मदेव का मानसपुत्र। उसके कोपसे इसकी उत्पत्ति हुई (म. शां. ४८. १६)। दक्ष प्रजापती की कन्या स्वाहा इसकी पत्नी (म. व. २२०; भा. ४. १. ६०)। दूसरी पत्नी इक्ष्वाकुवंश के दुर्योधन राजा की कन्या सुदर्शना (म. अनु. २.२१)। प्रथम पत्नी स्वाहा माहिष्मती नगरी के राजा नीलध्वज की कन्या। नीलध्वज ने अपनी कन्या अग्नी को देते समय ऐसा करार किया था कि, वह निरन्तर नीलध्वज की नगरी में ही रहे, और जो भी शत्रु माहिष्मती नगरी पर आक्रमण करे, उसका सैन्य जला डाले। इस करार के कारण अग्नि अपने श्रमुरग्रह में घर-जमाई बन कर रहने लगा। आगे चल कर जब अर्जुन की सेना से नीलध्वज को लड़ना पड़ा, तब अग्नि ने अर्जुन की सेना को जला दिया (जै. अ. १५)। इसने सहदेव की सेना भी जलाई परन्तु अन्त में सहदेव द्वारा स्तुति की जाने पर यह वापस लौटा (म. स. २८)। सप्तर्षियों का हविर्द्रव्य देवताओं को अर्पण कर के लौटते समय, सप्तर्षि की पत्नियाँ इसे दृग्गोचर हुईं। तब इसके मन में कामवासना उत्पन्न हुई तथा उनकी प्राप्ति की इच्छासे गार्हपत्य में प्रविष्ट हो कर यह चिरकाल तक उनके पास रहा। परन्तु वे इसके वश में न आने के कारण, अत्यंत निराश हो कर देहत्याग का निश्चय कर के यह अरण्य में गया। परंतु उन स्त्रियों में से उषस्कन्या स्वाहा की प्रीति अग्नि से होने के कारण, वह इसके पीछे वन में गई तथा उसने अन्य सप्तर्षि-पत्नियों का स्वरूप धारण कर के इसकी इच्छापूर्ति की (म. व. २१३-२१४)। परन्तु वह अरुंधती का रूप न ले सकी।

प्राचीन काल में श्वेतकी ने अपरिमित यज्ञ किये। उसके द्वारा किये गये यज्ञसत्र में, नारह वर्षों तक, अग्नि लगातार हविर्द्रव्य भक्षण कर रहा था। इस कारण इसमें स्थूलता उत्पन्न हो कर, उसपर उपाय पूछने के लिये यह ब्रह्मदेव के पास गया। तब ब्रह्मदेव ने इसे खांडववन का भक्षण करने के लिये कहा। इसलिये इसने उसे जलाना प्रारंभ किया परन्तु इन्द्र ने लगातार पर्जन्यवृष्टि कर के सात बार इसका पराभव किया। अन्त में निराश हो कर यह पुनः ब्रह्मदेव के पास गया तथा सारा वृत्तान्त उन्हे निवेदित किया। तब भूलोक में जा कर कृष्णाजुन से खांडववन भांगने की सलाह ब्रह्मदेव ने इसको दी। यह ब्राह्मणरूप से कृष्णाजुन के पास आया तथा इसने भक्षण करने के लिये वह वन-भांगा। तब अर्जुन ने कहा कि, हमारे पास युद्धसामग्री की न्यूनता है, वह अगर तुमने हमें दी तो हम इंद्र से तुम्हारी रक्षा करेंगे। अग्नि ने वरुण के पास से, श्वेतवर्णीय अश्वों से जुता हुआ तथा कपिध्वजयुक्त एक दिव्य रथ, गांडीव नामक धनुष तथा दो अक्षय तूणीर मांग कर, अर्जुन को दिये तथा श्रीकृष्ण को सुदर्शन चक्र तथा कौमोदकी नामक गदा दी। इससे वे दोनों संतुष्ट हुए तथा उन्होंने अग्नि के संरक्षण का वचन दे कर, उसे खांडववन का भक्षण करने के लिये कहा। तब अग्नि उस वन का भक्षण करने लगा। यह समाचार इन्द्र को मिलते ही, वह अग्नि का निवारण करने के लिये, वहाँ आ कर पर्जन्यवृष्टि करने लगा। परन्तु कृष्णाजुन ने उसका पराभव किया। पंद्रह दिनों तक खांडववन का आतृप्त भक्षण करने के बाद, अग्नि की स्थूलता नष्ट हुई। इस वन से तक्षकपुत्र अश्वसेन, मयासुर तथा महर्षि मन्वपाल के चार पुत्र शाङ्गक पक्षी केवल बचे (म. आ. २१७. १८)। इक्कीस दिन तक, अग्नि लगातार वह वन दग्ध कर रहा था (म. आ. २२५. १५)।

वृत्र को मारने के बाद, ब्रह्महत्या के भय से भाग हुए इन्द्र की खोब, बृहस्पति के कहने से इसने की (म. उ. १५.१६)। भांग चल कर उस ब्रह्महत्या से इन्द्र का द्युत्कार करने के लिये ब्रह्मदेव ने उसके चार भाग किये। उसका चौथा भाग अग्नि ने ग्रहण किया (म. शा. २७३)।

एक बार जब भृगु समिधा लाने के लिये वन में गया था, तब दमन नामक राक्षस उसके तथा उसकी पत्नी के बारे में पूछताछ करने लगा। तब भयभीत हो कर अग्नि ने खुगली की तथा भृगुपत्नी का पता बता दिया। भृगु ने

लौटने पर खुगली करने के कारण अग्नि को शाप दिया कि 'तुम सर्वभक्षक बनोगे'। इसपर अग्नि ने उःशाप मांगा। तब भृगु ने 'सर्वभक्षक होते हुए भी तुम पवित्र ही रहोगे' ऐसा उःशाप दिया (पद्म. पा. १४)। भृगु स्नान करने बाहर गया, यह देख कर उसके आश्रम में, पुलोमा नामक राक्षस प्रविष्ट हुआ तथा उसने अग्नि से पूछा कि, भृगुपत्नी पुलोमा को मैंने पहले भन से वरण किया यह सत्य है या असत्य। अग्नि ने बताया कि, यह सत्य है, इसलिये भृगु ने उसे उपरोक्त शाप दिया (म. आ. ५-७)। भृगु के इस शाप के कारण अग्नि जल में गुप्त हो गया। इससे देव-देवताओं के यज्ञयागकर्म बंद हो गये। देवताओं द्वारा इसका शोध होने पर मत्स्यां ने अग्नि दर्शाया। तब देवताओं ने इसकी स्तुति की जाने पर, यह बाहर आया तथा पूर्ववत् अपना कार्य करने लगा (म. आ. ७; शा. २७; व. २२४)।

ऋग्वेद में अग्नि के गुप्त होने का यह कारण बताया है। वषट्काररूप वज्र से बांधवों की मृत्यु होने के कारण, सीचीक नामक अग्नि, वषट्कार तथा हवि उठा ले जाने में डर गया तथा देवताओं से निकल कर जल में भाग गया (ऋ. १०. ५१)। यहाँ अग्नि-देव संवाद है।

ब्राह्मणों के श्रेष्ठत्व के संबंध में, अग्नी का इन्द्र से संवाद हुआ था (म. अनु. १४)। उसी प्रकार गाय, ब्राह्मण तथा अग्नि को पादस्पर्श करने वाले पर भयंकर आपत्ति आती है इस अर्थ का धर्मकथन इसने किया है (म. अनु. १२६)।

सीता को लंका से लाने के बाद, जब राम उसका स्वीकार नहीं कर रहा था, तब अग्नी ने बताया कि, सीता निरपराध है (म. व. २७५. २७)।

इसे स्वाहा नामक पत्नी से स्कन्द नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. व. २१४)। इसके अलावा, इसी पत्नी से पावक, पवमान व शुचि नामक तीन पुत्रों ने जन्म लिया (भा. ४. १. ६०-६१)। सुदर्शना नामक पत्नी से इसे सुदर्शन नामक पुत्र हुआ (म. अनु. २. ३७)। इसके सिवा, स्वरोत्थिप नामक इसके पुत्र का उल्लेख पाया जाता है (भा. ८. १. १९; आपू देखिये)।

अंगिरा की मांग के अनुसार, अग्नी ने उसे बृहस्पति नामक पुत्र दिया। अंगिरा की पत्नी तारा। इसी से अग्नि-वंश की वृद्धि हुई (म. व. २०७-२१२)। पावक, पवमान तथा शुचि इन अग्निपुत्रों से कुल ४९ अग्नि उत्पन्न हुए (भा. ४. १. ६०-६१; वायु. २९; ब्रह्मांड २-५३)।

अग्निपुत्रों के संख्या के बारे में और भी प्रकार दिये हैं (मत्स्य. ५१)। परंतु वस्तुतः यह अग्नि का वंश न हो कर स्वयं अग्नि के विभिन्न स्वरूप हैं (वैश्वानर देखिये)।

ऋग्वेदके एक सूक्त का दृष्टा अग्नि बताया गया है (ऋ. १०.१२४) (माधातृ और नीलध्वज देखिये)।

७. आंगे होने वाले इन्द्रसावर्णि मन्वन्तर के सप्तार्षियों में से एक।

अग्नि-और्व—यह भार्गव था (ऋचीक तथा और्व देखिये)।

अग्नि गृहपति सहस्पुत्र—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१०२)।

अग्नि चाशुष्—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९. १०६. १-३; १०-१४)।

अग्नि तापस—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १४१)।

अग्नि शिष्य ऐश्वर—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९. १०९)।

अग्नि पावक—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १४०)।

अग्नि पावक बार्हस्पत्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१०२)।

अग्नि यविष्ट सहःपुत्र—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१०२)।

अग्नि वैश्वानर—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.७९-८०)।

इसने सरस्वती नदी से पुरु और उत्तर पांचाल देश जला दिया (श. ब्रा. १. ४.१०-१९)। यह, वैदिक धर्म का प्रसार कैसा हुआ, इसका प्रतीकात्मक वर्णन होगा।

अग्नि शार्मायण—कश्यप गोत्री ऋषिगण।

अग्नि सौचिक—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.५.१.२, ४, ६, ८, ५२; ५३.४-९-७-९०)।

अग्निकेतु—रावणपक्षीय राक्षस। राम के द्वारा युद्ध में यह मारा गया (वा. रा. यु. ४३.२९)।

अग्निजिह्व—अंगिरागोत्री ऋषि।

अग्नितेज—धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तार्षियों में से एक।

अग्निप—वेदनिधि नामक ब्राह्मण का पुत्र। एक बार प्रमोदिनी, सुशीला, सुस्वरा, सुतारा तथा चन्द्रिका नामक गंधर्वकन्या इसपर मोहित हो कर, उन्होंने इसे अपने साथ विवाह करने के लिये कहा। परंतु ब्रह्मचारी होने के कारण इसने यह अमान्य किया। अन्त में क्रोधित हो कर इन्होंने परस्पर को पिशाच होने का शाप दिया। बाद में, इसके पिता ने इसकी मुक्ति के लिये लोमश मुनि की प्रार्थना की। तब लोमश के कथनानुसार, सब पिशाचों ने (छैः) प्रयागतीर्थ में स्नान करने से पूर्वयोनि प्राप्त की। अन्त में लोमश की आज्ञानुसार, इसने उन

पांचों गन्धर्वकन्याओं से विवाह किया तथा पितासमवेत अलकापुरी में रहने लगा (पद्म. उ. १२८-१२९)।

अग्निवाहु—मौल्य मन्वन्तर के सप्तार्षियों में से एक।

२. मौल्य मनु का पुत्र।

३. स्वायंभुव मनु का पुत्र।

अग्निभाव—अमिताभ देवगणों में से एक।

अग्निभू काश्यप—इन्द्रभू काश्यप का शिष्य (वं. ब्रा. २)।

अग्निमातर—वाष्कल का शिष्य। वाष्कल ने इसको ऋग्वेद की एक संहिता सिलाई। भागवत के अनुसार अग्निमित्र तथा ब्रह्माण्ड के अनुसार अग्निमातर पाठभेद है। (व्यास देखिये)

अग्निमातर—(अग्निमातर देखिये)।

अग्निमित्र—स्वायंभुव मनु का पुत्र।

२. अग्निमातर देखिये

३. शुंगराजाओं का प्रथम राजा। यह मौर्यराजाओं का अन्तिम राजा बृहद्रथ के बाद, सिंहासन पर बैठा (शुंग देखिये)।

अग्निभूत स्थौर - (अग्निभूत देखिये)।

अग्निभूत स्थौर—यह एक सूक्त का द्रष्टा है। अग्निभूत पाठभेद भी है (ऋ. १०.११६)।

अग्निवर्चस्—व्यास के पुराणशिष्यपरंपरा का शिष्य। विष्णु, ब्रह्मांड तथा वायु के मत से रोमहर्षण का शिष्य।

अग्निवर्ण—(सू. इ.) सुदर्शन राजा का पुत्र।

अग्निवेश—शिवावतार शूलिन् का शिष्य।

अग्निवेश्य—अंगिरागोत्री ऋषि।

२. (सू. नरिष्यन्त.) देवदत्त का पुत्र। इसे जातुकर्ष्य तथा कानीन ऐसे नामान्तर हैं। यह तपद्वारा ब्राह्मण बना था। इस कारण, इसके द्वारा उत्पन्न संतति को, अग्नि-वेश्यायन नाम प्राप्त हुआ (भा. ९. २. २३)।

३. अगस्त्य ऋषी का एक शिष्य (म. आ. १२२.२४)। द्रुपद तथा द्रोणाचार्य ने इसके पास से धनुर्वेद की शिक्षा तथा ब्रह्मशिर अस्त्र प्राप्त किया। यह पांडवों के समागम में कुछ काल तक द्वैतवन में था। यह द्रोणाचार्य का पितृव्य तथा भारद्वाज का छोटा भाई (म. आ. १२२. २४)।

अग्निरुधुत् अथवा **अग्निष्टोम**—चक्षुर्मनु का नड्वला से प्राप्त पुत्र।

अग्निष्वात्त—एक पितृगण। ब्रह्मदेव अपनी मानस-कन्या सन्ध्या को देव कर काममोहित हुए। उस समय

उनके धर्म से यह उत्पन्न हुआ। इनकी संख्या चौसठ हजार है। ये नित्य मनोविग्रह कर के वैराग्य से रहते हैं (कालि. २)। ये काश्यपपुत्र हैं तथा देवों को पूज्य हैं (म. १४-१५; ह. वं. १)। इनकी पत्नी स्वधा (भा. ४.१)।

अग्निहोत्र—सविता तथा पृथ्वी का पुत्र (भा. ६.१८१)।

अग्नीध्र—स्वायंभुव मनु का पुत्र (आग्नीध्र देखिये)।

२. मौल्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. मौल्य मनु का पुत्र। (आग्नीध्र देखिये)।

अग्नीध्रक—रुद्रसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अग्रयाचिन्—(सो.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

अग्र—कंस का अनुचर। यह बकासुर तथा पूतना राक्षसी का भ्राता था। कंस ने इसे गोकुल में कृष्ण तथा बलराम के नाश के लिये भेजा। वहाँ इसने चार योजन लंबा सर्पदेह धारण किया। एवं कृष्ण तथा अन्य गोपों के गोचारण के मार्ग में, अपना शरीर फैला दिया। इसने अपना मुख इतना विस्तीर्ण बना दिया था कि, उसे गुफा समझ कर, गायें चराने के लिये योग्य स्थल समझ कर, गोप समस्त गायों के साथ उसमें प्रविष्ट हो गये। कृष्ण को यह वर्तमान ज्ञात होते ही, वह वहाँ आया तथा इसके मुख में प्रविष्ट हो कर, बड़ा स्वरूप धारण करके इसका मुँह फाड़ दिया। इस कारण इसकी तत्काल मृत्यु हो गई (भा. १०.१२)।

अघमर्षण—(अघमर्षण देखिये)।

अघमर्षण माधुच्छन्दस—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १९०)। विद्वामित्र वंश के गोत्रकार मधुच्छन्द का पुत्र। इसे अघमर्षण भी कहा गया है।

अघोर—हिरण्यक्ष की सेना का एक असुर। इसका वध कार्तिकेय ने किया (पद्म. सु. ७५)।

अंग—(स्वा. उक्ता.) उल्मुल्क को पुष्करणी से उत्पन्न पुत्र। यह अत्रि का वंशज है। इस अर्थ से इसे अत्रि का पुत्र कहा है (पद्म. सु. ८)। ब्रह्माण्ड में इसके माता-पिता के नाम ऊरु तथा पडामेयी दिये गये हैं (ब्रह्माण्ड २.३६-१०८-११०)। यह कृतयुगान्त में प्रजापति था। एक बार स्वर्ग जानेपर, इन्द्र का वैभव देख कर, यह प्रसन्न हो गया तथा इन्द्र के समान वैभवशाली पुत्र की प्राप्ति के हेतु से, इसने विष्णु की उपासना की। तत्र भाग्यवान् पुत्र प्राप्ति के लिये कुलीन कन्या से विवाह करने की सूचना

विष्णु ने इसको दी। इसने यमकन्या सुनीथा से गोषर्ष-विधि से विवाह किया। इससे सुनीथा से वेन नामक पुत्र हुआ (पद्म. सू. ३०-३६)। वह अत्यंत दुष्ट होने के कारण, अंग राजा व्रत हो कर गृहत्याग कर के वन में गया। इसको सुमन्स्, ख्याति, ऋतु, अंगिरस् तथा गय नामक पांच भ्राता थे (भा. ४.१३.१७-१८)।

२. (सो. अनु.) बलि का ज्येष्ठ पुत्र। यह बलि की भार्या मुदेष्णा को दीर्घतम से हुआ। इसे वंग, कर्लिग, पुण्ड्र तथा सुह्र नामक चार भ्राता थे (म. आ. १८.३२. १०.४९; विष्णु ४.१८.१; मत्स्य. ४८.२४-२५; ब्रह्म. १३.२९-३१)। इनके सिवा, इसे आंध्र नामक पांचव भाई था। अंग आदि पांच पुत्रों को बली ने राज्याभिषेक किया था। इसके देशों को भी इन्हीं के नाम प्राप्त हुए (ह. वं. १.३१-३४)। इसका एक पुत्र था। उसका नाम विभिन्न स्थलों में दधिवाहन (मत्स्य. ४८.११; ब्रह्म. १३.३७; ह. वं. १.३१.४३), खनगान (भा. ९.२३. ५) अथवा पार (विष्णु. ४. १८. ३) दिया गया है। अंग राजा के बाद के राजा, अंगवंशीय राजाओं के नाम से प्रसिद्ध हुए (अनुवंश देखिये)। इसने काफी यज्ञ किये। इसका चरित्र नारद ने संजय को बताया (म. द्रो. ५७)। इसका मांघाता ने पराभव किया था (म. शां. २९.८१)।

३. (सो. अनु.) दधिवाहन का पौत्र तथा दिविरथ का पुत्र। जब परशुराम क्षत्रियों का संहार कर रहा था तब इस का गौतम ने गंगा नदी के तट पर संरक्षण किया (म. शां. ४९.७२)।

४. भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय म्लेच्छ राजा। इस का वध भीम ने किया (म. द्रो. २५.१४-१७)।

५. भारतीय युद्ध में नकुल द्वारा मारा गया हुआ म्लेच्छ राजा (म. क. १७.२५-१७)।

६. (सो. भविष्य.) मत्स्य के मत में जनमेजय का पुत्र।

अंग औरव—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१३८)।

अंग वैरोचन—अभिषिक्त राजाओं की सूचि में इस उदार राजा का उल्लेख है। इसके पास उदमय अत्रिय नामक पुरोहीत था (ऐ. ब्रा. ८.२२)।

अंगचूड—कुवेर सभा का एक यक्ष (म. स. १०.१६) हंसचूड पाठ है।

अंगजा—ब्रह्मदेव की कन्या (मत्स्य. ३.१२)।

अंगद—वालि को तारा से उत्पन्न पुत्र। यह राम-चन्द्र की सहायतार्थ, वृहस्पति के अंश से निर्माण हुआ था अतएव भाषण कला में अत्यंत चतुर था। युद्ध में, राम के बाण से आहत हो कर बुराशाही होने पर, अपने पुत्र अंगद की रक्षा करने की प्रार्थना वालि ने राम से की (वा. रा. कि. १८.४९-५३)। रामचन्द्र ने सुग्रीव को किष्किंधा की राजगद्दी पर अभिषिक्त कर तत्काल अंगद को यौवराज्याभिषेक किया (वा. रा. कि. २६)।

वानराधिपति सुग्रीव ने, दक्षिण दिशा की ओर जिन वानरों को सीता की खोज की हेतु भेजा, उनका अंगद नायक था (वा. रा. कि. ४१. ५-६)। सीता की खोज करते समय, पर्वत पर एक बड़े असुर से इस की मुलाकात हुई, तथा उसने अंगद पर आक्रमण किया। उस समय उसे ही रावण समझकर, अंगद ने एक मुक्का उसके मुँह पर मारते ही वह रक्त की उलटी करने लगा तथा भूमी पर निक्षेप गिर गया (वा. रा. कि. ४८. १६-२१)। सीता की खोज में असफल होने के कारण, सब वानरों ने प्रायोपवेशन करने का निश्चय किया। इतने में संघाति ने सीता का पता बताया (वा. रा. कि. ५५-५८)। उसी समय समुद्रो-लंघन कर, कौन कितने समय में पार जा सकता है, इसकी पूछताछ अंगद ने की। अंगद ने कहा कि, एक उडान में वह १०० योजन का अंतर पार कर सकता है (वा. रा. कि. ६५)। अन्त में यह काम हनुमान ने किया। रावण के साथ युद्ध करने के पूर्व, साम की भाषा करने के लिये राम ने अंगद को वकील के नाते भेजा था परंतु उससे कुछ लाभ नहीं हुआ (म. व. २६८; वा. रा. यु. ४१)।

इसने इन्द्रजित के साथ युद्ध कर के उसे जर्जर किया (वा. रा. यु. ४३)। कंपन के साथ युद्ध कर के उसका वध किया (७६)। नरांतक का (६९-७०), महापाश्र्व का (९८) तथा वज्रदंष्ट्र का वध किया (५४)। कुम्भकर्ण के साथ युद्ध करते समय, सब वानर उसका शरीर देख कर भयभीत हो गये। उस समय, वीररसयुक्त भाषण करके, सब वीरों को इसने युद्ध में प्रवृत्त किया (६६)। यह सारा कर्तृत्व ध्यान में रख कर, राज्याभिषेक के समय राम ने इसको ब्राह्मण अर्पण किये (१२८)। सुग्रीव के बाद इसने किष्किंधा पर राज्य किया।

२. दशरथपुत्र लक्ष्मण को उर्मिला से दो पुत्र प्राप्त हुए। उनमें से यह ज्येष्ठ पुत्र है। इसके द्वारा स्थापित नगरी को अंगरीया कहते हैं। वहीं यह राज्य करता था (वा. रा. उ. १०२)।

३. भारतीय युद्ध में पांडवों के विरुद्ध कौरवों को इसने सहायता की थी (म. द्रो. २४-३६)।

अंगराज—इसे पालकाप्य ने हाथियों का वैद्यक-शास्त्र सिखाया था (अग्नि. २९२)।

अंगार—(सो. द्रुह्यु.) मांधाता राजा के साथ इसका बड़ा युद्ध हुआ था (म. शां. २९.८१)। यह युद्ध दस माह तक चलता रहा। इसका अंगारसेतु नाम भी प्राप्त है। (ब्रह्म. १३.१४९)। इसे आरब्ध, आरद्रत्, शरद्रत् तथा अरुद्ध नाम प्राप्त हैं (चंशावलि देखिये)।

अंगारक—मंगल नामक ग्रह। यह पूर्वजन्म का शिवपार्षद वीरभद्र है (मत्स्य. ७१; म. स. ११.२०; मंगल देखिये)।

२. सौवीर देश का एक राजपुत्र (जयद्रथ ३. देखिये)।

३. जयद्रथ का भ्राता (म. व. २४९. १०-१२)।

४. सुरभि तथा कश्यप का पुत्र

अंगारपर्ण—एक गंधर्व। पांडव लाक्षाग्रह से मुक्त हो कर जब गुप्तरूप से रात्रि के समय यात्रा कर रहे थे तब यह कुंभीनसी आदि स्त्रियों के साथ मार्ग की एक नदी में क्रीडा कर रहा था। अर्जुन के साथ इसकी बोलचाल हो कर, अर्जुन का तथा इसका युद्ध हुआ। युद्ध में अर्जुन ने उसको जीत लिया। यह देख कर इसने अर्जुन को सूक्ष्मपदार्थदर्शक चाक्षुणीविद्या प्रदान की, तथा अर्जुन के पास से अग्निशिखास्त्रविद्या स्वयं ली। तदनंतर अर्जुन को इसने कहा कि, वे पुरोहित के विना न घूमें तथा धीम्य ऋषि को पुरोहित बनायें। इतना कह कर यह चला गया। आगे चल कर, इसने अपना पहला नाम छोड़ कर चित्ररथ नाम का स्वीकार किया (म. आ. १५८.४२; १७४.२)।

अंगिरस्—एक ऋषि। यह वज्रकुलोत्पन्न था (ऋ. १. ५१.४. सायण.)। इसका मनु, ययाति (ऋ. १.३१.१७) तथा भृगु के साथ उल्लेख है (ऋ. ८.४३.१३)। यहाँ यह, इन लोगों के समान मैं भी अग्नि को बुला रहा हूँ ऐसा कहता है तथा इतरों के समान अंगिरसों को भी प्राचीन समझता है। इध्यच्, प्रियमेध, कण्व तथा अत्रि के साथ भी इसका उल्लेख मिलता है (ऋ. १.१३९.९)। अंगिरस के सत्र में इन्द्र ने सरमा को भेजा (ऋ. १.६२.३)। उसी प्रकार अंगिरस के द्वारा सत्र करते समय, वहाँ नाभाने-दिष्ट मानव, सत्र में लेने के लिये प्रार्थना कर रहे हैं (ऋ. १०.६२.१-६)। अन्य वैदिक ग्रन्थों में भी नाभाने-दिष्ट का अंगिरस के साथ संबंध है (ऐ. ब्रा. ५.१४;

तै. सं. ३.१.९.४)। अग्नि को अंगिरस नाम दिया गया है (ऋ. १.१.६)।

अग्नि को प्रथम अंगिरा ने उत्पन्न किया। अंगिरस सुधन्वा का निर्देश है (ऋ. १.२०.१)। बृहस्पति अंगिरा का पुत्र था (ऋ. १०.६७)। अंगिरसों ने देवताओं को प्रसन्न कर के एक गाय मांगी। देवताओं ने कामधेनु की परन्तु इन्हें दोहन नहीं आता था। अतएव इन्होंने अर्यमन् की प्रार्थना की तथा उसकी सहायता से दोहन किया (ऋ. १.१३९.७)। अंगिरस तथा आदित्यों में स्वर्ग में सर्वप्रथम कौन पहुँचता है, इसके बारे में शर्यत हुई। वह शर्यत आदित्यों ने जीती तथा अंगिरस साठ वर्षों के बाद पहुँचा ऐसा उल्लेख अंगिरसामयन बताते समय आया है (ऐ. ब्रा. ४.१७)। ब्रह्मचर्य में प्रयुक्त अंगिरा शब्द, हमारे पितरों का वाचक है तथा ये हमारे पितर हैं ऐसा भी निर्देश है (ऋ. १. ६२. २; १०.१४.६)। यहाँ इसे नवम्ब, भृगु तथा अथर्वन् भी कहा गया है। अंगिरसों ने इन्द्र की स्तुति कर के संसार का अंधकार दूर किया (ऋ. १.६२.५)। (अथर्वंगिरस देखिये)।

यह अग्नि से उत्पन्न हुआ अतएव इसे अंगिरस कहते हैं (नि. ३.१७)।

अंगिरस के पुत्र अग्नि से उत्पन्न हुए (ऋ. १०.६२.५)। अंगिरस प्रथम मनुष्य थे। बाद में देवता बने तथा उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ (ऋ. ४.४.१३)। अंगिरस दिवस्पुत्र बनने की इच्छा कर रहे थे (ऋ. ४.२.१५)। अंगिरसों को प्रथम वाणी का ज्ञान प्राप्त हुआ तदनंतर छंद का ज्ञान हुआ (ऋ. ४.२.१६)। ऋग्वेद के नवम मंडल के सूक्त, अंगिरस कुल के द्रष्टाओं के हैं। ब्रह्मविद्या किसने किसे सिखाई, यह बताते समय, ब्रह्मन्-अथर्वन्-अंगिरस - सत्यवह - भारद्वाज - आंगिरस-शौनक ऐसा क्रम दिया है (मुं. उ. १.१.२-३; ३.२.११)। अंगिरस का पुराने तत्त्वज्ञानियों में उल्लेख है (शि. उ. १)। कुछ उपासनामंत्रों को अंगिरस नाम प्राप्त हुआ है (छां. उ. १.२.१०; नृमिं. ५.९.)। यह शब्द पिप्पलाद को कुलनाम के समान लगाया गया है (ब्रह्मोप. १)। अथर्ववेद के पांच कल्पों में से एक कल्प का नाम अंगिरसकल्प है। कौशिकसूत्र के मुख्य आचार्यों में इसका नाम है। आत्मोपनिषद् में अंगिरस ने शरीर, आत्मा तथा प्रवात्मा के संबंध में, जानकारी बताई है (१)। अंगिरस कुल के लोग सिरपर पांच शिखायें रखते थे (कर्मप्रदीप)।

अंगिरस मंत्रकार था। परंतु अंगिरस के नामपर मंत्र न हो कर, अंगिरस कुल के लोगों के मंत्र हैं।

यह स्वायंभुव मन्वन्तर में, ब्रह्मा के सिर से उत्पन्न हुआ। यह ब्रह्मिष्ठ, तपस्वी, योगी तथा धार्मिक था (ब्रह्माण्ड. २. ९. २३)। तथापि स्वायंभुव की संतति की वृद्धि न हुई। इस लिये ब्रह्मा ने स्त्रीसंतति उत्पन्न की। दक्ष की कन्या स्मृति इसकी पत्नी बनी। इसको स्मृति से सिनीवाली, कुहू, राका तथा अनुमति नामक चार कन्यायें तथा भारताभि एवं कीर्तिमत् नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए (ब्रह्माण्ड. १.११.१७)। वैवस्वत मन्वन्तर में, शंकर के वर से यह पुनः उत्पन्न हुआ। यह ब्रह्मदेव का मानस पुत्र था। यह ब्रह्मदेव के मुख से निर्माण हुआ। इसे पैतामहर्षि कहते हैं। यह प्रजापति था। अग्नि ने पुत्र के समान इसका स्वीकार किया था, इसलिये इसे आग्नेय नाम भी प्राप्त है। अग्नि जब क्रुद्ध हो कर तप करने गया तब यह स्वयं अग्नि बना। तप से अग्नि का तेज कम हो गया। तब वह इसके पास आया। इसने उसे पूर्ववत् अग्नि बन कर, अंधकार का नाश करने को कहा। इसने अग्नि से पुत्र मांगा। वही बृहस्पति है (मत्स्य २१७-२१८)। इसके नाम की उपपत्ति अनेक प्रकारों से लगायी जाती है (मत्स्य १९५.९; बृहदे. ५.९८; ब्रह्माण्ड. ३. १.४१)। ब्रह्मदेव ने संतति के लिये, अग्नि में रेत का हवन किया; ऐसी भी कथा है (वायु. ६५.४०)।

दक्षकन्या स्मृति इसकी पत्नी (विष्णु. १. ७)। चाक्षुष मन्वन्तर के दक्षप्रजापति ने, अपनी कन्या स्वधा तथा सती इसे दी थी। प्रथम पत्नी स्वधा को पितर हुए तथा द्वितीय पत्नी सती ने, अथर्वंगिरस का पुत्रभाव से स्वीकार किया (भा. ६.६)। इस श्रद्धा नामक एक पत्नी भी थी (भा. ३.१२.२४; ३.२४.२२)। शिवा (सुभा) नामक एक पत्नी भी इसमें थी (म. व. २१४.३)। सुरूपा मारीची, स्वराट् कार्दमी तथा पथ्या मानवी यह तीन स्त्रियाँ अथर्वन् की बताई गई हैं (ब्रह्माण्ड. ३.१.१०२-१०३; वायु. ६५.९८)। तथापि मत्स्य में सुरूपा मारीची, अंगिरस की ही पत्नी मानी जाती है (मत्स्य. १९६.१)। ये दोनों एक ही माने जाते होंगे। सुरूपा से इसे दस पुत्र हुए। इसने गौतम को तीर्थमाहात्म्य बताया (म. अनु. २५.६९)। इसने पृथ्वीपर्यटन तथा तीर्थयात्राएँ की थीं (म. अनु. १४)। इसने सुदर्शन नामक विद्याधर को द्याप दिया था (भा. ४.१३)। इसका तथा कृष्ण का स्वमेतपंचक क्षेत्र में मिलन हुआ था (भा. १०.८४)। इसको शिवा से

बृहत्कर्ति, बृहत्स्योति, बृहद्ब्रह्मन्, बृहन्मनस्, बृहन्मन्त्र, बृहद्भास तथा बृहस्पति नामक पुत्र तथा मानुमती, रागा (राका), सिनीवाली, अचिष्मती (हविष्मती), महिष्मती, महामती तथा एकानेका (कुहू) नामक सप्त कन्याएं थीं (म. व. २०८)। बृहत्कर्त्यादि सब बृहस्पति के विशेषण हैं, ऐसा नीलकण्ठ का मत है। इसके अलावा भागवत में सिनीवाली, कुहू, राका तथा अनुमति नामक इसके कन्याओं का उल्लेख है (भा. ४.१.३४)। इसके पुत्र बृहस्पति, उत्थय तथा संवर्त हैं (म. आ. ६०.५; भा. १.२.३६)। इसके अतिरिक्त वयस्य (पयस्य), शांति, शोर, विरूप तथा सुधन्वन् भी इसके पुत्र थे (म. अनु. १३२.४३)।

इसने चित्रकेतु के पुत्र को सजीव करके उस का संतान किया (भा. ६.१५; चित्रकेतु १. देखिये)।

अंगिरस का धर्मशास्त्र—व्यवहार के अतिरिक्त अन्य सब विषयों में इसका उल्लेख पाया जाता है। याज्ञ-वल्क्य ने इसका उल्लेख किया है। अंगिरस के मतानुसार, परिषद् में १२१ ब्राह्मणों का समावेश होता है। (याज्ञ. १.९ विश्व.)। धर्मशास्त्र का अक्लंन करते हुए स्वेच्छा से किसीने अगर कृत्य किया तो वह निष्फल हो जाता है (याज्ञ. १.५०)। शोर पातक से अपराधी माने गये ब्राह्मणों के लिये, वज्र नामक व्रत अंगिरस ने बताया, ऐसा उल्लेख विश्वरूप में पाया जाता है (याज्ञ. ३.२४८)। प्रायश्चित्त के संबंध में, विश्वरूप ने (याज्ञ. ३.२६५) इसके दो श्लोक दिये हैं। इनमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, स्त्रीवध के संबंध में विचार किया गया है। कुछ पशुपक्षियों के वध के संबंध में भी प्रायश्चित्त बताया है (याज्ञ. ३. २६६)। इसी में भगवान् अंगिरस कहकर बड़े गौरव से इसका उल्लेख किया गया है। परिषद् की घटना से संबंधित इसके तेरह श्लोक अपराकं ने (२२-२३) दिये हैं। मिताक्षरा में शंख तथा अंगिरस के सहगमन-संबंध में काफी श्लोक दिये गये हैं (याज्ञ. १.८६)। अपराकं ने (१०९.११२) सहगमन संबंध में, चार श्लोक दिये हैं जिसमें कहा है कि, ब्राह्मण स्त्री को सती नहीं जाना चाहिये। मेधातिथि ने (मनु. ५, १५७) अंगिरस का सती संबंध में यह मत दे कर, उसके प्रति अपनी अमान्यता व्यक्त की है। इसके अशौच संबंध के श्लोक, मिताक्षरादि ग्रंथों में तथा इतरत्र आये हैं। सप्त अंस्यजों के संबंध में, इसका एक श्लोक हरदत्त ने (गौतम २०.१) दिया है। विश्वरूप ने लिखा है कि, सुमन्तु ने अंगिरस का मत ग्राह्य माना है (याज्ञ. ३.२३७)

युद्धिमयूख में अंगिरस ने शातातप का मत ग्राह्य माना है। स्मृतिचन्द्रिका में उपस्मृतियों का उल्लेख करते समय अंगिरस का निर्देश है। वहाँ इसके गद्य अवतरण भी दिये हैं। अंगिरस ने मनु का धर्मशास्त्र श्रेष्ठ माना है (स्मृतिचं. आह्निक)। आनन्दाश्रम में १६८ श्लोकों की, प्रायश्चित्त बताने वाली अंगिरसस्मृति है। उसमें प्रायश्चित्त तथा स्त्री के संबंध में विचार किया गया है। मिताक्षरा में तथा वेदान्त्रियों की स्मृतिरत्नावली में बृहद्अंगिरस दिया है। मिताक्षरा में मध्यम अंगिरस का कई बार उल्लेख आया है।

अंगिरस के देवपुत्र—आत्मा, आयु, ऋत, गविष्ठ, दक्ष, दमन, प्राण, सत्य, सद तथा हविष्मान्।

मुख्य गोत्रकार—अजस (अयस्य), उत्थय, ऋषिज (उपिज), गौतम, बृहस्पति, वामदेव तथा संवर्त।

उपगोत्रकार—अत्रायनि, अभिजित्, अरि, अरुणा-यनि, उत्थय, उपविन्दु, ऐरिडव, कारोटक, कासोरु, केराति, कौशल्य (ग), कौष्टिक, क्रोष्टा, क्षपाविश्वकर, क्षीर, गौतम, तौलेय, पाण्डु, पारिकारारिरेव (पारःकारिररेव), पार्थिव (ग), पौषाजिति (पौष्यजिति), भार्गवत, मूलप, राहुकर्णि (रागकर्णि), रेवाग्नी, रौहिण्यायनि, वाहिनीपति, वैशालि सजीविन्, सलौगाक्षि, सामलोमकि, साधनेमि, सुरैपिण, सोम तथा सौपुरि, ये सब उपगोत्रकार अंगिरा, उशिज, सुवचोतथ्य इन तीन प्रवरों के हैं।

अग्निवेश्य, आत्रेयायणि, आपस्तवि, आश्रलायनि, उडुपति, एकेपि, कारकि (काचापि), कौचकि, कौक्षेत्रि, कौक्षपति, गांगोदधि, गोमेदाधिक, जैस्यद्रौणि, जैह्वलायनि, तृणकर्णि, देवरारि, देवस्थानि, द्यास्वयेय, धमति, (भूनि), नायकि, पुष्पान्वेषि, पैल, प्रसु, प्रावहि, प्रात्रेषि, फलाहार, बर्हिसादिन्, बाष्कलि, बालडि, बालिशायनि, ब्रह्मतन्वि (ब्रह्म तथा तवि), मत्स्याच्छाद्य, महाकपि, महातेज (ग), मारुत, मार्षिपिगलि, मूलहर, मौजवृद्धि, वाराहि, शालकायनि, शिलाग्रीविन्, शिल्स्थलिसरिद्भवि सायसुग्रीवि, सालडि (भाळुडिवाळुडि), सोमतन्वि (सोम तथा तवि), सौटि, सौवेष्टय तथा हरिकर्णि ये सब उपगोत्रकार अंगिरा बृहस्पति तथा भरद्वाज इन तीन प्रवरों के हैं।

काण्वायन (ग), कोपचय (ग), क्रोष्टाक्षिन्, गाधिन्, गार्ग्य, चक्रिन्, तालकृत, नालविद, पौलकायनि, बलाकिन् (बालकिन्), बहुग्रीविन्, भाष्टकृत, मथुरावह, मार्कटि, राष्ट्रपिण्डन, लावकृत, लेन्द्राणि, वात्स्यतरायण, श्यामा-यनि, सायकायनि, साहरि तथा स्कंदस, ये सब उपगोत्रकार

अंगिरा, गर्ग, बृहस्पति, भरद्वाज तथा सैत्य इन पांच प्रवरों के हैं ।

उरुक्षय, उर्व, कपीतर, कलशिकंठ, काट्य, कारीरथ, कुलीदकि, जलसंधि, दाक्षि, देवमति, धान्यायनि, पतञ्जलि, बिंदु, भरद्वाजि, भावास्थायनि, भूयसि, मदि, राजकेशिन्, लखिन्वौषडि, शंसपि, शक्ति, शालि, सोबुधि, व स्वस्तितर, ये सब उपगोत्रकार अंगिरा, उरुक्षय तथा दमवाह्य इन तीन प्रवरों के हैं ।

अनेह (अनेहि), आपिणि (आपिणि), गार्ग्यहरि (गर्गिहर), गालव (गालवि), गौरवीति, चेनातकि, तंडि, तैलक, त्रिमाह्दिक्ष, नारायणि (परस्परायणि), मनु, संकृति तथा संबधि, ये सब उपगोत्रकार अंगिरा, गौरवीति तथा संकृति इन तीन प्रवरों के हैं ।

कात्यायनि, कुपेराणि, कौत्स, पिंग, भीमवेग, माद्रि, मौलि, वात्स्यायनि, शाश्वरभि, हृदिदास तथा हरितक, ये सब उपगोत्रकार अंगिरा, जीवनाश्र (युवनाश्र) तथा बृहदश्र इन तीन प्रवरों के हैं ।

बृहदुकथ तथा वामदेव, ये उपगोत्रकार अंगिरा, बृहदुकथ तथा वामदेव इन तीन प्रवरों के हैं ।

अंगिरा, पुरुकुत्स तथा सदस्यु ये तीन प्रवर कुत्सां के हैं ।

अंगिरा, विरूप, रथीतर ये तीन प्रवर रथीतरों के हैं ।

कर्त्तण (कर्म्मिण), जतुण, पुत्र तथा विष्णुसिद्धि, वैरपरायण तथा शिवमति ये उपगोत्रकार अंगिरा, विरूप तथा वृषपर्व इन तीन प्रवरों के हैं ।

तंकि, मुद्रल, सात्यमुषि तथा हिरण्य इन उपगोत्रकारों के प्रवर अंगिरा, मत्स्यदग्ध तथा मुद्रगल ।

अमिजिह्व, अपामेय, अश्वयु, देवजिह्व, परण्यस्त (ग), विमौद्रल, विराड्प (विडालज) तथा हंसजिह्व इनके प्रवर अंगिरा, तांडि तथा मौद्गल्य ।

अपांडु, कट्ट (कंकट), गुरु, नाडायन, नारिन्, प्रागावस (प्रागाथम), मरण (मरणाचन), मर्कटप (कटक), मार्कंड (मार्कट), शाकटायन, शिव तथा श्यामायन ये उपगोत्रकार अंगिरा, अजमीढ तथा काट्य इन तीन प्रवरों के हैं ।

कपिभू, गार्ग्य तथा तित्तिरि ये अंगिरा, कपिभू तथा तित्तिरि इन प्रवरों के हैं ।

ऋक्ष, ऋषिर्मित्रवर, ऋषिवाग्मानव, भरद्वाज ये सब अंगिरा, ऋषिर्मित्रवर, ऋषिवाग्मानव, भरद्वाज तथा बृहस्पति इन पांच प्रवरों के हैं ।

भारद्वाज, शैशिरेय, शीमा तथा हुत, ये उपगोत्रकार अंगिरा, बृहस्पति, भारद्वाज, मौद्गल्य तथा शैशिर इन पांच प्रवरों के हैं (मत्स्य. १९६) ।

अंगिरस वंश—(इसे अथर्वन् वंश भी कहा जाता है) ।

पथ्या—धृष्णि—सुधन्वन्—ऋषभ ।

सुरूपा—१ आधासि, २ आयु, ३ मृत, ४ दनु, ५ दक्ष, ६ प्राण, ७ बृहस्पति—भारद्वाज, ८ सत्य, ९ हविष्य १० हविष्णु ।

स्वराट्—१ अयास्य का कितव, २ उतथ्य का शरद्वान, ३ उशिज का दीर्घतपस्, ४ गौतम, वामदेव तथा वामदेव का बृहदुकथ ।

इनके अन्य भेद

अयास्य, आर्षभ, उतथ्य, उशिज, कण्व, कपि, - कितव, गर्ग, भारद्वाज, भरद्वाज, मुद्रगल, रथीतर, रूक्ष, विष्णुवृद्ध, सांकृति, हरित (ब्रह्माण्ड. ३. १. १०४-११२) ।

अंगिरस गोत्रीय मंत्रकार

वायु. ५९.९८-१०२;—अंगिरस, अजमीढ, अंबरीष, अमृत, आयाप्य, आहार्य्य, उतथ्य, ऋषभ, औगज, कक्षीवान्, कण्व, गार्ग्य, त्रसदस्यु, दीर्घतमस्, पुरुकुत्स, पृषदश्र, पौरुकुत्स, बलि, बाष्कलि, बृहदुकथ, भरद्वाज, भारद्वाज, मांधाता, मुद्रल, युवनाश्र, वाजश्रवस्, वामदेव, विरूप, वेधस, शेनी, संकृति, सदस्युमान्, सुविति ।

मत्स्य. १४५.१०१-१०५;—अंगिरस, अजमीढ, अपस्यौष, अंबरीष, अस्वहार्य्य, उकूल, उतथ्य, ऋषिज, कक्षीवान्, कवि, काव्य, कृतवाच्, गर्ग, गुरुवीत, त्रित, दीर्घतमस्, पुरुकुत्स, पृषदश्र, बृहत्, भरद्वाज, मांधाता, मुद्रल, युवनाश्र, लक्ष्मण, वाजिश्रव, वामदेव, विरूप, वैद्यग, शरद्वान्, शुक्ल, स्मृति संकृति, सदस्यवान्, सुचित्ति, स्वश्रव ।

ब्रह्माण्ड. २. ३२-१०७-१११;—अंगिरस, अजमीढ, अंबरीष, अयास्य, आहार्य्य, उतथ्य, असिज, कक्षीवान्, कण्व, कपि, कृतवाच्, गर्ग, चक्रवती, तुष्य, त्रसदस्यु, दीर्घतमस्, पुरुकुत्स, पौरुकुत्स, बाष्कलि, बृहदुकथ, भरद्वाज, मांधाता, मुद्रल, युवनाश्र, वाजश्रवस्, वामदेव, विरूपाक्ष, वृषादमं, शिनि, संकृति, दस्युमान्, सनद्वाज ।

(अंगिरस तथा वसुतोचिप् देखिये) ।

२. उत्तानपादवंशीय उरुमुक को पुष्करिणी से उत्पन्न पुत्र ।

३. श्रावण माह के इन्द्र नामक सूर्य के साथ धूमने-वाला ऋषि (भा. ४. १३; ह. वं. १. १८)।

४. एक पितृगण।

अचल—शकुनि का भाई यह युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में था (म. स. ३१. ७)। यह महाभारत के युद्ध में अर्जुन के हाथ से मारा गया (म. द्रो. २९. ११-१२)। यह एकरथ था (म. उ. १६५. १; शकुनि देखिये)।

२. (सो. वसुदेव.) वायु के मतानुसार वसुदेव का मदिरा से उत्पन्न पुत्र।

३. (मगध. भविष्य.) मत्स्य के मतानुसार महीनेत्र का पुत्र।

अच्छावाक् क्रतु—ब्रह्मदेव के पुत्र तीर्थ के यज्ञ का होतृगणों का एक ऋत्विज (पद्म. सू. ३४)।

अच्छोदा—बर्हिषद पितरों की मानसकन्या। अग्नि-ष्वात् पितरों की कन्या (ह. वं. १.१८. २६-२७)। इससे अच्छोद सरोवर बना। इसने अनजाने पितरों में से अमावसु को वरण किया; इसलिये यह योगभ्रष्ट हुई तथा द्रापारयुग में अमावसु की कन्या हुई (ब्रह्माण्ड. ३. १०. ५४-६४, म. आ. ७; परि. १०. ३४. पंक्ति १४, २५; मत्स्य. १४. ३-७)। अग्नि चल कर यही सत्यवती हुई।

अच्युत—विभिदुकीयों ने किये सत्र में यह प्रतिहर्ता का काम करता था (जै. ब्रा. ३. २२३)।

अज—(सू. इ.) राजा रघु का पुत्र तथा दशरथ का पिता। पद्मपुराण में रघु का चौथ तथा दिलीप द्वितीय का पुत्र (पद्म. ८)। अजा अर्थात् बकरी पालने के कारण, इसे अज नामांतर प्राप्त हुआ। इसने भैरवी का पूजन कर के सुख और ऐश्वर्य प्राप्त किया। उस भैरवी को अजातपालेश्वरी कहने लगे (स्कंद. ७. १. ५८)। इसका पुत्र दीर्घबाहु तथा उसका पुत्र दशरथ (पद्म. सू. ८)।

२. प्रतिहर्ता को स्तुती से उत्पन्न दो पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र। इसका भाई भूमन् (भा. ५. १५. ५)।

३. (सू. निमि.) ऊर्ध्वकेतु जनक का पुत्र तथा पुरुजित् जनक का पिता।

४. (सो. पुरुवरसू.) विजयकुल में बलाकाश्व राजा का पुत्र। इसका पुत्र कुश अथवा कुशिक।

५. पांडव पक्षीय एक महारथी (म. उ. १६८. १२)।

६. दाशराज युद्ध में सुदास का शत्रु (ऋ. ७. १८. १९)।

७. सुरभि तथा कश्यप का पुत्र।

८. उत्तम मनु का पुत्र।

९. एक ऋषि। इसके कुल में धनंजय, कपर्देय, परिकृत तथा पाणिनि ऋषि हुए (विश्वामित्र देखिये)।

१०. तुषित देवगणों में से एक।

११. इसकी लड़की पृथ्वि (जंतुधना तथा शंड देखिये)।

१२. धर्म तथा सुहृता का पुत्र।

अज एकपाद्—यह अग्नि है। दुर्गाचार्य इसका अर्थ 'सूर्य' ऐसा लेते हैं (नि. १२. २९)। इसका निवासस्थान स्वर्ग है (नि. ५. ६)। इसे पेयनियक दिया जाता है (पा. गृ. २. १५. २)। यह एकाग्र रुद्रों में से एक है।

अजक—दनुपुत्र दानव (स्कंद. ३. २. ८)।

२. (सो. अमा.) बलाकाश्व का पुत्र। इसका पुत्र कुश अथवा कुशिक। भागवत तथा वायुमत में सुहोत्रपुत्र तथा विष्णुमत में यह सुजंतु का पुत्र है।

३. (सू. इ.) मत्स्य मत में दिलीप का पुत्र। यह नाम अज के लिये आया है।

४. (प्रद्योत. भविष्य.) विशाखयूया का पुत्र।

अजकर्ण—मय और रंभा का पुत्र।

अजगंधा—कश्यप तथा सुनि की कन्या। यह अप्सरा थी।

अजन—तेरह सैहिकेयों में से एक असुर (सैहिकेय देखिये)।

अजब—वायु तथा ब्रह्मांड मत में व्यास के सामशिष्य परंपरा का हिरण्यनाभ का शिष्य (व्यास देखिये)।

अजविंदु—सौवीर देश का राजा। लोभ के कारण इसका नाश हुआ (कौ. अ. ६)।

अजमीढ—(सो. पुरु.) विकुंठन तथा दाशार्ही सुदेवा का पुत्र। उस को कैकेयी, नागा, गांधारी, विमला तथा ऋक्षा आदि पत्नीयों थी। इसको २४०० पुत्र हुए। उन में वंश चलाने वाला संवरण था। संवरण वैवस्वती तपती का पुत्र कुश। (म. आ. ९०. ३८-४०)।

२. (सो. पुरु.) सुहोत्र और ऐश्वर्या का ज्येष्ठ पुत्र। इसकी पत्नी के नाम धूमिनी, नीली और केशिनी। धूमिनी का ऋक्ष, नीली के दुःश्रुत तथा परमेष्ठिन, केशिनी के जहु, जन तथा रूपिन् ऐसे पुत्र थे। ये सब पांचाल थे (म. आ. ८९. २६-२९)।

वायुमें हस्ति के तीन पुत्रों में इसे ज्येष्ठ कहा है। इसकी नीलिनी, धूमिनी और केशिनी तीन पत्नियाँ थीं। इसका वंश चलाने वाले तीन पुत्र थे। उनके नाम ऋक्ष, बृहद्विषु (बृहद्वसु) और नील। बृहद्विषु से अजमीढ वंश प्रारंभ होता है। (वायु. ९९. १७०)

अजमीढ से, पांचाल देश में, पांचालवंशीय पुरुवंश का स्वतंत्र राज आरंभ हुआ। इस कारण इस वंश का नाम अजमीढवंश हो गया। पांचाल के दो भाग हुए। दक्षिण पांचाल तथा उत्तर पांचाल। दक्षिण पांचाल में अजमीढ-पुत्र बृहद्विपु तथा उत्तर पांचाल में अजमीढपुत्र नील राज करने लगे।

बृहद्विपु से मल्लाटपुत्र जनमेजय तक के वंश का उल्लेख, अनेक पुराणों में मिलता है। इस में प्रायः बीस पुरुष हैं।

जनमेजय के पश्चात्, उत्तर पांचाल का नीलवंशीय पृषत्पुत्र राजा द्रुपद, दक्षिण पांचाल का शासक बन गया। द्रुपद की कन्या द्रौपदी, पांडवों की पत्नी थी तथा पुत्र धृष्टद्युम्न, भारतीय युद्ध में पांडवों का सेनापति था।

भारतीय युद्ध के लिये, द्रुपद ही पांडव पक्ष का प्रधान तथा कुशल नियोजक माना जाता है।

दक्षिण पांचाल की राजधानी कांपिल्य थी तथा उत्तर पांचाल की राजधानी अहिच्छत्र। नीलवंशीय पृषत्पुत्र द्रुपद के समय दोनों पांचाल राज एकत्रित हुए।

द्रोण तथा द्रुपद के युद्ध के पश्चात्, उत्तरपांचाल का अधिपति द्रोण हो गया।

भारतीय युद्ध के पश्चात्, पांचाल राज का नाम कहीं नहीं मिलता।

मूलतः क्षत्रिय होते हुए भी आगे चल कर, इस वंश के लोग ब्राह्मण हुए (वायु. ११. ११६)

अजमीढ, अंगिरा गोत्र में प्रवर और मंत्रकार है (ऋ. ४. ४३-४४)।

अजमीहल सौहोत्र—सूक्तद्रष्टा। ऋग्वेद में इसके दो सूक्त हैं (ऋ. ४. ४३-४४)। आजमीहलासः ऐसा मंत्र में निर्देश है (ऋ. ४. ४४. ६)। पौराणिक उच्चार अजमीढ है।

अजमीह—अजमीढ का नामान्तर।

अजय—(शिष्ट. भविष्य.) भागवतमतानुसार दर्भक का पुत्र।

अजस्य—अंगिराकुल का गोत्रकार। अजस्य पाट भी प्रचलित है।

अजात—(सो. विदूरथ.) मत्स्यमतानुसार हृदीक का पुत्र।

अजातशत्रु—युधिष्ठिर का नामान्तर (भा. १. ८. ५; म. भी. ८१. १७)।

२. (शिष्ट. भविष्य.) ब्रह्मांडमतानुसार विधिसार राजा का पुत्र। विष्णुमतानुसार विंदुसार का, मत्स्यमतानुसार भूमिमित्र का तथा वायुमतानुसार क्षेमवर्मन् का पुत्र।

अजातशत्रु काश्यप अथवा **अजातरिपु**—काशी का राजा। काश्यप बालाकी नामक अभिमानी ब्राह्मण को इसने वादविवाद में हराया (बृ. उ. २. १. १; कौ. उ. ४. १)।

अजामिल—कान्यकुब्ज देश का एक ब्राह्मण। यह प्रथम सदाचारी था। परन्तु बाद में किसी वेश्या के मोह में फँसकर, इसने बृद्ध मातापिता तथा विवाहिता पत्नी का भी त्याग कर दिया। राहगीरों को लूटना, शूत खेलना, भोखा देना तथा चोरी करना इ. साधनों से यह चरितार्थ चलाता था। इस प्रकार इसने अष्टधासी वर्ष बिताये। इस वेश्या से इसे दस पुत्र हुए। उनमें से सबसे छोटे नारायण पर इसकी अधिक प्रीति थी। मरणसमय आने पर यह उसी को पुकारता रहा। केवल नामस्मरण के माहात्म्य से यमदूतों के हाथों से विष्णुदूतों ने इसे मुक्त किया। तत्र विष्णुदूत तथा यमदूतों का वार्तालाप इसने सुना। यमदूतों द्वारा कथित, वेदप्रतिषेधित गुणाश्रित धर्म तथा विष्णुदूतों द्वारा प्रतिपादित शुद्ध भागवतधर्म सुन कर इसे कृतकर्म का पश्चात्ताप हुआ तथा हरि के प्रति भक्ति इसके मन में उत्पन्न हुई। अन्त में विरक्त हो कर, यह हरिद्वार को गया तथा गंगा में देहत्याग कर के मुक्त हो गया (भा. ६. १-२)।

अजामुखी—लंका के अशोकवन में, सीता के संरक्षण के लिये नियुक्त राक्षसियों में से एक (वा. रा. सुं. २४. ४४)।

अजित्—स्वायंभुव मन्वन्तर के याम देवताओं में से एक।

२. चाक्षुष मन्वन्तर के वैराग्य तथा संभूति से उत्पन्न विष्णु का अवतार (मनु देखिये)।

३. भौत्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अजित—पृथुक देवों में से एक।

अजिन—ऊरु को षड्गनेयी से प्राप्त पुत्र।

अजिर—सर्प सत्र में यह सुब्रह्मण्य नामक ऋत्विज का कार्य करता था (पं. वा. २५. १५)।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर के जिदाजित् देवों में से एक।

अजिह—पारावत देवों में से एक।

अजिह्वका—अशोकवन की एक राक्षसी (म. व. २६४. ४४)।

अजीमर्त सौयवसि—भृगुकुलोत्पन्न एक ब्राह्मण। इसे युनःपुत्र, युनःशेष तथा युनोलंगूल नामक तीन पुत्र थे। युनःशेष को इसने वरुण को बलि देने के लिये, हरिश्चन्द्र को वेच दिया था (ऐ. ब्रा. ७. १५-५७)। (अम्बरीष तथा ऋचीक देखिये)

अजेय—पारावत तथा विदुष्ट देवताओं में से एक।

अजैकपात्—भूत ऋषिको घोरा से उत्पन्न एक रुद्र। २. एक अग्नि, यह रुद्र भी था। (अज एकपाद् देखिये)।

अजैकपाल—शंकर के प्रसाद में प्राप्त पुत्र। इसका एक पैर मनुष्य का तथा दूसरा बकरे का था। बचपन में मृत्यु, रोगों के साथ इसे मारने के लिये आया। परंतु इसने मृत्यु को जीत लिया। इस कारण इसे मृत्युञ्जय नाम प्राप्त हुआ। यह अत्यंत सार्विक था (भवि. प्रति. ४. ११)।

अजक—कश्यप को दनु से उत्पन्न एक दानव।

अंजन—(स. निमि.) विष्णु के मत से कृष्णपुत्र।

२. ऐरावण का पुत्र। यह यम का वाहन है (ब्रह्मांड. ३. ७. ३३०)।

अंजनपर्वन्—षटोक्च का पुत्र (म. उ. १९५. १९०. ५९३)। यह रात्रियुद्ध में अश्वत्थामा के हाथों से मारा गया (म. द्रो. १३१. ५३)।

अंजना—यह पूर्वजन्म में पुंजकस्थली नामक अप्सरा थी। शाप के कारण यह पृथ्वी पर कुंजर नामक वानर की कन्या हुई। परंतु अन्य स्थानों पर, इसे गौतम ऋषि की कन्या माना गया है (शिव. शत. २०)। यह केसरी वानर की पत्नी थी (भवि. प्रति. ४. १३)। मत्तंग ऋषि के कहने से अंजनी ने पति के साथ वैकटाचल पर जा कर, पुष्करिणीतीर्थ पर स्नान कर के, वराह तथा वैकटेशों को नमस्कार किया। तदनंतर आकाशगंगातीर्थ पर वायु की आराधना की। १००० वर्षों तक तप होने के बाद वायु प्रगट हुआ, तथा उसने कहा 'चैत्र माह की पौर्णिमा के दिन मैं तुम्हारी कामना पूर्ण करूंगा। तुम वरदान मांगो।' इसने पुत्र मांगा। बाद में वायुप्रसाद से इसे मारुती (हनुमान) उत्पन्न हुआ (स्कन्द. २. ४०)। इसे मार्जरा नामक सौत थी (आ. रा. सार. १३)। इसका अंजनी तथा अंजना दोनों नामों से उल्लेख आता है। यह कामरूपधरा थी (वा. रा. किं. ६६)।

अट्टमान—(आंश्र. भविष्य.) मेघस्वामी का पुत्र।

अट्टहास—वर्तमान मन्वन्तर के बीसवें चौथाने में हिमालय के अट्टहास शिखर पर यह शिव का अवतार हुआ। वहाँ इसे निम्नांकित शिष्य थे—१. सुमन्तु, २. वयैरो, ३. कबंध, ४. कुशिकंधर (शिव. शत. ५)।

अणि मांडव्य—मांडव्य ऋषी का नामान्तर।

अणीचिन्द्र मौन—धार्मिक विधि के संबंध में एक तत्त्वज्ञ तथा जासाल तथा चित्र गौश्रायणि का समकालीन (सं. ब्रा. २३. ५)।

अणुह—(सो. पूर.) विश्राज अथवा पार राजा का पुत्र। इसे नीप नामक दूसरा नाम है। इसकी पत्नी शुक्राचार्य की कन्या कृत्वी अथवा कीर्तिमती। इसे ब्रह्मदत्त तथा अन्य भी सौ पुत्र थे।

अतिकाय—धान्यमालिनी से रावण को प्राप्त पुत्र। इसका शरीर अत्यंत स्थूल होने के कारण, इसे यह नाम मिला। इसने ब्रह्मदेव की आराधना कर के अम्ब, कवच, दिव्य रथ तथा सुरासुरों से अवश्यत्व प्राप्त किया। इसी कारण, इसने इन्द्र का पराभव किया तथा वरुण को जीत कर उससे उसका पाश प्राप्त किया। कुंभकर्ण की मृत्यु के बाद यह युद्धार्थ आया तब लक्ष्मण ने इसका वध किया। (वा. रा. यु. ७१)।

अतिथि—(सू. इ.) कुश का पुत्र। इसका पुत्र निषध। भविष्य के मतानुसार इसने दस हजार वर्षों तक राज्य किया।

२. आद्य देवगणों में से एक।

अतिथिग्व—दिवोदास को इस नाम से संबोधित किया है। इसका संबंध इंद्रोत्, पर्णय, करंज और तुर्वयाण से माना जाता है।

अतिधन्वन्—मशक का शिष्य। इसका शिष्य उदर शांडिल्य (वं. ब्रा. २)। इसने उदरशांडिल्य को उद्गीथ की उपासना के बारे में जानकारी बताई (छं. उ. १.९.३)।

अतिनामन्—चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अतिबाहु—स्वायंभुव मनु का पुत्र (मनु देखिये)।

२. कश्यप को प्राधा से उत्पन्न एक गंधर्व।

अतिभानु—सत्यभामा तथा कृष्ण का पुत्र।

अतिभूति—(स. दिष्ट.) विष्णु के मत में यह खनिनेत्र का पुत्र है।

अतिरथ—(सो. पूर.) मतिनार का पुत्र (म. आ. ८९. ११)।

अतिरात्र— चक्षुर्मनु का पुत्र (मनु देखिये)।

अतिसाम एतुरेत— प्राणविया की रक्षा करने वाले तत्त्वज्ञानियों में से एक मान कर इसे नमन किया गया है (जै. उ. ब्रा. २६.१५)।

अनुलविक्रम— (सू. इ.) भविष्य के मतानुसार कोषदान का पुत्र।

अन्यहृत् आरुणि— दक्ष दृष्ट्यापति के पास सावित्राग्नि के शारे में प्रश्न करने के लिये इसने अपना शिष्य भेजा था। परंतु उस शिष्य की उसने काफी निर्भरसना की (तै. ब्रा. ३.१०.९.३-५)।

अत्यराति जानंतपि— एक पृथ्वीनेता। राजा न होते हुए भी, वासिष्ठ सात्यहृद्य ने इसे ऐन्द्र महामिपेक किया। इस कारण, इसने सारी पृथ्वी जीती। वासिष्ठ सात्यहृद्य ने जब पौरोहित्य का स्मरण दिला कर उसके लिये पुरस्कार मांगा, तब इसने कहा कि, “उत्तर कुरुओं को जीतने के बाद संपूर्ण पृथ्वी का राज्य आपको दे कर मैं आपका सेनापति बनूंगा”। इस पर सात्यहृद्य ने कहा, “तुमने मुझको धोखा दिया। क्यों कि मानव उत्तर कुरुओं को नहीं जीत सकते।” तदनंतर सात्यहृद्य ने इसे हतबल किया तथा शिविराज का पुत्र अमित्रतपन शुष्मिण शैव्य के द्वारा इसका वध करवाया (ऐ. ब्रा. ८.२३)। क्षत्रिय ने ब्राह्मण के साथ द्रोह नहीं करना चाहिये, इस लिये यह कथा बताई गई है।

अत्रायनि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

अत्रि—एक सूक्तद्रष्टा। ऋग्वेद में अत्रि की एक कथा का बार बार उल्लेख आता है। इसे अत्यधिक ताप हो रहा था तब अधिनों ने इसे शांत किया (ऋ. १. ११२.७)। इसे कुल कारणवश कारागृहवास करना पड़ा था। इसके कारागृहवास का कारण था, जनता का पक्ष लेकर राजा से लड़ाई। यह लोकशासित राज्य के लिये प्रयत्न करता था (ऋ. ५.६६)। इसे पांचजन्य कहा है (ऋ. १.११७.३)। यह अमिक्रुड में गिरा या अग्नी में झुलसा। उस अग्नी के दाह से अधिनों ने इसे मुक्त किया (ऋ. १. ११८. ७; ११९. ६)। बहुधा कारागृह की यातनाओं की कल्पना व्यक्त करने के लिये ऐसा वर्णन किया होगा (ऋ. ५. ७. ८. ४; १०. ३९. ९)। पांचवें मंडल में अत्रिगोत्र के काफी सूक्तकारों का उल्लेख है (यजुत तथा रातहृद्य देखिये)। अत्रि ने चन्द्रराज याग शुरू किया (तै. सं. ७. १. ८)। इसे ग्रहण के संबंध में प्रथम ज्ञान हुआ। इसी लिये ग्रहण लगाने पर अत्रि सूर्य को वापस

लाता है, ऐसा माना जाता था (ऋ. ५. ४०. ५-९. ब्रह्माण्ड. ३.८.७७; ह. वं. १.३१. १३-१४; प्रभाकर आत्रेय देखिये)।

स्वायंभुव मन्वन्तर में प्रजोत्पादनार्थ ब्रह्मदेव द्वारा निर्मित दस मानस पुत्रों में से यह एक था (वायु. १.९)। यह ब्रह्मदेव के नेत्र से या मस्तक से उत्पन्न हुआ था (भा. ३.१२. २४; मत्स्य. ३.६-८)। यह स्वायंभुव मन्वन्तर में ब्रह्मा के कान से उत्पन्न हुआ (वायु. ९.१०१; ब्रह्माण्ड. २.९.२३; ब्रह्मन् देखिये)। स्वायंभुव मनु का यह जामात। दक्ष ने सती एवं शंकर को न बुलाने के कारण, सती ने स्वयं को दग्ध कर लिया। इस क्रोध के कारण शंकर ने सब को दग्ध कर दिया। उसमें इसकी मृत्यु हो गई। दक्ष की कन्या अनसूया इसकी पत्नी। अत्रि को अनसूया से पांच पुत्र हुए। १. श्रुति (शंखपद की माता तथा कर्दम पौलह प्रजापती की पत्नी), २. सत्यनेत्र, ३. हृद्य, ४. आपोमूर्ति शनैश्वर, ५. सोम। इस मन्वन्तर में हजारों आत्रेय उत्पन्न हुए (ब्रह्माण्ड. २. ११. २५)। शंकर के वर से ही यह पुनः वैवस्वत मन्वन्तर में उत्पन्न हुआ। यह एक प्रजापति था (म. स. ११. १५; शां. २०१; मत्स्य. १७१. २६-२७)। कर्दम प्रजापति के कन्याओं में से, अनसूया इसकी पत्नी थी (भा. ३. २४. २२)।

इसे अनसूया से दत्त, दुर्वास तथा सोम नामक तीनों पुत्र हुए (ब्रह्माण्ड. ३.८.८२; ६५; मार्क. १६; अग्नि २०.१२; भा. ४.१.१५; ३३)। वायु पुराण में अग्नि को दत्त, दुर्वास ये दो पुत्र तथा ब्रह्मवादिनी कन्या उत्पन्न हुई ऐसा उल्लेख है (७०.७५-७६)। अत्रि को सोम तथा अयेमा नामक दो पुत्र थे ऐसा उल्लेख महाभारत में दिया है (शां. २०१)। पुष्कल महर्षि इसका पुत्र था ऐसा भी उल्लेख प्राप्य है (म. आ. ६०-६)। इनके नेत्र से चन्द्रमा उत्पन्न हुआ (भा. ९.१४.२-३)।

स्वायंभुव मन्वन्तर में इसने उत्तानपाद को दत्तक लिया था (ब्रह्माण्ड. २.३६.८४-९०; ह. वं. १.२)। इसका गौतम ऋषि के साथ ब्राह्मणमहात्म्य पर संवाद हुआ था (म. व. १८३)। वायु का हैहय अर्जुन के साथ जब युद्ध चल रहा था तब राहू ने चन्द्र तथा सूर्य का पराभव कर के सर्वत्र अंधकार कर दिया। उस समय देवताओं की प्रार्थना मान्य कर के अत्रि स्वयं चन्द्र बना तथा अंधकार का नाश किया (स. अनु. २६१८)।

यह एक सूक्तकार था (वायु. ५९.१०४; ब्रह्म. १. ३२; मत्स्य. १४५; वृ. उ. २.१.१.)। अत्रि को पैतामहर्षि कहा

जाता है (मत्स्य. १७१. २८)। यह शिवावतार गौतम का शिष्य है। यह स्वयंभुव तथा वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक था। उन्नीसवें द्वापर में यह व्यास था।

अग्नि का धर्मशास्त्र—आनन्दश्रम के स्मृति समुच्चय में अत्रिसंहिता तथा अत्रिस्मृति नामक दो ग्रंथ हैं। अत्रिसंहिता में नौ अध्याय तथा चारसौ श्लोक हैं तथा अनेक प्रायश्चित्त व्रताये हैं। वहाँ योग, जप, कर्मविपाक, द्रव्य-शुद्धि तथा प्रायश्चित्त का विचार किया गया है।

अत्रिस्मृति में नौ अध्याय हो कर प्राणायाम, जपप्रदर्शा तथा प्रायश्चित्त व्रताये हैं। मनु ने गौरव के साथ इसका मत लिया है (३.१६)। दत्तकमीमांसा में इसके मत का उल्लेख है। इसके लघ्वत्रिस्मृति तथा बृहदात्रेयस्मृति नामक दो ग्रंथ भी उपलब्ध हैं। इसने वास्तुशास्त्र पर भी एक ग्रंथ रचा था (मत्स्य. २५२.१-४)।

अग्निवंश के गोत्रकार—अर्षपथ्य, उद्दालकि, कर्जिह्व, कर्णजिह्व, कर्णिरथ, कर्ममायन शालेय (ग), गोणीपति, गोणायनि, गोपन (ग), गौरग्रीव, गौरजिन, चैत्रायण, छंदोगेय, जलद, तर्कविदु, तैलप, भद्रगपाद, छेदाणि, वामरथ्य, शाकलयनि, शारायण, शीण, शीकृतव (शाकृतव, शीकृतव), सचैलेय (सचैलेय), सौनकर्णि (शौणव-कर्णिरथ), सौपुष्पि तथा हरप्रीति (रसद्वीचि) ये गोत्रकार अग्नि, आर्चनानदा (त्रिवराताम) तथा स्यावाश्व इन तीन प्रवरों के हैं।

ऊर्णनामि, गविष्ठिर, दाक्षि, पर्णवि, बलि, वीजवापि, भछदन, मौजकेरा, शिरीष तथा शिल्दनि, ये गोत्रकार अग्नि, गविष्ठिर तथा पूर्वातिथि इन तीन प्रवरों के हैं।

कालेय (ग), धात्रेय (ग), मैत्रेय (ग) वामरथ्य (ग) तथा सवाल्येय (ग) ये गोत्रकार अग्नि, पौत्रि तथा वामरथ्य, इन तीन प्रवरों के हैं (मत्स्य. १९७.१-५)। अत्रिपुत्र सोम के वंश में विश्वामित्र हुआ (मत्स्य. १९८)। अत्रि का वंश अनेक स्थानों पर आया है (ब्रह्माण्ड. ३.८.७४-८७; वायु. ७०. ६७-७८; लिङ्ग. १. ६३)। अन्यत्र भी विभागदाः आया है (ब्रह्म. ९. १; ह. वं. १. ३१. १२-१७; प्रभाकर तथा त्वस्त्यात्रेय देखिये)।

अत्रिकुल के मेघकार—अग्नि, अर्चिसन, निष्ठुर, पूर्वातिथि, बरगूतक, श्यामावान् (वायु. ५९. १०४); अग्नि, अर्धस्वन, कर्णक, गविष्ठिर, पूर्वातिथि, शावस्य (मत्स्य. १४५. १०७-८); अग्नि, अर्चिसन, आविहोत्र, गविष्ठिर, पूर्वातिथि, शावाश्व (ब्रह्माण्ड. २. ३२. ११३-११४)।

२. वसिष्ठगोत्र का एक प्रवर।

३. व्यासपुराण की शिष्यपरंपरा के वायु के अनुसार, यह रोमहर्षण का शिष्य है (व्यास देखिये)।

ऋग्वेद के एक सूक्त की दस ऋचाएँ अनेक अग्नि्यों ने देखी हैं (ऋ. ९. ८६. ३१-४०)। इससे ज्ञात होता है कि, अत्रिकुल के लोग भी अग्नि नाम से व्यवहृत होते थे।

अग्नि भौम—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. २७, ३७-४३; ७६; ७७; ८३-८६; ९. ६७. १०-१२; ८६. ४१-४५; १०. १३७. ४)।

अग्नि सार्व्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१४३)।

अथर्वन्—अथर्वथ के दानस्मृति का दान ग्रहण करने-वाला (ऋ. ५. ४७.२४)। यह एक प्राचीन उपाध्याय था (ऋ. १०.१२०.९)। इसीने अग्निमंथन का प्रचार किया (ऋ. ६. १६.१३; तै. ब्रा. ३. ५. १६; वा. सं. ३०. १५)। इसके द्वारा उत्पन्न अग्नि, विवस्वत का दूत बना (ऋ. १०. २१. ५)। इसीके नाम पर से अग्नि को अथर्वन् नाम प्राप्त हुआ (ऋ. ६. १६. १३)। अग्नि को इसकी उपमा दी गई मिलती है (ऋ. १०. ८७. १२; ८. ९. ७)। अथर्वन् का अर्थ अग्निहोत्री भी है (ऋ. ७. १. १) इसका तथा इन्द्र का स्नेह था। इन्द्र इसे सहायता करता था (ऋ. १. ४८. २)। इसकी देवताओं में गणना की गई है (वृ. उ. २. ६. ३; ४. ६. ३)। इसने इन्द्र को उद्देशित कर के एक स्तोत्र का रचना की है (ऋ. १. ८०. १६)। इसने यज्ञ कर के, स्थैय प्राप्त कर लिया (ऋ. १०. ९२. १०)। इसने यज्ञसामर्थ्य से मार्ग चौड़ा कर लेने पर, सूर्य उत्पन्न हुआ (ऋ. १. ८३. ५)। मनु तथा दक्ष्यन् के साथ इसने तप किया था (ऋ. १. १०. १६)। अथर्वगिरिस् शब्द प्राप्य है (अ. वे. १०.७.२०. श. ब्रा. ११. ५. ६७)। इसने इन्द्र को सोमरस दिया (अ. वे. १८. ३. ५४)। वरुण ने इसे एक कामवेनु दी थी (अ. वे. ५. ११; ७. १०४)। इसका देवताओं के साथ स्नेहसंबंध होने के कारण यह स्वर्ग में रहता था (अ. वे. ४. १. ७)।

यह आचार्य था (श. ब्रा. १४. ५. ५. २२; ७. ३. २८)। अथर्वगिरिस् ऋषि का प्रादुर्भाव वैशाली राज्य में हुआ। इस शब्द का अनेकवचन पितर अर्थ से आया है (ऋ. १०.१४.४-६; १०. १५. ८)। वे स्वर्ग में रहने-वाले देवता थे (अ. वे. ११. ६. १३)। एक अद्भुत मूली से ये दैत्यनाश करते थे (अ. वे. ४. ३७. ७)।

यह ब्रह्मदेव का ज्येष्ठ पुत्र। यज्ञ नामक इन्द्र इसका सहाय्यायी था। इन दोनों को ब्रह्मदेव से ब्रह्मविद्या प्राप्त हुई (मुं. उ. १. १-२)।

यह स्वायंभुव मन्वन्तर का ऋषि था। यह ब्रह्मदेव का मानसपुत्र था। इसे कर्मकन्या शांति तथा चित्ति नामक दो पत्नियाँ थीं (भा. ४.१; १०. ७४. ९.)। इसे मरुपा मारीची, स्वराट् कार्दमी तथा पथ्या मानवी ये तीन पत्नियाँ थीं (ब्रह्माण्ड. ३.१. १०२-१०३; वायु. ६५. ९८)। परंतु मरुपा मारीची, अंगिरस् की पत्नी मानी गई है (मत्स्य. १९६.२)। धृतरात्र, दृष्यन्व तथा अथर्व-शिरस् इसके पुत्र हैं। इन्हें अथर्वण कहते हैं।

यह युधिष्ठिर के यज्ञ में ऋत्विज था (भा. १०.७४. ९)। अंगिरस कुल का प्रथम कह कर, इसका उल्लेख किया गया है तथा अथर्ववेद से इसका संबंध है, ऐसा उल्लेख अथर्ववेद में पाया जाता है (म. उ. १८. ७-८; मुं. उ. १.१.१-२; वायु. ७४; ब्रह्माण्ड. ३.६५.१२; ह. वं. १.२५)। इसकी माँ का नाम सती था (भा. ६. ६. १९)। इसने समुद्र से अग्नि बाहर निकाला (म. व. २१२.१८)। नहुष, इन्द्रपद से भ्रष्ट होने के पश्चात् पहला इन्द्र सिंहासन पर बैठा। तब अंगिरा ने आ कर अथर्ववेदमंत्रों से इन्द्र का सत्कार किया। तब इन्द्र ने इसे वरदान दिया कि, 'तुम्हारे वेद का नाम अथर्वान्गिरस होगा, तुम्हें भी लोग अथर्वान्गिरस कहेंगे तथा तुम्हें यज्ञभाग भी मिलेगा' (म. उ. १८.५-८; पणि देखिये)।

अथर्वशिरस्—यह अथर्वन् का पुत्र था (अथर्वन् देखिये)।

अथर्वान्गिरस्—अंगिरस को इन्द्र द्वारा दी गई संज्ञा। अथर्वन् तथा अथर्ववेद की संज्ञा (तै. ब्रा. ३.१२.८-२; शा. ब्रा. ११.५.६.७ मैत्र्यु. ६.३३; छां. उ. ३.४. १-२; प्र. उ. २.८)। अथर्ववेद शब्द सूत्र में आया है (कौ. सू. ३.१९)।

अथौजस्—वैशाखमास के सूर्य के साथ रहनेवाला यक्ष (भा. १२. ११. ३४)।

अदारि—सुरारि देखिये।

अदिति—मित्रावरुणों की (ऋ. ८.२५. ३; १०.३. ८३) तथा अर्यमा की (ऋ. ८.४.७९) माता। इसीसे स्वाभाविकतः इसे राजमाता कहा जाता है (ऋ. २.२७. ७)। इसके आठ पुत्र हैं तथा वे अत्यंत बलवान् हैं (ऋ. १०. ७२. ८; ३.४.११; ८.५६. ११)। पौराणिक कथाओं में अदिति, दक्षकन्या तथा कश्यप पत्नी है। परंतु

वेदों में उसे विष्णु की पत्नी कहा गया है (वा. स. २.९. ६०; तै. सं. ७.५.१४)। अदिति, अय तथा पृथ्वी से देवता उत्पन्न हुए (ऋ. १०.६३.२)। अदिति की चौ तथा पृथ्वी से एकरूप कल्पना की गई है (ऋ. १.७२. ९; अ. वे. १.३. १. ३८)। तथापि कई स्थानों पर यावापृथिवी की अपेक्षा इसका पृथक् उल्लेख किया गया है (ऋ. १०. ६३.१०)। एक स्थान पर अदिति विश्वसृष्टि की मूर्ति दिखाई देती है (ऋ. १. ८९.१०)। अदिति, आदित्य की माता, अतएव तेज प्राप्त करने के लिये उसकी प्रार्थना की गयी है (ऋ. ४.२५.३; १०.३६.३)। उसके तेज का गौरव किया गया है। ऋग्वेद तथा अगले ग्रंथों में अदिति को गो कहा गया है (ऋ. ७.८२.१०)। उषा को अदितिमुख कहा है (ऋ. १.१५.३; ८.९०.१५; १०.११.१; वा. सं. १.३.४३; ४९)। संस्कार की गाय को सामान्यतः अदिति कहा जाता है। भूलोक के सोम की तुलना-अदिति के दूध से की गई है (ऋ. १.९६.१५)। अदिति की नप्ती (कन्या) दूध को ही माना गया होगा। वह पात्र में गिरते हुए सोम के साथ एकजीव होती है (ऋ. ९.६९. ३)।

यह प्राचेतस दक्ष प्रजापति तथा आसिक्नी की कन्या तथा कश्यप प्रजापति की पत्नी थी। इससे पत्न चलता है कि, ऋग्वेद के एक सूक्त की द्रष्टी अदिति दाक्षायणी यही होगी (ऋ. १०. ७२)। मैनाक पर्वत के मध्य में स्थित विनशन नामक तीर्थ पर अदिति ने चक्र उकाया था (मा. व. १३५.३)। देवयुग में तीनों लोकों पर देवताओं का स्वामित्व था। उस समय इसने पुत्रप्राप्त्यर्थे सतत एक पैर पर खड़े हो कर अति कठिन तपश्चर्या की। उससे विष्णु उत्पन्न हुआ (म. अनु. ९३)। विष्णु के पहले इसे ग्यारह पुत्र हुए थे। विष्णु को मिल कर कुल बारह पुत्र हुए (कश्यप देखिये)। तैत्तिरीय संहिता में कहा गया है कि, इसे आठ ही पुत्र हुए। इसे सात की कामना थी अतएव आठवा गर्भ इसने फोड़ दिया। केवल सात पुत्र ले कर यह देवताओं के पास गई। आठवाँ मातृदंड अथवा विवस्वान् का इसने त्याग किया। ये आठ पुत्र ही अष्ट वसु हैं। भूमिपुत्र नरकासुर ने अदिति के कुंडलों का हरण किया तथा वह प्राग्व्योत्पि नगर में जा कर रहने लगा। आंग चल कर कृष्ण उन्हें जीत लाया तथा अदिति को उसने वे कुंडल दिये (म. उ. ४७)।

अदीन—(सो. क्षत्र.) सहदेव का पुत्र। इसका पुत्र ज्यत्सेन।

अदूर—सुरसावर्णि मनु का पुत्र ।

अदृश्यती—मैत्रावरुणी वसिष्ठपुत्र शक्ति की पत्नी तथा पराशर ऋषि की माता ।

२. चित्रमुख ब्राह्मण की कन्या । इसका पिता पहले वैश्य था, परंतु तप से ब्राह्मण हो गया (म. अनु. ५३. १७) ।

अद्भ—ब्रह्मांड के मत में, व्यास के यजुःशिष्यपरंपरा का, याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य ।

अद्भुत—अग्निविरोध । इसकी पत्नी प्रिया । पुत्र का नाम विदुरथ (म. व. २१३.२५) ।

२. दक्षसावर्णि मन्वन्तर में होनेवाला इन्द्र ।

अद्भ—कश्यप तथा दनु का पुत्र ।

अद्रिका—कश्यप तथा मुनि की कन्या अप्सरा । यह शाप से जल में मरती बनी । इसने मत्स्य नामक राजा तथा मत्स्यगंधा नामक कन्या को जन्म दिया (उपरिचर बसु देखिये; म. आ. ६४) । यह विमान में अमावसु नामक पितरों के साथ क्रीडा करते समय, अच्छोदा के मन में, अमावसु के प्रति कामेच्छा उत्पन्न हुई (ब्रह्माण्ड. ३.१०.५४-६४) ।

अधृष्टायामय—कश्यप गोत्र का एक ऋषिगण ।

अधर्म—ब्रह्मदेव के पृष्ठभाग से उत्पन्न धर्मविरोधी पुत्र । इसकी पत्नी मृधा । मृधा से दंभ तथा माया यह मिथुन निर्माण हुआ (भा. ३.१२) । इसने वह अपने लिये लिया । आगे चल कर, उस मिथुन से लोभ तथा निकृति यह मिथुन उत्पन्न हो कर, आगे क्रमशः क्रोध तथा हिंसा, कलि तथा दुर्कृति, मृत्यु तथा भय एवं निरय तथा वातना इस प्रकार संतति उत्पन्न हुई (भा. ४. ८. १-४) । हिंसा से इसे अमृत तथा निकृति उत्पन्न हुए । उनसे भय, नरक, माया तथा वेदना उत्पन्न हुए । माया से मृत्यु, वेदना से दुःख तथा मृत्यु से व्याधि, जरा, शोक, तृष्णा तथा क्रोध उत्पन्न हुए (पद्म. सू. ३) ।

२. वरुण को ज्येष्ठा से उत्पन्न पुत्र । इसे निकृति नामक पत्नी थी । इसके पुत्र १. भय, २. महाभय तथा ३. मृत्यु (म. आ. ६७) ।

अधितंस—(सो.) भविष्यमत में अनुतंस का पुत्र ।

अधिपति—एक देव । यह भृगु का पुत्र है ।

अधिरथ—(सो. अनु.) सत्कर्मा का पुत्र । यह सारथ्यकर्म करता था । एक बार गंगातट पर क्रीडा करते समय, कुंती ने कर्ण को रख कर नदी में छोड़ी हुई पेठी इसको मिली । तदनंतर कर्ण को बाहर निकाल कर, इसने

उसका नालच्छेदन किया तथा उसे अपनी राधा नामक पत्नी को सौंप कर, पुत्र के समान उसका पालन किया (भा. ९.२३.१३; म. आ. ६७; १३७; व. २९३) ।

अधिसामकृष्ण—(सो, पूरु, भविष्य.) वायु, विष्णु तथा मत्स्य पुराण में, इसके आगे भविष्यकालीन राजाओं का उल्लेख प्रारंभ हुआ है । इसके राज्य काल में वायु-पुराण लिखा गया (वायु. ९९.२५८) । हस्तिनापुर ब्रह्म जाने पर, यह अपनी राजधानी कौशाबी में ले गया (वायु. ९९.२७१) । मत्स्य के मत में यह शतानीक-पुत्र है । विष्णु तथा मत्स्य पुराणों में अधिसामकृष्ण ऐसा पाठ है । भागवत में असीमकृष्ण पाठ है । शतानीक-अश्वमेधयज्ञ-अधिसामकृष्ण ऐसा वंशक्रम पाया जाता है (वायु. ९९.२५७-२५८) ।

अधिसामकृष्ण—अधिसामकृष्ण देखिये ।

अधीर—एक राजा । यह शंकर का परमभक्त था । एक बार गलती से इसने एक निरपराध स्त्री को देहान्त शासन दिया । उसी प्रकार, एक शिवमंदिर भी इसके हाथों जलाया गया । इन दो दुष्टकृत्यों के कारण मृत्यु के अनन्तर, यह पिशाच बना तथा इसके मुख से निरंतर अग्निज्वाला निकलने लगी । परंतु शंकर के प्रसाद से इसका यह कष्ट दूर हुआ तथा यह शिवगणों में से एक हुआ (पद्म. पा. १११) ।

अधृति—अभूतरजस् देवों में से एक ।

अधृष्ट वा **अधृष्णु**—सावर्णि मनु का पुत्र ।

अधिगु—अश्वि तथा इन्द्र ने इसकी रक्षा की (ऋ. १.११२.२०; ८-१२.३) ।

अध्वरीवत्—सावर्णि मनु का पुत्र ।

अनाग्नि—पितरों में से एक । इसकी पत्नी दक्षकन्या स्वधा । स्वधा से इसे वयुना तथा धारिणी नामक दो कन्याएँ हुई (भा. ४.१.६२-६४; पद्म. सू. ९) ।

अनाघ—उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक ।

२. धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक ।

३. एक गंधर्व (म. आ. ११४.४४) ।

अनंतग—कदम प्रजापति का पुत्र (म. शां. ५९. ९७) ।

अनंत—कद्रुपुत्र (काश्यप देखिये) ।

२. (सो. यदु.) वीतिहोत्र का पुत्र । इसका पुत्र दुर्जयामित्रकर्पण (ब्रह्म. १३) ।

अनंतभागिन्द—भृगु कुल का एक गोत्रकार ।

अनंतसेन— देवों में से स्कंद अथवा रुद्र । इसने भीष्म के वध के लिये अंबा को माला दी । (अम्बा देखिये) ।

अनंती— शतरूपा का नामान्तर ।

अनपान— (सो. अनु.) वायु के मत में दधिवाहन का पुत्र (खनपान देखिये) । इस को अपान द्वार नहीं था । इस लिये यह नाम है ।

अनपाया— कश्यप तथा मुनि की कन्या । यह एक अप्सरा थी ।

अनमित्र— (सु. इ.) निधनराजा का पुत्र ।

२. (सो. यदु.) वृष्णि को इस एक ही नाम के दो पुत्र थे । (सुमित्र देखिये) ।

३. (सो. यदु.) शिनि राजा का पुत्र । यह बड़ा पराक्रमी था । भागवत में, इसे युधाजित् का पुत्र भी कहा है ।

४. ब्रह्मसावर्णि मनु का पुत्र ।

अनरण्य— (सु. इ.) त्रसदस्यु का पुत्र (भा. ९. ७.४) । मत्स्य, ब्रह्माण्ड, वायु तथा लिङ्ग पुराणों के मत में यह संभूत का पुत्र है । यह जब अयोध्या में राज्य कर रहा था, तब रावण ने इस पर आक्रमण किया । उस समय इसने रावण से घमासान युद्ध किया । परंतु रावण अधिक बलवान होने से, इसकी संपूर्ण सेना नष्ट हुई । इसने रावण के अमात्य, मारीच, शुक, सारण तथा प्रहस्त का पराभव किया । परंतु जल्द ही यह धरती पर गिरा तथा मरते-मरते इसने रावण को शाप दिया कि, यदि मेरा तप, दान, हवन सत्य होंगे, तो मेरे वंश का दशरथपुत्र राम समस्त कुल समवेत तुम्हारा नाश करेगा (वा. रा. यु. ६०; उ. १९) । युद्ध त्याग कर तप करते समय रावण ने इसका वध किया इसलिये इसने शाप दिया । इसका पुत्र त्रसदश्व । भविष्य के मत में यह त्रिंशदश्व का पुत्र है तथा इसने अठाईस हजार वर्षों तक राज्य किया ।

२. (सु. इ.) सर्वकर्मा का पुत्र । इसका पुत्र निघ्न (पद्म. सु. ८) ।

अनर्बन्— वृत्रासुरानुयायी असुर (भा. ६.१०.१८-१९) ।

अनर्शानि—इन्द्र का शत्रु (ऋ. ८. ३२.२.) ।

अनल—धर्म को वसु से उत्पन्न पुत्र । इसके पुत्र, कुमार (कार्तिकस्वामी), शाख, विशाख तथा नैगमेय । यह एक वसु है । यह प्रस्तुत मन्वन्तर में आग्नेयी दिशा का स्वामी है । यह कुमार अनल एवं स्वाहा का पुत्र है

(ब्रह्माण्ड. ३. ३. २१-२६; म. आ. ६७; विष्णु. १. १५) ।

२. विभीषण के अमात्यों में से एक (मालेय देखिये) ।

३. गरुड का पुत्र (म. उ. ९९. ९) ।

अनला—रोहिणी की दो कन्याओं में से दूसरी । इसकी कन्या शुक्री ।

२. माल्यवान् राक्षस को सुंदरी नामक स्त्री से उत्पन्न कन्या तथा विश्वावसु राक्षस की पत्नी । इसकी कन्या कुम्भीनसी (वा. रा. उ. ६१.१६) ।

अनवद्या—कश्यप को प्राधा से उत्पन्न अप्सरा ।

अनश्वन्—(सो. पूरु.) विदूरथ का पुत्र । इसकी माँ मगध वंश की संप्रिया । इसकी पत्नी का नाम अमृता । इसके पुत्र का नाम परीक्षित् (म. आ. ९०. ४२) । असम्बत् ऐसा पाठभेद है ।

अनसूय—कश्यप गोत्र का एक गोत्रकार ।

अनसूया—स्वार्थभुव तथा वैवस्वत मन्वन्तर के ब्रह्म मानसपुत्र अत्रि ऋषि की पत्नी । यह कर्दम को देवहूती से हुई । यह दक्षकन्या भी थी (गरुड. २६) । ऋग्वेद के वार्दिसर्वे परिशिष्ट में केवल अत्रि की प्रियपत्नी ऐसा इसका उल्लेख है । पौराणिक वाङ्मय में पतिव्रता कह कर इसका उल्लेख है । इसने निराहार तीन सौ वर्षों तक तप कर के शंकर की कृपा-संपादित की । इससे इसे दत्तात्रेय, दुर्वासस् तथा चन्द्र नामक तीन पुत्र हुए । चित्रकूट की गंगा इसने प्रवृत्त की (शिव. कै. २. १९) ।

राम वनवास को जाते समय अत्रि के आश्रम में आये थे । तब अत्रि ने निम्नोल्लिखित अनसूया का वर्णन कर के, सीता को, उसके दर्शनार्थ भेजने के लिये राम से कहा । दस वर्षों तक पर्जन्यवृष्टि न होने पर लोग दुग्ध होने लगे तब अनसूया ने फलमूल उत्पन्न कर के आश्रम में गंगा लाई । यह उग्र तपश्चर्या करनेवाली एवं कड़क नियमवाली है । दस हजार वर्षों तक इसने बड़ी तपस्या की है । इसके व्रतों से ही ऋषियों की तपस्या के मार्ग में आनेवाले विघ्न दूर हुए । देवकार्यों के लिये परिश्रम करते समय दस रातों की एक रात्रि इसने बनाई । सीता ने जब इसका दर्शन लिया तब इसके गात्र शिथिल हो गये थे । शरीर पर झुर्रियाँ पड़ गई थी । बाल सफेद थे । हवा से हिलनेवाली कदली के समान इसकी स्थिति हो गई थी । पतिसमवेत वनवास स्वीकारने के लिये, सीता की इसने प्रशंसा की तथा निरंतर ताजी रहनेवाली माला, वस्त्र, भूषण, उन्नतन, अनुलेपन इ. वस्तुएं दी । तदनंतर स्वयंवर के बारे में, प्रेम

से सीता के साथ बातें की। उसे अलंकार पहना कर बड़े प्यार से बिना किया (वा. रा. अयो. ११७-११९)।

मांडव्य ऋषि को जब शूली पर चढ़ाया गया था, तब उस शूल को अंधकार में एक ऋषिस्त्री का धोखे से धक्का लगा, तब मांडव्य ने उसे शाप दिया कि, सूर्योदय होते ही तुम विधवा हो जाओगी। तब उसने सूर्योदय ही नहीं होने दिया। इससे सारे व्यवहार बंद हो गये। उसकी अनसूया सखी होने के कारण, जब प्रार्थना की गई तब उसे वैधव्य प्राप्ति न होने देते हुए, इसने सूर्योदय करवा कर समस्त संसार को सुखी किया (मांडव्य देखिये)।

अनाधृष्टि—(सो. पुरु.) रौद्राश्व का पुत्र (म. आ. ८९.१०)। इसकी पत्नी एक अप्सरा थी।

२. (सो. यदु.) शूर राजाका पुत्र।

३. श्रीकृष्ण अनुयायी एक यादव (म. आ. २१३, २६; स. ३.५७; वि ६७.२१; उ. १४९.६२)।

अनाधृष्य—धृतराष्ट्र पुत्रों में से एक (म. आ. ६१. १०४)।

अनानत पारुच्छेप—एक सुकृतद्रष्टा (ऋ. ९.११)।

अनायुष—इसके मान के कारण इसके पुत्र की मृत्यु हुई (मार्क. २४.१६)।

अनायुषा—एक राक्षसी। इसे अरक, जल, विज्वर, बृत्र व वृष नामक पुत्र थे (ब्रह्माण्ड. ३.६.३१-३७)।

आनिकेत—यक्ष (म. स. १०.१७)।

अनिमिष—गरुड का पुत्र (म. उ. ९९.१०)।

अनिरुद्ध—(सो. यदु.)—प्रद्युम्न को रुक्मकन्या से उत्पन्न पुत्र। यह दस हजार हाथियों के बल से युक्त था (भा. १०. ९०. ३५-३६, विष्णु. ५. ३२.५)। पर्वत उखाड़ कर यह उससे शत्रु को मारा करता था। इसकी अनेक पत्नीयों थी तथा सुरा पी कर यह उनसे रममाण होता था (इ. वं. २.११८.७३; ११९. २६-२७)। इसे रुक्मिण्यौत्री रोचना से वज्र उत्पन्न हुआ (भा. १०, ६१)। इसेही प्राद्युम्नि ऐसा दूसरा नाम है। इसने अन्य यदु कुमारों के साथ अर्जुन के पास धनुर्वेद सीखी (म. स. ४.२९.५३)। इसने बाणासुर की कन्या उषा के साथ गांधर्व विधि से विवाह किया। यह राजसूय यज्ञ में था (म. स. ३१.१५)।

२. अठारह वास्तुशास्त्रकारों में से एक (मत्स्य. २५२. ३-४)।

अनिल—अष्टवसुओं में से एक। इसकी पत्नी का नाम शिवा। इसे मनोजव एवं अविज्ञानगति नामक दो पुत्र थे

(म. आ. ६०. २४; ब्रह्माण्ड. ३. ३. २१; २६; विष्णु. १. १५. ११०-११५)।

२. एक क्षत्रिय। शैब्य अथवा वृषादर्भी का पुत्र। वृषादर्भी ने अपने एक यज्ञ में, इसे दक्षिणा कह कर, सप्तर्षियोंको अर्पण किया। परंतु अत्यायु होने के कारण, शीघ्र ही इसकी मृत्यु हो गई। उस समय भयंकर अवर्षण होने के कारण, अत्यंत क्षुधातुर सप्तर्षियों ने इसे स्थाली में पका कर खाने का विचार किया। परंतु यह पका नहीं अतएव वह कार्यरूप में न आ सका (म. अनु. ९३)।

३. मित्रविद्या से कृष्ण को प्राप्त पुत्रों में से एक (भा. १०. ६१. १६)।

४. (सो. पूरु.) विष्णु के मत में तंसु का पुत्र।

५. गरुड का पुत्र (म. उ. ९९. ९)।

अनिल वातायन—सुकृतद्रष्टा (ऋ. १०. १६८)।

अनिष्टकर्मन्—(आंध्र. भविष्य.) ब्रह्मांड के मतानुसार पटुमानपुत्र तथा भागवत मतानुसार अटमानपुत्र। विष्णु के मतानुसार अरिष्टकर्मन् पाठ है।

अनीकविदारण—जयद्रथ का बंधु (म. व. २४९. १२)।

अनील—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

अनीह—(सु. इ.) भागवतमत में देवानीकपुत्र। इसे अहीनरावि नामांतर हैं।

अनु—दशरानुयुद्ध में मुदास के शत्रुओं में से एक (ऋ. ७. १८. १४)। इन्द्र का रथ अनु ने बनाया (ऋ. ५. ३१. ४)। यह कारिगर तथा इन्द्र का उपासक था (ऋ. ८.४.१)।

२. (सो.) ययाति को शर्मिष्ठा से उत्पन्न तीन पुत्रों में से ज्येष्ठ (म. आ. ७०. ३२)। इसने यदु के ही समान, पिता का वृद्धत्व स्वीकार नहीं किया अतएव इसे मुख्य राज्याधिकार नहीं था। यह उत्तर में श्लेच्छों का राजा बना (मत्स्य. ३३. २२-२३)।

अनु से ले कर कर्णपुत्र वृषसेन तक का वंश भागवत में उद्धृत किया है (भा. ९. २३. १-१४)। अनु से आठवाँ पुरुष महामनसु को, उशीनर तथा तितिक्षु नामक दो पुत्र हुए। उशीनर शाखा से केकय तथा मद्रक निकले। ये भारत की वायव्य सीमा की ओर फैले तथा बलि के पुत्र, अंग, वंग, कर्लिग, सुह, पुंड्र तथा आन्द्र ये पूर्व भारत में सागर तक फैल गये। इनमें दशरथ का स्नेही रोमपाद पैदा हुआ। उसकी पुत्री शान्ता, ऋष्यशृंग की पत्नी। इसी ऋष्यशृंग के कारण दशरथ को राजादि पुत्र-

प्राप्ती हुई। इसी वंशस्थित अधिरथ ने कुन्तीपुत्र कर्ण का पालन कर के बड़ा किया। कर्णपुत्र वृषसेनादि तथा स्वयं कर्ण भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्ष में थे। इस प्रकार यह अनुवंश, वायव्य सीमान्तर्गत कैकय मद्रक से ले कर, पूर्व में आन्ध्र तक फैला हुआ था। अयोध्या, हस्तिनापुर आदि स्थान के राजाओं से इस वंश के निकट सम्बंध थे।

३. (सो. अंध.) ऋथकुल के कुरुवश का पुत्र (भा. ९.२४.३-६)।

४. (सो. कुकुर.) कपोतरोम का पुत्र। तुंबुरु इसका मित्र था (भा. ९.२४.२०)।

अनुकृष्ण—यजुर्वेदी ब्रह्मचारी।

अनुग्रह—भौत्य मनु का पुत्र।

अनुतंस—(सो.) भविष्य मत में समांतस का पुत्र।

अनुतापन—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

अनुभृति—यजुर्वेदी ब्रह्मचारी।

अनुमत—चाक्षुष के आय नामक देवगणों में से एक।

२. तुषित देवों में से एक।

अनुमति—अंगिरा ऋषि से श्रद्धा को उत्पन्न चार कन्याओं में से कनिष्ठ (भा. ४.१.३४)। द्वादशादित्य के धातृ आदित्य की पत्नी (भा. ६.१८.३)।

२. भृगु गोत्र का एक गोत्रकार।

अनुमत्तोच्चा—एक अम्सरा। यह भाद्रपद मास में आदित्य के साथ रहती है (भा. १२.११)।

अनुयायिन—धृतराष्ट्र पुत्रों में से एक (म. आ. ६८)। भीमसेन ने इसका वध किया (म. द्रो. १५८)।

अनुरथ—(सो. यदु.) विष्णु के मत में कुरुवश का पुत्र।

अनुराधा—दक्ष तथा असिकनी की कन्याओं में से एक तथा सोमपत्नी।

अनुवक्तृ सत्य सात्यकीर्त—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. १.५.४)।

अनुविंद—आवंत्य राजा जयसेन को वसुदेवभगिनी राजाधिदेवी से प्राप्त कनिष्ठ पुत्र (भा. ९.२४.३९)। इसका पराजय कर, उसकी भगिनी मित्रविंदा से कृष्ण ने विवाह किया (भा. १०.५८.३०-३१)। इसको विंद नामक ज्येष्ठ भ्राता था।

ये दोनों माई, मित्रविंदा-कृष्ण के विवाह के विरोध में थे। दिग्विजय में सहदेव ने इनको पराजित भी किया था।

इसलिये वे दोनों दुर्योधन के पक्ष में चले गये (म. स. २८. १०; उ. १६३.६)। इसने पहले कुंतिभोज राजा के साथ युद्ध किया (म. भी. ४३. ७१)। अंत में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. ७४.२९)।

२. कैकय राजा के दो पुत्रों में से कनिष्ठ। यह दुर्योधन के पक्ष में था। सात्यकि ने इसका वध किया (म. क. ९.६)।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। यह घोषयात्रा में था (म. आर. २३१.८) भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १०२.९८)।

अनुवत्—(मगध. भविष्य.) मत्स्य के मत में क्षेम का पुत्र।

अनुशाल्व—(सो. क्रोष्ट्र.) सौमपति शाल्वराजा का भाई। शाल्व को कृष्ण ने मारा इसलिये यह कृष्ण से वैर रखता था। यह कृष्ण का वध करने की संधि देख रहा था। पांडवों के अश्वमेध यज्ञ के समय, कृष्ण सहपरिवार हस्तिनापुर में आया हुआ था। यह संधि देख कर, अपने सुतार नामक सेनापति के द्वारा, इसने सेना एकत्रित करवाई तथा गुप्त रूप से हस्तिनापुर के पास आ कर रहने लगा। कृष्ण अश्वमेध के लिये लाया गया अश्व देख रहा है, ऐसी सूचना मिलते ही इसने बड़ी चपलता से घोड़े को भगा लिया। तत्र भीमसेन सेना ले कर इसका पीछा करने लगा। प्रद्युम्न तथा वृषकेतु ने इसे पकड़ लाने का बीड़ा उठाया। आगे चल कर बंदा युद्ध हो कर, प्रद्युम्न का पराभव हुआ, परंतु वृषकेतु इसे पकड़ लाया। आगे मृत्युभय से इसने कृष्ण के साथ मित्रता की, तथा अश्वमेध की सहायता करने का वचन दे कर यह स्वनगर लौट आया (जै. अ. १२-१४)।

अनुशिव—सर्पसत्र का पोता (पं. ब्रा. २५.१५)

अनुह्लाद—हिरण्यकश्यपु को कन्याधू से उत्पन्न चार पुत्रों में से एक। इसकी पत्नी सुर्मि। इससे इसे बाष्कल तथा महिष नामक दो पुत्र हुए (भा. ६.१८.१२-१३; १६)। यह क्रोध के कारण निपुत्रिक हुआ, ऐसा उल्लेख मदाल्ला द्वारा अलर्क को दिये गये उपदेश में आया है (मार्क २४.१५)

अनुचाना—कश्यप तथा प्राधा से उत्पन्न अम्सराओं में से एक (म. आ. ११४.५०)।

अनूदर—धृतराष्ट्र पुत्रों में से एक।

अनुहवत्—यह क्षत्रिय था परंतु तप से ब्राह्मण एवं ऋषि बन गया (वायु ९१. ११६-११७)।

अनेनस्—(सो. पुरुरवम्.) आयु राजा के पांच पुत्रों में से कनिष्ठ (भा. ९.१७. १-२) इसकी माता का नाम स्वभानवी (म. आ. ७०. २३)। इसका पुत्र प्रतिशत्रु। इसका वंश दिया गया है (ह. वं. १.२९.१-५; ब्रह्म. ११.२७-३१)।

२. (सु. इ.) कुकुत्स्थ राजा का पुत्र। भागवत मत में पुरुरव्य का पुत्र। इसे पृथु नामक पुत्र था (म. व. १९३.२)।

३. (सु. निमि.) विष्णुमत में क्षेमरिपुत्र। इसका पुत्र मीनरथ।

अनेहहि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

अनोवैन—ब्रह्मांड के मत में व्यास के साम शिष्य-परंपरा का लौगाक्षी का शिष्य (व्यास देखिये)।

अनौपम्या—वाणासुर की पत्नी।

अन्तक—(शुंग. भविष्य.) सुज्येष्ठ का पुत्र।

अंतरिक्ष—(स्वा. प्रिय.) ऋषभदेव के सो पुत्रों में से नौ तत्वज्ञानियों में से एक। यह बड़ा भगवद्भक्त था। इसने जनक को उपदेश दिया था (भा. ५. ४. ९-१२; ११.३.३-१६)।

२. (सु. इ. भविष्य.)। मत्स्य के मत में किलराश्व का पुत्र; विष्णु तथा वायु के मत में किलरका पुत्र; तथा भागवत मत में पुष्कर का पुत्र।

३. मुरा के सात पुत्रों में से दूसरा। इसका वध कृष्ण ने किया (भा. १०. ५९)।

४. एक व्यास (व्यास देखिये)।

५. आद्यनामक देवताओं में से एक।

६. (सु. इ.) भविष्य के मत में केशीनर का पुत्र।

अंतर्धान—(स्वा. उत्तान.) पृथु के पुत्रों में से एक। विजिताश्व को, अंतर्हित होने की शक्ति के कारण, यह नाम दिया गया था।

अंतिक—(सो. यदु.) मत्स्य के मत में यदु पुत्र।

अंतिदेव—(सो. वृह.) मत्स्य के मत में गुरुविपुत्र।

अंतिनार—(सो. वृह.) भद्राश्व का पुत्र। इसे तंसुरोध, प्रतिरथ तथा पुरस्ता नामक तीन पुत्र थे (अग्नि. २७८. ३-५)। ऋचेयू का पुत्र। इसे वसुरोध, प्रतिरोध तथा सुवाहु नामक पुत्र थे (ब्रह्म. १३.५१-५३)। तक्षककन्या ज्वलना से ऋचेयु को उत्पन्न पुत्र। इसे तंसु, प्रतिरथ तथा सुवाहु नामक पुत्र तथा गौरी नामक कन्या थी। यही मांघाता की माता थी (ह. वं. १.३२.१-३)। सन्नतेयु अथवा अनाधृष्टि इसका पुत्र। इसे तंसु, महान्, अतिरथ व द्रुह्य

नामक चार पुत्र थे (म. आ. ८९.११)। ऋचेयू का पुत्र। इसका पुत्र प्रतिरथ (गण्ड. १४०. १-२)। ऋक्ष को तक्षककन्या ज्वलन्ती से उत्पन्न पुत्र। इसने सरस्वती नदी के किनारे द्वादशवार्षिक सत्र किया। सत्र समाप्त होने पर सरस्वती नदी स्त्री रूप में प्रगट हुई तथा अपने से विवाह करने के लिये उसने इसे अनुरोध किया। तब इसने उससे विवाह किया। उससे इसे तंसु नामक पुत्र हुआ (म. आ. ९०.१२; रंतिभार तथा मतिनार देखिये)।

२. (सो. यदु.) कंबलवर्हिष का पुत्र। इसका पुत्र तमोजा।

अंत्य—भृगुपुत्र। यह देवों में से एक है।

अंत्यायन—एक भृगुपुत्र।

अंधक—यह पार्वती के धर्मविदुओं से उत्पन्न हुआ। हिराण्याक्ष पुत्रप्राप्ति के लिये तपश्चर्या कर रहा था, उस समय शंकर ने उसे यह पुत्र दिया (लिङ्ग. १. १४)। हिरण्याक्ष तथा हिरण्यकश्यपु की मृत्यु के पश्चात् यह गद्दी पर आया। परंतु अनन्तर पार्वती को हरण कर ले जाने की योजना इसने की, तब अंबवी देश के महाकाल वन में, शंकर का इससे धनघोर युद्ध हुआ। इस युद्ध में, इसके प्रत्येक रक्तबिंदु से इसी के समान व्यक्ति उत्पन्न हो कर, अंधको से संपूर्ण संसार व्याप्त हो गया। तब शंकर ने अंधकों के रक्त को प्राशन करने के लिये, मातृका उत्पन्न कीया तथा उन्हें अंधक का रक्त प्राशन करने के लिये कहा। वे रक्त पी कर तृप्त हो जाने के बाद, पुनः रक्तबिंदुओं से अगणित अंधक उत्पन्न होने लगे। उन्होंने शंकर का अजगव धनुष्य भी हरण कर लिया (पद्म. सू. ४६)।

अंत में शंकर क्रुद्ध हो कर विष्णु के पास गया। विष्णु ने शुष्करेवती उत्पन्न की, तथा उन्होंने सब अंधकों का नाश कर दिया। शंकर ने मुख्य अंधक को सुली पर चढ़ाया, उस समय अंधक ने उसकी स्तुति की। तब शंकर ने प्रसन्न हो कर इसे गणाधिपत्य दिया (मत्स्य. १७९)। इसने पार्वती के लिये स्पष्ट मांग की, इसलिये शंकर का तथा इसका युद्ध हुआ। परंतु शुक्राचार्य संजीवनीविद्या से मृत असुरों को जीवित कर देते थे, इससे इसकी शक्ति कम न होती थी। तब शंकर ने शुक्राचार्य को निगल लिया तथा अंधक को गणाधिपत्य दे कर संतुष्ट किया (शिव. सू. ४८; पद्म. सू. ४६. ८१)। रणों का मुख्य स्थान इसे देने के पश्चात् इसका नाम भुंजीरीटी रखा गया। इसका पुत्र का नाम आडि है।

कश्यप को दिति से उत्पन्न पुत्र। यह अत्यंत पराक्रमी था। अपनी उग्र तपश्चर्या के बल पर सत्र देवताओं को जीतने के लिये, इसने शंकर से वरदान मांगा। परंतु विष्णु तथा शंकर के सिवा सबको जीतने का वरदान उन्होंने दिया। तदनन्तर यह ससैन्य अमरावती में प्रविष्ट हुआ तथा इन्द्र इसकी शरण में आया। इसके बाद इन्द्रकी उच्चैःश्रवस, उर्वशी आदि अप्सरायें तथा इन्द्राणी को ले कर अब यह लौट रहा था तब देवताओं ने इसके साथ युद्ध किया। परंतु उसमें उनका पराभव हुआ। तदनन्तर अंधक पाताल में रहने लगा। अन्त में देवताओं के कहने से, विष्णु ने इसके साथ युद्ध किया। उसमें इसका पराभव होने के पश्चात् इसने विष्णु की स्तुति की, तथा शंकर से युद्ध करने की संधि प्राप्त होने के लिये वरदान मांगा। तब विष्णु ने इसे कैलाशपर्वत हिलाने को कहा। ऐसा उसने करते ही शंकर का तथा इसका युद्ध प्रारंभ हुआ। उसमें शंकर को उसने मूर्च्छित कर दिया परंतु शंकर जाग्रत होते ही पुनः युद्ध प्रारंभ हुआ। अंधक के प्रत्येक रक्तबिंदु से पुनः दैत्य उत्पन्न होने लगे। उस समय शंकर ने चामुंडा का स्मरण करने पर, उसने इसका समस्त रक्त प्राशन कर लिया। तब इसने शंकर की प्रार्थना की। शंकर ने शिवशंभों में इसकी स्थापना कर, इसका भृंगीश नाम रखा (स्कंद. ५. ३. ४५)।

यह उज्जयिनी में राज्य करता था। इन्द्र के कथनानुसार शंकर ने इसके साथ युद्ध किया। उस में अपना पराभव हो रहा है, यह देखते ही इसने माया निर्माण कर, अंधकार उत्पन्न किया तथा देवताओं का हरण कर लिया। अंत में नरादित्य उत्पन्न हो कर, उसके द्वारा निर्मित प्रकाश की सहायता से, शंकर ने इसका वध किया। इसका पुत्र कनकदान (स्कंद. ५. २. ३६)।

महिषासुर की सेना का एक प्रमुख असुर। देवों के साथ हुए महिषासुर संग्राम में, विष्णु के साथ इसका अखिरत पचास वर्षों तक संग्राम चल रहा था। अन्त में विष्णु ने अपने गदा प्रहार से इसे मूर्च्छित कर दिया (दे. भा. ५. ६)। यह आठवों सुप्रसिद्ध संग्राम है (मत्स्य. ४७. ४१-४४)। इस में शंकर ने असुरों को मारा (वायु. ९७. ८१-८४)।

२. (सो. यदु.) सात्वत तथा कौसल्या का पुत्र (ह. वं. १. ३७. २)। अंधक तथा काश्यपद्विजा को कुकुर, भजमान, शमि तथा कम्बलवर्हिण ऐसे चार पुत्र हुए (ह. वं. १. ३७. १७)।

सात्वतपुत्र अंधक से अंधक वंश का प्रारंभ होता है। अंधकपुत्र महाभोज को दो पुत्र थे। प्रथम कुकुर तथा द्वितीय भजमान। यादवों में कुकुर वंश स्वतंत्र है। उस में उग्रसेन कंसदि हुए। अंधक वंश भजमान शाखा की उपाधि है। इसी अंधकवंश में भारतीय युद्ध का प्रसिद्ध वीर कृतवर्मा उत्पन्न हुआ (भा. ९. २४. ७-२४; विष्णु. ४. १४. ३-७)। सात्वतपुत्र भजमान का वंश उपलब्ध नहीं है। भजमान के पुत्र, अंधकपुत्र भजमान के वंश में सामील हुए ऐसा ह. वं. में लिखा है (१. ३८. ७-९)

अंधिगु श्याचाश्व—कुञ्ज ऋचाओ का द्रष्टा। (ऋ. ९. १०१. १-३)।

अंध—(सो. अनु.) बलि के छः पुत्रों में से कनिष्ठ। दुष्यन्तपुत्र भरत ने दिग्विजय के समय इसे जीता (भा. ९. २०. ३०)।

२. (स. इ.) यह वायु तथा ब्रह्मांड के मतानुसार वृषदश्व का पुत्र (इंदु देखिये)।

• **अन्नाद**—कृष्णपत्नी मिश्रविदा का पुत्र (भा. १०. ६१. १६.)।

अन्यतरेय—स्वरो के विषय में मत देनेवाला एक आचार्य (ऋ. प्रा. २०९)।

अन्यादृश—पांचवे मषद्रणों में से एक।

अन्वगभानु—(सो. पूरु.) मनस्यु को मिश्रकेशरी नामक अप्सरा से उत्पन्न पुत्र (म. भा. ८८)।

अपनाप—ब्रह्मांड के मतानुसार ऋषिशिष्य परंपरा में भरद्वाज का शिष्य (व्यास देखिये)।

अपरदारका—दूसरे ब्रह्मांड के द्वार पर स्थित एक देवता। नारद ने तपश्चर्या कर के इसे पश्चिम द्वार पर स्थापित किया। चैत्र कृष्ण नवमी को बलि दे कर जो इसकी पूजा करेंगे, वे पातकों में से मुक्त होंगे तथा उनकी समस्त इच्छाएं पूर्ण होंगी (स्कंद. १. २. ५३)।

अपराजित—कृष्ण तथा लक्ष्मणा का पुत्र (भा. १०. ६१)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। इसका वध भीम ने किया (म. भा. ८४. २१)।

३. एकादश रुद्रों में से एक।

४. कश्यप तथा कद्रू के पुत्रों में से एक।

५. कालेयांस एक क्षत्रिय (म. भा. ६८)।

अपर्णा—महादेव की पत्नी। सती की दक्षयज्ञ में मृत्यु होने के बाद, हिमालय को मैना से जो कन्या हुई, वह अपर्णा। वहाँ इसने पूर्वपति की प्राप्ति के लिये, पंचे भक्षण

कर, तपस्या प्रारंभ की। फिर भी उनकी प्राप्ति न होने के कारण उसने पर्णों का भी त्याग कर दिया तथा महादेव को पतिरूप में प्राप्त किया। इस लिये इसे उरुक्त नाम प्राप्त हुआ। इसेही तन केपश्चान् उमा नाम प्राप्त हुआ। इसका दत्तकपुत्र उद्यानम् (ब्रह्माण्ड. ३.१०. १-२१; ह. वं. १. १८.१५-२०)।

अपवर्मन्—(सू. इ.) भविष्य के मतानुसार भ्रुव-संधि का पुत्र। इसने दस हजार वर्षों तक राज्य किया।

अपष्टोम—औपलोम देखिये।

अपस्यौष—अंगिरस गोत्र का एक मंत्रकार।

अपहारिणी—ब्रह्मधान की कन्या।

अपान्येय—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

अपांडु—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

अपान—तुषितदेवों में से एक।

अपांतरतम—एक ब्रह्मर्षि (सारस्वत देखिये)।

अपांनपात्—एक देवता (ऋ. २.३५)। यह निधु-दुप अग्नि होगा। यह पानी में प्रकाशित होता है। इसे अग्नि कहा गया है। उसी प्रकार अग्नि को अपांनपात् कहा गया है।

अपाला—अग्नि की कन्या। यह ब्रह्मज्ञानी थी। इसके शरीर पर कोट होने के कारण, पति ने इसका त्याग कर दिया था। पितृगृह में रह कर, इन्द्र को प्रसन्न करने के लिये, इसने तपस्या प्रारंभ की। इन्द्र को सोम अत्यंत प्रिय है, ऐसा ज्ञात होते ही, यह सोम लाने के लिये नदी पर गई। वहाँ प्राप्त सोम इसने मार्ग में ही चबा कर देखा। चबाते समय जो भावाज हुआ उसे चुन कर इन्द्र वहाँ आया। अपाला ने सोम इन्द्र को दिया। इन्द्र ने प्रसन्न हो कर इसकी इच्छायें पूर्ण कीं। इसके पिता का गंडापन दूर किया, इसकी खेती उर्वरा बनाई (इसके शुद्धमाग पर केश उगाये), तथा इसका कुष्ठ-रोग आल पर घिस कर नष्ट कर दिया। यह कथा सायणा-चार्य ने शांखायन ब्राह्मण से ली है। इसे मूलभूत मान कर ही ऋग्वेद का एक सूक्त बना होगा (ऋ. ८.९१)। इस सूक्त में एकवार अपाला का निर्देश आया है।

अपास्य—अयोज्य देखिये।

अपि—सावर्णि मनु का पुत्र।

अपिकापति—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

अपीतक—(आंश्र. भविष्य.) मत्स्य के मतानुसार लंबोदर का पुत्र।

प्रा. च. ४]

अपनवान—भृगु के वंश में से एक ऋषि (ऋ. ४.७. १; ८.१०२.४)।

अप्रतिपिन्—(मगध. भविष्य.) मत्स्य के मतानुसार श्रुतश्रवस् का पुत्र। (अयुतायु देखिये)।

अप्रतिम—ब्रह्मासावर्णि मन्वन्तर के सप्तार्षियों में से एक।

अप्रतिमौजस्—ब्रह्मासावर्णि मन्वन्तर के सप्तार्षियों में से एक।

अप्रतिरथ—(सू. इ.) कुवलाश्व का नामांतर (म. व. १९५.३०)।

२. (सो. पूर.) भागवत के मतानुसार, रंतिभार के तीन पुत्रों में से कनिष्ठ पुत्र। इसका पुत्र कण्व।

अप्रतिरथ ऐन्द्र—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१०३; ऐ. ब्रा. ८.१०; श. ब्रा. ९.२.३.१-५)।

अप्रति—यजुर्वेदी ब्रह्मचारी।

अभय—स्वायंभुव मन्वन्तर में धर्म को दया से उत्पन्न पुत्र।

२. (स्वा. प्रिय.) इध्मजिह्व के सात पुत्रों में से कनिष्ठ। यह प्लक्षद्वीप के सातवें वर्ष का अधिपति था।

३. विश्वामित्र गोत्र का एक गोत्रकार।

४. धृतराष्ट्रपुत्र। इसका वध भीम ने किया (म. द्रो. १०२.९६)।

५. (सो. पूर.) विष्णु के मतानुसार मनस्युपुत्र। अभयद्र ऐसा अन्यत्र पाठ है।

अभिजित्—(सो. यदु.) नल्लराजा का पुत्र। इसका पुत्र पुनर्वसु।

२. अंगिरस गोत्र का एक गोत्रकार।

अभितंस—भविष्य मत में अधितंस का पुत्र।

अभितपस् सौर्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.३७)।

अभिप्रतारिन् काक्षसेनि—कुशवंश का एक राजपुत्र। यह तत्त्वज्ञानविवाद में निमग्न रहता था (पं. ब्रा. १०.५. ७; १४.१.१२.१५; जै. उ. ब्रा. १.५९.१; २.१.२२; २.२.१३; छां. उ. ४.३.५)। इसके जीवनकाल में ही इसके पुत्रों ने इसकी संपत्ति का बँटवारा कर लिया। इसका पुरोहित शौनके था (जै. उ. ब्रा. १.५९.२)।

अभिभू—(सो. धत्र.) काश्यपुत्र। यह द्रौपदी-स्वयंवर में होगा (म. आ. १७७.९)। भारतीय युद्ध में यह पांडव पक्ष में था (म. द्रो. २२.१९)। इसको वसुदानपुत्र ने मारा (म. क. ४.७४)।

अभिभूत—(सो. वृष्णि.) वायु के मतानुसार वसु-देव तथा रोहिणी का पुत्र ।

अभिमति—अष्टवसु में द्रोणवसु की पत्नी (भा. ६. ११) ।

अभिमन्यु—(सो. कुरु.) अर्जुन का पुत्र । यह सोमपुत्र वर्चा के अंश से सुमद्रा के उदर में आया । जन्मतः यह निर्भय, भय उत्पन्न करनेवाला तथा महाक्रोधी प्रतीत होने के कारण, इसका नाम अभिमन्यु रखा गया (म. आ. २१३) ।

दैत्यों के त्रास से भयभीत पृथ्वी को निर्भय करने के लिये, ब्रह्मदेव ने सब देवताओं को, अंशरूप से पृथ्वी पर जन्म लेने के लिये कहा । उस समय सोम ने देवकार्य के लिये अपने पुत्र को पृथ्वी पर भेजा । परंतु वरुणा इसका अत्यंत प्रिय होने के कारण, यह अधिक दिनों तक पृथ्वी पर नहीं रहेगा, केवल सोलह वर्ष ही रहेगा, ऐसा सोम ने सब देवताओं से वचन लिया था । इसीसे इसे सोलह वर्ष की आयु में मृत्यु प्राप्त हुई (म. आ. ६१. ८६. परि. १. ४२) ।

शिक्षण—अभिमन्यु की अस्त्रशिक्षा तथा अन्य युद्ध-कलाशिक्षा, अर्जुन की खास देखरेख में हुई थी । यह अस्त्रविद्या में इतना प्रवीण था कि, इसके हस्तचालपत्य से तथा अस्त्रयोजना नैपुण्य से संतुष्ट हो कर, बलराम ने इसे रौद्र नामक धनुष दिया । यह अत्यंत पराक्रमी था तथा अपने पराक्रम के बल पर, अल्पवयीन होते हुए भी यह महारथी बना ।

युद्धप्रस्थान—भारतीय युद्ध में, द्रोण ने बड़ी कुशलता से अर्जुन को अन्य पांडवों से विलग किया तथा उसे सेना के बाहर, संशप्तक की ओर संलग्न कर दिया । तदनंतर द्रोण ने भीमादि तीनों को युद्ध में व्यस्त किया । इस प्रकार, पांडव तथा अभिमन्यु को अपनी सेना समवेत युद्ध में मग्न देख कर, युधिष्ठिर चिन्ताग्रस्त हो गया । युधिष्ठिर को चिन्ताग्रस्त देख कर, अभिमन्यु ने उसे चिन्ता का कारण पूछा । उसपर युधिष्ठिर ने कहा कि, चक्रव्यूह का भेद करने वाला अपनी सेना में कोई न होने के कारण, मैं चिन्ता कर रहा हूँ । यह सुनते ही, अभिमन्यु ने भीम की सहायता से, चक्रव्यूह का भेद करने का काम स्वीकार किया । चक्रव्यूह में प्रवेश करने की विधि ही केवल अभिमन्यु को ज्ञात थी । फिर भी वह नहीं घबराया । तदनंतर युधिष्ठिर का आशिर्वाद ले कर, अभिमन्यु भीम के साथ व्यूहद्वार के पास आया ।

पराक्रम—उस स्थान पर, द्रोणाचार्य ससैन्य व्यूह की रक्षा कर रहे थे । परंतु अभिमन्यु सेना की पंक्तियों तोड़ कर, व्यूह में प्रविष्ट हो गया । व्यूह में घुसने के पश्चात् अभिमन्यु ने, बड़े बड़े सेनापतियों को अपने शौर्य से भगाया । अपनी सेना को, पीछे हटते देख कर, द्रोणाचार्य सेना सहित अभिमन्यु पर धावा करने आया परंतु आक्रमक को चक्रमा दे कर, इसने अश्मक राजा का तथा शक्य के बंधु का वध किया । तब कर्ण उस पर आक्रमण करने दौड़ा । परंतु उसे भी इसने जर्जर कर दिया ।

इस प्रकार युद्ध करते करते, अभिमन्यु भीमादिकों से काफी दूर चला गया । अभिमन्यु को अकेला देख कर, दुःशासन उसकी ओर दौड़ा । परंतु उसे भी रण से भगा कर, अभिमन्यु इतनी दूर तक चला गया कि, भीमादिकों को वह दिखता ही न था । भीमादिक सरलता से अपने पास आ सकें, इसके लिये इसने मार्ग खुल्ला रखा था परंतु जयद्रथ ने रुद्रवर के प्रभाव से, भीमादिक को रोक रखा तथा अभिमन्यु तक जाने नहीं दिया ।

मृत्यु—इधर अभिमन्यु, भीमादिकों की राह देखता रहा, इतने में, कर्णपुत्र ने इस पर आक्रमण किया । अभिमन्यु ने उसका पराभव कर के, दुर्योधनपुत्र लक्ष्मणा तथा अन्य योद्धाओंको मार डाला । तब द्रोण, कृप, कर्ण, अश्वत्थामा, कृतवर्मा तथा बृहद्बल ये छः लोग, अकेले अभिमन्यु से युद्ध करने लगे । उन सबका इसने अकेले निवारण किया । तब द्रोणादिकों ने बड़े प्रयास से इसे विरथ किया । अभिमन्यु दाल तथा तलवार ले कर लड़ने लगा । परंतु द्रोण ने उन्हें भी तोड़ दिया । तब अभिमन्यु ने केवल गदा ली तथा दुःशासन के पुत्र के साथ गदायुद्ध आरंभ किया । उस समय अभिमन्यु अत्यधिक श्रान्त हो गया, परंतु भीमादि काफी दूर होने के कारण, इसे उनकी सहायता न मिल सकी । उस समय, दुःशासनपुत्र की गदा का प्रहार इस पर होते ही, इसे मूर्च्छा आ गई । उस मूर्च्छा से पूर्ण सावधान होने के पहले ही, दुःशासनपुत्र ने और एक गदाप्रहार कर, इसका वध कर दिया (म. द्रो. ४८.१३) ।

व्यक्तित्व—अभिमन्यु सिंह के समान अभिमानों तथा वृषभ के समान प्रशस्त स्कंधोशला था । यह शौर्य, वीर्य तथा रुध में कृष्णतुल्य था । जन्मतः यह दीर्घबाहु था । यह कृष्ण के समान बलराम को भी अत्यंत प्रिय था (म. आ. २१३. ५८-७०) ।

वंश—विराट राज की कन्या उत्तरा, अभिमन्यु की पत्नी थी। इसकी मृत्यु के समय उत्तरा गर्भवती थी। उसका पुत्र परीक्षित नाम से प्रख्यात है। इस परीक्षित के कारण ही, भारतीय युद्ध में अस्तंगत होते हुए पुरु कुल को नवजीन प्राप्त हुआ।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर के अजित देवों में से एक।

३. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

४. चाक्षुष मनु तथा नहुला का पुत्र।

अभिमान—स्वायंभुव मन्वन्तर के धर्म का पुत्र।

अभिमनिव—भौत्य मन्वन्तर का मनुपुत्र।

अभियुक्ताक्षिक—चौथे मरुद्गणों में से एक।

अभिरथ—(सो. शत्र.) विष्णु के मतानुसार केतु-मान का पुत्र।

अभिधत्—(सो.) कुरु तथा वाहिनी का पुत्र (म. आ. ८९.४४; अविक्रित (२.) देखिये)।

अभूतरजस्—रैवत मन्वन्तर का देवगण। इसमें इस व्यक्तियों का समावेश होता है। इसे अभूतरजस् नामांतर है।

अभ्यग्नि ऐतशायन—ऐतश का पुत्र। एकवार, जब ऐतश अपने पुत्र के सामने कुल मंत्रपठन कर रहा था, तब उन्हें अश्लील समझ कर, इसने उसके मुख पर हाथ रखकर, उनका मंत्रपठन बंद कर दिया। इससे क्रोधित हो कर, तुम्हारा कुल पापी होगा, ऐसा शाप उसने इसे दिया, जिससे सब लोग इसे तथा इसकी संतति को पापी समझने लगे (ऐ. ब्रा. ६.३२)। ऐतशायन को और्वकुलोत्पन्न कहा है (सां. ब्रा. ३०.५)। और्व तथा भृगु कुल का मिलकुल निकट-संबंध होना चाहिए, वा एक ही कुल की ये दो शाखाएँ होंगी। ऋग्वेद काल से इनका एकत्र उल्लेख पाया जाता है (ऐतश देखिये)।

अभ्यावर्तिन् चायमान—एक राजा। इसने वर-शिव के नेतृत्व में वृचिवत् को जीत लिया तथा वरशिव के पुत्रों का वध किया। इसीके लिये इन्द्र ने तुर्वश तथा वृचिवत् को जीता। किन्तु वहाँ यह तथा संजय देववात एक ही होने की संभावना है (ऋ. ६.२७-७)। इसका पार्थव नाम से भी उल्लेख है (ऋ. ६.२७; ८.५)।

अमरेश—इसका गोत्र भारद्वाज। इसने 'वर्णरत्न-प्रदीपिका' नामक २२७ श्लोकों की शिक्षा रची, जिसके आरंभ में कृष्ण नमन हो कर, आगे शौनक तथा शाकटायन का उल्लेख है। यह प्रातिशाख्यानसारिणी है (श्लो. १२२)।

अमर्ष—(सू. इ.) विष्णु के मतानुसार सुगविपुत्र।
अमर्षण—(सू. इ.) संथिराज का पुत्र (म. ९. १२)।

अमल—शृष्टबुद्धि प्रधान का पुत्र (चन्द्रहास देखिये)।

अमला—वैवस्वत मन्वन्तर के अत्रि ऋषी की कन्या। यह ब्रह्मनिष्ठ थी।

अमहीयु आंगिरस—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.६१)।

अमावसु—(सो. पुरुरवस्) पुरुरवस् वंश में ही दो अमावसु हुए। पहला, पुरुरवस् के पुत्रों में से एक तथा दूसरा, अमावसु के वंश के कुशा का पुत्र। इनमें से, पुरुरवसपुत्र अमावसु, कान्यकुब्ज घराने का मूल पुरुष है। इसकी वंशावली अनेक स्थानों पर दी गई है (ब्रह्म. १०. ११-१४; ब्रह्माण्ड. ३.६६. २०-३५; ह. वं. १.२७; विष्णु. ४.७.२-५; वसु तथा जन्तु देखिये)।

२. एक अत्यंत स्वरूपवान पितर। इसको देख कर अच्छोदा नामक पितरों की मानसकन्या मोहित हो गई। परंतु इसने उसकी प्रार्थना अमान्य की। इस कारण, वह योगभ्रष्ट हो कर, अगले जन्म में वसु की कन्या मर्त्या (काली, सत्यवती) हुई (पद्म. सू. ९.१२.२४; अच्छोदा देखिये)।

इसका अगला जन्म इसी नाम से पुरुरवा के पुत्र के रूप में हुआ।

अमवासु वंश—यह वंश, षेल पुरुरवस् के अमावसु नामक पुत्र ने प्रचलित किया। इसकी राजधानी कान्यकुब्ज नगर थी।

इस वंश में, प्रायः पंद्रह पुरुष मिलते हैं। इनमें कुशिक (कुशाश्व), गाधि, विश्वामित्र, मधुच्छंदस, आदि प्रमुख हैं। नय के पश्चात् इस वंश का उल्लेख नहीं मिलता। विश्वामित्र ब्राह्मण बन गया, इस कारण यह क्षत्रियवंश समाप्त हो गया।

इस वंश में एक अजमीठ राजा का नामोल्लेख मिलता है।

अमावास्या शांडिल्यायन—अंशु धानंजय्य का गुरु (वं. ब्रा. १)

अमावास्या—अमावसु तथा अच्छोदा की कन्या (मत्स्य. १४)।

अमाहठ—एक सर्प (म. आ. ५२.१५)।

अमित—(सो. पू. व.) जय का पुत्र (भा. ९. १५.२)।

२. सावर्णि मन्वन्तर का देव ।

३. रैवत मन्वन्तर का देव ।

अमिताभ—सावर्णि मन्वन्तर का देवगण ।

अमितौजस्—पांडव पक्ष का महारथी (म. उ. १६८.१०) ।

अमित्र—द्वितीय मरुद्गणों में से एक । दिती का पुत्र ।

अमित्रजित्--(सू. इ. भविष्य.) भागवत के मतानुसार सुतगत राजा का पुत्र । वायु के मतानुसार सुवर्ण-पुत्र तथा भविष्य के मतानुसार सुवर्णांग का पुत्र ।

२. एक राजा । इसके राज्य में सर्वत्र शिवमंदिर थे । यह देख कर नारद ऋषि आनंदित हो कर इसके पास आया तथा इससे बोला, 'चंपकावती नगर में मलय-गंधिनी नामक एक गंधर्वकन्या है । कंकालकेतु नामक राक्षस उसका हरण कर रहा है । उससे जो मेरी रक्षा करेगा उसीसे मैं विवाह करूंगी, ऐसी उसकी शर्त है । इस लिये तुम यह काम करो' । नारद के इस कथनानुसार, इसने कंकालकेतु से युद्ध कर के उसका नाश किया तथा उस गंधर्वकन्या के साथ यह अपने नगर लौट आया । तदनंतर विवाह हो कर इसे वीर नामक पुत्र हुआ (स्कन्द-४.२. ८२-८३) ।

अमित्रतपन शुभिषण शैब्य--शिवि का पुत्र । इसने अत्यराति जानतपि का वध किया (ऐ. ब्रा. ८.२३) ।

अमूर्तरजस्--अमूर्तरजस् तथा अमूर्तरयस् देखिये ।

अमूर्तरयस्--(सो. पूर.) मत्स्य के मतानुसार अंतिनारपुत्र ।

२. (सो. अमा.) विष्णु के मतानुसार दुःशपुत्र । भागवत के मतानुसार इसका मूर्तरय नाम है । अमूर्तर तथा यह एक ही होगा । विष्णु के मतानुसार अमूर्तरय नाम है ।

३. एक क्षत्रिय । यह गय राजा का पिता था (म. व. ९३.१७) । इसे ही अधूर्तरजस् नामांतर था ।

अमूर्तरय--अमूर्तरयस् (२) देखिये ।

अमृत--(स्वा. प्रिय.) इध्मजिह्व के सात पुत्रों में से एक । इसका वर्ष इसीके नाम से प्रसिद्ध है (भा. ५. २०. २-३) ।

२. अंगिरस गोत्र का मंत्रकार ।

३. अमिताभ नामक देवों में से एक ।

अमृतप्रभ--सावर्णि मन्वन्तर का देव ।

अमृतवत्--स्वायंभुव मन्वन्तर के जिदाजित् देवों में से एक ।

अमृता--अरुवत् की पत्नी ।

अमोघ--बृहस्पति तथा तारा की कन्या स्वाहादेवी का पुत्र । अग्निविशेष (म. व. २०९) ।

२. एक कार्तिकेय का नाम (म. व. परि. १. २२.९) ।

अमोघा--शंतनु ऋषि की भार्या । एक समय, ब्रह्मदेव शंतनु महर्षि के आश्रम में गया । वह ऋषि बाहर गया हुआ था, अतएव इसने ब्रह्मदेव की पूजा की । इसका सुंदर स्वरूप देख कर, उसका वीर्यपतन हो कर लज्जित हो कर वह चला गया । कुछ समय के पश्चात्, शंतनु वापस आया । उस वीर्य को देख कर, कौन आया था--ऐसा उसने पूछा । ब्रह्मदेव का अमोघ वीर्य व्यर्थ नष्ट न हो, इस लिये उसका स्वीकार करने की आज्ञा शंतनु ने इसे दी । उस वीर्य से उत्पन्न गर्भ का तेज यह सहन न कर सकी । तब इसने वह गर्भ युगंधर पर्वत की खाई के जल में डाल दिया । उससे लोहित नामक तेजस्वी तीर्थाधिपति निर्माण हुआ । आगे चल कर, विष्णु को लगा हुआ क्षत्रियवध का पाप, इस तीर्थ में स्नान करते ही नष्ट हो गया । (पद्म. सू. ५५)

अंबर--वृत्रसुरानुयायी असुर (भा. ६.१०.१८-१९) ।

अंबरीष--ऋज्राश्व, सहदेव, सुराधस् एवं भयमान, इनके साथ वार्पागिरि नाम से इसका उल्लेख है (ऋ. १. १००.१७) ।

यह सक्तकर्ता है (ऋ. १.१००; ९.९८) । यह अंगिरस गोत्र का मंत्रकार है ।

२. (सू. नभग.) नामाग का पुत्र (म. स. ८.१२ कुं.) । यह बड़ा शूर तथा धार्मिक था । यह हजारों राजाओं से अकेला लड़ता था । इसने लाखों राजा तथा राजपुत्र, यज्ञ में दान दिये थे । अभिमन्यु की मृत्यु से दुःखित धर्मराज की सात्वना करने के लिये, अंबरीष की भी मृत्यु हो गयी, ऐसे नारद ने बताया (म. द्रो. ६४; शां. २९.९३. परि १. ८. पंक्ति. ५८८) इसने दीर्घकाल राज्य किया (कौटिल्य. २२) ।

एक बार कार्तिक माह की एकादशी का त्रिदिनात्मक उपोषण इसे था । द्वादशी के दिन, इसके घर पर दुर्वास अतिथि बनकर आया तथा आह्निक करने नदी पर गया । इधर द्वादशी काल समाप्त हो रहा था, अतः इसने नैवेद्य

समर्पण किया, तथा तीर्थ ले कर उपवास छोड़ा। यह जान कर, दुर्वास ने अपनी जटा के केशों द्वारा निर्मित एक कृत्वा अंबरीष पर छोड़ी। इतने में, विष्णु के सुदर्शन ने कृत्वा का नाश किया तथा वह चक्र दुर्वास के पीछे लगा। इस स्थिति में, विष्णु ने भी उसका संरक्षण करना अस्वीकार कर, पुनः अंबरीष के यहाँ जाने को कहा। दुर्वास को अंबरीष के यहाँ लौटने में एक वर्ष लगा। तब तक अंबरीष भूला ही था। इसने दुर्वास को देखते ही उसका स्वागत किया। चक्र की स्तुति कर उसे वापस भेजा तथा दुर्वास को उत्तम भोजन दिया। (भा. ९. ४-५)। इसने पशु-बर्हिनी एकादशी का व्रत किया था। योग्य समय पर उपवास छोड़ने के कारण, यह विष्णु को प्रिय हुआ। अतः इसे मोक्ष प्राप्त हुआ (पञ्च. उ. ३८. २६-२७)।

इसने भीष्मपंचक व्रत किया था (पञ्च. उ. १२५. २९-३५)। जब यह स्वर्ग में गया, तब इसे स्वर्ग में सुदेव नामका इसका सेनापति दिखाई दिया। तब इसे आश्चर्य हुआ। 'स्वर्ग में कौन आता है', इस विषय पर इन्द्र से इसका संवाद हुआ। इन्द्र ने इसे बताया कि, सुदेव की रणांगण में मृत्यु होने के कारण, उसे स्वर्गप्राप्ति हुई (म. शां. ९९ कुं.)। इसके पुत्र का नाम सिंधुद्वीप। इसे विलुप, केतुमान तथा शंभु नामक तीन पुत्र भी थे (भा. ९. ६: १)। इसने सकल राष्ट्र का दान किया था (म. अनु. १. ३७. ८)।

३. (स. इ.) मांधाता को विदुमती से प्राप्त तीन पुत्रों में से मंजला (भा. ९. ७. १)।

४. (स. इ.) त्रिशंकु के दो पुत्रों में से दूसरा। इसे भीमती नामक कन्या थी। वह नारद तथा पर्वत के वाद में विष्णु ने प्राप्त की (अ. रा. ३-४)। यह एक बार यज्ञ कर रहा था, तब इसके दुर्वर्तन के कारण, इंद्र ने इसका यज्ञपथ उड़ा लिया। तब इसने ऋचीक ऋषि को द्रव्य दे कर, उसका शुनःशेष नामक पुत्र खरीद लिया तथा यज्ञ पूरा किया। धर्मसेन इसका नामांतर है, एवं यौवनश्व इसका पुत्र है। यही हरिश्चंद्र है (लिङ्ग. २. ५. ६; वा. रा. वा. ६१; शुनःशेष देखिये)।

५. एक सर्प। यह कद्रु का पुत्र था।

अम्बर्वर्य—यह दक्षिण में गौतमी के किनारों, दंडक देश का नृप था। इसका वृसिंह ने वध किया (वृसिंह देखिये)।

अंबष्ट्र वा **अम्बष्ट्रक**—दूर्योधनपक्षीय क्षत्रिय। इसका अभिमन्यु के साथ युद्ध हुआ था (म. भी. ९२. १७)। इसको अर्जुन ने युद्ध में मारा (म. द्रो. ६८. ५६)।

२. पांडवपक्षीय क्षत्रिय। इसके पुत्र को लक्ष्मण ने मार डाला (म. क. ४. २६*)।

अम्बाष्ट्र—कंस के कुवलयार्पीड हार्थी का महावत (भा. १०. ४३. २-५)।

अंबा—काशीराज की तीन कन्याओं में से ज्येष्ठ। अपनी कन्याएँ उपवर होने के कारण, काशीराज ने उनके स्वयंवर का निश्चय किया। तदनुसार देशदेशांतर के राजाओं को स्वयंवरार्थ निमंत्रण भेजे। इस स्वयंवर में कोई भी शर्त नहीं रखी गयी थी। काशीराज ने निश्चय किया था कि, जो सत्र से अधिक बलवान हो वह इनका हरण करे।

चित्रांगद के निधनोपरांत, भीष्म अपनी सौतेली माँ की संमति से, विचित्रवीर्य के नाम पर हस्तिनापुर का राज्य चला रहा था। विचित्रवीर्य का विवाह नहीं हुआ था। स्वयंवर का समाचार मिलते ही, विचित्रवीर्य के लिये उन कन्याओं का हरण करने के लिये, भीष्म स्वयंवर को गया तथा वहाँ के समस्त राजाओं को हरा कर, तीनों कन्याओं को हरण कर ले आया (म. आ. ९६)।

भीष्म ने हस्तिनापुर आकर, उन तीनों का विचित्रवीर्य से विवाह करने का निश्चित किया। इस बात का पता लगते ही, अंबा ने भीष्म से कहा कि, वह पहले से ही शास्व से प्रेम करती है, इस लिये उसका विवाह विचित्रवीर्य से करना योग्य नहीं होगा। यह सुन कर भीष्म ने अंबा को दलबल सहित सम्मान के साथ शास्व के पास भिजवा दिया। शास्व ने उसका अंगिकार नहीं किया। भीष्म ने सबके सामने उसे हराया था, इस लिये अंबा के साथ विवाह करना शास्व को योग्य नहीं लगा। अंबा फिरसे भीष्म के पास आयी और उससे कहा कि, आपने मुझे जीत कर लया है, इस लिये शास्व मुझे स्वीकार नहीं कर रहा है, अतएव आप ही मेरा वरण करें, यही योग्य होगा। परंतु भीष्म ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने का प्रण किया था, इस लिये उन्हे अंबा की इच्छा अस्वीकृत करनी पड़ी।

चारों ओर निराधार होने के कारण, अंबा अत्यंत दुःखित हुई। अपनी इस दुर्दशा का कारण भीष्म है, इस लिये किसी प्रकार से भीष्म से प्रतिशोध लिया जाय, इस पर यह विचार करने लगी, तथा तप करने के लिये हिमालय की ओर चल पड़ी।

हिमालय की ओर जाते समय, इसे राह में शैलावस ऋषि का आश्रम मिला। ऋषि को इसने अपना निश्चय बताया।

तब उन्होंने इसे इसके निश्चय से परावृत्त करने का प्रयत्न किया। परंतु वह निष्फल हुआ और अंबा वहीं तप करने लगी। कुछ समय बाद होत्रवाहन नामक एक राजर्षि उस आश्रम में आये। वे अंबा के मातामह थे। अंबा की यह स्थिति देख वे अत्यंत दुःखित हुए। अपनी नतिनी का दुःख दूर होने के लिये, उन्होंने भीष्म के गुरु परशुराम के द्वारा भीष्म का परिपत्य कर, उसे अंबा को स्वीकार करने के लिये बाध्य करने का निश्चय किया। तदनुसार अपनी नतिनी को लेकर, वे परशुराम के पास जाने ही वाले थे कि, परशुराम का शिष्य अकृतव्रण वहाँ आ पहुँचा तथा उसने बताया कि, परशुराम इसी आश्रम की ओर आ रहे हैं। इस लिये होत्रवाहन परशुराम से मिलने के लिये वहीं रुक गये (म. उ. १७३-१७६)।

कुछ दिनों बाद, परशुराम उस आश्रम में आ पहुँचे। अंबा का वृत्तान्त जान कर उसे दुःखमुक्त करने का उन्होंने वचन दिया तथा भीष्म के पास संदेश भिजवाया कि, अंबा का स्वीकार करो अथवा युद्ध करने के लिये तैयार हो जाओ। भीष्म ने आजन्म ब्रह्मचर्य का अपना निश्चय परशुराम के पास भिजवाया तथा स्वयं युद्ध के लिये तैयार हो गये। आगे चलकर कुरुक्षेत्र में दोनों का भीष्म युद्ध हुआ, जिस में कोई भी पराजित न हुआ तथा युद्ध रोक दिया गया।

अंबा को यहाँ भी निराशा ही मिली परंतु भीष्म से बदला लेने का निश्चय इसने बिल्कुल नहीं छोड़ा। भीष्म का वध करने के लिये इसने शंकर की उपासना (कठोर तपस्या) प्रारंभ की। गंगा को इसका निश्चय मालूम होते ही, उसने अंबा को तप से परावृत्त करने का बहुत प्रयत्न किया। परंतु अंबा ने गंगा की एक न सुनी। तब गंगा ने उसे श्राप दिया कि, 'तू अर्धांग से वरसाती नदी होगी।' अंबा फिर भी अपने निश्चय पर अटल रही (म. उ. १८७)।

कुछ कालोपरांत, महादेवजी उसकी तपश्चर्या से संतुष्ट हो, वरदान देने को तैयार हुए। अंबा ने भीष्म को मार डालने की अपनी इच्छा बतायी। तब महादेवजी ने वरदान दिया कि, इस जन्म में यह संभव नहीं है परंतु अगले जन्म में द्रुपद के घर पहले कन्या रूप में जन्म लेने के पश्चात् तुझे पुरुषत्व प्राप्त होगा। तू शिखंडी नाम से प्रसिद्ध होकर भीष्म का वध करेगी। इतना वरदान दे कर, शंकरजी अंतर्धान हो गये। अपना मनोरथ पूर्ण हुआ

देख, अंबा ने अग्नि में प्रवेश कर, देहयाग किया (म. उ. १८८)।

महाभारत के कुम्भकोणम् प्रति में, उपरोक्त कथा दूसरे प्रकार दी गयी है, जो इस प्रकार है—अंबा की उत्कृष्ट तपश्चर्या देख कर कार्तिकस्वामी ने प्रसन्न हो कर उसे एक प्रासादिक तथा दिव्य माला दे कर बताया कि, जो इस माला को धारण करेगा वह निःसंशय भीष्म का वध करेगा। अंबा ने वह माला ली। वह देशदेशांतर में यह पृच्छते हुए विचरण करने लगी 'कोई क्षत्रिय, इस माला को धारण कर, भीष्म को मारने में समर्थ है?' परंतु भीष्म का वध करने की इच्छा रखनेवाला एक भी क्षत्रिय उसे नहीं मिला। अंत में पांचालराज द्रुपद के अस्वीकार करने पर भी, अंबा राजमहल के दरवाजे पर माला फेंक कर चली गयी। तब द्रुपदने वह माला उठाकर अपने प्रासाद में रख ली। आगे चल कर शिखंडी ने उसी माला के योग से भीष्म का वध किया (म. आ. परि. १.५५)।

अंबायजीया—सत्यलोक की एक अप्सरा।

अंबालिका—काशीराज को तीन कन्याओं में से कनिष्ठ तथा विचित्रवीर्य की स्त्री (अंबा देखिये)। पति से इसे संतति नहीं हुई। पति की मृत्यु होने पर सास सत्यवती तथा देवर भीष्म के अनुमोदन पर, इसने व्यास से पुत्रप्राप्ति करा ली परंतु गर्भधारणा के समय भयभीत हो कर, यह फीकी पड़ गई। अतएव इसका पुत्र भी फीके सफेद रंग का हुआ। इस लिये उसका नाम पांडु रखा गया (म. आ. १००.१७-१८; सत्यवती देखिये)।

अंबिका—काशीराज की तीन कन्याओं में से मझली तथा विचित्रवीर्य की स्त्री (अंबा देखिये)। पति से संतति न होने के कारण इसने व्यास से पुत्र प्राप्ति करा ली। रति के समय अँखें बंद रखने के कारण अंधे धृतराष्ट्र का जन्म हुआ। इसे कौसल्या भी नाम दिया गया था। फिर से अच्छा पुत्र हो, इस लिये सास ने इसे फिर से व्यास के पास जाने को कहा। व्यास का स्वरूप मन में आते ही यह मन में घबरायी, तथा इसने सास को यों ही, हाँ कह दिया। परंतु ऐन समय पर, एक दासी को व्यास के पास भेज दिया, उससे विदूर का जन्म हुआ (म. आ. १०५-१०६)।

२. रुद्रपत्नी (श. ब्रा. २.५.३.९)।

अंबुक—ब्रह्मघान का पुत्र।

अंबुधारा—दक्षसावर्णि मन्वन्तर में के ऋषभ अवतार की माता (भा. ८.१३)।

अंबुवीच—मगधदेश के राजग्रह नगर का राजा। वह सब प्रकार से पंगु रहने के कारण, प्रधान महाकर्ण भयंत प्रबल हो गया। परंतु देवयोग से वह राज्य हड़प न सका (म. आ. १९६.१७-२२)।

अंभुण—इसकी कन्या वाञ्छ (वाञ्छ देखिये)।

अंभोद्—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५९)।

अय—स्वरोचिष मन्वन्तर का प्रजापति। यह वसिष्ठ का पुत्र था।

२. अगस्त्य गौत्र का मंत्रकार।

३. तुषित नामक देवगणों में से एक।

४. यजुर्वेदी ब्रह्मचारी।

अयशिरस्—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

अयतंस—(सो.) भविष्यमतानुसार परातंस का पुत्र।

अयतायन—विश्वामित्र कुल का एक गौत्रकार।

अयति—(सो.) नहुष का पुत्र (म. आ. ७०.२८)।

अदस्थुण—शौल्वायन जिनका अध्वर्यु था, उन्हीं का यह ग्रहण था। इसीने शौल्वायन को विशिष्ट यज्ञ-साधन का उपयोग सिखाया (श. ब्रां. ११.४.२.१७)।

अयस्मय—स्वरोचिष मनु का पुत्र।

अयस्य—अजस्य देखिये।

अयाप्य—वायुमतानुसार अयास्य का नाम।

अयास्य आंगिरस—सूक्तद्रष्टा (बृ. ९.४८-४६; १०.६७-६८)। आंगिरस को स्वराज्य से उत्पन्न लड़का।

इसका पुत्र कितव (ब्रह्माण्ड. ३.१)। राजसूय यज्ञ में वह उद्गाता था। उस यज्ञ में शुनःशोष को बलि देने का था (पं. ब्रा. ११.८.१०; १८.३.२२; १६.१२.४; सां. ब्रा. ३०.६)। धर्मकृत्य में, प्रमाण के लिये इसका बहुत से स्थानों पर उल्लेख आता है। यह आभूति त्वाष्ट्र का शिष्य है (बृ. उ. १.३.८; १९; २.६.३; ४.६.३)। शार्यति मानव के यज्ञ में यह उद्गाता था (जै. उ. ब्रा. २.७.२; १०; ८.३)।

अयुत—(सो. जह्नु.) राधिका का पुत्र।

अयुताजित—(सो. भज.) भागवतमतानुसार शाल्वपुत्र। भद्रमानस की दूसरी स्त्री से उत्पन्न तीन पुत्रों में कनिष्ठ।

अयुतानाथिन्—(सो. पूर.) महाभौम तथा सुयज्ञा का पुत्र। इसकी स्त्री भोसा। इसका पुत्र अक्रोधन (म. आ. ९०.१९)।

अयुतायु—(सू. इ.) सिंधुद्वीप का पुत्र (भा. ९.९)।

२. (सो. कुरु.) विष्णु के मतानुसार आरावी का पुत्र।

३. (मगध. भविष्य.) भविष्य के मतानुसार अर्णव का पुत्र। इसने १००० वर्षों तक राज्य किया। भागवत, वायु, मत्स्य तथा ब्रह्माण्ड के मतानुसार श्रुतश्रवस् का पुत्र परंतु विष्णु के मतानुसार श्रुतवान् का पुत्र। अयुतायुत पाठभेद है।

अयुताश्व—(सू. इ.) भविष्य के मतानुसार सिंधु-द्वीप का पुत्र। यह वैष्णव था।

अयोज्य—एक ऋषि (वायु. ५९ ९०-९१)। इसका अपास्य नामांतर था (ब्रह्माण्ड. २.३२.९८-१००)।

अयोबाहु—धृतराष्ट्र के पुत्रों में से एक।

अयोभुज—धृतराष्ट्रपुत्र। इसका वध भीम ने किया (म. द्रो. १३२.१, ३५*; पंक्ति.)।

अयोमुख—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

अयोमुखी—एक राक्षसी। सीता को हूँदते हुए राम लक्ष्मण जब मातंगाश्रम की ओर गये, तब वहाँ लक्ष्मण के समीप जाकर इसने लक्ष्मण का वरण करने की इच्छा प्रदर्शित की। तब लक्ष्मण ने शूर्पणखा के समान इसकी अवस्था की। तब इसने वहाँ से पलायन किया (वा. रा. अर. ६९)।

अरजा—उशनस् शुक्र की कन्या। इसका कौमार्य दंड राजा ने नष्ट किया था। इस लिये, इसके पिता ने इसे दंडकारण्य में ही भासवाश्रम के पास के सरोवर पर रहने के लिये कहा। तदनंतर यह निष्पाम हुई (वा. रा. उ. ९१; पद्म. सू. ३४)।

अरण्य—रैवत मनु का पुत्र।

२. हिरण्याक्षानुयायी असुर। इसका वध कार्तिकेय ने किया (पद्म. सू. ७५)।

अरण—भृगु गोत्रीय मंत्रकार।

अररु—एक दैत्य (तै. सं. १.१.१९)।

अरार्चिद्—(सो.) भविष्य के मतानुसार चित्ररथ का पुत्र।

अरार्चीन—(सो. पूर.) जयरत्नेन तथा सुषुवा का पुत्र। इसकी पत्नी का नाम मर्यादा तथा पुत्र का नाम अरिह था (म. आ. ९०.१७-१८)।

अराल दात्रेय शौनक—दृति पेट्रात शौनक का शिष्य। इसका शिष्य शूष (वं. ब्रा. २)।

अरालि—विश्वामित्र पुत्र ।

अरि—अंगिरस कुल का एक गोत्रकार ।

अरिक्तचर्चर्ण—(आंश्र. भविष्य.) मस्य के मतानुसार स्वातिवर्ण का पुत्र ।

अरिजित—(सो. यदु.) भद्रा से उत्पन्न कृष्ण का पुत्र ।

अरिंजय—(मगध. भविष्य.) वायु के मतानुसार वरिजित का पुत्र तथा ब्रह्माण्ड के मतानुसार विश्वजित का पुत्र ।

अरितायु—(सो. कुरु.) मस्य के मतानुसार यह भीमपुत्र है ।

अरिद्योत्—(सो. अंधक.) दुंदुभि का पुत्र ।

अरिंदम—विश्वतर के सोमयज्ञ में, श्यापर्ण का प्रवेश होने पर, उनके द्वारा बताई गई सोम परंपरा में, समश्रुत ने अरिंदम को यह परंपरा बताई, ऐसा उल्लेख है (ऐ. ब्रा. ७.३४) ।

अरिर्मर्दन—(सो. वृष्णि.) श्वफल्क का पुत्र ।

अरिमेजय—सर्पसत्र में इसने आश्चर्यव किया था (पं. ब्रा. २५.१५) ।

२. (सो. वृष्णि.) श्वफल्क का पुत्र (विष्णु. ४.१४. २) । सारमेय तथा शरिमेजय पाठ प्राप्त है । इसकी पांडवों की ओर जाने की संभावना है, ऐसा धृतराष्ट्र कहता है (म. द्रो. १०.२८) ।

अरिष्ट—कश्यप तथा दनु का पुत्र ।

२. कंस ने कृष्णपर भेजा हुआ दैत्य । इसने बैल का रूप ले कर कृष्ण पर हमला किया । इसने कुल दो आक्रमण किये । दूसरे आक्रमण के समय, कृष्णने इसकी गर्दन मरोड़ी तथा एक सींग उखाड़ कर, उसी सींग से उसे पीटा । तत्काल रक्त की उल्टी कर के, यह मर गया (भा. १०.३६.१६; ह. वं. २.२१) ।

३. विनतापुत्र । इसे अरिष्टनेमि तथा ताक्ष्य नामांतर हैं (म. व. १८४; कुं. १८२.८; बंबई प्रत तुलना करके देखिये) ।

४. बलि के पुत्रों में से एक ।

५. यमसभा का क्षत्रिय (म. स. ८.१४) ।

६. वैवस्वत मनु का पुत्र ।

७. सावर्णि मनु का पुत्र ।

अरिष्टनेमि—कश्यप का नामांतर (म. शां. २०८. ८) । प्रजापतियों में से यह एक था (वायु. ६६.५३-५४) ।

२. विनता के पुत्रों में से एक (म. आ. ५९. ९३) ।

३. पौष माह के सूर्य के साथ घूमनेवाला गंधर्व ।

४. (सू. निमि.) पुरुजित् जनक का पुत्र ।

५. अज्ञातवासकाल में, तंतिपाल के साथ यह नाम भी सहदेव ने धारण किया था (म. वि. १०) ।

६. बलि की सेना का एक दैत्य (भा. ८.६) ।

७. यमसभा का एक क्षत्रिय (म. स. ८.२०) ।

८. एक ब्राह्मण । इसका सगर के साथ मोक्षताम्रन के विषय में संवाद हुआ था (म. शां. ७७.२) ।

९. एक राजा । यह राज्य का त्याग कर के, गंधमादन पर्वत पर तपश्चर्या कर रहा था । यह देख कर, इन्द्र ने अपना दूत इसके पास भेजा तथा इसे हवाई जहाज में स्वर्ग ले आने के लिये कहा । परंतु स्वर्ग में भी उरुचनीच भेद है तथा पुण्यक्षय होने पर अधःपतन होता है, ऐसा दूत से सुन कर, क्रोध से इसने उसे वापस भेज दिया । परंतु इन्द्र ने दूत को पुनः इसकी ओर भेजा, तथा इसको आत्मज्ञान का बोध होने के लिये, बाल्मीकि के आश्रम में ले जाने के लिये कहा । बाल्मीकि से मुलाकात होते ही, जीवमुक्त होने के लिये, उसने इसे समग्र रामायण कथन किया तथा उसके श्रवण, मनन, निदिध्यास से तुम जीवन्मुक्त हो जाओगे, ऐसा आश्वासन दिया (यो. वा. १.१) ।

अरिष्टनेमि ताक्ष्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१७८) ।

हैहय पुत्र कुमार ने इसके पुत्र की मृगया में हत्या की थी । फिर भी यह सदाचार से जीवित रहा (म. आर. १८२) ।

अरिष्टसेन—भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय राजा (म. श. ६) ।

अरिष्टा—प्राचेतस दक्षप्रजापति तथा असिकनी की कन्या । कश्यप की पत्नी । इसे गंधर्वी तथा अप्सराएं हुईं । कश्यप की पत्नीयों के उल्लेख के समय, अरिष्टा व्रता कर प्राधा नहीं बताई गई है, परंतु संतति के उल्लेख के समय, अरिष्टा के बदले प्राधा नाम प्रयुक्त किया है । अतएव अरिष्टा तथा प्राधा एक ही है ।

अरिह—(सो. पूरु.) अराचीन तथा विडर्भकन्या मर्यादा का पुत्र । इसकी स्त्री का नाम आङ्गी (म. आ. ९०.८९९*) ।

२. अमिताभ देवों में से एक ।

अरुणवत्—(सो. कुरु.) विदूरथ तथा संप्रिया का पुत्र (म. आ. १०. ४२)। इसका पुत्र परिक्षित्। इसकी पत्नी अमृता।

अरुज—रावणपत्नी राक्षस। यह विभीषण द्वारा मारा गया (म. व. २६१.२)।

अरुण—सृष्ट्युत्पत्ति के समय ब्रह्मदेव के मांस से उत्पन्न ऋषि। यह ब्रह्मदेव का पुत्र था (तै. आ. १.२३. २६)।

२. अक्षय मनु के पुत्रों में से एक।

३. दनु तथा कश्यप का पुत्र (भा. ६.६)।

४. विनता तथा कश्यप का पुत्र। अनुरू तथा विराद इसके नामांतर हैं, क्यों कि, जन्म से ही इसे पैर नहीं थे। विनता की सौत कद्रु को उनके साथ ही गर्भ रहा था, परंतु इसके पुत्रों को चलते फिरते देख, विनता अपने दो अंडों में से एक को फोड़ा। उसमें से कमर तक शरीरवाला पुत्र निकला। बाहर आते ही, यह जान कर कि, सौत-मत्सर के कारण इसकी यह दशा हुई है, इसने मां को शाप दिया कि, तुम्हें ५०० वर्ष तक सौत की दासी बन कर रहना पड़ेगा। परंतु, दूसरे अंडे को परिष्कृत होने दिया तो दूसरा पुत्र दासता से मुक्त करेगा, ऐसा उद्घोषण कहा (म. आ. १४; अरु. २०)। आंग चूष कर, इसके छोटे भाई कद्रु ने इसे पूर्व भाग में जा कर रखा। इसने अपने योगकल से, सतत सूर्य का तेज निगल लिया। उसी समय से देवताओं के कहने से, सूर्य का सारथी होना इसने स्वीकार किया (म. आ. परि. १.१४)। कश्यप तथा ताम्रा की कन्या इथेनी इसकी भार्या थी। उससे इसे संपति, ब्रह्मयु तथा इथेन आदि पुत्र हुए (म. आ. ६०-६१)। निर्णयसिंधु तथा संस्कार कौस्तुभ में इसके अरुण स्मृति का उल्लेख है (C. C.)।

५. विप्रचिती के वंश का एक दास्युव। इसने हजारों वर्षों तक गायत्रीमंत्र का जाप कर तप किया, तथा 'युद्ध में मृत्यु न हो' ऐसा वरदान ब्रह्मदेव से मांग लिया। आंग चल, मन्वेन्मत हो कर अपना निवासस्थान पाताल छोड़ कर, यह भूमि पर आया तथा इंद्रादि देवताओंको युद्ध का आह्वान देने दूत भेजा। उसी समय आकाशवाणी हुई कि, जब तक यह गायत्री का त्याग नहीं करेगा, तब तक इसे मृत्यु नहीं आयेगी। तब देवताओं ने बृहस्पति को गायत्री का त्याग करवाने भेजा। बृहस्पति को आया देख, 'मैं आपके पक्ष का न होने हुए भी आप यहां कहां निकल पड़े' ऐसा इसने पड़ा। तब बृहस्पति ने कहा कि, हमारे

तरह ही तुम भी गायत्री के उपासक हो, इसलिये भला तुम हमारे पक्ष के कैसे नहीं? यह सुन, इसने देवताओं की उपास्य देवी गायत्री का जाप छोड़ दिया। इससे देवी ने संतप्त हो कर लक्ष्मों मीरे उत्पन्न कर उन्हें इस पर छोड़ा, तथा बिना युद्ध किये ही सेनासहित इसे मार डाला (दे. भा. १०.१३)।

६. (सू. इ.) हर्यश्च को द्रुपदती से उत्पन्न पुत्र। निबंधन तथा त्रिबंधन इसके नामांतर हैं।

७. नरकासुर का पुत्र। नरकासुर को मारने पर, यह अपने छः भाइयों समेत कृष्ण पर दृष्ट पड़ा। उस समय कृष्ण ने इसके सहित इसके छः भाइयों को मार डाला।

८. धर्मसावर्णि मन्वन्तर में होनेवाले सप्तर्षियों में से एक।

अरुण आट—सर्पयज्ञ में का अन्वष्टावाक नामक ऋषिज (पं. वा. २५. १५)।

अरुण औपवेशि—एक आचार्य। यह उपवेशि का शिष्य था तथा इसका शिष्य उद्दालक था (वृ. उ. ६. ५. ३)। अभ्याधान के समय वाग्भ्यत होना चाहिये, यह बताने के लिये, इस वृद्ध आचार्य की आख्यायिका दी गयी है। सत्यपालन के लिये मौन रहना श्रेयस्कर है, ऐसा इसका तात्पर्य है (श. ब्रा. २. १. ६. २०; तै. सं. ६. १. ९. २; ४. ५. १; तै. ब्रा. २. १. ५. ११)। विख्यात उद्दालक आरुणि इसका पुत्र है। यह उपवेशि गौतम का शिष्य तथा राजपुत्र अश्वपति का समकालीन था (श. ब्रा. १०. ६. १. २)।

अरुण वैतहृदय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ९)।

अरुणा—कश्यप तथा प्राधा की कन्या (म. आ. ६०)।

अरुणि—ब्रह्ममानसपुत्र। यह विरक्त था (भा. ४. ८)।

अरुद्ध—(सो. द्रुह्यु.) वायुमतानुसार सेतुपुत्र (अंगार देखिये)।

अरुंधती—स्वार्थभुव मन्वन्तर में, कर्दम प्रजापति को देवहूति से उत्पन्न कन्या। यह वसिष्ठ को ब्याही गयी थी (३. २३; २४; मत्स्य. २०१. ३०)।

२. कश्यप की कन्या। इसे नारद तथा पर्वत नामक दो भाई थे। नारद द्वारा यह वसिष्ठ को ब्याही गयी थी (वायु. ७१. ७९. ८३; ब्रह्माण्ड. ३. ८. ८६; तिङ्ग. १. ६३. ७८-८०; कूर्म. १. १९. २०; विष्णुधर्म. १. ११७)। इसने वसिष्ठ की प्राप्ति के लिये, गौरी-व्रत किया

था। इस कारण, इसे विवाहसुख प्राप्त हुआ (भ. वि. ब्राह्म. २१)।

३. मेधातिथि मुनि की कन्या। मेधातिथि ने ज्योति-ष्टोम नामक यज्ञ किया। उस समय यह यज्ञकुंड से उत्पन्न हुई। पूर्वजन्म में यह ब्रह्मदेव की संध्या नामक मानस कन्या थी। चंद्रभागा नदी के तट पर तपोरण्य में, मेधातिथि के घर यह बड़ी होने लगी। पाँच साल के उपरान्त, जब यह एक बार चंद्रभागा नदी पर गयी थी, तब ब्रह्मदेव ने विमान में से इसे देखा तथा तत्काल मेधातिथि से मिल कर, इसे साध्वी स्त्रियों के संपर्क में रखने के लिये कहा। ब्रह्मदेव के कथनानुसार, मेधातिथि ने सावित्री के पास जा कर कहा, 'माँ! मेरी इस कन्या को उत्तम शिक्षा दो।' सावित्री ने उसकी यह प्रार्थना मान्य की। इस प्रकार सात वर्ष बीत गये। बारह वर्ष की आयु पूर्ण होने के पश्चात्, एक बार यह, सावित्री तथा ब्रह्मा के साथ मानस-पर्वत के उद्यान में गई। वहाँ तपस्या करते हुए वसिष्ठ ऋषि दृष्टिगोचर हुए। वसिष्ठ एवं अरुंधती का परस्पर दृष्टि-मिलन होते ही दोनों को कामवासना उत्पन्न हुई। तथापि मनोनिग्रह से दोनों अपने अपने आश्रम में गये। सावित्री को यह ज्ञान होते ही, उसने इन दोनों का विवाह करा दिया (कालि. २३)।

वर्तमान वैवस्वत मन्वन्तर के मैत्रावरुणी वसिष्ठ की पत्नी (म. स. ११.१३२४; व. १३०.१४)। इसका दूसरा नाम अक्षमाला भी था (म. उ. ११५.११)। अरुंधती ने स्वयं, 'अरुंधती' शब्द की व्युत्पत्ति, निम्न प्रकार बताई है। यह वसिष्ठ को छोड़, अन्य कहीं भी नहीं रहती तथा उसका विरोध नहीं करती (म. अनु. १४२.३९ कुं.)।

कमल चुराने के लिये शपथ लेने के प्रसंग में, कमल न चोरने के लिये इसने प्रतिज्ञा की है (म. अनु. १४३. ३८ कुं.)। ऋषियों द्वारा धर्मरहस्य पूछे जाने पर, श्रद्धा, आतिथ्य तथा गोशुंगस्नान का माहात्म्य, इसके द्वारा वर्णन किये जाने की पुरानी कथा, भीष्म ने धर्म को कथन की है (म. अनु. १९३.१-११ कुं.)।

यह अत्यंत तपस्वी तथा पतिसेवापरायण थी। इसी कारण, अग्निपत्नी स्वाहा अन्य छः ऋषिपत्नीओं का रूप धारण कर सकी, पर इसका रूप धारण न कर सकी (म. व. २७७.१६ कुं.)।

एकबार, इसे वदरपाचनतीर्थ पर रख कर, सप्तर्षि हिमालय में फलमूल लाने गये। तब बारह वर्षों तक अवर्षण हुआ। तब सप्त ऋषि वहीं बस गये। इधर

अरुंधती के कठिन तप की परीक्षा देने, शंकर ब्राह्मण का वेश ले कर भिक्षा मागने पधारे। पास में कुछ न होने के कारण, इसने कुछ (लोहे के) वेर उसे दिये। ब्राह्मण ने उसे पकाने के लिये कहा, तब इसने उन्हें पकाने के लिये अग्नि पर रखा तथा अनेक विषयों पर उस ब्राह्मण के साथ चर्चा प्रारंभ की। चर्चा होत-होते बारह वर्ष क्व व्यतीत हो गये, इसका पता तक नहीं चला। हिमालय गये सप्तर्षि फलमूल ले कर वापस लौट आये, तब शंकर ने प्रगट हो कर, अरुंधती की कड़ी तपश्चर्या का वर्णन उनके पास किया, तथा उसकी इच्छानुसार, वह तीर्थ पवित्र स्थान हो कर प्रसिद्ध होने का प्रदान दिया (म. श. ४८)। आकाश में सप्तर्षियों में वसिष्ठ के पास इसका उदय होता है। इसका पुत्र शक्ति (ब्रह्माण्ड ३.८.८६.८७)।

३. दक्ष एवं असिन्नी की कन्या तथा धर्म की दस पत्नीओं में से एक (दक्ष तथा धर्म देखिये)।

अरुणोषण—(सो.) भविष्य के मतानुसार मिहिरार्थ का पुत्र। इसने ३८,००० वर्षों तक राज्य किया।

अरुरु—अनायुषा का पुत्र। इसका पुत्र धृष्टु।

अर्के—(सो. नील.) पूरुज का पुत्र।

२. रामसेना का एक बानर (वा. रा. युं. ४)।

३. आठ बसुओं में से एक (भा. ६.६.११)।

अर्कज—बलीह देखिये।

अर्कपर्णा—कश्यप तथा मुनि के पुत्रों में से एक। इसका नामांतर तृणप है।

अर्कसाचार्य—नवम मनु (मनु देखिये)।

अर्केष्टिमत्—(सो.) भविष्य के मतानुसार वैकर्तन का पुत्र। इसने ४६०० वर्षों तक राज्य किया।

अर्गल काहोडि—एक आचार्य (क. सं. २५.७)।

अर्चत् हैरण्यस्तूप—सुतेद्रष्टा (क. १०.१४९)। मंत्र में भी इसका निर्देश है (क. १०.१४९.५)।

अर्चनानस आत्रेय—सुतेद्रष्टा (क. ५. ६३; ६४; ८.४२)। इसे मित्रावरुणी ने सहायता की (क. ५.६४. ७)। श्यावाश्र के साथ अथर्ववेद में इसका उल्लेख है (अ. वे. १८.३.१५)। परंतु यह श्यावाश्र का पिता था (पं. ब्रा. ८.५.९; श्यावाश्र देखिये)।

अर्चि—(स्वा. उत्तान.) वेन राजा के देहमंथन से मिथुन उत्पन्न हुआ। उस मिथुन में की यह स्त्री। यह उस मिथुन का पुरुष पृथुराजा की पत्नी बनी। यह लक्ष्मी का अवतार थी। (भा. ४.१५.५; पृथु देखिये)।

२. कृशाश्रु कर्म की प्रे पत्नियों में से एक, एवं धूम-
केश ऋषि की माता (मा. ६.६.२०) ।

३. ब्रह्मसामर्गि सन्वत्सर के देव ।

अर्चिमालि—सीतायुद्धी के लिये पश्चिम की ओर
गये वानरों में से एक (वा. रा. कि. ४२) ।

अर्चिष्मन्—अश्वत्थामाणि मनु का पुत्र ।

अर्चिष्मती—बृहस्पति की कन्या । बृहस्पति की दूसरी
पत्नी शुभा की सप्त कन्याओं में से एक ।

अर्चिसन—अग्निगोत्री मंत्रकार । इसे अर्धस्वन तथा
अर्धवन नामों से भी कहते हैं ।

अर्जुन—ब्रह्मांड के मतानुसार व्यास की षष्ठक शिष्य-
परंपरा का शार्कटिक भरद्वाज का शिष्य । यादु के मता-
नुसार अर्जुन पांडु है (व्यास देखिये) ।

अर्जुन—(सो. पू.) कुन्ती को दुर्वास द्वारा दिये गये
द्वन्द्वमेवमव मे उत्पन्न पुत्र । यह कुन्ती का तृतीय पुत्र
था । इसका जन्म होने ही इसका पराक्रम कथन करने-
वाली आकाशवाणी हुई (म. आ. ११४.२८) । यह
द्वंद्व के अर्ध सामर्थ्य से हुआ (मार्क. ५.२२) । इसके
जन्म के समय, उत्तराफाल्गुनी समस्त पूर्वाफाल्गुनी
तक्षत्र, फाल्गुन माह में था, अतएव इसका नाम फाल्गुन
प्रचलित हुआ (म. वि. ३९.१४) । इसका जन्म
हिमालय के शतशृंग नामक भाग पर हुआ । पांडु की
मृत्यु के पश्चात्, इसके उपनयनादि संस्कार, वसुदेव ने
कश्यप नामक ब्रह्मण भेज कर, शतशृंग पर ही करवाए
(म. आ. ११५ परि. १.६७) ।

विद्याज्ञान—यद्यपि सब कौरव पांडवों ने शस्त्रविद्या
द्रोण से ही ग्रहण की, तथापि विशेष नैपुण्य के कारण,
द्रोण की इसपर विशेष प्रीति थी । इस की अध्ययन में
भी प्रसन्नोत्तम श्रद्धा थी । द्रोण सब शिष्यों को पानी भरने
के लिये छोटे पात्र देता था, परंतु अपने पुत्र का समय
वर्धन जाये, इसलिये अश्वत्थामा को बड़ा पात्र देता
था । यह ज्ञान, सर्वप्रथम अर्जुन के ही ध्यान में आयी
तथा बड़ी कुशलता से इसने अश्वत्थामा के साथ आने
का क्रम जारी रखा । इसीसे यह सब से आगे रहा परंतु
अश्वत्थामा से पीछे न रहा । एकबार भोजनसमय, हवा
के कारण बत्ती बुझ गयी परंतु अंधकार होने हुए भी
इसका भोजन ठीक तरह से पूर्ण हुआ । तब इस ने तर्क
किया कि, अंधकार में भी गलती न करते हुए, सैंड में
ग्रस जाने का कारण दृष्टान्यास है । तुरंत, अंधकार में भी
लक्ष्यवेध करने का इसने प्रारंभ किया, तथा यह धनुर्विद्या

में अत्यंत निष्णात हो गया । द्रोण को भी इसके लिये
काफी अभिमान था, अतएव अर्जुन का पराक्रम कोई भी
न कर सके, इसलिये उसने कण्ट से अपने शिष्य
एकलव्य का अंगूठा मांग लिया । इतनी अधिक गुरुकृपा
का स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि, ' रथी तथा महा-
रथियों में अग्नेस्वरत्व ले कर लड़नेवाला,' ऐसी इसकी
ख्याति हो गई ।

परीक्षा—एकबार परीक्षा लेने के लिये, द्रोण ने वृक्ष
पर रखे एक चिन्ह पर लक्ष्य वेध करने के इत्ते
कहा, तथा सबको पृष्टा कि, तुम्हें क्या दिख रहा है ।
केवल अर्जुन ने ही कहा कि, लक्ष्य के मस्तिष्क के
अतिरिक्त मुझे और कुछ भी नहीं दिखता । तब से द्रोण
इसपर अत्यधिक प्रसन्न रहने लगा । एकबार, जब द्रोण
गंगास्नान के लिये गये थे तब मगर ने उसे पकड़ लिया ।
सभी शिष्य दिङ्मूढ़ हो गये परंतु अर्जुन ने पांच बाण
मार कर द्रोण की मगर से रक्षा की । द्रोणाचार्यद्वारा ली
गई शिष्यपरीक्षा में अर्जुन के प्रथम आनेके उपलक्ष्य में,
ब्रह्मशिर नामक उन्मूढ अस्त्र उसने इसे दिया (म.
आ. १२३), तथा कहा कि, इस अस्त्र का प्रयोग मानव
पर न करना (म. आ. १५१. १२-१३ कुं.) । एकबार
द्रोण ने अपने सब शिष्यों का शस्त्रान्नैपुण्य दर्शाने के
लिये एक बड़ा समारंभ किया । उस समय अर्जुन ने
लगतार पांच बाण ऐसे छोड़े कि, पांचों मिल कर एक ही
तीर नजर आये । एक लकड़ें तथा हिलते सींग में इक्कीस
बाण भरना इ. प्रयोग कर इसने दिखाये, तथा सबसे प्रशंसा
प्राप्त की । परंतु कर्ण इसे सहन न कर सका । अर्जुन द्वारा
किये गये समस्त प्रयोग उसने कर दिखाये, तथा अर्जुन के
साथ द्वंद्वयुद्ध करने की इच्छा प्रदर्शित की । तब अर्जुन ने
आर्जुनक कह कर उस का उपहास किया । तथापि द्रोण
की इच्छानुसार यह युद्ध के लिये सुसज्ज हुआ, परंतु 'तुम
कुलीन नहीं हो, अतएव राजपुत्र अर्जुन तुमसे युद्ध नहीं
करेगा,' ऐसा कृपाचार्य ने कहा । तब दुर्योधन ने कर्ण को
अभिषेक कर के, अंबदेस का राजा बनाया । युद्ध की
भाषा प्रारंभ हुई, परंतु गडबडी में यह प्रसंग यहीं समाप्त
हुआ (म. आ. १२६. १२७) । आगे चल कर, गुरुदक्षिणा
के रूप में द्रुपद को जीवित पकड़ कर लाने का कार्य जब
द्रोण ने शिष्यों को दिया, तब केवल अर्जुन ही यह काम
कर सका (म. आ. १२८) ।

पराक्रम—अर्जुन ने आगे चल कर, सौवीराधिपति
दत्तामित्र नाम से प्रसिद्ध सुमित्र को जीता । उसी प्रकार,

विपुल को, जो पांडु द्वारा नहीं जीता गया, जीता। पूर्व तथा पश्चिम दिशाओं जीतीं। कुछ प्रतियों में तो कहा है कि, अर्जुन ने षेड्रहवें वर्ष की उम्र में दिग्विजय किया (म. आ. १५.१.४४-५० कुं.)। पांडवों की चारों तरफ प्रसिद्धी होने के लिये, अर्जुन के पराक्रम का बहुत ही उपयोग हुआ। आगे चल कर, जनुग्रह से छुटकारा होने के बाद, सब पांडव ब्राह्मणवेष में द्रौपदीस्वयंवर के लिये गये। राह में रात्रि के समय, अंगारपर्ण गंधर्व ने इन्हें रोक़ा। तब उसका तथा अर्जुन का युद्ध हो कर अंगारपर्ण का इस ने पराभव किया। अंगारपर्ण ने इसे चाशुपीविद्या दी, तथा अर्जुन ने उसे अन्वयज्ञ दे कर उसमें मैत्री की (अंगारपर्ण देखिये)। पांचालनगरी में अर्जुन ने, द्रौपदी के स्वयंवराथे लगाये गये मत्स्ययंत्रभेदन की शयंत जीती, तथा द्रौपदी ने अर्जुन का वरण किया (म. आ. १७९)। आगे चल कर, धृतराष्ट्र ने विदुर को भेज कर पांडवों को हस्तिनापुर से वापस लया। एक बार, आयुधागार में युधिष्ठिर तथा द्रौपदी अब एकांत में थे, तब अर्जुन को विवश हो कर वहाँ जाना पडा। कोई ब्राह्मणों की यज्ञीय गौओं चोरी हो गई थीं, इस लिये वे राजा को सूचना देने आये थे। अर्जुन ने निर्भय होने का आश्वासन उन्हें दिया तथा आयुधागार से शस्त्र ले कर गायें वापस लेंटा कर लाई। युधिष्ठिर तथा द्रौपदी को एकांत में देखा, इस लिये नियत शर्त के अनुसार यह बारह महीनों तक तीर्थाटन करने गया (म. आ. २०५)।

तीर्थयात्रा-अर्जुन ने इस तीर्थाटन काल में, कौस्य नाग की उत्पत्ती नामक कन्या से, पाताल में विवाह किया (म. आ. २०६)। तदनंतर वह हिमालय पर गया। वहाँ से विंदुतीर्थ पर गया। वहाँ से, पूर्व की ओर सुड कर उत्पलिनो नदी, नंदा, अपरनंदा, कौशिकी, महानदी, गया तथा गंगा नामक तीर्थस्थान इसने देखे। वहाँ से अंग, बंग तथा कर्लिया देश देख कर, यह समुद्र की ओर मुड़ा। महेंद्र पर्वत पर से मणिपूर के राज्य में प्रविष्ट हुआ। मणिपूर के राजा चित्रवाहन की चित्रांगदा नामक एक सुन्दरी कन्या थी। अर्जुन ने उसे अपने लिये मांग लिया। राजा ने इस शर्त पर कन्या दी कि, कन्या का पुत्र उसे मिले। अर्जुन मणिपूर में तीन वर्ष रहा। उस अवधी में चित्रांगदा को एक पुत्र हुआ। उसका नाम बभ्रुवाहन। आगे मगरी के कारण, सब के द्वारा त्यक्तपंचतीर्थों से सौभद्रतीर्थ पर अर्जुन प्रथम गया, तथा वहाँ साप से मगर बनी हुई अप्सराओं का उद्धार कर के, पुनश्च मणिपूर वापस

आया। वहाँ चित्रांगदा तथा बभ्रुवाहन से मिल कर गोर्क्ष गया। वहाँ से प्रभासक्षेत्र में जाने पर कृष्णार्जुन मीलन हुआ। वहाँ से रैवतकपर्वत तथा द्वारका जा कर, कृष्ण की सहायता से सुभद्राहरण करने का इसने सोचा, तथा उसके लिये धर्मराज की संमति प्राप्त की। मृगया के निमित्त से बाहर गये अर्जुन ने, रैवतक पर्वत के देवताओं का दर्शन तथा प्रदक्षिणा किया। पश्चात् द्वारका वापस जाने वाली सुभद्रा को अपने रथ में भिद्यया तथा वहाँ से पलायन किया। पश्चात् अर्जुन का पक्ष ले कर, कृष्ण ने बलराम की ओर से अर्जुन को निमंत्रण दिया, तथा बड़े भूमधाम से विवाह करवाया। वहाँ एक वर्ष रह कर, अर्जुन ने रात्री दिन पुष्करतीर्थ में विताये। परंतु निम्नलिखित लोक-प्रसिद्ध कथा भी कुछ स्थानों पर वर्णित है। सुभद्रा के दुर्योधन से होनेवाले विवाह की वार्ता, अर्जुन को प्रभास-क्षेत्र में मालूम हुई। उसे प्राप्त करने के लिये, चिण्डी संन्यास ले कर द्वारका में चातुर्मास विताने का निश्चय इसने किया। वहाँ सब पौरुषों में यह अत्यंत प्रसिद्ध हुआ। तब बलराम ने भी इसे अपने घर में भोजन का निमंत्रण दिया। सीधे साधे भोले बलराम इसे पहचान न सके। वहाँ सुभद्रा तथा अर्जुन की दृष्टिभेट हुई। यात्रा के लिये, शहर से बाहर गई हुई सुभद्रा को रथ में डाल कर अर्जुन ने हारण कर लिया, तथा विरोधकों को मार भगाया। अर्जुन के चिण्डी संन्यास की कथा भागवत तथा महाभारत की कुंजकोणम प्रति में ही केवल है (म. आ. १०.८६; म. आ. २३.८.४ कुं.)। स्कन्दपुराण में भी अर्जुन की तीर्थयात्रा का उल्लेख है तथा नारद ने अर्जुन को अनेक क्षेत्रों का महालय कथन किया है (स्कन्द. १. २. १. ५)।

वस्तुप्राप्ति—अर्जुन को अनेक व्यक्तियों से भिन्न वस्तु प्राप्त होने का उल्लेख है। मय ने विंदुसर पर से उत्तम आवाज करनेवाला देवदत्त नामक बरुण महाशंख अर्जुन को दिया (म. स. ३.७.१८)। उसी प्रकार, अग्नि ने अर्जुन को, खांडववन भक्षणार्थ देने के उपलक्ष में, गार्गीव धनुष्य, दो अक्षय तृणीर, कपिश्वजयुक्तः सफेद अश्वों का रथ, आदि चीजें दीं (म. आ. ५.५.३७; २५१ कुं.)। ये सारी चीजें अग्नि ने वरुण से तथा वरुण ने सोम से प्राप्त की थीं। अर्जुन यद्यपि इन्द्रांश से उत्पन्न हुआ था, तथापि खांडवदाह के समय बर्षा कर के विरोध करने के कारण, इन्द्र का अर्जुन से युद्ध हुआ, तथा उसमें इन्द्र को पीछे हटना पडा (म. आ. २१८)। आगे चल कर, इन्द्र ने इसे कवच तथा कुंडल दिये (म. व. १७१.४)।

द्विगिजय—वनवास के पहले, राजसूययज्ञ के समय इसने किये द्विगिजय की कल्पना निम्नलिखित वर्णन में आर्णवी। प्रथम कुलिंद देश के राजा को जीता। आनंत तथा मालकूट देशों पर सत्ता स्थापित कर, सुमंडल राजा का पराजय किया। आगे चल कर, उसे साथ लेकर, शाकल-द्वीप तथा प्रतिविष्य पर आक्रमण किया। उस समय शाकलद्वीप के तथा सप्तद्वीप के सब राजाओं को अर्जुन ने जीता तथा उनके साथ प्राञ्च्योतिष देश पर आक्रमण किया। वहीं भगदत्त के साथ अर्जुन का आठ दिनों तक भयंकर युद्ध हुआ। अन्त में जब भगदत्त ने कर देना स्वीकार किया, तब अर्जुन ने कुक्षेर के प्रदेश पर आक्रमण किया। वहाँ के सब राजाओं से कर वसूल कर, उदक देश पर आक्रमण किया। उदक देश के राजा का नाम बृहस्त था। उसे युद्ध में पराजित कर तथा कर ले कर, उसके सहित सेनाविदु पर आक्रमण किया, तथा गद्दी से उसे परञ्चुत किया। तदनंतर मोक्षपुर का वामदेव, सुशगन तथा उत्तर उदक के राजाओं को इकट्ठा कर के उनसे कर वसूल किया। तदनंतर पंचगण देश को जीत कर सेना-विदु के देवप्रस्थ नगर को यह गया। वहाँ से इसने राजा पौरव विश्वगन्ध पर आक्रमण किया। उसे जीत कर, पर्यंत में रहनेवाले सात उत्सवसंकेत गणों को जीता, तदनंतर काश्मीर के वीरों को जीता तथा दस मांडलिकों के साथ लोहित को जीता। शिगत, शर्व तथा कोकनद से कर ले कर अभिमारी नगरी जीता। उरगा नगरी के रोचनान को जीता। चित्राशुष का सिंहपुर नगरी ध्वस्त किया। तदनंतर सुष तथा चोल देश उध्वस्त कर के, बाल्हीक देश में प्रविष्ट हुआ। वह देश जीत कर, कांबोज तथा दरद देश हस्तगत किये। उत्तर की ओर के दस्युओं को हस्तगत कर के, आगे लोह, परम कांबोज तथा उत्तर ऋषि को अर्जुन ने जीता। ऋषिक देश में भयंकर युद्ध करना पड़ा, परंतु अन्त में विजय प्राप्त हो कर, मथूरवर्ण तथा शुकोदरवर्ण अश्व करमार के रूप में प्राप्त हुए। इस प्रकार, निष्कुटसहित हिमालय जीत कर, अर्जुन श्वेत पर्यंत पर आ कर रहने लगा (म. स. २४)। वहाँ से, किपुरुषावास देश पर आक्रमण करके, राजा द्रुमपुत्र से कर वसूल किया। हाटक देश में जाकर, सामनीता से, सुह्यक के पास से कर लिया। मान सरोवर पर ऋषियों द्वारा निकाली गई नहरें देखीं। गंधर्वों के देशों पर आक्रमण कर के, त्रिचरिक्लवाप तथा मंडूक नामक उत्तम अश्व करमार के रूप में प्राप्त किये। तदनंतर जब यह हरिवर्ष पर आक्रमण करने जा रहा

था, तब द्वारपाल ने इसे रोका, तथा यहीं द्विगिजय रोकने के लिये कहा। क्यों कि, उत्तर कुक्षु देश में सब चीजें अदृश्य हैं। तब अर्जुन बर्मराज की सत्ता को मायता ले कर वापस आ गया, तथा इन्द्रप्रस्थ में प्रविष्ट हुआ (म. स. २३-२५)।

वनवास—वनवास में पाशुपतास्त्र-प्राप्ति के लिये, इन्द्रकील पर्वत पर अर्जुन ने तपश्चर्या की तथा शंकर को प्रसन्न कर लिया। किरातवैप में आये शंकर से इसने मूकवध पर से युद्ध किया तथा अंत में उससे पाशुपतास्त्र प्राप्त किया। पाशुपतास्त्र का रहस्यपूर्ण ज्ञान इसने शंकर से प्राप्त किया (म. व. ३८.४१)। अन्य देवों ने भी अर्जुन को अनेकों अस्त्र दिये (म. व. ४२)। तदनंतर इन्द्र के निमंत्रण के कारण, उससे भेजे गये रथ में बैठ कर, यह स्वर्ग गया। वहाँ इन्द्र ने अर्जुन का काफी सम्मान कर अपने अर्धासन पर इसे जगह दी। वहाँ अर्जुन ने अनेक अस्त्रों की शिक्षा प्राप्त की। इस प्रकार इसने अपने पांच वर्ष स्वर्ग में बिताये। इन्द्र के कथनानुसार, वायु ब्रजाना, नृत्यकला तथा गानकला की भी शिक्षा इसने ली। इस काम में चित्रसेन नामक गंधर्व का अत्यधिक उपयोग हुआ (म. व. ४५. ६)। एकवार अर्जुन के पास उर्वशी ने संभोगसाचना की। परंतु इसने उसे नाही कर दी। इससे क्रोधित हो कर, 'तुम नपुंसक बनोगे,' ऐसा शाप उसने अर्जुन को दिया। परंतु इन्द्र ने उसे बताया कि, अज्ञातवास के समय एक वर्ष तक तुम नपुंसक रहोगे, तथा इस शाप का तुम्हें उपयोग ही होगा (म. व. परि. ६)। इंद्र ने लोमश के द्वारा अर्जुन का समाचार भी अन्य पांडवों को भेजा। अर्जुन कुछ कालोपरान्त अपने बांधवों के बीच आते ही, अज्ञातवास का समय आया। अज्ञातवास के लिये द्रौपदी को विराटनगर तक कंधों पर ले जाने का कार्य अर्जुन ने किया (म. वि. ५)।

अज्ञातवास—अज्ञातवास में अर्जुन ने बृहन्नला नाम तथा नपुंसकत्व का स्वीकार किया, तथा स्वयं ही को द्रौपदी की परिचारिका ब्रता कर, उत्तरा को नृत्यगायनादि सिखाने का काम पाया। आगे जब विराटादि सब लोग, दक्षिण-गोग्रहण में मग्न थे, तब दुर्योधनादि ने उत्तरगोग्रहण किया। रजवाड़े में अकेला भूमिज्य (उत्तर) ही था। उसके पास सारथि न था। बृहन्नला सारथ्य कर सकती हैं यह ज्ञात होने के पश्चात् वह युद्ध के लिये निकला। परंतु ऐन समय पर धवरा कर, रथ से कूद कर भागने

लगा। बृहन्नला ने उसे समझा कर, स्वयं युद्ध करने का निश्चय किया, तथा शमीवृक्ष पर के आयुध ले कर उत्तर को अपना परिचय दिया। व्रमावान युद्ध करते गौओं को पुनः प्राप्त करते समय, इसने कर्ण को भगा कर उस के भाई को जान से मारा। इसके उपलक्ष्य में, अर्जुन को उपहार रूप में उत्तरा को देने का विचार विराट ने प्रकट किया, परंतु अर्जुन ने उसका स्वीकार अभिमन्यु के लिये किया (म. वि. ६७)।

कृष्णमहात्म्य—भारतीय युद्ध की तैयारी जब चालू थी, तब दुर्योधन कृष्ण की सहायता प्राप्त करने के लिये द्वारका गया। अर्जुन भी वहीं उपस्थित हुआ। दुर्योधन सराने की ओर बैठे, तथा अर्जुन नम्रता से पैरों की ओर बैठे। उठते ही प्रथम अर्जुन दिखा। उसी प्रकार यह दुर्योधन से छेया भी था, अतएव कृष्ण ने प्रथम अर्जुन को माँग प्रस्तुत करने को कहा। दश कोटि गोपालों की नारायण नामक सेना, तथा निःशस्त्र स्वयं ऐसा विभाजन कर, जो चाहिये उसे माँगने की सूचना कृष्ण ने की। तब अर्जुन ने कृष्ण को माँग लिया। अपनी ओर हजारों सैनिक आये, इस बात पर दुर्योधन संतुष्ट हुआ (म. उ. ७) कृष्ण जब पांडवों के मध्यस्थ कार्य के लिये गया, तब अर्जुन ने कहा कि, उसे जो योग्य प्रतीत हो वही वह तय करे (म. ३. ७६)।

भारतीययुद्ध—युद्ध के आरंभ में ही, अर्जुन को युद्ध का परिणाम दिखाई देने लगा था। यह सोचने लगा कि, वह स्वयं किसी आन्विकारी कृत्य में प्रवृत्त हो गया है। इस विचार के कारण, यह युद्ध से निवृत्त होने लगा। परंतु कृष्ण ने इसे कर्तव्यच्युत होने से परावृत्त किया। यही भगवद्गीता है (म. भी. २३. ४०)। युद्ध के प्रारंभ में ही भीष्मार्जुन युद्ध प्रारंभ हुआ। तीसरे दिन ऐसा प्रतीत होने लगा कि, भीष्म पांडवों को विल्कुल नहीं बचने देंगे। परंतु कृष्ण ने प्रतिज्ञा तोड़ कर हाथ में चक्र लिया, तथा अर्जुन ने भी जोर लगाया। तीसरे दिन के अंत में, कौरवों का इसने काफी नुकसान किया।

नववें दिन, अर्जुन का द्रोणाचार्य के साथ युद्ध हुआ। भीष्म के साथ भी जोरदार युद्ध हुआ। संध्या होने के कारण युद्ध रोका गया, परंतु भीष्म के सामने किसी की शक्ति काम नहीं आती थी, इससे सब निराश हो गये। धर्मराज एवं कृष्ण ने विचार किया कि, वे भीष्म को ही पृच्छें, कि उसका वध किस प्रकार किया जा सकता है। भीष्म ने भी सरल स्वभाव से कहा कि, शिखंडी को आगे

रख कर, अर्जुन अगर मुझ से लड़े तो मेरा वध हो सकता है। क्यां कि, अभद्र ध्वजयुक्त तथा एकवार खां रहनेवाले शिखंडी के समान लोगों पर अपने नियमानुसार भीष्म शस्त्र नहीं चलाते थे।

भीष्मवध—उसवें दिन, शिखंडी को भीष्म के सामने छोड़ कर, अर्जुन ने कौरव सेना को विल्कुल व्रत कर डाला। कौरवों ने पांडवों को रोकने का अंतिम प्रयत्न किया, परंतु सफलता हाथ न लगी। अर्जुन ने शिखंडी के आड़ में रह कर, हजारों बाण भीष्म पर चरसाये तथा भीष्म को नीचे गिरा दिया। हजारों बाण जिसके शरीर में भिदे हैं, ऐसा भीष्म जब वीरोचित शय्या पर विश्रान्ति कर रहा था, तब उसकी गर्दन नीचे लटकने लगी अतएव उसने तकिया मांगा। कईवों ने उसे नरम तकिये ला दिये, परंतु अर्जुन ने वीरशय्या के लिये उचित तीन बाणोंका तकिया तैयार कर के उसे प्रसन्न किया। उसी प्रकार भीष्म के पानी मांगने पर, सवने पानी ला दिया। परंतु उसका स्वीकार न कर, अर्जुन ने भूमि में बाण मार कर उत्पन्न किये जल का स्वीकार भीष्म ने किया (म. भी. ११६)।

इसके सिवा, युद्ध में शत्रुओं को मारेंगे अथवा मरेंगे, ऐसी प्रतिज्ञा कर के बाहर आये हुए त्रिभूत देश का राजा सत्यरथ, सत्यवर्मा, सत्यव्रत, सत्येयु तथा सत्यकर्मा तथा प्रस्थलाधिपति सुशर्मा, तथा मानवैल्लक, लाङ्किथ तथा मद्रक आदि अन्य राजाओं को अर्जुन ने परलोक दर्शाया (म. द्रो. १६; क. १३; ३२; ३९)। तदनंतर अर्जुन ने हाथी की सहायता से लड़नेवाले भगदत्त को मार डाला। भगदत्त ने एक बार अर्जुन पर प्राणघातक अंकुश फेंका, परंतु कृष्ण ने बीच में आ कर उसे अपनी छाती पर लिया तथा अर्जुन को बचाया (म. द्रो. २८)।

जयद्रथवध—जयद्रथ ने अभिमन्यु को मृत्यु के वाद लाथ मारने के कारण, अर्जुन ने प्रतिज्ञा की कि, दूसरे दिन सूर्यास्त के पहले मैं उसकी हत्या करूंगा। रात्रि में शंकर ने इसके स्वप्न में आ कर, इसको धीरज वंधा कर पुनः पाशुपतास्त्र दिया (म. द्रो. ५७)। अर्जुन में वीरश्री का संचार हुआ तथा इसने दुःशासन दुर्योधनादि का कई बार पराभव किया। कर्ण को भगाया। अंबष्ठ, श्रुतायुस् तथा अश्रुतायुस् का वध किया (म. द्रो. ६८)। इस प्रकार तुमुल युद्धप्रसंग में, सूर्यास्त होने के पहले ही, अर्जुन ने जयद्रथ का शिरच्छेद किया (म. द्रो. १२१)।

कर्णवध—तदुपरांत, कर्ण के द्वारा धर्मराज का पराभव होने के कारण, धर्म के मन में कर्ण के प्रति अत्यंत द्वेष

उत्पन्न हो गया। परंतु कर्ण के सामने किसी का बस नहीं चलता था। तब धर्म ने अर्जुन की निर्भस्सना की, तथा कहा कि, कर्णवध करने की शक्ति अगर नहीं है, तो गांडीव किसी और को दे दो। उसने कर्णवध किये विनयःरण से वापस लौट आने के लिये, अर्जुन को दौप दिया। यह सुनने ही, पृष्ठ प्रतिज्ञा के अनुसार, गांडीव किसी दूसरे को दे दो, ऐसे कहनेवाले धर्मराज का वध करने के लिये खड्ग लेकर दौड़ा। तब कृष्ण ने धर्माभर्म का भेद बना कर कहा कि, धर्मराज के लिये 'आ' शब्द का प्रयोग करने के बदले अगर 'वृ' या 'र्' कहा तो यह अपमान बधुतव्य है। अर्जुन ने यह मानकर, धर्मराज के प्रति कुम्भित शब्दों का उपयोग कर, उसका अत्यंत अपमान किया। अंत में, ऐसा करने का कारण बता कर, यह कर्णवध के काम में लग गया। कृष्ण इन्हे लगातार उच्छेदन दे ही रहा था। कर्णाजुन का तुमल युद्ध शुरू हुआ। अर्जुन ने कर्ण को घायल कर के एक बार बेहोश कर दिया, तथा बाण पर बैठ कर आये हुए तक्षक का वध किया। परंतु युद्ध के ऐत रंग में ही, कर्ण के रथ का पहिया पृथ्वी ने निगल लिया। कर्ण ने रथ से कूद कर पहिया उठाने का प्रयत्न किया, परंतु कुछ लाभ नहीं हुआ। उसने धर्मयुद्ध के अनुसार अर्जुनको रकने का उपदेश किया, परंतु उसका भी कुछ लाभ न हो कर, अर्जुन ने कर्ण का मरतक उड़ा दिया (म. क. ६७)।

युद्धसमाप्ति—दुर्योधन की मृत्यु के बाद सब उसके शिविर में आये। तब अनेक अस्त्रप्रयोगों से दग्ध, परंतु कृष्ण के, सामर्थ्य से सुरक्षित अर्जुन का रथ, कृष्णाजुन के नीचे उतरते ही, अपने आप उल कर स्वाक हो गया (म. श. ६१)। अग्रे चल कर, अश्वत्थामा ने चिट्ट कर रात्रि के समय ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया, तथा सबको जलाना प्रारंभ किया। तब उसके परिहार के लिये अर्जुन ने भी ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया। परंतु वह सब लोगों को अधिक कष्ट देनेवाला बोज कर इसने वापस ले लिया (म. सौ. १५)। यद्यपि भारतीय युद्ध में, अर्जुन का सारथी कृष्ण था (म. ३. ७. ३४), तो भी षट् नामक एक सारथि अर्जुन के पास निरंतर रहता था (म. स. ३०)।

अश्वमेध—इव युधिष्ठिर ने अश्वमेध का अश्व छोड़ा, तब उसके संरक्षणार्थ अर्जुन की योजना की गई थी। अर्जुन प्रथम अश्व के पीछे पीछे उत्तर दिशा की ओर गया। राह में कई छोटे बड़े युद्ध हुए। उनमें से केवल महस्वपूर्ण युद्धों का वर्णन महाभारत में दिया है। त्रिगर्न का राजा सूर्यवमा, उसी प्रकार उसका भाई केतुवर्मा तथा धृत्वर्मा का

पराजय अर्जुन ने किया। प्राग्ज्योतिषपुर का राजा भगदत्तपुत्र यज्ञदत्त को इसने अच्छा पाठ सिखाया। तदनंतर यह सिंधु देश में गया। सिंधुराजा जयद्रथ का वध अर्जुन के द्वारा होने के कारण, वहाँ के निवासियों में अर्जुन के प्रति स्वेप जाग्रत था। उनके द्वारा जोरदार आक्रमण होने के कारण, अर्जुन के हाथों से गांडीव नष्ट गया। परंतु उसके बाद भी इसने जोरदार युद्ध शुरू किया। अर्जुन के आगमन की सूचना मात्र में जयद्रथपुत्र सुरथ मृत हो गया। परंतु जयद्रथ की पत्नी तथा दुर्योधन की भगिनी दुःशला, अपने नाती सहित अर्जुन के पास आई, तथा इसे दारण आ कर युद्धमें परावृत्त किया।

पुत्रभेद—तदनंतर अर्जुन मगध देश में गया। तब इसका पुत्र बभ्रुवाहन अनेक लोगों के साथ, इसके स्वागत के लिये आया। परंतु क्षत्रियोचित वर्तन न करने के कारण अर्जुन ने उसकी निर्भस्सना की। पाताल से उल्पी वहाँ आई तथा उसने जो अपने सापत्न पुत्र को युद्ध के लिये प्रोत्साहन दिया। बभ्रुवाहन ने वनधोर युद्ध प्रारंभ कर के अर्जुन को मूर्च्छित किया, तथा स्वयं भी मूर्च्छित हो गया। उसकी माता चित्रांगदा रणक्षेत्र में आई तथा पुत्र एव पति के लिये उसने अत्यंत विलाप किया। बभ्रुवाहन ने प्रायोपवेशन किया। तब, इस पिता पुत्र युद्ध के लिये, उल्पी को सबके द्वारा दौप दिये के जाने कारण, केवल स्मरण से प्राप्त होने वाले संजीवनीमणि से उसने अर्जुन को जाग्रत किया। शिवशष्ठी को सामने रख कर भीष्मवध करने के कारण अजिंक्य अर्जुन का पराभव बभ्रुवाहन कर सका।

तदुपरांत, अर्जुन मगध देश में गया तथा जरासन्धऔत्र मेघसंधी का इसने पराभव किया। उसके बाद वंग, पुण्ड्र तथा केरल देश जीत कर, दक्षिण की ओर मुड़ाकर इसने चेदि देश पर आक्रमण किया। वहाँ शिशुभालपुत्र शरभ से सत्कार प्राप्त कर, काशी, अंग, कोसल, किरात तथा तङ्गण देश पार कर, यह दशार्ण देश में गया। वहाँ चित्रांगद से युद्ध कर के उसे अपने कान्धू में लाया। निपादराज एकलव्य के राज्य में जा कर, उसके पुत्र से युद्ध कर के उसे जीता। पुनः दक्षिण की ओर आ कर, द्रविड, आन्ध्र, रौद्र, माहिषक तथा कोल्लिगरेय, इनको सुगमता से जीत कर मुराष्ट्र के आसपास गया। वहाँ से, गोकर्ण, प्रभास, द्वारका इ. भाग से, समुद्रकिनारे से पंचनद देश में गया तथा वहाँ से गांधार गया। गांधार में, शकुनिपुत्र से इसका भयानक युद्ध हुआ तथा शकुनिपुत्र की सेना का इसने संहार किया। अपने पुत्र को भी यही स्थिति होगी यह जानकर, शकुनि

की पत्नी ने, अर्जुन को युद्ध से परावृत्त किया। इस प्रकार, बड़े गौरव के साथ अश्व के पीछे पीछे दिग्विजय कर के, अर्जुन हस्तिनापुर लौट आया। उस समय मात्र पौर्णिमा थी, तथा यज्ञ चैत्र पौर्णिमा के समय होने वाला था। इस के लिये अर्जुन ने सत्र को आमंत्रण दिया था (म. आश्व. ७१ ८५-कुं.) युधिष्ठिर को अर्जुन के आगमन की वार्ता प्रथम जासूसों द्वारा मातृम हुई। तदनंतर अर्जुन के शरीर-स्वास्थ्य के बारे में उसने कृष्ण के पास विशेष पूछताछ की (म. आश्व. ८९ कुं.)। अर्जुन ने आनेवाले राजाओं का सम्मान करने के बारेमें व्रताते समय, बभ्रुवाहन का विशेष सम्मान करने के लिये कहा (म. आश्व. ८८. १८-२१ कुं.)

हतबलता—सत्र यादवों का संहार हुआ, ऐसी वार्ता दासक ने हस्तिनापुर में आ कर बताई। तब अर्जुन को ऐसा लगा कि, यह वार्ता गलत है। परंतु स्वयं द्वारका में आ कर देखने के बाद, उसे विश्वास हुआ। कृष्णपत्नियों का हृदयभेदी विलप बड़े कष्ट से सुन कर इसने सबको धीरज बैठाया, तथा यह वसुदेव से मिलने आया। आँसुओं में पानी ला कर इसने वसुदेव का चरण-स्पर्श किया। वृद्ध वसुदेव ने अर्जुन का आर्त्तिगान कर के शोक किया, तथा शूर राम-कृष्ण की मृत्यु हो गई, केवल मैं जीवित बचा, ऐसे खेदजनक शब्द कहे। द्वारका जन्म ही समुद्र में डूबने वाली है, ऐसा बता कर, स्त्रियों, रत्न तथा राज्य सम्हालने के लिये वसुदेव ने अर्जुन से कहा तथा देहत्याग किया (म. मौ. ६-७)। अर्जुन ने सत्र को द्वारका छोड़ कर इन्द्रप्रस्थ जाने की तैयारी करने के लिये कहा, तथा वसुदेव, राम तथा कृष्ण को अग्नि दी। तदनंतर, इसके नेतृत्व में अवशिष्ट यादवस्त्रियों तथा पौर इन्द्रप्रस्थ निकले ही, कि इधर द्वारका समुद्र ने निगल ली। इन्द्रप्रस्थ की ओर आते समय, पंचनद देश में अर्जुन ने डेरा डाला। अर्जुन अकेला ही अनेक स्त्रियों को ले कर जा रहा है यह देख, वहाँ के आभीर लोगों ने अर्जुन पर आक्रमण किया। अर्जुन उस समय युद्ध हो चला था, भाग्य भी बदल गया था। इससे पहले के समान, धनुष सज्ज कर बाण नहीं छोड़ सकता था। अस्त्रमंत्र याद नहीं आ रहे थे, बाण भी समाप्त हो गये थे। अंत में, धनुष्य का लाठी के समान उपयोग कर अर्जुन सत्र को मारने लगा। इससे कई स्त्रियाँ भगाई गईं, कई स्वयं भाग गईं, तथा बचे हुए परिवार के साथ बड़ी कठिनाई से अर्जुन इन्द्रप्रस्थ लौट सका (अष्टावक्र

देखिये)। जो कुछ अंशुर यादव वंश के बचे थे, उनकी इसने व्यवस्था की। हार्दिक्यतनय को मृत्तिकावत का राज्य दिया, अश्वपति को खाण्डववन का राज्य दिया तथा बाकी सत्र को इन्द्रप्रस्थ में रख कर, वज्र को इन्द्रप्रस्थ का राजा बनाया (म. मौ. ८; पद्म. ३. २७९. ५६; ब्रह्म. २१०-२१२; विष्णु. ५. ३७. ३८; अग्नि. १५)। इस प्रकार व्यवस्था कर के, अर्जुन उद्विग्न अवस्था में व्यास आश्रम में गया, तथा व्यास का दर्शन ले कर, हस्तिनापुर आ कर, सत्र निवेदन युधिष्ठिर को किया (म. मौ. ९ कुं)

मृत्यु—तदपुरांत जय सत्र पांडव हिमालय पर जा रहे थे, तब १०६ वर्ष की उम्र में इसका पतन हुआ। भीम ने पूछा कि, बीच में ही इसका पतन क्यों हुआ? तब धर्म ने कहा कि, यह हमेशा कहता था कि, मैं अकेले ही शत्रुओं को नष्ट करूंगा, परंतु उसने ऐसा किया नहीं। उसी प्रकार, अन्य धनुर्धारियों का यह अवमान भी करता था, इस लिये इसका पतन हुआ (म. महा. ३. २१-२२)।

कौटुंबिक—अर्जुन को द्रौपदी से उत्पन्न पुत्र श्रुतकीर्ति भारतीय युद्ध में मृत हो गया। सुभद्रा से उत्पन्न पुत्र अभिमन्यु चक्रव्यूह में मृत हुआ, तथा चित्रांगदापुत्र बभ्रुवाहन मणिपूर का राजा बना। उलूपीपुत्र इरावत की मृत्यु भी युद्ध में हुई। आगे चल कर, अर्जुन का पौत्र परीक्षित राजा बना।

अर्जुन ने गिरण्यपुर के पौलोम, कालकेय तथा दानव का वध किया (ब्रह्माण्ड. ३. ६. २८)।

यह नर का अवतार है।

अस्त्र—परशुराम द्वारा की गई नरस्तुति में अर्जुन के निम्नांकित अस्त्रों का वर्णन है।

१. काकुदिक (काम), २. शुक्र (क्रोध), ३. नाक (लोभ), ४. अक्षिस्तर्जन (मोह), ५. संतान (मद), ६. नर्तक (मान), ७. घोर (मत्सर), ८. आत्यमोदक (अहंकार), (म. उ. ९६)। अर्जुन की उपासना पाणिनी के समय लोक करते थे, ऐसा पाणिनीसूत्रों से ज्ञात होता है (पा. सू. ४. ३. ९८)।

इसके रथ का नाम नंदिघोष (गरुड. ३. १४५. १६)। इसने ६५ वर्षों तक गांडीव का उपयोग किया (म. वि. ४७. ७)।

२. रैवत मनुका पुत्र (मनु देखिये)।

३. कार्तवीर्य देखिये।

अर्जुनक—एक लुब्धक। गौतमी नामक ब्राह्मणी का पुत्र सर्पवंश से मृत होने के कारण, वह शोक कर रही थी। तब

इसने उस सर्प को पकड़ कर लाया, तथा पूछा कि, उसका वध किस प्रकार किया जावे। तब, प्राणी क्रम परतंत्र है, कह कर उसने साँप को छोड़ देने को कहा (म. अनु. १)।

अर्जुनपाल—(तो. यदु.) वसुदेव का अनुज शमीक सुशामिनी के दो पुत्र में से एक (भा. १.२४.४४)

अर्ण—यदु-तुर्वशो के लिये इंद्र ने चित्ररथ के साथ सस्य के तट पर इसका वध किया (ऋ. ४. ३०. १८)।

अर्थ—स्वायंभुव मन्वन्तर के धर्म तथा बुद्धि का पुत्र (भा. ४. १. ५१)।

अर्थसिद्धि—धर्म तथा साध्या का एक पुत्र (भा. ६. ६. ७)।

अर्धनारीनटेश्वर—ब्रह्मदेव ने प्रजा उत्पन्न करने के लिये तप प्रारंभ किया तब शंकर प्रसन्न हुआ, तथा उसके शरीर में अर्धनारीनटेश्वर उत्पन्न हुआ (शिव. शत. ३) पार्वती की आज्ञानुसार दुर्गाद्वारा महिपासुर का वध होने के पश्चात्, शंकर संतुष्ट हो कर अरुणाचल पर तप कर रही पार्वती के पास आया, तथा उसे अपने बामांग पर लिया। तब इस प्रेम के कारण, पार्वती शंकर के बामांग में ही लीन हो गई। उससे शिव-पार्वती का वह शरीर आधा शुभ्र, आधा ताम्रलटायुक्त, अर्धभाग में खोली, अर्ध में हार, इस प्रकार अर्धनारीनटेश्वर मिलने लगा (स्कंद १.२.३-२१; स्वयंभुव देखिये)।

अर्धपण्य—अत्रिकुल के गोत्रकार ऋषिगण।

अर्षिणी—आर्षिणी देखिये।

अर्बुद—इन्द्र के शत्रु दो असुर। इन्द्र ने इनसे युद्ध कर के, इन पर बर्ष की वर्षा करने से, यह पराभूत हो गये। इन्द्र ने अपने वज्र से इसकी हत्या की (ऋ. ८.३२.२६; १०.६७.१२)।

अर्बुद काद्रवेय—यह नागर्षि था। इसने यज्ञ के न्यून कैसे सुधारे जायें, तथा सोमरस कैसा निकाल्य जावे, इसका ज्ञान बताया (पं. ब्रा. ६.१; सं. ब्रा. २९.१)। सर्पसत्र में यह प्रावस्तुत था (पं. ब्रा. २५.१५)। इन सब स्थानों में उल्लेखित अर्बुद एक ही होगा।

अर्धमभूति—भद्रशर्मन का शिष्य (वं. ब्रा. ३)।

अर्धमन्—ऋग्वेद में उल्लेखित एक देव। मित्रावरुणों के साथ इसका उल्लेख पाया जाता है। आदित्य तथा मित्र के समान यह अन्य देवों का स्नेही है। संस्कारों में इसका उल्लेख प्रायः है। अन्य देवों के समान यह भी ऋषय तथा अर्द्धति का पुत्र है। यह द्वादशादित्यों में से एक है। यह पितृगणों में से एक है। यह वैशाख में

प्रकाशित होता है। इसकी ३०० किरणें हैं (भवि. ब्राह्म. १. ७८; भा. १२.११.३४)। यह अत्रिपुत्र है, इस कथन के लिये, महाभारत छोड़ कर अन्यत्र आधार नहीं मिलता (म. शां. २०१.९-१०)।

२. धर्म तथा भुहूर्ता के पुत्रों में से एक।

अर्थल—यह सर्पसत्र में गृहपति था (पं. ब्रा. २३. १-५)।

अर्थव—अज्व देखिये।

अर्ववीर—सावर्णि मनु का पुत्र।

२. स्वारीचिप मनु का पुत्र। इसका नाममातर और्व।

३. पुलह के तीन पुत्रों में से एक (मार्क. ५.२)।

अर्वावसु—रैभ्यऋषि के दो पुत्रों में से दूसरा। यहा गुणां में उत्तम था (यवक्रीत तथा परावसु देखिये)। इसे ही सूर्यमंत्रप्रकाशक, रहस्यवेदसंज्ञक, काठक ब्राह्मण का दर्शन हुआ (म. व. १.३९)। इसने पुत्र प्राप्ति के लिये सूर्य की उपासना की। आकाशमार्ग से आ कर, सूर्य ने अरुण के द्वारा, इसे सप्तमीकल्प विधि बताया। इससे इसे पुत्र तथा ऐश्वर्य प्राप्त हुआ (भवि. ब्राह्म. ८०)।

अर्षि—अवाऋषि के दो पुत्रों में से ज्येष्ठ (वीतहव्य देखिये)।

अर्षिपिण—भृगुकुलोत्पन्न ऋषि (म. श. ३९)। इसका युधिष्ठिर से संवाद हुआ था (म. व. १.५६)। इसका वंशज आर्षिपिण (म. व. १.४; देवापि देखिये)।

अर्हत—एक राजा। ऋषम नामक विरक्त पुरुष दक्षिण कर्नाटक के कोकचक कुटक देशके कुटकाचल समीप, अरण्य के श्वाणल में जल कर मृत हुआ। तब यह वहाँ का राजा था। इसने ऋषमदेव से जैनधर्म का स्वीकार किया (भा. ५. ६. ८)।

अलक्ष्मी—यह कालकृत के बाद समुद्र से निकली। इसका मुख काला, एवं आँखें लाल थीं। इसके केश पीले थे, एवं यह वृद्ध थी। देवताओं ने इसे वरदान दिया कि, 'जिस घर में कलह होगा वहाँ तुम रहो। कठोर, असत्य श्लेष्नेवाले तथा संध्यासमय भोजन करनेवालों को तुम ताप दो। बिना हाथ सँह धोये जो भोजन करे, उसे तुम कष्ट दो। तुम हड्डियां, कोयला, केश तथा भूसी में रहो, तथा अमश्व-भक्षक, गुरु, देव, अतिथि इ. का पूजन न करनेवाले, यज्ञ तथा वेदपाठ न करनेवाले, आपस में कलह करनेवाले पतिपत्नि तथा शूत खेलनेवालों को तुम दरिद्री बना दो।' आंग च्ल कर, लक्ष्मी का विवाह विष्णु से होने के पहले ही, इसका विवाह उड्डालक नामक ऋषि से कर दिया (पद्म.

त्र. ९-१९)। समुद्र में से विपके बाद तथा लक्ष्मी के पहले यह उत्पन्न हुई। अतएव इसे ज्येष्ठा कहते हैं।

महाभारत के अनुसार, प्रथम विप, तदनंतर यह कृष्ण-रूपवरा ज्येष्ठा, तथा तदनंतर चन्द्र उत्पन्न हुआ (म. अ. १६. ३४ कुं.)। इसका विवाह दुःसह से हुआ। आंग, दुःसह पाताल में जाने के बाद, यह अकेली ही पृथ्वी पर रही (लिंग २.६)। बड़ी का विवाह होने के पहले छोटी का विवाह नहीं हो सकता। इसका विवाह नहीं हो रहा था, इसलिये इसकी कनिष्ठ भगिनी लक्ष्मी का विवाह रक गया। अतः इसका विवाह एक ब्राह्मण के साथ करा दिया। उस ब्राह्मण ने इसका त्याग किया। तब यह एक पीपल के वृक्ष के नीचे जा कर बैठ गई। हर शनिवार को वहाँ लक्ष्मी अपनी बहन से मिलने आती है। इस लिये, शनिवार को पीपल लक्ष्मीप्रद, तथा अन्य दिनों में स्पर्श करने से दारिद्र्य देनेवाला माना जाता है (सनसुजात-संहितान्तर्गत कार्तिकमा.)। उद्दालक के साथ इसका विवाह हुआ था। इसे वैदिक कार्य प्रिय नहीं था। मद्य, वृत इ. ही अधिक प्रिय था। यह देख कर उद्दालक ने इसे पीपल के वृक्ष के नीचे ब्रैठाया, तथा स्वयं कहीं चला गया। तब यह ज्येष्ठा रुदन करने लगी। तब लक्ष्मी, विष्णु के साथ इसका समाचार पूछने आई। विष्णु ने उसे पीपल के तने के पास रहने के लिये कहा, तथा बताया कि, जो भी वहाँ तुम्हारी पूजा करेंगे, उन्हें लक्ष्मी प्राप्त होगी (पञ्च. उ. १.१६)।

अलंबल—ब्रह्मासुर का पुत्र। यह एक नरभक्षक राक्षस था (म. द्रो. १.४९.५; १९)। इसके पिता का भीम ने नाश किया, इसलिये, यह भारतीय युद्ध में दुर्योधन पक्ष को मिल गया। यह महारथी था तथा मायावी युद्ध में कुशल था। इसी युद्ध में, धृष्टोत्तच ने इसका सिर काट कर, उस सिर को दुर्योधन के रथ में फेंक दिया (म. द्रो. १.४९.३१-३५)।

अलंबुषा—कश्यप तथा प्राधा की अप्सरा कन्याओं में से एक। इन्द्र, दक्षिण के तप से काफी डरता था। अतः, इन्द्र ने इसे उसके यहाँ तप भंग करने के लिये भेजा। इससे दक्षिणी से सारस्वत नामक पुत्र हुआ। इसने दिश्वंश के वंशुपुत्र तृणविंदु का वरण किया था, तथा उससे इसे इड्विड्डा नामक कन्या हुई (भा. ९. २. ३१; ब्रह्माण्ड. ३. ७. ३५-४०)।

अलंबुस—दुर्योधन पक्षीय एक राजा। यह युद्ध से कभी भी न भागनेवाला, तथा शरासन एवं सुवर्णकवच

धारण करनेवाला था। इसका तथा सात्यकी का बड़ा भारी युद्ध हुआ था। अत्यंत संतप्त हो कर इसने सात्यकी पर आक्रमण किया। परंतु सात्यकी ने इसका वध किया (म. द्रो. १.१५)।

२. एक नरभक्षक राक्षस। यह ब्रह्मासुर का भाई था। (म. स्त्री. २६.३७)। इसके भाई का वध भीम ने किया था। इस शेर का स्मरण कर, भारतीय युद्ध में पांडवों का नाश करने के लिये, इसने दुर्योधन का पक्ष लिया था। यह काजल के समान काला था (म. द्रो. ८४)। इसका तथा भीम का भयंकर युद्ध हुआ। यह इन्द्र के लिये भी अजेय था। परन्तु शूर सात्यकी ने एन्द्राक्ष की योजना कर, इसे युद्ध से भगा दिया (म. भी. ७७-७८; द्रो. ८४)। इसका तथा अभिमन्यु का एक बड़ा युद्ध हुआ। परंतु उसमें इसका ही पराभव हो कर यह भाग गया (म. भी. ९६-९७)। अर्जुन के साथ भी इसका युद्ध हुआ था (म. द्रो. १.४२.३४-४१)। अंत में, प्रद्योतकच के साथ इसका बड़ा ही मायावी द्वंद्वयुद्ध हुआ, तथा इसकी मृत्यु हो गई (म. भी. ४३; द्रो. ८४; क. २)। किर्मीर ब्रह्मासुर का भाई था (म. व. १२.२२), तथा अलंबुस भी ब्रह्मासुर का भाई ही था (म. द्रो. ८३.२१-२३; म. स्त्री. २६.३७)। इसकी अस्त्येष्टि धर्मराज ने की।

अलंबुसा वा **अवलंबुसा**—एक देवस्त्री। एक बार ब्रह्मदेव की समा में नृत्य करते समय हवा से इसके वस्त्र उड़े। तब वहाँ उपस्थित अश्वमेधुओं में से विधूमा नामक बसु, इसे देख कर कामपीडित हुआ। तब इन दोनों को ब्रह्मदेव का शाप मिल कर, विधूमा को मनुष्ययोनी के राजकुल में सहस्रानीक नाम से, तथा अलंबुसा को कृतवर्मा राजा के कुल में मृगवती नाम से जन्म लेना पड़ा। आंग चल कर, इन दोनों का विवाह हो कर अलंबुसा गर्भवती हुई। तब रक्त के समान लाल कुएँ में इसके स्नान करने के कारण, एक पक्षी ने पका फल समझ कर इसे ऊपर उठाया, तथा उँचाई पर से उड़्याचल पर्वत की गुफा में डाल दिया। उससे इसे मूर्च्छा आ गई। परंतु शीघ्र ही होश में आ कर, यह पतिविरह के कारण शोक करने लगी। इतने में जमश्रि मुनि ने इसका विलाप सुन कर इसकी सात्वना की, तथा इमें अपने आश्रम में लाया। कुछ काल बाद यह प्रसूत होकर, इसे उदयन नामक पुत्र हुआ। आंग चल कर, सहस्रानीक को यह वार्ता मालूम होने ही, उदयाचल पर जा कर पुत्र समवेत, उसने इसे राज्य में वापस लाया। तदनंतर उदयन को गद्दी पर बिठा कर, उसने अलंबुसा

के साथ चक्रवर्ती पर स्नान किया। उससे सहस्रानिक तथा अलंघुसा ब्रह्मशाप से मुक्त हो कर पूर्वस्थिति के प्रत गये (स्कन्द. ३.१.५.)।

अलम्भ परिजानत—एक आचार्य (माल्य देखिये)।

अलर्क—(सो. क्षत्र.) काशी के दिवोदास राजा का प्रपौत्र। इसके पिता का नाम वत्स, प्रतर्दन तथा ऋतध्वज प्राप्त है। दिवोदास प्रेम से प्रतर्दन को ही 'वत्स-वत्स' कहता था। प्रतर्दन सत्यनिष्ठ होने के कारण उसे ऋतध्वज ऐसा दूसरा नाम भी था (ह. वं. १.२९, विष्णु. ४.९; भा. ९.१७)। गरुड पुराण के मत में, दिवोदास का पुत्र प्रतर्दन तथा उसका पुत्र ऋतध्वज है (१.३९)। हरीवश में प्रतर्दन का पुत्र वत्स तथा उसका पुत्र अलर्क है। इन्से काशी में ६६ हजार वर्षों तक राज्य किया (ह. वं. १.२९; भा. ९.१७; ब्रह्म. ११)। यह ब्राह्मणों का बडा स्वता था तथा अत्यंत सत्यप्रतिज्ञ था। इन्से एक बार अंध ब्राह्मण को बर मांगने के लिये कहा, तब उसने बर मांगा कि, तुम अपनी आँखें मुझे दे दो। वचनपूर्ति के लिये इन्से अपनी आँखें निकाल कर उसे दे दी (वा. रा. अधो. १२.४३)। लोमनाश्री की कृपा से यह सदैव तरुण रहा, तथा इसका स्वरूप कभी भी नहीं बिगडा। उसी की कृपा से इसे दीर्घायु प्राप्त हुआ। निकुम्भ के शाप से निर्मालुप अनी हुई वाराणशी, क्षेमक को मार कर इन्से पुनः बसाई (वा. यु. ९.२.६८, ब्रह्माण्ड ३.६७)। इन्से वाराणशी नगरी की पुनः स्थापना की (ह. वं. १.२९; ३२)।

इन्से प्रथम धनुर्वेल से सब पृथ्वी जीती, तथा बाद में इसका अन्तःकरण सूक्ष्म ब्रह्म की ओर झुका। नाक, कान, मन, जिह्वा इ. इन्द्रिय काचू में रखने के लिये, इन्से नाक कानादिकों में संभाषण किया (म. आश्र. ३०.)। इसे संतति नामक एक पुत्र था (भा. ९.१४; विष्णु. ४.९; वायु. ९२.६६)।

२. शत्रुघ्नपुत्र ऋतध्वज से मडालसा को उत्पन्न चौथा पुत्र। इसे मडालसा तथा दन्तत्रेय ने निवृत्तिमार्ग का उपदेश कर ज्ञानी बनाया (मार्क. २३-४०)। इसके ज्येष्ठ बंधु सुबाहु ने काशिराज की सहायता से इस पर आक्रमण किया। अत्यंत संकट में रहने पर, माता की ह्मनुसार त्यागी बन कर इन्से अपना राज्य सुबाहु को दिया (मार्क. ३४)।

अलायुध—एक मनुष्यमक्षक राक्षस (म. द्रो. ७१.२७; वा. २.३४)। द्रोणयुद्धकाल में रात्रि के समय,

घटोत्कच तथा कर्ण का युद्ध चालू था। कर्ण घटोत्कच के हाथ से आज बच नहीं सकता, ऐसा प्रतीत होने लगा। इतने में इन्से दुर्योधन से कहा कि, घटोत्कचसहित पांडवों का नाश मैं करूंगा। दुर्योधन ने हाँ भरते ही यह भीम से युद्ध करने लगा। इसका रथ घटोत्कच के समान ही शतअश्वों का था। इन्से भीम को इतना अधिक जबर किया कि, कृष्ण ने घटोत्कच को पुकार कर, इसके साथ युद्ध करने के लिये कहा। तब घटोत्कच ने कर्ण से युद्ध करना छोड़ कर, इसके साथ युद्ध प्रारंभ किया। उसमें घटोत्कच के द्वारा यह मारा गया (म. द्रो. १.५१-१.५३)। इसको वक्रज्ञाति (म. द्रो. १.५१.३.३३) तथा वक्र का भाई भी कहा है (म. द्रो. १.५३.४)।

अलाय्य—इसका परशु नष्ट हुआ (ऋ. ९.६७.२०)।

अलि—स्वारेचिप मन्वन्तर के सप्तपित्यों में से एक।

अलिन—ऋग्वेद में यह शब्द एक बार बहुवचन में आया है। वहाँ वृत्तुओं की गाये भगाई गई, इयलिये इन्हें आनंद हुआ है। यह लोग सुदास के विरोधी होने चाहिये (ऋ. ७.१८.७)।

अलिपिंडक—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

अलीक्यु वाचस्पत्य—एक यज्ञशास्त्रज्ञ (सां. ब्रा. २६. ५; २८.४)।

अलोलुप—धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

अल्पमेधस्—सुमेधस् नामक देवगणों में से एक।

अवगाह—(सो. यदु.) मत्स्य के मतानुसार वसुदेव तथा वृकदेवी का पुत्र।

अवतंस—(सो.) मविष्य के मत में सोमवर्धन का पुत्र

अवत्सार काश्यप—सूतदृष्टा (ऋ. ९. ५३-६०; ऐ. ब्रा. २. २४)। इसे अवत्सार प्राश्रवण कहते हैं (सां. ब्रा. १३. ३)। एवावद्, यज्ञत तथा सप्रि के साथ इसका उल्लेख है (ऋ. ५. ४४. १०)।

अवधूतेश्वर—शंकर का एक अवतार। एक बार, शंकर के दर्शन के लिये इन्द्र तथा बृहस्पति कैलाश पर्वत पर जा रहे थे। उनकी परीक्षा लेने के लिये, शंकर मार्ग में दिग्बर एवं भयंकर रूप लेकर बैठे था। बार बार बता कर भी, न तो वह मार्ग छोड़ता था, न ही कुछ बोलता था। अन्त में इन्द्र ने वज्र बाहर निकाला। उस वज्र का स्तम्भन शंकर ने किया, तथा उसके तृतीय नेत्र से क्रोधाग्नि निकाला। बृहस्पति की प्रार्थना से, वह अग्नि अन्त में लवणोदधि में

डाला गया। उससे जालंधर उत्पन्न हुआ। उसका वध शंकर ने किया (शिव. शत. ३०)।

अवध्वज—प्रतर्दन नामक देवगणों में से एक।

अवरात—प्रतर्दन नामक देवगणों में से एक।

अवरीधस्—सावर्णि मनु का पुत्र

अवरोधन—(स्वा.) गय राजा को गयंती से उत्पन्न पुत्र।

अवस्यु आत्रेय—सुकुतद्रष्टा (ऋ. ५. ३१; ७५)।

अविकंपन—एक ब्राह्मण। यह ज्येष्ठ ऋषी का शिष्य था।

अविक्षित—(सू. दिष्ट.) करंधमपुत्र (आविक्षित)। इसने सौ अश्वमेध किये तथा स्वयं बृहस्पती ने इसका याजन किया। इसको स्वयंवर से प्राप्त हेमधर्मकन्या बरा, सुदेवकन्या गौरी, बलिकन्या सुमद्रा, वीरकन्या लीलावती, वीरभद्रकन्या विभा, भीमकन्या मान्यवती तथा दंभकन्या कुमुद्वती नामक पत्नियाँ थी (मार्क. ११९. १६-१७)।

विशाल की कन्या वैशालिनी भी इसकी पत्नी थी। इसने वैशालिनी के स्वयंवर में अन्य राजाओं का पराभव किया, तथा वैशालिनी को ले कर यह चला गया। पश्चात् अन्य राजाओं ने मिल कर इसका पराजय कर के, इसको बंदीवान कर दिया। अन्त में इसका पिता करंधम ने सबका पराजय कर के, इसको मुक्त किया, तथा इसका वैशालिनी के साथ विवाह हुआ।

इसका पुत्र मरुत्त (म. आश्र. ४)। सर्पों ने कई ऋषिपुत्रों को मार डाला तब मरुत्त सर्प-संहार के लिये उद्युक्त हुआ। इस समय इसने अपने पत्नी के साथ वहाँ जा कर, पुत्र को इस कार्य से निवृत्त किया। सर्पों को बचा कर अभय दिया। सर्पों ने भी उन मृत ऋषिपुत्रों को पुनः जीवित किया (मार्क. ११९. १६-१७; १२८)।

२. (सो.) कुरुपुत्र। इसकी माता का नाम वाहिनी। इसे आठ पुत्र थे। वे इस प्रकार हैं—१. परीक्षित (अश्ववत्), २. शबलाश्व, ३. अमिराज, ४. विराज, ५. शत्वल, ६. उच्चैःश्रवस, ७. भद्रकार, ८. जितारि (म. आ. ८९. ४५-४६)। इसके अश्ववान् तथा अभिष्वत नाम भी प्रसिद्ध हैं (कुरु देखिये)।

३. लीलावती (४.) देखिये।

अविज्ञात—(स्वा. प्रिय.) यज्ञबाहु के सात पुत्रों में से कनिष्ठ। इसका वर्षे इसीके नाम से प्रसिद्ध है। पुरंजन का यह मित्र था। (भा. ४.२५; ४.२९)।

अविज्ञानगति—अनिल देखिये।

अविद्ध—(सो. पूर.) प्राचीन्वत् का नामान्तर।

अविध्य—लंका का एक वृद्ध राक्षस। सीता रामचंद्र को वापस देने को इसने रावण से कहा (वा. रा. सु. ३७)। यह राम का कुशल वृत्त लिया कर, त्रिजटा के द्वारा सीता को सूचित करता था। (म. व. २८०)

अविन्द्र—(सो. पूर.) वायु के मत में जनमेजय-पुत्र।

अविहोत्र—अत्रिकुल का एक मंत्रकर्ता।

अव्यय—रौच्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. रौच्य मनु का पुत्र।

३. ब्राह्म भागवत देवों में से एक (भृगु देखिये)।

अशाना—बली की पत्नी (भा. ६.१८)।

अशानिप्रभ—रावणपक्ष का एक राक्षस। इसे युद्ध में द्विविध बानर ने मारा (वा. रा. सु. ४३.३४)।

अशोक—अकोप प्रधान का नाम (वा. रा. सु. १२९ म. आ. ६१.१४)।

२. दुर्योधन के पक्ष का एक राजा। यह पहले अश्व नामक राक्षस था (म. आ. ६१.१४)। यह कलिम में चित्रांगदकन्या के स्वयंवर में उपस्थित था (म. शां. ४. ७)।

३. (विशोक) भीमसेन का सारथि (म. भी. ६०. ८)।

४. (मौर्य. भविष्य.) वायु तथा ब्रह्माण्ड के मतानुसार, भद्रसार का पुत्र। परंतु भागवत तथा विष्णु पुराण में, अशोकवर्धन नाम दिया है, तथा पहले में इसे वारिसार का, एवं दूसरे में विदुसार का पुत्र कहा है। पट्टन के कश्यपकुल के विदुसार राजा का पुत्र। यह बौद्धधर्मीय था। बौद्ध धर्म के प्रसार के लिये इसने पर्याप्त प्रयत्न किये। यह अत्यंत पराक्रमी था (भवि. प्रति. २.७)।

अशोकवर्धन—अशोक (४.) देखिये।

अशोकसुन्दरी—पार्वती की कन्या (पार्वती देखिये)। इसने हुंड दैत्य को शाप दिया था (हुंड देखिये)। इसका विवाह नहुष के साथ हुआ (पद्म. सू. १०२-११७)।

अक्षक—(सू. इ.) अक्ष का अर्थ है पत्थर। उसने इसे उत्पन्न किया, अतएक इसका यह नाम प्रचलित हुआ। यह कल्माषपाद नाम से प्रसिद्ध, मित्रसह राजा का पुत्र है (वायु. ८८.१७५-१७७; ब्रह्माण्ड. ३. ६३. १७५-१७७; विष्णु. ४.४.३८)। कल्माषपाद राजा

एक ब्राह्मण के शाप के कारण, स्त्रीसमागम नहीं कर सकता था। परंतु इक्ष्वाकु कुल की वृद्धि आवश्यक समझ कर, कल्पापपाद ने वशिष्ठ ऋषि से कह कर, उससे अपने मदयंती नामक पत्नी के उदर में गर्भस्थापना करवाई (म. आ. ११३)। बारह वर्ष होने पर भी, यह गर्भ बाहर नहीं आया। तब मदयंती ने अश्मप्रहार से उदरविदारण कर के इसे बाहर निकाला (म. आ. १६७. ६८)। सात वर्षों के बाद, अश्मप्रहार कर वशिष्ठ ने इसे बाहर निकाला (भा. ९.९.३९)। इसने पौदन्य नामक नगर बसाया (म. आ. १६८.२५)। इसे मूलक नामक पुत्र था, जिसे आगे चल कर, नारीकर्वच नाम प्राप्त हुआ (भा. ९.९)।

२. एक राजा। ऋषि ने इसे जीत कर इससे कर वसूल किया था (म. क. ८.२०)। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में था (म. द्रो. ६१)।

३. भीष्म शरपंजर पर पड़ा था, तब उसके पास रहने-वाला एक ब्राह्मण।

४. अश्मक देश का राजा (म. स. २८.३०७*) यह कौरवों के पक्ष में था। ब्यूहभेद करने के पश्चात्, अभिमन्यु ने इसका वध किया (म. द्रो. ३६.२३)।

अश्मकी—तीसरे शूर की पत्नी।

२. प्राचिन्वत् की पत्नी (म. आ. ९०. ३३)। आत्माकी भी पाठ है।

अश्मन्—एक ब्राह्मण। इसका जनक के साथ सुख-दुःखनिवृत्ति पर संभाषण हुआ था (म. वां. २८)।

अश्मरथ्य—विश्वामित्रकुल का एक गोत्रकार।

अश्व—कश्यप तथा दनु के पुत्रों में से एक।

२. सत्य नामक देवगणों में से एक।

३. कश्यप तथा स्वशा का पुत्र।

अश्वकेतु—दुर्योधन पक्षीय मगध देशोत्पन्न राजा। अभिमन्यु ने इसका वध किया (म. द्रो. ४७.७)।

अश्वक्रंद—अमृत-रक्षक एक देव (म. आ. २८. १८)।

अश्वग्रीव—(सो. वृष्णि.) चित्रक राजा का पुत्र।

अश्वचक्र—कृष्णपुत्र सांब द्वारा मारा गया एक राजा (म. व. १२०.१३)।

अश्वजित—(सो. पूरु.) जयद्रथ का पुत्र।

अश्वतर—कद्रुपुत्र (उर्ज देखिये)। मद्रालसा की मृत्यु के पश्चात्, दूसरी मद्रालसा प्राप्त कर, इसने ऋतध्वज के दी।

२. बुल्लिल का पितृनाम। सायण के मतानुसार, बुल्लिल अश्व का लडका तथा अश्वतर का वंशज है। सत्र के कुछ शंखों के संबंध में गौश्र के साथ इसका संवाद हुआ (ऐ. ब्रा. ६.३०.)।

अश्वत्थामन्—सप्तनिर्जिवों में से एक। द्रोणाचार्य तथा गौतमी कृपी का यह एकमेव पुत्र था। जन्म लेते ही उरुचैःश्रवा अश्व के समान जोर से चिह्ला कर, इसने तीनों लोक कंपित किये। अतः आकाशवाणी ने इसका नाम अश्वत्थामा रखा (म. आ. १६७. २९; द्रो. १६७. २९-३०)। द्रोणाचार्य का पुत्र होने से, इसे द्रोणि वा द्रोणायन कहते हैं। रुद्र के अंश से उत्पत्ति होने के कारण, इसमें क्रोध तथा तेज था।

एक बार, एक धनिक के घरमें उसके पुत्र को गाय का दूध पीते इसने देखा। मुझे भी दूध चाहिए, ऐसा हठ यह करने लगा। उसे संतोष दिलाने के लिये, इसकी माता ने यवपिष्ट में पानी घोल कर इसे पीने को दिया। उससे, 'मैंने दूध पिया,' कह कर यह आनंद से नाचने लगा (म. आ. परि. १.७५; द्रोण देखिये)।

अश्वत्थामा को शस्त्रास्त्रविद्या की शिक्षा, कौरव-पांडवों के साथ ही द्रोणाचार्य के द्वारा मिली। जाति से ब्राह्मण होते हुए भी, क्षत्रिय की विद्या सीखने के कारण इसमें क्षत्रिय-धर्म अधिक था। यह द्रौपदीस्वयंवर में (म. आ. १७७. ६.), तथा राजसूय में उपस्थित था (म. स. ३१.८)।

भारतीय युद्ध में सत्र सेनापतियों का पतन होने के पश्चात्, भीम तथा दुर्योधन में गदायुद्ध हो कर, दुर्योधन उस में प्रायल हुआ। तब उसने अश्वत्थामा को सेनापत्य का अभिषेक किया। उस समय इसने पांडवों का वध करने की प्रतिज्ञा की (म. श. ६४.३५)। इसने अकेले ही पांडवों की एक अक्षौहिणी सेना का संहार किया। अर्जुन तथा भीम के साथ यह काफी देर तक लड़ा। अंतमें इसका पराभव हुआ (म. वि. ५.३-५४; क. ११; १२)।

अश्वत्थामा पांडवों को प्रिय था, एवं पांडव भी उसे प्रिय थे। तथापि, 'तुम पांडवों के पक्षपाती हो,' ऐसा दुर्योधन द्वारा वाक्ताडन होने पर, उसे उत्तर दे कर, इसने द्रोण-पुत्र को शोभा दे ऐसा पराक्रम किया, तथा पांडवसेना का संहार किया (म. द्रो. १३५)।

द्रोण का वध धृष्टद्युम्न द्वारा होने के पश्चात्, जब कौरव सेना हाहाकार मचाती हुई चारों ओर भागने लगी,

तत्र अश्वत्थामा ने कौरवशेखर से, 'किसका वध होने से यह सेना अस्तव्यस्त हो कर दौड़ रही है,' ऐसे पूछा (म. द्रो. १६५)। धृष्टद्युम्न ने अधर्म से अपने पिता का वध किया, यह ज्ञात होते ही अश्वत्थामा ने, धृष्टद्युम्न को मारने की प्रतिज्ञा की (म. क. ४२)। पितृवध से संतप्त अश्वत्थामा ने सात्यकी, धृष्टद्युम्न, भीमसेन इ. रथीवीरों का पराभव कर के उन्हें भगा दिया। द्रोणाचार्य के वध से पश्चात्, नीलवीर ने कौरवसेना का विध्वंस प्रारंभ किया, तत्र अश्वत्थामा ने उसका सिर काट दिया (म. द्रो. ३०.२७)। पांडवसेना पर इसके द्वारा छोड़े गये नारायणः ने अति-संहार प्रारंभ करने पर, भगवान् कृष्ण ने सब को निःशस्त्र होने के लिये कहा। तत्र वह अस्त्र शांत हुआ (म. द्रो. १७०-१७१)। इसने पांडवपक्ष के अंजनपर्वादि राक्षस, द्रुपद राजा के मुख, शत्रुंजय ये पुत्र तथा कुंतिमोज राजा के दस पुत्रों का तथा पटोकाक्ष का वध किया (म. द्रो. १३१.१२६-१३१)।

सत्र कौरवों की मृत्यु के पश्चात्, एक बार रात्रि के समय, अश्वत्थामा, कृपाचार्य तथा कृतवर्मा यह तीनों विश्रांति के लिये वृक्ष के नीचे लेटे थे। क्या किया जावे, यह अश्वत्थामा सोच रहा था। इतने में एक उल्लू ने छापा मार कर, उस वृक्ष के असंख्य कोंपें मार डाले। उस घटना से, एक नयी चाल इसने सींची, तथा पांडवों की सेना पर रात्रि के समय छापा मारने का निश्चय इसने किया। इस विचार से इसे परावृत्त करने का काफी उपदेश कृतवर्मा तथा कृपाचार्य किया, परंतु उनका न सुनते हुए, अश्वत्थामा अकेला ही छापा डालने के लिये निकल पड़ा (म. सौ. ५)। पांडवों के शिविरद्वार के पास आते ही, इसने शिविर की रक्षा करनेवाला एक भयंकर प्राणी देखा। उससे इसने युद्ध आरंभ किया। अश्वत्थामा के किसी भी शस्त्रास्त्र का प्रयोग इस प्राणी पर नहीं हुआ। इसके सब शस्त्र समाप्त हो गए। तत्र निरुपाय हो कर, अश्वत्थामा उस शूलपाणि शंकर की शरण में गया (म. सौ. ६)। शंकर की स्तुति करने के पश्चात्, इसने अग्नि में स्वयं अपनी आहुती दी। इससे शंकर प्रसन्न हो कर, उन्होंने इसे दर्शन दिये, तथा इसे दिव्य खड्ग दे कर इसके शरीर में प्रवेश किया (म. सौ. ७)। रात्रि में ही, इसने पांडवों के हजारों सैनिक, द्रौपदी के सब पुत्र, तथा पांचाल, सूत, सोम, धृष्टद्युम्न, शिखंडी आदि अनेक वीरों का नाश किया (म. सौ. ८)।

इतना कर के, इस घटना कथन करने के लिये, यह कृतवर्मा तथा कृपाचार्य के साथ उस स्थान पर गया, जहाँ दुर्योधन घायल हो कर तड़प रहा था। भारतीय युद्ध के संपूर्ण सेना में, केवल पांच पांडव, श्रीकृष्ण तथा हम तीनों ही जीवित हैं, बाकी संपूर्ण सेना का संहार हो गया, यह सुनकर राजा दुर्योधन ने सुख से प्राण छोड़े (म. सौ. ९)।

द्रौपदी के सब पुत्रों का वध अश्वत्थामा द्वारा किये जाने के कारण, उसने अत्यंत शोक किया। अश्वत्थामा के मस्तक का मणि निकाल कर युधिष्ठिर के मस्तक पर देवूंगी, तो ही मैं जीवित रहूंगी, ऐसी प्रतिज्ञा उसने की। उसकी पूर्ति के लिये भीमसेन ने अश्वत्थामा पर आक्रमण किया (म. सौ. ११)। व्यासादि ऋषिसमुदाय में, अश्वत्थामा धूल से भरा हुआ उसने देखा। अश्वत्थामा के अस्त्रप्रभाव के सामने भीम का कुछ नहीं चलेगा, ऐसा सोच कर, कृष्ण अर्जुनसमवेत भीम का सहायता के लिये निकला। पांडवों के नाश के लिये, अश्वत्थामा ने ब्रह्मशीर नामक अस्त्र छोड़ा। उससे पृथ्वी जलने लगी। उसा अस्त्र का प्रतिकार करने के लिये, अर्जुन ने भी वही अस्त्र छोड़ा। इन दोनों के युद्ध में पृथ्वी का कहीं नाश न हो जाये, यह सोच कर, व्यासादि मुनियों ने इस अविचार के लिये अश्वत्थामा को डाँट लगाई, तथा मस्तक का दिव्यमणि पांडवों को दे कर शरण जानने के लिये कहा। इसने मणि दिया, परंतु उत्तरा के उदर में स्थित पांडव वंश का नाश करके ही अपना अस्त्र शांत होगा, ऐसा जवाब दिया। तत्र कृष्ण ने उसे शाप दिया कि, पीय तथा रक्त से भरा दूषित शरीर ले कर, तीन हजार वर्षों तक मूकभाष्य से यह अरण्यों में घूमेगा। उत्तरा के गर्भ को कृष्ण ने जीवित किया (म. सौ. १३-१६; भा. १.७.१६)।

यह शंकर का अवतार हो कर चिरंजीव है, तथा गंगा के तट पर रहता है (शिव. शत. ३७)।

यह सार्वर्णि मन्वन्तर के सप्तपियों में एक होगा (मनु देखिये)। यही व्यास भी होगा (व्यास देखिये)।

२. अक्रूर के पुत्रों में से एक।

अश्वथ—ऋग्वेद के दानस्तुती में, पायु को दान देनेवाला ऐसा इसका उल्लेख है (ऋ. ६.४७.२२-२४)। अश्वथ, दिव्योदास तथा अतिधिग्व, ये प्रस्तोक के ही अन्य नाम हैं, ऐसा सायणाचार्य कहते हैं।

अश्वपति—कश्यप तथा दनु के पुत्रों में से एक।

१. मद्र देश का राजा। इसे मालवी नामक पत्नी थी। इसकी अनेक पत्नीयों में से वह उच्येष्टा थी। इसने सावित्री देवी की पराशरोक्त गायत्री मंत्र से आराधना की, तथा आराधना के पश्चात् का हवन करने समय, सावित्री अग्नि में से प्रगट हुई। उसने इसे वरदान दिया कि, दोनों (मनुष्य तथा मायका) कुलों का उद्धार करनेवाली कन्या तुम्हें होगी। उस वर के अनुसार, इसे सावित्री नामक एक कन्या हुई। इसी सावित्री द्वारा यम से मांग गये वर के अनुसार इसे तीन पुत्र हुए (ब्रह्मवैवर्त, २.२३; म. आर. २७७; सावित्री देखिये)।

अश्वपति कैकय—एक आत्मज्ञानी पुरुष। प्राचीन-शालादि कोड़े विज्ञान पुरुष आत्मा के संबंध में जड़ विचार कर रहे थे, तब उन्हें कुछ निश्चय नहीं बन रहा था। इसे आत्मज्ञ मान कर वे इसके पास आये। उसने इनका यथायोग्य नकार किया तथा दूसरे दिन यह उन्हें दक्षिणा देने लगा। वह उन्होंने अमान्य कर दी। तब इसे ऐसा लगा कि, इस में कुछ दोष होगा, तभी उन्होंने दक्षिणा अमान्य कर दी। तब इसने अपने राज्य की स्थिति का 'नमस्तेनो जनपदं, न कदर्यो-न मयपो, नानाहिताग्निना-विद्वान्, न स्वैरी, स्वैरिणी कुतः', इस प्रकार कथन किया। आये हुए लोगों ने कहा कि, हम दक्षिण के लिये नहीं, वैशानर आत्मा का ज्ञान पाने के लिये आये हैं। तब इसने उन्हें ज्ञान दिया (श. ब्रा. १०.६.१.२; छा. उ. ५.११; ४; म. उ. १.४)।

२. कश्यप देश का राजा। इसकी पत्नी बड़ी साहसी थी। वह किसी भी चीज की चिंता नहीं करती थी। एक ऋषि के द्वारा दिये गये वर के अनुसार इसे पशियों की भाषा समझनी थी। एक बार, जंभ पशियों के जोड़े की बातें सुन कर इसे हँसी आ गई। इसकी पत्नी ने हँसने का कारण पूछा। इसने कहा कि, कारण इतना भयंकर है कि उसे बताते ही मेरी मृत्यु हो जायेगी। कारण इतना भयंकर होते हुए भी, उसकी पत्नी ने उसे बताने की जिद की। तब इसने वरदान देने वाले ऋषि को यह बात बताई। ऋषि ने उससे कहा कि, तुम अपनी पत्नी को भगा दो। इसने तत्काल वैसा ही किया।

इसे युधाजित तथा कैकयी नामक दो पुत्र थे। इसमें से, युधाजित भरत का मातुल था। अश्वपति नाम, उरनाम के समान भी लगाया जाता था (श. रा. अयो. १.२)।

अश्वपेज—वेद की शाखा प्रारंभ करनेवाला (पाणिनी देखिये)।

अश्वपेय—वेद की शाखा प्रारंभ करनेवाला (पाणिनी देखिये)।

अश्वमित्र गोभिल—वरुणमित्र गोभिल का शिष्य (वं. ब्रा. ३)।

अश्वमेध—व्यरुणकृत दानस्तुती में का एक राजा (क. ५.२७.४-६)।

अश्वमेध भारत—सुकुतदृष्टा (क. ५.२७)।

अश्वमेधज—(सो. पुरु.) सहस्रातीक राजा का पुत्र। इसका पुत्र असीमकृष्ण (म. ९.२२.३९)।

अश्वमेधदत्त—(सो. कुरु.) शतानीक का पुत्र तथा जनमेजय का पौत्र। इसकी माता वैदेही (म. आ. ९.०.१५)। यह अधिमोमकृष्ण हो सकता है।

अश्वधु—अंगिरकुल का एक गोवर्कार।

अश्वरथ—विश्वामित्र गोत्र का एक प्रवर।

अश्वल—वैदेह जनक का होता। वैदेह जनक ने बड़ा यज्ञ किया, तथा काफी दक्षिणा भी रखी। उपस्थित ऋषियों में, वाङ्मवल्क्य सर्वश्रेष्ठ इयलिये जब आगे बढे, तब इसने उसे कुछ प्रश्न पूछ कर रोकने का प्रयत्न किया। परंतु याज्ञवल्क्य ने इसे चुप कर दिया (वृ. उ. ३.१.२; १०)।

अश्वयत्—(सी. कुरु.) अविश्विन् (२.) देखिये।

अश्वशंकु—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

अश्वसूक्ति काण्वायान—सुकुतदृष्टा (क. ८.१४-१५) तथा सामदृष्टा (वं. ब्रा. १.८.४.१०)।

अश्वसेन—तक्षक का पुत्र। अर्जुन ने जब खांडववन जलाया, तब तक्षक वहाँ नहीं था। इसकी माता ने इसे मुँह में पकड़ कर, कूट कर बाहर निकलने का प्रयत्न किया। तब अर्जुन ने इसकी माँ का सिर काट डाला। परंतु वेगवान् वायु के कारण यह दूर जा कर गिरा तथा बच गया (म. आ. २.८.९; २२०.४०; ६०.३५)।

अर्जुन से बटला लेने के लिये, इसने कर्ण के वाण पर आरोहण किया। यह जान कर, कृष्ण ने रथ ऐसा दबाया कि, अश्व धुट्टों पर बैठ गये। अतः शण ग्रीवा पर न लग कर मुकुट पर लगा, तथा मुकुट के टुकड़े हो गये। पश्चात् अर्जुन ने इसे मार डाला (म. क. ६६)।

अश्वायु—(सो.) मरुत्य के मतानुसार यह पुरुखा पुत्र है।

अश्वि—धर्म तथा मुहूर्ता का पुत्र।

अश्विन—वैवस्वत मन्वन्तर का एक देव (अश्विनी-कुमार देखिये)।

अश्विनी—सोम की सत्ताइस पत्नीयों में से एक।
२. अक्रूर की पत्नीयों में से एक।

अश्विनीकुमार—एक ही नाम से पहचानी जाने वाली, युस्थानीय दो देवता। ऋग्वेद में इनके वर्णन पर लगभग पचास सूक्त हैं। ये जुड़वाँ भाई हैं तथा कभी एक दूसरे से विलग नहीं होते (ऋ. ३.३९.३)। ये सरण्यु से प्रभातसमय में उत्पन्न हुए (ऋ. १०.१७.२)। परंतु इन दोनोंका जन्म अलग हुआ ऐसा भी उल्लेख है। एक निशा का, तथा दूसरा उषा का पुत्र था (नि. १२.२)। इनके उदय का समय, उषा तथा सूर्योदय के बीचमें है (ऋ. ८.५.२)। द्विवचन में आनेवाला नासत्य शब्द एकवचन में आया है (ऋ. ४.३.६)। ये तरुण हैं तथा देवों से छोटे हैं (ऋ. ७.६७.१०; तै. सं. ७.२.७)। इनका रथ सुनहला है, तथा उसे पहिये, बैठक तथा धुरियाँ प्रत्येक तीन तीन हैं (ऋ. १.११८.१; २.१८०.१)। सूर्या के विवाह समारोह में जब वे आये थे, तब इनके रथ का एक चक्र टूट गया (ऋ. १०.८५.१५)। इनके रथ को श्वेन (ऋ. १.११८.१), गरुड़ (४), हंस (ऋ. ४.४५.४), तथा कुछ स्थानों पर केवल पक्षी जोड़े जाने का निर्देश है (ऋ. ६.६३.६)। सोम तथा सूर्या के विवाह प्रसंग में, इनके रथ को रासम जोड़े थे (ऐ. ब्रा. ४.४-९)। इनका रथ एक दिन में पृथ्वी तथा स्वर्ग आक्रमता है (ऋ. ३.५८.८)। इनका वासस्थान वृष तथा पृथ्वी (ऋ. १.४४.५), बौ तथा अंतरिक्ष (ऋ. ८.८.४), वृक्ष तथा गिरिगह्वर, दिया है (ऋ. ७.७०.३)। इनका स्थान अज्ञात है (ऋ. ६.६३.१; ८.६२.४)। सूर्यकन्या सूर्या के ये पति हैं (ऋ. १.११७.१६; ४.४३.६)। ये लोगों को संकटमुक्त करते हैं (अत्रि, घोषा, भुज्यु तथा वंदन देखिये)। परंतु स्त्रियों को पुत्र देना (ऋ. १.११२.३; १०.१८४.२), वृद्धों को तरुण बनाना (ऋ. १.११९.७) आदि कथाएँ भी प्रचलित हैं। अथर्ववेद में, प्रेमी युगुलों को मिलाना इ. विषय में भी, इनकी प्रख्याति है (अ. वे. २.३०.२)। इसके अतिरिक्त, ये अंध, पंगु तथा रोगग्रस्तों को ठीक करनेवाले (ऋ. १०.३९.३), देवताओं के धन्वन्तरि तथा मृत्यु को टालनेवाले हैं (ऋ. ८.१८.८; तै. ब्रा. ३.१.२.११)। इन्होंने विश्वला को लोहे का पैर लगाया इ. आख्यायिकाये हैं (दधीच, भुज्यु, कवि तथा विमद देखिये)। अश्वीदेवों की कल्पना गुरुशुक्र के सानिध्य

से उत्पन्न हुई, यह दीक्षितजी का कथन सब को मान्य होने लायक है (भारतीय ज्यो. पा. ६५)।

हमारे वैदिक पूर्वज उत्तर ध्रुव प्रदेश में जन्म रहते थे, तब उनके द्वारा अबलोकन किये गये दो दृश्य—जिन्हें अंग्रेजी में Astronomical and meteorological light या Aurora Borealis कहते हैं,—उन्हीका रूप-कात्मक दर्शन अश्विनीकुमारों के प्रतीकों में किया गया है, ऐसा श्री. वंडेर का कहना है।

संज्ञा जब अश्वरूप में संचार कर रही थी, तब उसे विवस्वान से अश्विनीकुमार हुए। अपनी पत्नी अश्विनी है, यह देख विवस्वान ने अश्वरूप में उससे सहवास किया। परंतु संज्ञा ने उसे परपुरुष समझ कर, उस वीर्य को नासापुत्रों द्वारा त्याग दिया।

अश्विनीकुमारों को नासत्य ऐसा भी नामांतर है (म. आ. ६०.३४; भा. ६.६.४०)। इनमें से बड़े का नाम नासत्य, तथा छोटे का नाम दस है (म. अनु. १५०)। ये देवों के वैद्य, तथा वैवस्वत मन्वन्तर के देव हैं (भा. ८.१३.४; मनु देखिये)। देवों में यह युद्ध है (म. शां. २०७.२६ कुं)।

उपमन्यु ने अपना गुरु आपोद धीम्य की आज्ञा से, दृष्टिप्राप्त्यर्थ इनकी स्तुति की। इस स्तुति से तथा गुरु के प्रति उसकी निष्ठा से संतुष्ट हो कर, इन्होंने उसे दृष्टि दी (म. आ. ३.७५)। एक बार, जब वे च्यवनाश्रम में आये थे, तब इन्हें यज्ञ में हविर्भाग प्राप्त कर देने का मान्य कर, च्यवन ने इससे तारुण्य प्राप्त करा लिया (म. ब. १२३. भा. ९. ३. २३-२६)। माद्री ने पांडु की आज्ञा से, इनसे आवाहन कर दो पुत्र प्राप्त कर लिये। वे ही नकुल तथा सहदेव हैं (म. आ. ९०.७२; ११५.१६-१७)। ये शिशुमारचक्र के स्तन पर हैं (भा. ५.२३.७; अश्विनीसुत देखिये)।

२. भास्करसंहिता के चिकित्सासारतंत्र नामक प्रकरण का कर्ता (ब्रह्मवै. २.१६)।

अश्विनीसुत—सुतपस् भारद्वाज का पुत्र। सुतपस् की पत्नी जब तीर्थयात्रा कर रही थी, तब बलात्कार द्वारा सूर्य से उसे अश्विनीसुत नामक सुन्दर पुत्र हुआ। घर आ कर, यह बात उसने पति को बताई। तब उसने इन दोनों का त्याग किया। वह स्त्री गोदावरी नदी बनी। सूर्य ने इसे मंत्रतंत्र तथा ज्योतिष पढ़ाया, अतः यह ज्योतिषी बना। परंतु आगे सुतपस् ने इन दोनों को शपथ दिया की, तुम रोगी तथा यज्ञभारहित बनोगे। आगे चल कर,

सूर्य की स्तुति करने पर यह रोगरहित तथा यज्ञ में भाग प्राप्त करनेवाला हुआ (ब्रह्मवै. १.१०-११)। अश्विनी-कुमारों से यह कथा मिलती जुलती है।

अश्व्य—वरा देखिये।

अषाढ उत्तर पाराशर्य—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

अषाढ कौशिन—कुंति देश ने पांचालदेश का पराम्व किया, उस संबंध में इसका उल्लेख है (क. सं. २६.९)।

अषाढ सावयस—एक ऋषि। यज्ञ करते समय, यज्ञमान ने यज्ञ के पूर्वदिन अनशन व्रत करना चाहिये, ऐसा इसका मत है। क्या कि, आनेवाले देवताओं को हवि देने के पहले खाना अयोग्य है (श. ब्रा. १.१.१.७)।

अषाढि सौश्रोमतेय—यज्ञकुंड में ईंटें लगाने के लिये अयोग्य पद्धति का स्वीकार किये जाने के कारण, इसकी मृत्यु हो गई (श. ब्रा. ६.२.१.२७)।

अष्टक वैश्वामित्र—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१०४)। विश्वामित्र का पुत्र (ऐ. ब्रा. ७.१७. सां. श्रौ. सू. १५. २६)। विश्वामित्र ऋषि को माधवी से उत्पन्न पुत्र (म. उ. १.१७.१७-१९)। यह बड़ा विद्वान् था। एक बार, अपने प्रवर्द्धन, वसुमनस् तथा शिवि इन तीन बंधुओं के साथ, जब यह रथ में बैठ कर जा रहा था, तब मार्ग में नारद इसे मिले। इसने उन्हें रथ में बिठाया तथा पूछा कि, हम चारों में से सबसे पहले किसका पतन होगा, यह बताओ। तब नारद ने कहा कि, यद्यपि तुमने बहुत योगदान किये हैं, तथापि उसका तुम्हें अभिमान होने के कारण, तुम्हारा ही पतन पहले होगा (म. व. १९८)।

इसका पितामह तथा माधवी का पिता ययाति आत्मश्राया के कारण, स्वर्ग से पतित हुआ। तब इसने सबसे इसलोक तथा परलोक के संबंध में, अनेक प्रश्न पूछ कर ज्ञान प्राप्त किया, तथा अपना पुण्य दे कर उसे पुनः स्वर्ग में भेजा (म. आ. ८३-८५; मत्स्य. ३८-४१)।

यह विश्वामित्र गोत्र के प्रवर में है। इसके पुत्र का नाम लौहि।

अष्टम—ब्रह्मवावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अष्टादश वैरुप—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१११) तथा सामद्रष्टा (पं. ब्रा. ८.९.२१)।

अष्टारथ—दिव्योदास (२.) देखिये।

अष्टावक्र—कहोल का पुत्र। उद्दालक के सुजाता नामक कन्या का पुत्र, तथा श्वेतकेतु का मामा (म. व. १३८)। कहोल के द्वारा निरंतर किये जानेवाले अध्ययन का इसने गर्भवास में ही मज्ञाक उद्घाया। तब, शिष्य के समक्ष तुमने मेरा अपमान किया, इसलिये आठ स्थानों पर तुम टेढे रहोगे, ऐसा शाप कहोल ने इसे दिया। कुछ दिनों के पश्चात्, दशम मास लगाने के कारण सुजाता का प्रसवकाल निकट आ गया। आवश्यक धन न होने के कारण, कहोल जनक के पास धनप्राप्ति के लिये गया। परंतु वहाँ, वरुणपुत्र बंदी ने कहोल को वादविवाद में जीत कर, वहाँ के नियमानुसार पानी में डुबो दिया। उद्दालक की इच्छानुसार, यह बात गुप्त रख ने का सब ने निश्चय किया। जन्म के बाद, अष्टावक्र उद्दालक को ही अपना पिता तथा श्वेतकेतु को भाई समझता था।

बारह वर्ष का होने के पश्चात्, एक दिन सहजभाव से यह उद्दालक की गोदमें बैठा था। तब, यह तुम्हारे बाप की गोदी नहीं है, कह कर श्वेतकेतु ने इसका अपमान किया। तब पूछने पर सुजाता ने इसे पूरी जानकारी दी। तदनंतर, श्वेतकेतु के साथ यह जनक के यज्ञ की ओर गया। वहाँ प्रवेश के लिये बाधा आई। द्वारपाल से सयुक्तिक मापण कर के इसने सभा में प्रवेश प्राप्त किया, तथा वहाँ बंदी को वाद का आवाहन कर के उसे पराजित किया। बंदी ने जिस जिस व्यक्ति को वाद में जीत कर पानी में डुबोया था, वे सब वरुण के घर के द्वादश वार्षिक सत्र में गये थे। वे सब वापस आ रहे हैं, ऐसा कह कर इसने सब को वापस लाया। कहोल तथा अष्टावक्र का मिलन हुआ। तथापि अन्त में, बंदी को जनक ने सागर में डुबो ही दिया (म. व. १३४)। उपरोक्त अष्टावक्र की कथा, लोमश ने युधिष्ठिर को श्वेतकेतु के आश्रम में बताई है। कहोल ने समंगा नदी में स्नान करने को व्रता कर, इसका टेढा शरीर सीधा किया (म. व. १३२)।

आगे चल कर, वदान्य ऋषि की सुप्रभा नामक कन्या से इसका विवाह तय हुआ। परंतु उसने इसे कहा कि, उत्तर दिशा में हिमालय के ऊपरी भाग में, एक वृद्ध स्त्री तपश्चर्या कर रही है। वहाँ तक जा कर आने के बाद ही यह विवाह होगा। अष्टावक्र ने यह शर्त मंजूर की। प्रवास करते करते, उस दिव्य प्रदेश से कुबेर का सरकार स्वीकार कर

यह वृद्ध स्त्री के स्थल पर आया। वहाँ इसे ऐश्वर्य की परमावधि तथा अनेक सुन्दर स्त्रियों दिखीं। उन्हें जाने के लिये कह कर, उस वृद्ध स्त्री के पास रहने का इसने निश्चय किया। रात्रि के समय शय्या पर जब यह विश्राम कर रहा था, तब वह वृद्ध स्त्री ठंड से कँपकँपाती हुई, इसके पास आई तथा इसको आलिप्त कर प्रेमयाचना करने लगी। परंतु परस्त्री मान कर अष्टावक्र ने उसकी प्रार्थना अमान्य कर दी। उसकी हर चीज की ओर देख कर, अष्टावक्र के मन में घृणा उत्पन्न होती थी। दूसरा दिन उसी ऐश्वर्य में बिताने के बाद, रात्रि के समय पुनः वही प्रकार हुआ। उस समय, वृद्धा ने यौवनरूप धारण किया था। उसने यह भी कहा कि, वह कुमारिका है। परंतु, मेरा विवाह तय हो गया है, ऐसा बता कर इसने उसे निवृत्त किया। तब इसके निग्रही स्वभाव के प्रति संतोष प्राप्त कर, वृद्धा ने कहा कि, मैं उत्तरदिग्देवता हूँ। तुम्हारे भावी स्वयंवर की इच्छानुसार मैंने तुम्हारी परीक्षा ली (म. अनु. ५०-५२)। तदनंतर सुप्रभा के साथ इसका विवाह हुआ। यह बड़ा तत्त्वज्ञानी था। इसके नाम पर 'अष्टावक्रगीता' नामक एक ग्रंथ प्रसिद्ध है। वह गीता इसने जनक को बताई।

एक बार लोकेश्वर नामक ब्रह्मदेव के समय, व्याध के बाण से हरिहर नामक ब्राह्मण का पैर टूट गया। चक्रतीर्थ में स्नान करने पर, वह पैर उसे पुनः प्राप्त हुआ। चक्रतीर्थ की महत्ता की यह कथा, इसने बताई है (स्कन्द ३.१. २४)।

'अष्टावक्रसंहिता' नामक ग्रंथ इसके नाम पर है (C. C.)। इसने अप्सराओं को विष्णु को पतिरूप में प्राप्त करने का वरदान दिया, परंतु पानी से बाहर आने पर अप्सरायें इसका वक्रत्व देख कर हँस पड़ी। तब इसने उन्हें शाप दिया कि, आभीर तुम्हारा हरण करेंगे (ब्रह्म. २१२. ८६)। उसी के अनुसार, कृष्णनिर्याण के पश्चात् अर्जुन जब कृष्णपत्नियों को द्वारका से ले जा रहा था, तब मार्ग में आभीरों ने उनका हरण किया।

असकृत्—भृगु तथा पुलोमा का पुत्र।

असंग—(सो. वृष्णि.) मत्स्य तथा विष्णु के मतानुसार युयुधानपुत्र।

असमंजस—(स. इ.) सगर को केशिनी नामक स्त्री से उत्पन्न पुत्र (भा. ९.८.१५; ह. वं. १.१५; विष्णु. ४.४.३; ब्रह्म. ८.७३; वायु. ८८.१५९; नारद ८.६८; वा. रा. वा. ३८)। यह शैब्या का पुत्र था (म. व. १०६.

१०)। यह भानुमती का पुत्र था (मत्स्य. १३.९४; पद्म. सू. ८)।

पूर्वजन्म में यह योगी था, तथापि कुसंगति से योग-भ्रष्ट हो गया। पूर्वजन्म का स्मरण होने के कारण, इसे कुसंगति के प्रति घृणा उत्पन्न हो गई। पुनः कुसंगति प्राप्त न हो, इस भय से इसने अपना व्यवहार असमंजसता का रखा। इस के शरीर में पिशाच का संचार होने से यह ऐसा व्यवहार करता था (ब्रह्माण्ड. ३.५१)। ऐसे वर्तन के कारण, लोक त्रस्त हो कर दूर ही रहें, ऐसा इसका उद्देश्य रहता था। इस लिये यह लोगों के बंधों को सरयू नदी में डुबो देता था। तब लोगों ने सगर के पास इसकी शिकायत की। इसलिये राजा ने इसे घर से बाहर निकाला। तब यह वन में चला गया, किंतु जाते समय डुबोये हुए सब बच्चों को इसने योगसामर्थ्य से जीवित कर, लोगों को वापस कर दिया। तब नागरिकों को आश्चर्य लगा, तथा राजा को अत्यंत पश्चात्ताप हुआ (भा. ९.८.१४-१९; म. व. १०७; ब्रह्म. ७.८.४०-४३)। दशरथ, कैकेयी तथा सिद्धार्थ नामक प्रधान के संवाद में इसका उल्लेख है (वा. रा. वा. ३६)।

इसका पुत्र अंशुमत्। असमंजस को पंचजन नामांतर था (ह. वं. १.१५; ब्रह्म. ८.७३)।

असमाति-राथप्रौष्ठ—रथप्रौष्ठ कुल का ऐश्वक राजा अपने गौपायन नामक दो उपाध्यायों से इसका शगडा हुआ (जै. ब्रा. ३.१६७; पं. ब्रा. १३.१२.५; ऋ. १०.५७.१; ६०. ७; सायण-शाश्वता. ब्रा.)। तदनंतर, किरात तथा आकुलि इन दो असुरों ने गौपायन ऋषियों को छोड़ देने के लिये राजा को समझाया, तथा उनमें से गौपायन सुबंधु का वध करवाया। परंतु उस के अन्य बंधुओं ने एक सूक्त के जाप से उसे पुनः जीवित कर लिया (ऋ. १०.५७-६०; बृहदे. ७.९१.९६)।

असमौजस—(सो. यदु.) वायु के मतानुसार कंबलवर्हिष का पुत्र।

असिकनी—प्राचेतस दक्ष की पत्नी। पंचजन प्रजापति की कन्या होने के कारण, इसे पांचजनी कहा है (भा. ६.४)।

असिज—वायु के मतानुसार उतथ्य का नामान्तर।

असित—मांधाता राजा के द्वारा पराभूत एक राजा (म. शां. २९.८१)।

२. (स. इ.) भरतराजा का पुत्र। इसके शत्रु हैहय तालजंब तथा शशत्रिंदु ने इसका पराभव कर के, इसे राज्य

से बाहर भगा दिया। तब अपनी दोनों पत्नीयों के साथ, यह हिमालय पर्वत पर जा कर रहा। वहाँ इसकी मृत्यु हो गई। मृत्यु के समय, इनकी दोनों पत्नीयों गर्भवती थीं। उन में से, एक ने मात के गर्भ का नाश हो इस उद्देश से, अपनी मात कालिंदी को सविप भोजन दिया। तब वह शोक करने लगी। परंतु च्यवन भार्गव मुनि के आशिवोद में, उसे सगर नामक सविप पुत्र हुआ (वा. वा. ७०; अयो. ११०)।

असित काश्यप वा देवल—सूतद्रष्टा। इसे देवल काश्यप कहते हैं (क. १. ५-२८)। यह काश्यप का पुत्र था। इसका गय (अ. सं. १. १८. ४) तथा जमदग्नि के साथ उल्लव है (अ. सं. ६. ५-३७. १)। इसे असित देवल (पं. ब्रा. १४ ११. २८-१९; क. सं. २२. २), तथा असितो देवल कहते हैं (म. सं. ४. ८; शां. २२२; २६७)। इसकी स्त्री हिमालय की कन्या एकर्णा।

यह युधिष्ठिर के यज्ञ में ऋत्विज था (भा. १०. ७४. ७)। इस युधिष्ठिर ने मयसभा में प्रवेश किया, तब अन्य ऋषिगणों के साथ यह उनके साथ था (म. सं. ४. ८)। नारद जब युधिष्ठिर को ब्रह्मदेव की सभा का वर्णन बता रहे थे, तब यह वहाँ व्रतादिभिों का अनुष्ठान कर उपस्थित था (म. सं. ११. २२५)। श्रीकृष्ण तथा बलराम से मिलने के लिये, अनेक ऋषियों के साथ यह स्वमतक क्षेत्र में गया था (भा. १०. ८४. ३)। यह तथा श्रुतदेव ब्राह्मण कृष्ण के साथ, बहुल्यश्व से मिलने के लिये, विदिह देश को गये थे (भा. १०. ८६. १८)। नारदादिकों के साथ यह पिंडारक क्षेत्र में भी गया था (भा. १. १. ११)।

मुख्य व्यक्ति ब्रह्मपद की प्राप्ति कैसे करे, इस विषय में जैगीपव्य (म. शां. २२२), तथा नारद के साथ (म. शां. २६७) इसका संवाद हुआ था। आदित्यतीर्थ-पर यह रहस्थाश्रम में रहता था, तथा अचल भक्तिभाव से इसने योगसंपादन किया था। एकबार जैगीपव्य ऋषि भिक्षुकवेष में इसके आश्रम में आये। तब इसने स्वयं प्रकार से उसका गौरव कर के, काफी वर्षों तक उसका पूजन किया। बहुत काल व्यतीत हो जाने पर भी जैगीपव्य एक शब्द भी नहीं बोलता, यह देख कर मन ही मन यह उसकी अवहेलना करने लगा। पश्चात् यह गहरी ले कर समुद्र गया। जैगीपव्य वहाँ पहुँचे से ही आ कर बैठा हुआ था। उसे देख कर, इसे बड़ा ही आश्चर्य लगा। तदनंतर स्नान कर के यह आश्रम में लौट आया। आते ही जैगीपव्य पुनः आश्रम में बैठा हुआ इसे दिखा। तब

जैगीपव्य के तप तथा योगाभ्यास का प्रभाव देख कर इसे बड़ा आश्चर्य हुआ। उस विषय में जिज्ञासा पूर्ण करने के लिये, यह आश्रम से अंतरिक्ष में उड़ा। वहाँ उसने देखा कि, कोई सिद्धपुरुष जैगीपव्य की पूजा कर रहे हैं। तब यह काफी चकरासा गया। तदनंतर जैगीपव्य भिन्न भिन्न लोकों में आगे आगे जाने लगा। पुरे समय, इसने उनका पीछा किया। अन्त में, पतिव्रताओं के लोक में आ कर जैगीपव्य गुप्त हो गया। वहाँ एक सिद्ध के यहाँ पहुँचने पर पता चला कि, वह ब्रह्मपद पर गया है। इसलिये ब्रह्मलोक जाने के लिये इसने उँची उड़ान ली। किन्तु सामर्थ्य कम होने के कारण, यह नीचे गिर गया। अन्त में उस सिद्ध ने इसे वापस जाने के लिये कहा। तब जिस क्रम से यह ऊपर गया था, उसी क्रम से सब लोक उतर कर नीचे आया। जैगीपव्य को पहले ही आ कर आश्रम में बैठा हुआ इसने देखा। तब उसके योग-सामर्थ्य से यह आश्चर्यचकित हो गया। नम्र हो कर, जैगीपव्य के पास मोक्षधर्म जानने की इच्छा इसने दर्शाई। उसके बाद, जैगीपव्य ने इसे योग का उपदेश दे कर संन्यासदीक्षा दी। उससे इसको परमसिद्धि तथा श्रेष्ठ-योग प्राप्त हुआ (म. शा. ४९; देवल देखिये)। असित देवल तथा यह ये दोनों एक ही हैं।

यह काश्यप तथा शांडिल्य का एक प्रवर भी है। इसने सत्यवती को विवाह के लिये मांगा था (म. आ. ९४. ७३)। इसका पुत्र देवल (ब्रह्माण्ड. ३. ८. २९-३३)। यह काश्यपकुल का गोत्रकार (मत्स्य. १९९. १९; लिंग. १. ६३. ५१. १), तथा मंत्रकार था (वायु. ५९. १०३; मत्स्य. १४५. १०६-१०७; ब्रह्माण्ड. २. ३२. ११२-११३)।

२. जनमेजय के सर्पसत्र का एक सदस्य (म. आ. ५३)।

असित देवल—असित काश्यप देखिये।

असित धान्वन—वेदकालीन राजा। असुरविद्या वेद इसका है। दस दिनों तक चलनेवाले परिप्लवाख्यान में इसका उल्लेख है (सां. श्रौ. १६. २. २०)। इसको असित धान्व भी कहा है (श. ब्रा. १३. ४. ३. ११; आ. श्रौ. १०. ७; पं. ब्रा. १४. ११. १८. ३९)।

असित वार्षमण—हरित काश्यप का शिष्य। इसका शिष्य जिह्वावत् वाथ्योग (वृ. उ. ६. ५. ३ काण्व; ६. ४. ३३ माथ्यं.)।

असितमृग—काश्यप एक पुरोहित। इसको जनमेजय ने एक यज्ञ में निर्मंत्रित नहीं किया। तथापि इसने

राजाद्वारा नियुक्त भूतवीर नामक ब्राह्मण से यज्ञ का नेतृत्व छीन कर, स्वयं ले लिया (ऐ. ब्रा. ७.२७)। इसके अनेक पुत्र थे, उसमें से एक का नाम कुसुरुक्मिन्दु औद्दालकि था (जै. ब्रा. १.७५; प. ब्रा. १.४)।

असिता—एक अम्बरा। कश्यप तथा मुनि की कन्या।

असितांग—अष्टभैरवों में से एक।

असिपर्णिनी—कश्यप तथा मुनि की एक कन्या।

असिलोमन्—एक असुर। कश्यप तथा दनु का पुत्र।

असीमकृष्ण—(सो. कुरु.) अश्वमेधक राजा का पुत्र। इसका पुत्र निमिचक्र (अधिसामकृष्ण देखिये)।

असुरा—एक अम्बरा। कश्यप तथा प्राधा की कन्या।

असुरायण—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५६ कुं.)।

२. व्यास की सामशिष्यरंपरा में से एक। वायु तथा ब्रह्माण्ड के मतानुसार, यह कौथुम पाराशर्य का शिष्य है (व्यास देखिये)।

असूर्तरजस्—मूर्तरय राजा का नामांतर।

असोम—मणिभद्र तथा पुण्यजनी का पुत्र।

अस्ति—जरासंध की दो कन्याओं में से ज्येष्ठ। इसकी कनिष्ठ भगिनी प्राप्ति। यह दोनों कंस की पत्नीयों थीं। कृष्ण के द्वारा कंस का वध होने पर, यह दोनों पितृगृह में आ कर रहने लगीं (भा. १०.५०; म. स. १३.३०)।

अस्तिक—हरिमेघ देखिये।

अस्वहार्थ—अंगिरस गोत्रीय मंत्रकार।

अहंयाति—(सो. पूरु.) शर्याति तथा वरांगी का पुत्र। इसकी पत्नी कृतवीर्यपुत्री भानुमती। इसका पुत्र सार्वभौम (म. आ. ९०.१४-१५)। भागवत तथा विष्णु के मतानुसार, यह संयातिपुत्र है। मत्स्य में अहं-वर्चस् पाठभेद है। अहंपाति पाठ भी मिलता है।

अहंवर्चस्—अहंयाति देखिये।

अहनू—अष्टवसुओं में से एक।

अहर—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

अहल्या—इसका निर्देश शतपथ ब्राह्मण में अहल्या मैत्रेयी नाम से मिलता है (श. ब्रा. ३.३.४.१८; जै. ब्रा. २.७९; प. ब्रा. १.१)।

जन्म—इसका पिता मुद्गल (भा. ९.२१) वध्यश्च को मेनका से यह कन्या हुई (ह. वं. १.३२)। यह ब्रह्मानसपुत्री है। ब्रह्मदेव ने इसे अत्यंत सुन्दर निर्माण

किया। हल का अर्थ है विरूपता, तथा हल्य का अर्थ है विरूपता के कारण प्राप्त निरूपत्व। इसे हल्य न होने के कारण, ब्रह्मदेव ने इसका नाम अहल्या रखा (वा. रा. उ. ३०.२५)। आगे चल कर, ब्रह्मदेव ने इसे शरद्वत गौतम के पास अमानत के रूप में रखा। उपवर होने पर उसने इसे ब्रह्मदेव के पास वापस दे दिया।

विवाह—शरद्वत गौतम मुनि का जितेन्द्रियत्व तथा तपःसिद्धि देख कर, ब्रह्मदेव ने यह कन्या उसे भायां कह कर दी (वा. रा. उ. ३०.२९; विष्णु. ४.१९; मत्स्य. ५०)। परंतु इन्द्र, वरुण, अग्नि इ. देव, दानव, तथा अन्य राक्षसों के मन में भी इसके प्रति अभिलाषा थी। तब प्रत्येक के सामर्थ्य की परीक्षा देखी जावे, इस हेतु से ब्रह्मदेव ने निश्चय किया कि, जो व्यक्ति सर्व प्रथम पृथ्वी प्रदक्षिणा करेगा, उसे ही यह कन्या दी जावेगी। अहल्या के अभिलाषी प्रदक्षिणा करने लगे। परंतु अर्धप्रसृत देनु पृथ्वी ही होने के कारण, गौतम ने उसकी प्रदक्षिणा की, तथा एक लिंघ की प्रदक्षिणा कर के, वह ब्रह्मदेव के पास गया। गौतम प्रथम आयां ऐसा जान कर, ब्रह्मदेव ने उसे अपनी कन्या दी। देवता, एक के पश्चात् एक, आने लगे। परंतु उन्हें मादम हुआ कि, अहल्या तथा गौतम का विवाह हो गया। यह वार्ता सुन कर, इन्द्र को बहुत दुःख हुआ, क्यों कि, इन्द्र इससे प्रेम करता था। विवाहोपरान्त गौतम तथा अहल्या ब्रह्मगिरी पर रहने के लिये गये।

अष्टवः—कुछ दिन बाद, गौतम को आश्रम से बाहर गया देख कर, इन्द्र गौतम के रूप में इसका उपभोग करने के लिये आया। गणेशपुराण में दिया है कि, नारद-द्वारा अहल्या के रूप की स्तुति की जाते ही, कामुक बन कर इन्द्र आया।

तत्र पतिव्रताधर्मानुसार उसका तथा इसका समागम हुआ (ब्रह्म. ८७; १२२; म. उ. १२; वा. रा. उ. ३०. ३२; स्कन्द. १.२.५२)। इन्द्र काफी दिनों तक लगातार इसके यहाँ आता था, ऐसा उल्लेख ब्रह्मपुराण में है। परंतु यह इन्द्र है ऐसा जान कर भी, इसने उससे समागम किया। उसके शरीर के दिव्य सुगंध से अहल्या ने यह जान लिया कि, यह मेरा पति नहीं है। (वा. रा. वा. ४८.१९)। इतने में गौतम ऋषि आया। तब इन्द्र तथा अहल्या को बहुत डर लगा। दो घटिकाओं के बाद यह सामने आई, तथा पति का पदस्पर्श कर के इसने संपूर्ण वार्ता बतलाई (गणेश. १.३०)। गौतम रोज-नदी पर स्नान के लिये जाने पर भी, दूसरा गौतम विद्यार्थियों को

दिखता था। एक बार जब इन्द्र भीतर था, तब गौतम के आते ही, विश्वार्थियों ने उसे भीतर का गौतम दिखाया। तब क्रोधित हो कर गौतम ने इन्द्र तथा अहल्या को शाप दिया।

शाप-उःशाप—गौतम इन्द्र को शाप देनेवाला ही था कि, वह माजार के रूप में जल्दी जल्दी भागने लया। गौतम को शोक आई, तथा डोंट कर 'कौन है? ऐसा उसने पूछा। तब इन्द्र मूर्तिमन्त उसके सामने खड़ा हो गया (ब्रह्म. ८७; पद्म. सू. ५०; गणेश. १.३१)। तब गौतम ने उसे शाप दिया कि, तुम शत्रुओं के द्वारा पराभूत होगे। मनुष्यलोक में जारकर्म प्रारंभ करनेवालों के तुम उत्पादक हो, अतएव प्रत्येक जारकर्म का आधा पाप तुम्हारे माथे लगेगा। देवराजों को अश्रयस्थान कभी प्राप्त न होगा (वा. रा. उ. ३०; ब्रह्म. १.२२)। तुम्हारे शरीर को सौ छेद हो जावेंगे (म. अनु. ४१; १.५३; ब्रह्म. ८७; पद्म. सू. ५०)। तुम वृषणरहित हो जाओगे (वा. रा. वा. ४८; लिंग. १.२९)।

तदनंतर अहल्या की ओर मुड़कर गौतम ने कहा, किसी को भी नहीं दिखोगी ऐसे रूप में तुम्हारा विध्वंस हो जावेगा, तथा तुम्हारे रूप का सर्वत्र विभाजन हो जावेगा। राम जब यहाँ आवेंगे तब तुम्हारा उद्धार होगा (वा. रा. वा. ४८; उ. ३०)। तुम शिल्प बन जाओगी (आ. रा. सार. १.३; स्कन्द. १.२.५२; गणेश. १.३१)। जनस्थान में तुम एक झुफ नदी बनोगी (आ. रा. सार. १.३; ब्रह्म. ८७)। तुम्हारे देह पर केवल अस्थिचर्म रहेगा। सर्जित प्राणियों के समान तुम्हारे शरीर पर मांस तथा नख उत्पन्न नहीं होंगे, तथा तुम्हारे इस रूप के कारण नियों के मन में पापकर्म के प्रति दहशत उत्पन्न हो जावेगी (पद्म. सू. ५४)। इसपर अहल्या ने प्रार्थना की कि, इन्द्र आपका रूप धारण कर के आया था, इसलिये मैं पहचान न सकी। शरद्वत गौतम ने ध्यानस्थ हो कर यह ज्ञान लिया कि, यह अपराधी नहीं है, तथा उःशाप दिया कि, राम जब यहाँ आवेंगे तब अपने पादस्पर्श से तुम्हारा उद्धार करेगा (वा. रा. वा. ४८.४९; उ. ३०; गणेश. १.३१)। इसकी मुक्ति के लिये गौतम ने कोटितीर्थ पर तप किया। तब यह मुक्त हुई। उससे अहल्यासरोवर निर्माण हुआ। उस आनंद के कारण ही, गौतम ने गौतमेश्वर लिंग की स्थापना की (स्कन्द. १.२.५२)। गोदावरी के साथ तुम्हारा संगम होने पर तुम पूर्ववत् बनोगी, ऐसा भी इसे उःशाप था

(ब्रह्म. ८७)। शाप से मुक्त होने के पश्चात्, यह पुनः पति के सहवास में गई।

शाप के पूर्व इसे शतानन्द नामक पुत्र था। वह निमि-वंशीय राजाओं का उपाध्याय था (वा. रा. वा. ५१, आ. रा. सार. १.०३)। इसे त्रिवेदास नामक भाई था (भा. ९.२१; ह. वं. १.३२)। वह उत्तर पंचाल का राजा था। 'अहल्यायै जार' ऐसा इन्द्र का गौरवपूर्ण वर्णन देदा में है। इसमें प्रतीत होता है कि, इन्द्र अहल्या की कथा रूपकात्मक होनी चाहिये।

समर्थन—इसने उक्त नामक अपने पति के शिष्य को सौदास की पत्नी के कुंडल गुरुदक्षिणा में लाने के लिये कहा था (म. आश्व. ५५)। इन्द्र के द्वारा इसके साथ किया गया व्यभिचार देवों के कार्य के लिये ही किया गया। क्योंकि, गौतम का तप अधिक हो गया था, अतएव उसका शय आवश्यक था (वा. रा. वा. ४९)। इसे गौतमी भी कहा गया है (ब्रह्म. ८७)। महर्षि गौतम के वन में अहल्याद्वारतीर्थ प्रसिद्ध है (म. व. ८२.९३)।

नया दृष्टिकोन—अहल्या तथा इन्द्र के संबंध की कथा रूपकात्मक है, ऐसा ब्राह्मणग्रंथ जैमिनीयूतों से प्रतीत होता है।

(१) अहल्या रात्रि है, गौतम चन्द्र है तथा इन्द्र को सूर्य मान कर, यह रूपककथा निर्मित की गई है। उसका स्पष्टीकरण करते हुए बताया जाता है कि, इन्द्ररूपी सूर्य ने अहल्या रूपी रात्रि का ग्रहण किया। यह एक निसर्गदृश्य है (श. ब्रा. ३.३.४.१८)।

डॉ. रवीन्द्रनाथ टागोरजी ने अहल्या का रामद्वारा उद्धार का जो विवरण किया है वह सुन्दर है।

(२) हल का अर्थ है नगर, हल्या का अर्थ जीती हुई जमीन, तथा अहल्या का अर्थ है वंजर जमीन। अगस्त्य ऋषि ने दक्षिण में प्रथम वास किया, अर्थात् दक्षिण की अहल्या जमीन हल्या कर के उसका उद्धार किया, तथा उस अहल्या भूमि की शाप से मुक्तता की। इस प्रकार राम ने अहल्या का उद्धार किया, इसका अर्थ है, उसने दक्षिण की वंजर भूमि उर्वरा बनाई।

२. इन्द्रधुम्नपत्नी। यह इन्दु ब्राह्मण से रत हुई। इसके स्थूल शरीर को सजा दे कर कुछ लाभ नहीं हुआ, क्यों कि, यह मनोमय शरीर से तादात्म्य हुई थी (यो. वा. ३.८९.८१)।

अहि—इन्द्र का शत्रु (ऋ. १.५१.४)। यह जव निद्रित था, तब इन्द्र ने इसे मारकर सतसिंधू को मुक्त किया (ऋ. २.१२.३)।

अहित—मणिवर को देवजनी से उत्पन्न पुत्र। इसे गुह्यक ऐसा साधारण नाम है।

अहिरावण-महिरावण—पाताल में, अहिरावण तथा महिरावण नामक रावण के दो मित्र थे। इन्हें रावण ने राम का नाश करने के लिये कहा। परंतु सुवेल पर्वत पर राम की संपूर्ण सेना अभेद्य दीवाल के भीतर होने के कारण, इन्होंने आकाश से शिविर में छल्ला लगाई। पश्चात्, शिला पर सुत रामलक्ष्मण को यह शिलासहित पाताल में ले गये। परंतु हनुमान इनका पीछा करते निकुंभिला नगर आया। कपिल कपिली के संवाद से हनुमान को पता चला कि, दैत्य रामलक्ष्मण को देवी के सामने बलि देने के लिये रसातल में ले गये हैं। उधर जाते समय, हनुमान को द्वार पर मकरध्वज मिला। प्रश्नोत्तर में, दोनों का पितापुत्र का नाता निकल (मकरध्वज देखिये)। मकरध्वज ने हनुमान को सुझाया कि, कामाक्षी के मंदिर में जा कर बैठा जावे तथा कार्य किया जावे। सुग्रह वार्यों की ध्वनि में राक्षस रामलक्ष्मण को वहाँ ले कर आये। तब देवी का स्वर निकल कर हनुमान ने उन्हें कहा कि, पूजा झरोखे से की जावे। उसके अनुसार, राक्षसों ने देवी को बहुत से उपचार अर्पण किये, तथा रामलक्ष्मण को भी झरोखे से भीतर छोड़ा। तदनंतर तीनों ने मिल कर, राक्षसों का संहार शुरू किया। परंतु अहिरावण-महिरावण के लहू से, पुनः वैसे ही राक्षस निर्माण होने लगे। तब हनुमान ने अहिरावण की पत्नी को इसे मारने का उपाय पूछा। वह बोली कि, मैं नागकन्या हूँ। इस दुष्ट ने बलात्कार से मुझे यहाँ लाया। महिरावण भी मुझ पर लुब्ध है। परंतु मैं उसके अनुकूल नहीं होती। इतना कह कर उसने कहा कि, यदि राम मुझसे विवाह करेगा, तो मैं उपाय बताती हूँ। हनुमान ने कहा कि, राम के भार से अगर तुम्हारा मंचक नहीं टूटा, तो राम तुम से विवाह कर लेंगे। तब उसने बताया कि, पहले जव कुछ लड़के भ्रमरों को काँटे चुमा रहे थे, तब उन्हें इन दोनों भाईयों ने मुक्त किया। इस लिये प्रत्युपकार करने के हेतु, वे भ्रमर अमृत

विंदुओंसे इन दोनों को जीवित करते रहते हैं। इस लिये तुम भ्रमरों को मार डालो। अभी वे सब राक्षसों के निद्रास्थान में हैं। यह मालूम होते ही, हनुमान ने अमंख्य भ्रमर मार डाले। एक भ्रमर उसे शरण आया। उसे प्राणदान दे कर, हनुमान ने उसे अहिरावण की पत्नि का मंचक भीतर से लोखला करने के लिये कहा, तथा स्वयं राम के पास गया। इतने में राम के बाण से सब राक्षसों की मृत्यु हो गई। तदनंतर हनुमान के आग्रह पर, राम नागकन्या के मंदिर में गया, तथा पर्वक को हाँथ लगाते ही वह टूट जाने के कारण, उसे तीसरे जन्म में पत्नी बनने का आश्वासन दे कर दोनों सुवेल पर लौट आये। रामवचन पर विश्वास रख कर, अहिरावण की पत्नी ने अग्नी में देहत्याग किया (आ. रा. सर. ११)।

अहिर्बुध्न्य—एक अन्तरिक्षस्थ देवता (नि. ५.४) यह एक वृत्र का स्वरूप है। ऋग्वेद में इसके लिये स्वतंत्र सूक्त न हो कर, कुछ ऋचाओं में इसका स्तवन है। यह एक गार्हपत्य अग्नी का नाम है (वा. सं. ५. ३३; ऐ. ब्रा. ३. ३६; तै. ब्रा. ११.१०.३)।

यह रुद्र का नाम है (भा. ६.६.१८)।

२. यह दुष्ट राक्षसों के संहारार्थ सुदर्शनचक्र की आराधना कर रहा था। राक्षस इसके संहारार्थ आते ही, चक्र प्रगट हो कर राक्षसों का नाश हुआ (स्कन्द. ३.१. २३)।

३. कश्यप तथा सुरभि का पुत्र (शिव. शत. १८)।

अहिशुव—इन्द्र का शत्रु (ऋ. ३.२.२)।

अहीन—(सो. क्षत्र.) सहदेव का पुत्र। अहीन पाठभेद है।

२. (सो. कुरु. भविष्य.) विष्णु के मतानुसार उद्यन-पुत्र।

अहीनगु—अनोहे का नामांतर।

अहीनज—(सु. इ.) भविष्य के मतानुसार द्वारका का पुत्र। इसने १०,००० वर्षों तक राज्य किया।

अहीनर—अनी राजा का नामांतर।

२. (सो.) भविष्य के मतानुसार उद्यन का पुत्र।

अहीना आश्वध्व्य—इसने सावित्राग्नी के ज्ञान से अमरत्व संपादन किया (तै. ब्रा. ३.१०; ९.१०)।

आ

आकथ—मंकण का पुत्र। यह बड़ा ही शिवभक्त था। इसके घर में आग लगा कर आधा शिवलिंग जल गया। अतः यह अपना आधा शरीर जला रहा था, तब शंकर प्रसन्न हुए (पद्म. पा. ११७)।

आकाशज विप्र—ब्रह्मदेव का नाम। इसे मारा नहीं जा सकता, ऐसा मृत्यु ने यम को बताया। पार्थिव देह तथा कर्म न होने के कारण इसे मृत्यु नहीं है। यह केवल अज्ञ तथा विज्ञानरूप है (यो. वा. ३.२; ब्रह्मन् देखिये)।

आकुलि—एक असुर (असमाति राथप्रौष्ठ देखिये)।

आकृति—रवि ऋषि की पत्नी। यह स्वायंभुव मनु तथा शतरूपा की तीन कन्याओं में से प्रथम है। इसे यज्ञ तथा दक्षिणा नामक कन्यारूप मिथुन हुआ (मनु देखिये)।
२. (स्वा. प्रिय) पृथुपेण राजा की पत्नी।

३. (स्वा. उत्तान.) व्युष्टपुत्र सर्वतेजस् की पत्नी, तथा चक्षुमन् की माता (भा. ४.१३.१५)।

आकृति—एक गारुड-विद्या का आचार्य। जब युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ किया, तब सहदेव दक्षिण दिशा जीतने गया। तब इसे जीत कर उसने इससे करमार लिया था (म. स. २८.३९)।

आकृताक्ष्य—अग्निपूजा के बारे में विचार प्रगट करनेवाला एक गृहस्थ (श. ब्रा. ६.२.२४)।

आर्क्षालि—भरद्वाजगिरिस वंशमालिका का एक द्विगोत्री ऋषि।

आगस्त्य—एक आचार्य (ऋ. प्रा. १-२; सां. आ. ७.२)। यह अगस्त्य नामक महर्षि का पुत्र, है। संहिता शब्द का अर्थ मांडूकेय तथा माक्षव्य के मतानुसार क्रमशः वायु संहिता तथा आकाश संहिता ऐसा है। आगस्त्य का कहना है कि, दोनों सिद्धान्त तुल्यबल हैं (ऐ. आ. ३. १.१)। वृहत्स्युत देखिये।

आम्ना प्रासेव्य—कश्यप गोत्र का एक ऋषिगण।

आग्निवेशि शास्त्रि—वह दानस्तुति में दान देने वाले राजा का नाम है (ऋ. ५.३४.९)

आग्निवेश्य—शांडिल्य, आनभिम्बलत तथा गार्ग्य का शिष्य। इसका शिष्य गौतम (वृ. २.६.२; ४.६.२.)। विसर्गसंधि के विषय में मतप्रतिपादन करनेवाला आचार्य (तै. प्रा. ९.४)।

आग्निवेश्यायन—क्षत्रिय नरिष्यन्त कुल में पैदा हुआ एक ब्राह्मणकुल (भा. ९.२.२१-२२)।

स्वरित कहाँ होता है, यह विशेषरूप से बतानेवाला एक आचार्य (तै. प्रा. १४.४२.२)। अग्निवेश्य (२.) देखिये।

आग्नीध्र—प्रियव्रत तथा बर्हिष्मती के दस पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र। विष्णु पुराण में अग्नीध्र है। कर्दम की कन्या नामक कन्या का पुत्र। इसे उर्जस्वती नामक बहन थी। दो बहनें और भी थीं, जिनके नाम सम्राज् तथा कुक्षि थे। यह जंबुद्वीप का अधिपति था। पुत्रप्राप्ति की इच्छा से, यह मंदराचल के पहाड़ में जब ब्रह्मदेव की आराधना कर रहा था, तब ब्रह्मदेव ने देवसभा में गायन करनेवाली पूर्वचित्ति नामक अप्सरा इसके पास भेजी। उसने शृंगारचेष्टा इत्यादि से आग्नीध्र का मन कामवश किया। उसके लौटते, बुद्धिमत्ता इ. अलौकिक गुणों पर लुब्ध हो कर, इसने दस कोटि वर्षों तक उसका विषयोपभोग किया। उससे आग्नीध्र को नौ पुत्र हुए। उनके नामः— १. नामि, २. किंपुरुष ३. हरिवर्ष, ४. इलावृत्त, ५. रभ्यक (रभ्य), ६. हिरण्यमय (हिरण्वान), ७. कुरू, ८. भद्राश्व, तथा ९. केतुमाल। कुछ काल के अनन्तर, वह अप्सरा ब्रह्मलोक चली गई। उसके विरह से यह राजा अत्यंत उदास हो गया। तदनन्तर जंबुद्वीप के नौ विभाग कर के, प्रत्येक विभाग को अपने पुत्रों का नाम दे कर, वे विभाग उन्हें सौंप कर, यह शालिग्राम नामक अरण्य में तप करने चला गया। कौन सा विभाग किसे दिया इसका वर्णन विष्णु पुराण में है, वह इस प्रकार हैः— १. नामी को हिमवर्ष (हिन्दुस्थान), २. किंपुरुष को हेमकूटवर्ष, ३. हरिवर्ष को नैपथवर्ष, ४. इलावृत्त को मेरुपर्वतयुक्त इलावृत्तवर्ष, ५. रभ्यक को नील पर्वतयुक्त रभ्यकवर्ष, ६. हिरण्वान को श्वेतदीपवर्ष, ७. कुरू को शंखवर्ष, ८. भद्राश्व को मेरु के पूर्व में स्थित भद्राश्ववर्ष, तथा ९. केतुमाल को गंधमानवर्ष, (विष्णु. २.१; भा. ५.१.३३; १. २२)।

आग्नीध्रक—रुद्रसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

आत्रायण—इन्द्र शब्द की व्युत्पत्ती के विषय में, मत दर्शानेवाला आचार्य (नि. १०.९)।

आंगरिष्ट—एक राजर्षि। इसने कामंद ऋषी को शुद्ध धर्मादिकों के संबंध में प्रश्न पूछा था। जिससे चित्तशुद्धि होती है वह धर्म, पुरुषार्थ साधन होता है वह अर्थ, तथा देहनिर्वाह के लिये इच्छा होती है वह काम, ऐसा उत्तर कामंद ऋषी ने इसे दिया (म. शां. १२३)।

आंगि—हविधान आंगि देखिये।

आंगिरस—अंगिरसवंश के लोगों को यह शब्द कुल-नाम के तौर पर लगाया जाता है। वंशावलि भी प्राप्त है (छां. उ. १.२.१०; पं. ब्रा. २.०.२.१; तै. सं. ७.१.४. १)। (अंगिरस देखिये)।

अथर्ववेद का प्रवर्तक अंगिरस है। इसके कुल के ऋषियों ने सत्र किया। यज्ञानुष्ठान के लिये दूध निकालने के लिये, इन्होंने एक गाय रखी थी। उस गाय का रंग सफेद था। अवर्षण के कारण, उस गाय को हरी बास मिलना बंद हो गया। यज्ञ में प्रातः कूटे हुए सोम के अवशिष्टांश को खा कर, वह दिन बिता रही थी। भूख के कारण, उसकी होने वाली दुर्दशा अंगिरस देख नहीं सकता था। गाय के लिये काफी चारा यदि हम निर्माण नहीं कर सकते, तो सत्र प्रारंभ कर के क्या लाभ? इस प्रकार के विचार उन्हें कष्ट देने लगे। आगे चल कर इन्होंने, कारीरि' इष्टि की। उससे भरपेट चारा प्राप्त होने लगा। परंतु पितरो ने नये चारे में विष उत्पन्न करने के कारण, गाय खराब होने लगी। परंतु पितरो को हविर्भाषा देने पर, अंगिरसों को उत्कृष्ट चारा मिलने लगा तथा वह खूब दूध देने लगी। (तै. ब्रा. २.१.१)। इन्होंने ही द्विरात्र याग शुरु किया (तै. सं. ७.१.४)। अंगिरस के द्वारा रथीतर की पत्नी में उत्पन्न ब्रह्मक्षत्र संतति को आंगिरस कहते थे (भा. ९.६.३)।

(अभीवर्त, अभहीसु, अयास्य, आजीगर्ति, उच्चय, उत्तान, उरु, उर्वसध्मन, कुस, कृतयशस्र, कृष्ण, गुसमद घोर, च्यवन, तिरश्चि, दिव्य, धरुण, ध्रुव, नृवैध, पशित्र, पुरुमिहल्ल, पुरुमेध, पुरुहन्मन, पृतदक्ष, प्रचेतस, प्रभूवसु प्रियमेध, बृहन्मत्ति, बृहत्पति, त्रैद भिक्षु, मूर्धन्वन्, हहूगण, वसुरोचिप, विंदु, विरूप, विहव्य, वीतहव्य, शांक्त व्यश्व, शिशु, शौनहोत्र, श्रुतकक्ष, संवनन, संवर्त, सहयुग, सव्य, सुकश्य, सुदिति, सुधन्वन्, हरिमंत, हरिचर्ण हविष्मत्, हिरण्यदत् तथा हिरण्यरूप देखिये)।

२. मौल्य मनु का पुत्र।

३. भीष्म के यहाँ आया हुआ ऋषि (भा. १.९. ८)।

४. शुनक का नामांतर। इसने बभ्रु तथा सैन्धवायन को अथर्ववेद सिखाया (भा. १२.७.३)।

आंगिरसी—बसू की पत्नी (भा. ६.६.१५)।

२. (शश्वती देखिये)।

आंगी—अपराचीन पुत्र अरिह की पत्नी। इसका पुत्र महामौम (म. आ. ९०-८९९*)।

आंगुलय वा **आंगुलीय**—वायु तथा ब्रह्माण्ड के मतानुसार, व्यास की सामशिव्य परंपरा के हिरण्यनाभ का शिष्य। (व्यास देखिये)।

आंग्रिक—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७)।

आचार—ऋषय तथा अरिष्टा का पुत्र।

आजकेशिन—इसका प्रतिकार बक ने किया (वै. उ. ब्रा. १.९.३)।

आजगर—अयाचित वृत्ति से रहने वाला एक ब्राह्मण। प्रह्लाद से इसका संवाद हुआ था (म. शां. १७२)।

आजद्विष—बभ्रु का पैतृक नाम।

आजव—कथाजव के लिये पाठभेद।

आजातशत्रु—भद्रसेन देखिये।

आजिहायन—काश्यप गोत्री ऋषिगण।

आजीगर्ति—शुनःशेष का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७. १७)। आंगिरस नाम से इसका उल्लेख किया गया है। (क. सं. १६.११.२)

आज्य—सावर्णि मनु का पुत्र।

आज्यप—एक पितृगण। ब्रह्मानसपुत्र पुलह के वंशज। इन्हें यज्ञ में आज्य (बकरी के दूध से बना थी) का पान करने के कारण, यह नाम पड़ा। इन्हें कहीं कहीं सुस्यध भी कहा गया है (मत्स्य. १५)। कर्दम प्रजापती के लोकों में यह रहते हैं। इन्हें विरोजा नामक एक कन्या है। यही नहुप की पत्नी है (पद्म. सू. ९)। वैश्य इन्हें पूज्य मानते हैं।

आंजन—एक दास। यह नेत्रों में अंजन लगाता था। यह त्रिककुट पर्वत पर से आया था। त्रिककुट को यामुन बताया है। यह हिमालय का भाग था (अ. सं. ४.९.१-१०)।

आटविन्—ब्रह्मांड तथा वायु के मत में व्यास की यजुःशिव्य परंपरा के याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)। आटविन् तथा आवटिन् एक ही है।

आटिकी—उपस्थित चाक्रायण की पत्नी (छां. उ. १.१०.१)। इस शब्द का अर्थ, स्तनादि स्त्री-विह जिसके अव्यक्त है ऐसी स्त्री, ऐसा शंकराचार्य करते हैं।

आदर्श—पर का पतुक नाम।

आडि—अंबकासुर का पुत्र तथा ब्रह्म का भाई। अपने पिता का बध करनेवाले शंकर ने बदला देने के हेतु, ब्रह्मदेव का प्रवेश कर, इसने अमरत्व पांगा। रूपांतरित अवस्था में ही मृत्यु होगी अन्यथा नहीं, ऐसा वर इसने प्राप्त किया।

वरप्राप्ति के पश्चात् तत्काल, यह कैलाश पहुँचा। वहाँ के वीरभद्र वा वीरक द्वारपाल से बकावट न हो इस हेतु से, इसने सर्वत्र धारण कर, भीतर प्रवेश किया। तदनंतर सर्वत्र छोड़, प्राचीन का रूप धारण कर, यह शंकर के सामने गया। शंकर ने उसका कण्ठ जान कर तथा रूपांतरित अवस्था की गोपि गाय कर, तत्काल इसका बध किया (मत्स्य. १५६; ब्रह्म. सू. ४१.४५-७२; वीरभद्र देखिये)।

हरिश्चंद्र का, विश्वामित्र द्वारा दिया गया दुःख देख कर, वसिष्ठ ने विश्वामित्र को, पक्षी योनि में परिणत होने का शाप दिया। इसके उत्तर में विश्वामित्र ने भी वसिष्ठ को यही शाप दिया। पक्षी योनि में भी दोनों युद्ध करते रहे। अन्त में ब्रह्माजी को इसका समाप्त मिटाना पड़ा। ये ही दो पक्षी आडि तथा ब्रह्म नाम से ख्यात है।

ब्रह्मा मिटाने समय ब्रह्माजी ने वसिष्ठ से कथन किया कि, पशुपति, विश्वामित्र ने हरिश्चंद्र को घोर क्रोध दिये, तथापि उसके अन्त में स्वर्ग का मार्ग नूतन कर दिया (मार्क. ९)।

आडि ब्रह्म युद्ध देवासुरों के शरह युद्ध में लड़कों है (मत्स्य. ४७.४१-५४)। यहाँ आडि तथा ब्रह्म ये व्यक्ति के नाम न. हो कर सत्त्वय के नाम लिखते हैं।

शशांगपुत्र ककुत्स्थ का स्मरण इंद्र ने आडि ब्रह्म युद्ध में किया था (वायु. ८८.२५)।

आडीर— जनापंड देविये।

आतिथिग्व— हस्त्रोत का पतुक नाम (दिवोदास देखिये)।

आत्मदेव— एक ब्राह्मण। यह त्रंगभद्रा के किनारे कोहल ग्राम में रहता था। इसकी स्त्री गृहकार्य में निपुण परंतु अगदाल् थी। निपुत्रिक होने के कारण, यह विरक्त होकर भ्रमण करने लगा। उस समय एक वापिका तट पर उसका एक सिद्ध से भेट हुई। सिद्ध ने पुत्र प्राप्ति के हेतु एक फल दिया, जिसे स्त्री को गिलाने को कहा। उसने अपनी स्त्री को फल दिया। स्त्री ने अपनी बहन के कहने पर वह फल गाय को खिला दिया तथा पति से छुटा ही

कह दिया कि, उसने फल खा लिया है। बहन ने उसे बताया कि, तू गर्भवती होने का होगा कर। मुझे जो पुत्र होगा वह मैं तुझे दे दूंगी। क्योंकि वह स्वयं गर्भवती थी। पुत्र होने पर आत्मदेव ने उसका नाम धुंभुकारी रखा। गाय को भी यथा समय पुत्र हुआ। कान, गाय की तरह के होने के कारण, उसका नाम गोकर्णी रखा गया। धुंभुकारी दुर्बल होने के कारण यह तंग आ गया। तब गोकर्णी ने, उसे संभार में निवृत्त होने को कहा। इसने ईश्वरभक्त के द्वारा परमाथे तथा मोक्ष प्राप्त किया (पद्म. ३.११६)।

आत्मन्—मंत्रद्रष्टा (श्रु. ३.२६.७)।

२. अंगिरादेवों में से एक। अंगिरा तथा सुरका का पुत्र (मत्स्य. १९६)।

आत्मवत्—भृगुगोत्र का मंत्रकार। आत्मावत भी पाठोत्तर है।

आत्रेय—मांटी का शिष्य (बृ. उ. २.६.३) तथा अंगराज का पुरोहित (व. ब्रा. ८.२२)। संधि तथा उन्चार के लिये इसके मत का गौरव के साथ उल्लेख है (तै. प्रा. ५.३१; १७.८)। यही तैत्तिरीय संहिता का पदपाठकार रहा होगा। तैत्तिरीयों के आचार्यतर्पण में इसका समावेश इसी कारण हुआ है (स. गृ. २०. ८. २०)। जैमिनिपूत्रों में भी (५.२. १८; ६.१.२६) एक आत्रेय का उल्लेख है। आत्रेयी शिक्षा तथा संहिता ये ग्रंथ भी आत्रेय के हैं (C. C.)। गर्भाधान संस्कार के मंत्र कहने के विषय में इसके मत का निर्देश किया गया है (स. गृ. १९.७.२५)। वैश्वक में भी धन्वतरि के पूर्व, एक आत्रेय हो गया है। धन्वतरि ने आत्रेय प्रणीत मृतसंजीवनीकर रसायन (काढ़ा) दिये हैं (अभि. २८५; गण्ड १.१.१४६)। ये सब एक हैं या भिन्न, यह कहना कठिन है।

(अर्चनातस्, अवस्थु, उरुचक्रि, एवयामकत्, कुमार, कृष्ण, गय, गच्छि, गातु, गुस्मद्, गोमन, दक्ष का-यायनि, सुग्न, द्वित, पुरु, पौर, प्रतिशत्र, प्रतिप्रम, प्रतिभानु, प्रतिरथ, दभ्रु, बाहुवृत्ति, बुद्धि, मुक्तवाह, यज्ञ, रातहव्य, वाचि, वसुश्रुति, विश्वसामन्, शंग, शाश्वायनि, श्यावाश्व, श्रुतिविन्, सत्यश्रवस्, सदाश्रुण, सप्तवधि, तप्त तथा सुतंभर देखिये)।

२. एक राजा। इसे एकत, द्वित तथा त्रित पुत्र थे (त्रित देखिये)।

३. वामदेव का शिष्य (परोक्षिन् देखिये)।

४. जनमेजय सत्र का एक सदस्य (म. आ. ४८.८)।
५. हंसरूप से संचार करनेवाला ऋषि। इसने साध्यों को नीति बताई (म. उ. ३६)।

आत्रेयायणि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

आत्रेयी—अग्नि ऋषि की कन्या। यह अग्नि पुत्र अंगिरा को व्याही गयी थी। दत्त, दुर्वास तथा सोम इसके वंशु है। इसके पुत्रों को आंगिरस कहते हैं। आत्रेयी को उमका पति, नित्य निष्कारण कठोर शब्द कहता था। एक दिन, उसने ससुरसे इसकी शिक्षायत (तक्रार) की। उसने बताया कि, तेरा पति अग्निपुत्र है, अतः बहुत तेजस्वी है। उसे तू जलरूप से स्नान करा कर शांत कर। इस पर आत्रेयी परुष्णी नदी बन गयी तथा अपने जल से पति को शांत करने लगी। इसका गंगा से संगम हुआ (ब्रह्म. १४४)।

२. अमाला तथा विश्ववारा देखिये।

आत्रेयीपुत्र—गौतमीपुत्र का शिष्य (बृ. उ. ६.५. २)।

आथर्वण—अथर्वन् का मुत्र, शिष्य तथा अनुयायी अर्थ का शब्द।

कबंध, दध्यच्, बृहदिव, भिषज्, विचारिन् देखिये।

आदर्श—धर्मसावर्णि मनु का पुत्र।

आदित्य—वैवस्वत मन्वन्तर में देवताओं के समूह का नाम। ऋग्वेद में इसके लिये छः सूक्त हैं। एक स्थान में केवल आदित्यसंघ में छः देवता हैं (ऋ. २.२७.१)। वे इस प्रकार हैं—१. मित्र, २. अर्यमन्, ३. भग, ४. वरुण, ५. दक्ष, तथा ६. अंश। आदिति को आठ पुत्र थे (अ. वे. ८.९.२१)। १. अंश, २. भग, ३. धातु, ४. इन्द्र, ५. विवस्वन्, ६. मित्र, ७. वरुण तथा ८. अर्यमन् (तै. ब्रा. १.१.९१)। परंतु आदिति का आठवां पुत्र माताण्ड दिया गया है (ऋ. १०.७२. ८-९; श. ब्रा. ६.१.२.८)। आदित्य बारह है जो बारह माहों के निदर्शक हैं (श. ब्रा. १.१.६.३.८)। वेदोत्तर बाह्य में बारह माहों के बारह आदित्य या सूर्य प्रसिद्ध हैं (कश्यप देखिये)। उन में विष्णु सर्वश्रेष्ठ माना गया है। ऋग्वेद में सूर्य को आदित्य कहा गया है। इसलिये सूर्य सातवां और माताण्ड आठवां आदित्य होगा। गाय आदित्य की बहन हैं (बृ. ८.१०.१. १५)।

इन्द्र यह आदिति का पुत्र अर्थात् आदित्यों में से एक है (ऋ. ७.८५.४; मै. सं. २.१.१२)। परंतु बारह

आदित्यों से इन्द्र अलग है (श. ब्रा. १.१.६.३.५)। आदित्य का उल्लेख वसु, रुद्र, मरुत्, अंगिरस्, ऋषु तथा विश्वेदेव इन देवताओं के साथ कई स्थानों पर आया है फिर भी वह सब देवताओं का सामान्य नाम है। आदित्यों का वर्णन सब देवताओं के सामान्य वर्णनों से मिलताजुलता होते हुए भी आदित्यों में प्रभुत्व मित्रावरुणा से नहीं मिलता। सर्वाधार, सर्वपालक, मन के विचार जाननेवाले, पापी जनों को सजा देनेवाले तथा रोग दूर कर दीर्घायु देनेवाले ऐसा इनका वर्णन है।

ब्रह्मदेव को उद्देशित कर, अग्नि ने चावल पकाया, ताकि, उसके कोख से साध्य देव उत्पन्न हों। आहुति दे कर दत्ता हुआ चावल उसने खाया जिससे धाता एवं अर्यमा दो जुड़ते पुत्र हुए। दूसरी बार मित्र तथा वरुण तीसरी बार अंश एवं भग तथा चौथी बार इन्द्र एवं विवस्वान हुए। आदिति के बारह पुत्र ही द्वादशऋत्यों का साध्य नामक देव हैं (तै. ब्रा. १.१.९.१)। आदित्य से सामवेद हुआ (ऐ. ब्रा. २.५.७; सां. ब्रा. ६.१०; श. ब्रा. १.१.५. ८; छां. उ. ४.१७.२; जै. उ. ब्रा. ३.१५.७; प. ब्रा. ४. १; गो. ब्रा. १.६)। पुराणों में आदित्य, कश्यप तथा आदिति के पुत्र हैं (कश्यप देखिये)

१. अंशुमान् (आषाढ माह, किरण १५००); २. अर्यमन् (वैशाख, १३००), ३. इंद्र (आश्विन, १२००), ४. त्वष्ट (फाल्गुन, ११००), ५. धातु (कार्तिक, ११००), ६. पर्यन्त (श्रावण, १०००), ७. पूषन् (पौष), ८. भग (माघ, ११००), ९. मित्र (मार्गशीर्ष, ११००), १०. वरुण (भाद्रपद, १३००), ११. विवस्वत् (जेष्ठ, १४००); १२. विष्णु (चैत्र, १२००)। इनके कार्य भी बताये हैं (भवि. ब्राह्म. ६५; ७४; ७८; विष्णु. १.१५.३२)। अंशुमान् के लिये अंश या अंशु एसा पाठ है। विष्णु के लिये उरुक्रम पाठ है। परंतु स्कंदपुराण में बिलकुल भिन्न सूची दी गयी है। १. लोलाक, २. उत्तराक, ३. संवादित्य, ४. द्रुपदादित्य, ५. मयूखादित्य, ६. अरुणादित्य, ७. वृद्धादित्य, ८. केशवादित्य, ९. विमलादित्य, १०. गंगादित्य, ११. यमादित्य, १२. सकोलकादित्य (स्कंद. २.४.४६.)।

आदित्यकेतु—श्रुतराष्ट्रपुत्र। इसे भीम ने मारा (म. भी. ८४.२७)।

आदिराज—(सो. कुरु.) अविस्वत् का पुत्र (म. आ. ८९.४५)।

आदिवराह—हिरण्यकेशी को मारने के लिये बर्नाना कल्पारम में हुआ अवतार। इसे श्वेतवराह भी कहते हैं।

आद्य—रैवतमनु का देवगण (मनु देखिये)।

२. चाक्षुष मन्वन्तर का देव।

३. विश्वामित्र कुल का एक सौत्रकार। यह उपरिचर मनु के सोलह ऋषिजों में एक था।

आधूर्तरजस्—नय राजा का पिता। अमूर्तरय भी पाठ है। (म. व. १.३.१७; अमूर्तरयस् (३.) देखिये)।

आनक—(सो. यदु.) शूर को गरिषा से उत्पन्न चौथा पुत्र।

इसे कंस नामक स्त्री से पुरुजित् एवं सत्यजित्, ऐसे दो पुत्र हुए।

आनकदुंदुभि—(सो. यदु.) कृष्ण के पिता वसुदेव का नाम। इनके जन्म के समय देवताओं ने दुंदुभि बजाई, इसलिये यह नाम पड़ा।

आनंद—मालव्यकुलेश्वर एक ब्राह्मण। इसने ब्रह्मजी का अधिकार धारण कर नवीन यज्ञपद्धति, विवाह-पद्धति तथा वर्णाश्रमपद्धति स्थापित की (वायु. २१.२६; २३.४६)। इसके मानस पुत्र विराट् ने इसके पश्चान् राज्य किया। यह राज्य १६२ वर्ष रहा। इसके पश्चान् ३०० वर्षों तक प्रजासत्तात्मक राज्य चला था (इतरीकृत धर्मसूत्र, पृष्ठ १५४)।

२. मेघलिपि के नाम पुत्रों में से एक। इसी नाम से इसका संवत्सर है (विष्णु. २.४.४)।

३. सत्य नामक देवगण में से एक।

आनंदज चांधनायन—शांभ का शिष्य। इसका शिष्य भानुमत् (व. ब्रा. १)।

आनभिम्लान्त—यह दूसरे एक आनभिम्लान्त का शिष्य (बृ. उ. २.६.२)।

आनर्त—(मृ. शर्वाति.) शर्वातिपुत्र। आनर्त देश (गुजरात) इसी के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसका पुत्र रैवत (दे. भा. २.५)। इनने कुशाश्रयी नगरी स्थापित की (ब्रह्म. ७; ह. वं. १.१०.३२-३३)।

१. (सो. सह.) मरुयमतानुसार वीतिहोत्रपुत्र।

आंतरिक्ष—एक व्यास (व्यास देखिये)।

आंघ्रभृत्पु—(आंध्र. भक्षिय.) मरुयमतानुसार पुल्लेमा का पुत्र।

आप्—स्वारोचिष मनु का पुत्र।

२. वरुण की पत्नी। परंतु इसे अग्नि से पृथ्वी तथा आकाश ये दो संताने हुई (तै. सं. ५.५.४)।

आप—अहवसु का नाम।

२. स्वारोचिष मन्वन्तर में वसिष्ठपुत्र प्रजापति।

३. धर्म तथा वसु का पुत्र। इसके पुत्र वैतेज्य, शांत तथा ध्वनि (विष्णु. १.१२)।

आपगव—औषगव देखिये।

आपमूर्ति—स्वारोचिष मनु का पुत्र।

आपच वसिष्ठ—वसिष्ठकुल में से एक। इसे वरुणपुत्र कहा गया है (ब्रह्मांड. ३. ६९. ४२; वायु. ९४. ४३; ९५. १-१३)। हि मालव्यके पास यह रहता था। कार्तवीर्य के हाथ से इसकी पणकुटी जली, इसलिये इसने उसे शाप दिया था (कार्तवीर्य देखिये)। इसकी कुटी मेघ पर्वत के पास थी ऐसा कहीं कहीं उल्लेख मिलता है। अहवसु इसकी कामधेनु सुरभि को चुराकर ले गये, इस लिये तुम मरुत्यलोक में जन्म लो, ऐसा इसने उन्हें शाप दिया। इसीके उद्धार के कारण, भीष्म को छोड़, अन्य सबको गंगा ने पानी में डुबाया (म. आ. ९३)।

आपस्तंब—भृशुकुलोत्पन्न एक ब्राह्मि। यह तैत्तिरीय शाखा का था। कश्यप ने दिति के द्वारा पुत्रकामेष्टि यज्ञ करवाया, उसमें यह आचार्य था। उसी शिष्टि से मरुद्गण उत्पन्न हुए (मरुत्य. ७)।

उसकी स्त्री का नाम अक्षय्या तथा पुत्र का नाम कर्कि (ब्रह्म. १३०. २-३)। इसके रचित ग्रंथ १. आपस्तंब-श्रौतसूत्र, २. आपस्तंबब्रह्मसूत्र, ३. आपस्तंबब्राह्मण, ४. आपस्तंबमंत्रसंहिता, ५. आपस्तंबसंहिता, ६. आपस्तंबसूत्र, ७. आपस्तंबस्मृति, ८. आपस्तंबोपनिषद्, ९. आपस्तंबाश्वलात्मपटल, १०. आपस्तंबान्योष्टिप्रयोग, ११. आपस्तंबापरसूत्र, १२. आपस्तंबप्रयोग १३. आपस्तंबशुक्लसूत्र, १४. आपस्तंबधर्मसूत्र (C. C.)। इसके श्रौतसूत्रों में श्रौत, छह, धर्म, श्रव, मंत्रसंहिता आदि भाग हैं।

इसका नाम याज्ञवल्क्य स्मृति में दिये गये स्मृतिकारों में है। तर्पण में इसका नाम बौधायन के पीछे तथा सत्यापाद हिरण्यकेशी के पहले आता है। इससे पता चलता है कि इसकी शाखा हिरण्यकेशी शाखा के काफी पहले की होगी। आपस्तंब ने अपने धर्मसूत्र में (२.७. १७.१७) उदीच्य लोगों के एक श्राद्ध का उल्लेख किया है। उदीच्य शब्द का अर्थ हरदच ने शरावती नदी के उत्तर की ओर रहनेवाले लोग, ऐसा दिया है। आपस्तंब

शरावती नदी के उत्तर की ओर, आंध्र देश में रहता होगा। उसी प्रकार, ऐसा उल्लेख है कि, पल्लव राजाओं ने आपस्तंबी लोगों को काफी भेंट (देन) दी (J. A. v. 155)। इससे प्रतीत होता है कि, आपस्तंबी शाला आंध्र देश के आसपास निकली होगी।

आपस्तंब कल्पसूत्र के (२८.२९) दो प्रश्न ही आपस्तंब धर्मसूत्र हैं। उसी प्रकार २५ तथा २६ इन दो प्रश्नों का एकत्रीकरण कर, उसे आपस्तंबीयमंत्रयाठ नाम दिया गया है। कल्पसूत्र के २७ वें प्रश्न को आपस्तंबगृह्यसूत्र यह नाम है। आपस्तंब के गृह्यसूत्र तथा धर्मसूत्र में काफी साम्य है।

आपस्तंबधर्मसूत्र में आचार, प्रायश्चित्त, ब्रह्मचारी के कर्तव्य तथा उनके व्यवहार के नियम, यज्ञोपवीतधारण के संबंध में नियम, श्राद्ध इ. के संबंध में जानकारी दी गई है। उसी प्रकार वेदों के छः अंगों का भी विचार किया है। इसने सिद्ध किया है कि, कल्पसूत्र वेद न हो कर वेदांग ही है (आप. धर्म. २.४.८१२)। ब्राह्मणग्रंथ नष्ट हो गये हैं। प्रयोग से, वैसे ब्राह्मणग्रंथ होने चाहिये ऐसा इसका कथन है (आप. धर्म. १.४.१२-१०)।

आपस्तंब ने संहिता, ब्राह्मण तथा निरुक्त के कुछ उद्धरण लिये हैं। अपने धर्मसूत्र में कण्वपुष्करसादि दस धर्मशास्त्रकार, बौधायन एवं हारीत इनके भी मत इसने अनेक बार दिये हैं। संसार की उत्पत्ति तथा प्रलय के संबंध में भविष्यपुराण में दिये मत का आपस्तंब धर्मसूत्र में उल्लेख है तथा अनुशासन पर्व (९०.४६) का एक श्लोक इसने लिया है। आपस्तंब ने अपने धर्मसूत्रों में जैमिनि की पूर्वमीमांसा में से बहुत से मत एवं पारिभाषिक शब्दों का उपयोग किया है। आपस्तंब धर्मसूत्र का उल्लेख, शबर, ब्रह्मसूत्र के शांकरमाध्य, विद्वरूप का व्यवहार, मिताक्षरा एवं अपरार्क, इन ग्रंथों में किया गया है। आपस्तंबधर्मसूत्र के कितने ही मत पूर्ववर्ती धर्मशास्त्रकारों के विरुद्ध हैं। आपस्तंब के मतानुसार नियोग त्याज्य है उसी प्रकार पैशाच तथा प्राजापत्य इन दो विवाह विधियों को, इसकी पूर्ण सम्मति है। इसके मतानुसार किसी भी प्रकार के मांस का भक्षण करने में कोई आपत्ति नहीं है। आपस्तंब धर्मसूत्र पर हरदत्त ने उज्ज्वलावृत्ति नामक टीका की है। आपस्तंब धर्मसूत्र में अध्यात्म विषयक दो पद्यों पर शंकराचार्य का भाष्य है (१.८. २२-२३)।

आपस्तंबधर्मसूत्र से मिला आपस्तंबस्मृति नामक २०७ श्लोकों का एक ग्रंथ, जीवानंद ने प्रकाशित किया है। आनंदाश्रम में प्रकाशित स्मृति में, दस अध्याय हैं। इस ग्रंथ में, प्रायश्चित्त पर विचार किया गया है। स्मृतिचंद्रिका तथा अपरार्क ग्रंथों में इसके उद्धरण कई बार आये हैं। स्मृतिचंद्रिका में स्तोत्रापरस्तंब नामक एक ग्रंथ का उल्लेख है।

बुल्हर ने इसका समय ख्रि. पू. ३०० के पूर्व नहीं रहा होगा, ऐसा निश्चित किया है, परंतु तिलकजी ने इसका समय इससे भी पहले का माना है। (गी. र. पृ. ५६१)। वैद्य ने आपस्तंबश्रौतसूत्र का समय ख्रि. पू. १४२० निश्चित किया है, परंतु काणे ख्रि. पू. ६००-३०० मानते हैं।

आपस्तंबि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

२. भृगुकुल का एक गोत्रकार। यह ब्रह्मर्षि था (म. व. २९९. १८ कुं: मत्स्य. ७)।

आपस्थूण—वसिष्ठ गोत्र का एक ऋषि गण।

आपिशलि—एक व्याकरणकार। संधि के विषय में लिखते समय पाणिनि ने इसका गौरव के साथ उल्लेख किया है (६. १. ९२)। इसने आपिशलि नामक एक ग्रंथ लिखा (C. C.)

उसमें प्राप्त वर्णन का उल्लेख काशिका (७.३.९५) एवं कैयट (५.१.२१) में भी प्राप्त है। काशिकाकार तथा कैयट ने यह ग्रंथ देखा होगा।

२. भृगुकुल का एक ब्रह्मर्षि।

आपिशी—भृगुकुल का एक गोत्रकार। अपिशली ऐसा पाठ है।

आपूरण—कद्रुपुत्र।

आपोद—धौम्य का पेतुक नाम (धौम्य देखिये)।

आपोमूर्ति—(अपांमूर्ति) ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

आपोलव—(आंध्र. भविष्य) ब्रह्मांडमत में शतकर्णीपुत्र।

आप्त—कद्रुपुत्र।

आप्य—त्रित, द्वित, एकत तथा भुवन देखिये।

आप्य—चाक्षुष मन्वन्तर का देव।

आप्यायन—(स्वा. प्रिय.) यज्ञवाहु के सात पुत्रों में से छठवां। इसका संवत्सर इसी के नाम से चालू है।

आप्सव—मनु देखिये।

आभिप्रतारिण—वृद्धयुग्म देखिये।

आभूतरजस्—रैवत मन्वन्तर का एक देव (मनु देखिये)।

आभूति त्वाष्ट्र—विश्वरूप त्वाष्ट्र का शिष्य (वृ. उ. २.६.३; ४.६.३)।

आम—(स्वा. प्रिय.) घृतपृष्ठ के सात पुत्रों में ज्येष्ठ। इसका संवत्सर आमवर्ष इस नाम से प्रसिद्ध है।

२. कृष्ण का सत्यभामा से उत्पन्न पुत्र। यह महारथी था।

३. काण्यकुञ्ज देश के इस राजा ने बुद्धधर्म स्वीकार कर, बुद्धधर्म का प्रचार चालू किया। राम ने मास्ती के द्वारा इसका प्रतिकार कर, इसे पुनः वैदिक धर्म में समाया। इसकी राजधानी धर्मारण्य थी (स्कंद. ३.२.३८)।

आमहासुर—कश्यप एवं दनु का पुत्र।

आमहीयव—उरुक्षय देखिये।

आसुधायण—एक व्यास। व्यास देखिये।

आभूतरजस्—गय का पैतृक नाम।

आंबरीष—सिंधुद्वीप देखिये।

आंबृच—पर्वत तथा नारद ने इसको राज्याभिषेक किया। इसके बाद इसने सारी पृथ्वी जीत कर अश्वमेध यज्ञ किया (ऐ. ब्रा. ८.२१)।

आंबाज—आवेद के लिये पाठभेद।

आंभृणी—वाच देखिये।

आयति—मेरु की कन्या, नियति की भगिनी तथा धातृ ऋषि की स्त्री।

२. (सो.) नहुष का पुत्र। ययाति का वंश।

आयवस्—संभवतः यह नहुषों का शासक होगा। इस पराक्रमी राजा के तीन पुत्रों ने कक्षीवन् को तंग किया था (ऋ. १.१२२.१५)।

आयाप्य वा आयास्य—अंगिरस् गोत्र का मंत्रकार।

आयु—इंद्र ने वंश के लिये इसका परामव किया था (ऋ. १०.४९.५)। इंद्र ने इसका परामव किया, ऐसा बहुत स्थानों पर उल्लेख मिलता है (ऋ. २.१४. ७; ८.२३.२) तथापि आयु ने इंद्रकी प्रशंसा के लिये एक सूक्त रचा है (ऋ. ८.५२)। यह शब्द सामान्य तथा विशेष अर्थ में उपयोग में लाया गया है। कुत्स तथा भतिथिम्ब के साथ इसका उल्लेख है।

(सो.) पुरुवस् को उर्वशी से उत्पन्न पुत्रों में ज्येष्ठ (भा. ९. १५. १; म. आ. ७०. २२; ९०.७; द्रो. ११९. ५; अनु. १४७; वा. रा. उ. ५६; गरुड. १. ११९. ३; पद्म. सु. १२. ८७; भू. १०३)। दत्तात्रेय

के आश्रम में सौ वर्ष सेवा करने पर, इत्त ने इसे एक फल दिया। उसने अपनी स्त्री इंद्रुमती को वह फल खिलाया जिसके कारण वह गरोदर हुई तथा उसे नहुष नामक पुत्र हुआ। उसे हुंड नामक दैत्य चुरा कर ले गया इसलिये, वह अपनी पत्नीसहित शोक करने लगा। नारद ने बताया कि, नहुष के द्वारा हुंड दैत्य मारा जायेगा तब वह स्वस्थ हुआ (पद्म. भू. १०३-१०८)। इसे स्वर्मानु की कन्या प्रभा नामक दूसरी स्त्री थी, जिससे नहुषादि पुत्र हुए (भा. ९.१७.१; गरुड. १३९. ८; ब्रह्माण्ड. ३. ६७. १-२; ब्रह्म. ११; पद्म. पा. १२ ८७; ह. वं. १. २८)।

आयु का वंशक्रम—इसके पांच पुत्र—

१. नहुष, २. वृद्धशर्मन् (क्षत्रवृद्ध), ३. रम्म, ४. रजि, ५. अनेनस्। नहुष का ययाति पूरु आदि वंश प्रसिद्ध है। वृद्धशर्मन् का ही क्षत्रवृद्ध नाम है। उस का वंश काशि और काश्य नाम से प्रसिद्ध है। तीसरा रम्म अनपत्य था। तथापि कई जगें उसका वंश मिलता है (भा. ९.१७.१०)। चौथा रजि। उस को सौ पुत्र थे। वे इंद्र द्वारा नष्ट हो गये। अनेनस् का वंश स्वतंत्र रूप से उपलब्ध है (ह. वं. २.२९)।

आयुपुत्र रजि वंश को राजेय कहा गया है (वायु. ९२.७४-९९)।

इसका वंश ऊपर दिये गये स्थानों में है। इसने छत्तीस हजार वर्ष राज्य किया (भवि. प्रति. १.१)।

२. पौष माह में भग नामक आदित्य के साथ भ्रमण करने वाला ऋषि (भा. १२.११.४२)।

३. कृष्ण को रोहिणी से उत्पन्न पुत्र (भा. १०. ६१. १७)।

४. अंगिरा तथा सुरूवा का पुत्र। एक देव (मत्स्य. १९६)।

५. मंडूकों का एक प्रसिद्ध राजा (म. व. १९०. ३७)।

६. प्राण नामक वसु एवं ऊर्जलती का पुत्र (भा. ६. ६.१२)।

७. (सो. क्रोष्टु.) पुरुहोत्र राजा का पुत्र। इसका पुत्र सात्वत (भा. ९.२४.६)।

८. धर्म तथा वसु का पुत्र। इन्हें वैतेज्य, शम, शांत सनत्कुमार एवं स्कंद ये पुत्र थे (ब्रह्माण्ड. ३.३.२१-२९)।

आयु काण्व—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.५२)।

आयुतायु—(मगध. भविष्य.) भागवत, वायु एवं ब्रह्माण्ड के मतानुसार श्रुतश्रवस् का पुत्र ।

आयुर्दान—परावत नामक देवगणों में से एक ।

आयुष्मत्—संहाद दैत्य के तीन पुत्रों में से उद्येष्ठ ।

२. दक्षसावर्णि मन्वंतर में होनेवाले ऋषम अवतार का पिता ।

३. उच्चानपाद का पुत्र ।

आयोगव मरुत् आविक्षित—मरुत् देखिये ।

आरणेय—अरणी से उत्पन्न होने के कारण, शुक को दिया गया नाम (दे. भा. १. १७) ।

आरण्य—एक मध्यमाध्वर्यु ।

आरण्यक—लोमश ने इसे रामायण सुनाई (पद्म. पा. ३५. ३७) ।

आरद्धत्—अंगार देखिये ।

आरब्ध—अंगार देखिये ।

आराधिन् वा **आराविन्**—(सो. कुह.) वायुमता-नुसार ज्यत्सेन का पुत्र तथा विष्णुमतानुसार आराविन् ।

आराहृष्टि—सौजात देखिये ।

आरुणायनि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार ।

आरुणि—उद्दालक का पैतृक नाम (बृ. उ. ३.६.१; छां. उ. ३.११.४) । सुब्रह्मण्य का गुरु आरुणि यशस्विन् यही है (जै. ब्रा. २.८०) । आरुणि ने हृदय के अष्टदल्युक्त कमल के स्थान ब्रह्मदृष्टि रख कर ब्रह्मा की आराधना की (ऐ. आ. २.१.४) । वायुमतानुसार यज्ञःशिष्यपरंपराके व्यास का मध्यदेश का शिष्य (व्यास देखिये) । यह वासिष्ठ चैकित्तायन के पास ज्ञानार्जन के लिये गया था (जै. उ. ब्रा. १.४२.१) । अन्य स्थान में, अग्नि उध्वर्यु का नाश न कर शत्रु का नाश करता है, यह ब्रताने के लिये इसके नाम का उल्लेख आता है (श. ब्रा. १.१.२. ११) । अग्निहोत्र की प्रशंसा करते समय भी एक आरुणि का उल्लेख है (श. ब्रा. २. ३. ३१) । आरुणि पांचाल्य का उद्दालक भी नाम है (उद्दालक देखिये) ।

२. धर्मसावर्णि मन्वंतर के सप्तधियों में एक ।

३. विनता का पुत्र ।

४. सर्प (म. आ. ५२.१७) ।

५. एक व्यास (व्यास देखिये) ।

आरुणि पांचाल्य— उद्दालक देखिये ।

आरुणेय—औपवेशि के कुल में उद्दालक आरुणि तथा पुत्र श्वेतकेतु का यह पैतृक नाम है (श. ब्रा. १०.

३.४.१; छां. उ. ५.३.१) । प्राणविद्या ब्रताते समय इसका उल्लेख है (जै. उ. ब्रा. २. ५. १) ।

आरुषी—मनुकन्या । च्यवन ऋषि की दो स्त्रियों में से उद्येष्ठ । उर्वे ऋषि की माता ।

आरैहण्य—सुमंतु का शिष्य । इसका शिष्य चैकि-तायन (वं. ब्रा. २) ।

आर्क्ष—प्रियमेध का आश्रयदाता (ऋ. ८.६८.१५-१६) । अतिथियव इंद्रोत तथा आर्क्ष से दान मिलने का उल्लेख प्रियमेध ने किया है । एक अन्य स्थान पर आर्क्ष श्रुतवन् का निर्देश है (ऋ. ८. ७४. ४) ।

आर्क्षकायण—गळुतस देखिये ।

आर्चत्क—शरका पैतृक नाम (ऋ. १.११६.२२) । ऋचत्क का पुत्र ।

आर्चनानस—अत्रिगोत्र का प्रवर ।

आर्चिष्मत्—सुतपदेवों में से एक ।

आर्जव (आर्जय)—गांधार देशाधिपति शकुनि के छः बंधुओं में से एक । इसे भारतीय युद्ध में इरावान् ने मारा (म. भी. ८६. २४; ४२) ।

आर्जुनेय—कुत्सका पैतृकनाम (ऋ. १. ११२. २३; ४. २६. १; ७. १९. २; ८. १. ११) ।

आर्तपाणि—(सू. इ.) ऋतुपर्णी का पुत्र (ह. वं. १. १५. २०) ।

आर्तभाग जारत्कारव—जरत्कार का पुत्र । यह आस्तीक ऋषि का ही नाम होगा । देवराति जनक की सभा में, याज्ञवल्क से वाद करनेवाला संभवतः यही होगा (बृ. उ. ३. २. १; १३) । 'कति प्रहाः' प्रश्न का उत्तर दे कर, याज्ञवल्क्य ने इसे चुप बिठाया ।

आर्तभागीपुत्र—शौगीपुत्र का शिष्य, तथा वार्का-रणीपुत्र का गुरु (बृ. उ. ६. ५. २) ।

आर्तव—वर्हिषद पितरों का नामांतर ।

आर्तयनि—ऋतायनपुत्र शल्य का पैतृक नाम (म. भी. ५८. १४) ।

आर्तिमत्—एक ऋषि । इसके स्मरण से सर्पशाया नष्ट होती है (म. आ. ५३. २३) ।

आर्द्र—(सू. इ.) आर्द्रक ऐसा पाठभेद है (म. व. १९३. ३; इंद्रु देखिये) ।

आर्द्रक—आर्द्र देखिये ।

आर्द्रा—सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक ।

आर्षुदि—ऊर्ध्वग्रावन् देखिये ।

आर्भव—सूनु देखिये ।

आर्य—माल्य देखिये ।

आर्यक—कद्रुपुत्र । इसकी कन्या मारीषा वा भोजा । मारीषा यदुकुलोत्पन्न शूर राजा की स्त्री थी, जिससे शूरको पृथा नामक कन्या उत्पन्न हुई । आगे चल कर, इसी का नाम कुंती हुआ । भीम की माता पृथा आर्यक की दौहित्री थी । भीम को दुर्योधनादि कौरवों ने विप्रयुक्त अन्न खिलाकर, प्रमाणकोटितीर्थ में डुबाया । नदी के समीपे उस देश किया जिस कारण विप्र उतर गया । भीम सावधान हुआ ही था कि, नाग फिर देश करने आये । तब भीम ने उनसे युद्ध शुरू किया । यह समाचार मिलते ही आर्यक वहाँ पहुँचा । भीम को उसने पहचान लिया, तथा उसे पालाल में ले जा कर अमृतान कराया । तुल्यमें उस सहस्र नागों का बल रहे ऐसा आशीर्वाद दे, इसने उसे हस्तिनापुर तक पहुँचाया (म. आ. ११९; परि. १. क. ७३) ।

२. धर्मसाधर्णि मन्वंतर में होनेवाले विष्णु का पिता ।

आर्यशुंगि—दुर्योधन पक्षीय एक राक्षस । इसने अर्जुनपुत्र इरावत् का वध किया (म. भी. ८६.६४) ।

आर्यणि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार ।

आर्यषेण—कृतयुग में हुआ एक राजपि । तब के बल पर यह ब्राह्मण हुआ (म. स. ८.१३; श. ३९.१; वायु. ९१.११४) । इसका आश्रम हिमालय पर नर-नारायणाश्रम के पास था (म. व. १५३, परि. १.१७, धंक्ति ३६) । इसके पाल पांडव गये थे । (म. व. १५६. १६८) । यह भृगुकुल का मंत्रकार था । इसका अर्द्धिषेण नाम भी मिलता है (वायु. ५९.१५-१७) । निर्णयसिंधु में इसका आधार दिया गया है । देवापि देखिये ।

२. (सो. क्षत्र.) शल का पुत्र (वायु. ९२.५) ।

३. वृद्धा देखिये ।

आलंब—एक ऋषि । यह धर्मराज की सभा में था (म. स. ४.२० कुं.) ।

आलंबायन—इंद्र का मित्र । इसने रुद्रका माहात्म्य बताया (म. अनु ४९) ।

२. वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार तथा ऋषिगण ।

आलंबायनीपुत्र—आलंबीपुत्र का शिष्य (वृ. उ. ६. ५.२. काण्व) ।

आलंबि—ब्रह्मांड तथा वायुमतानुसार व्यास के यजुः-शिष्यपरंपरा के प्राच्यों में से एक ।

आलंबी—कश्यप तथा स्वशा की कन्या ।

आलंबीपुत्र—जयंतीपुत्र का शिष्य तथा कौशिकीपुत्र का गुरु (वृ. उ. ६.५.१.२ काण्व) ।

आलुकि—भृगुकुल का गोत्रकार । जलाभिद् पाठमेंट है ।

आलेखन—एक आचार्य (आश्व. श्रौ. ६.१०) ।

आलुकेय—हृत्स्वाशय देखिये ।

आलुटिप्—ब्रह्मांडमतानुसार व्यास की यजुःशिष्य परंपरा में से याज्ञवल्क्य का वात्सनेय शिष्य (व्यास देखिये) । यही आटविन है ।

आलुत्य—भागवत मतानुसार व्यास की सामशिष्य परंपरा में से ब्रह्मवेत्ता का शिष्य (व्यास देखिये) ।

आवरण—(स्वा.) भरत तथा पंचजनी का पुत्र ।

आचाह—(सो. यदु.) विष्णुमतानुसार श्वकल्क का पुत्र ।

आविक्षित—मरुत् का पैतृक नाम । इस मरुत् का कामपि ऐसा दूवरा नाम भी होगा (ऐ. ब्रा. ८. २१; श. ब्रा. १३.५.४.६; म. शां. २९.१५) । वायुमतानुसार यह कश्यप का पुत्र है ।

आविर्होत्र—ऋषभदेव तथा जयंती का भगवद्रक्त पुत्र ।

आवेद—भृगुकुल का एक गोत्रकार (आंवाज देखिये) ।

आशावह—विश्वान्व का पुत्र ।

२. द्रौपदी के स्वयंवर को आया हुआ यादव (म. आ. १७७.१८१८*) ।

आश्वरथ्य—आश्वरथ का वंशज । सूत्र ग्रंथों में मतमेद दर्शाने के लिये इसका नाम आता है (आश्र. श्रौ. ६.१०; ब्र. सू. १.२.२९; ४.२०) ।

आश्वकी—प्रचिन्वत् की पत्नी । अश्वकी भी पाठ है । यादवकन्या । इसका पुत्र शर्याति (म. आ. ९०.१३) संयाति ऐसा भांडारकर पाठ है ।

आश्वया—स्थावरनगर में रहने वाले कौंडिन्य की पत्नी (गणेश. १.६३) ।

आश्वयाणि—कश्यपकुल का एक गोत्रकार ।

आश्वाय्य—इन्द्र सभा का एक ऋषि (म. स. ७.१६) ।

आश्वेष्ठा—सोम की सनाईस शिष्यों में से एक ।

आश्वद्व—यह कोई स्वतंत्र व्यक्ति होगा, वा मनु के लिये एक विशेषण होगा (ऋ. १०.६१.२१) ।

आश्वतर आश्वि—बुडिल का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ६.३०; श. ब्रा. ४.६.१.९) ।

आश्वत्थ—अहीन का पैतृक नाम (तै. ब्रा. ३.१०. १.१०)।

आश्वमेध—एक राजा का पैतृक नाम। इसका उल्लेख दानस्तुति में आया है (ऋ. ८. ६८. १५-१६)।

आश्वल—विश्वामित्र का पुत्र तथा ब्रह्मर्षि।

आश्वलायन—एक शाखाप्रवर्तक आचार्य। आश्वलायन शाखा महाराष्ट्र में प्रसिद्ध है, परंतु इस शाखा के संहिता ब्राह्मणादि वैदिक ग्रंथ उपलब्ध नहीं हैं। इसके प्रसिद्ध ग्रंथ निम्न लिखित हैं १. आश्वलायनगृह्यसूत्र, २. आश्वलायनश्रौतसूत्र, ३. आश्वलायन स्मृति।

यह शौनक का शिष्य था। इसके सूत्र के अंत में 'नमः शौनकाय' कहकर शौनक को प्रणाम किया है। शौनक ने स्वतः १००० भागों का एक सूत्र रचा था। किन्तु आश्वलायन का सूत्र, संक्षेप में एवं अच्छा होने के कारण उसने अपना सूत्र फाड़ डाला। इसका श्रौतसूत्र वारह अध्यायों का तथा गृह्यसूत्र चार अध्यायों का है। श्रौतसूत्रों में होत्रकर्म में मंत्र का विनियोग बताया है। दर्शपूर्णमास, अग्न्याधान, पुनराधान, आग्रयण, अनेक काश्यादि, चातुर्मास्य, पशु, सौत्रामणी, अग्निष्टोमादि सप्त सोम संस्था, सत्रों के होत्र तथा अंत में गोत्रप्रवरो का संक्षिप्त संग्रह है। अग्निहोमसमान कर्म का भी कहीं कहीं उल्लेख किया है। गृह्यसूत्रों में निम्नलिखित विषय प्रमुख वर्णित हैं—संस्कार, नित्यकर्म, वास्तु, उत्सर्जन, ऋणकर्म, युद्धार्थसज्जता तथा शूलगव।

गृह्यसूत्र में दिये गये तर्पण में ऋग्वेद के ऋषि मंडलानुसार लिये हैं, एवं जहाँ ऋषि लेना असंभव लगा वहाँ प्रगाथ क्षुद्रसूक्त, महासूक्त तथा मध्यम ऐसा उल्लेख किया है। उसी तरह ग्यास के शिष्य सुमंतु बमौरह बता कर सूत्र, भाष्य, भारत एवं महाभारत का भी उल्लेख किया है। आचार्य तथा पितर इस प्रकार है—शतर्चिन, माध्यम, गुप्तमद, विश्वामित्र, वामदेव, अत्रि, भरद्वाज, वसिष्ठ, सुमंतु, जैमिनि, वैशंपायन, पैल, जानंति, बाह्वि, गार्ग्य, गौतम, शाकल्य, ब्राह्मव्य, मांडव्य, मांडूकेय, गार्गी वाचस्पती, वडवा प्रातिषेयी, सुलभा मैत्रेयी, कटोल, कौपीतक, महाकौपीतक, पैग्य, महापैग्य, सुयज्ञ, सांख्यायन ऐतरेय, महैतरेय, शाकल्य, वाष्कल्य, सुजातवक्त्र, औदवाहि, महादवाहि, सौजामि, शौनक एवं आश्वलायन। ऐतरेय ब्राह्मण से ये सूत्र मिलते जुलते हैं तथा उनमें से कुछ अवतरण भी इसमें पाये जाते हैं। आश्वलायन के श्रौतसूत्र में निम्नलिखित आचार्यों का उल्लेख आता है।

आलेखन (६. १०), आशमरथ्य (६. १०), कौत्स (१. २; ७. १), गणगारि (२. ६; १२. ९-१०), गौतम (२. ६; ५. ६), तौत्वलि (२. ६; ५. ६), शौनक (१२. १०)।

इनमें से तौत्वलि पौर्वात्य हैं (पा. सू. २.४.६०-६१)। विदेहाधिपति जनक का यह होता था। अश्वल से संभवतः इसका संबंध है। वेबर के मतानुसार यह पाणिनि का समकालीन रहा होगा। चिं. वि. वैद्य ने इसका काल ख्रि. पूर्व १०० वर्ष माना है। श्रौतसूत्र तथा गृह्यसूत्र एक ही आश्वलायन के नहीं रहे होंगे। आश्वलायनगृह्यसूत्र में यद्यपि श्रौतसूत्र का विवरण मिलता है तथापि भाषा-भिन्नता स्पष्ट दिखाई देती है। इसे आश्वलायन की शिष्यपरंपरा के किसी शिष्य ने लिख कर आश्वलायन के नाम पर जोड़ दिया होगा।

२. अथर्ववेदीय कैवल्योपनिषद् परमंष्टी ने आश्वलायन का बताया है। ऊपर उल्लेखित तथा यह संभवतः एक ही हो सकते हैं।

३. कौसल्य का पैतृक नाम।

४. शिवावतार में सहिष्णु का शिष्य।

आश्वलायनिन—कश्यपकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

आश्ववातायन—कश्यपगोत्र का एक गोत्रकार।

आश्वसूक्ति—सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १९.४.२)।

आश्वायनि—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

२. अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

आश्विनेय—अश्विनीकुमार देविये।

आसंग—(सो. यदु. वृष्णि.) श्वकल्य का पुत्र।

आसंग प्लायोगि—एक दानधर राजा तथा सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. १. ३२-३३)। इसका पुरुषत्व नष्ट होने के कारण, यह स्त्री बन गया था। परंतु मेघातिथि की कृपा से इसे पुरुषत्व प्राप्त हुआ, इसलिये इसकी स्त्री शश्वती बहुत आनंदित हुआ, ऐसी एक आख्यायिका सायण ने दी है। अन्य लोगों को इसमें सत्यता प्रतीत नहीं होती। अंतिम ऋचा को संदर्भ भी नहीं है। इसी सूक्त में आसंग को याद कहा गया है। इससे यह पता चलता है कि वह यदुवंशी रहा होगा (ऋ. ८.१.३१; ३४)।

आसंदिव—नारायण माहात्म्य के लिये इसकी कथा है (ब्रह्म. १६७)।

आसमंजस—(सु. इ.) असमंजसपुत्र अंशुमान् का नाम।

आस्तारण—भाद्रपद माह में सूर्य के साथ साथ घूमनेवाला यक्ष ।

आसुरायण—दो स्थानों पर त्रैवर्णी का तथा तीसरे स्थान पर आसुरी का शिष्य (वृ. उ. २.६.३; ४.६.३; वृ. उ. ६.५.२) । ब्रह्मांडमतानुसार व्यास के अथर्वशिष्य परंपरा के पाराशर्य कौथुम का शिष्य (व्यास देविके) ।

२. कश्यप गोत्र का एक ऋषिगण ।

३. विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७) ।

आसुरि—यह सार्वभौम पक्ष का है । इसने उदित होम पक्ष की बहुत निंदा की है (श. ब्रा. २.२.३.९) । इसने अग्नि के उपस्थान का छोटा मंत्र सुझाया है (श. ब्रा. २.३.३.२) । भारद्वाज का शिष्य तथा औपवेधनी का गुरु (वृ. उ. २.६.३; ४.६.३) । दूसरे स्थान पर याज्ञवल्क्य का शिष्य तथा आसुरायण का गुरु है (वृ. उ. ६. ५.२) यज्ञविधि से इस प्रमाण माना गया है (श. ब्रा. १.५.२.२६; २.१.५.२७) । अनिर्वच मन्त्र तथा सत्य के लिये आग्रह के संबंध में इसे मान्यता प्राप्त थी (श. ब्रा. १४.१.१.३३) । शुक्यजू के ब्रह्मयज्ञांग पितृतर्पण में यह था (पा. गृ. परिशिष्ट) । ब्रह्माण्डमतानुसार व्यास की यज्ञशिष्यपरंपरा में मध्यदेशवासी शिष्य (व्यास देविके) । युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ का एक ऋषि । शांल्यशास्त्रज्ञ कपिल का शिष्य तथा पंचशिख का गुरु (म. शां. २.११) । इसका कपिल से व्यक्ताव्यक्त पर संवाद हुआ (म. शां. परि. १.२९ अ-२९ब) । शिवावतार दशिवाहन का शिष्य ।

आसुरिवासिन—प्राक्नीपुत्र का नाम (वृ. उ. ४.५. २) ।

आसुरी—(स्वा. प्रिय.) देवताजित् राजा की स्त्री तथा देवसुम्न की माता ।

आस्तीक—स्युकुलोत्पन्न जरत्कारु ऋषि तथा तक्षक प्रसिद्धी जरत्कारु का पुत्र । गरींदर अवस्था में इसके पति वन को चले गये इसलिये जरत्कारु कैलस पर्वत पर चली गयी । यहाँ शंकर ने उसे जानीपदेश किया । यहाँ उसने एक पुत्र को जन्म दिया । पुत्र ने गर्भ में शंकर का उपदेश ग्रहण किया इसलिये इसका नाम आस्तीक रखा गया । माँ ने पति से गर्भ के विषय में पूछा जिसका उत्तर उसे 'अस्ति' मिला इसलिये पुत्र का नाम 'आस्तीक' रखा गया (म. आ. ४४.१९-२० दे. भा. २.१२) ।

दक्षिण—आगे चल कर इसकी माता अपने भाई वासुकि के घर पर रही । वहाँ इसका संगोपन हुआ ।

इसने उपनयन के पश्चात् च्यवनात्मज भागद ऋषि से सांगवेद का अध्ययन किया (म. आ. ४४.१८) । शंकर ने इसका व्रतबंध कराया । इसे वेदवेदांगों में निष्णात करने के पश्चात् मृत्युंजय मंत्र का अनुग्रह दिया । शंकर की आज्ञानुसार फिर जरत्कारु पुत्रसहित पिता के आश्रम में जा कर रही ।

सर्पसत्र—जनमेजय राजा ने अपने मंत्री से सुना कि, पिताजी की मृत्यु सर्पदंश के कारण हुई । इसलिये क्रोधित हो कर जनमेजय ने सर्पसत्र कर, सारे सर्पों को मार डालने का निश्चय किया तथा यज्ञरीक्षा ली । यज्ञ प्रारंभ होनेवाला ही था कि, जनमेजय ने वास्तुशास्त्र में निष्णात करीगर लोहिताक्ष से पूछा कि, यज्ञ मंडप में याज्ञिक किस तरह संपन्न होगा, इसपर यज्ञमंडप का स्थान तथा जिस समय भूमोपन प्रारंभ हुआ इसे ध्यान में रख उसने कहा कि, यज्ञ में बड़ा विघ्न आवेगा तथा यह यज्ञ एक ब्राह्मण के द्वारा बंद होगा । तथापि राजा ने यज्ञ की सारी सामग्री जमा कर पूरी व्यवस्था के साथ यज्ञ प्रारंभ कर, सर्पों का संहार शुरू किया । सर्पसत्र में अंत में तक्षक की दारि आयी । सर्पों ने यह बात जरत्कारु को बतायी और भाई की रक्षा करने की प्रार्थना की ।

सर्परक्षण—जरत्कारु ने आस्तीक को मातुलकुल का रक्षण करने की आज्ञा दी । मातुभक्त आस्तीक आज्ञा शिरोधार्य कर जनमेजय के यज्ञमंडप में पहुंचा । वहाँ उसने अपनी चतुराई तथा मधुर वाणी से राजा के मन को आकर्षित कर लिया । सर्पसत्र से बचाराया हुआ तक्षक प्राणरक्षणार्थ इंद्र की शरण में गया । इंद्र ने उसे अभय दान दिया । ब्राह्मणों ने यज्ञ में तक्षक का आवाहन किया पर उसे आते न देख, ब्राह्मणों ने कहा कि, इंद्र ने उसका रक्षण किया है, इसलिये वह नहीं आ रहा है । तब राजा ने इंद्रसहित तक्षक का आवाहन करने को कहा । ब्राह्मणों ने 'इंद्राय तक्षकाय स्वाहा' कहा तथा इतना कहते ही इंद्र ने तक्षक का त्याग कर दिया । इस कारण तक्षक अकेला ही कुंड के ऊर्ध्व प्रदेश में खिन्नवदन खड़ा हो गया (म. आ. ४७-४९) । ब्राह्मणों के इंद्रसहित तक्षक का आवाहन करते ही, देवतागण इंद्र के सहित मनसा के पास गये । तब उसने आस्तीक पुत्र को सर्पों के संकट निवारणार्थ आज्ञा दी । आस्तीक के भाषण के कारण राजा ने उसे कहा कि, तुम्हें जो चाहिये मांगो । इसी समय सारे ब्राह्मण कह पड़े कि, 'तक्षक आवाहन करने के पश्चात् भी अभी तक नहीं

आ रहा है। वह जब तक कुंड में आकर नहीं गिरता तब तक इसे बरदान न दीजिये।' इसी बीच ब्राह्मणों के मंत्रसामर्थ्य के कारण, तक्षक को कुंड के ऊर्ध्वभाग में आया हुआ इसने देखा। उसे 'तिष्ठ तिष्ठ' कह कर रोका तथा यही वर मांगने की योग्य घड़ी है ऐसा जान कर उसने राजा ने 'सर्पसत्र रोक दीजिये' ऐसा बरदान मांगा। राजा अत्यंत खिन्न हो कर और कोई दूसरी चीज मांगने के लिये कहने लगा परंतु बचनबद्ध होने के कारण 'तथास्तु' कह कर राजा ने सर्पसत्र रोक दिया। आस्तीक का सम्मान कर उसे विदा किया।

आस्तीक के इस यशप्राप्ति के कारण, सब सभों ने उसका बड़ा स्वागत किया और प्रसन्न होकर वे इसे बरदान देने लगे। इसपर आस्तीक ने वर मांगा कि, जो मेरा आख्यान, त्रिकाल पठन करेंगे उन्हें तुम बिलकुल कष्ट न देना (म. आ. ५३. २०)। आस्तीक ने जनमेजय से इंद्र तथा तक्षक के प्राणों की याचना की। तब ब्राह्मणों की आज्ञा से, राजा ने इसका कथन मान्य कर, सर्पसत्र बंद किया। स्वयं मनसा के पास जा कर, इंद्र ने उस की पूजा की तथा उसे बलि चढ़ाई (दे. भा. ९. ४८)। नदिवर्षिणी पंचमी के दिन सर्पसत्र बंद हुआ था इसलिये यह दिन नागों को अत्यंत प्रिय है (भवि. ब्राह्म. ३२; तक्षक आर्तभाग जास्तकारव देखिये)।

आख्यबुध्न—इंद्र ने इसके कारण, देव्य पृथु का वध किया (ह. १०.१७१.३)।

आहार्य—अंगिरसजीवी मंत्रकार।

आहुक—(सो. यदु. कुकुर.) पुनर्वसु का पुत्र। इसके सौ पुत्र थे (म. म. १४.५५)। तथापि उनमें से देवक तथा उपसेन बहुत प्रसिद्ध थे। शात्त्व के साथ कृष्ण के युद्ध के समय इसने दारका का रक्षण किया (म. व. १६. २३)। यह अभिविज्ज पुत्र था। इसे आहुक नामक भाई था। अत्यंत ऐश्वर्यवान् तथा पराक्रमी ऐसी इनकी प्रसिद्धि थी (ब्रह्म. १५.४६-५१)।

आहुकी—पुनर्वसु राजा की कन्या तथा आहुक की भगिनी।

आहुत—हैतनामन देविये।

आहुति—(सो. यदु. क्रोडु.) कृष्यमतानुसार रोमपाद वंश में से एक।

आहुये—इसके पिता का नाम शुचि तथा माता का नाम अहि था। स्वाध्याय गांव के बाहर करना चाहिये, ऐसा नियम होते हुए भी यदि यह संभव न हो, तो गांव के अंदर ही अध्ययन करना चाहिये ऐसा इनका मत है (तै. आ. २.१२)।

इ

इक्षालव—ब्रह्माण्ड मत्तानुसार व्यास के ऋक्षशिष्य-परंपरा का शाक्यवैण रथीतर का शिष्य (व्यास देखिये)।

इक्ष्वाकु—(सू.) वैवस्वत मनु के दस पुत्रों में से ज्येष्ठ (म. आ. ७०.१३; भवि. ब्राह्म. ७९)। इसकी उत्पत्ति के संबंध में जानकारी इस प्रकार मिलती है। एक बार मनु को छीक आयी। उस छीक के साथ ही यह लडका सम्मुख खड़ा हुआ। इस पर से इसका नाम इक्ष्वाकु पडा (ह. वं. १.११; दे. भा. ७.८; भा. ९.६; ब्रह्म. ७.४४; विष्णु. ४.२३)। मनु ने कहा कि, तुम एक राजवंश के उत्पत्तिक बनो, दंड की सहायता से राज्य करो, तथा व्यर्थ ही किसी को दंड मत दो। अपराधियों

को दंड देने से स्वर्गप्राप्ति होनी है। इस तरह का उद्देश दे कर, जो कार्य करना होगा उसकी सपरिज्ञा मनु ने इसे बताया। मनु ने पृथ्वी के दस भाग बनाये। वसिष्ठ की आज्ञानुसार वे सुयुग्म को न दे कर, इक्ष्वाकु को दिये (वायु. ८५.२०)। मनु ने मित्र तथा वरुण देवताओं के लिये वाग किया। इस कारण इक्ष्वाकु तथा अन्य पुत्र प्राप्त हुए, ऐसी कथा है (विष्णु. ४.१)। वसिष्ठ इक्ष्वाकु राजा क कुलगुरु था (म. आ. ६६.९-१०; ब्रह्माण्ड. ३. ४८.२९; यम. सू. ८.२१९; ४८.२३७. विष्णु. ४.३.१८, वा. रा. उ. ५७)। सूर्यवंश में प्रथम राजा के समय, वसिष्ठ के कुलगुरु होने का निर्देश है।

इक्ष्वाकु, अयोध्या का पहला राजा था (वा. रा. अयो. १.१०)। इसे मन्वदेश मिला था (ह. वं. १.१०. लिङ्ग १.६५.२८; ब्रह्माण्ड. ३.६०.२०; मत्स्य. १२.१५)। यह ध्रुव का पुत्र है ऐसा भी कहीं कहीं उल्लेख है। ध्रुव ने प्रशासनाभिष्टेय इसे एक लड़का दी थी (म. शां. १६०. ७२; आश्व. ४.३)। वंशावली में प्रयत्न ध्रुव का उल्लेख नहीं है।

एक समय इक्ष्वाकु याज्ञा करते हिमालय की तलहटी के पास आया। वहाँ जा करनेवाला कौशिक नाम का ब्राह्मण था। उसका यम, ब्राह्मण, काल तथा मृत्यु के साथ, निष्काम जब के संबंध में संवाद हुआ। उस समय इक्ष्वाकु वहीं था (म. शां. १९२)।

इक्ष्वाकु कुल में पैदा हुए व्यक्तियों के लिये भी, इक्ष्वाकु कुलनाम दिया गया है। अलंबुषा के पति का नाम तुणविंदु न हो कर इक्ष्वाकु था, ऐसा निर्देश है (वायु. ८६.१५; वा. रा. वा. ४७.११)।

इक्ष्वाकु के मौ पुत्र थे (ह. वं. १.११; दे. भा. ७.१; भा. ९, ६; म. अनु. ५; म. आ. ७५)। इसके अ्येष्ट पुत्र का नाम विकुक्षि था। इक्ष्वाकु के पश्चात् यही अयोध्या का राजा हुआ। विकुक्षि से निमिबंध निर्माण हुआ। इक्ष्वाकु को दंडक नामक एक विद्याविहीन पुत्र भी था। इसी के नाम से दंडकारण्य बना (वा. रा. उ. ७९; भा. ९.६; विष्णु. ४.२)। इसके दसवें पुत्र का नाम दंशाश्व था। वह माहिष्मती का राजा था (म. अनु. २. ६)। विष्णु पुराण में इक्ष्वाकु के एक सौ एक पुत्र होने का निर्देश है (४.२)। इक्ष्वाकु ने अपना राज्य सौ पुत्रों को अंटे दिया (म. आश्व. ४)। इसने शकुनि प्रभृति २० पुत्रों को उत्तरभारत तथा शांति प्रभृति ४८ पुत्रों को, दक्षिणभारत का राज्य दिया। अयोध्या में इक्ष्वाकु का राज्य तथा वंश बहुत समय तक रहा।

इक्ष्वाकु वंश में बहुत से महान पुरुष हुए, इस कारण बहुत सारे पुराणों में इनकी वंशावलि मिलती है। पुराणों में दी गयी वंशावलियों में, बहुत साम्य होते हुए भी, रामायण में दी गई वंशावलि से वे भिन्न हैं। पुराणों में इक्ष्वाकु से ले कर, भारतीय युद्ध के बृहद्बल तक भागवतानुसार ८८, विष्णुमतानुसार ९३, तथा वायुमतानुसार ९१, पीढ़ियाँ होती हैं। रामायणानुसार इनमें संख्या की अपेक्षा व्यक्तियों में अधिक भिन्नता है। संशोधकों के मतानुसार वंशावलि की दृष्टि से पुराणों का वर्णन ही अधिक न्यायसंगत होने की संभावना है।

यद्यपि अधिक विस्तार से इसकी वंशावलि उपलब्ध है तथापि वह प्रमुख पुरुषों की है, सब पुरुषों की नहीं ऐसा वहाँ निर्देश है।

(सुमित्र, राम तथा ऐश्वक देखिये)। इसकी पत्नी सुदेवा (पद्म. भू. ४२)।

इट भार्गव—युक्तद्वष्टा। इंद्र ने इस के रथ की रक्षा की (ऋ. १०.१७१.१)।

इटन् काव्य—केशिन् दाम्य का समकालिक (सां. ब्रा. ७.४)। इतरत्र भी यह नाम आया है (पं. ब्रा. १४.९.१६)।

इडचिड—(सु. इ.) शतरथ का दूसरा नाम।

इडचिडा—इलबेला देखिये।

इडस्पति—(स्वा.) भागवतमतानुसार यज्ञ एवं दक्षिणा का पुत्र।

२. स्वारोचिष मन्वन्तर का देव विशेष।

इडा—मनु की कन्या। मनोरथसर्पण के पश्चात्, मनु ने संतति प्राप्ति के लिये यज्ञ किया जिससे उसे पुत्री हुई। उसका नाम इडा था (श. ब्रा. १.६.३.६-११)।

मनु की संवेधी तथा यज्ञतत्त्वों का प्रकाशन करने वाली, इडा नामक एक स्त्री थी। देव तथा असुरों ने अग्न्याधान किया यह सुन कर, उसे देखने के लिये इडा गयी। उसे दोनो स्थानों पर अग्निस्थापना का क्रम विपरीत दिखाई दिया। वह मनु के पास आयी, तथा बोली, 'देव तथा असुरों की तरह तेरा यज्ञ निष्फल न होवे, इसलिये मैं अग्नि की योग्य क्रम से स्थापना करती हूँ।' मनु ने इडा के द्वारा अग्न्याधान करवाया। इडा ने, १. गार्हपत्य, २. दक्षिणाग्नि तथा ३. आहवनीय इस क्रम से अग्नि की स्थापना की इस कारण, मनु का यज्ञ सफल हुआ। वह प्रजा तथा पशुओं से समृद्ध हुआ (तै. ब्रा. १.१.४)। मनु यज्ञ कर रहा था तब उस यज्ञ के कारण देवताओं ने बहुत ऐश्वर्य प्राप्त किया।

एक समय, इडा मनु के पास गयी, तब देवताओं ने प्रत्यक्ष रूप से तथा असुरों ने अप्रत्यक्ष रूप से इडा को निमंत्रण दिया। वह देवताओं के पास गयी। इस कारण सारे प्राणी देवताओं की ओर गये, तथा उन्होंने असुरों का त्याग किया (तै. सं. १. ७.१)।

इतरा—ऐतरेय देखिये।

इहश्—पाँचवे और छठवें मरुद्गण में से एक।

इष्म—(स्वा.) भागवतमतानुसार यज्ञपुत्र।

२. स्वारोचिष मन्वन्तर का देव।

इध्मजिह—(स्वा. प्रिय) प्रियव्रत तथा बर्हिष्मती के इस पुत्रों में से दूसरा। यह प्रक्षत्रीय का स्वामी था। इसने अपने द्वीप के वर्षसंज्ञक सात भाग किये। ये भाग शिव, यवस, सुमद्र, शांत, क्षेम, अमुक एवं अमय इन सात पुत्रों को क्रमशः उन्हीं के नाम दे कर, दे दिये (भा. ५.२०)।

इध्मवाह—सुक्तद्रष्टा (ऋ. १.२६)। अगस्त्यपुत्र दृढस्पृ का दूसरा नाम। इसे ऋतु ने दत्तक लिया था। यह अगस्त्यकुल का एक गोत्रकार था (मत्स्य. २०२)।

इन—अमिताभ देवताओं में से एक।

इंदीचाराक्ष वा इंदीचरविद्याधर—एक गंधर्व। यह विद्याधराधिप नलनाभ का पुत्र था। यद्यपि ब्रह्ममित्र मुनि ने इसे आयुर्वेद विद्या नहीं दी, तथापि अन्य शिष्यों को पढ़ाते समय इसने वह ज्ञान से सीखी। इस सीखने में आठ माह ही लगे, इस कारण प्रसन्न हो कर यह हंस पड़ा। आवाज से इसे पहचान कर ब्रह्ममित्र ने, 'तू सात दिनों में राक्षस होगा,' ऐसा शाप दिया। पर इसने विनति करने पर 'तू रागांध हो कर, अपनी ही संतानों को खाने दौड़ेगा, तब उनके अछतेज से तुझे ताप होगा। एवं पुनः यह शरीर प्राप्त कर तू स्वस्थानाप्त भी होगा।' ऐसा इसे उद्घाष मिली।

यह अपनी कन्या को खाने दौड़ा, तब कन्या के पास से सीखी अस्त्रविद्या के सहारे, स्वरोचि ने उसे पराभूत किया। इससे उसका उद्धार हुआ तथा यह फिर से पूर्ववत् हो गया। उसने अपनी कन्या मनोरमा तथा ब्रह्ममित्र के पास से सीखी विद्या स्वरोचि को दी (मार्क. ६०)। स्वरोचि देखिये।

इंदु—(स. इ.) विश्वाम्बर राजा का पुत्र। इसके तीन नाम क्रमशः आंभ्र, चंद्र तथा आर्द्र थे। इसका पुत्र युवनाश्र था।

२. जग मनोमात्र है यह बताने के लिये, सुदर्णजट प्रांत में रहनेवाले काश्यपःशौच्य इंदु की कथा, भानु ने ब्रह्मदेव को बताया (यो. वा. ३. ८५-८७)। उस में इसने केवल मनःसंकल्प से, ब्रह्मदेव का श्रेष्ठ पद प्राप्त कर, स्थूल शरीर नष्ट होने पर भी, सृष्ट्युत्पत्ति का क्रम चालू रखा था।

इंदुमती—सिंहलद्वीप के चंद्रसेन राजा की कन्या (मंदोदरी देखिये)।

२. सोमवंशीय आयु राजा की पत्नी। इसका पुत्र नहुष (पद्म. भू. १०४)।

३. बृहद्रथ राजा की पत्नी। पूर्वजन्म में इसका कंकण समुद्र - सरस्वती के संगम में गिरने के कारण, इस जन्म में वह ऐश्वर्य उपभोग कर रही थी। प्रतिवर्ष यह प्रभासक्षेत्र में सुवर्णकंकण डालती थी (स्कंद. ७.१.३७)।

४. कल्याण वैश्य की पत्नी (गणेश. १. ३२)।

५. चंद्रांगद राजा की स्त्री (चंद्रांगद देखिये)।

इंदुल—आह्लाद एवं स्वर्णवती का पुत्र। सात माह के आयु में ही इसे इंद्र स्वर्ग ले गया। इंद्रपत्नी शक्ति ने वहाँ इसका संगोपन किया इसलिये यह अत्यंत बलवान हुआ। बलीकन्या चित्रलेखा से इसका विवाह हुआ (भवि. प्रति. ३.२२-२३)।

इंद्र—इसने मेघों को फोड़ा। इसके लिये स्वधा ने वज्र तैयार किया। इसने सूर्य तू तथा उपसू को उत्पन्न किया। वृत्रासुर के हाथ तोड़ कर उसका बंध किया तथा जल बहाया। नदियां प्रवाहित कीं। गांधे तथा सोम को जोता। भक्तों को पशु दिये (ऋ. १.३३)। दशगु का संरक्षण किया (ऋ. १.३३.१४) शिवों की गायों का रक्षण किया (ऋ. १.३३.१५)।

सामगान से इसे स्मृति मिलनी है। यह दासों का शत्रु है। इसके रथ में घोड़े लगे रहने हैं जिसके चलने में मेघों की सड़गडाहट होती है। पृथ्वी सम्राट तथा स्थिर होती है। वित्तसे इसकी भिन्नता थी। अंगिरस तथा इंद्र साथ साथ रहते हैं (ऋ. १.११)। इसने जन्मने ही देवताओं का रक्षण किया। हिलनेवाली पृथ्वी स्थिर की। अंतरिक्ष की व्यवस्था की तथा तू को आधार दिया। अंह को मार कर समसिंधुओं को सुकृत किया। बल से गांधे चूड़ाई। बिजली उत्पन्न की। शंकर को चालीस वर्षों के प्रधान इंद्र निकाला (ऋ. २.१२)। इसे सोम बहुत अच्छा लगता है (ऋ. २. १४)। अंगिरा ने स्मृति की इसलिये इंद्र, बल को मार सका (ऋ. २.१५.८)। इसने सूर्य का चक्र फेंक कर एतश को बनाया (ऋ. ४.१८. १४)।

सोम पीने के लिये इंद्र को निमंत्रित किया जाता था (अपाला तथा तुर्वच देखिये)। इंद्र की उपासना न करनेवालों को, अग्निद कह कर निंदा करते थे (ऋ. ७. १८.१६)। नेम नामक ऋषि ने इंद्र प्रत्यक्ष न दिखाने के कारण, इंद्र नहीं है ऐसा प्रतिपादित किया तब इंद्र स्वयं को प्रमाणित करने, प्रत्यक्ष प्रकट हुआ (ऋ. ८.१००)।

शत्रु—वेदों में इसके अनेक शत्रु हैं। उनका मुख्य दुर्गुण है पानी को रोकना। वे हैं अनर्शनि, अगोव, अशुंद, अहि, अहिसुव, औणैवाभ, अशन, इलीविश, करंज, कुयव,

किवि, सुमरि, दंभीक, धुनि, नसुचि, नामर, पर्णय, पिमु वचिन, वल, चोवर आदि ।

शस्त्रसंभार—इसके शस्त्र वज्र, अद्रि, दधीचि की अस्थि (ऋ. १. ८४. १३), धनुषबाण, माला, फेन, बर्फ आदि हैं ।

यह जगदुत्पादक तथा सृष्टिकर्म निश्चल करनेवाला है । इसकी पत्नी इंद्राणी (ऋ. १०. ८६) । सीता नामक स्त्री का भी उल्लेख है (पा. ग. सू. १७. ९; शची देखिये) । ये अनेकों का पुत्र हुआ था (ऋग्वेद देखिये) ।

पद्महात्म्य—प्रत्येक मन्वंतर में इंद्र रहता है । वह भू; भुवः, स्वः इन तीन लोकों का अधिपति है । सौ यज्ञ कर इंद्रपद प्राप्त होता है (नहुष तथा ययाति देखिये) । यह वज्रपाणि, सहस्राक्ष, पुरंदर तथा मयवान् होता है । प्रवासंश्रुण उसका मुख्य कार्य होता है । प्रत्येक मन्वंतर में इंद्र भिन्न भिन्न हो कर भी उनके गुण तथा कार्य एक से रहते हैं । सप्तर्षि इनके सलाहगार रहते हैं एवं गोधर्व अप्सरायें इनका पार्श्व्य होता है (वायु. १००. ११३-११४) । जब ये जगत की व्यवस्था नहीं कर पाते तब सारे अवतार इनकी मदद को आते हैं (मनु देखिये) । सौ यज्ञ करने पर इंद्रपद मिलता है, इसलिये जब किसी के यज्ञ पूरे होने लगते हैं, तब यह अश्वमेध का श्रौद्धा चुरा कर, विन्न उपस्थित करता है (सगर, पृथु, रघु) । उसी तरह कोई कठिन तपस्या करता है, तो डर के कारण यह अप्सरायें भेज कर, तपभंग करता है । हिरण्यकशिपु, बलि, एवं प्रह्लाद ये तीनों असुरों में से भी इंद्र हुए थे (मत्स्य. ४७. ५२-८९; तारक देखिये) । इस से इसका राजकीय स्वरूप अच्छी तरह से व्यक्त होता है । विशेषतः विशंकु, वसिष्ठ, विश्वामित्र, वामदेव, रोहित, गौतम, ऋषभ, रजि, भरद्वाज, उदारधी, सोम, इंद्रुल तथा अर्जुन इत्यादि प्राचीन तथा अर्वाचीन व्यक्तियों के चरित्र से इंद्र की पूर्ण कल्पना कर सकते हैं ।

पौराणिक कल्पनाएँ— इंद्रविषयक पौराणिक कल्पना निर्मालिन्त विवरण से व्यक्त हो जायेगी । अदिति पुत्र (कश्यप देखिये) । इस का शक्र नामांतर है (भा. ६. ६) । श्रावण माह का सूर्य (भा. १२. ११. १७) । देवताओं का राजा (भा. १. १०. ३) । यही आज का पुरंदर इंद्र है । वर्षा का देव । एक बार गरुड की पीठ पर बैठ कर नाग जा रहे थे । गरुड उड़ कर इतना ऊंचा गया कि, सारे नाग सर्वताप से मूर्च्छित हो कर पृथ्वी पर आ गिरे ।

माता कद्रू ने इंद्र की स्तुति कर, ताप शमनार्थ वर्षा कराया (म. आ. २१.) । भीमव्राडशी व्रत करने के कारण इसे इंद्रस्व मिला (पद्म. सू. २३) । यह दक्ष के यज्ञ में गया था एवं इसने वीरभद्र से पूछा था कि वह कौन है (ब्रह्म. १२९) । मंदार पर्वत के फंस इसने नष्ट किये थे (स्कंद. १. १९. ९) । विश्वधर वणिक् के पुत्र के मरने पर वह शोक करने लगा । इसे देख कर यम ऊत्र कर अपना कार्य छोड़, तप करने लगा । इस कारण पृथ्वी पर पापी लोक अत्यधिक पापकर्म करने लगे । उन्हें मृत्यु नहीं आती थी । इससे पृथ्वी व्रस्त हो कर इंद्र के पास गयी । इंद्र ने यम की तपस्या भंग करने, गणिका नामक अप्सरा भेजी, पर उससे कोई लाभ न हुआ । तब पिता ने उसे समझाया (ब्रह्म. ८६) । एक धार कश्यप पुत्रकामेष्टि यज्ञ कर रहा था । देवतादि उसकी सहायता कर रहे थे । वालखिल्य तथा इन्द्र भी मदद कर रहे थे । इंद्र जल्दी जल्दी जा रहा था सारे वालखिल्य मिल कर एक समिध ले जा रहे थे । मार्ग में एक गाय के खुर जितने गधु में संचित पानी में गिर कर, ये डुबने उतराने लगे । यह देख कर इंद्र तिरस्कारपूर्वक हँसा । यह देख कर वालखिल्य क्रोधित हो, दूसरे इंद्र को उत्पन्न करने के हेतु तप करने लगे । तब इंद्र कश्यप की शरण में आया । उसके माध्यम से वालखिल्यों का क्रोध शांत कराया (मध्यम तथा वालखिल्य देखिये; म. आ. २६) ।

गरुड से संबंध—गरुड ने अपनी माँ को दास्यबंधनों से मुक्त करने के लिये माता के दास्य के बदले नागों को अमृत ला देने का वचन दिया, तथा वह अमृत लाने के लिये स्वर्ग लोक गया । गरुड अमृत लिये जा रहा है यह देख कर, इंद्र ने वज्र फेंका पर उसका कोई असर न हुआ । गरुड की शक्ति देख कर इंद्र ने उससे मित्रता करने की सोची । तब गरुड ने उसे बताया, कि यदि अमृत वापस चाहते हो, तो उसे बड़ी युक्ति से चुराना । इंद्र ने युक्ति से काम लिया तथा अमृत फिर वापस ले गया और गरुड को वर दिया कि सर्प तेंगे भक्ष्य होंगे (म. आ. ३०) ।

महाशनिवध—हिरण्यपुत्र महाशनि इंद्र को जीत कर इंद्राणी सह उसे बांध कर लाया । महाशनि वरुण का दामाद था, इसलिये देवताओं ने वरुण से कह कर इंद्र को छुड़ाया । इंद्राणी के कहने पर इंद्र ने शिव की स्तुति की । शिव ने विष्णु की स्तुति करने को कहा । इंद्र ने विष्णु की स्तुति की । फलतः विष्णु तथा शिव के अंश से एक पुरुष गंगा के जल से उत्पन्न हुआ, जिसने महाशनि का

वध किया। इंद्र हमेशा उसके पीछे पीछे रहने लगा। इस कारण एक बार इंद्राणी से इसका प्रेम कलह हुआ था (ब्रह्म. १२९)।

त्रिपुर उत्पत्ति—वाचदनि मुनि की स्त्री सुकुंदा स्वर्मांगद राजा पर मोहित थी। इंद्र ने स्वर्मांगद का रूप धारण कर उससे संभोग किया। आगे इसी वीर्य से सुकुंदा को गुल्मद उत्पन्न हुआ। गुल्मद का पुत्र त्रिपुरासुर। त्रिपुरासुरादिकों से गणेश ने इंद्र को बचाया (गणेश १. ३६-४०)।

सुकर्माख्यान—सुकर्मा के हजार शिष्य अनध्याय के दिन अध्ययन करते थे, इसलिये इंद्र ने उनका वध किया। सुकर्मा ने प्रायोपवेशन प्रारंभ किया तब इंद्र ने उसे बर दिया, कि इन हजारों के साथ दो शिष्य और भी उत्पन्न होंगे जो सुर होंगे। ये ही धौम्यजिन एवं हिरण्यनाम (कौशिल्य) हैं (वायु. ६१. २९-३३; ब्रह्माण्ड. ३५. ३३-३७)।

यज्ञहविर्भाग—च्यवन को अश्विनीकुमारों ने दृष्टि दी तथा जरारहित किया, इसलिये शयाति ने उन्हें हवि दिलवाने का प्रयत्न किया। उस समय इंद्र ने बहुत बाधाएं डालीं, परंतु इंद्र की एक न चली, क्यों कि, जब वह वज्र मारने लगा, तब च्यवन ने उसके हाथ की हलचल बंद करा दी, तथा उसे मारने के लिये मद नामक असुर उत्पन्न किया। तब इंद्र उसकी शरण में गया, तथा अश्विनी-कुमारों को यज्ञीय हवि प्रप्त करने का अधिकार दिया (म. व. १२५-१२६)।

मरुत्तःख्यान—मरुत्त ने एक बार यज्ञ किया। उसने प्रथम बृहस्पति को बुलया परंतु इंद्र के यहां जाना है, ऐसा कह कर उसने कहा बाद में आऊंगा। तब मरुत्त ने उसके भाई संवर्त को निमंत्रित कर यज्ञ प्रारंभ किया। बृहस्पति को जब यह पता चला तब उसने इंद्रसे कहा कि, यह यज्ञ ही नहीं होने देना चाहिये। इंद्रने तुरंत धावा बोल दिया, परंतु संवर्त ने अपने प्रभाव से उसे विकलंग कर दिया। इंद्र ने वहां आने के पश्चात् स्वतः सदस्य का काम किया (म. आश्व. १०)। इनने मंगास्वन को स्त्री बना दिया (मंगास्वन देखिये)।

सागरमंथन—दुर्वासा ऋषि ने इसे एक माला दी थी। इंद्र के द्वारा उसका अनादर हुआ। 'तू ऐश्वर्य भ्रष्ट होगा,' ऐसा उसे शाप मिला। इसी समय अपने घर आये गुरु बृहस्पति का इसने उत्थापन द्वारा मान नहीं किया, इसलिये बृहस्पति दापस चले गये। बृहस्पति के आने के

कोई चिन्ह न देख, नारद ने उसे बताया कि, तू शीघ्र ही ऐश्वर्यभ्रष्ट होगा। बलि इस समय इस पर आक्रमण करने निकला। इंद्र का सारा वैभव जीत कर वह ले जा रहा था। जाते जाते राह में वैभव समुद्र में गिर पड़ा। इंद्रादि देवताओं ने यह बात विष्णुजी से कही। विष्णु भगवान ने कहा कि, बलि को साम तथा मधुर वचनों में सुला कर उसे समुद्रमंथन करने के लिये उद्युक्त करो। इंद्र बलि के पास जाताल में गया। वहां शरणागत की तरह कुछ समय रह कर अवसर पा, बड़ी युक्ति से उसने बलि से समुद्रमंथन की बात कही। बलि को समुद्र-मंथन असंभव लगता था। तब समुद्रमंथन किस तरह हो सकता है इस के बारेमें आकाशवाणी हुई। बलि समुद्रमंथन के लिये तैयार हो गया। मंत्राञ्जल को मथनी बगने के लिये बुलवाया, तथा वह तैयार भी हो गया। तब विष्णु जी ने उसे गहड़ पर रख कर लाया। पेरुवत, उच्चैःश्रवा, पारिजातक तथा रंभादि समुद्र से निकाले। चौदह रत्नों में से चार रत्न इसने लिये (म. ६. ९; स्कंद १. १. ९)।

वृत्र उत्पत्ति—बृहस्पति लौट नहीं आ रहे थे, इसलिये इंद्र ने विश्वरूपाचार्य को उसके स्थान पर नियुक्त किया। उसकी मां दैत्यकन्या थी, इसलिये विश्वरूप का स्वामाविक सुभाव दैत्यों की ओर था। देवताओं के साथ साथ दैत्यों को भी वह हविर्भाग देता था। इंद्र को यह पता लगते ही उसने विश्वरूप के तीनों सिर काट डाले (विश्वरूप देखिये)। अपना पुत्र मार डाला गया यह देख त्वष्टा ने इंद्रका वध करने के लिये वृत्र नामक असुर उत्पन्न किया तथा हविर्भाग उभे न मिले ऐसा प्रयत्न किया। उसने इंद्र पर कई बार चढ़ाई की तथा कई बार उसे परास्त किया। एक बार तो उसने इंद्र को निगल भी लिया। इसका कारण यह था कि, इंद्र एक बार प्रदोषव्रत में महादेव जी की पिंडी खा गया था (स्कंद. १. १. १७)।

वृत्रवध—वृत्रासुर ने इंद्र को हराया इस लिये गुरु के उपदेशानुसार इंद्र ने साध्रमती के तट पर दुर्धर्षेश्वर की प्रार्थना की। तब शंकर ने इसे पाशुपतास्त्र दिया, जिससे उसने वृत्रासुर का वध किया (पद्म. उ. १५३)। पराभव हुआ तब इंद्र शंकर की शरण गया। शंकर ने उसे वज्र दिया जिससे उसने वृत्रासुर का वध किया (पद्म. उ. १६८)। इंद्र ने वृत्रासुर के वध के लिये दधीचि से अस्थियाँ मांगी। विश्वकर्मा ने उससे वज्र तैयार किया।

षण्डामकं, वरुणी तथा त्वष्टा इन दैत्ययाजकों को इंद्र ने जला कर मारा (ब्रह्माण्ड ३.१.८५; दधीचि देखिये)।

ब्रह्महत्या मुक्ति—विश्वरूप, वृत्रासुर तथा नमुचि इनके वध के कारण, इंद्र को ब्रह्महत्या लगी। इसलिये उर कर वह कहीं तो भी कमल के अंदर छुप गया। इस समय वो इंद्र हुए। नदुष तथा ययाति किन्तु उनका शीघ्र ही पतन हुआ (स्कंद १.१.१५)। यह ब्रह्महत्या किस तरह दूर हुई, इसका वर्णन पुराणों में भिन्न प्रकार से दिया गया है। ब्रह्महत्या के चार भाग किये गये। वे भूमि, वृक्ष जल एवं स्त्री को एक एक बरदान दे कर दिये। पृथ्वी पर आप ही आप गहड़ों का भरना तथा उस पर क्षार कर्कट के रूप में जमना, वृक्ष जहाँ से दूटे वहाँ अंकुरों का फूटना तथा गोद का निकलना, जिसमें पानी मिलाया जाये उसका बटना एवं उसमें फेन आना, स्त्रियों को गरोदर रहते हुए भी प्रसूति काल तक संभोग करने की क्षमता परंतु रजो-स्थान होना, ये बरदान तथा ब्रह्महत्या के परिणाम है (भा. ६.९.; स्कंद १.१.१५; लिङ्ग. २.५१)। 'रक्षांसि ह वा' इस मंत्र में इस संबंध में निर्देश किया गया है। ये पातक विश्वरूप की हत्या का है। परंतु पद्मपुराण में यह विवरण वृत्रासुरहत्या के पातक पर दिया गया है (३.१६८)। इसी पुराण में इन पातकों के निवारणार्थ इसने तप किया तथा पुष्कर, प्रयाग, वाराणसी आदि तीर्थों पर स्नान किया ऐसा दिया गया है (पद्म. भू. ११)। यह पातक नष्ट हो, इसलिये इसने अश्वमेध यज्ञ किया। नमुचि के वध से लगी ब्रह्महत्या के क्षमनार्थ अरुणा पर स्नान किया (म. श. ४२.३५)। इंद्रागम तीर्थ (इसके आने के कारण यह नामकरण हुआ) में स्नान करने से इसके पाप दूर हुए (पद्म. उ. १५१)। त्रिष्टुथा एकादशी के व्रत के कारण, इसके पाप दूर हुए (पद्म. उ. ३४; अहल्या देखिये)।

पुंजयवाहन—एक बार देवासुरसंग्राम हुआ जिसमें देवताओं को असुरों पर कब्जा पाना कठिन लगा तब सखेवंशी पुरंजय को, मदद के लिये उन्होंने ने निमंत्रित किया। पुरंजय ने कहकर भोजा कि, यदि इंद्र मेरा वाहन बने तो मैं आऊंगा। इंद्र ने पहले तो आनाकानी की, पर अंत में मान गया। तथा महावृषभ का रूप धारण किया (भा. ९. ६)। हिरण्यकशिपु ने स्वर्ग जित लिया तथा देवताओं को कष्ट दिये, इसलिये विष्णु ने नृसिंह का रूप धारण कर उसका वध कर के, इंद्र को स्वर्ग वापस दिया। शत्रुओं से कष्ट न होवे, इसलिये इंद्र ने

यमुना के तट पर हजारों यज्ञ किये, जिससे ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश प्रसन्न हुए (पद्म. उ. १९९)। प्रह्लाद आदि दैत्यों ने एक बार इंद्र का स्वर्ग जीत लिया, तब रजि ने उसे वापस दिलवाया।

जयापजय—इस उरकार के लिये, तथा प्रह्लादादि दैत्यों से रक्षा होती रहे, इसलिये इसने उसे ही इंद्रपद दे दिया परंतु आंग चल कर, उसके पुत्र इंद्रपद वास नहीं दिये, बृहस्पति ने अभिचारविधान से उनकी बुद्धि म्रष्ट की। अष्टबुद्धि के कारण वे अश्रवल हो गये हैं ऐसा देख कर इंद्र ने उनका वध किया (भा. ९. १७; मत्स्य. ४४; ब्रह्म. ११)। पुराणों में नदुष कत्र इंद्र हुआ इस संबंध में मतभेद होने के कारण, उसका निश्चित समय ठीक समझ में नहीं आता। इंद्र एक बार बलि को जीत कर उत्थ्व के आश्रम में गया। वहाँ उसकी सुंदर स्त्री को शैत्या पर सोये देख, उसने उससे जबरदस्ती संभोग किया। स्त्री गरोदर थी। अंतर्गत गर्भ ने अपना पतन न हो इसलिये योनिद्वार आगे पैरों द्वारा अंदर से बंद कर लिया, इस कारण इंद्र का वीर्य भरती पर गिरा। यह अपने वीर्य का अपमान हुआ देख, इंद्र ने गर्भ को जन्मांध होने का शाप दिया (दीर्घतमन् देखिये)। परंतु इसके कारण हतवीर्य होकर, इंद्र मेरु की गुफा में जा लिया। इस समय दैत्यों ने बलि को इंद्रासन पर बैठाया। सारे देवताओं ने गुफा के पास जा कर उसे वापस लाया तथा बृहस्पतिद्वारा अक्षय्यवृत्तीय व्रत उससे करवा कर, उसे पूर्ववत् ऐश्वर्यसंपन्न बनाया (स्कंद. २. ७. २३; बृहस्पति देखिये)।

चित्रलेखा तथा उर्वशी को केशी दैत्य भगा ले गया। पुरुरवस् ने उन्हें छुड़ाया तथा उर्वशी इंद्र को दी (मत्स्य. २४. २५)। कितव नामक एक दुराचारी मनुष्य मृत हुआ। मरने समय उसे अपने दुराचार पर पश्चात्ताप हुआ, इसलिये यम ने उसे तीन घंटे के लिये इंद्रपद दिया। उतने समय में इसने सारी चीजें कर्षि आदि लोगों को दान में दीं। इंद्र जब फिर से इंद्रपद पर आया, तब उसने यम से सारी चीजें वापस माँगा लीं। कितव आंग चल कर बलि हुआ (स्कंद. १. १. १९)। हिरण्यकशिपु तथा हिरण्यकक्ष का वध इंद्र ने करवाया, इसलिये दिति ने इंद्रपुत्र निर्माण करने की तयारी चाळ की। इंद्र ब्राह्मणवेश में उसकी सेवा करने लगा। योग्य अवसर पा कर उसने दिति के गर्भ के उनपचास टुकड़े किये। तदनंतर गर्भ के बाहर आ कर सारी बात उसे

व्रतार्थी । तब उसने इनकी नियुक्ति विभिन्न वायुओं पर करवा ली, तथा वंधुभाव से उनसे व्यवहार करने का वचन ले कर इसे छोड़ दिया (मरुत् देखिये; मत्स्य. ७-८) । दिति ने वज्रांग नामक पुत्र उत्पन्न कर, उसे इंद्र को मारने भेजा । उसने इंद्र को बांध कर लाया तथा उसे मारने वाला ही था कि, ब्रह्माजी ने बीच में पड़ कर मधुर शब्दों द्वारा उसे रोका (वज्रांग देखिये) । मेघनाद ने इंद्र को पराजित किया (इंद्रजित् देखिये) ।

इंद्रने वज्रांग स्त्री वज्रांगी को कष्ट दिये । इसलिये वज्रांग ने उससे तारक नामक पुत्र उत्पन्न कर, उसे इंद्र पर आक्रमण करने भेजा । उसने इंद्र से बहुत समय तक युद्ध किया । इंद्र ने जंभासुर को पाशुपतास्त्र से मारा । तारक ने सब देवताओं को बांध कर छाया बाकी लोगों ने वेदों का रूप धारण किया । उनके हावभावों से संतुष्ट हो कर, तारक ने सब देवताओं को छोड़ दिया । इसी समय तारक ने इंद्रपद का उपयोग लिया था (स्कंद १.१. १५-२१) । गौतम की स्त्री अहल्या ने उत्तक को लौशास राजा के पास से कदककुंडल लाने को कहा । राह में इंद्र ने शृपभासक पुरुष के रूप में उसे दर्शन दिया । उत्तक को शृपम का पुरीषपान करने को कहा । उत्तक को नाग-लोक में अश्वारोही बन कर फिर से दर्शन दिये । अश्व का अपानद्वार उससे फुंकवाकर वायुकि आदि नागों को शरण ला कुंडल फिरसे प्राप्त करा दिये । गुरु के घर जल्दी पहुंच जावे इसलिये इंद्र ने उत्तक को वही घोड़ा दिया जिसके कारण क्षणार्ध में वह गुरुयह पहुंच गया । इस कथा में शृपम माने अमृतकुंभ तथा उसका पुरीष, अमृत है । वह पुरुष इंद्र एवं अश्व अग्नि है (म. आ. ३) । मुक्ष्य को इसने पूर्णायु किया इसलिये गरुड उस पर नाराज हुआ । विष्णुजी की मध्यस्थता ने इस का पक्ष समझाया गया (गरुड देखिये) । एक बार इंद्र तथा सूर्य भ्रमण कर रहे थे । तब एक सरोवर में स्नान करने के कारण, स्त्री बने ऋक्षरज पर यह मोहित हुआ तथा उसके केशों पर इंद्र का कर्षण जा गिरा । इस कारण तत्काल एक पुत्र उत्पन्न हुआ । वही वाली है (बालिन देखिये) । राम-रावण युद्ध के समय जब रावण रथारूढ़ हो कर आया तब इंद्र ने सारथीसहित अपना रथ भेजा था (म. व. २७४) ।

यह इमर्षी के स्वयंवर में गया था (म. व. ५१; नल देखिये) । इंद्र के प्रसाद से कुंभा को अर्जुन उत्पन्न हुआ (म. आ. १०.६९) । नंदादि गोप लोगों द्वारा कृष्ण

ने गोवर्धनयाग करा कर इंद्र का अपमान किया (भा. १. ३-२८; १०. २५. १९; ब्रह्म. १८८) । अर्जुन से मिल कर दिव्यास्त्र प्राप्त कर लेने को कहा (म. व. ३९.४३) । कर्ण के शरीर पर कवच कुंडल होने के कारण वह अजिक्य तथा अवध्य है ऐसा जान कर ब्राह्मण-रूप से उसके पास जा, उसकी दानधरता से संतुष्ट हो कर, उसे इसने एक अमोघ शक्ति दी (कर्ण देखिये) । सारे देवता इंद्र को छोड़ कर दूसरे को इंद्रपद दे रहे हैं यह देख इंद्राणी ने बृहस्पति को शपथ दिया कि, तेरे जीने जी इंद्र तेरी स्त्री से एक पुत्र उत्पन्न करेगा । इस कृत्य के कारण गुरुपत्नी समागम का इमे दोष लगा (स्कंद. १.१. १९) ।

इस पातक का क्षालन मृत्यु के सिवा होना संभव नहीं इस लिये, मृत्यु होने तक पानी में डूब कर रहने के लिये बृहस्पति ने कहा (स्कंद. १.१.५१) ।

पुराणों में स्थान—पुराणों में इंद्र को प्रथम स्थान नहीं है परंतु विमूर्ति के पश्चात् है । यह अंतरिक्ष तथा पूर्वे दिशा का राजा है । यह विजली चलाता तथा फेंकता है, इंद्रधनुष सज्जित करता है । सोम रस के लिये इसे नीत्र आसक्ति है । असुरों से युद्ध करता है । असुरों का इमे मय लगा रहता है ।

अधिष्ठातार—यह रूपवान है । श्वेत अश्व या हाथी पर वज्र धारण कर सवारी करता है । प्रत्यक्ष रूप में इसकी पूजा नहीं होती है । शक्रश्वज्ञोत्थान त्र्योहार में इसकी पूजाविधि है । इसका निवासस्थान स्वर्ग, राजधानी अमरावती, राजबाड़ा वैजयंत, वाग नंदन, गज ऐरावत, घोड़ा उच्चैःश्रवा, रथ विमान, नारथि मातली, धनुष्य शक्रधनु एवं तलवार परंज है ।

परस्पर संवाद—बृहस्पति ने बताया कि, सत्र गुणों का अंतर्भाव साम में होता है (म. शां. ८५.३ कु.) उसका उपयोग शत्रु के साथ करना चाहिये (म. शां. १०४) । प्रह्लाद ने अपने शीलबल से इंद्रपद फिर प्राप्त किया । उस समय इंद्र ने मोक्षप्राप्ति का श्रेष्ठ उपाय बताया । इससे भी श्रेष्ठ ज्ञान है ऐसा शुक ने बताया तथा उससे भी अधिक श्रेष्ठ शील है ऐसा प्रह्लाद ने बताया (म. शां. १२४-१२९ कु.) । इसका एक बार महालक्ष्मी से संवाद हुआ (म. शां. २१८ कु.) । नमुचिमुनि ने भगवान के चित्तन से मिलनेवाला श्रेय इसे बताया (म. शां. २१६) । इसका महाबलि से भी संवाद हुआ था (म. शां. २१८ कु.) । मांधाताने इसे राजधर्म बताया (म. शां. ६४ कु.) ।

युद्ध में मृत्यु अर्थात् स्वर्गप्राप्ति ऐसा अंबरीष ने बताया (म. शां. १९ कुं.)। अग्नि ने इसे ब्राह्मण तथा पतिव्रता का महत्त्व बताया (म. अनु. १४ कुं.)। शंकर राजर्षि ने इसे ब्राह्मणमाहात्म्य बताया (म. अनु. ७१ कुं.)। प्रदोसनीय क्या है यह एक युक्त पक्षी ने बताया (म. अनु. ११ कुं.)। किसी भी प्रकार की नौकरी के लिये आवश्यक गुण मातलि ने इसे बताया (म. अनु. ११ कुं.)। धृतराष्ट्र गंधर्व के रूप में, गौतम ने इस से संवाद किया (म. अनु. १५९ कुं.)। ब्राह्मण्यप्राप्त्यर्थे इंद्र को उद्देशित कर, मतंग ने तप किया, जिससे उसे ब्राह्मण्य प्राप्त हुआ (म. अनु. ८.१-१६ कुं.)।

कृष्णसंबंध—कृष्ण, नरकासुर को मार कर सत्य-भामासहित नंदनवन पर से जा रहा था, तब पारिजातक वृक्ष उसे दिखाई पड़ा, जिसे वह उखाड़ कर ले गया (ह. वं. २.६८)। उसने इंद्र से वंद वृक्ष पहले मांगा तब इंद्र आनाकानी करने लगा। इंद्र ने अयतसहित कृष्ण से युद्ध किया परंतु कृष्ण ने इसे पराजित कर दिया तथा पारिजात वृक्ष ले गया (ह. वं. २.७५)। ऐसी परस्पर विरोधी घटना एक ही ग्रंथ में दी है। इसे जयंत को छोड़, ऋषभ एवं मीढुप ऐसे दो पुत्र थे (भां. ६.१८.७)।

ग्रंथनिर्मिति—इंद्र ने ब्रह्मवृत्त राजनीतिशास्त्र संबंधी 'वैशालाक्ष' ग्रंथ को संक्षिप्त कर, 'ब्राह्मदंतक' नामक पांच हजार अध्यायों का संक्षिप्त ग्रंथ बनाया (म. शां. ५.९.८५-८९)।

वैयक शास्त्र में भी इंद्र के नाम पर, अनेक औपधियों के प्राठ हैं।

२. वायु का शिष्य। इसका शिष्य अग्नि (वं. ब्रा. २)।

इंद्र मुष्कवत्—सुततद्रष्टा (ऋ. १०.३)।

इंद्र वैकुण्ठ—सुततद्रष्टा (ऋ. १०.४८-५०)।

इंद्रजानु—रामचंद्रजी की सेना का एक वानर। यह ११ करोड़ वानरों का स्वामी था।

इंद्रजित्—लंका के राजा रावण तथा मंदोदरी का ज्येष्ठ पुत्र। नाम मेघनाद, तथापि इंद्र को जीतने के कारण, इसका इंद्रजित् नाम पड़ा। इसी नाम से इसका उल्लेख सर्वत्र किया जाता है (म. वं. २.७०.१२; आ. रा. सा. ५३; वा. रा. उ. २९-३०)। जन्मते ही इस ने मेघ सी गर्जना की थी, इसलिये मेघनाद नाम रखा गया था (अध्या. रा. उ. १२)।

प्रा. च. १०]

यज्ञ—मेघनाद स्वभावतः भयंकर था। युवक होते ही इसने शुक्राचार्य की सहायता से निकुंभिला में अदधमेध तथा अग्निष्टोम, बहुसुवर्णक, राजसूय, गोमेध, वैष्णव, माहेश्वर ये सात यज्ञ किये जिससे उसे शिवप्रसाद से दिव्यरथ, घनुष्यवाण, शम्भू, तामसी माया इत्यादि प्राप्त हुई। इसने और भी यज्ञ करने का मन में विचार किया था, परंतु रावण देवताओं से द्वेष करता था, इसलिये देवताओं को हविर्भाग देना इष्ट न था। इस कारण इंद्रजित् को और यज्ञ करने न देने (वा. रा. उ. २५)।

इंद्र पर जय—देवताओं को जीतने के लिये रावण स्वर्गलोक गया था। वहां रावण के मातामह का वध हुआ तथा पराजय के चिन्ह दिखाई देने लगे। मेघनाद ने आगे बढ़ कर युद्ध किया। पहले तो उसने इंद्रपुत्र जयंत को पराजित किया तथा इंद्र को शम्भूस्त्रों से जर्जर कर, उसे बांध लिया तथा लंका ले आया। सारे देवता ब्रह्मदेव को साथ ले कर लंका गये तथा मेघनाद को, इंद्र को छोड़ देने के लिये कहने लगे। तब इसने अमरत्व मांगा। आकार-वाले सारे पदार्थ नाशवान हैं इसलिये अमरत्व दुर्लभ है ऐसा ब्रह्मदेव ने कह कर दूसरा वर मांगने को कहा, इस पर उसने वर मांगा—“जब भी मैं अग्नि में हवन करूं तब अग्नि में से अश्वसहित दिव्य रथ निकल करे तथा जब तक उस रथ पर आरूढ़ रहूं तब तक मैं विजयी एवं अमर रहूं”। यह वर दे कर ब्रह्मदेव इंद्र को मुक्त करा कर इंद्रपद पर स्थापित किया। उस दिन से मेघनाद का इंद्रजित् नाम पड़ा (वा. रा. उ. २९-३०)।

हनुमान से युद्ध—रावण ने सीता को लंका में लया। तब उसका पता लगाने के लिये राम की आज्ञा से मारुति लंका में आया। उसने अशोकवन विखंड कर, रावण पुत्र अक्ष तथा अनेक राक्षसों को मारा। रावण के दुःख के निवारणार्थ इंद्रजित् ने वहाँ जा कर, मारुति को ब्रह्मास्त्र से बद्ध कर रावण की सभा में लाया। वास्तव में ब्रह्मास्त्र का मारुति पर कुछ भी परिणाम नहीं हुआ था यह बात इंद्रजित् को भी समझ गयी थी। मारुति ने रावण की सभा देखने, तथा उसका भाषण सुनने के उद्देश्य से मैं बद्ध हुआ हूँ ऐसा दर्शाया। धर्मबल की सहायता से इंद्रजित् ने यह भी जान लिया था कि, मारुति को अमरत्व प्राप्त है। रावण की सभा में हनुमान को जल देने की सलाह उसके मंत्रियों ने दी परंतु विभीषण ने सलाह दी कि, वानरों को पूंछ प्रिय होती है, अतः हनुमानजी की पूंछ जलाई जाये (वा. रा. सुं. ४८.५२)।

विभीषण की भर्त्सना—विभीषण ने रावण को सलाह दी कि, सीता को राम के पास पहुंचा कर राम से मित्रता कर लें। यह बात किसी को नहीं रुची। उस समय इंद्रजित् ने विभीषण की बहुत भर्त्सना की। इस पर विभीषण ने इंद्रजित् को युद्ध से परावृत्त होने का उपदेश दिया।

नागपाश—सीता की खोज लगाने पर मारुति किर्किधा गया। रामचंद्रजी सुग्रीव की वानरसेनासहित लंका आये तब इंद्रजित् ही प्रथम युद्ध करने आगे आया। अंगद से उसका युद्ध हुआ, जिसमें यह अदृश्य हो कर लड़ता रहा तथा रामलक्ष्मण को नागपाश में बांध कर, सारी वानर सेना को मूर्च्छित कर लंका चला गया (वा. रा. यु. ४५)।

युद्ध—देवांतक, नरांतक आदि रावणपुत्र, कुंभकर्ण, महापार्श्व, महोदर इ. जब मारे गये, तब रावण बहुत दुःखित हुआ। उस समय इंद्रजित् उसे सांत्वना दे कर युद्ध करने चल पड़ा। पहले यह शलाखों को अभिमंत्रित करने निकुंभिला गया। युद्धभूमि पर आ कर राम की सेना को गुप्त रूप से कष्ट देने लगा तथा इस युद्ध में उसने सडसठ करोड़ वानरों को एक प्रहर में मार डाला राम एवं लक्ष्मण को मूर्च्छित कर, लंका वापस चला गया (वा. रा. यु. ७३)।

मायावी युद्ध—मकराक्ष की मृत्यु के बाद, रावण ने इसे फिर से, युद्ध करने के लिये भेजा। राम की सेना को बहुत कष्ट दिये। मायावी सीता को निर्माण कर उसे रथ पर बैठाया, जो दौनवाणी में राम राम कह रही थी। फिर उसका उसने वध किया, जिससे राम तथा अन्य लोग दुःखित हुए (वा. रा. यु. ८१)।

द्विपथ—विभीषण ने सबको सांत्वना दी कि, यह सारी घटना मायावी है। तत्पश्चात् इंद्रजित् निकुंभिला जा कर हवन करने लगा। इस कार्य में कोई विघ्न उपस्थित न हो इसलिये उसने बहुत से राक्षसों को रक्षा करने को रखा। विभीषण की सूझसानुसार रामचंद्रजी ने लक्ष्मण तथा हनुमान को, वानर सेना दे कर, निकुंभिला भेजा। उन लोगों ने राक्षसोंका संहार कर यज्ञभंग किया। इंद्रजित् का यज्ञ पूर्ण होनेवाला ही था अतः उसने ध्यान नहीं दिया, परंतु जब वानरों ने उसके शरीर को छिन्नविच्छिन्न करना प्रारंभ किया, तब विवश हो कर वह क्रोधित हो कर उठा, तथा वानरों को उसने मार भगाया। अदृश्य होने के लिये यहाँ उसका वस्तुश्च था। उस बाजू वह जाने लगा, तब विभीषण ने हनुमानादि वानरों को

उसे रोकने के लिये कहा। विभीषण के कारण यह सारा हो रहा है यह जान कर, इंद्रजित् उसका वध करने के लिये प्रवृत्त हुआ। स्वकीयों से युद्ध करने प्रवृत्त हुए विभीषण की उसने निर्भर्त्सना की।

वध—यह संवाद चल ही रहा था कि, लक्ष्मण ने बीच में पड़ कर इंद्रजित् से युद्ध चाह कर दिया। पहले सारथी को मार गिराया। तब इंद्रजित् स्वतः सारथ्य तथा युद्ध दोनों करने लगा। उसी समय प्रमाथी, रमण, शरभ तथा गंधमादन इन चार वानरों ने इसके चार घोड़े मार डाले। तब इंद्रजित् दूसरे रथ पर बैठ कर आया देख विभीषण ने लक्ष्मण को सावधानी से युद्ध करने को कहा। इंद्रजित् तथा लक्ष्मण का वनामान युद्ध तीन दिनों तक हुआ। इंद्रजित् मरता नहीं है इसलिये लक्ष्मण ने एंड्राख हाथ में ले, प्रतिज्ञा की कि यदि श्रीराम धर्मात्मा तथा सत्य प्रतिज्ञा होंगे, तो इस व्रण से इंद्रजित् मरेगा। यह कह कर लक्ष्मण ने अस्त्र छोड़ा जिससे इंद्रजित् का किराट-कुंडल्युक्त सिर जमीन पर आ गिरा (म. व. २७२-२७३)। राक्षस सेना पीछे हट गयी तथा भाग कर लंका में जा इंद्रजित् की मृत्यु का समाचार रावण को दिया। वानरों ने उसका सिर उठा लिया और राम को दिखाने के लिये मुवल पर्वत की ओर ले गये (वा. रा. यु. ८६-९२)। सासससुर की आज्ञा से इंद्रजित् की स्त्री सुलोचना ने सहगमन किया (आ. सार. ११)।

२. दनुपुत्र वानरों में से एक।

इंद्रजिह्व—रावणपक्ष का राक्षस (वा. रा. सु. ६)।

इंद्रतापन—करयप तथा दनु का पुत्र।

२. वरुण की सभा का एक असुर (म. स. ९)।

इंद्रदत्त—एक स्मृतिकार। इसने इंद्रदत्त स्मृति की रचना की है (C. C.)।

इंद्रद्युम्न—एक राजर्षि (म. स. ८.१९)। पुण्य समाप्त हो जाने के कारण मृत्युलोक में आया, तथा अपनी कीर्ति नष्ट हुई या नहीं, यह जानने के लिये माकंडेय, हिमालय पर रहनेवाले प्रावारकण उलूक, इंद्रद्युम्न सरोवर के नाडीजेत्र वक तथा उसी सरोवर में रहनेवाले अकूपार कछुवे की तरह के एक से एक वृद्ध लोगों के पास जा कर उसकी कीर्ति उन्हें मात्स्य है या नहीं यह पूछा। अंत में अकूपार कछुवे ने बताया कि, इंद्रद्युम्न की कीर्ति एक बड़े यज्ञकर्ता के नाम प्रसिद्ध है। कीर्ति के रहते, एक मनुष्य का अस्तित्व रहता है यह बताने के लिये माकंडेय ने यह कथा पांडवों को सुनाई (म. व. १९१)।

२. कृतयुग का विष्णुभक्त राजा। इसकी राजधानी उज्जयिनी थी। यह ओढ़ देश के पुरुषोत्तम क्षेत्र में जगन्नाथ जी के दर्शन के लिये गया, तत्र जगन्नाथ रेत में गुप्त हो गये। तब यह नीलद्रि पर जा कर प्रायोपवेशन करनेवाला था कि, दर्शन होगा, ऐसी आकाशवाणी हुई। इसने अश्वमेध कर नृसिंह का उत्कृष्ट मंदिर बनवाया। इसने नारद ने लायी हुई नृसिंह की मूर्ति की स्थापना ज्येष्ठ शुद्ध द्वादशी के दिन स्वाति नक्षत्र के समय की। राजा को स्वप्न में नीलमाधव के दर्शन हुए। आकाशवाणी हुई कि, समुद्र में जड़ वाली एक सुगंधित वृक्ष की चार मूर्तियां बनाओ १. विष्णु, २. बलराम, ३. सुदर्शन (रक्तवर्ण), ४. सुभद्रा (केशरिया), तदनुसार वै. शु. अष्टमी को पुण्यनक्षत्र के समय उसने मूर्तियों की स्थापना की (स्कंद. २.२.७-२९)। समुद्र पर से बह कर आने वाली लकड़ियों में से विशेष महत्वपूर्ण लकड़ियों से मूर्ति बनाने के लिये इसे दृष्टांत हुआ। एक लकड़ी से कृष्ण की काले रंग की, बलराम की सफेद रंग की तथा सुभद्रा की पीले रंग की मूर्ति बना कर, इसने जगन्नाथपुरी में उनकी स्थापना की (नारद. २.५४; ब्रह्म. ४४-५१)।

३. मगध देश का राजा। इसकी स्त्री का नाम अहल्या। वह इंद्र नामक ब्राह्मण के साथ व्यभिचार करती थी। उसे अनेक दंड दिये। अंत में उसका स्थूल शरीर जला देने पर भी, उसकी मानसिक तन्मयता नष्ट नहीं हुई (यो. वा. ३. ८९-९०)।

४. पांडव देश का राजा। यह एक बार तप कर रहा था तब वहां अगस्त्य ऋषि आये परंतु ध्यानस्थ राजा उन्हें देख न सका इस कारण, मुनि को क्रोध हुआ। उसने, 'तू मत्त हो गया है इसलिये मद्रोन्मत्त हाथी हो' ऐसा उसे शाप दिया जिसे सुन कर राजा ने उनकी प्रार्थना की। तब उसने उद्देश्य दिया कि, मगर जब तुझे पानी में पकड़ेगा तब विष्णु के द्वारा तेरी मुक्ति होगी। देवल मुनि के शाप से हुहु नामक गंधर्व त्रिकूट पर्वत के सरोवर में मगर बनकर रहता था। उसने इस हाथी को पानी में पकड़ा। विष्णु ने तब उस मगर को मार कर हाथी को मुक्त किया (पद्म. उ. १३२; भा. ८-४; भा. रा. सार. ९)।

५. (सो. निम्नि.) इसे इंद्रद्युम्न नामक एक पुत्र था।

६. स्वामी के पक्ष का एक क्षत्रिय। रक्षिणीस्वयंवर के समय कृष्ण ने इसे सुदर्शन चक्र से मारा (म. स. ६१. ६ कुं.)।

७. धर्मराज जब ब्रह्मदाल्य के यहां गया था तब उसने अन्य ब्राह्मणों सहित इसका तन्मान किया। पांडव इस समय द्वैत वन में थे (म. व. २७.२२)।

८. विष्णु पुराण के अनुसार नामि वंश के सुमति का पुत्र।

इंद्रद्युम्न भाल्लवेय वैयाघ्रपद्य—अग्निवैश्वानर का क्या धर्म है, इसके बारे में अन्य पुरोहितों के साथ यह सहमत नहीं होता था। अश्ववति कैकेय ने इसे विद्या दी थी (छां. उ. ५.११.१; १४.१)। भाल्लवेय को धर्मविधि में मान है।

इंद्रद्रुमि—एक ऋषि (म. शां. २४०.१८ कुं.)।

इंद्रधन्वन्—वाणासुर एवं लोहिनी का पुत्र।

इंद्रपाल—ब्रह्महोमवंशी हविर्होत्र राजा का पुत्र। इसका पुत्र माल्यवान्। इसने इंद्रवती नगर बसाया (भवि. प्रति. ४.१)।

इंद्रपालित—(मौर्य. भविष्य.) ब्रह्मांडमतानुसार वंशुपालित का पुत्र।

इंद्रप्रमति—पैल ऋषि का शिष्य। पैल ने, उसे ज्ञात ऋग्वेद के दो भाग कर एक भाग इंद्रप्रमति को सिखाया। इसे मांडुक्य नामक एक शिष्य था (व्यास देखिये)।

इंद्रप्रमति वासिष्ठ—वासिष्ठकुल का एक ऋषि। ऋग्वेद में इसकी दो ऋचायें तथा एक सूक्त है (ऋ. ९. ९७.४-६; १०.१५३)। चंद्रसंपति इसका पाठभेद है। कुष्णीति इसका नामांतर था। वसिष्ठ तथा वृताची का पुत्र। पृथु की कन्या इसकी स्त्री थी (ब्रह्माण्ड ३. ९, ८-१०)। यह श्रुतर्षि था। मंत्रकार भी था (वायु. ५९. १०५-१०६; ब्रह्माण्ड. २.३२. ११५-११६)। इसे इंद्र-प्रतिम भी कहते हैं। कापिजलय, त्रिमूर्ति इसके नामांतर हैं। इसका पुत्र मद्र।

इंद्रबाहु—दृढस्यु का नामांतर (मत्स्य. १४५. ११४)। यह अगस्त्य गोन का मंत्रकार था। विध्ववाह इसे नामांतर है।

इंद्रभू काश्यप—मित्रभू का शिष्य। इसका शिष्य अग्निभू (वं. ब्रा. २)।

इंद्रमातृ देवजामि—एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १५३)।

इंद्रमालिन—उपरिचर वसु का नामांतर।

इंद्रवर्मन—भारतीय युद्ध में दुर्योधनपक्षीय राजा। इसके पास अश्वत्थामा नामक नामांकित हाथी था। यह मालवा का राजा था (म. द्रो. १९१; द्रोण देखिये)।

इंद्रवाह—(स. इ.) विकुक्षि का पुत्र। ककुत्स्थ इसका नामांतर है।

इंद्रसख—(सो. अज.) वायु के मतानुसार कृत-राजा का पुत्र। इसे चैत्रोपरिचर ऐसा दूसरा नाम भी है (उपरिचर वसु देखिये)।

इंद्रसावर्णि—एक मनु (मनु देखिये)।

इंद्रसेन—(स्वा. प्रिय.) ऋषभदेव तथा जयंती का पुत्र।

२. (स. नरिष्यंत.) कूर्व राजा का पुत्र। इसका पुत्र वीतिहोत्र।

३. (सो. नील.) ब्रह्मिष्ठ का पुत्र। इसका पुत्र विंध्याश्व।

४. (सो. कुरु.) दूसरे जनमेजय का पुत्र (म. आ. ८९.४८)।

५. सुतल का दैत्य (भा. १०.८५.५२)।

६. युधिष्ठिर का सारथि।

७. पांडव का दूत (म. स. १२.३०.३०.३०; व २५.३.१०; स्त्री. २६.२५)। इसे पांडवों ने द्वाारका भेजा था (म. वि. ४.३)।

८. नल राजा का पुत्र (म. व. ५७.२१)।

९. कौरवपक्षीय एक क्षत्रिय (म. द्रो. १३१.८५)।

१०. माहिष्मती का राजा। नारद के कथनानुसार आश्विन कृष्ण की इंदिरा एकादशी का व्रत कर इसने अपने यमलोक में रहनेवाले पिता को स्वर्ग पहुँचाया (पद्म. उ. ५८)।

इंद्रसेना—नल राजा को दमयंती से उत्पन्न कन्या (म. व. ५३-१०)।

२. पांचालवंशीय ब्रह्मिष्ठ राजा की पत्नी तथा बन्धुश्व की माता। ब्रह्मिष्ठ मुद्गल का नाम होगा। ऋग्वेद में मुद्गलानी इन्द्रसेना का उल्लेख है। उसका पिता भर्म्यश्रुपुत्र मुद्गल ही है (ऋ. १०.१०२.२; मुद्गल देखिये)।

३. ब्राध्वी इसका पैतृक नाम है। यह नरिष्यन्त की पत्नी तथा दम की माता (३ वपुष्मत् तथा ३ मौद्गल्य देखिये)। नरिष्यन्त के वध के पश्चात् यह सती गयी।

इंद्रस्तुषा—यह एक ऋचा की द्रष्टी है (ऋ. १०. २८.१)।

इंद्रस्पृश—(स्वा.) ऋषभ को जयंती से उत्पन्न पुत्र।

इंद्राणी—ऋग्वेद में इसकी अनेक ऋचायें हैं (ऋ. १०.८६.२; ६)। पुत्रेच्छा से गौरीव्रत करते ही, इसे जयंत पुत्र हुआ (भवि. ब्राह्म. २२; शची देखिये)।

इंद्राम—(स. दिष्ट.) धृतराष्ट्र का पुत्र। वैचित्रवीर्य धृतराष्ट्र का पुत्र नहीं है।

इंद्रोत—यह सुदास का पुत्र होगा (ऋ. ८. ६८. १७)। यहाँ प्रियमेध अंगिरस ने दाता रूप में इसकी स्तुति की है। अतिथिव के साथ भी इसका संबंध प्रतीत होता है।

२. वृषद्युष्य का शिष्य। इसका शिष्य दृति (वं. ब्रा. २)।

३. (सो.) पांचाल वंशीय दिवोदास का पुत्र।

इंद्रोत दैवाप शौनक—इसने जनमेजय के अश्वमेध यज्ञ में पौरोहित्य किया था (श. ब्रा. १३.५.३.५; ४.१; सां. श्रौ. १६.७.७; ८.२७)। जनमेजय का पुरोहित तुर कावधेय था (ऐ. ब्रा. ८.२१) यह श्रुतय का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४०.१)। यह भृगुकुल का था। इसने जनमेजय को गार्ग्य मुनि के शाप से अश्वमेध करवा के मुक्त किया (म. शां. ४६.२; ब्रह्म. १२; ह. वं. २.१३)।

इरा—४ इला देखिये।

२. एक अप्सरा (म. स. १०.११)।

३. दक्ष तथा असिक्नी की कन्या। यह कश्यप की पत्नी। लता, अलता, वीरुधा इसकी कन्यायें हैं।

इरावत्—पंडुपुत्र अर्जुन को ऐरावत नाग की स्तुपा उलूपी से उत्पन्न पुत्र। इसका बाल्यकाल नागलोक में ही बीता। आगे चल कर इसका अपने चाचा (ऐरावत नाग का दूसरा पुत्र अश्वसेन) के साथ हमेशा झगड़ा होने लगा तथा अश्वसेन ने इसे भगा दिया। अर्जुन उस समय देवलोक में इन्द्र के पास गया हुआ था। तब इरावान् स्वर्ग में अर्जुन के पास गया। वहाँ दोनों पितापुत्र का मिलन हुआ। भारतीययुद्ध में इरावान् ने काफी पराक्रम कर के कौरवसेना को थका दिया। इसने शकुनि के लः भाइयों का वध किया। परंतु आगे चल कर वह आर्यशृंगि नामक राक्षस के हाथों मारा गया (म. भी. ८६. ७०; वृषक देखिये)।

इरावती—अर्जुनपौत्र परीक्षित राजा की पत्नी। यह विराटपुत्र उत्तर की कन्या।

२. ब्रह्मदेव ने मातृंड का गर्भ द्विधा किया। उसका बल इसने नाभि के पास रखा। इससे उसे चार पुत्र हुए। वे अंजन, ऐरावत, कुमुद तथा वामन दिग्गज हैं (ब्रह्मांड. ३. ७.२.९२)। इरावती का विस्तृत वंश ब्रह्मंड में है तथा

वहाँ उनकी अन्य जानकारी भी है। परंतु वह सब हाथी की है। अतएव यहाँ की नहीं जाती।

इल—वैवस्वत मनु (श्राद्धदेव) तथा श्रद्धा को पुत्र न होने के कारण उन्होंने वसिष्ठ के द्वारा मित्रावरुणां को उद्देशित कर पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया। अनुष्ठानकाल में श्रद्धा केवल दूध पी कर रहती थी। होता से उसने कहा कि, मुझे कन्या चाहिये। हवन होने के बाद इसे इला नामक कन्या हुई। परंतु मनु की इच्छानुसार वसिष्ठ ने इसे पुरुष बनाया। तब इसका नाम इल अथवा सुद्युम्न रखा गया। आगे चल कर यह परिवारसहित मृगया के हेतु अरण्य में गया। शंकरशाप जिसे था ऐसे शरवन में जाने के कारण यह परिवारसहित स्त्री बन गया। इस अवस्था में उसे बुध से पुरुरवस् नामक पुत्र हुआ। आगे चल कर वसिष्ठ की कृपा से यह एक महिना पुरुष तथा एक महिना स्त्री रहने लगा (मत्स्य. ११-१२; पद्म. पा. ८. ७-१२५)। इसका कारण विशेष प्रिय न था। इसके बाद पुरुरवस् गद्दी पर बैठा। इसके प्रदेश को इलावृत्त कहते हैं (भा. ९. १ दे. भा. १.१.१२; ब्रह्माण्ड. ३.२१)। यह कर्दम प्रजापति का पुत्र तथा बालिहक का राजा। बुध की प्रेरणा से संवर्त की देखरेख में मरुत्तने अश्रमध कर के, इसे पुनः पुरुष बनाया (वा. रा. उ. ८. ७-९०)। अरुणाचलेश्वर की उपासना से यह पुरुष हुआ (स्कन्द. १. ३. १-६)। एक यक्ष की गुफा इलद्वारा ले ली जाने के कारण, अपनी पत्नी के द्वारा इसे उमावन में ले जा कर उसने इसे स्त्री बना दिया। वहाँ इसे बुध से पुरुरवस् नामक पुत्र हुआ। गौतमी नदी में स्नान करने पर यह पुनः पुरुष बना (ब्रह्म. १०८)। इसकी राजधानी प्रतिष्ठान थी। इसे पुरुरवस् छोड़ कर उत्कल, गय तथा विमल नामक तीन पुत्र थे। विमल के लिये हरिताश्व, विनताश्व तथा विनत नाम प्राप्त हैं। इल मनु के दस पुत्रों में से ज्येष्ठ। नौ पुत्र थे, दशम की प्राप्ति के लिये यज्ञ किया परंतु पत्नी की इच्छानुसार इला नामक कन्या हुई तथा उसे बुध से पुरुरवस् हुआ। आगे चल कर पुरुष, स्त्री, पुनः पुरुष हुआ (वायु. ८५. २७; ब्रह्माण्ड. ३. ६०. २७)। इला को पुरुषत्व प्राप्त हो कर पुनः स्त्रीत्व प्राप्त हुआ। यह बुध से संबंध आने के पहले ही हुआ (इला तथा सुद्युम्न देखिये)।

इलक—मध्यमाध्वर्यु देखिये।

इलविल—(सू. इ.) शतरथ राजा का नामांतर।

इलाविला—नृपाविंदु तथा अलंबुपा की कन्या, पुलस्त्य की पत्नी तथा विश्रवस् की माता (ब्रह्माण्ड. ३. ८. ३८)।

इला—वैवस्वत मनु की कन्या (म. आ. ९०.७; ह. वं. १.१०; ब्रह्म. ७; मत्स्य. ११; भा. ९.१)। मित्रावरुणां के अंश से उत्पन्न होने के कारण यह उनके पास गई। तब तुम हमारी ही कन्या हो, आगे चल कर तुम सुद्युम्न बनोगी ऐसा उन्होंने कहा। तब यह वापस लौट आई। राहमें बुध से यह मिली। बुध से इसे पुरुरवस् नामक पुत्र हुआ। देवी भागवत में उल्लेख है कि सुद्युम्न की इला हुई तथा श्रीमद्भागवत में उल्लेख है कि इला से सुद्युम्न हुआ (इल देखिये)।

२. वायु की कन्या। उत्तानपाद ध्रुव की दूसरी स्त्री। इसे उत्कल नामक पुत्र था।

३. वसुदेव की स्त्रियों में से एक।

४. प्राचेतस रक्ष प्रजापति तथा असिकनी की कन्या है। यह कश्यप को भार्याथे दी थी। इससे वृक्षादिक हुए (भाग. ६.६)। भागवत छोड़ कर इतरत्र इरा नाम प्राप्त है।

इलावर्त—(स्वा.) ऋषभ को जयंती से उत्पन्न पुत्र। यह नब्बे पुत्रों में ज्येष्ठ था।

इलावृत्त—प्रियव्रत राजा का पौत्र तथा आग्नीष्व को उपचिति अप्सरा से उत्पन्न पुत्र। इसका वर्ष इसी के नाम से प्रसिद्ध है। यह वहाँ का अधिपति था।

इलिन—(सो. पूरु.) एक क्षत्रिय। व्रन्तु अथवा तंसु इसका पुत्र। मत्स्य के मतानुसार यह अमूर्तरय का पुत्र है। माता का नाम कालिंदी तथा पत्नी का नाम रथंतरी था (म. आ. ९०.२८)। पुत्रों के नाम १. दुष्यंत, २. शूर, ३. भीम, ४. प्रवसु, ५. वसु (म. आ. ८९. १५; इलिल देखिये)।

इलिना—इसका नाती दुष्यंत (ब्रह्माण्ड. ३.६)। महाभारत में इलिन नामक पुरुष है।

इलिल—इलिन, ईलिन, मलिन, अनिल तथा यह एक ही हैं।

इलूष—कवच देखिये।

इत्थल—हिरण्यकश्यपु का पौत्र। हाद को धमनी से उत्पन्न पुत्रों में से एक (भा. ६.१८. १५)।

२. तेरह सैहिकेयों में से पंचम तथा वातापी का बड़ा भाई। यह मणिमती नगरी में रहता था। एकवार इत्थल ने इन्द्रतुल्य पुत्र की प्राप्ति के लिये एक ऋषी से प्रार्थना

की। वह उसके द्वारा अमान्य की जाने पर आदरातिथ्य के मिस ब्राह्मणों को बुला कर मार डालने का क्रम इसने प्रारंभ किया। ब्राह्मण का आगमन होते ही वह उसका आदर करता था। तदनंतर मेघ बने हुए अपने वातापी बंधु का पाक बना कर उसे भोजन देता था। ब्राह्मण जब जाने लगते थे तब उसका शरीर विदीर्ण करके वातापी बाहर आता था तथा ब्राह्मण की मृत्यु हो जाती थी। इस प्रकार से इसने सहस्रावधि ब्राह्मणों को मार डाला। एकवार जब अगस्त्य को द्रव्य की अपेक्षा थी, वह क्रम से श्रुतावा, ब्रह्म्यश्व तथा त्रसदस्तु नामक तीन राजाओं के पास गया। परंतु वहाँ द्रव्य प्राप्ति न होने के कारण, उनके सहित यह इत्त्वल के पास आया। उसे देख कर नित्यानुसार इसने अगस्त्य की कपट पूर्वक पूजा कर, उसे भोजन के लिये रख लिया। अगस्त्य की कपट पूर्वक जान कर संपूर्ण पाक का भक्षण स्वयं ही कर लिया, तथा वृतापि को उदर में जीर्ण किया। यह जान कर इत्त्वल अगस्त्य के पास प्राण दान के लिये प्रार्थना करने लगा। तब अगस्त्य ने अभय दे कर उसे कहा कि हम चारों द्रव्यार्थी हैं। अतएव द्रव्य दे कर हमें मार्गस्थ करो। तब इसने त्रिवर्ग राजाओं को निपुल संपत्ति दे कर अगस्त्य को उनसे द्विगुणित वी तथा सबको मार्गस्थ कर ब्राह्मणों का द्वेष छोड़ दिया। इसे बत्त्वल नामक पुत्र था (म. व. १४)।

रामायण में अगस्त्य के सामर्थ्य का वर्णन करते समय इत्त्वल तथा वातापि की कथा राम ने लक्ष्मण तथा सीता

को बताई। नित्य श्राद्ध में अगस्त्य ने जा कर वातापी को पेटमें पचा लिया तथा इत्त्वल के क्रोध से आक्रमण करते ही, उसे भी दृष्टि से मत्त कर दिया (वा. रा. अर. ११-६८; म. व. १७-४९. म. ३*)। परंतु इत्त्वल को परशुराम ने मार डाला (ब्रह्माण्ड ३.६.१८-२२)।

इष--(स्वा. उत्तान.) वत्सर को स्वर्वाची नामक भार्या से उत्पन्न छः पुत्रों में से एक।

२. उत्तम मनु के पुत्रों में से एक।

३. सुधामान नामक देवगणों में से एक।

इष आत्रेय--सूक्तों का द्रष्टा (ऋ. ५.७-८)।

इष इयावाश्वि--यह अगस्त्य का शिष्य (जै. उ. वा. ४१.६.१)।

इषिकहस्त--पराशर कुल का गोत्रकार।

इषीक--इसने तुंगरु नामक गंधर्व की उपासना करने के लिये व्रता कर शिखंडी को पुरुषत्व प्राप्त करा दिया (म. आ. ११०-२३ कुं.)।

इषरिथ--विश्वामित्र का मूल पुरुष (विश्वामित्र देखिये)।

इषुपात्--कश्यप तथा अनु का पुत्र।

इषुफलि--अष्टकाकर्म में तंत्र किया जाये ऐसा इसका मत है (कौ. सू. १३८-१६)।

इषुमत्--(सो. यदु. वृष्णि) देवश्रवस् को कंसावती से उत्पन्न पुत्र।

५१०

ईड्य--सावर्णि मनु के उत्पन्न होनेवाले पुत्रों में से एक।

ईदश--दितिपुत्र मरुतों के पंचवे गणों में से एक (ब्रह्माण्ड ३.५.९६)।

ईलिन--(सो.) तंसु का पुत्र (म. आ. ८८; इलिल देखिये)।

ईशान--इस नाम के एक संन्यासी ने विश्वेश्वर की आराधना की। शंकर ने प्रसन्न हो कर कहा कि जिस

स्थान पर तुमने तप किया, उस स्थान को ज्ञानवापी कहेंगे (स्कंद २.४.१.३३)।

२. देवों के हिरण्यक्ष के साथ हुए युद्धमें इसका वध वायु ने किया (पद्म. सू. ७५)।

ईश्वर--सुरमि तथा कश्यप के पुत्रों में से एक।

२. (सो. पूर.) पूरु तथा पौष्टी का पुत्र (म. आ. ८८)

३. भारतीय युद्ध में दुर्योधन पक्षीय राजा। यह क्रोध वश असुरांश से जन्मा था (म. आ. ६१.६०)।

उ

उकूल—अंगिरस गोत्रीय एक मंत्रकार ।
उक्त—(सो. कुरु. भविष्य) । भागवत के मतानुसार यह निमिचक्रपुत्र है ।

उक्थ—स्वाहा का पुत्र ।

२. (सू. इ.) विष्णु के मतानुसार यह शलपुत्र है । परंतु भविष्य के मतानुसार यह छद्मकारीपुत्र । इसने दस हजार वर्षों तक राज्य किया ।

उक्षण्यायन—हरयाण तथा सुषामन् के साथ इसका उल्लेख आया है (ऋ. ८. २५. २२) व्यशपुत्र विश्वमनसु कृत दानस्तुति में यह सुषामन् का पैतृक नाम है ।

उक्ष्णोरंध्र ऋष्य—एक ऋषि (पं. ब्रा. १३. ९. १९) ।

उख—तैत्तिरीयों के पितृतर्पण में आने वाला एक आचार्य । पितृतर्पण में इसका समावेश होने का कारण यह होगा कि, यह हिरण्यकेशियों के से मिलतीजुलती शाखा प्रवृत्त करनेवाला था (स. गृ. २०. ८-२०; चरणव्यूह) । पाणिनी ने शाखा प्रवर्तक कह कर इसका उल्लेख किया है ।

उख्य—उच्चार तथा संधि के संबंध में कुछ अलग ही मतों का प्रतिपादन करनेवाला एक आचार्य (तै. प्रा. ८. २२; १०. २०; १६. २३) ।

उग्र—यातुधान पुत्र । इसका पुत्र वज्रहा ।

२. वारुणि कवि के आठ पुत्रों में कनिष्ठ ।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र । भीम ने इसे मारा (म. द्रो. १३२. ११३५*) । भां. सं. में उग्रयायिन् पाठ है ।

४. दिति का पुत्र तथा तीसरे मरुद्वणों में से एक (ब्रह्माण्ड. ३. ५. ९४) ।

५. अमिताभ देवों में से एक ।

६. भौत्य मनु का पुत्र ।

उग्रक—कहूपुत्र ।

उग्रतप—एक ऋषि । एकबार इसने गोपियों के साथ संभारमग्न कृष्ण का ध्यान किया । इस कारण इसने गोकुल में सुनंद नामक गोप की कन्या के रूप में जन्म लिया तथा उस स्थान में इसने श्रीकृष्ण की उत्कृष्ट सेवा की (पद्म. पा. ७२) ।

उग्रतीर्थ—भारतीय-युद्ध का दुर्योधनपक्षीय राजा (म. आ. ६१. ६०) ।

उग्रदग्नी—(स्वा. प्रिय.) मेरु की कन्या तथा आग्नी-प्रपुत्र हरिवर्ष की पत्नी ।

उग्रहृष्टि—स्वायंभुव मन्वन्तर के अजिन् देवों में से एक ।

उग्रदेव—तुर्वश तथा यदु के साथ इसका उल्लेख है (ऋ. १. ३६. १८; पं. ब्रा. १४. ३. १७; २३. १६. ११) । इसका पैतृक नाम राजनि (तै. आ. ५. ४. १२) ।

उग्रधन्वन्—सात्वराजा । भीम ने इसका वध किया (म. क. ४. ४०) ।

२. यह कैकेय का सेनापति था । इसका कर्णपुत्र सुषेण से युद्ध हुआ था । उसमें सुषेण मारा गया (म. क. ६०. ४) ।

उग्रपुत्र वैदेह—गार्गी ने याज्ञवल्क्य को प्रश्न पूछते समय, इसका उत्तम धनुर्धारी कह कर उल्लेख किया है । यह व्यक्ति का नाम न हो कर सामान्य निर्देश है । (बृ. उ. ३. ८. २) ।

उग्रपश्या—एक अप्सरा (तै. आ. २. ४) ।

उग्रवीर्य—महिषासुरानुयायी असुर ।

उग्रश्रवस्—लोमहर्षण सूत का पुत्र । इसे सौति लोमहर्षणि भी कहते हैं (म. आ. १. १) ।

२. धृतराष्ट्रपुत्र (म. आ. परि. १. ४१. पंक्ति. १९) ।

उग्रसेन—भीमसेन तथा श्रुतसेन के साथ एक पारिशिलीय तथा जनमेजय का भाई ऐसा इसका निर्देश है । यह अश्वमेध कर के पापमुक्त हो गया (श. ब्रा. १३. ५. ४. ३; जनमेजय देखिये) । यह तथा छठा एक नहीं है ।

२. कश्यप को मुनी से उत्पन्न देवर्गधर्षों में से एक । यह सूर्य का सहचर है ।

३. (सो. यदु. अंधक) आहुक राजा के दो पुत्रों में दूसरा । इसकी पत्नी का नाम पद्मावती (पद्म. भू. ४८. ५१) । इसे कंस, सुनामा, न्यग्रोध, कंक, शंकु, सहू, राष्ट्रपाल, सृष्टि तथा तुष्टिमान् नामक नौ पुत्र, उसी प्रकार कंस, कंसावती, कंका, शरभू तथा राष्ट्रपालिका नामक पांच कन्यायें थीं । यह पांच वसुदेव के देवभागिनी नौ भ्राताओं में से पांच भ्राताओं की स्त्रियाँ थीं । उसका

ज्येष्ठ पुत्र कंस अत्यंत दुष्ट होने के कारण उसने इसे बंदी-गृहमें रखा था। कंस का कृष्णद्वारा वध होने के बाद कृष्ण ने इसे पुनः मथुरा की गद्दी पर बैठाया (भा. १०. ४५)।

४. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक (म. आ. परि. १.४१, पंक्ति. १९)।

५. भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय राजा।

६. (सो. कुरु.) दूसरे जनमेजय का पुत्र (म. आ. ८९.४८)।

७. पांडवों में से अर्जुन का पौत्र परीक्षित् उसके चार पुत्रों में से एक। जनमेजय का बंधु।

८. स्वर्नातु का अंशभूत क्षत्रिय (म. आ. ३. १; ६१. १३)।

९. पुष्करमालिन् देखिये।

उग्रसेना—अक्रूर के क्षत्रियों में से एक।

उग्रहय—राम के अश्वमेधीय घोड़े का रक्षण करने के लिये यह लक्ष्मण के साथ गया था (पद्म. पा. १२)।

उग्रा—सिंधु दैत्य की माता का नाम (गणेश. २. १२४)।

उग्राय—महिषासुर की ओर का एक असुर।

उग्रायुध—(सो. द्विमीट.) भागवत के मतानुसार नीप का पुत्र। परंतु अन्यों के मतानुसार कृत का पुत्र। इसे क्षेम्य नामक पुत्र था। इसने १०१ नीपों का नाश किया। इसने आठ हजार वर्षों तक तपस्या की थी। इसे यम ने तत्त्वज्ञान सिखाया (मत्स्य. ४९. ५८. ६९)। इसने भद्राष्टपुत्र जनमेजय का वध किया था। शतनु की मृत्यु के बाद इसने सत्यवती की मांग की। इससे क्रोधित हो कर भीष्म ने इसका वध किया (ह. वं. १. २०)।

२. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक (म. आदि. परि. १.४१; पंक्ति. १६)।

३. भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय एक राजा।

४. कर्ण के द्वारा मारा गया पांडवपक्षीय एक राजा (म. क. ४०.४६)। यह द्रौपदी स्वयंवर में था (म. आ. ७७.३)।

उग्रास्य—महिषासुर के पक्ष का एक दैत्य। इसका वध अंबिका ने किया (मार्क. ८०)।

उत्थ—उत्थ देविये।

उच्चैःश्रवस्—एक मधुवा राजा। मत्स्यगंधा का पोषण करनेवाला पिता (म. आ. ९४. ६७)।

२. (सो. कुरु.) अविक्षित् तथा वाहिनी का पुत्र (म. आ. ८९. ४६)।

उच्चैःश्रवस् कौपयेय—यह कुरुओं का राजा तथा केशिन् का मामा (चै. उ. ब्रा. ३. २९. १-३)।

उज्जयिन—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५८ कुं.)।

उच्छ्रवृत्ति—एक ब्राह्मण। दारिद्र्य के कारण इसे पेट भर खाने के लिये भी नहीं मिलता था। एक दिन जब यह भिक्षा के लिये घूम रहा था, तब इसे एक सेर सत्तू मिला। उसमें से अभि तथा ब्राह्मण को दे कर बाकी अपने पुत्रों को समान भाग में बाँट दिया। यह स्वयं खाना शुरू करे इतने में प्रत्यक्ष यमधर्म ब्राह्मणरूप में उसके पास आया तथा खाने के लिये मांगने लगा। ब्राह्मण ने अपने हिस्से का सत्तू इसे दिया परंतु उसे संतोष न हुआ। तब इसने अपने पुत्रादिकों के हिस्से का सत्तू भी इसे दिया। यह देख कर धर्म प्रसन्न हुआ तथा वह इस ब्राह्मण को सहकुटुंब तथा सदेह स्वर्ग में ले गया। आगे चल कर इस पुण्यात्मा के सत्तू के जो कण भूमिपर गिरे थे उसमें एक नेवला आ कर लोट लगाने लगा। शरीर का जो भाग उस सत्तू को लगा, वह एकदम सुवर्णमय हो गया। आगे चल कर वह नेवला धर्म के यज्ञ में अपने शरीर का दूसरा भाग भी सुवर्णमय हो, इस इच्छा से गया परंतु उसकी इच्छा पूरी नहीं हुई (जै. अ. ६६)। मोक्षधर्म कथन के पश्चात्, गृहस्थाश्रमी मानव भी उच्छ्रवृत्ति का पालन करने से मोक्ष प्राप्त कर सकता है, यह पुरातन कथा भीष्म ने युधिष्ठिर को कान्न की (म. शां. ३४१-३५३)। कुरुक्षेत्रस्थ उच्छ्रवृत्तिधारी सक्तुप्रेस्थ ब्राह्मण के यहाँ व्यक्त पिष्ट में वदन को बोलने से नकुल का अर्धांग सुवर्णमय हुआ, किन्तु बाकी आधा शरीर धर्मराज के यज्ञ में उर्वरित अन्न में बोलने से भी सुवर्णमय न हो सका। इस प्रकार उच्छ्रवृत्ति की प्रशंसा उल्लेखित है (म. आश्र. ९२-९३)।

उच्छ्रवृत्ति के माने, कपोत के जैसे विनायास मिले हुए दाने चून कर जीवन यापन करना। (म. आश्र. ९३. २; ५)।

इसे सत्य ऐसा नामान्तर था। इस की पत्नी का नाम पुष्करमालिनी (म. शां. २६४. ६-७)।

उडुपति—अंगिरस कुल का एक गोत्रकार।

उत्थ—अंगिरस का पुत्र। इसकी माता का नाम स्वराज्ञ। इसका श्रद्धा नाम भी मिलता है। परशुराम द्वारा पृथ्वी निःश्रविय करने के पश्चात्, इसने क्षत्रियों का पुनःस्थान किया। इसकी भार्या ममता। इसका कनिष्ठ भ्राता

बृहस्पति, देवताओं का पुरोहित था। बृहस्पति के ममता से बलात् संभोग समय पर, ममता ने अपने देवर बृहस्पति से कहा "मैं गर्भवती हूँ।" तब कामातुर बृहस्पति आपसे बाहर हो गया। संभोग के लिये गर्भ का भी विरोध देख कर उसने गर्भ को अन्धा होने का शाप दिया। वह दीर्घतमा औत्थ हो गया (म. आ. ९.८.५-१६; शां. ३.२८)।

इसकी एक और पत्नी सोमकन्या भद्रा थी। वरुण ने उसका अपहरण किया, तब इसने समुद्रशोषण किया तथा समुद्र को मरुस्थल में परिणत कर दिया। सरस्वती नदी को जलरहित तथा अदृश्य कर दिया। अन्त में समुद्र ने उत्थ को भद्रा लौटा दी (म. अनु. २.५.९-३२ कुं.)।

उत्थ तथा उत्थ्य इसके पाठभेद हैं। मांधाता के साथ इसका क्षात्रधर्म विषय पर संवाद हुआ था (म. शां. ११) जो उत्थगीता नामसे प्रसिद्ध है। इसका पुत्र शरदत् (सत्यतपसु देखिये)।

२. शिवावतार गुहावासिन् का शिष्य।

उत्कचा, उत्कचोत्कृष्टा वा उत्कटा—कश्यप तथा कशा की कन्या।

उत्कल—(स्वा. उत्तान.) ध्रुवं तथा इला का पुत्र। ध्रुवं वन में जाने के बाद राज्य इसके पास आया। परंतु विरक्त होने के कारण इसने उसका स्वीकार नहीं किया (भा. ४.१३. ६-१०)।

२. वृत्रासुरानुयायी असुर। समुद्रमंथन के बाद हुए देवदैत्यप्रसंग में इसने मातृगणों से युद्ध किया (भा. ८.१०)।

३. सुधम्म के तीन पुत्रों में से एक। इसने उत्कल नगरी की स्थापना की (पद्म. सू. ८; ब्रह्म. ७)।

उत्कल कात्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ३.१५-१६)।

उत्कला—(स्वां. प्रिय.) सम्राज् राजा की पत्नी। मरीचि राजा की माता।

उत्तक—यह वैद का शिष्य। यह अत्यंत मनोनिग्रही था। एकवार जब वैद ऋषि यजमानवृत्त्य के लिये बाहर गये हुए थे, तब आश्रम पर देखरेख रखने का काम उन्होंने उत्तक पर सौंपा। वैद के पीछे उसकी पत्नी ऋतुमती हुई। तब उत्तक की परीक्षा देखने के हेतु उसने आश्रम की स्त्रियों के द्वारा संदेशा मित्रवाया, कि गुरुपत्नी का ऋतु व्यर्थ न हो ऐसा काम तुम करो। परंतु उनका निषेध कर उत्तक ने उस प्रसंग का निवारण किया। वैद ऋषि के घर लौटने के बाद उसे यह सब मालूम हुआ। तब किसी भी प्रकार के

मोह से उत्तक वश नहीं होता यह देख कर संतुष्ट हो कर उसे वरदान दिया।

उत्तक को अच्छी तरह पढ़ा कर वैदने उसे घर जाने के लिये कहा। उस समय "आपको मैं क्या गुरुदक्षिणा दूँ?" ऐसा प्रश्न उत्तक ने उनसे पूछा। वैदने दक्षिणा लेना अमान्य कर दिया। परंतु उत्तक का अत्यधिक आग्रह देख कर कहा कि, तुम्हारी गुरुपत्नी को जो जो चीज चाहिये हो, वह ला कर दो। गुरुपत्नी के पास जा कर उत्तक ने पूछा कि तुम्हें क्या चाहिये? तब उसने कहा कि मुझे पौष्य राजा की पत्नी के कुंडल चाहिये। उसने पौष्य राजा की पत्नी के पास से वे कुंडल मांग लिये। उन कुंडलों पर तक्षक की नजर है यह पौष्य की पत्नी को मालूम था, अतएव कुंडलों को ठीक से सम्हालने की सूचना उसने उत्तक को दी। उत्तक जब कुंडल ले कर आ रहा था तब तक्षक उसके पीछे बौद्ध भिक्षु के रूप में जाने लगा। जब उत्तक ने वे कुंडल नीचे रखे तब तक्षक उन्हें पाताल में ले गया। तब उत्तक पाताल जाने का मार्ग हूँदने लगा। उस समय इसकी गुरुमक्ति से संतुष्ट हो कर इन्द्र ब्राह्मणरूप में इसे सहायता करने आया। उसने वज्र की सहायता से इसे मार्ग बना दिया। उत्तक ने पाताल से कुंडल लाये तथा वे वैद भार्या को दिये। कुंडलों के वापस मिलने पर भी उत्तक का तक्षक के प्रति क्रोध कम नहीं हुआ। उसका बदला लेने के लिये इसने जनमेजय को सर्प सत्र के लिये प्रेरित किया (म. आ. ३; इन्द्र देखिये)। यही कथा केवल नामों के भेद से अन्य स्थानों पर भी आई है। यह एक भार्गव था। यह सुनिश्चिष्ट गौतम का शिष्य। विद्याभ्यास समाप्त होने पर गुरु को गुरुदक्षिणा के रूप में क्या दूँ, ऐसा पूछने पर इसकी गुरुपत्नी ने सौदास राजाकी पत्नी के स्वर्णकुंडल लाने के लिये कहा। सौदास अत्यंत भयंकर तथा मनुष्यभक्षक था। परंतु बिना डरे उत्तक उसके पास गया तथा कुंडल मांगने लगा। कुंडल उसके पास न हो कर उसकी पत्नी के पास थे। इससे उत्तक सौदास की पत्नी के पास गया तथा उससे कुंडल मांग कर अपनी गुरुपत्नी को दिये।

ऋद में उत्तक निर्जल मारवाड़ देश में तपश्चर्या करने चला गया। एक बार श्रीकृष्ण से इसका मिलन हुआ। कौरवांडवों का भारतीय युद्ध में नाश हो गया, यह सुनते ही यह कृष्ण को शाप देने लगा। तब तत्त्वकथन करते हुए कृष्ण ने इसे विश्वरूप दशाया। मरुभूमि में जहाँ इच्छा हो वहाँ पानी प्राप्त करने का वरदान इसने माँगा।

कृष्ण ने कहा कि, मेरा स्मरण करते ही तुम्हें जल प्राप्त हो जावेगा। एक बार जब इसने स्मरण किया, तब इन्द्र चांडाल के रूपमें इसे पानी देने आया। परंतु अपवित्र मान कर इसने उसका स्वीकार नहीं किया। वास्तव में इन्द्र अमृत देने के लिये आया था। जिस जिस स्तंभय तुम्हें पानी की आवश्यकता होगी उसी समय इस मरुभूमि में सजल मेघ आवेंगे ऐसा कृष्ण ने इसे पुनः वर दिया (म. आश्र. ५२.५४)। इसने धुंधु दैत्य का वध करने के लिये, कुवलाश्र नामक राजा को सहायता दी (म. व. ११२.८) (२ जनमेजय परिक्षित देखिये)।

उत्तम—चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. एक मनु।

३. (स्वा.) उत्तानपाद तथा सुरुचि का पुत्र। यह अविवाहित था। इसका वध मृगया में बलाढ्य यक्ष ने किया (भा. ४.८.९; १०.३)।

उत्तमा—वर्तमान मन्वन्तर का इक्कीसवा व्यास।

२. मगध देश के देवदास राजा की पत्नी। यमुना में स्नान कर के यह मुक्त हो गई (पद्म. ३.२१६)।

उत्तमोत्तरीय—विसर्गसंधि के संबंध में मते प्रतिपादन करनेवाला एक आचार्य (तै. ब्रा. ८.२०)।

उत्तमौजसू—एक पांचालदेशीय राजपुत्र (म. उ. १९७.३)। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में था (म. द्रो. २०.१५३; * २४.३६; १०५.८१९*)। यह जब पांडवों के शिविर में सो रहा था, तब अश्वत्थामा ने इसका वध किया (म. सौ. ८.३२-३३)।

उत्तर—विराट तथा सुदेष्णा का पुत्र। इसका दूसरा नाम भूमिजय था (म. वि. ३३. ९)। यह द्रौपदीस्वयंवर में गया था (म. आ. १७७.८)। गायों का समूह जब दुर्योधन हरण कर ले गया, तब गोपों ने यह बात उत्तर को बताई। विराट अन्य स्थान पर युद्ध में मग्न होने के कारण गायों को मुक्त करने की जिम्मेदारी उत्तर पर थी। अन्तःपुर में उत्तर ने अपने पराक्रम की स्वयं प्रशंसा की तथा खेद प्रगट किया कि, सारथि न होने के कारण वह युद्ध करने नहीं जा सकता। परंतु इसकी परीक्षा लेने के लिये द्रौपदी (सैरंप्री) ने कहा कि, अर्जुन (बृहन्नला) तुम्हारा सारथ्य करेगा। इससे उत्तर को मजबूर हो कर युद्ध में जाना पड़ा। परंतु रथ में बैठ कर कौरवों की अफाट सेना के पास गया नहीं, इतने में ही भयभीत हो कर यह बृहन्नला को वापस लौटने के लिये कहने लगा। उस समय स्त्रियों में की हुई अपनी प्रशंसा की याद दिलाई। परंतु

उत्तर भयभीत हो कर अकेला ही भागने लगा। तब में अर्जुन हैं यह व्रता कर बृहन्नला ने उसे धीरच बंधाया तथा इसे सारथी होने के लिये कह कर स्वयं युद्ध करने लगा। थोड़ी ही दूर में अर्जुन ने गायों के सब समूहों को मुक्त कर लिया। तदनंतर उत्तर जयघोष करता हुआ नगर में गया (म. वि. ६२-११)। यह भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में था। इसने काफी पराक्रम दिखाया। परंतु शल्य के हाथों यह मारा गया (म. भी. ४५.४१)। उत्तर की मृत्यु के समय उसकी पत्नी गर्भवती थी। उसे इरावती नामक कन्या हुई। इसीका विवाह आगे चल कर अभिमन्युपुत्र परीक्षित के साथ हुआ।

२. अषाढ उत्तर पाराशर्य देखिये।

३. कश्यपकुल का गौत्रकार।

उत्तरा—सोम की सत्ताईस पत्नियों में से एक।

२. विराट की कन्या। अर्जुन ने बृहन्नला के रूप में इसे नृत्यगायनादिकों की शिक्षा दी। गोग्रहणसमय पर जो पराक्रम अर्जुन ने दर्शाया, उसके लिये विराट ने इसे अर्जुन को देने की इच्छा दर्शाई थी। परंतु अर्जुन ने अभिमन्यु के लिये इसका स्वीकार किया। जब भारतीय युद्ध में अभिमन्यु की मृत्यु हुई, तब यह गर्भवती थी। अश्वत्थामा ने पृथ्वी को निष्पांडव करने की प्रतिज्ञा कर ऐषिकास्त्र छोड़ा (म. सौ. १५.३१)। कृष्ण ने उस समय इसके गर्भ का रक्षण किया। इसका पुत्र परीक्षित (म. वि. ११.१८; भा. १.८.१५)।

उत्तान आंगिरस—संभवतः एक आचार्य (पं. ब्रा. १.८.११; तै. ब्रा. २.३.२.५)

उत्तानपाद—स्वायंभुव मनु के शतरूपा से उत्पन्न पुत्रों में कनिष्ठ (मत्स्य. ४)। इसे सुनृता या सुनीति और सुरुचि ये दो स्त्रियां थीं। सुनीति से कीर्तिमान् एवं ध्रुव तथा सुरुचि से उत्तम इस तरह इसके तीन पुत्र थे (भा. ४.८)। सुरुचि इसे बहुत प्रिय थी (ध्रुव देखिये)। स्वायंभुव मन्वन्तर में प्रजापति अत्रि ने इन्से दत्तक लिया था। इसे सुनृता से चार पुत्र और दो पुत्रियां हुईं। उनके नाम १. ध्रुव, २. कीर्तिमान्, ३. आयुष्मान्, ४. वसु तथा १. स्वरा, २. मनसिन्वी (ब्रह्माण्ड. २.३६.८४-९०; ह. वं. १.२; ध्रुव देखिये)।

उत्तानवर्हि—(स.) शर्याति राजा के तीन पुत्रों में ज्येष्ठ।

उत्पल—विदल देखिये।

उत्साह—भृगुवंश में श्री का पुत्र (भृगु देखिये) ।
उदक्षस्तेन वा उदक्षस्वन—(सो. अज.) विष्वक्सेन का पुत्र । इसका पुत्र भल्लाट ।

उदग्र—महिषासुरानुयायी एक असुर ।

उदग्रज—कश्यपकुल का गोत्रकार ऋषिगण ।

उदंक—उत्के का पाठभेद ।

उदंक शौल्वायन—प्राण तथा ब्रह्म एक ही हैं ऐसा इसका मत था (वृ. उ. ४.१.३) । सत्रमें दशरात्र ऋतु ही मुख्य भाग है ऐसा इसका मत है (तै. सं. ७.५.४.२) । यह विदेह देश के देवराति बृहद्रथ जनक का समकालीन रहा होगा ।

उदमय आत्रेय—अंग वैरोचन का पुरोहित (ऐ. ब्रा. ८.२२) ।

उदयन—(सो. कुरु. भविष्य.) मत्स्य तथा विष्णुमतानुसार शतानीकपुत्र ।

२. (शिशु. भविष्य.) विष्णुमतानुसार दर्भक का पुत्र । वायु तथा ब्रह्मांड मतानुसार इसे उदायिन् कहा गया है । भविष्य में उदयाश्व ऐसा पाठ है । इसने गंगा के किनारे पुष्पपुर स्थापित किया । पुष्पपुर को पाटलिपुत्र ऐसा नामांतर युगपुराण में दिया है ।

उदर्यासिह—देशराज को देवकी से उत्पन्न पुत्र ।

उदयाश्व वा उदयिन्—(२ उदयन देखिये) ।

उदर शांडिल्य—अतिधन्वन् शौनक का शिष्य (छां. उ. १.९.३; वं. ब्रा. २) ।

२. इंद्रसभा का एक महर्षि (म. स. ७.११) ।

उद्रेणु—विश्वामित्र कुल का गोत्रकार ।

उदक—१० विद्वत् देखिये ।

उदल—विश्वामित्र कुल का सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १४.११.३३) ।

उद्वहि—कश्यपकुलोत्पन्न शंडिल शाखा का एक ऋषि ।

२. विश्वामित्र गोत्र का ऋषि ।

उदान—तुषितदेवों में से एक ।

उदापेक्षिन्—विश्वामित्र के पुत्रों में से एक ।

उदारधी—प्राचीनगर्भ और सुवर्ची का पुत्र । इसकी स्त्री भद्रा । इसे दिवंजय और रिपुंजय नामक दो पुत्र थे । पूर्वजन्म में यह इंद्र था (ब्रह्माण्ड. २.३६. १००-११०) ।

उदारवसु वा उदावसु—(सू. निमि.) मिथि जनक का पुत्र । इसका पुत्र नदित्रधन ।

उदासीन—(सो. वृष्णि.) मत्स्यमतानुसार वसुदेव तथा देवकी का पुत्र ।

२. (शिशु. भविष्य.) मत्स्यमतानुसार वंशक का पुत्र ।

उदुंबर—विश्वामित्र कुल का एक गोत्रकार ।

उद्गात्—(स्वा. प्रिय.) प्रतीह और सुवर्चला के तीन पुत्रों में से एक । यह यज्ञ कर्म निपुण था । यह नाम मूल भागवत में नहीं है; परंतु प्रतिहर्षादि कहे जाने के कारण आदिपद के द्वारा इसका स्वीकार टीकाकार करते हैं (भा. ५.१५.५) ।

उद्गाह—वसिष्ठगोत्र का एक ऋषिगण । उद्गाट ऐसा पाठभेद है ।

उद्गीथ—स्वायंभुव मन्वंतर में मरीचि ऋषि को उर्णा से उत्पन्न छः पुत्रों में दूसरा । आगे चल कर दूसरे जन्म में कृष्ण के बंधुओं में से एक हुआ ।

२. (स्वा. प्रिय.) भूमन् को ऋषिकुल्या से उत्पन्न पुत्र ।

३. (स्वा. नाभि.) विष्णुमतानुसार भुव का पुत्र ।

उद्गाट—उद्गाह देखिये ।

उद्दल—व्यास की यज्ञः शिष्यपरंपरा में वायुमतानुसार याज्ञवल्क्य का वाक्सनेय शिष्य ।

उद्दाल—विश्वामित्रकुल का गोत्रकार एवं प्रवर ।

उद्दालक—एक आचार्य । आपोद धौम्य का शिष्य । एक समय इसे गुरु ने पानी (खेत का) रोकने के लिये कहा; पर इसे पानी को रोकते नहीं बन रहा था । तब इसने खुद ही नीचे सो कर पानी रोका । गुरु को खोजकरते समय यह पता लगा । तब उन्होंने आरुणि पांचाल्य का नाम उद्दालक रखा (म. आ. ३.२०-२९) । इसे कुशिक की कन्या से श्वेतकेतु और नचिकेतस् दो पुत्र तथा मुजाता नामक पुत्री उत्पन्न हुई । मुजाता कहोल को ब्याही गयी थी । इसका पुत्र अष्टावक्र था (म. व. १३२) । एक निपुत्रिक ब्राह्मण ने इसकी स्त्री पुत्रीत्पादनार्थ मांगी । श्वेतकेतु को यह सहन न होने के कारण उसने नियम बनाया कि, स्त्री को केवल एक ही पति होना चाहिये (म. आ. ११३) । इस में सत्तासामान्य नामक दिव्यदृष्टि निर्माण हुई थी; इस कारण यह हमेशा समाधिसुख में रहता था । इसका शरीर सूर्य किरणों से शुष्क हो कर यह ब्रह्मरूप हुआ । इसका शत्रु चामुंडा देवी ने साङ्गा तथा खट्वांग में भूषण के समान धारण किया (यो. वा. ५.५१-५६; चंडी देखिये) ।

उद्दालक आरुणि—अभ्यात्मविद्या का प्रसिद्ध आचार्य । यह अरुण औपवेशि गौतम का पुत्र तथा शिष्य

था (वृ. उ. ६. ५. ३)। इसका पुत्र श्वेतकेतु (वृ. उ. ६.२.१; छां. उ. ६.१.१)। पतञ्जल काव्य इसका गुरु था। इसने याज्ञवल्क्य को अध्यात्म संबंधी कुछ प्रश्न पूछे थे। याज्ञवल्क्य ने जिनके उत्तर विस्तृत रूप से दे उसे चुम कर दिया (वृ. उ. ३.७)। एक याज्ञवल्क्य इसका शिष्य भी था (वृ. उ. ६.५.३)।

इसकी ब्रह्मविद्या की परंपरा ब्रह्मा से है। इसे इसके पिता से ही ब्रह्मविद्या मिली थी (छां. उ. ३.११. ४)। बड़े बड़े ज्ञानी लोग भी अध्यात्मविद्या संपादनार्थ इसके पास आते थे। इंद्रद्युम्न, सत्ययज्ञ, जन तथा बुडिल इसके पास अध्यात्मविद्या सीखने के लिये आये थे (छां. उ. ५.११.१-२)। इसके कुल के मनुष्य विद्वान् थे। ऐसी उस समय ख्याति थी। इसने श्वेतकेतु को सिखाया हुआ तत्त्वज्ञान प्रसिद्ध है (छां. उ. ६.१; श्वेतकेतु देखिये)।

इसका उल्लेख अन्यत्र भी आता है। राज्याभिषेक के समय कहे जाने वाले मंत्रों के संबंध में इसका मत सर्वमान्य है (ऐ. ब्रा. ८.७)।

उद्दालकायन—जाबालायन का शिष्य (वृ. उ. ४. ६. २)।

उद्दालकि—अत्रिकुल का एक गोत्रकार।

उद्दिष्ट—वैवस्वत मनु का पुत्र।

उद्धत—एक राक्षस का नाम। यह शुक्ररूप में आया था। तब विनायक ने इसका वध किया।

उद्धव—(सो. यदु.) देवभाग का पुत्र। इसकी माता का नाम कंसा। चित्रकेतु तथा बृहद्बल इसके दो ज्येष्ठ बंधु थे (भा. ९.२४.४०)। इसने बृहस्पति से नीतिशास्त्र का अध्ययन किया। यह कृष्ण का प्रिय मित्र था। इसे यादव मंडली में मान प्राप्त था। श्रीकृष्ण ने एक बार अपना संदेशा इसे दे कर नंद, यशोदा और गोपियों का समाधान करने के लिये भेजा था।

यादवों के नाश के बाद श्रीकृष्ण भी निजधाम जायेंगे यह जान कर इसे बहुत दुःख हुआ। कृष्ण ने इसे बदरिकाश्रम जाने कहा किंतु अत्यंत प्रेम के कारण कृष्ण के पीछे पीछे यह सरस्वती नदी के तट पर गया। कृष्ण एक वृक्ष को टेक कर अकेले बैठे थे। उद्धव को देख कर कृष्ण ने कहा—“तुम्हें क्या चाहिये वह मैं जानता हूँ”। तू वसु नामक देव का अवतार है। पहले पहल सृष्टि उत्पन्न करने वाले वसु के यज्ञ में मुझे प्राप्त करने के लिये तुमने मेरा पूजन किया था। यह तेरा

अंतिम जन्म है। तुम ने मेरी कृपा संपादन की, इसलिये मैं तुम्हें सर्वश्रेष्ठ आत्मज्ञान बताता हूँ। ऐसा कह कर उद्धव को कृष्ण ने आत्मनात्मविवेक बताया। यही उद्धवगीता तथा अवधूतगीता नाम से प्रसिद्ध है (भा. ११. ७-२९)। तब उद्धव ने आनंदमिश्रित दुःख से उसकी प्रशिक्षणा कर बदरिकाश्रम के लिये गमन किया तथा वहां नरनारायणआश्रम में रह कर लोकहितार्थ बहुत तप किया। फिर विशाला को (बदरिकाश्रम) जा कर मोक्ष प्राप्त किया (भा. ११. २९. ४७)। श्रीकृष्ण उद्धव को अपने से अणुमात्र भी कम नहीं समझते थे तथा आत्मज्ञानोपदेश करने के लिये ही उद्धव को उन्होंने अपने पीछे रख छोड़ा था ऐसा शुकाचार्य ने बताया है (भा. ३. ४. ३०-३१) उद्धव द्रौपदीस्वयंवर के समय वहां उपस्थित था। (म. भा. १७७. १७)

२. (सो. पुरुरवस्) मत्स्यमतानुसार नहुष का पुत्र।

उद्यान—(सो.) मविष्यमतानुसार शतानीक का पुत्र।

उद्दालायन—कश्यपकुल का एक गोत्रकार।

उन्नत—वाक्षप मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

उन्नति—दक्ष और प्रसुति की कन्या। धर्म की स्त्री।

उन्नाद—कृष्ण एवं मित्रविंश का पुत्र। एक महारथी।

उन्मत्त—अष्टभैरवों में से एक।

२. अंगराज मायावर्मन् तथा प्रमदा का पुत्र (मवि. प्रति. ३.३१)

३. रावण का भ्राता। गवाक्ष कपि ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ७०.६५-७४)।

उपकीचक—सूतापिप कैकय एवं मालवी के पुत्र तथा कीचक के कनिष्ठ भाई (म. वि. १५, परि. १.१९.२५-२७) भीम ने कीचक के बाद इनका वध किया (म. वि. २२. २५)।

उपकेतु—एक व्यक्ति का नाम (क. सं. १३.१)।

उपकोसल कामलायन—कमलपुत्र उपकोसल। सत्यकाम जाबाल के घर ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए अध्ययन करने के लिये रहा। ग्रह वर्षों के बाद सत्यकाम ने अन्य शिष्यों का समावर्तन कर स्वयं जाने की अनुमति दी परंतु उपकोसल का समावर्तन नहीं किया। तब सत्यकाम की स्त्रीने उससे कहा कि इस ब्रह्मचारी ने अग्नि की सेवा उत्तम प्रकार से की है। अग्नि हमें दीप न दे इसलिये आप इसे ब्रह्मज्ञान बताइये। परंतु इस

और ध्यान न दे, सत्यकाम यात्रा करने चला गया। तब मानसिक दुःख के कारण, उपकोसल ने अन्न बर्च्ये किया। इस ब्रह्मचारी का तप और उसकी सेवा को ध्यान में रख कर तीन अग्नि, इसे ज्ञान देने के लिये प्रगट हुए। तीनों अग्नियों ने इसे बताया कि प्राण, सुप्त तथा आकाश ये प्रत्येक ब्रह्म है। उपकोसल ने कहा 'प्राण ब्रह्म कैसे है यह मुझे समझ गया; परंतु सुप्त और आकाश के संबंध में मुझे समझ में नहीं आया। इस पर अग्नि ने योग्य उत्तर दे कर उसका समाधान कर अपना स्वरूप भी उसे समझा दिया। उन्होंने अंत में कहा 'उपकोसल! यह हमारी-विद्या तथा आत्मविज्ञान हम ने तुम्हें बताया है। ब्रह्म-वेत्ता का अमला मार्ग तुम्हारे आचार्य बतायेंगे'। कुछ दिनों के बाद आचार्य आये और शिष्य का मुखवलोकन कर कहा—“मेरे बच्चे! ब्रह्मज्ञानी के मुख की तरह तेरा मुख दिखाई देता है; तुझे किसने ज्ञान दिया?” उपकोसल ने बताया कि, अग्नि ने मुझे ज्ञान दिया। तब गुरु ने उपदेश दिया (छं. उ. ४.१०.१; १४.१)।

उपक्षत्र—(सो. वृष्णि.) विष्णुमत में श्वफल्क का पुत्र।

उपगहन—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५६ कुं.)।

उपगु—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक ऋषि।

२: (सू. निमि.) विष्णु मतानुसार सत्यरथिपुत्र।

उपगुप्त—(सू. निमि.) भागवतमतानुसार उपगुरु जनक का पुत्र।

उपगुरु—(सू. निमि.) सत्यरथ का पुत्र। इसका पुत्र उपगुप्त।

उपगु सौश्रवस—कुत्स और्य का पुरोहित। इसने इंद्र को हवि दिया इसलिये यजमान ने इसका वध किया (प. ब्रा. १४.६.८)।

उपचित्र—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११. १८)।

उपचित्रा—(सो. वृष्णि.) वसुदेव की मदिरा से उत्पन्न कन्या।

उपजंघनि—सनाह देखिये।

उपदानवी—मयासुर की तीन कन्याओं में से ज्येष्ठ। हेरण्याक्ष की स्त्री।

२. सद् की कन्या। इसका पुत्र दुष्यंत (ब्रह्माण्ड. ३. ६.२५)।

३. विदर्भपत्नी। नामान्तर भोजा।

उपदेव—(सो.) देवक का पुत्र।

२. (सो. वृष्णि.) अक्रूर का पुत्र।

३. रुद्रसावर्णि मनु का पुत्र।

उपदेवा—देवक की कन्या। कृष्ण के पिता वसुदेव की स्त्री। इसे कदा, वर्ष आदि इस पुत्र थे।

उपनंद—नंद का मित्र तथा हस्तक।

२. वसुदेव तथा मदिरा का पुत्र।

उपनंदक—(सो. कुरु) धृतराष्ट्र का पुत्र।

उपनिधि—विष्णुमतानुसार वसुदेव की, भद्रा से उत्पन्न कन्या।

उपबर्हण—नारद देखिये।

उपबिंदु—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

उपबिंबा—(सो. वृष्णि.) वायुमतानुसार वसुदेव की, भद्रा से उत्पन्न कन्या।

उपभंग—(सो. यदु.) श्वफल्क का पुत्र।

उपमन्यु वासिष्ठ—मंत्रदृष्टा (क. ९.१७.१३-१५)। वसिष्ठकुलोत्पन्न व्याघ्रपाद का पुत्र। इसका कनिष्ठ बंधु धौम्य। इसका आश्रम हिमालय पर्वत पर था। इसकी माता का नाम अंधा था। उपमन्यु आपोद (आयोद) धौम्य ऋषि का शिष्य। धौम्य ने उपमन्यु के उग्रनिर्वाह के साधन भिक्षा, दूध, फेन आदि बंद किये। अंत में प्राण के अत्यंत व्याकुल होने पर इसने अरकवृक्ष के पत्तों का भक्षण किया। जिसके कारण वह अंधा हुआ तथा कुँए में गिर पड़ा। गुरुजी शिष्य को ब्रह्मने के लिये निकले, तथा वन में आ कर उपमन्यु को कई बार पुकारा। गुरुजी के शब्द पहचान कर उपमन्यु ने अपना सारा वृत्तान्त कहा। तब गुरुजी ने इसे अश्विनीकुमारों की स्तुति करने को कहा। स्तुति करते ही अश्विनीकुमारों ने प्रसन्न हो कर इसे एक अपूप भक्षण करने दिया। परंतु इसने गुरु को प्रथम अर्पण किये बिना उसे भक्षण करना अस्वीकार कर दिया। उपमन्यु को किसी भी प्रकार के मोह के बश न होते देख, वे उस पर बहुत संतुष्ट हुए। अश्विनीकुमारों ने उसे उत्तम दृष्टि दी। गुरु भी उस पर प्रसन्न हुए (म. आ. ३.३२-८४)।

बचपन में एक बार उपमन्यु दूसरे मुनि के आश्रम में खेलने गया। वहाँ इसने गाथ का दूध निकालते हुए देखा। बचपन में एक बार इसके पिता एक यज्ञ में उसे ले गये, जहाँ इसे दुग्धप्राशन करने मिला था। इस कारण इसे दूध का गुण तथा उसकी मिठास मालूम थी (म. अनु. १४. ११७-१२०)। लिया एवं शिव पुराण में ऐसा दिया है कि, जब वह मामा के घर गय

था, तब इसे दुग्धप्राशन करने मिला था (लिङ्ग. १.१०७; शिव. वाय. १.३४.३५)। घर आ कर उपमन्यु माता से दूध मांगने लगा। मां ने आटा पानी में चोल कर दिया जिस कारण उसे बहुत खराब लगा। मां ने स्नेहपूर्वक उपमन्यु पर हाथ फेरते हुए कहा कि, पूर्वजन्म में शंकर की आराधना न करने के कारण, दूध मिलने इतना दैव अपने अनुकूल नहीं है। शंकर कैसा है, उसका ध्यान किस तरह करना चाहिये, इत्यादि जानकारी उसने माता से पूछी। माता को प्रणाम कर वह तपस्या करने चला गया। वहां दुस्तर तपस्या कर शंकर को उसने प्रसन्न किया। प्रथम शंकर ने इंद्र के स्वरूप में आ कर कहा कि, मेरी आराधना करो; परंतु उसे शंकर के अभाव में देहत्याग की तयारी करते देख शंकर ने प्रगट हो उसे अनेक वर दिये। क्षीरसागर दिया तथा गणों का अधिपति नियुक्त किया। उसने शंकर पर अनेक स्तोत्र रचे। उसने आठ ईंटों का मंदिर बना कर मिट्टी के शिवलिंग की आराधना की, तथा पिशाचों द्वारा लाये गये विघ्नों पर भी उसने तप को भंग नहीं होने दिया (शिव. वाय. १.३४)। यह शैव था। इसने कृष्ण को शिवसहस्रनाम बताया (म. अनु. १७)। तथा पुत्रप्राप्ति के लिये तप करने जब कृष्ण आया, तब उसे शैवी दीक्षा दी। हिमवान् पर्वत के आश्रम में अंत में यह अत्यंत जीर्णवस्त्र ओढ़ कर रहता था। इसने जटा भी धारण की थी। यह कुतयुग में हुआ था (म. अनु. १४-१७; शिव. उमा. १)। शंकर के व्रतये अत्यंत विस्तृत शैवसिद्धांत को इसने ऊरु, दधीच तथा अगस्त्य इनके साथ संक्षेप में कर समाज में प्रसिद्ध किया (शिव. वाय. ३२)।

२. नंदिकेश्वरकृत काशिका ग्रंथ पर व्याघ्रपाद के पुत्र उपमन्यु की टीका है। इस टीकाकार ने अपनी अपनी टीका में इस काशिका के बारे में यह विवरण दिया है कि, शिव ने अपने डमरू के मिष (बहाने) सनक, सनंदन, सनातन, सनत्कुमार इत्यादि ऋषियों के तथा नंदिकेश्वर, पतंजलि, व्याघ्रपाद आदि भक्तों के लिये चौदह सूत्रों के द्वारा ज्ञान प्रगट किया। परंतु उन में से केवल एक नंदिकेश्वर को इन सूत्रों का तत्त्वार्थ समझा, तथा उसने इन छब्बीस श्लोकों की काशिका रची (शिवदत्त-महाभाष्य पृष्ठ १२ देखिये)। व्याकरण संबंधी माहेश्वर के चौदह वर्णसूत्र प्रसिद्ध हैं, जो माहेश्वर ने डमरू बजा कर पाणिनि को दिये ऐसी प्रसिद्धि है। इन सूत्रों का कुछ गूढ़ार्थ है, ऐसा

नंदिकेश्वरकाशिका से पता चलता है। शेखर के रचयिता नांगशभट्ट ने नंदिकेश्वर काशिका को प्रमाण माना है। इस बात से पता चल जायेगा कि उपमन्यु, पाणिनि तथा पतंजलि के पश्चात् का रहा होगा। व्याघ्रपाद (उपमन्यु का पिता), नंदिकेश्वर तथा पतंजलि समकालीन थे, ऐसा प्रतीत होता है। परंतु काल की दृष्टि से सारे उपमन्यु एक हैं यह कहना असंभव लगता है। इसके द्वारा लिखे ग्रन्थ, १. अर्धनारीस्वराष्टक, २. तत्त्वविमर्षिणी, ३. शिवाष्टक, ४. शिवस्तोत्र (बृहत्स्तोत्र रत्नाकर में छपा है), ५. उपमन्युनिरुक्त (C. C.) हैं। इसने एक स्मृति की भी रचना की थी, ऐसा स्थान स्थान पर आये वचनों से पता चलता है।

३. वेद ऋषि का शिष्य।

४. कृष्णद्वैपायन व्यास का पुत्र, शुकाचार्य का वंशु।

५. इंद्रप्रमतिपुत्र वसु का पुत्र (ब्रह्माण्ड. ३.९.१०)। यह ऋग्वेदी श्रुतार्षि मध्यमाध्वर्यु भी था।

उपमश्रवस्—मित्रातिथि का पुत्र (ऋ. १०.३३.७)। मित्रातिथि की मृत्यु के बाद कवप ऐलूप इसका सांवन करने आया (ऋ. १०.३३)। इसी सूक्त में कुरुश्रवण त्रासदस्यव की वानस्तुति है। कुरुश्रवण त्रासदस्यव तथा मित्रातिथिपुत्र उपमश्रवस् का कोई संबंध रहा होगा ऐसा नहीं लगता (सायणभाष्य व बृहदे.)।

उपयाज—ऋष्यपगोत्रोत्पन्न ऋषि (तुपद देखिये)।

उपयु—पराशरकुल का गोत्रकार।

उपरिचर वसु—(सो. ऋक्ष.) यह कुरुवंश के सुधन्वा की शाखा के कृतयज्ञ या कृति का पुत्र है (सुधन्वन् देखिये)। इसने यादवों से चेदि देश जीत लिया तथा त्रैयोपरिचर अर्थात् त्रैव्यो का जेता यह नाम स्वयं लिया (वायु. ९४; ब्रह्माण्ड. ३. ६. ८; ह. वं. १. ३०; ब्रह्म. १२; म. आ. ५७)। उपरिचर इसकी पदवी है तथा वसु इसका नाम है। उपरिचर शब्द की भांति ही अंतरिक्षग, आकाशस्थ, ऊर्ध्वचारी आदि शब्द इसके लिये प्रयुक्त हैं। यह सदा विमान में बैठ कर आकाश में विचरण करता था, ऐसा इसके बारे में वर्णित है। इसके गले में इंद्रमाला के कारण इसे इंद्रमाली कहते थे। इसकी स्त्री गिरिका। इसने तप कर इंद्र को संतुष्ट किया। इंद्र ने इसे स्फटिकमय दिव्य विमान दिया तथा जितके कमल कमी नहीं मुरझायेंगे ऐसी इंद्रमाला नामक वैजयंती अर्पण की और कहा कि, तुम्हे पृथ्वी पर धर्माचरण करने के बाद पुष्यलोक प्राप्त होंगे; इस लिये तु

चेदि देश में वास्तव्य कर। वैजयंती के प्रभाव से युद्धभूमि में सन्नों के त्रण होने का डर नहीं था।

इंद्र ने तत्पश्चात् साधुओं के प्रतिपालनार्थ ब्रौंस की टडी दी। संवत्सर की समाप्ति के दिन राजा ने उसका थोड़ा हिस्सा जमीन में गाड़ दिया, तभी से यह रीति राजाओं में अमी भी रूढ़ है। वर्षप्रतिपदा के दिन इसे छड़ी का वस्त्रसूषणों से सुशोभित कर, तथा गंधपुष्पों से अलंकृत कर उच्चस्थान पर आरोहित करने है राजा वसु के प्रीत्यर्थ हंस रूप धारण किये ईश्वर की इस यष्टि द्वारा राजा लोग बड़े आदर से विधिपूर्वक पूजा करते हैं। इस उत्सव की प्रभा राजा ने फैलाई, यह देव इंद्र ने ऐसा कर दिया कि जो राजा चेदिराजा की तरह मेरा उत्सव करेगा, उसके राज्य में अखंड लक्ष्मी का वास होगा तथा जन संतुष्ट रहेंगे।

नगर के पास से बहनेवाली शुक्तिमती नदी को कोलाहल नामक पर्वत रोक रहा है, यह देख राजा ने पर्वतपर एक पटप्रहार किया तथा उसमें एक विवर निर्माण कर, नदी के लिये मार्ग बना दिया। पर्वत की उतनी संगति के कारण नदी को एक जुड़वा ("एक पुत्र एवं एक पुत्री") हुआ। नदी ने कृतज्ञ हो, पुत्र तथा पुत्री राजा को अर्पण की। राजा ने पुत्र को अपना सेनापति बनाया तथा उस पुत्री के साथ पाणिग्रहण किया। यही गिरिका थी। वह शीघ्र ही नवयुवती हुई परंतु ऋतुदान के दिन राजा को पितरों ने मृगया हेतु वन में जाने की आज्ञा दी। आज्ञानुसार राजा मृगया हेतु गया। परंतु अत्यंत कामोत्सुकता के कारण उसका रेत रखलित हुआ, जिसे उसने एक दोने में रखा तथा एक श्येन पक्षी को अपनी भार्या के पास ले जाने को कहा। वह पक्षी ले कर जा रहा था कि, राह में एक दूसरे बुसुक्षु श्येन पक्षी ने उस पर हमला कर दिया। इस संघर्ष में वह दोन यमुना नदी में गिर पड़ा तथा अद्रिका नामक मत्स्यी को मिला। यह मत्स्यी एक शापभ्रष्ट अप्सरा थी। उस महीने के बाद एक श्रीवर के द्वारा पकड़ी गयी। उसे काटते ही पेट से एक लडका एवं एक लडकी निकली। तब श्रीवर उन्हें राजा के पास ले गया तथा सारी कथा कह सुनाई। राजा ने लडके का नाम मत्स्य रख, उसे अपने आप रखा तथा लडकी एक श्रीवर को दे कर उसका लालनपालन करने की आज्ञा दी। यही सत्यवती (मत्स्यगंधा) है।

उपरिचर वसु के पांच पुत्र थे। बृहद्रथ, प्रत्यग्रह, कुशांब, मणिवाहन (मावेहल) तथा यदु। इसने अपने

पुत्रों को अलग अलग राज्य दिये (म. आ. ५७, २८-२९)। इसके पुत्रों में मत्स्य तथा काली नाम हैं। बृहद्रथ ने मगध में बाहृद्रथ कुल की स्थापना की। कुशांब को (मणिवाहन) कौशांबी, प्रत्यग्रह को चेदि, यदु को कुरुप तथा पांचवे मावेहल को मत्स्य देश मिला (म. द्रो. ९१)। यह पूर्व जन्म में अमावसु पितर था।

एक समय इंद्र तथा महर्षियों का यज्ञ में, पशुहिंसा विहित था अविहित है इस पर विवाद हुआ। इतने में वहां उपरिचर वसु का आगमन हुआ। सत्यवक्ता होने के कारण इस से विवाद का निर्णय पूछा गया। इसने इंद्र का पक्ष ले कर पशुवध के अनुकूल मत दिया। तब ऋषियों ने शाप दिया कि, तुम्हारा अधोलोक में पतन होगा। शाप मिलते ही यह रसातल में पतित हुआ (मत्स्य. १४२)। महाभारत में यह वाद, अजयवध करना चाहिये या बीज उपयोग में लाना चाहिये, ऐसा था। उस समय उपरिचर वसु अंतरिक्ष में मार्गक्रमण कर रहा था। तब ऋषियों ने निर्णयार्थ इसे बुलाया। दोनों पक्षों की बात समझ लेने पर, वसु ने देवताओं का पक्ष लिया तब ऋषियों ने शाप दिया कि, चूंकि देवताओं का पक्ष ले कर तुमने अतृप्त भाषण किया है, इसलिये तुम्हें पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश करना पड़ेगा। तदनुसार यह राजा अधोमुख हो पृथ्वी के विवर में घुसा। परंतु नर-नारायण की कृपा से नारायण का मंत्र जप कर, तथा पंचमहायज्ञ कर इसने नारायण को संतुष्ट किया। अंत में विष्णु की आज्ञानुसार गरुड ने आ कर इसे शापमुक्त किया तथा पहले की तरह इसे अंतरिक्ष में मार्गक्रमण करने के लिये समर्थ बनाया। यह बृहस्पति का पट्ट-शिष्य हुआ। उसके पास से इसने चित्राशिखंडी संज्ञक सप्तर्षियों द्वारा रचित शास्त्र का अध्ययन किया। इसने अश्वमेध यज्ञ किया, जिसमें बृहस्पति ने होतृत्व स्वीकार किया था। इसमें पशु वध नहीं हुआ। इसे यज्ञ में इसे नारायण ने प्रत्यक्ष दर्शन दिया। इस निश्चयान राजा को महीतल छोड़ने पर तत्काल परमपद प्राप्त हुआ (म. शां. ३२२-३२४)। अद्रिका नामक अप्सरा के साथ एक शर यह विमान पर से जा रहा था। सोमपट्ट में रहने वाले पितरों की मानसकन्या अच्योदा ने, इसे देख कर इसे अपना पिता माना, तथा इसने भी उसे कन्या रूप में स्वीकार किया। यह देख कर उसके पिता ने इसे शाप दिया कि तुम इस अप्सरा सहित पृथ्वी पर जाओगे तथा तुमसे यह कन्या होगी। यह सुनते ही वसु ने उसके

चरण पकड़ लिये। तब उन्होंने कहा कि, तुम पृथ्वी पर कृतयुज का पुत्र हो कर भगवदाराधना कर वैकुण्ठ पद प्राप्त करोगे तथा अच्छोदा, अद्रिका के उदर से काली नाम से जन्म लेगी। यही सत्यवती है (स्कंद २.९.४-७; मत्स्य, ५०)।

उपरिबध्नव—शान्त्युद्धक करते समय कौनसा मंत्र प्रयुक्त करना चाहिये, इस विषय में इसका मत भिन्न है (कौ. सू. ९.१०)। उसी तरह, प्रेत किस तरह रखना चाहिये, इस विषय पर इसका मत पितृविधि में लिखा हुआ है (कौ. सू. ८०.५४)।

उपरिमंडल—भृगुकुल का एक गोत्रकार। परिमंडल ऐसा पाठ है।

उपलप—वसिष्ठ गोत्र का ऋषिगण।

उपलभ—(सो. वृष्णि.) अक्रूर का रत्ना उर्फ शैब्या से उत्पन्न पुत्र (मत्स्य, ४५.२९)।

उपलोम—वसिष्ठकुलोत्पन्न ऋषि।

उपवर्ष—पाटलीपुत्र के शंकररवामी का पुत्र तथा पाणिनि का गुरुबंधु। इसने पूर्वोत्तरमीमांसासूत्र पर वृत्ति रची है। शंकर और शंकराचार्य ने इसका बारंबार निर्देश किया है (कथासरित्सागर)। यह बौधायन का दूसरा नाम रहा होगा। परंतु श्रीभाष्यकार इन दोनों को एक नहीं मानते क्यों कि ऐकात्म्याधिकरण में (ब्र. सू. ३.३.५३) शंकराचार्य ने उपवर्ष का विवरण दिया है। श्रीभाष्यकार उसी अधिकरण को प्रत्यगात्म पर लगाते हैं। उपवर्ष का शबर स्वामी ने भी उल्लेख किया है। ऐसी एक आख्यायिका है कि काश्मीर में रामानुजाचार्य को केवल एक बार बौधायनवृत्ति देखने मिली। यह संधि पा कर उन्होंने उसे पुरा पढ़ लिया तथा इससे श्रीभाष्य लिखा।

उपवाह्यका—संजय की पुत्री और भजमान की स्त्री (ह. वं. १.३७.३)।

उपवंशि—कुश्रि का शिष्य (वृ. उ. ६.५.३.)।

उपश्लोक—ब्रह्मसावर्णि मनु का पिता।

उपसुंद—सुंदोपसुंद देखिये।

उपस्तुत वार्षिहव्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.११५)। कण्व मेध्यातिथि के साथ इसका निर्देश है (ऋ. १. ३६. १०; १७)। इसका बहुवचनी स्तोत्र मानकर उल्लेख है (ऋ. ८. १०३. ८)। उपस्तुत का ऋग्वेद में कई बार उल्लेख है।

उपहृत—स्वर्ग में रहने वाले पितर। इनकी कन्या यशोदा। यशोदा का पुत्र स्वत्वांग (ब्रह्माण्ड. ३. १०. ९०)।

उपाध्याय—कश्यप को आर्यावती से उत्पन्न पुत्र (भवि. प्रति. ४.२१)।

उपान—साध्यदेवों में से एक।

उपावि जानश्रुतेय—उपसदकर्म के विषय में प्रमाण की तरह मान्य एक प्राचीन आचार्य का यह नाम है (ए. ब्रा. १.२५)।

उपानृद्धि—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक ऋषि।

उपासंगधर—(सो. वृष्णि.) मत्स्यमतानुसार वसुदेव का देवरक्षिता से उत्पन्न पुत्र।

उपोदिति गौपालेय—सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १२. १३. ११)।

उभक्षय—(सो. पुरु.) वायुमतानुसार भीम का पुत्र।

उभयजात—भृगुकुलोत्पन्न ब्रह्मर्षि।

उमा—हिमालय की मेना से उत्पन्न पुत्री। इसका पति रुद्र (पद्म. सू. ९)। उपनिषद् में विद्या का उमा हैमवती ऐसा निर्देश है (जै. उ. ब्रा. ४. २०. १२)।

उम्लोचा—एक अप्सरा (म. आ. ११४.५४)।

उर वार्षिणवृद्ध—एक आचार्य (सां. ब्रा. ७. ४)।

उरुकर्म—आदित्यों में से एक। यह ऊर्ज (कार्तिक) माह में प्रकाशित होता है (मा. १२.११)। परंतु भविष्य-पुराण में ऐसा दिया है कि यह चैत (चैत्र) में प्रकाशित होता है और इसकी १२०० किरणें हैं (भवि. ब्राह्मं. १७८; विवस्वान् देखिये)। विष्णु तथा त्रिविक्रम इसे नामांतर हैं। कीर्ति इसकी भार्या थी, जिससे बृहच्छूलोक नामक पुत्र हुआ (मा. ६.१८.८)।

उरुक्रिय—(सू. इ. भविष्य.) बृहद्रथ का पौत्र व बृहद्रथ का पुत्र जिसे अभिमन्यु ने मारा। उरुकश्य इसका नामांतर है। वत्सवृद्ध या वत्सप्रोह इसका पुत्र था।

उरुकश्य—(सो. पुरु.) विष्णुमतानुसार महावीर्य का पुत्र। यह क्षत्रिय से ब्राह्मण हुआ था। इसे विशाला से उत्पन्न त्र्यंकारुण, पुष्करिन् तथा कपि भी ब्राह्मण थे।

२. आंगिरा गोत्र का प्रवर।

उरुकश्य आमहीयव—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.११८)। उरुकश्य का बहुवचन में निर्देश इस सूक्त में है (ऋ. १०. ११८.८-९)।

उरुकक्षेप—(सू. इ.) भविष्यमतानुसार बृहदैशान का पुत्र।

उरुचकि आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.६९-७०)।

उरुधिष्य—धर्मसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

उरुनेत्र—जालंधर की सेना का एक राक्षस । इस पर गणपति ने खड्गप्रहार किया, जिससे उसके मुख में से नौ सिर तथा अठारह भुजाओं वाला दैत्य निकला (पद्म. पा. १७.) ।

उरुवलक—बसुदेव तथा इला का पुत्र ।

उरुश्रवस्—(सो. नरिष्यंत.) सत्यश्रवस् का पुत्र । इसका पुत्र देवदत्त ।

उर्मि—सोम का पुत्र ।

उर्मिला—एक गंधर्वा, सोमदा की माता ।

२. सीरध्वज जनक की कन्या । दशरथपुत्र लक्ष्मण की स्त्री ।

उर्व—एक ऋषि । ब्यवन ने अपने कुल का वृत्तान्त कहा है । उस में उर्व नामक एक तेजस्वी कुलवर्षक का निर्देश है । उससे अग्नि उत्पन्न हुआ । वह समुद्र में बडवारूप से है । उसका पुत्र ऋचीक । वह बड़ा योद्धा था । उसने जमदग्नि को अपना पुत्र माना । ऋचीक की पत्नी गाधि की कन्या थी । गाधि का पुत्र विश्वामित्र । ऋचीक को गाधिकन्या सत्यवती से क्षत्रियान्त परशुराम पैदा हुआ । इस प्रकार भृगु तथा कुशिककुल का संबंध है (म. अनु. ५६) ।

बाहु का पुत्र सगर । वह अयोध्या का नृप था । है-हय तालजघ्न ने उसे राजपद से व्युत किया । तब उर्व मार्गव ने उसका रक्षण किया (वायु. ८८.१२३) ।

इससे और्ववंश पैदा हुआ (वायु. ८८.१५७; मत्स्य. १२.४०) । इसने अपनी जन्मा से और्व अग्नि नामक पुत्र उत्पन्न किया । यहाँ उर्व को शुक्र कहा है । देव, मुनि तथा दानव इसके अनुयायी थे (पद्म. सृष्टि. ३८.७४-१०७) । पद्म में उर्व शब्द ऊर्व है ।

२. (सो. पूरु. भविष्य.) मत्स्यमतानुसार पुरंजय का पुत्र ।

उर्वरा—एक अप्सरा (म. अनु. ५०.४७ कुं.) ।

उर्वरीयान—सावर्णिमनु का पुत्र ।

उर्वरीवत्—और्व का नामांतर ।

उर्वशी—एक अप्सरा की तरह ऋग्वेद के काल से प्रसिद्ध है । ऋग्वेद में उर्वशी के एक संवादात्मक सूक्त में बहुत सी ऋचाएँ हैं (ऋ. १०.९५) उर्वशी शब्द ऋग्वेद में कई बार आया है (ऋ ४.२. १८; ५.४१. १९; ७. ३३.११; १०.१५. १०, १७) । तथापि अंतिम तीन स्थानों पर तो निश्चित रूप से व्यक्तिवाचक शब्द है । सातवें मंडल में इससे वसिष्ठ उत्पन्न हुआ ऐसा बताया

गया है तथा दसवें मंडल में उर्वशी-पुरूरवा संवाद है । शर्त के अनुसार, राजा नग्न अवस्था में दिखाई देने के कारण उर्वशी उसे छोड़कर जाती है । वह छोड़कर न जावे इसलिये राजा पागल की तरह भटकते भटकते एक सरोवर के पास आया । वहाँ वह सखियों के साथ क्रीडा कर रही थी । उस स्थान पर राजा तथा उर्वशी का संवाद हुआ जो ऋग्वेद में वर्णित है (श. ब्रा. ११.५.१. मा. ९.१४) । उर्वशी गर्भवती थी इसलिये उसने राजा के पास आना अस्वीकार कर दिया । संक्षेप में संवाद का यही सार है । अपने लिये प्राणत्याग करने को प्रवृत्त हुए राजा को प्राणत्याग से निवृत्त होने को बता कर उर्वशी ने नारी स्वभाव की अच्छी कल्पना राजा को दी । उर्वशी देवों में से भी है ऐसा वहाँ वर्णित है । इसीलिये उसने राजा को मुझाया है कि मृत्यु के बाद स्वर्ग में आने पर उसे उसका सहवास प्राप्त होगा ।

उर्वशी को देखकर वासुदेवसत्र में भिन्नावरुणों का रेत सकलित हुआ तथा उनसे कालोपरांत अगस्त्य तथा वसिष्ठ उत्पन्न हुए (कात्यायनकृत सर्वाणुक्रमणी. १.१६६; बृहदे. २.३७; ४४.१.५६; ३.५६) । उर्वशी पुरूरवस का आख्यान बहुत प्राचीन काल से प्रसिद्ध है । अप्सराओं का निर्देश ऋग्वेद में है ।

नर नारायण ऋषि बदरिकाश्रम में तप कर रहे थे । वे इंद्रपद न ले लें, इस भय से इंद्र ने वसंत, काम एवं मेनका, रंभा, तिलोत्तमा, घृताची आदि सोलह हजार पचास अप्सराओं को उन्हें तप से परावृत्त करने के लिये भेजा (दे. भा. ४.६) । विष्णुपुराण में ऐसा वर्णन है कि पुराण-पुरुष विष्णु गंधमादन पर तप कर रहे थे तब यह मदन-सेना भेजी गयी थी (पद्म. सृ. २२) । गायनादि प्रकारों से उन्हें मोहित करने के कई प्रयत्न किये गये; परंतु सब निष्फल हुआ देख वे सब खिन्न हो गये । नरनारायणों ने उन सबका अत्यंत मधुर शब्दों से आदरातिथ्य कर के, पूछा कि आपका यहा आगमन किस हेतुसे हुआ है ? जिससे कामादि लज्जित हो अधोमुख कर स्तब्ध खड़े हो गये । इतने में उन्होंने देखा कि नारायण की जंघा से सोलह हजार इक्कावन अप्सराएँ प्रगट हुईं जिनमें उर्वशी अत्यंत सुंदर थी । यह उरु अर्थात् जंघा से उत्पन्न हुई इसलिये इसका नाम उर्वशी हुआ । नरनारायणों ने इंद्र को भेंट करने के लिये नयनाभिरामा उर्वशी कामादि के सुपुत्र की । तदुपरांत सब अप्सराओं ने नरनारायणों की सेवा में रहने के लिये

प्रार्थना की, परंतु नरनारायणों ने उनकी सेवा स्वीकार नहीं की (दे. भा. ४.६; भा. ११.४; मत्स्य. ६०)।

यह एक बार सूर्याराधना को ज्ञा रही थी। तब इसने मित्र आदित्य को वरण करने का आश्वासन दिया। आगे वरुण मिला उसने भी इसे वरण करने का अभिवचन मांगा। तब इसने मित्र को वचन देने की बात बताई। वरुण ने बाद में इससे प्रेमयाचना की तथा वह इसने दिया। तदुपरान्त वरुण ने इसे उद्देश कर एक कुंभ में अपना वीर्य डाला। मित्र को यह समझते ही उसने इसे शाप दिया "मृत्युलोक में पुरुरवा की स्त्री हो"। तथा अपना वीर्य एक कुंभ में डाला। इन दोनों कुंभों के वीर्य से अगस्त्य तथा वसिष्ठ का जन्म हुआ (पद्म. सू. २२; भा. ९.१४; मत्स्य. ६०; वा. रा. उ. ५६.५७) मित्रावरुण बदरिकाश्रम में तप कर रहे थे। उस समय सौंदर्यवती उर्वशी फूल तोड़ते हुए इन्हें दिखाई पड़ी। तब इनका रेत स्वलित हुआ जिससे अगस्त्य तथा वसिष्ठ का जन्म हुआ। उर्वशी को देखते ही मित्र का रेत स्वलित हुआ, जिसे उसने शाप के भय के कारण पैरों तले रौंद डाला। तब वसिष्ठ का जन्म हुआ (विष्णु. ४.५)।

एक बार नारद ने पुरुरवस् राजा की बहुत स्तुति की। इस कारण यह उस पर मोहित हुई (भा. ९.१४)। पुरुरवस् पर मोहित होने के कारण लक्ष्मीस्वयंवर नामक प्रबंधनाट्य करते समय कुछ हावभावों में भूल हो गयी। तब भरत ऋषि ने शाप दिया, कि तूम पचपन वर्ष लता बन कर रहोगी। शाप की अवधि समाप्त होने पर जब यह पुरुरवस् के पास जा रही थी, तब राह में केशी नामक दैत्य इसे उठा कर ले गया; परंतु सौभाग्यवश पुरुरवस् ने ही इसे मुक्त किया (पद्म. सू. १२. ७६-८५; मत्स्य. २४. २३-३२)।

तत्पश्चात् उर्वशी पुरुरवस् के नगर में आयी तथा उसने अपनी तीन शतें बतायी। (१) इन दो भेड़ों को मैं पुत्रवत् पाल रही हूँ उनका संरक्षण करना होगा, (२) मैं सदा भृताहार करूंगी, (३) मैंभुत अतिरिक्त कभी तुम्हें नग्न न देखूंगी। इन शतों का पालन करते हुए पुरुरवस् ने उर्वशी का चित्ररथ व नंदन आदि बनों तथा अलका आदि नगरों में ६१००० वर्ष तक उपभोग किया। परंतु बाद में तीसरी शर्त भंग हो जाने के कारण वह देवलोक गई। पुरुरवस् को इससे आशु आदि छः पुत्र हुए थे

(भा. ९.१४-१५; विष्णु. ४.६-७; दे. भा. १.१३; म. आ. ७०.२२)।

अर्जुन के जन्म के समय गायन करने वाली ग्यारह अप्सराओं में यह भी एक थी (म. आ. ११४.५४)। कुबेर की सभा में उसकी सदा सेवा करने में यह निमग्न रहती है (म. स. १०.११)। अर्जुन इंद्र लोक में शिक्षा ग्रहण करने गया था। वहां एक बार इसकी ओर कुलकी जननी इस पूज्यभाव से अर्जुन ने देखा। यह बात इंद्र के ध्यान में न आयी तथा उसने सोचा कि, शायद काम इच्छा से अर्जुन इसकी ओर देख रहा है इसलिये इंद्र ने चित्ररथ गंधर्व के द्वारा उर्वशी को समाचार भिजवाया तब यह सायंकाल में सुंदर वस्त्रों से सज्जप कर अर्जुन के पास गयी परंतु अर्जुन ने खुद की भावना बता कर इसका निषेध किया। इच्छाभंग होने के कारण इसने अर्जुन को, 'तू एक वर्ष तक नपुंसक बन कर रहेगा,' ऐसा शाप दिया। तब इंद्र ने अर्जुन को सात्वना दी कि तेरहवें वर्ष (अज्ञातवास में) यह शाप तेरे काम आयेगा (म. व. परि. १.६; प. १३२-१५०)। अष्टावक्र के सम्मान के लिये वरुण ने जिन अप्सराओं का वृत्य कराया था उनमें यह भी थी (म. अनु. १९.४४)। 'अनेक पवित्र पदार्थ मेरा रक्षण करें; भीष्म के मुख से निकलने वाले इस उल्लेख में पवित्र अप्सराओं में उर्वशी का नाम है। (म. अनु. १६५.१५)। उर्वशी के नाम पर उर्वशीतीर्थ नामक एक पवित्र तीर्थस्थान प्रसिद्ध है (म. व. ८२.१३६; देवव्रत देखिये)। यह ब्रह्म-वादिनी थी (ब्रह्मांड २.३३)।

उर्वीभाव्य—(सो. कुरु मन्विय.) मत्स्यमतानुसार पुरंजय का पुत्र।

उर्वीशू—यह पापी था, परंतु व्रत तथा दान के कारण इसका उद्धार हुआ (पद्म. क्रि. १९)।

उल वातायन—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१८६)।

उल वार्ष्णिबृद्ध—एक आचार्य (सां. ब्रा. ७.४)।

उलुवय जानश्रुतेय—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. १.६.३)

उलूक—एक ऋषि। (म. शां. ४७.६६*) विश्वामित्र का पुत्र म. अनु. ७. ५१ कुं.)

२. एक क्षत्रिय। यह द्रौपदीस्वयंवर में था (म. आ. १७७.२०)। दुर्योधन ने इसे युद्धारंभ के पूर्व उपपन्न नगर में धर्मराज के पास दूत बनाकर भेजा था (म. उ. १५७. १६०)। इसे कैतव भी कहते हैं। इसने धर्म को दुर्योधन का संदेश सुनाया (म. उ. १६०)। युयुत्सु के साथ

इसका युद्ध हुआ था (म. क. १८.१)। सहदेव ने इसका वध किया (म. श. २७-२९)।

३ हिरण्यक्ष दैत्य के चार पुत्रों में से एक।

४ शिवावतार सीम का शिष्य।

५ शिवावतार सहिष्णु का शिष्य।

उल्लूकी—कश्यप तथा ताम्रा की कन्या। इसे उल्लूक हुए (म. आ. ६०. ५४)। कार्की भी इसका नाम रहा होगा।

उल्लूखल—व्यास की सामशिष्यपरंपरा के ब्रह्मांड मतानुसार हिरण्यनाभ के शिष्यों में से एक (व्यास देखिये)। वायु में उल्लूखल ऐसा पाठ है।

उल्लूप—विश्वामित्रकुल का ऋषि गण।

उल्लूपी—ऐरावत नाम नागकुल के कौरव्य नाम की कन्या। यह ऐरावत नाम के पुत्र से ब्याही गयी थी। विवाहोपरांत कुछ ही दिनों में गरुड ने इसके पति का वध किया। इस कारण यह बालविधवा हुई। कालोपरांत पंडुपुत्र अर्जुन तीर्थयात्रा करने निकला वह गंगा में स्नान करने उतरा। उसे देख इसके मन में अर्जुन के प्रति प्रेम उत्पन्न हुआ तथा वह उसे पानी में खींच ले गयी। अर्जुन ने उल्लूपी की प्रार्थना स्वीकार कर इससे गांधर्व विधि से विवाह किया। इस विवाह में ऐरावत की भी सम्मति थी कारण इससे अपने वंश का विस्तार होगा यह बात उसने ध्यान में रखी थी। बाद में उल्लूपी को अर्जुनसे इरावान् नामक पुत्र हुआ (म. आ. २०६; भा. ८६. ६)। पांडवों के अश्वमेध के समय अर्जुन बभ्रु-बाहन के हाथ से मारा गया। वस्तुतः वह मरा नहीं था; भीष्म को शिखंडी की आड़ से मारने के कारण लगे पाप का निरसन हो इसलिये उल्लूपी ने माया के योग से इसे मूर्च्छित किया था। फिर उल्लूपी ने संजीवनी मंत्र का चिंतन किया तथा तुरंत ही नागों ने वह ला दिया जिसके द्वारा अर्जुन की मूर्च्छा दूर कर उसे उल्लूपी ने सावधान किया (म. आश्व ७८-८०; बभ्रुवाहन देखिये)। पांडव ब्रह्म महाप्रस्थान के लिये निकले तब उल्लूपी उनके साथ थी। बाद में इसने गंगा में देहत्याग किया (म. महा. १. २५)।

उल्कामुख—राम की सेना का एक वानर। यह अंगद के साथ दक्षिण दिशा में सीता की खोज में गया था (वा. रा. कि. ४१)।

उल्लूष—(स्वा.) वसिष्ठ तथा अरुंधती के सात पुत्रों में से एक।

उल्लुक्—(स्वा.) चक्षुर्मनु तथा नड्वल के ग्यारह पुत्रों में कनिष्ठ। इसकी स्त्री पुष्करिणी। अंग, सुमन्त्, ख्याति, क्रतु, अंगिरा तथा गय ये इसके छः पुत्र थे (भा. ४.१३.१७)।

२. (सो. वृष्णि.) बलराम का पुत्र। यह राजसूय में था (म. स. ३१.१६)। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में था (म. द्रो. १०.१८)।

उल्लूप—उल्लूप का पाठभेद।

उशंगु—(रुशंगु) एक ऋषि। इसने अपने को वाधक्य आया देख पृथूदकतीर्थ में देह त्याग कर विष्णु-लोक में गमन किया (म. श. ३८.२४-२६)। इसके आश्रम में आर्द्रिषेण, विश्वामित्र, सिंधुद्वीप, देवापि आदि ने तप कर ब्राह्मण्य प्राप्त किया था (म. श. ३८. ३१-३२)। उस स्थान पर बलराम तीर्थयात्रा के निमित्त गया था।

उशद्रथ—(सो. अनु.) भागवतमतानुसार तितिक्षु-पुत्र।

उशनस्—अग्नि देवताओं का दूत है तथा उशना काव्य असुरों का कुलगुरु व अध्वर्यु है। अग्नि तथा उशना काव्य दोनों प्रजापति के पास गये, तब प्रजापति ने उशना काव्य की ओर पीठ कर अग्नि को नियुक्त किया, जिस कारण देवताओं की जय तथा असुरों की पराजय हुई (तै. सं. २.५.८)। यह असुरों का पुरस्कर्ता था (जै. उ. ब्रा. २.७.२-६.) वारुणि भृगु का पुत्रोमा से उत्पन्न पुत्र (मत्स्य २४९.७; ब्रह्म. ७३.३१-३४)। भृगु का उपा से उत्पन्न पुत्र (विष्णुधर्मोत्तर. १.१०६). उमा ने इसे दत्तक लिया था (म. शां. २७८.३४)। इसको काव्य (मत्स्य. २५.९; वायु. ६५. ७४-७५) कवि (म. आ. ६०. ४०). शुक्र (अंधक देखिये; म. शां. २७८.३२). कर्वाद्र (म. क. ९८) कविसुत, ग्रह, आदि नाम थे। ब्रह्मदेव ने पुत्र माना इसलिये ब्राह्म, शिव ने वरुण माना इसलिये वारुण आदि नामों से इसे संबोधित करते हैं। उशना, शुक्र तथा काव्य ये सब एक हैं (वायु. ६५.७५)। इसकी माता का नाम ख्याति तथा पिता का नाम कवि मिलता है (भा. ४.१)। भृगु का दिव्या से उत्पन्न शुक्र तथा यह एक ही है। (ब्रह्मांड. ३.१.७४)। इसकी स्त्री शतपर्वा (म. उ. ११५. १३)। इसकी पितृसुता आंगी नामक एक स्त्री थी। इसके अतिरिक्त निम्न-लिखित स्त्रियां भी थीं। प्रियव्रतपुत्री ऊर्जस्वती (भा. ५.१); पुरंदर कन्या जयंती (मत्स्य. ४७)। पितृकन्या

गौ (ब्रह्मांड ३.१.७४)। यह पर्जन्याधिपति, योगाचार्य, देव तथा दैत्यों का गुरु है (वायु. ६५.७४-८५)।

उशनस् काव्य, कुल सूक्तों का द्रष्टा है (ऋ. ८.८४; ९. ८७-८९)। यह दानवों का पुरोहित था (तै. सं. २.५ ८.५; तां. ब्रा. ७.५.२०; सां. श्री. सू. १४.२७.१)। इस की योग्यता बड़ी थी (ऋ. १.२६.१)। इसके कुल में भृगु से ही संजीवनी विद्या अवगत है (भृगु देखिये)। इसने यह विद्या शंकर से प्राप्त की थी (वे. भा. ४. ११)। उशनस् ने कुबेर का धन लूट लिया था इसलिये शंकर ने इसे निगल लिया। तब यह शंकर के शिशन से बाहर आया तथा शंकर का पुत्र हुआ। तब से इसका नाम शुक्र पडा (म. शां. २७८.३२, विष्णुधर्म. १.१०६)। असुर लगातार हारने लगे तब उन्हें स्वस्थ शांत रहने का आदेश देकर शुक्र, बृहस्पति को जो माद्वम नहीं हैं ऐसे मंत्र जानने के लिये शंकर के पास गया। यह संधि जानकर देवोंने पुनः असुरों को कष्ट देना प्रारंभ किया। तब शुक्र की माता सामने आयी तथा उसने देवताओं को जलाना प्रारंभ किया। परंतु इंद्र ने पलायन किया तथा विष्णुने इसकी माता का वध कर के देवताओं की रक्षा की परंतु स्त्री पर हथियार चलाने के कारण, भृगु ने विष्णु को पृथ्वी पर जन्म लेने का शाप दिया तथा शुक्र की माता का सिर पुनः चिपका कर उसे सजीव किया। तब इंद्र अत्यंत भयभीत हुआ तथा उसने अपनी जयंती नामक कन्या शुक्र को दी। शुक्र ने भी हजार वर्षों तक तप करके शंकर से प्रज्ञेशत्व, धनेशत्व तथा अवध्यत्व प्राप्त किया (मत्स्य. ४७.१२६; विष्णुधर्म. १.१०६)। शुक्र ने प्रभास क्षेत्र में शुक्रेश्वर के पास (स्कन्द. ७.१.४८) दुर्धर्ष नामक लिंग की स्थापना करके संजीवनी विद्या प्राप्त की (पद्म. उ. १५३)। जयंती दस वर्षों तक इसके साथ अदृश्य स्वरूप में थी। यह तप वामन अवतार के बाद किया। परंतु वायुपुराण में कहा है कि वे दोनों अदृश्य थे, इसीलिये बृहस्पति का निम्नलिखित पद्यंत्र सफल हुआ।

ऐन समय पर युक्ति से बृहस्पति ने शुक्र का रूप ले लिया तथा मैं ही तुम्हारा गुरु हूँ, शुक्र का रूप ले कर आनेवाला यह व्यक्ति झूठा है ऐसा बतला कर उसे वापिस भेज दिया तथा स्वयं ने असुरों को दुर्वृत्त बनाकर हीन बना डाला (मत्स्य. ४७; वायु. २.३६; दे. भा. ४. ११-१२)।

इसे ऊर्जस्वती तथा जयंती से देवयानी उत्पन्न हुई। देवी नामक कन्या इसने वरुण को ब्याही थी (म. आ.

६०.५२)। इसे षण्ड तथा मर्क नामक दो पुत्र थे (भा. ७. ५.१)। इसे आंगी से त्वष्ट, वरुत्रिन् तथा षण्डामर्क हुए (कच, वामन तथा बृहस्पति देखिये)। इसे अरजा नामक एक पुत्री थी (पद्म. सू. ३७)। छठवें मन्वन्तर में यह व्यास था। (व्यास देखिये)। शिवावतार गोकर्ण का शिष्य। सारा जग मनोमय है, यह वताने के लिये इसकी कथा प्रयुक्त की गयी है (यो. वा. ४.५-१६)। इसने वास्तुशास्त्र पर एक ग्रंथ रचा है (मत्स्य. २५.२)।

यह धर्मशास्त्रकार था। उशनसधर्मशास्त्र नामक सात अध्यायोंवाली एक छोटी पुस्तक उपलब्ध है जिसमें श्राद्ध, प्रायश्चित्त, महापातकों के लिये प्रायश्चित्त तथा अन्य व्यावहारिक निर्वृत्तों के संबंध में जानकारी दी गयी है। उसके धर्मसूत्र में बहुत से सूत्र मनुस्मृति तथा बौधायन धर्मसूत्र के सूत्रों से मिलते जुलते हैं। याज्ञवल्क्य ने इसका निर्देश किया है (१.५); मिताक्षरा (३.२६०); तथा अपराकं ग्रंथ में औशनस धर्मशास्त्र के कुल उद्धरण लिये गये हैं। उसी तरह औशनसस्मृति नामक दो ग्रंथ पहला ५१ श्लोकों का व दूसरा ६०० श्लोकों का जिवानंद-संग्रह में उपलब्ध है।

राजनीति विषय पर इसका शुक्रनीति नामक ग्रंथ उपलब्ध है। इसमें से कौटिल्य ने बहुत से उद्धरण लिये हैं। उशनस् उपपुराण का निर्देश औशनस उपपुराण के लिये किया गया है। अनेक स्थानों पर औशनस उपपुराण का निर्देश मिलता है (कर्म. १.३; गरुड. १.२२३. १९)।

२. उत्तम मनु का पुत्र।

३. सार्वर्षिक मनु का पुत्र।

४. स्वायंभुव मनु का एक जिदाजित् देव।

५. भौत्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक। इसके लिये 'शुद्ध' नाम भी प्रयुक्त है।

६. सुतप देवों में से एक।

७. उरु तथा प्रउभेयी का पुत्र।

८. (सो. यदु.) भागवतमतानुसार धर्म का पुत्र।

भविष्यमतानुसार तामस का पुत्र।

उशिक्—(सो. क्रोधु.) कृति का पुत्र। इसका पुत्र चेदि।

२. शिव के श्वेत नामक दूसरे अवतार का शिष्य। (भा. ९.२४.२)

उशिञ्ज—कक्षीवत् देखिये।

उशीज—अंगिराकुलोत्पन्न ऋषि। इसे ऋषिज नामांतर प्राप्त है। इसे ममता से उत्पन्न दीर्घतमा नामक पुत्र था। उषिज इसका पाठभेद है।

उशीति—अंगिरस तथा स्वराज का पुत्र। उशीति का पुत्र दीर्घतमस् (ब्रह्माण्ड. ३.१)।

उशीनर—(सो. अनु.) चक्रवर्ती महामनस् का पुत्र। इसे तितिक्षु नामक भाई था। इसकी मृगा, कुमी, नवा, दवां, तथा दशद्वती नामक पांच स्त्रियाँ थीं। जिन्हें क्रमशः मृग, नय, कृमि, सुव्रत तथा शिवि औशीनर पुत्र थे। उशीनर तथा तितिक्षु ये दो स्वतंत्र वंशशाखायें शुरू हुईं। इसके राज्य का प्रसार केकय तथा मद्रक देशों में शिवपुर यौधेय, नवराष्ट्र, कृमिला तथा वृष्टा इन स्थानों पर हुआ (वायु. २.३७.१७-२४; विष्णु ४.१८; मत्स्य. ४८)। ययातिकन्या माधवी से इसे शिवि उत्पन्न हुआ (शिवि देखिये)।

उषस्त वा **उषस्ति चाक्रायण**—एक सामवेदा ब्राह्मण। जब कुरु देश में अकाल पड़ा था तब बड़ी ही बुरी हालत में यह एक ग्राम में पत्नी समवेत रहा। एक बार भूल लगने के कारण, एक महावत को, जब वह कुलथी खा रहा था, तब उसने होले मांगे। तब होले देकर वह पानी भी देने लगा। तब पानी जूटा होने के कारण इसने अस्वीकार कर दिया। जब होले भी जूटे हैं ऐसा उससे कहा गया तब इसने कहा कि उनको बिना खाये मेरा जीना असंभव था, परंतु मैं अपनी इच्छानुसार पानी कहीं भी पी सकता हूँ। थोड़ी कुलथी पत्नी के लिये भी लाये। तदनंतर पास में ही होने वाले यज्ञ में यह गया। फिर भी विद्वान होने के कारण अन्य ऋत्विजों के समान इसे भी राजा ने दक्षिणा दी तथा इसने भी प्रस्तोता की सहायता की। अन्य स्थान पर उषस्ति पाठ है (छां. उ. १.१०.१; ११.१)। इसने आत्मा के प्रत्यक्षत्व के संबंध में, याज्ञवल्क्य को प्रश्न किया तथा याज्ञवल्क्य ने इससे कहा कि, आत्मा प्रत्यक्ष दिखाना असंभव है (बृ. उ. ३.४.२)। यहाँ उषस्त पाठ है।

उषस्य—काश्यप तथा खशा का पुत्र।

उषा—बलिदैत्य का पुत्र बाणासुर की कन्या। यौवनावस्था में आने के बाद, एक बार जब सखियों सहित रात्रि

के समय अपने मंदिर में सोई थी तब स्वप्न में एक सुंदर तथा तरुण पुरुष से इसका समागम हुआ। जाग्रत होने के पश्चात् इसकी विरहयुक्त चर्चा देख कर चित्रलेखा ने कारण पूछा। इसने उसे स्वप्न की संपूर्ण हकीकत बताई तथा स्वप्न के उस पुरुष को लाने के लिये कहा। तब चित्रलेखा ने त्रैलोक्य में प्रसिद्ध पुरुषों के चित्र क्रमशः उतार कर उसे दिखाये। यादव वंश दिखाते समय प्रद्युम्न का चित्र देख कर यह लज्जित हुई तथा अनिरुद्ध का चित्र देख कर लज्जा से अधोमुख हो गई। इससे चित्रलेखा ने स्वप्न का पुरुष जान लिया। चित्रलेखा में योग-सामर्थ्य था अतएव तीसरे दिन वह शोणितपुर से द्वारका योगसामर्थ्य से एक क्षण में गई वहाँ उसे अपने काबू में ले कर तथा कृत्रिम अंधकार में ढाँक कर ले आई (शिव. रुद्र. यु. ५३)। रात्रि में निद्रिस्त अनिरुद्ध को वह पर्यक्सहित लायी तब उषा को अत्यंत आनंद हुआ तथा उसने चित्रलेखा के योगसामर्थ्य के प्रति आश्चर्य प्रगट किया। बाद में इसने अनिरुद्ध से गंधर्वविवाह किया तथा गुप्त रूप से इसके साथ चार माह तक सुख से रही। बाणासुर द्वारा इसकी रक्षा के लिये नियुक्त सेवकों ने एक बार यह देखा तथा सब बाणासुर को बताया। यह जानते ही उषा के महल में आया। उसने देखा कि, उषा तथा अनिरुद्ध झूत खेल रहे हैं। तब बाणासुर अत्यंत क्रोधित हुआ तथा उसका अनिरुद्ध से युद्ध हुआ। युद्ध में नागपाश डाल कर बाण ने अनिरुद्ध को कैद किया। इधर यादवों ने अनिरुद्ध को खूब दूँदा परंतु वह मिल न सका। तब नारद ने, अनिरुद्ध का स्थान तथा बाणासुर ने उसकी की हुई दशा बतायी। बाणासुर तथा कृष्ण का तुमुल युद्ध हुआ। बाण की करीब करीब सारी सेना नष्ट हो गई तथा बाण के चार हाथ छोड़ कर बाकी सारें हाथ कृष्ण ने तोड़ डाले। तब बाणमाता कोटरा तथा रुद्र की प्रार्थनानुसार कृष्ण ने बाणासुर को जीवनदान दिया। आगे चल कर बड़े समारोह से बाण ने उषा को अनिरुद्ध को दिया। तब सब यादव द्वारका लौट आये (पद्म. उ. २५०; भा. १०. ६२-६३; शिव. रुद्र. यु. ५१-५९)।

२. त्वाष्ट्री संज्ञा का नामान्तर (ब्रह्म. १६५. २)।

उषा—(सो. कुरु. भविष्य.) वायु के मतानुसार निर्वक्र पुत्र तथा विष्णु के मतानुसार में निचंक्रु पुत्र।

उहाक—वसिष्ठ कुल का गोत्रकार ऋषिगण।

ऊ

ऊरु आंगिरस—मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९.१०८.४;५)।
ऊर्ज—स्वारोचिषमनुका पुत्र। सप्तर्षियों में से एक।
 २. उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।
 ३. उत्तम मनु का पुत्र।
 ४. सुधामन देवों में एक।
 ५. (स्वा. उत्तान.) वत्सर तथा स्वर्वीथि का पुत्र।
 ६. (सो. अज.) वायुमतानुसार सुधन्वन् का पुत्र।
ऊर्जयत् औपमन्यव—भानुमत् का शिष्य। इसका शिष्य सुशारद (वं. ब्रा. १)।
ऊर्जयोनि—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ५९.७ कुं)।
ऊर्जवह—(सु. निमि.) विष्णुमतानुसार शुचिपुत्र।
ऊर्जव्य—यज्ञ करनेवाले एक यजमान का नाम (ऋ. ५.४१.२०)।
ऊर्जस्वती—(स्वा.) प्रियव्रत तथा बर्हिष्मती की कन्या। शुक की स्त्री (भा. ५.१.२४)।
 २. अष्ट वसुओं में प्राण वसु की स्त्री।
ऊर्जस्विन्—वैवस्वत मन्वंतर का इंद्र।
ऊर्जा—दक्ष की पुत्री तथा वसिष्ठ की स्वायंभुव मन्वंतर की पत्नी। उस समय इसे चित्रकेतु, सुरोचि, विरजामित्र, उल्बण, वसुभृत्, यान् तथा द्युमान् नामक सात पुत्र हुए (भा. ४.१.३८)। इससे भिन्न संतति का भी उल्लेख है।—१. पुंडरिका २. रक्षस् (रत्न), ३. गर्त, ४. ऊर्ध्वबाहु, ५. सवन, ६. पवन, ७. सुतपस्, ८. शंकु (ब्रह्माण्ड २.१२.३९-४३)।

ऊर्जित—(सो. यदु) कार्तवीर्य के प्रमुख पांच पुत्रों में से एक।
ऊर्ण—पूस में सूर्य के साथ घूमने वाला यज्ञ।
ऊर्णनाभ—(सो. कुरु) धृतराष्ट्रपुत्र।
 २. कश्यप तथा दनु का पुत्र।
ऊर्णनाभि—अत्रिकुलोत्पन्न ऋषि।
ऊर्णा—स्वायंभुव मन्वंतर में मारीचि प्रजापति की स्त्री।
 २ (स्वा. प्रिय.) चित्ररथ राजा की स्त्री। इसका पुत्र सम्राज् (भा. ५. १५. १४)।
ऊर्णायु—इसकी स्त्री मेनका (म. उ. ११५. ४००. * पंक्ति ४)। प्राधा से उत्पन्न देवगंधर्वों में से एक।
ऊर्ध्वकृशन यामायन—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१४४)।
ऊर्ध्वकेतु—(सु. निमि.) सनद्राज जनक का पुत्र। इसका पुत्र अज।
 २. कश्यप तथा सुरभि के पुत्रों में से एक।
ऊर्ध्वग—कृष्ण तथा लक्ष्मणा का पुत्र। एक महारथी।
ऊर्ध्वप्राचन् आर्हुदि—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१७५)।
ऊर्ध्वदृष्टि—पुलह तथा श्वेता का पुत्र। इसे पांच पुत्र तथा पांच कन्याएं थीं (ब्रह्माण्ड. ३.७.२०५)।
ऊर्ध्वनाभा ब्राह्म—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१०९)।
ऊर्ध्वबाहु—रैवत मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।
ऊर्ध्वसद्मन् आंगिरस—मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९.१०८.९)।
ऊर्ध्व—उर्व देखिये।

ऋ

ऋक्ष—आर्क्ष तथा श्रुतर्वन् देखिये।
 २. (सो. पूरु.) ऋका का पुत्र। इसकी पत्नी तक्षक की कन्या ज्वलन्ती थी। इसका पुत्र अंत्यनार (म. आ. १०.२४; अंत्यनार देखिये)।

३. (सो. पुरूरवस्.) अजमीढ तथा धूमिनी का पुत्र। इसकी स्त्री रथंतरी। इसका पुत्र संवरण (म. आ. ८९. २७-२८; चक्षु देखिये)।
 ४. (सो. कुरु.) वायुमतानुसार देवातिथिपुत्र।

५. शुक्र का पुत्र । इसकी स्त्री विरजः (ब्रह्माण्ड, ३.७.२११) ।

ऋक्षदेव—(सो. नील) शिखंडी के दो पुत्रों में से एक । यह भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में था । युद्ध में अपने रथ को वह सुनहले रंग के अश्व जोड़ता था (म. द्रो. २३) ।

ऋक्षपुत्र—(सो.) भविष्यमतानुसार अक्रोधन का पुत्र ।

ऋक्षरजस्—एक समय मरु पर्वत पर ब्रह्मा ध्यानमग्न थे । तब उनकी आसों से आसू गिरे, जिन्हें उन्होंने अपने हाथों में विस दिया तब उन अश्रु कणों में से यह ऋक्षरजस् वानर उत्पन्न हुआ । एकवार प्यास लगने के कारण यह सरोवर के पास गया । उसमें अपने प्रतिविम्ब को शत्रु समझ-युद्ध करने के लिये इसने सरोवर में छलांग लगायी । वस्तुस्थिति ध्यान में आते ही यह बाहर आया । बाहर आते ही वह वानर न रह कर स्त्री हो गया है ऐसा उसें लगा । अंतरिक्ष से इंद्र तथा सूर्य की दृष्टि इस पर पड़ी तथा दोनों ही काम विवहल हुए । उल्टे काम विकार के कारण इंद्र का वीर्य इसके सिर पर तथा सूर्य का वीर्य इसके गले पर गिरा । (वाल) केशों पर वीर्य गिरने के कारण वाली तथा (ग्रीवा) गले पर गिरने के कारण सुग्रीव उत्पन्न हुआ । रात्रि समाप्त होते ही इस स्त्री को पुनरपि पहले का वानर स्वरूप प्राप्त हुआ । तब यह अपने दोनों पुत्रों लोकोत्तर ब्रह्मा के पास आया तथा सारी हकीकत उसे बताई । ब्रह्मदेव ने ऋक्षरजस् की अनेक प्रकार से सांत्वना की तथा एक दूत के द्वारा ऋक्षरजस् को किष्किन्धा नगरी में राज्याभिषेक किया । वहाँ अनेक प्रकार के वानर थे । उनमें चातुर्वर्ण्य व्यवस्था प्रचलित थी । कालांतर में ऋक्षरजस् की मृत्यु हुई । इसके पश्चात् राज्य वाली को मिला (वा. रा. उ. प्रक्षिप्तसर्ग) ।

ऋक्षगंगा—काशी के उत्तर में मंदारवन में तप करने वाले दीर्घतपस् का कनिष्ठ पुत्र । चित्रसेन के त्राण से इसकी मृत्यु होने के कारण सत्र परिवार ने देहत्याग किया । परंतु बचे हुए दीर्घतपस् ने सत्रकी अस्थियाँ मूलभेद तीर्थ में डालने के कारण सत्र स्वर्ग में गये (स्कन्द. ३.५३-५५) ।

ऋक्षा—अजमीढ की पत्नी । इसका पुत्र संवरण (म. भा. ९०. ३९; ३ ऋक्ष देखिये) ।

ऋच—(सो. कुरु. भविष्य.) विष्णु के मतानुसार सुनीथपुत्र (रुच देखिये) ।

२. (सो. कुरु.) देवतातिथि तथा मयांश का पुत्र । इसकी पत्नी अंगराजकन्या सुदेवा । पुत्र ऋक्ष (म. भा. ९०.२२-२३) ।

ऋची—आमवान की पत्नी (ब्रह्माण्ड. ३.१.७४) ।

ऋचीक—भार्गवकुल का च्यवनवंशज एक प्रख्यात ऋषि (मनु. ४) । और्व का पुत्र (म. भा. ६०.४६; २.४; ह. वं. १.२७) । यह और्व की जंवा फोड़ कर बाहर आया (ब्रह्माण्ड, ३.१.७४-१००) । यह ऊर्व का पुत्र है (म. अनु. ५६) । इसे काव्यपुत्र भी कहा है (ब्रह्म. १०) । इसका और्व ऋचीक कह कर भी उल्लेख है (विष्णुधर्म. १.३२) । उसी प्रकार अनेक स्थानों पर अनेक बार इसे भृगुपुत्र, भार्गव, भृगुनन्दन, भृगु आदि भी कहा है (म. व. ११५.१०; ह. वं. १.२७; ब्रह्म. ३.१०; वा. रा. वा. ७५.२२; पञ्च. उ. २६८) । कार्तवीर्य के वंशजों द्वारा अत्यधिक त्रास दिये जाने के कारण सब भार्गव ऋषि मध्य देश में पलायन कर गये । उस समय अथवा उसके कुछ ही पहले ऋचीक का जन्म हुआ तथा जल्द ही उनका मुखिया बन गया । बाव्यावस्था से इसने अपना समय वेदानुष्ठान तथा तप में बिताया । एक बार तीर्थयात्रा करते समय विश्वामित्री नदी के किनारे इसने कान्यकुब्जराज गाधि की कन्या, स्नानहेतु आई हुई देखी । उसके रूप से मोहित हो कर इसने उसके पिता के पास इसकी माँग करने का निश्चय किया । हैहय के विरुद्ध गाधिराज की मित्रता संपादन करने के लिये यह विवाह तय किया गया । यह जब माँग करने आया तब राजा ना नहीं कह सका । तब उसने कहा कि यदि तुम मुझे सहस्र श्याम-कर्ण अश्व लाकर शुल्क के तौरपर दोगे तो मैं अपनी यह कन्या तुम्हें दूंगा (म. अनु. ४.७-१० विष्णु. ४.७; भा. ९.१५.५-११) । सातसौ अश्व मांगे (स्कंद. ६. १६६) । परंतु वनपर्व में राजा कन्या देने के लिये तैय्यार हो गया तथापि रुठि के तौरपर एक कानसे श्याम हज्जार अश्व मांगे (११५.१२) । राजा का यह भयण सुनते ही यह तत्काल उस कान्यकुब्जदेशीय गंगा के किनारे गया तथा वरुण की स्तुति कर के उससे आवश्यक अश्व प्राप्त किये (म. व. ११५; अनु. ४) । अश्वो वोढा नामक (क. ९.११२) चार ऋक्षाओं के सूक्त का पठन कर इसने अश्व प्राप्त किये (स्कंद. ६.१६६) । जहाँ ये अश्व निमांण हुए, वह स्थान कान्यकुब्ज देश में गंगा नदी के किनारे स्थित अश्वतीर्थ नाम से प्रसिद्ध है । अश्व ले कर गाधि राजाने अपनी कन्या सत्यवती इसे दी । इसके विवाह में देव इसके पक्ष के

बाराती थे (म. व. ११५)। ऋचीक ऋषि, सत्यवती भार्या को ले गया तथा आश्रम स्थापित कर गृहस्थधर्म चलाने लगा। तदनंतर जब यह तपश्चर्या करने जाने लगा तब इसने पत्नी से वरदान मांगने के लिये कहा। उसने अपने लिये तथा माता के लिये उत्तम लक्ष्णों से युक्त पुत्र मांगा। उसके इस मांग से संतुष्ट हो कर इसने ब्राह्मणोत्पत्ती के लिये एक तथा क्षत्रियोत्पत्ती के लिये एक ऐसे दो चरु सिद्ध कर के उसे दिये (म. शां. ४९.१० अनु. ५६; ह. वं. १.२७; ब्रह्म. १०; विष्णु. ४.७; मा. ९.१५) इसने चरु तो दिये ही साथ ही यह भी बताया कि ऋतुस्नात होने पर तुम्हारी माता अश्वत्थ (पीपल) तथा तुम गूलर को आलिंगन करो (म. व. ११५.५७०००; अनु. ४; विष्णुधर्म. १.३२-३३)। दो घंटों को अभिमंत्रित कर बताया कि सत्यवती की माता वह वृक्ष की तथा सत्यवती पीपल की सहस्र प्रदक्षिणायेँ करे (स्कन्द. ६. १६६-६७)। बाद में गाधि ऋचीक के आश्रम में आया। तब सत्यवती को पति द्वारा दिये गये चरु का स्मरण हुआ परंतु माता के कथनानुसार दोनों ने चरु बदल कर भक्षण किये। अल्पकाल में ही जब ऋचीक ने सत्यवती की ओर देखा तब उसे पता चला कि, चरुओं का विपर्यास हो गया है। परंतु सत्यवती की इच्छानुसार क्षत्रिय स्वभाव का पुत्र न हो कर पौत्र होगा ऐसा ऋचीक ने इसे आश्रसन दिया। तदनंतर सत्यवती को जमदग्नि प्रभृति सौ पुत्र हुए। वे सब शांति आदि अनेक गुणों से युक्त थे, परंतु जमदग्नि को रेंगुका से उत्पन्न परशुराम उग्र स्वभाव का हुआ। गाधि को विश्वामित्र हुआ तथा उसने अपने तपःसामर्थ्य से पुनः ब्राह्मणत्व प्राप्त किया (म. आ. ६१; व. ११५; शां. ४९; अनु. ४.४८; वायु. ९१.६६-८७ मा. ९.१५; स्कन्द. ६.१६६-१६७)। तदनंतर सत्यवती कौशिकी नदी बनी (ह. वं. १.२७; ब्रह्म. १०; विष्णु. ४.७; १६. वा. रा. वा. ३४)। इस ऋषि ने वड़वाग्नि हूँट निकाला (विष्णुधर्म. १. ३२)। शात्वदेशापिपति द्युतिमान् राजा ने इसे अपना राज्य अर्पण किया था (म. शां. २२६. ३३; अनु. १३७.२२)। यह परशुराम का पिता-मह है (पद्म. भू. २६८)। ऋचीक पुत्र तथा कलत्र सहित भृगुनुंग पर्वत पर रहता था (वा. रा. वा. ६१. १०-१३)। विष्णु ने अमानत के रूप में वैष्णव धनुष्य इसे दिया था। वह इसने जमदग्नि को दिया (वा. रा. वा. ७५. २२)। यह धनुर्विद्या में काफी प्रवीण था (म. अनु. ५६.७) इसके वंशजों को आर्चिक कहते हैं

(ब्रह्म. १०)। जमदग्नि के अलावा वत्स (विष्णुधर्म. १.३२), युमःरोप तथा शुनःपुच्छ (ह. वं. १.१७; ब्रह्म. १०) इतने नाम प्राप्त हैं।

२. प्रथम मेरु सावणि मनु का पुत्र।

ऋचेयु—(सो. पूर.) रौद्राश्व को घृताची से उरुन्न हुआ। इसे तक्षककन्या ज्वलना से अंतिनार हुआ (२ ऋक्ष देखिये)।

ऋजिध्वन्—इसे दो बार वैदग्धि (ऋ. ४.१६. १३; ५.२९.११) तथा एक बार औद्भिन्न कहा गया है (ऋ. १०. ९९.११)। ये निर्देश मातापिता के नाम से आये होंगे। पिपू के साथ हुए युद्ध में इन्द्र ने इससे सहायता की (ऋ. १.५.१.५)।

ऋजिध्वन् भारद्वाज—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ६.४९.५२; ९.९८; १०८)।

ऋजु—(सो. वृष्णि.) भागवतमतानुसार बसुदेव देवकी का कंस द्वारा मारा गया पुत्र। विष्णु के मतानुसार ऋमुदास, मत्स्य के मतानुसार ऋषिवास तथा वायु के मतानुसार ऋजुदाय नाम है।

ऋजुदाय—ऋजु देखिये।

ऋजुनस्—सोमयज्ञ करनेवाले लोगों के साथ इसका नाम है (ऋ. ८.५२.२)।

ऋज्राश्व—अंबरीष, सुराधस, सहदेव तथा भयमान के साथ इसका एक वार्षाभिर के रूप में उल्लेख है (ऋ. १. १००. १३-१७)। इन्हीं प्रांच भ्राताओं के नाम पर उपरोक्त संपूर्ण सूक्त है। एक बार अश्वियों का वाहन गर्दम लोमड़ी के रूप में इसके पास आया। तब इसने उसे एक सौ एक भेड़ें खाने के लिये दीं। तब नगरवासी लोगों की हानि की। इसलिये वृषागिर राजा ने इसकी आँखें फोड़ दीं। तब ऋज्राश्व ने अश्विदेवों की स्तुति करने पर उन्होंने इसे दृष्टि दी। उस लोमड़ी का भाषण भी ऋग्वेद में निम्नप्रकार दिया है। 'हे पराक्रमी तथा शूर अश्वियों, इस ऋज्राश्व ने तरुण तथा कामी पुरुष के अनुसार एक सौ एक भेड़ें काट कर मुझे खाने के लिये दी हैं' (ऋ. १. ११६. १६; ११७. १७-१८)।

ऋजूनस्—इनके यहाँ सोम पी कर इंद्र प्रसन्न हुआ (ऋ. ८. ५२. २)।

ऋणञ्ज—एक व्यास (व्यास देखिये)।

ऋणंचय—यह रुशमाओं का राजा था। इसने बभ्रु-नामक सूक्तकार को काफी दान दिया। बभ्रु कहता है, रुशमाओं ने मुझे चार हजार गाँवें दीं। एक हजार अच्छी

गायों के साथ गृह दिया (ऋ. ५. ३०. १२; १४)।
राम किस देश को अथवा किन लोगों को कहा गया है
यह कह नहीं सकते। यह मंत्रद्रष्टा था (ऋ. ९. १०८.
१२)।

ऋत--अंगिरसपुत्र देवों में से एक।

२. (सू. निम्नि.) विजय जनक का पुत्र। इसका पुत्र
शुक्र।

३. छत्र सावर्णि मनु का नामान्तर (मत्स्य. ९)।

४. चक्षुसेतु तथा नदुबला का पुत्र।

५. आभूतरेजस नामक देवों में से एक।

६. तुषित नामक देवों में से एक।

७. सुष नामक देवों में से एक।

८. यह युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित था (म. स.
११.७)।

ऋतजित्--दूसरे मरुदणों में से एक।

ऋतजय--एक व्यास (व्यास देखिये)।

ऋतधामन्--(सो. वृष्णि.) केंद्र को कर्णिका से उत्पन्न
पुत्र। कृष्ण का चचेरा भाई।

२. रुद्रसावर्णि मन्वन्तर में होनेवाला इंद्र।

३. त्रहर्वे मनु का नामान्तर (मत्स्य. ९)।

ऋतध्वज--(सो. काश्य.) यह शत्रुजित् का पुत्र।
गोलव ने कुंदल्य नामक अश्व दे कर इसे अपने आश्रम का
ऋत दूर करने के लिये कहा। एकवार सूकर रूप में आये
हुए पातालकेतु के पीछे लग कर एक गड्ढे में गिर कर
पाताल में गया। वहाँ पातालकेतु द्वारा भगा कर लाई गई
विश्रावसु गंधर्व की कन्या मदालसा थी। उसके साथ
इसका विवाह होकर उसे लेकर यह घर आया। तदनंतर
यमुना के तट पर रहने वाले पातालकेतु के भाई तालकेतु
ने इसे भोला दे कर यज्ञ की दक्षिणा के रूप में इसके गले
का कंठा मांग लिया। तथा इन्ने अपने आश्रम में रख कर
मदालसा को सूचित किया कि ऋतध्वज मर चुका है तथा
चिह्न के तौर पर मृत्यु के समय उसने यह कंठा दिया
ऐसा बताया। मदालसा सती हो गई। ऋतध्वज ने अवि-
वाहित रहने का निश्चय किया। परंतु पुत्र की इच्छा-
नुसार अश्वत्तर राग ने सरस्वती से गानविद्या प्राप्त कर
शंकर को प्रसन्न किया तथा उससे पहले के ही समान परंतु
योगी मदालसा कन्या के तौर पर मांग कर ऋतध्वज को दी।
ऋतध्वज को उससे विक्रान्त, सुशोभु, शत्रुमर्दन तथा अलर्क
नामक चार पुत्र हुए तथा मदालसा ने उन्हें योगमार्ग का
उपदेश दिया (मार्क. १८.३४; १९.८८ प्रतदन देखिये)।

२. वृद्धा देखिये।

ऋतभर--एक राजर्षि। जावाली ऋषि के कथना-
नुसार मन से इसने गाय की सेवा की अतएव इसे सत्यवान्
नामक पुत्र हुआ (पद्म. पा. २८)।

ऋतसेन--मार्गशीर्ष माह में सूर्य के साथ साथ घूमने-
वाला एक गंधर्व।

ऋतस्तुभ--अश्विनो ने इस ऋषि की रक्षा की (ऋ.
१.११२.२०)।

ऋतायन--शल्य के पिता का नाम।

ऋतु--फाल्गुन माह में सूर्य के साथ घूमनेवाला एक
यक्ष।

२. प्रतदन नामक देवताओं में से एक।

ऋतुजित्--(सू. निम्नि.) विष्णु के मतानुसार यह
अंजनपुत्र है तथा भागवत मतानुसार पुरुजित्।

ऋतुधामन्--चाँये मेरु सावर्णि मन्वन्तर का इंद्र।

ऋतुध्वज--ऋतध्वज देखिये।

ऋतुपर्णी--यह भृंगश्विन का पुत्र तथा शफाल का
राजा होगा (बौ. श्रौ. २०.१२)। ' ऋतुपर्णकसोवि-
भंग्याश्विनौ ' उल्लेख है (आप. श्रौ. २१.२०.३)।

२. (सू. इ.) अयुतायुपुत्र (वायु. ८९; ब्रह्म. ८.८०;
ह. वं. १.१५)।

यह अश्वविद्या में अत्यंत निपुण था। नल का सारथि
वाष्णय इसके पास सारथि बन कर रहा था (म. व. ५७.
२३)। अशतवासकाल में नल शुक नाम धारण कर के
इसी के पास सारथि रूप में रहा। इसका सच्चा सारथी
जीवल (म. व. ६४.८)। इस ने नल को अपनी
अश्वविद्या दी तथा नल ने भी अपनी अश्वविद्या
इसे दी (म. व. ७०)। यह वीरसेनपुत्र नल राजा का
मित्र था। इसे आर्तपर्णि नामक पुत्र था (ब्रह्म. ८.८०; ह.
वं. १.१५.२०)। इसका पुत्र सुनास (भ. ९.९)। इसे
सर्वकाम या सर्वकर्मा नाम से नल पुत्र था (वायु. ८८.
१७४)।

ऋतुमंत--मणिभद्र तथा पुण्यजनी का पुत्र।

ऋतेयु--(सो. पूरु.) रौद्राश्व तथा घृताची के दश-
पुत्रों में ज्येष्ठ। इसे औच्यु नामान्तर प्राप्त है। इसे तक्षक-
कन्या ज्वलना से अंतिभार हुआ (ऋतेयु देखिये)।

ऋथु--शत्रिय होते हुये भी यह ब्राह्मण तथा ऋषि
हो गया था (वायु. २. २९.११४)।

ऋद्धि--वैश्रवण की फनी।

ऋभु—यह मानव था। परंतु तप, यज्ञ इ. करके इन्होंने देवत्व प्राप्त किया। परंतु देव इन्हें अपने में शामिल नहीं करते थे। अन्त में प्रजापति के कथनानुसार ऋभुओं को सूर्य के साथ सोमपान करने का मान मिला। फिर भी इनमें मनुष्यत्व का गंध आता है कह कर देव ऋभुओं का अत्यंत तिरस्कार करने लगे (ऐ. ब्रा. ३. ३०)। एक ब्रह्ममानस-पुत्र। (भा. ४. ८)। इसका शिष्य निदाघ। ऋभु ने निदाघ को तत्वज्ञान का उपदेश किया है (विष्णु. २. १६; नारद. १. ४९)। चाक्षुष तथा वैवस्वत मन्वन्तर के देवों में ऋभु हैं। ऋभुगीता नामक सत्ताईस अध्यायों का एक वेदान्तविषयक ग्रंथ है (C. C.)।

ऋभुदास—ऋजु देखिये।

ऋश्यशृंग—ऋश्यय विभांडक का पुत्र। एकवार जब विभांडक गंगास्नान के लिये गया था तब उर्वशी उसे दृष्टिगोचर हुई। तत्काल कामविकार उत्पन्न हो कर उसका रेत पानी में गिरा। इतने में पानी पीने के लिये शाप से हिरनी बनी हुई एक देवकन्या वहाँ आई तथा पानी के साथ वह रेत उसके पेट में गया। उससे यह उत्पन्न हुआ (म. व. १. १०)। संपूर्ण आकार मानव के समान परंतु सिरपर ऋश्य नामक मृग के समान सींग था, इसलिये इसे ऋश्यशृंग नाम प्राप्त हुआ (म. व. १. १०. १७)। इसका जन्म होते ही इसकी माता शापमुक्त हो कर स्वर्ग गई तब अनाथ ऋश्यशृंग का पालन-पोषण विभांडक ने किया तथा इसे वेदवेदांगों में परंगत किया। मृगयोनि का होने के कारण यह इरपांक था तथा आश्रम के बाहर कहीं भी न जाता था। विभांडक ने भी उसे ऐसी ही आज्ञा दे रखी थी। इससे इसने पिता को छोड़ अन्य पुरुष न देखा था (म. व. १. १०. १८)। इसी समय अंगदेश के चित्ररथ नामक राजा की गलती से वहाँ अवर्षण हुआ। चित्ररथ दशरथ का मित्र था। वह ब्राह्मणों से असत्य व्यवहार करता था अतः ब्राह्मणों ने इसका त्याग किया। तब उसके देश में अवर्षण हुआ तथा लोगों को अत्यधिक कष्ट होने लगा। तब इन्द्र को वर्षा के लिये मजबूर करनेवाले बड़े बड़े तपस्वियों से इसने पूछा। उनमें से एक ने कहा कि, ब्राह्मण तुमसे कुपित हैं, उनके क्रोध का निराकरण करो। तब उसे पता चला कि, ऋश्यशृंग यदि अपने देश में आयेगा तो चारों ओर सुख का साम्राज्य छा जायेगा। ऋश्यशृंग को लाने के लिये जब उसने मंत्रियों से चर्चा की तब वेश्याओं की सहायता छोड़ अन्य मार्ग ही उन्हें न सूझता था। वेश्याओं से पूछने पर एक वृद्ध वेश्या ने वह

कार्य स्वीकार किया तथा कुछ तृण वेश्याओं को लेकर विभांडक के अनुवस्थिति में उसके आश्रम में जाने का निश्चय किया। इस के लिये एक नौका पर आश्रम तैय्यार कर वह नौका आश्रम के पास खड़ी कर उसने वड़ी युक्ति से अपनी लड़कियों द्वारा अपने पाश में बांध लिया। ऋश्यशृंग ने उन वेश्याओं को मुनिकुमार समझ कर उनसे व्यवहार किया। दूसरी बार ऋश्यशृंग को लेकर वे वेश्यायें अंग देश में आयी। तब अंग देश में बहुत वर्षा हुई। रोमपाद ने अपनी शान्ता नामक कन्या इसे दी तथा काफ़ी उपहार दिया। विभांडक पुत्र को ढूँढते हुये वहाँ आया तब रोमपाद द्वारा दिये गये उपहार देखकर इसका क्रोध शांत हो गया। इसने एक पुत्र का जन्म होने तक ऋश्यशृंग को वहाँ रहने की अनुमति दी तथा स्वयं वापस गया। ऋश्यशृंग भी एक पुत्र के जन्म के बाद शान्ता के साथ अपने आश्रम वापस गया (म. व. १. १०. १. १६; वा. रा. वा. ९. १०)। दशरथ के पुत्रकामेष्टि यज्ञ में रोमपाद की मध्यस्थिता से दशरथ ने इसे यज्ञ का अध्वर्यु बनाया। उससे दशरथ को रामलक्ष्मणादि पुत्र हुए (वा. रा. वा. १. ११)। यह ऋश्यशृंग सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक होगा (भा. ८. १३; विष्णु. ३. ६)। कौशिकी नदी के किनारे ऋश्यशृंग का आश्रम था। वहाँ वनवास के समय धर्मराज आये। तब लोमश ने ऋश्यशृंग की उपरोक्त जानकारी धर्मराज को बताई है। वहाँ दशरथ का उल्लेख नहीं है (ऋश्यशृंग देखिये)। इसके द्वारा रचित ग्रंथ १ ऋश्यशृंगसंहिता, २ ऋश्यशृंगस्मृति। ऋश्यशृंगस्मृति का उल्लेख विज्ञानेश्वर, हेमाद्रि, हज्जयुध आदि ने किया है (C. C.)। आचार, अचौच, श्राद्ध तथा प्रायश्चित्त आदि के बारे में इसके विचार मिताक्षरा, अपरार्क, स्मृतिचंद्रिकादि ग्रंथों में प्राप्य हैं। मिताक्षरा में (याज्ञ. २. १. १९) संख का मानकर दिया गया श्लोक अपरार्क ने (७२४) ऋश्यशृंग का मानकर दिया है। इस श्लोक में दिया गया है कि तष्ट हुई सम्मिलित संराति अगर किसी हिस्सेदार ने पुनः प्राप्त की तो उसका एक चतुर्थांश उसे प्राप्त होता है तथा बाकी बचे हुए में अन्य लोगों का हिस्सा होता है। स्मृतिचंद्रिका में (१. ३२) इसका एक गद्य परिच्छेद दिया गया है।

ऋषभ—(स्वा. प्रिय.) नामि तथा मेरुदेवी का पुत्र। माता का नाम सुदेवी भी था (भा. २. ७. १०)। यज्ञ नामक इंद्र ने इसे अपनी कन्या उर्वेती दी थी तथा उसमें इस राजा को सौ पुत्र हुये। उन में प्रेष्ठ भरत है। उनमें से ८१ पुत्र कर्ममार्गाचरण करनेवाले ऋषि बने तथा कवि,

हरि, अंतरिक्ष, प्रबुद्ध, पिप्पलायन, आविर्होत्र, वृमिल, चमस तथा कर्माजन नामक नौ पुत्र ब्रह्मनिष्ठ थे। ऋषभ-देव ने भरत, कुशावर्त, इत्यार्त, ब्रह्मावर्त, मलय, केतु, भद्रसेन, इंद्रसूत्र, विदर्भ तथा कीकट नाम से अपने अजनामवर्ष के नौ खंड बरके उन्हें अधिपति बनाया तथा अवलेप भाग का सार्वभौमत्व भरत को दिया। इसने प्रजा को धर्मानुकूल बनाकर पुत्रों को ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया (भा. ५. ३-६)।

वाक्यवत्सा से ही ऋषभदेव के हस्तपादादि अवयवों पर वज्र, अंकुश, ध्वज इ. चिह्न दीवने लगे थे। इसका ऐश्वर्य देखकर इंद्र के मन में असूया उत्पन्न होने लगी तथा उसने उसके खंड में वर्षा करना बंद कर दिया। तब उसका कपट ऋषभदेव ने पहचाना तथा अपनी माया के प्रभाव से अपने अजनामखंड में वर्षा कर दी। तदनंतर यह कर्मभूमि है ऐसा ख्याल कर ऋषभदेव ने प्रथम गुरुगृह में वास्तव्य किया। तदनंतर गृहस्थाश्रम का स्वीकार किया तथा शास्त्रोक्तविधि से यथासंग आचरण किया। यह आत्मविवेक से वर्ताव करता था। यह ब्राह्मणों की अनुज्ञा से राज्य करता था। कालांतर से ब्रह्मावर्त में अपने पुत्रों को उद्देशित करके संसार को इसने ज्ञानोपदेश दिया। उस समय यह घर में ही विंक्षित के समान दिग्बर तथा अस्ताव्यस्त रहता था। तदनंतर इसने संन्यास लिया तथा ब्रह्मावर्त से बाहर निकल। लोग उसे कैसा भी उपसर्ग देते थे तब वह उनकी ओर ध्यान न देकर वह स्वस्वरूपमें स्थिर रहता था। ऐसी आनन्दमय स्थिति में यह पृथ्वी पर घूमता था। देहत्याग की इच्छा से इसने मैह में पत्थर पकड़ा तथा दक्षिण में कटक पर्वत के अरण्य में घूमते समय दानाबल से ऋषभ-देव का शरीर दग्ध हो गया (भा. ५. ३-६)। स्वयं विरक्त हो कर वन में गया (मार्क ५०.४०) तथा अपना स्वासोच्छ्वास मिट्टी की ईंट से बंद कर देहत्याग किया (विष्णु. २.१.३२)। यह भगवत का आठवाँ अवतार था इसने परमहंस वीक्षा ली थी (भा. २.७.१०. अर्हन् देखिये)।

इसका अनुयायी तथा नाती सुमति। इसका अनुयायी होने के कारण लोग सुमति को देव मानने लगे।

२. ऋषभकूटशृंग पर रहनेवाला एक कोपी ऋषि। इसके पास अनेक लोग आने लगे तथा उसे कष्ट होने लगे। तब इसने पर्वत तथा वायु को आज्ञा दी कि, इधर अगर कोई आने लगे तो उनपर पापाणवृष्टि बर के वापस कर

दो (म. व. १०९)। आशा कितनी सूक्ष्म तथा विशाल रहती है इसे कृश तनुवीरयुग्मसंवादरूपी दृष्टांत देकर इसने सुमित्र राजा को समझाया है। इस ऋषि के इस संवाद को ऋषभगीता नाम है (म. शां. १२५-१२८)।

३. वाराहकल्प के वैवस्वत मन्वन्तर के नवम चौखाने में व्यास के निवृत्ति मार्ग का प्रसार करने के लिये ऋषभ नामक शिव का अवतार होनेवाला है। उसके अनुक्रम से १. पराशर, २. गर्ग, ३. भार्गव, ४ गिरिश शिष्य होंगे। यह योगमार्ग का उद्धार करनेवाला है (शिव. शत-५. ३६-४८; भद्रायु देखिये)। भद्रायु के कथनानुसार यह प्रवृत्तिमार्गीय होगा।

४. स्वरोक्षिप मन्वन्तर के सप्तवियों में से एक।

५. इंद्र आदित्य का पुत्र (भा. ६.१८.७)।

६. एक असुर। इसका वध करने के बाद उसके चमड़े की तुंदुभि बृहद्रथ राजा ने बनाई थी (म. स. १९.१५)।

७. अंगिरावंश के भृष्णि का पुत्र। इसका पुत्र सुधन्वा (ब्रह्मांड. ३.१.१०७)। यह मंत्रकार था (वायु. ५९. ९८-१०२)।

८. (सो. अज.) भागवत के मतानुसार कुशाग्र राजाका पुत्र। इसका सत्यहित नामक पुत्र था।

९. एक वानर। राम के राज्याभिषेक के समय वह समुद्र का उदक लाया था तथा मत्त राक्षस का वध किया था (वा. रा. यु. ७०.५.८.६३)।

१०. (सू. इ.) राम तथा अयोध्यापुरनिवासी सब जनों की मृत्यु के बाद पुनरपि शून्य हुये प्रदेश में निवास करनेवाला राजा (वा. रा. उ. १११)।

११. (सो. वृष्णि.) वृष्णि का पुत्र (पद्म. सू. १३)।

१२. कृष्ण के पुत्रों में से एक (भा. १.१४.३१)।

१३. एक गोप का नाम। यह रामकृष्ण का मित्र था (भा. १०.२२)।

१४. एक ऋषि। यह युधिष्ठिर की सभा में था (म. स. ११.१२५* पंक्ति ६)।

१५. आयुभानू तथा अंबुधारा का पुत्र। दक्षसावर्णि मन्वन्तर में होनेवाला विष्णु का अवतार (मनु देखिये)।

१६. विश्वामित्र का पुत्र (पे. ब्रा. ७. १७.)।

ऋषभ याज्ञतुर—यह शिक्र का राजा तथा अश्वमेध करनेवालों में एक था (श. ब्रा. १२.८.३.७; १३.५.४. १५; सां. श्रौ. १६.९.८.१०; गौरवीति शाक्य देखिये)।

ऋषभ वैराज शास्कर—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १६६)।

ऋषभस्कंद—रामसेनाका एक वानर (वा. रा. यु. ४६)।

ऋषिकुल्या—ऋषभदेववंशीय भूमनू की दो पत्नियों में से एक। उसका पुत्र उद्गीथ।

ऋषिज—उशिज का नामान्तर।

ऋषिर्मित्रवर—अंगिरा गोत्र का एक प्रवर।

ऋषिर्मित्रवर—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

ऋषिवान्मानव—अंगिराकुल का एक गोत्रकार तथा प्रवर।

ऋषिवास—ऋजु देखिये।

ऋषिषेण—एक आचार्य (नि. २. ११)।

ऋष्य—(सो. कुरु.) अजमीठवंशीय बहुकुल के देवातिथि का पुत्र।

ऋष्यशृंग काश्यप—यह काश्यप का शिष्य है तथा इसे काश्यप पैतृक नाम भी प्राप्त है (जै. उ. ब्रा. ३. ४०. १; वं. ब्रा. २; ऋष्यशृंग देखिये)।

ऋष्यशृंग वातरशन—मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०. १३६. ७)।

ए

एक—(सो. पुरुवरसू.) रय का पुत्र।

एकजटा—सीतासंरक्षण के लिये नियुक्त राक्षसियों में से एक (वा. रा. सुं. २३)।

एकत—गौतम का ज्येष्ठ पुत्र (त्रित देखिये)।

एकद्वौ नौधस—सुक्तद्रष्टा। इसे अनुक्रमणी में नौधस नोधःपुत्र कहा गया है (ऋ. ८. ८०)। एकद्वौ का मंत्र में निर्देश है (ऋ. ८. ८०. १०)। एकदिव् मूल शब्द होगा।

एकपर्णा—हिमवान् की मेना से उत्पन्न तीन कन्याओं में दूसरी। अपर्णा तथा पर्णा की भगिनी। यह असित ऋषि की पत्नी। इसे देवल नामक एक पुत्र था (ब्रह्मांड. ३. ८. २९-३३; १०. १-२१; ह. वं. १. १८)।

एकपाटला—हिमवान् को मेना से उत्पन्न तीन कन्याओं में से एक। यह जैगीषव्य की पत्नी थी। इसके पुत्र शंख तथा लिखित। परंतु इन्हें अयोनिज विशेषण लगाया गया है (ब्रह्माण्ड. ३. १०. २०-२१; ह. वं. १. १८. २४)।

एकपाद्—कश्यप को कदू से उत्पन्न पुत्र।

एकपादा—सीता के संरक्षण के लिये नियुक्त राक्षसियों में से एक (म. व. २६४. ४४)।

एकयाधन् गांदम—एक आचार्य (पं. ब्रा. २१. १४. २०; तै. ब्रा. २. ७. ११)। तै. ब्रा. में कांदम पाठ है।

एकलव्य—व्याधों का राजा। हिरण्यधनु का पुत्र। दुपद से सहायता की अपेक्षा नष्ट होने पर चरितार्थ के

लिये द्रोणाचार्य ने भीष्म के नातियों को धनुर्विद्या सिखा देने का काम स्वीकार किया। धृतराष्ट्र तथा पंडु के पुत्र उसके पास विद्याध्ययन करने लगे। कुछ दिनों में द्रोणाचार्य के अध्यापन कौशल्य की कीर्ति चारों ओर फैल गई। इससे दूर दूर के देशों के राजपुत्र द्रोणाचार्य के पास विद्याध्ययन के लिये आने लगे। एकलव्य भी विद्यार्जन के लिये द्रोणाचार्य के पास आया। परंतु व्याधपुत्र होने के कारण द्रोणाचार्य ने उसे पढ़ाना अमंज्य कर दिया। तब किसी भी प्रकार का विवाद मन में न रखते हुए, द्रोणाचार्य पर दृढ़ विश्वास रखकर, नमस्कार कर के यह चला गया (म. आ. १२३. ११)। द्रोण के द्वारा विद्यादान अमान्य किये जाने पर भी अपना निश्चय न छोड़ते हुए इसने द्रोण की एक छोटी प्रतिम मिट्टी की बनाई तथा उसे अपना गुरु मान कर, उस प्रतिमा के प्रति दृढ़ विश्वास रखते हुए, प्रतिमा के सामने अपना विद्याव्यासंग चालू रत्ना तथा विद्या में प्रवीण हो गया। द्रोणाचार्य ने उत्तम ढंग से अपने शिष्यों को सिखाया था। सब शिष्यों से अधिक द्रोण की प्रीति अर्जुन पर थी। उसने अर्जुन को आश्वासन दिया था कि किसी भी शिष्य को मैं तुमसे अधिक पराक्रमी नहीं बनाऊंगा। कुछ दिनों के बाद द्रोणाचार्य सब शिष्यों के सहित कुत्ता आदि मृगयासामग्री ले कर मृगया के लिये गये। शिकार करते समय कुत्ता उनसे काफी दूर एकलव्य के पास गया तथा बलाढ्य, कृष्णवर्णीय व्याध को देखकर भौंकने लगा। तब उसे विश्कुल जस्म न हो किन्तु उसका भौंकना बंद हो जावे, इस हेतु से, बड़ी कुशलता से,

एकलव्य ने उसके मुख में सात बाण मारे। तब वह कुत्ता उसी प्रकार अपने मालिक के पास आया। उस कुत्ते को देखकर द्रोण को आश्चर्य लगा कि इतनी कुशलता से लक्ष्यवेष करनेवाला यह कौन हो सकता है। इधर उधर देखते समय द्रोण को एकलव्य दृष्टिगत हुआ। द्रोण को देख कर एकलव्य ने अभिवादन किया तथा कहा कि, मैं आपका शिष्य हूँ। द्रोण को उसकी कुशलता से बड़ा आनंद तथा कौतुक लगा। वह अर्जुन की अपेक्षा धनुर्विद्या में श्रेष्ठ है जानकर अर्जुन को दिया गया अपना वचनभंग हो जाने का डर लगा। परंतु बड़ी युक्ति से गुरु-दक्षिणा के तौर पर इसने उसके दाहिने हाथ का अंगूठा मांग लिया। एकलव्य ने वह दे दिया (म. आ. १२३.३७)। परंतु इससे इसकी पहले की चपलता नष्ट हो गई। एकलव्य भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्ष में था। शहिना हाथ पूर्ण रूपसे निरायोगी होते हुए भी इसने अत्यंत पराक्रम दर्शाया। यह श्रीकृष्ण के हाथों मारा गया (म. द्रो. १५५.२९)। इसे केतुमान् नामक एक पुत्र था। वह भीम के द्वारा मारा गया (म. भी. ५०.७०)।

एकलोचना—सीतासंरक्षण के लिये नियुक्त राक्षसियों में से एक (म. व. २६४.४४)।

एकवीर—(सो. तुर्वसु.) हरिवर्मा राजा को विष्णु-प्रसाद से प्राप्त पुत्र। यह वाजीरूपधर विष्णु से बड़वारूप धारण की हुई लक्ष्मी के उदरसे उत्पन्न हुआ था। इसलिये इसे हैहय नाम था। यह यदुकुलोत्पन्न हैहय राजा से विरकुल भिन्न है। इसे एकावली तथा यशोवती नामक दो स्त्रियाँ थीं तथा इसकी उपास्यदेवता एकवीरा देवी थी (दे. भा. ७.१७.२३)।

एकशय—तक्षक का पुत्र अश्वसेन (म. क. ६६)।

एकाक्ष—दनु तथा कश्यप का पुत्र (म. आ. ६६.२८)।

एकांगी—एक ग्वालन। इसे गोव्रत के कारण ऐश्वर्य प्राप्त हुआ (स्कन्द. २.४.९)।

एकादशरथ—(सो. यदु.) वायु के मतानुसार दशरथपुत्र।

एकादशी—मुर देखिये।

एकानंता—यशोदा की कन्या। कृष्ण की भगिनी।

एकानेका—अंगिरस की कन्या। इसे ही कुहूदूसरा नाम है (म. व. २०८.८)। एकानंशा ऐसा पाठ है।

एकायन—भृगुकुल का एक गोत्रकार। शाकायन पाठ-भेद है।

एकावली—एक वीर राजा की पत्नी। रम्य राजा को रुक्मरेखा से उत्पन्न कन्या।

एकेपि—अंगिरा कुल का एक गोत्रकार।

यह एक ऋषि का नाम है (सां. ब्रा. ३.८)

एतश—ऋग्वेद की एक ऋचा का सर्वानुक्रमणी के अनुसार यह द्रष्टा है (ऋ. १०.१३६.६)। वहाँ इसे वातरशन कहा गया है। एतश को अग्नि के आयुष्य नामक कुछ मंत्रों की रचना की स्मृति हुई। तब इसने पुत्र से कहा कि मेरे मंत्रपठन में बाधा मत लाओ क्योंकि इन मंत्रों के पठनसे यज्ञ के व्यत्यय तथा व्यंग नष्ट हो जाते हैं। परंतु ये मंत्र कह ही रहे थे तब उसके अभ्यग्नि नामक पुत्र ने विघ्न उपस्थित किया। इन असंबद्ध मंत्रों के कारण उसे लगा कि पिताजी पागल हो गये हैं तथा उसने उनके मुंह पर हाथ रखा। तब क्रोधित होकर इसने उसे शाप दिया कि तुम्हें कुष्ठ हो जायेगा (ऐ. ब्रा. ६.३३)। ऐ. ब्रा. में एतश शब्द है। इसलिये यह कथा संभवतः एतश की होगी। ऐतशायन औषधों में अत्यंत बुरे मान कर वर्णित हैं। ऐतशप्रलाय आजकल अथर्ववेद का भाग कह कर प्रसिद्ध है तथा अभी वह वैता ही असंबद्ध है (अ. वे. २०.१२९-१३२; बृहद्. ८.१०१)। स्वश्वपुत्र सूर्य से हुए युद्ध में इंद्र ने एतश को बचाया (ऋ. १. ५४. ६; ६१.१५; ४.१७.१४)। इसे सूर्य ने घायल किया (ऋ. ८.१.१८)।

एतश वातरशन—मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१३६.६)।

एनक—ब्रह्मदेव के पुष्कर क्षेत्र में हुए यज्ञ का एक ऋषि (पद्म. सु. २४)।

एरक—एक सर्प (म. आ. ५२.१२)।

एलपत्र—एक सर्प।

एलापुत्र—कद्रूपुत्र (नम देखिये)।

एवयामरुत् आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.८७)।

एवावद्—यह नाम क्षत्र, मनस तथा यज्ञ के साथ आया है (ऋ. ५.४४.१०)।

ऐ

एकादशाक्ष मानुसंतव्य—सूर्योदय के साथ साथ होम करनेवाले (उदितहोमी) एक राजा का नाम (ए. ब्रा. ५.३०) । यह नगरिच जानश्रुतेय का समकालीन था ।

ऐक्रेपि—अंगिरस् देखिये ।

ऐश्वाक—यह शब्द ब्राह्मण ग्रंथों में बहुतसे व्यक्तियों के लिये प्रयुक्त हुआ है । राजा हरिदचंद्र वैधस ऐश्वाक था (ए. ब्रा. ७.१३.१६.) । पुरूकुत्स का यह अनुवांशिक नाम है (श. ब्रा. १३.५.४.५) । ऐश्वाक वाष्पी नामक आचार्य का उल्लेख मिलता है (जै. उ. ब्रा. १.५.४) । च्यरुण भी ऐश्वाक था (पं. ब्रा. १३.३.१२) । यह नाम बृहद्रथ के लिये भी प्रयुक्त हुआ है (मैत्र्यु. १. २; असमाति देखिये) । ऋग्वेद में इश्वाकु का उल्लेख है (ऋ. १०.६०.४; मंगेरथ देखिये) । यह शब्द इश्वाकु वंशजों के लिये सामान्यतः प्रयुक्त होता है ।

ऐश्वाकी—(सो.) भूमन्युपुत्र सुहोत्र की स्त्री । इसे सुहोत्र से अजमीढ, सुगीढ, तथा पुरुमीढ नामक तीन पुत्र हुए थे (म. आ. ८९.२६) ।

ऐडविड—इडविडा का पुत्र कुबेर ।

२. (सू. इ.) दशरथ या शतरथ का पुत्र ।

ऐतरेय—सायण के मतानुसार इतरा नामक स्त्री से उत्पन्न होने के कारण यह मानुपुलक नाम पडा ।

इसका महिदास ऐतरेय ऐसा निर्देश है । (ए. आ. २. १. ८; ३. ७; छां. उ. ३. १६. ७) तथा ऐतरेय ऐसा ब्रह्मयज्ञांगतर्ण में उल्लेख है (आश्व. गृ. ३.४.४) । ऐतरेयिन् स्वरूप में (अनुपद सूत्र ८. १; आश्व. श्रौ. सूत्र १.३) उल्लेख है ।

हारीत ऋषि के वंश में मांडूकि ऋषि को इतरा नामक स्त्री से उत्पन्न होने के कारण इसका नाम ऐतरेय पडा । बचपन से ही यह ' नमो भगवते वासुदेवाय ' मंत्र जपने लगा । यह किसी से नहीं बोलता था इसलिये मांडूकि ने पिंगा नाम दूसरी स्त्री से विवाह किया । जिससे उसे चार पुत्र हुए । वे बहुत विद्वान् थे इसलिये उनका उत्तम सम्मान हुआ । इतरा ने अपने पुत्र से कहा कि, तेरे गुणवान न होने के कारण तेरे पिता मेरा अपमान करते हैं । मैं अब देहत्याग करूंगी । तब ऐतरेय ने इसे धर्मज्ञान दे कर देहत्याग के विचारों से परावृत्त किया । कालोपरांत विष्णु ने उन दोनों को साक्षात् दर्शन दिया तथा आशीर्वाद

दिया । बाद में श्रीविष्णु के वचनानुसार कोटितीर्थ पर होने वाले हरिमेव्य के यज्ञ में जाकर वेदाथ पर इसने प्रवचन दिया । तब हरिमेव्य ने इसका पूजन कर अपनी कन्या से उसका ब्याह कर दिया (स्कंद. १.२.४२; महिदास ऐतरेय देखिये) ।

ऐतश—एतश देखिये ।

ऐतशायन—अभ्यगि का पैतृक नाम ।

ऐमून—आभूतरजस् नामक देवगणों में से एक ।

ऐंद्र—अप्रतिरथ, जय, लव, वसुक, विमद, वृषाकपि सर्वहरि देखिये ।

ऐंद्रधुम्न—पुष्करमालिन् देखिये ।

ऐंद्राश्व—(सो.) भविष्यपुराण के अनुसार धनयाति का पुत्र ।

ऐंद्रोति—टति ऐंद्रोति शौनक देखिये ।

ऐभावत—प्रतीदश का पैतृक नाम है (श. ब्रा. १२. ८.२.३) ।

ऐरंभद—देवमुनि देखिये ।

ऐरावत—धृतराष्ट्र नामक नाग का पैतृक नाम (पं. ब्रा. २५.१५.३) । यहां वर्णित सर्पसत्र में यह ब्रह्मा नामक ऋषिज् था (अ. वे. ८.१०.२९) । नाग शब्द के सर्प तथा हाथी ये दो अर्थ होते हैं इस कारण परावर्त्ती वाङ्मय में इंद्र के हाथी से संबन्ध; संबन्ध जोडा गया होगा (जरत्कारु देखिये) । कद्रपुत्र नागों को ऐरावत कहते हैं । जनमेजय के सर्पसत्र में इनके दस कुल दग्ध हुए जिनके नाम ये हैं पारावत, पारियात, पांडुर, हरिण, कृश, विहंग, शरभ, मोद, प्रमोद तथा संहतापन (म. आ. ३१.५; स. ९.८. उ. १०१.११) ।

२ फाल्गुन माह में सूर्योदय के साथ साथ घूमनेवाला पर्जन्य नामक नाग (मा. १२.११.४०) ।

ऐरीडय—अंगिरा गोत्र का एक महर्षि

ऐल—पुस्करवस् का नामांतर ।

ऐलविल—कुबेर देखिये ।

ऐलाकि—जीवल का पैतृक नाम ।

ऐलिक—भृगुकुल का एक गोत्रकार ।

ऐलूष—ऋष का यह पैतृक नाम है ।

ऐशिज—एक ऋषि (वायु. ५९. ९०-९१) । ब्रह्मांड में उशिज पाठ मिलता है ।

- ऐश्वर**—अग्नि विष्टण्य देखिये ।
ऐषकृत—शित्तिवाहु देखिये ।
ऐषरथ—कुशिक देखिये ।
ऐषाचीर—यद्यपि एक यज्ञ में ये याज्ञिक का कार्य करते थे, तथापि बुरी पद्धति से करते थे (श. ब्रा. ११. २.७.३२) । सायण के मतानुसार एषवीर के वंशज अर्थ का कोई विशेषनाम भी प्रचलित है तथा इन्हें ब्राह्मणों की एक नियं जाति मानी जाती है (श. ब्रा. १.५.१.१६; सां. ब्रा. १.१) ।
ऐषुमत—त्रात का पैतृक नाम ।

ओ

- ओघरथ**—(सू. नृगं.) । ओघ राजा का पुत्र । इसका पुत्र नृग (भा. अनु. २) ।
ओघवत्—(सू. नृगं.) प्रतीक का पुत्र (भा. ९.२) । इसका पुत्र ओघरथ तथा कन्या ओघवती (म. अनु. २) ।
 २. ओघवत् का पुत्र (भा. ९.२) ।
ओघवती—प्रतीक की कन्या तथा सुदर्शन की पत्नी (भा. ९.२) ।
 २ (सू. नृगं.) ओघवत् राजा की कन्या । ओघरथ की भगिनी (म. अनु. २) ।
ओंकार—शंकर का एक अवतार था । बिंब्य के लिये यह पृथ्वी पर आया । ओंकार मांधाता में यह लिंग रूप में तथा पृथ्वी पर प्रणव रूप में है (शिव. शत. ४२) । इसका उपलिंग कर्दमेश है (शिव. कोटि. १) ।
ओज—श्रीकृष्ण तथा लक्ष्मणा का पुत्र (भा. १०. ६१) । यह महारथी था ।
ओजस्—वैशाख माह में अर्यमा नामक सूर्य के साथ साथ घूमनेवाला यक्ष (भा. १२. ११.३४) ।
ओजस्विन्—मौल्य मन्वन्तर में मनु पुत्र ।
ओजिष्ठ—शुक्र नामक देवगण में से एक ।

औ

- औक**—(सू. इ.) वायुमतानुसार बल का पुत्र ।
औगज—अंगिरस गोत्र का एक मंत्रकार । ऋषिज तथा असिज इसके नाम हैं ।
औग्रसैन्य—युधांशुष्टि का पैतृक नाम (दे. ब्रा. ८. २१.७) ।
औघरथ—सूर्यवंशी दूसरा नगराजा । ओघरथ का पुत्र ।
औचथ्य—दीर्घतमस् देखिये ।
औचेयु—ऋतेयु देखिये ।
औदुलोमि—एक तत्त्वज्ञानी । ब्रह्मसूत्र में इसके मत का अनेक बार मतभेदप्रदर्शनार्थ निर्देश मिलता है (प्र. सू. १.४.२१; ३.४.४५; ४.४.६) ।
औत्तम वा औत्तमी मनु—उत्तानपाद के पुत्र उत्तम तथा बभ्रुकन्या ब्राभ्रव्या का पुत्र । उत्तम का पुत्र होने के कारण इसे औत्तम या औत्तमी मनु कहते हैं (मार्क. ६९) । यह प्रियव्रत का वंशज था (विष्णु. ३.१.२४) । भागवत में इसे प्रियव्रत की दूसरी स्त्री का पुत्र कहा गया है तथा नाम उत्तम ही दिया है । (भा. ८.१.२३; मनु देखिये) । इसने वाग्भव मंत्र से तीन वर्ष उपवास करके देवी की उपासना की (दे. भा. १०.८) । यह तृतीय मन्वन्तराधिप मनु है ।
औदन्य—सुंदभ का पैतृक नाम । भ्रूणहत्या का प्रायश्चित्त व्रताने के लिये इसका उल्लेख किया गया है

(तै. ब्रा. ३.९. १५.३)। यहाँ इसका नाम औदन्यव दिया गया है।

औदभारि—खडिक का पैतृक नाम (श. ब्रा. ११. ८.४.६)।

औदमय—अंग वैरोचन का पुरोहित (ऐ. ब्रा. ८. २२)। वेबर के पाठानुसार आत्रेय का यह नाम है। कुछ प्रतिपों में उदमय पाठ भी दिखायी देता है।

औदवाहि—भारद्वाज का गुरु (बृ. उ. २.५.२०; ५.२६)।

औदुंबरायण—निरुक्त में शब्द के नित्यत्व के संबंध में बोलते समय, शब्द अनित्य हैं ऐसा कहने के कारण, इसका उल्लेख किया गया है (१.२.१)।

औदालकि—अमुरविंद (जै. ब्रा. १.७५) वा कुसु-रविंद (म. ब्रा. १.१६; पं. ब्रा. २२.१५.१०), इस नाम से पहचाने जाने वाले आचार्य तथा श्वेतकेतु (श. ब्रा. ३. ४.३.१३; ४.२.५.१५) का पैतृक नाम है। कठोपनिषद् में नचिकेतम् के लिये औदालक नाम प्रयुक्त है (१. ११)।

औपगव—वसिष्ठकुल के गोत्रकार ऋषिगण। आप-गव पाठभेद है।

औपगवि—उदव का नाम (भा. ३.४)।

औपजंघनि—आमुरि का शिष्य। इसका शिष्य त्रैवणि (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)।

औपतस्विनि—राम का पैतृक नाम (श. ब्रा. ४.६. १.७)।

औपमन्यव—बहुत से अध्यापकों के लिये यह नाम प्रयुक्त दिखाई पड़ता है। एक मंत्र के पठन के बारे में इसने जानकारी बताई है (श्री. श्री. २.२.१)। एक वैयाकरण है (नि. १.१.५; २.२.११; ३.१८) पक्षियों का नाम-करण उनके द्वारा निकाली ध्वनि के कारण होता है इस मत का औपमन्यव ने निवेद किया है (कांबोज, प्राचीन-शाल, महाशाल देखिये)।

२. वसिष्ठगोत्र का ऋषि।

औपर—दंड का पैतृक नाम (तै. सं. ६.२.९.४)।

औपल्लोम—वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार ऋषिगण। आपष्टोम ऐसा पाठभेद है।

औपवेशि—उदालक के पिता अरुण का पैतृक नाम (क. सं. २६.१०; अरुण औपवेशि देखिये)।

औपशवि—एक वैयाकरण (शु. ब्रा. ३.१.३२)।

औपस्थल—वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार।

औपस्थव—विश्वामित्रगोत्र का ऋषिगण।

औपस्वती—पाराशरीपुत्र का शिष्य (बृ. उ. ३.५.१)।

औपावि जानश्रुतेय—एक राजर्षि (श. ब्रा. ५.१.१. ५-७)। इसने वाजपेय किया था (मै. सं. १.७.५)।

औपोदिति—कुरु का स्वपति (सेनानी) व्याघ्रपाद का पुत्र। गौपालायन इसका पैतृक नाम है (श्री. श्री. २०. २५)। उपोदिता नामक स्त्री का पुत्र (श. ब्रा. १.७.४. १६)। श. ब्रा. की कण्वप्रति इसका नाम तुभिज औपो-दितेय वैयाघ्रपाद देती है (श. ब्रा. १.९.३.१६)।

औपोदितेय—औपोदिति का नामान्तर।

औरस—व्यास की सामशिष्यपरंपरा में वायु तथा ब्रह्मांडमतानुसार कुथुमी का शिष्य (व्यास देखिये)।

और्णवाभ—कौण्डिन्य का शिष्य (बृ. उ. ४.५.२६ माध्य.)। निरुक्त में दो स्थानों पर यह नैरुक्त नामक व्याकरणकारों के मतों का अनुसरण करता है (७.१५; १२. १९)। दूसरे दो स्थानों पर ऐतिहासिकों के मतों का अनुसरण करता है (६.१२; १२.१)।

और्व—एक कुल। भृगुवंश में होने के कारण भृगु से इसका निकट संबंध था (ऋ. ८.१०२.४)। एतश्च और्वों में से एक था। इस कुल का अन्यायि ऐतशायन पापिष्ठ है। (ऐ. ब्रा. ६.३३; सां. ब्रा. ३०.५)। और्वों ने स्वतः अत्रि से पुत्र प्राप्त किये थे (तै. सं. ७.१.८.१) दो और्वों का उल्लेख सम्मान के साथ आया है (मं. ब्रा. २१.१०.६)। और्व यह भृगु के बड़े कुल की दाँखा रही होगी। और्व, गौतम, भारद्वाज इन तीन गोत्रों का उल्लेख भी है (स. श्री. १.४)।

परीक्षित् के प्रायोपवेशन के समय आया हुआ एक आचार्य (जै. ब्रा. १. १८)। एक ब्रह्मर्षि (भा. १.१९.१०)। ज्ययन ऋषि की भार्या मनुपुत्री आरुषी का पुत्र (म. आ. ६०.४५)। इसका नाम ऊर्व है (म. अनु. ५६)। आत्मवान् तथा नाहुषी का पुत्र (विष्णु-धर्म. १.३२)।

कृतवीर्य नामक एक हैहयवंशीय राजा के उपाध्याय भृगुकुलोत्पन्न थे। कृतवीर्य ने बहुत से यज्ञ कर भृगुओं को बहुत सी संपत्ति दी थी। भविष्य में कृतवीर्य के वंश-जों को द्रव्य का अभाव महसूस होने लगा। तब उन्होंने अपने उपाध्याय के पास द्रव्य की माँग की। कुछ लोगों ने भय में द्रव्य दिया। कुछ लोगों ने जमीन में गाड़ कर रख दिया। एक भार्गव ऋषि का घर खोद कर देखने पर कुछ द्रव्य प्राप्त हुआ। इससे कृतवीर्य के वंशज अत्यंत

क्रोधित हुए तथा भार्गव ऋषियों के शरण आने पर भी उनका संहार करना प्रारंभ कर दिया। इतना ही नहीं वे गर्भ का भी नाश करने लगे। तब भृगुवंश की स्त्रियाँ भयभीत हो कर, हिमालय की ओर चली गईं। जाते जाते एक स्त्री ने अपना गर्भ गर्भाशय से निकाल कर जंघा में रख लिया। यह बात एक स्त्री ने राजा को बताई। हैहय गर्भ का वध करने वाला ही था, इतने में सौ वर्षों तक जंघा में रहा वह गर्भ बाहर आया। उसके तेज से वे क्षत्रिय नैऋहीन हो गये। बाद में उन अंधे क्षत्रियों द्वारा और्व को, 'प्रसन्न हो' कहते ही उन्हें दृष्टि प्राप्त हो गई। माता के ऊरु से निर्माण होने के कारण इसे और्व नाम प्राप्त हुआ (म. आ. ६०.४५; १६९-१७०; अतु. ५६)।

हैहयवंशीय राजाओं ने अपने शक्तिबंधों को कष्ट दिया, इसलिये बड़े होने पर भी इसने उनके संहार के लिये तप किया। परंतु हमें मृत्यु प्राप्त हो, इस हेतु से ही हमने यह अन्यायपूर्ण कृत्य किया। हमारी मृत्यु के लिये तुम क्रोधाविष्ट मत बनो, ऐसा पितरों ने उसे बताया। तब पितरों के संतोष के लिये इसने अपना क्रोधाग्नि समुद्र में छोड़ दिया। पराशर को राक्षसों के नाश से निवृत्त करने के लिये वसिष्ठ ने यह कथा बताई (म. आ. १६९-१७०)। इसका उग्र तप देख कर ब्रह्मदेव ने सरस्वती के द्वारा इसे समुद्र में डाल दिया। वहाँ अग्नितीर्थ उत्पन्न हुआ (स्कन्द. पु. ७. १. ३५)।

अयोध्याधिपति बृहस्पति बाहु को उसके शत्रु हैहय तथा तालजंघ ने राजच्युत किया। बाद में इसके आश्रम के पास आ कर बाहु की मृत्यु हो गई। तब उसकी पत्नी सती जाने लगी। परंतु यह गर्भवती है, यह देखकर और्व ने उसे सती जाने से निवृत्त किया। बाद में उसे सगर नामक पुत्र हुआ। और्व ने सगर को अनेक अस्त्र तथा शस्त्रों की शिक्षा दी। राम का प्रख्यात आग्नेयस्त्र भी सिखाया। तदनंतर सगर ने हैहय, तालजंघ, यवन इन सबको जीत लिया। तब वसिष्ठ ने इसे राज्याभिषेक किया। राज्याभिषेक के समय, यह आया तथा इसने केशिनी एवं सुमति (नारद. १.८), प्रभा तथा भानुमती (लिङ्ग. १.६६) इन सगर की पत्नियों को संतानवृद्धिदायक वर दिये (मत्स्य. १२; पद्म. सू. ८; लिङ्ग. १. ६६; नारद. १. ७. ८; भा. ९. ८; ९. २३) इसने सगर का अश्वमेध किया (भा. ९. ८)।

इसका पुत्र ऋचीक (म. आ. ६०.४६; अतु. ५६)। परीक्षित शापित होने पर जो ऋषि उससे मिलने आये उनमें यह था (भा. १.१९)। और्व तथा ऋचीक एक हैं (विष्णुधर्म. २.३२)। इसका नाम अभि होगा तथा ऊर्व का वंशज होने के कारण, इसे और्व नाम प्राप्त हुआ होगा। इसका काल जमदग्नि के पश्चात् का होगा (कूर्म. १. २१)। इसके नाम का अर्थ ऊर्वी पर रहनेवाला अर्थात् पृथ्वी पर रहनेवाला होगा। जमदग्नि गंगा किनारे रहते थे। इस जानकारी में यह भी पाया जाता है कि, और्व मध्य-देश में रहते थे, तथा वहीं इनके विवाह हुए थे (पद्म. उ. २६८.३)। परंतु ब्रह्माण्ड में उल्लेख है कि, यह नर्मदा पर था (ब्रह्माण्ड. ३.२६; ४५)। इसने सगर की सहायता की। परंतु रामायण में भृगु द्वारा सहायता का उल्लेख है। यह अंतिम और्व है। हैहयादिकों का नाश सगर द्वारा होने पर भी कहा जाता है कि, वह सारा पराक्रम परशुराम ने किया। इसका कारण यह है कि, और्व ने उसे आग्नेयस्त्र सिखाया था। परंतु आगे चल कर इन दो और्वों में गडबड हो गई ऐसा प्रतीत होता है। यह भृगुगोत्रीय हो कर मंत्रकार भी था।

२. इसका पिता भृगुवंशीय ऊर्व, जत्र तप कर रहा था, तब स्रव देव एवं ऋषि इससे मिलने आये। अनंतर विवाह कर के प्रजोत्पादन करने की प्रार्थना ऋषियों ने इससे की। तब इसे ऐसा लगा, 'इन ऋषियों के मत में मेरे जैसा तपस्वी, बिना विवाह के प्रजोत्पादन करने में असमर्थ रहेगा।' इसलिये इसने कहा, 'यह देखो, मैं पुत्र उत्पन्न करता हूँ किन्तु वह भयंकर होगा।' ऋषियों को ऐसा बताने पर इसने अपनी जंघा अभि में डाली। तदनंतर एक दर्भ से उसका मधन करके उस जंघा से एक पुत्र निर्माण किया। उसीका नाम और्व है (मत्स्य. १७५)। पुत्र के साथ उत्पन्न माया, ऊर्व ने हिरण्यकश्यपु को दी (पद्म. सू. ३८; ब्रह्माण्ड. ३. १.७४-१००)। जन्मतः यह स्वाने के लिये मांगने लगा। तथा इसने संसार का दाह करना आरंभ कर दिया। इस प्रकार तीन दिन दाह करने के बाद ब्रह्मदेव ने स्वयं आकर इससे प्रार्थना की। जहाँ मैं स्वयं रहता हूँ उसी समुद्र में इस बालक को स्थान देना मान्य किया तथा कहा कि, मैं स्वयं एवं यह बालक युग के अंत में संसार का नाश करेंगे। ऐसा कहने पर अपना तेज पितरों में डाल कर यह और्वभिः समुद्र में रहने के लिये गया (मत्स्य. १७५, पद्म. सू. ३८-४१)। यह विष्णु

ही था (म. व. १८९, ब्रह्माण्ड. ३. ७२)। इसी युग के अंत में प्रलयकारक, पाताल का विपामि, विष्णु के मुख से निकला हुआ तथा शंकर के तृतीय नेत्र में रहने वाला है (मत्स्य. २)। इसके बड़वाभूत बड़वानल, संवर्तक तथा समुद्रप नाम हैं (वायु. ४७) इसका पुत्र संवर्तक अग्नि है (मत्स्य. ५२)। यही और्वामि कहल्यता है।

३. मालव देश में रहनेवाला एक ब्राह्मण। इसकी पत्नी का नाम सुमेधा तथा पुत्री का नाम शमीका। इसने अपनी कन्या का विवाह शौनक का शिष्य, धौम्यसुत मंदार के साथ किया। विवाहोत्तर कुछ दिनों के पश्चात्, अपनी पत्नी बड़ी हो गई यह जान कर उसे ले जाने के लिये यह और्व के घर आया। और्व ने बड़े आनन्द से उन्हें बिदा किया। मार्गक्रमण करते समय राह में भृशुडी को देख कर दोनों हँस पड़े। इसलिये उसने इन्हें 'वृक्ष बने' ऐसा शाप देने पर वे वृक्ष बने। और्व तथा शौनक जब दूँदते दूँदते आये, तब उन्हें पता चला कि वे वृक्ष बन गये हैं। तब इन्हें अत्यंत दुख हुआ। इन्होंने ईश्वर की आराधना की। और्व अग्निरूप से शमीवृक्ष में रहा तथा मंदार की मूली से गणेशमूर्ति बना कर उसका पूजन करता हुआ शौनक

आश्रम में गया। दोनों के अनुष्ठान से शमीमंदार गणेश को प्रिय हुआ (गणेश. २. ३६)।

४. स्वारोचिष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

५. सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

और्वेय--भृगु गोत्र का एक ऋषिगण।

औरालान--सायणाचार्य ने इसका अर्थ निकाला है उल का वंशज। यह शंतनु का नाम होना संभव है (क. १०. १८. ११)।

औरुंड्य--यह सुप्रतीक का पैतृक नाम है (वं. ब्रा. १)।

औशनस--उशनस् तथा पण्डामर्क देखिये।

औशिज--यह शब्द कक्षीयत्, ऋजिश्चन् तथा दीर्घ-श्रवस् के लिये प्रयुक्त किया गया है।

औशीनर अथवा औशीनरि--उशीनर से माधवी को उत्पन्न शिवि (म. द्रौण. परि. ७, पंक्ति. ४०९)। इसे औशीनरि भी कहा गया है (म. स. ८. १४; शां. २९. ३५)। एक शिवि औशीनर द्रौपदीस्वयंवर में था (म. आ. १७७. १५)।

औषदशिव--वसुमत् देखिये।

औषूक्षि--साति का पैतृक नाम। (वं. ब्रा. १)।

क

कंस--(सो. यदु. कुकुर.) उग्रसेन का पुत्र। उग्रसेन की पत्नी को यह द्रुमिल नामक दानव से हुआ (ह. बं. २. २८)। यह बड़ा शूर, मल्लविद्याविशारद तथा सर्व शास्त्र पारंगत था। इसे राज्य मिलेगा इस शर्तपर जरा-संध ने अपनी कन्या इसे दी थी। इसलिये सब मंत्रि-मंडल ने इसे राज्याभिषेक किया। वसुदेव इसका प्रधान था। परंतु आगे चलकर इसने पिता को कारागृह में डाल दिया। यह वसुदेव का भी कुछ न मानता था (म. स. १३. २९-३१)। पिता को कारावास देकर इसने राज्य स्वयं ले लिया (भा. १०. १. ६९)। कंस तथा वसुदेव ये दोनों यद्यपि यदुवंशांतर्गत हैं तथापि वंशावली से उनका संबंध काफी दूर का है। बाद में कंस के चाचा उर्फ देवक की कन्या देवकी का विवाह वसुदेव से निश्चित हुआ। इस विवाह के बाद देवकी को वसुदेव

के पास पहुँचाते समय लगभग हाथ में लेकर रथ हाँकने का कार्य कंस ने खुद स्वीकार किया। बड़े डाढ़ से चारात जा रही थी कि आकाशवाणी हुई, "जिसका रथ तुम हाँक रहे हो, उसीका आठवाँ गर्भ तुम्हारा वध करेगा"। यह सुनते ही उसने सोचा कि अगर बहन ही न रही तो उसका आठवाँ गर्भ कहाँ से आवेगा। उसकी हत्या का निश्चय कर देवकी के केश पकड़ कर उसे मारने के लिये यह सज हुआ। तब इसके सब पुत्र तुम्हें सौंप दूँगा यह आश्वासन देकर बड़ी कठिनाई से वसुदेव ने इससे देवकी की रक्षा की। इस आश्वासन के अनुसार वसुदेव ने प्रथम पुत्र इसे दिया, परंतु आठवें से मय है, प्रथम से नहीं यह सोच कर इसने उस पुत्र को वापस ले जाने के लिये वसुदेव से कहा। परंतु नारद ने यादों के बारे में इसका मत कल्पित किया। इससे इसने

वसुदेव देवकी के पैरों में वेड़ियाँ डालकर बंदिवास में डाला तथा प्रत्येक पुत्र का वध करने का क्रम प्रारंभ किया। जरासंध के समान प्रलेत्र, बक आदि अनेक लोग सकी सहायता करते थे। यादवों में से प्रमुख लोग इसके द्वारा दिये जानेवाले कष्टों के कारण कुरु, पांचाल, केकय, शाल्व, विदर्भ, निपद्य, विदेह, कोसल आदि देशों में चले गये। कुछ कंस का प्रेम संपादित करके उसी के पास रहे (भा. १०. २. ३-४)। चाणूरदिक जो लोग इसने अपनाये थे वे युद्ध के द्वारा ही अपनाये थे।

यह पूर्वजन्म में कालनेमि असुर था (म. आ. ६१. ५२९*; भा. १०. १. ६९)। विष्णु के साथ युद्ध करते करते यह मृत हुआ। परंतु शुक ने संजीवनीविद्या द्वारा इसे जीवित किया। तब इसने विष्णु को जीतने के लिये मंदार पर्वत पर तपस्या प्रारंभ की। दूर्वाकुरों का रस पीकर सौ वर्षों तक दिव्य तप करने के बाद ब्रह्मदेव प्रसन्न हुआ। तब इसने वरदान मांगा कि, मुझे देवों के हाथों मृत्यु प्राप्त न हो। ब्रह्मदेव ने कहा कि, यह अगले जन्म में संभव होगा। तदन्तर इसने उपसेन की पत्नी के उदर में जन्म लिया। आंग चलकर जब जरासंध विजयप्राप्ति के हेतु बाहर निकला तब यमुना के किनारे उसका भड़ाव था। तब कुवलयापीड नामक हाथी संकल तोड़ कर छावनी में से भाग कर, जहाँ मलयुद्ध प्रारंभ था वहाँ आया। तब सब मल्ल भयभीत होकर भाग गये। परंतु कंस ने इसकी सूंड पकड़ कर उसे जमीन पर पटक दिया, पुनः उठाकर हवा में गोल घुमाया तथा सौ योजन दूर जरासंध की छावनी पर फेंक दिया। यह अद्भुत सामर्थ्य देखकर जरासंध ने इसे अपनी अस्ति तथा प्राप्ति नामक दो कन्यायें दीं। माहिष्मती के राजा के चाणूर, मुष्टिक, कूट, शल, तोशलक नामक पुत्र कंस, मलयुद्ध के द्वारा अपने नियंत्रण में लाया (गर्ग संहिता १.६.७) :

कृष्ण से वैर—यह राज्यक्रांति का इतिहास है। वसुदेव उपसेन का सुप्रसिद्ध मंत्री था। अपने को वह कुछ अपाय करेगा एवं उपसेन को गद्दी पर बैठायेगा इस भय से कंस ने उसे कारागृह में डाला, तथा उसके पुत्रों के वध का क्रम प्रारंभ कर दिया (वायु. ९६.१७३; १७९; २२८)। आठवीं बार योगमाया से उसे मालूम हुआ कि उसका शत्रु सुरक्षा से बंद रहा है। तब पश्चात्ताप हो कर इसने वसुदेवदेवकी को बंधसूक्त किया। परंतु मंत्रियों से सलाह करके शत्रु को हूँटकर उसका नाश करने का प्रयत्न उसने जोर से चालू किया। वसुदेव की शेष स्त्रियाँ

गोकुल में थीं, अतएव गोकुल की ओर इसकी बक्रदृष्टि घूमी, तथा उन्हीं दिनों जन्मे पुत्रों पर उसने विशेष दृष्टि रखना प्रारंभ किया। पूतना के द्वारा गोकुल पर अरिष्ट आना प्रारंभ हो गया। परंतु इन सब संकटों से कृष्ण की रक्षा हो गई। अंत में कुशितियाँ का मैदान ब्राध कर उसमें अपने मल्लों के द्वारा कृष्ण को मारने का षडयंत्र इसने रचा। कृष्ण तथा बलराम ख्यातनाम पहलवान थे। उसी के अनुसार धनुर्याग कर के मलयुद्धों का बड़ा मैदान इसने रखा। दिग्बिजय के समय परशुराम का जो धनुष्य कंस ने प्राप्त किया था, वह भी रखा तथा जो कोई उसे चढ़ायेगा उसके लिये इनाम भी घोषित किया गया। उस धनुष्य को कृष्ण ने आसानी से चढ़ा दिया (गर्गसंहिता १.६) तथा अनेक बार घुमा कर तोड़ भी दिया (ह. वं. २.२७.५७)।

मृत्यु—द्वार पर महावत को सूचना दे कर कंस ने एक मत्त हाथी कृष्ण को मारने के लिये रखा था। कृष्ण ने हाथी के दाँत पकड़ कर मार दिया तथा हाथी-महावत को भी मार दिया। तदनंतर कृष्ण ने चाणूर एवं तोसलक तथा बलराम ने आंग्रिमल्ल मुष्टिक के साथ मलयुद्ध कर के उन्हें मृत प्राय किया। तदनंतर वेग से कंस पर हमला करके उसके केश पकड़ कर सिंहासन से उसे नीचे घसीट कर उसका वध किया। कंस के शरीर पर कृष्ण के नखों के बहुत चिन्ह हुए थे। यह कार्य कृष्ण ने इतनी चपलता से किया कि कृष्ण के जयजयकार में क्या हुआ इसका भी पता किसी को न चला (ह. वं. २.२८-३०)। उसी प्रकार कंस के कंक, न्यग्रोध आदि आठ वंधुओं का भी बलराम ने तत्काल वध किया (भा. १०.४४.४०)।

कंस वारक्री—यह वक्ष कात्ययनि आत्रेय का शिष्य है (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

कंस वारक्य—यह प्रोत्रपाद वारक्य का शिष्य है (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

कंसवती—उपसेन की कन्या तथा कंस की भगिनी। यह वसुदेव का कनिष्ठ भ्राता देवश्रवा की पत्नी। इसे उससे सुवीर तथा शृगुमत् नामक दो पुत्र हुए (भा. ९. २४)।

कंसा—उपसेन की कन्या तथा वसुदेवभ्राता देवभाग की स्त्री। इसे उससे चित्रकेतु, बृहदल तथा उद्धव नामक तीन पुत्र हुए (भा. ९.२४)।

कंसारी—याज्ञवल्क्य की भगिनी। इसे बृहस्पति के शाप से याज्ञवल्क्य के वीर्य से पिप्पलाद हुआ (याज्ञवल्क्य देखिये)।

ककुत्स्थ—(सु. इ.) यशादविकुक्षि का पुत्र। आडि-बक के साथ इंद्र युद्ध कर रहा था, तब इसने इंद्र को वृषभ बनाया तथा उस पर आरोहण कर के युद्ध में जय प्राप्त की। इसलिये ककुत्स्थ उपाधि प्राप्त की (वायु. ८८.२५)। इसे कचित् इंद्रवाह, पुरंजय आदि नाम भी प्राप्त हैं (भा. ९.१२)। कहीं चन्द्रवाह भी कहा है (दे. भा. ७.९)। इसने पापनाशिनी एकादशी का व्रत किया (पद्म. स्व. ३८)। इसके पुत्र का नाम अनेमस् (म. व. १९३.२)।

ककुदि—मरीचिगर्भ देवों में से एक।

ककुभिन् रैवत—(सु. शर्वात.) रैवत राजा का पुत्र। इसे रैवती नामक कन्या थी। उसे ले कर यह ब्रह्मदेव के पास उसके लिये वर पूछने गया। वहाँ गायन चालू होने के कारण, क्षणभर रुका। तदनंतर इसने ब्रह्मदेव से पूछा, तब ब्रह्मदेव हँस कर बोला, “तुम्हारे पृथ्वी से यहाँ आने तक पृथ्वी पर चार युगों के सत्ताईस चक्र हो चुके हैं। सांप्रत द्वापारयुग में परमेश्वर अंश से बलराम का जन्म हुआ है, उसे यह कन्या दो” (भा. ९.३)। इसे रैवत कहते थे (विष्णु. ४.१.२१; २.१-२)। यह सौ भ्राताओं में ज्येष्ठ था इसकी राजधानी कुशस्थली थी। इसके वारस आने तक कुशस्थली की द्वारका बन गई थी (ब्रह्माण्ड. ३.६१.२२; वायु. ८६.२७)।

ककुभ—धर्म ऋषि के अरुंधती नामक स्त्री का नामांतर। यह दक्षकन्या है (भा. ३.६)।

कक्षसेन—असित पर्वत पर रहनेवाला एक राजर्षि (म. अनु. १३७.१५)। इसने वसिष्ठ का धन रक्षण किया।

२. युधिष्ठिर की सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ४.१९)।

३. (सो. कुरु.) दूसरे जनमेजय का पुत्र (म. आ. ८९. ४८)।

४. यम सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ८.१७)।

कक्षीवत्—यह दीर्घतमस् का पुत्र। इसकी माता का नाम उशिञ्ज। इसे औशिज कहा गया है (ऋ. १.१८.१; दीर्घतमस् देखिये)। इसकी पत्नी का नाम वृचया (ऋ. १.५.१.३)। स्वनय भावयव्य ने इसे देन दी थी (ऋ. १.१२५; १२६; सां. श्रौ. १६.४.५)। आयवस तथा

मशशरार के तीन पुत्रों ने कक्षीवत् को कष्ट दिये थे। यह पञ्चकुल का था इसलिये अपने को पञ्चिय कहलाता है (ऋ. १.११६.७; ११७.६)। इसे पञ्च भी कहा है (ऋ. १.१२६.४; पं. ब्रा. १.४.११.१६)। विवाह के समय इसकी उम्र काफी होगी (ऋ. १.५.१.१३)। यह काफी बृद्ध रहा होगा (ऋ. ९.७४.८)। ऋग्वेद में भी यह पुरातन माना जाता था (ऋ. १.१८.१; ४.२६.१)। दीर्घतमस् तथा कक्षीवत् का ऋग्वेद की एक ऋचा में एकसाथ उल्लेख है (ऋ. ८.९.१०)। यह क्षत्रिय था परंतु तप से ब्राह्मण तथा ऋषि हुआ था (वायु. ९१.१००; ११४)। इसे घोषा नामक एक कन्या थी। एक सूक्त से अश्वियों को प्रसन्न कर के इसने उत्तम लोक प्राप्त किया था (ऋ. १.१२०; ऐ. ब्रा. १.२१; जै. ब्रा. १.६.११)। यह सूक्त-द्रष्टा है (ऋ. १.११६-१२५; १२६.१-५; ९.७४)। विद्याध्ययन करने के बाद यह वापस जा रहा था, राह में स्वनय भावयव्य से इसकी मुलाकात हुई। अंगिरस कुल का औचथ्य दीर्घतमस् का यह पुत्र है, ऐसा मादूम होते ही, उसने इसे अपनी दस कन्यायें तथा बहुत संपत्ति दी। तब इसने उसकी प्रशंसा की (बृहद्दे. ३. १४१-१५०)। कक्षीवत् औशिज या कक्षीवत् नाम आगे दिये गये ग्रंथों में भी हैं (म. स. ४.१५; ७.१६; अनु. २७१.३७ कुं.)। अंगिरसकुल के मंत्रकारों में इसका नाम है (दीर्घतमस् देखिये)।

२. भीष्म से मिलने आया हुआ ऋषि (भा. १.९)।

कक्षेयु—(सो. पुरुरवस्.) विष्णु के मतानुसार रौद्राश्व तथा मत्स्य के मतानुसार भद्राश्व पुत्र है।

कंक—वाराहकल्प के वैवस्वत मन्वन्तर में यह शंकर का अवतार है। इसे निम्नलिखित चार पुत्र हैं—सनक, सनातन, सनंदन, सनत्कुमार। यह निवृत्तिमार्गीय था। इसने तत्कालीन सबिदु व्यास की सहायता की (शिव. शत. ४)।

२. वृष्णिवंश का एक क्षत्रिय (म. आ. १७७.१८)।

३. भ्लेच्छ राजाओं का वंश। इनका परामव दुष्यंत-पुत्र भरत ने किया (भा. ९.२०)।

४. (सो. यदु.) द्युर राजा को भारीपा अथवा भोजा से उत्पन्न दस पुत्रों में सातवाँ। वसुदेव का भ्राता। इसे कर्णिका स्त्री से ऋतधामन् तथा जय नामक पुत्र हुए थे (भा. ९.२४)।

५. (सो. वृष्णि.) उग्रसेन के नौ पुत्रों में से चौथा। यह कंस का कनिष्ठ भ्राता, जिसका वध वलराम ने किया (भा. ९.२४)।

६. अज्ञातवासकाल में विराटगृह में प्रवेश करते समय सुधिष्ठिर ने धारण किया हुआ नाम (म. वि. १.२०:७.१०)। यह विराट का सभासद था। विराट इससे अश्वक्रीड़ा करता था। दक्षिण गोग्रहण के समय विराट ने सुशर्मा पर आक्रमण किया तब उसने इसे साथ लिया था तथा वहाँ सुशर्मा उसे बांध कर ले जा रहा था। इसने अपने भाई के द्वारा विराट को मुक्त कराया (विराट देखिये)।

७. कलियुग के सोलह राजाओं का एक वंश (भा. १२.१)

कंकट—कटु के लिये पाठभेद।

कंकतीय—एक कुल का नाम है। इस कुल ने शांडिल्य ऋषि से अश्विच्यन करना सीखा (श. ब्रा. ९.४.४.१७)। एक कंकटी ब्राह्मण का उल्लेख आपरतंत्रश्रौतसूत्र (१४.२०.४) में आया है। शायद औघायन श्रौतसूत्र के (२५.६) तथा छागलेय ब्राह्मण में उल्लेखित ब्राह्मण यही होगा।

कंकमुद्र—ऋग्वेदी ब्रह्मचारी।

कंका—उग्रसेन की कन्या तथा कंस की भगिनी। वसुदेव के भाई आनक की स्त्री।

कंकी—(सो. कुकुर.) विष्णुमत में उग्रसेन की कन्या।

कच—एक महर्षि (म. अनु. २६.८)।

२. वर्तमान मन्वन्तर में अंगिरापुत्र बृहस्पति का पुत्र। परंतु इसकी माता कौन थी इसका पता नहीं चलता है क्यों कि, बृहस्पति की शुभा तथा तारा नामक दोनों स्त्रियों की संतति में इसका नाम नहीं है।

देवकार्याथं गमन—एक बार देव एवं दैत्यों में त्रैलोक्य का आधिपत्य तथा ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिये तुमुल युद्ध हुआ। उसमें दैत्यों के गुरु शुक्राचार्य संजीवनी विद्या के कारण मृत राक्षसों को तत्काल जीवित कर देते थे। इस कारण दैत्यों की शक्ति कम नहीं होती थी। देवगुरु बृहस्पति को यह विद्या प्राप्त न होने के कारण, देवताओं का बहुत नुकसान होता था। तब इन्द्र तथा अन्य देवताओं ने कच से प्रार्थना कर कहा, कि तुम शुक्राचार्य तथा उसकी तरुण कन्या देवयानी को प्रसन्न कर, संजीवनी विद्या सीख कर आवो। तुम्हारा शील, सौंदर्य, माधुर्य, मनोनिग्रह तथा आचरण देवयानी को प्रसन्न करने के साधन हैं। देवयानी को वश करने का कारण यही है कि, यदि वह प्रसन्न हो गयी तो विद्या-

प्राप्ति में विलंब न होगा क्यों कि, देवयानी शुक्राचार्य का दूसरा प्राण है। यह बता कर देवताओं ने उसे आशीर्वाद दिया।

गुरुसेवा—कच विद्यासंपादन के लिये देवताओं को छोड़ कर शुक्राचार्य के पास आया। शुक्राचार्य ने पूछा, 'तुम कौन हो? कहाँ से आये हो?' तब कच ने बड़ी नम्रता से कहा, 'मैं बृहस्पतिपुत्र कच हूँ तथा विद्यासंपादन के हेतु आया हूँ।' शुक्राचार्य ने उसे अतिथि समझ कर तथा गुरुपुत्र होने के कारण, वंदनीय मान कर अपने पास रख लिया। तत्पश्चात् वह गुरुभक्ति से तथा ब्रह्मचर्य से सेवा करने लगा। शुक्राचार्य की तरुण कन्या देवयानी के मनोरंजन के लिये कच, गाना, वाद्य बजाना, नाचना, पुष्प तथा फल लाना एवं बताये हुए काम तथा गायें चराना आदि काम करने लगा। इस प्रकार शुक्राचार्य तथा उसकी प्रिय कन्या देवयानी के कार्य में कहीं भी न्यूनता न रखते हुए, कड़े ब्रह्मचर्यव्रत से कच ने उन की ५०० वर्षों तक उत्तम सेवा की। इससे आचार्य उस पर प्रसन्न हो गये, तथा देवयानी तो उसे अपना बहिष्कर प्राण समझने लगी।

संकटपरंपरा—१. देवगुरु बृहस्पति का पुत्र कच अपने आचार्य के पास विद्या संग्रहणार्थ आया है। अवश्य ही यह संजीवनी विद्या संपादन करने के लिये आया होगा, यह सोच कर दैत्यों ने उसका वध करने का निश्चय किया। एक दिन उन्होंने उसे गौओं को चराते हुए देखा। क्रोधावशात् उन्होंने इसे पकड़ा तथा इसके शरीर के खंडशः टुकड़े कर सियारों को खिला दिये तथा वे वापस अपने स्थान पर लौट आये। इधर सूर्यास्त होने पर भी कच घर लौट नहीं आया, यह देख कर देवयानी ने यह खबर पिता तक पहुँचाई। इस पर शुक्राचार्य ने संजीवनी विद्या का प्रयोग किया। तत्काल सियारों के शरीर फाड़ कर कच सजीव हो कर आचार्य तथा देवयानी के समक्ष आ कर खड़ा हो गया। कच को आया जान कर देवयानी ने विस्त्रेण का कारण पूछा। तब उसने दैत्यों का सारा कृत्य उसे बताया।

२. एक बार पुनः देवयानी के कथनानुसार जब कच अरण्य में गया था, तब राक्षसों ने उसे देखा। पुनः उसके टुकड़े कर के, उन्होंने समुद्र में फेंक दिये। इस समय भी पिता को बता कर देवयानी ने इसे पूर्ववत् सजीव कराया।

३. इस समय इसे मार कर, इसका चूर्ण बना कर राक्षसों ने जलया सुरा के पात्र में वह रक्षा मिलाई। वही पात्र शुक्राचार्य को पीने के लिये दिया तथा अपने अपने घर चले गये।

देवयानीप्रणय—दिन का अवसान हो गया। रात हुई, किन्तु कच नहीं आया। यह देख, देवयानी ने पिता से कहा कि, अभी तक कच नहीं आया। हो न हो, उसे अवश्य राक्षसों ने मार डाला होगा। उसे तत्काल जीवित कर के आश्रम में लाने के लिये, देवयानी हठ करने लगी। तब शुक्राचार्य ने देवयानी से कहा कि, बार बार जीवित करने पर भी कच की मृत्यु हो जाती है, इस लिये भला मैं क्या कर सकता हूँ? अब तुम रुदन मत करो। कच की मृत्यु के लिये दुःख मनाने का अब कुछ प्रयोजन नहीं है। तब देवयानी ने उसके रूपगुणों का रसभरा वर्णन किया एवं शोकावेग से वह प्राणत्याग करने के लिये प्रवृत्त हो गई। देवयानी का यह अविचारी कृत्य देख कर शुक्राचार्य असुरों को बुला लाये। तथा उनसे बोले, “मेरे पास विद्याप्राप्ति के हेतु आये हुए मेरे शिष्य को मार कर तुम लोग क्या मुझे अब्राह्मण बनाना चाहते हो? तुम्हारे पापों का षड़ा भर गया। प्रत्यक्ष इन्द्र आदि का भी घात ब्रह्महत्या के कारण होता है फिर तुम्हारी क्या हस्ती?” क्रोध से ऐसा कह कर, शुक्राचार्य ने कच को पुकारा। तब संजीवनी विद्या के प्रभाव से शुक्राचार्य के उदर में जीवित कच ने वह उदर में किस प्रकार आया, तथा दैत्यों ने किस प्रकार उसे मारा वह बताया। तदनंतर उसने कहा, ‘गुरुहत्या के पाप का भागीदार मैं न बनूँ तथा देवयानी का मेरा एवं संपूर्ण विश्व का अकल्याण न हो, इस हेतु से मैं गर्भवास ही स्वीकार करता हूँ’।

तब शुक्राचार्य ने देवयानी से कहा, ‘अगर तुम्हें कच चाहिये तो मेरा वध होना आवश्यक है। अगर मैं तुम्हें प्रिय हूँ तो उदरगत कच का बाहर आना असंभव है’। तब देवयानी ने कहा कि, ‘तुम दोनों मुझे प्रिय हो। दोनों में से किसी का भी विरह मेरे लिये दुखदायी ही होगा’।

प्रथमतः शुक्राचार्य ने कच को उदर में, संजीवनी विद्या का उपदेश किया तथा बाहर आने के बाद आने को जीवित करने के लिये कहा। तदनंतर संजीवनीविद्याप्राप्त कच शुक्राचार्य का उदरविदारण कर बाहर आया तथा उसी विद्या से तत्काल उसने शुक्राचार्य को जीवित किया।

अपना पिता शुक्राचार्य तथा कच दोनों को जीवित देख कर, देवयानी को अत्यंत आनंद हुआ।

सुरापान के कारण यह भी समझ में न आया कि, मैं कच की राख पी रहा हूँ। इसके लिये शुक्राचार्य को अत्यंत खेद हुआ। सुरादेवी पर क्रोधित हो कर शुक्राचार्य ने मद्यपान पर निम्नलिखित निर्बंध लगा दिया। “जो ब्राह्मण आज से भविष्य में व्यसनी लोगों के चंगुल में फँस कर मूर्खता से अथवा मूर्खता से सुरापान करेगा, वह धर्मभ्रष्ट हो कर ब्रह्महत्या के पातक का भागीदार बनेगा। उसे इहपरलोक में अप्रतिष्ठा तथा अनंत कष्ट भोगने पड़ेंगे।” इस प्रकार धर्ममर्यादा स्थापित कर के उसने दैत्यों से कहा, ‘तुम्हारी मूर्खता के कारण मेरे प्रिय शिष्य कच को यह संजीवनी विद्या प्राप्त हो गई। इस प्रकार हजार वर्षों तक गुरु के पास रहने के बाद कच ने देवलोक में जाने के लिये गुरु की आज्ञा मांगी।

शुक्राचार्य ने कच को जाने की आज्ञा दी। कच देवलोक जा रहा है यह देख कर, देवयानी ने उससे प्रार्थना की। ‘हम दोनों समान कुलशीलवाले हैं। मेरी तुम पर अत्यंत प्रीति है। इस प्रीति के कारण ही तीन बार राक्षसों द्वारा मारे जाने पर भी मैंने तुम्हें जीवित किया, इसलिये मेरा पाणिग्रहण किये बिना तुम्हारा देवलोक जाना ठीक नहीं है’। कच ने उसे बहुत ही समझाया, कि हम दोनों का जन्म एक ही उदर से होने के कारण धर्मदृष्टि से तुम मेरी गुरुभगिनी हो। तस्मात् तुम मुझे गुरु के समान पूज्य हो। इतना कहने पर भी देवयानी ने अपना हठ नहीं छोड़ा। तब कच ने कहा, ‘अपने पुत्र के भाँति तुमने मुझे प्यार किया। तुम्हारा तथा मेरा जन्म एक ही पिता से हुआ है, अतएव तुम मेरे द्वारा पाणिग्रहण की कामना मत करो’ इतना कह कर कच ने देवयानी को हठ मनोभाव से शुक्राचार्य की सेवा करने के लिये कहा तथा उससे आशीर्वाद मांगा।

शापप्रतिज्ञाप—भग्नमनोरथा देवयानी ने अत्यंत संतप्त हो कर उसे शाप दिया कि, मेरी प्रार्थना अमान्य कर बड़े अहंकार से, जो विद्या प्राप्त कर तुम जा रहे हो वह तुम्हें कभी फलद्रूप न होगी। तब कच ने शांति से कहा, ‘चूँकि तुम गुरुभगिनी हो एवं मैं सात्विक ब्राह्मण हूँ, मैं तुम्हें प्रतिज्ञाप नहीं देता। यह शाप कामविकारजन्य है। अर्थात् तुम्हारा वरण ब्राह्मण पुत्र करे, यह तुम्हारा इच्छा कभी सफल नहीं हो सकती। मेरी विद्या मुझे फलद्रूप

नहीं होगी, ऐसा शपथ तुमने दिया। ठीक है। जिसे वह विद्या में सिखाऊँगा, उसे वह फलद्रूप होगी।

गौरव—इतना कह कर कच देवायानी से विदा ले कर देवलोक गया। इस प्रकार विद्या संपादन कर के जब वह देवलोक वापस आया तब देवों ने तथा इन्द्र ने इसका स्वागत किया तथा यज्ञ का भाग इसे दिया (म. आ. ७१.७२, मत्स्य. २५-२६)।

कच्छनीर—वैशाख माह में अयंमा नामक सूर्य के साथ भ्रमण करनेवाला नाग (मा. १२.११)।

कच्छप—कुबेर के मूर्तिमान नौ निधियों में से पाँचवाँ।

कंजाजना—दाशरथि राम-पुत्र लव की कनिष्ठ स्त्री।

कटक—मर्कटप के लिये पाठभेद।

कटायनि—भृगुकुल का गोत्रकार।

कटु—एक अंगिराकुल का गोत्रकार। इसके लिये कटय तथा कंकट पाठभेद हैं।

कठ—वसिष्ठकुल के गोत्रकार ऋषिगण (म. आ. ८.२३०; स. ४.१५)। इसके नाम पर कठ परिशिष्ट, कठब्राह्मण, कठ संहिता, कठबल्ल्युपनिषद् तथा कठसूत्र ग्रंथ आये हैं। कठसूत्र का निर्देश कात्यायन श्रौतसूत्र में है (१.३.२३; ४.८.१३)। यही कठशाखा का प्रवर्तक होगा (पाणिनि देखिये)। कठ तथा कपिष्ठल कठ का ही भेद है।

कठ कृष्णयजुर्वेद की शाखा है। कठ लोग विस्तृत प्रदेश में आबाद थे। सिकंदर को कठों ने कड़ा विरोध किया। कठों का स्थान पंजाब के अन्तिम भाग में सिंधु के तट पर दीखता है।

२. रेवती देखिये।

कठशाठ—एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

कणिक—धृतराष्ट्र का नीतिशास्त्रविशारद ब्राह्मण-मंत्री। इमने पांडवों के संबंध में धृतराष्ट्र को विपरीत सलाह दी थी (म. आ. परि. १.८१)। इतनी शत्रुता बढ़ जाने पर युद्ध के अतिरिक्त कोई दूसरा मार्ग नहीं है, ऐसा इमने बताया। कणिक पाठ भी मिलता है।

इसका कथन कणिकनीति नाम से प्रसिद्ध है तथा मांडारकर महाभारत में परिशिष्ट में दिया है।

कर्णीशा—कश्यप तथा क्रोधा के कन्या तथा पुलह की स्त्री।

कंठ—(सो. पुरुरवस्.) वायुमत में अजमीदपुत्र।

कंठायन—(सो. पुरुरवस्.) वायुमत में मेघातिथि-पुत्र।

कंठेविद्धि—ब्रह्मविद्धि का शिष्य। इसका शिष्य गिरिशर्मन् (वं. ब्रा. १)।

कंडरीक—ब्रह्मदत्त का मंत्री तथा योगी (ह. वं. १. २०.१३)। पितृवर्तिन् तथा ब्रह्मदत्त देखिये। यह सर्वशास्त्र प्रवर्तक था (मत्स्य. २१.२५)। इसको द्विवेद, छंदोग तथा अध्वर्यु कहा है (ह. वं. १.२३.२१-२२)।

कंडु—एक ब्रह्मर्षि। इसके एक वर्ष के पुत्र की जिस वन में मृत्यु हुई, उस वन को इसने उदकरहित किया (वा. रा. कि. ४८)। इसका तप नष्ट करने के लिये इंद्र ने प्रमलोचा नाम की अप्सरा भेजी थी। इस की कन्या मारोषा (विष्णु. १.१५. भा. ४.३०)।

२. व्यास की सामशिष्यपरंपरा के वायु तथा ब्रह्माण्ड मतानुसार लंगलि का शिष्य।

कंडू—कलिंग कन्या तथा अक्रोधन की स्त्री। इसके पुत्र का नाम देवातिथि। मांडारकर प्रति में कंडू पाठ है (मु. आ. ९०.२१)।

कण्व—एक गोत्रप्रवर्तक तथा सूक्तद्रष्टा। घोर के कण्व तथा प्रगाथ नाम के दो पुत्र थे। वन में एक बार प्रगाथ ने कण्व की स्त्री को छेड़ा। इसलिये कण्व शपथ देने लगा। तब प्रगाथ ने इन्हें माता एवं पिता माना। कालांतर में इसके वंशजों ने ऋग्वेद वा आठवाँ मंडल तयार किया (बृहदे. ६.३५-३९)। कण्व शब्द का अर्थ सुखमय होता है (नीलकंठ टीका)। यह यदुतुवंश का पुरोहित रहा होगा क्योंकि, कण्वकुलोत्पन्न देवातिथि इंद्र से प्रार्थना करता है कि यदु तथा तुवंश तुम्हारी कृपा से मुझे सदैव सुखी दिखाई दें (ऋ. ८.४.७)।

इस पुरातन ऋषि कण्व का ऋग्वेद तथा इतरत्र बार बार उल्लेख आता है (ऋ. १.३६.८; १०.११ आदि; अ. वे. ७. १५. १; १८. ३. १५; वा. सं. १७. ७४; पं. ब्रा. ८.१.१; ९.२.६; सां. ब्रा. २८.८)। इसके पुत्र तथा वंशजों का नाम वारवार आता है। यह सूक्तद्रष्टा था (ऋ. १.३६-४३; ८; ९.९४)। अंगिरसकुल में कण्व मंत्रकार थे। कण्व का वंशज उसके अकेले के कण्व नाम से (ऋ. १.४४.८; ४६.९; ४७.१०; ४८.४; ८.४३.१) तथा पैतृकनामसहित, जैसे कण्व नापद (ऋ. १.११७. ८; अ. वे. ४.१९.२), तथा कण्व श्रायस (तै सं. ५. ४.७.५; क. सं. २१.८; मै. सं. ३.३.९.) ऐसा संशोधित है। इसके अतिरिक्त इसका अनेकवचनी (बहुवचन)

उल्लेख कण्वाः, सौश्रवसाः नाम से होता है (क. सं. १३. १२; सां. श्रौ. १६.११.२०)। अथर्ववेद के (२.२५) एक उद्धरण से प्रतीत होता है कि, उनसे शत्रुतापूर्ण व्यवहार किया जाता था।

क्षत्रियों के गायत्रीमंत्र में कण्व ने, सूर्य से प्राप्त की विश्वकल्याणकारक सद्बुद्धि हमें मिले, ऐसा उल्लेख मिलता है (वा. सं. १७.७४)। ऋग्वेद में (१.११९.८) निम्नलिखित कथा एक कण्व के संबंध में आयी है। ब्राह्मणत्व की परीक्षा लेने के लिये असुरों ने कण्व को, अंधकारमय स्थान पर रख कर कहा कि, तुम यदि ब्राह्मण होगे तो, उषःकाल कब होगा, पहचानोगे। इसे अधियों ने आकर बताया कि, जिस समय उषःकाल होगा उस समय हम लोग वीणावादन करते हुए आयेँगे। उस शब्द को सुन कर तुम कह देना कि उषःकाल हो गया है।

विष्णु मतानुसार यह ब्रह्मरात तथा भागवत मतानुसार देवराज के पुत्र याज्ञवल्क्य के पंद्रह शिष्यों में से एक था (व्यास देखिये)। आगे चल कर इसने यजुर्वेद में कण्व शाखा स्थापित कर उसके ग्रंथ निर्माण किये (भा. १२.६)। वे ग्रंथ बहुत सी बातों में याज्ञवल्क्य के विरुद्ध हैं।

कण्व अंगिरस गोत्रोत्पन्न है तथा इनका कुल पूरुओं से उत्पन्न हुआ। कुल स्थानों पर मतिनार पुत्र अप्रतिरथ से यह उत्पन्न हुआ (ह. वं. १.३२, विष्णु. ४.१९) ऐसा मिलता है, परंतु कुछ अन्य स्थानों पर कण्व को अजमीट-पुत्र कहा गया है (वायु. १९.१६९-१७० ऋण्डः मत्स्य. ४९)। पीढियों की दृष्टि से इन दोनों में काफी भेद है। विष्णु पुराण में दोनों वंश दिये गये हैं।

प्रगाथ कण्व दुर्गह के नातियों का समकालीन था (ऋ. ८.६५.१२; दुर्गह देखिये)। कण्व वंश की वंशावलि बहुत से स्थानों पर मिलती है (मत्स्य. ५०; ह. वं. १.३२; भा. ९.२१; प्रकण्व तथा मेघातिथि देखिये)। कण्व गोत्र गोत्रियों को दक्षिणा नहीं देनी चाहिये, ऐसा सत्याषाढश्रौतसूत्र (१०.४) में दिया गया है। क्योंकि गोपीनाथ भट्ट ने भाष्य में "कण्वे तु वधिरं विद्यात्" ऐसा कहा है, परंतु उसे भी यह जैचा नहीं। ब्रह्मदेव के पुष्कर क्षेत्र के यज्ञ में यह था (पद्म. स. ३४)।

धर्मशास्त्रकार—एक धर्मशास्त्रकार। आपस्तंब ने प्रथम "किसका अन्न ग्राह्य है?" इसी शंका उद्घृत कर, उसके समाधान के लिये कण्व के ग्रंथ का उद्धरण दिया है 'किसी ने भी आश्रम से दिया हुआ अन्न ग्राह्य है' (आप. थ. १.६.१९.२-३)। कण्व के ग्रंथ के बहुत से

उद्धरण स्मृतिचंद्रिका में (आन्हिक तथा श्राद्ध के संबंध से) लिये गये हैं। उसी तरह मितक्षरा नामक ग्रंथ में कण्व के ग्रंथ के बहुत से उद्धरण लिये गये हैं। (मिता. ३.५८; १३.६०)।

इनके ग्रंथ निम्नलिखित हैं—

(१) कण्वनीति. (२) कण्वसंहिता (३) कण्वोपनिषद् (४) कण्वस्मृति। कण्वस्मृति का उल्लेख हेमाद्रि, मध्वाचार्य आदि ने किया है (C. C.)।

२. कश्यपगोत्रोत्पन्न एक ऋषि। इसके पिता मेघातिथि (म. अनु. २५५. ३१ कुं.)। इसका आश्रम मालिनी नदी के तट पर था। इसने शकुंतला का पालन पोषण बड़े प्रेम से किया था। एक बार यह बाहर गया था, तब दुष्यंत ने शकुंतला से गंधर्वविवाह किया। इसने वापस आकर उसे योग्य कह कर उस विवाह की पुष्टि की (म. आ. ६४.६८; भा. ९.२०)। इसने दुर्योधन को मातलि की कथा बताया। यह बोधप्रद कथा सुन कर भी जब उसने एक न सुनी, तब इसने शाप दिया कि, तेरी जंघा फोड़ने से तेरी मृत्यु होगी (म. उ. ९५.१०३. कुं.)। काल की दृष्टि से यह कथा किसी अन्य कण्व की होगी।

यह गौतम के आश्रम में गया था। वहाँ की समृद्धि देख कर वैसी ही समृद्धि प्राप्त होवे, इसलिये इसने तपस्या की। गंगा तथा क्षुधा को प्रसन्न किया। उसने आयुष्य, द्रव्य, भुक्तिमुक्ति की मांग की। वह तथा उसके वंशज कभी क्षुधापीड़ित न हों, ऐसा वर मांगा। वह उसे मिला भी। जहाँ उसने तप किया था उस तीर्थ का नाम आगे चल कर कण्वतीर्थ पड़ा (ब्रह्म. ८५)। भरत के यज्ञ में यह मुख्य उपाध्याय था (म. आ. ६९.४८)। इसे भरत ने एक हजार पद्मभार शुद्ध जम्बूनद स्वर्ण (म. द्रो. परि. १.८. पंक्ति. ७५०-७५१) तथा एक हजार पद्म घोड़े (म. शां. २९.४०) दक्षिणा में दिये। भरत के यज्ञ के समय यह अथवा इसका पुत्र रहने की संभावना है। इसका पुत्र बाह्लीक (कण्व) था (ब्रह्म. १४८)।

३. कश्यप का पुत्र। कलियुग शुरू हो कर एक हजार वर्षों के बाद इसने भरतभूमि में जन्म लिया। उसकी पत्नी देवकन्या आर्यावती थी। उपाध्याय, दीक्षित, पाठक, शुक्ल, मिश्र अग्निहोत्री, द्विवेदी, त्रिवेदी, पांडव, चतुर्वेदी इसके पुत्रों के नाम हैं। कण्व ने अपनी संस्कृत वाणी से मिश्र देश के दस हजार म्लेच्छों को वश में किया। इन

बने हुए ग्लेच्छों के दो हजार वैद्यों में से कश्यप सेवक ऋषु को कण्व ने क्षत्रिय बना कर राजपुत्रनगर दिया (भवि. प्रति. ४.२१)।

कण्वायन—इसके दातृत्व के संबंध में कृश ने प्रशंसा की है (ऋ. ८.५५, ४)।

कन वैश्वामित्र—सूक्तद्रष्टा (ऋ ३. १७; १८)। कुशिक कुल का गोत्रकार तथा मंत्रकार था।

कति—विश्वामित्र का पुत्र।

कत्तृण—अंगिराकुल का गोत्रकार।

कथक—विश्वामित्र कुल का गोत्रकार।

कद्रु—एक पुरोहित। इंद्र ने इसका सोम पिया (ऋ. ८.४५, २६)।

कद्रू—दक्ष प्रजापति तथा असिक्नी की कन्या (म. आ. ६६; भा. ६.६)। यह बहुत सुंदर तथा गुणवती थी परंतु इसकी एक ही आंख थी (भवि. प्रति. १. ३२)। दक्ष ने कश्यप के साथ इसका व्याह कर दिया था। आगे चलकर इसने कश्यप से वर प्राप्त किया कि मेरे समान बल वाले सहस्र सर्प हों। उच्चैःश्रवा के रंग के संबंध से इसने अपनी सौत विनता से शर्त लगायी जिसमें कद्रु कहां था, कि उच्चैःश्रवा का रंग सफेद है पर पूंछ काली है। अपनी बात सत्य सिद्ध करने के लिए इसने अपने पुत्रों की सहायता मांगी, पर वे सहायता करने तैयार न हुए, तब इसने इन्हें शाप दिया कि तुम सब सर्पसत्र में भस्म होगे। दुष्ट सर्पों का नाश करने का यह अच्छा सुअवसर जानकर ब्रह्मदेव ने आकर इसके शाप की पुष्टि की (म. आ. १८)। तथा कहा कि उनका सापल बंधु उनका भक्षण करेगा। आगे चलकर उन्होंने नें उच्छ्राप मांगा तथा सहायता करने का वचन दिया। तदनुसार वे उच्चैःश्रवा की पूंछ में जा लगे (म. आ. १८)। इस तरह उच्चैःश्रवा की पूंछ काली है, ऐसा कद्रु ने विनता को दिखलाया। विनता शर्त में हार गयी। अतः कद्रु की वह १,००० वर्षों तक टासी रहे यह निश्चित हुआ। पांच सौ वर्षों के बाद गरुड ने अपनी माता विनता को टास से मुक्त किया (म. आ. १८; ३०; कश्यप देखिये)।

कद्रुशंकु—(सो. कुकुर.) वायुमत में उग्रसेनपुत्र।

कनक—(सो. सहस्र.) मत्स्यमतानुसार तुर्दमपुत्र तथा वायुमतानुसार तुर्दमपुत्र।

२. विप्रचिति तथा सिंहिका का पुत्र। इसे परशुराम ने मारा (ब्रह्माण्ड. ३.६.१९-२२)।

प्रा. च. १५]

कनकध्वज—(सो. कुकुर.) धृतराष्ट्र का पुत्र। यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.३)। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ९२.२६)।

कनकांगद वा कनकायु—(सो. कुकुर.) धृतराष्ट्रपुत्र।

कनकोद्भव—(सो. विदूरथ.) वायुमतानुसार हृदीक का पुत्र।

कनिष्ठ—भौत्य मन्वन्तर का देवगण।

कनीयक—(सो. विदूरथ.) मत्स्यमत में हृदीकपुत्र।

कंदली—दुर्वास की पत्नी।

कंधर—मदनिका देखिये।

कन्यक—कश्यपकुल का गोत्रकार।

कप—देवविशेष। पहले इसने स्वर्ग का अपहार किया था। तब ब्राह्मणों ने इंद्र का पक्ष ले कर इसका नाश किया (म. अनु. २६२.४ कुं.)।

कपट—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कपर—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कपर्देय—विश्वामित्रकुल का गोत्रकार।

कपालभरण—विंध्य पर्वत पर त्रिवक्रकन्या सुशीला को शुचि नामक ब्राह्मण से उत्पन्न पुत्र। इंद्र ने इसका वध किया। इसका वध करने के पश्चात् इंद्र ने सीतासरसतीर्थ में स्नान किया। इसके बाद इसका पुत्र दुर्मेघस गद्दी पर बैठा (स्कंद. ३.१.११)।

कपालिन्—कश्यप तथा सुरभि का पुत्र। एक व्रत।

कपि—तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. भृगु गोत्र का एक ऋषि तथा प्रवर (भृगु देखिये)।

३. (सो. पुरुरवस्.) विष्णुमतानुसार उरुक्षय का पुत्र तथा वायुमतानुसार उभक्षयपुत्र। यह क्षत्रिय होते हुए भी तप कर ब्राह्मण हुआ (वायु. ११. ११६)।

४. रैवत मन्वन्तर के मनु का एक पुत्र।

५. अंगिरस गोत्र का मंत्रकार।

कर्पिजल—वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार।

कपित्थक—कद्रुपुत्र एक सर्प।

कपिभू—अंगिराकुल का गोत्रकार।

कपिसुख—पराशरकुल का गोत्रकार। कपिश्रवस् पाट-भेद है।

कपिल—सांख्यशास्त्रज्ञ कपिल का निर्देश श्वेताश्वतर उपनिषद् में है (५.२)।

वास्तव में यहाँ कपिल का अर्थ हिरण्यगर्भ है।

एक अग्निविशेष। कर्म ऊर्क विश्वपति अग्नि तथा रोहिणी (हिरण्यकशिपुकन्या) का पुत्र। इसे सांख्यशास्त्र

प्रवर्तक कपिल कहा गया है। इसे अग्रयधिकार अर्थात् आहुति पहुँचाने का अधिकार है (म. व. २.११.२१)।

२. कर्म को देवहृति से उत्पन्न पुत्र। यह स्वायम्भुव मन्वंतर का अवतार है। कर्म ऋषि ने संन्यस्त होने का निश्चय किया। तब देवहृति ने पूछा, 'संसारचक्र से मेरी रक्षा कौन करेगा?' श्री हरि के वचन—'मैं तेरे घर जन्म लूँगा' स्मरण होने के कारण, कर्म ने कहा, 'श्रीहरि तुम्हारी कोख से जन्म लेंगे तथा वे तुम्हें ब्रह्मज्ञान दे कर संसारचक्र से मुक्त करेंगे। श्रीहरि की आराधना करो जिससे वे तुम्हारे उदर में आवेंगे।' तदनुसार उसने श्रीहरि की आराधना की, जिससे कपिल उत्पन्न हुआ। कपिल का जन्म सिद्धपुर में हुआ (दे. भा. ९.२१)। यह हमेशा विदुसर पर रहता था (भा. ३.२५.५)। ये दोनों स्थान समीप रहे होंगे।

कालांतर में देवहृति को इसने ब्रह्मज्ञान बताया तथा उसे संसारचक्र से मुक्त कर खुद पाताल में जा कर रहने लगा। वहाँ यह ध्यानस्थ था। उस समय अश्वमेध के अश्व को खोजते खोजते सगर-पुत्र वहाँ आये। यह सो रहा था ऐसा हरिवंश में दिया गया है। (ह. वं. १.१४-१५.)। यही चोर है, इसी ने हमारा अश्व चुराया है याँ समझ कर उन्होंने कपिल पर शस्त्रार्यों से प्रहार किया। तब कपिल ने क्रोधयुक्त दृष्टि से देख कर उन्हें भस्म कर दिया। इनमें से चार लोग जीवित रहे (सगर देखिये)। भागवत में दिया है कि, सब लोग भस्म हो गये (भा. ९.८.१०)।

व्यक्त्याव्यक्त तत्त्व पर आसुरि से इसका संभाषण हुआ था। जिसमें आसुरि पृच्छक था तथा कपिल निवेदिता था।

इसका शिष्य आसुरि। आसुरि का शिष्य पंचशिख (नारद. १.४५) था। पंचशिख कपिल का अवतार है याँ उसका सांख्यज्ञान के प्रभाव से लोगों को प्रतीत होता था (म. शां. २.११)। नारदपुराण में दो कपिल दिये गये हैं। उनमें से एक ब्रह्मा का (नारद. १.४५) तथा दूसरा विष्णु का अवतार था (नारद. १.४९)। आचार्यतर्पण में पंचशिखादि के साथ इसका उल्लेख है (मस्त्य. १२. ९८; कात्या. परि.)।

इनमें से कौन सा सांख्यशास्त्रज्ञ तथा कौन सा वेदांती था, यह समझ में नहीं आता। कपिल नामक किसी ऋषि ने स्युमरदिम से संवाद किया था। उनका संवाद कपिल के वेदविषयक कथन से शुरू हुआ। इसने यज्ञ

में भी गाय अवश्य है, इसी विषय पर वादविवाद किया (म. शां. २.६०)। भागवत में "सांख्यशास्त्र की रचना के लिये पंचम जन्म लोग ऐसा कहा तथा मेरे घर में जन्म लिया," इस वचन के कारण भागवत का कपिल सांख्यशास्त्रज्ञ रहा होगा तथा यह विष्णु का अवतार ही है (भा. १. ३. १०; ३. २४. ६९; विष्णु. २. १४)। सांख्यशास्त्रज्ञ कपिल की स्मृति ने निंदा की है, तथा श्रुति में एक कपिलमाहात्म्य वर्णित है (शे. उ. ५. २; ब्र. सू. २. १-१ शांकरभाष्य)। अर्थात् यह वेदांती कपिल रहा होगा। इसके वासुदेव (म. व. १.०३. २) तथा चक्रधनु (म. उ. १.०७. १७) नामांतर हैं। वासुदेव तथा चक्रधनु दोनों कपिल सगरपुत्र अर्थात् एक ही हैं। कामरूप देश में इसने कपिलेश्वर की स्थापना की (स्कंद. १. २. ४५)।

ब्रह्मदेव से वरदान प्राप्त कर रावण पश्चिम तट पर गया। वहाँ उसने एक तेजस्वी पुरुष देखा। रावण ने उसे युद्ध के लिये चुनौती दी। तब उस पुरुष ने रावण को एक तमाचा लगाया, जिसके कारण वह चक्कर खा कर धरती पर गिर पड़ा। तदनंतर वहाँ उसने एक सुंदर स्त्री देखी तथा उसकी अभिलाषा की। तब इस पुरुष ने यह जान कर उसकी ओर केवल देखा, जिससे रावण फिर धरती पर गिर पड़ा। रावण ने उठ कर उससे फिर पूछा, "आफ कौन हैं?" तब इसने बताया कि, मेरे हाथ से शीघ्र ही तेरी मृत्यु होगी। इससे यह पता चलता है कि, यह विष्णु का अवतार रहा होगा। राम के प्रश्न का उत्तर देते समय, वसिष्ठ ने बताया कि, यह पुरुष कपिल महर्षि है (वा. रा. उ. ५ प्रश्नित)।

वेनवध के पश्चात् इसी के कहने पर पृथु को उत्पन्न किया गया। पृथु ने कपिल को वत्स बना कर पृथ्वी को स्थिरस्थावर बनाया (भा. ४.१८-१९)। गौतमी-कपिलासंगम का माहात्म्य बताते समय, यह जानकारी दी गयी है (ब्रह्म. १.४१)। आगे चल कर सांख्य का तत्त्वज्ञान बताया गया है, परंतु वहाँ कपिल का नामोल्लेख भी नहीं है (ब्रह्म. २.३९; पंचशिख देखिये)।

इसके रचित ग्रंथः— १. सांख्यसूत्र, २. तत्त्वममास, ३. व्यासप्रभाकर, ४. कपिलगीता (वेदांतविषयक), ५. कपिलचक्रात्र, ६. कपिलसंहिता (उत्कलतीर्थमाहात्म्य ७. कपिलस्तोत्र, ८. कपिलस्मृति। वाग्भट्ट ने वैद्यविषयक ग्रंथरचयिता कह कर इसका उल्लेख किया है (C. C.)।

३. रुद्रगणों में से एक।

४. विश्वामित्र के पुत्रों में से एक।
५. दनु एवं कश्यप का पुत्र, एक दानव।
६. कटु तथा कश्यप का पुत्र, एक नाग।
७. ब्रह्मांडमतानुसार वसुदेव का सुगंधी से तथा वायु-मतानुसार वनराजी से उत्पन्न पुत्र। यह राज्य न कर विरक्त हो कर वन में चला गया।
८. विंध्य पर रहनेवाला एक वानर।
९. वेन का वध करनेवाले ऋषियों में से एक।
१०. (सो. नील.) भद्राश्व का पुत्र। अन्य पुराणों में कपिल्य ऐसा पाठभेद है।
११. शिवावतार दधिवहन का शिष्य।
१२. एक यक्ष। इसने स्वशाकंन्या केशिनी से यक्ष-राक्षस उत्पन्न किये। इल की नीला नामक कन्या थी (ब्रह्मांड. ३.७.१)।
१३. एक ब्राह्मण। एकादशी उपवास करने के कारण यह संपन्न हुआ (पञ्च. उ. ३०)।

कपिला—दक्ष एवं असिकनी की कन्या तथा कश्यप की स्त्री।

२. पंचशिल ऋषि की माता (नारद. १.४५; कबंधी देखिये)।

३. कश्यप तथा स्वशा की कन्या।

कपिलाश्व—(स. इ.) भागवत तथा विष्णुमत में कुवल्याश्वपुत्र। मरत्य तथा वायु मत में कुवल्याश्वपुत्र।

कपिलोम—कश्यप तथा स्वशा का पुत्र।

कपिवन भौवायन—एक आचार्य। (मै. सं. १. ४५; क. सं. ३.२.२)।

इसके नाम पर दो दिन चलनेवाला एक यज्ञ है (तां. ब्रा. २०.१३.४ का. श्रौ. २५, २-३; आश्व. श्रौ. १०.२)।

कपिश—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कपिश्रवस्—कपिसुल देखिये।

कपिष्ठल—वसिष्ठकुल का गोत्रकार ऋषिगण। यह कठ का एक भाग है। कपिष्ठलसंहिता उपलब्ध है। पाणिनि कपिष्ठलगोत्र निर्देश करता है (पा. सू. ८.३. ९१) (कठ देखिये)। यह कृष्ण यजुर्वेद की शाखा है।

कपीतर—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

कपोत—गरुड का पुत्र।

२. एक राजा। यह आहमजानी था।

कपोत नैर्ऋत—सूक्तद्रष्टा (क. १०.१६५)।

कपोतक—पातालस्थित नागराज का नाम (मार्क. ६८)।

कपोतरोमन्—(सो. कुकुर.) भागवतमतानुसार विलोमा पुत्र, विष्णुमतानुसार शृङ्गपुत्र, वायुमतानुसार धृतिपुत्र तथा मत्स्यमतानुसार वृष्टिपुत्र।

कबंध—दंडकारण्य का एक राक्षस। इसका सिर इसकी छाती में था। इस लिये इसे कबंध (शिरविरहित) नाम दिया गया। जटायुवध के बाद राम तथा लक्ष्मण, सीता की खोज में वन में घूम रहे थे। खोजते खोजते वे कौंचवन के पूर्व में तीन कोस दूर स्थित मातंग मुनि के आश्रम समीप पहुँचे। वहाँ उन्हें बहुत जोर की ध्वनि सुनाई पड़ी। यह ध्वनि कबंध राक्षस की थी। एक कोस की दूरी पर रह कर भी यह राम लक्ष्मणों को दिखा। जब यह भक्ष्य के लिये हाथ फैला रहा था, तब उस में राम-लक्ष्मण बकड़े गये। राम लक्ष्मणों के पास तरवारें थीं। राम को छूट जाने के लिये कह कर, लक्ष्मण स्वयं मरने के लिये तैयार हो गया। परंतु उठे धीरज दे कर राम ने रोका। अपने आप ही भक्ष्य उसके पास आया, इससे राक्षस को अत्यंत आनंद हुआ। उसने ऐसा कहा भी। परंतु लक्ष्मण, ने कहा कि, क्षत्रिय के लिये ऐसी मृत्यु अयोग्य है। तब राक्षस को क्रोध आया तथा वह इन्हें खाने के लिये प्रवृत्त हुआ। तब राम ने इसका बायाँ हाथ तोड़ दिया तथा लक्ष्मण ने इसका दाहिना हाथ तोड़ दिया। तब गतप्राण हो कर यह नीचे गिर पड़ा। तदनंतर इसके शरीर से एक दैर्घ्यमान पुरुष निकल कर आकाश में गया। तब राम ने पूछा कि तुम कौन हो। तब इसने कहा कि, “मैं विश्वावसु नामक गंधर्व हूँ। ब्राह्मण के शाप से यह राक्षसयोनि मुझे प्राप्त हुई थी। सीता का हरण रावण ने किया है। तुम सुग्रीव के पास जाओ। वह तुम्हें सहायता करेगा, वयों कि, सुग्रीव को रावण के मंदिर की जानकारी है।” इतना कह कर यह गुप्त हो गया (म. व. २६३; वा. रा. अर. ६९-७३)।

२. अट्टहास नामक शिवावतार का शिष्य।

३. व्यास के अथर्वन् शिष्यपरंपरा के वायु, विष्णु, ब्रह्मांड तथा भागवत मतानुसार सुमंतु का शिष्य।

कबंध आथर्वण—यह पतंचल काव्य की पत्नी के देह में संचार करता था। इसने पतंचल को कुछ अध्यात्मज्ञान बताया है (वृ. उ. ३.७)।

कबंधिन् कात्यायन—विष्णुवाद का ब्रह्मविद्या का शिष्य (प्र. उ. ११.३)।

कबंधी—पंचशिख ऋषि की माता (कपिला २. देखिये)।

कमठ—युधिष्ठिर की सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ४.१९)।

२. महीनगर के हारित नामक ब्राह्मण का पुत्र। वृद्ध ब्राह्मण का रूप ले कर सूर्य इसके पास आया तथा उसने कुछ प्रश्न पूछे। उसके इसने समर्पक उत्तर दिये। तब सूर्य ने इसे बताया कि, तेरा पिता स्मृतिकार होगा, इस स्थान का त्याग नहीं करेगा तथा यह स्थान जयादित्य नाम से प्रसिद्ध होगा (स्कन्द. १.२.५१)।

कमधू—विमड की पत्नी (ऋ. १०.६५.१२)।

कमला—बलभ भीम की पत्नी (गणेश. १.१९. ४०; दक्ष देखिये)।

कमलाक्ष—त्रिपुर का सुवर्णपुराधिपति असुर (लिंग. २.७१)। तारकासुर का पुत्र (म. क. २४.४)। रुद्र ने इसका वध किया।

कंपन—अंगद ने युद्ध में मारा हुआ लंका का राक्षस (वा. रा. यु. ७५)।

२. युधिष्ठिर की सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ४. १९)।

कंबल—कद्रुपुत्र। पाताल के नागों का अधिपति (भा. ५.२४)। यह अश्विन माह में त्वष्ट्र नामक सूर्य के साथ रहता है (भा. १२.११)। यह अश्वतर का भाई है (मार्क. २१.५०)।

कंबलवर्हिष—(सो. क्रोष्ट्र.) अंधक का कनिष्ठ पुत्र।

२. (सो. विदूरथ.) मत्स्य तथा वायु के मत में देवाहंपुत्र।

३. (सो. यदु.) मत्स्य तथा वायु के मत में मरुत्पुत्र। इसका पुत्र असमोजसु।

कयाधू—तारक के बम्भासुर नामक सेनापति की कन्या। इसका पति हिरण्यकशिपु। पहिली बार जब यह गर्भवती थी, तब हिरण्यकशिपु मंशर पर्वत पर तपश्चर्या करने के लिये गया था। यह मौका देख कर इन्द्र ने सब देवों का पराम्भ किया। इसके गर्भ का जन्म होते ही उसे मार सके, इस विचार से इंद्र कयाधू को ले कर जाने लगा। इतने में मार्ग में नारद मिला। उसने बताया कि इसके उदर में स्थित गर्भ भगवद्भक्त है। तब इंद्र ने इसे छोड़ दिया। बाद में नारद ने इसे आत्मबोध किया। वह इसके गर्भ ने उसे सुना तथा ध्यान में रखा। परंतु

यह स्वयं स्त्रीस्वभाव के अनुसार वह उपदेश भूल गई (भा. ६.१८; ७.७; हिरण्यकशिपु देखिये)।

कयोवधि—ऋतुपर्ण देखिये।

करकर्ष—(सो. क्रोष्ट्र.)। शिशुपाल के चार पुत्रों में से एक। इसका चेकितान यादव से अत्यंत स्नेह था। भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय राजा (म. द्रो. १९.२०)। इस के लिये करकाक्ष पाठ है।

करकायु—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

करजिह्व—कर्णजिह्व देखिये।

करंज—इंद्र का एक शत्रु (ऋ. १.५३.८; १०.४८. ८)।

करट—शकट देखिये।

करंड—कंडू देखिये।

करथ—भास्करसंहिता के सर्वधरतेज का कर्ता (ब्रह्मवै. २.१६)।

करंधम—(सो. तुर्वसु.) भागवतमत में त्रिभानुपुत्र, विष्णुमत में त्रिशांभुपुत्र, वायुमत में त्रिसारिपुत्र तथा मत्स्यमत में त्रिसानुपुत्र।

२. (सु. विष्ट.) भागवत तथा वायु के मतानुसार खनिनेत्र का पुत्र तथा विष्णु के मतानुसार अतिभूतिपुत्र। अवीक्षित राजा का पिता तथा मरुत् राजा का पितामह (म. अनु. १३०.१६)। इसका मूल नाम सुवर्चस् था। करंधम नाम प्रचलित होने का कारण यह है। एक बार अनेक राजाओं ने मिल कर इसे अत्यंत व्रस्त किया। तब इसने अपने हस्त कंपित कर के सेना उत्पन्न की तथा सब का पराम्भ किया (म. आश्व. ४.९-१६)। इसे कालभीति ने उपदेश किया था (स्कन्द १.२.४०-४२)। महाभारत में तथा मार्कंडेय में बलाश्व पाठभेद मिलता है (मार्क. ११८.८; २१.)।

करभाजन—ऋषभदेव के नौ सिद्धपुत्रों में से एक। यह योगी तथा ब्रह्मज्ञानी था। इसने विदेह के यज्ञ में ज्ञानोपदेश किया (भा. ५.४; ११.२)। इसकी माता जयंती।

करंभ—अगस्त्यकुल का एक गोत्रकार।

२. एक वनुपुत्र।

३. (सो. क्रोष्ट्र.) मत्स्य तथा वायु के मत में शकुनिपुत्र (करंभि देखिये)।

करंभक—(सो. विदूरथ.) मत्स्य के मत में हृदीकपुत्र।

करंभि—(सो. क्रोष्टु.) भागवत तथा विष्णु के मता-नुसार शकुनिपुत्र (करंभ देखिये)।

कररोमन् वा **करवीर**—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

कराल जनक—ब्राह्मण स्त्री की अभिलाषा के कारण इसका नाश हुआ (कौ. अ. पू. २२)। वसिष्ठ के साथ इसका क्षराक्षरलक्षण के संबंध में संवाद हुआ था (म. शां. २९१-२९६; ब्रह्म. २४०-२४४)। वंशावली में इसका नाम अप्राप्य है।

करिक्रत वातरशन—मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१३६.५)।

करोराशिन—विश्वामित्रकुल का गोत्रकार।

करीश—विश्वामित्रकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

करूष—वैश्वस्यत मनु के दस पुत्रों में से एक। इसकी संतति कारूपक नाम से प्रसिद्ध है। इसका आधिपत्य उत्तर की ओर था (मनु देखिये)।

२. यह दक्ष सावर्णि मन्वन्तराधिप था। इसने अपने भाइयों के साथे कालिदीतीर पर, वायुभक्षण कर के देवी की कडी तपश्चर्या की। इससे प्रसन्न हो कर देवी ने इसे वरदान दिया, कि तुम मन्वन्तराधिप बनोगे (दे. भा. १०.१३)।

करेणुमती—पंडुपुत्र नकुल की पत्नी। यह शिशुपाल की कन्या थी।

कर्कट—मर्यादा पर्वत पर रहनेवाला एक भील। इसे विष देने के लिये तत्पर पत्नी को इसने गोकर्ण-क्षेत्र में मार डाला। इससे वह मुक्त हो गई (पद्म. उ. २२२)।

कर्कटी—हिमालय की उत्तर दिशा में रहनेवाली एक सक्षसी। इसे विपूचिका तथा अन्यायवाधिका नाम है। इसने लोगों को मारने का वर प्राप्त किया। परंतु बाद में इसने वह काम छोड़ दिया। यह हिमालय में रहती है। वहाँ इसका नाम कंदरा देवी है। कंकडे के आकार के राक्षस की कन्या होने के कारण, इसे कर्कटी कहते हैं (यो. वा. ३.६८-८४)।

कर्कधु—इसका संरक्षण अश्विदेवों ने किया (ऋ. १. ११२.६)।

कर्कोटक—कद्रूपुत्र एक नाग। यह वरुण की सभा में रहता है (म. स. ९.९)। यह नागों के भोगवती नामक राजधानी में रहता है (म. उ. १०१.९)। नारद के शाप से जब यह दावाधि में फँस गया, तब नलराजा ने इसे बाहर निकाला था। इस उपकार के कारण इसने नल को दंड कर के ऐसा बनाया कि, उसे कलि से पीड़ा

न हो। उसी प्रकार वनवास समाप्त होने तक उसे कोई न पहचाने, इस उद्देश्य से विरूप भी बना दिया। 'सुरूप होने की इच्छा होते ही मेरे द्वारा दिये गये दो वस्त्र-परिधान कर लेना, याँ इसने नल को बताया (म. व. ६३)। कर्कोट नामक भारतवर्ष के विभाग के कर्कोटक लोगों को महाभारत में विधर्मी कहा गया है (म. क. ३. ४५)।

कर्ण—कुंती का सूर्य से उत्पन्न पुत्र (म. आ. १०४. ११)।

जन्मते ही कुंती ने इसे अथ नदी में छोड़ दिया (म. व. २९२. २२)। संवूक में यह बालक बहते बहते चर्मण्वती नदी में आया। वहाँ से यमुना तथा भागीरथी नदी में बहते समय, उसे धृतराष्ट्रसारथि अधिरथ ने देखा। इसे ले कर उसने अपनी पत्नी राधा को दिया। यह बालक देखते ही उसकी आँखों में आनन्दाश्रु आ गये। जन्मतः कर्ण पर कवच तथा कुंडल होने के कारण यह अब तक जीवित था। देवदत्त पुत्र मान कर राधा ने इसका भरणपोषण किया। यह तेजस्वी था, इसलिये राधा ने इसका नाम वसुदेव रखा (म. आ. ६४; ६८; १०४. १५. क. २१. १४)।

शिक्षा—इसका बाल्य काल अंगदेश में गया। द्रोणाचार्य ने इसे शस्त्रास्त्रविद्या सिखाई (म. शां. २. ५)। यह शस्त्रास्त्रविद्योद्यत था (म. आ. ६८; १०४. १६)। परीक्षा के मैदान में प्रविष्ट होने पर इसने द्रोण तथा कृप को नमस्कार किया, जिस में आदर के भाव नहीं थे (म. आ. १२६. ६)। इसने द्रोण से ब्रह्मास्त्र सिखाने के लिये केवल प्रार्थना की थी (म. शां. २. १०)। कृष्ण ने कहा है कि, यह सब वेद तथा शास्त्र जानता था (म. उ. १३८. ६-७)। कर्ण अर्जुन पर भी श्रेष्ठत्व प्राप्त कर सकता था, इसका दुर्योधन ने अनुभव किया था। जिस समय कौरवपांडवों में विरोध प्रारंभ हुआ था, तबसे इसे उतेजना दे कर, उसने अपने पक्ष में कर लिया था।

यद्यपि कर्ण ने द्रोण से धनुर्विद्या प्राप्त कर ली थी, तथापि उसे ब्रह्मास्त्रप्राप्ति नहीं हुई थी। इस एक ही कारण से अर्जुन इससे श्रेष्ठ हो गया था। तब इसने द्रोण से कहा, 'निष्पत्ति प्रकार तथा उपसंहार के साथ मुझे ब्रह्मास्त्र सिखाओ।' परंतु कुछ कारणवश द्रोण ने यह अमान्य कर दिया। परंतु अर्जुन से श्रेष्ठत्व प्राप्त करने की इसकी महत्त्वाकांक्षा होने के कारण, यह महेन्द्र पर्वत

निवासी परशुराम के पास गया। परशुराम क्षत्रियद्वेषा होने के कारण, वह क्षत्रियों को विद्या नहीं सिखाता था। स्वकार्य यशस्वी करने के लिये, कर्ण ने असत्य कथन किया एवं परशुराम को उसने बताया कि, वह भृगु-कुलोत्पन्न ब्राह्मण है, इसलिये शिष्य बन कर रहने की अनुमति परशुराम ने दी। उसने कर्ण को सप्रयोग एवं यथाविधि ब्रह्मास्त्र सिखाया।

एक दिन उपवास से श्रांत परशुराम कर्ण की गोद में सिर रख कर सोया था, तब एक कृमि ने आ कर उसकी जांघ काट खायी। रक्त स्पर्श से परशुराम जाग्रत हुआ। इतनी वेदनाएँ कोई ब्राह्मण शांति से सहन नहीं कर सकता, यह सोच कर कर्ण के बारे में परशुराम के मन में शंका उत्पन्न हुई। चाहे जो हो, यह अवश्य क्षत्रिय है। कर्ण ने सत्यकथन कर उसे संतुष्ट किया, तथापि इसे शाप मिला कि, बराबरी के योद्धा से युद्ध करते समय, तथा अंतिम समय इसे अस्त्र की स्फूर्ति न होगी, अन्य समय पर होगी। असत्यकथन के कारण, परशुराम ने कर्ण से जाने के लिये कहा, परंतु यह आशीर्वाद भी दिया कि, तुम्हारे समान दूसरा कोई भी क्षत्रिययोद्धा न होगा (म. शां. ३.३२)।

सोवत्सहत्या—एक बार धनुष्य बाण समवेत यह आश्रम के बाहर गया हुआ था, तब असावधानी से एक ब्राह्मणधेनु का बछड़ा इसके द्वारा मारा गया। तब उस ब्राह्मण ने इसे शाप दिया, 'युद्ध में भूमि तुम्हारे रथ का पहिया निगल लेगी तथा असावधान अवस्था में तुम्हारा शिरच्छेद होगा, '। इससे कर्ण को अत्यंत दुःख हुआ। इसने धन दे कर उःशाप मांगने का प्रयत्न किया, परंतु उसने इसका धिक्कार किया (म. क. २९; शां. २.२३-२९)।

अवहेलना—धृतराष्ट्र की अनुज्ञा से द्रोण ने कौरव पांडवों का शास्त्रास्त्रकौशल्य देखने के लिये रंगमंच तैयार किया। परंतु कर्ण ने कहा कि, अर्जुन के द्वारा दिखाये गये कौशल की अपेक्षा अधिक कौशल मैं दिखा सकता हूँ। तब कौरव पांडवों का झगड़ा हो कर, कर्ण ने अर्जुन को दंड युद्ध का आव्हान दिया। उस समय सब लोग आश्चर्य-मूढ़ हो कर, कर्ण की ओर देख रहे थे। परंतु दुर्दैव से कर्ण का जन्मवृत्त किसी को मादम न होने के कारण इसे यहाँ नीचा दिखना पड़ा। इसके अतिरिक्त कर्ण का पालनकर्ता पिता अधिरथ वहाँ आया तथा कर्ण ने उसे नमस्कार किया। तब सब लोक सृत्, सृत्पुत्र राधेय आदि कह कर इसकी अवहेलना करने लगे। इस समय कुंती की

परिस्थिति भय, आनंद एवं दुःखमिश्रित हो गई थी। पुत्रप्रेम से उसका हृदय भर आया। परंतु उसकी अवहेलना तथा पांडववैर देख कर उसे अत्यंत दुःख हुआ (म. आ. १२६)।

कृतज्ञता—कर्ण के राजपुत्र एवं क्षत्रिय न होने के कारण, यह अपमान उसे सहना पड़ता था। उस समय दुर्योधन ने कहा कि, शौर्य कुल पर निर्भर नहीं रहता। उसने कर्ण को अंगदेश का राज्य दे कर गौरवान्वित किया। इस उपकार के विनिमय की पृच्छा करने पर दुर्योधन ने कर्ण से मित्रत्व भाव कायम रखने की इच्छा प्रदर्शित की। इस प्रकार वात्स्यायना से इनमें अकृत्रिम मित्रत्व स्थापित हो कर इसने उसके लिये मृत्यु तक का स्वीकार किया (म. आ. १२६)।

जरासंधस्नेह—इसने महद्युद्ध कर के जरासंध का जोड़ ढीला कर दिया, इसलिये जरासंध ने इसे मालिनी-नगर दे कर इससे स्नेहसंपादन किया (म. शां. ५.६)।

विवाह—कर्ण ने काफी सूतकन्याओं से विवाह किये (म. उ. १३९.१०)। द्रौपदीस्वयंवर में यह मत्स्य-भेद के लिये आगे बढ़ा, तब द्रौपदी ने कहा, "मैं सूतपुत्र को नहीं वस्ँगी।" यह सुन कर इसे पीछे हटना पड़ा (म. आ. १७८. १८२७३)।

बुद्धिभेदयत्न—कौरव पांडवों के वैर के कारण निष्कारण कर्ण तथा पांडवों में वैर आया। यह देख कर कुंती को अत्यंत दुःख हुआ। उसने इसका समाधान कर के पांडवों की सहायता के लिये, इसे प्रवृत्त करने के लिये शिष्टाई के हेतु से कृष्ण को इसके पास भेजा। शिष्टाई के बाद कृष्ण कर्ण के पास गया तथा उसने कर्ण से उसका जन्म वृत्त बता कर कहा, कि तुम्हें सार्वभौम पद का लाभ होगा। पांडवों के समान शूर नररत्न तुम्हारी सेवा करेंगे। द्रौपदी तुम्हारी अधीनी बनेंगी। कौरवों द्वारा तुम्हारी हार नहीं होगी, तथा भविष्य में होनेवाला श्रेय भी टल जायेगा। सब कार्य ठीक से होगा। ऐसे कई प्रलोभन इसे दिखाये।

कर्ण ने उत्तर में कृष्ण से कहा कि, यद्यपि कुंती मेरी माता है एवं पांडव मेरे वंशु हैं यह कथन मुझे मान्य है, तथापि मुझे नदी में डोड कर, कुंती ने बड़ी भारी भूल की है। उसी के कारण मुझे अधिरथ के पास रहना पड़ा। मैं ने सूतकन्याओं से विवाह किये तथा उनसे मुझे पुत्रभौत्रादि भी हुए। इन कारणों से, एवं राधा के अनुपम एवं अकृत्रिम प्रेमपाश में मैं बद्ध हो गया हूँ। अब यह संबंध तोड़ना मेरे लिये असंभव है। इसके अतिरिक्त मैं

ने दुर्योधन को वचन दिया है कि, मैं उससे आभरण मित्रत्व रखूँगा। इस परिस्थिति के कारण पांडवों के पक्ष में आना मेरे लिये अनुचित है। यह सुन कर कृष्ण निरुत्तर हो गया (म. उ. १३९)।

भेंट—कुंती स्वयं कर्ण से मिलने गई, तथा पुत्र कह कर अपना परिचय उसे दिया। तब प्रथम वताये अनुसार सारा वृत्त कथन कर के, पांडवों का पक्ष लेना उसने साफ अमान्य कर दिया। परंतु कुंती के कथनानुसार वचन दिया कि, मैं केवल अर्जुन से युद्ध कर के उसका वध करूँगा, अन्य पांडवों को मैं हानि नहीं पहुँचाऊँगा। यह सुन कर कुंती वापस चली गई (म. उ. १४४)।

द्रोणवध के बाद कर्ण सेनापति हुआ। तब महासमर की आज्ञा मांगने के लिये कर्ण भीष्म के पास गया। उस समय भीष्म ने इसे इसका जन्मवृत्त कथन कर, युद्ध से परावृत्त करने का प्रयत्न किया। परंतु कर्ण ने उसकी बात न सुनी। इसी समय कर्ण ने भूतकाल में किये गये अपने कृत्यों के लिये, भीष्म से क्षमायाचना की (म. भी. ११७)।

गंधर्वयुद्ध—कौरव शोषयात्रा के लिये गये थे, तब कर्ण भी उनके साथ गया था। वहाँ चित्रसेन गंधर्व के साथ दुर्योधन का युद्ध हो कर उसमें प्रथम कर्ण ने गंधर्वों का पराभव किया। परंतु बाद में संपूर्ण सेना ने उसीपर आक्रमण किया एवं उसे ममरथ कर के विकर्ण के रथ में बैठ कर भागने के लिये मजबूर किया (म. व. २३१)।

विराटनगरी में—पांडव अज्ञातवासकाल में जब विराट के पास रहते थे, तब दुर्योधन ने विराट नगरी पर आक्रमण किया। कीचक की मृत्यु के कारण, उस समय विराट अत्यंत निर्बल हो गया था। दुर्योधन को कर्ण, संघातक, वीर सुधर्मा आदि की सहायता प्राप्त थी, फिर भी इस युद्ध में दुर्योधन का पूर्ण पराभव हुआ। इस युद्ध में कर्णाजुन का तुल्य युद्ध हुआ, जिस में कर्ण का पूर्ण पराभव हो कर उसके भाई शशुतेज का वध अर्जुन ने किया (म. वि. ५६)। यह लड़ाई उत्तरगोघ्रहण के नाम से प्रसिद्ध है। इसी युद्ध में विराट की एक लक्ष गौएँ सुधर्मा ने ले ली थीं (म. वि. ४९-५५)।

कृपाचार्य से सामना—कर्ण ने अर्जुन का पराभ्रम करने की प्रतिज्ञा की, परंतु कृपाचार्य ने उसका निषेध किया। कर्ण ने बदले में उसका उपहास किया तथा कृपाचार्य

तथा अश्वत्थामा को मर्मभेद्य भाषण से दुखाया। झगड़ा बहुत बुरी तरह हुआ था, परंतु ले दे कर दुर्योधन ने सब को समझाया (म. वि. ४३-४६)। इसने द्रुपदपुत्र प्रियदर्शन का वध किया था (म. आ. १९२, परि. १०३ पंक्ति. १३३)।

दिग्विजय—चित्रसेन गंधर्व से दुर्योधन की रक्षा पांडवों ने की इसका स्मरण दिला कर, भीष्म ने पांडवों के साथ मेल करने के लिये दुर्योधन से कहा। तब दुर्योधन केवल हँसा। अपना अजिंक्यत्व सिद्ध कर के भीष्मादिकों का मुँह हमेशा बंद करने के लिए, योग्य सुहूर्त देख कर, कर्ण दिग्विजय के लिये निकला। प्रथम द्रुपदनगर को घेरा डाल कर द्रुपद तथा उसके अनुयायियों को जीत कर, इसने उनसे कर लिया। तदनंतर यह उत्तर की ओर गया। प्रथम भगदत्त को जीत कर, हिमवान् पर्वतीय राजाओं को भी इसने जीता तथा करभार लिया। तदनंतर पूर्व की ओर नेयाल, अंग, वंग, कर्लिग, गुंडिक, मिथिल, मागध, कर्कसंड, आवशीर, योष्य, अहिक्षत्र, वत्सभूमि, मृत्तिकावती, मोहननगर, त्रिपुरी तथा कोसला नगरी जीत कर करभार लिया। अनंतर दक्षिण की ओर कुंडिनपूर के रुक्मी के साथ युद्ध किया। युद्ध में कर्णप्रभाव से संतुष्ट हो कर वह शरण में आया तथा कर्ण के साथ उसकी सहायता करने के लिये गया। पांडव, शैल, केरल तथा नील प्रदेश जीत कर, कर प्राप्त किया। तदनंतर शैशुपालि को जीत कर, पार्श्व तथा अवंती प्रदेश के सब राजाओं को जीता। बाद में कर्ण पश्चिम की ओर गया। वहाँ यवन तथा बर्बरो को जीत कर उसने कर लिया। इस प्रकार सब दिशाओं को जीतने के बाद, कर्ण ने म्लेच्छ, अरण्यवासी तथा पर्वतवासी राजा, भद्र, रोहितक, आश्रिय, मालव आदि का पराभव किया। तदनंतर शशक तथा यवनों का पराभव कर के, नमजित् प्रभृति महारथी नृपसमुदाय को जीता।

इस प्रकार संपूर्ण पृथ्वी पादाक्रान्त कर के, कर्ण हस्तिनापुर आया। वहाँ उसका उत्तम स्वागत हुआ। इस अपूर्व विजय के कारण दुर्योधनादि को लगा कि, युद्ध में कर्ण अवश्य ही पांडवों को पराजित कर देगा (म. व. २४१, परि. १. २४)। जब दुर्योधन ने स्वयंवर में कर्ण के चित्रांगद की कन्या का राजपुर से हरण किया तब कर्ण ने उस की रक्षा की (म. शां. ४)।

राज्यविस्तार—दुर्योधन की कृपा से कर्ण अंगदेश का राजा बन सका। उस देश की सीमाएँ निम्नलिखित हैं।

भागलपुर तथा उसके आसपास का मोगीर प्रदेश मिला कर अंगदेश बना था। भारत के अठारह राजकीय भागों में यह एक था। चेपा अथवा चेपापुरी उसकी राजधानी थी। इस राज्य की उत्तर मर्यादा का पश्चिम छोर गंगा तथा शरयू का संगम था। यह रामायण के रोमपाद का तथा भारत के कर्ण का राज्य था। रामायण में उल्लेख है कि, यहीं महादेव ने मदन को मारा। इसलिये इस देश को अंग तथा मदन को अमंग नाम मिला (वा. रा. वा. २३.१३-१४)। अंगदेश में वीरभूम तथा मुर्शिदाबाद जिले आते हैं। कुछ तर्कों के मतानुसार संताल परगना भी आता है। महाभारत में लिखा है कि, यह देश इन्द्रप्रस्थ के पूर्व की ओर दूरस्थित मगध देश के इस ओर है। राजसूय के दिग्विजय में भीम ने कर्ण का यहाँ पराजय किया (म. स. २७. १६-१७)। अंगदेश का नाम सर्वप्रथम अथर्ववेद में आया है (अ. वे. ५. १४)।

औदार्य—अंगराज कर्ण उस समय अत्यंत प्रसिद्ध धनुर्धर था। यह मानी हुई बात थी, कि भविष्य में यह कौरव पांडव युद्ध में अर्जुन के विरुद्ध लड़ेगा। इसलिये इन्द्र अत्यंत चिंतित हुआ। कुन्ती को अर्जुन इन्द्र से हुआ था। पुत्र का कल्याण करना उसका कर्तव्य था, अतएव कर्ण को हतबल करने के लिये उसके कवचकुंडल मांगने का विचार उसने किया। इन कवचकुंडलों के कारण कर्ण अजिबय एवं अमर था तथा कर्ण के द्वारा अर्जुनवध होना संभव था। परंतु कर्ण अत्यंत उदार होने के कारण, इन्द्र की इच्छा पूरी होना संभव था। जैसे अर्जुन की चिन्ता इन्द्र की थी, उसी प्रकार कर्ण की चिन्ता सूर्य की थी। इन्द्र का हेतु सूर्य को विदित था। इसलिये कर्ण के स्वप्न में आ कर सूर्य ने दर्शन दिया। सूर्य ने इसे कहा कि, इन्द्र ब्राह्मण वेष से आ कर तुम्हें कवचकुंडल माँगेगा परंतु तुम मत देना। कवचकुंडल अमृत से बने हुए हैं, इसलिये तुम अमर बन गये हो। कवचकुंडल दे कर तुम अपनी आयु का क्षय मत करो, तब कर्ण ने सूर्य को पहचान लिया। कर्ण ने कहा कि, आयु की अपेक्षा कीर्ति श्रेयस्कर है, तथा कीर्ति में ही उत्तम गति प्राप्त हो सकती है। मैं अमरत्व की आशा से कवचकुंडल की अभिलाषा नहीं रखूँगा। इस पर सूर्य ने कहा कि, अर्जुन का वध कर के जीवितवस्था में तुम कीर्ति प्राप्त कर सकते हो, अतएव कवचकुंडल देना अमान्य कर दो। परंतु कर्ण ने उसकी मंत्रणा अमान्य कर दी। यह सुन कर सूर्य को अत्यंत दुःख हुआ। उसने कहा, “तुम्हारे हित की

सलाह देता हूँ, फिर भी तुम नहीं मानते, तो कम से कम इन्द्र से एक शक्ति मांग लो।” कर्ण ने यह मान्य कर लिया तथा वह इन्द्र की प्रतीक्षा करने लगा (म. व. २८४-२९४)।

शक्तिप्राप्ति—एक दिन इन्द्र ब्राह्मणरूप में कर्ण के पास आया। उस समय कर्ण जप कर रहा था। उस समय इन्द्र ने उसके कवचकुंडल माँगे। कर्ण उदार था। किसी भी ब्राह्मण ने कुछ भी माँगा हो, उसे वह वस्तु अवश्य देता था। कर्ण ने तत्काल इन्द्र से हाँ कहा। यह कवच त्वचा से संलग्न होने के कारण, उसको निकालने समय त्वचा का छिल्ल जाना आवश्यकता थी। फिर भी कर्ण विचलित नहीं हुआ। उसने तत्काल उन्हें निकाल कर इन्द्र को दे दिया। तब इन्द्र अत्यंत आश्चर्यचकित हुआ तथा प्रसन्न हो कर उसने एक अमोघ शक्ति कर्ण को दी तथा कहा कि, जिस पर तुम यह शक्ति फेंकोगे, उसकी तत्काल मृत्यु हो जावेगी। इतना कह कर इन्द्र गुप्त हो गया। कवचकुंडलों का कर्तन कर देने के कारण, कर्ण को वैकर्तन नाम प्राप्त हुआ (म. आ. ६. ७)। कवचकुंडल छील कर निकालने के कारण कुरूपता प्राप्त न हो, इसके लिये कर्ण ने शर्त रखी थी (म. व. २९४. ३०)।

घटोत्कचवध—भारतीय युद्ध का प्रारंभ होने के बाद भीष्म के पश्चात् द्रोण कौरवों का सेनापति बना। उस समय घटोत्कच ने कौरवसेना को अत्यंत त्रस्त किया। कृष्ण के मन से, यद्यपि कर्ण के कवचकुंडलों का भय नष्ट हो चुका था, तथापि कर्ण की वासवी शक्ति से कृष्ण काफी सांशक था। उस शक्ति का नाश करने की इच्छा से ही, उसने उस दिन घटोत्कच की योजना की थी। घटोत्कच ने कौरवसेना के असंख्य सैनिकों का नाश कर उनको विस्कुल त्रस्त कर छोड़ा। तब दुर्योधन कर्ण के पास गया, तथा उस अमोघ शक्ति का प्रयोग घटोत्कच पर करने की प्रार्थना की। कर्ण ने वह अमोघ शक्ति खास अर्जुन के लिये रखी थी। यह बात उसने दुर्योधन को बताई। परंतु उससे कुछ लाभ न हुआ। अन्त में नाखुशी से वह शक्ति घटोत्कच पर छोड़ कर उसने उसका वध किया (म. द्रो. १५४)।

सैनापत्य—द्रोणाचार्य के शत्रु कर्ण को सैनापत्याभिषेक हुआ (म. क. ६. ४८-४९)। कर्ण के समान अद्वितीय योद्धा को, उतने ही अद्वितीय सारथि की आवश्यकता थी। इस समय केवल दो उत्तम सारथि थे। एक श्रीकृष्ण तथा दूसरा भद्र देशाधिपति शल्य। उनमें से कृष्ण अर्जुन

का सारथि था। तब दुर्योधन ने शल्य को कर्ण का सारथ्य करने के लिये कहा। इससे क्रोधित हो कर शल्य ने कहा कि, मैं युद्ध छोड़ कर चला जाऊँगा। वह कौरवों का ज्येष्ठ भ्राता तथा राजा था। कर्ण का जन्मवृत्त किसी को मालूम न होने के कारण, उसे सब सूतपुत्र कह कर ही जानते थे। इस लिये हीन कुलोत्पन्न का सारथ्यकर्म करना इसे अपमानास्पद प्रतीत हुआ। परंतु कर्ण के समान शल्य भी दुर्योधन के लिये तन-मन-धन खर्च करने वाला था। इसलिये यह कार्य भी उसने मान्य कर लिया। परंतु 'सारथ्य के समय उचित प्रतीत हो, सो मैं बोलूँगा तथा उसे कर्ण को सहना ही पड़ेगा, यों शर्त' इसने रखी (म. क. २३. ५३; २५. ६)।

कर्ण के सैन्यापत्य में घनघोर युद्ध शुरु हुआ। भीष्म, द्रोणादि के प्रहारों से पांडवों की जो आधी सेना बची थी, उन में से आधी इसने नष्ट कर दी। द्रौपदी की अप्रतिष्ठा के कारण, इसे मन ही मन काफी पश्चात्ताप हो रहा था। परंतु जिसका नमक खाया है, उसकी ईमानदारी से नौकरी करने के लिये, भीष्म द्रोणादिकों के समान इसे भी युद्ध के लिये सज्ज होना पड़ा। युद्ध के प्रारंभ में शल्य ने अपनी शर्त का काफी उपयोग कर लिया। हर प्रकार से अर्जुन का शौर्य तथा बल इनका वर्णन कर, उसने कहा कि, अर्जुन के समक्ष तुम टिक नहीं सकते। परंतु भयंकर युद्ध में मग्न होते हुए भी, इस प्रकार धैर्य गलित करने वाला भाषण सुन कर, कर्ण नहीं घबराया। इसने खरे खरे उत्तर दे कर उसे चुप कर दिया (म. क. २६-२७)। किंतु इसके पश्चात् शल्य ने इसे प्रोत्साहन दिया (म. क. ५७. ६२)।

मृत्यु—युद्ध चालू रहते समय, कर्ण का पुत्र वृषसेन मारा गया (म. क. ६२. ६०)। इससे इसे अपरिमित दुःख हुआ, तथा यह त्वेष से लड़ने लगा। इस प्रकार कर्णाजुन का घनघोर युद्ध प्रारंभ हो गया। उस समय पीछेवर्णित शाप के समान इसकी स्थिति होने लगी। ब्रह्मान्न का स्मरण यह न कर सका। इसके रथ का पहिया भूमि में फँस गया। तब लाचार हो कर यह रथ के नीचे उतरा, तथा पहिया उठाने का प्रयत्न करने लगा। इस प्रसंग में युद्ध असंभव था, अतः इसने अर्जुन को कुछ देर रुकने के लिये कहा। परंतु कृष्ण ने अर्जुन से कहा कि, केवल इसी स्थिति में कर्ण का वध होना संभव है, अन्यथा असंभव है। तदनंतर कर्ण के दृष्टान्त्यों का स्मरण दिला कर कृष्ण ने कहा कि, तुम्हारा वध

करना ही श्रेयस्कर है। इस प्रकार कर्ण बड़े ही संकट में फँस गया। इसने एक हाथ से पहिया उठाते ही, भूमि चार अंगुल ऊपर उठाई गई परंतु पहिया नहीं निकला। दूसरे हाथ से यह अर्जुन से लड़ रहा था। इस प्रकार व्यस्त अवस्था में अर्जुन ने इस का वध किया। इस युद्ध में धर्म, भीम तथा नकुल का परामर्श कर के, कर्ण ने उन्हें छोड़ दिया था (म. क. ६३. ६६-६७)।

परिवार—कर्ण की मृत्यु से गांधारी को अत्यंत दुःख हुआ (म. स्त्री. २१)। इसके छः पुत्र इस युद्ध में मारे गये। उनमें से सुबाहु तथा वृषसेन का वध अर्जुन ने, एवं सत्यसेन, चित्रसेन तथा सुषेण का वध नकुल ने किया (म. क. ६२-६३; श. ९)।

कर्ण के छः भाइयों का वध इस युद्ध में हुआ। उनमें से शत्रुञ्जय, शत्रुतप तथा विपाट का वध अर्जुन ने किया (म. वि. ४९; क. ३२)। एक का वध अभिमन्यु ने किया (म. द्रो. ४०. ४)। द्रुम तथा वृक्रथ का वध भीम ने किया (म. द्रो. १३०. २३. १३२. १८)।

अर्जुन ने कर्ण का वध किया, इस लिये धर्मराज ने अर्जुन को बधाई दी (म. क. ६९)। परंतु आगे चलकर कुंती ने बताया कि, कर्ण उसका पुत्र था (म. स्त्री. २७. ७-१२)। इससे पांडवों को अत्यंत दुःख हुआ। इसी समय धर्मराज ने शाप दिया कि, स्त्रियों के मन में कुछ भी गुप्त नहीं रहेगा (म. शां. ६. १०)। भविष्य-पुराण में लिखा है कि, कर्ण आगे चल कर तारक नाम से जन्म लेगा (भवि. प्रति. ३. १)।

२. कश्यपगोत्रीय ऋषि।

कर्णक—अत्रिकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि (अत्रि देखिये)। यह मंत्रकार था (मत्स्य. १४५. १०७-१०८)।

कर्णजिह्व—अत्रिगोत्रीय ऋषिगण।

कर्णवेष्ट—पांडवपक्षीय एक राजा (म. उ. ४. २०)।

कर्णश्रवस् आंगिरस्—सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १३. ११. १४-१५)।

कर्णश्रुत् वासिष्ठ—मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९. ९७. २२-२४)।

कर्णिका—एक अप्सरा।

२. (सो. वृष्णि.) वसुदेवबंधु कंक की पत्नी। इसे ऋतुधामन् तथा जय नामक पुत्र थे।

कर्णिकार—जटायु के पुत्रों में से एक।

कर्णिरथ—अत्रिकुल का एक गोत्रकार।

कर्म—एक ऋषि (ब्रह्माण्ड. २.३२. ९८-१००)। इसे कर्म भी कहते हैं (वायु. ५९. ९०-९१)। यह ब्रह्मदेव की छाया से उत्पन्न हुआ (भा. ३. १२; म. स. ११)। यह एक प्रजापति था (वायु. ६५. ५३-५४)। इसका जन्म स्वायंभुव मन्वन्तर में हुआ (भा. ३. १२. २७)। यह पूर्वजन्म में क्षत्रिय था। सौमिर ने इसे गणेशव्रत बताया था (गणेश. १. १५१)।

अवतारकथन—ब्रह्मदेव ने कर्म ऋषि से प्रजा उत्पन्न करने के लिये कहा। यह सरस्वती नदी के किनारे गया, तथा वहाँ दस हजार वर्षों तक इसने तपश्चर्या की। तब इसे विष्णु का दर्शन हुआ, तथा तुम्हारी इच्छा पूरी होगी, ऐसा उसने इसे बताया। विष्णु ने कहा “ब्रह्मदेव का पुत्र मनु सार्वभौम राजा है, तथा ब्रह्मावर्त में रह कर, सप्तसमुद्रांकित पृथ्वी का पालन करता है। वह धर्मश राजा अपनी शतरूपा नामक पटरानी के साथ परसो तक यहाँ आयेगा। उसकी उपवर कन्या देवहूति, योग्य पति के प्राप्ति की बात जोह रही है। वह तेरे अनुरूप है, इसलिये तू उससे विवाह कर। वह तेरी सेवा उत्तम रीति से करेगी। उसके गर्भ में तेरे वीर्य के साथ मैं प्रवेश कर अवतार लूँगा, तथा सांख्यशास्त्र निर्माण करूँगा”। इतना कह कर विष्णु चले गये।

प्रपंच—कालोपरांत मनु राजा अपनी राप्ती के साथ कर्म के यहाँ आया। उसने अपनी कन्या देवहूति बड़े ठाठ बाट के साथ कर्म को अर्पण की। कर्म ने विष्णु के कहने के अनुसार, देवहूति को स्वीकार किया। परंतु उससे एक वार ही समागम करूँगा यह शर्त रखी, तथा समागम के बाद संन्यास लूँगा यों चेतावनी दी। तदनुसार दोनों लोग कालक्रमण करने लगे। पतिव्रता देवहूति की सेवा से संतुष्ट हो कर कर्म ने उसे इच्छित वस्तु को मांगने को कहा। उसने संभोग की इच्छा प्रकट की। देवहूति की इच्छा मान कर इसने एक विमान तयार किया। उस विमान में समागम के ऐश्वर्ययुक्त साधन निर्माण किये, तथा लगातार सौ वर्षों तक देवहूति से समागम किया। तब देवहूति को कला, अनसूया, श्रद्धा, हविर्भू, गति, क्रिया, ख्याति, अरुंधती, शांति आदि नौ कन्याएं हुईं। ब्रह्माजी के कहने पर उन्हें क्रमशः मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, भृगु, वसिष्ठ, अथर्वा आदि को प्रजोत्पादन हेतु से दिया। देवहूति के उदर से विष्णु ने कपिल नाम से जन्म लिया।

बाद में एकान्त में कपिल को मिल कर, कर्म ने उसे नमस्कार किया। उसके बाद, संन्यास ले कर तथा वन में जा कर विष्णुध्यान से यह वैकुण्ठलोक गया (भा. ३. २१-२४)।

२. लक्ष्मीपुत्र।

कर्ममायन शाखेय—अत्रिकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

कर्मजित्—(मगध. भविष्य.) बृहत्सेन राजा का पुत्र। इसका पुत्र सृत्तजय।

कर्मश्रेष्ठ—स्वायंभुव मन्वन्तर में पुलह के तीन पुत्रों में ज्येष्ठ। इसकी माता का नाम गति (भा. ४.१)।

कर्मिन्—शुक्राचार्य के चार पुत्रों में से कनिष्ठ।

कल—सिंधुदैत्य का वहनोई (गणेश. २.११८)।

कलशपोतक—कद्रुपुत्र। एक सर्प (म. उ. १०१. ११)।

कलशीकंठ—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

कलहा—सौराष्ट्रनगरवासी भिक्षु नामक ब्राह्मण की पत्नी। इसकी आदत थी, पति के कहने के ठीक विपरीत कार्य करना। इसलिये, जो कार्य करना हो उसके ठीक विपरीत बोलने का नियम, उसके पति ने कर लिया था। उससे पति के सब कार्य उसकी इच्छानुसार पूर्ण हो जाते थे। एकवार मल्लती से श्राद्धपिंड गंगा में डालने के लिये उसने कहा। तब पति की आज्ञा के ठीक विपरीत करने के हेतु से इसने वह पिंड शौच्यकूप में फेंका। यों इसका दुष्ट स्वभाव था। इस कारण इसे पिशाच्ययोनि प्राप्त हुई। उससे धर्मदत्त ने इसका उद्धार किया (भा. रा. सार. ४)। करवीरस्थ धर्मदत्त ने द्वादशाक्षरी मंत्र, तथा कार्तिक-मास का आधा पुण्य दे कर इसे मुक्त किया। इस पुण्य से धर्मदत्त तथा कलहा अगले जन्म में दशरथ-कौसल्या वन कर, उनके उदर से राम का जन्म हुआ (पद्म. उ. १०६-१०७; चंडी देखिये)।

कला—कर्म प्रजापति तथा देवहूति की नौ कन्याओं में से प्रथम। मरीचि ऋषि की पत्नी। इसे कश्यप तथा पूर्णिमा नामक दो पुत्र थे (भा. ३.२४.२२)।

२. विभीषण की ज्येष्ठ कन्या। अशोकवन में बार-बार जा कर, राम के कुशल वृत्त का निवेदन, यह सीता के पास करती थी (वा. रा. सुं. ३७)।

कलाधर—यह विद्याधर था। दुर्वास द्वारा दिये गये शाप से मुक्त होने के लिये, इसने अरुणाचलेश्वर की प्रदक्षिणायें कीं (स्कंद. १.३.२.२३)। इसने एक बाण

पर त्रिपुर को नगर बांध दिया, तथा उससे शंकर के पास की चिन्तामणि की मूर्ति मँगाई (गणेश १.४१)।

कलापिन—कृष्णयजुर्वेद का एक शाखाप्रवर्तक। वैशंपायन का एक प्रमुख शिष्य। इसके चार शिष्य हरिद्रु, छगलिन्, तुम्बुरु तथा उलप। कलापि का चरण (शाखा) उदीच्य कहा जाता है। पाणिनि ने इस चरण का निर्देश किया है (पा. सू. ४.३.१०८) महामाष्य में हर ग्राम में कठकालाप है, ऐसा लिखा है।

कलाघती—नारद देखिये।

२. सत्यनारायण के प्रसाद का अपमान करने से क्या होता है, यह बताने के लिये सत्यनारायणमाहात्म्य में इसकी कथा दी गयी है।

कलि—एक वृद्ध ब्राह्मण। अश्विनो ने इसे तरुण बनाया (ऋ. १०.३९.८), तथा पत्नी वी (ऋ. १.११२.१५)।

२. अधर्म के वंश में क्रोध तथा हिंसा का पुत्र। इसे दुरुक्ति नामक बहन थी। इसे कली से भय नामक पुत्र तथा मृत्यु नामक कन्या ऐसे दो अपत्य हुए (भा. ४.८.३-४)। यह दमयंती स्वयंवर के लिये जा रहा था, तब मार्ग में इन्द्र ने बताया कि, स्वयंवर हो चुका है। इससे अत्यंत क्रोधित हो कर, इसने नल के शरीर में प्रवेश किया, तथा उससे झूतक्रीड़ा करवा कर अत्यंत पीड़ित किया। आगे चल कर, दमयंती के शाप से यह बाहर आया, तथा इसने कहा कि, मैंने तक्षक से व्रत हो कर तुम्हारे शरीर का आश्रय लिया था। तदनंतर इसने एक वृक्ष में प्रवेश किया। इसके अवतार से होनेवाले कलियुग का वर्णन मार्कंडेय ने युधिष्ठिर को बताया (म. व. ५५.५६; ७०.१८८)। इसे चतुर्भुजमिश्र टीका में तिष्य नामांतर दिया है (म. भी. १०.३)। भांडारकर की पुस्तक में पुष्य पाठ है (म. भी. १०.३)।

इसने वृषभरूप धर्म, तथा गोरूप पृथ्वी को व्रत करना प्रारंभ किया। यह देख कर, परीक्षित ने इसे निवास के लिये, दूत, मद्यपान स्त्रीसंग, हिंसा, सुवर्ण आदि पांच स्थान दिये। (भा. १.१७)। यह पूर्ण रूपक है। यह जाति से म्लेच्छ है। प्रयोत ने म्लेच्छों का संहार किया, तब यह नारायण के पास गया, तथा इसने नारायण की स्तुति की। इसने भगवान को बताया कि, प्रयोत तथा उसके भाई वेदवान ने, मेरा स्थान नष्ट कर दिया है।

३. कश्यप तथा मुनि के पुत्रों में से एक। इसका वरुधिनी नामक अप्सरा पर प्रेम था, परंतु उसने इसे धिक्कार दिया। उसके द्वारा धिक्कारे जाने के कारण, यह अत्यंत

दुखी रहता था। फिर भी यह उसका पीछा न छोड़ता था। एक बार एक मुनि पर वह मोहित हुई। परंतु उस मुनि ने उसका धिक्कार किया। यह संधि देवत कर, यह मुनिरूप से उसके पास आया, तथा यह शर्त रखी कि, क्रीडा के समय वह इसे न देखे। तदनंतर यह उससे रममाण हुआ। उससे इसे स्वरोवि नामक पुत्र हुआ (मार्क. ४९)। इसे अपनी भार्या से निर्मांष्टि नामक कन्या हुई (मार्क. ४८)।

कलि प्रागाथ—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.६६)।

कलिम्—(सो. अनु.)। बलि के छः पुत्रों में से एक। बलि की भार्या को यह दीर्घतमस से हुआ (अंग देखिये)।

२. यह द्रौपदीस्वयंवर में था (म. आ. १७७.१२)।

३. कृतयुग का एक दैत्य। इसने स्वर्ग जीत कर दिग्गालों के स्थान पर दैत्यों की स्थापना की। परंतु श्री-मातादेवी ने इसके हृदय पर पर्वत रखा, तथा उस पर वह स्वयं बैठी (स्कन्द. ७.३.२२)।

कलिल—सोम का पुत्र।

कलिक—कलियुग में बौद्धावतार के बाद होनेवाला अवतार। शंभल ग्रामनिवासी विष्णुयशस् नामक ब्राह्मण के घर में, दसवाँ अथवा ग्यारहवाँ अवतार इसका होगा। कलियुग में फैले हुए अधर्म का यह नाश करेगा। सब दैत्यरूप म्लेच्छों का यह पूर्णनाश करेगा। संपूर्ण पृथ्वी म्लेच्छमय होने के बाद, हाथ में लंबी तलवार ले कर, देवदत्त अश्व पर बैठ कर, तीन रात में यह दैत्यों का संहार करेगा। इस समय कई कोटि राजाओं का वध होगा। कलि की सजा तथा उसके नाश के लिये ही इसका अवतार होगा (म. व. १८८.८९; पद्म. उ. २५२; ब्रह्म. २१३.१६४; ह. वं. १.४१.६४; भा. १.३; २.७; १२.२)। इस अवतार के समय कृतयुग का प्रारंभ होगा (विष्णुधर्म. १.७४)। इस प्रकार अवतारकार्य समाप्त कर के, यह समाधिस्थ होगा (ब्रह्मैव. २.७)। उस समाधि से योगाग्नि का उद्भव होगा तथा प्रलय होगा। कलि बली के पास जायेगा। पुनः कर्मभूमि निर्माण हो कर, वर्णोत्पत्ति भी होगी। वैवस्वत मनु इसकी आशा से अयोध्या में राज्य करेगा (भवि. प्रति. ४.२६)। यह अदृश्य, पराशर गोत्री, ब्राह्मणसेनायुक्त, तथा याज्ञवल्क्य की सहायता से युक्त होगा (ब्रह्माण्ड. ३.७३.१०४; विष्णुयशस् देखिये)।

कल्प—(स्वा. उत्तान) श्रुव को भ्रमी से उत्पन्न पुत्र।

२. सैहिकेयों में से एक (विप्रचित्ति देखिये)।

३. (सो. यदु. वसु.) वसुदेव को उपदेवा से उत्पन्न पुत्र ।

कल्मष—वायु के द्वारा सूर्य की सेवा में नियुक्त एक पारिपार्श्वक (भवि. ब्राह्म. ५३) ।

कल्मषपावन—(सू.) भविष्य के मत् में सर्वकामपुत्र ।

कल्माष—कश्यप तथा क्रुद्र का पुत्र ।

२. सूर्य के द्वारपालों में से एक (भवि. ब्राह्म. ७६) ।

कल्माषपाद—(सू. इ.) सुदास राजा का पुत्र । इसे कोसलाधिपति मित्रसह अथवा सौदास ये नामांतर हैं (म. आ. १६८; वायु. ८८.१७६; लिङ्ग. १.६६; ब्रह्म. ८; ह. वं. १.१५) । परंतु इसे ऋतुपुत्र का पुत्र भी कहा है (मत्स्य. १२; अग्नि. २७३) । कल्माषपाद नाम से यह विशेष प्रख्यात था ।

नामप्राप्ति—यह नाम इसे प्राप्त होने का कारण यह था । एक बार जब यह मृगयाहेतु से अरण्य में गया था, तब इसने दो बाघ देखे । वे एक दूसरों के मित्र (वा. रा. उ. ६५), तथा भाई भाई थे (भा. ९.९) । रेवा तथा नर्मदा के किनारे शिकार करते समय, नर्मदा तट पर, इसने बाघ का एक मैथुनासक्त जोड़ा देखा । उन में से मादा को इसने मार डाला । परंतु मरते मरते वह बहुत बड़ी हो गई (नारद. १.९) । तब दूसरे बाघ ने राक्षसरूप धारण करके कहा कि, कभी न कभी मैं तुमसे बदला अवश्य चुकाऊंगा । यों कह कर वह गुप्त हो गया ।

वसिष्ठकोप—एक बार इसने अश्वमेध यज्ञ प्रारंभ किया । तब यज्ञ के निमित्त से, वसिष्ठ ऋषि लंबी अवधि तक इसके पास रहा । यज्ञसमाप्ति के दिन, एक बार वसिष्ठ स्नानसंध्या के लिये गया था । यह संधि देख कर उस राक्षस ने वसिष्ठ का रूप धारण कर लिया, तथा राजा से कहा कि, आज यज्ञ समाप्त हो गया है, इसलिये तुम मुझे जल्द मांसयुक्त भोजन दो । राजा ने आचारी लोगों को बुला कर, वैसा करने की आज्ञा दी । राजाज्ञा से आचारी घबरा गये । परंतु पुनः उसी राक्षस ने आचारी का रूप धारण कर, मानुष मांस तैय्यार कर के राजा को दिया । तदनंतर वह अन्न राजा ने पत्नी मद्रयंती सह गुरु वसिष्ठ को अर्पण किया । भोजनार्थ आया हुआ मांस मानुष है यह जान कर, वसिष्ठ अत्यंत क्रुद्ध हुआ तथा उसने राजा को नरमांसभक्षक राक्षस होने का शाप दिया । तब इसने कहा कि, आपने ही मुझे ऐसी आज्ञा दी । यह सुनते ही वसिष्ठ ने अन्तर्दृष्टि से देखा । तब उसे पता चला कि, यह उस राक्षस का दुष्कृत्य है । तदनंतर उसने

कहा कि, मेरा कथन असत्य नहीं हो सकता । तुम केवल बारह वर्षों तक नरमांसभक्षक रहोगे ।

संयम—यह सुन कर क्रुद्ध हो कर, इसने मुनी को शाप देने के लिये हाथ में पानी लिया । परंतु गुरु को शाप देना अयोग्य है, यों कह कर भार्या ने इसका निषेध किया । तब इसने सोचा कि, यह पानी यदि पृथ्वी पर पड़ेगा, तो अनाज आदि जल कर खाक हो जायेंगे, तथा आकाश की ओर डाला तो मेघ सूख जायेंगे । ऐसा न हो, इसलिये इसने वह पानी अपने पैरों पर डाला । इसके क्रोध से वह पानी इतना अधिक तप्त हो गया था कि, वह पानी पडते ही इसके पैर काले हो गये । तबसे इसे कल्माषपाद कहने लगे (वा. रा. उ. ६५; भा. ९. ९.१८-३५; नारद. १.८-९; पद्म. उ. १३२) ।

अन्यमत—महाभारतादि ग्रंथों में, इस के राक्षस होने के कारण भिन्न भिन्न दिये गये हैं । एक बार जब यह शिकार से वापस आ रहा था, तब एक अत्यंत सँकरे मार्ग पर वसिष्ठपुत्र शक्ति तथा इसकी मुलाकात हुई । मार्ग इतना सँकरा था कि, केवल एक ही व्यक्ति वहाँ से जा सकता था । इसने शक्ति को हटाने के लिये कहा, परंतु उसने अमान्य कर दिया । बल्कि वह राजा को बताने लगा कि, मार्ग ब्राह्मणों का है । धर्म यही है कि, राजा ब्राह्मण को मार्ग दे । अन्त में अत्यंत क्रोधित हो कर, इसने राक्षस के समान उस ब्राह्मण को चाबुक से खूब मारा । तब शक्ति ने कल्माषपाद को शाप दिया कि, तुम आज से नरभक्षक राक्षस बनोगे । यही राजा जब यज्ञ करने के लिए तैय्यार हुआ तब, विश्वामित्र ने इसका अंगिकार किया । इसी लिये वसिष्ठ तथा विश्वामित्र में वैरभाव निर्माण हुआ । विश्वामित्र ने इसे कहा कि, जिसे तुमने मारा वह वसिष्ठपुत्र शक्ति है । तब इसे अत्यंत दुःख हुआ । बाद में जब यह शक्ती के पास उच्छाप मांगने गया, तब विश्वामित्र ने इसके शरीर में रघिर नामक राक्षस को प्रवेश करने की आज्ञा दी (लिङ्ग. १.६४) । राक्षस के द्वारा व्रत, यह राजा एक दिन वन में घूम रहा था, तब क्षुधाक्रान्त ब्राह्मण ने इसे देखा । उस ब्राह्मण ने इसके पास मांसयुक्त भोजन की याचना की । उसे कुछ काल तक स्वस्थ रहने की आज्ञा दे कर यह घर आया, तथा अन्तःपुर में स्वस्थता से सो गया । मथ्यरात्रि के समय जब यह जागृत हुआ, तो इसे ब्राह्मण को दिये हुए वचन का स्मरण हुआ । तब इसने आचारी को मांसयुक्त भोजन बनाने की आज्ञा दी । वहाँ मांस विष्कूल न था । तब राजा ने कहा कि, अगर दूसरा

मांस नहीं है तो मनुष्यमांस ही बना दो। उसको भोजन दो बस। आचारी ने आशानुसार कार्य कर, वह अन्न उस तपस्वी ब्राह्मण को दिया। तब वह अन्न अमोज्य है, ऐसा जान कर उसने भी इसे नरमांसभक्षक राक्षस होने का शाप दिया। तीसरे दिन इन दोनों शापों से इसके शरीर में राक्षस का संचार हुआ। यह शापदान नौमिपारण्य में हुआ (वायु. १.२)।

असुरजीवन—आगे चल कर थोड़े ही दिनों में, इसकी शक्ति से मुल्यकात हुई। वंशावली की दृष्टि से यह गलत है (शतयातु देखिये)। तब इसने कहा, “चूँकि तुमने मुझे अयोम्यं शाप दिया है, मैं तुमसे ही मनुष्यभक्षण प्रारंभ करता हूँ।” यों कह कर इसने उसे खा डाला। आगे चल कर, इस राजा के शरीर में वसिष्ठ राक्षस को विश्वामित्र के नारवार उपदेश करने के कारण, इसने वसिष्ठ के सौ पुत्र भी खा डाले। वसिष्ठ ने पुत्रशोक से प्राण देने का काफी प्रयत्न किया, परंतु वह असफल रहा (म. आ. १६६-१६७; अनु. ३; ब्रह्माण्ड. १. १२)। एक बार यह नर्मदा के किनारे (नारद. १. ९), वन में घूम रहा था, तब इसने एक ब्राह्मण दंपती को क्रीड़ा में निमग्न देखा। उन्हें देखते ही, कल्पाषपाद ने दौड़ कर उनमें से ब्राह्मण का भक्षण कर लिया। तब क्रुद्ध हो कर ब्राह्मणी ने उसे शाप दिया कि, स्त्री समागम करते ही तुम मृत हो जाओगे। यों कह कर वह सती हो गई (म. आ. १८२; भा. ९. ९. १८-३५; स्कन्द. ३. ३. २)।

मुक्ति—वसिष्ठ ने इसे उश्शाप दिया कि, तुम राक्षस बनोगे तथा आगे चल कर तुम्हारे शरीर पर गंगाविदु पड़ेंगे, तब तुम मुक्त होगे। परंतु ब्राह्मणी ने उपरोक्त वर्णित शाप दे कर, तुम सदा राक्षस ही रहोगे ऐसा शाप दिया। इसको दूसरे शाप से क्रोध आया तथा इसने ब्राह्मणी को उलटा शाप दिया कि, पुत्रसमवेत तुम पिशाची बनो। आगे चल कर पिशाची तथा यह राक्षस एक स्थान पर आये, जहाँ पीपल था। वहाँ कल्पाषपाद तथा सोमदत्त नामक एक ब्रह्मराक्षस का गुरुविषयक संवाद हो कर उन दोनों के पाप नष्ट हो गये। उधर से एक गर्ग नामक कलिंगदेशीय मुनि गंगा ले कर जा रहा था। इनकी प्रार्थना से उसने इनके शरीर पर गंगोदक छिड़कते ही, वह पिशाची तथा ब्रह्मराक्षस दोनों मुक्त हो गये। यह शोक कर रहा था, तब आकाशवाणी हुई, “शोक मत करो। तुम भी मुक्त हो जाओगे।” वहाँ से यह काशी गया, तथा छः महीनों तक इसने गंगास्नान किया।

इससे सब पातकों से मुक्त हो कर, वसिष्ठ ने बड़े सम्मान से इसे राज्याभिषेक किया। गौतम ऋषी की अनुज्ञा से गोकर्ण क्षेत्र में जा कर यह मुक्त हुआ। अन्त में यह शिवलोक गया (स्कन्द. ३. ३. २; नारद. १. ८-९)। साभ्रमती में स्नान करके यह मुक्त हो गया (पद्म. उ. ६. १३२)।

राज्याभिषेक—इसकी पत्नी मद्यंती अरण्य में निरंतर इसके साथ रहती थी (म. आ. १७३.५-६)। यह दिन के छठवें प्रहर में आहार करता था। उस समय केवल वह सामने नहीं आती थी। एक बार अहिल्या के कथनानुसार गौतमशिष्य उत्तंक मद्यंती के कुंडल मंगिने आया। यह उसको खाने के लिये दौड़ा। परंतु उसने कहा, कि मेरा कार्य हो जाने दो, मैं वापस आ रहा हूँ। तब इसने पूछा कि तुम्हें क्या कार्य है, तथा कार्यपूर्ति के लिये इसने उत्तंक को मद्यंती के पास जाने के लिये कहा। मद्यंती ने पति से एक चिन्ह खाने के लिये कहा। वह चिन्ह इससे लाते ही मद्यंती ने कुंडल उत्तंक को दिये, तथा सम्हाल कर ले जाने के लिये कहा। जाते जाते कल्पाषपाद ने उत्तंक को प्रतिज्ञा से मुक्त कर दिया (म. आश्र. ५५-५६)। पतिव्रता के उपरोक्त शाप के कारण यह प्रजोत्पादन नहीं कर सकता था। तब इसने वसिष्ठ के द्वारा अपनी पत्नी मद्यंती में गर्भधारणा करवाई। वही अश्मक है (म. आ. ११३. २१-२२; १६८. २१-२५; शां. २२६. ३०; अनु. १३७. १८; वा. रा. सुं. २४; वायु. ८८. १७७)। इसे सर्वकर्मा नामक पुत्र था (मत्स्य. १२)। इसका वसिष्ठ के साथ गाय के माहात्म्य के बारे में संवाद हुआ था। इसने काफी गायें दान में दीं। मृत्यु के बाद इसे सद्गति मिली (म. अनु. ७८. ८०)।

कल्पाण—एक वैश्य। यह विंशुदेश में पालीग्राम में रहता था। इसकी पत्नी इंदुमति। पुत्र बल्लाल। अगले जन्म में यह दक्ष बना (गणेश १.२२)।

कल्याण आंगिरस—एक ऋषि। स्वर्गप्राप्ति के लिये सत्रानुष्ठान करने वाले अंगिरसों को, देवों की ओर जाने का देवयानमार्ग प्राप्त नहीं होता था। सत्रानुष्ठान करनेवाले उन ऋषियों में से कल्याण नामक यह ऋषि, इस देवयान के बारे में विचार करता हुआ उर्ध्वमार्ग से जा रहा था। राह में इसे अप्सराओं सह झूले पर बैठ कर क्रीड़ा कर रहा में इसे अप्सराओं सह झूले पर बैठ कर क्रीड़ा कर रहा उर्णायु नामक एक गंधर्व मिला। इस गंधर्व को जब इसने देवयान के बारे में पूछा, तब उसने देवयानमार्ग प्राप्त कर

देनेवाले एक साम का उपदेश इसे किया। तब कल्याण ने अंगिरसों को आ कर बताया कि, देवयानमार्ग प्राप्त कर देनेवाला साम मुझे प्राप्त हो गया है। वह मार्ग किस से प्राप्त हुआ यह बताना इसने अमान्य कर दिया। उस औणायुव नामक साम से अंगिरसों को स्वर्गप्राप्ति हुई। परंतु असत्यकथन के कारण कल्याण को स्वर्गप्राप्ति नहीं हुई, बल्कि कोढ़ हो गया। औणायुव साम नाम के बदले कही कही औणायुव साम नाम दिया है। यह भी एक अंगिरस ही था (पं. ब्रा. १२.११.१०-११)।

कल्याणिनी—धर नामक वधू की स्त्री। इसे द्रविण अथवा रमण नामक पुत्र था।

२. एक अप्सरा। भीमदादशीव्रत करने के कारण यह इन्द्रपत्नी शची बनी, तथा इसकी दासी ने जब यह व्रत किया तब वह कृष्णपत्नी सत्यभामा बनी (पद्म. सू. २३)।

कवचिन्—धृतराष्ट्रपुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. क. ६२.५)।

कवष—एक स्मृतिकार। कवषस्मृति का निर्देश पराशरस्मृतिव्याख्या में है (C. C.)

२. एक आचार्य। युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ में यह होता नामक ऋत्विज था (भा. १०.७४.७)।

कवष ऐलूष—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.३१-३३)। यह कुरुश्रवण का उपाध्याय था (ऋ. १०.३२.९)।

इलूषपुत्र कवष सरस्वती के किनारे अंगिरसों के सत्र में आया, तब शूद्रापुत्र, अब्राह्मण एवं जुआड़ी कह कर इसे यज्ञ के लिये अयोग्य घोषित किया। तथा जंगल में इसे छोड़ कर ऐसी व्यवस्था की गई कि, इसे पानी भी प्राप्त न हो। परंतु अपोनप्त्रीय सूक्त कहने के कारण, सरस्वती स्वयं इसकी ओर मुड़ गई। अभी भी उस स्थान को परिसारक नाम हैं। ऋषियों ने बाद में इसका महस्व जान कर इसे वापस बुलाया (ऐ. ब्रा. २.१९; सं. ब्रा. १२.१-३)। सांख्यायन ब्राह्मणों में यह अब्राह्मण था, इसीलिये इसे यज्ञ से निकाल दिया, ऐसा स्पष्ट लिखा है। तृप्तुओं के लिये इन्द्र ने कवषादिकों का पराभव किया तथा उनके मजबूत किले उध्वस्त कर दिये (ऋ. ७.१८.१२)। इसके सूक्त में कुरुश्रवण, उपमश्रवस् तथा मित्रातिथि का निर्देश है (ऋ. १०.३२-३३)। मित्रातिथि की मृत्यु से दुखी उपमश्रवस् का समाचार पूछने के लिये यह आया था।

कवषा—एक ऋषिपत्नी। तुर ऋषि की माता (तुर देखिये)।

कवि—स्वायंभुव मन्वन्तर के ब्रह्मपुत्र भृगु ऋषि के तीन पुत्रों में कनिष्ठ। इसका पुत्र उशनसऋषि। यह सूक्त-द्रष्टा था (ऋ. ९.४७-४९; ७५-७९ म. भा. ६०.४०)।

२. प्रियव्रत राजर्षि के बर्हिष्मति से उत्पन्न दस पुत्रों में कनिष्ठ। यह बाल्यावस्था से विरक्त था (भा. ५.१)।

३. तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

४. रैवत मनु के दस पुत्रों में से पाँचवा।

५. (स्वा. प्रिय.) भागवत मत में ऋषभदेव तथा जयंती के नौ सिद्धपुत्रों में ज्येष्ठ।

६. वैवस्वत मनु के दस पुत्रों में कनिष्ठ। यह विरक्त हो कर अरण्य में गया (भा. ९.२)।

७. भागवत मत में मनुवंशी यज्ञ तथा दक्षिणा का पुत्र।

८. वैवस्वत मन्वन्तर के ब्रह्मा का पुत्र। इसे वारुणि कवि ऐसी संज्ञा थी। इसके कवि, काव्य, धृष्णु, उशनस, भृगु, विरजस्, काशि तथा उग्र नामक आठ पुत्र थे (म. अनु. ८५.३३)।

९. ब्रह्मपुत्र वारुणि कवि के आठ पुत्रों में ज्येष्ठ (म. अनु. ८५.३३)।

१०. (सो. पूर.) दुरितक्षय का मँसला पुत्र। यह तप से ब्राह्मण हुआ (भा. ९.२१.१९)।

११. कौशिक ऋषि के सात पुत्रों में से एक (पितृ-वर्तिन् देखिये)।

१२. कृष्ण का कालिंदी से उत्पन्न पुत्र।

१३. कृष्ण का एक प्रभौत्र। यह महारथी था।

१४. स्वारोचिष मन्वन्तर का एक देव।

१५. शिव के श्वेत नामक दो अवतार हुए। उन में से दूसरे का शिष्य।

कविरथ—(सो. पूर. भविष्य.) भागवत मतानुसार चित्ररथ का पुत्र। मत्स्य में शुचिद्रव, वायु में शुचिद्रथ, तथा विष्णु में शुचिरथ, यों पाठभेद है।

कव्यवाह—पितरविशेष। ब्रह्मदेव की मानसकन्या संध्या को देख कर, दक्षादि मोहित हुए। उनके अंगों से निकले स्वेदविंदुओं से इनकी उत्पत्ति हुई। इन में सोमप, आज्यप, त्यकालीन आदि भेद हैं। ऋतु के पुत्र सोमप, वसिष्ठ के पुत्र खन्धावत् तथा पुलह्य के पुत्र आज्यप ये सब हविर्भागी हैं। नरक को इसने नारद की जानकारी बताई (दे. भा. ११.१५)। कव्य के माने पितरों को दिया गया अन्न। उसे पितरों तक पहुंचाने वाले को कव्यवाह कहते हैं (पितर देखिये)।

कशाय—एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

कश्यप चैद्य—ब्रह्मातिथि काण्व ने इसके औदार्य की प्रशंसा की है। इसने ब्रह्मातिथि को सौ ऊँट, दस हजार गायें तथा दस राजा सेवा करने के लिये दिये। यह इतना उदार था, कि, इससे दान प्राप्त कर फिर किसी के पास जाने की आवश्यकता नहीं रह जाती थी। इसका राज्य विस्तृत था (ऋ. ८.५.३७-३९)।

कशेरुमत—एक यवन। इसका कृष्ण ने बध किया (म. व. १२.२९; म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति. १५४६)। कशेरुक पाठ भी मिलता है।

कशोजू—संभवतः दिवोदास का नाम (ऋ. १.११२. १४)।

कश्यप—अग्नि का शिष्य। इसका शिष्य विभांडक (वं. ब्रा. २)। 'व्यायुषप्' मंत्र में आयुवृद्धि की प्रार्थना करते समय इसका निर्देश है (जै. उ. ब्रा. ४.३.१)।

गोत्रकार—इसके कुल के मंत्रकार आगे दिये गये हैं (हरित, शिल्प, नैधुव देखिये)। इसका एवं वसिष्ठ का निकट संबंध है (बृ. उ. २.२.४)।

कुल—इन्द्रियों का अधिष्ठान जो शरीर उसका पालन करनेवाला जीव ही कश्यप है (म. अनु. १४२)। यह ब्रह्मा का मानसपुत्र है। मरीचिपत्नी तथा कर्दम की कन्या कला को कश्यप तथा पूर्णिमा नामक दो पुत्र हुए। उनमें से कश्यप उद्येष्ठ है (भा. ४.१)। इसे तार्क्ष्य तथा अरिष्टनेमि नामान्तर थे। यह सप्तपत्नियों में से एक, उसी प्रकार प्रजापतियों में से भी एक था (म. अनु. १४१)। परंतु सप्तपत्नियों की सूची में कश्यप के बदले भृगु तथा मरीचि नाम भी प्राप्त हैं। स्वायंभुव तथा वैवस्वत मन्वन्तर के ब्रह्मपुत्र मरीचि वास्तवतः एक ही हैं। इसलिये दोनों समय के कश्यप भी एक ही हैं। इसे पूर्णिमा नामक सगा भाई था तथा छः सापत्न वंशु थे। इसकी सापत्न माता का नाम ऊर्णा था। अग्निध्वान्त नामक पितर भी इसके ही भाई थे। इसे मुरुषा नामक एक बहन भी थी, जो वैवस्वत मन्वन्तर के अंगिरा नामक ब्रह्मा के मानसपुत्र को दी थी (वायु. ६५.९८)।

क्षत्रियरक्षा—इकतीस बार पृथ्वी निःक्षत्रिय करने के पश्चात् परशुराम ने सरस्वती के किनारे अश्वमेध यज्ञ किया। उस समय कश्यप अश्वर्यु था। दक्षिणा के रूप में पृथ्वी कश्यप को दानरूप में प्राप्त हुई। अवशिष्ट क्षत्रियों का नाश न हो इस हेतु से, कश्यप ने परशुराम को अपनी सीमा के बाहर जा कर रहने के लिये कहा। इस कथनानुसार परशुराम समुद्रद्वारा उत्पन्न शूर्पारक देश

में जा कर रहा। महाभारत में इसे कांक्रण कहा गया है। बम्बई के पास सोभारा नामक एक ग्राम है, वही यह होगा (म. शां. ४९.५६-५९)। बाद में कश्यप ने पृथ्वी ब्राह्मणों को सौंप कर, स्वयं वन में रहने के लिये गया।

पुत्रप्राप्ति—कश्यप जत्र पुत्रच्छा से यज्ञ कर रहा था, तत्र देव ऋषि तथा गंधर्व सत्र ने उसे सहायता की। वालखिल्य इसी प्रकार सहायता कर रहे थे, तत्र इंद्र ने वालखिल्यों का अपमान किया। इससे वे अत्यंत क्रोधित हो गये। इस क्रोध से अपनी रक्षा करने के लिये इंद्र कश्यप के पास गया। तत्र बड़ी चतुराई से कश्यप ने वालखिल्यों को खुप किया। अनेक कृपाप्रसाद से इसे गरुड़ तथा अरुण नामक दो पुत्र हुए। नये इंद्र के लिये किया गया तप वालखिल्यों ने इसे दिया तथा इंद्र निर्भय हो गया।

सर्पों को शाप—तदन्तर विनता तथा कद्रू में उच्चैः-श्रवा के रंग के वारे में शर्त लगाई गई। यह शर्त जीतने के लिये कद्रू ने अपने पुत्र नागों की सहायता माँगी। परंतु नाग सहायता न करते थे, इसलिये उसने उन्हें शाप दिया कि, तुम जनमेजय के सत्र में मरोगे। इस शाप को पुष्टि दे कर दुष्ट सर्पों का नाश करने के हेतु से ब्रह्मदेव वहाँ आया, तथा उसने सर्पों का नाश होगा (म. आ. १८. ८-१०), इतना ही नहीं, उनका सापत्न वंशु गरुड़ भी उनका भक्षण करेगा, यों शाप दिया (पद्म. सू. ३१)। इस शाप से कश्यप को दुख होगा, यह सोच कर ब्रह्म ने इसे विषहारि-विद्या दी तथा इसकी सांत्वना की (म. आ. १८. ११)। उस विद्या का इसने उपयोग भी किया था (कश्यप देखिये)।

दैत्यसंहार—इन्द्रादि देवों का दैत्यों ने परामव किया, इसलिये वे कश्यप के पास शरण आये, तथा उन्होंने इसे सत्र कुछ बताया। तत्र यह काशी में शंकर के पास गया, तथा उसे दैत्यों का तप नष्ट करने के लिये कहा। तत्र शंकर ने इसकी पत्नी सुरभि के उदर में ग्यारह अवतार लिये तथा दैत्यों का नाश किया। यह अवतार अद्यापि आकाश में ईशान्य की ओर रहते हैं (शिव. शत. १८)।

तीर्थोत्पत्ति—कश्यप ने अशुंद पर्वत पर बड़ी तपश्चर्या की। उस समय दूसरे ऋषियों ने गंगा लाने के लिये इसकी प्रार्थना की। तत्र शंकर से प्रार्थना कर के कश्यप ने शंकर से गंगा प्राप्त की। उस स्थान पर कश्यपतीर्थ बना (पद्म. उ. १६४)। बाद में गंगा ले कर यह स्वस्थान में गया।

उस स्थान पर केशरप्रतीर्थ बना। कश्यपद्वारा गंगा लाई गई इस लिये उसे काश्यपी कहते हैं। उसे ही चारों युगों में अनुक्रम से कृतवती, गिरिकर्णिका, चंदना तथा साभ्रमती नाम हैं (पद्म. उ. १३५)।

विष्णुवाहन गरुड—यह तपश्चर्या चाहू थी, तब गरुड अपने पिता के पास आया तथा उसने कहा कि, एक अदृश्य शक्ति ने मुझे वाहन बनने के लिये कहा है तथा मैं ने वह मान्य भी किया है। कश्यप ने अन्तर्ज्ञान से जान कर कहा कि, तुम विष्णु के वाहन बने हो तथा अब तुम्हें उसकी ही आराधना करनी चाहिये। यों बता कर कश्यप ने उसे नारायणमहात्म्य का कथन किया।

पृथ्वीरक्षा—इतने में अंग राजा ने पृथ्वी का दान करने का निश्चय किया। इस लिये अपना शरीर त्याग कर पृथ्वी ब्रह्मदेव के पास गई। इससे उसका शरीर निर्जीव बन गया। तब योगशक्ति के द्वारा कश्यप अपने शरीर से बाहर निकल्य तथा पृथ्वी के शरीर में प्रविष्ट हो कर उसे सजीव बनाया। कुछ दिनों के बाद पृथ्वी वापस आई, तथा कश्यप को नमस्कार कर, अपने शरीर में प्रविष्ट हुई। इस प्रकार कश्यप की कन्या होने के कारण पृथ्वी को काश्यपी कहते हैं।

क्षत्रियाधिपति—आगे चल कर, दुष्टों की पीड़ा के कारन पृथ्वी डूबने लगी। तब कश्यप ने अपने ऊरु का आधार उसे दिया तथा उसे तारा। इस लिये उसे काश्यपी तथा ऊर्षी नाम प्राप्त हुए (म. शां. ४९.६३-६४)। उसने अपने लिये राजा मांग कर बहुत से क्षत्रियों का नाम सुझाया। तब कश्यप ने उन सब को अभिषेक किया।

पृथ्वीपर्यटन—एक बार कश्यपादि सप्तर्षि पृथ्वी पर घूम रहे थे। तब शिविपुत्र शैष्य उर्फ वृषादभि ने सप्तर्षियों को एक यज्ञ में अपना पुत्र दक्षिणास्वरूप में दिया। इतने में उस पुत्र की मृत्यु हो गई। तब उन क्षुधार्त ऋषियों ने उसके मांस को पकाने के लिये रखा। यह वृषादभि ने देखा, तथा उस अशोरी कृत्य से ऋषियों को परानृत्य करने के लिये, उनकी इच्छानुसार दान देने का निश्चय किया। किन्तु न तो वे दान लेने के लिये तैयार हुए, न मांस ही पका। इसलिये उसे छोड़ कर वे चले गये। आगे एक सरोवर में कमल थे। उन्हें खाने की इच्छा से, उन्होंने वहाँ की कृत्या यातुधानी की अनुमति से कमल तोड़ कर किनारे पर रखे। कुछ कारण से इन्द्र उन्हें चुरा कर ले गया। तदनंतर कश्यप तथा ऐल का

संवाद हुआ। उसमें ब्राह्मण का महत्त्व, पापपुण्यसूक्ष्मभेद तथा रुद्र ये विषय कश्यप ने समझाये।

परिसंवाद—ताश्च्यं मुनि का सरस्वती से संवाद हुआ था। उन दोनों में से श्रेष्ठ कौन, किन्तु कृत्य से व्यक्ति धर्मभ्रष्ट नहीं होता, अग्निहोत्र के नियम, सरस्वती कौन है, मोक्ष आदि विषय चर्चा के लिये थे। परंतु यह ताश्च्यं कश्यप ही था, यह नहीं कह सकते (म. व. १८.४)। तदनंतर कश्यप ने एक सिद्ध देखा। तथा उससे ज्ञानप्राप्ति के हेतु से बड़ी ही एकाग्रता से उसकी पूजा की। सिद्ध की आज्ञा से कश्यप ने प्रश्न पूछे। सिद्ध ने उसके उत्तर दिये तथा इसे संतुष्ट किया (म. आश्व. १७)। यह एक ऋषि था (वायु. ५९.९०; ब्रह्माण्ड. २.३२.९८-१००)। इसके शरीर से तिल उत्पन्न हुए (भवि. ब्रह्म. ७)। यह स्वरोचिष तथा वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक था। व्यास की पुराणशिष्य परंपरा के भागवतमतानुसार यह रोमहर्षण का शिष्य था (व्यास तथा आपस्तंब देखिये)।

ग्रंथ—कश्यप के नाम पर चरकसंहिता के काफ़ी पाठ हैं। भूतप्रेतादि पर भी इसके कुछ मंत्र हैं। इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ हैं— १. कश्यपसंहिता (वैद्यकीय) २. कश्यपोत्तरसंहिता, ३. कश्यपस्मृति, जिसका उल्लेख हेमाद्रि, विज्ञानेश्वर तथा माधवाचार्य ने किया है (C. C.) ४. कश्यपसिद्धांत (नारदसंहिता में इसका उल्लेख आया है)।

परिवार—कश्यप को बत्सार तथा असित नामक दो पुत्र थे। बत्सार को निश्रुव तथा रैभ नामक दो पुत्र हुए। निश्रुव को सुमेधा से अनेक कुंडपायिन हुए। रैभ से रैभ्य उत्पन्न हुए। इसी प्रकार की वंशावली अन्यत्र भी प्राप्त है (ब्रह्माण्ड. ३.८.२९-३३; वायु ७०.२४-२५; लिंग. १.६३; कर्म. १.१९)।

कश्यप की स्त्रियाँ—अदिति, अरिष्टा, इरा, कद्रू, कपिला, कालका, काला, काष्ठा, क्रोधवशा, क्रोधा, खशा, प्रावा, ताम्रा, तिमि, दनु, दनायु, दया, दिति, धनु, नायु, पतंगी, पुलोमा, प्राधा, प्रोवा, मुनि, यामिनी, वसिष्ठा, विनता, विश्वा, सरमा, सिंही, सिंहिका, सुनेत्रा, सुपर्णा, सुरभि, सुरसा, सूर्य। यथार्थमें कश्यप को तेरह स्त्रियाँ थीं। बाकी नाम तो पाठान्तर से आये हैं, तथा संततिसादृश्य के कारण, बाकी सब एक ही माद्वम होती हैं। भागवत तथा विष्णु मतानुसार इसे किसी समय अरिष्टनेमि नामक चार स्त्रियाँ ब्रतायी गयीं हैं। ये सब दक्ष कन्यायें थीं। पृथ्वीमा तथा कालका वैश्वानर की कन्यायें हैं।

अरिष्टपुत्र—आदित्य बारह हैं। अंश (अंश, अंशुमन्, विधातु), अर्यमन् (यम), इंद्र (शक्र), उरुक्रम (विष्णु), स्वप्ना, धातु, पूषन्, भग, मित्र, वरुण (परंजय), विवस्वन् (मार्ताण्ड), सविन् (तै. आ. १. १३)।

अरिष्टापुत्र—अतिवाहु, आचार, ज्योतिषम, तुंबुरु, गरुण; पूर्णः, पूर्णाश (पूर्णासुः), ब्रह्मिन् (ब्रह्मिन्), ब्रह्मचारिनः, भागु, मय्य, रतिगुण (शतरुण), वरुथः, वरेण्य, वसुरुचि, विश्वावसुः, सिद्ध, सुचंद्रः, सुगणः, सुरचिः, हंस, हाहा, हूह, आदि गंधर्व अरिष्टा के पुत्र थे। इनमें से ताराकिला लोग क्रोधा के पुत्र हैं, ऐसा उल्लेख ब्रह्माण्ड में आता है।

अरिष्टाकन्या—अनवदेश, अरुणाः, अरुणा, अलंबुषाः, असुरा, केशिनीः, तिलोत्तमा, मासी, मनु, मनोरमा, मार्गणप्रियाः, मिश्रकेशी, रक्षिताः, रंभा, वंशा, विद्युत्कर्णाः, सुप्रिया, सुवाहु, सुभगा, सुरजाः, सुरता। इनमें से ताराकित ऋषिय मुनि की कन्याएं हैं, ऐसा उल्लेख ब्रह्माण्ड में दिया गया है।

इरा को वृक्षादि पुत्र हुए।

कद्रूपुत्र—अकर्कर, अकर्ण, अक्रूर, अनंत, अनील, अपराजित, अंबरीष, अलिपिंडक, अश्वतर, आपूरण, आत, आर्यक, उग्रक, एलापत्र, एरावत, कपिल्यक, कपिल, कंचल, करोरमन्, करवीर, ककर, कर्कोटक, कर्दम, कलपपोतक, कल्पाप, कालिय, कालीयक, कुंजर, कुटर, कुंडोदर, कुमुद, कुमुदाक्ष, कुलिक, कुहंर, कर्म, कर्मांडक, कोरग्य, कौण-पाशन, क्षेमक, गंधर्व, ज्योतिक, तक्षक, तित्तिरि, दधिमुख, दुर्मूल, धनंजय, धृतराष्ट्र, नहुष, नाग, निष्ठानक, नील, पतंत्रलि, पद्म (संबर्तक), पाणिन, पिंगल, पिंजर (पिंजरक), पिंटरक, पिंडक, पिंडारक, पुष्पदंष्ट्र, पूर्णभद्र, प्रमाकर, प्रह्लाद, दलाहक, बहुमूलक, बहुल, बाह्यकर्ण, विल्वक, विल्वशांडुर, ब्राह्मण, सुजंभम, मणि, मणिस्थक, महाकर्ण, महानील, महापद्म, महापत्र, महाशंख, महोदर, मुद्गर, मूपरुद, वामन, वालिशिल, वासुकि, विमलपिंडक, विरजस्, वृत्त, शंकरोमन्, शंख, शंख्याद, शंखवाल, शंखपिंड, शंखमुख, शंखरोमन्, शंखशिरस्, शबल, शालिपिंड, शुभानन, शेष, श्रीवह, स्वैत, सुवाहु, सुमन, सुमुख, सनामुख, हरिद्रक, हल्लक, हस्तिकर्ण, हस्तिपद, हस्तिपिंड, हेमगुह।

कपिला को अमृत, ब्राह्मण, गंधर्व, अप्सरा, नंदिन्यादि गायें तथा दो खुरवाले प्राणी हुए।

कालका को कालकेय ऊर्फ कालकंज ये पुत्र हुए।

कालपुत्र—क्रोध, क्रोधशत्रु, क्रोधहंतु, विनाशन।

काष्ठा को अश्वदि एक खुरवाले प्राणी हुए।

क्रोधवशा की कन्याएं—इरावतीः, कर्पशाः, तियाः, दंष्ट्रा, मद्रमनाः, भूता, मातंगीः, मृगमंशः, मृगीः, रिपा, शार्दूलीः, श्वेताः, सरमाः, सुरसा, हरिः, हरिमद्राः। क्रोधवशा की ये कन्याएं पुलह की भार्या थीं। इनके सिवा, क्रोधवशा को क्रूर जलचर पक्षी, दंष्ट्राकादि सर्प तथा क्रोधवशा नाम के राक्षस हुए। इन में से क्रोधवशा मुख्य है (अरिष्टा देखिये)।

खशा को अकंपन, अश्व, उपस्य, कपिलोमन्, कथन, चंद्राकंभीकर, तुंडकोश, चिनाभ, त्रिशिरस्, दुर्मय, धूम्रित, निशाचर, पीडापर, प्रहासक, बुध्न, बृहविज्रह, भीम, मधु, मातंग, लार्थव, वक्राक्ष, विस्फूर्जन, विलोहित, शतदंष्ट्र, सुमालि आदि पुत्र तथा आलेशा, उत्कचो-कृष्ठा, कपिला, केशिनी, निक्कता, महाभागा, शिवा आदि कन्याएं हुईं। ये सब यक्ष, राक्षस, मुनि तथा अप्सराएं हैं।

ग्रावा को श्रापद हुए।

ताम्रा को अरुणा, उलकी, काकी, कौंची, एधिक्रा (युष्ठी), धृतराष्ट्रीका (धृतराष्ट्री), मासी, शुकी, सुवी, श्येनी, सुग्रीवी, तथा गायें, भैंस कन्यारूप में हुईं।

तिमि को जलचरण हुए।

दसुपुत्र—अजक, अप्र, अनुपायन, अशिरस्, अयोमुख, अरिष्ट, अरुण, अश्व, अश्वग्रीव, अश्वपति, अश्वशंकु, अश्वशिरस्, असिलोमन्, अहर, आमहासुर, इंद्रजित्, इंद्रतापन, इरागर्भशिरस्, इयुवात, उर्णनाभ, एकचक्र, एकाक्ष, कपट, कपिल, कपिवा, कालनाभ, कुपथ, कुंभनाभ, कुंभमान, केतु, केतुवीर्य, केशिन्, गनमूर्धन्, गविष्ठ, गवेष्टिन, चंद्रमस्, चूर्णनाभ, जभ, तारक, तुहुंड, दीर्घजिह्व, दुदुभि, दुर्जय, देवजित्, द्विमूर्धन्, धूम्रकेश, धृतराष्ट्र, नुमुचि, नरक, निचंद्र, पुंढंड, पुलोमन्, प्रमद, प्रलंब, वलक, बलाढ्य, बाण, त्रिदु, भद्र, भुशिन, मध, मधवत, मद्र, मय, मरीचि, महागिरि, महानाभ, महाबल, महानाहु, महामाय, महाशिरस्, महासुर, महोदक, महोदर, माराचि, मूलकोदर, मेघवत्, रसिप, वज्रनाथ, वज्राक्ष, वनासु, वातापि, वामन, विकुभ, विक्रांत, विशोभ, विशोभण, विद्रावण, विवाद, विप्रचित्ति, विभावसु, विभु, विराध, विरुपाक्ष, वीर, वीर्यवत्, वृक, वृषपन्नन्, वैमृग, वैश्वानर, वैसुप, शकुनि, शंकर, शंक्रुर्ण, शंक्रुशिरस्, शंक्रुशिरोधर, शट, शतग्रीव, शतमाय, शतहृद, शंक्रुय,

शत-हाद, शतव्हय, शंवर, शरम, शालम, सत्यजित्, सप्तजित्, सुकेतु, सुकेश, सुपथ, सूक्ष्म, सूर्य, हयग्रीव, हर, हिरण्य, हिरण्यकशिपु।

दनाशु को बल, विश्वर, वीर, वृत्रादि उत्पन्न पुत्र हुए।
दया को पर्वत हुए।

दिति को मरुत् (उनपचास), वज्रांग, सिंहिका, हिरण्यकशिपु, हिरण्याक्ष आदि पुत्र हुए। पद्मपुराण में दैत्यों सा कृत्य करने वाला प्रत्येक व्यक्ति दितिपुत्र माना गया है (बल तथा वृत्र देखिये)।

धनु-विष्णुधर्मोत्तर में धनु का नामांतर है। इसका पुत्र रजि (१.१०६)।

पतंगी को पक्षी हुए।

पुलोमा को पौलोम हुए। पौलोम तथा कालकेय मिल कर साठ हजार वा चहत्तर हजार थे, जिन्हें निवातकवच कहते थे।

प्राधा—अरिष्टा की संतति देखिये।

प्रोवा—इसे संतति नहीं थी।

मुनिपुत्र—मुनि को अर्कपर्णी, उग्रसेन, कलि, गोदति (गोमत्), चित्ररथ, घृतराष्ट्र, नारद, पर्जन्य, प्रयुत, भीम, भीमसेन, वरुण, शालिशिख, सत्यवाच् (सर्वजित्), सुरर्ण, सूर्यवर्चस् नामक सोलह गंधर्व, तथा अजगंधा, अनपाया, आंसता, असिपर्णिनी, अद्रिका, क्षेमा, पुंडरीका, मनोभवा मारीचि, लक्ष्मणा, वरंवर, विमनुष्या, शुचिका, सुदती, सुप्रिया, सुवाहु, सुभुजा, सुरसा तथा अन्य छै (अरिष्टा देखिये), इस तरह कुल चौबीस अप्सरायें हुईं। वसिष्ठा यह नाम मुनि का नामांतर होगा।

यामिनी को टिड्डिया हुए।

चिन्ता को अरिष्टनेमि, अरुण, आरुणि, गरुड, तार्क्ष्य, वारुणि नामक पुत्र, एवं सौदामिनी नामक कन्या हुई। अरिष्टनेमि तथा तार्क्ष्य गरुड के नामांतर होने का उल्लेख मिलता है।

विशा को करोड़ो यक्ष तथा राक्षस हुए।

सरमा को वनचर हुए।

सिंहि ऊर्फ सिंहिका को चंद्रप्रमर्दन, चंद्रहर्तु, राहु तथा सुचंद्र पुत्र हुए।

सुरभि को अंगारक, अज (अजपाद), अहिबुध्न्य (हिबुध्न्य), ईश्वर, ऊर्ध्वकेतु, एकपाद, कपाल (कपालि) चंड, ज्वर, निर्कृति, पिंगल, भल, भीम, भुवन, मृत्यु, विरूपाक्ष, विलोहित, वृषभ (महादेव का नंदी), शंभु,

शास्त्र, सदसस्वति, सर्प नामक पुत्र हुए तथा गांधारी (गांधर्वी) एवं रोहिणी ये कन्याए हुई (शिव. शत. १८)।

सुरसा को याज्ञुषानादि राक्षस तथा १००० सर्प हुए।

सूर्या को यमधर्म हुआ।

कश्यप को अरुंधती, नारद, पर्वत (वायु. ७०.७१; लिङ्ग १.६३.७२-८०.) तथा मनसा ये मानसपुत्र तथा कन्याएं थी (विष्णु. १.१५ मत्स्य. ६; स्कन्द. १.२.१४; ३.२.८; वायु. ६७.४३; ह. वं. १.३; ब्रह्मांड. ३.३)। अरिष्टापुत्र केवल ब्रह्माण्ड तथा महाभारत में दिये हैं। सुरभिपुत्र वायु तथा शिवपुराण में दिये हैं। मुनिपुत्र तथा क्रोधापुत्र ब्रह्मांड, महाभारत में दिये हैं। कद्रुपुत्र वायु, स्कन्द तथा भागवत में नहीं हैं। दत्तपुत्र स्कन्द तथा वायु में नहीं हैं। उपरोक्त आदित्य स्कंद में नहीं हैं (आदित्य देखिये)।

गोत्रकार—अग्निधर्मायण (ग), अधच्छायामय (ग), आश्रा प्रासेव्य (ग), आजिहायन (ग), आश्रायणि, आश्रवालयनिन (ग), आश्रवातायन, आसुरायण (ग), उदग्रज (ग), उद्वलायन (ग), कन्यक (ग), काल्यायन (ग), कार्तिकेय, काश्यपेय (ग), काष्ठाहारिण, कौबेरक (ग), कौरिष्ठ (ग), गोमयान (ग), ज्ञानसंश्लेष (ग), दाक्षायण, देवयान (ग), निकृतज (ग), पैलमौलि, प्राशायण (ग), प्राचेय, बार्हि, भवनंदिन्, भ्यु (ग), भोज (ग), भोतपायन (भीमपायन, ग), महाचक्रि, माटार (ग), मार्तण्डिन (ग), मारीच (ग), मृगय (ग), मेघ किरीटकायन (ग), मेघा (ग) (ग), योगगदायन (ग), योधयान (ग), वात्स्यायन (ग), वैकर्णेय (वैकर्णिक, ग), वैवशय, शक्रय (शाक्रायण ग), शालहलेय (ग) दयाकार (ग), द्युःभोदर, श्रोतन (श्रुतयं), सासिसाहारितायन (ग), हस्तिदान (ग), हास्तिक (ग), ये सब कश्यप, मिश्रुव, तथा वत्सर इन त्रिप्रवरों के हैं।

अनस्य, काद्रुपिंगाक्षि (काद्रुपिंगासि), दिवावष्ट (दिवावस, दिवावसिष्ठ ग), नाकुरय, यामुनि (सामुक्ति), राजवर्तप (राजवल्लभ), रौपसेवकि (रौपसेवकि), शैशिरोदवहि, सजातवि, सैरंश्री (सैरंशि), स्नातप ये भी द्विगोत्री हो कर कश्यप, वत्सर तथा वसिष्ठ इन तीन प्रवरों के हैं।

उत्तर, कर्दम, काश्यप, कुलह, केरल, कैरात, गर्दभी-सुख, गोमिल, जलेश्वर, दानव, देवजाति, नभ, निशव, पिप्पल्य, पूय, वैष्पलादि, भस्त्र्य, भुजातपूर, मसृण, मृगकेतु,

वृषकंड, शंखिल्य, संयाति, हिरण्यवाहु ये असित, कश्यप तथा देवल इन त्रिप्रवरों के हैं (मत्स्य. १९९)।

कश्यपगोत्री संतकार—असित, कश्यप, देवल, निध्रुव (नैध्रुव), रैभ्य, तथा वत्सार। वायु में 'विश्वम' तथा मत्स्य में 'नित्य' अधिक है (ब्रह्माण्ड. २.३२. ११२-११३; मत्स्य. १४५.१०६-१०७; वायु. ५९.१०२-१०३)। ये ब्रह्मवेत्ता थे।

ऋग्वेद में वत्सार के लिये अवत्सार, नैध्रुव के लिये निध्रुवि, इसके अतिरिक्त भूतांश, रेम तथा वित्रि ये कश्यप माने गये हैं।

कश्यप नैध्रुवि—एक आचार्य (बृ. उ. ६.५.३)।

कश्यप भारीच—ऋग्वेदमंत्रद्रष्टा (ऋ. १. ९९; ८. २९; ९.६४; ६७.४-६; ९१-९२; ११३-११४)।

कषाय—एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

कहोड वा कहोल कौपीतकेय—एक ऋषि। व्रीहि, यवादि नये अनाज वृष्टि से उत्पन्न होने के कारण, पहले देवताओं के लिये आग्रयण (अर्थात् अन्न का याम) कर भक्षण करना चाहिये, यह रीति इसने आरंभ की। आश्वलायनगृह्यसूत्र में ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में इसका नाम है। इसका कौपीतकेय नामान्तर भी मिलता है (बृ. उ. ३.५.१)। यह याज्ञवल्क्य का समकालीन था (श. ऋ. २.३.५१; सां. आ. १५; काहाडी देखिये)।

यह उद्दालक ऋषि का शिष्य था। इसने गुरुगृह में रह कर गुरु की उत्तम प्रकार से सेवा की, इसलिये गुरु ने प्रसन्न हो कर इसे अपनी कन्या सुजाता ब्याह दी। उसे ले कर इसने गृहस्थाश्रम में प्रवेश किया। सुजाता गर्भवती हुई। एक बार यह अध्ययन कर रहा था, तब सुजाता के गर्भ ने इसे अध्ययन न करने के लिये कहा। तब क्रोधित होकर इसने उस गर्भ को शाप दिया कि, तुम आठ स्थानों पर वक्र बनोगे। कुछ काल के बाद इसे अष्टावक्र नामक पुत्र हुआ। आगे चल कर, एकवार जब यह द्रव्ययाचना के लिये जनक राजा के पास गया, तब वरुणपुत्र बंदी ने अनेक ऋषियों को वाद में जीत कर पानी में डुबा दिया (म. व. १३४)। उस में यह भी डूब गया। वहाँ से इसके पुत्र ने, बंदी को वाद में जीत कर वापस लया (म. व. १३४-३१)। यह एक मध्यमाध्वर्यु है।

काकवर्ण—(शिशु, भविष्य.) इसका पुत्र क्षेत्रधर्मन्।

काकी—कश्यप तथा ताम्रा के कन्याओं में से एक।

२. स्कन्द के शरीर से उत्पन्न मातृकाओं में से एक।

काकुत्स्थ—अनेनसू का पैतृक नाम।

काकेयस्थ—कृष्णपराशर कुल का एक गोत्रकार। इसके लिये काकेय पाठभेद है।

काक्षसेनि—अभिप्रतारिन् का पैतृक नाम (द्वि एन्द्रोत देखिये)।

काक्षीवत—दीर्घतमसू देखिये।

कांकायन—एक ऋषि। शांत्युदक करते समय कौनसा मंत्र लिया जावे, इसके संबंध में इसका मत है (कौ. सू. ९.१०)।

काचापि—कारकि देखिये।

कांचन—च्यवन भागव का नामांतर (वा. रा. उ. ६६.१७)।

२. (सो. पुरुरवसू.) भागवत तथा विष्णु पुराण के मतानुसार यह भीमपुत्र है। वायु के मतानुसार भी भीमपुत्र ही है, परंतु वहाँ इसे कांचनप्रभ कहा गया है।

कांचनमालिनी—एक अप्सरा। प्रयाग में माघस्तान करने से यह मुक्त हुई (पद्म. उ. १२७)।

काट्य—अंगिरस कुल का गोत्रकार तथा प्रवर।

काठेविद्धि—एक आचार्य (वं. ब्रा. २)

कांडमायन—विसर्गसंधि आवश्यक है, यां मत रखने-वाला आचार्य (तै. प्रा. ९.१)।

कांडशय—पराशरकुल का एक गोत्रकार।

कांडायन—एक व्याकरणकार। पदपाठ में प्लुत अनुनासिक होता है, यह बतानेवाला, ऐसा इसका उल्लेख शांखायन के साथ आया है (तै. प्रा. १५.७)।

कांड्वि—एक उद्गाता (जै. उ. ब्रा. ३.१०.२; जनश्रुत, नगरिन् तथा सायक देखिये)।

काण्व—स्वरविषयक मत बतानेवाला आचार्य (शु. प्रा. १.१२३; १४.९)।

२. वसिष्ठगोत्री ऋषिगण।

३. वायु के मत में, व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा का याज्ञवल्क्य की शाखा में से एक (व्यास देखिये)।

(आयु, इरिंविठ, कण्व, कुचुति, कुवीदिन्, कृषि, त्रिशोक, दवातिथि, नाभाक, नारद, नीपातिथि, पर्वत, पुनर्वत्स, पुष्टिगु, पृष्य, प्रगाथ, प्रक्तण्व, ब्रह्मातिथि, मातरिश्वन्, मेधातिथि, मेध्व, मेध्यातिथि, वत्स, शशकर्म, श्रुष्टिगु, सध्वंस, सुपर्ण, सोभरि, तथा सौश्रवस काण्व देखिये)।

काण्वायन—अंगिराकुल का एक गोत्रकार। कृदा ने काण्वायन के लिये प्रार्थना की है (ऋ. ८. ५५. ४)।

पुरुकुल से निकला हुआ एक ब्राह्मणकुल (अश्वसूक्तिन् तथा गोसूक्तिन् देखिये)।

काण्वीपुत्र—कार्पापुत्र का शिष्य (बृ. ६.५.१)।

काण्व्यायन—एक आचार्य।

कात्थक्य—अर्थविषयक विचार करनेवाला एक आचार्य (नि. ८. ५; ६; ९. ४१)।

कात्य—उत्कल कात्य देखिये।

कात्यायन—एक आचार्य। इसके १. कात्य, २. कात्यायन, ३. पुनर्वसु, ४. मेधाजित् तथा ५. वररुचि, ऐसे नामान्तर त्रिकाण्डकोश में दिये गये हैं।

याज्ञवल्क्य का पौत्र तथा कात्यायनपुत्र वररुचि, अष्टाध्यायी का वार्तिककार होने की संभावना है।

आंगिरस, कश्यप, कौशिक, द्यामुष्यायण तथा भार्गव गोत्र में भी कात्यायन हैं।

महामाध्य इसके वार्तिकों पर ही लिखा हुआ ग्रंथ है।

इसके ग्रंथ—१. श्रौतसूत्र, २. इष्टिपद्धति, ३. कर्मप्रदीप, ४. गृह्यपरिशिष्ट, ५. त्रिकाण्डकसूत्र, ६. श्राद्धकल्पसूत्र, ७. पशुबंधसूत्र, ८. प्रतिहारसूत्र, ९. भ्राजश्लोक, १०. रुद्रविधान, ११. वार्तिकपाठ, १२. कात्यायनी शांति, १३. कात्यायनीशिक्षा, १४. स्नानविधिसूत्र, १५. कात्यायनकारिका, १६. कात्यायनप्रयोग, १७. कात्यायन-वेद प्राति, १८. कात्यायनशाखाभाष्य, १९. कात्यायन स्मृति (इसका उल्लेख याज्ञवल्क्य, हेमाद्रि, विज्ञानेश्वर आदि ने किया है), २०. कात्यायनोपनिषद् (C. C.), २१. कात्यायनगृह्यकारिका, २२. वृषोत्सर्गादिपद्धति, २३. आतुरसंन्यासविधि, २४. मूल्याध्याय, २५. गृह्यसूत्र, २६. शुक्रयजुःप्रातिशाख्य। इसके साधारणतः छः हजार वार्तिक हैं। वार्तिक की व्याख्या— इस प्रकार है 'सूत्रेऽनुक्तदुरुक्तचित्ताकरत्वं वार्तिकत्वम् (नागेशः), वा उक्तानुक्तदुरुक्तानां चिंता यत्र प्रवर्तते, तं ग्रंथ वार्तिकं प्राहुर्वार्तिकज्ञा मनीषिणः (भाषा)';।

वार्तिक—कात्यायन एक व्याकरणकार था। इसने ऐन्द्रशाखा का पुरस्कार किया था। इसके मतानुसार उणादिसूत्र पाणिनिवृत्त हैं। इन सूत्रों का इसने विशदीकरण किया तथा बाद में इसे ही उणादिसूत्रों का कर्ता कहने लगे (धिमल सरस्वती कृत 'रूपमाला', दुर्गासिंहकृत काव्य का 'कृत्' प्रकरण)। कात्यायन ने मुख्यतः पाणिनि के करीब करीब १५०० सूत्रों पर वार्तिक लिखे। वार्तिक के लिये इसे पाणिनि की परिभाषा का उपयोग करना पड़ा, तथापि इसने अच्, हल्, अक्, आदि पाणिनीय पारि-

भाषिक शब्दों के लिये स्वर, व्यंजन आदि शब्दों का उपयोग किया है। इससे, तथा कथासरित्सागर के यह ऐन्द्रशाखा का पुरस्कर्ता होने के उल्लेख से प्रतीत होता है कि, कात्यायन पाणिनि की अपेक्षा भिन्न शाखा का पुरस्कर्ता था। वार्तिकों का मुख्य उद्देश्य पाणिनि के सूत्रों का विशदीकरण कर, उन्हें समझने के लिये सरल बनाना है। इसने वाजसनेयी प्रातिशाख्य नामक दूसरा ग्रंथ लिखा है। कात्यायन के पहले भी काफी वार्तिककार हो गये हैं। उनमें से शाकटायन, शाकल्य, वाजप्यायन, व्याडि, पौष्करसादि का इसने उल्लेख किया है।

कथासरित्सागर की तथा से प्रतीत होता है कि, कात्यायन पाणिनि का समकालीन होगा। परंतु उपरोक्त जानकारी से पता चलता है कि, पाणिनि तथा इसमें काफी अंतर होना चाहिये। कथासरित्सागर में इसका संबंध नन्द से आया है। इससे कात्यायन का काल अनुमानतः ख्रि. पूर्व. ५००—३५० तक किया जा सकता है। पतञ्जलि ने इसे दक्षिणात्य कहा है (प्रियतद्धिता दक्षिणात्याः, ८)। इसकी एक स्मृति व्यंकटेश्वर प्रेस द्वारा दिये हुए स्मृतिसमुच्चय में है। वह २९ अध्यायों की है, तथा उसमें यज्ञोपवीतविधि, संध्योपासना, अंत्यविधि, आदि विषयों का विवेचन है।

इसकी जानकारी निबंधग्रंथ में दिये गये इसके उद्धरण से प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त शंखलिखित, याज्ञवल्क्य (१.४-५) तथा पराशर ने धर्मशास्त्रकार कह कर इसका निर्देश किया है। बौधायनधर्मसूत्र में कात्यायन का उल्लेख है (१.२.४७)। व्यवहार के बारे में लिखते समय, इसने नारद तथा बृहस्पति के मतों को माध्य समझा है। परिभाषा आदि भी यों ही स्वीकार किया है। इसने स्त्रीधन के अनेक प्रकार सोचे हैं, तथा स्त्रियों के अधिकार भी लिखे हैं। व्यवहार के बारे में इसके ६०० श्लोक स्मृतिचन्द्रिका में आये हैं। इसने मनु के नामपर दिये उल्लेख मनुस्मृति में नहीं मिलते। भृशु के मतों के संबंध में भी ऐसा ही है। इसके श्रौतसूत्र पाणिनि के पहले रचे गये होंगे, परंतु इसकी स्मृति इ. ४००-६०० तक बनी होगी।

कात्यायन ने त्रयोदश श्लोकों से युक्त कात्यायनशिक्षा रची। उसपर जयतस्वामी ने टीका लिखी। इसके नामपर स्वरभक्तिलक्षणपरिशिष्टशिक्षा नामक एक और शिक्षा है। यह शुक्लयजुर्वेद की ही शिक्षा है। परंतु प्रारंभ में काफी संशय आदि ऋक्संप्रातिशाख्य के अनुसार है।

उसमें ब्यालीस श्लोक हैं। उसमें विशेष कर के स्वरभक्ति का ही विचार किया गया है (पारस्कर तथा वररुचि देखिये)।

२. राम के अष्ट धर्मशास्त्रियों में एक।

३. कर्णधन् देखिये।

४. विश्वामित्र पुत्र कति का पुत्र।

कात्यायनि—दश कात्यायनि आश्रय देखिये।

कात्यायनी—याज्ञवल्क्य की दो स्त्रियों में से एक। याज्ञवल्क्य का संसारत्याग का विचार पक्का होने के बाद, प्रपंचविषयक वस्तुओं का, मैत्रेयी तथा कात्यायनी में समान विभाजक करने को उसने कहा। परंतु मैत्रेयी अध्यात्म-ज्ञान में पारंगत होने के कारण प्रापंचिक वस्तुएं कात्यायनी के पास रही (बृ. उ. २.४.१; ४.५.१)।

कात्यायनीपुत्र—गौतमीपुत्र तथा कौशिकीपुत्र का शिष्य। इसके शिष्य पाराशरीपुत्र तथा पौत्तिमाषीपुत्र थे (बृ. उ. ६.५.१)। जातुकर्ण्य नामक एक कात्यायनी-पुत्र का आचार्य कह कर निर्देश है (सां. आ. ८.१०)।

काद्रघेय—कद्रुपुत्र का मातृक नाम।

२. अबुद देखिये।

काद्रापिंगाक्षि—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके लिये काद्रापिंगाक्षि पाठभेद है।

कानांध्र—वध्यश्च का पुत्र (बौ. श्रौ. ११.१०)।

कानिनी—ब्रह्मांड मत में व्यास के साम शिष्यवरंपरा के हिरण्यनाभ का शिष्य (व्यास देखिये)।

कानीत—पुथुश्रवस् का पैतृक नाम (ऋ. ८.४६. २१; २४)

कानीन—(सू. द्विष्ट.) भागवतमत में देवदत्तपुत्र।

२. अग्निवेश्य, व्यास, कर्ण देखिये।

कान्तिमती—भारतपुत्र पुष्कल की स्त्री (पद्म. पा. १२)।

२. वीरबाहु देखिये।

३. व्याधस्त्री (शंख देखिये)।

कान्तिशालिन—एक विशाधर। पापनाशन लिंग के दर्शन से यह मुक्त हुआ (स्कन्द. १.३.२.४)।

कांदम—एक याधन् का पैतृक नाम (तै. ब्रा. २. ७.२१.२)। गांडम देखिये।

कान्वायन—(शिशु. भविष्य.) मत्स्य के मतानुसार विंध्यासेना का पुत्र।

कापच्य—कापच्य देखिये।

कापटव सुनीथ—सुतेमनस शांडिल्यायन का शिष्य (वं. ब्रा. १)। इसका पैतृक नाम कापटव था।

कापिलेय—विश्वामित्रपुत्र। युनःशेष को विश्वामित्र ने मृत्यु से मुक्त करने के बाद अपनी गोद में लिया। युनःशेष को उसका पिता अजीमर्त वापस मांगने लगा, तब विश्वामित्र ने कहा कि, युनःशेष मेरा पुत्र है तथा कापिलेय तथा वाभ्रव इसके बंधु हैं। इससे प्रतीत होता है कि, यह तथा वाभ्रव, विश्वामित्र के पुत्रों में से होंगे (ऐ. ब्रा. ७.१७)।

२. कुंभ को कपिला से उत्पन्न संतती का मातृक नाम (ब्रह्मांड ३.७.१४५)।

कापीपुत्र—आत्रेयीपुत्र का शिष्य। इसका शिष्य वैयाघ्रपरीपुत्र (बृ. उ. ६.५.१२)।

कापीय—व्यास के सामशिष्यवरंपरा का हिरण्यनाभ का शिष्य।

कापेय—एक ऋषि। चित्ररथ द्वारा द्विःरात्र यज्ञ करके, इसने उसे धनसंपन्न किया (क. स. १३.१२; पं. ब्रा. २०.१२.५)। कापेय का अर्थ है, कापेयी शाखा का अध्ययन करनेवाले लोग (सां. श्रौ. ९.८.ज्योत्स्नाटीका)। शौनक ऋषि कापि गोत्र का होने के कारण, उसे यह गोत्रनाम कह कर लगाया है (छां. उ. ४.३.५-७)।

कापांत—एक मुनि। उर्वशी तथा ककुत्स्थ की कन्या चित्रांगदा इसकी पत्नी थी। इसके तंबुरु तथा सुवर्चस् नामक दो पुत्र थे। बाद में इसने कुबेर से द्रव्य ला कर इन पुत्रों को दिया। चन्द्रशेखर राजा की पत्नी तारावती को दो वानरमुखी पुत्र होंगे, यों शाप इसने दिया (कालि. ५३)।

काप्य—कैशोर्य काप्य का शांडिल्य शिष्य। यह कुमारहारित का शिष्य था (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)। पैल, पतंचल तथा पुरुकुत्स का काप्य यह पैतृक नाम है। उसी प्रकार विभिंदुकीयों के सत्र में आर्त्विष्य करनेवाले सैनक तथा नवक का भी यह पैतृक नाम है।

काबंधि—यह अथर्वन् है। यह मांधाता के यज्ञ में गया तथा वहाँ यजमान तथा ऋत्विज को इसने कुछ प्रश्न पूछे (गो. ब्रा. १.२.९)। जलोदमव अश्व से वेद डर गये। उस अश्व का शमन इसने किया (गो. ब्रा. ९.१८)। विचारिन् का यह पैतृक नाम है। कबंध का वंशज ऐसा अर्थ हो सकता है (कबंध आथर्वण देखिये)।

काम—ब्रह्मदेव के हृदय से उत्पन्न पुत्र। इसकी पत्नी रति। यह शंकर के तृतीय नेत्र से दग्ध हुआ परंतु रुक्मिणी

के उदर में पुनः प्रद्युम्न नाम से इसने जन्म लिया (भा. ३.१२.२६; १०.५५.१)। जहाँ इसे दग्ध किया, वह स्थल अंगदेश है। इसने बंधुभगिनी में कामविकार उत्पन्न किया, इस लिये शंकरद्वारा दग्ध होने का शाप इसे मिला। शंकर को पुत्रेच्छा होगी तब उत्पत्ति होने का उद्घाप भी इसने प्राप्त किया (शिव. सू. सती. ३)।

२. संकल्प का पुत्र (भा. ६.६.१०)।
३. वैवस्वत मन्वन्तर के बृहस्पती का दौहित्र।
४. धर्मरक्षणी का एक पुत्र हर्षे इसका (पद्म. सू. ३)।
५. परशुराम का बंधु (कालकाम देखिये)।

कामकंटका—घटोत्कच देखिये।

कामकायन—विश्वामित्र कुलोत्पन्न गोत्रकार तथा ब्रह्मर्षि।

कामगम तथा **कामज**—धर्मसावर्णि मन्वन्तर के देवगण विशेष।

कामठक—एक सर्प (म. आ. ५२.१५)।

कामेन्द—सोमकान्त देखिये।

२. एक ब्रह्मर्षि। आंगरिष्ठ राजा ने इससे पूछा था कि शुद्ध धर्म, अर्थ तथा काम कौन हैं ? इसने उत्तर दिया कि, जिस से चित्तशुद्धि हो वह धर्म, पुरुषार्थ साध्य हो वह अर्थ, तथा केवल देहनिर्वाह की इच्छा हो वह काम है (म. शां. १२३)।

कामप्रभोदिनी—माण्डव्य की पत्नी (माण्डव्य देखिये)।

कामप्रि—मरुत्का नामान्तर। यह मरुत् के लिये उपाधि की तरह प्रयुक्त किया है (ऐ. ब्रा. ८.२१)। सायण इसका अर्थ कामपूरक ऐसा लगाते हैं।

कामलायन—उपकोसल का पैतृक नाम (छां. उ. ४. १०.१)।

कामली—रेणुका देखिये। रेणुका का नामान्तर।

२. विश्वामित्र कुल का गोत्रकार।

कामहानि—व्यास की सामशिष्य परंपरा के वायु-मतानुसार लांगली का शिष्य।

कामा—दक्षी (घटोत्कच देखिये)।

कामान्ध—वध्वयश्र का पुत्र (वौ. श्रौ. २१.१०)।

कामायनी—श्रद्धा देखिये।

कामुकायन—कारुकायण का पाठभेद।

कामोदा—क्षीरसागर से कामोदा, रमा, वरा, तथा वारुणी नामक चार कन्याएं उत्पन्न हुईं। पहली तीन विष्णु की स्त्रियां बनीं तथा वारुणी दैत्यों के हिस्से में पड़ी। यह

आनंद से हँसती थी, तब गंगा में गिरे हुए इसके अश्रु कमल बनते थे (नारद. २.६८.१४)। क्षीरसागर में से कमोदा, लक्ष्मी, ज्येष्ठा, तथा वारुणी उत्पन्न हुई थीं। यहा अमृत के फेन में से उत्पन्न हुई। यही तुलसी है। यह कामोदनगर में रहती है। इसके हंसने से पीले फूल उत्पन्न होते थे (विहंड देखिये; पद्म. सू. ११८-१२१)।

काम्पित्य—(सो. नील.) भागवतमतानुसार भर्ग्या-श्वपुत्र, विष्णुमतानुसार हर्यश्वपुत्र तथा वायुमतानुसार रिश्वपुत्र है (कपिल १०. देखिये)।

काम्बोज औपमन्यव—एक आचार्य (वं. ब्रा. २)। निरुक्त में इन दोनों शब्दों का दूसरे अर्थ में परंतु एकत्र उल्लेख आया है (नि. २.२)।

कायनि—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

कायव्य—एक निषाद। अरण्य के सब दस्युओं का यह अधिपति था। यह शूर तथा परमधार्मिक था। इसने अपने अनुयायीयों को बताया कि, वे ब्राह्मणों का कभी भी द्वेष न करें। उन्हें सर्वभाव से भजें, तथा छोटे बालक, स्त्रियां, भयभीत, भागनेवाले तथा निरायुध का वध न करें। जो ब्राह्मणों के शत्रु हैं, उनसे युद्ध करो तथा उन्हें मार डालो। इस तरह का व्यवहार करोगे तो उत्तम शक्ति प्राप्त होगी। सदाचार का अवलंबन करने से दस्युओं का भी उद्धार होता है, यह बताने के लिये यह पुरातन कथा दी गयी है (म. शां. १३५)। इसे कापन्य भी कहते हैं।

कारकि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार। काचापि इसका पाठभेद है।

कारडि—भगवत् औपमन्यव कारडि देखिये।

कारधम—अविश्वत् का नामान्तर।

कारीर—उद्गीथ के संबंध से विशेष ज्ञान रखने वाला आचार्य (जै. उ. ब्रा. २.४.४)।

कारीरथ—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

कारीरदि—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. २.४.४)।

कारीरय—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

कारीषि—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ४.५५ कुं.)।

कारुकायण—विश्वामित्र कुल का एक गोत्रकार। इसका पाठभेद कामुकायन है।

कारुष—करूपक देश का राजा। वृद्धशर्मा का नामान्तर। इसका पुत्र दंतवक्र। भारतीय युद्ध में यह राजा दुर्योधन के पक्ष में था (भा. ९.२४.३७)।

कारोटक—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

कार्केय—'कार्केयस्य' का पाठभेद।

कार्तवीर्य—(सो. सह.) इसकी माता का नाम राजावती (रेणु. १४)। शिवपूजाभंग होने के कारण यह कर्तवीर्य जन्मा। मधु अगले जन्म में शिवशाप के कारण कार्तवीर्य हुआ (रेणु. २८)।

इसके लिये अर्जुन, सहस्रार्जुन तथा हैहयाधिपति नामांतर प्राप्त है। यह सुदर्शन चक्र का अवतार है (नारद. १.७६)। कृतवीर्य के साँ पुत्र च्यवन के शाप से मृत हुए। केवल यह सप्तमीव्रतस्नान के कारण उस शाप से मुक्त हुआ (मत्स्य. ६८)। कृतवीर्य ने संकष्टीव्रत करते समय ब्रह्मादे दे कर उसके प्रायश्चित्तार्थे आचमन नहीं किया। गणेश के प्रसाद से चतुर्थीव्रत करने से उसे पुत्र हुआ, परन्तु उपरोक्त पापाचरण के कारण इसे केवल दो वर्षे, सुह, नाक तथा आँखें इतनी ही इंद्रियों थीं। यह देख कर इसके माता-पिता ने ब्रह्म शोक किया। एक बार दत्त उनके पास आये, तब उन्होंने उसे पुत्र दिखाया। उस समय यह बारह वर्ष का था। दत्त ने इसे एकक्षरी मंत्र बता कर, बारह वर्ष गणेश की आराधना करने के लिये कहा। इसने तदनुसार आराधना की, तब गणेश ने इसे सुंदर शंखरयष्टि तथा सहस्र हाथ दिये। इसी कारण इसका नाम सहस्रार्जुन हुआ (गणेश. १.७२-७३)।

दत्तउपासना, वरप्राप्ति—कृतवीर्य के पश्चात् जब अर्मात्य इसको राज्याभिषेक करने लगे, तब कार्तवीर्य ने गद्दी पर बैठना अस्वीकार कर दिया। इसे ऐसा लगता था कि, राजा के नाते कर का योग्य मोक्षदल्य अपने द्वारा प्रजा को नहीं मिलेगा। इसे गर्गमुनि ने सहायि की गुहाओं में दत्त की सेवा करने की सलाह दी (मार्क. १६)। निष्ठापूर्वक एक हजार वर्ष तक दत्तात्रेय की सेवा करने पर, इसे चार वर मिले—१. सहस्रबाहु, २. अवमोक्षिचि, ३. पृथ्वीपालन, ४. शुद्धसृष्टि। इसने कर्कोटक नाग से अरुण देश की माहिष्मती अथवा भोगावती नगरी जीती। यही वर्तमान आंकार मांधाता है। वहाँ मनुष्यों को बसा कर, इसने अपनी राजधानी बनायी। तदुपरांत कार्तवीर्य को दत्त तथा नारायण ने राज्याभिषेक किया। उस समय समस्त देव, गंधर्व तथा अम्भरायें उपासित थीं (मार्क. १७)।

पराक्रम—थोड़े ही समय में, इसने समस्त पृथ्वी जीत ली, तथा यह उसका पालन करने लगा। इसने मारी नामक राक्षस का वध किया (नारद. १.७६)। इससे युद्ध करने के लिये रावण अपने मित्र शुक्र, सारण, महोदर, महासश्व तथा भृश्राक्ष सहित आया था। उस समय ऐसा पता चला कि,

कार्तवीर्य राजमहल में नहीं है। यह इस समय नर्मदा पर स्त्रियों सहित क्रीडा करने गया था। आगे चल कर, रावण विंध्यपर्वत पार कर नर्मदा तट पर गया। वहाँ स्नान कर शंकर की पूजा करने बैठा। इधर कार्तवीर्य ने सहज लीलावश नदी का प्रवाह अपने सहस्र हाथों से रोक दिया। वह रुका हुआ पानी विविध दिशाओं में बहने लगा। इस प्रकार का एक वेगवान प्रवाह रावण तक पहुँचा। उससे उसका पूजाभंग हो गया। इस प्रकार पूजाभंग करनेवाला कार्तवीर्य है, यह समझते ही रावण ने इस पर आक्रमण किया। परन्तु इसने उसके मंत्रियों को हतवीर्य कर दिया तथा रावण को पकड़ लिया। अपना पीत्र पकड़ा गया, ऐसा वर्तमान सुन कर पुलस्त्य ऋषि कार्तवीर्य के पास आया। इसने उसका सम्मान किया तथा इच्छा पूरी। तब इसने रावण को छोड़ देने की प्रार्थना की। इसने आनंद से रावण को छोड़ दिया, तथा अग्नि के समक्ष एक दूसरे से स्नेहपूर्वक व्यवहार करने की तथा पीडा न देने की प्रतिज्ञा की (वा.रा. उ. ३१-३३; विष्णु. ४.११; आ. रा. सार. १३; भा. ९.१५)। कार्तवीर्य ने नर्मदा के किनारे खड़े रह कर पांच बाण छोड़े, जिससे लंकाधिपति रावण मूर्च्छित हुआ। उसे धनुष्य से बांध कर यह माहिष्मती के पास लाया। बाद में पुलस्त्य की प्रार्थनानुसार उसे छोड़ दिया (मत्स्य. ४३; ह. वं. १.३३; पद्म. सू. १२; ब्रह्म. १३)। बंशावली के अनुसार रावण इसका समकालीन होना असंभव है। रावण व्यक्तिनाम न हो कर तामिल भाषा का Irivan या Iraivan शब्द का संस्कृत रूप होना चाहिये। इस शब्द का अर्थ है देव, राजा, सार्वभौम अथवा श्रेष्ठ (J R A S. 1914, P 285)। रावण विशेषनाम समझा गया, इसलिये यह घोटाला हुआ। विष्णुपुराण की इस कथा में पुलस्त्य का नाम नहीं है (४.११)।

पृथ्वी जीत कर इसने बहुत यज्ञ किये (भा. ९.२३) १०००० यज्ञ किये, सात सौ यज्ञ किये (ह. वं. १.३३) यों भी कहा गया है। उस समय इसे यज्ञ से एक दिव्य रथ तथा ध्वज प्राप्त हुआ (मत्स्य. ४३; ह. वं. १.३३; मार्क. १७; पद्म. सू. १२; अग्नि. २७५; ब्रह्म. १३; विष्णुधर्म. १.२३)। बाद में प्रजा को यह इतना दुख देने लगा, कि पृथ्वी भ्रस्त हो गई। तब देवताएँ विष्णु के पास गये तथा उन्होंने सब कथा बताई। विष्णु ने उन्हें अभय दिया तथा कार्तवीर्य के नाशार्थ परशुरामावतार देने का निश्चय किया। शंकर ने परशुराम को कार्तवीर्य संहार के लिये आवश्यक बल दिया (म. क. २४.

१४७-१५६; विष्णुधर्म २.२३)। हेहयाधिपति मत्त होने के कारण, कुमार की ओर प्रवृत्त हुआ। यह अत्रिमुनि का अपमान कर रहा है, यह देखते ही कार्तवीर्य की दग्ध करने के लिये दुर्वास सात दिनों में ही माता के उदर से स्युत हो गया (मां. १६.१०१)। दुर्वास दत्त का बड़ा भाई था। दत्त की कृपा भी कार्तवीर्य ने संपादन की थी।

तदनंतर आदित्य ने विप्ररूप से इसके पास आ कर खाने के लिये कुछ मध्य मांगा। इसने कौनसा मध्य दूँ, ऐसा उभे पृच्छा। तब उसने सप्त द्वीप मांगे। परंतु उन्हें देने के लिये यह असमर्थ दिखने के कारण आदित्य ने कहा, 'तुम पांच वाणों को छोड़ो। उनके अग्रभाग पर मैं वैश्रुंगा तथा अपनी इच्छानुसार प्रदेश खाऊंगा।' यह मान्य कर के इसने पांच बाण छोड़े। आदित्य ने जो पूर्व तथा दक्षिण के प्रदेश जलाये, उसमें आपव वसिष्ठ ऋषि का आश्रम भी जला दिया। यह ऋषि वरुण का पुत्र था। वह कार्यवश आश्रम के बाहर, १०००० वर्षों तक जल में रहने के लिये गया था। वापस आते ही उसने देखा कि, आश्रम दग्ध हो गया है। उसने कार्तवीर्य को शाप दिया, 'तुम्हारा वध परशुराम रण में करेगा' (वा. ९४.४३-४७; ९५.१-१३. मत्स्य. ४३-४४; ह. वं. १.३३; पद्म. उ. १२; ब्रह्म. १३; विष्णुधर्म १. ३१)। कई ग्रंथों में आदित्य के बदले अग्नि भी दिया गया है (म. शां. ४९.३५)।

काकी दिन बीत जाने के बाद, यह एक बार भृगुया के हेतु बाहर गया, तथा वृमते-वृमते जमदग्नि के आश्रम में गया। वहाँ जमदग्नि की पत्नी तथा जमदग्नि ने इन्द्र द्वारा दी गई कामधेनु से इसका सत्कार किया। तब यह जमदग्नि से वह गाय मांगने लगा। जमदग्नि ने इसे ना कर दिया। तब यह जवरदस्ती उस गाय को ले जाने लगा। परंतु उस गाय के आक्रोश से तथा शर्मों से इसकी संपूर्ण सेना एक पल में मृत हो गई। कामधेनु स्वर्ग में चली गई (पद्म. उ. २४१)। परंतु आखिर कार्तवीर्य यह गाय तथा साथ में उसका बछड़ा ले ही गया। इसके पुत्रों ने इसको न मालूम होते ही बछड़ा चुरा लाया (म. शां. ४९.४०)।

परशुराम तपश्चर्या के लिये गया था। केशव को संतुष्ट कर के अनेक दिव्यास्त्र ले कर वह अपने आश्रम में आया। कामधेनु ले जाने का वर्तमान उसे ज्ञात हुआ। तब क्रोध से कार्तवीर्य पर आक्रमण कर, नर्मदा के किनारे उसने इसे युद्ध के लिये आमंत्रित

किया। कार्तवीर्य की पत्नी मनोरमा ने इसे युद्ध पर न जाने के लिये प्रार्थना की, परंतु यह नहीं मानता था। देस कर उसने प्राणत्याग कर दिया। दत्त के वर से प्राप्त इनकी बुद्धि नष्ट हो गई। तदनंतर इसका परशुराम से युद्ध हुआ। अंत में बाहुच्छेद हो कर यह मृत हो गया।

यह युद्ध गुणावती के उत्तर में तथा खंडवारण्य के दक्षिण में स्थित टीलों पर हुआ (म. द्रो. परि. १. क. ८. पंक्ति. ८३९ टिप्पणी)। बाद में परशुराम द्वारा किये गये कार्तवीर्य के वध की वार्ता जमदग्नि ने सुनी। उसने राम से कहा, 'यह कार्य तुमने अत्यंत अनुचित किया। क्षमा ब्राह्मण का भुषण है। अत्र प्रायश्चित के लिये एक वर्ष तक तीर्थयात्रा करने के लिये जाओ।' इस कथनानुसार परशुराम तीर्थयात्रा करने के लिये गया। तब पहले वैर का स्मरण कर कार्तवीर्य के पुत्रों ने ध्यानस्थ जमदग्नि का वाणों में वध किया तथा उसका मस्तक ले कर वे भाग गये। परशुराम के लौटने पर, यह वृत्त उभे मालूम हुआ। माता की सांत्वना के लिये, उसने इक्कीस बार पृथ्वी निःश्चिंत्रिय करने की प्रतिज्ञा की, तथा उन पुत्रों पर आक्रमण किया। पांच को छोड़ बाकी सब पुत्रों का वध कर के, परशुराम पिता का मस्तक वापस ले आया (म. व. ११७; भा. ९.१५; अग्नि. ४)। कई स्थानों पर लिखा है कि कार्तवीर्य ने जमदग्नि का वध किया (वा. रा. वां. ७५; पद्म. उ. २४१)। पद्मपुराण में तमाचा लगाने का भी उल्लेख है।

ऊपर दिया गया है कि, इसे हज़ार हाथ थे, परंतु इसे घरेलू तथा अन्य कार्यों के लिये दो हाथ थे (ह. वं. १. ३३; ब्रह्म. १३)। परंतु इसे सहस्रबाहु नाम था (ह. वं. १.३३; मत्स्य. ६८; अग्नि. ४; गणेश १.७३)। महाभारत में लिखा है कि, आपव का आश्रम हिमालय के पास था। यह आश्रम अग्नि को दे सका, इससे यह स्पष्ट है कि, इसका राज्य मध्यदेश पर होगा। अयोध्या का राजा हरिश्चन्द्र तथा त्रिशंकु इसके समकालीन थे। यद्यपि मथुरा के शूरसेन देश की स्थापना स्वयं शत्रुघ्नपुत्र शूरसेन ने की, तथापि लिंगपुराण में वर्णन है कि इसकी स्थापना इसके पुत्र ने की (१.६८)। इसके सब पुत्रों के लिये स्वतंत्र देश थे (ब्रह्माण्ड. ३.४९)। यह संपूर्ण कथा, जमदग्नि की कामधेनु को मुख्य मान कर बताई गई है। पद्मपुराण में उसी गाय को सुभिमि माना गया है (उ. २४१)। वहाँ इक्कीस बार पृथ्वी निःश्चिंत्रिय करने की प्रतिज्ञा का उल्लेख नहीं है। वहाँ (ब्रह्माण्ड. ३.

२१.५-४७.६१) उल्लेख है कि, परशुराम ने कान्य-कुब्ज तथा अयोध्या के सब राजाओं की सहायता से अर्जुन को मारा तथा भार्गवों का पराभव किया।

चक्रवर्तिचंद्र—इसका शासन ८५ हजार वर्षों तक रहा। इस प्रदीर्घ शासनकाल में इसने हैहयसत्ता तथा वैभव को अत्यंत वृद्धिगत किया। प्रतीत होता है कि, इसने नर्मदा के मुख से हिमालय तक का प्रदेश जीत लिया था। इसकी सत्ता चारों ओर सुदूर तक फैली थी, इनका प्रमाण यह है कि, इसे कई स्थानों पर सम्राट तथा चक्रवर्ति कहा गया है (ह. वं. १.३३; पद्म. सु. १२; ब्रह्म. १३; विष्णुधर्म १.२३; नारद. १.७६)।

नर्मदा तथा समुद्र का अपने हाथों से यह इस प्रकार मंथन करता था कि, सब जलचर इसके शरण आ जाते थे। यमसभा में यह यम के पास अधिष्ठित रहता है (म. स. ८.८)। इसका ब्राह्मणों के श्रेष्ठत्व के संबंध में पवन से संवाद हुआ था (म. अनु. १.५२-१.५७)। उसी प्रकार, मुझसे लड़ने लायक शक्तिशाली कौन है, इस विषय पर समुद्र से भी इसका संवाद हुआ है (म. आश्व. २९)। इसने प्रवालक्षेत्र में प्रवालगंगार का बड़ा मंदिर बनाया (गणेश. १.७३)। माघस्नानमाहात्म्य के संबंध में इसका दत्त से संवाद हुआ था (पद्म. उ. २४२-२४७)। नारदपुराण में इसकी पूजाविधि बतायी है। इसके शरीरवर्णन में दिया है कि यह काना था (नारद. १.७६)।

संतति—इसे सौ पुत्र थे। उनके नाम शूर, शूरसेन, वृष्याय, वृष, जयध्वज (वायु. ९४ ४९-५०) धृष्ट, कोष्ठ (मत्स्य. ४३), कृष्ण (ह. वं. १.३३; पद्म. सु. १२), सर, सरसेन (अग्नि. २७५), वृषण, मधुपध्वज (ब्रह्म. १३), धृष्ट, कृष्ण (लिख. १. ६८), वृषभ, मधु, ऊर्जित (भा. १.२३)। भागवत में कहा है कि, इसे दस हजार पुत्र थे।

२. (सो. सह.) मत्स्य तथा वायु के मत में कनक के चार पुत्रों में से एक।

कार्ति—(सो. द्विमीट.) उग्रायुध का पौत्रक नाम।

कार्तिकस्यामिन्—स्कंद तथा गजानन देखिये।

कार्तिप्रती—शुककन्या तथा अणुह की पत्नी।

कार्तिकवय—कश्यपभोज का एक ब्रह्मर्षि।

कार्दिमायनि—भृगुगोत्र का एक ब्रह्मर्षि।

कार्द्रिपिंगाक्षि—कार्द्रिपिंगाक्षी का पाठभेद।

कार्पणि—भृगुकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

कार्मायन—मांकायन का पाठभेद।

प्रा. च. १८]

कार्शिकेयीपुत्र—प्राचीनयोगीपुत्र का शिष्य। इसका शिष्य वैदभतीपुत्र था (बृ. उ. ६. ५. २ काण्व)। माध्यंदिन में गुरु प्राश्नीपुत्र आसुरवासिन है (बृ. उ. ६. ४. ३३)।

कार्षणि—भृगुकुल का गोत्रकार। पार्षणि पाठभेद है।

कार्ष्णाजिनि—एक प्राचीन आचार्य (जै. सू. ४. ३. १७; ६. ७. ३५; ब्रह्मसूत्र. ३. १. ९; का. श्रौ. १. ६. २३)। इसने कार्ष्णाजिनिस्मृति नामक ग्रंथ रचा। पैटीनसि, हेमाद्रि, माधवाचार्य आदि ग्रंथकार इस स्मृति का उल्लेख करते हैं (C. C.)। मिताक्षरा (याज्ञ. ३. २६५), अपरार्क, स्मृतिचंद्रिका तथा श्राद्धविषयक अन्य ग्रंथों में इसका उल्लेख है। अपरार्क में (पृ. १३८) इसका एक श्लोक दिया है। उसमें ब्रह्मदेव के सनक, सनंदन, सनातन, कपिल, आसुरि, ओट तथा पंचशिख इन सात पुत्रों का उल्लेख है। राशियों के चिह्नों के संबंध में इसका एक श्लोक अपरार्क में दिया है (४२०)।

कार्ष्णायन—कृष्णपराशरकुल का गोत्रकार।

कार्ष्णि—कृष्ण के पुत्रों का, विशेषतः प्रद्युम्न का नाम (भा. १०. ५५)।

२. अभिमन्यु (म. भी. ४५. २०)।

३. विश्वक देखिये।

काल—ध्रुव वसु का पुत्र।

२. जालंदर की सेना का एक असुर (पद्म. उ. १२)।

३. परशुराम का वंश (कालकाम देखिये)।

४. ग्यारह रुद्रों में से एक (भा. ३. १२)।

कालक—विजर का पुत्र।

कालकंज—ये असुर थे। ये आकाश में रहते थे (अ. वे. ६. ८०. २)। इनका पराभव इंद्र ने किया। ये इंद्र के पराक्रम का एक स्थान हैं (क. सं. ८. १; मै. सं. १. ६. ९; तै. ब्रा. १. १. २. ४-६; कौ. उ. ३. १)। इन्होंने स्वर्गप्राप्ति के लिये अभिचयन अनुष्ठान आरंभ किया। तब इसका पराभव करने के लिये, इंद्र वेषांतर कर इनके पास आया तथा इससे उसने कहा, 'हे असुरों! मैं ब्राह्मण हूँ। तुम्हारे अनुष्ठान में मुझे खेलो। मुझे भी स्वर्ग जाना है'। असुर मान गये। चयन के लिये असुर इष्टक (ईंट) जमा रहे थे। उनके साथ साथ इंद्र ने अपनी एक ईंट जमायी तथा अपनी

चित्रा नामक इंद्र का मन में स्मरण रखा। अनुष्ठान समाप्त होने के पश्चात् चयन पर आरोहण कर असुर स्वर्ग जाने लगे।

इतने में चयन में से इंद्र ने अपनी इंद्र धीरे से निकाल ली। जिससे चयनरूपी श्येनपक्षी ध्वस्त हो कर नीचे गिरा, तथा असुरों का स्वर्ग जाना रुक गया। कुछ लोग स्वर्ग की आधी राह में थे। चयनध्वंस की घटना के कारण वे मक्रोड़ा नामक लैः पैरों के कीड़े बने। दो असुर श्रद्धातिशय के कारण स्वर्ग जा पहुँचे, परंतु चयनभ्रष्टता के पाप से दोनों देवलोक में श्रान बने (तै. ब्रा. १.१.२; कालकेय देखिये)।

कालकनुक्षीय—एक ऋषि। इसके पास भूत, भविष्य तथा वर्तमान जाननेवाला एक पक्षी था। एक बार यह कोसल देशाधिपति क्षेमदर्शी राजा के यहाँ गया। राजाने पक्षी का गुण जान कर प्रश्न पूछा, 'मेरे मंत्री मेरे संबंध में कैसे हैं?' इस पर पक्षी ने एक मंत्री के जो दुर्युग थे, वें बताये। दूसरे दिन अन्यों के दुर्युग बताना तय किया। तब रात्रि में अन्य मंत्रियों ने, उस पक्षी की हत्या की। इससे राजा समझ गया कि, ये सारे मंत्री अनिष्टचिंतन करनेवाले हैं। इस ऋषि की सहायता से राजा ने सबको सजा दी (म. शां. १०१; स. ७.१६)। एक बार क्षेमदर्शी निर्बल हो कर इस मुनि के पास आया। उसने मुनि से पूछा "अब क्या करें?" मुनि ने उसकी सब तरह से परीक्षा लेकर क्षेमदर्शी राजा को अपना प्रधान नियुक्त करने का विदेहपति को आदेश दिया। विदेहपति ने यह मान्य किया। दोनों ने मुनि का आदरपूर्वक पूजन किया (म. शां. १०५-१०७; क्षेमदर्शिन देखिये)।

कालका—वैश्वानर दानव की कन्या तथा कश्यप प्रजापति की स्त्री (भा. ६.६)। कुछ लोगों का दावा है कि, यह मारीच राक्षस की स्त्री है। उपरोक्त विधान ठीक नहीं है। कश्यप को मारीच भी कहते हैं, अतः वह कश्यप ही की पत्नी है। इसके कालकेय ऊर्फ कालकंज नामक असंख्य पुत्र हुए (कश्यप तथा कालकंज देखिये; म. व. १७०)।

कालकाम—विश्वेदेवों में से एक। संप्रति परशुराम-क्षेत्र में परशुराम के पास रहते हैं। वहाँ के लोग संकल्प में भी इसका उच्चार करते हैं, परंतु इस विषय में प्रमाण अप्राप्य है।

कालकामुक कामुक—खर राक्षस के बारह अमात्यों में से एक (खर देखिये)।

कालकाक्ष—गरुड़ के द्वारा मारा गया एक राक्षस।

कालकीर्ति—एक क्षत्रिय (म. आ. ६.१.३४)।

कालकूट—त्रिपुरासुर का आश्रित दैत्य (गणेश. १. ४३)।

कालकेतु—एक असुर। एकवीर नामक हैहय राजा ने इसका वध किया।

कालकेय (कालेय)—हिरण्यपुर में रहनेवाले असुर। इन्हें अर्जुन ने मारा (म. व. १८.१७०)। मारीच की कालका नामक स्त्री थी। उसके पुत्र कालकेय। इनके लिये कालवृंज भी नामांतर है (म. स. ९.१२)।

इनके साथ रावण का युद्ध हुआ था। तब रावण की भगिनी शूर्पणखा का पति विद्युत्विजह अनजाने रावण द्वारा मारा गया। कालकेय १४ सहस्र धं (वां. रा. उ. २४.२८)।

कालखंज—कालकंज, कालका, कालकेय देखिये।

कालघट—जन्मेजय राजा के सर्पसत्र का एक संदस्य (म. आ. ४८.८)।

कालजित्—लक्ष्मण का सेनापति (कुशीलव देखिये)।

कालजिह्व—एक रुद्रगण।

कालनर—(सो. अनु.) भागवतमतानुसार सभानर का पुत्र। इसके पुत्र संजय। इसे कालानल भी कहते हैं।

कालनाभ—हिरण्यकशिपु की सभा का एक दैत्य तथा स्वामानु का पुत्र (भा. ७.२)।

२. कश्यप तथा दनु का पुत्र (ह. वं. १.३.१००)।

३. विप्रचित्ति तथा सिंहिका का पुत्र। इसे परशुराम ने मारा (ब्रह्माण्ड. ३.६.१८-२२)।

४. कृष्णपुत्र सांब के द्वारा मारा गया दैत्य।

कालनेमि—लंका का एक राक्षस। लक्ष्मण युद्ध में मूर्च्छित हुआ। उसे औषधि लाने के लिये हनुमान् द्रोणाचल कि ओर जा रहा था। रावण को यह समाचार मिला। मार्ग में रोड़ा अटकाने के लिए उसने कालनेमि की योजना की। यह ऋषि के वेप में हनुमान् के, मार्ग में जा बैठा। पानी के लिये हनुमान् वहाँ रुका। इसका कपट जल्दी ही समझ गया, इसलिये इसे मार कर वह अविलंब आग बढ़ा (अथ्या. रा. यु. ७)।

सौ मुखोवाला एक दैत्य (मत्स्य. १७७)।

पातालवासी एक दैत्य (पद्म. उ. ६; म. स. ५१)। विरोचन ब्रह्म होने पर इसने सारी सेना का पराभव किया। विष्णु पर आक्रमण करने के कारण चक्र ने इसके सौ हाथों को तथा मस्तकों को तोड़ डाला, एवं इसके प्राण ले लिये (पद्म. सु. ४)। विष्णु ने वध किया, इस लिये प्रतिशोध लेने के लिये यह कंस हुआ (भा. १०.१; कंस देखिये)।

संहाद का पुत्र। इसके चार पुत्रः—ब्रह्मजित्, ऋतु-जित्, देवांतक तथा नरांतक।

कालपथ—विश्वामित्र ऋषि का पुत्र (म. अनु. ४. ५०)।

कालपृष्ठ—कश्यप को दिति से उत्पन्न दैत्य। इसने तास्या कर वर मांगा, 'जिसके सिर पर मैं हाथ रखूँ, वह भस्म होवे।' बाद में इसका प्रयोग यह शंकर पर करने लगा। विष्णु ने मोहिनीरूप धारण कर, इसे आगने ही सिर पर हात रखने को उद्युक्त किया। अतः यह स्वयं भस्म हो गया (स्कन्द. ५. २. ६७; भस्मासुर देखिये)।

कालभीति—एक शिवभक्त। गर्भ में ही यह काल-मार्ग नामक असुर से डर रहा था, इस लिये इसका नाम कालभीति रखा गया। इसके पिता मांटी ने पुत्रप्राप्ति के हेतु से १०० वर्षों तक रुद्र का अनुष्ठान किया। तब मांटी की पत्नी गर्भवती हुई। चार वर्ष होने पर भी गर्भ बाहर नहीं आता था। तब मांटी ने गर्भ से इसका कारण पूछा। गर्भ ने उत्तर दिया, मुझे कालमार्ग का डर लग रहा है। अनंतर मांटी ने शिवजी को इस वृत्तान्त का कथन किया। शिवजी ने इसे धर्म, ज्ञान, वैराग्य आदि का बोध कराने को कहा। बोध प्राप्त होने पर गर्भ बाहर आया। आगे चल कर, इसका संस्कार होने पर कालभीतिक्षेत्र में इसने अनुष्ठान किया। यह स्वर्ग-सुख का उपभोग करने लगा। शिवजीने इसकी भक्ति देख प्रसन्न हो कर वर दिया, 'तुम ने कालमार्ग पर विजय प्राप्त की, अतः तुम 'महाकाल' नाम से प्रख्यात हो जाओगे।' साथ ही उन्होंने आशीर्वाद दिया कि, तुम यहाँ करंभम को उपवेश दोगे। अनंतर मेरे प्रतिहारी नंदी बनोगे। (स्कन्द. १. २. ४०)।

कालभैरव—भैरव तथा रुद्र देखिये।

कालयवन—गार्ग्य (गर्ग) तथा गोपाली का पुत्र। इसका पिता गार्ग्य वृष्णि तथा अंधक का पुरोहित था। कहीं उसे गर्ग नाम से भी उल्लेखित किया गया है।

गार्ग्य कडे ब्रह्मचर्य से रहता था। एक बार उसके साले ने उसे पंड (नपुंसक) कहा। यह सुन कर गार्ग्य अत्यंत क्रुद्ध हुआ। इसलिये उसने दक्षिण में जाकर लोहपिष्ट भक्षण किया। बारह वर्ष तपस्या की। शंकर को प्रसन्न कर लिया। शंकर से यादवों को पराजित करनेवाला पुत्र उसने मांग लिया। यह घटना दक्षिण में अजितंजय नामक नगर में हुई। उस समय यवनाधिपति राजा निपुत्रिक था। वह पुत्र की कामना कर रहा था। उसे गार्ग्य के वर का पता चला। तब उसने गार्ग्य की गोपन्नियों में से गोपाली नामक भालन से पुत्र होने का प्रवन्ध किया। इस तरह उत्पन्न पुत्र कालयवन है।

यवनराज के घर छोटे से बड़ा हुआ कालयवन सौभाग्य से उसके राज्य का अधिपति बन गया। इसका कृष्ण के साथ संजोग से युद्ध हुआ वा सहैतुक रचाया गया, इस विषय में पुराणों की एकवाक्यता नहीं है। कालयवन दिग्विजय के लिये निकला। मथुरा के बलशाली यादवों पर इसने आक्रमण किया। इसी प्रकार का निर्देश कुल ग्रंथों में है। जरासंध कृष्ण को जीतने में असमर्थ था, अतः हेतुपुरस्सर सौमपति शाल्वद्वारा कालयवन को निर्मित करने का उल्लेख हरिवंश में है।

जाते समय, कृष्ण शायद विघ्न डालेगा इस लिये सौमपति शाल्व जरासंध का संदेश लेकर इसके पास आकाशमार्ग से आया। कालयवन इसी संधि की ताक में था। इसने उसी दिन विपुल सेना ले कूच करने की तैयारी की। यह यवन था, तथापि कूच करने के पहले इस के द्वारा अग्निहवन देने का उल्लेख मिलता है (ह. वं. २. ५४)।

इधर जरासंध के बारबार के आक्रमणों से कृष्ण वस्तु हो गया था। इसलिये उसने मथुरा के समान समतल मैदान में स्थित राजधानी छोड़ कर दूरस्थ समुद्रवेष्टित द्वारका को राजधानी बनाने की यादवों से मंत्रणा की। एक ओर से जरासंध तथा दूसरी ओर से कालयवन के आगमन को देख कर, चतुर कृष्ण ने एक रात में ही राजधानी बदलने का निश्चय किया।

इसके पूर्व उसने कालयवन को डराने का प्रयत्न किया। एक काले सर्प को घडे में रख कर, उस पर मुद्रा लगाई गई। अपने दूत के द्वारा वह घडा कृष्ण ने कालयवन के पास भिजवाया। इसका विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। कालयवन ने सर्प देख कर स्वाभाविक रूप से उद्गार निकाले, 'कृष्ण इस काले सर्प की तरह है।' उस घडे में

काटने वाली बहुत सी चींटियाँ भर कर, वह बड़ा कृष्ण को लौटा दिया। इस संदेश का तात्पर्य यह था कि, तुम यद्यपि कालसर्प की तरह प्रबल हो, तो मैं संख्या में अधिक हूँ। अतः चींटियों की तरह तुम्हें नष्ट करूँगा।

यह देख कर कृष्ण ने एक रात्रि में राजधानी चढ़ल ली। सबको धैर्य बँधा कर, वह स्वयं पुनः मथुरा में पैदल आया। निःशस्त्र स्थिति में मथुरा से बाहर आये हुए कृष्ण को काल्यवन ने देखा। काल्यवन ने कृष्ण का पीछा किया। ऐसे काफी दूर जाने के बाद, कृष्ण एक गुफा में प्रविष्ट हुआ। वहाँ मुचकुंद, सोया था। कृष्ण ने अपना वस्त्र धीरे से मुचकुंद के शरीर पर डाला। तथा स्वयं ओट में छिप गया (भा. १०.५१-५२)। अन्यत्र शरीर पर वस्त्र डालने का उल्लेख नहीं है। काल्यवन ने सुप्त मुचकुंद को ही कृष्ण समझा तथा उसपर लज्जा-प्रहार किया। इस से मुचकुंद एकदम जाग्रत हो गया। क्रोधित हो कर केवल दृष्टिक्षेप से काल्यवन को उसने जला दिया (ह. वं. २. ५२-५७; पद्म. उ. २७२. ४८-५७; विष्णु. ५. २३; ब्रह्म. १४. ४८-५२; १९६; म. शां. ३२६. ८८)।

कालवीर्य—एक असुर (सैहिकेय देखिये)।

कालराज—वसिष्ठोत्रीय ऋषि।

काला—काष्ठा देखिये।

२. देवों की स्तुति से प्रसन्न हो कर, शुभनिशुभ का वध करने के लिये देवी पार्वती द्वारा उत्पन्न शक्ति। इसने धूम्रोत्थन, चंडमुंड, रक्तबीज, शुभनिशुभ आदि का वध किया (दे. भा. ५. २२-३१; शुभनिशुभ तथा रक्तबीज देखिये)। इसे काली, कालिका तथा कौशिकी नामांतर हैं। उपरोक्त युद्ध में सब देवताओं की शक्तियाँ, अपने अपने लक्षणों से युक्त हो कर, इसकी सहायता करने के लिये आईं। उनके नाम १. ब्रह्मणी, २. वैष्णवी, ३. शांकरि, ४. इन्द्राणी, ५. वाराही, ६. नारसिंही, ७, याम्या, ८. वारुणी, ९. कौबेरी (दे. भा. ५. २८)।

कालाक्ष—घटोत्कच देखिये।

कालानल—(सो. अनु.) कालनर तथा यह एक ही है।

२. एक दैत्य। गजानन ने विजयपुर में इसका वध किया। वहाँ गजानन का नाम विघ्नहर है (गणेश. १. ६३)।

कालायनि—व्यास की ऋक्ष्वाप्य परंपरा का वाष्कलि का शिष्य (व्यास देखिये)।

कालिक—व्यास की सामशिय परंपरा का वायु तथा ब्रह्मांडमत में हिरण्यनाभ का शिष्य (व्यास देखिये)।

२. मय तथा रंभा के पुत्र (ब्रह्माण्ड. ३६. २८-३०)।

कालिंग—एक अंत्यज। यह चोरी करने गया था, तब तीर्थ में इसकी मृत्यु हुई, इसलिये इसका उद्धार हुआ (पद्म. उ. २१७)।

कालिंदी—कृष्ण की पत्नी। पूर्वजन्म में यह स्वयं-कन्या थी। उस जन्म में, कृष्णप्राप्ति के लिये यह यमुना के तट पर तपस्या कर रही थी। इसका मनोदय जान कर कृष्ण ने इसका पाणिग्रहण किया। इसे श्रुत, कवि, वृष, वीर, सुबाहु, भद्र, शांति, दर्श, पूर्णमास तथा सोमक ये दस पुत्र हुए (भा. १०.६१)।

कालिय—यह काद्रवेयकुल के पद्म जाति का नाग था (भा. १०.१७.४; म. आ. ३१.६; स. ५३.१५-१६)। यह पहले रमणकद्वीप में था। गरुड़ व्रत न करे, इसलिये हर माह में पौर्णिमा को, यह उसको भक्ष्य पहुँचा देता था। एक बार इसने गरुड़ का भाग भक्षण कर लिया। गरुड़ ने क्रुद्ध हो कर इसे मारा। किंतु एक प्रहार लगत ही, वह यमुना में जा कर छिप गया। सौमरि के शाप के कारण, गरुड़ वहाँ न आ सकता था। कालिय के कारण वहाँ का पानी विषमय बन गया। उसे प्राशन करने के कारण, गोप तथा गौओं की मृत्यु हो गई। तब एक वृक्ष पर चढ़ कर, कृष्ण ने यमुना के जलाशय में छलांग लगाई। कालिय को वहाँ से रमणकद्वीप की ओर भगा दिया, तथा गरुड़ द्वारा संव्रस्त न होने का प्रबंध किया। इसे पांच मुखे थे, तथा यह बड़े ही ऐश्वर्य से रहता था (भा. १०.१६; ह. वं. २.१२; विष्णु. ५.७)।

२. दाशरथि राम की सभा का एक हास्यकार।

काली—दुर्गा देखिये।

२. मत्स्यी के उदर से जन्म ली हुई उपरिचर वसु राजा की कन्या। इसे मत्स्यगंधी, योजनगंधा आदि नाम थे। बाद में सत्यवती नाम भी प्राप्त हुआ। यही आगे चल कर शंतनु की पत्नी बनी। इसे कौमार्यावस्था में पराशर नामक पुत्र हुआ।

३. पंडुपुत्र भीमसेन की दूसरी स्त्री। इसे उससे सर्वगत नामक पुत्र हुआ (भा. ९.२२.३१)। इसके लिये काशी, काशेयी तथा काश्य पाठभेद क्वचित् प्राप्त हैं। यह शिशुपाल की भगिनी थी (म. आश्र. ३२.११)।

कालीयक—कट्ट तथा कश्यप का पुत्र।

काल्ये—अत्रिकुल का गोत्रकार (अत्रि देखिये)।

२. रसातल में रहनेवाले दैत्यों में से एक (भा. ५. २४)। यह कालकेय का भाई था। भाई की मृत्यु के कारण, चित्ररथ पर इसने आक्रमण किया। परंतु इन्द्रपुत्र जयंत ने बीच ही में इसका वध किया (पद्म. सू. ६६)।

कावषेय—यह तुर का मातृक नाम है। यह तत्त्वज्ञान का आचार्य था (ऐ. आ. ३.२.६; सां. आ. ८.२)। यह तुर ऋषि की कवचा से उत्पन्न हुआ था (भा. ९.२२)।

काव्य—बर्हिषद-पितरों में से एक, तथा स्वतंत्र पितृगण (वायु. ५६.१३)। यह कविपुत्र है।

२. वारुणि कवि का पुत्र। भार्गव तथा अंगिरस गोत्र के मंत्रकार तथा ऋषि। सामवेदी श्रुतर्षि (उशनस् देखिये)।

३. तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

४. उशनस् का पैतृक नाम (ऋ. १.५१.११; ८३.५; १२१.१२; ६. २०.११; ८.२३.१७; अ. वे. ४.२९.६; तै. सं. २.५.८.५)। इटव, तथा उश्णोरंभ्र का भी यह पैतृक नाम है।

काश—काश्य देखिये।

काशकृत्स्न—एक व्याकरणकार। इसका तीन अव्यायों का व्याकरण है (काशिका, ५.१.५८)। एक तत्त्वज्ञानी (ब्र. सू. १.४.२२)।

काशि वा काश्य—इन लोगों का वैदिक वाङ्मय में प्रयोज्य उल्लेख आता है। काशी राजा के लिये इस शब्द का उपयोग किया गया होगा। शतानीक सांज्ञित के द्वारा काशी राजा धृतराष्ट्र का परामभव हुआ। तब पुनः ब्राह्मणों के हाथों में सत्ता आने की अवधि तक के लिये, काश्य लोगों ने यज्ञ करना बंद कर दिया (श. ब्रा. १३.५. ४.१९)। दूसरा अजातरिपु भी काशी का राजा था। भद्र-सेन भी काशी का राजा था। काशीविदेह सामासिक नाम भी प्राप्य है। काशी, कोसल एवं विदेह का एक ही पुरोहित था (सां. श्रौ. १६.२९.५)। काशी तथा विदेह एक दूसरे के विस्कुल समीप थे (त्रौ. श्रौ. २१.१३)। काशी-कौशल्य निर्देश भी पाया जाता है (गो. ब्रा. १.९)।

२. वारुणि कवि के आठ पुत्रों में से सातवाँ (कवि देखिये)।

३. (सो. क्षत्र.) भागवत मत में काश्यपुत्र। वायु तथा विष्णु के मत में काश पुत्र। वायु में इसे काश्य कहा है। विष्णु में इसे काशिराज कहा है। (काश्य देखिये)।

काशिक—भारतीय युद्ध में पांडवपक्षीय राजा (म. उ. १६८.१४)।

काशिराज—अंबा, अंबिका तथा अंबालिका का पिता। परंतु यह नाम काशी के किसी भी राजा को लगाया जाता है (भा. ९.२२; प्रतर्दन देखिये)।

२. भारतीय युद्ध में दुर्योधनपक्षीय राजा (म. आ. ६१-६७)।

३. मास्करसंहिता के 'चिकित्साकौमुदी' तंत्र का कर्ता (ब्रह्मवै. २.१६)।

काश्य—(सो. क्षत्र.) भागवत मत में सुहोत्र का, एवं वायु तथा विष्णु के मत में सुनहोत्र का पुत्र। ब्रह्मांड, भागवत तथा वायु के मत में, काश्यवंश अमावसुपुत्र क्षत्रवृद्ध से प्रारंभ हुआ। ब्रह्म तथा अग्नि पुराण के मत में वह पौरव सुहोत्र से निकला। परंतु, ब्रह्म तथा अग्नि में सुहोत्र तथा सुनहोत्र नामसाम्य से गड़बड़ हो गई होगी। इस वंश को क्षत्रवृद्धवंश अथवा काश्यवंश कहते हैं (काशि देखिये)।

२. सांदीपनी का नामांतर।

३. (सो. अज.) सेनजित् राजा के चार पुत्रों में से तीसरा। मस्य में काव्य नामांतर प्राप्त है।

४. भारतीय युद्ध में पांडवपक्षीय राजा। एकरथ होते हुए भी, युद्ध के समय किसी वरप्रभाव से यह अष्टरथी हो जाता था (म. उ. १६८.१२१)।

५. काशिराज अर्थ से यह नाम अजातशत्रु के लिये प्रयुक्त है। (अजातरिपु २. देखिये)।

काश्यप—किसी विस्तृत कुल का नाम। प्रजापति के द्वारा उत्पन्न सभी प्रजायें काश्यप माने कश्यपकुलेत्पन्न है (श. ब्रा. ७.५.१.५; कश्यप देखिये)।

यह सर्वसाधारण पैतृक नाम है (तै. आ. २.१८; १०.१.८)। अगत्य तथा परशुराम के समान, यह भी दक्षिण का निवासी माना जाता है। अपने वंश अथवा उप-निवेश का काश्यप से संबंध जोड़नेवाले तथा काश्यप गोत्रीय माननेवाले लोग सभी जातियों में पाये जाते हैं। शाकटायन के साथ व्याकरणज्ञ कह कर, इसका उल्लेख है (शु. प्रा; ४.५)।

कश्यप गोत्र का मंत्रकार। यह ऋषि भी है (भृगु, कश्यप अवत्सार, ऋश्यश्रुंग, देवतरस्, श्यावसायन, शृष वाह्येय, गौतम असित देवल, निशुचि, भूतांश, रेभ, रेभ-सुक्ति, वित्रि तथा हरित देखिये)।

२. एक मानिक ब्राह्मण। सर्पदंश हुए परीक्षित को अपने मंत्रसामर्थ्य से जीवित कर के, धनप्राप्ति करने के लिये यह आ रहा था। यह समाचार पाते ही, वृद्ध ब्राह्मण का रूप ले कर, मार्ग में तक्षक ने काश्यप से भेंट की, तथा इससे

कहा, 'तुम्हारे सामने इस वृक्ष को मैं काटता हूँ। अपने मंत्रसामर्थ्य से तुम इसे जीवित करो, तभी तुम्हारा मंत्र-सामर्थ्य मैं सत्या मानूँगा'। तक्षक के दंश से भरमसात् वृक्ष, इसने मंत्रसामर्थ्य से अंकुरित कर के दिखाया। इसके मंत्रसामर्थ्य के प्रति तक्षक को पूर्ण विश्वास हो गया। राजा से प्राप्त होनेवाली संपदा से अधिक धन दे कर, तक्षक ने इसे विदा किया। ब्राह्मणशाप के सामने अपना मंत्र सिद्ध न होगा, इस आशंका से काश्यप घर लौटा (म. आ. ३९)। परंतु राजा के पास न जाने के कारण, लोगों ने इसे जातिच्युत कर दिया। तब यह व्यंकटाचल पर गया। वहाँ के तीर्थस्नान से यह पापमुक्त हो गया (स्कंद. २. १. ११)।

३. एक ब्राह्मण। काश्यप की एक पुरानी कथा, भीष्म ने ज्ञान के महत्त्व का वर्णन करने के लिये, युधिष्ठिर को बताई है, वह निम्न प्रकार से है।

काश्यप नामक एक तपस्वी तथा सदाचारसंपन्न ब्राह्मण था। इसे एक वैश्य ने रथ का धक्का दे कर गिरा दिया। तब विकल हो कर, क्रोध से यह प्राण देने के लिये प्रवृत्त हो गया। यह जान कर, इन्द्र शगाल रूप से वहाँ आया। उसने इसे मानवदेह तथा उसमें भी ब्राह्मण्यप्राप्ति की प्रशंसा कर के मृत्यु से निवृत्त किया, तथा ज्ञान की ओर इसका ध्यान प्रेरित किया। तब काश्यप को भी आश्चर्य हुआ। इसे पता चला, कि शगाल न हो कर यह इन्द्र है। तब इन्द्र की पूजा कर यह घर लौट आया (म. शां. १७३; नारद देखिये)।

४. एक धर्मशास्त्रकार। अठारह उपस्मृतिकारों में से यह एक है (स्मृतिचन्द्रिका १; सरस्वतीविलास पृष्ठ १३)। उसी प्रकार, पाराशरधर्मसूत्र में भी धर्मशास्त्र-कर्ता कह कर इसका उल्लेख है। परंतु याज्ञवल्क्य-स्मृति में इसका नामनिर्देश नहीं है। इसके ग्रंथों में आह्निककर्म, श्राद्ध, अशौच, प्रायश्चित्तादि के बारे में काफी जानकारी दी गई है। मिताक्षरा, स्मृतिचन्द्रिकादि ग्रंथों में इसके धर्मशास्त्र से उद्धरण लिये गये हैं। काश्यप-स्मृति नामक एक स्वतंत्र ग्रंथ है। उसमें गृहस्थ के कर्तव्य, भिन्नभिन्न प्रकार के प्रायश्चित्तादि की जानकारी है। कश्यप नामक एक धर्मशास्त्रकार का उल्लेख बौधायनधर्मसूत्र में है (१.२.२०)। परंतु यह तथा कश्यप दोनों भिन्नभिन्न हैं, वा एक ही हैं, इसके विषय में निश्चित जानकारी प्राप्त नहीं होती है। एक व्याकरणकार के रूप में पाणिनि ने इसका उल्लेख किया है (८.४.६७)। यह शिल्पकार

तथा शिक्षाकार भी था। इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हैं:—१. काश्यपपंचरात्र, २. काश्यपसंहिता, ३. काश्यपस्मृति, ४. काश्यपसूत्र। कश्यपस्मृति एवं कश्यप संहिता, तथा काश्यपस्मृति एवं काश्यपसंहिता इन ग्रंथों का रचयिता एक ही होगा (C. C.)।

अठारह ज्योतिषसंहिताकारों में से एक। इसकी काश्यपसंहिता प्रसिद्ध है। इस संहिता के कुल पचास अध्याय हैं। कुल श्लोकसंख्या करीब-करीब १५०० है। कहते हैं कि, इस ग्रंथ में सूर्य पर प्राप्त धत्वों का उल्लेख है, तथा दूरवीक्षणादि यंत्रों का भी वर्णन है (कवि चरित्र)।

५. भौत्य मन्वन्तर का एक मनुपुत्र।

६. सार्धर्षि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

७. स्वारीन्धिप मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

८. वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

९. अत्रि का मानसपुत्र (ब्रह्मण्ड ३.८.७४-८७)।

१०. एक शालाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

११. गोकर्ण नामक शिवावतार का शिष्य।

१२. दाशरथि राम की राजसभा का एक धर्मशास्त्री।

१३. दाशरथि राम की सभा का एक हास्यकार।

१४. पांडवों के साथ यह द्रैतवन में था।

१५. वसुदेव का पुरोहित। पांडवों के जातकर्मदि संस्कार इसने किये (म. आ. परि. १; क्र. ६७. पंक्ति. २०)।

काश्यपि—कश्यप के वंशज का नाम। अरुण के लिये भी यही नाम प्रयुक्त है।

२. भृगुगोत्रीय ऋषि।

काश्यपी—शिलेडिनी देखिये।

काश्यपीवालाकन्या माठरीपुत्र—एक आचार्य। यह कौत्सीपुत्र का शिष्य था। इसका शिष्य शौनकीपुत्र (श. ब्रा. १४.९.४.३१-३२)।

काश्यपेय—कश्यपगोत्रीय एक गोत्रकार गण। यह नाम सूर्य को भी दिया जाता है।

२. कृष्ण के दासक नामक सारथि का नाम (म. द्रो. १२२.५२)।

काश्या—भीम की पत्नी (देखिये काली ३.)।

२. जनमेजयपत्नी।

काषायण—एक आचार्य। यह सायकायन का शिष्य है (बृ. उ. ४.६.२ काण्व)। यह सौकरायण का भी शिष्य है (बृ. उ. ४.५.२७ माध्य.)।

काष्ठा—प्राचेतस दक्ष प्रजापति तथा असिनी की कन्या। यह कश्यप की पत्नी थी (कश्यप देखिये)।

काष्ठाहारिण—कश्यपगोत्रीय एक गोत्रकार।

कासार—व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा के बाष्कलि का शिष्य (व्यास देखिये)।

कासोरु—अंगिरागोत्रीय एक गोत्रकार।

काहोडि—अर्गल का पैतृक नाम।

किंकर—एक राक्षस। विश्वामित्र की आज्ञानुसार यह कल्पापराज राजा के शरीर में प्रविष्ट हुआ था।

किंकिण—(सो. क्रोष्टु.) सात्वतपुत्र भजमान की दूसरी स्त्री के तीन पुत्रों में दूसरा। विष्णुमत में इसे कृकण तथा मत्स्यमत में कृमिल नाम है।

किंदम—मृगरूप ले कर मृगी के साथ क्रीडा करने वाला एक ऋषि। इसका वध पांडुराजा ने किया, अतः इसने पांडुराजा को शाप दिया (म. भा. १०९)।

किन्नर—(सू. इ. भविष्य.) विष्णु तथा वायु के मत में सुनक्षत्र का पुत्र। मत्स्यपुराण में किन्नराश्व पाठमेद है। इसका मुख्य नाम पुष्कर था।

किन्नराश्व—किन्नर देखिये।

किम्पुरुष—आग्नीध्र के नौ पुत्रों में दूसरा। इसकी पत्नी का नाम प्रतिरुपा। यह किंपुरुषवर्ष का ही अधिपति था (भा. ५. २; आग्नीध्र देखिये)।

२. स्वरोचिष मन्वन्तर का एक मनुपुत्र।

किरात—एक शिवायतार। मूक नामक दानव का इसने सूकर रूप में वध किया (असमाप्ति देखिये)।

किर्मीर—एक नरभक्षक राक्षस। क्वासुर का भ्राता (म. आर. १२.२२)। यह काले रंग का था तथा वैत्रकीय नामक वन में (वेत के वन में) रहता था। हस्तिनापुर से निकल कर पांडव जब काम्यकवन में आये। तब भीमसेनद्वारा अपने भाई के वध का प्रतिशोध लेने के लिये, यह उस वन में आया। इसने पांडवों का मार्ग चारों ओर से रोक दिया। भीमसेन के साथ इसका पनवोर युद्ध हुआ। उसमें इस की मृत्यु हो गई (म. व. १२.६७)। बाद में पांडव द्वैतवन गये।

किलकिल—ब्रह्मांडमतानुसार किलकिला नगरी में राज्य करनेवाला एक राजवंश।

किशोर—वलि दैत्य के पुत्रों में से एक (मत्स्य. १७२)।

कीकट—(स्वा. प्रिय.) भागवतमतानुसार ऋषभ तथा जवंती का पुत्र।

२. धर्मपुत्र संकट का पुत्र। इससे भूमि पर के दुर्गाभि-नामी देव उत्पन्न हुए (भा. ६.६)।

कीचक—केकय तथा मालवी के एक सौ छः पुत्रों में ज्येष्ठ। इसके छोटे भ्राताओं को उपकीचक कहते थे। विराट की पत्नी सुदेष्णा इसकी सौतेली मौसैरी बहन थी। यह बाण का अंशावतार था (म. वि. परि. १.१९, २५-२७)। विराट ने इसे अपना सेनापति बनाया था।

एक बार सुदेष्णा के महल में, सैरंथी का वेश धारण की हुई द्रौपदी इसे दिखाई दी। पृच्छताछ करने के बाद यह उससे अनुनय करने लगा। द्रौपदी ने इसका धिक्कार किया। उसने इसे धमकी दी कि, उसके गंधर्वपति इसका वध कर डालेंगे। बहन से सलाह कर, यह सैरंथी को अपने घर ले आया, तथा उससे अतिप्रसंग करने लगा। परंतु वहाँ से भाग कर वह राजदरवार में गई। वहाँ भरी सभा में, उस पर लत्ताप्रहार कर, इसने उसकी चोटी पकड़ कर नीचे गिरा दिया। कीचक के घर जाते समय द्रौपदी ने सूर्य की प्रार्थना की। सूर्य से निजरक्षा के लिये प्राप्त राक्षस ने इसे दूर फेंक दिया। सैरंथी ने यह समाचार भीम से कहा। उसने बड़ी ही कुशलता से इस को काबू में ला कर, इसका वध किया (म. वि. २१. ६२; भीमसेन देखिये)।

२. भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय राजा।

कीर्ति—कुन्ति २. देखिये।

२. दक्ष प्रजापति की कन्या, तथा धर्म की पत्नी (म. भा. ६०.१३)।

३. प्रियव्रत राजा की ज्येष्ठ पत्नी (गणेश. २.३२.१३; प्रियव्रत देखिये)।

४. सुतपदेवों में से एक।

कीर्तिधर्मन्—भारतीययुद्ध में पांडवपक्ष का एक राजा (म. द्रो. १३३.३७)।

कीर्तिमत्—(सू. इ.) नृगपुत्र। इसने वैशाख माहात्म्य के बल से यमलोक निर्जन बनाया (स्कन्द. २. ७.१२-१३)।

२. उत्तानपाद तथा सुवता के दो पुत्रों में से कनिष्ठ। ध्रुव का भ्राता।

३. भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा वायु के मतानुसार देवकी से जन्मित वसुदेवपुत्र। कंस ने इसका वध किया। यह कृष्ण का बड़ा भाई था। वादे के अनुसार न मारते हुए कंस ने इसे छोड़ दिया था, परंतु नारद के उपदेश के

कारण बाद में उसने इसे मारा (भा. ९.२४; १०,१)। वायु के मत में यह रोहिणी से उत्पन्न वसुदेवपुत्र है।

कीर्तिमती—शुक्राचार्य तथा पीवरी की कृत्वी नामक कन्या का नामांतर। यह नीप अथवा अणुह राजा की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम ब्रह्मदत्त था।

कीर्तिमालिनी—(पिंगला १. देखिये)।

कीर्तिमुख—शंकर की जटा से निकला हुआ एक शिवगण। इसके तीन मुख, तीन पैर, तीन पुच्छ तथा सात हाथ थे। शंकर ने इसे प्रेत खाने के लिये कहा। बाद में इसका साहस देख कर, शंकर ने वर दिया कि, तुम्हारा स्मरण करने के सिवा मेरा दर्शन लेनेवाला का अधःपात होगा (पद्म. उ. ५०)।

कीर्तिरथ—(सू. निमि.) वायु के मत में प्रतिवक्-पुत्र। यह कृतिरथ का दूसरा नाम है।

कीर्तिरात—(सू. निमि.) कृतिरात का नामांतर।

कुक्रण—एक सर्प (म. उ. १०१.१०)।

कुक्रर्म—पिंडारक क्षेत्र का राजा। यह अत्यंत दुष्ट था। अनेक पापकृत्यों के कारण, इसे प्रेतयोनि प्राप्त हुई। वहाँ इसे अनेक अनुयायी प्राप्त हुए। एकवार घूमते-घूमते यह कहीड़ ऋषि के आश्रम में आया। अपने इस शिष्य के उद्धार के लिये कहीड़ ने गोखुरा के संगम पर श्राद्ध किया। औरों का भी श्राद्ध किया। तब इसका उद्धार हुआ (पद्म. उ. १३९)।

कुकुर—(सो. क्रोष्टु.) अंधक का नत्ता। इससे कुकुरवंश उत्पन्न हुआ, जिसमें में उग्रसेन, कंसादि हुए।

कुक्षि—रौच्य मनु का पुत्र। इसे रौच्य ने सात्वत धर्म बताया। (म. शां. ३३६.२८--३९)।

२. पौष्यजि ऋषि का शिष्य। इसने सामवेद की सौ संहिताओं का अध्ययन किया (व्यास देखिये)।

कुक्षेयु—(सो. पू. रौद्र के दस पुत्रों में से एक। कुक्षेयु पाठभेद प्राप्त है।

कुचैल—(हीन बख्शेवाला) कृष्ण का एक भक्त तथा सांदीपनिआश्रम में बना हुआ उसका पुराना ब्राह्मण मित्र। यह बड़ा ही विरक्त, जितेन्द्रिय एवं ज्ञानी था। सरलता से जितना मिलता था, उसी पर निर्वाह करने की वृत्ति के कारण, यह अत्यंत दरिद्री था। दरिद्रता से त्रस्त हो कर इसकी पत्नी ने इसे कृष्ण के पास जाने के लिये कहा। क्यों कि, कृष्ण इसका पुराना मित्र तथा बड़ा ही उदार था। पत्नी के बार बार आग्रह करने पर, 'अयं हि परमो लाभ उत्तमश्लोकदर्शनम्', इस विचार

से यह कृष्ण के यहाँ गया। जाते समय कुछ साथ ले जाना चाहिये, इस विचार से पत्नीद्वारा उधार माँग कर लाया गया चार मुष्टियाँ चिउड़ा, एक जीर्ण कपड़े में बांधकर साथ लिया।

द्वारका आ कर कृष्ण से मुलाकात होने पर, अपने पुराने मित्रत्व के नाते, कृष्ण ने इसका पर्याप्त सत्कार किया। गुरुकुल की अनेक घटनाओं का स्मरण किया। हाथ में हाथ डाल कर बहुत गप्पें लड़ाई। कृष्ण ने स्वयं इससे पूछा, 'तुम मेरे लिये क्या लाये हो'। इसके द्वारा दिये गये चिउड़े में से, एक मुष्टि चिउड़ा बड़े आनंद से कृष्ण ने भक्षण किया। एक रात्रि बड़े आनंद से वहाँ बिताई। दूसरे दिन यह वहाँ से निकला। इसकी अयाचित वृत्ति के कारण, न तो कृष्ण ने इसे कुछ दिया, न कि इसने कृष्ण से कुछ माँगा। कृष्ण ने अपने को क्यों धन नहीं दिया इस विषय में, धनप्राप्ति के बोध शायद मैं ईश्वर को भूल जाऊंगा, इस तरह का उलटा तर्क इसने लड़ाया। परंतु घर आने के बाद इसने देखा, इसे उत्तम ऐश्वर्य प्राप्त हो गया है (भा. १०.८०.७)।

भागवत में कहीं भी इसे सुदामन अथवा श्रीदामन नहीं कहा गया है। किन्तु जनसाधारण में वैसी ही प्रसिद्धि है। सत्यविनायक की कथा में, यही कथा सुदामन नाम पर आई है।

कुज—मंगल तथा नरकासुर का नाम।

कुजंभ—एक दैत्य। इसने तारकासुर को राध्याभिषेक किया (मत्स्य. १४७.२८)।

कुजुंभ—एक दानव। इसके पास सुनंद नामक मूसल था। जिसके कारण यह अजेय था। केवल स्त्रीस्पर्श से ही मूसल निर्बल बनता था। कुजुंभ का निवासस्थान निर्विंध्या नदी के किनारे, अरण्य में भूमि के अंदर था। एक समय, वैशालीनरेश विदूरथ की कन्या मुद्रावती का, कुजुंभ ने अपहरण किया। आगे भलेद्वनपुत्र वत्सप्रि ने, मुद्रावतीद्वारा मूसल को स्त्रीस्पर्श करवा कर निर्बल कर दिया, तथा कुजुंभ का वध किया। पश्चात्, मुद्रावती के साथ वत्सप्रि का विवाह हुआ (मार्क. ११३)।

कुंजर—तारकासुर का एक सेनापति।

२. एक वानर। अंजनी का पिता।

३. सौवीरदेशीय एक राजपुत्र।

४. कश्यप तथा कद्रु के पुत्रों में से एक।

कुटीचर—रुद्रगणविशेष।

कुटुंबिनी—कामंदेय की पत्नी (गणेश. १. ७. १२)।

कुठर—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

कुणरवाडव—एक व्याकरणकार। इसने शंकर के लिये शंगरा, तथा वहीनर के लिये विहीनर शब्द सुझाया है (महाभाष्य. ३.२.१४; ७.३.१)।

कुणारु—एक असुर (ऋ. ३.३०.८)।

कुणि—एक व्याकरणकार तथा स्मृतिकार। कैयट ने इसका निर्देश किया है (पा. सू. १.१.७५)।

२. (सो. वृष्णि.) सात्त्विक के दस पुत्रों में से एक। यह भारतीय युद्ध में मृत हुआ।

३. (सो. यदु.) जयराम का पुत्र, इसका पुत्र युगंधर।

४. (सू. निमि.) विष्णु के मत में सत्यध्वजपुत्र।

५. वेदशिरस् नामक शिवावतार का शिष्य।

कुणि गर्ग वा **गार्ग्य**—इस की कन्या वृद्धकन्या। वृद्धवत्या में इस का विवाह गांधर्वपुत्र शंगवत् के साथ एक रात्रि के लिये हुआ (वृद्धकन्या देखिये)।

कुणिक—एक आचार्य (आप. ध. १.१९.७)।

कुणिबाहु—शिवावतार वेदशिरस् का शिष्य।

कुणीति—वसिष्ठ तथा घृताची का पुत्र। इसकी पत्नी प्रथुकन्या।

कुंड—गजलपी असुर। इसकी मृत्यु विनायक के द्वारा हुई (गणेश. २.१४)।

कुंडक—(सू. इ. भविष्य.) विष्णु के मत में श्रुद्रक का पुत्र।

कुंडकर्ण—दंडीमुंडीश्वर नामक शिवावतार का शिष्य।

कुंडज—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक।

कुंडजठर—जनमेजय के सर्पसत्र का एक सदस्य।

कुंडधार—एक सर्प (म. स. ९.९)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीमसेन ने इसका वध किया (म. भी. ८४.२२)।

कुंडपायिन—एक आचार्य (पं. ब्रा. २५.४.४; आश्व. श्रौ. १२.४.६; कात्या. श्रौ. २४.४.२१)। सूत्रग्रंथ में इसके नाम से एक सत्र प्रसिद्ध है।

कुंडपाय्य—शंगवत्स का पैतृक नाम (ऋ. ८.१७. १३)।

कुंडभेदिन्—धृतराष्ट्रपुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १०२.६८; भी. ९२.२६)। भीमपर्व में इसका नाम 'कुंडभेद' दिया है।

कुंडला—मदालसा की सखी। यह विंध्यवान की कन्या तथा पुष्करमालीन् की पत्नी थी। इसके पति का वध शुंभ ने किया (माकं. १९)।

कुंडिन—वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार, मंत्रकार तथा प्रवर।

कुंडिनेय—मित्रावरुण का पुत्र।

कुंडोदर—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

कुत्स—रुद्र नामक राजर्षि का पुत्र। कमजोर होने के कारण सहायता के लिये इसने इन्द्र की आराधना की। इन्द्र ने आकर इस के शत्रुओं का वध किया। तदनंतर उसकी तथा कुत्स की मित्रता हो गयी। एक बार जब इन्द्र कुत्स के पास बैठा था, तब शची वहाँ आई। इनमेंसे इन्द्र कौनसा है, यह शची पहचान न सकी (ऋ. ४.१६.१० सायणभाष्य)। इसे अर्जुनेय कहा है। इससे पता चलता है कि, यह अर्जुनी नामक स्त्री का पुत्र होगा (ऋ. १.११२.२३; ४.२६.१; ७.१९.२; ८.१.११)। यह एक योद्धा था। इसको अपने कावू में लेकर इन्द्र ने वेतसू का कल्याण किया (ऋ. १०.४९.४)। इन्द्र ने इस के लिये शुष्ण का लोहे के चक्र से वध किया (ऋ. १.६३.३; १२.१.९; १७.४) इन्द्र ने इसके लिये सूर्यरथ के पहिया की चोरी की अथवा उसे तोड़ दिया। इस तरह की अस्पष्ट कथा ऋग्वेद में दी गयी है (ऋ. १.१७४.५; ४.१६.१२; ३०.४)। अतिथिग्व तथा आयु के साथ इन्द्रस्तुति में इसका उल्लेख है। सूर्य के रथ का एक पहिया इन्द्र ने अलग किया। दूसरा पहिया कुत्स को दिया (ऋ. ५. २९. १०)। इंद्र कुत्स के घर गया था (ऋ. ५.२९.९-१०)। कुत्स तथा लुश दोनों इन्द्र को एकदम बुलाते थे। इन्द्र कुत्स के पास आया। परंतु कुत्स को शंका आने के कारण, इन्द्र को इसने सौ चर्मरज्जुओं से अंड के स्थान पर बाँध दिया। परंतु लुश के द्वारा बुलाये जाते ही इन्द्र इन रज्जुओं को तोड़ कर निकल आया। तब कुत्स ने एक साम कहकर पुनः इन्द्र को वापस बुलाया (ऋ. १०.३८.५; पं. ब्रा. ९.२.२२; जै. ब्रा. २२८)। यह कथा निश्चित रूप से नहीं समझती। इन्द्र का तथा इसका वैर होगा (कुत्स औरव देखिये)। यह इन्द्र का हमेशा का शत्रु न था (ऋ. १.५१.६; ६.२६.३)। पराक्रम दिखाने के लिये इन्द्र को कुत्स तथा रथ के पहिये की जरूरत रहती थी (ऋ. १.१७४.५)।

२. (स्वा. उत्तान.) चक्षुर्मनु तथा नड्वला के ग्यारह पुत्रों में से दूसरा (भा. ४.१३)।

३. भृगुकुल का गोत्रकार ।

४. दाशरथि राम की सभा का एक ऋषि (वा. रा. उ. २ प्रश्नित) ।

५. अंगिराकुल का गोत्रकार तथा मंत्रद्रष्टा (ऋ. १. ९४-९८; १०१.११५; ९.९७.४५-५८) ।

कुत्स औरव—एक राजा । उपगु सौश्रवस इसका पुरोहित था । इस ने जाहिर किया था कि, जो भी कोई इन्द्र को हवि देगा, उसका मस्तक मैं काट दूँगा । इंद्र ने गर्व के साथ इससे कहा, 'सुश्रवा ने मुझे हवि दिया है' । इस ने तत्काल क्रोधित हो कर, सामगान करते हुए उपगु सौश्रवस का शिर काट दिया । सुश्रवा ने इन्द्र से शिकायत की । इन्द्र ने उसका शिर फिर से जोड़ दिया (पं. ब्रा. १४.६.८; कुत्स १. देखिये) ।

कुत्सन्य—भृगुकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि ।

कुशुमि—विष्णु तथा वायु के मत में व्यास की साम-शिष्य परंपरा के पौष्यंजि का शिष्य । ब्रह्मांड में कुशुमि पाठ है (व्यास देखिये) ।

कुनाल—(मौर्य. भविष्य.) वायु के मत में अशोक का पुत्र ।

कुनेत्रक—वेदशिरस नामक शिवावतार का शिष्य ।

कुंतल—कौतलपुराधिपति एक राजा (चन्द्रहास १. देखिये) ।

कुंतलस्वातिकर्ण—(आंध्र. भविष्य.) मत्स्य के मत में मुग्धस्वातिकर्णपुत्र ।

कुंति—एक राजा । इसने पांचालों का पराभव किया (क. सं. २६.९; मै. सं. ४.२.६) ।

२. (सो. सह.) भागवत के मत में नेत्रपुत्र । विष्णु तथा मत्स्य के मत में धर्मनेत्रपुत्र । वायु में यह नाम कीर्ति है ।

३. (सो. यदु.) भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा वायु के मत में क्रथपुत्र ।

कुंतिभोज—एक राजा । कुंतिभोज वा भोज नाम से इसका उल्लेख आता है । वसुदेवपिता शूर की कन्या प्रथा उर्फ कुन्ती इसे दत्तक दी गई थी । यह उसकी बुआ का लड़का था तथा अनपत्य था । शूर ने कुछ समयपूर्व अपना प्रथम पुत्र इसे देने का वचन भी दिया था (म. आ. ६१. परि. १ क्र. ४३) । एक बार दुर्वास कुंतिभोज के घर आये थे । कुंतिभोज ने कुन्ती को उनकी सारी व्यवस्था करने के लिये कहा । कुन्ती को दुर्वास से सब देवताओं को प्रसन्न करने के मंत्र मिले थे । इसीसे आगे चल कर पांडवों की

उत्पत्ति हुई (म. व. २८७-२८९) । इसका पुत्रित्व नामक एक अतिरथि पुत्र था । द्रोण ने उसका वध किया (म. उ. १६९.२; भी. २३. ५; क. ४.७३) । इसे दस पुत्र और थे । उन सबका वध अश्वत्थामा ने किया (म. द्रो. १३१. १२९) । यह स्यमंतपंचक क्षेत्रमें गया था (भा. १०.८२.२५) । इसका वध द्रोण ने किया (म. क. ४.७३.) । ऋष्यपुत्र कुंति तथा यह एक नहीं है । वह इससे भी प्राचीन है ।

कुंती—यदुकुलोत्पन्न शूर राजा की कन्या तथा वसुदेव की भगिनी ।

महाभारत में उल्लेख है कि, कुंतिभोज राजा ने इसे दत्तक लिया था (म. आ. ६१.१२९ परि. १ क्र. ४३) । चंबल नदी को मिलनेवाली अश्वरथ अथवा अश्व नदी के किनारे, कुंतिभोजक नामक नगर में इसका जन्म हुआ । इस नगर को कुंति देश कहा गया है (मं. भी. १०. ४१; वि. १.१३; बृहत्संहिता. १०.१५) ।

कुंतिभोज राजा ने अतिथिसत्कार के लिये कुंती की योजना की । यह कार्य इसने उचित ढंग से किया । दुर्वास की कड़ी सेवा कर के इसने उन्हें प्रसन्न कर लिया । भविष्य में कुछ बाधाएँ खड़ी होगी, यह जान कर दुर्वास ने इसे एक वशीकरणमंत्र सिखाया । दुर्वास ने कहा, 'इस मंत्र से जिस देवता का तुम आवाहन करोगी, उस देवता के प्रभाव से तुम्हें पुत्र होगा ।' अनंतर कुन्ती के मन में मन्त्रप्रतीति की जिज्ञासा खड़ी हुई । उस मंत्र का जप कर के इसने सूर्य को बुलाया । सूर्य को आते देख कर इसे विस्मय लगा । सूर्य से कुंती को कवचकुंडलयुक्त कर्ण नामक पुत्र हुआ । लोकभय से कुंती ने कर्ण को अश्वनदी में छोड़ दिया । उसका पालन राधा के पति अशिरथ ने किया (म. आ. १०४; अशिरथ देखिये) ।

सयानी होने पर अनेक राजाओं से कुन्ती की मैंगिनियों होने लगी । इनराजाओं को बुला कर, कुंतिभोज ने इसका स्वयंवर किया । तब कुंती ने पांडु का वरण किया । तदुपरांत पांडु कुंती को ले कर हस्तिनापुर गया । (म. आ. १०५. ११३१) । मृगया के लिये गये पांडु ने, मृगरूप धारण कर के मैथुन करनेवाले किंदम ऋषि का वध किया । इस समय ऋषि की शापवाणी हुई: "इसी प्रकार रतिक्रीड़ा के ही साथ मौत तुम्हें उठा लेगी" । इससे पांडु का पुत्रोत्पादन का मार्ग बंद हो गया । स्वर्गप्राप्त्यर्थे अपत्य की जरूरी होने के कारण, पांडु ने श्रेष्ठजाति के पुरुषों से पुत्रोत्पादन करने की कुंती

को आशा दी। तब इसने उसका निषेध किया। इस बारे में भद्रा का अनुकरण करने का इसने निश्चय किया। परंतु श्वेतकेतु का नियम बता कर, पांडु ने पुनः वहीं आज्ञा की। तब दुर्वास के द्वारा दिये गये मंत्रप्रभाव से दमधर्म, वायु तथा इन्द्र को बुला कर इसने युधिष्ठिर, भीम तथा अर्जुन को जन्म दिया। पुनश्च पांडु ने पुत्रोत्पादन करने कहा, जिसे इसने अमान्य कर दिया। बाद में, पांडु की प्रार्थनानुसार कुंती ने माद्री को अपना मंत्र दिया। तब माद्री से नकुल तथा सहदेव ये जुड़वाँ पुत्र उत्पन्न हुए। यही पाँच पुत्र पांडव हैं (म. आ. १०९.१११-११५)।

वचन की साधारण लीलाओं में भी, पांडवों ने कौरवों पर विजय प्राप्त की। पांच पांडव सौ कौरवों को त्रिकुल ही वस्तु कर डालते थे। भीम तो कौरवों की नाक में दम करता था। इससे कौरवपांडवों में विरोध उत्पन्न हुआ (म. आ. ११९)।

इसलिये दुर्योधन ने धृतराष्ट्र के द्वारा, पांडव तथा कुंती को वारणावत में यात्रा के लिये भेजा। वहाँ पुरोचन-द्वारा जतुग्रह बनवा कर दुर्योधन ने पांडवों के नाश की सिद्धता थी। परंतु विदुर की सूचनानुसार सुरंग खुदवा कर, पांडवों ने अग्नि से अपनी रक्षा की। एक भीलनी उस गृह में अपने पांच बच्चों के साथ सो रही थी। वह अपने बच्चों के साथ जल कर मर गई। जतुग्रह की रचना करनेवाला पुरोचन भी जल कर मर गया। भीलनी तथा उसके पांच पुत्रों के शव देख कर, कौरवों ने मान लिया कि, पांडवों का नाश हो गया। उसकी उत्तर-क्रिया भी की। परंतु पांडव वन में सुरक्षित घूम रहे थे (म. आ. १३०-१३७)।

कुंती का स्वभाव परोपकारी था। व्यास की अनुमति से, पांडव कुंती के साथ एकचक्रा नगरी में आ कर रहने लगे। वहाँ वे भिक्षा मांग कर अपना उदरभरण करते थे। एक ब्राह्मण के घर ये लोग रहाते थे। एक दिन कुंती तथा भीम ने उस ब्राह्मण पर आई हुई विपत्ति सुनी। बकासुर को तीस मन भात, दो भैंसे तथा एक आदमी देने की नीति उस ब्राह्मण पर आई थी। तब धर्म के विरोध को न मानते हुए, कुंती ने भीम को भेज कर बकासुर का वध करवाया। उस ब्राह्मणकुटुंब को संकट से मुक्त किया। इसलिये सब लोगों ने एक ब्रह्मोत्सव भी किया (म. आ. १४५-१५२)।

द्रोणाचार्य के नेतृत्व में, कौरवपांडवों ने शस्त्रास्त्रविद्या संपादन की। एक दिन उनकी परीक्षा लेने के लिये

नियत हुवाँ, तथा उसके लिये एक विस्तीर्ण मंडप भी बनाया गया। सब पांडवकौरव वहाँ अपना कौशल्य दिखा रहे थे। तब कर्ण वहाँ आया। उसने कहा की, मैं अर्जुन से भी जादा कौशल्य दिखा सकूँगा। कर्ण ने अर्जुन को युद्ध का आवाहन किया। कुंती सत्यस्थिति जानती थी। इस लिये, यह देख कर वह मूर्च्छित हो गई। इसी समय इसने कर्ण को प्रथम पहचाना होगा (म. आ. १२३-१२६)। कर्ण दुर्योधन के पक्ष के मिल गया, यह देख कर कुंती ने उसका जन्मवृत्त उसे बता कर पांडवों का पक्ष लेने के लिये कहा; परंतु कर्ण ने—यह मान्य नहीं किया। कुंती ने विदुर को भी बताया कि, कर्ण उसका पुत्र है (म. उ. १४२-१४४)।

भारतीय युद्ध के बाद, सब स्त्रियाँ गंगा के किनारे अपने प्रियजनों के लिये शोक कर रही थी। तब कुंती ने धर्म से कहा कि, कर्ण तुम लोगों का भाई था। तब धर्म को अत्यंत दुःख हुआ। उसने कहा, 'इसके बाद स्त्रियों के मन में कुछ भी गुप्त न रहेगा' (म. स्त्री. २७.८०)। कुंती धृतराष्ट्र के साथ वन में गई। युधिष्ठिर ने काफ़ी मनाया, परंतु यह वापस न आई (म. आश्व. २२.३-१७)। अरण्य में दावानल लगा। तब गांधारी, कुंती तथा धृतराष्ट्र ने अग्नि-प्रवेश किया (म. आश्व. ३५.३१)।

कुंतीभोज—(सो. यदु.) भविष्य के मत में काथ-पुत्र। वृषपर्वा की कन्या का पुत्र पूरु, तथा पूरु के पुत्री का पुत्र कुंतीभोज। यह कुंतीभोज नगर में रहता था। अन्य पुराणों में यहीं कुन्ति है (कुंति ३. देखिये)।

कुंददंत—एक ब्राह्मण। इसके दांत कुंदकलिकाओं के समान थे, इसलिये इसे यह नाम प्राप्त हुआ। यह विदेहदेश में रहता था। इसे आत्मज्ञान प्राप्ति की इच्छा हुई। तब यह छोड़ कर यह अरण्य में घूमने लगा। इसने कदंब को अपनी ज्ञानप्राप्ति की इच्छा दिखाई। परंतु अभी तक इसने अपने इंद्रियों को पूर्ण रूप से नहीं जीता, यह देख कर कदंब ने इसे अयोध्या जाने के लिये कहा। उस कथनानुसार सब उपाधियों को छोड़ कर, यह अयोध्या में राम के पास रहने लगा। वसिष्ठ के मुख से मोक्षोपाय नामक संहिता श्रवण कर के इसे आत्मज्ञान प्राप्त हो गया (यो. वा. ६.१८०-१८६)।

कुपट—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कुपति—अष्टभैरवों में से एक। इसे ही कपालिन नाम है।

कुवेर—वैवस्वत मन्वन्तर के विश्रवा ऋषि का पुत्र। इसकी माता का नाम इडुविडा अथवा मंदाकिनी दिये गये हैं (विश्रवस् देखिये)। यह पुलस्त्य तथा गो का पुत्र था (म. व. २५८.१२)। इस लिये इसे वैश्रवण तथा ऐडुविड कहा गया है (म. उ. १.३६; श. ४६.२२)। ब्रह्मा ने इसे राक्षस-गणोंसहित लंका, पुण्यक विमान, यक्षों का आधिपत्य, राज-राजत्व, धनेशत्व, अमरत्व, लोकपालत्व, रुद्र से मित्रता तथा नलकूबर नामक पुत्र आदि दिये। उनमें से रावण ने लंका तथा पुण्यक ले लिये (म. व. २५८-२५९)। लंका इसने रावण को स्वयं दे दी। पुण्यक विमान, रावणद्वारा युद्ध में इसे पराजित कर के लिया गया (वा. रा. अर. १५.२२)। धनपतित्व के लिये तपस्या कर के, यह कुवेर हो गया। जिस स्थान पर इसने तपस्या की, उस स्थान पर कौवेरतीर्थ बना (म. श. ४६.२२)। इस स्थान पर इसकी मूल नगरी अलकावती है। इसी तप के कारण उपरोक्त वस्तुयें इसे प्राप्त हो गई (शिव. रुद्र. १.१९)। पार्वती की ओर आँखें मित्रमित्रा कर देखने से इसकी आँखें आँल नष्ट हो गई, तथा दाहिनी पीली पड़ गई। इस लिये इसे एकाक्षिगलिन् नाम प्राप्त हुआ (वा. रा. उ. १३)। इसे मणिश्रीव तथा नलकूबर नामक दो पुत्र थे (भा. १०.९.२२-२३)। यह उत्तराधिपति है तथा उत्तर की ओर स्थित यक्षलोक में रहता है। वृद्धि तथा ऋद्धि इसकी शक्तियाँ हैं। मणिभद्र (वा. रा. उ. १५), पूर्णभद्र, मणिमत्, मणिकंधर, मणिभूष, मणिस्त्राविन्, मणिकामुंक्षारक नामक यक्ष इसके सेनापति हैं (दे. भा. १२.१०)। इसकी कुवेरसभा नामक एक सभा है। इस सभा में, यह ऋद्धि तथा अन्य सौ क्रियाओं के साथ बैठता है। इसे नलकूबर नामक एक पुत्र था (म. स. १०.१९)। कुवेर की एक पत्नी का नाम भद्रा दिया गया है (म. आ. १९१.६)। यक्षों के अधिपतित्व के लिये इसने कावेरीनमंदासंगम पर तप किया, तत्र शिवकृपा से इसकी इच्छा पूरी हुई (पद्म. स्व. १६)। गंधमादन पर्वत में स्थित संपत्ति का चतुर्थांश भाग इसके काबू में है। इसी संपत्ति का षोडशांश मानवों को दिया है। यह अपने राक्षसों सहवर्तमान गंधमादन पर्वत के शिखर पर रहता है (पद्म. स्व. ३)। मेरुपर्वत के उत्तर में स्थित विभावरी इसका एक वासस्थान है (भा. ५. २१. ७)। कैलास पर्वत पर यह राक्षस अप्सराओं के साथ रहता है। सौगंधिक नामक वन इसका है (भा. ४.६.२३)। यह अलकाधिप है। कैलास के दक्षिण भाग में वैद्युत नामक

पर्वत है। उसकी तराई में मानससरोवर है। वहाँ सरयू नदी का उद्गम होता है। उसके किनारे वैभ्राज नामक एक दिव्य वन है। वहाँ प्रहेतुपुत्र ब्रह्मधान नामक एक राक्षस रहता है। वह कुवेर का सेवक है (वायु. ४७.१८)। यह उस प्रदेश में रहनेवाले यक्ष, राक्षस, पौलस्त्य तथा अगस्ति लोगों का राजा तथा अलकाधिप है (वायु. ६९.१९६)। यह सूर्य के उत्तर की ओर रहता है (भवि. ब्राह्म. १२४)। अर्जुन को शिवदर्शन होने के बाद, वरुण के समान इसने भी अर्जुन को दर्शन दिया तथा एक अन्न दिया (म. व. ४२.७)। श्रौपदी का प्रार्थनानुसार, भीम ने कुवेर के उपवन के सरोवर में खिले कमल, वहाँ के राक्षसों का कथन न मानकर ले लिये। कुवेर ने इसे नहीं रोका (म. व. १५२)। जब इसे पता चला कि, भीम ने मणिमान का वध किया तब यह क्रोधित हो गया, तथा सेनासहित पांडवों के पास गया। एक दूसरे को देख कर पांडव तथा यह आनंदित हुए। कुवेर ने पांडवों को योग्य उपदेश किया तथा कहा कि, इन्द्र अर्जुन की प्रतीक्षा कर रहा है (म. व. १५९)। पूर्वजन्म में यह कांपिल्य नगरी में अग्निहोत्री यज्ञदत्त का गुणनिधि नामक पुत्र था (शिव. रुद्र. स. १९)। ब्रह्मण शत्रिय एकता से राज्यसुख की वृद्धि होती है, इस विषय पर मुचुकुंद से कुवेर का संवाद हुआ था (म. शां. ७५)। स्व का यक्षों से युद्ध होने के बाद, इसने उसे उपदेश किया (भा. ४.१२.२)। इसे सोम नाम भी है। इसी लिये उत्तर दिशा को सौम्या नाम प्राप्त हुआ है।

कुवेर वारक्य—जयंत वारक्य का शिष्य (जै. उ. प्रा. ३.४१.१)।

कुवेराणि—अंगिरासकुल का गोत्रकार।

कुब्जा—एक विलुप्त स्त्री। दुर्देव से इसे बात्यावस्था में ही वैधव्य प्राप्त हुआ। इसने साठ वर्षों तक अपना जीवन पुण्यकर्म में व्यतीत किया। प्रत्येक वर्ष माघरतान भी किया। तदनंतर यह वैकुण्ठलोक में गई। सुंदोपसुंदों का नाश करने के लिये, इसने तिलोत्तमा के नाम से अवतार लिया। इसके हावभावों से मोहित हो कर, सुंदोपसुंद एक दूसरे से लड़ मरे। तब इसका अभिर्नंदन कर, ब्रह्मदेव ने इसे सूर्यलोक में स्थान दिया (पद्म. उ. १२६)।

२. कंस की दासी। यह शरीर के तीन स्थानों में वक थी। कंस ने धनुर्बाण के लिये कृष्ण तथा बलराम को

मथुरा-में लया। तत्र कृष्णप्रसाद से इसका शरीर सरल हुआ (भा. १०.४२; ब्रह्म. १९६)।

३. कैकयी की मंथरा नामक दासी का अन्य नाम (मंथरा देखिये)।

कुमार—ब्रह्मदेव का मानसपुत्र तथा प्रजापति (वायु ६६.५३)। वायुपुराण में, ब्रह्मदेव के सनक, सनंद, सनातन तथा सनःकुमार इन पुत्रों के लिये कुमार नाम की योजना की गई है। ये ब्रह्मानसपुत्र सर्वदा पांच छः वर्ष के बालकों के समान दीखते हैं। इसी लिये इन्हें कुमार कहा गया है।

यह अपने भ्राताओं सहवर्तमान जब वैकुंठ गया था, तब द्वारपालों ने इसे प्रतिबंध किया। इसलिये इसने उन्हें शाप दिया (भा. ७.१.३७)। इसने सांख्यान को भागवत कथन किया (भा. ३.८.७)।

२. स्कंद देखिये।

३. अनल नामक वसु को स्वाहा से उत्पन्न पुत्र।

४. सोम नामक शिवावतार का शिष्य।

५. शिल्पशास्त्र पर लिखनेवाले अठारह वास्तुशास्त्र-कारों में से एक (मत्स्य. २५२.२)।

कुमार आग्नेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ७.१०१; १०२)। वसु देखिये।

कुमार आग्नेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२.१; ३-८; १०-१२)।

कुमार यामायन—(ऋ. १०.१३५)।

कुमार हारित—गालव का शिष्य। इसका शिष्य कैशोर्य काण्य (वृ. उ. २.६.३; ४.६.३)। रेत का महत्त्व वर्णन करते समय बताई गई आचार्यपरंपरा में, इसका नाम है (वृ. उ. ६.४.४)।

कुमार हैहय—एक राजा। एक बार मृग समझ कर इसने एक ऋषिपुत्र का वध किया। तत्र इसे अत्यंत पश्चात्ताप हुआ। वह ऋषिपुत्र कौन होगा, उसकी इसने खोज की। खोजतेखोजते यह अरिष्टनेमि तार्क्ष्य के आश्रम में गया, तथा उन्हें बंदन कर नीचे बैठा। इतने में मारा गया हुआ ऋषिपुत्र वहाँ आया। उसे देख कर राजा को आश्चर्य हुआ। यह ऋषि से कुछ पूछने ही वाला था कि, ऋषि ने कहा, हे राजा, तुम आश्चर्य मत करो। हमलोग तपोब्रह्म से इच्छामरणी बन चुके हैं। इसलिये, तुम्हारे हाथों ब्रह्म-हत्या हुई, ऐसी शंका मन में मत लाओ। इतना सुन कर यह अपने नगर में गया (म. व. १८२)। यह हैहय नाम से प्रसिद्ध है, लेकिन वंशावलि में अप्राप्य है।

कुमारी—चित्रलेखा देखिये।

२. धनंजय की पत्नी।

कुमुद—विष्णु के पार्षदगणों में से एक (भा. ८. २१)।

२. गोमती नदी के किनारे, रम्यक पर्वत पर रहनेवाला रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. २६)। अर्कचन के साथ हुए युद्ध में इसने काफी पराक्रम दिखाया (वा. रा. यु. ५५)।

३. कश्यप तथा कद्रु का पुत्र।

४. वायु, विष्णु, ब्रह्मांड तथा भागवत मतानुसार व्यास की अथर्वन् शिष्यपरंपरा के पथ्य का शिष्य।

कुमुदाक्ष—एक नाम। कश्यप एवं कद्रु का पुत्र (म. आ. ३१.१५)।

२. मणिवर तथा देवजनी का पुत्र। इनके पुत्रों का साधारण नाम गुह्यक है।

कुमुदक्षेप—विष्णु का पार्षद।

कुमुद्वती—दाशरथि राम की स्तुषा तथा कुश की दूसरी स्त्री। अतिथि राजा इसी का पुत्र था। चंका इसकी सौत्र थी। उसे पुत्र न था, इसलिये इसका पुत्र अतिथि सूर्यवंश का विस्तार करनेवाला हुआ। एक बार जलक्रीडा करते समय, कुश के हस्तभूषण सरयू में गिर पड़े, जिन्हें कुमुद नाग की बहन कुमुद्वती नागलोक ले गयी। कुश ने क्रोधित हो कर सरयू को सोखने के लिये हाथ में धनुष-बाण लिया। तत्र कुमुद नाग ने हस्तभूषणसहित कुमुद्वती कुश को अर्पित कर दी (आ. रा. विवाह. ४)।

२. मयूरध्वज राजा की स्त्री तथा ताम्रध्वज राजा की माता।

कुंपत—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कुंभ—प्रल्हाद दैत्य के पुत्रों में से एक (म. आ. ५९. १९)।

२. कुंभकर्ण का ज्येष्ठ पुत्र (कुंभनिकुंभ देखिये)।

३. लंका का एक सामान्य राक्षस (भा. ९. १०. १८)।

४. हिरण्याक्ष की सेना का एक असुर। कुबेर से यह युद्ध कर रहा था, तत्र कुबेर ने इसके सब दांत गिरा दिये। यह कुबेर की मदद को आनेवाले इंद्र पर क्षय। इंद्र ने वज्रप्रहार कर इसका वध किया (पद्म. सु. ७५)।

कुंभकर्ण—रावण का छोटा भाई। वैवस्वत मन्वंतर में, पुलस्त्यपुत्र विश्रवा ऋषि को-कैकसी से उत्पन्न चार पुत्रों में दूसरा। भागवत के मत में, केशिनी इसकी माता

थी। इसने जन्मते ही हजारों लोगों को खा डाला। तब इसकी शिकायत ले कर लोग इंद्र के पास गये। इंद्र ने क्रोधित हो कर इस पर वज्र फेंका। कुंभकर्ण हाथ पैर पटक कर और भी गर्जना करने लगा। इस कारण लोगों को अधिक कष्ट होने लगे। इसने ऐरावत का एक दांत उखाड़कर इंद्र पर फेंका, तथा इंद्र को रक्तरंजित कर दिया। ब्रह्मदेव को इस बात का पता चला। तब उन्होंने लोकसंरक्षणार्थ इसे सदा निद्रित रहने का शाप दिया। रावण की प्रार्थना पर, इसे छः माहों में एक दिन जागने का ब्रह्मा ने उःशाप दिया (वा. रा. यु. ६१)। कुबेर की बराबरी करने के लिये, रावणादि के साथ इसने भी गोकर्णक्षेत्र में दस हजार वर्षों तक तपस्या की। जब ब्रह्मदेव इसे बरदान देने लगे, तो देवों ने विरोध किया। देवों ने कहा, इसने नन्दनवन के सात अप्सरायें, इन्द्र के दस सेवक, उसी प्रकार अन्य कई लोग तथा ऋषियों का भक्षण किया है। इसलिये इसे बर मत दो। देवों की इच्छा सफल हो, इसलिये ब्रह्मदेव ने सरस्वती को बुलाया तथा उसकेद्वारा कुंभकर्ण को उपदेश करवाया। तब इसने दीर्घकालीन निद्रा मांगी। ब्रह्मदेव 'तथास्तु' कह कर चला गया। पीछे यह पछताने लगा, परंतु उसका कुछ लाभ नहीं हुंवा (वा. रा. उ. १०)।

कुबेर की लंका रावण ने छीन ली। तब रावण के साथ यह भी लंका में गया। वहाँ जाने पर विरोचनपुत्र बलि की पौत्री वज्रज्वाला से इसका विवाह हुआ (वा. रा. उ. १२)। रावण ने अपने निद्राप्रिय बंधु के सोने की उत्कृष्ट व्यवस्था कर रखी थी। उसने विश्वकर्मा से चार कोस चौड़ा तथा आठ कोस लंबा एक मुंदर घर बनवाया। वहाँ यह सदैव निद्रिस्त पड़ा रहता था (वा. रा. उ. १३)। जाग्रत रहने पर, वह सभा में भी आता था। युद्ध होने के पहले बुलाई गई एक सभा में यह उपस्थित था। वहाँ सीताहरण के लिये इसने रावण को श्रेष्ठ दिया। फिर भी रावण से इसने कहा, "मैं भविष्य में सब प्रकार से तुम्हारी सहायता करूंगा (वा. रा. यु. १२)। तदनंतर अनेक योद्धाओं की मृत्यु के बाद, रावण अकेला ही राम से युद्ध कर रहा था। तब रावण का पराभव हुआ। रणांगण से वापस आने के बाद उसे अपने बंधु का स्मरण हुआ। उसने यूपक्ष को कुंभकर्ण को जाग्रत करने के लिये भेजा। युद्ध के संबंध में प्राथमिक चर्चायें जिस सभा में हुईं, वहाँ कुंभकर्ण उपस्थित था। तब से जो कुंभकर्ण सोया था, वह

नीं महीने हो जाने पर भी सोया ही रहा। इसे जाग्रत करने के लिये आये हुए लोगों ने, यह जाग्रत होते ही खाने के लिये मृग, महिष तथा वराह के बड़े बड़े ढेर इसके द्वार के पास रच दिये। अन्न की ढेरियाँ तैय्यार की। रक्त, मांस तैय्यार किया। चन्दन का लेप इसके शरीर को लगाया। सुगंधित द्रव्य सुंवाये। भयंकर आवाज की। फिर भी कुछ परिणाम नहीं हुआ। तब इसके वक्षस्थल पर प्रहार करना प्रारंभ किया। इसके कान में पानी डालना, काट खाना आदि प्रयत्न हुए। जब इसके शरीर पर हजार हाथी तुमाये, तब कहीं यह जाग्रत हुआ। जम्हाई लेते हुए सामने रखी हुई सब सामग्री इसने भक्षण की। धीरे से लोगों ने सारा वृत्त द्ये कथन किया। तब यह तुरंत युद्ध करने के लिये ही निकला। परंतु महोदर ने सुझाया कि, पहिले रावण की सलाह ले कर, फिर युद्ध के लिये जाना अधिक योग्य रहेगा। तब यह बंधु के पास गया। वहाँ इसने प्रथम रावण को ही उपदेश की चार बातें सुनायीं। परंतु रावण को यह उपदेश पसंद नहीं आया। तब रावण सुष हों, ऐसी बातें कहने का प्रारंभ इसने किया। महोदर ने सुझाया कि, यदि रावण की मृत्यु हो गई है, या अफवाएं चारों ओर फैला दी, तो सीता स्वयं ही शरण आ जावेगी। तब कुंभकर्ण ने इस मार्ग का तिरस्कार किया तथा युद्ध का पुरस्कार किया।

यह रणांगण में दाखल हुआ। इसका प्रचंड शरीर देख कर बंदरसेना भयभीत हो कर भागने लगी। परंतु सब को धीरज दे कर, अंगद ने एकत्रित किया। प्रथम इसने शूल से हनुमान को आहत किया। तब अपनी सेना को नील ने धीरज बंधाया। ऋषभ, शरभ, नील तथा गवाक्ष को कुंभकर्ण ने खून की उलटी करवाई। बंदरों से भरे वृक्ष के समान कुंभकर्ण का शरीर दिखने लगा। कुंभकर्ण के द्वारा फेंका गया शूल अंगद ने बड़ी युक्ति से वचा लिया, तथा इसकी छाती पर प्रहार कर, इसे मूर्च्छित किया। होश में आते ही, अंगद को कुंभकर्ण ने वेहोश किया।

सुग्रीव को लेकर यह लंका की ओर चला गया। तब सुग्रीव ने इसके नाक, कान तोड़ दिये तथा वह राम के पास लौट आया। उस विद्रूप स्थिति में भी, यह लौट आया तथा इसने भयंकर युद्ध किया। अन्त में राम तथा लक्ष्मण के साथ युद्ध करते समय अर्धचन्द्र बाण से राम ने इसकेपैर तोड़ दिये। तब इसका भयंकर शरीर भूमि पर गिर पड़ा। फिर भी मुँह फैला कर राम की ओर सरकते हुए आने का यह प्रयत्न कर ने लगा। तब ऐंद्रबाण से राम

ने इसको वध किया (वा. रा. यु. ६०-६७)। रामायण के अनुसार इसका वध राम ने किया। परंतु महा-भारत के अनुसार लक्ष्मण ने किया (म. व. २७१-१७)। इसका दारि गिरने से लंका के अनेक गोपुर मग्न हो गये (म. व. २८६-८७)। इसे कुंभनिकुंभ नामक दो बल्लव्य पुत्र थे।

कुंभनाभ—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कुंभनिकुंभ—कुंभकर्ण को वृत्रज्वाला से उत्पन्न दो पुत्र। ये अत्यंत पराक्रमी तथा बलवान् थे। रावण ने जब इन्हें रामसेना से लड़ने के लिये भेजा, तब इन्होंने भयंकर युद्ध किया। अन्त में सुग्रीव ने कुंभ का तथा हनुमान ने निकुंभ का वध किया (वा. रा. यु. ७५-७७)।

कुंभमान—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कुंभयोनि—अमस्त्य ऋषिका नामांतर।

२. द्रोणाचार्य को भी यह नाम दिया जाता है (म. द्रो. १५९.४)

कुंभरेतसू—भारद्वाज अग्नि तथा वीरा का पुत्र। इसे शरयू नामक स्त्री तथा सिद्धि नामक पुत्र था। वीर, रथप्रभु तथा रथाश्वान ये नाम इसीके ही हैं। यह एक प्रकार का अग्नि है (म. व. २०९)।

कुंभहनु—प्रहस्त का सविष। इसका वध तार नामक बंदर ने किया (वा. रा. यु. ५८)।

कुंभांड—वाणासुर का मंत्रि। बलि के मंत्रियों में श्रेष्ठ (नारद. १.१०)। चित्ररेखा का पिता (भा. १०.६२)। बलराम के साथ इसका युद्ध हो कर उसीमें इसकी मृत्यु हुई (भा. १०.६३)।

२. देवीभृङ्गीश्वर नामक शिवावतार का शिष्य।

कुंभिनसी—बलि दैत्य की कन्या तथा वाणासुर की भगिनी (मत्स्य. १८७.४१)।

२. सुमाखी राक्षस को केतुमती से उत्पन्न चार कन्याओं में कनिष्ठ। रावणमाता कैकसी की यह भगिनी थी।

३. मात्यवान् राक्षस की कन्या अनला को विश्रवसु राक्षस से उत्पन्न कन्या। मधु नामक राक्षस ने इसका हरण किया तथा इससे विवाह किया। उससे इसे उत्पन्न पुत्र लवणासुर नाम से प्रख्यात है।

४. पुष्पोत्कट को विश्रवा ऋषि से उत्पन्न कन्या (लिंग. १.६३)।

५. अंगारपर्ण गंधर्व की स्त्री।

६. चित्ररथ गंधर्व की स्त्री (म. आ. १५८.३१)।

कुंभोदर—राम को तीर्थयात्रा करवानेवाला एक ऋषि (आ. रा. वाग. ५-६)।

कुयव—कुत्स के लिये इसका वध इन्द्र ने किया (ऋ. २.१९.६)।

कुयवाच—इन्द्र ने दुर्योधन के लिये इसका वध किया (ऋ. १.१७४.७)।

कुरु—(स्वा. प्रिय) आग्नीध्र को पूर्वचित्ती से उत्पन्न सातवाँ पुत्र। इसकी पत्नी मेरुकन्या नारी है। इसका वर्ष इसीके नाम से प्रसिद्ध है (भा. ५.२.१९-२१)।

२. (सो. अज.) संवरण को तपती से उत्पन्न पुत्र। इसकी पत्नियों के नाम शुभांगी तथा वाहिनी। शुभांगी के पुत्र का नाम विदूरथ (म. आ. ९०-४१)।

वाहिनी के पुत्र के नामः—अश्वत् (अविश्वत्), अमि-ष्वत्, चित्ररथ, मुनि तथा अनमेजय (म. आ. ८९.४४)। भागवत के मत में परीक्षित, मुघनु, जहु तथा निषधाश्व। परंतु मत्स्य में निषधाश्व के बदले प्रजन है (मत्स्य. ५० २३)। भविष्य मत में यही अहीनजपुत्र है। वैदिक वाङ्मय में कुरु का उल्लेख है (जै. उ. ब्रा. १.३.८.१)। इससे सुप्रसिद्ध कुरुवंश प्रारंभ हुआ। इसके वंशजों को कौरव कहते हैं। इसीकी तपश्चर्या से कुरुजांगल प्रदेश कुरुक्षेत्र नाम से प्रसिद्ध हुआ (म. आ. ८९.४३)। कुरुक्षेत्र की पवित्रता तथा वहाँ का सदाचार वेदकाल से प्रसिद्ध है। उपनिषदों में कुरुपांचाल देश के तत्त्वज्ञ का निर्देश आया है (कौ. उ. ४.१. बृ. उ. ३.१.१, ६.१.९)। कुरुक्षेत्र का माहात्म्य अनेक पुराणों में है। वंश, उशीनर-सहित कुरुपांचाल मध्यप्रदेश है (ऐ. ब्रा. ८.१४)।

३. यह एक विशिष्ट लोगों का नाम है (देवभाग श्रौतर्ष देखिये)।

कुरुंग—देवातिथि काण्व ने इसके दान की प्रशंसा की है। यह तुर्वसों का राजा था (ऋ. ८.४.१९)। कदाचित् यह कुरुवंश का होगा (नि. ६.२२)।

कुरुवत्स—(सो.) भविष्य के मत में नवरथपुत्र।

कुरुवंश—(सो. क्रोष्ट.) मधुराजा का पुत्र। इसका पुत्र अनु (भा. ९.२४.५)।

कुरुश्रवण त्रासदस्यव—त्रासदस्यु का पुत्र। इसके दान की कवप ऐन्द्र ने प्रशंसा की है (ऋ. १०.३३.४-५)। इसी सूक्त में, मित्रातिथि की मृत्यु के दार उसके पुत्र उपमश्रवस् का समाचार लेने के लिये कवप ऐन्द्र के आने का निर्देश है। वास्तविक रूप से, इस सूक्त में आये

हुए दो घटनाओं का कुल संबंध नहीं है, यह सायणमत योग्य है। कवच केवल सूक्तकार है (बृहदे. ७.३५-३६)।

कुरुसुति काण्व—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.७६-७८)।

कुल—दाशरथि राम की सभा का एक हास्यकार।

२. दाशरथि राम की सेना का एक वानर।

कुलक—(सू. इ.) रणक राजा का नामांतर।

२. (सू. इ. भविष्य.) मरुत्य के मत में क्षुद्रकपुत्र। इसे भागवत में रणक, विष्णु में कुंडक तथा वायु में क्षुभिक कहा है।

कुलह—कश्यप कुल का एक गोत्रकार।

कुलिक—कद्रुपुत्र एक नाम (म. भा. ५९.४०)।

कुल्मलबर्हिस्—सामद्रष्टा (तां. ब्रा. १५.३.२१)।

कुल्मलबर्हिस् शैलूष—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१२६)।

कुवल—वीरवर्मन का पुत्र (वीरवर्मन देखिये)।

कुवल्याश्व—(सो. काश्य.) एक चक्रवर्ति राजा (मै. उ. १.४)। दिवोदासपुत्र प्रतर्दन का नामांतर। इसेही कुवलाश्व, युमत, शत्रुजित तथा ऋतुश्वज नामांतर हैं। भविष्य के मत में यह बृहदश्व का पुत्र था।

कुवला—हंसश्वज की कन्या तथा सुधन्वा की भगिनी।

कुवलाश्व—(सू. इ.) बृहदश्व राजा का पुत्र। वन में जाते समय, बृहदश्व ने इसे उत्तकाश्रम को पीड़ा देने वाले, धुंधु नामक दैत्य का पारिपत्य करने के लिये कहा। तब उत्तक को साथ ले कर यह धुंधु के निवासस्थान पर गया। धुंधु दैत्य उज्जालक नामक बालुकामय समुद्र के तल में, अपने अनुयायियोंसहित सोया था। तब कुवलाश्व ने अपने हटाश्रादि सौ पुत्रों को—भागवत में पुत्रसंख्या २१००० दी गई है (९.६)—उस बालुकामय सागर की बालुका हटाने के लिये कहा। संपूर्ण बालुका हटाने के बाद धुंधु बाहर आया। उस समय, उसके मुख से अग्नि की ज्वालामय निकल रही थी। उन ज्वालाओं से कुवलाश्व के हटाश्व, कपिलाश्व तथा मद्राश्व को छोड़कर अन्य सब पुत्र जल गये। अतः कुवलाश्व स्वयं धुंधु से लड़ने के लिये गया। तब विष्णु ने उत्तक ऋषि को दिये वर के कारण अपना तेज कुवलाश्व के शरीर में डाला। तात्काल कुवलाश्व ने धुंधु का पराभव किया, तथा धुंधुमार नाम प्राप्त किया। कुवलाश्व के बाद हटाश्व गद्दी पर बैठा (म. व. १९३; ह. वं. १.११; वायु. ८८; ब्रह्माण्ड. ३.६३.२९, ब्रह्म. ७; भा. ९.६; विष्णुधर्म. १.१६; कुवलाश्व देखिये)।

मार्कंड मतानुसार कुवलाश्व शत्रुजित का पुत्र था (मदालसा देखिये)।

२. प्रतर्दन देखिये।

कुश—(सो. आयु.) भागवत मत में सुहोत्र राजा के तीन पुत्रों में दूसरा। इसका पुत्र प्रति। कुश राजा से कुशवंश प्रारंभ हुआ।

२. (सो. क्रौटु.) विदर्भ राजा के तीन पुत्रों में प्रथम।

३. (सो. पुरुरवस्.) अजक राजा का पुत्र। इसे कुशिक भी कहते थे। इसे कुशांबु, असर्तुरजस्, वसु तथा कुशनाम नामक चार पुत्र थे। उन्हें कौशिक संज्ञा थी (ब्रह्मवे. २.१३)।

४. (सू. इ.) भविष्य के मत में दाशरथि राम का पुत्र। इसने १००० वर्षों तक राज्य किया (कुशल्य देखिये)।

५. एक दैत्य। इसने शंकर से अमरत्व प्राप्त किया। इस कारण, विष्णु इसे मार नहीं सकता था। अन्त में इसका सिर जमीन में गाड़ कर उस पर शिवलिंग स्थापित किया। तब यह शरण आया (स्कंद. ७. ४. २०)।

कुशकेतु—हेमकान्त देखिये।

कुशश्वज—रथश्वज राजा का पुत्र तथा वेदवती का पिता (वेदवती देखिये)।

२. (सू. निमि) हस्वरोमा नामक जनक के, दो पुत्रों में दूसरा। सीरश्वज जनक का कनिष्ठ श्रेणु। यह मिथिला में सांकाश्य नामक राजधानी में राज्य करता था (वा. रा. वा. ७१. १६-१९)। मांडवी तथा श्रुतकीर्ति इसकी दो कन्यायें थीं। वे दशरथपुत्र भरत तथा शत्रुघ्न को क्रमशः दी गईं थीं। सीरश्वज को पुत्र न था। इसलिये उसके पश्चात् यह मिथिला का राजा बना था। इसके पुत्र का नाम धर्मश्वज जनक। कुल स्थानों पर इसे सीरश्वज का पुत्र भी कहा गया है (भा. ९. १३; वायु ८९)।

३. बृहस्पति का पुत्र (बृहस्पति देखिये)।

४. एक राजा। पूर्वजन्म में यह वानर था। उस समय यह झूले पर स्थित शंकर को रात भर छुलाता था। उस पुण्यसंचय से इसे यह जन्म प्राप्त हुआ। इस जन्म में इसने दमनकव्रत किया। बाद में, अमिवेश ऋषि की कन्या जय नमनस्थिति में स्नान कर रही थी, तब इसने उसका हरण किया। इसलिये उस ऋषि ने इसे 'तुम यद्य वनोगे' ऐसा शाप दिया। परंतु इसने क्षमा मांगने पर उच्छान दिया, 'इन्द्रद्युम्न को सहायता करने से, तुम मुक्त हो जाओगे' (स्कंद. १. २. १२)।

कुशनाम—(सो. अमा.) कुश अथवा कुशिक राजा के चार पुत्रों में चौथा। इसने महोदय नामक नगरी की स्थापना की थी। इसकी सौ कन्यायें वायु के कोप से बह हो गईं। उन्हें कांपिलीपुरी के तुलिसुनु ब्रह्मदत्त राजा को दिया गया। तब उनका शरीर सीधा हुआ। परंतु काशियस्य देश को कान्यकुब्ज नाम जो मिला, वह वैसा ही रहा (वा. रा. वा. ३२. ३३; भा. ९. १५)।

२. वैवस्वत मन्वन्तर का एक मनुपुत्र।

कुशरीर—वेदशिरस् नामक शिवावतार का शिष्य।

कुशल—यह तथा इसकी पत्नी दुराचारी थे। परंतु पुत्रद्वारा गया में फिड़दान किये जाने के कारण, इनका उदार हुआ (पद्म. उ. २१३)।

२. प्रियव्रत का प्रधान (गणेश. २.३२-१४)।

कुशलव—दाशरथ राम से सीता को उत्पन्न जुड़वाँ पुत्र। लोकप्रवाद के भय से, राम ने सीता का त्याग करने का निश्चय किया। लक्ष्मण के द्वारा, उसे तमसा के किनारे वाल्मीकिआश्रम के समीप छोड़ दिया। यह वार्ता शिष्यों के द्वारा वाल्मीकि को ज्ञात हुई। तब आश्रम में मुनि पत्नियों के पास सीता की रहने की व्यवस्था उसने कर दी (वा. रा. उ. ४८-४९)।

बाद में श्रावण माह में, आधी रात के समय सीता प्रसूत हुई तथा उसे दो पुत्र हुए। जैसे ही वाल्मीकि को यह मालूम हुआ, वैसे ही बालकों की सुरक्षा के लिये वह दौड़ा। निचले हिस्से में तोड़ी हुई दर्भमुष्टि, अभिमंत्रित कर के उसने वृद्ध क्रिया को दी, तथा प्रथम जन्म हुए पुत्र के शरीर पर से गुमाने के लिये कहा। बाद में जन्मे पुत्र के शरीर से, दर्भ का उपरीला हिस्सा गुमाने के लिये कहा। इन दोनों पुत्रों का नाम क्रमशः कुश तथा लव रखने के लिये कहा (वा. रा. उ. ६६)। दर्भ तथा दूर्वाकुलों से इनके शरीर पर पानी सींचा गया, इस लिये इनके नाम कुश तथा लव रखे गये (जै. अ. २८)। जिस दिन लव तथा कुश का जन्म हुआ, उस दिन लवणासुर का पारिपत्य करने के लिये जाता हुआ शत्रुघ्न वाल्मीकि के आश्रम में ही था। यह वार्ता ज्ञात होते ही उसे अत्यंत आनंद हुआ। पद्मपुराण में लिखा गया है, लवणासुर का पारिपत्य कर के शत्रुघ्न जब वह वापस जा रहा था, तब वह आश्रम में आया था, परंतु सीता आश्रम में प्रसूत हो गई है, यह वार्ता वाल्मीकि ने उसे नहीं बताई (पद्म. पा. ५९)। यह कथन उपरोक्त कथन के ठीक विपरीत है।

प्रा. च. २०]

इसके बाद वान्मीकि ने इनके जातकर्मादि संस्कार किये। वेद एवं वेदों के दृढीकरण के लिये उन्हें रामायण सिखाया। धनुर्विद्या के समान क्षात्रविद्या में इन्हें निष्णात किया। बाद में अश्वमेध करने के लिये राम ने अरवसेधीय अश्व छोड़ा। इन्होंने उसे पकड़ लिया। उस अश्व के मस्तक पर लिखे हुए लेख ने इनका क्षत्रियत्व जायत किया। उस लेख में लिखा था:—

“एकवीराय कौसल्या तस्याः पुत्रो रघूदहः। तेन रामेण मुक्तोऽसौ वाजी गृह्णात्विमं वली”। यह देख कर लव ने कहा, “क्या हमारी माँ वंध्या है, क्या वह एकवीरा नहीं है?” मुनिकुमारों द्वारा निवारण किये जाने पर भी लव ने उनकी एक न सुनी। तब कहा ‘सीता का पुत्र हो कर भी, यदि मैंने तुम्हारे जैसा ही व्यवहार किया, तो मैं एक कुमी ही सिद्ध हो जाऊंगा। अश्व रक्षा के लिये शत्रुघ्न नियुक्त था। उसने जब लव को मूर्च्छित किया, तब कुश ने आ कर शत्रुघ्न को मूर्च्छित किया। बाद में लक्ष्मण अपनी सेनासहित आया। लव ने जायत हो कर, सूर्य से नया धनुष्य प्राप्त किया। लक्ष्मण, भरत तथा हनुमान का भी लव ने पराभव किया। तब राम को मजबूरी से रणांगण पर आना पड़ा। शिर्भाषण तथा सुग्रीव को ले कर राम रणांगण पर आया। दोनों कुमारों को देखते ही उसने “तुम ने धनु-वेद किससे सीखा?, तुम्हारे माँ त्राप कौन है?, आदि प्रश्न पूछे। अंत में राम ने कहा कि, जब तक तुम अपना कुल नहीं बताते, तब तक मैं युद्ध नहीं करूंगा। तब इन्होंने कहा, ‘हम सीता के पुत्र हैं’। यह सुनते ही राम के हाथ से धनुष गिर पड़ा। सुग्रीव आदि ने वहुत प्रयत्न किये। फिर भी सब का बध कर, तथा राम को भी मूर्च्छित कर, दोनों बालक घर गये। ये हनुमान को सीता के मनोरंजन के लिये साथ लाये। परंतु सीता ने उसे वापस भेजने के लिये कहा। अब तक वाल्मीकि आश्रम में नहीं था। वापस आते ही, उसने पुत्र तथा पत्नी का स्वीकार करने के लिये राम से कहा। पश्चात् बालक अश्वों के संरक्षक बने तथा यज्ञ पूर्ण हुआ (जै. अ. २८-३६)।

वाल्मीकि रामायण में इस प्रसंग का उल्लेख नहीं है। इस ग्रंथ में लिखा है कि, कुशलव तथा राम की भेंट रामायणगान के कारण हुई। जिस समय राम ने अश्व-मेध किया, तब अनेक कलाकार एकत्रित हुए थे। वाल्मीकि को भी बड़े सम्मान से निमंत्रण मिला था। उसके साथ ये दोनों भी अयोध्या गये। वहाँ वाल्मीकिद्वारा सिखाया

गया रामायण महाकाव्य तालसुरों के साथ गाना इन्होंने प्रारंभ किया। ऋषियों के पवित्र स्थान, ब्राह्मणों के निवासस्थान, उग्रमार्ग, राजमार्ग, राजाओं के निवासस्थान, राम का निवासस्थान, तथा जहाँ ऋत्विजों के अनुष्ठान हो रहे थे, ऐसे स्थानों पर रामायण गाने का क्रम इन्होंने जारी रखा। यह कभी इस मेल को बिगाड़ते नहीं थे। रोज़ ये बीस सगों का गायन करते थे। इन्हें वाल्मीकी की आज्ञा हुई थी कि, धन की अपेक्षा न की जाये। यदि कोई धन देने ही लगे, तो कहा जाये कि, हम मुनिकुमारों को धन की क्या आवश्यकता है? अगर किसी ने पूछा कि, तुम किसके पुत्र हो, तो ये कहते थे कि, हम वाल्मीकि के शिष्य हैं। परंतु रामायण-श्रवण से राम को पता चला कि, कुशलव उसीके पुत्र हैं (वा. रा. उ. ९३-९४)।

राम ने कोसल देश का राज्यभिषेक लव को किया। उत्तर कोसल का राज्यभिषेक कुश को किया (वा. रा. उ. १०७)। लव की सुमति तथा कंजानना नामक दो पत्नियाँ थीं, तथा कुश की चंपका नामक पत्नी थी (आ. रा. विवाह. ६-७)।

कुशाग्र—(सो. अज.) भागवत मत में उपरिचर वसु का पुत्र बृहद्रथ के दो पुत्रों में से दूसरा। जरासंध का कनिष्ठ बंधु। इसका पुत्र ऋषभ। परंतु वायु तथा मत्स्य पुराणों में जरासंध का उल्लेख कुशाग्रवंश में दिया है। अन्य पुराणों में यह स्वतंत्र वंश है।

कुशांब—(सो. अमा.) कुश अथवा कुशिक राजा के चार पुत्रों में प्रथम। इसे कुशांबु भी कहते थे। इसके द्वारा स्थापित नगरी का नाम कौशांबी। इसके पुत्र का नाम गाधि था (कुशिक देखिये)।

२. (सो. ऋक्ष.) उपरिचर वसु राजा के पुत्रों में एक। यह चेदि देश का अधिपति था (भा. ९.२२)। इसे मणिवाहन नामांतर था (म. आ. ५७.१०)।

कुशांबु—कौशांबी नगरी में रहनेवाला एक राजा (कुशांब देखिये)।

कुशल—(मौर्य. भविष्य.) ब्रह्मांड के मत में अशोक-पुत्र।

कुशावर्त—(स्वा. प्रिय.) एक राजा। ऋषभदेव तथा जयंती का पुत्र। इसका खंड इसीके नाम से प्रसिद्ध है (भा. ५.४)।

कुशिक—(सो. अमा.) विश्वामित्र का पूर्वज (ऋ. ३.३३.५)। वैदिक ग्रंथों में इसके अनेक उल्लेख प्राप्य

हैं (ऋ. ३.२६. १; २९. १५; ३०. २०; ४२. ९; मे. ब्रा. ७. १८; सां. श्रौ. १५. २७)। शुनःशेष की कथा में इसका नाम है। यह भरतकुल का पौरुहित्य करता था। यह विशेषतः इन्द्राराधना करता था। इसीलिये इन्द्र को कौशिक कहते हैं (ऋ. १.१०.११; मै. सं. ४.५.७; श. ब्रा. ३.३.४.१९; तै. आ. १.१.४)।

यह कुश का पुत्र था। भागवत मत में इसे कुशांबु, विष्णु मत में कुशांब तथा वायु मत में कुशास्य नाम है। इसका पुत्र गाधि तथा पौत्र विश्वामित्र। यह विश्वामित्रकुल का एक गोत्रकार है। इसे इपीरथपुत्र कहा गया है (वेदार्थदीपिका ३)।

कुशिक महोदयपुर में रहता था। एक बार इसका श्वशुर, च्यवन इसके पास रहने के लिये आया। उसका हेतु था, कि इनके कुल का ताश कर दिया जावे। क्यों कि, आगे चल कर इसके वंश में संकर होनेवाला था। कुशिक ने स्त्री के साथ च्यवन की उत्कृष्ट सेवा की, तथा अपने वंश को ब्राह्मणत्व प्राप्त करने का करमन प्राप्त किया। उस प्रकार हुआ मी (म. अनु. ८७-९० कुं. विष्णुधर्म. १.१४)। इन्द्र के समान पुत्र हो, इस हेतु से कुशिक ने तपस्या की। इसलिये इन्द्र ने इसके उदर से गाधि के रूप में जन्म लिया (ह. वं. १.२०; म. शां. ४८)।

कुशिककुल के मंत्रकार—अवमर्षण, अष्टक, देवरात, देवश्रवस्, धनंजय, पुराण, बल, भूतकील, मधुच्छदस्, माम्बुधि, लोहित, विश्वामित्र, शालंकायन, शिशिर (मत्स्य. १४५.११२-११३)।

अवमर्षण, कत, कोल, पूरण, उद्रल, रेणु, ये ब्रह्मांड में अधिक हैं (२.३२.११७-११८)।

२. लंकुलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

कुशिक ऐषारथि—सुतद्रष्टा (ऋ. ३.३३; कुशिक देखिये)।

कुशिक सौमर—सुतद्रष्टा (ऋ. १०.१२७)।

कुशिकंधर—अट्टहास नामक शिवावतार का शिष्य।

कुशीबल—भावशर्मा नामक एक ब्राह्मण। अत्यधिक ताड़ीसेवन से इसकी मृत्यु हुई। इसे ताड़ का जन्म प्राप्त हुआ। कुछ भी ज्ञान न करने के कारण, उस ताड़ पर कुशीबल नामक ब्राह्मण, ब्रह्माराधन वन कर सहकुट्टेव रहता था। गीता के आठवें अध्याय का पाठ करने से,

भावशर्मा और कुशीबल दंपत्य का उद्धार हुआ (पद्म. उ. १७८)।

कुशीबल—(स. इ.) राम के पुत्र कुश तथा लव थे। इनके लिये वाल्मीकि रामायण में, सर्वत्र कुशीबल शब्द का प्रयोग आया है। आलोचक लिखते हैं कि, यह आर्षि प्रयोग है (वा. रा. वा. ४.५)। इनका कुश तथा लव नामकरण कर के (वा. रा. उ. ६६.९), वाल्मीकी जान-बूझ कर कुशीबल प्रयोग करता है यों ज्ञात होता है। कुशीबल शब्द का अर्थ, गुणगान का व्यवसाय करनेवाला कर्दीजन। वाल्मीकि ने अपना नाम न बताने की उनको आज्ञा दी थी, यह भी ध्यान में रखने की बात है। लोगों में कुशलव के लिये कुशीबल शब्द प्रयुक्त होने का यही कारण होगा (कुशलव देखिये)।

कुशमिन—ब्रह्मांड मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा के पौष्यजि का शिष्य।

कुशुभ—(सो.) भविष्य के मत में शकुनिपुत्र।

कुश्रि वाजश्रवस्—वाजश्रवस् तथा राजस्त्रवायन यज्ञवचस् का शिष्य। इसे अग्निचयन का ज्ञान था (श. ब्रा. १०.५.५.१)। इसके गशिष्य उपवेशि तथा वात्स्य (श्र. उ. ६.५.३-४)।

कुर्षंड—सर्पसत्र में पंड नामक ऋत्विज के साथ इसका नाम आया है। इस सत्र में इसके पास अभिगिर (स्तुति) तथा अपगर (निंदा) नामक कर्म थे (पं. ब्रा. २५.१५.३; ल्य. श्रौ. १०.२०.१०)।

कुर्षातक सामश्रवस्—शमनी (मेढू) नामक ब्राह्मणों का यज्ञप्रमुख। यह ब्राह्मणों का मुख्य हुआ, इसलिये इसे लुशाकपि खार्गलि ने 'भ्रष्ट होगे' ऐसा शाप दिया। इसीलिये कौषीतर्की शाखा के लोग (सांख्यायन), कहीं भी महत्त्वपूर्ण स्थान को प्राप्त नहीं हुए (पं. ब्रा. १७. ४.३)।

कुसीदकि—अंगिराकुल का गोत्रकार।

कुसीहि—विष्णु मत में व्यास की सामशिष्यपरंपरा के पौष्यजि का शिष्य।

कुसु—मणिवर तथा देवजनी का पुत्र।

कुसुदिव काव्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.८१-८३)।

कुसुमामोदिनी—पार्वती की माता की सहेली। पार्वती तपस्या करने मंदराचल पर गयी। तब उसने इसे प्रार्थना की कि, वह उधर किसी को भी न आने दे (पद्म. सू. ४४)।

कुसुमायुध—यह ब्रह्मदेव के हृदय से उत्पन्न हुआ (मत्स्य. ३.१०; काम देखिये)।

कुसुमि—सामवेदी श्रुतिर्षि।

कुसुखविंद औहालकि—एक ऋषि पशुसंपत्ति प्राप्त करने के लिये, इसने सतरात्र याग किया तथा चतुष्पाद संपत्ति से समृद्ध हुआ (तै. सं. ७.२.२.१)। इसने दशरात्र याग शुरु किया। अन्यत्र कुसुरविंद (पं. ब्रा. २.२. १५.१-१०), कुसुखविंदु (सां. श्रौ. १६.२२.१४) निर्देश हैं। यह संस्कारशास्त्र का ज्ञाता था (पं. ब्रा. १.१६) इसे औहालकि कहा गया है। इससे पता चलता है कि, श्वेतकेतु इसका बंधु होगा।

कुस्तुक शार्कराक्ष्य—श्रवणदत्त का शिष्य। इसका शिष्य भवत्रात (वं. ब्रा. १)।

कुस्तुंबुरु—एक यक्ष (म. स. १०. १५)।

कुहन—सौवीरदेशी राजपुत्र। यह जयद्रथ का बंधु था (म. व. २४९. १०)।

कुहर—भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष का राजा।

२. कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

कुहू—स्वायंभुव मन्वन्तर में अंगिरा ऋषि को श्रद्धा से उत्पन्न चार कन्याओं में द्वितीय।

२. हविर्धत नामक पितरों की स्त्री।

३. द्वादश आदित्यों में धाता नामक आदित्य की स्त्री।

४. मयासुर की तीन कन्याओं में कनिष्ठ।

कुट—कंस की सभा का एक महल। धनुर्बाण के समय बलराम ने इसका वध किया (भा. १०. ४४)।

२. पाषाणरूपी इस असुर का गणेश ने नाश किया (गणेश. २. १३)।

कूपकर्ण—एक रुद्रगण। वाणासुर के युद्धप्रसंग में इसका बलराम से युद्ध हुआ था (भा. १०. ६३)।

२. बलि के प्रधानों में अग्नेसर (नारद. १.१०)।

कूर्च—(स. नरि.) भागवत मत में मीढूस् राजा का पुत्र। इसका पुत्र इंद्रसेन।

कूर्चामुख—विश्वामित्र ऋषि का पुत्र (म. अनु. ७. ५३ कुं.)।

कूर्म—एक अवतार। प्रजापति संतति निर्माण करने के लिये, कूर्मरूप से पानी में संचार करता है (श. ब्रा. ७.५.१. ५-१०; म. आ. १६; पद्म. उ. २५९)। प्रजापति ने कूर्मरूप धारण कर प्रजोत्पादन किया। यह ग्यारहवाँ अवतार है (भा. १. ३. १६)। पृथ्वी रसातल को जा रही थी, तब विष्णु ने यह अवतार

लिया (लिग, ९४) इस कर्म की पीठ का घेरा एक लाख योजन था। दुर्वास द्वारा दी गयी पारिजातक की माला का इंद्र ने अपमान किया, इसलिये ऋषि ने उसे, 'वैभव नष्ट होगा' यों श्राप दिया। इस कारण लक्ष्मी समुद्र में गुप्त हो गयी। उसे प्राप्त करने के लिये विष्णु ने बताया, 'लक्ष्मी को निकालने के लिये, मंदराचल की मथनी, वासुकी का डोर एवं एक ओर देव तथा दूसरी ओर दैत्य, समुद्रमंथन करें। उस समय मैं स्वयं कर्म रूप ले कर, पीठ पर मंदराचल पर्वत धारण करूँगा, तब लक्ष्मी प्राप्त होगी' (पद्म. ब्र. ८.)। समुद्रमंथन के समय मंदराचल नीचे जाने लगा, तब विष्णु ने कर्मावतार धारण किया। अमृतप्राप्ति के लिये वह अमृतमंथन चल रहा था (पद्म. उ. २३१-२३३; भा. २.७.१३; ८.७.८)। देवदानवों ने इस तरह खीरसागर का मंथन कर चौदह रत्न निकाले तथा पूर्ववत् वैभव संपादित किया। लोहाघाट के पास विष्णु ने मंदर पर्वत धारण करने के लिये कर्मावतार लिया। कर्मावतार के पश्चात्, लोग एकादशी का उपास करने लगे (पद्म. उ. २६०)।

२. कश्यप तथा ब्रह्म का पुत्र (म. आ. ३५)।

कर्म गार्त्समद—सूक्तद्रष्टा (ऋ. २.२७.२९)।

कूशांब स्वायव लातव्य—साम का एक प्राचीन आचार्य। इसने यज्ञायज्ञीय साम में, गिरा के स्थान पर इरा कहने के लिये बताया (पं. ब्रा. ८.६.८)। यह लातव्य कुल के स्वायु का पुत्र होगा।

कूपमांड—एक दैत्य। कार्तिक शुक्ल नवमी के दिन इसे विष्णु ने मारा (स्कंद. २.४.३१)।

कूपमांडराज—स्वर्गणविशेष।

कृकण—किंकिण देखिये।

कृणु—एक ऋषि। वाल्मीकि देखिये।

कृत(सो. कुश.) राजा जय का पुत्र। इसका पुत्र हर्यवन।

२. वसुदेव को रोहिणी से उत्पन्न पुत्र (भा. ९.२४)।

३. मणिवर तथा देवज्ञप्ती का मुखक पुत्र।

४. व्यास की सामशिष्य परंपरा के भागवत, वासु तथा ब्रह्मांड मतानुसार हिरण्यनाभ का शिष्य। भागवत के अनुसार यह चतुर्विंशशाखाध्यायी है। यह सन्नति-पुत्र तथा हिरण्यनाभ कौसल्य का शिष्य था। इसने साम-संहिता का चतुर्विंशतिधा विभाग किया। उनको प्राच्यसाम कहते हैं। (ह. वं. १.२०.४२-४३)

५. कृति ५. देखिये।

कृतक—वसुदेव को मदिरा से उत्पन्न पुत्रों में से तीसरा (भा. ९.२४)।

कृतंजय—(स. इ. भविष्य.) भागवत मत में बर्हिराज का, विष्णु मत में धर्म का, वायुमत में धर्मिन् का, तथा मत्स्य मत में बृहद्राज का पुत्र।

२. एक व्यास (व्यास देखिये)।

कृतद्युति—चित्रकेतु राजा की करोड़ स्त्रियों में से ज्येष्ठ। इसे अंगिराऋषि की कृपा से पुत्र हुआ। यह इसकी सौतों को सहन नहीं हुआ। इसलिये उन्होंने इसके पुत्र को विप दिया। परंतु अंगिरा ने उसे पुनः जीवित किया (भा. ६.१४; चित्रकेतु देखिये)।

कृतध्वज—प्रतर्दन राजा का नामांतर।

२. (स. निमि.) धर्मध्वज जनक के दो पुत्रों में से एक।

कृतप्रज्ञ—भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष के राजा भगदत्त का पुत्र। नकुल ने इसका वध किया (म. क. ४. २९)।

कृतयशास् आंगिरस—मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९.१०८.१०-११)।

कृतवर्मन—(सो. यदु. अंधक.)। हरीकपुत्र (मत्स्य ४४.८०-८१)। यह द्रौपदीस्वयंवर में गया था (म. आदि. १७७.१७)। दुर्योधन के पक्ष में यह एक अधीहिणी सेना ले कर आया था (म. उ. १९.१७)। बलराम द्वारा रैवतक पर्वत पर किये गये उत्सव में यह आया था (म. आ. २११.११)। इसने पांडवों से भीषण युद्ध किया था; किन्तु भीम ने इसे तीन बाणों से विद्ध किया (म. द्रो. ९०.१०)। दुर्योधन के पक्ष के अन्य तीन वीरों में से यह एक था (म. सौ. ९.४७-४८)। बाद में यह द्वारका गया। युधिष्ठिर के अवगेष यज्ञ में अश्व के संरक्षणार्थ यह अर्जुन के साथ गया था। यंगवी युद्ध में इसे सात्यकि ने मारा (भा. ९.२४.२७; म. मौ. ३)।

२. (सो. सह.) भागवत मत में धनकपुत्र (कृतवीर्य देखिये)।

कृतवाञ्—अंगिरसकुल का मंत्रकार। कृतवाञ् पाठ-भेद है।

कृतवीर्य—(सो. यदु. सह.) भागवत तथा विष्णु मत में राजा धनक के चार पुत्रों में ज्येष्ठ। इसका पुत्र कार्तवीर्यार्जुन। उसे सहस्राजुन भी कहते हैं (म. आ. १६९; स. ८.८)। मत्स्य तथा वासु में धनक के स्थान

पर कनक पाठ है। संकरीचतुर्था व्रत के प्रभाव के कारण, इसे कार्तवीर्याजुन जैसा पराक्रमी पुत्र हुआ (गणेश १.५८)।

कृताग्नि—(सो. सह.) राजा धनक के चार पुत्रों में से दूसरा।

कृताश्व—(स. द.) संहताश्व राजा के दो पुत्रों में से ज्येष्ठ। कृशाश्व नानांतर है। इसका पुत्र द्येनजित् वा प्रसन्न था।

कृताहार—पुलह तथा श्वेता का पुत्र।

कृति—(सो. आयु.) नहुष के छः पुत्रों में से कनिष्ठ।

२. (सू. निमि.) बहुलाश्व जनक का पुत्र। इसका पुत्र महावशित्। विष्णु एवं वायु मत में, इसके समय निमि वा विदेह वंश समाप्त हुआ। कृतराज—देखिये।

३. (सो. क्रोष्टु.) रोमपादपुत्र बभ्रु का पुत्र। इसका पुत्र राजा उशिक (भा. ९.२४.)।

४. (सो. द्विमीट.) सन्नतिमान् राजा का पुत्र। इसने हिरण्यनाभ से प्राच्यसामो की छः संहिताएँ संवादित की थी। इसका पुत्र नीप।

५. (सो. कुरु.) भागवत मत में व्यवनपुत्र। इसे उरिचर वसु नामक पुत्र था। कृतं पाठभेद है।

६. भारतीय युद्ध में दुर्बोधनपक्षीय राजा। इसका पुत्र रुचिपर्वन् (म. द्रो. २५.४८)।

७. संहार की पत्नी। इसका पुत्र पंचजन (भा. ६. १८)।

८. वसुपुत्र विश्वकर्मान् की पत्नी। इसे चाशुष नामक छठवाँ मनु हुआ। (भा. ६.६)।

९. सावर्णि मन्वंतर में एक मनुपुत्र।

१०. रुद्रसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

११. रैवतमनुपुत्र।

१२. विष्णुमत में व्यास की सामशिष्यवरंपरा के पौष्यजि का शिष्य।

कृतिमत—(सो. द्विमीट.) भागवत मत में यवीनर-पुत्र। इसे सत्यवृति भी कहते थे।

कृतिरथ—(स. निमि.) प्रथमकपुत्र। वायु मत में कीर्तिरथ।

कृतिराज—(सू. निमि.) विष्णु तथा भागवत मत में महावृतिपुत्र। इसका नाम वायु मत में कीर्तिराज तथा भागवत मत में कृति है।

कृतेयु—(सो. पूर.) भागवत तथा वायु मत में रौद्राश्व का वृताची से उत्पन्न पुत्र।

कृतौजस्—(सो. सह.) मत्स्य मत में कनकपुत्र। भागवत तथा विष्णु मत में धनकपुत्र।

कृत्तिका—प्राचेतस दक्ष ने सोम को दी सत्ताइस कन्याओं में से एक।

२. अग्नि नामक वसु की पत्नी। इसका पुत्र स्कंद (भा. ६. ६; मत्स्य. ५. २७)।

कृत्तु भार्गव—सूक्तद्रष्टा (क. ८. ७९)।

कृत्वी—कृष्णद्वैपायनपुत्र शुक्र की कन्या। इसका दूसरा नाम कीर्तिमती है। अजमीढ कुल में उत्पन्न नीप वा अणुह राजा की यह पत्नी थी। इसका पुत्र द्रष्टादत्त।

कृप—रुशम एवं श्यावक के साथ इंद्र के सहायक के रूप में आया है (क. ८. ३. १२; ४. २)।

२. (सो. अज.) उत्तर पांचाल देश के राजकुल में गौतम नामक मुनि का पौत्र। पांचाल देश, आज का रहलखंड है। गौतम का शरद्वत् नामक महान् तपस्वी पुत्र था। सत्यवृति का पुत्र शरद्वत्, ऐसा भी कहीं कहीं उल्लेख मिलता है। इसकी तपस्या भंग करने के लिये इंद्र ने जालपदी नामक अप्सरा भेजी थी (म. आ. १२०. ६)। कुछ स्थानों पर इस अप्सरा को उर्वशी कहा गया है (भा. ९. २१. ३५; मत्स्य. ५०. १-१४)। कुछ स्थानों पर तो, सत्यवृति का तपोभंग करने के हेतु उर्वशी को भेजा गया, यों उल्लेख है। उस अप्सरा को देखते ही इसका वीर्यस्खलन हुआ। यह वीर्य, शर नामक घास के शीप पर गिरा, जिससे एक पुत्र एवं एक कन्या उत्पन्न हुई।

कालोपरांत उसी वन में राजा शंतनु शिकार खेलने आया। वह इन्हें उठा कर ले गया, तथा उसने इनका पालन कृपापूर्वक किया। इसलिये कृप तथा कृपी उनका नामकरण हुआ (म. आ. १२०)। इनमें से कृपी अश्वत्थामा की माता तथा गुरु द्रोणाचार्य की पत्नी थी (म. आ. १२१. ११; विष्णु. ४. २०; अग्नि. २७७. गरुड. १४०)। शंतनु पुत्र तथा पुत्री को वन से उठा कर ले गये, यह बात तपःसामर्थ्य से गौतम ने जान ली। राजा के पास जा कर उससे अपने पुत्र को गोत्र आदि की जानकारी दी। उसे चारों प्रकार के धनुर्वेद तथा सब प्रकार की अस्त्रविद्या सिखायी (म. आ. १२०. १९-२०)। इसके बाद राजा धृतराष्ट्र ने, वेदशास्त्रों में निपुण कृपाचार्य के पास, अपने सब पुत्रों को अध्ययन के लिये भेजा। कौरवों ने द्रोणाचार्य के पहले कृपाचार्य के पास धनुर्वेद सीखा था (म. आ. परि. १. क. ७३; पंक्ति १३४)।

भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में था, फिर भी इसका मन पांडवों की ओर था। यह हमेशा कर्ण की निंदा करता था, तथा अर्जुन की प्रशंसा करता था। (म. वि. ४४.१; द्रो. १३३.१२-२३)। एक बार कृपाचार्य पांडवों की स्तुति तथा कर्ण की निंदा कर रहा था। कर्ण ने कहा, 'हे दुर्मति, यदि पुनः तुम इस तरह अप्रिय शब्द बोलोगे, तो इस तलवार से तुम्हारी जिन्हा काट दूंगा (म. द्रो. १३३.५२)।' इसी तरह हमेशा कर्ण तथा कृपाचार्य में टन जाया करती थी। इसने भारतीय युद्ध में अतुल पराक्रम दिखा कर, अनेकों वीरों को स्वर्ग भेजा। जयद्रथवध के बाद कृप तथा अश्वत्थामा ने अर्जुन पर आक्रमण किया, तब अर्जुन के बाणों से कृपाचार्य बेहोश हुआ (म. द्रो. १२२.८)। इसने युद्ध में धृष्टद्युम्न पर अमोघ बाण छोड़ कर, उसे जर्जर कर दिया था (म. क. १८.५०)। दुर्योधन के वध के बाद, अश्वत्थामा अत्यंत क्रोधित हुआ। उसने कृपाचार्य से कहा कि, मैं पांडवों के पुत्रों को निद्रित अवस्था में ही मार डालना चाहता हूँ। तब कृपाचार्य ने उसे उपदेश किया, जिससे इसकी सही योग्यता का पता चलता है। कृपाचार्य ने कहा, 'उद्योग की स्थिति कमजोर होने पर केवल भाग्य कुछ नहीं कर सकता। इसलिये कभी भी कार्य के प्रारंभ में बड़ों से विचारविमर्श करना चाहिये। अतः हम धृतराष्ट्र, गांधारी, तथा विदुर की सलाह लें' (म. सौ. ३.३०-३३)। इसने विवाह नहीं किया। यह चिरंजीव है। कौरवों की मृत्यु के बाद इसने दुर्योधन का सांत्वन किया। पश्चात् स्वयं पांडवों के भय के कारण, घोड़े पर सवार हो कर हस्तिनापुर की ओर रवाना हुआ (म. सौ. ९)। यह भविष्य में सावर्णिमन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक होनेवाला है (भा. ८.१३-१५)। कृपाचार्य रुद्रगण का अवतार था (म. आ. ६१.७१)

३. उत्तानपादपुत्र ध्रुव का पौत्र। शिशु के चार पुत्रों में से ज्येष्ठ।

कृपी—(सो. अज.) द्रोणाचार्य की स्त्री तथा विष्णु, वायु एवं मत्स्य के मत में सत्यधृतिकन्या। जालपदी नामक आखरा को देल कर, शरद्वत् का रेत शरस्तेभ पर खलित हुआ। उससे यह उत्पन्न हुई। शंतनु ने इसका लालनपालन किया। इसका पुत्र अश्वत्थामा (कृप देखिये)।

कृमि—(सो. अनु.) विष्णु तथा वायु के मत में उशीनरपुत्र।

२. (सो. ऋध.) मत्स्य के मत में च्यवनपुत्र। कृत, कृतक, कृति आदि इसी के नाम रहे होंगे।

कृमिल—(सो. क्रोष्ट्र.) किष्किण देखिये।

कृश—इसने यशद्वारा इन्द्र को प्रसन्न किया (ऋ. ८.५.४२)। यह सत्यवन्ता था (ऋ. ८.५.९.३)। आश्विनो ने शयु के साथ इस पर भी कृपा की थी (ऋ. १०.४०.८)। सूक्तद्रष्टा कृश काण्व यही रहा होगा (ऋ. ८.५.५)।

कृश वा कृशातनु—एक ऋषि तथा शृंग ऋषि का मित्र (म. आ. ३६)। इसने प्रतिग्रह न ले कर अपना सारा समय, तपस्या में ही व्यतीत किया। यह अत्यंत कृश था। इसी कारण इसका यह नामकरण हुआ। वीरद्युम्नपुत्र भूरिद्युम्न नष्ट हो गया था। तब तपोबल से उसे वापस ला कर उसने इसे उपदेशपर कई बातें भी बतायी थीं (म. शां. १२६)।

२. विकुठदेवों में से एक।

कृशानु—सोमसंरक्षक गंधर्वों में से एक (तै. सं. १. २.७)। अश्विनो ने युद्ध में इसकी रक्षा की (ऋ. १. ११२.२१)।

कृशाश्व—एक ऋषि तथा प्रजापति। प्राचेतस दक्ष ने अपनी साठ कन्याओं में से दो कन्याएं इसे दी थीं। उनका नाम अर्चि एवं धिषणा था। अर्चि को धूम्रकेश, तथा धिषणा को वेदशिरस्, देवल, वयुन तथा मनु ये पुत्र हुये। इसके अतिरिक्त इसे जया एवं प्रभा नामक दो कन्याएं भी थीं। किंतु ये किस स्त्री से उत्पन्न हुईं, इसका उल्लेख नहीं मिलता (वा. रा. वा. २१)। यह यजुर्वेदी ब्रह्मचारी था।

२. (सु. दिष्ट.) राजा सहदेव का पुत्र। इसका पुत्र सोमदत्त।

३. (सु. इ.) कृताश्व राजा का नामांतर।

४. नाट्यकला का आचार्य एक ऋषि (पा. सू. ४.३. १११)।

कृष्ण—(सो. यदु. वृष्णि.) वसुदेव को देवकी से उत्पन्न आठ पुत्रों में कनिष्ठ। इस का जन्म मथुरा में कंस के काराग्रह में हुआ (भा. ९.२४.५५; १०.३; विष्णु. ४. १५; ५.३; ह. वं. १.३५; कर्म. १.२४; गरुड. १.१३९)।

विवाह के पश्चात्, श्रवणग्रह में बहान को पहुँचाते समय, देवकीपुत्र द्वारा अपनी हत्या होगी यह जान कर, कंस ने

वसुदेवदेवकी को कारागार में रखा। देवकी के सात पुत्रों को क्रम से उसने पटक मारा। कृष्ण आठवाँ पुत्र है, जिसका जन्म विक्रम संवत् के अनुसार, भाद्रपद वद्य अष्टमी की मध्यरात्रि में रोहिणी नक्षत्र पर हुआ। वह दिन बुधवार था (निर्णयसिंधु)।

वसुदेव उग्रसेन का मंत्री था। उग्रसेन को बंदिस्त कर के कंस राजगद्दी पर बैठा था। अतः कंस पहले से वसुदेव को प्रतिकूल था। वसुदेव के देवकी से उत्पन्न पुत्रों को ही नहीं, बल्कि अन्य स्त्रियों से प्राप्त पुत्रों को भी कंस द्वारा मारे जाने का उल्लेख, भागवत को छोड़ कर, अन्य पुराणों में मिलता है (वायु. ९६.१७३-१७८)।

वसुदेव ने कृष्ण की रक्षा के लिये, गोकुल में नंद के घर पहुँचाया। गोकुल से यशोदा की कन्या ले कर वसुदेव पुनः कारागार में उपस्थित हुआ। कंस ने उस कन्या को भी मारने का यत्न किया, किन्तु वह हाथ से छूट गयी। यहीं कंस को पता लगा कि, वसुदेवसुत पैदा हो कर सुरक्षित स्थान पर पहुँच गया है।

नन्दकुलोपाध्याय गर्गमुनि ने गुह्यरूप से कृष्ण का जातक तथा नामकरण संस्कार किया। इसी समय कृष्ण के जीवनकृत्यों का भविष्यकथन भी किया।

बाललीला—प्रथम कंस ने कृष्णवधार्थे पूतना भेजी, जो उसकी बहन वा दाई थी। गोकुल के बालकों को विषयुक्त स्तनपान करा कर मारने का क्रम पूतना ने जारी रखा। कृष्ण को स्तनपान कराने पर, कृष्ण ने उसका पूरा लहू चूने लिया तथा उसके प्राण लिये।

तृणान्न अमुर का भी, पत्थर पर पटक कर कृष्ण ने वध किया। उसी समय यशोदा को कृष्ण के मुँह में विश्वरूप-दर्शन हुआ। दकामुर, वल्गामुर, अथाभुरादि का भी इसने वध किया। कालिया के फूत्कार के कारण, यमुनाजल विषयुक्त हुआ था। उसे भी मर्दन कर कृष्णने भगाया। धेनुकामुर, प्रलंबासुर, अरिष्ट, व्योम तथा केशि का भी कृष्ण ने वध किया। एक समय नन्द को यमुना से डूबते देखते बचाया।

गोकुल का प्रतिवार्षिक 'इन्द्रोत्सव' बंद कर के कृष्ण ने यहाँ गोवर्धन-उत्सव का आरंभ किया। इससे इन्द्र ने कुपित हो कर गोकुल पर अतिवृष्टि की। कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत का आश्रय ले कर गोकुलवासियों को इस संकट से बचाया।

कई पुराणों में कृष्ण के बालचरित्र का ही केवल वर्णन है। यह बाललीला पूतनावध से प्रारंभ हो कर केशिवध के

पास समाप्त होती है। पूतना, धेनुक, प्रलंब, अब इन का वध, इन्द्रगर्वहरण, कालियामर्दन, दावाग्निभक्षण, गोवर्धनोद्धार, रासक्रीड़ा तथा कंसवध ये घटनाएँ सब स्थानों में वर्णित हैं, केवल क्रम में भिन्नता है। कहीं संक्षेप में तथा कहीं विस्तार से वर्णन है। विष्णुपुराण में संक्षेप में बाललीला का वर्णन आया है।

विशेषतः भागवत, ब्रह्मवैवर्त, हरिवंश एवं गर्गसंहिता में कृष्ण की केवल बाललीलाओं का वर्णन है। कृष्ण का पांडवों से संबंध केवल गर्गसंहिता में ही है। महाभारत-वर्णित कृष्णचरित्र पुराणों में नहीं मिलता। उसका पांडवों को अप्रतिम सहाय, राजकाजकौशल्य और गीता केवल महाभारत में ही अंकित है।

बाललीला में राधाकृष्ण-संबंध वर्णन करने की ब्रह्म-वैवर्त पुराण की प्रवृत्ति है। यह संबंध आध्यात्मिक माना जाता है। राधाकृष्ण-विवाह ब्रह्मदेवद्वारा संपन्न हुआ था (ब्रह्मवै. ४. १५)।

कंसवध—कृष्ण की मल्लविद्या की कीर्ति सुन कर, कंस उसे अक्रूरद्वारा मथुरा ले आया। मथुरा में वसुदेव-देवकी से मिलना कंस को अप्रिय होगा यह अक्रूर द्वारा इताने पर भी, आत्मविश्वास के साथ कृष्ण अपने मातापिता से मिले। शहर में ब्रूमते समय, एक धोबी से कृष्ण ने कपडे लिये, एक माली ने पुष्पहार गले में डाला तथा कुब्जा ने चंदन लेप चढ़ाया। शस्त्रागार में जा कर इसने भव्य धनुष का धरा किया। यह सब देख कर कंस ने चाणूर, सुष्टिक नामक मल्लों को, कृष्ण के साथ मल्लयुद्ध करने के लिये भेजा। मैदान के द्वार पर ही, कंस द्वारा छोड़े गये कुवलया-पीड हाथी को कृष्ण ने सहजता से मारा। मल्लयुद्ध में चाणूर तथा तोषलक को मारा। कृष्ण के ये सब पराक्रम देख कर, कंस का मस्तक चकराने लगा। कृष्ण ने उसे सिंहासन से खींच कर उसका वध किया। समुदाय ने कृष्ण की जयध्वनि की। वसुदेवदेवकी से मिल कर तथा उग्रसेन को गद्दी पर बिठा कर, कृष्ण ने मथुरा में शांति प्रस्थापित की। बलराम ने पूरे समय तक कृष्ण की साथ की।

शिक्षा—नंदादि गोपालों को मथुरा लय कर, तथा सत्कार कर कृष्ण ने उन्हें वापस गोकुल भेजा। यशोदा के सांत्वनार्थे उद्वेग को गोकुल भेजा। गर्ग-मुनि द्वारा उपनयनसंस्कारवद्ध हो कर, रामकृष्ण, काश्य सांदीपनि के यहाँ अध्ययनार्थे अवैति गये। एकपाठी होने से ६४ दिनों में ही इन्होंने वेदों का तथा धनुर्वेद

का अध्ययन किया (ब्रह्म. १९४. २१; ह. वं. २. ३३; भा. १०. ४५. ३६; विष्णु. ५. २१)। सांदीपनि ने इन्हें गायत्री मंत्रोपदेश देने का भी उल्लेख है (दे. भा. ४. २. १)। इसके उत्पन्नयन प्रसंग में देव, नंद, यशोदा तथा विधवा कुन्ती उपस्थित थीं (ब्रह्मवै. ४. १०१)। इस समय कृष्ण की आयु १२ वर्षों की थी (दे. भा. ४. २४)। गुरुदक्षिणा के रूप में सांदीपनि का, मृत पुत्र दत्त कृष्ण ने सर्वांग कर दिया (पद्म. ३. २४६; ब्रह्म. १९४. ३१)। यहीं पंचजनों का वध कर के, विख्यात पांचजन्य शंख कृष्ण ने प्राप्त किया (भा. १०. ४५. ४२; म. भी. २३. १६)।

विवाह—इसने शिशुपाल का पराभव कर के, भीष्मक राजा की कन्या रुक्मिणी का हरण किया। स्वमन्तकमणि-प्रसंग में, जांबवती तथा सत्यभामा से इसका विवाह हुआ। इसी समय सत्राजित का वध करनेवाले शतधन्वन् का इसने वध किया। कुछ काल के बाद, कृष्ण कुछ यादवों सह पांडवों से मिलने के लिये इन्द्रप्रस्थ गया। तब चातुर्माससमाप्ति तक पांडवों ने इसे वही रख लिया। उस काल में इसका कालिंदी से विवाह हुआ। बाद में द्वारका जाने पर, मित्रविंदा, सत्या (नामजिती), मद्रा, कैकेयी तथा लक्ष्मणा (सुलक्षणा) का स्वपराक्रम से हरण कर के इसने विवाह किया (भा. १०. ५८; ९०. २९-३०)। इसके अष्टनायिकाओं में सुलक्षणा, नामजिती तथा सुशीला थी। सुमित्रा, शैब्या, सुभीमा, माद्री, कौसल्या, विरजा (पद्म. सू. १३. १५५-१५६) अनुविदा तथा सुनंदा यों भिन्न नाम भी प्राप्त हैं (पद्म. पा. ७०-३३)। इन में कई नाम गुणदर्शक दीखते हैं।

कृष्ण ने नरकासुर का वध किया। उसके कारणह में सोलह हजार स्त्रियाँ थीं। उन्हें मुक्त कर कृष्ण ने उनसे विवाह किये (भा. १०. ५९. ३३; विष्णु. ५. २९. ३१)। इस प्रकार उनके उद्धार का श्रेय भी संपादन किया। एक ही समय अनेक रूप धारण करने का कृष्ण में सामर्थ्य था।

नरकासुर का वध कर के लौटते समय, कृष्ण ने इंद्र का पारिजातक वृक्ष तोड़ दिया। तब क्रोधित हो कर इंद्र ने कृष्ण से युद्ध किया परंतु इंद्र का वस नहीं चला। तब कृष्ण ने उससे कहा कि, जबतक मैं पृथ्वी पर हूँ, तब तक यह वृक्ष यहीं रहने दो। बाद में उसे ले जाना (पद्म. ३. २४८-२४९)।

कृष्ण के कुल अस्सी हजार पुत्र थे (पद्म. सू. १३)। पुत्रों के नाम उनकी माताओं के चरित्र में देखिये।

जांबवती को पुत्र प्राप्ति हो इस हेतु से, कृष्ण ने महादेव की तपस्था कर के, उससे वर प्राप्त किया (म. अनु. ४६)।

एक बार यह अपनी स्त्रियों से क्रीड़ा कर रहा था। तब नारद के आदेशानुसार जांबवतीपुत्र संघ यहाँ गया। उस समय कृष्ण की स्त्रियों ने मद्यपान किया था। अतएव वे उस पर मोहित हो गईं। तब कृष्ण ने उन्हें शाप दिया कि, 'तुम लोग चुरा ली जाओगी। किन्तु दाल्भ्यद्वारा बताये गये व्रत द्वारा तुम्हारा उद्धार होगा।'। इसने सांव को शाप दिया कि, तुम कुष्ठरोगी वनोग (पद्म. सू. २३; स्कंद. ७. १. १०१)।

मथुरा में यशोदा की कन्या एकानंगा के साथ रामकृष्ण की भेंट हुई। इसके लिये ही कृष्ण ने कंस का वध किया (म. स. १. २१. १४२८-१४३०)। त्राणासुर के हजार हाथ भी इसने तोड़े (ब्रह्मोद्. ३. ७३. ९९-१०२; वायु. ८८. ९८-१०१)।

इसके अश्वों के नाम शैब्य, सुशीव, मेघपुष्प तथा बलहक थे (म. आश्व. १. ४. ३४२४)। पांडवों के राजसूय तथा अश्वमेध में यह उपस्थित था (म. आश्व. ८. ९)।

जरासंधवध—कंसवध के कारण जरासंध क्रुद्ध हुआ। कंस जरासंध का दामाद था। उस समय जरासंध सदाष्ट था। जरासंध के कारणार में हजारों वृष ब्रह्मिवाण थे। उन्हें भी कृष्ण के पास अपनी मुक्तता के लिये संदेश भिजवाया था। कृष्ण ने यादवसभामें इस प्रश्न को उठाया। जरासंध ने मथुरा पर आक्रमण किया। कई राजा जगह तहायक थे। कृष्ण ने उसका सवह बार पराजय किया। कालवधन का भी जरासंध ने सहाय्य लिया। कालवधन ने मथुरा को चारों ओर घेरा डाला। कृष्ण, इस समय अगस्तिक हो कर भागते भागते, सुचक्रुंद सोया था वहाँ आया। पीछे कालवधन भी आ पहुँचा। कृष्ण कालवधन से अस्त्रों से जोक्षल हो गया। सुचक्रुंद कालवधन द्वारा मारा गया।

जरासंध के आक्रमण के भय से कृष्ण मथुरा छोड़ कर सुदूर द्वारका में आ बसा। वहाँ इसने अपनी नयी राजधानी बसायी। जरासंध भी द्वारका पहुँचा। तब कृष्ण प्रवर्षणगिरि में जा लिभा। जरासंध ने दूर भी अगम लगा दी तथा वह लौटा। कृष्ण बच गया। कुछ स्थलों पर प्रवर्षणगिरि की जगह गोमंतक का उल्लेख है।

इसी समय इंद्रप्रस्थ से युधिष्ठिर ने दूतद्वारा अपना राजसूय यज्ञ का विचार कृष्ण को कथन कर, उसको पाचारण किया। कृष्ण के सामने प्रश्न निर्माण हुआ कि, किस को अग्रस्थान दे। उद्वय ने, प्रथम इंद्रप्रस्थ जा कर पश्चात् जरासंध के यहाँ जाने की मेत्रणा, कृष्ण को दी। कृष्ण ने स्वयं इंद्रप्रस्थ जा कर, जरासंध के बंदिस्त राजाओं को तुरन्त ही मुक्त करने का आश्वासन दूतद्वारा भेजा।

राजसूय यज्ञ के लिये भी, जरासंध जैसे प्रतापी प्रति-एषी का विनाश आवश्यक था। इसलिये ब्राह्मण वेप में कृष्ण, अर्जुन तथा भीम जरासंध के पास उपस्थित हुए। वहाँ गदायुद्ध में भीमद्वारा जरासंध का वध हुआ। उसके पुत्र को गद्दी पर बिठा कर, ये सब लौट आये (म. स. १२.२२)।

शिशुपालवध—करुणाधिप पौंड्रक वासुदेव, तथा करवीराधिप शमाल यादव का कृष्ण ने वध किया। भीष्म ने राजसूय यज्ञ में कृष्ण को अग्रपूजा का मान दिया। इस कारण शिशुपाल ईर्ष्या से भड़क उठा। तत्र सुदर्शन चक्र से कृष्ण ने शिशुपाल का वध किया। यज्ञसमाप्ति के बाद यह द्वारका गया। बाद में शाल्व, दंतवक्र तथा विदूरथ का भी वध कृष्ण ने किया।

भारतीययुद्ध—पांडव वनवास में थे। उस समय उनके यहाँ कृष्ण गया था। कृष्ण ने कहा, 'मेरे होते हुए घूँसझोडा असंभव हो जाती थी।' कुछ दिन वहीं रह कर, सुभद्रा तथा अभिमन्यु को लेकर यह द्वारका गया (म. व. १४.२४)। पांडव काम्यकवन में थे। कृष्ण सत्यभामा के साथ वहाँ गया था। कुछ दिन वहाँ रह कर द्वारका लौटे (म. व. १८०.२२४)। दुर्योधन के कथनानुसार दुर्वास पांडवों के यहाँ गया था। तत्र द्रौपदी की सहायता कर कृष्ण ने दुर्वास ऋषि को तृष्ट किया (म. व. परि. १.२५)। अभिमन्यु के विवाहार्थ कृष्ण उपप्लव्य गया था। तत्र सम्मिलित राजाओं की उपस्थिति में इसने पांडवों के हिस्से का प्रश्न उठाया। दुर्योधन को अमान्य है यह जान कर, इसने उधर जाने का निश्चय किया (म. वि. ६७)। अर्जुन तथा दुर्योधन कृष्ण के समीप युद्धार्थ सहायता माँगने गये। दुर्योधन की माँग के अनुसार उसे यादव सेना दी। स्वयं अर्जुन के पक्ष में गया। युद्ध में प्रत्यक्ष भाग न लेने की कृष्ण की प्रतिज्ञा थी। फिर भी अर्जुन ने उसे ही माँग लिया (म. उ. ७)।

इस प्रकार युद्ध की तैयारियाँ कौरव-पांडव कर रहे थे। तत्र युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र के यहाँ कृष्ण को मध्यस्थ के

नाते भेजा। किन्तु कुछ लाभ न हुआ। कृष्ण आयेगा, इस लिये धृतराष्ट्र ने हस्तिनापुर से वृकस्थल तक मार्ग सुसोमित किया था (म. उ. ७१.९३)। दुर्योधन ने कृष्ण को भोजन का निमंत्रण दिया। कृष्ण ने उसे अमान्य किया (म. उ. ८९.११)। वहाँ दिये गये भाषण से कौरवों के सब दुष्कृत्य स्पष्ट हुए। सब सदस्यों को पांडवों का पक्ष न्यायसंगत प्रतीत हुआ। भीष्म, द्रोणाचार्य, गांधारी, धृतराष्ट्र, कर्ण, नारदादि ने अनेक प्रकार से दुर्योधन को समझाया। किन्तु वह नहीं माना।

सभा की शांति नष्ट होते देख, दुःशासन ने दुर्योधन को इशारे से बाहर जाने को कहा। भीष्म ने इस समय, 'क्षत्रियों का विनाश काल समीप है,' यों प्रकट किया। दुर्योधन का कृष्ण को बंदिस्त करने का विचार था, जो सात्यकि ने सभा में प्रकट किया। उल्टे दुर्योधन को ही पांडवों के यहाँ बाँध कर ले जाने का सामर्थ्य कृष्ण ने विदित किया। तत्र धृतराष्ट्र, विदुरादि ने दुर्योधन की पर्याप्त निर्भत्सना की। कृष्ण ने इस समय अपना उग्र विश्वरूप प्रकट किया। सब भयभीत हुये। कृष्ण शांति से सभागृह के बाहर आया। दुर्योधन के न मानने की बात धृतराष्ट्रद्वारा विदित होते ही कृष्ण ने हस्तिनापुर छोड़ा (म. उ. १२९)। बाहर आकर कर्ण को उसका पांडवों से भ्रातृसंबंध कथित कर, उसे पांडवपक्ष में आने का आग्रह किया। उसके न मानने पर, कृष्ण उपप्लव्य चला आया। युद्धार्थ तैयारियाँ प्रारंभ हुई (म. उ. १३८-१४१)।

कृष्ण ने धृष्टद्युम्न तथा सात्यकि की सहायता से पांडव सेना की बलिष्ठ सिद्धता की (म. उ. १४९.७२)। अर्जुन की प्रार्थना पर कृष्ण ने उसका रथ दोनों सेनाओं के बीच ला कर खड़ा किया। आतङ्गन तथा बाँधवों के संहार का चित्र सामने देखकर अर्जुन युद्धनिवृत्ति की बातें करने लगा। कृष्ण ने उसे 'गीता' सुनाकर, पुनः युद्धार्थ सिद्ध किया (म. भी. २३-४०)। यह दिन मार्गशीर्ष शुद्ध त्रयोदशी था।

कृष्ण ने पांडवों को महान् संकटों से बचाया। रथ के अश्वों की सेवा की। उन्हें पानी तक पिलाया (म. द्रो. १७५.१५)। भगदत्त के वैष्णवास्त्र से अर्जुन की रक्षा की (म. द्रो. २८.१७)। अभिमन्युवध के बाद, सुभद्रा का सांवन किया (म. द्रो. ५४.९)। भूरिश्रवा को अन्तिमसमय में स्वर्ग की जानकारी दी (म. द्रो. ११८.

१६८*)। अंधकार उत्पन्न कर के, जयद्रथवध की प्रतिज्ञा-पूर्ति अर्जुन द्वारा करवाई (म. द्रो. १२१)। घटोत्कच को युद्ध में भेज कर, कर्ण की वासवी शक्ति से अर्जुन की रक्षा की (म. द्रो. १५४)। द्रोणवध के लिये, असत्य माषण की सलाह युधिष्ठिर को दी (म. द्रो. १६४)। गांडीव धनुष्य दूसरे को देने की सलाह युधिष्ठिर से सुनते ही, अर्जुन उस पर तरवार खींच कर दौड़ा। इस समय उसे कृष्ण ने कौशिक-कथा बताकर इस कृत्य से परावृत्त किया (म. क. ४९; अर्जुन देखिये)। रथ को पाँच अंगुल धरती में गाड़ कर, कर्ण के सर्पयुक्त बाण से अर्जुन की रक्षा की (म. क. ६६.१०८८*)। धर्म को शल्यवध करने के लिये कहा (म. श. ६.२४-३८)। भीमद्वारा दुर्योधन की जाँघ पर गदाप्रहार करा के उसका वध करवाया (म. श. ५७.३-१०)। इन सब कृत्यों के लिये दुर्योधन ने इसे दोष दिया (म. श. ६०)।

गांधारी की सांत्वना के लिये धर्म ने कृष्ण को हस्तिनापुर भेजा (म. श. ६१.३९)। कृष्ण ने कौरवों के अन्यायपूर्ण व्यवहार उसे बताया। फिर भी गांधारी ने कृष्ण को दुर्मरण का शाप दिया (म. स्त्री. २५)।

धृतराष्ट्र भीम से मिलने आया। लोहप्रतिमा उसकी गोद में सरका कर कृष्ण ने भीम की रक्षा की (म. स्त्री. ११.१५)। अश्वत्थामा के अस्त्र से उत्तरा के गर्भ की रक्षा की (म. सौ. १६.८; उत्तरा देखिये)। इसने वसुदेव को भारतीययुद्ध कथा बतायी (म. आश्व. ५९)।

यादवी—कण्व ऋषि का उपहास करने के कारण, इसने सांब को शाप दिया (पद्म. उ. २५२)। इसी सांब को मूसल पैदा हुआ। उसी मूसल से सब यादवों का संहार हुआ। सांब, चारुदेण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध मृत हो गये। पुत्रों की मृत्यु देख कर कृष्ण क्रोधित हुआ। गद का पतन देख कर इसका क्रोध अनिवार्य हुआ। तब बचे हुए सब यादवों का इसने वध किया। इस समय दारुक तथा बभ्रु ने कहा, 'भगवान्, बचे हुए अधिकांश लोगों की हत्या तो तुम ने कर ही दी। अब हमें बलराम की खोज करनी चाहिये।' कृष्ण ने यादवों में किसी का खास प्रतिकार नहीं किया, क्योंकि, कालचक्र अब उलटा चल रहा है, यह उसने देख लिया (म. मौ. ४)।

निर्याण—कृष्ण का निर्याणसमय समीप आ गया। इसका उद्वेग को पता चलते ही उसने कृष्ण की प्रार्थना की, "मुझे भी अपने साथ ले चलिये।" कृष्ण ने उसे

अव्यात्म का बोध किया (भा. ११.७-२९)। यह बोध अवधूतगीता वा उद्वेगगीता नाम से विख्यात है।

अनन्तर द्वारका में दुश्चिह्न प्रकट होने लगे। बलराम ने सामर तट पर देह विसर्जन किया। कृष्ण अश्वत्थ वृक्ष के नीचे, दाहिनी जाँघ पर बाँया पैर रख कर, चिन्तनावस्था में वृक्ष को चिपक कर बैठा था। इसी समय जरा नामक व्याध ने तलवे पर मृग समझ कर तीर मारा, जो इसके शायें तलवे में लगा। यह देखकर व्याध अत्यंत दुःखित हुआ। उसने कृष्ण से क्षमायाचना की। कृष्ण ने उसकी सांत्वना की, तथा उसे आर्शावांछ दिया।

कृष्ण का सारथि दारुक वहाँ आया। उसने कृष्ण की वन्दना की। इसी समय कृष्ण का रथ भी गुप्त हो गया। कृष्ण ने दारुक से कहा, "मरा प्रयाणसमय समीप आ गया है। द्वारका जा कर यह अनिष्ट प्रकार उग्रसेन से कथन करो। द्वारका शीघ्र ही समुद्र में डूवेगी। अतः सब लोगों को द्वारका से सुदूर जाने को बताओ"।

दारुक से यह वृत्त सुन कर द्वारका में हाहाकार मच गया। देवकी तथा रोहिणी ने देह विसर्जन किये। अधुनायिकाओं ने कृष्ण के साथ अभिप्रवेश किया (ब्रह्म. २११-१२)। प्रद्युम्नादिकों की पत्नियों ने भी यहाँ किया।

इसी समय अर्जुन भी इन्द्रप्रस्थ से आया। स्त्रियाँ तथा बालकों को लेकर ब्रह्म इन्द्रप्रस्थ जा रहा था कि, द्वारका समुद्र में डूबी (म. मौ. ८.४०; देवकी तथा बहूलाश्व देखिये)।

मृत्युकाल में कृष्ण की आयु १२५ से भी अधिक थी (भा. ११.६.२५; ब्रह्मवै. ४.१२९.१८)। १३५ की आयु में कृष्ण का निर्याण हुआ (भवि. प्रति. १.३.८१)। कृष्ण अर्जुन से ३ महीने उ्येष्ट था।

तत्त्वज्ञ कृष्ण—कृष्णचरित्र अपूर्व है। जन्म से निर्वाण तक प्रत्येक अवस्था में, इसने असामान्यता प्रकट की। काराग्रह में जन्म ले कर, सुरक्षा के लिये गोकुल जाना पडा। नन्द के घर बालकृष्ण ने बाललीला की। गोप-गोपिकाओं के साथ ग्वालों का कार्य कर के मुरन्दीधर तथा राधाकृष्ण नाम प्राप्त किये। मल्लिकार्जुन से ख्याति तथा लोकप्रियता संपादित कर के कुश्टी के मैदान में कंस का वध किया। सम्राट जरासंध के साथ मुकाबला करने से हस्तिनापुर के राजकारण में इसका प्रवेश हुआ। जरासंध-वध तथा स्वयंवरों में शिशुपालादि वलिष्ठ नृपों को पराजित करने से युद्धकुशलता प्रकट हुई। आध्यात्मिक अधिकार के कारण भीष्म ने इसे राजसूययज्ञ में अग्रपूजा

का मान दे कर सम्मानित किया। भारतीययुद्ध में अर्जुन का सारथ्य तथा कुशल संयोजक की इसकी भूमिका थी।

युद्ध के प्रारंभ में अर्जुन युद्धपरावृत्त होने लगा। गीता सुना कर उसे पुनः युद्धप्रवृत्त किया। अन्तसमय उद्धव को ज्ञान दिया। भगवद्गीता तथा उद्धव का उपदेश ये अव्याख्यशास्त्र के अपूर्व ग्रंथ हैं। कर्म कर के कर्मबंधन से मुक्ति पाने के लिये दोनों ग्रंथों में संकेत हैं। ज्ञान, भक्ति तथा लोकाचार का अटूट-संबंध प्रतिपादन करने से, कृष्ण का यह बोध अमर हुआ है। विशेषतः इन ग्रंथों ने कृष्ण को पूर्णावतार बना दिया है।

द्वैत, विशिष्टाद्वैत, अद्वैत आदि मतप्रतिपादक प्राचीन आचार्यों के भाष्यस्वरूप ग्रंथ भगवद्गीता पर उपलब्ध हैं। आधुनिक साहित्य में तिलकजी का 'गीतारहस्य' ज्ञान-मूलक, भक्तिप्रधान, निष्कान कर्मयोग का प्रतिपादक है। महात्मा गांधी का 'अनासक्तियोग' ग्रंथ गीताप्रतिपादन के स्पष्टीकरणार्थ ही है।

युद्धारंभ में कृष्ण ने अर्जुन से गीता कह कर युद्धप्रवृत्त किया। पश्चात् अर्जुन गीतोपदेश भूल गया, तथा पुनः एक बार उसे सुनने की उसने कृष्ण से प्रार्थना की। कृष्ण ने कहा, "मैं भी उस समय विशेष योगावस्था में था। उस समय जो प्रतिपादन किया, वह मैं अब दुहरा नहीं सकता। तथापि उसका कुछ अंश मैं तुम्हें कथन करता हूँ।" उसी का नाम 'अनुगीता' है (म. आश्व. १६-५०)। भगवद्गीता का महत्व अनुगीता को प्राप्त नहीं हुआ।

विश्वरूपदर्शन—कृष्णचरित्र में विश्वरूपदर्शन एक महत्वपूर्ण भाग है। १. बालकीला में कृष्ण ने, मृत्तिका भक्षण की। कृष्ण ने यशोदाद्वारा किये गये मृत्तिका-भक्षण के आरोप को अस्वीकृत किया। मुँह खोलने को बताने पर, यशोदा को मुँह में विश्वरूपदर्शन हुआ।

२. अक्रूर को विश्वरूपदर्शन दिया।

३. हांस्तिनापुर में कृष्ण दौत्यकर्म करने गया था। दुर्योधन कृष्ण को बंदिस्त करने को उद्युक्त हुआ। इस समय कृष्ण ने अपना उग्र स्वरूप प्रकट किया, जिसका वर्णन विश्वरूप के समान ही है।

४. भारतीय युद्ध के प्रारंभ में, गीता के ग्यारहवें अध्याय में अर्जुन को अपना विश्वरूप बताया। वहाँ उसका विस्तृत वर्णन है। उसकी भयानकता से अर्जुन भी बचराया। उसने सौम्यरूप धारण करने की कृष्ण से प्रार्थना की।

५. भारतीययुद्ध में कृष्ण की हाथ में शस्त्र धारण न करने की प्रतिज्ञा थी। भीष्म की ठीक इसके विपरीत, कृष्ण को शस्त्र उठाने को विवश करने की प्रतिज्ञा थी। घमासान लड़ाई में अर्जुन को भीष्म के सामने हारते देख, कृष्ण ने चतुर्भुज रूप धारण कर भीष्म पर धावा बोल दिया। प्रतिज्ञापूर्ति के आनंद में भीष्म ने हाथ जोड़ कर शस्त्र नीचे रखा।

६. इन्द्रप्रस्थ में अर्जुन को अनुगीता सुना कर द्वारका लौटते समय, मरुभूमि में कृष्ण की उत्कंठ ऋषि से भेंट हुई। उत्कंठ ने कृष्ण के होते हुए, भारतीय युद्ध के भयानक संहार का उत्तरदायित्व इसपर डाल कर, इसकी निर्मोक्षना की। उत्कंठ की वांछना के लिये कृष्ण ने वहाँ भी उसे विश्वरूपदर्शन कराया तथा इच्छित वर दिये (म. आश्व. ५४. ४)।

युद्ध में सत्र बांधों का बंध होने के कारण युद्धिष्ठिर असंत अस्वस्थ हुआ। वक्तृत्वपूर्ण भाषण द्वारा युधिष्ठिर का मन कृष्ण ने शांत किया। भीष्म के द्वारा भी कृष्ण ने अनेक प्रकार का ज्ञान धर्म को दिलाया, जो महाभारत के शान्ति एवं अनुशासन पर्व में उपलब्ध है।

इस कारण से ही बालकृष्ण, मुरलीधर, गोपालकृष्ण, राधाकृष्ण, भगवान् कृष्ण आदि अनेक अवस्थाओं में इसकी उपासना प्राचीन काल से आज तक प्रचलित है। प्रत्येक अवस्था पर कई रचित ग्रंथ हैं। अतः यह पूर्णावतार है।

ऐतिहासिक चर्चा—पाणिनि के समय, कृष्ण सम्माननीय माना जाता था। तथापि क्षत्रिय नहीं समझा जाता था। सामान्य क्षत्रियवाचक शब्द से 'गोत्रक्षत्रियाख्येभ्यो बहुलं वुञ्ज (पा. स. ४.३.९९) इस सूत्र से प्रत्यय बताया है। वासुदेव क्षत्रिय न होने के कारण, 'वासुदेवार्जुनाभ्यां वुञ्ज' (पा. स. ४.३.९८) इसने पुनः वुञ्ज बताया है। यह स्पष्टीकरण पतंजलि ने किया है। इससे स्पष्ट है कि, सोमेवंश के क्षत्रिय यादवकुल से कृष्ण का संबंध बाद में जोड़ा गया।

वासुदेव तथा अर्जुन को नरनारायण अवतार मान कर, उपास्य देवताओं में भी सम्मिलित कर लिया गया था। इससे इनका क्षत्रियत्व लुप्त हो कर उससे भी श्रेष्ठ उपाधि इन्हें प्राप्त हो गयी थी। इसलिये पाणिनि को स्वतंत्र सूत्र बनाना पड़ा।

महाभारत में प्राप्त नर-नारायण उपासना का संप्रदाय पाणिनि तथा पतंजलि काल में भी प्रचलित था। नर-नारायण का स्थान कृष्णार्जुन को ही दिया जाता था।

ययाति की जरा का स्वीकार न करने के कारण, यदु-कुल आक्षिप्त माना जाता था। यह आक्षेप कृष्णावतार से दूर हुआ तथा यदुकुल उज्वल हो गया।

ख्रिस्त के पूर्व दो सदी के करीब लिखे गये 'शोसुंदी शिलालेख' में वासुदेवपूजा का निर्देश है।

२. (स्वा. उत्तान.) हविर्धान राजा को हविर्धानी नामक भार्या से उत्पन्न छः पुत्रों में चौथा।

३. विश्वक का कार्णि तथा कृष्णीय पैतृक नाम। इस विश्वक का कृष्ण नाम का कोई पूर्वज होगा (विश्वक कार्णि तथा कृष्णीय देखिये)।

४. कद्रुपुत्र नागों में से एक।

५. शुक्राचार्य को पीवरी से उत्पन्न चार पुत्रों में से एक।

६. (आंघ्र. भविष्य.) भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा ब्रह्मांड के मतानुसार सिंधुक का भ्राता।

कृष्ण आंगिरस—मंत्रद्रष्टा (ऋ. ८.८५.३-४)।

कृष्ण आत्रेय—यह आयुर्वेद पृथ्वी पर प्रथम लाया (म. शां. २०३.१९)। अग्निवेश, मेड, हारित आदि इसके ही शिष्य थे (चरकसंहिता)।

कृष्ण देवकीपुत्र—घोर आंगिरस का शिष्य (छां. उ. ३.१७१.६)। वसुदेव-देवकीपुत्र कृष्ण, तथा यह एक होने का प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

नामसादृश्य तथा तप, दान, आर्जव, अहिंसा, सत्य आदि कथित गुण, गीताप्रतिपादित दैवी संपत्ति के साथ मिलते हैं। तत्रापि मरणकाल में अक्षय (अधित), अव्यय (अच्युत) तथा प्राणसंशित वृत्ति रखने का घोर आंगिरस का उपदेश गीता में नहीं है। गीता में केवल ईश्वरध्यान तथा प्रणवोच्चार बताया है।

इसलिये घोर आंगिरस का शिष्य कृष्ण देवकीपुत्र तथा गीताप्रतिपादक भगवान् कृष्ण एक नहीं हैं। पुराणों में घोर आंगिरस का कृष्णचरित्र में निर्देश भी नहीं है।

कृष्ण द्वैपायन—वादरायण तथा यह एक ही हैं (मत्स्य. १४. १४-१६)।

कृष्ण पराशर—पराशर कुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि। इसके कुल में काष्णायन, कपिसुख, काकेयस्थ, अंजःपाति तथा पुष्कर मुख्य ऋषि थे (पराशर देखिये)।

कृष्ण हारित—एक आचार्य (ऐ. आ. ३. २. ६)। इसने अपने शिष्य को वाग्देवता संबंधी उपासना का एक प्रकार बताया। पाटमेद-कृत्स्न हारित (सां. आ. ८. १०) कृष्ण हारित नामक महर्षि ने कालामक प्रजा उत्पन्न की। इस कारण इसके अवयव विकल हुए, परंतु इसने छंदों से अपना शरीरबल संयत्न किया। इस कारण छंद.संहिता का अस्तित्व है, यह तात्त्विक अर्थ इसने बताया (ऐ. आ. ३. २. १४)।

कृष्णदत्त लौहित्य—श्यामसुज्यंत लौहित्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३. ४२. १; त्रिवेद देखिये)।

कृष्णधृति सान्यकि—सत्यश्रवस का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३. ४२. १; त्रिवेद देखिये)।

कृष्णीय—विश्वक कार्णि देखिये।

कैकय—एक राजा। इसे एक बार अरण्य में एक राक्षस ने पकड़ लिया। इसने अपने राज्य में लोग कैसे धार्मिक हैं, यह बताया तथा कहा कि, इसी कारण मुझे राक्षसों का भय नहीं लगता। इसे राक्षस ने छोड़ कर घर जाने को कहा (म. शां. ७.८; अश्वमति कैकय देखिये)।

२. (सो. अनु.) शिविराजा के पाँच पुत्रों में चौथा।

३. भारतीययुद्ध में पांडव पक्ष का राजा (म. उ. १६८.१३)।

४. एक सूत्रधरि। इसे मालवी नामक स्त्री से कीचकादि पुत्र हुए। इसकी दूसरी पत्नी मालवी की बहन थी। उसकी कन्या सुदेष्णा, जो विराट की भार्या थी (म. वि. परि. १. क्र. १९; पंक्ति. २५-३२)।

५. इसकी कन्या सैरंभी। वह मरुत्त की पत्नी थी (मार्क. १०८)।

६. भारतीययुद्ध में दुर्योधन पक्ष का राजा (म. उ. १९६.५)।

केतव—वायु मत में व्यास की ऋकृशिष्यपरंपरा के शाकपूर्ण रथीतर का शिष्य (व्यास देखिये)।

केतु—(स्वा.) ऋषभदेव तथा अयंती के सौ पुत्रों में से एक। इसके पिता ने जंबुद्वीप के नौ वर्षों में से अज्ञानभर्ष के नौ खंड किये। तथा उन में से एक इसे दिया।

२. तामसमनु के पुत्रों में से एक (भा. ८.१)। तपोधन इसका नामांतर रहा होगा।

३. दनु तथा कश्यप का पुत्र। यही केतु नामक ग्रह होगा।

४. ऋषियों के एक संघ का नाम (म. शां. १९.१२)।

५. धूमकेतु का नामांतर। प्रजा की अत्यंत वृद्धि हो रही है, यह देख कर ब्रह्मदेव ने मृत्यु नामक एक कन्या निर्माण की। उसे प्रजा का संहार करने के लिये कहा, तब वह रोने लगी। उसके अश्रुओं से अनेक रोग उत्पन्न हुए, इसलिये उसने उप किया। इस तप के कारण, उसे वर मिला कि, तुम्हारे निमित्त किसी को भी मृत्यु नहीं आयेगी। तब उसने एक दीर्घ श्वास छोड़ा, जिससे केतु उत्पन्न हुआ। उस केतु को एक शिखा थी। इसे केतु वा धूमकेतु कहते हैं (विष्णुधर्म. १.१०६)।

६. (सो.) मत्स्य के मत में द्रुह्यपुत्र।

केतु आग्नेय—युक्तद्रष्टा (क्र. १०.१५६)।

केतु वाज्य—वाज्यऋषि का शिष्य। इसका शिष्य कौहल (वं. ब्रा. १)।

केतुजाति—पराशरकुल के ऋषिगण।

केतुमत्—दनुपुत्र दानवों में से एक।

२. (सो. क्षत्र.) धन्वन्तरि का पुत्र। इसे भीमरथ वा भीमसेन नामक एक पुत्र था।

३. एकलव्य का पुत्र तथा निषध देश का राजा। यह दुर्योधन के पक्ष में था। कलिग के वध के बाद भीम ने इसका वध किया (म. भी. ५०.७०)। मयसभा में उपस्थित क्षत्रियों के बीच का केतुमान् यही होगा।

४. (सू. इ.) पृथुराजा द्वारा नियुक्त दिक्पालों में से तीसरा। अर्थात् यह पश्चिम का दिक्पाल होगा (पृथु देखिये)।

५. (सू. नामाग.) भागवत मत में अंबरीषपुत्र।

६. प्रतदंनदेवों में से एक।

७. सुतार नामक शिवावतार का शिष्य।

८. दारुक नामक शिवावतार का शिष्य।

केतुमती—सुमालि राक्षस की स्त्री। रावण की नानी।

केतुमाल—(स्वा.) आग्नीध्र राजा के नौ पुत्रों में कनिष्ठ। इसकी स्त्री मेरुकन्या देवकीति थी। इसका वर्ष इसी के नाम से प्रसिद्ध है (भा. ५.२)। इसकी माता का नाम उपचिती था।

केतुवर्मन्—त्रिगर्ताधिपति सूर्यवर्मा का भ्राता। अर्जुन ने इसका वध किया (म. आश्व. ७३.१५)।

केतुवीर्य—कश्यप एवं दनु का पुत्र।

२. मगधराज। इसकी कन्या सुकेशी, जो मरुत्त से ब्याही गयी थी।

केतुद्वंग—त्रिधामन् नामक शिवावतार का शिष्य।

केदार—एक राजर्षि (दे. भा. ९.४२)।

केदारेश्वर—एक शिवावतार। नरनारायण इसे पृथ्वी पर लाये। यह उस भाग का अधिपति है (शिव. शत. ४२)। भूतेश इसका उपलिंग है (शिव. कोटि. १)।

केरल—कश्यपगोत्र का गोत्रकार गण।

केलि—ब्रह्मधान का पुत्र।

केवल—(सू. दिष्ट.) नर राजा का पुत्र। इसका पुत्र अंधूमत्।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर के अजितदेवों में से एक।

३. ब्रह्मांड मतानुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा के याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)।

केवलबर्हि—(सो. यदु.) भागवत मत में अंधक-पुत्र।

केश—ब्रह्मदेव के पुष्कर क्षेत्र के यज्ञ का एक ऋषि (पद्म. सू. ३४)।

केशलंब—तप नामक शिवावतार का शिष्य।

केशिध्वज—(सू. निमि.) कृतध्वज जनक का पुत्र। यह आत्मविद्याविशारद था (भा. ९.१३.२०) इसका पुत्र भानुमत् जनक (खाड्विक्य देखिये)।

केशिन—कश्यप एवं दनु का पुत्र (ह. वं. १.२. ८६)। इसने प्रजापति की देवसेना एवं दैत्यसेना नामक दो प्रसिद्ध कन्याओं का हरण किया। दैत्यसेना इसके वश में हुई। परंतु देवसेना आक्रोश करने लगी तथा 'कोई तो भी छुड़ावो' कह कर चिल्लाने लगी। इसी समय देवसेना का आधिपत्य जो स्वीकार कर लेगा, ऐसा सेनापति ढूँढने के लिये इन्द्र मानसपर्वत पर आया। उसने केशी से युद्ध कर के देवसेना को बचाया (म. आर. ११३.८-१५)। कुछ दिनों के बाद, इसने चित्रलेखा तथा उर्वशी आदि अप्सराओं को भगा लिया। यह पुरुरवा (बुधपुत्र) ने देखा। उसने इस दानव से युद्ध कर, इन दोनों को छुड़ाया (मत्स्य. २४.२३. पद्म. सूत्रि. १२.७६)।

२. वसुदेव को कौशल्य से उत्पन्न पुत्र।

३. कंस ने कृष्ण वध के लिये केशी नामक दैत्य भेजा था। इसने अश्वरूप धारण कर कृष्ण पर आक्रमण किया। परंतु अश्व ने खाने के लिये फैलाये मुख में हाथ डाल कर, कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.३७.२६; म. स. परि. ४, क्र. २१; पंक्ति. ८४३-८४४)। यह ऋष्यमूक पर्वत पर रहता था (गर्ग. सं. १.६)।

केशिन् दाम्य वा **दाल्भ्य**—एक राजा तथा सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १३.१०.८)। उच्चैःश्रवस् कौपयेय की बहन का पुत्र (जै. उ. ब्रा. ३.२९.१)। पांचाल इसके प्रजा-जन थे, इसलिये केशिन् इसका एक शाखा रही होगी (क. सं. ३०.२; द्रौ. श्री. २०.२५)। धार्मिक विधि के बारे में, इसका खंडिक से एकमत नहीं होता था (मै. सं. १.४.१२; श. ब्रा. ११.८.४.१)। दीक्षा का महत्व इसे सुवर्ण पक्षी ने सिखाया (सां. ब्रा. ७.४; केशिन् सात्यकामि देखिये)। उच्चैःश्रवस् कौपयेय मरने पर केशिन् दाम्य दुःख के कारण, वन में मटकने लगा। उस समय उच्चैःश्रवस् इसे धूपरूप में मिला। इसके पूछने पर, मृत्यु के बाद धूम्रशरीर उसे कैसे प्राप्त हुआ यह बताया। यह उससे प्रेम से गले मिलने लगा किन्तु वह हाथ में नहीं आया (जै. उ. ब्रा. ३. २९-३०)।

केशिन् सत्यकामि—एक आचार्य। इसने केशिन् दाम्य को सप्तपदी शाकरी मंत्र की विशेष जानकारी दी (तै. सं. २.६.२.३; मै. सं. १.६.५)।

केशिन्—(सू. इ.) भविष्य मत में सुनक्षत्रपुत्र।

केशिनी—कश्यप एवं प्राधा की कन्याओं में से एक अप्सरा।

२. सगर की दो स्त्रियों में से उ्येष्ठ (म. व. १०४. ८)। इसके शैब्या, भानुमती एवं सुमति नामांतर भिन्न भिन्न स्थानों पर मिलते हैं। इसकी सौत का नाम सुमति था (भा. ९.८.१५)। सगर ने इन दोनों स्त्रियोंसहित पुत्रप्राप्ति के लिये तपस्या कर, शंकर से पुत्रप्राप्ति का वरदान प्राप्त किया। इससे सगर को अममंजस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (सगर देखिये)। यह विदर्भकन्या थी (वायु. ८८.१५५)।

३. (सो. पूरु.) सुहोत्र के पुत्र अजमीह की तीन स्त्रियों में से एक। इसे जहु, जन, रुपिन् आदि तीन पुत्र हुए (म. आ. ८९.२८)।

४. विश्रवस् ऋषि की पत्नी। इससे रावण, कुंभकर्ण, बिभीषण आदि तीन पुत्र हुए (भा. ४.१.२७; ७.१. ४३)।

५. दमयंती के मायके की चेटी। दमयंती का नल ने त्याग किया। इसे दमयंती ने चार बार बाहुक के पास भेजा। पहली बार उसकी जानकारी, दूसरी बार उसकी विस्तृत जानकारी, तीसरी बार नलद्वारा पकाये माँस का कुछ हिस्सा मँगाना तथा चौथी बार इसी के साथ अपने

दोनों अपर्यों को भेज कर, क्या होता है यह सविस्तर रूप से पुछवाया।

६. एक अप्रतिम लवण्यवती राजकन्या। इसने अपना स्वयंवर रचा था। इसमें आंगिरा ऋषि का पुत्र सुधन्वा एवं प्रह्लादपुत्र विरोचन आया था। इनमें जो श्रेष्ठ होगा उसे वरण करूँगी ऐसा केशिनी ने कहा। तब इनका आपस में विवाद हुआ। प्राणों की बाजी लगा कर वे प्रह्लाद के पास गये। प्रह्लाद ने बताया कि, सुधन्वा का पक्ष सही है। प्रह्लाद के कहने पर उदार अंतःकरणवाले सुधन्वा ने विरोचन को छोड़ दिया। केशिनी ने विरोचन का वरण किया (म. स. ६१; उ. ३५*)। यह कथा 'भूमि के लिये असत्य नहीं बोलना चाहिये,' यह समझने के लिये उद्योगपर्व में विदुर ने धृतराष्ट्र को बताया। द्रौपदीदह्न-हरण के समय, यही कथा यह स्पष्ट करने के लिये बताई गई कि, असद्वर्म से व्यवहार न करते हुए अंगर कोई प्रश्न पूछे, तो योग्य तथा सत्य निर्णय देना चाहिये। सत्यरथन के लिये कभी डर अथवा लजा, संकोच नहीं मानना चाहिये।

यह कथा दो स्वरूपों में प्राप्य है। उद्योगपर्व में कहा गया है कि, सख्य होने पर ही यह वादविवाद हुआ; परंतु सभापर्व में कहा गया है कि, आपस में झगडा होते समय यह वादविवाद हुआ, तथा प्रह्लाद ने कश्यप से पूछ कर निर्णय दिया।

७. कश्यप तथा खशा की कन्या।

८. बृहध्वज देखिये।

केसरप्रावंधा—वैतहव्यों ने इसकी एक बकरी मार कर पकायी। पश्यान् उस पातक में से वे मुक्त हुए। इस संबंध में इसका निर्देश है (अ. वे. ५.१८.११)। भृगु का वध करने के कारण, उत्कर्ष के शिखर पर पहुँचे हुए वैतहव्य संजय नष्ट हुए (अ. वे. ५.१९.१)।

केसरिन्—अंजनी का पति तथा एक बानर। (वा. रा. उ. ६६)। यह गोकर्ण नामक पर्वत पर रहता था। अंजनी तथा मार्जारस्या नामक इसकी दो स्त्रियाँ थीं। एक बार शंभुसादन नामक असुर ने, अनावर बन कर ऋषियों को कष्ट दिये। तब इसने ऋषियों की आज्ञा से उससे युद्ध किया तथा उसका वध किया। ऋषियों ने संतुष्ट हो कर इसे आशीर्वाद दिया, 'तुझे अच्छे स्वभाववाला, भगवद्भक्त तथा बलवान् पुत्र होगा।' तदनुसार हनुमान् उत्पन्न हुआ (वा. रा. सुं. ३५)।

२. गद्गद बानर का पुत्र। जांबवत् का कनिष्ठ भ्राता।

कैकरसप—कश्यपकुलीन गोत्रकार (मत्स्य. १९९.७)।

कैकसी—सुमाली राक्षस की कन्या तथा विश्रवा ऋषि की पत्नी। इसके विवाह की मँगनियाँ होने पर सुमाली कुछ भी कारण बता कर, उनकी माँग को अस्वीकार करता था। इसका परिणाम यह हुआ कि, सबों ने मँगनी करना बंद कर दिया। कन्या का यौवन दल रहा है, यह देख कर इसके पिता ने विश्रवा को, इसका वरण करने की-सलाह दी। समय का ख्याल न रख, ऐन संख्या के समय यह विश्रवा के सामने जा खड़ी हुई। ऋषि ने इसकामनोगत ताड़ लिया। क्रूर घटिका होने के कारण इसे तीन अपत्य बुरे तथा इसकी इच्छानुसार चौथा पुत्र अच्छा हुआ। उनके नाम क्रमशः रावण, कुंभकर्ण, शूर्पणखा (शूर्पनखा), एवं विभीषण थे (वा. रा. उ. ९; स्कंद. ३.१.४७)।

कैकेय—अश्वपति कैकेय एवं सुमित्रा देखिये।

२. (सौ. अनु.) भागवत तथा विष्णु मत में शिवि का पुत्र।

कैकेयी—केकय देश के राजा अश्वपति की कन्या, एवं राजा दशरथ की कनिष्ठ किंतु अत्यंत प्रियपत्नी। इसका पुत्र भरत। भरत के लिये ही इसने राम को वनवास दिलाया, जिससे दशरथ की मृत्यु हुई।

राजा दशरथ देवदानवों के युद्ध में, देवताओं की सहायता करने गये। उस समय रथ के पहिये की कील टूट गयी। कैकेयी ने अपना हाथ वहाँ लगा कर राजा को बचाया। राजा ने इसे दो वर माँगने को कहा (ब्रह्म. १२३)। इससे पता चलता है, कि यह युद्ध में रही होगी (कलहा देखिये)। राम के यौवराज्यभिषेक के दिन समीप आये। गांव सजाने लगे तब अभिषेक की बात मंथरा ने इसे बतायी। दशरथ ने कैकेयी के महल में सतत रहते हुए भी, इसे अभिषेक की बात का पता लगाने नहीं दिया था। मंथरा के बता देने के बाद, राजा ने इसे, अभिषेक का समाचार भिजवाया। राम-यौवराज्याभिषेक का समाचार मंथरा से सुन कर, इसने आनंद प्रदर्शित किया। भरत तथा राम मेरे लिये समान हैं यों कह कर, समाचार लानेवाले मंथरा को पुरस्कार देना चाहा। मंथरा ने इसके मन में जहर भर दिया। उसने कहा, 'तुने के समय में क्यों हँसती हो?' (वा. रा. अयो. ७.३)। राम के ऐश्वर्य तथा भरत की हीनदशा का चित्र, मंथरा ने कैकेयी के सामने प्रस्तुत

किया। इस कारण सामान्य स्त्रीस्वभावसुलभ इसका मन मत्सर से भड़क उठा। देवासुरसंग्राम के समय से बचे हुए धरदानों की याद उसीने दिलायी। मंथरा की सलाह के अनुसार, कैकेयी ने दशरथ को दो वरदानों का स्मरण दिला कर, राम के लिये वनवास तथा भरत के लिये राज्य माँगा। राजा ने ये दोनों वरदान दिये। यथार्थ बात तो यह थी कि, कैकेयी के पिता ने पहले से ही यह व्यवस्था कर रखी थी। बूढ़े राजा को लड़की व्याहते समय, कैकेयी के पिता ने यह शर्त रखी थी कि, इसके पुत्र को राज-गद्दी मिले। दशरथ ने यह शर्त स्वीकार भी की थी, परंतु इस बात का कैकेयी को पता न था।

भरत ने कैकेयी की बहुत निर्भरसना की, जिसके कारण इसका सारा षड्यंत्र नष्ट हो गया। भरत ने इसका वर्णन निम्नलिखित विशेषणों से किया है—कोपी, अविचारी, धर्मही, अपने को भाग्यवान समझने वाली, ऐश्वर्यलब्ध, दुर्जन होते हुए सज्जन की तरह दिखने वाली, दुष्ट, तथा पापसुद्धि (वा. रा. अयो. ९२.१६)।

भरत ने राम को लाने के लिये सपरिवार वन जाना निश्चित किया। तब सुमित्रा एवं कौसल्या के साथ कैकेयी भी वन जाने के तयार हुई (वा. रा. अयो. ८३.६; सुवेपा २. देखिये)।

कैटभ—मधुदैत्य का अनुज। इसका वध विष्णु ने किया (मधुकैटभ देखिये)।

२. एक राक्षस। इसके अश्वत्थ, पिप्पलादि दो ब्रह्म-भक्षक पुत्र थे। उन का अगस्ति ने सौरि शनैश्वर की मदद से नाश किया (ब्रह्म. ११८)।

कैतव—शकुनिपुत्र उलूक का नामांतर (म. उ. १६०. ९)।

कैतवक—शकुनि का नामांतर (म. स. ५४.१)।

कैरात—कश्यपकुल का गोत्रकार।

कैराति—अंगिराकुल का गोत्रकार।

कैरिशिय—सुक्व का पैतृक नाम।

कैलासक—एक सर्प (म. उ. १११.११)।

कैशोर्य—काप्य का पैतृक नाम (बृ. उ. २.५.२२; ४.५.२८)।

कोक—सवासह नामक पांचाल के राजा का पुत्र (श. ब्रा. १३.५.४.१७)।

कोकिल—एक राजपुत्र का नाम (काटक-अनुक्रमणी, वेधर)।

कोचरश—एक राजा। इसकी भार्या सुप्रज्ञा। वह एकादशी के दिन विष्णु के सामने जागरण कर रही थी। उस समय वहाँ शौरी नामक ब्राह्मण आया। राजारानी को आनंद से देवता के सामने नाचते देख, ब्राह्मण बहुत खुश हुआ। रानी ने उसे अपना पूर्वजन्मवृत्त कथन किया। उसने कहा, 'पूर्वजन्म में मैं एक वेश्या थी। यह राजा एक शूद्र था। एकादशी के दिन बीमारी के कारण, सहजरूप से जागरण तथा उपवास हो गया। देवताओं के नाम भी मुँह से निकल पड़े। इस कारण अत्र राजकुल में जन्म हुआ।' यह वृत्तंत सुन कर ब्राह्मण ने भी एकादशीव्रत प्रारंभ किया। कालंतर में तीनों को वैकुंठ प्राप्त हुआ (पद्म. उ. ८१)।

कोटरक—एक सर्प (म. आ. ३१.८)।

कोटरा—वाणासुर की माता। यह पुत्र के प्राणों की रक्षार्थ, कृष्ण के सामने मुक्तकुंतला एवं वस्त्रहित खड़ी हुई थी (भा. १०.६३.२०; वाण देखिये)।

कोटिक वा कोटिकादय—(सो. अनु.) सूर्यपुत्र। इसने ज्यद्रथ के लिये द्रौपदी की पूँछों की थी। पश्चात् ज्यद्रथ द्रौपदी को हरण कर ले जा रहा था। तत्र पांडवों से हुए युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. व. २४८, २४९; २५५.२४)।

कोटिश—एक सर्प (म. आ. ५२.५)।

कोपचय—अंगिराकुल का गोत्रकार।

कोपवेग—युधिष्ठिर की सभा का एक ऋषि (म. स. ४.१४)।

कोमरुक—जनमेजय के सर्पसत्र का एक सर्प (म. आ. ५२.१५)।

कोरकृष्ण—वसिष्ठकुल का ऋषिगण। पाठभेद—कोर-कृष्ण।

कोरग्य—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

कोल—कुशिकगोत्र का मंत्रकार।

कोलद्—वायु तथा ब्रह्मांडमत में व्यास की साम-शिष्य परंपरा के लांगलि का शिष्य। पाठभेद—कोहल।

कोलासुर—एक दैत्य। कहोड़ का पिता पिप्पलाद दुग्धेश्वर के पास तपस्या कर रहा था। एक बार वह ध्यानस्थ था। उस समय कोलासुर उसे यातना देने पहुँचा। तब कहोड़ ने एक कृत्या निर्माण कर उसका वध किया (पद्म. उ. १५७)।

कोलाहल—(सो. अनु.) मत्स्य मत में सभानरपुत्र। कालनर, कालानर, कालानल तथा यह एक ही है।

कोष—एक आचायक (श. ब्रा. १०.५.५.८; सुश्रवस् देखिये)।

कोहल—वायु तथा ब्रह्मांड मत में व्यास की साम-शिष्य परंपरा में लांगलि का शिष्य। पाठभेद—कोल्ड (व्यास देखिये)। जनमेजय के सर्पसत्र का एक सदस्य (म. आ. ४८.९)।

२. भगीरथ देखिये।

कौकुर—कुकुरवंशोत्पन्न कारस्कर राजा।

कौकुरंडि—उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

कौकूरुस्त—इसके द्वारा यज्ञ में विपुल दक्षिणा दी जाने का निर्देश है (श. ब्रा. ४.६.१.१३)।

२. तामस मन्वन्तर के योगवर्धनों में से एक (मनु देखिये)।

कौचकि—अंगिराकुल का गोत्रकार।

कौचहस्तिक—भृगुकुल का गोत्रकार।

कौच—हिरण्यक्ष एवं देवताओं के बीच हुए युद्ध में वायु ने इसका वध किया (पद्म. सु. ७५)।

कौटिल—भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार।

कौटिल्य—चाणक्य देखिये।

कौणकुत्स—एक ऋषि (म. आ. ८.२१)।

कौणप—एक सर्प (म. आ. ५२.५)।

कौणपाशन—कद्रूपुत्र सर्प।

कौटरव्य—एक आचाय (सां. आ. ७.१४; ८.२)। इसने अक्षरोपासना वा अक्षरों के संबंध की जानकारी प्रचार में लयी (ऐ. आ. ३.२)।

कौंडिनी—पाराशरीकौंडिनीपुत्र देखिये।

कौंडिन्य—हिरण्यकेशि शाखा के पितृतपण में इसका उल्लेख है। यह वृत्तिकार था। परंतु इसने किसपर वृत्ति रची यह नहीं कह सकते (स. श्रौ. २०.८.२०)।

२. एक आचार्य। 'ह' कार को क वर्ग होता है, इस कथन के लिये, सम्मानार्थ लिये गये कई आचार्यों के नामों में इसका भी नाम समाविष्ट है (तै. प्रा. ५.३८)।

३. शांडिल्य का शिष्य। इसका शिष्य कौशिक (बृ. उ. २.६.१.४; ६.१, विदभिन् देखिये)।

४. एक ब्रह्मर्षि। यह कुंडिनकुलोत्पन्न था (म. स. ४. १४)। यह युधिष्ठिर के अश्वमेध का एक सदस्य था (जै. अश्व. ६३)। यह स्यावर (थेउर) में रहता था। इसकी

स्त्री आश्रमा। दुर्वाकुरमाहात्म्य बताने के लिये इसकी कथा दी गयी है (गणेश. १.६३)।

५. एक ऋषि। इसका आश्रम हस्तिमती एवं साभ्र-मती नदियों के संगम पर था। एक बार अतिवृष्टि के कारण, आश्रम में पानी आया। इसलिये इसने नदी को सूख जाने का शाप दिया तथा स्वयं विष्णुलोक चला गया (पद्म. उ. १४५)।

कौतस्त—अरिमेजय प्रथम एवं जनमेजय का पैतृक नाम।

कौत्स—महर्षि का शिष्य। इसका शिष्य मांडव्य (श. ब्रा. १०.६.५.९; वृ. उ. ६.५.४)। वेद अनर्थक है, इस कौत्स के मत का निरुक्त में निषेध दर्शाया गया है (नि. १.१५)।

एक आचार्य (आ. श्रौ. १०.२०.१२; आश्व. श्रौ. १.२.५; ७.१.१९; आ. ध. १.१९.४.२८.१)।

२. अंगुकुल का गोत्रकार।

३. अंगिराकुल का गोत्रकार।

४. विश्वामित्र का शिष्य। विश्वामित्र के मना करने पर भी, इसने रघुराजा के पास से 'चौदह कोटि मुहरें दक्षिणा में ला कर उसे दी (स्कन्द. २.८.५)। रघुवंश में बरतंतुशिष्य कौत्स की, ठीक ऐसी ही कथा दी गयी है (र. वं. ५)।

५. एक ब्रह्मर्षि। भृगुवंशीय राजा भगीरथ ने इसे अपनी कन्या हंसी दी थी (म. अनु. २०० कुं; दुर्मित्र कौत्स एवं सुमित्र कौत्स देखिये)।

कौत्सायन—मंत्रद्रष्टा (मैत्र्यु. ५.१)।

कौथुम पाराशर्य—वायु तथा ब्रह्मांड मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा में एक।

कौथुमि—हिरण्यनाभ नामक ब्राह्मण का पुत्र। एक बार यह जनक के आश्रम में गया। वहाँ उसने ब्राह्मणों से विवाद किया तथा क्रोधविष्ट हो कर एक ब्राह्मण का वध किया। इस कारण इसे महारोग तथा कुछ हुआ। ब्रह्महत्या इसके पीछे लगी। सारे तीर्थ करने पर भी उसने पीछा न छोड़ा। आगे चल कर, पिता की सलाह के अनुसार इसने श्राव्यसंज्ञक सूक्त का सूर्य के सामने नियंत्र जप किया एवं पुराणश्रवण किया। इससे इसका उद्धार हुआ (भवि. ब्राह्म. २११)।

कौपयेय—उच्चैःश्रवस् का पैतृक नाम।

कौविरक—ऋष्यपकुल के गोत्रकारण।

कौब्जायनि—मौब्जायनि का पाठभेद।

प्रा. च. २२]

कौमानरायण—कौलायन का पाठभेद।

कौभ्य—बभ्रु का पैतृक नाम।

कौरकृष्ण—कौरकृष्ण का पाठभेद।

कौरयाण—पाकस्थामन् का पैतृक नाम (ऋ. ८. ३. २१)।

कौरव्य—कुरु वंश का एक राजा। परीक्षित के शासन में, यह अपने स्त्रीसहित सुख से रहता था (अ. वे. २०. १२७.८; खिल. ५.१०.२; सां. श्रौ. १२.१७.२; वैतानस्य ३४.९)। बालिक प्रातिपीय राजा को कौरव्य कहा गया है (श. ब्रा. १२.९.३.३)। एक आख्यायिका में, आर्द्धिषेण एवं देवापि भी कौरव्य नाम से संबोधित किये गये हैं (नि. २.१०)। यह वसिष्ठकुल का गोत्रकार था।

२. ऐरावत कुलोत्पन्न एक नाग तथा उद्वपी का पिता। जनमेजय के सर्पसत्र में इसके कुल के ऐंडिल, कुंडल, मुंड, वेणिस्रन्ध, कुमारक, बाहुक, शंगवेग, धूर्तक, पात, तथा पातर ये कुल दग्ध हुए (म. आ. ५२.१२)।

कौरव्यायणीपुत्र—एक आचार्य। 'खं' शब्द का आकाश अर्थ लेने के लिये इसका मत माना गया है (वृ. उ. ३.५.१.१)।

कौरिष्ठ—ऋष्यपकुल का ऋषियण।

कौरुक्षेत्रिन—अंगिराकुल का गोत्रकार।

कौरुपति—अंगिराकुल का गोत्रकार।

कौरुपथि—शांशुवक करते समय किस मंत्र का उपयोग करना चाहिये, इस संबंध में इसके मत का निर्देश किया गया है (कौ. ९.१०)।

कौरुपांचाल—आशुषि के लिये यह शब्द प्रयुक्त होता था क्योंकि, वह इसी प्रांत का था (श. ब्रा. ११. ४.१.२)। इसका व्यवसाय भी इसी नाम से दर्शाया जाता है (श. ब्रा. १.७.२.८)।

कौलकावती—इस नाम के दो ऋषियों ने रथप्रोत दार्य से एक विशिष्ट यज्ञ कराया था (मै. सं. २.१.३)।

कौलायन—वसिष्ठकुल का ऋषि। पाठभेद-कौमान-रायण।

कौलितर—एक दास (ऋ. ४.३०.१४)। यह शंवर का नाम रहा होगा। यहाँ इसका अर्थ कुलितर का पुत्र है।

कौशल—एक राजवंश। इस वंश के सात राजाओं का निर्देश प्राप्त है।

कौशल्य—अगस्त्यकुल के गोत्रकारण।

२. अंगिराकुल के गोत्रकारण।

३. विष्णुदाद का आश्वलायनकुल का एक शिष्य।

४. सुकर्म ब्राह्मण का शिष्य। इसने सामवेद का अध्ययन किया (भा. १२.६)।

५. अटीमालिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

६. कोसल देश का इस अर्थ में प्रयुक्त। कौशल्य पाठभेद भी मिलता है (कौशल्य देखिये)।

कौशापि--भृगुकुल के गोत्रकारण।

कौशाब्ये--प्रोती का पौत्रक नाम।

कौशिक--कौण्डिन्य का शिष्य। इसके शिष्य गौपवन तथा शांडिल्य थे (चू. उ. २.६.१; ४.६.१)। वायु तथा ब्रह्मांड मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा के हिरण्यनाभ का शिष्य (व्यास देखिये)। एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)। एक ऋषि (मत्स्य. १४५.१२-१३)। अथर्व-वेद के गृह्यसूत्र का रचयिता कौशिक नामक एक आचार्य था। शांत्युदक देते समय कौन सा मंत्र कहा जाये, इस संबंध में इसके मत का उल्लेख है (कौ. ९.१०; युवा कौशिक देखिये)। इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हैं। १. कौशिकगृह्यसूत्र, २. कौशिकस्मृति, इस स्मृति का उल्लेख हेमाद्रि ने परिशेषखंड में किया है (१.६.३१; ६.३.७)। उसी तरह नीलकंठ ने भी इस स्मृति का उल्लेख श्राद्धमयूख में किया है। इसके नाम पर एक शिक्षा भी है। कौशिकपुराण भी इसीने रचा (C. C.)

कौशिक कुल के मंत्रकार--कौशिक कुल में १३ मंत्रकार दिये हैं। उन के नाम--१ विश्वामित्र, २ देवरात, ३ बल, ४ शरद्वत्, ५ मधुच्छंदम्, ६ अश्वमरण, ७ अष्टक, ८ लोहित, ९ भूतकाल, १० अम्बुधि, ११ धनंजय, १२ शिशिर, १३ शार्यकायन (मत्स्य. १४५. ११२-११४)।

२. (सो. अमा.) कुशांक, गापिन्, विश्वामित्र आदि लोगों का सामान्य नाम। विश्वामित्र के ब्राह्मण होने पर उसके कुल में उत्पन्न हुआ एक ऋषि। इसकी हैमवती नामक स्त्री थी। (म. उ. ११५.१३)।

३. सत्यवचनी ब्राह्मण। गांव के पास संगम पर यह तपस्या करता था। सत्य कहते समय, योग्य तारतम्य इस में न था। एक बार कुल पथिक, चोरों के आक्रमण के कारण, इसके आश्रम में जा छिपे। छुट्टेरे (चोर) पलने आये। इसने सत्य बात कह दी तब चोरों ने पथिकों को मार डाला। इस कारण, यह ब्राह्मण अश्रोगति को प्राप्त हुआ। सत्य बोलते समय तारतम्य रखना चाहिये यह समझाने के लिये कृष्ण ने अर्जुन को यह कथा बतायी है (म. क. ४९)।

४. एक गायक। यह विष्णु के अतिरिक्त किसी का गुणगान नहीं करता था। इसके अनेक शिष्य थे। इसकी कीर्ति सुन कर, कर्लिग देश का राजा इसके पास आया तथा 'मेरी कीर्ति गाओ' कहने लगा। तब कौशिक ने कहा "वह विष्णु के अतिरिक्त किसी का गुणगान नहीं करता।" सब शिष्यों ने गुरु का समर्थन किया। राजा ने अपने नौकर को अपना गुणगान करने को कहा। तब कौशिक ने, मैं विष्णु के अतिरिक्त किसी का गुणगायन नहीं सुनता, यह कह कर अपने कान बंद कर लिये। इनके शिष्यों ने भी अपने कान बंद कर लिये। अंत में इसने नुकीली लकड़ी से अपने कान एवं जवान छेद डाली। ऐसे एकनिष्ठ गायन से ईश्वर की सेवा कर, यह वैकुण्ठ सिंघारा (आ. रा. ५)।

५. सावर्णि मन्वंतर में होनेवाले सप्तर्षियों में से एक। यह गालव का नामांतर है।

६. शरंपंचरावस्था में भीष्म के पास आया हुआ एक ऋषि (भा. १.९.७)।

७. एक ऋषि। वृक्ष के नीचे तप करने समय, वृक्ष पर से एक बगली ने इस पर विश्वास कर दो। इसने क्रोधित होकर ऊपर देखा। ऊपर देखते ही तप के प्रभाव से वह पक्षिणी निर्जीव हो कर नीचे गिरी। अपने कारण यह बुरी घटना हुई देख शरीर बहुत दुःख हुआ। गांव में यह भिक्षा मांगने एक पतिव्रता के घर गया। पतिकार्य में व्यस्त होने के कारण, भिक्षा देने में उसे देर हो गयी। इस कारण पतिव्रता ने इससे क्षमा-याचना की। फिर भी यह उस पर नाराज हुआ। तब उस स्त्री ने कहा कि मैं बगली नहीं हूँ। तुम्हें अभी भी धर्म समझ में नहीं आया है। उसे समझने के लिये तुम मिथिला के धर्मव्याध के पास जाओ। इसे यह बात ठीक जैसी तथा इसका क्रोध शांत हुआ। पश्चात् यह धर्मव्याध के पास गया। धर्मव्याध ने इसे धर्म अनेक प्रकार से समझाया। तदनुसार यह अपने मत्ताश्रिता की मुशुषा करने लगा। सुदिशि ने वनवास में मार्कंडेय से पतिव्रतामाहात्म्य के बारे में पूछा, तब उसने यह कथा बताई (म. व. १९६-२०६)।

८. कुरुक्षेत्र में रहनेवाला ब्राह्मण। पितृवर्ती आदि सात पुत्रों का पिता (पितृवर्तिन् देखिये)।

९. जरासंध के हंस नामक सेनापति का उपनाम वा नामांतर (म. स. २०, ३०)।

१०. एक राजा। यह रात्रि में मुर्गा बन जाता था। विशाला इसकी स्त्री थी। सर्वत्र अनुकूलता होने पर भी, अम्ना पति रात को कुक्कुट हो जाता है, यह देख उसे बहुत दुःख होता था। वह गालव ऋषि के पास गयी। ऋषि ने राजा का पूर्ववृत्तांत उसे निवेदन किया। पिछले जन्म में, यह शक्ति प्राप्त करने के लिये बहुत कुक्कुट खाने लगा। इस बात का कुक्कुट राजा ताम्रचूड को पता लगा। उसने इसे शाप दिया कि, रात्रि में तू कुक्कुट होगा। ज्वालेश्वर लिंगके पूर्व में स्थित अग्नि की पूजा करने से राजा मुक्त होगा। गालव ऋषि ने यह कथा विशाला को बताई। तदनुसार इसने काम किया तथा शायमुक्त हुआ। उस दिन से उस लिंग को कुक्कुटेश्वर कहने लगे (स्कंद. ५. २. २१)।

११. (सो. यदु.) मस्य, विष्णु एवं वायु मत में विदम्भपुत्र।

१२. (सो. वृष्णि) विष्णु तथा मस्य मत में वैशाली से उत्पन्न वसुदेवपुत्र। वायु मत में वैशाली से उत्पन्न वसुदेवपुत्र।

१३. गाधिन् देखिये।

१४. प्रतिष्ठान नगर का एक ब्राह्मण। यह कुष्ठरोगी था, परन्तु इसकी स्त्री पति की अत्यंत सेवा करती थी। यह व्यसनी ब्राह्मण अपनी स्त्री के कंधे पर बैठ कर वेश्या के घर जा रहा था। यह में सूली पर चढ़े हुए मांडव्य ऋषि को इसका धक्का लगा। तत्र ऋषि ने धक्का लगानेवाले की सूर्योदय के पूर्व मृत्यु होगी, यों शाप दिया। परन्तु इसके पत्नी के पातित्रय के कारण, सूर्योदय ही नहीं हुआ। तत्र देवताओं ने इसकी स्त्री को संतुष्ट किया तथा अनुसूया के द्वारा इसके पति को जीवित किया (मार्क. १६. १४-८८; गरुड. १ १४२)।

कौशिकायति—एक आचार्य। घृतकौशिक का शिष्य। वैजपायन तथा सायकायन इसके शिष्य थे (बृ. उ. २.६.२; ४.६.२)।

कौशिकी—जमदग्नि की माता सत्यवती। नदी में इसका रूपान्तर हुआ, तत्र उसे यह नाम प्राप्त हुआ (वा. रा. ब्रा. ३४; म. आ. २०७.७; व. ८२; ११३; मी १०.१७)।

कौशिकीपुत्र—आलंबीपुत्र तथा वैयाघ्रपदीपुत्र का शिष्य। इसका शिष्य कात्यायनीपुत्र (वृ. उ. ६.५.१)।

कौशित्य—सामवेदी श्रुतर्षि।

कौशीतक—इस ऋषि ने वकुलासंगम पर परमेश्वर की सेवा की (पद्म. उ. १६८)।

कौशीती—ऋग्वेदी ब्रह्मचारी।

कौश्रेय—सोमदक्ष का पैतृक नाम (का. सं. २०.८; २१.९)।

कौषारव वा **कौषारवि**—मैत्रेय का पैतृक नाम (पे. ब्रा. ८.२८)।

कौपीतिक—एक ऋषि। इसके नाम पर कौपीतिक ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, सांख्यायन, श्रौत तथा यज्ञसूत्र आदि ग्रंथ हैं। उसमें इसके नाम से संबंधित कुछ मत आये हैं। कौपीतिक या कौपीतिकेय यह कहोड़ का पैतृक नाम है (श. ब्रा. २.४.३.१; छां. उ. ३.५.१)। लुशाकपि ने इसे तथा इसके शिष्यों को शाप दिया था (पं. ब्रा. १७.५.७. ३)। इन शिष्यों में दो अध्यापक थे। पहला कहोड़ एवं दूसरा सर्वजित् (सां. ब्रा. १४.२४.७१)।

इसे ही सांख्यायन कहते हैं। इंद्रप्रतर्दनसंवाद में प्राण-तत्त्व को संसार का मूलाधार कहा है (कौपी. उ. २.१)। इसका शिष्य सर्वजित् (कौपी. २.७)। इसने पुत्र को उपदेश दिया (छां. उ. १.५.२; कुपीतिक सामश्रवस देखिये)। यह प्राण को ब्रह्म मानता था।

कौपीतिकेय—कहोड़ का पैतृक नाम।

२. इसने सोमतीर्थ पर तपस्या की। शंकर के प्रसन्न होने पर, वहां सोमेश्वर नामक शिवलिंग की इसने स्थापना की (पंच. उ. १६१)।

कौषेय—एक ब्रह्मर्षि (वा. रा. उ. १.४)।

कौष्टिक—अंगिराकुल का एक गोत्रकार ऋषि।

कौष्य—सुश्रवस का पैतृक नाम।

२. शंख का पैतृक नाम।

कौसला—कृष्णपत्नी सत्या का दूसरा नाम।

कौसल्य—पर आटणार तथा हिरण्यनाभ देखिये।

कौसल्य आश्वलायन—एक तत्त्वज्ञ। प्राणी की उत्पत्ति किससे हुई, यह इसकी पृच्छा थी (प्रश्नोपनिषद्. १.१)।

कौसल्या—कोसल देश के भानुमान् राजा की कन्या तथा राजा दशरथ की पटरानी। इसे हजार गाँव स्त्री-धन के स्वरूप में नैहर से मिले थे (वा. रा. अयो. ३१. २२-२३)। इसका पुत्र रामचंद्र। यह दशरथ की पहली स्त्री थी। राम को सुवराज्याभिषेक करने की बात निश्चित हुई। यह समाचार कौसल्या को राम के द्वारा ही मिला। कैकेयी को बताने के लिये राजा स्वयं गया था। भरत के कहने से पता चलता है कि, कौसल्या कैकयी के साथ बहन सा व्यवहार करती थी (वा. रा. अयो. ७३.

१०)। परंतु कैकेयी एवं उसके परिवार के लोग बार बार इसका अपमान करते थे (वा. रा. अयो. २०. ३९)। कैकेयी व्यंगवचनों से इसका मर्मभेद करती थी (वा. रा. अयो. २०. ४४)।

राम इसके पास बन जाने के लिये अनुमति माँगने गया। तब लक्ष्मण ने, पिता का निग्रह कर राज्य पर अधिकार करने का उपाय सुझाया। उस समय कौसल्या ने प्रच्छन्न रूप से संमति दी (वा. रा. अयो. २१. २१)। संभवतः निरुपाय हो कर इसने संमति दी होगी। राम को इस बात की स्पष्ट कल्पना थी कि, बन जाने के बाद माता की कुछ भी कष्ट नहीं होगी (वा. रा. अयो. ३१.११)। पंद्रहवें वर्ष राम के लौटने पर भरत राज्य एवं कोश लौटा देगा, इसकी संभावना न थी (वा. रा. अयो. ६१.११)।

राम के बन चले जाने के बाद, यह दशरथ से मर्मस्पर्शी बातें करने लगी। उस समय दयनीय अवस्था में दशरथ ने कौसल्या को हाथ जोड़े। तब कौसल्या को अपनी भूल ध्यान में आयी। पुत्रशोक से ब्याकुल होने के कारण, कटुवचन कहे, यह बात उसने मान्य की (वा. रा. अयो. ६२.१४)।

यह मृदु स्वभाव की थी। पतिमुक्त से वंचित तथा सौतद्वारा सताये जाने के कारण, यह उदासीन वृत्ति से रहती थी। इस वृत्ति का राम के चरित्र पर बहुत परिणाम हुआ। राम के चरित्र में अंतर्भूत धार्मिकता का अंश इसी की देन थी।

२. काशीराज की कन्या अश्विका (म. आ. १००.४.१०७५*)।

३. कृष्णपिता वसुदेव की एक पत्नी।

कौसवी—द्रुपदपत्नी सौत्रामणी का नामांतर।

कौसि—भृगुकुल का गोत्रकार।

कौसुरबिंदु—प्रोति का पैतृक नाम।

कौसुरुबिंदि—प्रोति कौशवेय का पैतृक नाम।

कौहल—मित्रविद एवं प्रातरह का पैतृक नाम।

क्रतु—एक ऋषि। यह स्वायंभुव मन्वंतर में ब्रह्मा के अपान से उत्पन्न हुआ। यह स्वायंभुव दक्ष का दामाद था। दक्षकन्या संतति इसकी पत्नी। इसे बालखिल्य नामक साठ हजार पुत्र हुए। वे सब ऊर्ध्वरेत होने के कारण, उनका वंश नहीं है। ये सब अरुण के आगे सूर्य के साथ रहते हैं।

क्रतु की दो बहनें पुण्य तथा सत्यवती थीं। ये दोनों पूर्णमाससुत पर्वेश की स्तुपायें थीं (ब्रह्माण्ड २.१२. ३६-३९)।

यह शिवर से वैवस्वत मन्वंतर के प्रारंभ में उत्पन्न हुआ। ब्रह्माजी ने प्रजा निर्माण करने के लिये, जो मानस पुत्र निर्माण किये थे, उनमें यह था (मत्स्य. ३.६-८)। यह प्रमुख प्रजापतियों में से एक था (मै. उ. २.३; मत्स्य. १७१.२७-२८; ३.६-८; वायु. ६५.२२; विष्णु. १.७. ४-५; १०; म. स. ११.१२; आ. ५९.१०; ६०.४; शां. २०४)। यह ब्रह्मदेव के हाथ से उत्पन्न हुआ (भा. ३. १२)। कर्दम प्रजापति, की नौ कन्याओं में से किया इसकी स्त्री थी। उससे इसे साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुए। ये बालखिल्य ऋषि अंगूठे जितने बड़े तथा ब्रह्मर्षि थे। उनके चित्रकेतु, सुरोन्दि, विरजा, मित्र, उत्पन्न, वसुभृगवान एवं युमान आदि नाम थे। उसी तरह, इसकी दूसरी स्त्री से शक्ति आदि पुत्र हुए (भा. ४.१)। सत्तति नामक स्त्री से बालखिल्य हुए (विष्णु. १.१०.१०-१५)।

२. एक ऋषि। वैवस्वत मन्वंतर में इसे परिवार नहीं था (वायु. ७०. ६६; ब्रह्माण्ड. ३.८; तिग. १. ६३.६८; कूर्म. १.१९)। इसने अगस्त्य के पुत्र इध्मवाह को गोद में लिया था। इस नाम से ही क्रतु के वंशजों को आगस्त्य नाम पड़ा (मत्स्य. २०२.८)। कुछ पुराणों में बताया है कि, इससे ब्राह्मणों का उत्पत्ति नहीं हुई (वायु. ६५.४९-५०; ब्रह्माण्ड. ३.१. ४९-५१)।

३. पांचाल देश का एक क्षत्रिय। इसका कर्ण ने बध किया (म. क. ५१.४६)।

४. एक राक्षस। वैश्वानरकन्या हयशिरा इसकी स्त्री थी (भा. ६.६.३४)।

५. भृगुऋषि द्वारा उत्पन्न वारह भार्गव देवों में से एक (वायु. ६५.८७)। इसकी माता पौलेमी (मत्स्य. १९५.१३-१४)।

६. दस विश्वेदेवों में से एक।

७. श्रीकृष्ण का जांबवती से उत्पन्न पुत्र (भा. १०.६१. १२)।

८. फाल्गुन माह में पर्जन्य नामक सूर्य के साथ व्रूमेने-बाला यक्ष (भा. १२.११.४०)।

९. उत्कूक एवं पुष्करिणी के छः पुत्रों में चौथा (भा. ४.१३.१७)।

१०. वैवस्वत मन्वन्तर में हुआ। यह आयु नाम से पौष माह में सूर्य के साथ साथ वृषता है।

११. स्वायंभुव मन्वन्तर में जितदेवों में से एक।

१२. स्वायंभुव मन्वन्तर में सप्तर्षियों में से एक।

१३. अगस्त्य कुल का गोत्रकार।

१४. अमिताभ देवों में से एक।

ऋतुजित जानकि—एक ऋषि। दृष्टि साफ होने के लिये, कमजोर आँखोंवाले रजनकोणेय द्वारा इसने विहत्रिष्का नामक दृष्टि करायी (तै. सं. २.३.८.१)। यह रजनकोणेय का उपाध्याय था (क. सं. ११.१; ऋतुविद् देखिये)।

ऋतुविद्—एक ऋषि। विश्वन्तर के सोमयज्ञ में श्यापर्णी का प्रवेश हुआ। उनके द्वारा बताया गये सोम की विशिष्ट परंपरा में अरिंद्रम ने ऋतुविद् को उपदेश दिया। इसने जानकी को उपदेश दिया (ऐ. ब्रा. ७.३४)।

ऋतुस्थला—यक्ष २. देखिये।

ऋथ—शुक्तिमान पर्वत के पूर्व में स्थित एक राजा। भारतीय युद्ध में यह दुर्योधन के पक्ष में था।

२. (सो. क्रोडु.) विदर्भराज के चार पुत्रों में से एक। इसका पुत्र कुंति या कृति। भविष्य में काथ पाठभेद है।

ऋथक—विश्रामित्र कुल का एक गोत्रकार।

ऋथन—अमृत का रक्षणकर्ता एक देव (म. आ. २८.१८)।

२. एक असुर (म. स. ९.१३)।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

४. वरुणलोक का असुरविशेष।

५. रामसेना में इस नाम के दो वानराधिपति थे (वा. रा. यु. २६.४२)।

६. कश्यप एवं लक्ष्मा का पुत्र।

ऋथल—एक ऋग्वेदी ब्रह्मचारी।

ऋतुजातेय—राम का पैतृक नाम।

ऋथ—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। इसे भीमसेन ने युद्ध में मारा (म. स. ३५.१५)।

२. एक क्षत्रिय (म. आ. ६१.३८)।

३. एक राजा। इसके पुत्र का भारतीय युद्ध में अभिमन्यु ने वध किया।

ऋथ्या—स्वायंभुव मन्वन्तर के दक्षप्रजापति की कन्या। धर्म ऋषि की स्त्री (म. आ. ६०.१३)। इसका पुत्र योग। इसके साठ हजार बालस्त्रिय हुए।

२. कर्दम ऋषि की नौ कन्याओं में एक। ऋतु ऋषि की पत्नी।

३. ब्राह्मशादित्य में से अंशुमान् आदित्य की स्त्री।

ऋषि—व्यक्ति के लिये प्रयुक्त देशवाचक शब्द। सायण इसका अर्थ कुंआँ लेते हैं (ऋ. ट. २०. २४; २२.१२; ऋथ्य पांचाल देखिये)। पांचाल देश का यह प्राचीन नाम है।

ऋत वैतहोत्र—इसका कुरु देश से संबंध था (मै. सं. ४.२.६)।

कुंच आंगिरस—सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १३.९.११; ११.२०)। इसके दो साम हैं। उसके कारण, इसे आवश्यक छठवाँ दिन प्राप्त होता था।

ऋथ्य पांचाल—ऋषि देश का राजा। इसने परिवक्रा (एकचक्रा) नगरी के निकट अश्वमेध किया (श. ब्रा. १३.५.४.७; ऋषि देखिये)।

ऋडोदय—वसिष्ठकुल का गोत्रकार।

ऋडोदरायण—वसिष्ठकुल का गोत्रकार।

ऋथ—यह ब्रह्मदेव की भृकुटि से उत्पन्न हुआ (भा. ३.९.२२)। एक बार जमदग्नि श्राद्ध कर रहे थे। यह वहाँ गया। जमदग्नि ने होमधेनु के दूध से खीर तयार की थी। इसने सर्प रूप धारण कर खीर पर गरल डाला, परंतु जमदग्नि क्रोधित न हुआ क्योंकि, उसने क्रोध को जान लिया था। तब क्रोध भयभीत हो कर शरण में आया। कहने लगा, “प्राप्तज्ञान से मैं सारे भार्गवों को शीमकोपी समझता था। अब अनुभव से शत हुआ कि, भार्गव क्षमाशील है।” उसने अभययाचना की। जमदग्नि ने उसे अभयदान दिया, तथा कहा “पितरों के क्रोध को तुम ही संहारो”। पितरों ने इसे नाराज हो कर शाप दिया। क्रोध को इसलिये नकुलयोनि प्राप्त हुई। आगे चल कर पितरों को संतुष्ट कर, इसने उःशाप की याचना की। पितरों ने उःशाप दिया, ‘धर्म की सभा में कृष्ण की उपस्थिति में उंच्छृत्ति ब्राह्मण की कथा कहने पर तुम मुक्त हो जावोगे।’ (जै. अ. ६७; उंच्छृत्ति देखिये)।

२. ब्रह्मदेवपुत्र अधर्म के वंशज लोभ तथा निकृति का पुत्र। इसकी हिंसा नामक बहन थी, जिससे क्रोध को कलि एवं तुरुक्ति नामक दो संतान हुई (भा. ४.८.३)।

३. अष्टभैरवों में से एक।

४. काला एवं कश्यप का पुत्र (म. आ. ५९.३४)।

ऋथदान—(स. इ.) भविष्य मत में शाक्यवधेन का पुत्र।

क्रोधन—कौशिक ऋषि के सात पुत्रों में से एक।
२. (सो. कुरु.) अयुत राजा का पुत्र। इसका पुत्र देवातिथि।

३. पितृवर्तिन् देखिये।

क्रोधनायन—पराशरकुल का गोत्रकार।

क्रोधवश—कश्यप एवं क्रोधा वा क्रोधवशा के पुत्रों में ज्येष्ठ (म. आ. ५९.३१)। क्रोधा के सब पुत्रों का क्रोधवश सामान्य-नाम है। इनके वंशजों का भी यही नाम था। इनके वंशजों में से कुछ लोगों को, कुवेर ने सौगंधिक नामक सरोवर के रक्षणार्थ नियुक्त किया था। इस सरोवर के कुछ सौगंधिक नामक कमल लेने के लिये भीम आया। इन्होंने उसे कुवेर की अनुमति लिये बिना हाथ नहीं लगाते-दिया। इस कारण भीम का इनसे युद्ध हुआ। भीम ने इनमें से बहुतों का वध किया (म. व. १५१-१५२)।

२. इंद्रजित का राक्षस अनुयायी। यह तथा इसके साथ कुछ राक्षस, वानरों से अदृश्य हो कर युद्ध कर रहे थे। तब अंतर्धानविद्यापटु विभीषण ने इसे प्रकट किया। वानरों ने इसे मार डाला। (म. व. २६९.४)।

३. महातल का सर्पविशेष। ये सत्र कट्ट के वंशज थे। ये गरुड़ से बहुत डरते थे। इसलिये क्वचित् तापद बनते थे (भा. ५.२४)।

क्रोधवशा—क्रोधा देखिये।

क्रोधशत्रु—काला एवं कश्यप का पुत्र।

क्रोधहंतु—काला एवं कश्यप का पुत्र।

२. पांडवपक्षीय एक रथी (म. उ. १७१.१९)। सेनात्रिदु यही होगा।

क्रोधा—दक्षप्रजापति की कन्या तथा कश्यप की स्त्री। क्रोधवशा इसका नामांतर है। इसके पुत्रों को भी क्रोधवश कहते हैं (म. आ. ५९.१२)।

क्रोधिन्—वसिष्ठकुल का गोत्रकार।

क्रोष्टकि—क्रोष्टुकि देखिये।

क्रोष्टाक्षिन्—अंगिराकुल का गोत्रकार।

क्रोष्टु—अंगिराकुल का गोत्रकार।

२. (सो. यदु.) यदु का पुत्र। इसका पुत्र वृजिन (नि)वान्। ब्रह्म, हरिवंश एवं पद्मपुराण में इसेही वृष्णि कहा गया है। क्रोष्टुकुल में से व्यामघ, भजमान, वृष्णि एवं अंधक इन स्वतंत्र वंशों का प्रारंभ होता है।

क्रौंच—हिमवान् पर्वत का मेना से उत्पन्न पुत्र। जिस द्वीप में यह रहता था, उसका नाम इसी के कारण क्रौंचद्वीप पड़ा। यह मैनाक का पुत्र है (इ. वं. १.१८)।

२. विष्णु मत में व्यास की ऋक् शिष्यपरंपरा के शाकपुणी का शिष्य (व्यास देखिये)।

क्रौंचिकीपुत्र—वैदमतीपुत्र का शिष्य। इसका शिष्य भालुकीपुत्र। ये दो रहे हमें (वृ. उ. ६.५.२)।

क्रौंची—कश्यप एवं ताम्रा की कन्या।

क्रौष्टुकि—एक आचार्य। इसने द्रविणोऽस् शब्द का अर्थ इंद्र माना है (नि. ८. २.)। यह एक वैयाकरण था (बृहदे. ४. १३७; छंदस्. ५.)। इसे क्रोष्टुकि भी कहा है (अधर्वपरि.)।

क्षत्तु—विदुर का नाम। दासीपुत्र के अर्थ में यह नाम विदुर को दिया गया है (म. आ. २ कुं.)।

क्षत्र—मनस, यज्ञत एवं अवत्सार के साथ इसका उल्लेख ऋग्वेद में आता है (ऋ. ५. ४४. १०)।

क्षत्रंजय—(सो. नील.) धृष्टद्युम्न का पुत्र (म. द्रो. ९. ४९)। द्रोण के हाथ से यह मारा गया—(म. द्रो. १३०. १२)।

क्षत्रदेव—(सो. नील.) शिखंडी का पुत्र। यह उत्तम रथी था (म. उ. १७१. १०; भी. ९३. १३; द्रो. २२.१६०)। दुर्योधनपुत्र लक्ष्मण ने इसका वध किया (म. क. ४. ७७)।

क्षत्रधर्मन् (क्षत्रधर्मन्)—धृष्टद्युम्न का पुत्र (म. उ. १७१. ७)। द्रोणाचार्य द्वारा यह मारा गया (म. द्रो. १०१. ६२)।

क्षत्रवंधु—एक राजा। यह दिग्भने में बड़ा क्रूर एवं हिंसक था। परंतु ज्ञानी होने के कारण इसका उदार हुआ (पद्य. उ. ८०)।

क्षत्रधर्मन्—क्षत्रधर्मन् देखिये।

क्षत्रवृद्ध—(सो. पुरुरवत्.) आयुराजा का तृतीय पुत्र। ये कुल पाँच भाई थे। यह नहुष का छोटा भाई था। इसका पुत्र सुहोत्र। इससे काश्यवंश प्रारंभ हुआ।

२. रौच्य मन्वंतर का एक मनुपुत्र।

क्षत्रथी प्रातर्दानि—यह भरद्वाजों का आश्रयदाता है (ऋ. ६.२६.८)।

क्षत्रोपेक्ष—(सो. यदु.) श्वफल्क यादव के तेरह पुत्रों में से एक।

क्षत्रौजस्—(शिशु. भविष्य.) वायुमत में अज्ञात-शत्रु का पुत्र। विष्णु तथा ब्रह्मांड मत में क्षेमधर्मपुत्र।

क्षपाविश्वकर—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

क्षम—सुधामन् देवों में से एक।

क्षमा—श्वकन्या तथा पुलह की स्त्री।

२. ब्रह्मभान की कन्या ।

क्षमावत्—देवल ऋषि का पुत्र ।

२. प्रत्युप नामक वसु का नाती ।

क्षय—(सू. इ. भविष्य.) वायुमत में वृद्धक्षय का पुत्र ।

क्षान्ति—तामस मनु का पुत्र ।

क्षाम—सुधामन् देवों में से एक ।

क्षितिमुखाविद्ध—विद्या देखिये ।

क्षिप्रप्रसादन—(स्वा. प्रिय.) प्रियव्रत के पुत्र का नाम (गणेश २.३३.२८) ।

क्षीर—अंगिराकुल का एक गोत्रकार ।

क्षुद्रक—(सू. इ. भविष्य.) प्रसेनजित् का पुत्र ।

क्षुद्रभृत—मरीचि ऋषि के छः पुत्रों में एक । यह स्वायंभुव मन्वंतर में था ।

२. कृष्णजन्म के पहले देवकी से उत्पन्न पुत्रों में से एक । यह कंस के हाथ से मारा गया (भा. १०. ८५) ।

क्षुधि—कृष्ण का पुत्र । यह मित्रविद्या से उत्पन्न हुआ । यह कृष्ण का अंतिम अर्थात् दसवाँ पुत्र था (भा. १०.६१) ।

क्षुप—एक प्रजापति का नाम । इसकी जन्मकथा इस प्रकार है । एक बार ब्रह्मदेव को यज्ञ करने की इच्छा हुई । योष्य ऋत्विज कोई नहीं मिल रहा था । तब उसने बहुत वर्षों तक मस्तक में एक गर्भ धारण किया । इस बात को हजार वर्ष हो गये । एक छीक के साथ वह गर्भ बाहर आया । यही क्षुप प्रजापति था । यह ब्रह्मदेव के यज्ञ में ऋत्विज् था (म. शां. १२२.१५-१७) ।

२. (सू. विष्ट.) खनित्रपुत्र । नारद ने युधिष्ठिर को यम-सभा का वृत्तान्त सुनाया, जिसमें राजाओं की मालिका में इसका नाम था (म. स. ८.१२; अनु. १७७.७३ कुं.) ।

३. एक क्षत्रिय राजा । ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं या क्षत्रिय इस संबंध में, इसका दधीचि से वाद हुआ था । इसके पश्चात् दधीचि ऋषि पर इसने चढ़ाई की, परंतु शिवभक्ति के प्रभाव से दधीचि ने इसे हरा दिया (विं. १.३४-३५) ।

क्षुभ्य—भृगुकुल का एक गोत्रकार ।

क्षुलिक—कुलक देखिये ।

क्षुव—इमने विष्णु को पराजित किया था (शिव. सू. स. ३८) ।

क्षेत्रज्ञ—(शिष्ट. भविष्य.) भागवत मत में क्षेमधर्मन का पुत्र ।

क्षेम—(स्वा. प्रिय.) इध्वजिह्व का पुत्र । इसके वर्ष को यही नाम है (भा. ५.१) ।

२. स्वायंभुव मन्वंतर के धर्मऋषि का तितिक्षा से उत्पन्न पुत्र ।

३. (सो. मगध. भविष्य.) भविष्य, भागवत, मत्स्य, वायु तथा ब्रह्मांड मत में शुचि का पुत्र । विष्णु मत में इसे क्षेम्य कहा गया है । इसने अष्टाईस वर्ष राज्य किया ।

४. सत्य देवों में से एक ।

५. ब्रह्मभान का पुत्र ।

क्षेमक—पांडवगर्भीय राजा (म. स. ४.१९) ।

२. (सो. पूर. भविष्य.) भविष्य एवं मत्स्य मत में निरमित्त पुत्र । वायु मत में निरामित्रपुत्र, भागवत मत में निमिपुत्र तथा विष्णु मत में खंडपाणिपुत्र । पांडववंश का यह अंतिम राजा था (शुनक ३. देखिये) ।

३. कद्रुपुत्र तथा सर्पविशेष ।

४. एक राक्षस, जो निर्जन वाराणसी में रहता था (ब्रह्माण्ड. ३.६७.२७; वायु. २३०.२४) । अलर्क ने इसका वध कर, वाराणसी नगरी को फिर से बसाया (ब्रह्माण्ड. ३.६७.७२; वायु. २.३०.६९) ।

क्षेमकर—सोमकांत राजा का मंत्री (गणेश. १.२९) ।

२. पश्चिम त्रिगर्तदेशीय राजा (जयद्रथ देखिये) । जयद्रथ के द्रौपदीहरणोत्सवों में, क्षेमकर का नकुल से युद्ध हुआ, जिसमें यह मारा गया (म. व. २५५.१७) ।

क्षेमजित्—(शिष्ट. भविष्य.) मत्स्य मत में क्षेमधर्म का पुत्र । इसे भागवत में क्षेत्रज्ञ, एवं विष्णु, वायु, तथा ब्रह्मांड में क्षत्रौजस् कहा गया है ।

२. एक क्षत्रिय (म. स. ४.२५) ।

क्षेमदर्शिन—उत्तर कोसल देश का राजा । राज्य-भ्रष्ट तथा दुर्बल हो कर, यह कालकत्रक्षीय नामक ऋषि के पास आया । ऋषि ने इसे कश्यपीति एवं सुनीति बताया । अंत में इसकी सद्धर्म की ओर वृत्ति देख, ऋषि ने विदेहवंशीय जनक राजा से इसकी मित्रता करा दी । विदेहाधिपति ने इसकी योग्यता देख, जेता की तरह इसे अपने घर रखा तथा सत्कार किया । संकटकाल में राजा किस तरह व्यवहार करे, यां बात धर्म को भीष्म ने इस कथा द्वारा बताया (म. शां. १०५-१०७) ।

क्षेमधन्वन्—क्षेमधन्वन् पौण्डरिक देखिये ।

२. धर्मसावर्णि मनु का पुत्र । क्षेमधर्मन् नाम भी प्राप्त है ।

क्षेमधर्मन्—(शिशु. भविष्य.) भागवत, मत्स्य, ब्रह्मांड तथा विष्णु मत में काकवर्ण का पुत्र । वायु में इसे क्षेमधर्मन् कहा गया है (क्षेमधन्वन् २. देखिये) ।

क्षेमधी—(सू. निभि.) चित्ररथ जनक का पुत्र । विष्णु में इसे क्षेमरि कहा गया है ।

क्षेमधूर्ति—सात्व का सचिव तथा सेनापति । सांव ने इसे पराजित किया (म. व. १७.११) । भारतीय युद्ध में यह दुर्योधन के पक्ष में था । बृहत्क्षत्र ने इसका वध किया (म. द्रो. ८२.६) । क्रोधवंश के एक राक्षस का यह अंशावतार था (म. आ. ६१.५९) ।

२. कर्ष देश का अधिपति एवं एक क्षत्रिय । भीम ने इसका वध किया (म. क. ८.३२-४५) ।

३. (सो. कुरु) धृतराष्ट्रपुत्र (क्षेममूर्ति देखिये) ।

४. एक क्षत्रिय । बृहन्त का बंधु । सत्यकि के साथ इसका युद्ध हुआ था (म. द्रो. २०.२५-४८) ।

क्षेमधन्वन् पौंडरिक—(सू. इ.) सुगमन् नदी के तट पर पौंडरीक्यज्ञ कर के इसने समृद्धि प्राप्त की । पुराणों में इसे पुंडरीकपुत्र क्षेमधन्वन् कहा है (पं. ब्रा. २२.१८.७) ।

क्षेमभूमि—(शृंग. भविष्य) वायुमत में भागवतपुत्र ।

क्षेममूर्ति—धृतराष्ट्रपुत्र । भीम ने इसका वध किया । दक्षिणात्य प्रति में क्षेमधूर्ति, एवं उत्तरीय प्रति में क्षेमवृद्धि पाठभेद प्राप्त है (म. आ. परि. १ क्र. ४१. पंक्ति १९) ।

२. पुलह तथा श्वेता का पुत्र (ब्रह्मांड. ३.७.१८०-१८१) ।

क्षेमवर्मन्—क्षेमधर्मन् देखिये ।

क्षेमवृद्धि—सात्व राजा का सेनापति (म. व. १७. ११) ।

क्षेमशर्मन्—दुर्योधन के पक्ष का एक राजा । भारतीय युद्ध में दोणाचार्य सेनापति थे । उन्होंने सेना की रचना सुपर्णाकार की थी । उस में गरुड की गर्दन की जगह कलिंग, सिंहल आदि राजाओं के साथ यह राजा भी पूर्ण तयारी से खड़ा था (म. द्रो. २०.६) ।

क्षेमा—एक अप्सरा । कश्यप एवं मुनि की कन्या ।

क्षेम्य—(सो. पूर.) उग्रयुध राजा का पुत्र । इसे सुवीर नामक पुत्र था ।

२. क्षेम ४. देखिये ।

क्षेमि—सुदक्षिण का पैतृक नाम (जै. उ. ब्रा. ३.६. ३; ७.१) ।

२. द्रयाम पराशरकुलोत्पन्न एक ऋषि ।

ख

खगण—(सू. इ.) भागवत मत में वज्रनाभ का पुत्र । इसका पुत्र विद्युति । विष्णु मत में शंखनाभ तथा वायु मत में शंखण यही होगा ।

खगम—एक तपस्वी ब्राह्मण । यह एक बार अग्नि-होत्र कार्य में निमग्न था । उस समय सहस्रगाद नामक एक मित्र ने विनोद से तृण का सर्प इसके ऊपर फेंका । इस कारण यह मूर्च्छित हो गया । सावधान होने के बाद इसने शाप दिया, ' जिम प्रकार के साँप से तूने मुझे डराया है, उसी प्रकार का तृणतुल्य सर्प तू होगा ' । यह शाप सुन कर दुःख से विवहल हो कर, मित्र ने दया की याचना की । तब खगम ने उःशाप दिया, " भृशुकुल में

प्रमति को रू नामक पुत्र होगा । उससे भेंट होगी, तब तू शापमुक्त हो कर पूर्वस्वरूप को प्राप्त होगा " (म. आ. ११) ।

खंज—दनुवंशी राजा । ब्रह्मदेव के वरदान के कारण, यह महापराक्रमी हुआ । अर्जुन ने इसका वध किया (पद्म. सु. ६) ।

खट्वांग—(सू. इ.) विश्वसह राजा का पुत्र । देव-दैत्यों के युद्ध में, यह देवताओं की मदद करने स्वर्ग गया था । युद्ध समाप्त होने पर, देवताओं ने इसे वर माँगने को कहा । इसने पूछा कि, उसकी आयु कितनी अवशेष

है। उन्होंने कहा कि, केवल मुहूर्त्तमात्र शेष है। तब और कुछ न मॉंग कर, यह द्रुतगामी विमान पर बैठ कर शीघ्र ही अयोध्या आया। अपने पुत्र दीर्घबाहु को गद्दी पर बैठ कर, आत्मस्वरूप में लीन हो गया (भा. ९. ९)। दिलीप प्रथम को खट्वांग मानते हैं (ब्रह्म. ८. ७४; हं. वं. १. १५. ३३)। वस्तुतः दिलीप द्वितीय को खट्वांग कहना चाहिये (दिलीप देखिये)।

खड्गधर—सौराष्ट्र देश का एक राजा। इसके मदमत्त हाथी का मद, एक ब्राह्मण ने गीता के सोलहवें अध्याय के पटनसामर्थ्य से उतारा (पञ्च. उ. १. ९०)।

खड्गबाहु—एक राजा। इसके पुत्र का दुःशासन नामक सेनापति था। वह मदमत्त हाथी से गिर कर मर गया। अगले जन्म में वह हाथी हुआ। सिंहल देश के राजा ने वह हाथी खड्गबाहु को दिया। खड्गबाहु ने उसे एक कवि को तथा कवि ने मालव देश के राजा को दिया (पञ्च. उ. १. ९१)।

खड्गहस्त—दक्षसावर्णि मनु का पुत्र।

खड्गिगन्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भारतीययुद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. क. ६. २)।

खड्गपाणि—(सो. कुरु. भविष्य) भविष्य एवं विष्णु के मत में अहीन का पुत्र। अन्य पुराणों में दंडपाणि पाठ्योद् है।

खंडिक औद्गारि—केशिन् का गुरु तथा एक शाखा-प्रवर्तक (पाणिनि देखिये)। केशिन् के यज्ञ में शेर ने गाय को मारा। प्रायश्चित्त क्या है, यह पूछने पर सब लोगों ने उसे इसके पास भेजा। इसने सभा बुला कर विचार किया तथा प्रायश्चित्त बताया (श. ब्रा. ११. ८. ४, १)। यह केशिन् का प्रतिस्पर्धी था। खंडिक एवं खंडिक्य एक ही होंगे (मै. सं. १. ४. १२)।

खनक—विदुर का मित्र। यह पन्चीकारी के काम में अत्यंत कुशल था। पांडवों को मारने के लिये दुर्योधन ने पुरोचन के द्वारा लाक्षाग्रह तैयार कराया। पांडव लाक्षाग्रह में रहने लगे। एक दिन खनक, विदुर की आज्ञा से विदुर की चिह्नस्वरूप अंगूठी ले कर युधिष्ठिर के पास आया। विदुर के द्वारा बताया गया समाचार उसने निवेदन किया। युधिष्ठिर ने संतुष्ट हो कर, पुरोचन को पता न लगते हुए पांडवों की लाक्षाग्रह से मुक्ति करने के लिये, इसके कहा। इसने लाक्षाग्रह के मध्य से खंडक तक एक सुरंग बनायी (म. आ. १३. ५. १)।

प्रा. च. २३]

खनपान—(सो. अनु.) भागवतमत में अंगराज-पुत्र, विष्णुमत में पारपुत्र, मत्स्य एवं वायु मत में दधिवाहनपुत्र। अपानद्वार न होने के कारण, इसे अनपान कहते थे। इसका पुत्र दिविरथ।

खनित्र—(स. विष्ट.) भागवतमत में प्रमति राजा का पुत्र। इसका पुत्र चाक्षुप। विष्णु तथा वायु के मत में प्रजनिपुत्र। इसका पुत्र क्षुप। सदाचारी होने के कारण इसके उपर अमिचार का परिणाम नहीं हुआ (मार्क. १. १४-१. १५)।

खनिनेत्र—(स. विष्ट.) भागवतमत में रंमपुत्र। वायु एवं विष्णु मत में विर्विशपुत्र। वायुमत में इसका पुत्र करंघम तथा विष्णुमत में अतिभृति।

इसके कुल चौदह भाई थे। यह अत्यंत दुष्ट था। इसलिये इसने सब भाईयों का हक छीन कर स्वयं अकेले ने राज्य किया। यह प्रजा को अप्रिय था, इसलिये शीघ्र ही पदच्युत हुआ। पश्चात् इसका पुत्र सुवर्चा गद्दी पर बैठा (म. आश्व. ४)। यह हिंसा से उद्विग्न हो कर तपस्या करने लगा (मार्क. १. १७)। इसका पुत्र बलाश्व।

खर—विश्रवा ऋषि का राका से उत्पन्न पुत्र। शूर्पणखा इसकी बहन तथा रावण सीतेला भाई था (म. व. २. ५९. ८)। शूर्पणखा के कथन से पता चलता है कि, दूषण इसका भाई था (वा. रा. अर. १. ७)। यह दन्वपन में वेदवेत्ता, शूर तथा उत्कण्ठ सदाचारी था। यह पितासहित गंधमादन पर्वत पर रहता था। दक्षिण दिशा में यह रावण का सीमारक्षक अधिकारी था (वा. रा. अर. ३. १)। इसके अधिकार में चौदह सेनापति तथा चौदह हजार सैनिक थे (वा. रा. अर. १. ९; २. २)।

शूर्पणखा ने रामलक्ष्मण से प्रेमवाचना की। राम के संकेतानुसार लक्ष्मण ने उसके नाक, कान काट डाले। वह आक्रोश करते हुए जनस्थान में खर के पास गयी। खर ने अपने चौदह सेनानायक एवं, चौदह हजार सैनिक राम पर आक्रमण करने भेजे। राम ने सब का वध किया। अपने सेनापति दूषण के नेतृत्व में सेना तयार कर, इसने स्वयं राम पर आक्रमण किया। राम ने लक्ष्मण को सीता की सुरक्षा के लिये, एक पर्वत की गुहा में जाने को कहा। उन के जाने के बाद, राम कवच धारण कर, युद्ध के लिये तत्पर हुआ। युद्ध प्रारंभ होने के बाद, राम ने केवल धनुष बाण से दूषण

त्रिशिरस् तथा खर को ससैन्य मार डाला। यह सारी घटना डेढ़ महीनों में हुई।

प्रेक्षक के नाते उपस्थित अकंठन राक्षस भाग कर लंका गया। उसने रावण को सारा वृत्तान्त निवेदित किया (वा. रा. अर. १८-३१)। इस युद्ध में, यह बात स्पष्ट दिखाई देती है कि, राम धनुष से युद्ध करते थे। राक्षसों के पास धनुष न थे। इसे मकराक्ष नामक पुत्र था। इसने जनस्थान के ऋषियों को अत्यंत कष्ट दिया था। इस कारण, इसकी मृत्यु से उन्हें बहुत आनंद हुआ, तथा उन्होंने राम की अत्यंत प्रशंसा की (वा. रा. अर. ३०)।

२. लंवासुर का भाई, एक असुर (मत्स्य. १७.६.७)।

३. विजर का पुत्र।

खरवाहू—विश्वामित्रकुल का गोत्रकार।

खलीयस—व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा के शालीय का पाठभेद।

खलवायन—धूम्रपराशर के कुल में से एक एवं गण।

खशा—प्राचेतस दक्षप्रजापति तथा असिकनी की कन्या। यह कश्यप प्रजापति से ब्याही गयी थी। इससे यक्ष राक्षस आदि उत्पन्न हुए।

खसूप—पितृवर्तिन् देखिये।

खाडायन—एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

खांडव—भृगुकुल के मित्रकुल में उत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

२. पौंडव का पाठभेद।

खांडवायन—एक ब्रह्मणवंश। परशुराम ने एक बड़ा भारी यज्ञ किया। उसमें पृथ्वी के साथ दस वाव (अंदाजन दो गज) लंबी तथा नौ वाव ऊँची सुवर्णमय वेदिका कश्यप को अर्पण की। कश्यप की अनुमति से अन्य ब्राह्मणों ने उसके टुकड़े कर, आपस में बाँट लिये। इस कारण, वे ब्राह्मण खांडवायन नाम से प्रसिद्ध हुए (म. व. ११७. ११-१३)।

खांडिक्य—(सू. निमि.) भागवतमत में मितध्वज-पुत्र। यह क्षत्रिय था। इसे खांडिक्यजनक कहा गया है। केशिध्वज इसका चचेरा भाई था। खांडिक्य कर्ममार्ग में अत्यंत प्रवीण था। केशिध्वज आत्मविद्याविशारद था। एक दूसरे को जीतने की इनकी इच्छा हुई। केशिध्वज ने खांडिक्य को राज्य के बाहर भगा दिया। यह मंत्री तथा पुरोहित के साथ अरण्य में चला गया (भा. ९.१३.२१)।

इधर ज्ञाननिष्ठ केशिध्वज ने कर्मबंधन से मुक्त होने के लिये, ब्रह्म से यज्ञ किये। एक बार वह यज्ञ कर रहा था, तब निर्जन वन में एक व्याघ्र ने उसकी गाय को मारा। उसने ऋषिजों से इसका प्रायश्चित्त पूछा, जिन्होंने उसे कशेरू के पास भेजा। कशेरू ने भृगु के पास तथा भृगु ने शुनक के पास प्रायश्चित्त पूछने को कहा। अंत में शुनक के कहने पर वह अरण्य में खांडिक्य के पास गया। खांडिक्य ने उसे देखते ही उसकी निर्भत्सना की एवं उसके वध के लिये तत्पर हुआ। परंतु केशिध्वज ने सारी स्थिति निवेदन की। तब खांडिक्य ने यथाशास्त्र धेनुवध का प्रायश्चित्त बताया।

केशिध्वज ने तदनुसार यज्ञभूमि के स्थान पर जा कर, यज्ञ सफल बनाया। खांडिक्य को गुरुदक्षिणा देना शेष रह गया। अतः केशिध्वज खांडिक्य के पास आया। खांडिक्य पुनः उसका वध करने को उद्यत हुआ। केशिध्वज ने बताया कि, 'वह वध करने नहीं आया है। अपितु गुरुदक्षिणा देने आया है। आप गुरुदक्षिणा माँगे'। खांडिक्य ने सब दुःखों से मुक्ति पाने का मार्ग उससे पूछा। केशिध्वज ने इसे देह की नद्वारता तथा आत्मा के चिरंतनत्व का महत्त्व समझाया, तथा कहा कि, 'सारे दुखों का नाश योग के सिवा किसी अन्य मार्ग से नहीं हो सकता'। तदनंतर खांडिक्य ने योगमार्ग का कथन करने के लिये कहा। केशिध्वज ने उसे परब्रह्म का उन्देश कर, मोक्षमार्ग के पास ले जानेवाला योग बताया (विष्णु. ६.६-७; नारद १.४६-४७; केशिन्. द्वाभ्ये देखिये)।

खाति—तामस मनु का पुत्र।

खादिर—द्राह्यायण का दूसरा नाम (द्राह्यायण देखिये)।

खार्गलि—लुशाकपि का पैतृक नाम तथा मातृनामोद्गत नाम।

खालीय—व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा के शालीय का पाठभेद।

खालि तथा खिलिखिलि—विश्वामित्रकुल का गोत्रकार एवं प्रवर।

खेल—एक राजा। इसकी स्त्री विशपला। इसका पैर युद्ध में टूट गया। तब अश्वियों ने एक रात में इसे लोहे का पैर लगा कर, दूसरे दिन युद्ध के लिये तैयार कर दिया (ऋ. १.११६.१५)। अगस्त्य इसके पुरोहित थे।

ख्याति—(स्वा. उच्चान.) भागवत मत में उरुमुक्त तथा पुष्करिणी का पुत्र।

२. (स्वा.) भृगुपत्नी । कर्दम तथा देवहूती की कन्या ।

३. तामस मनु का पुत्र ।

४. उरु एवं पडात्रेयी का पुत्र ।

ख्यातिय—नीलपराशर कुल का एक ऋषि ।

ग

गगनमूर्धन—कश्यप तथा दनु का पुत्र ।

गंगा—एक स्वर्गीय देवी । एक समय सब देवियाँ ब्रह्मदेव के पास गयीं । उनके साथ गंगा तथा इक्ष्वाकुकुलोत्तम महाभिष भी गया । यकायक इनके बल्ल वायु के कारण उड़ गये । सब लोगों ने सिर नीचे कर लिया । परंतु महाभिष निःशंक इनकी ओर देखता रहा । यह देख कर ब्रह्माजी ने शाप दिया “तुम मृत्युलोक में जन्म लोगे एवं गंगा तुम्हारी स्त्री होगी । वह तुम्हें अप्रियसे कृत्य करेगी । तुम्हें इसके कृत्यों के प्रति क्रोध उत्पन्न होगा । तब मुक्त हो कर तुम इस लोक में आओगे” । शाप सुन कर महाभिष ने प्रतीप के पेट में जन्म लेने का निश्चय किया ।

बसिष्ठ के शाप के कारण मृत्युलोक में आने वाले अष्टवसु इसे राह में मिले । उन्होंने इसके पेट में जन्म लेने का निश्चय किया । परंतु उन्होंने यह शर्त रखी कि, जो भी पुत्र जन्म लेगा, इसे यह जल में छोड़ देगी । परंतु इसने भी यह शर्त रखी कि, जिससे मैं विवाह करूँगी उसे पुत्रच्छा अवश्य रहेगी, इसलिये कम से कम एक पुत्र जीवित रहना ही चाहिये । तब अष्टवसुओं ने मान्य किया कि, अपने वीर्य से एक पुत्र वे इसे देंगे । वह वीर्यवान् परंतु निपुत्रिक रहेगा ।

भगीरथ स्वर्ग से अपने पितरों के उद्धार के लिये गंगा नीचे लाया । जब यह समुद्र की ओर जा रही थी, तब राह में जह्नु ने इसे प्राशन कर लिया, तथा पुनः छोड़ दिया (भगीरथ एवं जह्नु देखिये) । एकबार प्रतीप ध्यानस्थ बैठता था । तब गंगा पानी से बाहर आई तथा उसकी दाँई गोद में आ कर बैठ गई । यह देख कर उसने इसकी इच्छा पूँछी । इसने अपना स्वीकार करने के लिये कहा । तब दाँई गोद में बैठने के कारण, स्तुपारूप में इसका स्वीकार करना उसने कबूल किया । गंगा ने अपनी शर्त रखी कि, आपकी स्तुषा होने के बाद, मैं जो कुछ भी

करूँगी, उसके बारेमें अपना पुत्र कुछ भी हस्तक्षेप न करें । जब तक यह शर्त मान्य की जायेगी, तब तक आपके पुत्र का सहवास मैं मान्य करूँगी, तथा उसे सुख दूँगी । उसे पुण्यवान् पुत्र होंगे तथा उन्हीं के साथ उसे स्वर्गप्राप्ति होगी । इस प्रकार तय कर के गंगा अन्तर्धान हो गई ।

कुछ दिनों के बाद महाभिष ने प्रतीप के घर शांतनु नाम से जन्म लिया । बड़ा होने पर, उसे अपने पिता से सारा समाचार मालूम हुआ । बाद में गंगा शांतनु पास गई, तब उसने इससे विवाह किया । इसके कुछ आठ पुत्र हुए । उनमें से सात को इसने पानी में डुबा दिया । आठवें पुत्र को शांतनु ने डुबाने नहीं दिया । गंगा का आठवाँ पुत्र ही भीष्म है । बाद में उसे ले कर यह स्वर्लोक गई । वहाँ इसने सब प्रकार की शिक्षा उसे दी । शांतनु जब मृगया के हेतु आया, तब इसने भीष्म को उसे सौंप दिया (म. आ. ९१-९३) । गंगा जान्हवी (म. उ. १७९.३; भी. ११५.५२) तथा भागीरथी (म. अनु. १३९.७; आश्व. २.७) नामों से प्रसिद्ध है । भीष्म शांतनु को गंगाद्वार में पिंड दे रहा था । गंगा ने उसकी सहायता की (म. अनु. ८४) ।

परशुराम से युद्ध करते समय, भीष्म के सारथी की मृत्यु हो गई । तब स्वयं घोड़ों को सन्हाल कर इसने भीष्म की रक्षा की (म. उ. १८३.१५-१६) । भीष्म ने अंबा का स्वीकार न करने के कारण, उसने तब कर के भीष्म-वध के लिये पुरुषजन्म माँग लिया । एक बार नित्यक्रमानुसार, अंबा गंगास्नान करने गई थी, तब गंगा वहाँ आई । उसने इसे शाप दिया, ‘तुम टेढ़ी मेढ़ी नदी बन कर केवल बरसात में ही बहोगी । अन्य दिनों में सुख जाओगी । बरसात में तुम्हारे पात्र में उतार भी नहीं मिलेगा’ (म. उ. १८७.३४-३५) । भीष्मवध के बाद इसके दुःख का निरसन श्रीकृष्ण ने किया (म. अनु. २७४.२७कुं.) ।

गंगा ने एकबार प्राचीमाधव नामक विष्णु से पूछा कि, 'मुझमें गोपी स्नान करते हैं। इन पापों से मेरी मुक्ति कैसी होगी?' विष्णु ने इसे रोज पूर्ववाहिनी सरस्वती में स्नान करने के लिये कहा। परंतु गंगा को यह तापदायक प्रतीत हुआ। तब उसने इसे त्रिस्तुशा का व्रत करने के लिये कहा। उससे यह पापमुक्त हुई। एकादशी, द्वादशी तथा त्रयोदशी जिस एक तिथि को स्मर्य करते हैं, उस तिथि को त्रिस्तुशा कहते हैं। इस दिन सुवर्ण का विष्णुमूर्ति की पूजा की जाती है (पद्म. उ. ३४)।

गज—यह राम सेना में वानरों का अधिपति था (पद्म. सु. ३८; म. व. २६७. ३)।

२. दुर्योधन का मामा। शकुनि के कुल छः कनिष्ठ भाई थे। यह सबसे बड़ा था। भारतीययुद्ध में अर्जुनपुत्र दुरावत् में इसका वध किया (म. भी. ८६. २४; ४२)।

गजकर्ण—एक यक्ष (म. स. १०. १५)।

२. महिषासुर का पुत्र। तपश्चर्या कर के इसने शंकर को प्रसन्न किया तथा यह अमर हो गया। अंत में शंकर के त्रिशूल से इसकी मृत्यु हुई। इसकी इच्छानुसार शंकर ने इसकी कृति (चर्म) धारण की, तथा कृत्तिवासस् नाम धारण किया। गजासुर का वध काशी में हुआ। इसलिये काशी के लिंग को कृत्तिवासेश्वर कहते हैं (शिव. ख. यु. ५७)। यह तारकासुर का सैनिक था।

गजेन्द्र—इंद्रयुध्न, जयविजय तथा हूह देखिये। गजेन्द्रमोक्ष का आख्यान महाभारत में नहीं है।

गणपति—एक देवता। 'गणानां त्वा गणपति' (ऋ. २. २३. १), यह गणपति का सूक्त माना जाता है। यह ब्रह्मणस्पतिक का सूक्त है। इसे ब्रह्मणस्पति भी कहते हैं। ऐसे अन्य गणक इतरत्र भी हैं (मै. सं. २. ६. १)। शंकर-पार्वती का पुत्र हो कर भी यह अयोनिज था (ब्रह्मवै. ३. ८; लिंग. १०५)। पार्वती ने अपने शरीर के उन्नतन की मूर्ति बना कर वह सजीव की (पद्म. सु. ४३; स्कन्द. उ. १. ३८; मत्स्य. १५३)।

इसके अवतार—कृतयुग में कश्यपपुत्र विनायकः—यह सिंह पर आरूढ़ होता था। इसने देवांतक नरांतक का नाश किया।

त्रैतायुग में मधुरारूढ़ रहनेवाला शिवपुत्र मयूरेश्वरः—इसने सिंधू का वध किया।

द्वापारयुग में शिवपुत्र गजाननः—इसने सिंदूर का वध किया तथा बरेण्य राजा को गणेशगीता बताई।

कलियुग में अश्व पर आरूढ़ होनेवाला धूमकेतुः—यह म्लेच्छों का नाश करेगा (गणेश. २. १४९) अदिति के गर्भ से महोत्कट रूप में इसने अवतार लिया (गणेश २. ५-६)।

पार्वती स्नान कर रही थी, तब द्वारक्षक का कार्य करनेवाले गणपति ने शंकर को भी भीतर जाने से रोका। तब इनका युद्ध हो कर शंकर ने इसका मस्तक तोड़ दिया। परंतु पार्वती के लिये, शंकर ने इन्द्र के हाथी का मस्तक ला कर, इसके धड़ पर जमा दिया (शिव. कु. १६)। शनि के दृष्टिपात से गणपति का मस्तक जल गया, परंतु देवों ने वहाँ हाथी का मस्तक लगा दिया (ब्रह्मवै. ३. १८; भवि. प्रति. ४. १२)। परशुराम ने शंकरद्वारा दिया गया परशु इस पर फेंका। परंतु परशु शंकर का होने के कारण, प्रतिकार न करते हुए, इसने वह आक्रमण दौंतां पर सह लिया। इसी से इसका एक दौंत टूट गया। उसे इसने हथियार के समान हाथ में ले लिया (ब्रह्मवै. ३. ४१-४४)।

एकदंत नाम प्राप्त होने के अन्य कारण भी प्राप्त हैं (वाण २. देखिये)। गणपति मेरा वध करेगा, ऐसा ज्ञात होते ही सिंदूरामुर ने, इसको नर्मदा में फेंक दिया। वहाँ गणपति के रक्त से नर्मदा लाल हो गई। इसीलिये अभी भी नर्मदा में नर्मदागणपति प्राप्त होते हैं। इसने सिंदूरामुर का वध कर के उसके सुवासिक रक्त से अपने शरीर का लेपन किया। पश्चात् वृष्णेश्वर के पास सिंदूरवाड़ को अवतार समाप्त किया (गणेश. २. १३७)। इसीलिये गणपति को सिंदूर प्रिय है। कृष्ण के बालचरित्र के अनुसार गणपति का भी बालचरित्र है। अपनी बाललीलाओं में इसने अनेक असुरों का वध भी किया है (गणेश. १. ८१-१०६)।

गृत्समद, राजा बरेण्य तथा मुद्गल आदि इसके बड़े भक्त हैं। इसने शंकर को गणेशसहस्रनाम (गणेश १. ४४-४५) तथा बरेण्य को गणेशगीता बताई (गणेश. २. १३८-१४८)। शंकर ने एक फल इसे न दे कर कुमार को दिया, तब चंद्र ने हँस दिया। इसलिये इसने चंद्र को अदर्शनीय होने का शाप दिया। परंतु वाट में उच्छाप दे कर, केवल गणेशचतुर्थी के दिन अदर्शनीय माना (गणेश. १. ६१)। उसी प्रकार गणेशचतुर्थी छोड़ कर अन्य दिनों में, गणेश को तुलसी भी बर्ष्य है (ब्रह्मवै. ३. ४६)।

इसके अन्तर्दिन वैशाख पौर्णिमा, ज्येष्ठ शुद्ध चतुर्थी, भाद्रपद शुद्ध चतुर्थी तथा माघ शुद्ध चतुर्थी हैं। शृङ्गपक्षीय तथा कृष्णपक्षीय चतुर्थी तिथि इसे प्रिय है। सिद्धि तथा बुद्धि इसकी दो पत्नियाँ हैं (गणेश. १.१५)। इसकी उपासना से कार्तवीर्य अव्यय हुआ था (गणेश. २.७३-८३)। इसके चार हाथ हैं तथा इसका वाहन मूषक है।

इस पर लिखे गये प्रसिद्ध ग्रंथः—गणेशपुराण, मुद्गल-पुराण, ब्रह्मवैवर्त का गणेश खंड, भविष्यपुराण का ब्राह्मखंड, गणेशतापिनी, गणेशाथर्वशीर्ष, गणेश तथा हेरंब उप-निषद्। याज्ञवल्क्य स्मृति में विनायक-शांति दी है (याज्ञ. १.२७०)।

अष्ट विनायक के स्थान— १. मोरगांव (मोरेश्वर), २. राजनगांव (गणपति), ३. थेऊर (चिंतामणि), ४. जुन्नरलेण्याद्रि (गिरिजात्मज), ५. मुरुड, पाली (ब्रह्मलेश्वर), ६. सिद्धटेक (गजमुख), ७. ओझर (विघ्नेश्वर) ८. मट (विनायक)। ये सब स्थान पूना के आसपास हैं। इनके अतिरिक्त अड़तालीस तथा एक-सौतीस स्थान भी हैं। काशी में छप्पन विनायकों की सूचि प्राप्त है (गणेश. २.१५४)।

महाभारत जैसा विस्तृत ग्रंथ लिखने में व्यास ने गणपति की सहायता प्राप्त की थी। मैं बीच में नहीं रुकूँगा, ऐसी शर्त गणपति ने रखी थी। उसी प्रकार व्यास ने भी शर्त रखी थी कि, बिना अर्थ समझे आगे नहीं लिखोगे। गणपति को लिखने के लिये अधिक समय लगे तथा स्वयं को समय मिले, इस हेतु से व्यास ने महाभारत में अनेक कूट सम्मिलित किये हैं (म. आ. १. परि. १ क्र. १; गंगिय और बाण देखिये)।

गणपति का और एक रूप निकुंभ है। वाराणसीस्थित निकुंभ की आराधना करने पर भी दिव्योदास की पत्नी सुयशा को पुत्र न हुआ। इसलिये निकुंभमंदिर दिव्योदास ने उध्वस्त किया। निकुंभ ने भी वाराणसी नष्ट होने का शाप दिया। तालजंघादि हैहयों ने वाराणसी नगरी उध्वस्त की, तथा दिव्योदास को भगा दिया। अन्त में निकुंभ की फिर से स्थापना हुई। वाराणसी समृद्ध हो गई। इस कथा में वर्णित निकुंभ ही गणपति नाम से प्रसिद्ध हुआ। गणेश, गणपति, गणेश्वर, बहुभोजन और कामपूरक नाम से भी निकुंभ का वर्णन प्राप्त है (वायु. १२.३६-५१)।

यह ओंकाररूप है। गणपति उपासना का मतलब पर-ब्रह्म की उपासना है (गणेशाथर्वशीर्ष; गणेश. १.१३-१५)। इसलिये इसे सर्व विद्या तथा कलाओं का अधि-

पति मानते हैं। किसी भी देवता के उपासक सर्व-प्रथम गणपति की पूजा करते हैं (पञ्च. सू. ६३)।

प्रणव का अर्थ ओंकार है। अ, उ तथा म का ओंकार बनता है। तुरीय नामक एक चतुर्थ भाग भी ओंकार में समाविष्ट है। जाग्रति, स्वप्न, सुषुप्ति तथा तुरीय इन चार अवस्थाओं का ओंकार द्योतक है। ओंकार का जप तथा ध्यान का उपनिषदों में विशेष माहात्म्य है। साध्य तथा साधन दोनों रूपों में ओंकार वर्णित है। इसलिये वेदों का प्रारंभ ओंकार से करने की प्रथा शुरू हो गई। आगे चल कर, ओंकार से ही गजमुख गणेशजी का स्वरूप विकसित हुआ। ओंकार का लेखन तथा गणेशजी की मूर्ति में साध्य भी है। गजमुख गणेश सामान्यतः ख्रिस्त के पंचम सदी के पूर्व उपलब्ध नहीं है। कालिदास ने निकुंभ का गौण रूप से निर्देश किया है। भवभूति ने स्पष्ट रूप से गजमुख का निर्देश किया है। ज्ञानेश्वरी में गजमुख तथा ओंकार की एकता स्पष्ट की है। इस एकता से ही, उपनिषद्प्रतिपादित ओंकार, वेद में तथा सार्वत्रिक सर्वकार्यारंभ में आद्य स्थान में आ गया है।

गंडकंडू—एक यक्ष।

गंडप—(सो. यदु.) शूर का पुत्र।

गंडा—पशुसख की स्त्री (म. अनु. १४१. ५. कुं.)। इसे चंडा भी कहते थे।

गतायु—(सो. पुरुरवस्.) वायुमतानुसार पुरुरवी-पुत्र।

गति—(स्वा.) देवहूति तथा कर्म की कन्या। पुलह की पत्नी।

गतिन—विश्वामित्रगोत्र का प्रवर।

गद—(सो. यदु. वसु.) कृष्ण का सौतेला भाई। यह भारतीय युद्ध में पांडव पक्ष का था। यह यादवी में मारा गया (म. मौ. ४. ४४.)।

२. एक असुर। इसे मार कर इसकी अस्थियों से गदा बनवायी। इसे हाथ में धारण करने के कारण विष्णु को गदाधर कहते हैं (अग्नि. ११४; वायु. १०९. ३-१२)।

गद्वर्मन्—(सो. यदु.) शूर का पुत्र।

गद्रुद—जांबवत् तथा केसरी इन वानरों का पिता (वा. रा. यु. ३०.)।

गंधमाद—रामसेना का एक सेनापति, जो वानरों की सेना लेकर राम की सहायता करने आया था (भा. ९. १०. १९; म. व. २६७. ५)।

२. (सो. यदु.) श्वफल्क के तेरह पुत्रों में से एक।

गंधमोक्ष—(सो. यदु.) श्वफल्क का पुत्र।

गंधर्व—एक मानववंश। कश्यप तथा अरिष्टा की संतति को गंधर्व कहते हैं। हाहा, हूहू, तुंबुरु, किन्नर आदि इनके भेद हैं। गंधर्वों का देश हिमालय का मध्यभाग है। गंधर्व तथा किन्नर देश भी पुराणों में निर्दिष्ट हैं।

गंधर्व की स्त्रियाँ अप्सराएँ हैं। कश्यप-खशा के संतान अप्सराएँ कही जाती हैं।

चित्ररथ, विश्वावसु, चित्रसेन आदि गंधर्ववृत्तों का निर्देश सर्वत्र आता है। चित्ररथ गंधर्व तथा पांडवों का संघर्ष प्रसिद्ध है।

उर्वशी, धृताची, मेनका, रंभा आदि अप्सराओं का निर्देश भी सर्वत्र आता है।

ऋषि, मुनि राजाओं के साथ पत्नी आदि रूप में भी अप्सराएँ दिखती हैं।

इस वंश के लोक सुरूप, शूर तथा विशेष शक्तिशाली थे (यज्ञ देखिये)।

गंधर्वसेना—कैलास पर स्वयंप्रभा नगरी में रहनेवाले धनवाहन नामक गंधर्व की कन्या। यह सोमवार का व्रत करने के कारण कुम्भरहित हुई (स्कंद. ७.१.२४-२५)।

गंधर्वायण बालेय आग्निवेश्य—एक पांचाल (बौ. श्रौ. २०.२५)।

गंधवती—सत्यवती का नामांतर (म. आ. ५७-६७)।

गभास्तिनी प्रातिथेयी—लोपासुद्रा की बहन तथा दध्यञ्च ऋषि की स्त्री (ब्रह्म. ११०.७.६१)।

गंभीर—(सो. आयु.) रभसपुत्र (भा. ९.१७.१०)।

२. मौल्य मनु का पुत्र।

गंभीरशुद्धि—इंद्रसावर्णि मनुपुत्र (मनु देखिये)।

गय—एक दैत्य। विष्णु ने इसका कीकट देश में नाश किया। इसकी देह पांच कोस तथा सिर एक कोस लंबी थी (स्कंद. ५.१.५९)।

उसका शरीर अत्यंत विशाल था। यह विष्णुभक्त था, इसलिये ब्राह्मणों ने इसकी पवित्र देह, यज्ञ के लिये माँगा। इस ने लोकोपकारार्थ अपनी देह विष्णुजी को दे दी। तत्पश्चात् ब्रह्मा ने इसे कोलाहल पर्वत के पास उत्तर की ओर सिर कर के दक्षिणोत्तर मुल्यया। यह न हिले, इसलिये इसपर आदिगदाधर की स्थापना की। इसे सक्का उद्धार करने का वरदान दिया। यह स्थान कीटक देश में है। इसके पैर प्रभासक्षेत्र में हैं। गया-क्षेत्रमाहात्म्य उपलब्ध है (वायु. १०५-११२.)।

२. (स्वा. उत्तान.) भागवत मतानुसार उत्सुक तथा पुष्करिणी का पुत्र।

३. (स्वा. उत्तान.) भागवत मतानुसार हविर्धान का पुत्र।

४. (स्वा. प्रिय.) विष्णु तथा भागवत मतानुसार नक्त तथा द्रुति का पुत्र। इसकी स्त्री गयंती। इसके चित्ररथ, सुगति तथा अवरोधन नामक तीन पुत्र थे (भा. ५.१५. ६)।

५. (सो. आयु.) आयु का पुत्र (म. आ. ७०. २३)।

६. (सो पुरुरवम्.) अधूर्तरज्जु का पुत्र (म. स. ८.१७; शं. ३७.१-९)। यह बड़ा धर्मात्मा एवं यज्ञ करने-वाला था। लगातार सौ वर्षों तक यह यज्ञ करता रहा। गयादेश में यज्ञयाग करते समय, इसने सरस्वती नदी को आमंत्रित किया। सरस्वती वहाँ प्रादुर्भूत हुई। इसी नदी को विशाला कहने लगे (म. व. ९३.१२१)।

७. (सू.) इला अथवा सुवृष्म राजा का पुत्र। यह गयापुरी में राज्य करता था (भा. ९.१.४१; पद्म. सू. ८)।

८. दक्षसावर्णि मनु का पुत्र।

९. उरु तथा षडाग्नेयी का पुत्र।

गय आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.९-१०)।

गय प्लात—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.६३-६४)। यह प्रति का पुत्र था (ऐ. ब्रा. ५.२)। इसने अपने सूक्त में एक स्थान पर उल्लेख किया है कि, नहुषपुत्र ययाति के यज्ञ में जानेवाले देव इसे धन दें (ऋ. १०.६३.१७)। असित तथा कश्यप के साथ इसका उल्लेख आया है (अ. वे. १.१४)।

गयंती—नक्तपुत्र गय की स्त्री।

गर—सुबाहु का पुत्र। यह विशेष धार्मिक न था। हैहय, तालजेत्र, शक, यवन, पारद, कांबोज तथा पल्लव राजाओं ने मिलकर इसका राज्य हरण किया। इसलिये यह अपने कुटुंबसहित भार्गव ऋषि के आश्रम में रहने गया। वहाँ जाकर यह अल्पकाल में ही मर गया। इसकी स्त्री कल्याणी तथा पुत्र सगर (पद्म. उ. २०)।

२. सामद्रष्टा एवं इंद्र का मित्र (पं. ब्रा. ९.२.१६)।

३. वीरभद्र देखिये।

गरिष्ठ—एक ऋषि। यह इंद्र की समा में उपस्थित था (म. स. ७.११)।

गरुड—विष्णु का वाहन, एक पक्षी।

इयेन एक शक्तिशाली पक्षी के रूप में वेदों में आता है। यह संभवतः गरुड का वैदिककालीन नाम है। बाद के संस्कृत साहित्य में इयेन का अर्थ 'बाज' दिया है।

सुपर्ण इयेन का पुत्र है (ऋ. १०. १४४. ४)। इयेन तथा सुपर्ण भिन्न थे (ऋ. २. ४२. २)।

इयेन ने स्वर्ग से सोम पृथ्वी पर लाया (ऋ. ३. ४३. ७; ४. २६. ६; ८. ९५. ३; ९. १००. ८)। सोम को इयेनाभूत कहा है (ऋ. १. ८०. २; ८. ९५. ३)।

गरुड स्वर्ग से अमृत लाया। यह निवेदन पुराणों में किया है। अन्त में यह विष्णु का सेवक तथा वाहक हो गया।

यह कश्यप तथा विनता का पुत्र तथा अरुण का कनिष्ठ बंधु था। अरुण ने अपनी माता को शाप दिया था (अरुण ३. तथा विनता १. देखिये)। उसके अनुसार, वह कद्रू नामक सौत का दास्यत्व कर रही थी। इधर अंडे से बाहर निकलते ही, गरुड तीव्र गति से आगे बढ़ा तथा उड़ गया (म. आ. २०. ४-५; स. ५९. ३९; उ. ११०)। बालखिल्यों ने इंद्र उत्पन्न करने के लिये किये तप का फल कश्यप को दिया। वही फल कश्यप ने विनता को दिया। तब उसने एक अंडा डाला। उसीसे गरुड उत्पन्न हुआ (म. आ. २७. अनु. २१ कुं.)।

यह उड़ कर जाने लगा, उस समय गरुड को पक्षियों का इंद्र मान कर बालखिल्यों ने अभिषेक किया। उड़ते समय यह इतना प्रखर तथा तीव्र प्रतीत होने लगा कि इसके तेज से लोगों के प्राण घबराते लगे। तभी इसे अग्नि समझ कर लोग इसकी स्तुति करने लगे। यह जानकर इसने अपना तेज संकुचित किया। बाद में इसने अपने बड़े भाई अरुण को पीठ पर बैठा कर, पूर्वदिग्भाग में ले जाकर रखा (म. आ. परि. १ क्र. १४; अरुण देखिये)।

तदनंतर यह कद्रू के दास्यत्व में बद्ध हुई अपनी माँ विनता के पास गया। वहाँ इसने देखा कि, विनता अत्यंत दुःखी तथा कष्ट में है। इतने में कद्रू ने नागों के उपवन में जाने का निश्चय किया। स्वयं विनता के कंधे पर बैठ कर, उसने अपने अनुचर नागों को कंधे पर ले जाने की आज्ञा गरुड को दी। उड़ते उड़ते यह इतनी उँचाई पर गया कि, सूर्य की उष्णता के कारण सब नाग नीचे गिर गये। तब इंद्र की स्तुति कर कद्रू ने वर्षा करवाई। बाद में नाम इससे मन चाहे जैसा आज्ञा करने लगे। तब गरुड ने माता के पास शिकायत की। विनता ने इसे दासीभवन की समस्त कथा

बताई तथा नागों का कपट भी बताया। तब गरुड ने माता की दास्यत्वमुक्ति के लिये कद्रू से उपाय पूछा। उसने दास्यत्व के बदले में अमृत माँगा (म. आ. २१. २-३)।

गरुड ने अमृत लाने के लिये माता से अनुमति माँगी। क्षुधानिरसन के लिये क्या है, सो पूछा। तब माँ ने इसे निपादों को खाने के लिये कहा। खाते खाते, निपाद समझ कर इसने एक ब्राह्मण तथा उसकी केवट पत्नी को भी खा लिया। इससे गरुड का गला इतना जला कि, इसे उन्हें छोड़ देना पड़ा (म. आ. २४)। उगलते समय कुछ निपाद भी बाहर आये। वे ग्लेच्छ बने (पद्म. सू. ४७)। इतने में यह उस स्थान पर आया, जहाँ इसका पिता कश्यप तपस्या कर रहा था। इसने क्षुधानिवारणार्थ कुछ माँगा। तब पिता ने एक सरोवर में लड़ रहे हाथी तथा कछुवा— जो पूर्वजन्म में संगे भाई हो कर भी एक दूसरे के दुश्मन थे—दोनों को खाने के लिये कह कर, इसे शुभाशीर्वाद दिया। कश्यप द्वारा दर्शाये गये सरोवर में लड़ रहे हाथी तथा कछुवा को इसने पंजे से उठा लिया। उड़ कर यह एक सौ योजन लंबी तथा उसी परिमाण में मोटी वटवृक्षशाखा पर बैठा। इतने में वह शाखा टूट गई। इसी शाखा से उलटे लटक कर, बालखिल्य तपस्या कर रहे थे। यह देख कर इसने वह शाखा चोंच में पकड़ी। हाथी, कछुवा तथा बालखिल्यों के साथ उड़ कर, यह पुनः कश्यप के पास आया। कश्यप ने कुशल प्रश्न पूछ कर बालखिल्यों का क्रोध ढाल दिया। बाद में उस शाखा से छूट कर बालखिल्य हिमालय पर गये। कश्यप के कथनानुसार गरुड ने वह शाखा एक पर्वतशिखर पर रख दी। वहीं उस हाथी तथा कछुए को खा कर, यह अमृतार्थ आगे बढ़ा।

अमृतप्राप्ति के लिये गरुड आ रहा है, यह जान कर देवों ने इससे लड़ने की तैयारी चालू की; बाद में इसका यक्ष, गंधर्व तथा देवों से युद्ध हुआ, परंतु उसमें उनका पराभव हो गया। इस समय इंद्र ने इस पर अपना वज्र फेंका; किंतु इसपर कुछ भी असर नहीं हुआ। इसने इंद्र के तथा जिस दधीचि की हड्डियों से वह वज्र बना था, उस दधीचि के सम्मान के लिये, अपने एक पर का त्याग किया। बाद में यह अमृतगुफा की ओर घूमा। वहाँ सुदर्शन-चक्र के समान एक चक्र उस गुफा की रक्षा कर रहा था। चारों ओर अग्नि का परकोटा था (यो. वा. १.९)।

अतिसूक्ष्म रूप धारण कर के, इस चक्र के बीच में स्थित तूंची के छेद से इसने भीतर प्रवेश किया। परंतु अमृत के दोनों ओर दो नाग थे। जो भी कोई उनके दृष्टिपथ में आता, एकदम भस्म हो जाता था। उनके दृष्टिपथ में आ कर भस्म न होवे, इसलिये इसने उनकी आँखों में धूल झाँक दी। उन्हें आँखे बंद करने के लिये मजबूर कर के स्वयं अमृत कुंभ ले कर बाहर निकला। इतने में इसकी विष्णु से भेंट हुई। तब संपूर्ण कुंभ पास में होते हुए भी, इसने एक बूंद अमृत को भी स्पर्श नहीं किया, यह देख कर विष्णु अत्यंत प्रसन्न हुए। तथा उसने इसे दो वर माँगने के लिये कहा। इन दो वरों से, 'मैं तुम्हारे साथ लेकिन ऊँचा रहूँ, तथा बिना अमृत प्राशन किये भी मैं अमर रहूँ' ऐसे दो वर इसने विष्णु से माँगे, तथा पूछा कि 'मैं तुम्हारी सेवा किस प्रकार कर सकता हूँ?' तब विष्णु ने कहा, 'तुम मेरे वाहन बनो। तुम्हारे प्रथम वर की पूर्ति के लिये, मैं रथ में बैटूँगा, तब तुम मेरे ध्वज पर बैठो?' (म. भा. २८-२९)।

बाद में पुनः यह बदरिकाश्रम में कश्यप के पास आया तथा आपत्ती उसे बताई। कश्यप तथा तत्रस्थ ऋषिओं ने इसे नारायणमाहात्म्य का निवेदन किया। तदनंतर इसकी तथा इंद्र की मित्रता हो कर, इंद्र ने इसे अमृत ले जाने का कारण पूछा। गरुड द्वारा बताये जाने पर इंद्र ने कहा, 'तुम्हारी माता को कपट से दासी बनाया गया है। हम कपटाचरण से ही उसकी मुक्ति करावेंगे।' सख्यत्व दर्शाने के लिये इंद्र ने इसे वर दिया, 'सर्प तुम्हारा भक्ष्य बनेंगे।' बाद में इसने अमृतकुंभ दर्भ पर रखा तथा सर्पों से कहा, कि तुम स्नानादि कर के इसका भक्षण करो। इस प्रकार सर्प सौंप जब स्नान के लिये गये थे, तब इंद्र ने आ कर अमृतकुंभ का हरण कर लिया। इस प्रकार सर्पों को धोखा दे कर, इसने अपनी माता की मुक्ति की।

इसकी पत्नियों के नाम भासी, क्रौंची, शुकी धृतराष्ट्री एवं श्येनी थे (ब्रह्माण्ड. ३.७.४४८-४४९)।

एक बार इंद्र ने सुमुख नामक नाग को अमरत्व दिया। क्रुद्ध हो कर गरुड इंद्र के पास गया। 'तुम मेरे मुख से मेरा भक्ष्य क्यों छीन रहे हो? मैं सरलता से विष्णु का वहन कर सकता हूँ, इसलिये मैं सबसे, अर्थात् विष्णु से भी बलवान हूँ।' ऐसी बलवानाये यह करने लगा। इसका गर्व हरण करने के लिये

विष्णु ने लीला से अपना एक हाथ इसके शरीर पर रखा। इससे इसके प्राण ध्वराने लगे। तब यह विष्णु की शरण में गया। उस सुमुख नामक नाग को अपने अंगूठे से उड़ा कर, विष्णु ने गरुड की छाती पर रखा। तब से वह सुमुख गरुड की छाती पर है (म. उ. १०३)।

गालव नामक ऋषि इसका मित्र था। गालव जब गुरु-दक्षिणा की विवंचना में था, तब गरुड उसके पास आया। उसकी सहायता के हेतु से गरुड ने उसे पीठ पर बैठाया। चारों ओर घूम कर, दोनों ऋषय पर्वत पर शंडिली नामक एक ब्राह्मणी के आश्रम में आ उतरे। यह तथा गालव उसी आश्रम में विश्राम कर रहे थे। तब गरुड ने सोचा कि, यह ब्राह्मणी अत्यंत तपोनिष्ठ है। इसे बैकुंठ ले जाना चाहिये। तभी अंशतः उपकार इसपर हो सकेगा। परंतु ब्राह्मणी को यह पापविचार प्रतीत हुआ। उसने योगबल से इसके पर तोड़ डाले। गरुड ने उससे क्षमायाचना की। तब इसे पहले में भी शक्तिपूर्ण पर प्राप्त हुए। फिर दोनों मित्र मार्गक्रमण करने लगे। मार्ग में गालव का गुरु विश्वामित्र मिला। वह दक्षिणा के लिये उतावली करने लगा। तब त्वरित द्रव्यप्राप्ति की इच्छा से गरुड उसे ययाति राजा के पास ले गया। परंतु ययाति के पास, द्रव्य नहीं था। इस कारण, उसने अपनी कन्यया माधवी इसे इस शर्तपर दी कि, इससे उत्पन्न पुत्रों पर ययाति का अधिकार होगा। गालव से उसने कहा, 'कोई भी राजा तुम्हारी इच्छित कीमत दे कर इसे ले लेगा।' बाद में गुरु-दक्षिणार्थ अश्वप्राप्ति का साधन प्राप्त होते ही इसने गालव को विदा किया। पश्चात् यह अपने स्थान पर वापस लौट आया (म. उ. १०५.१११)।

इसे सुमुख, सुनामन्, सुनेत्र, सुवर्चस्, सुसूच तथा सुबल नामक छः पुत्र थे (म. उ. ९९.२-३)। महाभारत के इसी अध्याय में एक और नामावलि दी गयी है। इस नामावलि के प्रारंभ में कहा गया है, 'गरुड के कुल के अन्य नाम बता रहा हूँ।' अन्त में कहा गया है, 'ये सब गरुडपुत्रों में से हैं'।

इंद्र ने सुमुख को अमरत्व दिया। इस कारण इंद्र से लड़ने गरुड गया था। तब इसने स्वयं ही बताया था, 'मैं ने धृतश्री, धृतसेन, विवस्वान्, रोचनामुख, प्रस्तुत, तथा कालकाश राक्षसों का वध कर के अंचाट कर्म किये हैं' (म. उ. १०३)।

इसके विभिन्न कार्यों से इसे विभिन्न नाम प्राप्त हुए। उनमें से, काश्यपि इसका पैतृक नाम तथा वैनतेय इसका मातृक नाम है। सुपर्ण, तार्क्ष्य, सितानन, रक्तपक्ष, सुवर्णकाय, गगनेश्वर, खगेश्वर, नार्गातक, पद्मसाशन, सर्पारति, विष्णुरथ, अमृताहरण, सुधाहर, सुरेंद्रजित्, वज्रजित्, गरुत्मत्, तरस्विन्, रसायन, कामचारिन्, कामायुष, चिराद आदि इसके अनेक नाम हैं। इसका रूप अति विचित्र था। इसके मस्तक, पर, चोंच तथा नख गरुडपक्षी के समान थे। शरीर तथा इंद्रियों मनुष्य जैसी थीं।

इसके वंश के पिगाक्ष, नित्रोध, सुपुत्र तथा सुमुख ने व्यासपुत्र जैमिनि की महाभारत पर की शंकाओं का निरसन किया (मार्क. ४)। ये चारों श्वास रोक कर वेद-पठन करते थे (मार्क. ४.४)। इसने ही गरुडपुराण कश्यप को बताया (गरुड. १.२)। इसकी उपासना काफ़ी प्राचीन है। इसकी गायत्री प्रसिद्ध है (महाना. ३.१६; गरुडोपनिषद् देखिये)।

गरुड केवल व्यक्ति का नाम न हो कर, समुदाय एवं मनुष्यजाति का नाम होगा।

गर्ग—(सो. काश्य.) दिवोर्दासपुत्र प्रतर्दन के दो पुत्रों में से एक (ह. वं. १.३०)।

२. (सो. पूर.) मन्वु रूप का पुत्र। इसका पुत्र शिनि।

३. यादवों का पुरोहित। इसने कृष्ण का नामकरण तथा उपनयन संस्कार किया (भा. १०.८)। देवकी को पुत्र होते ही तत्काल उनका वध करने का क्रम कंस ने जारी किया। इन पुत्रों को दीर्घायु बनाने का उपाय बंसुदेव ने इससे पूछा। तब इसने देवीभागवत श्रवण करने का उपाय उसे बताया। काराग्रह में वह असंभव था, इसलिये गर्गमुनि ने स्वयं देवीभागवत का पाठ किया। देवी ने वरदान दिया कि, शीघ्र ही कृष्णावतार होगा (दे. भा. १.२)। गर्ग ने चौसठ कलाओं पर एक ग्रंथ लिखा होगा (म. अनु. ४९.३८ कुं.)। गर्गस्मृति से हेमाद्रि तथा माधवाचार्य ने उद्धरण लिये हैं।

यह प्रसिद्ध ज्योतिषी था। इसने कृष्णजन्म का जातक ठीक ठीक कथन किया था। गर्गसंहिता नामक बारह हजार श्लोकों का कृष्णचरित्र पर एक ग्रंथ उपलब्ध है। वह इसी गर्ग का है, ऐसा कहा जाता है। इतिहास पर लिखे गये इस ग्रंथ के अनुसार, ज्योतिष पर भी एक गर्गसंहिता पहले होनी चाहिये। बृहद्सागार्य संहिता नामक एक ग्रंथ हाल ही में पाया जाता है। गर्ग के

वारिशास्त्र तथा मयूरचित्रक नामक दो ग्रंथ उपलब्ध हैं। इन दोनों ग्रंथों में वर्षा के भविष्य के संबंध में विस्तीर्ण जानकारी अर्थात् वायुविद्या है। मयूरचित्रक, गर्ग तथा भागुरि का संवादरूप ग्रंथ है (कविचरित्र)। गर्ग ने वास्तुशास्त्र पर एक ग्रंथ लिखा था (मत्स्य. २५२)।

४. कलिंग देश का निवासी। मुख से विश्वनाथ का नाम लेते, यह कंधे पर गंगा की डोली लेकर जा रहा था। राह में ब्रह्मराक्षस बने सोमदत्त तथा कल्पाषपाद से इसकी भेंट हुई। उनपर तुलसीमिश्रित गंगाजल डालने से सोमदत्त तर गया तथा कल्पाषपाद पश्चात्तापदग्ध हुआ। सरस्वती के द्वारा आश्रासन दिये जानेपर, छः मास काशी में रहकर कल्पाषपाद अपने राज्य लौटा (नारद. १.१४१)।

५. एक ऋषि (पितृवर्तिन् देखिये)। इसने भीष्म-पंचकक्रवत् किया था (पद्म. उ. २४)।

६. अंगिराकुल का गोत्रकार।

७. ऋषम नामक शिवावतार का शिष्य।

८. लकुलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

गर्ग भारद्वाज—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ६.४७)।

गर्गभूमि—(सो. क्षत्र.) वायुमतानुसार गार्ग्यपुत्र।

गर्दभीमुख—कश्यपकुल का गोत्रकार।

गर्दभीमुख शांडिल्यायन—एक आचार्य। इसका गुरु उदरशांडिल्य (वं. ब्रा. २)।

गर्दभीविपीत—गौतमकुल का एक ऋषि।

२. भारद्वाजकुल का एक ऋषि।

३. एक तंवरु। जनक ने याज्ञवल्क्य को बताया कि, इसने ओत्र ब्रह्म है, ऐसा कहा है (वृ. उ. ४.१.५)। इसे विभीत भी कहते हैं।

गर्म—(सो. तुर्वसु.) मत्स्य के मतानुसार यह तुर्वसुपुत्र है।

गर्व—धर्म ऋषि का पुत्र। इसकी माता पुष्टि।

गर्दूनस आर्क्षकायण—एक आचार्य। इसका तथा जैवलि का साम के बारे में संवाद हुआ है (जै. उ. ब्रा. १. ३८. ४)।

गवय—यह रामसेना का वानर था। राम ने जब यज्ञ किया, तब अश्व के रक्षणार्थ शत्रुघ्न के साथ इसे भेजा गया था (म. व. २६७.३; पद्म. सु. ३९; पा. ११)।

गवत्मान—यह सत था तथा संजय का पिता था।

गवाक्ष—शकुनि का भ्राता। भारतीययुद्ध में यह इरावत् के द्वारा मारा गया (म. भी. ८६.२४-३४)।

२. रामसेना का एक वानराधिपति (म. व. २६७. ४)।

३. भारतीययुद्ध में भीम के द्वारा मारा गया राजा (म. द्रो. १३२.२०)।

गविजात—एक ब्रह्मर्षि (च्यवन तथा शृगिन् देखिये)।

गविष्ठ—कश्यप तथा दनु का पुत्र। एक दानव (म. आ. ५९.२९)।

२. अंगिरसपुत्र देवों में से एक।

गविष्ठिर आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.१.१२; १०. १५०.५; अ. सं. ४.२२.५; आश्व. श्रौ. १२.१४.१; ब्रह्मांड. २.३२)। यह अत्रिगोत्र का प्रवर है।

गवेषण—(सो. यदु. वृषिण.) अक्रूर के पुत्रों में से एक।

गवेष्टिन्—दनुपुत्र।

गाग्र—(सो. पुरुरवस्.) वायु के मतानुसार भुवन्मन्यु-पुत्र। इसके पुत्रों को गाग्र यह सामान्यनाम दिया गया है। अन्य पुराणों से प्रतीत होता है कि, ये गरी होंगे।

गांगेय—भीष्म का मातृक नाम (म.आ. ९४.७७)।

२. गणपति देखिये।

गांगोदधि—अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार।

गांग्यायनि—चित्र का पैतृक नाम। गार्गायणि नामांतर है (कौ. उ. १.१)।

गाणगारि—आद्वलयन देखिये।

गातु आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.३२)।

गातु गौतम—संवर्गजित् लामकायन का शिष्य (वं. ब्रा. २)।

गात्र—उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

गात्रवत्—कृष्ण का लक्ष्मणा से उत्पन्न पुत्र (भा. १०.६१.१५)।

गाधिन्—विश्वामित्र का पिता तथा कुशिक का पुत्र। सर्वानुक्रमणी में इसका निर्देश है। गाधिन् कौशिक कुछ ऋचाओं का द्रष्टा है (ऋ. ३.१९-२२)। विश्वामित्र ने शुनःशेष को दत्तक लिया। इसलिये वह, मूलवंश के तथा गाधिन् के वंश के, यज्ञयागादि दैवी कर्मों में तथा मंत्रसाध्य कर्मों में, प्रामुख्य प्राप्त करनेयोग्य हुआ (ऐ. ब्रा. ७. १८)। विश्वामित्र के वंश के लिये, गाधिन् शब्द बहुवचन प्रयुक्त होता है (आश्व. श्रौ. ७.१८)। यह अंगिराकुल का गोत्रकार तथा इंद्र का अवतार था (वेदार्थदीपिका ३)। पुराणों में इसे गाधि कहा गया है (विश्वामित्र देखिये)।

गाधिन्—विश्वामित्र तथा विश्वामित्रवंशजों का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७.१८)।

गाधि—(सो. अमा.) वायुमतानुसार कुशाश्वपुत्र, भागवत तथा विष्णु मतानुसार कुशांशुपुत्र। इसेही कौशिक कहते हैं। यह कान्यकुब्ज देश का अधिपति था। इसकी माता पुरुकुत्स की कन्या थी। इसे सत्यवती नामक कन्या थी। उसे ऋचीक ऋषि ने इससे माँगा। तब इसने उससे एक हजार द्यामकर्ण घोड़े ले कर, सत्यवती उसे दी। ऋचीक ऋषि ने दिये चरु के प्रभाव से, इसे विश्वामित्र नामक पुत्र हुआ (ऋचीक देखिये; म. आ. १६५; व. ११५; शां ४९; अनु. ७ कुं; भा. ९.१५.४; १६.२८; ह. वं. १.२७)।

२. कोसल देश में रहनेवाला एक ब्राह्मण। यह श्रोत्रिय एवं बुद्धिमान् था। यह वचनन से ही विरक्त था। कुछ इष्टकार्य की सिद्धि के लिये, यह भाईयों को छोड़ कर तपस्या करने के लिये अरण्य में एक सरोवर के किनारे गया। विष्णुदर्शन होने तक पानी में तप करने का इसने निश्चय किया। दर्शन दे कर विष्णु ने इसे वर माँगने का कहा। इसने विष्णु से भ्रामक संसारमाया दिखलाने की प्रार्थना की।

एक दिन स्नान करते समय, द्रुम हाथ में ले कर पानी मथना इसने प्रारंभ किया। तब इसे ऐसा दृश्य दिखा कि, जोंकों का तूफान आने के कारण, एकादे वृक्ष के समान उसका शरीर नीचे गिर गया है। स्वजन रो रहे हैं, तथा शुष्क शरीर चिता में डाल कर जला डाला गया है। बाद में भूतमंडल देश की सीमा पर, एक ग्राम में, एक चांडाल स्त्री के उदर में गर्भवास की नरकयातना भोगते हुए इसने अपने को देखा। बाद में क्रमशः बढ़ते बढ़ते, यह विषयलोह्य बन गया। इसने चांडालकन्या से विवाह किया। वहाँ इसे संतति प्राप्त हो कर, यह वृद्ध हुआ। तदनंतर यह अरण्य में वास करने लगा। कुछ कालोपरांत, घर के लोगों की मृत्यु होना प्रारंभ हुआ। यह भ्रमिष्ठ के समान वन में घूमने लगा। घूमते-घूमते यह कीर लोगों की राजधानी में आया। वहाँ के राजा की मृत्यु हो गई थी। हाथी ने इस चांडाल को सूँड़ से पकड़ कर गंडस्थल पर बैठाया। इसलिये लोगों ने इसे राजा बनाया। इस प्रकार गवल नाम से इसने आठ वर्षों तक कीर देश का राज्य चलाया। बाद में, नागरिकों को ज्ञान हुआ कि, अपना राजा चांडाल है। उन्होंने ने अग्निप्रवेश किया। उनके

दुख से, यह स्वयं भी अग्निप्रवेश करने को सिद्ध हो गया, तथा अग्निराशि पर गिर गया। इसके अवयव जलने लगे।

इसी समय, सरोवर के जल में अघमर्षण करनेवाला गांधि ब्राह्मण, इस दीर्घस्वप्न से जाग्रत हुआ।

चार प्रटिकाओं के बाद, इसका भवभ्रम नष्ट हुआ। स्वप्न की सब घटनाओं का स्मरण कर, यह विचार करने लगा। तदनंतर गांधि ने दैत्य साल तक तपस्या की। तब इसे दर्शन दे कर विष्णु ने बताया कि, तुमने देखी हुई सब घटनायें माया हैं। विष्णुवचन की सत्यासत्यता अजमाने के लिये, यह पुनः कौर देश में गया। विष्णुद्वारा इसका मोह तिरसन होने के पश्चात्, यह जीवन्मुक्त हुआ (यो. वा. ५.४४.४९)।

गानवंधु—बाराहकल्प के घोरकल्प में से प्रसिद्ध गायनाचार्य। तत्कालीन नारद ने इससे गायन सीखा। आगे चल कर कुछ कारणवश, इसे उलूकयोनि प्राप्त हुई (अ. रा. ७)।

गांदम—एकयावन का पैतृक नाम (तां. ब्रा. २१. १४, २०; तै. ब्रा. २.७. ११. २)। तैत्तिरीय ब्राह्मण में कांदम पाठ है।

गांधिनी—काशिराज की कन्या, तथा यदुवंश के स्वर्कल की पत्नी। अकूर आदि इसके पुत्र थे (भा. १०. ४१)। यह अनेक वर्षों तक गर्भ में थी। इसका कारण इसके पिता ने पूछा। इसने कहा कि, 'अगर तुम मुझसे हमेशा गोदान कराओगे, तो ही मैं जन्म लूँगी'। इसके पिता ने यह कबूल किया (वायु. ९६. १०५-१०९; ह. वं. १. ३४. ६-१०)।

गांधार—(सो. द्रुह्यु.) भागवत मतानुसार आरुच्य का, विष्णु मतानुसार सेनुपुत्र वा आरुद्रत् का, मत्स्य मतानुसार शरद्रत् का तथा वायुमतानुसार अरुद्र का पुत्र। गांधार देश के राजाओं को, विशेषतः शकुनि को यह नामप्रथुक होता था (गांधार नमजित् देखिये)।

गांधार नमजित्—एक गांधार राजा। इसे सोम-विषयक ज्ञान प्राप्त था (ऐ. ब्रा. ७. ३४)। शतपथ ब्राह्मण में इसका अथवा स्वर्जिन्नामजित् का, नमजित् ऐसा उल्लेख मिलता है। एक बार, प्राण शब्द के अर्थ के संशय में दिया हुआ इसका मत, राजन्यवंधु होने के कारण अस्वीकृत हुआ (ः. १.४.१०)। सायणाचार्य गांधार तथा नमजित् को दो पृथक् व्यक्ति मानते हैं (ऐ. ब्रा. भाष्य.)।

गांधारकायन—अगस्त्यकुल का एक गोत्रकार।

गांधारी—गांधार देशाधिपति सुबल की कन्या (म. आ. ९०. ६१)। इसने बाल्यावस्था में रुद्र की आराधना की थी, जिस कारण इसे सौ पुत्र होंगे ऐसा वरदान मिला। कुरुवंश में संतति का अभाव था। इसी कारण भीष्म आदि लोगों ने धृतराष्ट्र के लिये, गांधारी की माँग की (म. आ. १०३. ९-१०)। तदनुसार सुबल ने धृतराष्ट्र को गांधारी दी। यह महापतिव्रता थी। धृतराष्ट्र अंधा था। इसलिये इसने भी अपनी आँखों पर पट्टी बाँध कर अंधत्व अंगिकार किया। यह परपुरुष का दर्शन भी न करती थी (म. आ. १०३.१३)।

वर के अनुसार इसके उदर में गर्भ रहा। इसे समाचार मिला कि, कुंती को युधिष्ठिर उत्पन्न हुआ है। जल्दी पुत्र हो, इसलिये इसने बलपूर्वक अपना गर्भ बाहर निकाला (म. आ. १०७.१०-११)। उससे मृतप्राय सा मांस का पिंड बाहर आया। इतने में वहाँ व्यास आये। यह सारा हाल देख कर उन्हें इस पर बड़ी दया आई। उन्होंने गर्भ के सौ टुकड़े बनवा दिये। पश्चात् धृतराष्ट्र को मँगवा कर, उसमें गर्भ रखने का आदेश दिया। कहा कि, 'यथा-अवसर योग्य काल वा कर गर्भ व्यवस्थित हो जावेगा'। तदनुसार योग्य समयपर गर्भ सजीव हुआ (म. आ. १०७.१२-१४)। इसी समय कुंती को भीम उत्पन्न हुआ (म. आ. ११४.१४)। गांधारी को दुर्योधन आदि सौ कौरव तथा दुःशला नामक कन्या यों एक सौ एक संताने हुई (धृतराष्ट्र देखिये)।

दुर्योधन ने पांडवों से शत्रुता प्रारंभ की, तब गांधारी ने हितोपदेश दिया। उसका कुछ भी परिणाम नहीं हुआ (म. उ. १२७)। दुर्योधन की मृत्यु के समय, कृष्ण ने इसे सांत्वना दी (म. श. ६२)। गांधारी ने रणक्षेत्र में आ कर, पुत्रशोक से संतप्त हो, सब के शव (प्रेत) दिखाये। कृष्ण को शाप दिया कि, छत्तीस वर्षों में तेरे कुल का क्षय होगा। तब कृष्ण ने हँस कर कहा कि, यह मुझे मालूम ही था (म. स्त्री. २६.४१-४३)। इसके बाद व्यास आदि लोगों ने इसका सांत्वन किया। दुर्योधनवध तथा दुःशासन का रक्त-प्राशन, इस विषय पर भीम से इसका संवाद हुआ। तब भीमसेन ने कहा, 'दुःशासन का लहू द्रोत तथा ओठों के अंदर बिल्कुल ही नहीं गया' (म. स्त्री. १४.१४)। एक बार इसकी संतापपूर्ण दृष्टि धर्म के पैरों की अंगुलियों पर पड़ी। इससे उसकी अंगुलियों के अत्यंत सुंदर नख विद्रूप हो गये (म. स्त्री. १५.७)। द्रौपदी तथा कुंती अपने

अपने पुत्रों के लिये शोक कर रहीं थीं। इसने उनकी संतवना की (म. स्त्री. १५-१७)।

इसके बाद, गांधारी धृतराष्ट्र के साथ पांडवों के पास ही रहने लगी। युधिष्ठिर अत्यंत सुस्वभावी था। इन्हें किसी भी चीज की कमी नहीं होने देता था। किंतु भीम हमेशा कठोर भाषण करता था। इससे वैराग्य उत्पन्न हो कर, गांधारी धृतराष्ट्र, कुन्ती तथा विदुर के साथ वन में गईं। वहाँ इसने पति के साथ देहत्याग किया (भा. १.१३.२७; ९.२२-२६; म. आश्र. ४५)।

२. क्रोष्टु की पत्नी। इसे सुमित्र अथवा अनमित्र नामक एक पुत्र था (ब्रह्म. १४.२; ३४; ह. वं. २.३४.१)।

३. अजमीद की तीसरी पत्नी।

४. कश्यप तथा सुरभि की कन्या।

५. कृष्णपत्नी। इसने अंत में अग्निप्रवेश किया (म. मौ. ७)।

गायत्री—एक देवपत्नी। पुराने काल में चाक्षुष मन्वन्तर में ब्रह्मदेव ने यज्ञ प्रारंभ किया। शंकर, विष्णु आदि देव तथा भृगु आदि ऋषि आये थे। यज्ञदीक्षा के लिये, ब्रह्माजी ने अपने स्वरा नामक पत्नी को पुकारा। वह किसी कार्य में मग्न थी। इधर सुहृत् टल रहा था। इसलिये इन्होंने गायत्री को पुकारा। तब यह आई तथा स्वरा के स्थान पर बैठी।

बाद में स्वरा मंडप में आई। अपने स्थान पर गायत्री को बैठी देख कर, क्रोध से उसने सब को जड़ हो जाने का शाप दिया। तब गायत्री ने भी उसे वही शाप दिया। बाद में, देव जड़ अर्थात् जलरूप रहें, तथा प्रत्येक नदी देवता हो, ऐसा तय हुआ। सावित्री तथा गायत्री पश्चिमवाहिनी नदीयों बनीं। विष्णु कृष्णा का तथा शंकर वेण्णा का स्वामी बना (पद्म. उ. ११३)। सावित्री ने देवों को शाप दिया। तब गायत्री ने यह बताया कि, शाप का उपयोग कैसे किया जावे (पद्म. सू. १७)।

पश्चात् ब्रह्मदेव ने एक स्त्री, यज्ञज्ञाय के लिये लाने की आज्ञा, इन्द्र को दी। इन्द्र ने एक अधिराज की (ग्वाले की) कन्या उठा लाई। उसकी स्थापना ब्रह्मदेव के पास की। ब्रह्मदेव ने इसका गांधर्वविधि से स्वीकार किया (पद्म. सू. १६-१७; सावित्री, बुद्धि तथा अश्वपति २ देखिये)।

गायत्री मंत्र तथा गायत्री छंद की प्रशंसा ब्राह्मण, उपनिषद् तथा महाभारतादि पुराणों में प्राप्त है (छां. उ. ३. १२.१; म. आश्र. ९९.३२-३७; ११५.२७.२९)।

गायत्री को वेदमाता कहा है (म. आश्र. ९९.२४)। गायत्री को सूर्यमंत्र मान कर उसे सावित्री कहते हैं (बृ. उ. ५.१४.५)। जै. उ. ब्रा. को गायत्रीपनिषद् कहते हैं (जै. उ. ब्रा. ४.१७)। इस ग्रंथ में गायत्र साम की अत्यंत प्रशंसा की है।

गायन—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

गार्ग्य—विश्वामित्र का पुत्र।

गार्गीहर—गार्ग्यहरि का पाठभेद।

गार्गी वाचकवी—वचकनु ऋषि की कन्या होने के कारण, इसे गार्गी वाचकवी कहते हैं। यह अत्यंत ब्रह्मनिष्ठ थी तथा परमहंस की तरह रहती थी। देवराति जनक की सभा में याज्ञवल्क्य से इसका वाद हुआ (बृ. उ. ३.६.१; ८.१; आश्र. गृ. ३.४.४; सां. गृ. ४.१०; अथर्वपरि. ४३.४.२३)। ऋग्वेदियों के ब्रह्मयज्ञोत्सव में इसका नामोल्लेख आता है।

गार्गीय—भृगुकूल का गोत्रकार।

गार्ग्य—एक ऋषिपरंपरा। गर्ग परंपरा के लोग गार्ग्य नाम से प्रथित हुवे। वेद, प्रतिशास्त्र, यज्ञ, व्याकरण, ज्योतिष, धर्मशास्त्र आदि विषय में उनके ग्रंथ तथा विचार उपलब्ध हैं। यह कार्य एक का नहीं। परंपरा में आये अनेक शिष्यप्रशिष्य द्वारा यह संपन्न हुआ, इस में संदेह नहीं। यहाँ केवल निर्देश किये हैं। काल तथा भिन्नता प्रकट करना अशक्य है।

एक व्याकरणकार। पाणिनि ने तीन बार इसका उल्लेख किया है (पा. सू. ७. ३. ९९; ८. ३. २०; ४. ६७)।

ऋग्वेदप्रतिशास्त्र तथा वाजसनेय प्रतिशास्त्र में भी गार्ग्यमत उद्धृत किया है (ऋ. प्रा. १३. ३०)।

निश्चत में भी गार्ग्यमत है (नि. १.३.१२; ३.१३)। यास्क तथा रथीतर के साथ इसका निर्देश है (बृहदेवता १. २६)। सामवेद का पदपाठ गार्ग्यविरचित है।

सामवेद परंपरा में शर्वदत्त का गार्ग्य पैतृक नाम है। सामवेदियों के उपाकर्मांग तर्पण में इसका नाम है (जैमिनि देखिये)।

एक गृह्यकर्मविशारद। शांत्युदक तथा मधुपर्क विषयक इसके मत उपलब्ध है (कौ. सू. ९. १०; १३. ७; १७. २७)।

एक तत्त्वज्ञ। यह गौतम का शिष्य था। इसका शिष्य अग्निवेश्य (बृ. उ. ४. ६. २)।

एक ज्योतिषी के नाते हेमाद्रि ने इसका निर्देश किया है (C. C.)। मेरु की कर्णिका ऊर्ध्ववेणीकृत आकार की है (वायु. ३४. ६३), यह ज्योतिषशास्त्रीय सिद्धान्त इसने प्रस्थापित किया।

यह अंगिराकुल का एक गोत्रकार तथा मंत्रकार है। परंतु ऋग्वेद में गार्ग्य का मंत्र नहीं है।

धर्मशास्त्रकार—बृहदायज्ञवल्क्य का एक श्लोक विश्वरूपरचित विवरण नामक ग्रंथ में है। उसमें उल्लेख है कि यह धर्मशास्त्रकार है (१. ४-५)। गार्ग्य के ग्रंथ का एक वचन लिया गया है, उससे पता चलता है कि, गार्ग्य का धर्मशास्त्र पर कोई ग्रंथ अवश्य उपलब्ध होगा। अपराकं, स्मृतिचन्द्रिका, मिताक्षरा आदि ग्रंथों में श्राद्ध, प्रायश्चित्त तथा आह्निक आदि विषयों पर इसके उद्धरण लिये गये हैं। पाराशरधर्मसूत्र में भी यह धर्मशास्त्रकार है, यों उल्लेख है। अपराकं में इसके ग्रंथ से ज्योतिषविषयक श्लोक भी लिये गये हैं। गर्गसंहिता के ज्योतिषविषयक श्लोक भी प्राप्त हुए हैं। स्मृतिचन्द्रिका में ज्योतिर्गार्ग्य एवं बृहद्गार्ग्य इन दो ग्रंथों का उल्लेख हुआ है। नित्याचारप्रदीप में गर्ग तथा गार्ग्य नामक दो भिन्न स्मृतिकारों का उल्लेख है।

पुरुवंश के गर्ग तथा शिनि की संतति को गार्ग्य यह सामान्यनाम दिया जाता था। यह क्षत्रिय थे, परंतु तप से वे गार्ग्य तथा शैन्य नाम के ब्राह्मण हो गये थे (भा. ९.२१.१९; विष्णु. ४. १९.९)। केकयदेशाधिपति युधाजित् राजा का गार्ग्य नामक पुरोहित था। यह युधाजित् राजा की ओर से गंधर्वदेश जीतने के लिये राम के पास आया था। उसने तक्ष तथा पुष्कलों की सहायता से यह कार्य पूर्ण किया (वा. रा. यु. १००)।

२. एक ऋषि। रुद्र ने ययाति को एक सोने का रथ दिया। वह रथ उसके कुल में प्रथम जनमेजय पारिक्षित तक था। परंतु गार्ग्य के एक अल्पवयीन पुत्र ने उसे कुल कहा, तब जनमेजय ने उसका वध कर दिया। तब गार्ग्य ने उसे शाप दिया तथा वह रथ जनमेजय के पास से चेदिपति वसु के पास गया। उसके बाद, वह रथ जरासंध, भीम तथा अंत में कृष्ण के पास गया (वायु. ९३.२१-२७; ह. वं. १.३०)।

३. विश्वामित्र के पुत्रों में से एक का नाम (म. अनु. ७.५५. कुं.)।

४. एक ऋषि। वृकदेवी नामक त्रिगर्त राजा की कन्या शिशिरायण गार्ग्य को दी थी। गार्ग्य पुरुष है अथवा नहीं,

यह देखने का उसने प्रयत्न किया। परंतु बारह वर्ष की कड़ी तपश्चर्या के कारण, इसका वीर्य खलित नहीं हुआ। इससे सचकी कल्पना ऐसी हुई कि, यह नपुंसक है। बाद में दक्षिण में जा कर इसने शंकर की आराधना की तथा यादवों का पराभव करनेवाला पुत्र माँग लिया। तब ग्वालकन्या गोपात्नी से इसे काल्यवन नामक महापराक्रमी पुत्र हुआ (विष्णु. ५.२३; ह. वं. १.३५.१२)। अन्य कई स्थानों में इस कथा का उल्लेख है (काल्यवन देखिये)। इसे कश्चित् गर्ग भी कहा गया है। इसे यादवों का उपाध्याय कहा है। यादवों के उपाध्याय को गर्ग तथा कुलनाम गार्ग्य दोनों लगाते थे (बृहद्गर्ग तथा बृहद्कन्या देखिये)। इसने धर्म को धर्मरहस्य बताया (म. अनु. १९०.९ कुं.)।

४. (सो. काश्य.)। यह वायु के मतानुसार वेणुहोत्र-पुत्र। भर्ग तथा भाग्न इसके नामांतर हैं।

शर्वदत्त गार्ग्य, शिशिरायण गार्ग्य, तथा सौर्यायणि गार्ग्य देखिये।

गार्ग्य बालाकि—गर्गगोत्रीय बलाक नामक ऋषि का पुत्र। अपने ब्रह्मज्ञान के प्रति अभिमानी बन कर, काफी स्थानों पर इसने अपने ज्ञान की प्रशंसा की। एकवार काशिराज अजातशत्रु के पास जा कर इसने उससे कहा, 'मैं तुम्हें बताता हूँ कि ब्रह्म क्या है'। अजातशत्रु ने उस ज्ञान के बदले इसे हजार गायें देने का निश्चय किया। तब बालाकि ने प्रतिपादन प्रारंभ किया, परंतु अजातशत्रु ने इसके सब तत्त्वों का खंडन किया। तब अपने गर्व के प्रति लज्जित हो कर इसने अजातशत्रु को ब्रह्मज्ञानरथन की प्रार्थना की। तब अजातशत्रु ने कहा, 'अध्यापन क्षात्रधर्म के विरुद्ध है। इसलिये मैं इस राजसिंहासन का त्याग करता हूँ। तुम इसका स्वीकार करो, तब मैं अध्यापन योग्य बनूंगा'। ऐसा करने के बाद, अजातशत्रु ने बालाकि को ब्रह्मविद्या प्रदान की (कौ. उ. ४.१)। इसे दत्तबलाकि भी कहते थे (श. ब्रा. १४.५.१)।

गार्ग्यहरि—अंगिराकुल का गोत्रकार। गार्गिहर पाठभेद है।

गार्ग्यार्यण—उदालकायन का शिष्य। इसका शिष्य पाराशर्यार्यण (बृ. उ. ४.६.२)।

२. भृगुकुल का एक गोत्रकार

गार्ग्यार्यणि—गार्ग्यार्यणि देखिये।

गार्दभि—विश्वामित्र के पुत्रों में से एक। पाठभेद-गर्दभि (म. अनु. ७.५९ कुं.)।

२. भृगुकुल का गोत्रकार ।

गार्हायण—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषि ।

गाल—एक राजा । इसने नीलपर्वत पर एक मंदिर बनवाया था । इन्द्रद्युम्न ने जगन्नाथक्षेत्र इसके कान्ठ में दिया (स्कन्द. २.२.२६) ।

गालव—विदर्भाकौण्डिन्य का शिष्य । इसका शिष्य कुमारहारित (वृ. उ. २.६.३; ४.६.३) ।

२. विश्वामित्र का एक शिष्य (म. उ. १०४-११६) । गुरु की अत्युत्कृष्ट सेवा कर के, इसने पूर्ण कुमा संपादन की । इसके द्वारा विशेष आग्रह किये जाने के कारण, विश्वामित्र ने किंचित् रोप से आठसौ श्यामकर्ण अश्व गुरु-दक्षिणा के रूप में माँगे (म. उ. १०४.२६) । यह सुन कर, यह अत्यंत भयभीत हुआ । इसने विष्णु की आराधना की । इसकी निरसीम भक्ति से तुष्ट हो कर, विष्णु ने गरुड़ को इसके पास भेजा, तथा इसको मदद करने के लिये कहा । गरुड़ गालव के पास गया । इसकी इच्छा जान कर, अश्व धूँदने के लिये ये दोनों बाहर निकले । जाते जाते गरुड़ इसे ययाति के पास ले गया । उस समय ययाति की सांपत्तिक स्थिति अच्छी नहीं थी । वह स्वयं अरण्य में रहता था । गालव की इच्छापूर्ति के लिये आवश्यक द्रव्य भी उसके पास नहीं था, फिर आठसौ अश्वप्राप्ति तो असंभव ही थी । फिर भी अपनी कन्या माधवी, उसके होनेवाले पुत्रों पर अधिकार रख कर, ययाति ने इसे दी, तथा उसके सहाय्य से इसने गुरुदक्षिणा की पूर्ति की (म. उ. १०४-११७; माधवी देखिये) ।

इसका आश्रम जयपुर से तीन मील की दूरी पर था । इसका दूसरा आश्रम चित्रकूट पर्वत पर था ।

३. विश्वामित्र का पुत्र । सत्यव्रत राजा के निंघ आचरण से सर्वत्र अकाल पड़ गया । उस समय अपने तीन पुत्र तथा पत्नी के उदरनिर्वाह का कुछ भी विचार न करते हुए, विश्वामित्र तपश्चर्या करने के लिये चला गया । काफी असें तक इसकी पत्नी ने कुछ उपाययोजना कर के मुश्किल से बच्चों को जिलाया । एक बार उदरनिर्वाह के लिये कुछ भी प्राप्त न हुआ । बच्चे भूख से तिलमिला कर रोने लगे । मजबूर हो कर, इस पुत्र के गले को दम्बरज्जू से बाँध कर वह इसे बँचने के लिये जाने लगी । इतने में राह में सूर्यवंशीय इक्ष्वाकुकुलोत्पन्न सत्यव्रत राजा उससे मिला । उसके द्वारा पूछे जाने पर उसने संपूर्ण हकीकत बताई । तब सत्यव्रत ने कहा, “ विश्वामित्र के आने तक रोज थोड़ा माँस मैं तुम्हें दूँगा । उस पर अपना निर्वाह करो ” । तब पुत्र को

बँचने का विचार रहित कर के, वह स्वग्रह लौट आई । तबसे उसके इस पुत्र का नाम गालव प्रचलित हुआ (ह. वं. १.१२; वायु. ८९.८३-९२; ब्रह्म. ७.१०२-१०९; म. अनु. ७.५२ कुं. ब्रह्मांड. ३.६३.८६-८९; ६६.७२) ।

४. कुंतल राजा का पुरोहित । अरिष्टाध्याय मुना कर इसने राजा को बताया, ‘ जल्द ही तुम्हारी मृत्यु का योग है ’ । अतः राजकन्या चंपकमालिनी का चन्द्रहास से विवाह करने की संमति राजा ने दी (जै. अ. ५१) ।

५. सावर्णि मन्वन्तर में होनेवाला सप्तपियों में से एक (मा. ८.१३.१५) ।

६. अंगिराकुल का एक गोत्रकार ।

७. एक व्याकरणकार (नि. ४.३; पा. शै. ६.३.६१; ७.१.७४; ३.९९; ८.४.६७) । यह, राजा ब्रह्मदत्त का मित्र था । यह बड़ा योगाचार्य था । इसने क्रमाशिक्षा का प्रथम किया । लोगों में क्रमपाठ का प्रचार किया (ह. वं. १.२०.१३; २४.३२) । ब्राह्मव्य पांचाल (त्य) ने क्रमपाठ निर्माण किया । नंतर गालव ने शिक्षाग्रंथ का निर्माण किया, एवं क्रम का प्रचार किया (म. शां. ३३०. ३७-३८) ।

ब्राह्मव्य पांचाल तथा गालव भिन्न व्यक्ति है । ऋषप्राति-शाख्य तथा पाणिनि इन्हें अलग व्यक्ति मानते हैं । ब्रह्म-यज्ञांगतर्पण में गालव का नाम नहीं है किंतु ब्राह्मव्य का नाम मिलता है (आश्वलायनगृह्यसूत्र) । मत्स्य में सुत्रालंकार पाठ है । यह मंत्रिपुत्र कहा गया है (मत्स्य. २०.२४; ब्राह्मव्य पांचाल देखिये) ।

८. वायु के मतानुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा का याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये) ।

इसकी स्मृति का हेमाद्रि ने उल्लेख किया है ।

गालवि—अंगिराकुल का गोत्रकार । इसे गालविन् नामांतर है ।

गावल्याणि—संजय का पैतृक नाम (संजय ८. देखिये) ।

गिरिका—एक पर्वतकन्या । कोलाहल पर्वत को शुक्तिमती नदी से जुड़वाँ अपत्य हुए । उनमें से यह गिरिका नामक कन्या शुक्तिमती नदी ने उपरिचर वसु को दी । बाद में राजा ने इस के साथ विवाह किया । उससे इसे बृहद्रथ आदि छः पुत्र, तथा काली अथवा मत्स्यसंधिनी नामक कन्या हुई (म. आ. ५७) ।

गिरिक्षत्र—(सो. वृष्णि.) विष्णुमत में श्रफज्जपुत्र ।

गिरिक्षित्—दुर्गहपुत्र । इसका पुत्र पुरुकुत्स (ऋ. ४. ४२.८) । इसी कुल में त्रसदस्यु हुआ (ऋ. ५.३३.८)

गिरिकिन् औचामन्यव—एक ऋषि। इसका अभि-
प्रतारिन् काशसेनि के साथ गायत्रसाम के बारे में संवाद
हुआ था (पं. ब्रा. १०.५.७)।

गिरिज वाभ्रव्य—एक ऋषि। सब के यज्ञीय पशु के
अवयव सब ऋषिजों में किस प्रकार बाँट दिये जावें,
इसकी जानकारी इसे एक संभव से मिली। वह इसने सब
को बताया (ऐ. ब्रा. ७.१)।

इसके पहले यह जानकारी देवभाग को थी, परंतु
मृत्यु तक वह उसने किसी को न बताया।

गिरिश—ऋषभ नामक शिवावतार का शिष्य।

गिरिशर्मन्—शेषावतार देवदत्त का पुत्र। इसने बड़े
बड़े विद्वानों को जीता था। अंत में यह शंकर का परम-
भक्त हुआ (भवि. प्रति. ४.११)।

गिरिशर्मन् काठेविद्धि—ब्रह्मवृद्धि का शिष्य (वं.
ब्रा. १)।

गीतविद्याधर—एक प्रसिद्ध गंधर्व। पुलस्त्य को
इसके गायन से तकलीफ होने लगी। सूअर का स्त्राँग ले
कर इसने उसे और भी तंग किया। इसलिये शाप से
उसने इसे सूअर बना दिया। उःशाप मँगाने पर, इश्वराकृ के
द्वारा मारे जाने पर पूर्ववत् बनोगे, ऐसा उःशाप दिया।
अंतर्त यह पूर्ववत् हुआ (पद्म. स. ४६)।

गुंगु—एक देश और लोग। ऋग्वेद में ये अतिथिग्व
के मित्र बन कर आये हैं (ऋ. १०.४८.८)।

गुणकेशी—इंद्रसारथि मातलि तथा उसकी पत्नी
सुषमा की कन्या। हूँदने पर भी इसके लिये योग्य बर
नहीं मिला। अंत में नामलोक के चिकुरनाग के सुमुख
नामक पुत्र को इसने पसंद किया। उसका गरुड से वैर
था। मातलि सुमुख को इंद्र के पास ले गया। वहाँ उसे
अमृत पिला कर अमरत्व प्रदान किया। विष्णु ने गरुड को
समझा कर उनका वैरभाव नष्ट किया, तथा सुमुख से
गुणकेशी का विवाह करवाया (म. उ. ९५.१०३)।

गुणनिधि—श्रोत्रिय यज्ञदत्त का पुत्र। यह अत्यंत
दुर्गुणी तथा व्यसनी था। शिवपूजा देखने के कारण, तथा
शिवशीप की बाती प्रचलित करने के कारण, यह मुक्त
हुआ (शिव. रुद्र. स. १८)। तदनंतर कुवेर ने इसे
उत्तर दिशा का अधिपति नियुक्त किया (स्कंद. ४. १.
१३)।

गुणवती—सत्राजित् देखिये।

गुणाकर—प्रक्षत्रीय का राजा। इसकी पत्नी सुशीला।
इसकी कन्या सुलोचना (पद्म. क्रि. ५)।

२. पुलह तथा श्वेता का पुत्र।

गुप्त—वैपश्चित दाहजयति गुप्त लौहित्य यह इसका पूरा
नाम है (जै. उ. ब्रा. ३.४२)। गुप्त इसका सही नाम
है। ऋषी तीनों वैतृक नाम हैं।

गुप्तक—पांडवों के समकालीन सिंधु देश का राजा।

गुरु—बृहस्पति का नामांतर। मरौचि प्रजापति की
सुरूपा नामक पुत्री तथा अंगिरस की स्त्री। देवाचार्य
बृहस्पति उसका पुत्र था। इसे ही गुरु कहते थे। यह
महाब्रह्मिमान् तथा वेदवेदाङ्गपारंगत था (विष्णुधर्म. १.
१०६; बृहस्पति देखिये)।

२. (सो. पुरुरवस्.) भागवत मतानुसार संकृतिपुत्र।
मत्स्य में इसे गुरुधि, विष्णु में रुचिरधि तथा वायु में
गुरुवीर्य कहा गया है। गुरुवीत तथा गौरवीति यही रहा
होगा। अंगिराकुल का भोजकार भी यही होगा (सांस्कृति
देखिये)।

३. भौत्य मनु का पुत्र।

गुरुक्षेप—(सू. इ. भविष्य.) विष्णुमत में बृहत्क्षणपुत्र।

गुरुधि—(सो. पुरुरवस्.) मत्स्य मतानुसार संकृति-
पौत्र तथा महायज्ञस् का पुत्र (गुरु २. देखिये)।

गुरुभार—गरुडपुत्र।

गुरुवीत—अंगिराकुल का मंत्रकार (गुरु २. देखिये)।

गुरुवीर्य—(सो. पुरुरवस्.) वायु के मत में सांस्कृति-
पुत्र (गुरु २. देखिये)।

गुरुक्ष—बलि दैत्यों के औ पुत्रों में से एक।

गुह—कार्तिकेय का नाम (भा. ३.१.२२)।

२. शृंगवेर नामक नगरी का किराताधिपति। यह दशरथ
का परममित्र था। राम अयोध्या से निकल कर दंडकारण्य
जा रहा था, तब एक रात गुह के घर रहा था। उस
समय गुह ने उसका अच्छा आदरातिथ्य किया। राम के
बनवास के बारह वर्ष वहीं व्यतीत हो, ऐसी प्रार्थना गुह
ने राम से की। गुह द्वारा लये गये फलादिकों को स्पर्श
कर, राम ने दशायो कि, वह पराजग्रहण नहीं करता।
राम ने वहाँ रहना भी अमान्य कर दिया। उस दिन, राम
तथा सीता दर्भ बिछा कर सोये, तथा गुह राम की रक्षा के
लिये खड़ा रहा। उस समय राम के विचित्र प्रारब्ध के
बारे में इसके मन में विचार आ रहे थे। इस विषय पर
इसका लक्ष्मण से संभाषण भी हुआ (वा. रा. अयो.
५०.५१)। दूसरे दिन गुह ने राम की आज्ञानुसार गंगा के
दक्षिण तीर पर उन्हें पहुँचा दिया (वा. रा. अयो. ५२)।

राम चित्रकूटपर्वत पर था। भरत बड़ी सेना के साथ उसे वापस लाने के लिये गया। उस समय भरत रामनाशार्थ जा रहा है, इस संदेहवश इसने अपनी सेना सज की। भरत का सत्य हेतु ज्ञात होते ही, इसने उसे ससैन्य गंगापार पहुँचाया। भरत के साथ यह स्वयं चित्रकूट तक गया था (वा. रा. अयो. ८४-८७)।

गृहवासिन्—बाराहकल्प के वैवस्वत् मन्वन्तर के सत्रहवें चौकड़ी का यह शंकरावतार है। इसका स्थल हिमालय का महोत्तुंगक्षेत्र है। इसके निम्नलिखित चार पुत्र थे:—उतथ्य, वामदेव, महायोग तथा महाबल (शिव. शत. ५)।

गृत्स—एक महासुर। इसने अपने मित्र भृगु के पत्नी का अपहरण किया। उसने इसे शाप दिया। शाप के कारण यह अलर्क नाम का कृमि बन गया। यह कृमि अष्टपद, तीक्ष्णदंष्ट्र तथा सूचिसमान तीक्ष्णकेशयुक्त था। कर्ण के अंक पर परशुराम निद्रित था। उस समय, इस कृमि ने कर्ण की जाँघ में छेद किया। जाँघ से निकले रक्त के स्पर्श से, परशुराम की नींद खुल गयी। परशुराम के दर्शन से अलर्क शापमुक्त हो गया। (म. शां. ३.१२-२३)।

गृत्समद—यह एक व्यक्ति का तथा कुल का भी नाम है। यह अंगिरस् कुल के शुनहोत्र का पुत्र है (सर्वानुक्रमणी देखिये)। यह बाद में भार्गव हो गया।

गृत्समद शब्द की व्युत्पत्ति, ऐतरेय आरण्यक में आयी है। गृत्स का अर्थ है प्राण, तथा मद का अर्थ है अपान। इसमें प्राणापानों का समुच्चय था, इसलिये इसे गृत्समद कहते हैं (ऐ. आ. २.२.१)।

यह तथा इसके कुल के व्यक्ति, ऋग्वेद के दूसरे मंडल के द्रष्टाएँ हैं (ऐ. ब्रा. ५.२.४; ऐ. आ. २.२.१; सर्वानुक्रमणी देखिये)।

एक बार तपप्रभाव से इसे इंद्र का स्वरूप प्राप्त हुआ। इस बारे में तीन आख्यायिकाएँ प्रसिद्ध हैं। (१) धुनि तथा चुमुरि ने इसे इंद्र समझ कर बेर लिया। 'मैं इंद्र नहीं हूँ,' यह बताने के लिये इसने इंद्र का उत्कृष्ट वर्णन करनेवाला 'स जनास इंद्रः' (ऋ. २.१२), यह टेकयुक्त सूक्त कहना प्रारंभ किया। (२) इंद्रादिक देवता वैश्य के यज्ञ में गये। वहाँ गृत्समद भी था। देव इंद्र का वध करने के हेतु से वहाँ आये। इंद्र गृत्समद का रूप ले कर भाग गया। असुरों ने गृत्समद को बेरा। उस समय एक सू. १ से इनने इंद्र का उत्कृष्ट वर्णन किया (ऋ. २.

१२)। (३) गृत्समद के घर में अकेले आये इंद्र को देख कर शत्रुओं ने बेरा। तब इंद्र गृत्समद का रूप ले कर भाग गया। घर के गृत्समद को उन्होंने इंद्र समझ कर पकड़ लिया। तब इसने यह सूक्त कह कर इंद्र का वर्णन किया (ऋ. २.१२)।

ऋग्वेद के दूसरे मंडल में गृत्समद का बार बार उल्लेख आता है (ऋ. २.४.९; १९.८ इ.)। इसमें शुनहोत्र भी कहा है (ऋ. २.१८.६; ४१.१४; १७)। ऋग्वेद के दूसरे मंडल की ऋचाओं का उल्लेख गार्त्समद ऋचा के नाम से प्राप्य है (सां. आ. २.२.४; २८.२)।

यह भृगुकुल का गोत्रकार, प्रवर तथा मंत्रकार है। गृत्समद भार्गव शौनक ऋग्वेद का सूक्तद्रष्टा है (ऋ. २.१-३; ८-४३; ९.८६; ४६-४८)। एक बार चाक्षुष मनु का पुत्र वरिष्ठ इंद्र के सहस्रवार्षिक सत्र में आया। साम अशुद्ध गाने के लिये इसे दोष दे कर, रक्ष अरण्य में कूर पशु बनने का शाप वरिष्ठ में इसे दिया। परंतु शंकर की कृपा से यह मुक्त हुआ (म. अनु. १८.२०-२८)।

गृत्समद का भृगुवंश में उल्लेख है (मत्स्य. १९५.४४-४५)। गृत्समद का पैतृक नाम शौनक है। यह शुनहोत्र का औरस पुत्र तथा शुनक का दत्तक पुत्र था। अंतः प्रथम यह आंगिरस कुल में था, एवं बाद में भृगुकुल में गया (ऋष्यनुक्रमणी ३)।

२. एक ऋषि। भृगु के कहने पर ब्राह्मण बने वीतहव्य का पुत्र। इसका पुत्र सुचेतस।

३. दंडकारण्य में रहनेवाला एक ऋषि। इसके सौ पुत्र थे (अ. रा. ८)।

४. (सौ. क्षत्र.) वायु तथा विष्णु मतानुसार सुनहोत्रपुत्र। आयुकुल के सुहोत्र वा सुतहोत्र राजा के तीन पुत्रों में कनिष्ठ। इसे शुनक नामक पुत्र था (ब्रह्माण्ड. ११.३२.३४; ह. वं. १.२९.६७)।

५. भीष्म शरपंजर में पड़े थे, तब उनके पास आया हुआ एक ऋषि (भा. १.९.७)।

६. इंद्र का मुकुंदा से उत्पन्न पुत्र। एक बार रुक्मांगद बाहर गया था, तब उसकी पत्नी मुकुंदा काममोहित हुई। इंद्र ने रुक्मांगद का रूप ले उससे संभोग किया। उसे गर्म रहा तथा पुत्र उत्पन्न हुआ। यही गृत्समद था। आगे चल कर, यह बड़ा विद्वान् हुआ। यह वादविवाद में किसी से पराजित नहीं होता था। एक बार मगध देश के राजा के घर, वसिष्ठादि मुनि श्राद्ध के लिये एकत्रित हुए। तब अत्रि ने तुम पंक्तिपावन नहीं हो, कह कर इसका उपहास किया।

माता के पास आ कर, इससे पूछताछ की। तब मुकुंदा ने इसका जन्मवृत्त का इसे कथन किया। इसने मुकुंदा को शाप दिया 'तुम कंटकवृक्ष बनोगी'। उसने भी उल्टा शाप दिया 'तुम्हें दैत्य पुत्र होगा' बाद में 'गणानां त्वा' मंत्र का अनुष्ठान कर के, इसने गणपति को प्रसन्न कर ब्राह्मण्य भी प्राप्त किया (गणेश. १.३७)।

गृध्र—कृष्ण को मित्रविंदा से उत्पन्न पुत्र (भा. १०. ६१.१६)।

गृध्रिका—कश्यप तथा ताम्रा की कन्या।

२. अरुण की पत्नी। उसके पुत्र संपाति तथा जटायु ब्रह्माण्ड. ३. ७. ४४६)।

गृहपति—एक ऋषि। नर्मदा के किनारे नर्मपुर में विश्वानर नामक एक मुनि ब्रह्मचर्य से वेदाध्ययन कर के रहता था। गोत्र शांडिल्य। पत्नी का नाम शुचिष्मती। यह अत्यंत आचारशील था। इसे पुत्र न था। स्त्री की इच्छानुसार इसने काशी जा कर वीरेश्वर के पास कड़ी तपश्चर्या की। एक दिन इसे ईश्वर का प्रत्यक्ष दर्शन हुआ। अभिलाषाएक कहने पर, 'जल्द ही पुत्र होगा'; ऐसा वर इसे प्राप्त हुआ। बाद में इसे गृहपति नामक पुत्र हुआ। गृहपति से नवम वर्ष चाटू था, नारद ने आ कर बताया कि इसे बारहवें मास में विद्युत् अथवा अग्नि से भय है। इसने तप कर के शंकर को प्रसन्न किया। शंकर ने इसे अग्नि यह उपाधि दी। इसके द्वारा काशी में स्थापित लिंग को अग्नीश्वर नाम है (शिव. शत. १५)।

२. अग्नि गृहपति सहरपुत्र देखिये।

गृहेषु—धर्मसावर्णि मनु का पुत्र।

गैरिक्षित—असदस्यु तथा यास्क का पैतृक नाम।

गौ—मानस नामक पितरों की कन्या।

२. (सो. पू.) ब्रह्मदत्त राजा की भार्या तथा देवल ऋषि की कन्या। इसे सरस्वती अथवा सन्नति भी कहते हैं।

३. शमीक ऋषि की भार्या। इसका पुत्र शंभुर्गिन् ऋषि।

४. वरुण का सेनापति (वा. रा. उ. २३)।

५. इसे गौ नामांतर प्राप्त है। विधिमानसपुत्र पुलस्त्य ऋषि से इसे वैश्रवण नामक सान्धर्वसंपन्न पुत्र हुआ (म. व. २५८.१२)।

६. शुक्र की पत्नी।

७. यति देखिये।

गो आंगिरस—एक सान्द्रष्टा (पं. ब्रा. १६.७.७; ल. श्रौ. ६.११.३)।

प्रा. च. २५।

गोकर्ण—एक शिवावतार। सातवें वाराहकल्प के वैवस्वत मन्वन्तर के सोलहवें चौखट में गोकर्ण नामक शिवावतार हुआ। जिस वन में यह निवास करता था, इसका नाम भी गोकर्ण ही गया। इसके चार पुत्र थे:—कश्यप, उशनस्, च्यवन एवं बृहस्पति (शिव. शत. ५)।

२. आत्मदेव देखिये।

गोखल—विष्णुमतानुसार व्यास की ऋक् शिष्य परंपरा के वेदमित्र का, एवं भागवत, वायु तथा ब्रह्मांड मतानुसार देवमित्र का शिष्य। भागवत में गोखल्य पाठ है।

गोखल्य—शाकल्य ऋषि का शिष्य। उसने इससे ऋग्वेद की एक शाखा का अध्ययन करवाया (भा. १२. ६.५७; गोखल देखिये)।

गोणायनि—गोपीपति का पाठभेद।

गोपीपति—अंगिराकुल का गोत्रकार।

२. अत्रिकुल का गोत्रकार।

गोतम—कश्यपकुलोत्पन्न एक ऋषि (भवि. प्रति. ४.२१)।

२. व्यास देखिये।

गोतम राहूगण—एक ऋषि। ऋग्वेद में इसके बहुत सूक्त हैं (ऋ. १.७४-९३; ९.३१; ६७.७-९, १०. १३७.३)। इसका अनेक स्थानों पर उल्लेख है (ऋ. १.६२.१३; ७८.२; २; ५)। अंगिरस् से इसका वार वार संबंध आता है (ऋ. १.६२.१; ७१.२)। इसका राहूगण यह पैतृक नाम ऋग्वेद एवं अन्यत्र भी मिलता है (ऋ. १.७८.५; श. ब्रा. १.४.१.१०; ११.४.३.२०)। यह माथव विदेह का पुरोहित था (श. ब्रा. १.४.१.१०)। वैदेह जनक तथा याज्ञवल्क्य का यह समकालीन था। एक स्तोम का यह कर्ता है (श. ब्रा. १३.५.१.१; आश्व. श्रौ. ९.५.६)। अन्यत्र भी इसका उल्लेख है (अ. वे. ४. २९.६; १८.३.१६; बृ. उ. २.२.६)। इसे वामदेव तथा नोधस् नामक दो पुत्र थे (आश्व. श्रौ. १२.१०)।

इसका भद्र नामक एक साम है। इस साम के फलस्वरूप गौतम को श्रेष्ठपद प्राप्त हुआ। इसी कारण, इसके पहले के तथा बाद के लोग गौतम नाम से प्रसिद्ध हुए (पं. ब्रा. १३.१२.६-८)। इसका गौतम नामक भी एक साम है (पं. ब्रा. १२.३.१४)।

गोतमीपुत्र—मारदाजीपुत्र का शिष्य (बृ. उ. ६.५.१)।

गोत्रवत्—कृष्ण एवं लक्ष्मणा का पुत्र।

गोधा—मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१३४.६-७)।

गोनर्द—काश्मीर का नृप। यह जरासंध का सहायक था (ह. वं. २.३५.३९)।

गोपति—कश्यप एवं प्राधा का पुत्र।

२. पांडवपक्षीय पांचाल राजा (म. द्रो. २२.४३)।

३. शिविपुत्र। गायों ने इसकी रक्षा की थी। पृथ्वी ने कश्यप से याचना की, 'यह मेरे संरक्षकों में से एक होवे'। तदनुसार कश्यप ने इसका अभिषेक किया (म. शां. ४९.७०)।

४. एक राक्षस। कृष्ण ने द्रावती के तट पर इसका वध किया (म. व. १३.३०)।

५. विश्वसुज्ज नामक असि का नामान्तर। इसकी स्त्री नदी (म. व. २०९.१९-२७)।

गोपद—तुपित देवों में से एक।

गोपन—अत्रिकुल का गोत्रकार।

गोपवन आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.७३-७४)। ऋग्वेद में इसका उल्लेख है। अंगिरस से इसका प्रत्यक्ष संबंध दिखता है (ऋ. ८.७४.११)। पौतिमाप्य देखिये।

गोपायन—गौपायन का पाठभेद।

गोपालि—गौरपराशरकुल में से एक।

गोपाली—एक ग्वालन। इसको गार्ग्य से हुआ पुत्र काल्यवन नाम से प्रसिद्ध है (काल्यवन देखिये)।

गोवल चार्ण—एक आचार्य। (तै. सं. ३.११.९.३; जै. उ. ब्रा. १.६.१)। इसने नक्षिकेतामि के लिये पाँच दिशाओं में पाँच पाँच ईंटें रखीं, जिनसे इसे पशु प्राप्त हुए (तै. ब्रा. ३.११.९३)।

गोभानु—(सो. तुर्वसु.) विष्णु तथा वायु मतानुसार बह्निपुत्र। मत्स्य मतानुसार गर्भपुत्र।

गोभिल—वत्समित्र का शिष्य (वं. ब्रा. ३)। यह कुलनाम अनेक लोगों के लिये प्रयुक्त होता है (पूपमित्र, अश्वमित्र, वरुणमित्र, मूलमित्र, वत्समित्र, गौलुलवीपुत्र तथा बृहद्रसु देखिये)। यह कश्यप कुल का एक गोत्रकार था। गोभिलगृह्यसूत्र, गोभिलगृह्यकारिका, गोभिलपरिशिष्ट आदि इसके द्वारा रचित ग्रंथ हैं (C. C.)। इनमें से गोभिल-गृह्यसूत्र प्रकाशित हुआ है। यह सामवेद का है। गोभिल-स्मृति आनंदाश्रम में छपवायी गई है। उसमें तीन प्रपाठक हैं। इस ग्रंथ का आरंभ एवं अंत पढ़ने से लगता है कि, उसका नाम कर्मप्रदीप रहा होगा। उसमें श्राद्धकर्मादि लक्षणों, नित्यकर्म, संस्कार आदि का निरूपण है। यह स्मृति गोभिलगृह्यसूत्र के स्पष्टीकरणार्थ रची गयी। हेमाद्रि ने गोभिल को राणायनीय तथा कौथुमशाखा का सूत्रकार

माना है (द्राह्यायण देखिये)। गोभिलसूत्र तथा वादिर-सूत्र में पर्याप्त साम्य है।

२. कुबेर का दूत। विदर्भ देश के राजा सत्यकेतु की कन्या तथा उग्रसेन की स्त्री पद्मावती, एक दिन जलक्रीडा कर रही थी। कुबेर का गोभिल नामक दूत आकाशमार्ग से जा रहा था। यह पद्मावती का सौंदर्य देख कर मोहित हुआ। उसे अंतर्ज्ञान से पहचान कर, उसकी प्राप्ति के लिये इसने उग्रसेन का रूप धारण किया। पाप ही एक वृक्ष के नीचे गाते हुए यह जा बैठा। इसने मोहित हो कर वह फँस गयी (पद्म. भू. ४९)।

गोम—शंभु का पुत्र।

गोमत्—कश्यप तथा सुनि का गंधर्वपुत्र।

गोमतीपुत्र—(आंध्र. भविष्य.) भागवत तथा विष्णु मतानुसार शिवस्वाति का पुत्र।

गोमयान—कश्यप कुल का गोत्रकार। निधुव वंश-मालिका में से यह एक था।

गोमुख—मातलि का पुत्र। इंद्रपुत्र जयंत का यह सारथी था (म. उ. ९८.१८)।

गोमेदगांधिक—अंगिराकुल का गोत्रकार।

गोरथ—वसिष्ठकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

गोलभ—एक गंधर्व। बालि से इसका लगतार बंदह वर्षों तक युद्ध चलता रहा। अंत में, बालि ने इसका वध किया (वा. रा. कि. २२.२७-३७)।

गोवासन—एक ऋषि। यह वैश्व नाम से प्रसिद्ध है। भारतीययुद्ध में यह कौरवों के पक्ष में था (म. द्रो. ७०.३८)। इसने एक हजार सैनिकों के समवेत, विजयी काशिराजपुत्रों का विरोध किया।

गोवृषध्वज—कृपाचार्य का नामान्तर (म. द्रो. ८०.१४)।

गोशर्य—एक ऋषि। यह अश्वियों का कृपापात्र है (ऋ. ८.८.२०)। यहाँ इसे सायण ने गोशर्य शत्रु कहा है। पक्थ, कथ तथा वसदस्यु के साथ साथ इसका उल्लेख आया है (ऋ. ८.४९.१०; ५०.१०)।

गोश्रु जावाल—एक यजुर्कर्ता। सुदक्षिण क्षेत्रि, प्राचीन-शालि तथा शुक्र जावाल, ये सब इसके समकालीन थे (जै. उ. ब्रा. ३.७.७)।

गोश्रुति वैयाघ्रपद्य—एक ऋषि। सत्यकाम जावाल ने इसे वाणी, श्रोत्र, मन तथा प्राण का महत्त्व तरतमभाव से बताया। प्राणों का महत्त्व कथन-किया। आग्नि चर

कर, महत्वप्राप्ति के हेतु से एक व्रत भी निवेदित किया (छं. उ. ५.२.३)।

गोश्रुतिन काण्वायन—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१४-१५)। इसके नाम से एक गोश्रुति-साम प्रसिद्ध है (पं. श्र. १९.४.९)। प्रतिग्रह के कारण इसे लगा हुआ दोष, इस साम से नष्ट हुआ (गौश्रुति देखिये)।

गोश्रुति—भृगुकुल का गोत्रकार।

गौडिनि—वसिष्ठकुल का गोत्रकार (गौडिलि देखिये)।

गौतम—एक ऋषि। अरुण, आग्निवेश्य, उद्दालक आशुनि, कुश्रि, मेधातिथि, साति तथा हारिद्रुमत, का यह पौत्रक नाम है।

प्राचीनयोग्य, शांडिल्य, आनभिम्बलात्, मार्ग्य, भारद्वाज, वास्य, मांदि, सैतव आदि गौतम के शिष्य थे।

यह दीर्घतमस् का पुत्र था। इसकी माता का नाम प्रद्वेषी (म. आ. ९८.१७; १०३७* स. ४.१५; ११.१५)। इसके पिता आंगिरसकुल के थे (म. अनु. १५.४.९)। वह बृहस्पति के शाप के कारण जन्माघ हुआ था (ऋ. १.१४७; म. आ. ९८.१५)।

कुछ स्थानों पर, दीर्घतमस् ने ही गौतम नाम धारण किया, ऐसा प्रतीत होता है (बृहदे. ३.१२३; म. शां. ३.४३; मत्स्य. ४८.५३-८४)। गौतम नाम से गौतम के पशु-तुल्य वर्तन का बोध होता है (वायु. ९९.४७-६१; ८८-९२; ब्रह्मांड. ३.७४.४७-६१; ९०-९४; मत्स्य. ४८.४३-५६; ७९-८४)। गौतम को औशीनरी नामक शूद्र स्त्री से कश्चीवत् आदि पुत्र हुए (दीर्घतमस् देखिये)।

गौतम वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तपिंयों में से एक था। ब्रह्मदेव की मानसकन्या अहल्या इसकी स्त्री थी (अहल्या देखिये)। जनक का पुरोहित शतानंद इसका पुत्र था (म. व. १८५)। इसका अंगिरस् से नदीमाहात्म्य के संबंध में संभाषण हुआ था (म. अनु. २५)। इसके नाम से गोदावरी का नाम गौतमी हुआ (दे. भा. ११.९)।

अन्न का अकाल पड़ने के कारण, वृषादिभि राजा दान कर रहा था। जिन सप्तपिंयों ने उसे दान लेना अमान्य कर दिया, उनमें से एक गौतम था (म. अनु. ९३)। गौतम को उत्कं नामक एक शिष्य था। उसे गौतम ने अपनी कन्या दी थी। उत्कं ने शौदास राजा के पास से कुंडल ला कर, गुरुपत्नी को गुस्सेक्षण में दी (म. आश्र. ५५-५६)।

गौतम का आश्रम पारियात्र पर्वत के पास था। इसने वहाँ साठ हजार वर्षों तक तप किया। तप स्वयं यम वहाँ

आया। उस समय गौतम ने उससे पूछा, 'पितरों का ऋण किस प्रकार चुकाया जावे'। यम ने कहा, 'सत्य, धर्म, तप तथा शुचिर्भूतता का अवलंब कर के मातापितरों का पूजन करना चाहिये। इससे स्वर्गादि की प्राप्ति होती है' (म. शां. १२७)। बारह वर्षों तक अकाल पड़ा। इसने भोजन दे कर ऋषियों को बचाया (नारद. २.७३)। यही वर्णन दे कर, शक्तिउपासना का महत्व बताया गया है (दे. भा. १२.९; शिव. कोटि. २५-२७)।

गौतम तथा भगीरथ ने तप कर के शंकर को प्रसन्न किया तथा गंगा मँगी। शंकर ने गौतम को गंगा दी। वही गौतमी के नाम से प्रसिद्ध हुई (पञ्च. उ. २६८. ५२-५४)। गौतमी—(गोदावरी) माहात्म्य विस्तृत रूप में उपलब्ध है (ब्रह्म. ७०-१७५)।

न्यायशास्त्र लिखने वाले गौतम का निर्देश प्राप्त है (शिव. उमा. २.४३-४७)। यह अंगिराकुल का एक ऋषि तथा प्रवर है। त्र्यंबकेश्वर का अवतार इसी के लिये हुआ था (शिव. शत. ४३)। वही ज्योतिर्लिङ्ग नासिक के पास त्र्यंबकेश्वर नाम से प्रसिद्ध है।

शाखाप्रवर्तक—यह व्यास की सामश्रिय परंपरा का हिरण्यनाम का शिष्य है (व्यास देखिये)। वायु तथा ब्रह्मांड के मतानुसार यह सामवेद की राणायनि शाखा के नौ उपशाखाओं में से एक शाखा का आचार्य है (द्रा. श्रौ. १.४.१७)। गौतम का आचार्य रूप में उल्लेख है (ला. श्रौ. १.३.३; ४.१७)। उसी प्रकार सामवेद के गोभिल-गृह्यसूत्र में भी गौतम का उल्लेख अनेक बार आया है।

धर्मशास्त्रकार—गौतमस्मृति यह ग्रंथ गद्यमय है। उसमें ग्रंथकर्ता द्वारा किया हुआ अथवा बाहर से लिया गया एक भी पद्य श्लोक नहीं है। इस ग्रंथ के कुल अष्टाईस विभाग किये गये हैं। कलकत्ता प्रत में, एक विभाग अधिक है। परंतु हरदत्तद्वारा रचित मिताक्षरा में इस विभाग का बिल्कुल उल्लेख नहीं है। इससे प्रतीत होता है कि, यह भाग प्रक्षिप्त होगा। वैकटेश्वरभाट्टि कलकत्ताभाट्टि से ली गई है।

धर्मसूत्रकार—गौतमधर्मसूत्र में चातुर्वर्णियों के व्यवहार के नियम, उपनयनादि संस्कार, विवाह तथा उसके प्रकार, प्रायश्चित्त, राजधर्म, स्त्रियों के कर्तव्य, नियोग, महापातक तथा उपपातकों के लिये प्रायश्चित्त, कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र, आदि प्रकारों का विचार किया गया है। गौतमधर्मसूत्र में संहिता, ब्राह्मण, पुराण, वेदांग आदि के काफी उल्लेख आये हैं। गौतम ने तैत्तिरीय आरण्यक

के पञ्चीस उद्धरण तथा कई मत अपने ग्रंथ में लिये हैं।

गौतमधर्मसूत्र का उल्लेख सर्वप्रथम बौधायनधर्मसूत्र में प्राप्त है। उसी प्रकार वसिष्ठधर्मशास्त्र, अपराकं, तंत्र-वार्तिक, वेदांतों पर लिखा गया शांकरभाष्य आदि ग्रंथों में भी गौतमधर्मसूत्र के काफी उद्धरण लिये गये हैं। मनुस्मृति में गौतम का उतथ्यपुत्र के नाम से उल्लेख है (मनु. ३. १६)। भविष्यपुराण में भी, गौतम का सुरापाननिषेध के बारे में उल्लेख है। गौतमधर्मसूत्र का उल्लेख बौधायन, वसिष्ठ आदि धर्मशास्त्रकारों ने किया है। इससे प्रतीत होता है कि, यह वसिष्ठ तथा बौधायन के पूर्व का होगा। यवनों का उल्लेख भी आया है। यवन शब्द का अर्थ स्वयं गौतम ने दिया है, 'ब्राह्मण को शूद्रा से उत्पन्न संतति'। इसी अर्थ से यह शब्द गौतमधर्मसूत्र में आया है (४.१७)। इससे प्रतीत होता है कि, ब्राह्मण तथा शूद्र के मिश्रण से बनी यवनजाति भारत में ग्रीकों के आने के पहले भी थी। उसपर से गौतम का काल मिश्रित करना असंभव है। गौतमधर्मसूत्र पर हरदत्त ने मिताक्षरा नामक टीका तथा मस्करी तथा असाहाय ने भाष्य भी लिखे हैं। मिताक्षरा, स्मृतिचन्द्रिका आदि ग्रंथों में, श्लोकगौतम, अपराकं एवं दत्तकमीमांसा में बृहद्गौतम तथा बृहद्गौतम इन ग्रंथों का उल्लेख है। उसी प्रकार जीवानंद ने १७०० श्लोकों की गौतमस्मृति छपवाई है। यह स्मृति कृष्ण ने युधिष्ठिर को, चातुर्वर्ण्य के धर्मकथन करने के लिये बताई, ऐसा उस स्मृति में उल्लेख है। परंतु वह स्मृति महाभारत के आश्वमेधिकपर्व से ली गई होगी। क्योंकि, पराशर-माधवीय में तथा अन्य कई ग्रंथों में, इस स्मृति के श्लोक आश्वमेधिकपर्व से लिये गये हैं। आह्निकसूत्र, पितृमेध-सूत्र तथा दानचंद्रिका के अतिरिक्त न्यायसूत्र, गौतमी-शिक्षा आदि गौतम के ग्रंथ हैं।

२. एकत, द्वित तथा त्रित का पिता (म. श. ३५.९; त्रित देखिये)।

३. इसे चिरकारिन् नामक पुत्र था। इसने उसे पापकर्मी माता का वध करने के लिये कहा। परंतु चिरकारिन् के दीर्घसूत्री आचरण के कारण, वह काम नहीं हो सका (म. शां. २५८. ७-८)।

४. पूषन् नामक सूर्य के साथ घूमनेवाला एक ऋषि (भा. १२. ११. ३९)।

५. मध्यदेश में रहनेवाला एक ब्राह्मण। इसे विल्कुल वेदज्ञान नहीं था। एक गांव में, एक अमीर शूद्र के पास यह गया। उसने इसे एक विधवा स्त्री दी। उसके साथ

यह कालक्रमण कर रहा था। इसका एक मित्र इसके पास आया तथा उसने इसे दुराचरण से परावृत्त किया।

गौतम वहाँ से निकला। राह में यह नाडिंजंघ नामक कश्यपपुत्र के पास आया। वह राजधर्मन् के नाम से प्रसिद्ध था। गौतम का यथोचित सत्कार कर के, अपने राजा विरुपाक्ष के पास, वह इसे ले गया। राजा के द्वारा पूछे जाने पर इसने सत्र हकीकत बताई। राजा के घर इसे ब्राह्मणोंसह उत्तम भोजन तथा अच्छी दक्षिणा मिली। संपत्ति का भार सिर पर ले कर यह एक वटवृक्ष के नीचे बैठा। वहाँ बैठे बैठे, राजधर्मन् का वध करने का विचार इसके मन में आया। इस विचार के अनुसार, वध कर के, उसे जला कर उसकी संपत्ति ले कर यह रवाना हुआ। परंतु जल्द ही विरुपाक्ष ने इसे राक्षसोंद्वारा पकड़ लाया तथा इसके टुकड़े टुकड़े करके शवों को खाने के लिये दिये। यह कृतघ्न होने के कारण, किसी शूद्र-ने इसे नहीं खाया। बाद में राजधर्मन् जीवित होने के बाद, उसने गौतम को जीवित किया, तथा द्रव्य दे कर घर पहुँचाया। गौतम ने शूद्र स्त्री के द्वारा, पापकर्म करनेवाले अनेक पुत्र निर्माण किये। तब देवताओं ने इसे शाप दिया, 'यह दुष्ट विधवा स्त्री के द्वारा प्रजोत्पादन कर के नरक में जावेगा' (म. शां. १६२-१६७)।

६. अत्रिकुल का एक ब्रह्मर्षि। वैश्य ऋषि को विधातं कहने पर इसने अत्रि से स्पष्टीकरण माँगा था (म. व. १८३)। सत्यवत् जीवित है, ऐसा श्रुत कर इसने युमत्सेन को धीरज बंधाया था (म. व. २८२-२३)।

७. ब्रह्मदेव ने यज्ञ के लिये, इस नामका ऋषिज निर्माण कर के, गया में यज्ञ किया (वायु. १०६. ३८)।

८. दारुक नामक शिवावतार का शिष्य (नोषस् वामदेव देखिये)।

गौतम आंध्र—(आंध्र. भविष्य.) वायुमतानुसार शिवस्वामिन् का पुत्र।

गौतम आरुणि—एक ऋषि। इससे चैकितानेय वसिष्ठ का ब्रह्मज्ञान के संबंध में संवाद हुआ था (जै. उ. ब्रा. १.४२.१)।

गौतम कूष्मांड—कशीवत् की संतान के लिये सामान्य नाम (ब्रह्मांड. ३.७४.९९)। कूष्मांड के लिये वायु में कृष्णांग पाटभेद्र है (वायु. ९९.९७)। शहस्थों के नियतर्षण में, देवता की तरह कूष्मांड का समावेश है (विष्णु. ३.११.३२; ५.३०.११)।

गौतम व्यास—यह वैश्वदेव मन्वन्तर में हुआ (व्यास देखिये)।

गौतमी—अश्वत्थामन् की माता (भा. १.७.४७)।

२. एक बृद्ध ब्राह्मण स्त्री (अर्जुनक देखिये)। इसने अपने पुत्र को मारनेवाले सर्प को 'भूतदया' के कारण छोड़ दिया।

गौतमीपुत्र—भारद्वाजीपुत्र का शिष्य। कात्यायनी-पुत्र तथा आत्रेयीपुत्र इसके शिष्य थे (बृ. उ. ३.५.१-२ काण्व.)।

२. वात्सीपुत्र का शिष्य। इसका शिष्य आत्रेयीपुत्र (बृ. उ. ६.४.३१. माण्ड्य.)।

गौतमीपुत्र आंध्र—(आंध्र. भविष्य.) मत्स्यमता-नुसार शिवस्वाति का पुत्र।

गौपवन—गौपवन का वंशज। यह पौलिमाष्य एवं कौशिक का शिष्य था (बृ. उ. २.६.१; ४.६.१)।

गौपायन—वसिष्ठकुल का गोत्रकार। पाठभेद-गोपायन

२. सुबंधु आदि भाई गौपायन के वंश के थे। क्षमाति ऐश्वार्क के ये पुरोहित थे। इन्हें छोड़ कर राजा ने दूसरे पुरोहित बुलाये, तब ये राजा पर मंत्रतंत्र छोड़ने लगे। इसीसे क्रुद्ध हो कर आये हुए पुरोहितों ने इनका वध किया (ऋ. सायणभाष्य. १०.५७; बृहदे. ७.८३; पं. ब्रा. १३.१२.५; जै. ब्रा. ३.१६७)।

गौपालायन—शुचिबृक्ष का पैतृक नाम (औपोदिति देखिये)।

गौपालेय—उपोदिति का पैतृक नाम।

गौर—शुक एवं पीवरी का पुत्र।

२. विकुंड देवों में से एक।

गौरग्रीव—अत्रिकुल का गोत्रकार।

गौरजिन—अत्रिकुल का गोत्रकार।

गौरपराशर—एक ऋषि। इसके कुल में कांड्वष्य, बाहनप, जैह्नप, भौमतापन तथा गोपालि ये प्रसिद्ध ऋषि हुए।

गौरपुष्ट—एक क्षत्रिय। यम की सभा में इसकी उपस्थिति का उल्लेख मिलता है (म. स. ८.१९)।

गौरप्रभ—शुक एवं पीवरी का पुत्र।

गौरमुख—उग्रसेन का उपाध्याय। सांघ से, इसका संप्रविषयक संवाद हुआ था (भवि. ब्राह्म. १३९)।

२. शमीक ऋषि का शिष्य। इसने सुरु की आज्ञा पा कर परीक्षित राजा को उसकी मृत्यु निवेदित की (म. आ. ३८.१४-१९)।

३. एक राजा। इसने चिंतामणि मणि की सहायता से सुप्रतीकपुत्र दुर्जय को ससैन्य भोज दिया। इसका वैभव देख कर मोहित हुए दुर्जय ने, उस मणि की इससे याचना की। गौरमुख के न देनेपर उसने इससे युद्ध किया। इसी कारण दुर्जय का संपूर्ण नाश हुआ (बराह. ११-१५)।

गौरवाहन—पांडवों का समकालीन एक राजा (म. स. ३१.१५)।

गौरवीति—अंगिराकुल का गोत्रकार तथा प्रवर।

गौरवीति शाक्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२९; ९.१०८. १; २; १०. ७३; ७४; ऐ. ब्रा. ३.१९; ८.२)।

विभिदुकी के किये गये सत्र में यह प्रस्तोतु था (जै. ब्रा. २.२३३)। यह शांति का पुत्र था, ऐसा कहा गया है। इससे पता चलता है कि, यह तथा पराशर एक ही व्यक्ति रहे होंगे। गौरवीति शाक्य का एक साम गौरवित नाम से प्रसिद्ध है (तां. ब्रा. ११.५.१३-१५)। ऋषभ याज्ञतुर का यह पुरोहित था (श. ब्रा. १२.८.३.७)। ऋषभ याज्ञतुर की माथा गौरीवीति शाक्य ने की होगी (श. ब्रा. १३. ५.४-१५)। इसका गौरीविति ऐसा भी पाठ है (तां. ब्रा. ११.५; १२.१३; २५.७; श. ब्रा. १२.८.३.७)।

गौरशिरस्—एक ऋषि (म. स. ७.९)।

गौराश्व—एक क्षत्रिय। यमसभा में उपस्थित (म. स. ८.१७)।

गौरिक—(सू. इ.) वायुमतानुसार युवनाश्वपुत्र। मांधातृ का मूल नाम।

गौरी—मत्स्यमतानुसार अंतिनार की कन्या। मांधातृ की माता (युवनाश्व तथा प्रसेनजित् देखिये)।

२. (सुदेव ९. देखिये)।

गौरीविति शाक्य—गौरवीति देखिये।

गौरुडि—एक ऋषि। उपाकर्मोगतर्पण में इसका संग्रह है (जैमिनि देखिये)।

गौरुलवि—एक ऋषि। उपाकर्मोगतर्पण में इसका संग्रह है (जैमिनि देखिये)।

गौलुवीपुत्र गौभिल—एक ऋषि। इसका पिता बृहद्रसु। पिता के पास इसने सामवेद का अध्ययन किया (वं. ब्रा. ३)।

गौश्र—गुश्री का वंशज। इसे मधुक नामक एक ऋषि ने 'सोमवह्नी की देवता कौन है?' ऐसा प्रश्न पूछा था (सां. ब्रा. १६.९; २३.५)।

गौश्रायणि—एक आचार्य। चित्र का पैतृक नाम। जावालसत्र में यह पुरोहित था (सां. ब्रा. २३.५)।

गौड़ल—यज्ञ में शस्त्रकथन का बुलिल आश्वतर का सांप्रदाय इसने अनुचित सिद्ध किया। वहाँ अपनी पद्धति से शस्त्रकथन करवाया (ऐ. ब्रा. ६. ३०; गो. ब्रा. २. ६. ९)।

गौपूक्ति—इष स्यावाश्वि के शिष्य का नाम (जै. उ. ब्रा. ४. १६. १; पं. ब्रा. १९. ४. ९; गोपूक्तिन् काण्वायन देखिये)।

ग्रंथिक—पांडव द्रौपदी सहित अज्ञातवास में थे, तब नकुल ने (विराट के घर) यह नाम धारण किया था (म. वि. १२. १०)।

ग्रसन—तारकासुर का सेनापति। तारकासुर ने इंद्र से युद्ध किया। वहाँ यह उमके साथ था (पद्म. स. ४२)। आगे चल कर यम के साथ तारकासुर का युद्ध

हुआ। इस में यह विष्णु के द्वारा मारा गया (मत्स्य. १५०-१५१)।

ग्रामणी—देववती का पिता।

ग्रामद्—भृगुकुल का गोत्रकार।

ग्राम्यायणि—भृगुकुल का गोत्रकार।

ग्रावा—कश्यपप्रजापति की स्त्री। दक्ष प्रजापति की कन्याओं में से एक।

ग्रावाच्यवन—ब्रह्मदेव के पुष्करक्षेत्र के यज्ञ के होतृगणों में से एक ऋषिज (पद्म. स. ३४)।

ग्रावाजिन—स्यायंभुव मन्वंतर का अजित् देव।

ग्लाव मैत्रेय—एक आचार्य। एक दाल्भ्य तथा यह एक ही है (छां. उ. १. १२. १. ३; गो. ब्रा. १. १. ३१)। पंचविंश ब्राह्मण के संपंसत्र में यह प्रस्तोतृ था। षड्विंश ब्राह्मण में भी इसका उल्लेख है (१. ४)।

घ

घटजासुक—एक ऋषि (म. स. ४. ११)।

घटोत्कच—(सो. कुरु.) भीम तथा हिडिम्बा का पुत्र। जन्मतः इस का सिर घट के समान तथा केशरहित था, अतः इसका घटोत्कच (घट + उत्कच) नामकरण हुआ। इस नाम के अतिरिक्त, इसे मैग्य, भैमसेनी, हैडिंभ वा हैडिंभेय कहते थे (म. आ. १४३)। स्मरण करते ही उपस्थित रहने का, इसने अपनी दादी कुन्ती से वादा किया था (म. आ. १४३. ३७)। इसकी शिक्षा माता के पास हुई। हिडिम्बा ने इसे राक्षसीविद्याओं में प्रवीण बनाया।

एक बार पांडव संघमादन पर्वत पर चढ़ रहे थे। आरोहण में, भीम के अतिरिक्त अन्य सब थक गये। इस वेल में, कुन्ती ने घटोत्कच का स्मरण किया। तुरन्त प्रकट हो कर, इसने ऋषियों के साथ सब को नरनारायण आश्रम तक पहुँचा दिया (म. व. १४५. १-९)।

पितृसेवा के उद्देश्य से हिडिम्बा ने इसे पांडवों की ओर भेज दिया। धर्मराज ने इसका यथोचित गौरव किया, एवं इसके विवाह का निश्चय किया। कृष्ण ने कहा, 'सुख दैत्य की कन्या मौर्वी (कामकटंकटा) घटोत्कच के लिए योग्य हैं।' वह भगदत्त राजा के

प्रागज्योतिषपुर में थी। ब्रह्म तथा बुद्धि द्वारा अपने को जीतनेवाले पुरुष के साथ विवाह करने का, उसने प्रण किया था। सब की प्रेरणा से, बुद्धि, राक्षसीविद्या तथा शरीरबल के क्षेत्र में, घटोत्कच ने उसे जीत लिया। इंद्र-प्रस्थ में इसका विवाह मौर्वी के साथ सम्पन्न हुआ। इनका पुत्र बर्षरीक था (स्कंद. १. २. ५९-६०)।

राजसूययज्ञ के समय, यह करभार लाने के लिए, दक्षिण दिग्बिजय में लंका गया था (म. स. २८. ३०९; पारि. १. १५)। कुम्भकोणभावृत्ति ही में इसके लंका-प्रयाण का उल्लेख उपलब्ध है। चंद्रई की भावृत्ति में सहदेव द्वारा दूत भेजने का विवरण प्राप्त है। वह दूत घटोत्कच ही होगा।

महाभारत के अनुसार, यह बड़ा होने के बाद हिडिम्बा इसे ले कर कुन्ती के पास आई। इस समय घटोत्कच का व्याह हो चुका था। महाभारत में इसकी पत्नी का नाम नहीं है। घटोत्कच की पत्नी कामा की कृपा से अजेय थी। उसे एक विचित्र प्रश्न पूछ कर, घटोत्कच काबू में लाया, तथा नख से सेनानिर्मिति कर उसे जीत लिया। इसके अंजनपर्वन् एवं मेघवर्ण नामक दो पुत्र थे।

भारतीययुद्ध में यह पांडवों के पक्ष में था। इसका रथ आठ पहियों का तथा सौ अश्वों का था। इसके रथ पर छत्रपक्षी का ध्वज था। विरुपाक्ष नामक राक्षस इसका सारथ्यकर्म करता था। यह हाथ में पौलस्त्य धनुष्य रखता था (म. द्रो. १५०.१२-१४)।

द्रोण सेनापति थे। एक दिन रात्रि में युद्ध हुआ। कर्ण की वासवी शक्ति के कारण, अर्जुन की उससे युद्ध करने की हिम्मत नहीं हो रही थी। इस समय कृष्ण ने घटोत्कच का गौरव किया, तथा कहा, 'रात्रि की बेला में युद्ध करने से तुम्हारी शक्ति प्रचलित हो उठती है, अतः तुम महासमर करो।' इस प्रसंग में, इसके साथ युद्ध करने के लिए दुर्योधन ने वक्रवधु अंल्लायुध तथा अल्लयुप नामक दौ दैत्यों को भेज दिया। इसने दोनों का वध किया। अल्लयुप का सिर काट लिया। उसे हाथ में ले कर यह दुर्योधन के सामने प्रस्तुत हुआ। घटोत्कच ने उससे कहा, 'रिक्तपाणिने पश्येत् राजानम्।' अर्थात्, 'राजा लोगों का दर्शन, खाली हाथों नहीं लेना चाहिये।' यों कह कर इसने अल्लयुप का सिर दुर्योधन के सामने फेंक दिया। उपहासयुक्त शब्दों में, चिढ़ाने हुए इसने कहा, 'राजन् चन्द्र फलों ही में मैं कर्ण के मस्तक का उपहार पेश करने के लिए आता हूँ।'

यह समाचार सुन कर कर्ण भी एक बार थर्रा उठा। वाच्य एवं अगतिक बन कर कर्ण ने इस पर वासवी शक्ति का प्रयोग किया। उस प्राणहारक शक्ति का देख कर मरने के पहले घटोत्कच ने पर्वतप्राय देह धारण की। शक्ति लगते ही, यह कौरवसेना पर जा गिरा। मृत्यु के उपरान्त भी, इसकी देह ने बानुदल का एक भाग कुचल कर पीस डाला। परिणामस्वरूप अर्जुन वासवी शक्ति से निर्भीक हुआ (म. द्रो. १४८-१५४)। मार्गशीर्ष कृष्ण एकादशी की मध्यरात्रि को इस की मृत्यु हुई (भारतसावित्री)।

घटोत्कच का रूप भयानक था। उसकी देह विशाल थी। बाप से बेटा सर्वाई था। गंधमादन पर्वत का प्रसंग इसका सबूत है। इसके अतिरिक्त, बुद्धि, प्रत्युत्पन्नमतिव, मातृपितृभक्ति तथा आनंदीवृत्ति आदि गुणों से इसका चरित्र विभूषित हुआ है। इसके नेत्र विदूर थे। कान शंकु के आकार के थे। मुख बड़ा था। ओष्ठ आरक्तवर्ण के थे। दाढ़ें तीक्ष्ण थीं। नासिका लंबी एवं सीगा चौड़ा था। पिंडुलियाँ टेढीमंठी तथा मोटी थीं। कुल मिला कर आकृति तथा आवाज़ खौफनाक थीं। इस का जनक मनुष्य

होने पर भी, यह अमानुष था। कलशाली राक्षस-पिशाच, वचपन में भी इसे थाम नहीं सकते थे। बाल्यकाल ही से इसका रूप उग्र था। जन्मतः यह अन्नविद्यापारंगत एवं कामरूपधर था। पैदा होते ही, इसने मातापितरों के पैर पकड़ लिए थे।

घटोदर—रावण के पक्ष का एक राक्षस (वा. रा. उ. २७; म. स. ९. १४)।

२. पूतना देखिये।

घंट—वसिष्ठकुल का एक ब्राह्मण। इसने बिल्वदल (बेलपत्र) से शंकर की १०० वर्षों तक सेवा की। आगे-चलकर इसने देवल ऋषि की नातन की माँग की। यह कुरूप है, ऐसा पता लगाने के कारण, उसने इसे अस्वीकार किया। तब इस ने उसका हरण कर उससे गांधर्वविवाह किया। उसके पिता ने इसे शाप दिया; परंतु नये रिश्ते को याद कर, निशाचर याने राक्षस न हो कर उत्कृष्ट होगा तथा इंद्रगुप्त की सहायता करने पर मुक्त होगा, ऐसा उःशाप दिया (स्कंद. १. २. ७)।

घंटाकर्ण—शिव का एक गुण। शंकर के नाम वा गुणों के अतिरिक्त कुछ भी कानों को सुनने न मिले, इसलिये यह कान को घंटा गांधता था। इसलिये इसका नाम घंटाकर्ण हुआ। यह स्कंद का पार्षद था (म. श. ४४. २२)।

घंटामुख—विभावसु देखिये।

घन—लंका का एक राक्षस (वा. रा. सु. ६)।

घर्म तापस—सुक्रतद्रष्टा (ऋ. १०. ११४)।

घर्म सौर्य—मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०. १८१. ३)।

घुस्मेश्वर—शंकर का बारहवाँ अवतार। देवगिरि के पास वेरूल में है। घुस्म के संरक्षणार्थ यह वहाँ आया (शिव. शत. ४२)। व्याघ्रेश्वर इसका उपलिंग है (शिव. कोटि. १)।

घूर्णिका—देवयानी की दायी का नाम (म. आ. ७३. २४)।

घृणि—मरीचिपुत्र (मरीचि देखिये)।

२. (सू. इ.) धुंधुमार का पुत्र (पद्म. सु. ८)।

घृतकौशिक—पराशर्यायण का शिष्य। इसका शिष्य कौशिकायनि (बृ. उ. २. ६. ३; ४. ६. ३; २. ५. २१; ४. ५. २७. माध्य.)

२. विश्वामित्र देखिये।

घृतपृष्ठ—(स्वा. प्रिय.) भागवतमतानुसार प्रियव्रत को बर्हिष्मती से उत्पन्न पुत्र। क्षीरोद से वेष्टित क्राँचद्वीप

का यह अधिपति था। इसने अपने द्वीप के वर्षसंज्ञक सात भाग किये थे। आम, मधुसूह, मेघपृष्ठ, सुधामन्, भ्राजिष्ठ, लोहितार्ण तथा वनरसति नामक सात पुत्रों को उन्हीं के नाम दे कर, ये वर्ष विभाजित कर दिये थे (भा. ५.१. २५; २०.२०)।

घृताची—एक अप्सरा। कश्यप तथा प्राधा की कन्या (म. भा. १५४.२)। इसी के कारण रेतस्वलन हो कर, भरद्वाज से द्रोण, व्यास से शुक्र, प्रमति से रुद्र तथा रौद्राश्व से ऋतेयु आदि पुत्र हुये। प्रमति तथा रौद्राश्व के पास यह दीर्घकाल तक रहती थी।

२. मात्र मास में आदित्य के साथ घुमनेवाली अप्सरा (भा. १२, ११.३९)।

घृताशिन—एक ऋषि। इसने गोपीमोहन कृष्ण का ध्यान किया। इसलिये इसे गोपी का जन्म प्राप्त हुआ (पद्म. पा. ७२)।

घृतेयु—(सो. पुरुरवस्.) विष्णु वायु तथा मत्स्य मतानुसार रौद्राश्वपुत्र।

घृतोद—महावीर १ देखिये।

घोर—हिरण्यक्ष की सेना का एक असुर। कार्तिकेय ने इसका वध किया (पद्म. सु. ७५)।

२. कण्वपुत्र।

घोर आंगिरस—मंत्रद्रष्टा (ऋ. ३.३६.१०)। अन्य वैदिक ग्रंथों में इसका उल्लेख है (सां. ब्रा. ३०.६; छां. उ. ३.१७.६; आश्व. श्रौ. १२.१०)। इसने देवकीपुत्र कृष्ण को ब्रह्मज्ञान का उपदेश दिया, (छां. उ. ३.१७.६)। कठ संहिता में अश्वमेधखंड में इसका उल्लेख है (२६.७)। अथर्ववेद का भिषज से, तथा आंगिरस वेद का घोर से संबंध है (आश्व. श्रौ. १०-७; सां श्रौ. १६.२)

२. वैदस्वत मन्वन्तर के अंगिरस् ऋषि के आठ पुत्रों में से एक (म. अनु. १३२.४३ कुं: अंगिरस् देखिये)।

३. लंकास्थित एक राक्षस। लंकादहन के अवसर पर हनूमत् ने इसका घर जलया था (वा. रा. सुं. ५४)।

घोष—कक्षीवत् पुत्री घोषा का पुत्र। पञ्चय कक्षीवत् के साथ इसका भी उल्लेख आता है (ऋ. १.१२०.५; घोषा देखिये)।

२. धर्म ऋषि तथा लंबा का पुत्र।

३. (शुंग. भविष्य.) पुलिंद का पुत्र। इसका पुत्र वज्रमित्र। विष्णु मतानुसार इसका नाम घोषवसु है।

घोषा—कक्षीवत् की सूक्तद्रष्टी पुत्री (ऋ. १०.३९-४०)। कुष्ठरोग होने के कारण, इसे पिता के घर अविवाहित रहना पड़ा। अश्वियों की कृपा से इसका कुष्ठ दूर हुआ (ऋ. १०.३९; ३-६), तथा इसी पति भी मिला (ऋ. १.११७)।

रोगग्रस्त रहने के कारण, यह साठ वर्षों तक पिता के यह में अविवाहित स्थिति में रही। पिता की तरह अश्वियों को प्रसन्न कर, यह निरोगी हुई तथा इसे पति मिला (बृहदे. ७.४३; ४८)। इसके पति का नाम नहीं मिलता। इसे घोष तथा सुहस्य नामक पुत्र थे (बृहदे. ७.४८; सुहस्य देखिये)। मातापिता पुत्र को शिक्षा देते हैं, उसी तरह शिक्षा देने के लिये इसने अश्वियों से प्रार्थना की थी (ऋ. १०.३९.६)। शत्रुओं से युद्ध करने में समर्थ बनाने के संबंध से इसकी प्रार्थना का उल्लेख है (ऋ. १०.४०.५)।

घोषेय—घोष तथा सुहस्य देखिये।

घ्राण—तुपित देवों में से एक।

च

चकोर—(आश्र. भविष्य.) सुनंदन का पुत्र। वायु में इसे सातकर्णि, विष्णु में चकोरशातकर्णि, एवं ब्रह्मांड में शातकर्णि कहा गया है।

चक्र—एक ऋत्विज। जनमेजय के सर्पसत्र में, यह उन्नेतृ नामक ऋत्विज का काम करता था। इसके साथ पिशांग का उल्लेख प्राप्त है (पं. ब्रा. २५.१५.३)।

चक्र—रावण की सेना का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६, २४)।

चक्रक—विश्वामित्र का पुत्र।

चक्रदेव—एक यादव (म. स. १८.५६)।

चक्रधनु—कपिल ऋषि का नामांतर।

चक्रधर्मन्—विद्याधर का नामांतर (म. स. परि. १. क्र. ३. पंक्ति. ६)।

चक्रपाणि—सिंधु दैत्य के पिता का नाम (गणेश २. ७३.५)।

चक्रमालिन—रावण के सचिवों में से एक।

चक्रवर्तिन्—सर्वश्रेष्ठ नृपों की उपाधि। कार्तवीर्यार्जुन हैहय, भरत दौष्यन्ति पौरव, मरुत् आविश्कित वैशाल, महामन महाशाल आनव, मांभानृ यौवनाश्र ऐश्व्याक, शशार्द्रिदु चैत्रथि यादव, आदि राजाओं को चक्रवर्तिन् कहा, गया है।

अंतरिक्ष, पाताल, समुद्र तथा पर्वतों पर अप्रतिहत गमन करनेवाले, सप्तदीवाधिपति तथा सर्वाधिक सामर्थ्ययुक्त नृपों को चक्रवर्तिन् कहते हैं (वायु. ५७.६८-८०; ब्रह्माण्ड २.२९.७४-८८; मत्स्य. १४२.६३-७३)।

हिमालय से महासागर तक, तथा पूर्वपश्चिम १००० योजन भूमि का अधिपति चक्रवर्तिन् है (कौटिल्य. पृ. ७२५)।

कुमाति से बिंदुसरोवर तक भूमि के अधिपति को चक्रवर्तिन् संज्ञा दी जाती थी (काव्यमीमांसा १७)।

समुद्रपर्यंत भूमि का अधिपति सर्वश्रेष्ठ नृप समजते थे (ऐ. ब्रा. ८. १५; र. वं. १)।

वेदों में चक्रवर्तिन् शब्द नहीं है। सम्राज् आदि शब्द उपलब्ध है।

अंबरीष नामाग, गय आमूर्तरथस, दिलीप ऐलविल खट्वांग, बृहद्रथ अंग, भगीरथ ऐश्व्याक, ययति नाहुप, रंतिदेव सांकृति, राम दाशरथि, शिवि औशीनर, सगर ऐश्व्याक, सुहोत्र ये सर्वश्रेष्ठ नृप थे (म. द्रो. ५५-७०; शां. २८)।

२. अंगिरसकुल का गोत्रकार।

चक्रधर्मन्—वल का पुत्र। कर्ण के पूर्वजन्म का नाम।

चक्रघात—तृणावर्त राक्षस का नामांतर।

चक्रायण—उपस्त मुनि का पिता।

चक्रिक—एक व्याध। यह मातृपितृभक्त एवं विष्णु-भक्त था। विष्णु को फलोपहार अर्पण करने के पहले, यह स्वयं एक एक फल चख रहा था। उससे से एक फल इसके गले में अटक गया। वह फल विष्णु को अर्पण करने के लिये, इसने अपनी गर्दन स्वयं काट ली। विष्णु ने इसे जीवित कर, दर्शन दिया। बाद में, द्वारकाक्षेत्र में मृत्यु होने के कारण, इसको मुक्ति मिल गयी (पद्म. क्रि. १६)।

प्रा. च. २६]

चक्रिन्—अंगिरा कुल का गोत्रकार।

चक्षु—(स्वा. उत्तान.) सर्वतेजस् एवं आकृति का पुत्र। इसकी स्त्री नह्वल। यह छठवाँ मनु माना जाता है।

२. (सो. नील.) विष्णु मत में पुरुजानुपुत्र। इसे ही भागवत में अर्क, मत्स्य में पृथु, एवं वायु में रिक्ष कहा गया है।

३. तुषित देवों में से एक।

४. (सो. अनु.) भागवत मत में अनुपुत्र। इसे ही विष्णु एवं मत्स्य में चाक्षुप, ब्रह्मांड में कालचक्षु, तथा वायु में पक्ष कहा गया है।

चक्षुस मानव—मंत्रद्रष्टा (क्र. ९.१०६.४-६)।

चक्षुस सौर्य—सूक्तद्रष्टा (क्र. १०.१५८)।

चंचला—एक वेद्या। इसने विष्णु के मंदिर की दीवार को सहज भाव से एक उँगली चूना लगाया। इस पुण्य के प्रभाव से इसे वैकुंठ प्राप्त हुआ (पद्म. ब्र. ६)।

चंचु—(स. इ.) विष्णु, वायु एवं भविष्य मत में हरितपुत्र। भागवत में इसे चंप कहा गया है।

चंचुलि—विश्वामित्र कुल का गोत्रकार।

चंड—एक व्याध। शिवरात्रि के दिन, सहज ही शिव पर विल्वपत्र डालने के कारण, यह जीवन्मुक्त हुआ (पद्म. उ. १५४; स्कन्द. १.१.३३)।

२. त्रिपुरासुर का अनुयायी। त्रिपुर तथा शंकर के युद्ध के समय, इसका एवं नंदी का युद्ध हुआ था (गणेश. १.४३; चंडमुंड देखिये)।

३. विष्णु के पार्षदों में से एक।

४. अष्टभैरवों में से एक।

५. वाष्कल का पुत्र।

६. काश्यप तथा सुरभि का पुत्र (शिव. शत. १८)।

चंडकौशिक—कक्षीवत् ऋषि का पुत्र। इसके प्रसाद से बृहद्रथ को जरासंध हुआ (म. स. १६.१७९*)।

चंडतुंडक—गरुडपुत्र।

चंडचल—राम की सेना का सुप्रसिद्ध वानर। कुंभकर्ण ने इसका वध किया।

चंडभार्गव च्यावन—व्यवनवंश का एक ऋषि। जनमेजय के सर्पसत्र में यह होता का काम करता था (म. आ. ४८.५)।

चंडमुंड—शुभनिशुंभ के सेनापति। चंड तथा मुंड ये दो असुर शुभनिशुंभ के अनुयायी थे।

शुंभ की ओर से, यह दोनों देवताओं की सेना से लड़ रहे थे (पद्म. उ. १७)। शुंभ एवं शंकर के युद्ध में भी, शुंभ ने इन्हे जालंधर के शोधार्थ भेजा था।

एक बार इन्हे एक सुंदर स्त्री दिखाई दी। उसे वश करने के लिये, शुंभनिशुंभ ने इन्हीं की योजना की। वह सुंदर स्त्री कालिका देवी का मायावी रूप था। पश्चात्, कालिका देवी ने इन्हे मार डाला।

कई ग्रंथों में, उस सुंदर स्त्री को देवी चंडी कहा है। यही कथा, कुछ भिन्नता से अन्य ग्रंथों में भी आयी है (वायु. ५५; मार्क. ८४)।

चंडश्री—(आंश्र. भविष्य.) मत्स्यमत में विजय का पुत्र। इसके लिये चंद्रविज्र, चंद्रश्री एवं वंसश्री नाम प्रयुक्त हैं।

चंडा—गंडा देखिये।

चंडाश्व—(सू. द.) कुबलाश्व का पुत्र। इसका भद्राश्व नामांतर भी प्राप्त है।

चंडिक—वर्चरिक् का नामांतर।

चंडी—उद्दालक की पत्नी। इसकी कथा कलहा की तरह ही है (जै. अ. १६)।

चंडीश—रुद्रगणों में से एक। इसके चंडी, चंड, चंडेश्वर, चंडश्रेय आदि नाम प्राप्त हैं। दक्षयज्ञविध्वंस के समय, इसने पूषन् नामक ऋत्विज को बंधा था (भा. ४.५.१७; पद्म. उ. १३.५९)।

चंडोदरी—अशोकवन की एक राक्षसी (वा. रा. सुं. ४)।

चतुरंग—(सो. अनु.) भागवत एवं विष्णु मत में चित्ररथ अथवा रोमप का पुत्र। ऋक्ष्यशुंभ के पुत्रकामेष्टि यज्ञ के कारण, इसका जन्म हुआ। इसका पुत्र पृथुलाक्ष (भा. ९.२३.१०)।

चतुर्मुख—ब्रह्मदेव का नामांतर। कमल में से ब्रह्मदेव का जन्म होने ही, उसने चारों दिशाओं की ओर देखा। चारों ओर देखते ही उसे चार मुख प्राप्त हुए। इसी कारण उसे यह नाम पड़ा (भा. ३.८.१६; ब्रह्मन् देखिये)।

चन्द्र—अग्नि तथा अन्नसूया का पुत्र। यह सोमनाम से भी प्रसिद्ध था (भा. ४.१३; म. शां. २००.२४)। इसे सूर्य तथा भद्रा का पुत्र भी कहा गया है।

यह स्वायंभुव मन्वन्तर में पैदा हुआ था (म. आ. ६०. १४)। इसके जन्म की अनेक आख्यायिकाएं प्राप्त हैं। अग्नि ने दसों दिशाओं से इसे उत्पन्न किया (विष्णुधर्म.

१.१०६; स्कन्द. ४.१.१४)। यह अग्नि की आँसों से उत्पन्न हुआ (ह. वं. १.२५; ६.९; वायु. ९०.५)।

चन्द्र तथा आकाश में स्थित चन्द्रमा दोनों एक ही हैं। दक्ष प्रजापति की सत्ताईस कन्यायें इसे पत्नीरूप दी गयी थीं। चन्द्र की इन सत्ताईस पत्नियों के नाम बाद में सत्ताईस नक्षत्रों को प्राप्त हुए (म. आ. ६०.१२; १५; ह. वं. १.२५.२२; स्कन्द. ७.१.२०)।

पृथ्वी की ओपधि वनस्पति, चन्द्र से प्रभावित होने के अनेक निदेश प्राप्त हैं। इसने तपस्या करने पर, इसकी आँसों से सोमरस टपकने लगा। इसीसे सब ओपधियाँ उत्पन्न हुई (स्कन्द. ७.१.२०)। इनका क्षय होने पर पृथ्वी की ओपधि वनस्पतियाँ सूख गयी (म. आ. ३४)। इसने अमृत दे कर अनाथ मारिषा की रक्षा की। इन सब कथाओं से चन्द्र-चन्द्रमा एक को पुष्टि मिलती है।

चन्द्र के सत्ताईस पत्नियों में, रोहिणी पर इसकी विशेष प्रीति थी। यह न सह कर, इसकी अन्य स्त्रियों ने अपने पिता दक्ष के पास शिकायत की। दक्ष ने चन्द्र को समझाया। परंतु कुछ लाभ नहीं हुआ।

दक्ष ने चन्द्र को शाप दिया कि, तुम्हें क्षयरोग हो जावेगा। क्षय से चन्द्र क्षीण होने लगा। उसका दुःपरिणाम पृथ्वी की ओपधिवनस्पतियों पर हुआ। देवों को मजबूरी से दक्ष के पास प्रार्थना करनी पड़ी। दक्ष ने कहा, 'चन्द्र का पंद्रह दिन क्षय तथा पंद्रह दिन वृद्धि होगी, परंतु उसके लिये चन्द्र को सब पत्नियों की ओर समान ध्यान देना पड़ेगा। पश्चिम सागर के पास सगरमुख में स्नान करना होगा'। वहाँ स्नान करने के बाद चन्द्र को पूर्ववत् कान्ति प्राप्त हुई। इसीलिये इस क्षेत्र को प्रभास नाम प्राप्त हुआ (म. श. ३४)।

शशपाततीर्थ पर देव तथा देवों ने अमृतगान किया। वहाँ कुछ देरों से जाने के कारण, इसे अमृत प्राप्त नहीं हुआ। वहाँ का तीर्थ लेने के लिये देवों ने इसे कहा। एक खरगोश उस तीर्थ का प्राशन कर रहा था। उसे भी इसने खा लिया। वह अभी भी इसके उदर में है। (स्कन्द. ७. १. २५८)।

अग्निपुत्र सोम यह चन्द्र का ही नामांतर है। एकबार सोम अत्यंत वृष्टिष्ठ हुआ। राज्ययज्ञ कर के इसने त्रैलोक्य को जीत लिया। बृहस्पति की पत्नी तारा का जबरदस्ती हरण कर लिया। उसके लिये तारकामय नामक बहुत बड़ा युद्ध हुआ। ब्रह्मदेव से मध्यस्थता की। इसने तारा को वापस किया।

परंतु वह गर्भवती थी। बृहस्पति ने तारा को गर्भ का याग करने के लिये कहा। तब तारा ने एक वृक्ष पर उसे छोड़ दिया। वह गर्भ अत्यंत तेजस्वी था। यह देख कर पुनः बृहस्पति तथा चन्द्र लड़ने लगे। तब तारा ने कहा कि, 'गर्भ चन्द्र का है'। वह गर्भ चन्द्र को दिया गया। यही बुध है। यहीं से चन्द्रवंश प्रारंभ हुआ (भा. १. १४; ह. वं. १. २५; पद्म. पा. १२; ब्रह्म ९; मत्स्य. २३; दे. भा. १. ११; वायु. ९०. २-९)।

सोमवंश का प्रथम राजा सोम ही था। इसकी पत्नी रोहिणी। इसकी राजधाणी प्रयाग थी। (पद्म. उ. १५६; सोम तथा पुरुरवस् देखिये)। वदरिकाश्रम में तप कर के इसने ब्रह्माधिपत्य प्राप्त किया (स्कन्द. २. ३. ७)। इसने उमासहित सोम की आराधना की, इसलिये इसे सोम नाम प्राप्त हुआ (स्कन्द. ४. १. १४)।

धर्म प्रजापति को वसु नामक स्त्री से उत्पन्न अष्टवसुओं में से एक का नाम सोम है (म. आ. ६०. १७; लिग. ६१)। यह वैवस्वत मन्वन्तर का था। पीछे वर्णित सभी कथा इसीकी होनी चाहिये।

सोमवंश—भारत का प्राचीन इतिहास सोम एवं सूर्यवंश का ही इतिहास है। सोम चंद्र का ही नामांतर है। सोम तथा सूर्य इन दोनों वंशों का मूलपुरुष वैवस्वत मनु है। सूर्यवंश वैवस्वत मनु के पुत्र से शुरू होता है। सोमवंश उसकी कन्या इला से प्रारंभ होता है।

वैवस्वत मनु की कन्या इला सोमपुत्र बुध से ब्याही थी। उसीसे पुरुरवस्-आयु-नहुष-ययाति तक का वंशविस्तार हुआ। इसे ही पुरुरवस् वा ऐल वंश कहते हैं।

पुरुरवस्पुत्र अमावसु से कान्यकुब्ज में अमावसुवंश शुरू हुआ।

आयुपुत्र वृद्धशर्मन् वा क्षत्रवृद्ध से काश्य वा काशिवंश का प्रारंभ हुआ। रजिवंश, अनेनसुवंश तथा रंभवंश ये भी आयुवंश की उपशाखाएं हैं। क्षत्रवृद्ध का द्वितीय पुत्र प्रतिक्षत्र था। उसीसे पुरुरवस् (ऐल) वंश की एक अलग उपशाखा निर्माण हुई।

नहुषपुत्र ययाति के अनु, पूरु, द्रुहयु, तुर्वसु एवं यदु नामक पाँच पुत्र थे। इन पाँच पुत्रों से पुरुरवस् वंश की पाँच उपशाखाएं निकली। ये उपशाखाएं इस प्रकार हैं—

(१) तुर्वसुवंश—यह दुष्यन्त के समय पुरुवंश में सम्मिलित हुआ।

(२) पूरुवंश—अजमीठ, कुरु, चेदि, जह्नु, द्विमीठ, नील।

(३) अनुवंश—उशीनर (केकय, मद्रक), तितिक्षु (अंग, वंग, कलिग, सुख, पुंड्र)।

(४) यदुवंश—अनमित्र, अंधक, कुकुर, क्रोष्टु, ज्यामध, भजमान, रोमपाद, वसुदेव, विदर्भ, विदूरथ, विष्णु वृष्णि, सहस्रजित्, सात्वत, हैहय।

(५) द्रुहयुवंश—द्रुह्यु का वंश पुराणों में मिलता है। उसकी शाखाएँ नहीं हैं।

सूर्यवंश की विस्तृत समीक्षा के लिये विवस्वत देखिये। २. (सू. इ.) भागवत मत में विश्वरंघ्री का पुत्र (इन्दु देखिये)।

३. (सू. इ.) भानु राजा का पुत्र। इसे श्रुतायु नामक पुत्र था।

४. दाशरथि राम के सूज्ञ नामक मंत्री के पुत्रों में से एक। अश्वमेध का अश्व वापस लाने के लिये हुए युद्ध में, कुश ने इसका वध किया (वा. रा. उ. १)।

५. कृष्ण तथा नागजिती के पुत्रों में से एक (भा. १०. ६१. १३)।

६. कश्यप तथा दनु का पुत्र।

चंद्रकला—माधव ५. देखिये।

चंद्रकांत—एक गंधर्व। इसकी कन्या सुतारा।

चंद्रकेतु—हंसध्वज राजा का भ्राता।

२. (सू. इ.) वायुमत में लक्ष्मण पुत्र।

३. भारतीय युद्ध में दुर्योधनपक्षीय राजा। यह कृपाचार्य का चक्ररक्षक था। अभिमन्यु ने इसका वध किया (म. वि. ५२. ९२८* पंक्ति ६; द्रो. ४७. १५)।

चंद्रगिरि—(सू. उ.) मत्स्य तथा पद्म मत में तारापीड का पुत्र (पद्म. सू. ८)।

चंद्रगुप्त—(मौर्य. भविष्य.) एक राजा। नंदवंश नष्ट होने पर यह गद्दी पर बैठा। यह महापद्मनंद की सुरा नामक शूद्रा से उत्पन्न पुत्र था। इस कारण इसके वंश का नाम मौर्यवंश हुआ, ऐसा प्रवाद है। आचार्य चाणक्य ने सब नदों का नाश कर के इसे सिंहासन पर बैठाया। इसने कुल चौबीस वर्ष राज्य किया। इसे वारिसार नामक पुत्र था (भा. १२. १. १३)। इसने पौरसाधिपति सुल्लन राजा की यवन कन्या के साथ विवाह किया। इसका पुत्र विदुसार (भवि. प्रति. १. ७)।

२. कार्तवीर्यार्जुन का मंत्री। इसने जमदग्नि ऋषि का शिरच्छेद किया (ब्रह्मांड. ३. ३०. ८)।

चंद्रदेव—पांचाल देश का नृप। यह युधिष्ठिर का चक्ररक्षक था। भारतीययुद्ध में कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४४. १५)।

२. दुर्योधन के पक्ष का नृप। भारतीययुद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. ४४. २९.)।

चंद्रप्रदर्शन—कश्यप तथा सिंहिका के पुत्रों में कनिष्ठ। चंद्रप्रमर्दन इसका नामान्तर है।

चंद्रप्रभ—एक राजा। यह मणिभद्र तथा पुण्यजनी का पुत्र था।

चंद्रभानु—(सो. यदु. वृष्णि.) कृष्ण तथा सत्यमामा का पुत्र (भा. १०. ६१. १०)।

चंद्रमन्त्र—अग्नि तथा अनुसूया का पुत्र।

२. कश्यप एवं दनु का पुत्र।

३. समुद्र के दक्षिण तट पर निवास करनेवाला ऋषि। इसने जटायु के भाई संपाति को अध्यात्मज्ञान दिया। सीता की खोज के लिये आये वानरों को, मार्ग दिखाने का आदेश इसने जटायु को दिया। पश्चात् यह स्वर्ग सिंहासना।

चंद्ररूपा—राथंतरकन्य के प्रजापति की पत्नी। इसने त्रिरात्र तुलसीव्रत किया था (पद्म. उ. २६)।

चंद्रवती—प्रचेतस् एवं मारिषा की कन्या। यह प्राचेतस् दक्ष की बहन थी।

चंद्रवर्मन्—कांबोज देश का नृप (म. आ. ६१. ५५६*)।

चंद्रवाह—काकुत्स्थ शशाद राजा का नामान्तर।

चंद्रविह्व—(आंध्र. भविष्य.) भागवत मत में विजय का पुत्र (चंडश्री देखिये)।

चंद्रशर्मन्—मायापुरी का अश्विनोत्रज ब्राह्मण। यह देवशर्मन् का शिष्य था। देवशर्मन् की कन्या गुणवती इसकी पत्नी थी। एक बार देवशर्मन् तथा यह अरण्य में दर्भ समिधा लाने के लिये गये। एक राक्षस ने इन दोनों के प्राण लिये। अत्यंत धार्मिक होने के कारण यह वैकुण्ठ गया। यह कृष्ण के समय अक्रूर नाम से प्रसिद्ध हुआ (पद्म. कु. ८८-८९)।

२. सूर्यवंश का एक राजा। यह कुरुक्षेत्र में रहता था। एक बार सूर्यग्रहण के समय, तुलापुरुषदान देने की इच्छा से, इसने एक ब्राह्मण को बुलाया। परंतु वह निद्रा दान होने के कारण, तुलापुरुषदान करते ही उस में से एक चंडालयुग्म उत्पन्न हुआ। इसीमें ब्राह्मण ने गीता के नवम अध्याय का पाठ प्रारंभ किया था।

अतः उसके प्रत्येक अक्षर से एकैक विष्णुदूत उत्पन्न हो कर, उन्होंने इस चंडालयुग्म को भगा दिया। वह चंडालयुग्म मनुष्यवेषधारी पाप एवं निर्दा थे (पद्म. उ. १८३)।

३. मागध देश का ब्राह्मण। इसने गुरुहत्या की थी। विदुर के साथ कलिंदर पर्वत जाने पर उसे एक सिद्ध मिला। उसके उपदेश से इसने सोमवती अमावास्या के दिन, पुष्करतीर्थ में स्नान किया तथा यह शूद्र हुआ (पद्म. म. ९१-९२)।

चन्द्रशेखर—एक राजा। यह पुष्य का नाती तथा पौष्य का पुत्र था। इसका राज्य दृपद्वती नदी के किनारे करवीर में था।

इसके पिता पौष्य ने पुत्र के लिये, शंकर की आराधना की। शंकर ने उसे प्रसादरूप में एक फल दिया। उस फल के तीन भाग कर के पौष्य ने अपनी तीन स्त्रियों को दिये। बाद में पौष्यस्त्रियों को तीन भयपुत्र ऐसे हुए की, उन तीनों को जोड़ कर एक पुत्र बन सके। तीन भागों में बनने के कारण, इसे त्र्यंशक नाम मिला।

सूर्यवंशीय राजा ककुत्स्थ एवं योगवती की कन्या तारावती से इसका विवाह हुआ। तारावती को कपोत मुनि के शाप से, भृंगी तथा महाकाल ये भैरव एवं वेताल-योनिके पुत्र हुए (कालि. ५०-५२)। इसे दमन, उपरिचर तथा अलर्क नामक तीन औरस पुत्र थे।

चन्द्रश्री—(आंध्र. भविष्य.) विष्णु के मत में विजय का पुत्र (चंडश्री देखिये)।

चन्द्र सावर्णि—चौदहवाँ मनु (मनु देखिये)।

चन्द्रसेन—सिंहलद्वीप का राजा तथा मंदोदरी का पिता।

३. दुर्योधनपक्षीय एक राजा। भारतीययुद्ध में यह शल्य का चक्ररक्षक था। यह युधिष्ठिर के द्वारा मारा गया (म. श. ११.५३)।

३. पांडवपक्षीय क्षत्रिय राजा (म. स. २७.२२)। यह समुद्रसेन राजा का पुत्र था (म. आ. १७७.११)। भारतीययुद्ध में अश्वत्थामा ने इसका वध किया (म. द्रो. १३१.१२९)। यह एक उत्तम रथी था (म. उ. १६८.१८)। इसके रथ को सामुद्र अथ जोड़े गये थे। पाटभेद-चन्द्रदेव।

४. हंसख्य राजा का वंशु।

चन्द्रहर्ष—कश्यप तथा सिंहिका का पुत्र।

चन्द्रहास—केरलविपति सुधार्मिक राजा का पुत्र। इसका जन्म मूल नक्षत्र पर हुआ था। इसके अतिरिक्त, शरिन्द्रदशक छठवीं अंगुलि इसके बायें पैर को थी।

इस अशुभ चिन्ह के कारण, इसका जन्म होते ही; शत्रुओं ने इसके पिता का वध किया। इसकी माता ने सहगमन किया। इस प्रकार यह अनाथ हो गया। एक आई ने इसको सम्हाला। वह इसे कौतलकापुरी ले गई। वहाँ तीन वर्षों तक मजदूरी कर के उसने इसका भरण पोषण किया। कुछ दिनों के बाद वह मृत हुई। भिक्षान्न सेवन कर के इसने दिन बिताये। बाद में कुछ स्त्रियों ने इसका पालन किया। यह पाँच साल का हुआ, तब अन्य लड़कों में खेलने लगा। इसे बहुत स्त्रियों ने नहला धुल कर खाना खिलाया।

एक दिन सहजवश यह धृष्टबुद्धि प्रधान के घर गया। वहाँ ब्राह्मणभोजन चालू था। वहाँ निर्मलित योगीश्वर तथा मुनियों को चन्द्रहास को देख कर, अत्यंत विस्मय हुआ। उन्होंने इसे आशीर्वाद दिया कि, यह राजा बनेगा। उसी प्रकार उन्होंने धृष्टबुद्धि से कहा, 'तुम्हारी संपत्ति की रक्षा भी यही करेगा।' इससे क्रुद्ध हो कर तथा मन में शंका आ कर, उसने इस बालक को जल्लादों के हाथों में सौंप दिया। जल्लाद वध करने के लिये, इसे अरण्य में लये। फिर भी यह पूरे समय हास्यवदन ही था। मार्ग में मिला हुआ शालिग्राम, इसने बड़ी भक्ति से अपने मुख में रखा था। जल्लादों ने तीक्ष्ण शस्त्र उठाये। इसने उनकी स्तुति की। इससे जल्लादों के मन में इसके प्रति पूज्यबुद्धि उत्पन्न हुई। उन्होंने इसका वध न कर के, केवल छठवीं अंगुलि काट ली। वही अंगुलि धृष्टबुद्धि प्रधान को दे कर इनाम प्राप्त किया।

जल्लादों द्वारा वन में छोड़े जाने के बाद, यह अरण्य में इधर उधर घूमने लगा। इस समय कुलिंद देश का राजा, भृगुया के हेतु से इसी अरण्य में आया था। इस बालक को देख कर, राजा का मन श्रवित हुआ। उसने इसकी पूछताछ की। पश्चात् चंद्रनावती नगरी में इसे अपने साथ ले जा कर, उसे रानी मेधावती को सौंप दिया। राजा ने इसका नाम चन्द्रहास रखा। सब कियार्थ भी इसे सिखायी। चन्द्रहास के कारण कुलिंद में सर्वत्र आनंद फैल गया। शिक्षाप्राप्ति के समय, चन्द्रहास केवल 'हरि' शब्द का ही उच्चारण करता था। इससे कुपित हो कर गुरु ने इसकी शिकायत राजा के पास की। परंतु, राजा ने कहा, 'इसकी इच्छा के अनुसार इसे व्यवहार

करने दो।' आठ वर्ष की आयु में इसका व्रतबंध हुआ। तदनंतर इसने वेदाध्ययन किया। बाद में यह धनुर्विद्या में भी प्रवीण हो गया। श्रेष्ठ वर्ष की आयु होते ही इसने दिग्विजय करने की इच्छा दर्शाई। परंतु कुलिंद ने कहा, 'अपनेसे बलवान राजाओं को भला तुम किस प्रकार जीत सकोगे? जाने की इच्छा हो, तो जाओ। कौतल राजा के दुश्मन मुझे हमेशा वस्तु करते हैं। क्योंकि मैं उसका अंकित हूँ'।

यह सुन कर चन्द्रहास दिग्विजय करने गया। इसने सब राजाओं को जीत लिया। इस प्रकार विजयी हो कर तथा अपरंपार संपत्ति ले कर यह चंद्रनावती लौटा। यह सुन कर कुलिंद इसका स्वागत करने आया।

बाद में कुलिंद के कथनानुसार, चन्द्रहास ने अपने सेवकों द्वारा कौतल राजा को करभार भेजा। सेवकों ने उसे बताया, 'कुलिंद राजा सुखी है। उसके पुत्र चन्द्रहास ने दिग्विजय कर के यह संपत्ति भेजी है'। इससे विस्मयाभिभूत हो कर कौतल चन्द्रहास को देखने चंद्रनावती आया। कुलिंद से मिल कर उसने कहा, 'पुत्रजन्म का वृत्त तुमने हमें क्यों नहीं सूचित किया'। चन्द्रहास का सारा जन्मवृत्तान्त कुलिंद ने उसे बताया। इससे कौतल ने चन्द्रहास को पहचान लिया, तथा मन ही मन कुछ शंकित हुआ। पुनः चन्द्रहास का वध करने के विचार उसके मन में आये। इस संबंध में एक पत्र अपने पुत्र मदन को लिख कर, वह ले जाने के लिये चन्द्रहास से कहा।

चन्द्रहास कुंतल नगरी के लिये रवाना हुआ। राह में एक रम्य स्थान पर यह सोया था। उस स्थान पर राजकन्या चंपकमालिनी अपनी सखियों के साथ आई। उसके साथ धृष्टबुद्धि प्रधान की कन्या विषया भी थी। उसने चन्द्रहास को सरोवर के किनारे निद्रामग्न अवस्था में देखा। अपने पैरों से नूपुर निकाल कर धीरे-धीरे वह उसके पास गई। वहाँ उसने एक पत्र देखा। उसने वह पत्र पढ़ा। उस पत्र में चन्द्रहास के लिये विषप्रयोग की सूचना थी। इससे उसका प्रेमी हृदय भग्न हो गया। उसने पत्र के 'विषमस्मै' शब्द के बदले आस के गोंद से 'विषयास्मै' लिखा। पश्चात् पत्र बंद कर वहीं रख दिया। इस प्रकार धृष्टबुद्धि से इसकी रक्षा हुई। बाद में यह पत्र ले कर चन्द्रहास, मदन के पास गया। यह पत्र पढ़ कर मदन को अत्यंत आनंद हुआ। इधर विषया ने भी देवी की, 'यही पति मुझे प्राप्त हो' इस इच्छा से

उक्त आराधना की। अन्तर्गत बोध सुदृती पर मदन ने चन्द्रहास तथा विप्रया को विवाहवद्ध कर दिया।

इसी समय, धृष्टद्युधि ने चंद्रनावती में कुलिंद को बद्ध कर के, प्रजा पर अनन्वित अत्याचार किये। इस प्रकार अत्याचार से प्राप्त धन ले कर वह कुंतलपुर आया। वहाँ बाघों का वादन हो रहा था। मदन ने चन्द्रहास को विप्रया दी, यह वृत्त उसे मालूम हुआ। वह अत्यंत संतप्त हुआ तथा मदन पर क्रोधित हुआ। परंतु बाद में मदन ने उसे समझाया। फिर भी चन्द्रहासवध की कल्पना उसके मन से नहीं हटी।

देवी के दर्शन के लिये जाने की आशा, धृष्टद्युधि ने चन्द्रहास को दी। वहाँ उसके इसके वध के लिये दो अंत्यज रखे। परंतु इस समय भी धृष्टद्युधि के दुर्दैव से चन्द्रहास के बड़े मदन का वध हुआ। इसके पूर्व ही कौतल ने अपनी कन्या चंपकमालिनी तथा सत्र राज्य चन्द्रहास को दिया। पश्चात् वह स्वयं अरण्य में चला गया।

चन्द्रहास राजा बन गया, ऐसा सुन कर धृष्टद्युधि क्रोध से पागल सा हो गया। चंडिकादर्शन के लिये न जा कर, चन्द्रहास ने कुलप्रथा तोड़ दी, यह सुन कर भी इसे अत्यंत क्रोध आया। वह तुरंत चंडिकामंदिर में गया। वहाँ मदन मृत पड़ा हुआ था। इस समय कृतकर्म का उसे अत्यंत पश्चात्ताप हुआ। उसका मन कहने लगा, 'वैष्णवों से द्रोह करने का यह दुष्परिणाम है'। अंत में पुत्रशोक अनावर हो कर स्तंभ पर सिर पटक कर उसने प्राण दिये।

यह वृत्त सुन कर चन्द्रहास को अत्यंत दुःख हुआ। अपने मांस का होम कर के इसने देवी को प्रसन्न किया। देवी ने इसे दो वरदान दिये। इन वरों से मदन तथा धृष्टद्युधि जीवित हो गये।

कुलिंद राजा कौतल के अत्याचारों से त्रस्त हो कर पत्नी समेत अभिप्रवेश कर रहा था। इतने में धृष्टद्युधि ने चन्द्रहास का वृत्त उसे कथन किया। बाद में चन्द्रहास अपने पिता के आज्ञानुसार राज्य करने लगा।

दुष्किरि के अश्वमेध यज्ञ के समय, इसने उसका अश्वसेधीच अश्व पकड़ लिया था। परंतु श्रीकृष्ण की आज्ञानुसार अर्जुन ने इसके साथ संधि कर ली। इस कारण, चन्द्रहास ने अश्वमेध में काफी सहायता की। चन्द्रहास को विप्रया से मकराक्ष तथा चंपकमालिनी से पद्माक्षनामक दो पुत्र हुए (जै. अ. ५०-५९)।

चन्द्रहास की राजधानी चंद्रनावती कौतलपुर से लः योजन दूर थी (जै. अ. ५२)। चंद्रनावती बड़ोदा का

प्राचीन नाम है। परंतु कुंतलपुर वर्तमान खेड़ा जिला का सरनाल ग्राम है। इसलिये बड़ोदा को चंद्रनावती नहीं कह सकते। कनिंशहंम ने लिखा है कि, कुंतलपुर ग्वालियर प्रांत में है।

चन्द्रा—वृषभवा दानव की कन्या तथा शर्मिष्ठा की भगिनी।

२. कृष्ण के समय की एक गोपी (पद्म. वा. ७७)।

चन्द्रार्कभीक्षर—कश्यप तथा लक्ष्मा का पुत्र।

चन्द्रावली—कृष्ण की प्रियपत्नी (पद्म. पा. ७०)।

चन्द्रावलेक—(स. इ.) मत्स्य के मत में महाराथ पुत्र। इसका पुत्र तारापीड।

चन्द्राश्व—(स. इ.) विष्णु के मत में कुलव्याथपुत्र। भागवत, वायु तथा मत्स्य मत में दंडपुत्र।

चन्द्रोदय—विराट का भाई (म. द्रो. १३३.४०)।

चमस—(स्वा. प्रिय.) ऋषभ को जयंती में उत्पन्न पुत्र। यह महायोगी था। इसने विदेह के यज्ञ में जा कर, उसे ज्ञानोपदेश दिया (भा. ५.४.११; ११. ५.२)।

चंप—चंचु देखिये।

२. (सो. अनु.) मत्स्य तथा विष्णु के मत में पृथुलाक्ष का पुत्र। इसने मालिनीनगर को चंपा नाम दे दिया।

चंपक—कुंडलनगरी के मुरथ का पुत्र (पद्म. वा. ४९)।

चंपकमालिनी—कौतल देश के राजा की कन्या तथा चन्द्रहास की पत्नी। इसे पद्माक्ष नामक पुत्र था।

२. रामपुत्र कुश की चंपिका नामक ज्येष्ठपत्नी से हुईं नौ कन्याओं में एक।

चंप—चन्द्रसेना नामक राक्षस स्त्री का नामांतर।

चंपिका—रामपुत्र कुश की दौ पत्नियों में से ज्येष्ठ। इसे चंपकमालिनी आदि नौ कन्यायें हुईं।

चयत्सेन—बृहत्कल्प का इंद्र। गौतमपत्नी अहल्या से इसने अनैतिक संबंध रखा था (स्कन्द. ६.२.५)।

चर—मणिवर तथा देवजनी का पुत्र।

चरक—आयुर्वेदीय 'चरकसंहिता' नामक महान् ग्रंथ का कर्ता। यह विशुद्ध नामक ऋषि का पुत्र तथा अनन्त संज्ञक नाग का अवतार था। संभवतः यह नामवंश का होगा। भारत के पश्चिमोत्तर प्रदेश का वर्णन इसके ग्रंथ में अधिक आता है। इससे यह उसी प्रदेश का रहनेवाला होगा (भावप्रकाश)।

शतपथब्राह्मण में चरक का निर्देश है। शतपथब्राह्मण, चरकसंहिता एवं याज्ञवल्क्यस्मृति में शारीरविषयक

विवेचन प्रायः समान है। चरक तथा याज्ञवल्क्य दोनों ने मानवी अस्थिसंख्या ३६० बताई है। याज्ञवल्क्य तथा चरक दोनों एक ही वैशंपायन के शिष्य थे।

चरकसंहिता—उपलब्ध आयुर्वेदीय संहिताओं में 'चरकसंहिता' सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ है। सुश्रुतसंहिता शल्यतंत्र-प्रधान तथा चरकसंहिता कायाचिकित्साप्रधान ग्रंथ है। इस ग्रंथ में चिकित्सा विज्ञान के मौलिक तत्त्वों का जितना उत्तम विवेचन किया गया है, उतना अन्यत्र नहीं है। इसके अतिरिक्त, इस ग्रंथ में स्वरूप में सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, वेदान्त, मीमांसा इन आस्तिक दर्शनों का, चार्वाक आदि नैस्तिक दर्शनों का, तथा परीक्षा रूप से व्याकरण आदि वेदान्तों का भी संकल्पन सुन्दरता से किया गया है। इस लिये, इस ग्रंथ को यथार्थता से 'अखिल-शास्त्रविद्याकल्पद्रुम' कहा जा सकता है।

'चरक संहिता' में दी गयी आयुर्वेदीय विद्यापरंपरा इस प्रकार है। आयुर्वेद सर्वप्रथम ब्रह्मा ने निर्माण किया। ब्रह्मा से प्रजापति ने, प्रजापति से अश्विनीकुमारों ने, उनसे इंद्र ने, तथा इंद्र से भरद्वाज ने आयुर्वेद का अध्ययन किया। फिर भरद्वाज के प्रभाव से दीर्घ, सुखी तथा आरोग्यजीवन प्राप्त कर अन्य ऋषियों में उसका प्रचार किया। तदनन्तर पुनर्वसु आश्रय ने अग्निवेश, भेड, जन्कण, पराशर, हारीत तथा क्षीरसाग्नि नामक छः शिष्यों को आयुर्वेद का उपदेश किया। इन छः शिष्यों में सत्र से अधिक शुद्धिमान् अग्निवेश ने सर्वप्रथम 'अग्निवेशतंत्र' नामक एक संहिता का निर्माण किया (च. गृ. अ. १)। इसी ग्रंथ का प्रतिस्कार बाद में चरक ने किया, तथा उसका नाम 'चरकसंहिता' पड़ा। उपलब्ध चरकसंहिता के चिकित्सानिधान, के १७ अध्याय तथा १२-१२ अध्याय के कल्पस्थान तथा सिद्धिस्थान चरक ने लिखे मूल संहिता में नहीं थे। उनकी पूर्ति हटवल ने की (च. चि. ३०)।

यौद्ध त्रिपिटक ग्रंथ में, कुपाणवंशीय राजा कनिष्क का राजवैद्य यो कूट कर चरक का निर्देश प्राप्त है। योगसूत्र, अर तथा महाभाष्यकार पतंजलि तथा चरक एक ही थे ऐसी अनुश्रुति है। कनिष्क तथा पतंजलि का काल इसापूर्व दूसरी सदी निश्चित है। वह चरक काल होगा।

वैशंपायनशिष्यत्व, एवं पाणिनि तथा शतपथ में निर्देश के कारण चरककाल भारतीययुद्ध से नजदीक होने का संभव है। पाश्चात्य चिकित्सापद्धति के आचार्य हिपो-क्रिटस (इ. पू. ६००) ने भी इसके सिद्धांतों का भवन लिया है, ऐसा कई विद्वानों का मत है। ऐसा हो तो,

याज्ञवल्क्यकालीन चरक तथा कनिष्ककालीन चरक वे दो अलग व्यक्तियों मानना होगा।

२. कृष्णयजुर्वेद का एक शाखाप्रवर्तक। इसका सही नाम कपिष्ठल-चरक था। प्रवरमाला में इसका नामोल्लेख है।

३. कृष्णयजुर्वेद की एक उपशाखा। कृष्णयजुर्वेद में 'चरक' नाम धारण करनेवाली चारह शाखाएँ (भेद) हैं। उनके नाम :—चरक, आह्वरक, कट, प्राच्यकट, कपिष्ठलकट, आरायणीय, वारायणीय, वार्तान्तवेय, श्वेताश्वतर, औपमन्यव, पातण्डवीय, तथा मैत्रायणीय। इनसेसे मैत्रायणीय शाखा में मानवादि छः भेद हैं। चरक वाराहसूत्रानुयायी तथा मैत्रायणीय मानवसूत्रानुयायी है (चरणव्यूह)।

कृष्णयजुर्वेद की एक शाखा, कृष्णयजुर्वेद की सामान्य संज्ञा, तथा कृष्णयजुर्वेद पढ़नेवाले लोग, वे तीन ही अर्थ से 'चरक' नाम का निर्देश उपलब्ध है (श. ब्रा. ३.८.२.२४; ४.१.२.१९; २.३.१५; ४.१.१०; ६.२.२.१-१०; ८.१.३.७; ७.१.१४.२४)।

कृष्ण यजुर्वेद की सर्व शाखाओं के लिये चरक यह नाम प्रयुक्त होता है। तथापि महाराष्ट्र में कृष्णयजुर्वेद की चरक नामक ब्राह्मणज्ञाति उपलब्ध है। वह ज्ञाति मैत्रायणी शाखा की है। उनका सूत्र मानव एवं वाराह है। चरक ब्राह्मणग्रंथ का निर्देश ऋग्वेद के सायणभाष्य में भी आया है (ऋ. ८.६६.१०)।

'चरक' नाम का शब्दशः अर्थ, 'प्रायश्चित्त करने-वाले' ऐसा है। वैशंपायन के लिये जिन्होंने प्रायश्चित्त किया, वे सत्र वैशंपायनशिष्य चरक नाम से प्रसिद्ध हुए। वैशंपायन को 'चरकाध्वर्यु' कहा गया है (वैशंपायन देखिये)।

पुरुषसूक्त में, चरक (आचार्य) को अग्निप्राणियों में समाविष्ट किया गया है (वा. सं. ३०.१८)। शुक्र तथा कृष्णयजुर्वेद का परस्परनिषेध इससे प्रकट होता है।

याज्ञवल्क्य के अनुयायियों के लिये वह नाम प्रयुक्त नहीं होता था। क्यों कि, उन्होंने वैशंपायन के लिये प्रायश्चित्त नहीं किया (वैशंपायन तथा ध्यास देखिये)। श्यामा-यनि (उदीच्य), आसुरि (मध्य) तथा आलेवि (प्राच्य) ये चरकाध्वर्यु तथा तैत्तिरीयों के शिष्य हैं। यथा तथा पुण्डरीक में प्रथम अभिधार किये किया जावे, इस विषय में चरकाध्वर्यु का याज्ञवल्क्य से मतभेद है (श. ब्रा. ३.६.३.२४)।

चरंत—(सो. ध्रुव.) वायु के मत में आग्निपेण-पुत्र ।

चरिष्णु—होनेवाले सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक (मनु देखिये) ।

चर्मवत्—शकुनि का कनिष्ठ भ्राता । भारतीयसुद्ध में इरावत् ने इसका वध किया (म. भा. ८६.२४) ।

चर्मशिरस्—व्युत्पत्ति वतानेवाला एक आचार्य (नि. ३.१५) ।

चर्यणी—वशु नामक नवम आदित्य की पत्नी । इसे भृगु नामक पुत्र था (भा. ६.१८.४) ।

२. अर्यमा आदित्य के मातृका से उत्पन्न पुत्रों का नाम (भा. ६.६.४२) ।

चलकुंडल—भृगुकुल का गोत्रकार ।

चलि—भृगुकुल का गोत्रकार ।

चलिक—भृगुकुल का गोत्रकार ।

चलुभि—यजुर्वेदी ब्रह्मचारी ।

चाक्र—एक आचार्य । रेवोत्तरस् स्थपति पाटव चाक्र (श. ब्रा. १२.८.१.१७), तथा रेवोत्तरस् पाटव चाक्र स्थपति (श. ब्रा. १२.९.३.१), इन भिन्नभिन्न नामों से इसका उल्लेख प्राप्त है । इसने कौरव्य राजा ब्राह्मिक प्रातिपीय के विरोध की पर्वाह न करते हुए, दुष्ट-रीतु को, दस पीढियों के बाद, पुनः राजगद्दी पर स्थापित किया ।

चाक्रायण—उषस्त का पैतृक नाम ।

चाक्षुष—क्षुप देखिये ।

२. चक्षु ४. देखिये ।

३. विश्वकर्मा का पुत्र । इसे विश्वेश्वर तथा साध्वगण नामक दो पुत्र थे ।

४. भौत्य मन्वन्तर का देवगण ।

५. अग्नि देखिये ।

६. चक्षु का पुत्र (भा. ८. ५. ७) । यह षष्ठ मन्वन्तर का अदिपति एवं मनु था । चक्षु सर्वतेजस् तथा आकृति का यह पुत्र था । इसे नड्यला नामक पत्नी थी (भा. ४. १३. १५) । भागवत में अन्यत्र, इसके पिता चक्षु को ही मनु माना है ।

यह अंग राजा का पुत्र था । यह पुलह ऋषि की शरण में गया । पुलह ने इसे उद्देश किया । इस उपदेश के अनुसार, इयाने विरजा नदी के किनारे बारा साल तक थोर तपस्या की । तपस्या का प्रथम वर्ष वृक्ष के सूखे पत्ते खा कर यह रहा । पश्चान् केवल पानी पी कर तथा

आग्नि केवल वायुभक्षण कर के इसने तप किया । इस प्रकार बारह वर्ष तक इसने वाग्मय मंत्र का विकास उप किया । इससे देवी प्रसन्न हो गई । उसने इसे मन्वन्तराधिपत्य तथा दस उत्तम पुत्र दिये (दे. भा. १०. ९) ।

मार्कण्डेय पुराण में इसकी जीवनकथा अलग ढंग से दी गयी है (मार्क. ७३) । पहले जन्म में यह ब्रह्मदेव के चक्षुओं से उत्पन्न हुआ था । अतः इस जन्म में इसे चाक्षुप नाम प्राप्त हो गया । जन्मतः इसे पूर्वजन्म का ज्ञान था । अनभिन्न राजा को यह भद्रा से ऊबघ हुआ । जन्मते ही सात दिन के अंदर इसने हँस दिया । तब भद्रा ने इसे पूछा, 'तुम्हें हँसी कैसे आई ?' तब इसने कहा, 'स्वार्थबुद्धि से एक मार्जारी तथा एक जातहारिणी मुझे खाने के लिये घात लगाये बैठी हैं । तुम भी उन्हीं के अनुसार, 'बादमें यह मुझे सुख देगा,' इस स्वार्थबुद्धि से मेरा भरणपोषण कर रही हो ।' तब 'मैं स्वार्थी नहीं हूँ,' यह दर्शाने के लिये, भद्रा इसे वहीं छोड़ कर चली गई । उस समय जातहारिणी इसे उठा कर ले गई ।

उसी समय विक्रान्त की पत्नी हैमिनी प्रसन्न हुई थी । उसकी शय्या पर जातहारिणी ने इसे रखा । विक्रान्त का पुत्र बोध नामक ब्राह्मण के वर ले जा गया । बोध ब्राह्मण का पुत्र उसने खा लिया । यह जातहारिणी रोत्र इती प्रकार पुत्रों की अन्तःखट कर के, क्रम से आनेवालों तीसरा पुत्र खा लेती थी ।

विक्रान्त ने इसका नाम आनंद रखा । व्रतबंध होने के बाद इसे गुरु को सौंपा । गुरु ने इसे माँ को नमस्कार कर के आने के लिये कहा । तब संपूर्ण हकीकत बता कर इसने पूछा, 'मैं किस माता को प्रणाम करूँ ?'

बाद में स्वयं ही इसने विक्रान्त को कहा, 'तुम्हारा पुत्र विशाल ग्राम में बोध नामक ब्राह्मण के वर में है । उसे ले आओ । मैं वन में तपश्चर्या करने जा रहा हूँ' (विक्रान्त देखिये) । बाद में यह वन में जा कर तपश्चर्या करने लगा । ब्रह्मदेव ने आ कर इसे तपश्चर्या से परावृत्त किया, तथा कहा, 'तुम छठवें मनु बननेवाले हो, अतएव अपनी कर्तव्यपति के लिये सिद्ध रहो' । ब्रह्मदेव के कथनानुसार यह कार्यप्रवण हुआ । उग्र राजा का वनवा विद्वान् से इसने विवाह किया । उससे इसे छठ पुत्र हुए (मनु देखिये) ।

कूर्मावतार तथा समुद्रमंथन इसीके मन्वन्तर में हुए (भा. ८.५.७-१०) ।

चाणक्य—एक विद्वान् ब्राह्मण। शिशुनागवंश का अंतिम राजा महानंदिन् था। इसके बाद शूद्रापुत्र नंद गद्दी पर आया। उसका तथा सुमाल्य आदि अन्य आठ नंदों का संहार इसने किया। मौर्य चंद्रगुप्त को गद्दी पर बैठाया। नंदों का राज्यकाल सौ वर्षों का था। उनमें से अंतिम बारह वर्षों में आठ नंदों का इतने संहार किया (भा. १२.१; विष्णु ४.२२-२४; वायु. ९९. मत्स्य. २७२; ब्रह्मांड. ३.७४)। इसे ही विष्णुगुप्त, कौटिल्य तथा कौटिल्य कहते हैं। इसका 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' एक सुप्रसिद्ध ग्रंथ है। (विष्णुगुप्त देखिये)।

चाणिक्य—एक राजर्षि। शुकतीर्थ पर तप करने के कारण, इसे सिद्धि प्राप्त हुई (पद्म. सू. १९.१४)।

चाणूर—युधिष्ठिर की सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ४.२२)।

२. कंस की सभा का एक मन्त्र। कृष्ण धनुर्योग के लिये मथुरा आया, तब उसने इसका वध किया (म. स. परि. १. क्र. २१ पंक्ति. ८४६; भा. १०.४४)।

चातकि—भृगुकुल का गोत्रकार।

चातुर्मास्य—सर्वितृ नामक पाँचवें आदित्य एवं पृथ्वी की संतानों में से एक (भा. ६.१८.१)।

चांद्रमसि—भृगुकुल का गोत्रकार।

चांधनायन—आनंदज का पैतृक नाम (वं. ब्रा. १.१)।

चामुंडा—दुर्गा देखिये।

चापेय—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५८. कुं.)।

चायमान—अभ्यावर्तिन् का पैतृक नाम (क्र. ६.२७. ५;८)।

चारु—कृष्ण तथा रुक्मिणी का पुत्र।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

चारुगुप्त—कृष्ण तथा रुक्मिणी का पुत्र।

चारुचंद्र—कृष्ण तथा रुक्मिणी का पुत्र।

चारुचित्र—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भारतीययुद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११.१९)।

चारुचित्रांगद—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

चारुदेष्ण—विष्णु, भागवत, तथा महाभारत के मत में कृष्ण तथा रुक्मिणी का पुत्र। इसकी बहन चारुमती। यह भोज के हाथों मारा गया। (म. मौ. ४.४३)।

२. मद्रदेशीय राजपुत्र। इसकी पत्नी मंदोदरी।

चारुदेह—कृष्ण तथा रुक्मिणी का पुत्र (भा. १०. ६१.८)।

चारुनेत्रा—एक अम्बरा (म. स. १०.११)।

चारुपद—(सो. पूरु.) भागवत मत में मनस्यु का पुत्र। इसका नाम विष्णु में अभय, मत्स्य में पीतायुध तथा वायु में जयद दिया गया है।

चारुमती—कृष्ण तथा रुक्मिणी की कन्या। यह कृतवर्मन् के पुत्र बलि की भायां थी।

चारुमत्स्य—विश्वामित्र का एक पुत्र (म. अनु. ७.५९ कुं.)।

चारुवर्मन्—दशार्णधिपति। इसकी कन्या सुमना। वह दम की पत्नी थी (मार्क. १३०)।

चारुशीर्ष—इन्द्र का प्रियमित्र तथा एक राजर्षि। यह आलंब गोत्रज था। इसलिये इसका आलंबायन नाम प्रचलित हुआ। इसने गोकर्णक्षेत्र में सौ वर्षों तक उग्र तपस्या की। इसे सौ पुत्र हुए (म. अनु. १८.५)।

चारुहासिनी—कौंडिन्यपुर के भीम राजा की पत्नी (गणेश. १.१९.७)। रुक्मांगद इसका पुत्र था।

चार्वाक—नास्तिक जड़वाद का प्रातिनिधिक आचार्य। यह बृहस्पति का शिष्य था। बृहस्पतिस्त्रु जड़वाद का ग्रंथ है। इस ग्रंथ में केवल प्रत्यक्ष प्रमाण तथा ऐहिक सुख को ही परमश्रेय माना है।

तत्त्वज्ञान—चार्वाकप्रणीत 'नास्तिक जड़वाद' के अनुसार, केवल भौतिक जगत् ही सत्य है। पंचमहाभूतों में से पृथ्वी, जल, वायु तथा अग्नि चार भूत प्रत्यक्ष एवं सत्य हैं, आकाश अप्रत्यक्ष है। इन चार भूतों के योग से ही विश्व के समस्त पदार्थों की उत्पत्ति है। आत्मा पृथक् नहीं है। चार भूतों के योग से ही चैतन्य उत्पन्न हो जाता है। मरने के बाद जीव नाम की कोई वस्तु शेष नहीं रह जाती। चतुर्भूतों का विलय हो जाता है। उनके योग से उत्पन्न चैतन्य नष्ट हो जाता है। अतः परलोक, स्वर्ग, नरक, ये सब कवि-कल्पनाएँ हैं। संसार का नियंत्रण करनेवाला राजा ही परमेश्वर है। धर्मकर्म धूर्त पुरोहितों का जीविकासाधन है। भस्मीभूत देह का पुनरागमन नहीं होता। अतः जब-तक जिये सुखपूर्वक जिये। ऋण कर के भी धृतवान करे।

इस मत के प्रतिपादकों में पुराण कश्यप, अजितकेशकंबलिन, पकुध, काञ्छायन आदि आचार्य प्रमुख थे।

इस विचारधारा के प्रतिपादन के लिये, चार्वाक के नाम का प्रातिनिधिक रूप से निर्देश किया जाता है। इस मत का प्रतिपादन करनेवाले चार्वाकदर्शनादि कई ग्रंथ भी उपलब्ध हैं।

एक सामान्य लोकमान्य मत चार्वाक प्रतिपादन करता है। अतः चार्वाकदर्शन को लोकायतदर्शन भी कहते हैं।

२. दुर्योधन का मित्र। ब्राह्मणों का अयमान करने से इसका नाश हुआ (म. शां. ३९-४०)। इसका पूर्वजन्म भी यहाँ दिया है।

चिकित्वन्—तुपित देवों में से एक।

चिकुर—एक सर्प। यह आर्यक का पुत्र तथा सुमुख का पिता था (म. उ. १०१.२४)।

चिक्रित—लक्ष्मीपुत्र।

चिधुर—महिषासुर का सेनापति। चिधुराक्ष इसका नामांतर है (महिषासुर देखिये)।

चित्ति—स्वायंभुव मन्वन्तर के अथर्वण ऋषि की भार्या। इसे दन्वन् नामक अश्वमुखी पुत्र था (भा. ४. १.४२)।

चित्र—एक सर्प (म. स. ९.८)।

२. दुर्योधन के पक्ष का एक राजा। भारतीययुद्ध में प्रतिविध्य ने इसका वध किया (म. क. १०.३१)।

३. पांडवराक्षीय चैत्र राजा। भारतीय युद्ध में कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०.५०)।

४. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. ११२.३०)।

५. (सो. वृष्णि.) वृष्णि राजा का पुत्र। इसका नाम भागवत में चित्ररथ तथा वायु में चित्रक दिया है। वायु में इसे पृथिव्युत्र कहा है।

६. एक राजा। सोमरि के सूक्त में इसका उल्लेख है (ऋ. ८.२१.१७-१८)। यह सोमरि का आश्रयदाता था (ऋ. ८.२१.१८)।

७. द्रविड देश का एक राजा। यह त्रिवेणीसंगम पर स्नान करने से मुक्त हुआ (पद्म. उ. १२९; चित्रगुप्त देखिये)।

चित्र गार्ग्यायणि—एक क्षत्रिय ऋषि। आरुणि ने इससे ब्रह्मज्ञान प्राप्त किया (कौ. उ. १.१)। चित्र गार्ग्यायणि इसीका नामान्तर है।

चित्र गौश्रायणि—एक आचार्य (सां. ब्रा. २३. ५)।

चित्रक—(सो. वृष्णि.) वृष्णिपुत्र (चित्र ५. देखिये)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

३. एक राजा। राजसूय यज्ञ में इसने पांडवों की सहायता की थी।

चित्रकुंडल—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

चित्रकेतु—स्वायंभुव मन्वन्तर में वसिष्ठ ऋषि तथा ऊर्जा का पुत्र (भा. ४.१.४१)।

२. शूरसेन देश का राजा। इसकी एक करोड़ स्त्रिया थीं पर वे सारी अनपत्य थीं।

एक बार अंगिरस ऋषि इसके पास आये। तब इसकी प्रार्थनानुसार उन्होंने यज्ञ किया। उसमें आदित्य को हविर्भाग देने के बाद, इसकी पटरानी कृतवृत्ति ने हुतयेप भक्षण किया। इससे उसे पुत्र हुआ। परंतु यह उसकी सौतों को सहन न हो कर, उन्होंने बालक को विप दे दिया। इससे सब शोकाकुल हो गये। इतने में अंगिरस ऋषि तथा नारद वहाँ प्रकट हुए। 'अनित्य के लिये शोक करना उचित नहीं है,' ऐसा उपदेश उन्होंने इसे किया। अपने दुःख को सम्हाल कर, इसने पुत्र की उत्तरक्रिया की। पश्चात् नारद का उपदेश ले कर, यह तपस्या करने यमुना के किनारे गया।

दूसरे जन्म में यह विद्याधरों का राजा बना। एक बार यह विमान में घूम रहा था। तब इसने देखा कि, शंकर पार्वती को गोद में ले कर, सभा में बैठे हैं। यह देख कर इसने हँस दिया। तब पार्वती ने इसे, 'तुम राक्षस यन्त्रों' ऐसा शाप दिया। यह परम विष्णुभक्त था। इस कारण, शाप देने की शक्ति होते हुए भी, इसने पार्वती को उल्टा शाप नहीं दिया। इसने उससे क्षमा माँगी, तथा यह वापस गया। पार्वती के शाप से यह वृत्रासुर बना (भा. ६. १४-१७)।

३. दशरथपुत्र लक्ष्मण के चंद्रकेतु नामक पुत्र का नामांतर। यह चंद्रकांतनगर में रहता था (भा. ९.११. १२)।

४. (सो. नील.) पान्चालदेश का राजा। यह दुष्य का पुत्र था। द्रोणाचार्य ने इसके भाई कीरकेतु का वध किया। इसलिये क्रोधित हो कर इसने द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया। परंतु द्रोणाचार्य ने इसका भी वध किया (म. द्रो. १२२)। इसे सुकेतु नामक पुत्र था (म. आ. १८६; क. ३८.२१)।

५. (सो. वृष्णि.) भागवत मतानुसार देवभाग एवं कंस का ज्येष्ठ पुत्र।

६. (सो. वृष्णि.) श्रीकृष्ण तथा जंबवती का पुत्र।

७. गरुड का पुत्र (म. उ. ९९. १२)।

चित्रगंधा—गोकुल की एक गोपी। जानालि ऋषि ने श्रीकृष्ण की उपासना की थी। इसलिये गोकुल के प्रचेड

नामक ग्वालै के घर उसे चित्रगंधा नामक गोपी का जन्म प्राप्त हुआ (पद्म. पा. ७२)।

चित्रगु—श्रीकृष्ण का सत्या से उत्पन्न पुत्र।

चित्रगुप्त—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

२. पूर्वकाल में कायस्थ जाति में मित्र नामक गृहस्थ था। उसकी दो संतानें थीं। चित्र नामक पुत्र, तथा चित्रा नामक पुत्री। मित्र की मृत्यु के बाद, उसकी स्त्री सती हुई। कालांतर में चित्र एवं चित्रा प्रभासक्षेत्र में सूर्य की आराधना करने लगे। इसका ज्ञान देख कर, यमधर्म ने इसको अपने कार्यालय में लेखक नियुक्त किया। यही चित्रगुप्त नाम से प्रसिद्ध हुआ (स्कंद. ७.१.१३९)। इसने धर्म का रहस्य यम को बताया (म. अनु. १९३. १३ कुं.)। चित्रलेखा ने चित्रगुप्त को ऐश्वर्यसंपन्न बनाया। इस ऐश्वर्य को देख, वैवस्वत मन्वन्तर में विचित्रवस्तु निर्माण करनेवाला विश्वकर्मा इसका प्रतिस्पर्धी बन गया (भवि. प्रति. ४.१८)।

चित्रचाप—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भीम ने इसका वध किया।

चित्रज्योति—प्रथम मरुद्गणों में से एक।

चित्रदर्शन—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

चित्रधर्मन्—क्षत्रिय राजा। भारतीययुद्ध में यह दुर्योधन के पक्ष में था।

चित्रध्वज—चंद्रप्रभ नामक राजा का पुत्र। इसने कृष्ण को प्रिय लानेवाली सुंदरी की उपासना की। इसलिये इसे सुंदर गोपकन्या का जन्म प्राप्त हुआ (पद्म. पा. ७२)।

चित्रवर्ह—मरुद्पुत्र।

चित्रवाण—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

चित्रवाहु—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

२. कृष्ण का एक पुत्र। यह महारथी था (भा. १०. १०.३३)।

चित्रभानु—(सो. वृष्णि.) कृष्ण का नाती। यह महारथी था (भा. १०.९०.३३)।

चित्रमहस् वासिष्ठ—सुक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१२२)।

चित्रमुख—एक ऋषि। यह प्रथम वैश्य था। बाद में यह ब्राह्मण बना तथा ब्रह्मर्षि हुआ। इसने अपनी कन्या वसिष्ठपुत्र को दी थी (म. अनु. ५३. १७. कुं.)।

चित्ररथ—एक राजा। यह तुर्यसो का शत्रु था। इंद्र ने सुगास के लिये सरयू नदी के तट पर अर्ण तथा चित्ररथ का वध किया (ऋ. ४.३०.१८)।

इसके लिये कामेय ने द्विरात्रयज्ञ किया। इस कारण इसके कुल को क्षत्रपतित्व प्राप्त हुआ, एवं अन्य लोग इसके आश्रित हुए। इससे इस कुल के श्रेष्ठत्व का पता चलता है (पं. ब्रा. २०.१२.५)। इसके कुल में ज्येष्ठ राजपुत्र सिंहासन पर बैठता था, एवं उसके भाई उसके अनुचर होते थे (शौनक देखिये)।

२. (सो. पुरु.) कुरु का पुत्र (म. आ. ८९.४४)।

३. मुनि तथा कश्यप के देवगंधर्व पुत्रों में से एक (अंगारपर्ण देखिये)। युधिष्ठिर ने यज्ञ किया, तब इसने उसे सौ अश्व दिये (म. स. ४८.२२)। चतुर्विध आश्रमों से किसी एक आश्रम का मनुष्य, तथा चातुर्वर्ण्यों में से किसी एक वर्ण का मनुष्य, जिन लक्षणों पर से पहचाना जा सकता है, वे लक्षण इसने युधिष्ठिर को बताये। उसी प्रकार उसे तापत्यसंवरणाख्यान बता कर, पांडव तापत्य किस प्रकार है, वह समझाया (म. आ. १५९-१६०)।

४. (स्वा. प्रिय.) गय को गयती से उत्पन्न पुत्रों में से ज्येष्ठपुत्र। इसे ऊर्णा नामक स्त्री से सम्राट नामक पुत्र हुआ (भा. ५.१५.१४)।

५. वीरबाहु का पुत्र। कुश की कन्या हेमा के स्वयंवर के समय, इसने अन्य लोगों पर मोहनाख डाल कर, हेमा का हरण किया। परंतु कन्या को चोरी से ले जाना ठीक नहीं, इसलिये इसने मोहनाख वापस लिया। यह स्वयं नगर के बाहर खड़ा हुआ। तत्पश्चात् युद्ध हुआ, जिसमें इसने सब को पराजित किया। लव को यह पराजित न कर सका। तब पास ही खड़े हो कर, युद्ध का अवलोकन करनेवाला वीरबाहु आगे बढ़ा। उसने लव को मूर्च्छित किया। कुश वीरबाहु को बाँध लाया। राम ने उन्हें बताया कि, यह मेरा मित्र है, तथा उसे छुड़ाया। बाद में लव की मूर्च्छा उतरने पर, हेमा का चित्ररथ से विवाह करवाया। पश्चात् वीरबाहु को राम ने बड़े सम्मान से बिदा किया (आ. रा. राज्य. २.३)।

६. (सु. निमि.) सुपार्ष्व जनक का पुत्र। विष्णु मतानुसार इसे संजय कहा गया है। इसका क्षेमधी नामक पुत्र था।

७. (सो. अनु.) राजा रोमपाद का नामांतर। दशरथ इसका मित्र था। यह निपुत्रिक था, इसलिये दशरथ ने अपनी पुत्री शांता इसे दत्तक दी। इसने शांता ऋश्यशृंग ऋषि को दी। बड़ी युक्ति से उसे अपनी नगरी में निर्मित कर, स्वयं पुत्रकामेष्टि यज्ञ करवाया तथा दशरथ

से भी करने को कहा। इसी कारण दोनों राजाओं को पुत्र हुए। इसे चतुरंग नाम एक पुत्र हुआ (भा. ९.२३. ७-२०)।

८. दशरथ का सारथि।

९. (सो. क्रोष्टु.) भागवत मतानुसार रशोकु तथा मत्स्य मतानुसार सौम्य का पुत्र (रशोकु देखिये)।

१०. वृष्णिपुत्र (चित्र ५. देखिये)।

११. मार्तिकावतक देशीय राजा। यह जमदग्नि का समकालीन था। इसकी क्रीड़ा देखते रहने के कारण, रेणुका को नदी से घर वापस आने में देर हुई (म. व. ११६.६; जमदग्नि देखिये)।

१२. भारतीययुद्ध में पांडवों के पक्ष का एक शैव्य राजा (म. द्रो. २२.५१)।

१३. (सो. नील.) द्रुपदपुत्र। द्रोणाचार्य ने इसका वध किया। इसे वीरकेतु, चित्रवर्मा तथा सुधन्वा नामक तीन भाई थे (म. द्रो. ९८.३७)।

१४. अंग देश का राजा। इसकी स्त्री प्रभावती, ऋषि देवशर्मा की रुचि नामक स्त्री की वहन थी। प्रभावती के घर होनेवाले विवाह समारंभ में अप्सराओं द्वारा नीचे डाले गये पुष्पों में से कुछ पुष्प, रुचि ने अपने बालों में लगाये। यह देख कर प्रभावती ने कहा, 'मुझे भी ऐसे पुष्प दो'। तब रुचि ने यह बात अपने पति को बताई। उसके पति देवशर्मा ने अपने शिष्य विपुल द्वारा ऐसे पुष्प मँगवाये (म. अनु. ७७. कुं.)।

१५. (सो. कुरु. भविष्य.) भविष्य मतानुसार निश्चक्र का पुत्र। मत्स्य मतानुसार भूरिपुत्र, भागवत मतानुसार उक्तपुत्र, वायु तथा विष्णु मतानुसार उष्णपुत्र। इसने एक हजार वर्ष राज्य किया।

चित्ररूप—रुद्रगणों में से एक।

चित्ररेखा—कृष्ण की प्रिय गोपी (पद्म. पा. ७७)।

२. शणासुर के कुंभांड नामक प्रधान की कन्या। यह उषा की सखी थी। यह चित्रकल्प में कुशल थी। इसने कृष्ण के नाती अनिरुद्ध को योगसामर्थ्य से उठा लाया था। चित्रलेखा भी इसका नाम है (भा. १०.६२.१४)।

चित्ररेफ—(स्वा. प्रिय.) मेघातिथि के सात पुत्रों में से एक। इसका खंड इसी के नाम से प्रसिद्ध है (भा. १०.६२.१४)।

चित्रलेखा—एक अप्सरा। पुरूरवस् ने केशिन् नामक दैत्य को मार कर इसे मुक्त किया था।

२. पार्वती की सखी। पूर्वजन्म में यह शतशृंग का कन्या थी। जन्म से ही इसे वकरी का सुल था।

इसके पूर्वजन्म में यह वकरी थी। महीसागर संगम में केवल इसका धड़ गिरा। इसके धड़ ने राजकुल में जन्म लिया। सिर अलग जा गिरने के कारण, वह उसी रूप में जन्मा। बाद में स्तनतीर्थ पर इसने व्रत, उद्यायन आदि किया। सिर ढूँढ कर उसका मस्तक संगम में डाला। स्कन्द के द्वारा बाँधा गया मंदिर जीर्ण हो गया था। उसे सोने का व्रत कर इसने उसका जीर्णोद्धार किया। तब शंकर ने इससे कहा, तुम्हारे 'कुमारी' नाम के कारण, मैं यहाँ "कुमारीश" के नाम से प्रसिद्ध होऊँगा। शंकर ने इसे महाकाल नामक सिद्ध से विवाह करने के लिये कहा। तदनंतर उससे विवाह कर के यह बदरोग में गई। वहाँ पार्वती ने इसे चित्रलेखा नामक अपनी सखी बनायी (स्कन्द. १.२.३.९)।

३. चित्रगुप्त देखिये।

चित्रवती—वसु की पत्नी।

चित्रवर्मन्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११.१८-१९)।

२. (सो. नील.) द्रुपदपुत्र पांचाल। भारतीय युद्ध में द्रोण ने इसका वध किया (म. द्रो. ९८.३७-४१)। इसका वंधु वीरकेतु।

३. पांचाल सुचित्र का पुत्र। भारतीययुद्ध में द्रोण ने इसका वध किया (म. क. ४.७८)।

४. सीमंतिनी देखिये।

चित्रवाहन—मण्डूर नगर का पांडव्य राजा। प्रभंजन इसका मूल (आदि) पुत्र था। मलयध्वज तथा प्रवीर इसके अन्य नाम हैं। अर्जुन तीर्थयात्रा करने जाने लगा। उस समय इसने अपनी कन्या चित्रांगदा, अर्जुन की इच्छानुसार, विवाहविधि से इसे दी। बाद में अर्जुन से उसे वधुवाहन नामक पुत्र हुआ। उसी के हाथ में इसने राज्य-सूत्र दिये (म. आ. २०७.१४; स. पारि. १. क्र. १५)। भारतीययुद्ध में अश्वत्थामा ने इसका वध किया (म. क. ५६.)।

चित्रवेगिक—एक सर्प (म. आ. ५२.१७)।

चित्रशिखंडिन—मरीचि, अंगिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, तथा वसिष्ठ इन सप्तर्षियों के समुदाय के लिये यह संज्ञा दी गयी है (भवि. ब्राह्म. २२; म. शां. ३२२.२७)।

चित्रसेन—(सू. विष्ट.) भागवत मतानुसार निरप्यंत-पुत्र। इसका पुत्र दक्ष।

२. देवसावर्णि मनु का पुत्र।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. क. ४.२२.)।

४. अभिसारपुरी का क्षत्रिय राजा। अर्जुन ने इसे पराजित किया (म. स. २४.१८)। यह दुर्योधन के पक्ष में था। श्रुतकर्मन् ने भारतीय युद्ध में इसका वध किया (म. क. १०.१४)।

५. पांडवों के पक्ष का राजा। भारतीययुद्ध में समुद्रसेन ने इसका वध किया (म. क. ४.२७)।

६. कर्णपुत्र। भारतीययुद्ध में नकुल के द्वारा यह मारा गया (म. श. ९.१९)।

७. दुपद का पुत्र। भारतीय युद्ध में कर्ण ने इसे मारा (म. क. ३२-३७)।

८. जरासंध का सेनापति (म. स. २०.३०)।

९. एक गंधर्व (म. स. ४.३१.)। विश्वावसु नामक गंधर्व का पुत्र। इसकी गणना देवर्षियों में होती है। इसने देवलोक में अर्जुन को गंधर्वविद्या सिखायी (म. व. ४५.६)। इंद्र के कहने पर, इसने उर्वशी को अर्जुन के पास भेजा था (म. व. परि. १. क्र. ६.)। इंद्र के कहने पर, घोषयात्रा हेतु निकले दुर्योधन का अपमान करने के लिये, यह वहाँ गया (म. व. २२९.२८)। इसके साथ कर्ण का युद्ध हुआ। अंत में कर्ण पराजित हो कर भाग गया। इसने दुर्योधन को रक्षित किया, एवं उसे यह इंद्रलोक ले गया (म. व. २३१)। अंत में अर्जुन ने इसे पराजित किया (म. व. २३१-२३३)।

१०. एक राजा। इसने अनेक पाप किये थे। एक बार, एक बाघ का पीछा करते हुए, यह एक अरण्य में गया। तब कई अत्यंत स्त्रियों को इसने जन्माष्टमी का व्रत करते हुए देखा। राजा को भूख लगी थी। इसलिये उन स्त्रियों ने, नैवेद्य के लिये जो अन्न लाया था, उसमें से थोड़ा अन्न माँगा। उन्होंने इसे यह व्रत बताया तथा अन्न नहीं दिया। इससे इसकी पापबुद्धि नष्ट हो गई। इसने यह व्रत करने के, बाद इसका उद्धार हुआ (पद्म. ब्र. १३)।

चित्रसेना—एक अप्सरा। कश्यप की प्राधा से उत्पन्न कन्या।

चित्रा—(सो. वसु.) वायुमतानुसार वसुदेव की मदिरा से उत्पन्न पुत्री।

२. सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक।

३. चित्रगुप्त की स्त्री।

४. वाराणशी के सुवीर नामक वैद्य की स्त्री। इसने एक संन्यासी की सेवा की एवं उसे आदरपूर्वक भोजन कराया था (पद्म. मू. ८६; दिव्यादेवी देखिये)। इस कारण अगले जन्म में यह राजकन्या बन गयी।

५. एक अप्सरा (म. अनु. ५०.४७ कुं.)।

चित्राकुमारी—(सो. वसु.) वायुमतानुसार वसुदेव की पौरवी से उत्पन्न पुत्री।

चित्राक्ष—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११.१८)।

चित्रांग—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

२. एक योद्धा। राम ने अश्वमेध यज्ञ किया, तथा अश्व की रक्षा के लिये शत्रुघ्न को ससैन्य भेजा। चित्रांग ने उसकी सेना पर ब्राणहृष्टि की। पुष्कल तथा चित्रांग का धमासान युद्ध हुआ, जिसमें पुष्कल ने चित्रांग का वध किया (पद्म. पा. २७)।

चित्रांगद—एक गंधर्व। इसने शंतनु के पुत्र चित्रांगद का मया के द्वारा वध किया (म. आ. ९५.१०)।

२. सीमंतिनी नामक राजकन्या का पिता (शिव. उमा. २)।

३. (सो. कुरु.) शंतनु का सत्यवती से उत्पन्न पुत्र। शंतनु की मृत्यु के बाद यह गही पर बैठा। परंतु बाद में चित्रांगद गंधर्व ने हिरण्यवती नदी के किनारे तीन वर्ष युद्ध कर के इसका वध किया (म. आ. ९५)। इसे संतति न होने के कारण, इसके बाद विचित्रवीर्य राजगद्दी पर बैठा।

४. कलिादेशीय राजपूर नगरी का राजा (म. आ. १७७.१९)। दुर्योधन ने इसकी कन्या का हरण किया था (म. शां. ४.२)।

५. द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित एक राजा। यह दशार्ण देश का राजा था। अर्जुन ने इसे पराजित किया (म. आश्व. ८६.६)।

चित्रांगदा—चित्रवाहन राजा की कन्या। अर्जुन की भार्या। इसका पुत्र बभ्रुवाहन (चित्रवाहन देखिये)। इसने पांडवों के राजसूय यज्ञ के लिये करभार दिया था (म. स. परि. १. क्र. १५)। यह बभ्रुवाहनसहित याग के लिये हस्तिनापुर गयी थी (म. आश्व. ८९.२५)। पांडवों के महाप्रस्थान के समय, यह अपने पिता के घर वापस आ गयी।

२. कापोत देखिये।

चित्रायुध—पांचाल राजा । द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित राजाओं में से यह एक था (म. आ. १७७.१०.) । भारतीय युद्ध में कृपि ने इसका वध किया (म. क. ४०. ५०.) । यह महारथी था (म. उ. १६८.१६.) ।

२. (सो. कु.) धृतराष्ट्र का पुत्र । भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११.१८.) ।

चित्राश्व—शात्व देशाधिपति युमत्सेन का पुत्र । सावित्री के पति सत्यवान् का यह नामांतर था । वनपथ में इसे अश्व बहुत प्रिय था । यह भिष्मि के अश्व बनाता था, उनके चित्र खींचता था । अतः इसका नाम चित्राश्व पड़ा (म. व. २७८.१३.) ।

२. एक राजपि (म. अनु. १६५.४९.) ।

चित्रेपचित्र—(सो. कु.) धृतराष्ट्रपुत्र । भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११. १८.) ।

चिदि—(सो. क्रोष्ट.) मत्स्य एवं वायु मत में कौशिक का पुत्र । विष्णु एवं पद्म में इसे चेदि कहा गया है । भागवत में इसे उशिक का पुत्र कहा गया है । इसके देश का नाम चेदि था । इसके वंशज चित्र या चेदि कहलाते थे (भा. ९.२४.२.) ।

चिबिलक—(आंध्र. भविष्य.) लबोडर राजा का पुत्र । विष्णु में इसका नाम दिबिलक, तथा मत्स्य में अपीतक दिया है । इसका पुत्र भेषरवाति ।

चिरकारिन् वा चिरकारिक—मेधातिथि गौतम के दो पुत्रों में से कनिष्ठ । इसकी माता अहल्या । गौतम ऋषि को अहल्या के व्यभिचार का पता चला । तब उसने इसे मातृवध करने के लिये कहा । परंतु चिरकारी अपने नाम के अनुसार दीर्घसूत्री था । यह विचार करते बैठा रहा । बाद में, पत्नी का वध करने के लिये कहने पर, गौतम ऋषि को पश्चाताप हुआ । वह पत्नी के पास आया । चिरकारी शस्त्र ले कर मातृवध के लिये खड़ा था । पिता को देखते ही शस्त्र नीचे रख कर, इसने पिता को नमन किया । विचारी होने के कारण, इसके हाथों हत्या नहीं हुई (म. शां. २५.८; स्कंद. १.२.६.) ।

चिरांतक—गरुडपुत्र (म. उ. ९९.१३.) ।

चीरवासस्—एक यक्ष (म. व. १०.१७.) ।

२. दुर्योधनपत्नीय एक राजा (म. आ. ६१. ५६.) । चीरवास इसीका पाठभेद है ।

चुगुरि—एक अनार्य राजा । यह तथा इसका मित्र धुनि, दभीति ऋषि को सताते थे । दभीति के कहने पर, इंद्र

ने इन दोनों का वध किया (ऋ. १.११२-२३) । अन्यत्र, राम्बर, पिपु तथा शुष्ण के साथ इन दोनों का इंद्रद्वारा पराभूत होने का, तथा इनके दुर्गों को नष्ट करने का उल्लेख है (ऋ. ६.१८.८.) ।

चूडाला—शिखिष्वज राजा की भार्या । यह आत्म-ज्ञानी थी । इसका पति राज्य छोड़ कर अरव्य में चला गया । उसको आत्मज्ञान का मार्ग दर्शा कर, इसने पुनः राज्य करने के लिये प्रेरित किया (यो. वा. ७७-१११.) ।

चूर्णनाभ—कश्यप तथा वनु का पुत्र ।

चूल भागधिति—मधुप पैय का शिष्य (बृ. उ. ६.३.९-१०.) । माध्यंदिन आशुति में निर्दिष्ट चूड़ इसीका पाठभेद है ।

चूळि—एक ऋषि । यह तपस्या कर रहा था । सोमदा नामक गंधर्वी इसकी सेवा कर रही थी । तपश्चर्या पूर्ण होने के बाद, गंधर्वी ने पुत्रप्राप्ति की इच्छा दर्शाई । इसने एक मानसपुत्र निर्माण कर के उसे दिया । उसका नाम ब्रह्मदत्त (वा. रा. वा. ३३.) ।

चेकितान—वृष्णिवंशीय क्षत्रिय राजा । यह पांडवों के पक्ष में था (म. स. ४९.९; उ. २५.२; ५६.२; १९६. २३; भी. १९.१४.) । यह द्रौपदीस्वयंवर में गया था । भारतीययुद्ध में भी यह था । इसके रथ के अश्व कुछ पील्यहट लिये थे । सुदर्मा के साथ, काफी देर तक, इसका युद्ध हुआ । द्रोण ने इसके सारथी पाणि को मार डाला (म. द्रो. १२५.) । भारतीययुद्ध में यह दुर्योधन के द्वारा मारा गया (म. सं. ११.३१.) ।

२. एक ब्राह्मण । यह वृषि करता था । एक दिन यह खेती का काम कर, पसीने से लथपथ हो घर आया । पसीना न पोंछ कर ही जल्दी में इसने शंकर की पूजा कर, नैवेद्य अर्पण किया । मरणोपरांत यह शिवलोक गया । वीरभद्र ने इसे श्राप दिया, 'पसीना न पोंछने के पहले ही शिव पूजन किया, इसलिये तुम्हारे शरीर से हमेशा पसीने की धाराएँ बहती रहेंगी । तुम्हें स्वेदगण नाम मिलेगा' (पद्म. पा. ११७.) ।

चेदि—(सो. यदु. रोमपाद.) उशिक का पुत्र । यह विदम्बपुत्र रोमपाद के वंश में से एक था । इसमें चैत्रमृग पैदा हुए । (भा. ९. २४. १-२; चिदि, शिशुपाल तथा कश्यु चैत्र देखिये) । चेदि देश विंध्य के पश्चिम भाग में था । इस देश के रूप महाभारतादि ग्रंथों में प्रसिद्ध है ।

चेदिप—(सो. ऋक्ष.) उपरिचर वसु का पुत्र एवं चेदि देश का राजा (भा. ९. २२. ६)।

चेनातकि—अंगिराकुल का गोत्रकार।

चेलक शांडिल्यायन—एक ऋषि। एक विशेष उपसना के प्रकार का यह ज्ञाता था (श. ब्रा. १०. ४. ५. ३)।

चैकितानेय—सामविद्या का एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. १. ३७. ७; ४२. १; २. ५२)। इसका सही नाम वसिष्ठ चैकितानेय था। साम के बारे में लिखते समय, इसका नामनिर्देश प्राप्त है (वृ. उ. १. ३. २४)। षड्विंश ब्राह्मण (४१), तथा वंशब्राह्मण में भी इसका उल्लेख आया है (२)। बहुत सारे ग्रंथों में इसका निर्देश चैकितानेय नाम से प्राप्त है। शंकराचार्य ने चैकितानेय का अर्थ, चैकितान का पुत्र लगाया है। परन्तु वंशब्राह्मण के भाष्य में, चैकितानेय एक विशेष नाम माना गया है। यह वासिष्ठ अरिहृष्य का शिष्य था। ब्रह्मदत्त का यह पैतृक नाम था।

चैकितायन—शुक्ल का पैतृक नाम (छां. उ. १. ८. १)।

चैत्य—मरुद्वणों के प्रथम गणों में से एक।

चैत्र—यज्ञसेन का पैतृक नाम (का. सं. ११. ४)। २. स्वरोचिप मन्वन्तर के मनु का पुत्र।

चैत्ररथ—चित्ररथ राजा का पुत्र। भारतीययुद्ध में यह पांडवों के पक्ष में था।

चैत्रसेनि—चित्रसेन पांचाल का पुत्र। यह पांडव-वंशीय था तथा भारतीययुद्ध में पांडवों के पक्ष में था।

चैत्रा—ज्यामघ राजा की भार्या तथा शिबि राजा की कन्या। शैल्य इसीका नामान्तर है।

चैत्रायण—अत्रिकुल का गोत्रकार।

चैत्रियाथण—यज्ञसेन का वंशज। इसने छंदोभिद् नामक दृष्टकों की चित्ति से, पशुओं की प्राप्ति कर ली (तै. सं. ५. ३. ८. १)।

चैद्य—(सो. अज.) मत्स्य मत में मैत्रेयपुत्र।

चैद्योपरिचर वसु—(सो. ऋक्ष.) उपरिचर वसु देखिये।

२. शिशुपाल को चैद्य कहते थे (कथु तथा विदि देखिये)।

चैल—व्यास की सामशिष्यपरंपरा के वायु मता-नुसार शंसीपुत्र का शिष्य।

चैलकि—जीवल का पैतृक नाम (श. ब्रा. २. ३. १. ३४)।

चोल—द्रमिड देश का क्षत्रिय राजा (म. स. परि. १. क. १५, पंक्ति ५६)।

२. कांतिपुर का राजा। अनंतशयन में बड़े ठाठठाठ से इसने श्रीरंग की पूजा की। तदनंतर विष्णुदास नामक ब्राह्मण ने तुलसीपत्र से श्रीरंग की बड़ी भक्ति से पूजा की। एक गरीब ब्राह्मण की यह मजाल देख कर, राजा बड़ा ही क्रोधित हुआ।

पश्चात् इन दोनों ने तय किया कि, जो श्रेष्ठ विष्णुभक्त होगा, वह पहले वैकुण्ठ जावेगा। तदनंतर इसने दान-दक्षिणा, यज्ञयाग आदि प्रारंभ किया। विष्णुदास ने माघ तथा कार्तिक व्रत, तुलसीवन का पोषण, एकादशी, द्वादशा-क्षर मंत्र, उसी प्रकार विष्णुस्मरण, पूजन, नृत्य, गायन, तथा जागरण यह क्रम प्रारंभ किया। अन्त में इस भक्ति प्रभाव से विष्णुदास इसके पहले वैकुण्ठ गया। तब इसे उपरति हो कर, भक्ति छोड़ वाकी सब तुच्छ हैं, यह इसने जान लिया। इसने यज्ञ में छलांग लगाई। परंतु विष्णु ने इसे झेल लिया। विष्णु इसे स्वर्ग ले गया। चोल तथा विष्णुदास को स्वर्ग में सुशील तथा पुण्यशील ये नये नाम प्राप्त हो गये। वे ईश्वर के द्वारपाल बने। राज्यत्याग के बाद इसने अपने भतीजे को गद्दी पर बैठाया। (पद्म. उ. १०८. १०९; स्कंद. २. ४. २६-२७)।

चौक्षि—भृगुकुल का गोत्रकार।

चौलि—वसिष्ठकुल का गोत्रकार।

च्यवतान मारुताथ्य—एक राजा। यह मरुताथ्य का वंशज था। ध्वन्य, पुरुकुत्स तथा यह संवरण के आश्रय-दाता थे (ऋ. ५. ३३. ९)।

च्यवन—(सो. नील) एक राजा। दिवोदास को मित्रेयु नामक एक पुत्र था। च्यवन उसका पुत्र है। इस को बाद में सुदास नामक एक पुत्र हुआ (भा. ९. २२. १)।

२. (सो. ऋक्ष.) भागवत, विष्णु तथा वायु के मत में सुहोत्र का पुत्र, तथा मत्स्य के मत में सुधन्वन् का पुत्र।

३. गोकर्ण नामक शिवावतार का शिष्य।

४. एक धर्मशास्त्रकार। अपराकि तथा मिताक्षरा ग्रंथों में इसके धर्मशास्त्र का उल्लेख प्राप्त है (अप. १. २०७. ३; २६४-२६५; मिता. ३. ३०; ३. २९२)। निम्नलिखित विषयों पर इसने रचे काफी सूत्र तथा

श्लोकों का उद्धरण, इन दो ग्रंथों में दिया है—(१) गोदान के समय कहे जानेवाले मंत्र, (२) कुत्ता, चण्डाल, प्रेत, चित्ताभूम, मय, मयवाच आदि अस्वर्श वस्तुओं का स्पर्श होने पर किये जानेवाला प्रायश्चित्तविधी, (३) गौबध का प्रायश्चित्तविधी।

भास्करसंहिता के अन्तर्गत जीवदानतंत्र का यह रचयिता है (ब्रह्मवै. २. १६)। हेमाद्रि, माधवाचार्य, एवं मदनपारिजात इन तीन ग्रंथों में इसके आधार लिये गये हैं।

च्यवन भार्गव—एक प्राचीन ऋषि। ऋग्वेद में इसे एक वृद्ध तथा जराक्रान्त व्यक्ति के रूप में दिखाया गया है। इसे अश्विनियों ने पुनः युवावस्था तथा शक्ति प्रदान की, तथा इसे अपनी पत्नी के लिये स्वीकार्य तथा कन्याओं का पति बना दिया (ऋ. १.११२.६; १०; ११७.१२; ११८.६; ५.७४.५; ७.६८.६; १०.३९.४)।

ऋग्वेद में सर्वत्र इसे च्यवान कहा गया है। च्यवन नाम से इसका निर्देश, ऋग्वेद के अतिरिक्त अन्य सभी वैदिक ग्रंथों में, निरुक्त में तथा महाकाव्य में मिलता है। (नि. ४.१९)। सर्वानुक्रमणी में इसे भार्गव कहा है (ऋ. १०.१९)। यह भृगु का पुत्र था।

ब्राह्मणों में इसे दाभीच कहा गया है (श. ब्रा. ४.१. ५; पं. ब्रा. १४.६.१०)। ग्राम के बाहर बैठे हुए, भयानक आकृतिवाले, तथा अत्यंत वृद्ध च्यवन को, बालकों ने पत्थर मारे, आदि कथाएँ पुराणों के समान ब्राह्मणों में भी प्राण्य है। यह सानों का द्रष्टा भी था (पं. ब्रा. १३.५.१२; १९.३.६)।

ऋग्वेद में, इसे अश्विनों का मित्र, तथा इंद्र एवं उसका एक उपासक पक्ष तृर्षवाण का विरोधक दर्शाया है (ऋ. १०.६१.१-३)। भृगु का अन्य पुत्र विदम्बन् ने इसे इंद्र के विरुद्ध सहायता की थी (जै. ब्रा. ४.१.५. १३)। आगे चल कर, इंद्र से इसकी संधि हो गई (ऋ. ८.२१.४)।

यह भृगु ऋषि तथा पुलोमा का पुत्र था। पुलोमा के उदर में भृगुदीर्घ से गर्भसंभव हुआ। एक बार, भृगु नदी पर स्नान करने गया। तब पुलोम नामक राक्षस ने पुलोमा का हरण किया। कई ग्रंथों में, इस राक्षस का नाम दमन भी दिया गया है (पद्म. पा. १४)।

भय के कारण, मार्ग में ही पुलोमा प्रसूत हो गई। अतः इस पुत्र को च्यवन नाम प्राप्त हो गया। च्यवनक दिव्यतेज

से पुलोम जल कर भस्म हो गया। बालक को ले कर पुलोमा भृगुआश्रम में वापस आई (म. आ. ४-६; ६०.४४)।

बड़ा होने पर, च्यवन वेदवेदांगों में निष्णात बना। पश्चात् यह कठोर तपस्या करने लगा। तपश्चर्या करते समय, इसके शरीर पर एक वज्र बल्मीक वैश्यार हो गया। इसी वन में, राजा शर्याति अपने परिवार के साथ क्रीड़ा करने आया। उसकी रूपवती कन्या सुकन्या अपनी सखियों के साथ घूमते घूमते, उस बल्मीक के पास आई। उसने देखा कि, बल्मीक के अंदर कुछ चमक रहा है। चमकनेवाला पदार्थ क्या है, यह देखने के लिये उसने कांठों से उसे टोका। इससे च्यवन ऋषि की आँखें फूट गईं। अत्यंत संतप्त हो कर, इसने संपूर्णसेना समेत राजा का मत्स्यवरोध कर दिया। राजा हाथ जोड़ कर इसकी शरण में आया। च्यवन ने कहा, 'तुम्हारी कन्या मुझे दो'। राजा ने यह मान्य किया। सुकन्या का वृद्ध च्यवन से विवाह हो गया (म. आ. ९८)।

बाद में उसी वन में, सुकन्या अपने पतिसमवेत वास करने लगी। एक दिन अश्विनीकुमारों ने उसे देखा। उसने सुकन्या से कहा, 'तुम हमारे साथ चलो'। तब इसने अपने पातिव्रत्य से अश्विनियों को आश्चर्यचकित कर दिया। सुकन्या ने कहा, 'मेरे पति को यौवन प्रदान करो'। अश्विनीकुमारों के प्रसाद से च्यवन तरुण हुआ। एक तालाब में डूबकी लगाने के कारण, च्यवन पुनः युवा हो गया, ऐसी कथा ब्राह्मणों में दी गयी है (श. ब्रा. ४. १.५.१)।

अश्विनियों का इस उपकार का बदला सुकाने के लिये, च्यवन अपने श्वसुर के यह में गया। शर्याति राजा के हाथ से एक विशाल यज्ञ करवा कर, अश्विनीकुमारों को यह हविर्भाग देने लगा। परंतु अश्विनियों को हविर्भाग मिला, इंद्र को अच्छा न लगा। उसने इसे मारने के लिये वज्र उठाया। च्यवन ने इंद्र के नाशार्थ मः नामक राक्षस उत्पन्न किया। उसे देखते ही भयभीत हो कर, इंद्र इसे शरण आया। इसी समय से, अश्विनीकुमारों को यज्ञ में हविर्भाग मिलने लगा (म. व. १२१-१२५; अनु. २६१ कु; भा. ९.३; दे. भा. ७.३-७)।

एक बार प्रयागक्षेत्र में च्यवन ने उदवासव्रत का प्रारंभ किया। रातदिन यह जल में जा कर बैठता था। सब मछलियाँ इसके आसपास एकत्रित हो पकड़ थीं। एक बार कुछ मछुओं ने मछलियों पकड़ने के लिये जाप लगाया। तब उसमें मछलियों के साथ, च्यवन ऋषि भी

पकड़ा गया। मधुपूँ श्वरा कर नहुष राजा के पास गये। राजा ने ऋषि की पूजा की। कहा, 'आपको जो चाहिये आप मुझे से माँग लें'। तत्र च्यवन ने कहा, 'मेरी योग्य कीमत आँक कर इन मधुओं को दे दे'। अपना संपूर्ण राज्य देने के लिये राजा तैय्यार हो गया। फिर भी च्यवन की योग्य कीमत आँकनी नहीं गई। तत्र गविजात नामक ऋषि ने राजा को इसे गोधन देने के लिये कहा। राजा द्वारा गाँवें दी जाने पर, यह अत्यंत संतुष्ट हुआ। पश्चात् इसने नहुष को गोधन का महत्व समझाया (म. अनु. ८५-८७)।

कुशिकवंश के कारण, अपने वंश में भिन्नजातित्व का दोष उत्पन्न होगा, यह इसने तपःसामर्थ्य से जान लिया। उस वंश का नाश करने के उद्देश्य से, यह कुशिक राजा के पास गया। उससे कहा, 'हे राजा! मैं तपश्चर्या करना चाहता हूँ। इसलिये तुम अपनी भार्यासमवेत अहर्निश मेरी सेवा करो'। राजा ने ऋषि का यह कहना मान्य किया। तदनंतर राजा को इसने भोजन लाने को कहा। भोजन लाने ही, च्यवन ने उस भोजन को जला कर भस्म कर दिया। तदनंतर यह राजपयंक पर निद्राधीन हो गया। राजा अपनी भार्या सहवर्तमान इसके पैर दवाने लगा। इसप्रकार एक ही करवट पर, यह २१ दिन तक सौया रहा। तब तक बिना कुछ खाये पीये, राजा-इसके पैर दबाते बैठ गया।

२१ दिन के बाद नींद से जाग्रत हो कर, यह यकायक भागने लगा। क्षण में यह दिखता था, क्षण में अदृश्य हो

जाता था। ऐसी स्थिति में भी, राजा इसके पीछे भागता रहा। यह अदृश्य होते ही, राजा राजमहल में आया। उसने देखा, च्यवन सो रहा है।

कुछ समय के बाद, यह जाग्रत हुआ। किंतु दूसरी करवट ले कर पुनः २१ दिन तक सौया। बाद में जाग्रत होते ही, च्यवन ने रथ को घोड़ों के बदले एक ओर कुशिक को तथा दूसरी ओर उसकी पत्नी को जोत लिया। स्वयं हाथ में चाबुक ले कर, उन्हें मारते हुए यह अरण्य से रथ हाँकने लगा। यह सब च्यवन ने इसी उद्देश्य से किया कि, त्रस्त हो कर कुशिक उसका तिरस्कार करें। तत्र इस निमित्त को ले कर, यह उसे जला कर भस्म कर सके। इसी उद्देश्य से इसने कई प्रकारों से कुशिक को अत्यधिक कष्ट दिये। पर कुल फायदा नहीं हुआ। अन्त में प्रसन्न हो कर इसने उस राजा को बर दिया, 'तुम्हारे कुल में ब्राह्मण उत्पन्न होगा' (म. अनु. ८७-९०)।

इसे मनुपुत्री आरुणी से और्व नामक एक पुत्र हुआ (म. आ. ४-६)। इसका आश्रम गया मे था (वायु. १०८.७६)। च्यवन एक उत्कृष्ट वक्ता था, तथा सप्तर्षियों में से एक था (म. अनु. ८५)। इसे प्रमति नामक एक पुत्र था (म. आ. ८.२)। यह भृगुगोत्र का एक प्रवर भी था। यह ऋषि तथा मंत्रकार था (मार्गव देखिये)। इसे कंचन ऐसा नामांतर था (वा. रा. उ. ६६.१७)।

च्यवान—च्यवन मार्गव ऋषि का नामांतर। ऋग्वेद में सर्वत्र यही रूप निर्दिष्ट है (च्यवन मार्गव देखिये)।

छ

छगल—दंडीमुंडीश्वर नामक शिवावतार का शिष्य।

छगलिन—कृष्णयजुर्वेद का एक शाखाप्रवर्तक। वैशंपायनशिष्य कलापितृ का यह शिष्य था। पाणिनि ने इसका निर्देश किया है (पा. सू. ४.३.१०९)। चार अप्रसिद्ध उपनिषदों में छगलेयोनित् प्रसिद्ध हुआ है (डॉ. श्री. कृ. वेल्बलकर स. १९२५)। 'छगलिन प्रोक्त' ब्राह्मण ग्रंथ अध्ययन करनेवाले को छगलेयिन कहते थे।

छंदोगमाहिक—ब्रह्मवृद्धि का वैदिक नाम।

प्रा. च. २८]

छंदोगेय—अत्रिकुल का गोत्रकार।

छंदोदेव—मतंग को इंद्र की कृपा से मिला हुआ नाम (मतंग देखिये)।

छाया—संज्ञा को सूर्य का तेज सहन नहीं होता था, इसलिये उसने अपनी ही प्रतिकृतिस्वरूप यह स्त्री निर्माण की। अपने पति की सेवा तथा बच्चों के लालन-पालन करने के लिये इसे रखा। तदनंतर इसे तीन पुत्र हुए। इससे इसमें सापत्नभाव बढ़ गया। यह श्राद्धदेव,

यम तथा यमुना इन संज्ञापुत्रों को सापत्नभाव से देखने लगी। यम को यह सहन नहीं हुआ। उसने छाया पर लत्ताप्रहार किया। तब इसने उसे शाप दिया। इस शाप

से, सूर्य ने पहचान लिया कि, यह कौन है। तब वह संज्ञा के पास चला गया (विश्वस्वर्, संज्ञा, तथा यम देखिये)।

ज

जघन—धूम्राक्ष का पुत्र (गणेश. २.३१.१२)।

जंगारि—विश्वामित्रकुल का गोत्रकार।

जंघ—रावण के पक्ष का एक राक्षस।

जंघाबंधु—युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१४)।

जंगारि—विश्वामित्र का पुत्र।

जटायु—गरुड जाति का एक मानव। विनता-पुत्र अरुण को दैत्यी से उत्पन्न दो पुत्रों में से यह एक था (म. आ. ६०.६७; वा. रा. अर. १४.३; ३३)। यह एक राजा था, जो योग्य रीति से अपनी प्रजा का पालन करता था (वा. रा. अर. ५०. २०)। राम ने जब इसे सर्वप्रथम देखा, तब उसे लगा, यह कोई राक्षस होगा। आगे चल कर, राम एवं सीता को यह श्रमस्वरूप में दिखाई दिया। राम ने पूछा, 'तुम कौन हो?' अपना परिचय दे कर इसने कहा, 'रामलक्ष्मण जब बाहर जायेंगे तब मैं सीता की रक्षा करूँगा' (वा. रा. अर. १४.३; ३३-३४; ५०)। यह हितचिंतक है, यों बाद में प्रतीत होने लगा।

यह दशरथ का मित्र था (म. व. २६३.१; वा. रा. अर. १४.३)। अपनी स्तुपा के समान सीता को, रावण की गोद में देख कर इसे अत्यंत क्रोध आया। यह रावण से युद्ध करने के लिये तैयार हो गया। रावण सीता को ले जा रहा था, तब इसने उसे उपदेश किया। उपदेश में रावण को वेदतत्त्व बता कर, परस्त्रीअपहार के लिये इसने उसका निषेध किया (वा. रा. अर. ५०)। इसने रावण से कहा, 'तुम युवचाप सीता को छोड़ दो, अन्यथा परिणाम अच्छा नहीं होगा'। परंतु रावण ने यह नहीं माना। तब दोनों में युद्ध छिड़का। इसने अपने तीक्ष्ण नखों से, तथा चोंच से रावण को घायल किया। रक्त से लथपथ कर दिया। रावण के द्वारा छोड़े गये सत्र बाण

इसने पंखों से उड़ा दिये। अंत में रावण ने इसके पंख तोड़ कर, इसे मृतप्राय कर दिया।

इस प्रकार, जटायु को हतबल कर, सीता को रावण ले गया। सीता को खोजते हुए रामलक्ष्मण वहाँ आये। सीता का हरण रावण ने किया, यह वृत्त जटायु ने राम को बताया। इसने कहा, 'चूंकि सीता का हरण ब्रिन्द मुहूर्त पर किया गया है, अतएव वह तुम्हें पुनः अवश्य प्राप्त होगी (वा. रा. अर. ६८.१२)। राम ने इसे पूज्य मान कर आर्क्षित किया (वा. रा. अर. ६७. २३; ६८.२६-३६)। तदनंतर इसने प्राणत्याग किया। रामलक्ष्मण ने इसे पूज्य मान कर इसकी उत्तरक्रिया की। इस समय इसकी आयु साठ हजार वर्षों की थी (म. व. २७९; आ. रा. सार. ७; वा. रा. अर. ५०-५२; ६८.२६-३६)।

जटायु की मृत्युवार्ता ज्ञात होते ही, अंगदादि वानरों की सहायता से, संगति वहाँ आया। उसने जटायु का तर्पण किया (वा. रा. कि. ५८.३३-४५)। संगति इसका बड़ा भाई था (वा. रा. कि. ५३.२३; म. आ. ६५)। इसे काक, यश्र तथा कर्णिक नामक तीन पुत्र थे (ब्रह्मांड ३.७-४४८)। स्वयं जटायु तथा संगति में, वे मनुष्यों में भिन्न हैं, ऐसी भावना नहीं थी (वा. रा. कि. ५६.४)।

जटासुर—एक राक्षस। वनवास के समय पांडव एक बार बदरिकाश्रम आये। तब ब्राह्मण के वेश में यह राक्षस उनके पास रह कर, अपने तप की प्रशंसा करता रहा। पांडवों के शस्त्रास्त्र तथा द्रौपदी का हरण करने का वह सोचता था। परंतु शक्तिशाली भीम के सामने इसकी डाल नहीं गलती थी। भीम पहचान गया था कि, यह अवश्य कोई राक्षस है।

एक दिन भीम अरण्य में गया था। अर्जुन इंद्रलोक गया था। यह अवसर देख, द्रौपदी, धर्म, नकुल

तथा सहदेव को ले कर, यह भागने लगा। सहदेव ने अपने आप को मुक्त कर लिया। धर्मराज ने इसे बहुत उपदेश दिया परंतु इसने एक न सुनी। इतने में गदाधारी भीम वहाँ आ पहुँचा। उसने इससे मलयुद्ध कर के इसका वध किया (म. व. १५४)। इसे अलंबुत नामक पुत्र था (म. द्रो. १४९.५-९)।

२. मद्राधिपति। धर्मराज की मयसभा में यह एक सदस्य था (म. स. ४.२१.)।

जटित्—पातालस्थित एक नाग। रावण ने इसपर विजय प्राप्त की थी (वा. रा. यु. ७)।

जटिल—एक ब्रह्मचारी। शंकर ने जटिल नामक ब्रह्मचारी का रूप धारण किया था।

दक्षयज्ञ में सती के देहत्याग के बाद, हिमालय को मैना से पार्वती उत्पन्न हुई। वह शंकर के लिये तपस्या कर रही थी। 'जटिल ब्रह्मचारी' का वेष धारण कर शंकर वहाँ आया। इसने शंकर की बहुत निंदा की। यह और भी निंदा करेगा, यह सोच कर पार्वती ने अपनी सखी विजया के द्वारा, इसको भगाने की सोची। इतनेमें शंकर अपने असली रूप में प्रकट हुआ। कुमारसंभव के पंचम सर्ग से इस कथा का काफी साम्य है। इसे ब्रह्मचारिन् भी कहा गया है (शिव. शत. ८४)।

जटिला—गौतम के वंश की एक स्त्री। सप्तर्षि इसके पति थे (म. अ. १८८. १४)।

जटीमालिन—एक शिवावतार। वाराह कल्प के वैवस्वत मन्वन्तर में उन्नीसवीं चौशत में हिमालय पर यह शिवावतार हुआ। वहाँ, इसके क्रमानुसार हिरण्यनामन्, कौशल्य, लोकाक्षिन्, प्रथिमी ये चार पुत्र हुए (शिव. शत. ५)।

जड—जनस्थान का कौशिकगोत्री दुराचारी ब्राह्मण। यह एक बार व्यापार करने गया, तब चोरों ने इसके प्राण ले लिये। पूर्वजन्म के पापों के कारण, यह पिशाच हुआ। इसका पुत्र अत्यंत सदाचारी था। पिता का उत्तरकार्य करने के लिये वह काशी जाने निकला। वह उसी स्थान पर आया, जहाँ उसका पिता झाड़ पर पिशाचअवस्था में रहता था। उसने गीता के तीसरे अध्याय का पाठ किया। उसे श्रवण कर, यह मुक्त हुआ (पद्म. उ. १७७)। मार्कण्डेय पुराण में भी एक बड़ का उल्लेख है।

जट्टण—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

जन—(सो. पूर.) अजमीठ एवं केशिनी का पुत्र (म. आ. ८९. २८)।

जन शार्कराक्ष्य—एक ऋषि। अश्वपति कैकेय, अरुण औपवेशि तथा उसके पुत्र उद्दालक आरुणि का यह समकालीन रहा होगा। उद्दालक आरुणि के पास, यह तत्वज्ञान सीखने के लिये गया था (श. ब्रा. १०. ६. १. १; छां. उ. ५. ११. १; १५. १)।

जनक—निमि या विदेहवंश का कुलनाम। इनकी वंशावलि भी पुराणों में कई स्थानों पर मिलती है। (ब्रह्मांड. ३. ६४; वायु. ८९; भा. ९. १३; विष्णु. ४. ४; गरुड. १. १३८)। सर्ववशीय इक्ष्वाकुपुत्र निमि से निकली हुई यह एक वंशशाखा है। यह वंशावलि अनेक स्थानों पर मिलती है, फिर भी उनमें साम्य नहीं है। विशेषतः भागवत आदि पुराणों में कुल व्यक्ति अधिक जोड़ दिये गये हैं। विदेहवंश का द्वितीय पुरुष मिथिजनक था। इसीने मिथिलानगरी स्थापित की। इसीसे 'जनक' यह सामान्यनाम चल पड़ा। जनक नाम से इस वंश के लोगों का उल्लेख करने की रीति है (श. ब्रा. ११. ३. १. २; ४. ३. २०; ६. २. १; बृ. उ. ३. १. १; ४. १. १; २. १; जै. ब्रा. १. १९. २; कौ. उ. ४. १)। याज्ञवल्क्य वाजसनेय तथा श्वेतकेतु आरुणेय से इसकी अनेक विषयों पर चर्चा हुई थी। वैदिक वाङ्मय में भी ब्रह्मवेत्ता के रूप में, महापुरुष का स्थान इसे प्राप्त है (तै. ब्रा. ३. १०. ९. ९)। इसने सप्तराज नामक याम किया (सां. श्रौ. १६. २. ७. ७)। विदेह जनक को सावित्रामिथिला का उपदेश अहोरात्र के अभिमानी देवों ने दिया (तै. ब्रा. ३. १०. ९. २१; भरद्वाज देखिये)। यह याज्ञवल्क्य का समकालीन था। उस समय इसका नाम दैवराति था। वंशावलि के अनुसार, राम का श्वसुर सीरध्वज जनक से, यह जनक कई पीढ़ियों बाद का है।

२. एक राजा। भागवत तथा विष्णु मत में यह निमिपुत्र तथा वायु मतानुसार नेमिपुत्र था। वसिष्ठ के शाप के कारण, निमि का देहपात हुआ। देवताओं के कहने पर ब्राह्मणों ने उसके देह का मंथन किया। उसमें से यह उत्पन्न हुआ। इसे जनक, विदेह मिथिल आदि अन्य नाम थे। इसने मिथिला नगरी की स्थापना की। इसका पुत्र उदावसु। इसके वंशजों को जनक नाम से ही संबोधित किया जाता है (भा. ९. १३. १३; ६. ३. २०)। पंचशिख के साथ इसका अव्यात्मविषय पर संवाद, प्रजापालन करने के

लिये क्षत्रिय के आवश्यक कार्य, इस विषय पर पत्नी से हुआ संभाषण, तथा अस्मन् नामक ब्राह्मण से संवाद आदि प्रसिद्ध हैं (म. शां. १८; २८; ३०७)। इसने अपने योद्धाओं को स्वर्ग तथा नरक दिखाये थे (म. शां. १००)।

आंग चल कर इच्छामरणी जनक प्राणत्याग कर, स्वर्ग जा रहा था। मार्ग में इसे यमलोक मिला। वहाँ अनेक जीव नाम्ना यातनाएँ पाते हुए इसने देखे। पुण्यवान् जनक को स्वर्श करती हुई हवा, उन पापी जीवों को जालगी। इस कारण उनके स्रष्टृ दुःखों का नाश हुआ। उन्होंने जनक को बर्षा रहने का आग्रह किया। तदुपरांत यम ने इसे नरकलोक की सारी जानकारों दी, एवं इसे स्वर्ग जाने को कहा। जनक ने उसकी एक न सुनी। यम के कहने पर, अपना सारा पुण्य दुखियों को कौट कर, सारे पापियों का इसने उद्धार किया (पद्म. पा. ३०)।

३. विदेह देश का राजा। इसकी चार स्त्रियाँ थीं। उनमें सुमति पटरानी थी। बहुत वर्षों तक पुत्रसंतान न होने के कारण, इसने, पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया। तब दो पुत्र तथा सीता, नामक कन्या इसे पृथ्वी से प्राप्त हुए। पृथ्वी के कथनानुसार इसने, १६ वर्षों तक नरकासुर का पालन किया। भेतायुग के पूर्वार्ध की यह घटना है (कालि. ३८)।

नारद ने अमंगल ब्राह्मण का रूप धारण कर इसका गर्वपरिहार किया (गणेश. १. ६५)। जनक के संबंध में बहुत सी कथाएँ हैं। वे किसी एक जनक की न हो कर निर्मिश्र म उत्पन्न अन्यान्य लोगों की हैं। उदाहरणार्थ—याज्ञवल्क्य के समय दैवराति जनक था। उसके बाद काफी वर्षों के पश्चात्, राम का श्वसुर सीरध्वज जनक हुआ। नरकासुर का पालन करनेवाला जनक, कृष्णसमकालीन बहुलाश्व होगा (दैवराति, बहुलाश्व तथा सीरध्वज देखिये)।

४. भास्कर संहिता के 'वैशसंदेहमन्न' तंत्र का कर्ता (ब्रह्मवै. २. १६. १५)।

५. (प्रद्योत. भविष्य.) विशालथूप का पुत्र।

जनदेव—जनकवंशीय ज्ञानी राजा। इसके पास सौ आचार्य थे, जिनसे इसने आत्मप्राप्ति का उपाय पूछा। इसका समाधान कोई भी न कर सका। एक बार पंचशिख इसके पास आया। इसने वही प्रश्न उससे पूछा। उसने इसे मोक्ष का मार्ग बताया (म. शां. २११)। वंशावलि में इसका नाम नहीं मिलता (२. धर्म-ध्वज देखिये)।

जनपादप—विश्वामित्र कुल का गोत्रकार।

जनमेजय—(सू. दिष्ट.) भागवत मत में सुमतिपुत्र। विष्णु एवं वायु मत में लोमश्चपुत्र।

२. (सो. पूर.) पूर का पुत्र। इसे प्राचीन्वत् नामक पुत्र था। इसकी पत्नी प्रागधी सुमति।

३. (सो. पूर.) दुःशन्तपुत्र (म. शां. ७८. १८)।

४. (सो. अष्ट.) विष्णु, वायु तथा मत्स्य मत में पुरंजयपुत्र। भागवत मत में संजयपुत्र।

५. (सो. अष्ट.) मत्स्य मत में वृहद्रथपुत्र नाम वायु मत में वटरथपुत्र।

६. (सो. अज.) मल्लार्थ का पुत्र (वायु. ९९. १८२; मत्स्य, ४९. ५९)। इसके लिये उग्रायुध कालि ने, नीलों का संहार किया। अंत में उग्रयुध ने जनमेजय का भी वध किया। अतएव इसे 'कुलनाशन' कहते हैं (म. उ. ७२. १२)। कुलनाशन का अर्थशः अर्थ, वृद्धिनेन से अपने कुल का नाश करनेवाले लोग, या होता है।

अठारह कुलनाशक लोगों के नाम उल्लेख है (म. उ. ७२. १२)।

जनमेजय कौतस्त—कुतस्त का पुत्र। अरिमेजय-प्रथम इसका भाई था। ये दोनों भाई पंचविंश ब्राह्मण के सर्पसत्र में अश्वरुं तथा प्रतिप्रस्थानुं थे।

दूसरे जनमेजय परिक्रित के द्वारा किया गया सर्पसत्र, तक्षशिला समीप के सर्पलोगों का संहार था। पंचविंश ब्राह्मण का सर्पसत्र सर्पलोगों ने अपने स्थंभ के लिये किया था (२५. १५. ३)।

पंचविंश ब्राह्मण के सर्पसत्र में, कौनसा कार्य किसने किया इसका हम प्रकार निर्देश है:—१. जर्वर (यहपति), २. वृतराष्ट्र ऐरावत (ब्रह्मा), ३. पृथु-श्रवस् दैरिश्रवस (उद्रता), ४. म्नाव (प्रस्तोत), ५. अजग (प्रतिहर्तृ), ६. दत्त तापस (होतृ), ७. शितिपृष्ठ (मैत्रावरुण), ८. तक्षक वैशालेय (ब्राह्मणाच्छंसी), ९. शिख (नेष्टृ), १०. अनुशिव (भोतृ), ११. अरुण आठ (अच्छावाक), १२. तिमिषं वैरिशुत (अजीव), १३. कौतस्त अरिमेजय (अश्वरुं), १४. जनमेजय (प्रतिप्रस्थानुं), १५. अश्वरुं (प्रावस्तुत), १६. अजिर (सुब्रह्मण्य), १७. कक्ष (उन्नेतृ), १८. विशम, १९. पंड (अभिगर), २०. कुर्मठ (अधमर)।

इन दोनों सर्प सत्रों का नाम एक है, तथापि इनका परस्पर संबंध नहीं है। एक सर्पों के नाश के लिये है, तथा दूसरा उनकी तुल्यति के लिये है (पं. ब्रा. २५. १५)। दूसरा सत्र किसने किया, बता नहीं सकते।

जनमेजय पारीक्षित—सो. (पूरु.) कुरुपुत्र पारीक्षित का पुत्र। इसको जनमेजय पारीक्षित-प्रथम कहते हैं।

वेदों में इसे पारीक्षित जनमेजय कहा है (श. ब्रा. १३. ५.४.१; ऐ. ब्रा. ७.३४; ८. ११; २१; शं. श्रौ. १६. ८. २७)। इसकी राजधानी का नाम आसन्दीवत् (ऐ. ब्रा. ८.२१; श. ब्रा. १३.५.४.२)। इसके ऋषियों के नाम उग्रसेन, भीमसेन तथा श्रुतसेन थे। इसने ब्रह्महत्या की थी। पापक्षालनार्थ अश्वमेधयज्ञ भी किया था। उसमें पुरोहित इन्द्रोत वैवाच शौनक था (श. ब्रा. १३.५.३.५)। तुरङ्गावधेय का भी नाम प्राप्य है (ऐ. ब्रा. ८.२१)।

इसका अग्निषों के साथ, तत्त्वज्ञानविषय में संवाद हुआ था (गो. ब्रा. १.२.५)।

मणिमती से इसे सुरथ तथा मतिमन् ये दो और पुत्र थे (ह. वं. १. ३२. १०२)। इसके भाइयों का नाम भी कई जगह आया है (श. ब्रा. १३.५.४.२; अग्नि. २७८. ३२; गरुड. १. १४०)।

कठोर वचन से संशोधन करने के कारण, गार्ग्यपुत्र का, इसने वध किया। ब्रह्महत्या के कारण, इसे राज्य-त्याग करना पड़ा। शरीर में दुर्गन्धि भी उत्पन्न हुई। इसी कारण लोहगंध जनमेजय तथा दुर्गन्धि नाम से यह ख्यात हुआ। इन्द्रोत वैवाच शौनक ने अश्वमेध करा के इसे ब्रह्महत्यापातक से मुक्त किया। फिर यह राज्य नहीं पा सका।

सुरथ को वह राज्यवद मिला। ययाति को रुद्र से दिव्य रथ प्राप्त हुआ था। इस ब्रह्महत्या के कारण, पूरुकुल में वंशपरंपरा से आया हुआ, वह रथ वेमुचैय को दिया गया। वहाँसे बृहद्रथ, अरासंध, भीम तथा अंत में कृष्ण के पास आया। कृष्ण निर्याण के बाद वह रथ अदृश्य हुआ (वायु. ९३.२१-२७; ब्रह्मांड. ३. ६८.१७-२८; ह. वं. १. ३०.७-१६; ब्रह्म. १२.७-१७)।

‘अनुद्विपूर्वक किया गया पाप प्रायश्चित्त से नष्ट हो जाता है,’ इस संदर्भ में भीष्म ने युधिष्ठिर को जनमेजय की यह पुरानी कथा बतायी है (म. शां. १४६-१४८)।

२. (सो. कुरु.) यह द्वितीय जनमेजय पारीक्षित है। ‘जनमेजय’ का अर्थ है, ‘लोगों पर धाक जमानेवाला’। अर्जुन-अभिमन्यु-पारीक्षित-जनमेजय इस क्रम से यह वंश है। पारीक्षित ने मातुलकन्या (उत्तर की कन्या) से विवाह किया था। उससे, जनमेजय, भीमसेन, श्रुतसेन तथा उग्रसेन नामक चार पुत्र हुए। तक्षक ने पारीक्षित की हत्या की। उस समय उग्र में जनमेजय अत्यंत छोटा

था। फिर भी हस्तिनापुर के सिंहासन पर इसे ही अभिषेक हुआ। इसने प्रजा का पुत्रवत् धालन किया। इसका पुत्र प्राचीन्वत् (म. आ. ४०)।

इसकी पत्नी, काशी के सुवर्णराजा की कन्या वपुष्मदा (काश्या) थी।

एक बार यह कुरुक्षेत्र में दीपसत्र कर रहा था। सारमेय नामक श्वान वहाँ आया। इसने श्वान को मार भगाया। उसकी मौं देवशुनी सरमा पुत्र को ले कर वहाँ आयी। उसने अपने निरपराध पुत्रों की ताड़ना का कारण पूछा। इसे उसने पश्चात् शाप दिया, ‘तुम्हें दैवी विघ्न आवेगा’।

तक्षक से प्रतिशोध लेने के लिये, इसने तक्षशिला पर आक्रमण किया। उसे जीत कर ही यह हस्तिनापुर लौटा। उस समय उत्कंठ ने इसे सर्पसत्र की मंत्रणा दी। सत्र सर्पों का नाश करने का निश्चित हुआ। यज्ञमंडप सजा कर सर्पसत्र प्रारंभ हुआ। इतने में स्थिति (शिल्पी) नामक व्यक्ति वहाँ आया। उसने कहा, ‘एक ब्राह्मण तुम्हारे यज्ञ में विघ्न उपस्थित करेगा’। अगणित सर्प वेग के साथ उस कुंड में गिरने लगे। तक्षक भयभीत हो कर इंद्र की शरण में गया। इंद्र ने उसकी रक्षा का आश्वासन दिया। पश्चात् वासुकि की वारी आयी। वह जरत्कार नामक अपने बहन के पास गया। जरत्कार का पुत्र आस्तीक था। आस्तीक ने वासुकि को अभय दिया। बाद में राजा ने अपने प्रमुख शत्रु तक्षक को आवाहन करने की ऋत्विजों से विनंति की। तक्षक इंद्र के यहाँ आश्रयार्थ गया था। ‘इंद्राय तक्षकाय स्वाहा’, कह कर ऋत्विजों ने आवाहन किया। इंद्रसहित तक्षक वहाँ उपस्थित हुआ। अग्नि को देखते ही इंद्र ने तक्षक का त्याग किया। इतने में आस्तीक वहाँ पहुँचा। उसने राजा की स्तुति की। वर माँगने के लिये राजा से आदेश मिलते ही, आस्तीक ने सर्पसत्र रोकने को कहा। विवश हो कर राजा को सर्पसत्र रोकना पड़ा। इस तरह स्थिति तथा सरमा की शापवाणी सच्ची साबित हुई।

श्रुतश्रवस् को सर्पजाति के स्त्री से उत्पन्न हुआ पुत्र सोमश्रवस् इस यज्ञ में, था। श्रुतश्रवस् को राजा ने आश्वासन दिया था, ‘तुम्हें जो चाहिये सो माँग लो, मैं उसकी पूर्ति करूँगा’ (म. आ. ३.१३-१४)।

सर्पसत्र के ऋत्विज—१. चंडभागव च्यावन (होतृ), २. कौत्स जैमिनि (उद्गातृ), ३. शाङ्करव (ब्रह्मन्), ४. शिगल (अध्वर्यु), ५. व्यास (सदस्य), ६. उद्दालक,

७. प्रमदक, ८. श्वेतकेतु, ९. पिंगल, १०. अस्ति, ११. देवल, १२. नारद, १३. पर्वत, १४. आद्वैय, १५. कुंड, १६. जटर, १७. घालघट, १८. वात्स्य, १९. ध्रुतश्रवस्, २०. कोहल, २१. देवशर्मन्, २२. मोदत्य, २३. समवीरभ (म. आ. ५.३.४-९)।

व्यास के शिष्य वैशंपायन ने जनमेजय को भारत कथन किया (म. आ. १.८-९; क. ३)। इसे काश्या नामक पत्नी से दो पुत्र हुए; एक चंद्रापीड तथा दूसरा सुधांतीड (ब्रह्म. १३.१२४)। इसने संस्रव किया, जिसमें तुर कावपेय पुरोहित था (म. ९.२२.३५)।

यह बड़ा दानी था। इसने कुंडल तथा दिव्य यान ब्राह्मणों को दान दिये (म. अतु. १३७.९)।

संस्रव के बाद राजा जनमेजय ने पुरोहित, ऋषिज आदि को एकत्रित कर के, अश्वमेध का प्रारंभ किया। वहाँ व्यास प्रगट हुआ। उस समय इसने व्यास की यथाविधि पूजा की। कौरव-पांडवों के युद्ध के संबंध में अनेक प्रश्न पूछे। उससे कहा, 'अगर आपको यह ज्ञात था कि, इस युद्ध का अन्त क्या होगा, तो आपने उन्हें परावृत्त क्यों नहीं किया?' व्यास ने कहा, 'हे राजन्! उन्होंने सुझसे पूछा न था। विना पूछे मैं किसी को कुछ भी नहीं बताता। तुम्हारे इस अश्वमेध में इन्द्र वाधा डालेगा तथा इतःपर पृथ्वी पर कहीं भी अश्वमेध न होगा'।

दूसरा जनमेजय पारीक्षित अर्धवैत धार्मिक था। इसने अपने यज्ञ में वाजसनेय को ब्रह्मा बनाया। तब वैशंपायन ने इसे शाप दिया। ब्राह्मणों ने क्षत्रियों का उपाध्वायजर्म बंद कर दिया। परंतु वाजसनेय लोगों की सहायता से इसने दो अश्वमेध किये। यह पराक्रमी होने के कारण, अन्य क्षत्रियो ने इसका समर्थन किया। वाजसनेयों का समर्थन करने के कारण, ब्राह्मणों ने इसे पदच्युत कर अरण्य में भेज दिया। ब्राह्मणों के साथ कलह करने से इसका नाश हुआ (कौटिल्य टु. २२)। इसके बाद शतानीक राजा बना।

इस समय तक, याज्ञवल्क्य द्वारा उत्पन्न वेद को प्रतिस्पर्धी वैशंपायनादि ने मान्यता नहीं दी थी। वाजसनेयों को राज्याश्रय प्राप्त होने के बाद भी, वैशंपायनों ने काफी गडबड की। वादविवाद कर के, वाजसनेयों को हराने के काफी प्रयत्न किये। परंतु जनमेजय ने उनकी एक नहीं चल्ने दी। लोगों का तक्षः ब्राह्मणों का विरोध, इतना ही नहीं, राज्यत्याग भी स्वीकार किया। परंतु वाजसनेयों को

इसने समाज में मान्यता प्राप्त कर ही दी। इसलिये इसे महावाजसनेय कहते हैं (मत्स्य. ५०.५७-६४; वायु. ९९. २४५-२५४)।

जनश्रुत कौटिल्य—जनश्रुत याने लोकप्रसिद्ध। यह ह्रस्वाक्षय का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

जनश्रुत वाक्पय—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. ३. ४१.१)।

जन्वापीड—(सो. त्र्यं.सु.) वायुमत में दम्भपुत्र। ब्रह्मांड में इस आडीर कहा है।

जनाद्वैत—मित्रसह ब्राह्मण का पुत्र। यह हंसदिम्ब का मित्र था (ह. वं. ३. १०४.४)।

जंतु—(सो. पू. ऋष.) विष्णुमत में सुभन्वन् का पुत्र। भागवत में इसे बहू कहा है।

२. (सो. यदु. क्रोष्ट.) पुरुव्रतपुत्र।

३. (सो. नील.) भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा वायु के मत में सोम का ज्येष्ठ पुत्र।

जंतुधन्वा—शतुधान की माता।

जन्यु—तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक। इसके लिए ज्यय नाम भी प्रयुक्त है (पद्म. सु. ७)।

जपातप—नराशरकुल का गोत्रकार। पाठभेद—स्यात-पायन।

जवाला—रुद्रकाम जवाल की माता का नाम।

जमदग्नि—एक ऋषि तथा परशुराम का पिता। ऋग्वेद में इसका अनेक बार उल्लेख आया है (ऋ. ३.६२. १८; ८.१०१.८; ९.६२.२४; ६.५.२५; अ. वे. ८.२९.३)। इन निर्देशों से मित्रावरुण, आश्रियों एवं सोम से जमदग्नि का संबंध प्रतीत होता है। सौदास के यज्ञ में, वसिष्ठपुत्र शक्ति ने विश्वामित्र को वाद में पराजित किया। उसे यज्ञ में से भगा दिया। तब सूर्य से सप्तर्षी नामक वाणी का सामर्थ्य बढ़ानेवाली विश्वा ल्य कर, जमदग्नि ने उसे विश्वामित्र को ही तथा उसके कुल की वृद्धि की। सप्तर्षी का अर्थ है मापणकौशल्य। इस स्थान पर, जमदग्नि को वयोवृद्ध कहा है (ऋ. ३. ५३.१५-१६)। यहाँ बहुवचन का निर्देश होने के कारण, यह कुल का निर्देश प्रतीत होता है।

संदिता ग्रंथों में भी, यह विश्वामित्र के पक्ष का, तथा वसिष्ठ के प्रतिपक्ष का बताया गया है (तै. सं. ३.१.७.३)। परंतु हरिश्चंद्र के राजसूय में विश्वामित्र होता, वसिष्ठ ब्रह्मा तथा जमदग्नि अश्वभुं थ (ग. ब्रा. ७.१६)। चन्द्राव नामक यज्ञ करने के कारण, इसके वंश में कोई भी दरिद्री नहीं हुआ (तै. सं. ७.१.९.१; पं. ब्रा. २१.१०)।

अमित, अत्रि, कण्व तथा वीतहृदय के साथ इसका निर्देश है (अ. वे. २.३२.३०; ६.१३०.१)।

अन्य कई स्थानों में इसका उल्लेख है (अ. वे. ४. १९.३; ५.२८.७; ६.१३७.१; १८.३.१५-१६)। यह बड़ा तपस्वी था (तै. सं. ३.३.५.२)। जमदग्नि मार्गव के ऋग्वेद में काफी सूक्त है (ऋ. ३.६२.१६-१८; ८. १०१; ९.६२; ६५; ६७.१६-१८; १०.११०; १३७. ६; १६७)। जमदग्नि शब्द का अर्थ नेत्र लिया है (वा. सं. १३.५६, महीधर भाष्य)।

यह अक्षर ब्रह्म का उपदेश करता था। वेदप्रचार के लिये तथा अक्षर ब्रह्म के उपदेश के लिये, इंद्र ने इसकी घोषणा की थी (तै. आ. १.९)।

भृगुकुल के ऋचीक नामक ऋषि को, गाधिराजकन्या सत्यवती से जमदग्नि उत्पन्न हुआ (म. आ. ६०.४६; व. ११६.८; ह. वे. १.२७.३५. ब्रह्म. १०; स्कंद. ६.६६) भृगुकुल के लोगों को भृगुपुत्र कहते थे (पद्म. उ. २६८. १)। इसका पैतृक नाम आर्चिक था। रेणुका इसकी पत्नी थी। उससे इसे रुमणवत्, सुषेण, वसुमत, विश्वावसु तथा परशुराम नामक पाँच पुत्र हुए (रेणुका देखिये)।

जमदग्नि अत्यंत क्रोधी था। एकवार लीलया यह बाण छोड़ रहा था। उन्हें लाने के लिये, इसने रेणुका से कह दिया। कड़ी धून होने के कारण, रेणुका थक गई। विश्रान्ति के लिये, एक वृक्ष के नीचे थोड़ी देर के लिये, वह बैठ गई। उसने बाण वापस लाने में देर हो गई। तब क्रोधित हो कर इसने देरी का कारण पूछा। रेणुका-हारा देरी का कारण बताया जाते ही, यह सूर्य पर क्रोधित हुआ। बाण में सूर्य को छेदने के लिये तैयार हो गया। तब सूर्य इसकी शरण में आया। उसने इसे छाता, तथा पादबाण दिये तथा कहा, 'मैं तुम्हारे उदर से जन्म लूँगा'। बाद में वह परशुराम के रूप में, जमदग्नि के घर में उत्पन्न हुआ। (म. अनु. ९५)।

एकवार रेणुका सरोवर पर स्नान करने गई थी। वहाँ उसने चित्ररथ अथवा चित्रांगद को, अपनी भार्याओं के साथ क्रीड़ा करते हुए देखा। उसका ऐश्वर्य देख कर उसके मन में राजा के प्रति अभिलाषा उत्पन्न हुई। उसकी क्रीड़ा देखते हुए, यह थोड़ी देर तक वहीं खड़ी रही। इससे उसे घर जाने में विलंब हुआ। उसीसे जमदग्नि अत्यंत क्रोधित हुआ। पुत्रों से अपने माता का शिरच्छेद करने के लिये इसने कहा। परंतु परशुराम को छोड़ अन्य किसी ने भी इसका कहना नहीं माना। इससे जमदग्नि ने उनका

भी वध किया। बाद में परशुराम ने अपनी माता का शिरच्छेद किया। तब जमदग्नि ने प्रसन्न हो कर परशुराम को वर माँगने के लिये कहा। परशुराम ने वरद्वारा अपनी माता तथा भाइयों को जीवित किया (भा. ९.१५.१६; विष्णुधर्म १.३५-३६)।

यह इतना क्रोधी था, तथापि कालवशात् अत्यंत शांत हो गया। यह सचमुच शांत बना है अथवा नहीं, यह देखने के लिये, एकवार क्रोध सर्परूप धारण कर, पितृ-तिथि के दिन इसके घर आया। जमदग्नि ने उस दिन श्राद्ध के लिये खीर बनाई थी। उस खीर में सर्परूपी क्रोध ने अपना गरल डाल दिया। परंतु यह क्रोधित नहीं हुआ। तब क्रोध ने इसकी स्तुति की (जै. अ. ६८)। स्त्री-पुत्रादिकों के वध का स्मरण कर, इसे अत्यंत पश्चात्ताप हुआ। क्रोध के ही कारण यह अनर्थ हुआ, यह सोच कर इसने क्रोध का त्याग कर दिया (रेणु. २७)।

गंगातीर पर एक हजार वर्ष तपस्या कर के, जमदग्नि ने इंद्र से कामधेनु माँग ली। उसी समय इंद्र ने इसे वरदान दिया, 'तुम्हें एक ईश्वरांशभूत पुत्र होगा'। कश्यप ने इसे पड़कर मंत्र दिया था (पद्म. उ. २६८)।

एकवार हैश्य देशाधिपति कार्तवीर्य, ससैन्य जमदग्नि के आश्रम में, आया। कामधेनु की सहायता से जमदग्नि ने उसका उत्कृष्ट आदिरातिथ्य किया। बाद में कार्तवीर्य के मन में जमदग्नि के ऐश्वर्य के बारे में असूया उत्पन्न हुई। वह कामधेनु को बलात्कार से ले जाने लगा। उस समय कामधेनु ने अपने शरीर से काफी यवन निर्माण किये। उनके द्वारा कार्तवीर्य का परामभव हुआ। तब कार्तवीर्य ने जमदग्नि के आश्रम का विध्वंस कर, कामधेनु का हरण कर लिया। यह वृत्त परशुराम को ज्ञात होते ही, उसने कार्तवीर्य का वध कर के, गाय को छुड़ा लिया। परंतु कार्तवीर्य के वध का कृत्य जमदग्नि को बुरा लगा। कार्तवीर्य-पुत्रों ने पिता के वध का बदला लेने के लिये, परशुराम की अनुपस्थिति में, जमदग्नि को इक्कीस बाणों से विद्ध किया तथा उसकी हत्या कर डाली। यह वृत्त परशुराम को ज्ञात होते ही, उसने क्षत्रियों का इक्कीस बार निःपात कर, जमदग्नि के वध का बदला ले लिया (म. शां. ४९.५६; ब्रह्मवै. ३. २४; ब्रह्मांड. ३.४५; कार्तवीर्य देखिये)।

कई स्थानों पर उल्लेख है कि, जमदग्नि का वध कार्तवीर्य ने ही किया (म. द्रो. परि. १; ऋ. ८. पंक्ति. ८३० के आगे; वा. रा. वा. ७५)। इसे वृंसे मार कर इसका वध किया गया (पद्म. उ. २६८.३७)। वैवस्वत मन्वन्तर के

सप्तपिण्डों में से यह एक था (मत्स्य. ९; ब्रह्म. ५; मार्क. ७९)।

श्राद्धविधि का प्रारंभ जमदग्नि ने किया। यह भृगुकुल का गोत्रकार तथा प्रवर भी था।

जंबुमालिन—रावण के मंत्री प्रहस्त का पुत्र। हनुमान् ने अशोकवन उध्वस्त किया। रावण की आज्ञा से, हनुमान् को रोकने के लिये यह वहाँ गया। हनुमान् ने इसका वध किया (वा. रा. सुं. ४२-४४)।

२. एक राक्षस। यह भी हनुमान् के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ४३)।

जंबूक—शंबूक देखिये।

जंभ—बलि का मित्र। इसे जंभासुर भी कहते थे। इंद्र तथा बलि के युद्ध में, इंद्र के वज्र के आघात से बलि मूर्च्छित हो गया। वहाँ इसने सिंह पर आरूढ़ हो कर, इंद्र से युद्ध किया। इंद्र ने इसका वध किया (भा. ८.११. १३)।

२. तारकासुर का एक प्रमुख हस्तक। तारकासुर के युद्ध में, विष्णु ने इसका वध किया। इसकी कन्या कयाधु (भा. ६.१८.१२)।

३. रावणशकीय राक्षस तथा ताटकापति सुंद का पिता।

४. रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. ४)।

५. जालंधर की सेना का एक राक्षस (पद्म. उ. १२)।

६. कश्यपस्त्री दिति के पुत्रों में से एक (पद्म. उ. २३०)।

७. कश्यप एवं दनु का पुत्र।

८. संह्राद का पुत्र। इसका पुत्र शतदुंदुभि (ब्रह्मांड. ३.५.३८-३९)।

जंभक—इंद्र के द्वारा मारा गया एक दैत्य। तारकासुर की सेना का यह एक नायक था (वा. सं. ३०.१६, सां. आ. १२.६५)।

जय—(सो. पुरुरवस्.) भागवत मत में पुरुरवस्-पुत्र।

२. (सो. पुरुरवस्.) भागवत मत में मन्थुपुत्र।

३. (सो. प्रति.) वासुमत में विजयपुत्र। भागवत में इसे कृत तथा विष्णु में यज्ञकृत नाम है।

४. (सो. प्रति.) भागवत एवं वायु के मत में संजयपुत्र, विष्णु मत में संजय का पुत्र।

५. (सो. प्रति.) भागवत मत में संकृतिपुत्र।

६. (सो. नील.) मत्स्यमत में भद्राश्वपुत्र। भागवत मत में संजय, एवं विष्णु तथा वायु के मत में संजय यही था।

७. (सू. निमि.) भागवत मत में श्रुतपुत्र, विष्णु एवं वायु के मत में सुश्रुतपुत्र।

८. (स्त्रा. उत्तान.) भागवत मत में कर्पूर का स्वर्गीय से उत्पन्न पुत्र।

९. विश्वामित्रपुत्र (भा. ९.१६.३६)।

१०. युक्राचार्य तथा पीवरों से उत्पन्न पाँच पुत्रों में से एक।

११. विष्णु के द्वारपालों में से एक (जयविजय देखिये)।

१२. विकुंड देवों में से एक।

१३. यमसभा का एक क्षत्रिय (ग. स. ८.१४)।

१४. (सो. यदु.) भागवत मत में कंक तथा कर्णिका का पुत्र।

१५. (सो. यदु.) भागवत मत में कृष्ण तथा भद्रा का पुत्र।

१६. (सो. यदु.) भागवत मत में युयुधानपुत्र। मत्स्य तथा विष्णु में यही असंग है।

१७. (सो. कुह.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भारतीययुद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. ११०.२९-३५)।

१८. पांडवों पक्ष का राजा। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ५६.४०)।

१९. दुर्योधन पक्ष का एक राजा (म. द्रो. ५२.१५)। जयद्रथवध के समय, इसने अर्जुन के साथ युद्ध किया था (म. द्रो. ६६.३६)।

२०. अज्ञातवासकाल में युधिष्ठिर का गुप्तनाम (म. वि. ५. ३०; २२.१२)।

जय ऐन्द्र—सकलद्रष्टा (क. १०.१८०)।

जयंक लौहित्य—यज्ञशिवन् जयंत लौहित्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

जयत्सेन—(सो. कुह.) मत्स्य, वायु, एवं महा-भारत के मत में सार्वभौम का कैकयी से अजात पुत्र। मविष्य, भागवत तथा विष्णु मत में इसे जयसेन कहा गया है। इसे सुश्रवा नामक स्त्री तथा अराचिन नामक पुत्र का (म. आ. १०.१७)

२. (सो. कुह.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भारतीय युद्ध में, भीम ने इसका वध किया (म. द्र. २५.९)।

३. (सो. प्रंति.) विष्णु मत में अहीनपुत्र, तथा वायु के मत्तानुसार अदीनपुत्र। भागवत में इसे जयसेन कहा गया है।

४. भारतीययुद्ध में पांडव पक्षीय राजा (म. उ. ४. १६)।

५. दुर्योधन के पक्ष का मगध का राजा। कालेय के आठ पुत्रों में से प्रथम-पुत्र का, यह अंशवतार था। भारतीय-युद्ध में श्वेत ने इसे ब्रह्म कर, दो बार इसका धनुष तोड़ा था। अंत में अभिमन्यु ने इसका वध किया (म. भी. परि. १. क. ४. पंक्ति. ९)।

६. भारतीययुद्ध में दुर्योधनपक्षीय राजा (म. श. ६. ३)।

७. विराटनगर में नकुल का गुप्तनाम (म. वि. ५. ३०; २२. १२.)।

जयद--(सो. पूर.) वायुमत में मनस्युपुत्र (चारुपद देखिये)।

जयद्वल—अज्ञातवासकाल में सहदेव का गुप्तनाम (म. वि. ५. ३०; २२. १२)।

जयद्रथ—(सो. अनु.) भागवत, विष्णु एवं वायु के मत में बृहन्मनस्पुत्र। मत्स्य में बृहन्मनस् की जगह इसे बृहद्भानु का पुत्र कहा गया है। बृहन्मनस् को दो पत्नियाँ थीं। एक यशोदेवी तथा दूसरी सत्या। यह दोनों वैश्व की कन्याएँ थीं। इनमेंसे जयद्रथ यशोदेवी का पुत्र था (वायु. ९९. १११)। इसे संभूति नामक पत्नी तथा विजय नामक पुत्र था (भा. ९. २३. ११)।

२. (सो. अ. ३.) भागवत के मत में बृहत्काय का, विष्णु तथा वायु के मत में बृहत्कर्मान् का, तथा पद्म एवं मत्स्य के मत में बृहत्पुत्र का पुत्र।

३. सिंधुदेशाधिपति वृद्धशत्रु का पुत्र (म. द्रो. १२१. १७)। धृतराष्ट्रकन्या दुःशला का यह पति था (म. आ. १०८. १८; द्रो. १४८)।

यह सिंधु, सौवीर तथा शिबि देशों का राजा था। यह पांडवों का द्वेष करता था। इसे बलाहक, आनीक, विदारण आदि छः भाई थे (म. व. २५०. १२)।

पांडव वनवास में थे। जयद्रथ स्वयंवर के लिये अपने देश से शाल्व देश जा रहा था। इसके साथ छः भ्राता, शिविकुलोत्पन्न सुरथ राजा का पुत्र कोटिक अथवा कोटिकास्य, त्रिगंतराजपुत्र क्षेमंकर, इक्ष्वाकुकुलोत्पन्न सुभ-वपुत्र सुपुष्पित, एवं कलिटपुत्र थे। इसके सिवा अंगारक, कुंजर, गुतक, शत्रुंजय, संजय, सुप्रवृद्ध, प्रमंकर, ध्रमर, रवि, शूर, प्रताप तथा कुहन नामक सौवीर

देश के द्वादश राजपुत्र तथा सेना भी थी। जाते जाते, इसने उसी काम्यकवन में पड़ाव डाला, जहाँ पांडव रहते थे। पास ही पांडवों का आश्रम था। वे मृगया के लिये बाहर गये थे। आश्रम में धौम्य ऋषि, दासी, एवं द्रौपदी ये तीन ही व्यक्ति थे। द्रौपदी को देखते ही, उसे अपने वश में लाने की इच्छा जयद्रथ को हुई। इसने पूछताछ करने के लिये, कोटिक को उसके पास भेजा। वहाँ जा कर कोटिक ने द्रौपदी से पूछा, 'तुम कौन हो? यहाँ क्यों आई हो?' द्रौपदी के द्वारा सब वृत्तान्त कथन कर दिये जाने के बाद, कोटिक वापस आया। उसने जयद्रथ को सब बताया। यह सुनते ही, सेना से निकल कर जयद्रथ द्रौपदी के पास गया। जयद्रथ को पहचान कर द्रौपदी ने उसका उचित आदरसत्कार किया। द्रौपदी की प्राप्ति के लिये जयद्रथ ने काफी प्रयत्न किये। अन्त में द्रौपदी को इसके निर्लज्ज कृत्य के प्रति अत्यंत क्रोध आया।

द्रौपदी ने इसे तुरन्त निकल जाने को कहा। परंतु उसे बरजोरी से अपने रथ में डाल कर इसने भगाया। यह देख कर धौम्य ऋषि ने इसका पीछा किया। (म. व. २४६-२५२)। इतने में पांडव आश्रम में लौट आये। आते ही द्रौपदी की दासी ने संपूर्ण वृत्त उन्हें बताया। काफी दूर भागे गये जयद्रथ के समीप वे पहुँच गये। काफी देर तक युद्ध हुआ। कोटिकादि कई जयद्रथपक्षीय वीर मारे गये। इसने देखा, अपना पक्ष पराजित हो रहा है। पांडवों की दृष्टि बचा कर, इसने रणांगण से पलायन किया। जयद्रथ भाग गया, यह ज्ञात होते ही, अर्जुन तथा भीम ने इसका पीछा किया। संपूर्ण सेना का नाश होने के बाद, धौम्य ऋषि तथा अन्य पांडव आश्रम लौट आये। काफी देर पीछा करने के बाद, अर्जुन तथा भीम ने जयद्रथ को पकड़ा। भीम ने इसकी अच्छी मरम्मत की। परंतु वध न करते हुए, इसके केशों का पाँच हिस्सों में मुंडन कर, भीम इसे आश्रम में लाया। युधिष्ठिर ने जयद्रथ से, द्रौपदी क्षमायाचना करने के लिये कहा। युधिष्ठिर ने भीम से कहा, 'तुम जयद्रथ का वध मत करो। उससे दुःशला दुःखित होगी। धृतराष्ट्र एवं गांधारी भी शोकमग्न होंगे।' जयद्रथ का वध न कर के उसे छोड़ दिया गया।

इस प्रकार पांडवों के द्वारा इसकी दुर्दशा हुई। इसने मन में अत्यंत अपमानित स्थिति का अनुभव किया। समस्त सेना को राजधानी वापस भेज कर, यह अकेला ही गंगाद्वार चला गया। यहाँ तीन तपश्चर्या से इसने शंकर को प्रसन्न किया। 'मैं सब पांडवों को जीत सकूँ,' ऐसा वर इस

ने शंकर से माँगा। शंकर ने इसे बताया, 'अर्जुन की अनु-पस्थिति में शार्ङ्ग पांडवों का पराभव तुम कर सकोगे'। इससे संतुष्ट हो कर यह अपने नगर लौट आया। इस वर के कारण ही अभिमन्युवध के समय, यह पांडवों का पराभव कर सका (म. व. २५२, २५६)।

भारतीययुद्ध में अर्जुन संशयकों से युद्ध करने में व्यस्त था। मौफा देख कर, इसने पांडवों का पराभव किया। अकेला अभिमन्यु चक्रव्यूह में घिरा कर मारा गया। अर्जुन ने घोर प्रतिज्ञा की, 'कल सूर्यास्त के पहले मैं जयद्रथ का वध करूँगा'। इस प्रतिज्ञा से घबरा कर, यह स्वदेश वापस लौटने का विचार करने लगा। उसी रात्रि में दुर्योधन इसे ले कर द्रोणाचार्य के पास गया। द्रोणाचार्य ने इसकी रक्षा का आश्वासन दे कर, इसे रोक लिया (म. द्रो. ५१-५२)।

जयद्रथ-वध की प्रतिज्ञापूर्ति के बारे में अर्जुन अत्यंत चिंतित था। द्रोण ने शकटव्यूह की रचना कर, उसके अंदर चक्रव्यूह तथा सूचिव्यूह की रचना की। पश्चात् इन तीन व्यूहों के अंदर उसने जयद्रथ को बैठाया। तथा वह स्वयं व्यूह के द्वार पर खड़ा रहा (म. द्रो. ५७-६३)।

कृष्ण ने अर्जुन को सत्वर व्यूह में प्रविष्ट होने के लिये कहा। वहाँ द्रोण तथा अर्जुन युद्ध में मिले तथा काफी देर तक उनका युद्ध हुआ। अंत में कृष्ण की सलाह के अनुसार, द्रोण को छोड़ कर अर्जुन आगे जाने लगा। तब द्रोण ने उसे कहा 'सुझे न जीत कर व्यूह में प्रविष्ट होना तुम्हारे लिये अयोग्य है'। यह सुन कर अर्जुन ने कहा, 'आप आचार्य तथा मेरे गुरु हैं। शत्रु नहीं। मैं आपका शिष्य हो कर पुत्र के सदृश हूँ। युद्ध में आपको जीत सके, ऐसा पुरुष इस लोक में कोई नहीं है' (म. द्रो. ६६)।

मार्ग के अनेक योद्धाओं का वध करता हुआ, अर्जुन आगे बढ़ा। मार्ग में उसके अश्व प्यासे हो गये। रथ रोक कर, तथा जयद्रथ के पास पहुँचने के लिये अभी काफी अवकाश है, यह सोच कर अर्जुन रुक गया। वहीं वाणगंगा निर्माण कर, उसने अपने अश्वों को पानी पिला दिया तथा वह आगे बढ़ा। वह जयद्रथ के समीप पहुँचा। इतने में युधिष्ठिर ने अर्जुन की सहायता के लिये युयुधान को भेजा (म. द्रो. ७५)। बाद में युधामन्यु तथा उत्तर्भोजस् नामक दो चक्ररक्षक (म. द्रो. ६६, ३५), एवं सात्यक तथा भीमसेन व्यूह का भेद कर वहाँ तक पहुँचे। इन सब को एकत्रित

देख कर, दुर्योधन भयभीत हो गया, एवं जयद्रथ के पास रक्षणार्थ जा बैठा (म. द्रो. ७४-७६)। इतने में जयद्रथ को बाहर निकालने के हेतु से, कृष्ण ने समस्त सेना में ऐसा आभास निर्माण किया कि, मानों सूर्य का अस्त हो रहा है। उस समय जयद्रथ ने सूर्यास्त देखने के लिये गर्दन उठाई। तब कृष्ण ने 'वह रहा जयद्रथ,' ऐसा संकेत अर्जुन को किया। अर्जुन ने तत्काल इसका सिर काट दिया एवं संख्या कर रहे जयद्रथ-पिता वृद्धक्षत्र के गोद में गिराया। यह घटना मार्गशीर्ष कृष्ण नवमी को हुई (भारतसावित्री)।

जयद्रथ का सिर काट कर, उसके पिता की ही गोद में क्यों डाला गया, इसके लिये कृष्ण ने अर्जुन को निम्नलिखित कथा बताई।

कृष्ण ने कहा, "वृद्धक्षत्र जयद्रथ का पिता था। काफी लंबी कालावधि के बाद उसे यह पुत्र हुआ। उसके जन्म के समय आकाशवाणी हुई, 'तुम्हारा यह पुत्र कुलशील मनोनिग्रहादि गुणों से प्रसिद्ध योद्धा बनेगा। परंतु लड़ने समय रणांगण में ऐसा योद्धा उसकी गर्दन काटेगा, जिसकी ओर इसका ध्यान नहीं है'। इसे सुन कर वृद्धक्षत्र ने कहा, 'लड़ते समय जो कोई मेरे पुत्र का मस्तक काट कर भूमि पर गिरायेगा, उसका भी मस्तक शतधा विदीर्ण होगा'। इतना कह कर, तथा जयद्रथ को राजगद्दी पर बैठा कर, वह स्यमतपंचक के बाहर बन में गया, और उग्र तपश्चर्या करने लगा। इसलिये वृद्धक्षत्र के ध्यान में न आये, इस तरह दिव्यात्म से जयद्रथ का सिर काट कर उसीकी गोद में उड़ा दिया है। यदि जयद्रथ का मस्तक तुम भूमि पर गिराओगे, तो तुम्हारा मस्तक शतधा विदीर्ण हो जावेगा"। जयद्रथ का सिर गोद में गिरते ही, वृद्धक्षत्र का मस्तक शतधा विदीर्ण हो गया (म. द्रो. १२१)। जयद्रथ का ध्वज वराहचिह्न का था (म. द्रो. ८०, २०)।

इसके एक पुत्र का वध, अर्जुन ने द्रौपदीस्वयंवर के समय किया (म. आ. २१८, ३२)। इसका दूसरा पुत्र दुःशला से उत्पन्न सुरथ। अश्वमेध के समय अश्व के साथ अर्जुन आया, यह सुनते ही उसने प्राणत्याग किया (म. आश्व. ७३, २७)।

४. धर्मसावर्णि का पुत्र।

५. ब्रह्मसावर्णि मनु का पुत्र

जयध्वज—(सो. यदु. सह.) भागवत, विष्णु, मृत्यु एवं वायु के मत में सहस्रार्जुनपुत्र। इसका पुत्र तालवेत्र। यह महारथी था (पद्म. सु. १२)।

जयंत—(सो. यदु. वृष्णि.) मत्स्य मत में वृषभ-पुत्र तथा पद्म मत में ऋषभपुत्र (पद्म. सू. १३)। पद्म में इसीका नामांतर स्वक्वक रहा होगा।

१. पांचालदेश का राजा। पांडवपक्षीय महारथी (म. उ. १६८.१०)।

३. इंद्र का पौत्रोमी से उत्पन्न पुत्र (म. आ. १०६. ४; भा. ६.१८.७)। देवासुर युद्ध में इसने कालेय राक्षस का वध किया (पद्म. सू. ६६.)।

४. भीम का गुप्त नाम। जयेश देखिये।

५. धर्म ऋषि का मरुत्वती से उत्पन्न पुत्र। इसे उपेन्द्र कहते थे (भा. ६.६.८)।

६. दशरथ के अष्टप्रधानों में से एक (वा.रा. वा. ७)।

७. एक रुद्र एवं रुद्रगण।

८. विष्णु का एक पार्षद (भा. ८.११.१७)।

९. त्रेतायुग में परमेश्वर का नाम (भा. ११.५.२६)।

१०. यशस्विन् लौहित्य का नाम (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१; दक्ष जयंत लौहित्य देखिये)।

जयंत पाराशर्य—एक आचार्य। विपश्चित् का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

जयंत वारक्य—कुत्रे वारक्य का शिष्य। उसका दादा कंस वारक्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

२. सुयज्ञ शांडिल्य के नाम से भी एक जयंत वारक्य का उल्लेख है (जै. उ. ब्रा. ४.१७.१)।

जयंती—स्वायंभुव मन्वंतर के यज्ञ नामक इंद्र की कन्या, तथा ऋषभदेव राजर्षि की भार्या। इसे भरतादि सौ पुत्र थे (भा. ५.४.८)।

२. वर्तमान वैवस्वत मन्वंतर के पुरंदर नामक इंद्र की कन्या, तथा वारुणि भृगु के पुत्र शुक्र की स्त्री। देवताओं के नाश के लिये, शुक्राचार्य उग्र तपश्चर्या कर रहे थे। तप में विघ्न उपस्थित करने के लिये, इंद्र ने शुक्राचार्य के पास इसे भेजा। वहाँ जाने पर जयंती ने उत्कृष्ट प्रकार से उसकी सेवा की। बाद में शंकर से शुक्राचार्य को वरप्राप्ति होते ही, उसने इसका हेतु पहचाना। इसे साथ ले कर वह घर आया और गृहस्थाश्रम का उपभोग करने लगा। इससे उसे देवयानी नामक कन्या हुई (मत्स्य. ४७; पद्म. सू. १३; उशनस् देखिये)।

३. सुपेण राजा की कन्या। यह इसने राजपुत्र माधव को दी थी (पद्म. क्रि. ६)।

जयरात—कलिंग देश के भानुमत् राजा का भाई। भारतीय युद्ध में इसका भीम ने वध किया (म. द्रो. १३०. ३१)।

जयवर्मन्—दुर्योधन पक्ष का राजा (म. द्रो. १३१. ८६)।

जयविजय—कर्दम प्रजापति को देवहूती से उत्पन्न पुत्र। ये बड़े विष्णुभक्त थे। हमेशा अष्टाक्षर मंत्र का जप तथा विष्णु का व्रत करते थे। इससे इन्हें विष्णु का साक्षात्कार होता था। ये यज्ञकर्म में भी कुशल थे।

एकवार मरुत्त राजा के निमंत्रण से, ये उसके यज्ञ के लिये गये। उसमें जय 'ब्रह्मा,' तथा 'विजय' याजक हुआ। यज्ञसमाप्ति पर राजा ने इन्हें विपुल दक्षिणा दी। वह दक्षिणा ले कर घर आने के बाद, दक्षिणा का बँटवारा करने के बारे में इनमें झगड़ा हुआ। अन्त में जय ने विजय को, 'तुम मगर बनोगे' ऐसा शाप दिया। विजय ने भी जय को, 'तुम हाथी बनोगे' ऐसा शाप दिया। परंतु शीघ्र ही कृतकर्म के प्रति पश्चात्ताप हो कर, यह दोनों विष्णु की शरण में गये। विष्णु ने आश्वासन दिया, 'शाप समाप्त होते ही मैं तुम्हारा उद्धार करूँगा'। शाप के अनुसार, एक मगर, तथा दूसरा हाथी बन कर, गंडकी के किनारे रहने लगे। बाद में एक दिन हाथी कार्तिकस्नान के हेतु से गंडकी नदी में उतरा। मगर ने उसका पैर पकड़ लिया। तब इसने विष्णु को पुकारा। विष्णु ने आ कर दोनों का उद्धार किया। उन्हें वह विष्णुलोक ले गया। पश्चात् जय तथा विजय विष्णु के द्वारपाल बने (स्कन्द. २.४.२८; पद्म. उ. १११-११२)।

बाद में सनकादि देवर्षियों को, विष्णुदर्शन के लिये इन्होंने जाने नहीं दिया। अतः उनके शाप से, वैकुण्ठ से पतित हो कर, ये असुरयोनि में गये। इनमें से जय ने हिरण्याक्ष का जन्म लिया। पृथ्वी स्तिर पर धारण कर के वह उसे पाताल ले गया। तब बराह अवतार धारण कर के, विष्णु ने इसका वध किया एवं पृथ्वी की रक्षा की (भा. ३.१६.३२; पद्म. उ. २३७)।

अश्वियों ने, 'तुम पृथ्वी पर तीन बार जन्म लोगे' ऐसा शाप इन्हें दिया। इन्होंने भी अश्वियों को, 'तुम भी एक बार पृथ्वी पर जन्म लोगे' ऐसा शाप दिया। शाप के अनुसार, जयविजय ने क्रमशः हिरण्याक्ष तथा हिरण्यकश्यपु के रूप में जन्म लिया। बाद में रामावतार के समय रावण तथा कुंभकर्ण, तथा कृष्णावतार में शिशुपाल तथा वक्रदन्त नामों से ये प्रसिद्ध हुए।

जयशर्मन्—अवंतीनगर के शिवशर्मा ब्राह्मण का पुत्र। व्यसनी हो कर भी, इसने अधिकांश में वध-एकादशी का व्रत आचरण किया। लक्ष्मी ने इसे एकादशी-माहात्म्य बताया (पद्म. उ. ६२)।

जयत्सेन—जयत्सेन १.२. देखिये।

२. (सो. क्षत्र.) भागवत मत में अहीनपुत्र (जयत्सेन देखिये)।

३. क्षत्रिय राजा मागध (म. स. ४.२३)।

४. अवंत्य राजा। इसे राजाधिदेवी नामक स्त्री थी। इसके पुत्र विद्यानुविद एवं कन्या मित्रविदा थी। वह कृष्ण को विवाह से दी गयी थी।

जया—दृशाश्व प्रजापति की कन्या तथा पार्वती की बारी (स्कंद. १.३.२.१८)। यह पार्वती की सखी होने का उल्लेख भी प्राप्त है। (वामन ४; पद्म. उ. १६)।

जयानीक—दुपदपुत्र पांचाल। भारतीययुद्ध में यह अश्वत्थामा से मारा गया (म. द्रो. १३१.१२.७)।

२. विराट का भाई (म. द्रो. १३३.३९)।

जयावह—मणिवर तथा देवजनी का पुत्र।

जयाश्व—जयानीक का भ्राता। अश्वत्थामा ने भारतीययुद्ध में इसका वध किया (म. द्रो. १३१.१२.७)।

२. विराट का भाई (म. द्रो. १३३.३९)।

जयेश—विराट नगरी में भीम द्वारा धारण किया गया गुप्त नाम (म. वि. ५.३०; २२.१२; भांडारकर प्रति: जयंत)।

जर—जरस् देखिये।

जरत्कार—देरावत सर्प तथा एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.७६)।

२. एक ऋषि। कार का अर्थ है शरीर। शरीर को तप से क्षीण करता है, वह जरत्कार, यह इस शब्द की व्युत्पत्ति है (म. आ. ३६.३)। यह यायावरो का पुत्र था (म. आ. ४१.१६)।

ब्रह्मचारी अवस्था में जरत्कार तीर्थयात्रा कर रहा था। तब इसे घास के आश्रय से एक गड्ढे में लटकनेवाले वीरणक नामक पितर दिखे। घास का जड़ चूहों द्वारा कुतरा जा रहा था। इसी कारण उनका आधार कब्र टूट जावेगा कह नहीं सकता था। उनकी इस अवस्था का कारण इसने पूछा। उन्होंने कहा, 'जरत्कार अविवाहित होने के कारण हमारा वंश खंडित हो गया है। इस लिये हमारी यह स्थिति हो गई है। केवल तप के भरोसे हम आज तक जीवित हैं। परंतु उस तप को कालरूपी चूहा दिनरात कुतर

रहा है। अतः किस तरह क्यों न हो, हमारे पुत्र से विवाह करने को कहो'। तब इसने कहा, 'मैं तुम्हारा ही पुत्र हूँ। मैंने ब्रह्मचर्यावस्था में रहने का निश्चय किया था। तुम्हारी यह स्थिति देख कर मैंने अपना विचार बदल दिया है। मेरे ही नाम की कन्या मुझे मिथ्या में प्राप्त हो। उसके पोषण की जिम्मेवारी मुझ पर न हो। इस शर्तपर, उससे मैं विवाह कर लूँगा'।

बृद्ध होने के कारण, कोई भी इसे कन्या नहीं देता था। पश्चात् अरण्य में वासुकि ने अपनी जरत्कार नामक भगिनी इसे दी, तथा उसका पोषण करने की जिम्मेवारी स्वयं उठा ली। विवाह होने पर पतिपत्नी एकत्र रहने लगे। परंतु इसने शुरु में ही इसमें चेतावनी दी की, 'मेरे मन के विरुद्ध अगर तुम व्यवहार करोगी, तो मैं तुम्हें छोड़ दूँगा'।

एक दिन यह अपनी पत्नी की गोद में सिर रख कर सोया था। सायंकाल होने के बाद, संव्यालयेय न हो, इसलिये उसने पति को जागृत किया। तब 'मैं सोया हूँ। सूर्य की क्या मजाल है कि, वह अस्तायमान हो?' ऐसा क्रोध में कह कर यह पुनः तप करने के लिये चला गया (म. आ. ४३.३९)। इस समय जरत्कार गर्भवती थी। उसे आस्तीक नामक पुत्र हुआ। जरत्कार की पत्नी कश्यपकन्या मनसा से, आस्तीक का जन्म हुआ (दे. भा. ९. ४७-४९; मनसा देखिये)।

३. जरत्कार की पत्नी (जरत्कार २. देखिये)।

जरद्गौरी—आस्तीक की माता जरत्कार का नामांतर।

जरस्—वसुदेव को रथराजी नामक स्त्री से उत्पन्न द्वितीय पुत्र। इसे 'जर' नामांतर है। यह क्षत्रिय था, परंतु दुराचरण से व्याध बना। इसीके कारण से कृष्ण की मृत्यु हुई। बाद में भल्लतीर्थ में इसकी मृत्यु हो गई (भा. ११. ३०.३३; म. मौ. ५.१९-२२; स्कन्द. ७.१.२३९-२४१)।

जरा—एक राक्षसी तथा जरासंध की उग्रमाता (जरासंध देखिये)। जरासंध ने कृष्णादि को का वध करने के लिये गदा फेंकी। उसका प्रतिकार करने के हेतु, बलराम ने स्थूणाकर्ण नामक अस्त्र फेंका। इन दोनों के बीच में आने के कारण, इसकी मृत्यु हो गई (म. द्रो. १.५६.१४)।

जरासंध—(सो. मगध.) वायु मत में नभस्-पुत्र। भागवत, विष्णु एवं मत्स्य मत में राजा बृहद्रथ का पुत्र। इसलिये इसे बृहद्रथ नामांतर था।

बृहद्रथ राजा ने काशिराज की जुड़वाँ कन्याओं से विवाह किये थे। लंबी कालावधि तक वह अनपत्य रहा।

काक्षीवत तमपुत्रे चंडकौशिक ने उसे पुत्रप्राप्ति के लिये प्रसादस्वरूप एक आम्रफल दिया। दोनों पत्नियों से समभाव से व्यवहार करूँगा, ऐसी उसकी प्रतिज्ञा थी। अतः उसकी दोनों पत्नियों ने, उस फल आधा आधा भक्षण किया। कुछ काल के बाद, उन्हें आधा आधा पुत्र हुआ। वे टुकड़े उन्होंने दासियों के द्वारा चौराहे पर ले जा कर, रखवा दिये।

पश्चात् जरा अथवा गृहदेवी नामक राक्षसी ने उन टुकड़ों को जोड़ दिया। उससे एक बालक निर्माण हुआ। बाद में इस बालक को खाने के लिये, वह खींच कर ले जाने लगी। परंतु उस बलवान् बालक को वह खींच नहीं सकी। बाद में उस बालक ने रुदन प्रारंभ किया। तब राजा बाहर आया। राक्षसी ने वह बालक उसे दे डाला। राजा ने इसका नाम जरासंध रखा (म. स. १६-१७; मत्स्य. ५०)।

“बृहद्रथ की एक ही पत्नी को बालक के दो टुकड़े हुए। उसने उन्हें चौराहे पर फेंक दिया। जरा नामक राक्षसी उन टुकड़ों के पास बैठ कर, लीलावध बारबार ‘जीवित हो, ऐसा कहने लगी। इस मंत्र से, उन जुड़े टुकड़ों में जान आ गई,” ऐसी भी कथा प्राप्त है (भा. ९.२२)।

इसका जन्म विप्रचित्ति दानव के अंश से हुआ था (म. आ. ६१.४)। यह मगध देश का अधिपति था। इसकी राजधानी का नाम गिरिव्रज था। यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था। परंतु धनुष्य उठाते समय, घुटनों पर गिर कर यह फजीहत हुआ। अतः सीधा अपने देश वापस चला गया (म. आ. १७८-१८१८*)। रुक्मिणीस्वयंवर में भी यह उपस्थित था। वहाँ भीष्मक के सामने इसके द्वारा किया गया कृष्णस्तुति-युक्त मापण, इसके कृष्णद्वेष से विसंगत प्रतीत होता है (ह. वं. २.४८)।

इसने अपनी दो कन्यायें तथा सहदेव की कनिष्ठ बहनें, अस्ति तथा प्राप्ति कंस को दी थीं। कंसवध की बातों उनके मुख से ज्ञात होते ही, इसने सेनासहित मथुरा पर आक्रमण किया। इसकी सेना तेईस अश्वोहिणी (विष्णु. ५.२२) अथवा बीस अश्वोहिणी थी (ह. वं. २.३६)। कृष्ण तथा बलराम नगर के बाहर आ कर, इससे युद्ध करने के लिये तैयार हो गये।

जरासंध जैसे शक्तिमान् शत्रु से टक्कर देनी थी। बलराम तथा कृष्ण को इस काम में प्रभावी शस्त्रों की आवश्यकता थी। अतः कृष्ण ने शार्ङ्ग शत्रुष, अश्वय

तुणीर तथा कौमोदकी गदा प्राप्त की। बलराम ने भी संवर्तक हल तथा सौन्द मुसल प्राप्त किया (ह. वं. २. ३५.५९-६५; विष्णु. ५.२२. ६-७)।

जरासंध के द्वारा मथुरा के चारों द्वारों पर आक्रमण करने के लिये, जिन राजाओं की योजना की थी, वे निम्नलिखित हैं:--

रक्षिण में—दरद, चेदिराज तथा स्वयं जरासंध;

उत्तर दिशा में—पुरुकुलोत्पन्न वेणुदारि, विदर्भाधिपति सोमकराज, भोजेश्वर रुक्मिन्, सूर्योक्ष तथा मालवेश, अवंतिदेश के विंद तथा अनुविंद, दंतवक्त्र, छागलि, पुरमित्र, विराट, कौरव्य, मालव, शतधन्वा, विदूरथ, भूरिश्रवा, त्रिगर्त, वाण एवं पंचनद;

पूर्व में—उलूक, केतव, अंशुमान् राजा का पुत्र एकलव्य, बृहलक्षत्र, बृहद्धर्मन्, जयद्रथ, उत्तमौजस, शल्य, कौरव, कैकेय, वैदिश, वामदेव तथा सिनि देश का राजा सांकृति;

पश्चिम में—मद्रराजा, कलिगपति, चैकितान, बाह्लिक, काश्मीराधिपति गोन्द, कल्पेश द्रुमराजा, किंपुरुष तथा पर्वतप्रदेश का अनामय (ह. वं. २.३५)।

इस प्रकार इसने व्यवस्था की। परंतु यादव सेना संख्या में कम होते हुए भी, उसने इसकी पराजय की। इस युद्ध में, एकबार बलराम इसे मारने के लिये प्रवृत्त हो गया था। परंतु आकाशवाणी ने उसे सुझाया, ‘इसका वध किसके द्वारा होगा यह तुम्हें मालूम है, इसलिये तुम इसका वध मत करो’ (ह. वं. २.३६)। जरासंध को बलराम ने कई बार जीता। परंतु इसका वध नहीं किया। इसके साथ के राजाओं पर, उसने अच्छा हाथ चलाया (ह. वं. २.६२.५.१२)।

इस युद्ध में भाग लेनेवाले राजाओं की तीन सूचियाँ प्राप्त हैं, परंतु वे एक दूसरे से मेल नहीं रखती। एक में चेदिराज शिशुपाल है, तो दूसरी में चेदिराज पुरुयोत्तम। एक में सिनिराज सांकृति, तो दूसरे में केशिराज सांकृति। कहीं एक ही सूचि में, दरद तथा दरदेश्वर नामक दो राजाओं का उल्लेख है। इनके अतिरिक्त राजाओं का भी मेल नहीं बैठता (ह. वं. २.३४)।

इस प्रकार इसने मथुरा पर कुल सत्रह बार आक्रमण किये। हर समय इसका पराभव ही हुआ। बिना किसी कारण, यह कृष्ण से शत्रुत्व रखता था। जयद्रथ के आक्रमण से बचने के लिये, कृष्ण ने मथुरा छोड़ी। पश्चिम समुद्र तट पर रैवतक पर्वत के पास, द्वारका में नये राज्य

की स्थापना की। इस युद्ध में कृष्ण के पक्ष में, कुल अठारह राजकुल थे (म. स. १३; विष्णु. ५.२२; ब्रह्म. १९५)। इस प्रकार, इस युद्ध में पराजित हो कर, यह वापस लौटा। पश्चात् इसने अपनी सहायता के लिये काल्यवन को आमंत्रित किया (ह. वं. २.५३)।

यद्यपि कृष्ण ने इसका पराम्भव किया था, तथापि यह अत्यंत शूर था। इसे राज्य प्रदान कर, इसके मातापिता ने वनगमन किया। पश्चात्, इसने अतुल पराक्रम दर्शाया। भोजकुल के सब क्षत्रियों को पादाक्रांत कर, उन्हें अपने काबू में लाया। तत्र सभीयों ने इसे सर्वभौमपद पर स्थापित किया (म. स. १३)। गिरिव्रज राजधानी में, ९९ बार घूमा कर इसके द्वारा फेंकी गई गदा, ९९ योजन दूर मथुरा के पास आ कर गिरी। हंस तथा डिम्बक नामक दो पराक्रमी भाई इसके सेनापति थे (म. स. १३)। कर्ण तथा जरासंध का युद्ध हो कर, उसमें कर्ण विजयी हुआ। इससे इसमें तथा कर्ण में मित्रत्व उत्पन्न हो कर, इसने उसे मालिनीनगरी अर्पण की (म. शां. ५.६)। जरासंध की सहायता से ही, कंस ने पिता का राज्य छीना (ह. वं. २.३४.६-७)।

धर्मराज के मन में, राज्यय्य यज्ञ करने की इच्छा उत्पन्न हुई। उसने कृष्ण को इन्द्रप्रस्थ बुला कर उसकी सलाह ली। कृष्ण ने उसे कहा, 'चूंकि जरासंध ने ८६ राजाओं को कैद कर रखा है, उसे बिना जीते राज्यय्य यज्ञ पूरा न हो सकेगा'। भागवत में २०८०० राजाओं का उल्लेख है। इसका निश्चय था कि, उन राजाओं को वह महादेव को बलि चढायेगा। प्रत्येक कृष्ण चतुर्दशी को यह एक एक राजा की बलि भैरव को चढाता था।

इसलिये जरासंध को जीतने के लिये कृष्ण तथा अर्जुन को ले कर, कृष्ण गिरिव्रज में गया। उन्होंने ब्राह्मणवेश धारण किया था। इसके महाद्वार पर रखी गई अत्यंत बड़ी तीन हुंदुभियों को फोड़ कर, उन्होंने इसके घर गमन किया। जरासंध ने उनसे मिल कर उनका सत्कार किया तथा इच्छा पूछी। कृष्ण ने कहा, 'इन दोनों का मौनव्रत है, इसलिये हम मथुरात्रि के वाद वार्तालाप करेंगे'। मथुरात्रि के वाद जरासंध अर्ध्यापन्न दे कर उनका सत्कार करने लगा। उन्होंने उसे ग्रहण नहीं किया। तत्र उनकी आकृति देख कर, जरासंध ने पहचाना कि, वे क्षत्रिय हैं। उनसे आगमन का कारण पूछा। कृष्ण ने तीनों के नाम बता कर कहा, 'जिससे युद्ध करने की तुम्हारी इच्छा हो, उससे तुम युद्ध करो'।

जरासंध ने कृष्ण तथा अर्जुन को नालायक मान कर, भीम से युद्ध करने का निश्चय किया। सहदेव को राज्याभिषेक कर स्वयं युद्ध प्रारंभ किया। प्रथम इनका गदायुद्ध हुआ, परंतु एक दूसरे के शरीरों पर काफी बार आघात होने के कारण गदायें टूट गईं। द्वंद्वयुद्ध प्रारंभ हुआ। यह युद्ध दिनरात चलता था। यह युद्ध कार्तिक शु. १ से कार्तिक शु. १४ तक १४ दिन (म. स. २१.१७-१८), २५ दिन (पद्म. उ. २७९) अथवा २७ दिन (भा. १०.७२. ४०) चल रहा था। युद्ध के अंतिम दिन दोनों अत्यंत थक गये थे। कृष्ण की उत्तेजना से भीम ने जरासंध का वध किया (म. स. २२.६; क. २०-२४)। अंतिम दिन में भीम ने जरासंध को फाड़ डाला। यह पुनः बुड़ कर युद्ध के लिये सिद्ध हो गया। यह देख कर भीम इस विचार में पड़ा, इसकी मृत्यु कैसी हो। इतने में कृष्ण ने एक तृण हाथ में ले कर उसका लेद किया। दाहिने हाथ का तृण बाईं ओर, तथा बायें हाथ का तृण दाहिनी ओर फेंकने का संकेत कृष्ण ने भीम को किया। भीम ने वैसा करते ही जरासंध की मृत्यु हो गई (पद्म. उ. २५२; २७८)। कृष्ण को यह युक्ति उद्वेग ने सुझाई थी।

जरासंध मृत होते ही, इसका पुत्र सहदेव शरण आया। कृष्ण ने उसे अमय दिया। उसको राज्य पर स्थापित कर के सब राजाओं को कारागृह से छुड़ा दिया। बाद में उन सब राजाओं को राज्यय्य यज्ञ में आमंत्रित कर, वह भीमार्जुन के साथ इन्द्रप्रस्थ लौटा (म. स. २२; पद्म. उ. २५२)। परंतु महाभारत में लिखा है कि, जरासंध वध का कृत्य दिग्विजय के पहले किया गया। भागवत में लिखा है कि, सारा दिग्विजय पूरा होने के बाद, जरासंध अजित रहा, इसलिये यह आक्रमण करना पड़ा।

२. (सो. कुं.) धृतराष्ट्रपुत्र।

जरितारि—मंदपाल ऋषि को शाहर्षी जरिता से उत्पन्न पुत्र (म. आ. २२४.६; अनु. ५३.२२ कुं.)।

जरित् शाहर्षी—मंत्रद्रष्टा (क. १०.१४२.१; २)।

२. मंदपाल ऋषि की पत्नी। शाहर्षा एक पक्षी की जाति है। मंदपाल से इसे चार पुत्र हुए। उनके नाम जरितारि, सारिस्त्रक, द्रोण तथा स्तम्भमित्र थे (म. आ. २२४.६)। ये ही नाम उपरोक्त सूक्तों के क्रम से दो दो ऋचाओं के द्रष्टाओं के हैं। उन पुत्रों को मंदपालद्वारा भगा दिये जाने पर, वे दावाग्नि में धिर गये। परंतु उपरोक्त दो मंत्रों से, अग्नि की प्रार्थना करने पर दावाग्नि से वे मुक्त हो गये। सायण ने इस कथा का अनुक्रमणी के

आधार से संबंध जोड़ा है। महाभारत तथा अनुक्रमणी में प्रथम पुत्र के नाम में मतभेद है। महाभारत में जरितारि नाम दिया है। अनुक्रमणी एवं बृहद्देवता ने प्रथम पुत्र का नाम जरितृ व्रता कर, माता का नाम नहीं दिया है।

जरुथ—पानी में रहनेवाला कोई राक्षस रहा होगा (ऋ. १०.८०.३)। वसिष्ठ ने प्रज्वलित अग्नि से इसे मस किया (ऋ. ७.९.६)। जरदुष्ट के साथ इसकी तुलना की जाती है।

जरवर—सर्पसत्र में गृहपति (यजमान) (पं. ब्रा. २५.१३)।

जल जातृकर्ण्य—कशी विदेह तथा कोसल के लोगों का वा राजाओं का पुरोहित (सं. श्रौ. सू. १६.२९.६; जातृकर्ण्य देखिये)।

जलद—अत्रिकुल का गोत्रकार।

जलंधर—कश्यपकुल का गोत्रकार।

२. महाबमंडी तथा त्रैलोक्य विजयी गृहस्थ। इसको शिव ने 'अंगुष्ठरेलोट्य' चक्र से मारा (शिव. शत. १५.१७)।

जलसंध—अंगिरा कुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि। इसका नाम जलसंधि दिया गया है।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ६०.२८; क. ६२.४)।

३. मागधराज। यह रथवर था (म. आ. १७७.११; उ. १६४.२४)। भारतीय युद्ध में यह दुर्योधन के पक्ष में था। यह सात्यकि द्वारा मारा गया। यह बड़ा शूर एवं शुचिर्भूत था (म. द्रो. ९१.४५)।

जलसंधि—जलसंध १. देखिये।

जलापा—ब्रह्मवादिनी। यह मानवी थी (ब्रह्मांड. २. ३३.१७)।

जलामित—आलुकि का पाठभेद।

जलेयु—(सो. पूर.) भागवत, विष्णु, वायु तथा महाभारत के मत में रोद्राश्व के दस पुत्रों में से एक (म. आ. ८९.९)।

जल्प—तामस मन्वन्तर के सप्तपियों में से एक।

जव—दंडकारण्य के विरोध राक्षस का पिता।

जविन—भृगुकुल का गोत्रकार।

जवीनर—(सो. नील.) मत्स्यके मत में भद्राश्वपुत्र। इसे भागवत में यवीनर, वायु में यवीयस तथा विष्णु में प्रवीर कहा गया है।

जहावी—यह शब्द ऋग्वेद में दो बार आया है (ऋ. १.११६.१९; ३.५८.६)। जन्हु की स्त्री, वा सायण के मत में जन्हु का वंश, यों इस शब्द का अर्थ होगा (जन्हु देखिये)।

जहु—(सो. अमा.) भागवत के मत में होत्रकपुत्र, एवं विष्णु तथा वायु के मत में सुहोत्रपुत्र।

जहु तथा वृचीवत् में विरोध था। विश्वामित्र जाह्व ने वृचीवत् को परास्त किया। राष्ट्र का स्वामित्व विश्वामित्र जाह्व ने प्राप्त किया (तां. ब्रा. २१.१२.२)।

विश्वामित्र को सौ पुत्र थे। फिर भी विश्वामित्र ने शुनःशेप को अपना पुत्र माना। शुनःशेप का देवरात नाम रख दिया। इतना ही नहीं, उसे सत्र पुत्रों में ज्येष्ठत्व दिया। पहले पचास पुत्रों ने देवरात को ज्येष्ठ मानना अमान्य किया। दूसरे पचास पुत्रों का मुखिया मधुच्छंद्रस था। उन्होंने देवरात का ज्येष्ठत्व मान लिया। विश्वामित्र ने देवरात को जहु तथा गाथिन् का आधिपत्य दिया। यज्ञ, वेद, तथा धन का उसे अधिकारी बनाया (ऐं. ब्रा. ७.१८)।

इससे पता चलता है कि, शुनःशेप का कुलनाम जहु था, तथा विश्वामित्र का कुलनाम गाथिन् वा गाधि था। दोनों कुलों का उत्तराधिकारी शुनःशेप (देवरात) था। अत एव, उसको द्यामुष्यायण कहते हैं।

जहु शब्द से जहावी शब्द हुआ। जहावी शब्द ऋग्वेद में दो बार आया है। 'जहु की प्रजा,' यों उस शब्द का अर्थ है (ऋ. १.११६.१९; ३.५८.६)।

अमावसुवंश के जहु तथा पूरुवंश के जहु दोनों विलकूल भिन्न थे। नामसाम्य से, कई पुराणों में अमावसुवंश के विश्वामित्रादि लोक, पूरुवंश के जहु के वंश में दिये गये हैं। वस्तुतः विश्वामित्रादि लोग अमावसुवंश में उत्पन्न हुए हैं। जहुवंश से उनका कोई संबंध नहीं है (भरत एवं विश्वामित्र देखिये)।

२. (सो. पूर.) अजमीदपुत्र। इसकी माता का नाम केशिनी था (म. आ. ८९.२८; अग्नि. २७८.१६)। अजमीद का पिता हस्तिन् ने हस्तिनापुर की स्थापना की। भगीरथ ने लायी हुयी गंगा इसने रोकी थी। भगीरथ ने उसे फिर मुक्त किया (वा. रा. वा. ४३; वायु. ९१)। गंगा को जाह्वनी कहने का यही कारण है।

३. (सो. पूरु.) मिथिल का पुत्र। इसका पुत्र सिधुदीप (म. अनु. ७.३.कुं.)। जहु आदि विश्वामित्र-कुल के लोग, महाभारत में कई जगह पूरुवंश में दिये हैं। दूसरे स्थल में भिन्न प्रतिपादन है (म. शां. ४९)।

४. (सो. पूरु. कुरु.) भागवत, विष्णु, मत्स्य, तथा वायु के मत में कुरु के पाँच पुत्रों में तीसरा। इसका पुत्र मुरथ। उस से हस्तिनापुर में कुरुवंश का विस्तार हुआ।

५. तामस मन्वन्तर का एक ऋषि।

जाजलि—एक ऋषि। इसे अपने तप पर घमंड हो गया था। तुलाधार नामक एक धर्मात्मा वैश्य से संवाद करने पर, इसका घमंड नष्ट हुआ। इसे पश्चिमी समुद्र के किनारे पर मुक्ति मिली (म. शां. २५३-२५७; भा. ४. ३१.२)।

२. विष्णु, वायु, ब्रह्मांड तथा भागवत के मत में व्यास की अथर्वच शिष्यपरंपरा के पथ्य का शिष्य।

३. भास्करसंहिता के वेदांगसारतंत्र का कर्ता (ब्रह्मवै. २.१६)।

४. ऋग्वेदी श्रुतिर्षि।

जाटासुरि—जटासुर के पुत्र अलंबुष का नामांतर।

जाटिकायन—एक ऋषि। शांत्युदक करते समय किस मंत्र का उपयोग करना चाहिये, इस विषय में इसका मत दिया गया है (कौ. ग. ९.१०)।

जात शाकायन्य—एक ऋषि। कर्म के एक विशिष्ट संप्रदाय प्रवर्तक के नाते इसका उल्लेख है (क. सं. २२.७)। यह शंख कौष्य का समकालीन था।

जातूकर्ण—जातूकर्ण्य ६. देखिये।

जातूकर्ण्य—आसुरायण एवं थासू का शिष्य। इसका शिष्य पाराशर्य (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)। यह काल्यायनी का पुत्र था (सां. आ. ८.१०)। अलीक्यु वाचस्पत्य तथा अन्य ऋषियों का यह समकालीन था। अन्य काफी स्थानों में इसका उल्लेख है (ऐ. आ. ५.३.३; सां. श्रौ. १.२.१७; ३.१६.१४; २०.१९; १६.२९.६; का. श्रौ. ४.१.२७; २०.३.१७; २५.७.३४; सां. ब्रा. २६.५)। संधिनियम के बारे में विचार करनेवाला, यह एक आचार्य था (शु. प्रा. ४.१२३; १५८; ५.२२)। सांख्यायन श्रौतसूत्र में इसे जल जातूकर्ण्य कहा है।

एक पैतृक नाम के नाते, जातूकर्ण्य शब्द का उपयोग भी प्राप्त है।

धर्मशास्त्रकार—विश्वरूप ने, बृद्ध याज्ञवल्क्य से लिये गये एक उद्धरण में, जातूकर्ण्य का धर्मशास्त्रकार के नाते उल्लेख

किया है। स्मृतिचन्द्रिका में दी गयी, 'आंगिरस स्मृति' के एक उद्धरण में, जातूकर्ण्य को उपस्मृतिकार कहा है। इसी प्रकार विद्यार्थियों के कर्तव्य, अन्य जाति की स्त्री से विवाह का प्रतिबंध, श्राद्धकाल आदि के संबंध में जातूकर्ण्य के सूत्र प्राप्त हैं। जातूकर्ण्य ने आचार तथा श्राद्ध आदि पर काफी प्राचीन सूत्र लिखे थे। बारह राशियों में से, कन्या राशि के संबंध में जातूकर्ण्य के एक श्लोक का उल्लेख, अपरांक ने किया है। इससे प्रतीत होता है कि, जातूकर्ण्य का काल ईसवी सन २०० से ४०० के बीच का होगा। श्रौतसूत्र में एवं हलायुध तथा हेमाद्रि के ग्रंथों में भी इसके आधार लिये गये हैं (का. श्रौ. ४.१.२७; २०.३.१७; २५.७. ३५; सां. श्रौ. १.२.१७; ३.१४; २०.१९; १६.२९.६)।

२. (सू. विष्ट.) भागवत के मत में देवदत्त पुत्र।

३. (सू. नरि.) एक ऋषि (म. स. ४.१२)। अग्निवेश्य का यह नामांतर था (भा. ९.२.२१)।

४. व्यास की ऋक्षशिष्य परंपरा के शाक्य मुनि का शिष्य। इसने शाक्यसंहिता का अध्ययन किया था (व्यास देखिये)।

५. वसिष्ठोत्र का प्रवर।

६. एक व्यास (व्यास देखिये)। जातूकर्ण्य ऐसा पाठ भी उपलब्ध है। यह जरदुष्ट से मिलने के लिये ईरान गया था (दसतिर. १३.१६३)।

७. ब्रह्मांड पुराण की परंपरा का एक आचार्य।

जातूष्टिर—एक व्यक्ति। इंद्र ने इसकी सहायता की थी (ऋ. २.१३.११)।

जान—वृश का पैतृक नाम।

जानकि—ऋतुजित् (तै. सं. २.३.८.१; क. सं. ११. १), तथा अयस्थूण (बृ. उ. ६.३.१०) का पैतृक नाम। उपनिषदों में इसे चूल भागवत्ति का शिष्य तथा सत्यकाम जाबाल का गुरु कहा गया है। उपरोक्त वर्णित सारे जानकि एक हैं या अनेक, यह कहा नहीं जाता।

२. एक ऋषि। विश्वन्तर के सोमयाग में, स्यापर्ण के प्रवेश करने के बाद, एक विशिष्ट पद्धति की सोम की परंपरा बताई गयी। वह परंपरा ऋतुविद् ने जानकि को सिखायी (ऐ. ब्रा. ७.३४)।

३. दुर्योधनपक्षीय क्षत्रिय राजा (म. आ. ६१.३६)। स्वर्ग में रहनेवाले चंद्रविनाशन दैत्य का यह अंशावतार था।

जानंतपि—अत्यराति का पैतृक नाम।

जानपदी—जालपदी या जालवती का नामांतर।

ज्ञानश्रुति—वौत्रायण का पैतृक नाम (छां. उ. ४. १.१; २.२)। इस उदार गृहस्थ ने सर्वत्र अन्नछेत्र खोल दिये थे (रैक्व देखिये)।

ज्ञानश्रुतेय—उपावि, उडुक्व, औषावि, नगरिन्, तथा सायक का पैतृक नाम।

जानुजंघ—एक क्षत्रिय (म. आ. १.१७६. अनु. २७१.५९ कुं.)।

२. तामस मन्वन्तर में से मनुपुत्र।

जांदकार—सूर्य के समीप रहनेवाले अठारह विनायकों में से एक (सां. १६)। जांदकार का शब्दशः अर्थ है 'सहायता करनेवाला'। यह हमेशा यम का कार्य करता है।

जाबाल—महाशाल तथा सत्यकाम का मातृक नाम। एक सत्र का यह गृहपति था (सां. ब्रां. २३.५)।

२. भृगुकुल का गोत्रकार।

३. विश्वामित्र का एक पुत्र।

४. विश्वामित्रकुल का गोत्रकार तथा एक ऋषिगण।

५. ब्रह्मांड मंत्र में व्यास की यज्ञःशिष्य परंपरा के, याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)।

६. भास्करसंहिता के तंत्रसारतंत्र का कर्ता (ब्रह्मवै. २. १६)।

जाबालायन—माध्यंदिनायन का शिष्य। इसका शिष्य उद्दाल्कायन (बृ. उ. ४.६.२; काण्व)।

जाबालि—विश्वामित्र का पुत्र।

२. दशरथ का एक मंत्री। यह राम के विवाह में उपस्थित था (वा. रा. वा. ६९.४)। पित्राज्ञा तोड़ कर अयोध्या आने के लिये, इसने राम को कहा। इसलिये राम ने इसका निषेध किया (वा. रा. अयो. १०८)।

रामसभा का धर्मशास्त्री के नाते भी इसका उल्लेख प्राप्त है। जाबालनीति नामक इसका एक ग्रंथ है। भारत के 'कणिकनीति' से वह साम्य रखता है।

३. एक ऋषि। इसके वंश में पैदा हुए लोगों को भी वही नाम प्रयुक्त है। मंदार पर्वत पर इसकी तपश्चर्या की जाह थी। इसके लास्य शिष्य थे। निपुलिक राजा ऋतंभर को पुत्रप्राप्ति के लिये, इसने विष्णुसेवा, गोसेवा तथा शिवसेवा करने के लिये कहा।

एक दिन यह अरण्य में गया था। वहाँ तालाब के किनारे, एक सुंदर तथा तरुण तापसी तपश्चर्या करती हुई इसे दिख पड़ी। उसे जानने के लिये, यह वहाँ सौ वर्ष तक रुका। उसकी समाधि समाप्त होने पर, जाबालि ने

उसकी जन्मकथा पूछी। बाद में कृष्णोपासना का रहस्य उससे जान कर, यह स्वयं कृष्ण की आराधना करने लगा। उस तपश्चर्या के फलस्वरूप, गोकुल के प्रचंड नामक गोप के घर में, चित्रगंधा नामक गोपी का जन्म इसे मिला (पद्म. पा. ३०.७२; १०९)।

४. एक ऋषि। एकवार यह घोर तपश्चर्या कर रहा था। इन्द्र ने रंभा को इसके पास भेजा। रंभा ने इसको मोहित किया। उससे इसे एक कन्या हुई। बाद में उस कन्या का चित्रांगद राजा ने हरण किया। तब जाबालि ने उसे कुष्ठरोगी बनने का शाप दिया (स्कन्द. ६.१४३-१४४)।

५. भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि (भृगु देखिये)। इसकी लिखी एक स्मृति प्रसिद्ध है। हेमाद्रि तथा हल्ययुध ने उस में से आधार लिये हैं।

जामघ—(सो.) भविष्य के मत में पारावतसुत का पुत्र।

जामदग््निय—एक पैतृक नाम। जमदग्नि के दो वंशजों के लिये यह नाम प्रयुक्त है (तै. सं. ७.१.९.१)। औरव छोर्गों को जामदग््निय कहा गया है (पं. ब्रा. २१.१०.६)।

जामदग्न्य—परशुराम का पैतृक नाम।

२. सावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि।

जामि—यामि देखिये।

जामिभ्र—तुषित देवों में से एक।

जांबवत्—प्रजापति तथा रक्षा का पुत्र। इसकी पत्नी व्याघ्री। इसकी कन्या जांबवती (ब्रह्मांड. ३.७.३०१)। ब्रह्मदेव की जम्हाई से यह पैदा हुआ (वा. रा. वा. १७)। यह ऋशों का राजा था (वा. रा. यु. ३७)।

२. एक वानर। सीताशोध के लिये इसने राम की काफी सहायता की (वा. रा. यु. ७४)। रावणवध के बाद, राम का जय होने की वार्ता, नगाडे पीट कर इसने सब को बताई। राम के राज्याभिषेक के लिये समुद्र का पानी इसीने लाया था (वा. रा. यु. १२८)। राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, अश्वरक्षण के लिये, शत्रुघ्न के साथ यह भी गया था (पद्म. पा. ११.१५)।

३. वानर जाति का एक मानव। स्वर्गतकमणि के लिये, कृष्ण से इसका अट्टाईस दिनों तक युद्ध हुआ। अन्त में कृष्ण रामावतार है, यह जान कर इसने उसकी स्तुति की। पश्चात् स्वर्गतक मणि के साथ अपनी कन्या जांबवती इसने कृष्ण को दी (भा. १०.५६.३२; पद्म. उ. २७६)।

इसने दशांग पर्वत पर शिवलिंग की स्थापना की थी। उस लिंग को इसके नाम पर 'जांबवत लिंग' नाम प्राप्त हुआ (पद्म. उ. १४३)।

जांबवती—ऋक्षराज जांबवत् की कन्या, तथा कृष्ण की अष्टनायिकाओं में से एक। इसे सांव, सुमित्र, पुरुजित्, शतजित्, सहस्रजित्, विजय, चित्रकेतु, वसुमन्, द्रविड तथा ऋतु नामक पुत्र, तथा एक कन्या थी (म. स. परि. १, क्र. २१, पंक्ति. १४११; भा. १०.५६.२२; ६१.१२; विष्णु. ४.१३)। अन्त में इसने अग्निप्रवेश किया (म. मौ. ८.७२)।

जायद्रथ—जयद्रथपुत्र सुरथ का नामांतर।

जायंत—जयंती से ऋषभदेव को उत्पन्न शतपुत्रों का नामांतर।

जायंतीपुत्र—आलंबीपुत्र का गुरु तथा मांडूकायनीपुत्र का शिष्य (बृ. उ. ६.५.२)।

जायंतैथ—जायंत का नामांतर।

जार—वृषजार देखिये।

जारन्कारव—आर्तभाग का पैतृक नाम (बृ. उ. ३.२.१)।

जारासंधि—जरासंधपुत्र सहदेव का नामांतर।

जार्ति—तंति का नामांतर।

जालधि—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

जालंधर—एक दैत्य। यह समुद्र में पैदा हुआ। यह शास्त्रवेत्ता था। इसका वध शंकर ही कर सकेंगे, ऐसा ब्रह्मदेव ने इसे वरदान दिया था (स्कंद. २.४.१४; पद्म. उ. ४-१९; शिव. रुद्र. सु. १४)।

समुद्र तथा गंगा का यह पुत्र, जालंधर देश में रहता था। इसका राज्य पाताल एवं स्वर्ग पर भी था। इसकी पत्नी वृंदा। शुक के सहाय्य से यह पृथ्वी का शासन करता था। संजीवनीविद्या भी इसे अवगत थी। यह सर्वथा अज्ञेय था। इंद्रपद पर इसने कब्जा किया था। लक्ष्मीनारायण भी इसके घर में रहते थे।

नारद ने एक बार पार्वती के सौंदर्य की प्रशंसा की। इसने पार्वती को लाने के लिये राहू को भेजा। शंकर ने राहू को भगा दिया। अन्त में शंकर तथा जालंधर का यमासन युद्ध हुआ। शस्त्रयुद्ध के बाद मायायुद्ध शुरू हुआ। पार्वती के पास यह शंकर का रूप ले कर गया। विष्णु जालंधर का रूप ले कर वृन्दा के पास आया। वृंदा ने विष्णु को, द्वारपालद्वारा पराजित होने का शाप दिया।

गिर भी विष्णुमाया से ललित हो कर, वृन्दा में अग्नि-प्रवेश किया (शिव. रुद्र. सु. २३; भा. रा. मार. ४)।

दूसरी जगह यह कथा भिन्न रूप में आयी है। वृंदा ने विष्णु को शाप दिया, 'तुम्हारी लियों का भी इसी प्रकार हरण होगा'। बाद में वृंदा ने पेंहसाग किया (पद्म. उ. १५)। शंकर ने इसका शिर सुशोभ चक्र से काट दिया (स्कंद. २.४.१४-२२)।

'जालंधरायण-जालंधर-जिगीर्-कांभ्रा' यह प्रदेश पाणिनि-काल से आज तक सतलज (सुतलु) नदी के पश्चिम भाग में ख्यात है।

जालपदी—देवकन्या। इसे देख कर शरदत् का रेतसवलन हो कर, कृप एवं कृपी ये पैदा हुए (म. भा. १२०.६)।

जाहुष—एक राजा। अश्वियों की कृपा में इसका राज्य पुनः प्राप्त हुआ। ज्यवन तथा यह, गेरुओं का राजा दुर्वयाण के विरुद्ध के पक्ष में थे (क्र. ७-७१.५)।

जाह्व—विश्वामित्र का पैतृक नाम (पं. ब्रा. ११.१२; जहु तथा विश्वामित्र देखिये)।

जिगीषु—पृथुक देवों में से एक।

जित्—एक देवप्रकार। स्वायंभुव मन्वन्तर में देवताओं को 'याम' कहते थे। उन्हीं में से एक प्रकार जित् नाम से प्रसिद्ध था।

जित्—(सो. यदु.) वायुमत् में यदुपुत्रों में से एक।

जितश्राम—मनुवन के शाकुनि ऋषि का पुत्र। यह अत्यंत विरक्त था, तथा संन्यास दृष्टि से रहता था (पद्म. स्व. ३१)।

जितवती—उरुगिर की कन्या तथा सु नामक वसु की भार्या।

जितव्रत—(स्वा. उच्चार.) नामवत मन में हविर्धान का पुत्र। इसकी माता हविर्गनी।

जिताजित्—स्वांगभुव मन्वन्तर में से एक देव-प्रकार।

जितारि—(सो. कुरु.) अविशित् का पुत्र।

जित्वन् शैलिन—शिखीन ऋषि का पुत्र। इसका भ्राता जित। एक स्थान पर इसका नाम शैलिन आया है (बृ. उ. ४.१.५; माध्य.)। परंतु काण्व प्रति में शैलिन नाम दिया है (४.१.२)। उनक एवं याज्ञवल्क्य का यह समकालीन था। यह वाग्देवता को ब्रह्म समझता था।

जिन—जित्वन् देखिये।

२. बर्बरिक, अहंत, ऋषभ एवं वृहस्पति देखिये।

जिष्णु—विष्णु, इंद्र, एवं अर्जुन का नामांतर ।

२. मौल्य मन्वन्तर के मनु का पुत्र ।

जिष्णुकर्मन्—पांडवों के पक्ष का एक राजा । कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०.५०) ।

जिह्वक—भृगुकुल का गोत्रकार ।

जिह्वायन्तु चारुयोग—असित चारुपाण का शिष्य । इसका शिष्य चारुश्रवस् (बृ. उ. ६.५.३) ।

जामूत—(सो. यदु.) भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा वायुमत में व्योमपुत्र ।

१. एक मछ । विराटग्रह में भीम ने इसे मारा (न. वि. १२.२३) ।

३. एक विप्रर्षि । यह उशीरवीज नामक क्षेत्र में रहता था (म. उ. १०९.२१) ।

४. (सो. यदु.) भीम का पुत्र ।

जीव—अंगिरस् का पुत्र (शुक्र देखिये) ।

जीवनाश्व—अंगिराकुल का गोत्रकार । पाठभेद—युवनाश्व ।

जीवन्ति—भृगुकुल का गोत्रकार ।

जीवन्ती—एक पतिता विद्या । रामनाम कहने से इसका उद्धार हुआ (पद्म. क्रि. १५) ।

जीवल—अयोध्याधिपति ऋतुपर्ण का अश्रुपाल । नल के अज्ञातवास में, यह उसके लिये सहानुभूति रखता था (म. व. ६४.११) ।

जीवल चेलकृि—एक यशवेत्ता । अग्निहोत्र की जानकारी इसने दी है (श. ब्रा. २.३.१.३१-३५) ।

जूहु—वृहस्पति की पत्नी (ऋ. १०.१०९) ।

१. ब्रह्मदेव की पत्नी (सर्वानुश्रमणी) ।

जूति—एक सूतकर्ता । यह वातरश्मि का पुत्र था । (ऋ. १०.१३६.१) ।

जुम्बक—एक यक्ष । धर्मारण्य के ऋषियों को यह व्रत करता था (स्कंद. ३.२.९) ।

जैतु—अमिताभ देवों में से एक ।

जैतु माधुच्छंदस—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १.११) ।

जैगीषच्च्य—एक ऋषि (म. स. १२५ पंक्ति ५४; अह. ४९.३७ कुं.) । इस के पिता का नाम शतशलाक (ब्रह्मण्ड. ३.१०.२०) । इसकी तीन पत्नियाँ थीं:—१. पर्णा (मत्स्य. १७९); २. हिमवान की कन्या एकपाटला (ह. वं. १.१८.२४); ३. योगवती (पद्म. सू. ९) । इसके शिष्य का नाम असित देवल था । उसे इसने अपने तर का अद्भुत तेज तथा लीलायें दर्शाईं । इसमें ब्रह्मलोक-

गमन का सामर्थ्य था (म. श. ४९) । असित देवल के साथ इसका ब्रह्मप्राप्तिविषयक संवाद प्रसिद्ध है (म. शां. २२२) । अश्वशिरस् राजा के दरबार में, ऋषि ने विष्णु का तथा इसने गरुड का रूप लिया था (बराह. ४) । इसे योगशास्त्र की जानकारी देने के लिये, ब्रह्मपत्न-पुत्र विष्वक्सेन ने, योगशास्त्र पर ग्रंथ लिखा (भा. ९. २१.२५-२६) ।

इसने प्रभास क्षेत्र में घोर तपश्चर्या की । पूर्वकल्प में 'महोदय' नाम से प्रसिद्ध लिया की इसने स्थापना की । शिव के प्रसन्न होने पर, 'मुझे ज्ञानयोग दीजिये,' यों वर इसने माँगा । इसके द्वारा स्थापित लिया को आजकल सिद्धेश्वर कहते हैं (स्कंद. ७.१.१४) ।

दूसरे स्थान पर विभिन्न कथा प्राप्त है । इस ऋषि ने जिद की, 'जब तक मुझे शिवदर्शन नहीं होगा, तब तक मैं पानी भी नहीं पीऊँगा ।' शंकर को यह ज्ञात होते ही, वह पार्वती के साथ इसे दर्शन देने आया । शंकर ने इसकी सारी इच्छायें पूरी की, तथा इससे शिवलिंग की स्थापना करवायी (स्कंद. ४.२.६३) ।

२. वाराहकल्प के वैवस्वत मन्वन्तर में से शंकर का अवतार । यह काशी के दिव्य प्रदेश में दर्भासन पर त्रैलोक्यात्म महायोगी था । इसे सारस्वत, योगीश, मेघवाह तथा सुवाहन नामक चार पुत्र थे (शिव. शत. ४) ।

जैत्यद्रोणि—अंगिराकुल का गोत्रकार ।

जैत्र—कृष्ण का एक सेवक (भा. १०. ७१. १२) ।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र । भीम ने इसका वध किया (म. क. २५. १२-१३) ।

जैत्रायण सहोजित—राजसूय यज्ञ करनेवाले एक राजा का नाम । (क. सं. १८. ५) । परंतु कापिल्ल संहिता में इंद्र की उपाधि के रूप में यह शब्द प्रयुक्त किया है (कापि. सं. २८. ५) ।

जैमिनि—एक ऋषि । यह कौत्सकुलोत्पन्न था, तथा युधिष्ठिर के यज्ञ में ऋत्विज था (भा. १०. ७४. ८) । मय-सभा में प्रवेश करने के बाद, युधिष्ठिर ने बड़ा समारोह किया । उस समय यह उपस्थित था (म. स. ४. ९) । भीष्म शरपंजर पर पड़ा था, तब अन्य मुनिगणों के साथ यह वहाँ था (म. शां. ४७. ६५*) । जनमेजय के सर्प-सत्र में यह उद्गाता था (म. अ. ४८. ६) ।

यह कृष्ण द्वैपायन व्यास का सामवेद का शिष्य था (म. आ. ५७. ७४; व्यास देखिये) । यह लंगालि का भी शिष्य था ।

जैमिनि ने अपनी शिष्यपरंपरा कैसी कटायी, इसका पता कई प्राचीन ग्रंथों से मिलता है। किंतु उसमें एक-वाक्यता न होने के कारण, वह जानकारी यहाँ नहीं दी गई है (अग्नि. १५०.२८-२९; ब्रह्माण्ड. १.१३; २.३५. ३१; वायु. ६१.२७-४८; व्यास देखिये)।

जैमिनि ने लिखा हुआ, 'जैमिनि अश्वमेध' ग्रंथ प्रसिद्ध है। यह ग्रंथ इसने पूरे महाभारत के रूप में प्रथम लिखा था। परंतु उसमें पांडवों का गौरव कम था। इस कारण, अश्वमेध के सिवा इस ग्रंथ का बाकी भाग नष्ट करने की आज्ञा, व्यास ने इसे दी। उस आज्ञानुसार जैमिनि ने वह ग्रंथ नष्ट कर दिया।

'जैमिनि अश्वमेध,' महापुराण तथा उपपुराण से बिल्कुल भिन्न है। उसमें भागवत का निम्नलिखित उल्लेख है:—

'भारतं हरिवंशं च पुत्रदं धनदं भवेत्।

श्रीभद्रभागवतं पुण्यं मुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥'

(जै. आ. ५८.९)। 'जैमिनि अश्वमेध का काल' खि. ५. सौ वर्ष माना जाता है (पुराणनिरीक्षण, पृ. ८२)।

सामवेद के राणायनीय नामक शाखा का जैमिनीय नामक नवम भेद इसने लिखा है। यह संहिता कर्नाटक में विशेष ख्यातनाम है। उसी प्रकार जैमिनीय ब्राह्मण तथा जैमिनीयोनिसध ब्राह्मण नामक सामवेद के ब्राह्मण इसने लिखे। वे दोनों ग्रंथ आज भी उपलब्ध है।

इसके अतिरिक्त निम्नलिखित ग्रंथ भी इसने लिखे हैं:—'जैमिनिसूत्र, जैमिनिनिघंटु, जैमिनिपुराण, ज्येष्ठ-माहात्म्य, जैमिनिभागवत, जैमिनिभारत, जैमिनिसूत्रसूत्र, जैमिनिसूत्रकारिका, जैमिनिस्तोत्र, जैमिनिसंस्कृति (C. C.)।

सुमन्तु, वैशंपायन, पुलस्त्य, तथा पुलह इनके समान यह भी वज्रनिवारक था (शब्दकल्पद्रुम)। इसका पुत्र सुर्मतु (विष्णु. ३.६.२)।

जैमिनिसूत्र के उपाकर्मागतर्पण में, जैमिनि ने निम्नलिखित आचार्यों का उल्लेख किया है:—१. जैमिनि, २. तल्यकार, ३. सात्यसुप्र, ४. राणायनि, ५. दुर्वासस्, ६. भागुरि, ७. गौर्ण्डि, ८. गौर्ण्डि, ९. भगवान् औपमन्यव कारडि, १०. सावर्णि, ११. गार्गी, १२. वार्ष-गण्य तथा १३. दैवत्य (जैमिनि सूत्रसूत्र १.१४)। यह सामवेदी श्रुतर्षि था। ब्रह्मंडपुराण के प्रवर्तक ऋषियों की परंपरा में, इसका नामोल्लेख आता है।

जैमिनिसूत्र का परिचय—जैमिनि ने यज्ञप्रतिपादक ब्राह्मण ग्रंथ का वाक्यार्थ निश्चित करने के लिये सूत्ररचना की। जैमिनि रचित सूत्र 'पूर्वमीमांसा' वा 'कर्ममीमांसा' नाम

से प्रसिद्ध है। यज्ञविषयक वाक्यों का अर्थविषयक मतभेद दूर कर के संगति लगाना, जैमिनिसूत्रों का मुख्य कार्य है। इन्हीं सूत्रों से वाक्यार्थविचारशास्त्र पैदा हुआ। सूत्रों की संख्या २५०० है। वे ग्यारह अध्यायों में विभाजित हैं।

सूत्रग्रंथों में जैमिनिसूत्र प्राचीनतम माने जाते हैं। इस विषय में प्राचीन आचार्यों का भी निर्देश जैमिनि ने किया है। 'जैमिनिसूत्रों' के उपर, उपवर्ष की वृत्ति, शास्त्रभाष्य, प्रभाकर की बृहती (गुरुमत), कुमारिलभट्ट का वार्तिक (इ. स. ७००), पार्थसारथि मिश्र की शास्त्रदीपिका, मेहन-मिश्र के विधिविधेक एवं भावनाधिकेक, खंडदेव की भाट्ट दीपिका, आदि ग्रंथ विख्यात हैं। यज्ञद्वारा प्राप्त होनेवाले स्वर्ग की अभिलाषा प्रारंभ में थी। धीरे धीरे टीकाकारों ने मोक्ष का भी अंतर्भाव पूर्वमीमांसाशास्त्र में कर दिया। 'बादरायणसूत्रों' में वेद का उत्तरभाग माने गये उपनिषदों के वाक्यों का विचार है। इसलिये बादरायणसूत्रों को उत्तर-मीमांसा नाम से ख्याति प्राप्त हुई।

जैचंतायन—एक ऋषि। रौहिणायन के शिष्य शौनक तथा रैभ्य के साथ इसका उल्लेख है (वृ. उ. ४.५.२९; पा. सू. ४.१.१०३)।

जैचंत्यायनि—भृगुकुल का गोत्रकार (भृगु देखिये)।

जैवलि—प्रवाहण का पैतृक नाम। जैवलि नामक राजा भी वही होगा। राजा जैवलि का गल्लस आक्षांकायण से साम के विषय में संवाद हुआ था (जै. उ. ब्रा. १. ३८.४; प्रवाहण देखिये)।

२. एक तत्त्वज्ञ। इसका शिष्य आरुणि (वृ. उ. ६. २.५.७)। यह क्षत्रिय था। ब्राह्मणों में आरुणि सब से प्रथम ब्रह्मज्ञानी हुआ (छां. उ. ५.३७; चित्र गार्ग्यायणि देखिये)।

जैहप—गौरपराशरकुलीन एक ऋषि। 'समय' इसीका ही पाठभेद।

जैहलायनि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

जैडिडि—गोडिनी के लिये पाठभेद।

ज्ञाति—(सो. क्रोष्टु.) मत्स्यमत में ऋषु का पुत्र। विष्णु मत में इसे वृत्ति, भागवत मत में कृति, तथा वायु मत में आहुति नाम हैं।

ज्ञानगम्य—सोमकांत राजा का प्रधान (गणेश. २९.)।

ज्ञानभद्र—द्राघार युग का एक महायोगी। यह सौराष्ट्र में रहता था।

एक बार अर्काश पड़ने के कारण, लगातार बीस दिनों तक इसे, तथा इसकी पत्नी को उपवास करना पड़ा। एक पर्वत पर जा कर यह एक कुम्हड़ा ले आया। इतने में मारी वण के कारण, भीगा हुआ एक गोप टंड से ठिठुरते हुए इसके घर आया। वह बीस दिनों से भूखा होने के कारण, वह कुम्हड़ा इन्होंने उस गोप को दिया। इससे वह संतुष्ट हो गया। बाद में उपवास के कारण, यह दोनों यकायक मृत हो गये। उससे दोनों को सायुज्य-मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. क्रि. २५)।

ज्ञानश्रुति—गोदावरी के किनारे स्थित प्रतिष्ठान (पैठण) शहर का पुण्यशील राजा। आकाश से उड़ने वाले हंस से इरो मान्द्रम हुआ कि, रैक नामक ब्रह्मवेत्ता अपने से अधिक पुण्यवान है। तब इस पुण्यशील को ढूँढने के लिये, इसने अपने सारथि से कहा। सारथि द्वारा उसका पता लगने पर, बड़ा नजराना ले कर यह रैक के पास गया। परंतु उसने राजा का नजराना अस्वीकार कर दिया। राजा ने पूछा, 'यह निरिच्छ वृत्ति आपको कैसी पाप हुई?' उसने बताया, 'यह सब गीता के छठवें अध्याय पढ़ने का फल है' (पद्म. उ. १८०; रैक देखिये)।

ज्ञानसंज्ञेय—कश्यपकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

ज्यामघ—(सो. क्रोष्ट्र.) विष्णु के मत में परावृत्त-पुत्र, मत्स्य तथा वायु के मत में रुक्मकवचपुत्र तथा भागवतमत में रुचकपुत्र। इसे चैत्रा अथवा शैथ्या नामक पत्नी थी। इसे संतति नहीं थी। परंतु अक्नी पत्नी के भय से, यह दूसरा विवाह नहीं कर सकता था।

एक बार भोज देश की राजकन्या का स्वयंवर संघन हुआ था। यह स्वयंवर में गया। पराक्रम से राजकन्या भोज को जित कर, एवं रथ में बैठा कर, यह अपने नगर ले आया। परंतु चैत्रा ने पूछा, 'यह कौन है?'। धरारकर इमने कहा 'यह तुम्हारा स्तुपा है'। पुत्रवती न होने के कारण, इस शब्दों से चैत्रा को अत्यंत दुःख हुआ। परंतु जल्द ही चैत्रा को विदर्भ नामक पुत्र हुआ। उसका भोजा से विवाह किया गया (भा. ९.२३. ३५; वायु. १५)।

हरिवंश में, यही कथा किंचित् अलग ढंग से दी गयी है। रुक्मेपु तथा पृथुरुक्म नामक वंधुओं ने मिल कर ज्यामघ राजा को राज्य से भगा दिया। तब अरण्य में आश्रम बना कर, यह शांत चित्त से रहने लगा। परंतु वहाँ के ब्राह्मणों ने इसकी राज्यतृष्णा जाग्रत कर, नर्मदा

किनारे के दूरदूर के प्रदेशों पर आक्रमण करने को, इसे उत्साहित किया। मृत्तिकावती नामक नगरी उने प्रदेशों की राजधानी था। बाद में ऋक्षवत् पर्वत पर आक्रमण कर, इसने उसे जीता। वहाँ की युक्तिमती नामक नगरी में उपनिवेश प्रस्थापित किया। बाद में मृत्तिकावती प्रदेश जीतने के कारण प्राप्त, उपदानवी नामक कन्या साथ ले कर, यह अपने राज्य आया। 'यह कन्या मैंने तुम्हारे पुत्र के लिये लाई है' ऐसा इसने अपने पत्नी को झूठ ही बता दिया। परंतु पुत्र न होने के कारण, यह झूठ बोलना उसे नहीं अच्छा। बाद में उस कन्या के तपःप्रभाव से वृद्ध काल में गर्भधारण कर, शैथ्या ने विदर्भ नामक पुत्र को जन्म दिया। विदर्भ का उपदानवी से विवाह किया गया। उससे उपदानवी को ऋथ, कौशिक तथा लोमपाद नामक तीन पुत्र हुए (ह. वं. १.१.३७; १३-२०; ब्रह्म. १४. १०-२०; लिङ्ग. १.६८.३२-४१; मत्स्य. ४४.३२; ब्रह्मांड. ३.७०.३३ पद्म. सू. १३.११-१९)। विष्णु पुराण में रुक्मकवच को ज्यामघ का पितामह कहा है। तथापि रुक्मकवच तथा रुचक एक ही होंगे।

ज्यामहानि—ब्रह्मांड मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा के लगति का शिष्य (व्यास देखिये)।

ज्येष्ठ—एक ब्रह्मर्षि तथा ज्येष्ठ साम का कर्ता। बर्हिषद से वेदभारग ज्येष्ठ ऋषि को सात्वतधर्म प्राप्त हुआ। इसके साम श्रीहरी को अत्यंत प्रिय थे। अशिकंभन राजा को सात्वतधर्म इसी ब्रह्मर्षि से प्राप्त हुआ। (म. शां. ३३६. ४२)।

ज्येष्ठा—अलक्ष्मी देखिये।

१. सोम की सत्ताईस पत्नियों में से एक।

३. शुक्र की कन्या। द्वादशादित्यों में वरुण की स्त्री। इसे बल, अक्नी नामक पुत्र, तथा सुरा नामक कन्या थी (म. आ. ६०.५२-५३)।

ज्योति—स्वारोचिष मन्वन्तर के मनु का पुत्र।

२. वसिष्ठ का पुत्र। स्वारोचिष मन्वन्तर का प्रजापति (पद्म. सू. ७)।

३. वंशवर्तिन् देवों में से एक।

ज्योतिर्धामन्—तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (भा. ८.१.२८)।

ज्योतिर्मुख—रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. ३०. ७३)।

ज्योतिर्लिङ्ग—शिव के बारह अवतारों का सामूहिक नाम।

पुराणों में निर्दिष्ट न्यारह ज्योतिर्लिङ्ग के नाम इस प्रकार हैं:—(१) ध्रुवमेश, (२) त्र्यम्बक, (३) मल्लिकार्जुन, (४) महाकाल, (५) रामेश्वर, (६) विश्वेश, (७) सोमनाथ, (८) अङ्कार, (९) केदार, (१०) नागेश, (११) भीमाशंकर (१२) वैद्यनाथ।

इनमें से ध्रुवमेश, त्र्यम्बक, मल्लिकार्जुन, महाकाल, रामेश्वर, विश्वेश, एवं सोमनाथ इन ज्योतिर्लिङ्ग के स्थान के बारे में मतभेद नहीं हैं।

अङ्कार, केदार, नागेश, भीमाशंकर तथा वैद्यनाथ इन ज्योतिर्लिङ्ग के स्थान के बारे में मत भेद हैं।

(१) अङ्कार—माधाता में, अङ्कारेश्वर एवं अमलेश्वर (परमेश्वर) ये दोनों मिल कर एक ज्योतिर्लिङ्ग मानते हैं।

(२) केदार—हिमालय पर्वत में। १. केदार, २. मध्यमेश्वर, ३. तुंगनाथ, ४. रुद्रनाथ, ५. कल्पेश्वर, ६. पशुपतिनाथ यों छः लिङ्ग हैं। उनमें से केदार एवं पशुपतिनाथ मिल कर एक ज्योतिर्लिङ्ग माना जाता है। बाकी चार शिवलिङ्ग ज्योतिर्लिङ्ग के बाहर के शिवस्थान माने जाते हैं।

(३) नागेश—सौराष्ट्र में प्रभासपट्टण, महाराष्ट्र में औढ्या नागनाथ, एवं अल्मोडा में जागेश्वर इन तीनों स्थान पर नागेश ज्योतिर्लिङ्ग माना जाता है।

(४) भीमाशंकर—१. महाराष्ट्र में पूना के पास सहायदिशिखर पर, २. आसाम में गोहट्टी के पास ब्रह्मपुर पर्वत पर एवं ३. हिमालय में नैनिताल के पास उज्जक में भीमाशंकर ज्योतिर्लिङ्ग माना जाता है।

(५) वैद्यनाथ—१. बिहार में संथाळ परगणा में देवघर, २. महाराष्ट्र में परळी वैद्यनाथ तथा ३. काश्मीर में पठाणकोट के पास वैद्यनाथ उपरोल, वैद्यनाथ ज्योतिर्लिङ्ग माना जाता है।

और भी एक तेरहवा ज्योतिर्लिङ्ग, बंगाल में जि. चटरगांव, सीताकुंड (पूर्व पाकिस्तान) में चंद्रनाथ का स्थान माना जाता है। (शिव. शत. ४२.२-४; ६-५५)।

ज्योतिष्ठम—कश्यप तथा अरिष्टा का पुत्र।

ज्योतिष्मत्—स्वायम्भुव मन्वन्तर के मनु का पुत्र (पद्म. सू. ७)।

२. मधुवन में रहनेवाले शाकुनि नामक ऋषि का पुत्र। यह अग्निहोत्री था तथा गृहकृत्यों में तत्पर था (पद्म. सू. ३१)।

३. दक्षसावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि।

४. मरुतों के प्रथम गणों में से एक।

ज्योतिस्—कश्यप एवं कद्रू का पुत्र।

ज्योत्स्ना—सोम की कन्या तथा वरुणपुत्र पुष्कर की स्त्री। ज्योत्स्ना काली इसीका नामांतर है (म. उ. १६. १३)।

ज्दर—कश्यप तथा सुरभि का पुत्र।

२. एक रोग एवं बाणासुर का सैनिक। यह शिवजी के स्वेद (पसीना) से पैदा हुआ। यह बड़ा शक्तिशाली था। संसार के कल्याण के लिये, शिवजी ने इसके टुकड़े टुकड़े किये एवं वे इतस्ततः बिखेर दिये (म. शां. २७४)।

बाणासुर तथा कृष्ण के युद्ध में, बलराम को इसने जर्जर किया था। कृष्ण पर भी इसने हमला किया। अन्त में यह कृष्ण की शरण में आया। इसका त्रिपाद, त्रिशिरस् ऐसा स्वरूप वर्णन प्राप्त है (ह. वं. २.१२२-१२३; मा. १०.६३)।

ज्वलना—तक्षक की कन्या। सोमवंशी औन्नेयु अथवा ऋतेयु की स्त्री।

ज्वाला—तक्षक की कन्या एवं ऋक्ष की पत्नी। इसका पुत्र अंतिनार (म. आ. १०.२४)।

२. नीलध्वज की स्त्री। नीलध्वज ने अर्जुन को अश्व-मेघ का अश्व वापस दिया, यह इसे अच्छा न लगा। इसने अर्जुन से युद्ध करने के लिये, नीलध्वज से पर्याप्त अनुरोध किया, किंतु इसकी एक न चली। पश्चात् यह उत्सुक नामक अपने भाई के पास गयी। इसने उसे अर्जुन से युद्ध करने को कहा। उसने भी इसकी बात नहीं मानी।

यह रुष्ट हो कर गंगा के किनारे गयी। गंगा का जल पैर को लगते ही इसने कहा, 'मुझे जो गंगास्पर्शी हुआ है, यह महापाप हुआ है'। यह सुनकर गंगा विस्मित हो, सुमंगला देवी के रूप में प्रकट हुई। गंगा स्वर्श को पापी कहने का कारण गंगा ने इससे पूछा। तब ज्वाला ने कहा, 'तुम ने अपने सात पुत्रों को जल में डुबो कर मारा है। तदुपरांत तुमने शततनु से आठवाँ पुत्र मांग लिया। उसका अर्जुन ने रणांगण में वध किया। अतः तुम निपु-त्रिक एवं पापी हो'। यह सुन कर गंगा ने अर्जुन को शाप दिया, 'छः माहों में तुम्हारा शिरच्छेद होगा'। अर्जुन को शाप मिला देख, ज्वाला को आनंद हुआ। आगे चल कर, अर्जुन एवं वभुवाहन के युद्ध में, यह वभुवाहन के भाते (तूणीर) में बाणरूप से जा पहुँची, तथा अर्जुन का

इसने शिरच्छेद किया (जै. अ. १५)। पश्चात् अर्जुन-ज्वालायन--गोपुक्तिन् का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ४. पत्नी उलुपी ने नागलोक में से अमृत ला कर अर्जुन को १६.१)। पुनः जीवित किया (अर्जुन देखिये)।

झ

झिह्री--दुण्णिवंश का एक यादव। यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१८; द्रो. १०.२८)।

ट

टण्ड--एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

टिह्मि--वरुण लोक का असुर।

ड

डंभोद्भव--दंभोद्भव देखिये।

डिभक--डिभक देखिये।

डिभक--कुरासंघ का प्रधान तथा हंस का कनिष्ठ भ्राता। इसे डिभक अथवा डिंभक भी कहते हैं (दुर्वासस् देखिये)। इसके भाई हंस की मृत्यु हो गयी। यह

समाचार डिभक को किसीने बताया। तब हंस के बिना इस लोक में नहीं रहूँगा, यह कह कर डिभक ने यमुना में प्राण छोड़ दिये (म. स. १३.४१; ह. वं. ३.१०३-१२९)।

ढ

ढण्डा--एक राक्षसी।

दुण्डि--शक्ति-पुत्र। गणेश का नामान्तर। दुरासद देखिये।

तं

तंसु—(सो. पूर.) अंतिनारपुत्र। इसे इलिन नामक पुत्र था। इसे वस्तु नामांतर है। (म. आ. ९०.२६; अंतिनार देखिये)।

तकवान—एक मंत्रकार ऋषि (ऋ. १.१२०.६)। तकवान शब्द ऋग्वेद के एक मंत्र में मंत्रकार के रूप में आया हुआ है। संभवतः कक्षीवत् कुल का मंत्रकार होगा (ऋ. १.१२०.६)। दूसरे स्थान पर तकु शब्द का तकवे रूप आया है। तक का तकवान बना होगा। फिर भी ये सारे निर्देश अनिश्चित स्वरूप के हैं (ऋ. ९.९७.५२)।

तर्कविदु—अत्रिकुल का गोत्रकार।

तक्ष—(स. ई.) दशरथपुत्र भरत को मांडवी से उत्पन्न पुत्र। अपने पुष्कर नामक भाई के साथ इसने गांधार देश पर आक्रमण किया। उस देश को जीत कर इसने तक्षशिला नगरी की स्थापना की (बा. रा. उ. १०१; विष्णु. ४. ४, वायु. ८८.१८९)।

तक्षक—कश्यप तथा कद्रु का पुत्र एवं एक नाग (विष्णु. १. १५; मत्स्य. ६; म. आ. ५९. ४०; ह. वं. १. ३. १२)। इसे एक पत्नी तथा अश्वसेन एवं श्रुतसेन नामक दो पुत्र थे (म. आ. ३. १४५-१४६)।

अर्जुन ने खांडववन अग्नि को दिया, तब तक्षक की पत्नी तथा अश्वसेन वहाँ थे। अश्वसेन की माता ने उसे मुँह में ले लिया। वह आकाशमार्ग से भागने लगी। यह देखते ही अर्जुन ने उसका शिरच्छेद किया। परंतु तक्षक इंद्र का मित्र था। इसलिये अश्वसेन का रक्षण करना इंद्र ने अपना कर्तव्य समझा। इसलिये अर्जुन के विरुद्ध वर्तन करके इंद्र ने अश्वसेन की रक्षा की (म. आ. २१८. ९)।

इस समय तक्षक कुरुक्षेत्र में था (म. आ. २१९. १३; काश्यप २. देखिये)। पश्चात्, शमीक ऋषि का पुत्र शंग की प्रेरणा से, अर्जुन का पौत्र परीक्षित को गले में काट कर तक्षक ने उसका वध किया (परीक्षित देखिये)।

जनमेजय के सर्पसत्र की कथा पुराणों में सुविख्यात है। जनमेजय तथा तक्षक का चैत्र वैद ऋषि का शिष्य उत्तंक के कारण हुआ। पौष्य राजा की पत्नी का उत्तंक गुरु था। पौष्यपत्नी ने उत्तंक को गुरुदक्षणा के रूप में अपने कुंडल दिये (म. आ. ३.८५)। उत्तंक से ये कुंडल छीनने के लिये, एक

क्षणक का वेप धारण कर के, तक्षक उसका पीछा करने लगा। यह क्षण में दिखता था, क्षण में अदृश्य हो जाता था। रास्ते में, कुंडल भूमि पर रख कर, उत्तंक लघुवक्रा करने बैठा। उसे इस प्रकार व्यस्त देख कर, क्षणक वेपधारी तक्षक ने उसके कुंडल चुरा लिये। आचमन कर के उत्तंक वापस आया। उसने देखा कि, पीछे पीछे आनेवाला क्षणक कुंडल ले कर भाग रहा है। उत्तंक ने इसके पीछे दौड़ना प्रारंभ किया। इतने में, क्षणक ने अपना मूल तक्षक का रूप धारण किया, तथा एक विल के मार्ग से पाताल में पलायन किया। उत्तंक ने उस विल को खोद लिया। तक्षक का पीछा करते करते उत्तंक पाताल पहुँचा। पाताल में, नागों की स्तुति कर के उत्तंक ने अपने कुंडल वापस ले लिये (म. आ. ३.१५४-१५८; दे. भा. २.१०)।

पश्चात्, तक्षक का वध करने के लिये, सर्पसत्र का आयोजन करने की सलाह, उत्तंक ने जनमेजय को दी। अपने पिता परीक्षित के मृत्यु का बदला लेने के लिये, जनमेजय पहले से ही उत्सुक था। उसने सर्पसत्र आयोजित किया। इस सर्पसत्र में, इसके परिवार में से अठारह सर्पकुल जल कर भाग हुये। उन सर्पकुलों के नाम थे। पिच्छांडक, मंडलक, विडम्बित, रमेणक, उच्छिक, धरम, भंग, विस्वतेजस्, विरोहण, शिकी, हलकर, मूक, सकुमार, प्रचेचन, सुहर, दिशुरोमन, सुरोमान, महाहनु।

सर्पसत्र में, तक्षक भी मरनेवाला था। परंतु यह बच गया (म. आ. ४८.१८, आसीक तथा इन्द्र देखिये)।

२. (स. इ.) प्रतेगजित् का पुत्र। इसका पुत्र बृहल (मा. ९.१२.८)।

तक्षक वैशालेय—विराज का पुत्र (अ. वे. ७. १०.२९)। सर्पसत्र के ब्राह्मणाच्छेसी पुरोहित (म. ब्रा. २५.१५.३)।

तक्षन्—एक ऋषि। जीवल ऐतकि से इसका कुछ विषयों में मतभेद हुआ था। ब्रह्मवर्चसकाम अर्चण को इसने अभिसंबंध में जानकारी दी थी (श. ब्रा. २.३.१. ३१-३५)।

तंडि—कृतयुग का एक अंगिरस्योत्री ऋषि। इसने वीरकाल तक तपस्या की। शिवसहस्र नाम के योग से इसने शंकर को प्रसन्न किया। सूर्यकुलोत्पन्न राजा विश्वन्व

इसका शिष्य था। शंकर ने इसकी स्तुति से प्रसन्न हो कर कहा, 'तुम्हारा पुत्र सूत्रकार होगा' (म. अनु. १६, लिंग. १.६५)। शिवपुराण में तंडि की जगह दंडि दिया गया है। उभयन्तु को शिवसहस्र नाम का व्रत केवल तंडि ने ही बताया है (शिव. उ. ३)। इस कारण, तंडि तथा दंडि एक ही रहने की संभावना दिग्गती है।

तत्त्वदर्शिन—रौच्य मन्वन्तर का एक ऋषि।

२. पितृवर्तिन् का भाई। पितृवर्तिन् के सात भ्राता थे। उनमें से चार का पितृयन्मर के सुदरिद्र ब्राह्मण से उत्पन्न हुए थे। उनमें से यह एक था (पितृवर्तिन् देखिये)।

तत्पुरुष—एक शिवावतार।

तनु—कृश देखिये।

तंति—भूषणराशर कुलोत्पन्न ऋषि। इसके लिये जाति पाठभेद उपलब्ध है।

तंतिपाल—अज्ञातवास के समय, विराट के यहाँ सहदेव ने धारण किया हुआ गुप्त नाम (म. वि. ३.७)। कुम्भकोण प्रति में तंत्रीपाल पाठभेद है (म. वि. ४.१५)।

तंत्रीपाल—तंतिपाल देखिये।

तप—तामसमनु के पुत्रों में से एक (पद्म. सू. ७)।

२. सुतन देवों में से एक।

३. सुतन देवों में से एक।

तपती—विद्यस्वत् सूर्य की छाया से उत्पन्न कन्या (म. आ. १०. ४०. भा. ९. २२. ४; ६. ६. २१)। यह अत्यंत स्वयंती थी। इसकी सावित्री नामक गहन थी।

एकवार ऋषिपुत्र संवरण मृगया खेल रहा था। उसका अश्व अज्ञानक मृत हो गया। वह पास के पर्वत पर पैदल ही घूमने लगा। वहाँ तपती इसे दिखाई पड़ी। इसके स्वयंयज्ञ पर वह मोहित हुआ। अपने साथ गांधर्व-विवाह करने के लिये तपती से उसने प्रार्थना की। इस पर तपती ने कहा, 'हमारे विवाह के लिये, अपने पिता की संमति चाहिये'। पश्चात् सूर्याराधना कर, संवरण ने तपती से विवाह करने की अनुमति सूर्य से प्राप्त की। तपती से संवरण को कुम्भवंशसंस्थापक कुरु नामक पुत्र हुआ (म. आ. १६०-१६२)।

तपन—पांडवक्षीय पांचाल राजा। इसका कर्ण ने वध किया (म. क. ३२. ३७)।

२. एक देव। इस पर अमृत के रक्षण का भार सौंपा गया था (म. आ. २८. १८)।

३. रावण के पक्ष का एक अहुर (वा. रा. उ. ४९)। गज नामक वानर द्वारा यह मारा गया।

तपस्—एक शिवावतार। वाराह कल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वन्तर के ग्यारहवें चौखट के कलियुग में, गंगाद्वार पर यह शिवावतार हुआ। इसके चार पुत्र थे। उनके नाम लंबोदर, लंबाक्ष, केशलेव तथा प्रलंबक (शिव. शत. ५)।

तपरस्य—तामस मनु के पुत्रों में से एक।

तपस्विन्—मत्स्यमत में चक्षुमनु का नडबला से उत्पन्न पुत्र। चक्षुमनु के पुत्रों के नामावली में इसका नाम उपलब्ध नहीं है।

तपुर्मूर्धन्य बार्हस्पत्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१८२)।

तपोत्सुक—सुदरिद्र ब्राह्मण के चार पुत्रों में से एक (पितृवर्तिन् देखिये)।

तपोद्भृति—तामस मनु के पुत्रों में से एक।

तपोधन—तामस मनु के पुत्रों में से एक।

तपोनित्य पौरुशिष्टि—एक तत्त्वज्ञ तथा पुरुशिष्ट का पुत्र। इसके मत में, उपोषण तथा द्रव्यदान ही केवल तप है (तै. उ. १.९.१)। इसका 'तपोनित्य' नाम भी तप का पुरस्कार करने से आया होगा।

तपोभाषिन—तामस मनु के पुत्रों में से एक।

तपोभूर्ति—ऋषावर्णि मन्वन्तर में होनेवाले सप्तर्षियों में से एक।

तपोमूल—तामस मनु के पुत्रों में से एक।

तपोयोगिन्—तामस मनु का पुत्र।

तपोरति—तामस मनु का पुत्र।

तपोराशि—तामस मनु का पुत्र (पद्म. सू. ७)।

तम—वृत्तमदर्वशीय श्रव नामक ब्राह्मण का पुत्र। इसका पुत्र प्रकाश (म. अनु. ८.६३ कुं.)।

२. (सो. क्रोष्टु.) त्रिणुमत में वृथुश्रव्य का पुत्र। धर्म एवं सुयज्ञ इसीका नानांतर था।

तमोजस्—(सो. अंधक.) असंमजस् राजा का पुत्र।

२. (सो. विद्रू.) मत्स्य मत में देवार्ह का पुत्र।

तंवि—अंगिराकुल का गोत्रकार।

तरंत—एक क्षत्रिय दाता। पुरुमीहळ तथा यह ये दोनो श्यावाश्र ऋषि के प्रतिपालक एवं आश्रयदाता थे (ऋ. ५.६१.१०)। पुरुमीहळ की मौति यह भी विददश्व का पुत्र था। इसलिये, इसे 'वैदिदश्वि' यों पैतृक नाम था (ऋ. ५.६१.१०)। सायणद्वारा दिये गये शास्त्रायन की आख्यायिकानुसार पुरुमीहळ तथा यह ये दोनों भाई थे। पद्मुरु की भी इसे संमती है।

इसकी पत्नी का नाम शशीयसी। इसको शशीयसी से एक पुत्र था। रथवीती दाभ्य की कन्या को इन्होंने

इस पुत्र के लिये माँगा था। किंतु इस पुत्र का नाम प्राप्त नहीं है (बृहदे. ५.५०-८१)।

पुरूमीहल तथा यह थे दोनों जन्म से क्षत्रिय थे। किंतु आपत्काल के जरिये इन्हे ऋषि बनना पडा। क्षत्रियों के लिये दानग्रहण का निषेध होने के बावजूद, ध्वस्त तथा पुरुषन्ति से इन्होंने दान स्वीकार कर के प्रतिग्रह-दोष मंत्रप्रभाव से हटा दिया (पं. ब्रा. १३.७१२; जै. ब्रा. ३. १३९)। अपने दान-कर्ताओं की प्रशंसा भी इन्होंने बनायी थी (ऋ. ९.५८.३, शा. ब्रा. सायण-भाष्य; साम. २.४१०)। किंतु सर्वानुक्रमणी के अनुसार इस दानप्रशस्ति का कर्ता ये नहीं, बल्की अवत्सार काश्यप था।

तरस—राम सेना का एक वानर। यह हनुमान के साथ पश्चिम द्वार का रक्षण करता था।

तरुक्ष—एक दाता। दास बलुथ के साथ ऋग्वेद की दानस्तुति में इसका उल्लेख आया है। वशाश्व्य का यह आश्रयदाता था। इससे दान मिलने का प्रशस्तीपूर्वक निर्देश वशाश्व्य ने किया है (ऋ. ८.४६.३२)।

तरुणक—एक सर्प (म. आ. ५२.१७)।

तर्ज—उत्तम मनु का एक पुत्र।

तर्प्य—वसिष्ठकुल का गोत्रकार।

तर्ष—अर्क नामक वसु का पुत्र।

तल—एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

तलक—(आंश्र. भविष्य.) भागवत मत में हाथेल्य का पुत्र। पंचपत्तलक, पत्तलक, एवं मंदुलक इसीके ही नाम हैं।

तलवकार—एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)। जैमिनिग्रहसूत्र के उपकर्मोगतर्पण में इसका उल्लेख है।

तवि—सोमतन्व पाठभेद है।

ताटका—एक राक्षसी। यक्षिणी होने की वजह से, मन्त्राहि मायावी रूप यह ले सकती थी। हजार हाथियों का बल इसमें था।

यह सुकेतु नामक यक्ष की कन्या थी। सुकेतु को यह ब्रह्मदेव के वर से उत्पन्न हुई थी। जंभपुत्र सुंद की यह पत्नी थी। सुंद से इसे मारीच तथा सुबाहु ये पुत्र हुए।

सुंद के द्वारा कुल अपराध होने के कारण, अगस्त्य ने शाप दे कर उसको नष्ट किया। बदल्य लेने के हेतु से अपने पुत्रों समेत, ताटका ने अगस्त्य पर आक्रमण किया। तब अगस्त्य ने मारीच को राक्षस होने का, तथा ताटका को मनुष्यमक्षक भद्रा राक्षसी होने का शाप दिया। तब

से यह मारीच के साथ मल्ल तथा करुण देशों में आ कर रहने लगी। वह प्रदेश उजड़ कर 'ताटकावन' नाम से प्रसिद्ध हुआ।

पास ही में विश्वामित्र का आश्रम था। उसने यज्ञप्रारंभ किया कि, यह माँ बेटे उसका विध्वंस करते थे। बल हो कर विश्वामित्र अयोध्या गया, तथा यज्ञ के संरक्षण के लिये, दशरथ के पुत्रों को ले आया। ताटका की सारी पापी हरकतें बता कर, उसने उन पुत्रों को इकठा वध करने के लिये कहा। तब राम ने इसका वध किया (वा. रा. वा. २५-२६)।

ताडुका—ताटका का नामांतर।

ताडुकायन—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५६ कुं.)।

तांड—एक आचार्य। राम गायन करते समय गायत्री छंद के मंत्र का प्रस्ताव, अष्टाक्षरी होना चाहिये इस मत का यह प्रवर्तक था (वा. श्री. ७.१०.१७)। व्यायान श्रौतसूत्र में इसे पुराणताण्ड कहा गया है।

तांडविंद वा तांडविंदव—एक आचार्य (सां. आ. ८.१०)।

तांडि—अंगिरागोत्र का प्रवर। 'सामविधान ब्राह्मण' में दिये विद्यावंश से, यह चादरायग का शिष्य प्रतीत होता है।

तांडिन्—एक छन्दशास्त्रु आचार्य। महावृही छन्द को यह सतोवृहीती छन्द कहता है (छन्दशास्त्र ३.३६)।

तांड्य—एक आचार्य (शा. ब्रा. ६. १. २. २५)। 'अग्निचिती' से संबंधित किसी विषय पर इसका उद्धरण दिया गया है।

वैशंपायन का यह शिष्य था। वैशंपायन के शिष्यों में से ऋत्विभ, अरुणि, तथा यह, मध्यदेश के थे। सामवेद का 'तांड्य महाब्राह्मण' इसने निर्माण किया है। यह ग्रंथ सामवेद की कौथुम शाखा का है, एवं तंडिनो की परंपरा का प्रतिनिधित्व करता है। उसे 'पंचदश ब्राह्मण' अथवा 'षोडश ब्राह्मण' भी कहते हैं। विचक्षण का तांड्य यह पैतृक नाम है (वं. ब्रा. २)।

महाभारत में भी इसके नाम का निर्देश है (म. स. ७.१०; शां. २३६.१७)।

तान्व—पुत्र का पुत्र (ऋ. १०. ९३. १५)। पुत्र राजाओं में इसका उल्लेख आया है। तन्व का वंशज, इस अर्थ से भी यह नाम प्रयुक्त होगा। पैतृक धन कन्या को नहीं, बल्की पुत्र को मिलना चाहिये, ऐसा इसका मत था

(क. ३.३१.२)। ऋग्वेद के एक सूक्त में, दुःशीम की इसने उदार दाता कह कर स्तुति की है (क. १०. ९३. १४)।

तापनीय—ब्रह्मांडमत में व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा के याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य।

तापस—दत्त का उग्रनाम। यह जनमेजय कौतिल के संभोज में होता था (पं. ब्रा. २५.१५)।

२. अग्नि, धर्म एवं मन्थु देखिये।

तामरसा—अग्नि की स्त्री (ब्रह्मांड. ३.८.७४.८७)।

तामस—धर्म एवं हिंसा का पुत्र।

२. (सो.) भविष्य मत में श्रवस् का पुत्र।

३. (स्वा. प्रिय.) प्रियव्रत का तीसरा पुत्र तथा उत्तम का भाई (भा. ८.१.२७)। कई ग्रंथों में इसे प्रियव्रत का वंशज कहा है (विष्णु. ३.२.२४)।

स्वराष्ट्र नामक राजा को विमर्द नामक राजा ने पदच्युत किया। स्वराष्ट्र राजा की पत्नी उत्पलावती, मृत्यु के बाद, हरिणी योनि में उत्पन्न हुई। स्वराष्ट्र का कामुक स्पर्श उस हरिणी को हाने के कारण, यह पुत्र उत्पन्न हुआ (मार्क. ७१.४६)। माता को तामस योनि प्राप्त होने पर उत्पन्न होने के कारण, इसे तामस मनु कहते थे। पिता ने सारी बातें इसे बताया। तब इसने पिता के यज्ञ विमर्द राजा को क्रुद्ध कर लया (मार्क. ७१.४७)। बाद में पिता के कहने पर इसने उसे छोड़ दिया। इस तरह राज्य प्राप्त कर यह सार्वभौम बना।

इसने नर्मदा के दक्षिण तट पर महेश्वरी की आराधना की। कामराजकूट का जय किया। वसंत एवं शरदऋतु में नवरात्र पूजा भी की। इस तपस्या से यह चतुर्थ मन्वंतराधिपति मनु बना (दे. भा. १०. ८)। यह अपनी भार्या के साथ स्वर्ग लोक गया। गजेन्द्र मोक्ष की घटना इसी के ही काल में हुई थी (भा. ८. १; मनु देखिये)।

ताम्र—महिषासुर का कोशाध्यक्ष।

२. मुर दैत्य के सात पुत्रों में से एक। कृष्ण ने इसके पिता का वध किया। इस लिये अपने भाईयों सहित इसने कृष्ण पर आक्रमण किया। किंतु यह स्वयं मारा गया (नरक ३. देखिये)।

ताम्रतप्त—कृष्ण का रोहिणी से उत्पन्न पुत्र।

ताम्रध्वज—मयूरध्वज का पुत्र।

ताम्रलिप्त—वंगदेशीय क्षत्रिय (म. भा. १७७ १२; स. २७. २२)।

ताम्रलोचन—एक शिवगण।

ताम्रा—प्राचेतस दक्ष प्रजापति एवं असिनी की कन्या। यह कश्यप को दी गयी थी (कश्यप देखिये)।

२. वसुदेव की स्त्रियों में से एक। इसका पुत्र सहदेव।

ताम्रायण—धायुमत में व्यास की यजुःशिष्य परंपरा के याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)।

ताम्राँष्ठ—एक यक्ष (म. स. १०. १६)।

तार—मयासुर का एक मित्र (मत्स्य. १७७)।

२. रामसेना का एक प्रमुख वानर (म. व. २८५. ९)। इसने निखर्वट राक्षस के साथ युद्ध किया। सुग्रीव की स्त्री रमा इसकी कन्या थी। इसे तारापिता भी कहा गया है (वा. रा. उ. ३४. ४)।

३. मधुवन में रहनेवाले शाकुनि नामक ऋषि का पुत्र। यह अत्यंत तेजस्वी था (पद्म. स. ३१)।

तारक—कश्यप एवं दनु का पुत्र।

२. एक असुर। वज्रांग तथा वरांगी को ब्रह्मदेव के कृपाप्रसाद से यह पुत्र प्राप्त हुआ था (वज्रांग देखिये)। इसने पारियात्र पर्वत पर १०,००० वर्षों तक तपस्या की। ब्रह्मदेव ने इससे वर माँगने को कहा। इसने अमरत्व माँगा। यह मिलना असंभव है, ऐसा मालूम होने पर इसने सात-दिन के शिशु के द्वारा मृत्यु होने का वर माँगा।

इस वर के प्रभाव से उन्मत्त हो कर, इसने इंद्रादि देवों को पराजित किया। शंकर के औरस पुत्र के द्वारा ही तारकासुर की मृत्यु होगी ऐसा देवताओं का संकेत था। इसलिये शंकर ने पार्वती से विवाह किया। उन्हें स्कंद नामक पुत्र हुआ। स्कंद ने उम्र के सातवें दिन इसका वध किया (मत्स्य. १३०-१३९; १४६; पद्म. स. ४२; तारेय २. देखिये)।

इसके तीन पुत्र थे। उनके नामः—त्रिपुरोत्पादक-ताराक्ष (तारकाक्ष), कमलक्ष तथा विद्युन्माली (म. क. २३.३-४; लिंग. १.७१)।

तारा—बृहस्पति की दो स्त्रियों में से दूसरी। सोम ने इसका हरण किया था। ऋग्वेद में इसका अराष्ट्र उल्लेख है (क. १०.१०९)। सोम से इसे बुध नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। वह सोमवंश का मूलपुरुष था (चंद्र देखिये)।

२. सुषेण वानर की कन्या तथा वालिन् की स्त्री। इसके पिता का नाम तार (तार २. देखिये)। इसका पुत्र अंगद (वा. रा. किं. २२.१३)। वालिन् तथा सुग्रीव

का पूर्वापर बैर था। राम की सहायता से सुग्रीव ने वालिन् के उपर जोरदार हमला किया। उस समय, सुग्रीव से मुलह करने की सलाह इसने वालिन् को दी थी।

३. सूर्यवंशीय हरिश्चंद्र राजा की पत्नी। इसे तारामती नामांतर था (तारामती देखिये)।

४. एक ब्रह्मवादिनी।

ताराक्ष—तारकासुर का पुत्र। इसे तारकाक्ष नामांतर था (म. क. २३.३-४)।

तारापीड—(सु. इ.) मृत्यु के मत में चन्द्रावलोक राजा का पुत्र। इसका पुत्र चन्द्रगिरि।

तारामती—दैव्य देश के राजा की कन्या तथा अयोध्यापति हरिश्चन्द्र की पत्नी (मार्क ७.९)। हरिश्चन्द्र की सौ पत्नियों में यह पटरानी थी। वरुणकृपा से इसे रोहित नामक पुत्र हुआ (दे. भा. ७.१४)।

विश्वामित्र की दक्षिणा पूर्ण करने के लिये, हरिश्चन्द्र ने इसको तथा राजपुत्र रोहित को, काशी के एक बृद्ध ब्राह्मण को बेच दिया (दे. भा. ७.२२)। पश्चात्, सर्पदंश से रोहित की मृत्यु हो गयी। उसे ले कर यह स्मदान गई। वहाँ लड़के खानेवाली राक्षसी समझ कर, लोग इसे राजा के पास ले गये। राजा ने चांडाल को इसका वध करने के लिये कहा। चांडाल ने यह कार्य करने की आज्ञा हरिश्चन्द्र को दी। उसने पत्नी को तथा पुत्र को पहचान लिया। यह अग्निप्रवेश करने को तैय्यार हुई। किंतु इन्द्र ने रोहित को जीवित किया। पश्चात् इन्द्र की कृपा से इसे स्वर्गप्राप्ति हुई (दे. भा. ७.२५-२७; हरिश्चंद्र देखिये)।

तारावती—चंद्रशेखर देखिये।

तारुक्ष्य—१. तार्क्ष्य देखिये।

तारेय—एक वानर। तारापुत्र अंगद का यह नामांतर है।

२. एक राक्षस। यह तारकासुर का पुत्र था। हिरण्याक्ष के पक्ष में यह लड़ रहा था। उस वकत, अपने पिता के वध का बदला लेने के लिये इसने कार्तिकेय पर अग्न्यस्त्र तथा रौद्रास्त्र की वर्षा की। किंतु ये सब अस्त्र प्रभावहीन साबित हुए। अन्त में कार्तिकेय ने इसका वध किया (पद्म. सु. ६९)।

तार्क्ष—तार्क्ष्य ६, देखिये।

तार्क्षी—एक पक्षिणी। पूर्वजन्म में, यह वपु नामक अप्सरा थी। दुर्वास ऋषि के शाप से, इसे पक्षियोंनि प्राप्त हुई। कंथर तथा पक्षिरूपधारी मदनिका की यह कन्या बनी। द्रोण नामक पक्षी इसका पति था।

भारतीय युद्ध के समय, यह गर्भवती थी। गर्भवती अवस्था में, कौरव पांडवों के युद्धक्षेत्र के ऊपर से यह जा रही थी। उड़ते उड़ते, उस स्थान पर यह भाई, जहाँ अर्जुन तथा भगदत्त का युद्ध हो रहा था। अर्जुन के श्राण से इसका उदर विदीर्ण हुआ। उसमेंसे चार अंडे नीचे गिरे।

इसी समय सुप्रतीक नामक हाथी के गले की प्रचंड घंटा नीचे गिरी। तार्क्षी के चार अंडों को, कीच के पोले भाग में ले कर, वह घंटा कीचड़ में फेंस गई। बाद में शमीक ऋषि उन अंडों को ले गया (मार्क. ३.३१-४४)। इसी समय तार्क्षी की मृत्यु हो गई। उन अंडे से बाहर निकले बच्चे, पिगाक्ष, विबोध, सुपुत्र तथा सुमुख ये नाम से प्रसिद्ध हुए।

तार्क्ष्य—एक आचार्य (ऐ. आ. ३.१.६; सां. आ. ७.१९)। विशिष्ट ज्ञान संपादन करने के हेतु, इसने गुरुग्रह में रह कर उसकी गाग की रक्षा की। इसके नाम का 'तारुक्ष्य' पाठभेद कई जगह प्राप्त है। किंतु बहुत सारा जगह, इसे तार्क्ष्य ही कहा है (ऐ. आ. १.५.२; सां. श्रौ. ११.१४.२८; १२.११.१२; आश्व. श्रौ. ९.१)। अरिष्टनेमि तार्क्ष्य तथा यह एक ही होने की संभावना है। किंतु इस बारे में, निश्चित रूप से कहा नहीं जा सकता।

२. अरिष्टनेमि का पैतृक नाम।

३. कश्यप प्रजापति का नामांतर। तार्क्ष्य नाम धारण किये कश्यप को दक्ष ने अपनी कन्याएं दी थीं। सरस्वती से इसका संभाषण हुआ था (म. व. १८४.१; कश्य देखिये)।

४. एक पराक्रमी पक्षी (खिल. २.४.१)। यह पक्षियों का राजा था (श. ब्रा. १३.४.३.१३)। संभवतः यह सूर्य का प्रतीक था। एक दिव्य अश्व के रूप में भी इसका उल्लेख प्राप्त है (ऋ. १.८.९.६; १०.१७.८.१)। सोम लाने के लिये, इसका उपयोग किया गया था (सुपर्ण ३. देखिये)।

५. कश्यप तथा विनता का पुत्र। इसका भाई गण्ड।

६. एक यक्ष। मार्गशीर्षि माह में यह अंशुमान् सूर्य के साथ रहता है (भा. १२.११)। तार्क्ष इसीका नामांतर है।

७. कश्यप का नामान्तर (म. व. १८२.८)।

तार्क्ष्य वैपद्रिवन्त—एक आचार्य (आश्व. श्रौ. १०. ७)।

तार्क्ष्यपुत्र—सुपर्ण तार्क्ष्यपुत्र देखिये।

तालक—वायु एवं ब्रह्मांड मत में व्यास की साम-
शिष्य परंपरा के हिरण्यनाभ का शिष्य।

तालकृत्—अंगिरा कुल का गोत्रकार।

तालकेतु—कृष्ण के द्वारा मारा गया एक राक्षस।

२. भीष्म का नामांतर (म. भी. ४५.९; उ. १४८.
५)।

३. कुवलयश्र के द्वारा मारा गया एक राक्षस (मार्क
१८.२३)।

तालजंघ—(सो. सह.) कार्तवीर्य का नाती तथा
जयध्वज का पुत्र। इसके पुत्रों को भी तालजंघ कहते थे,
वीतहोत्र, शर्यांत, तुंडिकेर, भोज तथा अवंती इन पाँच
वंशों को, 'तालजंघ' यह संयुक्त नाम दिया जाता है।

तालजंघ को १०० पुत्र थे। उनमें से पाँच गण मुख्य
थे। उनके पाठभेद से नामः—वीरहोत्र, भोज, आवर्ति,
तुंडिकेर, तालजंघ। ये सारे तालजंघ नाम से ही प्रसिद्ध थे
(वायु. ९४.५०-५२)।

परशुराम से डर कर, अपने सारे भाईयों सहित, यह
हिमालय की गुफाओं में रहता था। परशुराम तप करने
गया, तब यह निर्भय हो कर सपरिवार पुनः माहिष्मती
नगर में आ कर रहने लगा।

कुछ कालोपरंत अयोध्या पर आक्रमण कर, इसने
सगर के पिता फल्गुदेव को जीत लिया (ब्रह्मांड. ३.
४७)। इसका बदला चुकाने के लिये; सगर ने और्व
ऋषि द्वारा प्राप्त आग्नेयास्त्र से, इसको तथा इसके सारे
परिवार को जला दिया। इनमें से केवल वीतिहोत्र बच गया
(भा. ९.२३) इन्हे जीतने पर, और्व ऋषि की आज्ञा के
कारण, सगर ने इनका वध नहीं किया। किन्तु इन्हे विद्वप
कर, छोड़ दिया (भा. ९.८५; पञ्च. उ. २०, वीतहव्य
तथा बाहु देखिये)। भृगुकुल के साथ कलह करने से,
हैहय तथा तालजंघो का नाश हुआ (कौटिल्य. प्र. २२)।

२. (श्र. शर्याति.) शर्याति राजा का पुत्र (म. अनु.
८.८. कुं.)।

३. मुर दैत्य का पिता।

तालन—कलियुग का एक राजा। इसने महावती
नगरी पर आक्रमण किया। इसके आठ पुत्र थे। उनके
नामः—अलिक, अह्मामति, काल, पत्र, पुष्पोदरी,
वरीकरी, नरी तथा सुललित। अपना वनरस नामक नगर
इसने इन पुत्रों को दिया। ग्लेच्छों की पूजापद्धति से
इसने असुर देवताओं की पूजा की (भवि. प्रति. ३.७)।

तिग्म—(सो. कुरु. भविष्य.) मत्स्यमत में उर्व-
पुत्र, तथा विष्णुमत में मृदुपुत्र। तिमि, तिग्मज्योति,
ये सारे एक ही हैं।

तिग्मकेतु—(स्वा. उत्तान.) भागवतमत में वत्सर
तथा स्वर्वाधि का पुत्र।

तिग्मज्योति—(सो. कुरु. भविष्य.) भविष्यमत में
मृदु का पुत्र।

तितिक्षा—स्वायंभुव मन्वन्तर के दक्षप्रजापति की
कन्या तथा धर्म की स्त्री। इसका पुत्र क्षेम।

तितिक्षु—(सो. अनु.) एक चक्रवर्तिन् सम्राट्।
भागवत, मत्स्य, एवं वायु के मत में, चक्रवर्तिन् महा-
मनस् का यह पुत्र था। विष्णु मत में, यह महामणि का
पुत्र था। पश्चिमोत्तर भारत में राज्य स्थापन करनेवाला
सम्राट् उशीनर इसका भाई था।

तितिक्षुवंश—पूर्व भारत में ख्यातिप्राप्त तितिक्षुवंश,
तितिक्षु से ही प्रारंभ हुआ। यह वंश, अनुवंश का ही
स्वतंत्र शाखा थी। तितिक्षुवंश में पैदा हुवे, बलि ने
पूर्व भारत में बलादृष साम्राज्य स्थापन किया। बलि
को अंग, वंग, कलिंग, सुह्य, पुंड्र नामक पाँच पुत्र थे।
बलि के साम्राज्य के पाँच देश, इन पाँच पुत्रों के नाम
से ही सुविख्यात हुवे।

अयोध्यापति दशरथ का समकालीन रोमपाद राजा
अंगवंश का था। भारतीय युद्ध में, कर्ण तथा वृषसेन ये
दोनों तितिक्षुवंशांतर्गत अंगवंश के थे।

तितिक्षु का भाई सम्राट् उशीनर का वंश, पश्चिमोत्तर
भारत में केकय, मद्र आदि प्रदेशों में राज्य करता था
(अनु. उशीनर, तथा बलि देखिये)।

तित्तिरि वा तित्तिरि—(सो. कुरु.) कपोतरोमन्
का पुत्र। इसका पुत्र बहुपुत्र।

तित्तिरि—ऋषय तथा कद्रु का पुत्र एक नाग।

२. एक ऋषि तथा शाखाप्रवर्तक (म. स. ४.१०;
पाणिनि देखिये)। अंगिरसकुल के ऋषिओं की एक शाखा
के, अंगिरस, तैत्तिरि, कापिभुव ये तीन प्रवर हैं। उनमें
से तैत्तिरि का यह पिता होगा।

कृष्ण यजुर्वेद के एक शाखा का 'तैत्तिरीय' यह उप-
नाम है। उस शाखा का मूल आचार्य तित्तिरि रहा होगा।
वैशंपायन के शिष्य याज्ञवल्क्य के नेतृत्व में वह शाखा
पहले थी। किंतु कुछ कारणवश, वैशंपायन ने याज्ञवल्क्य
के नेतृत्व से वह शाखा निकाल ली। वह वैशंपायन के
बाकी बचे ८५ शिष्यों ने धारण की। उस समय, उन्होंने

तित्तिरि पक्षियों के रूप लिये थे। उस कारण, उन्हें 'तित्तिरि,' एवं उनके शाखानुयायियों को 'तैत्तिरीय' नाम प्राप्त हुआ (विष्णु. ३.५; भा. १२.६.६५)।

मत्स्य के मत में, तित्तिरि ऋषि अंगिराकुल के प्रवर का एक ऋषि है। एक शाखाप्रवर्तक के जरिये भी इसका उल्लेख प्राप्त है (पाणिनि देखिये)। हिरण्यकेशिन लोगों के पितृवर्षण में इसका निर्देश आता है (स. गृ. २०.८. २०)।

तिथि—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

२. कश्यप एवं क्रोधा की कन्या तथा पुलह की स्त्री।

तिमि—प्राचेतस दक्ष प्रजापति एवं असिकी की कन्या तथा कश्यप की भार्या।

२. (सो. पूर. भविष्य.) भागवत मत में दुर्व का पुत्र (तिग्म देखिये)।

तिमिगल—एक राजा। यह रामक पर्वत पर रहता था। राजस्य यज्ञ के समय, सहदेव ने इसे जीतकर घन प्राप्त किया (म. स. २८.४६)।

तिमिध्वज—वैजयन्त नगरी का राजा। यह शंवर नाम से भी प्रसिद्ध था।

इसका राज्य दक्षिण भारत में दंडकारण्य के पास था। डॉ. मांडारकरजी के मत में, आधुनिक कालीन विजय-दुर्ग ही प्राचीन वैजयन्त नगरी है। डे के मत में, आधुनिक बनवासी शहर का वह प्राचीन नाम है।

देवासुर युद्ध चाट था। यह असुरों के पक्ष में मिल कर, इंद्र से युद्ध करने लगा। इंद्र ने अयोध्या से दशरथ राजा को बुलाया। परंतु युद्ध करते समय, घायल हो कर दशरथ बेहोश हो गया। तब सारथ्य करनेवाली कैकयी ने बड़े चातुर्य से रथ बाजूमें ले कर दशरथ की रक्षा की। बाद में तिमिध्वज का क्या हुआ इसके बारे में कुछ उल्लेख नहीं है (वा. रा. अयो. ९; ब्रह्म. १२३)।

तिमिर्घ दौरेध्रुत—अशीष ऋत्विज का नामांतर। सर्पों उत्कर्षके के लिये किये गये सर्पसत्र में यह उपस्थित था (पं. ब्रा. २५.१५.३)।

तिरस्त्री आंगिरस—सूतद्रष्टा (ऋ. ८.९५-९६)। पंचविंश ब्राह्मण में भी इसके नाम का निर्देश आया है (१२.६.१२)। इसके सूक्तों में इंद्र की आराधना की गई है (ऋ. १२.६.१२)।

तिरिंदिर पारशव्य—एक राजा। सायण, के मत में, यह पर्शु का पुत्र था। इसलिये इसे पारशव्य पैतृक नाम प्राप्त हुआ।

किसी को दान देनेवाले राजा के रूप में, इसका निर्देश ऋग्वेद की एक दानस्तुति में प्राप्त है (ऋ. ८.६.४६-४८)। वस काण्व को इस राजा से दान-स्वरूप उपहार मिला था (सां. श्रौ. १६.११.२०)। यह धन यदु राजाओं से तिरिंदिर ने प्राप्त किया था। यदु राजाओं को वेबर ईरानी मानते हैं, एवं भारत तथा ईरान के बीच वनिष्ठ संबंध का प्रमाण इस कथा को समझते हैं (इन्डि. स्टुडि. ४.३१६)।

तिर्यञ्च आंगिरस—सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १२.६. १२)।

तिलोत्तमा—एक भस्मरा। यह काश्यप तथा अरिष्टा की कन्या थी। पूर्वजन्म में यह कुब्जा नामक स्त्री थी। दीर्घ तपस्या कर यह वैकुण्ठ गई। देवों के कार्य के लिये ब्रह्माजी ने इसे सुंदोपसुंद के पास भेजा था।

प्रत्येक वस्तु का तिलतिल सौंदर्य, इसके सौंदर्य निर्माण के लिये लिया गया था। इसलिये इसे तिलोत्तमा नाम प्राप्त हुआ। सुंदोपसुंद के नाशार्थ जाने के पहले, इसने सब देवों तथा ऋषियों की प्रदक्षिणा की। उस समय इसके मनमोहनी रूप यौवन से, शंकर तथा इंद्र आदि देवसभों के ज्येष्ठ देव भी स्तिमित हो गये।

इसे देखने ही, सुंदोपसुंद का आपस में झगडा हो कर, एक ने दूसरे का वध कर दिया। तब ब्रह्मदेव ने इसे वरदान दिया; 'जहाँ जहाँ सूर्य का प्रवेश होगा, वहाँ तुम भी प्रविष्ट हो सकोगी। तुम्हारे लावण्य का प्रभाव दाहक एवं गहरा होगा। इस कारण कोई भी तुम्हारी ओर आँख उठा कर देख न सकेगा' (म. आ. २०३-२०४; पद्म. उ. १२६)।

यह अश्विन में त्वष्टा सूर्य के साथ घूमती है (भा १२.११)।

तीक्ष्णधेग—रावण-पक्षीय एक असुर।

तीर्णक—एक ऋषि। ब्रह्मदेव ने पुष्करक्षेत्र में किये यज्ञ में यह उपस्थित था (पद्म. सू. १४)।

तीव्ररथ—हंसध्वज के सुमति नामक सत्त्विक का पुत्र।

तुश्य—अंगिरसकुल का एक मंत्रकार।

तुघ—अश्वियों के कृपाप्राप्त भुञ्जु का पिता। इसलिये भुञ्जु को तुघ्य अथवा तौघ्य भुञ्जु कहते हैं (भुञ्जु देखिये)।

२. एक राजा। यह इंद्र का शत्रु था। (ऋ. ६.२०. ८; २६.४; १०.४९.४)।

तुम्य—सुज्य का पैतृक नाम। तौड्य इसका सही नाम रहा होगा।

तुजि—एक राजा। इसपर इंद्र की कृपा थी (ऋ. ६. २६.४; १०.४९.४)। नूतुजि इसीका नाम होगा (ऋ. ६. २०.८)।

तुंड—नल वानर के द्वारा मारा गया, रावणपक्षीय एक राक्षस।

तुंडकोश—कश्यप तथा लसा का पुत्र।

तुर्मिज औषोदिति—एक ऋषि। यह यज्ञसत्र में होतृ का काम करता था। संश्रवन् ऋषि के साथ, इडा के बारे में इसका वादविवाद हुआ था (तै. सं. १.७.२.१)।

तुंवरु—एक गंधर्व। कश्यप तथा प्राधा के पुत्रों में से एक। यह चैत्र माह के धाता नामक सूर्य के साथ रहता था (भा. १२.११.३३)। इसकी भार्या का नाम रंभा था (म. उ. ११५.४००* पंक्ति.४)।

ब्रह्माजी की सभा में, यह नारद के साथ गायन कर, भगवन् का नृण गाता था (भा. ५.२५.८)। श्रीकृष्ण के इंद्र और कामधेनु कृत अभिषेक के समय, यह कृष्ण के पास आया था (भा. १०. २७. २४)। यह अनुधादव का मित्र था (भा. ९.२४.२०)। गोघृहण के समय अर्जुन का युद्ध देखने के लिये यह स्वयं आया था (म. वि. ५६. १२)। युधिष्ठिर के अश्वमेध में भी यह उपस्थित था (म. आश्व. ८८.३९)।

यह रंभा पर आसक्त होने के कारण, कुक्षेर ने शाप दे कर इसे विराथ नामक राक्षस बनाया। बाद में रामलक्ष्मण से हुए युद्ध में मृत हो कर इसने अपना मूल रूप प्राप्त किया (वा. रा. अर. ५; विराथ देखिये)।

२. एक गंधर्व। यह सुधाहु तथा मुनिकाया का पुत्र था। इसे मनुवंशी एवं तुक्षेशी नामक दो कन्यायें थी (ब्रह्मंड. ३.७.१३)।

३. एक राक्षस। हिरण्याक्ष ने हुए देवों के युद्ध में, वायु ने इसका वध किया (पद्म. सु. ७५)।

तुंवरु—तुंवरु देखिये।

तुर कावेष्य—एक वैदिक ऋषि। ओम्बेनयर्ग के मत में, वैदिक काल के अंतिम चरण में यह पैदा हुआ था (स्ती. ग. ४२. २३९)।

एक तत्त्वप्रतिपादक के जरिये इसका निर्देश ब्राह्मणों में प्राप्त है (श. ब्रा. १०.६.५.९)। दारोती नदी पर, अग्नि की वेदिका इसके द्वारा बनाई जाने का उल्लेख शांतिस्व ने किया है (श. ब्रा. ९.५.२.१५)। जनमेजय पारोक्षित

(प्रथम) का यह पुरोहित था। इसीने उसे राज्याभिषेक किया (ऐ. ब्रा. ४.२७; ७.३४; ८.३१)। इसका शिष्य यश्वन्त्स राजस्तवायन (वृ. उ. ६.५.४)। पंचविश-ब्राह्मण में (२४.१४.५) उल्लिखित तुर तथा यह एक ही होगा।

इसने दूसरे जनमेजय पारोक्षित से सर्पसत्र करवाया (भा. ९. २२.३५)। दूसरे जनमेजय पारोक्षित के साथ भागवत ग्रंथ में, जोड़ा गया इसका संबंध केवल नाममात्र के कारण हुआ है। वास्तव में यह प्रथम जनमेजय पारोक्षित का पुरोहित था। इसीलिये इसने उसे राज्याभिषेक किया था।

तुरश्रवस्—एक ऋषि। पारावत ने इंद्र के लिये सोमयाग किया। वहाँ इस ऋषि ने दो साम कह कर इंद्र को प्रसन्न किया। इंद्र ने, उपस्थित ऋषियों में से केवल तुरश्रवस् ने सादर किये हवि का स्वीकार किया (पं. ब्रा. ९.४.१०)।

तुरु—एक राक्षस। हिरण्याक्ष के साथ हुए देवों के युद्ध में, वायु ने इसका वध किया (पद्म. सु. ७५)।

तुरुष्क—(तुरुष्क. भविष्य.) एक राजवंश। भागवत-मत में इस वंश में, कुल चौदह राजा हुए। इतरत्र इसे तुषार कहा गया है।

तुर्व—एक राजा। यह मनु का अनुयायी था (ऋ. १०.६२.१०)।

तुर्वशा—एक वैदिक राजा तथा ज्ञातिसमूह। हॉपकिन्स के मत में, 'तुर्वशा' एक ज्ञातिसमूह का नाम है, जिसका एकवचन उसके राजा का द्योतक है (उ. पु. २५८)। यदु राजा एवं ज्ञाति से तुर्वशों का धनिष्ठ संबंध था (ऋ. ४. ३०.१७; १०.६२.१०)।

दाशराज-युद्ध में, तुर्वशा राजा ने सुदास के विरुद्ध युद्ध किया था। किंतु इस युद्ध में यह स्वयं पराभूत हुआ (ऋ. ७.१८.२)। इस युद्ध में भागने ('तुर') के कारण, इसका नाम तुर्वशा पड़ गया (हॉपकिन्स. उ. पु. २६४)।

इस राजा पर इंद्र की कृपा थी। इस कृपा के कारण, दाशराज-युद्ध के पश्चात्, इंद्र ने इसकी सहायता की। अनु तथा द्रुह्यु के समान, यह पानी में डूब कर नहीं मरा। इसकी द्वारा की गयी इंद्रस्तुति में, 'तुमने यदुतुर्वशों की रक्षा की, उसी प्रकार हमारी रक्षा करो,' ऐसी प्रार्थना आयी है (ऋ. ४.४५.१)। उसी प्रकार, 'अतिथिय का कल्याण करनेवाले तुम यदुतुर्वशों का वध करो,' ऐसी भी प्रार्थना की गयी है। तुर्वशा तथा यदु ने, अर्ण एवं चित्ररथ

राजाओं का सरयू के किनारे बंध-किया था (ऋ. ४.३०. १८)।

मुद्रास के पिता दिवोदास पर तुर्वश एवं यदु शातियों ने आक्रमण किया था (ऋ. ६.४५.२; ९.६१ २)। वृचीवत्, धरशिस तथा पार्थिव शातियों का तुर्वशों से अतिनिकट संबंध था। यव्यावती तथा हरियूपीया नदीयों के तट पर, दैवरात तुर्वश को वृचीवन्तो ने मदद की थी (ऋ. ६.२७.५-७)। यदुतुर्वशों के पुरोहित कथ्य थे (ऋ. ८.४.७)। इन्हें अभ्यावर्तिन् चायनान ने जीता था (ऋ. ६.२७.२८)। शोण सानासह पांचाल राजा से यदुतुर्वशों का काफी सख्यत्व था। तैत्तिरीय तुर्वश अश्व एवं छह हजार सशस्त्र सैनिकों के साथ इन्होंने पांचाल राजाओं को मदद की थी। ब्राह्मणों में अनेक तौर्वशों का निर्देश है (श. ब्रा. १३.५.४.१६)। अन्त में, तुर्वश लोग पांचालों में विलीन हो गये (ओल्डेनवर्ग-बुद्ध. ४०४)।

इन लोगों के निवासस्थान के बारे में निश्चित पता नहीं लगता। इन लोगों ने परुष्णी नदी को पार किया था (ऋ. ७.१८)। ये लोक पश्चिम से पूर्व दिशा की ओर भरतो के देश में आगे बढ़े, ऐसा प्रतीत होता है (पिशेल, वेदि. स्टुडि. २.२१८)।

पुराणों में तुर्वशों का निर्देश 'तुर्वसु' नाम से किया गया है।

तुर्वसु—(सो. पुरुरवस्.) ययाति राजा को देवयानी से उत्पन्न पुत्र। पिता का वृद्धत्व इसने स्वीकार नहीं किया। अतः ययाति ने इसे शाप दिया। इस शाप की वजह से इसके छत्रचामर छीन गिरे गये, एवं निय आचरण करनेवाले पश्चिमभारत का यह राजा बना (भा. ९.२२)। इसे वह्नि नामक पुत्र था (भा. ९. २३.१६)।

तुर्वसुवंश—इसका वंश अनेक स्थानों पर प्राप्त है (मत्स्य. ४८; ब्रह्मांड. ३. ७४; वायु. ९९; ब्रह्म. १३; ह. वं. १. ३२; अग्नि. २७६; विष्णु. ४. १६; गरुड़ १. १३९; भा. ९. २३)। अग्निपुराण में, द्रुहसु वंश के गांधार का इसी वंश में समावेश किया है। विष्णु आदि तीन पुराणों में, इस वंश का अंतिम भाग प्राप्त नहीं है। इस वंश के, मरुत्त ने पौरव दुष्यंत को गोद लिया। इस प्रकार यह वंश पौरवों में समाविष्ट हुआ। इसी वंश के अंतिम लोगों ने, दक्षिण में पांड्य तथा चोल राज्यों की स्थापना की (ययाति देखिये)।

वेदों में तुर्वसु को तुर्वश कहा है (तुर्वश देखिये)।

तुर्वीति—तुर्वशों का राजा। वय्य के साथ (ऋ. १. ५४.६; २.१३.१२; ४.१९. ६), एवं अकेले (ऋ. १. ३६. १८; ६१. १८; ११२. २३), इसका कई बार उल्लेख प्राप्त है। तीन स्थानों पर, इन्द्र ने इसे बाढ़ से बचना के का उल्लेख मिलता है (ऋ. १.६१.११; २. १३. १२; ४. १९. ६)।

तुलसी—शंखचूड़ नामक असुर की स्त्री। वृंदा के शरीर के पसीने से यह उत्पन्न हुई (पद्म. उ. १५)।

धर्मध्वज को यह माधवी से उत्पन्न हुई, ऐसा वैकल्पिक निर्देश भी प्राप्त है।

यह अत्यंत धर्मशील एवं पतिव्रता थी। इसके पातिव्रत्य के कारण, शंखचूड़ देवताओं के लिये अजेय था। विष्णु ने कपट से इसके पातिव्रत्य को भंग कर, शंकर से शंखचूड़ का बंध करवाया (शंखचूड़ देखिये)। पश्चात् इसने विष्णु को शाप दिया, 'तुम शिलारूप होंगे'। तदनुसार विष्णु शालिग्राम बना (ब्रह्मवै. २.२१; शंखचूड़ देखिये)।

एकवार कामविद्ध हो कर यह गणपति के पास गयी। तब गणपति ने इसे शाप दिया, 'तुम वृक्षरूप होगी'। इस शाप के कारण, इसका मनुष्यरूप नष्ट हुआ। आगे चल कर समुद्रमंथन के अवसर पर, समुद्र से अमृत बाहर आया। उसकी कुछ बुँदें जमीन पर गिरी। उन में से ही तुलसी का पेड़ बाहर निकला। पश्चात् इस पेड़ को ब्रह्मा ने विष्णु को दिया (पद्म. सु. ६९; स्कंद. २.४.८; वृंदा देखिये)।

तुलाधार—दाराणसी क्षेत्र में रहनेवाला एक वैश्य। जाजलि नामक एक द्विज को अपने तप की धमेड थी। वह इसने उतार दी। (म. शां. २५३-२५६)।

तुषार—(तुषार. भविष्य.) कलियुग के एक वंश का नाम। इस में १४ राजा हुए (मत्स्य. २७३, वायु. ९९; ब्रह्मांड. ३.७४)। इस वंश के राजा ऋकजीव में रहते थे (वै. का. राजवाडे. भा. इ. सं. म. इतिवृत्त. १८३५. ५९)।

तुषित—स्वायंभुव तथा स्वारोचिष मन्वंतर के दिग्गण (मनु देखिये)।

तुषिता—स्वारोचिष मन्वंतर के वेदशिरश् ऋषि की स्त्री। इसे विसु नामक पुत्र था (भा. ८.१.२१)।

तुष्ट—हंसध्वज का प्रधान।

तुष्टि—धर्म ऋषि की पत्नी। स्वायंभुव मन्वंतर के दक्ष ने उस ऋषि को दस कन्याएँ दी। उनमें से यह एक थी।

तुष्टिमत्—कंस का भ्राता।

तुहुंड—दत्तपुत्र ।

२. (सो. कु.) धृतराष्ट्रपुत्र ।

तूतुजि—इंद्र का एक आश्रित । इंद्र ने योतन नामक राजा के लिये तुम्र, वेतसु, दशोष्णि एवं इसको पराजित किया (ऋ. ६.२०.८) । तूति एवं तूतुजि दोनों एक ही हैं ।

तूर्ययाण—एक वृष । अतिथिव्य, आयु एवं कुंस का यह शत्रु था, तथा दिवोदास का मित्र था । (ऋ. १.५.३. १०; ६.१८.१३; १०.६१.१) ।

तृक्षि—त्रसदस्यु का पुत्र (ऋ. ६.४६. ८; ८.२२.७; त्रसदस्यु देखिये) । द्रुह्यु तथा पुरु के साथ इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ६.४६.८) ।

तृणक—एक क्षत्रिय (म. स. ८.१६) ।

तृणकर्षि—अंगिराकुल का गोत्रकार ।

तृणविंदु—(सु. दिष्ट.) भागवत एवं वायु के मता-नुसार वंशु राजा का पुत्र । इसे विशाल, झन्यबंधु, भूषकेतु एवं इडविडा नामक चार संताने थीं ।

विष्णु एवं रामायण के मतानुसार वृष राजा का यह पुत्र था । इसकी स्त्री अलंबुया । इसे विशाल एवं इलविला नामक दो संताने थीं । इलविला पुत्रस्य को ही गयी थी । यह त्रेतायुग के तीसरे पाद में राज्य करता था (ब्रह्मांड. ३.८.३६-६०; वायु. ७०.३१; २४.१५) । इसके पुत्र विशाल से वैशाली राजवंश का आरंभ हुआ ।

२. वैवस्वत मन्वन्तर के तेईसवाँ तथा चौबीसवाँ व्यास (व्यास देखिये) ।

३. एक ऋषि । यह पांडवों के साथ काम्यजनन में रहता था (म. व. २६४) । यह अत्यंत धर्मशील तथा संयमी था । प्रत्येक माह, घांस के एक वृण को पानी में डुबा कर, उसके साथ जितने जलविंदु बाहर आते थे, उतने ही पी कर यह रहता था । इसके इस नियम के कारण, इसका नाम तृणविंदु हुआ (स्कंद. ७.१.१३८) ।

४. येन देखिये ।

तृणावर्ते—कृष्ण के द्वारा मारा गया एक असुर (पद्म. ब्र. १३) । कंस ने इसे कृष्णवध के लिये गोकुल भेजा था । इसने आँधी का रूप धारण कर गोकुल में प्रवेश किया, तथा सारे गोकुल को धूलिमय कर दिया । पश्चात् कृष्ण को ले कर यह उड़ गया । किंतु कृष्ण ने इसे एक शिला पर पड़ाड़ कर, इसके प्राण ले लिये (भा. १०. ७.२६) ।

तृसु—एक राजा एवं जातिसंघ । तृसु नामक राजा का निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार आता है (ऋ. ७.१८. ३.) ।

तृसुओं के जातिसंघ का निर्देश भी प्राप्त है (ऋ. ७. १.८.६, ७, १५, १९; ३.३.५, ६; ८.३.४, ६, ८) । इस संघ के लोक, दाशाराज युद्ध में सुदास के सहायक थे । वसिष्ठ जातिसंघ के लोगों के साथ तृसुओं का वनिष्ठ संबंध था (सुदास देखिये) ।

तेज—सुतप देवों में से एक ।

तेजस्विन्—एक इंद्र । आगे चल कर, यही पांडुपुत्र सहदेव हुआ ।

२. गोकुल का एक गोप । कृष्ण का यह परम मित्र था (भा. १०.२२.३१) ।

तेजोयु—एक क्षत्रिय । यह रौद्राश्व का पुत्र था (म. आ. ८९.१०) ।

तैटिकि—एक आचार्य (नि. ४.३) ।

तैत्तिरि—तित्तिरि ऋषि का पुत्र ।

तैत्तिरीय—वैशेनायन एवं याज्ञवल्क्य के सिवा यजुः-शिष्यपरंपरा के अन्य शिष्यों का सामान्यनाम । इन्होंने तित्तिरि पक्षियों के रूप धारण कर, याज्ञवल्क्यद्वारा त्यक्त वेद का ग्रहण किया (व्यास देखिये) ।

तैलक—अंगिराकुल का एक गोत्रकार ।

तैलप—अत्रिकुल का गोत्रकार

तैलेय—भृष्रपराशरकुलोत्पन्न एक ऋषिगण ।

२. अंगिराकुल का गोत्रकार ।

तौंडमान—एक ऋषि । सोमकुल के सुवीर को यह निर्दिनी नामक पत्नी से पैदा हुआ । पांडव राजा की कन्या पद्मा इसकी पत्नी थी । पूर्वजन्म में यह रंगदास था । व्यंकाचल की उपासना कर यह मुक्त हुआ (स्कन्द. २.१.९-१०) । (भीम २३. देखिये) ।

तौशलक—कंससभा का एक महत् । कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.४४.२७) ।

तोष—सुपित देवों में से एक ।

२. (स्वा.) भागवतमत में यज्ञ तथा इक्षिणा का पुत्र ।

तौन्ध्य—सुष्यु का पौत्रक नाम ।

तौरुष्य—अकुलिन् नामक शिवावतार का शिष्य ।

तौल्वलि—आश्वत्थयन देखिये ।

तौसुक—सौमुक के लिये पाटभेद ।

त्याज्य—स्यु तथा प्रौलोमी का पुत्र । यह देवों में से एक था (मत्स्य. १९५.१३) ।

त्रयी—सवितृ तथा वृक्षि की कन्या (भा. ६.१८)।
त्रय्यारुणि—(स. इ.) विष्णु, मत्स्य तथा पद्म मत में त्रिधन्वन् का पुत्र। इसका पुत्र त्रिशंकु (पद्म. सू. ८)।

२. एक व्यास (व्यास देखिये)। भागवत में इसे अरुण कहा है।

३. (सो. पूरु.) अरुक्ष्य का पुत्र (त्रय्यारुणि ३. देखिये)।

त्रय्यारुणि—एक व्यास (व्यास देखिये)।

२. भागवत मतानुसार व्यास की पुराण शिष्यपरंपरा के रोमहर्षण का शिष्य।

३. (सो. पूरु.) भागवत तथा वायु के मतानुसार दुरितक्षय का पुत्र। इसने तपोबल से ब्राह्मणत्व प्राप्त किया। इसने रोमहर्षण से पुराणों का अध्ययन किया (भा. १२.७)। विष्णु मत में इसे त्रय्यारुण कहा है।

त्रसद्—त्रसदस्यु का नामांतर।

त्रसदश्व—वृषदश्व २. देखिये।

त्रसदस्यु पौरुकुत्स्य—(सो. पूरु.) एक स्रुतद्रष्टा (ऋ. ४. ४२; ५. २७; ९. ११०)। यह 'पूरुओं का राजा' था (ऋ. ५. ३३.८; ७. १९.३; ८. १९. ३६)। इसका 'पौरुकुत्सि' (ऋ. ७. १९. ३), तथा 'पौरुकुत्स्य' (ऋ. ५. ३३.८), नामों से उल्लेख आया है। इसका पैतृक नाम गैरलिखित था।

यह पुरुकुत्स का पुत्र था (ऋ. ४. ४२. ८; ७. १९. ३)। एक अत्यंत महान् विपत्ति के समय, पुरुकुत्स की पत्नी पुरुकुत्सानी के गर्भ से यह उत्पन्न हुआ (ऋ. ४. ३८. १)। सायण के मत में, इसके जन्म के समय पुरुकुत्स कारागार में बन्दी या उसकी मृत्यु हो गयी थी।

यह गिरिशिन्व का वंशज था (ऋ. ५. ३३. ८), एवं इसका पिता पुरुकुत्स दुर्गह का वंशज था। अतः इसका वंशक्रम इस प्रकार धनीत होता है:— दुर्गह, गिरिशिन्व, पुरुकुत्स, एवं त्रसदस्यु। त्रसदस्यु को हिरणिन् नामक एक पुत्र था (ऋ. ५. ३३. ७), एवं वृक्षि का यह पूर्वज था (ऋ. ८. २२. ७)। त्रसदस्यु का पिता पुरुकुत्स सुदास का समकालीन था। किंतु वह सुदास का मित्र था, या शत्रु (लुडविग. ३. १७४), यह निश्चित रूप से नहीं कह सकते। सुदास का पूर्वज दिवोदास के साथ पूरु लोगों का एवं तृमुओ का शत्रुत्व था, यह दाशराज्ययुद्ध से ज्ञाहिर होता है। तथापि यह युद्ध

पुरुकुत्स के समय ही समाप्त हो गया था। त्रसदस्यु का इस युद्ध से कुछ भी संबंध नहीं था।

कालान्तर में कुरु तथा पूरु दोनों लोग एक हो गये। इसका प्रमाण त्रसदस्युपुत्र कुरुश्रवण के नाम से ज्ञाहिर होता है। कुरुश्रवण तथा वृक्षि (ऋ. ८. २२. ७), दोनों को भी 'त्रसदस्यव' (त्रसदस्यु का पुत्र) कहा गया है। द्रुह्य तथा पूरु लोगों के साथ, साथ एक स्थान पर (ऋ. ६. ४६. ८), वृक्षि का भी उल्लेख प्राप्त है। जब तक कुछ विरोधी साक्षी नहीं मिलती, तब तक यह मानने में कुछ हर्ज नहीं है कि, कुरुश्रवण एवं वृक्षि दोनों भाई भाई थे। कुरु लोगों का निवासस्थान मध्यदेश में था। पूरु लोग सरस्वती के किनारे रहते थे। यह सरस्वती भी मध्यदेश की ही है। यह भी कुरु-पूरुओं का साधर्म्य एवं एकरूपता दर्शाता है।

इसने अपनी पत्नीस कन्याएँ सोमरि काण्व की पत्नी के रूप में दी थीं (ऋ. ८. १९. ३६)।

ऋग्वेद में, त्रिवृषन्, त्रसदस्यु, व्यरुण ज्यैवृष्ण तथा अश्वमेध (ऋ. ५. २७. ४-६) ये सारे समाप्तार्थक, एवं एक ही व्यक्ति के नामांतर माने गये हैं। किंतु त्रिवृषन् अथवा व्यरुण के साथ, त्रसदस्यु का वीत्त्व में क्या संबंध था, यह वैदिक ग्रंथों से नहीं समझना।

प्राचीन काल में, प्रसिद्ध यज्ञ करने वाले के रूप में, त्रसदस्यु पर आठणार, बीतहृदय श्रायस तथा कर्वावन् औसिज के साथ त्रसदस्यु का उल्लेख आया है (तै. सं. ५. ६. ५. ३; क. सं. २२. ३; पं. ब्रा. १३. ३)। इन सब को पुरातन थोर राजा ('पूर्व महाराजा:') कहा गया है (जै. उ. ब्रा. २. ६. ११)।

एक बार व्यरुण राजा अपना पुरोहित वृश जान को साथ ले कर रथ में जा रहा था। पुरोहित के द्वारा रथद्रुत गति से चलाया जाने से, एक ब्रह्मण-पुत्र की रथ के नीचे मृत्यु हो गई। तब राजा ने पुरोहित से कहा, 'तुम रथ जब हॉक रहे थे, तब लड़का मृत हुआ। इसलिये इस हत्या के लिये जिम्मेवार, तुम हो।'। परंतु पुरोहित ने कहा, 'रथ तुम्हारा होने के कारण, इस हत्या के जिम्मेवार तुम ही हो।'। इस प्रकार लड़ते झगड़ते दोनों इश्वानु राजा के पास गये। इश्वानु राजा ने कहा 'चूंकि रथ पुरोहित के द्वारा हॉका जा रहा था, इसलिये हत्या करनेवाला वृश जान ही है'।

तदनंतर वाशे साम नामक स्तोत्र कह कर, वृश जान ने उस बालक को पुनः जीवित किया। फिर

भी इक्ष्वाकु राजा ने पक्षपात कर वृशजान को ही दोषी ठहराया, इसलिये इक्ष्वाकु राजा के घर से अग्नि गुप्त हो गया। यज्ञयाग बंद हो गये। पूछताछ करने पर राजा को पता चला कि, वृशजान को मैंने दोषी कहा, इसलिये अग्नि मेरे घर से चला गया है। बाद में राजा वृशजान के पास गया। तब उसने वार्श सामसूक्त कह कर अग्नि को वापस लाया। इससे इक्ष्वाकु राजा के घर के यज्ञयाग पूर्ववत् प्रारंभ हो गये (ऋ. ५.२१; सायण भाष्य में से 'शाठ्यायन ब्राह्मण,' तथा तांडक. ५. २.१)। इस कथा का ऋग्वेद से (५.२) संबंध दर्शाया गया है। यहाँ च्यवन, त्रैवृष्ण तथा त्रसदस्यु को एक ही माना गया है, एवं उसे 'इक्ष्वाक' कहा है। परंतु यह बात सायणाचार्य मान्य नहीं करते (ऋ. ५.२७.३; बृहदे. ५; १३-२२)।

इसका पुत्र कुरुश्रवण (ऋ. १०.३३.४)। इसे हिरणिन् नामक और भी एक पुत्र होगा। परंतु सायण के मतानुसार 'हिरणिन्' धनवान् के अर्थ का विशेषण है (ऋ. ५.५.३.८; ६.६३.९)। यह अंगिरस् गोत्रीय मंत्रकार था।

२. (सू. इ.) पुरुकुत्स एवं नर्मदा का पुत्र (वायु. ८८.७४)। मत्स्य में इसे वसुद कहा है। भविष्य में इसके लिये त्रिशदश्व पाठभेद है। मत्स्य में नर्मदा को त्रसदस्यु की पत्नी बताया है (मत्स्य. १२.३६; ब्रह्म. ७.९५)। यह सूर्यवंश का था।

प्रसदस्यु—मांधातृ का नामांतर (भा. ९.६.३३)।

प्राक्षायणी—विश्वामित्र कुल का गोत्रकार।

त्रात ऐशुमत—तिगड पाणवर्तिक का शिष्य (वं. ब्रा. १.३)।

प्रासदस्यव—नृक्षि तथा कुरुश्रवण का पैतृक नाम।

त्रिशदश्व—(सू. इ.) भविष्य के मतानुसार पुरुकुत्स का पुत्र। इसका रथ तीस घोड़ों का था। इसका राज्य सत्ययुग के दूसरे चरण में था।

त्रिककुद्—(सो. आयु.) भागवत मतानुसार शुचि राजा का पुत्र।

त्रिमर्त—एक क्षत्रिय (म. स. ८.१९)।

त्रिचक्षु—(सो. पूरु. भविष्य.) रुच का पुत्र। इसे रुचक्षु कहा गया है।

त्रिजट—गार्ग्य-कुल का एक वृद्ध ब्राह्मण। हल, कुदलि, तथा बेंत ले कर यह हमेशा वन में घूमता था।

जमीन में हल चला कर यह अपना उदरनिर्वाह करता था।

वनवास गमन के पहले राम ने लक्ष्मण से कुछ दानधर्म करने के लिये कहा। उस समय, अग्नी तरुण पत्नी के कथनानुसार, धनप्राप्ति की आशा से यह भी आया। इसे वृद्ध देल कर, राम को इसपर दया आयी। हाथ में एक लकड़ी ले कर, उसने इससे कहा, 'यह लकड़ी इन गायों के बीच में फेंको। जहाँ तक यह लकड़ी जावेगी, वहाँ तक की गौएँ तुम्हें ही जावेंगी।' इतने लकड़ी फेंकी। वह गायों को पार कर, सरयू के भी उपहार चली गई। तब राम ने उस क्षेत्र की सब गौएँ इसे दीं, तथा साथ में कुछ धन भी दिया (वा. रा. अयो. ३२.२९-४३)।

त्रिजटा—लंका की एक राक्षसी। रावण ने सीता के संरक्षण के लिये जो राक्षसियाँ रखी थीं, उनमेंसे यह एक थी (म. व. २६४.५३)। स्वप्न में इसने देखा कि, रावण का नाश तथा राम का उत्कर्ष होनेवाला है। तब से सीता को कुछ तकलीफ न हो, यह व्यवस्था इसने जारी की (वा. रा. सुं. २७)।

त्रित—एक ऋषि तथा देवता। परंतु निरुक्त में इसे एक द्रष्टा कहा है (नि. ४.६)। इन्द्र ने त्रित के लिये अर्जुन का वध किया (ऋ. २.११.२०)। त्रित ने विशीर्ष का (ऋ. १०.८.८), एवं त्वष्टृपुत्र विश्वरूप का वध किया (ऋ. १०.८.९)। मरुतों ने युद्ध में त्रित का सामर्थ्य नष्ट नहीं होने दिया (ऋ. ८.७.२४)। त्रित ने इन्द्र के लिये सोम पीसा (ऋ. ८.३२.२; ३४.४; ३८.२)। त्रित ने सोम दे कर सूर्य को तेजस्वी बनाया (ऋ. ९.३७.४)। त्रित तथा त्रित आप्त्य, एक ही होने का संभव है। त्रित को आप्त्य विशेषण लगाया गया है। इसका अर्थ सायण ने उदकपुत्र किया है (ऋ. ८.४७.१५)। यह अनेक सूक्तों का द्रष्टा है। (ऋ. १.१०५; ८.४७; ६.३३; ३४; १०२; १०.१-७)। एक स्थान पर इसने अग्नि की प्रार्थना की है कि, मरुदेश के प्याऊ के समान पूरुओं को धन से वृष्ट करते हो (ऋ. १०.४)।

त्रित शब्द इंद्र के लिये उपयोग में लाया गया है (ऋ. १.१८७.२)। उसी प्रकार इंद्र के भक्त के रूप में भी इसका उल्लेख है (ऋ. ९.३२.२; १०.८.७-८)। त्रित तथा गृत्समद कुल का कुछ संबंध था, ऐसा प्रतीत होता है (ऋ. २.११.१९)। त्रित को विभूवस का पुत्र कहा गया है (ऋ. १०.४६.३)। त्रित अग्नि का नाम है

(ऋ. ५.४१.४)। त्रित की वरुण तथा सोम के साथ एकता दर्शाई है (ऋ. ८.४१.६; ९.९५.४)।

एक बार यह कुएँ में गिर पड़ा। वहाँ से लुटकारा हो, इस हेतु से इसने ईश्वर की प्रार्थना की। यह प्रार्थना बृहस्पति ने सुनी तथा त्रित की रक्षा की (ऋ. १.१०५.१७)। भेडियों के भय से ही त्रित कुएँ में गिरा होगा (१८)। इसी ऋत्वा के माध्य में, सायण ने शाश्वतयन ब्राह्मण की एक कथा का उल्लेख किया है। एकत, द्वित तथा त्रित नामक तीन वंश थे। त्रित पानी पाने के लिये कुएँ में उतरा। तब इसके भाईयों ने इसे कुएँ में धरका दे कर गिरा दिया, तथा कुँआ बंद करके चले गये। तब मुक्ति के लिये, त्रित ने ईश्वर की प्रार्थना की (ऋ. १.१०५)। यह तीनों वंश अग्नि को उदक से उत्पन्न हुए थे (श. ब्रा. १.२.१.१-२; तै. ब्रा. ३.२.८.१०-११)।

महाभारत में, त्रित की यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। गौतम को एकत, द्वित तथा त्रित नामक पुत्र थे। यह सब ज्ञाता थे। परंतु कनिष्ठ त्रित तीनों में श्रेष्ठ होने के कारण, सर्वत्र पिता के ही समान उसका सत्कार होने लगा। एकत तथा द्वित का लोगों पर अधिक प्रभाव न पड़ता था। इन्हें विशेष द्रव्य भी प्राप्त नहीं होता था।

एक बार त्रित की सहायता से यज्ञ पूर्ण कर के, इन्होंने काफी गौओं प्राप्त की। गौओं ले कर जब ये सरस्वती के किनारे जा रहे थे, तब त्रित आंग था। दोनों भाई गौओं को हाँकते हुए पीछे जा रहे थे। इन दोनों को गौओं का हरण करने की सूझी। त्रित निःशंक मन से जा रहा था। इतने में सामने से एक भेडिया आया। उससे रक्षा करने के हेतु से त्रित बाजू हटा, तो सरस्वती के किनारे के एक कुएँ में गिर पड़ा। इसने काफी चिह्नाहट मचाई। परंतु भाईयों ने सुनने पर भी, लोभ के कारण, इसकी ओर ध्यान नहीं दिया। भेडिया का डर तो था ही।

जलहीन, शूलियुक्त तथा घास से भरे कुओं में गिरने के बाद, त्रित ने सोचा कि, 'मृत्यु भय से मैं कुओं में गिरा। इसलिये मृत्यु का भय ही नष्ट कर डालना चाहिये'। इस विचार से, कुएँ में लटकनेवाली बल्ली को सोम मान कर इसने यज्ञ किया। देवताओं ने सरस्वती के पानी के द्वारा इसे बाहर निकाला। आगे वह कूप 'त्रित-कूप' नामक तीर्थ-स्थान हो गया।

घर वापस जाने पर, शाप के द्वारा इसने भाईयों को भेडिया बनाया। उनकी संतति को इसने अंदर, रीछ आदि बना दिया। बलराम जब त्रित के कूप के पास आया,

उस समय उसे यह पूर्वयुग की कथा सुनाई गयी (म. श. ३५; भा. १०.७८)। अश्वेय राजा के पुत्र के रूप में, त्रित की यह कथा अन्यत्र भी आई है (स्कन्द. ७.१. २५७)।

२. अश्वमेध को चतुर्विध के आठ पुत्रों में से एक।

३. अंगिरसु नोष का एक संप्रकार।

४. ब्रह्मदेव के सातों पुत्रों में से एक।

त्रिधन्वर्—(श. ब.) विष्णु, वायु तथा भविष्य के मतानुसार वसुमन्त्र का पुत्र; परंतु मत्स्य तथा पद्म के मतानुसार संभ्रंति का पुत्र। माभवत में अरण्यपुत्र त्रिधन का निर्देश आया है। वह तथा यह एक ही है।

त्रिधासन्—वर्तमान मन्वन्तर का दशम व्यास (व्यास देखिये)।

२. इसका शिवाथतर। इसने काशी में तपस्या की। इसे भृंग, बलवंशु, नराकिच, तथा केतुशृंग नामक चार शिष्य थे। इसके समय भृगु ऋषि व्यास था (शिव. शत. ५)।

त्रिनाम—कश्यप तथा लक्षा का पुत्र।

त्रिनेत्र—(मगध. भविष्य.) मत्स्य के मतानुसार निवृत्ति का पुत्र। वायु में इसको सुकत, ब्रह्मांड तथा विष्णु में सुश्रम, तथा भागवत में राम कहा गया है। मत्स्य के मतानुसार इसने अट्ठाईस, तथा वायु तथा ब्रह्मांड के मतानुसार अड़तीस वर्षों तक राज्य किया।

त्रिपुर—एक असुरसंघ। मयासुर ने ब्रह्माजी के प्रसाद से तीन पुरों (नगरों) की रचना की। उन पुरों क्रमशः लोहमय, रौप्यमय, एवं सुवर्णमय थे। नगर पूर्ण होने के पश्चात्, उनका अधिपत्य तारकासुर के ताराक्ष, कमलाक्ष एवं विद्युन्मालि इन तीन पुरों को दिया गया (म. क. २४.४)। ये तीन असुर 'त्रिपुर' नाम से प्रसिद्ध हुए।

मयासुर ने नगर निर्माण कर असुरों को दिये। उस समय उसने त्रिपुरों को चैतावनी दी कि, 'तुम्हें देवताओं को न तो वस्तु करना चाहिये, नहीं तो उनका अनादर करना चाहिये'।

किंतु बाद में विपरीत बुद्धि हो कर, त्रिपुर अधर्मान्तरण करने लगे। इसलिये शिवजी के हाथ से इनका नाश हुआ। यह अधर्मान्तरण विष्णु ने द्रुम में फैलाया (शिव. श्र. ४.५)। त्रिपुरों में धार्मिकता होने के कारण, उनपर विजयप्राप्ति असंभव थी। इसलिये विष्णु ने बुद्ध के रूप में इन पुरों को धर्मरहित किया। बाद में देवों ने

युद्ध प्रारंभ किया (मत्स्य. १३०-१३७; भा. ७.१०; म. अनु. २६५.३१ कुं.)।

इससे युद्ध करते समय शंकर के शरीर से जो वर्मभिन्दि निकले, वे ही सदाश्व बने (पद्म. सू. ५९)। जिन असुर-कुलों के कारण ये अमर थे, उनका प्राधान्य देवताओं ने गौरव से कर लिया। पश्चान् शिवजी ने त्रिपुर का दहन किया (पद्म. सू. १३)। इसी समय ताराश्व, कमलाश्व तथा विष्णुमालि असुरों का अंत हुआ (म. द्रो. १७३. ५२-५८; लिंग. १.७०-७२)।

त्रिपुरसुंदरी—एक देवी। अजुन को इसने बाल-विद्या दी (पद्म. पा. ७४)।

त्रिवंधन—(सु. इ.) भागवत के मतानुसार अरुण का पुत्र (त्रिवन्धन् देखिये)। निबंधन तथा यह एक ही हैं।

त्रिभानु—(सो. तुर्वसु.) भागवत के मतानुसार भातमत् राजा का पुत्र। इसका पुत्र करंधम। विष्णु में इसे त्रैशांभ, वायु में त्रिसानु, तथा मत्स्य में त्रिसरि कहा गया है।

त्रिमार्षि—अंगिराकुल का गोत्रद्वार।

त्रिमूर्ति—इंद्रप्रमति का नामान्तर।

त्रिमूर्धन्—रावण का एक पुत्र।

त्रिवक्त्रा—कंसदासी कुंजा का नामान्तर (भा. १०. ४.२३)।

त्रिवराताम—आर्चनानस के लिये पाठभेद।

त्रिवृश—एक व्यास (व्यास देखिये)।

त्रिवेद कृष्णरात लौहित्य—श्याम जयन्त लौहित्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

त्रिशंकु—एक साक्षात्कारी तत्वज्ञ। यह ब्रह्म से एक-रूप हो गया था। अपना 'वेदानुवचन' (आत्मानुभव) वर्णन करते समय इसने लिखा है, 'मैं संगार को हिलाने-वाला हूँ। मेरे सामने सब तुच्छ है। मैं साकार हुआ पावित्र्य हूँ। मैं सूर्यस्थित अमर तत्व हूँ। मैं अमूर्त्य द्रव्यनिधि हूँ। मैं ज्ञानयुक्त, अमर, तथा अक्षय हूँ। (तै. उ. १.१०)।

पौराणिक त्रिशंकु, तथा यह दोनों अलग व्यक्ति प्रतीत होते हैं।

२. (सु. इ.) अयोध्या का राजा। यह निबंधन राजा का ज्येष्ठ पुत्र था। कई ग्रंथों में इसके पिता का नाम प्रय्यारुण या अरुण दिया है (ब्रह्म. ८.९७; ह. वं. १. १२; पद्म. सू. ८; दे. भा. ७.१०)। इसका मूल नाम

सत्यव्रत था। परंतु वसिष्ठ के शाप के कारण, इसे त्रिशंकु नाम प्राप्त हुआ।

इसका तथा इसका पिता व्यय्यारुण, एवं पुत्र हरिश्चंद्र का कुलोपाध्याय 'देवराज' वसिष्ठ था। वसिष्ठ से त्रिशंकु का पहले से ही शत्रुत्व था। कान्यकुब्ज का राजा विश्वरथ, जो आगे तपसाधना से विश्वामित्र ऋषि बना, त्रिशंकु का मित्र एवं द्विपैपी था। वसिष्ठ एवं विश्वामित्र इन दो ऋषियों के बीच, त्रिशंकु के कारण जो झगड़ा हुआ, उससे त्रिशंकु का जीवनचरित्र नाशपूर्ण बना दिया है।

वसिष्ठ एवं त्रिशंकु के शत्रुत्व का कारणपरंपरा, 'देवी भागवत' में दी गयी है। यह शुरू से दुर्वर्तनी था। इस कारण इसके बारे में किसी का भी अनुकूल मत न था। एक बार, इसने एक विवाहित ब्राह्मण स्त्री का अपहरण किया। 'उस स्त्री की सत्पत्नी होने के पहले मैंने उसे उठा लिया है, अतः मैं दोषरहित हूँ,' ऐसा इसका कहना था। किंतु इसकी एक न सुन कर, इसे राज्य के बाहर निकालने की सलाह, वसिष्ठ ने इसके पिता को दी। पिता ने इसे राज्य के बाहर निकाल दिया। वह स्वयं, दूसरा अच्छा पुत्र हो, इस इच्छा से राज्य छोड़ कर, तपस्या करने चला गया।

अयोध्या में कोई भी राजा न रहने के कारण, वसिष्ठ राज्य का कारोबार देखने लगा। किंतु राज्य की आम-दानी दिन-बे-दिन विगड़ती गई। लगातार नौ वर्षों तक राज्य में अकाल पड़ गया।

इस समय त्रिशंकु अरण्य में गुजारा करता था। जिस अरण्य में यह रहता था, उसी अरण्य में विश्वामित्र का आश्रम था। परंतु तपस्या के कारण, विश्वामित्र कहीं दूर चला गया था। इसलिये आश्रम में केवल उसकी पत्नी तथा तीन पुत्र ही थे। त्रिशंकु, रोज थोड़ा मांस, आश्रम के बाहर पेड़ में शोध देता था। उससे विश्वामित्र की पत्नी तथा एक पुत्र का गुजारा चलता था। एक बार अन्य पशु न मिलने के कारण, इसने वसिष्ठ की गाय कामधेनु को मार डाला। तब वसिष्ठ ने उसे शाप दिया कि, 'तुम्हारे सिर पर तीन शंकु निर्माण होंगे। गोबध, स्त्रीहरण तथा पिता के क्रोध के कारण तुम पिशाच बनोगे, तथा तुम्हें लोग त्रिशंकु के नाम से पहचानेंगे'।

वसिष्ठ के इस शाप के कारण, त्रिशंकु तथा वसिष्ठ का वैर अधिक ही बढ़ गया। प्रथम इसे दुर्वर्तनी कह कर, वसिष्ठ ने इसे राज्य के बाहर निकल दिया। पश्चात्, कामधेनु बध के निमित्त से इसे पिशाच बनने का शाप

दिया। बाद में देवी की कृपा से इसका पिशाचत्व नष्ट हो गया। पश्चात् पिता ने भी इसे राजगद्दी पर बिठाया (दे. भा. ७.१२)।

तपश्चर्या से वापस आने पर विश्वामित्र को पता चला कि, उसके कुटुंब का भालनशोषण त्रिशंकु ने किया। तब त्रिशंकु के प्रति उसे क्रुतवृत्ता महसूस हुई तथा उसने इसे घर आँवने के लिये कहा। तब सदेह स्वर्ग जाने की इच्छा त्रिशंकु ने विश्वामित्र के पास प्रकट की। बाद में विश्वामित्र ने इसे राज्य पर बैठाया, इससे यज्ञ करवाया, तथा सन देवता एवं वसिष्ठ के विरोध के बावजूद उसने त्रिशंकु को स्वर्ग पहुँचा दिया (ह. सं. १. १२)।

वाल्मीकि रामायण में, त्रिशंकु की सदेह स्वर्गरोहण की कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। सदेह स्वर्ग जाने की इच्छा त्रिशंकु ने वसिष्ठ के सामने रखी। वसिष्ठ ने इसे साफ उत्तर दिया कि, यह असंभव है। तब यह वसिष्ठ के पुत्रों के पास गया। उन्होंने ने यह कह कर इसका निषेध किया कि, जब हमारे पिता ने तुम्हें नाकह दिया है, तब तुम हमारे पास क्यों आये? त्रिशंकु ने उन्हें जवाब दिया कि, 'दूसरी जगह जा कर, कुछ मार्गों में अवश्य ढूँढ लाऊँगा'। तब उन पुत्रों ने इसे शाप दिया कि 'तुम चाँडाल बनोगे'। बाद में यह विश्वामित्र की शरण में गया।

विश्वामित्र ने उसे सदेह स्वर्ग ले जाने का आश्वासन दिया, एवं सन को यज्ञ के लिये निमंत्रण दिया। वसिष्ठ को छोड़ कर, अन्य सारे ऋषियों ने विश्वामित्र के इस निमंत्रण का स्वीकार किया। किंतु वसिष्ठ ने सश शब्दों में संदेश भेजा कि, 'जहाँ यज्ञ करनेवाला चाँडाल हो, उपाध्याय क्षत्रिय हो, वहाँ कौन आवेगा? इस यज्ञ के द्वारा स्वर्ग में भी भला कौन जायेगा?' यह संदेश सुन कर विश्वामित्र अत्यंत क्रोधित हुआ। उसने सारा वसिष्ठकुल भस्मसात् कर दिया, एवं वसिष्ठ को शाप दिया कि, 'अगला जन्म तुम्हें डोम के घर में मिलेगा'।

विश्वामित्र का यज्ञ शुरू हुआ। विश्वामित्र अध्वर्यु के स्थान में था। निमंत्रित करने पर भी देवता यज्ञ में नहीं आये। तब अज्ञात तपःसामर्थ्य खर्च कर विश्वामित्र ने त्रिशंकु को सदेह स्वर्ग ले जाना प्रारंभ किया। देखते देखते त्रिशंकु स्वर्ग चला गया। किंतु इन्द्रसहित सन देवताओं ने इसे नीचे टकेल दिया। यह 'चाहिं चाहिं' करते हुए नीचे खिर, तथा ऊपर पैर कर के नीचे आने लगा।

यह देख कर विश्वामित्र अत्यंत क्रोधित हुआ। वह 'रुको, रुको' ऐसा चिल्लाने लगा। पश्चात् उसने दक्षिण की ओर नये सप्तर्षि एवं नक्षत्रमाला निर्माण किये। 'अन्य-मिन्द्रं करिष्यामि, लोको वा स्यादनिन्द्रकः' ('या तो दूसरा इन्द्र निर्माण में कलेंगा, या मेरा स्वर्ग ही इंद्ररहित होगा), ऐसा निश्चय कर विश्वामित्र ने नया स्वर्ग निर्माण करना प्रारंभ किया। उससे देव नितान्तात्स्य हुए। उन्होंने कहा कि जिस व्यक्ति को गुरुशाप मिला है, वह स्वर्ग के लिये योग्य नहीं है। विश्वामित्र ने कहा, 'मैं अपनी प्रतिज्ञा असत्य नहीं कर सकता। तब देवताओं से उसे मान्यता दी। 'सद्यःस्थित ज्योतिष्चक्र के बाजू में दक्षिण की ओर तुम्हारे नक्षत्र रहेंगे, तथा उनमें त्रिशंकु रहेगा, ऐसा आश्वासन दे कर, विश्वामित्र की प्रतिज्ञा देवों ने पूर्ण की (वा. रा. वा. ५७-६१)। पश्चात् अपने तपःसाधना में त्रिशंकुआख्यान के कारण, बहुत भारी विघ्न आया है यह सोच कर, विश्वामित्र ने अपनी तपश्चर्या का स्थान दक्षिण की ओर पुष्करतीर्थ पर बदल दिया (६२)।

त्रिशंकुआख्यान की यही कथा स्कंदपुराण में काफ़ी अलग तरीके से दी गई है। सदेह स्वर्ग जानने के लिये यज्ञ करने की त्रिशंकु की कल्पना, वसिष्ठ ने अमान्य कर दी, एवं इसे नया गुरु ढूँढने के लिये कहा। पश्चात् वसिष्ठ के पुत्रों से इसने यज्ञ करने की विज्ञापना की, जिससे उनसे इसे चाँडाल होने का शाप मिला। तत्काल इसका शरीर काला एवं दुर्गंधयुक्त हो गया। तब अपने दुराग्रह के प्रति स्वयं इसी के मन में घृणा उत्पन्न हुई। पर लौटने के बाद, द्वार से ही इसने अपने पुत्र को राज्याभिषेक करने के लिये कहा। पश्चात् यह स्वयं सदेह स्वर्गरोहण के प्रयत्न में लगा।

जगन्मित्र विश्वामित्र के सिवा इसे अन्य कोई भी मित्र नहीं था। विश्वामित्र के यहाँ जाने पर, पहले तो इसे किसीने भीतर ही न जाने दिया। परन्तु बाद में विश्वामित्र से मुलाकात होने पर, उसने वसिष्ठपुत्रों के शाप की हर्षिकत इसे पूछ ली। वसिष्ठ से स्पर्धा होने के कारण, त्रिशंकु को सदेह स्वर्ग ले जाने की प्रतिज्ञा विश्वामित्र ने की। इसका चाँडालत्व दूर करने के लिये, विश्वामित्र ने इसे साथ ले कर तीर्थयात्रा प्रारंभ की। परंतु इसका चाँडालत्व नष्ट न हो सका।

बाद में अर्जुनाचल पर मार्कंडेय ऋषि इनसे मिले। उन्हें विश्वामित्र ने सारा वृत्तांत, अपनी प्रतिज्ञा के सहित बताया। इसका चाँडालत्व दूर होने की

तरकीब भी मार्कंडेय ऋषि से पूछी। मार्कंडेय इन्होंने हाटकेश्वरक्षेत्र में जा कर, पातालगंगा में स्नान, तथा हाटकेश्वर का दर्शन लेने के लिये कहा। हाटकेश्वर-दर्शन के पश्चात् इसका चांडालत्व दूर हुआ।

पश्चात् यज्ञ की सामग्री एकत्रित करने के लिये, विश्वामित्र ने इसे कहा। त्रिशंकु के यज्ञ की तैयारी पुरी होते ही, विश्वामित्र स्वयं ब्रह्मदेव के पास गया। ब्रह्माजी से विश्वामित्र ने कहा कि, 'त्रिशंकु को सदेह तुम्हारे लोक में लाने के लिये, मैं उससे यज्ञ करवा रहा हूँ। इसलिये आप सब देवों के साथ यहाँ आ कर, यज्ञभाग का स्वीकार करे'। तब ब्रह्मदेव ने कहा, 'देहान्तर के बिना स्वर्गप्राप्ति असंभव है। इसलिये यज्ञ करने के बाद त्रिशंकु को देहान्तर (मृत) करना ही पड़ेगा। वरना उसका स्वर्गप्रवेश असंभव है'। यह सुन कर विश्वामित्र संतत हुआ, तथा उसने कहा, 'मैं अपनी तपश्चर्या के सामर्थ्य से, त्रिशंकु को सदेह स्वर्गप्राप्ति दे कर ही रहूँगा'।

इतना कह कर, विश्वामित्र त्रिशंकु के पास वापस आया। स्वयं अध्वर्यु बन कर, विश्वामित्र ने यज्ञ शुरू किया। शांडिल्य आदि ऋषियों को उसने होता आदि ऋषिजनों के काम दिये। बारह वर्षों तक विश्वामित्र का यज्ञ चालू रहा। पश्चात् अवभृत्स्नान भी हुआ। किंतु त्रिशंकु को स्वर्गप्रवेश नहीं हुआ।

वसिष्ठ के सामने अपना उपहास होगा, यह सोच कर इसे अत्यंत दुःख हुआ। विश्वामित्र ने इसे सांत्वना दी, एवं कहा कि, 'समय पाते ही मैं प्रतिसृष्टि निर्माण करूँगा'। प्रतिसृष्टि निर्माण करने की शक्ति प्राप्त हो, इस हेतु से विश्वामित्र ने शंकर की आराधना शुरू की। पश्चात् वैसा वर भी शंकर से उसने प्राप्त किया, एवं प्रतिसृष्टि निर्माण करने का काम शुरू किया।

ब्रह्मदेव ने विश्वामित्र के पास आ कर उससे कहा, 'इन्द्रादि देवों का नाश होने के पहले, प्रतिसृष्टि निर्माण करना बंद करो'। विश्वामित्र ने जवाब में कहा, 'अगर त्रिशंकु को सदेह स्वर्ग प्राप्त हो जाये, तो मैं प्रतिसृष्टि निर्माण करना बंद कर दूँगा'। ब्रह्मदेव के द्वारा अनुमति दी जाने पर, निर्माण की गई प्रतिसृष्टि अक्षय होने के लिये, विश्वामित्र ने ब्रह्मदेव से प्रार्थना की। तब ब्रह्मदेव ने कहा, 'तुम्हारी सृष्टि अक्षय होगी, परंतु यज्ञार्ह नहीं बन सकती'। इतना कह कर, ब्रह्मदेव त्रिशंकु के साथ

सत्यलोक गया (स्कन्द. ५.६.२.७)। भविष्य के मतानुसार, त्रिशंकु ने दस हजार वर्षों तक राज्य किया।

इसकी पत्नी का नाम सत्यरथा था। उससे इसे हरिश्चन्द्र नामक सुखित्यात पुत्र हुआ (ह. वं. १.१३. २४)।

त्रिशंकु की धार्मिकता का वर्णन, विश्वामित्र के मुल में काफी बार आया है (वा. रा. वा. ५८)। इसने सौ यज्ञ किये थे। क्षत्रियधर्म की शपथ ले कर इसने कहा है, 'मैंने कभी भी असत्य कथन नहीं किया, तथा नहीं करूँगा। गुरु को भी मैंने शील तथा वर्तन से संतुष्ट किया है, प्रजा का धर्मपालन किया है'। इतना धर्मनिष्ठ होते हुअे भी, मुझे यज्ञ नहीं मिलता, यह मेरा दुर्भाग्य है। मेरे सब उद्योग निरर्थक हैं, ऐसा प्रतीत होता है'। विश्वामित्र को भी इसके बारे में विश्वास था (५९)। वसिष्ठ को भी त्रिशंकु के वर्तन के बारे में आदर था। 'यह कुछ उच्छृंखल है, परंतु बाद में यह सुधर जाएगा' ऐसी उसकी भावना थी (ह. वं. १.१३)।

वनवास के समय इसका वर्तन आदर्श था। वहाँ इसने विश्वामित्र के बालकों का संरक्षण किया, इससे इसकी दयालुवृत्ति जाहिर होती है। ब्राह्मण की कन्या के अपहरण के संबंध में जो उल्लेख आये हैं, उसका दूसरा पक्ष हरिवंश तथा देवी भागवत में दिया गया है। उस मौमले में इसकी विचारपद्धति उस काल के अनुरूप ही प्रतीत होती है। वसिष्ठ की गाय इसने जानबूझ कर मारी, यह एक आक्षेप है। किंतु वसिष्ठ के साथ इसका शत्रुत्व था। गोहत्या का यही एक समर्थनीय कारण हो सकता है।

सदेह स्वर्ग जाने की इच्छा, इसके विचित्र स्वभाव का एक भाग है। सदेह स्वर्ग जाना असंभव है, यों वसिष्ठ ने कहा था। तथापि वसिष्ठ विश्वामित्रादि ऋषि स्वर्ग में जा कर वापस आते थे, यह हरिश्चन्द्र की कथा से प्रतीत होता है। त्रिशंकु की कथा में भी वैसा उल्लेख आया है। कुछ दिन स्वर्ग में जा कर, अर्जुन ने इन्द्र के आतिथ्य का उपभोग किया था, ऐसा उल्लेख भी महाभारत में प्राप्त है। इस दृष्टि से त्रिशंकु को भी स्वर्ग जाने में कुछ हर्ज नहीं था। परंतु वसिष्ठ के द्वारा अमान्य किये जाने पर, इसे ऐसा लगा, 'अपना तथा वसिष्ठ का शत्रुत्व है, इसीलिये वह अपनी इच्छा अमान्य कर रहा है'। इन्द्रादि देवों ने भी इसे स्वर्ग में न लेने का कारण, 'गुरु का शपथ' यही कहा है। स्वर्गप्राप्ति के लिये देहान्तर

अनिवार्य है, यह नहीं कहा। इससे प्रतीत होता है कि, सदेह स्वर्ग जाना उस काल में असंभव नहीं था।

स्वर्ग के मार्ग पर, त्रिशंकु को इंद्र के विरोध से रुकना पड़ा। अभी वहाँ त्रिशंकु नाम का एक तारा है। पृथ्वी से उस तारे का अन्तर तीन शंकु (= तीस महापद्म मील) त्रिशंकु इतना ही है, ऐसा खगोलज्ञ कहते हैं।

त्रिशिरस्—तामस मन्वन्तर का इंद्र।

त्रिशिरस्—विश्ववसु एवं वाका का पुत्र। (विश्वरूप देखिये)।

२. दूषण राक्षस के चार भ्रात्यों में से एक। यह राम के हाथों मारा गया।

३. त्रिशार्ष का नामांतर।

४. कश्यप एवं खशा का पुत्र।

त्रिशिरस् त्वाष्ट्र—एक सुक्तद्रष्टा (ऋ. १०.८.९)।

त्रिशार्ष—रावण के पुत्रों में से एक। हनुमान ने इसका वध किया (वा. रा. सु. ७०)।

त्रिशोक काण्व—सुक्तद्रष्टा (ऋ. ८.४५)। इसके नाम का एक साम है (पं. ब्रा. ८.१)। 'पंचविंश ब्राह्मण' में यह शब्द अनेक बार आया है, किंतु वह सर्वत्र व्यक्ति-वाचक ही है, ऐसा निश्चित रूप से कहा नहीं जा सकता।

त्रिसानु एवं **त्रिसारि**—(सो. तुर्वसु.) गोभानु का पुत्र (त्रिभानु देखिये)।

त्रिस्तनी—अशोक-वन में सीता की संरक्षक राक्षसी।

त्रैतन—शीर्षतमस् का शत्रु एवं एक दास। त्रित का यह संबंधी रहा होगा (ऋ. १.१५.८.५)।

त्रैधात्व—त्र्यरुण का पैतृक नाम (पं. ब्रा. १३.३. १२)।

त्रैपुर—त्रिपुरी का राजा। राजसूययज्ञ के समय सहदेव ने इसे जीत कर, इससे बहुत करभार लिया था (म. स. २८.३८)।

त्रैपुरि—त्रिपुर का पुत्र। शंकर ने इस के पिता का वध किया। इसलिये इसने शिवपुत्र गजानन पर आक्रमण किया। परंतु गजानन ने इसका वध किया (पद्म. सु. ७२)।

त्रैवणि—औपव्रज का शिष्य (वृ. उ. ४.६.३)।

त्रैवृण—त्र्यरुण का पैतृक नाम (ऋ. ५. २७.१)।

त्रैशांय—(सो. तुर्वसु.) गोभानु का पुत्र (त्रिभानु देखिये)।

त्रैशंग—त्रैशंगायण देखिये।

त्रैशंगायण—वसिष्ठ गोत्र का ऋषि। पाटमेद-त्रैरंग।

त्र्यक्षी—अशोकवन की एक राक्षसी।

त्र्यम्बकेश्वर—शिव का एक अवतार। यह गोशवरी के तट पर रहता था। गौतम की प्रार्थना से, यह पृथ्वी पर आया (शिव. शत. ४२)। ज्योतिर्लिपि देखिये।

त्र्यरुण त्रैवृण त्रसदस्यु—त्रसदस्यु देखिये।

त्र्यारुण—अत्रिकुलोत्पन्न एक ऋषि।

त्वष्ट—देवताओं का शिल्पी (अ. वे. १२.३.३३)।

इसका पुत्र विश्वरूप। इंद्र ने उसका वध किया। तब सब कार्य इन्द्रविरहित करने का इसने निश्चय किया। फिर भी इसके सोमयाग में, इंद्र खुद आ कर सोम पी गया। परंतु उस सोम का इंद्र को वमन करना पड़ा। तब सोम का इसने हवन किया। उस हवन से एक इंद्रशत्रु देवता निर्माण हुई। उसे वृत्र कहते हैं (श. ब्रा. १.६.३.१)।

गर्मवृद्धि के लिये इसकी प्रार्थना की जाती है (वृ. उ. ६.४.२१; ऋ. १०. १८४. १)। असुर-पुरोहित वसन्ति के साथ इसका उल्लेख प्राप्त है (मै. सं. ४.८.१; क. सं. ३०.१)।

शुक तथा गो का यह पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम वैरोचिनी यशोधरा (ब्रह्मांड. ३.१.८७)। विश्वर्मा तथा प्रजापतियों में यह एक था। विश्वर्मा तथा प्रजापति के अधिकार इसे थे। इसलिये इसे ये नाम मिले। हस्तकौशल्य से जो भी किया जा सकता है, वह करने का इसे अधिकार था। इस अधिकार के अनुसार, हर चीज इसीके द्वारा बनवाई जाती थी। इस प्रकार संपूर्ण प्रजा इसीके द्वारा बनवाई जाती थी। इसलिये इसे प्रजापति कहते हैं। इन्हें 'विश्वकर्मन्' भी कहा है (भा. ६.९. ५४)।

इसे कुल तीन अंग्य थे। उनके नाम त्रिशिरस्, विश्वरूप तथा विश्वकर्मन् थे (ब्रह्मांड. ३.१.८६)। इन्हें संत्रिदेश नामक और एक पुत्र भी था (भा. ६.६.४४)।

यह शिल्पशास्त्रज्ञ था। मुंदोपसुंद के वध के लिये इसने तिलोत्तमा नामक अप्सरा निर्माण की (म. आ. २०३. ११-१७)। त्रिपुरवध के लिये, आकाश, तारे आदि वस्तुओं से, इसने शंकर के लिये, एक रथ निर्माण किया (म. आ. २३१.१२)। इसने दधीचि ऋषि की हड्डियों से एक वज्र निर्माण कर, वह वृत्रवध के लिये इंद्र को दिया था (पद्म. सु. १९; भा. ६.९.५४)।

वज्रनिर्माण का निर्देश अन्यत्र भी है (म. घ. २००. २४)। इंद्र ने इसका पुत्र त्रिशिरस् का वध किया, तब

इसने इंद्र के नाश के लिये वृत्र निर्माण किया (भा. ६. १.१८; ५४; म. उ. १.४३; विश्वरूप देखिये)।

२. महाभारतकालीन स्थापत्यविशारद। युधिष्ठिर के अर्धराज्याभिषेक के समय, इंद्र ने इसे भेज कर, इंद्रप्रस्थ नगरी तयार करने को कहा। तदनुसार इसने उस नगरी की निर्मित की (म. आ. १९९.१९८७*)। खांडववन के शह के समय, इंद्र की मदद करने यह उपस्थित था।

३. ऋषय तथा अदिति का पुत्र। एक आदित्य (भा. ६.६.३९)। यह प्रत्येक इप (आश्विन) माह में प्रकाशित होता है (भा. १२.११.४३)।

४. प्रभास वसु तथा अंगिरसकन्या ब्रह्मवादिनी का पुत्र (भवि. ब्राह्म. २.७९.१६-१७)। यह प्रत्येक फाल्गुन माह में प्रकाशित होता है। इसकी ११०० किरणें हैं (भवि. ब्राह्म. ७८)।

५. (स्वा. प्रिय.) भागवत मतानुसार राजा भौवन तथा दूषणा का पुत्र। विष्णु मतानुसार मनस्यु का पुत्र।

इसे विरोचना नामक स्त्री थी, जिससे इसे विरज नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (भा. ५. १५. १५)।

६. स्यारह रुद्रों में से एक।

७. तारासुर तथा देवताओं के संग्राम में तारासुर की ओर का एक दानव (मत्स्य. १७२)।

त्वष्टाधर—शुक्राचार्य का एक पुत्र। यह असुरों का याजक था। यह अत्यंत तेजस्वी, तथा ब्रह्मविद्या में प्रवीण था (म. आ. ५.९. ३६)। भांडारकर इन्स्टिट्यूट महा-भारत में 'त्वष्टाधर' यों पाठ उपलब्ध है।

त्वष्ट्र—त्वष्ट्र प्रजापति का पुत्र (भा. ६.९.१८)। आभूति और विश्वरूप का यह पैतृक नाम है।

त्वष्ट्री—त्वष्ट्र की कन्या। यह आदित्य को दी गयी थी। इसे अश्विनीकुमार नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए (म. आ. ६०.३४; संज्ञा देखिये)।

द

दंष्ट्र—लंकास्थित एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

दंष्ट्रा—ऋषय तथा क्रोधा की कन्या। पुलह की स्त्री।

दक्ष—अंगिराकुल का गोत्रकार।

२. अंगिरा तथा सुरपा का देवपुत्र (मत्स्य. १९६. २)।

३. भृगु तथा पौलोमी का देवपुत्र (मत्स्य. १९५.१३)।

४. वाष्कल का पुत्र (ब्रह्माण्ड. ३. ५. ३८-३९)।

५. (सो. कुरु.) मत्स्य मतानुसार देवातिथि का पुत्र। इसे विष्णु तथा वायु के मतानुसार ऋक्ष, एवं भागवत मतानुसार ऋषय कहा है।

६. एक धर्मशास्त्रकार। याज्ञवल्क्य ने धर्मशास्त्रकारों में इसकी गणना की है। विश्वरूप ने इसके अनेक श्लोक दिए हैं (याज्ञ. १. १७; ३. ३०; ३.६६; ३.१९१)। मिताक्षरा में इसका मत दिया है कि, ब्राह्मण क्षणभर भी आश्रमधर्म से अलिप्त न रहे (याज्ञ. १. ८९)। आचार, अशौच, श्राद्ध आदि आचारधर्म के विषय में इसके श्लोक उपलब्ध हैं (अपरार्क. ३६८)। सुवर्णदान के संबंध

में, इस का एक गद्य उद्धरण भी 'अपरार्क' में दिया गया है (अ. ३६८)। 'नौ अदेय वस्तुओं' का विवरण भी इसने किया है (अपरार्क. ४०४)। 'जीवानंद संग्रह' में दक्षस्मृति दी गई है, जिसके सात भाग तथा २२० श्लोक हैं। अह्निक, संस्कार, योग, तथा व्यवहार आदि का उस स्मृति में विचार किया गया है। विश्वरूप द्वारा किये गए दक्ष का उल्लेख, मुद्रित 'दक्षस्मृति' में तथा अन्यत्र भी प्राप्त हैं। अपरार्क में दक्ष के चालीस श्लोक हैं, जिस में से कुछ दक्षस्मृति में अप्राप्य हैं। डेकन कॉलेज के संग्रह में १९७ श्लोकों की 'दक्षस्मृति' दी गई है (डे. कॉ. नं. १२०; इ. स. १८९५-१९०२)। बंबई विश्वविद्यालय ने भी ऐसी ही 'दक्षस्मृति' प्रकाशित की है।

७. गरुड़ की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. १०१. १२)।

८. एक विश्वेदेव (म. अनु. ९१. ३५)।

९. पश्चिमोत्तर भारत का एक मानवसंघ (पाणिनि देखिये)। इस संघ का राज्य पश्चिमोत्तर भारत वा

उदीच्य देशों में था। इनका अंक तथा लक्षण (राज्यचिह्न) का निर्देश भी प्राप्त है (काशिका. ४. ३. १२७)। दाक्षिकूल तथा दाक्षिकर्ण ये इनके प्रमुख ग्राम थे। कर्ण का अर्थ है 'गढ़ैया'। दाक्षि लोग प्राच्य देश, भरत जनपद, एवं उशीनर देश के बाहर, पश्चिमोत्तर भारत में वसे थे। शेरकोट (उशीनर) तथा गंधार के समीप 'दक्षसंघ' का स्थान होगा। पाणिनि स्वयं गंधार का रहनेवाला था। वह दक्षसंघ में से एक होना संभवनीय है। इसलिये उसको दाक्षिपुत्र कहा गया है। (वासुदेव-शरण-भा. भा. १४)

दक्ष कात्यायनि आत्रेय—शंख वाभ्रव्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१; ४.१७.१)।

दक्ष जयंत लौहित्य—कृष्णरात लौहित्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

दक्ष पार्वति—एक प्राचीन राजा। इसने प्रजा एवं समृद्धि, प्राप्त करने के लिये यज्ञ किया। इसे कुछ लोग 'दाक्षायण-यज्ञ' अथवा 'वसिष्ठ-यज्ञ' कहते हैं। उसके वंशजों को उस यज्ञ से राज्यप्राप्ति हुई (श. ब्रा. १.४. १.६; सां. ब्रा. ४.४)।

दक्ष प्रजापति—एक सृष्टिनिर्माणकर्ता देवता एवं ऋषि। ऋग्वेद में, सृष्टि की उत्पत्ति भू, वृक्ष, आशा, अदिति, दक्ष, अदिति इस क्रम से हुई (ऋ. १०.७२. ४-५)। अदिति से दक्ष उत्पन्न हुआ, एवं दक्ष से अदिति उत्पन्न हुई, यों परस्पर विरोधी निर्देश ऋग्वेद में हैं। इस विरोध का परिहार, 'ये सारी देवों की कथा हैं (देवधर्म), यों कह कर निरुक्त में किया गया है (नि. ११.२३)।

पुराणों में दी गयी 'दक्षकथा' का उद्गम उपरिनिर्दिष्ट ऋग्वेदीय कथा से ही हुआ है। पुराणों में, दक्ष प्रजापति ब्रह्मदेव के दक्षिण अंगूठे से उत्पन्न हुआ (विष्णु १.१५; ह. वं. १.२; भा. ३.१२.२३)। स्वायंभुव मन्वंतर में यह पैदा हुआ था। स्वायंभुव मनु की कन्या प्रसूति इसकी पत्नी थी। इससे दक्ष को सोलह कन्याएँ हुईं। उनमें से श्रद्धा, मैत्री, दया, शांति, तुष्टि, पुष्टि, क्रिया, उन्नति, बुद्धि, मेधा, तितिक्षा, तथा मूर्ति ये तेरह कन्याएँ इसने प्रजापति को भार्यारूप में दी। स्वाहा अग्नि को, स्वधा अग्निष्वात्तां को तथा सोलहवीं सती शंकर को दी गयीं (भा. ४.१)। ब्रह्मदेव के दाहिने अंगूठे से जन्मी हुईं स्त्री दक्ष की पत्नी थी। उसे कुल ५०० कन्याएँ हुईं (म. आ. ६०.८-१०)।

एकबार सृष्टि निर्माण करनेवाले प्रजापति यज्ञ कर रहे थे। दक्ष प्रजापति वहाँ आया। उस समय शंकर तथा ब्रह्म-देव छोड़, अन्य सब देव खड़े हो गए। इससे यह क्रोधित हुआ, एवं इसने शंकर को शाप दिया। नंदिकेश्वर ने भी इसे शाप दिया। दक्ष के शाप को अनुमति देनेके कारण, ऋषियों को शाप मिला, 'जन्ममरणों का दुःख अनुभव करते हुए तुम्हें गृहस्थी के कष्ट उठाने पड़ेंगे'। इसी समय भृगु ऋषि ने भी शंकर के शिष्यों को दुर्धर शाप दिये (भा. ४.२; ब्रह्मांड. १.१.६४)। इस प्रकार दक्ष तथा शंकर इन श्वसुर-दामाद में शत्रुत्व बढने लगा।

ब्रह्मदेव ने दक्ष को प्रजापतियों के अध्यक्षपद का अभिषेक किया। उससे गर्वांध हो कर, इसने शंकर आदि सब ब्रह्मनिष्ठों को निर्मंत्रित न करते हुए, यज्ञ प्रारंभ किया। प्रथम वाजपेय यज्ञ कर, बाद में बृहस्पतिसव प्रारंभ किया। इस यज्ञ में दक्ष ने सारे ब्रह्मर्षि, देवर्षि तथा पितरों का उनकी पत्नीयों के सहित सम्मान किया, एवं उन्हें दक्षिणा दे कर संतुष्ट किया।

दक्ष के घर में ही रहे यज्ञ की वार्ता, दक्षकन्या सती ने सुनी। तब वहाँ चलने की प्रार्थना उसने शंकर से की। किंतु उसने वह प्रार्थना अमान्य की। मजबूरन सती को अकेले ही जाना पड़ा। इसके साथ नंदिकेश्वर, यक्ष, तथा शिवगण भी भेजे गये। यज्ञमंडप में माता तथा अग्निियों के सिवा, अन्य किसी ने सती का स्वागत नहीं किया। स्वयं दक्ष ने उसका अनादर किया। इस कारण सती ने पिता की खूब निभर्त्सना की, तथा क्रोधवश वह स्वयं आग में दग्ध हो गयी।

यह वर्तमान सुन कर, शंकर ने वीरभद्र का निर्माण किया, एवं उसे दक्षवध करने की आज्ञा दी। महाभारत के अनुसार, वीरभद्र शंकराशं के अनुसार दक्षयज्ञ में गया। उसने दक्ष से कहा कि, 'मैं तुम्हारे यज्ञ का नाश करने आया हूँ। तत्काल दक्ष शंकर की शरण में आया (म. शां. परि. १.२८)। फिर भी उसने दक्षवध किया।

दक्षवध के बाद ब्रह्मदेव ने शंकर का स्तवन किया। तब दक्ष को बकरे का सिर लगा कर जीवित किया गया। तत्काल दक्ष ने शंकर से क्षमा माँगी (भा. ४.३-७)। वायुपुराण में दक्ष का अर्थ 'प्राण' दिया है (१०.१८) दक्ष का यज्ञ दो बार हुआ। तथा ऋषि दो बार मारे गये। प्रथम यज्ञ, स्वायंभुव मन्वंतर में हुआ। दूसरा यज्ञ चाक्षुष मन्वंतर में संपन्न हुआ (ब्रह्मांड. २.१३.४५; ६५-७२; सती देखिये)।

दक्ष प्रचेतस प्रजापति—एक ऋषि। प्राचीनवर्हि-
पुत्र प्रचेतस् एवं कंदुकन्या मारिया का यह पुत्र था।

सवर्णा नामक समुद्रकन्या को प्राचीनवर्हि से प्रचेतस नामक दस पुत्र हुए। उनके तप करते समय, पृथ्वी पर अनेक जातियों के वृक्ष बढ़े। अत्यधिक वृक्षवृद्धि के कारण, पृथ्वी जंगलमय हो गई। अनाज का उत्पादन बंद हो गया। इससे क्रुद्ध हो कर वे दस प्रचेतस, वृक्षों का नाश करने लगे। तब वृक्षों के राजा सोम ने उनसे कहा, 'संपूर्ण पृथ्वी अब वृक्षरान्य हो गई है। अब वृक्षों का नाश बंद कीजिये'। पश्चात् कंदु की कन्या मारिया से प्रचेतस का विवाह हुआ।

सोम का आधा तेज तथा प्रचेतस का आधा तेज मिल कर, इसे दक्ष नामक तेजस्वी पुत्र हुआ। यही प्रचेतस दक्ष प्रजापति है (ह. वं. १.२; म. आ. ७०; भा. ४. ३०; ६.४; ब्रह्म. २.३४; ३९-४०; विष्णु. १.१४.१५)।

दक्ष ने अपने वीर्य के द्वारा, एवं मन के द्वारा सृष्टि का निर्माण किया। मानससृष्टि से प्रजासृष्टि वृद्धिगत नहीं हुई। इसलिये विध्याचल के समीप के अचमर्षणतीर्थ में इसने तपस्या की। इस तपस्या से प्रसन्न हो कर, श्रोहरि ने पंचजन प्रजापति की कन्या असिकी (वीरिणी) माया रूप में इसे दी, एवं प्रजावृद्धि करने के लिये इसे कहा। उस स्त्री से इसे हर्यश्च नामक दस हजार पुत्र हुए। दक्ष ने उन्हें प्रजा निर्माण करने के लिये कहा। परन्तु नारद की सलाह के अनुसार, उन्होंने यह कार्य नहीं किया। बाद में नारद के कहने पर, ब्रह्मदेव ने दक्ष को समझाया। तब इसने पुनः साठ कन्याएँ निर्माण कीं (भा. ६.४-६)।

प्राचेतस दक्ष को इस के सभान गुणशील संपन्न एक हजार पुत्र हुए। उन्हें नारद ने 'मोक्षशास्त्र' एवं 'संख्यज्ञान' का उपदेश दे दिया। इस उपदेश से वे विरक्त हो कर, वर से निकल गए। तब इसने 'पुत्रिकाधर्म' के अनुसार, दैहियों को अपना पुत्र मानने का संकल्प किया, एवं उस कार्य के लिये पचास कन्याएँ उत्पन्न कीं (म. आदि. ७.६-८)।

उनमें से धर्म को दस, कश्यप को तेरह, चन्द्र को सत्ताईस, भूत, अंगिरस तथा कृशाश्व, इनको प्रत्येक को दो दो, तथा तार्क्ष्य नामक कश्यप को चार कन्याएँ इसने विवाह में दे दी (भा. ६.४-६)। अन्य स्थान पर दिया है कि, असिकी वीरण प्रजापति की कन्या थी, जिससे दक्ष को पाँच हजार पुत्र हुए (ब्रह्मांड. ३.२.५)। वीरिणी तथा असिकी एक ही है। हरिवंश तथा विष्णु-

पुराण में, दक्षकन्याओं का विभाजन कुछ भिन्न है। उन ग्रंथों में, इसकी कन्याओं की संख्या साठ दी गई है। उनमें से धर्म को दस, कश्यप को तेरह, सोम को सत्ताईस, अरिष्टनेमि को चार, भृगुपुत्र को दो, अंगिरस को दो, इसने विवाह में देने का निर्देश है (ह. वं. १.३; विष्णु १.१५)। दक्ष को सुवता नामक एक कन्या और थी। उसे दक्ष, ब्रह्म, धर्म, तथा रुद्र नामक चार पुत्र हुए। उन चार पुत्रों में से चार मनु उत्पन्न हुए, जिनके वर्ण से पुत्रत्व तय होने के कारण, उन्हें सावर्णि कहते हैं (वायु. १००.४२)।

दक्ष के पहले, संकल्प, दर्शन, एवं स्पर्श से संतति निर्माण होती थी। दक्ष के पश्चात् मैथुन से संतति-निर्मिति होने लगी (मत्स्य ५.२)।

सृष्टि-निर्माण का क्रम दक्ष के चरित्र में दिया है। सृष्टि-निर्माणशास्त्र पर यह कथा प्रकाश डालती है।

दक्षपितर—दक्ष प्रजापति के पुत्रों का नामांतर (तै. सं. १.२.३)।

दक्षसावर्णि—दक्ष का पुत्र। यह दक्ष तथा उसी की कन्या सुवता से चातुष मन्वन्तर में उत्पन्न हुआ। यह नवम मन्वन्तराधिप मनु था।

यह वरुण से उत्पन्न हुआ था (भा. ८.१३.१८)। इसे दत्तपुत्र भी कहा गया है। किंतु 'दत्त' दक्ष का ही अपभ्रंश होगा (मार्क. ९१; मनु देखिये)। इस मन्वन्तर का अधिपति एवं वैवस्वत मनु का पुत्र कश्यप माना गया है (वे. भा. १०.१३)। इसे रोहित नामांतर है (ह. वं. १.७.६३; वायु. १००)।

दक्षिणा—रुचि को आकृति से उत्पन्न कन्या। यह यज्ञ को दी गई थी। यज्ञ से इसे तुषित नामक बारह पुत्र हुए। यज्ञ इसका भाई ही था। किंतु वह विष्णु का अवतार होने के कारण, उसने लक्ष्मीरूप से अवतीर्ण अपनी दक्षिणा नामक बहन से ही विवाह किया (भा. ४.१)।

एक बार राधा के सामने, दक्षिणा कृष्ण की गोद में बैठ गई। क्रोधित हो कर, राधा ने इसे वहाँ से भगा दिया। बाद में यह लक्ष्मी के शरीर में प्रविष्ट हुई। वहाँ से ब्रह्माजी के पास गई। पश्चात् ब्रह्माजी से इसका विवाह संपन्न हुआ (ब्रह्मवै. २.४२)।

दंड—(सू. इ.) इक्ष्वाकुपुत्रों में से कनिष्ठ पुत्र। यह जन्मतः मूढ़, विद्याहीन तथा उन्मत्त था। यह अति शूर तथा विद्वान् था, परंतु इसके घोर नामक दोष के

कारण, इक्ष्वाकु ने इसे दूर का राज्य दिया। किस स्थान का राज्य इसे दें, इसका विचार कर, इक्ष्वाकु ने इसे विंध्याद्रि तथा शैवल पर्वत के बीच का आधिपत्य दिया। इसका राज्य विंध्य, तथा नील पर्वतों के बीच था। इसने विंध्य के दो शिखरों के बीच, मधुमत्त नामक नगरी बसाई (पद्म. सू. ३४; ३७)। नगर का नाम मधुमंत भी दिया गया है (वा. रा. उ. ७९)। इसने उशनस् शुक्र को पुरोहित बनाया था (वा. रा. उ. ७९.१८)।

यह अनेक वर्षों तक जितेन्द्रिय था। एक बार चैत्र माह में यह भार्गवाश्रम में गया था। तब वहाँ इसने गुरु की उद्येष्ट कन्या अरजा को, कामातुर हो कर देखा। तब उसने कहा, 'मैं तुम्हारी गुरुभगिनी हूँ। इसलिये मेरे पिता के पास तुम मेरी याचना करो। उनसे संपत्ति मिलने पर पाणि-ग्रहणविधि से मेरा वरण करो'। इस उन्मत्त ने उसकी एक न सुनी। उस पर बलात्कार कर के, यह स्वनगर भाग गया। इधर ऋषि आश्रम में वापस आया, तब उसने देखा कि, राजा ने बड़ा ही अन्याय किया है। उसने राजा को क्रोध से शाप दिया, 'बल कोशादि सहित तुम एक सप्ताह में नष्ट हो जाओगे। इन्द्र तुम्हारे राज के उपर धूली की वर्षा करेगा'।

इसने अरण्यवासी लोगों को, राज्य छोड़ कर जाने के लिये कहा। अरजा को देहशुद्धि के लिये, वहीं सरोवर समीप १०० वर्षों तक तपस्या करने के लिये कहा। बाद में ऋषि के जाने पर राजा नष्ट हो गया। इन्द्र की आज्ञा से वहाँ १०० योजन (वा. रा. उ. ८१), ४०० योजन (पद्म. सू. ३७) धूली की वर्षा हो कर वह देश अरण्यप्राय हो गया। तबसे उस प्रदेश को दंडकारण्य नाम प्राप्त हुआ (वा. रा. उ. ८०-८१)। इसे दंडक नामांतर था। राम के द्वारा, 'दंडकारण्य निर्मनुष्य क्यों है?' ऐसा पूछा जाने पर अगस्त्य ने दंडक की उपरिनिर्दिष्ट कथा उसे बताई।

२. सूर्य का एक पार्षद। इसे दंडिन् नामांतर है।

३. (सु. इ.) कुबलाश्व का पुत्र (चन्द्राश्व देखिये)।

४. वृच का छोटा भाई 'क्रोधहता' का अंशावतार (म. आ. ६१.४३)। यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था। यह मगधाधिपति विदंड राजा का पुत्र एवं दंडधार का भाई था (म. आ. १७७.११)। पांडवों के राजसूययज्ञकालीन दिग्विजय में भीम ने इसे जीता था। इसने भीम के साथ कर्ण पर गिरिव्रजपुर में आक्रमण किया था (म. स. २७.१५)।

भारतीय युद्ध में यह तुर्योवन के पक्ष में था। इसका वध अर्जुन ने किया (म. क. १३.१९)।

५. कर्ण के द्वारा मारा गया पांडव पक्षीय राजा (म. क. ४०.५०)।

६. उत्कल के तीन पुत्रों में से कनिष्ठ। इसीने दंड-कारण्य का निर्माण किया (ह. वं. १.१०.२४)।

७. (सो. आयु.) आयु के पाँच पुत्रों में से चौथा (पद्म. सू. ४२)।

दंड औपर—एक ऋषि। इसने किये एक व्रत का निर्देश आया है (तै. सं. ६.२.९.४; मै. सं. ३.८.७)।

दंडक—एक चोर। इसने केवल पाप किये थे। एक बार यह विष्णु मंदिर में चोरी करने गया था। वहाँ सर्प-दंश से इसकी मृत्यु हुई (पद्म. ब्र. २)।

२. इक्ष्वाकु के सौ पुत्रों में से तृतीय (भा. ९.६३; पद्म. सू. ८; दंड देखिये)।

दंडकर—एक चोर। चोर होते हुए भी इसने किये विष्णुपंचक व्रत के कारण यह मुक्त हुआ (पद्म. ब्र. २३)।

दंडकेतु—पांडवपक्षीय पांडव्य राजा (म. द्रो. २२. ५८)।

दंडनौरी—एक अप्सरा।

दंडधार—मगधाधिपति विदंड का पुत्र। इसका भाई दंड। यह क्रोधवर्धन राक्षस का अंशभूत था (म. आ. ६१.४४)। यह कौरवपक्षीय रथी एवं हस्तिशुद्ध में अत्यंत प्रवीण था। राजसूययज्ञ के समय, भीम ने इसे जीता था (म. स. २७.१५)। भारतीययुद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. क. १३.१५)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के ज्ञतपुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में भीम ने इसे मारा (म. आ. परि. १. क. ४१, पंक्ति २३; क. ६२.२-५)।

३. पांडव पक्षीय एक चैद्य राजा। इसका वध कर्ण ने किया (म. क. ४०.४८-४९)।

४. एक पांचाल। इसका वध कर्ण ने किया (म. क. ४४.२९)।

दंडनायक—रवि के वामभाग में रहनेवाला इन्द्र। इसे ही दंडि नामांतर है। यह दंडनीतिकार होने के कारण, इसे दंड नामक दूसरा नाम प्राप्त हुआ (सां. १६; पिंगल देखिये)।

दंडपाणि—(सो. कुरु. भविष्य.) मत्स्य तथा भागवत मत में वहींर पुत्र तथा वायुमत में मेधाविपुत्र (खंडपाणि देखिये)।

२. काशिराज उर्फ पौंड्रक का पुत्र। कृष्ण ने इसके पिता का शिरच्छेद करने पर, इसने पुरोहित के कथनानुसार, महेश्वर नामक यज्ञ किया। शंकर प्रसन्न होने पर, उसके पास इसने कृष्ण के नाश के लिये एक कृत्या होगी। वह कृत्या जोर से चिन्ता कर द्वाारका गई। परंतु कृष्ण के द्वारा सुदर्शन चक्र छोड़ते ही, वह चक्रा कर वाराणसी में लौट आई। वहाँ उस चक्र ने उस कृत्या का, इसका तथा सब लोगों का संहार किया एवं इसका नगर ज्वाला दिया (पद्म. उ. २७८)।

३. प्रजा देखिये।

दंडभृत्—रामायण कालीन एक वीरपुरुष। राम के अभ्रमंध अथके रक्षणार्थ, यह शत्रुघ्न के साथ गया था (पद्म. पा. ११)।

दंडश्री—(आंत्र. भविष्य.) वायु तथा ब्रह्मांडमत में विजय का पुत्र (चंडश्री देखिये)।

दंडिन—भृगुकुल का गोत्रकार। इसके लिये दर्मि पाठभेद है।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

दंडीमुंडीश्वर—बाराहकल्प के वैवस्वत मन्वन्तर की सातवीं चौखट का शिवावतार। वहाँ इसके क्रमशः निम्न-लिखित शिष्य हैं—उगल, कुंडवर्ण, कुंभांड तथा प्रवाहक (शिव. शत. ५)।

दत्त—सांक्षिपति का पुत्र। कृष्ण सांक्षिपति का शिष्य था। उस ने गुरुदक्षिणा के रूप में, शंखासुर से इस गुरु पुत्र को मुक्त किया। श्वेतसागर में उसे बापस ला कर सांक्षिपति को अर्पण किया।

२. स्वाराक्षिप मन्वन्तर के सप्तपियों में से एक (पद्म. उ. ७)।

३. पुलस्त्य एवं प्रीति का पुत्र। यह पूर्वजन्म में स्वायम्भुव मन्वन्तर में अगस्त्य था (मार्क. ४९.२४-२६)।

दत्त आत्रेय—एक देवता। विष्णु के अवतारों में से यह एक था। यह अत्रि ऋषि एवं अनसूया का पुत्र था। अत्रि ऋषि के दत्त, सोम, दुर्वासस् ये तीन पुत्र थे (भा. ४.१.१५-३३)। उनमें से दत्त विष्णु का, सोम ब्रह्माजी का, एवं दुर्वासस् रुद्र याने शंकर के अवतारस्वरूप थे। इसे निमि नामक एक पुत्र था (म. अनु. १३८.५ कुं.)। आज्कल के जमाने में, ब्रह्मा-विष्णु-महेशात्मक

त्रिमुखी दत्त की उपासना प्रचलित है। इसे तीन मुख, छः हस्त विधित किये जाते हैं। दत्तमूर्ति के पीछे एक गाय, एवं इसके आगे चार कुत्ते दिखाई देते हैं। किंतु पुराणों में त्रिमुखी दत्त का निर्देश उपलब्ध नहीं है। उन ग्रंथों में, त्रिमुख में अभिप्रेत तीन देवताओं को तीन अलग व्यक्ति समझ कर, उन्हें दत्त, सोम, एवं दुर्वासस् ये तीन अत्रिपुत्र के नाम दिये गये हैं। दत्त के आगे-पीछे माय एवं कुत्ते रहने का निर्देश भी पुराणों में उपलब्ध नहीं है।

महाराष्ट्र में, त्रिमुख दत्त का प्राचीनतम निर्देश सरस्वती गंगाधर विरचित, 'गुरुचरित्र' ग्रंथ में मिलता है। उस ग्रंथ में इसे परब्रह्मस्वरूप मान कर, इसे तीन सिर, छः हस्त, एवं धेनु तथा श्वान के समवेत वर्णन किया है। औदुंबर वृक्ष के समीप इसका निवासस्थान दिखा दिया है। 'गुरुचरित्र' का काल लगभग इ. स. १५५० माना जाती है। महाकवि माघ के शिशुपालवध काव्य में, दत्त को विष्णु का अवतार कहा है (इ. स. ६५०)। दत्त अवतार का यह प्रथम निर्देश है।

अवतारकार्य—दत्त अवतार का मुख्य गुण क्षमा है। वेदों का यज्ञक्रियासहित पुनरुज्जीवन, चातुर्वर्ष्य की पुनर्वटना, तथा अधर्म का नाश यही इसका अवतारकार्य है (ब्रह्म. २१३.१०६-११०; इ. वं. १.४१)।

इसने संन्यासपद्धति का प्रचार किया (शिव. शत. १९.२६) तथा कार्तवीर्य के द्वारा पृथ्वी भ्लेच्छरहित की (विष्णुधर्म. १.२५.१६)।

आत्मज्ञान एवं शिष्यारंपरा—दत्त ने अपने पिता अत्रि से पूछा, 'मुझे ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति किस प्रकार होगी?' अत्रि ने इसे गोतमी (गोदावरी) नदी पर जा कर, महेश्वर की आराधना करने को कहा। इस प्रकार आराधना करने से, इसे आत्मज्ञान प्राप्त हुआ। गोदावरी तीर के उस स्थान को 'ब्रह्मतीर्थ' कहते हैं (ब्रह्म. ११७)।

यह ब्रह्मनिष्ठ था। इसे धर्म का दर्शन हुआ था (पद्म. भू. १२.५०)। इसके अलर्क, प्रह्लाद, यदु तथा सहस्राजुन नामक शिष्य थे। उन्हें इसने ब्रह्मविद्या दी (भा. १. ३.११)। इसने अलर्क को आत्मज्ञान, योग, योगधर्म, योगचर्या, योगसिद्धि तथा त्रिकामबुद्धि के संबंध में उपदेश दिया (मार्क. ३५-४०)।

आयु, परशुराम तथा सांख्य भी दत्त के शिष्य थे।

दत्त-आश्रम—गिरिनगर में दत्त का आश्रम (विष्णु-पद) था। पश्चिम घाट में मल्लीकीग्राम (माहूर) में दत्त

का आश्रम था। उस स्थान पर परशुराम ने जमदग्नि को अग्नि दी, एवं रेणुका सती गई। इसलिए यहाँ मातृतीर्थ निर्माण हुआ (रेणुका, ३७)।

आयु को पुत्रदान—एलपुत्र आयु को पुत्र नहीं था। पुत्र प्राप्ति के लिये वह दत्त के पास आया। दत्त स्त्रियों के साथ क्रीडा कर रहा था। मदिरापान के कारण इसकी आँखें लाल थीं। इसकी जंघा पर एक स्त्री बैठी थी। गले में यज्ञोपवीत नहीं था। गाना तथा नृत्य चालू था। गले में माला थी। शरीर को चंदनादि का लेप लगा हुआ था। आयु ने वंदना करके पुत्र की माँग की। दत्त ने अपनी बेहोप अवस्था उसे बता दी। इसने कहा, 'वर देने की शक्ति मुझमें नहीं है'। आयु ने कहा, 'आप विष्णु के अवतार हैं'। अन्त में दत्तात्रेय ने कहा, 'कपाल' (मिट्टी के भिक्षापत्र) में मुझे माँस एवं मदिरा प्रदान करो। उसमेंसे माँस खुद के हाथों से तोड़ कर मुझे दो'। इस प्रकार उपायन देने पर इसने प्रसन्न हो कर, आयु को प्रसादरूप में एक श्रीफल दिया, एवं वर बोले, 'विष्णु का अंश धारण करनेवाला पुत्र तुम्हें प्राप्त होगा'। इस वर के अनुसार आयु को नहुष नामक पुत्र हुआ। पश्चात् नहुष ने हुंड नामक असुर का वध किया (मार्क. १६; ३७; पद्म. सू. १०३-१०४)।

सहस्रांजुन को वरप्रदान—दत्तचरित्र से संबंधित इसी ढंग की और एक कथा महाभारत में दी गयी है। गर्गमुनि के कहने पर कार्तवीर्यार्जुन राजा दत्त आत्रेय के आश्रम में आया। एकनिष्ठ सेवा कर के उसने इसे प्रसन्न किया। तब दत्त ने अपने वर्तन के बारे में कहा, 'मयादि से मेरा आचरण निश्चयन लुका है। स्त्री भी मेरे पास हमेशा रहती है। इन भोगों के कारण मैं निद्य हूँ। तुम पर अनुग्रह करने के लिये मैं सर्वथा असमर्थ हूँ। किसी अन्य समर्थ पुरुष की तुम आराधना करो'। परंतु अन्त में कार्तवीर्यार्जुन की निष्ठा देख कर, इसने विवश हो कर उसे वर माँगने के लिए कहा। कार्तवीर्य ने इससे चार वर माँगे, जो इस प्रकार थे—१. सहस्रबाहुत्व, २. सार्वभौमपद, ३. अधर्मनिवृत्ति, ४. युद्धमृत्यु।

दत्त आत्रेय ने वरों के साथ कार्तवीर्य को सुवर्ण विमान (म. व. परि. १.१५.६) तथा ब्रह्मविद्या का उपदेश भी दिया (भा. १.३.११)। कार्तवीर्य ने भी अपनी सर्व संपत्ति दत्त को अर्पण की (म. अनु. १५२-१५३)। कार्तवीर्य की राजधानी नर्मदा नदी के किनारे स्थित माहिष्मती नगरी थी।

दत्तजन्मकाल—दत्तजन्मकाल मार्गशीर्ष सुदी चतुर्दशी को दोपहर में वा रात्रि में माना जाता है। दत्तजन्म का समारोह भी उसी वक्त मनाया जाता है। कई स्थानों में, मार्गशीर्ष सुदी पौर्णिमा के दिन सुबह, शाम, या मध्यरात्रि के वारह वजे दत्तजन्म मनाया जाता है।

दत्तप्रणीत ग्रंथ—अवधूतोपनिषद्, जाबालोपनिषद्, अवधूतगीता, त्रिपुरोपास्तिपडति, परशुरामकल्पयुत्र (दत्त-तंत्रविज्ञानसार), ये ग्रंथ दत्त ने स्वयं लिखे थे।

दत्तमतप्रतिपादक ग्रंथ—अवधूतोपनिषद्, जाबालोपनिषद्, दत्तात्रेयोपनिषद्, मिश्रकोपनिषद्, शांडिल्योपनिषद्, दत्तात्रेयतंत्र आदि ग्रंथ दत्तसंप्रदाय के प्रमुख ग्रंथ माने जाते हैं।

दत्तसंप्रदाय—तांत्रिक, नाथ, एवं महातुभाव संप्रदायों में दत्त को उपास्य देवत माना जाता है। श्रीपद श्रीवल्लभ (पीठापुर, आंध्र), श्रीनरसिंहसरस्वती (महाराष्ट्र), आदि दत्तोपासक स्वयं दत्तावतार थे, ऐसी उनके भक्तों की श्रद्धा है। प. प. वासुदेवानंदसरस्वती (टेंबेस्वामी) आधुनिक सत्पुरुष थे (इ. स. १८५४-१९१४)। वे दत्त के परमभक्त, एवं मराठी तथा संस्कृत भाषाओं में दत्त-विषयक विपुल साहित्य के निर्माता थे। पटयात्रा कर के, एवं भारत के सारे विभागों में दत्तमंदिरादि निर्माण कर के, उन्होंने दत्तभक्ति तथा दत्तसंप्रदाय का प्रचार किया।

दत्त तापस्—एक ऋषि। सप्तस्रभ में इसने होतु नामक ऋषियज्ञ का काम किया था (पं. ब्रा. २५.१५.३)।

दत्तामित्र—एक यवननृप (विपुल ३, देखिये)।

दत्तोळि—मुलस्स्य को प्रीति नामक पत्नी ने उत्पन्न पुत्र (अग्नि. २०.१३; मार्क. २२.२३)।

दधिक्रावन्—मरीचिरभ नामक देवों में से एक। ऋग्वेद में इस देवता पर एक सूक्त उपलब्ध है। उस सूक्त में 'दधिक्रावन्' शब्द 'अश्व' अर्थ में लिया गया है (ऋ. ४.४०)।

दधिसुख—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

२. रामसेना का एक वानर। यह सोमपुत्र था, तथा स्वभाव से भी सौम्य था (वा. रा. यु. ३०)। अपनी प्रवेड सेना के साथ, यह राम से आ मिला। किंतु राम-रावणयुद्ध के समय यह वृद्ध था (म. व. २६.७.७)। राम के अश्वमेधीय अश्व की रक्षा करने के लिये, शत्रुधन के साथ यह गया था (पद्म. सू. ११)।

दधिवाहन—वाराह कल्प के वैवस्वत मन्वन्तर में से अष्टम चौखट का शिवावतार। यह वसिष्ठ एवं व्यास की

सहायताय प्रपन्न हुआ था। इसे कुल चार पुत्र थे। उनके नामः—कपिल, आसुरि, पंचशिक्ष, तथा शास्वल्। ये चार पुत्र योगी थे (शिव. शत. ४; मोगेश्वर देखिये)।

२. (सो. अनु.) मत्स्य तथा वायु के मत में अंगपुत्र (सप्तपान देखिये)। यह दिविरथ का पिता था। अंगपुत्र इसीका ही नामांतर था (म. शां. ४९.७२)।

दध्यञ्ज आथर्वण—एक महान् ऋषि एवं तत्त्ववेत्ता। इसे दधीचि, एवं दधीच ये नामांतर थे। देवअसुर युद्ध में, इसने अपनी हाडुयों, वज्र नामक अस्त्र ब्रह्म के लिये, देवों को प्रदान की थीं। इस अपूर्व त्याग के कारण, इंद्रका नाम 'त्यागमूर्ति' के नाते प्राचीन भारतीय इतिहास में अमर हुआ।

यह अथर्वकुलोत्पन्न था। कई जगह, इसे अथर्वन् का पुत्र भी कहा गया है। इस कारण, इसे 'अथर्वण' पौत्रक नाम प्राप्त हुआ। इसे 'आंगिरस' भी कहा गया है (तां. ब्रा. १२.८.६; गो. ब्रा. १.५.२१)। अथर्वन् एवं आंगिरस् लोग पहले अलग थे, किंतु बाद में वे एक हो गये। इस कारण इसे 'आंगिरस' नाम मिला होगा।

ब्रह्माण्ड के मत में, यह वैवस्वत मन्वंतर में पैदा हुआ था। ज्यवन एवं सुकन्या का यह पुत्र था (ब्रह्माण्ड. ३.१.७४)। किंतु भागवतमत में, यह स्वायंभुव मन्वंतर में पैदा हो कर, इसकी माता का नाम चिति वा शांति था (४.१.४२)।

इसके पत्नी का नाम सुवर्चा था (शिव. शत. २४; स्कन्द. १. १. १८)। कई जगह, इसके पत्नी का नाम गर्भस्थिनी बड़वा दिया गया है। वह लोगसुमद्रा की बहन थीं। कुलनाम के जरिये, उसे 'प्रातिथिनी' भी कहते थे (ब्रह्म. ११०)।

इसे सारस्वत एवं पिप्पलाद नामक दो पुत्र थे। उसमें से सारस्वत की जन्मकथा महाभारत में दी गयी है (म. श. ५०)। एक बार अलंबुषा नामक अप्सरा को, इंद्र ने दधीचि ऋषि के पास भेज दिया। उसे देखने से दधीचि का रेत सरस्वती नदी में पतित हुआ। उस रेत को सरस्वती नदी ने धारण किया। उसके द्वारा सरस्वती को हुए पुत्र का नाम 'सारस्वत' रखा दिया गया। इसने प्रसन्न हो कर सरस्वती नदी को वर दिया, 'तुम्हारे उदक का तर्पण करने से देव, गंधर्व, पितर आदि संतुष्ट होंगे'।

इसका दूसरा पुत्र पिप्पलाद। यह सुमद्रा नामक दासी से उत्पन्न हुआ। एक बार, इसने पहन कर छोड़ी हुई

धोती, इसकी दासी सुमद्रा ने परिधान की। स्नान के समय बस्त्र से चिपके हुए इसके शुक्रविंदुओं से, सुमद्रा गर्भवती हुई। इसकी मृत्यु के पश्चात्, उस गर्भ को सुमद्रा ने अपने उदर फाड़ कर बाहर निकाला, एवं उसे पीपल वृक्ष के नीचे रख दिया। इस कारण, उस गर्भ से उत्पन्न पुत्र का नाम 'पिप्पलाद' रख दिया गया। उसे जैसे ही छोड़ कर, सुमद्रा दधीचि ऋषि के साथ स्वर्गलोक चली गयी (ब्रह्म. ११०; स्कन्द. १.१.१७)।

दधीचि ऋषि का मुख अश्व के समान था। इसे अश्वमुख कैसे प्राप्त हुआ, वह कथा इस प्रकार है। इंद्र ने इसको 'प्रबर्ग्यविद्या' एवं 'मधुविद्या' नामक दो विद्याएँ सिखाई थीं। ये विद्याएँ प्रदान करते वचत इंद्र ने इसे यों कहा था, 'ये विद्याएँ तुम किसी और को सिखाओगे, तो तुम्हारा मस्तक काट दिया जायेगा'।

पश्चात् अश्वियों को ये विद्याएँ सीखने की इच्छा हुई। ये विद्याएँ प्राप्त करने के लिये, उन्होंने दधीचि का मस्तक काट कर वहाँ अश्वमुख लगाया। इसी अश्वमुख से उन्होंने दोनों विद्याएँ प्राप्त कीं। इंद्र ने अपने प्रतिज्ञा के अनुसार इसका मस्तक तोड़ दिया। अश्वियों ने इसका असली मस्तक उस षड पर जोड़ दिया (ऋ. १. ११६. १३)। इंद्र उस अश्व का सिर ढूँढता रहा। उसे वह 'शर्यणावत्' सरोवर में प्राप्त हुआ (ऋ. १. ८४. १३)।

सायणाचार्य ने शाठ्यायन ब्राह्मण के अनुसार दधीचि की ब्रह्मविद्या की कथा दी है। यह जीवित था तब इसकी ब्रह्मविद्या के कारण, इसे देखते ही असुरों का पराभव होता था। मृत्यु के बाद असुरों की संख्या क्रमशः बढ़ने लगी। इंद्र ने इसे ढूँढा। उसे पता चला कि, यह मृत हुआ। इसके अवशिष्ट अंगों को ढूँढने पर, अश्वियों को मधुविद्या बतानेवाला अश्वमुख, शर्यणावत् सरोवर पर प्राप्त हुआ। इसकी सहायता से इंद्र ने असुरों का पराभव किया (ऋ. १.११६.१३; सायणभाष्य देखिये)। ब्राह्मण ग्रंथ, उपनिषद् ग्रंथ, पुराण आदि में ब्रह्मविद्या के महत्त्व की यह कथा दी गयी है (श. ब्रा. ४.१.१.१८; ६.४.२.३; १४.१.१.१८; २०.२५; वृ. उ. २.५.१६.१७; ६३; भा. ६.९.५१-५५ दे. भा. ७.३६)।

मधुविद्या—इसका तत्त्वज्ञान 'मधुविद्या' नाम से प्रसिद्ध है। इस विद्या का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है:—'मधु का अर्थ मूलतत्त्व। संसार का मूलतत्त्व पृथ्वी, पृथ्वी का अग्नि,

इस क्रम से वायु, सूर्य, आकाश, चंद्र, विद्युत्, सत्य, आत्मा तथा ब्रह्म की खोज हर एक तत्त्व को करती पडती है। मूल तत्त्व पता लगाने से, आत्मतत्त्व का संसार से घनिष्ठ तथा नित्य संबंध ज्ञात होता है। संसार तथा आत्मतत्त्व ये एक दूसरों से अभिन्न हैं। चक्र के जैसे आरा, उसी प्रकार आत्मतत्त्व का संसार से संबंध है। संसार का मूल तत्त्व ब्रह्म है। ब्रह्म तथा संसार को प्रत्येक वस्तु परस्परों से अभिन्न है।

ऋग्वेद की ऋचाओं में इसके द्वारा प्रतिपादित मधुविद्या, बृहदारण्यकोपनिषद् में उन मंत्रों की व्याख्या कर के अधिक स्पष्ट की गयी है।

इस विद्या के महत्त्व के कारण ही, दधीच का नाम एक तत्त्व के रूप में वेदों में आया है (तै. सं. ५.१.४. ४; श. ब्रा. ४.१.५.१८; ६.४.२.३; १४.१.१.१-८; २६; तां. ब्रा. १२.८.६; गो. ब्रा. १.५.२१; बृ. उ. २.५.२२; ४.५.२८)।

अस्थिप्रदान—वृत्र के कारण देवताएँ त्रस्त हुईं। देवताओं ने वृत्रवध का उपाय विष्णु से पूछा। उसने कहा, 'दधीच की हड्डियों से ही वृत्र का वध होगा। उन हड्डियों के त्वष्टा से वज्र बना लो। हड्डियाँ माँगने को अश्वियों को भेजो'। हड्डियों के प्राप्त्यर्थ इस पर हथियार चलाने को त्वष्टा डरता था। किंतु आखिर वह राजी हुआ। उसने इसके शरीर पर नमक का लेप दिया। पश्चात् गाय के द्वारा नमक के साथ ही इसका मांस भी भक्षण करवाया। पश्चात् इसकी हड्डियाँ निकाली गयीं। त्वष्टा ने उन हड्डियों से पट्कोनी वज्र तथा अन्य हथियार बनाये।

दधीच के अस्थिप्रदान के बारे में, पुराणों में निम्न-लिखित उल्लेख प्राप्त है। देवासुर संग्राम के समय, देवों ने इसके यहाँ अपने हथियार रखे थे। पर्याप्त समय के पश्चात् भी, उसे वापस न ले जाने से, दधीच ने उन हथियारों का तेज, पानी में धोल कर पी लिया। बाद में देवताएँ आ कर हथियार माँगने लगे। इसने सत्यस्थिति उन्हें कथन की, एवं उन हथियारों के बदले अपनी हड्डियाँ लेने की प्रार्थना देवों से की। देव उसे राजी होने पर, योगबल से इसने देहत्याग किया (म. व. ८८.२१; श. ५०.२९; भा. ६.९.१०; स्कन्द. १.१.१७; ७.१.३४; ब्रह्म. ११०; पद्म. उ. १५५; शिव. शत. २४)।

इसका आश्रम सरस्वती के किनारे था (म. व. ९८. १३)। गंगाकिनारे इसका आश्रम था (ब्रह्म. ११०.८)। इसे 'अश्वशिर' नामक विद्या तथा 'नारायण नामक' वर्म

विदित था। नारायण वर्म (कवच) का निर्देश भागवत में मिलता है (भा. ६.८)। दधीच-तीर्थ कुक्षेत्र में प्रख्यात है (म. व. ८१.१६३)।

मत्स्य तथा वायुमत्त में यह भार्गव गोत्र का संस्कार था। कई ग्रंथों में इसका ऋचीक नामांतर भी प्राप्त है (ब्रह्मांड २.३२.१०४)।

'ब्राह्मण एवं क्षत्रियों में श्रेष्ठ कौम', इस विषय पर श्रुय एवं दधीच ऋषि में बहुत बड़ा विवाद हुआ था। उस वाद में, प्रारंभतः दधीच का पराभव हुआ। किंतु अंत में यह जीत गया, एवं इसने ब्राह्मणों का श्रेष्ठत्व प्रस्थापित किया (लिग. १.३६)। इसी विषय पर शुक्लु के साथ भी इसका विवाद हुआ था। उस चर्चा में अन्तना विजय हो, इसलिये शुक्लु ने विष्णु की आराधना की। पश्चात् विष्णु ब्राह्मणरूप में दधीच के पास आया। विष्णु एवं दधीच का युद्ध हुआ। पश्चात् इसने विष्णु को श्राप दिया, 'देवकुल के सारं देव रुद्रताप से भस्मसात हो जायेंगे'।

दनायु—प्राचेतस दक्ष प्रजापति तथा असिक्री की कन्या तथा कश्यप की भार्या (कश्यप देखिये)।

दनु—प्राचेतस दक्ष प्रजापति तथा असिक्री की कन्या तथा कश्यप की भार्या (कश्यप देखिये)। इससे दानव उत्पन्न हुए। दानव एक जाति का नाम है। केशिन्, नमुचि, नरक, शंकर आदि दानव सुविख्यात हैं। इसके पुत्र का नाम वृत्र था (श. ब्रा. १.५.२.९)।

दनुपुत्र—एक ऋषि। ऋग्वेद की कुछ ऋचाओं का यह द्रष्टा है (ऋ. ३.६.१-१४, कश्यप देखिये)।

दंतकूर—एक क्षत्रिय। इसे परशुराम ने मारा (म. द्रो. परि. १ क्र. ८. पंक्ति. ८३७)।

दंतचक्र—करुण-देश का राजा। यह बृद्धशर्मन् तथा श्रुतदेवी का पुत्र था। कर्लिगसाज चित्रांगद की कन्या के स्वयंवर में यह उपस्थित था (म. शां. ४.६)। द्रौपदी स्वयंवर में, लक्ष्यवेध का असफल प्रयत्न इसने किया था। वहाँ इसका वक्र नाम से निर्देश है (म. आ. १८.२४३)। पांडवों के राजसूययज्ञ के समय, दक्षिण दिग्बिजय में सहदेव ने इसे जीता था (म. म. २८.३. भा. ९.२४.३७)। भारतीययुद्ध में इसे पांडवों की ओर से रण-निमंत्रण दिया गया था (म. उ. ४.२२)। शिशुपाल, शात्व, सौम, विदूरथ के वाद, कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.७८.१३; जयविजय देखिये)।

दंतिल—मर्तंग ऋषि का पुत्र। इसका भाई कोहल।

दंशक—क्रोधवशा से उत्पन्न सर्पों में से प्रमुख।

दभीति—इंद्र का एक कृमापात्र गृहस्थ । इंद्र ने इसके लिये तुमुरि तथा धुनि का वध किया (ऋ. २.१५.९; ६.२६.६; ७.१९.४; १०.११३.९) । इसके लिये इंद्र ने तीस हजार दासों का वध किया (ऋ. ४.३०.२१) । दसुओं का भी वध किया (ऋ. २.१३.९) । अश्वियों ने तुर्वीति सह इस पर कृपा की (ऋ. १.११२.२३) । यह भी इंद्र की आराधना करता था (ऋ. ६.२०.१३) ।

दम—(स. दिष्ट.) भागवतमतानुसार मरुत्त का पुत्र । विष्णु, वायु एवं मार्कण्डेय के मत में नरिष्यन्त का पुत्र । इस की माता का नाम इंद्रसेना शश्रुवी । माता के उदर में इसका गर्भ नौ वर्षों तक रहा था ।

इस ने दैत्यराज वृषार्वन् से धनुर्वेद, दैत्यश्रेष्ठ दुंदुभि से अस्त्रसमुदाय, शक्ति से साङ्गवेद, तथा राजर्षि आर्षिषेण से योगशास्त्र सीखे थे ।

दशार्णाधिपति नारदवर्मन् की कन्या सुमना ने इसका स्वयंवर में वरण किया था ।

इसका पिता नरिष्यन्त वानप्रस्थाश्रम में गया था । मुनिअवस्था में तपस्या कर रहे नरिष्यन्त का वपुष्मत् ने वध किया । इसलिये इसने वपुष्मत् का वध किया (मार्क. १.३०.१३२; वपुष्मत् ३. देखिये) ।

२. (सो. क्रोडु.) विदर्भ का पुत्र एवं दमयंती का भ्राता ।

३. अंगिराकुल का एक ऋषि । सुदमोदम एवं मोदम इसीका ही पाठभेद है ।

४. आभतरजसु देवों में से एक ।

५. सुधामन् देवों में से एक ।

६. विकुण्ड देवों में से एक ।

दमघोष—चेदि देश का राजा । इसकी पत्नी श्रुतश्रवा, कृष्ण की बुआ थी । इसका पुत्र शिशुपाल (म. व. १.५.३; प्रत्यग्रह देखिये) ।

दमन—एक ऋषि । इसके प्रसाद से भीम राजा को दम आदि चार संतान हुई (म. व. ५.०.६) ।

२. दमयंती का भाई (म. व. ५.०.९) ।

३. कौरवों के पक्ष का क्षत्रिय । यह पौरव का पुत्र था (म. भी. ५.७.२०) ।

४. (सो. वसु.) मत्स्य तथा वायुमत में वसुदेव का पौत्र से उत्पन्न पुत्र ।

५. एक देव । यह अंगिरा तथा सुरूपा का पुत्र था ।

६. एक शिवावतार । यह वराह कल्प के वैवस्वत मन्वंतर की तीसरी चौखट के कलि में पुरातनिक में पैदा हुआ था ।

इसके चार शिष्य थे । उनके नामः—विशोक, विशेष, विपाप तथा पापनाशन । उस समय भार्गव नामक पुरुष व्यास था । उसकी सहायता इसने चार शिष्यों द्वारा की । यह निवृत्तिमार्ग का उपदेशक था (शिव. शत. ४) ।

७. भारद्वाज का पुत्र । यज्ञोपवीत के बाद यह यात्रा करने निकला । राह में अमरकंटक के समीप इसकी गर्ग मुनि से भेंट हुई । उससे इसने काशीमाहात्म्य सुना एवं वहाँ तपस्या कर, यह मुक्त हुआ (स्कंद. ४.२.७४) ।

८. एक राक्षस । इसीने भृगु ऋषि की स्त्री का हरण किया । यह तथा पुलोमन् एक ही व्यक्ति रहे होंगे (पद्म. पा. १४; अग्नि देखिये) ।

दमनक—एक दैत्य । यह समुद्र में रहता था । मत्स्या-वतार में, भगवान् विष्णु ने चित्रशुक्र चतुर्दशी के दिन इसका वध किया । इसका कलेवर धरती पर फेंक दिया । भगवान् के स्पर्श के कारण, यह सुगंधी तृण के रूप में पृथ्वी पर रह गया । यह तृण 'दौना' नाम से आज प्रसिद्ध है (स्कंद. २.२.३९) ।

दमयन्ती—विदर्भदेशाधिपति भीम राजा की कन्या तथा निषधदेश के राजा नल की पत्नी । भीम राजा की कन्या होने से इसका पैतृक नाम भैमी था । एक उपाख्यान के रूप में, नल-दमयंती की कथा महाभारत में दी गई है । विदर्भदेश के राजा भीम को संतति नहीं थी । एक बार अपने घर आये, दमन ऋषि का उसने स्वागत किया । इस ऋषि के आशीर्वाद से भीम राजा को दम, दांत, दमन आदि तीन पुत्र, एवं दमयन्ती नामक कन्या हुई (म. व. ५.०.९) ।

अपने अद्वितीय सौंदर्य से, इसने सब सुंदर स्त्रियों का गर्व हरण किया था । इसलिये इसे दमयन्ती नाम मिला । एक सुवर्ण हंस द्वारा इसने नल राजा के गुण सुने । उसीके द्वारा इसने अपना प्रेम नलराज को विदित किया । इसके स्वयंवर के समय देश देश के राजा एवं इंद्र, अग्नि, वरुण, आदि देव भी उपस्थित थे । उन सब का त्याग कर इसने निषधाधिपति नल का ही वरण किया । उससे इसे इंद्रसेना तथा इंद्रसेन नामक अपत्य हुए । राज्यसौख्य का उपभोग इन दोनों को, अधिक वर्षों तक नहीं मिला । श्रुत में नल अपना सत्र ऐश्वर्य तथा राज्य गँवा बैठा । नल-दमयन्ती को एक ही वस्त्र से बन में जाना पड़ा ।

बन में नल एवं दमयंती पर अनेक संकट आये । इन संकटों से त्रस्त हो कर, दमयंती को सुतावस्था में अकेली

छोड़ कर नल चला गया। बाद में अयोध्या के ऋतुपर्ण राजा के यहाँ, बाहुक नाम से वह सारथ्यकर्म करने लगा।

बाद में इसे एक अजगर निगलने लगा। उस समय एक भील ने इसको बचाया। परन्तु उसके मन में दमयन्ती के लिये, पापवासना जागृत हुई। इस कारण, इसने अपने पातिव्रत्य सामर्थ्य से उसे दग्ध किया। तदनन्तर सार्थवाहों के काफिले के साथ, यह चेदिपुर आई, तथा सैरंघ्री नाम धारण करने लगी। इसके पिता द्वारा इसकी खोज के लिये भेजे गये एक दूत ने इसे ढूँढ निकाला। पश्चात् यह अपने मायके में जा कर रहने लगी। नल का पता लगाने के हेतु, इसने अपना दूसरा स्वयंवर जाहीर किया। उस स्वयंवर में नल उपस्थित हुआ। नल तथा दमयन्ती का पुनर्मिलन हुआ। बाद में नल ने पुष्कर से अपना राज्य पुनः जीता। इससे इन दोनों का जीवन सुख से व्यतीत हुआ (म. व. ५४-७८; नल देखिये)।

दमयन्ती ने अपने दूसरे स्वयंवर का केवल नाटक रचाया था। इस स्वयंवर के लिये बाहुक (नल) एवं ऋतुपर्ण के सिवा और किसी को नहीं बुलाया था। इसके पिता भीम को भी इस स्वयंवर का पता नहीं था। बाहुक, नल ही है या नहीं, इसकी जाँच लेने के लिये, स्वयंवर का नाटक इसने रचाया था।

२. शैब्यपुत्र संजय की कन्या। एक बार, नारद तथा पर्वत ऋषि, व्रसात शुरु होने कारण चार माहों तक, संजय राजा के घर में रहने के लिये आये। उनकी योग्य व्यवस्था कर, राजा ने दमयन्ती को उनकी सेवा के लिये नियुक्त किया।

बाद में नारद के प्रति इसके मन में प्रीति उत्पन्न हो गयी। पर्वत की अपेक्षा, नारद के आदरातिथ्य की ओर, यह जादा ध्यान देने लगी। पर्वत को संशय आ कर उसने नारद से पूछा। नारद ने कबूल किया कि, 'वह दमयन्ती से प्रेम करता है'। यह देख कर पर्वत ने क्रोधित हो कर नारद को शाप दिया, 'तुम वानरमुख बनोगे'। नारद ने भी पर्वत को शाप दिया, 'तुम स्वर्ग में न जा सकोगे'।

शाप के कारण, नारद वानर के समान दिखने लगा। तथापि दमयन्ती ने उसकी सेवा में कमी न की। संजय दमयन्ती के लिये वरसंशोधन कर रहा था। अपनी माता के द्वारा दमयन्ती ने पिता को सूचित किया कि, 'मैं नारद से प्रेम करती हूँ'। वानरमुख एवं भिक्षुक नारद को, अपनी कन्या देना राजा को योग्य न लगा। दमयन्ती की माता को

भी जामात के नाते नारद पसंद नहीं था। तदनुसार उसने इसे समझाने का बहुत प्रयत्न किया। परन्तु इसने कहा, 'मूल्य राजपुत्र से शादी करने के बजाय, मायनविद्या जाननेवाले, गुणग्राही तथा मधुर संभाषण करनेवाले नारद का वरण ही श्रेयस्कर है।

अन्त में दमयन्ती के कथनानुसार, इसका विवाह संजय ने नारद से कर दिया। कालांतर में पर्वत मुनि ने अपना दिया हुआ शाप वापस लिया, तथा नारद पूर्ववत् दिखने लगा। दमयन्ती ने भी आनंद से वह वृत्तान्त अपने मातापिता को बता दिया (दे. भा. ६, २६-२७; म. द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति. २७४ से आगे; श्रीमती देखिये)।

दमवाह्य—अंगिरस् गोत्र का प्रवर। चमदाह्व इसका पाठभेद है।

दंभ—विप्रचित्ति दानव का पुत्र।

२. (सो. पुरुरवस्.) मत्स्य मतानुसार आयु का पुत्र।

दंभोद्भव—एक राजा। यह अपने ऐश्वर्य से मत्त हो कर, हमेशा ब्राह्मणों से पूछता था, 'मुझे से बड़ कर श्रेष्ठ इस पृथ्वी पर कौन है'। ब्राह्मणों ने, इसका प्रश्न सुन कर, इसकी मज़ाक उड़ायी। फिर भी यह आदत से बाज न आया। तब ब्राह्मणों ने श्रेष्ठ नर-नारायण का नाम इसे बताया। यह सेनामहित नर-नारायण के आश्रम में गया। नरनारायण ने इसका पराभव किया, तथा इसका गर्व दूर किया। कृष्णदैत्य के समय परशुराम ने दंभोद्भव की यह कहानी बतायी है (म. उ. ९४; वि. ५१.९१७; पंक्ति ३१)। 'कौटिल्य के अर्थशास्त्र' में भी इसकी मदोन्मत्तता तथा नरनारायण के साथ युद्ध का निर्देश है। वहाँ दंभोद्भव पाठ है (कौटिल्य. पृ. २८)।

दंभोलि—दृढास्य का पुत्र। यह अगस्त्यकुलोत्पन्न था। परन्तु इसके पिता दृढास्य को पुलहने अपना पुत्र माना। इसलिये यह पौलह बना (विष्णु. १.१०.१)।

दया—ऋष्यप प्रजापति की स्त्री, एवं दक्ष प्रजापति की कन्या (स्कंद. १.२.१४)। यह धर्म की पत्नी थी, यों कई स्थानों पर उल्लेख है। इसे अभय नामक पुत्र था (भा. ४.१.५०)।

दरद—दुर्योधन के पक्ष का एक ब्राह्मिक राजा (म. आ. ६१.५५८; पंक्ति. ६)।

दरिद्योत—(सो. कुबुर.) भागवत मतानुसार दुंदुभि का पुत्र। विष्णु तथा वायु में, इसे अभिजित् कहा गया है।

दरीमुख—राम का सेनापति।

दर्प—(रवा.) धर्म का उन्नति से उत्पन्न पुत्र।

दर्पणासि—कारुण्य राजा का पुत्र। इसने अपनी माता की आज्ञा के अनुसार, अपने पिता राजा कारुण्य का वध किया (भवि. ब्राह्म. ८)।

दर्भक—(शिष्ट. भविष्य.) भागवत, विष्णु तथा ब्रह्मांड मतानुसार अज्ञातशत्रु का पुत्र। वायु मतानुसार इसे दशक तथा मत्स्य मतानुसार वंशक कहा गया है।

दर्भवाह—अमरस्यकुलोत्पन्न एक ऋषि।

दर्भि—एक ऋषि। इसने सातों समुद्रों से कहा था, 'तुम सारे एक तीर्थ उत्पन्न करो'। उन्होंने 'अर्धकील' नामक एक पापनाशक तीर्थ उत्पन्न किया (म. व. ८१. १३३-१३६)।

२. दण्डन देखिये।

दर्वा—उशीनर की पत्नी।

दर्विन—(सो. उशी.) विष्णुमतानुसार उशीनर का पुत्र।

दर्श—कृष्ण का कालिंदी से उत्पन्न पुत्र (भा. १०. ६१.१४)।

२. धाता नामक आदित्य एवं सिनीवाली का पुत्र (भा. ६.१८.३)।

दर्शक—(शिष्ट. भविष्य.) वायुमत में विविसारपुत्र।

दर्शनीय—मणिभद्र तथा पुण्यवनी का पुत्र।

दल—(स. इ.) राजा परीक्षित का मंडूककन्या शोभता से उत्पन्न पुत्र (म. व. १९०.४३; शल देखिये)।

विष्णु एवं वायु मतानुसार, यह राजा पारियात्र का पुत्र था। भागवत में बल नाम उपलब्ध है। वंश तथा पुत्रसाम्य के कारण, परीक्षित तथा पारियात्र ये दोनों व्यक्ति शायद एक ही प्रतीत होते हैं।

२. कश्यप तथा दनु का पुत्र।

दलेशु—बलेशु देखिये।

द्वराद—गौतम नामक शिवावतार का पुत्र।

द्वाराव—एक आंगिरस कुल। नवम्ब के साथ अनंज स्थानों पर इसका उल्लेख मिलता है (ऋ. १.६२.४; ३. ३१.५)। इंद्र ने इसका संरक्षण किया, ऐसा एक स्थान पर स्पष्ट उल्लेख है (ऋ. ८.१२.२)। आंगिरस का यह एक कुल रहा होगा।

दशज्योति—सुभ्राज का पुत्र (म. आ. १.४२)।

दशद्यु—एक राजा। इसका तुष से युद्ध हुआ था। इस युद्ध में इंद्र ने दोनों का ही संरक्षण किया (ऋ. १. ३३.१४; ६.२६.४)।

दशमी—ब्रह्मदेव की मानसकन्या।

दशरथ—(स. इ.) सूर्यवंश का एक विख्यात राजा। 'वाल्मीकिरामायण' का नायक एवं भारत की एक प्रातःस्मरणीय विभूति रामचंद्र का यह पिता था। इसीके नाम से राम, 'दाशरथि राम' नाम से प्रसिद्ध हुआ।

यह अज राजा का पुत्र था। यह अतिरथी, यज्ञयाग करने वाला, धर्ममिश्र, मनोनिग्रही तथा जितेन्द्रिय था (वा. रा. बा. ६. २-४)। इसके पूर्वपुरुष अज-दीर्घ-बाहु-प्रजापाल इस रूप में भी प्राप्त है (पद्म. सू. ८. १५३)। यह अयोध्या का राजा था (पद्म. पा. ७)। अतिविषयासक्त होने के कारण, इसके वृद्धावस्था के सारे दिन अनर्थकारी साबित हुए, एवं पुत्रशोक से इसे मरना पड़ा।

कौसल्या, सुमित्रा तथा कैकेयी नामक दशरथ की तीन पत्नियाँ प्रसिद्ध हैं। दशरथ को कौसल्या, सुमित्रा, सुरुपा तथा सुवेषा नामक चार पत्नियाँ थीं, ऐसा भी कहा गया है (पद्म. पा. ११६)। किंतु वास्तव में इसे तीन सौ पचास विवाहित स्त्रियाँ थीं। इतनी पत्नियों के पति होनेवाले पुरुष की गृहस्थिती जैसी रहनी चाहिये, वैसी ही इसकी थी। 'वाल्मीकिरामायण' में प्राप्त सीता के उद्गारों से इसकी पुरी जानकारी मिलती है। सीता अनसूया से कहती है, 'राम जिस प्रकार का व्यवहार अपनी माता कौसल्या से करता है, उसी प्रकार का व्यवहार अन्य राज-स्त्रियों से भी करता है। किंतु दशरथ हरएक स्त्री के तरफ उपभोग्य दृष्टि से देखता है। ऐसी स्त्रियों से भी राम माता के समान ही व्यवहार रखता है' (वा. रा. अयो. ११८. ५-६)। लक्ष्मण, भरत एवं राम के भाषण में भी इसके लिये आधार प्राप्त है। राम वनवासगमन कर रहा है, ऐसा ज्ञात होते ही, लक्ष्मण ने कौसल्या से कहा, 'विषय-भोगों के नियंत्रण में रहनेवाला, तथा जिसकी बुद्धि का विपर्यास हो गया है, ऐसा यह विषयी तथा वृद्ध राजा, कैकेयी की प्रेरणा से क्या नहीं बकेगा?' (वा. रा. अयो. २१. ३)।

कैकेयी से इसका विवाह इसकी विप्रयत्नवत्ता पर कलश चढ़ानेवाला है। इस विवाह के वक्त, यद्यपि कैकेयी विलकुल जवान थी, बुढ़ापे की साथ इसके शरीर पर

छाने लगी थी। कैकेयी से उत्पन्न पुत्र को, अयोध्या का सम्राट् जनाने का वचन दे कर, इसने कैकेयी के पिता को कन्यादान के लिये राजी किया था (वा. रा. अयो. १०७. ३)। राम के यौवराज्याभिषेक के समय भी, कैकेयी युवा अवस्था में थी, एवं बुढ़ा दशरथ उसकी सुझी में था।

अपने बुढ़े पिता ने अपने माँ को विवाह के समय दिये वचन के कारण, राम युवराज नहीं बनेगा, यह कैकेयीपुत्र भरत को अच्छा नहीं लगा। इस कारण, वह अपने ननिहाल चला गया। यह अवसर देख कर, उसके ननिहाल में से किसी को न बताते हुए, दशरथ ने राम को यौवराज्याभिषेक करने की तैयारी की। किंतु एक संकट टालने के लिये इसने कोशिस की, तो उधर कैकेयी ने दूसरा ही संकट खड़ा किया। परंतु उससे सूर्यवंश का यश मलिन न हो कर, अधिक उज्वल ही हुआ।

इसे शांता नामक एक कन्या थी। उसे इसने अंगदेश का राजा, एवं इसका परममित्र रोमपाद को दत्तक दिया था। ऋष्यशृंग ऋषि को शांता विवाह में दे कर, उस ऋषि के सहाय से, इन दोनों मित्रों ने पुत्रकामेष्टियज्ञ का समारोह किया (भा. ९. २३. ८)।

पुत्रकामेष्टियज्ञ की प्रेरणा इसे कैसी मिली, इसकी कथा पद्मपुराण में दी गयी है। इसने सौ अश्वीहिणी सेना के साथ, सुमानसनगरी पर आक्रमण किया, वहाँ के राजा साध्य से एक माह युद्ध कर के उसे बंदी बनाया। तब उसका अल्पवयी पुत्र भूषण इसके साथ युद्ध करने आया। परंतु उसका भी इसने पराभव किया। युद्धसमाप्ति के बाद, एक माह तक, यह साध्य तथा भूषण के साथ रहा। उन दोनों का परस्परप्रेम देख कर इसके मत में विचार आया, 'मुझे भी भूषण के समान गुणवान् पुत्र हो'। इसने साध्य राजा को पुत्रप्राप्ति का उपाय पूछा। साध्य ने इसे 'विष्णु को संतुष्ट करने को कहा।

बाद में सुमानसनगर साध्य राजा को देकर, यह अयोध्या लौट आया। अनेक व्रत करने के बाद इसने पुत्रकामेष्टियज्ञ किया। तब विष्णु ने प्रकट हो कर इसे वर माँगने के लिये कहा। तब इसने दीर्घायुपी, धार्मिक तथा लोगों पर उपकार करनेवाले चार पुत्र माँगे। विष्णु ने कौसल्या, सुमित्रा, सुरुपा, तथा सुवेपा को चार पुत्र होंगे, याँ आशीर्वाद दिया। दशरथ ने विष्णु से अपना पुत्र

होने के लिये कहा। विष्णु ने वह मान्य कर के 'चरु' (यज्ञ की आहुति के लिये पके चावल) में प्रवेश किया। दशरथ ने उस चरु के चार भाग कर के अपनी चार स्त्रियों को दिये। बाद में कौसल्या, सुमित्रा, सुरुपा तथा सुवेपा को क्रमशः राम, लक्ष्मण, भरत, तथा शत्रुघ्न नामक पुत्र हुए। ब्रह्मदेव ने उनके जातकर्मादि संस्कार किये। (पद्म. पा. ११६)।

पूर्वजन्म में यह घर्मदत्त नामक विष्णुभक्त ब्राह्मण था। इसने राक्षसयोनि प्राप्त हुए कलहा नामक स्त्री को अपना कर्तिक्रत का आधा पुण्य दिया, एवं उसका उद्धार किया। इस जन्म में कलहा कैकेयी नाम से इसकी पत्नी बनी (पद्म. उ. १०६-१०७)।

युवराज शनि के द्वारा, 'रोहिणीशकट' नक्षत्रमंडल का भेद होने का संकट, एक बार, पृथ्वी पर आया। यह ग्रहयोग ज्योतिषशास्त्र की दृष्टि से बड़ा ही खतरनाक समझा जाता है। उससे बारह वर्षों तक पृथ्वी में अकाल पड़ता है। उसे टालने के लिये, यह स्वयं नक्षत्रमंडल में गया। धनुष्य सज्ज कर, इसने भयंकर संहारास्त्र की ओझा की। यह देख कर, शनि इससे प्रसन्न हुआ, एवं उसने इष्ट वर माँगने के लिये इसे कहा। तब इसने कहा, 'जब तक पृथ्वी है, आकाश में चन्द्रसूर्य हैं, तब तक तुम रोहिणीशकट का भेद मत करो'। यह वर प्राप्त करते ही, दशरथ अपने नगर में वापस आया (पद्म. उ. ३३)।

अंत में श्रावण के श्राप के अनुसार, पुत्रशोक से इसकी मृत्यु हुई (श्रावण देखिये)। दशरथ की मृत्यु के बाद, भरत आने तक इसका शव अच्छा रहे, इस हेतु से, उसे तेल में रखा गया था (आ. रा. सार. ६)।

२. (सू. इ.) सूर्यवंश का राजा। यह मूलक का पुत्र था। रामपिता दशरथ के पूर्वकाल में यह अयोध्या का राजा था।

३. (सो. क्रोष्ट्र.) भविष्य, भागवत, विष्णु, वायु तथा पद्म के मतानुसार नवरथ का पुत्र (पद्म. म. १३)। मत्स्य के मतानुसार इसे ददरथ नाम है।

४. (मौर्य. भविष्य.) विष्णु के मतानुसार सुयशस् का पुत्र। मत्स्य के मतानुसार यह शक का नाती था। अन्य पुराणों में इसका उल्लेख नहीं है।

५. रोमपाद १. देखिये।

दशरथ—एक राजा। अश्विनो ने इसका संरक्षण किया था (ऋ. ८. ८. २०)। इंद्र ने भी इसपर क्रुपा की थी (ऋ. ८. ४९. १०; ५०. ९)।

दशशिशु—एक ऋत्विज। इसके घर सोम पी कर इंद्र प्रसन्न हुआ था (ऋ. ८.५२.२.)।

दशारि—(सो. क्रोष्टु.) भविष्यमत में निरावृत्ति का पुत्र। अन्यत्र इसे दशार्ह कहा गया है।

दशार्णा—गांधारराज सुबल की कन्या, तथा धृतराष्ट्र की पत्नी।

दशार्ह—(सो. क्रोष्टु.) भागवत, विष्णु तथा वायु मत में निर्वृत्ति का पुत्र। मत्स्यमत में यह निर्वृत्ति का पौत्र एवं विदूरथ का पुत्र था।

दशावर—वरुणलोक का एक असुर।

दशाश्व—(सु. इ.) इक्ष्वाकु के शतपुत्रों में से एक (म. अन् २.६ कुं.)। यह महिष्मती नगरी का राजा था। इसे मन्दराश्व नामक पुत्र था।

दशोणि—ऋग्वेदकालीन एक राजा। पणियों से इसका युद्ध चल रहा था, तब इंद्र ने इसकी सहायता कर, पणियों को भगया (ऋ. ६.२०.४)। शोतमान से हुए युद्ध में, दशोणि पर इंद्र ने क्रुपा की (ऋ. ६.२०.८)। अन्य स्थानों पर आये 'दशोणि' शब्द का अर्थ 'दस कंठलियाँ' है। वह व्यक्तिवाचक शब्द नहीं है (ऋ. १०.९६.१२)।

दशोण्य—एक ऋत्विज। इस पर इंद्र की निरतिशय क्रुपा थी (ऋ. ८.५२.२)। दशशिशु के साथ इसका निर्देश प्राप्त है।

दस्यवे वृक—एक राजा। इसके औदार्य का वर्णन प्राप्त है (ऋ. ८.५५.१; ५६.२)। यह दस्युओं का विजेता, एवं स्तावकों का उदार प्रतिपालक था। बालखिल्यों में, कुश तथा वृषभ्र के सूक्त में, इसका वर्णन आया है। इससे प्रतीत होता है कि, वे इसके आश्रयदाता थे। इसका ऋषि के रूप में भी निर्देश प्राप्त उल्लेख है (ऋ. ८.५१.२)। ऋग्वेद के छप्पनवे सूक्त से तर्क चलता है कि, इसका पिता पूतक्रतु तथा माता पूतक्रता थी (ऋ. ८.५६.४)।

दस्र—अश्विनीकुमारों में से एक। सहदेव इसीके अंश से उत्पन्न हुआ था (भा. ९.२२)।

दहन—एकदश रुद्रों में से एक।

दाकव्य एवं **दाकायन**—वसिष्ठकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

दाक्षपाय—कश्यपकुल का गोत्रकार।

दाक्षायण—एक राजवंश। 'दक्ष' राजा के वंशज संभवतः इस नाम से प्रसिद्ध हुए थे। इस वंश के राजा संस्कारविशेष के कारण, 'शतपथ ब्राह्मण' के समय

तक, समृद्ध जीवन व्यतित कर रहे थे (श. ब्रा. २.४.४. ६; दक्ष देखिये)।

अथर्ववेद एवं यजुर्वेद संहिताओं में, शतानीक सात्र-जित ऋषि को दाक्षायणों ने स्वर्ण प्रदान करने का निर्देश प्राप्त है (अ. वे. १.३५.१-२; वा. सं. ३४.५१-५२; खिल. ४.७.७.८)। कई जगह, 'दाक्षायण' व्यक्तिवाचक न हो कर, 'स्वर्ण' अर्थ से भी प्रयुक्त किया है (ऐ. ब्रा. ३.४०)। महाभाष्य में, पाणिनि को दाक्षायण कहा गया है।

दाक्षायणी—सती का नामांतर।

दाक्षि—अंगिरसकुल का गोत्रकार।

२. अत्रिकुल का गोत्रकार।

दाक्षीपुत्र—पाणिनि देखिये।

दांडिक्य—एक भोजवंशीय नृप। एक ब्राह्मणकन्या का इसने अपहरण किया। उससे इसका नाश हुआ। दंड राजा एवं यह दोनों एक ही होंगे (कौटिल्य पृ. २८)।

दाट—सुख देवों में एक।

दात्रेथ—अराल शौनक का पैतृक नाम (इण्डि. स्टूडि. ४.३७३)। 'दात्रेथ' (दति का वंशज) इसीका ही पाठ-भेद रहा होगा।

दाधीच—ज्यवन का पैतृक नाम। 'दाधीच' का शब्दशः अर्थ 'दध्यञ्च का वंशज,' ऐसा होता है (पं. ब्रा. १४.६; ज्यवन देखिये)।

दान—पारावत देवों में से एक।

२. सुख देवों में से एक।

दानकाय—वसिष्ठगोत्र का ऋषिगण।

दानपति—अक्रूर का नामांतर (भा. १०.४९)।

दानव—एक मानव जाति। कश्यप तथा दनु की संतति 'दानव' कहलाती थी।

देव एवं असुरों के संग्राम में, देवों के विरुद्ध पक्ष में दानव, असुर, राक्षस, पिशाच, आदि शामिल थे।

दानवों में निम्नलिखित लोग प्रमुख माने जाते थे:— केशिन्, तारक, नमुचि, नरक, बाण, विप्रचित्ति, वृषपर्बन्, शंवर, हिरण्यकशिपु।

दानवों का निवासस्थान प्रायः हिमालय के पश्चिम भाग का पर्वतप्रदेश रहा होगा।

२. कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार (कश्यप तथा दनु देखिये)।

दानिन्—सुख देवों में से एक।

दान्त—राजा भीमक का पुत्र तथा दमयंती का भ्राता (म. व. ५०.९)।

२. विकुंठ देवों में से एक।

३. सुधामन् देवों में से एक।

४. एक ऋषि। इसने भद्रतनु नामक ब्राह्मण को काम, क्रोध, लोभ आदि के लक्षण बताये, एवं उनका त्याग करने को उसे कहा (पद्म. क्रि. १७)।

दान्ता—एक अप्सरा (म. अनु. ५०.४८ कुं.)।

दाम—सुख देवों में से एक।

दामग्रन्थिन्—अज्ञातवास में विराटगृह में रहनेवाले नकुल का नाम (म. वि. ३.२)। भंडारकरपाठ-ग्रन्थिक।

दामघोषि—शिद्युपाल का पैतृक नाम।

दामचंद्र—पांडवशुकीय एक राजा (म. द्रो. १३३. ३७)।

दामोष्णीष—एक ऋषि (म. स. ४.११)।

दारुक—कृष्ण का सारथि (म. व. २३.२७; भा. १०.५०; पद्म. उ. २५.२)। रथ सज्ज करने के बारे में, कृष्ण से इसका संभाषण हुआ था। भारतीययुद्ध में, यह पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. ५६.१७-४१; मौ. ५.३)।

२. एक शिवावतार। यह बाराहकल्प के वैवस्वत मन्वन्तर के इक्कीसवीं चौखट में संपन्न हुआ। इस कारण, उस स्थान का नाम दारुकन हुआ। प्रक्ष, दार्मायणि, केतुमत तथा गौतम इसके पुत्र थे (शिव. शत. ५)।

३. एक दैत्य।

दारुकि—दारुक का पुत्र तथा प्रद्युम्न का सारथि (म. व. १९.३)।

दारुण—कश्यप एवं अरिष्टा का पुत्र।

२. गरुड का पुत्र (म. उ. ९९.९)।

दार्ढजयन्ति—वैपश्चित्त गुप्त लौहिल्य तथा वैश्वित्त दृढजयन्त लौहिल्य का पैतृक नाम (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

दार्तेय—एक यज्ञवेत्ता। यज्ञ के संबंध में यथार्थ मत देनेवाला, ऐसा इसका उल्लेख मिलता है (क. सं. ३१. २)। दृति एवं वातवत् ऋषियों का यह पैतृक नाम है। उन्होंने खांडवशत्रु में सत्र किये थे। वह सत्र वातवत् ने अधूरा छोड़ा, परंतु दृति ने पूरा किया। इसलिये दार्तेयों का उक्त्य हुआ (पं. ब्रा. २५.३.६; अराल देखिये)।

दार्मायणि—दारुक नामक शिवावतार का शिष्य।

दारुभ्य—रथवीति का पैतृक नाम (बृहदे. ५.४९. ७९)। ऋग्वेद की ऋचा में इसका उल्लेख है (ऋ. ५.

६१.१७)। यह पैतृक नाम अन्यत्र भी कई बार आया है (तै. सं. २.६.२.३; मै. सं. १.४.१२; ६.५; सां. ब्रा. ७.४)। यह नाम केशिन् तथा रथप्रोत के लिये भी प्रयुक्त है (मै. सं. २.१.३; दाल्भ्य देखिये)।

दालकि—एक ऋषि। वायुमत में यह व्यास की ऋकृशिष्यपरंपरा के शाकपूर्ण रथीतर का शिष्य था।

दाल्भि—वक्र का पैतृक नाम (का. सं. १०.६)।

दाल्भ्य—एक राजा 'दाल्भ्य' का शब्दाक्षः अर्थ 'दल्भ का वंशज' है। यह दारुभ्य का पर्यायवाची शब्द रहा होगा। यह केशिन् (पं. ब्रा. १३.१७.८), चक्रितान (छां. उ. १.८.१; जै. उ. ब्रा. २.३८.१) तथा वक्र (छां. उ. १.२.१३; १२.१.३; का. सं. ३०.२; म. व. २७५; २८२.१७) का पैतृक नाम है। दाल्भ्य एवं दाल्भ्य में गड़बड़ी जान पड़ती है (दारुभ्य देखिये)। एक वैयाकरण के नाते भी इसका उल्लेख प्राप्त है (शु. प्रा. ४.१६)।

२. द्युमत्सेन का मित्र।

३. उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (पद्म. सृ. ७)।

दावसु अंगिरस—एक सामद्रष्टा (पं. ब्रा. २५.५. १२.१४)।

दाशर्म—आरुणि का समकालीन एक आचार्य (क. सं. ७.६)।

दाशार्हि—मथुरा का राजा व्योमन् का पैतृक नाम। शिवमंत्र से यह पापमुक्त हुआ (स्कंद. ३.३.१)।

२. विदूरथ का मातृक नाम।

दाशूर—तपस्वी शरलोम का पुत्र। यह मगध देश के एक पर्वत पर रहता था। शरलोम की मृत्यु होने के कारण, यह शोकमग्न हुआ। तब, इसके सामने अग्नि प्रकट हुआ। उसने वृक्षाग्र पर बैठ कर स्थिर रहने का वर, इसे प्रदान किया। इस प्रकार कदंब वृक्ष के अग्र पर यह बैठ गया। उससमय सारा दिशाएँ इसे स्त्रियों के समान दिखने लगी। फिर भी मानसिक यज्ञ से इसे आत्मबोध हुआ।

पश्चात् कदंब दाशूर ऋषि नाम से यह प्रसिद्ध हुआ इसे वनदेवता से एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। उसे इसने ज्ञानोपदेश दिया (यो. वा. ४. ४. ८-५१)।

दासवेश—वेश देखिये।

दिकपति—मत्य देवों में से एक।

दिंडि—सूर्य के सामने रथ में बैठनेवाला एक सेवक। यह सूर्य का प्रधान, एवं एकादश रुद्रों में से एक था

(भवि. ब्राह्म. ७६.१९)। ब्रह्माजी का शिरच्छेद इसके हाथ से हुआ था। सूर्य के सन्निध रहने से, उस पातक से यह मुक्त हुआ (सांघ. १६)। इसे दिंडिन् भी कहा है।

यह महातपस्वी गणाधिपति था। पहले की गयी ब्रह्महत्या के निरसनार्थ, इसने सूर्याराधना की। सूर्य की कृपा से, यह ब्रह्महत्या से मुक्त हुआ। पश्चात् सूर्य से इसने क्रियायोग श्रवण किया (भवि. ब्राह्म. ६३)।

यह शंकर का अवतार था (भवि. ब्राह्म. ९१)। यह सूर्य के पूर्व में स्थित है। निरंतर भ्रमणशील होने के कारण, इसके लिये रुद्र नाम प्रयुक्त है (भवि. ब्राह्म. १२४)।

दिति—प्राचेतस दक्ष प्रजापति तथा असिक्नी की कन्या, एवं कश्यप की भार्या (कश्यप देखिये)। ऋग्वेद में इसका तीन स्थानों पर उल्लेख है। उनमें से दो स्थानों पर, अदिति के साथ इसका उल्लेख आया है (ऋ. ५. ६२. ८; ४. २. ११)। तीसरे स्थान, इसका उल्लेख अदिति के साथ न हो कर, अग्नि, सवितृ एवं भग के साथ आया है (ऋ. ७. १५. १२)। कई वैदिक ग्रंथों में इसे 'देवी' कहा गया है (वा. सं. १८. २२; अ. वे. १५. १८. ४; १६. ६. ७)। अथर्ववेद में इसके पुत्रों का निर्देश आया है वे दैत्य एवं देवों के शत्रु मान्य होते हैं (भा. ७.७.१)। इससे पता चलता है कि, दिति एवं अदिति एक पक्ष में न हो कर, विरोधी पक्ष में थी।

दिलीप (प्रथम)—(सु. इ.) अयोध्या के अंशुमन् राजा का पुत्र। अपने 'भगीरथ' प्रयत्नों से, गंगा गद्दी पृथ्वी पर लानेवाले परमप्रतापी भगीरथ राजा का यह पिता था (भा. ९.९; मत्स्य. १२.४४; पद्म. सू. १०; उ. २१; ब्रह्म. ८.७५; लिग. २.५.६; म. व. १०६.३७-४०)। रामायण में, भगीरथ का पिता दिलीप (प्रथम), एवं रघु का पितामह दिलीप खट्वांग, ये दोनों एक ही माने गये हैं (वा. रा. वा. ४२)। किंतु वे दोनों अलग थे।

अपने पितामह सगर का उद्धार करने के लिये इसने गंगा पृथ्वी पर लाने को चाहा। उसके लिये इसने तीस हजार वर्षों तक तपस्या की। किंतु गंगा लाने से पहले ही इसकी मृत्यु हो गयी।

दिलीप खट्वांग—(सु. इ.) अयोध्या के सुविख्यात रघु राजा का पितामह। महाभारत में, खट्वांग नाम से इसका निर्देश प्राप्त है। रामायण में, भगीरथ का पिता दिलीप (प्रथम), एवं यह, ये दोनों एक ही माने गये हैं। किंतु वे दोनों अलग थे।

भगवत एवं विष्णुमत में विश्वसह का, ब्रह्मांड एवं वायुमत में विश्वमहत् का, तथा मत्स्यमत में यह रघु का पुत्र था। कई ग्रंथों में, इसे दुल्लिदुह का पुत्र भी कहा गया है (ब्रह्म. ८.८४; ह. वं. १.१५)। मत्स्य, पद्म, एवं अग्नि पुराणों में दी गयी इसकी वंशावलि में एकवाक्यता नहीं है।

पितृ की कन्या यशोदा इसकी माता थी। इसकी पत्नी का नाम सुदक्षिणा था। इसका पुरोहित शंडिल्य था। दिलीप खट्वांग के प्रशंसा पर एक पुरातन श्लोक भी उपलब्ध है (ब्रह्मांड. ३.१०.९०-९२; ह. वं. १.१८; वायु. ७३.८४)।

काफी दिनों तक दिलीप राजा को पुत्र नहीं हुआ। पुत्रप्राप्ति के हेतु से, यह वसिष्ठ के आश्रम में गया। राजा के द्वारा विनति की जाने पर, वसिष्ठ ने इसे पुत्र न होने का कारण बताया। वसिष्ठ बोले, "एक बार तुम इन्द्र के पास गये थे। उसी समय तुम्हारी पत्नी ऋतुस्नात होने का वृत्त तुम्हें ज्ञात हुआ। तुम तुरंत घर लौटे। मार्ग में कश्यपवृक्ष के नीचे कामधेनु खड़ी थी। उसे नमस्कार किये बिना ही तुम निकल आये। उस लापरवाही के कारण उसने तुम्हें शाप दिया, 'मेरे संतति की सेवा किये बिना तुम्हें संतति नहीं होगी'। उस शाप से छुटकारा पाने के लिये मेरे आश्रम में स्थित कामधेनुकन्या नंदिनी की तुम सेवा करो। तुम्हें पुत्र होगा।" इसी समय वहाँ नंदिनी आई। उसे दिखा कर वसिष्ठ ने कहा, 'तुम्हारी कार्यसिद्धि शीघ्र ही होगी'।

इसने धेनु को चराने के लिये, अरण्य में ले जाने का क्रम शुरू किया। एक दिन मायावी सिंह निर्माण कर, नंदिनी ने इसकी परीक्षा ली। उस समय स्वदेहार्पण कर, धेनुरक्षण करने की सिद्धता इसने दिखायी। तब धेनु प्रसन्न हो कर, इसे रघु नामक विख्यात पुत्र हुआ (पद्म. उ. २०२-२०३)। यह कथा कालिदास के रघुवंश में पूर्णतः दी गयी है।

यह पृथ्वी पर का कुवेर था। इसने सैकड़ों यज्ञ किये थे। प्रत्येक यज्ञ में लाखों ब्राह्मण रहते थे। इसने सब पृथ्वी ब्राह्मणों को दान दी थी। इसीके यज्ञों के कारण, यज्ञ-प्रक्रिया निश्चित हुई। इसके यज्ञ में सोने का यूप था। इसका रथ पानी में डूबता नहीं था। दिलीप के घर पर 'वेदश्रेण', 'धनुष की रस्सी का टंकार', 'खाओ', 'पियो', एवं 'उपमोग लो', इन पांच शब्दों का उपयोग निरंतर होता था (म. द्रो. परि. १. क. ८. पंक्ति. ५१०

से आगे; शां. २९.६४-७२)। सम्राट तथा चक्रवर्ति के नाते इसका निर्देश किया जाता था।

३. (सो. कुरु.) एक पौरव राजा। भागवत मत में ऋश्य का, एवं विष्णु, मत्स्य तथा वायु के मत में भीमसेन का पुत्र।

दिलीचय—भविष्य मत में मनुवंशी दशरथ का पुत्र।

दिवंजय—उदारधी एवं भद्रा का पुत्र।

दिवस्पति—रौच्य मन्वन्तर में होने वाला इंद्र।

दिवस्पर्श—तुषित देवों में से एक।

दिवाकर—गरुड का पुत्र (म. उ. १९.१४)।

२. (स. इ. भविष्य.) भागवतमत में मानु राजा का पुत्र। इसका पुत्र सहदेव। वायुमत में यह प्रतिव्यूह का पुत्र, एवं मत्स्य तथा विष्णुमत में प्रतिव्योम का पुत्र था। इसके शासनकाल में 'मत्स्यपुराण' का निर्माण हुआ (मत्स्य. २७१)। पौरव राजा अधिसोमकृष्ण तथा मगध देश का राजा सेनजित् इसके समकालीन थे।

३. (सो.) भविष्य मत में आतिथ्यवर्धन का पुत्र।

दिवावष्ट—कश्यपकुल का गोत्रकार ऋषिगण। दिवावस एवं दिवावसिष्ठ ये इसीके पाठभेद हैं।

दिवावष्टाश्व—कश्यपकुल का गोत्रकार।

दिवावस—दिवावष्ट देखिये।

दिवावसिष्ठ—दिवावष्ट देखिये।

दिवि—सत्य देवों में से एक।

दिविरथ—(सो. अनु.) भागवतमत में खनपान का पुत्र, एवं रथ राजा का पिता। विष्णुमत में यह पार का एवं वायु तथा मत्स्य मत में दधिवाहन का पुत्र था। इसका पुत्र धर्मरथ। महाभारत में इसे दधिवाहन का पुत्र कह कर, इसका पुत्र अंग बताया है (म. शां. ४९.२०२)।

दिवीलक—(आंभ्र. भविष्य.) विष्णुमत में लंबोदर का पुत्र। इसका नाम अपीतक एवं विवीलक भी प्राप्त है।

दिवोदास—(सो. काश्य.) भागवत तथा विष्णुमत में भीमरथपुत्र तथा विष्णुमत में अभिरथपुत्र। ब्रह्म तथा वायु मत में यह भीमरथ का ही दूसरा नाम है। महाभारत में इसे काशीपति सौदेव कहा गया है। इसका पितामह हर्यश्व हो कर, पिता सुदेव अथवा भीमरथ था। इसका पराजय हैहय वीतहव्य ने किया। तब यह भरद्वाज ऋषि की शरण में गया।

इसके द्वारा पुत्रकामेष्टियज्ञ करने पर, इसे प्रतर्दन वा अप्रतिरथ नामक शत्रुनाशक पुत्र हुआ। उसने हैहय वीतहव्यों का पराभव किया तथा वीतहव्य को भृगु के

आश्रम में छिपने के लिये मजबूर कर दिया (म. अनु. ८ कुं.)। प्रतर्दन के साथ भारद्वाज ऋषि का स्नेहसंबंध था (क. सं. २१.१०)।

इसकी पत्नी का नाम द्यपदती। इसे द्यपदती से ही प्रतर्दन हुआ था (ब्रह्म. ११.४०.४८)। प्रतर्दन, अप्रतिरथ, शत्रुजित्, ऋतध्वज, तथा कुवलाश्व ये सारे एक ही हैं (भा. ९.१७. ६)।

इसे ययातिकन्या माधवी से प्रतर्दन हुआ, यह कथा महाभारत में दी गयी है (म. उ. ११५.१.१५)। किंतु कालदृष्टि से वह विसंगत अतएव असंभव मातृम पडती है। यह यमसभा का एक सदस्य था (म. स. ८.११)। 'भास्करसंहिता' के 'विक्रिसादर्पणतंत्र' का यह कर्ता है (ब्रह्मवै. २.१६)। धन्वन्तरि के आगे दिवोदास शब्द जोड़ा जाता है। वह शब्द वंशदर्शक होगा।

२. (सो. काश्य.) काशी देश का राजा। यह सुदेव का पुत्र तथा अष्टारथ का पिता था। परंतु ब्रह्म तथा महाभारत के सिवा अन्य स्थान की बंशावलि में, इसकी जानकारी भी नहीं मिलती।

हैहयवंशों से तुलना करने पर काश्यवंश में दो दिवोदासों को मान्यता देना अनिवार्य प्रतीत होता है। इसने भद्रश्रेण्य से काशी जीत ली, एवं वहाँ अपना राज्य स्थापित किया। किंतु निकुंभ के शाप से, इसे काशी छोड़ कर, गोमती तीर पर दूसरी राजधानी स्थापित करनी पड़ी। अतः हैहय तथा काश्य घरानों के झगड़ा कुल काल के लिये स्थगित हुआ। किंतु भद्रश्रेण्य का पुत्र दुर्मद बड़ा होने पर, उसने दिवोदास का पराभव किया (म. अनु. ३०; ब्रह्म. ११.४८; १३.५४; ह. वं. १.२९; ब्रह्मांड. ३.६७; वायु. ९३.२६)। इसकी पत्नी का नाम सुयशा था। उससे इसे अष्टारथ नामक पुत्र हुआ था (ब्रह्म. १३.३१)।

दिवोदास अतिथिग्व—(सो. नील.) वैदिक युग का एक प्रमुख राजा। यह वच्यश्व का पुत्र, एवं भरतवंशा-स्तर्गत वृन्सु लोगों का सुविख्यात राजा सुदास का पिता (वा पितामह) था। 'अतिथिग्व' का शब्दशः अर्थ है, 'अतिथि का सम्मान करनेवाला'। यह उपाधि दिवोदास एवं सुदास को लगायी जाती थी (ऋ. १.५.१.६; ७.१९. ८)। 'अतिथिग्व' की उपपत्ति सायणाचार्य ने 'अतिथिगु का पुत्र' ऐसी दी है (ऋ. १०.४८.८)।

सरस्वती की कृपा से वच्यश्व को दिवोदास पुत्ररूप में प्राप्त हुआ (ऋ. ६.३१.१)। यह भरतों में से एक

था (ऋ. ६.१६.४; ५.१९), एवं दुर्वशी तथा यदुओं का विरोधी था (ऋ. ७.१९.८; ९.६१.२)। संभवतः इसके पुत्र का नाम 'पिब्वन' हो कर, सुदास इतका पौत्र था। बन्ध्यश्व, दिवोदास, पिब्वन, तथा सुदास इस प्रकार इनका वंशक्रम होगा।

इसका महान् शत्रु शंबर एक दास एवं किसी पर्वतीय जाति का प्रधान था (ऋ. १.१३०.७; २.१२.११; ६.२६.५; ७.१८.२०)। इसने शंबर का कई बार पराभव किया (ऋ. १.५१.६; शंबर देखिये)।

अपने पिता बन्ध्याश्व के समान, यह भी अग्नि का उपासक था (ऋ. ६.१६.५; १९)। इस लिये अग्नि को दैवोदास अग्नि नाम पड़ा (ऋ. ८.१०.२)। परच्छेप के सूक्त में इसका संबंध दिव्यता है (ऋ. १.१३०.१०)। भरद्वाज के छठवें मंडल में इसके काफी महत्त्वपूर्ण उल्लेख हैं। इसका पुरोहित भरद्वाज था। आयु एवं कुस्त के साथ, यह इंद्र के हाथों से पराजित हुआ था। किंतु अदारसूत नामक ऋषि के प्रभाव से, यह पुनः वैभवसंपन्न हुआ (पं. ब्रा. १.५.३.७)। भरद्वाज के साथ इसका संबंध पुराणादि में भी बार बार आया है। यह तथा दिवोदास नील वंशज एक ही होंगे।

बन्ध्यश्व को मेनका से एक कन्या तथा एक पुत्र हुए। उनमें से पुत्र का नाम दिवोदास, एवं कन्या का नाम अहल्या था। अहल्या शरद्वत गौतम को दी गयी थी (ह. वं. १.३२)। भागवतमत में यह सुदल का, विष्णु मत में बन्ध्यश्व का, वायुमत में बन्ध्यश्व का, तथा मत्स्यमत में विन्ध्याश्व का पुत्र था। पुराणों में इसका पुत्र सिद्धयु दिया गया है। परंतु वेदों में (ऋ. ८.६८.१७) इसका पुत्र इंद्रोत दिया है। ऋक्ष अश्वमेध, पूतकटु, प्रस्तोक तथा सौमरि ये लोग इसके समकालीन थे।

५. भृगुकुल का एक ऋषि, प्रवर तथा मंत्रकार (भृगु देखिये)। यह प्रथम क्षत्रिय था। बाद में ब्राह्मण बना (मत्स्य. १९५.४२; परच्छेप दैवावसि देखिये)।

५. दिव्यादेवी देखिये।

दिवोदास भैमसेनी—अरुणि का समकालीन (क. सं. ७. १. ८)।

दिव्य—(दो. क्रोडु.) वायुमत में शारद्वत का पुत्र। भागवत एवं मत्स्यमत में इसे अंधक, एवं वायुमत में इसे दिव्यांधक कहा गया है (अंधक २. देखिये)।

प्रा. च. ३५]

दिव्यजायु—पुरूरवा के उर्वशी से उत्पन्न आठ पुत्रों में छठवाँ (पद्म. सू. १२)।

दिव्यमान—पारावत देवों में से एक।

दिव्या—हिरण्यकशिपु की कन्या तथा भृगु की पत्नी।

दिव्यादेवी—प्लक्षद्वीप के दिवोदास राजा की कन्या। दिवोदास ने इसका विवाह रूपदेश का चित्रसेन राजा से निश्चित किया। विवाहविधि शुरू होते ही चित्रसेन मृत हो गया। तत्र विद्वान् ब्राह्मणों के कथनानुसार, इसने रूपसेन से विवाह किया। परंतु वह भी मृत हो गया। इस प्रकार इसके इकौस पति मृत हो गये।

बाद में मंत्रियों की सलाह के अनुसार, इसका स्वयंवर रचा गया। किंतु स्वयंवर के लिये आये हुए सारे राजा, आपस में लड़ कर मर गये। इस अनर्थपरंपरा से इस को अत्यंत दुःख हुआ, एवं यह अरण्य में चली गई (पद्म. सू. ८५)।

एक बार उज्वल नामक शुक्र प्लक्षद्वीप में आया। शोकमग्न दिव्यादेवी को उसने 'अशून्यशयन' व्रत बताया। मनोभाव से यह व्रत चार वर्षों तक करने पर, विष्णु ने इसे दर्शन दिया, तथा वह इसे विष्णुलोक ले गया (पद्म. सू. ८८)।

पूर्वजन्म में यह चित्रा नामक वैश्य की स्त्री थी (चित्रा ४. देखिये)।

दिव्यांधक—दिव्य देखिये।

दिष्ट—(स. दिष्ट.) वैवस्वत मनु का पुत्र। इसका वंशु नामाग (भा. ८. १३; नभग देखिये)।

दीक्षित—कण्व का आर्यावती से उत्पन्न पुत्र। यह द्विविद का भाई था (भवि. प्रति. ४. २१)।

दीननाथ—एक विष्णु भक्त राजा। यह द्वापर युग में पैदा हुआ। इसे संतान न थी। पुत्रप्राप्ति के लिये इसने गालव ऋषि की सलाह से, नरयज्ञ करने का निश्चय किया। योग्य मनुष्यों को ढूँढ़ खाने के लिये इसने दूत नियुक्त किये।

इन दूतों को, दशपुर नगरी के कृष्णदेव ब्राह्मण के सुशीला से उत्पन्न तीन पुत्र, योग्य दिखाई पड़े। ब्राह्मण एक भी पुत्र देने के लिये तयार नहीं था। चार लाख मुहरे दे कर, दूत जवरदस्ती उसका ज्येष्ठ पुत्र ले जाने लगे। ब्राह्मण ने प्रार्थना की 'उसे छोड़ दो। मैं स्वयं आ रहा हूँ'। पश्चात् ब्राह्मण के छोटे पुत्र को ले जाने की कोशिश दूतों ने की, तो माता ने उन्हे रोक लिया। तब

मँझले पुत्र को वे जवरन ले गये। मातापिता ने अत्यधिक शोक किया।

बाद में सेवकों का पड़ाव विश्वामित्र के आश्रम में पड़ा। तब विश्वामित्र ने ब्राह्मण के मँझले पुत्र के बदले, खुद को नरमेघ के लिये बलि के रूप में प्रस्तुत किया। परंतु नौकरों ने वह मान्य नहीं किया। पश्चात् विश्वामित्र राजा के पास आया। विश्वामित्र ने राजा से कहा, 'पूर्णा-हुति दे कर भी पुत्रप्राप्ति हो सकती है'। यह सुनते ही उस पुत्र को छोड़ कर, राजा ने यज्ञ किया। उस ब्राह्मणपुत्र की जान बचाने के पुण्य से, विश्वामित्र को स्वर्गप्राप्त, तथा दीननाथ को पुत्रप्राप्ति हुई (पद्म. ब्र. १२; शुनः-शेष देखिये)।

दीप्तलोचन—(सो. कुम्.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र। भीम ने इच्छा बध किया (म. भी. ९२.२६)।

दीप्ति—अमिताभ देवों में से एक।

दीप्तिनेतु—एकतावर्णि मनु का एक पुत्र।

दीप्तिवत्—सावर्णि मन्वन्तर के सप्तपिपों में से एक।

दीप्तिभेधस्—सुमेधस् देवों में से एक।

दीर्घ—मगध देश का एक क्षत्रिय। पांडु ने इसका बध किया (म. आ. १०५.१०)।

दीर्घजिह्व—दनुपुत्र। यह दानवों में से एक था।

२. एक द्विपैला सर्प। शेष के कोष में एक मृतसंजीवक मणि था। उसके संरक्षकों में से यह एक था। (जै. अ. ३८)।

दीर्घजिह्वा—अशोकवन की एक राक्षसी।

दीर्घतपस्—(सो. काव्य.) राष्ट्र का पुत्र (दीर्घतमस् २. देखिये)। ब्रह्मपुराण में इसे काशेय का पुत्र बताया गया है (ब्रह्म. १३.६४)।

२. जंबुद्वीप के महेंद्र पर्वत पर रहने वाला एक तपस्वी। इसे पुण्य तथा पावन नामक दो पुत्र थे। उम्र के तीर्थे वर्ष में, पत्नी के सह इसकी मृत्यु हुई। उस कारण इसका पुत्र पावन शोकग्रस्त हुआ। तब पुण्य ने उसे उद्देश्य कर उसका मोहनिरसन किया (सो. वा. ५. १९-२१)। 'तृष्णाक्षय' के हेतु से यह कथा बताई गयी है।

३. एक व्यास। इसका पुत्र शुक्र (पद्म. पा. ७२)।

दीर्घतमस् कामतेय औचथ्य—अंगिरसकुल का एक सुकतद्रष्टा ऋषि (ऋ. १. १४०-१६४)। यह ममता एवं उचथ्य ऋषि का पुत्र था। इसलिये इसे

'मामतेय' एवं 'औचथ्य' ये उपनाम प्राप्त हुए (ऋ. १. १५२. ६; ४. ४. १३)। 'दीर्घतमस्' इसीका ही पाठभेद है (वायु. ५९; ९८; १०२)।

बृहस्पति के शाप के कारण, यह जन्म के समय अंधा था (बृहदे. ४. ११. १५, २१-२५; ऋ. १. १४०-१६४)। इसलिये इसे 'दीर्घतमस्' (= दीर्घ अंधकार) नाम प्राप्त हुआ। यह सौ वर्षों तक जीवित रहा (ऋ. १. १५८. ६; सां. आ. २. १७)। सौ मात्र की वृद्धि उमर में इसने 'केदाव' परंपर की उत्पत्ती की। उससे इसे दृष्टि प्राप्त हुई, एवं लोग इसे 'गौतम' (= उत्तम नैशवाला) कहने लगे (म. आ. ३२८)। 'सुरभि' ने सुखने पर इसे दृष्टि प्राप्त हुई, ऐसी भी कथा उपलब्ध है (वायु. ९१)।

'भरत' राजाओं का यह पुरोहित था। भरत अंत्येति को इसने 'एन्द्र अभिरिक' किया था (छे. ब्रा. ८. २३)। यह अभिरिक यमुना के किनारे प्रपन्न हुआ (मा. ९. २०. २५; भरत देखिये)। एक मंत्र गायक के रूप में, इसका उल्लेख ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १. १५८. १)।

एक बृद्ध एके का भी व्यक्ति के रूप में, इसकी कई कथाएँ ऋग्वेद में उपलब्ध हैं। इस बृद्ध को सम्राज्य-सम्राज्य इनके नौकर प्रत हो गये। यह मर जाये, इस हेतु से उन्होंने इसे अग्नि में डाल दिया, पानी में गला दिया। अन्त में, त्रैतन नामक दाम ने इसका शिर ध्वस्त किया, एवं इसकी छाती फोड़ दी। फिर भी, प्रत्येक समय अश्वियों ने इसकी रक्षा की (ऋ. १. १५८. ४-६; बृहदे. ४. ११. १४)। बद्ध में इसे नदी में फेंक दिया गया। नदी में बहता हुआ, यह अंग देवा के किनारे जा लगा। वहाँ इसने उशिञ्ज नामक आरुक्न्या में विवाह किया। उशिञ्ज से इसे पक्षीवत् आदि पुत्र हुए (बृहदे. ४. २३)।

पुराणों में यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। दीर्घतमस् को गर्भावस्था में ही सारे वेद, देशान तथा शास्त्र पूर्णतया अवगत थे (वायु. ९९. ३६-७८; ३७; मत्स्य. ४०; म. आ. ३२८-४७-४८)। विद्या के बल पर इसने प्रद्वेशी नामक रूपसंपन्न स्त्री में विवाह किया। उससे इसे गौतमादि अनेक पुत्र हुए। अपने कुल की अधिक वृद्धि हो, इस हेतु से इसने कामधेनु के पुत्रों से 'गो-रति' विद्या सीखी। उस विद्या के कारण, दिन के उजाले में, सब लोगों के समक्ष, यह ख्रौसमागम करने

लगा। आश्रम के अन्य ऋषियों को यह पसंद नहीं आया। वे इसे आश्रम से भगा देने को उद्युक्त हो गये।

इसकी पत्नी प्रद्वेषी को पुत्रप्राप्ति हो गयी थी, एवं अंधा पति उसे अच्छा भी न लगता था। वह इसे भगाने के लिये अन्य आश्रमवासियों को सहाय करने लगी। वह कहने लगी, 'दीर्घतमस् से तलाक ले कर मैं दूसरा पति कर लूंगी'।

पर छोड़ने के लिये उद्युक्त हुए अपने पत्नी को कायू में रखने के लिये, इन्होंने धर्मशास्त्रकार नाते से पत्नीधर्म के नये नियम प्रस्थापित किये। वे नियम इस प्रकार थे:— 'जन्मभर स्त्री को एक ही पति रहेगा, वही उसका ईश्वर होगा। पति जीवित रहे या मृत, दूसरा पति स्त्री नहीं कर सकेगी। अगर स्त्री ने दूसरा पति किया, तो वह पतित हो जावेगी। पति के विना रहनेवाली स्त्रियाँ भी पतित रहेंगी। उनके पास धन होने पर भी, उन पतिघ्न्य स्त्रियों का परपुरुषसंभोग तथा तज्जन्य संतति व्यर्थ, अकार्तिकर तथा निरास्पद ही होगी'।

बाद में प्रद्वेषी के कहने पर, इसके पुत्रों ने एक तख्ते पर इसे बांध कर, वह तख्ता गंगा में छोड़ दिया (म. आ. १८.१८)। मत्स्य के अनुसार दीर्घतमस् अपने जच्चे भाई शरद्वत् के आश्रम में रहता था। दीर्घतमस् अपने स्तुवा से विषयवासनायुक्त भाषाण बोलने लगा। यह सैराचारी वर्तन शरद्वत् को अच्छा न लग कर, उसने इसे आश्रम के बाहर निकाल दिया (मत्स्य. ४८)।

नदी में छोड़ा गया दीर्घतमस् ऋषि, बहते-बहते आनव देश के सीमा के समीप आया। उस देश का राजा बलि सहजभाव से घूमते घूमते वहाँ आया था। उसने इस ऋषि को बड़े सम्मान तथा आनंद से अपने अंतःपुर में रख लिया। तदनंतर बलि राजा ने सुदेष्णा नामक अपनी रानी को, संतति हेतु मन में रख कर, इस ऋषि की सेवा करने के लिये कहा। परंतु इसे अंध जान कर सुदेष्णा ने आप के ब्याज, अपने "औशीनरी" नामक शूद्रवर्णीय दासी को इसके पास भेजा। उससे इस ऋषि को कक्षीवत्, दीर्घश्रवस् आदि ग्यारह पुत्र हुए (म. स. १९.५)। वायुपुराण में इन पुत्रों में से 'कक्षीवत्' का नाम "काक्षीवत्" दिया है।

बाद में बलि एवं दीर्घतमस् इन दोनों में, नवजातपुत्र किस का है, इस बारे में वाद शुरू हुआ। दीर्घतमस् ने राजा को सुदेष्णा द्वारा की गयी चालबाजी बतायी। तब

ऋषि को शांत कर, तथा पत्नी को समझा कर, बलि ने फिर एक बार सुदेष्णा को दीर्घतमस् के पास भेज दिया। इससे उसे पाँच पुत्र उत्पन्न करवाये। उनके नाम अंग, वंग, पुंड्र, सुह्र तथा कल्लिया थे। इन्हें बालेय क्षत्र तथा बालेय ब्राह्मण कहते हैं (ह. वं. १.३१; विष्णु. ४.१८; भा. ९. २०; २३; ब्रह्म. १.३)।

बाद में काक्षीवानादि पुत्रों को ले कर, यह गिरिव्रज (मत्स्य. ४८), वा गिरिप्रज (वायु. ९९) गया। कक्षीवान को इसने उदक ऋषि के पास शिक्षाप्राप्ति के लिये भेजा (स्कन्द ३.१.१७-१८)।

महाभारत में, दीर्घतमस् ऋषि का निर्देश अनेक बार आया है। यह इन्द्रसभा में इन्द्र के मनोरंजन का काम करता था (म. स. ७.१०)। यह पश्चिम विशा के आश्रय में रहता था (म. अनु. १६५.६२)। इसे आशिज, औशिज, तथा असित कहा गया है (वायु. ९९ ४४; मत्स्य. ४८.८३)। उच्छिज इसका पितामह होने के कारण, इसका पैतृक नाम 'औशिज' होना संभवनीय है।

इसका पुत्र कक्षीवत् एवं उसके भाईओं का 'गौतम' यह पैतृक नामांतर कई जगह प्राप्त है (मत्स्य. ४८.५३; ८४)। गौतम, दीर्घतमस् का ही अन्य नाम था। इसके पशुदुल्य आचरण के कारण, इसे यह नाम मिला (वायु. ९९; ब्रह्मांड. ३.७४.३)। कई जगह, इसे गौतम भी कहा है (म. शां. ३.२८.५०; म. स. १९.५-७)। लो. तिलकजी ने ऋग्वेद के 'दीर्घतमस्' शब्द का अर्थ, 'दीर्घ दिन के बाद अस्तंत होनेवाला सूर्य', किया है (आर्यों का मूलस्थान पृ. १४६)।

कई ग्रंथों में, सुदेष्णा रानी की शूद्रा दासी का नाम 'उशिज्' बताया है। इसीलिये, उस शूद्रा से उत्पन्न, इसके कक्षीवत् एवं दीर्घश्रवस् ये पुत्र, 'औशिज' यह मातृक नाम से प्रसिद्ध हुए (दीर्घश्रवस् औशिज देखिये)। २. (सो. काश्य.) यह भागवत, विष्णु तथा वायु के मत में काशिराज राष्ट्र का पुत्र। इसे धन्वन्तरि नामक पुत्र था। वायु में दीर्घतमस् पाठभेद है।

दीर्घनीथ—एक वैदिक ऋषि। इंद्र ने इस को संपत्ति दी थी (ऋ. ८.५०.१०)।

दीर्घनेत्र—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १०२.४२)।

दीर्घप्रह्ला—दुर्योधनपत्नीय एक राजा (म. आ. ६.१. १५)।

दीर्घबाहु—(सू. इ.) खट्वांग (दिलीप द्वितीय) राजा का पुत्र। इसका पुत्र रघु (भा. १.१०.१)। मत्स्य तथा पद्मपुराण में यही अजयपुत्र के नाते उल्लिखित है। यह विष्णुभक्त था। इसे मदी पर विटा कर, खट्वांग आत्मस्वरूप में लीन हो गया। ब्रह्म, हरिवंश तथा शिवपुराण, 'दीर्घबाहु' को रघु का विशेषण मानते हैं। इसीलिये रघुवंश में 'दीर्घबाहु' का उल्लेख नहीं है। गण्ड पुराण में रघु का उल्लेख न हो कर केवल दीर्घबाहु का ही निर्देश है।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. भी. १२.२६)।

दीर्घयज्ञ—अयोध्या का राजा। राजसूय के समय, भीम ने इसे पराजित किया था (म. स. ३१.२)।

दीर्घरोमन्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दीर्घलोचन—(सो. कुरु.) भीमद्वारा मारा गया धृतराष्ट्र का पुत्र (म. भी. १२.२६)।

दीर्घश्रवस् औशिज—एक राजा। यह दीर्घतमस् एवं उशिज का पुत्र था (दीर्घतमस् मामतेय देखिये)। यहाँ इसे वणिज कहा गया है। इस पर अश्वियों ने क्रुपा की थी (ऋ. १.११२.११)। इस राजा को देश से निकाल दिया गया था। इसलिये यह मृत के कारण मर रहा था। एक साम गा कर इसने अन्न प्राप्त किया। (पं. ब्रा. १५.३.२५)। कश्चीवत् के साथ इसका निर्देश है।

दीर्घायु—एक क्षत्रिय। यह श्रुतायु का पुत्र था। भारतीय युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. ६८.२९)।

दीर्घिका—वीरशर्मन् की कन्या। यह बहुत ऊँची थी। शास्त्रों में लिखा है, 'ऊँची लड़की से व्याह करने वाला, छै माह में मर जाता है'। इस लिये इससे व्याह करने को कोई तयार नहीं होता था।

अच्छा पति मिले, इसलिये इसने तपश्चर्या शुरू की। तप करते करते यह वृद्ध हो गयी। पश्चात् एक कुष्ठ रोग पीडित वृद्ध गृहस्थ, इसके पास आया। उसकी दाँतें स्वीकार कर, इसने उससे विवाह किया। कालोत्तरांत पति ने इसे यात्रा करने का अपना विचार बताया। यह उसे कंधे पर ले कर चली। जाते जाते शक्ति पर चढ़ाये गये मांडव्य को, इसका धका लग गया। क्रुद्ध हो कर मांडव्य ने इसे शाप दिया। परंतु पातिव्रत्य प्रभाव से इस पर उस शाप का कुछ परिणाम नहीं हुआ (स्कंद. ६. १३५; मांडव्य देखिये)। शांडिली एवं यह एक ही रही होगी।

दुःशाल—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दुःशाला—धृतराष्ट्र की कन्या। यह त्रिपुराज जयद्रथ को विवाह में दी गयी थी (म. आ. १०८.१८)। इसका पुत्र सुरथ।

दुःशासन—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का द्वितीय पुत्र (म. आ. १०८.२)। यह दुर्बोधन की अनुमति से व्यवहार करता था, इसलिये उसने इसे धौतराज्य प्रदान किया था। यह पीडस्थ का अंशावतार था। इसने राज्ञाश्रयिण्यं तथा धनुर्विद्या की शिक्षा द्रोण से ली थी।

द्रौपदी स्वयंवर के समय, उपस्थित राजाओं में यह भी शामिल था (म. आ. १७७.१)। बाद में द्रौपदी-सहित पांडव द्यूत में हार गये। कर्णद्वारा कानफूसी मिलने पर, इसने भरी सभा में द्रौपदी का वस्त्रहरण किया। दृष्ट्वा की आराधना कर, द्रौपदी ने अपनी रक्षा की। इसी समय दुःशासन का वध कर, उसके रक्त का प्राशन करने की धोर प्रतिज्ञा भीमसेन ने की (म. स. ६१.४६)।

पांडव अज्ञातवास में थे। तब उन्हें ढूँढने के उद्देश से कौरवों ने, मत्स्य देश के विराट राजा की गीशालाओं का ध्वंस किया, तथा जवरदस्ती से उसकी गायों का हरण किया। इस हमले में दुःशासन शामिल था (म. वि. ३३.३)। अर्जुन ने विराटपुत्र उत्तर को सारथि बना कर, गोहरण कर के भागनेवाले कौरवोंका, पीछा किया। तब दुःशासन, विकर्ण, दुःसह तथा विदिशति नामक चार योद्धाओं ने महापुरुष अर्जुन पर एक साथ आक्रमण किया। दुःशासन ने, उत्तर को घायल किया अर्जुन के वस्त्रभाग पर प्रहार कर उसे जग्मी किया। परंतु आखिर अर्जुन ने अपने बाणों से इसे घायल किया, एवं इसे भगा दिया (म. वि. ५६.२१-२२)।

भारतीययुद्ध के प्रथम दिन के संग्राम में, नकुल के साथ इसका द्वंद्वयुद्ध हुआ था (म. भी. ४५.२९-२४)। पश्चात् भीष्मद्वारा शकटी की गयी सेना को भेद कर, भीम ने दुःशासनादि योद्धाओं पर आक्रमण किया। तब दुःशासन ने उसे घेर लिया (म. भी. ७३.१०)। भीष्मार्जुन युद्ध के समय शिखंडिन को सामने ले कर अर्जुन युद्ध करने लगा। यह देखते ही भीष्म के संरक्षण के लिये, दुःशासन ने अर्जुन पर आक्रमण किया। दोनों में युद्ध हो कर, दुःशासन घायल हुआ (म. भी. १०६. ४३)।

पश्चात् सामने की कौरव सेना का पंक्ति तोड़ कर, अर्जुन उन्हें घायल करने लगा। उस समय पुनः दुःशासन तथा अर्जुन में युद्ध हो कर उसमें भी दुःशासन का पराभव हुआ (म. द्रो. ६५.५)।

अभिमन्यु का पराक्रम देख कर, द्रोण द्वारा की गई उसकी प्रशंसा, दुर्योधन से सही नहीं गई। उसने दुःशासनादि वीरों को उस पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। दुःशासन तथा अभिमन्यु में काफी देर तक तुसुल युद्ध हुआ। अभिमन्यु के प्रबल बाणों से, व्यथित हो कर दुःशासन रथ में गिर पड़ा। इसे प्रबल मूच्छा आई। इसका सारथि इसे रण से दूर ले गया (म. द्रो. ३९. ११-१२)।

बाद में रणामण में, सात्यकि से मिलते ही घबरा कर दुःशासन भाग आया, तब द्रोण ने इसका अत्यंत उपहास किया (म. द्रो. ९८)। वास्तविक देखा जावे, तो सात्यकि के साथ हुए युद्ध में ही दुःशासन मर सकता था, परंतु द्रौपदी वस्त्रहरण के समय की, भीम की प्रतिज्ञा का स्मरण हो कर, उसने दुःशासन का वध नहीं किया (म. द्रो. ६६. २६)।

इस प्रकार घनघोर भारतीययुद्ध चला ही था। उस समय भीम ने दुःशासन पर आक्रमण किया। दोनों का घमासान युद्ध हो कर, दुःशासन ने भीम पर साक्षात् मृत्यु के समान, प्रचंड शक्ति छोड़ी। परंतु भीम ने अपनी गदा यूँ फेंकी जिससे उस दारुण शक्ति का विदारण हो कर, वह गदा दुःशासन के मस्तक पर जा गिरी। तत्काल दुःशासन भूमि पर गिर पड़ा। उसके मस्तक से रश्मिरत्नवा होने लगा। तत्काल भीम इसपर झपटा। 'द्रौपदी वस्त्रहरण,' 'केशग्रहण' तथा वनगमन के समय, 'गौरी' कहने का स्मरण उसे दे कर, एवं अपनी प्रतिज्ञा का भी स्मरण दिला कर भीम ने इसके गले पर पैर रखा। इसके दोनों हाथ पकड़े। पास ही में खड़े दुर्योधन, कर्ण, कृपाचार्य अश्वत्थामा आदि वीरों की ओर देख कर भीम ने क्रोध से कहा, 'अगर किसी में कामर्त्य हो तो वह इसकी रक्षा करे। मेरी प्रतिज्ञा के अनुसार, अब मैं इसका रक्तप्राशन करनेवाला हूँ। इतना कह कर उसने दुःशासन का वक्षविदारण किया, तथा सब के सामने इसका रक्त प्राशन करने लगा। वक्षस्थलमेद होने के कारण, दुःशासन की तत्काल मृत्यु हो गई (म. क. ६१)।

दुःशासन की मृत्यु के बाद, गांधारी ने श्रीकृष्ण के पास, अत्यंत शोक व्यक्त किया। रोते रोते वह बोली जिस

प्रकार सिंह के द्वारा कोई प्रचंड हाथी मारा जाये, उस प्रकार भीम द्वारा मारा गया मेरा दुःशासन अपने प्रचंड बाहु फैला कर सोया है (म. द्रो. १८. १९. २०)।

दुःशासन को दौःशासनि नामक एक अत्यंत पराक्रमी पुत्र था। भारतीययुद्ध में दौःशासनि तथा अभिमन्यु का प्रचंड युद्ध हुआ। अनेक वीरों से लड़ कर थका हुआ अभिमन्यु दौःशासनि के एक गदाप्रहार से वेहोम हो गया (म. द्रो. ४८. १२)। बाद में दौःशासनि को द्रौपदी पुत्र ने मारा (म. क. ४. १४)।

यह सब शस्त्रास्त्रविद्या, सारथ्यकर्म तथा शत्रुविद्या में निपुण, अत्यंत शूर एवं पराक्रमी था (म. उ. १६२. १९)। परंतु दुष्टबुद्धि एवं मत्सरी होने के कारण, इसका नाश हुआ।

२. खड्गनाहु के पुत्र का सेनापति। एक बार गर्व से एक उन्मत्त हाथी पर यह बैठा। उस हाथी ने पैरों के नीचे कुचल कर इसे मार डाला।

बाद में यह हाथी हुआ। सिंहल देश के नृप ने इसे खड्गनाहु को दिया। उसने इसे एक कवि को दिया। उसने इसे मालव राजा को देच दिया। उसने इसका अच्छा पालनपोषण किया। फिर भी यह मृतप्रायसा होने लगा। तब स्वयं राजा इसके पास आया। हाथी ने मनुष्यवाणी से उसे कहा, 'गीता के १७ वें अध्याय का पाठ करनेवाला कोई व्यक्ति मेरे पास आयेगा, तो मेरी मानसिक पीड़ा नष्ट होगी,'।

इतना कह कर इसने अपना पूर्ववृत्तान्त राजा को निवेदन किया। राजा ने उररोक्त प्रकार का ब्राह्मण लाकर उसके द्वारा अभिमंत्रित जल हाथी पर डलवाया। जल के गिरते ही यह दिव्यदेह धारण कर स्वर्ग गया (पद्म. उ. १९१)।

दुःशीम—एक दाता। तान्व ने अपने सूक्त में इसका उद्धार कह कर उल्लेख किया है (ऋ. १०.९३.१४)।

दुःधन्त—(सो. पू.क.) दुष्प्रयत्न देखिये।

दुःसह—धृतराष्ट्र के शत पुत्रों में से एक। यह भीम के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ११०.२९; ३५)।

२. लक्ष्मी की भगिनी 'अलक्ष्मी' का पति (लिंग. १.६)।

३. (ए. इ.) पुरुकुत्स का पुत्र। इसकी पत्नी का नाम नर्मदा।

दुःस्वभाव—दुर्बुद्धि देखिये।

दुर्धर्म—सुहोत्र नामक शिवावतार का शिष्य।

दुंदुभि—मयासुर का पुत्र। मयासुर को हेमा नामक अप्सरा से दो पुत्र उत्पन्न हुए। उनमें से यह कनिष्ठ था (वा. रा. उ. १२.१३)।

दीर्घ तपस्या कर के इन्होंने सहस्रावधि हाथियों का बल प्राप्त किया तथा महिष का रूप धारण किया। पश्चात् इसने समुद्र को युद्ध का आह्वान दिया। समुद्र ने इसे हिमालय के पास भेजा। हिमालय ने इसे वाल्मि के पास भेजा। वाल्मि के साथ हुए युद्ध में, दुंदुभि का पराजय हुआ। यह एक गुफा में जा छिपा। वहाँ वाल्मि ने इसका वध किया।

मृत्यु के पश्चात् इसका कलेवर वाल्मि ने दूर फेंका। वह मत्स्य ऋषि के आश्रम में जा गिरा। आश्रम की सारी वस्तुएँ रक्तंजित हो गयीं। वृक्ष भी टूट गये। तब मत्स्य ने क्रुद्ध हो कर वाल्मि को शाप दिया, 'मेरे आश्रम में आते ही तुम मृत हो जावोगे'। तब से वह आश्रम वाल्मि के लिये अगम्य हो कर, सुग्रीव का वासस्थान बन गया।

राम का सुग्रीव से दोस्ती का सुदृक हो गया। पश्चात् अपना सामर्थ्य दर्शाने के लिये, दुंदुभि के शरीर का कंकाल, राम ने अपने अंगूठे से दस योजन तक दूर उड़ा दिया (वा. रा. किं. ११.७-६५)। दुंदुभि ने सोलह हजार स्त्रियों को कैद में रखा था। उन स्त्रियों की मुक्ति राम ने की। एक लाख स्त्रियों से एकदम विवाह करने का इसका संकल्प था (आ. रा. राच्य. १.११)।

२. एक गंधर्वी। ब्रह्मदेव की आज्ञानुसार अयोध्या में यह कैकेयी की मथरा नामक दासी बनी (म. व. २५. १.१०)।

३. (सो. यदु. कुकुर.) अनुपुत्र अंधक का पुत्र। इसका पुत्र अरिशीत।

४. कश्यप तथा दनु का पुत्र।

५. सुतार नामक शिवावतार का शिष्य।

दुंदुभिनिहाद—एक राक्षसी। यह दिति का पुत्र, एवं प्रह्लाद का मामा था। देव-असुर युद्ध में, देवों का विजय एवं असुरों का पराभव होने लगा। देवों के इस विजय के लिये, ब्राह्मण ही उत्तरदायी है यह सोच कर, इसने ब्राह्मणों का संहार प्रारंभ किया। इस कार्य के लिये, काशी जैसे क्षेत्रों पर अपना अधिकार भी जमाया।

पश्चात् काशीवासी ब्राह्मणों को शंकर ने अभय दिया, 'मेरा स्मरण कर, जो ब्राह्मण दुंदुभिनिहाद का विरोध करेंगे, वे सदा अजेय रहेंगे। बाद में शिवशक्ति से इस

राक्षस का नाश हुआ। काशी के 'व्याघ्रेश्वरमाहात्म्य' में यह कथा दी गयी है (शिव. रुद्र. पु. ५८)।

दुरतिक्रम—शिवावतार मुहूर्त का शिष्य।

दुराचार—एक दुराचारी ब्राह्मण। वैताल आदि की पीड़ा से यह मत्त था। यज्ञ-कोटितीर्थ, जात्रालतीर्थ, एवं वैकटाचलतीर्थ पर जाने के कारण, यह मुक्त हुआ (स्कंद. २. १. २. ५; ३. १. ३६)।

दुराध्वन—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दुराधर—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दुरासुद—मयासुर का पुत्र। इसने शिव से पंचाक्षरी विद्या प्राप्त कर, उरुका जाप किया। उग जाप से संतुष्ट हो कर, शंकर ने इन्हे दण्डित कर दिया। उस वर के प्रभाव से, प्रमत्त हो कर यह सत्र को कष्ट देने लगा। शीघ्र ही शक्तिपुत्र दुँडि ने इसका वध किया। (गणेश. १. ३८-४२)।

दुरितक्षय—(सो. पूरु.) महावीर्य राजा का पुत्र। विष्णु मत में उरुक्षय इसीका नामांतर है। त्रय्यारुणि, कवि, एवं पुष्करारुणि नामक इसके तीन पुत्र थे (भा. ९. २१.१९)। तपस्या के कारण, वे सब ब्राह्मण हो गए।

दुर्गा—हिरण्यक्ष के वंश के रुद्र दैत्य का पुत्र।

दुर्गम—एक दैत्य। दुर्गादेवी ने इसका वध किया (स्कंद. १. २. ६५)।

२. रुद्र दैत्य का पुत्र। इसने सब ब्राह्मणों तथा ऋषियों के आधारस्तंभ, वेदों का नाश किया। इस कारण नित्य नैमित्तिक कर्म बंद हो गये। सर्वत्र हाहाकार मच गया। तब ऋतुमुंजादेवी ने इसका वध किया (शिव. उ. ५०)।

३. (सो. दुह्यु.) विष्णु मत में धृत का पुत्र। दुर्गम, दुर्मेतस् एवं विदुष इसके नामांतर हैं।

४. रेवती १. एवं विनाश देखिये।

दुर्गमभूत—(सो. कंडु.) विष्णु मत में वसुदेव का रोहिणी से उत्पन्न पुत्र।

दुर्गह—सावण के मत में पुरुकुत्स का पिता। पुरुकुत्स को दौंसह यह वैतुक नाम प्रयुक्त है (वा. ४. ४२. ८; पुरुकुत्स देखिये)।

दुर्गा—विश्वव्यापक आदिमाया का एक नाम। इसे त्रिगुणात्मिका एवं देवी भी कहते हैं (देवी देखिये)।

दुर्जय—दनुपुत्र दानवों में से एक।

२. (सु. इ.) दशार्थ शास्त्र में से सुवीर का पुत्र। इसे दुर्योधन नामक एक पुत्र था (म. अनु. २.१२)।

३. एक रुद्रगण ।

४. खर राक्षस के बारह अमात्यों में से एक ।

५. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र । भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १०८.३८) ।

६. पांडवपक्षीय एक राजा । कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०.४६) ।

७. सुपतीक का पुत्र । इसने सत्र देश जीते । इसने हेतुप्रहेतु की कन्या से विवाह किया (हेतुप्रहेतु देखिये) । गौरमुख मुनि के पास चिंतामणि नामक एक मणि था । उसे प्राप्त करने के प्रयत्न में, यह मारा गया । जिस स्थान पर इसकी मृत्यु हुई, उस स्थान को 'नैमिषारण्य' कहते हैं (बराह. ११) ।

दुर्जयामित्रकर्षण—(सो. सह.) अनंत का पुत्र । (सुपतीक १. देखिये) ।

दुर्गम—(स्वा. प्रिय.) विक्रमशील राजा का पुत्र । इसकी माता का नाम कालिंदी था । प्रनुच नामक ऋषि की कन्या रेवती इसकी पत्नी थी ।

२. दुर्गम का नामांतर (दुर्गम ३. देखिये) ।

३. (सो. सह.) रुद्रश्रेण्य का पुत्र । कई ग्रंथों में, इसे भद्रश्रेण्य का पुत्र कह कर, इसका नाम दुर्मद बताया है (ह. वं. १.२९.६९; ब्रह्म. ११.४८) ।

पद्म मत में यह भद्रसेन का पुत्र था । इसका पुत्र धनक (पद्म. सू. १२) ।

हैहय एवं काश्यप कुलों की परस्पर स्पर्धा में भद्रश्रेण्य के अन्य पुत्रों का दिवोदास ने वध किया । किंतु अनजान होने से इसे छोड़ दिया । कालोपरांत इसने दिवोदास को पराजित कर, अपने पिता के वध का बदला लिया ।

४. गोदावरी के तट पर प्रतिष्ठान नगर में रहनेवाला एक ब्राह्मण । यह किसी भी व्यक्ति से दान लेता था । इसलिये इसे नरक प्राप्त हुआ ।

५. विश्वावसु गंधर्व का पुत्र । एक बार कैलास में बसिष्ठ, अत्रि आदि ऋषि संकर की उपासना कर रहे थे । उस वक्त, अपनी सैंकड़ों पत्नियों के साथ यह वहाँ आया, तथा पास के 'हालास्यतीर्थ' में नग्नस्थिति में स्नान करने लगा । उसकी यह बदतमीजी को देख कर बसिष्ठ ने इसे शाप दिया, 'तुम राक्षस बनोगे' । परंतु इसकी पत्नियों द्वारा प्रार्थना की जाने पर बसिष्ठ ने कहा, 'सोल्ह वर्ष के बाद तुम्हारा पति शाप से मुक्त हो कर तुम्हें वापस मिलेगा । बाद में राक्षस हो कर यह गालव ऋषि को खाने दौंटा । तब भगवान् विष्णु के सुदर्शन चक्र

के कारण इसकी मृत्यु हो गयी । पश्चात् इसका उद्धार हुआ । एवं विमान में बैठ कर यह गंधर्व लोक में गया (स्कन्द. ३.१.४) ।

दुर्दमन—(सो. कुरु.) भविष्य तथा भागवत के मतानुसार शतानीक का पुत्र । इसके लिये उदयन तथा उद्यान नामांतर भी प्राप्त है ।

दुर्धर—रावण का एक प्रधान (वा. रा. सं. ४९. ११) ।

२. रामसेना का एक वानर । इसके पिता का नाम वसु (वा. रा. यु. ३०.३३) ।

३. महिषासुर के पक्ष का एक राजा ।

४. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र । भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. ११०.२९; ३५) ।

दुर्धर्ष—हनूमन् द्वारा मारा गया रावण का सेनापति (वा. रा. सं. ४६) ।

२. राम के द्वारा मारा गया एक रावणपक्षीय राक्षस (वा. रा. यु. ९. २१) ।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र ।

४. हिरण्यशक के पक्ष का एक असुर । यम ने इसका वध किया (पद्म. सू. ७०) ।

दुर्धर—अंगदेश के राजा मायावर्म का पुत्र (भवि. प्रति. ३.३१) ।

दुर्धुद्धि—धृतराष्ट्र नाम का पुत्र । इसने अपने पिता के कहने पर, अपने बंधु की सहायता से, मृत हुए अर्जुन के सिर का हरण किया (जै. अ. ३९.६६-७६) ।

दुर्धुद्धि जनमेजय—जनमेजय पारिशित २. देखिये ।

दुर्मद—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र । भीम ने इसका वध किया । (म. द्रो. १३०-३४) ।

२. दुर्मद ३. देखिये ।

३. वसुदेव का पौरवी से उत्पन्न पुत्र ।

४. मयासुर का पुत्र । युद्ध के लिये वालिन् को इसने आह्वान दिया था । इस आह्वान को स्वीकार कर वालिन् ने इसे पराजित किया । पश्चात् यह भागने लगा । वालिन् ने इसका पीछा करने पर यह एक गुफा में जा कर छिप गया (आ. रा. सार. ८) ।

दुर्मर्ष—एक असुर । तनुद्रमथन के वक्त इसने देवताओं से युद्ध किया था (भा. ८. १०. ३३) ।

दुर्मर्षण—(सो. क्रोष्ट्र.) वसुदेव का बंधु। संजय को यह राष्ट्रपाली नामक भार्या से उत्पन्न हुआ था। (भा. ९. २४. ४२)।

२. (सो. कुरु.) भीम के द्वारा मारा गया धृतराष्ट्र का एक पुत्र (म. श. २५. ७)।

दुर्मित्र—(भविष्य.) कलिद्युग का एक राजा। यह बाह्यिक के बाद हुए पुष्पमित्र राजा का पुत्र था (भा. १२. १. ३४)।

२. (किल्किला. भविष्य.) मांगवत मतानुसार किल्किला नगरी का एक राजा। विष्णु मतानुसार इसे पट्टमित्र, तथा वायु एवं ब्रह्मांड मतानुसार पट्टमित्र कहते थे।

दुर्मित्र कौत्स—सूक्तद्रष्टा। इसके सूक्त में, यह कुत्सपुत्र होने का निर्देश है (ऋ. १०. १०५. ११)।

दुर्मुख—कश्यप एवं लक्षा का पुत्र।

२. कद्रु का पुत्र एवं एक सर्प।

३. सुहोत्र नामक शिवावतार का शिष्य।

४. राम के पक्ष का एक वानर (वा. रा. यु. ३०. २३)।

५. वरुण की सभा का एक राक्षस सभासद (म. च. ९. १३)।

६. हिरण्यक्ष के पक्ष का एक राक्षस। यम ने दुर्गप का वध किया। इसलिये इसने चिढ़ कर यम पर आक्रमण किया किंतु यम ने खड्ग से इसका वध किया (पद्म. स. ६८. १८)।

७. रावण के पक्ष का एक राक्षस (वा. रा. यु. ९. ३)।

८. महिषासुर के पक्ष का एक असुर। महिषासुर के कोणाध्यक्ष ताम्र ने इसे द्राक्कल के साथ देवी से युद्ध करने के लिये भेजा। उस युद्ध में, देवी ने इसका वध किया (दे. भा. ५. १३)। पूर्वजन्म में यह पौलस्त्यों में से एक था (म. आ. ६१. ८३)।

९. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। यह द्रौपदी-स्वयंवर में गया था (म. आ. १७७. १)। सहदेव ने इसे पराजित किया (म. द्रो. १०९. २०)। इसे यशोधर नामक पुत्र था (म. द्रो. १५९. ४)। 'भांडारकर' महाभारत में, इसके नाम का यशोधन घाटभेद उपलब्ध है।

दुर्मुख पांचाल—पांचाल देश का राजा। इसको बृह-दुम्भ वामदेव ऋषि ने महाभिषेक किया तथा महाभिषेक का रहस्य बताया। इसी कारण यह सम्राट् हुआ (ऐ.

ब्रा. ८. २३)। यह युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित रहा होगा (म. स. ४. १९)। इसका पुत्र जनमेजय। भारतीय-युद्ध में वह युधिष्ठिर के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. १३३-३६)।

दुर्योधन—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र तथा गांधारी के सौ पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र एवं 'भारतीय-युद्ध' का सूत्र-चालक। व्यास के महाभारत में एक 'खलनायक' के रूप में दुर्योधन की व्यक्तिरेखा चित्रांकित की गयी है। स्वजनों की हर एक वस्तु पर, पापी नजर डालने-वाला, लोभी, मत्सरी एवं मूढ़ राजा के रूप में इसका चरित्र महाभारत में दर्शाया गया है। किंतु दुर्योधन का यह चरित्रचित्रण एकांगी एवं इसके अन्य गुणों पर अन्याय करनेवाला है। यह उत्तम विद्याभंडित, रथी, सारथी, शरचरित्रविद्या में निष्णात, एवं उत्तम राज्य-शासक था (म. उ. १६२. १९)। गदायुद्ध में भी यह अत्यंत प्रवीण था (म. आ. १३१)। यह एक सच्चा मित्र भी था। कर्ण, अश्वत्थामा, शल्य आदि अपने मित्रों-के लिये इसने अपना सब कुछ न्योछावर किया, एवं उनकी आमरण मैत्री संपादित की। एक राजा के नाते यह प्रजाहितदक्ष एवं आदर्श था, यों प्रवृत्ति स्वयं युधिष्ठिर ने ही है।

अतीव राज्यबुद्धि एवं पांडवों के प्रति मत्सर के कारण, आमरण इसने पांडवों का द्वेष किया। इसके यही द्वेष का पर्यवसान आखिर भारतीय-युद्ध जैसे दारुण युद्ध में हुआ। उस युद्ध में इसका सारे संबंधियों के साथ सर्वनाश हुआ। भारतीय-युद्ध के प्रारंभ में कृष्ण ने अर्जुन को गीता सुनाई, एवं गीता से स्फूर्ति पा कर अर्जुन ने उस युद्ध में विजय प्राप्त किया। इस लिये अर्जुन को ही लोग भारतीययुद्ध का नायक समझते हैं। किंतु महाभारत में हरेक व्यक्ति से मित्रता वा शत्रुता के नाते संबंध रखनेवाला दुर्योधन यह एक ही सामर्थ्यवाली व्यक्ति है। दुर्मम महत्वाकांक्षा, संकुचित मनोवृत्ति, क्रूरता, एवं विनाश प्रवृत्ति इन स्वभावगुणों के कारण, दुर्योधन भारतीययुद्ध एवं महाभारत का खलनायक तथा नायक इन दो रूपों में एक ही साथ प्रतीत होता है।

जन्म—इसके जन्म के बारे में, महाभारत में दी गयी सारी आख्यायिकाएँ हेतुतः वक्रोक्तिपूर्ण, एवं इसके बारे में पाठकों का मन कष्टप्रित कर देनेवाली है। यह कांड के अंश से उत्पन्न हुआ था। इसलिये इसके कारण सौरि शत्रियों का नाश हुआ (म. आ. ६१. ८०)। जन्म होने

ही दुर्योधन रोया। इसका रुदन गधे के चिल्लाने जैसा था। इसके रोते ही गधे, गीध, सियार, कौंभे, आदि चिल्लाने लगे। तूफान चलने लगा, एवं दसों दिशाओं में खलबली मच गई। धृतराष्ट्र अत्यंत भयभीत हुआ। उसने भीष्म, विदुर, अनेक ब्राह्मणों तथा आतों को बुला कर कहा, 'राजपुत्र युधिष्ठिर दुर्योधन से बड़ा है। वह हमारे वंश का विस्तार भी करेगा। इस पर हमारा कुछ आक्षेप नहीं है। किंतु उसके बाद दुर्योधन राजा बनना चाहिये। हमारी इच्छानुसार वह राजा बनेगा, या नहीं, एवं बाद में क्या होगा, यह बताइये'।

धृतराष्ट्र ने यह कहते ही, क्रूर तथा हिंस पशु फिर से चिल्लाने लगे। चारों ओर से भयंकर अपशकुन हुए। उपस्थित ब्राह्मण एवं विदुर ने धृतराष्ट्र से कहा, 'इस पुत्र के जन्मकाल में, मैं कि इतने अपशकुन हुए हैं, इससे स्पष्ट है कि, यह कुलक्षय करेगा। इसलिये इसका त्याग करना ही उचित है। तुम्हारे कुल का क्षेम एवं संसार का कल्याण यदि तुम चाहते हो, तो इस पुत्र का त्याग करो' (म. आ. १०७)।

अस्त्रविद्या—दुर्योधन युधिष्ठिर से छोटा था। किंतु दुर्योधन एवं भीम का जन्म एक ही दिन हुआ था। वनपर्व में कौरव एवं पांडव इकट्ठे खेलते थे। धनुर्विद्या, अस्त्रविद्या आदि की शिक्षा, इन सब भाईयों ने मिलजुल के द्रोणाचार्य से ली थी (म. आ. १२२-१२३)। गदा-युद्ध की शिक्षा इसने बलराम से प्राप्त की थी (भा. १० १५. २६; विष्णु. ४.१३)।

पांडवों को विषप्रयोग—पांडवों का युद्धकौशल्य एवं दिने व दिन बढ़ता हुआ सामर्थ्य देख कर, कौरवों, एवं विशेष कर इसके मन में; उनके प्रति मत्सर उत्पन्न हुआ। हर एक जगह पांडवों के आगे जाने की ईर्ष्या इसके मन में उत्पन्न हुई। कौरव-पांडवों के गुरु द्रोणाचार्य ने गुरुदक्षणा के रूप में, दुपद को रणांगण में जीत कर लाने की आज्ञा की। पांडवों को फजीहत करने के हेतु दुर्योधन ने सर्व प्रथम दुपद को जीतने का प्रयत्न किया। किंतु दुर्योधन का यह प्रयत्न विफल हुआ, एवं कौरवों की दुर्दशा हुई।

धनुर्विद्या एवं अस्त्रविद्या में पांडव कौरवों से कतिपय श्रेष्ठ हैं, यह जान कर उनके नाश के लिये, यह नये-नये पद्धतय रचने लगा। सारा राज्य मुझे ही प्राप्त हो, इस लोभ के कारण यह पांडवों के नाश के नये-नये

मार्ग ढूँढता रहा। इसका मामा शकुनि एवं इसका मित्र कर्ण, उस कार्य में इसकी सहायता करने लगे।

एक बार भीम शहर के बाहर बाग में सोया था। उस वक्त, उसे गंगा नदी में फेंक कर, एवं अर्जुन तथा युधिष्ठिर को कैद कर, राज्य हासिल करने की तरकीब इसने सोची। गंगा नदी के किनारे प्रमाणकोटि तीर्थ पर इसने जलक्रीड़ा समारोह का आयोजन किया। सारे पांडवों को इसने उस समारोह के लिये बुलाया। भीम अत्यंत भुक्त्वद्द है, यह जान कर, उसके तयार अन्न में कालकूट विष इसने मिलाया। एवं बड़े ही प्रेम से वह अन्न भीम को खिलाया। बाद में कौरव पांडव सारे मिल कर जलक्रीड़ा करने गये। वहाँ जलविहार से भीम थक गया, तथा गंगा किनारे आराम से सो गया। वहाँ के ठंडे वायु ने तथा विषप्रभाव ने उसे निश्चेष्ट बना दिया। यह अवसर पा कर, दुर्योधन ने उसे गंगा नदी में ढकेल दिया (म. आ. १२७)। इस तरह, भीमरूपी कंटक अपनी राह में से दूर हुआ, यह सोच कर दुर्योधन को अत्यंत आनंद हुआ। किंतु भीम पुनः वापस आया, एवं इसकी यह अधम कृति, उसने बंधुओं को बताई। इस प्रकार भीम का वध करने का दुर्योधन का पद्धतय विफल रहा। फिर भी, भीम के सारथी को इसने गल्ल घोट कर मार ही दिया (म. आ. १२८)।

लाक्षागृहदाह—भीम का वध करने का यह प्रयत्न असफल होने के पश्चात्, पांडव एवं उनकी माता कुंती को जला कर मार डालने का व्यूह इसने रचा। इसने वारणावत-तीर्थ में, अपने मित्र पुरोचन द्वारा एक लाक्षागृह बनवाया। पश्चात्, धृतराष्ट्र के द्वारा पांडवों को, तीर्थयात्रा के निमित्त वारणावत भिजवाने की व्यवस्था इसने की। इसने बनाये लाक्षागृह में पांडव जल कर मरनेवाले ही थे, किंतु विदुर की सहायता से वे बच गये। उनकी जगह, अपने पाँच पुत्रों सहित एक भीलनी जल कर मृत हो गई। उनकी छः लांसें देख कर दुर्योधन अत्यंत आनंदित हुआ। लाक्षागृह की इस दुर्घटना का दोष लोगों ने कौरवों पर ही लगाया। इस प्राणसंकट से पांडव बच गये, यह ज्ञात होते ही दुर्योधन अत्यंत शरमाया (म. आ. १२९-१३८)। यह वृत्त धृतराष्ट्र को ज्ञात होने पर, उसने पांडवों को इन्द्रप्रस्थ में ला रखा। धृतराष्ट्र का यह कृत्य दुर्योधन को विल्कुल अच्छा नहीं लगा।

विवाह—द्रौपदीस्वयंवर में दुर्योधन उपस्थित था (म. आ. १७७. १)। दुर्योधन ने, कलिंग देश के राजा

चित्रांगद की कन्या का, स्वयंवर में हरण किया (म. शां. ४. १२-१३)। काशिराज की कन्या दुर्योधन की स्त्री थी (म. आ. परि. १. क्र. १०७, पंक्ति १)। इसकी पत्नी का नाम भानुमती था (स्कंद. ६. ७३-७४)। यह बलराम का भी दामाद था (मार्क. ६. ३)। इसका पुत्र लक्ष्मण तथा कन्या लक्ष्मणा।

अर्धराज्य-प्रदान—धृतराष्ट्र ने पांडवों को आधा राज्य दे कर इन्द्रप्रस्थ में रखा। वहाँ उन्होंने अगणित संपत्ति प्राप्त की। युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ किया। उसमें दुर्योधन धृतराष्ट्रसहित आया था। दुर्योधन को कोशागार का अधिकार दिया था। पांडव फजीहत हो इस हेतु से, इसने कोशागार में से अपरिमित द्रव्य खर्च किया परंतु द्रव्य की कमी नहीं पड़ी। इसके अतिरिक्त पांडवों की मयसभा देख कर, इसे पांडवों के तथा उनकी संपत्ति के प्रति, बड़ी ही ईर्ष्या उत्पन्न हुई (म. आ. १२९. ९-१०)। मयसभा की रचना में पानी की जगह जमीन, तथा जमीन की जगह पानी दीखता था। इससे इसकी फजीहत हो कर, अन्य स्त्रियों के साथ द्रौपदी भी हँसी। इससे इसे अत्यंत विषाद हुआ। यह हस्तिनापुर चला गया (म. स. परि. १. क्र. ३२. पंक्ति ११; अध्याय ४३)। पांडवों की संपत्ति देख कर दुर्योधन को बुरा लगा। तब धृतराष्ट्र ने इसे शील का महत्त्व निवेदित किया (म. शां. १२४)। परंतु उससे इसे कुछ फायदा नहीं हुआ।

घूतक्रीडा—पांडवों की संपत्ति हरण करने के हेतु से, इसने कपटशूत में पारंगत शकुनि मामा की अनुमति से, युधिष्ठिर को शूत खेलने के लिये आवाहन किया। शूत में पांडवों का सर्वस्व इसने जीत लिया। द्रौपदी की इसने भरी सभा में अवहेलना करवाई। इसने भीष्म-द्रोण आदि के प्रतिकार की भी पर्वाह नहीं की। शूत में हार जाने के कारण, पांडवों को बारह वर्ष वनवास तथा एक वर्ष अज्ञातवास का स्वीकार करना पड़ा। इसके अतिरिक्त अज्ञातवास में प्रकट होने पर, पुनः बारह वर्षों तक वनवास करना पड़ेगा, यह शर्त भी उन पर डाली गयी। इस तरह, पांडवों को वनवास में भेज कर, यह उनके राज्य का उपभोग लेने लगा।

पांडवों के वनवास गमन के पश्चात्, कीर्तिप्राप्ति की इच्छा से, इसने नीति से राज्य किया। किंतु पांडव कहीं हैं, क्या करते हैं आदि के बारे में गुप्त खोज यह हमेशा करता रहता था।

घोषयात्रा—एकवार, पांडव द्वैतवन में हैं, यह ज्ञात होते ही, घोषयात्रा के निमित्त यह वहाँ गया। इसके साथ इसके अनुयायी कर्ण, दुःशासन आदि थे। गोधन के अवलोकन के बाद, यह द्वैतवन के समीप, सरोवर में क्रीड़ा करने के लिये गया। उस वन में, पांडवों के संरक्षण के लिये, इन्द्र ने चित्रसेन गंधर्व को रखा था। चित्रसेन वही सरोवर में अपनी स्त्रियों के साथ जल क्रीड़ा कर रहा था। उसने दुर्योधन से वहाँ आने के लिये मनाई की। दुर्योधन ने उसे ही वहाँ से चले जाने के लिये कहा। इससे क्रोधित हो कर उन दोनों में युद्ध हुआ। उसमें चित्रसेन ने कर्ण को मगा दिया तथा दुर्योधन को बद्ध कर दिया।

एक सैनिक के द्वारा यह वृत्त पांडवों को मादूम हुआ। तब भीम को बड़ा अच्छा लगा। परंतु युधिष्ठिर ने पांडवों को उपदेश दे कर दुर्योधन को छोड़वाया। अर्जुन ने चित्रसेन का पराभव किया तथा दुर्योधन को छोड़ाया। धर्मराज को वंदन कर, मानहानि से क्रोधित हो कर, यह हस्तिनापुर वापस गया।

हस्तिनापुर वापस आते ही, इसके मित्र कर्ण ने इसका अभिनेदन किया। किंतु दुर्योधन ने उसे सारी घटना सुनाई तथा कहा कि, 'यह मुक्तता अर्जुन द्वारा हो गई है।' इसीलिये प्रायोपवेशन कर, प्राणत्याग करने का निश्चय इसने किया। अपने भाई दुःशासन को बुला कर, शकुनि तथा कर्ण की सहायता से, राज्य करने के लिये इसने उसे कहा। कर्ण तथा शकुनि ने इसे बहुत समझाया परंतु इसका निश्चय नहीं बदला। इसने बंस्कल परिधान किये तथा दर्भासन पर यह बैठ गया। 'आथर्व मंत्र' कह कर इसने होमहवन शुरु किया। इतने में इसने एक स्वप्न देखा। उस स्वप्न में इसे दिखा कि, इसका सारा कौरवपरिवार एवं अनुयायी दैव ही है। पश्चात् एक राक्षसी की सहायता से, यह पाताल में गया। वहाँ दैवों ने आशीर्वाद दे कर इसे वापस भेज दिया। हस्तिनापुर आने के पश्चात्, भीष्म ने इसे पांडवों से संख्य करने के लिये कहा; परंतु इसने उसका उपहास किया (म. व. २३७-२४१)।

वैष्णवयज्ञ—इसके बाद, दुर्योधन ने कौरवों की ओर से, कर्ण को दिग्विजय के लिये भेजा। उसके आने के बाद, दुर्योधन ने राजसूय यज्ञ करने का निश्चय किया। परंतु पुरोहितों ने कहा, 'यह यज्ञ युधिष्ठिर द्वारा किया गया है, अतः तुम न कर सकोगे।' तब दुर्योधन ने 'वैष्णवयज्ञ' किया तथा खिजलाने के हेतु, पांडवों को यज्ञ का निमंत्रण

दिया। उस पर युधिष्ठिर ने आनंद प्रदर्शित कर कहा, 'तेरह वर्ष पूर्ण होने के पहले हम नहीं आ सकते' (म. व. २४१-२४३)।

द्रौपदी सखपरीक्षा—पांडवों का नाश करने की ही इच्छा दुर्योधन के मन में हमेशा रहती थी। एक बार अपने 'अयुत' नामक शिष्यपरिवार के साथ दुर्वास ऋषि इसके पास आया। इसने दीर्घकाल तक दुर्वास का कठिन सेवा की। संतुष्ट हो कर दुर्वास ने इसे वर माँगने के लिये कहा। तब कर्म, द्यकुनि आदि की सलाह में इसने वर माँगा, 'जिस प्रकार आप यहाँ अतिथि बन कर आये हैं, उसी प्रकार शिष्यों सह आठ पांडवों के पास काम्यकवन में जाँचें तथा उनका भोजन होने के बाद, द्रौपदी से अन्न माँग कर उसे व्रत करें। द्रौपदी अन्न न दे सके, तो उसे शाप दे' यह चाल दुर्वास को अच्छी नहीं लगी, परंतु निरुपाय हो कर उसने इस मान्यता दी। पश्चात् पांडवों के पास जा कर, दुर्वास ने अन्न की याचना की। द्रौपदी के द्वारा यह माँग पूरी होने के बाद, दुर्वास के शाप से पांडव दच मरे (दुर्वास देखिये)।

विराटनगरी में—बारह वर्ष वनवास के बाद, विराट के घर अज्ञातवास करने के लिये पांडव गये। दुर्योधन को काचकवच का समाचार मिला (म. वि. २९.२७)। इसको शंका आई, 'चाहे जो हो, पांडव विराट के घर ही होंगे। इस समय यदि उन्हें ढूँढा गया, तो उन्हें पुनः बारह वर्षों तक वनवास में रहना पड़ेगा'। पांडवों को ढूँढने के हेतु, विराट का शोधन हरण करने का वहाना इसने सोचा, एवं उस काम के लिये इसने सुशर्मा को भेज दिया। परंतु वहाँ सुशर्मा का पराभव हुआ। बाद में भीष्मादिकों को साथ ले कर, इसने उत्तर दिशा में विराट नगरी पर आक्रमण किया। उस समय भी यह पराजित हुआ।

संजयदौत्य—इस प्रकार जो भी उपाय इसने किये, सब निष्फल हो कर पांडव प्रकट हुए तथा उपप्लव्य नगर में रहने लगे। यथान्याय आधा राज्य हमें मिले, इस हेतु से, उन्होंने ने द्रुपद राजा के पुरोहित को धृतराष्ट्र के पास भेजा। परंतु उसका कुछ उपयोग नहीं हुआ। उल्टे धृतराष्ट्र ने ही संजय को युधिष्ठिर के पास भेजा। संजय ने धृतराष्ट्र का संदेश पांडवों को बताया, 'तुम पांडव धर्मात्मा हो। इसलिये हिसारूप युद्ध न करते हुए भिक्षा माँग कर कहीं भी स्वस्थ चित्त से वास करो। भिक्षा से

उपजीविका करना क्षत्रियों के लिये निन्द्य है। ऐसा यदि तुम सोचते हो, तो क्षत्रियधर्म से तुम कृष्ण या द्रुपद के दरबार में रह सको हो। कृष्ण तुम्हारा मित्र है। तथा द्रुपद तुम्हारा श्वशुर है। उसके पास रहने पर वे तुम्हें ना नहीं करेंगे। इसलिये दो में से एक मार्ग का स्वीकार कर राज्यविभाग न माँग कर, चुनचान रहो,' (म. उ. २७)। संजय का यह भाषण सुन कर युधिष्ठिर को अत्यंत आश्चर्य हुआ। उसने कृष्ण को धृतराष्ट्र के पास भेजा (म. उ. ७०)। फिर भी उसका कुछ उपयोग न हो कर युद्ध के सिवा पांडवों को कोई चारा नहीं रहा। पांडव तथा दुर्योधन सेनाएँ इकट्ठी करने लगे। मद्रदेश का राजा शल्य, पांडवों के पक्ष में जाना चाहता था। बड़ी युक्ति से दुर्योधन ने उसे अपने पक्ष में ले लिया (म. उ. ८०.२३)। कृष्ण की सहायता प्राप्त करने के लिये, दुर्योधन स्वयं द्वारका गया था। अर्जुन तथा यह कृष्ण के यहाँ एक ही साथ पहुँचे। अर्जुन ने स्वयं कृष्ण तथा दुर्योधन ने समस्त यादव सेना, अपने लिये कृष्ण से माँग ली (म. उ. ७.१९-२०)। बाद में दुर्योधन कृतवर्मा के पास गया। उसने एक अश्वौहिणी सेना इसे दी (म. उ. ७.२९; १९.१७)।

कृष्णदौत्य—दुर्योधन को युद्ध से परावृत्त करने के लिये कृष्ण (म. उ. ९३), परशुराम (म. उ. ९४.३), कृपाचार्य (म. श. ३), द्रोण (म. उ. १३७.२२), भीष्म (म. भी. ११६.४६) तथा अश्वत्थामा (म. क. ६४.२०) ने प्रयत्न किये; परंतु उसका कुछ उपयोग नहीं हुआ। कृष्ण ने भी उसे काफी उपदेश किया। परंतु कुछ उपयोग न हो कर, इसने कृष्ण का केवल उपहास किया। इस कारण कृष्ण ने इसे शाप दिया (म. उ. ९५)।

पांडवों की ओर से, दौत्य करने के लिये कृष्ण हस्तिनापुर में आया। उस समय, दुर्योधन ने कृष्ण को भोजन के लिये बुलाया। किंतु कृष्ण ने उसे अस्वीकार कर दिया (म. उ. ८९.३२)। पश्चात् धृतराष्ट्र के दरबार में इसने कृष्ण से कहा, सुई के अग्र पर रहेगी, इतनी भी भूमि हम पांडवों को नहीं देंगे (म. उ. १२५.२७)। इतना कह कर भरी सभा से यह अपने बंधु तथा अनुयायियों सहित चला गया (म. उ. १२६.२४-२७)। कृष्णदौत्य के समय कृष्ण को कैद करने का पड्यंत्र इसने रचा था, किंतु वह असफल हो कर पुनः इसकी फजीहत हुई।

भारतीययुद्ध—इस प्रकार युद्ध प्रारंभ हुआ। कौरव-पक्ष का पहला सेनापति भीष्म था। उसके बाद, अश्वत्थामा तक अनेक सेनापति हुए परंतु उनके होते हुए भी दुर्योधन का अनेक बार पराजय ही हुआ।

प्रमुख योद्धाओं का रण में पतन होने के बाद, दुर्योधन अत्यंत भयभीत हुआ (म. श. २८, २४)। अन्त में 'जलस्तंभन विद्या' के योग से यह द्वैपायन सरोवर के जल में छिप कर बैठ गया (म. श. २९, ७)। यह वृत्त पांडवों को शत हुआ, तब वे वहाँ आये। उस समय दुर्योधन बाहर नहीं आता था, इसलिये युधिष्ठिर ने इसके साथ कठोर भाषण किया (म. श. ३०)।

मृत्यु—दुर्योधन बड़ा मानी तथा जिद्दी था। युधिष्ठिर के कहने पर द्वैपायन हृद से यह बाहर आया। गदायुद्ध की तय्यारी होने लगी। युधिष्ठिर ने इसे उदार भाव से कहा, 'पांडवों में से किसी एक के साथ तुम युद्ध करो। उस युद्ध में तुम्हारा जय होने पर, तुम्हारा राज्य तुम्हें वापस देने का आश्वासन हम देते हैं'। नकुल एवं सहदेव से गदायुद्ध कर के, उनका पराजय करना इसके लिये आसान था। फिर भी इसने तुल्यबल भीम को ही युद्ध के लिये आवाहन किया। आखिर भीम ने गदायुद्ध के नियम तोड़ कर इस पर गदाप्रहार किया एवं इसका वध किया (म. श. ३३)।

भीम ने गदा युद्ध के नियम तोड़ कर इसकी वायी जाँघ गदाप्रहार से छिन्नभिन्न कर दी। गदायुद्ध का सर्वमान्य संकेत है कि, नामि के नीचे कभी भी प्रहार नहीं किया जाता। फिर भी गदायुद्ध में दुर्योधन का पराजय अशक्य देख कर जवा पर गदाप्रहार करने का इशारा कृष्ण ने भीम को किया। उस इशारे के अनुसार गदा प्रहार कर के भीम ने दुर्योधन की शायी जाँघ तोड़ डाली। यह अधर्म देख कर बलराम भड़क उठा। यह घटना मार्गशीर्ष वदि अमावस्या के दिन दोपहर में हुई (भारत-सावित्री)।

दुर्योधन का मनोगत—मृत्यु के पहले, कृष्ण एवं दुर्योधन में जो संवाद हुआ, उससे दुर्योधन का व्यक्तित्व, मनोगत एवं मनोव्यथाओं पर गहरा प्रकाश पड़ता है। महाभारत के शल्यपर्व में दिया गया यह संवाद, दुर्योधन-चरित्र की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

मृत्युशय्या पर पड़े हुए दुर्योधन की ओर इशारा कर के कृष्ण ने कहा, 'इस दुर्योधन ने लोभवश, भीष्म द्रोण आदि का आशापालन नहीं किया। अपने पिता के

राज्य का उचित हिस्सा पांडवों द्वारा माँगने पर भी इसने नहीं दिया। यह अधम पुरुष न तो मित्र कहने के लायक है, न शत्रु। इस अवयवमग्न एवं काष्ठयत् मनुष्य के साथ बात करने में कुछ फायदा नहीं। जलो चले। बड़ी अच्छी बात हुई, जो यह पापी पुरुष अपने बांधवों के साथ नष्ट हुआ।

कृष्ण का यह निर्दामर्ग वक्तव्य सुन कर, दुर्योधन, यद्यपि खून से लथपथ तथा शक्तिहीन था, धुनों के बल धरती पर हाथ टेक कर, ऊपर उठल पड़ा। जैसा कोई पूँछहीन साँप उछल कर सीधा संझ हो जाय। अपनी द्वेषभरी नजर चारों ओर घुमा कर, वेदना की तीव्रता के बावजूद, यह ठोस एवं कड़े शब्दों में बोला, 'हे कंस के दास के पुत्र, तू बड़ा ही वेशरम है। भीम को जंघाघात करने को प्रेरित कर, तू ने मेरा अधर्म से वध किया है। धर्मयुद्ध करने वाले कुटुंब का तू ने ही कुटिलता से संहार किया है'।

'लज्जा एवं घृणा ये चीजें तेरे पास नहीं है। शिखंडी को आगे बढ़ा कर, पितामह भीष्म को तू ने मारा। अश्वत्थामावध की किंवदन्ती उड़ा कर, तू ने ही द्रोण का वध करवाया। अर्जुनवध के लिये कर्ण ने रखी हुई 'अमोघशक्ति' घटोत्कच पर लर्च करने के लिये कर्ण को, तू ने ही विवश किया। हस्ताविहीन भूरिश्रवा का वध तू ने ही करवाया। कर्ण के सर्पवाण से, रथ को जमीन में दबा कर, अर्जुन को तू ने ही बचाया। भूमि में फँसे हुए रथ चक्र को कर्ण बाहर निकाल ही रहा था, कि तू ने अधर्म से उस का वध करवाया। सीधे मार्ग से लड़ने पर, जय मिलना पांडवों के लिये असंभव था। इस कारण, अधर्म से लड़ने पर तू ने पांडवों को विवश किया'।

दुर्योधन ने आगे कहा, 'आयु भर, मैं ने दानधर्म किया, अत्युत्तम राज्य चलाया, धर्म एवं नीति के साथ आचरण किया। आखिर तक मैं ने धर्मयुद्ध किया, एवं धर्मयुद्ध करते करते ही मैं जा रहा हूँ। देवदुर्लभ तथा मानवों को अप्राप्य ऐश्वर्य का उपभोग मैं ले चुका हूँ। आज वैसा ही मृत्यु मुझे मिल रहा है। मैं सत्रांधव स्वर्ग सिधारूंगा। किंतु अधर्म पर चलनेवाले तुम, नरक में ही गमन करोगे'।

दुर्योधन के इस प्रकार कहने पर, उसपर आकाश से देवगंधर्वों द्वारा फुलों की बौछार हुई। स्वयं कृष्णार्जुन यह देख कर चकाचौंध हो गये, फिर साधारण जनता का क्या पूँछे? पश्चात् सारे लोग युद्धनिवासस्थान पुर वापस लौटे

पश्चात् संजय दुर्योधन को मिलने के लिये आया। उस समय भी अन्य समाचार के साथ, दुर्योधन ने अपने धर्माचरण की गवाही पुनः पुनः दी।

अश्वत्थामा खबर लेने पहुँचा। दुर्योधन ने उसे सैन्य दे कर, फिर यही बात दुहरायी। अपना धर्मपालन तथा पांडवों के अनीतिमय आचरण का कड़ा निषेध इसने व्यक्त किया। अश्वत्थामा क्रोधवश पांडवों के संहारार्थ निकला। लगभग पूरे संहार की खबर दुर्योधन को स्वयं अश्वत्थामा ने दी। उस पर दुर्योधन ने संतोष व्यक्त किया, तथा यह पंचतत्व में विलीन हुआ (म. सौ. ९)।

दुर्योधन के अग्निसंस्कार का निर्देश प्राप्त नहीं है। फिर भी यह स्वर्ग में देवताओं के साथ बैठा हुआ युधिष्ठिर ने प्रत्यक्ष देखा (म. स्वर्गा. १.४-५)।

कौटिल्य के मत में, बांधवों के साथ वैर करने से इसका नाश हुआ (कौटिल्य, अर्थशास्त्र. पृ. २२)।

२. (सू. इ.) दुर्जय राजा का पुत्र। इसकी पत्नी नर्मदा। इसे सुदर्शना नामक कन्या थी। वह अग्नि को विवाह में दी गयी थी (म. अनु. २.१२-५० कुं.)।

दुर्वे—(सो. कुरु. भविष्य.) वृषजय राजा का पुत्र। मत्स्यमत में उर्व तथा विष्णुमत में मृदु पाठभेद है।

२. बृध ७. देखिये।

दुर्वाक्षी—वसुदेव के भाई वृक की पत्नी।

दुर्वार—कुंडलनगराधिपति मुरथ राजा का पुत्र। मुरथ राजा ने राम का अश्वमेधीय अश्व पकड़ लिया। इस अश्व को छुड़ाने के लिये शत्रुघ्न ने मुरथ से युद्ध किया। उस युद्ध में यह शामिल था (पद्म. पा. ४९)।

दुर्वारण—जालंधर दैत्य का दूत। जालंधर की आज्ञानुसार, क्षीरसागर से देव-दैत्यों ने निकाले चौदह रत्न माँगने के लिये, यह इंद्र के पास गया। परंतु उन्हें देने से इन्कार कर, इंद्र ने जालंधर से युद्ध घोषित किया। पश्चात् देव दैत्यों का संग्राम हो कर, उस में यम के साथ इसका युद्ध हुआ (पद्म. उ. ५)। बाद में विष्णु या शंकर में से प्रथम किससे युद्ध किया जावे, यह समस्या जालंधर के सामने आई। तब इसने उसे सलाह दी, 'वह प्रथम शंकर से युद्ध करें' (पद्म. उ. १६)।

दुर्वासस् आत्रेय—बड़े उग्र तथा क्रोधी स्वभाव का एक ऋषि (मार्क. १७.९-१६, विष्णु. १.९.४.६)। इसीके नाम से, क्रोधी एवं दूसरे को सतानेवाले मनुष्य को 'दुर्वासस्' कहने की लोकरिति प्रचलित हो गयी है।

जन्मकथा—दुर्वासस् का जन्म किस प्रकार हुआ, इसकी तीन अलग कथाएँ प्राप्त हैं। वे इस प्रकार हैं:—

(१) ब्रह्माजी के मानसपुत्रों में से, दुर्वासस् एक था।

(२) अत्रि तथा अनश्या के तीन पुत्रों में से, दुर्वासस् एक था (भा. ४.१, विष्णु. १.२५)। पुत्रप्राप्ति के हेतु, अत्रि त्र्यक्षकुल पर्वत पर तपस्या करने गया। वहाँ उसने काफी दिनों तक तपस्या की। उस तपस्या के कारण, उसके मस्तक से प्रखर ज्वाला निकली, एवं त्रैलोक्य को त्रस्त करने लगी। पश्चात् ब्रह्मा, विष्णु, एवं शंकर अत्रि के पास आये। अत्रि का मनोरथ जान कर, अपने अंश से तीन तेजस्वी पुत्र होने का वर उन्होंने अत्रि को दिया। उस वर के कारण, अत्रि को ब्रह्मा के अंश से सोम (चंद्र), विष्णु के अंश से दत्त, एवं शंकर के अंश से दुर्वासस् ये तीन पुत्र हुए (शिव. शत. १९)।

(३) शंकर के अवतारों में से दुर्वासस् एक था (मार्क. १७.९-११; विष्णु. १.९.२)। शंकर ने त्रिपुर का नाश करने के लिये एक बाण छोड़ा। त्रिपुर का नाश करने के बाद, वह बाण छोटे बालक का रूप ले कर, शंकर की गोद में आ बैठा। उस बालक को ही दुर्वासस् नाम प्राप्त हुआ (म. अनु. १६०.१४-१५)।

पुराणों में इसे अत्रि ऋषि का पुत्र एवं दत्त आत्रेय का भाई कहा गया है (ब्रह्म. १.१७.२; अग्नि. २०.१२)। किंतु कौन से निश्चित काल में यह पैदा हुआ, यह कहना मुश्किल है। पौराणिक कथाओं में, कालदृष्टि से परस्परों से सुदूर माने गये अनेक राजाओं के साथ, इसका निर्देश प्राप्त है। उनके नाम इस प्रकार हैं:—(१) अंबरीष (भागवत. ९.४.३५), (२) श्वेतकि (म. आ. परि. १. ११८), (३) राम दशरथि (पद्म. उ. २७१.४४), (४) कुन्ती (म. आ. ६७), (५) कृष्ण (ह. वं. २९८-३०३), (६) द्रौपदी (म. व. परि. १ क्र. २५)।

इन निर्देशों से, प्रतीत होता है कि, नारद के समान दुर्वासस् भी तीनों लोक में अप्रतिबंध संचार करनेवाली एक अमर व्यक्तिरेखा थी। इंद्र से अंबरीष, राम एवं कृष्ण तक, तथा स्वर्ग से पाताल तक किसी भी समय वा स्थान, प्रकट हो कर, अपना विशिष्ट स्वभाव दुर्वासस् दिखाता है। कालिदास के 'शकुंतल' में भी, शकुंतल की संकट-परंपरा का कारण, दुर्वासस् का शाप ही बताया गया है। क्रुद्ध हो कर शाप देना, एवं प्रसन्न हो कर वरदान देना, यह दुर्वासस् के स्वभाव का स्थायिभाव था। इस कारण सारे लोग इससे डरते थे।

इसका स्वभाव बड़ा ही क्रोधी था। इसके क्रोध की अनेक कथाएँ पुराणों में दी गयी हैं। यह स्वयं कठोर व्रत का पालन करनेवाला तथा गूढ़ स्वभाव का था। इसके मन में क्या है, इसका पता यह किसी को नहीं लगाने देता था।

स्वरूपवर्णन—इसका वर्ण कुछ पिं-हरा तथा दाढ़ी बहुत ही लंबी थी। यह अत्यंत क्रुद्ध तथा पृथ्वी के अन्य किसी भी ऊँचे मनुष्य से अधिक ऊँचा था। यह हमेशा चिथड़े पहनता था। एक विद्वद्वृक्ष की लंबी लकड़ी हाथ में पकड़ कर तीनों लोकों में स्वच्छन्दता से घूमने की इसकी आदत थी (म. व. २८७,४-६; अनु. १५९, १४-१५)। अपने क्रोधी स्वभाव से यह हयोग्य लोगों को व्रस्त करता था।

और्व ऋषि की कन्या कंरली इसकी पत्नी थी। एकवार इसने क्रोधित हो कर, शाप से उसको जला दिया (ब्रह्मवै. ४.२३-२४)।

जाबालोपनिषद् में इसका निर्देश है (जा. ६; नारद तथा वपु देखिये)। जैमिनिग्रन्थसूत्र के उपाकर्मणि तर्पण में दुर्वासस् का निर्देश है। उस से ज्ञात होता है कि यह एक सामवेदी आचार्य था। इसके नाम पर; आर्याद्विंशती, देवीमहिम्नस्तोत्र, परशिवमहिमास्तोत्र, ललितास्तवरत्न आदि ग्रंथों का निर्देश है (C.C.)।

दुर्वासस् के क्रोध की एवं अनुग्रह की अनेक कथाएँ पुराणों में दी गयी हैं। उनमें से कुछ उल्लेखनीय कथाएँ नीचे दी गयी हैं।

अनुग्रह—कथा—(१) श्वेतकि नामक राजा का यह इसने यथासांग पूर्ण कन्याया (म. आ. परि. १.११८)।

(२) एक वार शिलोच्छ्रवृत्ति से रहनेवाले मुद्गल की सत्वपरीक्षा इसने ली। अनन्तर उस पर अनुग्रह कर के, इसने उसे सदेह स्वर्ग जाने का वरदान दिया (म. व. २४६)।

(३) कुन्ती की परिचर्या से संतुष्ट हो कर, इसने कुन्ती को देवहूती नामक विद्या दी। उस विद्या के कारण, कुन्ती को इंद्रादि देवताओं से कर्णादि छः पुत्र हुए। (भा. ९.२४.३२)। इसने कुन्ती को 'अथर्वशिरस् मंत्र' भी दिए थे (म. व. २८९.२०)।

(४) एक वार स्नान करते समय, इसका वस्त्र बह गया। नद्य स्थिति में पानी के वाहर आना, इसे लजास्पद एवं कष्टकर महसूस हुआ। इसी समय पानी के उपरी भाग में द्रौपदी स्नान कर रही थी। दुर्वासस् की

कठिनाई देख कर; उसने अपने वस्त्र का पल्ला फाड़ कर पानी के प्रवाह में उसे बहा दिया। उस पल्ले से इसका लज्जारक्षण हुआ। द्रौपदी की समयसूचकता से इसे अत्यंत आनंद हुआ। इस उपकार का प्रतिसाद देने के लिये, इसने द्रौपदी वस्त्रहरण के प्रसंग में, द्रौपदी का लज्जा-रक्षण किया (शिव. शत. १९)।

क्रोध कथा—(१) स्वायंभुव मन्वन्तर में, एक विद्याधर द्वारा दी गई पुण्यमाता इसने इंद्र को दी। इंद्र का ध्यान न रहने के कारण, वह माला पराक्त के रौं के नीचे कुचली गयी। माला के इस अपमान को देख कर, यह भड़क उठा। इसने इंद्र को शाप दिया, 'तुम्हारी संपत्ति नष्ट हो जायगी?' इंद्र ने क्षमा माँगी। फिर भी इसने उःशाप नहीं दिया। तब विष्णु की आज्ञा से इंद्र ने सशुभ्रमेधन कर के संपत्ति पुनः प्राप्त की (विष्णु. १.९; पद्म. स. १-४)। सशुभ्रमेधन का यह सम्प्रदाय नाशुपे मन्वन्तर में हुआ (भा. ९.४; पद्म. स. २३१-२३३; ब्रह्म. वै. २.३६; स्कंद. २.९.८-९)।

(२) एक वार अम्बरीष राजा को इसने जिला किसी कारण ही व्रस्त किया। किंतु पश्चात् विष्णुकर्म से जीवित वृक्षों के लिये, इसे अम्बरीष के ही पेर पकड़ने पड़े (अम्बरीष २, देखिये)।

(३) एकवार दुर्वासस् ने एक हजार वर्षों का उपवास किया। उस उपवास के बाद भोजन पाने के लिये, यह दाशरथि राम के पास गया। उस समय राम, काल से कुछ संभाषण कर रहा था। किसी को अन्दर छोड़ना मना था। आज्ञाभंग का दंड मृत्यु था। इस कारण, लक्ष्मण ने दुर्वासस् को भीतर जाना मना किया। दुर्वासस् क्रुद्ध हो कर शाप देने को तैयार हो गया। यह देख कर लक्ष्मण ने इसे भीतर जाने दिया। राम ने इच्छित भोजन दे कर इस को तृप्त किया। किंतु लक्ष्मण को आज्ञाभंग के कारण, देह छोड़ना पड़ा (वा. रा. उ. १०५; पद्म. उ. २७१)।

(४) एक वार द्वारका में यह कुष्णग्रह में गया। कुष्ण ने अनेक प्रकार से इसका स्वगत किया। इसने कुष्ण का 'सर्वहरण' करने के लिये, काफी प्रयत्न किये। इसने अपनी जूही खीर, कुष्ण तथा चिकमनी के दूधों को लगायी। उन्हें रथ में जोत कर, द्वारका नगरी में यह घूमने लगा। राह में रुक्मिणी थक कर धीरे-धीरे चलने लगी। तब इसने उसे कोढ़े से मारा। फिर भी कुष्ण ने सहनशीलता नहीं छोड़ी। तब प्रसन्न हो कर दुर्वासस् ने कुष्ण

को वर दिया, 'तेरे शरीर के जितने भाग को जूटी खीर ल्यायी है, उतने सारे भाग वज्रप्राय होंगे एवं किसी भी शस्त्र का प्रभाव उनपर नहीं पड़ेगा' (म. अनु. २६४ कुं.)। रथ न्यौंचते समय, थक कर रुक्मिणी को प्यास लगी। तब कृष्ण ने उसे पीने के लिये पानी दिया। तब अपनी आज्ञा के बिना रुक्मिणी ने पानी पीया, यह देख कर दुर्वासस् ने उसे शाप दिया, 'तुम भोगावती नामक नदी बनोगी, मयादि पशुओं का भक्षण करोगी, तथा पतिविरही बनोगी' (स्कन्द. ७. ४. २-३)।

(५) पांडव दनवश मये थे, तब दुर्वासस् ऋषि दुर्योधन के पास गया। दुर्योधन ने उसकी उन्कृष्ट सेवा की। तब प्रसन्न हो कर दुर्वासस् ने उसे वर माँगने के लिये कहा। दुर्योधन ने कहा, 'पांडव तथा द्रौपदी का भोजन होने के बाद, आप उनके पास भोजन माँगने जायें, तथा आरक्षी इच्छा पूर्ण न होने पर उन्हें शाप दें'। दुर्योधन का यह भाषण सुन कर यह पांडवों का सत्वहरण करने के लिये, उनके पास गया। परंतु वहाँ भी इसकी कृष्ण के कारण, फजीहत हुई। यह कथा, केवल महाभारत के अंतर्गत् आचूत में दी गयी है (म. व. परि. १ क्र. २५)।

(६) ब्रह्मदत्त के पुत्र हंस तथा डिम्बक मृगया करते हुए दुर्वासस् के आश्रम में गये। वहाँ उन्होंने आश्रम का विश्वस कर दुर्वासस् को अत्यंत कष्ट दिये। उस समय इसने अपना हमेशा का क्रोधी स्वभाव छोड़ सड़नशीलता दर्शाई। परंतु बाद में हंस डिम्बक अधिक ही वस्त करने लगे, तब कृष्ण के पास इसने शिकायत की, एवं कृष्ण से उनका वध करवाया (ह. वं. ३. १११-१२९)।

(७) सीतल करने के बाद, यह काशी में शिवराजना करने लया। काशी तपस्या करने के बाद भी शंकर प्रसन्न नहीं हुआ, तब यह शंकर को ही शाप देने लया। यह देख कर शंकर को इसके प्रति, वात्सल्ययुक्त प्रेम का अनुभव हुआ। उसने प्रत्यक्ष दर्शन दे कर इसे संतुष्ट किया (स्कन्द. ४. २. ८५)।

(८) दुर्वासस् एक बार गोमती के तट पर, स्नान करने गया था। उस समय, कई दैत्य वहाँ आये तथा उन्होंने दुर्वासस् को पीटा। राक्षसनाश के लिये दुर्वासस् ने कृष्ण की आराधना की (स्कन्द. ७. ४. १८)।

(९) एक बार यह तप कर रहा था। इसके इस तप के कारण, सारे देव भयभीत हो गये। उन्होंने वसु नामक अम्बर को, इसका सत्वहरण करने के लिये भेजा। उसका

पापी हेतु जान कर, दुर्वासस् ने उसे शाप दिया, 'तुम गरुड पक्षिणी बनोगी' (माक. १)।

दुर्धिगाह—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दुर्विनीत—पांडव्य देश के इधमवाहन का पुत्र। यह मात्राणमनी था। धनुष्कोटि तीर्थ में स्नान करने से यह मुक्त हुआ (स्कंद. ३. १. ३५)।

दुर्विमोचन—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. श. २५. १३)।

दुर्विरोचन—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीमसेन ने इसका वध किया (म. द्रो. १२०. ६२)।

दुर्विषह—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. श. २५. १६)।

दुलिदुह—(ग. इ.) अनमित्र का पुत्र। यह महान् ज्ञाता था (ब्रह्म. ८. ८४; ह. वं. १. १५. २४)। अन्य प्रसिद्ध पुराणों में इसका नाम नहीं है (म. आ. १. १७३)।

दुवस्यु—वान्दन देखिये।

दुष्कंत—एक राजा। रावण ने इसे जीता था।

दुष्कर्ण—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। शतानीक ने इसका वध किया (म. भी. ७५. ४८-४९)।

२. भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १३०. ३४)।

दुष्टरीतु—संभवतः एक व्यक्ति का नाम (क्र. २. २१. २; ६. १. १)।

दुष्टरीतु पौस्यायन—सृंजय लोगों का राजा। इसके वंश में, लगातार दस पीढ़ियों से चलते आये राज्य से, इसे च्युत किया गया। परंतु चाक्रस्थवति ने बाहिक प्रातिपीय के विरोध की पूर्वाह न करते हुए, इससे सौत्रामणी यज्ञ करवाया एवं इसे पुनः गद्दी पर बैठाया (श. ब्रा. १२. ९. ३. १-३; १३)। दुष्टरीतु शब्द ऋग्वेद में दो बार आया है। किंतु वहाँ यह शब्द व्यक्तिवाचक है या नहीं, यह कहना मुश्किल है (पट्ट. २. २१. २; ६. १. १)।

दुष्पण्य—पशुमान का पुत्र। दूसरे के लड़कों को भगा कर, यह पानी में डुबो देता था। राज्य की सीमा के बाहर निकाल देने पर भी, यह वही कार्य करता रहा। इस-लिये ऋषियों ने इसे पिशाच होने का शाप दिया। किंतु सुतीक्ष्ण ने अग्नितीर्थ पर इसका क्रिया-कर्मांतर करने से यह मुक्त हो गया (स्कंद. ३. १. २२)।

दुष्प्रथर्ष—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. श. २५. १५)।

दुष्यधर्षण—धृतराष्ट्र का पुत्र। द्रौपदी के स्वयंवर में यह उपस्थित था (म. आ. १७७.१)।

दुष्यधर्व—(सो. कु.स.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. श. २६.१८-१९)।

दुष्यंत—(सो. पू.स.) का सुविख्यात राजा एवं 'चक्रवर्ति' सम्राट् भरत का पिता। वैशाली देश का तुर्वसु राजा एवं करंधम का पुत्र 'चक्रवर्ति' मरुत्त आविश्कित ने 'पौरव' वंश में जन्मे हुए दुष्यंत को गोद में लिया। कुरुवंशियों का राज्य मांधातृ के समय से हैहय राजाओं ने कद्रजे में लिया था। वह इसने पुनः प्राप्त किया, एवं गंगा तथा सरस्वती नदीयों के बीच में स्थित प्रदेश में अपना राज्य पुनः स्थापित किया। इसलिये इसे 'वंशकर' कहा जाता है (म. आ. ६२.३; भागवत. ९.२३.१७-१८)।

दुष्यंत, दुःष्यंत आदि इसीके ही नामान्तर थे। इसके पुत्र भरत को 'दौष्यन्ति', 'दौःषन्ति' आदि नाम इसके इन नामों से प्राप्त हुए थे (ऐ. ब्रा. ८.२३; श. ब्रा. १३. ५.४.११-१४)। शतपथ ब्राह्मण के उपरोक्त उद्धरण में, भरत का पैतृक नाम 'सौद्युम्नि' दिया गया है। वह वस्तुतः 'दौष्यन्ति' चाहिये। मत्स्य पुराण में दुष्यंत को ही भरत दौष्यन्ति कहा है (मत्स्य. ४९.१२)।

इसके जन्मदातृ पिता एवं माता के नाम के बारे में एक-वाक्यता नहीं है। भागवत में इसे रैभ्य राजा का पुत्र कहा गया है (भा. ९.२०.७)। भविष्यमत में, इसके पिता का नाम तंसु था। हरिवंश में, तंसु के दुष्यंत आदि चार पुत्र दिये गये हैं (ह. वं. १.३२.८)। किंतु विष्णुपुराण में दुष्यंत को तंसुपुत्र अनिल का पुत्र कहा गया है (विष्णु ४.१९)। महाभारत 'कुंभकोणम्' आवृत्ति में इसके पिता का नाम ईलिन दिया है (म. आ. ८९. १४; मत्स्य. ४९.१०)। ईलिन को दुष्यंत आदि पाँच पुत्र थे, ऐसा भी उल्लेख मिलता है। ब्रह्मांड में इसे ईलिन का नाती कहा गया है। वायु पुराण में इसके पिता का नाम मलिन दिया है। इसके पिता के नाम के संबंध में जैसी गड़बड़ी दिखती है, उसी तरह इसकी माता के नाम के बारे में भी दिखाई पड़ती है। इसकी माता के उपलब्ध नाम हैं उपदानवी (वायु. ६९.२४), रथंतरी (म. आ. ९०.२९)।

पौरव वंश के इतिहास में, तंसु से दुष्यंत के बीच के राजाओं के बारे में, पुराणों में एकवाक्यता नहीं है।

लाक्षी नामान्तर से इसे लक्षणा नामक दूसरी भार्या तथा उसे जनमेजय नामक पुत्र था। यह जानकारी महाभारत की कुंभकोणम् आवृत्ति में प्राप्त है (म. आ. ९०.९०१*; ८९.८७७*)। इसकी राजधानी गज-साह्वय (हरितनापुर) थी (म. आ. ६८.१२)।

तुर्वसु कुलोत्पन्न करंधम के पुत्र मरुत्त राजा ने अपना पुत्र मान कर, इसे अपना सारा राज्य दिया (भा. ९.२३.१६-१७; विष्णु. ४.१६)। यह राज्य-लोलुप था। इसलिये इसने राज्य स्वीकार किया। राज्य मिलने के बाद, यह पुनरपि पौरववंशी बन गया (भा. ९. २३.१८)। ययाति के शाप के कारण, मरुत्त राजा का यह वंश पुरुवंश में शामिल हो गया (मत्स्य. ४८.१-४)। ययाति के शाप से, इसका तुर्वसु वंश से संबंध आया (वायु. ९९.१-४)।

ब्रह्मपुराण में तुर्वसुवंशीय करंधमपुत्र मरुत्त ने, अपनी संयता नामक कन्या संवर्त को देने के बाद, उन्हें दुष्यंत पौरव नामक पुत्र हुआ, ऐसा उल्लेख है (१३)। हरिवंश में यही हकीकत अलग ढंग से दी गयी है। यज्ञ करने के बाद, मरुत्त को सम्मता नामक कन्या हुई। वह कन्या उसने यज्ञ दक्षिणा के रूप में, संवर्त नामक ऋत्विज को दी। पश्चात् संवर्त ने वह कन्या सुघोर को दी। उससे सुघोर दुष्यंत नामक पुत्र हुआ। दुष्यंत अपनी कन्या का पुत्र होने के कारण, मरुत्त ने उसे अपनी गोद में ले लिया। इसी कारण तुर्वसु वंश पौरवों में शामिल हुआ (१.३२)।

पौरवों का छीना गया राज्य दुष्यंत ने पुनः प्राप्त किया, तथा पुरु वंश की पुनः स्थापना की। यह स्थिति प्राप्त होने के पहले ही, इसका दत्तविधान हुआ होगा। इसका राज्य हैहयों ने नष्ट कर दिया था। इसीलिये इस राज्यच्युत राजपुत्र को गोद लिया गया होगा। परंतु पौरवों की सत्ता को पुनर्जीवित करने के हेतु से यह अपने को पौरववंशीय कहने लगा। पौरव सत्ता का पुनरुज्जीवन, दुष्यंत ने हैहय सत्ता सगर द्वारा नष्ट की जाने पर, तथा सगर के राज्य के नाश के बाद ही किया होगा। अगर ऐसा होगा, तो यह मरुत्त से एक दो पीढ़ियों तथा सगर से दो पीढ़ियों आगे होगा।

एक बार यह मृगया के हेतु से, कण्व काश्यप ऋषि के आश्रम में गया। वहाँ इसने कण्व आश्रम में शकुन्तला को देखा। कण्व काश्यप बाहर गया हुआ था। इसलिये परस्पर संमति से दुष्यन्त एवं शकुन्तला का गार्धर्वविवाह हो गया। बाद में शकुन्तला को इससे गर्भ

रह कर भरत नीमक पुत्र हुआ। परंतु यह विवाह लुनके से किये जाने के कारण, शकुंतला को यह अस्वीकार करने लगा। बाद में आकाशवाणी ने सत्य परिस्थिति बतायी। तब राजा को उसके स्वीकार में कुछ बाधा नहीं रही (म. आ. २. ६३-६९; ९०; द्रो. परि. १. क्र. ८, पंक्ति ७३० से आगे; शां. २९; आश्व. ३; भा. ९.२०. ७-२२; विष्णु. ४. १९-२१; ह. वं. १. ३८; वायु. ९९. १३२)। शकुंतला को दोषवती मानने से इसे दुष्यंत नाम प्राप्त हुआ, ऐसा इसके 'दुष्यंत' नाम का विश्लेषण 'शब्द-कण्डुम' में दिया है (दुष दोषवती मन्यते शकुन्तलाम् इति)। शकुन्तला से इसे भरत नामक पुत्र हुआ। उसे ब्राह्मण ग्रंथों में दौष्यंति नाम से, एवं अन्य ग्रंथों में सर्वदमन कहा गया है। दुष्यंत को धैरव कुल का आदि संस्थापक माना जाता है। राज्यशकट चलाते की इसकी पद्धति बहुत अच्छी थी (म. आ. ६२)।

२. (सो. अज.) अजमीठ का पुत्र। इसकी माता नीली (म. आ. ८९.२८)। परमेष्ठिन् राजा इसका भाई था। उत्तर एवं दक्षिण पंचाल देशों का राजवंश इन दो भाईयों से शुरू हुआ।

दूरसोम—मणिभद्र एवं पुण्यवती का पुत्र।

दूर्व—गौड़ देश का एक ब्राह्मण (मणेश. १. ३६. ७६)।

दूषण—नवर राक्षस का भाई (म. व. २६१. ४३)। वज्रवेग तथा प्रमाथी नामक इसे दो भाई और थे। राम ने इसका वध किया (भा. ९. १०; म. व. २६१. ४३)।

२. विश्वसु एवं वाका का पुत्र।

दूषणा—ऋषभदेव के वश के भौदन राजा की पत्नी। इसका पुत्र लवटा।

दृढ—धृतराष्ट्र के पुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. ११२. ३०; १३२. ११३*५, पंक्ति २)।

२. दुष्यंधन के पक्ष का एक राजा। इसका अहट नाम भी उपलब्ध है (म. क. ४. ४१)।

दृढक्षत्र—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढच्युत आगस्त्य—सुहृत्तद्रष्टा (ऋ. ९. २५)। यह अगस्त्य ऋषि एवं कृष्णक्षणा का पुत्र था। इसीलिये इसका पैतृक नाम 'अगस्ति' दिया गया है। विभिदुर्कीय के सत्र में यह उद्गाता था (जै. भा. ३. २३३)। इसका पुत्र इम्बवाह (भा. ४. २८)।

दृढजयंत—विपश्चित् दृढजयंत लौहित्य देखिये।

दृढद्युम्न—दृढस्यु का नामांतर।

प्रा. च. ३७]

२. अगस्त्य गोत्र का मंत्रकार (मत्स्य. १४५. ११४-११५)। दृढायु इसीका नामांतर था (ब्रह्मांड. २. ३२. ११९-१२०)।

दृढधनु—(सो. अज.) विष्णु तथा वायु के मत में सेनाजित् का पुत्र। दृढरथ एवं दृढहनु इसीका नामांतर है।

दृढधन्वन् कौरव—(सो. कुरु.) द्रौपदीस्वयंवर के लिये आया हुआ एक क्षत्रिय (म. आ. १७७. १५)।

दृढनेमि—(सो. द्रिमीट.) मागवत, वायु तथा मत्स्य-मत में ऋष्यधृती का पुत्र। विष्णु मत में धृतिमान् का पुत्र।

दृढमति—एक शूद्र। इसके पीछे ब्रह्मरक्षस लगा हुआ था। किन्तु वैकटाचल जाने पर उस पीड़ा से यह मुक्त हुआ (स्कन्द. २. १. १९)।

दृढरथ—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

२. (सो. क्रोष्ट्र.) मत्स्यमत में नवरथ का पुत्र (दशरथ ३. देखिये)।

३. (सो. अज.) मत्स्यमत में सेनाजित् का पुत्र (दृढधनु देखिये)।

दृढरथाश्रय—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढरुचि—प्रियव्रतपुत्र हिरण्यरेता का पुत्र।

दृढवर्मन्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढसंध—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढसेन—द्रोण द्वारा मारा गया एक पांडवपक्षीय राजा (म. द्रो. २०. ४०)।

२. (सो. मगध. भविष्य.) विष्णु तथा ब्रह्मांडमत में सुश्रम का तथा वायुमत में सुव्रत का पुत्र। दुमत्सेन इसीका नामांतर है।

दृढस्यु—अगस्त्य एवं लोपासुद्रा का पुत्र। यह अत्यंत तापस्वी तथा विद्वान् था। यह अरण्य में से समिधा के बड़े-बड़े गड्ढर लाता था। इस कारण, इसे इम्बवाह नाम प्राप्त हुआ।

ऋतु ऋषि निःसंतान था। इसलिये उसने दृढस्यु को अपना पुत्र माना था। उसी तरह पुलह एवं पुलस्त्य इन दोनों की संतति दुष्ट होने के कारण, वे भी इसे अपना पुत्र मानते थे (म. व. ९७. २३-२५)। इसके दृढास्यु, दृढायु एवं दृढद्युम्न नामांतर थे।

दृढहनु—(सो. अज.) मागवत मत में सेनाजित् राजा का पुत्र (दृढधनु देखिये)।

दृढहस्त—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढाच्युत—अगस्त्यपुत्र दृढास्यु का नामांतर।

दृढायु—(सो.) पुरुरवा को उर्वशी से उत्पन्न पुत्र ।
(म. आ. ७०.२२; पद्म. सू. १२)।

२. अगस्त्यपुत्र (म. अनु. २७१.४० कुं.; दृढस्यु
देन्द्रिये)।

दृढाशुभ्र—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढाश्व—(सू. इ.) भागवत, विष्णु तथा भविष्य-
मत में कुवलाश्व का पुत्र। मत्स्य एवं वायु मत में यह
कुवलाश्व का पुत्र था। पद्ममत में यह कुवलाश्व का नाती
तथा धुंधुवार का पुत्र था (पद्म. सू. ८)।

दृढास्य—दृढस्यु का नामांतर।

दृति ऐंद्रोत—इंद्रोत दैवाप का शिष्य (जै. उ. ब्रा.
३.४०.२)। अभिजातारिन् काशतेनि के साथ इसका
उल्लेख प्राप्त है (पं. ब्रा. १४.१.१२; १५)। 'दृतिवात-
वन्ती' में निर्दिष्ट दृति भी यही रहा होगा (पं. ब्रा. २५.
३.६)। 'महाव्रत' नामक श्रौतकर्म का सतत आचरण
करने के कारण, इसका उत्कर्ष हुआ। यह सत्र भी
इसी नाम से प्रसिद्ध हुआ (का. श्रौ. २४.४.१६; ६.
२५; आश्र. श्रौ. १२.३; सां. श्रौ. १३.२३.१; ल्य. श्रौ.
१०.१०.७)। दृति तथा दृति दोनों एक ही रहे होंगे।

दृति ऐंद्रोत शौनक—इंद्रोत शौनक का पुत्र एवं
शिष्य (वं. ब्रा. २)।

दृत्तबालाकि गार्ग्य—एक आचार्य (श. ब्रा. १४.
५.१; बृ. उ. २.१.१)। गार्ग्य बालाकि ऋषि अत्यंत
गर्वित होने के कारण, उसे यह नामांतर प्राप्त हुआ। काशी
के अजातशत्रु नामक राजा का यह समकालीन था।
अजात शत्रु को उपरास देने के लिये यह गया था।

दृभीक—इंद्र ने इसका वध किया (ऋ. २.१४.३)।

दृशान भार्गव—एक मंत्रद्रष्टा (क. सं. १६.८)।

दृषद्वी—(सू. इ.) हर्यश्व राजा की पत्नी।

२. विश्वामित्र की स्त्री (ब्रह्म. १०.६७; ह. वं. १.२७;
ब्रह्मांड. ६६.७५; वायु. ९२.१०३)।

३. काशी के विजोदास (प्रथम) की पत्नी।

४. उशीनर की पत्नी।

दृष्टरथ—एक बड़ा राजा (म. अनु. २७१.५०.कुं.)।

दृष्टशर्मन्—(सो. वृष्णि.) विष्णुमत में श्रफल्क का
पुत्र।

देय—सुव्य देवों में से एक।

देव—एक प्राचीन मानवजातिसंघ। प्राचीन वैदिक
एवं पौराणिक ग्रंथों में, देव, असुर, राक्षस, पितर आदि
जातिसंघों का, एवं इन जातियों के स्त्रीपुरुषों का निर्देश

पुनः पुनः मिलता है। इन चारै जातिसंघों में, देव लोगों
का जातिसंघ बौद्धिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से
सर्वाधिक प्रगत एवं वल्लिष्ठ प्रतीत होता है।

आधुनिक काल में, पृथ्वी पर अनेक मानवजातियाँ
रहती हैं। उसी प्रकार प्राचीन काल में, देव, असुर,
गंधर्व, सार, नाग, गरुड, दानव, दैव आदि अनेक
मानवजातियाँ अस्तित्व में थीं। इन जातियों के स्त्रीपुरुषों
को, सर्वसामान्य मानवों जैसे, हर्ष-व्यदादि विकार थे।
उनके विवाह हो कर उन्हें संतति पैदा होती थी। लड़ाई
कर के वे आपस में शगड़ने भी थे।

सर्वथैव मानुषि का धारण किये हुए, ऐसे बहुत चारे
देव प्राचीन ग्रंथों में प्राप्त हैं। वैदिक ग्रंथों में से, अग्ने,
इंद्र, मित्र, वरुण आदि देवों का चरित्र-चित्रण इसी
मानुषि आकृति से मिलता-जुलता है। पुराणों में से,
राम, कृष्ण, शिव, विष्णु आदि देवों का व्यक्तिचित्रण
भी मानुषि ढंग का ही है।

निरुक्त में, बु, अंतरिक्ष एवं पृथ्वी, ये तीन प्रदेश
देवों का निवासस्थान बनाये गये हैं। इससे ज़ाहिर है कि,
कई देव पृथ्वी पर, कई अंतरिक्ष में, एवं कई बुलोक में
रहते थे। देसों में से अष्ट वसु पृथ्वी पर, स्याह
रुद्र अंतरिक्ष में, एवं वारह आदित्य बुलोक में रहते थे।
हिंदु शास्त्रविधि में, वसु, रुद्र, एवं आदित्य इन तीन
देवताओं को पिता, पितामह एवं प्रपितामह मान कर
उन्हें तर्पण किया जाता है।

मनुष्यों में से अनेक पुरुष देवजाति में प्रवेश पा
सकते थे। जो पहले मनुष्य थे, किंतु पश्चात् देव हो गये,
ऐसे ऋभु आदि व्यक्तिओं का निर्देश वैदिक ग्रंथों में प्राप्त
है। अश्विनीकुमार भी पहले मनुष्य ही थे, किंतु बाद में
वे देव हो कर, उन्हें यज्ञ की आहुति प्राप्त होने लगी।
काशिराज धन्वन्तरि भी पहले मनुष्य था, किंतु पश्चात्
पंचमहायज्ञ के वैश्वदेव में उन्हें देव के नाते प्रवेश
प्राप्त हुआ। रामकृष्ण आदि अवतारों पुरुष भी पहले
मनुष्य ही थे।

देवों के शासकत्वों में, इंद्र, सप्तर्षि आदि लोग प्रमुन
थे। इंद्रादि देवों के वर्णन से पता चलता है कि, वे भी
पहले पराक्रमी मानव ही थे। अपने अदृढ पराक्रम के
कारण वे देव हो गये। पृथ्वी पर से सर्वाधिक पराक्रमी
व्यक्ति को केवल देवत्व ही नहीं, इंद्रपद भी प्राप्त हो सकता
था। प्रत्येक मनु के इंद्र एवं सप्तर्षि अलग रहते थे।
इंद्रपद के प्राप्ति के लिये प्राचीन काल में कितने शगड़े

हुआ करते थे, एवं इंद्र के अश्वमेध यज्ञ का अश्व उड़ाने के कितने प्रयत्न अन्य राजाओं से होते थे, इसका साक्ष्य इतिहास पुराणों में दिया गया है। जन्म से मनुष्य हो कर, इंद्रभक्त प्रसन्न करनेवाले प्राचीन राजाओं में रजि, रजिपुत्र एवं नहुष, ये प्रमुख हैं। असुरों में से, प्रह्लाद, बलि, हिरण्यकशिपु ये राजा इंद्रभक्त प्राप्त करने में कामयाब हुए थे।

मनुष्य वंश के राजाओं में 'राजसूय यज्ञ' किया जाता था, उसी प्रकार देवज्ञाति के राजा भी चक्रवर्तिभक्त दर्शानेवाला वह यज्ञ करते थे। इस यज्ञ करनेवाले मनुष्य एवं देवज्ञाति के राजा क्रमशः 'मनुष्यराजन्' एवं 'देवराजन्' इन उपाधिओं से विभूषित किये जाते थे। प्राचीन चक्रवर्ति राजाओं में से, दिवोदास, वधरथ, वीतहृद्य आदि सम्राट् 'मनुष्यराजन्' थे, एवं सिंधुक्षित्, दीर्घश्रवस्, पृथु, कशीवन् आदि सम्राट् 'देवराजन्' थे (तां. ब्रा. १८. १०.५)।

देव, असुर, एवं मनुष्य जातियों में आपस में विवाह होते थे। पुराणों में प्रसिद्ध, 'कच देवयानी' प्रणय में, कच देवों के पुरोहित बृहस्पति का पुत्र था, एवं देवयानी असुरों के पुरोहित रुद्र की कन्या थी। अन्त में, देवयानी का विवाह सोमवंशी क्षत्रिय नृप ययाति से हुआ। ययाति की द्वितीय पत्नी एवं देवयानी की सौत शर्मिष्ठा, असुर राजा वृषायेन की कन्या थी।

ऋषि के पुत्र देवज्ञाति में प्रविष्ट होने के कई उदाहरण भी प्राप्त हैं। भृगु ऋषि को पौलोमी नामक पत्नी से भुवन भौवन आदि बारह पुत्र हुए। ये भृगुपुत्र 'भृगुदेव' नाम से प्रसिद्ध हो गये (मत्स्य. १९.५.१२-१४)।

देव एवं असुरों के संग्राम की कथाएँ वेदकाल से पौराणिक काल तक अप्रतिहत रूप में प्राप्त होती हैं। इन संग्रामों में देवों द्वारा किये गये बारह निम्नलिखित संग्राम विशेष तौर पर उल्लेखनीय हैं—(१) नारासिंह-हिरण्यकशिपु-हनन, (२) कामन-बलिवंधन, (३) नराह-हिरण्याक्ष-हनन, समुद्रमैथीकरण, (४) अमृतमन्थन-इंद्र एवं प्रह्लाद का युद्ध, प्रह्लादराज्य, (५) तारकामथ-इंद्र द्वारा प्रह्लादपुत्र विरोचन का वध, (६) आङ्घ्रिक-इंद्र एवं आङ्घ्रिक का युद्ध (७) त्रैपुर-शंकर एवं त्रिपुर का युद्ध (८) अंधक-शंकर एवं असुर, पिशाच तथा दानव का युद्ध, (९) वृषाणक-वृत्र का वध, (१०) धृष्ट (ध्वजपात्), (११) हाल्यहल-इंद्र एवं असुर का युद्ध, (१२) कोलाहल-इंद्र एवं दैत्यदानव का युद्ध (मत्स्य. ४७.४२-४५; ४६-७३; ५३. सू. १३.१८३-१९६)।

पद्मपुराण में 'आङ्घ्रिक' के रथान में 'आजाव' एवं 'धात्र' के स्थान में 'ध्वजपात' संग्राम का निर्देश है। इन युद्धों में, देवज्ञाति के प्रमुख, इंद्र एवं शंकर व्रताये गये हैं। देव, पितर एवं मनुष्य जाति के मानवसंघ देवों के प्रमुख सहायक दर्शाये गये हैं। असुर जाति में हिरण्यकश्यपु, हिरण्याक्ष, बलि, प्रह्लाद, विरोचन, वृत्र, विप्रचित्ति, वृष ये असुर प्रमुख थे। उनके अनुयायी में पिशाच, दानव एवं असुर प्रमुख थे।

जिस में सामर्थ्य एवं शक्ति का साक्षरकार है, वह हर एक व्यक्ति देव बन सकती है, ऐसी प्राचीन भारतियों की धारणा थी। इसी धारणा से, अग्नि, वायु, आदि पंचमहाभूतों को देव मानने की प्रवृत्ति वैदिक काल में निर्माण हुआ। इन पंचमहाभूतों से भी अधिक शक्ति 'ब्रह्म' में है, ऐसी धारणा उन्नियदों के काल में प्रचलित हुई। इसीलिये, उस काल में 'ब्रह्म' का देव कहने लगे। 'कनोपनिषद्' में लिखा है कि, अग्नि, वायु आदि कितने भी सामर्थ्यशाली हो, उनकी शक्ति महद्भुत ब्रह्म के सामने कुछ भी नहीं है।

इस क्रम से, जिस में अधिक शक्ति हो, उसे देव मानने की प्रवृत्ति प्रस्थापित हुई। स्वायम्भुव आदि मन्वन्तर में, सर्वश्रेष्ठ शासक राजा को 'इंद्र' उपाधि प्राप्त हुई। नाना तरह के अधिकार धारण करनेवाले साध्य, तुषित, तप, भृगु आदि लोग देवज्ञाति में शामिल किये गये। मानवों से जिन में अधिक सामर्थ्य था, वे यक्ष, गंधर्व, साध्य आदि जाति भी 'देव' में गिने जाने लगी।

संसार के आदिकरण को 'देव' कहलाने की प्रवृत्ति उपनिषत्काल में ही प्रचलित हुई। जनकसभा में विदग्ध शाकल्य ने याज्ञवल्क्य को पूछा, 'कति देवाः' (देव कितने हैं)? उत्तर में याज्ञवल्क्य ने कहा, 'संसार में एक ही देव है। पृथ्वी उसका शरीर है, अग्नि नेत्र है, ज्योति मन है। संसार के सारे जीवों का अविज्ञान बना हुआ पुरुष पृथ्वी पर एक ही है, एवं वही केवल देव है।

दम (इंद्रियदमन), दया, दान, इन तीन 'द' कारों से कोई भी मनुष्य देवत्व पा सकता है, ऐसी भी एक धारणा भारतीय संस्कृति में दृढभूल है। इसी तत्त्व के विशदीकरण के लिये, 'बृहदारण्यकोपनिषद्' में एक कथा दी गयी है। एक समय देव, मनुष्य एवं दानव प्रजापति के पास ज्ञान के लिये गये। प्रजापति ने उन सब को 'द' अक्षर का उद्देश श्रेयप्रप्ति के लिये दिया। उस 'द' कार का अर्थ देव, दानव, एवं मनुष्यों ने अपने

अपने स्वभावानुरूप किया। देवों ने दमन (इंद्रिय-दमन) कर के, मनुष्यों ने दान से, एवं दानवों ने दया से श्रेयप्राप्ति करने की कोशिश की (बृ. उ. ५.२.१-३)। किंतु 'देवत्व' प्राप्त करने के लिये इन तीनों 'द' की जरूरत रहती है, ऐसा उपनिषदों का कहना है।

इसी ढंग की और एक कथा महाभारत के 'अनुगीता' में दी गयी है। प्रजापति के पास श्रेयप्राप्ति का उपाय पूछने, पन्नग, देवर्षि, नाम तथा असुर आ गये। प्रजापति ने सब को 'ॐ' अक्षर से ही उपदेश दिया। उस उपदेश का अर्थ, हर एक व्यक्ति ने अपने अपने स्वभाव के अनुसार ग्रहण किया। सबों ने दंश, असुरों ने दया, देवों ने दान एवं महर्षियों ने दमन, इस अर्थ से यह 'ॐ' स्वरूप उपदेश का अर्थ किया, एवं जैसे ही आचरण उन्होंने करना शुरू किया (म. आश्व. २६)। इस कथा से प्राचीन समाज के सर्प, असुर, देव आदि भिन्नभिन्न जातिसंघ के स्वभाववैशिष्ट्यों का पता चलता है।

उपरिनिर्दिष्ट चर्चा से ज़ाहिर है कि, प्राचीन काल में देव नाम की मानवों की एक जाति थी। पश्चात् उस जाति के व्यक्तियों के उपर अधिदैविक एवं आध्यात्मिक संस्कार कर के, देवों को अतिमानुषा एवं दैवी रूप दिया गया। उससे देव नामक मानवजाति का स्वरूप छुंधला सा हो गया। रामकृष्णादि महापुरुषों का मानुष तथा दैविक स्वरूप संमिश्ररूप में स्पष्ट है। इंद्रादि देव भी पहले मानव थे। अनन्तर देवत्व का आरोप उन पर किया गया। उपनिषदों में 'इंद्र-विरोचनासंवाद' में, एक विशेष आध्यात्मिक स्थान भी उन्हें दिया गया है। दत्त, गणपति, स्कंद, उमा, आदि देव पहले सिद्ध, समर्थ, पराक्रमशील व्यक्ति के स्वरूप में लोगों के आदरस्थान बने। अनन्तर उन्हें देवता बनाया गया। अन्त में उनको आध्यात्मिक शुद्ध-परब्रह्म रूप देने का प्रयत्न हुआ। शिवादि देवों का पहला रुद्रादि स्वरूप तथा बाद का शिवस्वरूप सर्वथा भिन्न है। आध्यात्मिकता इष्ट है। फिर भी इन देवों का वास्तव स्वरूपदर्शन तथा प्राचीन मानव समाज का विभागात्मक ज्ञान भी इतिहास के अध्ययन लिये आवश्यक है।

२. एक व्यास (व्यास देखिये)।

देवकवध—वैवस्वत मन्वन्तर के धर्म ऋषि को भानु नामक स्त्री से उत्पन्न पुत्र। इसका पुत्र इंद्रसेन (भा. ६.६.५)।

देवक—(सो. कुरु.) युधिष्ठिर को दौरीनी से उत्पन्न पुत्र (भा. ९.२२.३०)।

२. (सो. कुतुर.) आहुक राजा का पुत्र। पूर्वजन्म में यह गंधर्वों का राजा था।

इसकी कन्या देवकी मथुरा के उग्रसेन राजा के मंत्री वसुदेव को दी गयी थी (म. आ. ६.१.६२; भा. ९.२४; विष्णु. ४.१४)। उग्रमत में देवकी इसकी बहन थी। इससे साथ और छः बहनें इसने वसुदेव को दी थी। उग्रसेन इसका कनिष्ठ पौत्र था। इसके पुत्र देववान्, उग्रदेव, सुदेव एवं देवरक्षित थे (पद्म. सू. १३)।

देवक मान्यमान—एक असुर। यह कृष्णों का शत्रु, एवं शंकर का स्नेही था (म. ७. १८.२०)। कई लोगों के मत में, 'स्वयं को देव माननेवाले' शंकर का ही यह नामांतर था।

देवकर—(सू. इ.) भविष्यमत में प्रतिव्योम का पुत्र। इसका पुत्र सहदेव।

देवकी—देवक की कन्या एवं कृष्ण की माता। यह वसुदेव की पत्नी थी। इसके तियाह के समय आकाशवाणी हुई, 'इसके अष्टम पुत्र के द्वारा मथुरा के कंस राजा का वध होगा'। इसलिये कंस ने इसे एवं इसके पति वसुदेव को कोरावह में रखा। बाद में इसे कंसिमन्त्र, सुहृण, मद्रत्सेन, ऋतु, संमदन, मद्र, बलराम तथा कृष्ण नामक आठ पुत्र हुए। कृष्णजन्म के बाद, उसे कंस से बचाने के लिये, कृष्ण को नंद के घर छोड़ने की सलाह इसने वसुदेव को दी थी। (पद्म. ब्र. १३)।

बलराम तथा कृष्ण के पहले जन्में हुए, इसके छः पुत्रों को कंस ने मार डाला। कृष्ण द्वारा कंसवध होने के बाद, देवकी तथा कृष्ण का मिलन हुआ। उसने देवकी की उसके मृत पुत्रों से गेट करवायी (भा. ९. २४; १०. ३; ४४)। पूर्वजन्म में यह सुवास की पत्नी पृथ्वी थी (भा. १०. ३)। कृष्णनियोग की वाता सुनते ही इसने अग्नि-प्रवेश किया।

२. शैब्य की कन्या (ब्रह्म. २१२. ४)। यह युधिष्ठिर की पत्नी थी। इसका पुत्र यौत्थ (म. आ. ९.०.८३)।

३. ऋषभदेव के वंश के उद्गीथ की पत्नी (भा. ५. १५)। भांडारकर संहिता में देविका पाठभेद उपलब्ध है।

देवकीपुत्र—कृष्ण का मानुष नाम (छां. उ. ३ १७.६; कृष्ण देवकीपुत्र देखिये)।

देवकुल्यां—स्वायंभुव मन्वंतर के मरीचि ऋषि के पुत्र की कन्या। इसने पूर्वजन्म में विष्णु के पग धोये थे, इसलिये इस जन्म में इसे 'स्वर्धुनी' (गंगा नदी) का जन्म प्राप्त हुआ (भा. ४. १४)।

२. भागवतमत में वृष्णिना की कन्या (प्रस्ताव देखिये)।

देवक्षत्र—(सो. क्रोष्ट्र.) भागवत, विष्णु, मत्स्य, वायु एवं पद्ममत में देवरात का पुत्र। भविष्यमत में देवरथ का पुत्र।

देवर्षे—एक ऋषि। ब्रह्मदेव के पुष्कर क्षेत्र के यज्ञ में, इसने होता का काम किया था (पद्म. सू. ३४)।

देवज—(सू. दिष्ट.) संयमन राजा का पुत्र।

देवजनी—मणिवर की पत्नी।

देवजाति—ऋष्यपकुल का गोत्रकार। वेदसाति इसीका पाठभेद है।

देवजित्—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

देवतरस् श्यावसायन काश्यप—ऋष्यशृंग का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)। वेश ब्राह्मण में भी इसका उल्लेख है। वहाँ इसे काश्यप शिष्य 'शवस' का पुत्र एवं शिष्य बताया है।

देवताजित्—(स्वा. प्रिय.) सुमति एवं वृद्धसेना का पुत्र। इसकी स्त्री का नाम आसुरी, एवं पुत्र का नाम देवद्युमन था (भा. ५. १५.२)।

देवदत्त—(सू. नरि.) भागवतमत में उरुश्रवस् राजा का पुत्र। अग्नि, कानीन तथा जटुकर्ष्य ये इसके तीन पुत्र थे।

देवदत्त दाठ—एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

देवदर्श—कथंवायन का शिष्य। कथं ने इसे अथर्व-वेदसंहिता सिखायी थी। पिप्पलाद, ब्रह्मत्रल, मोद एवं शौक्लायनि आदि इसके चार शिष्य थे (व्यास देखिये)। वायु में वेदशुश पाठ है। यह एक शाखाप्रवर्तक भी था (पाणिनि देखिये)। पाणिनि इसे देवदर्शन कहता है।

देवदर्शन—देवदर्श देखिये।

देवदास—मगध देश का एक ब्राह्मण। इसकी स्त्री उत्तमा अतीव पतिव्रता थी। इसके पुत्र का नाम अंगद तथा पुत्री का नाम बलया था। बलया ससुगल में सुखी थी।

इसका पुत्र अंगद तथा उसकी कन्या बलया गृहस्थी का भार उठाते थे। अतः इस पतिपत्नी ने तीर्थयात्र के

लिये जाने का निश्चय किया। मार्ग में एक सिद्ध इन्हें मिला। उसने एक उदाहरण बता कर इन्हें इंद्रप्रस्थ के बदरितीर्थ पर जाने के लिये कहा। तत्र यह दोनों इंद्रप्रस्थ गये। यमुना में स्नान करते ही, उद्धार हो कर यह दोनों स्वर्गलोक सिंधारे (पद्म. उ. २१२)।

२. एक सुवर्णकार (रूपवती देखिये)।

देवद्युति—एक ऋषि। यह सरस्वती के किनारे आश्रम में रहता था। विष्णु के वर से इसे सुमित्र नामक पुत्र हुआ था।

देवद्युति ग्रीम ऋतु में पंचाग्निसाधन करता था। बड़ी भक्ति से उसने १००० वर्षों तक तारक्ष्या तथा विष्णु-भक्ति की। उससे इसे अपूर्व तेज प्राप्त हुआ। वैशाख मास में एक दिन इसने विष्णु की स्तुति की। तत्र प्रगट हो कर विष्णु ने इसे वर माँगने के लिये कहा। परंतु निरिच्छ होने के कारण, इसने विष्णु की भक्ति ही माँगी (पद्म. उ. १२८)।

देवद्युमन—(स्वा. प्रिय.) भागवतमत में सुमति का पुत्र (देवताजित देखिये)।

देवन—(सो. क्रोष्ट्र.) एक राजा। यह देवक्षत्र के बाद राजगद्दी पर बैठा।

देवपति—भृगुकुल का गोत्रकार।

देवप्रस्थ—एक गोप। यह कृष्ण का मित्र था (भा. १०.२२)।

देवबाहु—(सो. क्रोष्ट्र.) भागवतमत में हृदीक का पुत्र।

२. रैवत मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक (पद्म. सू. ७)।

देवभाग—(सो. क्रोष्ट्र.) शूर का पुत्र। कंस की भगिनी कंसा इसकी पत्नी थी। उससे इसे चित्रकेतु, बृहद्रथ एवं उद्धव नामक तीन पुत्र हुए।

देवभाग श्रौतर्षे—एक यज्ञवेत्ता ऋषि। यह श्रुत का पुत्र था। यज्ञपथ के शरीर के विभिन्न भाग किन्हीं ऋत देना चाहिये, इसका ज्ञान इसे हुआ था। मृत्यु के समय भी, इसने यह गूढ़ज्ञान किसी को नहीं बताया। पश्चात् एक अमानवीय ध्याक्त् ने यह ज्ञान बभ्रु के पुत्र गिरिज को बताया (ऐ. ब्रा. ७.१)।

दाक्षायणयाग के कारण, संजय तथा कुरु राजाओं में स्नेहभाव उत्पन्न हुआ। उस समय उन दोनों का यह पुरोहित था (श. ब्रा. २.४.४.५)। 'तैत्तिरीय ब्राह्मण' में सावित्र अग्नि के वारों में इसके मतों का उद्धरण दिया गया है (तै. ब्रा. ३.१०.९.११)। यज्ञ में इसके हाथों से

गलती होने के कारण, सृज्यों का नाश हुआ। यह वासिष्ठ सातहृदय का समकालीन था (तै. सं. ६.६.२.२)।

देवभूति—(शुंग. भविष्य.) भागवत तथा विष्णु-मत में भागवत का पुत्र। देवभूमि तथा क्षेमभूमि इसी के नामांतर थे।

देवभूमि—(शुंग. भविष्य.) मत्स्य मत में पुनर्भव का, एवं ब्रह्मांड मत में भागवत का पुत्र। इसने दस वर्षों तक राज्य किया (देवभूति देखिये)।

देवमत—एक ऋषि। नारद के साथ इसका सृष्टि-उत्पत्ति के विषय में संवाद हुआ (म. आश्र. २४)।

देवमति—अंगिराकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

देवमलिस्तुच्छ—रहस्य का उपनाम।

देवमानुषि—(सो. क्रोष्ट्र.) भागवत तथा वायु के मत में शूर राजा को अश्मकी से उत्पन्न पुत्र। इसने 'देवमी-दुष' भी कहा गया है।

देवमित्र शाकल्य—मांडुक्य ऋषि का पुत्र। इसने सौमरि आदि शिष्यों को संहिता कथन की। भागवत में इसे शाकल्य का साथी माना गया है। परंतु वायु तथा ब्रह्मांड के मत में, यह शाकल्य का शिष्य था। देवमित्र शाकल्य ने पाँच संहितायें पाँच शिष्यों को सिखाईं। उनके शिष्यों के नाम—सुदगल, गोमल, मत्स्य, खालीय तथा शैशिर्य। इसके नाम का देवमित्र पाठभेद भी प्राप्त है (वेदमित्र, याज्ञवल्क्य तथा व्यास देखिये)।

अपने अश्वमेध यज्ञ के समय, जनक राजा ने एक प्रण जाहिर किया। सम्मिलित ब्राह्मणों में जो सर्वश्रेष्ठ साबित हो, उसे हजार गायें, उनसे कई गुना अधिक सुवर्ण, ग्राम, रत्न तथा असंख्य सेवक दिये जायेंगे, ऐसा प्रस्ताव उसने ब्राह्मणों के सामने रखा। अनेक ब्राह्मण स्पर्धा के कारण शमाहने लगे। इतने में ब्रह्मवाहसुत याज्ञवल्क्य वहाँ आया। उसने अपने शिष्यों से कहा, 'यह सारा धन ले चलो, क्योंकि मेरी बराबरी करनेवाला वेदवेत्ता यहाँ कोई नहीं है। जिसे यह अमान्य होगा, वह मेरा आह्वान स्वीकार करे'।

अनेक ब्राह्मण वाद के लिये सामने आये तथा अनेक महत्त्वपूर्ण विषय पर विवाद हुए। सब को जीतने पर याज्ञवल्क्य ने शाकल्य से कुछ उपमर्दकारक बातें कहीं। वह बोला, 'ब्राह्मण का बल विद्या तथा तत्त्वज्ञान में नैपुण्य होता है। किसी भी प्रश्न का उत्तर देने के लिये मैं तैयार हूँ। इसलिये कौन सा भी प्रश्न पूछने का मैं तुम्हें आह्वान देता हूँ'।

यह सुन कर, शाकल्य क्रोध से भागल सा हो गया। याज्ञवल्क्य के कथनानुसार इसने उसे हजार प्रश्न पूछे। उन सारे प्रश्नों के उत्तर याज्ञवल्क्य ने दिये। पश्चात् याज्ञवल्क्य द्वारा शाकल्य को प्रश्न पूछा जाने का तमस आया। याज्ञवल्क्य ने शर्त लगायी, 'इन प्रश्नों का उत्तर न दे सके, तो शाकल्य को मृत्यु स्वीकारनी पड़ेगी'। शाकल्य ने वह शर्त स्वीकार की। पश्चात् याज्ञवल्क्य ने प्रश्न पूछे, परंतु शाकल्य उनके उत्तर न दे सका। इसलिये शाकल्य ने मृत्यु का स्वीकार किया।

देवमित्र शाकल्य की मृत्यु के कारण, सब ब्राह्मणों को ब्रह्महत्या का पातक लगा। अतः पंचनपुर जा कर वहाँ उन्होंने द्वादशाक, बाहुश्वर तथा ग्यारह रुद्रों का दर्शन किया। चार कुंडों में स्नान किया। बाहुवादिष्य के प्रसाद से उत्तरेश्वर का दर्शन ले कर, वे सारे मुक्त हो गये (वायु. ६०.६९)।

देवमीढ—(स. निमि.) भागवतमत में हृतिरथ का तथा वायुमत में कीर्तिरथ का पुत्र।

२. (सो. क्रोष्ट्र.) भागवतमत में हृदिक का पुत्र। इसका पुत्र शूर। इसकी पत्नी का नाम ऐश्वकी था (मत्स्य. ४६)। देवमीढुष, देवमानुषि एवं दैवमेधर इसीके नामांतर हैं।

३. (सो. पुरु.) द्विमीढ का नामांतर।

४. (सो. वृष्णि.) वृष्ण के पाँच पुत्रों में से तीसरा (पद्म. सू. १३)।

देवमीदुष—(सो. क्रोष्ट्र.) विष्णुमत में हृदिक का, तथा मत्स्यमत में भजमान का पुत्र (देवमीढ २. देखिये)।

देवमुनि ऐरंभद—दक्षप्रथा (कृ. १०.१४६)। 'पंचविश ब्राह्मण' के मत में यह तुर का ही नामांतर है (२५.१४.५)।

देवसेधस्—(सो. क्रोष्ट्र.) भविष्यमत में हरिदीभक का पुत्र (देवमीढ २. देखिये)।

देवयान—कश्यपकुल का गोत्रकर ऋषिगण।

देवयानी—असुरों के राजपुत्रोद्दिष्ट शुक्राचार्य की कन्या। पुरंदर इंद्र की कन्या जयंती इसकी माता थी। शुक्राचार्य का प्रसन्न कर, दस वर्षों तक उसके पास रहने के बाद जयंती को यह कन्या हुई। प्रियव्रतपुत्री उज्ज्वली इसकी माता थी, ऐसा भी उल्लेख प्राप्त है (भा. ५.२.२५)।

देवों के कथनानुसार संजीवनी विद्या सीखने के लिये बृहस्पतिपुत्र कच अमुंर गुरु शुक्राचार्य के पास आ कर रह गया। कच का आकर्षक व्यक्तिमत्त्व देख, देवयानी

उसके प्रेम करने लगी। कब से विवाह करने का प्रस्ताव हमने उसके सामने प्रस्तुत किया। किंतु सुखन्या मान कर कब से इसका आधिग्रहण नहीं किया। तब 'तुम्हारी विद्या तुम्हें फलदायक नहीं होगी,' ऐसा शत्रु देवयानी ने उसे दिया। निरपराध होते हुए शत्रु देश के कारण, कड़ हो कर, शत्रु ने भी इसे साप दिया, 'कोई भी कृपपुत्र तुम्हारा वरण न करेगा'। इसीसे इस क्षत्रियपत्नी बनना पड़ा।

कनक के वापस आने के बाद, एक बार वृषपर्वाण राजा की कन्या शर्मिष्ठा, तथा यह अपनी सखियों के साथ फौड़ा करने गई। उन वन में अपने अपने वस्त्र किनारे रख कर, वे बाल्यायें जलक्रीड़ा करने लगीं। नटपट इन्द्र ने इनका महत्क उडाने के लिये, यत्र कं वस्त्र मिल जुल कर रख दिये। जलक्रीड़ा समाप्त होने पर सब सखियाँ एकदम बाहर आईं, तथा गडबड़ी में जो भी वस्त्र जिसे मिला, उसे पहनने लगीं। भागवत में कहा है कि, नंदी पर बैठ कर नदी किनारे से शंकर जा रहे थे। इस कारण लज्जित हो कर, ये लड़कियाँ पानी से बाहर आयीं, एवं वस्त्र परिधान करने लगीं (भा. ९. १८)।

इस गडबड़ी में, गलती से शर्मिष्ठा ने देवयानी की साड़ी पहन ली। अपनी साड़ी शर्मिष्ठा द्वारा पहनी देख कर, देवयानी अत्यंत क्रोधित हुई। देवयानी ने कहा, 'मेरी शिष्या होने हुए य अपने मेरा वस्त्र परिधान क्यों किया? तुम्हारा कभी भी कल्याण न होगा।' तब शर्मिष्ठा ने कहा, 'मैं राजन्या हूँ तथा तुम मेरे पिता के पुरोहित शुक्राचार्य की कन्या हो। इतनी नीच हो कर भी, मेरे जैसी राज-कन्या से तेही वस्त्र करने में तुम्हें शर्म आनी चाहिये'। इस प्रश्न के दोनों एक दूसरे को गालियाँ दे कर वस्त्रों का लोचनान करने लगीं। अन्त में शर्मिष्ठा ने वस्त्रों को धुँव से इसे हलिये दिया। इसकी मृत्यु हो गयी, ऐसे समझ कर वह नगर में वापस गई।

जिम बुरी में देवयानी गिरी थी, उसके पास मृग के पीछे दौड़ता हुआ, महपुत्र ययाति पहुँच गया। उदकदाहनार्थ उस बुरी में उसने झाँक कर देखा, तो भीतर एक अत्यंत तेजस्वी कन्या उसे दिख पड़ी। यह दग्ध होने के कारण, उसने अपना उत्तरीय इसके पहनने के लिये दिया (भा. ९. १८)। बाद में ययाति ने इसे नारा वृत्तान्त पढ़ा। तब इसमें बताया, 'मैं शुक्राचार्य की कन्या हूँ'। यह ब्राह्मणकन्या है, यह जान कर ययाति ने इसका दाहिना हाथ पकड़

कर इसे बाहर निकाला। बाद में इससे विदा हो कर, वह अपने नगर वापस गया।

देवयानी को हूँदने के लिये घूर्णिका नामक एक दासी आयी। देवयानी ने उसके द्वारा, अपने पिता उद्यानस्य शुक को संदेशा भिजवाया, 'मैं वृषपर्वाण के नगर में नहीं आऊँगी'। घूर्णिका ने यह वृत्त, वृषपर्वाण के राजदरबार में धैठे शुक्राचार्य को बताया। उसे सुनते ही शुक्राचार्य तुरंत वन में आया, एवं अपनी दुःखी कन्या से मिला। इसकी हालत देखते ही वह बोला, 'अवश्य ही पूर्वजन्म में तुमने कुछ पाप किया होगा, जिसके कारण तुम्हें यह सजा मिल रही है'। पश्चात् देवयानी ने उसे शर्मिष्ठा के शब्द बताये। उन्हें सुन कर शुक्राचार्य को अत्यंत क्रोध आया। परंतु देवयानी ने पिता की सांभना की, एवं कहा, 'वृषपर्वाण की कन्या ने, तुमसे भी मेरा ज्यादा अपमान किया है। उससे मैं बदला ले कर ही रहूँगी'।

बाद में क्रोधाविष्ट शुक्राचार्य, दैत्य राजा वृषपर्वाण का त्याग करने के लिये प्रवृत्त हुआ। वृषपर्वाण ने नम्रता से उसकी क्षमा माँगी। तब शुक ने कहा, 'तुम देवयानी को समझाओ, क्यों कि, उसका दुःख मैं सहन नहीं कर सकता'। तब वृषपर्वाण ने कहा, 'आज हमारे सर्वस्व के स्वामी हैं। इसलिये आप देवयानी को हमें माँफ करने को कह दें'। यह सारा वृत्त शुक्राचार्य ने देवयानी को बताया। जवाब में इसने कहा कि, 'यह सब राजा मुझे स्वयं आ कर कहे'। तब वृषपर्वाण ने इससे कहा, 'हे देवयानी। तुम जो चाहो, मैं करने के लिये तैयार हूँ। किंतु तुम नाराज न हो'। तब देवयानी ने कहा, 'तुम्हारी कन्या शर्मिष्ठा अपनी सहस्र दासियों सह मेरी दासी बने, तथा जिससे मैं विवाह करूँगी, उसके धर भी वह दासी बन कर, मेरे साथ आये'।

देवयानी की यह शर्त मान्य कर, वृषपर्वाण ने शर्मिष्ठा को बुलावा भेजा। बुलनेवाली दासी ने देवयानी की शर्त के बारे में, सारा कुछ शर्मिष्ठा को रहस्ये ही बताया था। देवयानी के पास जा कर, शर्मिष्ठा ने उसकी शर्त मान्य कर ली। तब देवयानी ने उपहास से उसे कहा, 'क्यों! मैं तो याचक की कन्या हूँ! राजा की कन्या पुरोहितकन्या की दासी भला कैसे हो सकती है?' शर्मिष्ठा ने कहा, 'मेरे दासी होने से, अगर मेरे हीनदीन ज्ञातिबंधन सुखी हो सकते हैं तो दास्यत्व स्वीकार करने के लिये मैं तैयार हूँ'। तब देवयानी संतुष्ट हुई। बाद में इसका विवाह

ययाति राजा से हुआ। शर्त की अनुसार, शर्मिष्ठा भी इसकी दासी बन कर, ययाति के यहाँ गयी (म. आ. ७३. ७५; मत्स्य. २७-२९)।

बाद में इसकी दासी बनी हुई शर्मिष्ठा को, ययाति से पुत्र उत्पन्न हुआ। तब यह क्रोधित हो कर, फिर एक बार अपने पिता के पास गयी। इस कारण युक्र ने ययाति को शाप दिया 'तुम वृद्ध बन जाओगे'। अन्त में ययाति के द्वारा बहुत प्रार्थना की जाने पर युक्र ने उसे उःशाप दिया, 'तुम अपना बर्षक्य तरुण पुरुष को दे सकोगे'।

देवयानी को ययाति से यदु तथा तुर्वसु नामक दो पुत्र हुए थे (वायु. ९३.७७-७८)। किन्तु उन दोनों ने ययाति का वृद्धत्व स्वीकारना अमान्य कर दिया। ययाति ने उन दोनों को शाप दे दिया।

रामायण में, देवयानी के केवल यदु नामक पुत्र का निर्देश आया है (वा. रा. उ. ५८)।

देवरक्षित—(सो. कुकुर.) विष्णु, मत्स्य तथा पद्म के मत में देवक का पुत्र। देवरंजित एवं देववधन इसीके नामांतर है (पद्म. सू. १३)।

देवरक्षिता—देवक राजा की कन्या एवं वसुदेव की स्त्री। इसे गद आदि तीनों पुत्र थे (भा. ९.२४)।

देवरंजित—(सो. कुकुर.) वायुमत में देवक का पुत्र (देवरक्षित १. देखिये)।

देवरथ—(सो.) भविष्यमत में कुशुम का पुत्र (देवरात २. देखिये)।

देवराज—(स. इ.) विकुक्षि का नामांतर (मत्स्य. १२.२६)।

२. (स. निमि.) देवरात का पाठभेद।

३. एक ब्राह्मण। यह किरात नगर में व्यापार करता था। यह अत्यंत धूर्त एवं शरात्री था। एक बार तालाब में यह स्नान करने गया। वहाँ शोमावती नामक वेश्या से इसका संबंध बढ़ा। उसके कारण माँ, बाप तथा पत्नी का भी इसने वध किया।

एक बार यह प्रतिष्ठान नगर में गया। वहाँ इसने शिव का दर्शन किया तथा शिवकथा सुनी। पश्चात् एक माह के बाद इसकी मृत्यु हुई। केवल अल्पकाल किये गये शिवपूजन के कारण, इसे कैलास में जाने का भाग प्राप्त हुआ (शिवपुराण माहात्म्य)।

४. काशी का राजा। इसकी कन्या सुदेवा। वह इक्ष्वाकु की पत्नी थी (पद्म. भू. ४२.६)।

देवराज वसिष्ठ—एक ऋषि। यह अयोध्या का राजा त्रय्यारुण का पुरोहित था। इसीके कारण त्रय्यारुण ने सत्यव्रत त्रिंशकु को, अयोध्या देश के बाहर निकाल दिया तथा अपना राज्य इस पर (अपने पुत्र) सौंप दिया (त्रिंशकु देखिये)। इसीके द्वारा विश्वामित्र ने आप को ब्राह्मण कहलवाया (JRAS १९१७. पृ. ४०-६७)।

देवराजन्—एक सम्मान्य उपाधि। देवों में से जिन्होंने राजसूययज्ञ किया, उन्हें यह उपाधि लगायी जाती थी (देव देखिये)। प्राचीन काल के सुविख्यात 'देवराजन्' की नामावली सायणाचार्य ने दी है। उनके नाम सिंधुक्षिन्-सैन्विक्षित, दीपश्रवस-दैवश्रवस, पृथु-पार्थ, कक्षीवत एवं कक्षीवन्। मानवों में जिन्होंने राजसूययज्ञ किये, उन्हें 'मनुष्यराजन्' कहा जाता था। 'मनुष्य-राजन्' के प्रमुख नाम-दैशेदाक्ष, वाध्यश्र, वैतहृत्स्य। 'देवराजन्' एवं 'मनुष्यराजन्' के कुछ साम प्रसिद्ध है (पं. ब्रा. १८.१०.५)।

देवरात—(सो. कौटु.) एक यादव राजा। भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा पद्म के मत में यह करंभ का पुत्र था। वायुमत में करंभक का पुत्र। भविष्यमत में इसे देवरथ कहा गया है (पद्म. सू. १३)।

२. एक ऋषि। भागवत के अनुसार इसका पुत्र याज्ञवल्क्य। वायु तथा ब्रह्मांड में ब्रह्मवाह पाठभेद है।

३. एक गृहस्थ। इसे कला नामक कन्या थी। उसके पति का नाम शोण था। मारोच द्वारा कला का वध होने के बाद, देवरात तथा शोण उसको ढूँढने, विश्वामित्र के यहाँ गये। वहाँ से वसिष्ठ को साथ ले कर वे शिवलोक में गये। मरते, ममय, 'हर' का नाम सुन्व से निकलने के कारण, इसकी कन्या कैलास में पार्वती की दासी बनी थी। पार्वती ने इसे एवं शोण को सोमव्रत समारोह के लिये टैरने के लिये कहा। वह समारोह समाप्त होने पर ये दोनों वापस आये (पद्म. पा. ११२)।

४. सुषिष्ठिर की सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ४. २२)।

देवरात जनक—(स. निमि.) विदेह देश के सुविख्यात 'जनक' राजाओं में से एक (म. शां. २९८)। भागवत एवं वायु में इसे सुकेतु का, तथा विष्णु में स्वःकेतु का पुत्र बताया है। इसके घर में रुद्र ने एक शिवधनुष रखा था। 'सीता स्वयंवर' के समय, उस

धनुष का राम ने भंग किया (वा. रा. अयो. ६६)। राम का समुद्र एवं सीता का पिता 'सीरध्वज जनक' से यह बहुत ही पूर्वकालीन था। यह याज्ञवल्क्य का समकालीन था। वायु में इसे 'देवराज' कहा गया है। धनुष का इतिहास बताते समय इसे निमि का पुत्र कहा गया है (वा. रा. भा. ५६, ८)। किंतु 'रामायण' में दिया गया इसका वंशक्रम, पुराणों में दिये गये क्रम से अधिक विश्वासार्ह प्रतीत होता है। इसका पुत्र बृहद्रथ (देवराति देखिये)।

देवरात वैश्यामित्र—शुनःशेष का नामांतर। शुनःशेष को विश्यामित्र ने पुत्र मान कर स्वीकार किया। उस समय शुनःशेष को यह नाम दिया गया (ग. ब्रा. ७.१७; सां. श्रौ. १५.२७)। पश्चात् एक गोत्र एवं प्रवर को भी यह नाम दिया गया। यह एक मंत्रकार भी था (अर्जुनार्त एवं ब्रह्म देखिये)।

देवराति—अंगिराकुल्येत्पत्र एक गोत्रकार।

देवल—एक ऋषि (क. सं. २२.११)। असित को एकपत्नी से उत्पन्न पुत्रों में से यह एक था। यह कश्यप गोत्र का एक मंत्रकार एवं प्रवर था। इसने ब्रह्म गंधर्व को शाप दिया था (भा. ८.४)। असित देवल तथा देवल इन दोनों नामों से इसका निर्देश प्राप्त है। इसका छोटा भाई धौम्य। वह पांडवों का पुरोहित था (असित देखिये)।

धर्मशास्त्रकार—एक स्मृतिकार के नाते भी देवल सुविख्यात था। याज्ञवल्क्य पर लिखी गई 'मिताक्षरा' (१.१२८), 'अपरार्क', 'स्मृतिचन्द्रिका' आदि ग्रंथों में देवल का उल्लेख किया गया है। उसी प्रकार देवल की स्मृति के काफी उद्धरण 'मिताक्षरा' में लिये गये हैं (१.१२०)। 'स्मृतिचन्द्रिका' में देवल स्मृति से ब्रह्मचारी के कर्तव्य, ४८ वर्षों तक पाला जाने-वाला ब्रह्मचर्य, पत्नी के कर्तव्य आदि के संबंध में उद्धरण लिये गये हैं (स्मृ. ५२; ६३)। उसी प्रकार 'मिताक्षरा', 'हरदत्त कृत 'विवरण', 'अपरार्क' आदि ग्रंथों में 'देवलस्मृति' में से आचार, व्यवहार, श्राद्ध, प्रायश्चित्त तथा अन्य बातों के संबंध में उद्धरण लिये गये हैं।

'देवल स्मृति' नामक ९० श्लोकों का ग्रंथ अतंदा-श्रम में रचा है। उस ग्रंथ में केवल प्रायश्चित्तविधि बताया गया है। किंतु यह ग्रंथ मूल स्वरूप में अन्य स्मृतियों से लिये गये श्लोकों का संग्रह होगा। इसका

रचनाकाल भी काफी अर्वाचीन होगा। क्योंकि, इस स्मृति के १७-२२ श्लोक तथा ३०-३१ श्लोक विष्णु के हैं, ऐसा अपरार्क में (३.१२००) बताया गया है। अपरार्क तथा स्मृतिचन्द्रिका में 'देवल स्मृति' से दायविभाग, स्वीधन पर रहनेवाली स्त्री की सत्ता आदि के बारे में उद्धरण लिये गये हैं। इससे प्रतीत होता है कि, स्मृतिकार देवल, बृहस्पति, कात्यायन आदि स्मृतिकारों का समकालीन होगा। देवल विरचित धर्मशास्त्र पर श्लोक एकत्रित कर, तीनसौ श्लोकों का संग्रह 'धर्मप्रदीप' में दिया गया है। उससे इसके मूल स्मृति की विविधता तथा विस्तार की पूर्ण कल्पना आती है।

२. जनमेजय के संपत्त का एक सदस्य (म. आ. ४६.७)।

३. प्रस्थूप का पुत्र (म. आ. ६०.२५; विष्णु. १.१५.१७)। इसका भाई असित। स्वर्ग में जा कर, इसने पितरों को महाभारत का निरूपण किया था (म. आ. १.६४; अजित देखिये)।

४. एक शिवशिष्य। शिव ने श्वेत नाम से दो अवतार लिये। उनमें से दूसरे का शिष्य।

५. कृशाश्व की विपणा से उत्पन्न पुत्र (भा. ६.६. २०)।

६. एक ऋषि। ब्रह्मदेव के पुत्रक क्षेत्र के यज्ञ में, ब्रह्मगणों का यह अग्रिष्ठ था (पद्म. सू. ३४)।

देववत्—एक वैदिक राजा। इसका नाती सुदास (ऋ. ७.१८.२२)। इसका रथ अप्रतिहतगति था (ऋ. ८. ३.१.१५)। वध्वन्थ, दिवोदास तथा सुदास, इस प्रकार यदि वंशावलि मानी जाय, तो सुदास को देववत् का दौहित्र मानना चाहिये।

२. रुद्रसावर्णि मनु का पुत्र (मनु देखिये)।

३. (सो. कुकुर.) देवक का ज्येष्ठ पुत्र। उपदेव, सुदेव एवं देवरक्षित इसके वंशु थे (पद्म. सू. १३)।

४. (सो. वृष्णि.) अक्रूर का पुत्र (पद्म. सू. १३)।

५. एक ऋषि। पूर्वजन्म में यह केशव था। यह विष्णु-स्वामी के मतों का अनुयायी था। इसने 'रामज्योत्स्ना-मय' नामक ग्रंथ लिखा (भवि. प्रति. ४.२२)।

देववती—ग्रामणी गंधर्व की कन्या एवं सुकेश राक्षस की पत्नी।

देववर—यजुर्वेदी ब्रह्मचारी।

देववर्णिनी—भारद्वाज ऋषि की कन्या तथा विश्रवा ऋषि की पत्नी। इसे वैश्रवण नामक पुत्र था।

देववर्धन—(सो. कुकुर.) भागवतमत में देवक का पुत्र (देवरक्षित देखिये)।

देववर्मन—(मौर्य. भविष्य.) वायु तथा ब्रह्मांडमत में इंद्रपालित का पुत्र। इसने सात वर्षों तक राज्य किया। सोमशर्मा इसी का ही नामांतर है।

देववर्ष—प्रियव्रत राजा का पुत्र (भा. ५.२०.९)।

देववात—भरत का पुत्र। इसके भाई का नाम देवश्रवस् था।

इन दोनों का एक संपूर्ण सूक्त है। दृषद्वती, सरस्वती एवं आपया नदी के तट पर, इसने यज्ञ किये थे (ऋ. ३.२३.२)।

देववीति—(स्वा. प्रिय.) मेरु की नौ कन्याओं में से एक तथा अमीश्रपुत्र केतुमाल की स्त्री।

देववत—मालिनी देखिये।

२. भीष्म का नामांतर (म. आ. १०.५०; १४. ६७)।

३. एक कर्मठ ब्राह्मण। एक बार एक कृष्णभक्त ने कृष्ण का पूजन किया। तीर्थ देने पर, इसने उसे अश्रद्धा से ग्रहण किया।

अतः इसे बौंस का जन्म मिला। पश्चात् पुण्यसंचय के कारण, उस बौंस से कृष्ण ने अपनी सुरती बनायी, एवं इसका उद्धार हो गया (पद्म. पा. ७३)।

देवशर्मन—एक ऋषि। इसकी स्त्री रुचि (म. अनु. ७५. १८; ४१ कुं.)।

२. जनमेजय के सत्र का एक सदस्य (म. आ. ४८.९)।

३. वायुमत में व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा के शाकपूर्ण रथीतर का शिष्य (व्यास देखिये)।

४. एक सदाचारी ब्राह्मण। अपने पिता का वर्षश्राद्ध सुयोग्य ब्राह्मण के हाथों से, यह हर साल करता था। एकबार श्राद्ध के बाद यह आँगन में बैठता था। तब एक बिल तथा कुतिया का संभाषण इसने सुना। उस संभाषण से इसे पता चला कि, वे दोनों इसके मातापिता हैं, तथा श्राद्ध की गड़बड़ी वो दोनों भूखे रह गये हैं।

अपने मातापिता को, बिल एवं कुतिया का जन्म कैसे प्राप्त हुआ, इसका कारण पूछने के लिये, यह वसिष्ठ के पास गया।

वसिष्ठ ने सारी घटनायें अन्तज्ञान से जान कर, इसे बताया, 'रजस्वला स्थिति में तुम्हारी माता ने भोजन पका कर ब्राह्मणों को खिलाया। इस कारण उन दोनों को यह

दुस्थिति प्राप्त हुई है'। इस पर उपाय पूछने पर, वसिष्ठ ने भाद्रपद शुद्ध पंचमी को, ऋषिपंचमी व्रत करने के लिये इसे कहा। उसे करने के बाद, इसके मातापिता का उद्धार हुआ (पद्म. उ. ७७)।

५. एक ब्राह्मण। प्रत्येक पर्व में यह समुद्रसंगम पर श्राद्ध करता था। उस श्राद्ध से इसके पितर प्रत्यक्ष भा कर इसे आशीर्वाद देते थे। एक बार अपने पितरों के साथ यह पितृलोक गया। वहाँ अपने पितरों से भी अधिक सुखी अन्य पितर इसने देखे। उसका रहस्य पूछने पर इसे ज्ञात हुआ कि, उनके श्राद्ध महीसागर-संगम पर होते हैं। वहीं श्राद्ध करने का इसने निश्चय किया। पश्चात् यह पृथ्वी पर आया, एवं अन्य लोगों की सहायता से महीसागरसंगम पर इसने श्राद्ध किया। उससे इसके पितरों का उद्धार हुआ (स्कन्द. १. २. ३)।

६. पुरंदर नगर में रहनेवाला एक ब्राह्मण। इसने अनेक पुण्यकृत्य किये। किंतु उनसे इसके मन को शांति प्राप्त नहीं हुई। अन्त में भगवद्गीता के दूसरे अध्याय से इसे मनःशांति प्राप्त हुई। (पद्म. उ. १७६)।

७. मायापुरी में रहनेवाला अत्रिकुल का एक ब्राह्मण। इसकी कन्या का नाम गुणवती तथा दामाद का नाम चन्द्रशर्मा था। चंद्रशर्मा इसका शिष्य भी था। एक बार ये दोनों अरण्य में दर्भसमिधा लाने के लिये गये। एक राक्षस ने इनका वध किया। अनेक प्रकार के धर्माचरणों के कारण, ये वैकुण्ठ गये (पद्म. उ. ८८; सत्यभामा देखिये)।

८. कावेरी नदी के उत्तरतट पर रहनेवाला एक ब्राह्मण। कार्तिक माह में अपने पुत्र को इसने स्नानादि कर्म करने के लिये कहा। उसने दुर्लक्ष किया। तब क्रुद्ध हो कर, इसने पुत्र को शाप दिया, 'तुम चूहा बनोगे'। बाद में पुत्रद्वारा प्रार्थना की जाने पर, इसने उःशाप दिया, 'कार्तिकमाहात्म्य सुनने पर तुम मुक्त हो जावोगे'।

उस शाप के अनुसार, इसका पुत्र चूहा बन कर अरण्य में गया। एक बार एक आँवले के वृक्ष के नीचे, विश्वामित्र ऋषि अपने शिष्यों को कार्तिकमाहात्म्य बता रहा था। उसे सुन कर वह ब्राह्मणपुत्र मुक्त हुआ (स्कन्द. २.४.१२)।

९. विष्णु का एक अवतार। जालंधर दैत्य एवं देवताओं का युद्ध चल रहा था। उस समय, जालंधर दैत्य की पत्नी वृंदा को एवं उसकी सखी स्मरवृत्ति को कैसाने के लिये, विष्णु ने देवशर्मा नामक तपस्वी का वेष धारण किया।

अपने को भरद्वाज गोत्रज ऋषि बता कर, देवशर्मा के रूप धारण करनेवाला विष्णु वृंदा को अपने आश्रम में ले गया। पश्चात् जालंधर का रूप धारण कर के, विष्णु ने देवशर्मा के आश्रम में वृंदा का उपभोग लिया (पद्म. उ. १८; जालंधर देखिये)।

देवश्रवस्—(सो. क्रोष्टु.) शूर राजा को मारिषा से उत्पन्न पुत्र। कंस की भगिनी कंसवती इसकी स्त्री थी। इसे सुवीर एवं इषुमान् नामक दो पुत्र थे (भा. ९.२४)।

२. एक ऋषि (म. शां. ४७.५)। यह विश्वामित्र के कुल में पैदा हुआ था, एवं उसीके वंश का एक प्रवर भी था। इसे कुशिक गोत्र का मंत्रकार भी बताया गया है।

देवश्रवस् भारत—भरतवंश का एक राजा। द्युवती, सरस्वती, एवं आपयो नदीयों के तट पर, इसने देववान् राजा के साथ काफी यज्ञ किये थे (ऋ. ३.२३. २-३)। महाभारत (भांडारकर इन्स्टिट्यूट आवृत्ति) में 'देवश्रवस्' नाम से इसका निर्देश प्राप्त है।

देवश्रवस् यामार्चन—एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १७)। अनुक्रमणी में इसे यम का पुत्र कहा गया है।

देवश्रेष्ठ—सदसवर्णि मनु का एक पुत्र।

देवसावर्णि—रौच्य मनु का नामांतर। यह तेरहवाँ मनु था, एवं तेरहवें मन्वंतर का अधिपति था (भा. ८. २३; ब्रह्मवै. २.५४)। पुराणों में इसका ऋतवामा नामांतर दिया गया है (मत्स्य. ९; मनु देखिये)।

देवसेना—रक्ष प्रजापति की कन्या। केशी दैत्य इसे हरण कर ले जा रहा था। इस वक्त इंद्र ने इसे छुड़ाया। पश्चात् इसने कार्तिकेय को वरण किया (म. व. २१३. १; २१८.४७)। महाभारत में ली गयी देवसेना की कथा रूपकात्मक प्रतीत होती है।

देवस्थान—एक ब्रह्मर्षि (म. शां. २०.१; ४७.६)।

देवहृद्य—एक ऋषि (म. स. ७.१६)।

देवहृति—स्वार्थभुव मनु की कन्या, एवं कर्दम—प्रजापति की पत्नी (भा. ३.१२.५४)। इसे नौ कन्याएँ एवं कपिल नामक एक पुत्र था (भा. ३.२४)। कपिल ने इसे सांख्यशास्त्र का उपदेश दिया था। बाद में यह देहत्याग कर नदी बनी (भा. ९.३३)।

देवहोत्र—एक ऋषि। उपरिचर वसु के यज्ञ में यह ऋषि था।

देवातिथि काण्व—एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.४)। इसके सूक्त में इम, कशम, दयावक तथा कृप का उल्लेख है (ऋ. ८.४.२), तथा अन्त में कुरुंग की दानस्तुति की

है (ऋ. ८.४.१९)। एकवार अकाल पड़ा। यह अपने पुत्रों के साथ कंदमूल लाने के लिये अरण्य गया। वहाँ इसे कृष्मांड के फल प्राप्त हुए। इसने एक साम कह कर, उन फलों को गायों में परिवर्तित कर दिया (पं. ब्रा. ९. २.१९)।

२. (सो. कुरु.) क्रोधन एवं कंडू का पुत्र। विष्णु, मत्स्य तथा वायु पुराणों में इसे अक्रोधन का पुत्र कहा गया है। वैदर्भी मर्यादा इसकी स्त्री थी एवं ऋष्य वा रुच इसका पुत्र था (म. आ. ९०.२२; भा. ९.२२.११)।

देवाधिप—दुर्योधन के पत्न का एक राजा (म. आ. ६१.२७)।

देवानंद—(सां. मगध. भविष्य.) प्रियानंद राजा का पुत्र। इसने बीस वर्षों तक राज्य किया।

देवानीक—(सू. इ.) क्षेमधन्वा का पुत्र (पद्म. सू. ८)।

देवांतक—रावण का पुत्र। हनुमानजी ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ६.७०)।

२. एक राक्षस। यह हिरण्यक्ष राक्षस का मित्र था। उसकी ओर से युद्ध करते समय, यह यम के हाथों मारा गया (पद्म. सू. ७०)।

३. एक असुर। यह रौद्रकेतु का पुत्र था। इसने अपने कृत्यों द्वारा त्रैलोक्य को वस्त कर रखा था। तत्र विनायक ने कश्यप के गृह में अवतार ले कर, इसका वध किया।

४. कालनेमि का पुत्र।

देवापि आर्षिषेण—(सो. कुरु.) कुरुवंश का एक राजा एवं सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.९८)। इसके सूक्त में शंतनु राजा का उल्लेख भी प्राप्त है।

शंतनु तथा यह दोनों कुरुवंश का राजा प्रतीप एवं सुनेदा के पुत्र थे। उनमें से यह ज्येष्ठ तथा शंतनु कनिष्ठ वंशु था। फिर भी शंतनु गद्दी पर बैठा। इसी कारण राज्य में १२ वर्षों तक अवर्षण हुआ। ब्राह्मणों ने उससे कहा, 'तुम छोटे भाई हो कर गद्दी पर बैठे हो, इस कारण भगवान् वृष्टि नहीं करते हैं'।

शंतनु ने देवापि को राजसिंहासन पर बैठने के लिये बुलवाया। परंतु देवापि ने उसे कहा, 'तुम्हारा पुरोहित बन कर मैं यज्ञ करता हूँ। तत्र वर्मा होगी।' तब इसने ऋग्वेद में इसके नाम से प्रसिद्ध सूक्त का उद्घोष किया (नि. २. ११)। तन्चारोग होने के कारण, इसने राज्य अस्वीकार कर दिया तथा यह तपस्या करने अरण्य गया। सौ वर्ष का अवर्षण होने के कारण, शंतनु की प्रार्थना से इसने यज्ञ

किया (बृहदे. ७.१४-८; ८.७)। इससे प्रतीत होता है, क्षत्रिय हो कर भी, इसने ब्राह्मणवर्ण स्वीकार कर गौरीहिल्य किया। पृथ्वीक नामक तीर्थ पर तपस्या कर के, इसने यह ब्राह्मणत्व प्राप्त किया था (म. श. ३९.१०)।

‘ बृहस्पति की स्तुति कर, इसने वर्षा करवाई। अपने सूक्त में इसने स्वयं को ‘औखान’ कहलाया है (ऋ. १०. ९८.११)। पुराण में कुछ भेद से यही जानकारी उपलब्ध है।

महाभारत में इसे प्रतीप एवं शैब्या-स्त्री सुन्दरी का पुत्र बताया गया है (म. आ. ९०.४६)। भागवत, मत्स्य, वायु एवं विष्णुमत में यह प्रतीपपुत्र होने के बारे में मतभेद नहीं है। इसे शंतनु तथा बालिक नामक दो भाई थे। च्यवन में ही इसने विरक्ति स्वीकार की (म. आ. ८९.५२; ९०.४६; ह. वं. १.३२.१०६)।

धर्मज्ञान की इच्छा से विरक्त हो कर, यह वन में गया। बाद में यह देवों का उपाध्याय बना। इसे च्यवन तथा इष्टक नामक दो पुत्र थे (वायु. ९९.२३२; ब्रह्म. १३. ११७)। कुष्ठरोग से पीड़ित होने के कारण, लोगों ने इसे राजा बनाना अमान्य किया था (मत्स्य. ५०. ३९)।

भागवत में उपरोक्त सारी कथा दे कर, उसमें और कुछ जानकारी भी दी गयी है। शंतनु ने देवापि को राज्य का स्वीकार करने की प्रार्थना की। शंतनु के प्रधानों ने कुछ बुद्धिमान ब्राह्मणों को भेज कर इसकी मति पार्यंङ्ग मतों की ओर प्रवृत्त की। अंत में शंतनु के पास आ कर यह वेदमार्ग की निंदा करने लगा। इससे यह पतित सिद्ध हो कर, राज्य के लिये अयोग्य बना, तथा शंतनु का दोष नष्ट हो गया (विष्णु. ४.२०.७)।

बाद में यह कलापिश्राम में रहने लगा। कलियुग में सोमवंश नष्ट होने के बाद, कृतयुगारंभ में इसने पुनः एक बार, सोमवंश की स्थापना की (भा. ९.२२)। कलियुग में वर्णाश्रमधर्म नष्ट होने के बाद, नये कृतयुग के आरंभ में, वर्णाश्रमधर्म की स्थापना इसीके हाथों से होनेवाली है (भा. १२. २; विष्णु. ४. २०. ७; ९; सुवर्चस् देखिये)।

२. चेदि देश का एक क्षत्रिय। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०.५०)।

३. आर्षिषेण राजा के उपमन्यु नामक पुरोहित का पुत्र (मिथु देखिये)।

देवार्ह—(सो. विदू.) वायुमत में हृदीक का पुत्र।

देवानुध—(सो. क्रोडु) सात्वत राजा का पुत्र। इसका पुत्र वभ्रु। पद्ममत में यह सात्वत का द्वितीय पुत्र था। इसे पुत्र न था, इसलिये इसने पर्णशा नदी के तट पर तपस्या की। तब नदी ने कन्या का रूप धारण कर इसे वरण किया। पश्चात् उस कन्यारूपधारी नदी से इस वभ्रु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (पद्म. सू. १३)। इसने यज्ञ में ब्राह्मणों को कांचनचक्र अर्पण किया था (म. शां. २२६.२१; अतु. २००.७ कुं.)।

देवी—एक अप्सरा।

२. प्रह्लादपुत्र वीरोचन की स्त्री (भा. ६. १८.१६)।

३. वरुण की पत्नी। इसे बल नामक पुत्र एवं सुरा नामक कन्या थी (म. आ. ६०.५१; देवी ४. देखिये)।

४. विश्वव्यापक आदिमाया के लिये प्रयुक्त सामान्य-नाम। देवी का शब्दशः अर्थ ‘स्त्री देवता’ है। इस अर्थ से, देवों के स्त्रियों के लिये, यह शब्द प्रयुक्त किया जाता है। किंतु ‘देवी’ यह नाम प्रायः आदिमाया ने पृथ्वी पर लिये नानाविध अवतारों के लिये, अधिकतर प्रयुक्त किया जाता है।

पुराणों में ‘देवी’ यह देवता अत्यंत प्रभावशाली मानी गयी है। इसलिये किसी भी संकट के समय, देव एवं मानव, इसकी शरण में जा कर संकटमुक्त होते हैं। स्कंद, पद्म, मत्स्य पुराणों में देवी की पराक्रम की अनेक कथाएँ प्रथित की गयी हैं। ‘कालिका पुराण’ एवं ‘देवी भागवत’ ये ग्रंथ देवीमाहात्म्य बताने के लिये ही केवल लिखे गये हैं। मार्कंडेय पुराण में, देवीमाहात्म्य बताने के लिये ‘सप्तशती’ नामक उपाख्यान की रचना की गयी है (मार्कं. ७८-९०)। इसका पठन देवीभक्त लोग प्रतिदिन किया करते हैं।

मानव एवं सृष्टि में जो शक्तिशाल है, उसकी उपासना, ‘देवी उपासना’ का आद्य अविद्यान है। देवगणों में से दत्त, शिव, एवं गणेश इन देवताओं में, एवं स्वयं मनुष्य के शरीर में जो सान्ध्य एवं शक्ति है, उन्हें एकत्रित कर के कार्यप्रवण बनाना, यह ‘देवी उपासना’ का सुख उद्देश्य है। देवीद्वारा विश्व की उत्पत्ति होती है, एवं विश्व का विस्तार ही उसीके कृपाप्रसाद में होता है। सृष्टिविस्तार के लिये, उस सृष्टि में हर एक प्राणिमात्र की आसक्ति या काम निर्माण होना बहुत जरूरी है। जब तक सृष्टि में मोह नहीं, तब तक सृष्टि का विस्तार नहीं हो सकता। सृष्टि के चराचर वस्तुओं के धार में, उपासकों के मन में आसक्ति या काम निर्माण करना, एवं पश्चात् उस

आसक्ति को पूरी करना, यह 'देवी उपासना' से ही केवल साध्य हो सकता है।

देवी के अनेक अवतार पृथ्वी पर हो गये हैं। उस हर एक अवतार का प्रभाव एवं रूप अलग है। देवी के उस अवतार का नाम भी इसके उस अवतार के रूप एवं गुणवैशिष्ट्य के अनुसार विभिन्न रखा गया है। देवी के इन विभिन्न अवतारों के नाम एवं उनके गुणवैशिष्ट्य इस प्रकार हैं:—

(१) त्रिगुणात्मिका—चराचर सृष्टि का स्वरूप सत्त्व, रज एवं तम इन तीनों गुणों से युक्त, अतएव 'त्रिगुणात्मिका' है। उन तीनों स्वरूप देवी धारण करती है। इसलिये उसे 'त्रिगुणात्मिका' कहते हैं। अपने त्रिगुणात्मिक स्वरूप के कारण, आध्यात्मिक शक्ति के साथ आदि दैविक एवं आधिभौतिक सामर्थ्य ही, देवी अपने भक्तों को प्रदान करती है। उस कारण, 'देवी उपासना' से भक्तों की आध्यात्मिक, आधिदैविक एवं आधिभौतिक उन्नति हो जाती है।

(२) दुर्गा—मार्कण्डेय पुराणान्तर्गत 'देवी माहात्म्य' में, देवी का निर्देश दुर्गा नाम से किया गया है, एवं उसे काली, लक्ष्मी, एवं सरस्वती का अवतार कहा है।

दुर्गा नामक असुर का वध करने के कारण, देवी को 'दुर्गा' नाम प्राप्त हुआ। देवों के नाश के लिये, दुर्गम तपस्या कर रहा था। ब्रह्मदेव को प्रसन्न कर, उसके वर से दुर्गम ने सारे वेद, पृथ्वी पर से चुरा लिये। उस कारण यज्ञयागादि सारे कर्म बंद हुए। पृथ्वी पर अनादृष्टि का भय छा गया। ब्राह्मणों ने विनती करने पर, देवी ने शतनेत्रयुक्त रूप धारण कर, दुर्गम का वध किया, एवं उसने चुराये हुए वेद मुक्त किये (पञ्च. स्व. २८; दे. भा. ७.२८)।

(३) महिषासुर मर्दिनी एवं महालक्ष्मी—महिष नामक राक्षस, ब्रह्मदेव के वर के कारण उन्मत्त हो कर देवों को त्रस्त करने लगा। देवों ने प्रार्थना करने पर आदिमाया ने अष्टादश भुजायुक्त रूप धारण किया, एवं रणांगण में महिषासुर का वध किया। देवी के उस अवतार को 'महिषासुर मर्दिनी' एवं 'महालक्ष्मी' कहते हैं (महिषासुर देखिये)। महिषासुर का वध करने के बाद, उस स्थान पर महालक्ष्मी ने पापनाशनतीर्थ उत्पन्न किया (स्कंद. १.२.६६; ३.३०)।

(४) चामुंडा—शुंभ-निशुंभ नामक दो दानवों ने, देवी का वध करने के लिये, चण्ड-मुण्ड नामक दो राक्षस

भेज दिये। किंतु देवी ने उन दोनों का ही वध किया। उस कारण, इसे 'चामुंडा' नाम प्राप्त हुआ। चण्ड-मुण्ड को मारने के बाद, चामुंडा ने शुंभ-निशुंभ का भी वध किया (स्कंद. ५.१.३८; चंड ३. देखिये)।

शुंभ-निशुंभ के पक्ष का रक्तवीज नामक और एक असुर था। ब्रह्मदेव के वरप्रभाव से, उसके रक्त के विंदु भूमि पर पड़ते ही उतने ही राक्षस निर्माण होते थे। इस कारण वह युद्ध में अजेय हो गया था। चामुंडा ने उसका सारा रक्त, भूमि पर एक ही रक्तविंदु छिड़कने का मौका न देते हुये, प्राशन किया। उस कारण रक्तवीज का नाश हुआ (दे. भा. ५.२७-२९; मार्क. ८५; शिव. उमा. ४७; रक्तवीज देखिये)।

(५) शकंभरी—अपने क्षुधित भक्तों को, देवी ने कंदमूल एवं सन्निव्याँ खाने के लिये दी। उस कारण, उसे 'शकंभरी' नाम प्राप्त हुआ।

(६) सती—दक्ष प्रजापति की कन्या के रूप में आदिमाया ने अवतार लिया, उसे 'सती' कहते हैं। अपनी इस कन्या का विवाह दक्ष ने महादेव से कर दिया।

पश्चात् दक्ष ने एक पशुयज्ञ प्रारंभ किया। उस यज्ञ के लिये, दक्ष ने अपनी कन्या सती एवं जमाई शिव को निमंत्रण नहीं दिया। फिर भी सती पिता के यज्ञस्थान में यज्ञसमारोह देखने आयी। वहाँ दक्ष ने उसका अपमान किया। तब क्रोधवश सती ने, यज्ञकुंड में अपना देह झोंक दिया।

शिव को यह ज्ञात होते ही, दुखी हो कर सती का अर्धदग्ध शरीर कंधे पर ले कर, वह नृत्य करने लगा। उस नृत्य से समस्त त्रैलोक्य प्रसन्न हो गया। पश्चात् विष्णु ने शंकर को नृत्य से परावृत्त करने के लिये, सती के कलेवर का एक एक अवयव शस्त्र से तोड़ना प्रारंभ किया। जिन स्थानों पर सती के अवयव गिरे, उन स्थानों पर सती या शक्ति देवी के इक्कावन स्थान प्रसिद्ध हुए। उन्हें 'शक्तिपीठ' कहते हैं (शक्ति देखिये)।

(७) पार्वती, काली, एवं गौरी—दक्षकन्या सती ने हिमालय के उदर में पुनः जन्म लिया। हिमालय की कन्या होने से, इसे हेमवती, गिरिजा, एवं पार्वती ये पैंतूक नाम प्राप्त हुए। इसकी शरीरकंति काली होने के कारण, उसे 'काली' नामांतर भी प्राप्त हुआ था।

एक बार शंकर ने मञ्जाक के हेतु से, पार्वती की कृष्णवर्ण के उपलक्ष में, उसे 'काली' कह के पुकारा।

इसने यह अपमान समझा, एवं गौरवर्ण प्राप्त करने के लिये तपस्या करने, यह हिमालय पर्वत में गयी। शंकर अत्यंत स्त्रीलपट होने से, उसके मंदिर में किसी भी स्त्री का प्रवेश न हो, ऐसी व्यवस्था इसने की। अपनी माता की सखी क्रुमुमामोदिनी एवं शिवगणों में से वीरक को, शंकर की मंदिरद्वार पर कड़ा पहारा रखने के लिये इसने कहा। फिर भी वीरक की दृष्टि बचा कर, अंधकासुर का अड़ि नामक पुत्र सर्प का रूप ले कर शिवमंदिर में पहुँच गया। पश्चात् पार्वती का रूप ले कर उसने शंकर को भुलाने का प्रयत्न किया। किंतु शंकर ने अंतर्ज्ञान से उसे पहचान कर उसका नाश किया।

वीरक पहारे पर होते हुए भी, अड़ि राक्षस को शिवमंदिर में प्रवेश मिल गया। उस लापरवही के लिये पार्वती ने उसे शाप दिया, 'तुम पृथ्वी पर शिलाहो कर गिरोगे'। पश्चात् पार्वती की तपस्या से संतुष्ट हो कर, ब्रह्मदेव ने उसे गौरवर्ण प्रदान किया। उससे इसे गौरी नाम प्राप्त हुआ (पद्म. सू. ४४; मत्स्य. १५५—१५८; कालि. ४७)।

(८) कालिका—दारुक दैत्य का संहार करने के लिये, पार्वती ने शंकर के कंठ से, एक महाभयानक देवी निर्माण की। यह कृष्णवर्णीय होने से उसे 'कालिका' नाम प्राप्त हुआ। कालिका ने एक गर्जना करते ही, दारुक अपने सैन्य के साथ मृत हो गया। शिव के कंठ से उत्पन्न होने के कारण, कालिका के शरीर में शिवकंठ में स्थित विष उतर गया था। उस कारण दारुक के वध पश्चात्, कालिका के उग्र स्वरूप से स्वयं देव त्रस्त हो गये। पश्चात् शंकर ने बालरूप धारण कर, कालिका का स्तनपान किया एवं उसका सारा विष शोषण किया। तब यह शान्त हो गयी (स्कंद. १.२.६२)।

(९) मातृका—देवी का और एक अवतार मातृका है। घंटाकणि, त्रैलोक्यमोहिनी आदि सात मातृका (सप्त-मातृका) प्राचीनकाल से प्रसिद्ध हैं। मुहंजोदड़ो एवं हड़प्पा के उत्खनन में उपलब्ध 'सिंधुभाषी संस्कृति' में भी मातृका की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं (मातृका देखिये)।

इसके अतिरिक्त देवी भागवत एवं मत्स्य पुराण में, देवी के अन्य चौदह अवतारों का निर्देश किया गया है। देवी के वे चौदह अवतार इस प्रकार हैं:—

१. सिद्धांबिका—स्कंद ने उसकी स्थापना की।
२. तारा—यह दक्षिण दिशा में स्थित है। ३. भास्करा—यह पश्चिम दिशा का पालन करती है, एवं नक्षत्रों को

प्रकाश देती है। ४. योगेश्वरी—यह उत्तर दिशा में रहती है। उसके दक्षिण से सनकादिक योगी सिद्ध बने। ५. त्रिपुरा—त्रिपुरासुर का वध करने के लिये, इसने शंकर की मदद की। ६. कोलंबा—यह पूर्व दिशा में वाराहगिरि पर रहती है। ७. कपालेशी—यह कोलंबा के साथ रहती है। ८. सुवर्णाक्षी। ९. चर्चिता। १०. त्रैलोक्यविजया—यह पश्चिम दिशा में रहती है। ११. वीरा। १२. हरिसिद्धि—यह प्रलय की देवता है। १३. चंडिका—ईशान्य में रहनेवाली इस देवी ने चंडमुंड का वध किया। १४. भूतमाला अथवा भूतमाता—यह गुह के भूमध्य से निकली (स्कंद. १.२.४७; ३.१.१७; मत्स्य. १३; दे. भा. ९)।

देवीपीठ—उपरिनिर्दिष्ट देवी अवतारों के अतिरिक्त, देवी के १०८ नाम, एवं स्थान पुराणों में मिलते हैं। देवी के वे स्थान 'देवीपीठ' नाम से पहचाने जाते हैं। पुराणों में निर्दिष्ट देवीपीठ एवं वहाँ स्थित देवी के अवतार के नाम निम्नलिखित सूची में दिये गये हैं। इस सूची में से प्रथम नाम देवीपीठ का, एवं उसके बाद क्रम से दिया नाम वहाँ स्थित देवी के अवतार का है:—

अच्छोद (सिद्धशयिनी), अट्टहास (फुडरा), अमरकंठक (चण्डिका), अम्बर (विश्वकाया), अम्बर (विश्वकाया देवी), अश्वथ (वन्दनीया देवी), उज्जयिनी (चण्डिका), उत्कलात (विमला), उत्तरदुरु (औषधि), उत्पलावर्तक (लोला), उष्णतीर्थ (अभया), एकाग्रक (कीर्तिमती), कन्यकाश्रम (शर्वाणी), कपाल-मोचन (शुद्धा, शुद्धि), कमलाश्र (महोत्पलादेवी), कमलालय (कमला, कमलादेवी), कारतोया तट (अपर्णा), करवीर (महिषमर्दिनी), करवीर (महालक्ष्मी), कर्कोट (मुकुटेश्वरी), कर्णोट (जयदुर्गा), कर्णिक (पुरहृता), कश्मीर (महामाया), काचवी (देवगर्भी), कार्तिकेय (शाङ्करा, यशस्करा देवी), कान्यकुब्ज (गौरी), कामगिरी (कामाख्या), कायावरोहण (माता), कालेजर (काली), कालनाथ (काली), कालीपीठ (कालिका), काश्मीरमण्डल (मेधा), किरोट (किरीट), किर्तिकेय पर्वत (तारा), कुब्जाग्रक (त्रिसंख्या), कुमुद (सत्यवादिनी), कुक्षेत्र (सावित्री), कुशद्वीप (कुशोदका), कुतशौच (सिद्धिका), केदार (मार्गदायिनी), कोटितीर्थ (कोटवी), गंगाद्वार (हरिप्रिया, रत्तिप्रिया देवी), गंगा (गंगला), गण्डकी (गण्डकी), गन्धमादन (कामुका, कामाक्षी), गया (गंगला), गोकर्ण (भद्र-

कालिका, भद्रकणिका), गोमन्त (गोमती), गोदाश्रमे (त्रिसंख्या), गोदावरी तट (विश्वेशी), चट्टल (भवानी), चन्द्रभागा (काला), चित्त (ब्रह्मकला देवी), चित्रकूट (सीता), चैत्रथ (मदोक्तटा), छगलण्ड (प्रचण्डा), जनस्थान (भ्रामरी), जयन्ती (जयन्ती) जालन्धर (त्रिपुरमालिनी), जालन्धर (विश्वमुखी), ज्वालामुखी, (अग्निवक्रा), त्रिकूट (रुद्रसुंदरी), त्रिपुरा (त्रिपुरसुंदरी), त्रिखोता (भ्रामरी) देवदाहवन (पुष्टि), देवलोक (इंद्राणी), देविकातट (नन्दिनी), द्वारवती (रुक्मिणी), नंदीपुर (नंदिनी), नलहाटी (नला), नागदेवन (सुगंधा), नैपाल (महाप्राया), नैमिष (लिंगधारिणी), पञ्चसागर (बाराही), पञ्चाणी (लिंगेश्वरी), पाताल (परमेश्वरी), पारतटे (पारा), पिण्डारक वन (भृति), पुण्ड्रवधन (पाटला), पुरुषोत्तम (विमला), पुष्कर (सावित्री, पुष्कृतादेवी), प्रभास (चंद्रभागा), प्रभास (पुष्करावती), प्रयाग (ललिता), वदरी (उर्वशी), वहला (चण्डिका), विश्वक (विश्व-पत्रिका), ब्रह्मास्य (सरस्वती), भद्रेश्वर (भद्रा), भर-ताश्रम (अनंता, अंगना), भैरवपर्वत (अवन्ति), मकरन्दक (चण्डिका), मगध (सर्वानंदकरी), मणिवेदिक (गायत्री), मथुरा (देवकी), मन्दर (कामचारिणी), मर्कट (मुकुटेश्वरी), मलयपर्वत (रम्भा), मलयाचल (कल्याणी), महाकाल (महेश्वरी), महालय (महापद्मा, महाभागा), महालिंग (कपिला), मांडव्य (माण्डवी देवी), मातृणा (वैष्णवी), माधव वन (सुगंधा), मानस (दशायणी), मानस (कुमुदा), मायापुरी (नीलोत्पला), मायापुरी (कुमारी), माहेश्वरपुरी (स्वाहा), मिथिला (महादेवी), मुकुट (सत्यवादिनी), यमुना (मृगावती), यशोर (यशोरेश्वरी), युगाद्या (भूतशायी), रत्नावली (कुमारी), रामगिरि (शिवानी), रामतीर्थ (रमणा), रामा (तिलोत्तमा), रुद्रकोटि (न्द्राणी), लंका (इंद्राक्षी), ललित (संनति), वक्त्रेश्वर (महिषमर्दिनी), वराहशैल (जया), वस्त्रेश्वर (तृष्टि), वाराणसी (विशालाक्षी), विक्रूट (भद्रसुंदरी), विनायक (उमादेवी), विन्ध्य (विन्ध्यनिवासिनी), विन्ध्य कन्दर (अमृता), विनाशा (अमोघाशी), विपुल (विपुला), विभाप (कालिनी), विराट (अग्निवक्रा विशालाक्षी), विश्वेश्वर (पुष्टि, विश्वा), वृन्दावन (उमा), वृन्दावन (राधा), वेगल (प्रचण्डा), वेणानदी (अमृता), वेदवदन (गायत्री), वैद्यनाथ (जयतुर्गा), वैद्यनाथ

(अरोगा), वैश्रवणालय (निधि), शङ्खोद्धार (ध्वनि), शालिग्राम (महादेवी), शिवकुण्ड (शिवानन्दा), शिवचक्र (शुभा-चण्डा), शिवलिंग (जनप्रिया), शिव-संनिधि (पार्वती), शुचि (नारायणि), शोण (शोणाक्षी), शोणसंगम (सुभद्रा), श्रीपर्वत (श्रीसुंदरी), श्रीशैल (महालक्ष्मी), श्रीशैल (माधवी), सती (अरुन्धती), सन्तान (ललिता), सरस्वती (देवमाता), सर्वशरीरिन (शक्ति), सहस्राक्ष (उत्पलाक्षी), सह्याद्रि (एकवीरा), सह्याद्रि (एकवीरा), सिद्धपुर (मातालक्ष्मी देवी), सिन्धुसंगम (सुभद्रा), सुगन्धा (सुनन्दा), सुमार्ध (नारायणी), सूर्यविम्ब (प्रभा), सोमेश्वर (वरारोहा), स्थानेश्वर (भवानी), हरिश्चन्द्र (चन्द्रिका), हस्तिनापुर (जयन्ती), हिंशुला (कोटरा), हिवावतपृष्ठ (नंदा), हिमाद्रि (भीमादेवी), हिरण्याक्ष (महोत्पला), हेमकूट (मन्मथा), कालिका. ६४; मत्स्य. १३; पद्म. सूत्र. १७; दे. भा. ७.७; १।

देहिन्—अमिताम देवों में से एक।

दैत्य—एक मानवजाति। कश्यप एवं दिती की संतती 'दैत्य' कहलाती थी। उस वंश के लोगों से ही यह मानवजाति उत्पन्न हो गयी होगी।

दैत्यों का सुप्रसिद्ध राजा वृषपर्वन् था। उसकी कन्या शर्मिष्ठा पुरु राजा ययाति को विवाह में दी गयी थी। उससे आगे पुरु आदि वंश निर्माण हुए।

दैत्यों का पुरोहित शुक्र था। उसके पास मृत को जीवित करनेवाली 'संजीवनी विद्या' थी। वह विद्या देवों ने, अपने पुरोहित बृहस्पति के पुत्र कच के द्वारा शुक्र से संपादित की।

शुक्र के वंश में से शंड, मर्क, त्वष्ट, वरुचि, स्वष्ट, विशिरिस्, विश्वकर्मान वृत्र, वरुचिन् ये पुरुष प्रसिद्ध हैं। ये सारे दैत्यों के पुरोहित एवं इंद्र के शत्रु थे। उनमें से शंड एवं मर्क' दैत्यों को छोड़ कर देवों के पक्ष में जा मिले। उस कारण शुक्र ने उनको शाप दिया।

आगे चल कर, दानव, दैत्य, राक्षस, नाग, दस्यु आदि शब्द वंशवाचक न रह कर मुणवाचक हो गये।

दैत्यद्वीप—गरुड का पुत्र (म. उ. ९९.११)।

दैत्यसेना—दश प्रजापति की कन्या तथा केशी दैत्य की स्त्री (म. व. २१३.१)।

दैव्यांपति—शुक्र का पैतृक नाम (द्वै. ब्रा. ३.१०.९. ३-५)। अग्निपति की ईंटे बनाने की विद्या शांडिल्यायन ने इसे सिखायी थी (श. ब्रा. ९.५.१.१४)।

दैर्घतम—(सो. काश्य.) दीर्घतमा का पुत्र । धन्वतरि का यह पैतृक नाम था ।

दैर्घतमस—कक्षीयत् देखिये ।

दैच—अथर्वन् का पैतृक नाम ।

दैवत्य—एक ऋषि । ' उपाकर्मोपाचार्यतर्पण ' ग्रंथ में इसका उल्लेख है (जैमिनि देखिये) । एक राजा ।

दैवराति—(स. निमि.) देवरातपुत्र बृहद्रथ का यह पैतृक नाम था । इसके द्वारा किये गये अश्वमेध यज्ञ में याज्ञवल्क्य का शाकल्य से वाद हुआ था । पश्चात् याज्ञवल्क्य ने इसे तत्त्वज्ञान का उपदेश किया (म. शां. २९८.४) ।

२. (सो. क्रोध.) देवरातपुत्र देवक्षत्र का पैतृक नाम ।

दैवल—एक ऋषि । असित का यह पैतृक नाम था । (पं. ब्रा. १४.११.१८, असित देखिये) ।

दैववात—एक राजा । संजय राजा का यह पैतृक नाम था (ऋ. ४.१५.४) । यह अग्निपूजक था एवं तुर्वशा तथा वृचीयत् राजाओं पर इसने विजय प्राप्त किया था (ऋ. ४.१५.४) । तिसर के मत में, अभ्यावर्तिन् चायमान पार्थिव राजा एवं यह दोनों एक ही थे (अष्टिन्डिरो लेवेन १३३, १३४) । दिवोदास राजा की तरह, इसका राज्य भी सिन्धु नदी के पश्चिम में था । कुरु राजा देववात के साथ भी इसका धनिष्ठ संबंध था, यह इसके नाम से जाहिर होता है ।

दैवाप—इन्द्रोत का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३.५.४.१) ।

दैवावृध—बभ्रु का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७.३४) । सायणाचार्य दैवावृध एवं बभ्रु दो व्यक्ति मानते हैं ।

दैवोदास—भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि ।

दैवोदासि—प्रतर्दन का पैतृक नाम (सां. ब्रा. २६. ५. सां. उ. ३.१) । सुदास का भी यह पैतृक नाम रहा होगा (परुच्छेप एवं प्रतर्दन देखिये) ।

दोष—अष्ट वसुओं में से एक ।

दोषा—(स्वा. उक्तान.) पुष्याणि राजा की स्त्री । इसे प्रदोष, निशीथ एवं द्युष्ट नामक तीन पुत्र थे ।

दौरेश्रवस—श्रुश्रवस् का पैतृक नाम (पं. ब्रा. २५. १५; ३) ।

दौरिश्रुत—तिमिथि का पैतृक नाम (पं. ब्रा. २५. १५; ३) ।

दौर्गह—दुर्गह देखिये ।

दौर्मुखि—यशोधरा का पैतृक नाम ।

दौर्शल्लेय—दुःशलापुत्र सुरथ का पैतृक नाम ।

दौर्शासनि—दुशासनपुत्र का पैतृक नाम । अमि-मन्यु वध के लिये यह निमित्तमात्र बना ।

दौर्षान्ति तथा दौर्ष्यन्ति—भरत के पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ८.२३; श. ब्रा. १३.५.४; ११) ।

द्यावापृथिवी—एक देवताद्वय । ऋग्वेद में इन्हें कई बार मातापिता कहा गया है । द्यो को पिता तथा पृथिवि को माता मानने का संकेत ऋग्वेदकाल से प्रचलित है । यह जोड़ी इन्द्रादि की भी मातापिता है । पृथ्वी के सारे लोगों के मातापिता भी यही हैं ।

द्यु—अष्टवसुओं में से एक । एक बार सारे वसु अपने भार्याओं के साथ वसिष्ठ के आश्रम में क्रीड़ा करने गये । वहाँ उन्होंने वसिष्ठ की कामधेनु देखी । कामधेनु के रूप एवं गुण देख कर, हरण करने का विचार उन्होंने किया । वसुओं में से द्यु ने कामधेनु चुरा ली ।

कामधेनु के हरण की वार्ता श्रात होने ही, वसिष्ठ ने उन सब वसुओं को शाप दिया, ' तुम सब मनुष्य योनि में जन्म लो ' । इस शाप के अनुसार द्यु ने गंगा के उत्र से भीष्म के रूप में जन्म लिया (म. आ. ९३.४४) ।

द्युत—धृत देखिये ।

द्युतान मारुत—एक ऋषि एवं सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. ९६; पं. ब्रा. १७.१.७; ६.४.२) । अन्य कई स्थानों में ' वायु देवता ' अर्थ से इसका निर्देश प्राप्त है (वा. सं. ५.२७; तै. सं. ५.५.९.४; ६.२.१०.४; क. सं. १५.७; श. ब्रा. ३.६.१.१६) ।

द्युति—द्रुति का नामांतर ।

द्युतिमत्—(स. इ.) मदिराश्व राजा का पुत्र । इसका पुत्र सुवीर (म. अनु. २.९ कुं.) ।

२. शाल्वदेशीय एक राजा । अपना राज्य इसने ऋचीक को दान दिया था । उस कारण इसे मरणोत्तर सद्गति प्राप्त हुई (म. अनु. १३७. २२-२३; शां. २२६-३३) ।

३. स्वायंभुव मनु का एक पुत्र (पद्म. सु. ७) ।

४. दक्ष सावर्णि मन्वन्तर के सप्तपिंयाँ में से एक ।

५. आभूतरजस देवों में से एक ।

६. सरस्वती के तट पर स्थित भद्रावती नामक नगर का राजा (पद्म. उ. ४९) ।

७. मणिभद्र तथा पुष्य जनी का पुत्र ।

द्युमत्—स्वायंभुव मन्वन्तर के वसिष्ठ तथा ऊर्जा का पुत्र (मा. ४१.४१) ।

२. खारोचिप मनु का एक पुत्र (मनु देखिये) ।

३. प्रतर्दन राजा का नामांतर (प्रतर्दन देखिये)।

४. शाल्व राजा का प्रधान। कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.६)।

द्युमत्सेन—शात्वदेशीय सत्यवत् वा चित्राश्र राजा का पिता (सावित्री देखिये)।

२. एक राजा। राजगृह दिग्विजय के समय, अर्जुन ने इसे जीता। यह धर्मराज की सभा में उगस्थित था (म. स. ४.२७; २३.२७००० पंक्ति ४)। यह कृष्ण के द्वारा मारा गया (म. स. परि. १ क्र. २१)।

३. (सो. मगध. भविष्य.) भागवत मत में शम का पुत्र। मत्स्य के मत में त्रिनेत्र का पुत्र (दृढसेन २. देखिये)।

द्युम्न—(स्वा. उत्तान.) चक्षुर्मनु तथा नडवला का पुत्र (मनु देखिये)।

द्युम्न विश्वकर्षणि आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. २३)।

द्युम्नीक वासिष्ठ—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.८७)।

द्योतन—सायण के मत में एक राजा का नाम (ऋ. ६.२०.८)।

२. सुतप देवों में से एक।

द्रविड़—कृष्ण तथा जांबवती का पुत्र।

द्रविडा—(स. दिष्ट.) वायु के मत में वैशाली के नृपतिद्रु राजा की कन्या। द्रविडा इसीका ही नामांतर था। इसका पुत्र विश्रवस् (वायु. २.२४.१६; विश्रवस् देखिये)।

२. कई जगह इसे विश्रवस् की पत्नी बता कर, कुबेर को इन दोनों का पुत्र कहा है (भा. १.४.३; ४.१.३६)।

द्रविण—पृथु तथा अर्चि का पुत्र (भा. ५.२२.२४)।

२. धर नामक वसु का पुत्र (म. आ. ६०.२०)।

३. तृपित देवों में से एक।

द्रविणक—अग्नि को बसोर्धारा से उत्पन्न पुत्र (भा. ६.६.१३)।

द्राहायण—(ग्नि) सामवेद के श्रौत तथा गृह्यसूत्र तैयार करनेवाला आचार्य। इसे खादिर भी कहते हैं। रुद्रभृती का यह पौत्रक नाम था। इसे राणायनीय शाखा का सूत्रकार माना जाता है। किंतु हेमाद्रि के मत में, राणायनीय तथा कौथुम शाखा का सूत्रकार गोभिल नामक आचार्य है (श्राद्ध कल्प)। इसके द्वारा रचित 'खादिर श्रौतसूत्र' शाद्रूलशाखा का माना जाता है (भगवद्गीता जै. उ. ब्रा. प्रस्तावना वृ. १७)।

प्रा. च. ३९]

द्रुति—(स्वा. प्रिय.) नक्त की पत्नी। इसे गय नामक एक पुत्र था (भा. ५.१५.६)।

द्रुपद—(सो. अज.) पांचाल देश का सुविख्यात राजा एवं द्रौपदी का पिता। उत्तर पांचाल देश के सोमक राजवंश के पृथक् राजा का यह पुत्र था। इस लिये, इसे 'सौमकि' नामांतर भी प्राप्त था (म. आ. परि. १. ७५.२७)।

पांचालाधिपति पृथक् राजा को काफी वर्षों तक पुत्र नहीं हुआ। पुत्रप्राप्ति के लिये उसने तपस्या की। तप करते समय, एक बार मेनका नामक अप्सरा वहाँ आयी। उसका लावण्य देख कर पृथक् मोहित हो गया, एवं उसका वीर्य स्वलित हो गया। उस वीर्य से एक बालक का जन्म हुआ। वही द्रुपद है (म. आ. परि. १ क्र. ७९, पंक्ति १५२-१७५)। यह मरुद्गणों के अंश से हुआ (म. आ. ६१.७४)। द्रुपद को यज्ञसेन (म. आ. १२२.२६), पांचाल, तथा पार्यत नामांतर भी प्राप्त थे।

द्रोणविरोध—द्रुपद ने अस्त्रशिक्षा तथा धनुर्विद्याशिक्षा, द्रोणाचार्य के पिता भरद्वाज के निरीक्षण में प्राप्त की थी। इसलिये द्रोण द्रुपद का गुरुबंधु था। धनुर्विद्या पूर्ण होने पर, द्रुपद ने भरद्वाज को गुरु दक्षिणा दी, एवं वचन दिया, 'मेरे राज्यारूढ होने पर यदि तुम या तुम्हारा पुत्र द्रोण मेरे पास सहायता माँगने आओगे, तो मैं तुम्हें अबश्य सहायता करूँगा'। बाद में द्रुपद अपने राज्य में चला गया।

द्रुपद को राज्याधिकार प्राप्त होने के बाद, पूर्ववचनानुसार इसकी सहायता माँगने के लिये, द्रोण इसके पास आया। परन्तु मदांश हो कर, द्रुपद ने सहायता की जगह द्रोण का अत्यंत उपहास किया। इस अपमान का बदला लेने के लिये, द्रोण ने पांडवों का आचार्यत्व मान्य किया, एवं उनके द्वारा द्रुपद से प्रतिशोध लिया (द्रोण देखिये)। बाद में द्रोण ने इसका आधा (उत्तर पांचाल) राज्य स्वयं ले कर, दूसरा आधा (दक्षिण पांचाल) राज्य वापस दे दिया। द्रुपद गंगातट पर दक्षिण पांचाल में मार्कंडी में राज्य करने लगा (म. आ. १२८.१५)। प्राचीन पांचाल ही आधुनिक रोहिलखंड है।

सोमक एवं संजय राजवंश के लोग भी इसके साथ दक्षिण पांचाल पधारे। ये सारे लोग भारतीय युद्ध में द्रुपद के साथ पांडवों के पक्ष में शामिल थे।

धृष्टद्युम्नजन्म—द्रोण ने अपने शिष्यों के द्वारा इसकी दुर्दशा करने के कारण, द्रुपद द्रोण पर अत्यंत

क्रोधित हुआ, तथा उसके नाश के लिये उपाय ढूँढ़ने लगा। द्रोणविनाशक पुत्र की प्राप्ति के लिये यह ऋषियों के एवं ब्राह्मणों के आश्रम में घूमने लगा। एक बार उपयाज ऋषि के कहने पर, याज नामक काश्यपगोत्रीय ब्राह्मण के आश्रम में यह गया। वह ब्राह्मण अत्यंत लोभी होने के कारण, कौनसा भी अशुक्त कर्म करने के लिये सदा तैयार रहता था। द्रुपद ने उसे पुत्रप्राप्ति का उपाय पूछा, एवं पुत्र होने पर एक अर्जुन वेनु दान देने का प्रलोभन उसे दिखाया (म. आ. १६.७.२१)। उसपर पुत्रप्राप्ति के लिये, यज्ञ करने की सलाह याज ने इसे दी।

उपयाज के उस सलाह के अनुसार, उपयाज तथा उसका भाई याज दोनों को अपने साथ नगर में ला कर, इसने यज्ञ किया। यज्ञसमाप्ति पर सिद्ध किया गया चरु खाने के लिये, याज ने द्रुपद की पत्नी सौत्रामणि को बुलवाया। परन्तु उसके आने में विलंब होने पर, याज ने वह चरु अग्नि में शोक दिया। तत्काल अग्नि में से एक कवचकुंडल-धारी दिव्य पुंस्य, तथा एक श्यामवर्णा स्त्री प्रकट हुई। उन्हें अपने पुत्र एवं पुत्री मान मान कर, इसने उनके नाम धृष्टद्युम्न तथा द्रौपदी रख दिये (म. आ. १५.५)।

द्रौपदीस्वयंवर—द्रौपदी उपवर होते ही द्रुपद ने उसके स्वयंवर की तैयारी की। मत्स्यथंज का, धनुष्य द्वारा वेध करने वाले को ही द्रौपदी दी जायेगी, ऐसी शर्त इसने रखी थी। ब्राह्मण वेप में पांडव इस स्वयंवर में आये थे। अर्जुन ने शर्त पूरी की। इसे द्रुपद ने द्रौपदी दी। 'धत्रियों को छोड़ कर द्रुपद ने एक ब्राह्मण को अपनी कन्या दी, एवं हमारा अपमान किया,' ऐसी सारे क्षत्रिय राजाओं की कल्पना हुई।

उस कारण वे द्रुपद से लड़ने के लिये प्रवृत्त हो गये। किंतु पांडवों ने उन सब का पराजय किया। बाद में द्रुपद ने अपना पुरोहित पांडवों के निवासस्थान पर भेजा। द्रौपदी-स्वयंवर का प्रण जीतने वाले पांडव ही हैं, यह जान कर इसे अत्यंत आनंद हुआ। बाद में बड़े ही समारोह के साथ, इसने पाँच पांडवों के साथ द्रौपदी का विवाह कर दिया (म. आ. १९०)।

भारतीय युद्ध में द्रुपद, पांडवों के पक्ष में प्रमुख था। इसने पांडवों की ओर से मध्यस्थता करने के लिये, अपने पुरोहित को धृतराष्ट्र के पास भेजा था। परन्तु प्रमत्तता के सारे प्रयत्न निष्फल हो कर युद्ध प्रारंभ हुआ। तब अपने पुत्र, गांधव तथा सेना के सहित द्रुपद, पांडवों की सहायता के लिये, युद्ध में शामिल हुआ। भारतीय

युद्ध में इसने काफी पराक्रम दर्शाया। भारतीय युद्ध के पंद्रहवें दिन हुए रात्रियुद्ध में, मार्गशीर्ष वद्य एकादशी के दिन प्रभात समय में, द्रोण के हाथों इसकी मृत्यु हुई (म. द्रो. १६१. ३४; मारुद-सावित्री)।

द्रौपदी तथा धृष्टद्युम्न के सिवा, द्रुपद को शिल्खी, सुमित्र, प्रियदर्शन, चित्रकेतु, सुकेतु, ध्वजकेतु (म. आ. परि. १. क्र. १०३. पंक्ति. १०८-११०), वीरकेतु (म. द्रो. १८. ३३), सुरथ एवं शत्रुंजय (म. द्रो. १३१. १२६) नामक अन्य पुत्र थे। धृष्टकेतु नामक पौत्र भी इसे था। इसके पुत्रों में से शिल्खी, जन्म के समय स्त्री था। बाद में एक यक्ष के प्रसाद से उसे पुरुषत्व प्राप्त हुआ। द्रुपद ने उसे शंकर से भीष्म के वध के लिये माँग लिया था (सौत्रामणि देग्विषे)।

द्रुम—अधिरथ यत् का पुत्र तथा कर्ण का भाई। भारतीय युद्ध में भीष्म के द्वारा यह मारा गया (म. द्रो. १३०. २३)। भांडारकर भंरिता में श्रव पाटभेट प्राप्त है।

२. महाभारतकाल का एक राजा। यह शिवि नामक दैत्य के अंश से पैदा हुआ था (म. आ. ६१. ८)।

३. गांधवों का पुरोहित (म. स. परि. १. क्र. ३. पंक्ति. १०)। कुवेर सभा में रह कर, यह कुवेर की उपासना करता था (म. सभा. परि. १.३.३०)। भीष्मक-पुत्र रुक्मिण का यह गुरु था (म. उ. १५५. ७)। इसने उसे विजय नामक धनुष्य दिया था (म. उ. १५५. ११०)।

द्रुमसेन—एक क्षत्रिय राजा। यह गविष्ठ नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१. ३२)। यह शत्रु का चक्ररक्षक था। युधिष्ठिर द्वारा इसका वध हुआ (म. श. ११.५२)।

२. दुर्योधनपक्षीय एक राजा (म. आ. ६१. ३२)। यह धृष्टद्युम्न के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १४५. २४)।

द्रुमिल—ऋषभदेव तथा ज्यंती के शतपुत्रों में से एक। यह भगवद्भक्त था (भा. ५.४; ११.४)।

द्रुह्य—द्रुह्यु का नामांतर।

द्रुह्यु—ऋग्वेदकालीन एक मानवजाति। यदु, तुवंसु, अनु, प्रूष एवं द्रुह्य ये ऋग्वेदकालीन पाँच सुविख्यात जातियाँ थी (ऋ. १. १०८. ८)। इन 'गण' के लोग भारत के उत्तर पश्चिम विभाग में रहते थे (शंभू-सु. वे. १३१-१३३)। महाभारतकाल में यह लोग

गंधार देश में रहते थे (पार्मि. ज. ए. सो. १९१०. ४९)।

एकवचन तथा बहुवचन में 'द्रुह्यु' का निर्देश ऋग्वेद में कई बार आया है (ऋ. ६. ४६. ८; ७. १८. ६; १२; १४; ८. १०. ५)। उनमें से एकवचन का निर्देश द्रुह्यु गण के राजा से संबंधित रहा होगा। यह राजा सुदास का शत्रु था, एवं पानी में डूब कर उसकी मृत्यु हो गयी (ऋ. ७. १८)। दशराज युद्ध में इसे काफी महत्वपूर्ण स्थान था। इंद्र, अग्नि, एवं अश्वियों का यह भक्त था (ऋ. १.१०.८८; ८.१०.५)।

२. आयुपुत्र नहुष का पौत्र तथा ययाति को शर्मिष्ठा से उत्पन्न तीन पुत्रों में से एक (म. आ. ७८.१०; ८४. १०; ९५. ९; गरुड. १.१३९; पद्म. सु. १२)। अन्तु तथा पूरु इसके भाई थे। ययाति ने सब पुत्रों को बुला कर, उन्हें अपनी जरा लेने के लिये कहा। शर्मिष्ठा से उत्पन्न पूरु नामक पुत्र ने ही जरा लेना मान्य किया। तब अन्य पुत्रों को शाप दे कर, ययाति ने पूरु को ही गद्दी पर बैठाया।

जरा लेना अमान्य करने के कारण ययाति ने इसे शाप दिया, 'तुम्हारे प्रिय मनोरथ एवं भोग-आशा सदा अनुत्पन्न रहेंगी। जहाँ नित्य व्यवहार नावों से होता है, ऐसे दुर्गम देश में तुम्हें रहना पड़ेगा, एवं वहाँ भी राज्याधिकार से वंचित हो कर, 'भोज' नाम से तुम प्रख्यात होगे' (वायु. ९४.४९-५०; ह. वं. १.३०.२८-३१; ब्रह्म. १२; १४६; म. आ. ७०)। उस शाप के अनुसार, इसके एवं इसके वंश को म्लेंच्छ लोगों के प्रदेश में राज्य मिल गया। इसके वंश की जानकारी अधिकांश पुराणों में मिलती है।

ययाति ने सप्तद्वीप पृथ्वी को समुद्र के साथ जीता था। उसके पाँच भाग कर, उसने अपने पुत्रों में बाँट दिये। उनमें से पश्चिमी भाग द्रुह्यु को मिला (ह. वं. १. ३०. १७-१८; विष्णु. ४. १०. १७)। परंतु इसके वंशज भरतखंड के उत्तर की ओर राज्य करते थे। इसके राज्य में म्लेंच्छ लोगों की काफी बस्ती होने का वर्णन प्राप्त है (भा. ९.२३.१६)। द्रुह्यु को पूर्व की ओर का राज्य दिया गया था, ऐसा भी कई जगह उल्लेख प्राप्त है (लिग. १. ६७)। इसे बभ्रु तथा सेतु नामक दो पुत्र थे (ह. वं. १.३२.१२४; अग्नि. २७६)। मत्स्य के मत में इसे सेतु तथा केतु नामक दो पुत्र थे (मत्स्य. ४८)। द्रुह्यु को बभ्रु नामक एक

ही पुत्र था, एवं बभ्रु को सेतु नामक पुत्र हुआ, ऐसा भी निर्देश प्राप्त है (विष्णु. ४.१७.१; भा. ९.२३.१४)। दुष्यन्त ने यह वंश पूरुवंश में मिला दिया। भृगु वंश के ऋषि इसके उपाध्याय थे।

३. पूरुवंश के मतिनार राजा के चार पुत्रों में से एक (म. आ. ९४. ११)।

द्रोण—भारतीय युद्धकालीन सुविख्यात युद्धशास्त्रज्ञ, कौरव एवं पांडवों का गुरु, एवं धर्मज्ञ आचार्य। आंगिरस गोत्रीय भरद्वाज ऋषि का यह पुत्र था। उस कारण, इसे 'द्रोण आंगिरस' भी कहते थे (म. उ. १४९.१७)। वसिष्ठ गोत्रीय शुक्राचार्य, एवं असित देवल, धौम्य, याज्ञ, काश्यप आदि ऋषि इसके समकालीन थे। आंगिरस गोत्रीय कृपाचार्य की बहन कृपी इसकी पत्नी थी। उससे इसे अश्वत्थामन् नामक पुत्र हुआ था (म. आ. १२१.१-१२२; विष्णु. ४.१९.१८)।

द्रोण के पिता भरद्वाज ऋषि का आश्रम गंगाद्वार पर था (म. आ. १२१.१३३* ; १२३.६८)। एक दिन भरद्वाज मुनि गंगा नदी में स्नान करने के लिये गये थे। वहाँ घृताची नामक अप्सरा पहले से ही स्नान कर के, वस्त्र बदल रही थी। उसका वस्त्र खिसक गया था। उस अवस्था में उसे देख कर, भरद्वाज का वीर्य स्वलिप्त हो गया। भरद्वाज ने उस वीर्य को उठा कर, एक द्रोण में रख दिया। उसी द्रोण से इसका जन्म हुआ। उस कारण इसे 'द्रोण' नाम प्राप्त हुआ। द्रोणकलश में जन्म होने के कारण, इसे 'अयोनिर्भव' (म. आ. ५७.८९; १२९.५; १५४. ५), 'कुमयोनि' (म. द्रो. १३२.२२), 'कुमसंभव' (म. द्रो. १३२.३०) आदि नाम प्राप्त हुए थे। इसके सिवा, शोणाश्व, रुक्मरथ, तथा मारद्वाज आदि नामांतर से भी इसका उल्लेख पाया जाता है (म. आ. १२२. १)। बृहस्पति एवं नारद के अंश से द्रोण का जन्म हुआ था, ऐसे निर्देश भी विभिन्न ग्रंथों में प्राप्त है (म. आ. ६१.६३; पद्म. सु. ७६)।

शिक्षा—धनुर्वेद तथा ऋग्वेदादि अन्य वेदों का अध्ययन, इसने अपने पिता के ही पास किया। इसके अग्नि-वेश नामक चाचा ने इसे 'आग्नेयास्त्र' सिखाया (म. आ. १२१.७)। पिता के पास अध्ययन करते समय, पांचाल देश के पृषत् राजा का पुत्र द्रुपद, द्रोण का सहाय्यी था। वही द्रुपद आगे इसका सत्र से बड़ा दुष्मन बन गया। भारतीय युद्ध में, इसका वध द्रुपदपुत्र वृष्ट्युद्ध ने ही किया।

तपस्या करते समय एक बार द्रोण को पता चला कि, जामदग्न्य परशुराम ब्राह्मणों को संपत्ति बाँट रहा है। द्रव्य-याचना के हेतु से द्रोण परशुराम के पास गया। परंतु परशुराम ने अपनी संपत्ति पहले ही ब्राह्मणों में बाँट डाली थी। अतएव अपने पास की अस्त्रविद्या ही उसने इसे दी। परशुराम से द्रोण को 'ब्रह्मास्त्र' नामक अस्त्र की प्राप्ति हुई (म. आ. १५४.१३; १२१)। परशुराम जामदग्न्य का काल देवराज वसिष्ठ के समकालीन, एवं द्रोण से काफी पूर्वकालीन माना जाता है। इस कारण, महाभारत में दी गयी 'ब्रह्मास्त्र विद्याप्रदान' की यह कहानी अविश्वसनीय मालूम पड़ती है।

इस प्रकार द्रोण अस्त्रविद्या में पूर्णतः कुशल बन गया। किंतु इतना विद्वान् होने पर भी, यह विपन्न एवं निर्धन ही रहा।

तत्र द्रव्यसहायताप्राप्ति की इच्छा से, यह अपने पुराने सहाय्यायी द्रुपद राजा के पास गया। परंतु द्रुपद ने इसका अपमान कर, इसे वापस भेज दिया (म. आ. १२२.३५-३७)। तत्र द्रोण द्रुपद पर अत्यंत क्रोधित हुआ, तथा उससे बदला लेने का विचार करने लगा। इस हेतु से यह हस्तिनापुर में गया एवं गुप्त रूप से अपने पत्नी के भाई कृपाचार्य के पास रहने लगा।

हस्तिनापुर में—एक बार कौरव तथा पांडव गुल्लीडंडा खेल रहे थे। तत्र उनकी गुल्ली पास ही के एक कुएँ में गिर पड़ी। वे उस गुल्ली को न निकाल सके। पास ही में द्रोण बैठा था। कुमारों ने गुल्ली निकाल देने की प्रार्थना द्रोण से की। द्रोण ने दर्भ की सहायता से गुल्ली निकाल दी। कुमारों ने यह वृत्त भीष्म को बताया। द्रोणाचार्य का मंत्रसामर्थ्य तथा अस्त्रविद्यानैपुण्य भीष्म को पूर्व से ही ज्ञात था। कुमारों के अध्यापन के लिये, द्रोण को नियुक्त करने के लिये, पहले से वह उत्सुक था। द्रोण हस्तिनापुर में आया है, यह ज्ञात होते ही, भीष्म इसे अपने घर में ले आया, एवं राजपुत्रों को धनुर्विद्या सिखाने का काम इसे सौंप दिया (म. आ. १२२)।

द्रोण कौरवपांडवों को धनुर्विद्या सिखाने लगा। इसके शस्त्रविद्याकौशल्य की कीर्ति चारों ओर फैल गई। नाना देशों के राजपुत्र इसके पास शिक्षा पाने के लिये आने लगे। एक बार एकलव्य नामक निषाद का पुत्र इसके पास विद्याध्ययन के लिये आया। किंतु निषादपुत्र होने के कारण, द्रोण ने उसे विद्या नहीं सिखाई।

द्रोण के पास बहुत सारे राजपुत्र विद्याध्ययन के लिये रहते थे। किंतु उन विद्यार्थियों में अर्जुन इसका सब से अधिक प्रिय शिष्य था। एक बार सारे शिष्यों को ले कर, द्रोण नदी पर स्नान करने गया। उस वक्त एक नक ने इसका पैर पकड़ लिया। यह देख कर, अन्य सारे राजपुत्र भाग गये, किंतु अर्जुन ने नक से इसकी रक्षा की। तब प्रसन्न हो कर, द्रोण ने उसे ब्रह्मास्त्र सिखाया (म. आ. १२३.७४)।

द्रुपद का पराभव—बाद में द्रोण ने अपने सारे शिष्यों के धनुर्विद्यानैपुण्य की परीक्षा लिवायी। उसे पता चला कि, वे सब धनुर्विद्या में काफी जानकार हो गये हैं। यह देख कर, अपने पुराने शत्रु द्रुपद पर आक्रमण करने का इसने निश्चय किया। काफी दिनों से जो हेतु मन में था, उसे पूर्ण करने के लिये, अपने शिष्यों द्वारा द्रुपद का पराभव करने की तैयारी इसने की। बाद में जल्द ही पांचाल देश पर आक्रमण कर, इसने द्रुपद को जीत लिया। द्रुपद का आधा राज्य (उत्तर पांचाल) अपने पास रख कर, बचा (दक्षिण पांचाल) इसने उसे वापस दे दिया (म. आ. १२८.१२)।

यद्यपि अर्जुन इसका प्रिय शिष्य था, फिर भी 'सेवक' के नाते यह पहले से ही दुर्योधन का पक्षपाती था। पांडवों के अज्ञातवासकाल में, कौरवों ने विराट के मोक्षों का हरण करवाया। तत्र विराटपुत्र उत्तर के साथ अर्जुन गायों की रक्षा के लिये आया। उस समय द्रोण कौरवों के पक्ष में युद्ध कर रहा था। युद्ध में अर्जुन ने द्रोण तथा अन्य रथी महारथियों का पराभव कर, गायों की रक्षा की (म. वि. ५३)। उस युद्ध में, अर्जुन ने स्वयं द्रोण को घायल कर, रणभूमि से पलायन करने के लिये मजबूर किया।

अज्ञातवास पूर्ण होने के बाद, पांडव यथाकाल प्रकट हुए। उन्होंने दुर्योधन के पास अपने राज्य की माँग की। उसके लिये उन्होंने कृष्ण को मध्यस्थता के लिये भेजा। उस समय द्रोण ने दुर्योधन को काफी उपदेश किया। पांडवों का हिस्सा उन्हें वापस देने के लिये भी कहा (म. उ. १४६.१५)।

परंतु द्रोण का यह कृत्य कर्णादि को पसंद नहीं आया। कर्ण एवं द्रोण की गरमागरम बहस हो कर, झगड़ा आगे बढ़ा। परंतु भीष्म के द्वारा मध्यस्थता करने पर, उन दोनों का झगड़ा सित गया (म. उ. १३७-१४८)।

भारतीययुद्ध—दुर्योधन ने किसी का भी उपदेश नहीं सुना। भारतीययुद्ध का प्रसंग निर्माण हुआ। निरुपाय हो कर, द्रोण को कौरवों के पक्ष में लड़ना पड़ा। अनेक वर्ष कौरवों का नमक खाने के बाद, उन्हें सहायता देने का अवसर संपन्न हुआ था। उस अवसर पर उन्हें सहायता न देना, इसे योग्य नहीं प्रतीत हुआ।

भारतीययुद्ध के दसवें दिन, कौरवों का प्रथम सेनापति भीष्म मृत हुआ। तत्पश्चात् दुर्योधन ने द्रोण को सैन्यापत्य दिया। इसके रथ के खंज पर कृष्णाजिन तथा कर्मडल का चिन्ह था (म. द्रो. परि. १. क्र. ५, पंक्ति १-२)। पाँच दिन युद्ध कर के, इसने पांडवसेना में हाहाकार मचा दिया।

द्रोण के सैन्यापत्य के प्रथम दिन, दुर्योधन ने धर्मराज को जीवित पकड़ लाने की प्रार्थना इसे की। इसने अर्जुन के अतुल सामर्थ्य का वर्णन दुर्योधन के पास किया। उसे सुन कर, दुर्योधन तथा कर्ण ने व्यंग वचनों से इसे कहा, 'पांडवों की जय हो, यही भावना आपके हृदय में है। इस कारण, आप युद्ध में वेपन से लड़ते हैं' (म. द्रो. १६०)। तत्र कोपाविष्ट हो कर द्रोण ने प्रतिज्ञा की, 'पांडवपक्ष के किसी न किसी शूर योद्धा का वध मैं कल अवश्य ही करूँगा'। इस प्रतिज्ञा के अनुसार, इसने द्रुपद का वध किया (म. द्रो. १६१.३४)।

अभिमन्युवध की वार्ता सुन, संतप्त हो कर अर्जुन ने जयद्रथवध की प्रतिज्ञा की। तत्र द्रोण ने एक में एक ऐसे तीन व्यूह रच कर, जयद्रथ के संरक्षण की पराकाष्ठा की। फिर भी अर्जुन ने जयद्रथ वध किया ही। जयद्रथ-वध का बदला लेने के लिये, द्रोण ने अहोरात्र युद्ध चाल रखने की प्रतिज्ञा की, एवं मशालों की सहायता से रात्रि के समय भी युद्ध चालू रखा।

वध—वह युद्ध का पंद्रहवा दिन, अर्थात् द्रोण के सैन्यापत्याभिषेक का पाँचवाँ दिन था। दिन के युद्ध से सारे वीर थक गये थे, तथापि ईर्ष्यावश, रात्रि के समय भी वीरता से लड़ रहे थे। किंतु धीरे-धीरे सारी सेना को निद्रा ने घेर लिया। यह संधि देख कर, भीम ने इन्द्रवर्म राजा का अश्वत्थामा नामक हाथी मार डाला, एवं अश्वत्थामा मृत हो गया, ऐसी गर्जना की।

चिरंजीव होते हुए भी अश्वत्थामा मृत कैसे हुआ, इस विचार से द्रोण को आश्चर्य हुआ, एवं निर्णय के लिये, यह धर्मराज के पास गया। कृष्ण के कथनानुसार युधिष्ठिर ने द्रोण से कहा, 'अश्वत्थामा मृत हो गया है,'। कृष्ण के

मना करने पर भी धर्म ने, अश्वत्थामा के पश्चात् 'हाथी' शब्द का उच्चार किया। परंतु वह उच्चारण इतने धीरे से किया गया कि, द्रोण उसे सुन न सका।

धर्म से यह वार्ता सुनते ही, पुत्रशोक से विव्हल हो कर द्रोण ने शस्त्रसंन्यास किया। इतने में द्रोण के भरद्वाजादि पितर वहाँ आकर उन्होंने इसे कहा, 'ब्राह्मण होते हुए भी क्षत्रियों के समान युद्ध कर, अस्त्रों से तुमने पृथ्वी को ताप दिया है। यह महत्पाप है। इसलिये विलंब मत करो। शस्त्र नीचे रख कर, योगमार्ग का आलंबन करो'। यह सुन कर, द्रोण ने शस्त्र नीचे रख दिया। अच्छी संधि देख कर, द्रुपदपुत्र शृष्टयुग्म ने निःशस्त्र द्रोण का खड्ग से वध किया (म. द्रो. १६५. ५४)।

पौष वद्य द्वादशी को दोपहर में द्रोण का वध हुआ (भारत-सावित्री)। नीलकंठ का कथन है कि, मृत्यु के समय इसकी उम्र चारसौ वर्ष की थी, परंतु इसकी उम्र पचासी वर्ष की होना अधिक संभवनीय है। 'अशीति-कात् परः' पाठभेद इस विषय में प्राप्त है। उससे प्रतीत होता है कि, युद्धकाल में द्रोण की आयु अस्सी से पचासी वर्ष की थी (म. द्रो. १६५.४९)।

भारतीय युद्ध में, इसने द्रुपदपुत्र शंख (म. भी. ७८. २१), वसुदान (म. द्रो. २०.४३), एवं विराट तथा द्रुपद का वध किया था (म. द्रो. १६१.३४)।

मृत्यु के पश्चात्, द्रोण स्वर्ग में गया, एवं कुछ काल के बाद बृहस्पति के अंश में विलीन हो गया (म. स्व. ४. २१; ५.१२)। श्रीव्यास ने आवाहन करने पर, परलोक-वासी कौरव-पांडव वीरों के साथ, यह गंगाजल से प्रगट हुआ, एवं इसने युधिष्ठिर को दर्शन दिया (म. आश्र. ३२.७)।

इंद्रियसंयम एवं तपस्या के कारण, समाज में इसे काफी मानमान्यता थी। इसका युद्धशास्त्रप्रभुत्व भी परशुराम जामदग्न्य जैसा ही अतुलनीय था। किंतु परशुराम का साहस एवं ज्वलंत स्वाभिमान इसमें न होने के कारण, इसकी सारी आयु सेवावृत्ति में ही व्यतीत हुई। उस दुर्बल सेवावृत्ति से, इसकी उत्तरआयु अयशस्वी एवं असमाधानी श्रावित हुई।

द्रोण शाङ्ग—एक मंत्रद्रष्टा पक्षी (क्र. १०. १४२. ३-४)। मंदपाल ऋषि को शाङ्गी नामक पक्षिणी से उत्पन्न चार पुत्रों में से यह एक था (म. आ. २२८. १७)।

यह ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ होगा, ऐसा मंदपाल ऋषि का इसके विषय में भविष्यकथन था (म. आ. २२९. ९-१०)। उस भविष्यकथन के अनुसार, उत्तर आयु में यह बड़ा ब्रह्मवेत्ता बन गया। इसने खांडववनदाह के समय, अग्नि की प्रार्थना कर, अपनी तथा अपने भाइयों की रक्षा की (म. आ. २२३. १६-१९; अनु. ५३. २२ कुं.)। इसने केशवकन्या तार्क्षी से विवाह किया था। उससे इसे पिंगाक्ष, विश्वेध, सुपुत्र तथा सुमुख नामक चार पुत्र हुए (मार्क. ३. ३२; १. २४)।

२. एक वसु। इसकी पत्नी का नाम धरा था। अपने अगले जन्म में यह दोनों नंद तथा यशोदा बने (भा. १०. ८.४८-५०)। इसकी अभिमति नामक और एक पत्नी थी। उससे इसे हर्षशोकादि पुत्र हुए (भा. ६.६.११)।

द्रौणायन — भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि।

द्रौणायनि तथा **द्रौणि**—अश्वत्थामा का पैतृक नाम। व्यास नाम से इसका निर्देश करते समय, इसी नाम का उपयोग किया जाता है (अश्वत्थामन् देखिये)।

द्रौपदी—द्रुपद राजा की कन्या, एवं पांडवों की पत्नी। स्त्रीजाती का सनातन तेज एवं दुर्बलता की साकार प्रतिमा मान कर, श्री व्यास ने 'महाभारत' में इसका चरित्रचित्रण किया है। स्त्रीस्वभाव में अंतर्भूत प्रीति एवं रति, भक्ति एवं मित्रता, संयम एवं आसक्ति इनके अनादि द्वंद का मनोरम चित्रण, 'द्रौपदी' में दिखाई देता है। स्त्रीमन में प्रगट होनेवाली अति शुद्ध भावनाओं की असहनीय तड़पन, अतिरौद्र पाशवी वासनाओं की उठान, एवं नेत्रदीपक बुद्धिमत्ता का तुफान, इनका अत्यंत प्रभावी आविष्कार 'द्रौपदी' में प्रकट होता है। इसी कारण इसकी व्यक्तिरेखा प्राचीन भारतीय इतिहास की एक अमर व्यक्तिरेखा बन गयी है।

याज्ञ एवं उपयाज्ञ नामक ऋषिओं की सहायता से, द्रुपद ने 'पुत्रकामेष्टि यज्ञ' किया। उस यज्ञ के अग्नि में से, ध्रुष्टद्युम्न एवं द्रौपदी उत्पन्न हुए (म. आ. १५५)। यज्ञ में से उत्पन्न होने के कारण, इसे 'अयोनिर्भव' एवं 'याज्ञसेनी' नामांतर प्राप्त हुए (म. आ. परि. ९६.११;१५)। पांचाल के राजा द्रुपद की कन्या होने के कारण, इसे 'पांचाली', एवं इसके कृष्णवर्ण के कारण, 'कृष्णा' भी कहते थे। लक्ष्मी के अंश से इसका जन्म हुआ था (म. आ. ६१. ९५-९७; १७५-७७)।

स्वयंवर, पंचपतित्व—द्रौपदी विवाहयोग्य होने के बाद, द्रुपद ने इसके स्वयंवर का निश्चय किया। स्वयंवर में भिन्न

भिन्न देशों के राजा आये थे, परंतु मत्स्यवेष की शर्त से पूरी न कर सके (द्रुपद देखिये)। अर्जुन ने मत्स्यवेष का प्रण र्जितने पर, द्रौपदी ने अर्जुन को वरमात्रा पहनायी। बाद में पांडव इसे अपने निवासस्थान पर ले गये।

धर्म ने कुंती से कहा 'हम भिक्षा ले आये हैं।' उसे सत्य मान कर, कुंती ने सहब्रभाव से कहा, 'खायी हुई भिक्षा पाँचों में समान रूप में बाँट लो'। पांडवों के द्वारा खायी भिक्षा द्रौपदी है, ऐसा देखने पर कुंती पश्चात्ताप करने लगी। परंतु माता का वचन सत्य सिद्ध करने के लिये, धर्म ने कहा, 'द्रौपदी पाँचों की पत्नी बनेगी'।

द्रुपद को पांडवों के इस निर्णय का पता चला। एक स्त्री पाँच पुरुषों की पत्नी बने, यह अधर्म है, अशाल है, ऐसा सोच कर वह बड़े विचार में फँस गया। इतने में व्यासमुनि वहाँ आये, तथा उसने द्रुपद को बताया, 'द्रौपदी को शंकर का वर प्राप्त है कि, तुम्हें पाँच पति प्राप्त होंगे। अतः पाँच पुरुषों से विवाह इसके बारे में अधर्म नहीं है'। द्रुपद ने उसके पूर्वजन्म की कथा पूछी। व्यास ने कहा, 'द्रौपदी पूर्वजन्म में एक ऋषिकन्या थी। अगले जन्म में अच्छा पति मिले, इस इच्छा से उसने शंकर की आराधना की। शंकर ने प्रसन्न हो कर, उसे इच्छित वर माँगने के लिये कहा। तब उसने पाँच वर 'पति शत्रियों' यों कहा। तब शंकर ने इसे वर दिया कि, तुम्हें पाँच पति प्राप्त होंगे (म. आ. १८७-१८८)। इसलिये द्रौपदी ने पाँच पांडवों को पति बनाने में अधम नहीं है। यह सुन कर, द्रुपद ने घौम्य ऋषिद्वारा धूमसूहूर्त पर, क्रमशः प्रत्येक पांडव के साथ, द्रौपदी का विवाह कर दिया (म. आ. १९०)।

ब्रह्मवैवर्त पुराण में, द्रौपदी के पंचपतित्व के संश्लेष में निम्नलिखित उल्लेख हैं। रामपत्नी सीता का हरण रावण द्वारा होनेवाला है, यह अग्नि ने अंतर्ज्ञान से जान लिया। उस अनर्थ को टालने के लिये, सीता की मूर्तिमंत प्रतिकृति अपनी मायासामर्थ्य के द्वारा उसने निर्माण की। मन्त्री सीता को छिपा कर, मायावी सीता को ही राम के आश्रम में रखा। इससे सीता को राम का वियोग होने लगा। तब उसने शंकर की आराधना प्रारंभ की। शंकर ने प्रसन्न हो कर उसे वर माँगने के लिये कहा। पाँच वर, 'पति-समागम प्राप्त हो', ऐसा वर सीता ने माँगा लिया। तब शंकर ने उसे कहा, 'अगले जन्म में तुम्हें पाँच पति प्राप्त होंगे' (ब्रह्मवै. २.१४)। पाँचों पांडव एक ही इन्द्र

के अंश होने के कारण, वस्तुतः द्रौपदी एक की ही पत्नी थी (मार्क. ५) ।

यूत—विवाहोपरांत काफी वर्ष द्रौपदी ने बड़े सुख में बिताये । पांडवों का राजसूययज्ञ भी उसी काल में संपन्न हुआ । पांडवों ने इसे प्रतिविध्यादि पुत्र भी हुए । किंतु पांडवों के ब्रह्मते ष्वर्य के कारण, दुर्योधन का मत्सर दिन-प्रतिदिन बढ़ता गया । उसने यूत का पद्वेय रच लिया, एवं यूत खेलने के लिये शकुनि को आंग कर, युधिष्ठिर का सारा धन हड़प लिया । अन्त में द्रौपदी को भी युधिष्ठिर ने दाँव पर लगा दिया । उस कमीने वर्तन के लिये उपस्थित राजसभासदों ने युधिष्ठिर का धिक्कार किया । विदुर को द्रौपदी को सभा में लाने का काम सौंपा गया । उसने दुर्योधन को अच्छी तरह से फटकारा, एवं उस काम करने के लिये ना कह दिया । पश्चात् द्रौपदी को सभा में लाने का कार्य प्रतिकामिन् पर सौंपा गया । वह भी हिचकिचाने लगा ।

फिर यह काम दुःशासन पर सौंपा गया । दुःशासन का अन्तःपुर में प्रवेश होते ही द्रौपदी भयभीत हो कर स्त्रियों की ओर दौड़ने लगी । अंत में दौड़नेवाली द्रौपदी के केश पकड़ कर, दुःशासन खींचने लगा । उस समय द्रौपदी ने कहा, 'मैं रजस्वला हूँ । मेरे शरीर पर एक ही वस्त्र है । ऐसी स्थिति में मुझे सभा में ले जाना अयोग्य है' । उस पर दुःशासन ने कहा, 'तुम्हें यूत में जीत कर हमने दासी बनाया है । अब किसी भी अवस्था में तुम्हारा राजसभा में आना अयोग्य नहीं है' । इतना कह कर अस्ताव्यस्त केशयुक्त, जिसका पट्टा नीचे गिर पड़ा है, ऐसी द्रौपदी को वह बलपूर्वक केश पकड़ कर, सभा में ले आया (म. स. ६०.२२-२८) ।

द्रौपदी का प्रश्न—सभा में आते ही आक्रोश करते हुए द्रौपदी ने प्रश्न पूछा, 'धर्म ने पहले अपने को दाँव पर लगाया, तथा हारने पर मुझे लगाया । तो क्या मैं दासी बन गई?' इसके प्रश्न का उत्तर कोई भी न दे सका (म. स. ६०.४३-४५) ।

मीम ने सुनी अनसुनी की । बाकी सभा स्तब्ध रही । वह लगातार प्रश्नों की बौछार कर रही थी । सुन कर भी किसी के कान पर जूँ तक नहीं रेंगी । कर्ण, दुःशासनादि द्रौपदी की 'दासी दासी' कह कर अबहेलना करने लगे । भीम अपना क्रोध न रोक सका । जिन् हाथों से धर्म ने द्रौपदी को दाँव पर लगाया था, उन हाथों को जलाने के लिये, अग्नि लाने को उसने सहदेव से कहा । बड़ी कठिनाई

से अर्जुन ने उसे शांत किया । इस पर धृतराष्ट्रपुत्र विकर्ण सामने आया, तथा द्रौपदी के प्रश्न का उत्तर देने की प्रार्थना उसने भीष्मादिकों से की । परंतु कोई उत्तर न दे सका । तब विकर्ण ने कहा, 'दाँव पर जीते गये धर्म ने जैक द्रौपदी को दाँव पर लगाया, अतः सचमुच यह जीती ही नहीं गई' । यह कहते ही सारे सभाजन विकर्ण की बाहवाह करने लगे ।

द्रौपदी का यह नैतिक विजय देख कर, कर्ण सामने आ कर बोला, 'संपूर्ण संरक्ति दाँव पर लगाने पर, द्रौपदी अजित रह ही नहीं सकती । इसके अतिरिक्त द्रौपदी अनेक पतिओं की पत्नी होने के कारण, धर्मशास्त्र के अनुसार पत्नी न हो कर, दासी है । इसलिये पूरी संपत्ति के साथ यह भी दासी बन गई है' । पश्चात् द्रौपदी की ओर निर्देश कर के उसने दुःशासन से कहाँ, 'द्रौपदी के वस्त्र खींच लो । पांडवों के वस्त्र भी छीन लो' ।

तब पांडवों ने एक वस्त्र छोड़, अन्य सभी वस्त्र उतार डाले । द्रौपदी का वस्त्र खींचने दुःशासन बढ़ा, एवं इसके वस्त्र खींचने लगा । उसपर यह आर्तभाव से भगवान् को पुकारने लगी (म. स. ६१.५४२-५४३*) । भीम क्रोध से लाल हो गया । दुःशासन के रक्तप्राशन की प्रतिज्ञा उसने की । विदुर सामने आया । द्रौपदी के प्रश्न का उसने सभा को पुनः स्मरण दिखा कर सुभन्वा की कथा बताई (सुभन्वन् देखिये) । द्रौपदी लगातार आक्रोश कर रही थी, 'स्वयंवर के समय केवल एक वार मैं लोगों के सामने आई । आज मैं पुनः सब को दृष्टिगत हो रही हूँ । इस शरीर को वायु भी शश न कर सका, उसकी भरी सभा में आज अबहेलना चालू है' ।

दुःशासन इसके वस्त्र खींच ही रहा था, किंतु इसकी लज्जारक्षा के लिये श्रीकृष्ण स्वयं वीररूप हो गये, एवं एक के बाद एक नये चीर उसने प्रकट किये (म. स. ६१.४१) । द्रौपदी के शील की रक्षा हुई । अपने कृत्य के प्रति लज्जित हो कर, अधोमुख दुःशासन अपने स्थान पर बैठ गया (म. स. ६१.४८) । अन्त में धृतराष्ट्र ने दुर्योधन को कड़ी डाँट लगाई । द्रौपदी को इच्छित कर दे कर, पतियों सहित उसने इसे दास्यमुक्त किया (म. स. ६३. २८-३२) ।

वनवास—युधिष्ठिर के यूत के कारण, पांडवों के साथ वन में जाने का प्रसंग द्रौपदी पर आया । वनवास में कौरवों के कारण, इसे अनेक तरह के कष्ट उठाने पड़े । एक वार इसका सत्वहरण करने के लिये, परमशेपी

दुर्वास ऋषि को दुर्वोधन ने भेज दिया। दुर्वास ऋषि अपने शिष्यों के साथ, रात्रि के समय पांडवों के घर आया, एवं आधी रात में भोजन माँगने लगा। उस समय द्रौपदी का भोजन हो गया था। इसलिये सूर्यप्रदत्तस्थाली में पुनः अन्न निर्माण करना असंभव था। तब ऋषियों को क्या परोसा जावे, यह धर्मसंकट इसके सामने उपस्थित हुआ। आखिर विवश हो कर, इसने कृष्ण का स्मरण किया। कृष्ण ने भी स्वयं वहाँ आकर, इसके संकट का निवारण किया (म. व. परि. १. क्र. २५. पंक्ति. ५८-११७)।

पांडवों का निवास काम्यकवन में था। एक बार जयद्रथ आश्रम में आया। उस समय पाँचों पांडव मृगया के लिये गये थे। तब अच्छा अवसर देख कर, जयद्रथ ने द्रौपदी का हरण किया। इतने में पांडव वापस आये। जयद्रथ को पराजित कर, उन्होंने द्रौपदी को मुक्त किया। बाद में अपमान का बदला चुकाने के लिये, जयद्रथ के सिर का पाँच हिस्सों में मुंडन कर, उसे छोड़ दिया गया (म. व. २५६. ९; जयद्रथ देखिये)।

अज्ञातवास—वनवास की समाप्ति के बाद, अज्ञातवास के लिये पांडव विराटग्रह में रहे। द्रौपदी सैरेंद्री बन कर, एवं 'मालिनी' नाम धारण कर, सुदेष्णा के पास रही। उस समय इसने सुदेष्णा से कहा था, 'मैं किसी का पादसंवाहन अथवा उच्छिष्टभक्षण नहीं करूँगी। कोई मेरी अभिलाषा रखे, तो वह मेरे पाँच गंधर्व पतियों द्वारा मारा जायेगा'। द्रौपदी के इन सारे नियमों के पालन का आश्वासन सुदेष्णा ने इसे दिया (म. वि. ८.३२)। एक बार कीचक नामक सेनापति ने इसकी अभिलाषा रखी, परंतु भीम ने उसका वध किया (म. वि. १२-२२)। वनवास तथा अन्य समयों पर भी, अपनी तेजस्विता तथा बुद्धिमत्ता इसने कई बार व्यक्त की है (म. व. २८; २५२; शां. १४)।

पांडवों का वनवास तथा अज्ञातवास समाप्त होने पर, वे हस्तिनापुर लौट आये, एवं कौरवों के पास राज्य का हिस्सा माँगने लगे। अपने कौरव बांधवों से लड़ने की ईर्ष्या युधिष्ठिर के मन में नहीं थी। उनसे स्नेह जोड़ने के लिये, युधिष्ठिर दूत भेजना चाहता था। किंतु कौरवों के द्वारा किये गये अपमान का शत्रु द्रौपदी भूल न सकती थी। कौरवों के साथ दोस्ती सलूक की बातें करनेवाले पांडवों के प्रति यह भड़क उठी। पांडवों के साथ कृष्ण को भी कड़े वचन कह कर, इसने उसको युद्ध के प्रति

अनुकूल बनाया (म. उ. ८०)। इसने कृष्ण से कहा, 'कौरवों के प्रति द्वेषाग्नि, तेरह साल तक, मैंने अपने हृदय में, साँसों की फूँकर डाल कर, आज तक प्रचलित रखा है। कौरवों से युद्ध डाल कर, पांडव आज उस अग्नि को बुझाना चाहते हैं। उन्हें तुम ठीक तरह से समझा लो। नहीं तो, मेरे वृद्ध पिता द्रुपद, एवं मेरे पाँच पुत्र के साथ, मैं खुद कौरवों से लड़ाई करूँगी, एवं नष्ट हो जाऊँगी' (म. उ. ८०.४-४१)।

भारतीय युद्ध में अश्वत्थामन् ने द्रौपदी के सारे पुत्रों का वध किया। दारुक से यह बातों सुन कर द्रौपदी ने अन्नत्याग कर, प्राणत्याग करने का निश्चय किया। तब भीम ने उसे समझाया। अन्त में अश्वत्थामन् को पराजित कर, उसके मस्तकस्थित मणि ला कर, युधिष्ठिर के मस्तक पर देखने की इच्छा इसने प्रकट की। पश्चात् भीम ने वह कार्य पूरा किया (म. सौ. १५.२८-३०; १६.१९-३६)।

राज्यप्राप्ति—भारतीय युद्ध के बाद, पांडवों को निष्कंठ राज्य मिला। उस समय द्रौपदी ने काफी सुखोपभोग लिया।

बाद में स्त्री तथा बांधवों के साथ, युधिष्ठिर महाप्रस्थान के लिये निकला। राह में ही द्रौपदी का पतन हुआ। अपने पतियों में से, यह अर्जुन पर ही विशेष प्रीति रखती थी (म. महा. २.६)। उस पाप के कारण इसका पतन हुआ। किंतु कृष्ण का स्मरण करते ही, यह स्वर्ग चली गई (भा. १.१५.५०)।

इसे युधिष्ठिर से प्रतिविध्य, भीम से सुतसोम, अर्जुन से श्रुतकीर्त्त, नकुल से शतानीक, तथा सहदेव से श्रुतसेन नामक पुत्र हुए (म. आं. ९०.८२; ५८.१०२-१०३; ६१.८८; २१३.७२-७३)। श्रुतसेन के लिये श्रुतकर्म पाठ 'भागवत' में प्राप्त है (भा. ९.२२.२९)।

स्वभाव—द्रौपदी मामिनी थी। स्वयंवर के समय इसका प्रण जीतने कर्ण समर्थ था। किंतु सूतपुत्र को वरने का इसने इन्कार किया (म. आ. १८६)। वनवास में पांडव तथा कृष्ण को द्रौपदी ने बार बार युद्ध की प्रेरणा दी। कृष्ण के शिष्टाई करने जाते समय, इसने अपने मुक्त केश-संभार की याद उसको दिलाई थी। भारतीय युद्ध में, अपने पुत्रों के वध का समाचार सुनते ही, अश्वत्थामाना के वध की चेतावनी इसने पांडवों को दी। युद्ध के पश्चात्, युधिष्ठिर राज्य स्वीकार करने के लिये हिचकिचाते लगा। उस समय भी इसने उसे राजदण्ड धारण करने के लिये समझाया।

महाभारत में द्रौपदी तथा भीम का स्वभावचित्रण विरोध रूप से किया है। द्रौपदी के स्वभावचित्रण में व्यावहारिक विचार, स्त्रीसुलभ अपेक्षा, जोश तथा स्फूर्ति का आविष्कार बड़ी स्त्री से किया गया है। भीम भी द्रौपदी के विचार का समर्थक बताया गया है। द्रौपदी तथा भीम युधिष्ठिर के वर्ताव के बारे में कड़ा विरोध करते हुए लिखते हैं। किंतु आखिर युधिष्ठिर के सौम्य प्रतिपादन से ये दोनों भी चूप बैठने पर विवश होते हैं।

द्रासक—(सू. इ.) भविष्यमत में क्षेमधन्व का पुत्र।

द्विगत भार्गव—एक ऋषि। यह एक साम के पटन से स्वयं गया, तथा वहाँ से वह फिर मृत्युलोक में आया। पश्चात् यह पुनः स्वर्ग गया (पं. ब्रा. १४. ९. ३६)।

द्विज—(सो. अनु.) वायुमत में शूरसेन का पुत्र।

द्विजिह्व—रावणपक्षीय एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

द्वित—ब्रह्ममानसपुत्र (भा. १०. ८४)।

२. गौतम ऋषि का पुत्र (त्रित देखिये)। द्वित आप्तों के नाम पर एक सूक्त है (ऋ. ९. १०३)।

द्विमीढ—(सो. पूर.) भगवत, मत्स्य तथा वायु-मत में हस्ति का, एवं विष्णुमत में हस्तीनर का पुत्र। पञ्चपुराण में इसे देवमीढ कहा गया है। यह एक स्वतंत्र

वंश है। विष्णु, गरुड़ तथा भागवत में इसके बारे में काफी मतभेद है।

द्विमूर्धन्—दनुपुत्र एक दानव। पृथ्वीवोहन के समय यह दोग्धा बना था। विरोचन ने वस्त्र का काम किया था (म. द्रो. ६९. ३९. कुं.; परि. १. ८. ८०२)।

द्विविद—सुयेण वानर का पुत्र एवं सुग्रीव के प्रधान मैद का भाई। इसने राम को काफी सहायता की थी। इसमें १०,००० हाथियों का बल था।

२. किर्त्किधा का राजा एवं नरकासुर का मित्र। राजसूय यज्ञ के समय, इसने सहदेव को करभार दिया था (मैद देखिये)।

नरकासुर का वध कृष्ण ने किया, यह सुनते ही यह कृष्ण तथा बलराम को व्रत करने लगा। बाद में बलराम से लड़ाई हो कर, यह बलराम के द्वारा मारा गया (म. व. २७३. ४; भा. १०. ६७)।

द्विवेदिन्—काश्यप ऋषि को आर्यावती से उत्पन्न पुत्र (भा. वि. प्रति. १. ६; ४. २१)।

द्वैतरथ—(सो. क्रोष्टु.) वायुमत में हृदीक का पुत्र।

द्वैतवन—ध्वसन् का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३. ५. ४. ९)।

द्वैपायन—पराशरपुत्र व्यास का नामांतर (व्यास देखिये)।

द्वचक्षी—अशोकवन की एक राक्षसी।

द्व्याख्येय—अंगिरस् कुल का एक गोत्रकार।

ध

धनक—(सो. सह.) भागवतमत में भद्रसेन का पुत्र। विष्णु एवं पद्म के मत में दुर्दम का पुत्र (पद्म. सू. १९)।

धनंजय—एक प्रमुख नाग। कश्यप एवं कद्रू का यह पुत्र था (म. आ. ३१. ५)। यह पाताल में रहता था (भा. ५. २४. ३९)।

यह वरुण की सभा में उपस्थित हो कर, भगवान् वरुण की उपासना करता था (म. स. ९. ९)। इसे त्रिपुरदाह के समय, भगवान् शिव के रथ में घोड़ों के कैसर बाँधने

की रस्सी बनाया गया था (म. क. २४. ७२)। पृथ्वी के साथ यह माघ माह में घूमता है (भा. १२. ११. ३९)।

२. अर्जुन का एक नाम। संपूर्ण देशों को जीत कर, कररूप में धन ले कर, उसके बीच में स्थित होने के कारण, अर्जुन का नाम धनंजय हुआ था (म. वि. ३९. ११; अर्जुन देखिये)।

३. भगवान् शंकरद्वारा स्कंद को दी हुई असुरसेना का नाम (म. श. २७६*)।

२. वसिष्ठकुल का एक ब्राह्मण। इसे १०० स्त्रियाँ तथा अनेक पुत्र थे। इसने अपना धन उनमें बराबर बाँट दिया। फिर भी उन पुत्रों में अनन्त बनी रहती थी। उन शंभुओं से तंग आ कर, इसका करुण नामक पुत्र, भवनाशिनी नदी के तट पर रहने के लिये गया। अंत में शिवभस्म से इसका उद्धार हुआ। 'शिवभस्म' का माहात्म्य बताने के लिये यह कथा दी गयी है (पद्म. पा. १.१५२)।

३. एक वैश्य। दक्षिण समुद्र के तट पर यह रहता था। इसकी माता की मृत्यु होने पर, यह उसकी अस्थियाँ ले कर कारी गया। अस्थियाँ ढोनेवाले शबर साथी ने उसे द्रव्य का ढाँडा समझ कर चुरा लाया। तब धनंजय पुनः उस शबर के घर गया। उसकी स्त्री को यथेच्छ द्रव्य देना मान्य कर, उसने वह ढाँडा माँगा। परंतु शबर ने वह जंगल में ही छोड़ दिया था। इसलिये इसे वह नहीं मिला (स्कन्द. ४.१.३०)।

४. त्रेतायुग का एक ब्राह्मण। इसने विष्णु की अत्यंत भक्ति की। वरुणप्रावरण न होने के कारण, इसने पीपल की एक शाखा तोड़ कर आग जलाई। पीपल को तोड़ते ही, विष्णु के शरीर पर जखम के घाव पड़ गये।

इसके भक्ति से प्रसन्न हो कर विष्णु इसके पास आया। इसने विष्णु के शरीर के जखमों का कारण उसे पूछा। विष्णु ने कहा, 'अश्वत्थ की शाखा तोड़ने के कारण, मेरे शरीर पर ये घाव पड़े हैं'। तब यह अपनी गर्दन तोड़ने को तैयार हो गया। विष्णु ने इसे वर माँगने के लिये कहा। इसने वररूप में 'विष्णुभक्ति' की ही याचना की (पद्म. क्रि. १२)। 'अश्वत्थमाहात्म्य' बताने के लिये यह कथा दी गयी है।

५. अत्रि के कुल की वंशवृद्धि करनेवाला एक ऋषि।

६. वर्तमान मन्वन्तर का सोलहवाँ व्यास (व्यास देखिये)।

७. विश्वामित्रकुल का एक मंत्रद्रष्टा ब्रह्मर्षि (कुशिक देखिये)।

८. कुमारी का पति (म. उ. ११५.४६०* पंक्ति. ५)।

धनद—कुवेर का नाम। तृणविंदु की कन्या इडविद्धा का पुत्र (म. स. ११.१३४* पंक्ति. २; भा. ९.२.३१-३२)।

२. मरुद्गणों में से तीसरे गणों में एक।

धनदा—स्कन्द की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. १३)।

धनधर्मन्—(भविष्य.) वायुमत में मथुरा नगरी में राज्य करनेवाला तथा ब्रह्मांडमत में वैदेश का नागवंशी राजा। यह नखवान के बाद राजगद्दी पर बैठ गया।

धनपाल—अयोध्या नगरी का एक वैश्य। इसने सूर्य का एक दिव्य मंदिर बनवाया। एक पुराणिक को एक पूरे साल का वेतन दे कर, वहाँ पुराणपठन के लिये कहा। बाद में छः मास में ही इसकी मृत्यु हो गई। इसके संचित पुण्य के कारण, सूर्य ने विमान से इसे ले जा कर अपने भासन पर बिठाया, इसकी पूजा करवाई। पश्चात् इसे ब्रह्मलोक में पहुँचाया (भवि. ब्राह्म. ९४)।

२. (सो.) भविष्यमत में सावित्री का पुत्र। इसने ३००० वर्षों तक राज्य किया।

३. सरस्वती के तट पर भद्रावती नगर में रहनेवाला एक वैश्य। इसे धृष्टबुद्धि नामक दुर्वर्तनी पुत्र था (धृष्टबुद्धि देखिये)।

धनयाति—(सो.) भविष्यमत में संयाति का पुत्र।

धनवर्धन—कृतयुग में पुष्कर क्षेत्र में रहनेवाला एक सदाचारी वैश्य। एक बार वैश्रदेव कर के यह भोजन कर रहा था। बाहर 'अन्न देहि' ऐसा शब्द इसने सुना। बाहर आ कर इसने देखा तो वहाँ कोई न था। तब वापस जा कर त्यक्त अन्न का भोजन इसने शुरु किया। त्यक्त अन्न खाने के पार्श्व के कारण, उसी क्षण इसके सौ दुकड़े हो गये (भवि. ब्राह्म. ३.४२-४७)।

धनशर्मन्—मध्यदेश में रहनेवाला एक ब्राह्मण। यह एक बार दर्भ, समिधा आदि खाने के लिये अरण्य में गया। अरण्य में इसने तीन पिशाच देखे। उन्हें देख कर इसने उनकी दुःस्थिति का कारण पूछा। बाद में उन पिशाच के उद्धार के लिये, इसने तिष्ठ तथा शहद का दान कर के 'वैशाख स्नान' का व्रत किया। उस व्रत का पुण्य इसने उन पिशाचों को दिया। इस पुण्य के बल, उन पिशाचों को मोक्षप्राप्ति हुई (पद्म. पा. ९८)।

धनायु—(सो. पुरुरवम्.) मात्स्य के मत में पुरुरवा के पुत्रों में से एक।

धनिष्ठा—सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक तथा प्राचेतसदक्ष की कन्या।

धनिन्—कप नामक देवों का दूत। ब्राह्मणों के पास जा कर इसने 'कप' देवों के सदाचार का वर्णन किया (म. अनु. २६२.८-१६ कुं.)।

धनुर्ग्रह—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक (म. आ. १०८.११)। इसके नाम के 'धनुर्ग्रह' एवं

‘धनुर्धर’ ये पाठभेद उपलब्ध हैं। भीमसेन ने इसका वध किया (म. क. ८४.२-६)।

धनुर्धर—धनुर्ग्रह का नामांतर (धनुर्ग्रह देखिये)।

धनुर्वज—एक अंत्यज (पद्मावती २. देखिये)।

धनुर्वज्र—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५७)।

धनुष—(सो. ऋक्ष.) एक राजा। मत्स्यमत में यह सत्यधृति का पुत्र था। इसके लिये सुधन्वन् पाठभेद उपलब्ध है।

धनुषाक्ष—(धनुषाख्य) रैभ्यकुलोत्पन्न एक ऋषि। बाल्मिकि ऋषि के पुत्र मेधाविन् ने इसका अपमान किया। अतः उसके नाश के लिये इसने शाप दिया, जिसका कुछ परिणाम नहीं हुआ। तब इसने पर्वतशिखर गिरा कर उसका विनाश कर दिया। पर्वत गिरने से ही मेधाविन् की मृत्यु होगी ऐसा उसको वर था (म. व. १३६; शां. ३२३.७)।

धनेयु—(सो. पुरुरवस्.) विष्णुमत में रौद्राश्व का पुत्र। इसे अन्यत्र धर्मेयु कहा है।

२. एक ऋषि। उपरिचर वसु के यज्ञ में यह सदस्य था (म. शां. ३२३.७)।

धनेश्वर—अवन्ती नगरी का एक पापी ब्राह्मण। यह निषिद्ध पदार्थों का व्यापार करता था। एक बार व्यापार के लिये यह माहिष्मती नगरी में गया। कार्तिक माह होने के कारण, अनेक पुण्यात्माओं से, तथा कीर्तन, पुराण, मजन, गायन आदि से उसका संबंध सहजवश आ गया। त्रिपुरी पौर्णिमा का दीपोत्सव भी इसने देखा। उसी रात्रि को सर्पदंश के कारण, इसकी मृत्यु हो गयी। यम ने इसे एक कल्प तक नर्क में रखने के लिये कहा। किन्तु उस नर्क के अग्निकुंड में भी यह बिनाकष्ट जीवित रहा। माहिष्मती नगरों में इसने किये हुए पुण्य का यह फल है, ऐसा नारद ने यम को बताया। नारद की सूचनानुसार यम ने इसे यज्ञ योनि में भेज दिया। वहाँ यह कुबेर का सेवक बना (पद्म. उ. ११३-११४; स्कंद. २.४.२९)।

धन्या—उत्तानपाद भुव की पत्नी।

धन्व—(सो. काश्य.) काशी देश का राजा। यह दार्पतपस् के पश्चात् राजगद्दी पर बैठ गया। इसका ‘धर्म’ पाठभेद भी उपलब्ध है। आयुर्वेदशास्त्र का प्रणेता धन्वन्तरि इसीका पुत्र था (धन्वन्तरि २. देखिये)।

धन्वन्तरि—देवताओं का वैद्य एवं ‘आयुर्वेदशास्त्र’ का प्रवर्तक देवता। समुद्रमंथन के समय, यह अमृत का श्वेत कर्मडलु हाथ में रख कर समुद्र से प्रकट हुआ

(म. आ. १६.३७)। इसे आदिदेव, अमरवर, अमृतयोनि एवं अब्ज आदि नामांतर भी प्राप्त हैं।

दुर्वासस् ने इंद्र को शाप दे कर, वैभवहीन बना दिया तब गतवैभव पुनः प्राप्त करने के लिये, देव दैत्यों ने क्षीरसमुद्र का मंथन किया। उस समुद्रमंथन से प्राप्त, चौदह रत्नों में से धन्वन्तरि एक था। समुद्र में से प्रकट होते समय, इसके हाथ में अमृतकलश था। जब यह समुद्र से निकला तब तेज से दिशाएँ जगमगा उठी (ह. वं. २९.१३)। यह विष्णु का अवतार एवं ‘आयुर्वेद-प्रवर्तक’ देवता था (विष्णु. १.९.९६; भा. १.३.१७; ८.८.३१-३५)। इसे आयुर्वेदशास्त्र का ज्ञान इंद्र के प्रसाद से एवं चिकित्साज्ञान भास्कर के प्रसाद से प्राप्त हुआ था (भावि. १.७२; मत्स्य. २५१.४)।

समुद्रमंथन से निकलने के पश्चात्, विष्णु भगवान् को इसने देखा। उसे देख कर यह टिट्क गया। विष्णु ने इसे ‘अब्ज’ (पानी से जिसका जन्म हुआ) कह कर पुकारा। पश्चात् इसने विष्णु से प्रार्थना की, ‘यज्ञ में मेरा भाग एवं स्थान नियत कर दिया जाय’। विष्णु ने कहा, ‘यज्ञ के भाग एवं स्थान तो बँट गये हैं। किंतु अगले जन्म में तुम्हारी यह इच्छा पूरी होगी। उस जन्म में तुम विशेष ख्याति प्राप्त करोगे। ‘अणिमादि’ सिद्धियाँ तुम्हें गर्भ से ही प्राप्त होगी, एवं तुम सद्यौर देवत्व प्राप्त करोगे। तुम ‘आयुर्वेद’ की आठ भागों में विभक्त करोगे। एवं उस कार्य के लिये, लोग तुम्हें मंत्र से आहुति देने लगे’।

विष्णु के उस आशिर्वाचनानुसार, धन्वन्तरि ने द्वापर-युग में काशिराज धन्व (सौनहोत्र) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया। उस जन्म में, इसने भरद्वाज ऋषिप्रणीत ‘आयुर्वेद’ आठ विभागों में विभक्त किया, एवं प्रजा को रोगमुक्त किया (वायु. ९२.९-२२; धन्वन्तरि २. देखिये)।

उस महान् कार्य के लिये, नित्यकर्मान्तर्गत पंचमहा-यज्ञ ‘वैश्वदेव’ में बलिहरण के समय, ‘धन्वन्तरये स्वाहा’ कर के इसे यज्ञाहुति मिलने लगी। इस तरह, इसकी विष्णु भगवान् के पास की गयी प्रार्थना सफल हुई। वैद्यक एवं शल्यशास्त्र में पारंगत व्यक्तिओं को आज भी ‘धन्वन्तरि’ कहा जाता है (उत्पलकृत ‘सुश्रुत संहिता टीका’ सू. १. ३)।

धन्वन्तरि स्वरूप वर्णन—धन्वन्तरि देवता का स्वरूप वर्णन प्राचीन ग्रंथों में उपलब्ध है (भा. ८. ८. ३१-

३५)। आधुनिक भिषग्वर एवं वैद्य उसे 'धन्वन्तरि स्तोत्र' नाम से नियत पठन करते हैं:—

अथोद्भ्रमेभ्यमानान् काश्यपैरमुतापिभिः ।

उदतिष्ठन्महाराज पुरुषः परमाद्भुतः ॥

दीर्घवीवरदोर्दण्डः कम्बुग्रीवोऽरुणेक्षणः ।

श्यामलस्तरुणःसखी सर्वाभरणभूषितः ॥

पीतवासः महोरस्कः सुमृष्टमणिकुण्डलः ।

स्निग्धकुञ्चितकेशान्तः सुभगः सिंहविक्रमः ॥

अमृतापूर्णकलशं विभ्रद् वलयभूषितः ।

स वै भगवतः साक्षाद् विष्णोरंशादासंभवः ॥

धन्वन्तरिरिति ख्यातःआयुर्वेददृग् इज्यभाक् ।

धन्वन्तरि की मूर्ति के बारे में, दक्षिण भारतीय तथा उत्तर भारतीय ऐसे कुल दो पाठ उपलब्ध हैं। उस प्रकार की मूर्तियाँ भी प्राप्त हैं। दक्षिण की धन्वन्तरि की मूर्ति आंध्र फार्मसी ने मद्रास में तैयार की है। उत्तर की मूर्ति, गीर्वाणेंद्र सरस्वति कृत 'प्रपंच सार' ग्रंथानुसार तैयार की गयी है, एवं वह काशी में वैद्य त्र्यंबक शास्त्री के पास थी। दोनों मूर्तियों की तुलना करने पर पता चलता है कि, वे समान नहीं हैं। उन में दाहिनी ओर की वस्तुएँ बायीं ओर, तथा बायीं ओर की वस्तुएँ दाहिनी ओर दिखायी दी गयी हैं। दक्षिण की मूर्ति में दाहिने उपरवाले हाथ में चक्र है। काशी की मूर्ति के उसी हाथ में शंख है। दक्षिण के नीचेवाले दाहिने के हाथ में जोक हैं, तो काशी की मूर्ति के हाथ में अमृतकुंभ है। बाईं ओर के हाथों के बारे में भी यही फरक दिखाई देता है।

२. (सं. काश्य.) काशी देश का राजा, एवं 'अष्टांग' आयुर्वेदशास्त्र का प्रवर्तक। यह काशी देश के धन्व (धर्म) राजा का पुत्र एवं दीर्घतप्त राजा का वंशज था। विष्णु भगवान् के आशीर्वाद से, समुद्रमंथन से उत्पन्न धन्वन्तरि नामक विष्णु के अवतार ने पृथ्वी पर पुनर्जन्म लिया। वही पुनरावतार यह था (धन्वन्तरि १. देखिये)।

दूसरे युगपर्यय में से द्वापर युग में, काशिराज धन्व ने पुत्र के लिये, तपस्या एवं अग्निदेव की आराधना की। अग्निदेव ने धन्व के वर स्वयं अवतार लिया। गर्भ में से ही आणामादि सिद्धियाँ इसे प्राप्त हो गयी थीं। भारद्वाज ऋषि से इसने भिषक् क्रिया के साथ आयुर्वेद सीख लिया, एवं अपनी प्रजा को रोगमुक्त किया। उस महान् कार्य के लिये, इसे देवत्व प्राप्त हो गया।

इसने आयुर्वेदशास्त्र 'अष्टांगों' (आठ विभाग) में वेभक्त किया। वे विभाग इस प्रकार हैं:— १. काय

(दायीरशास्त्र), २. बाल (बालरोग), ३. ग्रह (भूत-प्रेतादि विकार), ४. उर्ध्वांग (शिरोनेत्रादि विकार), ५. शल्य (शस्त्रघातादि विकार), ६. दंष्ट्रा (विप-चिकित्सा), ७. जरा (रसायन), ८. वृष (वाजीकरण) (ह. वं. २९.२०)।

इसे केतु नामक पुत्र था। (ब्रह्म. १३.६५; वायु. ९. २२; ९२; ब्रह्मांड. ३.६७; दे. भा. ९.४१)। सुविख्यात आयुर्वेदाचार्य धन्वन्तरि दिव्योदास इसका पौत्र वा प्रपौत्र था। उसके सिवा, इसके परंपरा के भेल, पालकाय आदि भिषग्वर भी 'धन्वन्तरि' नाम से ही संश्लेषित किये जाते हैं। विक्रमादित्य के नौ रत्नों में भी धन्वन्तरि नामक एक भिषग्वर था।

धन्वन्तरि—मनसा युद्ध—सर्पदेवता मनसा तथा वैद्य-विद्यासंपन्न धन्वन्तरि राजा के परस्परविरोध की एक कथा ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्णजन्मखंड में दी गयी है।

एक दिन, धन्वन्तरि अपने शिष्यों के साथ कैलास की ओर जा रहा था। मार्ग में तक्षक सर्प अपने विपारी फूत्कार डालते हुए इन पर दौड़ा। शिष्यों में से एक को औपधि माल्टम होने के कारण, बड़े ही अभिमान से वह आगे बढ़ा। उसने तक्षक को पकड़ कर, उसके सिर का मणि निकाल कर, जमीन पर फेंक दिया। यह वार्ता सर्पराज वासुकि को ज्ञात हुई। उसने हजारों विपारी सर्प द्रोण, कालीय, कर्कोट, पुंडरीक तथा धनंजय के नेतृत्व में भेजे। उनके श्वासोच्छ्वास के द्वारा बाहर आई विपारी वायु से, धन्वन्तरि के शिष्य मूर्च्छित हो गये। धन्वन्तरि ने, वन-स्पतिजन्य औपधि से उन्हें सावधान कर के, उन सर्पों को अचेत किया। वासुकि को यह ज्ञात हुआ। उसने शिव-शिष्य मनसा को भेजा। मनसा तथा गड्ढर शिवभक्त थे। धन्वन्तरि, गड्ढर का अनुयायी था। जहाँ धन्वन्तरि था, वहाँ मनसा आई। उसने धन्वन्तरि के सब शिष्यों को अचेत कर दिया। इस समय स्वयं धन्वन्तरि भी, शिष्यों को सावधान न कर सका। मनसा ने स्वयं धन्वन्तरि को भी, मंत्रतंत्र से अपाय करने का प्रयत्न किया, किंतु वह असफल रही। तब शिव द्वारा दिया गया त्रिशूल वह इस पर फेंकने ही वाली थी कि, शिव तथा ब्रह्म वहाँ आये। उन्होंने वह झगड़ा मिटाया। अंत में मनसा तथा धन्वन्तरि ने एक दूसरे की पूजा की। उसके बाद सब सर्प, देव, मनसा तथा धन्वन्तरि, अपने अपने स्थाने रवाना हुए (ब्रह्मवै. कृष्ण. १.५.१)।

धन्वन्तरि के ग्रंथ—धन्वन्तरि के नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्रसिद्ध हैं—१. चिकित्सातत्त्व विज्ञान, २. चिकित्सा-दर्शन, ३. चिकित्साकीमुदी, ४. अजीर्णाभृतमंजरी, ५. रोग-निदान, ६. वैद्यचिंतामणि, ७. वैद्य प्रकाश चिकित्सा, ८. विद्याप्रकाशचिकित्सा, ९. धन्वन्तरीय निवेद, १०. चिकित्सासारसंग्रह, ११. भास्करसंहिता का चिकित्सा-तत्त्व विज्ञानतंत्र, १२. धातुकरण, १३. वैद्यक त्वरोदय (ब्रह्मवै. २.१६)। इनके सिवा, इसने वृक्षायुर्वेद, अश्वायुर्वेद तथा गजायुर्वेद का भी निर्माण किया था (अमि. २८२)।

धन्वन्तरि 'अमृताचार्य'—एक आयुर्वेदशास्त्रज्ञ। यह अंबष्ठ ज्ञाति में पैदा हुआ था। आयु धन्वन्तरि से इसका निश्चित क्या संबंध है, यह कह नहीं सकते। इसके जन्म के बारे में निम्नलिखित कथा उपलब्ध है :— एक बार गालव ऋषि दर्भ एवं काष्ठ लाने के लिये अरण्य में गया था। अधिक घूमने के कारण, वह तृपान हो गया। उतने में पानी ले जानेवाली एक लड़की को इसने देखा। उसने इसे पानी पिलाया। तब गालव ने उसे वर दिया, 'तुम्हें अच्छा पुत्र पैदा होगा'। किंतु उस लड़की ने कहा, 'अभी मेरा विवाह भी नहीं हुआ है'।

पश्चात् गालव ने दर्भ की एक पुरुषाकृति बना कर, उस वीरभद्रा नामक वैश्यकन्या को दी। उस पुरुषाकृति से पुत्र निर्माण करने को उसे कह दिया। वीरभद्रा को उस दर्भपुरुष से एक सुंदर पुत्र हुआ। ब्राह्मण पिता से वैश्य स्त्री को वह पुत्र उत्पन्न हुआ, इस कारण वह अंबष्ठ ज्ञाति का बना। उसका नाम अमृताचार्य रखा गया। वही धन्वन्तरि है (अम्बष्ठचारचंद्रिका)।

धन्वन्तरि 'दिवोदास'—(सं. काश्य.) काशी के धन्वन्तरि राजा का पौत्र एवं आयुर्वेदशास्त्र का एक प्रमुख आचार्य। बाल्यकाल से ही यह विरक्त था। बड़े प्रयत्न से इसे काशी का राजा बनाया गया (भवि. १.१)।

विश्वामित्र का पुत्र मुश्रुत एवं वृद्ध नामक ब्राह्मण इसके प्रमुख शिष्य थे (भवि. प्रति. ४.२०; अमि. २६९.१)। इसने 'काल्पवेद' (काल्प-रोगों से श्रृणु हुआ देह) की रचना की। काल्पवेद के दर्शन से रोग नष्ट हो जाते थे। मुश्रुत ने उसका पठन कर, सौ अघ्यायों का 'अश्रुत तंत्र' का निर्माण किया (भवि. प्रति. ४.९.१६-२३)।

कई प्राचीन ग्रंथों में, इसे कश्यप ब्राह्मण का पुत्र कहा गया है। विष्णु ने गरुड को आयुर्वेद सिखाया, एवं इसने वह गरुड से सीख लिया (गरुड. १.१९७.५५)।

ब्रह्मवैवर्तपुराण में इसे शंकर का उपशिष्य कहा है (ब्रह्मवै. ३.५१)।

अन्य कई स्थानों में, इसे कृष्णचैतन्य का शिष्य कहा है। एक बार यह कृष्णचैतन्य के पास गया। प्रकृति श्रेष्ठ या पुरुष श्रेष्ठ, इसके बारे में, इसका एवं कृष्णचैतन्य का विवाद हुआ। इसका कहना था, 'प्रकृति से पुरुष श्रेष्ठ है'। किंतु कृष्ण चैतन्य ने कहा, 'दोनों भी श्रेष्ठ है'। कृष्णजी का कहना इसे मान्य हुआ एवं यह उसका शिष्य बन गया। कृष्णचैतन्य के शिष्यत्व की यह कहानी धन्वन्तरि 'दिवोदास' की ही है, या किसी अन्य धन्वन्तरि की, यह निश्चित रूप से कहना मुश्किल है।

धन्विन्—तामस मनु का एक पुत्र।

धमति—अंगिराकुल का एक ऋषि। धूनति पाठभेद है।

धमनी—ह्लाद नामक असुर की पत्नी। इसके पुत्र इत्यल तथा वातापि (भा. ६.१८.१५)।

धमिह्ला—अनुशाल्व राजा की पत्नी (जै. अ. ६१)।

धमधमा—स्कन्द की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. १९)।

धर—धर्म तथा धूम्रा का पुत्र। इसकी पत्नी मनोहरा। इसके पुत्र द्रविण, हुतहव्यवह, शिशिर, प्राण रमण (विष्णु. १.१५) तथा रज (ब्रह्मांड ३.३.२१-२९)। महाभारत के मत में, इसे द्रविण तथा हुतहव्यवह ये केवल दो ही पुत्र थे (म. आ. ६०.२०)।

२. सोम का पुत्र।

३. एक पांडवक्षीय राजा (म. द्रो. १३३-३७)। यह युधिष्ठिर का संबंधी एवं सहायक था।

धरापाल—विदिशा नगरी का राजा। एक बार देवी ने अपने एक गण को शाप दिया, 'तुम सियार बनोगे'। सियार का स्वरूप प्राप्त हुए उस, गण ने वेतसी तथा वेतवती नदी के संगम पर प्राणत्याग किया। पश्चात् उसे ले जाने के लिये यम ने विमान भेज दिया।

यह देख कर धरापाल ने वहाँ एक विष्णुमंदिर बाँधा। एक पुराणज्ञ व्यक्ति को पुराणकथन के लिये नियुक्त किया। उस पुण्यसंचय के कारण, इसकी मृत्यु के बाद इसे ले जाने के लिये, यम ने विमान भेजा, तथा इसे स्वर्ग में पहुँचा दिया (पद्म. उ. २८)।

धरिणी—अग्निवात्तादि पितरों की मानसकन्या। इसे वयुना नामक एक बहन थी।

धरुण आंगिरस—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.१५)।

धर्म—संपूर्ण लोगों को सुख देनेवाली एक देवता एवं ब्रह्माजी का मानसपुत्र । यह स्वयंभुव मन्वंतर में ब्रह्माजी के दाहिने स्तन से उत्पन्न हुआ (म. आ. ६०. ३०; मस्य. ३.१०; भा. ३.१२.२५) । यह एक प्रजापति था, एवं बुद्धि से उत्पन्न हुआ था । इसे भगवान् सूर्य का भी पुत्र कहा गया है (म. आ. ८१. ८९) । इसके वृष, यम आदि नामांतर उपलब्ध हैं ।

दक्ष प्रजापति की दस पुत्रियाँ इसकी पत्नी थी (म. आ. ६०.१३-१४) । उनके नामः—कीर्ति, लक्ष्मी, धृति, मेधा, पुष्टि, श्रद्धा, क्रिया, बुद्धि, लज्जा एवं मति । आठों वसु इसके पुत्र थे (म. आ. ६०.१७) । इसके तीन श्रेष्ठ पुत्र थे: शम, काम, हर्ष (म. आ. ६०.३१) । इसे सत्या नामक और एक कन्या भी थी । वह इसने दायु नामक अग्नि को दी (म. व. २०९.४) ।

भागवत एवं पुराणों में, दक्ष प्रजापति की तेरह कन्याएँ इसे भार्यारूप में दी गयी थी, ऐसा निर्देश है (भा. ४. १; ब्रह्मांड. २.९.५०) । उनके नामः—श्रद्धा, मैत्री, दया, शान्ति, तुष्टि, पुष्टि, क्रिया, उन्नति, बुद्धि, मेधा, तितिक्षा, ह्री, एवं मूर्ति । इनमें से प्रथम बारह स्त्रियों से इसे बारह पुत्र हुए । उनके क्रमशः नामः—शुभ, प्रसाद, अभय, सुख, सुद, स्मय, योग, दर्प, अर्थ, स्मृति, क्षेम तथा प्रश्रय । तेरहवें मूर्ति नामक स्त्री से इसे नर-नारायण ऋषि पुत्ररूप में हुए ।

इसीके अंश से विदुर एवं युधिष्ठिर पैदा हुए थे (म. आ. ६१.८४; ११०; म. व. २९८.२१) । इसने यक्ष-रूप से नकुल, सहदेव, अर्जुन, एवं भीमसेन को मूर्च्छित किया (म. व. २९८.६) । पश्चात् युधिष्ठिर के साथ इसके प्रभोत्तर हो गये (म. व. २९८.६-२५) । इसने युधिष्ठिर से पूछा, 'धर्म के पास पहुँचने के द्वार कौन से हैं?' युधिष्ठिर ने उत्तर दिया, 'अहिंसा, समता, शान्ति दया, एवं अमत्सर ये धर्म के पास पहुँचने के द्वार हैं । युधिष्ठिर के उस उत्तर से प्रसन्न हो कर, यह धर्मरूप में प्रकट हुआ । इसने युधिष्ठिर को वरदान दिया, 'अज्ञातवास में कौरवों से तुम सुरक्षित रहोगे' (म. व. २९८.२५) । विदेह का राजा जनक से भी इसका संवाद हुआ था (म. आश्व. ३२) ।

पांडवों के महाप्रस्थान के समय, कुत्ते का रूप धारण कर, धर्म उनके पीछे-पीछे गया था (म. महाप्रस्थान. ३.१३) । विदुर एवं युधिष्ठिर के मृत्यु के पश्चात्, वे दोनों धर्म में ही विलीन हो गये (म. स्वर्गा. ५.१९) ।

२. भागवत में पुनः दूसरे स्थान पर, धर्म की पत्नी एवं पुत्रपरिवार के बारे में अन्य जानकारी दी गई है । वहाँ लिखा है कि, धर्म को भानु, लंबा, कुकुर, यामी (जामि) विश्वा, साध्या, मरुत्वती, वसु, मुहूर्ता तथा संकथा नामक दस पत्नियाँ थीं । उनसे इसे देव ऋषभ, विद्योत, संकट, स्वर्ग, विश्वेदेव, साध्यगण, मरुत्वान्, जयंत, मुहूर्ताभि-मानी, देवगण, संकल्प, द्रोण, प्राण, भ्रुव, अर्क, अग्नि, दोष । वसु तथा विभावसु नामक पुत्र हुए (भा. ६.६.४-१०; मस्य. ५.२०३; विष्णु. १.१५. १०६-११०) । अन्य कई जगह, कुकुर की जगह अरुंधती नाम प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.३.१.४४; वसु देखिये) ।

यह जानकारी उस समय की है, जब पहले का धर्म महादेव के शाप से मृत हो गया था, एवं वैवस्वत मन्वंतर में ब्रह्मदेव के द्वारा अन्य धर्म उत्पन्न किया गया था (वायु. ४) । इससे जाहिर होता है कि, धर्म एवं उसका परिवार प्रत्येक युग में नया उत्पन्न हो कर उसी युग में लय भी होता था । युगभेद के अनुसार, जानकारी में फर्क होता है । असंगति भी उसी कारण प्रतीत होती है । पुराणों में भी यह कहा गया है (विष्णु. १.१५.८४; १०६-११०; पितर देखिये) ।

३. यम का नाम (भा. ९.२२.२७) ।

४. (सो. द्रुह्यु.) गांधार का पुत्र । इसका पुत्र धृत ।

५. (सो. यदु. वृष्णि.) लिगा के मत में अक्रूर पुत्र ।

६. (सो. यदु. क्रोष्टु.) भागवतमत में पृथुश्रवा का पुत्र (तम देखिये) ।

७. (सो. यदु. सह.) हैहय राजा का पुत्र । इसे धर्मतत्व तथा धर्मनेत्र भी कहा गया है ।

८. (सो. क्षत्र.) वायु के मत में दीर्घतमस् का पुत्र ।

९. एक ब्रह्मर्षि । इसकी पत्नी वृति (म. उ. ११७. १५; ११५.४६१*) ।

१०. उत्तम मन्वंतर के सत्यसेन अवतार का पिता । इसकी पत्नी सतृता (भा. ८.१.२५) ।

११. चाक्षुष मन्वंतर का अवतार । इसके पुत्र नर-नारायण (दे. भा. ४.१६) ।

१२. सुतप देवों में से एक ।

१३. ब्रह्मदेव के पुष्कर क्षेत्र के यज्ञ का सदस्य (पञ्च. सू. ३४) ।

१४. एक धार्मिक वैश्य । यह ब्राह्मणों से अत्यंत

सचाई से ध्यवहार करता था (नरोत्तम देखिये; पद्य. उ. ५०)।

१५. (पौर. भविष्य.) विष्णु के मत में रामचन्द्र का पुत्र।

१६. (सो. मगध. भविष्य.) विष्णु के मत में सुव्रत का पुत्र। अन्यत्र इसे धर्मनेत्र, धर्मसूत्र तथा सुनेत्र नाम हैं।

१७. एक व्यास (व्यास देखिये)।

धर्मकेतु—(सो. शत्र.) भागवतमत में सुकेतन का एवं विष्णु-तथा वायु के मत में सुकेतु का पुत्र।

धर्मगुप्त—सोमवंशीय नंद राजा का पुत्र। एक बार यह अरण्य में गया था। संव्यासमय होने के कारण, उसी अरण्य के एक वृक्ष का इसने रातभर के लिये सहारा लिया।

रात के समय, उसी वृक्ष का सहारा लेने एक रीछ आया। उसके पीछे एक सिंह लगा हुआ था। रीछ ने राजा से कहा, 'मित्र, तुम बचराना नहीं। सिंह के डर से मैं यहाँ आया हूँ। हम दोनों इस वृक्ष के सहारे रात बिता लेंगे। आधी रात तक तुम जागो। आधी रात तक मैं जाग कर तुम्हें सम्हालूँगा'। राजा निश्चित मन से सो गया।

नीचे खड़ा सिंह, रीछ से बोला, 'तुम राजा को नीचे फेंक दो'। रीछ ने यह अमान्य कर कहा, 'विश्वासघात करना बहुत ही बड़ा पाप है'। बाद में राजा को जाग्रत कर, वह स्वयं सो गया।

सिंह ने राजा से कहा, 'तुम रीछ को नीचे ढकेल दो'। दुर्बुद्धि सुन्न कर राजा ने रीछ को नीचे ढकेल दिया, परंतु सावधानी से रीछ ने वृक्षों के डालों में अपने आप को फँसा दिया। पश्चान् इसने क्रोधवश राजा को शाप दिया, 'तुम पागल हो जाओगे'।

रीछ आगे बोला, 'मैं भृगुकुल का ध्यानकाष्ठ नामक ऋषि हूँ। मन चाहा रूप मैं ले सकता हूँ। तुम विश्वासघात से मुझे नीचे ढकेल रहे थे, इसलिये मैंने तुम्हें शाप दिया है'। सिंह से भी उसने कहा, 'तुम भद्र नामक यक्ष तथा कुबेर के सचिव थे। गौतम ऋषि के आश्रम में दोपहर में निर्लज्जता से स्त्री के साथ क्रीड़ा करने के कारण, गौतम ने तुम्हें सिंह बनने का शाप दिया था। मेरे साथ संवाद करने पर पुनः यक्षरूप प्राप्त होने का उशाप भी, तुम्हें मिला था'। ध्यानकाष्ठ का यह

भाषण सुन कर, सिंह पुनः यक्ष बना एवं विमान में बैठ कर अलकापुरी चला गया।

धर्मगुप्त के पागल होने की वार्ता सुन कर, नंद राजा राजधानी में वापस आया। उसने जैमिनि ऋषि को, अपने पुत्र के पागलपन का उपाय पूछा। उसने राजा को पुष्करिणी तीर्थ पर, स्नान करने के लिये कहा। नंद ने वैसा करने पर, उसके पुत्र धर्मगुप्त का पागलपन निकल गया। पश्चात् नंद राजा पुनः तप करने के लिये वन में गया (स्कन्द. २.१.१३)।

धर्मजालिक—बाल देखिये।

धर्मतत्व—(सो. सह.) वायु मत में हैहय राजा का पुत्र (धर्म ७. देखिये)।

धर्मद—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४. ६७)।

धर्मदत्त—एक ब्राह्मण। यह करवीर नगर में रहता था। एक बार पूजासाहित्य ले कर, यह मंदिर में जा रहा था। राह में इसे कलहा नामक राक्षसी दिखी। उसे देखते ही यह भय से गर्भगलित हो गया। थोड़ा धीरज बाँध कर, इसने पास का पूजासाहित्य उस के मुख पर फेंक दिया। उस साहित्य में से एक तुलसीपत्र कलहा के शरीर पर गिरा, एवं उस से उसे पूर्वजन्म का स्मरण हो गया।

अपना क्रूर स्वभाव त्याग कर, तुष्ट राक्षसयोनि से मुक्ति का उपाय, कलहा ने धर्मदत्त से पूछा। धर्मदत्त के हृदय में कलहा के प्रति दया उत्पन्न हो गयी, एवं इसने अपने कार्तिक व्रत का पुण्य उसे दे दिया। इससे उसका उद्धार हुआ (पद्य. उ. १०६-१०८; स्कन्द. २. ४. २४-२५)।

कार्तिकव्रत के पुण्य के कारण, अगले जन्म में यह दशरथ बना। कलहा इसके आधे पुण्य के कारण, इसकी पत्नी कैकयी बनी (दशरथ देखिये; आ. रा. सार. ५)।

२. कश्यप का स्नेही। कश्यपपुत्र भजानन को यह हमेशा अपने घर भोजन के लिये बुलाता था (गणेश. २.१४)।

धर्मदश—(सो. वृष्णि.) विष्णुमत में श्रफल्कपुत्र।

धर्मद्रवा—गंगा नदी का नामांतर। यह ब्रह्मदेव की सात भार्याओं में से एक थी। इसे ब्रह्मदेव ने अपने कमंडलु में रखा था। वामनावतार द्वारा विष्णु ने बली को बाँध कर देवी को निर्भय कर दिया। तत्पश्चान् ब्रह्मदेव ने इसे विष्णु के पैरों पर डाल कर, उसके पाँव धो डाले।

यह आकाश से हेमकूट पर्वत पर गिरी, तब शंकर ने इसे जटा में धारण किया। भगीरथ द्वारा ऐरावत की प्रार्थना की जाने पर, उसने अपने दौंतां से हेमकूट पर्वत में तीन छेद खोद डाले। उनमें से गंगा बहने लगी। उस कारण इसे 'त्रिखोता' भी कहते हैं (पद्म. सू. ६२)।

धर्मध्वज—रथध्वज राजा का पुत्र। इसे तुलसी नामक कन्या थी।

२. (सू. निमि.) विदेह देश का राजा। भागवतमत में यह कुशाश्वज जनक का पुत्र था। इसे कृतध्वज तथा मितध्वज नामक दो पुत्र थे। यह पंचशिल का शिष्य था (म. शां. ३०८; ४-२४)। यही जनदेव होगा। महा-भारत में दिये गये, 'धर्मध्वज-सुलभासंवाद' में मोक्ष का प्रतिपादन है (म. शां. ३०८)।

धर्मध्वजिन्—विदेह देश के जनककुल का एक क्षत्रिय। इसे असित ने पृथ्वीगीता बताया (विष्णु. ४.२४)। परंतु पृथ्वीगीता का प्रतिपादन इसे देवल ने किया, ऐसा भी निर्देश प्राप्त है (पद्म. उ. १९७.२७)।

धर्मन्—(सू. इ. भविष्य.) विष्णु के मत में यह बृहद्राज का पुत्र। इसके लिये धर्मिन् तथा बर्हि नाम भी हैं।

धर्मनारायण—एक व्यास (व्यास देखिये)।

धर्मनेत्र—(सो. सह.) हैहय वंश का एक राजा। विष्णु, मत्स्य तथा पद्म के मत में यह हैहय राजा का पुत्र था (पद्म. सू. १२; धर्म ७. देखिये)।

२. (सो. मगध. भविष्य.) वायुमत में भुवन का पुत्र तथा ब्रह्मांड मत में सुव्रत का पुत्र। इसने पांच वर्षों तक राज्य किया (धर्म १३. देखिये)।

३. (सो. पूर.) कुरु का प्रपौत्र एवं जानमेजय धृतराष्ट्र का पुत्र (म. आ. ८९.८९२*)।

धर्मपाल—इक्षारथ का अमात्य (वा. रा. अयो. ७)।

२. (सो.) भविष्यमत में आनंदवर्धन का पुत्र। इसने २७०० वर्षों तक राज्य किया।

धर्मबुद्धि—एक चोलवंशीय राजा। नास्तिकों के सहवास के कारण, दूसरे जन्म में यह गंडा बना। उस जन्म में सुलोचना ने इसका वध किया। उस समय सुलोचना ने वीरवर नामक पुरुष का वेप धारण किया था।

गंगासागर संगम तीर्थ में मरने के कारण, उस गंडे का उद्धार हुआ। विष्णुदूतों के साथ स्वर्ग में जाते समय, सुलोचना को इसने बर दिया, 'तुम्हारा पति से मिलन होगा' (पद्म. कि. ६)।

धर्मभृत्—दंडकारण्यवासी एक ऋषि। पंचाश्वर सरोवर में की जानकारी इसने राम को बताया, एवं उस सरोवर में से आनेवाले चमत्कृतिजनक आधाज का कारण भी इसने उसे बताया (वा. रा. अर. ११)।

२. मत्स्यमत में अक्रूर का तथा वायुमत में श्रकल का पुत्र।

धर्ममूर्ति—बृहत्कल्प का एक राजा। इसकी पत्नी भानुमती। उसके सिवा इसे १०००० स्त्रियाँ थीं। इसका कुल्युरु वसिष्ठ था। पूर्वजन्म में एक वेश्या के घर में स्वर्णकार का जन्म इसे मिला था। इसके द्वारा बनाया गया सुवर्णवृक्ष, उस वेश्या ने ब्राह्मणों को दान किया। अतः सद्यः जन्म में यह वैभवसंपन्न राजा बना। यही कथा पद्मपुराण में कुछ अलग ढंग से दी गयी है। पहले यह शूद्र था। उसके बाद के जन्म में यह कैंडा बना, एवं स्वर्ग द्वारेश्वर के सामने मृत हो गया। उस पुण्यसंचय के कारण, यह सद्यःजन्म में वैभवसंपन्न राजा बन गया (पद्म. सू. २१; स्कन्द. ५. २. २२)।

धर्मरथ—(सो. अनु.) अनुवंश का एक राजा। यह दिविरथ राजा का पुत्र था। इसका पुत्र चित्ररथ ऊर्क रोमपाद वा लोमपाद।

२. (सू. इ.) सगर का एक पुत्र, जो कपिल के शाप से बना था (पद्म. उ. २०)।

धर्मराज—गौड़ देश का राजा। यह गौड़ाधिपति गुणशेखर का पुत्र था। जैन धर्म का वैदिक धर्म पर हमला चालू था। तब इसने स्वयं वैदिक धर्म का स्वीकार किया, तथा अपनी कृति से वैदिक धर्म का श्रेष्ठत्व सब को दर्शा दिया। इसने अपने पिता का भी उद्धार किया (भवि. प्रति. २. १०)।

धर्मवर्ण—एक ब्राह्मण। कलियुग के अन्तिम काल में यह आनर्त देश में रहता था। एक बार यह पितृलोक गया। वहाँ इसने देखा कि, इसके पितर दूर्वाकर के आधार पर लटक रहे हैं। उन्होंने अपने उद्धार के लिये इसे विवाह करने के लिये कहा। तब इसने विवाह किया। पश्चात् पुत्रजन्म होते ही, यह गंधमादन पर तपस्या करने चला गया (स्कन्द. २. ७. २२)।

धर्मवर्मन्—(सो. वृष्णि.) मत्स्यमत में अक्रूर का पुत्र।

धर्मवल्लभ—पुण्यपुर का राजा। अपने सत्यवक्राश नामक मंत्री के साथ, इसका अव्यात्म के विषय में संभाषण हुआ था (भवि. प्रति. २.११)।

धर्मवृद्ध—(सो. वृष्णि.) श्वफल्क के पुत्रों में से एक (म. १.२४.१६)।

२. (सो. क्षत्र.) एक राजा। वायुमत में यह आयु का पुत्र था। क्षत्रवृद्ध इसीका नामांतर था। वायु पुराण के क्षत्रवृद्ध वंश का प्रारंभ इसी राजा से हुआ है।

धर्मव्याध—मिथिला नगरी में रहनेवाला एक धर्म-परायण व्याध। इसने कौशिक नामक गर्वोद्धत ब्राह्मण को, मातापिता की सेवा का माहात्म्य बता कर विदा किया (म. व. १.९७.२०६)। इसे अर्जुन तथा अर्जुनी नामक अपत्य थे। उनमें से अर्जुनी विवाह योग्य होने के पश्चात्, मतंग ऋषि के पुत्र प्रसन्न से उसका विवाह हुआ।

धर्मव्याध अत्यंत धार्मिक था। पंच महायज्ञ, अग्नि परिचर्या तथा श्राद्धादि कर्म यह बहुत ही भाविकता से हररोज करता था। परंतु यह सारे धर्मकृत्य यह मृगया करते करते ही करता था। एक बार, अर्जुनी की सास ने उसे व्यंग वचन कहे, 'यह तो जीवघात करनेवालों की कन्या है। यह, तप करने वालों के आचार भला क्या समझेंगी?'

धर्मव्याध को इसका पता चल गया। मतंग को इसने समझाया, 'शाकाहारी होते हुए भी तुम जीवघातक हो'। पश्चात् इसने संसार के सास समुहों को शाप दिया, साससमुह पर बहुएँ कभी भी विश्वास नहीं रखेंगी, तथा यह भी न चाहेंगी कि उन्हें साससमुह हों (वराह. ८.)।

पूर्वजन्म में यह एक सामान्य व्याध था। काशमीराधिपति वसु राजा को इसने पूर्वजन्म का ज्ञान दिया। उस कारण वसु राजा ने इसे बर दिया, 'अगले जन्म में तुम धर्मव्याध बनोगे' (वराह. ६)।

महाभारत में यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। पूर्व जन्म में यह एक वेद पारंगत ब्राह्मण था। परंतु एक राजा की संगत में आ कर क्षात्रधर्म में एवं धनुर्विद्या में इसे रुची उत्पन्न हो गयी। एक बार यह उस राजा के साथ शिकार के लिये गया। अनजाने में इसके हाथ एक ऋषि का वध हो गया। ऋषि ने इसे शाप दिया, 'तुम शूद्रयोनि में व्याध बनोगे'। अनजाने में अपराध हो गया आदि प्रार्थना ऋषि से करने पर, उसने उःशाप दिया, 'व्याध होते हुए भी तुम धर्मज्ञ बनोगे। पूर्वजन्म का स्मरण तुम्हें रहेगा, एवं अपने मातापिता की सेवा तुम करोगे' (म. व. २०५; कौशिक ७. देखियें)।

महाभारत में धर्मव्याध के द्वारा, निम्नलिखित विषयों पर विवरण किया गया है:— वर्णधर्म का वर्णन (म. व. १.९८.१९-५५); शिष्टाचार का वर्णन (म. व. १.९८. ५७-९४); हिंसा एवं अहिंसा का वर्णन (म. व. १.९९); धर्मकर्मविषयक मीमांसा (म. व. २.००); विषयसेवन से हानी एवं ब्राह्मोविद्या का वर्णन (म. व. २.०१); इंद्रिय-निग्रह का वर्णन (म. व. २.०२)।

कालंजरगिरि पर इन्द्र के साथ सोम पीने का सम्मान इसे मिला था (ब्रह्म. १३.३९)।

धर्मवती—धर्म की धर्मवती से उत्पन्न कन्या। ब्रह्मपुत्र मरीचि की यह पत्नी थी। एक बार मरीचि ऋषि सोया हुआ था, उस वकत ब्रह्मदेव इसके घर आया। इसने उसका सत्कार किया। किंतु उस प्रसंग के कारण, मरीचि को इसके चारित्र्य पर शक आ गया। उसने क्रोधवश इसे शाप दिया, 'तुम शिल्प बन जाओगी'। उसी शिल्प पर गया की विष्णुमूर्ति स्थित है। इसे देवव्रता नाम भी प्राप्त है (अग्नि. १.१४)।

धर्मशर्मन्—एक ब्राह्मण। कश्यपकुल के विद्याधर ब्राह्मण के तीन पुत्रों में से, यह सब से कनिष्ठ था। इसके भाईयों में से वसुशर्मा तथा नामशर्मा ये दोनों बड़े भाई विद्वान् थे। किंतु इसे विद्याध्ययन में रुचि नहीं थी।

वृद्धापकाल में इसे अपने कृतकर्म पर पश्चात्ताप हुआ। पश्चात् एक सिद्ध के उपदेश के कारण, इसे आत्मज्ञान प्राप्त हुआ।

इसने अपने मनोरंजन के लिये एक तोता पाल रखा था। एक बार उस तोते को बिल्ली ने खा लिया। तब अत्यंत दुःखित हो कर, यह मृत हो गया। दूसरे जन्म में इसे शुक का ही जन्म प्राप्त हो गया, एवं पूर्वसंचित के कारण यह जन्मतः आत्मज्ञानी बना (पद्म. भू. १-३)।

२. वायुमत में व्यास की ऋक्षशिष्य परंपरा के शाकपूर्ण रथीतर का शिष्य (व्यास देखिये)।

धर्मसख—केकयवंश का एक राजा। इसे सौ पत्नियाँ थी परंतु संतान नहीं थी। अन्त में वृद्धापकाल में सुचन्द्रा नामक ज्येष्ठ स्त्री से इसे एक पुत्र हुआ। परंतु अन्य स्त्रियाँ वैसी ही संतानहीन रही। उनका दुःख मन ही मन जान कर, धर्मसख राजा ने अपने मंत्रियों की सलाह के अनुसार, पुत्रकामेष्टि यज्ञ करने का निश्चय किया। दक्षिण समुद्र के पास के हनुमकुंड के पास यह यज्ञ प्रपन्न हुआ। उस यज्ञ के फलस्वरूप, इसकी सौ स्त्रियों को सौ पुत्र हुए (स्कन्द. ३.१.१५)।

धर्मसारथि—(सो. आयु.) त्रिकशुद्ध राजा का पुत्र । इसका पुत्र शांतरथ ।

धर्मसावर्णि—एक मनु । धर्म तथा दक्षकन्या सुव्रता को यह चाक्षुष मन्वन्तर में उत्पन्न हुआ । ग्यारहवें मन्वन्तर का यह अधिपति था । वायुपुराण में लिखा है कि, यह दसवें मन्वन्तर का अधिपति था (मनु देखिये) । देवी भागवत में उस मन्वन्तर का नाम 'सर्वसावर्णि' दे कर, उसके अधिप का नाम वैवस्वतपुत्र 'नाभाग' दिया गया है (दे. भा. १०.१३) ।

धर्मसूत्र—(सो. मगध. भविष्य.) भागवतमत में सुव्रत का पुत्र (धर्म १३. देखिये) ।

धर्मसेतु—एक विष्णुअवतार । यह आर्यक तथा वैश्रुता से धर्मसावर्णि मन्वन्तर में उत्पन्न हुआ था (भा. ८.१३.२६) ।

धर्मसेन—(सू. इ.) मांथातापुत्र अंबरीष का नामांतर ।

धर्मस्व—एक ब्राह्मण । एक बार गंगा की डोली ले कर, यह घर जा रहा था । रास्ते में एक बैल ने, रत्नाकर नामक व्यापारी के कापकल्प नामक नौकर की हत्या की । कापकल्प स्वयं अत्यंत पापी था । किंतु उसकी अचानक मृत्यु के कारण, धर्मस्व के हृदय में उसकी प्रति दया उत्पन्न हुई । इसने उसके शरीर पर तुलसीपत्र से गंगोदक छिड़क दिया । इससे कापकल्प का उद्धार हो गया । गंगोदक का यह प्रभाव देख, धर्मस्व ने स्वयं गंगा की आराधना की, एवं वर प्राप्त किया, 'गंगा का नाम लेते लेते ही मुझे मृत्यु प्राप्त हो' (पद्म. क्रि. ७) ।

धर्माकर—एक धार्मिक गृहस्थ । एक राजपुत्र ने अपनी सुस्वरूप भार्या, सुरक्षितता के उद्देश्य से छः महिनो तक इसके पास रख दी । फिर भी इस सच्चरित्र पुरुष के मन में उस स्त्री के बारे में कामवासना उत्पन्न नहीं हुई । छः महिने के बाद राजपुत्र वापस लौटा । कुत्सित लोगों ने राजपुत्र के हृदय में संशय उत्पन्न करने का प्रयत्न किया, परंतु कुछ लाभ नहीं हुआ । बाद में लोकनिंदा से त्रस्त हो कर, यह चिंताप्रवेश करने लगा । उस अभिपरिक्षा में से यह विनाकष्ट बाहर आया, एवं इसके निंदकों के मुख पर कोढ़ हो गया । देवों ने इसे 'सज्जनद्रोहक' पदवी दी थी (पद्म. सू. ५०) ।

धर्मांगद—एक राजा । विदिशा नगरी के ऋतुध्वज पुत्र रुक्मभूषण को संन्यावली नामक भार्या से यह उत्पन्न हुआ था । पिता की इच्छा पूर्ण करने के लिये, इसने

अपना मस्तक मोहिनी को अर्पण किया । यही धर्मांगद अगले जन्म में सुव्रत बना (पद्म. सू. २२) ।

धर्मात्मन्—वायु तथा ब्रह्मांड के मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा का हिरण्यनाभ का शिष्य ।

२. ऋषेयी ब्रह्मचारी ।

धर्मारण्य—एक ब्राह्मण (म. शां. ३४९.५) । पद्मनाभ नामक नाग से इसने अथ्यात्मविद्या प्राप्त की तथा उसके कारण यह कुलार्थी हो गया ।

धर्मिन्—(सू. इ. भविष्य.) वायु के मत में भरद्वाज-पुत्र (धर्मन् देखिये) ।

धर्मैयु—(सो. पू.) एक राजा । भागवत, मत्स्य तथा वायुमत में यह रौद्राश्व का पुत्र था । उसे यह मिश्रकेशी नामक अप्सरा के गर्भ से उत्पन्न हुआ (म. भा. ८९.१०; धनुष्यु देखिये) ।

धातकि—प्रियव्रतपुत्र वीतिहोत्र का पुत्र । वीतिहोत्र ने इसे पुष्करद्वीप का आधा भाग दिया था (भा. ५. २०.३१) ।

धातु—मस्तों के तीसरे गर्भों में से एक ।

धातु—वैवस्वत मन्वन्तर के बारह आदित्यों में से एक (भा. ६.६.३९; पद्म. सू. ६) । इसकी माता का नाम अदिति, एवं पिता का नाम कश्यप था (म. भा. ५.१. १५) । खाण्डववन्दनाह के समय, श्रीकृष्ण एवं अर्जुन के बीच युद्ध का संभव उत्पन्न हुआ था । उस समय, यह देवताओं की ओर से आया था (म. भा. २१८.३३) ।

इसके द्वारा स्कंद को पाँच पापद प्रदान किये गये थे । उनके नाम :—कुहू, कुसुम, कुमुद, डम्बर, एवं आडम्बर (म. भा. ४४.३५) ।

इसे कुहू, सीनीवाली, अनुमति, एवं राका नामक चार पत्नियाँ थी । उनसे इसे, सार्यकाल, दश, पूर्णनाभ, एवं प्रातःकाल नामक चार पुत्र हुए (भा. ६.१८.३) । इसके पुत्रों के ये नाम स्वकामक प्रतीत होते हैं ।

आदित्य के नाते, यह हरसाल कार्तिक मास में प्रकाशित होता है, एवं इसके ११०० किरणें रहती हैं (भवि. ब्राह्म. १.७८) । भागवतमत में, यह चैत्रमास ('मधुमास') में प्रकाशित होता है (भा. १२.११.३३; विवस्वन् देखिये) ।

२. ब्रह्माजी का पुत्र । भागवतमत में, यह भृगु ऋषि को ख्याति से उत्पन्न हुआ था । इसके दूतरे भाई का नाम विधाता, एवं वहन का नाम लक्ष्मी (श्री) था ।

विधाता एवं यह मनु के साथ रहते थे (म. आदि. ६०.५०)।

मैरुकन्या आयति इसकी पत्नी थी। उससे इसे मृकण्ड नामक पुत्र हुआ था (भा. ४.१.४३-४४)।

हस्तिनापुर जाते समय, मार्ग में श्रीकृष्ण से इसकी भेंट हुई थी (म. उ. ८१.३८८)।

३. भृगु का पुत्र।

धात्र—एक पौराणिक योद्धा। 'द्वादश-संग्राम' में से धात्र नामक दशम-संग्राम में, इसने भाग लिया था।

वार्त इसीका नामांतर था (मत्स्य. ४७.४४-४५)।

धात्रेय—अत्रिकुल का एक गोत्रकार।

धात्रेयिका—द्रौपदी की दासी। जयद्रथ द्वारा द्रौपदी के अपहरण का समाचार इसने पांडवों को बताया था (म. व. २५३.१५)।

धानंजय—अंशु का पैतृक नाम।

२. एक आचार्य का पैतृक नाम (ला. श्रौ. १.१.२५; २.१.२; ९.१०)।

धानाक—छश देखिये।

धान्यमालिनी—रावण की पत्नी। इसका पुत्र अतिक्राय (वा. रा. सुं. २२)।

२. एक अप्सरा। शाय के कारण, यह मगर बनी थी। काल्मेषि राक्षस के वध के समय, हनुमान ने इसका उद्धार किया।

धान्यायनि—अंगिराकुल का एक ऋषि।

धान्व—असित नामक असुरों के ऋषि का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३.४.३.११)। इसका 'धान्वन्' नामांतर भी प्राप्त है (शां. श्रौ. १६.२.२०)।

धाम—एक ऋषिसमुदाय का नाम। उत्तर दिशा में रह कर, श्री गंगा-महाद्वार का ये रक्षण करते हैं (म. उ. १०९.१४)।

धामन्—अमिताभ देवों में से एक।

२. तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. एक नक्षत्र (ऋ. ९.६६.२)।

धारण—चन्द्रवत्सकुल में उत्पन्न एक कुलांगार नरेश। अपने दुर्वर्तन के कारण, यह स्वर्जनोंसमेत नष्ट हो गया (म. उ. ७२.१६)।

२. एक कश्यपवंशीय नाग (म. उ. १०१.१६)।

धारिणी—(स्वा.) स्वधा को पितरों से उत्पन्न कन्या।

यह ब्रह्मचारिणी तथा ब्रह्मनिष्ठ थी (भा. ४.१.६४)।

धार्मिक—रामचन्द्र के मुञ्ज नामक मंत्रि का पुत्र।

धार्ष्टक—धृष्ट १. देखिये।

धिषणा—कृशाश्व ऋषि की पत्नी।

२. एक देवी। इसने स्कंद के अभिषेक के समय पदार्पण किया था (म. श. ४४.१२)।

धिष्ण्य—प्रतर्दन देवों में से एक।

२. अग्नि धिष्ण्य ऐश्वर देखिये।

धीमन्—(सो. पुरूरवस्.) पुरूरवा को उर्वशी से उत्पन्न पुत्रों में से द्वितीय पुत्र (म. आ. ७०.२२)।

२. तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. अगस्त्य का पुत्र। पुलस्त्य ने इसे दत्तक लिया था। यह अगस्त्यगोत्रीय था।

धीर शतपर्ण्य—शतपर्ण का वंशज, एक ऋषि। यह महाशाल का शिष्य था (श. ब्रा. १०.३.३.१)।

धीरधी—काशी का एक शिवभक्त ब्राह्मण। अनन्य शिवोपासना करने के कारण, शिवजी इसपर प्रसन्न हुए, एवं इसकी हरप्रकार सहायता करने लगे।

शिवजी का इस पर प्रेम देख कर, शिवगणों को आश्चर्य हुआ। तब इसकी पूर्वजन्म की कहानी शिवजी ने अपने गणों से कथन की। शिवजी बोले, 'यह ब्राह्मण पूर्वजन्म में एक हंस था। एक बार यह एक सरोवर के उपर से जा रहा था। यकायक यह थक गया, एवं जमीन पर गिर पड़ा। पश्चात् इसका सफेद रंग बदल कर, यह कृष्णवर्ण हो गया। इसका सफेद रंग बदलने का कारण, सरोवर में स्थित एक कमलिनी ने इसे बताया, एवं गीता के दसवें अध्याय का पठन करते हुए शिवोपासना करने को उसे कहा। इस पुण्यसंचय के कारण, उस हंस को अगले जन्म में ब्राह्मणजन्म प्राप्त हुआ है'।

शिवजी ने आगे कहा, 'पूर्वकथा में निर्देश किया हुआ हंस, अपने पूर्वजन्म में ब्राह्मण ही था। किंतु गलती से गुरु को पादस्पर्श करने के पाप के कारण, उसे हंस की योनि प्राप्त हुई'।

पश्चात् शिवकृपा से यह जीवमुक्त हुआ, एवं स्वर्ग चला गया (पद्म. उ. १८४)।

धीरोष्णी—एक पुरातन विश्वेदेव (म. अनु. १३८.३२. कुं.)।

धुनि—इन्द्र से शत्रुत्व रखनेवाला एक आदिवासी प्रधान। यह एवं चुमुरि, इंद्र एवं दभीति के शत्रुपक्ष में थे (ऋ. २.१५.९; ६.१८.८; २०.१३; ७.१९.४; इन्द्र देखिये)।

धुंधु—एक राक्षस। यह मधुकैटभो का पुत्र, एवं 'उदकराक्षस' था (म. व. १९५.१)। देवताओं एवं हिरण्यक्ष राक्षस के युद्ध में, यह हिरण्यक्ष के पक्ष में शामिल था (पद्म. सू. ६५)।

उज्जालक नामक बालुकामय प्रदेश में खुद अपने को बालुका में दबा कर यह रहता था। इसकी तपस्या से संतुष्ट हो कर, ब्रह्मदेव ने इसे अवश्यत्व प्रदान किया। उस वरदान से उन्मत्त हो कर, यह सबको सताने लगा। सूर्यवंशीय कुवलाश्व राजा के पुत्रों को इसने दग्ध किया। फिर उत्क कृषि की प्रेरणा से कुवलाश्व ने इसका वध किया (वायु. ८८; विष्णुधर्म. १.१६; ब्रह्मांड. ३.६३.३१; ब्रह्म. ७.५४.८६; विष्णु. ४.२; ह. वं. १.११; भा. १.६; कुवलाश्व देखिये)। इसे अररु का पुत्र भी कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.६.३१)।

२. एक राजा। इसने जीवन में कभी मांस नहीं खाया (म. अनु. १७७.७३. कुं.)। इस पुण्यसंचय के कारण, यह स्वर्ग गया।

३. (सो. पुरवस्.) मत्स्यमत में पीतायुध का पुत्र तथा वायुमत में जयदेव का पुत्र।

धुंधुकारिन्—आत्मदेव का पुत्र। यह अत्यंत दुर्वर्तनी होने के कारण, इसका पिता आत्मदेव अरण्य में चला गया (पद्म. उ. १९६; धुंधुली देखिये)।

धुंधुमत्—(स. विष्ट.) विष्णुमत में केवल का पुत्र। इसे धुंधुमत् भी कहते थे।

धुंधुमार—सूर्यवंशी बृहदश्वपुत्र कुवलाश्व का नामांतर (म. द्रो. १४.४२)। धुंधु दैत्य का वध करने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ (म. व. १९५.२९)। ऐडुविड राजा ने रत्न से प्राप्त हुआ खड्ग इसे प्रदान किया (म. शां. १६६.७६)। उसी खड्ग से इसने धुंधु का वध किया।

अगस्त्य ऋषि के कमलों की चोरी होने पर, इसने शपथ खायी थी (म. आ. १४.३)। कई जगह, इसे कुवलाश्व का पुत्र भी कहा है (पद्म. सू. ८)। इसे ददाश्व, घृण (मद्राश्व), तथा कपिलाश्व नामक तीन पुत्र थे। धुंधु के साथ हुए युद्ध में, इसके एक हजार इक्कीस पुत्रों में से, केवल उपरोक्त तीन पुत्र बचे (वायु. ८८; म. व. १९३. ५-६; १९५.३६; भा. १.६.२३)। इसने 'वरुथिनी एकादशी' का व्रत किया था। इस कारण इसे स्वर्गप्राप्ति हुई (पद्म. ४८; कुवलाश्व तथा धुंधु देखिये)।

धुंधुमूक—एक राजा। यह मेघवाहन कल्प में तीसरे त्रेतायुग में उत्पन्न हुआ था। इसकी पत्नी का नाम

विशल्या था। उसके द्वारा अत्यंत कुअवसर पर, इसे एक पुत्र पैदा हुआ।

उस पुत्र का विवाह होने पर भी, वह एक शूद्र स्त्री से रत हुआ। बाद में उसने उस स्त्री का वध किया। उस स्त्री के भाई ने धुंधुमूक राजा का, एवं विशल्या का वध किया। शूद्रोंद्वारा वध होने के कारण, धुंधुमूक के सारे घराने का नाश हुआ।

पश्चात् धुंधुमूक के दुराचारी पुत्र को किसी ने 'लिंग-पूजाव्रत' का माहात्म्य बताया। शिवपंचाक्षर मंत्र ('शिवतराय') तथा शिवपडाक्षर मंत्र ('ॐ नमः शिवाय') का अखंड जाप करने के कारण, उसका तथा उसके सारे मृत बांधवों का उद्धार हो गया (लिंग. २.८)।

धुंधुर—एक दैत्य। कश्यपगृह में अवतीर्ण गणेशजी का विनाश करने के लिये, इसने एक तोते का रूप धारण किया, एवं यह कश्यप के घर आया। किंतु गणेशजी ने इसका नाश किया (गणेश. २.८)।

धुंधुली—आत्मदेव की पत्नी। एक सिद्ध ने आत्मदेव को पुत्रप्राप्ति के लिये फल दिया था। वह फल उसने अपनी पत्नी धुंधुली को भक्षण करने के लिये दिया। परंतु अपनी बहन की बुरी सलाह मान कर, इसने वह फल गाय को खिला दिया, एवं स्वयं गर्भवती होने का स्वांग रचा दिया। पश्चात् अपनी बहन का पुत्र स्वयं ले कर, इसने शूद्रमूढ ही पति को बता दिया, 'मुझे पुत्र हुआ है'। उस पुत्र का नाम धुंधुकारो रख दिया गया (पद्म. उ. १९६)।

धूमती—अंगिराकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

धूमपा—पितरों एवं ऋषियों के एक समुदाय का नाम। ये लोग दक्ष के यज्ञ में उपस्थित थे (म. शां. २८४.८-९)।

धूमिनी—(सो.) पुरुवंशी अजमीढ राजा की पत्नी। इसका पुत्र ऋक्ष (म. आ. ८९.२८)।

धूमोर्णा—यमराज की भार्या (म. अनु. २७१.११. कुं.)।

२. मार्कंडेय ऋषि की पत्नी (म. अनु. २४८.४. कुं.)।

धूम्र—रामसेना के गद्गद् नामक वानर का पुत्र।

२. एक ऋषि। यह इंद्र की सभा में विराजमान होता था (म. स. ७.१६*)।

३. स्कंद का सैनिक (म. शा. ४४.५९)।

धूम्र पराशर—पराशर कुलोत्पन्न एक कुल।

धूम्रकेतु—(स्वा. प्रिय.) भरत तथा पंचजनी का पुत्र।

२. (सू. दिष्ट.) भागवतमत में वृणक्तिु तथा अलंबुषा का पुत्र।

धूम्रकेश—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

२. (स्वा. प्रिय.) वेनपुत्र पृथु तथा वेनकन्या अर्चि के पाँच पुत्रों में से तीसरा (भा. ४.२२.५४)। पृथु की मृत्यु के पश्चात्, उसके ज्येष्ठ पुत्र विजिताश्व ने इसे दक्षिण दिशा का स्वामित्व प्रदान किया (भा. ४.२४.२)।

३. कुशाश्व तथा दक्षकन्या अर्चि का पुत्र (भा. ६.६.२०)।

धूम्रलोचन—शुभनिशुंभ दैत्यों का एक प्रधान। कालिका देवी ने इसका वध किया।

धूम्रा—दक्ष प्रजापति की कन्या, एवं धर्म नामक वसु की पत्नी। इसे धर एवं ध्रुव नामक दो पुत्र थे (म. आ. ६०.१८)।

धूम्राश्व—धूम्राश्व का नामांतर।

२. रावण का प्रधान। हनुमानजी ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ५२.१; म. व. २७०.१४)।

३. (सू. दिष्ट.) भागवत मत में हेमचंद्र का पुत्र। इसे धूम्राश्व नामांतर भी प्राप्त है।

धूम्रानीक—(स्वा. प्रिय.) मेधातिथि का पुत्र।

धूम्राश्व—(सू. दिष्ट.) वैशाली के सुचंद्र राजा का पुत्र। इसे धूम्राश्व भी कहते थे।

धूम्रित—कश्यप एवं खशा का पुत्र।

धूर्त—प्रियव्रत राजा का प्रधान (गणेश. १.३२.१४)।

२. एक प्राचीन क्षत्रिय नरेश (म. आ. १.१७८)।

धूर्तक—कौरव्यकुल में उत्पन्न एक नाग। जनमेजय के सर्पसत्र में यह जल कर मारा गया (म. आ. ५२.१२)।

धृत—(सो. द्रुह्यु.) धर्म का पुत्र। धृत वा लुत इसीके ही पाठभेद है।

धृतक—(सो. इ.) वायुमत में रुक्क का पुत्र। वृक इसका पाठभेद है।

धृतदेवा—(सो. वृष्णि.) देवक राजा की कन्या। यह वसुदेव से ब्याही गयी थी। इसे विष्टुष्ट नामक एक पुत्र था (भा. ९.२४)।

धृतधर्मव—प्रतर्दन देवों में से एक।

धृतराष्ट्र—(सो. कुरु.) दुर्योधन, दुःशासन आदि सौ कौरवों का जन्मांध पिता, एवं महाभारत की अमर व्यक्तित्वों में से एक। अर्शांत, शंकाकुल

एवं द्विधा स्वभाव का अंध एवं अपंग पुरुष मान कर, श्रीव्यास ने 'महाभारत' में धृतराष्ट्र का चरित्रचित्रण किया है। अंध व्यक्तिओं में प्रत्यहि दिखनेवाली लाचारी, परावलंबित्व एवं प्ररप्रत्येयनेय बुद्धि के साथ, उसका संशयाकुल स्वभाव एवं झूठेपन, इन सारे स्वभावगुणों से धृतराष्ट्र का व्यक्तिमत्त्व ओतप्रोत भरा हुआ था। इस कारण, यद्यपि यह मूढ़ से, 'पांडव एवं कौरव मेरे लिये एक सरीखे हैं,' ऐसा कहता था, फिर भी इसका प्रत्यक्ष आचरण कौरवों के प्रति सदा पक्षपाती ही रहता था। 'अपंगत्व के कारण मेरा राज्यमुख चला गया, मेरे पुत्रों का भी यही हाल न हो,' यह एक ही चिंता से यह रातदिन तड़पता था। इस कारण, वृद्ध एवं अपंग हो कर भी, इसके प्रति अनुकंपा एवं प्रेम नहीं प्रतीत होता है।

कुरुवंश का सुविख्यात राजा विचित्रवीर्य का धृतराष्ट्र 'क्षेत्रज्ञ' पुत्र था। विचित्रवीर्य राजा निपुत्रिक अवस्था में मृत हो गया। तत्पश्चात् कुरुवंश का क्षय न हो, इस हेतु से सत्यवती की आज्ञानुसार, विचित्रवीर्य की पत्नी अंबिका के गर्भ से, व्यास ने इसे उत्पन्न किया। गर्भाधान प्रसंग में व्यास का तेज सहन न हो कर, अंबिका ने आँखें मूँद ली। इसीलिये धृतराष्ट्र जन्म से अंधा पैदा हुआ (म. आ. १.१८)। हंस नामक गंधर्व के अंश से इसका जन्म हुआ था (म. आ. ६१.७-८; ९९-१००; भा. ९.२२.२५)।

धृतराष्ट्र का पालनपोषण तथा विद्याभ्यास भीष्म की खास निगरानी में हुआ (म. आ. १०२.१५-१८)। जन्मतः बुद्धिवान् होने के कारण, यह शीघ्र ही वेदशास्त्रों में निष्णात हुआ। शिक्षा पूर्ण होने के बाद, भीष्म ने सुवल राजा की कन्या गांधारी से इसका विवाह कर दिया (म. आ. १०३)। गांधारी के सिवा, इसे निम्नलिखित किर्याँ थीः—सत्यव्रता, सत्यसेना, सुदेष्णा, सुसंहिता, तेजःश्रवा, सुश्रवा, निहृति, शंभुवा तथा दशार्णा (म. आ. १०४-१११३ परि. पक्ति. ५)।

गांधारी से धृतराष्ट्र को दुर्योधनादि सौ पुत्र, तथा दुःशला नामक एक कन्या हुई (म. आ. १०७.३७)। दुःशला का विवाह सिंधुराज अथद्रथ से किया गया था (म. आ. १०८.१८)। इन अपत्यों के अतिरिक्त, इसे युयुस्तु नामक एक दासीपुत्र भी था (म. आ. १०७.३६)। कौरवों में दुर्योधन, दुःशासन, विकर्ण तथा चित्रसेन प्रमुख थे (म. आ. ९०.३२)।

धृतराष्ट्र का भाई पाण्डु शापग्रस्त होने के कारण, वानप्रस्थाश्रम में चला गया, एवं अंधा हो कर भी धृतराष्ट्र कुरु देश का राजा बना। पश्चात् पाण्डु एवं उसकी पत्नी माद्री एकसाथ मर गये, एवं पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर को यौवराज्याभिषेक किया गया (म. आ. परि. १.८०.२)। अपने पश्चात् युधिष्ठिर ही हस्तिनापुर का राजा बनेगा, एवं अपने पुत्र राज्य से वंचित होंगे, इस चिंता से धृतराष्ट्र अस्वस्थ हो गया। इतने में कण्विक नामक इसके अमात्य ने पांडवविनाश की राह बतलानेवाला 'कूटनीति' का उपदेश इसे किया (म. आ. परि. १.८१.१-१९०; कण्विक देखिये)। उस उपदेश के अनुसार पांडवों के प्रति प्रेमभावना का दिखावा कर, उनके विनाश का पट्टयंत्र रचने का काम इसने एवं इसके दुर्योधनादि पुत्रों ने शुरू किया।

पांडवों का नाश करने के लिये, धृतराष्ट्र ने उन्हें वारणावत नगरी में भेज दिया। उस नगरी में तयार किये 'लाक्षाग्रह' में, पांडवों को जला कर मार डालने का इसके पुत्र दुर्योधन का पट्टयंत्र था। उसीके अनुसार, पांडवों के मृत्यु कि खबर भी इसे मिल गयी (म. आ. १३७.४), पांडवों के लिये इसने मिथ्या विलाप किया (म. आ. १३७.१०), एवं उनको 'जलांजली' भी प्रदान की (म. आ. १३७.११)।

पश्चात् पांडव जीवित है, यह देख कर भीष्म, द्रोण एवं विदूर के आग्रह के खातिर, पांडवों को आधा राज्य देना, धृतराष्ट्र ने वड़े ही कष्ट से मान्य किया (म. आ. १९९.२५)। युधिष्ठिर को इसने आधे राज्य का अभिषेक किया, एवं अपने भाइयोंसहित खाण्डवप्रस्थ में रहने के लिये उसे कह दिया (म. आ. १९९.२६)। युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ में भी यह उपस्थित था (म. स. ३१.५)।

पांडवों को आधा राज्य मिला, यह दुर्योधन को अच्छा नहीं लगा। द्यूत खेल कर, यह पांडवों से लीन लेने का विचार उसने किया। धृतराष्ट्र ने भी दुर्योधन के इस विचार को मूकसंमति दी। इसने विदूर के द्वारा, पांडवों को द्यूत के लिये आमंत्रण दिया (म. स. ५१.२०-२१)। द्यूतक्रीडा में दुर्योधन ने पांडवों को जीत लिया, यह सुन कर इसे आनंद हुआ। द्रौपदीवस्त्रहरण के प्रसंग में भी, इसने दुर्योधनादि को परावृत्त नहीं किया (म. आ. ६१.५१)। किंतु पश्चात् द्रौपदी ने विनंति करने पर, दास बने हुए पांडवों को धृतराष्ट्र ने मुक्त कर दिया (म. स. ६३.२८-३२)।

पांडवों के वनवासकाल में भी, धृतराष्ट्र पांडवों के पराक्रम की बातें सुन कर, कभी संतप्त होता था (म. व. ४६), या कभी भयभीत होता था (म. व. ४८.१-१०)। पांडवों को फजिहत करने के हेतु से, इसने दुर्योधन के घोषयात्रा के प्रस्ताव को संमति दी (म. व. २३९-२२)। घोषयात्रा में पांडवों ने किये पराक्रम के कारण, धृतराष्ट्र चिन्ताग्रस्त हो गया, एवं सारी रात जागता त्रैष्टा। पश्चात् इसने विदुर को बुलवा कर, उससे कल्याण का मार्ग पूछ लिया (म. उ. ३३.९-११)। विदुर ने इसे पांडवों का राज्य उन्हें वापस देने के लिये कहा। किंतु विदुर की यह सलाह धृतराष्ट्र एवं दुर्योधन दोनों को ही अप्रिय सी लगी।

पांडवों का वनवासकाल समाप्त हुआ। कृष्ण ने दुर्योधन से कहा, 'राज्य का योग्य हिस्सा पांडवों को दे दो'। वह न देने पर, युद्ध करने की धमकी भी कृष्ण ने दुर्योधन को दी। उस समय धृतराष्ट्र ने संजय द्वारा युधिष्ठिर को उपदेश किया, 'अपनी तरह वपकी तपश्चर्या का नाश कर के, तुम दुर्योधन के साथ युद्ध मत करो। दुर्योधन द्वारा कुल न मिलने पर, भिक्षा माँग कर अपना निर्वाह करो'। धृतराष्ट्र के इस उपदेश से, इसकी औरों के प्रति पक्षपाती वृत्ति, एवं इसके स्वार्थीधन के बारे में, श्रीकृष्ण की खातरजमा हो गयी। 'कृष्णशिष्टाई' की सभा में, श्रीकृष्ण को कैद करने का दुर्योधन का विचार था। किंतु धृतराष्ट्र ने उसे इस विचार से परावृत्त किया (म. उ. १२९)। पश्चात् विश्वरूपदर्शन के लिये, इसने श्रीकृष्ण से आँखों की याचना की, एवं श्रीकृष्ण के कृपा से नेत्र पा कर, यह भगवत्स्वरूप दर्शन से कृतार्थ हुआ (म. उ. १२९-४९५)।

बाद में अल्प ही कालावधि में भारतीय युद्ध छिड़ा। धृतराष्ट्र अंध होने के कारण, यह युद्ध में भाग न ले सका। युद्धप्रसंग प्रत्यक्ष देख भी न सका। युद्ध की घटनाओं संजय के मुख से इसने सुनीं। भीष्मद्रोणादि तथा इसी प्रकार अन्य कई वीर योद्धाओं के वध की वार्ता इसने सुनी। इसे प्रतीत होने लगा, 'कुलकुल का क्षय होने वाला है, कृष्ण की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध होनेवाली है'।

धृतराष्ट्र दुर्योधन को कहने लगा, 'युद्ध से परावृत्त हो कर पांडवों का उचित अंश उन्हें दे दो'। परंतु अत्र बहुत देर हो चुकी थी। दुर्योधन ने पूरी जिद टान ली थी। धृतराष्ट्र के उपदेश का कुछ लाभ नहीं हुआ। बाद में भारतीय युद्ध में इसके दुर्योधनादि सौ पुत्र तथा काफी

रथीमहारथी मृत हो गये। कौरवसेना में केवल अश्वत्थामा, कृपाचार्य तथा कृतवर्मा ये ही बड़े योद्धा बचे।

यह सुन कर धृतराष्ट्र, पुत्रशोक से विवहल हो गया। पांडवों पर यह असंतोष क्रोधित हुआ, तथा भीम से दशला चुकाने के लिये, इसने उसे कपट से आलिंगन के लिये बुलाया। परंतु इसका कपट कृष्ण ने पहचान लिया। उसने भीम के बदले, एक लोहे की मूर्ति धृतराष्ट्र के सामने रखी। उस मूर्ति को क्रोध से आलिंगन दे कर, धृतराष्ट्र ने उसे चूरचूर कर दिया। अपनी फजीहत देख कर, यह असंतोष लज्जित हुआ। बाद में लोकलज्जामतव यह पांडवों से प्रेमपूर्ण व्यवहार करने लगा (म. स्त्री. ११)।

युधिष्ठिर हस्तिनापुर का राज्य करने लगा। उस समय धृतराष्ट्र काफी दिनों तक वहीं रहा। उस समय युधिष्ठिर को इसने राजनीति का उपदेश किया (म. आश्र. ९-१२)। युधिष्ठिर भी धृतराष्ट्र के साथ बड़े आदर से व्यवहार करता था। किंतु भीम के मर्मभेदिनी बातों से व्यथित हो कर धृतराष्ट्र ने वन में जाने का निश्चय किया। अपने वनगमन के समय, गांधारी, कुन्ती तथा विदुर आदि को यह साथ ले गया था। वनभ्रमण में व्यास से इसकी मुलाकात हुई। उस समय धृतराष्ट्र की प्रार्थना-गुहार, व्यास ने इसके सारे मृत बांघवों का दर्शन इसे कराया।

बाद में धृतराष्ट्र ने उग्र तप प्रारंभ किया। तप करते समय दावाग्नि में धिर कर इसकी मृत्यु हो गई (म. आश्र. ४५. ३४; भा. १. १३. ५६)। मृत्यु के पश्चात्, यह कुवेरलोक गया (म. आश्र. २७. ११)।

धृतराष्ट्र की मृत्यु के समय, उसके औरसपुत्रों में से एक भी जीवित न था। अतः इसके बाद पांडवकुल प्रारंभ हुआ।

स्वभाव—धृतराष्ट्र स्वभाव से बड़ा ही सीधा तथा गुणों का पक्षगती था। इसके मन में कृष्ण, विदुर आदि के लिये बड़ा आदर था। किञ्चित् व्यमूढ़ अवस्था में यह विदुर से सलाह प्राप्त करता था। एक दिन, पांडवों के साथ युद्ध शाले के विषय में बातचीत चल रही थी। इतने में पांडवों से बातचीत कर संजय वापस लौटा। दूसरे दिन रात्रिभा में वह पांडवों का मनोगत करनेवाला था। धृतराष्ट्र को इस बात का पता लगने पर, यह रात भर सुख की नींद न सो सका। इसने विदुर को आमंत्रित कर उससे

सलाह पूछी। विदुर ने उचित राजनीति बताकर, युद्ध शाले का उपदेश किया। यह कथाभाग उद्योगपर्वस्थित 'विदुर नीति' में काफी विस्तार के साथ दिया गया है। पूरी रात जाग कर, यह विदुर की सलाह लेता रहा। उस कारण, महाभारत के इस पर्व का नाम 'प्रजागर पर्व' रखा गया है।

शूद्र होने के कारण, विदुर को ब्रह्मज्ञान-कथन का अधिकार नहीं था। अतः उसने सनसुजात ऋषि के द्वारा, धृतराष्ट्र को तत्त्वज्ञान की बातें सुनवायी। अन्त में धृतराष्ट्र ने कहा, 'यह सब सत्य है, न्याय्य है, उचित है, किन्तु दुर्योधन की उपस्थिति में, मैं अपने मन को सभाल नहीं सकता (म. उ. ४०. २८-३०)।

धृतराष्ट्र के पुत्र—धृतराष्ट्र को गांधारी से कुल सौ पुत्र हुए। उन्हें 'कुरुवंश के' इस अर्थ से 'कौरव' कहते थे। उन सौ कौरवों की नामावलि महाभारत में ही अलग अलग ढंग से दी गयी है। उनमें से तीन नामावलियाँ अकारादिक्रम से नीचे दी गयी हैं। इनमें प्रारंभ में दिया क्रमांक 'पुत्रक्रम' का है :—

नामावलि क्र. १ :-—१०. अनाधृष्य, ७६. अनुयायिन्, १३. अनुविंद, ५७. अन्दर, ६५. अपराजित, ८७. अमय, ४२. अयोबाहु, ८६. अलोलुप, ७३. आदित्यकेतु, ८२. उग्र, ६२. उग्रधवस्, ६३. उग्रसेन, ५०. उग्रायुध, २२. उपचित्र, ३३. उपनंदक, ३०. ऊर्णनाभ, ९७. कनकध्वज, ५२. कनकायु, २०. कर्ण, ७७. क्वचिन्, ९८. कुंडारी, ९१. कुंडभेदिन्, ३६. कुंडोदर, ६४. क्षेममूर्ति, २४. चारुचिप्रांगद, २१. चित्र, ९९. चित्रक, ४४. चित्रनाप, ३८. चित्रबाहु, ३९. चित्रवर्मन्, २३. चित्राक्ष, ५८. जरासंध, ९ जलसंध, ८०. दंडधार, ७९. दंडिन्पारी, ९४. दीर्घबाहु, ९३. दीर्घलोचन, ६७. दुराधर, १४. दुर्धर्ष, १८. दुर्मेल, २५. दुर्मद, १७. दुर्मेषण, ६. दुर्मूल, १. दुर्योधन, ४१. दुर्विमोचन, ५. दुःशल, ३. दुःशासन, १९. दुष्कर्ण, १६. दुष्प्रधर्षण, २६. दुष्प्रहर्ष, ४. दुःसह, ५५. दृढक्षत्र, ८४. दृढरथ, ५४. दृढवर्मन्, ५९. दृढसंध, ६९. दृढहस्त, ५३. दृढायुध, ८१. धनुर्ग्रह, ३२. नंद, ७५. नागदन्त; ७८. निर्धंगिन्, ६६. पंडितक, ३१. सुनाभ, ७. अपर, ४८. बलाकिन्, ७४. ब्रह्माशी, ४७. भीमवल, ८३. भीमरथ, ४९. भीम विक्रम (बलवर्धन), ४६. भीमवेग, ५१. भीमशर, ९५. महाबाहु, ४३. महाबाहु, ३७. महोदर, २. युयुत्सु, ८८. रौद्रकर्मन्, ७१. वातवेग, २८. विकट, ९. विकर्ण, १२. विंद, ९२. विराविन्, २७. विविस्सु, ८. विविशति, ६७. विशालाक्ष,

८४. वीर, ८५. वीरबाहु, ९६. व्यूढोरु, ६०. सत्यसंध, २९. सम, ६१. सहस्रबाक, ४५. सुकुंडल, १५. सुबाहु, ११. सुलोचन, ७२. सुवर्चस्, ४०. सुवर्मन्, ३५. सुषेण, ७०. सुहस्त, ३४. सेनापति, ५६. सोमकीर्ति, १००. दुःशला, (कन्या) तथा, १०१. युयुत्सु (वैश्यापुत्र) (म. आ. ६८. परि. १ क्र. ४१.)।

नामावलि क्र. २:— ७८. अग्रयायिन्, ९१. अनाधृष्य, १०. अनुविद, ५७. अनूदर, ६७. अपराजित, ८८. अमय, ४०. अयोबाहु, ८७. अलोलुप, ७५. आदित्य-केतु, ८४. उग्र, ६३. उग्रश्रवस्, ६४. उग्रसेन (अश्व-उग्रसेन), ४७. उग्रायुध, २४. उपचित्र, ३५. उपनंदक, ३२. ऊर्णनाम, १००. कनकध्वज, १७. कर्ण, ७९. कवचिन्, ४९, ८२. कुंडधार, ९२. कुंडभेदिन्, ६८. कुंडशायिन्, १०१. कुंडाशिन्, ८१. कुंडिन्, ८०. क्रथन, २६. चारुचित्र, २३. चित्र, ४२, ९४. चित्रकुंडल, ३६. चित्रबाण, ३७. चित्रवर्मन्, २५. चित्राक्ष, ४१. चित्रांग, ५०. चित्रायुध, ५९. जरासंध, ६. जलसंध, ९८. दीर्घबाहु, ९७. दीर्घ-रोमन्, ७०. दुराधर, ११. दुर्धर्ष, २८. दुर्मद, १४. दुर्मर्षण, १५. दुर्मुख, १. दुर्योधन, २९. दुर्विगाह, ३९. दुर्वि-मोचन, ५. दुःशल, ३. दुःशासन, ४. दुःसह, १६. दुष्कर्ण, ६६. दुष्पराजय, १३. दुष्प्रधर्षण, ५५. दृढक्षत्र, ९०. दृढ-रथाश्रय, ५४. दृढवर्मन्, ५८. दृढसंध, ७१. दृढहस्त, ८३. धनुर्धर, ३४. नंद, ७७. नागदत्त, ५१. निर्धगिन्, ५२. पाशिन्, ९५. प्रमथ, ९६. प्रमाथिन्, ४६. बलवर्धन, ४५. बलाकिन्, ७६. ब्रह्माशी, ४४. भीमबल, ८५. भीमरथ, ४३. भीमवेग, २. युयुत्सु, ८९. रौद्रकर्मन्, ७३. वातवेग, १३. विकटानन, १९. विकर्ण, ९. विद, १०२. विरजस्, ९३. विराविन्, ३०. विवित्सु, १८. विविशति, ६९. विशालाक्ष, ८६. वीरबाहु, ५३. वृंदारक, ९६. व्यूढोरु, २७. शरासन, २०. शल (शरसंध), ६०. सत्यसंध, २१. सत्व, ६१. सद, ७. सम, ८. सह, ३३. सुनाथ, १२. सुबाहु, २२. सुलोचन, ७४. सुवर्चस्, ३८. सुवर्मन्, ६२. सुवाक, ४८. सुषेण, ७२. सुहस्त, ६५. सेनानी, ५६. सोमकीर्ति, एवं १०३. दुःशला (कन्या) (म. आ. १०७. २-१४)।

नामावलि क्र. ३:— अनाधृष्टि, अयोभुज, अलंबु, उपनद, करकायु, कुंडक, कुंडभेदिन्, कुंडलिन्, क्राध, खड्गिन्, चित्रदशन, चित्रसेन, चित्रोपचित्र, जयसेन, जैत्र, तुहुंड, दीप्तलोचन, दीर्घनेत्र, दुर्जय, दुर्धर, दुर्धर्षण, दुर्विषह, दुष्प्रधर्ष, दृढ, नंदक, पंडित, बाहुशालिन्, भीम, भीम-नेगरन्, भूरिबल, मकरध्वज, रवि, वायुवेग, विराज,

विरोचन, शत्रुंजय, शत्रुसह, श्रुतवैन्, श्रुतायु, श्रुतांत, संजय, सुचारु, सुचित्र, सुजात, सुदर्शन, सुलोचन।

इनका उल्लेख द्रौपदी स्वयंवर, घोषयात्रा, उत्तरगोघ्रहण भारतीय युद्ध आदि प्रसंग में आया है (म. आ. १७७, भी. ६०, ७३, ७५, ८४; द्रो. १३१; १३२; वि. ३३; क. ६२; श. २५)।

उपरिनिर्दिष्ट नामावलियों में कुछ नाम बार बार आये हैं। कई जगह समानार्थक दूसरे शब्द का उपयोग किया गया है। इन नामावलि में प्राप्त पुत्रों की कुल संख्या भी सौ से अधिक है। किंतु उन में से सही नाम कौन से है, इसका निर्णय करने का कुछ भी साधन प्राप्त नहीं है।

२. नागकुल का एक नाग। यह वासुकि का पुत्र था।

अर्जुन के अश्रमेधन्यज्ञ के समय, अर्जुन एवं उसका पुत्र बभ्रुवाहन में युद्ध संपन्न हुआ। उस युद्ध में, अर्जुन का सिर बभ्रुवाहन ने तोड़ दिया। फिर अर्जुन को पुनः जीवित करने के लिये, 'मृतसंजीवक' नामक मणि की खोज, बभ्रुवाहन ने शुरू की। वह मणि शेष नाग के पास था, एवं उसके रक्षण का काम धृतराष्ट्र नाग पर सौंपा गया था। उसने बभ्रुवाहन को वह मणि देने से इन्कार कर दिया।

पश्चात् धृतराष्ट्र एवं बभ्रुवाहन का युद्ध हो कर, बभ्रु-वाहन ने वह मणि छीन लिया। उस मणि के कारण, अर्जुन पुनः जीवित हो जावेगा, यह धृतराष्ट्र को अच्छा न लगा। इसने अपने पुत्रों के द्वारा अर्जुन का सिर चुरा लिया, एवं उसे बक दाल्भ्य के आश्रम में फेंक दिया (जै. अ. ३९)।

३. कश्यप एवं कद्रु से उत्पन्न एक नाग (म. आ. ३१.१३)। यह वरुण की सभा में रह कर, उसकी उपासना करता था (म. स. ९.९)। नागों द्वारा पृथ्वी के दोहन के समय, यह दोगधा बनाया गया था (म. द्रो. परि. १.८.८०६)। इसे शिवजी के रथ के 'ईपादण्ड' में स्थान दिया गया था (म. क. ३४.७२)। बलराम के शरीरत्याग के समय, उस 'भगवान् अर्जुननाम' के स्वागत के लिये, यह प्रभासक्षेत्र के समुद्र में उपस्थित हुआ था (म. मौ. ५.१४)।

४. एक देवगंधर्व। यह कश्यप एवं मुनि का पुत्र था (म. आ. ५९.४१)। यह अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. ११४.४४)। देवराज इन्द्र ने इसे दूत के नाते मरुत्त के पास भेजा था (म. आश्व. १०.२-८)।

यही देवगंधर्व भूल पर धृतराष्ट्र राजा के रूप में उत्पन्न हुआ था (म. स्व. ४.१२)।

५. जनमेजय पारिक्षित (प्रथम) राजा का पुत्र, एवं भरतवंशी पूरु राजा का पौत्र (म. आ. ८९.४९)। जनमेजय के पश्चात् यह राजगद्दी पर बैठा। ये कुल आठ भाई थे। उनके नामः— पांडु, द्राहीक, निषध, जांबूनद, कुंडोदर, पदाति, एवं वसाति। इसे 'कुण्डिक' आदि पुत्र थे (म. धा. ८९.४९-५०)। उनके नामः— कुण्डिक, हस्तिन्, वितर्क, काथ, कुण्डुल, हविःश्रवस्, इंद्राम, सुमन्यु, अपराजित।

६. कश्यप एवं दनु का पुत्र।

७. पार्थुश्रवस का नामांतर (जै. उ. ब्रा. ४. २६. १५; पार्थुश्रवस देखिये)।

धृतराष्ट्र घेरावंत—एक सर्पदैत्य। धृतराष्ट्र इसका नाम हो कर, घेरावंत (इरावंत का वंशज) इसका पैतृक नाम था (अथर्व. ८. १०. २९; पं. ब्रा. २५. १५. ३)। सर्पसत्र में यह 'ब्रह्मा' था।

धृतराष्ट्र पांचाल—एक राजा। बक दाल्भ्य ऋषि ने इसका गर्वहरण किया था (बक दाल्भ्य देखिये)।

धृतराष्ट्र पार्थुश्रवस—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. ४. २६. १५)।

धृतराष्ट्र वैचित्रवीर्य—काशी का राजा (श. ब्रा. १३. ५. ४. २२)। इसने किये अश्वमेध यज्ञ के दिग्विजय के समय, शतानीक सत्राजित ने इसका पराजय किया, एवं इसके अश्वमेध का घोड़ा चुरा लिया। शतानीक सत्राजित पांचाल देश का राजा था (क. सं. १०. ६; श. ब्रा. १३. ५. ४. १८-२३)। उससे ज्ञात होत है कि, धृतराष्ट्र वैचित्रवीर्य का राज्य कुरुपांचाल से कुछ अलग, एवं उससे कहीं दूर बसा हुआ था।

'वैचित्रवीर्य' यह इसका पैतृक नाम था। उसका अर्थ 'विचित्रवीर्य का वंशज' ऐसा प्रतीत होता है।

बक दाल्भ्य नामक पांचाल देश में रहनेवाले ऋषि से इसका संवाद हुआ था (क. सं. १०.६)।

धृतराष्ट्रिका—धृतराष्ट्री देखिये।

धृतराष्ट्री—ताम्रा की कन्या, एवं गरुड की पत्नी। इसने सभी प्रकारों के हंस, कलहंस, तथा चक्रवाकों को जन्म दिया था (म. आ. ६०.५६)।

धृतवर्मन्—त्रिगर्तराज सूर्यवर्मन् एवं केतुवर्मन् का भाई (म. आश्व. ७४. २२)। कौरवों के पक्ष का यह अत्यंत पराक्रमी महारथि था।

पांडवों के अश्वमेध यज्ञ के समय, अर्जुन ने त्रिगर्त देश पर हमला किया। तत्पश्चात् संपन्न हुए युद्ध में, त्रिगर्त देश का राजा सूर्यवर्मा पराजित हुआ, एवं उसका भाई केतुवर्मा मारा गया। उस अवसर पर, सूर्यवर्मा एवं केतुवर्मा का भाई धृतवर्मा, अर्जुन के साथ युद्ध करने के लिये स्वयं आगे बढ़ा। इसने अर्जुन पर बाणों की वर्षा की। इसके तेजस्वी बाण से अर्जुन के हाथ में गहरी चोट लगी, एवं गाण्डीव धनुष उसके हाथ से गिर गया। पश्चात् रोप से भरे हुए अर्जुन ने धृतवर्मा पर बाणों की वर्षा की। धृतवर्मा को बचाने के लिये त्रिगर्त योद्धाओं ने अर्जुन पर एकसाथ हमला किया। किंतु अर्जुन ने अटारह त्रैगर्त वीरों को मार कर, युद्ध में विजय संपादन किया। पश्चात् धृतवर्मा आदि सारे त्रिगर्त, दास बन कर अर्जुन की शरण में आये (म. आश्व. ७३.१६-२८)।

धृतव्रत—स्वायंभुव मन्वन्तर के अर्थवर्ष ऋषि का चित्ति नामक भार्या से उत्पन्न पुत्र।

२. चक्षुर्मनु का नड्वला से उत्पन्न पुत्र।

३. (सो. अनु.) धृति राजा का पुत्र। इसका पुत्र मुकुमा।

४. अंगिरा ऋषि के पुत्रों के लिये प्रयुक्त सामूहिक नाम (म. आ. ६०.५)।

धृतसेन—दुर्योधन के पक्ष का एक राजा (म. श. ४.३)।

धृति—दक्ष प्रजापति की कन्या, एवं धर्म की पत्नी (म. आ. ६०.१४; धर्म देखिये)। नकुल तथा सहदेव की माता माद्री इसीका अवतार मानी जाती है (म. आ. ६१.९८)।

२. सावर्णि मनु का पुत्र (मनु देखिये)।

३. (सो. अनु.) भागवत तथा विष्णुमत में विजय का पुत्र।

४. (सू. निमि.) विदेह देश का राजा। यह वीतहव्य जनक का पुत्र था। कुरुपौरव राजा विचित्रवीर्य एवं कृष्ण द्वैपायन व्यास ये दोनों इसके समकालीन थे। इसका पुत्र बहुलाश्व।

५. (सो. कुकुर.) वायुमत में आहुक का पुत्र।

६. ब्रह्मधाना का पुत्र।

७. सृष्टि तथा छाया का पुत्र।

८. सुतप देवों में से एक।

९. सुधामन् देवों में से एक।

१०. (सो. कुकुर.) मत्स्यमत में वृष्णि का, तथा पद्म-मत में वृष्टि का पुत्र (पद्म. सू. १३)।

११. (सो. वसु.) सारण राजा का पुत्र, एवं वृष्ण तथा रोहिणी का पौत्र। सारण को सत्य एवं धृति नामक दो पुत्र थे। इसके नाम का 'सत्यधृति' पाठभेद भी प्राप्त है (विष्णु. ४.१५.४)।

१२. (सो. क्रोध.) विष्णुमत में रोमपादपुत्र बभ्रु का पुत्र (जाति देखिये)।

१३. (सू. निमि.) महाधृति का नामांतर।

१४. कुशद्वीप का राजा एवं ज्योतिष्मत् का पुत्र। इसका देश इसीके नाम से प्रसिद्ध था (विष्णु. २.४)।

१५. मनु नामक रुद्र की पत्नी।

१६. एक सनातन विश्वेदेव।

धृतिमत्—रैवत मनु का पुत्र।

१. सुदरिद्र ब्राह्मण का पुत्र (पितृवर्तिन् देखिये)।

३. (सो. पुरुरवस्.) मत्स्य तथा पद्ममत में पुरुरवा को उर्वशी से उत्पन्न पुत्रों में से एक (पद्म. सू. १२)।

४. (सो. द्विमीह.) द्विमीह राजवंश के यवीनर राजा का पुत्र। भागवत में इसे 'कृतिमत्' कहा गया है।

५. (सू. निमि.) एक राजा। वायुमत में यह महावीर्य जनक का पुत्र था। सत्यधृति एवं सुधृति इसीके नामांतर हैं।

धृतिमत् अंगिरस्—एक अग्नि। यह भानु का पुत्र था, एवं इसका गोत्र अंगिरस था (म. व. २११.१३)। इसके लिये दर्श तथा पौर्णमास याम में 'हविष्य' समर्पण किया जाता है। विष्णु इसीका नामांतर है।

धृष्ट—वैवस्वत मनु के नौ पुत्रों में से एक (भा. ८. १. १२)। हरिवंश, लिंग, एवं शिवपुराणों में इसे धृष्णु कहा गया है (ह. वं. १.१०.१)। महाभारत (मांडारकर इन्स्टिट्यूट संहिता) में भी 'धृष्णु' पाठ प्राप्त है (म. आ. ७०.१३)।

इसे धृष्टकेतु, स्वधर्मन् एवं रणधृष्ट नामक तीन पुत्र थे (मत्स्य. १२.२०-२१; पद्म. सू. ८; लिंग. १.६६.४६)। उन पुत्रों से 'धृष्टक' नामक मानवजातियाँ निर्माण हुईं। 'धृष्टक' जाति के लोग क्षत्रिय थे, एवं बाह्लीक देश (आधुनिक पंजाब प्रांत में स्थित बाल्हीक प्रदेश) में रहते थे (पार्शि. मार्क. पृ. ३११; शिव. ७.६०.२०; वायु. ८८. ४-५; ब्रह्म. ७.२५; विष्णु. ४.२.२)। धृष्टक लोग पहले क्षत्रिय थे, किंतु तपःसामर्थ्य से ब्राह्मण बन गये, ऐसा भी निर्देश प्राप्त है (भा. ९.२.१७)। गरुड पुराण के मत में

वे वैश्य बन गये (गरुड. १.१३८.१५)। धृष्टक लोगों के लिये 'धार्ष्टक' नामांतर भी प्राप्त है।

२. हिरण्यकशिपु की सभा का एक देव (भा. ७.२. १८)।

३. (सो. सह.) मत्स्यमत में सहस्राजुन का पुत्र।

४. (सो. क्रोध.) एक यादव राजा। वायु तथा मत्स्य मत में यह कुंति राजा का पुत्र था। धृष्टि तथा वृष्णि इसी के नामांतर हैं।

५. (सो. कुकुर.) विष्णुमत में कुकर राजा का पुत्र। इसे वहि, वृष्टि तथा वृष्णि भी कहा गया है।

धृष्टकेतु—(सो. ऋक्ष.) चंद्रिराज शिशुपाल का पुत्र, एवं एक पराक्रमी पांडवपक्षीय राजा। हिरण्यकशिपु का पुत्र अनुह्राद के अंश से यह उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१. ७)। यह एवं इसके पुत्र अर्जुन शूर थे (म. उ. १६८. ८)। इसके साथ रण में युद्ध करने की किसी की हिम्मत न होती थी (म. उ. ७८. १४)।

भीम के द्वारा शिशुपाल का वध होने पर, धृष्टकेतु को चेदि देश के राजसिंहासन पर अभिषिक्त किया गया (म. स. ४२. ३१)। यह पहले से ही पांडवों का पक्षपाती एवं मित्र था। पांडवों के वनवास में, यह उन्हें मिलने के लिये गया था (म. व. १३. २)।

भारतीय युद्ध शुरू होते ही, पांडवों की ओर से धृष्टकेतु को रणनिमंत्रण दिया गया (म. उ. ४. ८)। एक अश्वौहणी सेना के साथ, यह पांडवों के पक्ष में शामिल हुआ (म. उ. १९. ७)। इसके पास कांचोज देश के सफेद-काले रंग के अन्युक्त अश्व थे। वे भी इसने युद्ध के लिये लाये थे (म. द्रो. २२. १६)।

पांडवों के सात सेनापतियों में से एक के पद पर, इसे नियुक्त किया गया था (म. उ. १५४. १०-११)। अर्जुन के रथ का चक्ररक्षण का काम इस पर सौंपा गया था। वह कार्य भी इसने उत्कृष्ट तरह से निभाया (म. भी. १९. १८)।

भारतीय युद्ध में, इसने निम्नलिखित प्रतिपक्षीय वीरों से युद्ध कर के पराक्रम दिखाया था :—(१) बाह्लीक (म. भी. ४३. ३५-३६); (२) भूरिश्रवा (म. भी. ३८०. ३५-३७); (३) पौरव (म. भी. ११२. १३-२४); (४) कृपाचार्य (म. द्रो. १३. ३१-३२); (५) अंबष्ठ (म. द्रो. २४. ४७-४८); (६) धार-धन्वन् (म. द्रो. ८१. ९-१०)।

एक वार यह तथा केकय देश का राजा बृहत्क्षत्र द्रोणाचार्य पर आक्रमण कर रहे थे। उस वक्त, त्रिगर्तराज वीरधन्वन् ने इन्हे रोकने की कोशिश की। फिर धृष्टकेतु एवं वीरधन्वन् इन वीरों में भयंकर युद्ध हुआ। वीरधन्वन् ने एक बाण छोड़ कर, इसका धनुष तोड़ दिया। फिर अपना तूट्टा हुआ धनुष फेंक, इसने सुवर्ण की मूटवाली एक महावीर्यशाली फौलादी शक्ति दोनों हाथों में पकड़ ली, एवं बराबर लक्ष्य वेध कर वह वीरधन्वन् के रथ पर फेंक दी। उस शक्ति के भयंकर प्रहार से वीरधन्वन् का सीना विदीर्ण हो गया, एवं वह तत्काल मृत हो गया (म. द्रो. ८२. ९-१७)।

पश्चात् द्रोण से लड़ते-लड़ते, इसका मित्र केकयराज बृहत्क्षत्र मृत हो गया। फिर इसने अपने सारथी को अपना रथ द्रोण के रथ की ओर बढ़ाने को कहा। पतंग जिस प्रकार अग्नि ज्योति पर झपटता है, उस प्रकार इसने द्रोण पर आक्रमण किया। किंतु इसके सीने पर एक तीक्ष्ण बाण मार कर द्रोण ने इसका वध किया (म. द्रो. १०१.२२-३८)।

मृत्यु के पश्चात्, यह स्वर्गलोक में जा कर विश्वेदेवों में विद्यमान हो गया (म. स्व. ५.१३-१५)। व्यासजी ने आवाहन करने पर, परलोकवासी कौरवपांडव वीरों के साथ, यह भी गंगाजल से प्रगट हुआ था (म. आश. ४०.११)।

इसे करेणुमती नामक एक बहन, एवं रेणुमती नामक एक कन्या थी। उनमें से रेणुमती नकुल से ब्याही गयी थी-(म. आ. ९०.८६)। वीतहोत्र नामक एक पुत्र भी इसे था (मरुड. १.१३९)।

२. (सू. निमि.) विष्णुमत में सत्यवृति का पुत्र। भागवत तथा वायुमत में यह सुवृति का पुत्र था।

३. (सो. काश्य.) भागवतमत में सत्यकेतु का एवं विष्णु तथा वायुमत में सुकुमार का पुत्र (मरुड. १.१३९)।

४. (सो. अज.) भागवत, विष्णु तथा वायुमत में धृष्टयुञ्ज का पुत्र। यह भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में था। द्रोण ने इसका वध किया। इसकी मृत्यु से पांचाल वंश समाप्त हुआ (म. द्रो. १३०.१२)।

५. केकय देश का राजा। इसकी स्त्री श्रुतकीर्ति। इसे संतर्दन (विष्णु. ४.१४; भा. ९.२४.३८), चैकितान, बृहत्क्षत्र, विंद तथा अनुविंद (वायु. १६.१५६) नामक पाँच पुत्र थे।

६. (सू.) एक राजा। वायु, मत्स्य तथा पद्ममत में यह धृष्ट का पुत्र, एवं वैवस्वत मनु का पौत्र था (पद्म. सू. ८)।

७. नृम का पुत्र (लिंग. १.६६.४६)।

धृष्टयुञ्ज—(सो. अज) पांचालराज दुपद का अग्नि-तुल्य तेजस्वी पुत्र। यह पृषत् अथवा जेतु राजा का नाती, एवं दुपद राजा का पुत्र था। द्रोणाचार्य का विनाश करने के लिये, प्रज्वलित अग्निकुंड से इसका प्रादुर्भाव हुआ था। फिर उसी वेदी में से द्रौपदी प्रकट हुई थी। अतः इन दोनों को 'अयोनिर्भव', एवं इसे द्रौपदी का 'अग्रज वंशु' कहा जाता है (म. आ. ५७.९१)। अग्नि के अंश से इसका जन्म हुआ था (म. आ. ६१.८७)। इसे 'याज्ञसेनि', अथवा 'याज्ञसेनसुत' भी कहते थे।

द्रोण से बदला लेने के लिये, दुपद ने याज्ञ एवं उपयाज्ञ नामक मुनियों के द्वारा एक यज्ञ करवाया। उस यज्ञ के 'हविष्य' सिद्ध होते ही, याज्ञ ने दुपद की रानी सौत्रामणी को, उसका ग्रहण करने के लिये बुलाया। महारानी के आने में जरा देर हुई। फिर याज्ञ ने क्रोध से कहा, 'रानी! इस हविष्य को याज्ञ ने तयार किया है, एवं उपयाज्ञ ने उसका संस्कार किया है। इस कारण इससे संतान की उत्पत्ति अनिवार्य है। तुम इसे लेने आवो, या न आओ'। इतना कह कर, याज्ञ ने उस हविष्य की अग्नि में आहुति दी। फिर उस प्रज्वलित अग्नि से, यह एक तेजस्वी वीरपुरुष के रूप में प्रकट हुआ (म. आ. १५५. ३७-४०)। इसके अंगों की कांति अग्निवाला के समान तेजस्वी थी। इसके मस्तक पर किरीट, अंगों में उत्तम कवच, एवं हाथों में खड्ग, बाण एवं धनुष थे।

अग्नि से बाहर आते ही, यह गर्जना करता हुआ एक रथ पर जा चढ़ा, मानो कहीं युद्ध के लिये जा रहा हो (म. आ. १५५.४०)। उसी समय, आकाशवाणी हुई, 'यह कुमार पांचालों का दुःख दूर करेगा। द्रोणवध के लिये इसका अवतार हुआ है (म. आ. १५५.४४)। यह आकाशवाणी सुन कर, उपस्थित पांचालों को बड़ी प्रसन्नता हुई। वे 'साधु, साधु' कह कर, इसे शावासी देने लगे।

द्रौपदी स्वयंवर के समय, 'मत्स्यवेध' के प्रण की घोषणा दुपद ने धृष्टयुञ्ज के द्वारा ही करवायी थी (म. आ. १७६-१७९)। स्वयंवर के लिये, पांडव ब्राह्मणों के वेश में आये थे। अर्जुन द्वारा द्रौपदी जीति जाने पर, 'एक ब्राह्मण ने क्षत्रियकन्या को जीत लिया', यह बात सारे राजमंडल में फैल गयी। सारा क्षत्रिय राजमंडल क्रुद्ध हो

गया। बात युद्ध तक आ गयी। फिर इसने गुप्त रूप से पांडवों के व्यवहार का निरीक्षण किया (म. आ. १७९), एवं सारे राजाओं को विश्वास दिलाया 'ब्राह्मण-वधारी व्यक्तियाँ पांडव राजपुत्र ही हैं' (म. आ. १८४)।

धृष्टद्युम्न अत्यंत पराक्रमी था। इसे द्रोणाचार्य ने धनुर्विद्या सिखाई। भारतीय युद्ध में यह पांडवपक्ष में था। प्रथम यह पांडवों की सेना में एक अतिरथी था। इसकी युद्धचपलता देख कर, युधिष्ठिर ने इसे कृष्ण की सलाह से सेनापति बना दिया (म. उ. १४९.५४१)।

युद्धप्रसंग में धृष्टद्युम्न ने बड़े ही कौशल्य से अपना उत्तर-दायित्व सन्हाला था। द्रोण सेनापति था, तत्र भीम ने अश्वत्थामा नामक हाथी को मार कर, किंवदंती फैला दी कि, 'अश्वत्थामा मृत हो गया'। तत्र पुत्रवध की वार्ता सत्य मान कर, उद्विग्न मन से द्रोणाचार्य ने शस्त्रसंन्यास किया। तत्र अच्छा अवसर पा कर, धृष्टद्युम्न ने द्रोण का शिरच्छेद किया (म. द्रो. १६४; १६५.४७)।

धृष्टद्युम्न ने द्रोणाचार्य की असहाय स्थिति में उसका वध किया। यह देख कर सात्यकि ने धृष्टद्युम्न की बहुत भर्त्सना की। तब दोनों में युद्ध छिड़ने की स्थिति आ गयी। परंतु कृष्ण ने वह प्रसंग टाल दिया।

आगे चल कर, युद्ध की अठारहवें दिन, द्रोणपुत्र अश्वत्थामन् ने अपने पिता के वध का बदला लेने के लिये, कौरवसेना का सेनापत्य स्वीकार किया। उसी रात को, त्वेष एवं क्रोध के कारण पागलसा हो कर, वह पांडवों के शिविर में सर्वसंहार के हेतु सुसूया गया। सर्वप्रथम अपने पिता के खूनी धृष्टद्युम्न के निवास में वह गया। उस समय यह सो रहा था। अश्वत्थामन् ने इसे लत्ताप्रकार कर के जायत किया। फिर धृष्टद्युम्न शस्त्रप्रहार से मृत्यु स्वीकारने के लिये तयार हुआ। किंतु अश्वत्थामन् ने कहा, 'मेरे पिता को निःशस्त्र अवस्था में तुमने मारा है। इसलिये शस्त्र से मरने के लायक तुम नहीं हो'।

पश्चात् अश्वत्थामन् ने इसे लाथ एवं मुक्के से कुचल कर, इसका वध किया (म. सौ. ८.२६)। बाद में उसने पांडवकुल का ही पूरा संहार किया। केवल पांडव ही उसमें से बच गये (म. सौ. ८.१७-१४)। यह घटना पौष वध अमावस को हुई (भारतसावित्री)।

धृष्टद्युम्न के कुल पाँच पुत्र थे। उनके नामः—क्षत्रंजय, क्षत्रवर्मन्, क्षत्रधर्मन्, क्षत्रदेव, एवं धृष्टकेतु। ये सारे धृष्टद्युम्नपुत्र द्रोण के हाथों मारे गये (म. द्रो. १०१.

६२; १३०.१२), एवं दुपद के पांचाल राजकुल का निर्वेश हो गया (म. द्रो. १५६; धृष्टकेतु देखिये)।

धृष्टद्युद्धि—भद्रावती का वैश्य। वैशाख शुक्ल एकादशी का व्रत आचरने के कारण, यह मुक्त हुआ (पद्म. उ. ४९)।

धृष्टसुत—(सो. क्रोष्टु.) धृष्ट का नामांतर। वायुमत में यह कृति राजा का पुत्र था। धृष्ट राजा के लिये 'धृष्टसुत' यह पाठ गलत माध्यम पड़ता है। संभवतः धृष्ट नामक सुत की जगह धृष्ट का पुत्र ('धृष्टसुत') असावधानी से लिखा गया होगा (धृष्ट ४. देखिये)।

धृष्टि—दशरथ का प्रधान (वा. रा. अयो. ७)।

२. (सो. क्रोष्टु.) भागवत मत में कुंति राजा का पुत्र। इसका पुत्र विदूरथ था (धृष्ट ४. देखिये)।

धृष्णि—अंगिरस एवं पथ्या का पुत्र। इसका पुत्र सुधन्वा (ब्रह्मांड. ३. १)।

धृष्णु—एक कवि। यह वारुणि कवि के पुत्रों में से एक था। यह ब्रह्मज्ञानी एवं शुभलक्षणी था (म. अ. ८५. ११३)।

२. यादव राजा धृष्ट का नामांतर (धृष्ट ४. देखिये)।

३. वैवस्वत मनु का द्वितीय पुत्र (म. आ. ६९. १८; ह. वं. १. १०. १; २९)। 'धार्ष्टिक' नामक क्षत्रिय वंश इसीसे उत्पन्न हुआ।

धेना—बृहस्पति की पत्नी।

धेनुक—एक असुर। यह तालवन में निवास करता था, एवं गधे का रूप धारण कर रहता था। जो लोग वन में फल लेने आते थे, उन्हें यह मार डालता था। एक समय कई ग्वालवाल अपनी गायें चराते हुए तालवन के पास गधे। फलों की सुगंध के कारण, सत्रके मन में उन फलों को खाने की इच्छा हुई। फिर बलराम ने वहाँ के फल चुराये। इतने में वन का रक्षक धेनुक, गधे का रूप धारण कर बलराम पर झपटा। किंतु बलराम ने इसे पटक कर, इसका वध किया (भ. १०. १२)।

धेनुमती—(स्वा. प्रिय.) देवद्युम्न राजा की स्त्री। इसका पुत्र परमेष्ठिन् (भा. ५. १५. ३)।

धौतमूलक—चीन देश का राजा। इन्होंने अपनी मूर्खता के कारण, अपना एवं अपने कुल का नाश कर लिया (म. उ. ७२. १४)।

धौंधुमारि—धुंधुमार कुबलाश्व राजा के पुत्रों का पैतृक नाम।

धौम्य—देवल ऋषि का कनिष्ठ भ्राता, एवं पांडवों का पुरोहित। यह अपोद ऋषि का पुत्र था, एवं गंगानदी के तट पर, उत्कोचक तीर्थ में इसका आश्रम था (म. आ. १७४.६)। इसके पिता ने अन्नग्रहण वर्ज्य कर, केवल पानी पी कर ही सारा जीवन व्यतीत किया। उस कारण, उसे 'अपोद' नाम प्राप्त हुआ। अपोद ऋषि का पुत्र होने के कारण, धौम्य को 'आपोद' यह पौत्रक नाम प्राप्त हुआ (म. आ. ३.१९)। इसे 'अग्निवेद्य' भी कहते थे (म. आश्व. ६३.९)।

चित्ररथ गंधर्व की मन्व्यस्थता के कारण, धौम्य ऋषि पांडवों का पुरोहित बन गया। लक्ष्मणहृदाह से बच कर, अर्जुन अपने भाईयों के साथ द्रौपदी स्वयंवर के लिये जा रहा था। उस वक्त, मार्ग में उसे चित्ररथ गंधर्व मिला। उसने अर्जुन से कहा, 'पुरोहित के सिवा राजा ने कहीं भी नहीं जाना चाहिये। देवल मुनि का छोटा भाई धौम्य उत्कोचक तीर्थ पर तपश्चर्या कर रहा है। उसे तुम अपना पुरोहित बना लो'। फिर अर्जुन ने धौम्य से प्रार्थना कर, उसे अपना पुरोहित बना लिया। (म. आ. १७४. ६)।

पांडवों का पौरोहित्य स्वीकारने के बाद, धौम्य ऋषि पांडवों के परिवार में रहने लगा (म. स. २.७)। पांडवों के घर के सारे धर्मकृत्य भी, इसी के हाथों से होने लगे। पांडव एवं द्रौपदी का विवाह तय होने पर, उनका विवाहकार्य इसीने संपन्न किया। उस कार्य के लिये, इसने वेदी पर प्रज्वलित अग्नि की स्थापना कर के, उस में मंत्रों द्वारा आहुति दी, एवं युधिष्ठिर तथा द्रौपदी का गैठ-बंधन कर दिया। पश्चात् उन दोनों का पाणिग्रहण करा कर, उनसे अग्नि की परिक्रमा करवायी, एवं अन्य शास्त्रोक्त विधियों का अनुष्ठान करवाया। इसी प्रकार क्रमशः सभी पांडवों का विवाह इसने द्रौपदी के साथ कराया (म. आ. १९०.१०-१२)।

पांडवों के सारे पुत्रों के उपनयनादि संस्कार धौम्य ने ही कराये थे (म. आदि. २२०.८७)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में धौम्य 'होता' बना था (म. स. ३०.३५)। युधिष्ठिर को 'अर्धराज्याभिषेक' भी धौम्य ने ही किया था (म. स. ४९.१०)।

पांडवों के वनगमन के समय, महर्षि धौम्य हाथ में कुश ले कर, यमसाम एवं रुद्रसाम का गान करता हुआ, वनगमन के लिये उद्युक्त हुआ (म. स. ७१.७)। इसे उस अवस्था में देख कर, युधिष्ठिर को अत्यंत दुख हुआ।

वह बोला, 'आप वन में न आये। मैं भला वहाँ आप को क्या दे सकता हूँ?' फिर धौम्य ने युधिष्ठिर को सूर्योपासना के लिये प्रेरणा दी (म. व. ३.४-१२), एवं उसे सूर्य के 'अष्टोत्तरशत' नामों का वर्णन भी बताया (म. व. ३.१७-२९)। धौम्य ने युधिष्ठिर से कहा, 'हे राजन्, तुम धरराओ नहीं। तुम सूर्य का अनुष्ठान करो। सूर्य प्रसन्न हो कर, तुम्हारी चिन्ता दूर करेगा'।

धौम्य के कथनानुसार युधिष्ठिर ने सूर्य की स्तुति की। उससे प्रसन्न हो कर, सूर्यनारायण ने उसे 'अक्षयपात्र' प्रदान किया, एवं कहा, 'यह पात्र तुम द्रौपदी के पास दे दो। उससे वनवास में तुम्हें अन्न की कमी कभी भी महसूस नहीं होगी'। फिर धर्म ने वह पात्र द्रौपदी के पास दे दिया (म. व. ४; द्रौपदी देखिये)।

पांडवों के वनवासगमन के बाद, अर्जुन अस्त्रप्राप्ति के हेतु इन्द्रलोक चला गया। अर्जुन के जाने से युधिष्ठिर अत्यंत चिंताग्रस्त हो गया। फिर धौम्य ने उसे भिन्न-भिन्न तीर्थों, देशों, पर्वतों, एवं प्रदेशों के वर्णन बताये, एवं कहा, 'तुम तीर्थयात्रा करो'। उससे तुम्हारे अंतःकरण को शांति मिलेगी' (म. व. ८४-८८)।

वनवास में जयद्रथ राजा ने द्रौपदी का अपहरण करने का प्रयत्न किया। उस वक्त धौम्य ने जयद्रथ को फटकारा, एवं द्रौपदी की रक्षा करने का प्रयत्न किया (म. व. २५२. २५-२६)।

पांडवों के वनवास के बारह वर्ष के काल में, धौम्य ऋषि अखंड उनके साथ ही था। पांडवों के अग्निहोत्र-रक्षण की जिम्मेवारी धौम्य ऋषि पर थी। वह इसने अच्छी तरह से निभायी (म. व. ५. १३९)। वनवास समाप्त हो कर अज्ञातवास प्रारंभ होने पर, युधिष्ठिर ने बड़े ही दुख से धौम्य से कहा, 'अज्ञातवास के काल में हम आपके साथ न रह सकेंगे। इसलिये हमें विदा कीजिये'।

उस समय धौम्य ने युधिष्ठिर को अत्यंत मौल्यवान् उपदेश किया, एवं युधिष्ठिर की सांत्वना की। धौम्य ने कहा, 'भाग्यचक्र की उलटी तेड़ी गती से देव भी बच न सके, फिर पांडव तो मानव ही हैं'। अज्ञातवास काल में विराट के राजदरबार में किस तरह रहना चाहिये, इसका भी बहुमूल्य उपदेश धौम्य ने युधिष्ठिर को किया (म. वि. ४.६-४३)। फिर पांडवों के अग्निहोत्र का अग्नि को प्रज्वलित कर, धौम्य ने उनकी समृद्धि, वृद्धि, राज्यलभ तथा भूलोक-विजय के लिये, वेदमंत्र पढ़ कर

हवन किया। जब पांडव अज्ञातवास के लिये, चले गये, तब उनका अग्निहोत्र का अग्नि साथ लेकर, धौम्य पांचाल देश चला गया (म. वि. ४. ५४-५७)।

भारतीय युद्ध में, भीष्मनिर्याण के समय, धौम्य ऋषि युधिष्ठिर के साथ उसे मिलने गया था। युद्ध समाप्त होने पर, श्रीकृष्ण ने पांडवों से विदा ली। उस समय भी धौम्य उपस्थित था (भा. १. ९)। भारतीय युद्ध में मारे गये पांडवपक्ष के संबंधी जनों का द्राहकर्म धौम्य ने ही किया था (म. स्त्री. २६. २७)।

युधिष्ठिर राजगद्दी पर बैठने के पश्चात्, उसने धौम्य की धार्मिक कार्यों के लिये नियुक्ति की (म. शां. ४१. १४)। धृतराष्ट्र, गांधारी एवं कुंती वन में जाने के बाद, एक बार युधिष्ठिर युद्धसु के साथ उन्हें मिलने गया। उस वक्त हस्तिनापुर की व्यवस्था युधिष्ठिर ने धौम्य पर सौंपी थी (म. आश्र. ३०. १५)।

धौम्य ने धर्म का रहस्य युधिष्ठिर को बताया था (म. अनु. १९९)। धर्मरहस्य वर्णन करते समय, धौम्य कहता है, 'फूटे हुए बर्तन, टूटी खाटें, सुर्गियाँ, कुत्ते आदि को घर में रखना, एवं घर में वृक्ष लगाना अप्रशस्त है। फूटे बर्तनों में कलि वास करता है, टूटी खाट में दुर्दशा रहती है, तथा वृक्षों के आसपास जंतु रहते हैं। इसलिये उन सब से बचना चाहिये'। धौम्य ने 'धौम्यस्मृति' नामक एक ग्रंथ की रचना भी की थी (C. C.)।

२. एक ऋषि। व्यासपाद ऋषि के दो पुत्रों में से यह एक था। इसके ज्येष्ठ भाई का नाम उपमन्यु था (म. अनु. ४५. ९६. कुं.)। हस्तिनापुर के मार्ग में श्रीकृष्ण से इसकी भेट हुई थी (म. उ. ३८८)।

सत्यवान का पिता द्युमसेन अपने प्रिय पुत्र तथा स्तुषा को हँदते-हँदते, इस ऋषि के आश्रम में आया था। फिर इसने उसे भविष्य बताया, 'तुम्हारा पुत्र शीघ्र ही स्तुषा के साथ जीवित वापस आयेगा' (म. व. २८२. १९)।

४. एक मन्व्यमाश्वर्यु।

धौम्र—एक ऋषि। शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से यह मिलने गया था (म. शां. ४७. ६६* पंक्ति. ९)।

ध्यानकाष्ठ—भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि (धर्मसुत देखिये)।

धुषिताश्व—(सू. इ.) वायु मत में संख्य राजा का पुत्र। भागवत में इसे विधुति, एवं विष्णु में इसे व्युस्थिताश्व कहा गया है।

धुक—(शुंग. भविष्य.) वायु मत में वसुमित्र राजा का पुत्र। इसे अंतक, आद्रक, भद्र, एवं भद्रक नामांतर भी प्राप्त थे।

ध्रुव—(स्वा. उत्तान.) उत्तानपाद राजा एवं सुनीति का पुत्र, एवं एक प्रातःस्मरणीय राजा (म. अनु. १५०)। अपने दृढनिश्चय एवं लगन की कारण, पौत्र वर्ष की छोटी उम्र में, इसने ऋषियों को भी अप्राप्य 'श्रीविष्णुदर्शन' एवं नक्षत्रमंडल में ध्रुवपद प्राप्त किया। नक्षत्रमंडल में सप्तर्षियों के पात्र स्थित 'ध्रुव तारा' यही है (भा. ४. १२. ४२-४३)।

उत्तानपाद राजा का सुरचि एवं सुनीति नामक दो रानियाँ थीं। उनमें से सुरचि उसकी प्रिय रानी थी, एवं सुनीति (सुरता) से वह नफरत करता था। राजा के अप्रिय पत्नी का पुत्र होने के कारण, बालक ध्रुव को भी प्रतिदिन अपमान एवं मानहानि सहन करनी पड़ती थी।

एक बार उत्तानपाद राजा की गोद में, सुरचि का पुत्र उत्तम खेल रहा था। यह देख, ध्रुव को भी पिता की गोद में खेलने की इच्छा हुई। अतः यह अपने पिता के गोद पर चढ़ने लगा। किंतु राजा ने ध्रुव के तरफ देखा तक नहीं। ध्रुव की सौतेली माता सुरचि ने ध्रुव का हाथ पकड़ कर कहा 'ईश्वर की आराधना कर के तुम मेरे उदर से पुनः जन्म लो। तभी तुम राजा की गोद में खेल सकोगे'।

सौतेली माता का कठोर भाषण सुन कर, ध्रुव अत्यंत खिन्न हुआ। उस समय राजा भी चूचुचाप बैठ गया। फिर ध्रुव रोते रोते अपनी माता के पास गया। सुनीति ने इस गोद में उठा लिया। सौत का कठोर भाषण पुत्र के द्वारा सुन कर, उसे अत्यंत दुःख हुआ। अपने कर्म-नसीब को दोष देते-हुड़े, वह फूट फूट कर रोने लगी।

पश्चात् ईश्वराराधना का निश्चय कर, ध्रुव ने अपने पिता के नगर का त्याग किया। यह बात नारद को ज्ञात हुई। ध्रुव का ईप्सित ज्ञान लेने पर, उसने अपना वरदहस्त ध्रुव के सिर पर रखा। ध्रुव का स्वाभिमानी स्वभाव तथा क्षात्रतेज देख कर, नारद आश्चर्यचकित हो गया। उसने ध्रुव से कहा "तुम अभी छोटे हो। इतनी छोटी उम्र में तुम इतने स्वाभिमानी हो, यह बड़ी खुषी की बात है। किंतु मान-अपमान के संक्षयों में पड़ कर, मन में असंतोष का अग्नि सिलगाना ठीक नहीं है। क्यां कि, असंतोष का कारण मोह है, तथा मोह से दुःख ही दुःख पैदा होते हैं। भाग्य से जो भी मिले, उस पर संतोष-मानना चाहिये। ईश्वर के आराधना का तुम्हारा निश्चय

बड़ा ही कठिन है। उसमें बड़ोबड़ों ने हार खाई है। अतः यह मार्ग त्याग कर, तुम घर लौट जाओ।

नारद का भाषण सुन कर ध्रुव ने कहा, 'मैंने न्याय-निष्ठुर क्षत्रिय वंश में जन्म लिया है। मेरे स्वभाव में लज्जारी नहीं है। सुरुचि के अपशब्दों से मेरा हृदय भग्न हो गया है। अतः आपके उपदेश का परिणाम मेरे उपर होता असंभव है। त्रिभुवन में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त करने की आकांक्षा मेरे मन में जाग उठी है। वह स्थान मुझे कैसे प्राप्त होगा, यह आप मुझे बताइये। आप त्रैलोक्य में घूमते हैं। उस कारण मेरी समस्या का सुझाव, केवल आप ही कर सकते हैं।'

ध्रुव का यह भाषण सुन कर, नारद के अन्तःकरण में ध्रुव के प्रति अनुकंपा उत्पन्न हुई। उसने कहा, 'अपने माता की आज्ञानुसार तुम श्रीहरि की कृपा संपादन करो। उसके लिये यमुना के किनारे मधुवन में जा कर, तुम इन्द्रिय-दमन करो'। इतना कह कर नारद ने ध्रुव से 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' नामक द्वादशशक्ती गुणमंत्र प्रदान किया, एवं आशीर्वाद दे कर वह चला गया। स्कन्द तथा विष्णु पुराण में लिखा गया है कि, 'यह मंत्रोपदेश ध्रुव को सप्तविधियों द्वारा प्राप्त हुआ। बाद में उत्तानपाद राजा को अपने कृतकर्म का पश्चात्ताप हुआ, एवं वह ध्रुव को वापस लाने के लिये घर से निकला। किंतु उसे नारद ने कहा, 'तुम्हारा पुत्र शीघ्र ही महत्कार्य कर के वापस आनेवाला है। इसलिये उसे वापस बुलवाने की कोशिश, इस समय तुम मत करो।'

नारद के कथनानुसार, ध्रुव ने यमुना के पास यमुना के तट पर मधुवन में तपस्या प्रारंभ की, एवं 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' यह द्वादशशक्ती मंत्र का जाप प्रारंभ किया। तपस्या के समय ध्रुव की उम्र केवल पाँच साल की थी।

फलाहार, उदकपान, एवं वायुभक्षण क्रमशः कर के, एक पैर पर खड़ा हो कर, ध्रुव श्रीविष्णु की आराधना करने लगा। तपस्या के पहले दिन ध्रुव ने 'अनशन' किया। दूसरे दिन से यह विधिपूर्वक आराधना करने लगा।

तपस्या के पहले महीने में, तीन दिन में एक बार यह कैथ एवं बेर के फल खा कर गुजारा करता था। दूसरे महीने में, हर छठे दिन सूखे पत्ते एवं कुछ तिनखे खाने का क्रम इसने शुरू किया। तीसरे महीने में केवल पानी पर रहना इसने प्रारंभ किया। वह पानी भी यह हर नवें दिन पीता था। चौथे महीने में, इसने पानी

पीना भी छोड़ दिया, एवं केवल वायु पी कर, यह रहने लगा।

तपस्या के पाँचवें महीने में, प्राणवायु भी इसके वश में आ गया, एवं वायु पीना भी ध्रुव ने बंद किया। एक पाँव पर खड़ा हो कर, अहोरात्र यह श्रीविष्णु के ध्यान में मग्न होने लगा।

छः महीनों तक ऐसी कड़ी तपस्या करने के पश्चात्, तपस्या की सिद्धि ध्रुव को प्राप्त हुई। इसकी अंगूठे के भार से पृथ्वी दबने लगी, एवं इन्द्रादिकों के श्वांसों का अवरोध होने लगा। फिर सारे देव श्रीविष्णु की शरण में गये। विष्णु ने ध्रुव को तपश्चर्या से परावृत्त करने का आश्वासन देवजनों को दिया। उस आश्वासन से सारे देव संतुष्ट हुए, एवं अपने अपने स्थान पर वापस लौटे।

पश्चात् गरुड़ पर आरूढ़ हो कर, श्रीविष्णु मधुवन में ध्रुव के पास आये, एवं उन्होंने सगुण स्वरूप में इसे दर्शन दिया। जिसके ध्यान में छः महीनों तक ध्रुव मग्न था, उसे साक्षात् देख कर वह अवाक हो गया (भा. ४.८-९)। श्रीविष्णु का गुणवर्णन करने की बहुत सारी कोशिश ध्रुव ने की। किंतु वह करने में इसे असमर्थता प्रतीत हुई।

फिर श्रीविष्णु ने ध्रुव के कपोल को चंद्रस्वरूपी शंख से स्पर्श किया। पश्चात् उस शंख के कारण प्राप्त हुए वेदमय वाणी से, ध्रुव ने विष्णु का स्तवन किया। इससे प्रसन्न हो कर, विष्णु ने इसे इच्छित वर माँगने के लिये कहा। ध्रुव ने नक्षत्रमंडल में अचल स्थान प्राप्त करने का वर श्रीविष्णु से माँग लिया। विष्णु ने वह वर इसे दिया, एवं कहा, 'उत्तानपाद राजा तुम्हें राजगद्दी पर बैठा कर वन में जावेगा। तुम छत्तिस हजार वर्षों तक राज्य करने के बाद, नक्षत्रमंडल में अचल-स्थान प्राप्त करोगे। तुम्हारा सौतेला भाई उत्तम। मृगया के लिये वन में जावेगा, तब वहीं उसका नाश होगा। उत्तम की माता सुरुचि उसके मृत्यु के दुख के कारण, अरण्य में दावानल में प्रविष्ट होगी। तुम अनेक यज्ञ कर के सब को वंध तथा संसारमुक्त हो जाओगे'। बाद में ध्रुव ने श्रीविष्णु की पूजा की, तथा पश्चात् यह स्वनगर चला आया।

ध्रुव के आगमन की वार्ता उत्तानपाद को ज्ञात होते ही वह अत्यंत आनंदित हुआ। ध्रुव महत्कार्य कर के वापस आनेवाला है, यह नारद के भविष्यवाणी से उत्तानपाद पहले से जानता ही था। ध्रुव ने राजधानी में प्रवेश करते

ही, इसे झुंकारित हाथी पर बैठा कर, नगर में लाया गया। पिता ने इसके मस्तक का अवघ्राण किया। ध्रुव दोनों माताओं से मिला। मरुचि ने इसे 'चिरंजीव हो' ऐसा आशीर्वाद दिया। माता, पिता तथा बंधुओं के साथ ध्रुव सुख से कालक्रमण करने लगा। पश्चात् राजा ने इसे राज्याभिषेक किया, तथा स्वयं वन में चला गया।

एक बार ध्रुव का सौतेला भाई उत्तम, पर्वत पर मृगया के हेतु से गया। एक बलाढ्य यक्ष ने उसका वध किया। यह सुन कर ध्रुव ने अत्यंत क्रोधित हो कर, यक्षों के पारिपत्य के लिये विजयशाली रथ में बैठ कर, यक्षनगरी अलका पर आक्रमण किया। वहाँ पमासान युद्ध हुआ। यक्ष ने मायाजाल फैला कर, ध्रुव को निर्बल बना दिया। फिर ऋषियों ने ध्रुव को आशीर्वाद दिया, 'तुम्हारे शत्रु का निःपात होगा'। बाद में 'नारायणास्त्र' के योग से, ध्रुव ने यक्षों का मायापटल दूर कर के, यक्षों को पराजित किया।

इस प्रकार ध्रुव गुह्यक नामक यक्षों का नाश कर रहा था। तब स्वयंभुव मनु को यक्षों पर दया आई। अपने नाती ध्रुव को उसने युद्ध से तथा युद्ध के हनन से परावृत्त किया। इतना ही नहीं, यक्षवध के कारण क्रोधित हुए कुबेर को प्रसन्न करने के लिये, मनु ने इसे कहा। फिर ध्रुव ने युद्ध बंद किया, एवं पितामह के कथनानुसार कुबेर का स्नेहभाव संपादित किया। कुबेर ध्रुव पर प्रसन्न हुआ एवं उसने इसे वर माँगने के लिये कहा। तब ध्रुव ने वर माँगा, 'मैं श्रीहरि का अखंड स्मरण करता रहूँ'।

छत्तिस हजार वर्षों तक राज्य करने के बाद, अपने वत्सर नामक पुत्र को गद्दी पर बैठा कर, ध्रुव वदरिकाश्रम में गया। इसे स्वर्ग में ले जाने के लिये एक विमान आया। उसमें बैठने के लिये यह जैसे ही तैयार हुआ, वैसे ही मृत्यु ने आ कर इससे कहा, 'स्वर्ग में जाने से पहले तुम्हें देहत्याग करना पड़ेगा'। परंतु यह मान्य न कर, मृत्यु के सिर पर पाँव रख कर, ध्रुव विमान में बैठ गया। स्वर्ग जाते समय, इसे अपने सुनीति माता का स्मरण हुआ, तथा उसे भी अपने साथ स्वर्ग ले जाने की इच्छा हुई। इतने में इसने देखा कि, सुनीति इसके पहले ही स्वर्ग जा पहुँची है।

अन्त में इसे सप्तर्षियों के समीप अचल ध्रुवपद प्राप्त हुआ। वह तारा 'ध्रुव' नाम से प्रसिद्ध है (भा. ४.८-१२; विष्णु. १.११-१२; मत्स्य. ४.३५-३८; लिंग. १. ६२; स्कन्द. ४.१.१९-२१; ह. वं. १.२.९-१३)।

अपने पूर्वजन्म में ध्रुव एक ब्राह्मणपुत्र था। इसने मातापिता की योग्य श्रुषा तथा धर्मपालन किया। पश्चात् एक राजपुत्र से इसकी मित्रता हुई। उसका वैभव देख कर इसे भी राजपुत्र बनने की इच्छा हुई। अपने पूर्वसंचित पुण्य के कारण, अगले जन्म में, यह उत्तानपाद राजा का पुत्र बना। (विष्णु. १.१२.८४-९०)।

ध्रुव ने पक्षवर्धिनी एकादशी का व्रत किया था (पद्म. उ. ३६)।

ध्रुवपरिवार—ध्रुव के कुल चार पत्नीयों का निर्देश प्राचीन ग्रंथों में प्राप्त है। उनके नाम इसप्रकार हैं:—

(१) भ्रमि—यह शिशुमार प्रजापति की कन्या थी। इससे ध्रुव को कल्प एवं वत्सर नामक दो पुत्र हुए। उनमें से वत्सर ध्रुव के पश्चात् राजगद्दी पर बैठा।

(२) इला—यह वायु ऋषि की कन्या थी। इससे ध्रुव को उत्कल (विरक्त) नामक एक पुत्र हुआ।

(३) शंसु—इससे ध्रुव को शिष्टि एवं भव्य नामक दो पुत्र हुए (विष्णु. १.१३.१; ह. वं. १.२-१४)।

(४) धन्या—यह मनु की कन्या थी। इससे ध्रुव को शिष्टि नामक एक पुत्र हुआ (मत्स्य. ४.३८)।

२. (सो. पुरूरवस्.) नहुष का पुत्र, एवं ययाति का भाई (म. आ. ७०.२८)। इसके नाम के लिये 'उद्व' पाठभेद उपलब्ध है।

३. पांडवपक्षीय एक राजा। भारतीय युद्ध में पांडवों का ही विजय होगा, यह कर्ण को बताते समय, कृपाचार्य ने जिन पांडवपक्षीय राजाओं के नाम बताये, उनमें से यह एक था।

४. एक राजा। यमसभा में बैठ कर, यह स्वर्गपुत्र यम की उपासना करता था (म. स. ८.१०)। इसके नाम के लिये 'भव' पाठभेद भी उपलब्ध है।

५. कौरवपक्ष का एक योद्धा। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १.३०.२३)।

६. सुख देवों में से एक।

७. विकुंठ देवों में से एक।

८. लेख देवों में से एक।

९. धर्म एवं वसु का पुत्र।

१०. धर्म को धूम्रा के गर्भ से उत्पन्न द्वितीय वसु (म. आ. ६०.१८)।

११. मधुवन के शाकुनि ऋषि के नौ पुत्रों में से उ्येष्ठ।

ध्रुव आंगिरस—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१७३)। इसके सूक्तों में राष्ट्र तथा राजा के संबंध में प्रजातंत्रात्मक विचार दिखाई देते हैं।

ध्रुवक—स्कन्द का एक सैनिक (म. श. ४४.६०)।

ध्रुवक्षिति—लेख देवों में से एक।

ध्रुवरत्ना—स्कन्द की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४१.४)।

ध्रुवसंधि—(स. इ.) कोशल देश के पुष्य राजा का पुत्र। इसे 'पौष्य' भी कहते थे। इसे लीलावती तथा मनोरमा नामक दो स्त्रियाँ थीं। एक बार यह ससैन्य मृगया के हेतु वन में गया। वहाँ इसकी एक क्रूर सिंह से मुठभेड़ हुई। उस में यह मारा गया। इसे लीलावती से शत्रुजित, तथा मनोरमा से सुदर्शन नामक पुत्र हुए थे (दे. भा. ३. १४)। भविष्य में इसके नाम का 'ध्रुवसेधि' पाठ प्राप्त है।

ध्रुवसंधि, सुसंधि एवं शंखण, ये इक्ष्वाकु वंश के राजा, दाशरथि राम के पूर्वकाल में हुए थे, ऐसा रामायण का कहना है। किंतु पुराणों में उन्हें दाशरथि राम के वंशज बताया गया है (पार्शि. ९३)।

ध्रुवसेधि—ध्रुवसंधि देखिये।

ध्रुवाश्व—(स. इ.) भानुमान राजा का नामांतर।

२. (स. इ. भविष्य.) मत्स्यमत में सहदेव का पुत्र। इसका बृहदश्व नामांतर भी प्राप्त है।

ध्वज—प्रधान राजा का नाम (सां. ३. देखिये)।

ध्वजकेतु—दुपद का पुत्र (म. आ. २१८.१९)।

ध्वजवती—सूर्यदेव की आज्ञा से आकाश में उठरने-वाली हरिमेधा ऋषि की कन्या (म. उ. १०८.१३)।

ध्वजसेन—दुपद का पुत्र (म. आ. परि. १०३. पंक्ति. १०९)।

ध्वजग्रीव—रावण के पक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

ध्वजवती—हरिमेधा ऋषि की कन्या (म. उ. १०८. १३)।

ध्वनि—सुधामन् देवों में से एक।

ध्वन्य—एक राजा। यह लक्ष्मण का पुत्र था। प्रजापति पुत्र संवरण ऋषि ने, दान देने के कारण राजा की प्रशंसा की है (ऋ. ५.३३.१०)। त्रसदस्यु एवं मास्ताश्व ऋषि ध्वन्य के आश्रय में थे।

ध्वसन द्वैतवन—मत्स्य देश का एक राजा। सरस्वती नदी के तट पर इसने अश्वमेध यज्ञ किया (वा. ब्रा. १३. ५.४.९)।

ध्वसन्ति—ऋग्वेदकालीन एक राजा। इंद्र के शत्रु पुरुषंति के साथ इसका उल्लेख प्राप्त है। यह दोनों कश्यप कुल के अवत्सार ऋषि के आश्रयदाता थे। अवत्सार ऋषि ने उल्लेख किया है कि, इन दोनों राजाओं से उसे धन मिला था (ऋ. ९.५८.३)। अश्विनो द्वारा इसे सहायता दी गयी थी (ऋ. १.११२.२३)। ध्वस्त्र तथा ध्वसंति एक ही होने की संभावना है। पुरुषंति के साथ भी ध्वस्त्र का उल्लेख प्राप्त है (ऋ. ९.५८.३; साम. २. ४०९)।

ध्वस्त्रे यह स्त्रीलिंग द्विवचन भी प्राप्त है (पं. ब्रा. १३.७.१२), किंतु वे किसी स्त्रियों के नाम होंगे या नहीं, यह कहना सुश्रुत है (ध्वस्त्र देखिये)।

ध्वस्त्र—ऋग्वेदकालीन एक राजा। ध्वस्त्र एवं पुरुषन्ति राजाओं से विपुल संपत्ति प्राप्त करने का उल्लेख, अवत्सार काश्यप ने किया है (ऋ. ९.५८.३-४)। इसने तरंत तथा पुरुमिहू को दान दिया था (पं. ब्रा. १३.७.१२; जै. ब्रा. ३.१३९)। सायण ने शाठ्यायन ब्राह्मण से उद्धरण ले कर इसका उल्लेख किया है (ऋ. ९.५८.३)। इसका उल्लेख द्विवचन की तरह भी कभी कभी किया जाता है। सायण के मत में वह आर्ष स्त्रीलिंग है। ध्वस्त्र एवं ध्वसंति एक ही व्यक्ति रहे होंगे।

न

नकवत्—(सो. क्रोष्ट्र.) वायुमत में हृदीक का पुत्र ।

नकुल—(सो. कुरु.) हस्तिनापुर के पांडु राजा के पुत्रों में से एक, एवं पाँच पांडवों में से चौथा पांडव । अश्विनी कुमारों के द्वारा पांडुपत्नी माद्री के गर्भ से नकुल एवं सहदेव ये जुड़वें पुत्र उत्पन्न हुए । उनमें से नकुल ज्येष्ठ था ।

नकुल एवं सहदेव, ये दोनों अनूपम रूपशाली एवं परम मनोहर थे (म. आ. १.१४४) । नकुल स्वयं अश्व-विद्यानिपुण भी था । कुस्कूल में नकुल जैसा रूपशाली और कोई नहीं था, इस कारण इसे 'नकुल' नाम प्राप्त हुआ था (म. वि. ५.१६७*) ।

युधिष्ठिर, अर्जुन, एवं भीमसेन इन पांडवों के हर विचार एवं कृति में सहाय करनेवाले, मितभाषी एवं आज्ञापालक बंधुओं के रूप में, नकुल एवं सहदेव का चरित्रचित्रण 'महाभारत' में किया गया है । ये दोनों बंधु पराक्रमी हैं । किंतु उस पराक्रम को स्वतंत्र अस्तित्व न हो कर, वह अन्य पांडवों के पराक्रम में विलीन सा हुआ है । ये दोनों बंधु परम मातृभक्त हैं । किंतु उस मातृभक्ति का सारा छुकाव इनकी सापत्न माता कुंती की ओर है, एवं इनके बदले कुंती के ही चरित्र को, वह अधिक उठाव देता है । अपनी पत्नी द्रौपदी पर इन दोनों बंधुओं का काफी प्रेम है । किंतु द्रौपदी की इनके प्रति भावना मातृवत् वात्सल्य की थी । इस कारण, अन्य पांडवों की तुलना में ये दोनों बंधु फीके से प्रतीत होते हैं ।

नकुल का जन्म शतशृंग नामक हिमालय के एक शिखर पर हुआ (म. आ. १.१५) । शतशृंगनिवासी ऋषियों ने इसका नामकरणविधि किया (म. आ. १.१५. १९) । कृष्णपिता वसुदेव ने काश्यप ऋषि द्वारा, अन्य पांडवों के साथ नकुल का भी उपनयन करवाया । शुक्राचार्य द्वारा इसने अस्त्रविद्या एवं ढालतरवार चलाने की कला में निपुणता प्राप्त की (म. आ. १.२३.३१) ।

पांडु की मृत्यु के पश्चात्, नकुल की माता माद्री ने इसे एवं सहदेव को कुंती के हाथों सौंप दिया । वह स्वयं पति के साथ चिता पर आरूढ़ हो गयी (म. आ. १.२४) । अन्य पांडवों की अपेक्षा, कुंती की नकुल सहदेव से विशेष प्रीति थी । पांडवों के वनवासगमन के

समय, कुंती ने द्रौपदी से नकुल एवं सहदेव की विशेष देखभाल करने को कहा था ।

पांडवों के उपनयन के बाद, शतशृंगनिवासी ऋषि उन्हें हस्तिनापूर ले आये, एवं उन्हें भीष्माचार्य के हाथों में सौंप दिया गया (म. आ. १.१७.२९) । अन्य पांडवों के साथ, नकुल को भी द्रोणाचार्य ने नानाप्रकार के दिव्य एवं मानव अस्त्रों की शिक्षा प्रदान की (म. आ. १.२२.२९) । विचित्र प्रकार से युद्ध करने में, नकुल विशेष प्रवीण हो गया । इस कारण, इसे 'अतिरथी' उपाधि प्राप्त हुई (म. आ. १.३८.३०), एवं द्रुपद के साथ किये गये युद्ध में, इसे सहदेव के साथ पांडवपक्ष का 'चक्रवर्त्तक' बना दिया गया (म. आ. १.३७.२७) । नकुल के शत्रु का नाम 'सुवोष' था (म. भी. २.३.१६) ।

अन्य पांडवों के साथ, औष्य ऋषि ने नकुल का भी विवाह द्रौपदी से ल्या दिया (म. आ. १.९०.१०-१२) । द्रौपदी से नकुल को शतानीक नामक पुत्र हुआ (म. आ. २.२०. ७९) । द्रौपदी के सिद्धा, शिशुपाल की कन्या एवं धृष्टकेतु की बहन रेणुमती अथवा करेणुमती नकुल को विवाह में दी गयी थी (म. आ. ९.०.८६) । उससे इसे निरमित नामक पुत्र हुआ था (भा. ९.२२) ।

युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ के समय, नकुल दिग्विजय करने, पश्चिम दिशा में गया था । अपने 'पश्चिम दिग्विजय' में, इसने वहाँ के राजाओं को जीत कर अगणित करभार लाया । इसने जीत कर लाये हुए खजाने का श्रेष्ठ दस हजार ऊँट, बड़ी कठिनाई में लो कर ला सके थे (म. स. २.९.१७-१८) ।

अपने पश्चिम दिग्विजय के लिये, खांडवप्रस्थ से बाहर निकलने पर, नकुल सर्वप्रथम कात्तिकेय को प्रिय रोहीतक पर्वत पर गया । वहाँ इसने मत्स्ययूद्धों से युद्ध किया । मत्स्ययूद्धों को जीत कर, इसने मरुभूमि, बहुधान्यक, शैरीप्रक तथा महेश्व आदि देशों को जीत लिया । आक्रोश नामक राजर्षि का पराजय किया । बाद में इशार्ण, शिबि, धिगर्त, अंबष्ठ, मालव, कर्पट, मध्यमकेय, वाटधान तथा द्विज देशों को जीत कर यह वापस आया ।

दिग्विजय के दूसरे भाग में, इसने पुष्करवन के लोग, उत्सवसंकेतगण, सिंधु तीर के ग्रामणीय, सरस्वती तीर के मत्स्याहारी शूद्र, एवं आभीर, पंचनद, अमर पर्वत,

उत्तर ज्योतिष, दिव्यकटपूर, द्वारपाल, रामदू, हारहूण, मुराष्ट्र, मद्र आदि देशों के राजाओं को अपनी सत्ता मोन्य करने के लिये, इसने विवश किया एवं उनसे करभार लिया।

अपने इस 'दिग्विजय' में, इसने पांडवों के पितृतुल्य मित्र भगवान् श्रीकृष्ण एवं अपने मातुल मद्रराज शल्य को भी नहीं छोड़ा।

बाद में समुद्र के किनारे रहनेवाले पल्लव, वर्षक, किरात, यवन तथा शक लोगों से इसने करभार लिया, एवं हजारों उँटों पर वह लूट कर यह इन्द्रप्रस्थ वापस आया (म. स. २९; भा. १०.७२)।

युधिष्ठिर एवं दुर्योधन में हुए वृत्तसमारोह में, युधिष्ठिर ने इसे जूए के बीच पर रखा, एवं वह इसे हार बैठा (म. स. ५८.११)। फिर अन्य पांडवों के साथ, अपने शरीर पर धूल लपेट कर, यह भी वनवास के लिये चला गया। वनवास में इसने क्षेमकर, महामुख एवं सुरथ नामक राक्षसों का वध किया (म. व. २७१.१६-२२)। किंतु द्वैतवन के 'यक्षप्रश्न' के प्रसंग में, यह अर्जुन, भीम आदि के साथ चूरी तरह से हारा गया एवं सरोवर पर गिर पड़ा। पश्चात् युधिष्ठिर ने अपने सारे वंशुओं की मुक्तता की (म. व. ३१२.१३)।

अज्ञातवासकाल में यह विराट दरबार में, ग्रंथिक अथवा दामग्रंथिक नाम धारण कर के रहा था। इसका गुप्त नाम जयत्सेन था। यह पहले से ही अश्वविद्या में कुशल था। उस विद्या का उपयोग इसे विराट के दरबार में हुआ। अश्वों के रोग सुधारना, उनकी बुरी आदतें निकालना, एवं उन्हें शिक्षा देना आदि कामों में यह प्रवीण था। इस कारण, विराट ने अपनी अश्वशाला नकुल के हाथों सौंप दी थी (म. वि. १२.८)।

'कृष्णदौत्य' के समय, नकुल ने श्रीकृष्ण से सम-योचित वर्तन कर युद्ध टालने की प्रार्थना की थी। नकुल ने कहा, 'कौरवों से संधि कर, युद्ध रुका देने की संभावना अभी तक बाकी है। इसलिये कौरवों से युद्ध का प्रयत्न आखिर तक करना जरूरी है।' (म. उ. ७८)।

भारतीय युद्ध में, नकुल ने कौरव पक्ष के निम्नलिखित योद्धाओं से युद्ध कर, पराक्रम दिखाया था :- (१) दुःशासन (म. भी. ४३.२०-२२); (२) गांधारराज शकुनि (म. भी. १०१.३०-३१); (३) धृतराष्ट्रपुत्र विकर्ण (म. भी. १०६.११); (४) बाल्हीकराज शल्य (म. द्रो. १४.३०-३२); (५) दुर्योधन (म. द्रो. १६३.५१

-५२)। इनमें से दुर्योधन के साथ हुए युद्ध में, इसने दुर्योधन पर सैंकड़ों बाण छोड़ कर, उसे बहुत ही जर्जर किया था। कर्ण के चित्रसेन, सत्यसेन, एवं सुषेण आदि तीन पुत्रों का नकुल ने वध किया (म. श. ९.१७-४९)।

कर्ण के साथ हुए युद्ध में, नकुल बुरी तरह से हारा गया था। उस युद्ध में, कर्ण नकुल को मारनेवाला ही था। किंतु अपनी माता कुंती को दिये वचन के अनुसार, कर्ण ने इसे जीवितदान दिया, एवं रण से पलायन करते हुए नकुल को जीवित छोड़ दिया (म. क. १७.९५)।

युधिष्ठिर हस्तिनापुर का राजा होने के पश्चात्, उसने नकुल को सेनाध्यक्ष पद पर नियुक्त किया (म. शां. ४१.११)। इसे धृतराष्ट्रपुत्र दुर्मर्षण का सुंदर महल रहने के लिये दिया (म. शां. ४४.१०-११)। युधिष्ठिर के अश्वमेधयज्ञ के समय, नकुल एवं भीम पर हस्तिनापुर की रक्षा का काम सौंपा गया था (म. आश्व. ७१.२५)। उस यज्ञ के पहले, नकुल 'दक्षिणदिग्विजय' के लिये गया था। उस दिग्विजय में, इसने साभ्रमती नदी के किनारे देवी 'पांडुरार्या' नामक, तीर्थ की स्थापना की (पद्म. उ. १६१)।

महाप्रस्थान के समय; पांडव पृथ्वीप्रदक्षिणा करने निकले। हिमालय पर्वत पार कर, उत्तर की ओर जाते समय, उन्हें बालुकामय सागर दिखा। उस सागर में से, वे द्रुतगती से जा रहे थे। राह में सर्वप्रथम द्रौपदी की, एवं तत्पश्चात् नकुल की मृत्यु हुई।

नकुल के इस अकाली मृत्यु का कारण भीम ने युधिष्ठिर से पूछा। युधिष्ठिर ने कहा, 'अपने देहसौंदर्य का नकुल को बड़ा ही गुरू था। उस कारण, इसकी मार्ग में ही मृत्यु हो गयी है (म. महा. २.१२.१६)। मृत्यु के समय, इसकी आयु १०५ वर्षों की थी (युधिष्ठिर देखिये)।

स्वर्ग जाने पर, युधिष्ठिर ने नकुल को देखने की इच्छा प्रगट की (म. स्व. २.१०)। फिर नकुल एवं सहदेव तेजस्वी रूप में अश्विनीकुमारों के स्थान पर विराजमान होते हुए युधिष्ठिर को दिस पड़े (म. स्व. ४. ९)।

नकुल के नाम पर 'वैद्यकसर्वस्व' नामक एक ग्रंथ उपलब्ध है (ब्रह्मवै. २.१६)।

२. युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ को तुच्छ बतानेवाला एक नेवला (म. आश्व. ९२)।

नकुलीश—पाशुपत दर्शनकार। इसका कारावन से संबंध आया था (लक्षुलिन् देखिये)।

नक्त—(स्वा. प्रिय.) पृथुपेण राजा का पुत्र। इसकी माता का नाम आकुति। द्रुति नामक पत्नी से इसे गय नामक पुत्र हुआ था (भा. ५. १५. ६)।

नखचत्—(भविष्य.) वायु के मतानुसार मथुरा में राज्य करनेवाला एक राजा।

२. (भविष्य.) ब्रह्मांड के मतानुसार वैदेश का एक नागवंशीय राजा।

नग—रात्रुघ्न का सेनापति।

नगरिन् जानश्रुतेय—उदित होमवादी एक आचार्य (ऐ. ब्रा. ५. ३०)। इसका पूरा नाम नगरिन् जानश्रुतेय काण्डिभ्य था (जै. उ. ब्रा. ३. ४०. २)। सायण ने नगरिन् का अर्थ 'नगर में रहनेवाला' यों किया है। इसका ऐकदिशाक्ष मानुतंतव्य के साथ निर्देश कई जगह प्राप्त है।

नग्रहू—नग्रह देखिये।

नग्रक—एक निपाद शातिसमुदाय। अमृत लाने गये गरुड़ ने, क्षुधाशमनार्थ पृथ्वी पर के कई निपाद खा लिये। पश्चात् गले में जलन होने के कारण, साये हुए सारे निपाद उसने बाहर उगले (गरुड़ देखिये)।

गरुड़ ने उगले हुए वे निपाद म्लेच्छ बन गये। उनमें से आग्नेय दिशा की ओर जो निपाद गिरे, उन्हें 'नग्रक' नाम प्राप्त हुआ (पञ्च. सू. ४७)।

नग्रजित्—गांधार देश का एक क्षत्रिय राजा, एवं कृष्ण की पत्नी सत्या का पिता। यह 'इपुपाद' नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. भा. ६१.२१; पापजित् पाठ)। कर्ण के दिग्विजय में, उसने इसका पराभव किया था (म. व. परि. १.२४.७०)।

भगवान् श्रीकृष्ण ने नग्रजित् के समस्त पुत्रों को पराजित किया था (म. उ. ४७. ६९)। भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में था।

भांडारकर संहिता में इसके नाम के लिये 'पापजित्' पाठभेद उपलब्ध है।

२. एक वास्तुशास्त्रज्ञ। इसने वास्तुशास्त्र पर एक ग्रंथ लिखा था (मत्स्य. २५२)।

३. प्रल्हाद का शिष्य, एक दैत्य। पृथ्वी पर, राजा 'सुबल' नाम से इसने अवतार लिया था।

नग्रजित् गांधार—गांधार देश का एक यज्ञवेत्ता राजा। पर्वत एवं नारद ने इसकी राजगद्दी पर प्रतिष्ठापना की थी (ऐ. ब्रा. ७. ३४)। 'शतपथ ब्राह्मण' में अपने स्वर्जित नामक पुत्र के साथ इसका उल्लेख प्राप्त है (श. ब्रा. ८. १. ४. १०)। उस ग्रंथ में, संस्कार विषयक इस राजा के किसी वक्तव्य का व्यंग्योक्तिपूर्ण दृष्टि से निर्देश किया गया है।

'नग्रजित् गांधार,' यह एक ही व्यक्ति मान कर 'शतपथ ब्राह्मण' एवं 'ऐतरेय ब्राह्मण' में इसका निर्देश किया गया है। फिर भी सायणाचार्य 'नग्रजित्' एवं 'गांधार' को दो अलग व्यक्तियों मानते हैं। 'शतपथ ब्राह्मण' के जिस परिच्छेद में इसका निर्देश आया है, वहाँ अनेक राजाओं के ही नाम इकट्ठे दिये गये हैं। उनमें से प्रत्येक व्यक्ति अलग मान कर अर्थ किया जाये, तो वह यथार्थ नहीं होगा।

नग्रहू—नग्रहू देखिये।

नग्रहू—एक ऋषिक (वायु. ५९.९२-९४)। इसके 'नग्रहू' एवं 'नग्रहू' नामांतर भी प्राप्त हैं (मत्स्य. १४५.९५-९९; ब्रह्मांड. १.३२.१०१-१०३)।

नचक्षु—(सो.) भविष्यमत में मपपाल का शिष्य।

नचिकेतस्—ऋग्वेदकालीन सुविख्यात ऋषिकुमार। यह वाजश्रवस् का पुत्र एवं एक 'गोतम' था (तै. ब्रा. ३.११.८)। कटोपनिषद में इसे वाजश्रवस् के साथ उद्दालक का पुत्र भी कहा गया है (क. उ. १.१; १. ११)। उद्दालक के पुत्र होने के कारण, एवं 'आरुणि उद्दालकि' दोनों एक ही थे, ऐसा निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. अनु. ७१)। किंतु यह मत सर्वथा असंभव, एवं प्रसिद्ध आरुणि से नचिकेतस् का संबंध लगाने के उद्देश्य से प्रस्तुत किया गया प्रतीत होता है।

ऋग्वेद के सुविख्यात 'यमसूक्त' में, 'कुमार' नाम से संशोधित किया गया ऋषिकुमार नचिकेतस् ही है ऐसा सायणाचार्य का कहना है (ऋ. १०.१३५)। वाजश्रवस् का पुत्र नचिकेतस् अपने पिता की आज्ञा के अनुसार यम के पास गया, एवं यम को प्रसन्न कर वापस आया। यह कथा नचिकेतस् के नाम का स्पष्ट निर्देश न करते हुए, उस सूक्त में दी गयी है।

नचिकेतस् का यह आख्यान विस्तृत रूप से तैत्तिरीय ब्राह्मण में दिया गया है। नचिकेतस् का पिता उद्दालक 'विश्वजित्' नामक यज्ञ कर रहा था। नचिकेतस् उग्र से छोटा हो कर भी, बड़ा ही परिणतपन्न एवं श्रद्धावंत था।

अपने पिता का यज्ञ यथासांग संपन्न होने में, यह हर तरह की सहायता करता था।

‘विश्वजित्’ यज्ञ में, याज्ञक को सर्वस्व का दान करना पड़ता है। नचिकेत ने सोचा, ‘यदि सर्वस्व दान करना है, तो मेरे पिता को मेरा दान भी कर देना चाहिये उसके सर्वस्व में मेरा प्रमुख रूप से अंतर्भाव होता है’। अपनी इस शंका का समाधान पूछने के लिये यह पिता के पास गया। इसका पिता अनेक प्रकार के दान दे रहा था। किंतु अच्छी भायों के बदले दूध न देनेवाली दुबली गायें वह दान में दे रहा था। इस पापकर्म के कारण, यज्ञ यथासांग न हो कर पिता को दोष लगेगा एवं उसका प्रायश्चित्त पिता के साथ मुझे भी भुगतना पड़ेगा, इस चिंता से नचिकेतस् शोकाकुल हो गया। अपने पिता को ऐसे गिरे हुए दान से परावृत्त करने की दृष्टि से नचिकेतस् ने पूछा, ‘कस्मै मां दास्यसि? मुझे किसको दोग?’ इसे बालक समझ कर पिता ने इसका प्रश्न कोई भी जवाब नहीं दिया। फिर भी नचिकेतस् ने उसका पीछा नहीं छोड़ा। तब उद्दालक ने डाँट कर इसे कहा, मैं तुम्हें मृत्यु को दे देना चाहता हूँ।

उसी समय आकाशवाणी हुई, “हे गौतमकुमार नचिकेतस्, तुम्हारे पिता का उद्देश्य है कि, तुम यमग्रह जाओ। यम घर में न हो एवं प्रवास के लिये गया हो, उसी दिन तुम यमग्रह में जाना। यम घर में न होने के कारण, उसकी पत्नी एवं पुत्र तुम्हें भोजन के लिये प्रार्थना करेंगे। किंतु उस भोजन का तुम स्वीकार नहीं करना। वापस आने पर यम तुम्हारी पूछताछ करेंगे। फिर उसे कहना, ‘तीन रात्रि हो गई हैं’। फिर यम तुम्हें पूछेगा, ‘पहले दिन क्या खाया?’ फिर तुम उसे जवाब देना, ‘तुम्हारी प्रजा खाई’। इससे यम को पता चलेगा कि, अतिथि यदि एक दिन अपने घर में भूखा रहा, तो प्रजा का क्षय होता है। दूसरे तथा तीसरे दिन के बारे में भी ऐसा ही प्रश्न पूछे जाने पर जवाब देना, ‘दूसरे दिन तुम्हारे पशु, एवं तीसरे दिन तुम्हारा सुकृत खाया’। इससे यम को पता चलेगा कि, अतिथि दूसरे तथा तीसरे दिन भूखा रहने पर घरसंसार के एवं पशु सुकृत की भी हानि होती है।”

आकाशवाणी के कथनानुसार नचिकेतस् यमग्रह गया। यम के घर पहुँचने पर इसने यम के प्रश्नों को ‘आकाशवाणी’ ने कहे सुताविक जवाब दिये। फिर यम ने सोचा, ‘यह कोई बड़ा अधिकारी’ बालक मारुत होता

है। इसे मारना ठीक नहीं है। फिर यम ने आइर से नचिकेतस् से कहा, ‘भगवन्, मैं प्रसन्न हो गया हूँ। आप जो चाहे वह वर माँग लो।’

नचिकेतस् ने यम से निम्नलिखित तीन वर माँग लिये, १. जीवित वापस जा कर मैं अपने पिता से मिलूँ; २. मेरे द्वारा श्रौतस्मार्त कर्म अधय रहें; ३. मैं मृत्यु पर विजय प्राप्त कर सकूँ। इस तरह, ‘ब्रह्मविद्या’ एवं ‘योगविधि’ प्राप्त कर के नचिकेतस् घर वापस आया (तै. ब्रा. ३. ११. ८; क. उ. ६. १८)।

‘कटोपनिषद्’ में दिये गये ‘नचिकेतस् आख्यान’ में नचिकेतस् की यही कथा कुछ अल्पा ढंग से दी गयी है। नचिकेतस् के पिता ने क्रोधवश, इसे यम के यहाँ जाने के लिये कहा। अपने पिता की आज्ञा प्रमाण मान कर, नचिकेतस् यम के पास गया, एवं अपने प्रगाढ़ एवं वक्तृत्वपूर्ण भाषण के कारण, इसने यमधर्म को प्रसन्न किया। यम ने इसे तीन वर दिये। उनमें से द्वितीय वर के कारण, अग्नि का ज्ञान एवं उसके चयन की सिद्धि नचिकेतस् को प्राप्त हो गयी। यम ने इसे वर दिया था, ‘तुम्हारे द्वारा चयन किया गया अग्नि, तुम्हारे ही नाम से प्रसिद्ध होगा’ (एतन्मग्निं तवैव प्रवक्ष्यन्ति जनासः) (क. उ. १. १९)। इस वर के अनुसार, अग्नि के चयन की इसकी पद्धति ‘नचिकेतचयन’ नाम से प्रसिद्ध हो गयी।

‘तैत्तिरीय ब्राह्मण’ के ‘नचिकेताख्यान’ में दिया गया, आकाशवाणीद्वारा इसे हुए मार्गदर्शन का कथाभाग ‘कटोपनिषद्’ में नहीं दिया गया है।

‘नाचिकेत आख्यान’ का यही कथाभाग ‘बराह-पुराण’ एवं ‘महाभारत’ में कुछ फर्क के साथ दिया गया है (बराह. १७०-१७६; म. अनु. ७१)। एक बार नाचिकेत का पिता उद्दालकि नदी पर स्नान करने के लिये गया। स्नान तथा वेदाध्ययन में मग्न होने के कारण, नदी तट से समिधा, दर्भ, कलश, भोजन-सामग्री आदि लाने का स्मरण उसे नहीं रहा। तब उसने अपने पुत्र नाचिकेत से वह सामग्री लाने के लिये कहा। पिता की आज्ञानुसार यह नदी के किनारे गया। किंतु इसके जाने के पहले ही, पिता द्वारा माँगी गयी सारी वस्तुएँ पानी में बह गई थीं। उस कारण, यह पिता की कोई भी चीज वापस न ला सका। यह सारी दुर्घटना इसने पिता को बताया। फिर श्रम तथा श्रुधा से व्याकुल उद्दालकि के मुख से, ‘मरो’ शब्द निकला। शाप के कारण,

नाचिकेत तत्काल मृत हो गया। पुत्रमृत्यु के कारण, उद्दालकि अत्यंत शोकाकुल हुआ, एवं उसी शोकमग्न स्थिति में वह दिन तथा रात्रि इसने विताई। दूसरे दिन नाचिकेत यमग्रह से वापस आया एवं उसने यम के द्वारा बताया गया 'गोदानमाहात्म्य' अपने पिता को बताया। 'गोदानमाहात्म्य' बताने के लिये, नाचिकेत की यह पुरानी कथा 'महाभारत' में भीष्म ने युधिष्ठिर को बताया है। नाचिकेतस् अंगिरस कुल में पैदा हुआ था ऐसा कई अभ्यासकों का मत है। इसे नाचिकेत एवं नाचिकेत नामांतर भी प्राप्त थे।

नङ् नैषध—एक राजा। इसके विजयों के कारण, अपने शत्रुपक्षियों को यह मृत्यु के देवता 'यम' के समान प्रतीत होता था (श. ब्रा. २.२४.१-२)। 'शतपथ ब्राह्मण' में दक्षिण के यज्ञाग्नि से इसकी तुलना की गयी है। इस रूपात्मक वर्णन का यथार्थ अर्थ क्या है, यह नहीं समझ पाता। संभवतः यह दक्षिण देश का कोई राजा होगा। उसी कारण, दक्षिण दिशा का स्वामी 'यम' से इसकी तुलना की गयी सी दिखती है।

नङ् एवं दमयंती का पति नल एक ही होंगे। 'डलयोर भेदः' इस नियमानुसार, 'नङ्' का बाद में प्रचार में आया रूप नल होगा। नल राजा निषध देश का सम्राट था, एवं इसी लिये 'नैषध' नाम से प्रसिद्ध था, यह बात यहाँ ध्यान में रखना जरूरी है। इसके नाम का 'नङ् नैषिध' पाठभेद भी कई जगह प्राप्त है।

नङ्गायन—भृगुकुल का एक गोत्रकार। इसके नाम का नवप्रभ पाठभेद भी प्राप्त है।

नङ्बला—वीरण प्रजापति की कन्या, तथा चक्षुर्मनु की पत्नी (भा. ४.१३.१६)।

नदाकि—जिह्वक का नामांतर।

नदिवर्मन्—(ऐति.) परिहरवंशीय शांतियर्मा का पुत्र (भवि. प्रति. ४.४)।

नर्दाज—एक प्राचीन राजा। पांडवों की ओर से इसे 'रणनिमंत्रण' भेजा गया था (म. उ. ४.२०)।

नन्द—गोकुल एवं नन्दगौव में रहनेवाला गोपों का राजा एवं कृष्ण का पालक पिता (म. स. परि. १.२१. ७४५-७४७)। इसकी पत्नी यशोदा। यह द्रोणनामक वसु के अंश से उत्पन्न हुआ था (भा. १०.८.४८; पद्म. सू. १३; ब्र. १३)। वसुदेव ने आने नवजात बालक श्रीहरि को इसके घर में छिपा दिया था (भा. १०.३.

५१)। एक बार यह गुप्त रूप से वसुदेव से मिला भी था (भा. १०.४६.२७-३०)।

श्रीकृष्ण बहुत वर्षों तक नन्द गोप के घर रहा था। एक बार यह पानी में डूब रहा था। किंतु कृष्ण ने इसे बाहर निकाला (भा. १०.२८.२-९)। यह स्वमन्त-पंचक क्षेत्र में कृष्ण से मिलने गया था (भा. १०.८२. ३१)। यह हरसाल 'इंद्रयाग' नामक इंद्र का उत्सव करता था। किंतु वह उत्सव बंद कर, कृष्ण ने इससे कार्तिक शुद्ध प्रतिपदा के दिन 'अन्नकूट' का उत्सव प्रारंभ किया (भवि. प्रति. ४.१९.६१)। यह जब कृष्ण विरह से व्याकुल हुआ। तब उद्वव ने इसका सांत्वन किया (भा. १०.४६.२७-३०)।

नंदगोप के कुल में यशोदा के गर्भ से एक कन्या उत्पन्न हुई थी। यह साक्षात् जलज्जनी दुर्गा का स्वरूप मानी जाती हैं। युधिष्ठिर ने विराटनगर जाते समय, उस देवी का चिंतन किया, एवं देवी ने प्रत्यक्ष दर्शन दे कर उसे वर दिया (म. वि. परि. १.४)। अर्जुन ने भी नंदगोप के कुल में उत्पन्न इस, देवी का स्तवन किया, एवं उसे विजययज्ञक आशीर्वाद प्राप्त हुआ (म. भी. २३)।

यह मधुपुरी उर्फ मथुरा के आसपास के महावन में रहनेवाले आभीर मानु नामक गोपों का मुखिया था। आभीर भावु-चन्द्रसुरभि-सुश्रवस्-कालमेदु-चित्रसेन-नंद इस क्रम से इसकी वंशावलि महाभारत में दी गयी है। इसके पिता चित्रसेन को कुल नौ पुत्र थे:—१. सुनंद, २. उपनंद, ३. महानंद, ४. नंदन, ५. कुलनंद, ६. वंधुनंद, ७. केलिनंद, ८. प्राणनंद, ९. नंद (आदि. ११)।

२. एक विष्णुभक्त राजा। इसकी मूर्ति से संतुष्ट हो कर विष्णु ने इसे एक सुंदर विमान दिया था। एक बार इसे मानससरोवर के सुवर्णकमलों का अपहार करने की दुर्बुद्धि हुई। तत्काल इसका विमान नष्ट हो कर इसके सारे शरीर पर कोढ़ हुआ। पश्चात् वसिष्ठ की सलाह के अनुसार, इसने प्रभासक्षेत्र में तप किया। उस तप के पुण्यसंचय के कारण यह मुक्त हो गया (स्कन्द. ७.१.२५६)।

३. वसुदेव को मदिरा से उत्पन्न पुत्र (भा. ९. २४. ८)।

४. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. क. ३५.१७)।

५. (नंद. भविष्य.) मगध देश का राजा। महानंदिन् के समय, शिशुनाग वंश का अंत हो कर शूद्रापुत्र नंद

गद्दी पर बैठा। इसने महानंदी का वध कर राज्य छीना था। इसके वंश में सुमाल्यादि आठ पुरुषों ने सौ वर्षों तक राज्य किया। कौटिल्य ने नंद के आठ राजपुत्रों का वध कर, चन्द्रगुप्त को गद्दी पर बैठाया। (भा. १२.१)

कई पुराणों में, 'सुमाल्या' दि के बदले 'सुकल्या' दि पाठ प्राप्त है (विष्णु. ४.२२-२४; वायु. २.३७; ब्रह्मांड. ३.७४)। नंद के जीवितकाल में ही कौटिल्य का विरोध प्रारंभ हो कर, नंद तथा उसके आठ पुत्र कौटिल्य के पट्टयंत्र के कारण मारे गये, तथा नवनों का नाश हो कर चन्द्रगुप्त गद्दी पर बैठा (मत्स्य. २७२)।

कलि के तीन हजार तीन सौ दस वर्ष समाप्त होने पर, नंदराज्य का प्रारंभ हुआ था (स्कन्द. १.२.४०)।

६. एक पिशाच। इसके पिशाच योनि में जाने पर सुनिशर्मा नामक ब्राह्मण ने इसका उद्धार किया (पद्म. पा. ९४)।

७. विष्णु का एक पार्षद (भा. ४.१२.२२)।

८. एक कश्यपवंशी नाग (म. उ. १०१.१२)।

९. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६३)।

१०. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६४)।

नंदक—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र (म. भी. ६०. ६)। यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था। भीम ने इसका वध किया।

२. वसुदेव को वृकदेशी से उत्पन्न पुत्र।

३. एक दुर्योधनपक्षीय योद्धा (म. भी. ६०.२१)।

४. एक कश्यपवंशीय नाग (म. उ. १०१.११)।

नंदन—(सो. क्रोद्ध.) वायु के मतानुसार मनुवश राजा का पुत्र।

२. हिरण्यकशिपु का पुत्र। यह श्वेतद्वीप में राज्य करता था। शंकर के वर के कारण, यह सक्को अजित हो गया था। दस हजार वर्ष राज्य करने के बाद, कैलास में जा कर यह शिवगणों में से एक बन गया (शिव. उ. २)।

३. मणिभद्र तथा पुण्यजनी का पुत्र।

४. अश्विनीकुमारों द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम वधेन था (म. श. ४४.३३-३४)।

५. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६०)।

नंदनोदरकुंडुभि—(सो. कुकुर.) नल राजा का नामांतर (नल ४. देखिये)।

नंदपाल—न्यूहवंशीय चन्द्रदेव राजा का पुत्र। इसका पुत्र कुंभपाल था (भवि. प्रति. ४.३)।

नंदभद्र—एक धार्मिक वैश्य। काफी वर्षों तक इसे संतति नहीं हुई। इसकी कपिलेश्वर पर अत्यंत भक्ति थी। वृद्धापकाल में इसे एक पुत्र हुआ, परंतु विवाह होते ही कुछ दिनों में वह भी मृत हो गया।

इससे वैराग्य की इच्छा उत्पन्न हो कर, यह अध्यात्म-ज्ञान संपादन करने का प्रयत्न करने लगा। कुछ दिनों के बाद, एक सात वर्ष का बालक इसे मिला। तथा उसने इसकी अध्यात्मज्ञान की लालसा तृप्त की। बाद में सूर्य तथा रुद्र की उपासना कर के यह स्वर्ग पहुँच गया (स्कन्द. १. २.४६)।

नंदवर्धन—भागवतवंशीय उदापाश्व राजा का पुत्र। इसका पुत्र नंदसुत (भवि. प्रति. २.६)।

२. (प्रद्योत, भविष्य.) भागवत मतानुसार जनक का पुत्र। इसके नाम के लिये नंदिवर्धन तथा वर्तिवर्धन पाठभेद प्राप्त हैं।

नंदसुत—नंदवर्धन १. देखिये।

नंदा—धर्मप्रजापति के तीसरे पुत्र हर्ष की पत्नी (म. आ. ६०.३२)। मांडारकर संहिता में, इसके नाम के लिये 'नंदी' पाठभेद उपलब्ध है।

२. पाताल के कपोत नाग की कन्या (मार्क. ६८.१९)।

नंदायनीय—वायुमत में व्यास की ऋक्षशिष्य-परंपरा के बाष्कलि भारद्वाज का पुत्र तथा शिष्य।

नंदि—धर्म का पौत्र तथा स्वर्ग का पुत्र (भा. ६.६. ६)।

२. उत्कल देश का राजा। इसने सुरथ के कोल्य नामक नगरी को घेरा डाला तथा सुरथ को जीता। किंतु अन्त में सुरथ ने इसका पराजय किया। पराजित हो कर भागते समय, पुष्यभद्रा नदी तट पर इसकी मुलाकात एक वैश्य से हुई। उसे ले कर यह मेघसाथर्म गया, एवं उससे इसे मंत्रोपदेश प्राप्त हुआ (ब्रह्मसू. २. ३२; दे. भा. ५. ३२-३५)।

३. एक देवबंधव। अर्जुन के जन्मकालिक उत्सव में यह शामिल हुआ था (म. आ. १४४.४५)।

नंदिन—भगवान शिव का दिव्य पार्षद एवं वाहन। यह शालकाथनपुत्र शिलाद ऋषि का पुत्र था। इसे शैलादि पैतृक नाम प्राप्त है। निपुत्रिक होने के कारण, इसके पिता शिलाद ने पुत्रप्राप्ति के लिये तपस्या की। उस तपस्या से प्रसन्न हो कर शंकर ने उसे पुत्रप्राप्ति का वर

दिया। उस वर के अनुसार, यज्ञ के लिये जमीन जोतते समय, शिल्पद को तीन ओखोंवाला, चार हाथोंवाला, एवं जटामुकटधारी शंकररूप बालक प्राप्त हुआ। यही नंदिन् है।

शिल्पद इसे घर ले आया। तत्काल इसका रूप बदल कर, यह अन्य मनुष्यों के समान हुआ। नंदी आठ दस वर्षों का होने पर, मित्रावरुणों द्वारा इसे पता चला, 'यह अत्यायु है'। तब अपमृत्यु से बचने के लिये, इसने शंकर की आराधना की एवं अमरत्व प्राप्त किया। इसके तप से प्रसन्न हो कर शंकर ने इसे पुत्र माना, तथा अपने पार्षद गणों में इसे स्थान दिया।

नंदिन् ने मरुतों की कन्या सुयशा से विवाह किया था (शिव. पा. ७)। दक्षयज्ञ विध्वंस के प्रसंग में, इसने भग नामक ऋत्विज को ब्रह्म किया था (भा. ४. ५. १७)। दक्ष को भी तत्त्वविमुख होने का शाप दिया था (भा. ४. २. २१)। इसने रावण को भी शाप दिया था (वा. रा. उ. ५०)। अपने पितामह शालंकायन से इसने स्कन्दपुराण का 'अरुणाचलमाहात्म्य' सुना, तथा वह मार्कंडेय ऋषि को बताया (स्कन्द. १. ३. २. १६)। राम के अश्रमेष प्रसंग में इसका हनुमान से युद्ध हुआ था (पद्म. पा. ४३)।

नंदिन् ऋषिपुत्र था, एवं स्वयं भी एक ऋषि ही था। फिर भी जनमानस में, शिव का वाहन नंदी 'बैल' माना जाता है। इस अनरौति का प्रारंभ कैसे हुआ, यह कहना मुश्किल है। शिव के पार्षद, नृत्यके समय, अश्व, बैल आदि प्राणियों के वेप परिधान करते थे। उसी कारण, उस प्राणियों से उनका साधर्म्य प्रस्थापित किया गया होगा।

२. इन्द्रग्राम में रहनेवाला एक ब्राह्मण। महाकाल नामक किरात के भक्तियोग से इसे शिवदर्शन का लाभ हुआ, एवं इसका उद्धार हुआ। पश्चात् यह शिवगणों में से एक बन गया (पद्म. उ. १४४)। कई ग्रंथों में इसे वैद्य कहा गया है (स्कन्द. १. १. ५)।

३. कश्यप की मुनी नामक स्त्री से उत्पन्नपुत्र।

नंदिशशस्त्र—(नाग. भविष्य.) एक राजा। वायु के मत में यह मथुरा नगरी के मधुनंद राजा का, तथा ब्रह्मांडमत में यह वैदेश नगरी के भूतिनंद का पुत्र था।

नंदिनी—कश्यप के द्वारा सुरभि के गर्भ से उत्पन्न एक गौ (म. आं. १३.८)। समस्त जन्तु पर अनुग्रह करने के लिये इस गौ का अवतार हुआ था, एवं पूजको

की कामनाएँ पूरी करने के कारण इसे 'कामधेनु' कहते थे। जो मनुष्य इसका दूध पीता था, वह दस हजार वर्षों तक युवावस्था में जीवित रहता था (म. आ. १३. १९)।

यह वरुणपुत्र वसिष्ठ की 'होमधेनु' थी (म. आ. १३.९)। उसके तापसवन में यह चरती रहती थी। एकवार, द्यु नामक वसु ने इसका अपहरण किया। इस कारण वसिष्ठ ने वसुओं को शाप दिया (म. आ. १३.४४ द्यु देखिये)।

इसके प्राप्ति के लिये, विश्वामित्र ने वसिष्ठ से याचना की थी। वसिष्ठ ने उसका इन्कार करने पर, विश्वामित्र ने इसका हरण किया (म. आ. १६५.२१)। पश्चात् अपने विभिन्न अंगों से हूण, यवन, किरात आदि की सृष्टि निर्माण कर, नंदिनी ने विश्वामित्र के सेना को पराजित किया एवं उस सेना को नष्ट कर दिया (म. श. ३९.२०-२१)।

नंदिवर्धन—(स. निधि.) एक राजा। यह उदावसु का पुत्र था। इसका पुत्र सुकेतु जन्क।

२. (प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा। भागवत के मतानुसार यह राजक का, मत्स्य के मतानुसार सूर्यक का तथा ब्रह्मांड के मतानुसार अजक का पुत्र था। मत्स्य मतानुसार इसने तीस वर्ष तथा ब्रह्मांडमतानुसार बीस वर्ष राज्य किया।

३. (शिशु. भविष्य.) एक राजा। भागवतमत में यह अजय का, विष्णुमत में उदयन का, वायु तथा ब्रह्मांड के मत में उदयिन् का तथा मत्स्यमत में उदासीन का पुत्र था। इसने चालीस वर्षों तक राज्य किया।

नंदिधेग—एक क्षत्रियवंश, जिसमें 'शम' नामक कुलांगार नरेश पैदा हुआ था (म. उ. ७२; १७)।

नंदिषेण—ब्रह्माजी के द्वारा स्कंद को दिये चार पार्षदों में से एक। शेष तीन पार्षदों के नाम:- लोहिताश्व, घंटाकर्ण, कुमुदमालिन् (म. श. ४४, २२)।

नंदीश—वास्तुशास्त्र पर लिखनेवाला एक ग्रंथकार (मत्स्य. २५२)।

नंदीश्वर—भगवान् शिव का एक दिव्य पार्षद। नंदिन् इसीका ही नामांतर है (नंदिन् १. देखिये)। यह कुवेर सभा में उपस्थित हुए शिव का, वाहन था (म. स. परि. १. ४. ९)।

नप्त—एक सनातन विश्वदेव (म. अनु. १२. ३७. कुं.)।

नभः—स्वारोचिष मनु का पुत्र ।

२. उत्तम मनु का पुत्र ।

३. चाक्षुषमनु का पुत्र ।

४. वैवस्वतमनु का पुत्र ।

५. काश्यपकुल का एक गोत्रकार ।

६. भार्गवकुल का एक मेत्रकार ।

७. (सू. इ.) एक राजा । भागवतमत में यह निषध का, तथा वायु मतानुसार यह नल का पुत्र था । इसका पुत्र पुंडरीक ।

नभःप्रभेदन वैरूप—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.११२) ।

नभग—वैवस्वत मनु का पुत्र । इसका पुत्र नाभाग (भा. ८.१३.२; ९.४.१) । भागवत में नाभाग के नाम पर दी गई कथा, शिवपुराण में इसके नाम पर दी गई है (शिव. शत. २९) । इसके नाम के लिये नभग, नाभाग, नाभागारिष्ट, नाभानेदिष्ट आदि पाठभेद प्राप्त हैं ।

नभस्य—(सू. इ.) एक राजा । विष्णु, मत्स्य तथा पद्म के मत में यह नल का पुत्र था (पद्म. सू. ८) । भागवत तथा वायुपुराण में इसे नभ भी कहा है ।

२. उत्तममनु का पुत्र ।

३. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि ।

४. (सो. ऋक्ष.) एक राजा । वायुमत में यह ऊर्ज का पुत्र था (संभव देखिये) ।

नभस्य—स्वारोचिष मनु का पुत्र ।

२. उत्तममनु का पुत्र ।

नभस्वत्—सुर देव का एक पुत्र । कृष्ण ने इसका वध किया था (भा. १०. ५९.१२) ।

नभस्वती—(स्वा. उत्तान.) विजिताश्व राजा की पत्नी । इसका पुत्र हविर्धान (भा. ४.२४.५) ।

नाभाक—एक ऋषि (ऋ. ८.४०.४-५) । इसने तयार किये ऋक्षाओं के द्वारा, देवों ने बल के कब्जे में गये अपनी गायों को बचा लिया (ऐ. ब्रा. ६.२४) । ऋग्वेद अनुक्रमणी में इसके नाम का निर्देश 'नाभाक' नाम से किया गया है । 'नाभाक काण्व' के नाम पर भी ऋग्वेद में दो सूक्त हैं (ऋ. १०.३९; ४२) ।

नाभाग तथा नाभागदिष्ट—नभग देखिये ।

नभोग—ब्रह्म सावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि ।

नभोद्—एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३४) ।

नमस्यु—(सो. पूर.) भागवतमतानुसार प्रचीर राजा का पुत्र । इसका पुत्र चासपद (मनस्यु देखिये) ।

प्रा. च. ४४]

नमी साप्य—ऋग्वेद में निर्देश किया गया एक राजा (ऋ. ६.२०.६) ।

'नमुचि' राक्षस के साथ इंद्र ने किये युद्ध में, इसने इंद्र को काफी मदद की थी (ऋ. १०.४८.९) । ऋग्वेद में कई जगह, इसका निर्देश केवल 'नमी' नाम से ही किया गया है (ऋ. १.५३.७) । सायण का कथन है कि, यह एक ऋषि था । परंतु पंचविंश ब्राह्मण के मतानुसार यह विदेह का राजा होगा (पं. ब्रा. २५.१०.१७; निमि देखिये) ।

नमुचि—इंद्र का शत्रु एक राक्षस । समुद्र के 'फेन' (फेंस) के द्वारा इंद्र ने इसका वध किया । पौराणिक नृसिंह अवतार की कल्पना का मूल, इंद्र एवं नमुचि के युद्ध में ही है (ऋ. ८.१४.१३) । समुद्र के फेंस के द्वारा इसकी मृत्यु होने का कथाभाग, कुछ रूपकात्मक प्रतीत होता है । पं. सातवलेकरजी के मत में, यह समुद्र के फेंस से ठीक होनेवाला कोई रोग होगा ।

महाभारत में, नमुचि को कश्यप एवं दनु का पुत्र कहा गया है (म. आ. ५९.२२) । हिरण्यकशिपु ने देवों पर आक्रमण किया एवं उनका पराभव कर दिया । इस युद्ध में, नमुचि हिरण्यकशिपु राक्षस का सेनापति था (म. स. परि. १. क्र. २१; पक्ति. ३५८) । यह वृत्र का अनुयायी था (भा. ६.१०.१९) । स्वर्भानुकन्या सुप्रभा इसकी भार्या थी (भा. ६.६.३२) ।

एक बार भयभीत हो कर, यह सूर्यकिरण में प्रविष्ट हुआ तथा इसने इंद्र से मैत्री की । उस समय इंद्र ने इससे बहुत सारे विषयों पर चर्चा की । संकट के कारण उत्पन्न होनेवाला दुख भगवत्-चिंतन से किस प्रकार दूर हो जाता है, इस विषय पर दोनों का संभाषण हुआ (म. शां. २१९) । फिर इसके वाक्यदुग्ध एवं विद्रवता के कारण, प्रसन्न हो कर इंद्र ने इसे वरप्रदान किया, 'तुम आर्द्र अथवा सूखें किसी भी शस्त्र से मृत न होगे' । परंतु बाद में इंद्र ने सागरजल के फेन से इसका शिरच्छेद किया, तब उसके केवल सिर ने ही इंद्र का पीछा किया (म. शं. ४२.३२) । पश्चात् ब्रह्मदेव के कहने पर, नमुचि ने जिस तीर्थ में गुप्त रूप से स्नान किया था, उसी 'अरुणासंगम' नामक तीर्थ में इंद्र ने स्नान किया । फिर इंद्र के पीछे पीछे नमुचि का सिर भी उस तीर्थ में आ गिरा । उस स्नान के कारण, नमुचि को समस्तक सद्रति मिली, एवं इच्छित अक्षय्य श्लोक उसे प्राप्त हुआ (म. शं. ४२.२९-३२) । वामनावतार में, वामन-

स्वरूप विष्णु ने बलि के साथ नमुचि को भी पाताल में गाड़ रखा था (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति. ३५८-३५९)।

२. हिरण्याक्ष का सेनापति। इंद्र को मूर्च्छित कर इसने ऐरावत को नीचे गिराया, तथा माथा से अनेक जंतु उत्पन्न किये। वे जंतु विष्णु ने अपने चक्र से नष्ट किये। पश्चात् इंद्र ने वज्र से इसका वध किया (पद्म. सु. ६५)।

३. हिरण्याक्ष का एक और सेनापति। इंद्र पर इसने पाँच बाण छोड़े। परंतु इंद्र ने उन्हें बीच में ही तोड़ दिया। बाद में इसने अपनी माया से अंधकार उत्पन्न किया। परंतु अपने एक अस्त्र के द्वारा, इंद्र ने उस अंधकार को नष्ट किया। बाद में इंद्र के समीप आ कर, इसने उसके ऐरावत हाथी के दाँत पकड़े एवं इंद्र को नीचे गिरा दिया। परंतु उस काम में उसे मग्न देख कर, इंद्र ने अपने खड्ग से इसका सिर काट दिया (पद्म. सु. ६९)।

४. तेरह सैहिक्यों में से एक। विप्रचित्ति एवं सिंहिका का यह पुत्र था। परशुराम ने इसका वध किया (पद्म. सु. ६७)।

नय—रौच्य मनु का पुत्र।

२. तुषित साध्य देवों में से एक।

नर—‘नरनारायण’ नामक भगवत्स्वरूप देवताद्वयों में से एक। भगवान् नारायण इसका भाई था। नारायण एवं दोनों भगवान् वासुदेव के अवतार तथा धर्म के पुत्र थे। पांडुपुत्र अर्जुन इसीका अवतार बताया गया है (म. आ. .१; नरनारायण देखिये)।

दैत्यों को अमृत से वंचित करने के कारण हुए देवासुर-संग्राम में, नर ने अपने दिव्य धनुष से असुरों से संग्राम किया था। उस महाभयंकर संग्राम में इसने पंचयुक्त बाणों द्वारा पर्वत शिखरों को विदीर्ण किया, एवं समस्त आकाश-मार्ग को आच्छादित कर दिया। इस संग्राम के पश्चात्, देवों को प्राप्त अमृत की निधि, उन्होंने किरीटधारी नर के पास रक्षा के लिये सौंप दी।

दक्षयज्ञ के विध्वंस के लिये, शिव ने प्रज्वलित निशूल चलाया था। यज्ञ का नाश करने के पश्चात्, वह नर के भाई नारायण की छाती में आ लगा। उस कारण शिव एवं नरनारायणों के श्रमियान युद्ध शुरू हुआ। उस युद्ध में नर ने शिव पर साँक चलायी। परशु व्रत कर वह शिव के शरीर पर चली। किंतु शिव ने उसे खंडित

कर दिया। अतः नर को ‘खंडपरशु’ नाम प्राप्त हुआ (म. शां. ३३०.४९)।

पश्चात् नर अपने बंधु नारायण के समवेत त्रशरिका-श्रम में तपस्या करने लगे। उस तपस्या के कारण, यह महान् तपस्वी बन गये (म. व. १२२४४) दंभोद्भव नामक असुर सम्राट से इसका एवं इसके भाई नारायण का महान् युद्ध हुआ था। उस युद्ध में दंभोद्भव का पराजय हुआ। पश्चात् पराजित हुए दंभोद्भव को इसने उपदेश प्रदान किया (म. उ. ९४)।

द्रौपदी बन्धहरण के समय, द्रौपदी ने अपनी लाज बचाने के लिये भगवान् श्रीकृष्ण के साथ, नर को भी पुकारा था (म. स. ६१.५४२४)।

२. एक गंधर्व। यह कुबेर की सभा में रह कर, उसकी उपासना करता था (म. स. १०.१४)।

३. एक प्राचीन नरेश। इसने जीवन में कभी भांस नहीं खाया था (म. अनु. ११५.६४)।

३. तामस मनु का पुत्र।

४. (सु. दिष्ट.) सुधृति राजा का पुत्र।

५. (सो. अनु.) विष्णु के मत में उशीर्नर राजा का पुत्र। इसके नाम के लिये ‘नववत्’ पाठभेद उपलब्ध है।

६. एक वीरपुरुष। शंकर ने ब्रह्मदेव का पंचम मस्तक तोड़ दिया। फिर शंकर को संजा देने के लिये ब्रह्मदेव ने अपने पसीने से एक उग्र पुरुष निर्माण किया। उसने शंकर को अत्यंत त्रस्त किया। फिर शंकर ने स्वरक्षणार्थ विष्णु की प्रार्थना की। विष्णु ने अपनी अंगुलि काट कर रक्त से एक पुरुष निर्माण किया। उसी का नाम नर है। ब्रह्माजी के पसीने से निर्माण हुए उग्र पुरुष का वध कर, इसने शंकर को निर्भय बना दिया (पद्म. सु. १४; भावि. ब्राह्म. २३)।

७. तुषित साध्य देवों में से एक।

८. (स्वा. नाभि.) विष्णुमत में गय का पुत्र।

९. (सो. पूरु.) भागवतमत में मनुपुत्र। विष्णु, वासु तथा मत्स्यमत में भुवन्मनु पुत्र है।

नर भारद्वाज—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ६.३५.१६)। भरद्वाज के पाँच पुत्रों में से एक। भरत ने भरद्वाज को दत्तक लेने के कारण, इसे बृहस्पति तथा भरत नामक दो दादा थे (ऋग्वेद वेदार्थटीपिका ६.५२)।

नरक—एक दानव। यह कश्यप तथा द्यु का पुत्र था (म. आ. ५९.२८)। इंद्र ने इसे परास्त किया था।

२. तेरह सैहिक्रियों में से एक। यह विप्रचिति दानव तथा दितिकन्या सिद्धिका का पुत्र था।

३. एक असुर, एवं प्राग्ज्योतिषपुर का राजा। पृथ्वी का पुत्र (भूमिपुत्र) होने के कारण, इसे भौम नाम भी प्राप्त था। इसकी माता भूदेवी ने विष्णु को प्रसन्न कर, इसके लिये 'वैष्णवास्त्र' प्राप्त किया था। उसी अस्त्र के कारण, नरकासुर बलाढ्य एवं अवध्य बना था। अपनी मृत्यु के पश्चात्, यही अस्त्र इसने अपने पुत्र भगदत्त को प्रदान किया (म. द्रो. २८)।

नरक का राज्य नील समुद्र के किनारे था। इसकी राजधानी प्राग्ज्योतिषपुर अथवा मूर्तिस्त्रिय नगर में थी। इसके पाँच राज्यपाल थे:— हयग्रीव, निशुंभ, पंचजन, विरुपाक्ष एवं मुर (म. स. परि. १क. २१ पंक्ति. १००६)। पृथ्वी भर की सुंदर स्त्रियाँ, उत्तम रत्न एवं विविध वस्त्र आदि का हरण कर, नरक अपने नगर में रख देता था। किंतु उन में से किसी भी चीज का यह स्वयं उपभोग नहीं लेता था।

गंधर्व, देवता, एवं मनुष्यों की सोलह हजार एक सौ कन्याएँ, एवं अप्सराओं के समुदाय में से सात अप्सराओं का नरक ने हरण किया था। त्वष्टा की चौदह वर्ष की कन्या कशेरु का, उसे सुच्छित कर नरक ने अपहरण किया था। उस समय इसने हाथी का मायावी रूप धारण किया था (म. स. परि. १क. २१ पंक्ति. ९३८-९४०)। इंद्र का ऐरावत हाथी एवं उच्चैःश्रवा नामक अश्व का भी इसने हरण किया था। देवमाता अदिति के कुंडलों का भी नरक ने अपहरण किया था।

नरक ने पृथ्वी से अपहरण किया सारा धन, एवं स्त्रियाँ अलका नगरी के पास मणिपर्वत पर 'औडका' नामक स्थान में रखी हुई थी। मुर के दस पुत्र एवं अन्य प्रधान राक्षस, उस अंतःपुर की रक्षा करते थे। इसके राज्य की सीमा पर, मुर दैत्य के बनाये हुए छः हजार पाश लगाए गये थे। उन पाशों के किनारों के भागों में छुरे लगाए हुए थे। इस के बाद बड़े पर्वतों के चट्टानों के ढेर से एक बाड़ लगाई गयी थी। इस ढेर का रक्षक निशुंभ था। औडका के अंतर्गत लोहित गंगा नदी के बीच विरुपाक्ष एवं पंचजन ये राक्षस उस नगरी के रक्षक थे। (म. स. १.२१.९५३)।

नरक का वर्तन हमेशा ही देव तथा ऋषिओं के खिलाफ ही रहता था। स्वयं श्रीकृष्ण का भी इसने अपमान किया था। एक बार सारे यादव दाशार्ही सभा में बैठे हुए

थे। उस समय समस्त देवमंडल को साथ ले कर इंद्र वहाँ आया। उस ने कृष्ण से पापी नरकासुर का वध करने की प्रार्थना की। श्रीकृष्ण ने भी नरक का वध करने की प्रतिज्ञा की।

पश्चात् सत्यमामा एवं इंद्र को साथ ले कर तथा गरुड पर आरुढ़ हो कर, श्रीकृष्ण प्राग्ज्योतिषपुर राज्य के सीमा पर पहुँच गया। उस राज्य की सीमा पर मुर दैत्य की चतुरंगसेना खड़ी थी। उस सेना के पीछे मुर दैत्य के बनाये हुए छः हजार तीक्ष्ण पाश थे। श्रीकृष्ण ने उन पाशों को काट कर, एवं मुर को मार कर राज्य की सीमा में प्रवेश किया। पश्चात् पर्वतों के चट्टानों के घेरे के रक्षक, निशुंभ पर श्रीकृष्ण ने हमला किया। इस युद्ध में निशुंभ, हयग्रीव आदि आठ लाख दानवों का वध कर श्रीकृष्ण आगे बढ़ा। पश्चात् ओडका के अंतर्गत विरुपाक्ष एवं पंचजन नाम से प्रसिद्ध पाँच भयंकर राक्षसों से श्रीकृष्ण का युद्ध हुआ। उनको मार कर श्रीकृष्ण ने प्राग्ज्योतिषपुर नगर में प्रवेश किया।

प्राग्ज्योतिषपुर नगरी में, श्रीकृष्ण को दैत्यों के साथ विकट युद्ध करना पड़ा। उस युद्ध में लक्षावधि दानवों को मार कर, श्रीकृष्ण पाताल गुफा में गया। वहाँ नरकासुर रहता था। वहाँ कुछ देर युद्ध करने के बाद, श्रीकृष्ण ने चक्र से नरकासुर का मस्तक काट दिया (म. स. परि. १क. २१ पंक्ति. ९९५-११५५)। इसका वध करने के पहले, श्रीकृष्ण ने इसे ब्रह्माद्रोही, लोककंठक एवं नराधम कह कर पुकारा (म. स. परि. १क. २१ पंक्ति. १०३५)।

नरकासुर एवं श्रीकृष्ण के युद्ध की कथा हरिवंश में कुछ अलग ढंग से दी गयी है। पंचजन दैत्य का वध करने के पश्चात्, श्रीकृष्ण ने प्राग्ज्योतिषपुर नगरी पर हमला किया।

नरकासुर से युद्ध शुरू करने के पहले श्रीकृष्ण ने पांचजन्य शंख फूँका। उस शंख की आवाज़ सुन कर नरक अत्यंत क्रोधित हुआ, एवं अपने रथ में बैठ कर युद्ध के लिये बाहर चला आया। नरक का रथ अत्यंत विस्तृत, मौल्यवान एवं अजन्म था। इसके रथ को हजार घोड़े जोते गये थे। इस प्रकार सुसज्ज हो कर, नरकासुर युद्धभूमि में आया, एवं श्रीकृष्ण से उसका तुमुल युद्ध हुआ। आखिर श्रीकृष्ण ने सुदर्शन चक्र में उसका सिर काँट लिया। फिर नरकासुर की माता ने, श्रीकृष्ण के पास आ कर, अदिति के कुंडल एवं प्राग्ज्योतिषपुर का राज्य उसे अर्पण कर दिया (ह. वं. २.६३; भा. १०.५९)। पश्चात्

श्रीकृष्ण ने नरकासुर के महल में प्रवेश कर बंदीगृह में रखी गयी सोलह हजार एक सौ स्त्रियों की मुक्तता की (पद्म. उ. २८८)। उन स्त्रियों को एवं काफी संपत्ति ले कर श्रीकृष्ण द्वारका लौट आया (भा. १०.५९)।

नरकासुर वध की कथा पद्मपुराण में भी दी गयी है। किंतु उस में 'नरकचतुर्दशी माहात्म्य' को अधिक महत्त्व दिया गया है।

नरकासुर ने तप तथा अध्ययन कर, तपःसिद्धि प्राप्त की थी। फिर इन्द्र को इससे भीति उत्पन्न हुई, एवं उसने नरकासुर का वध करने की प्रार्थना कृष्ण से की। पश्चात् श्रीकृष्ण ने इस तपःसिद्ध नरकासुर को हस्ततल से प्रहार कर के इसका वध किया। यह मरणोन्मुख हो कर भूमि पर गिरा तब इसने कृष्ण की स्तुति की। कृष्ण ने इसे वर माँगने के लिये कहा। इसने वर माँगा 'मेरे मृत्युदिन के तिथि को, जो सूर्योदय के पहले मंगलस्नान करेगें, उन्हें नरक की पीड़ा न हो'। यह कार्तिक वद्य चतुर्दशी को मृत हुआ। इसलिये उस दिन को 'नरक चतुर्दशी' कहने की प्रथात शुरु हुई। उस दिन किया प्रातःस्नान पुण्यप्रद मानने की जनरीति प्रचलित हुई (पद्म. उ. ७६.६७)।

लोमश ऋषि के साथ पांडव तीर्थयात्रन के लिये गये थे। अलकनंदा नदी के पास जाने पर, शुभ्र पर्वत के समान प्रतीत होनेवाला शिखर लोमश ने उन्हें दिखाया। वे नरकासुर की अस्थियाँ थी (म. व. परि. १. क्र. १६. पंक्ति. २८-३१)। वरुण सभा में नरकासुर को सम्माननीय स्थान प्राप्त हुआ था (म. स. ९.१२)।

नरकासुर के वध के बाद उसकी माता के कथनानुसार, कृष्ण ने इसके पुत्र भगदत्त को अमयदान दिया। उस पर वरदहस्त रखा तथा उसे राज्य दिया (भा. १०.५९)।

नरकासुर की कथा कालिकापुराण में निम्नलिखित ढंग से दी गयी है। त्रेतायुग के उत्तरार्ध में यह वराहरूपी विष्णु को भूमि के द्वारा उत्पन्न हुआ। विदेह देश के राजा जनक ने सोलह वर्षों तक इसका पालन किया। प्राग्ज्योतिषपुर के किरातों से युद्ध कर के, इसने उनका नाश किया। बाद में राज्यश्री के कारण मदीन्मत्त होने पर, द्वापार युग में कृष्ण ने इसका नाश किया (कालि. ३९-४०)।

नरनारायण—एक भगवत्स्वरूप देवताद्वय। स्वयंभुव मन्वन्तर के सत्ययुग में भगवान् वासुदेव के चार अवतार

धर्म के पुत्र के रूप में प्रगट हुए (म. शां. ३३४.९-१२) उनके नाम क्रमशः नर, नारायण, हरि एवं कृष्ण थे। उनमें से नर एवं नारायण यह वंशुद्वय पहले देवतारूप में, पश्चात् ऋषिरूप में, एवं महाभारतकाल में अर्जुन एवं कृष्ण के रूप में, अपने पराक्रम एवं क्षात्रतेज के कारण अधिकतम सुविख्यात है (नर एवं नारायण देखिये)।

नरनारायण की उपासना काफी प्राचीन है। महाभारत काल में अर्जुन एवं कृष्ण को, नरनारायणों का अवतार समझने के कारण, नरनारायणों की उपासना को नया रूप प्राप्त हो गया। पाणिनि में नरनारायणों के भक्तिसंप्रदाय का निर्देश किया है।

देवी भागवत के मत में, नरनारायण चाक्षुष मन्वन्तर में उत्पन्न हुए थे (दे. भा. ४.१६)। ये धर्म को दक्ष-कन्या मूर्ति से उत्पन्न हुये थे (भा. २.७)। ये धर्म को कला नामक स्त्री से उत्पन्न हुए थे, ऐसा भी उल्लेख प्राप्त है। पूर्ण ज्ञाति प्राप्ति के लिये, इन दोनों ने दुष्यंत तप किया था (भा. १.३)। नरनारायण के दुष्यंत तप से भयभीत हो कर, इन्द्र ने इनके तपोभंग के लिये कुछ अप्सराएँ भेजीं। यह देख कर नारायण शाप देने के लिये सिद्ध हो गया, परंतु नर ने उसका सांवन किया (दे. भा. ४.१६; भा. २.७; पद्म. स. २२)। पश्चात् नारायण ने अपनी जेबा से उर्वशी नामक अप्सरा निमोण कर, वह इन्द्र को प्रदान की (भा. ११.४.७)। इन्द्र द्वारा भेजी गई अप्सराओं को अगले अवतार में विवाह करने का आश्वासन दे कर इसने विदा किया (दे. भा. ४. १६)। बाद में इन्होंने कृष्ण तथा अर्जुनरूप से अवतार लिया। कृष्णार्जुनों को दर्शन दे कर इन्होंने उपदेश भी दिया (दे. भा. ४.१७; भा. १०.८१.६०)। यह बदरि-काश्रम में रहते थे (भा. ११.४.७)। इन दोनों ने नारद से किये अनेक संवादाँ का निर्देश प्राप्त है (म. शां. ३२१-३२४)।

एक बार हिरण्यकश्यपु का पुत्र प्रह्लाद ससैन्य तीर्थयात्रा करते करते, नरनारायण के आश्रम के पास आया। उस स्थान पर उसने बाण, तरकस आदि युद्धोपयोगी चीजें देखीं। इससे उसे लगा कि, इस आश्रम के मुनि शांत न हो कर दाम्भिक होंगे। उसने इन्हें बैसा कहा भी। इससे गर्मागर्म बातें हो कर, युद्ध करने तक नौबत आ गयी। पश्चात् नरनारायण एवं प्रह्लाद का काफी दिनों तक तुमुल युद्ध हुआ। उसमें कोई भी नहीं हारा। इस युद्ध के कारण देवलोक एवं पृथ्वी लोक के सारे लोगों को तर्कहीन होने

लगी। फिर विष्णु ने मध्यस्थ का काम किया तथा यह युद्ध रोद्ध लिया (दे. भा. ४.४.९)।

नरवाहन—कुवेर का नाम।

नरसिंह—गौड़ देश का राजा। इसके सेनापति का नाम सरभेसुंड था। वह गीतापाठ करने के कारण मुक्त हुआ (सरभेसुंड देखिये)।

नरसिंह—अंगद द्वारा मारा गया रावण का पुत्र (भा. ९.१.१८; वा. रा. यु. ६९)।

२. रावण के प्रहस्त नामक प्रधान का पुत्र। यह द्विविद वानर के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ५-८)।

३. रौद्रकेतु दैत्य का पुत्र। अपने दुष्कृत्यों से इसने सारे त्रैलोक्य को अत्यंत त्रस्त किया था। बाद में इसे पता चला कि, कश्यप गृहोत्पन्न विनायक के द्वारा अपनी मृत्यु होगी। तब विनायक के नाश के लिये इसने काफी प्रयत्न किये। परंतु वे निष्फल हो कर, विनायक ने इसका वध किया (मणेश. २.६१)।

४. कालनेमि राक्षस का पुत्र। हिरण्याक्ष के साथ हुए देवों के संग्राम में, जयंत ने इसका पराभव किया था (पद्म. सु. ७५)।

नरामित्र—त्रिधामन् नामक शिवावतार का शिष्य।

नरि—(सो. कुकुर.) बहुपुत्र राजा का पुत्र। इसका पुत्र अभिजित् (पद्म. सु. १३)।

नरिन—वनरस नगर के तालन राजा का पुत्र (भवि. प्रति. ३.७)।

नरिष्यन्त—वैवस्वत मनु का पुत्र, एक राजा (म. आ. ७०-१३)। इसका पुत्र शुक्र (पद्म. सु. ८)। उसके सिवा, इसे चित्रसेन, ऋक्ष, मीद्वस, कृत्, इंद्रसेन आदि पुत्र भी थे। पश्चात् इसीके कुल में अभिवेश्यायन ब्राह्मण पैदा हुए (भा. ९.२.१९-२२)। 'शक' लोग भी इसीके पुत्र कहलाते थे (ब्रह्म. ७.२४)। इसका पूरा वंश 'भागवत' में दिया गया है (भा. ९. २. १९-२२)।

२. (सो. दिष्ट.) एक राजा। वायु एवं विष्णुमत में यह मरुत का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम वाभ्रवी इंद्रसेना, एवं पुत्र का नाम दम था (मार्क. १३०.२)। वानप्रस्थाश्रम में रहते हुए इस राजा का यपुष्मत् ने वध किया। इसकी मृत्यु के बाद, इसकी पत्नी इंद्रसेना सती गयी (मार्क. १३१)।

नरोत्तम—एक ब्राह्मण। यह अपने मातापितरों का अनादर करता था। फिर भी तीर्थयात्रादिकों के योग से

काफी पुण्य संपादन किया था। इसके गीले वस्त्र आकाश में अधर सूखते थे।

एक बार एक बगुले को शाप देने के कारण, इसका काफी पुण्य तथा दैवी सामर्थ्य नष्ट हो गया। इसे काफी दुख हुआ। इतने में इसने आकाशावाणी सुनी, 'तुम मूक नामक धार्मिक चांडाल के पास जाओ। वह तुम्हें धर्म का उपदेश करेगा'। यह उस चांडाल के पास गया। उस समय मूक अपने मातापितरों की सेवा कर रहा था। उसने इसे रुकने के लिये कहा। फिर भी यह नहीं रुका। फिर मूक ने इसे एक पतिव्रता के पास जाने के लिये कहा।

इतने में ब्राह्मण रूपधारी विष्णु अपने घर से बाहर निकला तथा उसने इसे पतिव्रता के घर पहुँचा दिया। वह पतिसेवा करने में मग्न होने के कारण, उसने भी इसे रुकने के लिये कहा। इसे रुकने के लिये समय न होने के कारण, उसने इसे धर्म वैश्य के पास जाने के लिये कहा। वह ग्राहकों को माल देने में मग्न था, इसलिये उसने इसे धर्माकर के पास जाने के लिये कहा। उसने इसे एक वैष्णव के पास भेजा। वैष्णव के पास जाने पर उसने कहा, कि 'अवश्य ही तुम्हें विष्णु का दर्शन हुआ है। अब तुम्हारे वस्त्र अधर सूखेंगे'।

परंतु इस पर नरोत्तम ने कहा, मुझे अब तक विष्णु का दर्शन नहीं हुआ है। फिर वह वैष्णव इसे पूजाग्रह में ले गया। पूजाग्रह में इसे पतिव्रता का घर दिखानेवाला ब्राह्मण कमलासन पर बैठा हुआ दिखा। फिर नरोत्तम उसकी शरण में गया। पश्चात् विष्णु ने इसे मातापिता की सेवा करने के लिये कहा। उस सेवाधर्म के कारण, यह स्वर्लोक पहुँच गया (पद्म. सु. ४७)।

नर्मदा—सोमप नामक पितरों की मानसकन्या।

२. एक गंधर्वी। अपनी तीन कन्याएँ इसने सुकेश राक्षस के तीन पुत्रों को दी थीं (वा. रा. अर. ५)।

३. (सू. इ.) मांधातृ राजा की स्तुषा तथा पुरुकुत्स राजा की पत्नी। यह सर्पकन्या थी जो सर्पों ने पुरुकुत्स राजा को विवाह में दी थी (विष्णु. ४.३.१२-१३; भा. ९.७.२)। किंतु यह पुरुकुत्सपुत्र त्रसेदस्यु की पत्नी थी, ऐसा भी निर्देश कई ग्रंथों में प्राप्त है।

४. एक नदी। एक बार, इक्ष्वाकु कुलोत्पन्न दुर्योधन राजा से विवाह करने की इच्छा इसे हुई। तब मनुष्य रूप धारण कर इसने उससे विवाह किया (म. अनु. २.१८)। दुर्योधन राजा से, इसे सुदर्शना नामक

कन्या पैदा हुई। किसी और समय, इसने मान्धातृ का पुत्र पुस्कृतस को अपना पति बनाया था (म. आश्र. २०. १२-१३; नर्मदा ३. देखिये)।

नर्य—एक दानी पुरुष। इंद्र ने इसकी रक्षा की थी (ऋ. १.५४.६; ११२.९; नार्य देखिये)।

नल—निषध देश का मुख्यात राजा। यह वीरसेन राजा का पुत्र था (पद्म; स्र. ८; लिग. १.६६.२४-२५; वायु. ८८; १७४; मत्स्य. १२.५६; ह. वं. १.१५; ब्रह्मांड. २.६३.१७३-१७४)। मत्स्य तथा पद्म के मतानुसार वीरसेनपुत्र नल तथा निषधपुत्र नल दोनों इक्ष्वाकु वंश के ही हैं। किंतु लिग, वायु तथा ब्रह्मांड एवं हरिवंश में वीरसेनपुत्र नल का वंश नहीं दिया गया है।

पांडवों के वनवासकाल में, युधिष्ठिर ने बृहदश्व ऋषि से कहा, 'मेरे जैसा वदनसीत्र राजा इस दुनिया में कोई नहीं होगा'। फिर बृहदश्व ने, युधिष्ठिर की सात्वना के लिये उससे भी ज्यादा वदनसीत्र राजा की एक कथा सुनायी। वही नल राजा की कथा है (म. व. ५०)।

नल राजा निषध देश का अधिपति था, एवं युद्ध में अजेय था (म. आ. १.२२६-२३५)। एक बार, नल ने सुवर्ण पंखों से विभूषित बहूत से हंस देखे। उनमें से एक हंस को इसने पकड़ लिया (म. व. ५०.१९)। फिर उस हंस ने नल से कहा, 'आप मुझे छोड़ दें। मैं आपका प्रिय काम करूँगा। विदग्धनेरेश भीम राजा की कन्या दमयंती को आप के गुण बताऊँगा, जिससे वह आपके सिवा दूसरे का वरण नहीं करेगी'।

हंस का यह वचन सुन कर, नल ने उसे छोड़ दिया (म. व. ५०.२०-२२)। पश्चात् हंस ने दमयंती के पास जा कर, नल के गुणों का वर्णन किया। उससे दमयंती नल के प्रति अनुरक्त हो गयी (म. व. ५०-५१)।

यथावकाश दमयंती-स्वयंवर की घोषणा विदग्धनिधिपति भीम राजा ने की। उसे सुन कर, नल राजा स्वयंवर के लिये विदग्धदेश की ओर रवाना हुआ। नारद द्वारा दमयंती स्वयंवर की हकीकत इंद्रादि लोकपालों को भी ज्ञात हुई। वे भी स्वयंवर के लिये विदग्ध देश चले आये। नल को देखते ही इसके असामान्य सौंदर्य के कारण, दमयंतीप्राप्ति की आशा इंद्रादि लोकपालों ने छोड़ दी। बाद में इंद्र ने नल राजा को सहायता के वचन में फँसाया, एवं उसे दूत बनाकर दमयंती को बताने के लिये कहा, 'लोकपाल तुम्हारा वरण करना चाहते हैं।'

इंद्र के आशीर्वाद के कारण, अदृश्य रूप में यह कुंडिनपुर में दमयंती के मंदिर में प्रविष्ट हो गया। वहाँ दमयंती तथा उसकी सखियों के सिवा यह किसी को भी नहीं दिखा। इस कारण, यह दमयंती तक सरलता से पहुँच सका। दमयंती के मंदिर में नल के प्रविष्ट होते ही, उसकी सारी सखियाँ स्तब्ध हो गई तथा दमयंती भी इस पर मोहित हो गई। बाद में दमयंती द्वारा पूछा जाने पर नल ने अपना नाम बता कर देवों का संदेश भी उसे बताया (म. व. ५१-५२) फिर भी दमयंती का नल को पति बनाने का निश्चय अटल रहा।

दमयंती स्वयंवर में, उसकी परीक्षा लेने के लिये, नल के ही समान रूप धारण कर, इंद्रादि देव सभा में बैठ गये। स्वयंवर के लिये आये सहस्रावधि राजाओं का वरण न कर, दमयंती उस स्थान पर आई जहाँ नल बैठ था। वहाँ उसने देखा, बीच पुरुष एक ही स्वरूप धारण कर एक साथ बैठे हैं। उसके सामने बड़ी ही समस्या उपस्थित हो गई। बाद में उसने कहा कि 'नल के प्रति मेरा अनन्य प्रेम हो, तो वह मुझे मोचर हो।' इतना कहते ही उसके पातित्रयबल से सारे देव उनके 'वास्तव देवता स्वरूप' में उसे दिख पड़े। घर्मत्रिदुविरहित स्तब्ध दृष्टिवाले, प्रफुल्ल पुष्पमाला धारण करनेवाले, धूलि स्पश्विरहित, तथा भूमि को रस्य न करते हुए खड़े देव उसने देखे। उन देवों को नमन कर, दमयंती ने नल को वरमाला पहनायी।

नल का वरण दमयंती द्वारा किये जाने के कारण, देवों को भी आनंद हुआ तथा उन्होंने इसे दो दो वर दिये। इंद्र ने इसे वर दिया, 'तुम्हें यज्ञ में मेरा प्रत्यक्ष दर्शन होगा, तथा सद्गति प्राप्त होगी'। अग्नि ने वर दिया, 'चाहे जिस स्थान पर तुम मेरा उत्पत्ति कर सकोगे, तथा मेरे समान तेजस्वी लोक की प्राप्ति तुम्हें होगी'। यम ने इसे अन्नरस तथा धर्म के उपर पूर्ण निष्ठा रहने का, उसी प्रकार वरुण ने इच्छित स्थल पर जल उत्पन्न करने की शक्ति का वर दिया। वरुण ने इसे एक सुमेधी पुष्पमाला भी प्रदान की, एवं वर दिया, 'तुम्हारे पास के पुष्प कभी भी नहीं कुम्हलायेंगे'। इन वरों के अतिरिक्त, देवता-प्रसाद से कहीं भी प्रवेश होने पर इसे भरपूर जगह मिलती थी, ऐसी भी कल्पना है।

पश्चात् भीमराज ने दमयंती विवाह का बड़ा समारोह किया। काफी दिनों तक नल को अपने पास रख लेने के बाद, इसे दमयंती सहित निषध देश में पहुँचा दिया।

निषध आने के बाद, इसने प्रजा का उत्तम पालन किया तथा अश्वमेधादि यज्ञ कर देवों को भी तृप्त किया। कुछ काल के बाद, दमयंती से इसे इंद्रसेन नामक पुत्र, तथा इंद्रसेना नामक कन्या ये अपत्य भी पैदा हुए (म. व. ५३-५४)।

एक बार देवसभा में, इंद्रादि देवों ने नल की स्तुति की। वह स्तुति वहाँ बैठे कलिपुरुष को सहन नहीं हुई। देवों के जाने के बाद वह द्रापर नामक युगपुरुष के पास गया, एवं उसने कहा, 'अगर तुम वृत् के प्यादों' में मुझे प्रविष्ट होने दोगे, एवं मेरी सहायता करोगे, तो मैं नल को राज्य भ्रष्ट कर दूँगा' (म. व. ५५-१३)।

द्रापर के द्वारा मान्यता मिलने पर, उसे ले कर कलिपुरुष निषध देश में गया। वहाँ नल के शरीर में प्रविष्ट होने की संधि देखते हुए, गुप्तरूप से वह अनेक वर्षों तक रहा। एक दिन मूर्खोत्सर्ग करने के बाद, पादप्रक्षालन न करते हुए ही नल संध्योपासना करने बैठा। यह संधि देख, कली ने इसके शरीर में प्रवेश किया।

शरीर में कलि प्रविष्ट होते ही, नल को वृत् खेलने की इच्छा हुई। इसने तत्काल अपने पुष्कर नामक भ्राता को वृत् खेलने के लिये बुलाया। पुष्कर ने पास ही वृषभ रूप ले कर खड़े कलि को दौंव पर लगा कर, नल को खेलने का आह्वान दिया। दमयंती के सामने दिया यह आह्वान अपना अपमान समझ कर, नल ने दौंव पर दौंव लगाना शुरू किया। यह वृत् नागरिकजनों को ज्ञात होते ही उन्होंने, मंत्रियों ने तथा स्वयं दमयंती ने हर प्रकार से इसे वृत् से परावृत्त करने की कोशिश की। शरीर में स्थित कलि के प्रभाव के कारण, नल वृत् खेलता ही रहा। उस कारण, इसकी सारी संपत्ति, सुवर्ण, वाहन, रथ, घोड़े तथा वस्त्र दूसरे पक्ष ने जीत लिये। अपना तथा अन्य किसी का भी उपदेश राजा नहीं सुन रहा है यह देख, दमयंती ने अपने पुत्र तथा कन्या को वाष्णेय नामक सारथि के साथ रथ में बैठा कर, अपने पिता के यहाँ कुंडिनपुर भेज दिया (म. व. ५६-५७)।

नल का समस्त राज्य हरण कर लेने के बाद, पुष्कर ने इसे एक वस्त्र दे कर राज्य के बाहर निकाल दिया। इसके साथ दमयंती भी एक वस्त्र पहन कर निकल पड़ी। नगर के बाहर नल तीन दिनों तक रहा। पुष्कर ने दिंदोरा पिटवाया, 'जो नल का सत्कार करेंगे, या उससे सज्जनता का व्यवहार करेंगे, उन्हें मृत्यु की सजा दी जावेगी'। इस कारण किसीने नल की सहायता नहीं की।

पश्चात् अपना राज्य छोड़ कर, नल एवं दमयंती अरण्य के मार्ग से जाने लगे। काफी दिन इसी प्रकार व्यतीत होने पर, धुधाराप्रस्त नल को सुवर्णमय पंखयुक्त कुछ पंखी दिखे। खाने के लिये तथा धनप्राप्ति के हेतु से, वे पक्षी पकड़ने की इच्छा नल को हुई। इसलिये इसने उन्हें अपने वस्त्र में पकड़ लिया किंतु दुर्दैववशात् वृत् के प्यादे ही नल का पीछा करते हुए, पक्षीरूप धारण कर के भागे हुए थे। वे इसका वस्त्र ले कर उड़ गये। परिणामतः नल के पास जो एक वस्त्र था, वह भी चला गया एवं नय स्थिति में यह आगे जाने लगा।

जाते जाते नल ने दमयंती को कोसल तथा विदर्भ देश की ओर जानेवाला मार्ग दर्शाया, एवं कहा, 'तुम अपने पिता के घर विदर्भ देश चली जाओ'। फिर दमयंती ने नल से कहा, 'हम दोनों ही विदर्भ देश को जायें' किंतु नल को यह अच्छा न लगा।

पश्चात् मार्ग में नल एवं दमयंती को एक घर दिखा। दोनों उस घर में गये। थकावट के कारण दमयंती शीघ्र ही निद्राधीन हो गई। यह देख, उसे छोड़ कर अकेले चले जाने की इच्छा नल के मन में उत्पन्न हुई। तलवार से दमयंती का आधा वस्त्र काट कर, वह इसने परिधान किया। तथा चुपचाप उसे वहीं छोड़ कर, यह चला गया (म. व. ५८, ५९; दमयंती देखिये)। बाद में चेदि देश के सुवाहु राजा की पत्नी की सैरग्री बन कर दमयंती ने अपने बुरे दिन व्यतीत किये।

दमयंती को छोड़ कर चले जाने के बाद, नल ने एक स्थान पर प्रदीप्त दावाग्नि देखा। उससे कृष्ण ध्वनि निकल रही थी, 'हे नल! मेरी रक्षा करो'। फिर अग्नि में धिरे कर्कोटक नाग को इसने बाहर निकाला। तब वह नाग प्रसन्न हो कर उसने नल से कहा, 'एक, दो, तीन, इस क्रम से तुम चलना शुरू करो। मैं तुम्हारा कुछ कल्याण करना चाहता हूँ। तुम्हारा चलना शुरू होते ही, वह कार्य मैं पूरा करूँगा।

कर्कोटक के आदेशानुसार यह कदम गिनते गिनते चलने लगा। अपने दसवें कदम पर इसने 'दश' कहा। 'दश' कहते ही कर्कोटक नाग ने इसे दंश किया, जिससे इस का रूप बदल कर, यह कृष्णवर्ण एवं कुरूप बन गया। फिर नल ने व्याकुल हो कर कर्कोटक से पूछा, 'तुमने यह क्या किया?' कर्कोटक ने इस पर कहा, 'तुम नाराज न हो। तुम्हारे लभ के लिये ही मैंने तुम्हें दंश किया है। तुम्हारे ये बदले हुए रूप से अब तुम्हें कोई भी पहचान नहीं

सकेगा। इतना ही नहीं, मेरे विप की बाधा तुम्हारे शरीरस्थ कलि को ही हो जायेगी'। नल को एक वस्त्र प्रदान कर कर्कोटक ने आगे कहा, 'अब तुम बाहुक नामांतर से अयोध्या के राजा ऋतुपर्ण के पास जा कर वास करो। जब पूर्ववत् स्वरूप होने की इच्छा तुम करोगे, तब स्नान करके यह वस्त्र ओढ़ लेना। इससे तुम्हें पूर्वस्वरूप प्राप्त होगा'। इतना कह कर कर्कोटक अंतर्धान हो गया (म. व. ६३. १९-२३)।

कर्कोटक के गुप्त होने के बाद नल दस दिनों से अयोध्या जा पहुँचा। ऋतुपर्ण राजा से मिल कर इसने कहा, 'मुझे अश्वविद्या तथा सारथ्य का पूर्ण ज्ञान है। आप मुझे आश्रय दें, तो मैं अपने पास रहने के लिये तैयार हूँ। ऋतुपर्ण ने इसे अपने आश्रय में रखा, एवं इसे अपनी अश्वशाला का प्रमुख बना दिया। नल के पुराने सारथि वाष्ण्य तथा जीवल पहले से ही ऋतुपर्ण की अश्वशाला में काम करते थे। संयोगवश नल के ये पुराने नौकर इसके सहायक बना दिये गये। किंतु इसके नये रंगरूप में वे इसे पहचान नहीं सके।

अपनी पत्नी दमयंती, कन्या, तथा पुत्र का स्मरण कर के यह रोज विलाप करता था। एक दिन जीवल ने इसे पूछा, 'किसके लिये तुम हररोज शोक करते हो?' कुछ न कह कर यह स्तब्ध रह गया (म. व. ६४. १२-१९)।

ऋतुपर्ण राजा के यहाँ नौकरी करने से पहले ही वाष्ण्य ने दमयंती के कथनानुसार उसके पुत्र तथा कन्या को कुंडिनपुर में भीमराजा के पास पहुँचा दिया था, तथा कहाँ था, कि 'नलराजा शूतासक्त हो गया अब उसका कोई भरोसा नहीं है'। बाद में भीमराजा को ज्ञात हुआ कि राज्यभ्रष्ट हो कर नल दमयंती सह अरथ्य में चला गया है।

अपनी कन्या एवं जमाई को ढूँढ़ने के लिये भीमराजा ने सारे देशों में ब्राह्मण भेजे। उनमें से सुदेव नामक ब्राह्मण घूमने घूमते वहाँ गया, जहाँ दमयंती राजपत्नी की शैरंभ्री बन कर दिन काट रही थी। दमयंती के पीपलपत्ते के समान ताम्रवर्णीय दाग के कारण उसने दमयंती को पहचान लिया, तथा कहा, 'तुम्हारे पिता की आज्ञानुसार मैं तुम्हें ढूँढ़ने आया हूँ'। यह सुन कर दमयंती अपने आपको सन्हाल न सकी, एवं फूट फूट कर रोने लगी। यह सारा वृत्त चोद्वाराजपत्नी सुनंदा ने राजमाता को बताया, उसे दमयंती की दुखभरी कहानी सुन कर बहुत ही खेद हुआ। बाद में उसने दमयंती का बड़ा

सत्कार कर तथा साथ में सेना दे कर पालकी से इसे कुंडिनपुर पहुँचा दिया। दमयंती को देख कर भीम को अत्यंत आनंद हुआ। कन्या का शोध लगने के कारण एक चिंता से भीमराजा मुक्त हुआ। केवल नल ही को मालूम हो ऐसे संकेतदर्शक वाक्यों के साथ भीमराजा ने अनेक ब्राह्मण देश देश में नल को ढूँढ़ने के लिये भेज दिये (म. व. ६४-६६)।

उनमें से पर्णाद नामक ब्राह्मण अयोध्या नगरी में आया। वहाँ पहुँचने के बाद दमयंती द्वारा बताया गये पूर्वस्मृति-निर्देशक तथा कर्तव्यबुद्धि जाग्रत करनेवाले अनेक वाक्य कहते कहते, वह नगर की बस्ती बस्ती में घूमने लगा। वे वाक्य सुन कर नल को अत्यंत दुःख हुआ तथा एकांत में पर्णाद से मिल कर इसने कहा 'हीन दशा प्राप्त होने के कारण मैंने पत्नी का त्याग किया, इसलिये वह मुझे दोष न दे'। इतना होते ही पर्णाद वृत्तगति से अयोध्या से चला गया, एवं कुंडिनपुर आ कर यह वृत्त उसने दमयंती को बताया।

यह वृत्त सुन, दमयंती को अत्यंत आनंद हुआ, किंतु पर्णाद द्वारा किये गये बाहुक के रूपवर्णन के कारण वह संदेह में पड़ गयी। उस संदेह की निष्कृति करने के लिये उसने अपनी माता के द्वारा ऋतुपर्ण को संदेसा भेजा, 'नल जीवित है या मृत यह न समझने के कारण दमयंती अपना दूसरा स्वयंवर कल सुग्रींदय के समय कर रही है; इसलिये अगर इच्छा हो तो आप वहाँ आये' (म. व. ६५)।

कुंडिनपुर से अयोध्या काफी दूर होने के कारण, एक दिन में वहाँ पहुँचना ऋतुपर्ण को अशक्य प्रायसा लगा। फिर भी अपने सारथि बाहुक से उसने पूछा। बाहुक ने एक दिन में रथ से अयोध्या पहुँचने की शर्त मान्य की एवं वडी ही तेजी से रथ हँका। मार्ग में ऋतुपर्ण का उत्तरीय गिर पड़ा। उसे उठाने के लिये राजा ने बाहुक को रथ खड़ा करने के लिये कहा। फिर बाहुक ने कहा 'आपका वस्त्र एक योजन पीछे रह गया है'। यह देख कर ऋतुपर्ण बाहुक के सारथ्यकौशल पर बहुत ही खुश हुआ। बाद में बाहुक से अश्वहृदयविद्या सीख कर, ऋतुपर्ण ने उसे 'अश्वहृदयविद्या' (वृत्त खेलेने की कला) प्रदान की (म. व. ७०. २६)। इस प्रकार ये दोनों परम मित्र बन गये (ह. वं. १. १५; वायु. २६; विष्णु. ४. ४. १८; ब्रह्म. ८. ८०)।

अक्षहृदय विद्या प्राप्त होते ही, कलिपुरुष नल के शरीर से बाहर निकला। उसे देख कर जब नल उसे शाप देने के लिये उद्युक्त हुआ, तब कलि ने इसकी प्रार्थना करते हुए कहा "हे पुण्यश्लोक नल ! तुम मुझे शाप मत दो। कर्कोटक नाग के विष से मेरा शरीर दग्ध हो गया है। दमयंती के शाप से भी मैं पीड़ित हूँ। आयदा से, कर्कोटक, दमयंती, नल तथा ऋतुपर्ण का नामसंकीर्तन करनेवालों को कलि की बाधा न होगी (म. व. ७८)। इतना कहते हुए वह बेड़ेलि के वृक्ष में प्रविष्ट हुआ। इस 'कलिप्रवेद्य' के कारण, बेहड़े (विभीतक) का वृक्ष अपवित्र माना जाने लगा (म. व. ७०-३६)।

सायंकाल होने के पहले ही, बाहुक ने रथ कुंडिनपुर पहुँचाया। किंतु वहाँ स्वयंवरसमारोह का कुछ भी चिह्न मौजूद नहीं था। इस कारण, ऋतुपर्ण मन ही मन शरमा गया, एवं अपना मुँह बचाने के लिये कहा, 'यूँ ही मिलने के लिये मैं आया हूँ'। आये हुए लोगों में दमयंती को नल नहीं दिखा। किंतु ऋतुपर्ण के त्वरित आगमन का कारण नल ही है ऐसा विश्वास उसे हो गया, तथा जादा पूँछताछ के लिये, उसने अपने केशिनी नामक दासी को बाहुक के पास भेज दिया। उस दासी ने बड़े ही चातुर्य से, बाहुक के साथ दमयंती के बारे में प्रश्नोत्तर किये। फिर नल का हृदय दुख से भर आया, तथा वह रुदन करने लगा। यह सब वृत्त केशिनी ने दमयंती को बताया (म. व. ७१-७२)।

बाद में दमयंती ने केशिनी को बाहुक की हलचल पर सक्त नजर रखने के लिये कहा। बाहुक की एक बार परीक्षा लेने के लिये, दमयंती ने अग्नि तथा उदक न देते हुए अन्य पाकसाहित्य दिखाया। वह ले कर एवं जल तथा अग्नि स्वयं उत्पन्न कर बाहुक ने पाकसिद्धि की। उसी प्रकार बाहुक को अवगत 'पुष्पविद्या' (मसलने पर भी पुष्पों का न कुम्हलाना) तथा आकृतिविद्या ('छोटी चीज बड़ी बनाना') आदि बातें केशिनी ने स्वयं देखी (म. व. ७३-९; १६)।

बाद में दमयंती ने अपने पुत्र एवं पुत्री को दासी के साथ बाहुक के पास भेज दिये। नल अपना शोक संयमित न कर सका। बाद में ही बाहुक ने फिर दासी से कहा 'मेरे भी पुत्र ऐसे होने के कारण मुझे उनकी याद आयी (म. व. ७३-२६-२७)।

फिर दमयंती ने अपनी माता के पास संदेश भिजवाया, 'यद्यपि नल के अधिकांश चिह्न बाहुक में हैं, तथापि रूप

के कारण मुझे कुछ शंका हो रही है। अगर आपकी आज्ञा मिले तो उसे बुला कर, मैं कुछ परीक्षा ले लूँ'। माता की आज्ञा प्राप्त होते ही उसने बाहुक से कहा, 'प्रतिव्रता तथा निरपराध स्त्री को अरण्य में अकेली छोड़ जानेवाला पुरुष पृथ्वी पर नल राजा के सिवा अन्य कोई नहीं है'। यह सुनते ही बाहुक ने कहा, 'पति सदाचारी तथा जीवित होते हुए भी, स्वयंवर करनेवाली स्त्री तुम्हारे सिवा अन्य कोई नहीं है'। फिर नल एवं दमयंती ने एक दूसरी को पहचान लिया। दमयंती ने कहा, 'यह सारा नाटक तुम्हें ढूँढ़ने के लिये ही मैंने रचाया था। दूसरी बार स्वयंवर करने की ही लालसा मुझे होती, तो क्या मैं अन्य राजाओं को निमंत्रित नहीं करती?' इतना कह कर वह स्तब्ध हो गई। इतने में वायु द्वारा आकाशबाणी हुई 'दमयंती निर्दोष है। तुम उसका स्वीकार करो'। उसे सुनते ही नल ने कर्कोटक नाग का स्मरण किया एवं उसने दिये दिव्य वस्त्र परिधान कर लिया। उस वस्त्र के कारण, नल का सुरूपत्व नष्ट हो कर, वह सुस्वरूप दिखने लगा। फिर नल ने दमयंती तथा पुत्रों का आर्म्भान किया (म. व. ७३-७४)।

नल एवं दमयंती का मीलन होने के पश्चात् भीम-राजा ने उनको एक माह तक अपने पास रख लिया। तब बाद में दमयंती एवं पुत्रों को साथ ले कर, नल राजा निषध देश की ओर मार्गस्थ हुआ। वहाँ पहुँचते ही नल ने पुष्कर को बुलावा भेजा, तथा उससे द्यूत खेल कर अपना राज्य हासिल किया (म. व. ७७)। मृत्यु के पश्चात्, नल यमसभा में उपस्थित हो कर, यम की उपासना करने लगा (म. स. ८.१०)। भारतीय युद्ध के समय, यह देवराज इंद्र के विमान में बैठ कर, युद्ध देखने आया था (म. वि. ५.१.१०)।

पूर्वजन्म—पूर्वजन्म में, नल राजा गौड देश के सीमा पर स्थित एक देश के पिप्पल नामक नगर में, एक वैश्य था। संसार से विरक्त हो, वह एक बार अरण्य में चला गया। वहाँ एक ऋषि के उपदेशानुसार, 'गणेशव्रत' करने के कारण यह अगले जन्म में नल राजा बन गया (गणेश-२.५२)। इसके ही पहले के जन्म में, नल एवं दमयंती आहुक एवं आहुका नामक भील तथा भीलनी थे। शिव-प्रसाद से उन्हें राजकुल में जन्म प्राप्त हुआ। शंकर ने हंस का अवतार ले कर उन्हें सहायता दी थी (यतिनाथ देखिये)।

पाकशास्त्र तथा अश्वविद्या पर लिखित, नल राजा के कई ग्रंथ प्रसिद्ध हैं।

२. (सु. इ.) अयोध्या के ऋतुपर्ण राजा का पुत्र। इसे सुदास नामक पुत्र था। इसका मूल नाम सर्वकर्मन् अथवा सर्वकाम था (लिंग. १.६६.१)।

इसका पिता ऋतुपर्ण, निषध देश के नल राजा का मित्र था (नल १. देखिये)। वायुपुराण के मत में, प्राचीन भारतीय इतिहास में दो नल सुविख्यात थे:—

१. अयोध्या का राजा इक्ष्वाकुवंशज नल—यह ऋतुपर्ण का पुत्र था। २. वीरसेन का पुत्र नैषध नल (वायु. ८८. १७४-१७५)।

३. (सो. क्रोष्टु.) भागवतमत में यह राजा का पुत्र। इसे 'नील' नामान्तर भी प्राप्त था।

४. (सो. कुकुर.) यादव राजा विलोमन् (तित्तिरि) का पुत्र। इसे 'नन्दोदरदुन्दुभि' नामान्तर भी प्राप्त था (मत्स्य. ४४.६३)। मत्स्यमत में यह सर्प था।

५. इन्द्रसभा में उपस्थित एक ऋषि।

६. (सु. इ.) दल का नामान्तर।

७. तेरह सैहिकेयों में से एक (ब्रह्म. ३)।

८. निषध राजा का पुत्र। इसका पुत्र नम अथवा नमस् (ह. वं. १. १५. २८; ब्रह्म. ८; पद्म. सु. ८; मत्स्य. १२. ५६)।

९. रामसेना का एक वानर, एवं रामसेतु बाँधनेवाला स्थापत्यविशारद। यह देवों के शिल्पी विश्वकर्मा एवं धृताची नामक अप्सरा का पुत्र था (म. व. २६७. ४१)। ऋतुध्वज मुनि के शाप से, विश्वकर्मा को वानर-यौनि प्राप्त हुई। उसी जन्म में उसे यह पुत्र गोदावरी नदी के तट पर पैदा हुआ (वामन. ६२)। इसे अग्नि का पुत्र भी कहा है (स्कंद. ३. १. ४२)।

जो चाहे वह वस्तु निर्माण करने की शक्ति का वर, इसके पिता ने इसे दिया था (वा. रा. यु. २२)। राम की आज्ञा से इसने दक्षिण समुद्र पर सौ योजन लंबे एवं दस योजन चौड़े सेतु का निर्माण किया। वह सेतु 'रामसेतु' अथवा 'नलसेतु' नाम से प्रसिद्ध है (म. व. २६७-४६)। इसने एक ब्राह्मण को जाह्नवी नदी में शालिग्राम विसर्जन करने के कार्य में मदद की थी। इस पुण्यकार्य के कारण, उस ब्राह्मण ने इसे वर दिया, 'तुम्हारे पत्थर पानी में तर सकेंगे।' इसी सिद्धि के कारण, सेतुबंधन का कार्य यह सफलता से कर सका। सेतु बांधने का कार्य शुरु करने से पहले इसने गणेश

तथा नवग्रहों की पूजा की थी (आ. रा. सार. १०)। प्रतपन, अकंपन, तथा प्रहस्त आदि रावणपक्षीय राक्षसों से युद्ध करते समय इसने काफी पराक्रम दर्शाया था (कुशलव देखिये)। राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, यह अश्वरक्षण के लिये शत्रुघ्न के साथ गया था (पद्म. पा. ११)।

नलकूबर—देवों के धनाध्यक्ष कुबेर का पुत्र (म. स. १०. १८)। इसे मणिग्रीव नामक व्येष्ट वंशु था।

एकबार ये दोनों भाई अपने स्त्रियों के साथ गंगानदी के तट पर कैलास पर्वत के उपवन में क्रीडा कर रहे थे। सुरापान की नशा के कारण, इन में से किसी के शरीर पर वस्त्र न था। उसी मार्ग से नारद जा रहे थे। नारद को देखते ही शाप के भय से, इसकी स्त्रियों ने बाहर आ कर अपने अपने वस्त्र परिधान कर लिये। रंतु नलकूबर तथा मणिग्रीव इतने वेहोश थे कि, उन्होंने देवर्षि की कुछ भी मर्यादा न रखी। नग्नस्थिति में इन्हें देखते ही इन दोनों को अच्छा सक्क सिखाने का विचार नारद ने किया। अपने शरीर पर वस्त्र है या नहीं, इसका भी होश किन्हें नहीं है, उनके लिये वृक्षयौनि ही ठीक है, ऐसा विचार नारद ने किया, एवं इन्हे सौ वर्षों तक वृक्ष होने का शाप दिया। नारद की कृपा से, उस स्थिति में भी इन्हें अपने पूर्वजन्म का स्मरण रहा, तथा कृष्ण के सान्निध्य से इनकी मुक्ति हो गयी।

कृष्णावतार में नंदगोप के घर के द्वार में स्थित 'अर्जुन-वृक्षों' का जन्म इन्हें प्राप्त हुआ था। एक बार नटखट कृष्ण की शैतानी से तंग आ कर, यशोदा ने कृष्ण को ऊखल से बाँध दिया। कृष्ण ऊखल को खींचते खींचते धीरे धीरे चलने लगा। चलते चलते आँगन में खड़े अर्जुनवृक्ष की जोड़ी के बीच, वह ऊखल अटक गया। फिर कृष्ण ने ऊखल जोर से खींचते ही दोनों वृक्ष आमूलाग्र गिर पड़े तथा नल कूबर एवं मणिग्रीव वृक्षयौनि से मुक्त हो गये (भा. १०. ९-१०; ह. वं. २.७.१४-१९; पौलस्त्य देखिये)।

एक बार इसकी प्रेयसी रंभा इसे मिलने जा रही थी। राह में, रावण ने रंभा पर बलात्कार किया। फिर इसने रावण को शाप दिया, 'तुम्हें न चाहनेवाली किसी भी स्त्री को तुम स्पर्श नहीं कर सकोगे (म. व. २६४.६८-६९)। बलात्कार करते ही तुम्हारी मृत्यु हो जायेगी' (वा. रा. उ. २६; रावण देखिये)।

नव—(सो. अनु.) मत्स्यमत में उशीनर राजा का पुत्र (नर ४. देखिये)।

नवक—एक ऋषि। विमिदुक राजा के सत्र में इसने पत्नी के लिये इच्छा दर्शायी थी (जै. ब्रा. २.२३३)।

नवगव—अंगिरसों में से एक वर्ग का नाम। इन्होंने इन्द्र की स्तुति की है (ऋ. ५.२९.१२)। नौ महीनों में ये यज्ञ समाप्त करते थे इसलिये इन्हें नवगव कहते हैं (ऋ. १०.६२.४-६; दशगव देखिये)।

२. एक श्रेष्ठतम अंगिरस ऋषि। यह प्राचीनकालीन रहस्यवादी जाति के लोगों एवं अंगिरसों के साथ संबंधित थे (ऋ. ४.५.१.४; ९.१०.८.४)।

नवतन्तु—विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५८)।

नवप्रभ—नडायन देखिये।

नवरथ—(सो. क्रौ. पु.) भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा पद्म के मतानुसार भीमरथ राजा का पुत्र। वायु तथा ब्रह्मांड मतानुसार यह रथवर राजा का पुत्र था।

नववास्त्व—अग्नि का आश्रित। घोरपुत्र कण्व ने अग्नि की प्रार्थना कर, नववास्त्व को अपने पास भेजने के लिये कहा है (ऋ. १.३६.१८)। संभवतः यह उशनस् का पुत्र एवं इंद्र के प्रियपुत्रों में से एक था। किंतु ऋग्वेद में कई अन्य स्थानों में इंद्र द्वारा इसका वध होने का निर्देश भी प्राप्त है। भरद्वाज ने इंद्र के द्वारा इसका वध करवा कर उशनस् का पुत्र वापस ला दिया (ऋ. ६. २०.११)। ऋग्वेद में तीसरे एक स्थान पर, 'नववास्त्व बृहद्रथ' नाम से इसका निर्देश आया है। इंद्र ने इसका नाश किया (ऋ. १०.४९.६)।

नहुष—ऋग्वेदकालीन एक व्यक्ति (ऋ. १.१२२.१५)। 'नहुम्' एवं यह दोनों एक ही रहे होंगे।

नहुष—एक राजा। यह संभवतः 'पुथुश्रवस् कानीत' का कोई रिश्तेदार रहा होगा (ऋ. ८.४६.२७; नाहुष देखिये)।

२. (सो. पुरुरवस्.) प्रतिष्ठान (प्रयाग) देश का सुविख्यात सम्राट्, एवं वैवस्वत मनु की कन्या इला का प्रपौत्र। यह पुरुरवस् ऐल राजा का पौत्र, आयु राजा का पुत्र एवं ययाति राजा का पिता था (लि. १.६६.५९-६०; कूर्म. १.२२.३-४)। इसे कुल चार भाई थे। उनके नाम :—क्षत्रवृद्ध (वृद्धशर्मन्), रंभ, रजि, अनेनस् (विपाप्मन्) (वायु. ९२.१-२; ब्रह्म. ११. १-२)।

यह आयु राजा को दानव राजा राहु या स्वर्मानु की कन्या प्रभा (स्वर्भानवी) नामक पत्नी से उत्पन्न हुआ था

(ह. वं. १.२८.१; म. आ. ७०.२३)। किंतु पद्ममत में, यह आयु की पत्नी इंदुमती को दत्त आत्रेय की कृपा से पैदा हुआ था (पद्म. भू. १०५)। वायुमत में, यह आयु को विरजा नामक पत्नी से उत्पन्न हुआ था (वायु. ९४; ब्रह्म. १२.३४)। सुस्वधा पितरों की कन्या विरजा इसकी पत्नी थी। उससे इसे ययाति नामक पुत्र पैदा हुआ (मत्स्य. ४५.२३)।

पद्मपुराण में, नहुष की जन्मकथा इस प्रकार दी गयी है। दत्तकृपा से आयु राजा की पत्नी इंदुमती गर्भवती रही। उस समय, हुंड राक्षस की कन्या अपनी सखियों के साथ नंदनवन में झींझा करने के लिये गयी। वहाँ सिद्ध चारणों के मुख से उसने सुना कि, अपने पिता हुंड की मृत्यु आयुपुत्र नहुष के द्वारा होनेवाली है। तत्काल घर जा कर इसने यह वृत्त अपने पिता को बताया।

इन्दुमती के गर्भ का नाश करने के उद्देश से, दैत्येंद्र हुंड एक अमंगल दासी के शरीर में प्रविष्ट हुआ, तथा नहुष का जन्म होते ही रात्रि के समय, इसे अपने घर ले आया। बाद में अपनी विपुला नामक भार्या के पास, नहुष को स्वाधीन कर, हुंड ने कहा, यह मेरा शत्रु है। इसलिये इसका मांस पका कर, तुम मुझे खिला दो विपुला ने इस बालक को अपने रसोइये को सौंपा। किंतु रसोइये को इस पर दिया आ कर उसने इसे वसिष्ठ ऋषि के घर में पहुँचा दिया तथा हुंड को हिरन का मांस पका कर खाने के लिये दिया।

इस बालक को देखते ही, वसिष्ठ ने दिव्य दृष्टि से इसका सारा पूर्वैतिहास जान लिया तथा इसे 'नहुष' नाम प्रदान किया। वसिष्ठ ने ही इसका उपनयन करवाया एवं इसे वेद तथा धनुर्विद्या सिखाई।

पश्चात् वसिष्ठ के कथनानुसार इसने हुंड राक्षस पर आक्रमण किया। उस समय सारे देवों ने इसकी सहायता की। इस युद्ध में नहुष का विजय हो कर, इसने हुंड का वध किया। बाद में वसिष्ठ की अनुज्ञा से, इसके विरह में रातदिन व्याकुल हुआ अशोकसुंदरी नामक स्त्री से, इसने विवाह किया, तथा उसे ले कर यह अपनी राजधानी लौट आया (पद्म भू. १०५-११७)।

एक बार, च्यवन ऋषि मछुओं के जाल में फँस गया। उसे मछुओं के हाँथ से छुड़ाने के लिये, नहुष ने च्यवन से उसके सही मूल्य के बारे में चर्चा की, एवं लाखों की संख्या में गौओं मछुओं को दे कर, च्यवन की सुक्तता की (म. अनु. ८६.६)। फिर च्यवन ने संतुष्ट हो कर नहुष

को वर दे दिया। घर आये त्वष्ट्र का नहुष ने सम्मान किया था, एवं उस कार्य के लिये 'गवालम्भन' भी किया था (म. शां. २६०.६)।

इंद्रपदप्राप्ति—अपने पराक्रम, गुण एवं पुण्यकर्म के कारण, देवताओं को भी दुर्लभ 'इंद्रपद' प्राप्त होने का सौभाग्य नहुष को प्राप्त हुआ। इतने में देवों का राजा इंद्र ने विशिर नामक ब्राह्मण का वध किया। इस 'ब्रह्महत्या' के पातक के कारण, पागल सा हो कर, इंद्र इधर उधर घूमने लगा, एवं इंद्रपद की राजगद्दी खाली हो गयी।

इस अवसर पर, सारे देव एवं ऋषियों ने अपनी तपश्चर्या का बल नहुष को दे कर, इसे 'इंद्रपद' प्रदान किया, एवं आशीर्वाद दिया, 'तुम जिसकी ओर देखोगे, उसके तेज का हरण करोगे' (म. आ. ७०.२७)।

'इंद्रपद' पर आरूढ़ होने के बाद, कुछ काल तक, नहुष ने बहुत ही निष्ठ, नेकी, एवं धर्म से राज्य किया। स्वर्ग का राज्य प्राप्त होने के बाद भी, यह देवताओं को दीपदान, प्रणिपात, एवं पूजा आदि नित्यकर्म मनोभाव से करता रहा।

किंतु बाद में, 'मे देवेंद्र हूँ' ऐसा तामसी अभिमान इसके मन में धीरे धीरे छाने लगा। फिर सारी धार्मिक विधियाँ छोड़ कर, यह मतिभ्रष्ट एवं विषयलेपत बन गया। रोज मित्र मित्र उषवन में जा कर, यह स्त्रियोंके साथ क्रीडाएँ करने लगा। इस प्रकार कुछ दिन बीतने पर, इसने भूतपूर्व इंद्र की पत्नी इंद्राणी को देखा। उसका मोहक रूपयौवन देख कर यह कामोत्सुक हुआ, एवं इसने देवों को हुकुम दिया, 'इंद्राणी को मेरे पास ले आओ' (म. आ. ७५)।

फिर डर के मारे भागती हुई इंद्राणी बृहस्पति के पास गयी। बृहस्पति ने उसे आश्वासन दिया, 'मैं नहुष से तुम्हारी रक्षा करूँगा'। बाद में सारे देवों के सख्यह के अनुसार, इंद्राणी नहुष के पास आयी, एवं उसने कहा, 'आपकी माँग पूरी करने के लिये, मुझे कुछ वस्तु आप दें दे। उस अवधि में, मैं अपने खोये हुए पति को ढूँढना चाहती हूँ'।

नहुष ने इंद्राणी की यह शर्त मान्य की। फिर देवों की कृपा से, इंद्राणी ने इंद्र को ढूँढ निकाला, एवं सारा वृत्तान्त उसे बता दिया। फिर इंद्र ने उसे कहा, "तुम नहुष के पास जा कर उसे कहो, 'अगर सप्तर्षिओं ने जौंती हुए पालकी में बैठ कर, तुम मुझे मिलने आओगे तो मैं तुम्हारा वरण करूँगी'।

इंद्राणी नहुष के पास आयी, एवं उसने अपनी शर्त उसे बतायी। नहुष ने यह शर्त बड़े ही आनंद से मान्य की। इसने सप्तर्षिओं को अपने पालकी को जौंती लिया, तथा स्वयं पालकी में बैठ कर, यह इंद्राणी से मिलने अपने घर से निकला। मार्ग में पालकी और तेजी से भगाने के लिये, कामातुर नहुष ने सप्तर्षिओं में से अगस्त्य ऋषि को लक्ष्मप्रहार किया, एवं बड़े क्रोध से कहा, 'सर्प, सर्प' ('जल्दी चलो')।

इस पर अगस्त्य ऋषि ने इसे क्रोध से शाप दिया, 'हे मदनोन्मत्त! सप्तर्षिओं को पालकी को जौंतेनेवाला तू स्वयंही पृथ्वी पर दस हजार वर्षों तक सर्प बन कर पड़े रहेगी'। अगस्त्य के इस शाप के अनुसार, नहुष तत्काल सर्प बन गया, एवं पालकी के बाहर गिरने लगा। फिर अगस्त्य को इसकी दया आयी, एवं उसने इसे उःशाप दिया, 'पांडुपुत्र युधिष्ठिर तुम्हें इस हीन सर्पयोगि' से मुक्त कर देगा (म. उ. ११.१७; अनु. १५६-१५७; भा. ६.१८.२-३; दे. भा. ६.७-८; विष्णु. १.२४)। अगस्त्य स्वयं सप्तर्षियों में से एक नहीं था। किंतु उसके जटासंभार में छिपा हुआ भृगु ऋषि सप्तर्षियों में से एक था। संभवतः इसी भृगु के कारण अगस्त्य को नहुष ने अपने पालकी का वाहन बनाया होगा।

महाभारत के मत में, भृगु ऋषि के कारण ही नहुष का स्वर्ग से पतन हुआ था। नहुष को सारे देवों ने तथा ऋषियों ने वर दिया था, 'तुम जिसकी ओर देखोगे, उसका तेज हरण कर लोगे'। उस वर के कारण अन्य सप्तर्षियों के साथ, अगस्त्य ऋषि का तेज नहुष ने हरण किया, एवं उसे अपने पालकी का वाहन बनाया। किंतु अगस्त्य की बटा में गुप्तरूप से बैठे भृगु को नहुष कुछ न कर सका, एवं उसका तेज कायम रहा। नहुष ने लक्ष्म-प्रहार करते ही वाकी ऋषि चुपचाप बैठ गये। किंतु भृगु ने उसे शाप दिया (म. अनु. १५७)।

शापमुक्ति—बाद में सरस्वती नदी के तट पर द्रैतवन में पांडव अपने वनवास का काल व्यतीत करने आये। एक दिन भीमसेन हाथ में धनुष्य ले कर वन में मृगया के लिये निकला। यमुनागिरि पर घूमते घूमते, उसने एक गुफा के मुख में चित्रविचित्र रंग का एक अजरर देखा। भीम को देखते ही उस अजरर ने उसके ऊपर झड़प डाली, तथा उसकी दोनों बाहें जोर से पकड़ ली। दश-सहस्र नागों का बल अपने भुजाओं में धारण करनेवाले भीम की शक्ति उस अजरर के सामने व्यर्थ हो गई।

तब भीम ने पूछा, 'हे सर्पराज, तुम कौन हो? मेरा तेज हरण करने की शक्ति तुझमें कैसी पैदा हो गई?' फिर अजगर ने कहा, 'मैं नहुष नामक एक राजर्षि हूँ। अनेक विद्या, यज्ञ, कुलीनता, तथा पराक्रम के कारण, मैंने त्रैलोक्य का आधिपत्य प्राप्त किया था। किंतु पश्चात् मदोन्मत्त हो कर, मैंने सप्तर्षियों को अपने पालकी का वाहन बनाया। इसलिये अगस्त्य ऋषि ने शाप दे कर, मुझे इस हीन सर्पयोनि में जाने के लिये कहा। उःशाप मॉगने पर उसने मुझे कहा, 'तुम जिस प्राणी पर झपटोगे, उसकी शक्ति हरण कर लोगे। आत्मनात्माविवेक के ज्ञान से परिपूर्ण पुरुष से मुलाकात होने पर, तुम शाप-मुक्त हो जाओगे।' तबसे ऐसे ही पुरुष का मैं इन्तजार कर रहा हूँ।'

इतने में युधिष्ठिर भीम को ढूँढ़ते ढूँढ़ते वहाँ पहुँचा। अजगर के द्वारा भीम को पकड़ा हुआ देख कर, उसने सर्प से पूछा, 'तुम कौन हो? भीम को तुमने क्यों पकड़ लिया है?' तब अजगरस्वरूपी नहुष ने कहा, 'मैं तुम्हारा पूर्वज, एवं आयु नामक राजा का पुत्र हूँ। तुम्हारे द्वारा मेरे प्रश्नों के उत्तर दिये जाने पर मैं भीम को छोड़ दूँगा।'

वाद में नहुष ने युधिष्ठिर से प्रश्न किया, 'ब्राह्मण किस को कहते हैं?' युधिष्ठिर ने उत्तर दिया, 'सत्य, दान, क्षमा, सञ्जीवत्व, एवं इंद्रियदमन जिसके पास हो, वह मानव ब्राह्मण कहलाता है।' फिर सर्प ने पूछा, 'पृथ्वी में सर्वश्रेष्ठ ज्ञान कौनसा है?' युधिष्ठिर ने जवाब दिया, 'ब्रह्म का ज्ञान सर्वश्रेष्ठ कहलाता है।' इन उत्तरों से प्रसन्न हो कर, इसने भीम को छोड़ दिया, एवं इसका भी उद्धार हो कर, यह स्वर्ग में चला गया (म. व. १७५-१७८)।

पुत्र-नहुष के पुत्रों की संख्या एवं नामों के बारे में, पुराणों में एकवाक्यता नहीं है। अधिकांश पुराणों एवं महाभारत के मत में, नहुष को कुल छः पुत्र थे (म. आ. ७०.२८; ह. वं. १.३०.२; ब्रह्म. १२; विष्णु. ४. १०; भा. ९.१८.१; लिंग. १.६६)। कूर्म एवं पद्म के मत में, इसे कुल पाँच पुत्र थे (कूर्म. १.२२; पद्म. सू. १२)। मत्स्य एवं अग्नि में, नहुष के सात पुत्रों के नाम दिये गये हैं (मत्स्य. २४.५०; अग्नि. २७४)।

पुराणों में दिये गये नहुष के पुत्रों के नाम इन प्रकार हैं—

(१) यति—यह नहुष का ज्येष्ठ पुत्र था।

(२) ययाति—यह नहुष के पश्चात् प्रतिष्ठान देश के राजगद्दी पर बैठ गया। इसी के नाम से 'पुंरवस् वंश' को 'ययाति वंश' यह नया नाम प्राप्त हुआ।

(३) संयाति—यह उत्तर आयु में 'परित्राजक' बन गया। इसके नाम के लिये, 'शर्याति' नामांतर भी प्राप्त है (पद्म. सू. १२; अग्नि. २७४)।

(४) आयति या अयति—इसके नाम के लिये, 'उद्भव' नामांतर प्राप्त है (मत्स्य. २४.५०; पद्म. सू. १२; अग्नि. २७४)।

(५) अथक (कूर्म. १.२२)—इसके नाम के लिये, पार्श्वक (ब्रह्म. १२), अंधक (लिंग. १.६६), वियति (विष्णु. ४.१०; भा. ९.१८.१; पद्म. सू. १२) नामांतर प्राप्त है।

(६) वियाति (मत्स्य. २४)—इसके नाम के लिये विजाति (लिंग. १.६६), सुयाति (ह. वं. १.३०.२; ब्रह्म. १२), कृति (विष्णु. ४.१०; भा. ९.१८.१), ध्रुव (म. आ. ७०.२८) नामांतर प्राप्त है।

(७) मेवजाति (मत्स्य. २४.५०)—इसके नाम के लिये, मेघपालक नामांतर प्राप्त है (अग्नि. २७४)।

३. कश्यप एवं कद्रू से उत्पन्न एक प्रमुख नाग।

४. वैवस्वत मनु का पुत्र।

नहुष मानव—एक मेघद्रष्टा (क्र. ९.१०१.७-९)।

नाक—दक्षसावर्णि मनु का पुत्र (मनु देखिये)।

नाक मौद्रल्य—एक तत्त्वज्ञ आचार्य। ब्राह्मणों में कई बार इसका निर्देश प्राप्त है (जै. उ. ब्रा. ३.१३.५; श. ब्रा. १२.५.२.१) अधिकांश स्थानों पर इसका निर्देश केवल 'नाक' नाम से आता है। किंतु नाक मौद्रल्य ऐसा स्पष्ट निर्देश एक ही स्थान पर है (बृ. उ. ६.४.४)। इसका ग्लव मैत्रेय ऋषि से वाद हुआ था (गो. ब्रा. १.१.३१)। वेदों का अध्ययन तथा अध्यापन एक तरह की तपःसाधना है, ऐसा इसका प्रतिपादन था (तै. उ. १.९)।

नाकुरय—कश्यप कुल का गोत्रकार।

नाकुलि—शृगुकुल का एक गोत्रकार। इसके नाम के लिये, 'लिबुकि' पाठभेद उपलब्ध है।

२. नकुल का नामांतर।

नाग—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र। यह मेरुकर्षिका नामक स्थान पर रहता था (भा. ५.१६.२६)। यह वरुण की सभा का सभासद था (म. स. ९.८; सर्प देखिये)।

२. प्राचीन मानव जातियों में से एक। दक्षकन्या कद्रू

को कश्यप ऋषि से एक सहस्र सर्प पैदा हुए। उन पुत्रों से ही आगे चल कर, नागजाति के लोग निर्माण हुए।

कश्यप के नागपुत्रों में निम्नलिखित नाग प्रमुख थे:- अनन्त, वासुकि, तक्षक, कर्कोटक, पद्म, महापद्म, शंख तथा कलिक।

एक बार ये प्रजा को बहुत कष्ट देने लगे। फिर ब्रह्म देव ने इन्हें शाप दिया, 'जनमेजय के सर्पसत्र के द्वारा, एवं तुम्हारे सापत्न वंश गरुड के द्वारा तुम्हारा नाश होगा'। शरण आने पर ब्रह्मदेव ने इन्हें उद्धार दिया, एवं एक सुरक्षित स्थान इनके लिये नियुक्त कर, वहाँ रहने के लिये इन्हें कहा। वहाँ 'नागतीर्थ' निर्माण हुआ। जिस दिन ये ब्रह्मदेव से मिलने गये, वह सावन माह के पंचमी का दिन था। नागमुक्ति का दिन होने के कारण, वह दिन 'नागपंचमी' नाम से प्रसिद्ध हुआ (पद्म. सू. ३१)।

प्रमुख नागपुत्रों के बारे में पुराणों में प्राप्त जानकारी 'परिवत्रक' के रूप में, नीचे दी गई है :-

नाम	अनंत	वासुकि	तक्षक	कर्कोटक	पद्म (नाभ)	महापद्म	शंखमाल	कलिक (कमल)
वर्ण	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र	शूद्र	वैश्य	क्षत्रिय	ब्राह्मण
रंग	शुक्र	आरक्त	पीत	कुण्ड	कुण्ड	पीत	आरक्त	शुक्र
दृष्टि	सामने	बायीं ओर	दायीं ओर	पीछे	चंचल	नीचे	बार बार	निश्चिंत
दिशा	पूर्व	अभिषेक	दक्षिण	नैऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान्य
चिह्न	पद्म	उपल	स्वस्तिक	कमल	पद्म	शूल	छत्र	अर्धचंद्र

इन नागों के देश आदि की विस्तृत जानकारी भविष्य पुराण में दी गयी है (भवि. ब्राह्म. ३३-३६)।

सर्पसत्र में दग्ध हुए नाग—जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुए, नाग वंश एवं नागों की विस्तृत नामावलि 'महाभारत' में दी गयी है। उन में से प्रमुख नागवंश एवं नागों के नाम इस प्रकार है।

वासुकिवंश—कोटिक, मानस, पूर्ण, सह, पैल, हलीसक, पिच्छिल, कोणप, चक्र, कोणवेग, प्रकालन, हिरण्यावाह, शरण, कक्षक, कालदन्तक, (म. आ. ५२. ५-६)।

तक्षकवंश—पुच्छण्डक, मण्डलक, पिण्डभद्र, रमेणक, उच्छिल, मुरस, द्रुङ्ग, बलहेड, विरोहण, शिलीशिलकर, मूक, सुकुमार, प्रवपन, सुदर, शशरोमन्, सुमनस्, वेगवाहन (म. आ. ५२. ७-९)।

पैरावतवंश—पारिवात, पारिमात्र, पाण्डुर, हरिण, कृश, विहंग, शरभ, मोद, प्रमोद, संहताङ्ग, (म. आ. ५२. १०)।

कौरव्यवंश—पेण्डिल, कुण्डल, मुण्ड, वेणिकण्ठ, कुमारक, बाहुक, शङ्खवेग, धूर्तक, पात, पातर (म. आ. ५२. १२)।

धृतराष्ट्रवंश—शङ्कुकर्ण, पिङ्गलक, कुठारमुख, पेचक, पूर्णाङ्गद, पूर्णमुख, प्रहस, शकुनि, हरि, अमाटक, कोमटक, श्रसन, मानव, वट, भैरव, मुण्डवेगाङ्ग, पिशाङ्ग, उद्रपारथ, ऋषभ, वेगवत्, पिण्डारक, महाहनु, रक्ताङ्ग, सर्वसारङ्ग, समृद्ध, पाट, राक्षस, वराहक, वारणक, सुमित्र, त्रिजवेदिक, पराशर, तरुणक, मणिकण्ठ, आरुणि (म. आ. ५२. १४-१७)।

निवासस्थान—नागों के तीन प्रमुख निवासस्थानों का निर्देश महाभारत में प्राप्त है। वे स्थान इस प्रकार हैं :-

(१) नागलोक—यह नागों का प्रमुख निवासस्थान था (म. उ. ९७. १)। नागराज वासुकि इस देश के राजा थे। इस लोक की स्थिति भूतल से हजारों योजन दूर थी (म. आश्र. ५७. ३३)। यह लोक सहस्र योजन विस्तृत था।

(२) नागधन्वातीर्थ—सरस्वती नदी के तटवर्ती एक प्राचीन तीर्थ, जहाँ नागराज वासुकि का निवासस्थान था। यही उसको नागराज के पद पर अभिषेक हुआ था।

(३) नागपुर—नैमिषारण्य में गोमती नदी के तट पर स्थित एक नगर, जहाँ पद्मनाभ नामक नाग का निवासस्थान था (म. शां. ३४३. २-४)।

२. मथुरा का एक राजवंश (भोगिन् देखिये)।

नागदत्त—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। यह भीम के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १३२. ११३५*)।

नागदत्ता—एक अम्बरा।

नागवीथी—धर्म ऋषि की यामी से उत्पन्न कन्या।

नागाशिल्प—गण्ड की एक प्रमुख संतान (म. उ. १९.९।)

नागेश—बसिष्ठ कुल का गोत्रकार।

नागेश्वर—शंकर का एक अवतार। दारुक नामक राक्षस को मार कर, इसने सुप्रिय नामक वैद्यनाथ का संरक्षण किया था। यही अवतार 'औढ्य नागनाथ' है नाम से प्रसिद्ध है (शिव. शत. ४२)। भूतेश्वर इसका उपलिंग है (शिव. कोटि. ४.१)।

नागाजित—स्वर्जित का पैतृक नाम।

नागाजिती—सत्य ५. देखिये।

नाचिक(कि)—विश्वामित्र का पुत्र।

नाचिकेत—नचिकेतस् ऋषि का नामांतर (नचिकेतस् देखिये)।

नाडापिती—शकुंतला के लिये प्रयुक्त विशेषण। इसका अर्थ निश्चित रूप से बताया नहीं जा सकता (श. ब्रा. १३.५.४.१३)।

नडचनीय—ब्रह्मांडमत में व्यास की सामाश्रित्य परंपरा के लोकाधि का शिष्य (व्यास देखिये)।

नाडायन—अंगिराकुल का गोत्रकार।

नाडीजंघ—एक बकराज। यह कश्यप ऋषि का पुत्र, एवं ब्रह्माजी का मित्र था। इसे 'राजधर्मन्' नामांतर भी प्राप्त था।

देवकन्या के गर्भ से जन्म लेने के कारण, इसकी शरीर की कान्ति देवता के समान दिखायी देती थी। यह बड़ा विद्वान्, एवं दिव्य तेज से संपन्न था (म. शां. १६३.१९-२०)।

गौतम नामक कृतघ्न ब्राह्मण ने इसका बध किया। किंतु सुरभि के फेन से यह पुनः जीवित हुआ (गौतम ५. देखिये)।

२. इंद्रद्युम्न सरोवर पर रहनेवाला एक चिरजीवि बक (म. व. ५)।

नाड्वलायन एवं **नाड्वलेय**—नड्वला के पुत्रों का मातृक नाम।

नाथ—विकुंड देवों में से एक।

नान्याहश—मरुद्गणों के छठवें गणों में से एक।

नाभ—नामाक राजा का नामान्तर (नाभाक २. देखिये)।

२. चाक्षुष मन्वंतर का एक ऋषि।

३. (सो.) एक राजा। यह नल राजा का पुत्र था। इसने दस हजार वर्षों तक राज्य किया।

नाभावत्ति—भागवत्ति देखिये।

नाभाक—एक सूक्तद्रष्टा ऋषि (ऋ. ८.३९-४१)। यह 'नभाक' ऋषि का पुत्र था। ऋग्वेद के तीन या चार सूक्तों के प्रणयन का श्रेय इसे दिया गया है (ऋ. ८.४१. २)।

'नाभाक काण्व' नाम से इसका निर्देश, कई जगह प्राप्त है। किंतु लुडविग के मत में, यह 'काण्व' न हो कर, 'आंगिरस' वंश का था (लुड. ऋग्वेद अनुवाद. ३. १०७)। इसके एक सूक्त में, यह सूर्यवंशी आंगिरस होने का निर्देश भी प्राप्त है।

अपने एक सूक्त में इसने कहा है, मेरे पिता नभाक, अंगिरस, मांधातृ एवं अशी के तरह, नये स्तोत्र तयार कर मैं इंद्र एवं अग्नि की स्तुति कर रहा हूँ (ऋ. ८.४०. १२)। इस निर्देश के कारण, ऋषि इस काल मांधातृ के पश्चात् का था, यह शकित होता है।

२. (सू. इ.) अयोध्या देश का एक राजा। वायु, भागवत, तथा विष्णुमत में, यह श्रुत का पुत्र था। मत्स्य मत में यह भगीरथ का पुत्र था। मत्स्य में इक्ष्वाकु राजा 'श्रुत' का निर्देश ही नहीं है।

विष्णु एवं वायु में इसे 'नाभाग', एवं भागवत में इसे 'नाभ' कहा गया है।

नाभाग—वैवस्वत मनु के दस पुत्रों में से एक, एवं प्राचीनकाल के एक महाप्रतापी राजा (पद्म. सु. ८)। कई ग्रंथों में, इसे वैवस्वत मनु का पौत्र, एवं नभग राजा का पुत्र कहा गया है (म. आ. ७७.१४; मा. ९.४)।

इसने समुद्रपर्यंत पृथ्वी को सात दिन में जीता था, एवं सत्य के द्वारा उत्तम लोकों पर विजय पायी थी (म. व. २६.११)। पृथ्वी को जीतने के बाद, इसने उसे दक्षिणा के रूप में ब्राह्मणों को दे दिया (म. शां. १७. २१)। किंतु शीलवान् एवं दयालु होने के कारण, दी हुई पृथ्वी स्वयं इसके पास वापस आ गयी (म. शां. १२४.१६-१७)।

इसने जीवन में कभी मांस नहीं खाया था। मांसभक्षण के त्याग के इस पुण्य के कारण, इसे 'परावरतत्व' का

ज्ञान हो गया, एवं ब्रह्मलोक में इसे प्रवेश मिल गया (म. अनु. ११५.५८-६८) ।

इसके सत्याचरण एवं उदारता की एक कथा पद्मपुराण में दी गयी है। अपने कुमारआयु में, यह गुरुगृह में विद्यार्जन कर रहा था। यह मौका देख, वैवस्वत मनु के अन्य पुत्रों ने उसका राज्य आपस में बाँट लिया। नाभाग को उसके राज्य के हिस्से से वंचित कर, इसे इसका पिता हिस्से के रूप में दिया। फिर इसके पिता ने इसे कहा, 'तुम चिन्ता मत करो। विपुल धनार्जन का रास्ता मैं तुम्हें दिखाता हूँ। आंगिरस ऋषि यज्ञ कर रहे हैं। यज्ञ के छठवें दिन उन्हें कुछ भ्रम सा हो कर, यज्ञ के मंत्र की उन्हें विस्मृति हो जाती है। उस वक्त, तुम उसे दो 'वैश्व-देवसूक्त' गा कर बतानो। उससे उसका यज्ञ पूरा होगा, एवं प्रसन्न हो कर, यज्ञ के लिये एकत्रित किया सारा धन वह तुम्हें दे देंगा।'

पिता के कथनानुसार, इसने अंगिरस को 'मंत्रस्मरण के बारे में सहायता दी' एवं अंगिरस ने भी यज्ञ का सारा धन इसे दे दिया। किंतु इसी वक्त एक कृष्णवर्णीय पुरुष का रूप धारण कर, रुद्र वहाँ उपस्थित हुआ, एवं यज्ञधन माँगने लगा। यज्ञ का अवशिष्ट धन पर रुद्र का ही अधिकार रहता है, यह जानते ही नाभाग ने सारा द्रव्य रुद्र को दे दिया। इसकी इस उदारता से प्रसन्न हो कर, रुद्र ने आंगिरस के यज्ञ की सारी संपत्ति नाभाग को प्रदान की एवं इसे 'ब्रह्मविद्या' भी सिखायी (पद्म. सू. ८)।

विष्णुकुल यही कथा नाभानेदिष्ट के नाम पर प्राचीन वैदिक ग्रंथों में दी गयी है (ऋ. १०.६१-६२)। ऋग्वेद के उन सूक्तों की रचना 'नाभाककाण्व' ने की है (ऋ. ८.३९-४१; नि. १०.५)।

नाभाग को अंबरीष नामक एक पुत्र था। इसके वंश की विस्तृत जानकारी बारह पुराणों में दी गयी है (वायु. ८९; विष्णु. ४.२; अग्नि. २७२; ब्रह्मांड. ३.६३; ब्रह्म. ७; मत्स्य. १२; ह. वं. १.१०; भा. ९.४-६)।

२. (सू. इ.) अयोध्या देश का राजा। विष्णु, वायु एवं भागवतमत्त में, यह श्रुत राजा का पुत्र था। मत्स्य-मत्त में, भगीरथ राजा के दो पुत्रों में से यह कनिष्ठ पुत्र था। भागवत में इसका 'नाभ' नामांतर प्राप्त है। इसके पुत्र का नाम अंबरीष था। किंतु रामायण में अंबरीष इसके पूर्वकालीन बताया गया है।

इसके नाभागरिष्ट, नाभानेदिष्ट, एवं नाभागदिष्ट

नामांतर भी प्राप्त हैं (अग्नि. २७२. १७१; नमग देखिये)।

३. (सू. दिष्ट.) वैशाली देश का राजा। यह वैवस्वत मनु का पौत्र, एवं दिष्ट राजा का पुत्र था। विष्णुमत्त में यह 'नेदिष्ट' का भागवतमत्त में यह 'दिष्ट' का, एवं वायुमत्त में यह मनु का पुत्र था (सुप्रभा ३. देखिये)।

नाभानेदिष्ट मानव—एक सूक्तद्रष्टा ऋषि (ऋ. १०. ६१-६२)। यह स्वायंभुव मनु का पुत्र था। पुराणों में 'नाभाग' के नाम पर दी गयी 'आंगिरस यज्ञ' की कथा वैदिक ग्रंथों में इसके नाम पर दी गयी है (ऐ. ब्रा. ५. १४; तै. सं. ३. १. ९. ४-६; सां. ब्रा. २८. ४; ३०. ४; सां. श्रौ. २६. ११. २८-३०)।

'पंचविशब्राह्मण' में इसके नाम का निर्देश 'नाभाने-दिष्टी' नाम से कर, इसने प्रणयित ऋग्वेद सूक्तों को 'नाभानेदिष्टीय सूक्त' कहा गया है (पं. ब्रा. २०. ९. २)।

नाभि—एक राजा। प्रियव्रतपुत्र आशीधर राजा को पूर्वचित्ति नामक अप्सरा से यह उत्पन्न हुआ था। इसे मेरुदेवी नामक स्त्री थी, जिससे इसे ऋषभदेव नामक पुत्र हुआ। इसके नाम से, इसके 'वर्ष' (राज्य) को 'अजनाभवर्ष' नाम प्राप्त हुआ (भा. ५. २. १९; ४. २)।

नाभिगुप्त—कुशद्वीप का राजा 'प्रैयव्रत' हिरण्यरेतस के सात पुत्रों में से एक। हिरण्यरेतस ने अपने राज्य के सात भाग कर, वे अपने सात पुत्रों में बाँट दिये थे (भा. ५.२०.१४; हिरण्यरेतस देखिये)।

नायकि—अंगिरसकुल का सोत्रकार।

नायु—दक्ष एवं असिकी की कन्या, तथा कश्यप की पत्नी।

नारद—एक वैदिक द्रष्टा एवं यज्ञवेत्ता (अ. वे. ५. १९.९; १२.४.१६; २४; ४१; मै. सं. १.५.८)। यह हरिश्चंद्र राजा का पुरोहित था, एवं पुरुषमेध करने की राय इसीने उसे दी थी (ऐ. ब्रा. ७.१३)। वशा धेनु का मांस ब्राह्मण ने भक्षण करना योग्य है या अयोग्य, इस विषय में इसका नामनिर्देश अथर्ववेद में कई बार आया है।

यह बृहस्पति का शिष्य था (सां. ब्रा. ३.९)। यद्यपि सारी विद्याएँ इसने बृहस्पति से प्राप्त की थी, तथापि 'ब्रह्मज्ञान' के प्राप्ति के लिये, यह सनत्कुमार के पास गया था (छां. उ. ७.१.१)।

सोमक साहदेव्य नामक अपने शिष्य को, इसने 'सोमविद्या' सिखायी थी (ऐ. ब्रा. ७. ३४)। पर्वत नामक अन्य आचार्य के साथ, इसने आँवष्टय एवं युधामौष्टि राजाओं को 'ऐंद्रमहामिषेक' किया था (ऐ. ब्रा. ८. २१)।

२. एक देवर्षि एवं ब्रह्माजी का मानसपुत्र। एक धर्मज्ञ तत्त्वज्ञ, वेदांतज्ञ, राजनीतिज्ञ एवं संगीतज्ञ के नाते, नारद का चरित्रचित्रण महाभारत में किया गया है (म. भा. परि. १. १११)। जी चाहे वहाँ भ्रमण करनेवाले एक ऋषि के नाते, नारद तीनों त्रिकाल आकाशनागों से प्रवास करता था, एवं इसका संचार तीनों लोकों में रहता था। यह वेद एवं वेदांत में पारंगत, ब्रह्म-ज्ञानयुक्त, एवं नयनीतिज्ञ था। राजाओं के घर में इसे बृहस्पति जैसा मान था। यह 'नानार्थकुशल', एवं लोगों के धर्म, राजनीति एवं नित्यव्यवहार आदि विषयों के संशय दूर करने में प्रवीण था। स्वभाव से यह पुण्यशील सीदासादा एवं मृदुभावगी था। यह उच्छृष्ट प्रवचनकार एवं संगीतकार था।

स्वरूपवर्णन—नारद की शरीरकान्ति श्वेत एवं तेजस्वी थी। इंद्र ने प्रदान किये सफेद, मृदु एवं धूत वस्त्र यह परिधान करता था। कानों में सुवर्णकुंडल, कंधों पर वीणा, एवं सिर पर, 'शृङ्गण शिखा' (मृदु चोटी) से, यह अलंकृत रहता था।

जन्म—नारद ब्रह्माजी का मानसपुत्र एवं विष्णु का तीसरा अवतार था (भा. १. ३. ८; मत्स्य. ३. ६-८)। यह ब्रह्माजी की जंघा से उत्पन्न हुआ था (भा. ३. १२. २८)। यह नरनारायणों का उपासक था (भा. १. ३), एवं दर्शन तथा जिज्ञासापूर्ति के हेतु, यह उनके पास हमेशा जाता था (म. शां. ३. २१. १३-१४)। यह चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षिओं में से एक था।

पुनर्जन्म—नारद ने दक्ष के 'हर्यश्च' नामक दस हजार पुत्रों को सांख्यज्ञान का उपदेश दिया, जिस कारण वे सारे विरक्त हो कर घर से निकल गये (म. भा. ७. ५-६)। अपने पुत्रों को प्रजोत्पादन से परावृत्त करने के कारण, दक्ष नारद पर अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं उसने इसे शाप दिया (विष्णु. १. १५)। इस शाप के कारण, नारद ब्रह्मचारी रह कर हमेशा भटकता रहा, एवं सारी दुनिया में झगड़े लगाता रहा (भा. ६. ५. ३७-३९)। दक्ष का शाप इसे जन्मजन्मांतर के लिये मिला था। इस कारण

कश्यप प्रजापति के घर लिये अपने अगले जन्म में भी, दस के शाप की पीड़ा इसे पूर्ववत् ही भुगतनी पड़ी।

दक्ष के शाप की यही कहानी, अन्य पुराणों में कुछ अलग ढंग से दी गयी है। हरिवंश के मत में, दक्ष ने नारद को शाप दिया, 'तुम नष्ट हो कर, पुनः गर्भवास का दुःख सहन करोगे' (ह. वं. १. १५)। परमेष्ठी ने अन्य ब्रह्मर्षियों को आगे कर, नारद को उःशाप देने की प्रार्थना दक्ष से की। फिर दक्ष ने परमेष्ठी से कहा, 'मैं अपनी कन्या तुम्हें विवाह में दे दूँगा, एवं उस कन्या के गर्भ से नारद का पुनर्जन्म हो जायेगा (वायु. ६६. १३५-१५०; ब्रह्मांड. ३. २. १८)। इस उःशाप के अनुसार, परमेष्ठी का विवाह दक्षकन्या से होने के पश्चात्, उन्हे नारद पुत्ररूप में प्राप्त हो गया (ब्रह्म. १२. १२-१५)।

देवी भागवत के मत में, दक्ष ने नारद को शाप दिया, 'तुम्हारा नाश हो कर, अगला जन्म तुम्हें मेरे ही पुत्र के नाते लेना पड़ेगा'। इस शाप के अनुसार, नारद मृत हो गया एवं 'दक्ष' एवं कीरिणी के पुत्र के नाते, नया जन्म लेने पर विवश हो गया (दे. भा. ७. १)।

वासुपुराण के मत में, शिवजी के शाप के कारण जिन प्रजापतियों की मृत्यु हो गयी, उनमें नारद भी एक था (वायु. ६६. ९)। अपने अगले जन्म में, यह कश्यप प्रजापति का पुत्र एवं अरुंधती तथा पर्वत इन कश्यप संतति का भाई बन गया (वायु. ७१. ७८. ८०)। महाभारत के मत में, पर्वत नारद का भाई न हो कर, भतीजा था (म. शां. ३. ०. ५; दे. भा. ६. २७)।

ब्रह्मवैवर्तपुराण में, नारद के पुनर्जन्म की कहानी कुछ अलग ढंग से दी गयी है। दक्ष के शाप के कारण, एक शूद्रस्त्रीगर्भ से यह पुनः उत्पन्न हुआ। इस नये जन्म में, इसकी माता कलावती नामक शूद्र स्त्री थी। द्रमिल नामक शूद्र की वह पत्नी थी। अपने पति की अनुमति से, कलावती ने पुत्रप्राप्ति के हेतु, कश्यप प्रजापति का वीर्य प्राप्त किया। बाद में द्रमिल ने देहत्याग किया, एवं कलावती एक ब्राह्मण के घर प्रसूत हो कर, उसे एक पुत्र हुआ। वही नारद है। बाद में इसे कश्यप ऋषि को अर्पण किया गया। कृष्णस्तव के कारण, यह शापमुक्त हुआ, एवं ब्रह्मदेव ने इसे सृष्टि उत्पन्न करने की अनुज्ञा भी दी। किंतु यह आजन्म ब्रह्मचारी ही रहा।

महाभारत में, कश्यप एवं सुमि के पुत्र के रूप में,

नारद ने पुनः जन्म लिया, ऐसा निर्देश प्राप्त है (म. आ. ५९. ४३)।

देवों का वार्ताहर—त्रैलोक्य के राजाओं का वार्ताहर, एवं सलाहकार ऋषि मान कर, नारद का चरित्रचित्रण महा-भारत में किया गया है। अर्जुन के जन्म के समय नारद उपस्थित था (म. आ. ११४. ४६)। द्रौपदी के स्वयंवर में, अन्य गंधर्व एवं अप्सराओं के साथ, यह गया था (म. आ. १७८. ७)। पश्चात् द्रौपदी के निमित्त, पांडवों का आपसमें कोई मतभेद न हो, इस उद्देश्य से नारद इंद्रप्रस्थ चला आया। पांडवों के प्रति, सुंद एवं उपसुंद की कथा का वर्णन कर, द्रौपदी के विषय में झगड़े से बचने के लिये कोई नियम बनाने की प्रेरणा, इसने पांडवों को दे दी (म. आ. २०४)।

युधिष्ठिर इंद्रप्रस्थ का राजा होने के पश्चात्, नारद ने उसे हरिश्चंद्र की कथा सुना कर, राजसूय यज्ञ की प्रेरणा दी (म. स. ११. ७०)। राजसूययज्ञ में अवभृथस्नान के समय, नारद ने स्वयं युधिष्ठिर को अभिषेक किया (म. स. ४९. १०)।

विदर्भ देश की राजकन्या दमयंती के स्वयंवर की वार्ता, इंद्र को नारद ने ही कथन की थी (म. व. ५१. २०-२४)। राजा अश्वपति के पास जा कर, सत्यवान् एवं सावित्री के विवाह का प्रस्ताव नारद ने ही प्रस्तुत किया था (म. व. २७८. ११-३२)।

प्राचीन राजाओं की अनेक कथाएँ नारद के द्वारा 'महाभारत' में कथन की गयी हैं। उनमें से इसने सृज्य राजा को कथन किये, 'षोडश राजकीय उपाख्यान' की कथाएँ विशेष महत्त्वपूर्ण मानी जाती है (म. द्रो. परि. १. ८. ३२५-८७२)। उन कथाओं में निम्नलिखित राजाओं के चरित्र, पराक्रम, महत्ता, दानशीलता, एवं उत्कर्ष का वर्णन किया गया है:—१. आविश्वित मरुत्, २. वैदिधिन सुहोत्र, ३. पौरव, ४. औशीनर शिवि, ५. दाशरथि राम, ६. ऐश्वकाकु मगीरथ, ७. ऐलविल दिलीप, ८. यौवनाश्र मान्धातु, ९. नाहुष ययाति, १०. नाभाग अंबरीष, ११. यादव शशबिंदु, १२. आमूर्तरयस गय, १३. सांक्रुति रंतिदेव, १४. दौष्यन्ति भरत, १५. वैन्य पृथु, १६. जामदग्न्य परशुराम। नारद ने कथन की हुआ यही कथाएँ, भारतीय युद्ध के बाद, श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से निवेदन की थी (म. शां. २९)।

भारतीय युद्ध के रात्रियुद्ध में, नारद ने कौरवपांडवों की सेनाओं में दीपक का प्रकाश निर्माण किया था (म.

द्रो. १३८)। भारतीय युद्ध में हुए कौरवों के संपूर्ण विनाश की वार्ता, बलराम को नारद ने ही सुनायी थी (म. श. ५३. २३-३१)। अर्जुन एवं अश्वत्थामा के युद्ध में ब्रह्मास्त्र को शांत करने के लिये नारद प्रकट हुआ था (म. सौ. १४. ११-१२)। युद्ध के पश्चात्, युधिष्ठिर के पास आ कर, उसका कुशल समाचार नारद ने पूछा था (म. शां. ९-१२)।

युधिष्ठिर के अश्वमेधयज्ञ के समय नारद उपस्थित था (म. आश्र. ९०. ३८)। प्राचीन ऋषियों की तपः-सिद्धि का दृष्टान्त दे कर, नारद ने धृतराष्ट्र की तपस्या-विषयक श्रद्धा को बढ़ाया था (म. आश्र. २६. १)। वन में धृतराष्ट्र, कुन्ती, एवं गांधारी दावानल से दग्ध होने का समाचार, नारद ने ही युधिष्ठिर को कथन किया था (म. आश्र. ४५. ९-३१)। नारद ने युधिष्ठिर से कहा, 'धृतराष्ट्र लौकिक अग्नि से नहीं, किंतु अपने ही अग्नि से दग्ध हो गया है'। इतना कह कर, इसने युधिष्ठिर से धृतराष्ट्र को जलाजली प्रदान करने की आज्ञा दी (म. आश्र. ४७. १-९)। सांव के पेट से सुसल पैदा होने का शाप देनेवाले ऋषियों में, नारद एक था (म. मौ. २. ४)।

तत्त्वज्ञ नारद—एक तत्त्वज्ञ के नाते, नारद श्रेष्ठ विभूति थे। तत्त्वज्ञ नारद ने दिये उपदेश के अनेक कथा-भाग 'महाभारत' में निर्देश किये गये हैं। तीस लाख श्लोको-वाला 'महाभारत' नारद ने देवताओं को सुनाया था (म. आ. परि. १. ४)। 'पंचरात्र' नामक आत्मतत्त्व का उपदेश नारद ने व्यास को दिया था (म. शां. ३२६)। इसने सूर्य के अष्टोत्तरशत नाम का उपदेश धौम्य को दिया था (म. व. ३. १७-२९)। इसने शुक्रदेव को वैराग्य, ज्ञान आदि विविध विषयों का उपदेश दिया था (म. शां. ३१६-३१८)। मार्कंडेय को नारद ने धर्मशास्त्र एवं तत्त्वज्ञान के बारे में जानकारी दी थी (म. अनु. ५४-६३ कुं.)। पूजनीय पुरुषों के लक्षण, एवं उनके आदरसत्कार से होनेवाले लाभ का वर्णन इसने श्रीकृष्ण को बताया था (म. अनु. ३१. ५-२५)। श्रीकृष्ण की माता देवकी को, विभिन्न नक्षत्रों में विभिन्न वस्तुओं के दान का महत्त्व नारद ने कथन किया था (म. अनु. ६४. ५-३५)।

'श्रेयःप्राप्ति' के लिये नारायण की उपासना करने का उपदेश, नारद ने पुंडरीक को दिया था (म. अनु. १२४)। समुद्र के किनारे ब्रह्मसत्र करनेवाले ज्ञानी

प्रचेताओं को नारद ने ज्ञानोपदेश दिया था (म. शां. ३१६-३१९)। सृष्टि की उत्पत्ति तथा लय के बारे में जानकारी इसीने देवल को बतायी थी (म. शां. २६७)। समग के साथ इसका ज्ञानविषयक संवाद हुआ था (म. शां. २७५)। पुत्रशोक करनेवाले अकंपन राजा को, मृत्यु की कथा बता कर इसने शांत किया था (म. शां. २४८-२५०)। शास्त्रश्रवण से क्या लाभ होता है, इसकी जानकारी इसने गालव को दी थी (म. शां. २७६)।

प्राणापान में से प्रथम क्या उत्पन्न होता है, इसका ज्ञान नारद ने देवमत को प्रदान किया (म. आश्व. २४)। शतयूगा को इसने स्वर्ग के बारे में जानकारी दी (म. आश्व. २७)।

भागवत आदि ग्रंथों में भी तत्त्वज्ञ नारद के अनेक निर्देश दिये गये हैं। सावर्णि मनु को 'पंचरात्रागमतंत्र' का उपदेश नारद ने दिया था (भा. १.३.८; ५.१९.१०)। इसने व्यास को 'भागवत' ग्रंथ लिखने की प्रेरणा दी थी (भा. १.५.८)। ऋषियों को इसने 'भागवतमाहात्म्य' बताया था (पद्म. उ. १९३-१९५)।

संगीतकलातज्ज्ञ—नारद श्रेष्ठ श्रेणी का संगीतकलातज्ज्ञ एवं 'स्वरज्ञ' था (म. आ. परि. १११.४०)। इसका 'नारदसंहिता' नामक संगीतशास्त्रसंबंधी एक ग्रंथ भी प्राप्त है।

नारद ने संगीत कला कैसी प्राप्त की, इसके बारे में कल्पनारम्य कथा अध्यात्मरामायण में दी गई है (अ. रा. ७)। एक बार लक्ष्मी के यहाँ संगीत का समारोह हुआ। उस समय गायनकला न आने के कारण, लक्ष्मी ने नारद को दासियों के द्वारा बेंत एवं धके मार कर सभास्थान से निकाल दिया, एवं संगीतकलाप्रवीण होने के कारण तुंबक का सम्मान किया। यह अपमान सहन न हो कर, इसने लक्ष्मी को शाप दिया, 'तुम राक्षसकन्या बनोगी। मटके में इकट्ठा किया गया खून पी कर रहनेवाली स्त्री के उदर से तुम्हारा जन्म होगा। अपने माता के नीच कृत्य के कारण, तुम्हें घर से निकाल दिया जायेगा'।

गायन सीखने के लिये यह गानबंधुओं के पास गया। वहाँ यह गानविद्याप्रवीण बन गया, एवं इसे स्वरज्ञान हो कर, संगीतकला में अन्तर्गत दशसहस्र स्वरों का सूक्ष्म भेदाभेद यह समझने लगा। किन्तु इसका संगीत ज्ञान केवल प्राथिक ही रहा। इसके गले से निकलनेवाले स्वर अभी तक वेदंग ही रहे। अपने अधुरे संगीतज्ञान का प्रदर्शन

करने के हेतु, यह तुंबक के पास गया। वहाँ इसे सारी रागिनियाँ दृष्टी मरोड़ी अवस्था में दिखाई पड़ीं। इसने उन्हें उनकी यह विकल अवस्था का कारण पूछा। फिर उन्होंने कहाँ, 'तुम्हारे वेदंगे' गायन के कारण, हमारी यह हालत हो चुकी है। तुंबक का गायन सुनने के बाद हमें पूर्वस्थिति प्राप्त होगी'।

रागिनियों के इस वक्रोक्तिपूर्ण भाषण से लज्जित हो कर, यह श्वेतद्वीप में गया। वहाँ इसने विष्णु की आराधना की। उस आराधना से प्रसन्न हो कर श्रीविष्णु ने इससे कहा, 'कृष्णावतार में मैं खुद तुम्हें गायन सिखाऊंगा'। इस वर के अनुसार, कृष्णावतार के समय, यह कृष्ण के पास गया। वह जांबवती, सत्यभामा एवं रुक्मिणी, इन कृष्णापत्नियों ने तथा बाद में स्वयं कृष्ण ने इसे गायनकला में पूर्ण पारंगत किया। श्रीकृष्ण के पास जाने के पहले यह पुनः एक बार तुंबक के पास गया था। परंतु वहाँ धैवतों के साथ षड्जादिक्रम देवकन्याओं को इसने देखा, एवं शरम के मारे यह वहाँसे वापस चला आया।

नारद-नारदी—पुराणों में नारद का व्यक्तिचित्रण, एक धर्मेज्ज देवर्षि की अपेक्षा, एक हास्यजनक व्यक्ति के नाते भी किया गया प्रतीत होता है।

विष्णु की माया के कारण, नारद का रूपांतर कुछ काल के लिये 'नारदी' नामक एक स्त्री में हो गया था। यह कथा विभिन्न पुराणों में, अल्पा अल्पा ढंग से दी गई है। 'नारदपुराण' के मत में, वृंदा के कहने पर नारद ने एक बार सरोवर में डुबकी लगाई। उस सरोवरस्नान के कारण, इसका रूपांतर नारदी नामक स्त्री में हो गया। इसी नारदी का कृष्ण से वैवाहिक समागम हो गया। पश्चात् अन्य एक सरोवर में स्नान करने पर, इसे पुरुषरूप फिर वापस मिल गया (नारद. २. ८७; पद्म-पा. ७५)।

यही कथा 'ब्रह्मपुराण' में इस प्रकार दी गयी है : एक बार श्वेतद्वीप में जा कर, नारद ने श्रीविष्णु की स्तुति की। उसने प्रसन्न हो कर इसे वर माँगने के लिये कहा। फिर इसने कहा, 'भगवन् मुझे अपनी माया दिखाओ'। इसे गरुड़ पर बैठा कर विष्णु कान्यकब्ज देश ले गया, तथा एक सरोवर में स्नान करने के लिये उसने इसे कहा। स्नान के लिये सरोवर में डुबकी लगाते ही इसे पता चला कि, इसका रूपांतर काशिराज की कन्या मुशीला नामक स्त्री में हो गया है। बाद में मुशीला का रूप धारण किये हुए नारद का व्याह विदर्भ राजा सुशर्मा से हुआ। पश्चात्

विदमें राजा सुशर्मा, तथा काशिराज का आपस में युद्ध हो कर, दोनों का ही नाश हो गया। जनककुल तथा भरतकुल दोनों का ही नाश देख कर, दुःखातिरेक से इसने चिन्ता में प्रवेश किया।

बात यहाँ तक बढ़ते ही यह पानी से बाहर आया एवं यह सारा कथाभाग इसे सपने जैसा प्रतीत होने लगा। किन्तु उस प्रसंग के चिह्नस्वरूप अलने की निशानी इसकी जॉध पर रह गई, तथा उसके दुःख से यह लगातार तड़पने लगा। सरोवर के किनारे बैठे हुए विष्णु का दर्शन लेते ही, इसकी वेदना शान्त हो गयी (ब्रह्म. १२८)।

‘देवीभागवत’ के त्रयनानुसार, अपने नारीश्वतार में नारद तालजंघ राजा की पत्नी बना था, जिससे इसे बीस पुत्र पैदा हुए थे (दे. भा. ६. २८-३०)।

एक बार गाने की मधुर आवाज सुन कर, नारद ने वृंदा से पूछा, ‘यह गाने की आवाज कहाँ से आ रही है?’ फिर उसने इसे गीतगायन में तल्लीन कुब्जा दिखाई, एवं कुब्जा का जन्मवृत्तान्त इसे बताया (नारद २.८०)।

विवाह—शिविराज संजय की दमयंती नामक कन्या के साथ नारद का विवाह हुआ था, ऐसा कथाभाग कई पुराणों में दिया गया है। ‘नारदविवाह’ की ब्रह्मवैवर्त पुराण में दी गयी कथा इस प्रकार है (ब्रह्मवै. ४.१३०.१०-१५)। एक बार नारद तथा उसका भतीजा पर्वत भूमते धूमते दैव्यपुत्र संजय (संजय) के घर आये, एवं वहाँ कुछ काल तक रह गये। संजय ने इनका स्वागत किया, एवं अपनी कन्या दमयंती को इनके सेवा में नियुक्त किया। उस समय नारद तथा पर्वत में ऐसा करार हुआ था, ‘इन दोनों के मन में जो भी बात आवेगी, वह छिपाना नहीं बल्कि तत्काल दूसरे को कथन करना, अगर कोई कुछ छिपाने की कोशिश करे, तो दूसरा उसे शाप दे सकता है’।

कई दिन बीतने के बाद, नारद दमयंती पर प्रेम करने लगा, किन्तु यह बात इसने पर्वत से छिपा रखी। नारद की इस दगावजी को देख कर, पर्वत इस पर अत्यंत क्रोधित हुआ, एवं उसने इसे शाप दिया, ‘तेरा मुख वानर के सदृश हो जावेगा, एवं अग्यों को तुम साक्षात् मृत्यु के समान दिखाई दोगे’। यह शाप सुन कर, नारद ने भी पर्वत को प्रतिशाप दिया, ‘तुम्हें स्वर्गप्राप्ति नहीं होगी’।

इस पर पर्वत वीन हो कर नारद की शरण में आया, तथा इसे अपना शाप वापस लेने के लिये प्रार्थना करने लगा। फिर नारद एवं पर्वत ने अपने अपने शाप वापस

ले लिये। पश्चात् संजय की कन्या दमयंती से नारद का ब्याह हो गया (दमयंती देखिये)।

सुवर्णश्रीविन् कथा—संजय की सेवा से संतुष्ट हो कर, नारद ने उसे वर माँगने के लिये कहा। संजय ने सर्वगुण-संपन्न पुत्र माँगा। नारद के वरानुसार कुछ दिनों के बाद संजय को एक पुत्र हुआ। महाभारत द्रोणपर्व के अनुसार, जिसके मूत्रपूरीघादि उत्सृष्ट पदार्थ सुवर्ण के हैं, ऐसा पुत्र संजय ने नारद से माँगा। नारद के आशीर्वाद से उसे वैसा ही सुवर्णश्रीविन् नामक पुत्र पैदा हुआ। सुवर्णमय मलमूत्र विसर्जन करनेवाले उस बालक को कई चोर चुरा ले गये तथा उसका उदर उन्होंने विद्विष किया। किन्तु इच्छित सुवर्णप्राप्ति न होने के कारण, क्रोधित होकर वे आपस में ही लड़ कर मर गये (म. द्रो. ५५)।

शान्तिपर्व में यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गई है। ‘अपना पुत्र इंद्र का पराजय करनेवाला हो, ऐसी संजय की इच्छा थी। ‘तुम्हारा पुत्र दीर्घायु नहीं होगा’ ऐसा शाप पर्वत ने संजय को दिया था। फिर संजय अत्यंत निराश हो गया। उसका दीनबदन देख कर नारद ने उसे कहा, ‘पर्वत के शाप से तुम्हारा पुत्र मृत होते ही, मेरा स्मरण करो। मैं तुम्हें उसी रूपगुण का दूसरा पुत्र प्रदान करूँगा।’

नारद के वर के अनुसार संजय को एक पुत्र हुआ। उसका नाम सुवर्णश्रीविन् रख दिया गया। वह अपना पराभव करेगा ऐसा भय इंद्र को लगा। इसलिये इंद्र ने उस पुत्र के पीछे ब्रह्म छोड़ा, जिससे कुछ फायदा नहीं हुआ। बाद में एक दाई के साथ वह पुत्र सरोवर की ओर भूमने गया। उस समय उसे एक शेर ने मार डाला। पुत्रशोक से पागल से हुए, संजय ने नारद का स्मरण किया। फिर नारद प्रकट हुआ, एवं संजय के शोकहरणार्थ इसने उसे काफ़ी उपदेश किया। उपदेश करते समय इसने मरुत्तावि राजाओं का चरित्र कथन कर के उसका दुःख कम किया। उसका शोक दूर होने पर, नारद ने उसे उसका मृत पुत्र वापस दिया (म. द्रो. परि. १. क्र. ५८)।

शत्रुघ्न को चैतावनी—रामायणकाल में राम का अश्वमेधीय अश्व वीरमणि ने पकड़ लिया। उस समय वहाँ प्रकट हो कर, नारद ने अश्व की रक्षा करनेवाले शत्रुघ्न को चैतावनी दी, एवं सावधानी से युद्ध करने के लिये कहा। ‘युद्धभूमि में विजय अत्यंत प्रयत्न से ही प्राप्त होता है,’ ऐसा इसके उपदेश का सार था।

कलियुगी में—एक बार पुष्करक्षेत्र में ऋषियों का सत्र चालू था। वहाँ अनेक प्रकार की चर्चाएँ चल रही थीं। उस में कलियुग के बारे में चर्चा करते वक्त एक ऋषि ने कहा, 'अन्य कौन से ही युग से कलियुग अच्छा है, क्यों कि उसमें फलप्राप्ति शीघ्र होती है।' इतने में नारद एक हाथ में शिक्ष, तथा एक हाथ में ज्ञान पकड़ कर वहाँ आया। इसने ऋषियों से कहा, 'ये दो इन्द्रिय कलियुग में अनिवार्य होती है। इसलिये इस पालेड-प्रचुर भारत का त्याग कर आर्य अन्यत्र चले'। यह सुनते ही ऋषियों ने सत्र समाप्त कर दिया, तथा वे वहाँ से चले गये (स्कन्द. २. ७. २२)। जिस समय ब्रह्मदेव ने सत्र किया, उस समय उपस्थित ब्रह्मगणों में नारद एक था (पद्म. सू. ३४)। इसने कोटितीर्थ, जयादित्य, नवदेवी, भद्रादित्य इ. तीर्थों की स्थापना की (स्कन्द. १. ४३-४७)।

कृष्णकथाओं में नारद—एक बार नारद नन्द के घर गया। वहाँ इसने सोचा कि, कृष्ण जब प्रत्यक्ष विष्णु है, तो उसकी पत्नी लक्ष्मी ने भी यहीं कहीं अवतार अवश्य लिया होगा। इसी विचार से इसने नन्द के परिवार में लक्ष्मी का तलाश करना प्रारंभ किया। पश्चात् इसने देखा कि, भानु नामक गोप की अंघी, लूटी, एवं बहुरी कन्या बन कर, लक्ष्मी ने नन्दपरिवार में जन्म लिया है (पद्म. पा. ७१)।

कृष्णजन्म के समय, उसके पिता वसुदेव एवं माता देवकी मथुरा का राजा कंस के कारागार में कैद किये गये थे। उस समय, वसुदेव एवं देवकी के आठवें पुत्र से अपने को धोखा है, यह समझ कर, कारागार में पैदा हुए उनके पहले छः पुत्रों को कंस छोड़ देना चाहता था। किंतु कंस की पापराशि बढ़ाने के हेतु, उन सारे पुत्रों का बध करने की प्रेरणा नारद ने कंसराजा को दी। उस उपदेश के अनुसार, कंस ने देवकी के छः पुत्रों का, जन्मते ही बध किया (भा. १.१.६४)।

नरकासुर के वंशदान से मुक्त किये सोलह हजार स्त्रियों से, कृष्ण ने भिन्न भिन्न मंडलों में एक ही सुहृत् पर विवाह किया। यह चमत्कृतिजनक वृत्त सुन कर नारद को बड़ा ही आश्चर्य हुआ। इस वार्ता की सत्यता अज्ञानों के लिये, यह कृष्ण के घर स्वयं चला आया, एवं हर-एक कृष्णपत्नी की कोठी में जा कर जाँच लेने लगा। वहाँ इसने देखा कि, अपने हरएक पत्नी के कोठी में, कृष्ण उपस्थित है, एवं किसी न किसी कार्य में वह मग्न है।

फिर फजिहत हो कर, नारद कृष्ण की शरण में गया (भा. १०.५९.३३-४५)।

एक बार श्रीकृष्ण अपनी पत्नी रुक्मिणी के पास बैठा था। उस वक्त नारद ने प्रकट हो कर, उसे स्वर्ग का पारिजातक पुष्प दिया। श्रीकृष्ण ने उसे रुक्मिणी को दिया। इस कारण सत्यभामा तथा कृष्ण में झगड़ा हो गया (ह. वं. २.६५-७३; विष्णु. ५.३०)। 'पति का दान करने पर वही पति जन्मजन्मान्तर में प्राप्त होता है', आदि कह कर, इसने सत्यभामा से स्वयं ही श्रीकृष्ण का दान ले लिया। पश्चात् कृष्ण तथा पारिजातक वृक्ष के भार का सुवर्ण ले कर, इसने उसे लौटा दिया (पद्म. उ. ८८)।

पार्वती का विवाह शंकर के साथ करने की सलाह नारद ने हिमालय को दी थी (पद्म. सू. ४३)।

इंद्रसभा में—एक बार इंद्र अपनी सभा में अप्सराओं के साथ बैठा था। उस वक्त नारद वहाँ गया। उत्पापन के द्वारा योम्य मान देने के बाद, इंद्र ने नारद से पूछा, 'मैं किस अप्सरा को नृत्य करने का आदेश दूँ?' नारद ने कहा 'सुणरूप में जो खुद को श्रेष्ठ समझती हो वही नृत्य करें'। तब मैं श्रेष्ठ, मैं श्रेष्ठ कह कर सारी अप्सराएँ आपस में झगड़ने लगी। यह देख इंद्र ने उन्हें कहा, 'इसका निर्णय नारद ही कर देंगे'। नारद से पूछा जाते ही इसने कहा, 'तप करनेवाले दुर्वासस को जो मोहित कर सके उसे ही मैं श्रेष्ठ कहूँगा'। पश्चात् वपु नामक एक अप्सरा ही इस काम के लिये तैयार हुई (माक. १.३०-४७)।

इनके अतिरिक्त अनेक पौराणिक व्यक्तियों के साथ नारद का संबंध आता है (नलद्वार, प्रह्लाद, रुद्रकेतु, शेष तथा वृन्दा देखिये)।

धर्मशास्त्रकार—धर्मव्यवहार पर नारद के 'लघु-नारदीय' एवं 'बृहन्नारदीय' ऐसे दो ग्रंथ उपलब्ध हैं। मनु तथा नारद के मतों में काफी साम्य है। याज्ञवल्क्य तथा पराशर ने प्राचीन धर्मशास्त्रकारों में नारद का उल्लेख नहीं किया है। किंतु विश्वरूप ने, बृहयाजवल्क्य का (याज्ञ. १.४-५) एक श्लोक उद्धृत कर, नारद को दस धर्मशास्त्रकारों में से आद्य धर्मशास्त्रकार मान लिया है। विश्वरूप ने अन्यत्र भी इसका उल्लेख अनेक बार किया है (याज्ञ. २.१९०; १९६; २२६; ३.२५२)।

मेधातिथि ने नारद का एक गद्य उद्धरण ले कर, इसका अनेक बार उल्लेख किया है। अग्निपुराण में नारदस्मृति का काफी भाग आया है। 'स्मृतिचन्द्रिका', 'हेमाद्रि'

‘पराशरमाधवीय’ आदि ग्रंथों में, नारद के काफी श्लोक लिये गये हैं।

नारद याज्ञवल्क्य का परवर्ती होगा। नारद ने सात प्रकार के दिव्य दिये हैं। याज्ञवल्क्य ने पाँच ही प्रकार के दिये हैं। नारद ने न्यायशास्त्र का सुसंगत विवेचन नहीं किया। याज्ञवल्क्य ने उसे व्यवस्थित ढंग से किया है।

नारद किस प्रदेश का रहनेवाला था, यह बताना कठिन है। इसने कार्पाण (सिक्का) का उल्लेख किया है। यह सिक्का पंजाब में प्रचलित था। कुछ लोग कहते हैं कि, यह नेपाल का निवासी होगा।

भद्रोजी दीक्षित ने ‘ज्योतिर्नारद’ नामक ग्रंथ का उल्लेख किया है (चतुर्विंशतिमत. ११)। रघुनेदन ने ‘बृहन्नारद’ का एवं ‘निर्णयसिंधु’, ‘संस्कारकौस्तुभ’ आदि ग्रंथों में ‘लघुनारद’ का निर्देश किया है। ‘खुले आम किये गये पातक की अपेक्षा, गुप्त रूप से किया गया पातक कई गुना कम दोषार्ह है, क्योंकि, उसमें कम से कम पातक करनेवाले आदमी की धर्म के प्रति भीरुता प्रकट होती है’, ऐसा धर्मशास्त्रकार के नाते नारद का कहना था (नारद. १३.२७)।

शिक्षाकार—नारद ने सामवेद पर एक ‘शिक्षा’ की रचना की। यह शिक्षा प्रायः श्लोकग्रन्थ है। ‘मद्-शोभाकर’ ने उस पर भाष्य लिखा है।

अन्य ग्रंथ—नारद के नाम पर ‘नारदपुराण’ एवं वास्तुशास्त्रसंबंधी अन्य एक ग्रंथ उपलब्ध हैं। उनमें से ‘नारदपुराण’ इसने ‘सारस्वत कल्प’ में बताया था (नारद. २.८२)।

३. विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५९)।

४. राम की सभा का एक धर्मशास्त्री। इसने शूद्र हो कर भी तपस्या करनेवाले शंबूक नामक शूद्र का, राम के द्वारा वध करवाया। सोलह साल की छोटी उम्र में मृत हुए एक ब्राह्मणपुत्र को इसने पुनः जीवित कर दिया (वा. रा. उ. ७४)।

नारद काण्व—एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१३; ९. १०४-१०५)।

नारद-पर्वत—वैदिक ऋषिद्वय (ऐ. ब्रा. ७.३४; ८.३१; नारद १. देखिये)।

नारदिन्—विश्वामित्र का पुत्र।

नारदी—नारद ने एक बार कुंदारण्य के कौमुभ सरोवर में स्नान किया, जिस कारण उसका पुरुषत्व नष्ट हो कर

वह स्त्री बना। उस समय उसे नारदी नाम प्राप्त हुआ (नारद. उ. ८०; नारद देखिये)।

नारायण—एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.९०)।

२. एक भगवत्स्वरूप देवता, एवं स्वायंभुव मन्वन्तर के सत्ययुग में प्रकट हुए भगवान् वासुदेव के चार अवतारों में से एक। यह एवं इसके तीन भाई नर, हरि एवं कृष्ण धर्म ऋषि के पुत्र के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुए थे (म. शां. ३३४.९.१२; नरनारायण एवं नर देखिये)। देवकीपुत्र कृष्ण इसीका ही अवतार बताया गया है (म. आ. १.१)।

दक्षयज्ञ के समय, भगवान् शंकर ने एक प्रचलित त्रिशूल चलाया। दक्षयज्ञ का विध्वंस कर के, वह भगवान् नारायण की छाती में आ लगा। फिर नारायण ने हुंकार किया, एवं वह त्रिशूल शंकर के हाथ में लौटा दिया। अपने त्रिशूल के अवमान से क्रुद्ध हो कर, शंकर ने नर एवं नारायण पर आक्रमण किया। पश्चात् हुए रुद्र-नारायण युद्ध में, नारायण ने रुद्र का गला दबा दिया। अतः रुद्र ‘नीलकंठ’ हो गया (म. शां. ३३०.४९)।

नारायण ने देव एवं दानवों को समुद्रमंथन के लिये प्रवृत्त किया (म. आ. १५.११-१३)। पश्चात् इसने मोहिनी का रूप धारण कर, देवताओं को अमृत पिलाया (म. आ. १६.३९-४०)। देवासुरसंग्राम में इसने असुरों का संहार किया था (म. आ. १७.१९-३०)।

नारायण के कृष्ण एवं श्वेत केश, श्रीकृष्ण एवं बलराम के रूप में प्रगट हुए थे। महाभारत काल में, यह अपने भाई नर के साथ, बदरिकाश्रम में सुवर्णमय रथ पर त्रैट कर तपस्या करता था (म. शां. १२२४*)।

महाभारत में, श्रीविष्णु के वारह, नृसिंह आदि अवतार नारायण के ही अवतार बताये गये हैं (म. स. ३८)। पृथ्वीलोक से श्रीकृष्ण का निराण होने के बाद, अपने नारायणस्वरूप में वह विलीन हो गया (म. स्वर्गा. ५.२४*)।

पौष मास में नारायण के पूजन से प्राप्त होनेवाले पुण्यफल का वर्णन महाभारत में दिया गया है (म. अ. १०९.४)।

पद्ममत में, पुष्करक्षेत्र में हुए ब्रह्माजी के यज्ञ में, उद्गातृगणों में से एक प्रतिहर्ता के नाते, नारायण उपस्थित था (पद्म. सू. ३४)।

३. तुषित एवं साध्य देवों में से एक।

४. (कण्व. भविष्य.) एक राजा। भागवत तथा

विष्णु मत् में यह भूमित्र का, वायुमत् में भूमित्र का, तथा मत्स्य तथा ब्रह्मांड के मत् में भूमित्र का पुत्र था।

नारायणि—अंगिरा कुल का गोत्रकार। 'परस्परायणि' इसका ही पाठभेद है।

नारायणी—मुद्गल ऋषि की स्त्री। इसी को 'इंद्रसेना' कहते थे।

२. दुर्गा का एक नाम। मार्कंडेय पुराण में इसका माहात्म्य दिया गया है (मार्क. ८८)।

नारी—मेरु की कन्या, तथा अग्नीध्रपुत्र कलू की स्त्री (भा. ५. २. २३)।

नारीकवच—(सू. इ.) अश्मक देश के मूलक राजा का नामांतर (मूलक १. देखिये)। परशुराम के भय के कारण, यह सदैव नारीसमुदाय में रहता था। इस कारण इसे यह नाम प्राप्त हुआ।

नारि—एक वैदिक राजा। यह 'उर्जयन्ती' का राजा था। सहस्रसु के राजा के साथ इन्द्रशत्रु के रूप में, इसका उल्लेख प्राप्त है (ऋ. २. १३.८)।

नारिध—एक सप्ततद्रथा (शुकपूत देखिये)।

नार्य—एक उदार वैदिक राजा। नर्य का वंशज होने से इसे नार्य नाम प्राप्त हुआ।

नारिध—कण्व ऋषि का पौत्रक नाम (ऋ. १०. ३१. ११; अ. वे. ४. १९. २)।

२. इन्द्र का शत्रु एक असुर (ऋ. १०. ६१. १३)।

३. अश्विनो का आश्रित। इसकी पत्नी का नाम रुद्राती था (ऋ. १. ११७. ८)।

नालायनी—इंद्रसेना का नामांतर (मौद्गल्य ३. देखिये)।

नालीजंघ—नाडीजंघ देखिये।

नास्तत्य—अश्विनीकुमारों में से एक का नाम। दूसरे का नाम द्रक्ष था (म. शां. २०१.१७)। मार्ताण्ड नामक आठवे प्रजापति के ये पुत्र थे।

नाविक—विदुर का मित्र। लाक्षाग्रह से बाहर आने के बाद, पांडवों को अपनी नौका के सहारे, इसने गंगा के पार पहुँचाया (म. आ. परि. १. क्र. ८५. पंक्ति. ७)। यह सामान्यनाम होगा।

नाहुष—एक सप्ततद्रथा (ययाति देखिये)।

२. एक राजा। यह नहुस् जाति के लोगों का राजा था। इसके पास अच्छे अश्व थे (ऋ. ८. ६.२४)।

निकुंत—भविष्य के मत् में शोणाश्व का पुत्र।

निकुंभ—कृष्ण के द्वारा मारा गया एक दानव (ह. वं. २. ८५-९०; षट्पुर देखिये)।

२. प्रह्लाद का तृतीय पुत्र (म. आ. ५९. १९)। इसके सुंद एवं उपसुंद नामक दो पुत्र थे (म. आ. २०१. २०००)।

३. (सू. इ.) अयोध्या के हर्यश्व राजा का पुत्र (वायु. ८८.६२)। इसे संहिताश्व नामक एक पुत्र था (पद्म. सू. ८; क्षेमक देखिये)। भागवत में इसके पुत्र का नाम बर्हणाश्व दिया है।

४. गणेश का प्राचीन नाम। वाराणसी में इसका मंदिर था। इसकी पूजाआराधना करने पर भी, दिवोदास की स्त्री सुयशा को पुत्र न हुआ। इसलिये उसने इसका देवालय तथा देवमूर्ति को उद्ध्वस्त किया। फिर क्रुद्ध हो कर, निकुंभ ने वाराणसी उद्ध्वस्त होने का शाप दिया (ब्रह्मांड. ६७. ३०-५५; वायु. ९०.२७.५२; ब्रह्म. ११.४३; गणपति देखिये)। उस शाप के अनुसार, क्षेमक राक्षस के द्वारा, वाराणसी उद्ध्वस्त हो गयी।

५. कश्यप एवं दनु का पुत्र, एक दानव (म. आ. ५८.२६)।

६. कुंभकर्ण के वृत्रज्वाला से उत्पन्न हुए दो पुत्रों में से दूसरा पुत्र (भा. ९.१०.१८) हनुमानजी ने इसका वध किया (वा. रा. सु. ७५)।

७. रावण के पक्ष का एक राक्षस। नील नामक वानर ने इसका वध किया (वा. रा. सु. ९.४३)।

८. दुर्योधन के पक्ष का एक योद्धा (म. द्रो. १३१. ८४)।

९. स्कन्द का एक सैनिक (म. श. ४४.५२)।

निकुंभनाभ—बलि दैत्य के सौ पुत्रों में से एक।

निकुषज—ब्रह्मसावर्णि मनु का पुत्र।

निकृषज—कश्यप कुल का एक ब्रह्मर्षि। 'निकृतिज' इसका नामांतर है।

निकृति—सुवल राजा की कन्या, गांधारी की बहन, तथा धृतराष्ट्र की भार्या (म. आ. १०३. १११३; पंक्ति. ४)।

२. इंभ एवं माया की कन्या (भा. ४.८.३)।

निकृतिज—निकृतिज देखिये।

निकोथक भायजात्य—एक ऋषि। भयजात का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ। यह प्रतिथि देवतरथ का शिष्य था (वं. ब्रा. २)

निक्षुभा--स्वर्गलोक की एक अप्सरा। सूर्य के शाप के कारण, इसे मृत्युलोक में जन्म प्राप्त हुआ, एवं सुजिह नामक मिथि र गोत्रीय सदाचारी ब्राह्मण के घर, कन्यारूप से इसका जन्म हुआ।

अपने पिता की आज्ञानुसार, यह हमेशा अग्नि प्रस्वलित कर लाया करती थी। एक दिन, इसके हाथ में स्थित अग्नि भड़क उठा, एवं उसकी फड़कती ज्वाला में, इसका अपूर्व रूपयौवन सूर्य को दिख पड़ा। सूर्य को इसके प्रति कामवासना जागृत हुई।

पश्चात् सूर्य मनुष्यरूप धारण कर, सुजिह के पास आया, एवं कहने लगा, 'मैंने निक्षुभा का पाणिग्रहण किया है, एवं मुझसे उसे गर्भधारणा भी हुयी है'। फिर क्रुद्ध हो कर सुजिह ने निक्षुभा को शाप दिया, 'तुम्हारा गर्भ अग्नि से आवृत होने के कारण, तुम्हारी होनेवाली संतति, लोगों के लिये निच एवं तिरस्करणीय होगी'।

फिर सूर्य अग्नि का रूप धारण कर, निक्षुभा के पास आया एवं उसने इसे कहा, 'तुम्हारी संतति अपूज्य होने पर भी, वह सद्भि एवं सदाचारी रहेंगी, एवं मेरे पूजा का अधिकार उसे प्राप्त होगा।

वाद में इसे सूर्य की गर्भ से अनेक पुत्र हुए। मग, द्विजातीय, भोजक आदि उनके नाम थे, एवं शाकद्वीप में वे रहते थे। पश्चात् कृष्णपुत्र सांव ने, उन्हें जम्बुद्वीप में से सांवपुर में स्थित सूर्यमंदिर में पूजाअर्चा का काम करने के लिये, नियुक्त किया। उनके साथ, उनके अटारह कुल सांवपुर में आये एवं बस्ती बना उधर ही रहने लगे। सांव ने भोजकुल में पैदा हुई कन्याएँ उन्हें प्रदान की (मवि. ब्राह्म. १३९-१४०; मग देखिये)।

भविष्यपुराण में वी गयी सूर्यवंशीय एवं मिहिरकुलीय लोगों की यह कथा रूपकात्मक प्रतीत होती है। शुरु में जातिवहिष्कृत मानें गये वे लोग, बाद में आनर्त देश के भोजवंश में सम्मिलित हो गये से दिखते हैं।

निखर्वट--रावण के पक्ष का एक राक्षस। तार नामक वानर ने इसका वध किया (म. व. २३९. ८)।

निगद पार्ष्णवल्कि--एक वैदिक ऋषि। यह पर्णवल्क का वंशज, एवं गिरिशर्मन् कण्ठिवादि का शिष्य था (वं. ब्रा. १)।

निघ्न--(स. इ.) अयोध्या का राजा। यह अनरण्य राजा का पुत्र था। इसे अनमित्र तथा रघूत्तम नामक दो पुत्र थे (पद्म. सू. ८)।

२. (सो. वृष्णि) एक यादव राजा। विष्णु, मत्स्य

एवं वायु के मतानुसार, यह अनमित्र राजा का पुत्र था। इसे 'निघ्न' नामांतर भी प्राप्त था।

निचक्षु--(सो. कुह. भविष्य.) एक राजा। विष्णु मत में यह अभिसामकृष्ण का पुत्र था (निमिचक्र देखिये)।

निचंद्र--कश्यप एवं दनु का पुत्र, एक दानव (म. आ. ५९. २६)।

नितंबू--एक महर्षि। यह शरशय्या पर पड़े हुए भीष्मजी को देखने आया था (म. अनु. २६. ८)।

नितान सारुत--एक वैदिक व्यक्तिनाम (क. सं. २५. १०)।

नित्य--मरीचिकुलोत्पन्न एक ऋषि।

२. कश्यप कुल का मंत्रकार।

३. शांडिल्यकुल का एक ऋषि। यह मंत्रद्रष्टा था।

निदाघ--कश्यपकुल का गोत्रकार। यह भृगु ऋषि का शिष्य था।

२. पुलस्त्य का पुत्र, एक ऋषि। यह ब्रह्मपुत्र ऋषु का शिष्य था (नारद. १.४९)।

निदाज--(सो. क्रोष्ट.) एक राजा। वायुमत में यह शरराजा का पुत्र था।

निद्राधर--कश्यप तथा दनु का पुत्र, एक दानव।

निधि--सुख देवों में से एक।

निधुव काण्व--एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.६३)। कश्यपवंश के वत्सार ऋषि का यह पुत्र था। च्यवन ऋषि तथा सुकन्या की कन्या सुनेषसु, इसकी स्त्री थी। कुंडपायिन् नामक सुविख्यात आचार्य इसीका ही पुत्र था। (ब्रह्मांड. ३.८.३१; वायु. ७.२७)।

निदिताश्व--एक वैदिक राजा। यह मेघ्यातिथि का आश्रयदाता था (ऋ. ८.१; २०)।

'तिरस्कार्य अश्रवांला, ऐसा इसका नाम का अर्थ लगाया जाये, तो यह कोई ईरानी राजा प्रतीत होता है। किंतु सायणाचार्य इसके नाम का अर्थ, 'अपने विपक्षियों के अश्रों को लज्जित करनेवाला,' ऐसा लगाते हैं।

निबंधन--(स. इ.) अयोध्या के अरुण राजा का पुत्र। इसका पुत्र सत्यव्रत 'त्रिशंकु' नाम से प्रसिद्ध हुआ था (त्रिशंकु देखिये)। इसे त्रिबंधन भी कहते थे (भा. ९.७.४; त्रिधन्वन् देखिये)।

२. एक ऋषि। इसकी माता भोगवती के साथ इसका अध्यात्म विषय पर हुआ संवाद मनन करने योग्य है (म. शां. परि. १. क. १५; पंचि. ६)।

निमि 'विदेह'—अयोध्यापति इक्ष्वाकु राजा का बारहवाँ पुत्र, एवं 'विदेह' देश तथा राजवंश का पहला राजा (वा. रा. उ. ५५; म. स. ८.९)। यह एवं इसका पुरोहित वसिष्ठ के दरम्यान हुए झगड़े में, इन दोनों ने परस्पर को विदेह (देहरहित) बनने का शाप दिया था। उस विदेहत्व की अवस्था के कारण, इसे एवं इसके राजवंश को 'विदेह' नाम प्राप्त हुआ (मत्स्य. ६१.३२-३६; पद्म. पा. २२; २४-३७; वायु. ८९.४)। इसके नाम के लिये, 'नेमि' पाठभेद भी उल्लेख है।

इसका पिता इक्ष्वाकु मध्यदेश (आधुनिक उत्तर प्रदेश) का राजा था। इक्ष्वाकु के पुत्रों में विकुक्षि शशाद एवं निमि, ये दो प्रमुख थे। उनमें से विकुक्षि इक्ष्वाकु के पश्चान् अयोध्या का राजा बना, एवं उसने सुविख्यात इक्ष्वाकुवंश की स्थापना की। निमि को विदेह का राज्य मिला, एवं इसने विदेह राजवंश की स्थापना की।

गौतम ऋषि के आश्रम के पास, निमि ने इंद्र के अमरावती के समान सुंदर एवं समृद्ध नगरी की स्थापना की थी। उस नगरी का नाम, 'जयंत' या 'जयंत' था। यह नगरी दक्षिण दंडकारण्य प्रदेश में थी, एवं रामायण काल में, वहाँ तिमिध्वज नामक राजा राज्य करता था (वा. रा. अयो. ९.१२)। 'जयंत' नगरी निश्चितरूप में कहाँ बसी थी, यह कहना मुश्किल है। डॉ. मांडारकर के मत में, आधुनिक विजयदुर्ग ही प्राचीन जयंतनगरी होगी। श्री. नंदलाल दे के मत में आधुनिक बनवासी शहर की जगह जयंतनगरी बसी हुयी थी।

निमि की राजधानी 'मिथिला' नामक नगरी में थी। उस नगरी का मिथिला नाम, इसके पुत्र 'मिथि जनक' के नाम से दिया गया था (वायु. ८९.१-२; ब्रह्मांड. ३. ६४.१-२)।

एक बार, निमि ने सहस्र वर्षों तक चलनेवाले एक महान् यज्ञ का आयोजन किया। उस यज्ञ का 'होता' (प्रमुख आचार्य) बनने के लिये इसने बड़े सम्मान से अपने कुलपुरु वसिष्ठ को निमंत्रण दिया। उस समय वसिष्ठ और कोई यज्ञ में व्यस्त था। उसने इससे कहा, 'पाँचसौ वर्षों तक चलनेवाले एक यज्ञ के कार्य में, मैं अभी व्यस्त हूँ। इसलिये वह यज्ञ समाप्त होने तक तुम ठहर जाओ। उस यज्ञ समाप्त होते ही, मैं तुम्हारे यज्ञ का ऋत्विज बन जाऊँगा।

वसिष्ठ के इस कहने पर, निमि चुपचाप बैठ गया। उस मौनता से वसिष्ठ की कल्पना हुयी कि, यज्ञ पाँचसौ वर्षों तक रुकाने की अपनी सूचना निमि ने मान्य की है। इस कारण, वह इंद्र का यज्ञ करने चला गया।

इंद्र का यज्ञ समाप्त करने के बाद, वसिष्ठ निमि के घर वापस आया। वहाँ उसने देखा कि, राजा ने उसके कहने को न मान कर, पहले ही यज्ञ शुरू कर दिया है, एवं गौतम ऋषि को मुख्य ऋत्विज बनाया है। फिर क्रुद्ध हो कर वसिष्ठ ने पर्यंक पर सोये हुये निमि को शाप दिया, 'अपने देह से तुम्हारा वियोग हो कर, तुम विदेह बनोगे।' जागते ही इसे वसिष्ठ के शाप का वृत्तान्त विदित हुआ। फिर निद्रित अवस्था में शाप देनेवाले दुष्ट वसिष्ठ गुरु से यह संतप्त हुआ, एवं इसने भी उसे वही शाप दिया (विष्णु. ४.५.१-५; भा. ९.१३.१-६; वा. रा. उ. ५५-५७)।

पद्म पुराण में 'वसिष्ठशाप' की यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। अपने ब्रिचों के साथ, निमि शूत खेल रहा था। इतने में वसिष्ठ ऋषि यकायक वहाँ आ गया। शूत-क्रीडा में निमग्न रहने के कारण, निमि ने उसे उध्यापन आदि नहीं दिया। उस अपमान के कारण, वसिष्ठ ने इसे 'विदेह' बनने का शाप दिया (पद्म. पा. ५.२२)।

वसिष्ठ के शाप के कारण, निमि का शरीर अचेतन हो कर गिर पड़ा, एवं इसके प्राण इधर-उधर भटकने लगे। इसका अचेतन शरीर सुगंधि तैलादि के उपयोग से स्वच्छ एवं ताजा रख दिया गया। निमि का यज्ञ समाप्त होने पर, यज्ञ के हविर्भाग को स्वीकार करने देवतागण उपस्थित हुये। फिर उन्होंने निमि से कुछ आशीर्वाद माँगने के लिये कहा। निमि ने कहा, 'शरीर एवं प्राण के वियोग के समान दुःखदायी श्रतना दुनिया में और नहीं है। एक बार 'विदेह' होने के बाद, मैं पुनः शरीर-ग्रहण करना नहीं चाहता। दुनिया हर व्यक्ति की आँखों में मेरी स्थापना हो जाये, जिससे मानवी शरीर से मैं कभी भी जुदा न हो सकूँ।' निमि की इस प्रार्थना के अनुसार, देवोंने मानवी आँखों में इसे जगह दिलवायी। आँखों में स्थित निमि के कारण, उस दिन से मानवों की आँखें झपाने लगी, एवं आँख झपाने की उस क्रिया को 'निमिप' कहने लगे (विष्णुधर्म. १.११७)।

मत्स्य एवं पद्मपुराण के मत में, 'विदेह अवस्था' के शाप से मुक्ति पाने के लिये, निमि एवं वसिष्ठ ब्रह्माजी के पास गये। ब्रह्माजी ने वर प्रदान कर, निमि को मानवों

के आँसों में रहने के लिये कहा, एवं वसिष्ठ को मित्र एवं वरुण के अंश से जन्म लेने के लिये कह दिया (मत्स्य. २०१.१७-२२; पद्म. पा. २२.३७-४०)।

मृत्यु के समय निमि निसंतान था, और भावी युवराज के न होने के कारण, अराजकता फैलने का खोसा था। निमि के अचेतन शरीर से पुत्र निर्माण करने के हेतु, उसे यज्ञ की 'अरणी' बनायी गयी। उस 'अरणी' का मंथन करने के बाद, उससे एक तेजस्वी पुत्र उत्पन्न हुआ। वह 'अरणी' के मंथन से निकला, इसलिये उसे 'मिथि' कहने लगे (वायु. ८०)। माता के बिना, केवल पिता से ही उसका जन्म हुआ, इस कारण उसे 'जनक' की उपाधि प्राप्त हुयी। 'विदेह' पिता का पुत्र होने के कारण, मिथि जनक को 'वैदेह' नामांतर भी प्राप्त था (वा. रा. उ. ५७)।

मृत्यु के पश्चात्, निमि यमसभा में प्रविष्ट हुआ, एवं सूर्यपुत्र यम की उपासना करने लगा (म. स. ८.९)।

२. विदर्भ देश का राजा। इसने अगस्त्य ऋषि को अपनी कन्या एवं राज्य अर्पित किया था। उस पुण्य के कारण, इसे स्वर्गलोक प्राप्त हुआ (म. अनु. १३७. ११)।

३. अत्रि कुल में उत्पन्न एक ऋषि। यह दत्त आश्रय का पुत्र था (म. अनु. ९१.५)। इसने श्रीमान् नामक अपने मृतपुत्र को पिंडदान किया, एवं इस तरह मृतों के लिये 'श्राद्ध' करने का संस्कार सर्व प्रथम आरंभ किया (म. अनु. ९१.१४-१५)। इसके द्वारा स्मरण करने पर, इसके पितामह अत्रि ऋषि ने इसे दर्शन दिया था, एवं इससे संभाषण किया था (म. अनु. ९१.१८)।

४. एक यादव राजा। विष्णु, वायु, एवं मत्स्यमत में, यह अंधक राजा का वंशु सात्वत भजमान का पुत्र था। भागवत में इसे 'निम्लोचि' कहा गया है (भा. ९.२४. ६-८)।

५. (सो. कुरु. मविष्य) एक राजा। भागवतमत में यह दंडपाणि राजा का पुत्र था।

निमिचक्र—(सो. कुरु. मविष्य) कुरु देश का राजा। अधिसामकृष्ण का पुत्र था। इसके राज्यकाल में, यमुना नदी में बाढ़ आ गयी। इस कारण हस्तिनापुर छोड़ कर, इसने कौशांबी नगर में अपनी नयी राजधानी बसायी। इसका पुत्र चित्ररथा। इसे निचक्रनु, निर्वक, एवं विवशु आदि नामांतर भी प्राप्त थे।

निमिष—अमृतरक्षक देवों में से एक। इसका पक्षी-

राज गच्छ से युद्ध हुआ था (म. आ. २८.१९)। इसके नाम के लिये, मांडारकर संहिता में 'निमेष' पाठभेद प्राप्त है।

निमेष—गच्छ के पुत्रों में से एक।

निम्न—(सो. वृष्णि) एक यादव राजा। भागवतमत में यह अनमित्र राजा का पुत्र था (निम्न देखिये)।

निम्लोचि—एक यादव राजा (निमि. ४. देखिये)।

नियज्ञ—(य. इ.) अयोध्या का एक राजा। यह विश्वसह राजा का पुत्र था। इसके राज्यकाल में अधार्मिकता के कारण भयानक अनावृष्टि उत्पन्न हुयी, एवं उससे इसका राज्य नष्ट हुआ। इसकी रानी के द्वारा प्रार्थना करने पर, वसिष्ठ ऋषि ने एक यज्ञ किया। उस यज्ञ के कारण, इसे खट्वांग नामक पुत्र पैदा हुआ, एवं इसके राज्य में पुनः एक बार सुखसमृद्धि उत्पन्न हुयी (भवि. प्रति. १.१)।

नियति—ब्रह्माजी के सभा में रह कर, उसकी उपासना करनेवाली एक देवी। यह मेरु की कन्या एवं स्वयंभुव मन्वन्तर के विधाता की पत्नी थी (भा. ४. १.४४)।

२. रौच्य मनु का पुत्र।

३. (सो. आयु.) एक राजा। यह नहुष का कनिष्ठ पुत्र था (पद्म. सू. १२)।

नियम—सुख देवों में से एक।

२. आभूतरजसु देवों में से एक।

नियुतायु—कलिंग देश के श्रुतायु राजा का पुत्र। भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. ६८.२७; २९; 'अयुतायु' मांडारकर संहिता)।

नियुत्सर्पि—शिव नामक रुद्र की पत्नी (भा. ३. १२.१३)।

नियुत्सा—प्रस्ताव राजा की स्त्री। इसे विसु नामक एक पुत्र था।

नियोधक—विराट राजा के दरवार में उपस्थित एक दंगली पहलवान (म. वि. २.५)। यह सामान्य नाम होगा।

निरताल—एक मध्यमाध्वर्यु।

निरमित्र—(सो. कुरु.) पांडुपुत्र नकुल का पुत्र। इसकी माता करेणुमती (म. आ. ९०.८४)।

२. सहदेव द्वारा मारा गया एक त्रिगर्तेशीय राज-कुमार। इसके पिता का नाम वीरधन्वन् (म. द्रो. ८२. २६)।

३. (सो. मगध भविष्य.) भागवत और विष्णु मता-नुसार अयतायु का पुत्र। निरामित्र पाठभेद है।

निरय—एक प्रकार की म्लेच्छ जाति। गरुड ने बहुत से निपाद खाये। उन्हें उगलने के बाद, वे सारे के सारे म्लेच्छ बन गये उनमें से ईशान में जो निपाद गिरे उन्हें 'निरय' नाम प्राप्त हुआ (पद्म. सू. ४७)।

निराकृति—दक्षसावर्णि मनु का पुत्र। निरामय इसी का ही पाठभेद है।

निरामय—एक प्राचीन नरेश (म. आ. १. १७७)।

निरामर्द—एक प्राचीन राजा (म. आ. १. १७७)।

निरामित्र—ब्रह्मसावर्णि मनु का पुत्र।

२. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा। मत्स्यमत में यह अप्रतीपिन् राजा का पुत्र था। वायु तथा ब्रह्मांड मत में यह अयुतायु का पुत्र था। मत्स्य तथा ब्रह्मांड मत में इसने १०० वर्ष राज्य किया, किंतु वायु के मता-नुसार इसने ४० वर्ष राज्य किया (निरामित्र ३. देखिये)।

३. (सो. पूरु. भविष्य.) एक राजा। मत्स्य एवं वायु मत में यह दंडपाणि राजा का पुत्र था।

निराव—वसुदेव का पौरीषी से उत्पन्न पुत्र।

निरावृत्ति—(सो.) एक राजा। भविष्यमत में यह वृष्णि का पुत्र था। इसने पांच हजार वर्षों तक राज्य किया।

निरुक्तकृत्—विष्णुमत में व्यास की षट्कृशिष्य-परंपरा के शाकपूणि का निरुक्ताध्यायी शिष्य।

निरुत्सुक—रैवतमनु का एक पुत्र (पद्म. सू. ७)।

२. रौच्य मनु का एक पुत्र।

निरुद्ध—ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर का देवगण।

निरुक्ता—कश्यप एवं खशा की कन्या।

निरुक्ति—कश्यप एवं सुरभि का पुत्र।

२. एकादश रुद्रों में से एक (पद्म. सू. ४०)। यह ब्रह्माजी का पौत्र एवं स्थाणु का पुत्र था (म. आ. ६०.२)। यह नैऋत, भूत, राक्षस तथा दिक्पाल लोगों का अधिपति था। शत्रुनाश करने की इच्छा करनेवाले राजा इसकी उपासना करते थे (भा. २.३.९)। यह अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. ११४.५७)।

३. वरुणपुत्र अभ्रम को इसमें भय, महाभय तथा मृत्यु नामक तीन पुत्र थे (म. आ. ६०. ५२-५३)। ये सारे पुत्र 'नैऋत' जनपद के रहनेवाले थे एवं भूत, राक्षस-सदृश योनि के समझे जाते थे।

निर्भय—रौच्य मनु का पुत्र।

निर्मित्र—(सो.) एक राजा। भविष्यमत में यह अहीनर का पुत्र था।

निर्मोक—सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

२. देवसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

निर्मोहक—रैवत मनुका पुत्र।

२. सावर्णि मनु का पुत्र।

३. रौच्य मन्वंतर का ऋषि।

४. मधुवन के शकुनि ऋषि का पुत्र। यह महान् विरक्त था तथा संन्यास वृत्ति से रहता था।

निर्वक्र—(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा। वायु मत में यह अधिसामकृष्ण का पुत्र था (निमिचक्र देखिये)।

निर्वृत्ति—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा। भागवत-मत में, यह घृष्टि का, मत्स्य एवं वायुमत में घृष्ट का, विष्णुमत में वृष्णि का तथा पद्ममत में सृष्टि का पुत्र था।

२. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा। मत्स्यमत में यह सुनेत्र का पुत्र था। इसके नाम के लिये, 'नृपति' पाठभेद प्राप्त है। इसने ५८ वर्षों तक राज्य किया।

निल—राक्षसराज विभीषण का एक प्रधान।

निवात—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा। वायुमत में यह शूर राजा का पुत्र था।

निवातकवच—दैत्यों का एक दल। हिरण्यकशिपु पुत्र संहार के पुत्रों को यह 'सामूहिक' नाम प्राप्त था। इस दल के दैत्य रावण के मित्र थे, एवं इंद्र को भी अजेय थे (वा. रा. उ. २३)।

पांडवों के वनवासकाल में अर्जुन के साथ इनका युद्ध हुआ, एवं अर्जुन ने इनका संहार किया (म. व. १६७. १०; १६९.२; भा. ५.२४; ६.६; पद्म. सू. ६)।

२. कश्यप एवं पुलोमा के पौलोम तथा कालकेय नामक दैत्य पुत्रों के लिये प्रयुक्त सामूहिक नाम। इनकी संख्या सठ सहस्र या चौहत्तर सहस्र थी (कश्यप देखिये)।

नियावरी—एक सूक्तद्रष्टा (सिकता देखिये)।

निशठ—एक वृष्णिवंशी राजकुमार (भा. ११.३०. १७; म. आ. २११.१०)। हरिवंश के अनुसार यह बलराम एवं रेवती का पुत्र था। यह सुमद्रा के लिये दहेज ले कर खांडवप्रस्थ में आया था। युधिष्ठिर के राजसूय एवं अश्वमेध यज्ञ में यह उपस्थित था (म. स. ३१.१६; ६५.४)। उपप्लव्यनगर में अभिमन्यु के विवाह में भी यह उपस्थित था (म. वि. ६७.२१)।

मृत्यु के पश्चात्, यह विश्वेदेवों में बिलीन हो गया (म. ख. ५.१६)।

२. यमसभा में रह कर, सूर्यपुत्र यम की उपासना करनेवाला एक प्राचीन राजा (म. स. ८.१०७)।

निशा—भानु (मनु) नामक अग्नि की तीसरी पत्नी। इसने अग्नि एवं सोम नामक दो पुत्र, एवं रोहिणी नामक कन्या को जन्म दिया था। उनके अतिरिक्त, इसे पाँच अग्निस्वरूप पुत्र भी थे। उनके नाम—वैश्वानर, विश्वपति, संनिहित, कपिल, एवं अग्रणी।

निशाकर—गरुड़ के प्रमुख पुत्रों में से एक (म. उ. ९.१४)।

निशुंभ—शुंभ असुर का भाई, एवं जालंधर दैत्य का सेनापति (शुंभनिशुंभ देखिये)। इंद्र की अमरावती जीतने के बाद, जालंधर ने इसे युवराज्याभिषेक किया था (पद्म. उ. ८)। चंडिका देवी ने इसका वध किया (मार्क. ८६.३२)।

२. नरकासुर के चार प्रमुख राज्यपालों में से एक। यह भूलतः से ले कर देवयान तक का मार्ग रोक कर खड़ा रहता था। श्रीकृष्ण ने इसका वध किया (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति. १५३६)।

निश्वक्र—(सो.) एक राजा। भविष्य के अनुसार यह यशदत्त राजा का पुत्र था। इसने एक सहस्र वर्षों तक राज्य किया।

निश्वर—धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. बृहस्पतिपुत्र निश्वर का नामांतर।

निश्च्यवन—बृहस्पति के तारा में उत्पन्न सात पुत्रों में से एक। यह अग्नि के समान यश, वर्चस्व एवं कांतियुक्त था। यह निध्याप, निर्मल, विशुद्ध एवं तेजःपुंज था। इसके पुत्र का नाम विपापमन् था निष्कृति था (म. व. २०९. १२)। इसके पौत्र का नाम सत्य था।

२. स्वरोचिष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

निषंगिन—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. क. ६२.५)।

निषध—(सू. इ.) अयोध्या का एक राजा। यह अतिथि राजा का पुत्र था।

२. (सो. पूरु.) भरतवंशी कुरु राजा का पौत्र, एवं जनमेजय राजा के चार पुत्रों में से चौथा पुत्र (म. आ. ८९.५०)। यह धर्म, अर्थ में कुशल, एवं समस्त प्राणिमात्रों के हित में संलग्न रहता था (म. आ. ९.५०)।

निषध्राश्व—(सो. अज.) एक राजा। भागवत के अनुसार, यह कुरु राजा का पुत्र था।

निषाद—(खा. उत्तान.) एक म्लेच्छ राजा। यह मृत्यु की मानसी कन्या सुरथा का पौत्र एवं वेन राजा का पुत्र था। वेन राजा की मृत्यु के पश्चात्, ऋषियों ने उसके दाहिने जाँघ का मंथन किया। उस मंथन के कारण, एक 'ह्रस्वाकार' एवं कृष्णवर्ण पुरुष बाहर निकल्य। ऋषियों ने उसे कहा, 'निषीद (वैद्य जाओ)।' उस कारण उस पुरुष का नाम 'निषाद' हो गया। आगे चल कर, इससे वन में रहनेवाले 'निषाद' नामक म्लेच्छ जाति की उत्पत्ति हुयी (म. शां. ५.९.१०३; भा. ४.१४.४५; वेन देखिये)।

२. एक म्लेच्छ जाति (तै. सं. ४.५.४.२; कां. सं. १७. १३; ऐ. ब्रा. ८.११)। संभवतः आधुनिक भिल्ल लोग यही होंगे। इनके एक ग्राम का एवं 'स्थपति' (नेता) का उल्लेख प्राप्त है (ला. श्रौ. ८.२.८)।

३. एक राजा। यह कालेय एक क्रोधहंता नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ४८.६१)।

निष्कम्प—रौच्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

निष्करीय—एक वैदिक पुरोहितवर्ग का सामूहिक नाम (पं. ब्रा. १२.५.१४)।

निष्कुटिका—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.१२)।

निष्कृति—एक अग्नि। यह निश्च्यवन का पुत्र था, एवं इसे 'विपापमन्' नामांतर था। लोगों को संकट से 'निष्कृति' (छुटकारा) दिलाने के कारण, इसे निष्कृति नाम प्राप्त हुआ। इसका पुत्र स्वन (म. व. २०९.१४; विपापमन् देखिये)।

निष्ठानक—कश्यप एवं कद्रु से उत्पन्न एक नाग।

निष्ठुर—एक व्याध। कार्तिक माह में, चंद्रशर्मा नामक ब्राह्मण से 'दीपमाहात्म्य' सुनने के कारण, इसे मुक्ति मिल गयी (स्कंद. २.४.७)।

२. अत्रिशुल का एक मंत्रकार। इसे 'गविष्ठुर' भी कहते थे।

निष्ठूरिक—एक कश्यप वंशी नाग (म. उ. १०१. १२)।

निष्प्रकम्प—रौच्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

निसुंदि—एक असुर (वा. रा. उ. २२. २५)।

निसुंद—नरकासुर के परिवार में से एक दैत्य। यह श्रीकृष्ण द्वारा मारा गया (म. व. १३.२६)।

निहाद—जालंधर की सेना का एक राक्षस । कुबेर ने इसका वध किया (पद्म. उ. ६) ।

नीच्य—सिंधु एवं पंजाब प्रदेश में रहनेवाले लोगों का सामूहिक नाम (ऐ. ब्रा. ८-१४) ।

नीतिन—भृगुकुल का एक गोत्रकार ।

नीथ—एक वृष्णिवंशी राजकुमार (म. व. १२०. १८) ।

नीप—(सो. पुरु.) पुरुवंश का सुविख्यात राजा । भागवत, वायु एवं विष्णुके अनुसार यह पार (प्रथम) राजा का पुत्र था । मत्स्य के अनुसार, यह पौर का पुत्र था । इसके पत्नी का नाम कृती अथवा कीर्तिमती था । उससे इसे ब्रह्मदत्त नामक पुत्र हुआ (भा. ९.२१-२४) ।

इसके कीर्तिवर्धन आदि सौ पुत्र थे । वे सारे ' नीप ' नाम से ही प्रसिद्ध थे । आगे चल कर, उन्हींसे सुविख्यात ' नीप वंश ' का निर्माण हुआ ।

२. नीप राजा से प्रारंभ हुआ क्षत्रियवंश । इसी वंश में, जनमेजय द्वुवृद्धि नामक कुलंगार राजा निर्माण हुआ (म. उ. ७२.१३) । उस राजा के दुर्वर्तन के कारण, उषायुध ने उसका वध किया, एवं नीपवंश नष्ट हो कर, द्विमीढ वंश में शामिल हो गया (मत्स्य. ४९; ह. वं १. २०; वायु. ९९. १७८) ।

३. (सो. द्विमीढ.) द्विमीढवंश का एक राजा । भागवत के अनुसार यह कृती राजा का पुत्र था । अन्य पुराणों में इसका उल्लेख प्राप्त नहीं है । यह अनुर्धर एवं तीक्ष्णशस्त्रधारी था । इसका पुत्र भलाट था (भा. ९. २१.२-८) ।

नीपातिथि ' काण्व '— एक वैदिक ऋषि एवं सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. ३४. १; १५) । किसी एक युद्ध में, इंद्र ने इसका रक्षण किया था (ऋ. ८. ४९. ९) । यह एक ख्यातिप्राप्त ' होता ' था, एवं स्वयं इंद्र ने इसके घर आ कर सोम प्राशन किया था (ऋ. ८. ५१. १) । एक ' सामन् ' का भी यह रचयिता था (पं. ब्रा. १४. १०. ४) ।

नील— कश्यप एवं कद्रू से उत्पन्न एक नाग (म. आ. ३१.७)

२. विश्वकर्मा के अंश से उत्पन्न हुआ रामसेना का एक वानर (भा. ९. १०. १६; म. व. २७४. २५) । इसने दूषण का छोटा भाई प्रमाथि का वध किया था ।

३. अग्नि के अंश से उत्पन्न हुआ रामसेना एक वानर (वा. रा. कि. ३१) । विभीषण से मिलने के

लिये, राम लंकानगरी जा रहे थे । उस समय किष्किंधा नगरी में, यह राम के दर्शन के लिये आया था (पद्म. स. ३८) ।

रामरावण युद्ध में, इसने निकुंभ, प्रहस्त, एवं महोदर राक्षसों से घनघोर युद्ध किया; एवं निकुंभ तथा महोदर का वध किया (वा. रा. यु. ४३; ५८; ७०) । बाद में राम के अश्वमेधयज्ञ के समय, यह शत्रुघ्न के साथ अश्वरक्षगार्थ देशविदेश गया था (पद्म. भा. ११) ।

४. (सो. सह.) अनूप देश का एक राजा एवं पांडव-पक्ष का महान् योद्धा । यह उदार, रथी, संपूर्ण अस्त्रों का ज्ञाता, एवं महामनस्वी था (म. आ. १७७.१०) ।

भारतीय युद्ध में, इसका अश्वथामन् के साथ दो बार युद्ध हुआ था । पहली बार अश्वथामन् ने इसके सीने में प्रहार कर, इसे घायल किया (म. मी. ९०.३३); एवं दूसरी बार इसका वध किया (म. द्रो. ३०.२५) । धृतराष्ट्र-पुत्र दुर्जय से भी इसका युद्ध हुआ था (म. द्रो. २५. ४३) ।

५. (सो. पुरु.) पुरुवंश का सुविख्यात राजा । यह अजमीढ एवं नलिनी का पुत्र था । इसका पुत्र शांति ।

नील ने उत्तर पांचाल देश में स्वतंत्र राज्य स्थापित किया । इसकी राजधानी अहिच्छत्र नगरी थी । इसने उत्तर पांचाल के सुविख्यात ' नीलराजवंश ' की नींव डाली ।

६. उत्तर पांचाल देश का सुविख्यात राजवंश । इस वंश के नील से पृषत् तक के सोलह राजाओं का निर्देश पुराणों में अनेक स्थानों पर प्राप्त है (वायु. ९९.१९४-२११; मत्स्य. ५०.१-१६) । उन राजाओं के नाम इस प्रकार हैं:—१. नील, २. सुशांति, ३. पुरुजानु ४. रिश, ५. भर्ग्याश्व, ६. मुद्रल, ७. वक्ष्यश्व, ८. दिवोदास, ९. मित्रयु, १०. मैत्रेय, ११. च्यवन, १२. पंचजन, १३. सुदास, १४. सहदेव, १५. सोमक, १६. पृषत्

यह राजवंश बहुत ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है, क्योंकि, इनमें से अनेक राजाओं का निर्देश वैदिक ग्रंथों में मिलता है । इस वंश के मुद्रल, वक्ष्यश्व, दिवोदास, सुदास, च्यवन, सहदेव, सोमक, पिञ्जन (पंचजन) आदि राजाओं का निर्देश ऋग्वेद एवं ब्राह्मणादि ग्रंथों में प्राप्त है । ऋग्वेद में वर्णित दाशराज्ञ युद्ध ' सुदास ' ने किया था ।

पृषत् राजा का उत्तराधिकारी द्रुपद था । द्रुपद राजा एवं द्रोणाचार्य के संवर्ष के कारण, पांचाल देश उत्तर

एवं दक्षिण विभागों में पुनः एक बार बाँट दिया गया (द्रुपद एवं द्रोण देखिये)।

७. दक्षिणापथ में से माहिष्मती नगरी का राजा, एवं दुर्योधन-रक्ष का महान् योद्धा। यह क्रोधवशात् नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था। यह द्रौपदीस्वयंवर के लिये गया था (म. आ. १७७.१०)। संभवतः 'नीलध्वज' इसीका ही नामांतर था (नीलध्वज देखिये)।

पांडवों के राज्ययज्ञ के समय, सहदेव द्वारा किये गये दक्षिण दिग्विजय में, इसका उससे भीषण युद्ध हुआ था (म. स. २८.१८)। उस युद्ध के समय, अग्निदेव ने इसे सहायता की थी। अग्नि को इसने अपनी कन्या प्रदान की थी। उस कारण, अग्नि ने इसकी सेना को अभयदान दिया था। फिर भी सहदेव ने इसे पराजित किया, एवं यह सहदेव की शरण में गया (म. स. २८.३६-३७)।

इसने नर्मदा नदी को भार्यारूप में पा कर, उसके गर्भ से सुदर्शना नामक कन्या उत्पन्न की। उसे अग्नि चाहने लगा। फिर इसने उन दोनों का विवाह करा दिया। उन्हें सुदर्शन नामक पुत्र हुआ (म. अनु. २)।

भारतीययुद्ध में, यह दुर्योधन के पक्ष में शामिल था (म. उ. १९.२३)। यह कौरवों के पक्ष का एक ख्यातिप्राप्त रथी था (म. उ. १६३.४)।

८. (सो.) एक राजा एवं यदुपुत्रों में से तीसरा पुत्र।

९. भृगुकुल का एक गोत्रकार।

१०. भृगुकुल का एक ब्राह्मिण।

नीलकंठ—शिवजी का एक नामांतर। समुद्र से निकला हुआ 'हलाहल विष' शिवजी ने प्राशन किया। इसीसे जल कर उनके कंठ का वर्ण नीला हो गया। इसलिये उन्हें यह नाम प्राप्त हुआ (मा. ८.७)।

शिवजी एवं नारायण के बीच में हुये युद्ध में, नारायण ने शिवजी का गला घोट दिया। इस कारण उसका गला नीला पड़ गया, ऐसी भी कथा प्राप्त है (नारायण देखिये)।

नीलध्वज—हस्तिनापुर के दक्षिण में नर्मदा नदी के किनारे स्थित माहिष्मती नगरी का राजा (जै. अ. १४. १४)। महाभारत में निर्दिष्ट नील राजा एवं यह दोनों संभवतः एक ही होंगे (नील ७. देखिये)।

'जैमिनि अश्वमेध' के अनुसार, इसकी पत्नी का नाम सुनंदा, एवं पुत्र का नाम प्रवीर था। पांडवों के द्वारा छोड़ा गया अश्वमेधीय अश्व प्रवीर ने पकड़ लिया, एवं अश्व-रक्षणार्थ नियुक्त किये द्रुपद को पराजित किया। किंतु पश्चात् अनुशास्त्र ने प्रवीर को पराजित किया। फिर नील-

ध्वज स्वयं युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ, एवं उसका भर्तुन से वमासान युद्ध प्रारंभ हुआ।

अपने ससुर नीलध्वज की सहायता के लिये, अग्नि युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ, एवं वह भर्तुन की सेना को दग्ध करने लगा। भर्तुन अग्नि की शरण में गया। फिर अग्नि ने नीलध्वज एवं भर्तुन इन दोनों के बीच में मित्रत्व स्थापित किया। बाद में, नीलध्वज भर्तुन की सहायता के लिये, उसके साथ दक्षिणदिग्विजय में शामिल हुआ (जै. अ. १४.१४)।

नीलपराशर—पराशरकुशोत्पन्न एक ऋषिगण (पराशर देखिये)।

नीलरत्न—राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, अश्व के संरक्षणार्थ शत्रुघ्न के साथ गया हुआ एक वीर (पद्म. पा. ११)।

नीला—कपिल तथा केशिनी की कन्या। इसके द्वारा आलंबेय ने 'नैल' उत्पन्न किये। इसकी विक्रवा नामक कन्या थी (ब्रह्मांड. ३.७.१४७-१४८)।

२. (सत्या ५. देखिये)।

नीलिनी—अजमीह राजा की एक पत्नी।

नीली—अजमीह राजा की पत्नी। इसके दुष्यन्त तथा परमेष्ठिन नामक दो पुत्र थे (म. आ. ८९.२८)।

नीवार—वेदकालीन एक जंगली ज्ञाति (का. सं. १२.४; मै. सं. ३.४.१०; शा. ब्रा. ५.१.४.१४)।

नृग 'ऐश्वका'—(मू. इ.) एक प्राचीन शानी राजा। भागवत एवं महाभारत के अनुसार, यह ऐश्वका के शतपुत्रों में से एक था (म. स. ८.८)। ऐश्वका के ४८ पुत्रों को दक्षिणापथ में राज्य प्राप्त हुआ था। उनमें से नृग का राज्य पयोष्णी (तार्पी) नदी के तट पर था (म. व. ८६.४-६)।

नृग ने पयोष्णी नदी के किनारे वाराहतीर्थ में यज्ञ किया था। उस समय इसने एक क्रोडि के उपर गौ का दान किया। उनमें से एक गौ गलती से पुनः एक धार राजा के गोसमूह में वापस आयी, एवं दूसरे ब्राह्मण को पुनः दान में दी गयी। इससे उन दो ब्राह्मणों में झगड़ा शुरू हो कर, वे दोनों राजा के पास फैसले के लिये आये।

उस झगड़े का फैसला देने में नृग को देर हुई। उस कारण, उन ब्राह्मणों ने इसे शाप दिया, 'तुम गिरगिट बनोगे'। राजा ने प्रार्थना कर 'उःशाप' माँगा।

फिर ब्रह्मणों ने 'उःशाप' दिया, 'भगवान् कृष्ण के द्वारा तुम्हारा उद्धार होगा'।

पश्चात् अपने वसु नामक पुत्र को गद्दी पर बैठा कर, यह वन में गया। बाद में कृष्ण के दस्तसर्श से, गिरगिट-योनि से इसका उद्धार हो गया (म. अनु. ७०; भा. १०.६४; वा. रा. उ. ५३-५४)।

शौर्य एवं दान के कारण, मृत्यु के पश्चात् नृग को उत्तम लोकों की प्राप्ति हो गयी (म. भी. १७.१०)।

इसने आजन्म मांसभक्षण का निषेध किया था। उस कारण, इसे 'परावरतत्व' का ज्ञान हो कर, यह यमराज की सभा में विराजमान हो गया (म. अनु. ११५.६०)।

नृग 'औशीनर'—(सो. अनु.) एक राजा। भगवत एवं मत्स्य के अनुसार, यह उशीनर राजा का पुत्र था। वायु ने इसे 'मृग' कहा गया है।

नृग 'मानव'—(सू.) पद्य के अनुसार मनु के इस पुत्रों में से दूसरा पुत्र। पुराणों में कई जगह मनुपुत्र नाभाग एवं नृग एक ही माने गये हैं (लिं. १. ६६.४५)। इसके पुत्र का नाम सुमति था।

भगवत में नृग राजा की 'वंशावलि' विस्तृतरूप से दी गयी है (भा. ९.२.१७-१८)। किंतु वह विश्वासार्ह नहीं प्रतीत होती है। नृग एवं उसका पितामह ओषवंत के पूर्वपुरुषों के महाभारत में दिये गये नाम, इस 'वंशावलि' में नृग के 'वंशज' के नाते दिये गये हैं।

नृचक्षु—(सो. पूरु. भविष्य.) पूरुवंश का एक राजा। भगवत तथा मत्स्य के अनुसार यह सुनीथ का, एवं विष्णु के अनुसार ऋच का पुत्र था (निचक्षु देखिये)।

नृत्यप्रिया—ऋक्ष की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. १०)।

नृपंजय—(सो. त्रिमीड.) त्रिमीदवंश का एक राजा। विष्णु के अनुसार यह सुवीर का, एवं मत्स्य के अनुसार सुनीथ का पुत्र था।

२. (सो. पूरु. भविष्य.) पूरुवंशीय एक राजा। विष्णु, भगवत, एवं भविष्य के अनुसार यह मेवाविन् का पुत्र था। इसे 'पुरंजय' नामांतर भी प्राप्त है।

नृपति—(सो. मगध. भविष्य.) मगध देश का एक राजा। वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, यह धर्मनेत्र का पुत्र था। इसने ५८ वर्षों तक राज्य किया (निर्वृत्ति देखिये)।

नृमेध आंगिरस—अग्नि का एक आश्रित, एवं सामद्रष्टा ऋषि (ऋ. १०.८०.३, पं. ब्रा. ८.८.२१)। ऋग्वेद के अनेक सूक्तों का प्रणयन इसने किया था (ऋ. ८.८९;

९०; ९८; ९९; ९.२७; २९)। अग्नि के कृपा से इसे शकपूत आदि पुत्र प्राप्त हुये। मित्रावरणों ने इसका एवं सुमेधस् का रक्षण किया था (ऋ. १०.१३२.७)। परुच्छेप ऋषि ने इसके साथ स्पर्धा करने की कोशिश की, किंतु इसने उसको पराजित किया (तै. सं. २.५.८.३)।

नृषद—एक वैदिक ऋषि (ऋ. १०. ३१. ११)। यह कण्व ऋषि का पिता था, एवं इसके नाम से उसे 'नार्षद कण्व' नाम प्राप्त हुआ था।

नृसिंह—भगवान् विष्णु का चौदहवाँ अवतार। इसका आधा शरीर सिंह का, एवं आधा मनुष्य का था। इस कारण, इसे 'नृसिंह' नाम प्राप्त हुआ। इसका अवतार चौथे युग में हुआ था (दे. भा. ४.१६)। पुराणों में निर्देश किये गये बारह देवासुर संग्रामों में, 'नारसिंहसंग्राम' पहले क्रमांक में दिया गया है (मत्स्य. ४७. ४२)।

हिरण्यकशिपु नामक एक राक्षस ने ग्यारह हजार पाँच सौ वर्षों तक तप कर, ब्रह्माजी को प्रसन्न किया, एवं ब्रह्माजी से अमरत्व का वर प्राप्त कर लिया। उस वर के कारण, देव, ऋषि, एवं ब्राह्मण अत्यंत क्रुद्ध हुये, एवं उन्होंने हिरण्यकशिपु का नाश करने के लिये अवतार लेने की प्रार्थना श्रीविष्णु से की। हिरण्यकशिपु का पुत्र प्रह्लाद भगवद्भक्त था। उसको भी उसके पिता ने अत्यंत तंग किया था। फिर प्रह्लाद के संरक्षण के लिये, एवं देवों को अभय देने के लिये, श्रीविष्णु 'नृसिंह अवतार' ले कर, प्रगट हुये।

हिरण्यकशिपु के प्रासाद के खंभे तोड़ कर, नृसिंह प्रगट हुआ (नृसिंह. ४४.१६), एवं सायंकाल में इसने उसका वध किया (भा. २.७; ह. वं. १.४१; ३९.७१; लिं. १.९४; मत्स्य. ४७.४६; पद्य. उ. २३८)। गंगा नदी के उत्तर किनारे पर हिरण्यकशिपु का वध कर, नृसिंह दक्षिण हिंदुस्थान में गोतमी (गोदावरी) नदी के किनारे पर गया, एवं उसने वहाँ दण्डक देश का राजा अंत्रय का वध किया (ब्रह्म. १४९)। इस प्रकार वध करने से इसे खून चढ़ गया। फिर शिवजी ने शरभ का अवतार ले कर, नृसिंह का वध किया (लिं. १.९५)।

वेदों में प्राप्त नसुचि की एवं नृसिंह की कथा अनेक दृष्टि से समान है। 'नृसिंह अवतार' का निर्देश 'तैत्तिरीय आरण्यक' में भी प्राप्त है। 'नृसिंहतापिनी' नामक एक उपनिषद् भी उपलब्ध है। नृसिंह की कथा प्रायः सभी पुराणों में दी गयी है। किंतु प्रह्लाद की संकटपरंपरा एवं

नृसिंह का खंभे से प्रगट होने का निर्देश, कई पुराणों में अप्राप्य है (म. स. परि. १. क्र. २१; पंक्ति. २८५-२९५; ह. कं. ३.४१-४७; मत्स्य. १६१-१६४; ब्रह्मांड. ३.५; वायु. ३८.६६) ।

नृसिंह की उपासना—नृसिंह की उपासना भारतवर्ष में आज भी अनेक स्थानों पर बड़ी श्रद्धा से की जाती है । नृसिंह के मंदिर एवं वहाँ पूजित नृसिंह के नाम, स्थानीय परंपरा के अनुसार, अलग अलग दिये जाते हैं । इन नृसिंहस्थानों की एवं वहाँ पूजित नृसिंहदेवता के स्थानीय नामों की सूचि नीचे दी गयी है । उनमें से पहला नाम नृसिंहस्थान का, एवं ' कोष्ठक ' में दिया गया नाम नृसिंह का स्थानीय नाम का है ।

नृसिंहस्थान—अयोध्या (लोहनाथ), आठ्य (विष्णुपद), उज्जयिनी (त्रिविक्रम), ऋषभ (महाविष्णु), कपिलद्वीप (अनन्त), कसेरट (महाब्राह्म), कावेरी (नाग-शायिन्), कुण्डिन (कुण्डिनेश्वर), कुञ्ज (वामन), कुञ्जागार (हृषीकेश), कुमारतीर्थ (कौमार), कुरुक्षेत्र (विश्वरूप), केदार (माधव), केरल (बाल), कोकामुख (बराह), क्षिराब्धि (पञ्चनाथ), गंगद्वार (पयोधर), गन्धमावन (अचिन्त्य), गया (गदाधर), गर्वाचिक्रमण (हरि), गुह्यक्षेत्र (हरि), चक्रतीर्थ (सुदर्शन), चित्रकूट (नराधिप), तुण्डिदुवन (वीर), तैजसवन (अमृत), त्रिकूट (नागमोक्ष), दण्डक (श्यामल), दशपुर (पुरुषोत्तम), देवदाखन (गुह्य), देवशाला (त्रिविक्रम), द्वाका (भूमति), धृष्टद्युम्न (जयध्वज), निमिष (पीतवासम्), पयोष्णी (सुदर्शन), पाण्डुसह्य (देवेश), पुष्कर (पुष्कराक्ष), पुष्पभद्र (विरज), प्रभास (रविनन्दन), प्रयाग (योगमूर्ति), भद्रा (हरिहर), भाण्डार (वासुदेव), मणिकुण्ड (हलायुध), मथुरा (स्वयंभुव), मन्दर (मधुसूदन), महावन (नरसिंह), महेन्द्र (नृपात्मज), मानसतीर्थ (ब्रह्मेश), माहिष्मती (द्रुताशन), मेरुपृष्ठ (भास्कर), लिङ्गकूट (चतुर्भुज), लोहित (हयशीर्षक), बलीवट (महायोग), बसुहृद (जम्बरति), वाराणसी (केशव), वाराह (धरणीधर) कितस्ता (विशाधर), विपाशा (यशस्कर), विमल (सनातन), विश्वासयूप (विश्वेश), वृन्दावन (गोपाल), वैकुण्ठ (माल्योद्धान), शालग्राम (तपोवास), शिवनदी (शिवकर), शृङ्गक्षेत्र (शृङ्गर), सकल (गरुडध्वज), सायक (गोविंद), सिंधुसागर (अशोक), हलाङ्गर (रिपुहर), (नृसिंह. ६५) ।

नेतिष्य (नेतिष्य)—भृगुकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि ।
नेत्र—(सो. सह.) एक राजा । भागवत के अनुसार यह धर्म राजा का पुत्र था ।

नेदिष्ठ—वैवस्वत मनु का पुत्र ।
नेम भार्गव—एक सूतद्रष्टा (ऋ. ८. १००) ।
नेमि—बलि के पक्ष का एक दैत्य (भा. ८. ६. २२)
२. (सु. इ.) एक राजा । वायु के अनुसार यह इक्ष्वाकु के पुत्रों में से एक था । अन्य पुराणों में, इसे ' निमि ' कहा गया है ।

नेमिकृष्ण—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा । वायु के अनुसार, यह पटुमत् राजा का पुत्र था । इसने २५ वर्षों तक राज्य किया ।

नेमिचक्र—(सो. पू. भविष्य.) हस्तिनापुर का एक राजा । यह असीमकृष्ण राजा का पुत्र था । यमुना नदी के बाढ़ से हस्तिनापुर नगर बह जाने के बाद, इसने अपनी नयी राजधानी कौशांबी नगर में बसायी । इसका पुत्र चित्ररथ (भा. ९. २२. ३९) ।

नैकजिह्व—भृगुकुल का एक गोत्रकार ।
नैकदश—त्रिश्वामित्र का पुत्र ।
नैकशि—भृगुकुल का एक गोत्रकार ।

नैगम—शाकपूर्ण रथीतर ऋषि के चार प्रमुख शिष्यों में से एक । अन्य तीन शिष्यों के नाम—केतव, बालकि, शतत्रलक ।

नैगमेश—कुमार कार्तिकेय का तृतीय भ्राता । इसके पिता का नाम अनल था (म. आ. ६०.२२) ।

२. कार्तिकेय के चार मूर्तियों में से एक मूर्ति का नाम । अन्य दो मूर्तियों के नाम शाख एवं विशाख थे (म. इ. ४३.३७) ।

३. अनल वसु का पुत्र ।

नैद्राणि—अत्रिकुल का एक गोत्रकार ।

नैध्रुव—ऋश्यपकुल का गोत्रकार । यह कश्यप ऋषि का पौत्र, एवं अवत्सार ऋषि का पुत्र था । यह छः कश्यप ' ब्रह्मवादिनों ' में से एक था । अन्य ब्रह्मवादिनों के नाम—कश्यप, धवत्सार, रैभ्य, असित, देवल (वायु. ५९.१०३; मत्स्य. १४५. १०६-१०७; कश्यप देखिये) ।

२. कश्यपवंश में से एक प्रमुख गोत्र का नाम । अन्य दो प्रमुख गोत्र—शांडिल्य, एवं रैभ्य ।

नैध्रुवि—कश्यप ऋषि का पेतुक नाम (बृ. उ. ६.४. ३३) ।

नैर्ऋत—एक सूतद्रष्टा (कपोत नैर्ऋत देखिये) ।

२. एक राक्षस। यह पृथ्वी के प्राचीन शासकों में से एक था (म. शा. २२०.५१-५३)।

३. एक 'रात्रीराक्षस' गण। उस गण के अन्य राक्षस समूह—गैलक्ष्य, आगक्ष्य, कौशिक (पाणि. २४२)।

नैमिशि—शित्तिवाहु एष नामक वैदिक ऋषि की उपाधि (जै. ब्रा. १.३६३)। शित्तिवाहु 'नैमिश' वन का रहनेवाला होने से, उसे यह उपाधि मिली होगी।

नैमिशीय—नैमिशवन में रहनेवाले लोगों का सामूहिक नाम (पं. ब्रा. २५. ६. ४; जै. ब्रा. १. ३६३)। ये लोग बहुत ही पूज्य माने जाते थे (कौ. ब्रा. २६. ५)। इस कारण नैमिशारण्यवासी ऋषियों को महाभारत सुनाया गया था।

नैल—एक ऋग्वेदी श्रुतिर्षि।

२. एक ज्ञातिमूह (नीला १. देखिये)।

नैषध—दुर्योधन पक्ष के 'पौरव' राजा का नामांतर। यह निषध देश का राजा होने के कारण, उसे यह नाम प्राप्त हुआ था (पौरव देखिये)। धृष्टद्युम्न ने इसका वध किया (म. द्रो. ३१. ६३)।

२. दक्षिण देश के नड़ राजा की उपाधि (नैषिध देखिये)।

नैषाद्—निषाद् जाति का एक व्यक्ति (कौ. ब्रा. २५. १५; वा. सं. ३०. ८)।

नैषादि—द्रोणशिष्य एकलव्य का नामांतर (म. द्रो. १५६. १७)।

२. भरिष्य एक राजवंश। नल नैषध राजा के वंश में उत्पन्न नौ राजा इस वंश में शामिल थे। उन्हें 'मिष' नामांतर भी प्राप्त था। वे क्रोमत्या नामक नगरी में रहते थे।

नैषिध—दक्षिण देश के नड़ राजा का पैतृक नाम एवं उपाधि (श. ब्रा. २. ३. २. १-२)। इस नाम का वाद का रूप 'नैषध' है।

नोधस्—एक वैदिक कवि एवं सूक्तद्रष्टा (ऋ. १. ६१. १४; ६२. १३; एक्यू देखिये)। यह पुरुकुल्ल राजा का समकालीन था।

नोधस् गौतम—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. १. ५८-६४; ८. ८८; ९. ९३)। यह कश्चीवत् ऋषि का वंशज (पं. ब्रा. ७. १०. १०; २१. ९. १२; पं. ब्रा. ४. २७; अ. वे. १५. २. ४; ४. ४) एवं गौतम ऋषि का पुत्र था (ऋ. १. ६०. ५; ४. ३२. ९; ८. ८८. ४)।

नौकर्णी—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. शा. ४५. २८)। इसके नाम के लिये, सुकर्णी एवं नैकर्णी पाठभेद भी उपलब्ध हैं।

न्यग्रोध—(सो. कुकुर) भागवत के अनुसार मथुरा के उपसेन राजा का पुत्र, एवं कंस का भाई। धनुर्योग के समय, कृष्ण ने कंस का वध किया। फिर अपने भाई के मृत्यु का बदला लेने के लिये, यह आगे दौड़ा। उस समय, बलराम ने 'परिव' फेंक कर इसका वध किया।

प

पक्थ—एक वैदिक ज्ञातिमूह (ऋ. ७. १८. ७)। इस जाति के लोगों ने दाशराज्युद्ध में तुलु-भरतों का विरोध किया था। तिसर के मत में, आधुनिक अफ़ग़ानिस्तान में स्थित 'पख्तून' जाति के लोग यही होंगे (तिसर-अल्लिन्डिरो लेवेन पृ. ४३०)।

२. पक्थ लोगों का एक राजा, एवं अश्विनो का आश्रित (ऋ. ८. २२. १०)। इसपर इंद्र की कृपा थी (ऋ. ८. ४९. १०)। दाशराज्युद्ध में यह त्रसदस्यु के पक्ष में, एवं सुशस के विरोधी पक्ष में शामिल था (ऋ. ७. १८. ७)।

प्रा. च. ४८]

ऋग्वेद में एक जगह, इसका नाम 'तृशयण' बताया है, एवं इसे च्यवान ऋषि का शत्रु कहा है (ऋ. १०. ६१. १-२)।

पक्ष—देवयोनि के अंतगत 'गुह्यक' जाति में से एक पुरुष। यह मणिवर एवं देवजनी के तीस पुत्रों में से एक था (मणिवर देखिये)।

२. (सो. अनु) एक राजा। वायु के अनुसार, अनु राजा का पुत्र चक्षु एवं यह, दोनों एक ही थे (चक्षु देखिये)।

पक्षगंत—एक ऋग्वेदी श्रुतिर्षिगण।

पक्षाटिका—स्कंद की अनुचरी एक मातुका (म. श. ४५.१९)।

पंचजित्—गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. ९९.१० पाठ)।

पंचदिग्गाम—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६३)।

पंचक—इंद्र द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे का नाम उल्कोश था (म. श. ४४.३२ पाठ)।

पंचकर्ण वात्स्यायन—एक वैदिक गुरु। 'वात्स्य' का वंशज होने के कारण, इसे 'वात्स्यायन' नाम प्राप्त हुआ था।

मनुष्य के मस्तक में रहनेवाले सात प्राण, योगशास्त्र की परिभाषा में, 'सप्तसूर्य' कहलाते हैं। उन सप्तसूर्यों का दर्शन पंचकर्ण को हुआ था। इस अपूर्व अनुभव का वर्णन भी इसने दिया है (तै. आ. १.७.२)। 'वात्स्यायन कामसूत्र' नामक विश्वविख्यात कामशास्त्रविषयक ग्रंथ का रचयिता संभवतः यही होगा।

पंचचूडा—पाँच जड़ोंवाली एक अप्सरा (म. व. १३४.११)। यह कुबेरसभा में विराजमान रहती थी (म. स. १०.११२*)।

परमपदप्राप्ति के लिये ऊपर की ओर जाते हुए शुकदेव को, एक बार इसने देखा, एवं यह आश्चर्यचकित हो उठी (म. शां. ३३२.१९-२०)।

नारी स्वभाव की निष्ठता का वर्णन इसने नारद के समक्ष किया था (म. अनु. ३८.११-३०)। पश्चात् वही नारीस्वभाव-वर्णन भीष्म ने युधिष्ठिर को बताया था। इसे 'पुंश्वली' एवं 'ब्राह्मी' नामांतर भी प्राप्त है।

पंचजन—वेदकालीन पाँच प्रमुख ज्ञानियों का सामूहिक नाम (ऐ. ब्रा. ३.३१; ४.२७; तै. सं. १.६.१.२; का. सं. ५.६; १२.६)। ऋग्वेद के प्रत्येक मंडल में 'पंचजनों' का उल्लेख मिलता है :- मंडल क्रमांक २, एवं ४ में एक एक बार; मंडल क्र. १.५.६.७. एवं ८ में दो दो बार; मंडल क्रमांक ३ एवं ९ में तीन-तीन बार; तथा मंडल क्रमांक १० में चार चार।

एक यौगिक शब्द के रूप में 'पंचजनों' का निर्देश उपनिषद में मिलता है (बृ. उ. ४.४.१७)। ये लोग सरस्वती नदी के तट पर रहते थे (क्र. ६.६१.१२)।

'पंचजनों' के निम्नलिखित नामांतर वैदिक ग्रंथों में मिलते हैं :-

(१) पंचमानुष—(क्र. ८.९.२)।

(२) पंचमानव—(अ. वे. ३.२१.५, २४.३; १२. १.१५)।

(३) पंचकृष्टि—(क्र. २.२.१०; ३.५.३.१६; ४. ३८.१०; अ. वे. ३.२४.३)।

(४) पंचक्षिति—(क्र. १.७.९; ५.३.५.२; ७.७.५.४)

(५) पंचचर्षणि—(क्र. ५.८.६.२; ७.१.५.२; ९. १.०.१.९)।

'पंचजन कौन थे—वैदिक वाक्य निर्दिष्ट, 'पंचजन' (पाँच जातियों) निश्चित कौन लोग थे, यह अत्यंत अनिश्चित है। इस बारे में कुछ मतांतर नीचे दिये गये हैं:—

ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, देवता, मनुष्य, गंधर्व, सर्प एवं पितृगण ये पाँच जातिसमूह 'पंचजन' कहलाते थे (ऐ. ब्रा. ३.३१)।

औपमान्यव एवं सायणके अनुसार, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र एवं निषाद ये पाँच वर्ण 'पंचजन' थे (नि. ३. ८; क्र. १. ७. ९)।

यास्क के अनुसार, गंधर्व, पितरः, देव, असुर, एवं रश्मि इनका ही केवल 'पंचजनों' में समावेश होता था (निरुक्त. ३.८; बृ. उ. ४.४.१.७ शांकरभाष्य)।

रौथ एवं गेल्डनर—के अनुसार, पृथ्वी के उत्तर, दक्षिण पूर्व, पश्चिम इन चार दिशाओं में रहनेवाले लोग एवं उनके बीच में स्थित आर्यगण ये पाँच पंचजन।

'पंचजन' में अभिप्रेत है (सेन्ट पीटर्सबर्गकोश)। अपने मत की परिपुष्टि के लिये, उन्होंने अथर्ववेद में प्राप्त, 'पंच प्रदिशो मानवीः पंच कृष्टयः' (अ. वे. ३.२४.३) ऋचा का उद्धरण दिया है।

त्सिमर—के अनुसार, वैदिक 'पंचजनों' में केवल आर्य लोगों का समावेश अभिप्रेत है। इस कारण, अनु, द्रुह्यु, यदु, तृष्यश एवं पूरु इन आर्य जातियों-को ही वैदिक ग्रंथों में 'पंचजन' कहलाना अधिकतम ठीक होगा।

उपरिनिर्दिष्ट मतांतरों में से त्सिमर का मत, सब से अधिक मान्य है। 'ब्राह्मण' ग्रंथों के काल में, पंचजनों के अंतर्गत पाँच जातियों को संभवतः 'पंचाल' यह नया नाम प्राप्त हुआ। पश्चात् कुरु लोगों का पंचजनों में समावेश हो कर, 'कुरु पंचाल' ये लोग 'सप्तजन' नये नाम से प्रसिद्ध हुये (श. ब्रा. १.३.५.४.१४; ऐ. ब्रा. ८.२३; वेबर इन्डिडो स्टुडियन १.२०२)।

२. नरकासुर के परिवार में स्थित पाँच राक्षसों का समूह। श्रीकृष्ण ने इनका वध किया (नरक देखिये)।

३. (सो. नील.) उत्तर पंचाल देश का सुविख्यात राजा। इसे 'च्यवन' नामांतर भी प्राप्त है। ऋग्वेद में इसका निर्देश 'पिजवन' नाम से किया गया प्रतीत होता है (ऋ. ७.१८.२२)। 'पंचजन' यह संभवतः 'पिजवन' का ही अपभ्रष्ट रूप होगा। अग्नि पुराण में, इसके नाम के लिये 'पंचधनुष' पाठभेद उपलब्ध है।

यह संजय राजा का पुत्र था। इसका पुत्र सोमदत्त (ब्रह्म. १३.१८; ह. वं. १.३२.७७)।

४. एक दैत्य। यह संहार नामक दैत्य का पुत्र था। यह शंख का रूप धारण कर समुद्र में रहता था। सांदापनि ऋषि के मरे हुए पुत्र को, समुद्र में से वापस लाने के लिये श्रीकृष्ण समुद्र में गया। उस समय, उसने पंचजन का वध किया, एवं इसके अस्थियों से एक शंख बनाया। भगवान् श्रीकृष्ण का सुविरस्यारत- 'पंचजन्य' शंख वही है (भा. ६.१८.१४; १०.४५.४०)।

५. एक प्रजापति। इसके 'पंचजनी' (असिकनी) नामक एक कन्या थी। वह प्राचेतस दक्ष को पत्नी के रूप में दी गयी थी (भा. ६.४.५१)।

६. कपिल ऋषि के शप से बचे हुये सगर के चार पुत्रों में से एक (पद्म. उ. २०; ब्रह्म. ८.६३)।

पंचजनी—ऋषभ राजा का पुत्र भरत की पत्नी। इसके कुल पाँच पुत्र थे। उनके नाम—सुमति, राट्रभृत्, सुरशत, आवरण, एवं धूमकेतु हैं (भा. ५.७.१-३)।

२. दक्ष की पत्नी (मत्स्य. ५.४)।

पंचधनुष—(सो. नील.) उत्तर पंचाल के पंचजन राजा का नामांतर।

पंचपत्तलक—(आंघ्र. भविष्य.) एक राजा। ब्रह्मांड के अनुसार यह हाल राजा का पुत्र था (तलक देखिये)।

पंचम—वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की सामशिष्यरंपरा के हिरण्यनाभ का शिष्य (व्यास देखिये)।

पंचमेढ्र—एक राक्षस। इसकी पाँच इंद्रियों, पाँच पैर, दस हाथ तथा आठ सिर थे। यह असाधारण आहार लेता था। इसलिये वाली से युद्ध करते समय, इसने उसे निगल लिया था। वाली के वंश सुग्रीव, तथा दधीचि कश्यपादि ऋषियों को भी इसने निगल लिया था। परंतु वीरभद्र ने इससे युद्ध कर, इसके पेट का विच्छेद किया एवं इन सबको बाहर निकाला (पद्म. पा. १०६)।

पंचयाम—भागवत के अनुसार, अष्ट वसुओं में से

विभावसु का पौत्र, एवं आतप का पुत्र। इसकी माता का नाम उषा था। इसीके कारण पृथ्वी पर से सारे प्राणी कर्मप्रवृत्त हो जाते हैं (भा. ६.६.१६)।

पंचसक्त्र—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४. ७१)।

पंचवीर्य—एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ११. १६)।

पंचशिक्ष—एक प्राचीन ऋषि। इसे 'पंच कोशों' का एवं उन कोशों के बीच में स्थित ब्रह्म का अग्निशिला के समान तेजस्वी ज्ञान था। इसलिये इसे 'पंचशिक्ष' नाम प्राप्त हुआ था (म. शां. २११.६१२*)।

इसकी माता का नाम कपिला था। कपिला इसकी जन्मदात्री माता नहीं थी। उसका दूध पी कर यह बड़ा हुआ था। इसकी माता के नाम से, इसे 'कपिलेय' मानृक नाम प्राप्त हुआ। सांख्य ग्रंथों में इसे 'कपिल' कहा गया है (मत्स्य. ३.२९)।

गुरुपरंपरा—यह याज्ञवल्क्यशिष्य आसुरि ऋषि का प्रमुख शिष्य था (म. शां. २११.१०)। 'बृहदारण्यक उपनिषद्' में इसकी गुरुपरंपरा इसप्रकार दी गयी है:—उपवेशी, अरुण, उद्दालक, याज्ञवल्क्य, आसुरि, पंचशिक्ष (बृहदारण्यक. ६.५.२-३)। पुराणों में इसकी गुरुपरंपरा कुल अलग दी गयी है, जो इस प्रकार है:—वोढु, कपिल, आसुरि, पंचशिक्ष (वायु. १०१.३३८)।

इस गुरुपरंपरा में से कपिल ऋषि पंचशिक्ष ऋषि का परात्पर गुरु (आसुरि नामक गुरु का गुरु) था। महा-भारत में, कपिल एवं पंचशिक्ष इन दोनों को एक ही मानने की भूल की गयी है (म. शां. ३२७.६४)। उस भूल के कारण, पंचशिक्ष को चिरंजीव उपाधि दी गयी, जो वस्तुतः कपिल ऋषि की उपाधि थी (म. शां. २११. १०)। सांख्यशास्त्र के अभ्यासक, कपिल ऋषि को ब्रह्माजी का अवतार समझते हैं, एवं पंचशिक्ष को कपिल का पुनरावतार मानते हैं।

दिष्य—मिथिला देश का राजा जनदेव जनक पंचशिक्ष ऋषि का शिष्य था। उससे इसका 'नास्तिकता' के बारे में संवाद हुआ था (नारद. १. ४५)। इस संवाद के पश्चात्, जनदेव जनक ने अपने सौ गुरुओं को त्याग कर, पंचशिक्ष को अपना गुरु बनाया। फिर इसने उसे सांख्य तत्त्वज्ञान के अनुसार, मोक्षप्राप्ति का मार्ग बताया। निवृत्तिमार्ग के आचरण से जनन-मरण के फेर से मुक्ति एवं परलोक की सिद्धि वैसी प्राप्त हो सकती है, इसका

उपदेश पंचशिख ने जनदेव जनक को दिया (म. शां. २११-२१२)।

पंचशिख का एक और शिष्य धर्मध्वज जनक राजा था (म. शां. ३०८)। महाभारत में प्राप्त ' सुलमा धर्मध्वज जनक संवाद ' में, धर्मध्वज ने इसे अपना गुरु कहलाया है।

भारतीय षड्-दर्शनों की परंपरा में 'सांख्यदर्शन' सत्र से प्राचीन है। उस शास्त्र के दर्शनकारों में पंचशिख पहला दार्शनिक आचार्य माना जाता है। निम्नलिखित लोगों को पंचशिख ने ' सांख्यशास्त्र ' सिखाया था:— (१) धर्मध्वज जनक; (२) विश्वावसु गंधर्व (म. शां. ३०६. ५८); (३) काशिराज संयमन (म. शां. परि. १. क्र. २९)।

पंचशिख ' पराशरगोत्रीय ' था। संन्यासधर्म एवं तत्त्वज्ञान का इसे पूर्ण ज्ञान था। यह ब्रह्मनिष्ठ था, एवं इसमें ' उदापोह ' (ब्रह्मज्ञान का ग्रहण एवं प्रदान) की शक्ति थी। इसने एक सहस्र वर्षों तक ' मानसयज्ञ ' किया था। ' पंचरात्र ' नामक यज्ञ करने में यह निष्णात था (म. शां. २११; नारद. १. ४५)।

शुक्लयजुर्वेदियों के ' ब्रह्मयज्ञांगतर्पण ' में इसका निर्देश प्राप्त है (पारस्करयज्ञ. परिशिष्ट; मस्य. १०२. १८)।

ग्रंथ—' सांख्यशास्त्र ' पर इसने ' पष्ठितंत्र ' नामक एक ग्रंथ भी लिखा था (योगसूत्रभाष्य. १. ४; २. १३; ३. १३)। यह ग्रंथ आज उपलब्ध नहीं है। सांख्यदर्शन पर उपलब्ध होनेवाला प्राचीनतम ग्रंथ ईश्वरकृष्ण का ' सांख्यकारिका ' है। ईश्वरकृष्ण का काल चौथी शताब्दी के लगभग माना जाता है।

सांख्यतत्त्वज्ञान—सांख्य अनीश्वरवादी दर्शन है। पुरुष एवं प्रकृति ही उसके प्रतिपादन के प्रमुख विषय हैं। सांख्य के अनुसार, प्रकृति एवं पुरुष अनादि से प्रभुत्ववाच है। ' मैं सुखदुःखातिरिक्त तीन गुणों से रहित हूँ, इस प्रकार का विचक्र प्रकृति एवं पुरुष में उत्पन्न होता है, तब ज्ञानोपलब्धि होती है। जब प्रारब्ध कर्म का भोग समाप्त हो कर आत्मतत्त्व का साक्षात्कार हो जाता है, तब मोक्षप्राप्ति हो जाती है।

सांख्य सत्कार्यवादी दर्शन है। सत्कार्यवाद की स्थापना के लिये, उस दर्शन में, असदकरण, उपादानग्रहण, सर्वसंभवाभाव, शक्यकरण एवं कारणभाव ये पाँच हेतु दिये गये हैं (सांख्यकारिका)। शंकराचार्यजी ने भी न्याय के असत्कार्यवाद के खंडनार्थ जो युक्तियाँ कथन की हैं,

उन पर सांख्यकारिका का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। (वेदान्तसूत्र २.१.१८)।

कनिष्ठ अधिकारियों के लिये वैशेषिक एवं न्याय, मध्यम अधिकारियों के लिये सांख्य, और उच्च अधिकारियों के लिये वेदान्त का कथन किया गया है। सांख्यदर्शन में प्रकृति के विभिन्न रूपगुणों की व्याख्या परिमाणवाद या विकासवाद का प्रतिपादन, पुरुष एवं प्रकृति का विवेचन, पुनर्जन्म, मोक्ष एवं परमतत्त्व का विश्लेषण, बहुत ही सूक्ष्म एवं वैज्ञानिक दृष्टि से किया गया है (गौरीला-संस्कृत साहित्य का इतिहास ४७१-४७३)।

२. दधिवाहन नामक शिवावतार का शिष्य।

पंचहस्त—दक्षसावर्णि मनु का पुत्र।

पंचाल—शतपथ ब्राह्मण कालीन एक लोकसमूह (श. ब्रा. १३. ५. ४. ७; जै. ब्रा. ३.२९.१)। ऋग्वेदकाल में यही लोग ' क्रिवि ' नाम से, एवं महाभारतकाल में ये लोग ' पांचाल ' नाम से प्रसिद्ध थे (म. आ. ५५.२१; पांचाल देखिये)।

पंचाल लोगों का निर्देश प्रायः कुरु लोगों के साथ आता है। कुरु पंचालों के राजाओं का निर्देश ' ऐतरेय ब्राह्मण ' में प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ८.१४)। उनमें से कैव्य, दुर्मुख प्रवाहण जैवलि, एवं शोन ये पंचाल राजा प्रधान एवं महत्त्वपूर्ण हैं। केशिन् दाल्य नामक और एक पंचाल राजा का निर्देश ' काटक संहिता ' में प्राप्त है (का. सं. ३.२)। इन लोगों के नगरों में, ' परिचक्रा, ' ' कापील, ' ' कौशांबी ' ये प्रमुख थे (श. ब्रा. १३.५. ४.७)।

पंचाल लोगों के अंतर्गत ' क्रिवियों ' के अतिरिक्त अन्य जातियाँ भी सम्मिलित थीं। ' पंचाल ' नाम से पाँच जातियों का संदर्भ प्रतीत होता है। ऋग्वेद में निर्देशित पाँच जातियाँ (' पंचजन ') एवं ' पंचाल ' एक ही थे, ऐसा कई अभ्यासकों का कहना है (पंचजन देखिये)।

पंचाल देश के ब्राह्मण दार्शनिक एवं भाषाशास्त्रीय वादविवादों में प्रवीण रहते थे (वृ. उ. ६.१; १. छां. उ. ५.३.१)। महाभारतकाल में पंचाल देश का उत्तर एवं दक्षिण के रूप में विभाजन किया गया था। किंतु वैदिक साहित्य में उस विभाजन का कुछ उल्लेख नहीं मिलता।

२. (सो. नील.) मद्राक्ष (भम्याक्ष) राजा के पाँच पुत्रों के लिये प्रयुक्त सामूहिक नाम। ' पंच अलम् '

(पाँच-पराक्रमी) के अर्थ से यह नाम भद्राश्व के पुत्रों के लिये प्रयुक्त किया जाता था। उन्हीं के नाम से, उनके राज्य को 'पंचाल' नाम प्राप्त हुआ (पार्णि, ७५)।

पंचालचंड—पंचाल देश में उत्पन्न एक वैदिक ऋषि। वाणी के द्वारा ही वैदिक संहिताएँ 'संहित' की जाती हैं, ऐसा इसका मत था (ऐ. आ. ३.१.६; सां. आ. ७. १९)।

पंचिक—दक्षिण पंचाल देश के 'ब्राह्मण्य पंचाल' आचार्य का नामांतर (ह. वं. २३.१२५६; ब्राह्मण्य पंचाल देखिये)।

पञ्ज—एक वैदिक कुलनाम। पञ्जिय कक्षीवत् ऋषि इसी कुल में पैदा हुआ था (ऋ. १.१२६.२-५)। यह कुल 'अंगिरस् कुल' की ही एक उपशाखा थी (ऋ. १.५.१.४ सायण,)। सोम को 'पञ्जार्गम' कहा गया है (ऋ. ९.८२.४)।

पञ्जिय वा पञ्ज्य—'कक्षीवत् दीर्घतमस् औंशिञ्' ऋषि का पैतृक नाम (ऋ. १.११६; १.१७.१०; १.२२. ७८)। इसके सूक्त में उत्तर पंचाल देश का राजा दिवोदोस का निर्देश प्राप्त है, (ऋ. १.११६.१८)। यह ऋषि भरत राजा के समकालीन, कक्षीवत् ऋषि से अलग एवं पश्चात्कालीन था, ऐसा पार्णिटर का कहना है (पार्णि, २२३)।

पटचर—'पटचर' देश के निवासियों का सामूहिक नाम। ये लोग जरासंध की भय से दक्षिण की ओर भाग गये थे (म. स. १३.२५)। सहदेव ने इन्हें दक्षिण-दिग्विजय के समय जीता था (म. स. २८.४)। भारतीय युद्ध में, ये लोग युधिष्ठिर के पक्ष में लड़ने आये थे, एवं उसके साथ क्रौंचव्यूह के पृष्ठभाग में खड़े थे (म. भी. ४६.४७)।

२. एक राक्षस। रथसेन राजा ने इसका वध किया (म. द्रो. २२.५३)।

पटवासक—धृतराष्ट्र के कुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में जल कर मर गया (म. आ. ५.७. १८; भांडारकर संहिता पाठ—'पटवासन')।

पटुमत्—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा। विष्णु के अनुसार यह मेघस्वाति का, ब्रह्मांड के अनुसार आपोलव का, एवं वायु के अनुसार आपादवद्ध का पुत्र था। भागवत में इसे अटमान कहा गया है। इसने २४ वर्षों तक राज्य किया

पटुमित्र—(किलकिला. भविष्य.) विष्णु के अनुसार एक राजा।

पटुश—एक राक्षस, जिसने श्रीरामसेना के पनस नामक यानर से युद्ध किया था (म. व. २६.९.८)।

पटुमित्र—(भविष्य.) ब्रह्मांड एवं वायु के अनुसार पुष्पमित्र के बाद के तेरह राजाओं का सामूहिक नाम।

पटर्वन्—अश्वियों का कृपापात्र एक राजा (ऋ. १. ११२.१७ सायणभाष्य)।

पटुशुभि—एक वैदिक असुर (ऋ. १०.४९.५)। 'पटुशुभि' का शब्दशः अर्थ 'पैर को पकड़ लेनेवाला', ऐसा होता है। श्रुतवर्मन् राजा के रक्षणार्थ, इंद्र ने इसको पराजित किया था।

पणव—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। वायु के अनुसार यह भजमान का पुत्र था।

पणि—एक वैदिक जाति। इस जाति के लोग वैदिक ऋषियों के देवताओं की उपासना न करनेवाले लोगों में से थे। संभवतः ये कहीं आदिवासी अनार्य वा दैत्य रहे होंगे। इनके राजा का नाम 'वृत्रु' था। (ऋ. ६.४५. ३१-३३; वृत्रु देखिये)

रॉथ के अनुसार, 'पणि' शब्द 'पण' (विनिमय) धातु से व्युत्पन्न हुआ था, एवं 'पणि' ऐसे जाति के लोग थे, जो बिना किसी प्रतिप्राप्ति के अपना कुछ नहीं देते थे, अतः ये ऐसे कृपण लोग थे जो न तो देवों की उपासना करते थे, और न पुरोहितों को दक्षिणाएँ देते थे (रॉथ-सेंट पिटर्सबर्ग कोश)। यात्क एवं सायणाचार्य भी पणि को वाणिज जाति का कहते हैं (निष्कत. २.१७; ६.२६)।

ऋग्वेद के सूक्तकार अपने विरोधियों को 'इंद्रशत्रु,' 'अयज्वन्' आदि अपमान दर्शक शब्दों से संबोधित करते हैं। इस प्रकार पणियों को भी संबोधित किया गया है। इन्हें गंदे, कंजस आदि विशेषणों से संबोधित किया गया है (ऋ. १०.१०८)। इन पर आक्रमण करने की प्रार्थना देवों से की गयी है एवं वामदेव ने अपनी प्रार्थना में कहा है, 'अत्यंत निविड अंधकार में पणि गिरें' (ऋ. ४.५१.३)। ऋग्वेद में एक स्थल पर, इन्हें शत्रु के नाते भेड़िया कहा गया है (ऋ. ६.५१.१४); एवं दूसरे एक स्थल पर इन्हें 'वेकनाट' (ध्याज खानेवाला) कहा है (ऋ. ८-६६.१०) एक अन्य स्थल पर, इन्हें 'दस्यु' कह कर, इनके लिये 'मृध्रवाच' (कटु वाणी बोलनेवाला, एवं 'ग्रथिन्' (अपरिचित वाणी बोलनेवाला) शब्दों का

प्रयोग किया गया है (ऋ. ७.६.३)। इन्हें 'वैरदेय' कह कर मनुष्यों से हीन माना गया है (ऋ. ५.६१.८)।

कृपण के रूप में, पणि वैदिक यज्ञकर्ताओं के विरोधी थे (ऋ. १.१२४.१०; ४.५१.३)। दैत्यों के रूप में आ कर ये आकाश की गायों या जलो को रोक रखते थे (ऋ. १.३२.११; या. ब्रा. १.३.८.२.३)। ऋग्वेद के 'सरमा-पणि-संवाद' में ऐसी ही एक कथा दी गयी है (ऋ. १०.१०८)। पणियों ने इंद्र की गायों का हरण किया। फिर इंद्र के दूत बन कर, सरमा पणियों के पास आयी, एवं इंद्र की गायें लौटाने की धमकी उसने इन्हें दे दी। वही 'सरमा-पणि-संवाद' है।

पणियों का वध कर के देवों ने उन्हें पराजित किया था। फिर पणियों की सारी संपत्ति कृत्रे में ले कर, देवों ने उसे अंगिरसों को दे दी (ऋ. १.८३.४)। अथर्वन् अंगिरस इंद्र का गुरु था, एवं उसने अग्नि उत्पन्न कर, उसे हवि अर्पण किया था। इस पुण्य के कारण, देवों ने अंगिरसों पर कृपा की।

लुडकिंग के अनुसार, 'पणि' लोग आदिवासी व्यवसायी थे एवं 'काफिलों' में चलते थे (लुडकिंग-ऋग्वेद अनुवाद ३.२१३-२१५)। हिलेब्रान्ट के अनुसार ये लोग इराण में रहनेवाले थे, एवं स्ट्राबो के 'पर्नियन', टॉलेमी के 'पारूपेताइ', अरियन के 'घारसायन्टेस' से समीकृत थे (हिलेब्रान्ट-वेदिशे माइथॉलोजी १.८३)। दिवोदास राजा के साथ हुए पणियों के युद्ध का संबंध भी हिलेब्रान्ट ने इराण से ही लयाया है। किंतु दिवोदास एवं पणियों का यह स्थानान्तर असंभाव्य प्रतीत होता है।

२. पाताल का एक असुर (भा. ५.२४.३०)।

पण्डक—धर्मसावर्णि मन्वन्तर के मनु का पुत्र।

पण्डित—एक विद्वान व्यक्ति के अर्थ से प्रयुक्त सामान्य नाम (वृ. उ. ३.४.१; छां. उ. ६.१४.२)।

२. (सो. ब्रह्म.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। भीमसेन ने इसका वध किया (म. भी. ८४.२४; पाटमेद पण्डितक)।

पतंग प्राजापत्य—एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१७७)। यह प्रजापति के वंश में उत्पन्न हुआ था। इसलिये इससे 'प्राजापत्य' उपाधि प्राप्त हुयी थी। ऋग्वेद के उस सूक्त की रचना इसने की है, जिसमें 'पतंग' का अर्थ 'सूर्य पक्षी' है (ऋ. १०.१७७.१)। इसने प्रणयन किये साम के कारण, 'उचैःश्रवस् कौपेय' को मृत्यु के पश्चात् 'धूमशरीर' की प्राप्ति हो गयी (वै. उ. ब्रा. ३.३०.३)।

को मृत्यु के पश्चात् 'धूमशरीर' की प्राप्ति हो गयी (वै. उ. ब्रा. ३.३०.३)।

पतंचल 'काप्य'—एक वैदिक ऋषि। अंगिरसकुल के कपि नामक क्षत्रिय ब्राह्मणवंश में इसका जन्म हुआ था। यह मद्र देश में रहता था। एकवार भुज्यु लाहवायनि नामक याज्ञवल्क्य का समकालीन ऋषि, घूमते घूमते इसके घर आया। वहाँ उसकी मुलाकात पतंचल की कन्या से हो गयी। उस कन्या के शरीर में सुधन्वन् अंगिरस नामक एक गंधर्व वास करता था। सुधन्वन् की कृपा से भुज्यु को विशेष ज्ञान की प्राप्ति हो गयी। इसी ज्ञान विषयक प्रश्न, 'याज्ञवल्क्य-भुज्यु संवाद' में भुज्यु ने याज्ञवल्क्य से पूछे (वृ. उ. ३.३.१; ७.१)। किंतु अंत में याज्ञवल्क्य ने उसे पराजित किया।

पतंजलि—संस्कृत भाषा का सुविख्यात व्याकरणकार एवं पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' नामक व्याकरणग्रंथ का प्रामाणिक व्याख्याकार। संस्कृत व्याकरणशास्त्र के बृहद् नियमों एवं भाषाशास्त्र के शंभरी विचारों के निर्माता के नाते पाणिनि, व्याडि, कात्यायन, एवं पतंजलि इन चार आचार्यों के नाम आदर से स्मरण किये जाते हैं। उनमें से पाणिनी का काल ५०० खि. पू. हो कर, शेष वैय्याकरण मौयं युग के (४०० खि. पू.-२०० ई. पू.) माने जाते हैं।

वैदिकयुगीन साहित्यिक भाषा ('छंदस्' या 'नैगम') एवं प्रचलित लोकभाषा ('लौकिक') में पर्यात अंतर था। 'देववाक्' या 'देववाणी' नाम से प्रचलित साहित्यिक संस्कृत भाषा को लौकिक श्रेणी में लाने का युग-प्रवर्तक कार्य आचार्य पाणिनि ने किया। पाणिनीय व्याकरण के अद्वितीय व्याख्याता के नाते, पाणिनि की महान् ख्याति को आगे बढ़ाने का दुष्कर कार्य पतंजलि ने किया। व्याकरणशास्त्र के विषयक नये उपलब्धियों के सद्भा, एवं नये उपादानों का जन्मदाता पतंजलि एक ऐसा मेधावी वैय्याकरण था कि, जिसके कारण ब्रह्माजी से ले कर पाणिनि तक की संस्कृत व्याकरणपरंपरा अनेक विचार वीथियों में फैल कर, चरमोन्नत अवस्था में पहुँची।

पतंजलि पाणिनीय व्याकरण का केवल व्याख्याता ही न हो कर, स्वयं एक महान् मनस्वी विचारक भी था। इसकी उँची सूझ एवं मौलिक विचार इसके 'व्याकरण महाभाष्य' में अनेक स्थानों पर दिखाई देते हैं। इसीलिये इसको स्वतंत्र विचारक की केंद्र में खड़ा करते हैं। अपने निर्भीक विचार एवं असामान्य प्रतिभा के कारण, इसने

पाणिनीय व्याकरण की महत्ता बढ़ायी, एवं 'वैयाकरण पाणिनि' को 'भगवान् पाणिनि' के उँची स्तर तक पहुँचा दिया।

नामांतर—प्राचीन ग्रंथों एवं कोशों में, पतंजलि के निम्नलिखित नामांतर मिलते हैं :— गोनदीय, गौणिकापुत्र नागनाथ, अहिपति, फणिश्रुत्, फणिपति, चूर्णिकाकार, पदकार, शेष, वासुकि, भोगीन्द्र (विश्वप्रकाशकोश १.१६; १९; महाभाष्यप्रदीप. ४.२.९२; अभिधान. पृ. १०१)।

इन नामों में से, 'गोनदीय' संभवतः इसका देशनाम था, एवं 'गौणिकापुत्र' इसका मातृकनाम था। उत्तर प्रदेश के गोंडा जिला को प्राचीन गोनर्द देश कहा गया है। कल्हणकृत 'राजतरंगिणी' में, गोनर्द नाम से काश्मीर के तीन राजाओं का निर्देश किया गया है। 'गोनदीय' उपाधि के कारण, पतंजलि कश्मीर या उत्तर प्रदेश का रहनेवाला प्रतीत होता है। 'चूर्णिकाकार' एवं 'पदकार' इन नामों का निर्वचन नहीं मिलता।

पतंजलि के बाकी सारे नामांतर कि वह भगवान् शेष का अवतार था, इसी एक ही कल्पना पर आधारित है। शेष, वासुकि, फणिपति आदि पतंजलि के बाकी सारे नाम इसी एक कल्पना को दोहराते हैं।

काल—पतंजलि की 'व्याकरण महाभाष्य' में पुष्यमित्र एवं चंद्रगुप्त राजाओं की सभाओं का निर्देश प्राप्त है (महा. १.१.६८)। मिन्दर नामक चवनों के द्वारा साकेत नगर घेरे जाने का निर्देश भी, 'अरुचवनः साकेतम्' इस रूप में, किया गया है। पुष्यमित्र राजा का यज्ञ संप्रति चालू है ('पुष्यमित्रं याजयामः') इस वर्तमानकालीन क्रियारूप के निर्देश से पतंजलि उस राजा का समकालीन प्रमाणित होता है। इसी के कारण, डॉ. रा. गो. भोंडारकर, डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल, डॉ. प्रभातचंद्र चक्रवर्ति प्रभृति विद्वानों का अभिमत है कि, पतंजलि का काल १५० ख्रि. पू. के लगभग था।

जीवनचरित्र—पतंजलि का जीवनचरित्र कई पुराणों में प्राप्त है। भविष्य के अनुसार, यह बुद्धिमान् ब्राह्मण एवं उपाध्याय था। यह सारे शास्त्रों में पारंगत था, फिर भी इसे कात्यायन ने काशी में पराजित किया। प्रथम यह विष्णुभक्त था। किंतु बाद में इसने देवी की उपासना की, जिसके फलस्वरूप, आंगं चल कर, इसने कात्यायन को वादचर्चा में पराजित किया। इसने 'कृष्णमंत्र' का काफी प्रचार किया। इसने 'व्याकरणभाष्य' नामक ग्रंथ की

रचना की। आखिर 'विष्णुमाया' के योग से, यह चिरंजीव बन गया (भवि. प्रति. २.३५)।

व्याकरणमहाभाष्य—पाणिनि का 'अष्टाध्यायी' का ग्रंथ लोगों को समझने के लिये कठिन मालूम पड़ता था। इस लिये अपने 'व्याकरणमहाभाष्य' की रचना पतंजलि ने की।

पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' में आठ अध्याय एवं प्रत्येक अध्याय में चार पाद हैं। इस तरह कुल ३२ पादों में 'अष्टाध्यायी' ग्रंथ का विभाजन कर दिया गया है।

पतंजलि के महाभाष्य की रचना 'आह्निकात्मक' है। इस ग्रंथ में कुल ८५ आह्निक हैं। 'आह्निक' का शब्दशः अर्थ 'एक दिन में दिया गया व्याख्यान' है। हर एक आह्निक को स्वतंत्र नाम दिया है। उन में से प्रमुख आह्निकों के नाम इस प्रकार हैं :— १. स्पृशा (प्रस्ताव), २. प्रत्याहार (शिवसूत्र-अइउण् आदि), ३. गुणवृद्धि संज्ञा, ४. संयोगादि संज्ञा, ५. प्रवृद्धादि संज्ञा, ६. सर्वनामाध्ययादि संज्ञा, ७. आगमादेशादिव्यवस्था, ८. स्थानिवद्भाव, ९. परिभाषा।

पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' पर सर्वप्रथम कात्यायन ने 'वार्तिकों' की रचना की। उन 'वार्तिकों' को उपर पतंजलि ने दिये व्याख्यान 'महाभाष्य' नाम से प्रसिद्ध है। पाणिनि-सूत्र एवं वार्तिकों में जो व्याकरणविषयक भाग है उसका स्पष्टीकरण महाभाष्य में तो है ही, किन्तु उसके साथ, जिन व्याकरणविषयक सिद्धान्त उन में रह गये हैं, उनको महाभाष्य में पूरा किया गया है। उसके साथ, पूर्वग्रंथों में जो भाग अनावश्यक एवं अप्रस्तुत है, यह पतंजलि ने निकाल दिया है। उसी कारण, पतंजलि के ग्रंथ को महाभाष्य कहा गया है। अन्य भाष्यग्रंथों में मूलग्रंथ का स्पष्टीकरण मात्र मिलता है, किन्तु पतंजलि के महाभाष्य में मूलग्रंथ की अपूर्णता पूरित की गयी है।

इसी कारण पाणिनि, कात्यायन एवं पतंजलि के व्याकरणविषयक ग्रंथों में पतंजलि का महाभाष्य ग्रंथ सर्वाधिक प्रमाण माना जाता है। अन्य शास्त्रों में सर्वाधिक पूर्वकालीन ('पूर्व पूर्व') आचार्य का मत प्रमाण माना जाता है। किन्तु व्याकरण शास्त्र में पतंजलि ने की हुई महत्त्वपूर्ण ग्रंथ की रचना के कारण, सर्वाधिक उत्तर-कालीन आचार्य (पतंजलि) का मत प्रमाण माना जाता है। 'यथोत्तरं सुनीनां प्रामाण्यम्' इस आधेनियम व्याकरण-शास्त्र में प्रस्थापित करने का सारा श्रेय पतंजलि को ही है।

व्याकरण जैसे द्विष्ट एवं शुक्ल विषय को पतंजलि ने अपने महाभाष्य में अत्यंत सरल, सरस, एवं हृदयंगम ढंग से प्रस्तुत किया है। भाषा की सरलता, प्रांजलता, स्वाभाविकता एवं विषयप्रतिपादन शैली की दृष्टि से इसका महाभाष्य, समस्त संस्कृत वाङ्मय में आदर्शभूत है। इस ग्रंथ में तत्कालीन राजकीय, सामाजिक, आर्थिक एवं भौगोलिक परिस्थिति की यथातथ्य जानकारी मिलती है। भगवान् पाणिनि के जीवन पर भी महाभाष्य में काफी महत्त्वपूर्ण जानकारी मिलती है।

शुद्ध उच्चारण का महत्त्व—कृष्ण यजुर्वेद के अनुयायी, कठ लोगों का पाठ, पतंजलि के काल में परम शुद्ध माना जाता था। उनके बारे में पतंजलि ने कहा है, 'प्रत्येक नगर में कठ लोगों के द्वारा निर्धारित पाठ का प्रचलन है। उनका 'काठकधर्मसूत्र' नामक धर्मशास्त्रग्रंथ बहुत प्रसिद्ध है, एवं 'विष्णुस्मृति' उसी के आधार पर बनी है। आर्य साहित्य में अब तक उपनिषदों का महत्त्व रहेगा तब तक कठ लोगों का नाम भी बराबर बना रहेगा (महा. ४.३.१०१)।

'पाणिनि-शिक्षा की तरह, पतंजलि ने भी वेदपाठ के शुद्धोच्चारण, शुद्ध स्वरक्रिया एवं विधिपूर्वक संपन्न किये 'याग' पर बड़ा जोर दिया है। इसका कहना है, अच्छा जाना हुआ, एवं अच्छी विधि से प्रयोग किया हुआ एक ही शब्द, स्वर्ग तथा मृत्यु दोनों लोकों की कामना पूर्ण करता है (एकः शब्दः सम्यग् ज्ञातः सुष्ठु प्रयुक्तः स्वर्गं लोके च कामधुग् भवति)।

पतंजलि के महाभाष्य में 'काठक', 'कालापक', 'मौदक', 'पैप्पलाद' एवं 'आथर्वण' नामक प्राचीन धर्मसूत्रों का निर्देश किया है। ये सभी धर्मसूत्र संप्रति अनुपलब्ध हैं। किन्तु इन विलुप्त धर्मसूत्रों का काल ७०० ख्रिस्त. पू. माना जाता है। भारतीय युद्ध का निर्देश पतंजलि ने अपने 'महाभाष्य' में दिया है। 'कंसवध' एवं 'बलिवंध' नामक दो नाटक कृतियों का निर्देश भी 'महाभाष्य' में दिया गया है। 'वासवदत्ता', 'सुमनोत्तरा', 'भैरवर्था', आदि आख्यायिकाएँ पतंजलि को ज्ञात थी एवं उनमें अपने हाथ से यह काफी उलट-पुलट चुका था (महा. ४.३.८७)। पाटलिपुत्रादि नगरों का निर्देश भी महाभाष्य में अनेक बार आया है।

पूर्वाचार्य—पाणिनि के अष्टाध्यायी पर लिखे गये अनेक वार्तिक भाष्यों का निर्देश, पतंजलि ने 'महाभाष्य' में किया है। अकेले कात्यायन के पाठ पर तीन

व्याख्याएँ पतंजलि के पहले लिखी जा चुकी थी। इसी प्रकार भारद्वाज, सौनाग आदि के वार्तिकपाठों पर भी अनेक भाष्य लिखे गये थे (महा. १.३.३; ३.४.६७; ६.३.६१)।

पतंजलि के महाभाष्य में निम्नलिखित वैयाकरणों के एवं पूर्वाचार्यों के मत उद्धृत किये गये हैं—

१. सोनदीय (महा. १. २. २१, २९, ३.१.९२)—कैयट, राजशेखर, एवं वैजयन्ती कोश के अनुसार, यह स्वयं पतंजलि का ही नाम है।

२. गोणिकापुत्र (महा. १.४.५१)—वात्स्यायन के कामसूत्रों में भी, इस आचार्य का निर्देश है (काम. १.१.१६)।

३. सौर्यभगवत् (महा. ८. २. १०६)—कैयट के अनुसार, यह सौर्य नगर का रहिवासी था (महाभाष्य प्रदीप. ८.२.१०६; काशिका. २.४.७)।

४. कुणरवाडव (महा. ३.२.१४; ७.३.१)।

टीकाकार—पतंजलि के महाभाष्य पर निम्नलिखित टीकाकारों की टीकाएँ लिखी जा चुकी थी। उनमें से कुछ टीकाएँ नष्ट हो चुकी हैं—

१. भर्तृहरि—महाभाष्य की उपलब्ध टीकाओं में सर्वाधिक प्राचीन एवं प्रामाणिक टीका भर्तृहरि की है। इसने लिखे हुए टीकाग्रंथ का नाम 'महाभाष्यटीका' था। मीमांसकजी के अनुसार, भर्तृहरि का काल ४५० वि. पू. था।

२. कैयट—महाभाष्य पर कैयट ने लिखे हुए टीकाग्रंथ का नाम 'महाभाष्यप्रदीप' था। कैयट स्वयं कश्मीरी था, एवं उसका काल ११०० माना जाता है।

३. मैत्रेयरक्षित (१२ वीं शती)—टीका का नाम—'घातुप्रदीप'।

४. पुरुषोत्तमदेव (१२ वीं शती वि.)—टीका का नाम—'प्राणपणित'।

५. शेषनारायण (१६ वीं शती)—टीका का नाम—'मुक्तिरत्नाकर'।

६. विष्णुमित्र (१६ वीं शती)—टीका का नाम—'महाभाष्यटिप्पण'।

७. नीलकंठ (१७ वीं शती)—टीका का नाम—'भाषातत्त्वविवेक'।

८. शिवराभेंद्र सरस्वती (१७ वीं शती वि.)—टीका का नाम—'महाभाष्यरत्नाकर'।

८. शेषविष्णु (१७ वीं शती) — टीका का नाम—
महाभाष्यप्रकाशिका ।

१७ वीं शताब्दी में तंजौर के शहाजी राजा के अश्रित 'रामभद्र' नामक कवि ने पतंजलि के जीवन पर 'पतंजलि चरित' नामक एक काव्य लिखा था ।

महाभाष्य का पुनरुद्धार—इतिहास से विदित होता है कि, महाभाष्य का लोप कम से कम तीन बार अवश्य हुआ है । भद्रहरि के लेख से विदित होता है कि वैजि, सौमव, ह्यंश आदि शुष्क तार्किकों ने महाभाष्य का प्रचार नष्ट कर दिया था । चन्द्राचार्य ने महान् परिश्रम कर के शृङ्खल से किसी पार्वत्य प्रदेश से एक हस्तलेख प्राप्त कर के उसका पुनः प्रचार किया ।

कहण की 'रजतरंगिणी' से ज्ञात होता है कि, विक्रम की ८ वीं शती में महाभाष्य का प्रचार पुनः नष्ट हो गया था । कश्मीर के महाराज जयापीड ने देशान्तर से 'क्षीर' संज्ञक शब्दविशोभाष्याय को बुला कर विच्छिन्न महाभाष्य का पुनः प्रचार कराया ।

विक्रम की १८ वीं तथा १९ वीं शती में सिद्धांतकौमुदी तथा लघुसधदेदुसोर आदि अर्वाचीन ग्रंथों के अत्यधिक प्रचार के कारण, महाभाष्य का पठन प्रायः लुप्तसा हो गया था । स्वामी विरजानंद तथा उनके शिष्य स्वामी दयानंद सरस्वती ने महाभाष्य का उद्धार किया, तथा उसे पूर्वस्थान प्राप्त कराया ।

'महाभाष्य' के उपलब्ध मुद्रित आवृत्तियों में, डॉ. फ्रॉन्स कीलहॉर्नद्वारा १८८९ ई. स. में संपादित त्रिखण्डात्मक आवृत्ति सर्वोत्कृष्ट है । उसमें वार्तिकदिकों का निर्णय बहुत ही शास्त्रीय पद्धति से किया गया है । 'महाभाष्य' में उपलब्ध शब्दों की सूचि म. म. श्रीवरशास्त्री पाठक, एवं म. म. सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राय हन ग्रंथकारों ने तयार की है, एवं पूना के भांडारकर इन्स्टिट्यूट ने उसे प्रसिद्ध किया है ।

ये सारे ग्रंथ महाभाष्य की महत्ता को पुष्ट करते हैं ।
अन्य ग्रंथ—व्याकरण के अतिरिक्त, सांख्य, न्याय, काव्य आदि विषयों पर पतंजलि का प्रभुत्व था । 'व्याकरण महाभाष्य' के अतिरिक्त पतंजलि के नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हैं:— (१) सांख्यप्रवचन, (२) छंदोविचिंति, (३) सामवेदीय निदान सूत्र (C.C.)

२. 'चरकसंहिता' नामक आयुर्वेदीय ग्रंथ का प्रति-संस्करण करनेवाला आयुर्वेदाचार्य । 'चरकसंहिता' पर इसने 'पतंजलिवार्तिक' नामक ग्रंथ की रचना की थी ।

आषाढवर्मा के 'परिहारवार्तिक' एवं रामचंद्र दीक्षित के 'पतंजलि चरित' में पतंजलि के इस ग्रंथ का निर्देश है ('वैद्यकशास्त्रे वार्तिकानि च ततः') । पतंजलिवरित 'वातस्कंध-पैतृस्कंधोपेत-सिद्धांतसारावलि' नामक और एक वैद्यकशास्त्रीय ग्रंथ लंदन के इंडिया ऑफिस लायब्ररी में उपलब्ध है ।

आयुर्वेदाचार्य पतंजलि के द्वारा कनिष्क राजा की कन्या को रोगमुक्त करने का निर्देश प्राप्त है । इससे इसका काल २०० ई०, माना जाता है ।

पतंजलि ने 'रसशास्त्र' पर भी एक ग्रंथ लिखा था, ऐसा कई लोग मानते हैं । किंतु रसतंत्र का प्रचार छठी शताब्दी के पश्चात् होने के कारण, वह पतंजलि एवं चरक-संहिता पर भाष्य लिखनेवाले पतंजलि एक ही थे, ऐसा निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता ।

३. 'पतंजलयोगसूत्र' (या सांख्यप्रवचन) नामक सुविख्यात योगशास्त्रीय ग्रंथ का कर्ता । कई विद्वानों ने 'पतंजल योगसूत्रों' को षड्-दर्शनों में सर्वाधिक प्राचीन बताया है, एवं यह अभिमत व्यक्त किया है कि, उसकी रचना बौद्धयुग से पहले लगभग ७०० ई. पू. में हो चुकी थी ('पतंजलि योगदर्शन' की भूमिका पृ. २) । किंतु डॉ. राधाकृष्णन् आदि आधुनिक तत्त्वज्ञों के अनुसार 'योगसूत्र' का काल लगभग ३०० ई. है ('इंडियन फिलॉसफी २.३४१-३४२) । उस ग्रंथ पर लिखे गये प्राचीनतम वादरायण, भाष्य की रचना व्यास ने की थी उस भाष्य की भाषा अन्य बौद्ध ग्रंथों की तरह है, एवं उसमें न्याय आदि दर्शनों के मतों का उल्लेख किया गया है । 'योगसूत्रों' पर लिखे गये 'व्यासभाष्य' का निर्देश 'वात्स्यायनभाष्य' में एवं कनिष्क के समकालीन भद्रत धर्मत्रात के ग्रंथों में उपलब्ध है ।

योगसूत्र परिचय—विभिन्न प्राचीन ग्रंथों में बिखरे हुए योगसंघी विचारों का संग्रह कर, एवं उनकी अपनी प्रतिभा से संयोज कर, पतंजलि ने अपने 'योगसूत्र' ग्रंथ की रचना की । 'योगदर्शन' के विषय पर, 'योगसूत्रों' जैसा तर्कसंगत, गंभीर एवं सर्वांगीण ग्रंथ संसार में दूसरा नहीं है । उस ग्रंथ की युक्तिशैली एवं प्रांजल दृष्टिकोण अतुलनीय है, एवं प्राचीन भारत की दार्शनिक श्रेष्ठता सिद्ध करता है ।

'पतंजल योगसूत्र' ग्रंथ समाधि, साधन, विभूति एवं कैवल्य इन चार पादों (अध्यायों) में विभक्त किया गया है । उस ग्रंथ में समाविष्ट कुल सुत्रों की संख्या १९५ है ।

समाधिपाद—में योग का उद्देश्य, उसका लक्षण एवं साधन वर्णन किया है। चित्त को एकाग्र करने की पद्धति इन 'पाद' में बतायी गयी है।

साधन पाद—में क्लेश, कर्म एवं कर्मफल का वर्णन है। इन्द्रियग्रसन कर के ज्ञानप्राप्ति कैसी की जा सकती है, उसका मार्ग इस 'पाद' में बताया गया है।

चिभूति पाद—में योग के अंग, उनका परिणाम, एवं 'अग्निमा', 'महिमा' आदि सिद्धियों का वर्णन किया गया है।

कैवल्य पाद—में मोक्ष का विवेचन है। ज्ञानप्राप्ति के बाद आत्मा कैवल्यरूप कैसे बनती है, इसकी जानकारी इस 'पाद' में दी गयी है।

योग-दर्शन—आत्मा एवं जगत् के संबंध में, सांख्य-दर्शन जिन सिद्धांतों का प्रतिपादन करता है, 'योगदर्शन' भी उन्ही का समर्थक है। 'सांख्य' के अनुसार 'योग' ने भी पञ्चीस तत्त्वों का स्वीकार किया है। किंतु 'योग-दर्शन' में एक लब्धीसवाँ तत्त्व 'पुरषविशेष' शामिल करा दिया है, जिससे 'योग-दर्शन' सांख्यदर्शन जैसा निरीश्वरवादी बनने से बच गया है। फिर भी 'ईश्वर-प्रणिधानाद्वा' (१.२३) सूत्र के आधार पर कई विद्वान पतञ्जलि को 'निरीश्वरवादी' मानते हैं।

'योग-सूत्रों' के सिद्धांत अद्वैती हैं या द्वैती, इस विषय पर विद्वानों का एकमत नहीं है। 'ब्रह्मसूत्रकार' व्यास एवं शंकराचार्य ने पतञ्जलि को 'द्वैतवादी' समझ कर, सांख्य के साथ इसका भी खंडन किया है।

'योग सूत्र' के सिद्धांतों के अनुसार, चित्तवृत्तियों का निरोध ही योग है (योग. १.२)। इन चित्तवृत्तियों का निरोध अभ्यास एवं वैराग्य से होता है (योग. १.१२; १५)। पुरुषार्थविरहीत गुण जब अपने कारण में लय हो जाते हैं, तब 'कैवल्यप्राप्ति' होती है (योग. ४.३४)। योगदर्शन का यह अंतिम सूत्र है।

अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष एवं अभिनिवेश इन पंचविध कुशलों से योग के द्वारा विमुक्त हो कर, मोक्षप्राप्त करना, यह 'योगदर्शन' का उद्देश्य है। चंचल चित्तवृत्तियों को रोकने एवं योगसिद्धि के लिये, 'योगसूत्र' कार ने ग्यारह साधनों का कथन किया है। वे साधन इस प्रकार हैं :— यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, अभ्यास, वैराग्य, ईश्वर प्रणिधान, समाधि एवं विषयविरक्ति।

'योग-दर्शन' के अनुसार, संसार दुःखमय है। जीवात्मा को मोक्षप्राप्ति के लिये 'योग' एकमात्र ही उपाय है। 'योगदर्शन' का दूसरा नाम कर्मयोग भी है, क्योंकि कि साधक को वह 'सुखित्तमार्ग' सुझाता है।

४. 'इलावृतवर्ष' (भारतवर्ष) के उत्तर के मध्यदेश में उत्पन्न एक आचार्य।

५. कश्यप एवं कद्रु का पुत्र, एक नाग।

६. अंगिराकुल में उत्पन्न एक गोत्रकार।

७. वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्य-परंपरा के कौथुम पाराशर्य ऋषि का शिष्य (व्यास देखिये)।

पतत्रि—कौरवपक्षीय योद्धा। भीमसेन ने इसको रथहीन किया था (म. क. ३.२.५२)।

पतन—एक राक्षस। यह रावण के पक्ष में था (म. व. २६९.२; भांडारकर संहिता पाठ—'पतन')।

पताकिन्—एक सर्प। वरुण का यह उपासक था (म. स. ९.१०)।

२. कौरवपक्षीय एक योद्धा। इसे साथ ले कर अर्जुन पर आक्रमण करने का आदेश दुर्योधन ने शकुनि को दिया था (म. द्रो. १.३१.८५)।

पत्तलक—(आंत्र. भविष्य.) विष्णुमत में हल का पुत्र (तलक देखिये)।

पथिन सौभर—एक ऋषि। यह अयास्य आंगिरस का शिष्य एवं वत्सनपात ब्राह्मण का गुरु था (बृ. उ. २. ६.३; ४.६.३. काण्व)।

पथ्य—विष्णु, वायु एवं भारवत के अनुसार, व्यास की अथर्ववेद शिष्यपरंपरा के कबंध का शिष्य (व्यास देखिये)। कबंध ने इसे एवं देवदर्शको अथर्ववेद सिखाया था। इसके तीन प्रमुख शिष्य थे। जिनके नाम :— जाजलि, कुमुदादि, शौनक हैं।

पथ्यवत्—रौच्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

पथ्या—एतु की कन्या तथा अथर्ववेद आंगिरस ऋषि की पत्नी। इसका पुत्र धृष्णि (ब्रह्मांड. ३.१.१०५)।

पदाति—पारिश्रित जनमेजय (प्रथम) राजा का सातवाँ पुत्र (म. आ. ८९. ५०)।

पद्म—कश्यप एवं कद्रु के पुत्र, दो नाम। इन्हें संवर्तक और पद्मनाभ नामांतर प्राप्त थे (म. आ. ३.१. १०; म. शां. ३६५. ४)। ये वट्टुत धार्मिक थे तथा वरुण की समा के समासद थे (म. स. ९. ८)। ये दोनों सूय का रथ स्वीचने के लिये गये थे। (म. शां. ३४५. ८)।

२. ऐरावत का पुत्र, एक हाथी। इसे मंद नामांतर भी प्राप्त था। यह ऐलविल का वाहन था (ब्रह्मांड. ३. ७. ३३१)। इसका वर्ण श्वेतशुभ्र था।

३. माणिक्य नामक शिवगण एवं पुण्यजनी का पुत्र।

४. एक निधि, जो कुबेर की सभा में थी (म. स. परि. १. ३. ३०)।

५. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४. ५२)।

६. एक राजा, जो यमसभा में रह कर सूर्यपुत्र यम की उपसना करता था (म. स.)

पद्मकैतन—गण्ड का पुत्र।

पद्मगंधा—पूर्वजन्म में यह कौन्वी थी। इसकी हड्डियाँ गंगा में गिरने के कारण, यह इंद्र की प्रिया दासी की (ज्योत ११ देखिये)।

पद्मचित्र—कद्रु-पुत्र नाम।

पद्मनाभ—एक ब्राह्मण। एक राक्षस इसे भक्षण करने के लिये आया, तब विष्णु ने अपने चक्र से इसकी रक्षा की। इसी कारण उस जगह पर चक्रतीर्थ उत्पन्न हुआ (स्कंद २. १. २३)।

२. कश्यप एवं कद्रु की पुत्र, एक नाम। यह नैमिषारण्य में गोमती नदी के तट पर 'नामपूर' नगर में रहता था (म. शां.)। यह आत्मज्ञानी था। एक ब्राह्मण के पूछने पर इसने उसे सूर्यमंडल की कथा सुनायी थी। इसके शिष्य का नाम धर्मारण्य था।

३. (सो. कुरु.) श्रुतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक।

४. मणिवर नामक शिवगण, एवं देवजनी का पुत्र।

पद्ममित्र—(किलकिला, भविष्य.) विष्णु के अनुसार एक राजा।

पद्मवर्ण—मणिवर नामक शिवगण और देवजनी का पुत्र।

पद्महस्त—राजा नल का अमात्य (गणेश. १. ५२. १)।

पद्माकर—विंदुगढ़ के राजा शारदानंद (कामपाल) का पुत्र (भवि. प्रति. ३. २५)।

पद्माक्ष—राजा चंद्रहास का कनिष्ठ पुत्र।

२. सीता देखिये।

पद्मावती—विदर्मदृष्ट सत्यकेतु की कन्या, एवं मायुर देश के मथुरा नगर के उपसेन राजा की स्त्री। इस दम्पति का एक दूसरे पर अतीव प्रेम था। एक बार यह नैहर गयी थी। वहां गोभिल नामक कुबेर के एक दूत से गर्भवती

हुई। हरिवंश में, 'गोभिल' के बदले 'द्रुमिल' नाम दिया गया है (ह. वं. २. २८)।

इसने गर्भ को नष्ट करने का बहुत प्रयत्न किया परंतु अंत में उस गर्भ ने कहा, 'कालनेमिदृश्य का विष्णु ने वध किया। उसका बदला लेने के लिये मैं जन्म ले रहा हूँ'। कालोपरान्त यह प्रसूत हुयी तथा इसने कंस को जन्म दिया (पद्म. सू. ४८-५१)।

२. प्रणिधी नामक एक श्रीमान् वैश्य की स्त्री। एक बार इसका पति व्यापार करने दूसरे ग्राम चला गया था। यह स्नान कर रह थी। फिर धनुर्वज नामक अंत्यज ने इसे देखा। पाप वासना ने जाग्रत हो कर वह इसके बारे में पछताछ करने लगा। इसकी सखियों द्वारा काफी निषेध किये जाने पर भी वह न माना। फिर उसकी मजाक उड़ाने के हेतु उन्होंने कहा, 'गंगा यमुना संगम में अगर प्राण देगे, तो पद्मावती की प्राप्ति तुम्हें होगी।

फिर गंगा के संगम में जा कर सचमुच ही उसने प्राण दे दिये। तत्काल उसका रूप पद्मावती के पति प्राणिधी वैश्य के समान बन गया। बाद में सत्त्वा प्राणिधी तथा धनुर्वज दोनों पद्मावती के घर पहुँच गये। फिर अपना वास्तव पति कौन है? इसके बारे में पद्मावती के मन में संदेह उत्पन्न हो गया। पश्चात्, श्री विष्णु ने स्वयं प्रकट हो कर, इसे दोनों के साथ पत्नी के रूप में रहने के लिये कहा, किंतु भूमंडल पर यह निषिद्ध है, ऐसा इसके द्वारा कहे जाने पर, श्री विष्णु उन तीनों को वैकुण्ठ ले गये (पद्म. क्रि. ४)।

३. शृगाल वासुदेव देखिये।

पद्मिनी—श्रीनिवास देखिये।

पद्मस—राम की सेना का एक धानर। इसका पदुशो से युद्ध हुआ था (म. व. २६. ७. ६; २६. ९. ९)। राम विभीषण से मिलने के लिये लंका जा रहा था। राह में वह किर्किंधा नगरी के पास ठहरा। तब यह असुकता-पूर्वक उसके दर्शन करने आया था (पद्म. सू. ३८)।

२. विभीषण के अमात्यों में से एक।

पद्मग—ऋग्वेदी श्रुतिर्षि।

पद्मगारि—व्यास की ऋक्ष शिष्य परंभरा के बायु तथा ब्रह्मांड मत में वाष्कली भरद्वाज का शिष्य।

२. वसिष्ठ कुल का एक मोक्षकार। पद्मगारि इसका पाठभेद है।

पयस्य 'वारुण'—एक महर्षि। अंगिरस् के वारुण संज्ञक आठ पुत्रों में से एक (म. अनु. ८५, ३०)।

पयोदः—विश्वामित्र कुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण।

पयोदा—स्कंद की अनुचरी मानुका (म. श. ४४. ५२)।

पर—विश्वामित्र का पुत्र।

२. (सो. पूर.) वायु के अनुसार समर राजा का पुत्र।

पर आट्णार—(सो. आयु.) एक वैदिक महाराजा यह 'अट्णार' का वंशज था, इसलिये इसे 'पर आट्णार' नाम प्राप्त हुआ था। कई ग्रंथों में इसे 'हिरण्यनाभ कौसल्य' कहा गया है (सां. श्रौ. १३; श. ब्रा. १३.५.४.४; हिरण्यनाभ कौसल्य देखिये)। संभवतः यह कोसल देश के हिरण्यनाभ राजा का वंशज था।

एक विशेष यज्ञ करने के बाद, इसे पुत्र की प्राप्ति हुयी थी (तै. सं. ५.६.५.३; क. सं. २२.३; पं. ब्रा. २५. १६.३; जै. उ. ब्रा. २.६.११)। सांख्यान श्रौतसूत्र में इसे 'पर आह्वार वैदेह' कहा गया है, जिससे कोसल एवं विदेह देश के घनिष्ठ संबंध प्रतीत होते हैं (सां. श्रौ. १३.९.११)।

परंजय—(सू. इ.) विष्णु मत में विकुक्षित पुत्र का नामांतर है। भागवत मत में पुरंजय इसका नामांतर है।

परण्यस्त—अंगिराकुल के गोत्रकार ऋषिगण।

परंतप—तामस मनु के दस पुत्रों में से एक।

परपक्ष—(सो. अनु.) एक राजा। वायु के अनुसार यह अनु का पुत्र था। इस के परमेश, परमेधु, परोक्षप तथा पराश नामांतर थे।

परम—वसिष्ठ कुल का गोत्रकार।

परमक्रोधिन्—एक विश्वेदेव (म. अनु. २१.३२)

परमेश—(सो. अनु.) विष्णु के अनुसार अनुपुत्र परपक्ष राजा का नामांतर (परपक्ष देखिये)।

परमेधु—(सो. अनु.) मरुत्य के अनुसार अनुपुत्र परपक्ष राजा का नामांतर (परपक्ष देखिये)।

परमेष्टिन—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (प्रजापति देखिये)। यह ब्रह्मा का शिष्य था। इसका शिष्य सनग (बृ. उ. २. ६.३; ४.६.३)। 'जमिनि ब्राह्मण' के अनुसार यह प्रजापति का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२; नारद देखिये)।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा। भागवत के अनुसार देवयुग्म का तथा विष्णु के अनुसार इंद्रयुग्म राजा का धेनुमती से उत्पन्न पुत्र। इसे सुवर्चला नामक स्त्री से प्रतीह नामक पुत्र हुआ (भा. ५.१५.३)।

३. (सो.) एक राजा। भविष्य के अनुसार यह आत्म-पूजक राजा का पुत्र था। इसने २७०० वर्षों तक राज्य किया।

४. (सो. अज.) पांचाल देश का एक राजा। यह अजमीठ राजा को नीली से उत्पन्न हुआ था। यह एवं उसका भाई दुष्यंत के सारे पुत्रों को 'पांचाल' कहते थे (म. आ. ८९.२८)।

परधीराक्ष—एर राक्षस के १२ अमात्यों में से एक।

परशु—उत्तम मनु का पुत्र।

२. एक राक्षस। यह शाकल्य को खाने आया था, तत्र विष्णु की कृपा से मुक्त हुआ (ब्रह्म. १६३)।

परशुचि—उत्तम मनु का पुत्र।

परशुबाहु—प्रियव्रत पुत्र प्रसादन राजा का नामांतर। काशी क्षेत्र में धुंडीराजा ने अपने हाथ का परशु इसे दिया तथा यह नाम रखा (गणेश. २.४९-५६; प्रियव्रत देखिये)।

परशुराम जामदग्न्य—महर्षि जमदग्नि का महान् पराक्रमी पुत्र, जिसने इक्कीस बार क्षत्रियों का संहार किया था।

भृगुवंश में पैदा होने के कारण, जमदग्नि एवं परशुराम 'भार्गव' पौत्रक नाम से ख्यातनाम थे। भार्गव वंश के ब्राह्मण पश्चिम भारत पर राज्य करने वाले हैहय राजाओं के कुलगुरु थे। भार्गववंश के ब्राह्मण आनन (गुजरात) देश के रहनेवाले थे। पश्चात् हैहय राजाओं से भार्गवों का झगड़ा हो गया एवं वे उत्तरभारत के कान्यकुब्ज देश में रहने गये। फिर भी, बारह पीढ़ियों तक हैहय एवं भार्गव का वैर चलता रहा। इसीलिये प्राचीन इतिहास में २५५० ई. पू.—२३५० ई. पू. तक यह काल 'भार्गव-हैहय' नाम से पहचाना जाता है। हैहय एवं भार्गवों के वैर की चरम सीमा परशुराम जामदग्न्य के काल में पहुँच गयी, एवं परशुराम ने हैहयों का और संतुष्टि क्षत्रियों का इक्कीस बार संहार किया। इसी कारण ब्राह्मणों की मूर्तिमत एवं ज्वलंत प्रतिमा बन कर, परशुराम इस विशिष्ट काल के इतिहास में अमर हो गया है।

‘राम भार्गविय’ नामक एक वैदिक ऋषि का नाम एक सूक्तद्रष्टा के रूप में आया है (ऋ. १०.११०)। ‘सर्वानु-क्रमणी’ के अनुसार यही परशुराम है। ‘राम भार्गविय’ स्वार्णो लोगों का पुरोहित था। ‘राम भार्गविय’ एवं परशुराम एक ही थे यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता।

हैहय राजा कार्तवीर्य एवं परशुराम के युद्ध का निर्देश अथर्ववेद में संक्षिप्त रूप में आया है (अ. वे. ५.१८.१०)। अथर्ववेद के अनुसार, कार्तवीर्य राजा ने जमदग्नि ऋषि की धेनु हटाते जाने का प्रयत्न किया। इसीलिये परशुराम द्वारा कार्तवीर्य एवं उसके वंश का परामव हुआ।

परशुराम महर्षि जमदग्नि के पाँच पुत्रों में से कनिष्ठ पुत्र था। इसकी साता का नाम ‘कामली रेणुका’ था जो इक्ष्वाकु वंश के राजा की पुत्री थी। परशुराम धनुर्विद्या में ही नहीं, बल्कि अन्य सभी अस्त्र-शस्त्र सम्बन्धी विद्याओं में प्रवीण था (ब्रह्म. १०)। यह विष्णु का अवतार था (पद्म. उ. २४८; मत्स्य. ४७.२४४; वायु. ११.८८; ३६.९०)। इसका जन्म वैशाख शुक्ल तृतीया को हुआ था (रेणु. १४)। यह १९ वें त्रेतायुग में उत्पन्न हुआ था (दे. भा. ४.१६)। त्रेता तथा द्वापर युगों के संधिकाल में परशुराम का अवतार हुआ था (म. आ. २.३)।

शिक्षा—उपनयन के उपरांत यह शालग्राम पर्वत पर गया। वहाँ कश्यप ने इसे मंत्रोपदेश दिया (पद्म. ३. २४१)। इसके अतिरिक्त इसने शङ्कर को प्रसन्न कर धनुर्वेद, शस्त्रास्त्रविद्या एवं मंत्र प्रयोगादि का ज्ञान प्राप्त किया (रेणु. १५; ब्रह्मांड. ३.२२-५६-६०)।

शिष्य—तपस्या से वापस आते समय, राह में शालग्राम शिखर पर शान्ता के पुत्र को लकड़बग्घे से मुक्त करा कर वह उसे अपने साथ ले आया। वही भांगे चल कर, अकृतवर्ण नाम से परशुराम का शिष्य प्रसिद्ध हुआ।

आश्रम—जमदग्नि का आश्रम नर्मदा के तट पर था (ब्रह्मांड. ३.२३.२६)। परशुराम का आश्रम भी वही था।

रेणुकावध—एक बार जमदग्नि रेणुका पर क्रोधित हुये तथा परशुराम को उसका वध करने की आज्ञा दी, जिसका परशुराम ने तुरन्त पालन किया (म. व. ११६.१४)।

जमदग्नि इस पर प्रसन्न हुये तथा इनकी इच्छानुसार रेणुका को पुनः जीवित कर इसे वरदान दिया—तुम

अजेय हो, तथा स्वेच्छा पर ही मृत्यु को प्राप्त हो सकते हो (विष्णुधर्म. १.३६.११)।

अस्त्रविद्या—परशुराम को निम्नलिखित अस्त्र-शस्त्रों की जानकारी प्राप्त थी:—

१ ब्रह्मास्त्र, २ वैष्णव, ३ रौद्र, ४ आग्नेय, ५ वासव, ६ नैऋत, ७ याम्य, ८ कौबेर, ९ वारुण, १० वायव्य, ११ सौम्य, १२ सौर, १३ पार्वत, १४ चक्र, १५ वज्र, १६ पाश, १७ सर्व, १८ गर्गधर्व, १९ स्वापन, २० मौत, २१ पाशुपत, २२ ऐशोक, २३ तर्जन, २४ प्रास, २५ भारुड, २६ नर्तन, २७ अस्त्रोपधन, २८ आदित्य, २९ रैवत, ३० मानव, ३१ अक्षिसंतर्जन, ३२ भीम, ३३ जम्भण, ३४ रोधन, ३५ सौपर्ण, ३६ पर्जन्य, ३७ राक्षस, ३८ मोहन, ३९ कालास्त्र, ४० दानवास्त्र, ४१ ब्रह्मशिरस (विष्णुधर्म १.५०)।

हैहयों से शत्रुत्व—हैहय राजा कृतवीर्य ने अपने कुल-गुरु ‘ऋचीक और्वे भार्गव’ को बहुत धन दिया था। पश्चात् वह धन वापस करने का ऋचीक ने इन्कार कर दिया। उस कारण कृतवीर्य का पुत्र सहस्रांशुन (कार्तवीर्य अर्जुन) ने ऋचीक के उपर हाथ चलाया, जिस कारण अपने अन्य भार्गव वंशियों के साथ वह कान्यकुब्ज को भाग गया। ऋचीक स्वयं अत्यंत स्वाभिमानी एवं अस्त्रविद्या में कुशल था। कान्यकुब्ज पहुँचते ही, हैहयों से अपमान का बदला लेने की वह कोशिश करने लगा। उस कार्य के लिये, इसने नाना प्रकार के शस्त्रास्त्र इकट्ठा किये एवं उत्तर भारत के शक्तिशाली राजाओंको अपने पक्ष में लाने का प्रयत्न करने लगा। इस हेतु से, कान्यकुब्ज देश के गाधि राजा की कन्या सत्यवती के साथ विवाह किया एवं अपने पुत्र जमदग्नि का विवाह अयोध्या के राजवंश में से रेणु राजा की कन्या रेणुका के साथ कराया। इस तरह, कान्यकुब्ज एवं अयोध्या के ये दो देश भार्गवों के पक्ष में आ गये।

कामधेनुहरण—जमदग्नि पराक्रमी एवं अस्त्रविद्यानिपुण था। पर उसका पुत्र परशुराम उससे भी अधिक पराक्रमी था। एक बार परशुराम जब तप करने गया था, तब कार्तवीर्य अर्जुन जमदग्नि से मिलने उसके आश्रम में आया। तपश्चर्या को जाने के पहले, अपनी कामधेनु नामक गौ परशुराम ने अपने पिता जमदग्नि के पास अमानत रूप में रखी थी। कार्तवीर्य ने उस जमदग्नि से छीनने का कोशिश की। कामधेनु के शरीर से उत्पन्न हुये हजारों यवनों ने कार्तवीर्य का वध करने का प्रयत्न किया। किंतु अंत में

जमदग्नि को घुंसे लगा कर, एवं उसका आश्रम जला कर कार्तवीर्य कामधेनु के साथ अपने राज्य में वापस चला गया।

तपश्चर्या से लौटते ही, परशुराम को कार्तवीर्य की दुष्टता ज्ञात हुई, एवं इसने तुरंत कार्तवीर्य के वध की प्रतिज्ञा की। कई पुराणों के अनुसार, कार्तवीर्यवध की इस प्रतिज्ञा से इसको परावृत्त करने का प्रयत्न जमदग्नि ऋषि ने किया। उसने कहा—‘ब्राह्मणों के लिये वह कार्य अत्याधिक अशोभनीय है’। परंतु परशुराम ने कहा ‘दुष्टों का धमन न करने से परिणाम बुरा हो सकता है’। फिर जमदग्नि ने इस कृत्य के लिये ब्रह्मा की, तथा ब्रह्मा ने शंकर की संमति लेने के लिये कहा। संमति प्राप्त कर यह सरस्वती के किनारे अगस्त्य ऋषि के पास आया, तथा उसकी आज्ञा से गंगा के उद्गम के पास जा कर, इसने तपश्चर्या की। इस तरह देवों का आशीर्वाद प्राप्त कर, परशुराम नर्मदा के किनारे आया। वहाँ से कार्तवीर्य के पास दूत भेज कर, इसने उसे युद्ध का आह्वान किया।

हैहय एवं भर्गवों के शत्रुत्व का इतिहास जान लेने पर, जमदग्नि ने परशुराम को कार्तवीर्यवध से परावृत्त करने की कोशिश की थी, यह कथा अविश्वसनीय लगती है।

युद्ध—परशुराम की प्रतिज्ञा सुन कर, कार्तवीर्य ने भी युद्ध का आह्वान स्वीकार किया, एवं सेनापति को सेना सजाने के लिये कहा। अनेक अश्वौहिणी सेनाओं के सहित कार्तवीर्य युद्धभूमि पर आया। उसका परशुराम ने नर्मदा के उत्तर किनारे पर मुकाबला किया। युद्ध के शुरु में कार्तवीर्य की ओर से मत्स्य राजा ने परशुराम पर ज़ोरदार आक्रमण किया। बड़ी मुलभता के साथ परशुराम ने उसका वध किया। बृहद्वल, सोमदत्त एवं विदर्भ, मिथिला, निपथ, तथा मगध देश के राजाओं का भी परशुराम ने वध किया। सात अश्वौहिणी सैन्य तथा एक लाख क्षत्रियों के साथ आये हुये सुर्यवंशज मुचन्द्र को परशुराम ने भद्रकाली की कृपा से परास्त दिया। मुचन्द्र के पुत्र पुष्कराक्ष को भी सिर से पैर तक काट कर, इसने मार डाला।

कार्तवीर्यवध—दांड में प्रत्यक्ष कार्तवीर्य तथा उसके सौ पुत्रों के साथ परशुराम का युद्ध हुआ। शुरु में कार्तवीर्य ने परशुराम को बेहोश कर दिया। किन्तु अन्त में परशुराम ने कार्तवीर्य एवं उसके पुत्रों का सौ अश्वौहिणी सेनासहित नाश कर दिया (ब्रह्मांड. ३.३९.११९; म. द्रो. परि. १ क्र. ८)। महाभारत के अनुसार, परशुराम ने

कार्तवीर्य के सहस्र बाहु काट दिये, एवं एक सामान्य श्वापद जैसा उसका वध किया (म. शां. ४९.४१)। कार्तवीर्य के शूर, वृषास्य, वृष, शूरसेन तथा जयध्वज नामक पुत्रों ने पलायन किया। उन्होंने हिमालय की तराई में स्थित अरण्य में आश्रय लिया। परशुराम ने युद्ध समाप्त किया।

पश्चात् यह नर्मदा में स्नान कर के शिवजी के पास गया। वहाँ गणेशजी ने इसे कहा ‘शिवजी के पास जाने का यह समय नहीं है’। फिर क्रुद्ध हो कर अपने फरते से इसने गणेशजी का दाँत तोड़ दिया (ब्रह्मांड. ३.४२)। पश्चात् जमदग्नि के आश्रम में आ कर, इतने उसे कार्तवीर्यवध का सारा वृत्तान्त सुनाया।

अत्रियहत्या के दोषहरण के लिये, जमदग्नि ने परशुराम को बारह वर्षों तक तप कर के, प्रायश्चित्त करने के लिये कहा। फिर परशुराम प्रायश्चित्त करने के लिये महेंद्र पर्वत चला गया। मत्स्य के अनुसार, यह कैलास पर्वत पर गणेशजी की आराधना करने गया (मत्स्य. ३६)। जिवर जिवर यह जाता था, वहाँ क्षत्रिय डर के मारे छिप जाते थे, तथा अन्य सारे लोग इसकी जयजयकार करते थे (ब्रह्मांड. ३.४४)।

जमदग्निवध—परशुराम तपश्चर्या में निमग्न ही था कि, इधर कार्तवीर्य के पुत्रों ने तपस्सा के लिये समाधि लगाये हुये जमदग्नि ऋषि का वध कर दिया, तथा वे उसका सिर ले कर भाग गये। ब्रह्मांड के अनुसार, जमदग्नि का वध कार्तवीर्य के अमात्य चंद्रगुप्त ने किया (ब्रह्मांड. ३.२९.१४)।

बारह वर्षों के बाद, परशुराम जब तपश्चर्या से वापस आ रहा था, तब मार्गमें ही इसे जमदग्नि के वध की घटना सुनायी गयी। जमदग्नि के आश्रम में आते ही, रेणुका ने इच्छित वार छाती पीट कर जमदग्निवध की कथा फिर दोहरायी। फिर क्रोधानुर हो कर, परशुराम ने केवल हैहयों का ही नहीं, बल्कि पृथ्वी पर से सारे क्षत्रियों के वध करने की, एवं पृथ्वी को निःक्षत्रिय बनाने की दृढ़ प्रतिज्ञा की।

मातृनीर्य की स्थापना—परशुराम के प्रतिज्ञा की यह कथा ‘रेणुकामहात्म्य’ में कुछ अलग ढंग से दी गयी है। कार्तवीर्य जब जमदग्नि से मिलते उसके आश्रय में गया, तब कामधेनु की प्राप्ति के लिये उसने जमदग्नि का वध किया। फिर अपने पिता का औश्वदैहिक करने के लिये, परशुराम एक डोली में जमदग्नि का शव, एवं रेणुका को बैठा कर, ‘कान्याकुण्डाश्रम’ से बाहर निकला। अनेक

तीर्थस्थानों एवं जंगलों को पार करता हुआ, यह दक्षिण मार्ग से पश्चिम घाट के मल्लकी नामक दत्तात्रेयक्षेत्र में आया। वहाँ कुछ काल तक विश्राम करने के उपरांत यह चलनेवाला ही था, कि इतने में आकाशवाणी हुयी 'अपने पिता का अभिसंस्कार तुम इसी जगह करो'। आकाशवाणी के कथनानुसार, परशुराम ने दत्तात्रेय की अनुमति से, जमदग्नि का अंतिम संस्कार किया। रेणुका भी अपने पति के शव के साथ आग्नि में सती हो गयी।

बाद में परशुराम ने मानु-पितृप्रेम से विह्वल हो कर इन्हें पुकारा। फिर दोनों उस स्थान पर प्रत्यक्ष उपस्थित हो गये। इसी कारण उस स्थान को 'मानुतीर्थ' (महाराष्ट्र में स्थित आधुनिक माहूर) नाम दिया गया। इस मानुतीर्थ में परशुराम की माता रेणुका स्वयं वास करती हैं। इस स्थान पर रेणुका ने परशुराम को आज्ञा दी, 'तुम कार्तवीर्य का वध करो, एवं पृथ्वी को निःक्षत्रिय बना दो'।

नर्मदा के किनारे मार्कण्डेय ऋषि का आश्रम था। वहाँ मार्कण्डेय ऋषि का आशीर्वाद लेकर, परशुराम ने कार्तवीर्य का वध किया एवं पृथ्वी निःक्षत्रिय करने की अपनी प्रतिज्ञा निभाने के लिये, यह आगे बढ़ा (रेणु. ३७-४०)।

हैहयविनाश—अपनी प्रतिज्ञा निभाने के लिये, परशुराम ने सर्वप्रथम अपने गुरु अगस्त्य का स्मरण किया। फिर अगस्त्य ने इसे उत्तम रथ एवं आयुध दिये। तद्द्वारा इसका सारथि बना (ब्रह्मांड. ३.४६.१४)। वृद्ध द्वारा दिखा गया 'अभित्रजित्' शंख इसने फूँका।

कार्तवीर्य के शूरसेनादि पाँच पुत्रों ने अन्य राजाओं को साथ ले कर, परशुराम का सामना करने का प्रयत्न किया। उनको वध कर, अन्य क्षत्रियों का वध करने का सत्र इसने शुरू किया। हैहय राजाओं की राजधानी माहिष्मती नगरी को इसने जला कर भस्म कर दिया। हैहयों में से वीतिहोत्र केवल बच गया, शेष हैहय मारे गये।

हैहयविनाश का यह रौद्र कृत्य पूरा कर, परशुराम महेंद्र पर्वत पर तपस्या करने के लिये चला गया। नये क्षत्रिय पैदा होते ही, उनका वध बरने की इसकी प्रतिज्ञा थी। उस कारण यह दस वर्षों तक लगातार तपस्या करता था, एवं दो वर्षों तक महेंद्र पर्वत से उतर कर, नये पैदा हुए क्षत्रियों को अत्यंत निरुरता से मार देता था।

इस प्रकार इक्कीस बारा इसने पृथ्वी भर के क्षत्रियों का वध कर, उसे निःक्षत्रिय बना दिया (ब्रह्मांड. ३.४६)।

निःक्षत्रिय पृथ्वी—इस तरह परशुराम ने चौसठ कोटि क्षत्रियों का वध किया। उनमें से चौदह कोटि क्षत्रिय सरासर ब्राह्मणों का वध करनेवाले थे। बचे हुए क्षत्रियों को इसने नाना प्रकार की सजाएँ दी। दंतकूर का इसने वध किया। एक हजार वीरों को इसने मूसल से मार डाला। हजारों काँतलवार से काट डाला। हजारों को पेड़ पर टँग कर मार डाला, तथा उतने ही लोगों को पानी में डुबो दिया। हजारों के दाँत तोड़ कर नाक तथा कान काट लिये। सात हजार क्षत्रियों को भिन्न की धुनी दी। बचे हुये लोगों को बौधकर, मार कर, तथा मस्तक तोड़कर नष्ट कर दिया। गुणावती के उत्तर में तथा खांडवारण्य के दक्षिण में जो पहाड़ियाँ हैं, उनकी तराई में क्षत्रियों से इसका युद्ध हुआ। वहाँ इसने दस हजार वीरों का नाश किया। उसके बाद काश्मीर, दरद, कुंति, धृद्रक, मालव, अंग, वंग कलिंग, विदेह, ताम्रलिप्त, रक्षोवाह, वीतिहोत्र, जिगर्त, मार्तिकावत, शिवि इत्यादि अनेक देश के राजाओं को कीड़ेमकोड़े के समान इसने वध कर दिया। इसी निर्दयता से जंगली लोगों का भी वध किया।

इस प्रकार परशुराम ने बारह हजार मूर्खामिषिक राजाओं के सिर काट डाले। बाद में हजारों राजाओं को पकड़ कर, यह कुरुक्षेत्र ले आया। वहाँ पाँच बड़े कुण्ड खोद कर इसने उसे कैदी राजाओं के रक्त से भर दिया। पश्चात् उन कुण्डों में परशुराम ने 'रुधिरस्नान' किया एवं अपने पितरों को तर्पण दिया। वे कुंड 'समंतपंचक तीर्थ' था 'परशुरामहृद' नाम से आज भी प्रसिद्ध है।

बाद में गया जाकर चन्द्रपाद नामक स्थान पर इसने श्राद्ध किया (पद्म. स्व. २६)। इस प्रकारे अद्भुत कर्म कर के परशुराम प्रतिज्ञा से मुक्त हुआ। पितरों को यह क्षत्रियहत्या पसन्द न आई। उन्होंने इस कार्य से छुटकारा पाने तथा पाप से मुक्ति प्राप्त करने के लिये, प्रायश्चित्त करने के लिये कहा (म. आ. २.४.१२)। पितरों की आज्ञा का पालन कर, यह अश्रुतव्रण के साथ सिद्धवन की ओर गया। रथ, सारथि, धनुष आदिको त्याग कर इसने पुनः ब्राह्मणधर्म स्वीकार किया। सब तीर्थों पर स्नान कर इसने तीन बार पृथ्वी की प्रदक्षिणा की, और महेंद्र पर्वत पर स्थायी निवास बनाया।

अश्वमेधयज्ञ—पश्चात्, जीती हुयी सारी पृथ्वी कश्यप ऋषि को दान देने के लिये, परशुराम ने एक

महान् अश्रमेष यज्ञ का आयोजन किया। उस यज्ञ के लिये, इत्सीस हाँथ ऊँची सुवर्णवेदी इसने बनायी, एवं निम्नलिखित ऋषियों को यज्ञाधिकार दिये—काश्यप (अश्वरथु), गौतम (उद्गात्र), विश्वामित्र (होत्र) तथा मार्कण्डेय (ब्रह्मा)। भरद्वाज, अग्निवेश्यादि ऋषियों ने भी इस यज्ञ में भाग लिया। इस प्रकार यज्ञ समाप्त कर परशुराम ने महेंद्र पर्वत को छोड़ कर, शेष पृथ्वी कश्यप को दान दे दी (म. शां. ४९; अनु. १३७.१२)। पश्चात् 'दीपप्रतिष्ठास्वयं' नामक व्रत किया (ब्रह्मांड ३.४७)।

नया हत्याकांड—इस व्यवहार के कारण, परशुराम के बारे में लोगों के हृदय में तिरस्कार की भावना भर गयी। कुछ दिनों के उपरान्त विश्वामित्र-पौत्र तथा रैम्यपुत्र परावसु ने भरी सभा में के इसे चिढ़ाया तथा कहा 'पृथ्वी निःशत्रिय करने की प्रतिज्ञा तुमने की। परन्तु ययाति के यज्ञ के लिये एकत्रिय प्रतर्दन प्रभृति लोग क्या क्षत्रिय नहीं हैं? तुम मनचाही बकवास कहते हो। सच बात यह है कि सब ओर फैले धत्रियों के डर से तुम वन में मुँह छिपा कर बैठे हो'। इससे संतप्त हो कर परशुराम ने पुनः शाल्वा हाथ में लिया, तथा पहले निरपराधी मानकर छोड़े गये क्षत्रियों का वध किया। छोटों का विचार न कर, इसने माँ के गर्भ में स्थित बच्चों का भी नाश किया। अन्त में सम्पूर्ण पृथ्वी का दान कर स्वयं महेंद्र पर्वत पर रहने के लिये चला गया (म. श्रो. परि. क्र. २६ पंक्ति ८६६)।

अमिमन्यु की मृत्यु से शोकग्रस्त युधिष्ठिर को यह कथा बताकर नारद ने शांत किया।

हत्याकांडसे बचे क्षत्रिय—परशुराम के हत्याकांड से बहुत ही थोड़े क्षत्रिय बच सके। उनके नाम इस प्रकार हैं:—

- (१) हैहय राजा कीर्तिहोत्र—यह अपने स्त्रियों के अंतःपुर में छिपने से बच गया।
- (२) पौत्र राजा ऋक्षवान्—यह ऋक्षवान् पर्वतों के राँवों में जाकर छिपने से बच गया।
- (३) अयोध्या का राजा सर्वकर्मात्—पराशर ऋषि ने शूद्र के समान सेवा कर इसे बचाया।
- (४) समथराज वृद्धश्व—एककुट पर्वत पर रहने-वाले वंशों ने इसकी रक्षा की।
- (५) अंगराज चित्रश्व—गंगातीर पर रहने वाले गौतम ने इसकी रक्षा की।

(६) शिबीराजा गोपालि—गायों ने इसकी रक्षा की।

(७) प्रतर्दनपुत्र वस्त—इसकी रक्षा गोवत्सों ने की।

(८) मरुत्—इसे समुद्र ने बचाया।

इन राजाओं के वंश के लोग क्षत्रिय होते हुये भी, शिल्पकार, स्वर्णकार आदि कनिष्ठ श्रेणी के व्यवसाय करने पर विवश हुये।

इस प्रकार परशुराम के कारण, चारों ओर अराजकता फैल गयी। उस अराजकता को नष्ट करने के लिये, कश्यप ने चारों ओर के क्षत्रियों को बूढ़ना पुनः प्रारंभ किया, एवं उनके राज्याभिषेक कर सुराध्य स्थापित करने की कोशिश की (म. शां. ४९.५७-६०)।

'शूर्पारक' की स्थापना—अवशिष्ट क्षत्रियों के बचाव के लिये, कश्यप ने परशुराम को दक्षिण सागर के पश्चिमी किनारे जाने के लिये कहा। 'शूर्पारक' नामक प्रदेश समुद्र से प्राप्त कर, परशुराम वहाँ रहने लगा। श्रुकुच्छ (भडोच) से ले कर कन्याकुमारी तक का पश्चिम समुद्र-तट का प्रदेश 'परशुराम देश' या 'शूर्पारक' नाम से प्रसिद्ध हुआ।

शूर्पारक प्रांत की स्थापना के कई अन्य कारण भी पुराणों में प्राप्त हैं। सगरपुत्रों द्वारा गंगा नदी खोदी जाने पर, 'गोकर्ण' का प्रदेश समुद्र में डूबने का भय उत्पन्न हुआ। वहाँ रहनेवाले शुक आदि ब्राह्मणों ने महेंद्र पर्वत जा कर, परशुराम से प्रार्थना की। फिर गोकर्णवासियों के लिये नयी वस्ती बसाने के लिये, इसने समुद्र पीछे हटा कर, दक्षिणोत्तर चार सौ योजन लम्बे शूर्पारक देश की स्थापना की (ब्रह्मांड. ३. ५६. ५१-५७)।

परशुरामकथा का अन्वयार्थ—परशुराम द्वारा पृथ्वी निःशत्रियकरण की प्राचीन कथा में कुछ अतिशयोक्ति जरूर प्रतीत होती है। अयोध्या एवं कान्यकुब्ज के राजा अपनी माता रेणुका एवं मातामही सत्यवती के तरफ से परशुराम के रिश्तेदार थे। उन राजाओं को साथ ले कर परशुराम ने हैहयों को एवं हैहयपक्षीय राजाओं को इक्कीस बार युद्धभूमियों पर पराजित किया, इस 'परशुराम कथा' के अन्वयार्थ लगा जा सकता है। हैहयविरोधी इस युद्ध में, अयोध्या एवं कान्यकुब्ज के अतिरिक्त, वैशाली, विदेह, काशी आदि देशों के राजा भी परशुराम के पक्ष में शामिल थे। इसी कारण, परशुराम एवं हैहयों का युद्ध, प्राचीन भारतीय इतिहास का पहला महायुद्ध कहा जाता है।

कई अभ्यासकों के अनुसार, भारंग्व लोग एवं स्वयं परशुराम 'नाविक' व्यवसाय के लोग थे, एवं पश्चिम

समुद्र किनारे रह कर, योरप, अफ्रीका आदि देशों से व्यापारविनिमय करते थे। इस व्यापार के कारण उन्होंने बहुत सारा कदकड़ा की थी। पश्चिम भारतवर्ष पर राज्य करनेवाले हैहय लोग, विदेशी व्यापारविनिमय आर्य लोगों के कब्जे में लाना चाहते थे। इस कारण, कार्तवीर्य अर्जुन ने 'अत्रि' नामक नाविकव्यवसायी लोगों से दोस्ती की, एवं उनसे एक सहस्र युद्धनौकाएँ बना लीं। उसी एक हजार नौकाओं के कारण, कार्तवीर्य को सहस्र हाथोंवाला ('सहस्राङ्गुल') नामक उपाधि मिली। पश्चात् कार्तवीर्य ने, भाग्यसे उनका संपूर्ण संपत्ति माँगी। इस कारण, क्रुद्ध हो कर परशुराम ने हैहयों का नाश किया, एवं नर्मदा नदी के प्रदेश में से सारे हैहय राज्य का विध्वंस किया। यही विध्वंस पुराणों में 'निःशत्रिय पृथ्वी' के नाम से वर्णित है।

इस तरह स्वस्त हैहय प्रदेश में परशुराम ने नया राज्य स्थापित किया, एवं पश्चिम समुद्र किनारे के भृगुकुल से लेकर कन्याकुमारी तक सारा प्रदेश नया बसाया। यही प्रदेश 'शूर्पारक' नाम से प्रसिद्ध हुआ, एवं पश्चिम के व्यापारविनिमय का केंद्रस्थान बन गया। हैहयों के विनाश से, पश्चिमी विदेशों का व्यापार उत्तर हिंदुस्थान के आर्य लोगों के हाथों से निकल गया, एवं दक्षिणाय द्रविड़ों के हाथों में बह चला गया (कर्मोक्त—'नवाकाल' निबंध, १९३२-३३ ई.)।

फिर भी परशुराम हैहयों का संपूर्ण विनाश न कर सका। परशुराम के पश्चात्, हैहय लोग 'तालजंघ' सामूहिक नाम से पुनः एकत्र हुये। तालजंघों में पाँच उपजातियों का सामवेश था, जिनके नाम थे:— वीतहोत्र, शर्पात, भोज, अवन्ति, कुण्डरिक (मत्स्य. ४३.४८-४९; वायु. १४.५१-५२)। उन लोगों ने कान्यकुब्ज, कोमल, काशी आदि देशों पर धार धार आक्रमण किये, एवं कान्यकुब्ज राज्य का संपूर्ण विनाश किया।

ऐतिहासिक दृष्टि से, परशुराम आमदम्य, राम दाशरथि एवं पांडवों से बहुत ही पूर्वकालीन हैं। फिर भी 'रामायण' एवं 'महाभारत' के अनेक कथाओं में परशुराम की उपस्थिति का वर्णन प्राप्त है।

महाभारत में—सौमपति शास्त्र के हाथों से परशुराम पराजित हुआ। फिर कृष्ण ने शास्त्र का वध किया (म. स. परि. १, क्र. २१, पंक्ति. ४७४-४८५)। करवीर शमाल के उन्मत्त कृत्यों की शिकायत परशुराम ने बलराम एवं कृष्ण के पास की। फिर उसका वध भी कृष्ण ने

किया (ह. वं. २.४४)। सैहिकेय शास्त्र का वध भी कृष्ण ने परशुराम के कहने पर ही किया (ह. वं. २. ४४)। सैहिकेय शास्त्र के वध के बाद, संकर ने परशुराम को 'शंकरगीता' का ज्ञान कराया (विष्णु-धर्म. १.५२.६५)। जरासंध के आक्रमण से डर कर, बलराम तथा कृष्ण राजधानी के लिये नये स्थान ढूँढ रहे थे। उस समय उनकी भेंट परशुराम से हुयी थी। परशुराम ने उन्हें गोमंत पर्वत पर रह कर जरासंध से दुर्गयुद्ध करने की सलाह दी (ह. वं. २.३९)।

महेंद्र पर्वत पर जब यह रहता था, तब अष्टमी तथा चतुर्दशी के ही दिन केवल अभ्यागतों से मिलता था (म. व. ११५.६)। पूर्व समुद्र की ओर भ्रमण करते हुये युधिष्ठिर की भेंट एक दिन परशुराम से हुयी थी। बाद में युधिष्ठिर गोदावरी नदी के मुख की ओर चला गया (म. व. ११७-११८)।

शूर्पारक बसाने के पूर्व परशुराम महेंद्र पर्वत पर रहता था। उसके उपरांत शूर्पारक प्रदेश में रहने लगा (ब्रह्मांड. ३.५८)।

भीष्मान्तर्ग का परशुराम ने अस्त्रविद्या सिखायी थी। भीष्म अम्बा का वरण करे, इस हेतु से इन गुरुशिष्यों का युद्ध भी हुआ था। एक महीने तक युद्ध चलता रहा, अन्त में परशुराम ने भीष्म को पराजित किया (म. उ. १८६. ८)। परशुराम ने क्षत्रियों की हिंसा की। उसके विषय में भीष्म ने इसे सुँह तोड़ जवाब दिया था। अपने को ब्राह्मण बताकर कर्ण ने परशुराम से शिक्षा प्राप्त की थी। बाद में परशुराम को यह भेद पता चला, और उन्होंने उसे शाप दिया।

परशुराम ने द्रोण को ब्रह्मास्त्र सिखाया था। दंभोद्भव राक्षस की कथा सुनाकर, परशुराम ने दुर्गंधन को युद्ध से परावृत्त करने का प्रयत्न किया था (म. उ. ८४)। बम्बई के बालकेश्वर मंदिर के शिवलिंग की स्थापना परशुराम ने की थी (स्कंद. सखादि. २-१)।

रामायण में—रामायण में भी परशुराम का निर्देश कई बार आया है। सीता-स्वयंवर के समय राम ने शिव के धनुष को तोड़ दिया। अपने गुरु शिव का, अपमान सहन न कर, परशुराम राम से युद्ध करने के लिये तत्पर हुआ। किंतु उस युद्ध में राम ने परशुराम को पराजित किया, एवं परशुराम के तपसामर्थ्य नष्ट होने का उसे शाप दिया (वा. रा. वा. ७४-७६)।

कालविपर्यास—परशुराम के महाभारत एवं रामायण में प्राप्त निर्देश कालविपर्यास हैं अतएव अनैतिहासिक प्रतीत होने हैं। जैसे पहले ही कहा है, परशुराम रामायण एवं महाभारत के बहुत ही पूर्वकालीन थे। इस कालविपर्यास का स्वीकरण महाभारत एवं पुराणों में, परशुराम को चिरंजीव कह कर दिया गया है। संभव है कि, प्राचीन-काल के परशुराम की महत्ता एवं ब्रह्मतेज का रिश्ता महाभारत एवं रामायण के पात्रों से जोड़ने के लिये यह 'चिरंजीवत्व' की कल्पना प्रस्तुत की गयी हो।

परशुराम के स्थान—परशुराम के जीवन से संबंधित अनेक स्थान भारतवर्ष में उपलब्ध हैं। वहाँ परशुराम की उपासना आज भी की जाती है। उनमें से कई स्थान इस प्रकार हैं—

(१) जमनामि अश्रम (पंचतीर्थी)—परशुराम का जन्मस्थान एवं सहस्रांडुन का वधस्थान। यह उत्तरप्रदेश में मेरठ के पास हिंडन (प्राचीन 'हर') नदी के किनारे है। यहाँ पाँच नदियों का संगम है। इसलिये इसे 'पंचतीर्थी' कहते हैं। यहाँ 'परशुरामेश्वर' नामक शिवमंदिर है।

(२) मातृर्ध (महाराष्ट्र में स्थित आधुनिक 'माहूर' ग्राम)—रेणुका दहनस्थान।

(३) महेंद्रपर्वत (आधुनिक 'पूरदवाट)—परशुराम का तपस्यास्थान। क्षत्रियों का संहार करने के पश्चात् परशुराम यहाँ रहता था। परशुराम ने समस्त पृथ्वी कश्यप को दान में दी, उस समय महेंद्रपर्वत भी कश्यप को दान में प्राप्त हुआ। फिर परशुराम 'शूर्पारक' के नये बर्तों में रहने के लिये गया।

(४) शूर्पारक (वृंई के पास स्थित आधुनिक 'सोपा।' ग्राम)—परशुराम का तपस्यास्थान। समुद्र को हटा कर, परशुराम ने इस स्थान को बसाया था।

(५) गोकर्णक्षेत्र (दक्षिण हिंदुस्थान में कारवार जिले में स्थित 'गोकर्ण' ग्राम)—परशुराम का तपस्यास्थान। समुद्र में डूबते हुये इस क्षेत्र का रक्षण परशुराम ने किया था।

(६) जंबुवन (राजस्थान में कोटा के पास चर्मण्वती नदी के पास स्थित आधुनिक 'केशवदेवराय-पाटन' ग्राम)—परशुराम का तपस्यास्थान। इक्ष्वाकु वार पृथ्वी निःश्राव्य करने के बाद परशुराम ने यहाँ तपस्या की थी।

(७) परशुरामतीर्थ (नर्मदा नदी के मुच में स्थित आधुनिक 'लोहान्या' ग्राम)—परशुराम का तपस्या-स्थान।

(८) परशुरामताल (पंजाब में सिमला के पास 'रेणुका तीर्थ' पर स्थित पवित्र तालाब)—परशुराम के पवित्रस्थान। यहाँ के पर्वत का नाम 'जम्दगिरिपर्वत' है।

(९) रेणुकागिरि (अलवार-रेवाड़ी रेलवेगाँव पर कैरथल से ५ मील दूर स्थित आधुनिक 'रेनागिरि' ग्राम)—परशुराम का आश्रमस्थान।

(१०) चिपळूण (महाराष्ट्र में स्थित आधुनिक चिपळूण ग्राम)—परशुराम का पवित्रस्थान। यहाँ परशुराम का मंदिर है।

(११) रामहृद (कुस्कोत्र के सीमा में स्थित एक तीर्थस्थान)—परशुराम का तीर्थ स्थान। यहाँ परशुराम ने पाँच कुंडों की स्थापना की थी (म. व. ८१.२२-३३)। इसे 'समंतपंचक' भी कहते हैं।

परशुरामजयंती—वैशाख शुभ तृतीया के दिन, रात्रि के पहले 'प्रहर' में परशुरामजयंती का समारोह किया जाता है। (धर्मसिंधु पृ. ९)। यह समारोह अधिक तर दक्षिण हिंदुस्थान में होता है, सौराष्ट्र में यह नहीं किया जाता है। इस समारोह में, निम्नलिखित मंत्र के साथ, परशुराम को 'अर्घ्य' प्रदान किया जाता है—

जमदग्निसुतो वीर क्षत्रियान्तर्करः प्रजो ।

प्रहाणार्घ्यं मया दत्तं हृषया परमेश्वर ॥

परशुराम स्मरणदायक ग्रंथ—'परशुरामकल्पसूत्र' नामक एक तांत्रिकसांप्रदाय का ग्रंथ परशुराम के नाम से प्रसिद्ध है। 'परशुरामप्रताप' नामक और भी एक ग्रंथ उपलब्ध है।

परशुरामशक—मलयद्वार में अभी तक 'परशुराम शक' चालू है। उस शक का वर्ष सौर रीति का है, एवं वर्षारंभ 'सिंहमास' में होता है। इस शक का 'चक्र' एक हजार साल का होता है। अभी इस शक का चौथा चक्र चालू है। इस शक को 'कोटमअंडु' (पश्चिम का वर्ष) कहते हैं (म. उयो. ३७७)।

परस्परायाणि—अंगिराकुल का एक ब्रह्मर्षि (नाभायणि देखिये)।

पराक्ष—(सो. अनु) एक राजा। ब्रह्मांड के अनुभार, यह अनु राजा का पुत्र था (परशक्ष देखिये)।

परांतस—(सो.) एक राजा। भविष्य के अनुसार, यह प्रंतस का पुत्र था।

परानंद—मगध देश का राजा। नंदकुत को शूद्र स्त्री से उत्पन्न हुए, परानंद नामक राजा का यह पुत्र था। इसने १० वर्षों तक राज्य किया (भवि. प्रति. १.६)।

परायण—वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा के कौथुम पाराशर्य का शिष्य (व्यास देखिये)।

परावसु—एक ऋषि, जो रैभ्य मुनि का पुत्र एवं अर्वांसु ऋषि का बड़ा भाई था। विश्वामित्र ऋषि इसका पितामह था। यह अंगिरा का वंशज माना जाता था (म. शां. २०.१.२५)।

हिंसक पशु के घोखे में, इसने अपने पिता रैभ्य का वध किया (म. व. १३९.६)। इस वध के कारण, इसे ब्रह्महत्या का पाप लगा, एवं यज्ञ के ऋत्विज का कार्य करने के लिये अपात्र बन गया।

अपने ब्रह्महत्या का पातक दूर करने के लिये, इसने अपने छोटे भाई अर्वांसु को वेदमंत्रयुक्त अनुष्ठान एवं तपस्या करने की आज्ञा दी, एवं यह स्वयं बृहदयुञ्ज राजा का यज्ञ करने चला गया (म. व. १३९.२)।

बृहदयुञ्ज के यज्ञ से 'ब्रह्मवातकी' होने के कारण, इसे निकलवा दिया। किंतु अर्वांसु के प्रयत्न से, यह निर्दोष साबित हुआ (म. व. १३९.१५)। पश्चात् उपरिचर के अश्वमेध यज्ञ में भी इसे स्थान दिया गया (म. शां. ३२७.७)।

एक बार परशुराम से इसकी मुलाकात हो गयी। इसी बार पृथ्वी निःक्षत्रिय करनेवाले परशुराम से इसने व्यंग्य से कहा, 'पृथ्वी पर क्षत्रिय तो बहुत बाकी है। खुद को निःक्षत्रिय पृथ्वी करनेवाला कहला कर, तुम व्यर्थ ही आत्मप्रशंसा करते हो'। इसके इस उद्गार के कारण, परशुराम क्रोधित हुआ, एवं क्षत्रियसंहार का कार्य उसने पुनः आरम्भ किया (म. द्रो. परि. १ क्र. ८)।

परावृत्त—(सो. क्रोष्ट्र.) एक राजा। पद्म तथा विष्णु के अनुचर, यह रुक्मकवच का पुत्र था।

पराशर—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, स्मृतिकार, एवं 'आयुर्वेद' तथा 'ज्योतिषशास्त्र' के प्रवर्तक ऋषियों में से एक। यह वसिष्ठ ऋषि का पौत्र, एवं शक्ति ऋषि का पुत्र था। यह शक्ति ऋषि के द्वारा 'अदृश्यन्ती' के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। इसीलिये इसे पराशर 'शाक्य' कहते थे। वसिष्ठ का भाई शतयातु ऋषि इसका चाचा था। इसके

कुल तीन भाई थे। उनके नामः—अवीगु, गौरिविति, एवं जातूकर्ण या जातूकर्ण्य हैं।

ऋग्वेद अनुक्रमणी के अनुसार, ऋग्वेद के कुछ सूक्तों का प्रणयन पराशर ने किया था (ऋ. १.६५-७३)। एक परंपरा के रूप में 'पराशरों' का ऋग्वेद अनुक्रमणी में उल्लेख प्राप्त है (इन्डिओ स्टूडियेन ३.४६८०)। दस राजाओं के युद्ध में विजय पानेवाले मुदास राजा की प्रशस्ति में, अपने चाचा शतयातु एवं पितामह वसिष्ठ के साथ पराशर ऋषि का निर्देश आया है (ऋ. ७.१८.२१) इन तीन ऋषियों ने इंद्र के पास जा कर, मुदास के लिये उसकी सहायता प्राप्त की थी (ग्रेडनर—इन्डिओ स्टूडियेन २. १३२)।

निरुक्त में 'पराशर' शब्द की व्युत्पत्ति बृहते ऋषि को उत्पन्न पुत्र ('पराशाणस्य स्थविरस्य जज्ञे') ऐसी दी गयी है (नि. ६.३०)। उसका शब्दशः अर्थ ले कर, कई लोग पराशर को वसिष्ठ ऋषि को उसके तुल्यपे में उत्पन्न हुआ पुत्र मानते हैं। किंतु यह ठीक नहीं है। अपने सातों पुत्रों की मृत्यु हो जाने पर, दुःख से पीड़ित बृहते वसिष्ठ ऋषि को पराशर का आधार प्राप्त हुआ था। उसीका संकेत निरुक्त के इस व्युत्पत्ति में किया गया है। महाभारत में भी निरुक्त के व्युत्पत्ति को इसी अर्थ से ले कर, पराशर को वसिष्ठ का पौत्र एवं शक्ति का मृत्यु के पश्चात् उत्पन्न पुत्र कहा गया है (म. आ. १६७.१५)।

एक बार वसिष्ठ का पुत्र शक्ति पुष्पादिक लाने के लिये अरण्य में गया था। वहाँ विश्वामित्र के लोगों ने उसे पकड़ कर अग्नि में झोंक दिया। अग्नि में जलकर मरते हुए शक्ति ने, 'इंद्र कर्तुं न आ भर पिता पुत्रेभ्यो यथा' (हे इंद्र—हमें ज्ञान दे। पिता अपने पुत्र को प्रदान करता है, वैसा धन तुम हमें दे) ऋचा के अर्धभाग का रचना की। पश्चात् वसिष्ठ ने उस ऋचा को पूरा किया (ऋ. ३२.२६)।

महाभारत के अनुसार, शक्ति ऋषि का वध राक्षसयानि प्राप्त हुए कल्माषपाद ने किया (म. आ. १६६.३६)। शक्ति ऋषि के द्वारा उसकी पत्नी अदृश्यन्ती के गर्भ में से पराशर की उत्पत्ति हुई। बारह वर्षों तक अपने माता के गर्भ में रह कर इसने वेदाभ्यास किया।

अपने पुत्रों के मृत्यु से एवं वंशाक्षय के दुःख के कारण जीवन से ऊबकर, एक बार वसिष्ठ आश्रम से बाहर निकल पड़ा। शक्ति की विधवा पत्नी अदृश्यन्ती भी उसके पीछे-पीछे जाने लगी। इतने में यकायक वसिष्ठ के कानों पर सुस्वर 'वेदध्वनि' आने लगी। उसने पीछे मुड़ कर देखा।

उसे पता चला कि, अदृश्यन्ती के गर्भ से वेदध्वनि आ रही है। अपना वंश अभी तक जीवित है, यह जान कर वसिष्ठ को अत्यंत आनंद हुआ, एवं वह आश्रम में वापस आया। कुछ दिनों के बाद, अदृश्यन्ती से पराशर उत्पन्न हुआ। इसके पितामह वसिष्ठ ने इसका पालन-पोषण किया। दूसरे का लड़का खुद का समझ कर वसिष्ठ ने इसे संभाल, इस कारण इसका 'पराशर' नाम रखा गया (म. आ. १६९. ३)।

बाल्यकाल में पराशर, वसिष्ठ ऋषि को अपना पिता समझ कर, उसे 'दादा, दादा' कह कर पुकारता था। वसिष्ठ को 'दादा' कह कर पुकारते ही, इसका माता अदृश्यन्ती के आँखों में पानी भर आता था। अदृश्यन्ती ने इसे कई बार समझाया, "वसिष्ठ को तुम 'दादा' न कह कर, 'बाबा' (पितामह) कहो"। किंतु पराशर यह सूक्ष्म मेदाभेद नहीं समझता था।

पराशर के बड़े होने पर, अदृश्यन्ती ने राक्षसद्वारा हुए शक्ति ऋषि के वृणित वध की सारी कहानी इसे सुनायी। उसे सुनते ही, यह संपूर्ण जगत के विनाश के लिये तत्पर हुआ। किंतु भृगुवंशी ऋषीक और वसिष्ठ की कथा इसे सुना कर, वसिष्ठ ने इसे जगद्गिनाश के संकल्प से परावृत्त किया (म. आ. १७२)।

राक्षससत्र—फिर भी पराशर का राक्षसों के प्रति क्रोध शमित न हुआ। आवाहवृद्ध राक्षसों को मार डालने के लिये, इसने महाप्रसंग 'राक्षससत्र' का आयोजन किया। राक्षसों के प्रति वसिष्ठ भी पहले से क्रुद्ध था। इस कारण, पराशर के नये सत्र से वसिष्ठ ने न रोका। किंतु इसके 'राक्षससत्र' से अन्य ऋषियों में हलचल मच गयी। अत्रि, पुलह, पुलस्त्य, ऋतु, महाऋतु आदि ऋषियों ने स्वयं सत्र के स्थान आकर, पराशर को समझाने की कोशिश की। पुलस्त्य ऋषि ने कहा, 'अनेक दृष्टि से राक्षस निकरद्वयी एवं निरपराध है। अतः उनका वध करना उचित नहीं'। फिर वसिष्ठ ने भी पराशर को समझाया, एवं 'राक्षससत्र' बंद करने के लिये कहा। उसका कहना मान कर, पराशर ने अपना यज्ञ स्थगित किया। इस पुण्यकृत्य के कारण पुलस्त्य ने इसे बर दिया, 'तुम सकल शास्त्रों में पारंगत, एवं पुराणों के 'वक्ता' बनोगे (विष्णु. १. १)।

राक्षससत्र के लिये सिद्ध की अग्नि, पराशर ने हिमालय के उत्तर में स्थित एक अरण्य में झोंक दी। वह अग्नि 'पूर्वकाल' के दिन, राक्षस, पाषाण एवं वृक्षों

को भक्षण करती हुयी आज भी दृष्टिगोचर होती है (म. आ. १६९-१७०; १७२; विष्णु. १.१; लिंग १. ६४)।

व्यासजन्म—एक बार पराशर तीर्थयात्रा के लिये गया था। यमुना नदी के किनारे, उपरिचर वसु राजा की कन्या सत्यवती को इसने देखा। सत्यवती के शरीर में मछली जैसी दुर्गंध आती थी। फिर भी उसके रूप शौचन पर मोहित हो कर पराशर ने उससे प्रेमयाचना की। पराशर के संभोग से अपना 'कन्याभाव' (कौमाव) नष्ट होगा, ऐसी आशंका सत्यवती ने प्रकट की। फिर पराशर ने उसे आशीर्वाद दिया, 'संभोग' के बाद भी तुम कुमारी रहोगी, तुम्हारे शरीर से मछली की गंध (मन्सुगंध) उत्पन्न हो जायेगी और एक नयी सुगंध तुम्हें प्राप्त होगी, एवं वह सुगंध एक योजन तक फैल जायेगी। इसी कारण लोग तुम्हें 'योजनगंधा' कहेंगे (म. आ. ५७.३३)। पश्चात् मनसोक्त एकांत का अनुभव लेने के लिये, पराशर ने सत्यवती के चारों ओर नीहार का पर्दा उत्पन्न किया।

पराशर को सत्यवती से व्यास नामक एक पुत्र हुआ। यमुना नदी के द्वीप में उसका जन्म होने के कारण, उसे 'द्वैधायन' व्यास कहते थे। (म. आ. ५७.१९; भा. १.३)। सत्यवती को 'काली' नामांतर भी प्राप्त था। उस काली का पुत्र होने के कारण, व्यास को 'कृष्णद्वैधयन' उपाधि प्राप्त हो गयी (वायु. २.१०,४४)।

पारिंटर के अनुसार, प्राचीन काल में 'पराशर शाक्य' एवं 'पराशर सागर' नामक दो व्यक्ति वसिष्ठ के कुल में उत्पन्न हुए। उनमें से 'पराशर शाक्य' वैदिक मुद्रस राजा के समकालीन वसिष्ठ ऋषि का पौत्र एवं शक्ति ऋषि का पुत्र था। दूसरा 'पराशर सागर' सरव वसिष्ठ का पुत्र, एवं कस्मापराद तथा शततु राजा का समकालीन था। इन दो पराशरों में से 'पराशर शाक्य' ने राक्षससत्र किया था, एवं दूसरे पराशर ने सत्यवती से विवाह किया था (पाणि. २.१८)। किंतु पारिंटर के इस तर्कपरंपरा के लिये विश्वसनीय आधार उपलब्ध नहीं है। पौराणिक वंशावली में भी एक 'शक्तिपुत्र पराशर' का ही केवल निर्देश प्राप्त है।

आदरणीय ऋषि—एक आदरणीय ऋषि के नाम, महाभारत में पराशर का निर्देश अनेक बार किया गया है। इसने जनक को कल्याणप्राप्ति के साधनों का उपाय दे दिया था (म. अनु. २७९-२८७)। काश्यांतरित पर्व उपदेश भीष्म ने युधिष्ठिर को बताया था। उसे ही 'पराशरगीता'

कहते हैं। इसने युधिष्ठिर को 'रुद्रमाहात्म्य' कथन किया था (म. अनु. ४९)। इसने अपने शिष्यों को विविध ज्ञानपूर्ण उपदेश दिये थे (म. अनु. ९६.२१)। पराशर द्वारा किये गये 'सावित्रीमंत्र' का वणन भी महाभारत में प्राप्त है (म. अनु. १५०)।

परिश्रित राजा के प्रायोपवेशन के समय, पराशर गंगानदी के किनारे गया था (भा. १.१९.९)। शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म को देखने के लिये यह कुशक्षेत्र गया था (म. शां. ४७.६६)। इंद्रसभा में उपस्थित ऋषियों में भी, पराशर एक था (म. स. ७.९)।

वेदव्यास—ब्रह्मा से ले, कर कृष्णद्वैपायन व्यास तक उल्लेख हुए ३२ वेदव्यासों में से पराशर एक प्रमुख वेदव्यास था। जो ऋषिमुनि वैदिक संहिता का विभाजन या पुराणों को संक्षिप्त कर ले, उसे 'वेदव्यास' कहते थे। उन वेदव्यासों में ब्रह्मा, बसिष्ठ, शक्ति, पराशर एवं कृष्ण-द्वैपायन व्यास प्रमुख माने जाते हैं।

धर्मशास्त्रकार—पराशर अठारह स्मृतिकारों में से एक प्रमुख था। इसकी 'पराशरस्मृति' एवं उसके उपर आधारित 'बृहत्पराशर संहिता' धर्मशास्त्र के प्रमुख ग्रंथों में गिने जाते हैं। पराशर के नाम पर निम्नलिखित धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथ उपलब्ध हैं :—

(१) पराशरस्मृति—यह स्मृति जीवानंद संग्रह (२.१-५२), एवं शंभु संस्कृत सिरीज़ में उपलब्ध है। डॉ. काणे के अनुसार, इस स्मृति का रचनाकाल १वीं शती एवं ५ वीं शती के बीच का होगा। याज्ञवल्क्यस्मृति एवं गरुड़ पुराण में इस स्मृति के काफी उद्धरण एवं सारांश दिये गये हैं (याज्ञ. १. ४; गरुड़. १. १०७)।

इस स्मृति में कुल बारह अध्याय, एवं ५९२ श्लोक हैं। इस स्मृति की रचना कलियुग में धर्म के रक्षण करने के हेतु से की गयी है। कृतयुग के लिये 'मनु-स्मृति', त्रेतायुग के लिये 'गौतमस्मृति', द्वापारयुग के लिये 'शंखलिखितस्मृति', वैसे ही कलियुग के लिये 'पराशरस्मृति' की रचना की गयी (परा. १.२४)। मनुस्मृति गौतम स्मृति की अपेक्षा, पराशरस्मृति अधिक 'प्रातिशाल' प्रतीत होती है। उसमें ब्राह्मण व्यक्ति को शूद्र के घर भोजन करने की एवं विवाहित स्त्रियों को पुनर्विवाह करने की अनुमति दी गयी है। परन्तु, प्रवास, व्याधि एवं अन्य संकटों के समय, व्यक्ति ने सर्वप्रथम अपने शरीर का रक्षण करना आवश्यक है,

उस समय धर्माधर्म की विशेष चिन्ता करने की जरूरत नहीं, ऐसा पराशर का कहना है (परा. ७)। पुत्रों के प्रकार बताते समय, 'औरस' पुत्रों के साथ, 'दत्तक, क्षेत्रज' एवं 'कृत्रिम' इन पुत्रों का निर्देश पराशर ने किया है (रा. ४.१४)। पति के मृत्यु के बाद, पत्नी का सती हो जाना आवश्यक है, ऐसा पराशर का कहना है (परा. ४)। क्षत्रिकों के आचार, कर्तव्य एवं प्रायश्चित्त के बारे में भी, पराशर ने महत्त्वपूर्ण विचार प्रकट किये हैं (परा. १.६-८)।

'पराशरस्मृति' में आचार्य मनु के मतों के उद्धरण अनेक बार लिये गये हैं (परा. १.४; ८)। सभी शास्त्रों के जाननेवाले एक आचार्य के रूप में इसने मनु का निर्देश किया है। मनु के साथ उशनस् (१२.४९), प्रजापति (४.३; १३), तथा शंख (४.१५) आदि धर्मशास्त्रकारों का भी, इसने निर्देश किया है। वेद वेदांग, एवं धर्मशास्त्र के अन्य ग्रंथों का निर्देश एवं उद्धरण 'पराशरस्मृति' में प्राप्त है। अपने स्मृति के बारहवें अध्याय में इसने कुछ वैदिक मंत्र दिये हैं। उनमें से कई ऋग्वेद में एवं कई शुक्लयजुर्वेद में प्राप्त हैं।

पराशर के राजधर्मविषयक मतों का उद्धरण कौटिल्य ने अपने 'अर्थशास्त्र' में अनेक बार कहा है। 'मिताक्षरा' 'अपरार्क', 'स्मृतिचंद्रिका', 'हेमाद्रि' आदि अनेक ग्रंथों में पराशर के उद्धरण लिये गये हैं। विश्वरूप ने भी इसका कई बार निर्देश किया है (याज्ञ. ३.१६; २.७)। इससे स्पष्ट है की ९ वें शती के पूर्वार्ध में 'पराशर-स्मृति' एक 'प्रमाण ग्रंथ' माना जाता था।

(२) बृहत्पराशरसंहिता—यह स्मृति जीवानंद संग्रह में (२.५३-३०९) उपलब्ध है। 'पराशरस्मृति' के पुनर्संस्करण एवं परिवृद्धिकरण कर के इस ग्रंथ की रचना की गयी है। इस ग्रंथ में बारह अध्याय एवं ३३०० श्लोक हैं। पराशर परंपरा के सुव्रत नामक आचार्य ने इस ग्रंथ की रचना की है। यह ग्रंथ काफी उत्तरकालीन है।

(३) बृहत्पराशर स्मृति—पराशर के इस स्वतंत्र स्मृतिग्रंथ का निर्देश अपरार्क (याज्ञ. २.३१८), एवं माधव (पराशर माधवीय. १.१.३२३०) ने किया है।

(४) उद्योति पराशर—इस स्मृतिग्रंथ का निर्देश हेमाद्रि ने अपने 'चतुर्वेगचिंतामणी (३.२.४८) में एवं भट्टोजी दिक्षित ने अपने 'चतुर्विंशतिमत' में किया है।

(५) पराशर निदेशास्त्र—श्रौटिक्य ने इसका निर्देश किया है ।

ज्योतिषशास्त्रकार—सिद्धांत, होरा एवं संहिता इन तीन रक्षों से युक्त ज्योतिषशास्त्र के प्रवर्तक अठारह ऋषियों में पराशर प्रमुख था । ज्योतिषशास्त्रकार अठारह ऋषियों के नाम इस प्रकार हैं—सूर्य, पितामह, व्यास, वसिष्ठ, अग्नि, पराशर, कश्यप, नारद, गर्ग, मरीचि, मनु, अंगिरा, लोमश, पौल्लिश्च, स्वयंवर, यवन, भृशु एवं शौनक (कश्यपसंहिता) । अपने ज्योतिषशास्त्रीय ग्रंथों में, पराशर ने ' वसंत सप्तत ' स्थिति का निर्देश किया है ।

पराशर के ज्योतिषशास्त्रीय ग्रंथ इस प्रकार हैं—

(१) पराशरसंहिता—इस ग्रंथ में, पराशर ने ज्योतिषशास्त्र से संबंधित निम्नलिखित पूर्वान्नायों का निर्देश किया है—ब्रह्मा मायाचण, वसिष्ठ, मांडव्य, वामदेव । पराशर के ज्योतिषशास्त्रीय ग्रंथों में, मैत्रेय एवं कौशिक प्रमुख थे ।

(२) बृहत्पराशर होराशास्त्र—इस ग्रंथ में १२००० श्लोक हैं ।

(३) लघुपराशरी

(४) पागशार्थकल्प—विमानविद्या पर महाग्रंथ, पराशरपरंपरा के किसी व्यासने लिखा है ।

आयुर्वेदशास्त्र—पराशर एक आयुर्वेदशास्त्रज्ञ भी था । यह अनिन्द्य, मंडू, काश्यप एवं खण्डकाप्य इन आयुर्वेदान्नायों से समकालीन था । पराशर के नाम पर निम्नलिखित आयुर्वेदीय ग्रंथ प्राप्त हैं—(१) पराशरतंत्र, (२) बृहत्पराशर, (३) हस्तिआयुर्वेद, (४) गोलक्षण, (५) वृक्षायुर्वेद ।

पुराण इतिहासज्ञ—पराशर पुराण एवं इतिहासशास्त्र में भी पारंगत था । पुराण ग्रंथों में, ' विष्णु पुराण ' सारस्वत ने पराशर को एवं पराशर ने अपने शिष्य मैत्रेयको बताया था । विष्णु पुराण में, पराशर को इतिहास एवं पुराणों में विद्वान् कहा गया है (विष्णु. १. १) । ' भागवत पुराण ' भी संख्यायन ऋषिद्वारा पराशर एवं बृहस्पति को लिखाया गया, एवं वह पराशर ने मैत्रेय को लिखाया (भा. ३.८) । पराशर के नाम पर ' पराशरोप पुराण ' नामक एक पुराण ग्रंथ उपलब्ध है । माधवाचार्य ने उसका निर्देश किया है ।

अन्य ग्रंथ—पराशर के नाम पर पराशर वालुशास्त्र नामक एक वालुशास्त्र विषयक एक ग्रंथ भी उपलब्ध है । विश्वकर्मा ने उसका निर्देश किया है । ' पराशर

केवलसार ' तथा एक ग्रंथ जोर भी पराशर ने लिखा था ।

पराशर वंश—पराशर के वंश की कुल छः उपशाखायें उपलब्ध हैं । उनके नाम—१. गौरपराशर, २. नीलपराशर ३. कृष्णपराशर, ४. श्वेतपराशर, ५. व्यामपराशर, ६. धूम्रपराशर (मत्स्य. २००) ।

(१) गौरपराशर—इस वंश के प्रमुख कुल—कांडशय (कांडशय), गोपालि, कैहप (समय), भौमतापन (समतापन), वाहन्य (वाह्यौज) ।

(२) नीलपराशर—इस वंश के प्रमुख कुल—केतु जातेय, खातेय (ग), प्रपौहय (ग), बाहामय, हर्षधि ।

(३) कृष्णपराशर—इस वंश के प्रमुख कुल—कपिमुल (कपिश्वयम्) (ग), काकेयथ (काकेय) (ग), काष्णायन (ग), जपातथ (ख्यातवायन) (ग), पुष्कर ।

(४) श्वेतपराशर—इस वंश के प्रमुख कुल—इषी-कहस्त, उपय (ग), बालेय (ग), श्राविशयन, स्वायष्ट (ग) ।

(५) व्यामपराशर—इस वंश के प्रमुख कुल—क्रोधनायन, क्षेमि, नादरि, वाटिका, स्तंत्र ।

(६) धूम्रपराशर—इस वंश के प्रमुख कुल—खत्यायन (ग), तंति (जति), तैलेय, यूथय, एवाणायन । उपनिर्दिष्ट वंशों में से, ' गौरपराशर ' वंश के लोग वसिष्ठ, मित्रावरुण एवं कुंडिन इन तीन प्रवरों के हैं । बाकी सारे वंश के लोग पराशर, वसिष्ठ एवं शक्ति इन तीन प्रवरों के हैं ।

२. एक ऋग्वेदी श्रुतिर्षि, ऋषिक एवं ब्रह्मचारी । यह व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा में से बाष्कल ऋषि का शिष्य था । इसके नाम से इसकी शाखा को ' पराशरी ' नाम प्राप्त हुआ ।

३. वासु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्य-परंपरा में से विरिष्यनाभ ऋषि का शिष्य । ब्रह्मांड में इसके नाम के लिये ' पराशर्य ' पाठभेद प्राप्त है ।

४. व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से कुशुमि ऋषि का शिष्य ।

५. ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की यजुशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाइसन्य शिष्य (व्यास देखिये) ।

६. ऋग्वेद नामक शिवायतन का शिष्य ।

७. धृतराष्ट्र के वंश में उत्पन्न एक नाम, जो जनमेजय के सर्पसत्र में स्वाहा हो गया (म. आ. ५.२.१७) ।

८. एक ऋषि। इसने ऋतुपर्णपुत्र नल राजा का रक्षण किया था (भा. ९.९.१७; सर्वकर्मन् देखिये)।

परिक्रूट—विश्वामित्रकुल का एक गोत्रकार।

परिकृष्ट—बायु और ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामक्षिप्यपरंपरा के हिरण्यनाभ ऋषि का शिष्य।

परिक्षित्—एक कुरुवंशीय वैदिक राजा। अथर्ववेद में इसके राज्य की समृद्धि एवं शान्ति का गौरवपूर्ण निर्देश किया गया है (अ. वे. २०.१२७.७-१०)। अथर्ववेद के जिन मंत्रों में इसकी प्रशंसा है, उन्हें ब्राह्मण ग्रंथों में 'परिक्षित्य मंत्र' कहा गया है (ए. ब्रा. ६.३२.१०; कौ. ब्रा. ३०.५; गो. ब्रा. २.६.१२; सां. श्रौ. १२-१७; सां. ब्रा. ३०.५.)।

वैदिक साहित्य में जनमेजय राजा का पौत्रक नाम 'परिक्षित' दिया गया है। वह उपाधि उसे वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट 'परिक्षित्' राजा के पुत्र होने से मिली होगी।

महाकाव्य में इसे 'प्रतिश्रवस्' का पितामह एवं 'प्रतीर' का प्रपितामह कहा गया है। स्मिन् के अनुसार, अथर्ववेद में निर्दिष्ट 'प्रातिसुवन्' एवं 'प्रतिश्रवस्' दोनों एक ही थे (स्मिन्, आल्टिन्डिज लेवेन, १३९)। इस राजा की प्रशंसा करने के लिये, अन्य देवताओं, विद्वेषतः अग्नि के साथ, इसकी स्तुति की गयी है।

२. (सु. इ.) अयोध्या का इक्ष्वाकुवंशीय राजा। मंडूकों के राजा आयु की कन्या सुशोभना से इसका विवाह हुआ था। विवाह के समय, सुशोभना ने इसे शर्त रखी थी, 'मेरे लिये पानी का दर्शन जरूरी है। इसलिये पानी का दर्शन होते ही, मैं तुम्हें छोड़ कर चली जाऊँगी।' एक बार यह मृगया के लिये वन में गया था। वहाँ प्रसंगवशात् यह अपनी पत्नी के साथ एक शायड़ी के पास आया। वहाँ पानी का दर्शन होते ही, अपने शर्त के अनुसार, सुशोभना पानी में छूत हो गयी। फिर क्रुद्ध हो कर, परिक्षित् ने अपने राज्य में मंडूकवध का सत्र शुरु किया उस सत्र से धरारा कर, मंडूकराज आयु इसकी शरण में आया, एवं इसकी खोई हुई पत्नी उसने इसे वापस दी। पश्चात् सुशोभना से इसे शल, दल, तथा बल नामक तीन पुत्र हुये (म. व. १९०)।

३. (सो. कुरु) एक कुरुवंशीय राजा, एवं कुरु राजा का पौत्र। यह कुरु आदिशित के आठ पुत्रों में से च्येष्ठ था। इसे अश्रवत् तथा अभिवत् नामांतर भी प्राप्त थे (म. आ. ८९.४५-४६)। इसके भाइयों के नाम इस

प्रकार थे :—शवलश्व, आदिराज, विराज, शात्मलि, उच्चैश्रवा, मंगकर और जितारि।

इसके माता का नाम वाहिनी था। इसे कुल सात पुत्र थे। उनके नाम—१. कशसेन, २. उग्रसेन ३. चित्रसेन, ४. इंद्रसेन, ५. सुपेण, ६. भीमसेन, ७. जनमेजय (म. आ. ८९.४६-४८)। वे सारे पुत्र धर्म एवं अर्थ के ज्ञाता थे।

४. (सो. कुरु) एक कुरुवंशीय राजा। यह कुरु राजा अश्रवत् (अनश्रवत्) एवं मागधी अमृता का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम ब्राह्मदा सुयशा था। उसने इसे भीमसेन नामक पुत्र हुआ था। कुरु राजा ने लेकर शंतनु तक का इसका वंशक्रम इस प्रकार है :—कुरु-विद्वरथ अश्रवत्-परिक्षित्-भीमसेन-प्रतीर-शंतनु (म. आ. ९०.४३-४८)।

५. एक कुरुवंशीय सम्राट्। यह अर्जुन का पौत्र तथा अभिमन्यु एवं उत्तरा का पुत्र था।

भारतीय युद्ध के पश्चात्, हस्तिनापुर के राजवृद्धी पर बैठनेवाला पहला 'कुरुवंशीय' सम्राट् परिक्षित् है। राजधर्म एवं अन्य व्यक्तिगुणों से यह परिपूर्ण था। किंतु इसकी राज्य की समृद्धि एवं इसने अन्य देशों पर किये आक्रमणों की जो कथाएँ क्रमशः अथर्ववेद एवं पुराणों में दी गयी है, वे इसकी न हो कर, संभवतः किसी पूर्व-कालीन 'परिक्षित्' राजा की होंगी (परिक्षित् १. देखिये)।

महाभारत के अनुसार, परिक्षित् का राज्य सरस्वती एवं गंगा नदी के प्रदेश में स्थित था। आधुनिक धानेश्वर, देहली एवं गंगा नदी के दोआब का उपरिष्ठ प्रदेश उसमें समाविष्ट था (रॉयचौधरी-पृ. २०)। कलियुग का प्रारंभ, एवं नागराज तक्षक के हाथों इस की मृत्यु, हुयी थी ये परिक्षित् के राज्यकाल की दो प्रमुख घटनाएँ थीं।

जन्म—अश्वत्थामा के द्वारा छोड़े गये ब्रह्मास्त्र के कारण, उत्तरा के गर्भ में स्थित परिक्षित् सुलसने लगा। फिर उत्तरा ने भगवान् विष्णु को पुकारा। श्रीविष्णु ने इस गर्भ की रक्षा की। इसलिये इसका नाम 'विष्णुराज' रखा गया।

जन्म लेने के उपरांत, यह गर्भकाल में अपनी रक्षा करनेवाले श्रीविष्णु को धरउधर हँदने लगा। इस कारण, इसे 'परीक्षित्' (परि+ईश्व) नाम प्राप्त हुआ (भा. १. १२.३०)। 'परिक्षित्' नाम की यह व्युत्पत्ति कल्पमारम्य, प्रतीत होती है, क्योंकि, इस व्युत्पत्ति के अनुसार, 'परिक्षित्'

का नाम 'परिक्षित्' होता चाहिये। किंतु महाभारत में सर्वत्र इसका नाम 'परिक्षित्' दिया गया है। महाभारत के अनुसार, कुरुवंश 'परिक्षीण' होने के पश्चात् इसका जन्म हुआ, इस कारण 'परिक्षित्'-नाम प्राप्त हुआ (म. आश्व. ७०.१०)

श्रीकृष्ण के मृत्यु के पश्चात्, युधिष्ठिर ने छत्तीस वर्षों तक राज्य किया। पश्चात् युधिष्ठिर ने राज्यत्याग कर, इसे राजाही पर डैठाया गया (म. महा. १.९) बाद में द्रौपदी के सहित सारे पाण्डव महाप्रस्थान के लिए चले गये। राज्याभिषेक के समय यह छत्तीस वर्ष का था। इसकी पत्नी मद्रवती थी। बंबई आवृत्ति में इसका नाम भाद्रवती प्राप्त है। भागवत में लिखा है कि, इसके मातुल का कन्या इरावती इसकी पत्नी थी। उससे इसे जनमेजय, श्रुतसेन, उग्रसेन तथा भीमसेन नामक चार पुत्र हुये (म. आ. ९०-९३; आश्व. ६८; भा. १.१२.१६; ९.२२.३५)।

राज्य में कलिप्रवेश—कृपाचार्य को कलिव्रजना कर, इसने भागीरथी के तट पर तीन अश्वमेधयज्ञ किये। इसके यज्ञ में देव प्रत्यक्ष रूप से अपना हविर्भाव लेने आये थे। जब यह कुरुजंगल देश में राज्य कर था, इसे ज्ञात हुआ कि कलि ने राज्य में प्रवेश लिया है। तत्काल यह अपनी चतुरंगी सेना ले कर निकल पड़ा। भारत, केतुमाल, उत्तकुरु, भद्राश्व आदि खण्ड जीत कर, इसने वहाँ के राजाओं से करभार प्राप्त किया।

एक बार इसने सरस्वती के किनारे गोरूप धारी पृथ्वी, तथा तीन पैरोंवाले वृक्षरूपधारी धर्म का संवाद सुना। इन संवाद से इसे पता चला कि, श्रीकृष्ण के निजधाम चले जाने के कारण, कलि ने इस पृथ्वी में प्रवेश पा लिया है, और शूद्ररूप धारण कर वह सब को दुःख देता हुआ गाय बैलों को मार रहा है। इस से खिन्न हो कर कलि को समात करने के लिये यह उद्यत हो उठा। कलि इसकी शरण में आया। इसके राज्य से बाहर जाने की आज्ञा स्वीकार कर उसने राजा से पूछा, 'मेरे निवास के लिये कौन कौन स्थान हैं?' तब जुआ, मद्य, व्यभिचार, हिंसा, तथा स्वर्ण नामक पाँच स्थान, राजा ने कलि के रहने के लिये नियत किये। इससे धर्म तथा पृथ्वी को भी संतोष हुआ (भा. १.१६.१७)।

शार—एक बार जब यह मृगया के लिये अरण्य में गया था, तब अत्यधिक प्यासा हो कर पीने के लिए जल ढूँढ़ने लगा। इधरउधर जल ढूँढ़ने के उमरांत, यह शमीक ऋषि के आश्रय गया। शमीक उस समय ध्यान

में निमग्न था, अतएव जल के लिये की गई याचना सुन न सका। क्रोधित हो कर, धनुष की नोक से एक मृत सर्प उठा कर, इसने शमीक ऋषि के गले में डाल दिया, और अपने नगर वापस लौट आया (म. आ. ३६.१७-२१)। पास ही खेल रहे शमीक ऋषि के शंगी नामक पुत्र को यह ज्ञात हुआ। उसने क्रोधित हो कर इसे दूध दिया, मेरे पिता के कंधे पर मृत सर्प डाल कर जिसने उसका अग्रमान किया है, उस परिक्षित् राजा को आज्ञा से सातवें दिन मेरे द्वारा प्रेरित नामराज तक्षक देश करेगा। इस कथा में से शमीक ऋषि के पुत्र का नाम, कई जगह 'भविजात' दिया गया है।

बाद में, शमीक को अपने पुत्र का श्रापवचन ज्ञात हुआ। उसने अपने शिष्य गौरमुख के द्वारा यह श्राप परिक्षित् को सन्तित कराया, और पुत्र की मरणा की (म. आ. ३८.१३-२८)।

श्राप का पता चलते ही, परिक्षित् को अपने कृतकर्म का पश्चाताप हुआ। अपनी सुरक्षा के लिये, इसने सात मंजिलवाला स्तम्भयुक्त महल बनवाया, एवं औषधि, मंत्र आदि ज्ञानदेवालों मंत्रिकों के संगे यह वहाँ रहने लगा। भागवत में लिखा है की, शरी सुनते ही परिक्षित् को वैराग्य उत्पन्न हो गया, और यह गंगा के किनारे प्रायोपवेशन के विचार से ईश्वर का ध्यान करने लगा। वहाँ अग्नि, अरिष्टनेमि इत्यादि कई ऋषि आये।

बाद में इसने अपने पुत्र जनमेजय का राज्याभिषेक किया। महाभारत में दिया गया है कि, परिक्षित् की मृत्यु के बाद जनमेजय का राज्याभिषेक हुआ। ऋषियों के बीच बातचीत चल ही रही थी कि सोलहवर्षीय कृपाचार्य ऋषि सहज भाव से उस स्थान पर उपस्थित हुआ। सबने उनका स्वागत किया। परिक्षित् ने भी उस उच्चासन दिया तथा श्रद्धा के साथ उनकी पूजा की। इसने उनसे मरणोन्मुख पुरुष के निश्चित कर्तव्य तथा सिद्धि के साधन पूछे। इसके सिद्धय और भी प्रश्न किये। शुकाचार्य ने इसके सारे प्रश्नों के यथायोग्य उत्तर दिये (भा. १.१७.१९; २.८)। इस प्रकार समय 'भागवत' पुराण शुकाचार्य के द्वारा श्रवण कर, यह पूर्ण ज्ञानी बना। इसका तक्षक देश का भय नष्ट हुआ, तथा शुकाचार्य भी वहाँ से चला गया।

पूर्व में दिये गये श्राप के अनुसार, ऋषिपुत्र शंगी के द्वारा सातवें दिन भेजा गया तक्षक, परिक्षित् को देश करने जा रहा था। इसी समय मार्ग में धाव्यप नामक

मांत्रिक, राजा का विष उतार कर, द्रव्य प्राप्ति की इच्छा से राजा के पास जा रहा था। उसे विपुल धनराशि दे कर तक्षक ने वापस भेज दिया (काश्यप २. देखिये)।

तक्षकदंश—तक्षक ने कुछ नागों को फल, मूल, दर्भ, उदक आदि देकर तापस वेश से परिक्षित् के पास भेजा। तक्षक स्वयं अतिसूक्ष्म जन्तु का रूप धारण कर फलों में प्रविष्ट हुआ। तापसवेपथारी नाग राजद्वार के पास आकर कहने लगे, 'हम राजा को अधर्वण मंत्रों से आशीर्वाद देकर अभिषेक करने के लिये, तथा राजा को उच्छृङ्खल फल देने के लिये आये हैं।'

परिक्षित् ने उनके फल स्वीकार किये। वे फल सुहृदों को खाने के लिये दे कर, इसने एक बड़ा सा फल स्वयं खाने के लिये फोड़ा। उसमें से एक सूक्ष्म जन्तु बाहर निकला। उसका वर्ण लाल तथा आंखें काली थीं। उसे देख कर, परिक्षित् ने बड़े ही व्यंग्य से मंत्रियों से कहा, 'आज सातवाँ दिन है, एवं सूर्य अस्ताचल को जा रहा है। फिर भी नागराज तक्षक से मुझे भय प्राप्त नहीं हुआ। इसलिये कहीं यह जन्तु ही तक्षक न बन जाये, तथा मुझे डस कर मुनिवाक्य सिद्ध न कर दे'।

इतना कह कर परिक्षित् ने उस जन्तु को अपनी गर्दन पर धारण किया। तत्काल तक्षक ने भयंकर स्वरूप धारण कर इसके शरीर से लिपट गया, तथा अपने मुख से निकलनेवाली भयंकर विषमय ज्वालाओं से परिक्षित् के शरीर को दग्ध करने लगा। पश्चात् तक्षक आकाशमार्ग से चला गया (म. आ. ३६-४०; ४५-४७; दे. भा. २. ८-१०)।

भागवत के अनुसार, ब्राह्मणरूप धारण कर, तक्षक ने परिक्षित् के महल में प्रविष्ट पाया, तथा परिक्षित् को दंश किया। जिससे परिक्षित् की मृत्यु हो गयी (मा. १२.६)। मृत्यु के समय इसकी आयु छियात्रवे वर्ष की थी। इसने कुल साठ वर्षों तक राज्य किया (दे. भा. २.८)।

परिक्षित्कथा का अन्वयार्थ—महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त 'परिक्षित्बध' की उपनिर्दिष्ट कथा ऐतिहासिक दृष्टि से यथातथ्य प्रतीत होती है। परिक्षित् के राज्यकाल में, गोंधार देश में नाग लोगों का सामर्थ्य काफी बढ़ गया था। भारतीययुद्ध के कारण, हस्तिनापुर के पौरव राज्य क्षीण एवं बलहीन बन गया था। उसकी इस दुर्बल अवस्था का फायदा उठा कर, नागों के राजा तक्षक ने हस्तिनापुर पर आक्रमण किया। तक्षक के इस आक्रमण का प्रतिकार

परिक्षित् न कर सका, एवं तक्षक के हाथों इसकी मृत्यु हो गयी।

पौराणिककाल—परिक्षित् के राज्यारोहण से ले कर, मगध देश के बृहद्रथ राजवंश के समाप्ति तक का काल, प्राचीन भारतीय इतिहास में 'पौराणिककाल' माना जाता है। यह कालखंड भारतीययुद्ध (१४०० ई. पू.) से शुरू होता है, एवं मगध देश में 'नंद राजवंश' के उदयकाल (४०० ई. पू.) से समाप्त होता है। इस काल में उत्तर एवं पूर्वभारत में उत्पन्न हुये पौरव, ऐश्वक, एवं मगध राजाओं की विस्तृत जानकारी पुराणों में मिलती है। उन राजाओं के समकालीन पंचाल, काशी, हैहय, कलिंग, अस्मक, मैथिल, शूरसेन एवं वीतहोत्र राजवंशों की प्रासंगिक जानकारी पुराणों में दी गयी है। कहीं-कहीं तो, विशिष्ट राजवंश में पैदा हुए राजाओं की केवल संख्या ही पुराणों में प्राप्त है। पुराणों में प्राप्त इस 'कालखंड' की जानकारी, आधुनिक उत्तर प्रदेश एवं दक्षिण बिहार से मर्यादित है।

पुराणों के अनुसार, 'परिक्षित्जन्म' से लेकर मगध देश के महापद्म नंद के अभिषेक तक का कालावधि, एक हजार पाँचसौ वर्षों का दिया गया है (मत्स्य. २७३.३६)। किंतु 'विष्णुपुराण' में 'जेय' के बढते 'शत' पाठ मान्य कर, यही अवधि एक हजार एक सौ पंद्रह वर्षों का निश्चित किया गया है (विष्णु. ४.२४.३२)।

७. एक प्राचीन नरेश, जो कुरुवंशी अभिमन्युपुत्र से भिन्न था। इसके पुत्र जनमेजय की ब्रह्महत्या का निवारण इन्द्रोत्त मुनि ने किया था (म. शां. १४७-१४८)।

परिध—(सो. क्रोष्ट्र.) एक राजा। मत्स्य तथा वायु के अनुसार, यह स्वभक्तवच का पुत्र था। पद्म के अनुसार, यह स्वभक्तवच का पौत्र, एवं परावृत् का पुत्र था (पद्म. सू. १३)। इसे पालित तथा पुरुजित् नामांतर प्राप्त थे।

२. अंशद्वारा स्कंद को दिये गये पाँच पार्षदों में से एक। अन्य चार पार्षदों के नाम इस प्रकार थे:—वट, भीम, दहति, एवं दहन।

३. विडालोपाख्यान में वर्णित व्याध का नाम (म. शां. १३६-११०)।

परिप्लव—(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा। विष्णु के अनुसार, यह सुखीनल राजा का पुत्र था। किन्तु भागवत में इसे सुखीनल का पुत्र कहा गया है। इसके नाम के

लिये प्रजानि, परिष्णाव, एवं परिप्लुत पाठभेद भी प्राप्त है (सुनय देखिये)।

परिप्लुत—परिप्लव का नामांतर।

परिचर्ह—गरुड के पुत्रों में से एक।

परिमति—भय देवों में से एक।

परिव्याध—पश्चिम दिशा में रहनेवाला एक महर्षि (म. शां. २०१.२९)।

परिश्रवम्—कुरुवंशीय राजा प्रतीप का नामान्तर (प्रतीप देखिये)।

परिश्रुत—खंड के दो सैनिकों के नाम (म. श. ४४. ५५-५६)।

परिष्णाव—(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार यह सुखीनल का पुत्र था। परिप्लव इसीका ही नामांतर था (परिप्लव देखिये)।

परिष्वंग—एक ऋषि। यह स्वायंभुवमन्वंतर के मरीचि ऋषि को. ऊर्णा नामक स्त्री से उत्पन्न, छः पुत्रों में से एक था। इसके अन्य पाँच भाइयों के नाम इस प्रकार थे:—स्मर, उद्गीथ, क्षुद्रभृन्, अग्निस्वात्त, एवं धृषी (भा. १०.८५; दे. भा. ४.२२)। अगले जन्म में इसने कृष्ण के छः वधुओं में से एक को पुनः जन्म लिया, एवं कंस के हाथों यह मारा गया (भा. १०.८५.५१)।

परिहर—विजयपुर के पास स्थित कलिंजर नगर का एक राजा। यह अथर्वविरायण एवं बौद्ध लोगों पर विजय पानेवाला था। इसने बौद्ध लोगों की हिंसा कर, उन पर विजय पाया था (भा. प्रति. ११.७)। इसने बारह वर्षों तक राज्य किया (भा. प्रति ४.४)।

परुच्छेप दैवोदासी—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १. १२७-१३९)। सूक्तद्रष्टा नाते से ब्राह्मण ग्रंथों में भी इसका उल्लेख प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ५. १२-१३; सां. ब्रा. २३.४; को. ब्रा. २३.४.५)। कुछ शब्दों का बार-बार उपयोग करने की इसकी आदत थी (नि. १०.४२)।

ऋमेध तथा परुच्छेप ऋषियों में मंत्रसामर्थ्य के बारे में स्वर्था हुई थी। उसमें ऋमेध ने गीली लकड़ी से धुआँ उत्पन्न किया। फिर परुच्छेप ने बिना लकड़ी से अग्नि उत्पन्न कर, ऋमेध को हराया (तै. सं. २.५.८.३)।

परुष—खर राक्षस के १२ अमात्यों में से एक।

परोक्ष—(सो. अनु.) भागवत के अनुसार, अनु राजा के तीन पुत्रों में से कनिष्ठ (परपक्ष देखिये)।

पर्जन्य—एक देवता। ऋग्वेद में इस देवता का वर्णन तीन सूक्तों में आया है। इसे वृषभ (ऋ. ५.८३.१; अ.

वे. ४.१५.१), वशा (ऋ. ७.१०१.३), पिता (ऋ. ९.८२.३; अ. वे. ४.१५.१२), पृथ्वी की माता, एवं पर्जन्य का पिता (अ. वे. १०.१०.६) कहा गया है। यह वशा की पत्नी कही गयी है। इसमें एवं इंद्रदेवता में काफी साम्य है (ऋ. ८.३.१)।

२. रैवत मन्वंतर का एक सप्तर्षि।

३. फाल्गुन माह में भ्रमण करनेवाला सूर्य (भा. १२. ११.४०)। इसके साथ निम्नलिखित लोग रहते हैं:— (१) ऋतु नामक यक्ष, (२) वर्चस्व नामक राक्षस, (३) भरद्वाज नामक ऋषि, (४) विश्वा नामक अम्बरा, (५) सेनजित नामक गंधर्व, तथा (६) ऐरावत नामक नाग।

४. कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक देवगंधर्व (म. आ. ५९.४३)। पाठभेद 'प्रयुम्न'। यह अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. ११४.४५)।

पर्णाजंघ—विश्वामित्र के पुत्रों में एक।

पर्णय—एक दानव। इंद्र ने अतिथिग्व राजा के लिये इसका वध किया (ऋ. १.५३.८; १०.४८.८)।

पर्णवि—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

पर्णा—हिमवत् को मेना से उत्पन्न तीन कन्याओं में से एक। 'एकपाटला' इसीका ही नामांतर था (एकपाटला देखिये)।

पर्णागारि—वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार (पन्नगारि ३. देखिये)।

पर्णाद्—एक विदर्भनिवासी ब्राह्मण। इसे दमयंती ने नल राजा के शोषार्थे अयोध्या भेजा था। बाहुक नामधारी नल का समाचार इसने दमयंती को बताया। फिर दमयंती ने इसे पुरस्कार दिया (म. व. ६.८.१)।

२. एक ऋषि। विदर्भवासी सत्य नामक ब्राह्मण के यज्ञ में, इसने होतृ का काम किया था (म. शां. २६४. ८ पाठ)।

३. युधिष्ठिर की सभा का एक ऋषि (म. स. ४.११)। हस्तिनापुर जाते समय, मार्ग में श्रीकृष्ण से इसकी भेंट हुयी थी (म. उ. ३.८.८)।

पर्णादा—वर्षण की सभा में उपस्थित एक नदी (म. स. १०३.३)। इसने वर्षण के द्वारा श्रुतायुध नामक पुत्र को जन्म दिया। वर्षण ने उस पुत्र को अवध्य होने का वर दिया था (म. द्रो. ६७.४४-५८)।

पर्णिन्—वासु के अनुसार, व्यास की यजुः शिष्यपरंपरा के याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास. देखिये)।

पार्ष्णिनी—एक अप्सरा (ब्रह्मांड. ३.७.१८-२४)।

पर्युषित—एक पापी पुरुष। प्रेतयोनि में गये इस मनुष्य का पृथु नामक ब्राह्मण ने उद्धार किया (पद्म. सु. ३२)।

पर्वण—रावण के पक्ष के राक्षसों एवं पिशाचों का एक दल (म. व. २६९.२)।

पर्वत—एक देवर्षि। यह कश्यप ऋषि का मानसपुत्र (ब्रह्मांड. ३.८.८६), एवं नारद महर्षि का भतीजा था (म. स. ४.१३; ७.९; १०.२७; शां. ३०.२८)। महा-भारत में अनेक स्थलों पर, यह एवं नारद का साथ साथ निर्देश प्राप्त है। इन दोनों को गंधर्व एवं देवर्षि माना जाता है।

यह जनमेजय के सर्पसत्र का सदस्य था (म. आ. ४८. ८)। यह युधिष्ठिर की सभा में (म. स. ४.१३), इंद्र-सभा में (म. स. ७.९), एवं कुबेरसभा में (म. स. १०.२६) विराजता था। यह शरशय्या पर पड़े हुये भीष्म के दर्शन के लिये गया था (भा. १.९.६)। पांडवों के वनवासकाल में, यह उन्हें मिलने 'काम्यकवन' गया था, एवं शुद्धभाव से तीर्थयात्रा करने की आज्ञा उन्हें दी थी (म. व. ११.१७-२५)।

एक बार सृञ्जय राजा की कन्या दमयंती से, नारद एवं यह दोनों एकसाथ प्रेम करने लगे। पश्चात् दमयंती एवं नारद का विवाह होने पर, इसने क्रुद्ध हो कर नारद को शाप दिया, 'तुम वानरमुख बनोगे' (म. शां. ३०.२४; नारद देखिये)।

ब्रह्मसरोवर के तट से, अगस्त्य ऋषि के कमलों की चोरी होने पर, अन्य ऋषियों के साथ इसने भी शपथ खायी थी (म. अनु. १४३.३४)।

पर्वत काण्व—एक वैदिक यज्ञतद्रथ (ऋ. ८.१२; ९.१०४; १०५)। नारद के साथ इसका कई बार उल्लेख आया है (ऐ. ब्रा. ८.२१; ७.१३; ३४; सां. श्रौ. १५. १७.४)। इसे देव भी माना गया है।

पर्वतायु—वाल्मिकि ऋषि का पुत्र। 'मेधावी' इसीका नामांतर था।

पर्वतेश्वर—विंध्य देश का राजा। प्रजा को अत्यधिक व्रत करने, तथा द्रव्य का अति लोभ करने के कारण, यम ने इसे घोर नरक में भेजा। बाद में इसे वानर का जन्म प्राप्त हुआ। अपहार के कारण, इसका पुरोहित सारमपक्षी बना। एक बार यह वानर उस पक्षी को पकड़ने के लिये गया। तब सारस पक्षी ने गतजन्म बता कर कहा, 'बाद

के जन्म में हम दोनों हंस होनेवाले हैं, तथा उसके बाद हमें मनुष्य देह प्राप्त होगी'। उसके कथनानुसार इसे फिर मनुष्यजन्म प्राप्त हुआ (पद्म. उ. १२९)।

पर्शु—पाणिनि के अनुसार एक आयुधजीवि संघ (पा. सू. ५.३.११७)। ऋग्वेद में इन लोगों का निर्देश पृथु लोगों के साथ 'पृथु-पर्शव' नाम से प्राप्त है (ऋ. ७. ८३.१)। इन दो लोगों ने सुदास राजाको मदद दी, एवं मिल कर कुरुश्रवण राजा को पराजित किया (ऋ. १०. ३३.२)। लुडविग के अनुसार, आधुनिक मध्य एशिया में रहनेवाले 'पर्थियन' एवं पर्शियन लोग ही, संभवतः प्राचीन 'पृथुपर्शव' मानवसंघ रहा होगा (लुडविग, ऋग्वेद अनुवाद)।

प्राचीन पर्शिया के लोगों के साथ वैदिक आर्यों का घनिष्ठ संबंध था। उस ऐतिहासिक संबंध को पृथु एवं पर्शुओं के निर्देश से पुष्टि मिलती है। भाषाशास्त्रीय दृष्टि से, वैदिक 'पर्शु' एवं प्राचीन ईरानी 'पार्स' तथा बाबेर भाषा में प्राप्त 'परसु' (बहिस्तून शिलालेख) ये तीनों ही शब्दों में काफी साम्यता है।

'पर्शु' संघ का हर एक सदस्य 'पर्शव' कहलाता था। पाणिनि के समय, ये लोग भारत के दक्षिणपश्चिम के प्रदेश में रहते थे। उत्तर भारत में रहनेवाले 'पार्थोइ' लोगों का निर्देश 'परिप्लस' में प्राप्त है।

२. ऋग्वेद के दानस्तुति में निर्दिष्ट एक राजा (ऋ. ८.६.४६)। यह संभवतः 'पर्शु' मानवसंघ का राजा रहा होगा। वत्स काण्व ऋषि का प्रतिमालक 'तिरिंदर पारशव्य' नामक एक राजा था (सां. श्रौ. १६.११.२०) वह संभवतः इसी 'पर्शु' राजा का पुत्र होगा।

पर्शु मानवी—पर्शु लोगों की एक राजकुमारी (ऋ. १०.८६.२३)। कात्यायन के अनुसार, यह पर्शु लोगों में से एक स्त्री का नाम था (पा. सू. ४.१.१७७ वार्तिक २)। इसे कुल वीस पुत्र हुये थे।

सायण के अनुसार, यह एक मृगी का नाम था।

पलस्तिजमदग्नि—एक ऋषि इन्ने ससर्परीविद्या सूर्य से ला कर विश्वामित्र को दी। सायण इसका अर्थ दीर्घायुवी जमदग्नि लेते हैं (ऋ. ३.५.३.१६)।

पलांडु—एक यजुर्वेदी भ्रुतिर्षि।

पलाला—सप्तमाताओं में से एक (म. व. २१७.९)।

पार्लिगु—इसका उल्लेख हिरण्यकेशी शाखा के पितृ-तर्पण में है (स. ग. २०.८.२०)।

पालित—त्रिजालोपरख्यान में वर्णित एक चूहे का नाम (म. शां. १३६.२१)। इसका लोमश नामक विलात्र के साथ संवाद हुआ था (म. शां. १३६.३४-१९८)।

पालिता—स्कंद की अनुचरी मातृका। पाठभेद—‘पालिता’ ‘पाणिता’ ‘प्राणिता’ (म. श. ४५.३)।

पल्लिगुप्त लौहित्य—एक ऋषि। यह श्याम जयंत लौहित्य ऋषि का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)। प्राचीन वाङ्मय में पल्लि शब्द प्राप्त नहीं है।

पवन—उत्तममनु के पुत्रों में से एक।

पवमान—अग्नि के स्वाहा से उत्पन्न तीन पुत्रों में से एक। इसका पुत्र हव्यवाह। यह अरणी से उत्पन्न गार्हपत्य अग्नि का अंश था तथा गृहस्थों को पूज्य था (मत्स्य. ५१.३)।

२. (स्वा. उत्तान.) विजिताश्व राजा के तीन पुत्रों में से दूसरा पुत्र। यह पूर्वजन्म में अग्नि था। वसिष्ठ के शाप के कारण इसे मनुष्यजन्म प्राप्त हुआ था (भा. ४.२४.४)।

३. (स्वा. मिय.) मेधातिथि के सात पुत्रों में से तीसरा पुत्र। इसका खंड इसी के नाम से प्रसिद्ध है (भा. ५.२०.२५)।

पवित्र—एक ब्राह्मण। इसकी स्त्री बहुला। अनपत्य-पति ब्राह्मण इसका मित्र था। इन दोनों के पूछने पर, लोमश ने इन्हें अतिथिधर्म बताया था।

एक बार पवित्र ने तीक्ष्ण तथा तुर्कीले हथियार से एक चूहे को मारा। उस चूहेको मरते हुए देख कर इसने उस पर तुलसी के पत्ते रखे, तथा नारायण का नामोच्चार करने लगा। तब उस चूहे का उद्धार हुआ (पद्म. क्रि. २५)।

२. भौत्यमन्वन्तर का देवगण।

३. इंद्रसावर्णि मन्वन्तर का देव।

पवित्र आंगिरस—एक वैदिक सस्तद्रष्टा (ऋ. ९. ६७.२२ ३२; ७३; ८३)।

पवित्रपाणि—एक ब्रह्मर्षि (म. स. ४.१३; ७.८२)। यह युधिष्ठिर की सभा एवं इंद्रसभा का सदस्य था (म. स. ४.१५; ७.८२४)।

पवीरु—एक राजा श्रुष्टिगु ने उल्लेख किया है कि इंद्र की कृपा से इसे संपत्ति प्राप्त हुई (ऋ. ८.५१.९)। ‘आयुधवान्’ इस अर्थ का इसे विशेषण भी माना है (वा. सं. ३३. ८२)।

पशु—सविता नामक पाँचवें आदित्य के पुत्रि नामक स्त्री से उत्पन्न आठ संतानों में से एक (भा. ६.१८.१)।

पशुदा—स्कन्द की एक अनुचरी मातृका (म. श. ४५.२७)।

पशुमत्—दुष्पण्य देखिये।

पशुसख—सप्तर्षियों का सेवक, एक शूद्र। यह पशुओं का मित्र था, इस कारण इसे यह नाम प्राप्त हुआ (म. अनु. १४२.४३)। इसकी स्त्री का नाम गंडा था (म. अनु. १४१.५)। वसिष्ठ ऋषि के कमल की चोरी के समय, इसे भी शपथ खानी पड़ी थी (म. अनु. १४३.४०)।

पशुहन—वृषा का पुत्र।

पशुवाह—एक वैदिक सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १६.५. ११)।

पहव—हरिश्चंद्र के कुल से गर राजा का राज्य छीन लेनेवाले राजाओं में से एक। इसे गर के पुत्र संगर ने जीत कर, दाढ़ी रखने की शर्त पर छोड़ दिया (पद्म. ३.२०)।

२. एक म्लेच्छ जाति, जो ‘नंदिनी’ नामक गौ की पूँछ से उत्पन्न हुई थी (म. आ. १६५.३५)। नकुल ने इस जाति के लोगों को जीता था (म. स. २९.१५)। ये लोग युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ में उपहार लाये थे (म. स. ४८.१४)। ये मानधाता के राज्य में निवास करते थे (म. शां. ६५.१३-१४)।

पाक—इंद्र के द्वारा मारा गया एक असुर। इसीके कारण इंद्र का नाम ‘पाकशासन’ हुआ (भा. ७.२.४; ८. ११. २२; म. शां. ९९.४८)।

पाकस्थामन् कौरयाण—एक ऋषि। मेधातिथि काष्ण ने इसके उदारतापूर्ण दान का गौरव गान किया था (ऋ. ८.३.२१-२४)।

पाचि—(सो. पुरु.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार, यह नहुष राजा के सात पुत्रों में से एक था (मत्स्य. २४.५०)।

पांचजनी—दक्षपत्नी असिक्री का नामांतर (असिक्री देखिये)।

पांचजन्य—पाँच ऋषियों के अंश से उत्पन्न एक अग्नि। इसे ‘तपस्’ नामांतर भी प्राप्त था (म. व. २१०.५)।

पांचाल—प्राचीन उत्तर भारत का एक लोकसमूह। इन्हीं लोगों का निर्देश वेदों में ‘क्रिवि’ नाम से, एवं

ब्राह्मणग्रंथों में 'पांचाल' नाम से किया हुआ प्रतीत होता है (पांचाल देखिये)।

इन लोगों के देश के, 'उत्तर पांचाल' एवं 'दक्षिण पांचाल' ऐसे दो विभाग, गंगा नदी के द्वारा किये गये थे। उनमें से उत्तर पांचाल देश पर 'नील' राजवंश का राज्य था, एवं दक्षिण पांचाल पर 'अज्ञमीद' वंश का। इसी देश का पश्चिम-पूर्व प्रदेश 'प्राच्य पांचाल' नाम से सुविख्यात था (संहितोपनिषद् ब्राह्मण २)। महाभारत काल में दक्षिण पांचाल देश का राजा द्रुपद था, एवं उसकी कन्या द्रौपदी थी। पांचाल देश की होने के कारण उसे 'पांचाली' नामांतर प्राप्त था (म. आ.)।

२. दुर्मख एवं शोण राजाओं का नामांतर (प. ब्रा. ८.२३; श. ब्रा. १.३.५.४.७)। पांचाल जाति के लोगों का राजा होने के कारण, उन्हें यह नाम प्राप्त हुआ था।

३. एक ऋषि। इसका मूल नाम 'सुवालक' या 'गालव' था। इसका गोत्र 'वाभ्रव्य' था, एवं यह 'पांचाल' देश का रहनेवाला था। इस कारण इसे 'वाभ्रव्य पांचाल' कहते थे (वाभ्रव्य देखिये)।

वामदेव द्वारा बताये ध्यानमार्ग से इसने भगवान् की आराधना की। उसीके कृपा से वेदों का क्रमविभाग करने का दुष्कर कार्य, यह सर्वप्रथम कर सका (म. शां. ३.३०.३७-३८; पितृवर्तिन् देखिये)।

पांचालचंड—एक वैदिक ऋषि। वैदिक संहिता का तत्वज्ञान की दृष्टि से अर्थ लगाने के लिये 'वाच्' (वाणी) यही संहिता है, ऐसा इसका मत था (ऐ.आ. ३.१. ६)।

पांचाली—पांचाल देश के द्रुपद राजा की कन्या 'द्रौपदी' का नामांतर (भा. १.७.३८; द्रौपदी देखिये)।

पांचाल्य—आरुणि उद्दालक ऋषि का नामांतर (म. आ. ३.२४)। यह स्वैदायन शौनक एवं शौचेय प्राचीन-योग्य ऋषियों का समकालीन था (श. ब्रा. ११. ४.१-९)। इसके शिष्यों में कहीद (कौशीतकी) प्रमुख था, एवं इसने अपनी सुजाता नामक कन्या उसे विवाह में दी थी (उद्दालक देखिये)।

पांचि—एक वैदिक ऋषि। 'पंचन्' का वंशज होने से इसे 'पांचि' नाम प्राप्त हुआ था (श. ब्रा. २. १. ४.२७)। 'सोमयज्ञ' में, तीन अंगुल ऊँची वेदि बनाने की पद्धति इसने प्रस्थापित की (श. ब्रा. १.२.५.९)।

पाटल—एक वानर। विभीषण से मिलने लंका जा रहे राम से, यह किष्किना नगरी में मिला था, एवं इसने राम का बड़े ही भक्तिभाव से दर्शन लिया (पद्म.सु. ३८)।

पाटव—'चाक्र' नामक वैदिक ऋषि का पौत्रक नाम (श. ब्रा. १.२.८.१.१७; ९.३.१)। 'पटु का वंशज' इस अर्थ से 'पाटव' शब्द का उपयोग किया होगा।

पाटिक—'श्याम पराशर' के कुल में उत्पन्न एक ऋषि (पराशर देखिये)।

पाडक—वायु के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा के हिरण्यनाभ ऋषि का शिष्य। पाठभेद—'मांडूक'।

पाणिक—अंगिराकुल का एक ऋषि।

पाणिर्कूर्म—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.७१)। पाठभेद—'पाणि कूर्च'।

पाणिन्—कश्यप एवं कद्रू का पुत्र, एक नाम।

पाणिनि—लौकिक संस्कृत भाषा का वैयाकरण, जिसका 'अष्टाध्यायी' नामक ग्रंथ संस्कृतभाषा का श्रेष्ठतम व्याकरणग्रंथ माना जाता है।

संस्कृत भाषा के क्षेत्र में, एक सर्वथा नये युग के निर्माण का कार्य आचार्य पाणिनि एवं इसके द्वारा निर्मित 'पाणिनीय व्याकरण' ने किया। यह युग लौकिक संस्कृत का युग कहा जाता है, जो वैदिक युग की अपेक्षा सर्वथा भिन्न है। जब वैदिक संस्कृत भाषा पुरानी एवं दुर्बोध होने लगी, तब उत्तर पश्चिम एवं उत्तर भारत के ब्राह्मणों में उस भाषा का एक आधुनिक रूप साहित्यिक भाषा के रूप में प्रस्थापित हुआ। इस नये साहित्यिक भाषा को व्याकरणबद्ध करने का महत्त्वपूर्ण कार्य पाणिनि ने किया, एवं इस भाषा को 'लौकिक संस्कृत' यह नया नाम प्रदान किया।

पाणिनि केवल व्याकरणशास्त्र का ही आचार्य नहीं था। एक व्याकरणकार के नाते, लौकिक संस्कृत का भाषाशास्त्र एवं व्याकरणशास्त्र की सामग्री इकट्ठा करते करते, तत्कालीन भारतवर्ष (५०० ई. पू.) की राजकीय, सांस्कृतिक, सामाजिक, एवं भौगोलिक सामग्री शास्त्रीय दृष्टि से एकत्र करने का महान् कार्य पाणिनि ने किया। अन्य व्याकरणकारों की अपेक्षा, इस कार्य में पाणिनि ने अत्यधिक सफलता भी प्राप्त की।

इस कारण, पाणिनि की 'अष्टाध्यायी' वेद के उत्तर-कालीन एवं पुराणों के पूर्वकालीन प्राचीन भारतीय इतिहास का श्रेष्ठतम प्रमाणग्रंथ माना जाता है। दार्ढ़ सहस्र वर्षों के दीर्घ कालवधि के पश्चात्, पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' का पाठ जितने शुद्ध एवं प्रामाणिक रूप में आज भी उपलब्ध है, उसकी तुलना केवल वेदों के विशुद्ध पाठों से की जा सकती है। किंतु वेदों के शब्द हमें

विशुद्धरूप में प्राप्त हो कर भी, उनका अर्थ अस्पष्ट एवं धुंधला सा प्रतीत होता है। संस्कृत व्याकरणशास्त्र की श्रेष्ठ परंपरा के कारण, पाणिनीय व्याकरण के शब्द एवं अर्थ दोनों भी विशुद्ध रूप में आज भी उपलब्ध हैं। इस कारण ऐतिहासिक दृष्टि से, पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' का मूल्य वैदिक ग्रंथों की अपेक्षा आज अधिक माना जाता है।

कई वर्षों के पूर्व, केवल शब्दसिद्धि के दृष्टि से 'पाणिनीय व्याकरण' का अध्ययन किया जाता था। फिर कई अध्ययनशील लोगों ने ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि में 'पाणिनीय व्याकरण' की समालोचन करने का कार्य शुरू किया, एवं ऐतिहासिक सामग्री का एक नया विश्व, अभ्यासकों के लिये खोल दिया। ई. पू. ५०० के लगभग भारत में उपलब्ध प्राचीन लोकजीवन की जानकारी पाने के लिये, एवं उस काल के ऐतिहासिक अंधयुग में नया प्रकाश डालने के लिये 'पाणिनीय व्याकरण' का अध्ययन अत्यावश्यक है, यह विचारप्रणाली आज सर्वमान्य हो चुकी है। इस नयी विचारप्रणाली के निर्माण का बहुतांश श्रेय, बनारस विद्यापीठ के डॉ. राममुदेवशरण अग्रवाल एवं उनके ग्रंथ 'पाणिनिकालीन भारतवर्ष' को देना जरूरी है।

नामांतर—पुरोहितदेव के 'त्रिकांडशेष' कोश के अनुसार, पाणिनि को निम्नलिखित नामांतर प्राप्त थे:— पाणिन्, दाक्षीपुत्र, शालकि, शाल्यतुरीय, एवं आहिक।

मातापिता—पतंजलि ने पाणिनी को 'दाक्षीपुत्र' कहा है, जिससे प्रतीत होता है की, पाणिनि के माता का नाम 'दाक्षी' था, एवं वह दक्षकुल से उत्पन्न था (महा. १.१.२०)। इसके पिता का नाम 'शालक' था, एवं पाणिनि 'इसका कुलनाम था। हरिदत्त के अनुसार, पाणिपुत्र 'पाणिन्' नामक ऋषि का पाणिनि पुत्र था (पदमंजरी २.१४)। छंदःशास्त्र का रचयिता पिंगल ऋषि पाणिनि का छोटा भाई था (पद्मपुराणशिवकृत 'वेदार्थ-दिपिका')। व्याडि नामक व्याकरणाचार्य को 'दाक्षायणि' नामांतर था, जिससे प्रतीत होता है कि, वह पाणिनि का मामा था। व्याडि के 'संग्रह' नामक ग्रंथ की प्रशंसा पतंजलि ने की है (महा. २.३.६६)।

अध्ययन—पाणिनि के विद्यादाता गुरु का नाम 'वर्ष' था (कथासरित. १.४.२०)। ब्रह्मवैवर्त के अनुसार, शेष इसका गुरु था (ब्रह्मवै. प्रकृति. ४.५७)। काव्य-सिर्मासा के अनुसार, वर्ष, उपवर्ष, पिंगल एवं व्याडि इन सहध्यायियों के साथ, पाणिनि ने पाटलीपुत्र में शिक्षा

प्राप्त की, एवं वहाँ शास्त्रारीक्षा में यह उत्तीर्ण हुआ (काव्यसी. १०)। माहेश्वर को भी पाणिनि का गुरु कहा गया है, जिसका कोई आधार नहीं मिलता है। कई अभ्यासकों के अनुसार, पाणिनि की शिक्षा तक्षशिला में हुई थी (एस्. के. चटर्जी, 'भारतीय आर्यभाषा तथा हिंदी' पृ. ६६)।

पाणिनी के अनेक शिष्य भी थे (महा. १.४.१)। उनमें 'कौत्स' नामक शिष्य का निर्देश 'महाभाष्य' में प्राप्त है (३.२.१०८)।

अष्टाध्यायी के प्राणभूत १४ सूत्रों का अध्ययन करने पर पता चलता है कि, पाणिनि ने शिवोपासना कर के '१४ माहेश्वरी सूत्रों' (प्रत्याहार सूत्रों) की प्राप्ति साक्षात् शिवजी से की थी, एवं उन सूत्रों के आधार पर अपने व्याकरणग्रंथ की रचना की।

निवासस्थान—'शाल्यतुरीय' नाम से, पाणिनि 'शाल्यतुर' ग्राम का रहनेवाला था, ऐसा कई अभ्यासकों का कहना है (वर्धमान कृत 'गणरत्न महोदधि' पृ. १)। अफगानिस्थान की सीमा पर, अटक के समीप स्थित आधुनिक लाहुर ग्राम ही प्राचीन शाल्यतुर है। अन्य कई अभ्यासकों के अनुसार, शाल्यतुर पाणिनि का जन्मस्थान न हो कर, इसके पूर्वजों का निवासस्थान था। पाणिनि का जन्म बाहीक देश में कहीं हुआ था (अष्टा. ४.२. ११७)।

काल—पाणिनि पारसीकों तथा उनके सेवक यवनों या ग्रीकों से परिचित था। उससे पाणिनी का काल संभवतः ५ वीं शताब्दी ई. पू. रहा होगा। डॉ. अग्रवाल के अनुसार, ४८०-४१० ई. पू., पाणिनि का काल था। पाणिनि की मृत्यु एक सिंह के द्वारा हुई थी (पंचतंत्र श्लो. ३६)।

पूर्वाचार्य—पाणिनि को लौकिक संस्कृत का पहला वैय्याकरण माना जाता है। किंतु स्वयं पाणिनि ने 'अष्टाध्यायी' में 'पाराशर्य' एवं 'शिलालि' इन दो पूर्वाचार्यों का, एवं उनके द्वारा विरचित 'भिशुसूत्र' एवं 'नटसूत्र' नामक दो ग्रंथों का निर्देश किया है (अष्टा. ४.२.११०)। उनके सिवा, 'अष्टाध्यायी' में निम्नलिखित आचार्यों का निर्देश प्राप्त है—अपिशालि (६.१.९२), काश्यप (८.४.६७), गार्ग्य, गालव (६.३.६१; ७.१.७४; ३.९९; ८.३.२०; ४.६७), चाक्रवर्तन (६.१.१३०), भारद्वाज (७.२.६३),

शाकटायन (३.४. १११; ८.३.१९; ४.५१), सेनक (५.४.११२), स्फोटायन (६.१.१२१) ।

‘अष्टाध्यायी’ में निम्नलिखित ग्रंथों का निर्देश प्राप्त है—अनुब्राह्मण (४.२.६२), अनुप्रवचन (५.१.१११), कल्पसूत्र (४.३.१०५), क्रम (४.२.६१), चात्वारिंश (एतरेय ब्राह्मण) (५.१.६२), त्रैश (सांख्ययान ब्राह्मण) (५.१.६२), नदसूत्र (४.३.११०), पद (४.२.६१), मिथुसूत्र (४.३.११०), मीमांसा (४.२.६१), शिक्षा (४.२.६१) । उपनिषद् एवं आरण्यक ग्रंथों का निर्देश ‘अष्टाध्यायी’ में अप्राप्य है । ‘उपनिषद्’ शब्द ‘पाणिनीय व्याकरण’ में आया है । किंतु वहाँ उसका अर्थ ‘रहस्य’ के रूप में लिया गया है (१.४.७९) ।

‘अष्टाध्यायी’ के लिये जिन वैदिक ग्रंथों से, पाणिनि ने साधनसामग्री ली उनके नाम इस प्रकार हैं:—अनार्ष (१.१.१६; ४.१.७८), आथर्वणिक (६.४. १७४), ऋच् (४.१.९; ८.३.८), काठक-यजु (७.४. ३८), छन्दस् (१.२.३६), निगम (३.८१; ४.७४; ४. ९; ६.३.११३; ७.२.६४), ब्राह्मण (२.३.६०; ५.१. ६२), मंत्र (२.४.८०), यजुस् (६.१.११५; ७.४. ३८; ८.३.१०२), सामन् (१.२.३४) ।

‘अष्टाध्यायी’ में निम्नलिखित वैदिक शाखाप्रवर्तक ऋषियों का निर्देश प्राप्त है:—अश्वपेज, उस्त, कठ, कठशाट, कलापिन, कपाय, (कशाय, का.) काश्यप, कौशिक, खंडिक, खाडायन, चरक, हगल, छंदोग, तल, तलककार, तिचिरि, दण्ड, देवदर्शन, देवदत्त शाट, पैङ्ग (४.३.१०५, उदाहरण), पुरुषासक (पुरुषासक), बह्वृच, (४.३.१२९), याज्ञवल्क्य (वार्तिक) रञ्जुकंठ, रञ्जुमार, वरतंतु, वाजसनेय, वैशपायन, शापेय (सापेय, का.), शाप्येय (शाप्येय, का.) शाङ्गरव (सांगरव, का.) शाकल, शौनक, सापेय, स्कन्द, स्कन्ध, स्तंभ (स्कंभ, का.) (पा. सू. ४.३.१०२-१०९ गणों सहित; १२८, १२९) ।

इन में केवल तलयकार तथा वाजसनेय प्रणीत ब्राह्मण ग्रंथ आज उपलब्ध हैं । अन्य लोगों के कौन से ग्रन्थ थे यह बताना असंभव है ।

उल्प, तुंवरु तथा हरिद्रु (४.३.१९४) ये नाम ‘काशिका’ में अधिक हैं ।

‘अष्टाध्यायी’—पाणिनि की ‘अष्टाध्यायी’ ग्रंथ आठ अध्यायों में विभक्त है । प्रत्येक अध्याय में चार पाद हैं । बत्तीस पाद एवं आठ अध्यायों के इस ग्रंथों में

कुल ३९९५ सूत्र हैं । इन सूत्रों में ‘अइउण’ आदि १४ माहेश्वरी सूत्रों का भी संग्रह है ।

लौकिक संस्कृत भाषा को व्याकरणिय नीतियनों में विटाना, यह ‘अष्टाध्यायी’ के अंतर्गत सूत्रों का प्रमुख उद्देश्य है । वहाँ संस्कृत भाषा का क्षेत्र वेद एवं लोकभाषा माना गया है, तथा उन दोनों भाषाओं का परामर्श ‘अष्टाध्यायी’ में लिया गया है । संस्कृत की भौगोलिक मर्यादा, गांधार से आसम (सुरमस) में स्थित सरमा नदी तक, एवं कच्छ से कल्याण तक मानी गयी है । उत्तर के काश्मीर कांभोज से ले कर, दक्षिण में गोदावरी नदी के तट पर स्थित अस्मक प्रदेश तक वह मर्यादा मानी गयी है ।

अष्टाध्यायी में किया गया शब्दों का विवेचन, दुनिया की भाषाओं में प्राचीनतम समझा जाता है । उस ग्रंथ में किया गया प्रकृति एवं प्रत्यय का भेदाभेददर्शन, तथा प्रत्ययों का कार्य निर्धारण के कारण पाणिनि की व्याकरण-पद्धति शास्त्रीय एवं अतिशुद्ध बन गयी है ।

पाणिनीय व्याकरणशास्त्र—पाणिनि ने अपनी ‘अष्टाध्यायी’ की रचना गणपाठ, धातुपाठ, उणादि, लिङ्गानु-शान तथा फिटसूत्र ये ग्रंथों का आधार ले कर की है । उच्चारण-शास्त्र के लिये अष्टाध्यायी के साथ शिक्षा ग्रंथों के पठन-पाठन की भी आवश्यकता रहती है । पाणिनि प्रणीत व्याकरणशास्त्र में इन सभी विषयों का समावेश होता है । पतंजलि के अनुसार, गणपाठ की रचना पाणिनि व्याकरण के पूर्व ही चुकी थी (महाभाष्य. १. ३४) । परस्पर भिन्न होते हुए भी व्याकरण के एक नियम के अंतर्गत आ जानेवाले शब्दों का संग्रह ‘गणपाठ’ में समाविष्ट किया गया है । गणपाठ में संग्रहीत शब्दों का अनुक्रम प्रायः निश्चित रहता है । गण में छोटे छोटे नियमों के लिये अंतर्गणसूत्रों का प्रणयन भी दिखलायी पड़ता है । गणपाठ की रचना पाणिनिपूर्व आचार्यों द्वारा की गयी होगी । फिर भी वह पाणिनि व्याकरण की महत्त्वपूर्ण अंग बन गयी है ।

धातुपाठ तथा उणादि सूत्र भी पाणिनि पूर्व आचार्यों द्वारा प्रणीत होते हुए भी, ‘पाणिनि व्याकरण’ का महत्त्वपूर्ण अंग बन गयी है । लिङ्गानुशासन पाणिनिरचित है । ‘पाणिनीय शिक्षा’ में पाणिनि के मतों का ही संग्रह है ।

फिटसूत्रों की रचना शांतनवाचार्य ने की है । फिर भी पाणिनि ने उनको स्वीकार किया है । प्रत्येक शब्द स्वाभाविक उदात्तादि स्वरयुक्त हैं । तदनुसार, शब्दों का

उच्चारण करने मात्र से ही शब्दों का शुद्ध तथा अर्थ-बोधक ध्वनि निकलती है। इसीलिए केवल वर्णों के पटन-मात्र से ही नहीं बल्कि आघातादि सहित शब्दों का उच्चारण वांछनीय है। इसीलिए पाणिनि ने स्वरप्रक्रिया लिखी तथा 'फिद्भूत्र' जो उदात्त, अनुदात्त व स्वरित शब्दों का संग्रह तथा नियम बतलाया है और उसको मान्यता दी है।

गणपाठ, धातुपाठ, उणादि, लिगानुशासन, फिद्भूत्र तथा शिक्षा ये पाणिनि सूत्रों के महत्वपूर्ण अंग हैं। इनका संग्रह करने से, सूत्रों की रचना करने में, पाणिनि को सुलभता प्राप्त हुई। इस प्रकार व्याकरण के क्षेत्र में एक रचनात्मक कार्य करके पाणिनि ने संस्कृत भाषा को सर्वाधिक शक्तिशाली बनाया।

पाणिनि का समन्वयवाद—व्याकरणशास्त्र में पाणिनि ने नैरुक्त एवं गार्ग्य सम्प्रदायों के बीच समन्वय स्थापित करने का प्रयत्न किया। नैरुक्त संग्रह एवं शाकटायन के अनुसार, संज्ञावाचक शब्द धातुओं से ही बने हैं। गार्ग्य तथा दूसरे वैश्याकरणों का मत इससे कुछ भिन्न था। उनका कहना था, खींचतान करके प्रत्येक शब्द को धातुओं से सिद्ध करना उचित नहीं है।

पाणिनि ने 'उणादि' शब्दों को अव्युत्पन्न माना है, तथा धातु से प्रत्यय लम्बाकर, सिद्ध हुये शब्दों को 'कृदन्त' प्रकरण में स्थान दिया है। पाणिनि के अनुसार, 'संज्ञाप्रमाण' एवं 'योगप्रमाण' दोनों अपने अपने स्थान पर दृष्ट एवं आवश्यक हैं। शब्द से जाति का बोध होता है, या ध्वनि का, इस संबंध में भी पाणिनि ने दोनों मतों को समानुसार मान्यता दी है। धातु का अर्थ 'क्रिया' हो, अथवा 'भाव' हो, यह भी एक प्रश्न आता है। पाणिनि ने दोनों को स्वीकार किया है।

लोकजीवन—जैसे पहले कहा जा चुका है, कि पाणिनि की अष्टाध्यायी में, ५०० ई. पू. के प्राचीन भारतवर्ष के सांस्कृतिक, सामाजिक राजनैतिक एवं धार्मिक लोकजीवन की ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यधिक प्रामाणिक जानकारी प्राप्त होती है। प्राचीन भारतवर्ष के वर्ण, एवं जातियों, आर्य एवं दासों के संबंध, शिक्षा आदि सामाजिक विषयों पर पाणिनि ने काफी प्रकाश डाला है। पाणिनिकालीन भारत में राजशासित एवं लोकशासित दोनों प्रकार की शासन पद्धतियाँ वर्तमान थीं जिसका विवरण अष्टाध्यायी में प्राप्त है।

पाणिनिकालीन भूगोल—अष्टाध्यायी में प्राप्त भौगोलिक विवरण का महत्व अन्य सारे विवरणों की अपेक्षा कहीं अधिक है। ५०० ई. पू. प्राचीन भारत के जनपदों, पर्वतों, नदियों, वनों एवं ग्राम व नगरों की स्थिति का अत्यधिक प्रामाणिक ज्ञान अष्टाध्यायी द्वारा प्राप्त होता है।

(१) जनपद—पाणिनि के अष्टाध्यायी, एवं गणपाठ में निम्नलिखित जनपदों का निर्देश प्राप्त है:—अंबष्ठ (८.२.९७); अजाद (४.१.१७१); अवन्ति (४.१.१७६); अश्मक (४.१.७३); उदुंबर (४.३.५३); उरश (४.३.९३; गण.); उशीनर (४.२.११८); ऐणुकारि (४.२.५४); कंजोज (४.१.१७५); कच्छ (४.२.१३४); कल्कूट (४.१.१७१); कलिंग (४.१.१७०); काश्मिर (४.२.१३३; ४.३.९३; गण.); कारस्कर (६.१.१५६); काशि (४.१.११६); किष्किवा (४.३.६३; गण.); कुष (४.१.१७२; १७६; २.१३०); कुंति (४.१.१७६); केकय (७.३.२); कोसल (४.१.१७१); गंधारि (४.१.१६९); गन्धिका (४.३.६३; गण.) त्रिगर्त (५.३.११६); दरद्र (४.३.९३; गण.); धूम (४.२.१२७); पटच्चर (४.२.११०; गण.)। प्रत्यग्रय (४.१.१७१); पारस्कर (६.१.१४७); च्यैर (४.३.९३; गण.); ब्राह्मणक (५.२.७१); भगं (४.१.१११); भारद्वाज (४.१.११०); भौरिकि (४.२.५४); मगध (४.१.१७०); मद्र (४.२.१३१); यकुल्लोम (४.२.११०; गण.); युगंधर (४.२.१३०); यौधेय (४.१.१७८; ५.३.११७); रंक्षु (४.२.१००); वाहीक (४.२.११७); वृजि (४.२.१३१); सर्वसेन (४.३.९२; गण.); सात्व (४.२.१३५); सात्वाक्यव (४.१.१७३); सात्वैय (४.१.१६९); सुरमस (४.१.१७०); सिंधु (४.३.९२); सौवीर (४.२.७६)।

(२) पर्वत—पाणिनि के अष्टाध्यायी में निम्नलिखित पर्वतों का निर्देश प्राप्त है:—अंजनागिरि, किमुलगिरि; (६.३.११६); विककुत् (५.४.१४७); मेजनागिरि; लोहितागिरि; विदूर (४.३.८४); शास्वकागिरि।

(३) नदियाँ—पाणिनि के अष्टाध्यायी में निम्नलिखित नदियों का विवरण प्राप्त है:—अजिरवती (६.३.११७); उध्रय (३.१.११५); चर्मपवती (८.२.१२); देविका (७.३.१); मिथ (३.१.११५); वर्णु (४.२.१०३); विपाश् (४.२.७४); शारवती (६.३.११९); सरयू (६.४.१७४); सिंधु (४.६.९३); सुवास्तु (४.२.७७)।

(५) वन—पाणिनि के अष्टाध्यायी में निम्न वनों का उल्लेख प्राप्त है—अग्नेवण (८.४.४); कोटरवण, पुरगावण, मिश्रकावण, शारिकावण, तथा सित्रकावण ।

(५) ग्राम व नगर—पाणिनि के अष्टाध्यायी में निम्नलिखित ग्राम एवं नगरों का निर्देश प्राप्त है—अज्जरतुद (६.१.१५५); अरिष्टपुर (६.२.१००); आश्रायन (४.२.११०); आश्रकायन या अश्रक (४.१.९९); आसंतीवत् (८.२.१२; ४.२.८६); ऐयुकारिमत्त (४.२.५४); कन्त्रि (४.२.९५); कपिस्थल (७.२.९१); कापिशी (४.२.९९); कास्तीर (६.१.१५५); कुण्डिन (४.२.९५; गण.); कूचवार (४.३.९४); कौशाम्बी (४.२.९७); गौडपुर (६.२.२००); चक्रवाल (४.२.८०); चिहणकंथ (६.२.१२५); तक्षशिला (४.३.९३); नृषी (४.३.९४); तौषावण (४.२.८०); नड्वल (४.२.८८); नवनगर (६.२.८९); पलरी (४.२.११०); फलकपुर (४.२.१०१); मादेंयपुर (४.२.१०१); महानगर (६.२.८९); माहिष्मती (४.२.९५); मंडु तथा खंडु (४.२.७७); रोणी (४.२.७८); वरण (४.२.८२); वर्मेती (४.३.९४); वाराणसी (४.२.९७); वार्णव (४.२.७७-१०३); शलातुर (४.३.९४); शर्करा (४.२.८३); शयणावत् (४.२.८६); शिखावल (४.२.८९); श्रावस्ती (४.२.९७); संकल (४.२.७५); सरालक (४.३.९३); सांकाथ (४.२.८०); सौभूत (४.२.८०); सौवास्तव (४.२.७७); हास्तिनायन (६.४.१७४) ।

सिक्के—पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' में निम्नलिखित सिक्कों का निर्देश प्राप्त है—कार्पापण (५.१.२९; ३४.४८); त्रिशक्त (५.१.२४); माप (५.१.३४); विशक्तिक (५.१.२७); शतमान (५.१.२७); शाण (५.१.३५); सुवर्णमाशक (५.१.३४); सुवर्णहिरण्य (६.२.५५) ।

परिमाणदर्शक शब्द—पाणिनि के अष्टाध्यायी में निम्नलिखित परिमाणदर्शक शब्द प्राप्त हैं—

(१) कालपरिमाण—अपराह (४.३.२४); अहो-रत्न (२.४.२८); नक्तंदिव (५.४.७७); परिवार (५.१.९२); पूर्वाह्न (४.३.२४); मास (५.१.८१); व्युष्ट (५.१.९७); संवत्सर (४.३.५०) ।

(२) वस्तुपरिमाण—आचित (४.१.२२; ५.१.५३); कुलिज (५.१.५५); विस्त (४.१.२२; ५.१.३१); भार (६.२.३८); मंथ (६.२.१२२); शाण (५.१.३५; ७.३.१७) ।

(३) परिमाण—अंजलि (५.४.१०२); आढक (५.१.५३); कंस (५.१.२५; ६.२.१२२); कुंभ (६.२.१०२); खारी (५.१.३३); निष्पाव (३.३.२८); पाय्य (३.१.१३९); वह (३.३.११९); शूर्प (५.१.२६; ६.२.१२२) ।

(४) क्षेत्रपरिमाण—अंगुलि (५.४.८६), कण्ड (४.१.२३); किष्कु (६.१.१५७) दिष्टि (६.२.७१); पुरुष (४.१.२४); योजन (४ कोस; ५.१.७४); वितरित (६.२.७१); हस्ति (५.२.३८) ।

अष्टाध्यायी के वार्तिककार—पतंजलि के महाभाष्य में अष्टाध्यायी के निम्नलिखित वार्तिककारों के निर्देश प्राप्त हैं—कात्य वा कात्यायन (३.२.११८); कुणरवाडव (३.२.१४; ७.३.१); मारदाज (१.१.२०); सुनाग (२.२.१८); क्रोष्टा (१.१.३); वाडव (८.२.१०६), व्याघ्रभूति एवं वैयाघ्रपद्य ।

अष्टाध्यायी के वृत्तिकार—'अष्टाध्यायी' पर लिखे गये 'वृत्ति' एवं भाष्यग्रंथों में, जयादित्य एवं वामन नामक ग्रंथकारों द्वारा लिखी गयी, 'काशिका' नामक ग्रंथ अत्यधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता है। 'काशिका' के अतिरिक्त, निम्नलिखित वृत्तिकारों ने 'अष्टाध्यायी' पर भाष्य एवं वृत्तियाँ लिखी हैं। उन ग्रंथकारों के लिखे हुए 'वृत्तिग्रंथ' का निर्देश इसी सूची में किया गया है।

'काशिका' के पूर्वकालीन वृत्तिकार—१. कुणो (अष्टाध्यायीवृत्ति) २. माथुर (माथुरवृत्ति); ३. श्वोभूति (श्वोभूतिवृत्ति); ४. वररुचि (वाररुचवृत्ति); ५. देवनंदी (शब्दावतारन्यास), ६. दुर्विनित (शब्दावतार) काशिका के उत्तरकालीन वृत्तिकार—१. भर्तृहरि (भारवृत्ति); २. भर्तृश्वर; ३. भट्टजयंत; ४. केशव; ५. इंदुमित्र (इंदुमतिवृत्ति); ६. मैत्रेयरथित (दुर्घट-वृत्ति); ७. पुरुषोत्तमदेव (भाषावृत्ति); ८. शरणदेव (दुर्घटवृत्ति); ९. भट्टोजीदीक्षित (शब्दकौस्तुभ); १०. अप्पय दिक्षीत (सूत्रप्रकाश); ११. नीलकंठ वाजपेयी (पाणिनीय दीपिका); १२. अन्नभट्ट (पाणिनीय मितक्षरा); १३. स्वामी दयानंदसरस्वती (अष्टाध्यायी भाष्य) ।

पाणिनि के व्याकरण ग्रंथ—१. अष्टाध्यायी, २. घातुपाठ, ३. गणपाठ, ४. उणादिसूत्र, ५. लिंआनुशासन । इनमें से 'अष्टाध्यायी' को छोड़ कर बाकी सारे ग्रंथ, उसी मूल

ग्रंथ के पाणिनिसम्मत परिशिष्टस्वरूप हैं। इसी कारण, प्राचीन ग्रंथकार उनका 'खिल' शब्द से व्यवहार करते हैं।

उपरिनिर्दिष्ट ग्रंथों के अतिरिक्त, पाणिनि के नाम पर शिक्षामुत्र, जाम्बवतीविजय (पातालविजय) नामक काव्य एवं 'दिरूपकोश' नामक कोशग्रंथ भी उपलब्ध हैं।

पाणिमत्—एक नाग। यह वरुण की सभा में रह कर वरुण की उपासना करता था (म. स. ९.१००*)।

पाणीतक—पृथाद्वारा स्कन्द को दिये गये दो पापवों में से एक। दूसरे का नाम 'कालिक' था (म. श. ४४.३९)। पाठ—पालितक।

पांड—कण्व के पुत्रों में से एक। इसकी माता का नाम आर्यावती था। 'सरस्वती' की कन्या से इससे सोलह पुत्र हुए। वे सब आगे चलकर गोत्रकार बन गये (म. वि. प्रति. ४.२१)।

पांडर—ऐरावत के कुल में उत्पन्न हुआ एक नाग। जनमेजय के सर्पसत्र में यह जलकर मर गया (म. आ. ५८.१०)।

पांडव—कुरुवंशीय पाण्डु राजा के पाँच पुत्रों का सामूहिक नाम। युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल तथा सहदेव ये पाँचों पाण्डु-पुत्र, पाण्डव कहलते हैं (पांडु देखिये)।

पांडु—(सो. कुरु.) हस्तिनापुर का कुरुवंशीय राजा एवं 'पांडवों' का पिता। यह एवं इसका छोटा भाई धृतराष्ट्र कुरुवंशीय सम्राट विचित्रवीर्य के दो 'क्षेत्रज' पुत्र थे। इनमें से धृतराष्ट्र जन्म से अंधा था, एवं यह जन्मतः 'पांडुरोग' से पीड़ित था। शारीरिक दृष्टि से पंगु व्यक्ति का जीवन कैसा दुःखपूर्ण रहता है, इसका हृदय हिला देनेवाला चित्रण, पांडु एवं धृतराष्ट्र इन दो बंधुओं के चरित्रचित्रण के समय श्रीव्यास ने 'महाभारत' में किया है।

जन्म - कुरुवंश में पैदा हुए शंतनु राजा के चित्रांगद एवं विचित्रवीर्य नामक दो पुत्र थे। उनमें से चित्रांगद गंधर्वों के द्वारा, यज्ञभूमि में मारा गया, एवं विचित्रवीर्य छोटा हो कर भी, हस्तिनापुर के राज्य का अधिकारी हुआ।

पश्चात् विचित्रवीर्य की युवावस्था में ही अकाल मृत्यु हो गयी। उस समय उसकी पत्नी अंबालिका संतानरहित थी। फिर कुरुकुल निवेशी न हो, इस हेतु से विचित्रवीर्य की माता सत्यवती ने अपनी पुत्रवधू अंबालिका को 'नियोम' के द्वारा संतति प्राप्त करने की आज्ञा दी। पराशर ऋषि से उत्पन्न अपने उद्येष्ठ पुत्रव्यास को भी यही आज्ञा सत्यवती ने दी। उस आज्ञा के अनुसार, व्यास अंबालिका के शयनमंदिर गया। व्यास की जटाधारी एवं

भस्मचर्चित उग्र आकृति देख कर, अंबालिका मन ही मन घबरा गयी, एवं भय से उसका मुख पीका पड़ गया। यह देखते ही क्रुद्ध हो कर व्यास ने उसे शाप दिया, 'मुझे देखते ही तुम्हारा चेहरा निस्तेज एवं पीका पड़ गया है, अतएव तुम्हारा होनेवाला पुत्र भी निस्तेज एवं श्रतवर्ण का पैदा होगा एवं उसका नाम भी पांडु रखा जायेगा'। बाद में अंबालिका गर्भवती हुई, एवं उसे व्यास की शापोक्तिनुसार, श्रतवर्ण का पाण्डु नामक पुत्र हुआ (म. आ. ५७.९५; ९०.६०; १००; स. ८.२२)।

शिक्षा—पाण्डु का पालनपोषण इसके चाचा भीष्म ने पुत्रवत् किया। उसने इसके उपनयनादि सारे संस्कार भी किये। इससे ब्रह्मचर्यविहित योग्य व्रत तथा अध्ययन करवाया। यह श्रुति-स्मृतियों में पंडित तथा ध्यायामपटु बना। चार वेद, धनुर्वेद, गदा, खड्ग, युद्धशास्त्र, गण-शिक्षा, नीतिशास्त्र, इतिहास, पुराण, कला तथा तत्वज्ञान में यह पारंगत हुआ (म. आ. १०२.१५-१९)।

विवाह—कुंति-भोज राजाने अपनी कन्या पृथा (कुंती) का स्वयंवर किया, वहाँ कुंती ने पाण्डु का वरण किया। उसे ले कर पाण्डु हस्तिनापुर आया। बाद में, भीष्म के मन में पाण्डु का दूसरा विवाह करने की इच्छा हुयी। वह मंत्री, ब्राह्मण, ऋषि तथा चतुरंगिनी सेना के साथ मद्र-राज शल्य के नगर में गया। शल्य ने आदर के साथ उसका स्वागत किया। भीष्म ने पाण्डु के लिये शल्य की बहन माद्री को माँगा। शल्य को यह प्रस्ताव पसन्द आया। किंतु उसने कहा, 'मेरे कुल की रीति पूर्ण होनी चाहिये। इस रीति के अनुसार, स्वर्ण, स्वर्णाभूषण, हाथी, घोड़े, रथ, वस्त्र, मण्डि, मृगा तथा अनेकानेक प्रकार के रत्न मुझे माद्री के बदले प्राप्त होना जरूरी है'। भीष्म ने यह शर्त मंजूर की। ये सभी चीजें उसने शल्य को दीं। उन्हें पाँ कर शल्य अत्याधिक संतुष्ट हुआ तथा अपनी बहन माद्री को यथाशक्ति अलंकार पहना कर, उसने भीष्म के हाथों सौंप दिया। माद्री के साथ भीष्म हस्तिनापुर आया, तथा सुसुहृत में पाण्डु ने माद्री का पाणिग्रहण किया (म. आ. १०५)।

राज्यप्राप्ति (द्विविजय)—पांडु के बंधुओं में से धृतराष्ट्र अंधा तथा विदुर शूद्र था। अतएव पांडु का राज्याभिषेक किया गया तथा यह हस्तिनापुर का राजा बना (म. आ. १०३.२३)। माद्री के पाणिग्रहण के ठीक एक माह के उपरांत, पाण्डु संपूर्ण पृथ्वी जीतने के उद्देश्य से बाहर निकला। इसने साथ में एक बड़ी सेना

भी ली। सब से पहले इसने पर्वतों पर रहनेवाले दशार्ण नामक छुटेरे लोगों को जीत लिया, एवं उनकी सेना तथा निशानादि छीन लिये। बाद में अनेक राजाओं को लूटकर उन्मत्त बने मगधाधिपति दीर्घ को उसी के प्रासाद में मारकर, उसके राज्यकोष एवं हाथियों का दल ले लिया। इसी प्रकार काशी, मिथिला, सुह्य तथा पुंड्र राजाओं को पराजित कर, इसने उन सारे देशों में कौरवों का ध्वज फहराया। यही नहीं, पृथ्वी के सब राजाओं ने पाण्डु को 'राजेंद्र' माना, तथा इसे काफ़ी नज़राने दिये। इस प्रकार अनेक देश तथा राजाओं को पादाक्रांत कर दिग्विजयी हो कर, यह हस्तिनापुर लौट आया (म. आ. १०५)।

विभिन्न देशों को जीत कर लखी हुई धनराशि, पांडु ने अपने बंधुबंधवों में बाँट दी। पश्चात्, धृतराष्ट्र ने पांडु के नाम से सौ अश्वमेधयज्ञ किये, एवं हर एक यज्ञ में लाख लाख स्वर्ण मुद्रायें दक्षिणा में दान दीं (म. आ. १०६)।

शाप—एकबार यह मृगया के लिये बन में गया था। तब मृगरूप धारण कर अपने मृगरूपधारिणी पत्नी से मृगरूप धारण कर के मैथुन करनेवाले किंदम नामक मुनि को साधारण मृग समझ कर इसने उस पर बाण छोड़े। इससे मुनि का मैथुनभंग हुआ, तथा उसके प्राणपत्न्येक उड़ चले। मरण के पूर्व उसने पांडु को शाप दिया, 'मिथुनासक्त अवस्था में मेरा वध करनेवाले तुम्हारी मृत्यु भी मैथुनप्रसंग में ही होगी' (म. आ. १०९.२८)।

इस शाप के कारण, पांडु को अत्यधिक पश्चात्ताप हुआ, तथा इसने संन्यासवृत्ति लेकर अवधूत की तरह रहने का निश्चय किया। इसके साथ इसकी पत्नियों ने भी वानप्रस्थाश्रम में रह कर तपस्या करने की इच्छा प्रकट की। कुन्ती तथा माद्री को साथ लेकर यह घूमते घूमते नागशत, कालकूट, हिमालय तथा गंधमादन आदि पर्वतों को लौंघ कर, चैत्ररथवन गया। वहाँ से यह इन्द्रद्युम्न सरोवर गया। पश्चात् हंसगिरि पर्वत को लौंघ कर यह शतशृंगगिरि पर गया, और वहाँ तपस्या करने लगा (म. आ. ११०)।

पुत्रेच्छा—एक बार कुछ ऋषि ब्रह्माजी से मिलने जा रहे थे। पाण्डु को भी उनके साथ स्वर्ग जाने की इच्छा हुई। किंतु ऋषियों ने इसे कहा, 'तुम हमारे साथ ब्रह्मलोक न जा सकोगे, क्योंकि, तुम निःसंतान हो'। फिर पाण्डु ने उनसे कहा, 'निःसंतान होने के कारण, आज

मैं ब्रह्मलोक से वंचित किया जा रहा हूँ। मैंने देव, ऋषि, तथा मानवों को तुष्ट किया है, तथापि पितरों को संतुष्ट नहीं कर पाया। ऐसी स्थिति में मुझे क्या करना चाहिये? जिस 'नियोग' के मार्ग से मेरा जन्म व्यास से हुआ, उसी प्रकार क्या मेरी पत्नियों को पुत्र की प्राप्ति नहीं हो सकती है?' ऋषियों ने अशीवांद्र्वक इससे कहा, 'तथास्तु। उल्कृष्ट तपस्या के कारण तुम्हें यही पुत्रों की प्राप्ति हो जायेगी'।

पश्चात् इसने कुन्ती से 'नियोग' द्वारा पुत्र उत्पन्न करने के लिए आग्रह किया। इसने कुन्ती से कहा, 'तुम्हारे बहनोई एवं तुम्हारी बहन श्रुतसेना का पति केकयराज शारदंडायनि 'नियोग' संतति के पुरस्कर्ताओं में से एक है। पुत्रों के बारह प्रकार होते हैं। औरस संतति न होने पर, स्वजातियों से अथवा श्रेष्ठ जातियों से 'नियोग' के द्वारा संतति प्राप्त करने की आज्ञा शारदंडायनि ने दी है। इसलिये अपने पूर्वजों एवं स्वयं को अधोगति से बचाने के लिये, तुम 'नियोग' से तपोनिष्ठ ब्राह्मण के द्वारा संतति प्राप्त करो' (म. आ. १११)।

कुन्ती ने इसका विरोध किया। उसने इसे कहा, 'व्युषिताश्व राजा की पत्नी भद्रा को उस राजा के शव से पुत्र उत्पन्न हुआ था। यह मार्ग कितना भी नीच क्यों न हो, पर इसे 'नियोग' से कहीं अधिक अच्छा समझती हूँ। तब पाण्डु ने क्रुद्ध हो कर कहा, 'पुत्रोत्पत्ति के लिए समागम करने की आज्ञा पति के द्वारा दी जाने पर, जो स्त्री वैसा आचरण नहीं करती, उसे भ्रूणहत्या का पाप ल्याता है। उद्दालकपुत्र श्वेतकेतु नामक आचार्य का यही धर्मवचन है। इसी धर्मवचन के अनुसार, सौदास राजा ने अपनी पत्नी दमयंती का समागम वसिष्ठ ऋषि से करावा कर, 'अशमक' नामक पुत्र प्राप्त किया था'। इतना कह कर, पाण्डु ने कुन्ती को स्मरण दिलाया, 'मेरा जन्म भी व्यास के द्वारा इसी 'नियोग' मार्ग से हुआ है' (म. आ. ११२-११३)।

पुत्रप्राप्ति—फिर कुन्ती ने पांडु को दुर्वास के द्वारा उसे प्राप्त हुए पुत्रप्राप्ति के मंत्र की कथा बताकर कहा, 'उस मंत्र का जाप कर, इष्टदेवता का स्मरण करने पर तुझे अवश्य पुत्रप्राप्त होगा'। फिर पांडु के आज्ञा के अनुसार, कुन्ती ने उस मंत्र का तीन बार जाप कर, क्रमशः यमधर्म, वायु एवं इंद्र को आवाहन किया। उन देवताओं के अंश से कुन्ती को क्रमशः

युधिष्ठिर, भीम एवं अर्जुन नामक पुत्र उत्पन्न हुये (म. आ. ११४)।

इसके उपरांत पुत्रोत्पत्ति करना व्यभिचार होगा, यह कहकर कुन्ती ने पुत्रोत्पन्न करना अमान्य कर दिया। बाद में पांडु की आज्ञा से, कुन्ती ने माद्री को दुर्वासा का मंत्र प्रदान किया, तथा अश्विनीकुमारों के प्रभाव से, उसे नकुल सहदेव नामक जुड़वा पुत्र हुये (म. आ. १११ - ११३)।

मृत्यु—एक बार वसंत ऋतु में, पांडु राजा अपने भार्याओं के साथ अरण्य में घूम रहा था। अरण्य की उद्दीत सुगमा से प्रभावित हो कर यह कामातुर हुआ। माद्री अकेली इसके पीछे पीछे आ रही थी। झीने वस्त्रों से सुसज्जित माद्री के यौवनाकर्षण पर मुग्ध हो कर उसके न कहने पर भी हठात् इसने उसके साथ समागम किया। क्रिदम ऋषि द्वारा दिये गये शाप के अनुसार, माद्री से संभोग करते ही इसकी मृत्यु हो गयी।

इसके परलोकवासी होने पर, माद्री इसके शव के साथ सती हो गयी। पांडवों ने इसका एवं माद्री की अंत्येष्टि क्रिया कश्यप ऋषि के द्वारा सम्पन्न करायी (म. आ. ११६; ११८)।

२. धाता का पुत्र (वायु. १.२८)

३. (सो. कुरु.) एक कुर्बंशीय राजा। यह जनमेजय पारिक्षित (प्रथम) का पुत्र था। इसे धृतराष्ट्रादि सात भाई थे (म. आ. ९९.४९)।

४. अंगिराकुल में उत्पन्न एक गोत्रकार।

पांडुर—स्कन्द का एक सैनिक।

पांडुरोचि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

पांड्य—(सो. तुर्वसु.) दक्षिण भारत का एक राजवंश एवं लोकसमूह। इस वंश के राजा तुर्वसुवंश के जनापीड राजा के वंशज कहलाते थे।

तुर्वसुवंश का मरुत्त राजा पुत्रहीन था। उसने पूरुवंशीय दुष्यंत राजा को गोद लिया, एवं इस तरह तुर्वसुवंश का स्वतंत्र अस्तित्व नष्ट करके, उसे पूरुवंश में शामिल कर लिया गया। किंतु पद्य के अनुसार, तुर्वसुवंश में आग चल कर, दुष्यंत, शरुत्त, जनापीड ये राजा उत्पन्न हुये। उनमें से जनापीड राजा को पांड्य, केरल, चोल्य एवं कुल्य नामक चार पुत्र थे। इन चारों पुत्रों ने (दक्षिण भारत में क्रमशः पांड्य, केरल, चोल एवं कुल्य कोल) राज्यों की स्थापना की (वायु. ९९.६)।

२. एक पांड्यवंशीय राजा। श्रीकृष्ण ने इसका वध किया (म. द्रो. २२.१६७*)

३. पांड्य राजा मलयध्वज का नामांतर। इसके पिता का वध श्रीकृष्ण ने किया (पांड्य २. देखिये)। फिर अपने पिता के वध का बदला लेने के लिये, पांड्यराज मलयध्वज ने भीष्म, द्रोण एवं कृप से अस्त्रविद्या प्राप्त की एवं यह कर्ण, अर्जुन, रुक्मि के समान शूर बना।

यह श्रीकृष्ण की द्वारकानगरी पर आक्रमण करना चाहता था। किंतु इसके सुहृदों ने इसे इस साहस से परावृत्त किया एवं यह पांडवों का मित्र बना।

यह द्रौपदीस्वयंवर में (म. आ. १७७.१८१६*) तथा युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में (म. स. ४८.४७७*) उपस्थित था।

भारतीय युद्ध में, यह पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. १९.९)। इसके रथ पर सागर के विह्व से युक्त ध्वजा फहराती थी एवं इसके रथ, के अश्व चन्द्रकिरण के समान श्वेत थे। इसके अश्वों के उपर 'वैदूर्यमणियों' की जाली बिछायी थी। (म. द्रो. २४.१८३*) अंत में अश्वत्थामा ने इसका वध किया (म. क. १५. ३-४३)।

महामारत में इसके लिये निम्नलिखित नामांतर प्राप्त हैं :—

(१) चित्रवाहन—यह मणदूर का दूत, एवं अर्जुन की पत्नी चित्रांगदा का पिता था (म. आ. २०७.१३-१४)।

(२) मलयध्वज पांड्य—सहदेव ने अपने दक्षिण दिग्बिजय में इसे जीता था (म. स. परि. १. १५. ६७)।

(३) प्रवीर पांड्य—यह पांड्य देश का राजा था (म. क. १५.१-२)।

४. विदर्भ देश का राजा। यह महान् शिवभक्त था। एक दिन प्रदेश के समय यह शिवपूजा कर रहा था। नगर के बाहर कुछ आवाज सुनाई देने पर, शिवपूजा वैसी ही अधूरी छोड़कर यह बाहर आया। पश्चात् इसके राज्य पर हमला करने के लिये आये शत्रु के प्रधान का इसने वध किया।

शत्रुवध का कार्य समाप्त कर यह घर वापस आया एवं शिव की पूजा वैसी ही अधूरी छोड़कर इसने अन्नग्रहण किया। इस पाप के कारण, अमले जनम में इसे सत्यरथ नामक राजा का जन्म प्राप्त हुआ एवं शत्रु के हाथों इसकी

अकाल मृत्यु हो गयी (शिव. शतरुद्र ३१.४७-५५; सत्यरथ देखिये) ।

पात—ऐरावत कुल का एक नाम । जनमेजय के सर्पसत्र में यह अपने पातर नामक मित्र के साथ मारा गया (म. आ. ५७.१२) ।

पातालकेतु—जालधर की सेना का एक असुर (पद्म. उ. १२) ।

२. एक असुर । विश्वावसु नामक गंधर्व की मदालसा नामक कन्या का हरण कर, यह उसे पाताल ले गया । ऋतध्वज नामक राजा ने इसे पराजित कर मदालसा को मुक्त किया (ऋतध्वज देखिये) ।

पाथ्य—वृषन् ऋषि का पौत्र का नाम (वृषन् पाथ्य देखिये) ।

पादप—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

पादप्रायन—मत्स्य के अनुसार पालंकायन ऋषि का नामांतर (पालंकायन देखिये) ।

पापनाशन—दमन नामक शिवावतार का शिष्य ।

पायु—अंगिराकुल का एक ऋषि ।

पायु भारद्वाज—एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ६.७५) । यह दिवोदास राजा का आश्रित था (अश्वत्थ देखिये) । भारद्वाज नामक ऋषि की 'पायु' उपाधि थी (ऋ. ६.४७.२४) ।

युद्ध के शत्रुओं का वर्णन करनेवाले, तथा राजाओं को युद्ध के लिये आवाहन करनेवाले ऋग्वेद के एक युद्ध-सूक्त के प्रणयन का श्रेय पायु को दिया गया है (ऋ. ६.७५) । बृहद्देवता के अनुसार, अभ्यावर्तिन् चायमान एवं प्रसोत सांज्य नामक राजाओं को सहाय देने के लिए, इसने इस सूक्त की रचना की थी (बृहद्दे. ५. १२४) ।

पार—(सो. पू.) कान्यकुब्ज देश का राजा । भागवत, विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार, यह 'पृथुसेन' एवं वायु के अनुसार, यह 'पृथुदेण' का पुत्र था । मत्स्य में इसे 'पौर' कहा गया है । इसके पुत्र 'नीप' नामक सामूहिक नाम से प्रख्यात थे ।

२. (सो. पू.) एक नीपवंशीय राजा । विष्णु एवं वायु के अनुसार, यह समर राजा का पुत्र था ।

इसका वंशक्रम भागवत में एवं अन्य पुराणों में विभिन्न पद्धति से दिया गया है, जो इस प्रकार है :—

भागवत

—

—

—

—

—

पार

नीप

ब्रह्मदत्त

अन्य पुराण

नीप

समर

पार

पृथु

सुकृति

विभ्राज

अणुह

ब्रह्मदत्त

पुराणों में प्राप्त इन दो वंशक्रमों को एकत्र करने पर 'पार' 'एवं' 'विभ्राज' ये दोनों एक ही थे, एवं पार का नामान्तर विभ्राज था, ऐसी गलत धारणा हो जाती है । भागवत में दिये वंशक्रम में नीप से अणुह तक के पाँच राजाओं के नाम नहीं दिये गये हैं । इस कारण, यह गड़बड़ी हो गयी है ।

३. (सो. अनु.) एक राजा । विष्णु के अनुसार यह अंगराज का पुत्र था ।

४. दशसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण ।

पारःकारिरेव—'पारिकारिरेव' नामक अंगिरा-कुल के गोत्रकार ।

पारण—अगस्त्यकुल में उत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण ।

पारद—एक प्राचीन जाति का नाम । ये लोग आधुनिक उत्तर बलूचिस्तान के प्रदेश में कहीं रहते थे । पुषिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, ये लोग हर तरह के "उपायन" ले कर उपस्थित हुये थे (म. स. ४७. १०) ।

महाभारतकालीन एक लोकसमूह । ये लोग द्रोणाचार्य के साथ भीष्मजी के पीछे पीछे चल रहे थे (म. भी. ८३.७) ।

२. एक राजा । हरिश्चन्द्र के वंश के गर राजा का राज्य जीतनेवाले राजाओं में से यह एक था । गर राजा के पुत्र सगर ने, इसके सिर के सारे केशों का मुंडन कर इसे मुक्त किया था (पद्म. उ. २०) ।

पारशव—धृतराष्ट्र एवं पांडु राजा के बंधु विदुर का नामांतर । शूद्रा के गर्भ से ब्राह्मणद्वारा उत्पन्न पुत्र को 'पारशव' कहते थे (म. अनु. ४८.५) । अंबलिका रानी की शूद्र दासी के गर्भ से व्यासमुनि द्वारा विदुर का जन्म हुआ । इस कारण उसे 'पारशव' कहते थे ।

पारशवी—विदुर की पत्नी । यह देवराज की कन्या थी ।

पारशव्य—तिरिदिर ऋषि का पैतृक नाम (सं. श्रौ. सू. १६.११.२०) । 'परशु' का वंशज होने से तिरिदिर को यह उपाधि प्राप्त हो गयी होगी ।

पारस्कर—शुक्रयजुर्वेद के 'पारस्कर' गृह्यसूत्र नामक सुविख्यात ग्रंथ का कर्ता । डॉ. जयसवाल के अनुसार पारस्करगृह्यसूत्र का रचनाकाल ५०० ई. पू. एवं उसके वर्तमान संस्करण का काल २०० ई. पू. है ।

गाईस्थ्यजीवनविषयक धार्मिक विधियों का वर्णन करना यह गृह्यसूत्रों का प्रमुख उद्देश्य है । 'पारस्कर' गृह्यसूत्र के अतिरिक्त अन्य प्रमुख गृह्यसूत्रों के नाम इस प्रकार हैं :— आश्वलायन-गृह्यसूत्र, शांखायन-गृह्यसूत्र, मानव-गृह्यसूत्र, शौधायन-गृह्यसूत्र आपस्तंब-गृह्यसूत्र हिरण्यकेशी-गृह्यसूत्र, भारद्वाज-गृह्यसूत्र, पारस्कर-गृह्यसूत्र, द्राह्यायण-गृह्यसूत्र, गोभिल-गृह्यसूत्र, खादिर-गृह्यसूत्र तथा कौशिक-गृह्यसूत्र ।

कई अभ्यासकों के अनुसार, पारस्कर एवं कात्यायन एक ही थे ।

पारावत—वैदिककाल में यमुना नदी के तट पर रहने वाला एक लोकसमूह (ऋ. ८.३४.१८) । पंचविंश ब्राह्मण में, इन लोगों का निर्देश, 'पारावत-गण' नाम से किया गया है एवं तुरश्रवस् को इनका पुरोहित बताया गया है (पं. ब्रा. ९.४.१०-११) । इन लोगों द्वारा दिये गये दानों का निर्देश वसुरोचिष के दानस्तुति में किया गया है (ऋ. ८.३४.१८) । सरस्वती नदी को 'पारावतवती' (पारावतों का वध करनेवाली) कहा गया है (ऋ. ६. ६१.२) । यह निर्देश भी, इनके यमुना नदी के तट पर रहने की पुष्टि करता है ।

हिलेब्रांट के अनुसार, मेडोसिया की उत्तरी सीमा पर बसे हुये टॉलेमीकालीन 'पारुएटे' लोग ये ही थे (विदिये माइथोलोजी १.९७) । इन लोगों का मूल नाम 'पर्वतीय' था एवं पश्चात् अपभ्रंश से पारावत बना ।

२. वसिष्ठ के बारह पुत्रों का सामूहिक नाम । बारह 'पारावतों' के नाम इस प्रकार हैं :— अजिह्व, अजेय, आयु, दिव्यमान, प्रचेतस्, महाबल, महामान, दान, यज्वन्, विश्रुत, विश्वेदेव तथा समंज (ब्रह्मांड. २.३६. ९-१५) ।

३. स्वारोचिष मन्वंतर का देवगण ।

४. ऐरावत कुल का एक सवं, जो जनमेजय के सर्पसत्र में जल कर मर गया था (म. आ. ५२.१०) ।

पाराशर—वैदिक कालीन एक आचार्य । पाराशर ने ६१ श्लोकों से युक्त पाराशरी शिक्षा लिखी है । यह शुक्रयजुर्वेद की शिक्षा है । शुक्रयजुर्वेद के कहे जानेवाले स्वर, आनुनासिक, विसर्ग आदि का आजकल प्रचलित वर्णन के समान वर्णन इस शिक्षा में प्राप्त है । याज्ञवल्की, वासिष्ठी, कात्यायनी, पाराशरी, गौतमी, मांडवी तथा पाणिनि आदि शिक्षाओं का उल्लेख इस शिक्षा में प्राप्त है (श्लो. ७७-७८) । उससे प्रतीत होता है कि यह शिक्षा काफी आधुनिक काल की होगी । यह शिक्षा कहने वाले को वैष्णवपद प्राप्त होगा, ऐसा फल अन्त में बताया गया है (श्लो. १६९) ।

पाराशरीकौंडिनीपुत्र—वैदिक कालीन एक ऋषि । यह गार्गीपुत्र का शिष्य था (श. ब्रा. १४.९.४.३०) । माध्यंदिन शाखा के 'बृहदारण्यक उपनिषद्' में दिये अंतिम 'विद्यावंश' में भी इसका निर्देश प्राप्त है (बृ. उ. ६.४.३०) ।

पाराशरीपुत्र—वैदिक कालीन एक ऋषि । 'बृहदारण्यक उपनिषद्' में दिये 'विद्यावंश' में इसे विभिन्न स्थानों में निम्नलिखित आचार्यों का शिष्य कहा गया है— कात्यायनीपुत्र (बृ. ६.५.१), औरस्वतीपुत्र (बृ. उ. ६.५.१) । वासीपुत्र (बृ. उ. ६.५.२) । तथा वार्कारुणीपुत्र (श. ब्रा. १४.९.४.३१) । इसके शिष्यों में भारद्वाजीपुत्र, औरस्वतीपुत्र तथा वासीपुत्र प्रमुख थे । इस में संदेह नहीं कि, इन विद्यावंशों में एक ही 'पाराशरीपुत्र' अभिप्रेत न हो कर, इनसे अलग अलग व्यक्तियों का तात्पर्य है ।

पाराशर्य—एक उपनिषद्कालीन ऋषि । बृहदारण्यक उपनिषद् में दिये गये 'विद्यावंशों' में इसे अन्योन्य स्थानों में भरद्वाज, वैजवापायन तथा जानूकर्ण्य का शिष्य कहा गया है (बृ. उ. ३.६.२; ४.६.३) । वैजवापायन का शिष्य होने का अन्यत्र समर्थन है (तै. आ. १.९.२) । सामविधान ब्राह्मण में किसी व्यास पाराशर्य ऋषि को विष्वक्सेन का शिष्य बताया गया है (सामविधान ब्रा. ३.४१.१) ।

इसके शिष्यों में पाराशर्यायण, सैतव प्राचीन योग्य तथा भारद्वाज ये प्रमुख थे (बृ. उ. २.६.२-३) । पाणिनि के सूत्रों में, भिक्षुसूत्र रचयिता पाराशर्य का निर्देश है (४.३.११०) ।

२. युधिष्ठिर की सभा का एक ऋषि (म. स. ४.११) हस्तिनापुर जाते समय, श्रीकृष्ण से इसकी भेंट हुई थी।
३. साङ्ख्य का शिष्य (बृ. उ. २.५.२०; ४.५.२६ माध्य.)

पाराशर्य कौथुम—एक आचार्य। वायु तथा ब्रह्मांड के अनुसार, यह व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से एक था। यह कुथुमिन् का शिष्य रहा होगा।

पाराशर्यायण—पाराशर्य नामक आचार्य का शिष्य। इसका शिष्य घृतकौशिक (बृ. उ. २.६.३; ४.६.४)।

पारिकारारिरेव—अंगिराकुल का गोत्रकार।

पारिक्षित—जनमेजय नामक आचार्य का पैतृक नाम। अथर्ववेद के कुछ मंत्रों का नाम 'पारिक्षितिकृचा' दिया गया है (ऐ. ब्रा. ६.३२; सां. ब्रा. ३०.५; गो. ब्रा. २.६.१२)। वे मंत्र अथर्ववेद में हैं (१२७.७-१०) पारिक्षित आगे चल कर नामशेष हो गये होंगे, क्योंकि पारिक्षित कहाँ होंगे, इसके बारे में आध्यत्मिक उपपत्ति जोड़ी गयी है (बृ. उ. ३.३.१)। उससे यह इस समय भी प्राचीन था। यह शब्द पारिक्षित तथा पारीक्षित दोनों प्रकार से उपलब्ध है।

पारिजात—नारद के शिष्य मय की सभा में आया हुआ एक ऋषि (म. स. ५.३)।

२. पुलह तथा श्वेता का पुत्र (ब्रह्मांड. ३.७.१८०-१८१)।

पारिजातक—जितात्मा मुनि, जो युधिष्ठिर की सभा में विराजते थे (म. स. ४.१२)।

पारिप्लव—रैवत मन्वन्तर के भूतरजसों में एक देवगण।

पारिमद्र—(स्वा. प्रिय.) एक राजा। यह प्रियव्रतपुत्र यज्ञबाहु के सात पुत्रों में से पाँचवा पुत्र था।

पारिमद्रक—कौरव पक्ष के योद्धाओं का एक दल, जो संभवतः परिमद्र देश का निवासी था (म. भी. ४७. ९)।

३. ऐरावतकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में जलकर मर गया था (म. आ.)।

पारियात्र—(सू. इ.) भागवतमत में अनीह का, वायुमत में अहीनगु का, विष्णुमत में रुरु का तथा भविष्य मत में कुरु का पुत्र।

२. सर्पसत्र में दग्ध हुए ऐरावतकुल का एक सर्प (म. आ. ५२.१०)।

पारिश्रुत—स्कन्द का एक सैनिक (म. श. ४४.५५)।

पारुच्छेप—अनान्त ऋषि का पैतृक नाम।

पार्णवलिक—निगद ऋषि का पैतृक नाम।

पार्थ—कुन्ती (पृथा) के पुत्रों के लिये प्रयुक्त मातृक नाम। महाभारत में यह नाम प्रायः युधिष्ठिर एवं अर्जुन के लिये ही प्रयुक्त है। किंतु कई जगह कुन्ती के तीनों पुत्रों के लिये, एवं एक स्थान पर 'कर्ण' के लिये भी इसका प्रयोग किया गया है (म. उ.)।

पार्थव—अभ्यावर्तिन् चायमान देखिये।

पार्थिव—अंगिराकुल का गोत्रकार गण।

पार्थश्रवस—घृतराष्ट्र नामक आचार्य का पैतृक नाम (जै. उ. ब्रा. ४.२६.१५) शंखुदक के समय कौन सा मंत्र कहना चाहिये इस संबंध में इस आचार्य का मत दिया गया है (कौ. सू. ९.१०)। मधुपर्क गाय से करे ऐसा इसका कथन है (कौ. सू. १७.२७)।

पार्थ्य—तान्व नामक वैदिक आचार्य का पैतृक नाम। इसके द्वारा दान माँगने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.९३.१५)। सर्वानुक्रमणी से ऐसा प्रतीत होता है की 'पार्थ्य' के स्थान पर 'पार्थ' है जो तान्व का पैतृक नाम है। आश्र्वलायन श्रौतसूत्रों में भी पार्थ का निर्देश प्राप्त है (१२.१०; तान्व देखिये)।

पार्षणि—ऋषि देखिये।

पार्वति—दक्ष का पैतृक नाम (श. ब्रा. २.४.४.६; कौ. ब्रा. ४.४)।

पार्वती—हिमालय तथा मेना की कन्या एवं शिवजी की पत्नी। नारद के कहने पर हिमालय ने इसे शंकर को ब्याह दिया। एक समय यह शंकर के साथ क्रीड़ा कर रही थी, तब इसने शंकर के नेत्र बंद कर लिये। शंकर के नेत्रों में सोम, सूर्य तथा अग्नि का वास होने के कारण चारों ओर अंधकार फैल गया तथा विनाश (क्षय) आरंभ हो गया। ऋषियों के कहने पर इसने क्रीड़ा रोक दी। बाद में शंकर के कथनानुसार इसने अरुणाचल पर तपश्चर्या की। गौतम ने इसे अरुणाचल का महाात्म्य बताया (स्कन्द. १.३. ३-१२)।

पहले यह काले रंग की थी परंतु अनरकेश्वर तीर्थ में स्नान कर वहाँ के लिंग के समझ दीपदान करने के कारण यह गौरवर्ण की हो गयी (स्कंद. ५.१.३०)। इसने 'गौरात्रत' का निर्माण किया तथा उसकी महिमा धर्म-राज को बताया (भवि. ब्राह्म. २१)।

एक समय कल्पवृक्ष के नीचे बैठ कर इसने सुंदर स्त्री की इच्छा की, जिससे 'अशोकसुंदरी' एक सुंदर स्त्री

उत्पन्न हुई। उसे पार्वती ने अपनी कन्या माना तथा उसे बर दिया 'तुम सोमवंश के राजा नहुष की स्त्री होगी' (अशोकसुंदरी देखिये)।

इसके शरीर के मूल से गजानन की उत्पत्ति हुयी। शंकर से इसे कार्तिकेय नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। इसके अतिरिक्त बाण तथा वीरभद्र को इसने अपने पुत्र माने थे। देवताओं की प्रार्थना पर इसने दुर्गा के संहार के लिये अनेक अवतार लिये। इस कारण इसके अनेक नाम हैं (देवी, दुर्गा तथा सती देखिये)।

पार्वतीय—महाभारत काल का एक राजा, जो कुपथ नामक दानव के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१ ५५८*)।

२. दुर्योधन के मामा शकुनि का नामांतर।

३. महाभारतकालीन एक लोगसमूह। युधिष्ठिर के राज्यय यज्ञ के समय, ये लोग उपहार ले कर आये थे (म. स. ४८.७)। पांडवों के वनवास काल में जयद्रथ की सेना में शामिल हो कर, इन लोगों ने पांडवों पर आक्रमण किया था (म. व. २५५.८)।

भारतीययुद्ध में ये लोग कौरवदल में शामिल थे, एवं शकुनि तथा उलूक के साथ रहा करते थे (म. क. ३१.१३)। पांडव वीरों ने इनका युद्ध में संहार किया (म. श. १.२६)।

पार्वतिय—एक राजर्षि, जो क्रयनामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५५५*)।

पार्वत—द्रुपद राजा का नामांतर (म. आ. १२१. ९)।

पार्षद्वाण—एक वैदिक राजा। 'पृषद्वाण' का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ। एक आश्चर्यजनक कार्य करनेवाले राजा के रूप में, इसका निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. ८.५१.२)। ऋग्वेद में इसके बारे में जो सूक्त प्राप्त हैं, वह श्रुष्टिगु द्वारा रचित हैं। यह प्रसूतय का आश्रयदाता था (ऋ. ८.५१.२)।

पार्ष्ण शैलन—वैदिककालीन एक आचार्य (जै. उ. ब्र. २.४.८)।

पार्ष्णि—चेकितान राजा का सारथि।

पार्ष्णिक्षेमन्—एक विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३०)।

पाल—वासुकि के कुल में उत्पन्न एक नाग जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हो गया (म. आ. ५२.५)। पाटभेद 'पैल'।

पालक—(प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा। यह प्रद्योत राजा का पुत्र था। मत्स्य के अनुसार, इसने अष्टादश वर्षों तक, तथा वायु तथा ब्रह्मांड के अनुसार, चौबीस वर्षों तक राज्य किया।

पालकाप्य—एक वैद्यकाचार्य एवं 'हस्त्यायुर्वेदसंहिता' नामक सुविख्यात ग्रन्थ का रचयिता। प्रस्तुत ग्रन्थ में, हाथियों के रोग-निदान की विवेचना प्राप्त है। इस ग्रंथ में निम्नलिखित विषयों की व्याख्या की गयी है— १. महारोगस्थान (अध्याय. संख्या १८); २. क्षुद्ररोगस्थान (अध्याय. ७२); ३. शल्यस्थान (अध्याय. ३४); ४. उत्तरस्थान (अध्याय. ३६)।

पालकाप्य ने अंगदेश के राजा रोमपाद को 'हस्त्यायुर्वेद' सिखाया था। इसका यह ग्रंथ प्रायः श्लोकबद्ध है, किन्तु कई अध्यायों की रचना गद्य में भी की गयी है।

'हस्त्यायुर्वेद' के अतिरिक्त पालकाप्य के लिये अन्य ग्रंथ इस प्रकार हैं— १. गजायुर्वेद (अभि. २२९.४४); २. गजचिकित्सा; ३. गजदर्पण; ४. गजपरीक्षा। इन में से 'गजायुर्वेद' संभवतः हस्त्यायुर्वेद का ही नामांतर होगा।

पालकायन—वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार। मत्स्य में इसका नाम 'पाटपायन' दिया गया है (मत्स्य. २००.१२)।

पालित—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। विष्णु के अनुसार यह परावृत राजा का पुत्र था। इसके 'परिष' एवं 'पुरजित्' नामांतर भी प्राप्त हैं। (परिष १. देखिये)।

पालिता—स्कंद की अनुचरों मानुका (म. श. ४५. ३)। पाटभेद—(मांडारकर संहिता)—'पलिता'।

पालितक—पृषन् द्वारा स्कंद को दिये गये पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम 'कालिक' था (म. श. ४४.३९)।

पालिशय—वसिष्ठकुल के गोत्रकार ऋषिगण।

पाचक—(स्वा. उत्तान.) एक राजा। यह विजिताश्व का पुत्र था। वसिष्ठ के शाप से, इसे मनुष्ययोनि में जन्म लेना पड़ा (मा. ४.२४.४)।

२. एक वैदिक सूक्तद्रष्टा। यह अग्नि एवं 'स्वाहा' का पुत्र था (अग्नि एवं अग्नि पाचक देखिये)।

३. 'प्रजापति भरत' नामक अग्नि का पुत्र। इसे 'महत्' नामांतर भी प्राप्त है (म. व. २०९.८)।

पावकाक्षि—राम की सेना का एक वानर (वा. रा. सु. ७३६४)।

पावन—भगवान् कृष्ण का मित्रविदा नामक पत्नी से उत्पन्न पुत्र (मा. १०.६१.१६)।

२. दीर्घतपस् ऋषि का कनिष्ठ पुत्र। इसके बड़े भाई का नाम 'पुण्य' था (पुण्य १, देखिये)।

३. एक विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३०)।

पावमान्य—एक वैदिक मंत्रसंघ (ऐ. आ. २.२. २)। आश्वलायन लोगों के तर्पण में, इनका उल्लेख है।

पाशयुञ्ज वायत—वैदिककालीन एक राजा। पाशयुञ्ज राजा का 'वायत' पितृक नाम है।

इसके द्वारा किये गये यज्ञ में, इन्द्र स्वयं उपस्थित हुआ था। किन्तु वैसिष्ठ के कहने पर, इन्द्र इसके यज्ञ को त्याग कर, सुदास राजा के यज्ञ में चला गया (क. ७. ३३.२)।

पाशिव—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। भीमसेन ने इसका वध किया था (म. क. ६२.२-३)।

पाथ्यजिति—अंगिराकुल का एक गोत्रकार। 'पौषमजिति' इसी का पाठभेद है (पौषाजिति देखिये)।

पिंग—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

पिंगल—एक छन्दःशास्त्र आचार्य एवं छन्दःशास्त्र नामक सुविख्यात ग्रंथ का कर्ता।

इसे पिंगलाचार्य या पिंगल नाग कहते थे (भट्ट हलायुध टीका)। कई विद्वानों के अनुसार, यह सम्राट अशोक का गुरु था। किन्तु 'पाणिनिशिक्षा' की 'शिक्षाप्रकाश' नामक टीका के अनुसार 'छन्दःशास्त्र' का रचयिता पिंगल, वैयाकरण पाणिनि का अनुज था (शिक्षासंग्रह पृ. ३८५) : कात्यायन के सुविख्यात वृत्तिकार पङ्गुशुष्य का भी यही मत है (वेदार्थदीपिका पृ. ९७)। अन्य विद्वानों के अनुसार यह पाणिनि का मामा था।

छन्दःशास्त्र—छन्दःशास्त्र को छः वेदों में से एक गिना जाता है। पाणिनि के गणयांठ में छन्दःशास्त्र के छंदोविजिति, छंदोविचिति, छंदोमान तथा छंदोभाषा ये चार पर्याय प्राप्त हैं (ऋग्यनादिगण ४.३.७३)। शेष पाँच वेदों इस प्रकार हैं, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त तथा ज्योतिष।

छन्दःशास्त्रविषयक प्राचीनतम उपलब्ध ग्रन्थ 'ऋग्यनादिशास्त्र' है। उस ग्रंथ का मुख्य विषय

व्याकरण है, किन्तु उसमें वैदिक छंदों पर भी प्रकाश डाला गया है।

'ऋग्यनादिशास्त्र' में उपलब्ध छंद विषयक जानकारी काफी अधूरी है, इसी कारण पिंगल का 'छन्दःशास्त्र' वेदांग का सर्वाधिक प्राचीन एवं महत्वपूर्ण ग्रन्थ माना जाता है। इसमें वैदिक छंदों के साथ लौकिक छंदों पर भी प्रकाश डाला गया है। इस ग्रन्थ में आरंभ से चौथे अव्याय के सातवें सूत्र तक, वैदिक छंदों की जानकारी दी गयी है। शेष अवशिष्ट ग्रन्थ में लौकिक छंदों की चर्चा की गयी है। इसी ग्रन्थ का एक संस्करण 'प्राकृतपिंगल' नाम से प्रसिद्ध है, जिसमें प्राकृत के छंदों की जानकारी दी गयी है। 'प्राकृतपिंगल' का रचनाकाल १४ वीं शती माना जाता है।

पूर्वाचार्य—छन्दःशास्त्र के प्रवर्तक भगवान् शिव माने गये हैं। छन्दःशास्त्र की गुरुपरंपरा इस प्रकार दी गयी है—शिव—बृहस्पति—दुरव्ययन—इंदु—मांडव्य—पिंगल।

पिंगल के 'छन्दःशास्त्र' में निम्नलिखित पूर्वाचार्यों का निर्देश प्राप्त है :— अग्निवेश्य, आंगिरस, काश्यप (७. ९), कौशिक (३.६६), क्रौष्टुकि (३.२९), गौतम (३.६६), ताण्डिन् (३.३६), भार्गव (३.६६), माण्डव्य (७.३४), यास्क (३.३०), रात (७.३४), वसिष्ठ (३.६६), सैतव (५.१८)।

२. काश्यप तथा कद्रू से उत्पन्न एक नाग (म. आ. ३१.९)।

३. भृगुकुल का एक ऋषि। यह जनमेजय के सर्पसत्र में सदस्य था (म. आ. ४८.६)। इसी नाम के एक और ऋषि का निर्देश महाभारत में अन्यत्र प्राप्त है (म. भा. ४८.७)। पाठभेद—'बोलपिंगल'।

४. एक यक्षराज, जो भगवान् शिव का सखा था। यह शिव की रक्षा के लिए इमशानभूमि में निवास करता था (म. व. २२१.२२)।

५. सूर्य के 'अठारह विनायक' नामक अनुचरों में से एक। सूर्य के द्वारा प्राप्त वरदान के बल पर, दैत्यों ने देवों को त्रस्त करना प्रारंभ किया। तब उन दैत्यों का संहार करने के हेतु, ब्रह्मादि देवों ने 'अठारह विनायक' नामक सशस्त्र अनुचरों का एक दल सूर्य के पास तैनात किया। उनमें से पिंगल नामक अग्नि की योजना सूर्य के दक्षिण दिशा में की गयी। यह अग्नि का वर्ण 'पिंगल'

होते के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ था (साम्प्र. १६; भवि. ब्राह्म. ५६; ७६; ११७)।

६. पुरुकुत्स नगर का एक दुराचारी ब्राह्मण। इसकी पत्नी व्यभिचारिणी थी, जिसने इसका वध किया।

अगले जन्म में, इसकी पत्नी को तोते का एवं इसे गीध का जन्म प्राप्त हुआ। पूर्वजन्म की शत्रुता याद कर के, गीध (पिंगल) ने तोते का वध किया। बाद में एक व्याध ने इसका भी वध किया। पश्चात्, गंगातट पर रहनेवाले बट्ट नामक ब्राह्मण ने गीता के पाँचवें अध्याय को सुनाकर इनका उद्धार किया। इस प्रकार इन दोनों को पितृलोक की प्राप्ति हुयी (पद्म. उ. १७९)।

७. एकादश रुद्रों में से एक। ब्रह्मा ने अपनी ग्यारह कन्याओं से विवाह कर, 'एकादश रुद्र' नामक ग्यारह पुत्रों को उत्पन्न किया। उनमें पिंगल एक था (पद्म. स. ४०)।

८. कश्यप एवं सुरभि का पुत्र (शिव. रुद्र. १८)।

९. एक राक्षस। भीम नामक एक व्याध शिकार के लिए अरण्य में घूम रहा था। उस समय पिंगल राक्षस उसके पीछे लगा गया। फिर भीम शमी के पवित्र पेड़ पर चढ़ गया। पेड़ पर चढ़ते समय, शमी की एक टहनੀ टूट कर, नीचे स्थित गणेशजी की मूर्ति पर गिर पड़ी। इस पुण्यकर्म के कारण, भीम व्याध एवं पिंगल राक्षस का उद्धार हो गया (गणेश. २.३६)।

१०. सूर्य का एक अनुचर, एवं लेखक (भवि. ब्राह्म. ५६; ७६; १२४)।

पिंगलक—एक यक्ष, जो शिव का सखा एवं स्कन्द का अनुचर था (म. स. १०. १७; म. व. २२१. २२)।

पिंगला—अवन्तिनगर की एक वेश्या। मंदर नामक एक ब्राह्मण इस पर आसक्त था।

इसने ऋषभ नामक योगी की सेवा की। इस पुण्य के कारण, इसे अगले जन्म में चंद्रगद राजा के कुल में जन्म प्राप्त हुआ। यह चंद्रगद की पत्नी सीमंतिनी के गर्भ से उत्पन्न हुयी, तथा इसका नाम कीर्तिमालिनी रखा गया। पश्चात्, यह भद्रायु राजा की पत्नी बनी (भद्रायु देखिये)।

२. विदेह देश के मिथिला नगर की एक वेश्या। एक दिन यह हर रोज की तरह अर्धरात्रि तक प्रतीक्षा करती रही, पर कोई ग्राहक न आया। इस घटना से इसे वैराग्य उत्पन्न हुआ, तथा अंत में इसे मोक्ष प्राप्त हुआ

(भा. ११.८.२२-४४)। इसने अवधूत को आत्मज्ञान का उपदेश दिया था, जिससे वह इसे अपना गुरु मानता था (भा. ११.७.३४)।

इसकी जीवनगाथा भीष्म ने युधिष्ठिर को सुनायी थी (म. शां. १६८. ४६-५२)।

३. अयोध्या नगरी की एक स्त्री। एक बार यह विषयोपभोग की इच्छा से, राम के पास गयी। किन्तु एकपत्नीव्रतधारी राम ने, इसकी माँग अस्वीकार कर दी, तथा कहा, 'कृष्णावतार में तुम कंस की कुटुम्बा नामक दासी बनोगी। उस समय कृष्ण के रूप में, मैं तुम्हें स्वीकार करूँगा'।

यह बात जब सीता को ज्ञात हुयी, तब क्रुद्ध हो कर उसने पिंगल को शाप दिया 'राम से विधि-भोग की लिप्सा रखनेवाली सुंदरी, तेरा शरीर अगले जन्म में तीन स्थानों से टेढ़ा होगा'। पिंगल ने सीता से दया की याचना की। फिर सीता ने कहा, 'अगले जन्म में कृष्ण तुम्हारा उद्धार करेगा' (आ. रा. विलास. ८)।

पिंगलाक्ष—शिव के रुद्रगणों में से एक।

पिंगा—मांडूकी ऋषि की द्वितीय पत्नी (ऐतरेय देखिये)।

पिंगाक्ष—एक शहर। परोधकार करते हुये, इसकी मृत्यु हो गयी। इस कारण, मृत्यु के पश्चात् यह 'निकंति लोक' का अधिपति बन गया (स्कन्द ४. १.१२)।

२. मणिभद्र नामक शिवगण एवं 'पुण्यजनी' के पुत्रों में से एक (मणिभद्र देखिये)।

पिंगाक्षी—स्कन्द की अनुचरी मातृका (म. शं. ४५.२१)।

पिच्छल—वासुकिवंश में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में जल कर मर गया (म. आ. ५२.५)। पाठभेद (मांडारकर संहिता)—'पिच्छिल'।

पिञ्चन—एक वैदिक राजा, एवं सुदास राजा का पिता (मि. २.२४)। ऋग्वेद में, सुदास के लिए 'पिञ्चन' उपाधि पैतृक नाम के नाते प्रयुक्त की गयी है (ऋ. ७. १८.२२; २३; २५; ऐ. ब्रा. ८.२१)।

कई अभ्यासकों के अनुसार, 'पिञ्चन' एवं 'पंचजन', दोनों एक ही थे (पंचजन ३. देखिये)।

पिंजरक—कश्यप एवं कद्रु पुत्र, एक नाग (म. आ. ३१.६; म. उ. १०१.१५)।

पिटर—वरुण की सभा का एक असुर (म. स. ९. १३)।

पिठरक—कश्यप एवं कहु का पुत्र, एक नाग (म. आ. ३१.१४)। यह जनमेजय के सर्पसत्र में जल कर मर गया था (म. आ. ५२.१४)। पाठभेद—‘पीठरक’ (म. उ. १०१.१४)।

पिठीनस्—एक वैदिक राजा। इसके रक्षण के लिये, इंद्र ने रजि नामक दानव का वध किया था (ऋ. ६.२६. ६)। सायणाचार्य के अनुसार, ‘रजि’ एक स्त्री का नाम है, जिसे इंद्र ने पिठीनस् को प्रदान किया था।

पिंडसेवतु—तक्षककुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में मारा गया (म. आ. ५२.७)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—‘पिंडभेचु’।

पिंडारक—कश्यपवंशी एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में मारा गया (म. आ. ५२.१६)।

२. एक यादव राजा, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१८)।

३. (सो. वसु.) एक राजा। यह वसुदेव राजा का पुत्र था। मत्स्य के अनुसार, यह उसे रोहिणी से, एवं वायु के अनुसार, पौरवी से उत्पन्न हुआ था।

४. धृतराष्ट्रकुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में मारा गया (म. आ. ५२.१६)।

पितरः—एक देवतासमूह। इन्हें ‘पिंड’ नामांतर भी प्राप्त है (म. शां. ३.५. २०)। मनुष्य प्राणी के पूर्वजों एवं सारे मनुष्यजाति के निर्माणकर्ता देवतासमूह, इन दोनों अर्थों में ‘पितर’ शब्द का उपयोग ऋग्वेद, महाभारत एवं पुराणों में मिलता है। प्राचीन भारतीय वाङ्मय में प्राप्त ‘पितरों’ की यह कल्पना प्राचीन ईरानी वाङ्मय में निर्दिष्ट ‘फ़रेन्शि’ से मिलती जुलती है।

ऋग्वेद में प्राप्त ‘पितृशुक्त’ में पितरों के उत्तम, मध्यम, एवं अधम प्रकार दिये गये हैं (ऋ. १०.१५.१)। ऋग्वेद में निम्नलिखित पितरों का निर्देश प्राप्त है—अंगिरस, वैरूप, अथर्वण, भृगु, नगम्ब, दशम्ब (ऋ. १०.१४.५-६)। इनमें से ‘अंगिरस’ पितर प्रायः यम के साथ रहते थे (ऋ. १०.१४.३-५)। वे अग्नि से (ऋ. १०. ६२.१), एवं आकाश से (ऋ. ४.२.१५) उत्पन्न हुये थे। नगम्ब एवं दशम्ब अंगिरस पितरों के ही उपविभाग थे।

पितरों को सोमरस प्रिय था (ऋ. १०.१५.१)। इन्हें यज्ञ में ‘स्वधा’ कह कर आहुति दी जाती थी। ये कुशासन पर सोते थे (ऋ. १०.१५.५)। अग्नि एवं इंद्र के साथ, ये यज्ञभाग को स्वीकार करने के लिए उपस्थित होते थे (ऋ. १०.१५.१०)।

मृत व्यक्ति की आत्मा, अग्नि के माध्यम से यमलोक में वसे हुये पितरों तक पहुँच जाती थी (ऋ. १०-१६.१-२)। पितरों के इस मार्ग को ‘पितृयाण’ या ‘अचिरादि’ कहते थे (गी. ८.२४-२६)। पितरों का राजा यम था। यम का राज्य ‘माध्यामिक’ (पितृलोक) नामक लोक में स्थित था (निरुक्त ११.१८)। मानवों में पितृलोक पहुँचने वाला, पहिल्या मृतक यम था। इसलिये वह पितृलोक का राजा बना। पितृलोक का यह यमराज स्वर्ग में सर्वोच्च था। तैत्तिरीय ब्राह्मण में भूलोक एवं अंतरिक्ष के साथ, पितृलोक का निर्देश प्राप्त है, एवं उसे तृतीयलोक कहा गया है (तै. ब्रा. १.३.१०.५)। बृहदारण्यकोपनिषद् में भी भूलोक, देवलोक, एवं पितृलोक ऐसे तीन लोकों का निर्देश प्राप्त है (बृ. उ. १.५.१६)।

शतपथ ब्राह्मण में, पितरों के सोमवन्त, बर्हिषद्, एवं अग्निष्वात्, ऐसे तीन प्रकार दिये गये हैं (श. ब्रा. २.६. १.७)। उस ग्रन्थ के अनुसार, ‘सोमयज्ञ,’ ‘चरुयज्ञ,’ एवं ‘सामान्ययज्ञ’ करनेवाले ध्यात्क मृत्यु के बाद, क्रमशः सोमवन्त, बर्हिषद्, एवं अग्निष्वात् पितर बन जाते हैं।

मनु के अनुसार, पितरों का जन्म ऋषियों से हुआ, एवं उन पितरों से देव एवं मनुष्य जाति का निर्माण हुआ। आगे चल कर, देवों ने चर एवं अचर सृष्टि का निर्माण किया (मनु. ३.२०१)।

वैदिक वाङ्मय में, पितरों को देवों से अलग माना गया है। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, मानववंश के गंधर्व, पितर, देव, सर्प, एवं मनुष्य ये पाँच प्रमुख विभाग थे। उनमें से, देव एवं पितरों से मनुष्यजाति का निर्माण हुआ (ऐ. ब्रा. ३.३१)।

उत्तरकालीन ग्रन्थों में तीन से अधिक पितरों का निर्देश पाया जाता है। ‘नंदिपुराण’ के अनुसार, अग्निष्वात्, बर्हिषद्, काव्य, सुकालिन् ये क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्रों के पितर माने गये हैं। मनुस्मृति में इन चार वर्णों के पितरों के नाम, सोमप, हविर्भुज, आज्यप एवं सुकालिन् दिये गये हैं (मनु. ३.१९३-१९८)। मनु ने अन्य एक स्थान पर, अनग्निदग्ध, अग्निदग्ध, काव्य, बर्हिषद्, अग्निष्वात्, सौम्य इन पितरों को ब्राह्मणों के पितर कहा है (मनु. ३.१९९)।

पुराणों एवं महाभारत में प्रायः सर्वत्र सात पितृ-गणों का निर्देश प्राप्त है। स्कंदपुराण में नौ पितृगणों का निर्देश है, जिनके नाम इस प्रकार हैं—अग्निष्वात्,

बर्हिषद्, आच्यप, सोमप, रश्मिप, उपाहृत, अयंतु, श्राद्ध-
भुज, नांदिसुख (स्कंद. ४.२१६.९-१०)। इनमें से
अभिष्वात्, बर्हिषद्, आच्यप एवं सोमप, ये क्रमशः पूर्व,
दक्षिण, पश्चिम तथा उत्तर दिशाओं के रक्षक हैं।

माकंडेय पुराण में पितरों के कुल ३१ गणों का निर्देश
प्राप्त है, जिनके नाम इस प्रकार हैं :— विश्व, विश्वभुज,
आराध्य, धर्म, धन्य, शुभानन, भूतिद, भूतिकृत, भूति,
कल्याण, कल्पताकृत, कल्प, कल्पतराश्रम, कल्पताहेतु,
अनघ, वर, वरेण्य, वरद, पुष्टिद, तुष्टिद, विश्वपातु, धातु,
महत्, महात्मन, महित, महिमावत्, महाबल, मुनद,
धनद, धर्मद, भूतिद। इनमें से शुभ्र, आरक्त, सुवर्ण एवं
कृष्णवर्णीय पितरों की उपासना क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय,
वैश्य, एवं शूद्र करते हैं (मार्क. ९२.९२)।

पितृगणों में से निम्नलिखित पितर, अंगिरस एवं
स्वधा के पुत्र माने जाते हैं :—अभिष्वात्, बर्हिषद्, सौम्य,
आच्यप, सामि, एवं अनमि। दक्षकन्या स्वधा इनकी
पत्नी थी, एवं उससे इन्हें वयुना एवं धारिणी नामक दो
कन्यायें उत्पन्न हुयी थीं (भा. ४.१.६४)।

उत्पत्ति—वायुपुराण में पितरों की उत्पत्ति की कथा
इस प्रकार दी गयी है। कि, सबसे पहले ब्रह्माजी ने देवों
की उत्पत्ति की। आगे चल कर, देवों ने यज्ञ करना बंद
किया। इस कारण क्रुद्ध हो कर, ब्रह्माजी ने देवों को धाप
दिया, 'तुम मूढ़ वनोंगि'। देवों के मूढ़ता के कारण, पृथ्वी
के तीनों लोकों का नाश होने लगा। फिर ब्रह्माजी ने देवों
को अपने पुत्रोंकी शरण में जाने के लिये कहा।

ब्रह्माजी की इस आज्ञा के अनुसार, देवगण अपने
पुत्रों के पास गये। फिर देवपुत्रों ने देवगणों को प्राय-
श्चित्तादि विधि कथन किये। इस उपदेश से संतुष्ट हो
कर, देवगणों ने अपने पुत्रों से कहा, 'यह उपदेश कथन
करनेवाले तुम हमारे साक्षात् 'पितर' ही हो। उस दिन
से समस्त देवपुत्र 'पितर' नाम से सुविख्यात हुये, एवं
स्वर्ग में देव भी उनकी उपासना करने लगे (वायु. २.
१०; ब्रह्मांड. ३.९)। यहाँ पितरः—का प्रयोग 'पाताः'
(संरक्षण करनेवाला) ऐसे अर्थ से किया गया है।

बार्का सारे पुराणों में, पितरों को ब्रह्माजी का मानसपुत्र
कहा गया है (विष्णु. १.५.३३)। पुराणों में निर्दिष्ट
सात पितृगणों को सप्तर्षिको का पुत्र भी, कई जगह कहा
गया है।

प्रियव्रतचपदार्थ—श्राद्ध के समय 'प्राचीनाचीति' कर,
एवं 'स्वाध' कह कर दिया गया अन्न एवं सोम, योगमांग

के द्वारा, पितर भक्षण करते हैं। इन्हें गंडक का मांस,
चावल, यत्, मूँग, गन्ना, सफेद पुष्प, फल, दम, उद्द,
गाय का दूध, घी, शहद आदि पदार्थ विशेष पसंद थे।

इनके अभिय पदार्थों में, मन्त्री, सन एवं सेमी के
बीज, राजमाष, कुलीथ, कमल, बेल, रुई, धनूरा, कडवा,
नीम, अडुलसा, भेड़ बकरियाँ एवं उनका दूध प्रमुख था।
इस कारण, ये सारे पदार्थ 'श्राद्धविधि' के समय निषिद्ध
माना गया है।

मनोविकार—पितरों को लोभ, मोह तथा भय ये विकार
उत्पन्न होते हैं, किंतु शोक नहीं होता। ये जहाँ जी चाहे
वहाँ 'मनोवग' से आ सकते हैं, किंतु अपनी इच्छायें व्यक्त
करने में ये असमर्थ रहते हैं।

हर एक कल्प के अंत में, ये धाप के कारण नष्ट हो
जाते हैं, एवं कल्पारंभ में, उन्नाश के कारण, पुनः जीवित
होते हैं (ब्रह्मांड. ३.९-१०; वायु. ७१.५९-६०; पञ्च.
स. ९; ह. वं. १.१६-१८; मत्स्य. १३-१५; १४१)।

तैत्तिरीय संहिता के अनुसार, 'स्मशानकृति' करने
से हर एक मनुष्य को 'पितृलोक' में प्रवेश प्राप्त हो सकता
है (तै. सं. ५.४.११)। धर्मशास्त्र के अनुसार, पितृकर्म
से देवकार्य श्रेष्ठ माना गया है।

पितृगण—पितरों के गणों के दैवी एवं मानुष ऐसे दो
मुख्य प्रकार थे। इनमें से दैवी पितृगण अमूर्त हो कर
स्वर्ग में ब्रह्माजी के सभा में रहते थे (म. स. ११.४६.)।
वे स्वयं श्रेष्ठ प्रकार के देव हो कर, समस्त देवगणों से
पूजित थे। वे स्वर्ग में रहते थे, एवं अमर थे।

मानुष पितृगण में मनुष्य प्राणियों के मृत पिता, पिता-
मह, एवं प्रपितामह का अन्तर्भाव था। जिनका पुण्य अधिक
हो ऐसे ही 'मृत पितर' मानुष पितृगणों में शामिल हो
सकते थे। इन पितृगणों के पितर प्रायः यमसभा में रहते
थे। सहस्र वर्षों के हर एक नये युग में, इस पितृगण के
सदस्य नया जन्म लेते थे, एवं उनसे नये मनु एवं नये
मनुष्यजाति का निर्माण होता था।

दैवी पितर—इन्हें 'अमूर्त' 'देवदेव' 'मावमूर्ति'
'स्वर्गस्थ' ऐसे आकार, उत्पत्ति, महत्ता एवं वसतिस्थान
दर्शानेवाले अनेक नामांतर प्राप्त थे। ये आकाश से भी
सूक्ष्मस्वरूप थे, एवं परमाणु के उदर में भी रह सकते थे।
फिर भी ये अत्यधिक समर्थ थे। दैवी पितृगण संख्या में
कुल तीन थे, जिनके नाम इस प्रकार हैं—

(१) वैराज—यह पितृगण विरजम् (मृत्यु, सनातन)
नामक स्थान में रहता था। इस पितृगण के लंग ब्रह्माजी

के स्था में रहकर, उनकी उपासना करते थे (म. स. १३३३*) इनकी मानसकन्या मेना थी। दैत्य, यक्ष, राक्षस, किन्नर, गंधर्व, अप्सरा, भूत, पिशाच, सर्प, एवं नाग इनकी उपासना करते थे।

(२) अग्निष्वात्—यह पितृगण वैभ्राज (विरज्ज्) नामक स्थान में रहता था। दैत्य, यक्ष, राक्षसादि इसकी उपासना करते थे।

(३) बर्हिषद्—यह पितृगण दक्षिण दिशा में सोमप (सोमपदा) नामक स्थान में रहता था। इनकी मानसकन्या पीवरी थी।

महाभारत में तृतीय दैवी पितर का नाम एकश्रंग दे कर, बर्हिषद् को मानुष पितर कहा गया है (म. स. ११.३०; १३३३*)

सूत अथवा मानुष पितर—इन्हें 'मूर्त', 'संतानक.' (सांत्निक), सूक्ष्ममूर्ति ऐसे नामांतर भी प्राप्त थे। इन पितृगणों में, निम्नलिखित पितृगणों का समावेश होता है :-

१. हविष्मत् (काव्य)—यह पितृगण मरीचिगर्भ प्रदेश में रहता था। इनकी मानसकन्या गो थी। ब्राह्मण इनकी उपासना करते थे।

२. सुस्वधा (उपहृत)—यह पितृगण कामग (कामधुक्) प्रदेश में रहता था। इनकी मानसकन्या यशोदा थी। क्षत्रिय इनकी उपासना करते थे।

३. आज्यप—यह पितृगण पश्चिम दिशा में मानस (सुमनस्) प्रदेश में रहता था। इनकी उपासना वैश्य करते थे।

४. सोमप—यह पितृगण उत्तर दिशा के सनातन (स्वर्ग) प्रदेश में रहता था। इनकी मानसकन्या नर्मदा थी। शूद्र इनकी उपासना करते थे। महाभारत में, 'मानुषि पितर' नाम से सोमप, बर्हिषद्, गार्हपत्य, चतुर्वेद, तथा इन, चार पितृगणों का निर्देश किया गया है। वहाँ हविष्मत्, सुस्वधा, आज्यप इन पितृगणों का निर्देश अप्राप्य है।

पितृकन्या—पुराणों में अनेक जगह पितरों के वंश (पितृवंश) की विस्तृत जानकारी दी गयी है (धायु. ७२. १-१९; ७३. ७७.३२.७४-७६; ब्रह्मांड. ३.१०.१-२१; ५२-९८; ३.१३.३२; ७६-७९; ह. वं. १.१८; ब्रह्म. ३४.४१-४२; ८१.९३, मत्स्य. १३.२-९; १४.१-१६; पद्म. सू. ९.२-५६; लिं. १.६.५-९; ७०.३३१; ८२.१४-१५; २.४५.८८)

इस जानकारी के अनुसार, सात मुख्य पितरों ने अपने अपने मन से एक एक कन्या ('मानसी कन्या') उत्पन्न की। उन कन्याओं के नाम इस प्रकार थे—मेना, अच्छोदा (सत्यवती), पीवरी, गो, यशोदा, विरजा, नर्मदा। इस कन्याओं की विस्तृत जानकारी पुराणों में प्राप्त है, जो इस प्रकार है—

(१) मेना—इसका विवाह हिमवत पर्वत से हुआ था। इसको मैनाक नामक एक पुत्र, एवं अपर्णा, एकपर्णा, एवं एकपाताला नामक तीन कन्याएँ उत्पन्न हुयी थीं।

मेना की तीन कन्याओं में से, अपर्णा 'देवी उमा' बन गयीं। एकपर्णा ने असित ऋषि से विवाह किया, जिससे उसे देवल नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। एकपाताला का विवाह शतशिल्पक के पुत्र जैमीध्व्य ऋषि से हुआ, जिससे उसे शंख एवं लिखित नामक दो पुत्र हुए।

(२) अच्छोदा—सुविख्यात अच्छोदा नदी यही है। इसने पितरों की आज्ञा अमान्य कर, चेदि देश का राजा वसु एवं अद्रिका नामक अप्सरा के कन्या के रूप में पुनः जन्म लिया, एवं यह नीच जाति की कन्या ('दासेयी') बन गयी इसे काली एवं सत्यवती नामांतर भी प्राप्त थे।

इसे पराशर ऋषि से व्यास नामक एक पुत्र, एवं शंतनु राजा से विचित्रवीर्य, एवं चित्रांगद नामक दो पुत्र हुये।

(३) पीवरी—इसका विवाह व्यास ऋषि के पुत्र शुक्राचार्य से हुआ था। उससे इसे कृष्ण, गौर, प्रभु, शंसु एवं भूरिश्रुत ऐसे पाँच पुत्र, एवं कीर्तिमती (कृन्वी) नामक एक कन्या उत्पन्न हुयी (ब्रह्मांड. ३.१०.८०-८१)।

पीवरी की कन्या कीर्तिमती का विवाह अनुह राजा से हो कर, उससे कीर्तिमती को ब्रह्मदत्त नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

(४) गो—इसे 'एकशृंगा' नामांतर भी प्राप्त था। इसका विवाह शुक्राचार्य से हो कर, उससे इसे सुविख्यात 'भृगु' वंश की स्थापना करनेवाले पुत्र उत्पन्न हुये।

(५) यशोदा—इसका विवाह अयोध्या के राजा वृद्धशर्मन् (विश्वशर्मन्) के पुत्र विश्वमहत् (विश्वसह) राजा से हुआ, जिससे इसे दिलीप द्वितीय (खट्वांग) नामक पुत्र हुआ।

(६) विरजा—इसका विवाह सुविख्यात सोमवंशीय राजा नहुष से हो कर, उससे इसे ययाति नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

(७) नर्मदा—इसका विवाह अयोध्या के राजा पुरुकुन्स से हो कर, उससे इसे त्रसदस्यु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। कई उत्तरकालीन, ग्रंथों में, नर्मदा को 'नदी' कहा गया है, एवं उसका सुविख्यात नर्मदा नदी से एकान्त स्थापित किया गया है (मत्स्य. १५. २८)।

इनके सिवा निम्नलिखित पितृकन्याओं का निर्देश पुराणों में प्राप्त है:—

१. कुन्वी (कीर्तिमती) अणु ह. पत्नी (ह. वं. १ २३. ६) २. एकपर्णा, ३. एकशाताला, ४. अर्पणा (उमा)।

'पितृकन्या' कथा का अन्यार्थ—पार्मिटर के अनुसार, पितृकन्याओं के बारे में पुराणों में दी गयी सारी जानकारी, इतिहास एवं काल्पनिक रम्यता के संमिश्रण से बनी है। पुराणों में निर्दिष्ट पितृकन्याओं में, विरजा (वायु. ९३. १२), यशोदा (वायु ८८. १८१-१८२), कुन्वी, (कीर्तिमती) ये तीन प्रमुख हैं। इनके पतियों के नाम क्रमशः नहुष, विश्वमहत् एवं अनुह हैं। ये तीनों कन्याएँ एवं उनके पतियों का आपस में बहन भाई का रिश्ता था। अपने बहनों (पिता की कन्याओं) से नहुष, विश्वमहत्, एवं अनुह ने विवाह किया। इस कारण इन कन्याओं को 'पितृकन्या' (पिता की कन्या) नाम प्राप्त हुये। पितृकन्या के इस ऐतिहासिक अर्थ को त्याग कर, 'पितरों की कन्या' यह नया अर्थ पुराणों ने प्रदान किया है। भाई एवं बहन का विवाह निषिद्ध मानने के कारण, यह अर्थान्तर पुराणों द्वारा स्थापित किया गया होगा।

पुरुकुन्स (नर्मदा), शुक्र (गो), शुक्र (पीवर) इन राजाओं ने भी शायद अपने बहनों के साथ शादी की होगी। पितृकन्याओं में से मेना काल्पनिक प्रतीत होती है। मेना की कन्याओं में से, एकशाताला, एकपर्णा, एवं अर्पणा ये तीनों नाम वस्तुतः उमा (देवी पार्वती) के ही पर्यायवाची शब्द हैं (पार्मि. ६९-७०)।

पितृवंश—ब्रह्मांड पुराण में, अग्निष्वात्स एवं बर्हिषद इन दो पितरों के (ब्रह्मांड. २. १३. २९-४३) वंश की विस्तृत जानकारी दी गयी है। पुराणों के अनुसार, 'मैयुज' मानवों संतति का निर्माण चाशुप दक्ष से हुआ था। स्वायंभुव दक्ष के पूर्वकालीन मानव-वंश की जानकारी अग्निष्वात्स एवं बर्हिषद पितरों के वंशावलि में प्राप्त है, जिस कारण, 'ब्रह्मांडपुराण' में प्राप्त पितृवंश की जानकारी नितांत महत्वपूर्ण प्रतीत होती है।

ब्रह्मांड के पुराण के अनुसार, अग्नि एवं बर्हिषद इन दो पितरों को स्वधा से क्रमशः 'मेना' एवं 'धारणी' नामक दो कन्याएँ उत्पन्न हुईं। इनमें से मेना का विवाह हिमवत् से हो कर, उससे मैनाक नामक पुत्र हुआ। धारणी का विवाह मेरु से हो कर, उससे उसे मेदर नामक पुत्र, एवं वेला, नियति, तथा आयति नामक तीन कन्याएँ उत्पन्न हुईं।

इनमें से वेला का विवाह समुद्र से हुआ, एवं उससे उसे सवर्णा नामक कन्या उत्पन्न हुयी। सवर्णा का विवाह प्राचीनबर्हि से हो कर, उससे उता प्रचेतम् नामक दस पुत्र हुये। प्रचेतम् को स्वायंभुव दक्ष नामक पुत्र था, जिसके पुत्र का नाम चाशुप दक्ष था। उसी स्वायंभुव एवं चाशुप दक्ष से आगे चलकर 'मैयुज' अर्थात् मानवी सृष्टि का, निर्माण हुआ।

पितामह— एक स्मृतिकार। एक प्राचीन धर्मशास्त्रकार के नाते से, इसका निर्देश 'बृहदारण्यकस्मृति' में किया गया है।

इसके 'शौच' विषयक अभिमतों का निर्देश विश्वरूप ने किया है (याज्ञ. १-१७)। 'मिताक्षरा' एवं 'अरार्क' में, पितामह के व्यवहारशास्त्र, आहिक एवं श्राद्धसंबंधी मतों का उद्धरण प्राप्त है। 'स्मृतिचंद्रिका' में भी, इसके व्यवहार एवं श्राद्धविषयक दस श्लोकों का उद्धरण लिखा गया है।

'पितामहस्मृति' में विवेकः 'व्यवहारशास्त्र' का विचार किया गया है। पितामह के अनुसार, वेद, वेदांग, मीमांसा, स्मृति, पुराण, एवं न्याय ये सार ग्रंथ मिला कर 'धर्मशास्त्र' का रूप निर्धारित करते हैं (पिता. मू. ६०१)। इसकी स्मृति में, 'क्रयपत्र', 'स्थितिपत्र' 'समाधिपत्र' 'विशुद्धिपत्र' आदि 'दस्तावेजों' की व्याख्या प्राप्त है। राजा के न्यायसभा में आवश्यक सेवकों एवं वस्तुओं की नामावलि पितामह ने दी है, जो इस प्रकार है:—लेखक, गणक, शास्त्रज्ञ, साध्व्याल, सभासद, हिरण्य, अग्नि, एवं उदक।

किन्हीं दो व्यक्तियों में विवाद होने पर, सर्वप्रथम ग्रामपंचायत के ज्ञानने उसका निर्णय होना चाहिये, ऐसा पितामह का मत है। उसके बाद, 'नगरसभा' एवं अन्त में राजा के सामने; इस क्रम से विवाद का निर्णय होना आवश्यक है, ऐसा इसने लिखा है।

पितामह की स्मृति में, 'बृहदारण्यकस्मृति' का निर्देश प्राप्त है। इस निर्देश के कारण, पितामह का काल

चौथी से सातवीं ईसवी के बीच माना जाता है।

पितृ— दक्षकन्या स्वधा का पति। इसे 'पितर' नामांतर भी प्राप्त है (पितर देखिये)।

पितृवर्तिन्—कुरुक्षेत्र के कौशिक ब्राह्मण के सात पुत्रों में से कनिष्ठ पुत्र। इसके स्वसृप (स्वसृप), कोचन, हिस, पिशुन, कवि और वापुष्ट्र आदि भाई थे। ये सातों भाई गर्ग ऋषि के शिष्य बन कर रहे थे। हरिवंश के अनुसार, कौशिक विश्वामित्र नामक इनके पिता ने इन्हें शाप दिया, तपश्चात् यह एवं इसके भाई गर्ग ऋषि के शिष्य बने।

पिता के पश्चात् इन्हें बड़ा कष्ट सहना पड़ा। एक दिन सातों भाई गर्ग की कपिला नामक गाय को उसके बछड़े के साथ अरण्य में ले गये। वहाँ क्षुधाशान्ति के हेतु, इसके भाइयों ने गाय को मार कर खाने की योजना बनायी। कवि तथा स्वसृप ने इसका विरोध किया, परन्तु श्राद्धकर्मनिपुण पितृवर्तिन् ने कहा, 'अगर गोबध करना ही है, तो पितृ के श्राद्ध के हेतु करो, जिससे गाय को भी सद्गति मिले और हम लोगों को पाप न भुगतना पड़े'।

इसका कथन सब को मान्य हुआ। दो भाइयों को देवस्थान पर, तीन को पितृस्थान पर, तथा एक को अतिथि के रूप में बैठाया, एवं स्वयं को यजमान बनाकर, पितृवर्तिन् ने गाय का 'प्रोक्षण' किया। संख्या के समय गर्गाश्रम में वापस आने के बाद, बछड़ा गुरु को सांग कर, इन्होंने बताया, कि 'वेनु व्याघ्र द्वारा भक्षित की गयी'।

कालांतर में इन सातों वन्धुओं की मृत्यु हो गयी। क्रूरकर्म करने, तथा गुरु से असत्य भाषण करने के कारण, इन लोगों का जन्म व्याधकुल में हुआ। इस योनि में इनके नाम निर्वैर, निर्द्वैत, शान्त, निर्मन्यु, कृति, वैषस तथा मातृवर्तिन् थे। पूर्वजन्म में किये पितृवर्षण के कारण, इस जन्म में, ये 'जातिस्मर' बन गये थे। मातृपितृभक्ति में वैराग्यपूर्वक काल बिता कर, इनकी मृत्यु हुयी। मृत्यु के पश्चात् इन्हें कालंजर पर्वत पर मृगयोनि प्राप्त हुयी।

मृगयोनि में इनके नाम निम्नलिखित थे:--उन्मुल, नित्यविव्रस्त, स्तब्धकर्ण, विलोचन, पंडित, वस्मर तथा नादिन् कहा जाता है। कहा जाता है, अभी तक कालंजर पर्वत पर इनके पदचिह्न दिखाई पड़ते हैं। यह कालंजर पर्वत, वर्तमान बुंदेलखण्ड के आंदा जिले में बदायिना तहसील में स्थित, कालंजर ही होगा।

तीसरे जन्म में, ये शरद्वीप में चक्रवाक पक्षी बने। इस जन्म में, इनके नाम इस प्रकार थे:--निसृह, निर्मम, खांत, निर्द्वन्द्व, निष्परिग्रह, निर्वृत्ति तथा निभृत (ह. वं. १.२१.३१)। पद्मपुराण में, इनके नाम इस प्रकार दिये गये हैं:--सुमना, कुसुम, वसु, चित्तदर्शी, सुदर्शी, शाता तथा ज्ञानधारण (पद्म. सू. १०)। मत्स्यपुराण के अनुसार, मृगयोनि में इनके नाम इस प्रकार थे:--सुमन्, कुसुद, शुद्ध, छिद्रदर्शी, सुनेत्रक, सुनेत्र तथा अंशुमान् (मत्स्य. २०.१८)।

चौथे जन्म में ये मानससरोवर पर हंस पक्षी हुये। उस समय के इनके नाम हरिवंश में प्राप्त हैं, पर वहाँ भिन्न भिन्न अध्यायों में भिन्न भिन्न नाम दिये गये हैं। एक स्थान पर उनके नाम इस प्रकार हैं:--सुमना, सुचियाच, शुद्ध, पंचम, छिद्रप्रदर्शन, सुनेत्र तथा स्वतंत्र। अन्य स्थान पर वे इस प्रकार प्राप्त हैं:--पद्मगर्भ, अरविदाक्ष, क्षीरगर्भ, सुलोचना, उरविन्दु, सुविन्दु तथा हेमगर्भ। पद्मपुराण तथा मत्स्यपुराण में 'हंसयोनि' नहीं दी गयी है, परन्तु उन पुराणों के 'चक्रवाकयोनि' में दिये गये नामों में, तथा हरिवंश में 'हंसयोनि' के प्रथम दिये गये सात नामों में अत्यधिक साम्य है।

एक बार ये सातों वन्धु मानससरोवर पर तपश्चर्या कर रहे थे। तत्र कांपिल्य नगर का पुष्कलोत्पन्न नीप राजा 'विभ्राज' अपने पत्नी के सहित वहाँ आया, एवं सरोवर में क्रीड़ा करने लगा। पद्मपुराण में इसी राजा का नाम 'अणुह' दिया गया है। राजा का ऐश्वर्य देख कर, स्वतंत्र (पितृवर्तिन्), छिद्रदर्शन (कवि), तथा सुनेत्र (स्वसृप) के मन में ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिए लिप्सा जायत हुयी। फिर अन्य भाइयों ने क्रुद्ध हो कर इन तीन भाइयों को शाप दिया।

इस शाप के कारण, स्वतंत्र (पितृवर्तिन्) अगले जन्म में विभ्राज राजा के कुल में जन्म लेने को विवश हुआ। विभ्राज राजा का पुत्र अणुह एवं उसकी पत्नी कृत्वी के कोल में, इसने ब्रह्मदत्त नाम से जन्म लिया।

इन सातों वन्धुओं द्वारा बध की गयी कपिला, नये जन्म में सन्नति नाम से देवल ऋषि की कन्या, एवं ब्रह्मदत्त की पत्नी बनी। उसे ब्रह्मदत्त से विष्वक्सेन नामक पुत्र हुआ। यह पुत्र पूर्वजन्म में स्वयं राजा विभ्राज ही था। ब्रह्मदत्त वेदवेदांगों में निपुण था, एवं उसको समस्त प्राणीजाति की भाषाओं का ज्ञान था (ब्रह्मदत्त देखिये)।

पूर्वोक्त द्राप के ही कारण, स्वतंत्र (पितृवर्तिन्) के अन्य दो भाई छिद्रदर्शन तथा सुनेत्र ने पांचाल (पांचाल्य, पांचिक) एवं कंडरीक नाम से वत्स तथा बाभ्रव्य वंश में जन्म लिया एवं वे ब्रह्मदत्त के मित्र बने। इनके नाम पद्मपुराण में 'मुंडलीक' तथा 'सुवालक,' तथा मत्स्यपुराण में 'कंडरीक' तथा 'सुवालक' दिये गये हैं, एवं उन्हें ब्रह्मदत्त के मंत्री का पुत्र कहा गया है।

उन दो भाइयों में से पांचाल (कवि) ऋग्वेद में प्रवीण था, तथा उसने ब्रह्मदत्त का आचार्यत्व स्वीकार किया। पश्चात् पांचाल ने वेदों का क्रम लगाया तथा 'शिक्षा' नामक ग्रन्थ का निर्माण करके, 'योमाचार्य' की पदवी प्राप्त की। कण्डरीक सामवेद तथा यजुर्वेद में निष्णात था, तथा उसने ब्रह्मदत्त का छंदोगोत्र तथा अध्वर्युत्व स्वीकार किया।

बचे हुये चारों वंशुओं ने एक दरिद्री ब्राह्मण के घर में, धृतिमान्, ध्रुमनस्, विद्वान् तथा सत्यदर्शी नामों से जन्म लिया। मत्स्यपुराण में, उनके नाम धृतिमान्, तत्वदर्शी, विद्याचण्ड तथा तपोलुक प्राप्त हैं। बाद में, उन ब्राह्मण-पुत्रों ने अरण्य में तपश्चर्या करने का निश्चय किया, एवं उस कार्य के लिये, उन्होंने अपने वृद्ध पिता से अनुमति माँगी। किंतु वृद्ध पिता ने, उसे इन्कार कर दिया। तब इन्होंने अपने पिता की उपजीविका के लिये ब्रह्मदत्त राजा के पास जाने के लिये कहा। वहाँ निम्न-लिखित श्लोक कहने के लिये कह कर, वे वंशु स्वयं अरण्य में चले गये:—

ससन्वाधा दशार्णेषु, सृगाः कालिजरे गिरौ ॥
चक्रवाकाः शरद्वीपे, हंसाः सरसि मानसे ॥ १ ॥
तेऽभिजाताः कुरुक्षेत्रे, ब्राह्मणा वेदपारगाः ॥
प्रस्थिता द्वीर्धमध्वानः, यूगं किमवस्तीदध ॥ २ ॥

भिन्न भिन्न स्थानों में ये श्लोक भिन्न भिन्न तरह से दिये गये हैं। किंतु सर्वत्र उनका अर्थ एक ही है।

जैसे ही ब्राह्मण ने ये श्लोक ब्रह्मदत्त के यहाँ जा कर कहे, वैसे ही ब्रह्मदत्त, पांचाल्य, तथा कण्डरीक को अपने पूर्वजन्म का स्मरण हो आया, तथा वे मुर्च्छित हो कर गिर पड़े। बाद में, ब्रह्मदत्त ने उस ब्राह्मण को विदुल धन दिया, तथा विष्वक्सेन का राज्यभिक्षे कर, अपनी पत्नी तथा प्रधान के साथ तपश्चर्या करने चला गया।

इन सात बन्धुओं ने जो विवाचन किया, उसके कारण इन्हें अगले सभी जन्मों में अपने पूर्व ब्राह्मण-जन्म का ज्ञान रहा, एवं वे उन्नततम तपस्या करते रहे। इस तपस्या

के फलस्वरूप ही, इन्हें उत्तरोत्तर उच्च जन्म की प्राप्ति होती रही, तथा अन्त में इन्हें मोक्ष प्राप्त हुआ। मोक्ष प्राप्ति के पूर्व, इन्हें जो योगि प्राप्त हुये, एवं इन्हें जो नामांतर मिलते रहे, वे इनके पूर्वसंचित पुण्यकर्मों के कारण ही प्राप्त हुए थे। किन्तु पुराणों में इनके सारे जन्मों का, एवं इन्हे प्राप्त हुए सारे नामों की पूरी जानकारी प्राप्त नहीं है। सभी पुराणों में इस बारे में एकवाक्यता भी नहीं है; तथा कहीं कहीं कथनों को दोहराया भी गया है।

पितृवर्तिन् की उपर्युक्त कथा मार्कंडेय ऋषि ने मीमाचार्य को सुनायी थी। श्राद्धकर्म के समय, इन कौशिकपुत्रों के पहले निर्दिष्ट किये श्लोकों का पठन किया जाता है (ह. वं १.२१-२४; मत्स्य. २०-२१; पद्म. सू. १०)।

पितृवर्धन— (सो.) एक राजा। भविष्य के अनुसार श्राद्धदेव का पुत्र था।

पिनाकिन्— ग्यारह वंशों में से एक (म. आ. ६०. २; म. शां. २०१.१९)। यह ब्रह्माजी के पुत्र, तथा स्थाणु का पुत्र था। अर्जुन के जन्मकाल में यह उपस्थित था (म. आ. ११४.१७)।

२. भगवान् शिव का मामांतर। भगवान् शिव का पिनाक नामक धनुष था, जिसके कारण उसे पिनाकिन् नाम प्राप्त हुआ। इसने त्रिपुरासुर को भंग कर, उससे शशमण्डल का राज्य जीत लिया (भवि. प्रति. ३. ८)

महाभारत के अनुसार, भगवान् शंकर का विशल उसके पाणि (हाथ) से आनत होकर (मुड़कर) धनुषाकृति बन गया। इस कारण, उस धनुष को 'पिनाक' एवं उसके धारण करनेवाले शिव को 'पिनाकिन्' नाम प्राप्त हुआ (म. शां. २७८.१८ (२८९.१७-१८ नीलकंठ टीका)।

पिप्पल— मित्र नामक आदित्य एवं रेवती के तीन पुत्रों में से कनिष्ठ पुत्र (म. ६. १८. ६)।

२. एक ब्राह्मणभक्षक राक्षस, जो अगत्य ऋषि के द्वादशवर्षीय सत्र के समय लोगों को त्रस्त करता था।

३. एक कश्यप कुलोत्पन्न ब्राह्मण। उन्नततपस्या के कारण इसका अहंकार काफी बढ़ गया था। पर, एक बार माता-पिता की सेवा करके सर्वव्ययता प्राप्त करनेवाले सुकर्मन् ऋषि को देखकर इसका अहंकार जाता रहा (पद्म. भू. ६१-६३; ८४; सुकर्मन् देखिये)।

पिप्पलाद— उपनिषद्कालीन एक महान् ऋषि। एवं अथर्व वेद का सर्व प्रथम संकलनकर्ता। यह व्यास की अथर्वन् शिष्य परम्परा में से देवदर्श (वेददर्श) का शिष्य था (व्यास देखिये, ब्रह्म. उ. १)। पिप्पलाद का शब्दार्थ, पीपल के फल खाकर जीनेवाला (पिप्पल+अद्) होता है।

अथर्ववेद की पिप्पलाद नामक एक शाखा उपलब्ध है। इस शाखा का प्रवर्तक शात्रुघ्न मही होगा।

इसके माता-पिता के नाम के बारे में, भिन्न-भिन्न जानकारी प्राप्त है। दधीचि ऋषि को प्रातिथेयी (वडवा अथवा गम्भीरिनी) नामक पत्नी से यह उत्पन्न हुआ। किन्तु कई ग्रंथों में इसके माता का नाम सुवर्णा अथवा सुमद्रा दिया गया है। इनमें से सुमद्रा दधीचि ऋषि की दासी थी। सम्भवतः यह दधीचि का दासीपुत्र था।

अन्य कई ग्रंथों में, इसे याज्ञवल्क्य एवं उसकी बहन का पुत्र कहा गया है। फिर भी यह दधीचि ऋषि के पुत्र के रूप में विख्यात है।

दधीचि की मृत्यु के समय, उसकी पत्नी प्रातिथेयी गम्भीरिनी थी। अपने पति की मृत्यु का समाचार सुनकर उसने उदरविदारण कर अपना गर्भ बाहर निकाला तथा उसे पीपल वृक्ष के नीचे रखकर, दधीचि के शव के साथ सती हो गयी। उस गर्भ की रक्षा पीपल वृक्ष ने की। इस कारण इस बालक को पिप्पलाद नाम प्राप्त हुआ।

पशु-पक्षियों ने इसकी रक्षा की, तथा सोम ने इसे सारी विद्याओं में पारंगत कराया। बाल्यकाल में मिले हुए कष्टों का कारण, शनि ग्रह को मानकर, इसने उसे नीचे गिराया। त्रस्त होकर शनि इसकी शरण में आया। इसने शनिग्रह को इस शर्त पर छोड़ा कि, वह बारहवर्ष से कम आयु वाले बालकों को तकलीफ न दे। कई ग्रंथों में बारह वर्ष के स्थान पर सोलह वर्ष का निर्देश भी प्राप्त है। इसीलिये आज भी शनि की पीड़ा से छुटकारा पाने के लिए पिप्पलाद, गाधि एवं कौशिक ऋषियों का स्मरण किया जाता है (शिव. शत. २४-२५)।

एक बार अपने पिता पर क्रोधित होकर इसने एक कृत्या का निर्माण कर, उसे याज्ञवल्क्य पर छोड़ा। याज्ञवल्क्य शंकर की शरण में गया। इस कृत्या का नाश किया तथा याज्ञवल्क्य एवं पिप्पलाद में मित्रता स्थापित करायी (स्कन्द. ५.३. ४२)।

यही कथा ब्रह्मपुराण में कुछ अलग ढंग से दी गयी है। अपनी माता-पिता की मृत्यु का कारण देवताओं को

मानकर, उनसे बदला लेने के लिए इसने शंकर की आराधना की, तथा एक कृत्या का निर्माण करके उसे देवों पर छोड़ा। यह देखकर शंकर ने मध्यस्थ होकर देवों तथा इसके बीच मित्रता स्थापित करायी। बाद में, अपनी माता-पिता को देखने की इच्छा उत्पन्न होने के कारण, देवों ने स्वर्ग में इसे दधीचि के पास पहुँचाया। दधीचि इसे देखकर प्रसन्न हुआ तथा इससे विवाह करने के लिए आग्रह किया। स्वर्ग से वापस आकर इसने गौतम की कन्या से विवाह किया (ब्रह्म. ११०.२२५)।

एकवार, जब यह पुष्पभद्रा नदी में स्नान करने जा रहा था, तब वहाँ अनरण्य राजा की कन्या पद्मा को देखकर इसने उसकी मोग की। शापभय से अनरण्य राजा ने अपनी कन्या इसे प्रदान की। जिससे इसे दस पुत्र हुये (शिव. शत. २४-२५)।

दधीचि के देहत्याग के स्थान पर कामधेनु ने अपनी दुग्धशारा छोड़ी। इसीसे इस स्थान को 'दुग्धेश्वर' कहते थे। यहाँ पिप्पलाद तपश्चर्या करता था। एकवार जब यह अपनी तपस्या में निमग्न था तब वहाँ कोलामुर आकर इसका ध्यानभंग करने के हेतु इसे पीड़ित करने लगा। तत्काल, इसके पुत्र कहोड़ ने एक कृत्या का निर्माण करके उससे कोलामुर का वचन कराया। इसी से इस स्थान को 'पिप्पलादतीर्थ' नाम प्राप्त हुआ (पद्म. उ. १५५, १५७)।

नर्मदा-तट पर इसने तपस्या की थी। इसी से उस स्थान को 'पिप्पलाद-तीर्थ' कहते हैं (स्कन्द. ५.३.४२)।

शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म के पास अन्य ऋषिगणों के साथ यह भी वहाँ आया था (म. शा. ४७.६६ पंक्ति ६)।

पैप्पलाद संहिता—अथर्ववेद की कुल दो संहितायें उपलब्ध हैं। उनमें से एक की रचना शौनक ने की है, एवं दूसरी का रचयिता पिप्पलाद है। पिप्पलाद विरचित अथर्ववेद की संहिता 'पैप्पलाद संहिता' नाम से प्रसिद्ध है। यह संहिता बीस काण्डों की है, तथा उस संहिता का प्रथम मंत्र 'शन्नो देवीः' है। पतंजलि के व्याकरण महाभाष्य में एवं ब्रह्मयज्ञान्तर्गत तर्पण में, इसी मंत्र का उद्धरण प्राप्त है। विहटने के अनुसार, 'पैप्पलाद संहिता' में 'शौनक संहिता' की अपेक्षा, 'ब्राह्मण पाठ' अधिक हैं, तथा अभिन्नारदि कर्म भी अधिक दिये गये हैं। (विहटने कृत अथर्ववेद अनुवाद-प्रस्तावना पृ. ८०)।

अथर्ववेदसंहिता का संकलन करते समय पिप्पलाद ने ऐन्द्रजातिक मंत्रों का संग्रह किया था। कुछ दिनों बाद पैप्पलाद शाखा के नौ खण्ड हुये जिनमें शौनक तथा पैप्पलाद (काश्मीरी) प्रमुख थे। अथर्ववेद के पैप्पलाद शाखा के मूलाष्ट को शार्वे तथा व्युत्पत्तीसुड ने हस्तलिपि के फोटो-चित्रों में सम्पादित किया है, जिसका कुछ अंश प्रकाशित भी हो चुका है।

अन्यग्रंथ—पिप्पलाद का 'पैप्पलाद ब्राह्मण' नामक एक ब्राह्मणग्रंथ उपलब्ध है, जिसके आठ अध्याय हैं। उसके अतिरिक्त 'पिप्पलाद श्राद्धकल्प' एवं 'अगस्त्य कल्पसूत्र' नामक पिप्पलादशाखा के और दो ग्रंथ भी उपलब्ध हैं।

तत्त्वज्ञान—प्रश्नोपनिषद् में एक तत्त्वज्ञानी के नाते इसका निर्देश प्राप्त है। मोक्ष शास्त्र को पैप्पलाद कहने की प्रथा थी (गर्भोपनिषद्)।

प्रश्नोपनिषद्, अथर्ववेद का एक उपनिषद् है। पिप्पलाद के पास सुकेशा भारद्वाज, शैव्य सत्यकाम, सौर्यायणि गार्ग्य, कौसल्य आश्वलायन, भार्गव वैदर्भी तथा कर्बधिन कात्यायन आदि ऋषि ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने आये थे। उन्हें एक वर्ष तक आश्रम में रहने के बाद, प्रश्न पूछने की अनुज्ञा प्राप्त हुयी। उन्होंने जिस क्रम से प्रश्न पूछे वह ब्रह्मज्ञान की स्वरूपता समझने के लिये पर्याप्त हैं।

कर्बधिन कात्यायन ने प्रथम प्रश्न किया, 'किस मूलतत्त्व से सृष्टि पैदा हुयी?' पिप्पलाद ने कहा, 'प्रजापति ने 'रयि' (अचतन) एवं प्रणां (चेतन) के मिथुन से सृष्टि का निर्माण किया।'

भार्गव वैदर्भी ने दूसरा प्रश्न किया 'उत्पन्न सृष्टि की धारणा किन देवताओं द्वारा होती है। पिप्पलाद ने उत्तर दिया, 'प्राण देवता द्वारा सृष्टि की धारणा होती है'।

कौसल्य आश्वलायन ने तीसरा प्रश्न किया 'प्राण की उत्पत्ति कैसे होती है? पिप्पलाद ने उत्तर दिया, 'आत्मा से'।

सौर्यायणि गार्ग्य ने चौथा प्रश्न किया 'स्वप्न में जाग्रत तथा निद्रित कौन रहता हैं?' उत्तर मिला, 'निद्रा में आत्मा केवल जाग्रत रहती है, शेष सब निद्रा में विलीन हो जाते हैं।

शैव्य सत्यकाम ने पाचवाँ प्रश्न किया, 'प्रणव का ध्यान करने से मानव की इच्छा कहाँ तक सफल होती है?' उत्तर मिला, "सदैव प्रणव ध्यान करनेवाला मनुष्य आत्मज्ञान प्राप्त कर अमरता को प्राप्त होता है।"

सुकेशा भारद्वाज ने छठौं प्रश्न किया, 'पोडा कल पुरुष' (परमात्मा) का रूप क्या है? पिप्पलाद ने उत्तर दिया, "वह हर एक व्यक्ति के शरीर में निवास करता है, जिसके कारण वह सर्वव्यापी है। वहती गंगा जिस प्रकार समुद्र में विलीन हो जाती है उसी प्रकार समस्त सृष्टि उसी में विलीन हो जाती है। केवल पुरुष शेष रहता है। इस ज्ञान की प्राप्ति पर मानव को अमरता प्राप्त होती है। वही परब्रह्म है।"

इन छै संवादों में पिप्पलाद द्वारा व्यक्त किये गये विचारों में उनके क्रमबद्ध तत्त्वज्ञान का प्रत्यक्ष परिचय प्राप्त है।

२. परिक्षित् राजा के पास आया हुआ एक ऋषि (भा. १.१९.१०)।

पिप्पलायन—(स्वा. प्रिय.) एक भगवद्भक्त राजा। ऋषभ देवों द्वारा जयंती नामक स्त्री से उत्पन्न नौ सिद्धपुत्रों में से एक (भा. ५.४.११; १.१.३.३५)।

पिप्पल्य—कश्यपकुल का एक गोत्रकार।

पिपु—वैदिक कालीन एक असुर राजा, एवं इंद्र का शत्रु। ऋजिथन् ऋषि के लिए इंद्रने इसको कई बार पराजित किया था (ऋ. १.१०१.१-२; ४.१६.१३; ५.२९.११; ६.२०.७)।

यह अनेक दुर्गों का स्वामी था (ऋ. १.५१.५)। यह दास था (ऋ. ८.३२.२); एवं काली संतानवाले तथा काली जाति के लोग इसके निव्र थे।

रौथ के अनुसार, यह एक दानव था (सेन्ट पीटर्सबर्ग कोश)। लुडविग इसे 'मानवशत्रु' मानते हैं। 'पिपु' का शब्दार्थ 'प्रतिरोधक' होता है।

पिलि—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

पिशंग—वैदिककालीन एक ऋषि। पञ्चविंश ब्राह्मण के अनुसार, समोत्सव करने वाले दो 'उत्प्रेतृ' पुरोहितों में से यह एक था (पं. ब्रा. २.५.१.३)।

२. धृतराष्ट्रकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में जलकर मर गया था।

३. मणिवर एवं देवजनी के 'गुह्यक' पुत्रों में से एक (मणिवर देखिये)।

पिशाच—दानवों का एक लोकसमूह। ये लोग उत्तर-पश्चिम सीमा प्रदेश, दार्दिस्थान, चिचल आदि प्रदेशों में रहते थे। काफिरिस्थान के दक्षिण की ओर एवं लमगान (प्राचीन-लम्बाक) प्रदेश के समीप रहने वाले, आधुनिक 'पशाई-काश्मिर' लोग सम्भवतः यही

हैं। ग्रिग्रवन ने भी ध्वनिशास्त्र की दृष्टि से इस मत को समीचीन माना है। (पिशाच, ज. रॉ. ए. सो. १९५०; २९५-२८८)

‘पिशाच’ का शब्दार्थ ‘कच्चा माँस का भक्षण करने वाला है’। अथर्ववेद के अनुसार, इन लोगों में कच्चे माँस के भक्षण करने की प्रथा थी, इस कारण इन्हें पिशाच नाम प्राप्त हुआ (अ. वे. ५. २९. ९)। वैदिक बाह्य में निर्दिष्ट दैत्य एवं दानवों का उत्तर-कालीन विकृत रूप पिशाच है। पिशाचों का अर्थ सम्भवतः ‘वैताल’ अथवा ‘प्रेतभक्षक’ था।

अथर्ववेद में दानवों के रूप में इसका नाम कई बार आया है (अ. वे. २. १८. ४; ४. २०. ६-९; ३६. ४; ३७. १०; ५. २९. ४-१०; १४; ६. ३२. २; ८. २. १२; १२. १. ५०)। इन लोगों का निर्देश ऋग्वेद में ‘पिशाचि’ नाम से किया गया है (ऋ. १. १३३. ५)। राक्षसों तथा असुरों के साथी मनुष्य एवं पितरों के विरोधी लोगों के रूप में इनका निर्देश वैदिक साहित्य में स्थान स्थान पर हुआ है (तै. सं. २. ४; १. १; का. सं. ३७-१४) किन्तु कहीं कहीं इनका उल्लेख मानव रूप में भी हुआ है। कुछ भी हो यह लोग संस्कारों से हीन व क्रूर थे और इसी कारण यह सदैव घृणित दृष्टि से देखे जाते थे। उत्तर पश्चिमी प्रदेश में रहने वाले अन्य जातियों के समान ये भी वैदिक आर्य लोगों के शत्रु थे। सम्भवतः मानव माँस भक्षण की परंपरा इनमें काफी दिनों तक प्रचलित रही।

ब्राह्मण ग्रन्थों के अनुसार, इन लोगों में, ‘पिशाच-वेद’ अथवा ‘पिशाचविद्या’ नामक एक वैज्ञानिक विद्या प्रचलित थी (गो. ब्रा. १. १. १०; आश्र. श्री. सू. १०. ७. ६)। अथर्ववेद की एक उपशाखा ‘पिशाचवेद’ नाम से भी उपलब्ध है (गो. ब्रा. १. १०)।

ब्रह्मपुराण के अनुसार, पिशाच लोगों को गंधर्व, गुहक, राक्षस के समान एक ‘देवयोनिविशेष’ कहा गया है। सामर्थ्य की दृष्टि से, इन्हे क्रमानुसार इस प्रकार रखा गया है—गंधर्व, गुहक, राक्षस एवं पिशाच। ये चारों लोग विभिन्न प्रकार से मनुष्य जाति को पीड़ा देते हैं—यक्ष गंधर्व ‘दृष्टि’ से, राक्षस शरीरप्रवेश से एवं पिशाच रोगसदृश पीड़ा उपग्रह करके। ये सारे लोग पुलस्त्य, पुलह एवं अगस्त्य वंशोत्पन्न थे। इनमें से पिशाचों का स्वतंत्र वंश उपलब्ध है। वह रुद्र के उपासक

गणों में माना जाता है (ब्रह्मांड. २. ७. ८८-१७०)।

महाभारत में, एक विशेष भूतयोनि के रूप में पिशाचों का निर्देश प्राप्त है। ये कच्चा माँस खानेवाले व रक्त पीनेवाले लोग थे (म. द्रो. ४८.४७)। इन्होंने प्रतोलच के साथ रह कर उसकी सहायता की थी और कर्ण पर आक्रमण किया था (म. द्रो. १४२. ३५; १५०. १०२)। अर्जुन और कर्ण के युद्ध में ये उपस्थित थे (म. क. ६३. ३१)।

प्रथम नामक एक राक्षस व पिशाचों का संघ था (म. द्रो. २६९. २)। पिशाचों के राजा के रूप में रावण का निर्देश भी कई जगह प्राप्त है (म. व. २५९. ३८)। ब्रह्मा एवं कुबेर के सेवक के रूप में इनका निर्देश प्राप्त है (म. स. ११. ३१)। शिवजी के पार्वती के रूप में भी पिशाचों का निर्देश आता है। गोकर्ण पर्वत पर इन लोगों ने शिवजी की आराधना की थी (म. व. ८३. २३)। मुञ्जवत पर्वत पर पार्वती सहित तपस्या करते हुए शिव की आराधना इन लोगों ने की थी (म. आश्र. ८. ५)।

पैशाची भाषा एवं संस्कृति—इनकी भाषा पैशाची थी, जिसमें ‘बृहत्कथा’ नामक सुविख्यात ग्रंथ ‘गुणाढ्य’ (४ थी शती ई. पू.) ने लिखा था। गुणाढ्य का मूल ग्रंथ आज उपलब्ध नहीं है, किन्तु उसके आधार लिखे गये ‘कथासरित्सागर’ (२ री शती ई.) एवं ‘बृहत्कथा-मंजरी’ नामक दो संस्कृत ग्रंथ आज भी प्राप्त हैं, एवं संस्कृत साहित्य के अमूल्य ग्रंथ कहलाते हैं। इनमें से ‘कथासरित्सागर’ का कर्ता सोमदेव हो कर, ‘बृहत्कथा-मंजरी’ को क्षेमेंद्र ने लिखा है।

इन सारे ग्रंथों से अनुमान लगाया जाता है कि, ईसासदी के प्रारंभकाल में, पिशाच लोगों की भाषा एवं संस्कृति प्रगति की चरम सीमा पर पहुँच गयी थी। यहाँ तक, कि, इनकी भाषा एवं ग्रंथों को पार्शियन सम्राटों ने अपनाया था। इनकी यह राजमान्यता एवं लोकप्रियता देखने पर पैशाची संस्कृति एवं राजनैतिक सामर्थ्य का पता चल जाता है। सर्वप्रथम मध्यएशिया में रहनेवाले ये लोग, धीरे धीरे भारतवर्ष के दक्षिण सीमा तक पहुँच गये।

महाभारतकालीन पिशाच जनपद के लोग। ये लोग युधिष्ठिर की सेना में क्रीचव्यूह के दाहिने पक्ष की जगह खड़े किये थे (म. भी. ४६. ४९)। इनमें से बहुत से लोग भारतीययुद्ध में मारे गये थे (म. आश्र. ३९. ६)।

दुर्योधन की सेना में राजा भगदत्त के साथ पिशाचदेशीय सैनिक थे (म. भी. ८३.८)। श्रीकृष्ण ने किसी समय पिशाच देश के योद्धाओं को परास्त किया था (म. द्रो. १०.१६)।

३. एक यज्ञ का नाम (म. स. १०.१५)।

पिशाचि--पिशाच लोगों का नामांतर (पिशाच देखिये)।

पिशुन--कुरुक्षेत्र के कौशिक ब्राह्मण के सात पुत्रों में से एक। इसके अन्य भाइयों में पितृवर्तिन् प्रमुख था (पितृवर्तिन् देखिये)।

पीठ--नरकासुर का सेनापति, एक असुर। भगवान् कृष्ण ने इसका वध किया (म. द्रो. १०.५; भा. १०. ५९.१४)।

पीडापर--कश्यप एवं स्वशा के पुत्रों में से एक।

पीतहृदय--नीलहृदय का नामांतर।

पीतायुध--(सो. पूर.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार, चारुपद इसीका नामांतर था (चारुपद देखिये)।

पीवर--ताम्र मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

पीवरी--अग्निध्वान्त पितरों की कन्या तथा व्यास ऋषि के पुत्र शुक्र की स्त्री। इसे कृष्ण, गौर, प्रभु, शंभु तथा भूरिभुत नामक पाँच पुत्र एवं कीर्तिमती नामक एक कन्या थी। कीर्तिमती का विवाह अणुह राजा से हुआ था, एवं उससे उसे ब्रह्मदत्त नामक पुत्र हुआ था (ब्रह्मांड. ३.१०.८०-८१)।

पद्मपुराण में, इसके पुत्रों के नाम कृष्ण, गौरप्रभ एवं शंभु तथा कन्या का नाम कृत्वी बताया गया है (पद्म. स. ९-४०-४१ १; पुलह २. देखिये)।

पितरों द्वारा उत्पन्न की गयी मानसकन्याओं में पीवरी एक थी (पितरः देखिये)।

पुंजिकस्थला--इस प्रधान अम्सराओं में से एक। अर्जुन के जन्ममहोत्सव में इसने गाया था (म. आ. ११४.४६)। यह कुवेर की सभा में रहकर, उसकी उपासना करती थी (म. स. १०.१०)।

शाप के कारण, अमले जन्म में यह कुंजर नामक वानर की कन्या अंजना हुयी (वा. रा. कि. ६६; अंजना देखिये)।

पुंजिकस्थली--वैशाख में सूर्य के साथ रहनेवाली एक अम्सरा (भा. १२.११.३४)।

पुंडरीक--(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंश का एक राजा। इसे पुंडरिकाक्ष भी कहते थे (पद्म. स. ८)।

यह नभ राजा का पुत्र था। इसे क्षेमधन्वन् अथवा क्षेमधृत्स्वन् नामक पुत्र था (क्षेमधृत्स्वन् पुंडरिक देखिये)।

२. कश्यप वंश का एक नाग, जो पाताललोक में रहता था (म. उ. १०३.१३, बभ्रुवाहन देखिये)।

३. यम की सभा का एक सभासद (म. स. ८. १४)।

४. एक तीर्थसेवी ब्राह्मण, जिसका नारद से 'सर्वोत्तमतत्व' के संबंध में संवाद हुआ था (म. अनु. १८६. ३; पद्म. उ. ८०)।

इसे भगवान् नारायण का प्रत्यक्ष दर्शन हुआ था, एवं उसके साथ परमवाम की प्राप्ति भी हुयी थी (म. अनु. १२४)।

५. एक दिग्गज (म. द्रो. १२१.२५ वेवई प्रत)।

६. एक राजा, जो अम्बरीष राजा का मित्र था। इन दोनों ने अधर्म का आचरण किया। बाद में पश्चात्ताप कर के इन्होंने जगन्नाथ की आराधना की, जिस कारण इन्हें भगवान् का प्रत्यक्ष दर्शन हुआ, एवं मोक्ष की प्राप्ति हुयी (स्कंद. २.२.४-५)।

७. नागपुर का नाग राजा। इसके दरबार में ललित नामक एक गायक था। 'कामदा एकादशी' का व्रत करने के कारण इसका उद्धार हुआ (पद्म. उ. ४०)। 'कामदाएकादशी' का माहात्म्य कथन करने के कारण इसकी कथा दी गयी है।

८. एक भगवद्भक्त, जिसका '३० नमो नारायणाय' मंत्र से उद्धार हुआ। अंत में विष्णु इसे अपने साथ वैकुण्ठ ले गया (पद्म. उ. ८१)।

९. एक भगवद्भक्त। यह विदर्भ नगर के मालव नामक ब्राह्मण का भतीजा था। इसके घर विष्णु एक मास तक रहा था। इसका भरत नामक एक दुष्टचरित्र भाई था। भरत के मृत्योपरान्त, इसने पुष्करतीर्थ में उसका क्रियाकर्म किया, जिस के कारण भरत का उद्धार हुआ (पद्म. उ. २१५)।

१०. कुरुक्षेत्र के कौशिक ब्राह्मण के सात पुत्रों में से एक (पितृवर्तिन् देखिये)।

पुंडरीका--एक अम्सरा, जो कश्यप तथा मुनि की कन्या थी। इसने अर्जुन के जन्मोत्सव में नृत्य किया था (म. आ. ११४.५२)।

२. वसिष्ठ ऋषि की कन्या।

पुंडरीकाक्ष— इक्ष्वाकु वंश के पुंडरीक राजा का नामांतर (पुंडरीक १. देखिये)।

२. भगवान् श्रीकृष्ण का नामांतर (म. उ. ६८-६)।

पुंडरीयक— एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ११.३४)।

पुंडलिक— कुरुक्षेत्र के कौशिक ब्राह्मण के सात पुत्रों में से एक (पितृवर्तिन् देखिये)।

पुंड्र— (सो. अनु.) अनुवंश का एक राजा। यह बलि राजा के छः पुत्रों में से एक था (अंग एवं बलि देखिये)।

२. पुंड्र देश के लोगों के लिये प्रयुक्त एक सामूहिक-नाम। इन लोगों को पाण्डु राजा ने जीता था (म. आ. १०५-१२)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय ये लोग भेंट लेकर आये थे (म. स. ४८.१७)।

कर्ण ने अपने दिग्विजय के समय इन लोगों को, एवं इनके पौंड्रक वासुदेव नामक राजा को जीता था (म. क. ५.१९)। पाण्डवों के अश्वमेध यज्ञ के समय अर्जुन ने इन्हें जीता था (म. आश्व. ८४.२९)।

३. वसुदेव के सुतनु से उत्पन्न दो पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र।

४. ब्रह्माण्ड के अनुसार, व्यास के यजुःशिष्य परंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य।

पुंड्रक—एक प्राचीन अधिय नरेश, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था (म. स. ४.२६)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह 'दुकूलदि' भेंट लाया था (म. स. ४८.४७)।

पुण्य—महेन्द्रपर्वत पर रहनेवाले दीर्घतपस् नामक तपस्वी के दो पुत्रों में से एक। इसका भाई पावन था, जो अत्यधिक गँवार था। अपने माता-पिता की मृत्यु के उपरांत इसने अपने शोकग्रस्त भाई पावन को उपदेश देकर उसे शोक से मुक्त किया (यो. वा. ५.१९-२१)।

२. (सो. ऋक्ष.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार, यह पुण्यवान नामक राजा का पुत्र था।

पुण्यकृत्—एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ११. ३०)।

पुण्यजन—एक राक्षस। कुशस्थली (दारिका) का शर्यातवंशीय राजा ककुत्स्थिन रैवत जय ब्रह्माजी से मिलने गया था, तब उसकी अनुपस्थिति में इसने उसके राज्य पर अधिकार जमा लिया। इसके भय से वस्त

होकर, रैवत के सौ भाई राज्य से भाग कर इधर उधर चले गये। आगे चलकर शर्यातवंश हैहयवंश में विलीन हो गया (विष्णु. ४.२.१-२)।

पुण्यजनी—मणिभद्र नामक शिवगण की पत्नी। इसके पिता का नाम ऋतुस्थ था। मणिभद्र से इसे तेइठ पुत्र हुये (ब्रह्मांड ३.७.१२२-१२५; मणिभद्र देखिये)।

पुण्यनामन्—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४. ५५)।

पुण्यनिधि—मथुरा का चन्द्रवंशी राजा। इसने रामेश्वर में रहकर विष्णु की आराधना की। तब इसकी तपस्या से प्रसन्न होकर, भगवान् विष्णु 'सेतुमाधव' नाम से रामेश्वर में निवास करने लगे (स्कंद. ३.५१)।

पुण्यवत्—(सो. ऋक्ष.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार यह वृषभ राजा का पुत्र था। इसे 'पुण्यवत्' नामांतर भी प्राप्त था।

पुण्यशील—गोदावरी के तट पर निवास करनेवाला एक ब्राह्मण। एक बार इसने एक वध्या स्त्री के ब्राह्मण पति को श्राद्धकर्म के लिए बैठाया। इस पापकर्म के कारण इसका मुख मर्दम के समान हो गया। अन्त में, वैकटाचल के स्वामितीर्थ में तथा आकाशशर्गातीर्थ में स्नान करने के उपरांत, इसे इस श्राप से छुटकारा मिला, एवं इसका मुख पहले की तरह हो गया (स्कंद. २.१.२२)।

पुण्यश्रवस्—एक ऋषि। विष्णुभक्त होने के कारण, कृष्णावतार के समय इसने नंद के भाई के घर, में लवंगा नामक गोपी के रूप में जन्म लिया (पद्म. पा. ७२.१५२)।

पुत्र—स्वारोचिष मनु के पुत्रों में से एक।

पुत्रक—(सो. ऋक्ष.) एक राजा। वायु के अनुसार यह कुरु राजा का पुत्र था। इसका 'प्रजन' नामांतर भी प्राप्त है।

पुत्रव—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

पुत्रसेन—मैत्रायणी संहिता में निर्दिष्ट किसी एक व्यक्ति का नाम (मै. सं. ४.६.६)।

पुत्रिकषेण—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा। वायु के अनुसार, हाल तथा पंचसप्तक राजाओं के पश्चात् यह राजगद्दी पर बैठा (वायु. ९९.३५३)। इसके पुरीन्द्रसेन, पुरीषभीरु तथा प्रविल्लसेन नामांतर भी प्राप्त हैं। इसने इकौस वर्षों तक राज्य किया।

पुनर्दत्त—सांख्यायन आरण्यक में निर्दिष्ट एक आचार्य (सो. आ. ८.८)।

पुनर्भव समाभाग वा **भागवत**—(छंद. भविष्य.)

एक कुम्भवंशीय राजा। मत्स्य के अनुसार यह वज्रमित्र राजा का पुत्र था।

पुनर्वत्स काव्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. ७)।

पुनर्वसु—(सो. कुकुर.) एक यादव राजा। मागवत के अनुसार यह दरिद्रोत्त का, वायु तथा विष्णु के अनुसार अभिमित्र का, तथा मत्स्य के अनुसार नल या नन्दोत्तरकुंदमि का पुत्र था। इसके आहुक तथा आहुकी नामक दो पुत्र थे।

२. दक्ष की कन्या, जो सोम की पत्नी थी।

पुनर्वसु आत्रेय—एक प्राचीन आयुर्वेदाचार्य। चरक संहिता के मूळ ग्रंथ 'अग्निवेशतंत्र' के रचयिता अग्निवेश का तथा उसके सहायत्री नल आदि का यह गुरु था।

यह ब्रह्मा के मानसपुत्र देवर्षि अत्रि का पुत्र था। आत्रेय शब्द से 'अत्रिपुत्र' 'अत्रिवंशज' एवं 'अत्रि-शिष्यपरम्परा' का बोध होता है, किन्तु यहाँ 'आत्रेय' शब्द पुत्र-वाचक ही है। क्योंकि, चरकसंहिता में विभिन्न स्थानों पर इसके लिये 'अत्रिसुत', 'अत्रि-नन्दन' आदि का स्पष्ट निर्देश है (चरक. सू. ३.२९; ३०.५०.)।

इसके पिता अत्रि ऋषि स्वयं आयुर्वेदाचार्य थे। 'काश्यपसंहिता' के अनुसार, इन्द्र ने कश्यप, वसिष्ठ, अत्रि एवं ऋगु ऋषियों को आयुर्वेद की शिक्षा दी थी। अश्वघोष के अनुसार, आयुर्वेद चिकित्सातंत्र का जो भाग अत्रि ऋषि पूरा न कर सके, उसे उसके पुत्र पुनर्वसु आत्रेय ने पूरा किया (अश्वघोष—'बुद्धचरित' १. ४३)।

इसकी माता का नाम चन्द्रभागा था, जिस कारण इसे 'चान्द्रभागा' अथवा चान्द्रभार्गी नामांतर भी प्राप्त है (काश्यप. उषोद्घात पृ. ७७)। कृष्णयजुर्वेदीय होने के कारण इसे 'कृष्णात्रेय' भी कहते हैं (चरक. सू. ११.६५)।

अपने पिता अत्रि ऋषि तथा भरद्वाज ऋषि से आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त कर, यह आयुर्वेदाचार्य बना। सामान्यतः यह भरद्वाज ऋषि का समकालीन माना जाता है। किन्तु एक निवृत्तीय कथा के अनुसार, सुप्रसिद्ध बौद्धमिथु जीवक की आयुर्वेदीय शिक्षा आचार्य आत्रेय द्वारा तक्षशिला में हुयी थी।

पुनर्वसु आत्रेय यायावर ऋषि थे, एवं इनके रहने का कोई स्थान निश्चित न था। यह पर्यटन करने हुये आयुर्वेद

का उपदेश देते थे, एवं विद्वानों की सभाओं में भाग लेते थे। महर्षि भरद्वाज के द्वारा आयोजित एक 'वैद्यक-सभा' में यह उपस्थित थे।

शिष्य—आत्रेय के कुल छः शिष्य थे, जिनके नाम इस प्रकार थे—अग्निवेश, मेल, जन्कर्ण, पराशर, हारीत तथा क्षीरपाणि (चरक. १.३०; ३७)।

ग्रन्थ—इसका सुविख्यात ग्रन्थ 'आत्रेयसंहिता' है। इस ग्रन्थ के अनेक हस्तलेख विभिन्न हस्तलेखनग्रहों में प्राप्त हैं।

आजकाल प्रकाशित 'हारीतसंहिता' में पाँच विभिन्न 'आत्रेय संहिताओं' के निर्देश प्राप्त हैं, जिनकी श्लोक-संख्या क्रमशः चौबीस हजार, बारह हजार, छः हजार, तीन हजार एवं पंद्रह सौ दो गयी हैं।

आत्रेय के नाम पर लगभग तीस 'आयुर्वेदीय योग' उपलब्ध हैं। इनमें से 'बल तैल' एवं 'अमृताद्य तैल' का निर्देश चरक संहिता में प्राप्त है (चरक. वि. २८. १४८-१५६; १५७-१६४)।

पुरंजन—एक प्राचीन राजा। स्वायंभुव मन्वन्तर के प्राचीनवाहि राजा को ब्रह्मज्ञान का उपदेश देते समय, नारद ने इस राजा का निर्देश किया था (भा. ४.२२-२९)।

पुरंजय—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा। इसे 'इंद्रबाह' एवं 'ककुत्स्थ' नामांतर भी प्राप्त थे।

२. (सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा। विष्णु, मत्स्य, एवं वायु के अनुसार, यह खंजय राजा का पुत्र था। मत्स्य के अनुसार, इसे 'वीर' नामांतर भी प्राप्त था।

३. (सो. पूर. भविष्य.) एक वृकवंशीय राजा। मत्स्य के अनुसार, यह 'मेधावि' राजा का पुत्र था।

४. एक नागवंशीय राजा। विष्णु के अनुसार, यह किलकिला का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार यह मथुरा का राजा था। इसके पिता का नाम विंध्यशक्ति था।

५. (सो. मगध. भविष्य.) मगध देश का एक राजा। मागवत के अनुसार, यह जरासंध के वंश का अंतिम राजा था। इसके प्रधान का नाम शुनक था, जिसने इसका वध कर 'प्रद्योत' नामक स्वतंत्र राजवंश की नींव डाली (भा. १२.१.२)।

विष्णु में इसका नाम 'रिपुंजय' दिया गया है (४. रिपुंजय देखिये)।

६. (भविष्य) मागधवंशीय विश्वस्फूर्ति राजा का नामान्तर। पापमुक्ति होकर भी यह अति पराक्रमी था। इसकी राजधानी पञ्चावती नगरी थी। गंगाद्वार से प्रयाग तक का सारा प्रदेश इसके राज्य में शामिल था।

इसने 'वर्णाश्रम व्यवस्था' को नष्ट कर, पुलिंद, यदु तथा मद्रक नामक नये वर्ण स्थापित किये (भा. १२.१. ३६-४०)।

पुराणों में श्री गयी वंशावली में इसका नाम अप्राप्त है।

पुरंदर—वैवस्वत मन्वन्तर के इन्द्र का नामान्तर (इन्द्र देखिये)। मत्स्य पुराण में निर्दिष्ट अठारह वास्तुशास्त्रकारों में पुरंदर का निर्देश प्राप्त है (मत्स्य. २५२. २-३)। अन्य वास्तुशास्त्रकारों के नाम इस प्रकार हैं:—भृगु, अत्रि, वसिष्ठ, विश्वकर्मा, मय, नारद, नमजित्, विशालाक्ष, ब्रह्मा, कुमार, नन्दीश, शौनक, गर्ग वासुदेव, शुक्र, बृहस्पति, अनिरुद्ध।

महाभारत के अनुसार, भगवान् शिव ने धर्म, अर्थ, एवं काम शास्त्र पर 'वैशालाक्ष' नामक एक ग्रन्थ की रचना की, जिसकी अध्यायसंख्या कुल दस हजार थी। उस बृहद्ग्रन्थ का संक्षिप्तकरण, आचार्य पुरंदर ने किया। इसके इस ग्रन्थ का नाम 'बाहुदंतक' था, जिसमें अध्यायों की संख्या पाँच सहस्र थी। संभवतः आचार्य पुरंदर की माता का नाम बहुदंती था। हो सकता है इसी कारण, इसने अपने इस ग्रन्थ का नाम 'बाहुदंतक' रखा हो (म. शां. ५९.८९-९०)।

२. तप अथवा पांचजन्य नामक अग्नि का पुत्र। महान् तपस्या के पश्चात् 'तप' अग्नि को 'तपस्याफल' की प्राप्ति हुयी। उसे प्राप्त करने के लिए, पुरंदर नाम से स्वयं इंद्र ने अग्नि के पुत्र के रूप में जन्म लिया था (म. व. २११.३)।

पुरंधि—अश्रिमती नामक एक वैदिक न्त्री का नामान्तर (ऋ. १.११६.१२)। अश्विनो ने इसे हिरण्यहस्त नामक एक पुत्र प्रदान किया था।

पुरय—एक वैदिक राजा। ऋग्वेद की एक दानस्तुति में इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ६.६३.९)। भरद्वाज को इस के द्वारा अश्वों की प्राप्ति हुयी थी।

पुराण—काठकसंहिता में निर्दिष्ट एक ऋषि का नाम (का. सं. ३९.७)

२. कुशिककुल का मंत्रकार। इसे 'पूरण' नामान्तर भी प्राप्त था।

पुरांद्रसेन—(आंश्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय

राजा। मत्स्य के अनुसार, यह मद्रक का पुत्र था। इसे पुत्रिकर्षण नामान्तर भी प्राप्त है (पुत्रिकर्षण देखिये)।

पुरीमत्—(आंश्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा भागवत के अनुसार, यह गोमतीपुत्र का पुत्र था। इसे 'पुलीमत्' एवं 'पुलोम' नामान्तर भी प्राप्त थे।

पुरीषभीरु—(आंश्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा। भागवत के अनुसार, यह तलक का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार, यह पंचपत्तलक का पुत्र था। इसे 'पुत्रिकर्षण' नामान्तर भी प्राप्त है (पुत्रिकर्षण देखिये)।

पुरीष्य—पंचचित्त नामक अग्नि का नामान्तर। यह विधाता नामक आठवें आदित्य को क्रिया नामक पत्नी से उत्पन्न हुआ था (भा. ६.१८.४)।

पुरु—एक प्राचीन क्षत्रिय नरेश, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था (४.२३ पाठ.)।

२. भागवत के अनुसार, वसुदेव एवं सहदेव का पुत्र।

पुरुकुत्स—अंगिराकुल के कुत्स नामक उपभोजक के तीन प्रवरों में से एक। एक मंत्रद्रष्टा के रूप में भी इसका निर्देश प्राप्त है (अंगिरम् देखिये)।

पुरुकुत्स 'पेक्षवाक'—(सू. इ.) पुरु देश का एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा (सा. ब्रा. १३.५.४.५)।

सुविस्मृत वैदिक राजा मुद्राम के समकालिन राजा के नाते से, इसका निर्देश ऋग्वेद में कई बार आया है (ऋ. १.६३.७)। संभवतः दशराज युद्ध में मुद्राम राजा ने इसे पराजित किया था (ऋ. ७.१८)। इस युद्ध में यह मारा अथवा पकड़ा गया था, जिसके बाद इसकी पत्नी पुरुकुत्सानी ने 'पुरुओं' के भाग्य को लौटाने के लिये, एक पुत्र की उत्पत्ति की। उस पुत्र का नाम वसुदेयु था (ऋ. ४.४२.८); एवं उसे 'पौरकुत्स्य' (ऋ. ५.३३.८); तथा 'पौरकुत्सि' (ऋ. ७.१९.३), नामान्तर भी प्राप्त थे।

दासों पर विजय पानेवाला पुरु राजा के नाम से, पुरुकुत्स का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. ६.२०.१०)। दिव्य अस्त्रों की सहायता से, यह अनेक युद्धों में विजित हुआ (ऋ. १.११२.७; १४)।

ऋग्वेद में एक स्थान पर पुरुकुत्स को 'दौर्गह' विशेषण लगाया गया है (ऋ. ४.४२.८)। इससे प्रतीत होता है की, यह 'दुर्गह' का पुत्र या वंशज था। किंतु 'सीम' के अनुसार, 'दौर्गह' किसी अश्व का नाम हो कर, पुरुकुत्स के पुत्रप्राप्ति के लिये आयोजित

किये अश्वमेध यज्ञ की ओर संकेत करता है (सा. ऋ. १६-१०२)।

पुराणों में भी पुरुकुत्स का निर्देश कई बार प्राप्त है। भागवत, विष्णु तथा वायु के अनुसार, यह इक्ष्वाकुवंशीय राजा मांधाता का त्रिदुमती से उत्पन्न पुत्र था। नागकन्या नर्मदा इसकी पत्नी थी।

नामों से शत्रुता करनेवाले गंधर्वों का इसने नाश किया जिस कारण नामों ने इसे बर दिया, 'तुम्हारा नाम लेते ही, किसी भी आदमी को संप्रदेश के भय से छुटकारा प्राप्त होगा' (भा. ९.६.३८; ९.७.३)।

इसके वसुद, त्रसदस्यु, तथा अनरण्य नामक तीन पुत्र थे। पद्म के अनुसार, इसके धर्मसेतु, मुचकुंद तथा शक्तमित्र नामक तीन भाई तथा दुःसह नामक एक पुत्र था (पद्म. सू. ८)।

मत्स्य के अनुसार इसे 'पुरुकृत' नामांतर भी प्राप्त है। कुरुक्षेत्र के वन में तपस्या कर, इसने 'सिद्धि' प्राप्ति की थी, जिस कारण यह स्वर्गलोक में पहुँच गया (म. आश्र. २६.१२-१३)। यह यम समा में रह कर, यम की उपासना करता था (म. स. ८.१३)।

पुरुकुत्स काव्य—एक क्षत्रिय राजा, जो तप से ब्राह्मण बन गया था (वायु. ११.११६)।

पुरुकुत्सानी—इक्ष्वाकुवंशीय पुरुकुत्स राजा की पत्नी एवं त्रसदस्यु राजा की माता (ऋ. ४.४२.९)।

पुरुकृत—मत्स्य के अनुसार, इक्ष्वाकुवंशीय पुरुकुत्स राजा का नामांतर (पुरुकुत्स 'एक्ष्वाक' देखिये)।

पुरुज—(सो. नील.) एक नीलवंशीय राजा। भागवत के अनुसार, यह मुशांति राजा का पुत्र था। विष्णु, वायु तथा मत्स्य में, इसे 'पुरुजातु' कहा गया है। कई अन्य पुराणों में, इसका 'पुरुजाति' नामांतर भी प्राप्त है (ह. वं. १.३२.६४; ब्रह्म. १३.८३)।

पुरुजाति तथा **पुरुजातु**—नीलवंशीय पुरुज राजा का नामांतर (पुरुज देखिये)।

पुरुजित्—(सू. निमि.) एक निमिवंशीय राजा। भागवत के अनुसार, यह अज नामक 'जनक' राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम अरिष्टनेमि था।

२. एक राजा, जो कुन्तिमोज राजा का पुत्र एवं कुन्ती का भाई था। इसके दूसरे भाई का नाम भी कुन्तिमोज ही था (म. स. १३.१६-१७)।

भारतीय युद्ध में, यह पांडवपक्ष में शामिल था (म. उ. १६९.२; भी. २३.५)। इसके रथ के अश्व इंद्रधनु

के समान विविध रंगी थे (म. द्रो. २२.३९)। दुर्मुख के साथ इसका युद्ध हुआ था (म. द्रो. २४.३८)। द्रोण ने इसका वध किया था (म. क. ४.७३)। मृत्यु के पश्चात्, यह यमसभा में यम की उपासना करने लगा (म. स. ८.१८)।

३. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा। भागवत के अनुसार, यह ऋचक राजा के पाँच पुत्रों में से ज्येष्ठ था।

४. (सो. कुकुर.) एक राजा। भागवत के अनुसार, यह वसुदेव का भाई एवं अपने पिता आनक के दो पुत्रों में से कनिष्ठ था (भा. ९.२४.४१)। इसकी माता का नाम कंका था।

५. श्रीकृष्ण तथा जंगवती के पुत्रों में से एक।

पुरुणीथ शातवनेय—वैदिककालीन एक पशुकर्ता ऋषि, एवं भारद्वाज लोगों का पुरोहित (ऋ. १.५.९.७)। 'शातवनेय' इसका यह नाम संभवतः शतवती का पुत्र या वंशज होने की ओर संकेत करता है। भारद्वाज लोगों से इसका घनिष्ठ संबंध था। ऋग्वेद में अन्य एक स्थान पर, एक स्तवक के रूप में इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ७.९.६)।

पुरुंड—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का पुत्र था।

पुरुदम—अथर्ववेद में निर्दिष्ट एक स्तोत्र (अ. ध. ७७.७३.१)। इसका निर्देश बहुवचन के रूप में प्राप्त है, जिस कारण, यह किसी समूह का नाम प्रतीत होता है।

पुरुदत्त—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार, यह पुरुवम् का तथा वायु के अनुसार, यह महापुरुवेश का पुत्र था।

पुरुद्वह—धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

२. (सो. क्रोष्टु) एक राजा। वायु के अनुसार यह पुरुदत्त राजा का भद्रवती से हुआ पुत्र था (वायु. २४.४७)।

पुरुपाथिन—एक वैदिक राजा, जो भरद्वाज ऋषि का दाता था (ऋ. ह. ६.६३.१०)।

पुरुमाय्य—एक वैदिक राजा, जो इन्द्र का आश्रित था (ऋ. ८.६८.१०)। संभवतः यह अतिश्रिग्व, ऋक्ष एवं अश्वमेध राजाओं का पिता अथवा रिश्तेदार था। सायण के अनुसार, यह व्यक्तिवाचक नाम न हो कर, प्रियमेध राजा की केवल उपाधि थी।

पुरुमित्र—एक वैदिक राजा, जिसकी कन्या का नाम कमयु था। कमयु ने अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध विमद नामक ऋषि से विवाह किया था (ऋ. १.६१७.२०; १०.३९.७; विमद देखिये)।

२. (सो. कु.) धृतराष्ट्र के ग्यारह महारथि पुत्रों में से एक (३२८३)। पांडवों के युतकीड़ा के समय यह उपस्थित था (म. स. ५२.५३)।

भारतीय युद्ध में यह अभिमन्यु द्वारा घायल हुआ था (म. भी. ६९.२३)।

३. एक क्षत्रिय राजा, जो भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष में शामिल था (म. भी. ५३.२५)।

पुरुमीहळ 'आंगिरस'—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.७१)। पुरुमीहळ 'वैदवश्चि' एक वैदिक ऋषि (ऋ. १. १५१.२; १८३.५; अ. वे. ४.२९.४; १८.३.१५)। रनका आश्रित एवं तरन्त ऋषि ये दोनों विद्वदक्ष के पुत्र थे। श्यावाश्र नामक एक गायक था (बृहदे. ५. ४९)। ओल्डेन बर्ग के अनुसार, यह कथा असंभाव्य प्रतीत होती है।

ऋग्वेद में अन्य एक स्थान पर इसे एवं तरन्त को ध्वल तथा पुरुषन्ति नामक राजाओं से दान मिलने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ९.५८.३)। 'सीग' के अनुसार पुरुमिहळ तथा तरन्त ये दोनों राजा थे एवं जब तक ऋषि नहीं बन जाते तब तक अपने जाति के नियमों के अनुसार ये दान नहीं ग्रहण कर सकते थे।

पुरुमिहळ सौहोत्र—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ४. ४३-४४)। पूरुवंश का सुविख्यात राजा पुरुमीह यह दोनों एक ही होंगे।

पुरुमीह—(सो. पू.) एक पूरुवंशीय राजा। मत्स्य वायु तथा भागवत के अनुसार, यह हस्ती राजा का, एवं विष्णु के अनुसार यह हस्तिनर राजा का पुत्र था। यह निःसंतान ही था कि मर गया।

महाभारत के अनुसार, यह सुहोत्र राजा का तृतीय पुत्र था, एवं इसकी माता का नाम ऐश्वकी था। इसके अजमीह एवं सुमीह नामक दो भाई थे (म. आ. ८९.२६)। महाभारत में दिये गये इसके मातापिता के नाम गलत मात्राम होते हैं, क्योंकि, वहाँ दी हुयी वंशावली में कई पीढ़ियाँ छोड़ दी गयी हैं।

पुरुमित्र आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. ८९-९०)।

पुरुयशस्—एक पांचाल देश का राजा। स्कंद के अनुसार, यह भूरियश राजा का पुत्र था। याज्ञ एवं उपयाज्ञ नामक ब्रह्मण इसके गुरु थे, जिनके उपदेश से इसने 'वैशाल धर्म' का अनुष्ठान किया था। इस

अनुष्ठान के कारण, इसे अपार राज्यवैभव प्राप्त हुआ था (स्कंद २.७.१५-१६)।

पुरुवस्—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार यह मधु राजा का पुत्र था। इसे 'कुरुवंश' तथा 'कुरुवस्' नामांतर भी प्राप्त थे।

पुरुवसु—एक वैदिक स्तोत्रा (ऋ. ५.३६.३)।

पुरुष—चाक्षुष मनु के पुत्रों में से एक।

२. मरुतों के छठवें गण में से एक।

पुरुषन्ति—एक वैदिक राजा, जिसने किसी गायक को उपहार प्रदान किये थे (ऋ. ९.५८.३)। ऋग्वेद में अन्य एक स्थान पर, इसे अश्विनो का आश्रित कहा गया है (ऋ. १.११२.२३)। इन दोनों स्थानों पर, इसका निर्देश ध्वसन्ति एवं ध्वल राजाओं के साथ प्राप्त है।

ऋग्वेद की एक दानस्तुति में, इसकी एवं ध्वल राजा की स्तुति अवत्सार काश्यप ऋषि द्वारा की गयी है (ऋ. ९. ५९.३-४)। पंचविंश ब्राह्मण के अनुसार, 'ध्वला' एवं 'पुरुषन्ति' ये दोनों स्त्रीलिङ्गी प्रयोग हैं एवं संभवतः किहीं स्त्रियों के नाम प्रतीत होते हैं (पं. ब्रा. १३.७.१२)।

पुरुषासक—एक वैदिक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

पुरुषोत्तम—पौंड्रक वासुदेव का नामान्तर।

पुरुहन्मन्—एक वैदिक सूक्त द्रष्टा (ऋ. ८.७०)। ऋग्वेद सर्वातुक्रमणिका में इसे आंगिरस कहा गया है। पंचविंश ब्राह्मण के अनुसार, यह 'वैखानस' वंशीय था (पं. ब्रा. १४. ९ २९)।

पुरुहोत्र—(सो. क्रोष्टु) एक राजा। भागवत के अनुसार यह अनु राजा का, पद्म के अनुसार कुरुवंश, विष्णु के अनुसार अनुरथ का, एवं भविष्य के अनुसार कुरुवल्स का पुत्र था। इसे 'पुरुवस्' नामांतर भी प्राप्त था। इसके पुत्र का नाम अंशु था (पद्म. सू. १३)।

पुरूरवस् 'ऐल'—प्रतिष्ठान (प्रयाग) देश का सुविख्यात राजा। सुविख्यात सोमवंश की प्रतिष्ठापना करनेवाले राजा के रूप में, यह पुरूरवस् प्राचीन भारतीय इतिहास का एक महत्वपूर्ण राजा माना जाता है। यह एवं इसके ऐल वंश का राज्य यद्यपि प्रतिष्ठान में था, फिर भी यह स्वयं हिमालय प्रदेश का रहनेवाला था।

पुरूरवस् राजा सूर्यवंश के इक्ष्वाकु राजा के समकालीन था। यह स्वयं अत्यंत पराक्रमी था। इसने पृथ्वी के सात द्वीप जीतकर उन पर अपना राज्य स्थापित कर, सौ अश्वमेध यज्ञ किये थे।

इसके राज्य के उत्तर में अयोध्या जैसा बलिष्ठ राज्य था, एवं दक्षिण में युद्धशास्त्र में विख्यात कश्यप लोग थे। इस कारण इसका राज्य पूर्व एवं उत्तरपूर्व दिशाओं में स्थित गंगाके दोआब, मालवा एवं पूर्व राजपूताना प्रदेशों तक फैला था। पुरुरवस् के मृत्यु के समय, यह सारा प्रदेश ऐल साम्राज्य में समाविष्ट हो गया।

पुरुरवस् को 'ऐल' (इला नामक यज्ञीय देवी का वंशज) उपाधि प्राप्त थी। यद्यपि पुरुरवस् का निर्देश वैदिक ग्रंथों में बार बार प्राप्त है, फिर भी इसकी ऐल उपाधि इसे पुराणकालीन राजा के रूप में स्थापित करती है।

उर्वशी एवं पुरुरवस् का सुप्रसिद्ध 'प्रणयसंवाद' वैदिक ग्रंथों में प्राप्त है (ऋ. १०.९५; श. ब्रा. ११.५. १)। ऋग्वेद में इसे 'ऐल' कहा गया है। यह स्वयं क्षत्रिय हो कर भी वैदिक सूत्रकार एवं मंत्रकार था, जिसका निर्देश ऋग्वेद एवं पुराणों में प्राप्त है (ऋ. १०.९५; मत्स्य. १४५.११५-११६. ब्रह्मांड. २.३२. १२०-१२१)। अग्नि के द्वारा पुरुरवस् पर अनुग्रह किये जाने का निर्देश भी ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १. ३४)।

पौराणिक ग्रंथों के अनुसार पुरुरवस् लुष राजा को इला से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ७०.१६; मत्स्य. १२. १५; पद्म. सू. ८; १२; ब्रह्म. १०; दे. भा. १.१३; मा. ९.१५; ह. वं. १.११.१७)। यह सोमवंश का मूल पुरुष है। इसको ऐल कहा है (वायु. ९१.४९-५०)।

पुरुरवा की राजधानी प्रतिष्ठानपुरी थी (ब्रह्म. ७.२२; ह. वं. १.१०.२२-२३)।

यह काशी का राजा था। इसके द्वारा प्रयाग प्रांत पर भी राज्य करने का उल्लेख मिलता है (वा. रा. उ. २५; ह. वं. २.२६.४९)। यह सप्तशीप का राजा था, तथा इसने सौ अश्वमेध किये थे (मत्स्य. २४.१०-१३)। महाभारत में, इसे त्रयोदश समुद्रद्वीपों का अधिपति कहा गया है (म. आ. ७०.१७)।

एक बार देवसभा में नारद ने पुरुरवा के गुणों का गान किया था। यह सुनकर उर्वशी पुरुरवा पर मोहित हो गयी। उसी समय भूतल पर जाने का ज्ञाप मित्रावरुणों ने उसे दिया। उर्वशी भूतल पर आई। पृथ्वी पर आते ही केशी नामक दैत्य ने उसे देख लिया, तथा उसका हरण किया।

पुरुरवा ने उर्वशी को केशी से मुक्त कराया। पश्चात् इसने उर्वशी के रूप पर मोहित हो कर, उससे विवाह करने की इच्छा प्रदर्शित की। उर्वशी ने इसकी बात तो मान ली, किंतु उसके साथ तीन विचित्र शर्तें रखीं:-- (१) मेरे द्वारा पुत्रवत् पाली गयी तीन भेड़ें हैं, जिनकी रक्षा सतर्कता से होनी चाहिये। (२) मैथुन को छोड़कर हम कभी भी मुझे नग्न स्थिति में न दिखायी दो (३) मेरा आहार केवल घी होगा। हरिवंश में उर्वशी की तीसरी शर्तें कुछ भिन्नता से दी गयी हैं। उसमें लिखा है की उर्वशी ने इसे कहा, 'तुम्हें केवल घी खाकर ही जीवित रहना होगा' (ह. वं. १.३६.१४-१५)।

उर्वशी की सारी शर्तें मानकर राजा ने उससे विवाह कर लिया। उर्वशी गन्धर्वों की प्रिय थी, अतएव उन्होंने उसे स्वयं वापस लाने की योजना बनायी। एक दिन पलंग के पाये से बंधी भेड़ों को गन्धर्वगण खोल कर जाने लगे। यह देख कर उर्वशी चिल्लाई, तथा पुरुरवा नग्नवस्था में ही पलंग से नीचे दौड़ कर भेड़ों को पकड़ने के लिए आगे बढ़ा। इतने में विजली के कौंध से, नग्न पुरुरवा उर्वशी को दिख गया। फिर अपने नियम के अनुसार, उर्वशी इसे छोड़कर गन्धर्वलोक चली गयी।

उर्वशी के त्रियोग में पुरुरवा पागल या इधर उधर भटकने लगा। ऐसी ही अवस्था में उर्वशी ने इसे देखा। फिर इसके प्रति दयालु होकर, अपने इत्ते कहा, 'गन्धर्व तुम्हें वरप्रदान करने वाले हैं। उस समय तुम मेरे कितने साहचर्य का वर माँग लो।

पश्चात्, गन्धर्वों द्वारा वर माँगने के लिये कहे जाने पर, इसने उनसे गन्धर्वत्व एवं उर्वशी के साहचर्य का वर माँग लिया। गन्धर्वों ने इसे अग्नि के सहित एक स्थाली प्रदान की। उर्वशी न देख, गन्धर्वों ने केवल स्थाली ही दी, इससे नाराज़ होकर, इसने वह स्थाली अरण्य में ही फेंक दी, एवं यह वर वापस लौट आया।

कालोपरांत, इसे अपने कृतकर्म का पश्चात्तार हुआ। फिर अरण्य में फेंक दी 'स्थाली' वापस लाने, यह अरण्य गया। वहाँ इसने देखा की 'स्थाली' लुप्त हो गयी है, एवं उस स्थान पर एक अश्वत्थ वृक्ष उत्पन्न खड़ा है। उस अश्वत्थ वृक्ष को अग्निरूप मानकर इसने उससे एक 'अरणि' तथा 'मेधा' बनाई, तथा उससे अग्नि उगन्न किया। बाद में उस अग्नि के वक्षिणाग्नि, आहवनीय तथा गार्हपत्य नामक तीन विभाग कर, इसने उनसे उष्कृष्ट हवन किया। इस हवन से प्रसन्न होकर, गन्धर्वों ने इसे

‘सालोक्य’ गंधर्वास्था प्रदान की (श. ब्रा. ११.५.१. १३-१७; विष्णु. ४.६.१)

शतपथ ब्राह्मण में दी गयी यह कथा ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। पुरूरवस् के पहले एक ही अग्नि की उपासना प्रचलित थी। उसे बदल कर इसने तीन अग्नि की उपासना गुरु की (अग्नि. २७४.१४. विष्णु. ४.६. ४९)।

एक बार धर्म, अर्थ, काम नामक तीनों पुरुषार्थ मानव-रूप धारण कर इसका सत्त्व देखने आये। इसने सबका सत्कार किया, परंतु धर्म को अत्यधिक आदर एवं सम्मान दिया। इससे कुपित होकर अर्थ तथा काम ने इन्हें शाप दिया, ‘लोभ के कारण तुम्हारा विनाश हो जायेगा’।

गंधर्वलोक में देवअनुचर तुरग का उपहास करने के कारण, वह उर्वशी तथा पुरूरवा से क्रुद्ध हुआ एवं उसने इन्हे शाप दिया, ‘परस्परं वियोगावस्था को प्राप्त कर तुम दोनों दुःखी होगे’। पश्चात्, इन दोनों ने गंधमादन पर्वत के ‘साध्यामृत तीर्थ’ में स्नान किया, एवं इस पुण्यक्रम से दोनों शापमुक्त हो गये (स्कन्द ३.१.२२२)। हर महीने की अमावास्या को यह पितरों को तृप्त करता था (वायु. ५६)

नैमिषारण्य के द्वादश वार्षिक सत्र के समय यह अयोध्या का राजा था। उर्वशी इस पर मोहित हो गयी थी। समुद्र के अटारह द्वीप इसने जीते थे, तथापि इसे संपत्ति का लोभ न छूटा। इसने संरक्ति के लोभ से द्वादश-वर्षीय सत्र के स्वर्णमय वेदी पर हमला किया।

अग्नि को गंगा से एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। उस पुत्र की नाल को जैसे ही पर्वत पर डाला गया, नाल स्वर्णमय हो गयी। उसी स्वर्ण को लेकर इस द्वादशवर्षीय सत्र की वेदी बनायी गयी। बृहस्पति स्वयं वहाँ उपाध्याय था। ऐल पुरूरवा मृगया करते हुए वहाँ आया। सोने की वेदी देख कर उसे आश्चर्य हुआ। लोभ से पागल होकर यह स्वर्ण-वेदी के स्वर्ण का हरण करने लगा। तब सत्र ऋषि क्रोधित हो गये। उन्होंने द्रुमरूपी वज्र से इसका वध किया, और उर्वशी से उन्नन्न आयु नामक पुत्र गद्दी पर बैठाया गया। बौद्धिच्य ने, इस प्रसंग का संकेत करते हुये लिखा है, ‘पुरूरवा राजा ने अत्याचार तथा अनाचारपूर्वक धन इकट्ठा किया (कौटिल्य पृ. २२)।

पश्चात् पुरूरवस् पुत्र आयु ने सब को शान्त कर, सत्र को पुनः आरम्भ किया (ब्रह्माण्ड. १. २. १४-२३; वायु. २)। महाभारत एवं वायु में कश्यप से पुरूरवा ने किये तत्त्वज्ञान पर संवादों का निर्देश प्राप्त है। ब्राह्मणादि चारों

वर्णों की उत्पत्ति, तथा उनके अधिकार के बारे में इसका वायु से, तथा इन चारों वर्णों के परस्परव्यवहार के सम्बन्ध में कश्यप से संवाद हुआ था (म. शां. ७३. ७४)।

पद्म एवं ब्रह्म पुराणों में प्राप्त ‘एकादशीमाहालय’ की कथाओं में पुरूरवा का निर्देश प्राप्त है। एकादशी को उपवास करने के पश्चात्, द्वादशी के दिन तेल खाने का पाप पुरूरवा ने किया, जिस कारण इसका शरीर कुरूप हो गया। इसने दुःखी हो कर तीन महीने तक उपवास कर, विष्णु की आराधना की। इसीसे संतुष्ट हो कर, विष्णु ने इसे ऐसा सुन्दर स्वरूप प्रदान किया कि, उर्वशी इस पर मोहित हो गयी (पद्म. उ. १२५)।

ऐसी ही और एक कथा मत्स्य में दी गयी है। पूर्व जन्म में यह द्विजग्राम का ब्राह्मण था। द्वादशी के दिन उपवास कर, इसने राज्यप्राप्त की इच्छा से जनार्दन की पूजा की। इस पुण्यकर्म के कारण, उसी जन्म में इसे मद्र-देश का राज्य प्राप्त हुआ। किंतु पश्चात् उपवास के दिन अभ्यंग स्नान करने के पाप के कारण, यह रूपहीन बन गया। फिर अपना विगत सौंदर्य पुनः प्राप्त करने के लिए, यह हिमालय पर तपश्चर्या करने गया (मत्स्य. ११५)।

पुरूरवा का पुरोहित वसिष्ठ था (ब्रह्म. १५१. ८-१०; पद्म. भू. १०८)। इसका हिमालय से विशेष सम्बन्ध दिखता है। ऐलवंश के राजाओं के मूलस्थान के सम्बन्ध में पुरूरवाचरित्र से काफ़ी बोध होता है। पुरूरवा का पिता ‘इल’ था, जिसके नाम से ‘इलावृत’ देश स्थापित हुआ था (मत्स्य. १२. १४; पद्म. सू. ८)। यह देश भारतमें हिमालय के उत्तर की ओर, मेरु पर्वत के समीप वसा हुआ था।

इसके अतिरिक्त, पुरूरवा की जन्मकथा भी इसी प्रदेश से संलग्न प्रतीत होती है। ऐलों की सत्ता का उद्गम प्रयाग (इलाहाबाद) में हुआ था। फिर भी उनका मूलस्थान हिमालय के मध्यभाग से तथा उसपर के देशों में था। इसके कई उदाहरण प्राप्त हैं। पुरूरवा की कथा में निर्दिष्ट सारे स्थान, जैसे कि मंदाकिनी नदी, अलका, चैत्ररथ और नंदनवन, गंधमादन तथा मेरु पर्वत एवं कुरु देश नाम से प्रसिद्ध गंधर्वों का देश, ये सारे इसी प्रदेश के हैं। यह निश्चित है कि उत्तर कुरु प्रान्त से गंधर्वों का संबन्ध प्राचीन काल से चला आ रहा है (मत्स्य. ११४ ८२, वायु ३५; ४१; ४७)।

पुरूरवा की पत्नी उर्वशी गंधर्वी थी। इसके वंशजो ने

भी गंधर्वकन्याओं से विवाह किया था (कूर्म. १.२३. ४६)। अन्त में यह स्वयं एक गंधर्व बन गया।

उर्वशी से इसे कुछ छः पुत्र हुये, जिनके नाम इस प्रकार थे:—आयु, श्रुतायु, सखायु, रय, विजय, जय (भा. ९.१५.१)। महाभारत में उर्वशीपुत्रों के नाम इस प्रकार दिये गये हैं:—आयु, धीमत्, अमावसु, दृढायु, वनायु, एवं श्रुतायु (म. आ. ७०. २२)। कई ग्रंथों में इसके आठ पुत्रों का भी उल्लेख है और कुछ में सात पुत्र बताये गए हैं (ब्रह्म. १०; लिंग १.६६; ह. वं. १.२७.१-२)। भागवत में दिया गया है कि, इसने अग्नि को भी पुत्र माना था (भा. ९.१५)।

कुछ स्थानों पर रय, विजय तथा जय के स्थान पर 'धीमान्,' 'अमावसु,' 'शतायु,' तथा 'विश्रावसु' पाठभेद भी मिलता है (वायु ९.५१-५२)। मत्स्य, एवं अग्निपुराणों में इसके आठ पुत्रों के नाम इस प्रकार दिये गये हैं:—आयु, दृढायु, अश्वायु, धनायु, धृतिमत्, वसु, शुचिर्विद्य (दिविजात), शतायु (मत्स्य. २४.३३-३४; अग्नि. २७४.१५; पद्म. ख. १२)।

इसके पुत्रों में से आयु को प्रतिष्ठाननगरी का राज्य प्राप्त हुआ, तथा अमावसु (विजय) कन्नौज का अधिपति बना। इसके पुत्रों के जो सात अथवा आठ नाम पुराणों में प्राप्त होते हैं, वे संभवतः किसी एक या दो व्यक्तियों के नामांतर होंगे। क्योंकि इसके दो प्रमुख पुत्र आयु तथा अमावसु के नाम सारे पुराणों में एकवाक्यता से प्राप्त होते हैं।

पुरुरवस्कथा का अन्वयार्थ—ब्राह्मण लोगों के साथ पुरुरवस् द्वारा किये विरोध का कथाभाग, ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण माना जाता है। वैवस्वत मनु के समय ब्राह्मणों तथा क्षत्रियों में सहकार्य था। ऐल पुरुरवस् के समय ब्राह्मण-क्षत्रियों में विरोध पैदा हुआ। ऐल पुरुरवस् ब्राह्मणों के साथ विरोध करने लगा। ब्राह्मणों की शैलत पुरुरवस् ने हठ से ज्वत कर ली। सनत्कुमार ने ब्रह्मलोक से आकर, पुरुरवस् से को ब्राह्मणविरोध न करने के लिये कहा। फिर भी पुरुरवस् ने एक न सुनी। तत्र ब्राह्मणों ने लोभवश पुरुरवस् को शाप दिया, एवं उसे नष्ट करने का प्रयत्न किया। तत्र पुरुरवस् ने उर्वशी के मध्यस्थता से गंधर्वलोग की सहायता प्राप्त की। गंधर्वलोक से अग्नि को प्राप्त कर पुरुरवस् ने अपना कार्य फिर शुरू किया (म. आ. ७०. १२-२१)। इस का तात्पर्य यह होता है कि, स्थानीय लोगों के विरोध की शान्त करने के लिये, पुरुरवस् ने

अपने मूलस्थान गंधर्वलोक से सहायता ली, तथा अपना राज्यशासन सुव्यवस्थित किया। पुरुरवस् के पितृव्य वेन नामक राजा का भी ब्राह्मणों ने वध किया था।

धनलोभ के कारण अत्याचार करने से इसका नाश होने का निर्देश, कौटिल्य ने भी किया है (अर्थशास्त्र पु. २२)।

२. शीपताक्षवंश का एक कुलपासन राजा। कुलपासन होने के कारण, अपने सुहृद् एवं बांधवों के साथ इसका नाश हुआ (म. उ. ७२.१५)।

पुरोचन—दुर्योधन राजा का श्रेष्ठ मंत्री एवं मित्र। दुर्योधन के कथनानुसार पांडवों के नाश के लिए इसने वारणावत में लाक्षाग्रह का निर्माण किया था (म. आ. १३२. ८-१३)।

वारणावत नगरी में इसने पांडवों का स्वागत किया, एवं उन्हें समस्त सुख-सामग्री प्रदान कर लाक्षाग्रह में उधराया (म. आ. १३४. ८-१२)। शत्रु में, पांडवों के साथ रहने के उद्देश्य से यह बर्हा गया। उस समय इसने अपने रथ में खर जोत रक्खे थे। अन्त में, अपने बनाये हुये लाक्षाग्रह में ही जल कर यह मर गया (म. आ. १३२-१३६)।

पुरौजव—(स्वा. प्रिय.) एक राजा। भागवत के अनुसार यह मेधातिथि के सात पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र था।

२. प्राण नामक वसु का कनिष्ठ पुत्र, जिसकी माता का नाम ऊर्जस्वती था (भा. ६.६.१२)।

३ अनिल नामक वसु का पुत्र।

पुराहेव—धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

पुलक—एक मृगरूपी दैत्य। तत्र कर इसने शंकर को प्रसन्न किया, तथा उनसे अदभुत सुगंध के प्राप्त की याचना कर, वर प्राप्त किया। शत्रु में, उस सुगंध से यह देवक्रियों को मोहित कर, संसार को त्रस्त करने लगा। ऐसी परिस्थिति में देवों ने शंकर से इसकी शिकायत की। शंकर ने कुपित होकर, इससे असुर देह छोड़ने के लिए कहा। इसने शंकर के आदेश को मानते हुए उनसे प्रार्थना की, कि मेरे द्वारा धारण की हुयी सुगंध मुझ से वापस न ली जाये (स्कंद १.३.१.१३)।

२. मत्स्य के अनुसार, शुनक राजा का नामांतर।

पुलस्त्य—ब्रह्माजी के आठ मानसपुत्रों में से एक, जो छः शक्तिशाली महर्षियों में गिने जाते हैं (म. आ. ६०.४)। ब्रह्माजी के अन्य सात मानस पुत्रों के नाम इस प्रकार हैं:—

भृगु, अंभिरस, मरीचि, अत्रि, वसिष्ठ, पुलह एवं क्रतु (वायु. ४९.६८-६९)।

स्वयंभुव मन्वन्तर में यह ब्रह्मा के उदान से उत्पन्न हुआ। यह स्वयंभुव दक्ष का दामाद तथा शंकर का साटू था। दक्ष द्वारा अपमानित होने पर, शंकर ने इसे दग्ध कर मार डाला। दक्षकन्या प्रीति इसकी पत्नी थी (ब्रह्मांड. २.१२.२६-२९; विष्णु. १.१०)।

शंकर के शाप से ब्रह्माजी के बहुत सारे पुत्र मर गये, जिनमें यह एक था (मत्स्य. १९५)।

महाभारत के अनुसार, यह ब्रह्माजी के कान से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ५९.१०; मत्स्य ३.६-८; वायु. ६६.२२; भा. ३.१२-२४)। ब्रह्माजी द्वारा उत्पन्न हुये प्रजापतियों में यह एक था (मत्स्य. १७१.२६-२७; भा. ३.१२)। कर्म प्रजापति की कन्या हविर्मुखा अथवा हविर्मुक् इसकी पत्नी थी। महाभारत में इसके प्रतीच्या एवं संस्था नामक दो और पत्नियों का भी निर्देश प्राप्त है (म. उ. ११५. ४६०३; ११५.११)।

पुत्र—पुराणों में दी गयी पुलस्त्य के पुत्रों की नामावली इस प्रकार है :—

(१) प्रीतिपुत्र—दानामि, देववाहु, अत्रि (ब्रह्मांड. २.१२.२६-२९); दंभोलि (अगस्त्य) (विष्णु. १.१०)।

हविर्मुखापुत्र—अगस्त्य; विश्रवा (भा. ४.१.३६)।

इनके सिवा, पुलस्त्य को प्रीति से सद्गती नामक एक कन्या उत्पन्न हुयी थी।

२. वैवस्वत मन्वन्तर में पैदा हुआ आद्य पुलस्त्य ऋषि का पुनरावतार। शिवाजी के शाप से मरे हुए ब्रह्माजी के सारे मानसपुत्र, वैवस्वत मन्वन्तर के प्रारंभ में ब्रह्मा जी द्वारा पुनः उत्पन्न किये। उस समय यह अग्नि के 'सिंहाल' केशों में से उत्पन्न हुआ।

एक बार यह मेरु पर्वत पर तपस्या कर, रहा था। उस समय गंधर्वकन्यायें पुनः पुनः इसके समीप आकर इसकी तपस्या में बाधा डालने लगी। फिर इधने क्रुद्ध हो कर, उन्हें शाप दिया, 'जो भी कन्या मेरे सामने आयेगी, वह 'गर्भवती' हो जायेगी।

वैशाली देश के तृणत्रिंदु राजा की कन्या गौ अथवा इडविडा असावधानी से इसके सामने आ गयीं। तुरंत अप्सराओं को इसके द्वारा दिये गये शाप के कारण, वह गर्भवती हो गयी। बाद में पुलस्त्य से उसका विवाह हो गया, एवं उससे इसे विश्रवस् ऐडविड नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. व. २५८.१२; वा. रा. उ. ४)।

तृणत्रिंदु राजा का काल, त्रेतायुग का तीसरा मास माना जाता है। विश्रवस् का निवासस्थान नर्मदा नदी के किनारे पश्चिम भारत प्रदेश में था (म. व. ८७.२-३)। इन दो निर्देशों के आधार पर, पुलस्त्य का काल एवं स्थल-निर्णय किया जा सकता है।

एक बार 'महीसागर संगमतीर्थ' अतिगर्व के कारण, उद्धत हो उठा। इसलिये पुलस्त्य ने उसे 'स्तंभगर्व' यह नया नाम प्रदान किया (स्कंद. १.२.५.८)। ब्रह्माजी ने पुष्करतीर्थ पर किये यज्ञ समारोह में, अर्ध्वर्यु के स्थान पर पुलस्त्य की योजना की गयी थी।

पुत्र—पुलस्त्य को इडविडा से विश्रवस् ऐडविड नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। विश्रवस् से उत्पन्न पुलस्त्यवंश की बहुत सारी संतति राक्षस थी। इस कारण पुलस्त्य ने अगस्त्य ऋषि का एक पुत्र गोद लिया (मत्स्य. २०२.१२-१३)। इसी दत्तोलि (दंभोलि) नामक पुत्र से, आगे चल कर, पुलस्त्यवंश की 'अगस्त्य शाखा' का निर्माण हुआ।

पुलस्त्यवंश—पुलस्त्यवंश की विस्तृत जानकारी महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है (म. आ. ६६; वायु. ७०.३१-६३; ब्रह्मांड. ३.८; लिं. १.६३; मत्स्य. २०२, भा ४.१.३६)। इस वंश के लोग 'पौलस्त्य राक्षस' नामक सामूहिक नाम से प्रख्यात थे, जिसमें निम्नलिखित तीन शाखाओं का अंतर्भाव होता था :—

(१) कुबेर वैश्रवण शाखा—पुलस्त्यपुत्र विश्रवस् को बृहस्पतिकन्या देववर्णिनी से कुबेर नामक पुत्र हुआ। कुबेर स्वयं यक्ष था, किंतु उसके चार पुत्र (नलकूबर, रावण, कुंभकर्ण, एवं विभीषण), तथा एक कन्या (शूर्पणखा) राक्षस थे। उन्हीं से आगे चल कर, पौलस्त्य राक्षसवंश की स्थापना हुयी। इन राक्षसों का सम्राट स्वयं कुबेर ही था।

(२) अगस्त्य शाखा—पुलस्त्य ने गोद में लिये अगस्त्यपुत्र दत्तोलि (दंभोलि) से आगे चल कर, अगस्त्य नामक 'ब्रह्मराक्षस' वंश की स्थापना हुयी। ब्राह्मणवंश से उत्पन्न हुये राक्षसों को ब्रह्मराक्षस कहते थे। ये ब्रह्मराक्षस वेदविद्याओं में पारंगत थे, एवं रात्रि के समय, यज्ञयागादि विधि करते थे। हिरण्यगंध पर ये कुबेर की सेवा करते थे (वायु. ४७. ६०-६१; ब्रह्मांड २.१८.६३-६४)। इस शाखा के राक्षस प्रायः दक्षिण हिंदुस्थान एवं 'सीलोन' में रहते थे।

(३) विश्वामित्र तथा कौशिक शाखा—अगस्त्यों के साथ, विश्वामित्र एवं कौशिक शाखा के लोग भी 'पौलस्त्य ब्रह्मराक्षसों' में गिने जाते थे। ये लोग पौलस्त्यवंश में किस तरह प्रविष्ट हुये, यह नहीं कह सकते, किंतु 'अगस्त्यों' की तरह इन्हें भी 'रात्रिराक्षस' कहा जाता था।

३. महाभारतकालीन एक ऋषि। अजुन के जन्ममहोत्सव में यह उपस्थित था (म. आ. ११४. ४२)। पराशर द्वारा किये राक्षसत्व का विरोध करने के लिए अन्य महर्षियों के साथ, यह भी था। एवं इसने पराशर को समझाकर राक्षसत्व बंद करने पर विवश किया (म. आ. १७२. १०-११)।

इसने भीष्म को विभिन्न तीर्थों का वर्णन, एवं पृथ्वी प्रदक्षिणा का महाभय कथन किया था (म. व. ८०-८३)। शरशय्या पर पड़े हुये भीष्म से मिलने आये हुये ऋषियों में, यह भी शामिल था (म. शां. ४७. ६६*)।

४. एक धर्मशास्त्रकार। 'बृद्धयाज्ञवल्क्य' में प्राप्त स्मृतिकारों की नामावली में इसका निर्देश प्राप्त है। 'शांति शौच' के विषय पर, इसके एक श्लोक का उद्धरण विश्वामित्र ने दिया है (याज्ञ. १.१७)। श्राद्धविधि के समय, ब्राह्मण शासक का, क्षत्रिय तथा शूद्र मांस का, एवं शूद्र शहद का उपयोग कर, ऐसा इसका मत था (याज्ञ. १.२६१)।

'मिताश्रय' में, पुलस्त्य के दो श्लोकों का उद्धरण प्राप्त है, जिनमें श्यावह नद्या खानेकाली वस्तुओं के नाम देकर, शरहर्षे अत्यंत बुरे मायक पदार्थ के रूप में श्याव का निर्देश किया गया है (याज्ञ. ३.२५३)।

संध्या, श्राद्ध, अशौच, संन्यासव्रत, प्रायश्चित आदि के संबंध में, 'पुलस्त्य स्मृति' के अनेक श्लोकों का निर्देश अपराकं ने किया है। ज्ञानकर्मवृत्तय के संबंध में भी, पुलस्त्य के दो श्लोक अपराकं ने दिये हैं (अपराकं. याज्ञ. ३.५७)। धार्मिक तथा श्राद्ध के विषय में, पुलस्त्य के चाण्डीय श्लोक 'स्मृतिचंद्रिका' में दिये गये हैं। रविवार, मंगलवार, एवं शनिवार के दिन स्नान करने से क्या पुण्यफल की प्राप्ति होती है, इसके बारे में भी, पुलस्त्य का निर्देश 'स्मृतिचंद्रिका' में प्राप्त है।

राम, परशुराम, नृसिंह तथा त्रिविक्रम आदि के जयानुष्ठान से क्या लाभ होता है, इस विषय में इसके मत उल्लेखनीय है। चंडेश्वर के 'दानरत्नाकर' में,

मृगजिनदान के विषय में, पुलस्त्य का एक मंत्र उद्धरण दिया गया है।

'पुलस्त्यस्मृति' का रचनाकाल संभवतः ईसा के चौथी, सातवीं शताब्दी के बीच कहीं होगा।

५. चैत्र माह में धाता नामक आदित्य के साथ धूमने-वाला एक ऋषि (भा. १२.११.३३)।

पुलह—ब्रह्माजी के आठ मानसपुत्रों में से एक, जो लः शक्तिशाली ऋषियों में गिना जाता था (म. भा. ६०.४)।

स्वायंभुव मन्वंतर में यह ब्रह्माजी के नामि से अथवा 'व्यान' से उत्पन्न हुआ (भा. ४.१.३८)। यह स्वायंभुव दश का दामाद तथा शिवजी का साहू था। दश द्वारा अपमानित होने पर, शिवजी ने इसे दग्ध कर मार डाला। दक्षकन्या ध्रुमा इसकी पत्नी थी।

भागवत् में, इसके गति नामक और एक पत्नी का निर्देश प्राप्त है। ब्रह्माजी के अन्य मानसपुत्रों के साथ, यह भी शिवजी के शाप से मृत हुआ (मत्स्य. १९५)।

ध्रुमापुत्र—अपने ध्रुमा नामक पत्नी से, इसे निम्न-लिखित पुत्र उत्पन्न हुए:—

(१) कर्दम—अग्नि ऋषि की आग्नेयी 'श्रुति' नामक कन्या से इसका विवाह हुआ था, जिससे इसे शंखपाद एवं काम्या नामक दो सन्ताने हुयीं। उनमें से शंखपाद दक्षिण दिशा का प्रजापति था। काम्या का विवाह स्वायंभुव मनु का पुत्र प्रियव्रत राजा से हुआ था, जिससे उसे दस पुत्र, एवं दो कन्यायें उत्पन्न हुयीं। उन दस प्रियव्रतपुत्रों ने आगे चल कर, क्षत्रियत्व को स्वीकार किया, एवं वे सप्तर्षीयों के स्वामी बन गये (ब्रह्मांड. २. १२.३०-३२; प्रियव्रत देविये)।

(२) कनकरीड—अपनी यशोधरा नामक पत्नी से, इसे सहिष्णु एवं कामदेव नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए।

(३) उर्वरीवत् (४) सद्रिष्णु (५) पीवरी (कन्या)

गतिपुत्र—अपने गति नामक पत्नी से, इसे कर्दम, उर्वरीवत् एवं सहिष्णु नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए (विष्णु १.१७.१०)।

२. वैवस्वत मन्वंतर में पैदा हुआ आद्य पुलह ऋषि का पुनरावतार। शिवजी के शाप से मरे हुये ब्रह्माजी के सारे मानसपुत्र, उसने वैवस्वत मन्वंतर में पुनः उत्पन्न किये। उस समय, यह अग्नि के लंबे केशों में भे उत्पन्न हुआ।

इसे संख्या नामक एक पत्नी थी। इसके अतिरिक्त क्रोधा की बारह कन्यायें इसकी पत्नियाँ थीं, जिनके नाम इस प्रकार थे—मृगी, मृगमंदा, हरिभद्रा, इरावती, भूता, कपिशा, दंदा, रिषा, तियाँ, श्वेता सरमा तथा सुरसा (ब्रह्मांड. ३.७.१७१)।

पुलहवंश—महाभारत के अनुसार, पुलह की संतति मनुष्य न हो कर, मृग, सिंह, रीछ, व्याघ्र, किंपुस्र आदि योनि की थीं (म. आ. ६०.७)। वायु के अनुसार, इसके पुत्रों में दानव, रक्ष, गंधर्व, किन्नर, भूत, सर्प, पिशाच आदि प्रमुख थे (वायु. ७०. ६४-६५; ७३.२४.२५)।

मार्कण्डेय के अनुसार, पुलह के कर्दम, अर्कवीर एवं सहिष्णु नामक तीन पुत्र थे (मार्क. ५२.२३-२४)। ये पुत्र दुष्टचरित्र थे, अतएव पुलह ने अगस्त्य के पुत्र दृढास्य (दृढच्युत) को गोद लिया। पद्म में इसी अगस्त्यपुत्र का नाम दंपोलि दिया गया है।

इसी कारण पुलह के वंश की दो शाखायें हो गयीं। इनमें से पुलह के निजी पुत्र 'पौलह' अमानुषी योनि के थे, एवं अगस्त्यशाखा के पुत्र ब्रह्मराक्षस योनि के थे (मत्स्य. २०२.९-१०)।

३. महाभारतकालीन एक ऋषि। यह अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. ११४.४२)। शर-शय्या पर पड़े हुये भीम के पास आये हुये ऋषियों में यह एक था (म. अनु. २६.४)। अश्वमेध नदी के तट पर यह जप-तप करता था (म. व. परि. १.१६.१२)

४. एक ऋषि, जो ब्रह्माजी के द्वारा पुष्करक्षेत्र में किये यज्ञ में 'प्रत्युद्गाता' था (पद्म. सू. ३४)।

५. वैशाख माह में अयंमा नामक सूर्य के साथ धूमने-वाला एक ऋषि (भा. १२.११.३४)

पुल्लिन—अमृतरक्षक देवों में से एक (म. आ. २८. १९)।

पुल्लिन्द—(शुंग. भविष्य.) एक शुंगवंशीय राजा। मागधत के अनुसार यह भद्रक का, ब्रह्मांड के अनुसार भद्र का, वायु के अनुसार झुक का, एवं मत्स्य के अनुसार अन्तक का पुत्र था। विष्णु में इसे 'आर्द्रकपुत्र पुल्लिन्दक' कहा गया है।

२. किरातों का एक राजा, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था (म. स. ४.४७३)।

३. पुल्लिन्द देश के निवासियों के लिए प्रयुक्त सामूहिक नाम। ये पहले क्षत्रिय थे, किंतु ब्राह्मणों के शाप के कारण

शूद्र बन गये (म. अनु. ३३.२२-२३)। ये म्लेच्छ जातियों में थे, जो कलियुग में पृथ्वी के शासक बने (म. व. १८६.३०)।

वसिष्ठ ऋषि की गौ नन्दिनी के कुपित होने पर, उसके मुख से निकले फेन से ये उत्पन्न हुये थे (म. आ. १६५.३६)। भीम ने इन लोगों पर हमला किया, एवं इनके महानगर को ध्वस्त कर, इनके राजा सुकुमार एवं सुमित्र को जीत लिया (म. स. २६.१०)। सहदेव ने भी इन्हीं दोनों राजाओं पर विजय प्राप्त की थी (म. स. २८.४)।

भारतीय युद्ध में, ये लोग दुर्योधन की सेना में सम्मिलित थे (म. उ. १५८.२०)। पांडव-नरेश के साथ इनका युद्ध हुआ था एवं उसके बाणों द्वारा ये ब्राह्मण हुये थे (म. क. १५.१०)।

पुलिमत्—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा। विष्णु के अनुसार, यह गोमतीपुत्र राजा का पुत्र था। इसे 'पुरीमत्' नामांतर भी प्राप्त था (पुरीमत् देखिये)।

पुलुष प्राचीनयोग्य—एक वैदिक ऋषि, जो 'प्राचीनयोग' का वंशज था। यह दृति ऐन्द्रोत शौनक नामक ऋषि का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

पुलोमत्—एक राक्षस, जिसने भृगुपत्नी पुलोमा का हरण किया था (म. आ. ५.१५)। हरण के समय पुलोमा के गर्भ में च्यवन ऋषि था, जिसके तेज से यह राक्षस जल कर भस्म हो गया (पुलोमा देखिये)।

२. एक राक्षस, जो हिरण्यकशिपु एवं वृजासुर का अनुयायी था (भा. ६.६.३१; १०.२०; ७.२.५)।

३. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

४. प्रहेति नामक राक्षस का पुत्र। इसके मधु, पर, महोय तथा लवण नामक चार पुत्र थे।

५. (आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा। मत्स्य के अनुसार, यह गौतमीपुत्र राजा का पुत्र था। इसने अष्टादश वर्षों तक राज्य किया।

६. (आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा। मत्स्य के अनुसार, यह चण्डश्री का पुत्र था। इसने सात वर्षों तक राज्य किया। इसके पुलोवा, पुलोमारि, पुलोमाचि, सलोमाचि नामक चार पुत्र थे।

पुलोमजा—पुलोमत् दैत्य की कन्या। 'शिबवत' करने के कारण यह इन्द्रपत्नी शची बनी (स्कंद. ४.२. ८०)।

पुलोमा—वारुणि भृगु ऋषि की पत्नी, एवं च्यवन ऋषि की माता (विष्णुधर्म. १. ३२; गणेश. ५. २९) । इसे पौलोमी नामांतर भी प्राप्त है (विष्णु. ७. ३२) । इसका पति भृगु ब्रह्ममानसपुत्रों में से एक था ।

पुलोमा जब बहुत छोटी थी, तब इसे डराने के विचार से इसके पिता ने सहजभाव से कहा, ' हे राक्षस ! इसे ले जा । ' संयोग की बात थी, कि उधर से पुलोमत् नामक राक्षस जा रहा था । उसने यह कथन सुनकर, मन से इसका वरण किया । कालांतर में, जब यह बड़ी हुई, तब इसके पिता ने इसकी शादी भृगु के साथ कर दी, क्योंकि उसे पूर्व की अव्यक्त वटना का ज्ञान न था ।

एक बार जब यह गर्भवती थी, तब पुलोमत् इसके आश्रम में आया । उस समय भृगु ऋषि स्नान हेतु बाहर गये थे, अतएव इसने पुलोमत् का उचित आदरसत्कार कर, उसे कंदमूलादि खाने के लिए दिये । पुलोमत् ने मिले हुये सत्कार को स्वीकार कर, वह पुलोमा के हरण की बात सोचने लगा ।

जिज्ञासा को संतुष्ट करने के लिये, उसने अग्नि से पूछा, ' मैंने पुलोमा का मन से वरण किया है, पर समझ नहीं पा रहा, वास्तव में यह किसकी पत्नी है । अग्नि ने कहा ' तुमने इसके बाल्यकाल में ही अपने मन में अवश्य वरण कर लिया हो, किन्तु वह भृगु ऋषि की पत्नी है । मेरे समक्ष भृगु ने इसका विधिवत् वरण किया है ।

पुलोमत् राक्षस अग्नि के उत्तर से सहमत न हुआ, और बराह रूप धारण कर, उसने पुलोमा का हरण किया । अपनी माँ पुलोमा का हरण देखकर, उस के गर्भ में स्थित च्यवन ऋषि ने गर्भ से बाहर आकर, बराह रूप राक्षस को अपने तेज से दग्ध किया ।

पुलोमा के कुल उन्नीस पुत्र हुये, जिनमें से बारह देव तथा सात राक्षस थे । इन पुत्रों की सूची भृगुवंश में प्राप्त है (म. भा. ५-६) ।

२. दैत्य कुल की एक कन्या, जिसके पुत्रों को ' पौलोम ' कहते हैं । यह वैश्वानर धानव की कन्याओं में से एक थी ।

इसने एवं इसकी सहेली कालका ने घोर तपस्या कर के ब्रह्माजी से वर माँगा ' देवता, राक्षस एवं नागों के लिए अवश्य पुत्रों की प्राप्ति हमें हो । उन्हें रहने के लिये एक सुन्दर नगर हो, जो अपने तेज से जगमगा रहा हो विमान की भाँति आकाश में विचरनेवाला हो, एवं नाना प्रकार के रत्नों से युक्त हो । वहाँ ऐसा नगर हो जिसे देवतागण जीत न सकें (म. व. १७०.७-१२) ।

ब्रह्माजी ने इसे एवं कालका को ईच्छित वर प्रदान किया एवं प्रजापति कश्यप को इससे विवाह करने की आज्ञा दी । कश्यप से इसे असंख्य संताने हुयीं, जो ' पौलोम ' नाम से सुविख्यात हुयीं ।

ब्रह्माजी के वर से कालका को प्राप्त पुत्रों को कालकंज कहते थे । आगे चलकर ' पौलोम ' एवं ' कालकंज, निवात-कवच ' नाम से विख्यात हुये, जो इनका सामूहिक नाम था । ये लोग संख्या में साठ-हज़ार थे, एवं हिरण्यपुर नामक नगरी में रहते थे (म. व. १६९; निवातकवच २ देखिये) ।

पुलोमारि—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा । ब्रह्मांड के अनुसार, यह दण्डश्री राजा का पुत्र था (पुलोमत् ६. देखिये) ।

पुलोमार्चि—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा । विष्णु के अनुसार, यह चण्डश्री राजा का पुत्र था (पुलोमत् ६. देखिये) ।

पुलोया—(आंध्र भविष्य.) एक राजा । वायु के अनुसार, यह दण्डश्री राजा का पुत्र था (पुलोमत् ६. देखिये) ।

पुष्कर—वरुणदेव का प्रिय पुत्र, जिसके नेत्र विकसित कमल के समान सुंदर थे । इसी कारण, सोम की ' ज्योत्स्ना काली ' नामक कन्या ने पतिरूप से इसका वरण किया था (म. उ. ९६. १२) ।

२. निषधाधिपति नल का छोटा एवं सीतेला भाई, जिसने नल राजा का सारा राज्य जुए के खेल में जीत लिया था (म. व. ५६. ९)

कलि ने इसे नल राजा से जुआ खेलने का आदेश दिया था । उस आदेशानुसार, इसने नल से जुआ खेला एवं नल का सर्वस्व जीत लिया ।

नल राजा के अज्ञातवास के पश्चात्, उसने पुनः एकत्रार पुष्कर को जुआ खेलने का आवाहन किया, एवं इससे अपना राज्य वापस जीत लिया (म. व. ७७. १८) ।

३. कृष्णवराधार कुल का एक गोत्रकार ।

४. (स. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा । यह राम दाशरथि का पुत्र, कुश का वंशज, एवं सुनक्षत्र राजा का पुत्र था । इसके पुत्र का नाम अंतरिक्ष था (भा. ९. १२. १२) । इसे ' किन्नर ' एवं ' किन्नराश्व ' नामांतर भी प्राप्त थे ।

५. श्रीकृष्ण के पुत्रों में से एक (भा. १०. ९०. ३४) ।

६. वसुदेव के भाई वृक को दुर्वाक्षी नामक पत्नी से उत्पन्न पुत्र (भा. ९. २४. ४३) ।

पुष्करमालिन्—विदेह देश का राजा ऐंद्रद्युम्न जनक का नामांतर। इसे 'उग्रसेन' नामांतर भी प्राप्त था। महाभारत के अनुसार, पुष्करमालिन् ऐंद्रद्युम्न एवं उग्रसेन एक ही जनक राजा के नामांतर थे, एवं यह राजा वरुण-पुत्र वेदिन् एवं अष्टावक्र ऋषियों के बादसभा में उपस्थित था (म. व. १३३.१३; १३४.१; वेदिन् देखिये)।

पुराणों में प्राप्त वंशावलि में, इनमें से एक भी जनक का नाम प्राप्त नहीं है। इस कारण, इन नामों में से सही नाम कौनसा है, यह बताना कठिन है।

पुष्करमालिनी—एक धर्मचारिणी स्त्री, जो विदर्भ देश में 'उच्छवृत्ति' से रहनेवाले सत्य नामक ऋषि की पत्नी थी। महाभारत में, इसके नाम के लिये 'पुष्कर-चालिनी', एवं 'पुष्करधारिणी', पाठभेद उपलब्ध हैं।

अत्यंत व्रतस्थ होने के कारण, यह 'ऋशतनु' एवं पवित्र बन गयी थी। यह पति के कथनानुसार आचरण करती थी, एवं वन में सहजरूप ये प्राप्त मोरपंखों से बना हुआ वस्त्र धारण करती थी। पशुयज्ञ से इसे सख्त नफ़रत थी (म. शां. २६४.६)।

पुष्कराक्ष—(सं. विष्ट.) एक राजा, जो सुचंद्र राजा का पुत्र था। परशुराम जामदग्न्य ने सर से पाँव तक विच्छेद कर, इसका वध किया (ब्रह्मांड. ३.४०.१३, परशुराम-देखिये)।

पुष्करारुणि—(सो. पूर.) एक पुरुवंशीय राजा। भागवत के अनुसार, यह दुरतिक्रय राजा के तीन पुत्रों में से कनिष्ठ था। जन्म से यह क्षत्रिय था, किंतु तपस्या के कारण ब्राह्मण बन गया (भा. ९.२१.२०)। इसे 'पुष्करिन्' नामांतर भी प्राप्त था।

पुष्करिणी—सम्राट भरत की स्तुपा, एवं भरतपुत्र भुमन्यु की पत्नी (म. आ. ८९.२१)। इसे कुल छः पुत्र थे, जिनके नाम इसप्रकार थे:—सुहोत्र, दिविरथ, सुहोता, सुहवि, सुयजु एवं ऋचीक।

२. व्युष्ट राजा की पत्नी, जिसे सर्वतेजस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ४.१३.१४)।

३. उसकुरा राजा की पत्नी। इसे कुल छः पुत्र थे, जिनके नाम इस प्रकार थे:—अंग, सुमनस्, ख्याति, ऋतु, अंगिरा एवं गय (भा. ४.१३.१७)।

पुष्करिन्—(सो. पूर.) एक पुरुवंशीय राजा। वायु के अनुसार, यह उभक्षय राजा का, एवं विष्णु के अनुसार उरुक्षय राजा का पुत्र था। इसे 'पुष्करारुणि' नामांतर भी प्राप्त था (पुष्करारुणि देखिये)।

पुष्कल—(सं. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो दशरथपुत्र भरत के दो पुत्रों में से कनिष्ठ था। इसकी माता का नाम मांडवी था (वायु. ८८; ब्रह्मांड. ३.६३. १९०; विष्णु. ४.४७; अग्नि ११.७-८; ९; ११-१२)।

पद्म पुराण के पातालखंड में, राम दशरथि के अश्वमेधों यज्ञ का विस्तृत वर्णन प्राप्त है, जिससे इसकी श्रुता की प्रचीति मिलती है (पद्म. पा. १—६८)। राम दशरथि ने कुल तीन अश्वमेध यज्ञ किये। उन तीनों यज्ञ के समय, अश्व की रक्षा करने का काम शत्रुघ्न के साथ पुष्कल ने ही निभाया था (पद्म. पा. १.११)।

इस कार्य में अनेक राक्षस एवं वीरों से इस सामन करना पड़ा। सुबाहुपुत्र दमन को इसने परास्त किया (पद्म. पा. २६)। चित्रांग के साथ हुए युद्ध में, इसने उसका वध किया (पद्म. पा. २७)। विद्युन्माली एवं उग्रदंष्ट्र राक्षसों से इसका भीषण युद्ध हुआ (पद्म. पा. ३४)। रुक्मांगद एवं वीरमणि से भी इसका युद्ध हुआ था (पद्म. पा. ४१-४६ अन्त में लव ने राम का अश्वमेधीय अश्व रोक कर इसे पराजित किया (पद्म. पा. ६१)।

वाल्मीकि रामायण के अनुसार, पुष्कल ने गांधार देश जीत कर, उस देश में पुष्कल्यवती अथवा पुष्कल्यवत नामक नगरी की स्थापना की, एवं उसे अपनी राजधानी बनायी (वा. रा. उ. १०१.११)।

पद्म के अनुसार इसकी पत्नी का नाम कांतिमती था (पद्म. पा. ६७)।

२. (सं. इ. भविष्य.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा मत्स्य के अनुसार, यह शुद्धोदन राजा का पुत्र था। इसे सिद्धार्थ नामान्तर प्राप्त है (मत्स्य, २७२. १२; सिद्धार्थ देखिये)। इसे 'राहुल', 'रातुल' एवं 'लांगलिन्' नामांतर भी प्राप्त थे।

पुष्टि—स्वायंभुव मन्वन्तर की कन्या, एवं धर्म की पत्नी (म. आ. ६०.१३)। समय इसका पुत्र था (भा. ४.१.४९-५१)।

यह ब्रह्माजी के सभा में रह कर उनकी उपासना करती थी (म. स. ११.१३२*)। अर्जुन जब इंद्रलोक की यात्रा के लिए गया था, तब उसकी रक्षा के लिए द्रौपदी ने इसका स्मरण किया था (म. व. ३८.१४९*)।

२. ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा के हिरण्यनाम का शिष्य।

३. (सो. वसु.) एक राजा वायु के अनुसार, यह

सुवदेव राजा का पुत्र था एवं इसकी माता का नाम मविरा था।

४. धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

पुष्टिगु काण्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८, ५०)। ऋग्वेद के 'वालखिल्य सूक्त' में इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८.५१.१)।

पुष्टिद—मार्कण्डेय पुराण के अनुसार, इक्ष्वाकुपितृवर्गों में से एक (मार्क. ९२-९४; पितर देखिये)।

पुष्टिमति—भरत नामक अग्नि का नामांतर। यह संतुष्ट होने पर पुष्टि प्रदान करता है, इस कारण इसका नाम 'पुष्टिमति' है (म. व. २११.१)।

पुष्य—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा। विष्णु के अनुसार, यह हिरण्यनाभ राजा का पुत्र था। इसे 'पुष्य' नामांतर भी प्राप्त था (पुष्य देखिये)।

२. कश्यपवंशीय एक नाग (म. उ. १०१.१३)।

पुष्पदंष्ट्र—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू का पुत्र था।

पुष्पदंत—विष्णु का एक पार्षद (भा. ९. २१. १७)।

२. एक गन्धर्व, जिसके पुत्र का नाम माल्यवान था (पद्म, उ. ४३)। देवी भागवत के अनुसार, यह 'शिवमहिम्न स्तोत्र' का रचयिता था (दे. भा. ९.२०)।

३. एक रुद्रगण (पद्म, उ. १२)।

४. मणिवर एवं देवद्वी की 'गुह्यक' पुत्रों में से एक।

५. पार्वती द्वारा कुमार कार्तिकेय को दिये गये तीन पार्षदों में से एक। अन्य दो पार्षदों के नाम 'उन्माद' एवं 'शंकुकर्ण' थे (म. श. ४४.४७)।

पुष्पदंती—चित्रसेन गंधर्व की नातिन। एक बार इन्द्र की सभा में, यह एवं माल्यवत् गंधर्व-अन्य देव-गंधर्वों के साथ नृत्य कर रहे थे। नृत्य के बीच में ही माल्यवत् के रूप पर मुग्ध हो जाने के कारण, यह ताल-स्वर से अलग नृत्य करने लगी। इस कारण क्रुद्ध होकर इन्द्र ने इन दोनों को पिशाच हो जाने का शाप दिया।

पश्चात् 'जया' नामक एकादशीव्रत करने के कारण, ये दोनों इन्द्रशाप से मुक्त होकर स्वर्ग में फिर शामिल हो गये (पद्म, उ. ४३; माल्यवत् देखिये)।

पुष्पधन्वन्—रति का पति, कामदेव का नामांतर। पुष्प का धनुष धारण करने के कारण, कामदेव को यह नामांतर प्राप्त हुआ।

पुष्पयशस् औदमजि—एक वैदिक आचार्य, जो संकर गौतम नामक ऋषि का शिष्य था। इसका शिष्य भद्रशर्मन् था (च. ब्रा. ३)।

पुष्पवत्—(सो. ऋश्व.) महाभारत के अनुसार, एक पृथ्वीशासक राजा। अत्यधिक पराक्रमी एवं अजेय होकर भी, अन्त में इसे मृत्यु का सुख देलना पड़ा (म. शां. २२०.५०-५५)।

भागवत, विष्णु एवं वासु के अनुसार, यह ऋषभ राजा का पुत्र था।

पुष्पवाहन—रथेंतर कल्प का एक राजा। इसकी पत्नी का नाम लवण्यवती था, जिसके दस हजार पुत्र थे।

पूर्वजन्म में यह व्याध था। 'द्वादशीव्रत' करनेवाली अनंगवती नामक बेश्या को विष्णु-पूजन के लिये इसने कमल के फूल बड़े भक्ति-भाव से प्रदान किये थे। इसी पुण्य के कारण, अवले जन्म में इसे पुष्पवाहन राजा की सोनि प्राप्त हुयी।

भृगुऋषि ने पुष्पवाहन राजा को इसके पूर्वजन्म की कथा को बताकर, इससे इस जन्म में भी द्वादशीव्रत करने को कहा, जिससे युक्ति की प्राप्त हो सके (पद्म, सू. २०)।

पुष्पातन—एक यक्ष, जो कुवेर की सभा में रहकर उसकी उपासना करता था (म. स. १०. १७)।

पुष्पान्वेषि—अंगिराकुल में उत्पन्न एक गोत्रकार

पुष्पाण—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो सुविख्यात बालयोगी ध्रुव राजा का पौत्र था। इसके पिता का नाम वत्सर, एवं माता का नाम स्वर्वाथी था। यह अपने छ भाइयों में ज्येष्ठ था।

इसके प्रभा एवं दोगा नामक दो पत्नियाँ थी। प्रभा से इसे प्रातः, सायं, एवं मध्याह्न, तथा दोगा से प्रदोष, निशीथ और व्युष्ट नामक पुत्र उत्पन्न हुए (भा. ४. १३. १२-१४)।

पुष्पोत्कटा—एक अतिमुन्दरी राक्षसकन्या, जो सुमालि राक्षस की पुत्री थी। इसकी माता का नाम केतुमती था (वा. रा. उ. ५. ४०)।

इसके पति का नाम विश्रवद् था, जिसे इसे रावण एवं कुम्भकर्ण नामक पुत्र हुये थे। कुवेर ने इसे विश्रवद् की सेवा में नियुक्त किया था। यह गायन एवं नृत्य में निपुण थी (म. व. २५९. ७)।

पुष्प—(स. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा। भागवत एवं वायु के अनुसार, यह हिरण्यनाथ राजा का पुत्र था। वायु एवं विष्णु में इसे 'पुष्प' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम ध्रुवसन्धि था (दे. भा. ३. १४)।

पुष्पश्रवस्—एक विष्णुभक्त ऋषि। विष्णुभक्ति के कारण, कृष्णावतार में इसने नंद के भाई के यहाँ, 'लवंगा' नामक कन्या के रूप में जन्म लिया था (पद्म. पा. ७२)।

पूजनी—कांपित्य नगर के ब्रह्मदत्त राजा के भवन में निवास करनेवाली एक चिड़िया (म. शां. १३७.५) यह समस्त प्राणियों की बोली समझती थी, तथा सर्वज्ञ और सम्पूर्ण तत्वों को जाननेवाली थी। राजकुमार सर्वसेन ने इसके बच्चे मार डाले थे, अतएव इसने भी उसकी आँखें फोड़ दी थीं (म. शां. १३७.१७)।

पश्चात्, इसने राजभवन छोड़ना चाहा। राजा ब्रह्मदत्त ने इससे रहने के लिए आग्रह किया, किन्तु इसने राजा की प्रार्थना अस्वीकार कर दी। राजभवन छोड़ते समय इसका एवं ब्रह्मदत्त का तत्त्वज्ञान सम्बन्धी संवाद हुआ था (म. शां. १३७.२१-१०९; ब्रह्मदत्त देखिये)।

पूतकृता—ऋग्वेद के 'वास्तुखिल्य' सूक्त में निर्देशित एक स्त्री, जो सम्भवतः पूतकृत राजा की पत्नी थी (ऋ. ९. ५६.४)। पाणिनि के व्याकरण के अनुसार, इस शब्दका रूप 'पूतकृतायी' था (पां. ४.१.३६)।

पूतकृत—एक वैदिक राजा, जो अश्वमेध राजा का पुत्र था (ऋ. ८.६८.१७)। कई विद्वानों के अनुसार, अतिथिव इंद्रोत्, अश्वमेध तथा पूतकृत सम्भवतः एक ही व्यक्ति के नाम थे। सायण के अनुसार, पूतकृत किसी स्वतंत्र व्यक्ति का नाम नहीं था। इसके पुत्र का नाम दस्यु-वे वृक था (ऋ. ८.५६.२)।

पूतदक्ष आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. ९४)।

पूतना—एक राक्षसी, जो कंस की बहन, एवं घटोदर राक्षस की पत्नी थी। कंस ने इसे श्रीकृष्ण का वध करने के लिये गोकुल भेजा था। गोकुल में यह नवतरुणी स्त्री का रूप धारण कर, अपने स्तनों में विष लगाकर, वहाँ के बच्चों को अपने स्तन से दूध पिलाकर, उनका वध करने लगी। इस प्रकार गोकुलग्राम के न जाने कितने बालकों की जान लेकर, श्रीकृष्ण की भी इसी भौंति मारने की इच्छा से, एक दिन यह नंद के घर गयी। इसने अपने स्तनों में श्रीकृष्ण को लगाया ही था, कि बालक कृष्ण ने

दूध के साथ इसके प्राणों को भी चूसना शुरू कर दिया। पूतना वेदना में व्याकुल होकर तड़पने लगी, और प्राण त्याग दिये (म. स. परि. १ क्र. २१. पंक्ति ७५९; भा. १०.६; पद्म. ब्र. १३; विष्णु. ५.५. ब्रह्मवै. ४.१०)।

हरिवंश के अनुसार, यह कंस की दाई थी। इसने पक्षिणी का रूप धारण कर, गोकुल में प्रवेश किया था। दिनभर आराम कर, रात में सब के सो जाने पर, कृष्ण के मुख में दूध पिला कर मारने के हेतु से, इसने अपना स्तन दिया। कृष्ण ने दूध के साथ, इसके प्राणों का शोषण कर, इसका वध किया (ह. वं. २.६)।

आदिपुराण के अनुसार, यह कैतवी नामक राक्षस की कन्या, एवं कंस राजा की पत्नी की सखी थी। इसकी बहन का नाम वृकोदरी था। कंस के आदेशानुसार गोकुल में जाकर, दस बारह दिन के आयुवाले बच्चों को कालकूट-युक्त स्तन के दूध को पिलाकर, इसने उनका नाश किया। बाद में जब कृष्ण को मारने की इच्छा से यह उनके घर गयी, तो कृष्ण ने इसका वध किया (आदि. १८)।

पूर्वजन्म में यह बलि राजा की कन्या थी, और इसका नाम रत्नमाला था। बलि के यज्ञ के समय, वामन भगवान् को देखकर इसकी इच्छा हुयी थी कि, वामन मेरा पुत्र हो, और इसे मैं अपना स्तनपान कराऊँ। इसकी यह इच्छा जान कर, वामन ने कृष्णावतार में कृष्ण के रूप में इसका स्तनपान कर, इसे मुक्ति प्रदान किया था (ब्रह्मवै. ४.१०)।

इसे राक्षसघोनि क्यों प्राप्त हुयी ? इसकी कथा आदिपुराण में इस प्रकार दी गयी है। एक बार कालभीरु ऋषि अपनी कन्या चारुमती के साथ कहीं जा रहे थे कि, उन दोनों ने सरस्वती के तट पर तपस्वा करते हुये कक्षीवान् ऋषि को देखा। कक्षीवान् के स्वरूप को देखकर, एवं उसे योग्य वर समझकर, कालभीरु अपनी पुत्री चारुमती को शास्त्रोक्त विधि से उसे अर्पित की। बाद में, कक्षीवान् तथा चारुमती दोनों सुखपूर्वक रहने लगे। एकवार कक्षीवान् तीर्थयात्रा को गया था। इसी बीच एक सूत्र ने चारुमती को अपने वंश में कर लिया। आते ही कक्षीवान् को अपनी पत्नी का दुराचरण ज्ञात हुआ, तथा उन्होंने उसे राक्षसी बनने का शाप दिया। चारुमती के अत्यधिक अनुनय-विनय करने पर कक्षीवान् ने कहा, 'जाओ, कृष्ण के द्वारा ही तुम्हें मुक्ति प्राप्त होगी।'।

कक्षीवान् ऋषि के उपर्युक्त शाप के कारण, चारुमती को पूतना राक्षसी का जन्म प्राप्त हुआ (आदि. १८)।

२. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५. १६)। अन्य मातृकाओं के समान यह भी वाल्मीकि द्वारा पूजित है (म. व. २१९. २६)।

पूतिमाष—अंगिराकुल में उत्पन्न एक ऋषि।

पूरण वैश्वामित्र—विश्वामित्रकुल का एक गोत्रकार, सूक्तकार तथा प्रवर् (ऋ. १०. १६०)। इसे 'पुराण' नामान्तर भी प्राप्त था।

महाभारत में एक ऋषि के रूप में इसका निर्देश प्राप्त है (म. श. ४७. ६६, पंक्ति ११३)। किन्तु वहाँ इसके नाम का निर्देश 'पूरण' नाम से तो किया गया है, पर वहाँ इसकी 'वैश्वामित्र' उपाधि का कोई भी उल्लेख प्राप्त नहीं है।

पूरु—ऋग्वेदकालीन एक जातिसमूह। अनु, दुहयु, तुर्वसु, एवं यदु लोगों के साथ, इनका निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १. १०८. ८)।

दाशराज युद्ध में, सुदास राजा के हाथों पूरु लोगों को पराजित होना पड़ा (ऋ. ७. ८. ४)। ऋग्वेद के एक सूक्त में, पूरु लोगों के एक राजा का, एवं सुदास की पराजय के लिए असफल रूप में प्रार्थना करनेवाले राजपुरोहित विश्वामित्र का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ७. १८. ३)।

यद्यपि दाशराज युद्ध में पूरुओं का पराजय हुआ, फिर भी ऋग्वेदकाल में ये लोग काफी सामर्थ्यशाली प्रतीत होते हैं। इन लोगों ने अनेक आदिवासी लोगों पर विजय प्राप्त किया था (ऋ. १. ५९. ६; १२१. ४; ४. २१. १०)। तृत्सु एवं भरत जातियों से इन लोगों का अत्यंत घनिष्ठ संबंध था, एवं उन जातियों के साथ, पूरु लोग भी सरस्वती नदी के किनारे रहते थे (ऋ. ७. १६. २)।

कई विद्वानों के अनुसार, पूरु लोग सर्वप्रथम दिवोदास राजा के साथ सिन्धु नदी के पश्चिम में रहते थे, और बाद को ये सरस्वती नदी के किनारे रहने लगे। सिकंदर को एक पौरव राजा 'उस ह्यदस्पीस' नामक स्थान के समीप मिला था (अरियन—इंडिका ८. ४)। यह स्थान सरस्वती नदी एवं पश्चिम प्रदेश के बीच में कहीं स्थित था।

पूरु लोगों के अनेक राजाओं का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है, जिससे इन लोगों का महत्व प्रस्थापित होता है। ऋग्वेद में प्राप्त पूरु राजाओं की वंशावलि इस प्रकार है :— दुर्गेह— गिरिक्षित— पुरुकुत्स— त्रसदस्यु। इन में से पुरुकुत्स, तृत्सु लोगों का राजा सुदास का समकालीन

था, एवं काले रंग के अनेक 'दास' लोगों पर उसने विजय प्राप्त किया था (ऋ. ७. ५. ३)। काले रंग के दासों से लड़नेवाला पुरुकुत्स राजा स्वयं गौरवर्णीय होगा। कई विद्वानों के अनुसार ऋग्वेद में प्राप्त कृष्णवर्णीय दासों का यह वर्णन, भारतवर्ष के आदिवासियों को लक्षित करता है। किन्तु इस संबंध में निश्चित रूप से कहना कठिन है। ऋग्वेद के अनुसार, पुरुकुत्स के पुत्र त्रसदस्यु का जन्म अत्यंत दुरवस्थ काल में हुआ था (ऋ. ४. ४२. ८-९)। दाशराज युद्ध में पुरुकुत्स राजा की मृत्यु हो गयी थी।

पूरुवंश के 'कुरुश्रवण त्रासदस्यव' नामक एक राजा का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १०. ३३. ४)। दाशराज युद्ध के पश्चात्, तृत्सु, भरत एवं पूरु जातियों में मित्रता स्थापित हुयी, एवं इन तीन जातियों को मिला कर 'कुरु जाति' की स्थापना की गयी। कुरु जाति का प्रत्यक्ष निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त नहीं है, किन्तु कुरुश्रवण त्रासदस्यव राजा के निर्देश से इस मित्रता का अप्रत्यक्ष प्रमाण मिलता है। सुदास, पौरकुत्स, त्रसदस्यु, एवं पूरु इन सभी राजाओं का इंद्रद्वारा रक्षण किया जाने का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. ७. १९. ३)।

वैदिक ग्रंथों में इसके नाम के लिए, सर्वत्र 'पूरु' पाठ उपलब्ध है। केवल शतपथ ब्राह्मण में 'पुरु' पाठ प्राप्त है, एवं वहाँ पुरु की 'असुर रक्षस्' कहा गया है (श. ब्रा. ६. ८. १. १४)। पौराणिक ग्रंथों में से, केवल वायुपुराण में 'पुरु' पाठ उपलब्ध है।

२. 'पौरववंश' की स्थापना करनेवाला सुविख्यात राजा, जो महाभारत के अनुसार, ययाति राजा के पाँच पुत्रों में से एक था। ययाति राजा के शेष चार पुत्रों के नाम इसप्रकार थे:— अनु, दुहयु, यदु एवं तुर्वसु (म. आ. १. १७२)। ययाति राजा एवं उनके पाँच पुत्रों का निर्देश ऋग्वेद में भी प्राप्त है, किन्तु वहाँ ययाति एक ऋषि एवं सूक्तद्रष्टा बताया गया है, एवं अनु, दुहया यदु, तुर्वसु तथा पूरु का निर्देश स्वतंत्र जातियों के नाते से किया गया है। 'वैदिक इंडेक्स' के अनुसार, ऋग्वेद की जानकारी अधिक ऐतिहासिक है, एवं महाभारत तथा पुराणों में दी गयी जानकारी गलत है (वै. इ. २. १८७)।

महाभारत के अनुसार, यह ययाति राजा को शर्मिष्ठ के गर्भ से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ७०. ३१)। इसकी राजधानी प्रतिष्ठान नगर में थी।

यह अपने पिता के सभी पुत्रों में कनिष्ठ था। किंतु इसने ययाति की जरावस्था लेकर उसे अपना तारुण्य प्रदान किया था (म. आ. ७०.४१) इस उदारता एवं पितृभक्ति से प्रसन्न होकर, कनिष्ठ होकर भी, ययाति ने इसे अपना समस्त राज्य दे दिया, एवं इसे 'सार्वभौम राज्याभिषेक' करवाया। इसके राज्याभिषेक के समय, सभाजनों ने दृढ़तापूर्वक कहा, 'जो पिता की आज्ञा का पालन करता है वहीं उसका वास्तविक पुत्र है, एवं उसे ही राज्याधिकार मिलना चाहिये'। अन्त में ययाति के आदेशानुसार, पूरु का राज्याभिषेक किया गया। इसके अन्य भाइयों को भी राज्य प्रदान किये गये, पर अपने पिता का 'सार्वभौमत्व' पूरु को ही प्राप्त हुआ (भा. ९. १९. २३)। सुविख्यात 'पूरुवंश' की स्थापना इसने की। इस कारण इसे 'वंशकर' भी कहा गया है (म. आ. ७०.४५)।

कालंतर में, विषयोपभोग से ऊबकर, ययाति ने पूरु का तारुण्य वापस कर दिया (ह. वं. १. ३. ३६; मत्स्य. ३२; ब्रह्म. १२; वायु. ९३. ७५; विष्णु. ४. १०-१६)।

महाभारत में, पूरु को 'पुण्यश्लोक' राजा कहा गया है। यह मौसमशुण का निषेध कर, परावर-तत्त्व का ज्ञान प्राप्त कर चुका था (म. अनु. ११५.५९)। यह यमसभा में रहकर यम की उपासना करता था (म. स. ८.८)।

पुत्र—पूरु की कौसल्या तथा पौष्टी नामक दो पत्नियाँ थी। कौसल्या से इसे जनमेजय, तथा पौष्टी से प्रवीर, ईश्वर, तथा रौद्राश्व नामक पुत्र हुए। इसके पुत्रों में से जनमेजय वीर एवं प्रतापी था, अतएव वही इसके पश्चात् राजगद्दी का अधिकारी हुआ (म. आ. ९०.११)।

महाभारत में अन्यत्र, 'पौष्टी' कौसल्या का ही नामांतर माना गया है, एवं जनमेजय तथा प्रवीर एक ही व्यक्ति मान कर प्रवीर को 'वंशकर' कहा गया है (म. आ. ८९.५)। भागवत में प्रवीर को पूरु का नाती कहा गया है (भा. ९.२०.२)।

पूरुवंश—पूरु ने सुविख्यात पूरुवंश की स्थापना की। इसलिये इसके वंशज 'पौरव' कहलाते हैं, एवं उनकी विस्तृत जानकारी आठ पुराणों एवं महाभारत में प्राप्त है (वायु. ९९.१२०; ब्रह्म. १३.२-८; ह. वं. १.२०.३१-३२; मत्स्य. ४९.१; विष्णु. ४.१९; भा. ९.२०-२१; अशि. २७.८. १; गरुड. १.१३९; म. आ. ८९-९०)।

पूरुवंश के तीन प्रमुख विभाग माने जाते हैं:- १ (सो. पूरु)—पूरु से लेकर अजमीठ तक के राजा इस

विभाग में समाविष्ट किये जाते हैं; २. (सो. ऋक्ष) अजमीठ से लेकर कुरु तक के राजा इस विभाग में समाविष्ट होते हैं; ३. (सो. कुरु)—कुरु से लेकर पांडवों तक के राज इस विभाग में आते हैं।

पूरुवंश के अजमीठ राजा को नील, बृहदिषु एवं ऋक्ष नामक तीन पुत्र थे। इनमें से ऋक्ष हस्तिनापुर के राजगद्दी पर बैठा। नील एवं बृहदिषु ने उत्तर एवं दक्षिण पांचाल के स्वतंत्र राज्य स्थापित किये।

ऋक्ष राजा के वंश में से कुरु राजा ने सुविख्यात कुरु वंश की स्थापना की। कुरु राजा को जहु, पराक्षित एवं सुधन्वन् नामक तीन पुत्र थे। उनमें से जहु, कुरु राजा का उत्तराधिकारी बना, एवं उसने हस्तिनापुर का कुरुवंश आगे चलाया। सुधन्वन् का वंशज वसु ने चेदि एवं मगध में स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की। परिक्षित् का पुत्र जनमेजय (दूसरा) ने गार्ग्य ऋषि के पुत्र का अपमान किया, जिस कारण गार्ग्य ने उसे शाप दिया। उस शाप के कारण, उसका एवं उसके श्रुतसेन, उग्रसेन एवं भीमसेन नामक पुत्रों का राज्याधिकार नष्ट हो गया।

जहु राजा का पुत्र सुरथ था सुरथ से लेकर अभिमन्यु तक की वंशावलि पुराणों एवं महाभारत में विस्तार से दी गयी है।

२. अर्जुन का सारथि, जिसे राजसूय यज्ञ के लिये अन्नसंग्रह के काम पर जुट जाने का आदेश मिला था (म. स. ३०.३०)।

३. (स्वा. उत्तान.) एक राजा। यह चक्षुर्भन्तु की नष्टबला से उत्पन्न पुत्रों में से ज्येष्ठ था। इसे 'पूरुष' नामांतर भी प्राप्त था (भा. ८.५.७) भागवत में इसे 'पुरु' भी कहा गया है (भा. ४.१३.१६)।

४. (सो. अमा.) एक राजा। भागवत के अनुसार यह जहु का पुत्र था। इसे अज एवं अजमीठ नामांतर भी प्राप्त थे। इसका पुत्र बलाकाश्व था।

पूरु आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.१६-१७)।

पूर्ण—वासुकि-कुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.५)।

२. एक देवगंधर्व, जो कश्यप द्वारा प्राणा (क्रोधा) से उत्पन्न पुत्र था (म. आ. ५९.४५)।

पूर्णदंष्ट्र—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू का पुत्र था (म. आ. ३१.१२)

२. कुबेर के अनुचरों में से एक (दे. भा. १२.१०)
३. गंधमादन पर्वत पर रहने वाले रत्नमद्र यक्ष का पुत्र (स्कंद. ४.१.३२)। इसे हरिकेश (पिंगल) नामक एक पुत्र था।

इसका पुत्र हरिकेश शिवभक्त था, अतएव कुबेर-भक्त पूर्णभद्र ने उसे घर से निकाल दिया। अन्त में शिव का कृपापात्र होकर हरिकेश, गणेश बन गया (मत्स्य. १८०)।

स्कंदपुराण में, पूर्णभद्र को भी शिवभक्त कहा गया है।

४. मणिवर तथा देवजनी के 'गुह्यक' पुत्रों में से एक।

पूर्णभद्र वैभांडकि—एक पौराणिक ऋषि, जिसकी कृपा से चंद्र नामक राजा को हर्यंग नामक पुत्र हुआ था।

यह चंप एवं उसके पुत्र हर्यंग का आचार्य था। इसी कारण हर्यंग के यज्ञ में यह इंद्र का ऐरावत लाया था (ह. वं १.३१.४९-५०; ब्रह्म. १३.४४; मत्स्य. ४८.९८)।

पूर्णमास—अगस्त्यकुल का एक गोत्रकार (अगस्त्य देखिये)।

२. भागवत के अनुसार, कृष्ण के कालिन्दी से उत्पन्न दस पुत्रों में से एक (भा. १०.६.१)

३. नारह आदित्यों में से धानु नामक आदित्य का पुत्र। इसकी माता का नाम अनुमति था (भा ६.१८.३)।

४. मणिवर तथा देवजनी के 'गुह्यक' पुत्रों में से एक।

पूर्णमुख—धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१४)।

पूर्णस्ता—कृष्ण की प्राणसखी (पद्य. पा. ७४)।

पूर्णाश—एक देवगंधर्व, जो कश्यप तथा क्रोधा का पुत्र था।

पूर्णगद—धृतराष्ट्र कुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्प-सत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१४)।

पूर्णयु—एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं क्रोधा (प्राधा) का पुत्र था (म. आ. ५९.४५)।

पूर्णिमत्—कर्म प्रजापति की कला नामक कन्या के दो पुत्रों में से कनिष्ठ। वह मरीचि ऋषि का पुत्र था। इसके भाई का नाम 'पूर्णिमा' था। इसके विरग तथा विशग नामक दो पुत्र, तथा देवकुल्या नामक एक कन्या थी (भा. ४.१.१४)।

पूर्णिमागतिक—भृगुकुल का एक गोत्रकार। कई ग्रंथों में, इसके नाम के लिए 'पूर्णिमागतिक'—पाठभेद प्राप्त है।

पूर्णोत्संग—(आंत्र. भविष्य) एक आन्ध्रवंशीय राजा। विष्णु के अनुसार यह शातकर्णिका, मत्स्य के अनुसार श्रीमल्लकर्णिका, तथा भागवत के अनुसार श्रीशांतकर्णिका पुत्र था। भागवत में इसका 'पूर्णमास' नामांतर प्राप्त है। इसने अष्टारह वर्षों तक राज्य किया था।

पूर्ण—कश्यपकुल का एक गोत्रकार।

पूर्वचित्ति—स्वायंभुव मन्वन्तर की एक अप्सरा, जिसकी गणना छः सर्वश्रेष्ठ अप्सराओं में की जाती थी (म. आ. ११४.५४)। अर्जुन के जन्ममहोत्सव में जिन दस अप्सराओं ने भाग लेकर, नृत्य प्रस्तुत किया था, उनमें वह एक थी (म. आ. ११४.५४)।

यह प्रियव्रतपुत्र अग्नीध्र राजा की पत्नी थी। इसे ब्रह्मदेव ने उसके पास भेजा था। अग्नीध्र से इसे कुल नौ पुत्र हुए, जिनके नाम इस प्रकार थे—तामि, किंपुरुष, हरिवर्ष, इलावृत, रम्यक, हिरण्यमय, कुक, भद्राश्रव तथा केतुमाला। इसके बाद यह पुनः ब्रह्मदेव के पास चली गयी (भा. ५. २. ३-२०)।

मलय पर्वत पर शुक्रदेवजी की श्रद्धा को देखकर, यह आश्चर्यचकित हो उठी थी, एवं श्रद्धावनत होकर इसने आदरभाव व्यक्त किया था (म. भा. ३.१९. २०)।

२. एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्याओं में से एक थी। यह पूस के महीने में भग नामक सूर्य के साथ घूमती है (भा. १२. ११. ४२)।

पूर्वपालिन्—महाभारतकालीन एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ४. १७)।

पूर्वा—सोम की सत्ताइस पत्नियों में से एक।

पूर्वाभाद्रपदा—सोम की सत्ताइस पत्नियों में से एक।

पूर्वातिथि—अत्रिकुलोत्पन्न एक प्रवर एवं मंत्रद्रष्टा।

पूर्वेन्द्र—'पूर्वकल्प' में पांडवों के रूप में उत्पन्न पाँच इन्द्र।

पूषणा—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.२०)।

पूषन्—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक देवता, जो संभवतः सूर्यदेवता का नामांतर है। ऋग्वेदांतर्गत आठ सूक्तों में, इस देवता का वर्णन प्राप्त है। इनमें से एक सूक्त में इन्द्र एवं पूषन् की स्तुति की गयी है, एवं दूसरे एक सूक्त में सोम एवं पूषन् को संयुक्त देवता मानकर उनकी स्तुति की गयी है।

उत्तरकालीन वैदिककाल में इस देवता का निर्देश अप्राप्य है। इसकी महत्ता का वर्णन जहाँ वेदों में

प्राप्त है, वहाँ इसका स्वरूपवर्णन स्पष्ट नहीं हो पाया है।

रुद्र की भौति यह जटा एवं दाढ़ी रखता है (ऋ. ६. ५५. २; १०. २६. ७)। इसके पास सोने का एक माला है (ऋ. १. ४३. ६)। इसके पास एक अंकुश भी है (ऋ. ६. ५३. ९)। यह दंतहीन है। यह पेज या आटे को तरल पदार्थ के रूप में ही खा सकता है (ऋ. ६. ५६. १; श. ब्रा. १. ७. ४. ७)। अग्नि की तरह, यह भी समस्त प्राणियों को एक साथ देख सकता है।

यह सम्पूर्ण चराचर का स्वामी है (ऋ. १. ११५. १)। इसे उत्तम सारथि भी कहा गया है (ऋ. ६. ५६. २)। बकरे इसके रथ के वाहन हैं (ऋ. १. ३८. ४)।

सूर्य एवं अग्नि की भौति, यह अपनी माता (रात्रि) एवं बहन (उषा) से प्रेमयाचना करनेवाला है (ऋ. ६. ५५. ५)। इसकी पत्नी का नाम सूर्या या (ऋ. ६. ५८. ४)। इसकी कामतप्त विह्वलता देखकर, देवताओं ने इसका विवाह सूर्या से संपन्न कराया। सूर्या के पति के नाते, विवाह के अवसर पर इसका स्मरण किया जाता है, एवं इससे प्रार्थना की जाती है, 'नववधू का हाथ पकड़ कर उसे आशीर्वाद दो।'

सूर्य के दूत के नाते, यह अन्तरिक्षसमुद्र में अपने स्वर्ण-नौका में बैठकर विहार करता है (ऋ. ६. ५८. ३)। यह चुलोक में रहता है, एवं सारे विश्व का निरीक्षण करता हुआ भ्रमण करता है। सूर्य की प्रेरणा से, यह सारे प्राणियों का रक्षण करता है। यह 'आचृषि' अर्थात् अत्यंत तेजस्वी माना जाता है।

पृथ्वी एवं चुलोक के बीच यह सदैव घूमता रहता है। इस कारण, यह मृत व्यक्तियों को अपने पितरो तक पहुँचा देता है।

यह पागों में व्यक्तियों का संरक्षण करनेवाला देवता माना जाता है, जो उन्हें खटपाट, चोरी तथा अन्य आपत्ति-विपत्तियों से बचाता है (ऋ. १. ४२. १-३)। इसी कारण यह 'विशुनो नपात्' अर्थात् मुक्तता का पुत्र कहा जाता है। कई जगह इसे 'विमोचन' कह कर, पापों से मुक्ति प्राप्त करने के लिए इसकी प्रार्थना की गयी है (अ. वे. ६. ११२. ३)। शत्रु दूर होकर मार्ग संकटरहित होने के लिये, इसकी प्रार्थना की जाती है (ऋ. १. ४२. ७)। इसी कारण, प्रवास के प्रारंभ में ऋग्वेद के ६. ५३ सूक्त का पठन कर, पूषन् को बलि देने के लिये सूत्रग्रंथों में कहा गया है (सां. य. २. १४. १९)।

यह पथदर्शक देवता माना जाता है (वा. सं. २२. २०)। यह मार्गज्ञ होने के कारण, खोया हुआ माला पुनः प्राप्त करवा देता है (ऋ. ६. ४८. १५; भा. श्व. य. ३. ७. ९)। यह पशुओं की रक्षा करता है, एवं उन्हें रोगों तथा संकटों से बचाता है (ऋ. ६. ५४. ५-७)।

इसे प्राणिमात्र अत्यंत प्रिय हैं। यह भूलेभटके प्राणियों को सुरक्षित वापस लाता है (ऋ. ६. ५४. ७)। यह अश्वों का भी रक्षण करता है। इसी कारण गायों के चराने के लिये लेते समय, पूषन् की प्रार्थना की जाती है (सां. य. ३. ९)।

ऋग्वेद में इसके लिये निम्नलिखित विशेषण प्रयुक्त किये गये हैं :— अजाश्व, विमुन्मोनपात्, पुष्टिभर, अनष्टपशु, अनष्टवेदम्, करंभाद, विश्ववेदस्, पुरुवस्, तथा पशुप। इनमें से विश्ववेदस्, अनष्टवेदस्, पुरुवस्, पुष्टिभर इन सारी उपाधियों का अर्थ 'वैभव देनेवाला' होता है। 'पूषन्' का शब्दार्थ ही यही है।

निरुक्त के अनुसार, पूषन् को आदित्य एवं सूर्यदेवता का एक रूप माना गया है। वेदोत्तर वाङ्मय में भी 'सूर्य का नामान्तर' अर्थ से 'पूषन्' का निर्देश अनेक बार किया गया है। इसे मार्गदर्शक, एवं प्राणिरक्षक देवता मानने का कारण भी संभवतः यही होगा।

'पूषन्' की दन्तविहीन होने की अनेक कथाएँ ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त हैं। अपनी कन्या के साथ विवाहसंबंध रखनेवाले प्रजापति को-रुद्र ने वध किया। प्रजापति के यज्ञ में से अवशिष्ट भाग पूषन् ने भक्षण किया। इस कारण 'पूषन्' दन्तविहीन बना (श. ब्रा. १. ७. ४. ७)। प्रजापति द्वारा किये हुए यज्ञ में रुद्र को आमंत्रित न करने के कारण, उसने उस यज्ञ को रोक दिया। पश्चात् यज्ञसिद्धि के लिये देवों ने रुद्र को प्रसन्न किया, एवं हविर्भाग का कुछ भाग पूषन् को दिया। देवों ने प्रदान किये उस हविर्भाग के कारण, पूषन् के दाँत टूट गये (तै. सं. २. ६. ८. २-७)।

पौराणिक ग्रंथों में भी, पूषन् का निर्देश प्राप्त है। भागवत के अनुसार, यह स्वायंभुव मन्वन्तर के दक्षयज्ञ में ऋत्विज था। उस यज्ञ में इसने शंकर की हँसी उड़ायी। इसकारण शिवगणों में से चंडीश नामक गण ने इसे बाँध कर इसके दाँत तोड़ डाले (भा. ४. ५. २१-२२) पश्चात्, शंकर ने इसे बर दिया, "तुम यज्ञमानों के दाँतों से हविर्भाग भक्षण करोगे एवं लोग तुम्हें 'पिष्टभुज' कहेंगे"। उसी दिन से यह 'पिष्टभुज' बना, एवं

जिनके हाथ न हों, ऐसे लोगों के यज्ञकार्य यह करने लगा (भा. ४. ७. ४-५)।

२. बारह आदित्यों में से एक (भा. ६.६.३९, पद्म. सू. ६, म. आ. ५९.१५)। यह तपस् (माघ) माह में प्रकाशित होता है (भा. १२.११.३४)। कई ग्रन्थों के अनुसार, यह पौष माह में प्रकाशित होता है (भवि. ब्राह्म. ७.८)। भागवत के अनुसार, दक्षयज्ञ में उपस्थित पूषन् तथा यह दोनों एक ही थे (भा. ६.६. ४३)। महाभारत में भी, भगवान् शंकर द्वारा इसके दौत तोड़ने का निर्देश प्राप्त है (म. द्रो. १७३.४८)।

किन्तु दक्षयज्ञ का पूषन् एवं द्वादशादित्यों में से एक पूषन् संभवतः दो अलग व्यक्ति थे। क्यों कि, स्वयंसेव मन्वन्तर में द्वादशादित्य अस्तित्व में नहीं थे। उन्हें दक्ष ने यज्ञ कर के वैवस्वत मन्वन्तर में उत्पन्न किया था।

इसने स्कंद को 'पालितक' एवं 'कालिका' नामक दो पार्षद प्रदान किये थे (म. श. ४४.३९)।

पूषमित्र गोभिल—एक वैदिक ऋषि, जो अश्वमित्र गोभिल का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम सगर था (वं. ब्रा. ३)

पृथ—रौच्य मनु के पुत्रों में से एक।

पृथग्भाव—त्राक्षुष मन्वन्तर का एक देवगण।

पृथवान—दुःशीम नामक उदार दाता का नामांतर (क. १०.९३.१४)।

पृथा—पांडवों की माता कुंती का नामांतर। यह शूरसेन यादव की कन्या थी, एवं संसार की अनुपम सुंदरी मानी जाती थी। कुंती या कुंतिभोज राजा ने इसे गोद लिया था (भा. ९.२४. ३९, पद्म. सू. १३)।

पृथाश्व—एक प्राचीन नरेश, जो यमसभा में रह कर उसकी उपासना करता था (म. स. ८.१८)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'पृथ्वश्व'।

पृथिन वैन्य—पृथु 'वैन्य' राजा का नामांतर (पृथु वैन्य देखिये)।

पृथिवी—'यावापृथिवी' नामक देवताद्वय में से एक। ऋग्वेद में इसे सर्वत्र माता एवं देवता कह कर, इस पर अनेक सूक्त रचे गये हैं (यावापृथिवी देखिये)।

पृथिवीजय—वरुण की सभा का एक असुर (म. स. ९.१२)।

पृथु—(स्वा. नामि) एक राजा। विष्णुमतानुसार यह प्रसार राजा का पुत्र था।

२. दक्षसावर्णि मनु का पुत्र।

३. तामसमनु का पुत्र।

४. तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

५. तुआदि अष्ट वसुओं में से एक। भाइयों के कथनानुसार इसने वसिष्ठ की गाय चुराई। अतः वसिष्ठ ने इसे तथा इसके अन्य भाइयों को शाप दिया, 'तुम्हें मनुष्य जन्म प्राप्त होगा।' बाद में यह शंतनु से गंगा के उदर में अपने अन्य भाइयों के साथ जन्मा। परंतु तु को छोड़ कर, अन्य वसुओं को जन्मतः ही पानी में डुबो देने के कारण, यह पुनः वसु के जन्म में आया (म. आ. ९३)।

६. (सू. इ.) एक राजा। भागवत तथा विष्णु के अनुसार, यह इक्ष्वाकुवंशीय अनेनस् राजा का पुत्र था। वायु में अनेनस् की पृथुरोमन् नामांतर दिया गया है।

इसने सौ यज्ञ किये थे। इसके पुत्र का नाम विश्वगश्व था (म. व. १९३.२-३)। रामायण में इसे अनरण्य राजा का पुत्र कहा गया है, और इसके पुत्र का नाम विशंकु दिया गया है (वा. रा. वा. ७०.२४)।

७. (सो. अज.) एक राजा। विष्णु तथा मत्स्य के अनुसार यह पार द्वितीय राजा का पुत्र था। इसे वृषु नामांतर भी प्राप्त है।

८. (सो. नील.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार यह पुरुजानु राजा का पुत्र था (चक्षु २ देखिये)।

९. (सो. वृष्णि) एक राजा। भागवत के अनुसार यह चित्ररथ राजा का पुत्र था।

१०. (सो. वृष्णि.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार यह अक्रूर का पुत्र एवं इसकी माता का नाम अश्विनी है।

११. (सो. वृष्णि.) एक वृष्णिवंशीय राजा। भागवत के अनुसार यह रुक्म राजा का पुत्र था। यह द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१७)। रैवतक पर्वत के उत्सव में यह शामिल था (म. आ. २११. १०) हरिवंश में इसे 'पृथुक्कम' कहा गया है। संभव है, पृथु तथा रुक्म को मिलाकर ही इसे यह नाम प्राप्त हुआ हो।

१२. शुक्र के पाँच पुत्रों में से प्रभु का नामांतर।

१३. ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक मानव संप्र (क. ७.८३. १)। इनका निर्देश प्रायः 'पर्शु' लोगों के साथ आता है। लुडविग के अनुसार, आधुनिक पार्शियन एवं पार्शियन लोग ही प्राचीन 'पृथु' एवं 'पर्शु' लोग होंगे।

१४. एक सदाचारसंपन्न ब्राह्मण। एक बार यह तीर्थयात्रा करने जा रहा था। इसे पाँच विद्रुप प्रेतपुरुष दिखलायी पड़े। वे सब अन्नदान के अभाव तथा याचकों के साथ अशिष्ट व्यवहार के कारण सिंध प्रेतयोनि में गये थे। उनमें से प्रत्येक व्यक्ति विकलांगी था। 'पर्युषित' वेद्व था। 'सूचिमुख' सुई के समान था। शीम्रा पंगु था। 'रोहक' गर्दन न उठा सकता था, तथा 'लेखक' को चलते समय अत्यधिक कष्ट होता था। बाद में, इस ब्राह्मण ने उन्हें प्रेतत्व की निवृत्ति के लिए आहार, आचार तथा व्रत बतलाये, तब उन सबका उद्धार हुआ (पद्म. सू. २७.१८-४६)।

पृथु 'वैन्य'—पृथ्वी का पहला राजा एवं राज-संस्था का निर्माता (श. ब्रा. ५. ३. ५. ४; क. सं. ३७. ४; तै. ब्रा. २. ७. ५. १; पद्म. भू. २८. २१)। इसी कारण प्राचीन ग्रंथों में, 'आदिराज', 'प्रथमरूप', 'राजेंद्र', 'राजराज', 'चक्रवर्ति', 'विधाता', 'इन्द्र', 'प्रजापति' आदि उपाधियों से यह विभूषित किया गया है। महाभारत में सोलह श्रेष्ठ राजाओं में इसका निर्देश किया गया है (म. द्रो. ६९; शां. २९. १३२; परि. १. क. ९)।

पृथ्वीदोहन अथवा नव समाजरचना—इसने भूमि को अपनी कन्या मानकर उसका पोषण किया। इसी कारण 'भू' को 'पृथुकन्या' या 'पृथिवी' कहते हैं (विष्णु. १. १३; मत्स्य. १०; पद्म. भू. २८; ब्रह्म. ४; ब्रह्मांड. २. ३७; भा. ४. १८; म. शां. २९. १३२)।

पृथु के द्वारा पृथ्वी के दोहन की जाने की रूपात्मक कथा वैदिक वाङ्मय से लेकर पुराणों तक चली आ रही है। इस कथा की वास्तविकता यही है कि, इसने सही अर्थों में पृथ्वी का सृजन सिंचन कर, उसे धन-धान्य से पूरित किया।

मानवीय संस्कृति के इतिहास में, कृषि एवं नागरी व्यवस्था का यह आदि जनक था। इसके पूर्व, लोग पशु-पक्षियों के समान इधर उधर घूमते रहते थे, प्राणियों को मार कर उनका मांस भक्षण करते थे। इस प्रकार पृथ्वी की प्राणि-सृष्टि का विनाश होता जा रहा था, एवं उनके हत्या का पाप लोगों पर लग रहा था। इसे रोकने के लिए पृथु ने कृषि व्यवस्था को देकर लोगों को अपनी जीवकोपार्जन के लिए एक नए मार्ग का निर्देशन किया। यह पहला व्यक्ति था, जिसने भूमि को समतल रूप दिया, उससे अन्नादि उपजाने की कला से लोगों को परिचित

कराया, एवं इस तरह एक नई संस्कृति एवं सभ्यता का निर्माण किया।

कृषि-कला के साथ साथ पृथु ने लोगों को एक जगह बस कर रहना भी सिखाया। इस प्रकार, ग्राम, पुर, पत्तन, दुर्ग, घोष, वन, शिविर, आकर, खेट, खर्बट आदि नए नए स्थानों का निर्माण होने लगा। इसके साथ ही साथ लोगों को पृथ्वी के गर्भ में छिपी हुयी सकल औषधि, धान्य, रस, स्वर्णादि धातु, रत्नादि एवं दुग्ध आदि प्राप्त करने की कला से इसने बोध कराया (भा. ४. १८)।

इसने पृथ्वी के सारे मनुष्य एवं प्राणियों को हिंसक पशुओं, चोरो एवं दैहिक विपत्तियों से मुक्त कराया। अपनी शासन-व्यवस्था द्वारा यक्ष राक्षस, द्विपाद चतुष्पाद सारे प्राणियों, एवं धर्म अर्थादि सारे पुरुषार्थों के जीवन को सुखकर बनाया। इसने अपने राज्य में धर्म को प्रमुखता दी, एवं राज्यशासन के लिए दण्डनीति की व्यवस्था दी। प्रजा की रक्षा एवं पालन करने के कारण इसे 'क्षत्रिय' तथा 'प्रजारंजनसम्राज्' उपाधि से विभूषित किया गया (म. शां. ५९. १०४-१४०)।

पृथु ने पृथ्वी पर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यादि वर्गों की प्रतिष्ठापना की, एवं हर एक व्यक्ति को अपनी वृत्ति के अनुसार उपजीविका का साधन उपलब्ध कराया। इसी कारण यह संसार में मान्य एवं पूज्य बना (ब्रह्मांड. २. ३७. १-११)।

महाभारत के अनुसार, कृतयुग में धर्म का राज्य था। अतएव दण्डनीति की आवश्यकता उस काल में प्रतीत न हुयी। कालान्तर में लोग मोहवश होकर राज्यव्यवस्था को क्षीण करने लगे। इसी कारण शासन के लिए राजनीति, शासनव्यवस्था एवं राजा की आवश्यकता पड़ी। पृथु ही पृथ्वी का प्रथम प्रशासक था।

पृथु के 'पृथ्वीदोहन' की कथा पद्मपुराण में इस प्रकार दी गयी है। प्रजा के जीवन-निर्वाह व्यवस्था के लिए यह धनुष-बाण लेकर पृथ्वी के पीछे दौड़ा। भयभीत होकर पृथ्वी ने गाय का रूप धारण किया। इससे विनती की, 'तुम मूझे न मारकर, मेरा दोहन कर, सर्व प्रकार के वैभव प्राप्त कर सकते हो'। पृथ्वी की यह प्रार्थना पृथु ने मान ली एवं इसने पृथ्वी का दोहन किया (पद्म. सू. ८)।

दोहकगण—पृथ्वी की नानाविध वस्तुओं के दोहन करनेवाले देव, गंधर्व, मनुष्य, आदि की तालिका अथर्व-वेद में एवं ब्रह्मादि पुराणों में दी गयी है। उनमें से

अथर्ववेद में प्राप्त तालिका इस प्रकार है (अ. वे. ८.२८):—

वर्ग	वोहन कालेवाला	वैश्य	पात्र	दृष्ट
असुर	द्विसूर्येण अंतक	विरोचिन	लाह	माया
पितर	पृथुवैश्य	यम	रौप्य	स्वधा
मनुष्य	बृहस्पति	वैश्वदेवतमनु	पृथ्वी	कृषि एवं सस्य
ऋषि	रवि	सोम	छत्रम्	तप तथा वेद
गोदान	वसुदेवि	इन्द्र	कमरु	बल
यज्ञ	स्वतवासि	विश्वरथ	कमल	सुगंध
सर्प	धृतराष्ट्र	कुवेर	मुग्धय	अंतर्धान
राक्षस	जातुनाभ	तक्षक	तृणा	विष
वृक्ष	शाल (जिसेस राल बनें हैं)	सुमाली	परल	रक्त
पर्वत	मेरु	पिपरी	पल्लव	तोड़ जाने पर भी पुन निर्माण होना
		हिमालय	पथर	महापृथिवि तथा रत्न

इस तालिका अनुसार, मानवों के जातियों में से असुर, पितर आदि 'वर्गों' ने पृथ्वी से माया, स्वधा आदि वस्तुओं का वोहन किया (प्राति की), जिन पर उन विशिष्ट वर्गों का गुजारा होता है। इस तालिका में, मनुष्य जाति का प्रतिनिधि पृथु वैश्य को मानकर उसने पृथ्वी से 'कृषि' एवं 'सस्य' को प्राप्त किया ऐसा कहा गया है।

पृथु वैश्य चाक्षुष मन्वन्तर में पैदा हुआ माना जाता है। ध्रुव उत्तानपाद राजा के पश्चात् एवं मरुतों के उत्पत्ति के अनंतर, पृथु वैश्य का युगारंभ होता है। पृथु वैश्य के पश्चात् पृथ्वी पर वैवस्वत मनु एवं उसके वंश का राज्य शुरु होता है।

एक उदारदाता, कृषि का आविष्कर्ता, एवं मनुष्य तथा पशुओं के अधिपति के रूप में वैदिक साहित्य में, इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.९३.१४; अ. वे. ८. १०.२४; पं. ब्रा. १३. ५.१९)। वेन का वंशज होने के कारण इसे 'वैश्य' उपाधि प्राप्त थी (ऋ. ८.९.१०) शतपथ।

ब्राह्मण में इसका निर्देश 'पृथु' नाम से किया गया है, किन्तु सायणभाष्य में सर्वत्र इसे 'पृथिन्' कहा गया है। अथर्ववेद में भी 'पृथिन्' पाठ उपलब्ध है (अ. वे. ८. २८. ११)।

राज्याभिषेक--शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, पृथ्वी में सर्व-प्रथम पृथु का राज्याभिषेक हुआ। इसी कारण राज्याभिषेक का धार्मिक विधियों में किये जानेवाले 'पूर्वोत्तरांगभूत' होम को 'पार्थहोम' कहते हैं। इस राज्याभिषेक के कारण ग्राम्य एवं आरण्यक व्यक्तियों एवं पशुओं का पृथु राजा हुआ (श. ब्रा. ५. ३. ५. ४)। इसने 'पार्थ' नामक साम कहकर समस्त पृथ्वी का आविष्य प्राप्त किया (पं. ब्रा. १३. ५. २०)। एक ऋषि एवं तत्त्वज्ञानी के नाते भी इसका निर्देश प्राप्त है (जै. उ. ब्रा. १.१०.९; ऋ १०.१४८.५)।

इसका राज्यभिषेक महारण्य अथवा दंडकारण्य में संपन्न हुआ (म. शां. २९.१२९)। इसके राज्याभिषेक के समय, भिन्न भिन्न देवों ने इसे विभिन्न प्रकार के उपहार प्रदान किये। इन्द्र ने अक्षय्य धनु एवं स्वर्ण मुकुट, कुवेर ने स्वर्णसन, यम ने दण्ड, बृहस्पति ने कवच, विष्णु ने सुदर्शन चक्र, रुद्र ने चन्द्रविम्बांकित तलवार, स्यद्रु ने रथ एवं समुद्र ने शंख दिया।

पुराणों में इसे वैश्य अथवा वैश्य कहा गया है। यह चक्षुर्मनु के वंश के वेन राजा का पुत्र था (पद्म. सु. २)। वेन राजा अत्यधिक दृष्ट था जिसेसे प्रजा बड़ी त्रस्त थी। उस समय के महर्षियों ने पूजा के साथ सद्व्यवहार करने के लिए बहु उपदेश दिये, पर उसका कोई प्रभाव न पड़ा। संतप्त होकर ऋषियों ने वेन को मार डाला। राजा के अभाव में अराजकता फैल गयी, जनों खोर, डाकुओं से पीड़ित हो उठी। पश्चात्, सब ऋषियों ने मिलकर वेन की दाहिनी भुजा का, तथा विष्णु के अनुसार दाहिनी जंघा का मंथन किया।

इस मंथन से सर्व प्रथम विन्ध्यनिवासी निषाद तथा धीवर उत्पन्न हुए। तत्पश्चात् वेन की दाहिनी भुजा से पृथु नामक पुत्र एवं अर्चि नामक कन्या उत्पन्न हुयीं (मा. ४. १५. १-२)। पृथु विष्णु का अंशावतार था एवं जन्म से ही धनुष एवं कवच धारण किये हुए उत्पन्न हुआ था। इसके अवतीर्ण होते ही महर्षि आदि प्रसन्न हुए तथा उन्होंने इसे सम्राट बनाया (पद्म. भू. २८)।

राज्याभिषेक होने के उपरांत पृथु ने प्राचीन सरस्वती नदी के किनारे ब्रह्मावर्त में सौ अश्वमेध करने का संकल्प

किया। निन्यानवे यज्ञ पूरे ही जाने के बाद इन्द्र को शंका हुयी कि, कहीं यह मेरा इन्द्रासन न छीन ले। अतएव उसने यज्ञ के अश्व को चुरा लिया। यही नहीं, कापालिक वेष धारण कर इन्द्र ने पृथु का धन न होने दिया। इस पर क्रोधित होकर पृथु इन्द्र का वध करने को उद्यत हुआ। दोनों में काफी संघर्ष न हो, इस भय से बृहस्पति तथा विष्णु ने मध्यस्थ होकर, दोनों में मैत्री की स्थापना कराई। भागवत के अनुसार अत्रि ऋषि की सहायता से पृथु-पुत्र विजिताश्व ने इन्द्र को पराजित किया (भा. ४.१९)

इसने महर्षियों को आश्वासन दिया, 'मैं धर्म के साथ राज्य करूँगा। आप मेरी सहायता कीजिये'।

महर्षियों ने इस पर 'तथास्तु' कहा। तत्पश्चात् युक्र इसका पुरोहित बना, एवं निम्नलिखित ऋषि इसके अष्टमन्त्री बने:- वालखिल्य-सारस्वत्य, गर्ग-सांत्वत्सर, अत्रि-वेदकारक, नारद- इतिहास, सूत, मागध, वंदि (म. शां. ५९. ११६ ११८, १३१*)। पुरोहित, सारस्वत्य, सांत्वत्सर, वेदकारक, इतिहास, और राजा ये छः नाम मिलते हैं। बाकी दो नाम का निर्देश नहीं है। सूत-मागध ये वंदिजन अल्पा है।

सम्भव है मध्ययुगीन काल में, महाराष्ट्र के छत्रपति शिवाजी ने अष्टप्रधान की शासनव्यवस्था यही से अपनायी हो।

पृथु की राजप्रतिज्ञा—राज्याधिकार प्राप्त करने के पूर्व, ऋषियों ने पृथु वैन्य से निम्नलिखित शपथ ग्रहण करने को कहा—

“नियतो यत्र धर्मो वै, तमशङ्कः समाचर।
प्रियाप्रिये परित्यज्य, समः सर्वेषु जन्तुषु ॥
कामक्रोधौ च लोभं च, मानं चोत्सृज्य दूरतः ॥
यश्च धर्मात्प्रविचल्लोके, कश्चन मानवः ॥
निग्राह्यस्ते स बाहुभ्यां, शश्वद्धर्मेमवेक्षतः।
प्रतिज्ञां चाधिरोहस्व, मनसा कर्मणा गिरा ॥
प्राख्यिष्याम्यहं भौमं, ब्रह्म इत्येव चासकृत् ॥”

[मैं नियत धर्म को निर्भयता के साथ आचरण में लाऊँगा। अपनी रुचि तथा अभिरुचि को महत्त्व न देकर समस्त प्राणियों के साथ समता का व्यवहार करूँगा। मैं, काम, क्रोध, लोभ और मान को छोड़कर धर्मच्युत व्यक्तियों को शाश्वत धर्म के अनुसार दण्ड दूँगा।

मैं 'मनसा याचा कर्मणा' बार बार प्रतिज्ञा करता हूँ कि प्रजाजन को भौमब्रह्म समझकर उसका पालन करूँगा (म. शां. ५९. १०९-११६)।]

राजनीति की दृष्टि से इस प्रतिज्ञा में नियतधर्म एवं शाश्वतधर्म के पालन पर जो जोर दिया गया है, वह अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। राज्य में विभिन्न धर्मों के माननेवाले व्यक्ति होते हैं, पर राजा उन सबको एकसूत्र में बाँधकर जिस धर्म के द्वारा राज्य करता है वह समन्वय-वादी, समतापूर्ण, सर्वजनहिताय होता है। इसी को इस प्रतिज्ञा में 'नियत' एवं शाश्वत 'धर्म' कहा गया है। यह शाश्वत धर्म के पालन की कल्पना प्राचीन भारतीय संस्कृति की देन है। पृथु वैन्य की यह प्रतिज्ञा इन्सैण्ड आदि की राज्य-प्रतिज्ञा से काफी मिलती है। अन्तर केवल इतना है, कि वहाँ की प्रतिज्ञा किसी विशेष धर्म-प्रणाली में ही आबद्ध है, पर पृथु द्वारा ग्रहण की गयी प्रतिज्ञा अखिल मानव-धर्म को ही राजधर्म मानकर उसे ही प्रतिस्थापित करते की बात कहती है।

कालिदास के रघुवंश में प्राप्त रघु राजा की प्रशस्ति में भी, 'प्रकृतिरंजन,' प्रजा का 'विनयाधान' एवं 'पोषण' आदि शब्दों द्वारा यही कल्पना दोहरायी, गयी है।

महाभारत के अनुसार, पृथु के अश्वमेध यज्ञ में अत्रि ऋषि ने इसे 'प्रथमवृष' 'विधाता,' 'इंद्र' और 'प्रजापति' कहकर इसका गौरवमान किया। यह गौतम को असहनीय था अतएव उसने अत्रि ऋषि से वाद-विवाद किया। इस वाद-विवाद में सनत्कुमार ने अत्रि का पक्ष लेकर उसका समर्थन किया। तत्पश्चात् पृथु ने अत्रि को बहुत सा धन देकर उसका सत्कार किया (म. व. १८३)।

पृथु की राजवृद्धि प्रजा के लिए अत्यधिक सुखकारी सिद्ध हुयी। इसकी राजधानी यमुना नदी के तट पर थी। सूत एवं मागध नामक स्तुतिपाठक जाति की उत्पत्ति इसी के राज्यकाल में हुयी। उनमें से सुतों को इसने अनूप देश एवं मागधों को मागध एवं कर्लिंग देश पुरस्कार के रूप में प्रदान किये (वायु. ६२.१४७; ब्रह्मांड २.३६.१७२; ब्रह्म. ४.६७; पद्म. भू. १६.२८; आर्ष. १८.८५; वा. रा. वा. ३५.५-३९; कूर्म. पू. १.६; शिव. वाय. ५६.३०-५६.३०-३१)।

काफ़ी समय तक राज्य करने के उपरांत पृथु को वन में जाने की इच्छा हुयी। और यह अपनी पत्नी अर्चि को साथ लेकर वन गया। वन में इसकी मृत्यु हो गयी और इसके साथ इसकी पत्नी भी सती हो गयी (भा. ४.२३)।

पुत्र—भागवत के अनुसार पृथु को कुल पाँच पुत्र थे,

जिनके नाम इस प्रकार थे :—विजिताश्र (अन्तर्धान), धूमकेश, हर्यश्र, द्रविण एवं वृक (भा. ४.२२.५४)। विष्णु के अनुसार, इसके अंतर्धि तथा पालित नामक दो ही पुत्र थे (विष्णु, १.१४.१)।

पृथुवंश—पृथुवंश की जानकारी ब्रह्मांड पुराण में दी गयी है (२.३७.२२-४२)। पृथु के पुत्र का नाम अंतर्धान। कन्या का नाम शिखण्डिनी था, जिसके पुत्र का नाम हविर्धान था। हविर्धान को आग्नेयी विषणा नामक पत्नी से कुलुष्टः पुत्र हुए, जिनके नाम निम्नलिखित हैं:— प्राचीनवर्हिप, वृक, गय कृष्ण, प्रज, अजित इनमें से प्राचीनवर्हिप का विवाह समुद्रतनया सर्वा से हुआ, जिससे उसे दस प्रचेतस् उत्पन्न हुए। प्रचेतसों का विवाह वृक्षकन्या मारिषा से हुआ जिससे उन्हें दक्ष प्रजापति नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

पृथुवंश में पृथु से लेकर दक्ष प्रजापति तक की संतति 'अयोनिज' संतति कहलाती है। दक्ष प्रजापति के पश्चात् मैथुनज संतति का आरम्भ हुआ।

पृथुक—रैवत मन्वन्तर का देवगण। इस गण में निम्नलिखित आठ देवता सम्मिलित हैं:— अजित, ओजिष्ठ जिगीपु, वानहृष्ट, विजय, शकुन, सङ्कत और सत्यदृष्टि (ब्रह्मांड. २.३६.७३)।

पृथुकर्मन्—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। विष्णु के अनुसार यह शशविन्दु का पुत्र था।

पृथुकीर्ति—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। मत्स्य, विष्णु तथा वायु के अनुसार, यह शशविन्दु राजा का पुत्र था।

२. शूर राजा की कन्या श्रुतदेवा का नामांतर

पृथुग—चाक्षुष मन्वन्तर का देवगण।

पृथुगश्व—एक राजा, जो यम सभा में उपस्थित था। इसके नाम के लिए 'पृथुलाश्व' पाठभेद भी उपलब्ध है (म. स. ८.२०)।

पृथुग्रीव—स्वराक्षस का एक अमात्य। इसे 'पृथुश्याम' नामांतर भी प्राप्त है।

पृथुजय—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। भागवत के अनुसार यह महाभोज राजा का पुत्र था। विष्णु, मत्स्य, तथा वायु में इसे शशविन्दु का पुत्र कहा गया है।

पृथुतेजस्—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। यह शशविन्दु राजा का नाती था (पद्म. सू. १३)।

पृथुदर्भ—(सो. अनु.) शिवि 'औशीनर' के पुत्र वृहद्गर्भ राजा का नामांतर।

पृथुदात्—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। वायु के अनुसार, यह शशविन्दु राजा का पुत्र था।

पृथुदान—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। विष्णु के अनुसार, यह शशविन्दु राजा का पुत्र था।

पृथुधर्मन्—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। मत्स्य और वायु के अनुसार, यह शशविन्दु राजा का पुत्र था।

पृथुपर्शु—ऋग्वेद में निर्दिष्ट मानव जातिसंघट्टय (ऋ. ७. ८३. १)। लुडविग के अनुसार, आधुनिक पार्थियन एवं पर्शियन लोग ही प्राचीन 'पृथु' एवं 'पर्शु' लोग होंगे।

सायण के अनुसार, 'पृथु' किसी जाति का नाम न होकर 'पर्शु' का विशेषण है, तथा 'पृथुपर्शु' नाम से चौड़े कुटार वाले किसी जाति विशेष की ओर संकेत मिलता है।

पृथुमनस्—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार, यह शशविन्दु राजा का पुत्र था।

पृथुयशस्—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। भागवत के अनुसार, यह महाभोज राजा का पुत्र था। विष्णु, मत्स्य एवं वायु में इसे शशविन्दु राजा का पुत्र कहा गया है।

पद्म के अनुसार यह शशविन्दु का नाती था (पद्म. सू. १३)।

पृथुरश्मि—यति नामक यज्ञविरोधी लोगों में से एक। यति लोग यज्ञविरोधी होने के कारण, इंद्र की आज्ञा से लकड़बग्घे के द्वारा मरवा डाले गये। इनमें से बृहद्गिरि, रायोवाज एवं पृथुरश्मि ही बच सके। इंद्र ने इन तीनों का संरक्षण किया एवं उन्हें क्रमशः ब्रह्मविद्या, वैदयविद्या एवं क्षत्रियविद्या सिखायी।

पृथुरश्मि के अनुरोध पर इंद्र ने इसे आत्रविद्या के साथ क्षत्रियों का सामर्थ्य भी प्रदान किया। इसके नाम से 'पार्थुरश्म' नामक साम प्रसिद्ध है, जिसका पठन-पाठन क्षत्रियों का तेज संबर्धित करता है (पं. ब्रा. १३.४.१७; यति देखिये)।

ब्रह्मांड पुराण में, पृथुरश्मि के पिता का नाम वरत्रिन् कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.१.८३-८४; वरत्रिन् देखिये)।

पृथुरुक्म—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। विष्णु एवं पद्म के अनुसार यह परावृत्त राजा का पुत्र था। मत्स्य तथा वायु में इसे रुक्मकवच का पुत्र कहा गया है।

पृथुरोमन्—इक्ष्वाकुवंशीय अनेनस् राजा का नामांतर (पृथु. ६. देखिये)।

पृथुलाक्ष—(सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा, जो चतुरंग राजा का पुत्र था। इसके चार पुत्र थे, जिनके नाम बृहद्रथ, बृहत्कर्मान्, बृहद्भानु और चंप थे (भा. ९. २३. ११; म. स. ८.९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—‘पृथ्वक्ष’।

पृथुवक्षत्रा—स्कंद की एक अनुचरी मानुका (म. श. ४५.१८)। इसके नाम के लिए ‘पृथुवक्षा’ एवं ‘पृथुवक्षा’ पाठभेद उपलब्ध हैं।

पृथुवेग—एक राजा, जो यम की सभा में उपस्थित था (म. स. ८.१२)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—‘पंचहस्त’।

पृथुश्याम—पृथुश्रीव नामक राक्षस का नामांतर।

पृथुश्रवस्—दक्ष सखाणि मनु के पुत्रों में से एक। २. (सो. क्रोष्टु.) एक यादववंशी राजा। विष्णु, मत्स्य और वायु के अनुसार, यह शशविन्दु राजा का तथा भागवत के अनुसार महाभोज राजा का पुत्र था। पद्म में इसे शशविन्दु राजा का नाती कहा गया है (पद्म. स. १३)।

३. द्वैतवन में पांडवों के साथ रहनेवाला ऋषि। यह बुधधिर का बड़ा सम्मान करता था (म. व. २७.२२)।

४. एक राजा, जो पुरुवंशीय राजा अशुतनायी की पत्नी कामा का पिता था (म. आ. १०.२०)। यह यमसभा में रहकर यम की उपासना करता था (म. स. ८.१२)।

५. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५७)।

६. एक नाम, जो बलराम के स्वागतार्थ प्रभासक्षेत्र में आया था (म. मौ. ५.१४)।

पृथुश्रवस् कानीत—एक उदार दाता, जो वंश अश्वय नामक ऋषि का आश्रयदाता था (ऋ. ८.४६.२१)। अश्विनी कुमारों ने इस पर कृपा की थी (ऋ. १.११६. २१)।

पृथुश्रवस् दैरेश्रवस्—एक ऋषि, जो सर्पसत्र में ‘उद्गातृ’ नामक पुरोहित का काम करता था (पं. ब्रा. २५.१५.३)। ‘दूरेश्रवस्’ का वंशज होने के कारण, इसे दैरेश्रवस् उपाधि प्राप्त हुयी होगी।

पृथुषेण—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो विशु राजा का पुत्र था। इसकी स्त्री का नाम आकुति तथा पुत्र का नाम नक्त था (भा. ५.१५.६)।

पृथुसेन—(सो. अज.) एक राजा। विष्णु, मत्स्य, तथा वायु के अनुसार यह रुचिराश्व राजा का पुत्र था।

भागवत में इसे रुचिराश्व राजा का नाती एवं पार राजा का पुत्र माना गया है।

२. (सो. अनु.) मत्स्य के अनुसार अंगराज कर्ण का पुत्र (मत्स्य. ४८)। किन्तु अन्यत्र इसका नाम अप्राप्य है।

पृथिन—सविता नामक आदित्य की पत्नी (भा. ६. १८१.)।

२. मरुतों की माता। इसे देवी मान कर ऋग्वेद की कई ऋचाओं की रचना की गयी है (ऋ. ६.४८.२१-२२)।

३. स्वयंभुव मन्वन्तर के सुतपा प्रजापति की पत्नी। इसीने कृष्णावतार में देवकी के रूप में जन्म लिया था (भा. १.३.३२)। इसके उदर से कृष्ण का जन्म हुआ था। अतएव कृष्ण को ‘पृथिनगर्भ’ भी कहा जाता है (पृथिनगर्भ देखिये)।

४. (सो. वृष्णिं.) एक यादव राजा, जो वायु और विष्णु के अनुसार, अनमित्र राजा का पुत्र था। इसे वृष्णि और वृषभ नामांतर भी प्राप्त थे।

५. एक प्राचीन महर्षियों का समूह, जिन्होंने द्रोणाचार्य के पास आकर उनसे युद्ध वेद करने को कहा था (म. द्रोण. १६४.८८)। इन्होंने स्वाध्याय के द्वारा स्वर्ग प्राप्त किया था (म. शां. परि. १.४.१३)।

पृथिनगर्भ—भगवान् श्रीकृष्ण का नामांतर। श्रीकृष्ण की माता देवकी पूर्वजन्म में सुतपा प्रजापति की पत्नी पृथिन थीं। उसी का पुत्र होने के कारण कृष्ण को पृथिनगर्भ कहते हैं। यह त्रेतायुग का उपास्य देव है, जो कि विष्णु का अवतार माना जाता है (भा. १०.३.३५; ११.५. २६)।

महाभारत के अनुसार,—अन्न, वेद, जल और अमृत को पृथिन कहते हैं। ये सारे तत्त्व भगवान् श्रीकृष्ण के गर्भ में रहते हैं, इसलिये उसका नाम पृथिनगर्भ पड़ा। इस नाम के उच्चारण से त्रित मुनि रूप से बाहर हो गये थे (म. शां. ३२८.४०)।

पृथिनगु—अश्विनियों के अश्रित राजाओं में से एक (ऋ. १.११२.७)। पुरुकुत्स और शुचन्ति राजाओं के साथ इसका निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है।

२. गेल्डनर के अनुसार, एक वैदिक जाति का सामूहिक नाम (ऋ. ७.१८.१०)।

पृथिनमेधस्—सुमेधस् देवों में से एक।

पृषत—(सो. नील.) उत्तर पांचाल देश का एक राजा, जो भरद्वाज ऋषि का मित्र एवं द्रुपद राजा का पिता था (म. आ. १५.४.६; ह. वं. १.३२.७९-८०)। विष्णु और वायु के अनुसार यह, सोमक राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'जंतु' राजा का पुत्र कहा गया है।

उत्तर पांचाल देश का राजा मुदास अत्यंत पराक्रमी था, किन्तु मुदास के पश्चात् पुरु एवं द्विमीढ राजाओं ने उत्तर पांचाल देश पर आक्रमण करके उसे जंजरित कर दिया। द्विमीढ राजा उग्रायुध ने मुदास राजा के नाती एवं पृषत राजा के पितामह सोमक का वध किया, एवं उत्तर पांचाल का राज्य जीत लिया। इस तरह राज्य से पदच्युत हुआ राजकुमार पृषत् दक्षिण पांचाल देश के कांपिल्य नगरी में भाग गया। तत्पश्चात् उग्रायुध ने कुरु राज्य पर आक्रमण किया किन्तु कुरु राजा भीष्म ने उसे पराजित कर उसका वध किया।

पश्चात् भीष्म ने पृषत को उत्तर पांचाल देश देकर पुनः राज्यगद्दी पर बिठाया।

पृषत राजा के पुत्र का नाम द्रुपद था इसी कारण द्रुपद को पापत कहते थे। उत्तर पांचाल देश में गंगाद्वार में भरद्वाज ऋषि का आश्रम था। भरद्वाज पृषत राजा का मित्र भी था। इसी कारण पृषत् ने अपने पुत्र द्रुपद को भरद्वाज ऋषि के यहाँ विद्या अध्ययन के लिये भेजा था। भरद्वाजपुत्र द्रोण एवं द्रुपद में पहले बड़ी मित्रता थी। पर बाद में दोनों एक दूसरे के कट्टर शत्रु बन गये। अपने शिष्य अर्जुन का सहायता से द्रोण ने उत्तर पांचाल का राज्य द्रुपद से जीत लिया एवं उसे दक्षिण पांचाल देश की ओर भगा दिया। (द्रुपद देखिये; ह. वं. १.२०; ७४-७५; म. आ. १२८.१५)।

पृषदश्व—(स. नाभाग.) एक राजा। भागवत, विष्णु तथा ब्रह्मांड के अनुसार यह विरुच राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम रथीवर था। अंगिरस ऋषि की सेवा करने के कारण इसने ब्राह्मणपद प्राप्त किया एवं, यह अंगिरस गोत्र का मंत्रकार हुआ। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'रुपदश्व'।

२. (स. इ.) एक राजा। विष्णु के अनुसार यह अनरण्य राजा का पुत्र था। वायु में इसे त्रसदश्व कहा गया है।

३. यम की समा का एक क्षत्रिय राजा (म. स. ८. १३)। इसे अष्टक राजा के द्वारा खड्ग की प्राप्ति हुयी थी (म. शां. १६०.७९)।

पृषध्न—एक राजा, जो वैवस्वत मनु का नवौं पुत्र था। इसका माता का नाम संज्ञा था (म. आ. ७०.१४; ह. वं. १.१०.२)। भागवत के अनुसार, इसकी माता श्रद्धा थी (भा. ९.१.१२)। च्यवन ऋषि का यह शिष्य था।

महाभारत के अनुसार यह प्रातःसायंकालीन कीर्तन करने योग्य राजाओं में से एक है, क्योंकि इसको स्मरण करने से धर्म की प्राप्ति होती है (म. अनु. १६५.५८-६०) इसने कुरुक्षेत्र में तपस्या करके स्वर्ग प्राप्त किया था (म. आश्र. २६.११)।

पृषध्न के कुल दस भाई थे, जिनके नाम इस प्रकार हैं—श्राद्धदेव (सौतेला भाई), इक्ष्वाकु, रुग, शयीति, दिष्ट, वृष्ट, करुपक, वरिष्यन्त, नभग तथा कर्वि। कई अन्य ग्रन्थों में इसके कई और भाइयों के नाम भी प्राप्त हैं (मनु देखिये)।

२. एक ब्राह्मणपुत्र। गुरुद्वह में शिक्षा प्राप्त करते हुए, एक दिन इतने एक सिंह को देखा कि वह गाय को मुँह में दबाये आश्रम से लिये जा रहा है। गाय की रक्षा के हेतु इसने अपना खड्ग शेर को मारा, पर सायंकाल के समय अंधेरा हो जाने के कारण, वह खड्ग गाय को लमा और वह तत्काल मर गयी। दूसरे दिन गुरु को जैसे ही यह समाचार ज्ञात हुआ उसने पृषध्न को उत्पत्ति तथा उद्दण्ड समझकर तत्काल शाप दिया, 'तू शूद्र हो जा'। इस शाप के कारण, यह शूद्र होकर वन वन भटकता हुआ अन्त में दावानल से बिरकर मृत्यु को प्राप्त हुआ (भा. ९.२.२-१४; ह. वं. १.११; वायु. ८६.२४.२; ब्रह्मांड. ३.६१.२; ब्रह्म. ७.४३; लिग. १.६६.५२; मत्स्य. १२.२५; अग्नि. २७२.१८; विष्णु. ४.१.१३; गरुड. १.१३८.५; पद्म. सु. २)।

३. द्रुपद का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में अश्वत्थामा द्वारा मारा गया था (म. द्रो. १.३१.१२९)।

पृषध्न काण्व—एक वैदिक सूतदृष्टा (ऋ. ८.५९)। ऋग्वेद के वालखिल्य सूक्त में भी इसका निर्देश प्राप्त है। वहाँ मेघ्य एवं मातरिश्वन् के साथ इसका उल्लेख आया है (ऋ. ८.५२.२)।

पृषध्न मेघ्य मातरिश्वन्—एक वैदिक राजा, जो प्रस्कण्व का प्रतिपालक था (सां. श्रौ. १६.११.२५-२७)।

पृष्टध्न—वायु के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में हिरण्यनाभ ऋषि का एक शिष्य।

पेटु—एक वैदिक राजा, जो अश्विनियों का आश्रित

या (ऋ. १.१७.९; ११.८.९; ११.९.१०; १०.३९.१०) एक निकृष्ट अश्व को बदलने के लिए अश्विनियों ने इसे एक प्रथित अश्व प्रदान किया था। इसीलिये उस अश्व को 'पैद' कहा गया है (ऋ. ९.८८.४. अ. वे. १०. ४.५)। मैकडोनेल के अनुसार, 'पैद' अश्व सम्भवतः सूर्य के अश्व का ही प्रतिनिधित्व करता है (वैदिक माइ-थॉलॉजी पृ. ५२)।

पैरुक—एक वैदिक राजा, जो भरद्वाज का आश्रयदाता था। भरद्वाज ने इससे धन प्राप्त किया था (ऋ. ६. ६३. ९)।

पैंगलायनि—भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि। 'पिंगल' के वंश में उत्पन्न होने के कारण, इसे 'पैंगलायनि' नाम प्राप्त हुआ।

पैंगि—यारुक का पैतृक नाम (वेवर; इन्डियो स्टूडियन. १.७१)।

पैंगीपुत्र—एक ऋषि, जो शौनकीपुत्र का शिष्य था (बृ. उ. ६.४.३०, माध्यं.)। 'पिंग' के किसी स्त्री-वंशज का पुत्र होने के कारण ही, सम्भव है इसे 'पैंगी-पुत्र' नाम प्राप्त हुआ हो।

पैंग्य—एक तत्त्वज्ञ जो कौपीतिकियों से सम्बद्ध ऋग्वेदिक परंपरा का गुरु, एवं याज्ञवल्क्य का शिष्य था (बृ. उ. ३. ७.११)। एक अधिकारी विद्वान् के रूप में, 'कौपीतिकि ब्राह्मण' में अनेक बार इसका उल्लेख आया है (कौ. ब्रा. ८.९; १६.९)। 'कौपीतिकि उपनिषद्' में इसे आचार्य कहा गया है (कौ. उ. २. २.१)। आपस्तंब श्रौतसूत्र में इसका उल्लेख 'पैंगायणी' नाम से किया गया है (आ. श्रौ. ५.१५.८)।

शतपथ ब्राह्मण में, इसका नाम मधुक दिया गया है एवं पैंग्य इसका पैतृक नाम बताया गया है (श. ब्रा. १२.२.२.४; ११.७.२.८)। 'पैंग्य' शब्द से एक व्यक्ति को बोध होता है अथवा अनेक का, यह कहना असम्भव है।

इसके सिद्धान्त को पैंग्य-मत कहते हैं (कौ. ब्रा. ३. १. १९.९)। प्रवर्तन के समान, यह भी प्राण को ब्रह्म माननेवाला था। काशिकाकार ने प्राचीन कल्पों की श्रेणी में पैंगी तथा अरुणपराजी और नवीन कल्पों की श्रेणी में अश्वरथ को उद्धृत किया है। सांख्यायन ब्राह्मण में अनेक स्थानों पर यज्ञकर्मों में इसके मतों को स्वीकार किया गया है (सां. ब्रा. २६.४)। आश्वलायन गृह्यसूत्र

के ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में इसका उल्लेख है। पौर्णिमा इष्टि तथा आमवास्या इष्टि के विषय में पैंग्य तथा कौपीतिकि के मतों में विभिन्नता है (ए. ब्रा. ७. १०)।

निदानसूत्र एवं अनुपदसूत्रों में इसके अनुगामियोंको 'पैंगिन' कहा गया है (निदा. ४.७; अनु. १.८)। इसके शिष्यों में चूड भागविति प्रमुख था।

ग्रन्थः—पैंग्य के नाम से निम्न लिखित ग्रन्थ प्राप्त हैंः—

१. पैंग्यायन (नि) ब्राह्मण, जिसका निर्देश बौधायन श्रौतसूत्र में किया गया है (बौ. श्रौ. २. ७; आ. श्रौ. ५. १५.८); २. पैंगलीकल्प, जिसका निर्देश जैन शाकटायन की 'चिन्तामणिवृत्ति' में किया गया है (चिन्तामणि. ३. १. ७५); ३. पैंगलोपनिषद्, ४. पैंगि-रहास्य ब्राह्मण ५. पैंग्य स्मृति

२ एक ऋषि, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था (म. स. ४. १५)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'पैंग'

पैज—एक ऋषि, जो भागवत के अनुसार व्यास की ऋकशिष्य परंपरा के जान्कर्ण्य ऋषि का शिष्य था (व्यास देखिये)।

पैजवन—सुदास राजा का पैतृक नाम। पिजवन का पुत्र या पिजवन का वंशज, उन दोनों अर्थ से 'पैजवन' उपाधि प्रयुक्त हो सकती है। संभवतः दिवोदास एवं सुदास के बीच में उत्पन्न कोई राजा का नाम पिजवन हो। गेल्डनर के अनुसार, 'पैजवन' दिवोदास राजा की उपाधि थी, एवं दिवोदास सुदास राजा का पिता था (ऋग्वेद ग्लॉसरी. ११५)।

२. एक शूद्र, जिसने वेदों का अधिकार न होने के कारण, 'ऐंद्राग्र' विधि से मंत्रहीन यज्ञ कर के, उसकी दक्षणा के रूप में एक लाख पूर्णपात्र दान किये थे (म. सां. ६०.३४-३८)।

पैठक—एक असुर, जिसका श्रीकृष्ण ने बध किया था (म. स. परि. १.२१.१५८२)।

पैठीनसि—एक स्मृतिकार एवं 'पैठनसि धर्मसूत्र' नामक ग्रंथ का कर्ता। यद्यपि याज्ञवल्क्य स्मृति में इसका उल्लेख प्राप्त नहीं है, फिर भी यह काफी प्राचीनकालीन रहा होगा।

धर्मशास्त्रादंगत श्राद्धसंबंधी इसके द्वारा दी बहुते सारी विधियाँ अथर्ववेद से मिलती जुलती हैं। अतः यह संभवतः अथर्ववेद परंपरा का रहा होगा।

'स्मृतिचंद्रिका,' 'अपराक,' 'मिताक्षरा,' एवं अन्य कई में ग्रंथों में इसके मतों के उद्धरण प्राप्त हैं।

पैठीनसी—भद्रराज ऋषि की पत्नी (ब्रह्म. १३३.२)

पैप्पल—कश्यप कुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

२. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

पैल—अंगिराकुल का एक गोत्रकार ।

२. एक ऋषि, जो पिली ऋषि का वंशज एवं भृगु-कुलोत्पन्न गोत्रकार था (म. आ. ५७.७४) ।

३. एक ऋषि, जो कृष्ण द्वैपायन व्यास का शिष्य था । इसको व्यास ने संपूर्ण वेदों का एवं महाभारत का अध्ययन कराया था (म. आ. ५७.७४) । व्यासने इसे ब्रह्मांडपुराण भी सिखाया था (ब्रह्मांड. १.१.१४) ।

यह वसु ऋषि का पुत्र था, एवं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में धौम्य ऋषि के साथ यह 'होता' बना था (भा. १.४.२१; १२.६.५२) । शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म के पास, अन्य ऋषियों के साथ यह भी आया था । (म. शां. ४७.६.५७) ।

इसके शिष्यों में, इंद्रप्रमति एवं वाष्कल प्रमुख थे । (व्यास देखिये) ।

४. एक ऋषि, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की ऋक्षशिष्य परंपरा के शाक्यैव रथीतर ऋषि का शिष्य था ।

५. 'भास्कर संहिता' के अंतर्गत 'निदानतंत्र' ग्रंथ का कर्ता (ब्रह्मवै. २.१६) ।

६. वासुकिकुल एक नाम, जो जनमेजय के सर्पसत्र में जल कर मारा गया था (म. आ. ५२.५) ।

पैलगार्ग्य—एक ऋषि, जिसके आश्रम पर काशिराज की कन्या अंबा ने तपस्या की थी (म. उ. १८७.२७) ।

पैलमौलि—कश्यपकुल एक गोत्रकार ।

पोतक—कश्यपवंश का एक नाम (म. उ. १०१ ११) ।

पोष्ट—अमिताभ देवों में से एक

पौंस्यायन—सृजय राजा दुष्टरीतु का पैतृक नाम (श. ब्रा. १२.९.३.१) ।

पौंड्र—वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार । इसके नाम के लिये 'खांडव' पाठभेद उपलब्ध है ।

पौंड्रिक—इक्ष्वाकु राजा क्षेमशृत्वन् (क्षेमशृत्वन्) का पैतृक नाम (पं. ब्रा. २२.१८.७) ।

पौंड्र—कश्यप राजा पौंड्रक वासुदेव का नामांतर (भा. ११.५.४८) ।

२. नंदिनी गौ के पार्श्वभाग से प्रकट हुयी एक म्लेच्छ जाति (म. आ. १६५.३६) । इनके लिये 'पुंड्र' पाठभेद प्राप्त है ।

३. पौंड्र देश के निवासियों के लिये प्रयुक्त एक सामूहिक नाम मांधाता के राज्य में जो निवास करते थे (म. शां. ६५.१४) । ये लोग पहले क्षत्रिय थे, किन्तु ब्राह्मणों के क्रोधसे शूद्र हो गये (म. अनु. ३५.१७-१८) ।

इन लोगों को श्रीकृष्ण ने पराजित किया था । (म. स. परि. १.२१.१५६३) युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भी ये लोग उपस्थित थे (म. व. ४८.१८) ।

भारतीय युद्ध में ये लोग, युधिष्ठिर की ओर से त्रौच ब्यूह में शामिल थे (म. भी. ४६.४९) । अंत में कर्ण ने इनको पराजित किया था (म. द्रो. ३२७) ।

पौंड्रक—धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक ।

२. कुंभकर्ण का नाती एवं, कुंभकर्णपुत्र निकुंभ का पुत्र । रामरावण युद्ध के समय निकुंभ की पत्नी गर्भवती होने के कारण, नैहर गयी थी । इस युद्ध में हनुमानजी ने निकुंभ का वध किया था । तत्पश्चात् उसकी पत्नी ने पौंड्रक नामक पुत्र को जन्म दिया ।

आनंद रामायण के अनुसार, इसने मायापुरी का राजा शतमुखी रावण की सहायता से विभिषण को राज्यभ्रष्ट करने का व्यूह रचा था । किंतु राम ने इसे पकड़ कर विभीषण के हवाले कर दिया, एवं रावण का वध किया (आ. रा. राज्य. ५) ।

पौंड्रक मत्स्यक—एक क्षत्रिय राजा, जो द्वापयु के बलवीर नामक दैत्यपुत्र के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.४१) । भारतीय युद्ध में यह दुर्वाधनके पक्ष में शामिल था ।

पौंड्रक वासुदेव—पुंड्र, कश्यप, एवं वंश देशों का राजा जो जरासंध के पक्ष में शामिल था (म. स. १३.१९) ।

इसके पिता का नाम वसुदेव था (म. आ. १७७.१२) । पुंड्र देश का राजा होने से इसे पौंड्रक कहते थे । कृष्ण वसुदेव से विभिन्नता दर्शाने के लिये इसका पौंड्रक वासुदेव नाम प्रचलित हुआ था । चेदि देश में यह 'पुरुषोत्तम' नाम से सुविख्यात था । यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१२) ।

कोशिकी नदी की तट पर किरात, बंग, एवं पुंड्र देशों पर इसका स्वामित्व था । यह मुर्य एवं अचिन्तरी था । इस कारण यह स्वयं को परमात्मा वासुदेव कहलाने लगा, एवं भगवान कृष्ण का वेष परिधान करने लगा । युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, इसने उसे करभार दे कर युधिष्ठिर का एवं भगवान कृष्ण का सार्वभौमत्व मान्य किया था (म. स. २७.२०.२९२) । फिर भी इस युद्ध के पश्चात्

बड़ी उन्मत्तता से भगवान कृष्ण को इसने संदेशा भेजा, 'पृथ्वी के समस्त लोगों पर अनुग्रह कर उनका उद्धार करने के लिये, मैंने वासुदेव नाम से अवतार लिया है। भगवान् वासुदेव का नाम एवं वेषधारण करने का अधिकार केवल मेरा है। इन चिह्नों पर तेरा कोई भी अधिकार नहीं है। तुम इन चिह्नों को एवं नाम को उन्मत्त ही छोड़ दो, वरना युद्ध के लिये तैयार हो जाओ।'।

इसकी यह उन्मत्त वाणी सुनकर, कृष्ण अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं उसने इसे प्रत्युत्तर भेजा, 'तेरा संपूर्ण विनाश करके, मैं तेरे सारे गर्व का परिहार शीघ्र ही करूंगा'।

यह सुनकर, पौंड्रक कृष्ण के विरुद्ध युद्ध की तैयारी शुरू करने लगा। अपने मित्र काशीराज की सहायता प्राप्त करने के लिये यह काशीनगर गया। यह सुनते ही कृष्ण ने ससैन्य काशिदेश पर आक्रमण किया। कृष्ण आक्रमण कर रहा है यह देखकर, पौंड्रक स्वयं दो अश्वैहिणी सेना लेकर बाहर निकला। काशिराज भी तीन अश्वैहिणी सेना लेकर इसकी सहायता करने आया। युद्ध के समय पौंड्रक ने शंख, चक्र, गदा, शार्ङ्ग धनुष, वनमाला, रेशमी पीतांबर, उत्तरीय वस्त्र, मौल्यवान् आभूषण आदि धारण किया था, एवं यह गरुड़ पर आरूढ़ था। इस नाटकीय ढंग से, युद्धभूमि में प्रविष्ट हुए इस 'नकली कृष्ण' को देखकर भगवान् कृष्ण को अत्यंत हँसी आयी। पश्चात् इसका एवं इसके परिवार के लोगों का वध कर, कृष्ण द्वारका नगरी वापस गया। काशिपति के पुत्र सुदर्शन ने अभिचार से कृष्णपर हमला किया, जिसे कृष्ण ने पराजित किया (भा. १०. ६६)।

पद्मपुराण के अनुसार, पौंड्रक वासुदेव एवं इसके मित्र काशिराज, दोनों एक ही व्यक्ति थे, एवं इसका और कृष्ण का युद्ध द्वारका नगरी में संपन्न हुआ था। इसने शंकर की घोर तपस्या कर, वरदान प्राप्त किया था, 'तुम कृष्ण के समान होगे'। युद्ध में कृष्ण ने इसका शिरच्छेद किया, एवं इसका सर काशी नगरी की ओर झोंक दिया। दण्डपाणि नामक इसके पुत्र ने एक कृत्या कृष्ण पर छोड़ दी। कृष्ण ने अपने सुदर्शनचक्र के द्वारा उस कृत्या एवं दण्डपाणि का वध किया, एवं काशीनगरी को जला कर भस्म कर दिया (पद्म. उ. २७८)।

पौतकृत—ऋग्वेद में निर्दिष्ट दस्यवें वृक राजा नामान्तर। दस्यवे वृक की माता का नाम संभवतः पृतकृता था, इस कारण इसे यह नाम प्राप्त हुआ हो (क. ८.५६.१)। पृषध के सूक्त में इसका निर्देश प्राप्त है।

पौति मत्स्यक—एक राजा, जिसे भारतीय युद्ध में पांडवों की ओर से रणनिर्माण भेजा गया था (म. उ. ४. १७)।

पौतिमाषीपुत्र—काण्वशाखा के बृहदारण्यक उपनिषद् में निर्दिष्ट एक आचार्य (वृ. उ. ६.५.१)। संभवतः यह 'पूतिमाष' के किसी स्त्रीवंशज का पुत्र होगा। इसके गुरु का नाम कात्यायनीपुत्र था।

पौतिमाध्य—काण्व शाखा के बृहदारण्यक उपनिषद् में निर्दिष्ट एक आचार्य (वृ. उ. २.६.१; ४.६.१)। संभवतः यह 'पूतिमाष' का पुत्र या वंशज होगा। इसके गुरु का नाम गौषवन् था।

पौतिमाध्यायण—एक आचार्य, जो कौंडिन्यायन एवं रैभ्य नामक आचार्यों का गुरु था। संभवतः यह 'पौतिमाध्य' का वंशज होगा।

पौत्रायण—एक उदार दाता, जिसका पैतृक नाम जानश्रुति था (छां. उ. ४.१.१; जानश्रुति देखिये)।

पौत्रि—अत्रिकुल का एक प्रवर।

पौर—एक पूर राजा, जिसकी सहायता इंद्र ने की थी। रम एवं रश्म राजाओं के साथ, ऋग्वेद में इसका भी निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८.१३.१२)। सिक्ंदर का प्रतिद्वंदी राजा पौरव (पूरोस) संभवतः यही होगा (ऋ. ५.७४.४)।

२. मृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

३. (सो. पूरु.) एक पूर्ववंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार, पृथुसेन राजा का पुत्र था।

पौर आश्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.७३-४७)।

पौरव—एक राजा, जो शरभ नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.२८)। इसका सही नाम 'विष्वगश्व' एवं कुलनाम पौरव था। यह पर्वतीय देश का राजा था, एवं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, अर्जुनद्वारा पराजित हुआ था (म. स. २४.१३)।

भारतीय युद्ध में, एक महारथि के नाते, यह दुर्योधन के पक्ष में शामिल था (म. उ. १६४.१९)। चेदिराज शृष्टकेतु के साथ इसका द्रंद्रयुद्ध हुआ था (म. भी. ११२. १५)। पश्चात् इसका अभिमन्यु के साथ युद्ध हुआ, जिसमें अभिमन्यु ने इसके केश पकड़कर इसे घसीटा था (म. क. ४. ३५)। इसके पुत्र का नाम दमन था (म. भी. ५७.२०)।

२. पूरुकुल का दानवीर राजा, जिसका निर्देश महा-भारत में 'पोडप-राजकीय' उपाख्यान में किया गया है (म. द्रो. परि. १, क्र. ८; पंक्ति ३८४)। संजयराज के अश्वमेध में, नारद ने इसका जीवनचरित्र कथन किया था।

३. पांडवों के पक्ष का एक राजा, जिसका अश्वत्थामा ने रथशक्ति पंक्त कर वध किया था (म. द्रो. १७१-६४)।

४. विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अ. ४. ५५)।

पौरवक—एक क्षत्रियजाति, जिसके लोग युधिष्ठिर के साथ कौचध्यूह में खड़े थे (म. भी. ४६.४७)।

पौरवी—युधिष्ठिर की पत्नी, जिससे इसे देवक नामक पुत्र हुआ था (भा. ९.२२.३०)।

२. वसुदेव की स्त्रियों में से एक (पद्म. सु. १३)। इसके निम्नलिखित पुत्र थे:—सुभद्र, मद्रवाह, दुमर्द, एवं मद्र (भा. १२.११.३५)।

पौरा—भाषि की माता पौरकुत्सा का नामांतर (ब्रह्म. १०.२८; पौरकुत्सा देखिये)।

पौरिक—पुरिका नगरी का एक राजा, जिसे पाप के कारण सियार की योनि में जन्म प्राप्त हुआ था (म. शां. १२२.३-५)।

पौरुकुत्स—अंगिराकुल का मंत्रकार।

२. पूरुराजा त्रसदस्यु का पैतृक नाम।

पौरुकुत्सा—कान्यकुब्ज देश के भाषि राजा की माता (रेणुका. ७)। इसे पौरा नामांतर भी प्राप्त है।

पौरुकुत्सि—पूरुराजा त्रसदस्यु का पैतृक नाम।

पौरुकुत्स्य—पूरुराजा त्रसदस्यु का पैतृक नाम।

पौरुशिष्टि—तपोनित्य नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. उ. १.९.१; तै. आ. ७.८.१)। पुरुशिष्ट का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

पौरुषेय—ज्येष्ठ माह में सूर्य के साथ घूमनेवाला एक राक्षस (भा. १२.११.३५)।

२. वातुधान राक्षस का पुत्र। इसे निम्नलिखित पुत्र थे:—ऋ, विक्रत, रुधिराद, मेदाद्य एवं वशादा (ब्रह्मांड. ३.७.९४)।

पौर्णिमास—अगस्त्य कुल का गोत्रकार।

२. (आंश्र, मविष्य) आंश्रवंशीय पूर्णोत्संग राजा का नामांतर (पूर्णोत्संग देखिये)।

पौर्णिमागतिक—भृगुकुल का गोत्रकार 'पुर्णिमागतिक' के लिये प्रयुक्त पाठभेद।

पौलकायनि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

पौलस्त्य—पुलस्त्य ऋषि के पुत्र विशवस् ऋषि का पैतृक नाम (१ पुलस्त्य देखिये)।

२. पुलस्त्यकुल के राक्षस, जो तुर्योधन के भाइयों के रूप में पुनः उत्पन्न हुए थे (म. आ. ६१.८२)।

३. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

४. अगस्त्यकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

५. भौत्य मनु के पुत्रों में से एक।

पौलह—अश्वत्थिर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

२. अगस्त्यकुलोत्पन्न एक गोत्रकार, जो पुलह का दत्तक पुत्र दृष्टास्यु के वंश में उत्पन्न हुआ था (२ पुलह देखिये)।

३. पुलहकुल के राक्षस।

पौलि—वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार।

पौलुषि—सत्ययज्ञ नामक आचार्य का पैतृकनाम (श. ब्रा. १०.६.१.१)। 'पुलुष' का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा। जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण में 'पौलुषित' पाठभेद प्राप्त है (जै. उ. ब्रा. १.३९.१)।

पौलोम—पुलोमा नामक देव्यकन्या के पुत्रों के लिये प्रयुक्त सामूहिक नाम (२ पुलोमा देखिये)।

ये हिरण्यपुर नामक नगरी के स्वामी थे (म. व. १७०.१२-६३; भा. ६.६.३५)। ब्रह्माजी ने इनकी माता पुलोमा को दिये वर के कारण, ये अत्यंत उन्मत्त हो गये थे। फिर अर्जुन ने इनके साथ युद्ध कर, इनका संहार किया (म. स. १६९; पद्म. मृ. ६; २ निवातशकच देखिये)।

२. दक्षिण समुद्र के समीप स्थित 'पौलोमर्नर्थ' में ग्राह वन कर रहनेवाली एक अप्सरा। इसका एवं इसके वर्गा नामक सली का अर्जुन ने उदार किया था (म. आ. २०८.३)।

पौलोमी—वारुणि भृगु ऋषि की पत्नी पुलोमा का नामांतर (विष्णु. ७.३२; पुलोमा देखिये)। इसे भृगु ऋषि से च्यवन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (ब्रह्मांड. ३. १.७४-१००; भृगु देखिये)।

२. पुलोमा नामक असुर की कन्या, जिसे 'शची' नामांतर भी प्राप्त है (शची देखिये)। शची पौलोमी का निर्देश एक ऋग्वेद सूक्त की द्रष्टीके रूप में प्राप्त है (ऋ. १०. १५९)। यह देवराज इंद्र की पत्नी थी, जिसने इसे जयंत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. आ. १०६.४)।

अध्वरुम रामायण में, इसे पुलोमि असुर की कन्या कहा गया है (अध्या. रा. अधो. १.१५)। भागवत के अनुसार, यह द्वादश आदित्यों में से शक नामक आदित्य की पत्नी थी, जिससे इसे जयंत, ऋषभ एवं मीढुष नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ६.१८-७)।

पौषजिति—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं ऋषि। इसके नाम के लिये 'पौषजिति' एवं 'पाष्याजिति' पाठभेद उपलब्ध हैं।

पौष्करसादि—सांख्यायन आरण्यक में निर्दिष्ट एक गुरु एवं आचार्य (सां. आ. ७.१७; आप. ध. १.६.१९. ७; १०.२८.१)। संभवतः यह किसी 'पुष्करसादि' का वंशज रहा होगा। उपनयन के बाद, उसी दिन गायत्री-मंत्र का उपदेश 'उपनीत' बालक को करना चाहिये, ऐसा इसका मत था (सां. आ. ७.१७)। तदनुसार गायत्रीमंत्र का उपदेश आज भी किया जाता है।

तैत्तिरीय प्रातिशाख्य में, एक वैय्याकरण के नाते पौष्करसादि का निर्देश प्राप्त है (तै. प्रा. ५.३७-३८; पा. सू. वार्तिक, ८.४.४८)। संभवतः धर्मशास्त्रकार एवं वैय्याकरण पौष्करसादि दोनों एक ही होंगे।

पौष्टी—पूरु राजा की पत्नी, जिसे पूरुद्वारा प्रवीर, ईश्वर एवं रौद्राश्व नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. ८९.४)।

पूरु राजा की कौसल्या नामक और एक पत्नी भी थी। किंतु महाभारत में एक स्थान पर प्राप्त निर्देश के अनुसार, पौष्टी का ही नामांतर कौसल्या था (म. आ. ९०.११)।

पौष्पायन—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

पौष्पिण्ड्य—सामविधान ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक गुरु एवं आचार्य, जो जैमिनि का शिष्य था (वेबर, इन्डिशे स्टूडियेन, ४.३७७)। व्यास की सामशिष्यपरंपरा का सुविख्यात आचार्य 'पौष्यंजि' अथवा 'पौषिजि' संभवतः यही होगा (पौष्यंजि देखिये)।

पौष्य—इक्ष्वाकुवंशीय राजा पुष्यपुत्र भ्रुवसंधि का नामांतर। आचार्य वेद इसका पुरोहित था। इसकी पत्नी ने अपने दिव्य कुंडल उत्तक ऋषि को प्रदान किये थे (म. आ. ३.८५)।

पश्चात् इसका एवं उत्तक ऋषि का झगड़ा हो गया, जिस कारण, इसने उसे 'अनपत्य' होने का शाप दिया। उत्तक ने भी इसे अंधा होने का प्रतिशप दिया (म. आ. ३.१२७)।

२. एक राजा, जो करवीर नगरी के राजा पूषन् का पुत्र

था। इसकी तीन स्त्रियाँ होते हुए भी इसे एक भी पुत्र न था। आगे चल कर शंकर की कृपा से इसे चंद्रशेखर नामक एक पुत्र हुआ।

इसकी राजधानी दृषद्वती नदी के किनारे ब्रह्मवर्त के समीप स्थित करवीर नगरी में थी (कालि. ४९)।

पौष्यंजि—एक आचार्य, जो व्यास की सामशिष्य परंपरा के सुकर्मन् जैमिनि का शिष्य था। इसे 'पौषिजि' एवं 'पौष्पिण्ड्य' नामांतर भी प्राप्त हैं।

यह सामवेदी श्रुतर्षि था। सुकर्मन् जैमिनि नामक सुविख्यात आचार्य के 'पौष्यंजि' एवं 'हिरण्यनाभ कौसल्य' ये दो प्रमुख शिष्य थे। उनमें से पौष्यंजि ने सामवेद की पांचसो संहिताएँ बनायीं, एवं वे अपने लौगाक्षि (लोकाक्षि), कुयुमि, कुयुमिन्, एवं लंगलि नामक चार शिष्यों को सिखायीं। आगे चल कर उसी चार शिष्यों से सामवेद की परंपरा का निर्माण हुआ (व्यास देखिये)। इसके निर्माण किये, सामदेवपरंपरा को सामवेद की 'उदीच्या शाखा' कहते हैं।

ब्रह्मांड के अनुसार, इसने याज्ञवल्क्य को योगविद्या सिखाई थी।

पौष्यायन—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

प्रकालन—वासुकिलकुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्वसत्र में जलकर मारा गया (म. आ. ५.२.५)।

प्रकाश—एक भृगुवंशी ब्राह्मण, जो गृत्समद्वंशीय 'तम' नामक ऋषि का पुत्र था (म. अनु. ३०.६३)।

प्रकाशक—रैवत मनु के पुत्रों में से एक।

प्रकृति—रैवत मन्वंतर का एक देवगण।

प्रगाथ काण्व—एक वैदिक मंत्रद्रष्टा, जो 'प्रगाथ' नामक मंत्रों का प्रणेता था (ऋ. ८.१.१-२; ऐ. आ. २.२.२)।

ऋग्वेदांतर्गत एक मिश्र जाति के छंद का नाम 'प्रगाथ' है। उस छंद में निबद्ध मंत्रों की रचना करने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ। ऋग्वेदानुक्रमणिका के अनुसार, यह दुर्गह राजा का समकालीन था। आश्वलायन के ब्रह्मयज्ञांग तर्पण में इसका निर्देश प्राप्त है।

प्रगाथ घौर—धोर आंगिरस ऋषि के दो पुत्रों में से एक। इसके भाई का नाम कण्व था। एक बार इसने कण्व की पत्नी से छेड़छाड़ की। इस कारण, कण्व इस पर क्रुद्ध हुआ, एवं इसको शाप देने लगा। फिर इसने उससे एवं उसकी पत्नी की क्षमा माँगी (कण्व १. देखिये)।

प्रघस—रावण के पक्ष का एक राक्षस, जो हनुमान् के द्वारा मारा गया (वा. रा. सुं. ४६. ३७; म. व. २६९. २)।

२. एक राक्षस, जो सुग्रीव के द्वारा मारा गया (वा. रा. सुं. ४३)।

३. राक्षस एवं पिशाचों के दल (म. व. २८५. १-२)।

प्रघसा—एक राक्षसी, अशोकवन में सीता के रक्षणार्थ नियुक्त की गयी थी (वा. रा. सुं. २४. ४१)।

२. स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. १६)।

प्रघास—लेखदेवों में से एक।

प्रघोष—श्रीकृष्ण का लक्ष्मणा से उत्पन्न एक पुत्र (भा. १०. ६१. १५)।

प्रचंड—एक राक्षस, जिसने त्रिपुरासुर एवं शंकर के युद्ध में कार्तिकेय से युद्ध किया था (गणेश. १. ४३)।

२. एक गोप, जिसके घर जानाल ऋषि ने चित्रगंधा गोपी के रूप में जन्म लिया था।

३. विष्णु का एक पार्षद।

प्रचिन्वत्—(सो. पूरु.) एक पूर्ववंशीय राजा, भागवत एवं विष्णु के अनुसार, जनमेजय (प्रथम) का पुत्र था। इसे प्राचिन्वत् नामांतर भी प्राप्त है।

प्रचेतस्—एक प्रजापति, जो ब्रह्मा के मानसपुत्रों में से एक था (वायु. ६५. ५३-५४)।

२. प्राचीनवर्द्धिप तथा समुद्रतनया सर्वा के दस पुत्रों का सामूहिक नाम। भागवत में इसके माता का नाम शतद्रुती दिया गया है (भा. ४. २४. १३)।

ये दस प्रचेतस् धनुर्वेद में पारंगत थे (विष्णु. १. १४. ६; ह. वं. १. २. ३३)। इन्होंने समुद्रजल में रहकर दस हजार वर्षों तक तपस्या की। उस समय पृथ्वी पर जंगल ही जंगल थे। वृक्षों की वृद्धि को देखकर, प्रचेतस् जंगलों को नष्ट करने लगे। तब वृक्षों के अधिपति सोम ने इन्हें वृक्षों को नष्ट करने से रोकना, तथा भेंट के रूप में वृक्षकन्या वार्क्षी अथवा मारिषा इन्हें अर्पित की (मारिषा देखिये)। दस प्रचेतसों द्वारा मारिषा से दक्ष नामक पुत्र हुआ। वही पुत्र दक्ष प्राचेतस तथा दक्ष प्रजापति नाम से प्रसिद्ध हुआ (विष्णु, १. १५. १-९; ह. वं. १. २. ४६)। इसी प्राचेतस दक्ष से, आगे चल कर 'मैथुनज' मानवसृष्टि का प्रारम्भ हुआ।

३. एक स्मृतिकार, जिसका निर्देश पराशरस्मृति में प्राप्त

स्मृतिकारोंकी तालिका में दिया गया है। किंतु याज्ञवल्क्य स्मृति में इसका निर्देश उपलब्ध नहीं है।

मित्यकर्म, श्राद्ध, अशौच, एवं प्रायश्चित के संबंध में प्रचेतस् के मतों के गद्य उद्धरण 'मिताक्षरा', 'अपरार्क' 'स्मृतिचंद्रिका', एवं 'हरदत्त' (गौतम. २३) में प्राप्त हैं। अशौच एवं प्रायश्चित के संबंध में इसने अपने 'बृहत्प्रचेतस' नामक ग्रंथ में दिये मतों का निर्देश 'मिताक्षरा' (याज्ञ. ३. २०. २६३-२६४)। 'हरदत्त' (गौतम. २२. १८), तथा अपरार्क में किया है।

"रसोदया, शिल्पकार, वैद्य, दासदासी, राजा एवं राजा का अधिकारीवर्ग, इन लोगों को अशौचपालन करने की आवश्यकता नहीं है" ऐसा इसका अभिमत था (याज्ञ. ३. २७)। प्रचेतस् के इस श्लोक का मेधातिथि ने स्मृति की तरह निर्देश किया है (मनु. ५. ६०)। किंतु वहाँ प्रचेतस् के नाम का निर्देश नहीं किया गया है। इस उद्धरण से जाहिर है कि, मनु एवं विष्णु जैसे श्रेष्ठ स्मृतिकारों में प्रचेतस् का निर्देश मेधातिथि के काल में हुआ करता है।

इसके द्वारा लिखित 'बृहत्प्रचेतस्' नामक और भी एक ग्रंथ था, जिसके उद्धरण 'मिताक्षरा' एवं 'अपरार्क' में दिये गये हैं।

४. लेखदेवों में से एक।

५. पारावत देवों में से एक।

६. प्रसूत देवों में से एक।

७. (सो. द्रुह्यु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार 'दुर्मन' राजा का, विष्णु के अनुसार 'दुर्मन' का, एवं मत्स्य के अनुसार, 'दुर्मन' का पुत्र था। इसे 'सुचेतस्' नामांतर भी प्राप्त है।

इसके प्राचेतस नामक सौ पुत्र थे, जो उत्तर दिशा में जा कर म्लेच्छ लोगों के राजा बन गये। इस प्रकार इसका 'द्रुह्यु' वंश विनष्ट हो गया।

८. भागंबकुल का एक मंत्रकार।

९. वरुण का नामांतर (भा. ७. १२. २८; म. स. ७. १४)।

प्रचेतस् आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १६४)।

प्रचेष्ट—तालध्वज नगर के माधव नामक राजकुमार का सेवक (माधव ५. देखिये; पद्म. क्रि. ५)।

प्रजंघ—रावण के पक्ष का एक राक्षस, जो अंगद द्वारा मारा गया (वा. रा. सुं. ७६. २७)।

२. सम के पक्ष का एक वानर, जिसने संपाति नामक राक्षस का वध किया (वा. रा. सु. ४३)।

प्रजन—(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार कुरु राजा के पाँच पुत्रों में से कनिष्ठ था।

प्रजा—एक ब्राह्मण, जो पूर्वजन्म में 'भिल' था। अपने व्याध योनि में, इसने श्रीविष्णु के पूजा के लिये कमल के फूल एकत्र कर, एक ब्राह्मण को प्रदान किये। इस पुण्यकर्म के कारण, अगले जन्म में इसे शुचिभूत ब्राह्मणकुल में जन्म प्राप्त हुआ (पद्म. क्रि. १३)।

प्रजागरा—एक अप्सरा, जिसने इंद्रसभा में संपन्न हुए अर्जुन के स्वागतसमारोह में नृत्य गायन किया था (म. व. ४४.३०)।

प्रजाति—स्वायंभुव मन्वन्तर के जित देवों में से एक।

२. मनु के पुत्रों में से एक। इसके पुत्र का नाम क्षुप था (म. आश्व. ४. २)। इसके नाम के लिये 'प्रसंधि' पाठभेद भी उपलब्ध है।

प्रजादर्प—एक मध्यमाध्वर्यु।

प्रजानि—(सू. दिष्ट.) एक राजा। विष्णु एवं वायु के अनुसार यह प्रांशु राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'प्रमति' कहा गया है।

२. प्रांशुपुत्र प्रजाति राजा का नामांतर। इसके पुत्र का नाम खनित्र था (मार्क. ११४.७-८)।

प्रजापति—एक वैदिक देवता, जो संपूर्ण प्रजाओं का स्रष्टा माना जाता है। महाभारत एवं पुराणों में निर्दिष्ट 'ब्रह्मा' देवता से इस वैदिक देवता का काफी साम्य है, एवं ब्रह्मा की बहुत सारी कथाएँ इससे मिलती जुलती हैं (ब्रह्मन् देखिये)।

ऋग्वेद के दशम मण्डल में चार बार प्रजापति का नाम एक देवता के रूप में आया है। देवता प्रजापति को बहुत सन्तानों 'प्रजाम्' को प्रदान करने के लिये आवाहन किया गया है (ऋ. १०.८५.४३)। विष्णु, त्वष्टु तथा धातृ के साथ इसकी भी सन्तान प्रदान करने के लिए स्तुति की गयी है (ऋ. १०.१८४)। इसे, गायों को अत्यधिक दुग्धवर्ती बनानेवाला कहा गया है (ऋ. १०.१६९)।

इसकी प्रशस्ति में ऋग्वेद का एक स्वतंत्र सूक्त है, जिसमें इसे पृथ्वी का सर्वोच्च देवता कहा गया है (ऋ. १०.१२१)। इस सूक्त में, आकाश एवं पृथ्वी, जल एवं सभी जीवित प्राणियों के स्रष्टा के रूप में इसकी स्तुति की गयी है, तथा कहा गया है, पृथ्वी में जो कुछ भी है, उसके अधिपति (पति) के रूप में प्रजापति का

जन्म (जात) हुआ है। यह श्वास लेनेवाले समस्त गतिशील जीवों का राजा है। यही सब देवों में श्रेष्ठ है। इसी के विधानों का सभी प्राणी पालन करते हैं। यही नहीं, इसका यह विधान देवताओं को भी मान्य है। इसने आकाश तथा पृथ्वी की स्थापना की है, यही अन्तरिक्ष के स्थानों में व्याप्त है, तथा समस्त विश्व तथा समस्त प्राणियों को अपनी भुजाओं से अल्लिखन करता है।

अथर्ववेद तथा वाजसनीय संहिता में साधारणतया, ब्राह्मण ग्रन्थों में नियमित रूप से, इसे सर्व प्रमुख देवता माना गया है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, यह देवों का पिता है (श. ब्रा. ११.१.६; तै. ब्रा. ८.१.३)। सृष्टि के आरम्भ में अकेले इसी का अस्तित्व था (श. ब्रा. २.२.४), एवं यह पृथ्वी का सर्वप्रथम याज्ञिक था (श. ब्रा. २.४.४; ६.२.३)। देवों को ही नहीं, वरन् असुरों को भी इसीने बनाया था (तै. ब्रा. २.२.२)।

सूत्रों में, इसे ब्रह्मा के साथ समीकृत किया गया है (आश्व. गृ. ३.४)। 'वंशब्राह्मण' में इसे ब्रह्मा का शिष्य कहा गया है, एवं इसके शिष्य का नाम मृत्यु कहा गया है (वं. ब्रा. २)। ऋग्वेद के कई सूक्तों का यह मन्त्रद्रष्टा भी है (ऋ. ९.१०१.१३-१६)।

सर्वप्रमुख देवता—उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में, इसे सर्वप्रमुख देवता के स्थान पर प्रतिस्थापित किया गया है। उपनिषदों के दर्शनशास्त्र में इसे 'परब्रह्म' अथवा 'विश्वात्मा' कहा गया है। तत्त्वज्ञान के संबंध में जब कभी किसी प्रकार की शंका उठ खड़ी होती थी, तब देव, दैत्य, एवं मानव प्रजापति के पास आकर अपनी शंका का समाधान करते थे (ऐ. ब्रा. ५.३; छां. उ. ८.७.१; श्वेत. उ. ४.२)।

ऋग्वेद, ब्राह्मण एवं उपनिषद् ग्रन्थों में प्रजापति को प्रायः देवता के रूप में माना गया है। लेकिन, इन्हीं ग्रन्थों में कई स्थानों में इसे अन्य रूपों में भी निरूपित किया गया है।

ऋग्वेद में एक स्थान पर, प्रजापति उस 'तवितृ' की उपाधि के रूप में आता है, जिसे आकाश को धारण करनेवाला, एवं विश्व का प्रजापति कहा गया है (ऋ. ४. ५३)। दूसरे एक स्थान पर इसे सोम की उपाधि के रूप में प्रस्तुत किया गया है (ऋ. ९.५)। ब्राह्मण एवं उपनिषद् ग्रन्थों में, प्रजापति शब्द, विभिन्न अर्थों से प्रयुक्त किया गया है, जिनमें से कई इस प्रकार हैं:—यज्ञ, वारह माह, वैश्वानर, अन्न, वायु, साम, एवं आत्मा। इससे प्रतीत होता

है कि, उस समय किसी भी वस्तु का महत्ता वर्णित करने के लिए, 'प्रजापति' उपधि का प्रयोग होता था। पंचविंश ब्राह्मण में, सभी का महत्त्व वर्णन करने के लिए, उन्हें प्रजापति उपाधि दी गयी है (पं. ब्रा. ७.५.६)।

सृष्टि-आरंभ—वैदिक वाक्याय में प्रजापति के जीवन सम्बन्धी कई कथायें दी गयी हैं जिनमें से निम्नलिखित प्रमुख हैं:—

प्रजापति की आस्थि संधियों टूटी हो गयी थीं, तब देवों ने यज्ञ कर उन्हें ठीक किया (श. ब्रा. १. ६. २. ३५)। प्रजापति सर्वप्रथम अकेला था। कालान्तर में, प्रजा उत्पन्न करने की इच्छा से, उसने अपने शरीर के मांस को निकालकर उसकी आहुति अग्नि में दी। अग्नि से इसके पुत्र के रूप में विना सींगों का एक बकरा उत्पन्न हुआ (तै. सं. २. १. १)।

प्रजापति के द्वारा उत्पन्न की गयी प्रजा इसके अधिकार का अन्दर न रहकर वरुण के अधिकार में चली गयी। जब इसने उन्हें वापस बुलाना चाहा, तब वरुण ने उन्हें अपने कर्जे से छोड़ने के लिए इन्कार कर दिया। फिर प्रजापति ने एक सफ़ेद खुरवाला कृष्णवर्णीय पशु वरुण को भेंट स्वरूप प्रदान करने का आश्वासन दिया। इस पर प्रसन्न होकर, वरुण ने प्रजा के उपर का अपना अधिकार उठा लिया, और प्रजापति प्रजा का स्वामी बन बैठा (तै. सं. २. १. २)।

पृथ्वी उत्पन्न होने के बाद, देवों की प्रजा उत्पन्न करने की इच्छा हुई, और उन्होंने प्रजापति के कथनानुसार तपश्चर्या कर, अग्नि के आश्रय से एक गाय उत्पन्न की। उस गाय के लिए सब देवों ने प्रयत्न कर अग्नि को संतुष्ट किया। बाद में, उस गाय से प्रत्येक देव को तीन सौ तैर्तास देव प्राप्त हुए। इस प्रकार असंख्य प्रजा उत्पन्न हुई (तै. सं. ७.१.५)।

प्राचीन काल में, प्रजापति ने यज्ञ की ऋचाओं एवं छंदों का परस्पर में वितरण किया। उस समय इसने अपना अनुष्टुप छंद 'अच्छावाकीय' नामक ऋचा को प्रदान किया। अनुष्टुप नाराज होकर प्रजापति को दोष देने लगा। फिर सोमयज्ञ कर प्रजापति ने उस यज्ञ में अनुष्टुप् छंद को अप्रस्थान दिया। तब से उस छंद का उपयोग वैदिक 'सवनों' में सर्वप्रथम होने लगा।

प्रजापति की प्रजा यज्ञ उसे त्याग कर जाने लगी, तब इसने अग्नि की सहायता से प्रजा को पुनः प्राप्त किया (ऐ. ब्रा. ३.१२)। इसने 'अग्निशोम' नामक यज्ञ कर,

उसमें अपने आप को समर्पित कर, देवों से अपनी प्रजा पुनः प्राप्त की (पं. ब्रा. ७.२.१)।

मनुष्य होते हुए भी देवत्व प्राप्त ऋषियों को, एकवार प्रजापति ने 'तृतीयसवन' में बुलाकर, उनके साथ सोमपान किया। इसको उचित न समझकर, अग्नि आदि देवताओं ने इसकी कटु आलोचना की (ऐ. ब्रा. ३.३०)।

सूर्यपूजाअर्थ—राक्षसों की उग्र तपस्या से सन्तुष्ट होकर, प्रजापति राक्षसों के पास आया, इसने उनसे वर माँगने को कहा। राक्षसों ने कहा 'हम सूर्य से लड़ना चाहते हैं'। प्रजापति ने उनकी माँग स्वीकार कर, उन्हें वर प्रदान किया। तब से प्रतिदिन सूर्योदय से सूर्यास्त तक राक्षस सूर्य से लड़ते रहते हैं। इस युद्ध में सूर्य की सहायता करने के लिये, ब्रह्मनिष्ठ लोग पूर्व की ओर भगवान् सूर्य को अर्घ्यदान देते हैं। अर्घ्य के जल का एक एक दूँद बज्र बनकर राक्षसों का प्रहार करता है। इससे पराजित होकर राक्षसगण अपने 'अरुणद्वीप' नामक देश को भाग जाते हैं (तै. भा. २.२)।

इन्द्र की उत्पत्ति—प्रजापति ने देव तथा असुर निर्माण किये, परन्तु राजा उत्पन्न नहीं किया। बाद में, देवों के प्रार्थना करने पर इसने इन्द्र उत्पन्न किया। त्रिष्टुप नामक देवता ने १५ धाराओं का बज्र इन्द्र को प्रदान किया। उस बज्र से इन्द्र ने असुरों को पराजित कर, देवों के लिए स्वर्ग प्राप्त किया।

स्वर्ग को भोगभूमि समझकर सभी देवगण आये थे, पर वहाँ पर खानेपीने की कोई वस्तु न पाकर उन्होंने 'अयास्य' नामक आंगिरस गोत्र के ऋषि को, यज्ञ अनुष्ठान की कार्यप्रणाली से अवगत कराकर उसे पृथ्वी पर भेजा। भूलोक पर जाकर 'अयास्य', ने यज्ञानुष्ठान कर देवों को हविर्भाग देने की कल्पना प्रसारित की (तै. ब्रा. २.२.७)।

इन्द्र तथा वृत्र में घोर युद्ध हुआ। युद्ध में वृत्र ने तीव्र गति से अपनी खास को छोड़कर इन्द्र के पक्ष के सभी योद्धाओं को भयभीत कर भगा दिया, पर मरुतों ने इन्द्र का साथ न छोड़ा। मरुतों की सहायता से इन्द्र ने वृत्र का वध कर प्रजापति का मान प्राप्त करना चाहा। उसकी यह इच्छा तो पूरी न हो सकी, पर प्रजापति ने उसके इस कार्य से प्रसन्न हो कर उसे 'महेन्द्र' पदवी दी। (ऐ. ब्रा. ३.२०-२२)। प्रजापति के नेतृत्व में, देवों ने इन्द्र का राज्याभिषेक किया, जिससे उसे सभी अभीष्ट वस्तुओं की प्राप्त हुयी। इन समस्त शक्तियों को पाकर

अन्त में, उसने मृत्यु पर भी विजय प्राप्त की (ऐ. ब्रा. ८.१२; १४)।

यज्ञारम्भ—एक बार प्रजापति ने यज्ञ किया, जिसमें यह स्वयं 'होता' बना। इस समय सभी देवताओं की इच्छा थी कि, मुझे अधिष्ठाता मान कर यह यज्ञ किया जाय। ऐसी स्थिति में, प्रजापति ने 'आपो रेवती' (ऋ. १०.३०.१२) मन्त्र के द्वारा यज्ञारम्भ किया। 'आप' तथा 'रेवती' इन दो शब्दों से सब देवों का निर्देश होता है, इसलिये प्रत्येक देव को संतोष हुआ कि, यज्ञ का प्रारंभ मुझे सम्बोधित करके किया गया है (ऐ. ब्रा. २.१६)।

एक बार इसके तीनों पुत्र— देव, मनुष्य तथा असुर उपदेश ग्रहण करने की इच्छा से आये। प्रजापति ने उन तीनों को 'द' का उपदेश दिया। इस 'द' उपदेश का आशय हर एक पुत्रों के लिए भिन्न भिन्न था। देवों के लिए दमन, मनुष्यों के लिए दान, तथा असुरों के लिए दया का उपदेश देकर, इसने उन्हें अपनी मुक्ति प्राप्त करने का एकमेव साधन बताया (बृ. उ. ५.१-३)।

सृष्टि निर्माण व व्यवस्था—एक बार प्रजापति के मन में सृष्टिसृजन की इच्छा उत्पन्न हुयी। इसने अपने अन्तर्मन से एक धूम्राशि का निर्माण किया, जिससे अग्नि, ज्योति, ज्वाला एवं प्रभा आदि उत्पन्न हुए। पश्चात्, उन सबने मिलकर एक ढोस गोले का रूप धारण किया, जिससे प्रजापति का मूत्राशय बना। इस मूत्राशय को परमेश्वर ने फोड़ा, जिससे समुद्र की उत्पत्ति हुयी। समुद्र, क्योंकि मूत्राशय से उत्पन्न हुआ है, इसी से उसका पानी खारा रहता है तथा वह पीने लायक नहीं होता।

जलमय समुद्र से ही प्रजापति ने क्रमानुसार, पृथ्वी, अंतरिक्ष तथा सूर्य उत्पन्न किये। इसके बाद, अपने शरीर से असुरों का निर्माण कर, दिवस रात्रि तथा अहोरात्रि के संचिकाल को बनाया। इस प्रकार, प्रजापति ने सारी प्रजा का निर्माण किया (तै. ब्रा. २.२.९)।

देवों को पैदा करने के उपरान्त प्रजापति ने देवों में कर्मिष्ठ इन्द्र को उत्पन्न कर, उससे कहा, 'मेरी आज्ञा से तुम स्वर्ग में जाकर देवों पर शासन करो।'

इन्द्र स्वर्ग गया, पर वहाँ किसी ने उसे अपना राजा न माना, क्योंकि वह सबसे आसु में छोटा, तथा शक्ति में अधिक न था। इन्द्र वापस आया, और प्रजापति से देवों के कथन को दुहरा कर उसने अपने विशेष तेज को देने की याचना की। प्रजापति ने इन्द्र से कहा 'यदि मैं

तुम्हें अपना तेज दे दूँगा, तो फिर मुझे कौन पूँछेगा?'। इस पर इन्द्र ने उत्तर दिया, 'तुम 'क' नाम से प्रसिद्ध होगे। अपना तेज मुझे दे डालने के बाद भी तुम्हारा प्रजापतित्व कायम रहेगा'। इतना सुन कर प्रजापति ने अपने तेज को एक 'पदक' का रूप देकर उसे इन्द्र के मस्तक पर बाँध दिया। तब कहीं इन्द्र इस योग्य बना कि, वह देवों का अधिपति बनकर उन पर राज्य कर सके (तै. ब्रा. २.२.१०)।

कन्याविवाह—एक बार प्रजापति ने सोम एवं तीन वेद नामक पुत्र, तथा सीतासावित्री नामक कन्या उत्पन्न की। उन में से तीन वेदों को सोम ने अपनी मुट्ठी में बन्द कर रखा था।

पश्चात्, सीतासावित्री के मन में सोम से विवाह करने की इच्छा उत्पन्न हुयी। पर सोम सीतासावित्री को न चाह कर, प्रजापति की श्रद्धा नामक अन्य कन्या से विवाह करना चाहता था। प्रजापति की सहानुभूति सीतासावित्री के प्रति अधिक थी, और यह चाहता था कि, सोम का विवाह सीतासावित्री से ही हो। इसी कारण, सलाह लेने के लिए आयी हुयी सीतासावित्री को, इसने एक वशीकरण मंत्र से अवगत कराया। 'स्यायार' नामक एक सुगन्धमय वनस्पति को घिसकर, इसने उसके मस्तक में चन्दन की भाँति टीका लगाकर, उसे आशीष देकर विद्या किया।

तब सीतासावित्री सोम के यहाँ गयी। वशीकरण के प्रभाव से, सोम उस पर मोहित हो कर प्रेममरा व्यवहार करने लगा, और शादी के लिए तैयार हो गया। किन्तु, शादी के पूर्व सीतासावित्री ने सोम की प्रेमपरीक्षा लेने के लिए उसके सामने शर्त रखी, 'वह उसके सिवा किसी अन्य नारी से भोग न करेगा, तथा मुट्ठी में छिपी हुयी वस्तु का उसे स्पष्ट ज्ञान करायेगा'। सोम को ये शर्तें मंजूर हुयीं और सीतासावित्री का विवाह सोम के साथ सम्पन्न हुआ। इसप्रकार वशीकरण के प्रभाव से दोनों सुखपूर्वक रहने लगे। तैत्तिरीय ब्राह्मण में, प्रजापति का यह वशीकरणप्रयोग विस्तार के साथ बताकर कहा गया है कि, जो इस वशीकरण का प्रयोग करेगा उसे इच्छित वस्तु प्राप्त होगी (तै. ब्रा. २.३.१०)।

ऐतरेय ब्राह्मण में, प्रजापति की कन्या का नाम 'सूर्यासावित्री' बताया गया है (ऐ. ब्रा. ४. ७)। अपनी इस कन्या का विवाह प्रजापति ने सोम के साथ निश्चित किया। 'सूर्यासावित्री' के विवाहोत्सव में,

प्रजापति ने सारे देवों को निमंत्रित किया। उस समय प्रजापति ने सहस्र ऋचाओंवाला एक 'आश्विन स्तोत्र' का निर्माण कर, उसे उन देवों के समुख प्रस्तुत किया। उस स्तोत्र को सुन कर सभी देवताओं के मन में उसके प्राप्ति की अभिलाषा उत्पन्न हुयी। ऐसी स्थिति में, देवों के बीच उद्वेग हुयी कलह को मिटाने के लिए प्रजापति ने एक प्रतिव्रोगिता रचखी, जिसके अनुसार, यह तय किया गया कि, जो देवता गार्हपत्य तक दौड़ में प्रथम आयेगा उसे ही यह स्तोत्र प्रदान किया जायेगा। इस दौड़ में अश्विनीकुमार प्रथम आये, और उन्हें स्तोत्र की प्राप्ति हुयी (ऐ. ब्रा. ४. ७)।

दुहितृगमन—ऐतरेय ब्राह्मण एवं मैत्रायणी संहिता में, प्रजापति के अपनी कन्या 'उपस्' पर ही आसक्त हो जाने की कथा प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ३. ३३; मै. सं. ४. २)।

एक बार, अपनी ही कन्या 'चौ' तथा 'उपस्' को देखकर, प्रजापति में काम-वासना उत्पन्न हुयी, एवं यह उनके पीछे दौड़ने लगा। इससे डरकर इसकी कन्याओं ने रोहित नामक मृगी का रूप धारण कर लिया। तब इसने ऋष्य नामक मृग का रूप धारण कर, उनसे मैथुन किया। सारे देवताओं ने 'दुहितागमन' का यह निन्दनीय कर्म देखकर, इस पापी पुरुष को नष्ट करने की ठान ली। फिर, हर एक देव ने अपने रौद्रअंश को एकत्र कर 'भूतवान' नामक एक भयंकर पुरुष का निर्माण किया, जिसने प्रजापति का पापी देह नष्ट किया। प्रजापति का मृगरूपी मृतदेह, मृगनक्षत्र के रूप में आज भी आकाश में दिखाई पड़ता है। जिस वाण से प्रजापति का हनन किया गया था, उस वाण की नोक, मध्य तथा फाल आज भी हमें आकाश में दिखाई पड़ती हैं। रोहिणी नक्षत्र ही प्रजापति की कन्या है।

उस समय जो प्रजापति का वीर्य गिरा उससे निम्न-लिखित प्राणी इस क्रम से उत्पन्न हुए:— अग्नि, वायु, आदित्य, तीन वेद, भूः, भुवः, स्वः, अ उ म (ऐ. ब्रा. ३. ३३; ५. २)।

कामी प्रजापति ने अपनी 'चौ' एवं 'उपस्' नामक कन्याओं से भोग करते समय, जो वीर्य असावधानी में नीचे भूमि पर स्तब्धित किया था, कालान्तर में वही वीर्य चारों ओर बहने लगा। मसतों ने उसे एकत्र कर उसका पिंड बनाया। उय पिंड से आदित्य एवं वासुधि भृगुओं की उत्पत्ति हुयी। उन दोनों के निर्माण के पश्चात्, शेष बचे बचे हुए वीर्यकण दग्ध होकर अंगार के समान

फूलने लगे। उन अंगारों से अंगिरस निर्माण हुए। जो अंगार जलकर कोयले के समान काले हो गये, उनसे कृष्णवर्णीय पशुओं की उत्पत्ति हुयी। उन अंगारों के सहयोग से पृथ्वी का जो भाग तप्त होकर लाल हो गया, उनसे रक्तवर्णीय पशुओं का निर्माण हुआ (ऐ. ब्रा. ३. ३४)।

शतपथ ब्राह्मण में भी प्रजापति द्वारा प्रजोत्पत्ति की यही कथा दसी प्रकार दी गयी है। किन्तु इस ग्रन्थ में प्रजापति के हनन के लिए देवों द्वारा उत्पन्न किये भयंकर पुरुष का नाम 'भूतवान' की जगह 'रुद्र' दिया गया है, एवं इसके स्तब्धित वीर्य से उत्पन्न पुत्र का नाम 'अग्नि मारुत उक्थ' दिया गया है (श. ब्रा. १. ७. ४)।

शतरथ ब्राह्मण के अनुसार, प्रजापति का वध करने के पश्चात्, देवों का क्रोध पुनः शान्त हुआ, और उन्होंने फिर से इसका अमिषेक किया, एवं इसे 'यज्ञ प्रजापति' नाम प्रदान किया (श. ब्रा. १. ७. ४)।

प्रजा निर्मित करने के उपरांत, प्रजापति को आपसी झगड़ों को निपटा कर के, वैधानिक दण्डादि भी देना पड़ता था। तत्त्वज्ञान के संबंध में जब कभी शंकायें उत्ती थीं, तो उनके निवारणार्थ देव, दैत्य अथवा मनुष्यलोग प्रजापति के पास जाया करते थे (छां. उ. ८. ७. १, ३; ऐ. ब्रा. ५. ३; श्वेत. ४. २)।

२. ब्रह्मदेवों के मानस पुत्रों के लिये प्रयुक्त सामूहिक नाम।

वायुपुराण के अनुसार, ब्रह्मा ने सृष्टि की उत्पत्ति की, जिसको बढ़ाने के लिए, अपने शरीर के विभिन्न अवयवों से उसने अनेक मानसपुत्र निर्माण किये। मानसपुत्रों के निर्माण के पीछे उनका हेतु सृष्टि विस्तार ही था। इस कारण ब्रह्माने अपने मानसपुत्रों को प्रजा उत्पन्न करने की आज्ञा दी। इसी कारण, ब्रह्मा के मानस पुत्रों को प्रजापति सामूहिक नाम प्राप्त हुआ।

पुराणों में 'प्रजापति' शब्द की व्याख्या 'संतति उत्पन्न करनेवाला' ऐसी की गयी है, जैसा कि वायुपुराण में लिखा है—

लोकस्य संतानकारसत्तैरिमा वर्धिताः प्रजाः ।

प्रजापतय इत्येवं पठ्यन्ते ब्रह्मणः सुताः ॥

(वायु. ६५.४८)

मत्स्य पुराण में भी यही विचार प्रकट किये गये हैं, जो निम्नलिखित श्लोक में द्रष्टव्य है—

‘विश्वे प्रजानां पतयो वेभ्यो लोका विनिस्सृताः’
(मत्स्य. १७१.२५)।

प्रजापतियों की संख्या—प्रजापतियों की संख्या के बारे में कहीं भी एकवाक्यता नहीं है। पुराणों में प्रजापतियों की संख्याओं के लिये, सात, तेरह, चौदह, इक्कीस आदि भिन्न भिन्न संख्यायें प्राप्त हैं। बहुत सारे पुराणों में निम्नलिखित व्यक्तियों का निर्देश प्रजापति के नाम से किया गया है—मरीचि, अत्रि, अंगिरस, पुलस्त्य, पुलह, ऋतु, दक्ष, वसिष्ठ, भृगु, नारद। वायु, ब्रह्मांड, गरुड़, मत्स्य एवं महाभारत में ‘अन्य’, ‘बहवः’ ऐसा निर्देश कर, और भी कई व्यक्तियों की नामावली प्रजापति के नाम से दी गयी है। जिस व्यक्ति के संतति की संख्या अधिक हो, उसे प्रजापति की संज्ञा पुराणों में प्रदान की गयी दिखती है। पुराणों में बहुत सारी जगहों पर प्रजापति को समस्त सृष्टि का सृजन करनेवाले ब्रह्मा से समीकृत किया गया है। कई जगह इसे व्यास भी कहा गया है (व्यास देखिये)।

प्रजापतियों की नामावलि—विभिन्न पुराणों में प्रजापतियों की नामावलि निम्नप्रकार से दी गयी है—

(१) वायु एवं ब्रह्मांड पुराण—कर्म, कश्यप, शेष, विक्रांत, सुश्रवस्, बहुपुत्र, कुमार, विवस्वत्, अरिष्टनेमि, बहुल, कुशोच्चय, बालखिल्य, संभूत, परमर्षय, मनोजव, सर्वगत, सर्वभोग (वायु. ६५.४८; ब्रह्मांड. २.९.२१; ३.१)।

(२) गरुड़ पुराण—धर्म, रुद्र, मनु, सनक, सनातन, सनत्कुमार, रुचि, श्रद्धा, पितर, बर्हिपद, अग्निवात्त, कन्यादान, दीप्यान, आज्यपान (गरुड़. १.५)।

(३) मत्स्य पुराण—गौतम, हस्तींद्र, मुकृत, मूर्ति, अप्, ज्योति, ज्यय, स्मय। मत्स्य में निर्दिष्ट वे सारे प्रजापति स्वायंभुव मन्वन्तर में पैदा हुए थे (मत्स्य. ९. ९-१०; १७१.२७)।

(४) महाभारत—रुद्र, भृगु, धर्म, तप, यम, मरीचि, अंगिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह ऋतु, वसिष्ठ, चन्द्रमा, क्रोध, विक्रीत, वृहस्पति, स्थाणु, मनु, क, परमेष्ठिन्, दक्ष, सप्त पुत्र, कश्यप, कर्म, प्रल्हाद, सनातन, प्राचीनबर्हि, दक्ष प्राचेत्स, सोम, अर्यमन्, शशङ्किदुपुत्र, गौतम (म. स. ११.१४; शां. २.०१; भा. ३.१२.२१)।

महाभारत में मरीचि ऋषि के पुत्र कश्यप को प्रजापति कहा गया है, एवं उसे मनुष्य, देव एवं राक्षसों का आदि पुरुष कहा गया है। महाभारत के अनुसार, मरीचि ऋषि

के पुत्र का नाम प्रजापति अरिष्टनेमि अथवा कश्यप था, जिसका विवाह दक्ष की कन्याओं से हुआ था। उसी कश्यप से सारी सृष्टि का निर्माण हुआ। यादवों के चक्रवर्ति राजा दशविन्दु को भी महाभारत में एक जगह प्रजापति कहा गया है (म. शां. २.०. ११-१३)।

ब्रह्मांड के अनुसार, हर एक कल्प में, नयी नयी सृष्टि का निर्माण करना प्रजापति का कार्य रहा है। स्वायंभुव मन्वन्तर के प्रजापति को कोई संतान न होती थी। फिर ब्रह्मा ने स्वयं कन्या को उत्पन्न कर उसे दक्ष को दिया। पदचान्, दक्ष ने अनेक कन्यायें उत्पन्न कर उन्हें उस मन्वन्तर के प्रजापतियों को प्रदान किया। किन्तु दक्षयज्ञ के संहार में शंकर ने सारे प्रजापतियों को दूध कर दिया (ब्रह्मांड. २.९.३१-६७)।

पद्म के अनुसार, रोहिणी नक्षत्र की देवता प्रजापति माना गया है। प्रजापति को जब शनि की पीड़ा होती है, तब सृष्टि का संहार (लोकक्षय) होता है (पद्म. उ. ३३)।

३. एक धर्मशास्त्रकार। बौधायन के धर्मसूत्र में, प्रजापति के धर्मशास्त्रविषयक मत ग्राह्य माने गये हैं (बौ. ध. २. ४. १५; २. १०. ७१)। वसिष्ठ ने भी अपने धर्मशास्त्र में इसके मतों का अनेक बार निर्देश किया है (व. ध. ३. ४७; १४.१६.१९; २४-२५; ३०-३२)। बौधायन तथा वसिष्ठ धर्मसूत्रों में निर्दिष्ट प्रजापति के सारे श्लोक मनुस्मृति में पुनः प्राप्त हैं। इसी के आधार पर कहा जा सकता है कि, बौधायन तथा वसिष्ठ ने प्रजापति को मनु का ही नामांतर माना है।

आनंदाश्रम संग्रह में (९०-९८), प्रजापति, की श्राद्धविषयक एक स्मृति दी गयी है, जिसमें एक सौ अष्टानव श्लोक हैं। ये श्लोक अनुष्टुप, इन्द्रवज्रा, उपजाति, वसंततिलका तथा सधरा वृत्तों में हैं। इस स्मृति में कल्पशास्त्र, स्मृति, धर्मशास्त्र तथा पुराणों पर विचार किया गया है।

‘कन्या’ एवं ‘वृश्चिक’ राशियों के बारे में प्रजापति स्मृति में एक श्लोक प्राप्त है, जिसे कार्ष्णाजिनि ने उद्धृत किया है। अशौच एवं प्रायश्चित के बारे में प्रजापति के श्लोक मिताक्षरा में दिये गये हैं (याज्ञ. ३. २५. २६०)। पदार्थशुद्धि, श्राद्ध, गवाह, ‘दिव्य’ तथा अशौच के सम्बन्ध में इसके श्लोक ‘अपरार्क’ ने उद्धृत किये हैं। किन्तु वे श्लोक मुद्रित प्रजापतिस्मृति में अप्राप्य हैं। ‘परिव्राजक’ के सम्बन्ध में इसका एक गद्य उद्धरण भी ‘अपरार्क’ में दिया गया है (अपरार्क. ९५२)।

प्रजापति के अनुसार, श्राद्धविधि के अवसर पर अपनी माता को पिण्डदान देते समय अपने मामा के गोत्र का निर्देश करना चाहिये। इसके इस मत का उल्लेख लौगाक्षि एवं अपरार्क ने किया है (अपरार्क. ५४२)।

प्रजापति के लोकन्यवहार सम्बन्धी विचारधारा का उल्लेख अपरार्क, स्मृतिचन्द्रिका, पराशर माधवीय तथा अन्य ग्रन्थों में किया गया है। इसके अनुसार, गवाहों के 'कृत' अथवा 'अकृत' ऐसे दो प्रमुख प्रकार होते हैं। इसका यह मत नारदस्मृति से लिया हुआ प्रतीत होता है (ऋणादान श्लो. १४९; अपरार्क. ६६६; स्मृतिचं. व्य. ८०)। इसने प्रतिवादी के ग्राह्य उत्तरो का विवेचन कर, उनके चार प्रकार बताये हैं (स्मृतिचं. व्य. ९८; परा. मा. ३. ६९-७३)। 'दिव्य' के सम्बन्ध में लिखे गये इसके श्लोक 'पराशरमाधवीय' में दिये गये हैं।

प्रजापति के अनुसार, निःसंतान विधवा का अपने पति की सम्पूर्ण संपत्ति पर अधिकार है, एवं उसके मासिक तथा वार्षिक श्राद्ध करने का अधिकार भी उसे ही प्राप्त है। उक्त श्राद्ध के समय विधवा को अपने पति के सगे संबंधियों का सम्मान करना चाहिये ऐसा इसका अभिमत था (परा. मा. ३.५३६)।

४. महर्षि कश्यप का नामांतर। इसने बालविल्यों से देवराज इन्द्र पर अनुग्रह करने के लिए प्रार्थना की थी (म. आ. २७.१६-२१)।

५. रथंतर कल्प का एक राजा। इसकी पत्नी का नाम चन्द्ररूपा था, जिसने 'त्रिरात्र तुलसीव्रत' नामक उपासना की थी (पद्म. उ. २५)।

प्रजापति परमेष्ठिन—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१२९)।

प्रजापति वाच्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ३. ३८; ५४-५६; ९.८४)।

प्रजापति वैश्वामित्र—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ३. ३८; ५४-५६)।

प्रजावत् प्राजापत्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१८३; ऐ. ब्रा. १.२१)। इसकी माता का नाम सुपर्णा था, जिससे इसे सौपर्ण्य नाम प्राप्त हुआ था (तै. आ. १०.६३)। ऐसा माना जाता है कि, प्रवर्ण्य नामक अनुष्ठान में यदि कोई व्यक्ति इसके द्वारा रचित सूक्त का पठन करे, तो उसे अवश्य ही पुत्र की प्राप्ति होती है।

प्रह्व—अमिताभ देवों में हो एक।

प्रज्योति—अमिताभ देवों में से एक।

प्रणित—मरीचिगर्भ देवों में से एक।

प्रणीधि—बृहद्रथ वासिष्ठ के अंश से उत्पन्न पांच-जन्य नामक अग्नि का पुत्र (म. व. २१०.४)।

२. एक धार्मिक वैश्य, जिसकी पत्नी का नाम पद्मावती था (पद्मावति २. देखिये)।

प्रतंस—(सो.) एक राजा, जो भविष्य के अनुसार, अवतंस राजा का पुत्र था।

प्रतपन—एक रावणपक्षीय राक्षस, जिसका नल द्वारा वध हुआ था (वा. रा. यु. ४३.२३)।

प्रतर्दन—(सो. काश्य.) काशी जनपद का सुविख्यात राजा, एवं एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.९६; १०.१७९. २)। यह ययाति राजा की कन्या माधवी का पुत्र था।

वैदिक साहित्य में इसे काशिराज दैवैदासि कहा गया है। इसके पुत्र का नाम भरद्वाज था (ऋ. सं २१.१०)। भरद्वाज ऋषि ने क्षत्रश्री प्रतर्दनि राजा की दानस्तुति की थी, जिससे पता चलता है कि प्रतर्दन राजा को क्षत्रश्री नामक एक और पुत्र था (ऋ. ६.२६.८)।

कौपीतिकि ब्राह्मण के अनुसार, नैमिषारण्य में ऋषियों द्वारा किये यज्ञ में यह उपस्थित हुआ, और ऋषियों इसने से प्रश्न किया, 'यज्ञ की, जुटियों का परिमार्जन किस प्रकार किया जा सकता है।' उस यज्ञ में उपस्थित अलीक्यु नामक ऋषि इसके इस प्रश्न का उत्तर न दे सका था (श. ब्रा. २.६.५)।

कौपीतिकि उपनिषद् के अनुसार, युद्ध में मृत्यु हो जाने पर यह इन्द्रलोक चला गया था (कौ. उ. ३.१)। वहाँ इसने बड़ी चतुरता के साथ इन्द्र को अपनी बातों में फँसा कर, उससे ब्रह्मविद्या का ज्ञान एवं इन्द्रलोक प्राप्त किया (कौ. उ. ३.२.१)।

वैदिक वाङ्मय में, इसे दैवैदासि उपाधि दी गयी है, जो इसका वैदिक राजा सुदास के बीच सम्बन्ध स्थापित कराती है। इसका भरद्वाज नामक एक पुरोहित भी था, जो इसके और सुदास राजा के बीच का सम्बन्ध पुष्ट करता है।

भाषा-विज्ञान की दृष्टि से, इसका प्रतर्दन नाम 'तृन्सु' एवं 'प्रतृद्' लोगों के नामों से सम्बन्ध रखता है, क्योंकि उक्त तीनों शब्दों में 'तर्द' धातु है।

पौराणिक साहित्य में इसे सर्वत्र काशीनरेश कहा गया है। किन्तु वैदिक ग्रन्थों में इस प्रकार का निर्देश आप्त्य है।

महाभारत में इसे ययाति की कन्या माधवी से उत्पन्न पुत्र कहा गया है (म. स. ८; व. परि. १. क्र. २१. ६; पंक्ति १७; उ. ११५. १५)। ययाति से जोड़ा गया इसका यह सम्बन्ध कालदृष्टि से असंगत है। भीमरथ प्रतर्दन ने शूर-वीरता के कारण ही युधामन्यु, शत्रुघ्न, कुबलयाक्ष, ऋतध्वज, वत्स आदि नाम प्राप्त किये थे (विष्णु. ४. ५-७)।

भीमरथ को काशिराज दिवोदास नामक पुत्र भारद्वाज के प्रसाद से हुआ था। दिवोदास के पितामह हर्यश्व को हैहय राजाओं ने अत्यधिक त्रस्त किया, तथा उसका राज्य छीन लिया। हर्यश्व का पुत्र सुदेव तथा पौत्र दिवोदास दोनों हैहयों को पराजित न कर सके। इसलिये दिवोदास ने हैहयों का पराभव करने-वाला प्रतर्दन नामक पुत्र भारद्वाज से माँगा। यह जन्म लेते ही तेरह वर्ष का था, एवं सब विद्याओं में पारंगत था (म. अनु. ३०. ३०)।

प्रतर्दन का पराक्रम—माहिष्मती के हैहयवंश में पैदा हुये चक्रवर्ती कार्तवीर्य अर्जुन ने नर्मदा से लेकर हिमालयप्रदेश तक अपना साम्राज्य स्थापित किया था। काशी के दिवोदास आदि राजा कार्तवीर्य से परास्त होकर अपने प्रदेश से भाग गये। काशी राज्य जंगल में बदल गया, और उसे नरभक्षक राक्षसों ने अपना अड्डा बना लिया।

पिता के दुःख का कारण ज्ञात होते ही, प्रतर्दन ने हैहयवंशीय तालजंब, वीतहव्य तथा उसके पुत्रों को पराक्रम के बल पर युद्ध में परास्त कर, काशीप्रान्त को पुनः प्राप्त किया। क्षेमकादि राक्षसों का वध कर, एक बार फिर से काशीप्रदेश को बसा कर इसने उसे सुगठित राज्य का रूप दिया।

यह शूरवीर होने के साथ साथ परमदयालु एवं ब्राह्मणभक्त भी था। इसके द्वारा अपने सब पुत्रों को मरते देखकर वीतहव्य घबरा कर भार्गव के आश्रय में गया। भार्गव ने उसको उन्नारने के लिये प्रतर्दन से कहा, 'यह ब्राह्मण है, अतएव इसका वध न होना चाहिये'। पश्चात् प्रतर्दन ने उसे छोड़ दिया।

एक बार इसने अपना पुत्र ब्राह्मण को दान दे दिया था, यही नहीं इसने ब्राह्मण को अपनी आँखें (म. शां. २४०. २०), तथा शरीर (म. अनु. १३७-५)। तक ब्राह्मण को दान स्वरूप दी थीं। इसका पितामह ययाति

स्वर्ग से नीचे गिरा, तब इसने अपना पुण्य देकर उसे पुनः स्वर्ग भेजा था (म. आ. ८७. १४-१५)।

एक बार यह नारद के साथ रथ में बैठकर जा रहा था, तब एक ब्राह्मण ने इसके रथ के अश्व माँग लिये। यह स्वयं अपना रथ खींचकर ले जाने लगा। बाद में कुछ ब्राह्मणादि और आये और उन्होंने भी अश्व माँगे। परन्तु पास में अश्व न होने के कारण यह ब्राह्मणों की माँग पूरी न कर सका, और त्रस्त होकर इसने उन्हें कुछ अप-शब्द भी कहे। अतः भाइयों के साथ स्वर्ग जाते जाते आधे मार्ग से यह नीचे गिर गया (म. व. परि. १. क्र. २१. ६. पंक्ति. ११०-१२५)।

इसे अलर्क के सिवाय अन्य पुत्र भी थे, पर अलर्क ही इसके बाद सिंहासन का अधिकारी हुआ (भा. ९. १७. ६)।

प्रतर्दन का तत्त्वज्ञान—कौपीतकी उपनिषद् में इंद्र-प्रतर्दन संवाद से प्रतर्दन के तत्त्वज्ञान का परिचय प्राप्त है। दिवोदास का पुत्र प्रतर्दन तत्त्वज्ञान की शिक्षा प्राप्त करने के लिए इंद्र के पास गया। इंद्र ने इसे बताया—'ज्ञान से परम कल्याण प्राप्त होता है। ज्ञाता सर्व दोषों से और पापों से मुक्त होता है। प्राण ही आत्मा है। संसार का मूल तत्त्व प्राण है। प्राण से ही सब दुनिया चलती है। हस्तपादनेत्रादि विरहितों के सारे व्यवहारों को देखने से पता चलता है कि, संसार में प्राण ही मुख्य तत्त्व है।'।

उपनिर्दिष्ट इंद्रप्रतर्दन संवाद में इंद्र काव्यनिक है। प्रस्तुत संवाद में इंद्र द्वारा प्रतिपादित समस्त तत्त्वज्ञान प्रतर्दन द्वारा ही विरचित है। इस संवाद से प्रतर्दन की प्रत्यक्ष प्रमाणवादिता स्पष्ट है।

महाभारत एवं पुराणों में निर्दिष्ट प्रतर्दन दो व्यक्ति न होकर, एक ही व्यक्ति का बोध कराते हैं। जिस दिवोदास राजा के वंश में यह पैदा हुआ, उसकी वंशावलि महाभारत तथा पुराणों में कुछ विभिन्न प्रकार से दी गयी है। इसीलिए इस प्रकार का भ्रम हो जाता है। पर वास्तव में महाभारत तथा पुराणों के दिवोदास दो अलग अलग व्यक्ति हैं। उनमें से महाभारत में निर्दिष्ट दिवोदास का वंशज प्रतर्दन था।

२. उत्तम मन्वन्तर का एक देवगण, जिसमें निम्न-लिखित देव अन्तर्निहित हैं:—अवध्य, अवरति, ऋतु, केतुमान्, धिष्ण्य, घृतधर्मन्, यशस्विन्, रथोर्मि, वसु, वित्त, विभावसु, सुधर्मन् (ब्रह्मांड. २. ३६. ३०-३१)।

३. शिव देवों में से एक।

प्रताप—सौवीर देश का एक राजकुमार, जो जयद्रथ के रथ के पीछे ध्वजा लेकर चलता था। सम्भवतः यह जयद्रथ का भाई रहा होगा (म. व. २४९.१०)। अर्जुन ने इसका वध किया था (म. व. २५५.१२१४*)। इसके नाम के लिये 'पराकु' पाठभेद प्राप्त है।

प्रतापान्वय—एक योद्धा, जो रामचन्द्र के अश्वमेध यज्ञ के समय शत्रुघ्न के साथ अश्वरक्षणार्थ गया था (पद्म. पा. ११.२२)। दमन नामक राक्षस से इसका युद्ध हुआ था, जिसमें यह मूर्च्छित हुआ था (पद्म. पा. २३)।

प्रतापिन—एक राजकुमार, जो कुण्डलपुर के सुरथ राजा के दस पुत्रों में से एक था (पद्म. पा. ४९)।

प्रति—(सो. क्षत्र.) प्रतिक्षत्र राजा का नामांतर (प्रतिक्षत्र २. देखिये)। भारत में इसे कुश राजा का पुत्र कहा गया है।

प्रतिक्षत्र—(सो. क्रोष्ट्र.) एक क्रोष्ट्रवंशीय राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार क्षत्रीय राजा का पुत्र था।

२. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार, क्षत्रवृद्ध राजा का पुत्र था। वायु में इसका नाम 'प्रतिपक्ष' एवं भागवत में 'प्रति' दिया गया है। यह किस देश में राज्य करता था, कहना कठिन है। हरिवंश में इसे पुरुरवस्वंशीय अनेनसु राजा का पुत्र कहा गया है, एवं इसका वंश भी वहाँ दिया गया है (ह. वं. १.२९; अनेनसु देखिये)।

इसके वंश की जानकारी अन्य पुराणों में भी दी गयी है (भा. ९.१७.१६-१८; ब्रह्म. ११.२७.३१; वायु. ९७. ७-११)।

प्रतिक्षत्र आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.४. ६)।

प्रतिक्षिस—(सो. क्रोष्ट्र.) क्रोष्ट्रवंशीय प्रतिक्षत्र राजा का नामांतर (प्रतिक्षत्र २. देखिये)।

प्रतिक्षेत्र—(सो. क्रोष्ट्र.) एक क्रोष्ट्रवंशीय राजा, जो शोणाक्ष राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम भोज था (पद्म. सू. १३)।

प्रतिविक—(सु. निमि.) एक राजा, जो वायु के अनुसार, मरु राजा का पुत्र था। इसे 'प्रतिबंधक', 'प्रतीपक', 'प्रतीधक' एवं 'प्रदीपक' नामांतर भी प्राप्त है।

प्रतिथि देवतरथ—एक आचार्य, जो देवतरसु श्यावसायन ऋषि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम निकोथन था (ब. ब्रा. २)।

प्रतिपक्ष—(सो. क्षत्र.) प्रतिक्षत्र राजा का नामांतर। वायु में इसे धर्मवृद्ध राजा का पुत्र कहा गया है (प्रतिक्षत्र २. देखिये)।

प्रतिप्रभ आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.४९)।

प्रतिबंधक—(सु. निमि.) प्रतिविक राजा का नामांतर (प्रतिविक देखिये)। विष्णु में इसे मरु राजा का पुत्र कहा गया है।

प्रतिवाहु—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो भागवत के अनुसार, श्वफल्क राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम नंदिनी है। इसे 'प्रतिवाह' नामांतर भी प्राप्त था।

२. एक राजा, जो कृष्ण का प्रपौत्र, एवं वज्र राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सुवाहु था।

प्रतिभानु—श्रीकृष्ण एवं सत्यभामा के पुत्रों में से एक।

प्रतिभानु आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ४८)।

प्रतिभेद्यस्—सुमेधसु देवों में से एक।

प्रतिरथ—(सो. पूर.) एक पूरवंशीय राजा, जो मतिनार राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम कष्य (अग्नि. २७७. ५; गरुड. १४०. ४)।

प्रतिरथ आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ४७)।

प्रतिरूप—एक दैत्य, जो एक समय समस्त पृथ्वी का शासक था। किंतु अंत में कालवश हो कर, इसे अपना समस्त राज्य छोड़ना पड़ा (म. शां. २२०. ५२-५५)।

प्रतिरूपा—स्वयंभुव मन्वंतर के अग्नीध्र राजा की स्तुपा, एवं अग्नीध्रपुत्र किंपुरुष की पत्नी। यह मेरु की कन्या थी (भा. ५. २. २३)।

प्रतिवाह—(सो. वृष्णि.) प्रतिवाहु नामक यादव राजा का नामांतर (प्रतिवाहु १. देखिये)।

प्रतिविध्य—(सो. कुरु.) युधिष्ठिर राजा का द्रौपदी से उत्पन्न पुत्र (म. आ. ५७. १०२; ९०. ८२; भा. ९.२२.२९)। जन्म के समय यह विन्ध्य पर्वत के सहस्र अञ्चल दिखाई पड़ा, अतएव इसे 'प्रतिविन्ध्य' नाम प्रदान किया गया (म. आ. २१३. ७२)। महाभारत में इसे 'यौधिष्ठिर' एवं 'यौधिष्ठिरि' कहा गया है।

भारतीय युद्ध में इसके अश्व शुभ्रवर्ण के कहे गये हैं, जिनके कंठ नीले थे। इसका चित्र राजा के साथ युद्ध हुआ था, जिसमें इसने उसका वध किया (म. क.

१०.३१)। अलम्बुश एवं दुःशासन के साथ भी इसका युद्ध हुआ था, किन्तु उन दोनों युद्ध में यह पराजित हुआ (म. भी. ९६.३७-४९; द्रो. १४३-३१-४२)।

अश्वत्थामन् ने रात्रि के समय सोते हुए पाण्डवों के कुटुम्बियों का संहार किया था, जिसमें यह भी मारा गया (म. द्रो. २२. २०, सौ. ट. ५०)। इसका मृत्युदिन मार्गशीर्ष अमावस्या माना जाता है (भारत-सावित्री)।

२. शाकल देश का एक सुविख्यात राजा, जो एकचक्र नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.२२)।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय अर्जुन ने इसे पराजित किया था (म. स. २३. १५)। भारतीय युद्ध में, यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ४. १३)।

प्रतिवेश्य—एक आचार्य, जो बृहद्विवा का शिष्य था (सां. आ. १५. १)। इसके शिष्य का नाम प्रतिवेश्य था।

प्रतिव्यूह—(स. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार वत्सव्यूह राजा का पुत्र था। इसे 'प्रतिव्योम' नामांतर भी प्राप्त है।

प्रतिव्योमन्—(स. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वत्सवृद्ध का, विष्णु के अनुसार वत्स व्यूह का और मत्स्य के अनुसार वत्सद्रोह का पुत्र था। इसे प्रतिव्यूह नामांतर भी प्राप्त है।

प्रतिश्रवस्—प्रतीप नामक एक कुरुवंशीय राजा का नामांतर (प्रतीप १. देखिये)।

प्रतिश्रुत—वसुदेव का शांतिदेवा से उत्पन्न पुत्र (भा. ९. २४. ५०)।

प्रतिष्ठा—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. २८)।

प्रतिहर्तृ—(स्वा. प्रिय.) एक यज्ञकर्मप्रवीण राजा, जो प्रतीह राजा के तीन पुत्रों में से ज्येष्ठ था। इसकी माता का नाम सुवर्चला था। इसकी स्त्री का नाम स्तुति था, जिससे इसे अज और भूमन् नामक दो पुत्र थे (भा. ५. १५. ५)। विष्णु में इसे नाभिवंशीय प्रतिहार राजा का पुत्र कहा गया है।

२. मरुदणो के छठवें गण में से एक।

प्रतिहार—(स्वा. नाभि.) एक नाभिवंशीय राजा, जो विष्णु के अनुसार परमेष्ठिन् राजा का पुत्र था।

प्रतीक—(स. नृग.) एक राजा, जो वसु राजा का

पुत्र था। इसके पुत्र का नाम ओचवत् था (भा. ९.२. १८)।

प्रतीकाश्व—(स. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार भानुमत् राजा का पुत्र था। इसे 'प्रतीकाश्व' और 'प्रतीपाश्व' नामांतर प्राप्त थे।

प्रतीच्या—महर्षि पुलस्त्य की पतिव्रता पत्नी (म. उ. ११५. ११*)। प्रतीच्या के स्थान पर कहीं कहीं संध्या पाठभेद भी प्राप्त है।

प्रतीत—स्वारोचिष मनु के पुत्र प्रथित का नामांतर।

२. एक विश्वदेव (म. अनु. ९१.३२)।

प्रतीताश्व—(स. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार भानुरथ का पुत्र था। इसे 'प्रतीकाश्व' नामांतर प्राप्त है (प्रतीकाश्व देखिये)।

प्रतीदर्श श्वैक—एक वैदिक राजा, जो पांचालदेश के राजा सुप्रन् सहदेव का समकालीन था। यह 'श्विको' का राजा था, जिस कारण इसे 'श्वैक' उपाधि प्राप्त हुयी। शतपथ ब्राह्मण में, इसे प्रतीदर्श ऐमावत कहा गया है, जिससे यह किसी इभावत् का वंशज प्रतीत होता है (श. ब्रा. १२. ८. २. ३)।

शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, यह एक नार राजगद्दी से पदच्युत किया गया था। किन्तु दाक्षायणयज्ञ अथवा वसिष्ठयज्ञ करने के पश्चात्, इसे पुनः राजगद्दी प्राप्त हुयी। आगे चलकर यह पुनः लोकप्रिय राजा हुआ (श. ब्रा. २. ४. ४. ३-४)।

प्रतीन्धक—निभिवंशीय प्रतित्वक राजा का नामांतर (प्रतित्वक देखिये)।

प्रतीप—(सो. कुरु.) एक विख्यात कुरुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु, मत्स्य, भविष्य और वायु के अनुसार, भीमसेन का प्रपौत्र और दिलीप का पुत्र था। किन्तु महाभारत में इसे भीमसेन राजा का पुत्र कहा गया है, एवं केकय राजकन्या सुकुमारी को इसकी माता कहा गया है। इसे परिश्रवस् (पर्यश्रवस्) नामांतर भी प्राप्त है (मं. आ. ९०. ४५)। यह ब्रह्मदत्त राजा का समकालीन था, एवं भीष्म का पितामह था (इ. वं. १. २०. ११-१२) महाभारत में इसका वंशक्रम निम्न प्रकार दिया गया है:— कुरु-विदूरथ अरुणवत्-परिक्षित्-भीमसेन-प्रतिश्रवस् तथा प्रतीप (म. आ. ९०. ४१-४५)। इसकी पत्नी का नाम शैब्या सुनन्दा था, जिससे इसे देवापि, शन्तनु तथा ब्राह्मिक नामक पुत्र थे (म. आ. ९०. ४६)।

महाभारत में अन्य एक स्थान पर इसे जनमेजय पारिक्षित (प्रथम) का पौत्र एवं धृतराष्ट्र राजा का पुत्र कहा गया है। वहाँ इसका वंशक्रम निम्नप्रकार से दिया गया है :—कुरु-अविश्वित् एवं परिश्वित्-जनमेजय-धृतराष्ट्र-प्रतीप (म. आ. ८९.४२-५२)।

यह काफी वृद्ध हो गया था, फिर भी इसे कोई पुत्र न था। अतएव सन्तानप्राप्ति की इच्छा से इसने तप करना प्रारम्भ किया। तपस्या करते समय, एक दिन मनस्विनी गंगा उत्तम गुणों से युक्त होकर एक नवयौवना स्त्री का रूप धारण कर उपस्थित हुई, और इसके गोद में जा बैठी। गंगा ने प्रतीप से प्रार्थना की, 'वह उसे पत्नी के रूप में स्वीकार करले' पर इसने उस प्रार्थना को इन्कार करते हुए कहा, जब मुझे पुत्र होगा, तब उससे तुम विवाह करना'।

तपश्चर्या के उपरांत यह अपने निवासस्थान वापस आया। कालान्तर में, इसे शंतनु, देवापि तथा ब्राह्मीक नामक तीन पुत्र हुए। शंतनु को यह अत्यधिक चाहता था। अतएव मृत्यु के समय इसने उससे कहा 'तुम मेरी आज्ञा मान कर अरण्य में जाओ। वहाँ तुम्हें एक सुन्दर स्त्री मिलेगी, जो तुमसे विवाह की इच्छा प्रकट करेगी। तुम बिना किसी सोच विचार के उससे विवाह कर लेना।' पश्चात्, शंतनु जंगल में गया एवं गंगा से उसका विवाह हो गया (म. आ. ९०.५०)।

२. बह्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तपिण्डों में से एक ऋषि।

प्रतीप प्रतिमुत्वन—अथर्ववेद में निर्दिष्ट एक राजा (अ. वे. २०. १२९. २; ऐ. ब्रा. ६. ३३. २)।

सांख्यायन श्रौतसूत्र में इसे केवल 'प्रतिमुत्वन' कहा गया है, जिस शब्द की निरुक्ति बौटलिंग के अनुसार यह है— सत्त्वों के विपरीत दिशा में जिसका जन्म हुआ था।

प्रतीपक—निमिबंधीय प्रतित्वक राजा का नामांतर (प्रतित्वक देखिये)।

प्रतीपाश्व (स. इ. भविष्य.) इक्ष्वाकुवंशीय प्रतीकाश्व राजा का नामांतर (प्रतीकाश्व देखिये)। मत्स्य में इसे ध्रुवाश्व राजा का पुत्र कहा गया है।

प्रतीबोध—अथर्ववेद में निर्दिष्ट एक ऋषि, जिसका बोध ऋषि के साथ उल्लेख आया है (अ. वे. ५.३०. १०; ८.१.१३)

प्रतीर—भीत्य मनु का पुत्र।

प्रतीह—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो परमेष्ठिन् राजा का पुत्र था। इसकी माता तथा स्त्री दोनों का ही नाम सुवचला है। इसके प्रतिहर्तृ, प्रस्तोतृ और उद्गातृ नामक तीन पुत्र थे (भा. ५.१५.३)।

प्रतृद्—तृत्सु नामक जातिसमूह का नामांतर (क. ७. ३३.१४) तृत्सु राजा दिवोदास के वंश में प्रवेदन नामक एक राजा उत्पन्न हुआ था, जो तृत्सु एवं 'प्रतृद्' के समीकरण की पुष्टि करता है (लुडविग-ऋग्वेद अनुवाद, ३.१५९)

प्रतोष—यज्ञ नामक विष्णु के सातवें अवतार का पुत्र, जिसकी माता का नाम दक्षिणा था।

२. स्वरोचिष मन्वन्तर का एक देव।

प्रत्यग्र—(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो भागवत और विष्णु के अनुसार उपरिचर वसु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ६४.४४)। वायु एवं मत्स्य में इसके नाम क्रमशः प्रत्यग्रह, तथा प्रत्यग्रवस् दिये गये हैं (वा. रा. वा. ३२. १-११)।

यह 'चैत्यवंश' का अन्तिम राजा प्रतीत होता है, क्योंकि, इसके वंश की चली आई परंपरा का इतिहास इसके उपरांत लुप्तप्राय है। केवल तीन राजाओं के नाम भारतीय युद्धकाल में मिलते हैं जिसके नाम, दमवोष, शिशुपाल, और धृष्टकेतु हैं।

प्रत्यग्रह—उपरिचर वसु के द्वितीय पुत्र प्रत्यग्र राजा का नामांतर (प्रत्यग्र देखिये)।

प्रत्यंग—एक प्राचीन नरेश (म. आ. १.१७८)।

प्रत्यग्रवस्—उपरिचर वसु के द्वितीय पुत्र प्रत्यग्र राजा का नामांतर (प्रत्यग्र देखिये)।

प्रत्यह—भृगुकुल के गोत्रकार। प्रत्यग्रह का नामांतर।

प्रत्यूष—अष्टवसुओं में से एक, जो धर्म एवं प्रभाता का पुत्र था (म. आ. ६०.१७-१९; प्रत्यग्र देखिये)।

प्रत्यूह—भृगुकुल का एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'प्रत्यूप-पाठभेद भी प्राप्त है।

प्रथ चासिष्ठ—एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (क. १०.१८१.१)।

प्रथित—स्वरोचिष मनु के पुत्रों में से एक।

प्रदातृ—एक विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३२)।

प्रदीपक—निमिबंधीय प्रतित्वक राजा का नामांतर (प्रतित्वक देखिये)।

प्रदोष—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो पुष्पार्ण राजा का ज्येष्ठ पुत्र था। इसकी माता का नाम दोषा था (भा. ४.१३.१४)।

प्रद्युम्न—एक राजा, जो चक्षुर्मनु के बारह पुत्र में से एक था। इसकी माता का नाम नख्वला (भा. ४.१३. १६)। इसे 'सुद्युम्न' नामांतर भी प्राप्त है।

२. (सू. निमि.) एक राजा, जो वायु के अनुसार मानुमन् राजा का पुत्र था।

३. (सो. क्रोष्टु.) एक सुविख्यात यादव राजा, जो सनत्कुमार के अंश से भगवान् कृष्ण को रुक्मिणी से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६.१.९१)। यह श्रीकृष्ण का तीसरा स्वरूप माना जाता है (म. अनु. १५.८.३९)।

पूर्वजन्म—यह मदन का अवतार था, जिसने शंभुरासुर का वध करने के लिए रुक्मिणी की कोख में जन्म लिया था। शंभुरासुर की पत्नी मायावती, पूर्वजन्म में इसकी पत्नी रति थी। पूर्वजन्म में मदन की मृत्यु के उपरांत, इसकी पत्नी रति को शंभुरासुर भगा लाया, इसी का बदला लेने के लिए इसे अवतार लेना पड़ा।

बाल्यकाल—शंभुरासुर को जैसे ही शत हुआ कि मदन ने उसका वध करने के हेतु प्रद्युम्न के रूप में रुक्मिणी के उदर में जन्म लिया है, वह तत्काल सृष्टिकाग्रह में जा कर छः दिन के शिशु प्रद्युम्न को लेकर भागा, तथा इसे ले जाकर समुद्र में फेंक कर निश्चित हो गया। दैवयोग से, इसे एक मछली ने निगल लिया, तथा यह वहाँ उसके पेट में भी जीवित रहा। यह मछली एक मछुए को मिली। मछुए ने अच्छी मछली देखकर उसे शंभुरासुर को भेंट की।

शंभुरासुर हँसी-खुशी घर आया तथा उक्त मछली को अपनी स्त्री मायावती को दे दी। जैसे ही मायावती ने मछली काटी वैसे ही उसमें एक दिव्य बालक को देखकर वह आश्चर्य-चकित हो गयी, एवं उसके मन में विभिन्न शंकाएँ उठने लगी। उसी क्षण भ्रमण करते हुए नारद वहाँ आ पहुँचे तथा उन्होंने मायावती की शंका का समाधान करते हुए कहा, 'यह दिव्य बालक साधारण न होकर साक्षात् मदन है, जिसने इस जन्म में रुक्मिणी के उदर में जन्म लिया है। पूर्वजन्म में तुम इसकी पत्नी रति, थीं, अतः तुम इसकी सेवा करो। यह तुम्हारा पति है।' नारद के वचनों का विश्वास करके, मायावती अत्यधिक आनन्दित हुयी। उसने बालक प्रद्युम्न को पाल-पोस कर बड़ा किया, तथा सारी विद्याओं में उसे पारंगत कराया। कालान्तर में, बड़े होने के बाद इसका और शंभुरासुर का युद्ध हुआ, जिसमें इसने शंभुरासुर का वध किया। पश्चान् अपनी भार्या को पुनः प्राप्त कर, यह उसके साथ रुक्मिणी से

मिलने गया (विष्णु. ५.२६; ह. कं. २.१०४-१०७; भा. १०.५५)।

हरिवंश में, यह कथा कुछ इसी प्रकार दी गयी है, अन्तर केवल इतना है कि, शंभुरासुर ने शिशु प्रद्युम्न को समुद्र में न फेंक कर, उसे मायावती को दे दिया, क्योंकि निःसंतान होने के कारण वह दुःखित थी।

ब्रह्मवैवर्त पुराण में प्रान्त कथा हरिवंश से मिलती जुलती है। अन्तर केवल इतना है कि, प्रद्युम्न के बड़े हो जाने पर एक दिन सरस्वती मायावती के पास आयी और उसने ही शंभुरासुर के पूर्व कुकृत्यों का लेखा जोखा प्रद्युम्न तथा मायावती के सम्मुख प्रस्तुत किया उस कारण प्रद्युम्न ने शंभुरासुर का वध किया (ब्रह्मवै. ४. ११२)।

प्रद्युम्न-शाल्व युद्ध—प्रद्युम्न यादव सेना का महारथि था (भा. १०. ९०. ३३)। कृष्ण ने राजसूय यज्ञ में शिशुपाल का वध किया था। उससे क्रुद्ध होकर अपने मित्र शिशुपाल का बदला लेने के लिए, शाल्व ने बड़े जोर शोर से कृष्ण की द्वारका पर चढ़ाई कर दी। युद्ध की विकरालता को देख कर, यादवसेना ध्वरा गयी। तब इसने यादवसेना का नेतृत्व कर बड़े पराक्रम के साथ शाल्व का मुकाबला किया (म. व. १६. ३०-३२; म. व. १७)। युद्ध करते करते यह युद्धभूमि में मूर्च्छित हो गया (म. व. १७. २२)। इसका सारथि सूतपुत्र दासक इसे रणभूमि से हटा कर ले गया (म. व. १८. ३)। ठीक हो जाने पर, यह पुनः युद्धभूमि में आ उठा, और घमासान युद्ध करके अपने शत्रुनाशक अद्भूत बाण से शाल्व को परास्त किया (म. व. १५. १६. २०; भा. १०. ७६. १३)।

युधिष्ठिर द्वारा किये गये अश्रमोपयज्ञ में, इसने उसकी काफ़ी सहायता की थी, और यह हस्तिनापुर आया था (म. आश्र. ६५. ३)। यही नहीं, अश्रमक्षण के लिए यह ससैन्य अर्जुनादि के साथ देशविदेश गया था (जै. अ. १२)।

कालान्तर में, यादववंशीय लोग आपस में एक दूसरे से लड़ने लगे, जिससे कि उनमें वह शक्ति न रह गयी जो पूर्व थी। मौसल युद्ध में उनका भोजों के साथ युद्ध हुआ, जिसमें प्रद्युम्न की मृत्यु हो गयी (म. मौ. ४. ३३; भा. ११. ३०. १६; गणेश. १. ४९)। मृत्योपरांत यह सनत्कुमार के स्वरूप में प्रविष्ट हो गया (म. स्व. ५. ११)।

परिवार—इसे शतगुप्त नामांतर भी प्राप्त है। मायावती के अतिरिक्त, रुक्मिन् की कन्या रुक्मवती अथवा शुभांगी इसकी दूसरी पत्नी थी (भा. १०. ६१. १८;

१०.१६), जिसने स्वयंवर में इसका वरण किया था (ह. वं. २.६१.४)। रुक्मवती (शुभांगी) से इसे अनिरुद्ध नामक पुत्र था (म. भी. ६५. ७१)।

वज्रनाभ दैत्य की कन्या प्रमावती इसकी तीसरी पत्नी थी, जिसका इसने हरण किया था (ह. वं. २. १०. ४)। इस कारण वज्रनाभ का भाई निकुंभ से इसका युद्ध हुआ था।

प्रद्युम्न से बदला लेने के लिए, निकुंभ ने भानु यादव की कन्या भानुमती का हरण किया। इससे क्रुद्ध हो कर कृष्णाजुंता ने निकुंभ पर हमला किया, जिसमें यह भी निकुंभ के विपक्ष में था। इस युद्ध में इसने अपने मायावी युद्धकौशल का अच्छा परिचय दिया। अन्त में निकुंभ श्रीकृष्ण द्वारा मारा गया (ह. वं. २. १०-११)।

प्रद्योत--कुबेरसभा का एक यक्ष (म. स. १०. १५)।

२. (प्रद्योत. भविष्य.) प्रद्योत वंश का प्रथम राजा, जो शुनक का पुत्र था। वायु में इसे सुनीक का पुत्र कहा गया है।

इसका पिता शुनक सूर्यवंश का अंतिम राजा रिपुञ्जय अथवा अरिञ्जय राजा का महामात्य था। उसने रिपुञ्जय राजा का वध कर, राजगद्दी पर अपने पुत्र प्रद्योत को विद्याया, जिससे आगे चल कर प्रद्योत राजवंश की स्थापना हुयी।

भविष्य में इसे क्षेमक का पुत्र कहा गया है, एवं इसे 'म्लेच्छहंता' उपाधि दी गयी है (भवि. प्रति. १. ४)। इसके पिता क्षेमक अथवा शुनक का म्लेच्छों ने वध किया। अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिए, नारद के सलाह से इसने 'म्लेच्छयज्ञ' आरम्भ किया। उस यज्ञ के लिए इसने सोलह मील लम्बा एक यज्ञ-कुण्ड तैयार किया। पश्चान्, इसने वेदमंत्रों के साथ निम्न-लिखित म्लेच्छ जातियों को जला कर मर्म कर दिया:- हारहूण, बर्बर, गुंड, शक, खस, यवन, पल्लव, रोमज, खरसंभव द्वीप के कामस, तथा सागर के मध्यभाग में स्थित चीन के म्लेच्छ लोग। इसी यज्ञ के कारण इसे 'म्लेच्छहंता' उपाधि प्राप्त हुयी।

प्रद्योतवंश--प्रद्योत के राजवंश में कुल पाँच राजा हुए, जिनके नाम क्रम से इस प्रकार थे:-प्रद्योत, पालक, विशाल-यूप, जनक (धञ्जक), तथा नंदवर्धन (नंदिवर्धन अथवा वर्तिवर्धन)। इन सभी राजाओं ने कुल एक सौ अड़तीस

वर्षों तक राज्य किया (भा. १२.१; विष्णु. ४.२२.२४; वायु. १९.३११-३१४)।

इस वंश का राज्यकाल संभवतः ७४५ ई. पू. से ६९० ई. पू. के बीच माना जाता है। उक्त राजाओं के नाम सभी पुराणों में एक से मिलते हैं। जनक तथा नंदवर्धन राजाओं के नामांतर केवल वायु में प्राप्त हैं।

प्रद्वेषी--अंगिराकुलोत्पन्न दीर्घतमस् ऋषि की पत्नी, जिससे इसे गौतमादि पुत्र उत्पन्न हुए थे।

दीर्घतमस् ऋषि बूढ़ा एवं अंधा होने के कारण, यह उससे तलाक लेना चाहती थी। किंतु एक धर्मशास्त्रकार के नाते से दीर्घतमस् ने इसे धर्मनीति का उपदेश देते हुए कहा, 'पत्नी का कर्तव्य है कि एक व्यक्ति को ही अपना पति मान कर अपने संपूर्ण जीवन को उसे समर्पित कर दे ? दीर्घतमस् के द्वारा इतना समझाये जाने पर भी यह न मानी, तथा अपने गौतमादि पुत्रों की सहायता से इसने दीर्घतमस् को उठा कर नदी में शोक दिया (दीर्घतमस् देखिये; म. आ. १८.१०३७; परि. १.५६)।

प्रधान--एक प्राचीन राजर्षि, जिसे सुलभा नामक सुविख्यात ब्रह्मनिष्ठ कन्या थी। सुलभा के साथ त्रिदेहराज जनक का तत्वज्ञान के विषय पर संवाद हुआ, जो सुविख्यात है (म. शां. ३०८.१८२; सुलभा देखिये)

प्रथिमि--एक ऋषि, जो जटीमालिन् नामक शिवा-वतार का शिष्य था।

प्रपोहय--पराशरकुल का एक गोत्रकार ऋषिगण।

प्रवल--कृष्ण का लक्ष्मणा से उत्पन्न पुत्र (भा. १०. ६१.१५)।

२. विष्णु का एक पार्षद (भा. ८.२१.१६)।

प्रवाहु--कौरवपक्ष का योद्धा। इसने अभिमन्यु पर चाणों की वर्षा की थी (म. द्रो. ३६.२५.२६)।

प्रयुद्ध--(स्वा. प्रिय.) एक भगवद्भक्त राजर्षि, जो ऋषभदेव के नौ सिद्धपुत्रों में से एक था। इसने निमि को उपदेश दिया था (भा. ५.४.११; ११.३.१८)।

प्रभ--रामसेना का एक वानर (वा. रा. उ. ३६)।

प्रभंकर--जयद्रथ राजा का भाई (म. व. २४९.११)।

प्रमंजन--एक राजा, जो मणिपुरनरेश शिववाहन का पूर्वज था। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'प्रमंकर'।

प्रमंजन राजा ने निःसंतान होने कारण, शिव की उग्र तपस्या कर के उनसे वंशवृद्धि के लिए संतानप्राप्ति की प्रार्थना की। तपस्या से संतुष्ट, होकर शिव ने वरदान

दिया, 'गुहारे वंश में कोई व्यक्ति निःसंतान न होगा। पर हर व्यक्ति के केवल एक एक ही संतान होगी, उससे अधिक नहीं।'।

व्यप्राप्त के उपरांत, इसके कुल में हर एक को एक एक पुत्र हुआ, और चित्रवाहन तक राज्य चलता रहा। किन्तु चित्रवाहन के चित्रांगदा नामक कन्या हुयी। चित्रवाहन राजा को इसी कन्या के द्वारा वंश आगे चलाना था। इसलिए चित्रवाहन ने 'दीहिवाधिकार' के शर्त पर, यह कन्या अर्जुन को दी। पश्चात् चित्रांगदा को अर्जुन से वंशवाहन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसे चित्रवाहन ने मणिपुर का राज्य प्रदान किया (म. आ. २०७)।

२. गंधवती नगरी का राजा। दस हजार वर्षों तक शिव की आराधना कर के इसने 'दिग्पालव' प्राप्त किया। इसके पुत्र का नाम पूतात्मन् था (स्कन्द. ४१.१३)।

३. क्षत्रियकुलोत्पन्न एक राजा। बालक को स्तनपान कराती हुई हिरनी को बाण से इसने मारा। उसके द्वारा दिये गये शाप के कारण, १०० वर्षों तक इसे व्याघ्र-योनि में रहना पड़ा। व्याघ्रयोनि में जब इसे नंदा नामक गाय ने उपदेश दिया, तब यह व्याघ्रदेह को नष्ट कर पुनः राक्षदेह प्राप्त कर सका (पद्म. सू. १८)।

प्रमंद्रक—पांचाली का एक क्षत्रियश्ल, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ५६.३३)। ये युद्ध में अजेय थे, एवं प्रायः द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न तथा शिष्यगर्डी का अनुगमन करते थे (म. भा. १९.२१-२२; ५२.१४)।

ये अधिकतर शल्य द्वारा मारे गये (म. श. १०. २१)। जो व्यक्ति शल्य के द्वारा चाकी बचे थे, वे अश्व-त्थामा द्वारा रात्रिसंहार में मारे गये (म. सी. ८.६१)।

प्रमद्रा—अंगराज कर्ण के पुत्र वृषकेतु की पत्नी। इसे मद्रावती नामांतर भी प्राप्त है (जै. अ. ६३)।

प्रभव—एक देव, जो भृगु तथा वौलेमी के पुत्रों में से एक था।

प्रभा—विवस्वान् आदित्य की पत्नी, जिसकी संज्ञा तथा राशी नामक दो सौतें थीं। इसके पुत्र का नाम प्रभात था (पद्म. सू. ८)।

२. देवमाताओं में से एक, जो ब्रह्मा के समा में रहकर उनकी उगासना करती थी (म. स. ११.१३२, पंक्ति १)। इसके नाम के लिए 'प्राधा' पाठभेद उपलब्ध है।

प्रा. च. ६०]

३. अलकापुरी की एक अप्सरा, जिसने अष्टावक्र के स्वागतसमारोह में नृत्य किया था (म. अनु. १९.४५)।

४. (स्वा. उक्तान.) पुष्पाण राजाकी दो स्त्रियों में से एक (भा. ४.१३.१३)।

५. स्वर्मानु नामक दानव की कन्या, जिसका विवाह आयु राजा से हुआ था। इसे नहुष आदि पुत्र थे (ब्रह्मांड. ३.६.२६)।

६. सगर की सुमति नामक ज्येष्ठ पत्नी का नामांतर। इससे ही सगर को साठ हजार पुत्र हुये थे (मत्स्य. १२. ३९-४२)।

७. मद्रदेश का राजा प्रियव्रत की एक पत्नी (प्रियव्रत ३. देखिये)।

प्रभाकर—अत्रिकुल का एक महान् ऋषि, जिसका विवाह पूरुवंशीय रौद्राश्व (भद्राश्व) की पृताची अप्सरा से उत्पन्न दस कन्याओं से हुआ था। इसकी पत्नियों के नाम इस प्रकार थे—रुद्रा, शूद्रा, मद्रा, मलदा, मलहा, खलदा, नलदा, सुरसा, गोचपला तथा स्त्रीरत्नकूटा।

राहु से ग्रसित सूर्य को देखकर उसे कष्ट से उबारने के लिए, इसने 'स्वस्ति' कहा, जिससे सूर्य कष्ट से मुक्तता पा कर पुनः पूर्व की भौति प्रकाशित होने लगा। इस पुण्यकृत्य के कारण इसे प्रभाकर नाम प्राप्त हुआ। ज्ञानगरिमा तथा योग्यता के बल पर इसने अत्रिकुल के गौरव को संवर्धित किया।

एक बार इसने यज्ञ किया, जिसके उपलक्ष्य में देवों ने विपुल धनराशि के साथ साथ इसे दस पुत्र प्रदान किये। उनमें से प्रमुख इस प्रकार थे—स्वस्ति, आत्रेय, फलेय, संख्य, सभानर, चाक्षुष तथा परमन्थु (ह. वं. १.३१. ८-१७)।

२. एक कश्यपवंशीय नाग।

३. सुतप देवों में से एक।

प्रभाता—धर्म की पत्नी वसु का नामांतर। प्राचेतस दक्ष की कन्या एवं धर्म की पत्नी वसु को कल्पभेदानुसार प्रभाता, धूम्रा आदि नाम प्राप्त थे (वसु १५. देखिये)। प्रत्यूष तथा प्रभास नामक दो वसु इसके पुत्र माने जाते हैं (म. आ. ६०.१९)।

प्रभानु—श्रीकृष्ण का सत्वभामा से उत्पन्न पुत्र (भा. १०.६१.१०)।

प्रभावती—मेरुसावर्णि की कन्या स्वयंप्रभा का नामांतर (स्वयंप्रभा देखिये; म. व. २६६.४१)। यह एक तपस्विनी थी, जो मय दानव के निवासस्थान पर

तपस्या करती थी। यह सीता का खोज में गये वानरों से मिली थी।

२. यौवनाश्व राजा की पत्नी।

३. चंपकनगरी के राजा हंसध्वज के पुत्र सुवन्धन की पत्नी।

४. अंगराज चित्ररथ की पत्नी, जो सुविख्यात ऋषि देवशर्मन की पत्नी रुचि की बड़ी बहन थी (म. अनु. ४२. ८)। इसने अपनी बहन रुचि से दिव्य पुष्प मँगवा देने के लिए अनुरोध किया था, जो देवशर्मन ने अपने शिष्य विपुल द्वारा पूरा किया (म. अनु. ४२. १०)।

५. मयासुर के पुत्र बल नामक दैत्य की पत्नी (बल ८, देखिये)।

६. वज्रनाम नामक दानव की कन्या। वज्रनाम का बध कर कृष्णपुत्र प्रयुमन ने इससे विवाह किया था (ह. वं. २. ९०-९७)।

७. स्कंद की अनुचरी मातुका (म. श. ४९. ३)।

८. सूर्यदेव की पत्नियों में से एक (म. उ. ११५. ८)।

प्रभास—एक वसु, जो धर्म का पुत्र था। इसकी माता का नाम प्रभाता था (म. आ. ६०. १९)। विष्णु में, इसके पुत्र निम्नलिखित बताये गये हैं—विश्वकर्म्मन् (प्रजापति), अत्रैकपात्, अहिर्बुध्न्य, रुद्र, हर, बहुरूप, व्यम्बक, अपराजित, वृषाकपि, शम्भु, कपर्दिन्, रेवत्, मृगव्याध, शर्व एवं कपालिन् (विष्णु. १. १५)। इन पुत्रों में से विश्वकर्म्मन् नामक पुत्र इसे बृहस्पति की बहन वरुणी (भुवना) से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६०. २६; ब्रह्मांड. ३. ३. २१-२९)।

२. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४. ५९)। इसके नाम के लिये 'प्रवाह' पाठभेद उपलब्ध है।

३. सुतप देवों में से एक।

प्रभु—शशयज्ञ के ऋत्विज भग नामक ऋषि की सिद्धि नामक पत्नी से उत्पन्न पुत्र (भा. ६. १८. २)।

२. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४. ५८)। इसके नाम के लिये 'वासुप्रभ' पाठभेद उपलब्ध है।

३. तुषित देवों में से एक।

४. साध्य देवों में से एक।

५. सुमेधसू देवों में से एक।

६. असिताम देवों में से एक।

७. ब्रह्मसभा का एक ऋषि।

८. अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

९. शुक्र ऋषि का पीवरी से उत्पन्न एक पुत्र, जिसे पृथु नामांतर भी प्राप्त है।

प्रभुवसु आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ३५-३६; ९. ३५. ३६)।

प्रभुसुत—इक्ष्वाकुवंशीय प्रसुश्रुत राजा का नामांतर (प्रसुश्रुत देखिये)।

प्रभूति—मरीचिगर्भ देवों में से एक।

प्रभोज्य—एक वानर, जो राम के पक्ष में शामिल था (वा. रा. उ. ३६. ४८)।

प्रमगंद नैचाशाख—ऋग्वेद में निर्दिष्ट कीकट लोगों का राजा, जो सुदास राजा का शत्रु था (ऋ. ३. ५३ १४)। प्रमगंद नाम से यह कोई अनाय राजा प्रतीत होता है। इसकी 'नैचाशाख' (नीच जाति में उत्पन्न) उपाधि भी इसी ओर संकेत करती है।

सायण के अनुसार, नैचाशाख से किसी स्थान के नाम के सम्बन्ध की ओर संकेत मिलता है। याल्क ने निरुक्त में इसे कुसीदकपुत्र कहा है (नि. ६. ३२)। सम्भव है, इसके नाम प्रमगंद से ही मगध शब्द का निर्माण हुआ।

प्रमतक—एक ऋषि, जो जनमेजय के 'सर्पसत्र' कर सदस्य था (म. आ. ४८. ७)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'शमठक'।

प्रमति—विष्णु का एक अंबतार, जो चाक्षुष मन्वन्तर के कलियुग नामक अन्तिम युग में चंद्र का पुत्र, हुआ था (मत्स्य. १४४. ६०)।

२. प्रयाग के सूर नामक ब्राह्मण का पुत्र, जिसे सेनापति बना कर कृतयुग के अंतिम चरण में ब्राह्मणों ने क्षत्रियों को परास्त किया था (विष्णुधर्म १. ७४)।

३. विभीषण के चार अमात्यों में से एक (वा. रा. यु. ३७. ७)।

४. च्यवन ऋषि का पुत्र, जिसकी माता का नाम सुकन्या था (म. आ. ५. ७)। महाभारत में अन्य स्थान पर, इसे वीतहव्य के पुत्र शंसमट के कुल में जन्म लेनेवाले वागीन्द्र का पुत्र बताया गया है (म. अनु. ३०. ५८-६४)। इसे प्रमति नामांतर भी प्राप्त है (म. आ. ८. २; अनु. ३०. ६४)।

वृताची नामक अम्तरा से इसे रुद्र नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ५. ६-७)। स्थूलकेश मुनि की कन्या प्रमद्वारा से इसने रुद्र का विवाह कराया था (म. आ.

८.१२-१३)। आस्तीकपर्व की कथा इसने रुरु को सुनाई थी (म. आ. ५.३.४६७ *)।

शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म के पास आये हुए ऋषियों में यह भी एक था।

५. (सू. द्रिष्ट.) एक राजा, जो वायु के अनुसार जनमेजय का पुत्र था। भागवत के अनुसार, यह 'प्रजानि' राजा का ही नामांतर था (प्रजानि देखिये)। विष्णु में, इसे 'स्वमति' कहा गया है।

६. अमिताभ देवों में से एक।

प्रमथ—एक रुद्रगण, जिन्होंने धर्माधर्मसंबंधी रहस्य का कथन किया था (म. अनु. १३१)।

२. (सो. कुरु.) घृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक।

प्रमद—एक वसिष्ठपुत्र, जो उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक था (भा. ८.१.२४)।

२. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का पुत्र था।

प्रमद्वरा—एक अप्सरा, जो मेनका को विश्वावसु गंधर्व द्वारा उत्पन्न हुयी थी। स्थूलकेश नामक ऋषि ने इसका पालनपोषण कर, इसका विवाह रुरु ऋषि से कर दिया (म. आ. ८.२; १३; अष्ट. ३०.६५)। रुरु से इसे सुनक नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

एक बार सौंप ने इसे काटा, जिससे इसकी मृत्यु हो गयी, फिर पति की आशु से यह पुनः जीवित हो गयी (म. आ. ९.१५)।

प्रमंधु—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो वीरव्रत राज के दो पुत्रों में से कनिष्ठ था। इसकी माता का नाम भोजा था (भा. ५.१५.१५)।

प्रमंदनी—अथर्ववेद में निर्दिष्ट एक अप्सरा (अ. वे. ४.३७.३)। मूलतः यह शब्द किसी मधुर गंधयुक्त लता का नाम है (कौ. सू. ८.१७)।

प्रमंधु—एक यक्ष, जो हरिश्चन्द्र राजा के धन का संरक्षक था। इसके शरीर की दुर्गंध को विश्वामित्र ने तीर्थोत्सव की सहायता से दूर किया था (स्कंद. २.८.७)।

प्रमर—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक व्यक्ति (ऋ. १०.२७.२०)।

प्रमाथ—एक राक्षस, जो खरदूषण नामक राक्षसों का अमात्य था (वा. रा. अर. २३.३३)। वाल्मीकि रामायण में अन्यत्र इसे प्रमाथिन कहा गया है। इसका वध राम ने किया (वा. रा. अर. २६.२१)।

२. राम की सेना का एक वानर।

३. यमराज के द्वारा स्कंद को दिये गये पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम उन्माथ था (म. श. ४४.२७)।

प्रमथिन्—एक राक्षस, जो दूषण राक्षस का छोटा भाई था (म. व. २७१.१९-२०)। यह विश्रवस् ऋषि को बलाका राक्षसी से उत्पन्न पुत्रों में से एक था।

यह कुंभकर्ण का अनुयायी था। लक्ष्मण के साथ युद्ध करते समय, यह वानर सेनापति नील द्वारा मारा गया था (म. व. २७१.२५)।

२. दूषण के प्रमाथ नामक अमात्य का नामांतर (प्रमाथ १. देखिये)।

३. घृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक, जो भीम के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. १३२.११३५ *, पंक्ति २)।

४. धरोलकच का साथी एक राक्षस, जिष्का दुर्योधन द्वारा वध हुआ था (म. भी. ८७.२०)।

प्रमाथिनी—एक अप्सरा, जो अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित थी (म. आ. ११४.५२)।

प्रमाद—वसिष्ठ का पुत्र, जो उत्तम सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक था।

प्रमिति—न्यवन ऋषि पुत्र प्रमति का नामांतर (प्रमति ४. देखिये)।

प्रमिला—हिमालय-प्रदेश में स्थित 'खीराज्य' की स्वामिनी।

भारतीय युद्ध के उपरांत, पांडवों द्वारा किये गये अश्वमेध का घोड़ा भ्रमण करता हुआ इसके राज्य में आया था, जिसे इसने पकड़ कर अपने अधिकार में कर लिया। घोड़े के संरक्षण के लिए अन्य महारथियों के साथ वीर अर्जुन भी था। घोड़े के पकड़े जाने पर इसका तथा अर्जुन का घोर युद्ध हुआ, जिसमें यह अत्यधिक वीरता के साथ लड़ी तथा अर्जुन के छन्के छुड़ा दिये।

अर्जुन की असमर्थता देख कर आकाशवाणी हुयी, 'अर्जुन, तुम प्रमिला को युद्ध में परास्त कर के घोड़ा वापस नहीं ले सकते। यदि तुम्हें अश्वमेध के घोड़े की रक्षा ही करनी है, तो इससे सन्धि कर, विवाह कर के सफलता प्राप्त करो'।

अर्जुन ने आकाशवाणी की आज्ञानुसार, प्रमिला से सन्धि करके उससे विवाह किया, तथा अश्वमेध के घोड़े को छुड़ा लिया (जै. अ. २१-२२)।

प्रमुच—दक्षिण दिशा में रहनेवाला एक महर्षि (म. शां. २०१.२७)।

प्रमुचि—एक ऋषि, जो दाशरथि राम से मिलने अयोध्या आया था (वा. रा. उ. १.३)।

प्रमोद—ब्रह्मा का मानसपुत्र, जो उसके कंठ से उत्पन्न हुआ था। इसे हर्ष नामांतर भी प्राप्त है (मत्स्य. ३. ११)।

२. (स. इ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार दृढाश्व राजा का पुत्र था। इसे हर्षश्व नामक एक पुत्र था।

३. एरावतकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के संपंसत्र में मारा गया था (म. आ. ५.२.१०)।

४. स्कन्द का एक सैनिक।

प्रमोदन्—एक ब्रह्मर्षि (वा. रा. उ. १०.५)।

प्रमोदिनी—सुवर्णित नामक गोधर्व की कन्या (पद्म. उ. १.२८)।

प्रम्लोचा—दस प्रमुख अप्सराओं में से एक, जो अर्जुन के उन्मत्तवश में उपस्थित थीं (भा. १.२.११.३७; म. आ. १.१४.५४; स. १०.११)।

२. एक अप्सरा, जिसे इन्द्र ने कण्डु ऋषि के तपोभंग के लिए भेजा था। इन्द्रकी कन्या का नाम मारिषा था, जिसे सोम तथा वृक्षों ने पालपोस कर बड़ा किया, एवं प्रचेतसों को विवाह में प्रदान किया (भा. ४.३०.१३)।

प्रयस्वत आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. २०)।

प्रयुत—एक गन्धर्व, जो कश्यप एवं मुनि का पुत्र था (म. आ. ५.९.४२)।

प्रयोग भार्गव—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१०.२; तै. सं. ५.१.१०.२; क. सं. १९.१०)।

प्ररुज—अमृत की रक्षा करनेवाला एक देव, जिसका गरुड़ से युद्ध हुआ था (म. आ. २८.१९)।

२. राक्षसों तथा पिशाचों का एक ढल, जो रावण के पक्ष में शामिल था (म. व. २६९.२)।

प्रलंब—एक राक्षस, जो कश्यप तथा दनु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५.९.२८)। देवासुर संग्राम में जब पराजित हुआ था, तब यह उसके विरोध में राक्षसपक्ष की ओर का एक सेनापति था (म. स. परि. १; क. २१)।

२. एक असुर, जिसे कंस ने कृष्णवध के लिए गोकुल भेजा था। गोकुल में गोपवैप धारण कर, यह कृष्ण बलराम आदि गोपों के साथ खेलने लगा। खेल के बीच में, कृष्ण की अजेय शक्ति का अनुमान लगा कर इसकी हिम्मत कृष्ण से खेलने की न हुयी। इसी कारण

बलराम को अपने कंधे पर रखकर, दैत्याकार रूप धारण कर यह भागने के लिए उद्यत हुआ। फिर बलराम ने मत्स्य पर मुष्टिप्रहार कर तत्काल इसका वध किया (हं. वं. २.१४; मा. १०.१८; विष्णु. ५.९-३७)।

बलराम ने जिस स्थान पर प्रलंब का वध किया था, उस स्थान को हरिवंश में 'भांडीरवन,' तथा भागवत में, 'भांडीरवट' कहा गया है।

महाभारत में प्रलंब का वध बलराम के द्वारा न होकर कृष्ण के द्वारा हुआ है (म. द्रो. १०.०)। बलराम को कृष्ण का अभिन्न रूप माना जाता है। इसी अर्थ से यह निर्देश महाभारत में किया गया होगा।

प्रलंबक—एक ऋषि, जो तप नामक शिवावतार का शिष्य था।

प्रलंबायन—एक ऋषिगण, जो वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकरो में से एक था।

प्रवसु—(सो. पू.) एक पूर्ववशीय राजा, जो ईलिन राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम रथंतरी था। इसे निम्नलिखित चार भाई थे:—दुष्यंत, धर, भीम, तथा वसु (म. आ. ८.९.१४-१५)।

प्रवहण—उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक। २. तामस मन्वन्तर के योगवर्धनों में से एक।

प्रवालक—कुवेर की सभा का एक यक्ष (म. स. १०. १७)।

प्रवाह—स्कंद का एक सैनिक (म. स. ४४. ६०)।

प्रवाहक—एक ऋषि, जो देवीमुंडी नामक शिवावतार का शिष्य था।

प्रवाहण जैवाल—पांचाल देश का एक राजा, जो दार्शनिक शास्त्रार्थों में प्रवीण था (बृ. उ. ६.१.१.७, माध्यं. छां. उ. १.८.१; ५.३.१)। यह उदालक राजा का समकालीन था। सम्भवतः जैमिनीय उरनिषद् ब्राह्मण में निर्दिष्ट 'जैवलि' इसीका नामांतर है। जीवल का वंशज होने के कारण, इसे 'जैवलि' अथवा 'जैवल' उपाधि प्राप्त हुयी होगी।

यह परम विद्वान् एवं ज्ञानी होने के साथ, तत्वज्ञान का महापंडित भी था। एक बार इसने अपने पांचाल राज्य में तत्वज्ञान परिषद् का आयोजन किया। वहाँ तत्वचर्चा में इसे पराजित करने के उद्देश्य से, श्वेतकेतु आरुण्य उस परिषद् में आया। किन्तु राजा के द्वारा पूँडे गये सौच प्रश्नों में से एक का भी उत्तर वह न दे सका। पराजित होकर वह अपने घर गया, तथा ज्ञानशिक्षा देनेवाले अपने

पिता पर अत्यधिक क्रुद्ध हो कर, प्रवाहण द्वारा पूँछे गये प्रश्नों के उत्तर पूँछने लगा।

श्वेतकेतु का पिता उदालक आरुणि भी उन प्रश्नों का उत्तर न दे सका। फिर वे दोनों प्रवाहण राजा की शरण में आकर, इससे 'ब्रह्मविद्या' की दीक्षा माँगने लगे। इसने स्वयं क्षत्रिय हो कर भी उन ब्राह्मणों को दीक्षित किया। अब तक यह ज्ञान क्षत्रियों के ही पास था। यह पहली व्यक्ति है, जिसने यह परमज्ञान ब्राह्मणों को प्रदान किया।

उद्गीथ की उपासना के सम्बन्ध में इसका 'शिल्क शालवच्य' एवं 'वैकितायन दाल्य' नामक ऋषियों से शास्त्रार्थ हुआ था (छां. उ. १.८.१; बृ. उ. ६.२.१)।

प्रवाहित—उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

प्रविलुसेन—आंध्रवंशीय पुत्रिकर्षण राजा का नामांतर (पुत्रिकर्षण देखिये)।

प्रवाण—भौत्य मनु के पुत्रों में से एक।

प्रवीर—काशीनगर का एक चाण्डाल, जिसने राजा हरिश्चन्द्र को खरीदा था। इसे वीरबाहु नामांतर भी प्राप्त है।

२. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु तथा भविष्य के अनुसार, प्राचिन्वत् राजा का पुत्र था। किन्तु महाभारत में इसे पूरु राजा पुत्र माना गया है। इसके दो भाइयों का नाम ईश्वर एवं रौद्राश्व था।

पूरु राजा का ज्येष्ठ पुत्र जनमेजय किसी कारण राज्य के लिए अयोग्य साबित हुआ, जिससे उसे हटाकर प्रवीर को राजगद्दी पर विठाया गया। पश्चात् इसीसे पूरुवंश आगे चला। इसी कारण महाभारत में इसे 'वंशकृत' (वंश को आगे चलानेवाला) कहा गया है (म. आ. १०.४)।

महाभारत में इसकी पत्नी का नाम शूरसेनी (श्येनी) एवं पुत्र का नाम मनस्यु (नमस्यु) बताया गया है (म. आ. ८९.४)।

इसने तीन अश्वमेध यज्ञ एवं एक विश्वजित् यज्ञ किये थे। उन यज्ञों को संपन्न करने के उपरांत इसने वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण किया (म. आ. १०.११)।

३. (सो. नील.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार हर्यश्व राजा का पुत्र था। इसे जवीनर नामांतर भी प्राप्त है (जवीनर देखिये)।

४. माहिष्मती के नीलध्वज राजा का पुत्र।

५. पांड्य देश का एक राजा, जिसे मलयध्वज एवं दिशवाहन नामांतर प्राप्त हैं। इसकी कन्या का नाम

चित्रांगदा था, जिससे इसने 'पुत्रिकाधर्म' के शर्त पर अर्जुन को प्रदान किया था।

भारतीय युद्ध में अश्वत्थामा के साथ युद्ध करते समय यह मारा गया (म. क. १५.४२)।

६. एक क्षत्रिय-कुल, जिसमें अजविन्दु नामक कुलंगार राजा उत्पन्न हुआ था (म. उ. ७२.१४)।

प्रवीरक—(किलकिला, भविष्य.) किलकिला नगरी का एक राजा, जो मौन राजवंश के नष्ट होने पर राजगद्दी पर बैठा था (मा. १२.१.१३)।

प्रवेपन—तक्षक-कुच का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में जलधर भस्य हो गया था (म. आ. ५२.८)।

प्रशारी—अलकापुरी की एक अप्सरा, जिसने अष्टावक्र के स्वागत-समारोह में नृत्य किया था (म. अनु. ५०.४८)।

प्रश्रय—स्वायंभुव मन्वन्तर के धर्म ऋषि का ही नामक स्त्री से उत्पन्न पुत्र।

प्रश्रुत—इक्ष्वाकुवंशीय प्रसुश्रुत राजा का नामांतर।

प्रसंधि—वैशद्यत मनु के पुत्रों में से एक। इसके पुत्र का नाम क्षुप था। इसके नाम के लिए 'प्रजापति' पाठ-भेद उपलब्ध हैं (म. आश्व. ४.२)।

प्रसन्न—इक्ष्वाकुवंशीय सेनजित् राजा का नामांतर (सेनजित् २ देखिये)।

प्रसन्न—रामसेना का एक वानर।

प्रसाद—स्वायंभुव मन्वन्तर के धर्म ऋषि का मैत्री नामक स्त्री से उत्पन्न पुत्र।

प्रसार—(स्वा. नामि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार उद्रीथ का पुत्र था।

प्रसुश्रुत—(स. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार मरु का पुत्र था। इसके नाम के लिए 'प्रसुसुत' एवं 'प्रश्रुत' पाठभेद उपलब्ध हैं।

प्रसूत—रैवत मन्वन्तर के अंत में उत्पन्न हुआ एक देवतासमूह, जिसमें निम्नलिखित आठ देव शामिल थे:—प्रचेतस्, महायशस्, मुनि, वनेन, श्येनमद्र, श्वेतचक्षु, सुप्रचेतस् तथा सुमनस् (ब्रह्मांड. २.३६.७०)।

२. चाक्षुप मन्वन्तर में उत्पन्न एक देवगण।

प्रस्ति—स्वायंभुव मनु की तीन कन्याओं में से एक, जो दक्ष प्रजापति को ब्याही थी (मा. ३.१२.५४; ४.१.१)।

प्रस्तुत—एक दैत्य, जिसका गण्ड द्वारा वध हुआ था (म. उ. १०३.१२)।

प्रसृति—स्वारोचिष मनु के पुत्रों में से एक।

प्रसेन—(सो. वृष्णि.) एक यादववंशीय राजा, जो निम्न नामक राजा का द्वितीय पुत्र था। विष्णु, मत्स्य, पद्म एवं वायु में इसे निम्न राजा का पुत्र कहा गया है, तथा इसके ज्येष्ठ भ्राता का नाम सञ्जाजित बताया गया है। ये दोनों भाई जुड़वा पैदा हुए थे एवं कुवेर की भौति सदगुणों से संतन्त्र थे। इसे 'प्रसेनजित्' नामांतर भी प्राप्त था।

इसके पास त्यमंतक मणि था, जिससे प्रतिदिन प्रचुर धनराशि झरती रहती थी। इसे धारण कर एक बार यह जंगल गया, वहाँ सिंह ने इसका वध किया। पश्चात् ऋक्षराज जांबवत् ने वह मणि इसके मृतदेह से निकाल कर प्राप्त की (पद्म. स्. १३; भा. ९.२४.१३; १०.५६.१३; दे. भा. माहात्म्य. २)। पद्म में प्राप्त कथा में सिंह का वृत्तांत नहीं है, उसमें जांबवत् द्वारा प्रसेन के वध की कथा वर्णित है।

२. कर्ण का पुत्र, जिसका सात्यकि द्वारा वध हुआ (म. क. ६०.४)। वध के पूर्व कैकय सेनापति उग्रकर्मन् से इसका युद्ध हुआ था। पाठभेद (भांडाकर संहिता)—'सुषेण'।

प्रसेनजित्—एक राजा, जो महाभूम राजा की सुयज्ञा नामक पत्नी का पिता था। इसने एक लाख सबसा गऊओं का दान कर के उत्तम लोक प्राप्त किया था (म. शां. २४०.३६)।

२. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार इक्ष्वाशु राजा का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम गौरी था, जिससे इसे 'सुवनाशु' नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (सुवनाशु ३. देखिये)। भविष्य में इसे संकटाशु राजा का पुत्र कहा गया है।

३. एक राजा, जो जमदग्नि की पत्नी रेणुका का पिता था। इसे रेणु नामांतर भी प्राप्त है (म. व. ११६.२)। कई विद्वानों के अनुसार, रेणुका के पिता एवं सुयज्ञा के पिता दोनों एक ही व्यक्ति थे (प्रसेनजित् १. देखिये)।

४. (सू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार विश्वसाह का पुत्र था।

५. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार ल्यांगल का, विष्णु के अनुसार राहुल का, मत्स्य

के अनुसार पुष्कल का, एवं वायु के अनुसार राहुल का पुत्र था।

पाणिग्रन्थों में इसका निर्देश 'पसेनदि' नाम से किया गया है। यह गौतम बुद्ध का समकालीन राजा था। पूर्ववंशीय राजा उदयन (तुदमन) एवं शिशुनागवंशीय राजा अजातशत्रु ये दोनों भी इसके समकालीन थे।

प्रस्कण्व—(सो. पृथ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार मेषातिथि राजा का पुत्र था। प्रस्कण्वंदा के लोग पहले शत्रिय थे, किन्तु बाद में वे ब्राह्मण हुए (भा. ९.२०.७)।

प्रस्कण्व काण्व—एक वैदिक सुस्तद्रष्टा (ऋ. १.४४ ५०; ८.४९; ९.९५)। सांख्यान श्रौतसूत्र के अनुसार इसे पृथक् पृथक् मातरिश्वन् से पारितोषक प्राप्त हुआ था (सां. श्रौ. १६.११.२६)।

प्रस्ताव—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भूमन् राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम देवकुत्या था। इसकी स्त्री का नाम नियुसा था, जिससे इसे विमु नामक पुत्र था (भा. ५.१५.६)।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, उद्गीथ राजा का पुत्र था।

प्रस्तोक सार्जय—एक वैदिक राजा एवं उदार दाता (ऋ. ६.४७.२२)। छडविग के अनुसार, दिवोदास अतिथिवं और अश्वत्थ (अश्वथ) इसी के ही नामांतर हैं (छडविग—ऋग्वेद अनुवाद ३.१५८)। सायणाचार्य का भी यही अभिमत है।

सांख्यान श्रौतसूत्र के अनुसार, इसने भरद्वाजपुत्र गार्ग को अतुल धनराशि दानस्वरूप प्रदान की थी (सां. श्रौ. १६.११.११; बृहद्दे. ५.१२४)।

प्रस्तोतृ—(स्वा. प्रिय.) एक यशकुशल राजा, जो प्रतीह और सुवर्चल का द्वितीय पुत्र था।

प्रहरण—श्रीकृष्ण का भद्रा से उत्पन्न एक पुत्र।

प्रहस्त—रावण के परिवार का एक राक्षस, जो सुमाली राक्षस का पुत्र था। इसकी माता का नाम केतुमती था। इसके भाइयों के नाम अकंपन, विकट, कालिकामुख, दंड, धूम्राक्ष, सुपार्श्व, संह्यादिन्, प्रवस तथा भासकर्ण थे, तथा राका, वैकसी, कुमीनसी तथा पुष्पोक्त्या नामक चार बहनें भी थीं (वा. रा. उ. ५.३८-४०)।

यह रावण का माया और मंत्री (वा. रा. उ. ११.२) होने के साथ साथ, उसकी सेना का अधिपति भी था (वा. रा. सुं. ४९.११; भा. ९.१०.१८)।

यह अत्यधिक वीर एवं पराक्रमी था। इसने कैलास पर्वत पर मणिभद्र को पराजित किया था (वा. रा. यु. १९. ११)। राम-रावण युद्ध में यह रावण की सुरक्षा तथा उसकी मदद के लिए सदैव उसके साथ रहता था। युद्धभूमि में इसने अपना अमृतपूर्व कौशल भी दिखाया। युद्ध के पाँचवे दिन रावणशकीय नरांतक आदि अधिकांश योद्धाओं को युद्ध में परास्त होता देख कर, इसने नील नामक वानर पर धावा बोल दिया। किन्तु, नील के द्वारा इसका वध हुआ (वा. रा. यु. ५८. ५४)।

महाभारत के अनुसार, इसका विभीषण के साथ युद्ध हुआ और यह विभीषण द्वारा ही रणभूमि में मारा गया (म. व. २७०. ५)।

२. विश्रवस् तथा पुंघोक्तटा का पुत्र।

प्रहास—धृतराष्ट्र कुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के संपन्न में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२. १४)। इसके नाम के लिए 'प्रहस' पाठभेद भी प्राप्त है।

२. वरुण का मंत्री (वा. रा. उ. २३. ४९)

३. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४५. २६४*)।

प्रहासक—एक राक्षस, जो कश्यप और स्वशा का पुत्र था।

प्रहेति—राक्षसों का आदि पुरुष। इसका कनिष्ठ भ्राता हेति था (वा. रा. उ. ४. १३)। इसकी पत्नी का नाम भया था, जिससे इसे विद्युत्केश नामक पुत्र था।

२. एक राक्षस, जो वृत्रासुर का अनुयायी था (भा. ६. १०. २०)।

३. एक राक्षस, जो वैशाख में अर्धमा नामक सूर्य के साथ धूमता है। इसे वैश्रवण के सेवक ब्रह्मधाता का पुत्र कहा गया है (भा. १२. ११. ३४)।

४. ब्रह्मांड के अनुसार युयुधान का पुत्र, जिसे माल्यवत्, सुमालिन् और पुलोमत् नामक पुत्र थे (ब्रह्मांड. ३. ७. ९१)।

प्रह्लाद—एक हरिभक्त असुर, इन्द्र, एवं धर्मज्ञ, जो हिरण्यकशिपु नामक असुर राजा का पुत्र था। पालिग्रंथों में इसका निर्देश 'पहाराद' नाम से किया गया है, एवं इसे 'असुरेंद्र' कहा गया है (अंगुत्तर ४. १९७)। इसकी माता का नाम कयाधू था (म. आ. ५९. १८; भा. ७. ४; विष्णु. १. १६)।

इसका, इसकी माता कयाधू एवं पुत्र विरोचन का निर्देश तैत्तिरीय ब्राह्मण में प्राप्त है (तै. ब्रा. १. ५. ९)। यह निर्देश देवासुर संग्राम के उपलक्ष्य में किया गया है।

कई विद्वानों के अनुसार, ईरान का पुण्यात्मा शासक 'परधात' अथवा 'पेशदात' और ये दोनों एक ही थे। ईरानी राजा 'परधात' का पूरा नाम 'हाओइयांग परधात' था। हाओइयांग का अर्थ होता है, 'पुण्यात्माओं का राजा'। परधात ने पूजा-पाठ से ईश्वर को प्रसन्न कर लिया था (मैथोलोजी ऑफ अंग्ल रेसेस-ईरान, पृ. २९९-३००)।

जन्म—पद्मपुराण के अनुसार, कयाधू के गोद में प्रह्लाद ने दो बार जन्म लिया था। इसका पहला जन्म हिरण्यकशिपु एवं हिरण्यक दानवों का देवों से जब युद्ध शुरू था, उस समय हुआ था। उस जन्म में इसे विश्वरूपदर्शन भी हुआ था। पश्चात्, श्रीविष्णुद्वारा इसका वध हुआ।

इसके वध का समाचार सुन कर, इसकी माता रोने लगी। फिर नारद वहाँ आया एवं उसने कहा, 'तुम शोक मत करो। यही प्रह्लाद पुनः तुम्हारे गर्भ में जन्म लेगा, एवं उस जन्म में वह श्रीविष्णु का परमभक्त बनेगा। अपने पराक्रम एवं पुण्यकर्म के कारण, उसे इंद्रत्व प्राप्त होगा। यह मेरी भविष्यवाणी है, जिसे तुम गुप्त रखना'। पद्मपुराण के इस कथा में प्रह्लाद की माता का नाम कयाधू के बदले कमला दिया गया है। (पद्म. भू. ५. १६. ३०१)।

नारद द्वारा कयाधू को दिया हुआ सारा उपदेश कयाधू के गर्भ में स्थित प्रह्लाद ने सुना। इसी कारण यह जन्मसे ही ज्ञानी पैदा हुआ।

विष्णुभक्ति—जन्म से यह परमविष्णुभक्त था। इसकी विष्णुभक्ति इसके असुर पिता हिरण्यकशिपु को अच्छी नहीं लगती थी। इसे विष्णुभक्ति छोड़ने पर विवश करने के लिये, उसने इसे डराया, धमकाया तथा मरवाने का भी प्रयत्न किया। विष्णुपुराण के अनुसार, हिरण्यकशिपु ने इसका वध करने के लिये, इसे हाथी द्वारा कुचलने का प्रयत्न किया। यही नहीं, इसे सर्पद्वारा डसाने का, पर्वत से गिराने का, गड्ढे में गाड़ने का, विष पिलाने का, वासुकी-पाश से बाँधने का, शस्त्रद्वारा मारने का, जलाने का, कृत्या छोड़ने का, माया छोड़ने का, संशोधक वायु छोड़ने का, तथा समुद्रतल में गाड़ने का आदि बहुत सारे प्रयत्न किये, किन्तु श्रीविष्णु की कृपा से, प्रह्लाद अपने पिता द्वारा रचे गये इन सारे पड़यंत्रों से बच गया (विष्णु. १. १७; भा. ७. ५)। अन्य पुराणों में हिरण्यकशिपु द्वारा प्रह्लाद को दिये गये इन कष्टों का निर्देश अप्राप्य है (तृप्तिह देखिये)।

इतने कष्ट सहकर भी प्रह्लाद ने विष्णुभक्ति का त्याग न किया। अंत में पिता के बुरे वताव से तंग आ कर, इसने दोनमाव से श्रीविष्णु की प्रार्थना की। फिर, श्रीविष्णु नृसिंह का रूप धारण कर प्रकट हुए। नृसिंह ने इसके पिता का वध किया, एवं इसे वर माँगने के लिये कहा। किन्तु अत्यन्त विरक्त होने के कारण, इसने विष्णुभक्ति को छोड़ कर बाकी कुछ न माँगा (भा. ७.६.१०)।

इसके भयान्त्रिकि के कारण, नृसिंह इसपर अत्यंत प्रसन्न हुआ। हिरण्यकशिपु के वध के कारण, नृसिंह के मन में उत्पन्न हुआ क्रोध भी इसकी सत्वगुणसंपन्न मूर्ति देखने के उपरांत शमित हो गया।

यह अत्यन्त पितृभक्त था। पिता द्वारा अत्यधिक कष्ट होने पर भी, इसकी पितृभक्ति अटल रही, एवं इसने हर समय अपने पिता को विष्णुभक्ति का उपदेश दिया। पिता की मृत्यु के उपरांत भी, इसने नृसिंह से अपने पिता का उद्धार करने की प्रार्थना की। नृसिंह ने कहा, 'तुम्हारी इककीस पीढ़ियों का उद्धार हो चुका है'। यह सुन कर इसे शान्ति मिली। पश्चात् हिरण्यकशिपु के वध के कारण दुःखित हुये सारे असुरों को इसने सात्वता दी।

पश्चात् यह नृसिंहोपासक एवं महाभागवत बन गया (भा. ६.३.२०)। यह 'हरिवर्ष' में रह कर नृसिंह की उपासना करने लगा (भा. ५.१८.७)।

विष्णुभक्ति के कारण प्रह्लाद के मन में विवेकादि गुणोंका प्रादुर्भाव हुआ। विष्णु ने स्वयं इसे ज्ञानोपदेश दिया, जिस कारण यह सद्बिचारसंभव हो कर समाधि-सुख में निमग्न हुआ। फिर श्रीविष्णु ने पांचजन्य शंख के निनाद से इसे जागृत किया, एवं इसे राज्याभिषेक किया। राज्याभिषेक के उपरान्त श्रीविष्णु ने इसे आशीर्वाद दिया, 'पड़रिपुओं की पीड़ा से तुम सदा ही मुक्त रहोगे' (यो. वा. ५.३०-४२)। यह आशीर्वाचन कह कर श्रीविष्णु स्वयं क्षीरसागर को चले गये।

इंद्रप्रमोद—इंद्रप्रमोदप्राप्ति करनेवाला यह सर्वप्रथम दानव था। इसके पश्चात् आयुपुत्र रजि इंद्र हुआ, जिसने दानवों को पराजित कर के इंद्रपद प्राप्त किया।

परिवार—इसके पत्नी का नाम देवी था। उससे इसे विरोचन नामक पुत्र एवं रचना नामक कन्या हुई (भा. ६.६; ६.१८.१६; म. आ. ५.९.१९; विष्णु. १. २१.१)।

संवाद—विभिन्न व्यक्तिओं से प्रह्लाद ने किये तत्वज्ञान पर संवादों के निर्देश महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त हैं,

जिनसे इसके ज्ञान, विवेकशीलता एवं तार्किकता पर काफ़ी प्रकाश डाला जाता है।

हंस (सुधन्वन) नामक ऋषि से इसका 'सत्यासत्य भाषण' विषय पर संवाद हुआ था। हंस ऋषि का प्रह्लादपुत्र विरोचन से झगड़ा हुआ था, एवं उस कलह का निर्णय देने का काम प्रह्लाद को करना था। इसने अपना पुत्र असत्य भाषण कर रहा है, यह जानकर उसके विरुद्ध निर्णय दिया, एवं सुधन्वन का पक्ष सत्य टहराया। इस निर्णय के कारण सुधन्वन प्रसन्न हुआ एवं उसने विरोचन को जीवनदान दिया (म. उ. ३५.३०-३१; विरोचन देखिये)।

इसका तथा इसके नाती बलि का लोकव्यवहार के संबंध में संवाद हुआ था। बलि ने इसे पुछा 'हम क्षमाशील कब रहे, तथा कठोर कब बने?' बलि के इस प्रश्न पर प्रह्लाद ने अत्यंत मार्मिक विवेचन किया।

बलि ने वामन की अबहेलना की। उस समय क्रुद्ध हो कर इसने बलि को शाप दिया, 'तुम्हारा संपूर्ण राज्य नष्ट हो जायेगा।' पश्चात् वामन ने बलि को पाताललोक में जाकर रहने के लिये कहा। बलि ने अपने पितामह प्रह्लाद को भी अपने साथ वहीं रखा (वामन. ३१)।

एकवार प्रह्लाद के ज्ञान की परीक्षा लेने के लिये, इंद्र इसके पास ब्राह्मणवेश में शिष्यरूप में आया। उस समय प्रह्लाद ने उसे शील का महत्त्व समझाया। उन बातों से इंद्र अत्यधिक प्रभावित हुआ, एवं उसने इसे ब्रह्मज्ञान प्रदान किया (म. शां. २१५)।

अजगर रूप से रहनेवाले एक मुनि से ज्ञानप्राप्ति की इच्छा से इसने कुछ प्रश्न पूछे। उस मुनि ने इसके प्रश्नों का संक्षेपसमाधान किया, एवं इसे भी अजगरवृत्ति में रहने के लिये आग्रह किया (म. शां. १६२)।

उशनस ने भी इसे तत्वज्ञान के संबंध में दो गाथाएँ सुनाई थी (म. शां. १३७.६६-६८)।

पूर्वजन्मवृत्त—पद्म के अनुसार, पूर्वजन्म में प्रह्लाद सोदशर्मा नामक ब्राह्मण था, एवं इसके पिता का नाम शिवशर्मा था (पद्म. म. ५.१६)। पद्म में अन्यत्र उस ब्राह्मण का नाम वसुदेव दिया गया है, एवं उसने किये नृसिंह के व्रत के कारण, उसे अगले जन्म में राजकुमार प्रह्लाद का जन्म प्राप्त हुआ, ऐसा कहा गया है (पद्म. उ. १७०)।

२. कद्रुपुत्र एक सर्प, जिसने कश्यपऋषि को उर्वर्य—श्रवसु नामक घोड़ा प्रदान किया था (म. शां. ७४.१५)।

३. एक ब्राह्मीकवंशीय राजा, जो शलभ नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.२९)।

प्राशु—चाक्षुष मनु का एक पुत्र।

२. वैवस्वत मनु का एक पुत्र।

३. (सू. दिष्ट.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वत्सपीति का, विष्णु के अनुसार वत्सप्रि का, तथा वायु के अनुसार भलदेन का पुत्र था। इसकी माता का नाम सुनंदा (सुनद्वती) था (मार्क. ११४.३)।

प्राकृशंगवत्—कुण्डिगर्ग ऋषि की वृद्धकन्या नामक मानसकन्या का पति (वृद्धकन्या देखिये)।

प्रागहि—एक आचार्य, जिसके यज्ञविषयक मतों का निर्देश सांख्यायन ब्राह्मण में प्राप्त है (सां. ब्रा. २६.४)। यज्ञ करते समय यदि कोई कर्म करने से छूट जाये, तो उस अंतरित क्रिया को कत्र तथा कैसे किया जाये, उसका विधान इसने बताया है।

प्रागाथ—अंगिराकुल का एक ब्रह्मर्षि। इसके कुल में उत्पन्न निम्नलिखित आचार्यों का निर्देश ऋग्वेद में सूक्त-द्रष्टा के नातों से आया है:—हयत प्रागाथ (ऋ. ८.७२), भग प्रागाथ (ऋ. ८.६०-६१), कलि प्रागाथ (ऋ. ८.६६)।

प्रागाथम—‘प्रागावस’ नामक अंगिराकुल के गोत्रकार का नामांतर।

प्रागाथप—एक ऋषियग, जो कश्यपकुल का गोत्रकार था।

प्रागावस—अंगिरा कुल का एक गोत्रकार, जिसके नाम के लिए ‘प्रागाथम’ पाठभेद प्राप्त है।

प्राचीन्वत्—पुरुवंशीय ‘प्राचीन्वत्’ राजा का नामांतर (प्राचीन्वत् देखिये)।

प्राचीनगर्भ—अटम्बुषा नामक अप्सरा के पुत्र सारस्वत ऋषि का नामांतर।

२. मृष्टि तथा छाया का एक पुत्र।

प्राचीनबर्हि ‘प्रजापति’—(स्वा. उत्तान.) एक प्रजापति, जो मनुवंशीय हविर्धान नामक राजा को हविर्धानी नामक पत्नी से उत्पन्न ज्येष्ठ पुत्र था (म. अनु. १४७. २४-२५)।

इसका वास्तविक नाम ‘बर्हिपद’ था। कहते हैं, इसने इतने यज्ञ किये कि, यज्ञ करते समय पूर्व दिशा की ओर रक्त्ते गये ‘पूर्वाग्र दर्मों’ से पृथ्वी आच्छादित हो उठी। इसीलिये इसे प्राचीनबर्हि (प्राचीन = पूर्व; बर्हि = दर्म) नाम प्राप्त हुआ।

प्रा. च. ६१]

समुद्रकन्या शतद्रुति अथवा सवर्णा इसकी पत्नी थी, जिससे इसे प्रचेतस् नामक दस पुत्र उत्पन्न हुए (भा. ४. २४.८.१३; ह. वं. १.२.३१; विष्णु. १.१४.३-६; म. अनु. १४७.२४-२५)।

कर्मकाण्ड और योगाभ्यास में यह अत्यंत कुशल था। इसके निम्नलिखित पाँच भाई थे, जिनकी सहायता से इसने विभिन्न स्थानों पर अनेक यज्ञ किये—गय, शुक्र, कृष्ण, सत्य और जितव्रत।

इसे योग्य राजर्षि देख कर, नारद ने पुरंजन राजा का आख्यान ब्रता कर ब्रह्मज्ञान दिया (भा. ४. २५-२९)। ब्रह्मा ने नारायण से श्रवण किया हुआ ‘सात्वतधर्म’ इसे सिखाया, यही नहीं, ब्रह्मा ने ‘ऋष्यादि क्रम’ का ज्ञान भी इसे दिया।

महाभारत में इसे अत्रिकुलोत्पन्न एक रुप, एवं प्रजापति कहा गया है (म. शां. २०१.६)। वृद्धावस्था में यह अपने पुत्रों पर प्रजारक्षण का भार सौंप कर, तपस्या के हेतु कपिलश्रम चला गया (भा. ४.२९.८१)। आकाश में स्थित, सप्तार्षियों में, पूर्वदिशा की ओर बर्हिपद नाम से यह निवास करता है।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर का एक राजा। दक्ष प्रजापति के यज्ञ में सती ने देहत्याग किया था, उस समय यह भरतखण्ड का राजा था।

प्राचीनयोग—एक आचार्य, जो वायु और ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में शृंगीपुत्र ऋषि का पुत्र था (व्यास देखिये)।

प्राचीनयोगीपुत्र—एक आचार्य, जो सांजीवीपुत्र नामक ऋषि का पुत्र था। इसके शिष्य का नाम कार्ष्णेकी-पुत्र था (बृ. उ. ६.५.२)। शतपथ ब्राह्मण में इसके शिष्य का नाम भालुकीपुत्र दिया गया है (श. ब्रा. १४. ९. ४. ३२)। संभव है, ‘प्राचीनयोग’ की किसी स्त्री-वंशज का पुत्र होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ हो।

२. एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में कौथुम पाराशर्य ऋषि का शिष्य था।

प्राचीनयोग्य ‘शौचेय’—तत्त्वज्ञान का एक आचार्य, जो पाराशर्य का शिष्य था (बृ. उ. २. ६. २)। यह उद्दालक का समकालीन था, एवं इसके शिष्य का नाम गौतम था (श. ब्रा. ११. ५. ३. १; ८)। सम्भव है,

‘प्राचीनयोग’ ऋषि का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ हो।

एक तत्वज्ञानी के नाते से इसका उल्लेख उपनिषदों में प्राप्त है (छां. उ. ५.१३.१; तै. उ. १.६.२)। इसके वंश के निम्नलिखित आचार्यों का निर्देश जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण में प्राप्त है:—पुलप, सत्ययज्ञ, सोमशुष्म (जै. उ. ब्रा. १. ३९. १)।

प्राचीनशाल औपमन्यव—एक आचार्य एवं ईश्वर-शास्त्रविद्, जो सत्ययज्ञ एवं इन्द्रयुग्म का समकालीन था (छां. उ. ५.११.१)। जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण में इसका निर्देश ‘प्राचीनशालि’ नाम से किया गया है, एवं इसे एक उद्गाता पुरोहित कहा गया है (जै. उ. ब्रा. ३.१०. १)। इसकी परंपरा के ‘प्राचीनशाल’ लोगों का निर्देश भी उक्त ब्राह्मण ग्रंथ में प्राप्त है।

प्राचीनशालि—प्राचीनशाल औपमन्यव नामक आचार्य का नामांतर (जै. उ. ब्रा. ३.७.२; ३; ५; ७)।

प्राचीन्वत्—(सो. पूर.) एक पूर्ववंशीय राजा, जो पूरु राजा का पौत्र एवं जनमेजय (प्रथम) का पुत्र था। इसकी माता का नाम अनंता था। इसे ‘अविद्ध’ नामांतर भी प्राप्त है। इसने एक रात्रि में, उदयाचल से लेकर सारा प्राची दिशा को जीत लिया, इसीलिए इसका नाम प्राचीन्वत् पड़ा। इसकी स्त्री का नाम आशमकी यादवी था, जिससे इसे शय्याति (संयाति) नामक पुत्र था (म. आ. ९०.१२-१३)।

प्राचेतस—वाल्मीकि ऋषि का नामांतर (भा. ९.११. १०)। वाल्मीकि रामायण में वाल्मीकि ने स्वयं को प्राचेतस कहा है (वा. रा. उ. ९६.१८)। यह ऋगुकुल में उत्पन्न हुआ था (वा. रा. उ. ९३.१६-१८; ९४.२५; मत्स्य. १२.५१; म. शां. ५८.४३)। इसने अधमर्षण तीर्थ पर दीर्घकाल तक तपस्या की थी (भा. ६.४.२१)।

२. (सो. द्रुमु.) दस प्रचेताओं द्वारा वार्षी या मारिषा से उत्पन्न सौ पुत्रों का सामूहिक नाम, जिनमें दक्ष प्रजापति प्रमुख था (म. आ. ७०.४)। ये उत्तर दिशा में रहनेवाले ऋत्विजों के अधिपति हुए।

३. प्राचीनवर्हि के दस पुत्रों का सामूहिक नाम।

प्राचेय—कश्यपकुल का एक भोजकार।

प्रजापत्य—प्रजापति के वंशजों का सामूहिक नाम। प्रजापति के वंशज होने के नाते, निम्नलिखित वैदिक सूक्तकारों को ‘प्रजापत्य’ उपाधि प्राप्त है—आरुणि सौपगंय (तै. आ. १०.७९), पतंग (ऋ. १०.१७७), परमेष्ठिन्

(जै. उ. ब्रा. ३.४०.२), प्रजावत् (ऐ. ब्रा. १.२२), यशमनाशन (ऋ. १०.१६१), यज्ञ (ऋ. १०. १३०), विमद (ऋ. १०.२०), विष्णु (ऋ. १०.१८४), संवरण (ऋ. ५.३३)।

प्राण—स्वायंभुव मनु के दामाद भृगु ऋषि का पौत्र। भृगुपुत्र विधाता इसका पिता एवं मेरुकन्या नियति इसकी माता थी। इसे वेदशिरस् नामक एक पुत्र था (भा. ४.१.४४)।

२. स्वरोचिष मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

३. अष्टवसुओं में से दूसरा वसु। इसके पिता का नाम सोम और माता का नाम मनोहरा था। इसके बड़े भाई का नाम वर्चा, एवं दो छोटे भाइयों का नाम विशिर और रमण था (म. आ. ६०.२१)।

४. एक देव, जो अंगिरा और सुर्या मारीची के पुत्रों में से एक था।

५. साध्य देवों में से एक।

६. तुषित देवों में से एक।

७. एक राजा, जो वसिष्ठ की कन्या गुंडरिका का पति था (वसिष्ठ देविवि.)।

प्राणक—प्राण नामक अग्नि का पुत्र (म. व. २१०.१)।

प्रातर—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो पुष्यर्षि एवं प्रभा का ज्येष्ठ पुत्र था।

२. धाता नामक सातवें आदित्य का पुत्र, जिसकी माता का नाम राका था (भा. ६.१८.६)।

३. कौरव्यकुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्प-सत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१२)। पाठभेद—(मांडारकर संहिता)—‘पातपातर’।

प्रातरह कौहल—एक आचार्य, जो केतु वाज्य ऋषि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम सुश्रवस् वापंगण्य था (वं. ब्रा. १)।

प्रातर्दन—संथमन नामक आचार्य का पैतृक नाम (कौ. उ. २.५)।

प्रातर्दिन—क्षत्रश्री राजा का नामांतर (ऋ. ६.२६. ८)। प्रतर्दन का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

प्रातिकामिन् (प्रातिकामी)—दुर्योधन का सारथि (म. स. ६०.२-३)। दुर्योधन की सभा में द्रौपदी को लाने के लिए सर्वप्रथम धंही गया था। द्रौपदी ने जब सभा में आने से इन्कार कर दिया, तब इसने द्रौपदी के द्वारा कहीं हुयी बात सभा में आ कर दुर्योधन से कहीं (म. स. ६०.

४-१७)। दुर्योधन ने इसे पुनः द्रौपदी के पास जाने के लिये कहा। लेकिन भीम के डर के कारण, इसने पुनः जाना अस्वीकार कर दिया (म. स. ६०.२९)। यह भारतीय युद्ध में मारा गया (म. श. ३२.४३)।

प्रातिथेयी—लोपामुद्रा की बहन गभस्तिनी का नामांतर (बडवा एवं गभस्तिनी देखिये)। इसके नाम के लिये 'नातिथेयी' पाठभेद भी प्राप्त है।

प्रातिपीथ—कुरु राजा 'बह्लिक' का पैतृक नाम (श. ब्रा. १२.९.३.३)। इसे प्रतिवंश राजा का शिष्य कहा गया है (सां. आ. १५.१)।

प्रातिवेश्य—एक आचार्य, जो प्रतिवेश्य ऋषि का शिष्य था (सां. आ. १५.१)।

प्रातीबोधीपुत्र—सांख्यायन आरण्यक में निर्दिष्ट एक आचार्य (सां. आ. ७.१३; ऐ. ब्रा. ३.१.५)। संभव है, 'प्रतीबोध' के किसी स्त्रीवंशज का पुत्र होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ हो।

प्रातृद—भाह्ल नामक आचार्य का पैतृक नाम (जै. उ. ब्रा. ३.३१.४; वृ. उ. ५.१३.१)।

प्राद्युम्नि—याश्व राजा अनिरुद्ध का नामांतर (म. स. ६०)।

प्राधा—प्राचेतस दक्ष प्रजापति की कन्या एवं कश्यप ऋषि की पत्नी। इसकी माता का नाम असिक्री था। इसे 'अरिष्ठा' नामांतर भी प्राप्त है (अरिष्ठा देखिये)।

कश्यप ऋषि से इसे तेइस देवगंधर्व पुत्र, एवं इकीस अप्सरा कन्यायें उत्पन्न हुईं। इसके पुत्रों में हाहा, हू-हू, तुम्बर एवं असिबाहु, तथा कन्याओं में अलम्बुषा तथा अन्ववद्या प्रमुख थीं (कश्यप देखिये)।

महाभारत में प्राधा के दस पुत्र, एवं आठ कन्यायें दी गयीं हैं (म. आ. ५९.१२; ४४-४६)।

प्राध्वंसन—एक आचार्य, जो प्रध्वंसन नामक ऋषि का शिष्य था। बृहदारण्यक उपनिषद् में मृत्यु नामक आचार्य का पैतृक नाम 'प्राध्वंसन' बताया गया है (वृ. उ. २.६.३; ४.६.३)। अथर्वन देव इसका शिष्य था।

प्राप्ति—जरासन्ध की कन्या एवं जरासन्धपुत्र सहदेव की छोटी बहन। यह कंस की पत्नी थी। इसकी दुसरी बहन अस्ति भी कंस को ब्याही थी (मा. १०. ५०. १)।

महाभारत में, इसका निर्देश प्राप्ति नाम से किया गया है (म. स. १४. ३०)। किन्तु यह पाठभेद त्रुटिपूर्ण प्रतीत होता है।

२. धर्म के राम नामक पुत्र की पत्नी (म. आ. ६०. ३०)।

प्रामति—ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर के सतर्षियों में से एक।

प्रायण—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

प्रावरेय—भागों का पैतृक नाम (क. सं. १३. १२)।

प्रावहि—एक आचार्य, जिसके द्वारा यज्ञविधि में असावधानी से हुए 'कर्मविपर्यास' के लिये प्रायश्चित्त बताया गया है (सां. ब्रा. २६.४)। इसके नाम के लिये 'प्रागहि' पाठभेद प्राप्त है।

२. अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

प्रावारकर्ण—एक चिरंजीवी उलूक, जो हिमालय-पर्वत पर निवास करता था (म. व. १९१.४)।

प्रावाहाणि—बकर नामक साहित्याचार्य का पैतृक नाम (बकर देखिये)।

प्रावेणि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

प्रादनीपुत्र—एक आचार्य, जो आसुरायण ऋषि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम सांजवीपुत्र था (वृ. उ. ६.५.२)। शतपथ ब्राह्मण में, इसे आसुरिवासिन् का शिष्य, एवं इसके शिष्य का नाम काशीकेयीपुत्र बताया गया है (श. ब्रा. १४.९.४.३३)।

प्राप्ति—जरासन्ध की कन्या 'प्राप्ति' का नामांतर (प्राप्ति १. देखिये)।

प्राश्रवण—अवत्सार ऋषि का पैतृक नाम (सां. ब्रा. १३.३)। इसके नाम के लिए 'प्राश्रवण' पाठभेद भी उपलब्ध है।

प्रियक—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६०)।

प्रियभृत्य—एक नृप (म. आ. १.१७६)।

प्रियंवदा—राधिका की सखी। अञ्जुनि नामक स्त्री का रूप धारण करनेवाले अञ्जुन के जपानुष्ठान के समय, इसने उसका संरक्षण किया था (पद्म. पा. ७४)।

प्रियदर्शन—दुपद का एक पुत्र। द्रौपदीस्वयंवर के उपरांत हुए युद्ध में, कर्ण ने इसका वध किया था (म. आ. परि. १. क्र. १०३; पत्ति १३१-१३२)।

प्रियनिश्चय—भव्य देवों में से एक।

प्रियमाल्यानुलेपन—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५५)।

प्रियमेध आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. २.१-४०; ६८; ६९; ८७; ९.२८)। ऋग्वेद में इसके

परिवार के लोगों का निर्देश 'प्रियमेधाः' नाम से किया गया है (ऋ. १.४५.४)। प्रियमेध ब्राह्मण अजमीद वंश में उत्पन्न माने जाते हैं (भा. ९.२१.२१)। इसके वंश में पैदा हुए 'प्रियमेध' नामक ऋषियों ने आश्रय उद्मय राजा के लिए यज्ञ किया था (ए. ब्रा. ८.२२; प्रियमेध देखिये)।

इसके द्वारा रचित सूक्तों में अतिथिभूपुत्र इंद्रोत, आश्वमेध और ऋक्षपुत्र राजाओं का उल्लेख आश्रयदाता के रू में किया गया है (ऋ. ८.६८.१५-१९)। इसका संरक्षण अश्विनीयों ने भी किया था (ऋ. ८.५.२५)।

ओल्डेनबर्ग के अनुसार, जिन सूक्तों के प्रणयन का श्रेय इसे ऋग्वेद में दिया गया है, वे इसके द्वारा रचित नहीं हो सकते (ओल्डेन. स्वी. ग. ४२.२१७)।

प्रियरथ—एक राजा, जो पुत्रों का आश्रयदाता था (ऋ. १.१२२.७)। सायणाचार्य के अनुसार, यह किसी व्यक्तिविशेष का नाम न होकर विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुआ है।

प्रियवर्चा—कुवेर की एक अप्सरा। यह शाप के कारण मगर बनी थी, जिसका अर्जुन ने बाद में उद्धार किया था (स्कंद. १.२.१)।

प्रियव्रत—एक राजा, जो स्वायंभुव मनु के पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम शतरूपा था। इसके पराक्रम के कारण, पृथ्वी पर सात द्वीप एवं सात समुद्रों का निर्माण हुआ (भा. ३.१२.५५; ४.७.८; पञ्च. सू. ३; भवि. ब्राह्म. ११७)।

इसके द्वारा सात द्वीपों एवं सात समुद्रों के निर्माण की चमत्कारपूर्ण कथा भागवत में निम्न रूप से वर्णित है।

प्रियव्रत राजा अत्यंत पराक्रमी था। एकत्र अपने एक पहियेवाले रथ में बैठ कर अत्यंत वेग से इसने मेरु के चारों ओर प्रदक्षिणा की। इसका वेग इतना अधिक था कि, सूर्य मेरु के जिस भाग पर प्रकाश डालता था, उसके विपरीत दिशा में हमेशा यह रथ घुमा लेता था। इसलिये मेरु पर्वत की जो दिशा सूर्य के अभाव में अंधकारमय रहनी चाहिये, वह भी इसके प्रकाश के योग से आलोकित रहती थी। इसलिये इसके राज्यकाल में पृथ्वी पर कभी भी अंधकार न रहा। इसके रथ के पहियों के कारण मेरु के चारों ओर जो सात गड़ढ़े हुए, वे ही बाद में सप्तसमुद्र के नाम से प्रसिद्ध हुए, तथा प्रत्येक दो गड़ढ़ों के बीच में जो जगह बची, वे द्वीप बन गये। इस

प्रकार प्रियव्रत के रथ के कारण, मेरु पर्वत के चारों ओर सात समुद्र तथा सप्तद्वीप बने।

प्रियव्रत को विश्वकर्म की कन्या बर्हिष्मती दी गयी थी। उससे इसे इध्मजिह्व, यज्ञवाहु, महावीर, अग्नीध्र, सवन, वीतिहोत्र, मेधातिथि, घृतपृष्ठ, कवि तथा हिरण्यरेतस् नामक दस पुत्र तथा ऊर्जस्वती नामक कन्या हुयी। उनमें से महावीर, कवि तथा सवन नामक तीन पुत्र बचपन में ही तपस्या के लिए वन में चले गये। बाकी बचे सात पुत्रों को इसने एक एक द्वीप बाँट दिये (भा. ५. १; बराह. ७४)। इसके पुत्रों में श्रेष्ठ गये सप्तद्वीप इस प्रकार थे:—इध्मजिह्व—पृथ्वीद्वीप, यज्ञवाहु—शास्मलिद्वीप, अग्नीध्र—जंबुद्वीप, वीतिहोत्र—पुष्करद्वीप, मेधातिथि—शाकद्वीप, घृतपृष्ठ—कौचद्वीप, हिरण्यरेतस्—कुशद्वीप। इसकी ऊर्जस्वती नामक कन्या का विवाह कविपुत्र उशनस् ऋषि से हुआ था।

ब्रह्माण्ड में इसकी पत्नी का नाम काश्या बताया गया है, एवं उसे पुलहवंशीय कहा गया है। काश्या से उत्पन्न हुए प्रियव्रत राजा के दस पुत्रों ने आगे चल कर क्षत्रियव्य को स्वीकार किया, एवं वे सप्तद्वीपों के स्वामी बन गये (ब्रह्माण्ड. २.१२.३०-३५)।

इसे बर्हिष्मती (काश्या) के अतिरिक्त और भी एक पत्नी थी, जिससे इसे उत्तम, तामस एवं रैवत नामक तीन पुत्र हुए। वे पुत्र स्वायंभुव एवं स्वारोचिप मन्वन्तरों के पदचान् संपन्न हुए उत्तम, तामस तथा रैवत मन्वन्तरों के स्वामी बन गये।

प्रियव्रत अत्यंत धर्मशील था, एवं देवर्षि नारद इसका गुरु था। इसने ग्यारह अर्बुद (दशकोटि) वर्षों तक राज्य किया। बाद में राज्यभार पुत्रों को सौंप कर, यह नारद द्वारा उपदेशित योगमार्ग का अनुसरण कर, अपनी पत्नी के साथ सायना में निमग्न हुआ।

इसका मेधातिथि नामक पुत्र शाकद्वीप का राजा था। वहाँ इसने सूर्य का एक देवालय बनवाया। किन्तु शाकद्वीप में एक भी ब्राह्मण न होने के कारण, अत्र समस्या यह थी कि, मूर्ति की स्थापना किस प्रकार की जाय। तब इसने सूर्य का आवाहन कर उससे सहायता के लिए याचना की। सूर्य ने इसे दर्शन दे कर 'भग' नामक आठ ब्राह्मणों का निर्माण किया, तथा उनके सम्मान की इसे रीति बताया (भविष्य. ब्राह्म. ११७; भग देखिये)।

२. आद्य देवों में से एक।

३. मद्र देश का राजा। इसे कीर्ति तथा प्रभा नामक दो स्त्रियाँ थीं। इसके दो प्रधानों का नाम धूर्त तथा कुशल था। इसके पुत्र का नाम क्षिप्रसादन था, जो परम गणेशमक्त था। इसे गणेशजी द्वारा परशु प्राप्त होने के कारण, परशुबाहु भी कहा जाता है (गणेश.)।

प्रियव्रत रोहिणायन—शतपथ ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक आचार्य (श. ब्रा. १०.३.५.१४)।

प्रियव्रत सोमापि—एक आचार्य, जो सोमप नामक ऋषि का पुत्र था (ऐ. ब्रा. ७.३४; सां. आ. १५.१)। इसके नाम के लिए 'प्रियव्रत सोमापि' पाठभेद भी उपलब्ध है। सांख्यान आरण्यक में इसे 'सोमप' (सोम पीनेवाला) उपाधि से उद्देशित किया गया है।

पितरों के 'मृत' और 'अमृत' दो प्रकार होते हैं। पितरों में से 'उम' नामक पितर 'अमृत' प्रकार में आते हैं। किन्तु प्रियव्रत के अनुसार, जो पितर यज्ञ में भाग लेते हैं वे सभी 'अमृत' प्रकार में आते हैं।

प्रीति—दक्ष की कन्या, जो पुलस्त्य ऋषि की पत्नी थी। पुलस्त्य से इसे दानामि, देवबाहु, अत्रि नामक तीन पुत्र, एवं सद्वती नामक एक कन्या थी (पुलस्त्य देखिये)।

२. कामदेव की पत्नी रति का नामांतर।

प्रैयमेध—आचार्यों का एक सामूहिक नाम, जिन्होंने अंगराज के पुरोहित आत्रेय उद्मय के लिये यज्ञ किया था (ऐ. ब्रा. ८.२२)। तैत्तिरीय ब्राह्मण में तीन प्रैयमेधों का निर्देश प्राप्त है (तै. ब्रा. २.१.९.१)। उनमें से एक केवल एक समय, सुबह ही 'अग्निहोत्र' होम करता था; दूसरा सुबहशाम दो बार, तथा तीसरा सुबह, दोपहर, तथा शाम तीनों समय 'अग्निहोत्र' होम करता था। पश्चात्, इन तीनों में यह तय पाया गया कि, उक्त होम दिन में केवल दो बार ही किया जाये। तैत्तिरीय ब्राह्मण में भी यह कथा इसी प्रकार दी गयी है।

यजुर्वेद संहिताओं में इन्हें सभी यज्ञगायनों का विश्व कहा गया है (वा. सं. ६.१; मै. सं. १.८)। गोपथ ब्राह्मण में इन्हें भारद्वाज कहा गया है (गो. ब्रा. १.३.१५)।

ऋग्वेद के सिधुक्षित नामक सूक्तद्रष्टा को प्रियमेधपुत्र के अर्थ से 'प्रैयमेध' पैतृक नाम प्रदान किया गया है।

प्राति कौशांबेय कौसुरुविन्दि—एक आचार्य, जो उद्दालक ऋषि का शिष्य और उसका समकालीन था (श. ब्रा. १२.२.२.१३)। गोपथ ब्राह्मण में इसे 'प्रेदि

कौशांबेय कौसुरविन्द' कहा गया है (गो. ब्रा. १. २. २४)। किसी कुसुसुविन्द का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

तैत्तिरीय संहिता में इसे औद्दालकि (उद्दालक का वंशज) कहा गया है (तै. सं. ७.२.२.१)। इससे प्रतीत होता है कि, इसके पैतृक नाम एवं समकालीनता से सम्बन्धित वक्तव्यों को अधिक महत्त्व न देना चाहिये।

प्रोवा—प्राचेतस दक्ष प्रजापति की कन्या, जो कश्यप ऋषि की पत्नी थी। इसकी माता का नाम असिक्नी था। कश्यप से इसे कोई भी सन्तान न हुयी (कश्यप देखिये)।

प्रोष्ठपाद् वारक्य—एक आचार्य, जो कंस वारकि नामक ऋषि का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

प्रौष्ठपद—कुवेर का कोषाध्यक्ष और मंत्री (वा. रा. उ. १५.१६)।

प्लक्ष—दाक्ष नामक शिवावतार का शिष्य।

प्लक्ष दय्यांपति—एक आचार्य, जो अत्यंहस् आरुणि नामक ऋषि का समकालीन था। उसने अपने शिष्यों के द्वारा इससे सावित्राक्षि के बारे में अशोभनीय प्रश्न पुछवाये थे (तै. ब्रा. ३.१०. ९.३)।

प्लति—गय प्लत नामक आचार्य का पिता।

प्लवंग—राम की सेना का एक वानर (वा. रा. उ. ४०.७)।

प्लाक्षायण—एक वैयाकरण, जो आचार्य प्लाक्षि का समकालीन था। विसर्ग सन्धि के बारे में इसके मत तैत्तिरीय प्रातिशाख्य में निर्देशित है (तै. प्रा. ९.६)।

प्लाक्षि—एक वैयाकरण, जो प्लाक्षायण नामक आचार्य का समकालीन था। विसर्गसन्धि के बारे में इसके मत तैत्तिरीय प्रातिशाख्य में दिये गये हैं (तै. प्रा. ५.३.८; ९.६; तै. आ. १.७.३)। प्लक्ष का वंशज होने के कारण, इसे प्लाक्षि नाम प्राप्त हुआ होगा।

'प्लाक्षि' उपाधि पैतृक नाम के रूप में 'सप्तकर्ण' को भी दी गयी है (सप्तकर्ण देखिये)।

प्लत—गय प्लत नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ५.२; गय प्लत देखिये)। संभव है, 'प्लति' का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

प्लायोगि—आसंग नामक दानवीर राजा एवं वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (आसंग देखिये)।

फ

फलमक्ष—कुवेर की सभा का एक यक्ष (म. स. १०.१७)।

फलहार—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

फलौदक—कुवेर की सभा का एक यक्ष (म. स. १०.१७)।

फलगुप्त—अयोध्या का राजा, जो सगर राजा का पिता था। इसकी वृद्धावस्था में तालजंघादि हैहयों ने अयोध्या पर आक्रमण कर, उसे अपने अधिकार में कर लिया, और इसे अपनी पत्नी के साथ राज्य से निकाल दिया। अयोध्या से निकल कर, यह सपत्नीक और्वाश्रम में आकर रहने लगा, और वहीं इसकी मृत्यु भी हुयी। मृत्यु के समय इसकी पत्नी गर्भवती थी, जिसे कालांतर में सगर नामक पुत्र हुआ (ब्रह्मांड. ३.४७)।

मात्स्य तथा विष्णु पुराण में इसके नाम के लिए 'बाहु' पाठभेद प्राप्त है (बाहु देखिये)।

फाल्गुन—अर्जुन का नामांतर। हिमालय के शिखर पर, उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में अर्जुन का जन्म हुआ था। इसीसे उसे यह नाम प्राप्त हुआ (म. वि. ३९.१०)।

फेन—(सो. उशी.) उशीनरवंशीय एक राजा, जो उपद्रथ राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सुतपस् एवं पौत्र का नाम बलि औशीनर था, जो अपने समय का सुविख्यात शासक था (ह. वं. १.३१-३२)।

फेनप—एक ऋषिसमुदाय, जो गोदुग्ध के फेन को खा कर ही जीवित रहते थे (म. उ. १००.५; अनु. ४२. ४१ कुं.)।

२. भृगुकुल का एक गोत्रकार, जिसकी कथा भीष्म द्वारा युधिष्ठिर को गोमहात्म्य बताने के लिए निवेदित की गयी थी। इसका मूल नाम सुमित्र था। यह त्रिशिखर पर्वत पर, कुलजा नदी के तट पर, गाय के दूध का फेन खा कर जीवित रहता था। इसलिये इसे फेनरा नाम प्राप्त हुआ (म. अनु. १२०-१२३ कुं.)।

३. पितरों में से एक।

ब

बक—कंस के पक्ष का एक असुर, जिसे कंस ने कृष्ण के वध के लिये गोकुल भेजा था।

बगुले का वेश धारण कर यह गोकुल गया। वहाँ गोप सखाओं के साथ क्रीड़ा में निमग्न कृष्ण को देख कर इसने उसे निगल लिया। कृष्ण इसके शरीर में पहुँच कर इसे पीड़ा से दग्ध करने लगा। अतएव इसने उसे तत्काल उगल कर, यह अपनी पैनी चोंच से उसे मारने लगा। इसका यह कुटृत्य देखकर, कृष्ण ने इसकी चोंच के दोनों जत्रों को चीरकर इसका वध किया (भा. १०.११)।

ब्रह्मवैवर्त पुराण के अनुसार, पूर्वजन्म में यह सहोत्र नामक गोत्रवं था। यह कृष्णभक्त था, और दुर्वास ऋषि के आश्रम में रहकर, कृष्ण की प्राप्ति लिए इसने अत्यधिक तपस्या भी की। एक बार कृष्ण की पूजा के हेतु पार्वती

के सरोवर से कमल तोड़ने के अपराध में, वहाँ के रक्षकों द्वारा यह शिवजी के सम्मुख पेश किया गया। शिवजी ने इसकी निश्ठा को देखकर आशीष देते हुए कहा, 'अगले जन्म में तुम्हें कृष्ण के दर्शन होंगे, एवं उन्हींके हाथों तुम्हें मुक्ति भी प्राप्त होगी' (ब्रह्मवै. ४. १६)।

२. एक मरभक्षी यक्षस, जो एकचक्रा से दो कोस की दूरी पर, यमुना नदी के किनारे वेत्रवन नामक घने जंगल की एक गुफा में रहता था। इसका एकचक्रा नगरी तथा वहाँ के जनपद पर शासन चलता था (म. आ. १४८. ३-८)। अलेबुस तथा किमीर इसके भाई थे।

एकचक्रा नगरी के व्यक्तियों ने अत्यधिक परेशान हो कर, इसे घरवैठे ही भोजन भेजना देने के लिए, हर एक व्यक्ति की पारी बाँधी दी।

अब हर एक दिन इसके भोजन के लिए, तीस मनु चावल, दो भैंसे तथा एक व्यक्ति नगरनिवासियों की ओर से जाने लगी। एक दिन एक गरीब ब्राह्मण की पारी आयी, जिसके घर लाक्षाग्रह से निकलने के उपरांत कुंती के साथ पांडवों ने निवास किया था। ब्राह्मण के उपर आयी हुयी विपत्ति को देख कर, कुंतीद्वारा भीम सब खाने-पीने के सामान के साथ राक्षस के निवासस्थान भेजा गया। भीम बक के यहाँ जाकर सारे सामान को स्वयं खाने लगा। यह देख कर बक क्रोधित होकर भीम पर झपटा, और दोनों में मल्लयुद्ध आरम्भ हो गया। अन्त में भीम ने बक का वध किया (म. आ. ५५.२०; १४४-१५२)।

३. अंधकासुर के पुत्र-आडि नामक असुर का नामांतर (आडि देखिये)।

बक दाल्भ्य—एक ऋषि, जो दाल्भ्य ऋषि का भाई था (म. स. ४.९; २६.५; परि. १. क्र. २१. पंक्ति १-४)। महाभारत में इसके नाम का निर्देश दाल्भ्य के साथ प्रायः हर एक जगह आया है। किन्तु, यह निर्देश कभी 'बकदाल्भ्यौ' (बक एवं दाल्भ्य) रूप से, एवं कभी 'बको दाल्भ्यः' (दल्भ का पुत्र बक) रूप में भी प्राप्त है। इसी कारण यह दाल्भ्य ऋषि का भाई था, अथवा दल्भ ऋषि का पुत्र था, यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। उपनिषदों में 'दाल्भ्य' बक ऋषि का पैतृक नाम दिया गया है (छां. उ. १.२.१२; क. सं. ३०.२; दाल्भ्य देखिये)।

कई विद्वानों के अनुसार, ग्लाय मित्र एवं यह दोनों एक ही व्यक्ति थे। 'जैमिनि उपनिषद् ब्राह्मण' में, आजकेशिनों के लिए इन्द्र को विवश करनेवाले एक व्यक्ति के रूप में, तथा कुरू-पंचाल के रूप में इसका उल्लेख किया गया है (जै. उ. ब्रा. १.९.२; ४.७.२)।

तीर्थयात्रा करता हुआ बलराम, बक दाल्भ्य के आश्रम आया था। वहाँ बलराम को इसके बारे में निम्नलिखित कथा ज्ञात हुआ। उस कथा में बक दाल्भ्य के प्रत्यक्ष उपस्थिति का उल्लेख नहीं है, जिससे ज्ञात होता है कि, उस समय यह आश्रम में न था।

एक बार, यह नैमिषारण्य के ऋषियों द्वारा आयोजित द्वादशवर्षीययज्ञ एवं विश्व जित यज्ञ में भाग लेकर, पांचाल देश पहुँचा। वहाँ के राजा ने इसका उचित आदरसत्कार कर, उत्तम जाति की इक्रीस गायों को दक्षिणा के रूप में इसे भेंट की। इन गायों को स्वीकार

कर, इसने उन्हें नैमिषारण्यवासी ऋषियों का प्रदान करते हुए कहा, 'इन गायों को आप लोग ग्रहण करें, मैं सार्वभौम कुरुराज धृतराष्ट्र के पास जाकर पुनः दक्षिणा प्राप्त करूँगा'।

धृतराष्ट्र से विरोध—धृतराष्ट्र के पास जाने के बाद इसे वहाँ धृतराष्ट्र द्वारा मृतक गायों की दक्षिणा प्राप्त हुयी। अपने इस अपमान को देखकर, यह कुरुराज पर अत्यधिक क्रोधित हुआ एवं उसके विनाश के लिए यज्ञ करने लगा। दक्षिणा में प्राप्त मृतक गायों को उसी यज्ञ में हवन कर, इसने धृतराष्ट्र के वंश, राज्य आदि के विनाश के लिए प्रार्थना की।

इस यज्ञ का प्रभाव यह हुआ कि, धृतराष्ट्र का राज्य दिन पर दिन उजड़ कर नष्टप्राय होने लगा, मानों किसी-ने हरेभरे बन के वृक्षों को कुल्हड़ी से काट कर रख दिया हो। राष्ट्र की हालत देखकर, ज्योतिषियों के परामर्श से धृतराष्ट्र बक ऋषि की शरण गया, एवं राष्ट्र को विनाश से मुक्त करने की याचना करने लगा। धृतराष्ट्र की दयनीय स्थिति को देख कर, तथा उसकी प्रार्थना से द्रवीभूत होकर, यह राष्ट्रसंहारक मन्त्रों को छोड़कर राष्ट्रकल्याणकारी मन्त्रों के उच्चारण के साथ पुनः यज्ञ करने लगा, जिससे राष्ट्र विनाश से बच गया। इससे प्रसन्न होकर धृतराष्ट्र ने बक ऋषि को अनेकानेक सुन्दर गायों को दक्षिणा के रूप में भेंट दी, जिन्हें लेकर यह नैमिषारण्य वापस लौट गया (म. श. ४०)।

तत्त्वज्ञान—युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह ब्रह्मा नामक ऋत्विज बना था। पाण्डवों के अश्वमेध यज्ञ के समय, अश्व के रक्षणार्थ निकला हुआ अर्जुन इसका दर्शन करने के लिए इसके आश्रम आया था। उस समय अर्जुन के साथ जो इसका संवाद हुआ था, वह इसकी परम विरक्ति एवं मितभाषणीय स्वभाव पर काफ़ी प्रकाश डालता है।

इसके आश्रय में कोई झोपड़ी न थी। यह खुले मैदान में, सर पर एक वटवृक्ष के पत्ते को रक्ते हुए तपस्या कर रहा था। अर्जुन ने इसे इसप्रकार बैठा देखकर प्रश्न किया 'यह सर पर वटपत्र क्या अर्थ रखता है?' इसने जवाब दिया 'धूप से बचने के लिए'। अर्जुन ने पुछा, 'इसके लिए आप को झोपड़ी आदि बनवाना चाहिये'। इसने जवाब दिया 'उम्र इतनी कम है कि, इन चीजों के लिए समय ही कहाँ?' इस पर अर्जुन ने इसकी आयु पूछी। तब इसने जवाब दिया 'ब्रह्मा की वीर अहोरात्रि'।

ब्रह्मा का हर एक दिन और रात एक सहस्र वर्षों की होती है, यह मन ही मन जान कर, अर्जुन को इसकी आयु हजारों सालों की प्रतीत हुयी। बाद में, अर्जुन इसे पालकी में सम्मानपूर्वक बिठा कर युधिष्ठिर के अश्वमेधयज्ञ में ले गया (जै. अ. ६०)।

बहुत वर्षों तक जीनेवाले व्यक्ति को किन दुःख-सुखों के बीच गुजरना पड़ता है, इस सम्बन्ध में इसका तथा इन्द्र का संवाद हुआ था। इस संवाद में इन्द्र ने उल्लेख किया है कि, इसकी आयु एक लाख वर्षों से भी अधिक थी (म. व. परि. १. क्र. २१)।

यह अधिक काल तक जीवित रहा, इसके सम्बन्ध में एक और कथा 'जैमिनि अश्वमेध' में दी गयी है। एक बार इसने अग्निमान में आ कर ब्रह्मा से कहा, 'मैं तुमसे आयु में ज्येष्ठ हूँ, अतएव मेरा स्थान तुमसे ऊँचा है'। ब्रह्मा ने इसके द्वारा इसप्रकार की अपमानभरी वाणी सुन कर, इसके मिथ्याभिमान एवं भ्रम के निवारणार्थ प्राचीन ब्रह्मदेवों का साक्षात् दर्शन करा कर सिद्ध कर दिया कि, यह उसकी तुलना में कुछ भी नहीं था (जै. अ. ६१)।

लंकाविजय के पूर्व, राम वक्र दाल्भ्य के आश्रम गया था, और समुद्र किस प्रकार पार किया जाय, इसके बारे में राय माँगी थी। तब इसने राम को 'विजया एकादशी' का व्रत बसा कर उसे करने के लिए कहा। इसी व्रत के कारण ही, राम रावण का वध कर विजय प्राप्त कर सका (पद्म. उ. ४८)।

छान्दोग्य उपनिषद् में—वक्र दाल्भ्य की एक कथा दी गयी है, जिसमें ऐहिक सुखप्राप्ति के लिए मन्त्रोच्चारण का स्वांग रचानेवाले लोगों का लक्षणात्मक रूप से उपहास किया गया है। यह कथा कुत्तों से सम्बंधित है, जो वक्र दाल्भ्य द्वारा देखी गयी। इन्होंने देखा कि, एक सफेद कुत्ते से अन्य कुत्ते अपने खाने की समस्या को रखकर निवेदन कर रहे हैं, 'हम भुज्जे है, क्या खाये ! कहीं से हमें कैसे अन्न प्राप्त हो !' सफेद कुत्ते ने कहा, 'ठीक है, कल आओ, हम देंगे तुम्हें भोजन'। यह सुनकर कुत्ते चले गये और दूसरे दिन फिर उसी सफेद कुत्ते के पास पहुँचे। वक्र ऋषि भी जिज्ञासावश दूसरे दिन सफेद कुत्ते की करामत देखने को हाजिर हुए। ऋषि ने देखा कि, सभी कुत्तों के चुपचाप खड़े हो जाने के उपरांत, गर्दन उँची कर सफेद कुत्ता सामिमानपूर्वक मनगटन्त मन्त्र उँचारीत करने लगा— 'हिम् ॐ ! हम खायेंगे। ॐ हम पियेंगे। भगवान् हमें

अनाज दे। हे अनाज देनेवाले प्रभो, हमें अनाज दे। (छां. उ. १.१२)।

वक्रनख—विश्वामित्र का ब्रह्मावादी पुत्रों में से एक। (म. अनु. ४.१८)।

वकी—पृतना राक्षसी का नामांतर।

वटु—गीता का नित्यपाठ करनेवाला भक्त ब्राह्मण। धर्माचरण करने के कारण, मृत्योपरांत इसे स्वर्ग की प्राप्ति हुयी। पर इसका नश्वर शरीर इसी लोक में रहा। पक्षियों ने इसके मृत शरीर के समस्त मांस को खा डाला, केवल अस्थिपंजर ही शेष बचा। पश्चात् वर्षों के दिनों में इसकी खोपड़ी बरसाती पानी से भर गयी, जिसके स्पर्श से एक पापी का उद्धार हुआ (पद्म. उ. १७९)।

वध्यश्व—(सो. नील.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सुमहायशस् राजा का पुत्र था। मत्स्य के अनुसार, 'वध्यश्व' सुविख्यात 'वन्ध्यश्व' राजा का ही पाठभेद है (वन्ध्यश्व देखिये)।

वंदिन्—ऐन्द्रशुग्नि जनक राजा के राजसभा का वाक्पटु पंडित (म. व. १३२.४)। राजा जनक को इनने अपना परिचय 'वक्ष्णपुत्र' के रूप में दिया था (म. व. १३४.२४)। किन्तु महाभारत में अन्यत्र, इसे सूतपुत्र भी कहा गया है (म. व. १३४.२१)।

इसने अन्य ब्राह्मणों के साथ कर्होड़ को शास्त्रार्थ में परास्त कर, शर्त के अनुसार जल में डूबोया था (म. व. १३२.१३)। अन्त में, अष्टावक्र ने अपने पिता कर्होड़ की मृत्यु का बदला लेने के लिये, इसे वादविवाद में हराया था (म. व. १३४.३-२१)। इस समय अष्टावक्र की आयु दस ग्यारह वर्षों ही की थी (म. व. १३२.१६; १३३.१५; अष्टावक्र देखिये)। इस प्रकार पुरानी शर्त के अनुसार, ऐन्द्रशुग्नि जनक ने इसे समुद्र में प्रवेश करने के लिए विवश किया (म. व. १३४.३७)।

महाभारत में दी गयी वेंदिन् की कथा में, जनक को ऐन्द्रशुग्नि (म. व. १३३.४), उग्रसेन (म. व. १३४.१) तथा पुष्करमालिन् (म. व. १३३.१३) कहा गया है। विदेह की वंशावलि में जनक के ये नाम अनुपलब्ध हैं।

महाभारत में इसके नाम के लिए वेंदिन् (म. व. १३२.१३; १३३.१८; १३४.२), तथा वेंदि (म. व. १३२.४.१३३.५) दोनों पाठभेद प्राप्त हैं।

वन्धु—(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, वेगवान् राजा का पुत्र था। अन्य पुराणों में इसे 'बुध' भी कहा गया है।

बंधु गौपायन (लौपायन)—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. २४. १; १०. ५७-६०)।

बंधुपालित (मौर्य. भविष्य)—एक राजा, जो वायु के अनुसार कुनाल का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार कुशल का पुत्र था। इसने आठ वर्षों तक राज्य किया।

बंधुमत्—(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो भागवत एवं वायु के अनुसार केवल राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम वेगवान् था। इसके नाम के लिए 'बंधुमत्' पाठभेद भी उपलब्ध है (बंधुमत् देखिये)।

बबर प्रावाहणि—एक आचार्य, जो श्रेष्ठ वक्ता बनना चाहता था। इसी इच्छा के बशीभूत होकर इसने पंचविंश यज्ञ किया था, जिससे इसे भाषासौन्दर्यशक्ति, साहित्यज्ञान तथा वक्तृत्वकला प्राप्त हुयी (तै. सं. ७. १. १०. २)।

बभ्रु—(सो. पुरुरवस्.) एक राजा, जो ययाति का पौत्र एवं द्रुह्य का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सेतु था। कई ग्रन्थों में इसें बभ्रुसेतु भी कहा गया है, पर वास्तविकता यह है कि, सेतु इसके भाई का नाम था। वायु में इसके पुत्र का नाम रिपु दिया गया है (वायु. १९. ७.)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो रोमपाद का पुत्र था। पद्म में इसे लोमपाद का पुत्र कहा गया है, और इसके पुत्र का नाम धृति बताया गया है (पद्म. सू. १३)।

कई ग्रन्थों में इसके पुत्र का नाम कृति भी मिलता है।

३. विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मज्ञानी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४. ५०)। इसके वंश के लोग भी 'बाभ्रुव्य' नाम से ही प्रसिद्ध हुए (ब्रह्म. १०. ६१; वायु. ११. ९९)।

४. सात्वतवंशीय अक्रूर राजा का नामांतर (ब्रह्मांड. १. ७१. ८१; म. शां. ८२. १७; अक्रूर देखिये)।

५. एक आचार्य, जो भागवत के अनुसार, व्यास के अथर्ववेदशिष्य परंपरा के आंगिरस शुनक का शिष्य था। इसे आंगिरस ने अथर्वसंहिता प्रदान की थी (भा. १२. ७. ३; व्यास देखिये)।

६. मत्स्यनरेश विराट का एक पुत्र (म. उ. ५६. ३३)।

७. कश्यप कुलोत्पन्न संपाति का ज्येष्ठ पुत्र। इसके भाई का नाम शीघ्रग था (पद्म सू. ६. ६८)।

८. ऋषभ पर्वत पर रहनेवाला एक गंधर्व।

९. एक स्मृतिकार, जो बभ्रुस्मृति का रचियता कहा जाता है (C. C.)।

बभ्रुआत्रेय—एक वैदिक आचार्य एवं सूक्तद्रष्टा, जिसने ऋणंचय राजा से उपहार प्राप्त किये थे (ऋ. ५. ३०. ११-१४)। ऋग्वेद में अन्य जगह इसे अश्वियों का आश्रित भी कहा गया है (ऋ. ८. २२. १०; बृहदे. ५. १३. ३३-३४)। अथर्ववेद में भी एक स्थान पर बभ्रु का निर्देश प्राप्त है (अ. वे. ४. २९. २)। किन्तु विद्वानों इसे व्यक्तिवाचक नाम नहीं मानते।

बभ्रु काश्य—काशी का सुविख्यात राजा, जिसे श्रीकृष्ण की कृपा से राज्यश्री का लाभ हुआ था (म. ३. २८. १३)।

बभ्रु कौम्भ्य—तांड्य ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक सामद्रष्टा (तां. ब्रा. १५. ३. १३)।

बभ्रु देवावृध—(सो. क्रोष्टु.) एक यादववंशीय राजा, जो सात्वतपुत्र देवावृध का पुत्र था। इसकी माता का नाम पर्णाशा था। इसके नाम के लिये 'भानु' पाठभेद प्राप्त है।

यह राजर्षि यज्ञविद्या में बड़ा ही निपुण था। सहदेव साङ्ग्य ने इसे सोम बनाने की विशेष पद्धति प्रदान की थी। ऐतरेय ब्राह्मण में इसे पर्वत एवं नारद का शिष्य कहा गया है (ऐ. ब्रा. ७. ३४)। सायणाचार्य इसे दो अलग व्यक्ति मानते हैं।

यह बड़ा ही दयालु एवं उपकारी राजा था। इसने लोगों को दान भी प्रचुर थावा में दिये थे। इसकी उदारता के कारण ही, इसे दानपति नाम प्राप्त हुआ था।

इसके पुण्यकर्मों के कारण, इसके वंश का उद्धार हुआ (भा. ९. २४. १०.)। इसके वंश के रूप भोज 'मार्तिवतक' नाम से सुविख्यात हैं (ब्रह्म. १५. ३५-४५.)।

महाभारत में इसे वृष्णिवंशीय यादव, एवं यदुवंशियों के सात मंत्रिपुंगवों में से एक कहा गया है (म. स. १३. १५९*)।

सुभद्राहरण के समय रैवतक पर्वत पर हुए महोत्सव में यह उपस्थित था (म. आ. २११. १०)। एकवार श्रीकृष्ण से मिलने यह द्वारका गया था, उस समय शिशुपाल ने इसके पत्नी का हरण किया था (म. स. ४२. १०)।

द्वारका में हुए 'यादवी युद्ध' के समय, इसने श्रीकृष्ण के पास ही बने हुए पेयपदार्थों का सेवन किया था (म. मौ. ४. १५)। द्वारका में हुए यादवी युद्ध में सारे यादव लोगों का संहार हो गया, एवं द्वारकानिवासी यादव-स्त्रियों की जान खतरे में आ गयी। उस समय दस्यु आदि

चोर धनादि के लोभ से आक्रमण न करे, इसलिये यादव क्रियों का रक्षण करने का काम, श्रीकृष्ण ने इसे एवं दासक को कहा था। किंतु इसके पहले ही मौसलयुद्ध में फँके गये एक मूसल से इसकी मृत्यु हो गयी (म. मौ. ५.५-६)।

बभ्रुमालिन्—युधिष्ठिर की सभा का ऋषि (म. स. ४.१४)।

बभ्रुवाहन—मणिपुरनरेश चित्रवाहन की पुत्री चित्रांगदा के गर्भ से अर्जुनद्वारा उत्पन्न एक शूरवीर शासक (म. आ. २०७.२१-२३)। चित्रवाहन ने अर्जुन को अपनी कन्या देने से पूर्व वह शर्त रखी थी कि, 'इसके गर्भ से जो भी पुत्र होगा, वह यही रह कर इस कुलपरम्परा का प्रवर्तक होगा। इस कन्या के विवाह का यही शुल्क आपको देना होगा।' 'तथास्तु' कह कर अर्जुन ने वैसा ही करने की प्रतिज्ञा की।

जन्म—चित्रांगदा के पुत्र हो जाने पर उसका नाम बभ्रुवाहन रखवा गया। उसे देख कर अर्जुन ने राजा चित्रवाहन से कहा—'महाराज! इस बभ्रुवाहन को आप चित्रांगदा के शुल्क के रूप में ग्रहण कीजिये, जिससे मैं आप के ऋण से मुक्त हो जाऊँ।' इस प्रकार बभ्रुवाहन धर्मतः चित्रवाहन का पुत्र माना गया (म. आ. २०६.२४-२६)। चित्रवाहन राजा उसी प्रभञ्जन राजा का वंशज था, जिसने पुत्र न होने पर शंकर की तपस्या कर पुत्रप्राप्ति के लिये वर प्राप्त किया था (प्रभञ्जन देखिये)। चित्रवाहन के उपरांत यह मणिपूर राज्य का अधिकारी बना, जिसकी राजधानी मण्डरपूर थी (म. आ. ३.८१; परि. १, क्र. ११२)।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, इसने सहदेव को करभार दिया था (म. स. परि. १, क्र. १५. पंक्ति ७३)।

अर्जुनविरोध—युधिष्ठिर द्वारा किये गये अश्वमेध के अश्व के साथ, धूमता धूमता अर्जुन इसके राज्य में आया था। इसने यज्ञ का अश्व देख कर उसे अपने अधिकार में कर लिया। पर जैसेहि इसे पता चला कि, यह मेरे पिता का ही अश्व है, इसने अश्व को धनधान्य तथा द्रव्यादि के साथ अर्जुन के पास लौटा दिया। अर्जुन ने बभ्रुवाहन के इस कार्य की कटु आलोचना की, तथा इसकी निबलता तथा असहाय स्थिति पर शोक प्रकट करते हुए इसके द्वारा दिखे गये द्रव्यादि को लौटा दिया।

अर्जुन के व्यंग वचनों को सुन कर, इसने अपने मंत्री सुबुद्धि के साथ यज्ञ के अश्व को पकड़ कर नगर भेज

दिया, तथा अपने सेनापति सुमति के साथ ससैन्य अर्जुन पर धावा बोल दिया। इस युद्ध में बभ्रुवाहन ने अपने अभूतपूर्व शौर्य का प्रदर्शन किया, तथा अर्जुन को रण में परास्त कर उसका वध किया। इसी युद्ध में १.११ पुत्र वृषकेतु का भी इसने वध किया (जै. अ. ३७)।

विजयोद्घास में निमग्न बभ्रुवाहन राजधानी वापस लौटा, तथा अपनी वीरता की कहानी के साथ अर्जुन की मृत्यु का समाचार इसने चित्रांगदा को कह सुनाया। यह समाचार सुनते ही, इसकी माँ शोक में विलाप करती हुयी पति के शव के साथ सती होने को तत्पर हुयी। इस प्रतिक्रिया को देख कर, अपनी माता-पिता का हत्यारा अपने को मान कर, यह स्वयं ही आत्महत्या के लिये प्रस्तुत हुआ।

मृतसंजीवन—उक्त स्थिति को देख कर, इसकी सौतेली माँ उरूपी, जो अर्जुन की नागपत्नी थी, वह भी दुःखित हुयी। उसने इसे तथा चित्रांगदा को सात्वना देते हुए युक्त वतायी कि, यदि यह शेषनाग के पास जा कर मृतसंजीवक मणी को ले आये, तो अर्जुन पुनः जीवित हो सकता है। इसपर यह शेषनाग से मणि लाने गया, किंतु अन्य सर्पों के बहकाने पर शेषनाग ने इसे मणि देने से इन्कार कर दिया। अन्त में, शेषनाग को युद्ध में परास्त कर, यह उस मणि को लेकर अपने नगर वापस आया।

मणि को लेकर यह अर्जुन के शवके पास गया। किंतु इसने वहाँ देखा कि, अर्जुन का कटा हुआ सर किसी के द्वारा चुरा लिया गया है। यह बड़ा हताश हुआ, किन्तु कृष्ण अपने पुण्यप्रभाव से पुनः उस सर को वापस लाया। इस प्रकार अर्जुन मणि के द्वारा जीवित किया गया। दोनों पिता-पुत्र पुनः मिले, तथा अर्जुन अश्वमेध अश्व के साथ आगे चल पड़ा (जै. अ. २१-४०)।

महाभारत में अर्जुन एवं बभ्रुवाहन के बीच हुए युद्ध की कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। इस ग्रन्थ में अर्जुन की मृत्यु नहीं दिखायी गई है, बल्कि दिखाया गया है कि, बभ्रुवाहन ने अपनी सौतेली माता उरूपी के द्वारा प्राप्त किये हुए मायावी अस्त्रों के द्वारा अर्जुन को युद्ध में मूर्च्छित किया (उरूपी देखिये)।

यह घटना सुन कर चित्रांगदा ने उरूपी की निर्मत्सना की, तथा उसे बुरा भला कहा। उरूपी ने अपनी गस्ती स्वीकार कर बभ्रुवाहन को मृतसंजीवक मणि दी, तथा कहा 'इसे ले जा कर अर्जुन के वक्षस्थल पर रखो। वह पुनः

जीवित हो जायेगा' (म. आश्र. ८१.९-१०)। मणि के स्पर्श से अर्जुन पुनः जीवित हो उठा। पितापुत्र दोनों गले मिले। पश्चात्, अर्जुन ने बड़े सम्मान के साथ बभ्रुवाहन को युधिष्ठिर के होनेवाले अश्वमेध के लिये निमन्त्रित किया, एवं यह अपनी दोनों माताओं के साथ यज्ञ में सम्मिलित हुआ (म. आश्र. ९०. १)।

२. कृतयुग का एक राजा। एक बार यह मृगया के हेतु वन को गया था, जहाँ सुदेव की प्रेतात्मा ने अपने पूर्वजन्म की कथा इससे कही थी (गद्य. २.९)।

बम्ब आजद्विष—एक आचार्य, जो अजद्विष का वंशज था (जै. उ. ब्रा. २. ७. २-६)। इसके नाम के लिए 'बिम्ब' पाठभेद उपलब्ध है।

बम्बाविश्ववर्षम्—एक ऋषिद्वय, जिन्होंने एक विशिष्ट देवता को सोमरस अर्पित करने का एक नया संप्रदाय स्थापित किया था। इन्होंने किसी अन्य संस्कारों का भी प्रणयन किया था (तै. सं. ६. ६. ८. ४; क. सं. २९. ७)। काठक संहिता में, इनके नाम के लिये 'बम्भा', एवं मैत्रायणी संहिता में 'बम्ब' पाठभेद दिया गया है (मै. सं. ४. ७. ३)।

बरु—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ९६; ऐ. ब्रा. ६. २५; सां. ब्रा. २५. ८)।

बर्कु वार्ष्णी—शतपथ ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक तत्त्वज्ञ आचार्य, जिसने 'अन्तिम तत्व नेत्र' का प्रतिपादन किया था (श. ब्रा. १. १. १. १०; बृ. उ. ४. १. ४; ५. १. ८)।

बर्बर—बर्बर देश के निवासी। इनकी गणना उन म्लेच्छ जातियों में की जाती है, जिनकी उत्पत्ति नन्दिनी के पार्श्वभाग से हुयी थी (म. आ. १६५. ३६)। अन्य म्लेच्छ वंशियों के साथ, राजा सगर ने इन्हें भी पराजित किया था, किन्तु अपने गुरु विश्वामित्र के आग्रह पर, इन्हे विद्वतरूप बना कर छोड़ दिया (सगर देखिये)।

महाभारत के अनुसार, भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्बिजय के समय, तथा नकुल ने अपने पश्चिमदिग्बिजय के समय इन्हें जीतकर भेट वसूल की थी (म. स. २९. १५)। ये युधिष्ठिर राजसूय यज्ञ में भी भेंट लेकर आये थे (म. आ. ४७. १९)।

बर्बरिक—भीमपुत्र घटोत्कच का पुत्र, जो प्रग्योतिषपुर के गुरु दैत्य की कन्या मौर्वी से उत्पन्न हुआ था। 'चंडिका कृत्य' में अतिशय पराक्रम दिखाने के कारण,

इसे 'चंडिल' नामांतर भी प्राप्त हुआ। श्रीकृष्ण ने लोहवंश इसे 'सुहृदय' नाम दिया था।

पूर्वजन्म—पूर्वजन्म में यह सूर्यवर्ष नाम यक्ष था। एक बार दानवों के अत्याचार से पीड़ित हो कर, समस्त देव विष्णु के पास गये एवं दानवों का नाश कर पृथ्वी के भूभार हरण की प्रार्थना उन्होंने विष्णु से की। उस समय इसने अहंकार के साथ कहा, 'विष्णु की क्या आवश्यकता है, मैं अकेला सारे दैत्यों का नाश कर सकता हूँ'। इसकी यह गर्वोक्ति सुन कर ब्रह्मा ने इसे शाप दिया, 'अगले जन्म में कृष्ण के हाथों तेरा वध होगा'।

देवी उपासना—ब्रह्मा के द्वारा मिले हुए शाप का शमन करने के हेतु, अगले जन्म में कृष्ण ने इससे देवी उपासना करने के लिये उपदेश दिया। अंत में विजय नामक ब्राह्मण की कृपा से देवी को प्रसन्न कर, इसने महाजिह्वा नामक बलिष्ठ राक्षसी, तथा रेपलेंद्र राक्षस का वध किया। दुहदु नामक गर्दभी एवं एक जैन श्रमण का भी सुष्टिहार द्वारा वध किया। विजय ने इसे शत्रु के मर्मस्थान को वेधने के लिये विभूति प्रदान की, एवं भारतीय युद्ध में कौरवों के विपक्ष में उसे प्रयोग करने के लिये कहा।

एक बार अपने पितामह भीम को न पहचान कर, इसने उसके साथ मलयुद्ध कर पराजित किया। बाद में पता चलने पर, आत्मग्लानि अनुभव कर यह आत्महत्या के लिए प्रस्तुत हुआ। तत्काल, देवी ने प्रकट हो कर कहा, 'तुम्हें कृष्ण के हाथों मर कर मुक्ति प्राप्त करनी है, अतएव यह कुकृत्य न करो'।

भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था, तथा कौरवपक्ष को परास्त करने के लिए इसने अपनी विभूति का प्रयोग किया था। वह विभूति पाण्डव, कृपाचार्य, एवं अश्वत्थामा को छोड़ कर बाकी सारे मित्रों तथा शत्रुओं के मर्मस्थान पर लगी, जिससे रणभूमि में कोलाहल मच गया। यह विभूति कृष्ण के पैर के तलवे पर भी लगी, जिससे क्रोधित हो कर कृष्ण ने सुदर्शन चक्र से इसका सर काट दिया। पश्चात् देवी ने इसे पुनः जीवित किया। भारतीय युद्ध के पश्चात्, श्रीकृष्ण के कहने पर यह 'गुप्तक्षेत्र' में जा कर निवास करने लगा (स्कंद. १. २. ६०-६६)।

बर्हकेतु—दक्ष सावर्णि मनु का एक पुत्र।

बर्हणाश्व—(सू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार निकुंभ राजा का पुत्र था। विष्णु, वायु तथा मत्स्य में, इसे 'संहताश्व' कहा गया है।

बर्हिन्—एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के दस देवगंधर्व पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.४५)

बर्हिषद्—दैवी जाति के पितरों का एक गण, जो दक्षिण दिशा में सोमप (सोमपदा) नामक स्थान में रहता था। इसकी मानसकन्या का नाम पीवरी था (पितर देखिये)।

२. (स्वा. उत्तान.) प्राचीनबर्हि प्रजापति का नामान्तर (प्राचीनबर्हि प्रजापति देखिये)।

३. त्रिलोकी को उत्पन्न करने में समर्थ पूर्वदिशा-निवासी सप्तर्षियों में से एक (म. शां. २०८. २७-२८)। ब्रह्माजी ने इसे सात्वतधर्म का उपदेश दिया था (म. शां. ३३८. ४५-४६)।

बर्हिष्मती—स्वायंभूव मन्वंतर के प्रजापति की कन्या, जो स्वायंभूव मनु के ज्येष्ठपुत्र प्रियव्रत को विवाह में दी गयी थी (भा. ५. १. २४)।

बर्हिसादि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

बल—एक असुर, जो कश्यप एवं दनायु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ६५; स्कंद १.४.१४)। इसे निम्न-लिखित तीन भाई थे:—विश्वर, वीर एवं वृत्र (म. आं. ५९.३२)। यही पौंड्र देश के राजा के रूप में उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.४१)।

हिरण्यवक्ष की ओर से यह इंद्र के साथ युद्ध करने गया था, जिस समय इसने इंद्र को ऐरावत के साथ नीचे गिरा कर मूर्च्छित किया था। अन्त में इंद्र ने इसका वध किया (पद्म. सु. ६७)।

२. वरुण एवं उसकी ज्येष्ठ पत्नी देवी का एक पुत्र (म. आ. ६०.५९)।

३. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो परिक्षित एवं मंडुकराज की कन्या सुयोभना का पुत्र था। इसके शल एवं दल नामक दो भाई थे (म. व. १९०)। भागवत में दल एवं बल ये दोनों एक ही व्यक्ति माने गये हैं (दल १. देखिये)।

४. रामसेना का एक वानर, जो कुंभकर्ण के साथ युद्ध में उसका प्रासन्न गया था (म. व. २७१. ४)।

५. बायुद्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दुसरे पार्षद का नाम अतिबल था (म. श. ४४.४०)।

६. एक प्राचीन ऋषि, जो अंगिरा का पुत्र था एवं पूर्व दिशा में निवास करता था (म. शां. २०१.२५)। इसके नाम के लिये 'नल' पाठभेद प्राप्त है।

७. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ११.३०)।

८. एक दैत्य, जो कश्यप एवं दिति के पुत्रों में से एक था। दिति द्वारा सौ वर्षोंतक तप करने पर यह उत्पन्न हुआ था। बड़ा होने पर कश्यप ने इसका व्रतबंध किया, एवं इसे ब्रह्मचर्य का उपदेश दिया। पश्चात् इसने सौ वर्षों तक ब्रह्मचर्यव्रत का पालन कर घोर तपस्या की।

इसका तप समाप्त होने पर, दिति ने इसे स्वयं पर आक्रमण करने के लिये कहा। किन्तु कश्यप की दूसरी पत्नी अदिति को यह वृत्तंत ज्ञात होते ही उसने इंद्र को चेतावनी दी। अनंतर समुद्रकिनारे जाप करते हुए इसे देख कर, इंद्र ने वज्रप्रहार कर इसका वध किया (पद्म. भू. २३)।

९. विष्णु का एक पार्षद। वामनावतार के समय, वामनरूपधारी श्रीविष्णु ने बलि को पाताल में ढकेल दिया। तत्पश्चात् बलि के यज्ञमंडप में उसके अनुगामियों ने काफी हलचल मचा दी। उससमय उन राक्षसों का जिन विष्णुपार्षदों ने निवारण किया, उनमें यह एक था (भा. ८.२१.१६)।

१०. कुशिककुल का एक मंत्रकार, जिसे उद्दल नामांतर भी प्राप्त था।

११. वायु के अनुसार भृगुकन्या श्री का पुत्र।

१२. गरुड एवं कश्यपकन्या शुक्रि के छः पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. ३.७.४५.०)।

१३. अनायुषा नामक राक्षसी के पाँच पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. ३.६.३१-३७)।

१४. श्रीकृष्ण एवं लक्ष्मणा के पुत्रों में से एक।

१५. बलराम का नामांतर।

१६. एक मायावी दैत्य, जो मयासुर का पुत्र था। यह अतल नामक पाताल में रहता था। इसने लियान्नदे प्रकार की 'माया' का निर्माण कर, उसे मायावी दैत्यों को दिया था, जिसका प्रयोग कर वे लोगों को व्रत किया करते थे।

एक बार इसने जमुहाई ली, जिससे स्वैरिणी, कामिनी तथा पुंश्वली नामक तीन प्रकार की दुश्चरित्र स्त्रियों के गण उत्पन्न हुए। उन स्त्रियों पास हाटक नामक एक ऐसा पेयपदार्थ था, जिसे पुरुषों को पि्ला कर एवं उन्हें कामवासना की भावना में उन्मत्त बना कर, वे संभोग करवाती थीं (भा. ५.२४.१६)।

इंद्र एवं जालंधर दैत्य के बीच हुए युद्ध में, इसने जालंधर की ओर से लड़कर, युद्ध में इंद्र के लङ्के लुड़ा दिये, तथा अन्त में इंद्र परास्त होकर इसकी शरण में

आया। इन्द्र ने बल की स्तुति की, जिससे प्रसन्न होकर इसने उससे वर माँगने को कहा। इन्द्र ने कहा 'तुम मुझे अपने शरीर का दान दो, उसे ही मैं चाहता हूँ'। बल ने कहा, 'तुम मेरे शरीर को ही चाहते हो, तो उसके टुकड़े कर उसे प्राप्त करो'। फिर इन्द्र ने इसके शरीर के अनेक टुकड़ें कर उन्हें इधरउधर फेंक दिये। ये टुकड़ें जहाँ जहाँ गिरे, वही रत्नों की खाने खड़ी हो गयी।

इसकी मृत्यु के बाद, इसकी पत्नी प्रभावती शोक में विलाप करती हुयी असुरों के गुरु शुक्राचार्य के पास गयी, तथा उनसे सारी कथा बता कर, अपने पति के जिलाने की प्रार्थना की। शुक्राचार्य ने कहा, 'बल को जिलाना असम्भव है। मैं माया के प्रभाव से उसकी वाणी को तुम्हें अवश्य सुनवा सकता हूँ'। गुरुकृपा से प्रभावती ने बल की वाणी सुनी—'तुम मेरे शरीर में अपने शरीर को त्याग कर मुझे प्राप्त करो'। ऐसा सुन कर बल की देह में अपने शरीर को त्याग कर, प्रभावती उसीमें मिल कर नदी बन गयी (पद्म. उ. ६)।

बलक—तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. एक दानव, जो कश्यपश्वं दनु के पुत्रों में से एक था।

३. मणिवर एवं देवजनी के 'गुह्यक' पुत्रों में से एक।

बलद—एक अग्नि, जो भानु नामक अग्नि का ज्येष्ठ पुत्र था। यह प्राणियों को प्राण एवं बल प्रदान करता है।

बलधरा—काशिराज की कन्या, जो पांडुपुत्र भीमसेन की भार्या थी। इसके विवाह के लिये काशिराज ने यह शर्त रखी थी कि, जो अधिक बलवान् हो, वही इसके साथ विवाह कर सकता है। भीमसेन ने यह शर्त जीत ली, एवं उसका इसके साथ विवाह संपन्न हो गया। भीमसेन से इसे सर्वग नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. १०. ८४)।

बलबन्धु—रैवत मनु का एक पुत्र।

२. एक प्राचीन नरेश (म. आ. १. १७७)।

३. त्रिधामन् नामक शिवावतार का शिष्य।

बलमित्र—एक राजा, जो वीरमणिपुत्र स्वमांगद का मौसरा भाई था। राम के अश्वमेध यज्ञ का अश्व वीरमणि ने पकड़ लिया था। उस समय हुए शत्रुघ्न एवं वीरमणि के युद्ध में, यह वीरमणि के पक्ष में शामिल था (पद्म. पा. ४०)।

बलमोदक—कुंडल नगरी का राजा सुरथ का पुत्र। राम के अश्वमेध यज्ञ का अश्व सुरथ ने पकड़ लिया था।

उस समय हुए शत्रुघ्न एवं सुरथ के युद्ध में, यह सुरथ के पक्ष में शामिल था (पद्म. पा. ४९)।

बलराम—(सो. वृष्णि.) वसुदेव तथा रोहिणी का पुत्र, जो भगवान् श्रीकृष्ण का अग्रज, एवं शेष का अवतार था (म. आ. ६१. ९१)। भगवान् नारायण के इवेत केश से इसका अविर्भाव हुआ था (म. आ. १८९. ३१)।

वसुदेव देवकी कंस के द्वारा कारागार में बन्दी थे। उसीसमय देवकी गर्भवती हुयी, तथा बलराम उसके गर्भ में सात महीने रहा। इसके उपरांत योगमाया से यह वसुदेव की द्वितीय पत्नी रोहिणी के गर्भ में चला गया, जो उस समय गोकुल में थी। वहीं इसका जन्म हुआ (भा. ९. २४. ४६; १०. २. ८; पद्म. उ. २४५)। एक गर्भ से दूसरे गर्भ में जाने के कारण, इसे संकर्षण नाम प्राप्त हुआ।

यह देखने में अत्यंत सुन्दर था, अतएव इसे 'राम', तथा बलभ्रूष के कारण 'बलराम' कहा गया। यह शत्रुओं के दमन के लिये सदैव हल तथा मूसल धारण करता था। अतएव इसे 'हली', 'हलायुध', 'सीरपाणी', 'मूसली' तथा 'सुसलायुध' भी कहते हैं।

बलराम कृष्ण से तीन माह बड़ा था तथा सदैव कृष्ण के साथ रहता था (म. आ. २३४)। यह बाल्यावस्था से ही परमपराक्रमी, युद्धवीर एवं साहसी था, तथा इसने धेनुक तथा प्रलेख नामक असुरों का वध किया था (म. स. परि. १. क्र. २१, पंक्ति. ८१९-८२०; विष्णु. ५. ८-९; भा. १०. १८; ह. वं. २. १४. ६२)।

यह सदैव नीलवस्त्र धारण करता था, तथा इसके शरीर में सदैव कमलों की माला रहती थी। ये सारी चीजे इसे यमुना नदी से प्राप्त हुयी थी, जिसकी कथा निम्न प्रकार से विष्णुपुराण में दी गयी है।

एक बार इसने भावातिरेक में आ कर यमुना से भोग करने की इच्छा प्रकट की। यमुना तैयार न हुयी, तब क्रोध में आ कर इसने मथुरा के पास उसका प्रवाह मोड़ दिया, जिसे विष्णु में 'यमुनाकर्ष' कहा गया है। तब यमुना ने बलराम को शरीर में धारण करने के लिए नील परिधान, तथा कमलों की माला दे कर इसे प्रसन्न किया (विष्णु. ५. २५)।

बाल्यकाल—सांदीपति ऋषि के यहाँ कृष्ण के साथ इसने वेदविद्या, ब्रह्मविद्या तथा अस्त्रशास्त्रादि का ज्ञान प्राप्त किया। यह गदायुद्ध में अत्यधिक प्रवीण था। इसकी शक्ति-साहस के ही कारण, कृष्ण जरासंध को सत्रह बार युद्ध में

पराजित कर सका। जरासंध का वध करने के लिये, इसने तपस्या कर 'संवर्तक' नामक हल, एवं 'सौन्द' नामक मुसल प्राप्त किया था (ह. वं. २.३५.५९-६५; विष्णु. ५.२२.६-७)।

विश्राध्ययन के उपरांत, ककुत्शीकन्या रेवती से इसका विवाह हुआ, तथा अधिकाधिक यह आनर्त देश में अपने श्वसुर के यहाँ ही रहता था। जरासंध इतनी बार कृष्ण से हार चुका था, फिर भी चिन्ता का कारण बना हुआ था; अतएव कृष्ण ने मथुरा से हटकर अपनी राजधानी द्वारका बनायी।

एक बार यह नंद तथा यशोधरा से मिलने के लिए गोकुल गया था, तथा वहाँ दो माह रहा भी था। यह आसवपान का बड़ा शौकीन था, अतएव इसके लिये उसकी भी व्यवस्था की गयी थी।

जलद्वारा स्वभाव--यह वीरपराक्रमी एवं अजेय था, उसी तरह यह इतना भावुक एवं जलद्वारा भी था कि, उतावलेपन में ऐसा कार्य कर बैठता कि, जिससे परिवार के लोक तंग आ जाते। इसमें किसी चीज़ के सोचने समझने की विवेकपूर्ण समझदारी न थी।

हस्तिनापुर में दुर्योधन की पुत्री लक्ष्मणा के विवाह के संबंध में स्वयंवर था। बलराम के भतीजे कृष्णपुत्र सांब ने स्वयंवर में जा कर, लक्ष्मणा का हरण किया। किन्तु दुर्योधन द्वारा हस्तिनापुर में दोनों पकड़ कर लिये गये। दुर्योधन कौरववंशीय होने के कारण, कभी न चाहता था कि उसकी कन्या यादववंशीय कृष्णपुत्र सांब को ब्याही जाये। उक्त घटना को सुनते ही बलराम हस्तिनापुर गया। क्रीधादि में सारे कौरववंशीय राजाओं को इसने पराजित किया, एवं इसने हस्तिनापुर को अपने हल से खींच उसकी रचना ही भुमायी, एवं उसको तेढ़ामेढ़ा बना दिया (विष्णु. ५.३५; भा. १०.६८; लक्ष्मणा २. देखिये)। यही कारण है कि, हस्तिनापुर का धरातल आज भी ऊँचानीचा अजीब तरह का है।

यादववंशीय राजा सत्राजित के पास स्वयंतक मणि था, जिसे कृष्ण चाहता था। पर सत्राजित ने उसे देने से इन्कार कर दिया। उस मणि के संबंध में सत्राजित एवं कृष्ण के दरम्यान हुए झगड़े में, बलराम ने सत्राजित का पक्ष स्वीकार लिया, एवं लोगों के सामने कृष्ण को दोषी ठहराते हुए आरोप लगाया, 'तुम मणि के इच्छुक थे, तुमने ही स्वयंतक चुराया है'। इस घटना के कारण बलराम कृष्ण से इतना नाराज हुआ कि, बिना कुछ कहे मिथिला चला गया,

एवं इसने दुर्योधन को गदायुद्ध की शिक्षा भी दी (विष्णु. ४. १३; भा. १०. ५७; सत्राजित देखिये)। बलराम के नाराज होने की यह कथा भागवत में नहीं दी गयी है।

दुर्योधन एवं भीम उसके शिष्य थे। अतएव यह नहीं चाहता था कि, इसके दोनो शिष्य आपस में लड़कर मृत्यु को प्राप्त हो। इसी कारण भारतीय युद्ध के प्रारंभ में, जब दुर्योधन कृष्ण की मदद माँगने के लिये आया था, तब इसने कृष्ण से कहा था, 'कौरव एवं पांडव हमारे लिये एकसरोखे हैं। इसी कारण सहाय्यता करनी ही हो, तो वह हमने दुर्योधन की करनी चाहिए'। किन्तु कृष्ण ने इसकी बात न सुनी। इस कारण, भारतीय युद्ध के पूर्व ही, यह कृष्ण से क्रुद्ध हो कर, तीर्थयात्रा के लिये चला गया।

बलराम की तीर्थयात्रा--बलराम की तीर्थयात्रा का विस्तृत वर्णन भागवत तथा महाभारत शक्यपूर्व में दिया गया है। भागवत की तीर्थयात्रावर्णन में विभिन्न प्रकार के तीर्थस्थानों का विवरण प्राप्त है।

बलराम का प्रथम संकल्प 'प्रतिलोम सरस्वती यात्रा' करने का था। इस निश्चय के अनुसार यह प्रभास, पृथुदक, विंदुसर, त्रितकूप, सुदर्शन, विशाल, ब्रह्मतीर्थ, चक्रतीर्थ, सरस्वती, यमुना एवं गंगा नदी के तट पर स्थित तीर्थों की यात्रा कर के; नैमिषारण पहुँच गया।

नैमिषारण्य में ऋषिमुनियों की पुराणचर्चा चल रही थी। सारे मुनियों ने उत्थापन दे कर, इसके प्रति आदरभाव प्रकट किया। किन्तु पुराणचर्चा में मुख्य सूत का काम करनेवाला रोमहर्षण नामक ऋषि धर्मकार्य में व्यस्त होने के कारण, इसे उत्थापन न दे सका। इस कारण क्रोधित हो कर, शरात्र के नशे में इसने उसका वध किया (भा. १०. ७८. २८; रोमहर्षण देखिये)। पुराणचर्चा समाप्त होने पर एक ही कोलाहल मच गया, एवं सारे ऋषियों ने इसे ब्रह्महत्या के पातक से दोषी ठहराया। इस पातक से छुटकारा पाने के लिये, यह ग्यारह वर्षों की यात्रा करने के लिये पुनः निकला।

मार्कंडेय के अनुसार, सूत का वध इसके द्वारा द्वारका के समीप स्थित रैवतोग्राम में हुआ (मार्क. ६. ७; ३५-३६)। किन्तु महाभारत एवं भागवत में यह वधस्थान नैमिषारण्य ही बताया गया है। यह वध बलराम के यात्रा के मध्य में हुआ, ऐसा भागवत का कथन है; किन्तु मार्कंडेय के अनुसार, यह वध बलराम के यात्रारंभ में ही हुआ था।

अपने द्वितीय यात्रा के लिये यह निकलनेवाला ही था कि, शत्रु ने इसके सम्मुख आकर भीम एवं दुर्योधन के गदायुद्ध की वार्ता इसे सुनाई। अपने दो प्रियशिष्यों के युद्ध की वार्ता सुन कर, यह शीघ्र ही द्वैपायन हृद नामक युद्धस्थान में चला आया। इसने उस युद्ध को टालने का काफी प्रयत्न किया, किन्तु दोनों प्रतिपक्षियों ने इसकी एक न सुनी। इस पर क्रुद्ध हो कर, यह द्वारका चला गया (भा. १०.७८-७९)।

महाभारत के अनुसार, दुर्योधन एवं भीम के दरम्यान हुए गदायुद्ध में भीम ने कपट से दुर्योधन का वध किया। इस कारण बलराम भीम पर अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं भीम को मारने दौड़ा। किन्तु कृष्ण ने इसे दुर्योधन के सारे कुकृत्यों की याद दिला कर, इसका क्रोध शान्त किया (म. रा. ५९. १४-१५)।

तीर्थयात्रा का द्वितीय पर्व—भागवत में इससे की गयी यात्रा के द्वितीय पर्व का सविस्तृत वर्णन प्राप्त है। उस यात्रा में इसने निम्नलिखित पवित्र स्थानों के दर्शन किये:—सरयु, हरिद्वार, गोमती, गंडकी, विपाशा, शोणभद्र, गया, परशुराम क्षेत्र, सप्तगोदावरी, वैणा, पंपा, भीमरथी, शैलपर्वत, वेंकटगिरी, कामोष्णी, कांची, कावेरी, श्रीरंग, मदुरा, सेतुबंध, कृतमाला, ताम्रपर्णी, अगस्त्याश्रम, दूर्गादेवी, अनंतपुर, पंचाप्सरा, केरल, त्रिगर्त, गोकर्ण, आर्यादेवी, शूर्पारक, तापी, पयोष्णी, निर्बिध्या, दंडकारण्य, नर्मदा, एवं मनु। इन सारे स्थानों की यात्रा समाप्त कर, यह कुरुक्षेत्र वापस आया।

श्रीकृष्ण का पौत्र अनिरुद्ध का विवाह विदभंराजा रुक्मिन् की पौत्री रोचना से संपन्न हुआ। उस समय, रुक्मिन् ने बलराम के साथ कपट से व्रत खेलना चाहा, एवं उसने इसकी काफी निंदा भी की। क्रोधाविष्ट हो कर, बलराम ने व्रत का सुवर्णमय पट रुक्मिन् को मार कर, उसका वध किया (ह. वं. २. ६१; रुक्मिन् देखिये)। नरकासुर का मित्र द्विविद नामक वानर का भी इसने वध किया था (विष्णु. ५. ३६)।

भारतीय युद्ध के पश्चात्, इसने द्वारकापुरी में मद्यपान-निषेध की आज्ञा जारी की थी (म. मौ. १.२९)। किंतु इसके अनुयायी यादवों ने इसकी एक न सुनी, एवं वे आपसमें लड़कर मर गये। इस तरह सारे यादवों का संपूर्ण विनाश होने पर, इसने प्रभास क्षेत्र में यौगिकमार्ग से देहत्याग किया (म. मौ. ५.१२-१५; भा. ११. ३०)। इसकी मृत्यु के पश्चात् इसके मुख से एक

विशालकाय श्वेतसर्प बाहर निकला, जिसका श्रीकृष्ण को दर्शन हुआ (म. मौ. ५.१२-१६)। इसके मृत देह पर इसकी पत्नी रेवती सती हो गयी (पद्म. उ. २५२)।

२. एक महाबली नाम (म. अनु. १३२.८)।

बलवर्धन—(सो. पूरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

बलवाक—युधिष्ठिर की मयसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१२)।

बला—अत्रि की पत्नी।

बलाक—(सो. अमा.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पूरु राजा का, एवं वायु तथा विष्णु के अनुसार, अज राजा का पुत्र था। इसे बलाकाश्च नामांतर भी प्राप्त था (बलाकाश्च देखिये)।

२. एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा में से शातपूर्ण का शिष्य था। भागवत में इसे जातुकर्ण का शिष्य कहा गया है।

३. एक व्याध, जो जानवरों की शिक्षार कर अपने मातापिता एवं भाश्रितों की जीविका चलाता था। एक बार इसने एक हिंसक श्वापद को मार डाला। उस श्वापद ने समस्त प्राणियों का अंत कर देने के लिये वर प्राप्त किया था, एवं इसी कारण ब्रह्मा ने उसे अंधा कर दिया था। उस श्वापद को मार देने के कारण, इस व्याध के उपर पुष्पों की वृद्धि हुई, तथा यह विमान पर बैठ कर स्वर्गलोक को चला गया (म. क. ४९.३४-४१)।

बलाकाश्च—(सो. अमा.) एक राजा, जो जन्हु का पौत्र एवं अज (सिंहद्वीप) का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम कुशिक था (म. अनु. ७.४)। इसे बलाक नामांतर भी प्राप्त था (बलाक १. देखिये)।

बलाकिन—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक (म. आ. ६१. परि. १. क्र. ४१)।

२. एक ऋषि, जो अंगिराकुल का गोत्रकार था।

बलाक्ष—एक प्राचीन नरेश, जो विराट के गोग्राहण के समय अर्जुन एवं कृपाचार्य का युद्ध देखने के लिये, इंद्र के विमान पर बैठ कर आया था (म. वि. ५.९)।

बलाक्य—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

बलानीक—दुपद राजा का एक पुत्र, जो अश्वत्थामा द्वारा मारा गया (म. द्रो. १३१.१२७)।

२. मत्स्यराज विराट का भाई, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. १३३.३५)।

बलायु—पुरुवरुष को ऊर्वशी से उत्पन्न आठ पुत्रों में से एक (पद्म. सू. १२)।

बलायक—अत्रिकुल के मंत्रकार बलूतक का नामांतर (बलूतक देखिये)।

बलाश्व—(सू. दिष्ट.) खनिनेत्रपुत्र करंधम राजा का मूल नाम (माकं. ११८. ७)। इसके पुत्र का नाम अविश्वित् था।

बलाहक—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रु के पुत्रों में से एक था।

२. एक राजा, जो जयद्रथ का भाई था। इसके पिता का नाम वृद्धक्षत्र था (म. व. २४९. १२)।

३. एक राजा, जिसे शिव ने गोवत्स के रूप में दर्शन दिया था। पश्चात् गोवत्स के दर्शन के स्थान पर एक दिव्य शिवलिंग उत्पन्न हुआ, एवं वह अगुप्रमाण में दिन बदिन परिवर्धित होने लगा। किन्तु एक कर्मचांडाल उसके दर्शन के लिये आते ही, उसका वर्धन स्थगित हुआ (स्कंद. ३. २. २७)।

४. श्रीकृष्ण के रथ का एक अश्व, जो बाहिने पार्श्व में जोता जाता था (म. वि. ४०. २१)।

बलि—एक सुविख्यात असुर, जो वामनावतार में श्रीविष्णु द्वारा पाताल में टकेल दिया गया था (बलि वैरोचन देखिये)।

२. अनु देश का सुविख्यात राजा (बलि आनव देखिये)।

३. सुधिष्ठिर के सभा का एक ऋषि, जो जितेंद्रिय तथा वेदवेदाङ्गों में पारंगत था। इसने सुधिष्ठिर को अनेक पुण्यकारक गाथाएँ सुनाई थी (म. स. ४. ८)। हस्तिनापुर जाते समय, मार्ग में इसकी श्रीकृष्ण से भेंट हुयी थी (म. उ. ८१. ३८८*)।

४. एक शिवावतार, जो वाराहकल्प में से वैवस्वत मन्वन्तर की तेरहवीं चौखट में उत्पन्न हुआ था। इसका अवतार गंधमादन पर्वत पर स्थित बालखिल्याश्रम में हुआ था। इसके सुधामन्, काश्यप, वसिष्ठ तथा विरजस् नामक चार पुत्र थे (शिव. शत. ५)।

५. (आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार आंध्र वंश का पहला राजा था। इसे शिप्रक, शिशुक एवं सिंधुक नामान्तर भी प्राप्त थे।

६. सावर्णि मन्वन्तर का इंद्र।

७. (सो. यदु.) एक यादव राजा, जो कृतवर्मन् का पुत्र था। रुक्मिणी की कन्या चारुमती इसकी पत्नी थी (भा. १०. ६१. ४)।

८. अत्रिकुल का एक गोत्रकार।

९. आगिरसकुल का एक गोत्रकार।

१०. रैवत मनु के पुत्रों में से एक।

बलि आनव—(सो. अनु.) पूर्व आनव प्रदेश का सुविख्यात राजा, जो सुतपस् राजा का पुत्र था। यह इक्ष्वाकुवंशीय सगर राजा का समकालीन था। आनव प्रदेश शुरु में आधुनिक मोंचीर तथा भागलपुर प्रान्तों में सीमित था। किन्तु अपने पराक्रम के कारण, इसने अपना साम्राज्य काफी बढ़ा कर, पूर्व हिंदुस्थान का सारा प्रदेश उसमें समाविष्ट कराया।

हरिवंश के अनुसार, पूर्वजन्म में वह बलि वैरोचन नामक सुविख्यात दैत्य था। अपनी प्रजा में यह अत्यंत लोकप्रिय था, एवं उन्हींके अनुरोध पर इसने अगले जन्म में बलि आनव नाम से पुनः जन्म लिया।

इसने ब्रह्मा की कठोर तपस्या की थी, जिस कारण ब्रह्मा ने इसे वर दिये, 'तुम महायोगी बन कर कल्पान्त तक जीवित रहोगे। तुम्हारी शक्ति अतुल होगी, एवं युद्ध में तुम सदा ही अजेय रहोगे। अपनी प्रजा में तुम लोकप्रिय रहोगे, एवं लोग सदैव तुम्हारी आज्ञा का पालन करेंगे। धर्म के सारे रहस्य तुम्हें ज्ञात होंगे, एवं तुम्हारे धर्मसंबंधी विचार धर्मविज्ञों में मान्य होंगे। धर्म को सुसंगठित रूप दे कर, तुम अपने राज्य में चातुर्वर्ण्य की स्थापना करोगे' (ह. वं. १. ३१. ३५-३९)।

इसकी पत्नी का नाम सुदेष्णा था। काफी वर्षों तक इसे पुत्र की प्राप्ति न हुयी थी। फिर दीर्घतमस् औचथ्य मामतेय नामक ऋषि के द्वारा इसने सुदेष्णा से पाँच पुत्र उत्पन्न कराये (दीर्घतमस् देखिये)। दीर्घतमस् ऋषि से उत्पन्न इसके पुत्रों के नाम निम्न थे:—अंग, वंग, कलिंग, पुंड्र एवं सुख (ब्रह्मांड. ३. ७)। भागवत में इसके आंध्र नामक और एक पुत्र का निर्देश किया गया है (भा. ९. २३)। हरिवंश में सुख के बदले सुस नामान्तर प्राप्त है (ह. वं. १. ३१)। इसके वंशजों को 'बालेय क्षत्र' अथवा 'बालेय ब्राह्मण' सामूहिक नाम प्राप्त था (मत्स्य. ४८. २५; विष्णु. ४. १८. १; ब्रह्म. १३. ३१; ह. वं. १. ३१ ३४-३५)। इसके द्वारा स्थापित किये हुए वंश को आनव वंश कहते हैं।

अपने कल्प के अन्त में, देहत्याग कर यह स्वर्गलोक चला गया। इसकी मृत्यु के पश्चात् इसका साम्राज्य इसके पुत्रों में बाँट दिया गया। जिस पुत्र को जो राज्य मिला, उसीके नाम पर उस राज्य का नामकरण हुआ (भा. ९.

२३; म. आ. १२.१०४२*)। इसके पुत्रों को प्राप्त राज्यों की जानकारी निम्न प्रकार है:—

(१) अंग—अंगदेश (आधु. भागलपुर एवं मोषीर इलाका)।

(२) बंग—बंगदेश (आधु. ढाका एवं चितगाँव इलाका)।

(३) कलिंग—कलिंग देश (आधु. उड़ीसा राज्य में से समुद्र तटपर स्थित प्रदेश)।

(४) पुंड्र—पुंड्र देश (आधु. उत्तर बंगाल प्रदेश)।

(५) सुह्य—सुह्यदेश (आधु. बर्दवान इलाका)।

यह एवं असुर राजा बलि वैरोचन सरासर अलग थे। किन्तु कई पुराणों में असावधानी से इन्हे एक व्यक्ति मान कर, बलि आनव को 'दानव' एवं 'वैरोचन' कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.७४.६६; मत्स्य. ४८.२८)। किन्तु पुराणों में प्राप्त वंशावलियों में इसे स्पष्ट रूप से आनव कहा गया है, एवं इसकी वंशावलि भी आनव नाम से ही दी गयी है।

बलि वैरोचन—एक सुविख्यात विष्णुभक्त दैत्य, जो प्रह्लाद का पौत्र एवं विरोचन का पुत्र था। इसकी माता का नाम देवी था (म. आ. ५९.२०; स. ९.१२; शां. २१८.१; अनु. ९८; भा. ६.१८.१६; ८.१३. वामन. २३.७७)। स्कंद में इसकी माता का नाम सुरचि दिया गया है (स्कंद. १.१.१८)। विरोचन का पुत्र होने से, इसे 'वैरोचन' अथवा 'वैरोचनि' नामान्तर प्राप्त थे। इसे महाबलि नामान्तर भी प्राप्त था, एवं इसकी राजधानी महाबलिपुर में थी।

'आचाररत्न' में दिये गये सप्तचिरंजीव पुण्यात्माओं में बलि का निर्देश प्राप्त है (आचार. पृ. १०)। बाकी छः चिरंजीव व्यक्तियों के नाम इस प्रकार हैं:—अश्वत्थामन्, न्यास, हनुमान्, विभीषण, कृप, परशुराम, (मार्कंडेय)।

बलिकथा का अन्वयार्थ—बलि दैत्यों का राजा था (वामन. २३)। दैत्यराज होते हुए भी, यह अत्यंत आदर्श, सन्वशील एवं परम विष्णुभक्त सम्राट था (ब्रह्म. ७३; कूर्म. १.१७; वामन. ७७-९२)।

दैत्यलोग एवं उनके राजा पुराण एवं महाभारत में बहुशः असंस्कृत, वन्य एवं क्रूर चित्रित किये जाते हैं। वाण, गयासुर एवं बलि ये तीन राजा पुराणों में ऐसे निर्दिष्ट हैं कि, जो परमविष्णुभक्त एवं शिवभक्त होते हुए भी, देवों ने उनके साथ अत्यंत क्रूरता का व्यवहार किया, एवं अंत में अत्यंत निर्धनता के साथ उनका नाश किया।

डॉ. राजेंद्रलाल मित्र, डॉ. वेणिमाधव वासुआ आदि आधुनिक विद्वानों ने पुराणों में निर्दिष्ट इन असुरकथाओं के इस विसंगति पर काफ़ि प्रकाश डाला है। संभव यही है कि, देव एवं दैत्यों का प्राचीन विरोध सन् एवं असत् का विरोध न होकर, दो विभिन्न जाति के लोगों का विरोध था, एवं बलि, वाण एवं गयासुर केवल देवों के विपक्ष में होने के कारण देवों ने उनका नाश किया हो।

स्वर्गप्राप्ति—एक बार श्रीविष्णु ने किंचित्काल के लिये देवों के पक्ष का त्याग किया। यह सुसंघी जान कर, दैत्यगुरु शुक्राचार्य ने बलि को देवों पर आक्रमण करने की प्रेरणा दी। तदनुसार बलि ने स्वर्गर आक्रमण किया, एवं देवों के लवके छुड़ा दिये। बलि से बचने के लिये, देवों अपने मूल रूप बदल कर स्वर्ग से इतस्ततः भाग गये। किन्तु वहाँ भी बलि ने उनका पीछा किया, एवं उनको संपूर्णतः हराया।

पश्चात् बलि ने अपने पितामह प्रह्लाद को बड़े सम्मान के साथ स्वर्ग में आमंत्रित किया, एवं उसे स्वर्ग में अत्यधिक श्रेष्ठता का दिव्य पद स्वीकारने की प्रार्थना की। प्रह्लाद ने बलि के इस आमंत्रण का स्वीकार किया, एवं बलि को स्वर्ग के राज्यपद का अभिषेक भी कराया। अभिषेक के पश्चात्, बलि ने प्रह्लाद की आशिश माँगी एवं स्वर्ग का राज्य किस तरह चलाया जाय इस बारे में उपदेश देने की प्रार्थना की। प्रह्लाद ने इस उपदेश देते हुए कहा, 'हमेशा धर्म की ही जीत होती है, इस कारण तुम धर्म से ही राज्य करो' (वामन. ७४)।

प्रह्लाद के उपदेश के अनुसार, राज्य कर, बलि ने एक आदर्श एवं प्रजाहितदक्ष राजा ऐसी कीर्ति ब्रिहंड में संपादित की (वामन. ७५)।

समुद्रमंथन—एकबार बलि ने इंद्र की सारी संपत्ती हरण की, एवं उसे यह अपने स्वर्ग में ले जाने लगा। किन्तु रास्ते में वह समुद्र में गिर गयी। उसे समुद्र से बाहर निकलाने के लिये श्रीविष्णु ने समुद्रमंथन की सूचना देवों के सम्मुख प्रस्तुत की। समुद्रमंथन के लिए बलि का सहयोग पाने के लिये सारे देव इसकी शरण में आ गये। बलि के द्वारा इस प्रार्थना का स्वीकार किये जाने पर, देव एवं दैत्यों ने मिल कर समुद्रमंथनसमारोह का प्रारंभ किया (भा. ८. ६; स्कंद. १. १. ९)।

बलि के विगत संपत्ति को पुनः प्राप्त करना, यह देवों की दृष्टि से समुद्रमंथन का केवल दिखावे का कारण था। उनका वास्तव उद्देश तो यह था कि, उस मंथन से

अमृत प्राप्त हो एवं उसकी सहाय्यता से देवदैत्यसंग्राम में देवपक्ष विजय प्राप्त कर सके। दैत्यपक्ष के पास 'मृत-संजीवनी विद्या' थी, जिसकी सहाय्यता से युद्ध में मृत हुए सारे अमुर पुनः जीवित हो सकते थे। देवों के पास ऐसी कौनसी भी विद्या न होने के कारण, युद्ध में वे पराजित होते थे। इसी कारण देवों ने समुद्रमंथन का आयोजन किया, एवं उसके लिए दैत्यों का सहयोग प्राप्त किया। समुद्रमंथन का यह समारोह जाक्षुषमन्वन्तर में हुआ, जिस समय मंत्रद्वम नामक इंद्र राज्य कर रहा था (भा. ८. ८; विष्णु. १. ९; मत्स्य, २५०-२५१)।

समुद्रमंथन का समारोह एकादशी के दिन प्रारंभ हो कर द्वादशी के दिन समाप्त हुआ। एकादशी के दिन, उस मंथन से सर्व प्रथम 'कालकूट' नामक विष उत्पन्न हुआ, जिसका शंकर ने प्राशन किया। पश्चात् अलक्ष्मी नामक मयानक स्त्री उत्पन्न हुई, जिसका विवाह श्रीविष्णु द्वारा उहालक नामक ऋषि के साथ किया गया। तत्पश्चात् ऐरावत नामक हाथी, उच्चैःश्रवस् नामक अश्व एवं धन्वन्तरि, पारिजातक, कामधेनु, तथा अप्सरा इन रत्नों का उद्भव हुआ। द्वादशी के दिन लक्ष्मी उत्पन्न हुई, जिसका श्रीविष्णु ने स्वीकार किया। तत्पश्चात् चंद्र एवं अमृत उत्पन्न हुए। अमृत से ही तुलसी का निर्माण हुआ (पद्म. ब्र. ९. १०)।

समुद्रमंथन से प्राप्त रत्न—समुद्रमंथन से निर्माण हुए रत्नों के नाम, संख्या एवं उनका क्रम के बारे में पुराणों में एकवाक्यता नहीं है। एक स्कंदपुराण में ही इन रत्नों के नाम एवं क्रम निम्नलिखित दो प्रकारों में दिये गये हैं:—

१. लक्ष्मी, २. कौस्तुभ, ३. पारिजातक, ४. धन्वन्तरि, ५. चंद्रमा, ६. कामधेनु, ७. ऐरावत, ८. अश्व (सप्तमुल), ९. अमृत, १०. रम्भा, ११. शार्ङ्ग धनुष्य, १२. पांचजन्य शंख, १३. महापद्मनिधि तथा, १४. हालाहलविष (स्कंद. ५. १. ४४)।

१. हालाहलविष, २. चंद्र, ३. सुरभि धेनु, ४. कल्पवृक्ष, ५. पारिजातक, ६. आम्र, ७. संतानक, ८. कौस्तुभ रत्न (चिंतामणि), ९. उच्चैःश्रवस्, १०. चौसष्ट हाथियों के समूह के साथ ऐरावत, ११. मदिरा, १२. विजया, १३. भंग, १४. लहसुन, १५. गाजर, १६. धनूरा, १७. पुष्कर, १८. ब्रह्मविद्या, १९. सिद्धि, २०. ऋद्धि, २१. माया, २२. लक्ष्मी, २३. धन्वन्तरि, २४. अमृत (स्कंद. १. १. ९-१२)।

महाभारत एवं मत्स्य में निम्नलिखित केवल सात रत्नों का निर्देश प्राप्त है:—सोम, श्री (लक्ष्मी), सुरा, तुरग, कौस्तुभ, धन्वन्तरि, एवं अमृत (म. आ. १६. ३३-३७; मत्स्य. २५०-२५१)।

इंद्र-बलि संग्राम—समुद्रमंथन हुआ, किंतु राक्षसों को कुछ भी प्राप्त न हुआ। अतएव राक्षसों ने संघटित हो कर देवों पर चढ़ाई कर दी। देवों-दैत्यों के इस भीषण युद्ध में बलि ने अपनी राक्षसी माया से इंद्र के विरोध में ऐसा युद्ध किया कि, उसके हारने की नौबत आ गयी। इस युद्ध में इसने मयासुर द्वारा निर्मित 'वैहानस' विमान का प्रयोग किया। इंद्र की शोचनीय स्थिति देख कर विष्णु प्रकट हुए, तथा उन्होंने बलि के मायावी जाल को काट फेंका। पश्चात् बलि इंद्र के वज्रद्वारा मारा गया। बलि के मर जाने पर, नारद की आज्ञानुसार, इसका मृत शरीर अस्ताचल ले जाया गया, जहाँ पर शुक्राचार्य के स्पर्श तथा मंत्र से यह पुनः जीवित हो उठा (भा. ११. ४६-४८)।

इंद्रपदप्राप्ति—बलि के जीवित हो जाने पर शुक्राचार्य ने विधिपूर्वक इसका ऐन्द्रमहाभिषेक किया, एवं इससे विश्वजित् यज्ञ भी करवाया। पूर्णरूपेण राज्यव्यवस्था को अपने हाथ ले कर इसने सौ अश्वमेध यज्ञ भी किये (भा. ८. १५. ३४)।

विश्वजित् यज्ञ के उपरांत यज्ञदेव'ने प्रसन्न हो कर, इसे इंद्ररथ के समान दिव्य रथ, सुवर्णमय धनुष, दो अक्षय तूणीर तथा दिव्य कवच दिये। इसके पितामह प्रह्लाद ने कभी न सुखनेवाली माला दी। शुक्राचार्य ने एक दिव्य शंख, तथा ब्रह्मदेव ने भी एक माला इसे अर्पित की (म. शां. २१६. २३)।

प्रह्लाद के द्वारा शाप—इसप्रकार सारी स्वर्गभूमि बलि के अधिकार में आ गयी। देवतागण भी निराश हो कर देवभूमि छोड़ कर अन्यत्र चले गये।

इसके राज्य में सुख सभी को प्राप्त हुआ, किन्तु ब्राह्मण एवं देव उससे वंचित रहे। उन्हें विभिन्न प्रकार के कष्ट दिये जाने लगे, जिससे ऊब कर वे सभी विष्णु से फरियाद करने के लिए गये। सब ने विष्णु से अपनी दुःखभरी व्यथा कह सुनाई। विष्णु ने कहा, 'बलि तो हमारा भक्त है, पर तुम्हारे असहनीय कष्टों को देख कर, उनके निवारणार्थ मैं शीघ्र ही वामनावतार लूँगा' (ब्रह्म. ७३)।

धीरे धीरे बलि के राज्य की व्यवस्था क्षीण होने लगी। राक्षसों का बल घटने लगा। एकाएक इस गिरावट को देख कर, बलि अत्यधिक चिंतित हुआ, तथा इस विचित्र परिवर्तन का कारण जानने के हेतु प्रह्लाद के पास गया। कारण पूछने पर प्रह्लाद ने बताया 'भगवान विष्णु वामनावतार लेने के लिए आदिति के गर्भ में वासी हो गये हैं, यही कारण है कि तुम्हारा आसुरी राज्य दिन पर दिन रसातल को जा रहा है'। प्रह्लाद के वचनों को सुन कर इसने तत्काल उत्तर दिया, 'उस हरि से हमारे राक्षस अधिक बली है'। बलि की इस अहंकारभरी वाणी को सुन कर प्रह्लाद ने क्रोधित हो कर शाप दिया 'तुम्हारा राज्य नष्ट-भ्रष्ट हो जायेगा'। प्रह्लाद की वाणी सुन कर यह आतंकित हो उठा, तथा, तुरंत क्षमा माँगते हुए उसकी शरण में आया। किंतु प्रह्लाद ने इससे कहा, 'मेरी शरण में नहीं, तुम विष्णु की ही शरण जाओ, वही तुम्हारा कल्याण निहित है' (वामन. ७७)।

वामन को दान—नर्मदा के उत्तरी तट पर स्थित भृगुकच्छ नामक प्रदेश में जब इसका अन्तिम अश्वमेध यज्ञ चल रहा था, तब एक ब्राह्मणवेषधारी बालक के रूप में वामन भगवान् ने प्रवेश किया। बलि ने वामन का आदरसत्कार कर उनकी पूजा की, तथा कुछ माँगने के लिए प्रार्थना की (भा. ८. १८. २०-२१)। वामन ने इससे तीन पग भूमि माँगी। शुक्राचार्य ने यह देख कर बलि को नुरत समझाया, 'यह ब्राह्मण बालक और कोई नहीं, स्वयं वामनावतारधारी विष्णु हैं। तुम इन्हें कुछ भी न दो'। किंतु बलि ने गुरु की वाणी की उपेक्षा करते हुए कहा, 'नहीं! मैं अवश्य दूँगा! जब प्रत्यक्ष ही परमेश्वर मेरे द्वार पर अतिथि रूप से आया है, तो मैं उसे अवश्य ही इच्छित वस्तु प्रदान करूँगा (वामन. ११)।

बलि की इस प्रकार की वाणी सुन कर, शुक ने क्रोधित हो कर शाप दिया, 'बलि! तुमने मेरी उपेक्षा की है, मेरे आज्ञा की अवहेलना की है। तुम अपने को अत्यधिक बुद्धिमान् समझते हो। तुम्हारा यह ऐश्वर्य, यह राजपाट नष्ट-भ्रष्ट हो जाये'।

वामन भगवान् ने इसकी तथा इसके पूर्वजों की यशमाथा का गान किया, और बलि ने उसे तीन पग भूमि दान देने के लिए मंत्र पढ़ते हुए अर्घ्य दिया। हाथों पर जल छोड़ते ही वामनरूपधारी विष्णु ने विशाल रूप धारण कर प्रथम पर में पृथ्वी, द्वितीय में स्वर्गलोक नापते हुए, इससे प्रश्न

किया कि, तीसरा पैर किधर रखूँ (म. स. परि. १ क्र. २१. पंक्ति. ३३४-३३५)।

बलि को वामन द्वारा इस प्रकार उगा जाना देख कर इसके सैनिकों ने उद्यत हो कर उस पर आक्रमण करने लगे। किंतु इसने उन्हें समझाते हुए कहा, 'हमारा अन्तिम समय आ गया है, जो हो रहा है उसे होने दो'। पश्चात् वरुण ने विष्णु की इच्छा जान कर, इसे वरुणपाश में बाँध लिया (वामन. ९२)।

वामन द्वारा तीसरे पग के लिए भूमि माँगे जाने पर, गुरु शुक्राचार्य ने एक बार फिर बलि को दान के लिए रोका, पर बलि न माना। यह देख कर अर्घ्यदान देनेवाले पात्र के अन्दर शुक ऐसा बैठ गया कि, जिससे दान देते समय उस पात्र से जल न निकल सके। बलि को शुक की यह बात बालूझ न थी। जैसे ही पात्र की टोंटी से जल न गिरा, यह कुश के अग्रभाग से उसे साफ करने लगा जिससे शुक्राचार्य की एक आँख फूट गयी और तब से शुक्राचार्य को 'एकाक्ष' नाम प्राप्त हुआ (नारद. १.११)।

बलिबंधन—पश्चात् वामन ने कहा, 'तुमने तीसरे पग की जमीन दे कर अपने वचनों का पालन नहीं किया है। यह सुन कर बलि ने उत्तर दिया 'तुमने कष्ट के साथ मेरे साथ व्यवहार किया है, पर मैं अपना वचन निभाऊँगा! भूमि तो बाकी नहीं बची; मैं अपना मस्तक बटाता हूँ, उसमें अपना तीसरा पग रख कर, इच्छित वस्तु प्राप्त करो' (पद्म. पा. ५३)।

बलि की यह स्थिति देख कर इसकी स्त्री विध्यावली ने वामन भगवान् से बलि के उद्धार के लिए प्रार्थना की। विध्यावली की भक्तिपूर्ण मर्मवाणी को सुन कर विष्णु प्रसन्न हो कर वर देते हुए कहा 'तुम अभी पीताल लोक में निवास करो, वहाँ मैं तुम्हारा द्वारपाल बनूँगा, मेरा सुदर्शन चक्र सदैव तुम्हारी रक्षा करेगा। आगे चल कर सावर्णि मन्वन्तर में तुम इन्द्र बनोगे'।

उक्त घटना कृतयुग के पूर्व काल की है। वह दिन कार्तिक शुद्ध प्रतिपदा का था, जब बलि ने वामन को दान दिया था। इस लिए उस दिन को चिरस्मरणीय रखने के लिये वामन ने बलि को वर दिया, 'यह पुण्यदिन 'बलि प्रतिपदा' के नाम से विख्यात होगा, और इस दिन लोग तुम्हारी पूजा करेंगे' (स्कंद. २४.१०)।

इसके पश्चात्, वामन ने इसे वरुण पाश से मुक्त किया, और बलि ब्रह्मा, विष्णु, महेश को नमस्कार कर,

पाताललोक चला गया। बलि के जाने के उपरांत विष्णु ने शुक्राचार्य को आदेश दिया कि वह यज्ञ के कार्य को विधिपूर्वक समाप्त करें (भा. ८.१५-२३; म. स. परि. १. क्र. २१; वामन ३१; ब्रह्म. ७३)। वामन ने बलि का राज्य मन पुत्रो को देख कर, पृथ्वी एवं स्वर्ग को दैत्यों से मुक्त कराया (स्कंद. ७.२.१९)।

विष्णुद्वारा, बलि के 'पातालबंधन' की पुराणों में दी गयी कथा ऐतिहासिक, एवं काफी प्राचीन प्रतीत होती है। पतंजलि के व्याकरण महाभाष्य में इस कथा का निर्देश प्राप्त है (पा. सू. ३.१.२६)। पतंजलि के अनुसार बलि का पातालबंधन काफी प्राचीन काल में हुआ था; फिर भी उसका निर्देश महाभाष्यकाल में 'बलिम् बन्धयति' इस वर्तमानकालीन रूप में किया जाता था।

रावण का गर्वहरण—वाल्मीकि रामायण में बलि के पाताल निवास की एक रोचक कथा दी गयी है, जो द्रष्टव्य है। एक बार रावण ने इसके पास आ कर कहा, 'मैं तुम्हारी मुक्ति के लिये आया हूँ, तुम हमारी, सहायता प्राप्त कर, विष्णु के बन्धनों से मुक्त हो सकते हो। यह सुन कर बलि ने अग्नि के समान चमकनेवाले दूर पर रक्खे हुए हिरण्यकशिपु के कुंडल उठा कर लाने के लिये रावण से कहा। रावण ने उस कुण्डल को उठाना चाहा, पर बेहोश हो कर गिर पडा, तथा मुँह से खून की उल्टियाँ करने लगा। बलि ने उसे होश में ला कर समझाते हुए कहा, 'यह एक कुण्डल है, जिसे मेरा प्रपितामह हिरण्यकशिपु धारण करता था।' उसे तुम उठा न सके। महान् पराक्रमी भगवान् विष्णु द्वारा ही हिरण्यकशिपु मारा गया, तथा उसी विष्णु को किस बल से चुनौती दे कर तुम मुझे मुक्त कराने आये हो। वह विष्णु परमशक्तिमान् एवं सब का मालिक है'। ऐसा कह कर इसने उसे विष्णुलीला का वर्णन सुनाया (वा. रा. उ. प्रखित सर्ग १)।

आनंद रामायण में इसी प्रकार की एक और कथा दी गयी है। एक बार रावण बलि को अपने वन में करने के लिए पाताललोक गया। वहाँ बलि अपनी स्त्रियों के साथ पाँसा खेल रहा था। किसीने रावण की ओर गौर किया। एकाएक एक पाँसा उछल कर दूर गिरा, तब इसने उस पाँसे को उठाने के लिये रावण से कहा। रावण ने पाँसा उठा कर देना चाहा, पर उसे हिला तक सका। तब वहाँ पर पाँसा खेलती हुयी स्त्रियों ने रावण का ऐसा उपहास किया कि, यह वहाँ से चम्पत हो गया (आ. रा. सार. १३)।

महाभारत के अनुसार राज्य से च्युत किये जाने पर बलि को गर्दभयोनि प्राप्त हुयी, एवं यह इधर उधर भटकने लगा। ब्रह्मदेव ने बलि को हूँदने के लिए इन्द्र से कहा, तथा आदेश दिया कि इसका वध न किया जाये।

महाभारत में यह भी कहा गया है कि, इसने ब्राह्मणों से मदपूर्ण अनुचित व्यवहार किया, इसी लिए लक्ष्मी ने इसका परित्याग किया (म. शां. २१६. २१८)। योग-वसिष्ठ जैसे वेदान्त ग्रन्थों में भी अनारुक्ति का प्रतिपादन करने के लिए, इसकी कथा दृष्टान्तरूप में दी गयी है (यो. वा. ५.२२.२९)।

महाभारत के अनुसार, अपनी मृत्यु के पश्चात् बलि वरुणसमा में अधिष्ठित हो गया (म. स. ९. १२)। स्कंद पुराण में बाष्कलि नामक एक दैत्य की एक कथा दी गयी है, जो बलि के जीवनी से क्लिकुल मिलती जुलती है (स्कंद. १. १. १८; बाष्कलि देखिये)। उसी पुराण में इसके पूर्वजन्म की कहानी दी गयी है, जिसके अनुसार पूर्वजन्म में इसे कितव बताया गया है। भागवत में एक स्थान पर इसे 'इंद्रसेन उपाधि से विभूषित किया गया है (भा. ८. २२. ३३)।

संवाद—यह बड़ा तत्त्वज्ञानी था। तत्त्वज्ञान के संबंध में इसके अनेक संवाद महाभारत तथा पुराण में प्राप्त हैं। राजा अपनी राजलक्ष्मी किस प्रकार खो बैठता है, उसके संबंध में बलि तथा इंद्र का संवाद हुआ (म. शां. २१६)। इसके पितामह प्रह्लाद से 'क्षमा श्रेष्ठ अथवा तेज श्रेष्ठ' पर इसका संवाद हुआ (म. व. २९)। दैत्यगुरु शुक्र से इसका 'उपासना में पुण्य तथा धूप-दीप' के बारे में संवाद हुआ (म. अनु. ९८)।

परिवार—बलि की कुल दो पत्नियाँ थीः—(१) विंध्यबलि (भा. ८.२०.१७; मत्स्य १८७.४०); (२) अशना, जिससे इसे बाण प्रभृति सौ पुत्र उत्पन्न हुये थे (भा. ६.१८.१७, विष्णु. १.२१.२)। भागवत में इसकी कोटरा नामक और एक पत्नी का निर्देश प्राप्त है, जिसे बाणासुर की माता कहा गया है (भा. १०.६३.२०)।

बलि के सौ पुत्रों में निम्नलिखित प्रमुख थेः— बाण (सहस्रबाहु), कुंभगर्त (कुंभनाभ), कुमांड, सुर, दय, भोज, कुचि (कुशि), गर्दभाक्ष (वायु. ६७.८२-८३)। महाभारत में केवल बलिपुत्र बाण का निर्देश प्राप्त है (म. आ. ५९.२०)।

बलि की कन्याओं में निम्नलिखित प्रमुख थीः—शकुनी, पूतना (वायु. ६७.८२-८३; ब्रह्मांड. ३.५. ४२-४४)।

बलि के वंशज इस अर्थ से 'बालेय' नाम का प्रयोग पुराणों में प्राप्त है। किंतु वहाँ बलि वैश्वानर एवं बलि आनव इन दोनों में से किस के वंशज निश्चित अभिप्रेत है, यह कहना मुश्किल है (बलि आनव देखिये)।

बलि की उपासना—श्रद्धारहित हो कर एवं दोषदृष्टि रखते हुए जो दान किया जाता है, उस निकृष्ट जाति के दान में से कई भागों का स्वामी बलि माना जाता है (म. अनु. १०.२०)। देवीभागवत के अनुसार कौनसा भी धर्मकर्म दक्षिणा के सिवा किया जाये, तो वह देवों तक न पहुँच कर बलि उसका स्वामी बन जाता है। उसी तरह निम्नलिखित हीनजाति के धर्मकृत्यों का पुण्य उपासकों के बदले बलि को प्राप्त होता है—श्रद्धारहित दान, अधम ब्राह्मण के द्वारा किया गया यज्ञ, अपवित्र पुरुष का पूजन, अश्रोत्रिय के द्वारा किया गया श्राद्धकर्म, शूद्र स्त्री से संबंध रखनेवाले ब्राह्मण को किया हुआ द्रव्यदान, अश्रद्ध शिष्य के द्वारा की गयी गुरुसेवा (दे. भा. ९.४५)।

बलिप्रतिपदा के दिन बलि की उपासना जाती है। यह उपासना बहुशः राजाओं द्वारा की जाती है, एवं वहाँ बलि, उसकी पत्नी विध्यावलि एवं उसके परिवार के कुम्भांड, बाण, मुर आदि असुरों के प्रतिमाओं की पूजा बड़े ही भक्तिभाव से की जाती है। उस समय निम्नलिखित बलिस्तुति का पाठ ही भक्तिभाव से किया जाता है:—

बलिराज नमस्तुभ्यं विरोचनसुत प्रभो।

भविष्येद् सुरराते पूज्ये प्रतिगुह्यताम्।

(मविष्योत्तर. १४०. ५४; पद्म. उ. १३४. ५३)

बलिभद्र—रुद्र गणों में से एक।

बलिवाक—युधिष्ठिर के मयसभा का एक ऋषि (म. स. ४. १२)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'बलवाक'।

बलिबिन्ध्य—एक राजा, जो रैवत मनु का पुत्र था।

बलीह—एक क्षत्रियकुल, जिसमें अर्कज नामक कुलांगार राजा उत्पन्न हुआ था (म. उ. ७२. २०)। उस राजा के कारण, इस कुल का नाश हुआ।

बलेशु—एक गोरकार ऋषिगण, जो वसिष्ठ कुल में उत्पन्न हुआ था। इसके नाम के लिये 'दलेशु' पाठभेद प्राप्त है।

बलोत्कटा—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. २२)।

बलोन्मत्त—रुद्रगणों में से एक।

बलगतक—अत्रिकुल के मंत्रकार 'बलगतक' का पाठभेद (बलगतक देखिये)।

बलवृथ—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक दानशूर पुरुष, जिसने तरुक्ष एवं पृथुश्रवस् के साथ अनेक गायकों को उपहार प्रदान किये थे (ऋ. ८.४६.३२)। वंश अश्वय नामक ऋषि ने इसके द्वारा दिये दानों का गौरवपूर्ण उल्लेख किया है।

ऋग्वेद में इसे एक दास कहा गया है, किन्तु रोथ के अनुसार, यह स्वयं दास न हो कर इसके द्वारा किये गये एक सौ दासों के दान का उल्लेख वहाँ अभिप्रेत है। तिसर के अनुसार यह स्वयं एक आदिवासी अथवा आदिवासी माता का पुत्र था (आल्टिन्डिशे लेवेन ११७)।

बल्लव—अज्ञातवास के समय पाण्डुपुत्र भीमसेन का सांकेतिक नाम, जिसका व्यवसाय रूपान (पाककर्ता) बताया गया है (म. वि. २. १)।

बल्लाल—गणेश का परमभक्त, जो कल्याण नामक वैश्य का पुत्र था। अपने बाल्यकाल से श्रीगणेश की पूजा यह करता था। छोटे छोटे पथरों को एकत्र कर एवं उन्हें गणेश मान कर यह उनकी पूजा करता था।

इसके मातापिता ने इसे गणेश की पूजा से परावृत्त करने के काफी प्रयत्न किये। किंतु वे सारे असफल हुए। एक बार उन्होंने ने इसे पेड़ पर उल्टा टाँग कर काफ़ी पीटा। फिर भी इसने अपनी गणेशभक्ति न छोड़ी। अंत में, जिस स्थान पर यह गणेश की पूजा करता था, वहाँ बल्लालेश्वर अथवा बल्लालविनायक नामक गणेश का स्वयंमु स्थान का निर्माण हुआ (गणेश. १.२२)।

बलवल—एक दानव, जो विपचित्ति दानव का पौत्र एवं इत्थल दानव का पुत्र था। नैमिषारण्य के ऋषियों को यह अत्यधिक पीड़ा देता था। इस कारण बलराम ने इसका वध किया (भा. १०.७८.११; स्कंद. ३.१.१९)।

बस्त रामकायन—मैत्रायणि संहिता में निर्दिष्ट एक आचार्य (मै. सं. ४. २. १०)। इसके नाम के लिये 'बस्त समकायन' पाठभेद प्राप्त है।

बहुगव—(सो. पूर.) एक पुरुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार सुद्यु का, एवं विष्णु के अनुसार सुद्युमन का पुत्र था। इसके नाम के लिये 'बहुगविन्द' तथा 'बहुविध' पाठभेद प्राप्त हैं।

बहुगविन्द—धृष्टु दैत्य के पुत्रों में से एक।

२. (सो. पूर.) पुरुवंशीय बहुगव राजा का नामान्तर, जिसे वायु में धुंध का पुत्र कहा गया है। (बहुगव देखिये)।

बहुदन्ती—वैवस्वत मन्वन्तर के पुरन्दर नामक इंद्र की माता। पुरन्दर द्वारा वास्तुशास्त्र पर एक ग्रंथ लिखा गया है, जिसमें उसने स्वयं को बाहुदन्तक नाम से अपना निर्देश किया है (पुरन्दर देखिये)।

बहुदंष्ट्र—रावण के पक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

बहुदामा—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. १०)।

बहुपुत्र—एक प्रजापति, जो ब्रह्मा के मानसपुत्रों में से एक था (वायु. ६५. ५३)।

२. (सो. कुकुर.) एक राजा, जो तित्तिर राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम नरि था।

बहुपुत्रिका—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. ३)।

बहुमूलक—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रु के पुत्रों में से एक था (म. भा. ३१. ३७६*)।

बहुयोजना—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. ९)।

बहुरथ—(सो. द्विमीट.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार रिपुञ्जय राजा का पुत्र था। यह द्विमीट वंश का अन्तिम राजा माना जाता है। विष्णु में इसे बृहद्रथ, मत्स्य में विरथ, एवं वायु में वीररथ कहा गया है।

बहुरूप—एकादश रुद्रों में से एक (म. शां. २०१. १९)।
२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो प्रियव्रत राजा का पौत्र, एवं मेधातिथि राजा का पुत्र था।

बहुल—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रु के पुत्रों में से एक था। वायु में इसे प्रजापति कहा गया है (वायु. ६५. ५४)।

२. तालजंघ वंश का एक कुलांगार राजा, जिसके दुर्वर्तन के कारण तालजंघ वंश का नाश हुआ (म. उ. ७२. १३)।

बहुलध्वज—रत्ननगरी के ताम्रध्वज राजा का प्रधान।

बहुला—विदुर नामक वैश्यागामी ब्राह्मण की पत्नी। अपने पति की मृत्यु के पश्चात्, इसने गोकर्ण क्षेत्र में पुराणश्रवण का पुण्यकर्म किया, जिसके कारण पापी विदुर मुक्त हुआ (स्कंद. ३. ३. २२)।

बहुलाश्व—(स. निमि.) एक निमिवंशीय राजा, जो धृति जनक राजा का पुत्र था। श्रीकृष्ण इससे मिलने आया था। इसके पुत्र का नाम कुति जनक था (भा. १०. ८६. १६)।

बहुविध—(सो. पूर.) पुरुवंशीय बहुगव राजा का नामान्तर (बहुगव देखिये)। मत्स्य में इसे धुंधु राजा का पुत्र कहा गया है।

बहुवीति—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

बाह्लिक—अथर्ववेद में निर्दिष्ट किसी जाति के लोगों का सामूहिक नाम, जो मूजवन्त एवं महावृष लोगों के तरह उत्तरी प्रदेश में रहते थे। अथर्ववेद में ज्वर (तकम्न) को इन तीन लोगों के प्रदेश में स्थानांतरित होने का आवाहन किया गया है (अ. वे. ५. २२)। इस निर्देश से प्रतीत होता है कि, ये सारे लोग वैदिक आर्यों के विपक्ष में थे।

ब्रह्मफिल्ड के अनुसार, बाह्लिक शब्द से 'बहिस्' याने किसी बाहर से आये गये लोगों का संकेत किया जाता है।

बाह्लिक प्रातिपीय—एक कुरुवंशी राजा, जो संजय राजा दुष्टरीतु पौंस्यायन का विरोधक था (श. ब्रा. १२. ९. ३. ३)। दुष्टरीतु अपना वंशानुगत राज्यपद प्राप्त न कर सके, इसलिये इसने काफ़ी प्रयत्न किये। किन्तु रेवोत्तरस् पांडव चाक्र स्थपति इन मित्र की सहाय्यता से दुष्टरीतु ने राज्यपद प्राप्त कर ही लिया।

महाभारत में इसका निर्देश बाह्लीक नाम से किया गया है, एवं इसे प्रतीप राजा का पुत्र, तथा शंतनु एवं देवापि राजा का भ्राता कहा गया है (म. भा. ९०. ४६; बाह्लीक देखिये)।

बाह्लाशिन—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। यह भीम के द्वारा मारा गया (म. भी. ८४. २८)।

बाह्लीच—एक राक्षस, जो कश्यप एवं क्रोधा के पुत्रों में से एक था।

बाडभीकार (बाडवीकार)—एक वैयाकरण, जिसके द्वारा वर्णविकार के सम्बंध में मत प्रतिपादित है (तै. प्रा. १४. १३)।

बाड्यीपुत्र—एक आचार्य, जो बृहदारण्यक उपनिषद् के अनुसार, मौषिकीपुत्र का शिष्य था (बृ. उ. ६. ४. ३० माध्यं.)। इसके शिष्य का नाम गर्गीपुत्र था (श. ब्रा. १४. ९. ४. ३०)।

बाण—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. एक सुविख्यात अशुर, जो असुर राजा बलि वैरोचन का पुत्र था। शिव का पार्षद होने के कारण, इसे महाकाल नामान्तर भी प्राप्त था (म. भा. ५९. २०-२१)। पद्म में

इसे 'भूतो' का राजा कहा गया है (पद्म. २५.११)। यह सहस्रबाहु होने के कारण, अत्यधिक पराक्रमी एवं युद्ध में अजेय था।

बलिपत्नी अशना से उत्पन्न हुए शतपुत्रों में यह ज्येष्ठ था। मत्स्य में इसकी माता का नाम विंध्यावलि दिया गया है (मत्स्य. १८७.४०)। इसकी राजधानी दैत्यों के सुविख्यात त्रिपुरो में से शोणितपुर में थी। कई ग्रंथों में, उस नगरी का निर्देश 'लोहितपुर' नाम से भी किया गया है। हरिवंश में बाण की जीवनकथा विस्तृत रूप में दी गयी है (ह. वं. २.११६-१२८)।

दैत्यों की ये त्रिपुर नगरियों आकाश में सदैव संचरण किया करती थीं। ये निर्भेद्य थीं, जिन्हें कोई जीत न सकता था। इसके रहस्य का कारण थीं दैत्य स्त्रियाँ, जिनके पति-सेवा के प्रभाव से ये नगरियाँ पृथ्वी पर न आती थी तथा आकाश में ही तैरती थीं। दैत्य लोग इन नगरियों में रहते तथा देवों एवं ऋषियों के आश्रमों में जाकर उत्पात मचाते। इससे अब कर देव ऋषि आदि भगवान् शंकर के पास गये, तथा अपने कष्टों का निवेदन कर उबारने के लिए प्रार्थना की।

शंकर भगवान् ने भक्तों की मर्मान्तक वाणी को सुनकर नारद को स्मरण किया। याद करते ही, स्मरणगामी नारद तत्काल प्रकट हुए। शंकर ने देवर्षि नारद से निवेदन किया कि, वह राक्षसों की नगरियों में जाकर वहाँ की पत्नियों का ध्यान पतिसेवा से हटाकर दूसरी ओर ल्या दें, जिससे ये नगर पृथ्वी पर आ सकें, तथा इन अजेय राक्षसों का नाश हो सके।

शंकर के वचनों को स्वीकार कर, नारद वहाँ गया, तथा वहाँ की स्त्रियों को विभिन्न प्रकार के अन्य धार्मिक पूजा-पाठों की ओर उनका ध्यान आकर्षित कर पति-सेवा ब्रत से हटा दिया। जिसके कारण, नगरों की शक्ति कम होने लगी। ऐसी स्थिति देखकर, शंकर ने तीन नोनों वाले बाण से तीनों नगरों को वेध दिया। शंकर ने अग्नि को भी आज्ञा दी कि, ये त्रिपुर नगरियाँ जला दी जाय। अग्नि ने आज्ञा पाते ही उन्हें भस्मीभूत करना शुरू किया।

शंकर—नगरों को जलता देख कर, बाण अपनी नगरी में अपने उपास्यदेव का शिक्लिया साथ ले कर बाहर निकला। यह शिवभक्त था, अतएव अपने को कष्ट में पाकर इसने 'तोटक छन्द' के द्वारा, शंकर की पूजा कर के उसे प्रसन्न किया। प्रसन्न हो कर शंकर ने इसकी

शोणितपुर नगरी बचा दी, तथा अन्य दो को जलने दिया। वे दोनों जलकर क्रमशः 'शैल' तथा 'अमरकंटक' पर्वत पर गिरी। इसी कारण उन दो स्थानों पर दो तीर्थ बन गये (मत्स्य १८७-१८८; पद्म. स्व. १४-१५)।

एक बार खेल में निमग्न शिवपुत्र कार्तिकेय को देख कर यह प्रसन्नता से विभोर हो उठा। तथा इसके मन में यह इच्छा जाग्रत हुयी कि मैं शंकर—पुत्र बनूँ। यह सोच कर इसने कड़ी तपस्या की, जिससे प्रसन्न हो कर शंकर ने इसे वर माँगने के लिए कहा। इसने शंकर से प्रार्थना की, 'मेरी उत्कट अभिलाषा है कि, कार्तिकेय की मूर्ति माता पार्वती मुझे पुत्र के रूप में ग्रहण करे'। शंकर ने वरप्रदान करते हुए, कार्तिकेय के जन्मस्थान का नित्य के लिए इसे अधिपति बनाया (ह. वं. २.११६.२२)। कार्तिकेय ने प्रसन्न हो कर इसे अपना तेजस्वी ध्वज एवं मयूर वाहन प्रदान किया। शिवपुत्र द्वारा दिये गये ध्वज में मयूर की छाप थी, जिसका सर मयूर का न हो कर मनुष्य का था (ह. वं. १.११६.२२; शिव. व्र. यु. ५३)।

शंकर द्वारा प्राप्त वरों का निर्देश शिव पुराण में भी प्राप्त है, लेकिन उसमें कुछ भिन्नता है। शिवपुराण में लिखा है कि, इसने भगवान् शंकर के साथ ताण्डव में भाग लेकर अत्यधिक सुन्दर नृत्य किया था, जिससे प्रसन्न हो कर इसे ये वर प्राप्त हुए थे। इसके सिवाय इसने शंकर से यह भी वर माँगा कि, वह भविष्य में उसके परिवार का रक्षण करता हुआ इसे चिरन्तन आनन्द प्रदान करता रहेगा। शंकर ने इसे यह वरदान दे कर, वह स्वयं अपने पुत्र कार्तिकेय एवं गणेश के साथ इसकी रक्षा हेतु इसके नगर में रहने लगा (शिव. व्र. यु. ५१)।

भागवत के अनुसार, ताण्डवनृत्य के समय इसने शिव के साथ वाद्यवादन किया था, जिससे प्रसन्न हो कर उसने इसे उक्त वरप्रदान किये थे (भा. १०. ६२)।

बाण ने शंकर द्वारा प्राप्त किये हुए इन वरों के बल पर, अनेकानेक बार इन्द्रादि देवों को जीत कर, जब जैसा चाहा किया। किसी में इतनी शक्ति न थी, जो इसके तेज के सामने ठहर सके। एक बार महाबली बाण ने शंकर से कहा, 'मेरी अनंत शक्ति मेरे अंदर लड़ने के लिए मुझे मजबूर कर रही है; पर कोई भी मेरी टक्कर का नजर नहीं आ रहा। हजार बाहुओं को वृत्ति करने के लिए मैं दिग्गजों से भी लड़ने गया, पर वे भी मेरी शक्ति के सामने ठहर न सके। अब मैं युद्ध करना चाहता हूँ। मुझे उसमें ही शान्ति है। यह युद्ध कब होगा?' उत्तर देते हुए

शंकर ने कहा ' जिस दिन कार्तिकेय द्वारा दिया गया ध्वज ध्वस्त होगा, उसी के बाद तुम्हारी यह इच्छा पूर्ण होगी। तुम्हें युद्ध का अवसर प्राप्त होगा '। पश्चात् इसके ध्वज पर इन्द्र का वज्र गिरा; तथा वह ध्वस्त हो गया।

उषा-अनिरुद्ध-प्रणय—इसके उषा नामक एक कन्या थी, जो अत्याधिक नियंत्रण में रखी जाती थी। एक बार एक पहरेदार द्वारा इसे यह सूचना प्राप्त हुई कि, उषा किसी परपुरुष से अपने सम्पर्क बढ़ा रही हैं। इससे संतप्त होकर, सत्यता जानने की इच्छा से यह उसके महल गया। वहाँ इसने देखा कि, उषा एक पुरुष के साथ घूट खेल रही है। दोनों को इस प्रकार निमग्न देखकर यह क्रोध से लाल हो उठा, तथा अपने शस्त्रास्त्र तथा गणों के साथ उस पर आक्रमण बोल दिया। पर उस पुरुष का बाल बौका न हुआ। उसने बाण के हर बार का कस कर मुकाबला किया। वह पुरुष कोई साधारण नहीं, वरन् कृष्ण का पौत्र अनिरुद्ध ही था। अन्त में बाण ने अपने को गुप्त रखकर अनिरुद्ध पर नागपाश छोड़े। उन नामों ने उषा तथा अनिरुद्ध को चारों ओर से जकड़ लिया, तथा दोनों कारागार में बन्दी बनाकर डाल दिये गये।

कृष्ण से युद्ध—अनिरुद्ध के कारावास हो जाने की सूचना जैसे ही कृष्ण को प्राप्त हुयी, वह अपनी यादव सेना के साथ शोणितपुर पहुँचा, तथा समस्त नगरी को सैनिकों से घेर लिया। दोनों पक्षों में घनघोर युद्ध हुआ। बाण की रक्षा के लिए उसकी ओर से शंकर भगवान्, कार्तिकेय एवं गणेश भी थे। इस युद्ध में गणेश का एक दाँत भी टूटा, जिससे उसे 'एकदंत' नाम प्राप्त हुआ।

इस युद्ध में, पक्ष के अनुसार, बाण का युद्ध सबसे पहले बलराम से हुआ, तथा भागवत एवं शिवपुराण के अनुसार, इसका सर्वप्रथम युद्ध साल्यक से हुआ। कृष्ण के साथ इसका युद्ध बाद में हुआ, जिसमें कृष्ण के अपार बलौष के समक्ष इसके सभी प्रयत्न असफल हो गये। इन समस्त युद्धों में, पहले बाण की ही जीत नज़र आती थी; किन्तु अन्त में इसको हर एक युद्ध में पराजय का ही मुँह देखना पड़ा।

अन्त में जैसे ही कृष्ण ने सुदर्शन चक्र के द्वारा इसका वध करना चाहा, वैसे ही अष्टावतार लम्बा के रूप में पार्वती इसके संरक्षण के लिए नग्रावस्था में ही दौड़ी आई। भागवत में पार्वती के इस रूप को 'कोटरा' कहा गया है। इसके पूर्व भी, इसी युद्ध में पार्वतीजी अपने

पुत्र कार्तिकेय की रक्षा के लिये आई थी, तथा उन्हें अब दुबारा इसकी रक्षा के लिए आना पड़ा, क्योंकि वह वचनबद्ध थीं। कृष्ण ने पार्वती से अलग रहने के लिए कहा, किन्तु वह न मानी तथा कृष्ण से निवेदन किया, 'यदि तुम चाहते हो कि मैं पुत्रवती रहूँ, मेरा पुत्र जीवित रहे, तो बाण को जीवनदान दो। मैं इसकी रक्षा के ही लिये तुम्हारे सम्मुख हूँ'। कृष्ण ने प्रत्युत्तर देते हुए कहा 'मैं तुम्हारी उपेक्षा नहीं कर सकता, किन्तु यह अहंकारी हैं, इसे अपने हज़ार ब्राह्मणों पर गर्व है; अतएव इसके दो हाथों को छोड़कर समस्त हाथों को नष्ट कर दूँगा'। इतना कह कर कृष्ण ने इसको दो हाथों को छोड़कर शेष हाथ काट दिये (पद्म. ३. २. ५०)। भागवत तथा शिवपुराण के अनुसार विष्णु ने इसके चार हाथ रहने दिये, तथा शेष काट डाले (भा. १०.६३.४९)।

शिवपुराण में कृष्ण द्वारा इसका वध न होने कारण दिया गया है। जब कृष्ण ने इसका वध करना चाहा, तब शिव ने उनसे कहा 'दधीचि, रावण एवं तारकासुर जैसे लोगों का वध करने के पूर्व तुमने मेरी संमति ली थी। बाण मेरे लिये पुत्रवत् है, उसको मैंने अमरत्व प्रदान किया है; अतः मेरी यही इच्छा है कि, तुम इसका वध न करो।

वरप्राप्ति—भागवत के अनुसार कृष्ण ने इसे इस-लिये जीवित छोड़ा, क्योंकि, उसने इसके प्रपितामह प्रह्लाद को वर प्रदान किया था कि, वह उसके किसी वंशज का वध न करेगा। इसी कारण इसका वध नहीं किया, केवल गर्व को चूर करने के लिये हाथ तोड़ दिये। इसके साथ ही कृष्ण ने वर दिया, 'तुम्हारे ये बच्चे हुए हाथ ज़रामरण रहित होंगे, एवं तुम स्वयं भगवान् शिव के प्रमुख सेवक बनोगे (भा. १०.६३)।

युद्ध समाप्त होने पर भगवान् शिव ने भी इसे अन्य वर भी दिये, जिनके कारण इसे अक्षय गाणपत्य, ब्राह्म-युद्ध में अप्रणित्य, निर्विकार शंभुभक्ति, शंभुभक्तों के प्रति प्रेम, देवों से तथा विष्णु से निर्वैरत्व, देवसाम्यत्व (अजरत्व एवं अमरत्व) इसे प्राप्त हुए (विरुद्ध. यु. ५९)। हरिवंश तथा विष्णु पुराण के अनुसार, शिव ने इसे निम्न वर और प्रदान किये:—ब्राह्मणों के दूटने के वेदना का शमन होना, ब्राह्मणों के दूटने के कारण मिली विद्रुपता का नष्ट होना, शिव की भक्ति करने पर पुत्र की प्राप्ति होना आदि (ह. वं. २.१२६; विष्णु. ५.३०)।

उषा-अनिरुद्ध विवाह—तत्पश्चात् कृष्ण ने इसे बड़े सम्मान के साथ द्वारका बुलाया, एवं उषा तथा अनिरुद्ध का विवाह संन्यत कराया। विवाहोपरान्त कृष्ण ने इसे बड़े स्नेह से विदा किया। इसने उषा के अनिरुद्ध से उत्पन्न पुत्र को अपने राज्य का उत्तराधिकारी बनाया, जिससे प्रतीत होता है कि इसको कोई पुत्र न था (शिव. सू. पु. ५९)। किन्तु ब्रह्मांड में इसकी पत्नी लोहिनी से उत्पन्न इसके 'ईंद्रधन्वन्' नामक पुत्र का निर्देश प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.५.४५)।

इसे 'अनौपम्या' नामक और भी अनेक पत्नियाँ थीं, जिनका निर्देश पद्म एवं मत्स्य में प्राप्त है (पद्म. १४; मत्स्य. १८७. २५)।

'नित्याचार पद्धति' नामक ग्रंथ के अनुसार, बाण के द्वारा चौदह करोड़ शिखलियों की स्थापना देश के विभिन्न भागों में की गयी थी। ये लिम्बा 'बाणलिम्बा' नाम से सुविख्यात थे। नर्मदा गंगा आदि पवित्र नदियों में प्राप्त शिवलिम्बाकार पत्थरों को भी, बाणासुर के नाम से 'बाणलिम्बा' कहा जाता है (नित्याचार. पृ. ५५६)।

बाणकथा का अन्वयार्थ—सदाचारसंपन्न एवं परम ईश्वरभक्त हो कर भी, जिन असुरों का देवों के द्वारा अत्यंत निर्घृणता के साथ संहार किया गया, उन असुरों में बाण प्रमुख था। इसके वंश में से इसका पिता बलि, इसका प्रपितामह प्रह्लाद, एवं इसका पितुःप्रपितामह हिरण्यकशिपु इन सारे राजाओं को देवों के साथ लड़ना पड़ा। इससे प्रतीत होता है कि, देव एवं दैत्य जातिओं के पुरातन शत्रुत्व के कारण ये सारे युद्ध उत्पन्न हुए थे। पिटियों से चलता आ रहा यह शत्रुत्व किसी व्यक्ति का व्यक्तिगत शत्रुत्व न हो कर, दो जातिओं का संघर्ष था (बलि वैरोचन देखिये)। बाण की जीवनकथा में शैव एवं वैष्णवों के परंपरागत संघर्षों की परछाइयाँ भी अस्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं।

आकाश में तैरती हुयी बाण की शोणितपुर राजधानी किसी पर्वतीय प्रदेश में स्थित नगरी के ओर संकेत करती है। शोणितपुर को लोहितपुर एवं बाणपुर नामान्तर भी प्राप्त थे (त्रिकाण्ड. ३२. १७; अग्नि. १३३. ९७७)। आसाम में स्थित ब्रह्मपुत्रा नदी का प्राचीन नाम भी लोहित ही था। इससे प्रतीत होता है कि, बाण का राज्य सद्यःकालीन आसाम राज्य के किसी पहाड़ी में बसा होगा। यह पहाड़ी अत्यंत दुर्गम होने के कारण, देवों के लिये बाण अजेय बना होगा।

३. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६२)।

बादरायण—एक आचार्य, जिसने ब्रह्मसूत्रों की रचना की थी (जै. सू. १.१.५; २.१९; १०.८.४४; ११.१.६४)। बर का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

'वैष्णव भागवत' में, कृष्णद्वैपायन व्यास एवं बादरायण एक ही व्यक्ति माने गये हैं (भा. ३.५.१९)। स्वयं शंकराचार्य भी ब्रह्मसूत्रों के रचना का श्रेय बादरायण को प्रदान करते हैं (ब्र. सू. ४.४.२२)। किन्तु संभवतः ब्रह्मसूत्रों की मूल रचना जैमिनि के द्वारा हो कर, उन्हें नया संस्कारित रूप देने का काम बादरायण ने किया होगा। सुरेश्वराचार्य ने अपने 'नैष्कर्म्यसिद्धि' नामक ग्रंथ में वैसा स्पष्ट निर्देश किया है (नैष्कर्म्य. १.९०)। द्रमिडाचार्य ने भी अपने 'श्रीभाष्यश्रुतप्रकाशिका' नामक ग्रंथ में सर्वप्रथम बंदन जैमिनि को किया है, एवं उसके पश्चात् बादरायण का निर्देश किया है।

कई विद्वानों के अनुसार, बादरायण एवं पाराशर्य व्यास दोनो एक ही व्यक्ति थे। किन्तु सामविधान ब्राह्मण में दिये गये आचार्यों के तालिका में इन दोनों का स्वतंत्र निर्देश किया गया है, एवं इन दोनों में चार पीढ़ियों का अंतर भी बताया है। बादरायण स्वयं अंगिरसकुल का था (आप. श्रौ. २४.८-१०), एवं इसके शिष्यों में तांडि एवं शाश्वत्यायनि ये दोनो प्रमुख थे। पाराशर्य व्यास अंगिरसकुल का न हो कर वसिष्ठकुल का था।

बादरि-बादरायण-भिन्नता—जैमिनिस्त्रों में निर्दिष्ट बादरि नामक आचार्य एवं बादरायण दो स्वतंत्र व्यक्ति थे। क्यों कि, बादरायण के मतों से विपरीत बादरि के अनेक मतों का निर्देश 'बादरि सूत्रों' में प्राप्त है। बादरायण देह का भाव तथा अभाव इन दोनों को मान्य करता है। इसके विपरीत, बादरि देह की अभावयुक्त अवस्था को ही मानता है। इस मतभिन्नता से दोनों आचार्य अलग व्यक्ति होने की संभावना स्पष्ट होती है (ब्र. सू. ४. ४.१०-१२)।

सत्याषाढ के गृह्यसूत्र में इसके गर्भाधान विषयक मतों का निर्देश प्राप्त है, जिसमें यह विधि स्त्री को प्रथम ऋतु प्राप्त होते ही करने के लिये कहा गया है (स. गृ. १९. ७.२५)।

ब्रह्मसूत्र—बादरायण के द्वारा रचित 'ब्रह्मसूत्र' के कुल चार अध्याय, सोलह पाद, एक सौ बयान्त्रवे अधि-करण एवं पाँच सौ पल्लन सूत्र हैं। इस ग्रंथ को उत्तर

मीमांसा, बादरायण सूत्र, ब्रह्ममीमांसा, वेदान्तसूत्र, व्यास-सूत्र एवं शारीरक सूत्र आदि नामान्तर भी प्राप्त है।

इस ग्रंथ में बृहदारण्यक, छंदोग्य, कौषीतकी, ऐतरेय, मुंडक, प्रश्न, श्वेताश्वतर, जाबाल एवं आथर्वणिक (अप्राप्य) आदि उपनिषद् ग्रंथों में प्राप्त वाक्यों का विचार किया गया है।

इस ग्रंथ में निम्नलिखित पूर्वाचार्यों के मत उनके नामोल्लेख के साथ प्रथित किये गये हैं:— आत्रेय, आश्वरथ्य, औडुलोमि, काशकृस्न, कर्णाजिनि, जैमिनि एवं बादरि। इन पूर्वाचार्यों में से बादरि का निर्देश चार सूत्रों में, औडुलोमि का तीन सूत्रों में, आश्वरथ्य का दो सूत्रों में, एवं बाकी सारे आचार्यों का निर्देश एक एक सूत्र में किया गया है। स्वयं बादरायण के मत आठ सूत्रों में दिये गये हैं।

इन सूत्रों का मुख्य उद्देश उपनिषदों के तत्त्वज्ञान का समन्वय करना, एवं उसे समन्वित रूप में प्रस्तुत करना है। महाभारत, मनुस्मृति एवं भगवद्गीता के तत्त्वज्ञान को उद्देश कर भी कई सूत्रों की रचना की गयी है। ये सारे सूत्र काफी महत्त्वपूर्ण हैं, किन्तु भाष्यग्रन्थों के सहाय्य के सिवाय उनका अर्थ लमाना मुश्किल है। उन में से कई सूत्रों के शंकराचार्य के द्वारा दो दो अर्थ लगाये गये हैं (ब्र. सू. १.१.१२-१९; ३१; ३.२७; ४.३; २.२.३९-४० आदि)। कई जगह पाठभेद भी दिखाई देते हैं (ब्र. सू. १.२.२६; ४.२६)।

इस ग्रन्थ की रचनापद्धति प्रथम पूर्वपक्ष, एवं पश्चात् सिद्धान्त इस पद्धति से की गयी है। किन्तु कई जगह प्रथम सिद्धान्त दे कर, बाद में उसका पूर्वपक्ष देने की 'प्रति-खेप' पद्धति का भी अवलंब किया गया है (ब्र. सू. ४. ३.७-११)।

अपना विशिष्ट तत्त्वज्ञान स्पष्ट रूप से प्रथित करने का प्रयत्न बादरायण ने इस ग्रन्थ के द्वारा किया है। इसका यह प्रयत्न श्री व्यासरचित भगवद्गीता से साम्य रखता है।

बादरायणि—शुक ऋषि का नामान्तर।

बादरि—जैमिनि सूत्रों में निर्दिष्ट एक आचार्य (जै. सू. ३.१.३; ६.१.२७; ८.३.६; का. श्रौ. ४.३.१८; ब्र. सू. ४.४.११; बादरायण देखिये)।

२. श्याम पराशर कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

बादुलि—विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५३)।

बाध्यश्व—मार्गवकुल का एक मंत्रकार।

बाध्योग—जिह्वावत् नामक आचार्य का पैतृक नाम (वृ. उ. माध्यं. ६.४.३३; जिह्वावत् देखिये)। बध्योग का वंशज होने के कारण उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

बाध्य—एक आचार्य, जो वेद, छंद, शरीर एवं महा-पुरुष आदि को अध्ययन के विषय मानता था (ऐ. ब्रा. ३.२.२)। सांख्यायन आरण्यक में इसके नाम के लिए 'वात्स्य' पाठभेद प्राप्त है (सां. आ. ८.३)।

२. एक तत्वज्ञ, जिसका ब्राह्मलि नामक आचार्य से 'ब्रह्म की अनिर्वचनीयता' के बारे में संवाद हुआ था (४ ब्राह्मलि देखिये)।

बाभ्रव—वत्सनपात् नामक आचार्य का पैतृक नाम (वृ. उ. माध्यं. २. ५. २२; ४. ५. २८)।

ऐतरेय ब्राह्मण में प्राप्त शुनःशेष की कथा में कापिलेव एवं बाभ्रव लोगों को शुनःशेष के वंशज बताया गया है (ऐ. ब्रा. ७. १७)। बभ्रु का वंशज होने से इसे 'बाभ्रव' नाम प्राप्त हुआ होगा। बभ्रु के द्वारा रचित एक सामन्त का निर्देश पंचविंशब्राह्मण में प्राप्त है (पं. ब्रा. १५. ३.१२)।

बाभ्रव्य—गिरिज एवं शंख नामक आचार्यों का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७.१; जै. उ. ब्रा. ३.४१.१; ४.१७.१)।

आश्वलायन गृह्यसूत्र के ब्रह्मयज्ञांग तर्पण में, क्रम के पाठन की परंपरा शुरू करनेवाले आचार्य के रूप में इसका निर्देश प्राप्त है (श्रु. प्रा. ११. ३३)।

२. विश्वामित्रकुल का एक गोत्रकार।

३. एक गोत्र का नाम। गालवमुनि इसी गोत्र में उत्पन्न हुए थे।

बाभ्रव्य पांचाल—एक आचार्य, जो दक्षिण पांचाल देश के ब्रह्मदत्त राजा के दो मंत्रियों में से एक था (ह. वं. १.२०.१३)। इसका संपूर्ण नाम 'सुबालक (गालव) बाभ्रव्य पांचाल' था। इसे 'बृहवृच' एवं 'आचार्य' ये उपाधियाँ प्राप्त थी (ह. वं. १.२३.२१)। यह सर्व-शास्त्रविद् एवं योगशास्त्र का परम अभ्यासक था (मत्स्य. २०.२४; २१.३०)।

इसने ऋग्वेद की शिक्षा तयार कर उसका प्रचार किया। इसने वेदमंत्रों का क्रम निश्चित किया, एवं उसका प्रचार भी किया (पद्म. पा. १०; ह. वं. १.२४.३२; म. शां. ३३०. ३७-३८; पांचाल ३. देखिये)। ऋग् संहिता के क्रमपाठ के रचना का श्रेय वैदिक ग्रंथों में भी बाभ्रव्य पांचाल को

दिया गया है। पाणिनि ने भी बाभ्रव्य एवं इसके द्वारा रचित क्रम का निर्देश किया है (पा. सु. ४.१.१०६; २.६१)।

बृहदत्त राजा के कंडरिक (पुंडरिक) एवं बाभ्रव्य नामक दो मंत्रियों ने समस्त वैदिक ऋचाओं को एकत्र कर उनको ऋग्वेद, सामवेद एवं यजुर्वेद इन संहिताओं में विभाजित किया। उन संहिताओं का अंतीम एकत्रीकरण एवं संस्करण व्यास ने किया।

२. एक कामशास्त्रकार एवं वास्त्यायन के कामसूत्र का पूर्वाचार्य। वास्त्यायन के अनुसार, कामशास्त्र की सर्व-प्रथम रचना श्वेतकेतु ने की, एवं श्वेतकेतुप्रणीत कामशास्त्र के संक्षेपीकरण का कार्य बाभ्रव्य पांचाल ने किया।

मस्य मे 'क्रमपाठ रचयिता' बाभ्रव्य एवं 'कामसूत्रकार' बाभ्रव्य को अनवधानी से एक माना गया है। किन्तु कामसूत्रकार बाभ्रव्य का पूर्वाचार्य श्वेतकेतु क्रमपाठरचयिता बाभ्रव्य से काफी उत्तरकालीन था। इससे प्रतीत होता है कि, ये दो बाभ्रव्य अलग व्यक्ति थे।

बाभ्रव्यायर्णि—विश्वामित्र के पुत्रों में से एक।

बाह्रत्सामा—अथर्ववेद में निर्दिष्ट एक स्त्री, जो कृत्सामन् की कन्या थी। गर्भाधान सरल बनानेवाले एक सूक्त में इसका निर्देश प्राप्त है (अ. वे. ५. २५. ९)।

बाह्रदिपु—अजमीढवंशीय राजाओं के लिये प्रयुक्त सामुहिक नाम। अजमीढपुत्र बृहदिपु राजा से ले कर, उसी वंश के मल्लट तक के राजा 'बाह्रदिषवः' नाम से विख्यात थे (भा. ९.२१.२६)।

बाह्रद्रथ—मगध देश के बृहद्रथ राजा के वंशजों के लिये प्रयुक्त सामुहिक नाम। इनकी राजधानी गिरिव्रज नगर में थी। पुराणों में इस वंश के कुल बाइस या बत्तीस राजाओं का निर्देश प्राप्त है (बृहद्रथ देखिये)।

बाह्रस्पत्य—शंयु, विदथिन् एवं भारद्वाज आदि आचार्यों का पैतृक नाम। बृहस्पति का वंशज होने से उन्हें यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

बाल—एक ब्राह्मण, जो अत्यंत पापी एवं पाखंड मत-प्रवर्तक था। अपनी मृत्यु के पश्चात्, इसे पुनः एक बार मनुष्यजन्म प्राप्त हुआ। अपने इस नये जन्म में इसने ग्न्तपापों का क्षालन करने के लिये सरस्वती मंत्र का जप किया, जिस कारण इसके सारे पापों का नाश हो कर, अगले जन्म में यह मैत्रेय नामक सद्वर्तनी ऋषि बन गया (स्कंद २.४६)।

२. वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार।

बालखिल्य—ब्रह्माजी के बालखिल्य नामक शक्ति-शाली पुत्रों का नामांतर (बालखिल्य देखिये)।

बालडि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

बालधि—एक शक्तिशाली ऋषि, जिसने पुत्रप्राप्ति के लिए घोर तपस्या की थी। इसकी तपस्या से प्रसन्न हो कर देवों ने इसे वर माँगने के लिए कहा। किंतु इसके द्वारा अमरपुत्र की माँग की जाने पर देवों ने इसे कहा, 'इस सृष्टि की हर एक वस्तु नश्वर है, इसी कारण अमर पुत्र की अपेक्षा करना भी व्यर्थ है'। फिर सामने दिखाई देनेवाले पर्वत की ओर निर्देश करते हुए इसने देवताओं से कहा, 'यह पर्वत जितने वर्ष रह सकेगा उतनी आयु का पुत्र आप मुझे प्रदान करें'।

इसकी प्रार्थना के अनुसार, देवों ने इसे एक पुत्र प्रदान किया जिसका नाम मेधावी था। उसे यह बड़े लाड़प्यार से 'पर्वतायु' कहता था। बड़ा होने पर पर्वतायु देवों के वर का आश्रय ले कर अत्यंत उद्वृष्ट बन गया। एक बार उसने धनुषाक्ष नामक महर्षि का बिना किसी कारण अपमान किया। उस समय महर्षि ने पर्वतायु को शाप दिया, 'तुम भस्म हो जाओगे'।

महर्षि के इस शाप का पर्वतायु पर कोई भी असर न हुआ, एवं वह जीवित ही रहा। अपना शाप विफल हुआ यह देख कर धनुषाक्ष ऋषि को अत्यंत आश्चर्य हुआ। पश्चात् दिव्यदृष्टि से उसने पर्वतायु के वर का रहस्य जान लिया, एवं अपने तपोबल से एक भैंसा निर्माण कर उसके द्वारा वह पर्वत खुदवा डाला, जिसके उपर पर्वतायु की आयु निर्भर थी। उसी क्षण पर्वतायु की मृत्यु हो गयी (म. व. १३४)। अपने प्रिय पुत्र की मृत्यु पर बालधि ऋषि ने काफी विलाप किया।

बालन्दन—वत्सपी ऋषि का पैतृक नाम, जो संभवतः मालन्दन (भलन्दन का वंशज) का विभेदात्मक रूप है (वेबर—इंडिशो स्टूडियन ३.४५९.४७८)।

बालधि—भृगु कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

बालवय—वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार।

बालस्वामी—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४. ६०)।

बालाकि—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

२. गार्ग्य बालाकि नामक ऋषि का नामांतर (गार्ग्य बालाकि देखिये)। इसे दृष्ट बालाकि नामांतर भी प्राप्त है (श. ब्रा. १४.५.१)। इसके नाम के लिए 'बालाक्या'

पाठभेद भी उपलब्ध है (काश्यपीबालाक्या माठरीपुत्र देखिये)।

बालानामयिक—स्कन्द का एक सैनिक (म. श. ४४.६९)।

बालायनि—एक आचार्य, जिसे बाष्कलि ने बालखिल्य संहिता सिखायी थी (भा. १२.६.६०)।

बालावती—कण्व ऋषि की कन्या, जिसने उत्तम पति के प्राप्त्यर्थ कटोर तपस्या की थी। एक बार भगवान् सूर्य-नारायण अतिथि रूप में इसके यहाँ आया, एवं कुल बेर इसे प्रदान कर उन्हें पकाने के लिए कहा।

सूर्यनारायण की आज्ञानुसार यह बेर पकाने लगी। किन्तु चुरहे की सारी लकड़ियाँ समाप्त होने पर भी बेर न पके; फिर इसने अपने पाँव चुरहे में ल्या दिये। यह देख कर सूर्य इसपर प्रसन्न हुआ, एवं इसे बर देते हुए कहा, 'तुम्हारी सारी कामनाएँ पूरी होगी'। उसी दिन से उस स्थान को 'बालाप' नाम प्राप्त हुआ (पद्म. उ. १५.२)।

इसकी उपरनिर्दिष्ट कथा में, एवं अरुंधती की कथा में काफी साम्य है (अरुंधती ३. देखिये)।

बालिशय—वसिष्ठकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

बालिशायनि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

बालेय—गंधर्वायण नामक आचार्य का पैतृक नाम।

२. पराशर गोत्रोत्पन्न एक ऋषिगण।

३. बलि आनव राजा से उत्पन्न ब्राह्मण एवं क्षत्रिय लोगों का सामुहिक नाम।

बाष्कल—हिरण्यकशिपु का एक पुत्र (म. आ. ५९. १८)। इसे कुल चार भाई थे:— प्रह्लाद, संह्लाद, अनुह्लाद, एवं शिवि (म. आ. ५९.१८)। भगवत्त असुर के रूप में, यह पृथ्वी पर पुनः उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.९)।

२. हिरण्यकशिपु का पौत्र एवं अनुह्लाद का पुत्र। इसकी माता का नाम सुर्मि था।

३. प्रह्लाद का पुत्र। इसके नाम के लिये बाष्कलि पाठभेद भी प्राप्त है।

४. महिषासुर का एक पुत्र (मार्क. ७९. ४२)।

५. संह्लाद नामक असुर का पुत्र। इसे चंड, दक्ष एवं सुर नामक तीन पुत्र थे।

६. एक आचार्य, जो व्यास की ऋक्षिष्यपरंपरा में से पैल ऋषि का पुत्र था। इसके नाम के लिये 'बाष्कलि' पाठभेद प्राप्त है (व्यास देखिये)।

बाष्कलि—प्रह्लाद का पुत्र (पद्म. सू. ६)।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं मेत्रकार ऋषि। यह बालखिल्य संहिता का रचयिता था, जो इसने अपने बालायनि, भग्य, एवं कासार नामक शिष्यों को सिखायी थी (भा. १२.६.५९)।

३. एक ऋग्वेदी श्रुतिर्षि एवं ब्रह्मचारी।

४. एक तत्त्वज्ञ, जिसका निर्देश शंकराचार्य के ब्रह्मसूत्र-भाष्य में प्राप्त है। उक्त ग्रन्थ में इसका एवं बाष्क ऋषि के बीच हुए शास्त्रार्थ एक आख्यायिका के रूप में वर्णित है। बाष्कलि ने बाष्क से पूछा 'ब्रह्म कैसा है?' वह मौन रहा। उसकी मौनता को देख कर, इसने दो तीन बार अपने प्रश्न को बार बार रक्खा। तत्र बाष्क ने कहा, 'अपने मौन सम्पादन से ही, मैं व्यक्त कर चुका हूँ कि, ब्रह्म अनिर्वचनीय है (यतो वाचो निवर्तन्ते)। अत्र तुम समझ न सको तो दोष किसका है?' (ब्र. सू. ३. २.१७)।

बाष्क द्वारा बाष्कलि को ब्रह्म की स्वरूपता का कराया हुआ यह ज्ञान, बड़ा नाटकीय एवं तार्किक है।

५. एक दैत्य, जिसने तपस्या के बल पर सारा त्रैलोक्य जीत कर इंद्रपद प्राप्त किया। विष्णुधर्म एवं पद्म में इसकी कथा दी गयी है, जो सम्पूर्णतः बलि वैरोचन की वामनावतार की कथा से मिलती जुलती है। इसे 'त्रिविक्रम' का अवतार कहा गया है। सम्भव है, यह एवं 'बलि वैरोचन' दोनों एक ही हों।

इसके द्वारा इंद्रपद प्राप्त कर लेने के बाद, वामनावतारी विष्णु ने ब्राह्मणकुमार के रूप में आ कर, इससे यज्ञ के लिए तीन पग भूमि दान माँगी। जैसे ही बाष्कलि ने दानसंकल्प के लिए अर्घ्य दिया, कि वामन ने विशाल रूप धारण कर, एक पग से ब्रह्माण्ड, द्वितीय से सूर्य-मण्डल, तथा तृतीय से श्रुवमण्डल नाप कर, इसके सम्पूर्ण देव्य का हरण कर लिया।

वामन ने जैसे ही ब्रह्मांड पर पैर रक्खा, वैसे ही उसके पगस्पर्श से वह फूट गया, तथा उससे गंगा की धारा फूट चली (विष्णुधर्म. २१.१; पद्म. सू. ३०)।

बाष्कलि भारद्वाज—एक आचार्य, जो वायु एवं मासवत के अनुसार व्यास की ऋक्षिष्यपरंपरा के सत्यश्री ऋषि का शिष्य था।

बाष्किह—शुनस्कण राजा का पैतृक नाम (पं. ब्रा. १७.१२.६)। 'बाष्किह' का वंशज होने से उसे यह नाम

प्राप्त हुआ होगा। बौधायन श्रौतसूत्र में इसे शिवि राजा का वंशज कहा गया है (बौ. श्रौ. २१.१७)।

बाह्यिक—उत्तरी पश्चिम पंजाब में रहनेवाले लोगों के लिए प्रयुक्त सामूहिक नाम (श. ब्रा. १.७.३.८)। ये अग्नि को 'भव' नाम से संबोधित करते थे।

बाहु—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो सगर राजा का पिता था (म. शां. ५.७.८)। मत्स्य एवं विष्णु में इसे वृक राजा का, एवं वायु में इसे धृतक राजा का पुत्र कहा गया है। ब्रह्मांड में इसे 'फल्गुतंत्र' नामान्तर दिया गया है, एवं भागवत में इसके नाम के लिये 'बाहुक' पाठभेद प्राप्त है। इसे 'असित' नामान्तर भी प्राप्त है (वा. रा. वा. ७०.३०; अयो. ११०.१८)।

ब्रह्मांड के अनुसार यह कृतयुग में पैदा हुआ, एवं इरुने पृथ्वी के सप्तद्वीपों में सात अश्वमेध यज्ञ किये (ब्रह्मांड. ३.६३.१२१; वायु. ८९.१२३; ह. वं. १.१४; ब्रह्म. ८.३०; शिव. वा. ६१.२३; नारद. १.७१.५)। इसे कुल दो पत्नियाँ थीं। उनमें से केशिनी अथवा कालिंदी नामक पत्नी से इसे सगर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (सगर देखिये)।

हैहय राजा तालजंघ ने शक, कंबोज आदि राजाओं के सहाय्यता से इसपर आक्रमण कर इसका पराजय किया। इस पराजय के पश्चात्, यह और्य ऋषि के आश्रम में रहने के लिए गया, एवं उसी आश्रम में इसकी मृत्यु हो गयी (मत्स्य. १२.४०; पद्म. सू. ८; लिंग. १.६६.१५; विष्णुधर्म. १.१६)।

२. एक शक्तिशाली राजा, जिसे भारतीय युद्ध के समय पाण्डवों की ओर से रणनिर्माण भेजा गया था (म. उ. ४.२९)।

३. सुंदरवेग वंश का एक 'कुलपासन' राजा, जिसने अपने दुर्बर्तन के कारण अपने कुल का विनाश कराया (म. उ. ७२.१३)।

४. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो पृथु राजा का पुत्र था।

५. इंद्रसावर्षि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

६. स्वारोचिष मनु का एक पुत्र।

बाहुक—(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय बाहु राजा का नामान्तर (बाहु १. देखिये)। भागवत में इसे वृक राजा का पुत्र कहा गया है।

२. निषधराज नल राजा का नामान्तर, जब की वह सूतअवस्था में अयोध्यानरेश ऋतुपर्ण के यहाँ रहता था (म. व. ६४.२; नल १. देखिये)।

३. कौरव्य कुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में डग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१२)।

४. एक वृष्णिवंशीय वीर, जिसके पराक्रम के बारे में सात्यकि ने श्रीकृष्ण से चर्चा की थी (म. व. १२०.१८)।

बाहुगार—(सो.) एक राजा, जो भविष्य के अनुसार शत्रुघ्न राजा का पुत्र था।

बाहुदा सुयशा—परिक्षित् द्वितीय राजा की कुरु वंशीय पत्नी (सुयशा देखिये)। इसके पुत्र का नाम भीमसेन था।

बाहुरि—वसिष्ठ कुल के वाग्मंथि नामक गोत्रधार के लिये उपलब्ध पाठभेद (वाग्मंथि देखिये)।

बाहुवृक्त—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक ऋषि, जिसने युद्ध में शत्रुओं पर विजय प्राप्त की थी (ऋ. ५. ४४. १२)।

बाहुवृक्त आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ७१-७२)।

बाहुशालिन—धृतराष्ट्र के शत्रुपुत्रों में से एक।

बाह्य—अंगिराकुलोत्पन्न एक ऋषि।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक यादववंशीय राजा, जो वायु के अनुसार भजमान राजा का पुत्र।

बाह्यकर्ण—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१. ९)।

बाह्यका—यादवराजा सात्वत भजमान की पत्नी जो संजय राजा की कन्या थी। इसे शताजित्, सहस्राजित् एवं आयुताजित् नामक तीन पुत्र थे।

बाह्यकुंड—कश्यप वंश में उत्पन्न एक नाग, जिसे नारद ने इंद्रसारथि मातलि को वरस्वरूप में दिखाया था (म. स. १०१. १०)।

बाह्यिक—(सो. पूरु.) कुरुवंशीय प्रतीप राजा का पुत्र, जो देवापि एवं शन्तनु का ज्येष्ठ भाई था (भा. ९. २२)। इसकी माता का नाम सुनंदा था, जो शिवि देश की राजकन्या थी (म. आ. ८९.५२)। शिवि राजा को पुत्र न था, जिस कारण यह उस राज्य का उत्तराधिकारी बन गया। प्रतीप का पुत्र होने से इसे 'प्रातिपीय' उपाधि प्राप्त थी। भागवत के अनुसार, इसके पुत्र का नाम सोमदत्त था (भा. ९. २२. १८)।

भारतीय युद्ध में, यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। दुर्योधन की ग्यारह अश्वैहिणी सेनाओं के जो सेनापति चुने गये थे, उनमें यह भी एक था। यह स्वयं अतिरथि था (म. उ. १६४. २८)। धृष्टकेतु, द्रुपद,

शिखाण्डिन आदि के साथ इसका युद्ध हुआ था। अन्त में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १३२: १५)।

महाभारत में इसका नाम बाह्यीक, बाहिलक, तथा बाह्यिक इन तीन प्रकारों में उपलब्ध है।

२. बाह्यीक देश में रहनेवाले लोगों के लिये प्रयुक्त सामुहिक नाम (बाह्यीक देखिये; म. भी. १०.४५)।

३. (सो. पूरु.) एक राजा, जो भरतवंशीय कुरु राजा का पौत्र, एवं जनमेजय का तृतीय पुत्र था।

४. एक राजा, जो शत्रुपक्षविनाशक महातेजस्वी 'अहर' के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.२५)।

५. कौरव पक्ष का एक योद्धा, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५५)।

महाभारत में इसे 'बाह्यीकराज' कहा गया है। द्रौपदीपुत्रों के साथ इसका युद्ध हुआ था (म. द्रो. ७१.१२)।

६. सुधिरि के सारथि का नाम (म. स. ५२.२०)।

७. (किलकिला. भविष्य.) किलकिलावंशीय एक राजा।

विडाल—दैत्यराज महिषासुर का एक प्रधान।

विडालज—अंगिराकुल के गोत्रकार 'विराडप' के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (विराडप देखिये)।

विडौजस्—देवी आदिति का पुत्र, जो उसे विष्णु के प्रसाद से प्राप्त हुआ था (पद्म. भू. ३.५)।

विद—भृगुकुल का एक गोत्रकार एवं मंत्रकार।

विन्दु—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. अंगिरसकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

विन्दुग—वाष्कलग्राम में रहनेवाला एक ब्राह्मण, जिसकी पत्नी का नाम चंचला था। यह वेश्यागामी एवं निकृष्ट विचारोंवाला था, अतएव इसकी सदाचरणी पत्नी चंचला भी इसके प्रभाव में आ कर, बुरे कर्मों की ओर अग्रसर हो, उसीमें लिप्त हो गयी। विन्दुग को जब यह पता चला तो इतने उसके सामने यह शर्त रखी, 'तुम वेश्यावृत्ति का कर्म खुशी से अपना सकती हो, किन्तु तुम्हें सारे पैसे मुझे देने होंगे'। इस शर्त को मान कर चंचला पूर्ण रूप से वेश्या बन गयी। मृत्यु के उपरांत, दोनो विश्व पर्वत पर पिशाच बने।

बाद को शिवपुराण के श्रवण तथा शिवभजन के कारण, चंचला पिशाचयोनि से मुक्त हुयी। उसके प्रार्थना करने पर, पार्वतीजी ने अपने पापद तुंबक द्वारा विश्व पर्वत पर पिशाची विन्दुग को शिवकथा का श्रवण

करवाया, जिससे उसे भी मुक्ति प्राप्त हुयी (शिवपुराण-महात्म्य अ. ४)।

विन्दुमत्—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार मरीचि एवं विन्दुमती का पुत्र है। इसकी पत्नी का नाम सरधा था, जिससे इसे मधुर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था।

विन्दुमती—(स्वा. प्रिय.) ऋषभदेव के वंश में उत्पन्न मरीचि राजा की पत्नी। इसके पुत्र का नाम विन्दुमत् था।

२. सोमवंशीय शशविन्दु राजा की उषेष्ठ कन्या, जो युवनाश्रपुत्र मांधाता की पत्नी थी। इसे 'चैत्रयी' नामान्तर भी प्राप्त है। मांधाता राजा से इसे अंबरीष, पुरुकुल एवं मुचकुंद नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए (वायु. ८८.७२; ब्रह्मांड ३.६३.७०)।

३. मदनपत्नी रति के अश्रुविन्दुओं से उत्पन्न एक कन्या, जिसे 'अश्रुविन्दुमती' नामान्तर भी प्राप्त है। मदन का पुनर्जन्म होने के पश्चात् रति के आँखों में आनंदाश्रु झरने लगे। उनमें से दूधे आँख से टपके हुए अश्रुओं से इसका जन्म हुआ।

बड़ी होने पर इसका विवाह पूरुवंशीय ययाति राजा से हुआ। गर्भवती होने पर, पृथ्वी के सारे लोकों में प्रवास करने की इसे इच्छा हुयी। फिर ययाति ने सारा राज्यभार अपना पुत्र पूरु पर सौंप कर, वह इसे पृथ्वीप्रदक्षिणार्थ ले गया (पद्म. भू. ७७-८२)। किन्तु ययाति से उत्पन्न इसके पुत्र का नाम क्या था, इसका निर्देश अप्राप्य है।

विन्दुसार—(शिशु. भविष्य.) एक शिशुनागवंशीय राजा, जो विष्णु के अनुसार क्षत्रौजस् का पुत्र था। जैन एवं बौद्ध वाङ्मय में निर्दिष्ट 'श्रणिक विविसार' यही है। इसे विधिसार, विविचार एवं विंध्यसेन आदि नामान्तर प्राप्त थे।

२. (मौर्य. भविष्य.) एक मौर्यवंशीय राजा, जो विष्णु एवं भविष्य के अनुसार, पट्टण के चंद्रशुभ राजा का पुत्र था। इसे वारिसार एवं भद्रसार नामान्तर भी प्राप्त थे।

यह स्वयं बौद्धधर्मीय था, एवं पौरसाधिपति सुदून (सेल्युकस निकेटर) राजा की कन्या से इसने विवाह किया था (भवि. प्रति. २.७)।

विम्ब—(सो. वृष्णि.) एक राजा, जो वसुदेव एवं मद्रा के पुत्रों में से एक था।

बिल्व—एक विष्णु भक्त, जो आगे चल कर शिवभक्त बन गया।

आदिकल्प में ब्रह्मा ने वित्त्व वृक्ष (वेलपत्र वृक्ष) का निर्माण किया, जिसे 'श्रीवृक्ष' भी कहते हैं। इस वृक्ष के नीचे एक व्यक्ति रहने लगी, जिसे ब्रह्मा ने 'वित्त्व' नाम दिया। बाद में, इसकी भक्तिभावना तथा व्यवहार से प्रसन्न हो कर, इन्द्र ने इसे पृथ्वी का राज्य करने के लिये कहा। इस महान् उत्तरदायित्व को समालने के लिये इसने इन्द्र से वज्र माँगा, जिसके बलपर सुलभता के साथ राज्य किया जा सके। इन्द्र ने इससे कहा, 'तुम वज्र ले कर क्या करोगे? जब कभी भी आवश्यकता पड़े, तुम मुझे याद कर उसे प्राप्त कर सकते हो'।

एक बार कपिल नामक एक शिवभक्त ब्राह्मण घूमता धामता इसके यहाँ आ पहुँचा। शीघ्र ही दोनों में मित्रता हो गयी। एक दिन इसमें तथा कपिल में शास्त्रार्थ हुआ, जिसका विषय था, 'तप श्रेष्ठ है अथवा कर्म'। यह चीज यहाँ तक जोर पकड़ गयी, कि इसने वज्र का स्मरण कर उसके द्वारा कपिल के दो टुकड़े कर दिये। कपिल में भी शिव की भक्ति तथा अपने तप का बल था; अतएव उसने शिव के द्वारा पुनः अमरत्व प्राप्त किया।

इधर वित्त्व ने विष्णु के पास जा कर उन्हें प्रसन्न कर, वर प्राप्त किया कि, संसार के समस्त प्राणी इससे डरते रहें। किन्तु इस वर द्वारा इसे कुछ लाभ न हुआ। अन्त में, विष्णुभक्ति से इसका मन शिवभक्ति की ओर झुका, तथा यह महाकालवन में शिवलिंग की आराधना करने लगा। एक बार घुमता हुआ कपिल उधर आ पहुँचा। वहाँ इसे इस रूप में देख कर वह अति प्रसन्न हुआ, तथा दोनों मित्र हो गये (स्कंद. ५. २. ८३)।

वित्त्वक—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

वित्त्वतेजस्—तक्षककुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२. ८)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'बलदेह'।

वित्त्वपत्र—कश्यपवंशीय एक नाग, जो नारदद्वारा मातलि को वरस्वरूप में दिखाया गया था (म. उ. १०१. १४)।

वित्त्वपांडुर—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

वित्त्व—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिये 'भलि' पाठभेद प्राप्त है।

बीज—विश्वेदेवों में से एक।

बीजवाप (बीजवापिन्)—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

बीमत्सु—अर्जुन का नामान्तर (म. वि. ३९. १०)।

बुडिल आश्वतराश्वि वैयाघ्रपद्य—एक गायत्री-वेत्ता एवं मूलतत्त्वप्रतिपादक आचार्य, जो विदेह जनक एवं केकयराज अश्वपति का समकालीन था (वृ. उ. ५. १४. ८; श. ब्रा. १०. ६. १-१)। संभव है, 'बुडिल आश्वतर अश्वि' तथा यह दोनों एक ही व्यक्ति हो।

अनेक ज्ञाताओं की विद्वत्सभा में इसने आत्मा की संबंध में अपने विचार प्रकट किये, एवं 'शयं' स्वयं ही आत्मा है, ऐसा अभिमत इसने व्यक्त किया (छां. उ. ५. ११. १)। इसका एवं विदेह जनक का विवाद हुआ था, जिसमें जनक ने इस पर 'प्रतिग्रह' लेने का दोषारोप किया था।

संभव है, व्याघ्रपद का वंशज होने के कारण, इसे 'वैयाघ्रपद्य' वैतृक नाम प्राप्त हुआ हो।

बुद्धि—दक्षप्रजापति की कन्या, जो धर्म की पत्नी थी। इसे कुल नौ बहने थी, जो सारी धर्म ऋषि की पत्नियाँ थीं। इसने एवं इसके बहनों ने ब्रह्माजी द्वारा धर्म का द्वार निश्चित किया था (धर्म देखिये; म. आ. ६०. १४)।

२. एक राजा, जो सार्वर्षिक मनु का पुत्र था।

३. तुषित देवों में से एक।

बुद्धिकामा—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. १२)। इसके नाम के लिए 'बुद्धिकामा' पाठभेद प्राप्त है।

बुद्धुदा—एक अप्सरा, जो वर्गा नामक अप्सरा की सखी थी (म. आ. २०८. १९; स. १०. ११) ब्राह्मण के शाप के कारण, यह ग्राह हो कर जल में रहने लगी। पश्चात् अर्जुन द्वारा इसका ग्राहयोगि से उद्धार हुआ। (म. आ. २०८. १९)।

बुध—एक ग्रह, जो बृहस्पति की पत्नी तारा का चन्द्रमा से उत्पन्न पुत्र था (पद्म. सू. ८२)। यह बृहस्पति-पत्नी का पुत्र था, इस कारण इसे 'बृहस्पतिपुत्र' नामांतर प्राप्त है। क्यों कि, यह चन्द्रमा से उत्पन्न हुआ, इसलिये इसे चन्द्र (सोम) वंश का उत्पादक कहा जाता है (पद्म. उ. २१५)।

इसकी पत्नी का नाम इला था, जो मनु की कन्या थी। इला से इसे पुरुरवत् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. अनु. १४७. २६-२७)। यही पुरुरवत् सोमवंश

का आदि पुरुष माना जाता है (पद्म. सू. ८; १२; दे. मा. १.१३)। 'मविष्य' में इसे चन्द्र एवं रोहिणी का पुत्र कहा गया है।

जन्म—बृहस्पति की दो पत्नियों थीं, जिनमें से दूसरी का नाम तारा था। सोम ने तारा का हरण किया था, एवं उससे ही उसे बुध नामक पुत्र हुआ (ऋ. १०.१०९)। पुराणों में भी यह कथा अनेक बार आयी है (वायु. ९०.२८-४३; ब्रह्म. ९.१९-६२; मत्स्य. २३; पद्म. सू. १२.३३-५८)। उक्त ग्रन्थों में निर्दिष्ट बुध के जन्म की कथा रूपात्मक प्रतीत होती है, एवं आकाश में स्थित गुरु (बृहस्पति), चन्द्र, बुध आदि ग्रहनक्षत्रों को व्यक्ति मान कर इस कथा की रचना की गयी है।

विष्णुधर्म में इसके जन्म की कथा कुछ दूसरी मँति दी गयी है। कश्यप ऋषि की यतु नामक स्त्री थी, जिससे उसे रज नामक उत्पन्न हुआ पुत्र था। रज का विवाह वरुण की कन्या वासुणी से हुआ। एक बार समुद्र में स्नान करते समय, वासुणी उसी में डूब गयी। उसे डूबा हुआ देख कर, उसे ढूँढ़ने के लिए चन्द्रमा ने जल में प्रवेश किया। उसके प्रवेश करते ही समुद्र में हिलोरें उठने लगी, और उससे एक बालक बाहर निकला। वही बालक बुध था। बृहस्पतिपत्नी तारा ने इस बालक बुध के संरक्षण का भार लिया, किन्तु बाद को असुविधा के कारण इसे चन्द्रपत्नी दाक्षायणी को दे दिया (विष्णुधर्म. १. १०६)।

बृहस्पति ने इसका जातिकर्मादि संस्कार किये थे। यह परम विद्वान् हो कर 'हरिश्चन्द्र' में विशेष पारंगत था (पद्म. सू. १२.)। भास्कर संहिता के अन्तर्गत 'सर्व-सारतंत्र' का यह रचयिता माना जाता है (ब्रह्मवै. २. १६)।

अदिति को शाप—एक बार इसने व्रत किया, एवं उसकी समाप्ति होने पर यह कश्यप ऋषि की पत्नी अदिति के पास भिक्षा के लिए गया और भिक्षा की याचना की। भिक्षा न मिलने पर इसने अदिति को शाप दिया, जिस कारण उसे एक मृत अण्ड पैदा हुआ। उस अण्ड से कालोपरान्त श्राद्धदेव की उत्पत्ति हुयी। मृत अण्ड से पैदा होने के कारण, उसे 'मार्तण्ड' नामांतर प्राप्त हुआ (म. शां. ३२९.४४)।

भागवत में इसका विवरण एक ग्रह के रूप में दिया गया है। बुध ग्रह सौरमण्डल में शुक्रग्रह से दो लाख योजन की दूरी पर स्थित माना जाता है। यह शुभग्रह अवश्य

है; किन्तु जब सूर्य का उल्लंघन कर जाता है, तब अनावृष्टि द्वारा संसार को व्रत करता है (भा. ५. २२)।

२. एक वानप्रस्थी ऋषि, जिसने वानप्रस्थधर्म का पालन एवं प्रसार कर स्वर्गलोक प्राप्त किया था (म. शां. २३९. १७)।

३. (सू. विष्ट.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार वेगवत् राजा का पुत्र था। इसे 'बंधु' नामांतर भी प्राप्त है।

४. एक स्मृतिकार एवं धर्मशास्त्रज्ञ, जिसका निर्देश अपराक, कल्पतरु, जीमूतवाहनकृत 'कालविवेक' आदि ग्रन्थों में प्राप्त है। इसके द्वारा रचित धर्मशास्त्र का ग्रन्थ काफी छोटा है, जिसमें निम्नलिखित विषयों का विवेचन करते हुए, इसने उन पर अपने विचार प्रकट किये हैं:— गर्माधान से लेकर उपनयन तक के समस्त संस्कार, विवाह तथा उसके प्रकार, पंच-महायज्ञ, श्राद्ध, पाकयज्ञ, हविर्यज्ञ, सोमयाग, एवं ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं संन्यासियों के कर्तव्य आदि।

बुध के द्वारा रचित उक्त ग्रन्थ प्राचीन नहीं प्रतीत होता। उसके अनुशीलन से यह पता चलता है कि, इसने पूर्ववर्ती धर्मशास्त्रवेत्ताओं द्वारा कथित सामग्री को संग्रहीत मात्र किया है। इस ग्रन्थ के सिवाय 'कल्पयुक्ति' नामक इसका एक अन्य ग्रन्थ भी प्राप्त है (C. C.)

५. मगध देश का एक राजा, जो हेमसदन राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम अंजनी था (स्कंद. १. २. ४०)।

६. एक राक्षस, जो पुलह एवं श्वेता के पुत्रों में से एक था।

७. सुतप देवों में से एक।

८. गौड देश में रहनेवाला एक ब्राह्मण, जो दुर्व एवं शाकिनी का पुत्र था। यह अत्यंत दुराचारी, दुर्व्यसनी एवं पाशविक वृत्तियों का था। एक बार शरात्रपी कर वेद्यागमन के हेतु यह एक वेद्या के यहाँ आ कर रातभर वहीं पड़ा रहा। इसके घर वापस न लौटने पर, इसका पिता डूँढ़ता हुआ इसके पास पहुँचा, एवं इसकी निर्मसना की। उसके इस प्रकार कहने पर, इसने तत्काल अपने पिता को लात से मार कर उसका वध किया।

बाद को जब यह घर आया, तब इसको माता ने अपनी बुरी आदतों को छोड़ने के लिये इसे समझाया। इसने उस चेत्तारी का भी वध किया। कालांतर में इस हत्यारे ने अपनी पत्नी को भी न छोड़ा, तथा उसे भी मार कर खतम कर दिया।

एक दिन इसने कालभी ऋषि की सुलभा नामक पत्नी को देखा, तथा तुरंत ही उसका हरण कर उसके साथ बलात्कार किया। इससे क्रुद्ध हो कर ऋषिपत्नी ने श्राप दिया, 'तुम कोढ़ी हो जाओ'। फिर यह कोढ़ी हो कर हथर उधर घूमने लगा।

घूमते घूमते यह शूरसेन राजा के नगर आ पहुँचा, जहाँ वह अपनी संपूर्ण नगरी के साथ विमान में बैठकर स्वर्ग जाने की तैयारी में था। विमान चालकों ने लाख प्रयत्न किया, लेकिन वह उड़ न सका। तत्र देवदूतों ने कोढ़ी बुध को दूर भगा देने के लिए शूरसेन से प्रार्थना की, क्या कि, इस हत्यारे की पापछाया के ही कारण विमान पृथ्वी से खिसक न सका।

शूरसेन दयालु प्रकृति का धर्मज्ञ शासक था। अतएव उसने बुध को देखा, एवं गजानन नामक चतुरक्षरी मंत्र से इसके कोढ़ को समाप्त कर, इसे भी स्वानंदपुर ले जाने की व्यवस्था की (गणेश. १. ७६)।

१०. द्रविण देश में रहनेवाला एक ब्राह्मण। इसकी पत्नी अत्यंत दुराचारिणी थी, किंतु दीपदान के पुण्य-कर्म के कारण, उसके समस्त पाप नष्ट हो गये (स्कंद. २४.७)।

११. एक अग्निहोत्र करनेवाला ब्राह्मण, जो मधुवन में रहनेवाले शाकुनि नामक ऋषि का पुत्र था (पद्म. स्व. ३१)।

बुध आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.१)।

बुध सौभाग्यन—पंचविंश ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक आचार्य, जिसके द्वारा यशदीक्षा ली गयी थी (पं. ब्रा. १४.१८.६)। सोम का वंशज होने से, इसे 'सौभाग्यन' पेतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

बुध सौम्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१०१)।

बुधकौशिक—एक ब्रह्मर्षि, जो रामरक्षा नामक सुविख्यात स्तोत्र का रचयिता है।

बुध्न—एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में एक था।

बुडिल आश्वतर आश्वि—बुडिल आश्वतराश्वि नामक आचार्य का नामान्तर (बुडिल आश्वतराश्वि देखिये)। विश्वजित् याग में पठन करने योग्य शस्त्रमंत्रों के संश्लेष में, इसका गौश्ल नामक आचार्य से वादविवाद हुआ था (पं. ब्रा. ६.३०; गौश्ल देखिये)।

बुधु तक्षन्—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक उदार दाता, जो पणि लोगों का अधिपति था (ऋ. ६.४५.३१-३३)।

बुधु तक्षन् एवं प्रस्तोक सार्वज्य राजाओं से भरद्वाज ऋषि को विपुल उपहार प्राप्त होने का निर्देश ऋग्वेद एवं सांख्यायन श्रौतसूत्र में प्राप्त है (सां. श्रौ. १६.११. ११)।

यह स्वयं पणि अतएव हीन जाति का होने के कारण, इसके द्वारा कोई ऋषि दान न लेता था। किंतु भरद्वाज ऋषि अपने परिवार के साथ निर्जन अरण्य में रहता था, एवं उसे जीविका का कोई भी साधन उपलब्ध नहीं था। इस कारण बुधु से गायों का दान (प्रतिग्रह) लेते हुए भी, उसे भरद्वाज को कोई दोष न लगा (मनु. १०.१०७) संभवतः मनुस्मृति में निर्दिष्ट बुधु तक्षन् एवं बुधु तक्षन् एक ही व्यक्ति होंगे।

बुधु स्वयं एक पणि था। किंतु 'पणियों का उन्मूलन करनेवाला' ऐसा भी आशय ऋग्वेद के निर्देश से ग्रहण किया जा सकता है। यदि ऐसा ही है, तो 'पणि' का अर्थ 'व्यापारी लोग' हो कर, बुधु उनका राजा होना संभवनीय है।

बृसय—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक दानव जाति, जो पणि एवं पारावत लोगों के साथ संबंधित थी (ऋ. १.९३.४; ६.३१.१)। ये लोक पणि एवं पारावतों के साथ 'अर्कोसिया' अथवा 'त्रैन्विजयाना' प्रदेश निवास करते थे।

सांयण के अनुसार, ऋग्वेद के भारद्वाज रचित सूक्त में इसे 'त्वष्टावृत्रपिता' कहा गया है, एवं इसके पुत्र वृत्र का वध करने की प्रार्थना सरस्वती से की गयी है (ऋ. ६. ३१.३)।

ऋग्वेद में अन्यस्थान पर, अग्नि एवं सोम के द्वारा बृसय के वंशजों का वध होने के कारण, उन देवताओं की स्तुति की गयी है (ऋ. १.९३.४)।

बृहच्छुक्लु—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

बृहच्छुक्लोक—एक आदित्य, जो उरुकर्म आदित्य का पुत्र था। इसकी माता का नाम कीर्ति था। सौभाग्यादि आदित्य इसके पुत्र थे।

बृहज्जिह्व—एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में से एक था।

बृहज्जोति—एक ऋषि, जो महर्षि अंगिरा को सुभा से उत्पन्न सात पुत्रों में से एक (म. व. २०८.२)।

बृहत्—एक राजा, जो कालेय नामक दैत्य गणों में से आठवे दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६७.५५)।

२. स्वायंभूव मन्वन्तर के जिताजित् देवों में से एक।

३. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

४. (सो. पूर.) पूर्ववंशीय हस्तिन् राजा का नामान्तर (ब्रह्म. १३. ८०) ।

५. (सू. इ. भविष्य.) इक्ष्वाकुवंशीय बृहद्राज राजा का नामान्तर (बृहद्राज देखिये) ।

६. दक्षसावर्णि मनु का एक पुत्र ।

बृहती—देवसावर्णि मन्वन्तर के विष्णु की माता, जो देवहोत्र ऋषि की पत्नी थी (भा. ८. १३. ३२.) ।

बृहत्कर्मन्—एक अनुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार पृथुलक्ष राजा का, एवं विष्णु, मत्स्य एवं वायु के अनुसार भद्ररथ राजा का पुत्र था ।

२. (सो. पूर.) एक पूर्ववंशीय राजा, जो विष्णु के अनुसार बृहद्रसु का, एवं वायु के अनुसार महाबल का पुत्र था । इसे बृहत्काय नामान्तर भी प्राप्त है ।

३. (मगध. भविष्य.) एक राजा, जो ब्रह्मांड एवं विष्णु के अनुसार सुक्षत्र का, वायु के अनुसार सुकृत का, एवं मत्स्य के अनुसार सुरक्ष का पुत्र था । भागवत में इसे बृहत्सेन कहा गया है । मत्स्य, वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार इसने २३ वर्षों तक राज्य किया ।

बृहत्काय—(सो. पूर.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, बृहद्रानु का पुत्र ।

बृहत्कर्ति—एक ऋषि, जो अंगिरा ऋषि को सुभा नामक पत्नी से उत्पन्न हुआ था ।

बृहत्केतु—महाभारत में निर्दिष्ट एक प्राचीन नरेश (म. आ. १.७७) ।

बृहत्क्षेत्र—इक्ष्वाकु वंशीय बृहत्क्षेत्र राजा का नामान्तर ।

बृहत्क्षत्र—(सो. पूर.) एक पूर्ववंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार मन्वु का, एवं विष्णु तथा वायु के अनुसार भुवन्मन्वु का पुत्र था । इसे बृहत्क्षेत्र नामान्तर भी प्राप्त है ।

२. भगीरथवंशीय एक राजा, जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १.७७.१९) ।

३. केकय देश का नरेश, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. आ. १.७७.१९) । महाभारत में इसके रथ के अश्वों का वर्णन प्राप्त है (म. द्रो. २२. १७) । भारतीययुद्ध में कृपाचार्य एवं क्षेमधूर्ति से इसका दंड युद्ध हुआ था, जिसमें इसने उन दोनों को परास्त किया था (म. द्रो. ४५.५२) । अंत में द्रोणाचार्य के द्वारा यह मारा गया (म. द्रो. १०२.२१) ।

४. निषध देश का राजा, जो भारतीययुद्ध में कौरव पक्ष में शामिल था । द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न द्वारा इसका वध हुआ (म. द्रो. ३१.६३) ।

बृहत्क्षय—(सू. इ. भविष्य.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो वायु के अनुसार बृहद्बल राजा का पुत्र था । संभवतः यह भारतीययुद्धकालीन रहा होगा ।

बृहत्क्षेत्र—पूर्ववंशीय बृहत्क्षेत्र राजा का नामान्तर (बृहत्क्षेत्र १. देखिये) ।

बृहत्सामन् अंगिरस—एक अंगिरसकुलोत्पन्न आचार्य, जिसे क्षत्रियों ने अत्यधिक व्रत किया था । उन कष्टों के फलस्वरूप, अंत में स्वयं क्षत्रिय लोग भी विनष्ट हो गये (अ. वे. ५.१९.२) ।

बृहत्सेन—एक राजा, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था । इसकी कन्या का नाम लक्ष्मणा था, जो कृष्ण की पत्नी थी । भारतीय युद्ध में यह दुर्योधन के पक्ष में शामिल था ।

२. मगधवंशीय बृहत्कर्मन् राजा का नामान्तर (बृहत्कर्मन् ३. देखिये) ।

३. श्रीकृष्ण को भद्रा नामक पत्नी से उत्पन्न पुत्र ।

४. एक आचार्य, जिसे नारद ने ब्रह्मविद्या की परंपरा कथन की थी । आगे चल कर यही परंपरा इसने इंद्र को निवेदित की थी (गरुड. २.१) ।

बृहत्सेना—नलपत्नी दमयंती की धाय एवं परिचारिका, जो परिचर्या के काम में निपुण, एवं मधुरभाषिणी थी । राजा नल को लुभे में हरते जान कर, दमयंती ने इसे अपने मंत्रियों को लुखने के लिए भेजा था (म. व. ५७. ४) । तदनुसार इसने विश्वसनीय पुरुषों के द्वारा बाष्पेय नामक सुत को बुलवाया था ।

बृहदनु—(सो. पूर.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार अजमीठ राजा के प्रपौत्र का पुत्र था । इसके पुत्र का नाम बृहदिषु था (बृहदिषु १. देखिये) ।

बृहदंबालिका—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.४) ।

बृहद्श्व—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो श्रावस्त का पुत्र था । इसकी राजधानी श्रावस्ती नगरी में थी, एवं इसके पुत्र का नाम कुबलाश्व था ।

यह एक आदर्श एवं प्रजाहितदक्ष राजा था । वृद्धापकाल में, इसने अपने पुत्र कुबलाश्व को राज्याहीन पर विठा

कर, वानप्रस्थाश्रम के लिये अरण्य में जाना चाहा। किन्तु उत्तक ऋषि ने इसे रोक दिया, एवं धन में जाने के पहले धुंधु नामक दैत्य का विनाश करने की प्रार्थना इसे की। फिर इसने अपने पुत्र कुवलाश्व को धुंधु दैत्य को नष्ट करने की आज्ञा दी, एवं यह स्वयं वन चला गया (म. व. १९३-१९४; वायु. ६८; विष्णुधर्म १.१६)।

२. एक महर्षि, जो काम्यकवन में युधिष्ठिर से मिलने आये थे। युधिष्ठिर ने इसका उचित आदर सत्कार किया, एवं इसके प्रति अपने दुःखदैन्य का निवेदन किया। इसने युधिष्ठिर को समझाते हुए निषधराज नल के दुःखदैन्य की कथा उसे सुनाई। पश्चात् युधिष्ठिर को 'अक्षहृदय' एवं 'अश्वशिर' नामक विद्याओं का उपदेश दे कर, यह विदा हो गया (म. व. ७८)।

शरसाय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने आये ऋषियों में, यह भी शामिल था (भा. १.९.६)।

३. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

४. शिव के श्वेत नामक दो अवतारों में से श्वेत (द्वितीय) का शिष्य।

५. (सू. इ. भविष्य.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो सहदेव राजा का पुत्र था। मत्स्य में इसे 'ध्रुवाश्व' कहा गया है।

बृहदिषु—(सो. अज.) एक अजमीदवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार अजमीद राजा का पुत्र था। मत्स्य में इसे अजमीद के प्रपौत्र का पुत्र बृहदनु का पुत्र कहा गया है। मत्स्य के अतिरिक्त बाकी सारे पुराणों में अजमीद से बृहदनु तक के राजाओं का निर्देश अप्राप्य है।

२. (सो. नील.) एक नीलवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार भग्योश्व का, विष्णु के अनुसार हर्यश्व का, मत्स्य के अनुसार भद्राश्व का, एवं वायु के अनुसार रिश्व राजा का पुत्र था।

बृहदुक्थ—अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार एवं ऋषिक। इसे 'बृहदुक्थ' एवं 'बृहद्वक्षस्' नामान्तर भी प्राप्त है।

२. निमिबंशीय देवराज जनक राजा का नामान्तर (बृहद्रथ ३. देखिये)।

बृहदुक्थ वामदेव—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा एवं पुरोहित (ऋ. १०.५४-५६)। शतयथब्राह्मण में इसे वामदेव का पुत्र इस अर्थ से 'वामदेव्य' कहा गया है (श. ब्रा. १३.२.२.१४)। पंचविश ब्राह्मण में इसे वामनेय (वामी का वंशज) कहा गया है (पं. ब्रा. १४.

९. ३७.३८)। किन्तु हॉपकिन्स के अनुसार, यहाँ वामदेव्य पाठ ही स्वीकरणीय है।

इसके द्वारा किये गये स्तुतिपाठों का निर्देश वत्रि के सूक्त में प्राप्त है (ऋ. ५.१९.३)। इसने पांचाल देश के दुर्मुख नामक राजा को राज्याभिषेक किया था (ऐ. ब्रा. ८.२३)।

इसके पुत्र का नाम वाजिन् था, जिसकी मृत्योपरान्त उसके मृत शरीर के भाग उठा कर ले जाने के लिये, इसने देवों से प्रार्थना की थी (ऋ. १०.५६)।

बृहदुच्छ—निमिबंशीय देवराज जनक का नामान्तर (बृहद्रथ ३. देखिये)।

बृहदुक्थ—बृहदुक्थ नामक अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर (बृहदुक्थ १. देखिये)।

बृहदेशान—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भविष्य के अनुसार बृहद्वल राजा का पुत्र था।

बृहद्रर्म—(सो. उशी.) शिवि औशीनर राजा का पुत्र। एक बार शिविराज के पास एक अतिथि आया, एवं उसने कहा, 'मेरी यही इच्छा है, तुम्हारे पुत्र बृहद्रर्म का माँस पक कर मुझे खाने के लिए मिले'।

शिवि राज ने अपनी इसके प्रति की सारी वात्सल्या-भावना दूर रख कर इसका वध किया, एवं अतिथि की माँग पूरी की (म. शां. २२६. १९; शिवि देखिये)।

बृहद्रि—यति नामक यज्ञविरोधी लोगों में से एक। यति लोग यज्ञविरोधी होने के कारण, इंद्र की आज्ञा से लकड़वृषे के द्वारा मरवा डाले गये। इस वधसत्र में से यह, रयोवाज एवं पृथुरश्मि ही बच सके। इंद्र ने इन तीनों का संरक्षण किया, एवं उन्हें क्रमशः ब्रह्मविद्या, वैश्वविद्या एवं क्षत्रियविद्या सिखायी (पं. ब्रा. ८. १. ४. पृथुरश्मि देखिये)। पंचविश ब्राह्मण में इसके द्वारा रचित एक सामन् का निर्देश प्राप्त है (पं. ब्रा. १३.४.१५-१७)।

बृहद्गुरु—एक प्राचीन राजा (म. आ. १.१७३)।

बृहद्वि अथर्वण—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १२०.८-२०)। इससे रचित सूक्त में इसने स्वयं को 'अथर्वन्' कहा है। यह सुप्रयु नामक आचार्य का शिष्य था (सं. आ. १५.१)। ऐतरेय ब्राह्मण में भी इसका नामोल्लेख प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ४.१४)।

बृहद्बुध—एक महाप्रतापी नरेश, जिसने अपने यज्ञ में रैभ्यपुत्र अर्वावसु और परावसु को सहयोगी बनाया था (म. व १३९.१; रैभ्य एवं पुनर्वसु देखिये)।

बृहद्बनु—(सो. पू.व.) एक पूर्ववंशीय राजा, जो बृहन्मनस् का पुत्र था।

बृहद्बल—(सू. इ.) कोसल देश का एक सम्राट, जो भागवत के अनुसार तक्षक राजा का, एवं अन्य पुराणों के अनुसार विश्रुतवत् राजा का पुत्र था।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, भीमसेन ने किये पूर्व दिग्बिजय में उसने इसे परास्त किया था (म. सं. २७.१)। राजसूय यज्ञ में इसने युधिष्ठिर को चौदह हजार उत्तम अश्व भेंट में प्रदान किये थे।

भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। दुर्योधन ने अपने सैन्यसमुद्र में इनकी उपमा 'समुच्चाल' (ज्वार) से की थी (म. उ. १५८.३८)। अन्त में अभिमन्यु से हुए घनघोर युद्ध में, यह उसीके द्वारा मारा गया था (म. द्रो. ४६.२४; भा. १.१२.८)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो वसुदेवभ्राता देवभाग एवं कंसा का पुत्र था (भा. १.२४.४०)।

३. गांधारराज सुव्रल राजा का एक पुत्र, जो शकुनि का भाई था। अपने भाई शकुनि एवं वृषक के साथ यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था।

४. (सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा, जो विष्णु के अनुसार बृहत्कर्मन् का पुत्र था।

बृहद्बलध्वज—एक कुष्ठरोगी ऋषि, जो सूर्य की श्राधना कर कुष्ठरोग से मुक्त हुआ (भवि. ब्राह्म. २१०)।

बृहद्ब्रह्मन्—एक ऋषि, जो अंगिरस ऋषि को सुभा नामक पत्नी से उत्पन्न सात पुत्रों में से एक था (म. व. २०८.२)।

बृहद्बानु—एक देव, जो वृ का पुत्र था (म. आ. १.४०)।

२. (सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार पृथुलक्ष का, एवं विष्णु एवं मरुत्य के अनुसार बृहत्कर्मन् का पुत्र था।

३. (सो. पू.व.) एक पूर्ववंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार बृहद्विपु का पुत्र था। विष्णु के अनुसार, इसे बृहद्रथ, तथा वायु के अनुसार बृहद्विष्णु नामान्तर प्राप्त है।

४. श्रीकृष्ण एवं सत्यभामा के पुत्रों में से एक।

५. इंद्रसावर्णि मन्वन्तर में उत्पन्न एक अवतार, जो सत्रायण एवं विताना का पुत्र था।

६. भानु नामक अग्नि का नामान्तर।

बृहद्भास—एक ऋषि, जो अंगिरस ऋषि को सुभा नामक पत्नी से उत्पन्न सात पुत्रों में से एक था।

बृहद्भासा—सूर्य की एक कन्या, जो भानु (मनु) नामक अग्नि की भार्या थी (म. व. २११.९)।

बृहद्रण—इक्ष्वाकुवंशीय बृहत्क्षय राजा का नामान्तर।

बृहद्रथ—एक राजा, जिसका निर्देश ऋग्वेद में 'नवा-वास्व' राजा के साथ प्राप्त है (ऋ. १.२६.१८)। वैकुण्ठ नामक इंद्र ने इसका वध किया (ऋ. १०.४९.६)। संभव है कि, बृहद्रथ स्वतंत्र राजा का नाम न हो कर, 'नवावास्त' राजा की ही उपाधि हो।

२. (सो. ऋश.) मगध देश का राजा, जो चेदिराज सम्राट उपरिचर वसु का पुत्र, एवं जरासंध का पिता था (म. आ. ५७.२९)। यह मगध देश का बलवान् राजा तीन अश्वहिणी सेना का स्वामी, एवं अत्यंत पराक्रमी योद्धा था (म. स. १६.१२)।

काशिराज की दो जुव्वी कन्याएँ इसकी पत्नियाँ थीं। इसने एकांत में अपनी दोनों पत्नियों के साथ प्रतिज्ञा की थी, 'मैं तुम दोनों के साथ कभी विषम व्यवहार न करूँगा।'

इसे दुनिया के सारे सुख एवं भोग इसे प्राप्त थे, किंतु पुत्र न था। पुत्रप्राप्ति के लिये इसने पुत्रकामेष्टि यज्ञ भी किया, किंतु कुछ लाभ न हुआ। अंत में यह अपनी दोनों पत्नियों के साथ चंडकौशिक नामक मुनि के पास गया, एवं अनेक प्रकार के रत्नों से इसने उसे संतुष्ट किया। पश्चात् ऋषि ने इसे वन में आने का कारण पूछने पर, इसने अपनी निपुत्रिक अवस्था उसे कथन की।

पुत्रप्राप्ति के लिये चंडकौशिक मुनि ने इसे आम का एक फल दिया, एवं उसे अपने दो पत्नियों को समविभाग में देने के लिये कहा। ऋषि के आदेशानुसार राजा ने वह फल दो भागों में विभक्त कर के, एक एक भाग पत्नियों को खिलाया। पश्चात् दोनों को गर्भ रचा। प्रसवकाल आने पर दोनों के गर्भ से शरीर का आधा-आधा भाग उत्पन्न हुआ। उन दो टुकड़ों को रानियों ने बाहर फेंक दिया। जरा नामक राक्षसी ने उन दोनों टुकड़ों को जोड़ दिया, जिससे एक बलवान् कुमार सजीव हो उठा।

राक्षसी ने वह बालक राजा को अर्पित कर दिया। राजा उस बालक को ले कर महल में आया। इसने बालक का जातकर्म आदि किया, एवं उसका नाम जरासंध रखा गया। पश्चात् इसने मगध देश में राक्षसीपुत्र का

महान्-उत्सव मनाने की आज्ञा दी (म. स. १६-१७)।

जरासंध बड़ा होने पर, इसने उसे अपने राज्य पर अभिषिक्त किया, एवं अपनी दोनों पत्नियों के साथ यह तपोवन चला गया (स. १७.२५)।

इसने ऋषभ नामक राक्षस का वध कर के उसकी खाल से तीन नगाड़े बनवाये थे, जिनपर चोट करने से महिने भर आवाज होती रहती थी। ये नगाड़े इसने अपनी गिरिव्रज नामक राजधानी के महाद्वार पर रखे थे (म. स. १९.१५-१६)।

बृहद्रथ राजा को 'बार्हद्रथ' राजवंश का आद्य पुरुष माना जाता है। इसीसे आगे चल कर उस वंश का विस्तार हुआ (बार्हद्रथ देखिये)।

३. (सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो देवरात जनक का पुत्र था। विष्णु के अनुसार इसे बृहदुक्थ, एवं वायु के अनुसार बृहदुच्छ तथा दैवराति नामान्तर भी प्राप्त है।

अध्यात्मज्ञान के प्राप्ति के लिये इसने शाकल्य, याज्ञवल्क्य आदि ऋषियों को अपने राज्य में निमंत्रित किया था। उपस्थित सारे ऋषियों में से याज्ञवल्क्य ही अत्यंत ब्रह्मनिष्ठ है, यह जान कर इसने उससे अध्यात्मज्ञान का उपदेश प्राप्त किया (म. शां. २९८; भा. ९.१३; याज्ञवल्क्य देखिये)।

इसे महावीर्य नामक पुत्र था, जो इसके पश्चात् विदेह देश का राजा बन गया।

४. (सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार पृथुलाक्ष का, वायु के अनुसार बृहत्कर्मन् का, एवं विष्णु के अनुसार भद्ररथ राजा का पुत्र था। इसे बृहत्कर्मन् एवं बृहद्भानु नामक दो भाई थे।

५. (सो. अनु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार जयद्रथ का पुत्र था।

६. एक तत्वज्ञानी, जिसका नामोल्लेख मैत्रायणी उपनिषद् में प्राप्त है (मै. उ. १.२; २.१)।

७. (सो. द्विमीट.) द्विमीटवंशीय बहुरथ राजा का नामान्तर (बहुरथ देखिये)।

८. एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम इंद्रुमती था (इंद्रुमती ३. देखिये)।

९. अंगदेश का एक दानशूर राजा, जिसके द्वारा किये गये दान का वर्णन स्वयं श्रीकृष्ण ने किया था।

महामारत में निर्दिष्ट सोलह श्रेष्ठ राजाओं में इसका निर्देश प्राप्त है, जहाँ इसे 'अंग बृहद्रथ' कहा गया है (म. शां. २९.२८-३४)।

परशुराम के द्वारा किये गये क्षत्रिय संहार से इसे गोलंगूल नामक वानर ने बचाया, एवं यत्रकूट नामक पर्वत पर इसे छिपा कर रख दिया। पश्चात् परशुराम के द्वारा सारी पृथ्वी कश्यप को दान दिये जाने पर, यह अपने राज्य में लौट आया, एवं पहले की तरह राज्य करने लगा (म. शां. ४९.७३)।

१०. एक राजा, जो सूक्ष्म नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.१९)। यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-बृहन्त।

११. एक अग्नि, जो वसिष्ठपुत्र होने के कारण, 'वासिष्ठ' भी कहलाता है। इसके पुत्र का नाम प्रणिधि था (म. व. २११.८)।

१२. दुर्योधनपक्षीय एक राजा (म. उ. १९६.१०)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'बृहद्वल'।

१३. (सो. पूरु. भविष्य.) एक राजा, जो भविष्य के अनुसार तिग्मज्योति का, मत्स्य एवं विष्णु के अनुसार तिग्म का, तथा भागवत के अनुसार तिमि राजा का पुत्र था।

१४. (मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार शतधनुक्का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार शतधनु का पुत्र था। मत्स्य के अनुसार इसने ७० वर्षों तक, एवं ब्रह्मांड के अनुसार इसने ७ वर्षों तक राज्य किया। मत्स्य के अतिरिक्त बाकी सारे पुराणों में इसे मौर्यवंश का अंतीम राजा माना गया है।

१५. दक्षसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

बृहद्रथ ऐश्वकाक—एक राजा, जो शाक्यन्य ऋषि के पास आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिए गया था। शाक्यन्य स्वयं मैत्री ऋषि का शिष्य था।

शाक्यन्य को इसने कहा, 'अत्यंत गहरे कुएँ में गिरे हुए जानवर के समान मनुष्यप्राणि की स्थिति है। अतएव आप ही मुझे मुक्ति का रास्ता बताने की कृपा करें'। फिर शाक्यन्य ने ब्रह्मज्ञान एवं पुनर्जन्म का विवेचन कर इसे मुक्ति का मार्ग बता दिया (मैत्रा. उ. १.१-७)।

बृहद्राज—(सू. इ. भविष्य.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत एवं भविष्य के अनुसार अमित्रजित् राजा का, विष्णु के अनुसार मित्रजित् का, एवं मत्स्य के

अनुसार सुमित्र का पुत्र था। इसे बृहत् एवं भरद्वाज नामान्तर भी प्राप्त है।

बृहद्रक्षस्—अंगिराकुलोत्पन्न मंत्रकार बृहदुक्थ का नामान्तर।

बृहद्रन्—एक गंधर्व, जो अर्जुन के अन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. ११४.४६)।

बृहद्रथपु—सत्यदेवों में से एक।

बृहद्रथसु—वंश ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक आचार्य (वं. ब्रा. ३)।

२. वशावर्तिन् देवों में से एक।

३. पूर्ववशीय बृहद्भानु राजा का नामान्तर (बृहद्भानु ३. देखिये)।

बृहद्विष्णु—पूर्ववशीय बृहद्भानु राजा का नामान्तर (बृहद्भानु ३. देखिये)।

बृहदध्वज—एक राक्षस, जो दूसरे लोगों के धनधान्य एवं स्त्रियों का अपहरण करता था।

एक वार भीमकेश नामक राजा की केशिनी नामक स्त्री को इसने देखा। यह उसका अपहरण करनेवाला ही था, कि केशिनी ने इसे कहा, 'मैं अपने पति का अत्यधिक द्वेष करती हूँ। इसी कारण, मैं स्वयं तुम्हारे साथ आने के लिए तैयार हूँ'।

कोशिनी के अपने रथ में बिठा कर, यह उसे गंगासागरसंगम पर ले गया। किंतु उस प्रदेश में कोशिनी का पति भीमकेश का राज्य होने के कारण, वह डर के मारे मर गयी। फिर उसकी मृत्यु के दुःख से यह भी मर गया। किंतु इन दोनों की मृत्यु गंगासागरसंगम जैसे पवित्र स्थल पर होने के कारण, इन्हे विष्णुलोक की प्राप्ति हुयी (पद्म. कि. ४)।

बृहन्त—कुदृष्ट देव का राजा। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, अर्जुन ने किये उत्तर दिग्बिजय में, इसका अर्जुन के साथ युद्ध हुआ था। उस युद्ध में इसका पराजय हुआ, एवं अनेक प्रकार के रत्नों की भेंट लेकर यह अर्जुन की सेवा में उपस्थित हुआ था (म. स. २४.४-११)। द्रौपदी के स्वयंवर में भी यह उपस्थित था (म. आ. १७७.७)।

युधिष्ठिर के प्रति इसके मन में अत्यधिक आदरभाव था। इस कारण, भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ४.१३)। इसके रथ को जोते गये अश्व अत्यधिक सुंदर थे (म. द्रो. २२.४४)। अन्त में दुःशासन के द्वारा यह मारा गया (म. क. ४.६५)।

२. कौरव पक्ष का एक योद्धा, जो क्षेमधृति का भाई था। भारतीय युद्ध में सात्यकि के साथ इसका युद्ध हुआ था (म. द्रो. २४.४९)। अन्त में इसी युद्ध में यह मारा गया (म. क. ४.४९)।

३. (सो. पूर.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार बृहदन्तु राजा का पुत्र था।

बृहन्नडा—अर्जुन का नामान्तर, जो उसने विराट नगर में अज्ञातवास के समय स्वीकृत किया था (म. वि. २२-अर्जुन देखिये)।

बृहन्मति आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९. ३९-४०)।

बृहन्मनस्—(सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा, जो भागवत एवं वायु के अनुसार, बृहद्रथ राजा का पुत्र था। इसे यशोदेवी एवं सत्या नामक दो पत्नियाँ थी। उनमें से यशोदेवी से इसे जयद्रथ, एवं सत्या से विजय नामक पुत्र उत्पन्न हुए।

२. एक ऋषि, जो महर्षि अंगिरा को सुमना (सुभा) नामक पत्नी से उत्पन्न सात पुत्रों में से एक था (म. व. २०८.२)।

३. (सो. पूर.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार बृहन्त राजा का पुत्र था।

बृहन्मित्र—एक ऋषि, जो महर्षि अंगिरा को सुमना (सुभा) से उत्पन्न सात पुत्रों में से एक था (म. व. २०८.२)।

बृहन्मेदस्—(सो. क्रोष्टु.) एक यादववंशीय राजा, जो वसुधन्त राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम श्रीदेव था (कूर्म. १.२४.६-१०)।

बृहस्पति—एक वैदिक देव; जो बुद्धि, युद्ध एवं यज्ञ का अधिष्ठाता माना जाता है। इसे 'सप्तस्पति', 'ज्येष्ठ-राज' तथा 'गणपति' नाम भी दिये गये हैं (ऋ. १.१८. ६-७; २.२३.१)। बृहदारण्यक उपनिषद् में बृहस्पति को वाणी का पति (बृहती+पति = वाणी + पति) माना गया है (बृ. उ. १.३.२०-२१)। मैत्रायणी संहिता एवं शथपथ ब्राह्मण में इसे 'वाचस्पति' (वाच का स्वामी) कहा गया है (मै. सं. २.६.; द्य. ब्रा. १४.४.१)। वैदिकोत्तर साहित्य में, इसे बुद्धि एवं वाक्पटुता का देवता के रूप में व्यक्त किया गया है।

इस देवता का ऋग्वेद में प्रमुख स्थान है, एवं उसमें स्यारह सम्पूर्ण सूक्तों द्वारा इसकी स्तुति की गयी है। दो सूक्तों में इन्द्र के साथ युगलरूप में भी इसकी

गुणावली गायी गई है (ऋ. ४.४९; ७.९७)। इस ग्रन्थ में बृहस्पति नाम प्रायः एक सौ बीस बार, एवं 'ब्रह्मणस्पति' के रूप में इसका नाम लगभग पचास बार आया है। ऋग्वेद के लोकपुत्र नामक सूक्त के प्रणयन का भी श्रेय इसे प्राप्त है (ऋ. १०.७१-७२)।

जन्म—उच्चतम आकाश के महान् प्रकाश से बृहस्पति का जन्म हुआ था। जन्म होते ही इसने अपनी महान् तेजस्वी शक्ति एवं गर्जन द्वारा अन्धकार को जीत कर उसका हरण किया (ऋ. ४.५०; १०.६८)। इसे दोनों लोगों की सन्तान, तथा त्वष्टु द्वारा उत्पन्न हुआ भी कहा जाता है (ऋ. ७.९७; २.२३)। जन्म की कथा के साथ साथ यह भी निर्देश प्राप्त होता है कि, यह देवों का पिता है, तथा इसने छहार की भौति देवों को धमन द्वारा उत्पन्न किया है (ऋ. १०.७२)।

रूप-वर्णन—ऋग्वेद के सूक्तों में इसके दैहिक गुणों का सांगोपांग वर्णन तो नहीं मिलता, फिर भी उसकी एक स्पष्ट झलक अवश्य प्राप्त है। यह सप्त-मुख एवं सप्त-रश्मि, सुन्दर जिह्वावाला, तीक्ष्ण सीधोवाला, नील पृष्ठवाला तथा शतपंखोंवाला वर्णित किया गया है (ऋ. ४.५०; १.१९०; १०.१५५; ५.४३; ७.९७)। इसका वर्ण स्वर्ण के समान अरुणिम आभायुक्त है, तथा यह उज्वल, विशुद्ध तथा स्पष्ट वाणी शैलनेवाला कहा गया है (ऋ. ३.६२; ५.४३; ७.९७)।

इसके पास एक धनुष्य है, जिसकी प्रत्यंचा ही 'ऋत' है; एवं अनेक श्रेष्ठ बाण हैं, जिन्हें शत्रु के रूप में प्रयोग करता है (ऋ. २.२४; अ. वे. ५.१८)। यह स्वर्ण कुटार एवं लौह कुटार धारण करता है, जिसे त्वष्टा तीक्ष्ण रखता है (ऋ. ७.९७; १०.५३)। इसके पास एक सुन्दर रथ है। यह ऐसे ऋत रूपी रथ पर खड़ा होता है, जो राक्षसों का वध करनेवाला, गाय के गोशों को तोड़नेवाला, एवं प्रकाश पर विजय प्राप्त करनेवाला है। इसके रथ को अरुणिम अश्व स्वीचते हैं (ऋ. १०.१०३; २.२३)।

गुण-वर्णन—बृहस्पति को 'ब्रह्मणस्पति' (स्तुतियों का स्वामी) कहा गया है, क्योंकि, यह अपने श्रेष्ठ रथ पर आरूढ़ हो कर देवों तथा स्तुतियों के शत्रुओं को जीतता है (ऋ. २.२३)। इसी कारण यह द्रष्टाओं में सर्वश्रेष्ठ एवं स्तुतियों का श्रेष्ठतम अधिराज कहा गया है (ऋ. २.२३)। यह समस्त स्तुतियों को उत्पन्न एवं उच्चारण करनेवाला है

(ऋ. १.१०९; १.४०)। यह मानवीय पुरोहितों को स्तुतियों प्रदान करनेवाला देव है (ऋ. १०.९८.२७)।

बृहस्पति एक पारिवारिक पुरोहित है (ऋ. २.२४)। शतपथ ब्राह्मण में इसे सोम का पुरोहित कहा गया है (श. ब्रा. ४.१.२), एवं ऋग्वेद में इसे प्राचीन ऋषियों ने पुरोहितों में श्रेष्ठपद (पुरो-धा) पर प्रतिष्ठित किया है। वाद के वैदिक ग्रन्थों में इसे ब्रह्मन् अथवा पुरोहित कहा गया है।

बृहस्पति युद्धोपम प्रवृत्तियोंको अर्जित करनेवाला है। इसने सम्पत्ति से भरे पर्वत का भेद कर, शम्बर के गदों को मुक्त किया था (ऋ. २.२४)। इसे दोनों लोगों में गर्जन करनेवाला, प्रथमजन्मा, पवित्र, पर्वतों में बुद्धिमान्, वृत्रों (वृत्राणि) का वध करनेवाला, दुर्गों को छिन्न-भिन्न करनेवाला, तथा शत्रुविजेता कहा गया है (ऋ. ६.७३)। यह शत्रुओं को रण में पछाड़नेवाला, उनका दमन करनेवाला, युद्धभूमि में असाधारण योद्धा है, जिसे कोई जीत नहीं सकता (ऋ. १०.१०३; २.२३; १.४०)। इसीलिए युद्ध के पूर्व आह्वान करनेवाले देवता के रूप में इसका स्मरण किया जाता है (ऋ. २.२३)।

इन्द्रपुराकथा में, गायों को मुक्त करनेवालों में, अग्नि की भौति बृहस्पति का भी नाम आता है। बृहस्पति ने जब गोशों को खोला तथा इन्द्र को साथ लेकर अन्धकार द्वारा आवृत्त जलस्रोतों को मुक्त किया, तब पर्वत इनके वैभव के आवीन हो गया (ऋ. २.२३)। अपने गाय-कदल के साथ, इसने गर्जन करते हुए 'बल' को विदीर्ण किया; तथा अपने सिंहनाद द्वारा रैमती गायों को बाहर कर दिया (ऋ. ४.५०)। पर्वतों से गायों को ऐसा मुक्त किया गया, जिस प्रकार एक निष्पाण अण्डे को फोड़ कर जीवित पक्षी उन्मुक्त किया जाता है (ऋ. १०.६८)।

बृहस्पति वितायुओं का हरणकर्ता एवं समृद्धि प्रदाता देव के रूप में, अपने भक्तों द्वारा स्मरण किया जाता है (ऋ. २.२५)। यह एक ओर भक्तों को दीर्घव्याधियों से मुक्त करता है, उनके समस्त संकटों, विपत्तियों, शार्पों तथा यंत्रणाओं का शमन करता है (ऋ. १.१८; २.२३); तथा दूसरी ओर उन्हें वॉलित फल, सम्पत्ति, बुद्धि तथा समृद्धि से सम्पन्न करता है (ऋ. ७.१०.९७)।

बृहस्पति मूलतः यज्ञ को सत्यन करनेवाला पुरोहित है, अतएव इसका एवं अग्नि का सम्बन्ध अविलिप्त है। मैक्स मूलर इसे अग्नि का एक प्रकार मानता है। रौथ कहता है,

‘यह पौरोहित्य-प्रधान देवता स्तुति की शक्ति का प्रत्यक्ष प्रतिरूप है’।

चतुर्विंश तथा अन्य याग इसके नाम पर उल्लिखित है (तै. सं. ७.४.१)। इसके नाम पर कुछ साम भी हैं, जिनके स्वरों के गायन की तुलना कौच पक्षी के शब्दों से की गयी है (छां. उ. १.२.११)।

इसके पत्नी का नाम वेना था (गो.ब्रा. २-९)। वेना का अर्थ ‘वाणी’ है। इसकी जुहू नामक एक अन्य पत्नी का भी उल्लेख प्राप्त है।

कई अग्न्यासनों के अनुसार, आकाश के सौरमंडल में स्थित बृहस्पति नामक नक्षत्र यही था। इसकी पत्नी का नाम तारा था, जिसे सोम के द्वारा अपहार किया गया था। बृहस्पति की पत्नी तारा से सोम को बुध नामक पुत्र भी उत्पन्न हुआ था (वायु. ९०.२८-४३; ब्रह्म. ९.१९-३२; म. उ. ११५.१३)। ज्योतिर्विदों के अनुसार बृहस्पति के इस कथा में निर्दिष्ट सोम, तारा, बुध एवं बृहस्पति ये सारे सौरमंडल में स्थित विभिन्न नक्षत्रों के नाम हैं (बुध देखिये)।

२. एक ऋषि; जो देवों का गुरु एवं आचार्य था। (ऐ. ब्रा. ८.२६)। महाभारत में इसे एवं सोम को ब्राह्मणों का राजा कहा गया है (म. आश्व. ३)। यह दैत्य एवं असुरों का गुरु ‘भार्गव उशनस् शुक्र’ का समवर्ती था। देवदैत्यों का सुविख्यात संग्राम, जिसमें बृहस्पति एवं शुक्र इन दोनों ने बड़ा ही महत्वपूर्ण भाग लिया था, इक्ष्वाकुवंशीय ययाति राजा के राज्यकाल में हुआ था। दैत्यगुरु शुक्र की कन्या देवयानी से ययाति ने विवाह किया था। इस कारण, शुक्र एवं देवगुरु बृहस्पति ययाति के समकालीन प्रतीत होते हैं।

एक बार, देवगुरु बृहस्पति का इंद्र ने अपमान किया, जिसके कारण, इसने इंद्र तथा देवों को त्याग दिया। लेकिन जब बिना बृहस्पति के, तरह तरह की अड़चने पड़ने लगीं, तब देवों ने मिलकर इससे माफी माँगी, और पुनः इसे देवगुरु के स्थान पर सुशोभित किया (भा. ६.७)।

दैत्यों का पराजय—देवदानवों के बीच घोर संग्राम हुआ, जिसमें देवों को हार का मुँह देखना पड़ा। दानवों ने शक्ति, शासन और सजीवनी आदि के बल पर देवों को हर प्रकार के कष्ट देना आरम्भ किया। यही नहीं, शुक्राचार्य देवों को समूल नष्ट करने के लिए घोर तपस्या में लग गया। तब इंद्र ने अपनी कन्या जयन्ती को शुक्र के पास उसके तप को रोक करने के लिये भेजा।

वहाँ जाकर, जयन्ती ने उसे अपने सेवामाव तथा मोहपाश में बाँध लिया। इस अवसर का लाभ उठाकर बृहस्पति ने तेजबल से शुक्र का रूप धारण कर एवं दानवों में नास्तिक धर्म प्रचार से उन्हें धर्मभ्रष्ट करने लगा। तब दैत्यों का परामव हुआ (पद्म. स्र. १३; उशनस् देखिये)।

इन्द्रपद प्राप्त कर नहुष. तामसी प्रवृत्तियों में इतना लिप्त हो गया कि, उसने धार्मिक विधियों को त्याग कर स्त्रीभोग में ही अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ ली, तथा उत्पात मचाने लगा। एक बार उसने इन्द्राणी को देखा, तथा उसके रूपयौवन पर मोहित हो कर उसे पकड़ मंगाया। तब वह भागती हुई बृहस्पति के पास आयी, तथा इसने इसे आशवासन दिया, ‘इन्द्र तेरी रक्षा करेगा, तेरा सतीत्व रक्षित है। तुम्हें चिन्ता की आवश्यकता नहीं!’ इसने ही इन्द्राणी को सलाह दी कि, नहुष से वह कुछ अवधि माँगे तथा इस प्रकार उसे धीरज दिला कर तरकीब से अपनी रक्षा करे (म. उ. १२.२५)। बाद को इन्द्र के द्वारा बताये हुए मार्ग पर चल कर, इन्द्राणी ने नहुष पर विजय प्राप्त की (म. उ. ११; नहुष देखिये)।

उपरिचर वसु के द्वारा निमंत्रण दिया जाने पर बृहस्पति ने उसके द्वारा किये यज्ञ में होता होना स्वीकार किया। उपरिचर वसु ऋिणु का परम भक्त था। इसीलिये विष्णु ने इस यज्ञ में स्वयं भाग ले कर यज्ञ के प्रसाद (पुरोडाश) को प्राप्त किया। बृहस्पति को विष्णु की उपस्थिति का विश्वास न हुआ। उसने समझा कि, उपरिचर छुट बोल रहा है, तथा स्वयं की महत्ता बढ़ाने के लिए खुद पुरोडाश खाकर विष्णु की उपस्थिति का बहाना कर रहा है। यह समझ कर इसने उसे शाप देना चाहा। किन्तु एकत, द्वित तथा त्रित ने बृहस्पति के क्रोध को शांत कराया, एवं विश्वास दिलाया कि, ‘उपरिचर सत्य कहता है। हम लोगों ने स्वयं विष्णु के दर्शन किये हैं’ (म. शां. ३२३)। इसने उपरिचर वसु राजा को ‘चित्रशिल्पिड-शास्त्र’ का ज्ञान विधिवत् प्रदान किया था (म. शां. ३२३.१-३)।

असुर एवं गंधर्वों के समान देवों ने भी पृथ्वी का दोहन किया। उस समय देवों ने बृहस्पति को बत्स बनाया था (भा. ४.१८.१४)। अथर्ववेद के अनुसार, ऋषियों के द्वारा किये पृथ्वीदोहन में बृहस्पति दोग्धा (दोहन करनेवाला) बनाया था, सोम को बत्स, तथा छंदस को पात्र बनाया गया था। उस दोहन से तप तथा वेदों

का निर्माण दुग्ध रूप में हुआ (अ. वे. ८.२८; पृथु वैन्य देखिये)।

प्रभासक्षेत्र में स्थित सोमेश्वर के शिवमंदिर में, बृहस्पति ने एक हजार वर्षों तक शिव की आराधना कर उसे प्रसन्न किया। शिव ने इसे आशीर्वाद दिया 'आकाश में स्थित सौरमण्डल में तुम बृहस्पति नामक ग्रह रूप में प्रतिष्ठित होगे' (स्कंद. २.४.१-१७)। शिवकृपा से इसने प्रभासक्षेत्र में बृहस्पतीश्वर नामक शिवलिंग की स्थापना की (स्कंद. ७.१.४८)।

संवाद—देवों के गुरु बृहस्पति का तत्त्वज्ञानी के नाते कई विद्वानों से शास्त्रार्थ हुआ, जो इसके ज्ञान, तर्क एवं चरितबुद्धि को प्रत्यक्ष प्रमाणित करते हैं।

युधिष्ठिर तथा इसके बीच जन्ममरण के संबंध में संवाद हुआ था, जिस में इसने उनके प्रकारों का वर्णन था। इसने युधिष्ठिर को बताया था कि, किस प्रकार प्राणी विभिन्न प्रकार के पाप कर के, उसके अनुसार ही भिन्न भिन्न योनियों में जन्म ले कर जन्ममरण के कथनों के बीच विचरण किया करता है (म. अनु. १११)। इसने उसे दान के स्वरूप की व्याख्या करते हुए, अन्नदान की महिमा का गान किया था (म. अनु. ११२)। युधिष्ठिर को जीवन में धर्मकर्म की आवश्यकता पर बल देते हुए, इसने उसे धर्म एवं अहिंसा का उपदेश दिया था (म. अनु. ११३)।

देवराज इंद्र को भी इसने अपनी ज्ञानगरिमा से कई उपदेश दिये। उसको बाणी की महत्ता बनाते हुए इसने उसे मधुर बचन बोलने का उपदेश दिया (म. शां. ८.५.३-१०)। उसे धर्मोपदेश दिया, तथा धर्माचरण की आज्ञा दी (म. अनु. १२५)। भूमि का मूल्य तथा भूमिदान की महत्ता का ज्ञान भी इसने इंद्र को कराया था (म. अनु. ६.२.५-९२)। इसके समय में मनुष्यों का पशु की तरह यज्ञ में हवन किया जाता था। अतएव इंद्र ने प्रार्थना की कि, यह मनुष्यों को बलि के रूप में समर्पित करना बंद करे (म. आश्व. ५.२५-२७)।

कोसलाधिपति वसुमनसू से इसने राजसंस्था की आवश्यकता एवं राजा के कर्तव्य के बारे में उपदेश दिया था (म. शां. ६८)। इक्ष्वाकुवंशीय मांधाता राजा के पूछने पर, इसने उसे गोदान के संबंध में अपने विचार प्रकट किये थे (म. अनु. ७६.५-२३)।

३. आंगिरस कुलोत्पन्न एक ऋषि, जो वैशाली के मरुत् आविश्चित राजा का पुरोहित था। यह वैशाली के करंधम

राजा का पुरोहित अंगिरा नामक महर्षि का पुत्र था। यह स्वार्थसुव मन्वंतर में पैदा हुआ था। इसकी माता का नाम स्वरूपा था (मा. ४. १; म. आ. ६०.५, आश्व. ५.४; ब्रह्मांड २.३.१)। कई ग्रंथों में, इसकी माता का नाम श्रद्धा दिया गया है। यह निर्देश सही हों, तो यह स्वार्थसुव मन्वंतर का न हो कर, वैवस्वत मन्वंतर में उत्पन्न हुआ होगा। महाभारत में अन्यत्र, इसकी उत्पत्ति अग्नि से बताई गई है (म. व. २०७.१८)।

इसे संवर्त, तथा उतथ्य नामक दो भाई थे, जिनके साथ आजीवन इसका संग्रर्ष चलता रहा। इन भाइयों में से, उतथ्य इसका ज्येष्ठ भाई था, जिसके नाम के लिये, वेदार्थदीपिका में, 'उचथ्य,' ब्रह्मांड एवं मत्स्य में 'उशिज,' एवं वायु में 'अशिज' पाठभेद प्राप्त हैं। इन पाठभेदों में से, 'उचथ्य' पाठभेद ही सही प्रतीत होता है।

एक बार इसने उतथ्य की गर्भवती पत्नी ममता के साथ संभोग किया। संभोग करते समय ममता के उदर में स्थित बालक ने बृहस्पति से बार बार उक्त क्रिया करने पर प्रतिवन्ध लगाया। इस पर क्रोधित हो कर इसने उस बालक को शाप दिया कि, वह जन्मांध पैदा हो। यही बालक बाद को अन्वे दीर्घतमसू के रूप में पैदा हुआ। इसके तथा ममता के संभोग द्वारा भरद्वाज नामक पुत्र हुआ, जो बाद को इक्ष्वाकुवंशीय नरेश दुष्यन्तपुत्र भरत द्वारा गोद लिया गया (म. आ. ९८; मत्स्य. ४९; वेदार्थ-दीपिका ६. ५२)।

संवर्त से इसका झगड़ा ईर्ष्या के कारण हुआ। यह आरम्भ से ही देवों का एवं पृथ्वी के पाँच सम्राटों में से मरुत् नामक सम्राट का भी पुरोहित था। एक बार अपना यज्ञ कराने के लिए इन्द्र ने इसे आमंत्रित किया। यह वहाँ गया, तथा वहाँ की सुखसामग्री एवं विलास देख कर वहीं रहा गया। इधर पृथ्वी पर मरुत् को भी यज्ञ करना था। अतएव उसने इसे उपस्थित न जानकर, इसके भाई संवर्त द्वारा यज्ञ कार्य कराना आरम्भ किया। जैसे ही इसे यह ज्ञात हुआ, इसने इसमें अपना अपमान समझा, तथा इंद्र को आदेश दिया कि, वह संवर्त द्वारा किया गया मरुत् का यज्ञ विध्वंस कर दे। इन्द्र अपनी समस्त सेना को ले कर यज्ञ विध्वंस हेतु गया, किंतु संवर्त के ब्रह्मतेजोबल के सम्मुख उसे परास्त होना पड़ा। पश्चात् मरुत् का यज्ञ निर्विघ्न समाप्त हुआ (म. आश्व. ५.९)।

परिवार—बृहस्पति की पत्नियाँ, एवं पुत्रों के बारे में अनेक निर्देश महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त हैं। किन्तु, वहाँ देवता बृहस्पति, देवगुरु बृहस्पति एवं बृहस्पति आंगिरस इन तीन स्वतंत्र व्यक्तियों के बारे में पृथगात्मता नहीं है, एवं इन तीनों को बहुत बुरी तरह संमिश्रित किया गया है। उदाहरणार्थ, तारा की कथा में, बृहस्पति को देवगुरु एवं आंगिरस कहा गया है (मत्स्य. ८२.३०; विष्णु. ४.६.७)। देवगुरु बृहस्पति को भी, अनेक स्थानों पर, आंगिरस कहा गया है, एवं बृहस्पति आंगिरस को अनेक स्थानों पर देवगुरु कहा गया है। वस्तुतः इन तीनों व्यक्तियों संपूर्णतः विभिन्न थी, जैसे कि ऊपर बताया गया है।

इस कारण, बृहस्पति की पत्नियाँ एवं पुत्रों के जो नाम पुराणों में प्राप्त हैं, वे निश्चित कौन से बृहस्पति से संबंधित हैं, यह कहना असंभव है।

बृहस्पति को तारा (चांद्रमसी) एवं शुभा नामक दो पत्नियाँ थी। कई ग्रंथों में, प्रजापति की कन्या उषा को भी बृहस्पति की पत्नी बताया गया है। उनमें से शुभा से इसे सात कन्याँ, एवं तारा से सात पुत्र एवं एक कन्या उत्पन्न हुयी।

शुभा की कन्याओं के नाम इस प्रकार थे:—भानुमती, रागा, अर्चिष्मती, महामती, महिष्मती, सिनिवाली एवं हविष्मती। तारा को अग्नि के नाम धारण करनेवाले सात पुत्र उत्पन्न हुए, जिनके नाम इस प्रकार थे:—शंयु, निश्रवन, विश्वभुज, विश्वजित, वडवाग्नि, एवं स्विकृत्। उतथ्य नामक अपने भाई की पत्नी ममता से इसे मरदाज नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ था, जिसे इसने 'अग्नेयास्त्र' प्रदान किया था।

तारा की कन्या का नाम स्वाहा था, जो वैश्वानर अग्नि की पत्नी थी (स्वाहा २. देखिये)।

कुशध्वज (कच) नामक इसके और एक पुत्र का निर्देश महाभारत में अनेक बार आता है (म. अनु. २६; कच २. देखिये)। किन्तु बृहस्पतिपत्नियों में से कौनसी पत्नी से वह उत्पन्न हुआ था, यह कहना मुश्किल है, क्यों कि, शुभा एवं तारा के पुत्रों में कही भी कच का नाम प्राप्त नहीं होता है।

द्रोणाचार्य की उत्पत्ति भी बृहस्पति के अंश से ही हुई थी, ऐसा माना जाता है। बृहस्पति की भुवना नामक एक ब्रह्मवादिनी एवं योगासाधन रहन थी, जो प्रभास

नामक वसु की पत्नी थी, तथा उससे उसे विश्वकर्मान् नामक पुत्र पैदा हुआ था।

४. एक तत्त्वज्ञ आचार्य, जिसने धर्मशास्त्र, नीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, एवं व्याकरणशास्त्र पर अनेक ग्रंथों की रचना की थी।

इसके द्वारा लिखित 'बृहस्पतिस्मृति' नामक एक ही ग्रंथ मुद्रित रूप में प्राप्त है। किन्तु कौटिलीय अर्थशास्त्र, कामंदकीय नीतिसार, याज्ञवल्क्यस्मृति, अपराक, स्मृति-चंद्रिका आदि विभिन्न विषयक ग्रंथों में, इसके मत एवं इसके ग्रंथों के उद्धरण प्राप्त हैं, जिनसे प्रतीत होता है कि, इसके द्वारा धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, व्याकरणशास्त्र, वास्तुशास्त्र, अदि विषयों पर काफी ग्रंथरचना की गई होगी।

बृहस्पति के द्वारा लिखित 'बृहस्पतिस्मृति' नामक जो ग्रंथ सांप्रत उपलब्ध है, वह अत्यधिक छोटा है, उसमें केवल अस्सी श्लोक हैं, एवं उसे आनंदाश्रम पूर्ण ने प्रकाशित किया है। जीवानंद के संग्रह में भी इसके नाम पर एक छोटी स्मृति है, किन्तु उसमें दानप्रशंसा आदि साधारण विषयों की चर्चा की गयी है।

अपराक आदि स्मृतियों में बृहस्पतिस्मृति के काफी उद्धरण लिये गये हैं, जिनसे इसकी मूल स्मृति की महत्ता का अनुमान किया जा सकता है। मुक्तमों के दो प्रकारों (फौजदारी तथा दीवानी) का प्रचलन सर्वप्रथम इसके द्वारा ही किया गया है। इसने ही सर्वप्रथम यह विधान रक्खा कि, जिन विषयों का पुत्र न हों, उन्हें पति के मृत्यु के बाद समस्त संपत्ति की अधिकारणी समझा जाय। वास्त्यायन कामसूत्र में इसके मतों का निर्देश प्राप्त है। राजा के सोलह प्रधान होने चाहिये, ऐसा इसका अभिमत था, जो कौटिल्य अर्थशास्त्र में निदिष्ट है। इसकी 'स्मृति' में नाणक, दीनार आदि सिक्कों की जानकारी प्राप्त है। बृहस्पति, आंगिरस, नारद एवं भृगु इन चार ऋषियों ने मनुस्मृति को चार विभागों में विभक्त करने का निर्देश प्राप्त है। इन चार आचार्यों में बृहस्पति के मत संपूर्णतः मनु के अनुकूल हैं।

अपराक एवं कात्यायन द्वारा लिये गये इसके उद्धरणों एवं नाणक एवं दीनार सिक्कों के आधार पर अनुमान किया गया है कि, धर्मशास्त्रकार बृहस्पति का समय दूसरी शताब्दी ईसा उपरान्त होगा।

वासु में बृहस्पति द्वारा किये गये इतिहास पुराण विषयक प्रवचन का निर्देश प्राप्त है, एवं 'अष्टांगहृदय' में

इसके द्वारा रचे गए 'अंगदतंत्र' नामक वैद्यकीय ग्रंथ का निर्देश प्राप्त है (वायु. १०३-५९; अष्टांग. पृ. १८)।

ग्रन्थ—१. बृहस्पतिस्मृति; २. बार्हस्पत्यशास्त्रः—ब्रह्मदेव द्वारा रचित 'बाहुइन्तक' नामक ग्रंथ को बृहस्पति ने तीन हजार अध्यायों में संक्षिप्त किया जिसे 'बार्हस्पत्यशास्त्र' कहते हैं; ३. दानबृहस्पति-बृहस्पति के इस ग्रंथ का निर्देश अपराके एवं दानरत्नाकार में प्राप्त है; ४. स्वमाध्याय; ५. चार्वाक दर्शनः—बृहस्पति द्वारा रचित इस ग्रंथ का निर्देश प्राप्त है। ६. वास्तुशास्त्रः—बृहस्पति द्वारा वास्तुशास्त्र पर लिखित एक ग्रंथ का निर्देश मत्स्य में प्राप्त है (मत्स्य. २५२; व्यास देखिये)।

५. व्रनमेजय के सर्पसत्र में उपस्थित एक ऋषि।

बृहस्पति शायस्ति—एक आचार्य, जो भवभ्रात शायस्थि नामक ऋषि का शिष्य (इंडिशे स्टूडियेन ४. ३७२)।

वैजभृत—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

वैजवाप—बृहदारण्यक उपनिषद् में निर्दिष्ट एक आचार्य (बृ. उ. माध्यं. २.५.२०; ४.५.२६; शं. ब्रा. १४.५.२०)। वैजवाप का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैजवापायन—बृहदारण्यक उपनिषद् में निर्दिष्ट एक आचार्य (बृ. उ. माध्यं. २.५.२०; ४.५.२०; शं. ब्रा. १४.५.२०)। वैजवाप का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा। इसके नाम के लिए 'वैजवापायन' पाठभेद भी प्राप्त है।

वैजवापि—एक आचार्य, जो संभवतः वैजवाप अथवा वैजवापिन् का वंशज होगा (मै. सं. १.४.७)।

वैद—धौम्य ऋषि का एक शिष्य (म. आ. ६. ७९)।

२. हिरण्यदत्त नामक आचार्य का पैतृक नाम।

वोध—व्यास की ऋक् शिष्य परंपरा में से बौध्य नामक आचार्य के लिये उपलब्ध पाठभेद (बौध्य देखिये)।

२. एक ऋषि, जो अथर्ववेद में प्रतिबोध नामक ऋषि के साथ निर्दिष्ट है (अ. वे. ५.३०.१०; ८.१.१३)।

बोधप—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

बौध्य—व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से बौध्य नामक आचार्य का नामांतर (बौध्य देखिये)।

२. एक आचार्य, जिसका नहुष राजा के साथ तत्त्वज्ञान विषय में संवाद हुआ था, जो 'बौध्यगीता' नाम से प्रसिद्ध है (म. शां. १७१.५८)।

बौध्य ने नहुष से कहा, 'मैं दूसरों को जो उपदेश करता हूँ, उसी अनुसार सर्वप्रथम मेरा आचरण रहता है। मैं स्वयं किसी का गुरु न हो कर, सारे विश्व को मैं गुरु मानता हूँ। मैं ने पक्षियों से अद्रोह का पाठ सीखा है। उसी तरह पिंगला चेश्या से नैराश्य, मृग से त्याग, इण्डुकार से एकाग्रता, एवं कुमारी कन्या से एकाकित्व का पाठ मुझे प्राप्त हुआ है' (म. शां. १७१.५७-६१)।

'बौध्य गीता' में प्राप्त उपर्युक्त तत्त्वज्ञान, एवं मंकि ऋषि प्रणीत 'मंकिगीता' का प्रतिपादन दोनों एक ही है।

बौध्यक—एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य ऋषि का वाजसनेय शिष्य था।

बौधायन—कथं सूत्रों का प्रवर्तक एक आचार्य, जो संभवतः कृष्ण यजुर्वेदशाखा का ऋषि था। इसके द्वारा विरचित 'बौधायन धर्मसूत्र' में कण्व बौधायन नामक पूर्वाचार्य का निर्देश प्राप्त है (बौ. ध. २.५.२७)। संभव है, यह उसी कण्व बौधायन का पुत्र अथवा वंशज होगा। धर्मसूत्र का भाष्यकार गोविंदस्वामिन् के अनुसार, बौधायन को 'काव्यायन' नामान्तर प्राप्त है (बौ. ध. १.३.१३.)।

बौधायन धर्मसूत्र में इसके नाम के लिए 'बोधायन' एवं 'बौधायन' दोनों भी पाठ प्राप्त हैं। कई स्थानों में इसे 'भगवान्' बौधायन कहा गया है।

बौधायन शाखा—यह संभवतः दक्षिण भारत में स्थित कृष्णा नदी के मुहाने में स्थित प्रदेश में रहता होगा। बौधायन शाखा के ब्राह्मण आज भी उसी प्रदेश में अधिकतर दिखाई देते हैं। वेदों का सुविख्यात भाष्यकार सायणाचार्य स्वयं बौधायन शाखा का था। बौधायन शाखा के ब्राह्मणों को 'प्रवचनकार शास्त्रीय' नामान्तर भी प्राप्त है। गृह्यसूत्रों में स्वयं बौधायन को भी 'प्रवचनकर्ता' कहा गया है। पल्लव राजा नंदिवर्मन् के ९ वी शताब्दी के अनेक शिलालेखों में 'प्रवचनकार' लोगों को दान देने का निर्देश प्राप्त है (इन्डि. ऑर्न्टि. ८.२७३-२७४)। बौधायन के धर्मसूत्रों में भी दाक्षिणात्य लोगों के रीति-रिवाजों का निर्देश प्राप्त है।

बौधायन सूत्र—बौधायन के द्वारा रचित बौधायन सूत्रों का संग्रह संपूर्ण अवस्था में अभी तक अप्राप्य है जैसे

कि, आपस्तंब एवं हिरण्यकेशिन् आचार्यों का संग्रह किया गया है। डॉ. बर्नेल के द्वारा बौधायन के बहुत सारे सूत्र छः विभागों में एकत्रित किये गये हैं, जो इस प्रकार हैं:— (१) श्रौतसूत्र (१९ प्रश्न); (२) कर्मन्तिसूत्र (२० प्रश्न); (३) द्वैधसूत्र (४ प्रश्न); (४) गृह्यसूत्र (४ प्रश्न); (५) धर्मसूत्र (४ प्रश्न); (६) शूल्बसूत्र (३ प्रश्न)।

बौधायन सूत्रों के विभाग—डॉ. कालेन्ड के अनुसार बौधायन के सूत्र निम्नलिखित उन्चास प्रश्नों में विभाजित हैं:—प्रश्नक्रमांक १-२१ श्रौतसूत्र; २२-२५ द्वैधसूत्र; २६-२८ कर्मन्तिसूत्र; २९-३१ प्रायश्चित्त सूत्र; ३२ शूल्बसूत्र; ३३-३५ गृह्यसूत्र; ३६ गृह्यप्रायश्चित्त; ३७ गृह्यपरिभाषा सूत्र; ३८-४१ गृह्य परिशिष्ट सूत्र; ४२-४४ पितृमेध सूत्र; ४५ प्रवरसूत्र; ४६-४९ धर्मसूत्र।

बौधायन श्रौतसूत्र—कालेन्ड के अनुसार, बौधायन का श्रौतसूत्र उपलब्ध श्रौतसूत्रों में प्राचीनतम है। उस सूत्रग्रंथ में 'द्वैध' एवं 'कर्मन्त' नामक दो स्वतंत्र अध्याय सम्मिलित हैं, जिनमें द्वैध अध्याय में तैत्तिरीय शास्त्र के बहुत सारे पूर्वाचार्यों के मत उद्धृत किये गये हैं। इस सूत्रग्रंथ का अंग्रेजी अनुवाद वैदिक संशोधक मंडल (पूना) के द्वारा प्रकाशित किये गये 'श्रौत-कोश' नामक ग्रंथ में प्राप्त है।

बौधायनधर्मसूत्र—कृष्ण यजुर्वेद के तीन प्रमुख आचार्यों में कृष्ण बौधायन, आपस्तंब, एवं हिरण्यकेशिन् ये तीन प्रमुख माने जाते हैं। उनमें से भी कृष्ण बौधायन प्राचीनतम था, एवं कृष्ण यजुर्वेदियों के ब्रह्मयज्ञोपनिषत् में उसका निर्देश बाकी दो आचार्यों के पहले किया जाता है। किन्तु जो 'बौधायनधर्मसूत्र' वर्तमान काल में उपलब्ध है, वह निश्चित रूप में आपस्तंब धर्मसूत्र के उत्तरकालीन है। यह प्रायः उपनिषदों से भी उत्तरकालीन है, क्योंकि, इसके धर्मसूत्र में छांदोग्य उपनिषद् से मिलताजुलता एक उद्धरण प्राप्त है।

आपस्तंब की तुलना में बौधायन, गौतम एवं वसिष्ठ ये उत्तरकालीन धर्मसूत्रकार अधिक प्रगतिशील विचारों के प्रतीत होते हैं। नियोजनित संतति आपस्तंब तिरस्करणीय मानता है (आप. २.६.१३.१-९)। किन्तु गौतम, बौधायन एवं वसिष्ठ के द्वारा विशेष प्रसंगों में नियोग स्वीकार किया गया है।

शबर के द्वारा लिखित धर्मशास्त्र का काल ५०० ई. के पूर्व का माना जाता है। शबर के काल में 'बौधायनधर्म-

सूत्र' एक सर्वमान्य एवं सन्मान्य धर्मग्रंथ माना जाता था। इससे प्रतीत होता है कि, बौधायन धर्मशास्त्र का रचना काल ईसा पूर्व ५००-२०० के बीच कही होगा।

बौधायन के धर्मसूत्र में वसंत सम्पात की स्थिति वेदांगच्योतिष के अनुसार दी गयी है। उससे प्रतीत होता है कि, इसका काल ईसा शताब्दी के पूर्व लगभग १२०० होगा (कविचरित्र)।

बौधायन धर्मसूत्र का जो संस्करण सांप्रत प्राप्त है, उसमें बहुत सारा भाग प्रक्षिप्त है, एवं कई भाग गौतम धर्मसूत्र एवं विष्णु धर्मसूत्र में से लिया गया है। उसमें पुनरुक्ति भी काफी प्राप्त है।

बौधायन धर्मसूत्र के प्रश्न चार विभागों में विभाजित है, एवं उसमें मुख्यतः निम्नलिखित विषयों का विवेचन किया गया है:—चातुर्वर्ण्य में आवश्यक नित्याचार के नियम, पंचमहायज्ञ एवं अन्य यज्ञ यथासांग करने के लिए आवश्यक वस्तु, विवाह के नानाविध प्रकार, प्रायश्चित्त, नियोग संतति उत्पन्न करने के लिए आवश्यक नियम, श्राद्धविधि, प्राणायाम, अघमर्षण एवं जप आदि।

बौधायन धर्मसूत्र में वेद, तैत्तिरीय संहिता, तैत्तिरीय ब्राह्मण, तैत्तिरीय आरण्यक, शतपथ ब्राह्मण, उपनिषदों, निदान आदि ग्रंथों से उद्धरण लिये गये हैं। ऋग्वेद के अघमर्षण एवं पुरुषसूक्त ये दोनो ही सूक्त बौधायन ने लिये हैं। उसी तरह बौधायन ने ङ्रौपेजाप्रति, कात्य, काश्यप प्रजापति आदि धर्मशास्त्रकारों का उल्लेख अपने ग्रंथों में किया है।

शबर, कुमारिल, मेघातिथि आदि टीकाकारों ने बौधायन धर्मसूत्र का उल्लेख अपने ग्रंथों में किया है। उसी तरह विश्वरूप में, एवं सिताक्षरा में बौधायन के चौथे प्रश्न के अनेक सूत्र उद्धृत किये गये हैं।

बौधायन धर्मसूत्र में गणेश की पूजा का निर्देश प्राप्त है, एवं उसमें गणेश के निम्नलिखित नामान्तर दिये गये हैं:— विभ्र, विनायक, स्थूल, वरद, हस्तिमुख, वक्रतुंड, लोमोदर (बौ. ध. २.५.२१)। उस ग्रंथ में रवि, चंद्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि आदि राशियों के ग्रहों का, तथा राहु एवं केतु ग्रहों का निर्देश प्राप्त है (बौ. ध. २.५.२३)। विष्णु के चारह नाम भी उस ग्रंथ में दिये गये हैं (बौ. ध. २.५.२४)। रंगसूक्ति पर अभिनय करना, एवं अभिनय सिखाना इन दोनो कार्यों की गणना बौधायन के द्वारा 'उपपातको' में की गयी है (बौ. ध.

२.१.४४)। 'दत्तकमीमांसा' नामक ग्रंथ में बौधायन के 'दत्तक' संबंधी जो सारे उद्धरण लिये गये हैं, वे बौधायन धर्मसूत्र के न हो कर, बौधायन गृह्यशेषसूत्र में से लिये गये हैं (बौ. गृ. २.६)।

टीकाकार--ब्रनैल के अनुसार, बौधायन श्रौतसूत्र का सर्वाधिक प्राचीन टीकाकार भवस्वामिन् था, जो ८ वीं शताब्दी में पैदा हुआ था। बौधायन धर्मसूत्र की अत्यधिक ख्यातिप्राप्त टीका गोविंदस्वामिन् के द्वारा विरचित है, किन्तु वह टीकाकार काफी उत्तरकालीन प्रतीत होता है।

बौधायनस्मृति--आनंदाश्रम (पूर्वा) के द्वारा प्रकाशित 'स्मृतिसमुच्चय' नामक ग्रंथ में, बौधायन के द्वारा विरचित एक स्मृति दी गयी है, जो आठ अध्यायों की है। उस स्मृति के हर एक अध्याय में तीन चार प्रश्न पूछे गये हैं, एवं उन प्रश्नों के उत्तर वहाँ दिये गये हैं।

२. एक आचार्य, जो ब्रह्मसूत्र का सुविख्यात 'वृत्तिकार' माना जाता है। रामानुजाचार्य के द्वारा लिखित 'श्रीभाष्य' बौधायन के 'ब्रह्मसूत्रवृत्ति' पर आधारित है। इससे प्रतीत होता है कि, वृत्तिकार बौधायन स्वयं शंकराचार्य के काफी पहले का होगा। अनेक विद्वानों के अनुसार, यह द्रविड देश में पैदा हुआ था।

बौधीपुत्र--एक आचार्य, जो शालंकायनीपुत्र का शिष्य था (बृ. उ. माध्य. ६.४.३१)। इसके शिष्य का नाम कौत्सीपुत्र था (श. ब्रा. १४.९.४.३१)। जोध के किसी स्त्रीवंशज का पुत्र होने के कारण इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

बौधिय--एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की यजुःशिष्य परंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

बौध्य--एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार, व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा में से ब्राह्मलि ऋषि का शिष्य था। इसके नाम के अर्थ 'जोध' एवं 'बोध्य' पाठभेद प्राप्त है (व्यास देखिये)।

ब्रध्न--एक राजा, जो भौत्य मनु के पुत्रों में से एक था।

ब्रध्नश्च--एक राजा। एक बार श्रुतर्वन् नामक राजा को साथ ले कर अगस्त्य ऋषि इसके पास आया, एवं इससे धन की याचना करने लगा।

इसने अगस्त्य ऋषि के सामने अपने आय-व्यय का संपूर्ण विवरण रख दिया, जिसमें इसकी आय एवं व्यय दोनों एक बराबर थे, एवं बचा हुआ पैसा एक भी न था। फिर अगस्त्य ने इससे कोई भी धन लेने के लिए इन्कार कर

दिया; एवं इसे साथ ले कर, वह किसी अन्य जगह धन की याचना के लिए चला गया (म. व. ९६)।

ब्रह्मकुतेजन--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार 'ब्राह्म-पुरेयक' के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (ब्राह्मपुरेयक देखिये)।

ब्रह्मगार्ग्य--एक ब्राह्मण, जो श्रीकृष्ण का पुरोहित था (पद्म. सू. २३)।

ब्रह्मचारिन्--एक देवर्षि, जो कश्यप एवं प्राजा का पुत्र था (म. आ. ५.९.४५)। महाभारत में अन्यत्र इसे क्रोधा का पुत्र कहा गया है। अर्जुन के जन्मोत्सव में यह उपस्थित था (म. आ. ११४.३७)।

२. स्कंद का नामान्तर।

ब्रह्मजित्--संहादपुत्र कालनेमि नामक राक्षस का पुत्र (ब्रह्मांड. ३.५.३८)।

ब्रह्मतन्वि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

ब्रह्मदत्त--(सो. पूर.) पांचालदेशीय कांपिल्य नगर का एक राजा, जो भागवत के अनुसार नीप राजा का पुत्र था (म. शां. १३७)। विष्णु, मत्स्य एवं वायु में इसे अणुह राजा का पुत्र कहा गया है।

इसकी माता का नाम कीर्तिमती अथवा कुत्वी था, जो शुक्राचार्य की कन्या थी। देवल ऋषि की कन्या सज्जति इस कीपत्नी थी (ह. वं. १.२३-२५)। किन्तु भागवत में इसकी पत्नी का नाम गो दिया गया है (भा. ९.२२.२५)। भागवत एवं विष्णु में इसके पुत्र का नाम विश्व-वसेन दिया गया है। किन्तु मत्स्य एवं वायु में इसके पुत्र का नाम क्रमशः युगदत्त, एवं युगसूनु दे कर, इसके पौत्र का नाम विश्ववसेन बताया गया है। महाभारत में इसके पुत्र का नाम सर्वसेन बताया गया है।

इसके भवन में निवास करनेवाली पूजनी नामक चिड़िया के बच्चों को इसका पुत्र सर्वसेन ने मारा, अतएव पूजनी ने भी सर्वसेन की आँखें फोड़ डाली (म. शां. १३७.१७)। पश्चात् पूजनी ने इसका राजभवन छोड़ना चाहा। राजा ब्रह्मदत्त ने उसे रहने के लिये काफी आग्रह किया। किन्तु अपने शत्रु के घर रहने से उसने इन्कार कर दिया। राजभवन छोड़ते समय पूजनी का एवं इसका तत्वज्ञान संबंधी संवाद हुआ था (म. शां. १३७.२१-१०९; पूजनी देखिये)।

इसने जैगीष्य ऋषि से योगविद्या प्राप्त कर, योगतंत्र नामक ग्रंथ का निर्माण किया था (भा. ९.२२.२६)।

महाभारत के अनुसार, सुविख्यात वैदिक आचार्य कण्डरीक के वंश में इसका जन्म हुआ था, एवं उसीके वंश में उत्पन्न हुआ कण्डरीक नामक अन्य एक पुरुष इसका मंत्री था। मस्य में ब्राह्मण्य पांचाल सुवालक एवं कण्डरीक को क्रमशः इसका मंत्री एवं मंत्रीपुत्र कहा गया है (मस्य. २०.२४; २१.३०)। यह स्वयं वेदशास्त्रविद् था, एवं इसने अथर्ववेद के एवं कण्डरीक ने सामवेद के क्रमपाठ की रचना की थी (म. शां. ३३०.३८-३९)। अथर्ववेद संहिता का पदपाठ एवं शिक्षा की भी इसने रचना की थी।

योगाचार्य गालव इसका मित्र था, एवं इसने सात जन्मों के जन्ममृत्युसंघी दुःखों का बारबार स्मरण कर के योगजनित ऐश्वर्य प्राप्त किया था। इसने ब्राह्मणों को 'शंखनिधि' के दरब्रह्मलोक भी प्राप्त किया था (म. अनु. १३७.१७; शां. २२६.२९)। समस्त प्राणियों एवं पक्षियों की बोली इसे अवगत थी (ह. वं. १.२०-२४)।

भीष्म का पितामह प्रतीय राजा का यह समकालीन था (ह. वं. १.२०.११-१२)।

२. कांपिष्य नगरी का राजा, जो सोमदा नामक गंधर्वी का पुत्र था। सोमदा गंधर्वी ने चूलि नामक महर्षि की अनन्यभाव से सेवा की, जिससे प्रसन्न हो कर उस ऋषि ने सोमदा को इसे पुत्ररूप में प्रदान किया।

कुशनाम नामक दैत्य ने वायु (वात) के कारण ब्रह्म हुयी अपनी सौ कन्याएँ इसे प्रदान की। इसने उन कन्याओं की वक्रता दूर कर उनका स्वीकार किया (वा. रा. भा. ३३)।

३. सूर्यवंशीय एक राजा, जिसने साबरमती नदी के तट पर शंकर की उग्र तपस्या कर, वहाँ अपने नाम से प्रसिद्ध एक शिवलिंग की स्थापना की (पद्म. उ. १३५)।

४. शाह्य देश का एक राजा, जिसके पुत्र का नाम हंस था (हंस ७. देखिये)।

ब्रह्मदत्त चैकितानेय—एक आचार्य, जो कुखंडीय राजा अमिप्रतारिन् का आश्रित था (जै. उ. ब्रा. १.३८. १; ५९.१)। चैकितानेय का वंशज होने से इसे 'चैकितानेय' उपाधि प्राप्त हुयी होगी (चैकितानेय देखिये)। इसके द्वारा प्राणविद्या कथन किये जाने का निर्देश बृहदारण्यक उपनिषद् में प्राप्त है (बृ. उ. १.३.२४)।

ब्रह्मदेव—पांडवपक्षीय एक योद्धा, जो पांडवों की सेना की रक्षा के लिए शिखण्डी के क्षत्रदेव नामक पुत्र के साथ उपस्थित था (म. उ. १९६.२५)।

ब्रह्मधना—कदयप ऋषि के रक्षस नामक असुरपुत्र की पत्नी। इसे निम्नलिखित नौ पुत्र थे :—अम्बुक, कैलि, क्षम, ध्वति, ब्रह्मपेत, यज्ञहा, यज्ञापेत, श्वात एवं सर्प। इने निम्नलिखित चार कन्याएँ भी थीं :—अपहारिणी, क्षमा, महाजिह्वा एवं रक्तकर्णी (ब्रह्मांड. ३.७.९८)।

ब्रह्मधातु—कुवेर का एक सेवक, जो प्रहेति राक्षस का पुत्र था।

ब्रह्मन्—एक पौराणिक देवता, जो सम्पूर्ण प्रजाओं का रक्षक माना जाता है। इसने सर्वप्रथम प्रजापति बनाये, चिन्होंने आगे चल कर प्रजा का निर्माण किया। वैदिक ग्रन्थों में निर्दिष्ट प्रजापति देवता से इस पौराणिक देवता का कर्त्ता साम्य है एवं प्रजापति की बहुत सारी कथायें इससे मिलती जुलती (प्रजापति देखिये)। सृष्टि के आदि-कर्त्ता एवं जनक चतुर्मुख ब्रह्मन् का निर्देश, जो पुराणों में अनेक बार आता है, वह वैदिक ग्रन्थों में अप्राप्य है। किंतु वेदों में 'धाता', 'विधाता', आदि ब्रह्म के नामांतर कई स्थानों पर आये हैं।

उपनिषद् ग्रन्थों में ब्रह्मन् का निर्देश प्राप्त है, किन्तु वहाँ इसके सम्बन्ध में सारे निर्देश एक तत्त्वज्ञ एवं आचार्य के नाते से किये गये हैं। वहाँ उसे सृष्टि का सृजनकर्त्ता नहीं माना है। उपनिषदों के अनुसार यह परमेष्ठिन ब्रह्म नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. २.६.३; ४.६. ३)। सारी सृष्टि में यह सर्वप्रथम उत्पन्न हुआ (मुं. उ. १.१.२)। इसने अथर्वन् को ब्रह्मविद्या प्रदान की थी (मुं. उ. १.१.२)। इसी प्रकार इसने नारद को भी ब्रह्म विद्या का ज्ञान कराया था (गरुड. उ. १-३)। छांदोग्य उपनिषद् में ब्रह्मोपनिषद् नामक एक छोटा उपनिषद् प्राप्त है, जो सुविख्यात ब्रह्मोपनिषद् से अलग है। इस उपनिषद् का ज्ञान ब्रह्मा ने प्रजापति को कराया, एवं प्रजापति ने 'मनु' को कराया था (छां. उ. ३.११.३-४)। ब्रह्मन् नामक एक ऋषिवज का निर्देश भी उपनिषद् ग्रन्थों में प्राप्त है।

जन्म—पुराणों के अनुसार भगवान् विष्णु ने कमल रूपधारी पृथ्वी का निर्माण किया, जिससे आगे चल कर ब्रह्मन् उत्पन्न हुआ (मस्य. १६९.२; म. व. परि. १ क्र. २७; पंक्ति. २८.२९; भा. ३.८.१५)।

महाभारत के अनुसार, भगवान् विष्णु जब सृष्टि के निर्माण के सम्बन्ध में विचारनिमग्न थे, उसी समय उनके मन में जो सृजन की भावना जाग्रत हुयी, उसीसे ब्रह्मा का सृजन हुआ (म. शां. ३३५.१८)।

महाभारत में अन्यत्र कहा है कि, सृष्टि के प्रारम्भ में सर्वत्र अन्धकार ही था। उस समय एक विशाल अण्ड प्रकट हुआ, जो सम्पूर्ण प्रजाओं का अधिनाथी बीज था। उस दिव्य एवं महान् अण्ड में से सत्यस्वरूप ज्योतिमय सनातन ब्रह्म अन्तर्यामी रूप से प्रविष्ट हुआ। उस अण्ड से ही प्रथमदेहधारी प्रजापालक देवगुरु पितामह ब्रह्मा का अविर्भाव हुआ। एक तेजोमय अण्ड से सृष्टि का निर्माण होने की यह कल्पना, वैदिक प्रजापति से, चिनी 'कु' देवता से, एवं मिश्र 'रा' देवता से मिलती जुलती है (प्रजापति देखिये, म. आ. १.३०; स्कंद. ५.१,३)।

विष्णु के अनुसार, विश्व के उत्पत्ति आदि के पीछे अनेक अज्ञात एवं अगम्य शक्तियों का बल सन्निहित है, जो स्वयं ब्रह्मन् है। यह स्वयं उत्पत्ति आदि की अवस्था से अतीत है। इसी कारण इसकी उत्पत्ति की सारी कथाएँ औपचारिक हैं (विष्णु. १.३)।

महाभारत में ब्रह्मन् के अनेक अवतारों का वर्णन प्राप्त है, जहाँ इसके निम्नलिखित अवतारों का विवरण दिया गया है:—मानस, कायिक, चाक्षुष, वाचिक, श्रवणज, नासिकाज, अंडज, पद्मज (पाद्म)। इनमें से ब्रह्मन् का पद्मज अवतार अत्यधिक उत्तरकालीन माना जाता है (म. शां. ३५७.३६-३९)।

सृष्टि के सृजन के समय, इसने सृष्टि के सृजनकर्ता ब्रह्मा, विचनकर्ता विष्णु, एवं संहारकर्ता रुद्र ये तीनों रूप स्वयं धारण किये थे। यही नहीं, सृष्टि के पूर्व मत्स्य, तथा सृष्टि के सृजनोपरांत वाराह अवतार भी लेकर इसने पृथ्वी का उद्धार भी किया था।

चतुर्मुख—यह मूलतः एक मुख का रहा होगा, किन्तु पुराणों में सर्वत्र इसे चतुर्मुख कहा गया है, एवं उसकी कथा भी बताई गयी है। इसने अपने शरीर के अर्धभाग से शतरूपा नामक एक स्त्री का निर्माण किया, जो इसकी पत्नी बनी। शतरूपा अत्यधिक रूपवती थी। यह उसके रूप के सौन्दर्य में इतना अधिक डूब गया कि, सदैव ही उसे देखते रहना ही पसन्द करता था।

एक बार अनिघ-सुंदरी शतरूपा इसके चारों ओर परिक्रमा कर रही थी। वहीं पास में इसके मानमपुत्र भी बैठे थे। अब यह समस्या थी कि, शतरूपा को किस प्रकार देखा जाये कि, वह कभी आँखों से ओझल न हो। बार बार मुड़ मुड़कर देखना पुत्रों के सामने अभद्रता थी। अतएव इसने एक मुख के स्थान पर चार मुख धारण किये, जो चारों दिशाओं की ओर देख सकते थे।

शतरूपा एक बार आकाशमार्ग से ऊपर जा रही थी। अतएव इसने जटाओं के ऊपर एक पाँचवाँ मुख भी धारण किया था, किन्तु वह बाद को शंकर द्वारा तोड़ डाला गया। इसे स्त्री के रूप सौन्दर्य में लिप्त होने कारण, अपने उस समस्त तप को जड़मूल से खों देना पड़ा, जो इसने अपने पुत्रप्राप्ति के लिए किया था (मत्स्य. ३.३०-४०)।

'जैमिनिअश्रमंध' में ब्रह्मा की एक कथा प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, अति प्राचीन काल में ब्रह्मा को चार से भी अधिक मुख प्राप्त थे। वक्र दास्य नामक ऋषि को यह अहंकार हो गया था कि, मैं ब्रह्मा से भी आयू में ज्येष्ठ हूँ। उसका यह अहंकार नूर करने के लिए, ब्रह्मा ने पूर्वकल्प में उत्पन्न हुए ब्रह्माओं का दर्शन उसे कराया। उन ब्रह्माओं को चार से भी अधिक मुख थे, ऐसा स्पष्ट निर्देश प्राप्त है (जै. अ. ६०-६१)।

शंकर से विरोध—शंकर ने इसका पाँचवा मुख बर्बाद करके तोड़ा इसकी विभिन्न कथायें पुराणों में प्राप्त हैं।

मत्स्य के अनुसार, एक बार शंकर की स्तुति कर ब्रह्मा ने उसे प्रयत्न किया एवं यह वर माँगा कि वह उसका पुत्र बने। शंकर को इसका यह अशिष्ट व्यवहार सहन न हुआ, और उसने क्रोधित होकर शाप दिया, 'पुत्र तो तुम्हारा मैं बनूँगा, किन्तु तेरा यह पाँचवा मुख मेरे द्वारा ही तोड़ा जायेगा'।

सृष्टिनिर्माण के समय इसने 'नीललोहित' नामक शिवावतार का निर्माण किया। शेष सृष्टि का निर्माण करते समय, इसने उस शिवावतार का स्मरण न किया, जिसकारण क्रुद्ध होकर उसने इसे शाप दिया, 'तुम्हारा पाँचवाँ मस्तक शीघ्र ही कटा जायेगा'।

मत्स्य में अन्यत्र लिखा है कि, इसके पाँचवें मुख के कारण शक्ति सारे देवों का तेज हरण किया गया। एक दिन यह अभिमान में आकर शंकर से कहने लगा, 'इस पृथ्वी पर तुम्हारे अस्तित्व होने के पूर्व से मैं यहाँ निवास करता हूँ, मैं तुमसे हर प्रकार ज्येष्ठ हूँ'। यह सुनकर क्रोधित हो कर शंकर ने सहजभाव से ही इसके मस्तक को अपने अँगूठे से मसल कर पृथ्वी पर ऐसा फेंक दिया, मानों किसी ने फूल को झूरता के साथ डाली से नोच कर लुग कर दिया हो (मत्स्य १८३. ८४-८६)। इसका मस्तक तोड़ने के कारण, शंकर को ब्रह्महत्या का पाप लगा। उस पाप से छुटकारा पाने के लिये, ब्रह्मा के कपाल को लेकर उसने कपालीतीर्थ में उसका विसर्जन किया (पद्म. सू. १५)।

पाँचवे मस्तक के कट जाने के उपरांत, इसके अन्य मस्तक स्तम्भित हो गये। उनमें से स्वेदकण निकल कर मस्तक पर छा गये। जिसे देखकर इसने उन स्वेदकणों को हाथ से निचोड़ कर जमीन में फेंका। फेंकते ही उससे एक सौद्र पुरुष उत्पन्न हुआ, जिसको इसने शंकर के पीछे पीछे छोड़ दिया। अंत में शंकर ने उसे पकड़ कर विष्णु के हवाले किया (स्कंद ५.१.३-४)।

ब्रह्मा एवं शंकर के आपसी विरोध की और अन्य कथाएँ भी पुराणों में प्राप्त हैं। एक बार शिवपत्नी सती के रूपयौवन पर यह आकृष्ट हुआ, जिस कारण क्रुद्ध हो कर शंकर इसे मारने दौड़ा। किन्तु विष्णु ने शंकर को रोकने का प्रयत्न किया। फिर भी शंकर ने इसे 'पेंद्रशिर' एवं 'विरूप' बनाया। इसकी विरूपता के कारण सारे संसार में यह अपूज्य ठहराया गया (शिव. रुद्र. स. २०)।

एक बार शंकर ने अपनी संध्या नामक कन्या का दर्शन इसे कराया। उसे देखते ही ब्रह्मा मोहित हो गया। शंकर ने इसका यह अशोभनीय एवं अनुचित कार्य इसके पुत्रों को दिखा कर, उनके द्वारा इसका उपहास कराया। अपने इस अपमान का बदला लेने के लिए, ब्रह्मा ने दक्षकन्या सती का निर्माण कर, दक्ष द्वारा शंकर का अत्यधिक अपमान कराया (स्कंद २.२.२३)। इसे दाहिने अँगूठे से दक्ष का, एवं बाये से दक्षपत्नी का निर्माण हुआ था (म. आ. ६०.९)।

स्कन्द के अनुसार, सृष्टि का निर्माण करने के लिए ब्रह्मा एवं नारायण सर्वप्रथम उत्पन्न हुए थे। सृष्टि निर्माण करने के पश्चात्, ब्रह्मा तथा नारायण में यह विवाद हुआ कि, उन दोनों में कौन श्रेष्ठ है? यह झगड़ा जब तय न हो सका, तो दोनों शंकर के पास गये। वहाँ शंकर ने दोनों के सामने एक प्रस्ताव रखा कि, जो व्यक्ति शिवलिंग के आदि एवं अन्त को शोध कर, सर्वप्रथम उसकी सूचना उसे देगा, वही ज्येष्ठ बनने का अधिकारी होगा। ब्रह्मा ने उर्ध्वमांस से शोध करना आरम्भ किया, किन्तु इसे सफलता न मिली। तब इसने 'गौ' एवं 'केतकी' को अपना झूठा गवाह बना कर, शंकर के सामने पेश करते हुए कहा, 'मैं ने शिवलिंग के आदि एवं अन्त शोध किया है, जिसके प्रत्यक्ष गवाह देनेवाले गौ एवं 'केतकी' सम्मुख हैं'। यह सुन कर ब्रह्मा को ज्येष्ठपद दिया गया। किन्तु बाद में असलियत मादम होने के

उपरांत, शंकर ने नारायण को ज्येष्ठ, एवं इसे कनिष्ठ एवं अपूज्य ठहराया।

पश्चात्, शंकर के कथनानुसार, इसने गंधमादन पर्वत पर एक यज्ञ किया, जिस कारण श्रौत एवं स्मार्त धर्म-विधियों में इसे पूज्यत्व प्रदान किया गया (स्कन्द. १.१.६; १.३.२; ९-१५; ३.१.१४)।

सृष्टि निर्माण—इसने अनेकानेक प्राणियों का सृजन किस प्रकार किया, इसकी कथा विभिन्न पुराणों में तरह तरह से दी गयी है।

महाभारत के अनुसार, वरुणरूपधारी शंकर ने एक बार यज्ञ किया, जिसमें ब्रह्मा ने अपने वीर्य की आहुति दी। उसी यज्ञ से प्रजापतियों का जन्म हुआ (म. अनु. ८५.९९-१०२)।

पद्म के अनुसार, इसने सर्वप्रथम तमोगुणी प्रजा उत्पन्न की, एवं उसके उपरांत क्रमशः रजोगुणी, तथा सतोगुणी प्रजा का निर्माण किया। इसके द्वारा निर्माण की गयी तमोगुणी सृष्टि पाँच प्रकार की थी, जो निम्नलिखित हैं:— तम, मोह, महामोह, तामिस्र एवं अन्धतामिस्र। यह पाँचों प्रकार की सृष्टि अन्धकारमय थी, एवं उसमें केवल नागों की उत्पत्ति ब्रह्मा ने की थी।

तत्पश्चात् इसने विभिन्न प्रकारों की कुल आठ सृष्टियों का निर्माण किया, जिनके नाम एवं उनमें उत्पन्न प्राणियों के नाम इस प्रकार हैं:—तिर्यक्क्षोतस् (पशु), उर्ध्वक्षोतस् (देव), अर्वाक्षोतस् (मनुष्य), अनुग्रह, भूत, प्राकृत, वैकृत एवं कौमार।

पद्म में यह भी लिखा है कि, देव, राक्षस, पितर, मनुष्य, यक्ष एवं पिशाच गणों की उत्पत्ति ब्रह्मा ने अपने मनःसामर्थ्य से की। ब्रह्मा का पहला शरीर तमोगुणी था, जिसके 'जघन' से असुरों का निर्माण हुआ। पश्चात्, इसने अपने तमोगुणी शरीर का त्याग कर, नये सतोगुणी शरीर को धारण किया। इसके द्वारा परित्याग किये गये तमोगुणी शरीर से राज्ञि का निर्माण हुआ, एवं इसके द्वारा धारण किये गये सतोगुणी शरीर से देवों की उत्पत्ति हुई। पश्चात् इसने अपने द्वितीय शरीर का भी त्याग किया, जिससे दिन की उत्पत्ति हुयी। इसके तृतीय शरीर से 'पितर' उत्पन्न हुए, एवं उसके त्यक्त भाग से संध्याकाल की उत्पत्ति हुयी। इसके चतुर्थ शरीर से मनुष्य उत्पन्न हुए, एवं उसके त्यक्त भाग से उषःकाल का निर्माण हुआ। इसके पाँचवे शरीर से यक्ष एवं राक्षस उत्पन्न हुए।

अपने शरीर के द्वारा देवता, ऋषि, नाग एवं असुर निर्माण करने के पश्चात्, इसने उन चारों प्राणिगणों को एकाक्षर 'ॐ' का उपदेश किया था (म. आश्व. २६. ८; देव देखिये)।

ब्रह्मा के शरीर के विभिन्न भागों से किन किन प्राणियों की उत्पत्ति हुयी है, इसकी जानकारी विभिन्न पुराणों में तरह तरह से दी गयी है। पञ्च के अनुसार, ब्रह्मा के हृदय से बंकीरी, उदर से गाय, भैस आदि ग्राम्य पशु, पैरों से अश्व, गर्दभ, उँट आदि वन्य पशु उत्पन्न हुए। मत्स्य के अनुसार, इसके दाहिने अंगूठे से दक्ष, हृदय से मदन, अधरो से लोम, अहंभाव से मद, आँखों से मृत्यु, स्तनाग्र से धर्म, भ्रमस्थ से क्रोध, बुद्धि से मोह, कंठ से प्रमोद, हथेली से मरत, एङ्ग शरीर से शतरूपा नामक पत्नी उत्पन्न हुयी। उक्त वस्तुओं एवं व्यक्तियों की कोई माता नहीं थी, कारण ये सभी ब्रह्मा के शरीर से ही पैदा हुए थे। मत्स्य एवं महाभारत के अनुसार, इसके शरीर से मृत्यु नामक स्त्री की उत्पत्ति हो गयी थी (म. द्रो. परि. १.८. १५०)।

वेदों का निर्माण—पुराणों के अनुसार, ब्रह्मा के चार मुखों से समस्त वैदिक साहित्य एवं ग्रंथों का निर्माण हुआ है। विभिन्न प्रकार के वेद निर्माण करने के पूर्व, इसने पुराणों का स्मरण किया था। पश्चात्, अपने विभिन्न मुखों से इसने निम्नलिखित वैदिक साहित्य का निर्माण किया:—
(१) पूर्वमुख से—गायत्री छंद, ऋग्वेद, त्रिवृत, रथंतर एवं अग्निष्टोम; (२) दक्षिणमुख से—यजुर्वेद, पंचदश ऋक्समूह, बृहत्साम एवं उक्थयज्ञ; (३) पश्चिममुख से—सामवेद, सप्तदश ऋक्समूह, वैरुपसाम एवं अतिरात्रयज्ञ; (४) उत्तरमुख से—अथर्ववेद, एकविंश ऋक्समूह, आप्तोर्धाम, अनुष्टुप छंद एवं वैराजसाम।

वेदादि को निर्माण करने के पश्चात्, इसने ब्रह्मा नाम से ही सुविख्यात हुए अपने निम्नलिखित मानसपुत्रों का निर्माण किया:—मरीचि, अत्रि, अंगिरस्, पुलस्त्य, पुलह, ऋतु, दक्ष, भृगु एवं वसिष्ठ (ब्रह्मांड. २. ९)। महाभारत में इसके धाता एवं विधाता नामक दो मानसपुत्र और दिये गये हैं (म. आ. ६०.४९)।

मदन को शाप—ब्रह्मा की पत्नी शतरूपा के लिए मत्स्य में सावित्री, सरस्वती, गायत्री, ब्रह्माणी आदि नामांतर दिये गये हैं। अपने द्वारा उत्पन्न पुत्रों को प्रजोत्पत्ति करने की आज्ञा देकर, यह स्वयं अपनी पत्नी सावित्री के साथ रत हुआ, जिससे स्वायंभुव मनु की उत्पत्ति हुयी।

शतरूपा अथवा सावित्री इसके द्वारा ही पैदा की गयी थी। अतएव उसका एवं ब्रह्मा का सम्बन्ध पिता एवं पुत्री का हुआ। किन्तु इसने उसे अपनी धर्मपत्नी मानकर उसके साथ भोग किया। पुराणों में प्रात यह कथा, वैदिक ग्रन्थों में निर्दिष्ट प्रजापति के द्वारा अपनी कन्या उषा से किये 'दुहितृगमन' से मिलती जुलती है (प्रजापति देखिये)। मत्स्य के अनुसार, ब्रह्मा स्वयं वेदों का उद्गाता एवं 'वेदराशि' होने के कारण, यह दुहितृगमन के पाप से परे है (मत्स्य. ३)।

अपने द्वारा किये गये दुहितृगमन से लज्जित होकर, एवं कामदेव को इसका जिम्मेदार मानकर, इसने मदन को शाप दिया कि, वह रुद्र के द्वारा जलकर भस्म होगा। इसके शाप को सुनकर मदन ने ज्वान दिया, 'मैंने तो अपना कर्तव्य निर्वाह किया है। उसमें मेरी त्रुटि क्या है?' यह सुनकर ब्रह्मा ने उसे उःशाप दिया, 'रुद्र के द्वारा दग्ध होने के बाद भी तुम निम्नलिखित बारह स्थान पर निवास करोगे:—स्त्रियों के नेत्रकटाक्ष, जंघा, स्तन, स्कंध, अधरोष्ठ आदि शरीर के भाग, तथा वसंतऋतु, क्रौकिलकंड, चंद्रिका, वर्षाऋतु, चैत्रमास और वैशाखमास आदि' (मत्स्य. ४. ३-२०; स्कंद ५.२.१२)।

प्रभासक्षेत्र में यज्ञ—स्कंद में, ब्रह्मा की पत्नी सावित्री एवं गायत्री को एक न मान कर अलग अलग माना गया है, एवं सावित्री के द्वारा इसे तथा अन्य देवताओं को जो शाप दिया गया था उसकी कथा निम्न प्रकार से दी गयी है:—एक बार ब्रह्मा ने प्रभासक्षेत्र में एक यज्ञ किया, जिसमें यज्ञ की मुख्य व्यवस्था विष्णु को, ब्राह्मणसेवा इन्द्र को, एवं दक्षिणादान कुबेर को सौंपी गयी थी।

ब्रह्मा के इस यज्ञ में निम्नलिखित ऋषि ब्रह्मन्, उद्गातु, होतृ एवं अर्ध्वयु बने थे:—

(१) ब्रह्मन्गण—नारद (ब्रह्मा), गौतम अथवा गर्ग (ब्राह्मणाच्छसी), देवगर्भ व्यास (होता), देवल भरद्वाज (आग्नीष्र)।

(२) उद्गातृगण—अंगिरस् मरीचि गोमिल (उद्गाता), पुलह कौथुम (उद्गाता अथवा प्रस्तोता), नारायण शंडिल्य (प्रतिहता), अत्रि अंगिरस् (सुब्रह्मण्य)।

(३) होतृगण—भृगु (होता), वसिष्ठ मैत्रावरुण (मैत्रावरुण ऋत्विज्), ऋतु मरीचि (अच्छावाच्), च्यवन मालव (ग्रावा अथवा ग्रावस्तुद्)।

(४) अर्ध्वयुगण—पुलस्त्य (अर्ध्वयु), शिषि अत्रि (प्रतिष्ठता अथवा प्रस्थाता), बृहस्पति रैभ्य (नेषा),

अंशपायन सनादन (उभेता)। बाकी सारे ऋषि इसके यज्ञ के सदस्य बने थे।

सावित्री से शाप—यज्ञ की दीक्षा लेकर यह यज्ञ प्रारम्भ करने ही वाला था कि, इसे ध्यान आया कि, यज्ञकुण्ड के पास सावित्री उपस्थित नहीं है, और बिना पत्नी के यज्ञ आरम्भ नहीं किया जा सकता। अतएव इसने सावित्री को बुलावा भेजा, पर सावित्री के आने में देर हुयी। पता नहीं उसे वहाँ आने में हिचकिचाहट थी, अथवा वह अकेले न आकर लक्ष्मी के साथ आने के लिए उसे ढूँढ़ रही थी, बहरहाल उसे देरी हुयी। इस देरी से ब्रह्मा चिढ़ गया, तथा उसने इन्द्र को आज्ञा दी कि, शीघ्र ही किसी स्त्री को इस कार्य की पूर्ति के लिए लाया जाय। इन्द्र एक म्वाले की कन्या ले आया। ब्रह्मा ने उसे 'गायत्री' नाम देकर वरण किया, एवं यज्ञ पर उसे बिठा कर कार्य आरम्भ किया।

कुछ समय के बाद सावित्री आयी, तथा उसने देखा कि यज्ञ फरीब करीब हो चुका है। यह देखकर वह ब्रह्मा एवं उपस्थित देवों पर अत्यधिक क्रुद्ध हुयी कि, मेरे बिना यज्ञ किस प्रकार आरम्भ हुआ। क्रुपित होकर उसने ब्रह्मा को शाप दिया कि, वह अपुञ्ज बनकर रहेगा, उसकी कोई पूजा न करेगा (स्कंद ७.१.१६५)।

सावित्री ने अन्य देवताओं को भी शाप दिये जो इस प्रकार थे—इन्द्र को—हमेशा पराभव होने का एवं कारावास भोगने का; विष्णु को—भृगु ऋषि के द्वारा शाप मिलने का, स्त्री का राक्षसद्वारा हरण होने का, तथा पशुओं की दास्यता में रहने का; रुद्र को—ब्राह्मणों के शाप से पौरुष के नष्ट होने का; अग्नि को—अपवित्र पदार्थों की ज्वाला से अधिक भड़कने का; ब्राह्मणों को—लोभी बनने का, दूसरे के अन्न पर जीवित रहने का, पापियों के घर भी यज्ञहेतु जाने का, तथा द्रव्यसंचय में अधिक प्रयत्नशील रहने का आदि।

इस प्रकार प्रमुख देवताओं को शाप देकर सावित्री वापस आयी। देवत्वियों ने उसका साथ न दिया अतएव सावित्री ने उन्हें शाप दिया कि 'तुम सभी वंध्या रहोगी' लक्ष्मी को शाप दिया 'तुम चंचल रहकर, मूर्ख, म्लेच्छ, आग्रही तथा अभिमानी लोगों की संगति करोगी'। इन्द्राणी को शाप दिया, 'तुम्हारी इज्जत लेने के लिए नहुष तुम्हारा पीछा करेगा, तथा तुम्हें अपनी रक्षा के लिए बृहस्पति के घर पर छिपकर बैठना पड़ेगा।

गायत्री से वरदान—सावित्री के चले जाने के उपरान्त, गायत्री ने समस्त देवताओं एवं उनकी धर्मपत्नियों को

विभिन्न वरप्रदान करते हुए कहा, 'ब्रह्मा की पूजा करने-वाले व्यक्ति को सुख एवं मोक्ष प्राप्त होगा। इन्द्र शत्रुद्वारा पराजित होकर भी, ब्रह्मा की सहायता प्राप्त कर पुनः अपना पद प्राप्त करेगा। विष्णु को मनुष्यजन्म में पत्नी विरह सहन करना पड़ेगा, किन्तु अन्त में वह शत्रुओं को परास्त कर लोगों का पूज्य बनेगा। शंकर के पूजक पाप से मुक्त होकर अपना उद्धार करेंगे। अग्नि की तृप्ति पर ही देवों को सुख और शान्ति मिलेगी। लक्ष्मी सब को प्रिय होगी, तथा वह ह्राएक जगह पूजी जायेगी; उसके कारण ही लोग तेजस्वी होंगे। देवत्वियों संततिविहीन होने पर भी उन्हें निःसंतान होने का दुःखन होगा' (पद्म. सू. १७)।

यज्ञ में उपस्थित तीन अतिथि—ब्रह्मा का यह यज्ञ सहस्र युगों तक चलता रहा, अर्थात् यह ब्रह्मा की वर्ष-गणना से करीब अर्ध वर्ष तक चला (स्कंद. ६.१.९४)। स्कंद के अनुसार, ब्रह्मा के इस यज्ञ में तीन विभिन्न व्यक्ति विचित्र रूप से यज्ञ में आये, जिनकी कथा अत्यधिक रोचक है।

यज्ञ चल रहा था कि, शंकर अपनी विचित्र वेशभूषा में आया, और अपना कपाल मंडप में रख दिया। उसे कोई पहचान न सका। ऋत्विजों में से एक ने उस कपाल को बाहर फेंकने का प्रयत्न किया, किन्तु उसके फेंकते ही उस स्थान पर लाखों कपाल उत्पन्न हो गये। यह कृत्य देख कर सबको आभास हुआ कि, यह भगवान् शंकर की ही लीला हो सकती है। अतएव समस्त देवताओं ने तुरंत उसकी स्तुति कर, उससे क्षमा माँगी। शंकर प्रसन्न हुए और ब्रह्मा से वर माँगने को कहा। किन्तु ब्रह्मा ने यज्ञ की दीक्षा लेने के कारण शंकर से वर माँगने की मजबूरी प्रकट की, और स्वयं शंकर को वर प्रदान किया। इसके उपरान्त ब्रह्मा ने यज्ञकुण्ड की उत्तर दिशा की ओर शंकर को उचित आसन देकर, उसके प्रति अपना सम्मान प्रकट किया।

दूसरे दिन एक बटु ने यज्ञमंडप में प्रवेश कर सहज-भाव से एक सर्प छोड़ दिया, जिसने उपस्थित होतागणों को अपने पाश में बाँध लिया। इस कृत्य से क्रोधित होकर उपस्थित सदस्यों ने शाप दिया कि, वह स्वयं सर्प हो जाये। किन्तु उस बटु 'शंकर भगवान्' की स्तुति कर शाप से मुक्त हुआ।

तीसरे दिन एक विद्वान् अतिथि आया और उसने कहा, 'आप सभी लोगों से मैंने केवल गुण प्राप्त किये हैं, अतएव मैं विद्वान् बनने का अधिकारी हूँ'। ब्रह्मा ने उसका उत्कार किया एवं उसे उचित आसन दिया।

उपर्युक्त वज्र के अतिरिक्त, ब्रह्मा के द्वारा निम्न-लिखित स्थानों पर यज्ञ करने के निर्देश प्राप्त हैं:- हिरण्य-वृंग पर्वत पर त्रिदुसर के समीप, धर्मारण्य में ब्रह्मसर के समीप, एवं कुरुक्षेत्र में (म. स. ३.८ ९; प. व. ८२.७४; १२९.१)।

अन्य कथाएँ—एक बार अभिमान में आ कर तारकासुर नामक दैत्य देवों को अत्यधिक क्रुद्ध करने लगा। फिर उसके विनाश के लिए ब्रह्मा ने अपनी एक मानसकन्या निशा अथवा विभावरो को शंकरपत्नी पार्वती बनने के लिए भेजा। आगे चलकर उसी पार्वती के गर्भ से उत्पन्न हुए स्कंद ने तारकासुर का नाश किया (मत्स्य. १५४. ४७-७२)। शिवप्रसाद से इसने पुलोमा नामक दैत्य का वध किया (स्कंद. ५.२.६६)। जिस समय शंकर ने त्रिपुरासुर का वध किया था, उस समय ब्रह्मा उसका सारथी था (म. क. २४.१०८)।

इसकी मानसकन्याओं में सरस्वती नामक कन्या इसे विशेष प्रिय थी। इस कारण इसके दर्शनार्थ वह प्रतिदिन आया करती थी। एक बार, इसके दर्शन के लिए सहज-वश आया हुआ पुरुवरवस् राजा सरस्वती को देखकर उसपर मोहित हुआ। फिर अपनी पत्नी उर्वशी के द्वारा सरस्वती को बुलवा कर, उसके साथ रत हुआ। यह जान कर क्रुद्ध हुए ब्रह्मा ने अपनी पुत्री सरस्वती को नदी बन जाने का शाप दिया। उर्वशी के द्वारा प्रार्थना की जाने पर ब्रह्मा ने सरस्वती को उःशाप दिया, नदी हो जाने के उपरांत तुम नदियों में पवित्र समझो जाओगी (ब्रह्म. १०१)।

विष्णु, रुद्र आदि अन्य देवताओं के समान ब्रह्मा के द्वारा भी अनेक तीर्थस्थान, एवं पवित्र क्षेत्रों का निर्माण किया गया था। इन्द्रद्युम्न नामक राजा के द्वारा अनुरोध करने पर, ब्रह्मा ने सुविख्यात 'जगन्नाथ' क्षेत्र की स्थापना की थी (स्कंद. २.२.२३)।

ब्रह्मा की कालगणना—ब्रह्मा की आयु सौ वर्षों की मानी जाती है। किन्तु ये सौ वर्ष सामान्य लोगों की वर्ष गणना से भिन्न हैं। अतएव उस हिसाब से इसकी कुल आयु लाखों वर्षों की ठहरती है।

ब्रह्मा की कालगणना में एक वर्ष में तीन सौ साठ दिन रहते हैं। किन्तु इसका एक दिन एक हजार 'पर्यायों' का बनता है, एवं एक पर्याय में कृतयुग (१७२८००० वर्ष), त्रेतायुग (१२९६००० वर्ष), द्वापरयुग (८६४००१ वर्ष), तथा कलियुग (४३२००० वर्ष) समाविष्ट होते हैं। ब्रह्मा के कालगणना की तालिका इस प्रकार है :—

ब्रह्मा का एक दिन अथवा एक कल्प = १००० पर्याय,

१ पर्याय = कृत, त्रेता, द्वापर एवं कलियुग

(कृतयुग = १,७२८००० वर्ष)

त्रेतायुग = १२,९६००० वर्ष

द्वापरयुग = ८,६४००१ वर्ष

कलियुग = ४,३२००० वर्ष)

४,३२०००१ वर्ष

∴ ब्रह्मा का एक दिन = ४३,२००००० × १०००

= ४३,२००००००० वर्ष

(विष्णु. ३.२.४८)।

पौराणिक कालगणना के अनुसार, ब्रह्मा का एक वर्ष विष्णु के एक दिन के बराबर होता है, एवं विष्णु का एक वर्ष शंकर के एक दिन के बराबर होता है (स्कंद. ६.१.९४)।

पद्म के अनुसार, ब्रह्मा के आयु के ५० वर्ष अर्थात् एक परार्ध समाप्त हो चुका है, एवं दूसरा चल रहा है (पद्म. सू. ३; स्कंद. ७.१.१०४)। इसकी रात्रिका काल वही है, जिसे नैमित्तिक प्रलय का काल कहा जाता है (भा. ३.११.२२-३५; १२.४.२; विष्णु. १.३.११-२७; मत्स्य. १४२.५.३६)। हर एक कल्प के आरम्भ में, जो अवतार ब्रह्मा द्वारा लिए गये हैं, उस कल्प को वही नाम दिया जाता है।

ग्रन्थ—ब्रह्मा द्वारा 'वास्तुशास्त्र' पर लिखित एक ग्रन्थ उपलब्ध है (मत्स्य. २५२.२)। 'दण्डनीति' नामक एक लक्ष अध्यायों का एक अन्य ग्रन्थ भी इसके द्वारा लिखा गया था। आगे चलकर शंकर ने उस ग्रन्थ को दस हजार अध्यायों में संक्षिप्त किया, जिसे 'वैशालक्ष' कहते हैं। बाद में, इन्द्र ने उसे पाँच हजार अध्यायों में संक्षिप्त किया, एवं उसे 'बाहुदंतक' नाम दिया। आगे चलकर अन्य ऋषियों के द्वारा वह और संक्षिप्त किया गया। बृहस्पति ने उसे संक्षिप्त कर तीन हजार अध्यायों का, एवं उसके बाद शुक्राचार्य ने उसे और भी संक्षिप्त कर एक हजार अध्यायों का बना दिया। बाद में वह ग्रन्थ प्रजापति के द्वारा अति संक्षिप्त कर दिया गया (म. शां. ५९.८७; प्रजापति देखिये)।

स्थान—पद्म में ब्रह्म के एक सौ आठ स्थानों का निर्देश प्राप्त है (पद्म. सू. २९.१३२-१५९)।

ब्रह्मबल—व्यास की अथर्वन् शिष्यपरंपरा में से ब्रह्मवलि नामक आचार्य का नामान्तर।

२. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

३. ऋग्वेदी ब्रह्मचारी ।

ब्रह्मबलि—एक आचार्य, जो व्यास की अधर्वन् शिष्यपरंपरा में से देवदर्श ऋषि के चार शिष्यों में से एक था ।

ब्रह्मबलिन्—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक ऋषि ।

ब्रह्ममालिन्—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार गण ।

ब्रह्मरात—याज्ञवल्क्य ऋषि का पिता (विष्णु. ३. ५.२) । भागवत में इसके नाम के लिए 'देवरात' पाठभेद प्राप्त है (देवरात ३. देखिये) । वायु में इसे 'ब्रह्मवाह' कहा गया है ।

२. शुकाचार्य का नामान्तर (भा. १.९.८) ।

ब्रह्मराति—याज्ञवल्क्य ऋषि का पैतृक नाम ।

ब्रह्मवत्—भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि एवं मंत्रकार ।

ब्रह्मवादिनी—प्रभास नामक वसु की पत्नी ।

ब्रह्मवाह—याज्ञवल्क्य का पिता 'ब्रह्मरात' के नाम के लिये उपलब्ध पाठभेद (वायु. १.६०.४१; ब्रह्मरात देखिये) ।

ब्रह्मवृद्धि उदोगमाहकि—एक आचार्य, जो मित्र-वर्चस् ऋषि का शिष्य था (वं. ब्रा. १) ।

ब्रह्मशत्रु—रावणपक्षीय एक राक्षस (वा. रा. सुं. ५.५४) ।

ब्रह्मसावर्णि—दसवे मन्वन्तर का अधिपति मनु, जो ब्रह्मा एवं दक्षकन्या सुव्रता का पुत्र था (ब्रह्मांड. ४.१. ३९-५१; मार्क. ९१.१०) । यह चाक्षुष मन्वन्तर में पैदा हुआ था (वायु. १००.४२; मनु देखिये) ।

भागवत में इसे उपश्रोक का पुत्र कहा गया है (भा. ८.१३.२१) । देवीभागवत में दसवें मन्वन्तर का नाम

'मेरुसावर्णि' बताया गया है, एवं उसके अधिपति के नाते ब्रह्मसावर्णि का नाम न दे कर, वैवस्वतपुत्र पृषप्र का नाम दिया गया है (दे. भा. १०.१३) ।

ब्रह्मसूनु—ग्यारहवें मन्वन्तर का अधिपति मनु (मत्स्य. ९.३६) ।

ब्रह्महत्या—शंकर के द्वारा निर्माण की गयी एक देवी, जो उसने भैरव नामक राक्षस का वध करने के लिये उत्पन्न की थी ।

भैरव नामक राक्षस ने ब्रह्मा का सर काट लिया । फिर शंकर ने इसे निर्माण किया, एवं इसे भैरव के पीछे छोड़ दिया । भारत के सारे शिवस्थानों में इसका उत्सव मनाया जाता है; केवल काशी में इसका उत्सव नहीं होता । शिवपुराण में वर्णन किया इसका माहात्म्य अतिशयोक्त प्रतीत होता है ।

ब्रह्महन्—एक राक्षस, जो अनारुणा नामक राक्षसी का पौत्र, एवं वृष राक्षस का पुत्र था ।

ब्रह्मातिथि काण्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.५) ।

ब्रह्मापित—एक राक्षस, जो ब्रह्मघान राक्षस का पुत्र था (ब्रह्मांड ३.७.९८) । यह अश्विन माह में सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.४३) ।

ब्रह्मावर्त—(स्वा । प्रिय.) एक राजा, जो ऋषमएवं जयंती का पुत्र था (भा. ५.४.१०) ।

ब्रह्मिष्ठ—(सो. नील.) एक राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार सुदूर राजा का पुत्र था । इसकी स्त्री का नाम इंद्रसेना था ।

ब्राह्मण—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू का पुत्र था ।

ब्राह्मपुरेयक—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषि-गण । इसके नाम के लिए 'ब्रह्मकृतेजन्' पाठभेद प्राप्त है ।

भ

भक्षक—एक शूद्र, जो अत्यंत पापी था । एक बार प्यास से अत्यधिक व्याकुल होकर, इसने तुलसी चौरों के पास आकर, उसके पवित्र जल को ग्रहण किया, जिससे इसके समस्त पाप धुल गये । पश्चात्, एक व्याध द्वारा मारे जाने के उपरांत इसे स्वर्ग प्राप्त हुआ ।

यह पूर्व जन्म में एक विलसी राजा था, जिसने एक सुन्दर स्त्री का अपहरण कर, उसका सतीत्व नष्ट किया था । इसी पापकर्म के कारण इस शूद्रयोनि में अनेकानेक यातनाएँ भोगनी पड़ी (पद्म. ब्र. २२) ।

भग—एक वैदिक देवता जो सम्पत्ति, वैभव एवं सौभाग्य

की देवता मानी जाती है। यह बारह आदित्यों में से एक माना जाता है। ऋग्वेद में आदित्यों की संख्या छः दी गयी है, एवं निम्नलिखित देवताओं को आदित्य कहा गया है:—भग, मित्र, अर्यमन्, वरुण, दक्ष एवं अंश (ऋ. २.२७)।

ऋग्वेद का एक सूक्त प्रमुखतः भग की स्तुति में अर्पित किया गया है (ऋ. ७.४१)। ऋग्वेद में कुल साठ स्थानों में इस देवता का नाम आता है। भग का शाब्दिक अर्थ 'प्रदान करनेवाला' है। यही कारण है कि, वैदिक सूक्तों में सम्पत्ति के वितरक के रूप में इसका निर्देश कई बार हुआ है। अपने उपासकों को यह सम्पत्ति से परिपूर्ण (भगवान्) बनाता है (ऋ. ५.४६)। इसकी बहन का नाम उषा था (ऋ. १.१२३.५)।

भग के नेत्रों को रश्मियों से विभूषित कहा गया है (ऋ. १. १३६)। यास्क ने इसे पूर्वाह्न का अधिपति कहा है (नि. १२.१३)। ऋग्वेद में आदित्य, सूर्य, विवस्वत्, पूषन्, अर्यमन्, वरुण, मित्र तथा भग को अलग अलग देवता माना गया है। पर वास्तव में ये सारे सूर्य के ही अनेक रूप हैं (ऋ. ८.३५.१३-१५)। भग नाम का ईरानी रूप 'वय' (देव) है, जो 'अहुरमजद' की एक उपाधि के रूप में प्राप्त है।

९. बारह आदित्यों में से एक। शतपथ ब्राह्मण में, प्रजापति के यज्ञ में इसने अपनी आँखें किस प्रकार खोई इसका वर्णन प्राप्त है। प्रजापति के यज्ञ में यह दक्षिण दिशा में त्रैता था। रुद्र के द्वारा प्रजापति का 'वेध' किये जाने पर, उसके यज्ञ का हविर्भाग इसके पास लाया गया जिसे देखने से इसकी आँखें जाती रही (श. ब्रा. १.७.४)।

रुद्र के द्वारा इसकी आँखें नष्ट होने की यही कथा भागवत में अन्य प्रकार से दी गयी है। दक्ष के यज्ञ में यह ऋषिज था। दक्षद्वारा शिव की निंदा किये जाने पर, आँखों के संकेत से इसने दक्ष को इशारा करते हुए उसे और प्रोत्साहित किया था। इस कारण शिव के पार्षद वीरभद्र ने इसकी आँखें बाहर निकाल लीं (भा. ४.५.१७-२०)। महाभारत के अनुसार, स्वयं रुद्र ने इसकी आँखें फोड़ डाली थीं (म. अनु. २६५. १८ कुं.)। पश्चात् यह शंकर की शरण में गया, जिस कारण शंकर ने इसे उःशाप दिया 'तुम मित्रों की आँखों से देख सकोगे (भा. ४.७.३)।

इसकी पत्नी का नाम सिद्धि था, जिससे इसे महिमा, विशु तथा प्रभु नामक पुत्र, तथा आशि नामक कन्या थी (भा. ६.१८.२; ६.६. ३९)।

महाभारत में इसे बारह आदित्यों में से एक कहा गया है, एवं इसकी माता का नाम अदिति, एवं पिता का नाम कश्यप बताया गया है। यह अर्जुन के जन्मोत्सव में तथा स्कंद के अभिषेक में उपस्थित था (म. आ. ११४.५५; श. ४४.५)। खाण्डववनदाह के समय घटित हुए युद्ध में यह इन्द्र के पक्ष में था, एवं तलवार तथा धनुष्य लेकर इसने शत्रु पर आक्रमण किया था (म. आ. २१८.३५)। ३. सौरमण्डल का एक आदित्य (म. आ. ५९.१५)। यह माघ माह में प्रकाशित होता है, एवं इसकी ११०० किरणें होती हैं (भावि. ब्राह्म. १.७८)। भागवत के अनुसार, यह पौष माह में प्रकट होता है, और इसके साथ स्कृज, राक्षस, अरिष्टनेमि गंधर्व, ऊर्ण, यक्ष, आयु ऋषि कर्कोटक नाम तथा पूर्वचित्ति अप्सरा रहती हैं (भा. १२. ११.४२)।

४. एकादश रुद्रों में से एक, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में सम्मिलित था (म. आ. ११४.५८)।

भगदत्त—प्राग्ज्योतिषपुर का अधिपति, जो नरक (भौमासुर) तथा भूमि का पुत्र था (म. द्रो. २८.१)। इसे 'भौमासुर' मातृकनाम भी था, परन्तु कई ग्रंथों में इसे 'भौमासुरपुत्र' भी कहा गया है (भा. १०.५९)।

एक बार इसके पिता भौम ने इन्द्र के कवच एवं कुण्डल का हरण किया, जिसके कारण क्रुद्ध होकर कृष्ण ने युद्ध में उसे परास्त कर उसका एवं उसके सात पुत्रों को मौत के घाट उतार दिया। भूमि ने कृष्ण से विलप कर अपने पुत्र का जीवनदान माँगा। इस प्रकार कृष्ण ने प्रसन्न होकर भगदत्त को पुनः जीवित कर दिया।

पिता के पश्चात् यह प्राग्ज्योतिषपुर देश का अधिपति हुआ, जिसकी राजधानी प्राग्ज्योतिष थी। यह देश आधुनिक काल का आसाम प्रांत ही है। इसका किरात, चीन एवं मसुद्रतटवर्ती सैनिकों के साथ युद्ध भी हुआ था। यह युद्धशिक्षा में पारंगत था। इसे यवनाधिप भी कहा गया है (म. स. १३.१३-१४)। आसाम प्रांत में हाथी उस समय भी होते थे, अतएव यह गजयुद्ध में बड़ा प्रवीण था।

यह पण्डु राजा का मित्र था (म. स. १३.१४)। यह द्रौपदी के स्वयंवर गया था (म. आ. १७७.१२)। जरासंध का मित्र होने पर भी यह युधिष्ठिर के प्रति पिता की भौति स्नेह रखता था। यह इन्द्र का मित्र एवं इन्द्र के समान ही पराक्रमी था। राजसूय दिग्विजय के समय अर्जुन के साथ इसका घोर युद्ध हुआ था। अर्जुन की

वीरता से प्रसन्न हो कर, इसने उसकी इच्छा के अनुसार कार्य करने की प्रतिज्ञा की थी, तथा अतुल धनराशि भेंट देकर उसे निदा किया था (म. स. २३.२७४)

युधिष्ठिर के राजस्य यज्ञ में यह यवनों के साथ उपस्थित था, तथा अच्छी जाति के वेगशाली अश्व एवं बहुत सी भेंटसामग्री इसने युधिष्ठिर को दी थी। इसने युधिष्ठिर को बड़ी ज्ञान शौकत के साथ हीरे तथा पद्मरागमणि के आभूषण एवं विद्युद्द हाथीदंत की बनी मूठवाली तलवार भेंट दे कर अपनी आदर भावना प्रकट की थी (म. स. ४७. १४)। भारतीय युद्ध में, चीन तथा किरात सैनिकों के साथ भगदत्त कौरवों के पक्ष में शामिल हुआ था (म. उ. १९.१४-१५)

यह युद्धभूमि में बड़ा बलवान् एवं साहसी राजा था। बड़े बड़े योद्धाओं से इसकी लड़ाइयाँ हुयी थी। भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में था। यह सेनासहित दुर्योधन की सहायता के लिए आया था (म. उ. १९.१२)। प्रथम दिन के संग्राम में ही इसका एवं विराट का युद्ध हुआ था (म. भीम. ४३.४६-४८)। इसने अपने बाहुबल से भीम को भी रणभूमी में मूर्च्छित कर, घटोत्कच को पराजित किया था (म. भी. ६०.४७)।

इसने दशार्णराज को युद्धभूमि में पराजित किया था, एवं वह इसके द्वारा ही मारा गया (म. भी.; ९१. ४२-४४)। इसने भीमसेन के सारथि विशोक को युद्धभूमि में लडते लडते मूर्च्छित कर दिया था। इसके द्वारा क्षत्रदेव की दाहिनी भुजा का विदारण हुआ था इसके सिवाय सात्यकि एवं द्रुपद के साथ भी इसका घोर संग्राम हुआ, जिसमें गजयुद्ध का कौशल दिखाते हुए, इतने अपने बाणों से सेना को बरस्त कर दिया था (म. भी. १०७.७-१३)

एकबार कर्ण ने अपने दिग्विजय के समय इसे पराजित किया था (म. व. पार. १.२४.३६)। इसका अर्जुन के साथ कई बार युद्ध हुआ (म. भी. ११२.५६-६०)।

इसका अन्तिम युद्ध भी अर्जुन के साथ हुआ। उस समय यह काफी वृद्ध हो चुका था। बुढ़ापे के कारण वही हुई श्वेत पत्तकों को पट्टे से बाँध कर, यह युद्धभूमि में अर्जुन के साथ डटा रहा। इसने उसके ऊपर वैष्णवात्म फेंका, तब अर्जुन ने उस अस्त्र का नाश कर, इसके पलकों को पट्टे को तोड़ कर इसका वध किया। यह घटना मार्गशीर्ष वद्य दशमी को हुयी थी (भारत सावित्री)

भगदत्त के कृतप्रज्ञ तथा वज्रदत्त नामक पुत्र थे। कृतप्रज्ञ भारतीय नकुल के द्वारा मारा गया अतएव वज्रदत्त राजगद्दी का अधिकारी बनाया गया (म. अ. ४.२९)। अर्जुन का वज्रदत्त से भी युद्ध हुआ था, जिसमें अर्जुन ने उसे जीता था (म. आश्व. ७५.१-२०)।

भगदा—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.२६)

भगधर—(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो वायु के अनुसार विद्योपरिचर का पुत्र था (वायु. ९९.२२१)। कई पुराणों में इसके पिता के नाम के लिए 'चैत्रोपरिचर' पाठभेद प्राप्त है।

भगनंदा—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. ११)। इसके नाम के लिए, 'भगदा' पाठभेद प्राप्त है।

भगपाद—अधिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भगवत्—तुषित देवों में से एक।

भगवत् औपमन्यव काराडि—एक सामवेदी आचार्य, जिसका निर्देश जैमिनिष्कृतसूत्र के अन्तर्गत उपाकर्मांग तर्पण में प्राप्त है (जै. ग. १.१४)।

भगीरथ—(स. इ.) सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो सम्राट् दिलीप का पुत्र था। अपने पितरों के उद्धार करने के लिए इसने अनेकानेक प्रयत्न कर गंगा नदी को पृथ्वी पर लया, एवं इस तरह अपने प्रपितामह असमंजस्, पितामह अंशुमत् एवं पिता दिलीप से चलता आ रहा प्रयत्न सफल किया। इसी कारण आंग चलकर लोगों ने अत्यधिक प्रयत्न के लिए 'भगीरथ' नाम को लक्षणिक रूप में प्रयुक्त करना आरम्भ किया।

इसके प्रपितामह असमंजस् के पिता सगर के कुल साठ हजार पुत्र थे, जो कपिल ऋषि के शाप के कारण दग्ध हो गये। बाद को कपिल ऋषि ने अंशुमत् तथा दिलीप से उनके मुक्ति का मार्ग बताते हुए कहा 'यदि तुम लोग अपने पितरों का उद्धार ही करना चाहते हो, तो गंगा नदी की आराधना कर उसे पृथ्वी पर आने के लिए प्रार्थना करो, तभी तुम्हारे पूर्वजों का निस्तार सम्भव है'।

अंशुमत् तथा दिलीप ने तप किया, लेकिन वे सफल न हो सके; उनका प्रयत्न अधूरा ही रहा। तब इसने हिमालय पर जा कर गंगा बाने के लिए घोर तप किया। गंगा इससे प्रसन्न हुयी, तथा पृथ्वी पर उतरने के लिए उसने अपनी अनुमति दे दी। अब समस्या थी कि, गंगा के तीव्र प्रवाह को पृथ्वी पर किस प्रकार उतारा जाय; कारण सम्भव था, पृथ्वी उसके वेग गति से बह जाये। इस कार्य के लिए गंगा ने इसे शंकर की सहायता लेने के लिए कहा।

गंगा के कथनानुसार इसने शंकर की आराधना आरम्भ कर दी। पश्चात् शंकर इसकी तपस्या से प्रसन्न हो, गंगा के वेग प्रवाह को जटाओं के द्वारा रोकने के लिए तैयार हो गये।

गंगावतरण—वाद में शंकर ने अपनी जटा के एक बाल को तोड़ कर गंगा को पृथ्वी पर उतारा। गंगा का जो क्षीण प्रवाह सर्वप्रथम पृथ्वी पर आया, उसे ही 'अलकनंदा' कहते हैं। बाद को, गंगा ने वेगरूप धारण कर भगीरथ के कथनानुसार, उसी मार्ग का अनुसरण किया, जिस जिस मार्ग से होता हुआ यह गया। अंत में यह कपिलआश्रम के उस स्थान पर गंगा को ले गया, जहाँ इसके पितर शाप से मुक्त हुए थे। वहाँ गंगा के स्पर्श-मात्र से सभी पितर शाप से मुक्ति पाकर हमेशा के लिए उद्धरित हो गये (म. व. १०७; वा. रा. वा. १.४२-४४; भा. १.९. २-१०; वायु. ४७.३७; ८८.१६८; ब्रह्म. ७८; विष्णु. ४.४.१७)।

गंगा को पृथ्वी पर उतारने का श्रेय इसे ही है। इसी लिये गंगा को इसकी कन्या कहा गया है, तथा इसके नाम पर ही उसे 'भागीरथी', नाम दिया गया है (ह. वं. १.१५-१६; नारद. १.१५; ब्रह्मवै. १.१०)।

पद्म के अनुसार, गंगा आकाश से उतर कर शंकर की जटाओं में ही उलझ कर रह गयी। तब सगर ने शंकर से प्रार्थना कर, उसे पृथ्वी पर छोड़ने के लिए निवेदन किया (पद्म उ. २१)। भगीरथ से सम्बन्धित गंगावतरण की कथा में; सगर का नाम जो पद्म पुराण में सम्मिलित किया गया है, वह उचित नहीं प्रतीत होता है।

गंगा को पृथ्वी पर लाने के उपरांत यह पूर्ववत् फिर राज्य करने लगा। यह धर्मप्रवृत्तिवाला दानशील राजा था। इसने दान में अपनी हंसी नामक कन्या कौत्स ब्राह्मण को दी थी (म. अनु. १२६.२६-२७) इसने भागीरथी के तट पर अनेकानेक घाट बनवाये थे। न जाने कितने यज्ञ कर ब्राह्मणों को हजारों सालकृत कन्याएँ, एवं अपार धनराशि दक्षिणा के रूप में देकर उन्हें सन्तुष्ट किया था। इसके यज्ञ की महानता इसी में प्रकट है कि, उसमें देवगण भी उपस्थित होते थे (म. द्रो. परि. १. क्र. ८)। ब्राह्मणों को अनेकानेक गायों का दान देकर इसने अपनी दानशीलता का परिचय दिया था। अकेले कोहल नामक ब्राह्मण को ही इसने एक लाख गायें दान में दी थी, जिसके कारण इसे उत्तमलोक की प्राप्ति हुयी (म. अनु. १३७.२६-२७; २००.२७)। श्रीकृष्ण ने भी

इसकी दानशीलता की सराहना की है (म. शां. २९.६३-७०)। महाभारत में दिये गये गोदानमहात्म्य में भी इसका निर्देश प्राप्त है (म. अनु. ७६.२५)।

वैदिक वाङ्मय में निर्दिष्ट 'भगीरथ ऐश्वक' एवं यह सम्भवतः एक ही व्यक्ति रहे होंगे। भगीरथ के नाभग (नभ), तथा श्रुत नामक दो पुत्र थे। इसके उपरांत श्रुत गद्दी पर बैठा।

महाभारत में सोलह श्रेष्ठ राजाओं का जो आख्यान नारद ने संजय राजा को सुनाया था, उसमें भगीरथ की कथा सम्मिलित है (म. शां. ५३-६३)।

भगीरथकथा का अन्वयार्थ—आधुनिक विद्वानों के अनुसार, भगीरथ की यह कथा रूपात्मक है। गंगा पहले तिब्बत में पूर्वी से उत्तर की ओर बहती थी, जिससे कि, उत्तरी भारत अक्सर आकाशप्रस्त हो जाता था। इसके लिये भगीरथ के सभी पूर्वजों ने प्रयत्न किया कि, किसी प्रकार गंगा के प्रवाह को घुमाकर दक्षिणीवाहिनी बनाया जाये। किन्तु वह न सफल हो सके। लेकिन भगीरथ अपने प्रयत्नों में सफल रहा, तथा उसने गंगा की धार मोड़ कर उत्तर भारत को हराभरा प्रदेश बना दिया। सगर के साठ हजार पुत्र सम्भवतः उसकी प्रजा थी, जिसे यह पुत्र के समान ही समझाता था।

२. द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित एक राजा (म. आ. १७७.१९)।

भगीवसु—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक प्रवर। इसके नाम के लिए 'भार्गिवसु' पाठभेद प्राप्त है।

भगीरथ ऐश्वक—इश्वकवंशीय एक राजा (जै. उ. ब्रा. ४.६.१.२)। एकवार इसने यज्ञसमारोह का आयोजन किया, एवं उपस्थित ऋषिमुनियों से पृच्छा की, 'वह ज्ञान कौनसा है, जो ज्ञान लेने पर संसार की सारी जानकारी प्राप्त होती है'। इसके इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कुरुवांचालों में से बक बाल्य नामक ऋषि ने कहा, 'गायत्रीमंत्र यह एक ही मंत्र ऐसा है, जिसमें सृष्टि की सारी जानकारी छिपी हुयी है'।

इस निर्देश से प्रतीत होता है कि, इश्वकगण के लोग कुरुवांचालों से संबंधित थे। व्रीह ग्रंथों में उन्हें पूर्वी भारत में रहनेवाले बताया गया है, वह असंभवनीय दिखाई देता है।

भङ्गा—तक्षक कुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्प सत्र में मारा गया (म. आ. ५२.८)। पाठभेद (मांडार-कर संहिता)—'डङ्गा'।

भङ्गकार—एक राजा, जो सोमवंशीय कुरु राजा का पौत्र, एवं अविश्वित् राजा का पुत्र था (म. आ. ८९.४६)।
२. (सो. वृष्णि.) यादववंशीय एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार शक्तिसेन राजा का, एवं वायु के अनुसार शक्रजित् राजा का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम द्वारवती था (म. आ. २११.११; वायु. १६.५३-५५)। मत्स्य में इसकी पत्नी का नाम वीरवती दिया गया है (मत्स्य. ४५.१९, ब्रह्मांड. ३.७१.५४-५६)। इसकी निम्नलिखित तीन कन्याएँ थीं:— सत्यभामा, त्रितीया एवं पद्मावती (प्रत्यापिनी, तपस्विनी) (ह. वं. १.३८.४५-४६; मत्स्य ४५.१९-२१)। इसे समाक्ष एवं नावेय (तारेय) नामक दो पुत्र थे (ह. वं. १.३८.४८; ब्रह्म. १६.४८)। यह रैवतक पर्वत के महोत्सव में उपस्थित था। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—“मद्रकाल”।

भङ्गयश्रवस्—वैदिक ग्रंथों में निर्दिष्ट एक आचार्य (क. सं. ३८.१२)। इसके नाम के लिए ‘भङ्गयश्रवस्’ पाठभेद प्राप्त हैं।

भङ्गयश्रवन्—एक राजा, जो शफाल का राजा ऋतुपर्ण का पिता था (बौ. श्रौ. २०.१२)। आपस्तंब श्रौतसूत्र में ऋतुपर्णकृयोवधि का ‘भंग्याश्रवन्’ के रूप में उल्लेख है (आ. श्रौ. २१.२०)। महाभारत में इसे ‘भांगसुरी’ (भागस्वरि, भांगस्वरि, भांग) कहा गया है (म. स. ८.१५; व. ६.८.२; ६९.१०)।

भङ्गास्वन्—एक प्राचीन राजर्षि, जो आजन्म इन्द्र का विरोधी रहा (म. अनु. १२.१०)। इसके नाम के लिए ‘भङ्गास्वन्’ पाठभेद प्राप्त हैं।

इसे कोई सन्तान न थी, अतएव यह अत्यधिक किन्तित रहता था। पुत्रप्राप्ति के लिए इसने अग्नि देवता को प्रसन्न करने के लिए ‘अग्निष्टोम यज्ञ’ किया। उस यज्ञ को देखकर इन्द्र इस पर नाराज हुआ कि, ‘यह यज्ञ मेरे अपमान के लिए किया जा रहा है, क्योंकि सारे हविर्भाग के प्राप्त करने का अधिकार अग्नि को ही होगा, मुझे नहीं!’ अतएव वह इससे बदला लेने का मार्ग ढूँढने लगा। कालान्तर में अग्नि की कृपा से इसे सौ पुत्र हुए।

एक बार यह अपने कुछ सैनिकों के सहित शिकार खेलने गया। वहाँ यह जंगल में भटकता हुआ एक सुन्दर सरोवर के पास आ खड़ा हुआ, तथा फिर उसमें नहाने की इच्छा से उतर पड़ा। इंद्र ने सुअवसर देख कर बदला लेने की भावना से, इसे एक स्त्री बना दिया (म. अनु. १२. १०)। बाद को जब इसने अपने विचित्र शरीर के परि

वर्तन को देखा, तब दुःखी होकर अपने राज्य वापस आया, तथा अपना समस्त राज्यभार पुत्रों को देकर वन चला गया।

वन में जाकर स्त्रीरूपधारणी भङ्गास्वन् ने एक तपस्वी से विवाह किया, तथा उससे इसे सौ पुत्रों हुए। काळोरांत इसने अपने इन पुत्रों को पहलेवाले पुत्रों के पास भेजकर, उन्हें भी राज्य से उचित भाग दिलवाया। इस प्रकार यह इस स्त्रीरूप में भी आनंदपूर्वक जीवन बिताता रहा।

इसके इस सुखी जीवन को देखकर इन्द्र को बड़ा क्रोध आया, क्योंकि उसने इसे यह स्त्रीरूप कष्टमय जीवन बिताने के लिए दिया था, सुख भोगने के लिए नहीं। इन्द्र को एक तरकीब सूझी। वह ब्राह्मणवेश धारण कर इसके पुत्रों के राज्य में गया, जहाँ इसके दो सौ पुत्र भलीप्रकार रहते थे। वहाँ जाकर उसने उनमें ऐसी फूट डाल दी कि, सब आपस में लड़भिड़ कर कट मरे।

यह अपने राज्य गया, तथा पुत्रों की यह दशा देखकर फूट फूट रोने लगा। इन्द्र जो ब्राह्मणवेश में वहाँ उपस्थित था, वह भी इसके दुःख को देखकर पसीज उठा।

फिर इन्द्र ने अपने साक्षात् स्वरूप को प्रकट कर इसे दर्शन दिया। इसने उसकी प्रार्थना की, तथा फिर इन्द्र ने प्रसन्न हो कर इसके सभी पुत्रों को पुनः जीवित कर दिया। इन्द्र ने इससे पूँजा, ‘यदि तुम पुनः पुरुषयोनि में आना चाहते हो, तो मैं तुम्हें पुरुषरूप प्रदान कर सकता हूँ’। किन्तु इसने कहा, ‘पुरुष की अपेक्षा स्त्री अधिक मोहक एवं कोमल है, अतएव मैं स्त्री ही रहना चाहती हूँ’। इस प्रकार मृत्यु तक भङ्गास्वन् स्त्री ही रहा (म. अनु. १२)।

भङ्गायश्रवस्—एक आचार्य (तै. आ. ६.५.२)। यह एवं भङ्गायश्रवस् संभवतः एक ही होंगे।

भज—एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की ऋक्षशिष्य परंपरा में से शाकवैण रथीतर ऋषि का शिष्य था (व्यास देखिये)।

भजमान—(सो. क्रोष्टु.) एक यादववंशीय राजा, जो सत्वत राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम कौसल्या था। इसे सत्वत अथवा अन्धक नामक एक भाई था। इसे ब्राह्मका एवं सृजया (उपब्राह्मका) नामक दो पत्नियाँ थीं, जो दोनों ही सृजय राजा की कन्याएँ थीं। उनमें से ब्राह्मका से इसे अताजित्, सहस्त्राजित् एवं अयुताजित्; एवं सृजया से निम्लोत्त्रि, वृष्णि एवं किंकिण नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ९.२४.६-८)। ब्रह्म में ब्राह्मका से उत्पन्न

इसके पुत्रों का नाम क्रिमि, क्रमण, धृष्ट, शूर, एवं पुरंजय दिये गये हैं, एवं शताजित् आदि पुत्रों को पुत्र सृजया के पुत्र कहा गया है (ब्रह्म. १५.३२-३४)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो सात्वत (अंधक) राजा का पुत्र था।

३. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भागवत के अनुसार विदूरथ राजा का पुत्र था।

भजिन्—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भागवत के अनुसार सात्वत राजा का पुत्र था।

भजेरथ—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक व्यक्तिनाम, जिसका निर्देश अगस्त्य, असमाति एवं इक्ष्वाकु ऋषियों के साथ प्राप्त है। सायण के अनुसार, यह असमाति ऋषि का शत्रु, अथवा वैकृषिक अर्थ में उसका पूर्वज था। लुङ्विग एवं ग्रिफिथ के अनुसार, यह किसी व्यक्तिनाम न हो कर इससे किसी स्थाननाम का आशय है।

भज्य—एक आचार्य, जो व्यास की ऋक्षशिष्य परंपरा में से ब्राह्मलि का शिष्य था। ब्राह्मलि ऋषि ने इसे ' बालखिल्य संहिता ' सिखाई थी (भा. १२. ६. ६०)।

भट्टादित्य—सूर्य देवता का नामान्तर। उस देवता को नारदभट्ट ने पृथ्वी पर लाया, इस कारण उसे यह नामान्तर प्राप्त हुआ था (स्कंद. २.४३)।

भद्र—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. एक यक्ष, जो कुवेर का मंत्री था। गौतम ऋषि के शाप के कारण, इसे पशुयोनि प्राप्त होकर यह सिंह बन गया।

३. भद्र गणराज्य में रहनेवाले लोगों का सामुहिक नाम। इन लोगों के क्षत्रिय राजकुमारों ने युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय बहुतसा धन उसे अर्पित किया था (म. स. ४८. १३)। इनके नाम के लिए 'भद्र' पाठभेद प्राप्त है। कर्ण ने अपने दिग्विजय के समय इन्हे जीता था (म. व. परि. १.२४.६७)।

४. चेदि देश का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था। अन्त में कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०.५०)।

५. तुषिप देवों में से एक।

६. उत्तम मन्वन्तर का एक देव

७. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक ऋषि, जो इंद्रप्रमति ऋषि का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम उपमन्यु था।

प्रा. च. ६८]

८. (सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार शिवि राजा के पांच पुत्रों में से एक था। इसके नाम के लिए 'भद्रक', एवं 'मद्रक' पाठभेद प्राप्त है।

९. (सो. वसु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वसुदेव एवं पौरवी के पुत्रों में से एक था।

१०. (सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं देवकी के पुत्रों में से एक था।

११. श्रीकृष्ण का कालिंदी से उत्पन्न एक पुत्र (भा. १०.६१.१४)।

१२. (सुंग. भविष्य.) एक राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार वसुमित्र राजा का पुत्र था। इंसने दो वर्षों तक राज्य किया।

भद्रक—अनुवंशीय भद्र राजा के लिए उपलब्ध पाठभेद (भद्र. ८. देखिये)।

२. (सुंग. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वसुमित्र राजा का पुत्र था।

३. एक आचारभ्रष्ट ब्राह्मण। अपनी सारी आयु इंसने पापकर्मों में व्यतीत की। किन्तु संयोगवश इंसने प्रयाग में तीन दिन माघस्नान पुण्य संपादन किया।

आगे चल कर, इसकी एवं अवंती के पुण्यशोक राजा की मृत्यु एक ही दिन हुयी। वीरसेन राजा ने सोलह अश्वमेधयज्ञ कर काफ़ी पुण्य संपादन किया था। फिर भी इंसने किये माघस्नान के पुण्य के कारण, यह एवं वीरसेन दोनों एक ही विमान में बैठकर स्वर्ग चले गये (पद्म. उ. १२८)।

भद्रकल्प—(सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं रोहिणी का पुत्र था।

भद्रकार—एक राजा, जो जरासंध के भय से अपने भाई एवं सेवकों के सहित दक्षिण दिशा में भाग गया था (म. स. १३.२५)।

२. अविक्षिप्तपुत्र भङ्गकार के लिए उपलब्ध पाठभेद (भङ्गकार देखिये)।

भद्रकाली—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.११)।

२. देवी दुर्गा का एक नामान्तर। दक्षयज्ञ के विध्वंस के समय यह पार्वती के कोप से प्रकट हुयी थी (म. शां. २८४.५३)। अर्जुन ने इस नाम से देवी दुर्गा का स्तवन किया था (म. भी. २३. परि. १ क्र. १)।

भद्रगुप्ति—(सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं रोहिणी का पुत्र था।

भद्रचारु—श्रीकृष्ण एवं रुक्मिणी का एक पुत्र।

भद्रज—(सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था।

भद्रतनु—एक दुराचारी ब्राह्मण, जो दान्त की कृपा से विष्णुभक्त बन कर मुक्त हुआ (पद्म. क्रि. १७)।

भद्रदेह—(सो. वसु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार वसुदेव एवं देवकी के पुत्रों में से एक था।

भद्रबाहु—एक दैत्य, जो हिरण्याक्ष के पक्ष में शामिल था। हिरण्याक्ष ने देवों से किये युद्ध में यह अग्नि के द्वारा दग्ध हो गया (पद्म. सू. ७५)।

२. (सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था।

भद्रमति—एक दरिद्री ब्राह्मण। इसे छः पत्नियाँ, एवं दो सौ चत्वारिस पुत्र थे (नारद. १.११)।

एकवार इसने 'भूमिदान महात्म्य' सुना, जिससे इसे स्वयं भूमिदान करने की इच्छा उत्पन्न हुयी। किन्तु इसके पास भूमि न होने के कारण, इसने कौशांबी नगरी में जा कर वहाँ के राजा से ब्राह्मणों दान देने के लिए भूमि माँगी। इस तरह प्राप्त भूमि इसने ब्राह्मणों को दान में दी। पश्चात् इसने व्यंकटाचल में स्थित पापनाशनतीर्थ में स्नान भी किया। इन पुण्यकर्मों के कारण इसे मुक्ति प्राप्त हो गयी (स्कंद. २.१.२०)।

भद्रमनस्—पुलह की पत्नी, जो कश्यप एवं क्रोधा की नौ कन्याओं में से एक थी। इसके नाम के लिए 'भद्रमना' पाठभेद भी प्राप्त है। देवताओं का हाथी ऐरावत इसका पुत्र था (म. आ. ६९.६८)।

भद्ररथ—(सो. वसु.) एक राजा, जो वायु के अनुसार वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था।

२. (सो. अनु.) एक राजा, जो हर्षग राजा का पुत्र था।

भद्रवती—परिस्थित (प्रथम) राजा की भार्या, जिसके पुत्र का नाम जन्मेजय था (म. आ. ९०.९३)। पाठभेद (मांडवकर संहिता)—'माद्रवती'।

भद्रबाह—एक राजा, जो भागवत के अनुसार वसुदेव एवं धौरवी के पुत्रों में से एक था।

भद्रवित्र—(सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था।

भद्रविद्—कंस के द्वारा मारे गये वसुदेव एवं देवकी के पुत्रों में से एक।

भद्रशर्मन् कौशिक—एक आचार्य, जो पुण्यशस्त्र औदत्रजि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम अर्यमभूति था (वं. ब्रा. ३)।

भद्रशास्त्र—स्कंददेव का एक नामान्तर, जो इसे ककरे के समान मुख धारण करने के कारण प्राप्त हुआ था (म. व. २१७.४)।

भद्रश्रवस्—एक ऋषि, जो भद्राश्रवण में रहनेवाले धर्म ऋषि का पुत्र था। यह हयग्रीव की प्रतिमा की उपासना करता था (मा. ५.१८.१)।

भद्रश्रेण्य—(सो. सह.) काशी देश का एक वैश्य राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार, महिष्मत् राजा का पुत्र था। इसे भद्रसेनक एवं रुद्रश्रेण्य नामान्तर भी प्राप्त थे। दिवोदास राजा ने इसे पराजित कर काशी देश का राज्य इससे जीत लिया। पश्चात् इसने दिवोदास को पराजित किया; किन्तु दिवोदास ने पुनः एक बार इसपर हमला कर, इसका एवं इसके सौ पुत्रों का वध किया। इस आक्रमण में से इसका तुर्दम नामक पुत्र अकेला ही बच सका, जिसने आंग चलकर दिवोदास को पराजित किया। (दिवोदास २. देखिये; ह. वं. १.२९.६९-७२; ३२.२७-२८)।

भद्रसार—(मौर्य. भविष्य.) एक मौर्यवंशीय राजा, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, चंद्रगुप्त राजा का पुत्र था (त्रिदुसार २. देखिये)।

२. (सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव के रोहिणी से उत्पन्न पुत्रों में से एक था।

३. काश्मीर देश का राजा। इसे सुधर्मन् नामक एक पुत्र था, जो तारक नामक प्रधानपुत्र के साथ हमेशा शिव की उपासना करता रहता था। इसने अपने पुत्र को शिव-भक्ति से परावृत्त करने का काफी प्रयत्न किया। किन्तु उसका कुछ फायदा न होकर, सुधर्मन् की शिवोपासना बढ़ती ही रही।

एक बार पराशर ऋषि इसके यहाँ अतिथि बनकर आया था। उस समय इसने अपने पुत्र की शिवोपासना एवं विरक्ति की समस्या उसके सामने रख दी। पराशर ने इसकी एवं इसके पुत्र के पूर्वजन्म की कहानी इसे सुनाकर इसे संतुष्ट किया, एवं इससे वद्रामिप्रेक करवाया। तदोपरान्त अपने पुत्र सुधर्मन् को राजगद्दी पर विठाकर यह वन में चला गया (स्कंद. ३.३.२०-२१)।

भद्रसेन—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो ऋषभदेव एवं जयन्ती के पुत्रों में से एक था।

भद्रसेन आज्ञातशत्रुव—एक राजा, जिसके नाश के लिए उद्दालक आरुणि नामक ऋषि ने अभिचाररूप (वशीकरण) वाग किया था (श. ब्रा. ५.५.१४)।

भद्रसेनक—हैहय राजा भद्रश्रेण्य का नामान्तर (भद्रश्रेण्य देखिये)।

भद्रा—कुवेर की प्रियपत्नी। कुन्ती ने द्रौपदी को दृष्टान्त रूप में इसका वर्णन बताया था (म. आ. १९१.६)।

२. विशालक नामक नरेश की कन्या, जिसका विवाह कल्पविपति वसुदेव से हुआ था। चेदिराज शिशुगाल ने कल्पराजा का वेष धारण कर, माया से इसका अपहरण कर लिया (म. स. ४२.११)।

३. श्रीकृष्ण की मंगिनी सुभद्रा का नामान्तर (म. आ. २११.१४)।

४. सोम की कन्या, जो अपने समय की सर्वश्रेष्ठ सुंदरी मानी जाती थी। इसने उचथ्य ऋषि को पतिरूप में प्राप्त करने के लिये तीव्र तपस्या की थी। इसकी यह इच्छा जान कर, सोम के पिता अत्रि ऋषि ने उचथ्य को बुला कर, उसके साथ इसका विवाह संपन्न कराया (म. अनु. १५४.१०-१२)।

पश्चात् वरुण ने इसका अपहरण किया, जिस कारण क्रोधित हो कर, इसके पति उचथ्य ने पृथ्वी का सारा जल प्रादान किया। फिर वरुण उसकी शरण में आया, एवं उसने भद्रा को अपने पति के पास लौटा दिया (म. अनु. १५४.२८)।

५. वसुदेव की चार पत्नियों में से एक (भा. ९.२४.१५)। वसुदेव की मृत्योपरांत, यह उसके साथ सती हो गयी (म. मौ. ७.१८; २४)।

६. मेरु की कन्या, जो प्रियव्रत राजा के भद्राश्व नामक पौत्र की पत्नी थी (भा. ५.२.२३)।

७. अत्रि ऋषि की पत्नी (ब्रह्मांड. ३.८.७४-८७)।

८. श्रीकृष्ण की एक पत्नी, जो केकयाविपति धृष्टकेतु की कन्या थी। इसकी माता का नाम श्रुतकीर्ति था। भागवत में इसे वसुदेव की बहन, एवं श्रीकृष्ण की फफेरी बहन कहा गया है (भा. १०.५८.५६)।

इसे एक कन्या एवं निम्नलिखित दस पुत्र थे:—संग्राम-जित्, बृहत्सेन, शूर, प्रहरण, अरिजित्, जय, सुभद्र, वाम, आसु एवं सत्यक (भा. १०.६१.१)।

९. पूर्ववंशीय परिशित् (प्रथम) राजा की पत्नी भद्रवती के लिये उपलब्ध पाठभेद (भद्रवती देखिये)।

भद्रा काक्षीवती—पूर्ववंशीय व्युषिताश्व राजा की पत्नी, जो कक्षीवान् राजा की कन्या थी। यह अत्यंत रुचवती थी। पति के मृत्यु के बाद, उसके शव से इसे सात पुत्र पैदा हुए (म. आ. १२०.३३-३६)।

भद्रायु—एक राजा, जो शिव का परम भक्त था। इसे क्रोद्ध था, जिस कारण इसे जीवित अवस्था में ही मृत्यु की यातना सहनी पडती थी। इसकी पत्नी का नाम कीर्तिमालिनी था।

यह सोलह वर्ष का होने पर, इसके घर ऋषभ नामक शिवावतार अवतीर्ण हुआ। उसने इसे 'राजधर्म' का उपदेश दिया, एवं प्रसाद के रूप में इसके मस्तक में विभूति लगाया। शस्त्र के रूप में, उसने इसे सङ्ग एवं शंख दे कर, बारह सहस्र हाथियों का बल इसे प्रदान किया। उस शस्त्रास्त्रों के बल से, यह युद्ध में अजेय बन गया (शिव. शत. ४.२७)।

शिव के ऋषभ अवतार के शिवपुराण में प्राप्त वर्णन से, वह अवतार प्रवृत्तिमार्गीय प्रतीत होता है।

एक बार इसके राज्य में, शिव ने एक व्याघ्र का रूप धारण कर, एक ब्राह्मण के पत्नी का अपहरण किया। फिर इस प्रजाहितक्ष राजा ने अपनी पत्नी उस ब्राह्मण को दान में दी, एवं यह स्वयं अग्निप्रवेश के लिए सिद्ध हुआ। इसकी इस त्यागवृत्ति से संतुष्ट हो कर, शिव ने इसे अनेकानेक वर प्रदान किये, एवं ब्राह्मण की पत्नी उसे लौटा दी (स्कंद. ३.३.१४)।

अपने पूर्वजन्म में, यह मंदर नामक राजा था, एवं इसकी पत्नी कीर्तिमालिनी उसकी पिंगला नामक पत्नी थी (स्कंद. ३.३.१२; ९.१४)।

भद्रावती—व्युषिताश्व की पत्नी भद्रा का नामान्तर।

भद्राश्व—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो सुविख्यात सम्राट प्रियव्रत का पौत्र, एवं अग्नीश्र का पुत्र था (म. शां. १४.२४)। इसकी माता का नाम उपविति था। मेरु की कन्या भद्रा इसकी पत्नी थी (भा. ५.२.१९)। इसका पिता अग्नीश्र जंबुद्वीप का सम्राट था। जंबुद्वीप का जो भाग इसे प्राप्त हुआ, वह इसीके नामसे 'भद्राश्ववर्ष' नाम से प्रसिद्ध हुआ (म. भी. ७.११)।

२. (सु. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत एवं महाभारत के अनुसार, कुबलाश्व राजा का पुत्र था। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'दृटाश्व'।

३. (सो. नील.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार, पृथु राजा का पुत्र था। इसे हयश्व एवं भग्यांश्व नामांतर भी प्राप्त थे।

४. (सो. वसु.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार, वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था।

५. (सो. पूरु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार अहंवर्च राजा का पुत्र था। इसे रौद्राश्व नामांतर भी प्राप्त था। इसे कुल दस कन्याएं थीं, जो प्रभाकर (आत्रेय) ऋषि को विवाह में दी गयी थीं।

भद्रेश्वर—मध्यदेश का एक सूर्योपासक राजा। इसके दाहिने हाथ पर यकायक कोढ़ उत्पन्न हुआ, जिससे छुटकारा पाने के लिए, इसने एवं इसके प्रजा ने कठोर सूर्योपासना की। सूर्यप्रसाद से इसका कोढ़ नष्ट हुआ, एवं इसे सुक्ति मिल गयी (पञ्च. सू. ७९)।

भनस्य—(सो.) एक राजा, जो भविष्य के अनुसार प्रवीर राजा का पुत्र था।

भय—एक राक्षस, जो अधर्म के द्वारा उत्पन्न तीन भयंकर राक्षसों में से एक था। इसकी माता का नाम निरंजिता था। इसके अन्य दो भाइयों का नाम महामय एवं मृत्यु था। ये तीनों राक्षस सब पापकर्म में लगे रहते थे (म. भा. ६६.५५)।

२. एक वसु, जो द्रोण एवं अभिमति का पुत्र था (भा. ६.६.११)।

भयंकर—सौवीर देश का राजकुमार, जो जयद्रथ के रथ के पीछे हाथ में ध्वजा ले कर चलता था। यह द्रौपदीहरण के समय जयद्रथ के साथ गया था। भारतीय युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. व. २४९.११-१२; २५५.२७)।

२. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३१)।

भयंकरी—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.४)।

भयद आसमात्य—एक राजा, जो संभवतः असमाति राजा का वंशज था (जै. उ. भा. ४. ८. ७)। भयद राजा का निर्देश पुराणों में भी प्राप्त है।

भयमान वार्षागिर—एक राजा, जो सायणाचार्य के अनुसार, एक वैदिक मंत्रद्रष्टा भी था (ऋ. १.१००. १७)।

भया—एक राक्षसी, जो हेति नामक राक्षस की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम विसुक्केश था (वा. रा. उ. ४.१६)।

भयानक—जालंधर के पक्ष का एक दैरा (पञ्च. उ. ९)।

भर—एक राजा, जो आश्रिपिण नामक राजर्षि का पुत्र था। इसकी माता का नाम जया, एवं पत्नी का नाम सुप्रभा था।

भरणी—प्राचेतस दक्ष की सत्ताईस कन्याओं में से एक, जो सोम को विवाह में दी गयी थी। आकाश में स्थित भरणी नक्षत्र यही है। 'चंद्रव्रत' में, भरणी नक्षत्र को चंद्रमा का सिर मान कर पूजा करने का विधान प्राप्त है (म. अनु. ११०.९)। भरणी नक्षत्र में जो ब्राह्मणों के घेनु का दान करता है, वह इस लोक में बहुतसी गौओं को, तथा परलोक में महान् यश को प्राप्त करता है (म. अनु. ६४.३५)।

भरत—(सो. पूरु.) एक सुविख्यात पुरुवंशीय सम्राट्, जो दुष्यन्त राजा का शकुंतला से उत्पन्न पुत्र था (भरत-दोःषन्ति देखिये)।

२. (सो. इ.) अयोध्या के दशरथ राजा का पुत्र (भरत 'दाशरथि' देखिये)।

३. (स्वा. नामि.) एक महायोगी राजर्षि, जो ऋषभ राजा का पुत्र था (भरत 'जड' देखिये)।

४. एक सुविख्यात मानवसमूह। ऋग्वेद के तीसरे एवं सातवें मण्डल में सुदास एवं तृत्सुओं के सम्बन्ध में इनका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ३.३३.११-१२; ७.३३.६)।

ऋग्वेद में विश्वामित्र को 'भरतों का ऋषभ' अर्थात् भरतों में श्रेष्ठ कहा गया है। विपाश् एवं शतुद्री नदियों के संगम के उस पार जाने के लिए विश्वामित्र ने भरतों को मार्ग बताया था (ऋ. ३.३३.११)। ऋग्वेद में अन्यत्र, भरतों की एक पराजय एवं वसिष्ठ की सहायता से उनकी रक्षा होने का स्पष्ट निर्देश प्राप्त है (ऋ. ७.८.४)। ऋग्वेद के छठवें मण्डल में इन्हें दिवोदास राजा का सम्बन्धी बताया गया है (ऋ. ६.१६.४-५)। सम्भव है, सुदास एवं दिवोदास यह दोनों राजा स्वयं भरतगण के थे (ऋ. ६.१६. १९)।

ऋग्वेद में दूसरे स्थान पर भरतगण एवं तृत्सुओं को पूरुओं के शत्रु के रूप में वर्णित किया गया है। इस प्रकार तृत्सुओं तथा भरतों का घनिष्ठ सम्बन्ध अवश्य था, चाहे उसका कारण कुछ भी रहा हो। गेल्डनर तृत्सुओं को इनके परिवार का कहता है, तथा ओल्डेनबर्ग भरतों के पारिकारिक गायक वसिष्ठ को ही तृत्सुगण कहता है (वेदिके. स्टूडियन. २.१३६)। हिलेब्रान्ट तृत्सुओं तथा

भरतों के सम्बन्ध में दो जातियों के मिश्रण का आभास देखा है (वेदिको माइथोलोजी १.१११)।

भरतगण का उल्लेख यज्ञकर्ता राजाओं के रूप में कई ग्रन्थों में आया है। शतपथ ब्राह्मण में, अश्वमेध यज्ञ करनेवाले राजा के रूप में 'भरत दौःपन्ति' तथा 'शतानीक सात्रजित' नामक अन्य भरतों का उल्लेख प्राप्त है (श. ब्रा. १३.५.४)। ऐतरेय ब्राह्मण में, दीर्घतमम् मामतेय द्वारा अपना राज्याभिषेक करानेवाले 'भरत दौःपन्ति', तथा सोमशुभम् वाजरत्नायन नामक पुरोहित के द्वारा अभिषिक्त हुए 'शतानीक' का विवरण प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ८.२३)। इन भरत राजाओं ने काशी के राजाओं को जीत कर, गंगा तथा यमुना के पवित्र तटों पर यज्ञ किये थे (श. ब्रा. १३.५.४; ११.२१)।

महाभारत में कुरु राजवंश के राजाओं को भरत-वंशीय ही माना गया है। इससे प्रतीत होता है कि, ब्राह्मण ग्रन्थों के काल तक भरतगण कुरु पांचालजाति में विलीन हो चुके थे (श. ब्रा. १३.५.४)।

ऋग्वेद में एक जगह सुदास एवं दिवोदास, तथा पुरुकुल एवं वसुदेव्यु इन दोनों की मित्रता का निर्देश मिलता है। ओल्डेनबर्ग के अनुसार, ये निर्देश भरत, पुरु तथा कुरु राजवंशों के सम्मिलन की निशानी माननी चाहिये (ऋ. १.११२.१४; ७.१९.८)।

ऋग्वेद में 'अग्नि भारत' को भरतों की अग्नि के अर्थ में, तथा 'भारती' का प्रयोग भरतों की देवी के रूप में हुआ है (ऋ. २.७.१; १.२२.१०)।

इस मानववंश में उत्पन्न हुए राजा (जैसे, सुदास एवं दिवोदास) सूर्यवंशी थे अथवा नहीं, यह कहना कठिन है। वायुपुराण में मनु राजा को ' लोगों का पोषण करनेवाला ' अर्थ से 'भरत' कहा गया है, एवं उसीके नाम से इस देश तथा यहाँ के निवासियों को 'भारत' नाम प्राप्त होने का निर्देश है (वायु. ४५.७६)।

५. नाट्यशास्त्र का प्रणयन करनेवाला सुविख्यात काचर्य, जिसका 'भारतीयनाट्यशास्त्र' नामक ग्रंथ नाट्यलेखन एवं नाट्यप्रयोगशास्त्र का सर्वप्रथम एवं प्रमाण ग्रंथ माना जाता है।

इसके द्वारा लिखित नाट्यशास्त्र में, 'नंदिभरत संगीत पुस्तकम्' ऐसा निर्देश प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, इसका नाम नंदिभरत होगा। नंदिभरत के नाम पर 'अभिनयदर्पण' नामक अभिनयशास्त्र का एक ग्रन्थ, एवं संगीतशास्त्र पर अन्य एक भी उपलब्ध है। विष्णु पुराण

में 'गंधर्ववेद' नामक संगीतशास्त्रीय ग्रंथ का भी इसे कर्ता कहा गया है (विष्णु. ३.६.२७)। पिरोल ने अपने नाट्यशास्त्र के जर्मन अनुवाद में 'भरत' शब्द का अर्थ 'अभिनेता' ऐसा किया है, एवं इसे देवों द्वारा अभिनीत नाट्यप्रयोगों का निर्देशक कहा है।

नाट्यप्रयोग में अभिनय करनेवाले अभिनेताओं को मार्गदर्शन करनेवाले 'नटसूत्र' पाणिनिकाल में अस्तित्व में थे (पा. ४.३.११०)। भरत ने इन्हीं नटसूत्रों का विस्तार कर, अपने नाट्यशास्त्र की रचना की। इसके ग्रंथ में नाट्याभिनय, नृत्य, संगीत, नाट्यगीत एवं काव्यशास्त्र का विस्तारशः परामर्श लिया गया है।

दुर्भाग्यवश भरत के द्वारा रचित मूल 'नाट्यशास्त्र' आज उपलब्ध नहीं है। संप्रत उपलब्ध नाट्यशास्त्र का बहुतरासारा भाग प्रक्षिप्त है; एवं वह एक ग्रंथकार की नहीं, बल्की अनेक ग्रंथकारों की रचना प्रतीत होती है। उसमें से कई श्लोक अनुष्टुभ वृत्त में, एवं कई आर्या वृत्त में रचे गये हैं; एवं कई भाग गद्यमय हैं।

नाट्यशास्त्र की उत्पत्ति—भरत के नाट्यशास्त्र के कुल ३८ अध्याय हैं, जिसमें से पहिले एक एवं आखिरी तीन अध्यायों में नाट्यशास्त्र की उत्पत्ति की कथा दी गयी है। उस कथा के अनुसार, एक बार इंद्रादि सारे देव ब्रह्मा के पास गये, एवं उन्होंने प्रार्थना की, 'नेत्र एवं कान इन दोनों को तृप्त करे ऐसे कोई कलामाध्यम का निर्माण करने की आप कृपा करे'। देवों की इस प्रार्थना के अनुसार, ब्रह्म ने 'नाट्यवेद' नामक षोडशे वेद का निर्माण किया।

'नाट्यवेद' में निर्दिष्ट तत्वों के अनुसार निर्माण किये गये प्रथम नाट्यप्रयोग का आयोजन इंद्र ने असुरों पर प्राप्त किये विजय के सम्मानार्थ, भरत मुनि द्वारा इंद्र के राजप्रासाद में किया गया। इस नाट्यप्रयोग का कथाविषय 'देवासुर संग्राम' ही था, जिसे देख कर उपस्थित असुरगण संतप्त हो उठा। उन्होंने अपने राक्षसी माया से नाट्यप्रयोगों में भाग लेनेवाले अभिनेताओं की बाणी, स्मृति एवं अभिनयसामर्थ्य पर पाश डालना शुरू किया, जिससे नाट्यप्रयोग, में बाधा आ गयी।

राक्षसों के इस असंमजस व्यवहार का कारण ब्रह्मा के द्वारा पूछा जाने पर राक्षस कहने लगे, 'भारतमुनि निर्मित नाट्यकृति में राक्षस का चित्रण देवों की अपेक्षा गिरे हुए खलनायक के रूप में किया गया है। यह हमें पसंद नहीं है'। फिर ब्रह्मा ने जवाब दिया, 'देव एवं असुरों की सुष्ठता एवं

दुष्टता दर्शाने के लिये नाट्यवेद का निर्माण मैने किया है। मानवी जीवन की साकार प्रतिमा दर्शकों के सामने प्रगट करना, इस कला का मुख्य ध्येय है। जीवन के सारे पहलू, यथातथ्य रूप में प्रगट कर, एवं दुनिया के उत्तम, मध्यम एवं नीच व्यक्तियों को दिखा कर, दर्शकों को ज्ञान एवं मनरंजन एकसाथ ही प्रदान करना नाट्यमाध्यम का मुख्य उद्देश्य है। इसी कारण दुनिया का सारा कला-ज्ञान, शास्त्र, धार्मिक विचार एवं यौगिक सामर्थ्य का दर्शन इस कला में तुम्हें प्राप्त होगा।

नाट्यकला का पृथ्वी पर अगमन—स्वर्ग में स्थित इंद्र प्रासाद में सर्वप्रथम निर्मित भरत की नाट्यकृति पृथ्वी पर कैसी अवतीर्ण हुयी, इसकी कथा भी 'भरत नाट्यशास्त्र' में दी गयी है। इस कथा के अनुसार, इस नाट्यकृति में भाग लेनेवाले अभिनेताओं ने उपस्थित ऋषिओं का व्यञ्जनापूर्ण हावभावों से उपहास किया, जिस कारण ऋषिओं ने क्रुद्ध होकर नाट्यव्यवसायी लोगों को शाप दिया, 'उच्च श्रेणी के कलाकार हो कर भी समाज की दृष्टि से तुम नीच एवं गिरे हुए होकर रहोगे। अपनी स्त्रिया एवं पुत्रों के सहारे तुम्हें जीना पड़ेगा'।

ऋषिओं के इस शाप के कारण नाट्यकला नष्ट न हो, इस हेतु से भरत ने यह कला अपने पुत्र एवं स्वर्ग की अप्सराओं को सिलायी, एवं उन्हें पृथ्वी पर आ कर उसका प्रसार करने के लिए कहा। पृथ्वी पर जाने से पहले ब्रह्मा ने उन्हें वर प्रदान किया, 'तुम्हारी कला सदैव लोगों को प्रिय, अतएव अमर रहेगी'।

मस्य के अनुसार, भरतमुनि रचित 'लक्ष्मी स्वयंवर' नामक नाट्यकृति में लक्ष्मी की भूमिका करनेवाली उर्वशी अप्सरा से कुछ नुटि हो गयी, जिस कारण भरत ने उसे पृथ्वी पर जाने का, एवं पुरुवरस राजा की पत्नी बनने का शाप दिया (मस्य. २४.१-३२)।

भारतीय नाट्यशास्त्र एवं मस्य में प्राप्त इन कथाओं से ज्ञात होता है कि, उस समय नाट्यकाल आज की भाँति लोकप्रिय थी, एवं अनमानस में उसके प्रति अतीव आकर्षण था।

भारतीय नाट्यशास्त्र—भरतरचि। नाट्यशास्त्र में नाट्यकृति का केवल साहित्यिक दृष्टि से नहीं, बल्कि कला, संगीत, नृत्य, अभिनय आदि सर्वांगीण दृष्टि से विचार किया गया है। उस ग्रन्थ में नाट्यप्रयोग संबंधी निम्नलिखित विषयों का परामर्श लिया गया है:—रंगमंच

की रचना, एवं उसके उद्घाटन के लिये आवश्यक धार्मिक विधि (अ. २-३); नृत्य एवं अभिनय में शारीरिक चलनचलन से बसंत, ग्रीष्मादि ऋतु, एवं त्वेष, दुःख हर्षादि भावना कैसी सूचित करें (अ. ४-५); नानाविध रस, भावना, एवं अलंकार आदि का नाट्यकृति में आविष्कार (अ. ६-८, १६); पात्रों की भाषा उनका देश एवं व्यवसाय के अनुसार कैसी बदल देना चाहिये (अ. १७); नाट्यकृतिओं के दस प्रकार, एवं उनके वैशिष्ट्य (अ. १८); नाट्यकृति की गतिमानता बटाना (अ. १९); नाट्यशैली के विभिन्न प्रकार (अ. २०); देव, दानव, मनुष्यों के पात्रचित्रण के लिये नानाविध वेपभूषा, रंगभूषा आदि (अ. २१); नाट्यकृति के नायक, नायिका, खलनायक आदि पात्रों के विभिन्न प्रकार (अ. २२-२४); अभिनेताओं की नियुक्ति एवं शिक्षा (अ. २६, ३५), नाट्य-प्रयोग का समय, स्थल एवं प्रसंग की नियुक्ती (अ. २७); नाट्यसंगीत एवं नृत्य (अ. २८-३४)।

भरत के नाट्यशास्त्र में, नाट्यकृतिओं के निम्नलिखित दस प्रकार माने गये हैं:—नाटक, प्रकरण, भाण, प्रहसन, डीम, व्यायोग, समवकार, वीथी, उश्रुट्टांक एवं इहामृग। अग्निपुराण में भरत नाट्यशास्त्र के काफ़ी उद्धरण लिये गये हैं (अग्नि. ३३७-३४१)। किंतु वहाँ नाट्यकृतिओं के सत्ताईस प्रकार दिये गये हैं।

भरत के नाट्यशास्त्र में, निम्नलिखित आठ रसों का विवरण प्राप्त है:—शृंगार, हास्य, करुण; रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स, एवं अद्भुत। इस नामावलि में शांतरस का अंतर्भाव नहीं किया गया है, क्योंकि, वह विदग्ध काव्य का रस माना जाता है।

नाट्यकृति का संविधानक (वस्तु, इतिवृत्त), नायक एवं नायिकाओं के विभिन्न प्रकार भी भरत नाट्यशास्त्र में दिये गये हैं।

विंटरनिट्स के अनुसार, भरत की नाट्यकृति में रस, नायक आदि की वर्गीकरणपद्धति अधिकतर ग्रंथिक पद्धति की है, व्यवहारिक उपयोगिता एवं नये विचारों का दिग्दर्शन उसमें कम है।

काल—हरप्रसाद शास्त्री के अनुसार, उपलब्ध नाट्यशास्त्र का काल ई. स. दुसरी शताब्दी माना लेना चाहिये। संभव है, नाट्यशास्त्र में अंतर्गत अभिनयसंबंधी कारिका इससे पुरानी हो। देवदत्त भंडारकर के अनुसार, इस ग्रंथ में प्राप्त संगीतसंबंधी अध्याय काफ़ी उत्तरकालीन, अतएव

चौथी शताब्दी का प्रतीक होता है। महाकवि भास के काल में भरत का नाट्यशास्त्र सुविख्यात् ग्रन्थ था। कालिदास को भी भरत एवं उसके नाट्यशास्त्र से काफी परिचय था। 'विक्रमोर्वशीयम्' में भरत नाट्यनिर्देशक के नाते इंद्र के राजप्रासाद में प्रवेश करता हुआ दिखाया गया है, एवं उक्त नाट्यकृति में भरत के 'अहरस' संबन्धी सिद्धांत का विवरण प्राप्त है।

६. मगधाधिपति इंद्रद्युम्न राजा के दरबार एक धर्मज्ञ ऋषि। इंद्रद्युम्न राजा के पत्नी ने इंद्र नामक ब्राह्मण से व्यभिचार किया। पश्चात् राजा के द्वारा प्रार्थना करने पर, इसने इंद्र ब्राह्मण को श्राप दे कर उसका नाश किया (यो. वा. ३.९०)।

७. एक अग्नि, जो शंसु नामक अग्नि का द्वितीय पुत्र था। इसे ऊँज नामांतर भी प्राप्त था। पौर्णमास याग के समय, इसे सर्व प्रथम हविष्य एवं वी अर्पण किया जाता है (म. व. २०९.५)।

८. एक अग्नि, जो अद्भुत नामक अग्नि का पुत्र था। यह भरे हुए प्राणियों के शव का दाह करता है। इसका अग्निश्रेण में नित्य चास रहता है; अतः इसे 'नियत' भी कहते हैं (म. व. २१२.७)।

९. एक अग्नि, जो शंसुपुत्र भरत नामक अग्नि का पुत्र था (म. व. २०९.६-७)। इसे पुष्टीमति नामांतर भी प्राप्त था (म. व. २११.१; पुष्टीमति देखिये)।

१०. वाराणसी क्षेत्र में रहनेवाला एक योगी, जिसने गीता के चौथे अध्याय का पाठ कर बदरी (वेर) बनी हुई दो अप्सराओं का उद्धार किया था (पद्म. उ. १७८)।

११. शूद्रवृत्ति से रहनेवाला एक दुराचारी ब्राह्मण। इसके भाई का नाम पुंडरीक था। एक मृत मनुष्य के शव को अग्नि देने का पुण्यकर्म करने के कारण, यह मुक्त हो गया (पद्म. उ. २१८-२१९)।

१२. एक राजा, जो मौल्य मनु के पुत्रों में से एक था।

१३. (सो. तुर्वसु.) करंधमपुत्र मरुत राजा का नामांतर (मरुत १, देखिये)।

भरत 'जड'—(स्वा. नाभि.) एक महायोगी एवं गुणवान् राजर्षि, जो 'जडभरत' नाम से सुविख्यात है। अजनाभवर्ष का राजा नाभि के पुत्र ऋषभदेव को इन्द्र की कन्या जयन्ती से सौ पुत्र हुए, जिनमें यह ज्येष्ठ था। पहले इस देश का नाम अजनाम वर्ष था। बाद को इसीके नाम से इस देश का नाम भारतवर्ष हुआ (भा.

५.४.९; वायु. ३३.५२; ब्रह्मांड. २.१४.६२; लिङ्ग. १. ४७.२४; विष्णु. २.१.३२)। वायु के अनुसार, इसके पूर्व इस देश का नाम 'हिमवर्ष' था।

बहुत दिनों तक राज्य करने के उपरांत, इसका पिता राजा ऋषभ इसका राज्याभिषेक कर बन चला गया। पिता के द्वारा राज्यभार सौंप देने के उपरांत, इसने विश्वरूप की कन्या पंचवती का वरण किया। यह अपने पिता की ही भाँति प्रजापालक, दयालु एवं धार्मिक प्रवृत्ति का राजा था। इसकी प्रजा भी निजधर्म का पालन करती हुयी सुख के साथ जीवन निर्वाह करती थी। इसने यज्ञकर्मों के 'प्रवृत्ति विकृतियों' का पूर्ण ज्ञान संशोधित कर, बड़े बड़े यज्ञों को कर यज्ञपुरुष की आराधना की थी। इस प्रकार भक्तिमार्ग का अवलंबन करता हुआ इसने एक कोटि वर्षों तक राज्य किया। तदोपरांत राज्य को छोड़कर यह तप के लिए पुलहाश्रम चला गया (भा. ५.७.८)।

द्वितीय जन्म—पुलह का आश्रम गंडकी नदी के किनारे बड़े सुन्दर स्थान पर बना था। वहाँ जाकर यह सूर्यमंत्र का जाप कर तपस्या करने लगा। एक दिन इसने एक गर्भवती हरिणी देखी, जो तृषित होकर स्थूल शरीर बड़ी जल्दी जल्दी पानी पी रही थी। इतने में सिंहगर्जना से भयत्रस्त होकर वह एकदम भगी। वैसे ही उसके गर्भ में स्थित शावक गिर कर पानी के प्रवाह में बह गया, तथा वह वस्तनयनों से देखती कुंजों में विलीन हो गयी। भरत ने शावक को पानी से निकाला, तथा इसे आश्रम ले आया। इस हरीणशावक के प्रति इसकी स्नेह भावना इतनी बढ़ गयी, कि उसी मोह में नित्य होनेवाली दिनचर्या तथा अपनी तपस्या से भी वह उदासीन हो गया। उन्हें चौबीस घण्टे मृगशावक ही याद रहता तथा उसी की ही चिन्ता। यहा तक कि, मृत्यु के समय भी इसे यही चिन्ता थी कि, मेरे बाद इस शावक का क्या होगा? इसी कारण मृत्योपरांत इसे मृगजन्म ही प्राप्त हुआ।

मृगयोनि में इसे अपने पूर्वजन्म का पूर्णज्ञान था। अतएव अपने मातापिता के मोह का परित्याग कर, यह उसी पुलहआश्रम में आकर, शाल वृक्षों की पवित्र छाया में एकाग्रचित्त होकर तपस्या करने लगा। जब इसे पता चला कि इसकी मृत्यु निकट आ गयी है, तब गंडकी नदी के पवित्र जल में गले तक डूबकर इसने अपने मृग शरीर का त्याग किया।

तृतीय जन्म—मृगयोनि के उपरांत, इसने अंगिराकुल के एक सद्गुणसम्पन्न ब्राह्मण की दूसरी पत्नी के गर्भ से जन्म लिया। इस जन्म में इसे 'जड़ भरत' नाम प्राप्त हुआ। इस जन्म में भी इसे अपने पूर्वजन्मों का ज्ञान था, तथा यह भी पता था कि मेरा यह अन्तिम जन्म है। अतः कहीं फिर जन्म न लेना पड़े इस कारण, यह मोहमाया को छोड़कर सब से अलग रहने लगा। इसका विचार था, 'यदि मैं किसी से, किसी प्रकार का सम्पर्क सम्बन्ध तथा प्रेमभाव रखूंगा तो लोग भी मुझसे सम्बन्ध बढ़ावेंगे, तथा इसप्रकार मायामोह के बन्धनों में उलझ कर मुझे जन्म मरण के बन्धनों में बार बार बन्धना पड़ेगा'। इसीलिए यह इस प्रकार का आचरण दिखाने लगा कि, लोक इसे मूर्ख, मंदबुद्धि, अंधा तथा बहुरा समझे। इसप्रकार कर्मबन्धनों से अलग रहकर, दत्तचित्त होकर यह ब्रह्मचिन्तन में सदैव निमग्न रहने लगा।

इसको इस प्रकार उदासीन देखकर भी, इसके पिता ने यहस्थाश्रम के उपनयनादि सभी संस्कारों को कर के इसे वेदशास्त्रों की शिक्षा आदि का भी ज्ञान कराया। किन्तु यह तो अपने राग में ही मस्त रहा। इसकी यह उदासीनता तथा उपेक्षित भाव देखकर इसके पिता पुत्र दुःख में ही मर गये। इसकी माता भी उसीके साथ सती हो गयी; किन्तु इसमें कोई अन्तर न आया। आगे चलकर, इसके भाइयों ने भी इसे जड़ समझ कर, इसकी पढ़ाईलिखायी बन्द कर, इससे सम्बन्ध तोड़ लिए। यह भी भक्तिभावना में निमग्न कभी वेगारी करता, कभी भिक्षा माँगता, तथा कभी मजदूरी कर के अपना पेट पालता। एक बार यह वीरासन में बैठ खेत की रक्षा कर रहा था, की राजदूतों ने इसे देखा, तथा रूढ़ कर बलि देने के लिए भद्रकाली के मन्दिर ले गये। किन्तु देवी ने इसकी परम प्रतिभा को पहचान कर, इसका संरक्षण कर लिया, एवं उन राजदूतों का नाश किया (भा. ५.९-१०; विष्णु. २.१३-१६)।

एक बार सिंधु-सौवीर देश का राजा रहूगण कपिलाश्रम में ब्रह्मज्ञान का उपदेश सुनने के लिए जा रहा था। जाते जाते वह इक्षुमती के तट पर आ पहुँचा। उसने वहाँ के अधिपति से पालकी ले जाने के लिए कहारों को मँगाने के लिए कहा। पालकी ले जाने के लिए जब कोई दीख न पड़ा, तो वेगार रूप में राजा की पालकी उठाने के लिए इससे कहा गया। यह बिना हिचकिचाहट के तैयार हो

गया। पालकी ले जानेवाले सभी कहार तेज चलते थे। किन्तु यह राह में धीरे धीरे इस प्रकार कदम रखता, कि कहीं कोई कीड़ामकोड़ा इसके पैर से कुचल कर मर न जाये। इस प्रकार, इसके धीरे चलने से राजा को पालकी के अंदर झटके लगने लगे। उसने जब इसका कारण पूछा, तब उसे पता चला की, इसमें जड़भरत का ही दोष है, अन्य का नहीं।

रहूगण राजा से संवाद—राजा ने पालकी से झँक कर इसको देखते ही कहा, 'तुम दिखते तो दृष्टपुष्ट हो, किन्तु पालकी ले जाने में इतने सुस्त क्यों?' तब जड़ भरत ने उत्तर दिया, 'मजबूती शरीर की नहीं, आत्मा की होती है, तथा मेरी आत्मा अभी इतनी पुष्ट कहाँ? पश्चात्, इसे तत्त्वज्ञानी समझ कर, राजा पालकी से उतर लिया, एवं उसने इससे आत्मबोध के संबंध में उपदेश ग्रहण कर मुक्ति प्राप्त की। इसने राजा को अपने पूर्वजन्म की घटनाओं के साथ साथ उसे अन्य बातें भी बताया थी। इस प्रकार उसे ज्ञान प्रदान कर यह वन को चला गया (भा. ५.११-१४; नारद १.४८-४९; विष्णु. २.१३-१६)।

भागवत के अनुसार, इसका इतना महान् चरित्र था, कि अनुकरण करना तो दूर रहा, किसी में इतना सामर्थ्य नहीं कि, वह इस प्रकार के त्यागमय जीवन को अपना ने की बात सोचे, तथा यदि वह सोचे भी, तो यह उसीके प्रकार की बात होगी कि, कोई नीच मकखी गड़ड़ की बराबरी के लिए प्रयत्नशील हो (भा. ५.१४.४२)।

परिवार—ऋषभपुत्र के जन्म में, इसे अपने पंचजनी नामक पत्नी से निम्नलिखित पाँच पुत्र हुए— सुमति, राष्ट्रभूत, सुदर्शन, आवरण, एवं धूमकेतु। पुलह ऋषि के आश्रम में जाने के पूर्व, इसने अपना संपूर्ण राज्य अपने पुत्रों में बाँट दिया था (भा. ५.७.१-१३)।

भरत 'दाशरथि'—(सु. इ.) अयोध्या के राजा दशरथ का पुत्र। इसकी माता का नाम कैकेयी था। कुशध्वज जनक की कन्या माँदवी इसकी पत्नी थी।

जिस समय राम को राज्याभिषेक होनेवाला था, यह शत्रुघ्नके साथ अपने मामा के घर गया था। अयोध्या का राज्य इसे दिलाने के लिए इसकी माँ कैकेयी ने दशरथसे वरदान प्राप्त किया कि, राम को वनवास, तथा भरत को अयोध्या का राज्य दिया जाय। दशरथ कैकेयी के पूर्व वचन बद्ध थे। वह जब चाहे वरदान प्राप्त कर सकती थी। इसी आधार पर उसने उक्त वरदान ऐसे विचित्र अवसर

पर मैंने कि, दशरथ ने अपनी प्रतिज्ञा तो पूरी की; किन्तु राम के वनगमनोपरांत पुत्रशोक में प्राण त्याग दिया। राम वन चले गये थे, दशरथ भी इस संसार में न रहे, अतएव राज्य की व्यवस्था संभालने के लिए सिद्धार्थ नामक मंत्री से भरत को बुला लाने के लिए भेजा गया।

इधर भरत अपने ननिहाल में नित्यप्रति अनिष्टकारी स्त्रियों को देखने के कारण, अत्यंत दुःखी व चिंतित था। सिद्धार्थ इसे लेने के लिए आया, और बिना कुछ बताये अयोध्या वापस बुला लाया। अयोध्या आकर इसे अपनी माँ के द्वारा सभी समाचार ज्ञात हुए।

कैकयी का षडयंत्र—राज्यप्राप्ति के लिए, माँ केकयी द्वारा रचे गये इस षडयंत्र को देख कर भरत क्रोधामि में पागल हो उठा, और अपनी माँ की कटु आलोचना करते हुए उसकी घोर निमंत्रणा की। भरत को अपनी माँ की इस राज्यलिप्सा तथा अधिकार प्राप्ति की भावना से इतना अधिक दुःख हुआ कि, यह वहाँ ठहर न सका, और सीधे कौसल्या से मिलने के लिए उसके महल की ओर चल पड़ा। कौसल्या भी इससे मिलने के लिए विह्वल थी, क्योंकि उसकी धारणा थी कि, शायद यह समस्त जाल भरत की सम्मति से ही बिछाया गया है। भरत के आते ही कौसल्या ने बुरा भला कहते हुए अपने व्यंग वाणों से इसके हृदय को विदीर्ण कर दिया। अन्त में शोक विह्वल भरत को हाथ जोड़ कर शपथ स्वीकार कहना पड़ा कि, इस जाल फरेब से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है, उसका नाम व्यर्थ में जोड़ कर उसे पापी उहाराया गया है।

इसके आने के दूसरे दिन गुरु वसिष्ठ ने राजा दशरथ को क्रियाकर्म करने के लिए कहा। तब भरत ने भी गुरु की आज्ञा मान कर, तेल की कढ़ाई में रक्खे गये दशरथ के सुरक्षित शव को निकाल कर, विधिपूर्वक अग्निहोत्रामि देकर, पिता की अन्तिम क्रिया पूरी की (वा. रा. अयो. ७०-७७)।

चौदह दिनोपरांत, जब यह अपने मृत पिता के अंतिम संस्कारों से निवृत्त हुआ, तब राज्याधिकारियों एवं मंत्रियों ने इसे सिंहासन स्वीकार कर के राज्य संचालन की प्रार्थना की। इसने सब को समझाते हुए कहा, 'राज्य का अधिकारी मृत पिता का ज्येष्ठ पुत्र ही हो सकता है, मैं नहीं। राजा होने का अधिकार केवल राम को ही है, कारण वह हमारे सभी माइयों में ज्येष्ठ एवं योग्य हैं। हमें चाहिये कि, राम जहाँ कहीं हो हम अपने सम्पूर्ण साज-सज के साथ वहाँ जाकर राज्यभार उन्हें सौंप कर

उनका राज्याभियेक करें'। भरत के इस आवेशपूर्ण उत्तर को सुनकर वसिष्ठ आदि लोगों ने बहुविध भावों से भरत को समझाया, किन्तु यह अपनी वाणी पर अटल रहा। यहीं नहीं, भरत ने यहाँ तक कह डाला, 'अगर राम वापस नहीं आयेंगे, तो मैंने भी निश्चय कर रक्खा है कि, मैं राज्य को स्वीकार न करके लक्ष्मण के समान स्वयं वनवासी हो कर, राम की सेवा करते हुए अपने धर्म का निर्वाह करूँगा'। यह कह कर भरत ने राज्याधिकारियों को आशा दी कि, राजपथों को ठीक किया जाये, तथा शीघ्रातिशीघ्र जाने की सभी तैयारियाँ शुरू की जाये।

राम की खोज—राम से मिलने के लिए भरत अपने परिवार, प्रजा, गुहजनों के साथ अयोध्या से यात्रा के लिए निकल पड़ा। सब से पहला विश्राम, भरत ने गंगा के किनारे शृंगवेरपुर के पास किया। वहाँ इसने गुह से भेंट की, तथा राम के संबंध में अनेकानेक सूचनाओं को प्राप्त कर, उसकी ही सहायता से अपने परिवार सहित गंगा को पार कर 'भरद्वाज आश्रम' की ओर चल पड़ा। मार्ग में संपूर्ण परिवार के साथ चैत्रमुहूर्त में यह प्रयाग वन पहुँचा। वहाँ कुछ देर विश्राम करने के उपरांत, कुछ चुने हुए व्यक्तियों को लेकर यह भरद्वाज आश्रम की ओर चल पड़ा, तथा शेष व्यक्तियों से वहीं ठहरने की आज्ञा दी।

भरत जब गुह से मिला था, तो उसे भी इसे देख कर पहले शंका हुयी थी। यही हाल भरद्वाज का भी हुआ। भरत को देखते ही उसके हृदय में यह बात दौड़ गयी कि, कहीं राम का कंठ हमेशा के लिए मार्ग से दूर करने के लिए भरत तो नहीं आया! भरत के मिलने ही भरद्वाज ने स्पष्ट शब्दों में अपनी धारणा प्रकट की। किन्तु भरत के बार बार कहने तथा वसिष्ठ द्वारा विश्वास दिलाये जाने पर, भरद्वाज मुनि को इस पर विश्वास हुआ। उन्होंने इसका तथा इसकी सेना का उत्कृष्ट भोजनादि दे कर आदर् सत्कार करते हुए बताया, 'राम इस समय चित्रकूट में निवास कर रहे हैं, और तुम उनसे भेंट कर सकते हो'।

भरत ने भरद्वाज मुनि से कौसल्या तथा केकयी का जो परिचय दिया है, वह एक ओर करुणा से ओतप्रोत है तथा दूसरी ओर घृणा, क्रोध एवं आत्मग्लानि से परिपूर्ण है। कौसल्या का परिचय देते हुए भरत ने कहा, 'शोक तथा उपवास से कृश तथा दीनहीन बनीं हुयी, मेरे पिता की पटरानी कौसल्या को आप देख रहे हैं। इसीने सिंह के समान पराक्रमी राम को जन्म दिया है'। अपनी माँ को घृणापूर्ण दृष्टि से देखते हुए भरत ने कहा, 'यह क्रोधी, अविचारिणी,

अभिमानीनी, स्वयं को भाग्यशालिनी समझनेवाली, ऐश्वर्यलुब्ध सज्जन के समान दिखनेवाली, परन्तु दुर्जन, दुष्ट, तथा दुर्बुद्धि, मेरी माता कैशेयी है'। भरत ने भरद्वाज आश्रम में एक दिन निवास किया। उसके उपरांत भरद्वाज ने राम की पर्णकुटी की ओर जानेवाले यमुना तट का मार्ग समझाकर आदरपूर्वक इसे बिदा किया (वा. रा. अयो. १२)।

भरद्वाज के द्वारा निर्देशित मार्ग पर चल कर यह चित्रकूट पहुँचा। भरत के आने की सूचना मिलते ही लक्ष्मण आग बबूला हो उठा; उसे पूर्ण विश्वास हुआ कि भरत ससैन्य राम से युद्ध करने आ रहा है। किन्तु राम के अत्यधिक समझाने पर उसका वह संदेह दूर हुआ।

राम से भेंट—भरत आ कर, अतिविह्वलता के साथ राम से लिपट गया एवं अपने हृदय की समस्त आत्मम्लानि को प्रकट करते हुए बार बार उससे माफी माँगने लगा। इसने राम को घर की सारी परिस्थिति बतलाते हुए आग्रह किया कि, वह अयोध्या चल कर राज्यभार ग्रहण करे। इसके साथ आज्ञा तथा वसिष्ठ आदिने भी बार बार निवेदन किया। किन्तु राम न माने। राम ने पिता के वचनों को सत्य प्रमाणित करने के लिए कहा, 'मुझे पिता की आज्ञा प्यारी है। मेरा कर्तव्य है कि मैं पिता की आज्ञा को स्वीकार कर उनके पण की रक्षा करूँ। इसलिए मैं न अयोध्या जाऊँगा, और न राज्य सिंहासन ही स्वीकार करूँगा'।

राम की यह वाणी सुन कर इसने उनके आश्रम के सामने सत्याग्रह करने की योजना बनायी। किन्तु राम ने कहा कि, यह धर्मियों का मार्ग न होकर ब्राह्मणों का मार्ग है; यह तुम्हारे लिये अशोभनीय है। अन्त में भरत को समझाते हुए राम ने कहा—

“ लक्ष्मीश्वन्द्रादपेयाद्वा हिमवान् वा हिमं त्यजेत् ।

अतीयात् सागरो वेलं न प्रतिज्ञामहं पिनुः ॥

कामाद्वा तात लोभाद्वा मात्रा तुभ्यसिद् कृतम् ।

न तन्मनसि कर्तव्यं वर्तितव्ये च मातृवत् ॥ ”

(वा. रा. अयो. ११२.१८-१९)

अन्त में राम के अत्यधिक समझाये जाने पर इसने उनकी पादुकाओं को ले कर कहा, 'मैं इन पादुकाओं के नाम से चौदह वर्ष तक राज्य चलाऊँगा, तथा जिस प्रकार तुम वन में रह कर जटायें एवं वस्त्र धारण करने हो, उसी प्रकार मैं भी जीवन व्यतीत करूँगा, तथा फलफूलों को खा कर ही अपना जीवन निर्वाह करूँगा। यदि तुम चौदह वर्षों के उपरांत वापस न आये, तो मैं अग्नि

में प्रवेश कर, अपना शरीर त्याग दूँगा'। इतना कहकर राम की पादुकाओं को लेकर यह वापस आया।

नन्दिग्राम में—अयोध्या आ कर पादुकाओं को लेकर, यह नन्दिग्राम में वनवासी की भाँति रह कर राज्य करने लगा। इस प्रकार राज्यसंचालन करते समय लत्र-चामर, उपहार सभी चीजें पादुकाओं को ही अर्पित की जाती थी, तथा यह निमित्तमात्र बन कर राम की अमानत समझ कर अयोध्या के राज्य का संचालन करता रहा।

राम के वनवास के चौदह वर्षों तक नन्दिग्राम में रह कर यह राजकाज देखता रहा। अन्त में राम ने हनुमान् के द्वारा अपने आने की सूचना भरत के पास भिजवायी।

जिस समय हनुमान् आया, उमने देखा कि बल्कल तथा कृष्णाजिन धारण करनेवाला, आश्रमवासी, कृश, दीन, जटाधारी, शरीर की पर्वाह न करनेवाला, फलफूल पर जीनेवाला तपस्वी भरत भावनिमग्न बैठा है।

इसे देखते ही हनुमान् ने सश्रद्ध भरत के पास आकर राम के आगमन की सूचना इसे दी। हनुमान् द्वारा रामागमन की सूचना सुनकर भरत अत्यंत प्रसन्न हुआ, एवं अनेकानेक पारितोषिक प्रदान कर इसने उसका आदरसंस्कार किया। दिये गये पारितोषिकों में सोलह सुन्दर स्त्रियों के देने का भी उल्लेख प्राप्त है।

बाद में, भरत तथा शत्रुघ्न ने उत्तम प्रकार से नगर का शृंगार कर राम का स्वागत किया, तथा बड़े समारोह से, राम का राज्यभिक्षेक कर, अपने पास अमानत के रूप में रखे हुए अयोध्या के राज्य को राम को वापस दिया। राम ने राज्यभार की स्वीकार कर अपना युवराज लक्ष्मण को बनाने की इच्छा प्रकट की, क्यों कि, राम के उपरांत ज्येष्ठ होने के कारण उसका ही नाम आता है। लेकिन लक्ष्मण के स्वीकार न करने पर, भरत का यौवराज्याभिक्षेक किया गया (वा. रा. यु. १२५-१२८; पञ्च. पा. १-२)।

युद्धप्रसंग—भरत के सम्पूर्ण जीवन में सम्भवतः एक बार ही युद्ध में भाग लेने का अवसर प्राप्त हुआ। राम के राज्यकाल में, भरत के कैकयाधिपति मामा के पास से राम को संदेश मिला, 'मैं गन्धर्वों से घिर गया हूँ तथा आपकी सहायता चाहता हूँ'। अतएव उसको गन्धर्वों से युक्त करने के लिए राम ने इसके नेतृत्व में अपनी सेना भेजी थी। इस सेना में भरत के दो पुत्र तश्व तथा पुष्कल भी थे।

भरत ने अपनी सेना के साथ जा कर सिन्धु के दोनों तटों पर स्थित उपजाऊ प्रदेश में रहनेवाले गन्धर्वों को

पराजित किया, तथा दो नगरों की स्थापना की। एक का नाम 'तक्षशिला' रख कर वहाँ का राज्याधिकारी तक्ष को नियुक्त किया, तथा दूसरी नगरी का नाम 'पुष्कलावत' रख कर वहाँ का राज्य पुष्कल को सौंपा। इस युद्ध को जीतने तथा राज्यादि की स्थापना में भरत को पाँच वर्ष लगे। बाद को यह अयोध्या वापस आया (वा. रा. उ. १०१)।

अन्त में इस महापुरुष ने, राम के उररांत अयोध्या से डेढ़ कोस की दूरी पर स्थित 'गोप्रतारतीर्थ' में देहत्याग किया (वा. रा. १०९.११; ११०.२३)।

तुलसीरामायण में—रामचरित-मानस में तुलसीदास जी ने भरत का समस्त रूप—

पुलह गात हिय सिय रघुवीरू,

जीह नामु जप लोचन नीरू,

में प्रकट कर दिया है। 'मानस' में भरत का चरित्र सभी से उज्ज्वल कहा गया है।

'लखन राम सिय कानन बसहीं,
भरत भवन बसि तपि तनु कसहीं
कोउ दिशि समुझि करत सब लोगू,
सब बिधि भरत सराहन जोगू'।

तुलसी ने अपनी भक्तिभावना भरत के रूप में ही प्रकट की है। भरत त्याग, तपस्या, कर्तव्य तथा प्रेम के साक्षात् स्वरूप हैं। इसकी चारित्रिक एकनिष्ठा एवं नैतिकता के साथ कवि इतना अधिक एकात्म्य स्थापित कर लेता है, कि स्वयं भरत की प्रेमनिष्ठा कवि की आत्मकथा बन जाती है।

भरत का यह साधु चरित 'पठम चरित' (स्वयंमुव) 'भरत-मिलाप' (ईश्वरदास), गीतावली (तुलसीदास), 'साकेत' (मैथिलीशरण गुप्त), एवं 'साकेत-सन्त' (बलदेवप्रसाद मिश्र) आदि प्रसिद्ध हिन्दी काव्यों में भी भारतीय संस्कृति के आदर्श प्रतीक के रूप में चित्रित किया गया है।

भरत दौःपन्ति—(सो. पूर.) एक सुविख्यात पूरुवंशीय सम्राट, जो दुष्यन्त राजा का शकुन्तला से उत्पन्न पुत्र था (म. आ. ९०. ३३; ८९; १६; वायु. ४५. ८६)। महाभारत में निर्दिष्ट सोलह श्रेष्ठ राजाओं में इसका निर्देश प्राप्त है (म. शां. २९.४०-४५)। इससे भरत राजवंश की उत्पत्ति हुयी, एवं इसीसे शासित होने के कारण इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ा (म. आ. २.९६*)।

बचपन में बड़े बड़े दानवों, राक्षसों तथा सिंहों का दमन करने के कारण, कण्वाश्रम के ऋषियों ने इसका नाम सर्वदमन रक्खा था (म. आ. ६८.८)। इसे 'दमन' नामांतर भी प्राप्त था। शतपथ ब्राह्मण में इसे 'सौमुद्रि' कहा गया है (श. ब्रा. १३.५.४.१०)। कण्व ऋषि के आश्रम में शकुन्तला रहती थी, उस समय सुविख्यात पूरुवंशीय राजा दुष्यन्त ने उससे गान्धर्वविवाह किया था, एवं उसी विवाह से भरत का जन्म हुआ। जब भरत तीन साल का हो गया, तब इसके युवराजामिषेक के लिए कण्व ऋषि ने शकुन्तला को पुत्र तथा अपने कुछ शिष्यों के साथ प्रतिष्ठान के लिए विदा किया।

दुष्यन्त ने इसे तथा शकुन्तला को न पहचान कर इसका तिरस्कार किया, एवं शकुन्तला को पत्नीरूप में स्वीकार करने के लिए राजी न हुआ। शकुन्तला ने बहुत कुछ कहा, किन्तु कुछ फायदा न हुआ। ऐसी स्थिति देखकर आकाशवाणी हुयी, 'शकुन्तला तुम्हारी स्त्री एवं भरत तुम्हारा पुत्र है, इन्हें स्वीकार करो'। आकाशवाणी की आज्ञा के अनुसार, दुष्यन्त ने भरत को पुत्र रूप में स्वीकार कर, उसका युवराज्याभिषेक किया।

राज्यपद प्राप्त होने पर भरत ने दीर्घतमस्व मामतेय ऋषि को अपना पुरोहित बनाकर गंगा नदी के तट पर चौदह, एवं यमुना नदी के तीर पर तीन सौ अश्वमेध यज्ञ सम्पन्न कराये। इसी के साथ 'मण्णार' नामक यज्ञ कर्म कर सौ करोड़ सौ, ऋणवर्णीय अलंकारों से विभूषित हाथियों को दान में दिया (म. शां. २९.४०-४५)। ऐतरेय ब्राह्मण में, सौ करोड़ सौ गायें इसके द्वारा दान देने का निर्देश है, एवं इसके अश्वमेधों की संख्या भी विभिन्न रूप में दी गयी है (ऐ. ब्रा. ८.२३)। महाभारत में, इसके द्वारा सरस्वती नदी के तट पर तीन सौ अश्वमेध यज्ञ करने का निर्देश प्राप्त है (म. द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति. १४४; शां. २९.४१)।

पश्चात् अपने रथ को तैतीष सौ अश्व जोतकर इसने दिम्बिजयसन्न का प्रारंभ किया। दिम्बिजय कर, शक, मलेच्छों तथा दानवों आदि का नाश कर अनेकानेक देवस्त्रियों को कारागृह से मुक्ति दिलाई। इसने अपने राज्य का विस्तार उत्तर दिशा की ओर किया। सरस्वती नदी से लेकर गंगा नदी के बीच का प्रदेश इसने अपने अधिकार में कर लिया था। इसके पिता दुष्यन्त के समय इसके राज्य की राजधानी प्रतिष्ठान थी, किन्तु आगे चल कर इसके राज्य की राजधानी का गौरव हस्तिनापुर को दिया

गया, तथा प्रतिष्ठान नगरी वत्स राज्य में विलीन हो गयी। यही नहीं, हस्तिनापुर नगर इसके द्वारा बसाया भी गया। बाद को इसके वंश के पाँचवें पुरुष हस्तिन् ने उसे और उन्नतिशील बना कर उसे अपने नाम से प्रसिद्ध किया (वायु. ९९.१६५; मत्स्य. ४९.४२)।

शतपथ ब्राह्मण में श्रेष्ठ सम्राट भरत द्वारा सात्वत राजा का अश्वमेधीय अश्व पकड़ लेने का निर्देश है (श. ब्रा. ३.५.४.९; २१)। शतपथ ब्राह्मण के इस निर्देश में दुष्यन्तपुत्र भरत एवं दशरथपुत्र भरत के बीच में भ्रान्ति हो गयी है, क्योंकि, सात्वत राजा राम दशरथि का समकालीन था।

परिवार—इसे कुल चार पत्नियाँ थीं, जिनमें काशिराज सर्वसेन की कन्या सुनन्दा पटरानी थी। इसकी शेष पत्नीयाँ विदर्भ देश की राजकन्याएँ थीं। शारी के उपरांत विदर्भ कुमारियों से भरत को एक एक पुत्र हुए। पर इन तीन रानियों के तीनों पुत्र, पिता की भौति बल तथा योग्यता में ऐश्वर्यपूर्ण न थे, अतएव उनकी माताओं ने उन्हें मार डाला (ब्रह्म. १३.५८; ह. वं. १.३२; भा. ९. २०.३४)। आगे चल कर एक गहन समस्या आ पड़ी, की भरत का उत्तराधिकारी कौन हो ?।

पुत्रप्राप्ति के लिए भरत ने अनेकानेक यज्ञ किए, अन्त में मरुतों को प्रसन्न करने के लिए 'मरुस्तोम' यज्ञ भी किया। मरुतों ने प्रसन्न होकर बृहस्पति के पुत्र भरद्वाज को इसे पुत्र के रूप में प्रदान किया। संभव है, यहाँ मरुत् देवता का संकेत न होकर, वैशालिनरेश मरुत् अभिप्रेत हो (मरुत् देखिये)।

भरद्वाज पहले ब्राह्मण था, किन्तु इसके पुत्र होने के उपरांत क्षत्रिय कहलया। दो पितृओं का पुत्र होने के कारण ही भरद्वाज को 'द्वयामुध्यायण' नाम प्राप्त हुआ (भरद्वाज देखिये)। भरत के मृत्योपरान्त भरद्वाज ने अपने पुत्र वितथ को राज्याधिकारी बना कर, वह स्वयं वन में चला गया (मत्स्य. ४९.२७-३४; भा. ९. २०; वायु. ९९.१५२-१५८)।

महाभारत में इसकी पत्नी सुनन्दा से इसे भूमन्यु नामक पुत्र होने का निर्देश प्राप्त है (म. आ. ९०. ३४)। पर वास्तव में भूमन्यु इसका पुत्र न होकर पौत्र (वितथ का पुत्र) था।

भविष्य के अनुसार, इसने पृथ्वी को नानाविध देश-विभागों में बाँट दिया, एवं इसीके कारण इस देश को 'भारतवर्ष' नाम प्राप्त हुआ (भवि. प्रति. १.३)।

भरतवंश—इसके वंश में उत्पन्न सारे पुरुष 'भरत' अथवा 'भारतवंशी' कहल्यते हैं (ब्रह्म. १३.५७; वायु. ९९. १३४)। इसके वंश में पैदा हुए पाँचवें पुरुष हस्तिन् को अजमीढ एवं द्विमीढ नामक दो पुत्र थे। उनमें से अजमीढ ने हस्तिनापुर का पूर्ववश आगे चलाया, एवं द्विमीढ ने आधुनिक बरेली इलाके में अपने स्वतंत्र द्विमीढ वंश की स्थापना की।

अजमीढ की मृत्यु के बाद, उसका पुत्र कृष्ण हस्तिनापुर का सम्राट बना एवं उसके बाकी दो पुत्र नील एवं बृहद्विषु ने उत्तर पांचाल एवं दक्षिण पांचाल के स्वतंत्र राजवंशों की स्थापना की। इस तरह भरतवंश ने शाखाओं में फैलकर, उत्तर भारत के शासन की बागडोर अपने हाथों में ले ली।

भरद्वाज ब्राह्मण था। भरतपुत्र होकर वह क्षत्रिय हुआ, इस प्रकार भरतवंश की एक शाखा क्षत्रियब्राह्मण नाम से प्रसिद्ध हुयी। उस शाखा में उरुक्षय वंश के महर्षि एवं काश्य, सांक्रुति, शैष्य गार्ग्य आदि क्षत्रियब्राह्मण प्रमुख थे (भरद्वाज देखिये)।

भरती—भरत नामक अग्नि की कन्या।

भरद्वासु—एक ऋषि, जो वसिष्ठकुल का मंत्रकार था।

भरद्वाज—एक सुविख्यात वैदिक सूक्तद्रष्टा, जिसे ऋग्वेद के छठवें मण्डल के अनेक सूक्तों के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (ऋ. ६. १५. ३; १६.५; १७.४; ३१. ४)। भरद्वाज तथा भरद्वाजों का स्तोतारूप में भी, उक्त मण्डल में निर्देश कई बार आया है। अथर्ववेद एवं ब्राह्मण ग्रन्थों में भी इसे वैदिक सूक्तद्रष्टा कहा गया है (अ. वे. २.१२.२; ४.२९.५; क. स. १६.९; मै. सं २.७.१९; वा. सं. १३.५५; ऐ. ब्रा. ६.१८.८.३; तै. ब्रा. ३.१०.११. १३. कौ. ब्रा. १५.१; २९.३)।

भरद्वाज ने अपने सूक्तों में वृषु, वृषय एवं पारावतों का निर्देश किया है (ऋ. ८.१०.८)। पायु, रजि, सुमिहल साय्य, पेरुक एवं पुरुणीथ श्रातवनेय इसके निकटवर्ती थे। पुरुषंथ राजा का भरद्वाज के आश्रयदाता के रूप में निर्देश प्राप्त है (ऋ. ९. ६७. १-३; १०.१३७. १; सर्वातु-क्रमणी; बृहद्दे. ५.१०२)।

हिलेब्रान्ट के अनुसार, भरद्वाज लोग गुंजयो के साथ भी संबद्ध थे (वेदिशे माइथालोजी-१.१०४)। सांख्यायन श्रौतसूक्त के अनुसार, भरद्वाज ने प्रस्तोक साधक्य से पारितोषिक प्राप्त किया था (सं. श्रौ. १६.११)। कई विद्वानों के अनुसार, ये सारे लोग मध्य एशिया में स्थित

अर्कोसिया एवं डैजियाना में रहनेवाले थे। किंतु इसके बारे में प्रमाणित रूप से कहना कठिन है।

वेदों का अथांगत्व—तैत्तिरीय ब्राह्मण में, भरद्वाज के वेदाध्ययन के बारे में एक कथा दी गयी है। एक बार भरद्वाज ऋषि ने समस्त वेदों का अध्ययन करना आरम्भ किया। किन्तु समय का न्यूनता के कारण यह कार्य पूरा न कर सका, अतएव इसने इन्द्र की तपस्या करना आरम्भ किया। इन्द्र को प्रसन्न कर इसने यह वरदान प्राप्त किया कि, यह सौ सौ वर्ष के तीन जन्म प्राप्त करेगा, जिनमें वेदों का सम्पूर्ण ज्ञानग्रहण कर सके।

यह तीन जन्म ले कर वेदों का अध्ययन करता रहा, किन्तु सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त न कर सका। इससे दुःखी होकर यह रुग्णावस्था में चिन्तित पड़ा था कि, इन्द्र ने इसे दर्शन दिया। इसने इन्द्र से वेदों के ज्ञान की पूर्णता प्राप्त के लिए पुनः एक जन्म प्राप्त करने के लिए प्रार्थना की। इन्द्र ने इसे समझाने के लिए समस्त वेदों को तीन भागों में विभाजित कर दिया, जो पर्वताकार रूप में विशाल थे। फिर उनमें से एक ढेर से मुझी भर वेदज्ञान को उठा कर उसके एक कण को दिखाते हुए इन्द्र ने इसे कहा, 'तीन जन्मों में तुमने इतना ज्ञान इतने परिश्रम से प्राप्त किया है, और क्या, तुम इन पर्वताकार रूपी वेदाध्ययन को एक जन्म में प्राप्त कर लोगे? यह असम्भव है। तुम अपनी इस हठ को छोड़कर मेरी शरण में आकर मेरा कहना मानो। सम्पूर्ण वेद ज्ञान प्राप्त करने के लिए तुम 'सावित्राग्निचयन' यज्ञ करो। इसीसे तुम्हारी जिज्ञासा पूर्ण होगी तथा तुम्हें स्वर्ग की प्राप्ति होगी।' इस प्रकार इन्द्र के आदेशानुसार इसने उक्त यज्ञ सम्पन्न करके यह स्वर्ग का अधिकारी बना (तै. ब्रा. ३.१०.९-११)। 'सावित्राग्निचयन' की यही विद्या आगे चलकर अहोरात्राभिमानि देवताओं ने विदेहपति जनक को दी थी।

२. अंगिरसवंशीय सुविख्यात ऋषि, जो बृहस्पति अंगिरसु ऋषि का पुत्र था। यह एवं इसके पिता बृहस्पति दोनों वैशाली देश के रहने वाले थे, जहाँ मरुत्त राजाओं का राज्य था। बृहस्पति का पुत्र होने के कारण इसे 'भरद्वाज बार्हस्पत्य,' एवं उशिज का वंशज होने के कारण इसे 'भरद्वाज औशिज' भी कहा जाता है। यह त्रेतायुग के प्रारम्भ काल में हुआ था। बृहस्पति का एक भाई उच्चथ था, जिसकी पत्नी का नाम ममता था। ममता से बृहस्पति द्वारा उत्पन्न पुत्र ही भरद्वाज है।

भरद्वाज के नामकरण के सम्बन्ध में अनेकानेक कथाएँ पुराणों में प्राप्त हैं, इसका नाम भरद्वाज क्यों पड़ा? (वायु. ९९.१४०-१५०; मत्स्य ४९.१७-२५; विष्णु. ४.१९.५-७)। किन्तु वे बहुत सी कथाएँ कपोलकल्पित प्रतीत होती हैं। महाभारत के अनुसार, इसके जन्मोत्पत्ति बृहस्पति तथा ममता में यह विवाद हुआ कि, इसके संरक्षण का भार कौन ले। दोनों ने एक दूसरे से कहा, 'तुम इसे संभालें (भरद्वाजमिमम्)।' इसी कारण इसका नाम भरद्वाज पड़ा (म. अनु. १४२.३१ कुं)।

इस प्रकार ममता तथा बृहस्पति का इसके संभालने के सम्बन्ध में विवाद चलता रहा। यह देखकर वैशाली-नरेश मरुत्त ने भरद्वाज का पालनपोषण किया। बृहदेवता में कहा गया है कि, इसका पालन पोषण मरुत्त देवता ने किया (बृहदे. ५.१०२-१०३)। किन्तु यह ठीक नहीं जान पड़ता। इसका पालनापोषण वैशाली नरेश मरुत्त ने ही किया होगा, क्योंकि बृहस्पति वैशाली देश का राजगुरु था। पुराणों में भी बृहदेवता की बात दुहरायी गयी है कि, भरद्वाज के मातापिता ने जब इसको त्याग दिया, तब मरुत्त देवता ने इसका पालन पोषण किया (भा. ९, २०, विष्णु. ४. १९; मत्स्य. ४९; वायु. ९९. १४०-१५७; ब्रह्मांड. २. ३८)।

वैशाली के पश्चिम में स्थित काशी देश का राजा सुवेदपुत्र दिवोदास था, आगे चल कर यह उसका पुरोहित बना। यह दिवोदास राजा वही है, जिसने वाराणसी नगरी की स्थापना की थी। एक बार हैहयराजा वीतहव्य ने काशी देश पर आक्रमण कर दिवोदास को ऐसा परास्त किया कि, उसे भगा कर भरद्वाज के घर में शरण लेनी पड़ी। बाद में भरद्वाज ने दिवोदास राजा के पुत्रप्राप्ति के लिए एक यज्ञ किया, जिससे प्रतर्दन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. अनु. ३०.३०)। महाभारत के अनुसार, केवल भरद्वाज ऋषि के ही कारण, आगे-चल कर, प्रतर्दन राजा वीतहव्य तथा ऐश्वर्य को पराजित कर, अपने पिता की गद्दी को प्राप्त कर काशीनरेश हो सका (म. अनु. ३४.१७)। पंचविंश ब्राह्मण में भी इसी कथा का निर्देश प्राप्त है (पं. ब्रा. १५.३.७; क. सं. २१.१०)।

पुराणों के अनुसार, मरुत्त राजाओं ने भरद्वाज ऋषि को सुविख्यात पूर्ववंशीय राजा भरत को पुत्र रूप में प्रदान किया था (वायु. ९९.१५१; मत्स्य. ४९.२६)। वायु एवं मत्स्य के इन कथनों को मान्यता देने के पूर्व हमें यह भी समझना चाहिए कि, यह राजा भरत के एक दो

पीढ़ी पूर्व था। अतएव यह सम्भव है कि, यह स्वयं उसका दत्तक पुत्र न हुआ हो। सम्भव है, इसका पुत्र या पौत्र भरद्वाज विद्विन् राजा भरत को दत्तक रूप में दिया गया हो (भरद्वाज ३. देखिये)।

ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, यह लम्बा, क्षीणशरीर एवं गेहुए रंग का था (ऐ. ब्रा. ३.४९) यह अत्यंत दीर्घायु तपस्वी एवं विद्वान् था (ऐ. आ. १.२.६)। इसका यज्ञवल्क्य ऋषि से तत्त्वज्ञान के सम्बन्ध में संवाद हुआ था। ' जगतसृष्टिकार' के सम्बन्ध में इसका एवं भृगु ऋषि से संवाद हुआ था (म. शां. १.७५)। इसने धन्वन्तरि को आयुर्वेद सिखाया था (ब्रह्मांड. ३.६७)

यह ब्रह्मा द्वारा किये गये पुष्करक्षेत्र के यज्ञ उपस्थित था (पञ्च. सू. ३४)। सर्पविष से मृत्यु हुए प्रमदरा को देख कर रोनेवाले स्थूलकेश ऋषि के परिवार में यह भी एक था (म. आ. ८.२१)।

३. एक सुविख्यात ऋषि, जो पूरुसम्राट भरत को पुत्र के रूप में प्रदान किया गया था। सम्भवतः यह बृहस्पति ऋषि के पुत्र भरद्वाज गार्हस्पत्य का पुत्र या पौत्र था (भरद्वाज २. देखिये)। इसका नाम विद्विन् था, जिसके कारण यह 'भरद्वाज विद्विन्' नाम से सुविख्यात हुआ।

पुरुवंशीय सम्राट भरत के कोई पुत्र न था, इस कारण मरुत्त राजा ने भरत को इसे पुत्र रूप में प्रदान किया। भरद्वाज स्वयं ब्राह्मण था, किन्तु भरत का पुत्र होने के कारण यह क्षत्रिय कहलाया। दो वंशों के पिताओं के पुत्र होने के कारण इसे 'द्वयामुध्यायण' एवं इसके कुल में उत्पन्न लोगों को 'द्वयामुध्यायणकौलीन' कहा जाता है। भरत के मृत्योपरांत भरद्वाज ने अपने पुत्र वितथ को राज्याधिकारी ना कर, यह स्वयं वन में चला गया (मत्स्य. ४९.२७-३४; वायु. ९९.१५२-१५८)।

क्योंकि इसका नाम विद्विन् था, अतएव इसके पुत्र एवं वंश के लोग 'वैद्विन्' नाम से सुविख्यात हुए। इसे निम्नलिखित पाँच पुत्र थे:- ऋजिश्मन्, सुहोत्र, शुनहोत्र, नर, गर्ग (सर्वानुक्रमणी ६.५२)। सम्भव है, यह इसके पुत्र न होकर यंशज हो।

४. अंगिराकुलोत्पन्न एक ऋषि, जो विश्वामित्र के पुत्र रैभ्य ऋषि का मित्र था। इसके पुत्र का नाम यवक्रीत था।

रैभ्य ऋषि ने एक कृत्या का निर्माण किया था, जिसने इसके पुत्र यवक्रीत को मार डाला। पुत्रशोक से विह्वल हो कर, यह आग में जल कर मृत होने के लिये तप

हुआ, तब रैभ्य ऋषि के पुत्र अर्वावसु ने यवक्रीत को पुनः जीवित किया (म. व. १३५-१३८)। पुत्र को पुनः प्राप्त कर यह प्रसन्न हुआ एवं स्वर्ग चला गया।

५. पूर्व मन्वंतर का एक ब्रह्मर्षि। यह किती समय गंगाद्वार में रहकर कटोर व्रत का पालन कर रहा था। एक दिन इसे एक विशेष प्रकार के यज्ञ का अनुष्ठान करना था। अतएव अन्य महर्षियों के साथ यह गंगा-स्नान करने गया। वहाँ पहुँचे से नहा कर वस्त्र बदलती हुयी घृताची अप्सरा को देखकर इसका वीर्य स्वलित हो गया, जिससे इसको श्रुतावती नामक कन्या हुयी (म. शा. ४७)। श्रुतावती के लिए भोंडारकर संहिता में 'स्रुतावती' पाठभेद भी प्राप्त है।

६. अंगिराकुलोत्पन्न एक ऋषि, जिसका आश्रम गंगा-द्वार में था (म. आ. १२१)। उत्तर पांचाल का राजा पृषत इसका मित्र था। गंगाद्वार से चल कर हविर्धान होता हुआ, यह गंगास्नान को जा रहा था। उस समय स्नान कर के निकली हुयी घृताची नामक अप्सरा को उभरती हुई युवावस्था को देखकर इसका अमोघ वीर्य पर्वत की कंदरा में स्वलित हुआ। इसने उस वीर्य को दोनें (द्रोण) में सुरक्षित कर रखा, जिससे इसे द्रोण नामक पुत्र हुआ (म. आ. ५७.८९; १५४.६)।

इसके पुत्र द्रोण एवं पृषत राजा के पुत्र दुपद में बाल्यावस्था में बड़ी घनिष्ठता थी, किन्तु आगे चलकर उन दोनों में इतनी कटुता उत्पन्न हो गयी कि, पीढ़ियों तक आपस की दुश्मनी खत्म न हो सकी (दुपद एवं द्रोण देखिये)।

बृहस्पति ने इस ऋषि को आश्रय अन्न प्रदान किया था, जो इसने अग्नि के पुत्र आग्निवेश को दिया था (म. आ. १२१.६; १५८.२७)।

७. वाल्मीकि ऋषि का शिष्य, जो प्रयाग में रहता था। जत्र क्रौंच पक्षियों के जोड़े को देखकर वाल्मीकि के मुख से करुण वाणी काव्य के रूप में प्रस्तुतित हुयी थी, तब यह उपस्थित था (वा. रा. वा. २.७-२१)। ब्रह्मपुराण के अनुसार ऐसा प्रतीत होता है कि, भरद्वाज की पत्नी का नाम सम्भवतः 'पैठिनसी' था। वाल्मीकि ने सर्व-प्रथम इसे ही रामायण की कथा बतायी थी (यो. वा. १.२)।

दंडकारण्य जाते समय दाशरथि राम ने इसके दर्शन किये थे, और इसका आतिथ्य स्वीकार किया था। राम के द्वारा रहने के लिए स्थान माँगने पर इसने अपना

आश्रम ही ले लेने के लिए उससे कहा। किन्तु राम ने कहा, 'यहाँ से अयोध्या निकट है, अतएव अयोध्यावासियों से मुझे सदैव अडचने प्राप्त होती रहेंगी'। यह सुनकर, इसने राम के रहने के लिए वस मील दूर पर स्थित त्रिविक्रत में रहने के लिए व्यवस्था कर दी, तथा उसका मार्ग बता कर विदा किया (वा. रा. अयो. ५४-५५)।

राम को वापस लाने के लिए जब भरत वन को गया था, तब वह अपने सेना को दूर रखकर, इसके आश्रम आया था। भरत को देखकर भरद्वाज के मन में शंका उठी थी कि, राम को अकेला समझ कर उन्हें मार कर भरत-निक्रतक राज्य तो नहीं करना चाहता। इस सम्बन्ध में इसमें भरत से प्रश्न भी किया था, जिसे सुन कर भरत की आँखों में आसू आ गये थे। भरत के द्वारा दिये गये विश्वास पर इसने उसका ससैन्य आदरसत्कार किया था। उसके खाने पीने तथा ठहरने की इसने सुन्दर व्यवस्था की थी। भरत एक रात इसके यहाँ ठहरा भी था, तथा बड़े भावुक भावों में भर कर अपनी माताओं का परिचय इसे दिया था। भरत के द्वारा पूँछे जाने पर, इसने उसे राम के रहने का मार्ग बताते हुए कहा था कि, वह यहाँ से दाईं योजर्न दूर पर है (वा. रा. अयो. ९०-९२)।

रत्नका वध कर राम इसके आश्रम आया था, और उसने इससे मुलाकात की थी। इसने राम का स्वागत कर, उसका आदरसत्कार करते हुए वरप्रदान किया था, 'तुम जिस मार्ग से होकर जाओगे उस मार्ग के वृक्षफल वसंत ऋतु के समान होकर फलफूलमय हो जायेंगे' (वा. रा. यु. १२४)।

अश्वमेध यज्ञ के बाद राम पुनः भरद्वाज से मिलने के लिए गौतमी नदी के तट पर स्थित आश्रम में आया था। राम को सारे ऋषियों के साथ आश्रम में अतिथिरूप में आया हुआ देखकर, इसने उन सब का स्वागत कर भोजनार्थि के लिए प्रार्थना की थी। इसके आश्रम में शंभु ने राम के पूँछने पर, श्राद्धनिर्णय, शिवपूजाविधि और भस्ममाहात्म्य की कथा बतायी थी (पद्म. पा. १०५)।

८. एक अग्नि, जो शंभु नामक अग्नि का ज्येष्ठ पुत्र था। धर्म की कन्या सत्या इसकी माता थी। इसकी पत्नी का नाम वीरा था, जिससे इसे वीर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. व. २०९. ९)। यज्ञ में प्रथम आख्यभाग के द्वारा इस भरद्वाज नामक अग्नि की पूजा की जाती है।

सम्भवतः भरद्वाज वर्तमान मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक होगा। प्रतिवर्ष फाल्गुन माह में सूर्य के साथ भ्रमण करनेवाला नक्षत्र भी यही होगा।

९. एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए मीधम से मिलने गया था (भा. १.९.६)।

१०. एक ऋषि जो, बारहवें या उन्नीसवें युग का व्यास था।

११. एक धर्मशास्त्रकार, जिसके द्वारा श्रौतसूत्र और धर्मसूत्र की रचना की गयी है। इसके द्वारा लिखित श्रौतसूत्र की हस्तलिखित पाण्डुलिपि बम्बई विश्वविद्यालय के ग्रंथालय में उपलब्ध है, जिसमें कुल दस अध्याय (प्रश्न) हैं, एवं उसमें 'आलेखन' और 'आश्मरथ्य' धर्मशास्त्रकारों का उल्लेख कई बार आया है। इस ग्रंथ में इसका निर्देश 'भरद्वाज' एवं 'भारद्वाज' इन रूपों से आया है।

विश्वरूप एवं अन्य भाष्यकारों के भाष्यों में भरद्वाज के धर्मशास्त्र विषयक सूत्रग्रन्थ का उल्लेख आया है। याज्ञवल्क्य स्मृति पर विश्वरूपद्वारा लिखित भाष्य में भरद्वाज के मतों का उल्लेख किया गया है। उसमें लिखा है कि, गुरुओं को अपने शिष्यों को संव्यावदन, वक्तव्य एवं शुद्ध भाषा सिखानी चाहिये, तथा उन्हें ग्लेच्छ भाषा से दूर रहने की शिक्षा देनी चाहिए (याज्ञ. १.१५)। दूसरों को कष्ट देने की बात को सोचना भी पाप है, ऐसा इसका मत था, एवं इस पाप के लिए इसने प्रायश्चित्त भी बताया है (याज्ञ. १.३२)। श्राद्ध के समय किस अनाज का प्रयोग न करना चाहिए, तथा शूद्रस्पर्श के उपरांत स्नान द्वारा अपने को किस तरह शुद्ध करना चाहिए, इसके बारे में भी इसने अपना अभिमत दिया है (याज्ञ. १.१८५; २३६)। घर में जब शृङ्गासि का संस्कार बन्द हो, तो क्या प्रायश्चित्त लेना चाहिए, इसके विषय में भरद्वाज के मत का उल्लेख अपरार्क ने किया है (अपरार्क. ११५५)।

श्रौतसूत्र एवं धर्मसूत्र के अतिरिक्त, इसके द्वारा लिखित एक स्मृति पद्य में लिखी हुई मानी गयी है, जिसके उद्घरण स्मृतिचंद्रिका एवं हरदत्त में प्राप्त है।

अर्थशास्त्रकार— एक अर्थशास्त्रकार के नाते भरद्वाज का निर्देश कौटिल्य अर्थशास्त्र में सात बार आया है। कौटिल्य अर्थशास्त्र में कर्णिक भारद्वाज नामक आचार्य का उल्लेख प्राप्त है, जो सम्भवतः यही होगा (कौटिल्य. ५.५)। कौटिल्य ने इसके जिन मतों का उल्लेख किया है, वह निम्न प्रकार से हैं:—राजा को अपने सहायियों में से मंत्रियों का चुनाव करना चाहिए; राजा को राजनैतिक निर्णयों को अपने आप

एकान्त में सोचकर देना चाहिए; जो राजकुमार अपने पिता के प्रति प्रेम एवं मर्यादा का उल्लंघन करता हुआ अवहेलना करता हो, उसको भेदनीति के द्वारा दण्ड देना चाहिए; राजा जिस समय मरणासन्न स्थिति में हो, उस समय मंत्री को चाहिए कि राजकुमारों के बीच कोई न कोई कलह पैदा कर दे; राजसंकट के काल में राजा एवं मंत्रियों में सर्व लोगों ने राजा की सहायता करनी चाहिये, किन्तु व्यवहार में देखा जाता है कि, लोग बलवान का ही पक्ष लेते हैं। इसका यह अन्तिम अभिमत महाभारत में इन्ही शब्दों में वर्णित है (म. शां. ६७.११)।

महाभारत में इसके एवं राजा शत्रुंजय के बीच हुआ संवाद प्राप्त है, जिसमें साम, दाम, दण्ड, भेद आदि नीतियों में दण्डनीति को श्रेष्ठता दी गयी है (म. शां. १४०)। इसी पर्व में प्राप्त राज्यशास्त्रकारों की नामावली में इसका नाम भी सन्निहित है (म. शां. ५८.३)।

‘यशस्तिष्क’ नामक राज्यशास्त्रविषयक ग्रन्थ में, भरद्वाज के राजनैतिक अभिमत से सम्बन्धित दो पद्य उद्धरण प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, इसका राज्य-विषयक ग्रन्थ पद्यरूप में १० वीं शताब्दी में प्राप्त था।

भरद्वाज के व्यवहारविषयक मतों का उल्लेख कई ग्रन्थों में प्राप्त है। मुकुटमे गवाही देने के पूर्व व्यक्तियों द्वारा लिए गये शपथ के इसने चार प्रकार बताये हैं (पराशर माधवीय २.२३१)। किन्हीं दो व्यक्तियों के बीच हुए समझौता, विनिमय एवं कंटवारे को खारिज करना हो, तो उसकी अवधि नौ दिन की बताई गयी है, किन्तु यदि उसमें किसी प्रकार के कानूनी झगडे हो, तो उसकी अवधि नौ साल तक हो सकती है (सरस्वती-विलास. पृ. ३१४; ३२०)। इन उद्धरणों से यह सिद्ध है, कि इसका व्यवहारविषयक ग्रन्थ राजशास्त्रविषयक ग्रन्थ से अलग है।

अन्य ग्रंथ—१ भरद्वाजसंहिता—पंचरात्र सांप्रदाय के इस ग्रंथ में कुल चार अध्याय हैं; २. भरद्वाजस्थिति, जिसका निर्देश पञ्च में प्राप्त है, एवं जिसके उद्धरण हेमाद्रि, विज्ञानेश्वर, बालभट्ट आदि ग्रंथकारों के द्वारा लिये गये हैं; ३. वास्तुतन्त्र; ४. वेदपादस्तोत्र (C.C.)।

१२. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार, अमित्रजित् राजा का पुत्र था।

भरद्वाजि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भरुक—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार, विजय राजा का

पुत्र था। इसके नाम के लिये ‘रुक’ एवं ‘रुक’ पाठभेद प्राप्त हैं।

भर्ग—एक रुद्र, जो एकादश रुद्रों में से अंतिम था। यह शिव नामांतर भी है।

२. (सो. तुर्वसु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, वह्नि राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम भानुमत् था।

३. (सो. काश्य.) काशी देश का एक राजा, जो भागवत के अनुसार, वीतिहोत्र राजा का पुत्र था। इसके नाम के लिये ‘भार्ग’ एवं ‘गार्ग्य’ पाठभेद प्राप्त हैं। इसके पुत्र का नाम भर्गभूमि था।

भर्ग प्रागाथ—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.६०-६१)।

भर्गभूमि—(सो. काश्य.) काशी देश का एक राजा, जो भागवत के अनुसार भर्ग राजा का पुत्र था।

भर्तृहरि—एक सुविख्यात संस्कृत व्याकरणकार, जो पतंजलि के ‘व्याकरणमहाभाष्य’ का सर्वाधिक प्राचीन एवं प्रामाणिक टीकाकार माना जाता है। महाभाष्य पर लिखी हुअी इसकी टीका का नाम ‘महाभाष्यप्रदीप’ है।

पुण्यराज के अनुसार, भर्तृहरि के गुरु का नाम वसुराति था। चिनी प्रवासी इत्सिंग के अनुसार, यह बौद्धधर्मीय था, एवं इसने सात बार प्रब्रह्मा ग्रहण की थी (इत्सिंग पृ. २७४)। किंतु मीमांसकजी के अनुसार, यह वैदिकधर्मीय ही था (संस्कृत व्याकरण का इतिहास—पृ. २९७)।

वाक्यपदीय—संस्कृत भाषा में अंतर्गत शब्दों का संपूर्ण विवेचन पाणिनि एवं पतंजलि ने अपने व्याकरण ग्रंथों के द्वारा किया। किंतु उन्हीं शब्दों को ब्रह्मस्वरूप मान कर, तत्त्वज्ञान की दृष्टि से व्याकरणशास्त्र का अध्ययन करने का महनीय कार्य भर्तृहरि ने अपने ‘वाक्यपदीय’ नामक ग्रंथ के द्वारा किया। इस ग्रंथ के निम्नलिखित तीन कांड हैं—ब्रह्मकांड, वाक्यकांड, प्रकीर्णकांड।

मीमांसा, सांख्य, योग आदि दर्शनों का निर्माण होने के पश्चात्, व्याकरणशास्त्र एक अनुपयुक्त शास्त्र कहलाने लगे। किंतु शब्दों के अर्थ का ज्ञान प्राप्त होने पर, शब्द-ब्रह्म की प्राप्ति होती है, ऐसा नया सिद्धान्त भर्तृहरि ने प्रस्थापित किया, एवं इस प्रकार व्याकरणशास्त्र का पुनरुत्थान किया।

व्याडि का संग्रहग्रंथ नष्ट होने पर, पाणिनीय व्याकरण-शास्त्र विनष्ट होने का संकट निर्माण हुआ; उसी संकट से

व्याकरणशास्त्र को बचाने के लिये 'वाक्यपदीय' ग्रंथ की रचना की गयी है, ऐसा निर्देश उस ग्रंथ के द्वितीय कांड में प्राप्त है।

ग्रंथ—१. महाभाष्यदीपिका; २. वाक्यपदीय; ३. वाक्यपदीय के पहले दो कांडों पर 'स्वोपशटीका'; ४. वेदान्तसूत्रवृत्ति; ५. मीमांसासूत्रवृत्ति।

२. एक व्याकरणकार, जो संस्कृत व्याकरणशास्त्र को काव्य के रूप में प्रस्तुत करनेवाले 'भट्टिकाव्य' का रचयिता था। इसने 'भागवृत्ति' नामक अन्य एक ग्रंथ भी लिखा था।

३. एक राजा, जो शृंगार, नीति एवं वैराग्य नामक 'शतकत्रयी' ग्रंथ का रचयिता था।

भर्तृहरि—कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण।

भर्तृशिव—(सो. नील.) पंचाल देश का सुविख्यात राजा, जो अर्क राजा का पुत्र था। इसे मुद्गल आदि पाँच अर्थवत पराक्रमी पुत्र थे, जिन्हें देखकर यह हमेशा कहा करता था, 'मेरे राज्य के संरक्षण के लिये मेरे पाँच पुत्र ही केवल काफी ('पंच अलम्') हैं।'।

इस कारण इसके इन पुत्रों को 'पंचाल' सामुहिक नाम प्राप्त हुआ, जिससे आगे चलकर इसका देश ही 'पंचाल' नाम से प्रसिद्ध हुआ (पंचाल देखिये; भा. ९.३१. ३१-३२)।

भर्तृदक—(सु. दिष्ट.) मलदन राजा के लिये उपलब्ध पाठभेद (भर्तृदक २. देखिये)।

भर्तृदन—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. (सु. दिष्ट.) एक राजा, जो जन्म से तो ब्राह्मण था, किंतु नीच वाणिज्यकर्म करने के कारण वैश्य बन गया था (मार्क. ११३. ३; ब्रह्म. ७.२६; विष्णु. ४.१.१५; भा. ९.२.२३)।

भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार, यह नामाग राजा का पुत्र था, एवं इसके पुत्र का नाम वत्सप्रीति था। मत्स्य में इसके नाम के लिये 'भर्तृदक' पाठभेद प्राप्त है। मत्स्य एवं ब्रह्मांड में, इसे वैश्य जाति का मंत्रद्रष्टा ऋषि कहा गया है (मत्स्य. १४५.११६; ब्रह्मांड. २. ३२. १२१); किंतु प्रतीत होता है कि, यह पुनः ब्राह्मण हुआ था (ब्रह्म. ७.४२)।

भर्तृनस्—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक जातिसंघ, जो दाशराज युद्ध में मुदास के शत्रुशत्रु में शामिल था। पक्थ, अल्लि, विषाणिन एवं शिव जातियों के समवेत इनका निर्देश ऋग्वेद में आता है (ऋ. ७. १८.७)।

त्सुमर के अनुसार, इनमें एवं आधुनिक बोलन दरें में काफी नामसादृश्य है, जिससे प्रतीत होता है कि, इनका मूल निवासस्थान पूर्वी बलुचिस्तान था (त्सुमर—अस्ट्रिन्डिडो लेवेन, १२६)।

भल्लविन्द—लंगली भीम नामक शिवावतार का शिष्य।

भल्लाट—(सो. पूर.) एक पुरुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार विश्वक्सेन का, एवं वायु के अनुसार, उदक्सेन राजा का पुत्र था। भागवत में इसके लिये 'मल्लाट' पाठभेद प्राप्त है।

भल्लि—बिल्वि नामक भृगुकुल के गोत्रकार के लिये उपलब्ध पाठभेद (बिल्वि देखिये)।

२. (सो. कुकुर.) यादव राजा नल का नामांतर (नल ४. देखिये)। यह विलोमन् राजा का पुत्र था, एवं इसके पुत्र का नाम अभिजित् था। इसे 'नन्दोदर-दुंदुभि' अथवा 'चंदनोदकदुंदुभि' नामांतर भी प्राप्त है।

३. एक यादव, जो वसुदेव एवं रथराजी का पुत्र है।

४. रौच्य मनु के पुत्रों में से एक।

भव—कश्यप एवं सुरभि के पुत्रों में से एक। इसके नाम के लिये 'भल' पाठभेद प्राप्त है।

२. ग्यारह ऋतों में से एक, जो ब्रह्मा का पौत्र एवं स्थाणु का पुत्र था (म. आ. ६०.१-३)।

३. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३५)।

भवत्रात शायस्थि—एक आचार्य, जो कुस्तुक शार्कराक्ष्य नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम बृहस्पतिगुप्त शायस्थि था (वं. ब्रा. १)।

भवद—(सो.) एक राजा, जो भविष्य के अनुसार, मनस्यु राजा का पुत्र था।

भवदा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१३)।

भवनन्दि—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भवन्मन्यु—(सो. पूर.) एक पुरुवंशीय राजा, जो विष्णु के अनुसार, वितथ राजा का पुत्र था। इसके नाम के लिये 'मन्यु' पाठभेद भी प्राप्त है (भा. ९.२१.१)। इसे निम्नलिखित पाँच पुत्र थे:—बृहक्षत्र, नर, गर्ग, महावीर्य एवं जय (विष्णु. ४.१९.९)।

भव्य—रैवतमन्वतर का एक देवगण, जिसमें निम्न-लिखित आठ देव शामिल थे:—परिमति, प्रियनिश्चय, मति, मन, विचेतसु, विजय, सुजय एवं स्योद (ब्रह्मांड. २.३६.७१-७२)।

२. चाक्षुष मन्वंतर का एक देव ।

३. (स्वा. उत्तान.) उत्तानवादवंशीय एक राजा, जो ध्रुव राजा का पुत्र था । इसकी माता का नाम भूमि था ।

४. दक्षमावर्णि मन्वंतर के सप्तपियों में से एक ।

भस्मासुर—एक असुर, जो शिव के विमूर्ति में स्थित एक कंकड़ से उत्पन्न हुआ था । मराठी भाषा में लिखित 'शिवलीलामृत' में केवल इसकी कथा प्राप्त है । संस्कृत पुराणों में कही भी इसकी कथा नहीं दी गयी है; किंतु उन पुराणों में प्रातःकालपृष्ठ एवं वृक नामक असुरों के कथा से इसकी कथा काफी मिलती जुलती है (कालपृष्ठ, एवं वृक देखिये) ।

यह शिव का परमभक्त था, जिस कारण उसने इसे बर दिया था कि, जिसके सर पर यह हाथ रखेंगा, वह तत्काल दग्ध हो कर भस्म हो जायेगा । शिव के इस वर के कारण, यह सारे लोगों को अत्यधिक व्रत करने लगा । फिर इसे विनष्ट करने के लिए, श्रीविष्णु ने मोहिनी का अवतार लिया । 'मुक्तचूड' की एक मुद्रा में, अपना हाथ अपने ही सर पर रखने के लिए इसे विवश कर, मोहिनी ने इसका वध किया (शिवलीला. १२) ।

भागलि—एक यज्ञसूत्रकार, जिसके मतों के उद्धरण कौपीतकी गृह्यसूत्र में प्राप्त है । शान्त्युदक करते समय कौनसे मंत्र का उच्चारण करना चाहिये, इस विषय में इसके मत प्राप्त हैं (कौ. गृ. १.१०) । इसका यह भी अभिमत था कि, मधुपर्क करते समय गाय का उपयोग नहीं करना चाहिये (कौ. गृ. १७.२७) ।

भागवत—(शुंग. मविष्य.) एक शुंगवंशीय राजा, जो वायु के अनुसार विक्रमित्र राजा का, एवं अन्य पुराणों के अनुसार, वक्रमित्र का पुत्र था । मत्स्य में इसके नाम के लिए 'समाभाग' पाठभेद प्राप्त है ।

भागवित्तायन—वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण । इसके नाम के लिए 'भागवित्तासन' पाठभेद प्राप्त है ।

भागवित्ति—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से कुथुमि ऋषि का शिष्य था । ब्रह्मांड में इसके नाम के लिए 'नामवित्ति' पाठभेद प्राप्त है ।

२. बृहदारण्यक उपनिषद् में निर्दिष्ट 'चूड' अथवा 'चूल' नामक आचार्य का पैतृक नाम (बृ. उ. ६.३; १७.८, मांथं; ६.३.९-१० काण्व.) ।

३. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

भागवित्तासन—भागवित्तायन नामक ऋषिगण के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (भागवित्तायन देखिये) ।

भागस्वरि—दशार्ण देश के राजा ऋतुपर्ण का नामांतर (भागसुरि देखिये) ।

भागान्य—एक क्षत्रिय, जो तप के फलस्वरूप ब्राह्मण एवं ऋषि बना था (वायु. ११.११६) ।

भागिल—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

भागुरि—सुविख्यात व्याकरणकार, कोशकार, ज्योति-पशास्त्र एवं स्मृतिकार । उन विभिन्न विषयों पर इसके नाम पर अनेकानेक ग्रंथ उपलब्ध हैं, किंतु इन सब ग्रंथों का प्रवक्ता एक ही भागुरि है या भिन्न भिन्न, यह अज्ञात है ।

संभवतः 'भागुरि' इसका पैतृक नाम था, एवं इसके पिता का नाम 'मगुर' था । पतंजलि के व्याकरण महाभाष्य में, लोकायतशास्त्र पर व्याख्या लिखनेवाली भागुरी नामक किसी स्त्री का निर्देश प्राप्त है (महा. ७.३.४५) । संभव है, वह स्त्री आचार्य भागुरि की बहन हो । इसके गुरु का नाम बृहद्गर्ग था । मेरु पर्वत का आकार चतुष्कोनयुक्त है, ऐसा इसका मत वायु में उद्धृत किया गया है (वायु. ३४.६२) ।

व्याकरणशास्त्रकार—यद्यपि पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' में भागुरि का निर्देश अप्राप्य है, तथापि अन्य व्याकरण ग्रंथों में भागुरि के काफी उद्धरण लिये गये हैं । इन उद्धरणों से प्रतीत होता है कि, इसका व्याकरण भली-प्रकार परिष्कृत एवं श्लोकाद्ध था, एवं वह पाणिनीय व्याकरण से कुछ विस्तृत था ।

भागुरि का यह अभिमत था कि, जिन शब्दों का प्रारंभ 'अपि' अथवा 'अव' उपसर्ग से होता है; वहाँ 'अ' का लोप होता है (जैसे कि, अवगाह = वगाह, अपिधान = पिधान) । इसका यह भी सिद्धान्त था कि, हलन्त शब्दों की प्रक्रिया में हलन्त का लोप हो कर 'आ' प्रत्यय लगाया जाता है (जैसे कि, वाक् = वावा दिश् = दिशा) ।

भागुरि के व्याकरणविषयक कुछ और उद्धरण जगदीश तर्कालंकार ने अपने 'शब्दशास्त्रिका' में उद्धृत किये हैं ।

कोशकार—पुरुषोत्तमदेव की 'भाषावृत्ति', एवं सृष्टि-धरकृत 'भाषावृत्ति टीका' से प्रतीत होता है कि, भागुरि के द्वारा 'त्रिकाण्डकोश' नामक एक शब्दकोश की रचना की गयी थी । इसका यह कोश आज भी उपलब्ध है

एवं क्षीरवामिन्, हलायुध, महेश्वर, हेमचंद्र, केशव, महीप, मेदिनीकार, राममुक्त एवं महलीनाथ आदि शब्द-कोशकारों ने इसके वचन उद्धृत किये हैं। 'माधवीयधामु वृत्ति,' एवं 'अमरकोश' की अनेकानेक टीकाग्रंथों में इसके मतों के उद्धरण प्राप्त हैं।

ज्योतिषशास्त्रकार—भागुरि के ज्योतिषशास्त्रविषयक मतों का निर्देश वराहमिहिर कृत 'बृहत्संहिता', भोज कृत 'राजमार्तंड', एवं 'गर्गसंहिता' आदि ग्रंथों में प्राप्त हैं (बृहत्सं. ४८.२)।

स्मृतिकार—भागुरि के स्मृतिविषयक मतों का निर्देश 'विवादरत्नाकर' नामक ग्रंथ में कमलाकर नामक एक स्मृतिकार ने किया प्राप्त है। इसकी स्मृति को 'वागुरि-स्मृति' नामांतर भी प्राप्त है।

साम एवं यजुःशाखाओं का आचार्य—'प्रपंचहृदय' 'त्रैमिनीय गृह्यसूत्र टीका' आदि ग्रंथों में भागुरि को सामशाखा का, एवं लौगाक्षिगृह्यसूत्र की टीका में इसे यजुःशाखा का आचार्य कहा गया है। इससे प्रतीत होता है कि, इन दोनों शाखाओं के संबंध में कुछ ग्रंथरचना इसने की थी।

अलंकारशास्त्र—सोमेश्वर कवि के 'साहित्यकल्पद्रुम' में, एवं अभिनवगुप्त के 'ध्वन्यालोक' में भागुरि के द्वारा लिखित 'अलंकारशास्त्र' ग्रंथ के कुछ उद्धरण प्राप्त हैं।

सांख्यदर्शनकार—दयानंद सरस्वती कृत 'सत्यार्थ-प्रकाश' में, एवं 'संस्कारविधि' नामक ग्रंथ में, भागुरि के द्वारा विरचित 'सांख्यदर्शनभाष्य' का निर्देश प्राप्त है।

देवतशास्त्र—शौनक कृत 'बृहद्देवता' में भागुरि के देवताविषयक मतों के अनेक उद्धरण प्राप्त हैं, जिनसे प्रतीत होता है कि, इसने देवतशास्त्रविषयक कोई 'अनुक्रमणिका' ग्रंथ अवश्य लिखा होगा।

२. एक ऋषि, जो युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ का सदस्य था (जै. अ. ६३; जै. ग. १.१४)

भाङ्गास्वनि—भङ्गास्वनि नामक राजर्षि का नामांतर (भङ्गास्वनि देखिये)।

भाङ्गासुरि—दशार्ण देश के ऋतुपर्ण राजा का नामांतर। इसके नाम के लिए 'भागस्वनि' पाठभेद भी प्राप्त है (म. स. ८)।

भाजिर—भौत्य मन्वन्तर का एक देव। इसके नाम के लिए 'भाजिर' पाठभेद प्राप्त है।

भाङ्गितायन—शाकदास नामक आचार्य का पैतृक नाम।

भाण्डायनि—एक ऋषि, जो इंद्र की सभामें उपस्थित हो कर इंद्र की उपासना करता था (म. स. ७.१०)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'शाण्डायन'।

भात—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो वायु के अनुसार सिंधुके राजा का पुत्र था। संभवतः यह आंध्रवंशीय कृष्ण राजा के नाम के लिए पाठभेद रहा होगा (कृष्ण ६. देखिये)।

भानु—विषस्वत् अथवा सूर्यदेवता का नामांतर (म. भा. १.४०)।

२. एक देवगंधर्व, जो ऋषय एवं प्राधा (क्रोधा) का पुत्र था (म. भा. ५.९.४६)।

३. श्रीकृष्ण को सत्यभामा से उत्पन्न एक महारथी पुत्र। मृत्यु के पश्चात्, यह विश्वेदेवों में प्रविष्ट हो गया (म. त्व. ५.१३)।

४. एक अग्नि, जो च्यवन आंगिरस ऋषि के अंश से उत्पन्न हुआ था। इसके पिता का नाम पांचजन्य था (म. व. २१०.९)। इसे 'मनु' एवं 'बृहद्भानु' नामांतर भी प्राप्त है (म. व. २११.८-९)।

इसे सोमकन्या बृहद्भानुसा एवं सुप्रजा नामक दो पत्नियाँ थीं। इसे निम्नलिखित छः पुत्र थे:—बृहद्भानुसापुत्र-बल, मन्वुमत् एवं विष्णु (धृतिमत्); सुप्रजापुत्र-आश्रयण, वैश्वदेव एवं स्तुम (म. व. २११.८)।

५. एक राजा, जो कौरव एवं अर्जुन के दरम्यान हुए 'गोप्रहण युद्ध' देखने के लिए इंद्र के विमान में बैठ कर उपस्थित हुआ था (म. वि. ५.१.१०)।

६. दक्ष की एक कन्या, जो धर्म से व्याही गयी थी। इसके पुत्र का नाम देवकश्यप था।

७. एक यादव, जिसने प्रद्युम्न राजा से शस्त्रास्त्रविद्या प्राप्त की थी (म. व. १८०.२७)। इसकी कन्या का नाम भानुमती था, जिसका विवाह पांडु राजा के पुत्र सहदेव से हुआ था (म. स. २.परि. १.१३; ह. वं. २.२०.७६)।

८. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, प्रतिव्योम राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम दिवाक अथवा दिवाकर था (भा. ९. १२)।

९. स्वारोचिष मनु के पुत्रों में से एक।

१०. उत्तम मन्वन्तर का एक देवगण।

११. सुतप देवों में से एक।

भानुदत्त—शकुनि का भाई, जो सुबल राजा के पुत्रों में से एक था। भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १३२.११३६*)।

भानुदेव—एक पांचाल योद्धा, जो भारतीय युद्ध में कर्ण के द्वारा मारा गया था (म. क. ३२.३७)।

भानुमत्—(स. निमि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, केशिध्वज राजा का, एवं वायु के अनुसार सीरध्वज का पुत्र था।

२. कलिंग देश का राजा, जो भारतीय युद्ध में कौरव पक्ष में शामिल था। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ५०.३५)।

३. (सो. तुर्वसु.) एक तुर्वसुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार भर्मा राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम त्रिभानु था।

४. कोसल देश का सुविख्यात राजा। इसकी कन्या का नाम कौसल्या था, जो सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय सम्राट् दशरथ को विवाह में दी गयी थी (वा. रा. वा. १३. २६)। दशरथ के द्वारा किये गये पुत्रकामेष्टि यज्ञ के समय इसे बड़े सम्मान के साथ निमंत्रित किया गया था।

५. कृष्ण को सत्यभामा से उत्पन्न पुत्रों में से एक।

६. (स. इ. भविष्य.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार बृहदश्व राजा का पुत्र था। विष्णु एवं वायु में इसके नाम के लिये 'भानुरथ' पाठभेद प्राप्त है।

भानुमत् औपमन्यव—एक आचार्य, जो आनन्दज चान्धनायन नामक आचार्य का शिष्य था। संभवतः यह उपमन्यु का वंशज था, जिस कारण इसे 'औपमन्यव' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था। इसके शिष्य का नाम ऊर्जयत् औपमन्यव था (वं. ब्रा. १)।

भानुमती—पूरुवंशीय राजा अहंपाति की पत्नी, जो कृतवीर्य राजा की कन्या थी। मांडारकर संहिता में इसके नाम के लिए 'अहंपाति' पाठभेद प्राप्त है। इसके पुत्र का नाम सावर्भौम था (म. आ. ९०.१५)।

२. अंगिरस् ऋषि की ज्येष्ठ कन्या, जो अत्यंत रूपवती थी (म. व. २०८.३)।

३. भानु यादव की कन्या, जो सहदेव 'पांडव' की पत्नी थी। निकुंभ नामक दानव ने इसका हरण किया था। पश्चात् अर्जुन, कृष्ण एवं प्रद्युम्न ने निकुंभ का वध कर, इसे विमुक्त किया (ह. वं. २.९०)।

४. बृहत्कल्प के धर्ममूर्ति राजा की पत्नी (धर्ममूर्ति देखिये)।

५. सगर राजा की पत्नी शैब्यकन्या केशिनी का नामान्तर (भा. ९.८.९)। इसके पुत्र का नाम असमंजस था।

६. बृहस्पति आंगिरस् ऋषि की कन्या, जो उसे शुभा नामक पत्नी से उत्पन्न हुयी थी।

७. धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधन राजा की एक पत्नी। स्कंद के अनुसार, इसने हाटकेश्वर नामक शिवलिंग की स्थापना की थी (स्कंद. ६.७३-७४)।

भानुरथ—इक्ष्वाकुवंशीय भानुमत् राजा का नामान्तर (भानुमत् ६. देखिये)।

भानुर्विद्—एक यादव (भा. १०.६.१४)।

भानुश्चंद्र—(स. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय, राजा, जो मत्स्य के अनुसार चंद्रगिरि राजा का पुत्र था।

भानुसेन—अंगराज कर्ण का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में भीम के द्वारा मारा गया था (म. क. ३२.४९)। पाठभेद (मांडारकर संहिता)—'सत्यसेन'।

भामिनी—वैशाली के अविश्रित राजा की पत्नी। इसके पुत्र का नाम मरुत था, जो आगे चल कर वैशाली का सुविख्यात सम्राट् बना (मार्क. १२४)। एक बार यह नागलोक में गयी थी, जहाँ इसने सर्पों को अभय दिया कि, इसका होनेवाला पुत्र मरुत उनकी रक्षा करेगा (मार्क. १२६)।

२. स्कंद की अनुचरी मातृका 'भामिनी' के लिए उपलब्ध पाठभेद (भामिनी देखिये)।

भायजात्य—निकोथक नामक आचार्य का पैतृक नाम (वं. ब्रा. ४.३७३)।

भारत—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक पैतृक नाम, जो भारत का पुत्र अथवा वंशज इस अर्थ से प्रयुक्त हुआ है। ऋग्वेद में निम्नलिखित सूक्तद्रष्टाओं का पैतृक नाम 'भारत' बताया गया है:—अश्वमेध (ऋ. ५.२७); देववात एवं देवश्रवर् (ऋ. ३.२३)।

भारद्वाज—उपनिषदों में निर्दिष्ट कई आचार्यों का सामुहिक नाम। बृहदारण्यक उपनिषद में इन्हें निम्नलिखित आचार्यों के शिष्य के रूप में निर्दिष्ट किया है:—भारद्वाज, पाराशर्य, बलाका कौशिक, ऐतरेय, अमुरायण एवं बैजवापायन (वृ. उ. २.५.२१ माध्यं; २.६.२ काण्व; ४.५.२७ माध्यं)।

२. ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक पैतृक नाम, जो भरत का पुत्र अथवा वंशज इस अर्थ से प्रयुक्त हुआ है। ऋग्वेद निम्नलिखित सूक्तद्रष्टाओं का पैतृक नाम 'भारद्वाज' बताया गया है:—ऋग्विश्वन् (ऋ. ६.४९); गर्भ (ऋ. ६.४७); गर्दभीविपीत, नर (ऋ. ६.३५); पायु (ऋ. ६.७५); वसु (ऋ. ९.८०); वाह्येय; शाश; शिरिबिठ (ऋ. १०.

१५५); धुनहोत्र (ऋ. ६.३३); शूष वाहेय (वं. ब्रा. २); सत्यवाह; सप्रत; सुकेशिन (प्र. उ. १.१); सुहोत्र (ऋ. ६.३१)।

३. एक सामवेदी श्रुतिर्षि।

४. अंगिरस् गोत्र का एक मंत्रकार एवं गोत्रकार।

५. एक ऋषि। वायु के अनुसार, 'ऋषिक' शब्द का अर्थ ऋषि का पुत्र, अथवा सन्यमार्ग से चलनेवाला आदर्श पुरुष, ऐसा दिया गया है (वायु. ५९.९२-९४)। मत्स्य एवं ब्रह्मांड में, इसके नाम के लिए 'भरद्वाज' पाठभेद प्राप्त है (मत्स्य. १४५.९५-९७; ब्रह्मांड. २. ३२.१०१-१०३)।

६. वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

७. एक श्रौतसूत्रकार, जिसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हैं:— १. भारद्वाज प्रयोग, २. भारद्वाज शिक्षा (कृष्णयजुर्वेद तैत्तिरीय शाखा); ३. भारद्वाज संहिता; ४. भारद्वाज श्रौतसूत्र (कृष्ण यजुर्वेद); ५. वृत्तिसार (C. C.)।

८. एक ऋषि, जिसने द्युमत्सेन राजा को आश्वामन दिया था, 'तुम्हारा पुत्र एवं सावित्री का पति सत्यवान् पुनः जीवित होगा' (म. व. २८२.१६)।

९. एक व्याकरणकार। सामवेद के 'ऋक्प्रतिशाख्य' के अनुसार व्याकरणशास्त्र का निर्माण सर्वप्रथम ब्रह्मा ने किया एवं उस शास्त्र की शिक्षा ब्रह्मा ने बृहस्पति को, बृहस्पति ने इंद्र को, एवं इंद्र ने भारद्वाज को दी। आगे चल कर व्याकरण का यही ज्ञान भारद्वाज ने अपने शिष्यों को प्रदान किया।

पाणिनि ने आचार्य भारद्वाज के व्याकरणविषयक मतों का उल्लेख किया है (पा. सू. ७.२.६३)। पतञ्जलि ने भी 'भारद्वाजीय व्याकरण' से संबंधित कई वार्तिकों का निर्देश किया है (महा. १.७३; १३६; २०१)।

ऋक्प्रतिशाख्य एवं तैत्तिरीय प्रतिशाख्य में भी, भारद्वाज के व्याकरण विषयक मतों का उल्लेख प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, आचार्य भारद्वाज ने 'पेद्र व्याकरण' की परंपरा को आगे चलाया। आगे चल कर, यही व्याकरण पाणिनीय व्याकरण में अंतर्भूत हुआ।

भारद्वाजायन--पंचविंश ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक आचार्य। भरद्वाज का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा। एक बार इसने एक सत्र का प्रारंभ किया, जिसमें हर एक दिन के अनुष्ठान का फल इसे पूछा गया था (पं. ब्रा. १०.१२.१)।

भारद्वाजि--भारद्वाज ऋषि का पुत्र।

भारद्वाजी--रान्नि नामक एक वैदिक सूक्तद्रष्टी का पैतृक नाम (रान्नि देखिये)।

भारद्वाजीपुत्र--एक आचार्य, जो पाराशरीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.५.१ माध्य.) बृहदारण्यक उपनिषद् में अन्यत्र इसे 'वात्सीमांडवीपुत्र' कहा गया है (बृ. उ. ६.४.३० माध्य; श. ब्रा. १४.९. ४.३०)।

२. एक आचार्य, जो पैङ्गीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (श. ब्रा. १४.९.४.३०)। इसके शिष्य का नाम हारिकर्णीपुत्र था।

३. एक आचार्य, जो पाराशरीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम वात्सीपुत्र था (श. ब्रा. १४.९.४.३१)।

भारुकच्छ--एक क्षत्रिय (म. स. ४७.८)। पाठभेद (भांडाकर संहिता)--'भरुकच्छ'।

भारुण्ड--उत्तर कुरुवर्ष में रहनेवाले महाबली पक्षियों का एक सामुहिक नाम। ये उत्तर कुरुवर्ष में मरे हुए लोगों की लाशों को उठा कर, कंदराओं में फेंक देते थे (म. भी. ८.२१)।

भार्ग--(सो. काश्य.) काशीदेश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार वैनहोत्र राजा का पुत्र था। इसके नाम के लिए 'भर्ग' पाठभेद भी प्राप्त है (भर्ग ३. देखिये)।

भार्गभू--(सो. काश्य.) काशीदेश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार भार्ग राजा का पुत्र था। भागवत, एवं वायु में इसके नाम के लिए 'भार्गभूमि' एवं 'गर्गभूमि' पाठभेद प्राप्त है।

भार्गभूमि--काशीदेश के 'भार्गभू' राजा के लिए उपलब्ध पाठभेद।

२. (सो. पूरु.) एक पूर्वशीय राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार, अमावसु राजा का पुत्र था।

भार्गव--एक कुलनाम, जो प्रायः भृगु वारुणि ऋषि के कुल में उत्पन्न लोगों के लिए प्रयुक्त किया जाता है। इस कुल में उत्पन्न प्रमुख व्यक्तियों के नाम निम्नलिखित हैं:-- च्यवन, उशीनर शुक, यत्समद, कवि, कुरुतु, जमदग्नि, परशुराम जामदग्न्य, नेम, प्रयोग, प्राचेतस, भृगु, वात्मीकि, वेन, सोमाहुति एवं स्यूमरदिम (भृगु वारुणि देखिये)।

परशुराम जामदग्न्य के द्वारा पृथ्वी निःक्षत्रिय किये जाने पर, उसे भार्गव कुल में उत्पन्न ब्राह्मणों ने 'अवभृथ

स्नान' का संकल्प बताया था। वर्तमान काल में इस कुल के ब्राह्मण प्रायः गुजरात प्रदेश में भड़ोच में दिखाई देते हैं।

२. वैवस्वत मन्वन्तर का तीसरा एवं छत्तीसवाँ व्यास।

३. ऋषभ नामक शिवावतार का शिष्य।

४. भौत्य मनु का एक पुत्र, जो सप्तर्षियों में से एक था।

५. एक देवसमूह, जिसमें बारह देव समाविष्ट थे (मत्स्य. १९५.१२-१३)।

भार्गवत--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भार्गायण--सुवन् नामक राजा का गोत्रनाम (सुवन् कैरिशीय भार्गायण देखिये)।

भार्ग्येय--भृगुकुल के 'भार्ग्येय' नामक गोत्रकार के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (भार्ग्येय देखिये)।

भार्म्यश्व--सुद्वल नामक ऋषि का पैतृक नाम।

भालदंन--वत्सप्रि नामक ऋषि का पैतृक नाम।

भालुकि--एक ऋषि, जो पांडवों के साथ द्वैतवन में गया था (म. स. ४.१३; व. २७.२२)।

२. एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से लंगलि ऋषि का शिष्य था।

इसने योगशास्त्र पर एक ग्रंथ लिखा था, जिसका आधार 'हृटप्रदीपिका' नामक ग्रंथ में लिया गया है (C. C.)।

भालुकीपुत्र--एक आचार्य, जो ऋषिकीपुत्र नामक ऋषि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम राधीतरीपुत्र था (बृ. उ. ६.५.२ काण्व.)।

२. एक आचार्य, जो प्राचीनयोगीपुत्र नामक ऋषि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम वैदभृतीपुत्र था (श. ब्रा. १४. ९.४.३२; बृ. उ. ६.४.३२ माध्य.)।

भालु प्रातृद--एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. ३०.३१.४)।

भालुवि--एक आचार्य, जिसके द्वारा प्रणीत एक आचारविशेष का निर्देश पंचविंश ब्राह्मण में प्राप्त है (पं. ब्रा. २.२.४)। सायण के अनुसार, यह व्यक्ति-वाचक नाम न हो कर किसी शाखा के नाम का द्योतक है।

भालुविन्--एक शाखाप्रवर्तक आचार्य, जिसके द्वारा निर्मित एक ब्राह्मण ग्रंथ प्राप्त है। इसके ग्रंथ का उद्धरण बौधायन धर्मसूत्र में उपलब्ध है (बौ. ध. १.२. ११)। कई ग्रंथों में इसका निर्देश बहुवचन में प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, यह किसी एक व्यक्ति का नाम न हो कर, किसी गुरुपरंपरा का नाम होगा (जै. उ. ब्रा. २.४.७)।

भालुघेय--इंद्रधुम्न नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १०.६.१-१; छां. उ. ५.११.१; १४.१)।

'भालुवि' का पुत्र होनेसे इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा। शतपथ ब्राह्मण में एक अधिकारी आचार्य के रूप में इसका निर्देश कई बार प्राप्त है (श. ब्रा. १.७.३.१९; २.१.४.६; १३.४.२.३)।

भावन--उत्तम मन्वन्तर का एक देवगण।

२. भृगु वासुि ऋषि को दिव्या नामक पत्नी से उत्पन्न बारह देवों में से एक।

भावयव्य--स्वनय नामक राजा का पैतृक नाम (स्वनय देखिये; सां. श्रौ. १५.११.५.)।

भावास्यायनि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भाविनि--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.११)। इसके नाम के लिए 'भामिनि' पाठभेद प्राप्त है।

भाव्य--स्वनय नामक राजा का पैतृक नाम (ऋ. १. १२६. १; नि. ९. १०)।

भास--एक तपस्वी, जो सद्वाद्वि में स्थित अत्रि ऋषि के आश्रम में रहनेवाले एक ऋषि का पुत्र था। यह विलास नामक राजा का परम मित्र था।

भासकर्ण--रावण का एक सेनापति, जो हनुमान् के द्वारा मारा गया (वा. श. सुं. ४६.३७)।

भासा--पुरुवंशीय राजा अयुतायिन् की पत्नी, जो पृथुश्रवस् राजा की कन्या थी। इसके पुत्र का नाम अक्रोधन था।

भासी--कश्यप ऋषि की कन्या, जो उसे ताम्रा नामक पत्नी से उत्पन्न हुयी थी। आगे चल कर, इससे भास, उलक आदि पक्षी उत्पन्न हुए।

२. एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा (अरिष्ट) से उत्पन्न आठ कन्याओं में से एक थी।

भासुर--तुषित देवों में से एक।

भास्कर--एक आदित्य, जो कश्यप एवं अदिति से उत्पन्न बारह आदित्यों में से एक था।

२. स्कंद के भास्वर नामक पार्षद के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (भास्वर देखिये)।

भास्करि--एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने आया था (म. शां. ४७.६६३; पंक्ति. ११)।

भास्वर--सूर्य के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम सुभ्राज था (म. श.

४४.२८)। इसके नाम के लिए 'भास्कर' पाठभेद प्राप्त है।

भिक्षु आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ११७)।

भिक्षुवर्ष—शंकर का एक अवतार, जिसने सत्यरथ नामक राजा को काफ़ी त्रस्त किया था (सत्यरथ देखिये)।

भिवज् आथर्वण—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १७)।

२. काठक संहिता में निर्दिष्ट एक प्राचीन चिकित्सक (का. सं. १६.३)।

भीम—(सो. कुरु.) कुशवंशीय पांडु राजा को कुन्ती से उत्पन्न पाँच पुत्रों में से तीसरा पुत्र (भीमसेन पांडव देखिये)।

२. एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं मुनि का पुत्र था।

३. तीसरे मरुद्गणों में से एक।

४. विकुंड देवों में से एक।

५. एकादश रुद्रों में से एक।

६. एक अग्नि, जो पांचजन्य अथवा तप नामक अग्नि का पुत्र था।

७. एक राक्षस, जो हिरण्यशक्ष एवं देवताओं के बीच हुए युद्ध में अग्नि के हाथों मारा गया (पद्म. सु. ७५)।

८. एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में से एक था।

९. (सो. अमा.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, विजय राजा का पुत्र था। विष्णु एवं वायु में, इसे अमावसु राजा का पुत्र कहा गया है।

१०. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो हरिवंश एवं ब्रह्म के अनुसार, ज्यामथ राजा का पुत्र था। महा-भारत में इसे 'निमि' कहा गया है। संभवतः यह क्रथ राजा का नामांतर रहा होगा।

११. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो दशार्ह (विदुरथ) राजा का पुत्र था (पद्म. सु. १३)।

१२. (सो. क्रोष्टु.) आनर्त (गुजराथ देश) का एक यादव राजा, जो सत्वत राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम अंधक था। यह राम दशरथी राजा का समकालीन था। शत्रुघ्न ने मत्स्य दैत्य का वध कर मथुरा नगरी की स्थापना की, उस नगरी को इसने जीत लिया था।

१३. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो इलिन एवं रथन्तरी का पुत्र था (म. भा. ८९.१५)। इसे निम्नलिखित चार भाई थे:—दुष्यंत, शर, प्रवसु, एवं वसु।

१४. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो वायु के अनुसार, महावीर्य राजा का पुत्र था।

१५. एक राक्षस, जो लंकानरेश रावण का मित्र था। लंका में आने के बाद, हनुमान सर्वप्रथम इसके घर के छपरे पर अवतीर्ण हुआ था (वा. रा. सुं. ६)।

१६. (सो. कुरु.) एक कुरुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार, रुचिर राजा का पुत्र था।

१७. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ६०.३१)।

१८. पाँच विनायकों में से एक। देवताओं के यज्ञ का विनाश करनेवाले पांचजन्य के द्वारा इन पाँच विनायकों का निर्माण हुआ था।

१९. अंश के द्वारा स्कंद को दिये गये पाँच पार्षदों में से एक। अन्य पार्षदों के नाम निम्नलिखित थे:—परिष, वट, दहति, एवं दहन।

२०. यमसभा में रह कर यम की उपासना करनेवाले राजाओं का एक समूह, जिसमें कुल सौ राजा समाविष्ट थे। प्राचीन काल में ये राजा पृथ्वी के शासक थे; किन्तु काल से पीड़ित हो कर ये पृथ्वीलोक छोड़ कर यमसभा में उपस्थित हुए (म. शां. २२७.४९)।

२१. गौड देश में रहनेवाले दुर्ध्व नामक ब्राह्मण का मित्र। गणेशपुराण में वर्णित बुध नामक दुराचारी ब्राह्मण की कथा में इसका निर्देश प्राप्त है (गणेश. १.७६; बुध. ८. देखिये)।

२२. द्वापर युग में उत्पन्न हुआ एक शूद्र। यह अत्यंत दुराचरणी एवं चौर्यकर्म में निपुण था। एक बार यह एक ब्राह्मण के घर चोरी के हेतु गया, एवं उसकी सेवा करने के बहाने वहीं रह गया।

पश्चात् ब्राह्मण के घर चोरी के हेतु आये हुए कई अन्य चोरों के हाथों यह मारा गया। मृत्यु के पश्चात्, किंचित्-काल तक की गयी ब्राह्मणसेवा के कारण इसका उद्धार हुआ (पद्म. ब्रह्म. १४)।

२३. एक स्वाटिक, जिसकी कथा गणेश पुराण में शमीवृक्ष का महात्म्य बताने के लिए कथन की गयी है।

२४. एक कुम्हार, जो तोण्डमान नामक राजा के राज्य में रहता था। यह रोज श्रीनिवास की पूजा करता था, जिस कारण इसका उद्धार हुआ (स्कंद. २.१.१०)।

२५. विदर्भ देश के कौण्डिन्य नगरी का राजा, जो चित्रसेन राजा का पुत्र था। इसे कोई पुत्र न था, जिस कारण विरक्त हो कर, इसने अपना राज्य मनोरंजन एवं

सुमन्तु नामक प्रधानों के हाथों सौंप दिया, एवं यह वन में चला गया।

वन में इस विश्वामित्र ऋषि आ मिले, जिन्होंने इसे गणेश उपासना का व्रत करने के लिए कहा। यह व्रत करने पर इसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम रुक्मांगद था (गणेश. १.१९-२७)।

२६. विदर्भ देश का एक राजा, जो दमयंती का पिता था (भीम वैदर्भ देखिये)।

भीम वैदर्भ—विदर्भ देश का सुविख्यात राजा, जो निषधराज नल की पत्नी दमयंती का पिता था। यह एवं चेदि देश का राजा वीरधाहु समवर्ती थे।

दशार्ण नरेश सुदामन् की कन्या इसकी पत्नी थी (म. व. ६६.१२-१३)। काफ़ी वर्षों तक अनपत्य रहने के बाद, दमन ऋषि की कृपाप्रसाद से इसे तीन उत्तम पुत्र एवं एक कन्या प्राप्त हुयी। इसके पुत्रों के नाम दम, दान्त एवं दमन थे, एवं कन्या का नाम दमयंती था (म. व. ५०.९)।

इसके द्वारा किये गये दमयंती के स्वयंवर में निषध देश का राजा नल का दमयंती ने बरण किया (म. व. ५४.२५)। कलि केशव से नल एवं दमयंती को अत्यधिक कष्ट सहने पड़े; उस समय इसने उन दोनों को एवं उनके पुत्रों को काफ़ी सहाय्यता की थी (दमयंती एवं नल देखिये)।

२. विदर्भ देश का सुविख्यात राजर्षि, जिसका निर्देश ऐतरेय ब्राह्मण में निर्दिष्ट 'सोम परंपरा' में प्राप्त है। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, शार्णग नामक पुरोहितगण के द्वारा यज्ञवेदी की स्थापना की जाने पर, सोमविद्या की विशिष्ट परंपरा देवावृष ने भीम राजा को सिखायी, एवं उसी परंपरा भीम ने वैदर्भ राजा को सिखायी (ऐ. ब्रा. ७.३४)। उस ग्रंथ में, भीम एवं वैदर्भ को अलग व्यक्ति माना गया है। किंतु सायणाचार्य के अनुसार, ये दोनों एक ही व्यक्ति थे।

इसकी कथा में नारद एवं पर्वत इन दो ऋषियों का संबन्ध निर्दिष्ट है, किंतु उसके बारे में निश्चित रूप से कहना असंभव है।

भीमक—विदर्भ देश के भीष्मक राजा का नामांतर (भीष्मक देखिये)।

भीमकाय—त्रिपुरासुर का एक सेवक। त्रिपुर ने इसे कुछ काल तक पृथ्वी का राज्य प्रदान किया था (गणेश. १.३९.१३)।

भीमकी—कृष्ण की पत्नी रुक्मिणी का नामांतर।

भीमकेश—एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम केशिनी था। बृहद्वज नामक राक्षस ने उसका हरण किया था (बृहद्वज देखिये)।

भीमजानु—एक प्राचीन नरेश, जो यमसभा में उपस्थित था (म. व. ८.१९)।

भीमपायन—कश्यपकुल के मौजपायन नामक गोत्रकार के लिए उपलब्ध पाठभेद (मौजपायन देखिये)।

भीमबल—धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। इसके नाम के लिए भूरिबल पाठभेद भी प्राप्त है (म. आ. परि. १.४१.१५)। भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा इसका वध हुआ।

२. एक देवता, जो पांचजन्य के द्वारा उत्पन्न पाँच विनायकों में से एक थी।

भीमरथ—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीमसेन ने इसका वध किया।

२. कौरवपक्षीय एक योद्धा, जो द्रोणनिर्मित गरुडव्यूह के हृदयस्थान में खड़ा हुआ था (म. द्रो. १९.३३)। पांडवपक्षीय म्लेंच्छराज शाल्व राजा का इसने वध किया था (म. द्रो. २४.२६)।

३. युधिष्ठिर की सभा एक राजा (म. स. ४.२२)।

४. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार विकृति राजा का पुत्र था। मत्स्य में इसे विमल राजा का पुत्र कहा गया है।

५. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो भागवत एवं वायु के अनुसार केलुमत राजा का पुत्र था। विष्णु में इसके नाम के लिए 'अमिरथ' पाठभेद प्राप्त है। महाभारत में इसका निर्देश 'भीमसेन' नाम से किया गया है (भीमसेन ३. देखिये)।

भीमविक्रम—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

भीमवेग—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भीमवेगर्व—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

भीमशंकर—एक शिवलिंग, जो सहाद्रि में स्थित डाकिनी क्षेत्र में है। इसने भीम का वध कर कामरूपेश्वर सुदक्षिण राजा का रक्षण किया (शिव. शत. ४२)।

महाराष्ट्र में पूना जिले में स्थित भीमाशंकर नामक शिवस्थान यही है। इसके उपलिंग का नाम भीमेश्वर है (शिव. कोटि. १)।

- भीमशर-धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक ।

भीमसेन—एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं मुनि का पुत्र था । यह अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था ।

२. (सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार, ऋक्ष राजा का पुत्र था । मत्स्य के अनुसार, यह ऋक्ष राजा का पुत्र था ।

३. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जिसका निर्देश पुराणों में 'भीमरथ' नाम से प्राप्त है (भीमरथ २. देखिये) ।

इसके पुत्र दिवोदास को गालव ऋषि ने अपनी कन्या माधवी विवाह में दी थी । इसका पुत्र होने के कारण, दिवोदास को 'भीमसेन' पैतृकनाम प्राप्त था (म. उ. ११७.१; क. सं. ७,२) ।

भीमसेन 'पांडव'—(सो. कुरु.) पाण्डु राजा के पाँच 'क्षेत्रज' पुत्रों में से एक, जो वायु के द्वारा कुन्ती के गर्भ से उत्पन्न हुआ था । इसके जन्मकाल में आकाशवाणी हुयी थी, 'यह बालक दुनिया के समस्त बलवानों में श्रेष्ठ जनैगा (म. आ. ११४.१०) ।

पाण्डवों में भीम का स्थान सर्वोपरि न कहें, तो भी वह किसी से भी कुछ कम न था । बाल्यकाल से ही यह सबका अगुआ था । भीम के बारे में कहा जा सकता है कि, यह बल से भी कठोर, एवं कुसुम से भी कोमल था । एक ओर, यह अत्यंत शक्तिशाली, महान् क्रोधी तथा रणभूमि में शत्रुओं का संहार करनेवाला विजेता था । दूसरी ओर, यह परमप्रेमी, अत्यधिक कोमल स्वभाववाला दयालु धर्मात्मा भी था । न जाने कितनी बार, किन किन व्यक्तियों के लिए अपने प्राणों पर खेल कर, इसने उनकी रक्षा कर, अपने धर्म का निर्वाह किया । इस प्रकार इसका चरित्र दो दिशाओं की ओर विकसित हुआ है, तथा दोनों में कुछ शक्तियों पृष्ठभूमि के रूप में इसे प्रभावित करती रहीं । वे हैं, इसका अविषेकी, उद्दण्ड एवं भावुक स्वभाव ।

भीम निश्चल प्रकृति का, भोलाभाला, सीधा साफ आदमी था; यह राजनीति के उदटे सीधे दौंव-पेंच न जानता था । सबके साथ इसका सम्बन्ध एवं द्वाँव स्पष्ट था, चाहे वह मित्र हो, या शत्रु । यह स्पष्टवक्ता एवं निर्भीक प्राणी था ।

परम शारीरिक शक्ति का प्रतीक मान कर, श्री व्यास के द्वारा, भीमसेन का चरित्रचित्रण किया गया है । पांडवों में से अर्जुन शस्त्रास्त्रविद्या का, भीम शारीरिक शक्ति का, एवं पांडवपत्नी द्रौपदी भारतीय

नारीतेज का प्रतीक माने जा सकती हैं । ये तीनों अपने अपने क्षेत्र में सर्वोपरि थे, किंतु पांडवपरिवार के बीच हुए कौटुंबिक संघर्ष में, इन तीनों को उस युधिष्ठिर के सामने हार खानी पड़ती थी, जो स्वयं आत्मिक शक्ति का प्रतीक था । संभव है, इन चार ज्वलंत चरित्रचित्रणों के द्वारा श्रीव्यास को यही सूचित करना हो कि, दुनिया की सारी शक्तियों में से आत्मिक शक्ति सर्वश्रेष्ठ है ।

स्वरूपवर्णन—भीम का स्वरूपवर्णन भागवत में प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, यह अत्यंत भव्य शरीरवाला स्वर्ण कान्तियुक्त था । इसके ध्वज पर सिंह का राजचिन्ह था, एवं इसके अश्व रीछ के समान कृष्णवर्ण थे । इसके धनुष का नाम 'वायव्य', एवं शंख का नाम 'पाँडू' था । इसका मुख्य अस्त्र गदा था ।

कौरवों का, विशेष कर दुर्योधन तथा धृतराष्ट्र का, यह आजन्म विरोधी रहा । दुर्योधन इससे अत्यधिक विद्वेष रखता था, एवं धृतराष्ट्र इससे काफी डरता था । भागवत के अनुसार, इसने दुर्योधन एवं दुःशासन के सहित, सभी धृतराष्ट्रपुत्रों का वध किया था (भा. १.१५. १५) ।

बाल्यकाल—जन्म से ही यह अत्यन्त बलवान् था । जन्म के दसवें दिन, यह माता की गोद से एक शिलाखण्ड पर गिर पड़ा । किंतु इसके शरीर पर जरा सी भी चोट न लगी, एवं चट्टान अवश्य चूर चूर हो गयी (म. आ. ११४.११-१३) । इसके जन्म लेने के उपरांत इसका नामकरण संस्कार शतश्रृंग ऋषियों के द्वारा किया गया । बाद को वसुदेव के पुरोहित काश्यप के द्वारा इसका उपनयन संस्कार भी हुआ ।

भीम बाल्यकाल से ही अत्यंत उदंड था । कौरवपांडव बाल्यावस्था में जब एकसाथ खेला करते, तब किसी में इतनी ताकत न थी कि, इसके द्वारा की गयी शरारत का जवाब दे । दुर्योधन अपने को सब बालकों में श्रेष्ठ, एवं सर्वगुणसंपन्न राजकुमार समझता था । किंतु इसकी ताकत एवं दौतानी के आगे उसको हमेशा मुँह की खानी पड़ती थी (म. आ. १२७.५-७) । भीम भी सदैव दुर्योधन की झूठी शान को चूर करने में चूकता न था । इस प्रकार शुरू से ही पाण्डवों का अगुआ बन कर, यह दुर्योधन के नाके चने चबवाये रहता । इस प्रकार, इसके कारण आरम्भ से ही, पाण्डवों तथा कौरवों के बीच एक बड़ी खाई का निर्माण हो चुका था ।

दुर्योधन के षड्यंत्र—दुर्योधन कौरवपुत्रों में बड़ा होशियार, चालबाज एवं धूर्त था। उसने इसे खत्म करने के अनेकानेक कई षड्यंत्र रचे। आजीवन वह भीम की जान के पीछे पड़ा ही रहा, कारण वह नहीं चाहता था कि, यह कौटा उसे जीवन भर चुभता रहे। एक बार जब यह सोया हुआ था, तब दुर्योधन ने इसे ऊपर से नीचे फेंकवा दिया, किन्तु इसका बाल बांका न हुआ। दूसरी बार उसने इसे सर्पों द्वारा कटवाया, तथा तीसरी बार भोजन में विष मिलवा कर भी इसे खिलवाया, पर भीम जैसा का तैसा ही बना रहा (म. आ. ११९)।

जब दुर्योधन के ये षड्यंत्र सफल न हुए, तब उसने इसका बंध करने के लिए एक दूसरी युक्ति सोची। उसने गंगा नदी से जल काट कर, एक जलग्रह का निर्माण किया, एवं उसमें जलक्रीड़ा करने के लिए पाण्डुपुत्रों को आमंत्रित किया। जब सब लोग जलक्रीड़ा कर रहे थे, तब सभी ने एक दूसरे को फल देकर जलविहार किया। दुर्योधन ने अपने हाथों से भीम को विषयुक्त फल खिलवाये, जिसके कारण जलक्रीड़ा करता हुआ भीम थक कर नदी के किनारे आ कर लेट गया, तथा नींद में सो गया। यह सुअवसर देख कर, दुर्योधन ने इसे लता एवं पल्लवादि से बंध कर बहती धारा में फेंकवा दिया (म. आ. ११९. परि. १. ७३)। इस प्रकार जल के प्रवाह में बहता हुआ भीम पाताल में स्थित नागलोक जा पहुँचा।

नागलोक में—नागलोक पहुँचते ही, इसके शरीरभार से अनेकानेक शिष्टनाग कुचल कर मर गये, जिससे क्रोधित हो कर सर्पों ने इसके ऊपर हमला बोल दिया, एवं इसको खूब काटा, जिससे इसके शरीर का विष उतर गया, एवं मूर्च्छा जाती रही। जाग्रत अवस्था में आकर, यह नागों को मारने लगा, जिससे घबरा कर वे सभी भागते हुए नागराज वासुकि के पास अपनी आपबीती सुनाने गये। वासुकि पहचान गया कि, सिषाय भीम के और कोई नहीं हो सकता।

वासुकि इसके पास तुरन्त आया, एवं इसे आदर-पूर्वक अपने घर ले जा कर इसकी बड़ी आवभगत की (आर्यक देखिये)। हजारों नागों के बल को देनेवाले अमृत कुंभ को दिखा कर उसने भीम से कहा कि, जितना चाहो मनमानी पी कर आराम करो। तब इसने आठ कुंभों को आठ घूँट में ही पी डाला, एवं पी कर ऐसा सोया कि, आठ दिन बाद ही उठा। इन आठ कुंभों के दिव्य रसपान से इसे एक हजार हाथियों का बल प्राप्त हुआ। इसके

जगने के उपरांत, नागों के द्वारा इसका मंगलान्तरण गाया गया, एवं उनके द्वारा इसे दस हजार हाथियों के समान बलशाली होने का बरदान दिया गया। बाद को यह नागों के द्वारा नागलोक से पृथ्वी पर पहुँचा कर, सकुशल विदा किया गया।

नागलोक से लौट कर यह खुशी खुशी हस्तिनापुर आ पहुँचा, एवं इसने अपनी सारी कथा माँ कुंती को प्रणाम कर कह सुनायी। कुंती ने सब कुछ सुन कर, इस कथा को किसीसे न कहने का आदेश दिया।

शिक्षा—इसने राजर्षि शुक्र से गदायुद्ध की शिक्षा प्राप्त की थी (म. आ. परि. १. क्र. ६७)। अन्य पाण्डवों की भाँति, इसे भी कृपाचार्य ने अश्वत्थामा की शिक्षा दी थी (म. आ. १२०.२१)। पश्चात् द्रोणाचार्य ने इसे एवं अन्य पाण्डवों को नानाप्रकार के मानव एवं दिव्य अस्त्र-शस्त्रों की शिक्षा दी थी।

गदायुद्ध की परीक्षा लेते समय, इसके तथा दुर्योधन के बीच लड़ाई छिड़नेवाली ही थी कि, गुरु द्रोण ने अपने पुत्र अश्वत्थामा के द्वारा उन्हे शांति कराया (म. आ. १२७)। युधिष्ठिर के युवराज्यभिक्षेक होने के उपरांत, बलराम ने इसे खड़ा, गदा एवं रथ के बारे में शिक्षा दे कर अत्यधिक पारंगत कर दिया (म. आ. परि. १ क्र. ८०. पंक्ति. १-८)।

भीम तथा अर्जुन की शिक्षा समाप्त होने के उपरांत, द्रोण ने गुरुदक्षिणा के रूप में इनसे कहा कि, ये सत्सैन्य राजा द्रुपद को परास्त करें। इस युद्ध में भीम ने अपने शौर्यबल से द्रुपद राजा की राजसेना को परास्त किया, एवं उसकी राजधानी कुचल कर ध्वस्त कर देनी चाही, किन्तु अर्जुन ने इसे रोक कर, राज्य को विनष्ट होने से बचा लिया (म. आ. परि. १. क्र. ७८. पंक्ति. ५१-१५५)।

लाक्षाग्रहदाह—वारणावत में, धृतराष्ट्र के आदेशानुसार बनाये गये लाक्षाग्रह में अन्य पाण्डवों तथा कुन्ती के साथ, यह भी जल कर मरनेवाला था, किन्तु विदुर के सहयोग से सारे पाण्डव बच गये। लाक्षाग्रह से निकलने के उपरांत, इसने अपने हाथ से ही लाक्षाग्रह को जला दिया, जिसमें शरात्र पिये अपने पाँच पुत्रों के सहित टहरी हुई एक औरत जल मरी। उसीमें शरात्र के नरों में चूर दुर्योधन का एक सेवक भी जल गया था (म. आ. १३२-१३६)।

लाक्षाग्रह से निकल कर, अपने भाइयों के साथ विदुर के सेवक की मदद से, इन्होंने गंगा नदी पार की। तदोपरांत शीघ्रतिशीघ्र दूर भाग चलने के हेतु से, अपने माँ को कन्वे पर, नकुल-सहदेव को कमर पर, तथा धर्मार्जुन को हाथ में लेकर दौड़ते हुए, भीम ने एक जंगल में आ कर शरण ली। कुन्ती तथा अन्य पांडव थक कर इतने प्यासे हो गये थे कि, उन्हें पेड़ की छाया में लिटा कर, यह पानी लाने गया। पानी ला कर इसने देखा कि, सब थक कर सो गये हैं। अतएव यह उनके रक्षार्थ जगता हुआ, उनके उठने की प्रतीक्षा में बैठा रहा।

हिडिंबाविवाह--इसी वन में, एक नरभक्षक राक्षस हिडिंबा रहता था, जिसने मनुष्यसुगन्धि का अनुमान लगा कर, अपनी बहन हिडिंबा को इन्हें लाने के लिए कहा। हिडिंबा आई, तथा भीम को देखकर, इसके व्यक्तित्व पर मोहित होकर, इसे वरण में प्राप्त कर लेनेके लिए निवेदन करने लगी। किन्तु भीम ने हिडिंबा की इस प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया। उधर अधिक देर हो लाने पर, वस्तुस्थिति की जाँच करता हुआ हिडिंबा राक्षस भी आ पहुँचा। पहले भीम एवं उसमें वादविवाद हुआ, फिर दोनों युद्ध में जुड़ने लगे।

इस द्वन्द्वयुद्ध की आवाज़ से सभी पांडव जग पड़े, एवं उन्हें खारी बातें भीम के द्वारा पता चलीं। पश्चात् भीम ने हिडिंबा राक्षस का वध किया, एवं कुन्ती तथा अपने भाइयों के साथ इसने आगे चलने के लिए प्रस्थान किया।

किन्तु हिडिंबा ने इसका साथ न छोड़ा, वह इसका पीछा करती हुई साथ लगी ही रही। अन्त में कुन्ती ने इन दोनों में मध्यस्थता कर के भीम को आदेश दिया कि, वह हिडिंबा का वरण करे। भीम ने हिडिंबा के सामने एक शर्त रखी कि, उसके एक पुत्र होने तक ही यह उसके साथ भोगसम्बन्ध रखेगा। हिडिंबा ने इसे अपनी स्वीकृति दे दी, तथा दोनों का विवाह हो गया। विवाह के उपरांत भीम एवं हिडिंबा रम्य स्थानों में घूमते हुए वैवाहिक जीवन के आनंदों में निमग्न रहे। कालान्तर में, इसे हिडिंबा से घटोत्कच नामक पुत्र हुआ।

बकासुरवध--महर्षि व्यास के कथनाुपसार, यह अन्य पाण्डवों एवं अपनी माँ के साथ एकचक्रा नगरी में गया, जहाँ अपनी माता के आदेश पर, इसने बकासुर का वध कर, एकचक्रानगरी को कर्ण से उतारा था (वक देखिये)।

द्रौपदीस्वयंवर--द्रुपद राजा की कन्या द्रौपदी (कृष्णा), जब स्वयंवर में अर्जुन द्वारा जीती गयी, तब वहाँ पर हुए

युद्ध में इसका एवं शत्रु का भीषण युद्ध हुआ था। द्रौपदी को जीत कर, अर्जुन और भीम वापस लौटे, एवं माँ से विनोद में कहा कि, हम लोग मिथ्या लखे हैं। मजाक को न समझ सकने के कारण, माँ ने उस मिथ्या को आपस में बाँट लेने को कहा। इस प्रकार द्रौपदी अर्जुन के साथ भीमादि की भी पत्नी हुयी (म. आ. १८०-१८१)।

जरासंधवध--धर्मराज ने राजसूय यज्ञ किया, जिसमें कृष्ण की सलाह से युधिष्ठिर ने अर्जुन तथा भीम को जरासंध पर आक्रमण करने को कहा। वहाँ भीम एवं जरासंध में दस दिन युद्ध चलता रहा, और जब जरासंध लड़ते लड़ते थक सा गया, तब कृष्ण के संकेत पर, इसने उसे खड़ा चीर कर फेंक दिया। किन्तु वह फिर लड़ गया। तब कृष्ण के द्वारा पुनः संकेत पा कर, इसने उसे फिर चीर डाला, तथा दाहिने भाग को अपनी दाहिनी ओर, तथा बायें भाग को अपने बायों ओर फेंक दिया, जिससे दोनों शरीर के भाग जुड़ न सके (म. स. १८)।

पूर्वदिग्बिजय--फिर भीम को धर्मराज ने पूर्व दिशा की ओर विजय प्राप्त करने के लिए भेजा, जिसमें राजा भद्रक इसके साथ था (भा. १०.७२.४४)। इसने क्रमशः पांचाल, विदेह गण्डक, दशार्ण तथा अश्वमेध इत्यादि पूर्ववर्ती देशों को जीत कर, दक्षिण के पुलिन्द नगर पर धावा बोल दिया। वहाँ के राजा को जीत कर, यह चेदिराज शिशुपाल के पास गया, तथा वहाँ एक माह रह कर, इसने कुमार देश का श्रेणिमन्त राजा को जीता। फिर 'गोपालकच्छदेश', उत्तरकोसल, महाराषिप, हिमालय के समीपवर्ती जलोद्भव देश, भल्लाट, शुक्तिमानुपर्वत, काशिराज सुवाहु, सुपार्थ, राजपति क्रथ, मत्स्यदेश, मलद, अमपदेश, पशुभूमि, मदधर पर्वत तथा सोमधेयों को जीत कर, यह उत्तर की ओर मुड़ा। बाद में भीम ने वत्सभूमि, भर्गाषिप, निषादाधिपति, मणिमत् आदि प्रमुख राजाओं के साथ साथ, दक्षिणमल्ल, भोगवानुपर्वत, शर्मक, बर्मक, वैदेहक जनक आदि को सुलभता के साथ जीत लिया।

शक तथा वरुणों को जीतने के लिये, इसने उन्हें कूटनीति से जीता। इनके अतिरिक्त इंद्रपर्वत के समीप के किराताधिपति, सुहा, प्रसुहा, मागध, राजा दण्ड, राजा दण्डधार, तथा जरासंध के गिरिव्रज नगर आदि को अपने पौरुष के बल जीत लिया। फिर इन्हीं लोगों की सहायता ले कर, कर्ण तथा पर्वतवासी राजाओं को जीत कर, मोदागिरी के राजा का वध कर, इसने पुंड्राधिप वासुदेव पर आक्रमण बोल दिया। पश्चात् कौशिकी कच्छ

केमहौजस राजा को जीत कर, हरने बंगराज पर आक्रमण कर दिया।

इसकी विजय यही समाप्त न हुयी। इसके उपरांत समुद्रसेन, चन्द्रसेन, ताम्रलिप्त, कर्कटाधिपति, सुह्लाधिपति सागरवासी ग्लेच्छों, लोहित्यों आदि को जीत कर, यह इंद्रप्रस्थ को वापस आया (म. स. २६-२७)।

राजसूययज्ञ—चारों भाई जब चारों दिशाओं से दिग्विजय कर के, अतुल धनराशि के साथ वापस लौटे, तब धर्मराज ने राजसूययज्ञ आरंभ किया। इस यज्ञ में हर भाई को भिन्न भिन्न कार्य सौंपे गये, जिसमें भीम को पाकशाला का अधिपति बनाया गया (भा. १०.७५. ४)।

यह राजसूययज्ञ मयसभा में हुआ, जिसकी रचना बड़ी चतुरता के साथ की गयी थी। जो कोई उसे देखता, वह उसकी विचित्रता देख कर चकित रहा जाता। इस सभा में पाण्डवों ने अपने बलेश्वर्य की ऐसी झाँकी प्रस्तुत की, कि दुर्योधन ईर्ष्या से जला जा रहा था। इसके सिवाय उसे कई जगह मूर्ख बनना पड़ा, तथा जहाँ कहीं दुर्योधन को नीचा देखना पड़ता, वहीं भीम अट्टहास करता हुआ उसकी हँसी उड़ाता। इसका यह परिणाम हुआ कि, दुर्योधन ने पाण्डवों के समस्त ऐश्वर्य को कुचल कर भिटा देने के लिए, एक योजना बनाई।

द्रौपदीबन्धहरण—दुर्योधन ने धर्मराज को द्यूतक्रीड़ा के लिए बुलाया। दुर्योधन ने अपने स्थान पर शकुनि को आसन दे कर, कण्टतापूर्ण हंग से धर्मराज की समस्त धनसंपत्ति का ही हरण न किया, बल्कि द्रौपदी को भी जीत कर, उसे भरी सभा में बुला कर, उसका अपमान किया। दुःशासन उसका बख्त खींचने लगा, एवं दुर्योधन अपने शर्य अंग को नम्र कर के द्रौपदी के सामने खड़ा हो गया। दुःशासन की इस वृष्टता को देख कर, भीम उबल पड़ा, एवं इसने उसकी बाँधी जाँघ तोड़ देने की, एवं उसकी छाती फाड़ कर उसका रक्त पीने की भीषण प्रतिज्ञा की (म. स. ५३.६३)।

अपने भाई युधिष्ठिर के ही कारण, द्यूतक्रीड़ा का भयानक संकट आ गया, यह सोचकर भीम युधिष्ठिर से अत्यधिक क्रोधित हुआ। इसने उससे कहा, 'जो कुछ हुआ है, उसके जिम्मेदार तुम ही हो। तुम्हारे ही हाथों का दोष है, जिन्होंने द्यूत खेल कर धनलक्ष्मी, ऐश्वर्य सब कुछ मिट्टी में मिला दिया'। इतना कहा कर इसने अपने भाई सहदेव से कहा:—

“अस्याः कृते मन्युरयं त्वयि राजन्निपात्यते।
बाहू ते संप्रधक्ष्यामि, सहदेवाग्निमानय ॥”

(म. स. ६१.६)

(तुम मुझे अग्नि ला कर दो, मेरी इच्छा है कि, युधिष्ठिर के द्यूत खेलनेवाले हाथों को जला दूँ)।

दुःशासन के द्वारा किये गये उपहास पर क्रोधित होकर, इसने प्रण किया कि, यह दुर्योधन के साथ धृतराष्ट्र के सभी पुत्रों का वध करेगा (म. स. ६८.२०-२२)।

वनवास—वनवातगमन का निश्चय हो जाने के उपरांत, भीम समस्त भाईयों के साथ वन की ओर चल पड़ा। वहाँ बक के भाई किर्मीर के साथ युधिष्ठिर की ऐसी बातें हुई कि, स्थिति युद्ध तक आ पहुँची। तब भीम ने उसे परास्त कर उसका वध किया (म. व. १२.२२-६७)।

वनवासकाल में जब द्रौपदी ने युधिष्ठिर से संन्यास-वृत्ति को त्याग कर, राज्यप्राप्ति के लिए प्रयत्न करने को कहा, तब भीम ने भी धर्मराज के पुरुषार्थ की प्रशंसा करते हुए, उसे युद्ध के लिए उत्साहित किया था।

इसने युधिष्ठिर से कहा, 'तुम्हें धर्माचरण ही करना हो तो तुम संन्यास ले कर तपस्या करने वन में चले जाना' (म. व. ३४)। किन्तु धर्मराज के युक्तिपूर्ण वचनों के आगे यह चुप हो गया (म. व. ३४-३६)।

गर्वहरण—एक बार, जब यह द्रौपदी से प्रेमालाप करता हुआ बातों में विभोर था, तब-हवा में उड़ता हुआ एक हजार पंजुडियोंवाला (सहस्रदल) कमल इनके सामने आ गिरा। तब द्रौपदी ने उस प्रकार के कई कमल इससे खाने को कहे। अपनी प्रियतमा की इच्छा पूर्ण करने के लिए भीम वैसे ही पुष्प खाने के लिए गंधमादन पर्वत पर आ पहुँचा (म. व. १४६.१९)। इसके चलते समय होनेवाली गर्जना से हनुमान् ने इसे पहचान लिया, तथा आगे जाने पर कोई इसे शाप न दे, इस भय से वह मार्ग में अपनी पूँछ फैला कर बैठ गया।

वहाँ आ कर इसने हनुमान को मार्ग से हटने लिए कहा, तथा उसके न हटने पर, इसने उसकी पूँछ पकड़ कर फेंक देने का प्रयत्न किया। किन्तु जब यह पूँछ तक न उठा सका, तब यह उसकी शरण में गया। हनुमान ने इस प्रकार इसके अभिमान को नीचा दिखा कर, इसे सन्तु-पदेश दिए। समुद्रोत्थवन काल में धारण किये गये अपने विराटरूप को दिखा कर, हनुमान् ने भीम को आशीर्ष दे कर वर दिया, 'जिस समय तुम रण में सिंहनाद करोगे, उस समय मैं अपनी आवाज़ से तुम्हारी-आवाज़

दीर्घकाल तक निनादित कल्लंगा, तथा अर्जुन के रथ पर बैठ कर तुम्हारी रक्षा करूँगा' (म. व. १५०.१३-१५)। इतना कह कर परिस्थिति समझाते हुए हनुमान् ने इसे आगे जाने के लिए कहा। उसने इसे सौगंधिक सरोवर का मार्ग बता कर कमलों के प्राप्त करने की विधि भी बताई (म. व. १४६-१५०)।

कुबेर से विरोध—यह सरोवरो से कमल प्राप्त करने के लिए सौगन्धिकवन पहुँचा। वहाँ कैलास की तलहटी में स्थित कुबेर का सौगन्धिक सरोवर था, जिसकी रक्षा के लिए उसने क्रोधवश नामक राक्षस रख छोड़े थे। इसका क्रोधवश नामक राक्षसों के साथ युद्ध हुआ, तथा इसने उन्हें परास्त कर भगा दिया, तथा कमल तोड़ने लगा (म. व. १५२.१६-२३)। राक्षस भग कर कुबेर के पास गए, तथा कुबेर ने इसे यथेच्छा विहार करने, एवं कमलों के तोड़ने की अनुमति प्रदान की (म. व. १५२.२४)।

उधर धर्मराज को कुछ अपशकुन दृष्टिगोचर होने लगे, जिससे शंकिता होकर घटोत्कच के साथ वह भीम के पास आ पहुँचा। कुबेर ने उसका स्वागत किया, तथा धर्मराज एवं भीम को अतिथि के रूप में ठहरा कर उनका स्वतः आदरसत्कार किया। इस प्रकार भीम एवं कुबेर में मित्रता स्थापित हो गयी।

एक बार द्रौपदी ने भीम से क्रोधवश राक्षसों को मारकर सम्पूर्ण प्रदेश को भयरहित करने के लिए प्रार्थना की। भीम तत्काल राक्षसों के उत्पात को दमन करने के लिए निकला पड़ा, एवं अनेकानेक क्रोधवश राक्षसों को मार कर यमपुरी पहुँचा दिया। उनमें कुबेर का मित्रमणिमान् भी मारा गया (म. व. १५८)। जो बच्चे, वे फरियाद लेकर कुबेर के पास जा पहुँचे। पहले तो कुबेर क्रोध से लाल हो उठा, किन्तु बाद को उसे स्मरण हो आया कि, 'यह भीम की गल्ती नहीं, बल्कि अगस्त्य मुनि के द्वारा दिये गये शाप का परिणाम है, जैसे सुझे भुगतना पड़ रहा है'। ऐसा समझकर वह भीम के पास आया, तथा इससे सन्धि कर, कुछ दिनों तक अपने यहाँ रखकर, स्वतः आदरसत्कार किया (म. व. १५७-१५८)। पश्चात् धर्म के साथ इसने मेरु पर्वत के दर्शन किए, तथा पूर्ववत् गंधमादन पर्वत पर रहकर वनवास की अवधि पूरी करने लगा।

नहुषमुक्ति—एक बार अरण्य में प्रवेश करते समय अज्ञारूपधारी राजा नहुष ने भीम को निगल लिया। पश्चात् उसके द्वारा पूँछे गये प्रश्नों के उचित उत्तर देकर

युधिष्ठिर ने भीम के उसके चंगुल से बचाया, तथा नहुष राजा भी अज्ञारयोनि से मुक्त हुआ (म. व. १७३; १७८; नहुष २. देखिये)।

दुर्योधन-चित्रसेन युद्ध—एक बार पाण्डवों को अपने वैभव का प्रदर्शन करने के लिए, कौरव अपनी पत्नियों को लेकर द्वैतवन में आ पहुँचे। वहाँ इन्द्र की आज्ञा से, चित्रसेन गन्धर्व ने उनको बन्दी बनाकर इन्द्र के पास ले जाने लगा। तब युधिष्ठिर ने भीम से कहा कि, यह अपने भाइयों को कष्ट से मुक्त कराये। भीम ने दुर्योधन के पकड़े जाने पर प्रसन्नता प्रकट करते हुए, उसकी कटु आलोचना की। किन्तु युधिष्ठिर के समझाये जाने पर यह कौरवों को चित्रसेन से मुक्त करा कर वापस लाया, एवं युधिष्ठिर के सामने पेश किया। युधिष्ठिर ने सब को मुक्त किया (म. व. २३४-२३५)।

जयद्रथ से युद्ध—एक बार पाण्डव मृगया को गये थे, इसी बीच अवसर को देखकर, राजा जयद्रथ ने द्रौपदी एवं कुलोपाध्याय धौम्य ऋषि का हरण किया। परिस्थिति का ज्ञान होते ही, पाण्डवों ने जयद्रथ पर घावा भोल दिया। भीम ने बड़ी वीरता के साथ जयद्रथ से युद्ध किया, एवं उसे नीचे गिराकर अपने पैरों के ठोकर से उसके मस्तक को चूर कर, उसके बाल को काट कर, घसीटा हुआ युधिष्ठिर के सामने हाजिर किया। किन्तु धर्मराज ने उसे छोड़ दिया (म. व. २५४-२५५)।

यक्षप्रश्न—एक बार धर्मराज के लिए पानी लाने के लिए नकुल गया। वहाँ पर यक्षरूप यमधर्म ने उसे पानी लेने के पूर्व अपने प्रश्नों के उत्तर माँगे, किन्तु वह न माना, तथा पानी पिया, जिस कारण वह मृत हो कर गिर पड़ा। धर्म की आज्ञानुसार गये हुए सहदेव, अर्जुन, तथा भीम की यही स्थिति हुयी। अन्त में युधिष्ठिर ने यक्ष के प्रश्नों का तर्कपूर्ण उचित उत्तर देकर वर प्राप्त कर, सभी भाइयों को पुनः जीवित कराया (म. व. २९७; युधिष्ठिर देखिये)।

अज्ञातवास—वनवास की अवधि समाप्त होने के बाद, अज्ञातवास का समय आ पहुँचा। द्रौपदी के साथ सारे पाण्डवों ने अपने वेश बदल कर, विराट राजा के यहाँ गुप्तरूप से रहने का निश्चय किया। उस समय भीम ने वहाँ पर बल्लभ नाम धारण कर, रसोइये एवं पहलवान की जिम्मेदारी संभाली। महाभारत की कई प्रतियों में, इसका नाम 'पौरोगव बल्लभ' दिया गया है

(बल्लव देखिये)। पाण्डवों के बीच इसका सांकेतिक नाम 'ज्येश्ठा' था (म. वि. ५.३०; २२.१२)।

बल्लव का रूप धारण कर यह, विराट के दरबार में प्रविष्ट हुआ, एवं इसने यह सूचित किया कि, यह इससे पूर्व युधिष्ठिर के यहाँ का रसोइया था। जिस कारण विराट ने इसे अपनी पाकशाला का अधिपति बनाया (म. वि. ७)।

एकबार विराट की सभा में शंकरोत्सव में मलयुद्ध का आयोजन किया गया, उसमें जीमूत नामक मूढ के द्वारा दी गयी चुनौती कि सीने स्वीकार न की। यह डरता था कि कहीं लोग इसे पहचान न लें, फिर भी इसे मलयुद्ध में उतरना ही पड़ा, जिसमें भीम ने जीमूत को कुत्ती में हरा कर उसका वध किया (म. व. १२)।

कीचकवध—राजा विराट का साल कीचक, द्रौपदी पर मोहित होकर उस पर बलात्कार का प्रयत्न करने लगा। द्रौपदी ने उसी रात को पाकशाला में जा कर भीम को जगाया, तथा कीचक के वध की प्रार्थना की। भीम के द्वारा बताया हुए तरीके के अनुसार, द्रौपदी ने कीचक को नृत्यागार में बुलाया। वहाँ उसका एवं भीम का भयंकर युद्ध हुआ, जिसमें इसने उसका वध किया (म. वि. २१.६२)।

सुवह कीचक के अनेकानेक बन्धुओं ने आ कर सैरन्ध्री (द्रौपदी) पर यह आरोप लगा या कि, उसके कारण ही यह सब कुछ हुआ। अतएव उसे पकड़ कर मृत कीचक के साथ जलाने की नियोजना की। वे उसे जलाने ही जा रहे थे, कि भीम विरूप वेशभूषा धारण कर, एक वृक्ष उखाड़ कर उनको मारने की ओर दौड़ा। उपकीचकों ने इसे इसप्रकार अपनी ओर आता हुआ देखकर समझ गये कि, यह सैरन्ध्री का गंधर्वपति आ टपका, अतएव वे अपनी जान छोड़ कर भागने लगे। किन्तु भीम से भग कर कहाँ जाते? इसने एक सौ पाँच उपकीचकों का वध कर द्रौपदी को बन्धनमुक्त किया। पश्चात् यह एवं द्रौपदी भिन्नभिन्न माँगों से नगर में वापस आये (म. वि. २२-२७)।

भीम-कृष्ण संवाद—भारतीय युद्ध के पूर्व, पाण्डवों की ओर से कृष्ण कौरवों के दरबार में गया था, एवं निवेदन किया था कि, पाण्डवों की उचित माँगों को ध्यान में रख कर उनके प्रति न्याय किया जाये। जाते समय भीम ने कृष्ण से कहा था, सामनीति के द्वारा यदि आपसी सम्बन्ध न टूटे, तो अच्छा है।

इस पर कृष्ण ने इससे कहा था, 'यह स्वभाव के विरुद्ध तुम क्या कह रहे हो?' तब इसने कृष्ण को तर्कपूर्ण उत्तर देते हुए कहा था, 'आपने मुझे सही नहीं पहचाना। मैं पराक्रमी एवं बलशाली जरूर हूँ; किन्तु मैंने यही देखा है कि, युद्धलिप्सा से राजकुल नष्ट हो जाते हैं। इतिहास साक्षी है कि, अभी तक भारत में अठारह कुलपातक (कुलपांसक) राजा ऐसे हुए, हैं जिन्होंने अपनी युद्धलिप्सा के कारण, अपने समस्त कुलों को जड़मूल से समाप्त कर दिया। इसी कारण मैं यही चाहता हूँ कि, जहाँ तक हो युद्ध से अलग रहकर कुटकुल को नष्ट होने से बचायें' ('मा स्य नो भरता नशन्') भीम के चरित्र की यह उदात्त प्रवृत्ति, एवं समझदारी को देख कर कृष्ण चकित हो गया (म. उ. ७२-७४)।

भारतीय युद्ध—जिस युद्ध को दालने के लिए लाखों प्रयत्न किये गये वह भारतीय युद्ध शुरू हुआ, जिसमें कौरवों एवं पाण्डवों के साथ अनेकानेक वीर योद्धाओं ने भाग लिया।

प्रथम दिन—प्रथम दिन के युद्धारम्भ में दुर्वोधन के साथ इसका द्रुपद्युद्ध हुआ (म. भी. ४३.१७-१८)। युद्ध प्रारम्भ होते ही, कर्लिया देश के राजा भानुमान्, निषध देश के राजा क्रेतुमान् तथा श्रुतायु ने भीम पर आक्रमण बोल दिया। भीम ने भी चेदि, मत्स्य तथा कश्यप को साथ ले कर उनपर आक्रमण किया। किन्तु उन सब के विरुद्ध कोई ठहर न सका, केवल भीम ही मैदान में डटा रहा। इसने कर्लियों के साथ युद्ध करते हुए भानु-कुल के शक्रदेव का वध किया (म. भी. ५०.२१-२२)। पश्चात् इसने कर्लिया राजा भानुमान् एवं उसके बाद चक्ररक्षक सत्य एवं सत्यदेव का वध किया। इसके बाद इसने निषध देश के राजा क्रेतुमान् का भी वध किया। कर्लिया देश की गजसेना को ध्वस्त कर के खूत की नदियों बहा दी (म. भी. ५०.७७-८३)।

इतने कुचले जाने पर भी कर्लिया ने पुनः तैयारी कर के, इस पर फिर चढ़ाई कर दी। उस समय शिशुंडी, धृष्टद्युम्न तथा सात्यकि इसकी सहायता के लिए आगे आये। ऐसी स्थिति देख कर, भीष्म ने कौरवसेना को व्यवस्थित कर के भीम पर धावा बोल दिया। उस समय भीम की ओर से सात्यकि ने भीष्म के सारथि को मार डाला, जिस कारण भीष्म के रथ के अश्व इधरउधर भगने लगे (म. भी. ५०; ५२.१)।

चौथा दिन--भारतीय युद्ध के चौथे दिन, शल्य एवं धृष्टद्युम्न का प्रमासान युद्ध हुआ, जिसमें उन दोनों की सहायता करने के लिए उनके दस दस सहायक थे। उन सहायकों में शल्य के पक्ष में दुर्योधन, एवं द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न के पक्ष में भीम प्रमुख था। युद्ध के प्रारम्भ होते ही, भीम ने दुर्योधन पर आक्रमण किया, एवं दुर्योधन की समस्त गजसेना का संहार किया।

दुर्योधन की आज्ञा से उसकी सारी सेना ने पुनः भीम पर धावा बोल दिया, किन्तु भीम ने उस सारी सेना का संहार किया। कौरवसेना की यह दुरवस्था देखकर उनके सेनापति भीष्म ने स्वयं भीम पर आक्रमण किया (म. भी. ५९.२१)। उसी समय सात्यकि ने भीष्म पर हमला किया, एवं यह सुअवसर देखकर भीम पुनः एक बार दुर्योधन से भिड़ गया। इस युद्ध में दुर्योधन ने एक बाण भीम की छाती में मारकर इसे घायल कर दिया। मूर्च्छा से उठते ही, भीम ने अद्भुत पराक्रम दिखाकर निम्नलिखित धृतराष्ट्रपुत्रों का वध किया:-- सेनापति, जलसंध, सुषेण, उग्र, वीरबाहु, भीम, भीमरथ एवं सुलोचन (म. भी. ५८-६०)।

छठा दिन--भारतीय युद्ध के छठवे दिन, भीम ने अत्यधिक पराक्रम दिखा कर शत्रुओं का अपने गदा से इस प्रकार विनाश किया, जैसे कोई हँसिये से घास काटता है, अथवा कोई डंडे से मिट्टी के टेले फोड़ता है। किन्तु इस युद्ध में यह असंख्य बाणों से घायल होकर इतना विंध गया, कि द्रुपदपुत्र ने इसे अपने रथ में उठाकर शिविर में वापस लाया (म. भी. ७३.३६-३७)।

आठवा दिन--युद्ध के आठवे दिन, भीष्म अत्यधिक संतप्त हो कर युद्धभूमि में आया, किन्तु रणांगण में प्रवेश करते ही भीम ने उसके सारथी को मार डाला, जिस कारण भीष्म का रथ इधर उधर भागने लगा।

पश्चात्, धृतराष्ट्रपुत्र सुनाम का भीष्म ने वध किया, जिस कारण संतप्त होकर धृतराष्ट्र के सात पुत्रों ने भीम पर आक्रमण किया, जिनके नाम इस प्रकार थे:--आदित्य-केतु, बह्मशी, कुंडधार, महोदर, अपराजित्, पंडितक, एवं विद्यालक्ष। किन्तु भीम ने इन धृतराष्ट्रपुत्रों का वध किया (म. भी. ८४.१४-२८)।

इसी दिन संध्या के समय भीम ने निम्नलिखित धृतराष्ट्र-पुत्रों का वध किया:-- अनाष्टि, कुंडभेदिन्, वैराट,

कुंडलिन, दीर्घलोचन, विराज, दीप्तलोचन, दीर्घबाहु, सुबाहु, एवं कनकध्वज (मकरध्वज) (म. भी. ९२.२६)।

नौवाँ दिन--युद्ध के नौवें दिन कौरवपक्षीय भगदत्त एवं श्रुतायु राजा ने अपने गजदल की सहायता से भीम को घेर कर वध करने का प्रयत्न किया। किन्तु भीम ने सारे गजदल के साथ उन्हें परास्त किया (म. भी. ९८)।

दसवाँ दिन--युद्ध के दसवें दिन, भीम को एक साथ ही दस राजाओं के साथ युद्ध करना पड़ा, जिनके नाम इस प्रकार थे:--भगदत्त, कृप, शल्य, कृतवर्मा, आवंत्य बंधु, जयद्रथ, चित्रसेन, विकर्ण एवं दुर्मर्षण। किन्तु यह इस युद्ध में अजेय रहा।

उसी समय शिखण्डी को आगे कर, अर्जुन भीष्म पर आक्रमण कर रहा था कि, यह दूसरी ओर से हट कर अर्जुन की सहायता के लिए आ पहुँचा। दोनों ने मिल कर भीष्म पर जोर-शोर के साथ युद्ध करना आरम्भ किया। इस युद्ध में अर्जुन ने अपने भीषण बाणों से भीष्म के सारे शरीर को विंधा दिया (म. भी. १०९.७)।

ग्यारहवाँ दिन--युद्ध के ग्यारहवें दिन, अभिमन्यु ने शल्य के सारथि का वध किया, जिससे क्रोधित हो कर शल्य ने उसे गदायुद्ध के लिए चुनौती दी। किन्तु अभिमन्यु को हटा कर भीम स्वयं उससे गदायुद्ध करने लगा। इस युद्ध में भीम ने शल्य को युद्ध में मूर्च्छित किया (म. द्रो. १३)।

चौदहवाँ दिन--युद्ध के चौदहवें दिन, अर्जुन जयद्रथ का वध करने के लिए गया। किन्तु उसे काफी समय लग जाने के कारण, युधिष्ठिर ने अर्जुन की रक्षा के लिए भीम को भेजा। अर्जुन की सहायता के लिए जब यह आगे बढ़ा, तब इसे सत्रह राजाओं ने उस तक पहुँचने में बाधा डाली। इसने उन सभी को परास्त किया, जिनके नाम निम्नलिखित थे:--दुःशल, चित्रसेन, कुंडभेदिन्, विविंशति, दुःसुख, दुःसह, विकर्ण, शल, विंद, अतुर्विंद, सुमुख, दीर्घबाहु, सुदर्शन, वृदारक, सुहस्त, सुषेण, दीर्घलोचन, अभय, रौद्रकर्मन्, सुवर्मन् एवं दुर्विभोचन।

आगे चल कर, कौरवसेनापति द्रोण स्वयं इसके मार्ग में बाधक बन कर उपस्थित हुआ। इसका एवं द्रोण का उग्र वादविवाद हुआ, एवं बाद को द्रोण से चिढ़ कर इसने उनका रथ भंग किया। आगे चल कर, इसने दुःशासन को पराजित किया, एवं कुंडभेदी, अभय एवं रौद्रकर्मन्

आदि राजाओं को पुनः एक बार परास्त कर, यह आगे बढ़ा।

पश्चात्, द्रोण फिर एक बार इसके मार्ग का बाधक हुआ। फिर भीम ने उसके एक के पीछे एक कर के आठ रथों को ध्वस्त कर, द्रोण को युद्ध में परास्त किया। इस प्रकार, यह अर्जुन तक पहुँच गया, एवं शंखनाद के द्वारा अर्जुन तक कुशलपूर्वक पहुँचने की सूचना इसने युधिष्ठिर को दी।

कर्ण से युद्ध—इसे अर्जुन के समीर आता हुआ देख कर, कर्ण ने इस पर आक्रमण किया। फिर भीम ने कर्ण के रथ के अश्वों को मार कर, उसे रथविहीन कर दिया, जिस कारण कर्ण हृष्येय के रथ में बैठ कर वापस चला गया। इसी युद्ध में भीम ने दुःशल का वध किया (म. द्रो. १०४)।

अपने नये रथ में बैठ कर कर्ण युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ, एवं भीम को पुनः युद्ध के लिए आवाहन किया। भीम ने आवाहन स्वीकार कर, उसे दो बार मूर्च्छित एवं रथविहीन कर के, युद्धभूमि से भग जाने के लिए विवश किया। इस युद्ध में भीम ने दुर्मुख का वध किया (म. द्रो. १०९-२०)।

कर्ण को परास्त होता देख कर, दुर्मर्षण, दुःसह, दुर्मद, दुर्धर तथा जय नामक योद्धाओं ने भीम पर आक्रमण किया। किन्तु भीम ने उन सबका वध किया। फिर दुर्योधन ने अपने भाइयों में से शंभुजय, शत्रुसह, चित्र, चित्रायुध, दृष्ट, चित्रसेन एवं विकर्ण को कर्ण की सहायता के लिए भेजा। किन्तु भीम के द्वारा ये सभी लोग मारे गये। इन सभी दुर्योधन के भाइयों में भीम विकर्ण को अत्यधिक चाहता था। इसलिए उसकी मृत्यु पर भीम को काफी दुःख हुआ। इसी युद्ध में भीम ने चित्रवर्मा, चित्राक्ष एवं शरासन का भी वध किया (म. द्रो. ११०-११२)।

इसके उपरांत भीम एवं कर्ण का पुनः एकबार युद्ध हुआ, जिसमें कर्ण को फिर एकबार हारना पड़ा। इस प्रकार कई बार भीम से हार खाने के उपरांत, कर्ण ने भीम से युद्ध करने का हठ छोड़ दिया (म. द्रो. ११४)। इसी युद्ध में कर्ण ने एक बार इसे, 'अत्यधिक भोजन भक्षण करनेवाला रसोद्भवा' कह कर चिढ़ाया, जिससे चिढ़ कर इसने अर्जुन से अनुरोध किया कि, कर्ण को शीघ्रातिशीघ्र मार कर वह कर्णवध की अपनी प्रतिज्ञा पूरी करें (म. द्रो. ११४)।

रौद्र पराक्रम—उसी दिन हुए रात्रि युद्ध के समय, अपने पिता की मौत का बदला लेने के लिए, भानुमान् कलिंग के पुत्र ने भीम पर आक्रमण किया, जिसका इसने एक घुँसे का प्रहार मार कर वध किया। बाद को इसने कौरवपक्षीय ध्रुव राजा एवं जयरात के रथों पर कूद कर, उन्हें अपने घुँसे एवं शय्यकों से मार कर, काम तमाम किया। इसी प्रकार दुष्कर्षण को भी रौद्र कर उसका वध किया (म. द्रो. १३०)।

पश्चात् इसका बाल्हीक राजा से युद्ध हुआ, जिस में इसने उसके पुत्र को मूर्च्छित किया। बाल्हीक ने स्वयं भीम को भी मूर्च्छित किया। मूर्च्छी हटते ही, इसने फिर कौरवसेना का संहार शुरू कर दिया, तथा दृढरथ, नामदत्त, विराज एवं सुहस्त नामक योद्धाओं का वध किया (म. द्रो. १३२)। इसी संहार में इसने दुर्योधन एवं कर्ण को पुनः एक बार पराजित किया, जिसमें कर्ण के रथ, धनुषादि को कुचल दिया। कर्ण ने भी इसका रथ भग्न कर दिया, जिसके कारण इसे नकुल के रथ का सहारा लेना पड़ा (म. द्रो. १६१)।

इसी दिन कौरव सेनापति द्रोण ने द्रुपद एवं विराट राजा का वध किया, जिसका बदला लेने के लिए द्रुपद-पुत्र धृष्टद्युम्न को साथ ले कर भीम ने द्रोण पर हमला कर दिया। किन्तु उसका कुछ फायदा न हुआ। द्रोण के द्वारा दिखाई गई वीरता, एवं उसके परिणाम से सभी पाण्डवों के पक्ष के लोग भयभीत एवं क्रन्त हो उठे।

पंद्रहवाँ दिन—पंद्रहवें दिन, कृष्ण ने पाण्डवों के बीच बैठ कर, द्रोणाचार्य के मारने की योजना को समझाते हुए कहा, 'द्रोणाचार्य को खुले मैदान में जीतना असम्भव है, उसे किसी चालाकी के साथ ही जीता जा सकता है। मेरा यह प्रस्ताव है कि, उसे विश्वास दिला दिया जाये कि, उसका पुत्र अश्वत्थामा मर गया है। इसका परिणाम यह होगा कि, वह पुत्रशोक में विह्वल हो कर अस्त्र नीचे रख देगा। फिर उसे मारना कठिन नहीं।' कृष्ण की सलाह के अनुसार, भीम ने अपनी सेना में से किसी इंद्रवर्मा नामक योद्धा के अश्वत्थामा नामक हाथी को गदाप्रहार से मार दिया। पश्चात् यह द्रोण के रथ के पास जा कर चिल्लाते लगा, 'अश्वत्थामा मर गया'।

द्रोणवध—यह बात सुनते ही, पुत्रशोक से विह्वल द्रोण ने अपने शस्त्रादि नीचे रख दिये, एवं इस प्रकार असहाय स्थिति में द्रोण को देख कर, द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न ने क्रूरता के साथ उसका वध किया (म. द्रो. १६४)। अपने गुरु की इस

प्रकार धुणित हत्या को देख कर, अर्जुन शोकाकुल हो उठा, एवं उसे युद्ध के प्रति ऐसी विरक्ति उत्पन्न हो गयी, जैसे उसे युद्ध के प्रारम्भ में हुयी थी। अर्जुन ने कहा, 'जिस युद्ध में इस प्रकार की अधार्मिक कार्यप्रणालियों का प्रयोग करना पड़ता है, वह युद्ध में नहीं करूँगा'। इस पर भीम ने अर्जुन की बड़ी कटु आलोचना करते हुए कहा, 'गुरु द्रोणाचार्य ब्राह्मण थे, और फिर भी क्षत्रियों की भाँति युद्ध-भूमि में उतरे। इससे बड़ा अधर्म क्या हो सकता है? रही बात कि, तुम युद्धभूमि को छोड़ कर जा रहे हो, तो जा सकते हो। तुम्हें धमण्ड है अपने शस्त्रशक्ति की, पर तुम नहीं जानते कि, अकेला भीम कौरवसेना के संहार करने में समर्थ है' (म. द्रो. १६८)।

अपने पिता के शोक में संतप्त अश्वत्थामा ने क्रोधाग्नि में उबल कर भीम के ऊपर 'नारायण अस्त्र' का प्रयोग किया, जिससे घस्त हो कर भीम तथा इसका सेना शस्त्रादि छोड़ कर हतबुद्धि हो कर भगने लगी। अश्वत्थामा के नारायण अस्त्र को समेट लेने के लिए, अर्जुन ने वारुणि अस्त्र का प्रयोग कर, अश्वत्थामा को रथ के नीचे खींच कर उसे शस्त्रविहीन कर दिया। नारायण अस्त्र के शमन के उपरांत, भीम पुनः ससैन्य आया। किन्तु अश्वत्थामा के द्वारा इसका सारथी घायल हुआ, जिससे इसे युद्धभूमि से हटाना पड़ा (म. द्रो. १७०-१७१)।

सोलहवाँ दिन—युद्ध के सोलहवें दिन कर्णाजुनों के द्वारा व्यूहरचना होने के उपरांत भीम तथा क्षेमधूर्ति का हाथी पर से युद्ध हुआ। भीम ने क्षेमधूर्ति को पराजित कर, हाथी मार कर उसे नीचे उतारने के लिए मजबूर किया, एवं बाद में उसका वध किया (म. क. ८)। कुछ देर के उपरांत, अश्वत्थामा एवं भीम के बीच में घोर संग्राम हुआ, जिसमें दोनों एक दूसरे के शरों से घायल हो कर मूर्च्छित हुए, तथा अपने अपने सारथियों के द्वारा युद्ध-भूमि से हटाये गये (म. क. ११)।

सत्रहवाँ दिन—सत्रहवें दिन दुर्योधन ने जब देखा कि, उसकी समस्त सेना बुरी तरह ध्वस्त होती जा रही है, तब उसने अपना सेना का सुसंगठन करके, भीम को समाप्त करने के लिए, स्वयं युद्धभूमि में उतर कर उस पर धावा बोल दिया। किन्तु भीम ने उसको पराजित कर उसकी समस्त गजसेना को पराजित किया (म. क. परि. १. क. १४-१५)।

कर्ण से युद्ध—कुल देर के बाद कर्ण तथा भीम का युद्ध हुआ। कर्ण भीम से लड़ाई में परास्त हो कर युद्धभूमि

से विमुख हो कर भाग जाने ही वाला था, कि दुर्योधन ने अपने भाइयों को युद्ध के लिए उत्तेजित करते हुए, भीम के विरुद्ध लड़ने के लिए प्रोत्साहित किया। उन सब के साथ भीम का घोर युद्ध हुआ, जिसमें इसने विविसु, विकट, सह, क्रोध, नंद तथा उपनंद आदि धृतराष्ट्रपुत्रों का वध कर, श्रुतर्वा, दुर्धर, सम निवर्गी, कवची, पाशी, दुग्ध, धर्म, सुबाहु, वातवेग, सुवर्चस्, धनुर्ग्रह, तथा शल आदि को युद्ध में परास्त किया।

तब तक कर्ण पुनः तैयार हो कर युद्धभूमि में आ पहुँचा। लेकिन भीम ने उसे एक ही बार में वध दिया। इससे कर्ण क्रोध में पागल हो उठा, और उसने भीम का ध्वज अपने बाण से उखाड़ कर, इसके सारथी को काट कर इसे रथ-विहीन कर दिया (म. क. ३५)। कर्ण के बाणों से विध कर युधिष्ठिर बिल्कुल त्रस्त हो गया। भीम को, जैसे ही यह पता चला, वैसे ही इसने अर्जुन को उसके समाचार जानने के लिए भेज दिया (म. क. ४५)।

कुछ समय के उपरांत, भीम दत्तचित्त हो कर दुर्योधन की सेना के संहार करने में जुट गया। दुर्योधन की आज्ञा से शकुनि ने भीम पर आक्रमण किया, किन्तु इसने उसे भूमि पर गिरा दिया, और वह बाद में दुर्योधन के रथ के द्वारा बाहर लाया गया (म. क. ४५)।

दुःशासनवध—शकुनि को परास्त हुआ देख कर दुःशासन आगे आया, एवं भीम पर आक्रमण बोल दिया। उसे देखते ही भीम ने उसके सारथी एवं घोड़े मार डाले, एवं उसे जमीन पर गिरा कर, स्वयं रथ से उतर कर, उसके हाथ को तोड़ डाला। पश्चात् उसकी छाती फोड़ कर, इसने उसके रक्त का प्राशन किया, तथा उसके रक्त के सने हाथों से द्रौपदी की वह वेणी मँथी, जो दुःशासन द्वारा मुक्त की गयी थी (पद्म. उ. १४९)। इस प्रकार भीम ने दुःशासन को मार कर अपना प्रण पूरा किया। इसी समय इसने अलेखु, कवची, खड्गिन्, दण्डधार, निवर्धी, वातवेग, सुवर्चस् पाशी, धनुर्ग्रह अलोलप, शल, संघ (सत्यसंघ) आदि धृतराष्ट्रपुत्रों का वध किया (म. क. ६१-६२)।

अठारहवाँ दिन—अठारहवें दिन के युद्ध में कृतवर्मा ने भीम के घोड़े को मार डाला, तथा भीम द्वारा नये घोड़े के प्रयोग किये जाने पर, अश्वत्थामा ने उन्हें भी मार डाला। भीम ने यह देख कर कृतवर्मा का रथ विध्वंस कर, शल्य से युद्ध कर, उसके सारथी को मार डाला। यह देखकर,

वह इससे गदायुद्ध करने लगा, जिसमें इसने उसे मूर्च्छित कर पराजित किया (म. श. १२)।

इसने इकट्ठीस हज़ार पैदल सेना एवं न जाने कितना गजसेना का विनाश किया। इससे लड़ने के लिए निम्न-लिखित धृतराष्ट्रपुत्र आये। किन्तु इसने सब का वध किया:— दुर्मपण, श्रुतान्त (चित्राङ्ग) जैत्र, भूरिबल (भीमबल), रवि, जयसेन, मुजात, दुर्विषह (दुर्विषाह), दुर्विमोचन, दुध्रपर्ष (दुध्रपर्षण), श्रुतवान् (म. श. २५.४-१९)। इसके बाद धृतराष्ट्रपुत्र मुदर्शन का भी इसने वध किया (म. श. २६)।

दुर्योधनवध—दुर्योधन को 'जलस्तंभन विद्या' आती थी, अतएव वह जलाशय के अन्दर, पानी में छिपकर बैठ गया। पाण्डवों को इसका पता चला, एवं वे जलाशय के निकट आकर उसे युद्ध के लिए आह्वान करने लगे। युधिष्ठिर ने सहजभाव से कहा, 'हम सब से एक साथ तुम युद्ध न करो। हम पाँचों में जिससे चाहो युद्ध कर सकते हो, और उस युद्ध में यदि तुम उसे हरा लोगे, तो हम पूरा राज्य तुम्हें दे देंगे'। यह सुन कर कृष्ण आगे आया, और भीम को आगे करते हुए कहा, 'किसी और को नहीं, भीम को ही जीत लो। समस्त राज्य तुम्हारा है'। इत प्रकार दुर्योधन को भीम से भिड़ा दिया गया। कारण, कृष्ण जानता था कि, दुर्योधन गदायुद्ध में प्रवीण है; उसका जवाब केवल भीम ही है, और कोई नहीं।

इस प्रकार दुर्योधन एवं भीम की लड़ाई टकर के साथ होने लगी। अर्जुन ने कृष्ण की सलाह से अपनी बायीं जाँघ टोक कर भीम को संकेत दिया कि, इसने क्या पण किया था। अपनी प्रतिज्ञा का ध्यान आते ही, भीम ने भीषण गदाप्रहार से दुर्योधन की जाँघ तोड़ दी एवं उसे नीचे गिरा दिया। इसने दुर्योधन का तिरस्कार करते हुए एक लत कस कर उसके मस्तक पर ऐसी मारी कि, तत्काल उसकी मृत्यु हो गयी (म. श. ५८.१२)। क्लराम क्रोधित हो कर भीम पर आक्रमण करने के लिए दौड़ा, तथा कहा 'यह अधर्म युद्ध है'। किन्तु, कृष्ण ने उसे तत्काल समझा कर रोक लिया (म. श. ५९.२०-२१)।

अश्वत्थामावध—द्रौपदी शोक में संतप्त युधिष्ठिर से कहने लगी कि, वह अश्वत्थामा की मृत्यु का समाचार सुनाना चाहती हैं, जिसने उसके पुत्रों का वध किया है। युधिष्ठिर उसको समझने लगा। तब वह भीम के पास आयी तथा कहा 'अश्वत्थामा को मार कर उसका गणि

ले आओ, तभी मुझे शांति मिलेगी'। यह अश्वत्थामा से युद्ध करने के लिए चल पड़ा, तथा साथ में अर्जुन भी इसकी रक्षार्थ गया। भीम ने अश्वत्थामा के साथ घोर युद्ध किया, जिसमें वह इसकी शरण में आया तथा अपनी गणि निकाल कर दे दी (म. सौ. ११-१६)।

धृतराष्ट्रविद्वेष—भारतीय युद्ध के उपरांत, सभी लोग हस्तिनापुर पहुँचे। वहाँ आपस के वैमनस्य को मूल कर एकता के साथ रहने की बात धृतराष्ट्र ने रखी, तथा पाण्डवों के साथ आश्लिग्न कर गले मिलने की अभिव्यथा प्रकट की। युधिष्ठिर से गले मिलने के बाद, जैसे उसने भीम को बुलाया, वैसे ही उसकी मुग्धता भाव कर, कृष्ण ने भीम को हटा कर अन्धे धृतराष्ट्र के आगे भीम के कद की लौहप्रतिमा ला खड़ी की। धृतराष्ट्र भीम का नाम सुनते ही खिल उठता था। अतएव उस लौहप्रतिमा को भीम समझ कर इतनी जोर से आश्लिग्न किया कि, मुर्ति चूर चूर होकर ध्वस्त हो गयी। बाद को जब उसे पता चला कि, वह मूर्ति थी, तो मन में बड़ा लज्जित हुआ। यह देख कर कृष्ण ने धृतराष्ट्र को बहुत बुराभला कहा (म. स्त्री १२-१३)।

भीम गांधारी से भी मिलने गया, एवं उसे अपनी सफाई देते हुए क्षमा माँगी, जिससे सुन कर गांधारी शान्त हुई (म. स्त्री. १४)।

युवराजपद—धर्मराज युधिष्ठिर को संबोधित करते हुए भीम ने संन्यास का विरोध किया, एवं कर्तव्यपालन पर जोर देते हुए कहा कि, वह दुःखों की स्मृति एवं मोह को त्याग कर, मन को बाध में रख कर राज्यशासन करे, एवं पाप के नाश के लिए अश्वमेध यज्ञ कर धर्म की स्थापना करे। धर्मराज ने भीम की सलाह मान कर इसे युवराज के रूप में अभिषेक किया (म. शां. ४१.८)।

बाद में सारे पाण्डवों धृतराष्ट्र से प्रेम व्यवहार रखने लगे, किन्तु भीम धृतराष्ट्र को फूटी आँखों न देख सकता था। जब धृतराष्ट्र ने वन जाने के लिए इच्छा प्रकट की, एवं राजकोष से धन की माँग की, तब भीम ने उसका विरोध किया। तब युधिष्ठिर तथा अर्जुनादि ने अपने कोषों से उसे द्रव्य दिया (म. आश्र. १७)।

भीमजलाकी एकादशी—एक बार व्यास ने इसे निर्जला एकादशी के माहात्म्य को बताया। उसे करने को यह तैयार तो हुआ, किन्तु भोजनभक्त होने के कारण, यह सोच में पड़ा गया कि, मुझे इस व्रत को हर माह पढ़ेगा। किन्तु जब इसे

पता चला कि, बिना किसी भोजन तथा जलग्रहण किये हुए केवल एक बार इस व्रत को कर लेने से, सब एकादशियों का फल प्राप्त होता है, तो यह तत्काल तैयार हो गया। तब से ज्येष्ठ माह की शुद्ध एकादशी व्रत को 'भीमजलकी एकादशी', एवं उसके दुसरे दिन को 'पाण्डव द्वादशी' कहते हैं (पञ्च. उ. ५.१)।

गर्वपरिहार—स्कंदपुराण में भीम के अहंकारनाश की एक कथा दी गई है। एकवार युद्ध समाप्ति के उपरांत, सभी पाण्डवों के साथ कृष्ण उपस्थित था। बातचीत के बीच सब ने युद्धविजय का श्रेय कृष्ण को देना आरम्भ किया, जिसे सुनकर भीम अहंकार के साथ कहने लगा, 'यह मैं हूँ, जिसने अपने बल से कौरवों का नाश किया है। श्रेय वा अधिकारी मैं हूँ'।

तब गरुड़ पर बैठकर कृष्ण भीम को अपने साथ लेकर आकाशमार्ग से दक्षिण दिशा की ओर उड़ा। समुद्र तथा सुवेल पर्वत छोड़ कर लंका के पास बारह योजन व्यास के सरोवर को दिखा कर, कृष्ण ने भीम से कहा कि, यह उसके तल का पता लगा कर आये। चार कोस जाने पर भी भीम को उसके तल का पता न चला। वहाँ के तमाम योद्धाओं उसके ऊपर आक्रमण करने लगे। तब यह हॉफता हुआ ऊपर आया, एवं अपनी असमर्थता बताते हुए सारा वृत्त कह सुनाया। कृष्ण ने अपने अँगूठे के हठके से उस सरोवर को फेंक दिया, एवं इससे कहा, 'यह राम द्वारा मारे गये कुम्भकर्ण की खोपड़ी है, तथा तुम पर आक्रमण करने वाले योद्धा, सरोगेय नामक असुर हैं। यह चमत्कार देखकर भीम का अहंकार शमित हुआ, एवं लज्जित होकर इसने कृष्ण से माफी माँगी (स्कंद. १.२.६६)।

सूयु—काफी वर्षों तक राज्यभोग करने के उपरांत, अग्नि के कथनानुसार, पाण्डवों ने शस्त्रसंन्यास एवं राज्यसंन्यास लिया, एवं वे उत्तर दिशा की ओर मेरु पर्वत पर की ओर अग्रसर हुए। मेरु पर्वत पर जाते समय युधिष्ठिर को छोड़ कर द्रौपदी सहित सारे पाण्डव इस क्रम से गल गये :- द्रौपदी, सहदेव, नकुल अर्जुन एवं भीम। स्वर्गरोहण के पूर्व ही अपना पतन देखते हुए, इसने युधिष्ठिर से उसका कारण पूछा। युधिष्ठिर ने कारण बताते हुए कहा, 'तुम अपने को बलशाली तथा दूसरे के तुच्छ मानते थे, तथा अत्यधिक भोजनप्रिय थे। इसी लिए तुम्हारा पतन हो रहा है' (म. महा. २)।

मृत्यु के समय इसकी आयु एक सौ सात साल की थी (युधिष्ठिर देखिये)।

परिवार—भीम की कुल तीन पत्नियाँ थी :- हिडिंबा, द्रौपदी एवं काशिराज की कन्या बलधरा। उनमें से द्रौपदी से इसे सुतसोम नामक पुत्र हुआ (म. आ. ५७.११)। हिडिंबा से इसे घटोत्कच नामक पुत्र हुआ। भागवत में द्रौपदी से उत्पन्न इसके पुत्र का नाम श्रुतसेन दिया गया है।

काशिराज कन्या बलधरा को स्वयंवर में जीत कर प्राप्त किया था। उससे इसे शर्वत्रात नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०.८४)। भागवत में इसकी तीसरी पत्नी का नाम 'काली' दिया गया है, एवं उससे उत्पन्न पुत्र का नाम 'सर्वगत' बताया गया है (काली देखिये; भा. ९.२२.२७-३१)। महाभारत के अनुसार, इसकी पत्नी काली चेदि देश के सुविख्यात राजा शिशुपाल की बहन थी, जो भीम का कट्टर शत्रु था (म. आश्र. ३२.११)।

भीमसेन पारिक्षित—सुविख्यात पूर्ववंशीय सम्राट पारिक्षित का पुत्र, जो जनमेजय पारिक्षित का वन्धु था (श. ब्रा. १३.५.४.३)। दौनक नामक आचार्य ने इससे एक यज्ञ करवाया था (सां. श्रौ. १६.९.३; विष्णु. ४.२०.१; म. आ. ३.१)। कुरुक्षेत्र में किये यज्ञ में इसने देवताओं की कुत्तियाँ सरमा के वेटे को पीटा था।

२. (सो. पूर.) एक पूर्ववंशीय राजा, जो अरुणवत्पुत्र पारिक्षित (द्वितीय) का पुत्र था। इसकी माता का नाम सुयशा था। इसकी पत्नी का नाम सुकुमारी था, जो केकय देश की राजकुमारी थी। सुकुमारी से इसे पर्यश्रवस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. आ. ९०-४५)।

भीरु—मणिभद्र नामक दक्ष के पुत्रों में से एक। इसकी माता का नाम पुण्यजनी था।

भीषण—एकचक्रा नगरी में रहनेवाले बक नामक असुर का पुत्र। इसके पिता का वध भीमसेन के द्वारा हुआ (बक देखिये)। अपने पितृवध के कारण, यह मन ही मन बलता रहा, जिसके कारण आगे चल कर, इसने पांडवों का अश्वमेधीय अश्व एकचक्रा नगरी के समीप पकड़ लिया। पश्चात् अर्जुन ने इसके साथ धोर युद्ध कर इसका वध किया (जै. अ. २२)।

२. एक असुर, जिसे हनुमान् ने परास्त किया था (पञ्च. उ. २०६)।

३. (सो. विदूरथ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार हृदिक राजा का पुत्र था।

भीष्म—(शे. कुरु.) सुविख्यात राजनीति एवं रणनीति शास्त्रज्ञ जो कुरु राजा शन्तनु के द्वारा गंगा नदी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। अष्टवसुओं में से आठवें वसु के अंश से यह उत्पन्न हुआ था (म. आ. १०.५०)। इसका मूल नाम 'देवव्रत' था। गंगा का पुत्र होने के कारण, इसे 'गंगेय' 'जाह्नवीपुत्र', 'मागीरथीपुत्र' आदि नामांतर भी प्राप्त थे। 'भीष्म' का शाब्दिक अर्थ 'भयंकर' है। इसने अपने पिता शन्तनु के सुख के लिए आजन्म अविवाहित रहने एवं राज्यत्याग करने की भयंकर प्रतिज्ञा की थी। इसीसे इसे 'भीष्म' कहा गया।

ध्येयवादी व्यक्तित्व—एक अत्यधिक पराक्रमी एवं ध्येयनिष्ठ राजर्षि के रूप में भीष्म का चरित्रचित्रण श्री व्यास के द्वारा महाभारत में किया गया है। परशुराम जामदग्न्य के समान युद्धविशारदों को युद्ध में परास्त करने-वाला भीष्म महाभारतकालीन सर्वश्रेष्ठ पराक्रमी क्षत्रिय माना जा सकता है।

अपने इस पराक्रम के बल पर कुरुकुल का संरक्षण करना, एवं उस कुल की प्रतिष्ठा को बढ़ाना, यही ध्येय भीष्म के सामने आमरण रहा। कुरुवंशीय राजा शंतनु से ले कर चित्रांगद, विचित्रवीर्य, पाण्डु, धृतराष्ट्र तथा दुर्योधन तक कौरववंश की 'संरक्षक देवता' के रूप में यह प्रयत्नशील रहा।

अपने इस ध्येय की पूर्ति के लिये, अपनी तरुणार्थ में सभी धिलासदि से यह दूर रहा, एवं वृद्धावस्था में मोक्ष-प्राप्ति के प्रति कभी उत्सुक न रहा। यह चाहता था केवल कुरुवंश का कल्याण एवं प्रतिष्ठा, जिसके लिए यह सदैव प्रयत्नशील रहा।

भीष्म का दैवदुर्विलास यही था कि, जिस कुरुवंश की महत्ता के लिए यह आमरण तरसता रहा, उसी कुरुकुल का संपूर्ण विनाश इसके आँसों के सामने हुआ, एवं इसके सारे प्रयत्न विफल साबित हुए। चित्रांगद, विचित्रवीर्य, पाण्डु, धृतराष्ट्र जैसे भ्रष्टाचार, कमजोर एवं शारीरिक व्याधीउपाधियों से पीड़ित राजाओं के राज्य को अपने मजबूत कंधों पर सँभलनेवाला भीष्म, भारतीययुद्ध के काल में कुरुवंश को आपसी दुही से न बचाया सका।

इसी कारण, भारतीय युद्ध के दसवें दिन, इसने अत्यंत शोकाकुल हो कर अजुन से कहा, 'मुझे युद्ध में परास्त कर मेरा पराजय करने की ताकद दुनिया में किसी को भी नहीं है। किन्तु मेरा दुर्भाग्य यही है कि, पराजित

हो कर ही मुझे मृत्यु प्राप्त करनी है। अतएव, मुझे युद्ध में हरा कर, तुम विजय प्राप्त करो'।

योग्यता—भीष्म सर्वशास्त्रवेत्ता, परम ज्ञानी एवं तत्त्वज्ञान का महापंडित था। यह किसी की समस्याओं की तत्काल मुलझा देनेवाला, संशय का शमन करनेवाला, तथा जिज्ञासुओं की शंकासमाधान करनेवाला सात्विक विचारधारा का उधार महापुरुष था। यह रणविद्या, राजनीति, अर्थशास्त्र, एवं अध्यात्मज्ञान के साथ धर्म, नीति, एवं दर्शन का परमवेत्ता था।

गंगा ने वसिष्ठद्वारा, इसे समस्त वेदों में पारंगत कराया था। बृहस्पति तथा शुक्राचार्य के द्वारा इसने अस्त्रशास्त्र का ज्ञान प्राप्त किया था। परशुराम से अन्य आस्त्र शास्त्रों के साथ धनुर्वेद, राजधर्म तथा अर्थशास्त्र भी सीखा था (म. आ. १४.३१-३६)। इसके अतिरिक्त च्यवन भार्गव से साङ्गवेद, वसिष्ठ से महायुद्ध, पितामहसुत से अध्यात्म, एवं मार्कण्डेय से यतिधर्म का ज्ञान प्राप्त किया था। शुक्र तथा बृहस्पति का तो यह साक्षात् शिष्य ही था। यह किसी के मारने से न मरने-वाला 'इच्छामरणी' था, अर्थात् जब यह चाहे तभी इसकी मृत्यु सम्भव थी (म. शां. ३८.५-१६; ४६.१५-२३)।

जन्म—ब्रह्मा के शाप के कारण, गंगा नदी को कुरुवंशीय राजा शंतनु की पत्नी बनना पड़ा। वसिष्ठ के शाप तथा इंद्र की आज्ञा से अष्टवसुओं ने गंगा के उदर में जन्म लिया। उनमें से सात पुत्रों को गंगा ने नदी में डुबो दिया। आठवें पुत्र 'दु' नामक वसु का अंश था, जिसको डुबाने समय शंतनु ने गंगा से विरोध किया। यही पुत्र भीष्म है, जिसे साथ ले कर गंगा अन्तर्धान हो गयी। इस आठवें पुत्र को वसुओं द्वारा यह शाप दिया गया था कि, यह निःसंतान ही होगा।

अपने पुत्र भीष्म को गंगा को दे देने के उपरांत, करीब छत्तीस वर्षों के उपरांत शंतनु मृगया खेलने गया। हिरन के पीछे दौड़ता हुआ गंगा नदी के पास आ कर उसने देखा कि, यकायक उसका पानी कम हो गया। शंतनु को आश्चर्य की सीमा न रही। जब उन्होंने देखा कि, एक सुन्दर बालक ने अपने अचूक शरसंधान के द्वारा गंगा का प्रवाह रोक रक्खा है। इस प्रकार बालक की अस्त्रविद्या को देख कर, वह चकित हो गया (म. आ. १४.२२-२५)।

यह बालक और न हो कर, शंतनुपुत्र भीष्म ही था। किन्तु इतने दिनों के बाद देखने के कारण, वह उसे पहचान न सका। जैसे ही शंतनु ने इसे देखा, वह तत्काल ही दृष्टि से ओझिल हो गया। उसके मन में शंका हुयी, कहीं यह मेरा तो पुत्र नहीं? यह बात मन में आते ही उसने गंगा को सम्बोधित कर पुत्र को पुनः दिखाने के लिए आग्रह किया। तब स्त्रीरूपधारणी गंगा शुभ्र परिधानों तथा बहुमूल्य अलंकारों को धारण किए हुए उपस्थित हुयीं। अन्त में गंगा ने संपूर्ण पूर्वकथन कहते हुए, अपने पुत्र भीष्म को अपनी गोद से उतार कर, राजा शंतनु को दिया (म. आ. १४.३१)।

जिस समय गंगा ने भीष्म को दिया, उस समय उसका मानुहृदय शोक से विह्वल था, क्योंकि, जिस पुत्र का पालन पोषण किया, शिक्षादि दी, वही पुत्र आज उससे दूर जा रहा था। अंत में गंगा उस पुत्र को दे कर अंतर्धान हो गयीं।

हस्तिनापुर में—शंतनु ने गंगेय (भीष्म) को अपनी राजधानी हस्तिनापुर लाया, तथा शुभ मुहूर्त पर उसका युव-राज्याभिषेक किया (म. आ. १४.३८)। इस प्रकार राज्यसूत्र को अपने हाथों में ले कर, यह अपने पिता की राज्यव्यवस्था की देखरेख करने लगा। इसकी योग्यता एवं व्यवहार से समस्त प्रजा एवं अन्यजन प्रसन्न थे।

भीष्मप्रतिज्ञा—गंगा के विरह में पीड़ित शंतनु को कुछ भी न सूझता था। एक दिन जब वह मृगया के लिए गया था, तो उसे पास ही कहीं किसी सुगन्ध का ज्ञान हुआ। उस सुगन्ध को ढूंढते ढूंढते, वह एक धीवरकन्या सत्यवती के पास आ खड़ा हुआ, जिसके शरीर से वह मास्क सुगन्ध चारों ओर फैल कर, वातावरण को भर रही थी। शंतनु उसकी उठती युवावस्था एवं कौमार्य को देख कर लुब्ध हो उठा, एवं धीवर से उसे प्राप्त करने की इच्छा प्रकट की। किन्तु धीवर ने सत्यवती को देने से इन्कार करते हुए कहा, 'भीष्म के रहते हुए, सत्यवती का भावी पुत्र राज्य नहीं प्राप्त कर सकता। आप उसके भावी पुत्र को अपने उपरांत राज्याधिकारी घोषित करें, तो मैं आप को सत्यवती को इसी क्षण दे सकता हूँ।' धीवर की यह बात सुनते ही शंतनु खिन्न हो उठा, एवं निराश हृदय वापस लौट आया, क्योंकि वह नहीं चाहता था कि, भीष्म सा योग्य नेता राज्याधिकार से पदच्युत किया जाय।

सत्यवती की मोहकता ने शंतनु के हृदय में इतना धर कर लिया कि, वह दिन पर दिन चिन्ता में जलने लगा। भीष्म ने पिता की उदासीनता का कारण कई बार पूँछा, किन्तु उसने इसे लज्जावश न बताया। आखिर एक दिन भीष्म को पता चल ही गया। पितृमुख के लिए स्वार्थत्याग करने का निश्चय कर, यह उस धीवर के पास जा पहुँचा। वहाँ इसने धीवर से अपने पिता के लिए सत्यवती को माँगा, किन्तु उसने अवकी चार भी वही शर्त सामने रखी। तब भीष्म ने आजन्म ब्रह्मचारी रह कर राज्यलभ छोड़ कर, सदैव सत्यवती के पुत्रों की रक्षा करते हुए, उसके द्वारा हुए ज्येष्ठ पुत्र को ही राज्याधिकारी बनाने की प्रतिज्ञा की (म. आ. १४.७९)। इसकी इस भयंकर प्रतिज्ञा सुन कर देवताओं ने पुष्पवर्षा करना आरम्भ किया, एवं इसे 'भीष्म' नाम दिया (म. आ. १४.९३)।

शंतनु की मृत्यु—भीष्म सत्यवती को ले आया, जिसे देखते ही पिता ने इसे आनंदित हो कर आशीर्वाद दिया, 'तुम 'इच्छामरणी' होगे' (म. आ. १४.९४)। बाद में सत्यवती के चित्रांगद तथा विचित्रवीर्य नाम के दो पुत्र हुए। उनमें से चित्रांगद की गद्दी पर बैठा कर भीष्म स्वयं राज्यभार ले कर राजकाज चलाता रहा।

उग्रायुधवध—शंतनु की मृत्यु के उपरांत, उसकी नवयौवना पत्नी सत्यवती को प्राप्त करने के लिए पड़ोस के राजा उग्रायुध ने भीष्म के पास सन्देश भेजा कि, यह अपनी सौतीली माँ सत्यवती को उसके यहाँ भेज दे। किन्तु अपने पिता के शोक में विह्वल भीष्म ने इसका कोई उत्तर न दिया। इस पर क्रोधित होकर उग्रायुध ने भीष्म पर चढ़ाई करने के लिए सेनापति को आशा दी। लोगों ने समझाया भी कि, भीष्म इस समय अशौच में है। अतएव इस समय उसे छोड़ना उचित नहीं। किन्तु उग्रायुध ने भीष्म पर हमला कर दिया। युद्ध तीन दिन तक चलता रहा, तथा उसके उपरांत, भीष्म ने उग्रायुध का वध किया (ह. वं. १.२०.४९-७९; म. शां. २७.१)।

विचित्रवीर्य का राज्यारोहण—एक बार गंधर्वों से युद्ध करता हुआ चित्रांगद उनके द्वारा मारा गया, तब सत्यवती की अनुमति से इसने विचित्रवीर्य को गद्दी पर बैठाया। किन्तु विचित्रवीर्य अभी छोटा ही था, अतएव राज्य की पूरी देखरेख भीष्म ही करता था। विवाहयोग्य आयु होने के उपरांत, भीष्म ने उसके विवाह का निश्चय किया। इतने में इसे पता चला कि, काशिराज की तीन कन्याओं अंबा, अंबिका एवं अंबालिका की शादी के लिए

स्वयंवर होने वाला है। अतएव यह वहाँ गया, एवं वहाँ एकत्र हुए सभी राजाओं को चुनौती देकर, उसकी तीनों कन्याओं का हरण कर आया। विचित्रवीर्य का उन कन्याओं से विवाह करने लिए, इसने मुहुर्तादि भी ठीक कराई। किन्तु बड़ी बहन अंबा को छोड़कर अन्य दो बहनों से ही विचित्रवीर्य का विवाह हुआ, जिनका नाम अंबिका एवं अंबालिका था।

अंबाविरोध—काशिराज की बड़ी कन्या अंबा ने कहा कि, 'मैं विचित्रवीर्य से शादी न करूँगी, कारण कि मने मन में शात्व का वरण किया है'। भीष्म इस पर राजी हो गया। अंबा शात्व के पास गयी, लेकिन वह अंबा की वरण करने को राजी न हुआ। तब उसने आकर भीष्म से कहा, 'मैं शात्व से विवाह करना चाहती थी, तथा तुम उसमें बाधक बन कर आये। तुमने मेरा हरण किया है, अतएव शास्त्रोक्त के अनुसार, तुम्हें मुझसे शादी करनी चाहिए। मैं कदापि विचित्रवीर्य से विवाह न करूँगी, मेरा उससे सम्बन्ध ही क्या?' किन्तु भीष्म तैयार न हुआ। इस कारण अंबा भीष्म से अत्यधिक क्रुद्ध हुयी, एवं इसके प्राप्ति के लिए तप करने लगी।

तपस्याकाल में, एक दिन अंबा की मंत्र अपने नांना होत्रवाहन सृजय से हुयी। उससे अंबा ने अपना सारा रोना कह सुनाया कि, किस तरह वह शात्व का वरण करना चाहती थी, तथा किसी प्रकार शात्व एवं भीष्म उसका वरणरूप में स्वीकार करने लिए राजी नहीं है। यह कह कर, अंबा ने सृजय से कुछ मदद चाही। लेकिन उसने कहा, 'यदि तुम मदद ही चाहती हो, तो परशुराम के पास जाओ। वह तुम्हारी मदद करेंगे।'

परशुराम से युद्ध—फिर अंबा परशुराम के पास गयी, एवं उससे प्रार्थना की कि, वह भीष्म का वध करे, जिसने उसका हरण कर उसका जीवन बर्बाद किया है, तथा वरण करने के लिए भी तैयार नहीं है। परशुराम ने कहा 'मैंने किसी ब्राह्मण के कार्य हेतु ही अस्त्रग्रहण करने की, प्रतिज्ञा की है, अतएव मैं असमर्थ हूँ'। अन्त में अंबा द्वारा बार बार प्रार्थना किये जाने पर, परशुराम ने भीष्म को समझा कर मामले को सुलझाने की बात सोची।

आगे चल कर परशुराम ने गुरु के नाते भीष्म को बहुविध उपदेश दिया, एवं इस बात पर जोर दिया कि, यह अंबा को स्वीकार करे। किन्तु भीष्म अपनी बात पर अटल रहे। इससे प्रोथित होकर परशुराम ने भीष्म को

द्रुपद्युद्ध के लिए चुनौती दी। दोनों युद्ध के लिए तत्पर ही थे कि, पुत्रचिन्ता से युक्त गंगा ने आकर भीष्म से कहा, 'परशुराम तुम्हारे गुरु हैं, तुम्हें उनसे युद्ध करना शोभा नहीं देता'। भीष्मने कहा, 'युद्ध मैं नहीं कर रहा, किन्तु अपने सत्य की रक्षा हमें करनी ही है। इस प्रकार यदि तुम्हें समझाना ही है, तो परशुराम से कहो कि वह अपने हठ को छोड़कर, मेरी स्थिति पर ध्यान दें'। अपने पुत्र भीष्म को परशुराम के क्रोध से उबारने के लिए, गंगा परशुराम के पास गयी, तथा उसे बहुविध समझाने का प्रयत्न किया। किन्तु परशुराम अपने हठ पर अटल रहे।

परशुराम एवं भीष्म में चार दिन तक घोर युद्ध हुआ (म. उ. १७६-१८६)। अंत में अपने 'प्रत्यास अस्त्र' के बल से भीष्म ने परशुराम को युद्ध में परास्त किया (म. उ. १८७.४)।

शिवलिज्जन्म—भीष्म को समूल नष्ट करने के लिए अंबा पीछे पड़ गयी। पहले उसने घोर तप किया, फिर परशुराम के द्वारा इसे नष्ट करना चाहा। इसे देख कर गंगा नदी ने अंबा को शाप दिया कि, वह टेड़ी मंडी क्षुद्र नदी बनेगी। अंबा अपने अपमान का बदला लेने के लिए जी जान से जुटी ही रही। उसने शिव की उपासना कर के उससे वरदान प्राप्त किया, 'इस जन्म में न सही, अगले जन्म में शिवशुद्धी बन कर, तुम भीष्म के मृत्यु का कारण बन कर, उससे अपना बदला ले सकोगी'। शिवप्रसाद के बल से अगले जन्म में शिवशुद्धी का जन्म ले कर, अंबा ने भीष्म का वध कराया (म. उ. १७०-१९३)।

विचित्रवीर्य की मृत्यु—सात वर्षों तक राज्यभोग के साथ-साथ अत्यधिक भोगविलास में निमग्न हुआ विचित्रवीर्य राजा राजयश्वमा से पीड़ित मृत्यु को प्राप्त हुआ। अपनी पत्नी अंबिका एवं अंबालिका से उसे कोई संतान न थी। अतएव सत्यवती ने भीष्म को आज्ञा दी कि, वह विचित्रवीर्य की पत्नियों से संभोग कर के नियोग द्वारा पुत्र उत्पन्न करे। किन्तु इसने अपनी सौतेली माता की आज्ञा की अवहेलना कर, अपने ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा पर यह दृढ़ रहा। हार कर सत्यवती ने व्यास के द्वारा संतान उत्पन्न करा कर, विचित्रवीर्य के राज्य के उत्तराधिकारी के रूप में दो पुत्र रत्न प्राप्त किये।

धृतराष्ट्र एवं पाण्डु का जन्म—विचित्रवीर्य के पुत्रों में से प्रथम पुत्र धृतराष्ट्र जन्मान्ध था, अतएव भीष्म ने विचित्रवीर्य

के उपरान्त पाण्डु को राजगद्दी पर बैठाया। किन्तु पाण्डु की शीघ्र ही मृत्यु हो गयी, अतएव राज्य की सारी व्यवस्था धृतराष्ट्र ही देखने लगा। धृतराष्ट्र का व्यवहार अपने तथा पाण्डु के पुत्रों में भिन्न था, जिसका परिणाम यह हुआ कि, कौरवों एवं पाण्डु के पुत्रों (पाण्डवों) के बीच एक खाई पैदा हो गयी, जो कालान्तर में चौड़ी ही होती गयी। अपने पिता शतनु एवं उसके बाद विन्चित्रवीर्य के काल से लेकर, उसकी मृत्यु तक भीष्म हस्तिनापुर राज्य के सर्वांगीण विकासपथ की ओर ले जाने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहा। यह राज्य का सब से बड़ा कर्ताधर्ता सलाहकार एवं हर प्रकार की व्यवस्था का निर्देशक था।

धृतराष्ट्र के व्यवहार में पक्षपात देखकर, द्रुपद राजा के पुरोहित ने आकर भीष्म से शिकायत की, कि धृतराष्ट्र अपने पुत्रों की ओर सजग, एवं पाण्डवों की ओर उपेक्षित व्यवहार करता है। भीष्म ने पुरोहित का योग्य स्वागत कर पाण्डवों की ओर पूरी तरह से ध्यान देने का उन्हें वचन दिया (म. उ. २१)।

युधिष्ठिर द्वारा किये गये राजसूययज्ञ में पाण्डवों ने चतुर्दिशाओं में दिग्विजय प्राप्त कर यशःकीर्ति प्राप्त किया। पाण्डवों के इस दिग्विजय को देखकर भीष्म ने कर्ण से कहा, 'अर्जुन तुमसे अधिक पराक्रमी है जिसका उदाहरण सम्मुख है। पाण्डवों के ये दिग्विजय का कारण अर्जुन ही है।' भीष्म की इस कटोर वाणी को सुनकर कर्ण तिलमिला गया, तथा कहने लगा कि, वह अर्जुन से कर्णों अधिक श्रेष्ठ है। इतना कहकर वह दिग्विजय के लिए निकल पड़ा (म. व. परि १. क्र. २४)।

भारतीय युद्ध—पाण्डवों से अनुकूल भाव रखने के लिए भीष्म ने अनेक बार दुर्योधन को समझाया, किन्तु उसका कुछ भी फायदा न हुआ। आखिर बात युद्ध तक आ गयी, एवं इसे दुर्योधन की मनमानी के बीच अपनी विचारधारा की हत्या करनी पड़ी। इसे कौरवपक्ष के सेनापतित्व का भार भी ग्रहण करना पड़ा। इस भार वहन करने के पूर्व उसने दुर्योधन से दो शर्तें रखी थी। पहली शर्त यह थी कि, यह पाण्डवों से युद्ध कर उन्हें पराजित अवश्य करेगा, किन्तु युद्ध में किसी पाण्डव की हत्या अपने हाथों न करेगा। दूसरी शर्त थी कि, जिस समय यह युद्ध करेगा उस समय कर्ण इसके साथ युद्ध न करेगा, उसे इसके पीछे रहना पड़ेगा (म. उ. १६३. २१-२४)।

कौरवसेना का अधिपत्य स्वीकारते समय भीष्म ने दुर्योधन से विश्वास दिलाया, 'मैं सेनाकर्म, व्यूहरचना, भूत

एवं अभूत लोगों से कार्य चलाना, सैन्यसंचलन एवं आक्रमण कर्मों में प्रवीण हूँ। युद्धशास्त्र में मेरा ज्ञान देवगुरु बृहस्पति के समान है। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता चाहता हूँ कि, मैं तुम्हारा सेनापत्य का कार्य अच्छी तरह से निभाऊंगा, एवं एक महिने से पहले पांडवसेना को ध्वस्त कर दूंगा' (म. उ. १९४)।

कौरव एवं पांडव सेना का बलाबल—भारतीय युद्ध आरम्भ होने के पूर्व सेनापति भीष्म ने कौरव एवं पांडवों के चतुरंगिणी सेना की विस्तृत जानकारी एवं बलाबल दुर्योधन को बताया था (म. उ. १६४)। महाभारत के 'रथसंख्यान' पर्व (१६१-१६९) में प्राप्त इस जानकारी से प्रतीत होता है कि, जिस प्रकार पदाति-दल, अश्व-दल आदि में सैनिकों की विभिन्न श्रेणियाँ थी, उसी प्रकार कुशलता की मात्रा से रथसेना में भी अनेक पद थे।

भीष्म के द्वारा बतायी गयी श्रेणियाँ इस प्रकार थी :- रथयूथपयूथप, महारथ, अतिरथ, अर्धरथ एवं रथोदार। उनमें से रथयूथपयूथप सबसे बड़ा पद था, एवं रथोदार सबसे छोटा पद था। भीष्म के द्वारा निर्देश किये गये कौरवसेना के विभिन्न रथयोद्धा निम्न प्रकार थे:—

कौरवपक्ष

- (१) अतिरथ—भीष्म, इतचर्मन् भोज, बाल्हीक, शल्य।
- (२) अर्धरथ—कर्ण।
- (३) एकरथ—शकुनि, सुदर्शिन कांबोज, दंडधर।
- (४) महारथ—अश्वत्थामन्, जो रथ योद्धाओं में अतुल्य माना जाता था, और पौरव।
- (५) रथ—अचल, वृषक गांधार।
- (६) रथयूथपयूथप—उग्रयुध, कृप शारद्वत, द्रोण, भूरिश्रवस्।
- (७) रथवर—जलसंध मागध।
- (८) रथसत्तम—बृहद्बल कौसल्य, वृषसेन, दुर्योधन-पुत्र लक्ष्मण, विद एवं अनुविद, शल्य, जयद्रथ, अलायुध।
- (९) रथोदार—दुर्योधन, सुशर्मन्, एवं उसके चार भाई।

पांडवपक्ष

- (१) अतिरथ—वृष्टयुम्न (सेनापति), कुंतिभोज पुरुजित्, वसुदान, श्रेणिमत्, सत्यजित् (द्रुपदपुत्र)।
- (२) अर्धरथ—अश्वधर्मन् (वृष्टयुम्नपुत्र)।
- (३) महारथ—अज, अमिताजस् चैकितान, जयन्त, द्रुपद, द्रौपदेय, धृष्टकेतु (शिशुपालसुत), भोज, रोचमान, विराट, शंख, श्वेत, सत्यजित्, सत्यधृति।

(४) रथ—अर्जुन, उत्तमौजस् उत्तर वैराटि, काश्य (अष्टरथ), भीम (अष्टरथ), बार्हक्षेमि ।

(५) रथमुख्य—शिल्खिन् ।

(६) रथयूथपयूथप—अभिमन्यु, धृष्टकेच, माधव, सात्यकि ।

(७) रथसत्तम—क्रोधहन्तु, चित्रायुध, सेनाविन्दु ।

(८) रथिन्—नकुल, सहदेवौ ।

(९) रथोत्तम—क्षत्रदेव, पांडुराज ।

(१०) रथोदार—काशिक, केकयवन्धु (पंचक), चंद्रसेन, नील, मदिराश्व, युश्रामन्यु, युधिष्ठिर, व्याघ्रदत्त, शंख, सुकुमार, सूर्यदत्त ।

कर्ण-भीष्म विरोध—भीष्म के द्वारा किये गये उपर्युक्त रथि महारथियों के वर्णन में कर्ण को रथी अथवा महारथी न कहकर केवल अर्धरथों में उसकी गणना की। द्रोणाचार्य ने भी उसे अपनी संमति दी। यह अपना अपमान समझकर कर्ण क्रोध से उछल पड़ा। उसने दुर्योधन से कहा, 'बुढ़ापे के कारण, भीष्म मतिभ्रष्ट हो चुका है। ऐसे मतिभ्रष्ट लोगों की सलाह लेना मुझे सगसर भूल्यता प्रतीत होती है। दुष्टबुद्धि भीष्म कौरवों में फूट पाडना चाहता है। मेरी राय यही है कि, इस मतिभ्रष्ट एवं दुष्टबुद्धि बूढ़े का पहा तुम छोड़ दो। जबतक यह भीष्म कौरवसेना का सेनापति है तबतक मैं युद्ध में भाग नहीं लूँगा' (म. उ. १६५.१०-२७)।

इस पर भीष्म ने भी अत्यंत क्रुद्ध हो कर दुर्योधन से कहा, 'कवचकुंडल आदि के त्याग से निर्बल, एवं परशुराम तथा ब्राह्मणों के शप से इंद्रियदुर्बल हुए पापी कर्ण के लिए, अर्धरथ यह नीच श्रेणि ही योग्य है'। आगे चल कर इसने कर्ण से कहा, 'मुझे बूढ़ा कहने की हिंमत तुम ने की है। किन्तु मैं तूनीति देता हूँ कि, युद्ध में तुम्हारा पराजय करने की ताकद आज भी मेरे जर्जर बाहुओं में है। परशुराम जामदग्न्य आदि यों को मैंने रणभूमि में पराजित किया है। फिर तैरे जैसे पापी मनुष्य का पराजय करना मेरे बाये हाथ का खेल है'।

अपने गुरु भीष्म एवं परममित्र कर्ण के दरम्यान हुए इस वाक्ययुद्ध के कारण, दुर्योधन अत्यधिक कष्टी हुआ, एवं उसने इन दोनों को शान्त होने के लिए प्रार्थना की (म. उ. १६६.१-१०)।

सेनापत्य—भारतीय युद्ध में प्रथम दस दिन यह कौरव सेना का सेनापति रहा। इसके रथ की पताका पर ताड़वृक्ष

का चिह्न था (म. वि. १४८.५)। इत दस दिनों में अत्यधिक वीरता के साथ लड़कर, एवं सैन्यसंचालन कर, इसने पांडवों की सेना को ध्वस्त कर जर्जर ही नहीं बनाया; वल्कि उनकी जीत की आशा को भी मिट्टी में मिला दिया। इसकी युद्धवीरता का प्रमाण इससे अधिक क्या हो सकता है कि, युद्धभूमि में कभी अस्त्रग्रहण न करने की प्रतिज्ञा करनेवाले भगवान कृष्ण को भी अस्त्रग्रहण करना पड़ा। भारतीय युद्ध के तीसरे एवं नवें दिन अर्जुन की रक्षा के लिए कृष्ण को हाथ में सुदर्शन चक्र ले कर युद्धभूमि में उतरना पड़ा (म. भी. ५५; १०२)।

भारतीययुद्ध के तीसरे दिन इसका तथा अर्जुन का घनघोर युद्ध हुआ, जिसमें अर्जुन आहत हो कर मूर्च्छित हो गया। यह देख कर कृष्ण अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं अर्जुन की रक्षा के लिए हाथ में सुदर्शन चक्र ले कर स्वयं युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ। कृष्ण का यह रौद्ररूप देख कर भीष्म ने अपने अस्त्र-शस्त्र नीचे रख दिये, एवं श्रद्धावनत हो कर कृष्ण से कहा, 'स्वयं कृष्ण भगवान् से मेरी हत्या हो रही है, यह मेरा सौभाग्य है'। ऐसा कह कर इसने कृष्ण का स्तवन किया। इतने में अर्जुन ने होश में आकर कृष्ण से प्रार्थना की, 'युद्धभूमि में आप न उत्तरे, अभी मैं युद्ध के लिए तैयार हूँ'।

दुर्योधनभाक्षेप—भारतीययुद्ध के दसवें दिन, दुर्योधन ने भीष्म पर आक्षेप लगाते हुए कहा, 'आप का मन तो पाण्डवों के पक्ष की ओर है। अतएव युद्ध में हमारी जीत संभव कहाँ?' भीष्म ने चिन्तित हो कर गंभीरतापूर्वक कहा, 'मैं बूढ़ा हूँ, फिर भी जो होता है करता हूँ, तथा किसी प्रकार कर्तव्य से च्युत नहीं। पाण्डव बल पौरुष में श्रेष्ठ तथा रणभूमि में अजेय हैं। फिर यदि तुम मेरे रणकौशल को ही देखना चाहते हो तो कल देख सकते हो। देखना, या तो कल पाण्डवों का हार होगी, या मेरी मृत्यु' (म. भी. १०५.२६)।

पाण्डवविहीन पृथ्वी को बनाने की भीष्मप्रतिज्ञा को सुन कर सभी पाण्डव भयभीत हो उठे। क्यों कि, वे समस्त कौरवसेना में भीष्म की ही शक्ति का सिक्का मानते थे। कृष्ण ने पाण्डवों के बचाने के लिए अर्जुनादि के सामने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा, 'तुम लोग यदि अपना जीवन चाहते हो, तो भीष्म की मृत्यु का उपाय करो, अन्यथा तुम को पराजित हो कर, अपने प्राणों की आहुति देनी पड़ेगी'।

कृष्ण से भेंट—नवें दिन की रात्रि को कृष्ण धर्मादि पाण्डवों को साथ ले कर भीष्म से मिलने उसके शिविर गया। कृष्ण ने भीष्म से कहा, 'आपकी प्रतिज्ञा सुन कर सभी पाण्डव आतंकित हो उठे हैं। अब आपकी मृत्यु किस प्रकार सम्भव हो कि, जिससे पाण्डव की रक्षा की जा सके?' भीष्म ने कृष्ण के प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा, 'जिसके रथ का खज अमर हो, जो हीन जाति का हो, अथवा जो स्त्री हो उससे मैं युद्ध कदापि न करूँगा।' द्रुपद राजा का पुत्र शिखण्डी पूर्वकाल में स्त्री था, बाद में पुरुष बना। अतएव उसे सामने कर के, यदि अर्जुन युद्ध करेगा, तो मैं कुछ न कर सकूँगा, तथा मुझे अर्जुन सहज ही युद्ध में जीत सकेगा। इस प्रकार पाण्डव सुलभता के साथ रणभूमि में कौरव को जीतकर राज्य प्राप्त कर सकते हैं' (म. भी. १०३)।

दूसरे दिन भीष्म के वताये हुए मार्ग को अपना कर शिखण्डी को सामने रखकर अर्जुन ने भीष्म को पराजित किया (म. भी. ११३-११४)। भीष्म पतन का यह दिन पौष के कृष्णपक्ष की सप्तमी थी, एवं उससमय फल्गुनी नक्षत्र था (भारतसावित्री)।

शरशय्या—इसके वृक्ष के समय सर्वांग बाणों से बिद्ध था। रथ से गिरकर बाणों पर ही टिकता हुआ भूमि पर यह इस प्रकार आ गिरा, मानों शरशय्या में लेटा हो। इसका सर फेंदल बाणों से बचा था, जो शरशय्या से लटक रहा था। उसे देखकर अर्जुन ने तीन बाणों को मार कर, इसके सर के लिए तकिया बना दिया। शरशय्या में पड़ा हुआ यह अधिक प्यासा हो उठा था, जिसे देखकर अर्जुन ने अपने एक बाण द्वारा गंगा नदी के प्रवाह को अपनी ओर खींचकर, उस धारा के द्वारा भीष्म की तृषा का हरण किया। अर्जुन की इस सेवा से भीष्म अत्यधिक प्रसन्न हुआ (म. भी. ११५)।

जिस समय भीष्म पितामह शरशय्या में आहत था, उस समय अनेकानेक ऋषि, मुनि, देवी देवतादि इसके दर्शन करने आये थे। इन सारे ऋषिमुनियों को एवं अपने कौरवपाण्डव बांधवों को इसने नानाविध रूप से उपदेश दिया। इसने दुर्योधन से कहा, 'मेरी मृत्यु कौरव पाण्डवों के बीच हुए वैरभाव की अन्तिम आहुति हो, तो अच्छा है। इससे तुम सभी विनष्ट होने से बच जाओगे'।

यह आजीवन कर्ण को हेय दृष्टि से देखता रहा, कारण कि वह जन्म से हीन था। कर्ण भी हृदय से इसका आदर न करता था। किन्तु अन्तिम समय, जब कर्ण इससे मिलने

आया, तब सारे भेदभावों को भूल कर इसने उसका दृढ़ आर्त्थिण्य करते हुए सदुपदेश दिया, 'या तो तुम कौरव पाण्डवों के बीच मित्रता स्थापित कराओ, अथवा कौरवों के पक्ष को छोड़कर पाण्डवों के पक्ष में सम्मिलित हो जाओ'। दुर्योधन को तनमनधन से मित्रता का व्रत लेने वाले कर्ण ने भीष्म से कहा, 'दुर्योधन मेरा मित्र है, अतः आप मुझे यह अनुज्ञा दें कि, उसी के पक्ष में लड़ता हुआ मैं पाण्डवों का पराभव करूँ'। भीष्म ने उसके व्रत को सुनकर उसे अनुज्ञा प्रदान की (म. भी. ११६-११७)।

भारतीय युद्ध में अपने कुरुवंशी वन्धुओं का क्षय देख कर युधिष्ठिर अत्यधिक शोकमग्न हुआ था। उसे इस प्रकार उदास देखकर, अपने धर्मोपदेश के द्वारा भीष्म ने उसे शान्ति प्रदान की। युधिष्ठिर को धर्मोपदेश देते समय भीष्म इतना शक्तिहीन हो चला था कि, कृष्ण ने उसे शक्ति प्रदान कर, उपदेश देने के योग्य बनाया (म. शां. ५२; भा. १.९; ९.२२.१९)। पितामह भीष्म एवं युधिष्ठिर के बीच हुयी ज्ञानचर्चा महाभारत के 'शान्ति' एवं 'अनुशासन' पर्व में प्राप्त है, जो आज भी अपनी अपार ज्ञानराशि के कारण, जीवन के परम सत्य की ओर पथनिर्देश कराने में सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है।

प्राणत्याग—अर्जुन के द्वारा आहत होकर जब यह शरशय्या पर बड़ा हुआ था, उस समय सूर्य दक्षिणायन था। अतएव इच्छाबल पर इसने अपने प्राणों को रोक रखा था। जैसे ही सूर्य उत्तरायण आया, इसने अपने प्राण विसर्जित किये (म. अनु. १६८.७)। यह दिन माघ सुदी अष्टमी थी (निर्णयसिंधु पृ. १६३)। जिस समय यह अपने प्राणों को त्याग कर निजधाम जाने की तैयारी में था, उस समय अनेकानेक शत्रुमित्र पक्ष के लोगों के अतिरिक्त, न जाने कितने ऋषिमुनि आदि इसके दर्शन कर, उपदेश ग्रहण करने की लालसा से आये थे। इसकी मृत्यु विनशन क्षेत्र में हुयी (भा. १.९.१)।

मृत्यु के समय इसकी आयु सम्भवतः १८६ वर्षों की थी। यह उम्र में करीब अपनी सौतेली माँ सत्यवती का समवयस्क था, तथा सत्यवती का पुत्र व्यास, जो उसे कौमार्य अवस्था में हुआ था, वह तो इससे कहीं अधिक छोटा था।

भीष्मचरित्र का एक कलंकित क्षण—भीष्म कौरव-वंश का वह प्रकाशस्तम्भ था, जिसने आजीवन लोगों को अपने चरित्र, कार्य, एवं रीतिनीति से आलोकित कर, उसे सन्मार्ग दिखाया। फिर भी इसके जीवन में एक

अवसर यह भी आता है कि, कौरव पाण्डवों की भरी सभा में निर्वस्त्र की जानेवाली द्रौपदी विलाप कर के भीष्म से न्याय की माँग करती है, तथा भीष्म उसकी दीनहीन दशा न देखकर, उसे पत्नीधर्म का पाठ पढ़ाते हैं।

शूत खेलने समय धर्म ने अपने को, समस्त पाण्डवों को तथा अन्त में द्रौपदी को भी हार लिया। कौरव द्रौपदी की लोकलज्जा का हरण कर, उसका उपहास करने लगे, तथा सभी बड़े बूढ़ों के साथ भीष्म भी चूपचाप बैठ गया। द्रौपदी ने इसी से न्याय की माँग की, क्यों कि, यह पाण्डवों तथा कौरव दोनों का हितैषी था, यही नहीं, यह परम धर्मात्मा, न्यायी एवं उचित अनुचित का समझने वाला, सभी से उग्र में बड़ा, तथा कौरववंश का कर्ताधर्ता प्रमुख व्यक्ति था। द्रौपदी ने इससे प्रश्न किया, 'धर्मराज जब कौरवों द्वारा स्वयं अपने को हार गये हैं, तब क्या उन्हें अधिकार है कि, मुझे वह दाँव पर लगायें?' भीष्म ने उत्तर दिया, 'वस्तुतः अधिकार तो नहीं, क्योंकि तुम्हें दाँव पर लगाना अनुचित है। अतएव तुम्हें कोई जीत नहीं सकता। लेकिन तुम्हें न भूलना चाहिए कि, स्त्री सदैव पति के आधीन रही है, तथा उसे अपनी पत्नी पर सदैव अधिकार रहा है। आज तुम्हारा पति युधिष्ठिर कौरवों का दास है, अतएव आर्यपत्नी होने के कारण, तुम दास की दासी हो (म. स. ६०.४०-४२)।

भीष्म के द्वारा दिये गये इस उपदेश ने द्रौपदी के हृदय को सन्तोष एवं शान्ति तो प्रदान न किया, किन्तु उसके मन को अधिक उद्विग्न बना दिया। द्रौपदी चाहती थी कि, भीष्म उस आवर्तनाद करने वाली कुलवधू की लुटती हुयी लज्जा को देखकर, दुर्योधन के द्वारा दिये गये आदेशों का खण्डन करते हुए उसकी नःरीत्व की रक्षा करेगा। किन्तु भीष्म तो पति की आशाओं का अन्धा पालन करने पर प्रवचन दे कर ही, अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ बैठे (म. वि. परि. १.६०.२५-४५)।

कुछ धूमिल स्थल—भीष्म के चरित्र में यदाकदा कुछ धूमिल स्थल और दीख पड़ते हैं। कौरवों ने शूत में पाण्डवों को बुलाकर कृपटपूर्ण व्यवहार के द्वारा उन्हें जीतने की योजना बनाई, जिसकी पूर्ण सूचना इसे प्राप्त थी। फिर भी इसने एक बार भी दुर्योधनादि को रोकने का प्रयत्न न किया। दुर्योधन को एक बार नहीं, हजार बार इसने कहा की, उसका पक्ष न्याय का नहीं, वह अन्यायी है। फिर भी भारतीय युद्ध के समय, इसने

अपने आदर्शों के विरुद्ध दुर्योधन को अपना राज मानकर, पग पग पर उसका साथ दिया। दूसरी ओर युद्धनीति के विरुद्ध, इसने अपने मरने का रहस्य कृष्ण एवं युधिष्ठिर को बताया, जो इसके विपक्षी थे। महाभारत के कई पाण्डुलिपियों में प्राप्त श्लोकों से पता चलता है कि, इन कमजोरियों को दृष्टि में रखकर कृष्ण ने भी इसकी कटु आलोचना की थी।

'अर्थस्य पुरुषो दासः'—कौरवों का पक्ष अन्यायी हो कर भी इसने उनका साथ बंधा दिया, इसका स्पष्टीकरण भीष्म ने महाभारत में निम्न प्रकार किया है—

'अर्थस्य पुरुषो दासः' दासस्त्वर्थे न कस्यचित्।

इति सत्यं महाराज, बद्धोऽस्म्यर्थेन कौरवैः ॥

(पुरुष अर्थ का दास है, पर अर्थ किसी का दास नहीं है। हे महाराज, यह सत्य है, कौरवों ने मुझे अर्थ से बाँध लिया है)।

उपर्युक्त भीष्म के कथन से साधारण रूप में यही अर्थ निकलता है कि, यह अर्थ (धन, संपत्ति) को प्रधानता देता है। यदि हम इसे इस प्रकार ले, तो भीष्म के ये शब्द इसके आदर्शात्मक जीवन का घन्ना प्रतीत होता है जो उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को टक देता है।

किन्तु कई अभ्यासकों के अनुसार, 'अर्थस्य पुरुषो दासः' शब्दों से भीष्म के द्वारा प्रकट की गयी विवशता सिर्फ संपत्ति के विषय में न हो कर अधिक तर राजनैतिक दंग की थी। 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' में 'अर्थ' का व्याख्या 'राजनैतिक कर्तव्य' इस अर्थ से की गयी है। इस प्रकार, राजनैतिक कर्तव्यों से बैधा हुआ भीष्म यदि अपने व्रत के अनुसार, आजीवन कौरव पक्ष के दुःखमुखों में सदैव एक क्रियाशील कर्ताधर्ता रहा, तो, इसमें कुछ भी अनौचित्य प्रतीत नहीं होता।

भीष्म की तरह द्रोण, कृप एवं शल्य आदि ने भी 'अर्थेन बद्धः' कह कर दुर्योधन के पक्ष का स्वीकार किया था। उन में से द्रोण दक्षिणपंचाल देश का राजा था, एवं शल्य युधिष्ठिर का मातुल एवं मद्र का राजा था। इन सारे राजा महाराजाओं के 'अर्थेन बद्धः' कथन से यही तात्पर्य प्रतीत होता है कि, वे सारे दुर्योधन से वचनबद्ध थे, एवं उसी के कारण, दुर्योधन के पक्ष में शामिल हो गये थे (म. भी. ४१.३६-३७; ५१-५२; ६६-६७; ७७-७८)।

अन्य धूमिल स्थल—आधुनिक दृष्टि से हम देखे तो हमें कुछ उचित नहीं लगता कि, अपने पिता की भोगपिपासा

की तृप्ति के लिए भीष्म इतना बड़ा ब्रह्मचर्य का व्रत लेकर आगे बढ़े। उस व्रत के कारण, आगे आनेवाली कर्तव्य-सुखालाओं को भी इसे बार बार उपेक्षा करनी पड़ी। लेकिन यह लकीर का फकीर बना, एवं अपनी पुरानी प्रतिज्ञा-पर जमा रहा। इसने आजन्म ब्रह्मचर्य का व्रत न लिया होता, तो कुरुवंश दो भागों में विभक्त होकर, आपस में टकरा कर खत्म न हो जाता। चित्रांगद तथा विचित्रवीर्य ऐसी सन्ताने न होती, जो अल्पायु में ही मर गयी। पांडु तथा धृतराष्ट्र ऐसे पुत्र न होते कि, एक क्षय से मरा, तो दूसरा जन्मान्ध पैदा हुआ। इसका कारण था कि यह सभी नियोग-द्वारा जन्मे-थे किसी में तेज, बल तथा शक्ति न थी जिस भीष्म में वह थी, वह कर्मपथ से हठ कर निष्क्रिय धर्मपथ अपना बैठा था।

भीष्मक—एक भोजवंशीय नरेश, जो विदर्भ देश का अधिपति था। महाभारत के अनुसार, यह पृथ्वी के चौथाई भाग का स्वामी, इन्द्रसला एवं अत्यंत बलवान राजा था। इसे हिरण्यरोमन् एवं भीमक नामान्तर भी प्राप्त थे (म. उ. १५.१)। भांडारकर संहिता में इसके नाम के लिए 'हिरण्यलोमन्' पाठभेद प्राप्त है। इसकी राजधानी कुंडिनपुर नगरी में थी।

अपनी अस्त्रविद्या के बल से इसने पांड्य, कथ, कैशिक जैसे दक्षिणालय देशों पर विजय पायी थी (म. उ. १५. १-२)।

इसके भाई का नाम आकृति था, जो परशुराम जामदग्न्य के समान शौर्यसंपन्न था। इसे रुक्मिणीनामक एक कन्या, एवं निम्नलिखित पाँच पुत्र थे:— रुक्मिन्, रुक्मरथ, रुक्मबाहु, रुक्मकेश एवं रुक्ममालिन् (भा. ३.३.३; १०.५२.२२)। यह शुरू से ही मगध देश का राजा ब्राह्मण के प्रति भक्ति रखता था, एवं भगवान् कृष्ण के निपक्ष में था (म. स. १३.२१)। इसी कारण कृष्ण ने इसकी कन्या रुक्मिणी का हरण कर, उससे 'राक्षसविधि' से विवाह किया।

पांडवों के राजसूय यज्ञ के समय, दक्षिण दिग्विजय करता हुआ सहदेव विदर्भ देश में आ पहुँचा। उस समय भोजकट नगरी में भीष्मक एवं रुक्मिन् का उससे दो दिनों तक घनघोर संग्राम हुआ, जिसमें इन्हें हार माननी पड़ी। अन्त में इसने सहदेव के शासन का स्वीकार किया। महाभारत में रुक्मिन् का निर्देश 'महामात्र भीष्मक' नाम से किया गया है (म. स. २८. ४१)। भीष्मक के राज्यकाल में विदर्भ की राजधानी कुंडिनपुर

में थी। भीष्मक के पुत्र रुक्मिन् ने भोजकट नगरी में अपनी नयी राजधानी बसा ली।

भुजकेतु—एक राजा, जो भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष में शामिल था।

भुजंगम्—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

भुजातपूर—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भुज्यु तौम्य—एक राजा, जो अश्वियों का आश्रित था। तृप्र राजा का पुत्र होने के कारण, इसे 'तौम्य' 'तुम्य' उपाधियाँ प्राप्त थी।

एकबार इसका पिता तृप्र इसपर क्रुद्ध हुआ, जिस कारण उसने इसे परद्वीपस्थ शत्रु पर आक्रमण करने के लिए भेज दिया (क. १.११६.३-५; ११७.१४-१५; ११९.४)। समुद्र में प्रवास करते समय, इसकी नौका अचानक टूट पड़ी, जिस कारण यह बड़े संकट में फँस गया। उस समय सौ पतवार वाले नाव में प्रविष्ट हो कर अश्वियों ने इसका रक्षण किया, एवं इसे सुरक्षित रूप में किनारे पहुँचा दिया।

अश्वियों के पराक्रम का वर्णन करने के लिए उपर्युक्त कथा का निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार प्राप्त है (क. १. ११२.६; ६.६२.६-७; ६८.७; १०.४०.७; ६५.१२; १४३.५)।

भुज्यु लाह्यायानि—एक आचार्य, जो याज्ञवल्क्य ऋषि का समकालीन था। 'लाह्यायन' का वंशज होने के कारण, इसे 'लाह्यायन' वैतुक नाम प्राप्त हुआ था।

पतञ्जल काव्य नामक आचार्य के कन्या के शरीर में प्रविष्ट होनेवाले सुघन्धन् आंगिरस नामक ऋषि से इसे विशेष ज्ञान की प्राप्ति हो गयी थी। उसी ज्ञान के बल से इसने याज्ञवल्क्य ऋषि को वादविवाद में परास्त करना चाहा। किन्तु अन्त में उस वादविवाद में इसका ही पराजय हुआ (बु. उ. ३.३.१)।

भुमन्यु—(सो. कुरु.) एक कुरुवंशीय राजा, जो जनमेजय (प्रथम) का पौत्र, एवं धृतराष्ट्र राजा का पुत्र था (म. आ. ८९.५१)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'सुमन्यु'।

२. (सो. पूर.) एक महर्षि, जो दुष्यंत राजा का पौत्र, एवं भरत दौष्यान्ति राजा का पुत्र था। भरद्वाज ऋषि के कृपाप्रसाद से यह उत्पन्न हुआ था। इसकी माता का नाम सुनंदा था, जो काशीनरेश सर्वसेन की कन्या थी (म. आ. ९०.३४)।

इसके पिता भरत ने इसे यौवराज्याभिषेक किया। किन्तु आरम्भ से ही विरक्त प्रकृति का होने के कारण, इसने राज्यपद का स्वीकार न किया, एवं भरत के पश्चात् इसका पुत्र सुहोत्र राजगद्दी पर विठाया गया।

इसे ऋचीककन्या पुष्करिणी एवं दशार्हकन्या विजया नामक दो पत्नियाँ थीं। पुष्करिणी से इसे निम्नलिखित छः पुत्र उत्पन्न हुए—वितथ, सुहोत्र, सुहोत्र, सुहवि, सुयञ्जु एवं ऋचीक (म. आ. ८९.१८-२१)।

३. एक देवगंधर्व, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. १२२.५८)।

भुव—(स्वा. नाभि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार, प्रतिहृत्य राजा का पुत्र था।

भुवत—मगध देश के सुव्रत राजा के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (सुव्रत ४. देखिये)।

भुवन—एक देव, जो कश्यप एवं सुरभि का पुत्र था।

२. एक महर्षि, जो शरद्व्यापार सोये हुए भीष्म से मिलने आया था (म. अनु. २६.८)।

३. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३५)।

४. एक देव, जो भृगु एवं पौलोमि का पुत्र था।

भुवन आप्त्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १५०)।

भुवना—बृहस्पति की भगिनी, जो अष्टवसुओं में से प्रभास नामक वसु की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम विश्वकर्मान् था (ब्रह्माण्ड. ३.३.२१-२९)।

भुवन्मन्यु (भुवमन्यु)—(सो. पू.क.) पृरुवंशीय भवन्मन्यु राजा के लिए उपलब्ध पाठभेद।

भूत—एक प्राचीन भारतीय मानवजाति का सान्द्रिक नाम। पुराणों में मानवजाति समूह के चार प्रकार कहे गये हैं, जो निम्न हैं—(१) धर्मप्रजा, जो धर्मऋषि से उत्पन्न हुयी थी। (२) ईश्वरप्रजा, जो ईश्वर से उत्पन्न हुयी थी। (३) काश्यपीयप्रजा, जो कश्यप ऋषि से हुयी थी। (४) पुलहप्रजा, जो पुलह ऋषि से उत्पन्न हुयी थी। उनमें से भूतयोनि के लोग पुलह प्रजा में से माने जाते हैं (ब्रह्माण्ड. १.३.२.८८-९८; २.३.२-३४; २.७)।

जन्म—ब्रह्माण्ड के अनुसार, इन लोगों की उत्पत्ति भूत-तत्त्व से हुयी थी, एवं ये कपिशवर्णीय थे। इनका खाद्यपदार्थ 'पिशित' था (ब्रह्माण्ड २.८.३९-४०)। इनके जन्म की कथा ब्रह्माण्ड में निम्न प्रकार दी गयी है। ब्रह्मा ने नील-लोहित रुद्र को प्रजा उत्पन्न करने के लिए कहा, तब उसने

सती के उदर से अपने ही समान पिंगल, सनिंग, कपर्दी तथा नीललोहित वर्णवाले लाखों भूत उत्पन्न किये, जो पिशित खानेवाले तथा आच्य तथा सोम प्राशन करनेवाले थे (ब्रह्माण्ड. २.९.६८-७८)।

स्वरूपवर्णन—ये छोटे अवयववाले (कृशाक्ष), लम्बे कानवाले (लंबकर्ण), बड़े तथा लटकते हुए ओठवाले (लम्भस्त्रिक, प्रलंबोष्ठ), लम्बे दाँतवाले (दंष्ट्रिन), लम्बे नखवाले (नखिन), स्थूल शरीरवाले (स्थूलपिंडक), लम्बी भौंहवाले (बभ्रुव), घुँघराते खुरदरे केशवाले (हरिकेश, मुञ्जकेश), नीललोहित एवं पिंगल वर्णवाले, एवं टिगने शरीरवाले होते थे। ये सबल, संगीतविरोधी, सर्प का यज्ञोपवीत धारण करनेवाले, तथा विभिन्न रंगविरंग लेखों से अपने शरीर को रंगानेवाले होते थे। ये शिव की सभा में उपस्थित रहनेवाले, हाथों में खोपड़ी धारण करनेवाले लोग थे, जो केशों को मुकुट की भाँति बना कर धारण करते थे। ये नग्नावस्था में रहते थे, तथा कभी कभी त्रिविध प्रकार के वस्त्रों के साथ हाथी के चर्म को भी धारण करते थे। इनके हथियार शूल, धनु, निपंग, वरुध तथा असि थे।

ये 'उर्ध्वरेतस्' अर्थात् ब्रह्मचर्यपालन करनेवाले थे। इनमें विवाह पद्धति न होने के कारण, इनकी पत्नियाँ न होती थीं। इनके सर्वसाधारण गुणों से ही इनके कुछ गुण हुए थे, जिनके नाम इस प्रकार थे—शूलधर, कृतिवास, कपिर्दिन्, कपर्दिन्, कर्नालिन्, मुञ्जकेश, नीललोहित आदि।

ये पूर्वकाल में अत्यंत जंगली थे, किन्तु असुर एवं देवों के साथ सम्बन्ध आने पर, ये पूर्व से काफी सुधर गये। असुरों के सम्पर्क में आ कर, इन्होंने युद्धकला एवं राजनीति सीखी, तथा अपने प्रकार की एक समाजव्यवस्था स्थापित की।

पुराण के निर्देशों से प्रतीत होता है कि, स्वयंभुव मन्वन्तर के पूर्वकालीन युग में ये भारतवर्ष में निवास करते थे। उस समय इनका निवासस्थान हिमालय पर्वत के उत्तर भाग में तथा उसके निकटवर्ती प्रदेशों में था। ये भारत के सर्व प्राचीन आदिवासी माने जाते हैं।

असुरों एवं भूत गणों के बीच काफी लड़ाई चलती रही। अन्त में ये उनके हमलों से अपने को बचाने के लिए, विन्ध्यपर्वत की ढालों तथा घाटियों में रहने आये।

भूतनायक—पुराणों में रुद्र को भूतों का राजा माना है। उस रूप में रुद्र को 'भूतनायक' एवं 'गणनायक,' तथा भूतों को 'रुद्रानुचर' एवं 'भवपरिपद्' कहा गया

है। किन्तु रुद्र एक व्यक्ति न हो कर, इनके राजा का सामान्य नाम था। कई जगह, इनके राजा को 'गणपति' कहा गया है। इन लोगों में जो व्यक्ति सबसे अधिक बलवान् होता था, उसे राजा बना कर ये लोग उसे 'रुद्र' नाम से विभूषित करते थे। पुराणों में, इस प्रकार के दो रुद्रों का निर्देश मिलता है। उनमें से वीरभद्र नामक रुद्र 'सिंहमुख' नामक भूतगणों का प्रमुख था (वामन. ४.१७)। दूसरा नन्दिकेश्वर नामक रुद्र शैलादि नामक भूत गणों का मुखिया था (मत्स्य. १८१.२)।

वामन के अनुसार, भूतगणों की कुल संख्या ग्यारह करोड़ मानी जाती है। इन भूतगणों में स्कंद, शाल एवं भैरव आदि प्रमुख व्यक्ति थे, तथा इनके अधिकार में अनेकानेक गण थे। वामन में भूतों के रूप एवं अस्त्रों की विस्तृत जानकारी दी गयी है। वहाँ पर इनके मुख की आकृति का वर्णन 'वानरास्य' एवं 'मृगेन्द्रवदन' नाम से किया गया है। भस्म, खट्वांग आदि इनके प्रमुख आयुध थे (वामन. ६७.१-२३)। इनके ध्वज पर प्रायः किसी पशु अथवा पक्षी का चिन्ह रहता था, एवं उसी पशु अथवा पक्षी के नाम से 'मयूरध्वज' अथवा 'मयूरवाहन' ऐसे नाम गणनायक को प्राप्त होते थे।

असुरों से युद्ध—भगवान् शंकर एवं अंधकासुर के बीच हुए युद्ध में, भूतगण शंकर के पक्ष में शामिल था। इस युद्ध में, सर्वप्रथम 'विनायक' नामक भूतों के गणपति ने अंधक पर आक्रमण किया, जिस में अंधक के द्वारा वह परास्त हुआ। तत्पश्चात् नंदी नामक अन्य एक गणपति ने अंधक पर आक्रमण किया, एवं विनायक की सहाय्यता से अंधक से प्रमासान युद्ध कर उसे परास्त किया। अंधक शंकर की शरण में आने पर, उसे भी शिव ने अपने एक भूतगण का गणपति बनाया, एवं वह भृगी नाम से प्रसिद्ध हुआ।

भगवान् शंकर ने महिषासुर एवं शुंभ निशुंभ के साथ किये युद्ध में, उसके भूतगणों का अधिपति रुद्र न हो कर 'रुद्राणी' नामक कई भूतस्त्रियाँ थी। इन दोनों युद्ध में भूतगणों का विजय हुआ। पुराणों में इन सारे युद्धों का निर्देश देवीमहात्म्य वताने के लिए किया गया है। यही कारण है कि, इन युद्धों का निर्देश वामन तथा मार्कंडेय पुराणों में एवं 'देवीमहात्म्य' में ही केवल उल्लेख है।

भूतगणों के बहुत सारे युद्ध असुरगणों से ही हुए थे। किन्तु दक्षयज्ञ के समय, इन्हें देवपक्ष से संग्राम करना पड़ा। उस युद्ध में भी भूतगणों का विजय हुआ, एवं देव-

पक्ष को बहुत बुरी तरह से हार खानी पड़ी (वायु. १. ३०.८९-१०१)।

देव एवं असुरों के साथ किये युद्ध में यद्यपि भूतगणों का विजय हुआ, फिर भी अन्त में इन्हें उत्तरी भारत का प्रदेश छोड़ कर, दक्षिण भारत में स्थलांतर करना पड़ा। भूतगणों का यह स्थलांतर वैवस्वत मन्वन्तर के काल तक पूर्ण हो कर उस समय ये लोग संपूर्णतः दक्षिण भारत के रहिवासी बन चुके थे।

२. एक हैहयवंशीय राजा। स्कंद के अनुसार, इसके पुत्र का नाम शंख था (शंख ४. देखिये)।

३. (सो. यदु. वसु.) एक यादव राजा, जो भागवत के अनुसार वसुदेव एवं पौरवी का पुत्र था।

४. एक ब्रह्मर्षि, जो भृगु ऋषि का पुत्र था।

भूतकर्मन्—कौरव पक्ष का एक योद्धा, जो नकुल-पुत्र शतानीक के द्वारा मारा गया (म. द्रो. २४. २३)।

भूतकेतु—एक राजा, जो दक्षसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक था।

भूतज्योति—(सू. नृग.) एक राजा, जो सुमति राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम वसु था।

भूतधामन्—एक इंद्र, जिसे ऋतुधामन् नामान्तर भी प्राप्त है। जिन इंद्रों के अंश से पांडवों की उत्पत्ति हुआ थी, उन में से दूसरा इंद्र यह था (म. आ. १८९. १९१६* पाठ.)।

भूतनंद—(किलकिला. भविष्य.) एक किलकिला-वंशीय राजा, जिसने पचास वर्षों तक राज्य किया।

भूतनय—रैवत मन्वन्तर का एक देव।

भूतमथन—स्कंद का एक सैनिक। इसके नाम के लिए 'भूतलोमथन' पाठभेद प्राप्त है (म. श. ४४. ६४)।

भूतरजस्—रैवत मन्वन्तर का एक देवगण। इसके नाम के लिए 'भूतरय' एवं 'भूतरज' पाठभेद प्राप्त हैं।

भूतवर्मन्—दुर्योधन पक्ष के 'भूतशर्मन्' नामक राजा के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद।

भूतवीर—पुरोहितों के परिवार का एक सामूहिक नाम। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, जनमेजय पारिक्षित राजा ने अपने कुलपरंपरागत कश्यप नामक पुरोहितों की उपेक्षा कर, इन्हें अपने पुरोहित बनाये, एवं इन्हीं के हाथों एक यज्ञसमारोह का आयोजन किया। किन्तु कश्यपों में से

असितमृग नामक आचार्य ने इन्हे यज्ञमंडप से बाहर निकाल दिया, एवं स्वयं पौरोहित्यपद धारण किया।

आगे चल कर विश्वंतर नामक राजा ने अपने श्यापर्ण नामक पुरोहितगण की इसी तरह उपेक्षा की। उस समय श्यापर्ण पुरोहितों ने अपने अनुगामियों को असितमृग कश्यप की उपयुक्त कथा निवेदित की, एवं विश्वंतर राजा से जबरदस्ती से पौरोहित्य प्राप्त करने की सूचना दी। उसपर राम भार्गविय नामक ऋषि ने विश्वंतर से पौरोहित्य प्राप्त किया (ऐ. ब्रा. ७.२७)।

भूतशर्मन्—कौरव पक्ष का एक राजा, जो द्रोणाचार्य के द्वारा निर्मित गरुडस्युह के ग्रीवास्थान में खड़ा था (म. द्रो. १९.६)। इसके नाम के लिए 'भूतवर्मन्' पाठभेद प्राप्त है।

भूतसंतापन—एक राक्षस, जो हिरण्याक्ष के पुत्रों में से एक था (भा. ७.२.१८)।

भूता—पुलह ऋषि की पत्नी, जो कश्यप एवं क्रोधा की कन्याओं में से एक थी।

भूतांश काश्यप—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जो कश्यप ऋषि का वंशज था (ऋ. १०.१०६)।

इसे पुत्र न होने के कारण, इसने अश्वियों की स्तुति करनेवाले एक सूक्त की रचना की। इसके द्वारा रचित यह सूक्त अत्यंत दुर्बोध है, एवं उसका अर्थ अत्यंत धूमिल है (बृहद्. ८.१८.२१)।

भूति—विश्वमित्र का एक पुत्र।

२. अंगिरस् ऋषि का एक शिष्य, जो अत्यंत क्रूर एवं क्रोधी था (मार्क. ९६.२)।

३. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो वायु के अनुसार सात्यकि के पुत्रों में से एक था।

४. मार्कंडेय पुराण में निर्दिष्ट पितरों का एक गण (मार्क. ९२.९२)।

भूतिकृत एवं भूतिद—मार्कंडेय पुराण में निर्दिष्ट, पितरों का एक गण (मार्क. ९२.९२)।

भूतितीर्थी—स्कंद की अनुचरी एक मातुका (म. श. ४५.२७)।

भूतिनंद—(नाग. भविष्य.) एक राजा, जो ब्रह्मांड एवं वायु के अनुसार, मथुरा देश का राजा था।

भूतिमित्र—(कथ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार वसुदेव राजा का पुत्र था। ब्रह्मांड एवं मत्स्य में, इसके नाम के लिए 'भूमिमित्र,' एवं भागवत एवं विष्णु में 'भूमित्र' पाठभेद प्राप्त है।

भूपति—एक सनातन विश्वदेव (म. अनु. ११. ३२)।

भूमन—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो प्रतिहर्तु एवं स्तुति का पुत्र था। इसे ऋषिकुल्या एवं देवकुल्या नामक दो पत्नियों थी, जिनसे इसे क्रमशः उद्गीथ एवं प्रस्ताव नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ५.१५.१५)।

भूमि—एक भूदेवी, जो ब्रह्मा की पुत्री, एवं भगवान् नारायण की पत्नी थी।

भगवान् नारायण के वाराह अवतार में उससे इसे एक पुत्र हुआ, जिसका नाम मौम अथवा नरकासुर था। भगवान् श्रीकृष्ण के द्वारा मौमासुर का वध होने पर, इसने स्वयं प्रकट हो कर, अदिति के दोनो कुंडल लौटा दिये, एवं भौमासुर के संतान की रक्षा के लिए श्रीकृष्ण से प्रार्थना की (भा. १०.५९.३१)।

एकबार दैत्यों के कारण यह अत्यंत व्रत हुई। फिर अपना भार उतारने के लिए इसने भगवान् विष्णु से प्रार्थना की, जो वाराह अवतार ले कर विष्णु ने पूर्ण की (म. व. १४२. परि. १. क्र. १६. पंक्ति. ८२-१०८)।

परशुराम के द्वारा क्षत्रिय-संहार हो जाने के बाद, इसने कश्यप ऋषि से सर्वसमर्थ 'भूपाल' निर्माण करने के लिए प्रार्थना की, एवं परशुराम के हत्याकांड से बचे हुए क्षत्रिय राजकुमारों का पता भी उसे बताया था (म. शां. ४९.६३-७९)।

सुविख्यात सम्राट् पृथु वैन्य ने इसका दोहन किया था, जिस समय इसने उसे अपनी कन्या मानने के लिए प्रार्थना की थी (म. द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति ७९१*)।

महाभारत के अनुसार, अंग राजा से स्वर्ण करने के कारण, यह अदृश्य हो गयी थी। पश्चात् कश्यप ऋषि ने इसे पुनः स्थिर किया, जिस कारण, इसे कश्यप ऋषि की कन्या इस अर्थ से 'काश्यपी' नाम प्राप्त हुआ (म. अनु. १५३.२)।

श्रीकृष्ण को इसने ऋषि, पितर, देव एवं अतिथियों के सत्कार का महत्त्व कथन किया था (म. अनु. ९७. ५-२३)। इसका महिमा संजय ने धृतराष्ट्र से कथन किया था।

२. भूमिरति नामक प्राचीन नरेश की पत्नी (म. उ. ११५.१४)। संभव है, यह व्यक्तिवाचक नाम न हो कर, एक उपाधि के रूप में इसका प्रयोग किया गया होगा।

भूमिजय—विराटपुत्र उत्तर का नामान्तर (म. वि. ३३.९)।

२. एक कौरवपक्षीय योद्धा, जो द्रोणाचार्य के द्वारा निर्मित गरुडव्यूह के हृदयस्थान पर खड़ा था (म. द्रो. १९.१३-१४)।

भूमिन्न—कृष्वंशीय भूमिमित्र राजा के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (भूमिमित्र देखिये)।

भूमिनी—पूरुवंशीय अजमीठ राजा की पत्नी।

भूमिपति—एक प्राचीन राजा (म. उ. ११५.१४)। संभव है, यह किसी व्यक्ति का नाम न होकर, उपाधि के रूप में प्रयुक्त किया होगा।

भूमिपाल—एक प्राचीन नरेश, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५६-६१)। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ४.२१)।

भूमिशय—एक प्राचीन नरेश, जिसे अमूर्तरयस् राजा से खड्ग की प्राप्ति हुआ थी। आगे चल कर, उस खड्ग को इसने भरत द्रौपद्यांति राजा को प्रदान किया था (म. शां. १६०.७३)।

भूयसि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भूयोमिधस्—सुमेधस् वंशों में से एक।

भूरि—(सो. कुरु.) एक कुरुवंशीय सम्राट, जो सोमदत्त राजा का पुत्र था। इसे भूरिश्रवस् एवं शल नामक दो भाई थे।

भारतीय युद्ध के समय, यह कौरव पक्ष में शामिल था। उस युद्ध में हुए रात्रियुद्ध में, यह सात्यकि के द्वारा मारा गया (म. ९.२२.१८; म. द्रो. १४१.१२)। अपनी मृत्यु के पश्चात्, यह एवं इसके भाई विश्वेदेवों में सम्मिलित हो गये (म. स्व. ५.१४)।

२. (सो. कुरु. भविष्य.) एक कुरुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार विविश्रु राजा का पुत्र था। विष्णु एवं वायु में इसे 'उष्ण', तथा भागवत में इसे 'उक्त' कहा गया है।

भूरिकीर्ति—एक राजा, जो कुश एवं लव का श्वशुर था। इसे चंपिका एवं सुमति नामक दो नातनें थी जो क्रमशः कुश एवं लव को विवाह में दी गयी थी, (आ. रा. विवाह. १)।

भूरिजेजस्—एक प्राचीन नरेश, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५८-६१)। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ४.२३)।

भूरिद्युम्न—एक प्राचीन राजा, जो यमसभा में उपस्थित था (म. स. ८.१८; २०; २५; शां. १२६.१४)। इसके पिता का नाम वीरद्युम्न था।

यह दुर्भाग्य के कारण विनष्ट हुआ था। किन्तु कृशतनु नामक ऋषि ने अपने तपोबल से इसे पुनः जीवित किया (कृशतनु देखिये)। गोदान करने के कारण, इसे स्वर्ग-प्राप्ति हो कर यह यमसभा में उपस्थित हुआ (म. अनु. ७६.२५)।

२. कृष्णभक्त एक ऋषि, जिसने शान्तिदूत बन कर हस्तिनापुर जाते समय मार्ग में श्रीकृष्ण की दक्षिणावर्त परिक्रमा की थी (म. उ. ८१.२७)।

३. दक्षसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

४. ब्रह्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

भूरिबल—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। यह भीम के द्वारा मारा गया (म. श. २५.१२)। इसके नाम के लिए भीमबल पाठभेद प्राप्त है।

भूरियशस्—पांचालदेशीय एक राजा, जिसके पुत्र का नाम पुरयशस् था (पुरयशस् देखिये)।

भूरिश्रवस्—एक कुरुवंशीय राजा, जो सोमदत्त राजा का पुत्र था (म. आ. १७७.१४)। इसे यूपकेतु एवं यूपध्वज नामान्तर भी प्राप्त थे (म. द्रो. २४.५३; स्त्री. २४.५)।

इसे सूरि एवं शल नामक और दो बंधु थे। अपने पिता एवं बन्धुओं के साथ, यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. स. ३१.८)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भी यह उपस्थित था।

भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था। अपनी एक अश्वैहिणी सेना के सहित, यह दुर्योधन की सहाय्यता के लिए युद्ध में प्रविष्ट हुआ (म. उ. १९.१२)। यह रथयुद्ध में अत्यंत प्रवीण था, एवं इसकी श्रेणि 'रथयूथययूथ' थी (म. उ. १६५.२९)।

भारतीय युद्ध में शंख, धृष्टकेतु, भीम, शिखण्डिन आदि के साथ इसका युद्ध हुआ था। मणिमत् नामक राजा का इसने वध किया था (म. द्रो. २४.५१)।

भूरिश्रवस्-सात्यकि-युद्ध—भारतीय युद्ध में यादव राजा सात्यकि के साथ इसका अत्यंत रोदर युद्ध हुआ।

कुरुवंशीय भूरिश्रवस् एवं यादववंशीय सात्यकि का सत्रुत्व वंशपरंपरागत था। भूरिश्रवस् के पिता सोमदत्त एवं सात्यकि के पिता शिनि दोनो देवकी के स्वयंवर में उपस्थित थे, एवं उस समय से इन दो कुलों में वैर का अग्नि सुलभ

रह था। उस स्वयंवर में देवकी ने शिनि का धरण किया। उससे क्रुद्ध हो कर सोमदत्त ने शिनि से युद्ध प्रारंभ किया, जिसमें शिनि ने सोमदत्त को जमीन पर घसीट दिया, एवं उसके केश पकड़ कर उसे लत्ताप्रहार किया (शिनि एवं सोमदत्त देखिये)।

भूरिश्रवस् ने भी इस वैर की परंपरा अलंघित रखी थी। भारतीय युद्ध के प्रारंभ में ही इसने सात्यकि के दस पुत्रों का वध किया था (म. भी. ७०.२५)।

भूरिश्रवस् एवं सात्यकि के दरम्यान हुए युद्ध में, यह सात्यकि का वध करनेवाला ही था, कि इतने में सात्यकि को वचाने के लिए अर्जुन ने पीछे से आ कर इसका दाहिना हाथ तोड़ दिया (म. द्रो. ११७.६२)। क्षत्रिय के लिए अशोभनीय इस कृत्य से यह अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं अपना टूटा हुआ दाहिना हाथ अर्जुन के सम्मुख फेंक कर, इसने उसकी काफ़ी निर्भर्त्सना की (म. द्रो. ११८)। पश्चात् इस कृत्य का निषेध करने के लिए इसने आमरण अनशन शुरु किया। उसी निःशक्त अवस्था में सात्यकि ने इसका सर काट कर इसका वध किया (म. द्रो. ११८. ३५-३६)।

इस क्रूरकर्म के कारण, अर्जुन एवं सात्यकि की सभी लोगो ने काफ़ी निर्भर्त्सना की। किन्तु अर्जुन ने अपने आत्मसमर्पण करते हुए कहा, 'संकुल युद्ध में शत्रु का पीछे से हाथ तोड़ने में कोई भी दोष नहीं है'। सात्यकि ने भी कौरवों के द्वारा निःशक्त अभिमन्यु का किया गया वध का दृष्टान्त दे कर, अपने कृत्य का समर्थन किया (म. द्रो. ११८.४२-४५; ४७)।

मृत्यु के पश्चात् यह विश्वेदेवों में सम्मिलित हुआ (म. स्व.)।

२. एक ऋषि, जो शुक्र तथा पीवरी के पुत्रों में से एक था।

३. एक राजा, जो मेरुसावर्णि मनु के पुत्रों में एक था।

४. एक आचार्य, जो मध्यमाध्वर्युओं में से एक था।

भूरिश्रुत—शुक्रपुत्र भूरिश्रवस् नामक आचार्य का नामांतर।

भूरिषेण—एक राजा, जो ब्रह्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक था।

२. (सु. शर्याति.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार शर्याति राजा को पुत्रों में से एक था।

भूरिहन्—एक राक्षस, जो प्राचीन काल में पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२०.५०; ५४-५५)।

भृगवाण—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १.१२०. ५)। ऋग्वेद में एक स्थान पर यह उस व्यक्ति का नाम है, जिसे 'शोभ' कहा गया है। किन्तु लुड्विग के अनुसार, इसका सही नाम 'घोष' था। कश्चित् नामक आचार्य से यह संबंधित था, किन्तु उस संबंध का स्वरूप अत्यंत संदिग्ध है।

ऋग्वेद में अन्यत्र यह शब्द अग्नि की उपाधि के रूप में आता है, जिससे भृगुओं के द्वारा की जानेवाली अग्निपूजा का आशय प्रतीत है (ऋ. १.७१.४; ४. ७.४)।

भृगु—एक वैदिक पुरोहित गण। ऋग्वेद में इसका निर्देश अग्निपूजकों के रूप में कई बार किया गया है (ऋ. १.५८.६; १२७.७)। इन्हें सर्व प्रथम अग्नि की प्राप्ति हुई, जिसकी कथा ऋग्वेद में अनेक बार दी गयी है (ऋ. २.४.२; १०.४६.२; तै. सं. ४.६.५.२)। मातरिश्वन् के द्वारा इनकी अग्नि लाने की कथा ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. ३.५.१०)।

दशराम युद्ध के समय भृगुगण के पुरोहित लोगो का निर्देश द्रुह्युओं के साथ अनेक बार आता है (ऋ. ८.३. ९; ६.१८; १०.२.४)। द्रुह्यु तथा तुर्वश के साथ साथ भृगुओं का भी राजा सुदात के शत्रुओं के रूप में उल्लेख प्राप्त है (ऋ. ७.१८)।

यह एक प्राचीन जाति के लोग थे; क्यों कि, स्तोत्रागण अंगिरसों तथा अथर्वनों के साथ साथ इनकी अपने सोम-प्रेमी पितरों के रूप में चर्चा करते हैं। समस्त तैत्तिरीय देवों, मरुतों, जलो, अश्विनो, उपसु तथा सूर्य के साथ भृगुओं का भी सोमपान करने के लिए आवाहन किया गया है (ऋ. १०.१४; ८.३)। इनकी सूर्य से तुलना की गई है, तथा यह कहा है कि, इनकी सभी कामनाएँ तृप्त हो गयी थीं (ऋ. ८.३)।

अग्नि को समर्पित सूक्तों में बार बार भृगुओं को प्रमत्ततः मनुष्यों के पास अग्नि पहुँचाने के कार्य से संबंध दर्शित किया गया है। अग्नि को भृगुओं का उपहार कहा गया है (ऋ. ३.२)। मंथन करते हुये इन लोगो ने स्तुति के द्वारा अग्नि का आवाहन किया था (ऋ. १.१२७)। अपने प्रशस्तिगीतों से इन लोगो ने अग्नि को लकड़ी में प्रकाशित किया था (ऋ. १०.१२२)। ये लोग अग्नि को पृथ्वी का नामि तक लये (ऋ. १.१४३)।

जहाँ अथर्वन् ने संस्कारों तथा यज्ञों का स्थापना की, वहीं भृगुओं ने अपनी योग्यता से अपने को देवों के रूप

में प्रकट किया (क्र. १०.९२)। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि, इनकी योग्यता प्रमुखतः अग्नि उत्पन्न करने वाले व्यक्तियों के रूप में व्यक्त की गयी है। अग्नि के अवतरण तथा मनुष्यों तक उसके पहुँचाने की पुराकथा प्रमुखतः मातरिश्वर तथा भृगुओं से संबंधित हैं। किंतु जहाँ मातरिश्वर उसे विद्युत् के रूप में आकाश से लाते हैं, वहीं भृगु उसे लाते नहीं, बल्कि केवल यही माना गया है कि यह लोग पृथ्वी पर यज्ञ की प्रतिष्ठा तथा संपादन के लिए उसे प्रदीप्त करते हैं।

व्युत्पत्ति की दृष्टि से भी 'भृगु' शब्द का अर्थ 'प्रकाशमान' है, जैसा कि आज (प्रकाशित होना) धातु से निष्पन्न होता है। अग्नि के विचार इस बात पर कदाचित्त ही सन्देह किया जा सकता है कि, मूलतः 'भृगु' अग्नि का ही मूल नाम था; जब कि कुन तथा वार्थ इस मत पर सहमत हैं कि, अग्नि के जित रूप का यह प्रतिनिधित्व करता है, वह विद्युत् है। कुन तथा वेन्नर ने अग्नि पुरोहितों के रूप में भृगुओं को यूनानी देवों के साथ समीकृत किया है।

बाद के साहित्य में भृगु-गण, एक वास्तविक परिवार है तथा कौपीतिक ब्राह्मण के अनुसार, ऐतशायन भी इनके एक अंग है। पुरोहितों के रूप में भृगुओं का 'अग्नि-स्थापन' तथा 'दशपेयकृत' जैसे अनेक संस्कारों के सम्बन्ध में उल्लेख है। अनेक स्थलों पर ये लोग अंगिरसों के साथ भी संयुक्त हैं (तै. सं. १.१.७.२; मै. सं. १.१.८; तै. ब्रा. १.१.४.८; २.२.७.६; श. ब्रा. १.२.१.१३)। इन दो परिवारों का घनिष्ठ सम्बन्ध इस तथ्य से प्रकट होता है कि, शतपथ ब्राह्मण में 'च्यवन' को 'भार्गव' या 'अंगिरस' दोनों ही कहा गया है (श. ब्रा. ४.१.५.१)। अथर्ववेद में, ब्राह्मणों को व्रत करनेवाले लोगों पर पढ़ने-वाली विपत्तियों का दृष्टान्त देने के लिए 'भृगु' नाम का उपयोग किया गया है।

ऋग्वेद में एक स्थान पर, भृगुगण का निर्देश एक षोडशों के समूह के रूप में किया हुआ प्रतीत होता है (क्र. ७.१८.६)।

२. कश्यपकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

भृगु प्रजापति—पुराणों में निर्दिष्ट प्रजापतियों में से एक, जो स्वायंभुव तथा चातुष्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक था। स्वायंभुव मन्वन्तर में इसकी उत्पत्ति ब्रह्मा के हृदय से हुयी। यह स्वायंभुव मनु का दामाद एवं शंकर का साधु था।

दक्षयज्ञ—शंकर का अपमान कर के जिस समय दक्ष ने यज्ञ किया था, उस समय यह उपस्थित था, एवं दक्ष के द्वारा की गई शंकर की निन्दा में इसने भी भाग लिया था। शंकर को जब यह ज्ञात हुआ तब उसने सबसे पहले नंदी को यज्ञविध्वंस करने के लिए भेजा, किंतु भृगु ने उसे शाप दे कर भगा दिया। तब शिव ने अपने पार्षद वीरभद्र को भेजा। वीरभद्र ने दक्षयज्ञ का विध्वंस किया, तथा यज्ञ में भाग लेनेवाले सभी ऋषियों को विद्रूप बना डाला। उसने क्रोध में आकर इसकी दाढ़ी भी जला डाली। यह विध्वंस-कारो लीला से भयातुर हो कर, सभी ऋषियों एवं देवों ने शंकर की स्तुति की, जिससे प्रसन्न हो कर शंकर ने इसे बकरे के दाढ़ी प्रदान की (भा. ४.५.१७-१९)। ब्रह्मांड के अनुसार, दक्ष द्वारा अपमानित होने के कारण शिव ने इसे जला डाला था (ब्रह्मांड. २.११.१-१०)।

देवदैत्य संग्राम—देवों तथा असुरों के बीच होनेवाले युद्ध में दैत्यो को पराजय का सुख देखना पड़ा। यह देख कर, असुरों के गुरु शुक्र 'संजीवनी' मंत्र लाने के लिए गया। दूसरी ओर भृगु, जो असुरों का बड़ा पक्षपाती था, वह भी तपस्या के लिये चला गया। तब इसकी पत्नी देवों से संग्राम करती रही। विष्णु ने उसे युद्धभूमि में डट कर देवों को मारते हुए देखा। पहले तो वह शान्त रहे, फिर बिना विचार किये हुए कि वह स्त्री है, उन्होंने अपने सुदर्शन चक्रद्वारा उसका वध किया।

भृगु को जैसे ही यह पता चला, इसने संजीवनीमंत्र से अपनी पत्नी को जिला लिया, तथा विष्णु को शाप दिया, 'तुम्हें गर्भ में रह कर उसकी पीड़ा को सहन कर, पृथ्वी पर अवतार लेना पड़ेगा' (दे. भा. ४.११-१२)। स्त्रीवध उचित है अथवा अनुचित इसके बारे में यह निर्देश रामायण में प्राप्त है। 'ताडकावध' के समय विश्वामित्र ने राम को समझाते हुए कहा था कि, विशेष प्रसंग में 'स्त्रीवध' अनुचित नहीं, उचित है (वा. रा. वा. २५.२१)।

विष्णु को भृगु से शाप मिलने की एक दूसरी कथा पद्मपुराण में प्राप्त है। विष्णु ने पहले भृगु को यह वचन दिया था कि, वह इसके यज्ञ की रक्षा करेगा। किन्तु यज्ञ के समय वह इन्द्र के निमंत्रण पर उसके यहाँ चला गया। यज्ञ के समय विष्णु को न देख कर दैत्यों ने इसके यज्ञ का नाश किया। इससे क्रोधित हो कर भृगु ने विष्णु को मृत्युलोक में दस बार जन्म लेने का शाप दिया (पद्म. भू. १२१)।

देवों की परीक्षा—एक बार स्वयंभुव मनु ने एक यज्ञ किया, जिसमें यह विवाद खड़ा हुआ कि, ब्रह्मा विष्णु तथा महेश में कौन श्रेष्ठ है? भृगु उस में था, अतएव इस बात का पता लगाने का काम इसे सौंपा गया। भृगु सर्वप्रथम कैलाश पर्वत पर शंकरजी के यहाँ गया। वहाँ पर नंदी ने इसे अन्दर जाने के लिए रोका, कारण कि वहाँ शंकर-पार्वती कीड़ा में निगमन थे। इसप्रकार के अपमान एवं उपेक्षा को यह सहन न कर सका, और क्रोधावेश में शंकर को शाप दिया, 'तुम्हारे शरीर का आकार लिंग रूप में माना जायेगा, तथा तुम्हारे उपर चढ़ाये हुये जल को छे कर कोई भी व्यक्ति तीर्थ रूप में पान न करेगा'।

इसके उपरंत यह ब्रह्मा के पास गया, वहाँ ब्रह्मा ने न इसको नमस्कार ही किया, और न इसका उचित सम्मान कर उत्थापन ही दिया। इससे क्रोधित होकर इसने शाप दिया, 'तुम्हारा पूजन कोई न करेगा'।

अंत में यह विष्णु के पास गया। विष्णु उस समय सो रहे थे। यह दो देवताओं से रुष्ट ही था। क्रोध में आकर भृगु ने विष्णुके सीने पर कस कर एक लात मारी। विष्णु की नींद टूटी तथा उन्होंने इसे नमस्कार कर पूछा, 'आप के पैरों को तो चोट नहीं लगी?'। विष्णु की यह शालीनता देखकर भृगु प्रसन्न हुआ, तथा इसने विष्णु को सर्वश्रेष्ठ देवता की पदवी प्रदान की (पद्म. उ. २५५)। भृगु के द्वारा किये गये लात के प्रहार को श्रीविष्णु ने 'श्रीवास'चिह्न मानकर धारण किया (भा. १०.८९.१--१२)।

परिवार—ब्रह्माण्ड के अनुसार, इसकी पत्नी दक्षकन्या ख्याति थी, जिससे इसे लक्ष्मी, धातृ तथा विधातृ नामक सन्तानें हुई। लक्ष्मी ने नारायण का वरण किया, तथा उससे बल तथा उन्माद नामक पुत्र हुए। कालान्तर में बल को तेज, तथा उन्माद को संशय नामक पुत्र हुए। भृगु ने मन से कई पुत्र उत्पन्न किये, जो आकाशगामी होकर देवों के विमानों के चालक बने।

ख्यातिपुत्र धातृ की पत्नी का नाम नियति, तथा विधातृ की पत्नी का नाम आयति था। नियति को मृकंड, एवं आयति को प्राण नामक पुत्र हुए। मृकंड को मनरिवनी से मार्कंडेय हुआ। मार्कंडेय को धूम्रा से वेदशिरस् हुआ। वेदशिरस् को पीवरी से मार्कंडेय नाम से प्रसिद्ध ऋषि हुए। प्राण को पुंडरिका से वृतिमान् नामक पुत्र हुआ, जिसे उन्नत तथा स्वनवत् नामक पुत्र हुए। ये सभी लोग भार्गव के नाम से प्रसिद्ध हुए (ब्रह्मांड. २.११.१-१०; १२.६२)।

भागवत, विष्णुपुराण तथा महाभारत में भी इसके परिवार के बारे में सूचना प्राप्त होती है (भा. ४.१. ४५; विष्णु. १.१०.१-५; म. आ. ६०.४८; कवि तथा उशनस् देखिये)

भृगु 'वारुणि'—ब्रह्मा के आठ मानस पुत्रों में से एक, जिससे आगे चल कर ब्राह्मण कुलों का निर्माण हुआ। ब्रह्मा के आठ मानस पुत्र इस प्रकार हैं:—भृगु, अंगिरस्, मरीचि, अत्रि, वसिष्ठ, पुलस्त्य, पुलह एवं ऋतु (वायु. ९.६८-६९)। 'पितामह' ब्रह्मा से उत्पन्न होने के कारण, इन सभी ऋषियों को 'पैतामहर्षि' सामुहिक नाम प्राप्त है। यह अग्नि की ज्वाला से उत्पन्न हुआ, अतः इसका नाम 'भृगु' पड़ा (म. अनु. ८५.१०६)।

जन्म—महाभारत एवं पुराणों के अनुसार, ब्रह्मा के द्वारा किये गये यज्ञ से भृगु सर्वप्रथम उत्पन्न हुआ, एवं शिव ने वरुण का रूप धारण कर इसे पुत्र रूप में धारण किया। इसलिए इसे 'वारुणि' उपाधि प्राप्त हुयी (म. आ. ५. २१६*; अनु. १३२.३६; ब्रह्मांड. ३.२.३८)। कई पुराणों के अनुसार, ब्रह्ममानस पुत्रों में से कवि नामक एक और पुत्र का निर्देश प्राप्त है, उसे भी वरुणरूपधारी शिव ने पुत्र रूप में स्वीकार किया, जिसके कारण कवि को भी भृगु का माई कहा जाता है।

ब्राह्मण ग्रन्थों में भी इसे 'वारुणि भृगु' कहा गया है। किन्तु वहाँ इसे प्रजापति का पुत्र कहा गया है, एवं इसकी जन्मकथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। इन ग्रन्थों के अनुसार, प्रजापति ने एक बार अपना वीर्य स्थलित किया, जिसके तीन भाग हो गये, एवं इन भागों से आदित्य, भृगु एवं अंगिरस् की उत्पत्ति हुयी (ऐ. ब्रा. ३.३४)। पंचविंश ब्राह्मण में इसे वरुण के वीर्यस्खलन से उत्पन्न हुआ कहा गया है (पं. ब्रा. १८.९.१)। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, यह वरुण द्वारा उत्पन्न किया गया, एवं उसी के द्वारा इसे ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति हुयी, जिस कारण इसे 'भृगु वारुणि' नाम प्राप्त हुआ (श. ब्रा. ११.६.१.१; तै. आ. ९.१; तै. उ. १.३.१.१)।

गोपथ ब्राह्मण के अनुसार, सृष्टि की उत्पत्ति के लिए जिस समय ब्रह्म-तपस्या में लीन था, उस समय उसके शरीर से स्वेदकण पृथ्वी पर गिरे। उन स्वेदकणों में अपनी परछाई देखने के कारण ही, ब्रह्मा का वीर्य स्खलन हुआ। उस वीर्य के दो भाग हुए—उनमें से जो भाग शान्त, पेय एवं स्वादिष्ट था, उससे भृगु की उत्पत्ति हुयी; एवं जो भाग खारा, अपेय एवं अस्वादिष्ट था, उससे अंगिरस् ऋषि की

उत्पत्ति हुयी। जन्म लेते ही इसने अपने मुँह से जो नाद निस्तृत किया, उसी कारण इसका नाम 'अथर्वन्' हुआ। आगे चलकर अथर्वन् एवं अंगिरस् से दस दस, मिल कर बीस ऋषि उत्पन्न हुए, जिन्हें 'अथर्वन् आंगिरस' नाम प्राप्त हुआ।

वेदोत्पत्ति—अथर्वन् ऋषि के द्वारा ब्रह्मा को जो वेदमंत्र दृष्टिगत हुए, उन्हीं के द्वारा 'अथर्ववेद' की रचना हुयी, एवं अंगिरस ऋषि के द्वारा दृष्टिगत हुए मंत्रों से 'आंगिरस-वेद' का निर्माण हुआ।

ब्रह्मा के द्वारा पुष्कर क्षेत्र में किये गये यज्ञ में यह 'होता' था, एवं देवों के द्वारा तुंगक आरण्य में किये गये यज्ञ में यह आचार्य था। इन्हीं दोनों यज्ञों के समय, इसने 'मीमंसेचक्रवर्त' किया था (पद्म. सू. ३४; स्व. ३९; उ. १९४)। इसे संजीवनी विद्या अवगत थी, जिसके बल से इसने जमदग्नि को पुनः जीवित किया था (ब्रह्मांड. १.३०)।

नहुष को शाप—नहुष के अविवेकी व्यवहारों से देवतागण एवं सारी प्रजा त्रस्त थी। उसे देख कर अगस्त्य ऋषि भृगु ऋषि से मंत्रणा लेने के लिए आया। इसने उसे राय दी कि, तुम सभी सप्तऋषि नहुष के रथ के वाहन बनो। इस प्रकार सभी सप्तऋषियों ने नहुष के रथ को खींचा। रथ धीमा चल रहा था, अतएव नहुष ने क्रोध में आकर तेज चलने के लिए 'सर्प-सर्प' कहा, तथा एक लाल अगस्त्य के मारी। इस समय अगस्त्य की जटाओं में भृगु विराजमान था, अतएव लाल इसे लगी, तथा इसने नहुष को सर्प (नाग) बन जाने के लिए शाप दिया, तथा उसे इन्द्रपर्व से च्युत किया (म. अनु. ९९; नहुष देखिये)।

एक बार हिमालय तथा विंध्य पर्वतों में अकाल पड़ा। उस समय यह हिमालय पर गया। वहाँ पर इसने एक विद्याधर दम्पति को देखा, जिसमें पति का मुख किसी शाप के कारण व्याध का था। उस दम्पति के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, इसने उस पुरुष को पौष शुद्ध एकादशी का व्रत करने के लिए कहा, जिसके द्वारा वह शाप से मुक्त हो सका (पद्म. उ. १२५)।

संवाद—महाभारत एवं पुराणों में, इसके अन्य राजाओं एवं ऋषियों के बीच तत्त्वज्ञान सम्बन्धी जो बातें हुईं, उनका स्थान स्थान पर निर्देश मिलता है। इसका एवं भरद्वाज का उगत की उत्पत्ति तथा विभिन्न तत्त्वों के वर्णन के सम्बन्ध में संवाद हुआ था (म. शां. १७.४८३*)। इसने

वीतहृद्य को शरण देकर उसे ब्राह्मणत्व प्रदान कर उपदेश दिया था (म. अनु. ३०.५७-५८)। इसी प्रकार निम्नलिखित विषयों पर इसके द्वारा व्यक्त किए गये विचारों में इसका दार्शनिक पक्ष देखने योग्य है:—

शरीर के भीतर जठरानल तथा प्राण, अपान आदि वायुओं की स्थिति (म. शां. १७८), सत्य की महिमा, असत्य के दोष तथा लोग परलोक के दुःखसुख का विवेचन (म. शां. १८३), परलोक तथा वानप्रस्थ एवं संन्यास धर्मों का वर्णन आदि (म. शां. १८५)। इसने सोमकान्त राजा को गणेश पुराण भी बताया था (गणेश. १.९)।

आश्रम—भृगुतुंग नामक पर्वत पर भृगु ऋषि का आश्रम था, जहाँ इसने तपस्या की थी। इसी के ही कारण, इस पर्वत को 'भृगुतुंग' नाम प्राप्त हुआ था।

तत्त्वज्ञान—तैत्तिरीय उपनिषद् में एक तत्त्वज्ञ के नाते भृगु वारुणि का निर्देश प्राप्त है। इसके द्वारा पंचकोशात्मक ब्रह्मा का कथन प्राप्त है, जिसके अनुसार अन्न, प्राण, मन, विज्ञान एवं आनंद इस क्रम से ब्रह्मा का वर्णन किया गया है (तै. उ. ३.१.१-६)। किन्तु ब्रह्मा की प्राप्ति केवल विचार से ही हो सकती है, ऐसा इसका अन्तिम सिद्धान्त था।

परिवार—भृगु को दिव्या तथा पुलोमा नामक दो पत्नियाँ थीं। उन में से दिव्या हिरण्यकशिपु नामक असुर की कन्या थी (ब्रह्मांड. ३.१.७४; वायु. ६५. ७३)। महाभारत में पुलोमा को भी हिरण्यकशिपु की कन्या कहा गया है।

पुलोमा से इसे कुल उन्नीस पुत्र हुए, जिनमें से बारह देवयोनि के एवं बाकी सात ऋषि थे। इससे उत्पन्न बारह देव निम्नलिखित थे:—सुवन, भावन, अंस्य, अंश्यायन, ऋतु, शुचि, स्वमूर्धन्, व्याज वसुद, प्रभव, अव्यय एवं अधिपति।

पुलोमा से उत्पन्न सात ऋषि निम्नलिखित थे:—च्यवन, उशनस् शुक्र, वज्रशीर्ष, शुचि, और्व, वरेण्य एवं सवन।

ब्रह्मांड में उपर्युक्त सारे देव एवं ऋषि दिव्या के पुत्र कहे गये हैं, एवं केवल च्यवन को पुलोमा का पुत्र बताया गया है (ब्रह्मांड. ३.१.८९-९०, ९२)।

इसके पुत्रों में उशनस् शुक्र एवं च्यवन ये दो पुत्र अत्यधिक महत्वपूर्ण थे, क्योंकि, उन्हींसे आगे चल कर भृगु (भार्गव) वंश का विस्तार हुआ। इनमें से शुक्र का वंश दैत्यपक्ष में शामिल हो कर विनष्ट हो गया। इस तरह च्यवन ऋषि के परिवार से ही आगे चल कर

सुविख्यात भार्गव वंश निर्माण हुआ। भृगुवंश के इन दो प्रमुख वंशकार ऋषियों का वंशविस्तार निम्नलिखित है :—

(१) शुक्र का परिवार—शुक्र को अपनी गो नामक पत्नी से वरुचिन्, त्वष्टु, शंड एवं मर्क ऐसे चार पुत्र हुए। उनमें से वरुचिन् को रजत्, पृथुरभिम् एवं बृहदंगिरस् नामक तीन ब्रह्मिष्ठ एवं असुरयाजक पुत्र उत्पन्न हुए (वायु, ६५.७८)। वरुचिन् के ये तीनों पुत्र दैत्यों के धर्मगुरु थे, एवं वे देवासुर संग्राम में अन्य दैत्यों के साथ नष्ट हो गये। त्वष्टु को त्रिशिरस् विश्वरूप एवं विश्वकर्म्मन् नामक दो पुत्र थे।

शुक्र के अन्य दो पुत्र शंड एवं मर्क शुक्र में दैत्यों के धर्मगुरु थे। किन्तु पश्चात् वे देवों के पक्ष में शामिल हो गये, जिस कारण शुक्र ने उन्हें विनष्ट होने का शाप दिया। इनमें मर्क से मार्कण्डेय नामक वंश की उत्पत्ति हुयी।

भौगोलिक दृष्टि से शुक्र एवं उसका परिवार उत्तरी भारत के मध्यप्रदेश से संबंधित प्रतीत होता है (शुक्र देखिये)।

(२) च्यवन का परिवार—च्यवन ऋषि को शर्याति राजा की कन्या सुकन्या से आप्रवान् एवं दधीच नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए। उनमें से आप्रवान् के वंश में ऋचीक, जमदग्नि एवं परशुराम जामदग्न्य इस क्रम से एक से एक अधिक पराक्रमी एवं विद्यासंपन्न पुत्र उत्पन्न हुए। आप्रवान् के इन पराक्रमी वंशजों ने हैहयवंशीय राजाओं के साथ किया शत्रुत्व सुविख्यात है (परशुराम जामदग्न्य देखिये)। भार्गव वंश के इस शाखा का विस्तार पश्चिम हिंदुस्थान में आनर्त प्रदेश में हुआ था।

दधीच ऋषि को सरस्वती नामक पत्नी से सारस्वत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। किन्तु भार्गव वंश के इस शाखा के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त नहीं है।

भार्गवगण—ब्रह्मांड के अनुसार, भार्गव वंश में उपयुक्त भृगुवंशीयों के अतिरिक्त निम्नलिखित सात गण प्रमुख थे:—१. वत्स, २. विद, ३. आर्षिषेण, ४. यस्क ५. वैन्य, ६. शौनक, ७. मित्रेयु (ब्रह्मांड. ३.१. ७४-१००)।

क्षत्रियब्राह्मण—च्यवन ऋषि के परिवार ने ब्राह्मण हो कर भी क्षत्रियकर्म स्वीकार लिया, जिस कारण, भार्गव वंशियों को 'क्षत्रियब्राह्मण' उपाधि प्राप्त

हुयी। भृगु के इस क्षत्रियब्राह्मण वंश में, निम्नलिखित ऋषि भी समाविष्ट थे:—मत्स्य, मौद्रल्ययन, सांक्रय्य, गार्ग्यायन, गार्गिय, कपि, मैत्रेय, वध्रयश्च एव दिवोदास (मत्स्य. १९५.२२-२३)। ब्रह्मांड में भार्गव वंश के उन्नीस सूक्तकारों का निर्देश प्राप्त है (ब्रह्मांड. २.३२. १०४-१०६)। वहाँ इन भार्गव वंश के बहुत सारे क्षत्रिय ब्राह्मण ऋषियों का अंतरभाव किया है।

भृगु-आंगिरस परिवार—भृगु वारुणि, उसका भाई कवि एवं अंगिरस् आग्नेय, ये तीनों प्राचीन ब्राह्मण कुलों के आद्य निर्माता ऋषि माने जाते हैं। प्रारंभ में ये तीनों ब्राह्मण वंश स्वतंत्र थे। किन्तु आगे चल कर भृगु, कवि एवं अंगिरस् ये तीनों वंश एकत्रित हुए, जिन्हें 'भृगु-आंगिरस' अथवा 'अंगिरस' नाम प्राप्त हुआ (म. अनु. ८५.१९-३८)। इस भृगु-आंगिरस वंश में भृगु के सात पुत्र, एवं अंगिरस् तथा कवि के प्रत्येकी आठ पुत्रों के के वंशज समिलित थे। इस वंश में समिलित हुए अंगिरस एवं कवि के पुत्रों के नाम निम्नलिखित थे:—

(१) अंगिरसपुत्र—बृहस्पति, उत्थय, पयस्य, शांति, घोर, विलुप, सुधन्वन् एवं संवर्त।

(२) कविपुत्र—कवि, काव्य, धृष्णु, बुद्धिमांत, उशनस् भृगु, विरज, काशिन् एवं उग्र।

भृगु एवं आंगिरस वंश एक होने के बाद उनके ग्रंथ ही 'भृग्वंगिरस' अथवा 'अथर्वंगिरस' नाम से एकत्र हो गये। आधुनिक काल में उपलब्ध अथर्वसंहिता भृगु एवं आंगिरस ग्रंथों के सम्मिलन से ही बनी हुयी है।

विवाहसंबंध—आधुनिक काल में, विवाह करते समय जिन दो गोत्रों के प्रवर एक है, उन में विवाह तय नहीं किया जाता। भृगु एवं अंगिरस् ये दो गोत्र ही केवल ऐसे हैं कि, जहाँ प्रवर एक होने पर भी विवाह तय करने में बाधा नहीं आती है। संभव है, ये दोनों मूल गोत्रकार अलग वंश के होने के कारण, यह धार्मिक परंपरा प्रस्थापित की गयी हो।

भृगु गोत्रियों में भृगु, जामदग्न्य भृगु ऐसे अनेक भेद हैं। आंगिरस वंशियों में भी भरद्वाज-आंगिरस, गौतम आंगिरस ऐसे अनेक भेद प्राप्त हैं। इन सारे गोत्रों में काप्पी नामसादर्य दिखाई देता है। किन्तु इन सारे गोत्रों के मूल गोत्रकार विभिन्न वंशों में उत्पन्न हुये थे। यही कारण है कि, इन गोत्रों के प्रवर एक हो कर भी उन में विवाह होता है।

वैदिक वाङ्मय में भृगु प्रजापति एवं भृगु वारुणि स्वतंत्र

व्यक्ति-दिये गये हैं। किन्तु पौराणिक वाङ्मय में उन्हें बहुत बुरी तरह संमिश्रित किया गया है। अंगिरसों के संबंध में भी यही स्थिति प्रतीत होती है (अंगिरस् देखिये)।

ग्रंथ—भृगुस्मृति; २. भृगुगीता, जिसमें वेदान्त विषयक प्रश्नों की चर्चा की गयी है; ३. भृगुसंहिता, जिसमें ज्योतिष-शास्त्रविषयक प्रश्नों की चर्चा की गयी है; ४. भृगुसिद्धान्त; ५. भृगुसूत्र (C.C.)।

मत्स्य के अनुसार, इसने वास्तुशास्त्र विषयक एक ग्रंथ की रचना भी की थी।

भृगुस्मृति से प्रतीत होता है, कि धर्मशास्त्र से संबंधित विषयों पर भी इसके द्वारा कई ग्रंथों की रचना हुयी थी (मनु देखिये)।

भृगुकुल के गोत्रकार—भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकारों में पंच-प्रवरात्मक (पाँच प्रवरोवाले), चतुःप्रवरात्मक (चार प्रवरोवाले), त्रिप्रवरात्मक (तीन प्रवरोवाले), एवं द्विप्रवरात्मक (दो प्रवरोवाले) ऐसे चार प्रमुख प्रकार हैं।

(१) पंचप्रवरात्मक गोत्रकार—भृगुकुल के निम्नलिखित गोत्रकार पंचप्रवरात्मक हैं, जिनके आप्रवान्, और्व, च्यवन, जमदग्नि, एवं भृगु, ये पाँच प्रवर होते हैं—अनंतभाग्नि, अनुमति, आप्रवान्, आलुकि (जलामित), आवेद (आंबाज), उपरिमंडल, ऐलिक, और्व, कार्धणि (पार्वणि), कुत्स, कौचहास्तिक, कोटिल, कौत्स, कौसि, शुभ्य, गायन, गार्ग्यायण, गांहायण, गोष्ठायन, चलकुंडल, चातकि, चांद्रमसि, च्यवन, जमदग्नि, जविन् (ग), जालंधि, जिह्वक (जिह्वक, नदाकि), दंडिन् (दग्नि), देवपति, नडायन (नवप्रभ), नाकुलि, नीतिन् (ग), नील, नेतिष्य, नैकजिह्व पंडुरोचि, पूर्णिमागतिक (पूर्णिमागतिक), पैंगलायनि, पैल, पौर, फेनप, बालाकि, भृगु, भ्राष्ट्रकायणि, मंड (मुंड), मांकायन (कामायन), मार्कंड, मार्शेय (भाग्ये), मांडव्य, मांडूक, मालयनि मृग (मृत), मौद्रलयन, यज्ञपिंडायन, (यद्रामिलायन एवं याज्ञ), योजेयि, रौहित्यायनि, लालाटि (ललाटि), लिंबुकि, लुब्ध, लोलाक्षि, लौक्षिण्य, लौहवैरिण, वांगायनि, वात्स्य (वत्स्य), वाहयन (महाभाग), विरूपाक्ष विष्णु, वीतिहव्य वैकर्णिनि (वैकर्ण्य), वैगायन, वैशंपायन, वैश्वानरि, वैहीनरि, व्याधाज्य, शारद्वतिक, शार्कराक्षि, शाङ्करव, शिखावर्ण, शौनक, शौनकायन-जीवन्ति (शौनकायन जीवतिक), सकौवाक्षि (सकौवाक्षि), सगाल्य, सांक्य, सात्यायनि, सापि, सावर्णिक, सोक्ति, सौचाक, सौधिक, सौह, स्तनित एवं स्थलपिंड।

भृगुकुल के निम्नलिखित गोत्रकार भी पंचप्रवरात्मक ही हैं; किन्तु उनके आप्रवान्, आर्ष्टिषेण, च्यवन, भृगु एवं रूपि ये पाँच प्रवर होते हैं—आपस्तंबि, आर्ष्टिषेण, अश्वयनि, कटायनि, कपि, कार्दमायनि, गार्दभि, ग्राम्यायणि, नैकशि, विल्वि (भल्ली), भृगुदास, मार्गपथ एवं रूपि।

(२) चतुःप्रवरात्मक गोत्रकार—भृगुकुल के निम्नलिखित गोत्रकार चतुःप्रवरात्मक हैं, जिनके भृगु, रैवस, वीतिहव्य एवं वैवस ये चार प्रवर होते हैं—काश्यपि, कौशापि मार्गीय, चलि, जाम्बलि, जैवत्यायनि, तिथि, दम (मोदम, सदमोदम), पिलि, पौष्णायन, बालपि, भागवित्ति, भागिल, मथित (माधव), मौज, यस्क, रामोद, वीतिहव्य, श्रमदा-गेपि और सौर।

(३) त्रिप्रवरात्मक गोत्रकार—भृगुकुल के निम्नलिखित गोत्रकार त्रिप्रवरात्मक हैं, जिनके आप्रवान्, च्यवन, एवं भृगु ये तीन प्रवर होते हैं—उभयजात, और्वेय (ग), कायनि, जमदग्नि, पौलस्त्य, विद, वैजभृत, मास्त (ग), और शाकटायन।

भृगुकुल के निम्नलिखित गोत्रकार भी त्रिप्रवरात्मक हैं, किन्तु उनके दिवोदास, भृगु एवं वध्यश्च ये तीन प्रवर होते हैं—अपिकायनि, अपिशि (अपिशली), खांडव, द्रौणायन, मैत्रेय, रौक्मायणि (रौक्मायण), शाकटाक्ष, शालायनि, और हंसजिह्व।

(४) द्विप्रवरात्मक गोत्रकार—भृगुकुल के निम्नलिखित गोत्रकार द्विप्रवरात्मक हैं, जिनके गृत्समद एवं भृगु ये दो प्रवर होते हैं—एकानयन, कार्दमायनि, गृत्समद, चौक्षि, प्रत्यह (प्रत्यूह), मत्स्यगंध, यज्ञपति, शाकायन, सनक और सौरि (मत्स्य. १९५)।

भृगुकुल के मंत्रकार—भृगुकुल के मंत्रकारों की नामावलि मत्स्य, वायु, एवं ब्रह्मांड में प्राप्त है (मत्स्य. १४५-१८-१००; वायु. ५९-९५-९७; ब्रह्मांड. २.३२. १०४-१०६)। उनमें से ब्रह्मांड में प्राप्त नामावलि निम्नलिखित है, जिसमें वायु एवं ब्रह्मांड में उपलब्ध पाठ कोष्ठक में क्रमशः दिये गये हैं—आत्मवत्, आर्ष्टिषेण (अर्ष्टिषेण), ऊर्व (और्व), गृत्स (गृत्समत्), च्यवन, जमदग्नि, दधीच (ऋचीक), दिवोदास, प्रचेतस्, ब्रह्मवत् (वाध्यश्च) भृगु, युष्मजित्, वीतिहव्य, वेद (विद), वैय (पृथु) शौनक, सारस्वत, सुवेधस् (सुवेधस्, सुमेधस्)।

इनके अतिरिक्त, अपर, नम, प्रश्वर नामक मंत्रकारों का निर्देश केवल वायु में; कवि नामक मंत्रकार का निर्देश

वायु एवं ब्रह्मांड में; एवं च्यवन और युधिजित् का निर्देश केवल मत्स्य में प्राप्त है।

भृगुदास—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भृग्वंगिरस्—अथर्ववेद जाननेवाले ऋषिसमुदाय के लिए प्रयुक्त सामूहिक नाम (गो. ब्रा. १.३.१; श. ब्रा. १.२.१.१३)। यह ऋषिसमुदाय प्रायः भृगु एवं अंगिरस्वंशीय ऋषियों से बना हुआ था। ऋग्वेद में कई स्थानों पर इनका निर्देश अथर्वन् लोगों के साथ किया गया है (ऋ. ८.३५.३; १०.१४.६)। किंतु भृगु, अथर्वन् एवं अंगिरस् ये विभिन्न वंश के लोग थे, ऐसा भी निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १.१३.६)।

गोपथ ब्राह्मण के अनुसार, अथर्वन् एवं अंगिरस् ये भृगु के नेत्र माने गये हैं। यही कारण है कि, भृग्वंगिरस् अथर्ववेद का ही नामांतर माना जाता है (गो. ब्रा. १.२.२२)। अथर्वन् सांस्कारिक ग्रंथों में भी 'भृग्वंगिरसः' यह शब्द अथर्ववेद के लिए प्रयुक्त हुआ है (ब्लूमफिल्ड-अथर्ववेद ९.१०.१०७)। याज्ञवल्क्य स्मृति में भृग्वंगिरस् एवं अथर्वंगिरस् ये शब्द 'अथर्ववेद' अर्थ से प्रयुक्त हुये हैं, एवं हर एक राजपुरोहित इस वेदविद्या में प्रवीण होना चाहिए, ऐसा कहा गया है। मनु के अनुसार, अथर्ववेद में मंत्रविद्या को अधिकतर प्राधान्य दिये जाने के कारण, उस वेद को एवं उसे जाननेवाले लोगों को समाज गिरी हुयी नजर से देखा करता था (मनु. ११.३३)।

शतपथ ब्राह्मण में वसिष्ठ को 'अथर्वनिधि' कहा गया है, एवं अथर्ववेद का निर्देश 'क्षत्र' नाम से किया गया है (श. ब्रा. १४.८.१४.४)।

भृंग—त्रिधामन् नामक शिवावतार का शिष्य।

भृंगिन्—शिवगणों में से एक।

भृंगीरीटी—एक शिवगण। अंधकायुर को शिवगणत्व प्राप्त होने के बाद उसने यह नाम स्वीकार लिया था (अंधक देखिये)।

भृत—भृगुकुल के भृंग नामक गोत्रकार के लिए उपलब्ध पाठभेद (भृंग देखिये)।

भृतकील—कुशिककुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भृम्यश्व—(सो. नील.) एक राजा, जो मुद्गल नामक राजा का पिता था (नि. ९.२४)। इसके नाम के लिए निम्नलिखित पाठभेद प्राप्त हैं:—वाह्वाश्व (ह. वं. १.३२; ब्रह्म. १३.९५-९६); भर्म्याश्व (भा. ९.२१.३२-३३);

हर्यश्व (विष्णु. ४. १९.१५); भद्राश्व (मत्स्य. ५०.४)।

इसे निम्नलिखित पाँच पुत्र थे:—मुद्गल, संजय (संजय), बृहद्विशु, यवीनर, कापिल्य (कपिल अथवा कृमिल्याश्व)। पंचछाह २. और भर्म्याश्व देखिये।

भृशाश्व—एक ऋषि, जिसके पुत्र का नाम देव-प्रहरण था।

भृशुडिन—एक मल्लुआ, जो दंडकारण्य में चौर्यकर्म कर अपनी जीविका चलाता था।

एक बार मुद्गल ऋषि दंडकारण्य में से जा रहे थे, जब इसने उनकी राह रोक दी। किन्तु मुद्गल ऋषि के ब्राह्मतेज के सामने यह निष्प्रभ हुआ। पश्चात् मुद्गल ने इसे उपदेश दिया, एवं श्रीगणेश की उपासना करने के लिए कहा।

मुद्गल के उपदेश के अनुसार, इसने एकग्रचित् कर श्रीगणेश की उपासना की। इस उपासना के कारण, इसके दो भृकुटियों के बीच एक छुंड उत्पन्न हुयी, एवं यह स्वयं श्रीगणेश जैसा दिखाई देने लगा (गणेश. १. ५७)। इसे गणेश स्वरूप मान कर स्वयं इंद्र इसके दर्शन के लिए उपस्थित हुआ था (गणेश. १.६७)।

भेडी—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१३)।

भेत्—विकृष्ट देवों में से एक।

भेद—एक राजा, जो मुदास एवं तुत्सुभरतों के दस शत्रुओं में से एक था। यमुना के तट पर हुए दाशराज युद्ध में, मुदास के द्वारा यह पराजित हुआ था (ऋ. ७. १८.१८; ३३.३)। संभव है, यह अज, शिशु एवं यशु आदि लोगों का राजा था, जिनका भी दाशराज युद्ध में पराभव हुआ था। रौर्य के अनुसार, भेद एक जाति का नाम था, जिसके राजा का नाम भी भेद था। किन्तु ऋग्वेद में भेद शब्द सदैव एकवचन में ही प्रयुक्त हुआ है।

अथर्ववेद के अनुसार, इंद्र ने भेद राजा से एक गाय (वशा) माँगी थी, जिसे देने में इसने इन्कार कर दिया था। इस पाप के कारण, इसका नाश हुआ (अ. वे. १३.७.४९-५०)। संभव है, ऋग्वेद में निर्दिष्ट अज एवं शिशु जातियाँ अनार्य रही हो, एवं उनका नेत्रत्व करनेवाला यह राजा भी अनार्य हो। इसी कारण, इसे एक दुष्ट मान कर इसके दुःखद अंत का वर्णन वैदिक ग्रंथों में किया गया हो।

भैरीस्वना—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२५)।

भैरुंड—एक पक्षी, जो जटायु का पुत्र था।

भैल—एक सुविख्यात आयुर्वेदाचार्य, जो पुनर्वसु आश्रय का शिष्य था। यह आग्निवेश का समकालीन था। इसके द्वारा 'भैल संहिता' नामक सुविख्यात ग्रंथ की रचना की गयी थी।

भैमसेन—मैत्रायणी संहिता में निर्दिष्ट एक व्यक्तिनाम (मै. सं. ४.६.६)।

भैमसेनि—दिवोदास राजा का पैतृक नाम (क. सं. ७.८)।

२. घटोत्कच राक्षस का पैतृक नाम (म. भी. ७९.३२)।

भैरव—एक रुद्रगण, जो वाराणसी नगर का क्षेत्रपाल माना जाता है।

एकवार विष्णु एवं ब्रह्मा अत्यंत गर्वोद्धत हो गये, एवं भगवान् शंकर का अपमान करने लगे। इस अपमान के कारण शंकर अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, जिससे एक अति-भयानक शिवगण की उत्पत्ति हुई। वही भैरव है। इसे निम्नलिखित नामान्तर प्राप्त थे:—कालभैरव, आमर्दक, पापभक्षण एवं कालराज। लिंग के अनुसार, वीरभद्र नामक शिवपार्षद को भैरव का ही अन्य रूप माना गया है (लिंग. १.९६; वीरभद्र देखिये)।

ब्रह्महत्या—उत्पन्न होते ही, इसने अपने बाये हात की उँगली के नख से ब्रह्मा का पाँचवा सिर तोड़ डाला, क्यों कि, ब्रह्मा के उस मुख से शिव की निंदा की गयी थी। ब्रह्मा के पाँचवे मुख का इस प्रकार नाश करने के कारण, इसे ब्रह्महत्या का पातक लगा। उस पाप से छुटकारा पाने के लिए, शंकर ने ब्रह्मा के कपाल को हाथ में ले कर इसे भिक्षा माँगने के लिए कहा। उसी समय शिव ने ब्रह्महत्या नामक एक स्त्री का निर्माण किया, एवं उसे इसके पिंडे जाने के लिए कहा।

यह अनेक तीर्थस्थानों में घूमता रहा, किन्तु इसका ब्रह्महत्या का दोष नष्ट न हुआ। अन्त में शिव ने इसे वाराणसी क्षेत्र में जाने के लिए कहा। शिव के आदेशानुसार, यह वाराणसी क्षेत्र में गया, जिस में प्रवेश करते ही इसका ब्रह्महत्या का पातक धुल गया। पश्चात् इसके हाथ में स्थित ब्रह्मा का कपाल भी नीचे गिर पड़ा, एवं उसे भी मुक्ति प्राप्त हुयी। जिस स्थान पर ब्रह्मा के कपाल को मुक्ति मिली, उस स्थान पर 'कपालमोचनतीर्थ'

नामक सुविख्यात तीर्थ का निर्माण हुआ (शिव. शत. ८-९; स्कंद. ३.१.२४)।

वंश—कालिका पुराण में, भैरवस्तोत्र नामक मंत्र की विस्तृत जानकारी उपलब्ध है। वहाँ इसका वंश ही विस्तृत रूप में दिया गया है। उस पुराण के अनुसार, वाराणसी का सुविख्यात राजा विजय इसीके वंश में उत्पन्न हुआ था। उस राजा ने खाण्डवी नगर को उध्वस्त कर खाण्डवन का निर्माण किया था (कालिका. ९२)।

कालिका पुराण के अनुसार, भैरव एवं वेताल ये शिव-पार्षद अपने पूर्वजन्म में महाकाल एवं भृंगी नामक शिवदूत थे। पार्वती के शाप के कारण, उन्हें अगले जन्म में मनुष्ययोनि प्राप्त हुयी (कालिका. ५३; वेताल देखिये)।

पुराणों में अष्टभैरवों की नामावली प्राप्त है, जिसमें निम्नलिखित भैरव निर्दिष्ट हैं:—असितांग, रुद्र, चण्ड, क्रोध, उन्मत्त, कुपति (कपालिन्), भीषण एवं संहार। २. धृतराष्ट्र वंश का एक नाम, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२. १५)।

भोगवती—निबंधन नामक ऋषि की माता (निबंधन देखिये)।

भोगिन—(भविष्य.) एक राजा, जो वासु तथा ब्रह्मांड के अनुसार, मथुरा के शेष नामक राजा का पुत्र था।

भोज—ऐतरेय ब्राह्मण में प्रयुक्त नृपों की उपाधि (ऐ. ब्रा. ८.१२; १४.१७)। इन्हें 'भौष्य' नामान्तर भी प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ७.३२; ८.६; १२; १४; १६)।

ऋग्वेद में भोज शब्द का प्रयोग दाता अर्थ में भी किया गया है (ऋ. १०. १०७.८-९)।

२. एक लोकसमूह, जो सुदास राजा का अनुचर था। ऋग्वेद के अनुसार, इन लोगों ने विश्वामित्र ऋषि के अश्वमेध यज्ञ में उसकी सहायता की थी (ऋ. ३. ५३.७)।

३. पुराणों में निर्दिष्ट महाभोज राजा के वंशजों के लिये प्रयुक्त सामूहिक नाम। इन लोगों की एक शाखा मृत्तिकावत् नगर में रहती थी, जो बभ्रु दैवावृध नाम राजा से उत्पन्न थी हुई (ब्रह्म. १५.४५)।

४. एक राजवंश, जो सुविख्यात यादवकुल में अंतर्गत था (म. आ. २१०.१८)। इन्हें वृष्णि, अंधक, आदि नामान्तर भी प्राप्त थे। इस वंश में उत्पन्न एक

राजा को उशीनर से एक खड्ग की प्राप्ति हुई थी (म. शां. १६६.८९)।

संभव है, इस वंश में निम्नलिखित राजा समाविष्ट थे:—

(१) विदर्भाधिरति भीम—इसे महाभारत में भोज कहा गया है (म. उ. १५५.२)।

(२) कुकुरवंशीय आहुक—इसे हरिवंश में भोज कहा गया है (ह. वं. १.३७.२२)।

(३) विदर्भाधिपति रुक्मिन्—इसने 'भोजकट' (भोजों का नगर) नामक नयी राजधानी की स्थापना की थी (रुक्मिन् देखिये)।

(४) महाभोज—यह यादववंशीय सात्वत राजा का पुत्र था। भागवत के अनुसार इसके वंशज भोज कहलाते थे (भा. ९.२४.७-११)।

५. मार्तिकावत् (मृत्तिकावती) नगरी का एक राजा, जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७. ६)। कर्लिंगराज चित्रांगद राजा की कन्या के स्वयंवर में भी यह उपस्थित था (म. शां. ४.७)। महाभारत में कई जगह, इसे 'मार्तिवतक भोज' कहा गया है, एवं युधिष्ठिर की राजसभा का एक राजर्षि नाम से इसका वर्णन किया गया है।

भारतीय युद्ध में यह कौरव पक्ष में शामिल था, एवं अभिमन्यु के द्वारा इसकी मृत्यु हो गयी थी (म. द्रो. ४७.८)।

६. एक राजवंश, जो हैहयवंशीय तालवंश राजवंश में समाविष्ट था।

७. (सो. विदू.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार, प्रतिक्षत्र राजा का पुत्र था। अन्य पुराणों में इसका 'स्वयंभोज' नामांतर दिया गया है, एवं इसे क्रोष्टुवंशीय कहा गया है।

८. कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण।

९. कान्यकुब्ज देश का एक राजा। एक बार इसे एक सुंदर स्त्री का दर्शन हुआ, जिसका सारा शरीर मनुष्याकृति होने पर भी केवल मुख हिरणी का था।

इस विचित्र देहाकृति स्त्री को देखने पर इसे अत्यधिक आश्चर्य हुआ, एवं इसने उसकी पूर्वकहानी पूछी। फिर इसे पता चला की, वह स्त्री पूर्वजन्म में हिरनी थी। उस हिरनी के शरीर का जो भाग तीर्थ में गिरा, उसे मनुष्याकृति प्राप्त हुई, एवं केवल मुख तीर्थस्पर्श न होने से हिरणी का ही रह गया।

पश्चात् इसने इस स्त्री के मुख का खोज किया, एवं उसे तीर्थ में डुबों दिया, जिस कारण उस स्त्री को सुंदर मनुष्याकृति मुख की प्राप्ति हो गई। पश्चात् इस राजा ने उस स्त्री के साथ विवाह किया (स्कंद ७.२.२)।

भोजक—एक सूर्यपूजक राजा (भवि. ब्राह्म. १. ११७)।

भोजपायन—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भोज्या—सौवीरराज की सर्वांगसुंदर कन्या, जिसका सात्यकि ने अपनी रानी बनाने के लिये हरण किया था (म. द्रो. ९.२९)। पाटभेद (भांडारकर संहिता)—'भोज'।

२. वीरव्रत नामक राजा की पत्नी (वीरव्रत देखिये)।

३. आर्यक नामक नाग की कन्या, जिसे मारिषा नामान्तर भी प्राप्त है। इसका विवाह शूर राजा से हुआ था, जिससे इसे वसुदेवादि पुत्र उत्पन्न हुये।

४. भोज देश की राजकन्या, जिसका यादववंशीय ज्यामघ राजा ने रानी बनाने के लिये हरण किया था। किंतु पश्चात् ज्यामघ ने अपने पुत्र विदर्भ से इसका विवाह संपन्न कराया (ज्यामघ देखिये)।

भोजपायन—कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण। इसके नाम के लिये 'भीमपायन' पाटभेद प्राप्त है।

भौत्य—एक राजा, जो चौदहवा मनु माना जाता है। इसे 'इंद्रसावर्णि' एवं 'चंद्रसावर्णि' नामांतर भी प्राप्त थे (मनु देखिये)।

यह भूति नामक ऋषि का पुत्र था, जिस कारण इसे भौत्य नाम प्राप्त हुआ था। भूति ऋषि को बहुत दिनों तक पुत्र न था। पश्चात् उसके शान्ति नामक शिष्य ने अपने गुरु को पुत्र प्राप्ति हों, इस हेतु से अग्नि की उपासना की, जिस कारण अग्नि के प्रसाद से इसकी उत्पत्ति हो गयी।

भौम—नरकासुर का नामांतर (नरकासुर देखिये)।

२. शिवपुत्र मंगल का नामान्तर (मंगल २. देखिये)।

३. एक राक्षस, जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका पुत्र था। इसे 'नल' एवं 'नभ' नामान्तर भी प्राप्त है (विप्रचित्ति २. देखिये)। परशुराम ने इसका वध किया (ब्रह्मांड. ३.६.१८-२२)।

भौमतापायन—गौरपराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भौमाश्वी शैब्या औशीनरी—उशीनर देश की राजकन्या, जिसे द्रौपदी के सदृश पाँच पति थे। नितंतु राजा के पाँच पुत्रों से इसका एकसाथ विवाह हुआ था,

जिनके नाम निम्नलिखित थे:--साल्वेय, शूरसेन, श्रुतसेन, तिन्दुसार, एवं अतिसार ।

इसके पति बड़े धार्मिक एवं आपस में मिलजुल कर रहनेवाले थे । इसी कारण इसने स्वयंवर में उनका वरण किया था । इन पाँच पतियों से इसे पाँच पुत्र उत्पन्न हुए, जिन्होंने आगे चल कर मत्स्य देश में पाँच स्वतंत्र राजवंशों की स्थापना की (म. आ. परि. १०१) ।

भौरिक—एक दैत्य, जो अग्नि के द्वारा दग्ध किया गया था । हिरण्याक्ष एवं देवों के दरभ्यान हुए युद्ध में, अग्नि के द्वारा हिरण्याक्ष के पक्ष के सात असुर दग्ध हुये । उनमें से यह एक था (पद्म. सु. ७५) ।

भौवन—वैदिक राजा विश्वकर्मन् का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३.७.१.१५; ऐ. ब्रा. ८.२१.८.१०; नि. १०.२६; विश्वकर्मन् देखिये) ।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो मथु एवं सत्या का पुत्र था ।

३. एक भृगुवंशीय गोत्रकार, जो भृगु एवं पौलोमी का पुत्र था ।

४. एक राजा, जो गौतमी नदी के दक्षिणतट पर स्थित भौवन नामक नगरी का राजा था (ब्रह्म. १७०.१-२) ।

भौवायन—कपिवन नामक आचार्य का पैतृक नाम (प. ब्रा. २०.१३.४) । यजुर्वेद संहिताओं में कपिवन का निर्देश प्रायः 'भौवायन' नाम से ही प्राप्त है (का. सं. ३२.

२; मे. सं. १.४; वा. सं. १३.५४) । इसने 'अतिरात्र' नामक वज्र किया था, जिसके कारण इसे विपुल धन प्राप्त हुआ था ।

भ्रमर—सौवीर देश का एक राजकुमार, जो सौवीर नरेश जयद्रथ का भाई था । यह जयद्रथ के रथ के पीछे हाथ में ध्वज ले कर चलता था । जयद्रथ के द्वारा किये गये द्रौपदीहरण के समय यह उपस्थित था । उसी समय हुए युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. व. २५५. २७) ।

भ्रमि—उत्तानपादपुत्र ध्रुव राजा की पत्नी, जो शिशुमार प्रजापति की कन्या थी (भा. ४.१०.१) ।

भ्राजिष्ठ—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो धृतपृष्ठ राजा का पुत्र था ।

भ्रामरि—एक राक्षसी, जो जंभासुर की अनुगाभिनी थी । उस राक्षस के कथनानुसार, यह अदिति का रूप धारण कर, श्रीगणेश का वध करने के लिए कश्यपग्रह में अवतीर्ण हुयीं । इसने श्रीगणेश को विषमिश्रित मोदक खिलाकर उसका वध करना चाहा । किन्तु श्रीगणेश ने उन मोदकों को हजम कर अपने मुष्टिप्रहार से इसका वध किया (गणेश. २.२१) ।

भ्राष्ट्रकायाणि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

भ्राष्ट्रकुत्—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

म

मकरकेतु—श्रीकृष्णपुत्र प्रद्युम्न राजा का नामान्तर ।

मकरध्वज—हनुमान का पुत्र, जो उसके स्वेदविन्दु से उत्पन्न हुआ था । एकवार हनुमान का एक स्वेदविन्दु दक्षिणसागर में रहनेवाली एक मगर पर गिर पड़ा, जिससे इसकी उत्पत्ति हुयी (आ. रा. सार. ११) । अहिरावण महिरावण युद्ध के समय, इसका एवं हनुमान की भेंट हुयी थी (अहिरावण-महिरावण देखिये) ।

२. (सो. कु.व.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक । भीम ने इसका वध किया था (म. भी. १२.२६) ।

प्रा. च. ७५]

पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'कनकध्वज' (कनकांगद) ।

३. केरल देशाधिपति चंद्रहास राजा का पुत्र । इसके नाम के लिए 'मकराक्ष' पाठभेद भी प्राप्त है ।

मकराक्ष—एक राक्षस, जो जनस्थान में रहनेवाले खर नामक राक्षस का पुत्र था । राम ने इसका वध किया ।

मधु—एक महर्षि, जो माक्षव्य नामक सुविख्यात आन्वाय का पिता था (माक्षव्य देखिये) ।

५९३

मखोपेत—एक दैत्य, जो कार्तिक माह के विष्णु नामक सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.४४)।

मग—शाकद्वीप में रहनेवाले वेदवेत्ता ब्राह्मणों का एक समूह। महाभारत में इनके नाम के लिए 'मङ्ग' पाठभेद प्राप्त है (म. भी. १२.३४)।

कृष्णपुत्र सांघ ने अपनी उत्तर आयु में सूर्य की कठोर तपस्या की, जिस कारण प्रसन्न हो कर भगवान् सूर्य-नारायण ने अपनी तेजोमयी प्रतिमा उसे पूजा के लिए प्रदान की। उस मूर्ति की प्रतिष्ठापना के लिए, सांघ ने चन्द्रभागा नदी के तट पर एक अत्यधिक सुंदर मंदिर बनवाया।

भगवान् सूर्यनारायण के पूजापाठ के लिए सांघ ने शाकद्वीप में रहनेवाले मग नामक ब्राह्मणों को बड़े ही सम्मान के साथ बुलाया। सांघ के इस आमंत्रण के कारण, मग ब्राह्मणों के अठारह कुल चंद्रभागा नदी के तट पर उपस्थित हुये, एवं वहीं रहने लगे (मवि. ब्राह्म. ११७; सांघ. २६)।

भविष्य में इनके नाम के लिए 'भ्रग' पाठभेद प्राप्त है। किन्तु वह सुयोग्य प्रतीत नहीं होता है।

'मग' जाति के ब्राह्मण भारत में आज भी विद्यमान हैं।

मगध—मगध देश में रहने वाले लोगों के लिए प्रयुक्त सामुहिक नाम। किसी समय बृहद्रथ राजा एवं उसका बार्हद्रथ वंश इन लोगों का राजा था।

इन लोगों के राजाओं में निम्नलिखित प्रमुख थे:—ज्यत्सेन, जरासंध, बृहद्रथ, दीर्घ, एवं सहदेव।

पाण्डु राजा ने इन लोगों के दीर्घ नामक राजा का वध किया था (म. आ. १०५.१०)। महाभारत काल में इन लोगों का राजा जरासंध था, जिसका भीम ने वध किया था। जरासंध के पश्चात् सहदेव इन लोगों का राजा बना। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, सहदेव उपस्थित था (म. स. ४८.१५)। भारतीय युद्ध में मगध देश के लोग पाण्डवों के पक्ष में शामिल थे (म. उ. ५२.२; सहदेव देखिये)।

वैदिक निर्देश—यद्यपि यह नाम ऋग्वेद में अप्राप्य है, अथर्व वेद में इनका निर्देश प्राप्त है। वहाँ ऽवर-व्याधि को पूर्व में अंग एवं मगध लोगों पर स्थानांतरित होने की प्रार्थना की गई है (अ. वे. ५.२२.१४)। यजुर्वेद में प्राप्त पुरुषमेव के ब्रह्मप्राणियों की नामावली में 'मागध' लोगों का निर्देश प्राप्त है (वा. सं ३०.५.२२; तै. ब्रा. ३.४.१.१)। अथर्ववेद के ब्राह्म्यसूक्त में ब्राह्म

योगों के साथ इनका निर्देश आता है (अ. वे. १५.२. १-४)। संभव है, ये एवं कीकट दोनों एक ही थे।

कौपीतिक आरण्यक में मध्यम प्रातिवेशीपुत्र आदि सुविख्यात आचार्यों को 'मगधवासिन्' कहा गया है। इससे प्रतीत होता है कि, कभी कभी मगध में प्रतिष्ठित ब्राह्मण भी निवास करते थे। किन्तु ओल्डेनबर्ग इसे अप-वादात्मक घटना मानते हैं (७.१४)।

बौधायन तथा अन्य सूत्रों में मगधगणों का निर्देश एक जाति के रूप में प्राप्त है (त्रै. घ. १.२.१३; भा. श्रौ. २२.६.१८)। उत्तरकालीन साहित्य में, मगध देश को भ्रमणशील चारण लोगों का मूलस्थान माना गया है।

शतथ ब्राह्मण के अनुसार, इन लोगों में ब्राह्मणधर्म का प्रसार अत्यधिक कम था, एवं इनमें अनार्य लोगों की संख्या अत्यधिक थी। संभव यही है, कि भारत के पूर्व कोने में रहनेवाले इन लोगों पर आर्यगण अपना प्रभाव नहीं प्रस्थापित कर सके थे।

मघवत्—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. इन्द्र का नामांतर (पञ्च. सू. ६)।

मघा—सोम की पत्नी, जो दक्ष प्रजापति की सत्ताधीस कन्याओं में से एक थी।

मङ्कण—एक दरिद्री ब्राह्मण, जो आकथ नामक शिवभक्त का पिता था (आकथ देखिये)।

मंकणक—एक प्राचीन ऋषि, जो मातरिश्वन् तथा सुकन्या का पुत्र था। कश्यप के मानसपुत्र के रूप में इसका वर्णन प्राप्त है (वामन. ३८.२)।

बालब्रह्मचारी की अवस्था में सरस्वती नदी के किनारे 'सप्त सारस्वत तीर्थ' में जाकर, यह हजारों वर्ष स्वाध्याय करते हुए तपस्या में लीन रहा। एकबार इसके हाथ में कुश गड़ जाने से घाव हो गया, जिससे शाकरस बहने लगा। उसे देखकर हर्ष के मारे यह नृत्य करने लगा। इसके साथ समस्त संसार नृत्य में निमग्न हो गया। ऐसा देखकर देवों ने शंकर से प्रार्थना की, कि इसे नृत्य करने से रोकें; अन्यथा इसके नृत्य के प्रभाव से सभी विश्व रसातल को चला जायेगा।

यह सुनकर ब्राह्मण रूप धारण कर शंकर ने इससे नृत्य करने का कारण पूछा। तब इसने कहा, 'मेरे हाथ से जो रस बह रहा है, इससे यह प्रकट है कि, मुझे सिद्धि प्राप्त हो गयी है। यही कारण है कि, आज मैं आनन्द में पागल हो खुशी से नाच रहा हूँ'। यह सुनकर ब्राह्मण

बेपधारी शंकर ने अपने अंगूठे में एक चोट मारकर उससे बर्फ की तरह श्वेत झरती हुयी भस्म निकाली, जिसे देखकर यह चकित हो उठा। यह तत्काल समझ गया कि, वह कोई अवतारी महापुरुष है। इसके नमस्कार करते ही शंकर ने अपने दर्शन दिये, तथा प्रसन्न होकर वर माँगने के लिए कहा। मंक्रणक ने शंकरजी के पैरों में गिरकर स्तुति की, तथा वर माँगा कि, वह इसे इस अवार प्रसन्नता से मुक्त करें, जिसके प्रसन्नता के उम्पाद में यह अपनी तपस्या से भी क्लिष्ट हो गया था। शंकर ने कहा, 'ऐसा ही होगा, मेरे प्रसाद से तुम्हारा तप सहस्र गुना अधिक हो जायेगा' (म. व. ८१.१८-११४; श. ३७. २१-४८; पद्म. सू. १८; स्व. २७; स्कन्द. ७.१-३६; २७०)।

एक बार तपस्याकाल में यह स्नान हेतु सरस्वती नदी में उतरा। वहाँ समीप ही स्नान करनेवाली एक सुन्दरी को देखकर इसका वीर्य स्वलिप्त हुआ। यह देख कर इसने उस वीर्य को कुम्पाडल में एकत्र कर उसके सात भाग किये, जिससे निम्नलिखित सात पुत्र उत्पन्न हुए—वायुवेग, वायुबल, वायुहा, वायुमण्डल, वायुज्वाल, वायुरेतम् और वायुचक्र (म. श. ३७.२९-३२; मन्त्र देखिये) महाभारत में इन सातों पुत्रों को सप्तपि कहा गया है। यही सात पुत्र मरुतों के जनक हैं।

मंकन—वाराणसी में निवास करनेवाला एक नाभी, जो श्रीगणेशजी का परम भक्त था। दिवोदास (द्वितीय) के राज्यकाल में, शिवजी ने काशी नगर को निर्जन बनाना चाहा। इस काम के लिये, उसने अपने पुत्र श्रीगणेश (निकुम्भ) को नियुक्त किया।

तदोपरांत, श्रीगणेश ने मंकन को दृष्टांत दे कर काशी नगरों के सीमापर अपना एक मंदिर बंधवाने के लिए कहा, जिस आज्ञा का इसने तुरंत पालन किया। काशी का यह 'निकुम्भ मंदिर' अत्यधिक सुविख्यात हुआ, एवं अपना इंगित प्राप्त करने के लिये देश देश के लोग उसके दर्शन के लिये आने लगे। निकुम्भ ने अपने सारे भक्तों का कामनाएँ पूरी की, किंतु दिवोदास राजा की पुत्रप्राप्ति की इच्छा अपूर्ण ही रख दी, जिस कारण क्रुद्ध हो कर उसने निकुम्भ मंदिर को उद्ध्वस्त किया। इस पाप के कारण, निकुम्भ ने समस्त काशी नगर निर्जन होने का दाय दिवोदास राजा को दे दिया, एवं इस तरह काशी नगर को विरान बनाने की शिवाजी की कामना पूरी हो गई (वायु. ९२.३८; ब्रह्मांड ३. ६७.४३)।

मंकि—एक प्राचीन आचार्य, जिसकी कथा भीष्म ने युधिष्ठिर से कही थी। इस कथा का यही सार था कि, जो भाग्य में होगा उसे कोई टाल नहीं सकता। 'चाहे जितना बल पौरुष का प्रयोग करो, किन्तु यदि भाग्य में बड़ा नहीं है, तो कुछ भी न होगा। संसार में हर एक व्यक्ति की सामान्य कामनाएँ भी अपूर्ण रहती हैं। इसी कारण कामना का त्याग करना ही सुखप्राप्ति का सर्वश्रेष्ठ मार्ग है', यही महान् तत्त्व मंकि के जीवनकथा से दखाया गया है।

मंकि नामक एक लोभी किसान था, जो हर क्षण धन प्राप्त की लिप्सा में सदैव अन्धा रहता था। एक बार इसने दो बैल लिए, तथा उन्हें जुएँ में जोत कर यह खेत पर काम कर रहा था। जिस समय बैल तेजी के साथ चल रहे थे, उसी समय उनके मार्ग में एक ऊँट बैठा था। इसने ऊँट न देखा, और बैलों के साथ उसकी पीठ पर जा पहुँचा। इसका परिणाम यह हुआ कि, दौड़ते हुए दोनों बैलों को अपनी पीठ पर तराजू की भाँति ब्यका कर ऊँट भी इतनी जोर से भगा कि, दोनों बैल तत्काल ही मर गये।

यह देख कर मंकि को बड़ा दुःख हुआ, एवं इस अवसर पर इसने भाग्य के सम्बन्ध में बड़े उच्च कोटि के विचार प्रकट किये, जिसमें तुष्णा तथा कामना की गहरी आलोचना प्रस्तुत की गयी है। इसके यह सभी विचार 'मंकि गीता' में संग्रहित हैं। उक्त घटना से इसे वैराग्य उत्पन्न हुआ, एवं अन्त में यह धनलिप्सा से विरक्त हो कर परमानंद स्वरूप परब्रह्म को प्राप्त हुआ (म. शां. १७१.१-५६)।

तत्त्वज्ञान—'मंकि गीता' का सार भीष्म के द्वारा इस प्रकार वर्णित है:—

सर्वसाम्यम् अनायासः, सत्यवाक्यं च भारत।

निर्वेदश्चाविविस्ता च, यस्य स्यात्स सुखी नरः॥

(म. शां १७१.२)।

मंकि का यह तत्त्वज्ञान बौद्धपूर्वकालीन आजीवक सम्प्रदाय के आचार्य मंगलि गोसाल के तत्त्वज्ञान से काफी सम्बन्ध रखता है। यह दैववाद की विचारधारा की मान्यता देनेवाला आचार्य था। केवल दैव ही बलवान् है, कितना ही परिश्रम एवं पुरुषार्थ करो, किन्तु सिद्धि प्राप्त नहीं होती, यही 'मंकि गीता' का उपदेश है, तथा ऐसा ही प्रतिपादन मंगलि गोसाल का था।

सम्भव है, मंकी तथा मंगलि गोसाल दोनों एक ही व्यक्ति हों। आजीवक सम्प्रदाय भोग-प्रधान दैववाद का

अनुसरण करनेवाला था। सम्राट अशोक के समय आजीवक संप्रदाय का काफी प्रचार था, एवं समाज उसका काफी आदर करता था। अशोक के शिलालेखों में आजीवक लोगों का बड़े सम्मान के साथ निर्देशन किया गया है। नागार्जुन पहाड़ियों में उपलब्ध शिलालेखों में आजीवकों को गुहा प्रदान करने का निर्देश प्राप्त है।

आगे चलकर बौद्ध एवं जैन धर्म के प्रचार के कारण आजीवकों की लोकप्रियता धीरे धीरे विनष्ट हो गयी, तथा आजीवकों के द्वारा प्रतिष्ठापित भोगप्रधान दैववाद के स्थान पर तप के द्वारा ब्रह्मप्राप्ति की प्रधानता का बोलबाला हुआ।

२. त्रेतायुग का ऋषि, जो कौपीतक नामक ब्राह्मण का पुत्र था। यह वैदिकधर्म का पालन करनेवाला, अग्निहोत्र करनेवाला, एवं वैष्णवधर्म पर विश्वास करनेवाला परम सदाचारी ब्राह्मण था।

इसे स्वरूपा एवं विश्वरूपा नामक दो पत्नियाँ थी, किन्तु कोई पुत्र न था। इसी कारण इसने अपने गुरु की आज्ञा से सावरमती नदी के तट पर चार वर्षों तक तपस्या की, जिससे इसे अनेक पुत्र उत्पन्न हुये।

सावरमती के तट पर जिस स्थान पर इसने तप किया उसे 'मंकितीर्थ' नाम प्राप्त हुआ। इस तीर्थ को 'सप्तसारस्वत' नामांतर भी प्राप्त था।

द्वापर युग में पाण्डव इस तीर्थ के दर्शनो के लिए आये थे। उस समय उन्होंने इस तीर्थ को 'सप्तधार' नाम प्रदान किया था (पञ्च. उ. १३६)।

मंगल—त्रैधायन श्रौतसूत्र में निर्दिष्ट एक आचार्य (बौ. श्रौ. २६.२)।

२. एक शिवपुत्र, जो शिव के धर्मविन्दु से पैदा हुआ था। दक्षयज्ञ में सती की मृत्यु हो जाने के कारण, उसके विरहताप से पीड़ित हो कर, शंकर उसकी प्राप्ति के लिये तप करने लगा। तप करते समय शंकर के मस्तक से एक धर्मविन्दु पृथ्वी पर गिरा। उससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसे मंगल नाम प्राप्त हुआ। आगे चल कर शंकर ने नवग्रहों में उसकी स्थापना की। यह समस्त पृथ्वी का पावनकर्ता माना जाता है। ज्योतिषशास्त्र की दृष्टि से, मंगल भूमि एवं भार्या का संरक्षणकर्ता माना जाता है। इसीसे इसे 'भौम' भी कहते हैं (शिव. उद्. २.१०; स्कन्द. ४.१.१७)। अग्नि के संपर्क से उत्पन्न होने के कारण, इसे 'अंगारक' नाम भी प्राप्त हुआ था (विष्णुधर्म. १.१.६; पञ्च. सू. ८१)।

स्कन्द के अनुसार, शिव के अश्रुविन्दुओं से इसकी उत्पत्ति हुयी थी (स्कन्द. ७.१.४५)। स्कंद में इसके उत्पत्ति की कथा इस प्रकार दी गयी है—शंकर ने हिरण्याक्ष की विकेशी नामक कन्या से विवाह किया था। एक दिन शंकर विकेशी से संभोग करने ही वाला था कि, वहाँ अग्नि आ पहुँचा। उसे देख कर शंकर क्रोध से लाल हो उठा, तथा उसकी आँसुओं से अश्रुविन्दु टपकने लगे। उन अश्रुविन्दुओं में से एक तेजोमय अश्रु विकेशी के मुख में जा गिरा, जिसे वह गर्भवती हो गयी। किंतु आगे चल कर शंकर के तेजोमय गर्भ को वह सहन न कर सकी, तथा उसने उसे बाहर गल दिया। बाद को उस गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसे पृथ्वी ने स्तनपान करा कर बड़ा किया। यही पुत्र मंगल कहलाया।

भविष्यपुराण में मंगल की उत्पत्ति कुछ दूसरे प्रकार से दी गयी है। उसमें इसकी उत्पत्ति शिव के रक्तविन्दु से कही गयी है (भवि. ब्राह्म. ३१)। गणेशपुराण में इसे भारद्वाज का पुत्र कहा गया है, एवं गणेश की कृपा के द्वारा किस प्रकार यह ग्रह बना, उसकी भी कथा दी गयी है।

३. एक देव, जो स्वयंभुव मन्वंतर के जित देवों में से एक था।

मंगला—एक देवी, जिसने त्रिपुरवध के समय भगवान् शंकर को वरप्रदान किया था (ब्रह्मवै. ३.४४)।

मचकनुक—एक यक्ष, जो समन्तपंचक एवं कुरुक्षेत्र के सीमा पर स्थित 'मचकनुक तीर्थ' में रहता था। उस स्थान में यह द्वारपाल के रूप में निवास करता था। इसको प्रणाम करने पर सहस्र गोदान का पुण्य प्राप्त होता था (म. व. ८९.१७१)। इसके नाम के लिए 'मचकुक' पाठभेद भी प्राप्त है। पाठभेद (मांडारकर संहिता)— 'अरन्नुक'।

मच्छिह्ल—(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो सम्राट उपरिचर वसु का चतुर्थ पुत्र था। इसकी माता का नाम गिरिका था (म. आ. ५७.२९)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञके समय यह उपस्थित था (म. स. ३१.१३)।

महाभारत (वनपर्व संस्करण) एवं विष्णु में इसे 'भावेल्', एवं वायु में इसे 'भावेत्य' कहा गया है।

भञ्जान—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४८.६५)।

मंजुघोषा—एक अप्सरा, जिसे मेधाविन् ऋषि ने पिशाच बनने का शाप दिया था (मेधाविन् ४. देखिये)।

मणि—एक नाग, जो कश्यप एवं कटु का पुत्र था। गिरिव्रज नगरी के निकट इसका निवासस्थान था (म. आ. ३१.६)। इसने शिव की तपस्या कर गरुड से अभयदान का वर प्राप्त किया था (ब्रह्म. ९०)।

२. ब्रह्मा की सभा का एक ऋषि (म. स. ११.१२५; पंक्ति. ६)।

३. स्कंद का एक पार्षद, जो उसे चंद्रमा के द्वारा दिये गये दो पार्षदों में से एक था। दूसरे पार्षद का नाम सुमालिन था (म. श. ४५.२९)।

मणिकंधर—कुवेर का एक सेनापति।

मणिकामुकंधर—कुवेर का एक सेनापति।

मणिकुंडल—एक राजा, जिसकी कथा ब्रह्म में गोदावरी नदी के तट पर स्थित 'चक्षुस्तीर्थ' (मृतसंजीवन तीर्थ) का माहात्म्य वर्णन करने के लिए कथन की गयी है।

एक बार यह एवं इसका मित्र वृद्धगौतम व्यापार के लिए विदेश चले गये। वहाँ इन्होंने आपसमें होड़ ल्यायी, जिस कारण वृद्धगौतम ने इसका सब कुछ जीत लिया, एवं इसे अंधा एवं लूला बना कर छोड़ दिया। पश्चात् चक्षुस्तीर्थ में स्नान करने के कारण, इसकी सारी शारीरिक व्याधियाँ नष्ट हो गयी, एवं इसका राज्य इसे पुनः प्राप्त हुआ (ब्रह्म. १७०)।

मणिकुंडला—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५. २०)। इसके नाम के लिए 'मणिकुण्डिका' पाठभेद प्राप्त है।

मणिश्रीव—एक यक्ष, जो कुवेर का पुत्र था। इसके छोटे भाई का नाम नलकुवर था (नलकुवर देखिये)।

मणिधर—एक यक्ष, जो लोहित पर्वत पर रहता था।

मणिभद्र—कुवेर सभा का एक यक्ष (म. स. १०.१४)। यह यात्रियों एवं व्यापारियों का उपास्य देव माना जाता है। मरुत्त का धन लाने के लिए जाते समय, युधिष्ठिर ने इसकी पूजा की थी (म. आ. ६४.६)।

इसके पिता का नाम रजतनाभ एवं माता का नाम मणिवरा था। ऋतुस्थ की कन्या पुण्यजनी इसकी पत्नी थी, जिससे इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए थे:—असोम, ऋतुमत्, रुद्रप्रथ, दशनीय, दुरसोम, श्रुतिमत्, नंदन, पद्म, पिगाक्ष, भीरु, मणिमत्, मंडक, महाश्रुति, मेघवर्ण, रुचक, वसु, शंख, सर्वानुमत्, सिद्धार्थ, सुदर्शन, सुभद्र, सुमक एवं सूर्यतेजस् (ब्रह्मांड. ३.७.१२२-१२५)।

२. कुवेर का एक सेनापति। रावण के सेनापति प्रहस्त ने कैलाश पर्वत पर इसे परास्त किया था (वा. रा. यु. १९.११)।

३. शिवराजों में से एक (यज्ञ. उ. १७)।

मणिभूष—कुवेर का एक सेनापति।

मणिमत्—एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक।

२. वरुणसभा का एक नाम (म. स. ९.९)।

३. एक यक्ष, जो कुवेर का सेनापति एवं सखा था। एकबार यह विमान में बैठकर आकाशमार्ग से जा रहा था। उस समय यमुना नदी के तटपर तपस्या करनेवाले अगस्त्य ऋषि का इसने अपमान किया, जिस कारण उसने इसे शाप दिया, 'शीघ्र ही मनुष्य के द्वारा तुम्हारा वध होगा'।

पाण्डवों के वनवासकाल में वे घूमते-घूमते हिमवान् पर्वत पर स्थित कुवेरवन में आये। उस समय कुवेरवन के कुछ कमल लाने के लिए भीम ने उस वन में प्रवेश किया, कि मणिमत् के साथ उसका युद्ध हुआ। उसी युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. व. १५७.४९-५७)।

४. एक राजा, जो दनायुपुत्र वृत्रासुर नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.४२)। यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.७)। भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्विजय में इसे जीता था (म. स. २७.१०)।

भारतीय युद्ध में भूरिश्रवम् (सौमदत्ति यूपकेतु) राजा ने इसका वध किया (म. द्रो. २४. ५१)।

मणिमंत्र—एक यक्ष, मणिवर एवं देवजनी के 'गुहक' पुत्रों में से एक।

मणिवक्र—एक वसु, जो आप नामक वसु के पुत्रों में से एक था।

मणिवर—एक यक्ष, जो रजतनाथ एवं मणिवरा के दो पुत्रों में से एक था। ऋतुस्थलाकन्या देवजनी इसकी पत्नी थी, जिससे उत्पन्न इसके पुत्र 'गुहक' सामुहिक नाम से सुविख्यात थे।

'गुहक' पुत्र—मणिवर को देवजनी से उत्पन्न गुहक पुत्रों के नाम निम्नलिखित थे:—अहित, कुमुदाक्ष, कुमु, कृत, चर, जयावह, पक्ष, पद्मनाथ, पद्मवर्ण, फिरोंग, पुण्यदन्त, पूर्णभद्र, पूर्णमास, बलक, मणिमंत्र, महामुद, मानस, वर्धमान, विजय, विमल, विवर्धन, श्वेत, सवीर,

सारण, सुकर्मल, सुगंध, सुचंद्र, स्थूलकर्म, हिरण्याक्ष एवं हैमवंत (ब्रह्मांड. ३.७.१२७-१३१)।

मणिवरा—रजतनाभ नामक यक्ष की पत्नी।

मणिवाहन—(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो महाभारत के अनुसार कुशांब का, एवं वायु के अनुसार कुश राजा का नामान्तर था। मत्स्य में इसे 'हरिवाहन' कहा गया है, एवं इसे कुश राजा से अलगा व्यक्ति माना गया है।

मणिस्थक—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रु के पुत्रों में से एक था।

मणिस्कंध—धृतराष्ट्र कुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१७)।

मणिस्त्राग्नि—एक यक्ष, जो कुवेर का सेनापति था।

मंड—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'मुण्ड' पाठभेद प्राप्त है।

मंडक—एक यक्ष, जो मणिमद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

मंडलक—तक्षक कुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ (म. आ. ५०.६०)।

मंडूक—एक आचार्य, जिसने अथर्ववेद की 'शिक्षा' लिखी थी। उस शिक्षाग्रंथ में कुल १८९ श्लोक हैं।

२. एक जनसंघ, जिनके राजा का नाम आयु था। आयु राजा की सुशोभना नामक कन्या थी, जिसका विवाह इक्ष्वाकुवंशीय परिक्षित राजा से हुआ था। सुशोभना को परिक्षित राजा से शल, दल एवं बल नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. व. १९०; शल देखिये)।

३. एक महर्षि, जो मांडुक्य नामक सुविख्यात आचार्य का पुत्र था।

मतंग—एक प्राचीन राजा, जो शाप के कारण व्याध बना। व्याध होने के कारण ही इसे 'मतंग' नाम प्राप्त हुआ।

जिस समय यह व्याध की अवस्था में जीवन यापन करता था, उस समय इसने महर्षि, विश्वामित्र की पत्नी का तुम्हिल काल में भरणपोषण किया था (म. आ. ६५. ३१)।

आगे चलकर यह पुनः राजा हुआ, और इसने एक यज्ञ किया, जिसमें इसके उपकार का बदला चुकाने के लिये स्वयं महर्षि विश्वामित्र पुरोहित बना। इस यज्ञ में इन्द्र भी सोमपान के लिए उपस्थित हुआ था (म. आ. ६५.३३)।

२. एक महर्षि, जिसके मतंगाश्रम का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. व. ८२.४२३ पंक्ति ३)। सम्भव है, मतंगकेदार नामक तीर्थस्थान का नामकरण इसीके नाम पर किया गया हो (म. व. ८३.१७)।

३. एक तपस्वी, जिसकी व्यभिचरिणी ब्राह्मणी माँ ने एक नाई के साथ संभोग करके इसे जन्म दिया था। अपने इस दूषित जन्म के कलंक को धोने के लिए, इसने आजीवन तपस्या की, किन्तु यह इस दोष से मुक्त न हो सका। 'वंशानुक्रम से प्राप्त कलंक किसी प्रकार मिटाया नहीं जा सकता,' इसी सत्य को प्रमाणित करने के लिए महाभारत में इसकी मित्र कथा दी गयी है (म. अनु. २७-२९)।

गर्दभी से संबद्ध—एक बार इसके ब्राह्मण पिता ने इसे यज्ञ करने के लिए जंगल से समिधा तथा दर्भ लाने को कहा। पिता की आज्ञा को मानकर, गाड़ी में एक गर्दभी एवं उसके बच्चे को जोतकर यह जंगल का ओर चल पड़ा। राह में गर्दभी का बच्चा छोटा होने के कारण माँ के बराबर न चल पा रहा था, जिससे क्रोधित हो कर इसने उस बच्चे के नाक पर लगातार चाबुक से कई चोटें की। गर्दभी का बच्चा चोटों से जख्मी हो गया, एवं दर्दपीड़ा में विह्वल होकर माँ की ओर देखने लगा। तब गर्दभी ने उसे सान्त्वना देते हुए कहा, 'ब्राह्मण दयालु होते हैं, तथा चाण्डाल क्रूर। यह अपना जाति के अनुसार, तुमसे व्यवहार कर रहा है, इस लिए तुम्हें सहना ही पड़ेगा'।

गर्दभी की इस बात को सुनकर इसने तत्काल पूछा, 'मैं ब्राह्मण हूँ, मेरे माता-पिता ब्राह्मण हैं, तब मैं चाण्डाल कैसे हुआ? मैंने किस प्रकार अपना ब्राह्मणत्व नष्ट कर दिया है, और मैं आज चाण्डाल हूँ?'। तब गर्दभी ने बताया, तुम्हें 'जन्म देनेवाला पिता एक नाई था, जो तुम्हारा माता का पति न था। अतएव तुम ब्राह्मण कहा से हुए, और तुममें ब्राह्मणत्व कहाँ?'।

तपस्या—इस कथा को सुन कर यह तत्काल घर आया, और अपने पिता को अपने जन्म की कहानी बताकर, ब्राह्मणत्वप्राप्त करने के लिए तपस्या के लिए चल पड़ा। इसकी तपस्या से प्रसन्न होकर इन्द्र ने इसे दर्शन दिया, किन्तु इसके द्वारा ब्राह्मणत्व माँग जाने पर इन्द्र ने कहा, 'चाण्डाल्योनि में उत्पन्न व्यक्ति को ब्राह्मणत्व मिलना असम्भव है'। तब इसने एक पैर पर खड़े होकर

सौ वर्षों तक और तपस्या की। किन्तु इन्द्र ने फिर प्रकट होकर यही कहा, 'अप्राप्य वस्तु की कामना करना व्यर्थ है। ब्राह्मणत्व सरलता से नहीं प्राप्त होता, उसके प्राप्त करने के लिए अनेक जन्म लेने पड़ते हैं'। किन्तु यह इन्द्र के उत्तर से सन्तुष्ट न हुआ, और गया में जा कर अंगूठे के बल खड़े होकर, इसने पुनः सौ वर्षों तक ऐसी तपस्या की, कि केवल अस्थिपंजर ही शेष बचा।

अन्त में इन्द्र ने इसे पुनः दर्शन दिया और कहा, 'ब्राह्मणत्व छोड़कर तुम कुछ भी माँग सकते हो'। तब इसने इन्द्र से निम्नलिखित वर प्राप्त किये:—मनचाही जगहों पर विहार करना, जो चाहे वह रूप लेना, आकाशगामी होना, ब्राह्मणों तथा क्षत्रियों के लिए पूज्य होना, एवं अक्षय कीर्ति की प्राप्ति करना। इन्द्र ने इसे यह भी वर दिया, 'स्त्रियों ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए तुम्हारी पूजा करेंगी, एवं छन्दोदेव नाम से तुम उन्हें पूज्य होगे।' आगे चलकर मतंग ने देहत्याग किया, एवं इन्द्र से प्राप्त वरों के बल पर, यह समस्त मानवजाति के लिए पूज्य बना।

४. एक आचार्य, जो दाशरथि राम को फल देनेवाले शर्वरी का गुरु था (वा. रा. अर. ७४)।

५. इक्ष्वाकुवंशीय राजा त्रिशंकु का नामान्तर (म. आ. ६५: ३१-३४)। वसिष्ठ ऋषि के पुत्रों के शाप के कारण, त्रिशंकु को मतंग-अवस्था प्राप्त हुयी, जिस कारण उसे यह नाम प्राप्त हुआ (त्रिशंकु देखिये)।

मति—दक्ष प्रजापति की एक कन्या, जो धर्म की पत्नी थी (म. आ. ६०.१४)।

२. एक देव, जो स्वार्थभुव मन्वन्तर के जित नामक देवों में से एक था।

३. आभूतरजस् देवों में एक।

४. भव्य देवों में से एक।

मतिनार—(सो. पूरु.) पूर्ववंशीय 'अंतिनार' राजा का नामान्तर। इसे 'रंतिनार' एवं 'रंतिभार' नामान्तर भी प्राप्त थे (म. आ. ८९.१०-१२)।

महाभारत में इसे पूरु राजा के पौत्र अनापृष्टि (रुचेयु) का पुत्र कहा गया है, एवं इसके तंसु, महान्, अतिरथ दुह्यु नामक चार पुत्र दिये गये हैं।

मत्कुणिका—खंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१९)। भांडारकर संहिता में 'मन्थनिका' पाठ प्राप्त है।

मत्त—रावण का भाई एवं लंका का एक बलाढ्य राक्षस, जिसका ऋषभ नामक वानर ने वध किया।

२. रावण के महापाश्र्व नामक अमात्य का नामान्तर।

मत्तमयूर—एक क्षत्रियसमुदाय, जिसे नकुल ने अपने पश्चिमदिग्विजय के समय जीता था (म. स. २९.५)।

मत्स्य—विष्णु के दशावतारों में से प्रथम। भगवान् विष्णु ने अखिल मानवजाति के कल्याण के लिए एवं वेदों का उद्धार करने के लिए जो दस अवतार पृथ्वी पर लिए, उनमें से यह प्रथम है। पद्म के अनुसार, शंखासुर द्वारा वेदों के हरण किये जाने पर उनकी रक्षा के लिए विष्णु ने यह अवतार लिया (पद्म. उ. ९०-९१; सू. १)। भागवत के अनुसार, विष्णु का यह दशम अवतार चाक्षुष मन्वन्तर काल में उत्पन्न हुआ (भा. १.३.१५)।

मत्स्यावतार—पृथ्वी पर मत्स्यावतार किस प्रकार हुआ, इसकी सब से प्राचीनतम प्रमाणित कथा शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है। एक बार, आदिपुरुष वैवस्वत मनु प्रातःकाल के समय तर्पण कर रहा था, कि अर्ध्य देते समय उसकी अंजलि में एक 'मत्स्य' आ गया। 'मत्स्य' ने राजा मनु से सृष्टिसंहार के आगमन की सूचना से अवगत कराते हुए आत्वासन दिया कि, आपत्ति के पूर्व ही यह मनु को सुरक्षित रूप से उत्तरगिरि पर्वत पर पहुँचा देगा, जहाँ प्रलय के प्रभाव की कोई सम्भावना नहीं। इसके साथ ही इसने यह भी प्रार्थना की कि, जबतक यह बड़ा न हो तब तक मनु इसकी रक्षा करें।

यह 'मत्स्य' जन्म बड़ा हुआ, तब मनु ने उसे महासागर में छोड़ दिया। पृथ्वी पर जलप्रलय होने पर समस्त प्राणिमात्र ब्रह्म गये। एकाएक मनु के द्वारा बचाया हुआ मत्स्य प्रकट हुआ, एवं इसने मनु को नौका में बैठाकर उसे हिमालय पर्वत की उत्तरगिरि शिखर पर सुरक्षित पहुँचा दिया। आगे चलकर मनु ने अपनी पत्नी इडा के द्वारा नयी मानव जाति का निर्माण किया (श. ब्रा. १.८.१.१; मनु वैवस्वत देखिये)।

पुराणों में—पद्म में मत्स्यावतार की यह कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। कश्यप ऋषि को दिति नामक पत्नी से उत्पन्न मकर नामक दैत्य ने ब्रह्मा को बोला देकर वेदों का हरण किया, एवं इन वेदों को लेकर वह पाताल में भाग गया। वेदों के हरण हो जाने के कारण, सारे विश्व में अनाचार फैलने लगा, जिससे पीड़ित होकर ब्रह्मा ने विष्णु

की शरण में आकर उसे वेदों की रक्षा की प्रार्थना की। तब विष्णु ने मत्स्य का अवतार लेकर मकरासुर का वध किया एवं उससे वेद लेकर ब्रह्मा को दिये।

आगे चलकर एक बार फिर मकर दैत्य ने वेदों का हरण किया, जिससे विष्णु को मत्स्य का अवतार लेकर पुनः वेदों का संरक्षण करना पड़ा (पद्म. उ. २३०)।

मत्स्यपुराण में मत्स्यावतार की कथा निम्न प्रकार से दी गयी है :— पृथ्वीसर्वे कल्प के अन्त में ब्रह्मदेव की रात्रि का आरम्भ हुआ। जिस समय वह नींद में था, उसी समय प्रलय हुआ, जिससे स्वर्ग, पृथ्वी आदि लोग डूब गये। निद्रावत्स्था में ब्रह्मदेव के मुख से वेद नीचे गिरे, तथा हयग्रीव नामक दैत्य ने उनका हरण किया। इसीसे हयग्रीव नामक दैत्य का नाश करने के लिए भगवान् विष्णु ने सूक्ष्म मत्स्य का रूप धारण किया, तथा वह कृतमाळा नदी में उचित समय की प्रतीक्षा करने लगा।

इसी नदी के किनारे वैवस्वत मनु तप कर रहा था। एक दिन तर्पण करते समय उसकी अंजलि में एक छोटासा मत्स्य आया। वह इसे पानी में छोड़ने लगा कि, मत्स्य ने उससे अपनी रक्षा के लिए प्रार्थना की। तब दयालु मनु ने इसे कलश में रक्खा। यह मत्स्य उत्तरोत्तर बढ़ता रहा, अन्त में मनु ने इसे सरोवर में छोड़ दिया। तथापि इसका बढ़ना बन्द न हुआ। बस्तु होकर मनु इसे समुद्र में छोड़ने लगा, तब इसने उससे प्रार्थना की, 'मुझे वहाँ अन्य जलचर प्राणी खा डालेंगे, अतएव तुम मुझे वहाँ न छोड़ कर मेरी रक्षा करो'। तब मनु ने आश्चर्यचकित होकर इससे कहा, 'तुम्हारे समान सामर्थ्यवान् जलचर मैंने आज तक न देखा है, तथा न सुना है। तुम एक दिन में सौ योजन लंबेचौड़े हो गये हो, अवश्य ही तुम कोई अपूर्व प्राणी हो। तुम परमेश्वर हो, तथा तुमने जनकल्याण हेतु ही जन्म लिया होगा'।

यह सुनकर मत्स्य ने कहा, 'आज से सातवें दिन सर्वत्र प्रलय होगी, तथा सारा संसार जलमग्न हो जायेगा। इसलिए नौका में सप्तर्षि, द्वादर्षी, वीज इत्यादि लेकर बैठ जाओ। अगर नौका हिलने लगे तो वासुकि की रस्सी बनाकर मेरे सींग में बाँध दो'।

प्रलय आने पर मनु ने वैसा ही किया, एवं मत्स्य की सहायता के द्वारा वह प्रलय से बचाया गया (मत्स्य. १-२; २९०)।

भागवत में मत्स्यद्वारा बचाये गये राजा का नाम वैवस्वत मनु न देकर उल्लिखित देशाधिपति सत्यव्रत दिया

गया है। उस ग्रन्थ के अनुसार, प्रलय के पश्चात् मत्स्यावतारी विष्णु ने सत्यव्रत राजा को मन्वन्तराधिपति प्रज्ञापित करने का आशीर्वाद दिया, एवं उसे मत्स्यपुराण संहिता का उपदेश भी दिया (भा. १.३.१५; ८.२४; मत्स्य. १. ३३-३४)। उस आशीर्वाद के अनुसार, सत्यव्रत राजा वैवस्वत मन्वन्तर में से कृतयुग का मनु बन गया।

विष्णुधर्म के अनुसार, प्रलय के पश्चात् केवल सप्तर्षि जीवित रहे, जिन्हें मत्स्यरूपधारी विष्णु ने शृंगी बनकर हिमालय के शिखर पर पहुँचा दिया, एवं उनकी जान बचायी (विष्णुधर्म. १.७७; म. व. १८५)।

मत्स्यकथा का अन्वयार्थ—मनु का निवासस्थान समुद्र के किनारे था। आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि से, समुद्र में बाढ़ आने के पूर्व समुद्र की सारी मछलियाँ तट की ओर भाग कर किनारे आ लगी हैं, क्योंकि बाढ़ के समय उन्हे गन्दे जल में स्वच्छ प्राण वायु नहीं प्राप्त हो पाती। सम्भव यही है कि, पृथ्वी में जलज्वालन के पूर्व समुद्र से सारी मछलियाँ तट की ओर भगने लगी हों, तथा उनमें से एक मछली मनु के सन्ध्या करते समय अंजलि में आ गयी हो। इससे ही मनु ने समझ लिया होगा कि, बहुत बड़ी बाढ़ आनेवाली है, क्योंकि सारी मछलियाँ किनारे आ लगी हैं। इस संकेत से ही पूर्ववैयारी करके उसने अपने को जलज्वालन से बचाया हो। इसी कारण प्रलयोपरांत मनु को वह मछली साक्षात् विष्णु प्रतीत हुयी हो। बहुत सम्भव है कि, मत्स्यावतार की कल्पना इसी से की गयी हो।

२. मत्स्यदेश में रहनेवाले लोगों के लिये प्रयुक्त सामुहिक नाम। ऋग्वेद में इनका निर्देश सुदाम राजा के शत्रुओं के रूप में किया गया है (ऋ. ७.१८.६)। शतपथ ब्राह्मण में ध्वसन् द्वैतवन राजा को मत्स्य लोगों का राजा (मात्स्य) कहा गया है (श. ब्रा. १३.५.४.९)। ब्राह्मण ग्रंथों में वश एवं शात्व लोगों के साथ इनका निर्देश प्राप्त है (कौ. ब्रा. ४.१; श. ब्रा. १.२.९)। मनु के अनुसार, मत्स्य, कुरुक्षेत्र, पंचाल, शूरसेनक आदि देशों को 'प्रहर्षि देश' सामुहिक नाम प्राप्त था (मनु. २.१९; ७.१९३)।

महाभारत में इन लोगों का एवं इनके देश का निर्देश अनेक बार आता है, जहाँ इन्हे धर्मशाल एवं सत्यवादी कहा गया है (म. क. ५.१८)। पाण्डवों के वनवासकाल में, वारणावत से एकचक्रा नगरी को जाते समय पाण्डव इस देश में कुछ काल तक ठहरे थे (म. भा. १.४४.२)।

इस देश के निवासी जरासंध के मय से अपना देश छोड़ कर दक्षिण भारत की ओर गये थे (म. स. १३.२७)। भीमसेन ने अपनी पूर्वदिग्विजय के समय इन लोगों को जीता था (म. स. २७.८)। सहदेव ने भी अपनी दक्षिण दिग्विजय के समय मत्स्य एवं अपरमत्स्य लोगों को जीता था (म. स. २८.२-४)

अग्ने अज्ञातवास के समय पाण्डवों ने इस देश में निवास किया था। उस समय इन लोगों का राजा विराट था (म. वि. १.१३-१६)।

भारतीय युद्ध में एक अश्वैहिणी सेना लेकर मत्स्य-राज विराट युधिष्ठिर की सहाय्यता के लिए आया था (म. उ. १९.१२)। इन लोगों के अनेक वीरों का भीम एवं द्रोण ने वध किया था (म. भी. ४५.५४; द्रो. १६४.८५)। वंचे हुए वीरों का संहार अश्वत्थामा ने भारतीय युद्ध के अंतिम दिन किया था (म. सौ. ८. १५०)।

भौगोलिक मर्यादा—संभव है कि, आधुनिक भरतपूर अस्वार, घौलपूर, एवं कर्नाली प्रदेश मिलकर प्राचीन मत्स्य देश बना होगा। १९४८ इ. स. में भारत सरकार ने 'मत्स्ययुनियन' नामक संघराज्य की स्थापना की थी, जिसमें यही प्रदेश शामिल थे। आगे चलकर मत्स्य युनियन का सारा प्रदेश राजस्थान में शामिल किया गया।

मत्स्य देश की राजधानी विराटनगरी में थी, जो जयपूर के पास वैराट नाम से आज भी प्रसिद्ध है।

३. (सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो उपरिचर वसु को एक मत्स्यी के द्वारा उत्पन्न जुड़वे संतानों में से एक था। इसे मत्स्यगंधा नामक जुड़वी बहन भी थी (म. आ. ५७.५१)।

४. एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की ऋक्षिशिष्यपरंपरा में से देवमित्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके नाम के लिए 'वास्य' पाठभेद प्राप्त है।

मत्स्यकाल—(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो वायु के अनुसार, उपरिचर वसु (इंद्रसख) राजा का पुत्र था। संभव यही है, कि इसका सही नाम मत्स्य था, एवं यह एवं इसकी काली (मत्स्यगंधा) नामक जुड़वी बहन, इन दोनों के नाम के लिए 'मत्स्यकाल' नाम प्रयुक्त किया गया हो (मत्स्य ३. देखिये)।

मत्स्यगंध—मृगकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मत्स्यगंधा—कुरुवंशीय शतनु राजा की पत्नी, जो उपरिचर वसु राजा को एक मत्स्यी से उत्पन्न पुत्री

प्रा. च. ७६]

थी। इसे सत्यवती नामान्तर भी प्राप्त था (सत्यवती देखिये)। पूर्वजन्म में यह पितरों की कन्या अच्छोदा थी। इसके पुत्र का नाम कृष्ण द्रैपायन था।

मत्स्यदग्ध—अंगिराकुलोत्पन्न एक प्रवर।

मत्स्याच्छाद्य—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मथन—तारकासुर के पक्ष का एक असुर, जो विष्णु के द्वारा मारा गया था (मत्स्य. १५१)।

मथित—मृगकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'माधव' पाठभेद प्राप्त है।

मथित यामायन—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १९)।

मद—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का पुत्र था।

२. ब्रह्मा का एक मानसपुत्र, जो उसके अहंकार से उत्पन्न हुआ था (मत्स्य. ३.११)।

३. रुद्र गणों में से एक।

४. राम दाशरथि राजा के सुज नामक मंत्री का पुत्र।

५. एक राक्षस, जो च्यवन ऋषि के द्वारा उत्पन्न हुआ था। इसके उत्पत्ति की कथा महाभारत में इस प्रकार दी गयी है। एक बार सोमपान करनेवाले देवतागणों ने अश्वियों को सोमपान करने से इन्कार किया। फिर अश्वियों ने च्यवन ऋषि की मदद माँगी। च्यवन ऋषि ने अपने मंत्रों के बल से देवतागणों का पराभव किया। पश्चात् इंद्र ने क्रुद्ध हो कर च्यवन ऋषि पर आक्रमण करना चाहा, जिसका प्रतिकार करने के लिए च्यवन ने अग्नि में से एक महा-भयंकर राक्षस का निर्माण किया। उसी का ही नाम मद था।

उत्पन्न होने ही मद ने अपना प्रचंड मुख खोल दिया, जिसमें समस्त देवतागण समा गये एवं इसकी जिह्वा पर तैरने लगे। फिर समस्त देवताओं के साथ, इंद्र च्यवन ऋषि की शरण में गया, एवं उसने अश्वियों को सोमपान में सहभागी करना स्वीकार कर दिया (म. व. १२४.१८-१९; अनु. १५७.२७-३२)।

मद्गल—एक ऋग्वेदी ब्रह्मचारी।

मदन—ब्रह्मा के पुत्र कामदेव का नामान्तर (कामदेव देखिये)।

२. केरल देश के षट्कुब्जि नामक राजमंत्री का पुत्र।

मदनमंजरी—नीलध्वजपुत्र प्रवीर राजा की पत्नी।

मदनसुंदरी—एक गोपी, जो कृष्ण को अत्यधिक प्रिय थी।

मदनिका—एक अस्त्ररा, जो मेनका की कन्या थी। इसका विवाह विशुद्रूप नामक राक्षस से हुआ था। पक्षिराज

गरुड के वंशज कंधर ने विद्युद्रूप राक्षस का वध किया। तदोपरान्त यह कंधर की पत्नी बनी, जिससे इसे तार्क्षी नामक कन्या उत्पन्न हुई (मार्क. २)।

मद्यन्ती—मित्रसह कर्माषयाद राजा की पत्नी। इसे वसिष्ठ ऋषि से अश्मक नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. १६८.२५; १७३.२२; शां. २२६.३०)।

उत्तंक नामक सुविख्यात ऋषि अपने गुरु वेद ऋषि की आज्ञा के अनुसार, इसके कुण्डल मॉंगने के लिए इसके यहाँ आये थे। इसने उन्हें कुण्डल दे कर संतुष्ट किया था (म. आश्व. ५७.५८; उत्तंक देखिये)।

२. कृष्ण की एक सखी (पद्म. पा. ७४)।

मदालसा—काशी देश के ऋतुध्वज राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम अलर्क था। यह अत्यंत ब्रह्मनिष्ठ थी। एक बार पातालकेतु नामक राक्षस ने इसका हरण किया। पश्चात् ऋतुध्वज राजा ने पातालकेतु को परास्त कर इसकी मुक्तता की।

मदिरा—एक स्त्री, जो देवदैत्यों ने किये समुद्रमंथन से निकले हुए चौदह रत्नों में से एक थी। इसे 'सुरा' नामान्तर भी प्राप्त था।

२. श्रीकृष्णपिता वसुदेव की अनेक पत्नियों में से एक। वसुदेव की मृत्यु के पश्चात् देवकी, मद्रा एवं रोहिणी नामक अन्य वसुदेवपत्नियों के साथ यह सती हो गयी (म. मौ. ८.१८)।

मदिराश्व—(स. इ.) एक इक्षुवंशीय राजा, जो दशशत्रु राजा का पुत्र था। यह परमशर्मात्मा, सत्यवादी, तपस्वी, दानी एवं वेद तथा धनुर्वेद में पारंगत था (म. अनु. २.७-८)।

इसे युक्तिमत नामक पुत्र, तथा सुमध्यमा नामक कन्या थी (म. अनु. २.८)। अपनी कन्या को हिरण्यहस्त नामक ऋषि को विवाह में प्रदान कर, यह स्वर्गलोक चला गया (म. शां. २२६.३४; अनु. १३७.२४)।

२. मत्स्यनरेश विराट का भाई। इसके नाम के लिए 'मदिराक्ष' पाठभेद भी प्राप्त है (म. उ. १६८.१४)।

त्रिगणों के द्वारा गोहरण के समय इसने क्वचधारण कर उनसे युद्ध किया था।

भारतीय युद्ध में राजा विराट के चक्ररक्षक के रूप में यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. वि. ३२. ३०)। यह एक उदाररथी, सम्पूर्ण अस्त्रों का ज्ञाता, एवं मनस्वी वीर था (म. उ. १६८.१५)। भारतीय युद्ध में द्रोण ने इसका वध किया।

मदोक्त—एक शिवगण।

मद्र—मद्र देश में रहनेवाले लोगों के लिए प्रयुक्त सामुहिक नाम। बृहदारण्यक उपनिषद् में इन लोगों का निर्देश प्राप्त है (बृ. उ. ३.३.१; ७.१)। उपनिषदों में वर्णित मद्रगण कुरुओं भौति मध्यदेश के कुरुक्षेत्र नामक स्थान में बसे हुए थे। उस समय पतञ्जल काव्य नामक आचार्य इन्हींके बीच रहता था।

ऐतरेय ब्राह्मण में उत्तर मद्र लोगों का निर्देश प्राप्त है, जिन्हे हिमालय पर्वत के उस पार ('परेण हिमवन्तम्') उत्तर कुरुओं के पड़ोस के रहिवासी बताया गया है (ऐ. ब्रा. ८.१४.३)। त्स्मिन् के अनुसार, ये लोग काश्मीर के रावी एवं चिनाब के मध्यवर्ति भूभाग में रहते थे (आष्टिन्डिरो, लेबेन. १०२)।

महाभारतकाल में इन लोगों का राजा शल्य था, जिसकी बहन माद्री कुरुवंशीय राजा पाण्डु को विवाह में दी गयी थी। उस समय भीष्म अपने मंत्री, ब्राह्मण, एवं सेना को साथ ले कर इस देश में आये थे, एवं उसने पाण्डु के लिए माद्री का वरण किया (म. आ. १०५. ४-५)।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, पाण्डुपुत्र नकुल ने इन लोगों पर प्रेम से विजय प्राप्त किया था, एवं ये लोग युधिष्ठिर के लिए भेंट ले कर आये थे (म. स. २९. १३; ४८.१३)।

महाभारत के पूर्वकाल में, सती सावित्री का पिता अश्वपति मद्र देश का नरेश था (म. व. २९३.१३)। कर्ण ने मद्र एवं वाहीक देशों को आचारभ्रष्ट बता कर उनकी निंदा की थी (म. क. ३०.९; ५५; ६२; ६८-७१)।

२. अनुवंशीय 'मद्रक' राजा के लिए उपलब्ध पाठभेद।

३. स्वारोचिष मन्वन्तर का एक देव।

मद्रक—(सो. अनु.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार शिवि राजा का पुत्र था। इसके नाम के लिए 'मद्र' पाठभेद प्राप्त है।

२. एक मद्रदेशीय योद्धा, जो भारतीय युद्ध में कौरव पक्ष में शामिल था (म. भी. ७.७)।

३. एक राजा, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था। इसके नाम के लिए 'नद्रिक' पाठभेद प्राप्त है (म. आ. ६१.५५)।

मद्रगार शौङ्गायनि—एक आचार्य, जो साति औशाधि नामक ऋषि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम काम्योज औपमन्यव था (व. ब्रा. १.)।

शुङ्ग का वंशज होने से इसे 'शौङ्गायनि' उपाधि प्राप्त हुई। तिसर के अनुसार, इन नामों से 'कम्योज' एवं 'मद्रा' के संबंध का संकेत मिलता है (आस्टिन्डिशे लेवेन १०२)

मद्रा—अत्रि ऋषि की दस स्त्रियों में से एक। इसके पुत्र का नाम सोम था (ब्रह्मांड. ३.८.८४-८७)।

मधु—उत्तम मनु के पुत्रों में से एक।

२. चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में से एक था।

४. मधुकैटभ नामक सुविख्यात असुरद्वयों में से एक (मधुकैटभ देखिये)।

५. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार किन्दुमत् एवं सरधा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम वीरजन था।

६. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भागवत एवं भविष्य के अनुसार देवक्षत्र का, विष्णु के अनुसार क्षत्र का, मत्स्य के अनुसार देवक्षत्र का, एवं वायु के अनुसार देवन राजा का पुत्र था।

७. (सो. यदु. सह.) एक यादव राजा, जो विष्णु के अनुसार वृष का, एवं भागवत के अनुसार सहस्राजुन का पुत्र था।

८. एक यादव राजा, जिसकी माता का नाम लोल था। यह अत्यंत सदाचरणी एवं शिव का परमभक्त था। इसके तप एवं सदाचरण से प्रसन्न हो कर शिव ने इसे एक त्रिशूल प्रदान किया था। यह त्रिशूल जब तक इसके पास रहेगा, तब तक यह युद्ध में अवश्य एवं अजेय रहेगा, ऐसा इसे शिव का वर था (लोल देखिये)।

इसकी पत्नी का नाम कुम्भीनसी था, जिससे इसे लवण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। लवण अत्यंत दुराचारी था, इसलिए शत्रु ने उसका वध किया था। रामायण के अनुसार, शत्रु ने उसका बाण से, एवं हरिवंश के अनुसार खड्ग से उसका शिरच्छेद किया (वा. रा. उ. ६९-३६; ह. वं. १.५४.५३)।

मधु स्वयं यादवों का राजा था, किन्तु रामायण में इसे दैत्य भी कहा गया है। इसका पुत्र लवण निपुत्रिक अवस्था में मृत होने के पश्चात् इसकी राजधानी मधुपुरी भीम

नामक यादव राजा ने जीत ली, एवं वहाँ का राजा बना (ह. वं. २.३८)।

९. कृष्ण के पौत्रों में से एक।

मधुक पैम्य—एक आचार्य, जो याज्ञवल्क्य ऋषि का शिष्य था (श. ब्रा. ११.७.२.८; सां. ब्रा. १६.९)। इसके शिष्य का नाम चूड भागवति था (वृ. उ. ६.३. ८-९ काण्व.)। षिंग का वंशज होने से इसे 'पैम्य' उपाधि प्राप्त हुयी होगी।

मधुकुंभा—स्कंद की अनुचरी एक मातृक (म. श. ४९.१८)।

मधुकैटभ—एक सुविख्यात असुरद्वय। ये मधु तथा कैटभ नामक दो असुर ब्रह्मदेव के स्वेद से उत्पन्न हुए थे (विष्णुवर्म. १. १५)।

जन्म-पद्म के अनुसार इनकी उत्पत्ति ब्रह्मा के तमोगुण से हुयी थी (पद्म. सु. ४०)। देवी भागवत में कहा गया है कि, इनकी उत्पत्ति विष्णु के कान के मैल से हुयी थी (दे. भा. १.४)।

महाभारत के अनुसार, इन दोनों की उत्पत्ति भगवान् विष्णु के कान के मैल से हुयी थी। भगवान् ने मिट्टी से इनकी आकृति बनायी थी। इनकी मूर्ति में वायु के प्रविष्ट हो जाने से ये सप्राण हो गये थे। इन दोनों में मधु की त्वचा कोमल थी, अतएव इसे 'मधु' नाम प्राप्त हुआ था। मधु सहित कैटभ की उत्पत्ति का वर्णन महाभारत में प्राप्त है। भगवान् विष्णु के नाभिकमल पर भगवत्प्रेरणा से जल की दो बूँदें पड़ी थीं, जो रजोगुण तथा तमोगुण की प्रतीक थीं। भगवान् ने उन दोनों बूँदों की ओर देखा, तथा उनमें से एक बूँद मधु तथा दूसरी कैटभ हो गयी (म. शां. ३.५९.२२-२३)।

मृत्यु—इन्होंने तप कर के अजेयत्व प्राप्त किया था। बाद में अपने स्वभाव के अनुसार, जब ये सब लोगों को व्रत करने लगे, तब विष्णु ने इनका वध किया (दे. भा. १.४)।

ये पैदा होने के उपरांत ही ब्राह्मणों का वध करने लगे थे, तथा ब्रह्मा को भी मारने के लिए उद्यत हुए थे (म. व. १३.५०*)। ब्रह्मदेव ने विष्णु की स्तुति की, तब विष्णु ने इनसे पचास हजार वर्षों तक युद्ध किया। लेकिन यह भरते ही न थे। अन्त में इन्हें मोहित कर विष्णु ने इनसे इनकी मृत्यु का वर माँगा, तथा बाद में गोद में लेकर इनका वध किया (पद्म. क्रि. २; मार्क. ७८; ह. वं. ३.१३)। इनकी मेद से पृथ्वी बनने के ही कारण पृथ्वी को 'मेदिनी' नाम

प्राप्त हुआ (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति १३३-१३५; शां. ३३५) । भगवान् विष्णु ने इन्हे ब्रह्मा के कहने पर मारा था, अत एव उसे 'मधुसूदन' नाम प्राप्त हुआ (म. शां. २००.१४-१६) । पद्म के अनुसार, देवासुर संग्राम में ये हिरण्यक्ष के पक्ष में शामिल थे, एवं देवों से मायायुद्ध करते थे । इसी कारण विष्णु ने इनका वध किया (पद्म. सू. ७०) ।

ये असुरों के पूर्वज माने जाते हैं, जो तमोगुणी प्रवृत्ति के उग्र स्वभाववाले थे, तथा सदा भयानक कार्य किया करते थे ।

मधुच्छन्दस् वैश्वामित्र—एक ऋषि, जो ऋग्वेद के प्रथम मंडल में से पहले दस सूक्तों का रचयिता माना जाता है (कौ. ब्रा. २८.२) । ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, यह विश्वामित्र का इक्यावनवाँ पुत्र था (ऐ. ब्रा. ७.१८) । शतपथ ब्राह्मण में सुविख्यात् 'प्रउग' (प्रातःकालिन स्तुति-स्तोत्र) सूक्त का कर्ता इसे कहा गया है (श. ब्रा. १३.५. १.८) । यह सूक्त प्रायः प्रातःकाल के समय गाया जाता है । इसके द्वारा रचित यह सूक्त गायत्री छंद में है (ऐ. आ. १.१.३) ।

विश्वामित्र के कुल सौ पुत्र थे । उनमें से शुनःशेष नामक पुत्र का ज्येष्ठ भ्रातृत्व विश्वामित्र के पहले पचास पुत्रों ने मान्य न किया । किंतु अगले पचास पुत्रों ने उसे मान्यता दी, जिसमें मधुच्छन्दस् प्रमुख था । इस कारण विश्वामित्र इस पर अत्यंत प्रसन्न हुआ, एवं उसने इसे शुभाशीर्वाद दिये ।

वैवस्वत मनु का पुत्र शर्यात राजा का यह पुरोहित था (शर्यात देखिये) । यह विश्वामित्र गोत्र का गोत्रकार एवं प्रवर तथा कुशिक गोत्र का मंत्रकार था (म. अनु. ४. ४९-५०) । महाभारत में एक वानप्रस्थी ऋषि के नाते से इसका निर्देश प्राप्त है ।

२. प्रमतिपुत्र सुमति राजा का पुरोहित, जो योगभागों से मुक्त हुआ था (पद्म. सू. १५) ।

मधुप—स्वायंभुव मन्वन्तर के अजित देवों में से एक ।

२. एक राजा, जो कृष्णाक्ष राजा का शत्रु था । इसके पुत्र का नाम वीरसेन था (भवि. प्रति. ३.२२) ।

मधुपर्क—गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. १९.१४) ।

मधुपिंग—लंगली भीम नामक शिवावतार का शिष्य ।

मधुर—एक असुर, जो वृत्रासुर का पुत्र था ।

२. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६६) ।

३. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो विन्दुमत् राजा का पुत्र था ।

मधुरस्वरा—स्वर्गलोक की एक अप्सरा, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित थी (म. आ. ४४.३०) ।

मधुरावह—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

मधुरुह—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो धृतपृष्ठ राजा का पुत्र था ।

मधुस्पंद—विश्वामित्र के पुत्रों में से एक ।

मधुलिका—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४६.१८) । इसके नाम के लिए 'मधुरिका' पाटभेद प्राप्त है ।

मधुवर्ण—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६७) ।

मध्य—कश्यप एवं अरिष्टा के पुत्रों में से एक ।

मध्यंदिन—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पुष्पार्ण एवं प्रभा का पुत्र था ।

मध्यम प्रातीवोधीपुत्र माण्डुक्येय—एक आचार्य (सां. आ. ७.१३) । प्रतीवोधी के किसी स्त्रीवंश का पुत्र होने से इसे 'प्रातीवोधीपुत्र' नाम प्राप्त हुआ होगा ।

मन—भव्य, तुषित एवं साध्य देवों में से एक ।

मनस्—सायण के अनुसार, एक ऋषि (ऋ. ५. ४४.१०) ।

मनसा—एक देवी, जिसमें विषनाशा दूर करने का अलौकिक सामर्थ्य था । यह सामर्थ्य इसे शिवकृपा से प्राप्त हुआ था ।

इन्द्र एवं सर्पदि विषैलि जंतियों इसकी उपासना करती थी, एवं वासुकि जैसे सर्प इसके उपासकों में थे । पृथ्वी पर के समस्त सर्पों पर इसका वरकृत्त था ।

यह सर्पों के विष को लीलया उतार देती थी, जिसे साक्षात् धन्वन्तरि भी नहीं उतार सकते थे । अतः इसे धन्वन्तरि से भी बढ़कर मानते हैं, एवं सर्पविद्यासंपन्न लोग इसे अपनी देवता मानते हैं । ग्रामों में आज भी इसकी पूजा की जाती है (ब्रह्मवै. ३.५१) ।

अनमेजय ने किये सर्पसत्र से इन्द्र तक्षक आदि नाग बचे थे, उन्होंने इस देवी की पूजा की थी (दे. भा. ९.४८) ।

यह कश्यप ऋषि की कन्या, एवं वासुकि सर्प की मंगिनी मानी जाती है । इसका विवाह जरत्कार नामक ऋषि से हुआ था, जिससे इसे आस्तिक नामक पुत्र उत्पन्न हुआ

था। इसके इस सारे परिवार का निर्देश इसके संबंधित निम्नलिखित मंत्र में प्राप्त है :—

आस्तिकस्य मुनेर्माता, भगिनी वासुकेस्तथा।

जरत्कारमुनेः पत्नी, मनसा देवी नमोस्तु ते ॥

२. सिंधु दैत्य की कन्या।

मनस्यु—(सो. पूर.) एक पूर्वशीय सम्राट, जो पूर राजा का पौत्र एवं प्रवीर राजा का पुत्र था। वायु में इसे अविद्ध का, एवं मत्स्य में इसे प्राचीन्वत् राजा का पुत्र कहा गया है। इसकी माता का नाम शौरसेनी था, जो शूरसेन राजा की कन्या थी (म. आ. ८९.६-७)।

इसकी पत्नी का नाम सौवीरी था, जिससे इसे शक्त, संहतन एवं चाग्मिन् नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे।

२. (स्वा. नाभि.) एक राजा, जो महत् राजा का पुत्र था। विष्णु में इसके नाम के लिये 'नमस्यु' पाठभेद प्राप्त है।

मनास्विनी—दक्षप्रजापति की कन्या, जो धर्म की पत्नी थी। धर्म से इसे चंद्रमा नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था।

२. पूर्वशीय सम्राट अन्तिनार राजा की पत्नी (मत्स्य. ४९.७)।

३. उत्तानपाद राजा की सुवृता नामक पत्नी से उत्पन्न कन्या।

मनावी—'मनु की पत्नी' इस अर्थ से प्रयुक्त शब्द (क. सं. ३०.१; श. ब्रा. १.१.४.१६)।

मनु—मानवसृष्टि का आदि पुरुष (मनु 'आदिपुरुष' देखिये)।

२. एक राजा, जिसके राज्यकाल में जलप्रलय हो कर, श्रीविष्णु ने मत्स्यावतार लिया था (मनु वैवस्वत देखिये)।

३. 'मनुस्मृति' नाम सुविख्यात धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथ का कर्ता (मनु स्वयंभुव देखिये)।

४. एक अर्थशास्त्रकार (मनु प्राचेतस देखिये)।

५. एक अग्निविशेष, जो तप नाम धारण करनेवाले पांचजय नामक अग्नि का पुत्र था। इसकी सुप्रजा, भृहत्भासा एवं निशा नामक तीन पत्नियाँ थीं। उनमें से प्रथम दो से इसे छः पुत्र एवं तीसरी से इसे एक कन्या तथा सात पुत्र उत्पन्न हुए थे। इसके पुत्रों में निम्नलिखित चार पुत्र प्रमुख थे :—वैश्वानर, विश्वपति, स्विष्टकृत् एवं कर्मन (म. व. २२३)।

६. एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्या थी (म. आ. ५९.४४)।

७. एक ऋषि, जो कृशाश्व ऋषि का पुत्र था। इसकी माता का नाम धिषणा था (भा. ६.६.२०)।

८. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो वायु के अनुसार मधु राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम मनुवरा था।

९. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो मत्स्य के अनुसार, लोमपाद राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम ज्ञाति था।

१० (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो शीघ्र राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम प्रसुश्रुत था।

११. धर्मेसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

१२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मनु 'आदिपुरुष'—मानवसृष्टि का प्रवर्तक आदि-पुरुष, जो समस्त मानवजाति का पिता माना जाता है (ऋ. १.८०.१६; १.१४.२; २.३३.१३; ८.६३.१; अ. वे. १४.२.४१; तै. सं. २.१.५.६)।

कई अभ्यासकों के अनुसार, मनु वैवस्वत तथा यह दोनों एक ही व्यक्ति थे (मनु वैवस्वत देखिये)।

ऋग्वेद में प्रायः बीस बार मनु का निर्देश व्यक्तिवाचक नाम से किया गया है। वहाँ सर्वत्र इसे 'आदिपुरुष' एवं मानव-जाति का पिता, तथा यज्ञ एवं तत्संबंधित विषयों का मार्गदर्शक माना गया है। मनु के द्वारा बताये गये मार्ग से ले जाने की प्रार्थना वेदों में प्राप्त है (ऋ. ८.३०.१)।

मानवजाति का पिता—ऋग्वेद में पांच बार इसे पिता एवं दो बार निश्चित रूप से 'हमारे पिता' कहा गया है (ऋ. २.३३)। तैत्तिरीय संहिता में मानवजाति को 'मनु की प्रजा' (मानव्यः प्रजाः) कहा गया है (१.५.१.३)। वैदिक साहित्य में मनु को विवस्वत् का पुत्र माना गया है, एवं इसे 'वैवस्वत' पैतृक नाम दिया गया है (अ. वे. ८. १०; श. ब्रा. १.३.४.३)। यास्क के अनुसार, विवस्वत् का अर्थ सूर्य होता है, इस प्रकार यह आदिपुरुष सूर्य का पुत्र था (नि. १२.१०)। यास्क इसे सामान्य व्यक्ति न मानकर दिव्यक्षेत्र का दिव्य प्राणी मानते हैं (नि. १२. ३४)।

वैदिक साहित्य में यम को भी विवस्वत् का पुत्र माना गया है, एवं कई स्थानों पर उसे भी मरणशील मनुष्यों में प्रथम माना गया है। इससे प्रतीत होता है कि, वैदिक काल के प्रारम्भ में मनु एवं यम का अस्तित्व अभिन्न था, किन्तु उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में मनु को

जीवित मनुष्यों का एवं यम को दूसरे लोक में मृत मनुष्यों का आदिपुरुष माना गया। इसीलिए शतपथ ब्राह्मण में मनु वैवस्वत को मनुष्यों के शासक के रूप में, तथा यम वैवस्वत को मृत पितरों के शासक के रूप में वर्णन किया गया है (ऋ. ८.५२.१; शं. ब्रा. १३.४.३) यह मनु सम्भवतः केवल आर्यों के ही पूर्वज के रूप में माना गया है, क्योंकि अनेक स्थलों पर इसका अनार्यों के पूर्वज द्यौः से विभेद किया है।

यज्ञसंस्था का आरंभकर्ता—मनु ही यज्ञप्रथा का आरंभकर्ता था, इसीसे इसे विश्व का प्रथम यज्ञकर्ता माना जाता है (ऋ. १०.६३.७; तै. सं. १.५.१.३; २.५.९.१; ६.७.१; ३.३.२.१; ५.४.१०.५; ६.६.६.१; ७.५.१५.३)। ऋग्वेद के अनुसार, विश्व में अग्नि प्रज्वलित करने के बाद सात पुरोहितों के साथ इसने ही सर्वप्रथम देवों को हवि समर्पित की थी (ऋ. १०.६३)।

यज्ञ से ऐश्वर्यप्राप्ति—तैत्तिरीय संहिता में मनु के द्वारा किये गये यज्ञ के उपरांत उसके ऐश्वर्य के प्राप्त होने की कथा प्राप्त है। देव-देवियों के बीच चल रहे युद्ध की विभीषिका से अपने धन की सुरक्षा करने के लिए देवों ने उसे अग्नि को दे दिया। राद को अग्नि के हृदय में लोम उत्पन्न हुआ, एवं वह देवों के समस्त धनसम्पत्ति को लेकर भागने लगा। देवों ने उसका पीछा किया, एवं उसे कष्ट देकर विवश किया कि, वह उनकी अमानत को वापस करे। देवों द्वारा मिले हुए कष्टों से पीड़ित होकर अग्नि रुदन करने लगा, इसी से उसे 'रुद्र' नाम प्राप्त हुआ। उस समय उसके नेत्रों से जो आँसू गिरे उसीसे चाँदी निर्माण हुयी, इसी लिए चाँदी वानकर्म में वर्जित है। अन्त में अग्नि ने देखा कि, देव अपनी धन-सम्पत्ति को वापस लिए जा रहे हैं, तब उसने उनसे कुछ भाग देने की प्रार्थना की। तब देवों ने अग्नि को 'पुनराधान' (यज्ञकर्मों में स्थान) दिया। आगे चलकर मनु, पृथुन्, त्वष्टु एव धातु इत्यादि ने यज्ञकर्म कर के ऐश्वर्य प्राप्त किया (तै. सं. १.५.१)।

मनु ने सभी लोगों के प्रकाशहेतु अग्नि की स्थापना की थी (ऋ. १.३६)। मनु का यज्ञ वर्तमान यज्ञ का ही आरंभक है, क्योंकि, इसके बाद जो भी यज्ञ किये गये, उन में इसके द्वारा दिये गये विधानों को ही आधार मान कर देवों को हवि समर्पित की गयी (ऋ. १.७६)। इस प्रकार की तुलनाओं को अक्सर क्रियाविशेषण शब्द 'मनुष्वत्' (मनुओं की भाँति) द्वारा व्यक्त किया गया

है। यज्ञकर्ता भी अग्नि को उसी प्रकार यज्ञ का साधन बनाते हैं, जिस प्रकार मनुओं ने बनाया था (ऋ. १.४४) वे मनुओं की ही भाँति अग्नि को प्रज्वलित करते हैं, तथा उसीकी भाँति लोम अर्पित करते हैं (ऋ. ७.२; ४.३७)। सोम से उसी प्रकार प्रवाहित होने की स्तुति की गयी है, जैसे वह किसी समय मनु के लिए प्रवाहित होता था (ऋ. ९.९६)।

समकालीन ऋषि—मनु का अनेक प्राचीन यज्ञकर्ताओं के साथ उल्लेख मिलता है, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं—अंगिरस् और ययाति (ऋ. १.३१), भृगु और अंगिरस (ऋ. ८.४३), अथर्वन् और दध्यञ्ज (ऋ. १.८०), दध्यञ्च, अंगिरस्, अत्रि और कण्व (ऋ. १.१३९)। ऐसा कहा गया है कि, कुछ व्यक्तियों ने समय समय पर मनु को अग्नि प्रदान कर उसे यज्ञ के लिए प्रतिष्ठित किया था, जिनके नाम इस प्रकार हैं—देव (ऋ. १.३६), मातरिश्वन् (ऋ. १.१२८), मातरिश्वन् और देव (ऋ. १.१४६), काव्य उशना (ऋ. ८.२३)।

ऋग्वेद के अनुसार, मनु विवस्वत् ने इन्द्र के साथ बैठ कर सोमपान किया था (वा. ३)। तैत्तिरीय संहिता और शतपथ ब्राह्मण में मनु का अक्सर धार्मिक संस्कारादि करनेवाले के रूप में भी निर्देश किया गया है।

मन्वंतरों का निर्माण—आदिपुरुष मनु के पश्चात्, पृथ्वी पर मनु नामक अनेक राजा निर्माण हुए, जिन्होंने अपने नाम से नये-नये मन्वंतरों का निर्माण किया।

ब्रह्मा के एक दिन तथा रात को कल्प कहते हैं। इनमें से ब्रह्मा के एक दिन के चौदह भाग माने गये हैं, जिनमें से हर एक को मन्वन्तर कहते हैं। पुराणों के अनुसार, इनमें से हर एक मन्वन्तर के काल में सृष्टि का नियंत्रण करनेवाला मनु अलग होता है, एवं उसीके नाम से उस मन्वन्तर का नामकरण किया गया है। इस प्रकार जब तक वह मनु उस सृष्टि का अधिकारी रहता है, तब तक वह काल उसके नाम से विख्यात रहता है।

चौदह मन्वन्तर—इस तरह पुराणों में चौदह मन्वन्तर माने गये हैं, जो निम्नलिखित चौदह मनुओं के नाम से सुविख्यात हैं :—१. स्वायम्भुव, २. स्वारोचिष, ३. उत्तम (औत्तम), ४. तामस, ५. रैवत, ६. चाक्षुष, ७. वैवस्वत, ८. सावर्णि (अकसावर्णि) ९. दक्षसावर्णि, १०. ब्रह्मसावर्णि ११. धर्मसावर्णि १२. रुद्रसावर्णि, १३. रौच्य, १४. मौत्य। इनमें से स्वायम्भुव से चाक्षुष

तक के मन्वन्तर हो चुके हैं, एवं वैवस्वत मन्वन्तर सांप्रत चाट्ट है। बाकी मन्वन्तर भविष्यकाल में होनेवाले हैं।

पाठभेद—चौदह मन्वन्तर के अधिपतियों मनु के नाम विभिन्न पुराणों में प्राप्त हैं। इनमें से स्वायम्भुव से ले कर सावर्णि तक के पहले आठ मनु के नाम के बारे में सभी पुराणों में प्रायः एकवाक्यता है, किंतु नौ से चौदह तक के मनु के नाम के बारे में विभिन्न पाठभेद प्राप्त हैं, जो निम्नलिखित तालिका में दिये गये हैं:—

वक्रवर्त	भागवत	मांक.	पद्म	वायु	साम्य	ब्रह्म.	विष्णु
वक्रवर्त	भागवत	मांक.	पद्म	वायु	साम्य	ब्रह्म.	विष्णु
१.	१०.	११.	१२.	१३.	१४.	१५.	१६.
सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि
सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि
सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि
सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि
सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि
सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि
सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि	सुरसावर्णि

उपर्युक्त हर एक मन्वन्तर की कालमर्यादा चतुर्गुणों की इकत्तर भ्रमण माने गये हैं। चतुर्गुणों की कालमर्यादा तैत्तलीस लाख बीस हजार मानुषी वर्ष माने गये हैं। इस प्रकार हर एक मन्वन्तर की कालमर्यादा तैत्तलीस लाख बीस हजार × इकत्तर होती है।

हर एक मन्वन्तर का राजा मनु होता है, एवं उसकी सहायता के लिए सप्तर्षि, देवतागण, इन्द्र, अवतार एवं मनुपुत्र रहते हैं। इनमें सप्तर्षियों का कार्य प्रजा उत्पन्न

करना रहता है, एवं इन प्रजाओं का पालन मनु एवं उसके पुत्र भूपाल वन कर करते हैं। इन भूपालों को देवतागण सलाह देने का कार्य करते हैं, एवं भूपालों को प्राप्त होनेवाली अङ्गुणों का निवारण इन्द्र करता है। जिस समय इन्द्र हतबल होता है, उस समय स्वयं विष्णु अवतार लेकर भूपालों का कष्ट निवारण करता है।

मनु एवं उसके उपर्युक्त सारे सहायकगण विष्णु के अंशरूप माने गये हैं, तथा मन्वन्तर के अन्त में वे सारे विष्णु में ही विलीन हो जाते हैं। किसी भी मन्वन्तर के आरम्भ में वे विष्णु के ही अंश से उत्पन्न होते हैं (विष्णु. १.२)।

स्वायम्भुव मन्वन्तर

१. मनु—स्वायम्भुव।
२. सप्तर्षि—अंगिरस् (भृगु), अत्रि, क्रतु, पुलस्त्य, पुलह, मरीचि, बसिष्ठ।
३. देवगण—याम या शुक्र के जित, अजित व जिताजित ये तीन भेद थे। प्रत्येक गण में बारह देव थे (वायु. ३१.३-९)। उन गणों में निम्न देव थे—ऋचीक, यृणान, जनिमत्, जर, जविष्ठ, दुह, बृहद्भुक्, भितवत्, विभाव, विशु, विश्वदेव, श्रुति, सोमपाथिन् (ब्रह्माण्ड. २. १३)। इन देवों में तुषित नामक बारह देवों का एक और गण था (भा. ४.१.८)।
४. इन्द्र—विश्वशुक्ल (भागवत मतानुसार यज्ञ)। इन्द्राणी 'दक्षिणा' थी (भा. ८.१.६)।
५. अवतार—यज्ञ तथा कपिल (विष्णु एवं भागवत मतानुसार)।

६. पुत्र—अग्निबाहु (अग्निमित्र, अतिबाहु), अग्नीध्र (आग्नीध्र), ज्योतिष्मत्, व्युतिमत्, पुत्र (वपुष्मत्, सत्र, सह), मेधस् (मेध, मेध्य), मेधातिथि, वसु (बाहु), सवन (सवल), हव्य (भय्य)।

मार्कण्डेय के अनुसार, इसके पुत्रों में से पहले सात भूपाल थे। भागवत तथा वायु के अनुसार, इसे प्रियव्रत एवं उत्तानपाद नामक दो पुत्र थे। प्रियव्रत के दस पुत्र थे।

स्वारोचिष मन्वन्तर

१. मनु—स्वारोचिष। कई ग्रन्थों में इस मन्वन्तर के मनु का नाम 'व्युतिमत्' एवं 'स्वारोचिष' बताया गया है।
२. सप्तर्षि—अर्ववीर (अर्वरीवान्, ऊर्ज, और्व), ऋषभ (ऋष्य, काश्यप), दत्त (अत्रि), निश्च्यवन (निश्चर, ल), प्राण, बृहस्पति (अग्नि, अलि), स्तम्भ

(ऊर्जस्तेव, ऊर्जस्वल्)। ब्रह्माण्ड में स्वारोषित मन्वन्तर के कई ऋषियों के कुलनाम देकर उन्हें सप्तर्षियों का पूर्वज कहा गया है।

३. देवगण—तुषित, इडस्पति, इध्म, कवि, तोष, प्रतोष, भद्र, रोचन, विशु, शांति, सुदेव (स्वह), पारावत।

४. इन्द्र—विश्वित्। भागवत के अनुसार, यज्ञपुत्र रोचन।

५. अवतार—तुषितपुत्र अजित (विशु)।

६. पुत्र—अयस्मय अपोमूर्ति (आपमूर्ति), ऊर्ज, किंपुरुष, कृतान्त, चैत्र, ज्योति (रोचिष्मत्, रवि), नभ, (नव, नभस्य), प्रतीत (प्रथित, प्रसृति, बृहदुक्थ), भानु, विभूत, श्रुत, सुकृति (सुषेण), सेतु, हविष्म (हविष्म)। इसके पुत्रों के ऐसे कुल नाम मिलते हैं, किन्तु उनमें से कुल नौ या दस की संख्या प्राप्त है। मत्स्य के अनुसार, इस मन्वन्तर में ऋषियों की सहायता के लिए वसिष्ठपुत्र सात प्रजापति बने थे। किन्तु उन सब के नाम मनु पुत्रों के नामों से मिलते हैं, जैसे—आप, ज्योति, मूर्ति, रय, सृकृत, स्मय तथा हस्तीन्द्र।

उत्तम मन्वन्तर

१. मनु—उत्तम।

२. सप्तर्षि—अनघ, ऊर्ध्वबाहु, गात्र, रज, शुक्र (शुक्ल), सवन, सुतपस्। ये सब वसिष्ठपुत्र थे, एवं वासिष्ठ इनका सामान्य नाम था। पूर्वजन्म में ये सभी हिरण्यगर्भ के ऊर्ज नामक पुत्र थे।

३. देवगण—प्रतर्दन (भद्र, भानु, भावन, मानव), वशवर्तिन् (वेदश्रुति), शिव, सत्य, सुधामन्। इन सबके बारह बारह के गण थे।

४. इन्द्र—सुशांति (सुकीर्ति, सत्यजित्)।

५. अवतार—सत्या का पुत्र सत्य, अथवा धर्म तथा सृष्टा का पुत्र सत्यसेन।

६. पुत्र—अज, अप्रतिम, (इष, ईष), ऊर्ज, तनूज (तनूज, तर्ज), दिव्य (दिव्यौषधि, देवांबुज), नभ (नय), नभस्य (पवन, परशु, परशुवि), मनु, माधव, शुक्र, शुचि (शुति, सुकेतु)।

तामस मन्वन्तर

१. मनु—तामस।

२. सप्तर्षि—अकपि (अकपीवत्), अग्नि, कपि (कपीवत्), काव्य (कवि, चरक), चैत्र (जन्तु, जहु,

जल्प), ज्योतिर्धमन् (ज्योतिर्धामन्, धनद), घातृ (धीमत्, पीवर), पृथु।

३. देवगण—वीर, वैश्रुति, सत्य (सत्यक, साध्य), सुधी, सुल्प, हरि। मार्कण्डेय के अनुसार, इनकी कुल संख्या सत्ताइस है। अन्य ग्रंथों में उल्लेख आता है कि, ये पुत्र एक एक न होकर सत्ताइस सत्ताइस देवों के गण थे।

४. इन्द्र—शिखि (त्रिशिख, शिवि)।

५. अवतार—हरि, जो हरिमेष तथा हरिणी का पुत्र था। इसे एक स्थान हर्षा का पुत्र कहा गया है।

६. पुत्र—अकल्मष (अकल्माष), कृतबन्धु, कृशाश्व, केतु, क्षांति, खाति (ख्याति), जानुजेष, तन्वीन्, तपस्य, तपोयुति (युति), तपोधन, तपोभागिन्, तपोमूल, तपोयोगिन्, तपोरति, दृढेयुधि, दान्त, धन्विन्, नर, परंतप, परीक्षित, पृथु, प्रस्थल, प्रियभृश, शतहय, शांत (शांति), शुभ, सनातन, सुतपस्।

७. योगवर्धन—कौकुरण्डि, दाहभ्य, प्रबहण, शङ्ग, शिव, सस्मित, सित। ये योगवर्धन केवल इसी मन्वन्तर में मिलते हैं।

रैवत मन्वन्तर

१. मनु—रैवत।

२. सप्तर्षि—ऊर्ध्वबाहु (सोमप), देवबाहु (वेदबाहु), पञ्चन्य, महामुनि (मुनि, वसिष्ठ, सत्यनेत्र), यदुभ्र, वेदशिरस् (वेदश्री, सप्तशु, सुधामन्, सुबाहु, स्वधामन्), हिरण्यरोमन् (हिरण्यलोमन्)।

३. देवगण—आभूतरजस् (भूतनय, भूतरजय)। इसके रैभ्य तथा पारिप्लव (वारिप्लव) ये दो भेद हैं। इसके अतिरिक्त अमिताम, प्रकृति, वैकुण्ठ, शुभ आदि देवगणों में प्रत्येक में १४ व्यक्ति हैं।

४. इन्द्र—विशु

५. अवतार—विष्णु के अनुसार संभूतिपुत्र मानस, तथा भागवत के अनुसार शुभ्र तथा विकुण्ड का पुत्र 'वैकुण्ठ'।

६. पुत्र—अव्यय (हव्यप), अरण्य (आरण्य), अरुण, अर्जुन, कवि (कपि), क्रेतु, कृतिन्, तत्त्वदर्शिन् धृतिकृन्, धृतिमन्, निराग्निन्, निरसुक, निर्माह, प्रकाश (प्रकाशक), बलबन्धु, बाल, महावीर्य, युक्त, विचवत्, विश्व, शुचि, शृंग, सत्यक, सत्यवान्, सुयष्ट्य (ससंभाव्य), हरहन्।

चाक्षुष मन्वन्तर

१. मनु—चाक्षुष।

२. सप्तर्षि--अतिनामन्, उत्तम (उन्नत, श्रेष्ठ), नम (नाम, मधु), विरजस् (वीरक), विवरवत् (हविष्मत्), सहिष्णु, सुधामन्, सुमेधस् ।

३. देवगण--आद्य (आप्य), ऋम, ऋशु, पृथग्भाव (प्रथुक्-ग, सूथग), प्रयुत, भव्य (भाध्य), वारि (वारिमूल), ऐख ।

४. इन्द्र--भवानुभव या मनोजव अथवा मेन्द्रुम ।

५. अवतार--विष्णु मतानुसार विकुटापुत्र वैकुण्ठ, तथा भागवत मतानुसार वैराज तथा संभूति का पुत्र अजित् ।

६. पुत्र--अग्निधुत, अतिराज, अमिमन्थु, ऊरु (रुह) कृति, तपस्विन्, पुरु (पुरुष, पूरु), दत्तयुग्म, सत्यवाच्, सुयुग्म ।

वैवस्वत मन्वन्तर

१. मनु--वैवस्वत ।

२. सप्तर्षि--अत्रि, काश्यप (काश्यप, क्लर), गौतम (शरद्वत्), जमदग्नि, भरद्वाज (भारद्वाज), वसिष्ठ (वसुमत्), त्रिशामित्र ।

३. देवगण--आंगिरस (दस), अश्विनी (दो), आदित्य (वारह), मनुदेव (दस), मरुत् (उन्वास), रुद्र (ग्यारह), वसु (आठ), विश्वेदेव (दस), साध्य (वारह) ।

४. इन्द्र--ऊर्ध्विन् या पुरंदर या महाशूल ।

५. अवतार--वामन ।

६. पुत्र--अरिष्ट (विष्ट, नामागारिष्ट, नामानेदिष्ट, रिष्ट, नेदिष्ट, उद्विष्ट), इक्ष्वाकु, इल (सुयुग्म), करुष, कुशनाभ, धृष्ट (धृष्णु), नभ (नभग, नाभ, नामाग), रुग, पृषन्न, प्रांशु, वसुमत्, शर्याति ।

सावर्णि मन्वन्तर

१. मनु--सावर्णि ।

२. सप्तर्षि--अश्वत्थामन् (द्रौणि), और्थ (काश्यप, रुह, श्रेण), कृप (शरद्वत्, शारद्वत्), गालव (कौशिक), दीप्तिमत्, राम (परशुराम जामवन्थ), व्यास (शतानन्द, पाराशर्य) ।

३. देवगण--अमिताम (अमृतप्रभ), मुख्य (सुष, विरज), सुतप (सुतपस्, तप) ।

४. इन्द्र--बलि (दौरोचन) । बलि वैरोचन की भासकित इन्द्रपद पर नहीं रहती है । अतएव कालन्तर में इन्द्रपद छोड़कर वह सिद्धगति का प्राप्त करेगा ।

५. अवतार--देवगुह्य तथा सरस्वती का पुत्र सार्वभौम

प्रा. च. ७७]

अवतार होगा, तथा बलि के वाद वह सब व्यवस्था देखेगा ।

६. पुत्र--अशृष्ट (अशृष्णु), अश्वरीवत् (अवरीयस्, अर्ववीर, उर्वरीयस्, वीरवत्), अपि, अरिष्ट (चरिष्णु, विष्णु), आज्य, ईड्य, कृति, (धृति, धृतिमत्), निर्मोह, यवसस्, वसु, वरीयस्, वाच् (वाजवाजिन्, विरज, विरजस्क), वैरशमन, शुक्र, सत्यवाच्, सुमति ।

दक्षसावर्णि मन्वन्तर

१. मनु--दक्षसावर्णि ।

२. सप्तर्षि--उद्योतिमत्, सुतिमत्, मेधातिथि (मेधामृति, माधातिथि), वसु, सत्य (सुतपस्, पौलह), सबल (सवन, वसित, वसिन), हव्यवाहन (हव्य, भव्य) ।

३. देव--दक्षपुत्र हरित के पुत्र निर्मोह, पार (पर, संभूत), मारिचिगर्भ, सुधर्म, सुधर्मन्, सुशर्मण । इनमें से हर एक के साथ बरह व्यक्ति हैं ।

४. इन्द्र--कार्तिकेय ही आगे चलकर अद्भुत नाम से इन्द्र होगा ।

५. अवतार--आयुष्मत् एवं अंबुधारा का पुत्र ऋषभ अवतार होगा ।

६. पुत्र--अनीक (ऋचीक, अविष्मत्, नाक), खड्गहस्त (पंचहस्त, पंचहोत्र, श्रापहस्त), गय, दीप्तिकेतु (दासकेतु, बहकेतु), धृष्टकेतु (धृतिकेतु, भूतकेतु), निराकृति (निरामय), पृथुश्रवस् (पृथुश्रवस्), बृहत् (बृहद्रथ, बृहद्यश), भूरितुम्ब ।

ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर

१. मनु--ब्रह्मसावर्णि ।

२. सप्तर्षि--आपोमूर्ति (आपोमूर्ति), अप्रतिम (अप्रतिमौजस, प्रतिम, प्रामति), अमिमन्थु (नभस, सप्तकेतु), अष्टम (वसिष्ठ, वशिष्ठ, सत्य, सद्य), नभोग (नाभाग), सुकृति (सुकीर्ति), हविष्मति ।

देव--अत्रि (सुखामन, सुखासीन, सुधाम, सुधामान, सुशासन, धूम, निरुद्ध, विरुद्ध) ।

४. इन्द्र--शारित नामक इन्द्र होगा ।

५. अवतार--विश्वरुद्र के गृह में विष्णु के गर्भ से विश्वक्सेन नामक अवतार होगा ।

६. पुत्र--अनमित्र (निरामित्र), उत्तमौजस, जयद्रथ, निक्षुपन्न, भूरितुम्ब, भूरिषेण, भूरिसेन, वीरवत् (वीरवत्), वृषभ, वृषसेन, शतानीक, सुक्षेत्र, सुपर्वन्, सुवर्चस्, हरिषेण ।

धर्मसावर्णि मन्वन्तर

१. मनु—धर्मसावर्णि ।

२. सप्तर्षि—अग्नितेजस्, अनव (तनय, नग, भग), अरुण (आरुणि, तरुण, वारुणि), उदधिष्णन् (उरुधिष्ण्य, पुष्टि, विष्टि, विष्णु), निश्वर, वपुष्मत् (ऋष्टि), हविष्मत् ।

३. देव—तीस कामग (काम-गम, कामज), तीस निर्माणरत (निर्वाणरति, निर्वाणरुचि), तीस मनोजव (विहंगम) ।

४. इन्द्र—वृष (वृषन्, वैधृत) इन्द्र होगा ।

५. अवतार—इस मन्वन्तर के अवतार का नाम धर्मसेतु है, जो धर्म (आर्यक) एवं वैधृति के पुत्र के रूप में जन्म लेनेवाला है ।

६. पुत्र—आदेशी, क्षेमधन्वन् (क्षेमधर्मन्; हेम-धन्वन्), यहेषु (दृढायु), देवानीक, पुरुद्वह (पुरोवह) पौण्ड्रक (पंडक), मत (मनु, मरु), संवर्तक (सर्वेग, सर्वत्रग, सर्ववेग, सत्यधर्म), सर्वधर्मन् (सुधर्मन्, सुशर्मन्) ।

रुद्रसावर्णि मन्वन्तर

१. मनु—रुद्रसावर्णि ।

२. सप्तर्षि—तपस्विन्, तपोधन, (तपोनिधि, तमोधान, तपोधृति, तपोमति), तपोमूर्ति, तपोरति (तपोरवि), युति (अग्निश्रक, कृति), सुतपस् ।

३. देव—रोहित (लोहित), सुकर्मन् (सुवर्ण), सुतार (तार, सुधर्मन्, सुपार), सुमनस् ।

४. इन्द्र—ऋतधामन् नामक इन्द्र होनेवाला है ।

५. अवतार—सत्यसहस् तथा सृष्टता का पुत्र स्वधामन् अवतार होगा ।

६. पुत्र—उपदेव (अहूर), देववत् (देववायु), देवश्रेष्ठ, मित्रकृत् (अमित्रहा, मित्रहा), मित्रेदेव (चित्रसेन, मित्रविंदु, मित्रविंद), मित्रबाहु, मित्रवत्, विदूरथ, सुवर्चस् ।

रौच्य मन्वन्तर

१. मनु—रौच्य ।

२. सप्तर्षि—अध्यय (पथ्यवत्, हव्याप), तत्व-दर्शिन्, धृतिमत्, निरुसुक, निर्मीक, निष्कंप, निष्कंप, सुतपस् ।

३. देव—सुकर्मन्, सुतामन् (सुशर्मन्), सूधर्मन् । प्रत्येक देवगण तीस देवों का होगा ।

४. इन्द्र—दिवस्पति (दिवस्वामिन्) ।

५. अवतार—देवहोत्र तथा बृहती का पुत्र अवतार होगा ।

६. पुत्र—अनेक क्षत्रवृद्ध (क्षत्रविद्ध, क्षत्रविद्धि, क्षत्रवृद्धि), चित्रसेन, तप (नय, नियति), धर्मधृत, (धर्मभूत, सुवत्), धृत (भव), निर्मथ, पृथ (दृढ), विचित्र, सुतपस् (सुरस), सुनेत्र ।

भौत्य मन्वन्तर

१. मनु—भौत्य ।

२. सप्तर्षि—अग्निबाहु (अतिबाहु), अग्निध्र (आग्निध्र), अजित, भागव (भागध, माधव, दवाजित), सुवत् (युक्त), युक्त, युचि ।

३. देव—कनिष्ठ, चाक्षुष, पवित्र, भाजित (भाजिर, भाजिर), वाचावृद्ध (धारावृद्ध) । प्रत्येक के साथ पाँच पाँच देव होंगे ।

४. इन्द्र—युचि ही इस समय इन्द्र होगा ।

५. अवतार—सत्रायण एवं विताना का पुत्र बृहद्भानु अवतार होगा ।

६. पुत्र—अभिमानिन् (श्रीमानिन्), उग्र (ऊरु, अनुग्रह), कृतिन् (जिष्णु, विष्णु), गभीर (तरंगभीरु), गुरु, तरस्वान् (बुद्ध, बुद्धि, ब्रध्र), तेजस्विन् (कर्जस्विन् ओजस्विन्), प्रतीर (प्रवीण), युचि, शुद्ध, सबल, सुबल) ।

इसके उपरांत प्रलय होगा तथा ब्रह्मा विष्णु के नामि-कमल में योगनिद्रित होंगे (इ. वं. १.७; मार्क. ५०; ९७; विष्णु. ३.१-२; ब्रह्मवै. २.५४; ५७-६५; स्कन्द. ७. १.१०५; मत्वि. ब्राह्म. २; मत्स्य. १; भा. ८.१; ५; १२; वायु. ३१-३३; १००.९-११८; ब्रह्मांड. २.३६; ३.१; ब्रह्म. ५; पद्म. सू. ७) ।

मनु आप्स्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.१०१ १०-११) ।

मनु चाक्षुष—चाक्षुष नामक मन्वन्तर का अधिपति मनु, जिसके पुत्र का नाम वरिष्ठ था (म. अनु. १८.२०; चाक्षुष ६. एवं मनु 'आदिपुरुष' देखिये) ।

मनु प्राचेतस—एक राजनीतिशास्त्रज्ञ, जो प्राचेतस नामक मन्वन्तर का अधिपति मनु था । महाभारत के अनुंतर, इसने राजधर्म एवं राजशास्त्र पर एक ग्रंथ की रचना की थी (म. शां. ५७.४३; ५८.२) । कौटिल्य के अर्थशास्त्र में, एवं राजशेखर के ग्रंथों में इसके राजनीति-

विषयक मंतों का निर्देश प्राप्त हैं (मनु स्वायंभुव देखिये)।

मनु वैवस्वत—वैवस्वत नामक पाँचवें मन्वन्तर का अधिपति मनु, जो विश्ववत् नामक राजा का पुत्र था। इसके नामागारिष्ठ नामक पुत्र का निर्देश वैदिक ग्रंथों में प्राप्त है (तै. सं. ३.१.९.४)।

इसे निम्नलिखित दस पुत्र थे:—प्रांष्ट्र, धृष्ट, नरिष्यन्त, नाभाग, इक्ष्वाकु, करुष, शर्याति, इल, पृषध, एवं नाभानेदिष्ट। इसे इला नामक एक कन्या थी, जिसे पुत्रवत्स नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. अनु. १४७. २७)।

त्रेतायुग के आरंभ में सूर्य ने मनु को, एवं इसने अपने पुत्र को सात्वत धर्म का उपदेश किया था।

सृष्टिप्रलय—सृष्टि प्रलय के समय एक मत्स्य द्वारा मनु वैवस्वत के बचाने की कथा सम्पूर्ण वैदिक एवं उत्तर वैदिक ग्रन्थों में किसी न किसी रूप में प्राप्त है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, जब सारी सृष्टि जलप्रवाह से बह जाती थी, तब मनु एक नाव में बैठा कर एक मत्स्य के द्वारा बचा गया था (श. ब्रा. १.८.१)। प्रलय के उपरांत अपनी उस इला नामक पुत्री के माध्यम से ही मनु मानव जाति की प्रथम सन्तान के जनक हुए, जो उन्हींके हवि से उत्पन्न हुयी थी। यह कथा अथर्ववेद तक के समय में भी शात थी, ऐसा इसी संहिता के एक स्थल द्वारा व्यक्त होता है (अ. वे. १९.२९.८)।

महाभारत में पृथ्वी के जलप्रलय की एवं मत्स्यावतार की कथा प्राप्त है (म. व. १.८५)। उस कथा के अनुसार प्रलयकाल में इसकी नौका नौबंधन नामक हिमालय के शिखर पर आकर रुकी थी। कई ग्रन्थों में हिमालय के इस शिखर का नाम नावप्रवेशन दिया गया है।

मत्स्यपुराण के अनुसार, इसकी नौका हिमालय पर्वत पर नहीं, बल्कि मलय पर्वत पर रुकी थी। भासवत में मनु को द्रविड देश का राजा कहा गया है, एवं इसका नाम सत्यवत बताया गया है (भा. १.३.१५)।

विभिन्न साहित्यों में प्राप्त जलप्लावन-कथा—जलप्लावन की यह कथा संसार के विभिन्न साहित्यिक, धार्मिक ग्रन्थों एवं लोककथाओं आदि में प्राप्त है।

यूनानी-साहित्य में ड्यूकलियन तथा उसकी पत्नी पीरिया की कथा में मनु जैसा ही वर्णन मिलता है (मिथ आफ् ऐनशियन्ट ग्रीस एण्ड रोम, पृष्ठ. २२-२३)। यूनान के अतिरिक्त वेवीलोनिया के साहित्य में भी जल-

प्लावन सम्बन्धी कथाएँ मिलती हैं। 'अत्रहसिष्ठ' महाकाव्य में वर्णित एक कथा के अनुसार, अडेंटस के पुत्र जिसथ्रस जलप्लावन के उपरांत देवों को बलि देकर वेवीलोनिया नगर का पुनः निर्माण करता है (दि फ्लड लिजेंड इन संस्कृत लिटरेचर पृ. १४८-१४९)। वेवीलोनिया में गिल-गमेश महाकाव्य में इसी प्रकार के जलप्लावन की एक कथा प्राप्त है। ईसाई धर्मग्रन्थ बाइबिल में यह कथा विस्तार से दी गयी है, जिसमें नूह का वर्णन मनु की भाँति किया गया है। कुरानशरीफ में यह कथा बाइबिल से मिलती जुलती है। अन्तर केवल इतना है कि, बाइबिल में हजरत नूह की नाव अएएट पर्वत पर आकर रुकती है, जब कि कुरान में उस पर्वत का नाम जूदी दिया गया है (दि होली कुरान पृष्ठ ११.३.२५-४९)। इसके अतिरिक्त चैलिडया के साहित्य में भी हासीसत्रा परमेश्वर 'ई' के आदेशानुसार अपने को जलप्लावन से बचाता है।

इसके अतिरिक्त पारसी धार्मिक ग्रन्थ वेदीदाद तथा पहलवी, सुमेरिन, आइसलैण्ड, वेल्स, लिथुआनिया एवं असीरिया के साहित्य में यह जलप्लावन की कथा मिलती है। इसके साथ ही चीन, ब्रह्मा, इंडोचीन, मलाया, आस्ट्रेलिया, न्यूगिनी, मैलेवेशिया, पाळीमेशिया, उत्तर दक्षिणी अमरीका आदि देशों में जलप्लावन सम्बन्धी कथाएँ प्राप्त हैं।

संसार की समस्त जलप्लावन सम्बन्धी कथाओं की तुलना करने पर यही ज्ञात होता है कि, दक्षिण एशिया की समस्त कथाएँ समान हैं, क्योंकि उनमें सर्वत्र सम्पूर्ण पृथ्वी के डूबने एवं अधिकांश पशुओं के नष्ट होने का विवरण प्राप्त है। उत्तरी एशिया की कथाओं में से चीन जापान की कथाओं में पूर्ण विनाश का वर्णन है। योरप में ऐसे विनाश के वर्णन कम हैं, तथा अफ्रीका की कथाओं में जलप्लावन का वर्णन बिल्कुल नहीं है।

प्रलयोत्तर मानवी समाज का आदिपुरुष—मनु वैवस्वत प्रलयोत्तरकालीन मानवी समाज का आदिपुरुष माना जाता है, एवं पुराणों में निर्विष्ट सारे राजवंश उसीसे ही प्रारंभ होते हैं। राज्यशासन के नानाविध यमनियम के प्रणयनों का श्रेय इसको ही दिया जाता है। खेती में से जो उत्पादन होता है, उसमें से छठवाँ भाग राज्य-शासन का खर्चा निभाने के लिए राजा को मिलना चाहिए, इस सिद्धान्त के प्रणयन का श्रेय भी इसको दिया जाता है।

कालनिर्णय—पुराणों में प्राप्त वंशावलियों के अनुसार, मनु वैवस्वत का राज्यकाल भारतीययुद्ध से पहले ९५ पिढ़ियाँ माना गया है। भारतीययुद्ध का काल ईसा. पू. १४०० माना जाये, तो मनु वैवस्वत का काल ईसा. पू. ३११० साबित होता है। ज्योतिर्मणितीय इतिहास से भी ३१०२ यह वर्ष कलियुग के प्रारंभ का वर्ष माना जाता है। हिन्दु एवं ग्रिकलोन साहित्य में निर्दिष्ट मेसपोटेमिया के जलप्रलय का काल भी ईसा. पू. ३१०० माना जाता है। इससे प्रतीत होता है कि, शतपथ ब्राह्मण में निर्दिष्ट मनु वैवस्वत का जलप्रलय भी इसी समय हुआ था।

परिवार—मनु के कुल दस पुत्र थे, जिसमें से इला का निर्देश पुराणों में इल नामक पुरुष, एवं इला नामक स्त्री ऐसे द्विरूप पद्धति से प्राप्त है।

इसके नौ पुत्रों की एवं उनके द्वारा स्थापित राजवंशों की जानकारी निम्न प्रकार है :—

१. **इक्ष्वाकु**—इसका राज्य अयोध्या में था, एवं इसके पुत्र विकुक्षि ने सुविख्यात ऐक्ष्वाक राजवंश की स्थापना की।

२. **शर्याति**—इसने आनर्त-देश में राज्य करनेवाले सुविख्यात 'शर्यात' राजवंश की स्थापना की। इसके पुत्र का नाम आनर्त था, जिससे प्राचीन गुजरात को आनर्त नाम प्राप्त हुआ था।

३. **नाभानेदिष्ट**—इसने उत्तर बिहार प्रदेश में सुविख्यात वैशाल राजवंश की स्थापना की। इसके राज्य की राजधानी वैशाली नगर में थी, जो आधुनिक मुजफ्फरपुर जिले में स्थित असाह गाँव माना जाता है।

४. **नाभाग**—इसके द्वारा स्थापित नाभाग राजवंश का राज्य गंगा नदी के दुआब में स्थित मध्यदेश में था। इस राजवंश में रथीतर लोग भी समाविष्ट थे, जो क्षत्रिय ब्राह्मण कहलाते थे।

५. **शृष्ट**—इससे 'धार्ष्टक' क्षत्रिय नामक जाति का निर्माण हुआ, जो पंजाब के वाहीक प्रदेश में राज्य करते थे। इन लोगों का निर्देश क्षत्रिय, ब्राह्मण एवं वैश्य इन तीनों तरह से किया हुआ प्राप्त है।

६. **नरिष्यंत**—कई अभ्यासकों के अनुसार, शक लोग इसी राजा के वंशज थे।

७. **करुष**—इसके वंशज करुष लोग थे, जो आधुनिक रेवा प्रदेश में स्थित करुष देश में रहते थे, एवं कुशल बोद्धा माने जाते थे।

८. **शृषध**—इसने अपने गुरु के गाय का वध किया, जिस कारण इसे राज्य का हिस्सा नहीं मिला।

९. **प्रांशु**—इसके वंशजों के बारे में कोई जानकारी नहीं है।

इलापुत्र—इला का विवाह बुध से हुआ, जिससे उसे पुरुरवस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। पुरुरवस् ने सुविख्यात ऐल (चंद्र) राजवंश की स्थापना की जिससे आगे चल कर कान्यकुब्ज, यादव (हैहय, अन्वक, वृष्णि), तुर्वसु, तुलु, आनव, पंचाल, ब्राह्मद्रथ, चेदि आदि राजवंशों का निर्माण हुआ।

इला के पुरुष अंश का रूपान्तर आगे चलकर सुशुभ्र नामक किंपुरुष में हुआ, जिससे सौशुभ्र नामक राजवंश का निर्माण हुआ। इस राजवंश की उत्कल, गया एवं विनताश्र नामक तीन शाखाएँ थी, जो क्रमशः उत्कल, गया एवं उत्तरकुरु प्रदेश पर राज्य करती थी। आगे चल कर आनव एवं कान्यकुब्ज राजाओं ने सौशुभ्र राज्यों को जीत लिया।

करुष, नाभाग, शृष्ट, नरिष्यंत, प्रांशु एवं वृषप्र लोगों के राज्य ऐलवंशीय पुरुरवस्, नहुप एवं ययाति ने जीत लिया, जिस कारण ये सारे राजवंश शीघ्र ही विनष्ट हो गये।

इसके वंश में उत्पन्न उत्तरकालीन राजाओं का काल संभवतः निम्नलिखित माना जाता है :—

ययाति—ई. पू. ३०१०।

मांधातृ—ई. पू. २७४०।

अर्जुन कार्तवीर्य—ई. पू. २५५०।

सगर, दुष्यन्त एवं भरत—ई. पू. २३५०-२३००।

राम दाशरथि—ई. पू. १९५० (हिस्ट्री ऑफ इंडियन पीपल-१.२७०)।

हिन्दी साहित्य में—आधुनिक हिन्दी साहित्य में मनु के जीवन से सम्बन्धित जयशंकर 'प्रसाद' द्वारा लिखित 'कामायनी' हिन्दी काव्याकाश का गौरव ग्रन्थ है। इसके कथानक का आधार प्राचीन ग्रन्थ ही है, जिसमें मानव मन, बुद्धि तथा हृदय के उचित सन्तुलन को स्थापित कर चिरदग्ध दुःखी वसुधा को आशा बँधाती हुयी समन्वयवाद, समरसता एवं आनन्दवाद के द्वारा मंगलमय महान संदेश देने का प्रयत्न किया गया है।

कामायनी पन्द्रह सर्गों में विभक्त है, तथा हर एक सर्ग का नामकरण वर्ष्य विषय के आधार पर हुआ है।

इसमें 'आनन्द' की चरम सिद्धि तथा अन्तिम द्वाई सगों में शान्ति की बहती मन्दाकिनी देखने योग्य है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में मनु का चरित्र एक मानवीय चरित्र के रूप में ही प्रकट हुआ है। 'प्रसाद' जी ने मनु का चरित्र अस्वाभाविक तथा दैवी नहीं, बल्कि इसी जगत के मानवीय रूप का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। मनु एक सच्चे मानव की भाँति गिरे भी हैं, तथा उठे भी हैं। मनु का यह पतन एवं उत्थान विश्वमानव के लिए एक आशाप्रद संदेश देता है, तथा प्रवृत्ति-निवृत्तिका समन्वय कर के एक संतुलित जीवन व्यतीत करने की शिक्षा देता है।

कामायनी के प्रधान चरित्र नायक मनु का कई स्थानों में चित्रण प्राप्त है। उनका पहला रूप नीतिव्यवस्थापक का है, जो 'इला', 'स्वप्न' तथा 'संवर्ण' आदि सगों में हुआ है। इसका सीधा सम्बन्ध 'इला' से है। दूसरा, वैदिक कर्मकाण्डी ऋषि के रूप में हुआ है, जिसके दो पहलू हैं—पहला तपस्वी मनु का, जो 'किल्बताकुली' के आगे के पृथ्वी में मिलता है, दूसरा 'हिसक यजमान' मनु का, जो असुर पुरोहितों के आगमन के पश्चात् पाया जाता है। इनका तीसरा रूप 'मनु-इला युग' के अन्त में देखा जा सकता है, जब वे आनन्द पथ में चल कर शिवत्व प्राप्त करने में सफल होते हैं। इस प्रकार 'कामायनी' में मनु पात्र का विकास देवता मनु, ऋषि मनु, प्रजापति मनु तथा आनन्द के अधिकारी मनु के रूप में हुआ है।

मनु सावर्णि—सावर्णि नामक आठवें मन्वन्तर का अधिपति मनु। एक वैदिक सप्ततट्टा के नाम से इसका निर्देश वैदिक ग्रंथों में प्राप्त है (अ. वे. ८.१०.२४; श. ब्रा. १३.४.३.३; आ. श्रौ. १०.७; नि. १२.१०)। 'सवर्णा' का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

ऋग्वेद में इसका निर्देश मनु 'सावर्णि' नाम से किया गया है (ऋ. ८.५.१.१)। संभव है, 'सवर्ण' का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा। लुङ्विग के अनुसार, यह तृतीयों का राजा था (लुङ्विग-ऋग्वेद अनुवाद. ३.१६६)।

महाभारत में इसे मनु सौवर्ण कहा गया है, एवं बताया गया है कि, इसके मन्वन्तर में वेदव्यास सप्तर्षि पद पर प्रतिष्ठित होगे (म. अनु. १८.४३)।

मनु स्वायंभुव—एक धर्मशास्त्रकार, जो स्वायंभुव नामक पहले मन्वन्तर का मनु माना जाता है।

यह ब्रह्मा के मानसपुत्रों में से एक था। वायु में इसे आनन्द नामक ब्रह्मा से उत्पन्न हुआ कहा गया है। आनन्द ने पृथ्वी पर वर्णव्यवस्था स्थापित की, एवं विवाहसंस्था का भी निर्माण किया। किन्तु आगे चलकर यह व्यवस्था मृतवत् हो गयी, जिसका पुनरुद्धार स्वयंभुव मनु ने किया (वायु. २१.२८; ८०.१४६-१६६; २१.२८)।

इसकी राजधानी सरस्वती नदी के तट पर स्थित थी। अपने सभी शत्रु को पराजित कर यह पृथ्वी का पहला राजा बना था।

ब्रह्म के शरीर के द्रव्य भाग से उत्पन्न शतहरा नामक स्त्री इसकी पत्नी थी, जिससे इसे प्रियव्रत एवं उत्तानपाद नामक दो पुत्र, एवं तीन कन्याएँ उत्पन्न हुयीं। उत्तानपाद राजा के वंश में ही ब्रह्म, मनु चाक्षुष, पृथु धैन्य, दक्ष, एवं मनु वैवस्वत नामक सुविख्यात राजा उत्पन्न हुए।

मनु स्वायंभुव का ज्येष्ठ पुत्र प्रियव्रत पृथ्वी का पहला क्षत्रिय माना जाता है। उसे उत्तम, नामस एवं रैवत नामक तीन पुत्र थे, जो वचपन में ही राज्यत्याग कर तपस्या के लिए वन में चले गये। आगे चल कर प्रियव्रत के ये तीन पुत्र क्रमशः तीसरे, चौथे, एवं पाँचवें मन्वन्तर के अधिपति बने थे।

मनु स्वायंभुव की एक कन्या का नाम आकृति था, जिससे आगे चलकर मनु स्वरोचिष नामक दूसरे मनु का जन्म हुआ।

मविष्य पुराण में मनु के द्वारा प्रणीत धर्मशास्त्र का निर्देश 'स्वायंभुवशास्त्र' नाम से किया गया है। बाद की इस शास्त्र का चतुर्विध संस्करण भृगु, नारद, बृहस्पति एवं अंगिरस् द्वारा किया गया था (संस्कारमयूख शृ. २)। विश्वरूप के ग्रन्थ में भी मनु का निर्देश 'स्वायंभुव' नाम से किया गया है, एवं इसके काफी उद्धरण भी लिये गये हैं (याज्ञ. २.७३-७४; ८३; ८५)। किन्तु विश्वरूप द्वारा दिये गये मनु एवं भृगु के श्लोक 'मनुस्मृति' में आजकल अप्राप्य है (याज्ञ १.१८७-२५२)। अपराक ने भृगुस्मृति का एक श्लोक दिया है, जो मनु का कहा गया है (याज्ञ. २.९६)। किन्तु वह श्लोक भी मनुस्मृति में अप्राप्य है।

स्मृतिकार—निरुक्त में जहाँ पुत्र एवं पुत्री के अधिकारों का वर्णन किया गया है, वहीं स्वायंभुव मनु का स्मृतिकार के रूप में उल्लेख किया गया है। निरुक्त से यह पता चलता है कि, इसका मत था कि, पुत्र एवं पुत्री को पिता की संपत्ति में समान अधिकार है। उन्हीं श्लोकों को मनु की स्मृति कहा गया है (नि. ३.४)। इससे स्पष्ट है

कि, स्वयंभुव मनु की स्मृति यास्क के पूर्व में वर्तमान थी। गौतम तथा वसिष्ठ आदि स्मृतिकारों ने मनु के मतों को दिया है। आपस्तंब ने भी लिखा है कि, मनु श्राद्धकर्म का प्रणेता था (आप. ध. २.७.१६.१)।

धर्मशास्त्र की निर्मिति—महाभारत के अनुसार, ब्रह्मा ने मनु के द्वारा धर्मविषयक एक लाख श्लोकों की रचना करवायी। आगे चलकर, उन्हीं श्लोकों का आधार लेकर उशनस् एवं बृहस्पति ने धर्मशास्त्रों का निर्माण किया (म. शां. ३३२.३६)।

नारद गद्यस्मृति के अनुसार, मनु ने एक लाख श्लोकों के धर्मशास्त्र की रचना कर नारद को प्रदान किया, जिसमें एक हजार अस्सी अध्याय, एवं चौबीस प्रकरण थे। उसी धर्मशास्त्र ग्रन्थ को नारद ने बारह हजार श्लोकों में संक्षिप्त कर के मार्कण्डेय ऋषि को दिया। उसी ग्रन्थ को आठ हजार श्लोकों में संक्षिप्त कर मार्कण्डेय ने सुमति भार्गव को प्रदान किया, जिसने आगे चलकर इसी ग्रन्थ को चार हजार श्लोकों में संक्षिप्त किया। मेधातिथि ने नारद स्मृति के इस उद्धरण को दुहराया है।

मनुस्मृति का प्रणयन—मनुस्मृति का जो संस्करण आज उपलब्ध है, उस ग्रन्थ के अनुसार, ब्रह्मा से विराज नामक ऋषि की उत्पत्ति हुयी, जिससे आगे चल कर मनु उत्पन्न हुआ। पश्चात् मनु से भृगु, नारद आदि दस ऋषि पैदा हुए। धर्मशास्त्र का शिक्षण सर्वप्रथम ब्रह्मा ने मनु को प्रदान किया, जिसे आगे चलकर इसने अपने इन पुत्रों को दिया (मनु. १.५८)। मनुस्मृति के प्रणयन की कथा इस प्रकार है:—एक बार कई ऋषिगण चारों वर्णों से सम्बन्धित धर्मशास्त्रविषयक जानकारी प्राप्त करने के लिए आचार्य मनु के पास आये। मनु ने कहा, 'यह सारी जानकारी तुम लोगों को हमारे शिष्य भृगु द्वारा प्राप्त होगी' (मनु. १. ५९-६०)। पश्चात्, भृगु ने मनु की धर्मविषयक सारी विचारधारा उन सबके सामने रखी। वही मनुस्मृति है। उस ग्रन्थ में मनु को 'सर्वज्ञ' कहा गया है (मनु. २.७)।

मानवधर्मशास्त्र का पुनर्संस्करण—मैक्समूलर के अनुसार, प्राचीनकाल के मानवधर्मसूत्र का पुनः संस्करण कर के मनुस्मृति का निर्माण किया गया है (सैक्रिड बुक्स आफ इस्ट, खण्ड. २५ पृष्ठ. १८)। आधुनिक काल में प्राप्त 'मनुस्मृति' मनु के द्वारा लिखित है, अथवा मनु के नाम को जोड़कर किसी अन्य द्वारा लिखी गयी है, कहा

नही जा सकता। महाभारत के अनुसार, स्वयंभुव मनु धर्मशास्त्र का, एवं प्राचेतस मनु अर्थशास्त्र के आचार्य माने गये हैं (म. शां. ११.१२; ७.४३)। इस प्रकार प्राचीनकाल में धर्मशास्त्र एवं अर्थशास्त्र पर लिखे हुए दो स्वतंत्र ग्रन्थ उपलब्ध थे, जो उक्त मनुओं द्वारा लिखित थे। इस प्रकार सम्भव है कि, किसी अज्ञात व्यक्ति ने इन दोनों ग्रन्थों की सामग्री के साथ साथ प्राचीन धर्मशास्त्रमंत्रों की विचारधारा को और जोड़कर, आधुनिक मनुस्मृति के स्वरूप का निर्माण किया हो।

उपलब्ध मनुस्मृति महाभारत से उत्तरकालीन मानी जाती है। सम्भव है, इस ग्रन्थ की रचना के पूर्व 'बृहद्-मनुस्मृति' एवं 'बृहदमनुस्मृति' नामक दो बड़े स्मृति-ग्रन्थ उपलब्ध थे। इन्हीं ग्रन्थों को संक्षिप्त कर दो हजार सात सौ श्लोकोंवाली मनुस्मृति की रचना भृगु ने की हो।

मनुस्मृति ग्रंथ में इस रचना का जनक स्वयंभुव मनु कहा गया है, एवं उसके साथ अन्य छः मनुओं के नाम दिये गये हैं (मनु १.६२)।

मनुस्मृति में बारह अध्याय हैं, एवं दो हजार छः सौ चौरान्नवे श्लोक हैं। उस ग्रन्थ में प्राप्त अनेक श्लोक वसिष्ठ एवं विष्णु धर्मसूत्रों से मिलते जुलते हैं। इस ग्रन्थ में प्राप्त धर्मविषयक विचार गौतम, बौधायन एवं आपस्तंब से मिलते जुलते हैं। उक्त ग्रंथ की शैली अत्यधिक सरल है, जिसमें पाणिनि के व्याकरण का अनुगमन किया गया है। इस ग्रंथ का तत्त्वज्ञान एवं शब्दप्रयोग कौटिल्य अर्थशास्त्र की शैली से काफी साम्य रखता है।

विषयानु क्रमणिका—मनु-स्मृति में कुल बारह अध्याय हैं, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख विषयों पर विचारविश्लेषण किया गया है:—

अ. १.—धर्मशास्त्र की निर्मिति, एवं मनुस्मृति की परम्परा।

अ. २.—धर्म क्या है?—धर्म की उत्पत्ति किससे हुयी है?—धर्मशास्त्र का अधिकार किन किन को प्राप्त है—संस्कारों की आवश्यकता क्या है?

अ. ३.—ब्रह्मचर्यव्रत का पालन कैसे किया जाये? ब्राह्मण किस वर्ण की कन्या से शादी करे?—विवाहों के आठ प्रकार—पतिपत्नी के कर्तव्य।

अ. ४.—गृहस्थधर्मियों का कर्तव्य।

अ. ५.—घर में किसी की मृत्यु अथवा जन्म के समय अशौच का कालनिर्णय।

अ. ६.—वानप्रस्थधर्म का पालन।

अ. ७.—राजधर्म का पालन—राजा के लिए आवश्यक चार विद्याएँ—राजा में उत्पन्न होनेवाले कामजनित दस, एवं क्रोधजनित आठ दोषों का विवरण।

अ. ८.—न्यायपालन से संबंधित राजा के कर्तव्य—मनु-प्रणीत अठराह विधियों का विवरण।

अ. ९.—पतिपत्नी के वैश्राणिक कर्तव्य—नारियों के दोषों का वर्णन।

अ. १०.—चारां वर्णों के कर्तव्य।

अ. ११.—दानों के विविध प्रकार एवं उनका महत्त्व—पौत्र महापातक एवं उनके लिए प्रायश्चित्त।

अ. १२.—कर्मों के विविध प्रकार एवं ब्रह्म की प्राप्ति—मानवशास्त्र के अध्यापन से होनेवाले लाभ।

'मनुस्मृति' में निर्दिष्ट ग्रंथ—मनुस्मृति में प्राप्त विभिन्न ग्रंथों के निर्देश से पता चलता है कि, इस ग्रंथ के रचयिता मनु को कितने पूर्वलिखित ग्रंथों की सृजना प्राप्त थी। मनुस्मृति में ऋक्, यजु एवं सामवेदों का निर्देश प्राप्त है, एवं अथर्ववेद का निर्देश 'अथर्वगिरिस्' श्रुति नाम से किया गया है (मनु. ११.३३)। उसके ग्रंथ में आरण्यकों का भी निर्देश प्राप्त है (मनु. ४.१२३)। इसे ऋ: वेदांग ज्ञात थे (मनु. २.१४१; ३.१८५; ४.९८)। इसे अनेक धर्मशास्त्र के ग्रंथ ज्ञात थे, एवं इसने धर्मशास्त्र के विद्वानों को 'धर्मपाठक' कहा है (मनु. ३.२३२; १२.१११)। इसके ग्रंथ में निम्नलिखित धर्मशास्त्रकारों का निर्देश प्राप्त है :-अत्रि, गौतम, भृगु, शौनक, वसिष्ठ एवं वैश्वानस (मनु. ३.१६; ६.२१; ८.१४०)।

प्राचीन साहित्य में से आख्यान, इतिहास, पुराण एवं खिल आदि का निर्देश मनुस्मृति में प्राप्त है (मनु. ३.२३२)। वेदान्त में निर्दिष्ट ब्रह्म के स्वरूप का विवेचन मनु द्वारा किया गया है, जिससे प्रतीत होता है कि, मनु को उपनिषदों का भी काफी ज्ञान था (मनु. ६.८३; ९४)। इसके ग्रंथ में कई 'वेदब्राह्म स्मृतियों' का भी निर्देश प्राप्त है। इसे श्रौद्ध जैन आदि इतर धर्मों का भी ज्ञान था (मनु. १२.९५)। इसने अपने ग्रंथ में वेदान्तिक तथा पाण्डिडियों का भी वर्णन किया है (मनु. ४.३०; ६१; १६३)।

इसने अशुद्ध एवं शूद्र लोगों की कटु आलोचना की है, एवं उन्हें कठे नियमों में बाँधने का प्रयत्न किया है (मनु. १०.५०—५६; १२९)। इसका कारण यह हो सकता है कि, इन दलित जातियों ने वैदिक धर्म से इतर धर्मों की स्थापना करने के प्रयत्नों में, जैन तथा बौद्ध

धर्म को आगे बढ़ने में योगदान देना प्रारम्भ किया हो।

'मनुस्मृति' के भाष्य—मनुस्मृति के भाष्यों में से सबसे प्राचीन भाष्य मेधातिथी का माना जाता है, जिसकी रचना ९०० ई० में हुयी थी। विश्वरूप ने अपने यजुर्वेद के भाष्य में मनुस्मृति के दो सौ श्लोकों का उद्धरण किया है। इन दोनों ग्रन्थकारों के सामने जो मनुस्मृति प्राप्त थी, वह आज की मनुस्मृति से पूर्ण साम्य रखती है।

शंकराचार्य के वेदान्त सूत्रभाष्य में भी मनुस्मृति के काफी उद्धरण प्राप्त है (वे. सू. १.३.२८; २.१.११; ४.२.६; ३.१.१४; ३.४.३८)। शंकराचार्य के द्वारा निर्देशित इन उद्धरणों से पता चलता है कि, वे इन सूत्रों को गौतम धर्मसूत्रों से अधिक प्रमाणित मानते थे।

'मनुस्मृति' का रचनाकाल—मनु का मत था कि, ब्राह्मण यदि अपराधी है, तो उसे फाँसी न देनी चाहिए, बल्कि उसे देश से निकाल देना चाहिए (मनु. ८.३८०)। इसके इस मत का निर्देश 'मृच्छकटिक' में मिलता है। बलमी के राजा धरसेन के ५०१ ई. के शिलालेख में उस राजा को मनु के धर्मनियमों का पालनकर्ता कहा गया है। जैमिनि सूत्रों के सुविख्यात भाष्यकार शबर-स्वमिन् द्वारा ५०० ई० में रचित भाष्य में मनु के मतों का निर्देश प्राप्त है।

इन सारे निर्देशों से प्रतीत होता है कि, दूसरी शताब्दी के उपरांत मनुस्मृति को प्रमाणित धार्मिक ग्रंथ माना जाने लगा था। किन्तु कालान्तर में इसकी लोकप्रियता को देखकर लोगों ने अपनी विचारधारा को भी इस ग्रंथ में संनिविष्ट कर दिया, जिससे इसमें प्रक्षिप्त अंश जुड़ गये। उन तमाम विचार एक दूसरे से मेल न खाकर कहीं कहीं एक दूसरे से विरोधी जान पड़ते हैं (मनु. ३.१२-१३; २३-२६; ९. ५९-६३; ६४-६९)। बृहस्पति के निर्देशों से पता चलता है कि, मनुस्मृति में ये प्रक्षिप्त अंश तीसरी शताब्दी में जोड़े गये।

मनुस्मृति याशबस्वस्मृति से पूर्वकालीन मानी जाती है। उपलब्ध मनुस्मृति में यवन, कांशोज, शक, पह्लव, चीन, ओड्र, द्रविड, मेद, आंध्र आदि देशों का उल्लेख प्राप्त है। इन सभी प्राप्त सूचनाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि, उपलब्ध मनुस्मृति की रचना तीसरी शताब्दी के पूर्व हुयी थी। संभवतः इसकी रचना २०० ई० पूर्व से लेकर २०० ई० के बीच में किसी समय हुयी थी।

अन्य ग्रंथ—मनु के नाम से 'मनुसंहिता' नामक एक तन्त्रविषयक ग्रंथ भी प्राप्त है (C. C.)।

मनु स्वारोचिष—स्वारोचिष नामक द्वितीय मन्वंतर का अधिपति मनु। इसकी माता का नाम आकृति था, जो मनु स्वयंभुव की कन्या थी। इसे ब्रह्मा ने सात्वत धर्म का उपदेश दिया था, जो कालान्तर में इसने अपने पुत्र शंखपद को प्रदान किया था (म. शां. ३३६.३४-३५; स्वारोचिष देखिये)।

मनुज—दस विश्वदेवों में से एक।

मनुवश—(सो. क्रोष्ट्र.) एक यादव राजा, जो वायु के अनुसार मनु राजा का पुत्र था।

मनुष्यधर्मन्—कुवेर का नामान्तर।

मनुष्यराजन्—एक सन्मान्य उपाधि, जो राजसूय यज्ञ करनेवाले मनुष्य राजाओं के लिए प्रयुक्त की जाती थी। राजसूय यज्ञ करनेवाले देवों के लिए 'देवराजन्' उपाधि प्रयुक्त की जाती थी (देवराजन् देखिये)।

मनुसुत—ब्रह्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

मनोजव—अनिल नामक वसु का ज्येष्ठ पुत्र। इसकी माता का नाम शिवा था (म. आ. ६०.२४)। पाठभेद (मांडारकर संहिता)—'पुरोजव'।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो मेधातिथि राजा का पुत्र था।

३. चाक्षुष मन्वन्तर का इन्द्र।

४. लेख देवों में से एक।

५. धर्मसावर्णि मन्वन्तर का एक देव।

६. सोमवंशीय एक राजा, जिसका मंगलतीर्थ नामक तीर्थस्थान में स्नान करने के कारण उद्धार हुआ था (स्कंद. ३.१.१२)।

मनोजवा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१६)।

मनोभद्र—एक राजा, जिसका गंगामहात्म्य श्रवण करने के कारण उद्धार हुआ (पद्म. क्रि. २)।

मनोभवा—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं सुनि की कन्याओं में से एक थी।

मनोभुव—चाक्षुष मन्वन्तर का एक इन्द्र।

मनोरमा—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्याओं में से एक थी। अर्जुन के जन्मोत्सव में यह उपस्थित थी।

२. ध्रुवसंघि राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम सुदर्शन था।

३. विद्याधराधिप इंद्रिवराक्ष नामक गंधर्व की कन्या (इंद्रिवराक्ष देखिये)।

मनोहरा—सोम नामक वसु की पत्नी, जिसे निम्न-लिखित चार पुत्र थे :—वर्च, शिशिर, प्राण एवं रमण (म. आ. ६०.२१)।

२. अलकापुरी की एक अप्सरा, जिसने अष्टावक्र के स्वागत के लिए इन्द्रसभा में नृत्य किया था (म. अनु. १९.४५)।

मंथरा—कैकयी की एक कुवडी दासी, जो दुन्दुभी नामक गंधर्वी के अंश से उत्पन्न हुयी थी (म. व. २६०.१०)। महाभारत में रामोपाख्यान में, जब राम की सहायता करने के लिए देवताओं द्वारा ऋक्षों तथा वानरों की बहियों से पुत्र उत्पन्न करने का उल्लेख किया गया है, तब गंधर्वी दुन्दुभी को मंथरा के रूप में प्रकट होने की चर्चा मिलती है (म. व. २६०.१०)। इसी मंथरा कैकयी के मन में भेद उत्पन्न कर राम के वनगमन का कारण बनी थी।

वाल्मीकि रामायण की मंथरा कैकयी की चिरकाल से पतिता दासी है, जो राम का राज्यभिषेक सुनकर क्रोध से प्रवृत्त हो उठती है। यह कैकयी को भावी अरिष्टों की ओर ध्यान दिलाकर अपने वश में ऐसा कर लेती है कि, वह इसकी प्रशंसा करने लगती है (वा. रा. अयो. ९. ४१-५०)। कैकयी इसके द्वारा ही समझाये जानेपर राम को वन में भेजने के लिए प्रवृत्त हुयी। कैकयी राम के राज्य-भिषेक से अत्यधिक प्रसन्न थी, किन्तु इसके द्वारा दी गयी दलीलों को सुनकर वह हतबुद्ध हो गयी, और दशरथ से वर माँग कर राम को वन भेजा (वा. रा. अयो. ७.९) शत्रुघ्न इसके इस दुष्कार्य से इतने क्रुद्ध हो उठते हैं कि, वह मंथरा को पीटते भी हैं (वा. रा. अयो. ७.८)। अग्नि में, मंथरा के इस उत्पीडन को राम के वनवास का कारण बताया है (अग्नि. ५.८)।

आनन्द रामायण में लिखा है कि, मंथरा कृष्णावतार के समय जन्म लेगी, तथा पूतना के रूप में कृष्ण के द्वारा मारी जायेगी (आ. रा. ९.५.३६)। अन्य स्थल पर कंस के यहाँ कुब्जा के रूप में अवतार लेने की बात भी कही गयी है (आ. रा. १.२.३)।

इसी प्रकार पद्मपुराण के पाताल खण्ड के गौडीय पाठ (अध्याय १५), आनन्द रामायण (आ. रा. १.२.२) कृत्तिवास रामायण (२.४) में इसकी कथा प्राप्त है। बाद के अनेक वृत्तान्तों में मंथरा को मोहित करने के लिए सरस्वती के भेजे जाने का भी वर्णन मिलता है (अ. रा.

२.२.४४; आ. रा. १.६.४१)। तोरवो रामायण में मंथरा को विष्णु की माया का अवतार माना गया है।

‘रामचरित मानस’ में—इस प्रकार प्राचीन एवं अर्वाचीन राम साहित्य में इसका नाम सर्वत्र प्राप्त है। तुलसीदास के द्वारा रचित ‘रामचरित मानस’ में कवि ने अधिदैविक तत्व का योग कर इसे निर्दोष सावित किया है। तुलसी मंथरा का कट्ट चित्रण करने के पूर्व कह देते हैं— ‘गई गिरा मति केरि’। राम के अवतार कारण का लक्ष्य देवों की दुःखनिवृत्ति बतलाया गया है, अतएव देवताओं को रामवनवास की प्रेरणा सरस्वती के द्वारा देना संगतपूर्ण जान पड़ता है। तुलसीद्वारा चित्रित मंथरा बड़ी वाक्पटु, अनुभवी, कुशल दूती की भाँति है, जो बड़े मनोवैज्ञानिक ढंग से केकैयी के हृदय के भावों को परिवर्तित कर, राम को वन भेजने के लिए उसे विवश कर देती है।

२. विरोचन दैत्य की कन्या। यह दैत्यकन्या सम्पूर्ण पृथ्वी को विनाश करने के लिए तत्पर हुयी, तब इन्द्र ने इसका वध किया।

इसकी कथा रामायण में राम के द्वारा तारकावध के समय कही गयी है। इसी की कथा बता कर राम ने लक्ष्मण से कहा था कि, स्त्री का वध करना अवश्य उचित नहीं है, किन्तु जब आवश्यकता ही आ पड़े, तो स्त्रीवध किसी प्रकार हेय कार्य नहीं है (वा. रा. वा. २५.२०)।

मंथिनी—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४८.२५)। इसके नाम के लिए ‘स्वेरिका’ पाठभेद प्राप्त है।

मंथु—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो वीरवत राजा का पुत्र था।

मंद्—रावण के पक्ष का एक राक्षस।

मन्दपाल—एक विद्वान् महर्षि, जिसे मृत्यु के बाद पितृऋण को न उतारने के कारण स्वर्ग की प्राप्ति न हुयी थी।

पितृऋण—मन्दपाल धर्मज्ञों में श्रेष्ठ तथा कटोरव्रत का पालन करनेवाला था। यह ऊर्ध्वरेता मुनियों के मार्ग का आश्रय लेकर सदा वेदों के स्वाध्याय, धर्मपालन तथा तपस्या में संलग्न रहता था। अपनी तपस्या पूर्ण कर देहत्याग कर, जब यह पितृलोक पहुँचा, तब इसे सत्कर्मों के फलानुसार स्वर्ग की प्राप्ति न हुयी। तब इसने देवताओं से इसका कारण पूछा। देवताओं ने बताया, ‘आपके उपर पितृऋण है। जब तक वह पितृऋण तुम्हारे द्वारा न उतारा जायेगा, तब तक स्वर्ग की प्राप्ति असम्भव

है। इस ऋण को उतारने के लिए तुम्हें सन्तान उत्पन्न करके अपनी वंशपरम्परा को अविच्छन्न बनाने का प्रयत्न करना चाहिए’।

यह सुनकर शीघ्र संतान उत्पन्न करने के लिए, इसने शार्ङ्गक पक्षी होकर जरितु नामवाली शार्ङ्गिका से संबंध स्थापित किया। उसके गर्भ से चार ब्रह्मवादी पुत्रों को जन्म देकर, यह लपिता नामवाली यक्षिणी के पास चला गया। वच्चे अपनी माँ के साथ ही खाण्डव-वन में रहे। जब अग्निदेव ने उस वन को जलाना आरम्भ किया, उस समय इसने अग्नि की स्तुति की, तथा अपने पुत्रों की जीवनरक्षा के लिए वर माँगा। तब अग्निदेव ने ‘तथालु’ कह कर इसकी प्रार्थना स्वीकार की (म. आ. २२०)।

इसने अपने वच्चों की रक्षा करने की बात अपनी दूसरी पत्नी लपिता से कही, किन्तु उसने इससे ईर्ष्यायुक्त वचन कहे, एवं इसे अपने पुत्रों के पास जाने से रोक लिया। तब इसने स्त्रियों के सौतिया डाह रूपी दोष का वर्णन करते हुए बताया कि, वह चाहे जितना सत्य कहे, यह उस पर विश्वास नहीं कर सकता।

पश्चात् यह अपनी पूर्वपत्नी जरितु, तथा पुत्रों के पास गया। किन्तु वे इसे पहचान न सके। बाद को इसने जरितु तथा अपने पुत्रों के साथ देशान्तर में प्रस्थान किया (म. आ. २२२; जरितु देखिये)।

मंद्—एक दुराचारी ब्राह्मण, जो विंगला नामक वेद्व्या पर आसक्त था। आगे चलकर इसने ऋषभ नामक योगी की सेवा की। इस पुण्यकर्म के कारण अगले जन्म में यह भद्रायु नामक राजकुमार हुआ (भद्रायु देखिये)।

मंदाकिनी—पुलस्त्यपुत्र विश्वस् नामक ऋषि की दो पत्नियों में से एक। भगवान् शंकर के प्रसाद से इसे कुबेर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (पद्य. पा. ६)।

मंदाकिन्य—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मंदार—एक असुर, जो हिरण्यकशिपु का ज्येष्ठ पुत्र था। भगवान् शंकर ने इसे एक वर प्रदान किया था, जिसके बल से यह एक अर्शुद वर्षों तक इन्द्र से युद्ध करता रहा। युद्ध में यह अजेय था, जिस कारण भगवान् विष्णु का सुदर्शन चक्र, एवं इन्द्र का वज्र इसके शरीर पर टकरा कर तिनके के समान जीर्ण-शीर्ण हो गये (म. अनु. १४.७४-८२)।

२. धौम्य ऋषि का पुत्र, जिसका विवाह मालव देश में रहनेवाले अर्चि नामक ब्राह्मण की शमिका नामक

कन्या से हुआ था (गणेश. २.३४.१२; और्व ३. देखिये)।

मंदार—काल्यायन श्रौतसूत्र में निर्दिष्ट एक व्यक्ति, जिसके पशुओं ने गंगा नदी के जल का पान करना अस्वीकार कर दिया था (का. श्रौ. १३.३.२१)।

मंदुलक—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार हाल राजा का पुत्र था।

मंदोदरी—रावण की धर्मपरायण पत्नी, जो मयासुर की कन्या थी। यह हेमा अथवा रम्भा नामक अप्सरा से उत्पन्न हुयी थी (वा. रा. उ. १२.१९, स्कंद. ५.३.३५; ब्रह्मांड. ३.६.२८-३०)।

अध्यात्मरामायण के अनुसार, राम दाशरथि की पत्नी सीता इसकी ही कन्या थी (सीता देखिये)।

२. सिंहलद्वीप के चंद्रसेन राजा की कन्या, जिसकी माता का नाम गुणवती था।

यह विवाहयोग्य होने पर, चंद्रसेन राजा ने इसके विवाह की तैयारी की, एवं इंद्र देश के सुधन्वन् नामक राजा से इसका विवाह निश्चित किया। किन्तु इसने इस विवाह से इन्कार कर दिया, एवं पिता से कहा, 'पुरुष दगाबाज होते हैं, इसलिये मैं विवाह करना नहीं चाहती हूँ'। इसके कहने पर चंद्रसेन राजा ने इसका विवाह स्थगित किया।

आगे चलकर मंदोदरी के कनिष्ठ बहन के विवाह की तैयारी हुयी। उस महोत्सव में उपस्थित हुए चारुदेष्ण नामक राजपुत्र पर मोहित हो कर, इसने उसका वरण किया। किन्तु पश्चात् चारुदेष्ण ने इसे धोखा दिया, जिस कारण पुरुषजाति के संबंध में इसकी प्रकट हुयी आशंका सच साबित हुयी।

३. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१७)।

मन्मथकर—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६७)।

मांघ्रातृ—एक राजा, जिसपर आश्रियों ने कृपा की थी (ऋ. १.११२.१३)।

२. एक ऋषि, जो अंगिरस् ऋषि के समान महान् तपस्वी था (ऋ. ८.४०.१२)।

मांघ्रातृ यौवनाश्व—एक सम्राट, जिसे कबंध आथर्वण के पुत्र विचारिन् ने शिक्षित किया था (गो. ब्रा. १.२. १०)। युवनाश्व का वंशज होने के कारण, इसे यौवनाश्व पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा (मांघ्रातृ देखिये)।

मन्यु—एक वैदिक देवता, जिसे क्रोध की मूर्तिमन्त प्रतीक रूप देवता माना जाता है। ऋग्वेद के दो सूक्तों में

इस देवता का आवाहन किया गया है (ऋ. १०.८३-८४)।

यह युद्ध में अजेय, एवं अग्नि के भाँति जाज्वल्यमान देवता है। मरुतों के साथ यह अपने मरुतों को विजय तथा संपत्ति प्रदान करता है। तपस् नामक अन्य देवता के साथ यह अपने मरुतों की रक्षा करता है, एवं उनके शत्रुओं को परास्त करता है।

ब्रह्म में इस देवता के उत्पत्ति की कथा इस प्रकार दी गयी है। एकबार देवदानव युद्ध में देवताओं की हार हो रही थी। उस समय विजयप्रति के लिए उन्होंने गौतमी नदी के तट पर तपस्या की। इस तपस्या से संतुष्ट हो कर, भगवान् शंकर ने देवों को अभयदान दिया, एवं दैत्यों के संहार के लिए अपने तृतीय नेत्र से मन्यु नामक देवता का निमीण किया। आगे चल कर इसने दैत्यों को पराजित किया (ब्रह्म, १६२)।

२. (सो. पूर.) एक पूर्ववंशीय राजा, जो भरद्वाज का पुत्र था। इसे बृहत्क्षय आदि पाँच पुत्र थे (भा. ९. २१.१)। भविष्य में इसके नाम के लिए 'मन्युमत्' पाठभेद प्राप्त है।

मन्यु तापस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ८३-८४)।

मन्यु वासिष्ठ्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.९७. १०-१२)।

मन्युमत्—मातृ नामक अग्नि का द्वितीय पुत्र (म. व. २११.११)।

ममता—उचथ्य आंगिरस नामक ऋषि की पत्नी एवं दीर्घतमस् मामतेय नाम-ऋषि की माता (ऋ. १.१४७.३; उचथ्य, दीर्घतमस् मामतेय, बृहस्पति आंगिरस एवं भरद्वाज देखिये)।

ऋग्वेद में अन्यत्र प्राप्त भरद्वाज के एक सूक्त में भरद्वाज ऋषि का निर्देश 'ममतेव' नाम से किया गया है (ऋ. ६.५०.१५)। भरद्वाज के द्वारा रचित इस सूक्त में ममता के द्वारा रचित स्तोत्रों का निर्देश किया गया है, जिससे प्रतीत होता है कि, ममता भरद्वाज के लिए अत्यंत आदरणीय व्यक्ति थी।

मय—एक दानव, जो दानवों में सर्वश्रेष्ठ शिल्पी एवं दानव नरेश नमुचि का भाई था (म. आ. २१८.३९)। कश्यप ऋषि को दनु नामक पत्नी से उत्पन्न पुत्रों में यह एवं नमुचि प्रमुख थे। रामायण में इसे दिति का पुत्र कहा

गया है (वा. रा. उ. १२.३)। किन्तु रामायण का कथन ऐतिहासिक प्रतीत नहीं होता।

पुराणों में नमुचि नाम के दो व्यक्तियों का वर्णन मिलता है। उनमें से एक दानव था, एवं दूसरा तेरह सौहिकेयों में से एक था। मय दानव नमुचि का भाई था। हिरण्याक्ष एवं हिरण्यकशिपु के समय जो दैत्य तथा दानवों का संग्राम हुआ था, उसमें यह दैत्यों के पक्ष में शामिल था (म. स. ५१.७)।

दक्षिण समुद्र के निकट सख्य, मलय और ददुर् नामक पर्वतों के आसपास एक विशाल शुष्क के भीतर बने हुए भवन में वेतायुग में यह निवास करता था। वहाँ प्रभावती नामवाली एक तपस्विनी तपस्या करती थी, जिसने हनुमान् आदि वानरों को नाना प्रकार के भोज्य पदार्थ और भौति भौति के पीने योग्य रस दिये थे (म. व. २६६.४०-४३)।

शिल्पशास्त्र—दैत्यराज वृषपर्वन् द्वारा किये गये होम के समय इसने एक अति चमत्कृतिपूर्ण सभा का निर्माण किया था। यह सभा कैलास पर्वत के उत्तर में मैनाक नामक पर्वत में स्थित बिन्दुसरोवर के पास निर्मित की गयी थी। वृषपर्वन् राजा ने इस सभा में यज्ञ पूरा किया, एवं उसके उपरांत सभा की सारी सामग्री अपने कोषागार में रख दी (म. स. १:३)।

इसके मित्रों में ताराक्ष, कमलाक्ष एवं विशुन्माली नामक तीन असुर प्रमुख थे। उनके कथनानुसार ही इसने दैत्यों के संरक्षण के लिए त्रिपुर नामक तीन नगरों का निर्माण किया, जो आकाश में बादलों की भाँति घूमा करते थे। उनमें से एक स्वर्ण का, दूसरा चाँदी का तथा तीसरा लोहे का बना था (म. क. २४.१४; लिं. १७१)।

आगे चल कर दैत्यों को विनाश करने के लिए भगवान् शंकार ने इन त्रिपुरों को जला दिया, एवं सारे दैत्यों का संहार किया। तब मय ने अमृत कुण्ड का निर्माण कर दैत्यों को पुनः जीवित किया। यह देख कर, विष्णु एवं ब्रह्मा ने गो एवं गोवत्स का रूप धारण कर, उस कुण्ड के समस्त अमृत को पी डाला, जिससे सभी असुर पुनः मर गये (भा. ७.१०)।

खांडववन में—कृष्ण एवं अर्जुन ने जब अग्नि को खाण्डववन भक्षण करने को दिया, उस समय मय इसी वन में नागराज तक्षक के घर में निवास करता था। जब वन को अग्नि ने जलाना आरम्भ किया, तब इसे कृष्ण ने तक्षक के घर से भागते देखा। भागते हुए मय को देखकर अग्नि ने मूर्तिमान होकर गर्जन किया, एवं इसे अपनी

लपटों में समेटना चाहा। यह देखकर श्रीकृष्ण ने इसे मारने के लिए सुदर्शन उठाया। यह भाग कर तत्काल अर्जुन की शरण में आया, और अर्जुन ने इसे अभयदान देकर अग्नि एवं कृष्ण से बचाया (म. आ. २१९.३९)।

अर्जुन के इस उपकार का बदला चुकाने के लिए मय ने उसकी कुछ सेवा करने की इच्छा प्रकट की, किन्तु अर्जुन ने इसकी सेवा स्वीकार न की। फिर इसने अपने को दानवों का विश्वकर्मा बताते हुए अर्जुन के लिए किसी वस्तु का निर्माण करने की इच्छा प्रकट की (म. स. १.६-९)। पश्चात् श्रीकृष्ण ने इसे युधिष्ठिर के लिए एक दिव्य समाभवन निर्माण करने को कहा।

मयसभा—कृष्ण के कहने पर इसने वृषपर्वन् के कोषागार से समस्त सामग्री ला कर मयसभा नामक दिव्य सभागृह का निर्माण किया (म. स. १.१२)। युधिष्ठिर ने अपने राजसूय यज्ञ का समारोह इसी मयसभा में आयोजित किया था। उक्त सभा के वैभवविलास को देख कर दुर्योधन ईर्ष्या से पागल हो उठा था। इस सभा की यह विचित्रता थी कि, स्थलभाग जल की भाँति, एवं जल के स्थान स्थल की भाँति प्रतीत होते थे। दुर्योधन इस विचित्र रचना से अनभिज्ञ था, अतएव उसे कई बार भ्रम में पड़ कर भीम की हँसी का कारण बनना पड़ा। इस प्रकार सभा का यह अत्यधिक वैभव दुर्योधन के लिए चिन्ता का कारण बन गया, तथा यहीसे उसके हृदय में ईर्ष्या की भावना दुश्मनी में बदल गयी, जिसने आगे चल कर भारतीय युद्ध को जन्म दिया।

राजसूय यज्ञ के समय इसने भीम को एक गदा एवं अर्जुन को देवदत्त नामक शंख प्रदान किया था। इसमें से गदा को यह वृषपर्वन् से, तथा 'देवदत्त' शंख वरुण से लाया था (म. स. ३.७)। इसी यज्ञ के समय इसने अर्जुन को एक मायामय श्वज भी दिया था।

इसके ज्येष्ठ बन्धु नमुचि का इन्द्र ने बध किया, जिसके कारण क्रोधित हो कर, देवों को नाश करने के लिए इसने शेर तपस्या प्रारम्भ की, तथा विभिन्न प्रकार की माया-विद्याओं को प्राप्त किया। इससे अत्यधिक भयातुर होकर इन्द्र ने ब्राह्मण वेध धारण कर इससे बर माँगने आया। ब्राह्मणवेधधारी इन्द्र को बिना माँगे ही मय ने कहा, 'तुम जो चाहते हो वह तुम्हें मिलेगा'। यह सुनकर इन्द्र ने कहा कि, वह मैत्री चाहता है। तब इसने उससे कहा, 'मेरी तुमसे कोई शत्रुता नहीं, तब मैत्री माँगने की क्या आवश्यकता? हम तुम दोनों मित्र ही हैं'। यह

सुनकर इन्द्र अपने असली रूप में प्रकट हुआ, तथा कहा, 'मै तुम्हारे भाई नमुचि का वध करनेवाला इन्द्र हूँ, जो अपनी त्रुटी स्वीकार करते हुए तुमसे मित्रता करना चाहता हूँ'। यह सुन कर मय ने इन्द्र की शत्रुता को भुला कर उससे मित्रता की, एवं दोनों ने एक दूसरे को मायावी विद्याओं का ज्ञान कराया (ब्रह्म. १२४)।

मत्स्य के अनुसार, इसने वास्तुशास्त्र से संबंधित एक ग्रन्थ की रचना की थी (मत्स्य. २५२)। इसके नाम पर शिल्प एवं ज्योतिषशास्त्र विषयक कई ग्रन्थ भी प्राप्त हैं (C.C.)।

परिवार—इसे कुल दो पत्नियाँ थीं। उनमें से पहली पत्नी का नाम हेमा था, जो इसे देवताओं ने अर्पण की थी। हेमा से इसे मायाविन् एवं दुंदुभि नामक पुत्र एवं मंदोदरी नामक कन्या उत्पन्न हुई थी (वा. रा. उ. १२ १९)।

ब्रह्मांड के अनुसार, इसकी दूसरी पत्नी का नाम रम्भा था, जिससे इसे निम्नलिखित पुत्र प्राप्त हुए थे—अजकर्ण, कालिक, दुंदुभि, महिष एवं मायाविन्। उस ग्रंथ में मंदोदरी को रम्भा की कन्या कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.६.२८-३०)।

मत्स्य में इसकी मन्दोदरी, कुहू एवं उपदानवी नामक तीन कन्याएँ दी गयी हैं। किन्तु वे किससे उत्पन्न हुयी यह उपलब्ध नहीं है। उनमें से कुहू धाता की पत्नी थी (भा. ६.१८.३)। भागवत में उपदानवी को वैश्वनर नामक दानव की कन्या कहा गया है (भा. ६.६.३३)।

२. एक असुर, जो त्वष्टा का पुत्र था। इसकी माता का नाम प्रह्लादी-विरोचना था (वायु. ८४.२०)।

ज्ञातिनाम—त्वष्टृ एवं मय ये पहले तो व्यक्तिनाम थे। किन्तु आगे चलकर ये शिल्पियों का ज्ञातिवाचक एवं गुण-वाचक नाम बने। ये लोग स्वयं को मय ज्ञाति के, एवं मय-वंशीय कहलाने लगे। पश्चात् शिल्पशास्त्र पर जिन ग्रंथों का निर्माण हुआ, उन्हें भी 'मयसंहिता' आदि नाम प्राप्त हुये।

यही कारण है कि, प्राचीन भारतीय इतिहास के विभिन्न कालों में विभिन्न त्वष्टृ एवं मय व्यक्तियों का निर्देश प्राप्त है। इस वंश के मूल पुरुष त्वष्टृ एवं मय, असुर अथवा दानव प्रतीत होते हैं। क्यों कि, उनका जो वर्णन महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है, वह आर्य लोगों से विभेन्न प्रतीत होता है (प्रभावती १ तथा ५, देखिये)।

मयूर—एक सुविख्यात असुर, जो इस पृथ्वी में विश्व नामक राजा के रूप में उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.३३)।

मयूरध्वज—रत्ननगर का एक राजा। इसने सात अश्वमेध यज्ञ करने के उपरांत, नर्मदा तट पर अपना अटवाँ अश्वमेध यज्ञ प्रारम्भ किया। इसके अश्वमेधीय अश्व के संरक्षण का भार इसके पुत्र सुचित्र अथवा ताम्रध्वज पर था, जो अपने बहुलध्वज नामक प्रधान के साथ दिग्विजय के लिए निकला था। लौटते समय सुचित्र को युधिष्ठिर द्वारा किये गये अश्वमेध का अश्व मिला, जो मणिपुर नगर से होता हुआ इसके नगर आया था। सुचित्र ने उसे पकड़ कर कृष्णाजुन से युद्ध किया, तथा युद्ध में उन्हे मूर्च्छित कर के अश्व के साथ नगर में प्रवेश किया।

उधर मूर्च्छा से सावधान होने के उपरांत, कृष्ण ने ब्राह्मण का तथा अर्जुन ने ब्राह्मणनालक का रूप धारण कर मयूरध्वज की राजधानी रत्नपुर में प्रवेश किया। इसके पास आकर ब्राह्मण वेषधारी कृष्ण ने कहा, 'अपने पुत्र का विवाह कराने के लिए तुम्हारे पुरोहित कृष्णशर्म के पास धर्मपुर नामक स्थान से हम आ रहे थे कि, आते समय जंगल में मेरे बेटे को एक सिंह ने पकड़ लिया। मैंने तत्काल नृसिंह भगवान् का स्मरण किया, किन्तु वह प्रकट न हुए। फिर मुझे देख कर उस सिंह ने कहा कि, तुम अगर मयूरध्वज राजा का आधा शरीर मुझे लाकर दोगे, तो मैं तुम्हारे पुत्र को वैसे ही वापस कर दूँगा।'

ब्राह्मण द्वारा यह माँग की जाने पर, मयूरध्वज राजा बड़ई के द्वारा अपना शरीर कटवाने के लिए तैयार हो गया। वैसे ही इसकी पत्नी कुमुदती ने आकर कहा, 'राजा का वामांग मैं हूँ, इसलिए आप मुझे ले सकते हैं।' ब्राह्मण ने कहा, 'सिंह ने दाहिना अंग लाने के लिए कहा है।

इसका शरीर जब आरे द्वारा काटा जाने लगा, तब इसकी बायीं आँख से पानी टपका। इसे देखकर ब्राह्मण ने तत्काल कहा कि, दुःखपूर्वक दिया गया दान मैं नहीं चाहता। तब मयूरध्वज ने कहा, 'आँख के अश्रु शारीरिक कष्ट के कारण नहीं निकल रहे, इसका कारण कोई दूसरा है। बाईं आँख इसलिए रोती है कि, काश दाहिने अंग की भाँति वामांग भी सार्थक हो गया होता, तो कितना अच्छा था।'

इतना सुनते ही ब्राह्मणवेषधारी कृष्ण ने अपने साक्षात् दर्शन देकर इसके शरीर को पूर्ववत् किया, एवं हट आलिप्त कर आशीष दिया। बाद में अपना यज्ञ

पूर्ण कर, मयूरध्वज राजा कृष्णाजित्तुन के साथ अश्व के संरक्षण के लिए उनके साथ चला गया (जै. अ. ४१-४६)।

मयूरेश्वर—श्रीगणेश का एक अवतार, जो महाराष्ट्र में स्थित मोरगाँव स्थान में स्थित है।

मयोभुव—अगरुय कुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं प्रवर।

मरण—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'मरणाशन' पाठभेद प्राप्त है।

मरीचि—इक्कीस प्रजापतियों में से एक, जो स्वायंभुव मन्वन्तर में ब्रह्माजी के नेत्र से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ३२१.३३)। यह ब्रह्माजी की सभा में रहा कर उनकी उपासना करता था (म. स. ११.१४)।

यह ब्रह्माजी का प्रथम पुत्र था। इसे विष्णु ने खड्ग दिया था, जिसे इसने अन्य महर्षियों को दिया था (म. शां. १६०.६६)।

यह दक्ष का जामाद तथा शंकर का साहू था। इसने शंकर का अपमान किया था, तब शंकर ने इसे भस्म कर डाला। दक्ष की कन्या संभूति इसकी पत्नी थी। इसे संभूति से पूर्णमास नामक पुत्र, तथा कुट्टि, वृष्टि, खिपा तथा उपत्रिति नामक कन्याएँ हुईं। पूर्णमास को सरस्वती से विरुज, पर्वश, यजुधान आदि पुत्र उत्पन्न हुए (ब्रह्मांड २. ११)।

भागवत के अनुसार इसकी दो पत्नियाँ थीं (मा. ३. २४ २२)। उसमें से एक का नाम कर्दमकन्या कला, तथा दूसरी का नाम ऊर्णा था। इसे कला से दो पुत्र हुए, एक कश्यप तथा दूसरा पूर्णिमा। ऊर्णा से इसे स्मर, उद्गीथ, परिष्वंग, शुद्रभृत तथा घृणी सन्ताने हुयीं (मा. १०.८५; ४७-५१; दे. भा. ४. २२)। अग्निष्वात्त नामक पितर भी इसका पुत्र था।

वैवस्वत मन्वन्तर में ब्रह्मदेव ने इसे अग्नि से पैदा किया था। उस समय इसे कश्यप नामक पुत्र एवं सुल्पा नामक कन्या हुयी थी। यह इसका पुत्र कश्यप एवं अवतार, असित, नैधुव, नित्य तथा देवल ये कश्यप कुलके सात मंत्रद्रष्टा थे (मत्स्य. १४४, कश्यप देखिये)। यह प्रजापति भी था (वायु. ६५.६७)।

इन्द्रप्रस्थ में सात तीर्थों में स्नान करने के कारण, इसे सात पुत्र हुए थे (पद्म. उ. २. २२)।

महाभारत के अनुसार, 'त्रिभक्षिखण्डी' कहे जाने वाले ऋषियों में से यह भी एक था। यह आठ प्रकृतियों में भी गिना जाता है (म. शां. ३२२.२७)। यह शरशय्या

पर पड़े हुए भीष्म के पास मिलने गया था, एवं अर्जुन के जन्मोत्सवमें भी उपस्थित था।

२. एक धर्मशास्त्रकार, जिसके मतों के उद्धरण मिताक्षरा, अपरार्क, स्मृतिचन्द्रिका आदि ग्रंथों में प्राप्त हैं। उन ग्रंथों में निम्नलिखित विषयों पर, मरीचि के मतों को उद्धृत किया गया है:—आह्निक, अशौच, श्राद्ध, प्रायश्चित्त एवं व्यवहार।

अपरार्क ने मरीचि के द्वारा लिखित तर्पण के संबंधित एक श्लोक उद्धृत किया है, जिसमें रविवार के दिन तर्पण करने का माहात्म्य बताया गया है (अपरार्क. १३२; २३५; स्मृतिच. आन्हिक. पृ. १२३)।

मरीचि ने विधान प्रस्तुत करते हुए कहा है कि, श्रावण माद्रपद में नदी में स्नान न करना चाहिए (अपरार्क. पृ. २३५)। अपरार्क ने अशौच के सम्बन्ध में मरीचि का एक उद्धरण दिया है, जो गद्य में है (अपरार्क. १०८)

व्यवहारशास्त्र—मरीचि अचल संपत्ति के बारे में अपना मत देते हुए कहता है, 'अचल संपत्ति यदि दूसरे के हाथ बेचना है, खरीदना है, दान में देना है अथवा उसका बटवारा करना है, तो यह आवश्यक है कि, किये गए सारे वैधानिक कार्य मौखिक न होकर लिखित होने चाहिए। तभी वे नियमानुकूल हैं, अन्यथा नहीं (परा. मा. ३. १२८; स्मृति. चं. ६०)। अगर किसी व्यक्ति ने अधिकारियों की सम्मति से किसी व्यापारी की कोई सम्पत्ति खरीदी, तथा बाद को पता चला कि, व्यापारी द्वारा बेची गयी संपत्ति किसी अन्य की थी, तब उसे उस व्यापारी से उसका पैसा कानून से वापस मिल जायेगा। अगर वह व्यापारी रुपये ले कर लापता हो गया है, तब संपत्ति के खरीददार एवं असली मालिक के बीच में ले दे कर समझौता कर देना चाहिए' (अपरार्क. ७७५)।

मरीचि के द्वारा मानसिक व्याधियों (आधि) के चार प्रकार बताये हैं—भोग्य, भोग्य, प्रत्यय, एवं अज्ञात।

३. एक ज्योतिषशास्त्रज्ञ, जिसका निर्देश नारदसंहिता में प्राप्त है।

४. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो वृषभदेव के वंश में उत्पन्न सम्राज नामक राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम उत्कला था। इसके पत्नी का नाम विन्दुमती था, जिससे इसे विन्दुमत् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

५. एक अप्सरा, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित थी (म. आ. ११४.४२)।

६. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

मरीचिगर्भ—दक्षसावर्णि मन्वन्तर का एक देव।

मरीचिप—एक ऋषियों का संघ (म. अनु. १४. ५७)। 'मरीचिप' का शाब्दिक अर्थ 'सूर्यकिरणों पर जीवित रहनेवाला' होता है। वालखिल्य ऋषियों को भी 'मरीचिप' कहा गया है।

मरु—(स. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो शीघ्र राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम प्रसुश्रुत था।

इस राजा ने योगसिद्धि के द्वारा चिरजीवन की प्राप्ति की थी। भागवत के अनुसार, कलियुग में समस्त क्षत्रिय वंशों का विनाश होनेवाला है, जिस समय पौरव एवं देवापि के साथ यह क्षत्रिय वंश का पुनरुज्जीवन करनेवाले है (भा. ९.१२.६; १२.२.३७)। उस समय, उन्नीसवें युग-पर्याय के प्रारंभ में मरु राजा को सुवर्चस् नामक पुत्र उत्पन्न होनेवाला है (ब्रह्मांड. ३.७४. २७१; सुवर्चस् देखिये)।

२. (स. निमि.) विदेह देश का एक निमिवंशीय राजा, जो हर्यश्व जनक नामक राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम प्रतीधक या (भा. ९.१३.१५)।

३. एक दैत्य, जो नरकासुर का प्रमुख सहाय्यक था। श्रीकृष्ण ने इसका वध किया (नरकासुर देखिये)।

४. मुर नामक दैत्य के लिए उपलब्ध पाठभेद (मुर देखिये)।

मरुक—महाभारत में निर्दिष्ट एक लोकसमूह (म. स. ४८.४७५* पंक्ति २)।

मरुत्—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक सुविख्यात देवता-गण, जो पं. सातवलेकरजी के अनुसार, वैदिक सैनिक संघटन एवं सैनिक संचलन का प्रतीक था। ऋग्वेद के तैत्तिरीय सूक्त इन्हे समर्पित किये गये हैं। अन्य सात सूक्त इन्द्र के साथ, एवं एक एक सूक्त अग्नि तथा पूषण के साथ इन्हें समर्पित किया गया है।

ये लोग देवों का एक समूह अथवा 'गण' अथवा 'शर्षस्' हैं, जिनका निर्देश बहुवचन में ही प्राप्त है (ऋ. १. ३७)। इनकी संख्या साठ की तीन गुनी अर्थात् एक सौ अस्सी, अथवा सात की तीन गुनी अर्थात् एक सौ (ऋ. ८.८५; ऋ. १.१३३; अ. वे. १३.१)। ऋग्वेद में इन्हें कई स्थानों पर सात व्यक्तियों का समूह कहा गया है (ऋ. ५.६२.१७)।

जन्म—ऋग्वेद में इनके जन्म की कथा दी गयी है, जहाँ इन्हे रुद्र का पुत्र कहा गया है (ऋ. ५.५७)। वेदाथे-दीपिका में इन्हें रुद्रपुत्र नाम क्यों प्राप्त हुआ इसकी दो कथायें प्राप्त हैं। इनके जन्म होने पर इनके सैकड़ों खण्ड हो गये, जिन्हे रुद्र ने जोड़ कर जीवित किया। इसी प्रकार यह भी कहा गया है कि, रुद्र ने वृषभरूप धारण कर पृथ्वी से इन्हें उत्पन्न किया (वेदाथेदीपिका. २.३३)।

इनकी माता का नाम पृथिनि या (ऋ. २.३४; ५.५२)। रुद्र का पुत्र होने के कारण, इन्हें 'सद्रियगण' एवं 'पृथिनि का पुत्र होने के कारण इन्हे 'पृथिनिमातरः' कहा गया है (ऋ. १.३८.२३;)। सम्भव है, पृथिनि का प्रयोग गाय के रूप में हुआ हो, क्योंकि, अन्यत्र इन्हें 'गोमातरः' कहा गया है (ऋ. १.८५)।

ऋग्वेद में अन्यत्र कहा गया है कि, अग्नि ने इन्हें उत्पन्न किया (ऋ. ७.३); वायु ने इन्हे आकाश के गर्भ में अवस्थित किया (ऋ. १.१३४)। इस प्रकार ये आकाश में उत्पन्न हुए, जिस कारण इन्हें 'आकाशपुत्र' (ऋ. १०. ७७), 'आकाश के वीर' (ऋ. १.६४.१२२) कहा गया है। अन्य स्थान पर इन्हें समुद्र का पुत्र भी कहा गया है, जिस कारण इन्हें 'सिन्धुमातरः' उपाधि दी गयी है (ऋ. १०.७८)। अन्यत्र इन्हे 'खोद्भूत' कहा गया है (ऋ. १.१६८)।

इनमें से सभी मरुतगण एक दूसरे के भ्राता हैं, न उनमें कोई बड़ा है, तथा न कोई छोटा है (ऋ. ५.५९; १.१६५)। इन सबका जन्मस्थान एवं आवास एक है (ऋ. ५.५३)। इन्हे पृथ्वी पर वायु में एवं आकाश में रहनेवाले कहा गया है (ऋ. ५.६०)।

पत्नी—इनका सर्वाधिक सम्बन्ध देवी 'रोदसी' से है, जो सम्भवतः इनकी पत्नी थी। देवी रोदसी को इनके साथ सदैव रथ पर खड़ी होनेवाली कहा गया है (ऋ. ५.५६)। इनका स्वरूप सूर्य के समान प्रदीप्त, अग्नि के समान प्रखलित एवं अरुणआभायुक्त है (ऋ. ६.६६) इन्हे अक्सर विद्युत् से सम्बन्धित किया गया है। ऋग्वेद में प्राप्त विद्युत् के सभी निर्देश इनके साथ प्राप्त हैं।

वस्त्र एवं अलंकार—मरुतगण मालाओं एवं अलंकारों से सुसज्जित कहे गये हैं (ऋ. ५.५३)। ये स्वर्णिम प्रावारवस्त्र धारण करते हैं (ऋ. ५.५५)। इनके शरीर स्वर्ण के अलंकारों से सजे हैं, जिनमें वाजुद्द तथा 'खादि' प्रमुख हैं (ऋ. ५.६०)। इनके कन्धों पर तोमर, पैरों में 'खादि', वक्ष पर स्वर्णिम अलंकार, हाथों

में अग्निमय विद्युत्, तथा सर पर स्वर्ण शिरस्त्राण बतलाया गया है (ऋ. ५.५४)। इनके हाथ में धनुषबाण तथा माले रहते हैं। वज्र तथा एक सोने की कुल्हाड़ी से भी ये युक्त हैं (ऋ. ५.५२.१३; ८.८.३२)।

रथ—इनके स्वर्णिम रथ विद्युत् के समान प्रतीत होते हैं, जिनके चक्रधार एवं पहिये स्वर्ण के बने हैं (ऋ. १. ६४.८८)। जो जवाश्व इनके रथों को खींचते हैं, वे चित्त-कवरे हैं (ऋ. ५.५३.१)। सभी प्राणी इनसे भयभीत रहते हैं। इनके चलने से आकाश भय से गर्जन करने लगता है। इनके रथों से पृथ्वी तथा चट्टाने विदीर्ण हो जाती है (ऋ. १. ६४; ५.५२)। इस लिए इन्हें प्रचण्ड वायु के समान वेगवान् कहा गया है (ऋ. १०.७८)।

कार्य—मरुतों का प्रमुख कार्य वर्षा कराना है। ये समुद्र से उठते हैं, एवं वर्षा करते हैं (ऋ. १.३८)। ये बल लाते हैं, एवं वर्षा को प्रेरित करते हैं (ऋ. ५. ५८)। जब ये वर्षा करते हैं, तब मेघों से अंधकार उत्पन्न कर देते हैं (ऋ. १.३८)। ये आकाशीय पात्र एवं पर्वतों से जल-धारणें गिराते हैं, जिस कारण पृथ्वी की एक नदी को 'मरुद्बद्धा' (मरुतों द्वारा वृद्धि की हुयी) कहा गया है (ऋ. १०.७५)।

गायन—वायु के द्वारा निस्तृत ध्वनि ही मरुतों का गायन है, जिसके कारण इन्हें कई स्थानों पर गायक कहा गया है (ऋ. ५.५२.६०; ७.३५)। इंद्रावात के साथ समीकृत करके इन्हे स्वभावतः कई स्थानों पर इन्द्र की साथी एवं मित्र कहा गया है। ये लोग अपनी स्तुतियों तथा गीतों से इन्द्र की शक्ति एवं सामर्थ्य को बढ़ाते हैं (ऋ. १.१६५)। ये लोग इन्द्र के पुत्रों के समान हैं, जिन्हें इन्द्र का भ्राता भी कहा गया है (ऋ. १.१००; १.१७०)।

इंद्रावात की देवता—विद्युत्, आकाशीय गर्जन, वायु एवं वर्षा के साथ इनका जो विवरण प्राप्त है, इससे स्पष्ट है कि मरुत्गण इंद्रावात का देवता है। वैदिकोत्तर ग्रन्थों में इन्हें 'वायु' मात्र कहा गया है। किन्तु वैदिक साहित्य में ये कदाचित् ही वायुओं का प्रतिनिधित्व करते हैं, क्योंकि इनके गुण मेघों एवं विद्युत् से रहीं हैं।

व्युत्पत्ति—मरुत् शब्द की व्युत्पत्ति पर विचार करने से पता चलता है कि मरुत् 'मर' धातु से निस्तृत है, जिसके अर्थ 'मरना', 'कुचलना' अथवा 'प्रकाशित होता' तथा 'शब्द' होते हैं। इसमें से 'प्रकाशित' तथा 'शब्द' मरुत् के व्यक्तित्व एवं वर्णन से मेल खाते हैं एवं इसके अन्य अर्थ लेना अनुचित सा प्रतीत होता है। वेदार्थदीपिका

में इनके नाम की व्युत्पत्ति कुछ अलग ढंग से जरूर दी गयी है। उसमें कहा गया है कि, जन्म लेते ही इन्हें शांत हुआ कि इन्हे मृत्युयोग है, जिस कारण ये रोने लगे। इन्हें रोता देखकर इनके पिता रुद्र ने इन्हें 'मा रोदीः' (रुद्रन मत करो) कहा। इस कारण इन्हें मरुत् नाम प्राप्त हुआ (वेदार्थदीपिका २.३३)।

ऋग्वेद में इन्हें सम्बोधित करके लिखे गये सूक्त में एक संवाद प्राप्त है, जिसमें इन्हें कुशल तत्त्वज्ञानी कहा गया है, जो तत्त्वज्ञान के सम्बन्ध में अगस्त्य एवं इन्द्र से विचार-विमर्श करते हैं (ऋ. १.१६५)।

दिति के पुत्र—महाभारत तथा पुराणों में इन्हें दिति एवं कश्यप के पुत्र कहा गया है, एवं इनकी कुल संख्या उन्चास बताया गया है। वहाँ इनकी जन्मकथा निम्न प्रकार से दी गयी है—दिति के कश्यप ऋषि से सारे उत्पन्न पुत्र विष्णु द्वारा मारे गये। तत्पश्चात् दिति ने कश्यप से वर माँगा, ' इन्द्र को मारनेवाला एक अमर पुत्र सुझे प्राप्त हो'। दिति द्वारा माँगा हुआ वरदान कश्यप ने प्रदान किया, एवं उसे गर्भकाल में त्रातावस्था में रहने के लिए कहा।

कश्यप के कथनानुसार, दिति त्रातानुष्ठान करते हुए रहने लगी। इन्द्र को जब यह पता चला कि, दिति अपने गर्भ में उसका शत्रु उत्पन्न कर रही है, तब वह तत्काल उसके पास आकर उस पुत्र को समाप्त करने के इरादे से साधुवेश में रहने लगा। एकबार दिति से अपने व्रत में कुछ गलती हुयी कि, इंद्रने योगबल से उसके गर्भ में प्रवेश कर उसके गर्भ के सात टुकड़े कर दिये। किन्तु जब वे न मरे तब उसने उन सातों टुकड़ों के पुनः सात टुकड़े कर के उन्हें उन्पचास भागों में काट डाला। इसके द्वारा काटे गये टुकड़े रोने लगे, तब इन्द्र ने ' मा रोदीः' कहकर उन्हें शान्त किया, जिसके कारण इन्हे मरुत् नाम प्राप्त हुआ।

इन्हे टुकड़े टुकड़े कर दिया गया, एवं फिर भी जब ये न मरे, तब इन्द्र समझ गया कि ये अवश्य देवता के अंश हैं। गर्भ के अंशों ने भी इंद्र स्तुति की कि, उन्हें मारा न जाये। तब इन्द्र ने कहा, ' आज से तुम सब हमारे भाई हो, तथा तुम सब को हम स्वर्ग ले जायेंगे। '

कालान्तर में दिति के उन्पचास पुत्र हुए, जिन्हें देखकर वह आश्चर्यचकित हो गयी एवं साधुवेशधारी इन्द्र से उसका कारण पूछने लगी। तब इन्द्र ने एक के स्थान पर कई पुत्र होने के रहस्य का उद्घाटन करते हुए सारी कथा कता कर कहा, ' ये सारे पुत्र तुम्हारे तपःसामर्थ्य पर ही

जीवित बचे हैं, जिन्हें मैं स्वर्ग में ले जाकर यज्ञ के हविर्भाग का अधिकारी बनाकर भार्गवी की मूर्ति रक्तुंया (म. आ. १३२. ५३; शां. २०७.२; भा. ६.१८; मत्स्य. ७. १४६) ।

इंद्र-दिति संवाद—रामायण में यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। दिति की गर्भावस्था में साधुवेषधारी इंद्र उसकी सेवा में रहा। इंद्र की सेवा से संतुष्ट रहकर दिति ने उससे कहा, 'जिस गर्भ को तुम्हें मारने के लिए पाल रही हूँ वह तुम्हें न मारकर सदैव तुम्हारी सहायता करे यही मेरी इच्छा है'। किन्तु इंद्र को सन्तोष न हुआ, एवं उसने दिति के गर्भ में प्रवेश कर के गर्भ को नाश करने के लिए उसके सात टुकड़े किये। इस पापकर्म करने के उपरांत इंद्र बाहर आया, एवं सारी कथा बता कर दिति से क्षमा माँगने लगा। फिर दिति ने उससे कहा, 'तुम्हें मारने की तामसी इच्छा मैंने की, अतः यह सर्वप्रथम मेरी ही गल्ती है! अब मेरी यही इच्छा है कि, तुम्हारे द्वारा किये गये गर्भ के वे सात टुकड़े वायु के सप्तप्रवाह में प्रविष्ट होकर देवस्थान प्राप्त करें। इंद्र ने दिति को वर प्रदान किया, जिस कारण मरुत्गणों के साथ दिति ने स्वर्ग प्राप्त किया (वा रा. वा. ४७)।

इंद्र ने दिति के साथ इतना पापकर्म किया, फिर भी वह सत्य से अलगा न रहा, एवं दिति से सदैव सत्य भाषण ही किया। इसपर सन्तुष्ट होकर दिति ने इंद्र को वर दिया 'मेरे होनेवाले पुत्र हमेशा तुम्हारे मित्र एवं सहयोगी रहेंगे (स्कन्द ६. २४; विष्णु १.२१; ३.४०; पद्म स. ७; भू. २६)।

सात मरुद्गण—ब्रह्मांड में मरुत्तों के सात गणों की नामावली प्राप्त है, जिनमें से हरेक गण में प्रत्येकी सात मरुत् अंतर्भूत हैं। ब्रह्मांड में प्राप्त मरुद्गणों की नामावली इस प्रकार है:—

- प्रथम गण**—१. चित्रज्योतिस्, २. चैत्य, ३. ज्योतिष्मत, ४. शक्रज्योति, ५. सत्य, ६. सत्यज्योतिस्, ७. सुतपस्।
द्वितीय गण—१. अमित्र, २. ऋतजित, ३. सत्यजित, ४. सुतमित्र, ५. सुरमित्र, ६. सुषेण, ७. सेनजित।
तृतीय गण—१. उग्र, २. धनद, ३. धातु, ४. भीम, ५. वरुण
चतुर्थ गण—१. अभियुक्ताक्षिक, २. साहूय
पंचम गण—१. अन्यदृश, २. ईदृश, ३. द्रुम, ४. मिं, ५. वृक्ष, ६. समित ७. सरित्।

षष्ठ गण—१. ईदृश, २. नान्यादृश ३. पुष्प, ४. प्रतिहर्तु, ५. समचेतन, ६. समवृत्ति, ७. समित।

सप्तम गण—इस गणों के मरुत्तों का नाम अप्राप्य है। किन्तु ब्रह्मांड के अनुसार, देव दैत्य एवं मनुष्ययोनियों से मिलकर इस गण के मरुत् बने हुए थे।

उपरनिर्दिष्ट मरुद्गणों में से प्रत्येक गण में वास्तव में सात सात मरुत् होने चाहिये, किन्तु कई मरुत्तों के नाम अप्राप्य होने के कारण, यह नामावली अपूर्ण सी प्रतीत होती है। महाभारत में मंकरणकपुत्रों को मरुद्गण के उत्पादक कहा गया है (म. श. ३७.३२)।

मरुद्गणों के स्थान—उपर्युक्त मरुद्गणों के निवास के बारे में विस्तृत जानकारी ब्रह्मांड एवं वायु में प्राप्त है, जो निम्न प्रकार है:—

अनुक्रम	निवासस्थान	भ्रमण कक्षा
प्रथम गण	पृथ्वी	पृथ्वी से मेघ तक
द्वितीय गण	सूर्य	सूर्य से मेघ तक
तृतीय गण	सोम	सोम से सूर्य तक
चतुर्थ गण	ज्योतिर्गण	ज्योतिर्गणों से सोम तक
पंचम गण	ग्रह	ग्रहों से नक्षत्रों तक
षष्ठ गण	सप्तर्षि मंडल	सप्तर्षि मंडल से ग्रहों तक
सप्तम गण	ध्रुव	ध्रुव से सप्तर्षियों तक (ब्रह्मांड. ३.५.७९-८८; वायु. ६७.८८-१३५)।

२. एक पौराणिक मानवजातिसंघ, जो वैशालि नगरी के उत्तरीपूर्व प्रदेश में स्थित पर्वतों में निवास करता था। ये लोग प्रायः पर्वतीय प्रदेश में निवास करते थे, एवं अन्य मानवजातियों से इनका विवाहसंबंध भी होता था।

सम्भव है, राम दशरथि का परम भक्त हनुमान इस मरुत् जाति में उत्पन्न हुआ था। इस जाति का और एक सुविख्यात सम्राट मरुत् आविश्कित था, जो इक्ष्वाकुवंशीय दिष्ट कुल का राजा था। मरुत् आविश्कित भी वैशालि देश का ही राजा था। वैदिक पूजाविधि में अंतर्गत 'मंत्रपुष्प' के मंत्रों से प्रतीत होता है कि, मरुत् आविश्कित राजा के यज्ञों में मरुत् लोगों ने 'परिवेष्टु' का काम किया था। इन जाति के लोग पहले तो मानव थे, किन्तु कालोपरांत इन्हें देवत्व प्राप्त हुआ। यही कारण है कि, पहले

इन्हे यज्ञ का हविर्भाग नहीं मिलता था, जो कालोपरान्त इन्हे मिलने लगा।

मरुत्—एक महर्षि, जिसने शान्तिदूत बनकर हस्तिनापुर जानेवाले श्रीकृष्ण की परिक्रमा की थी (म. उ. ८.१.२७)।

मरुत्—(स. दिष्ट.) वैशालि देश का सुविख्यात सम्राट, जो अविश्वित राजा का पुत्र था (मरुत् अविश्वित कामप्रि देखिये)।

२. (सो. तुर्वसु.) एक तुर्वसुवंशीय राजा, जो करंधम राजा का पुत्र था। यह निःसंतान होने के कारण, इसने रैव्यपुत्र दुष्यन्त को अपना पुत्र मान लिया था (भा. १. २३.१७)। दुष्यन्त स्वयं पूर्ववंशीय था। उसे मरुत् के द्वारा गोद में लिये जाने के कारण, आगे चलकर, तुर्वसु वंश का स्वतंत्र अस्तित्व नष्ट हुआ; एवं वह पूर्ववंश में शामिल हुआ। मत्स्य के अनुसार, इसे 'मरुत्' नामान्तर भी प्राप्त था।

३. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो मत्स्य के अनुसार तितिक्षु राजा का, एवं वायु के अनुसार उशनस् राजा का पुत्र था।

मरुत् अविश्वित कामप्रि—(स. दिष्ट.) वैशालि देश का एक सुविख्यात सम्राट, जो अविश्वित राजा का पुत्र, एवं करंधम राजा का पौत्र था। महाभारत में इसे चक्रवर्ति एवं पाँच श्रेष्ठ सम्राटों में से एक कहा गया है। इसकी माता का नाम मामिनी था (मार्क. १२७.१०)।

ऐतरेय ब्राह्मण में इसे कामप्र का वंशज, एवं बृहस्पति आंगिरस का भाई बताया गया है। संवर्त के द्वारा इसके राज्याभियेक किये जाने की कथा भी वहाँ दी गयी है (ऐ. ब्रा. ८.२१.१२; मार्क. १२६.११-१२)। शतपथ ब्राह्मण में इसे 'अयोगव' जाति में उत्पन्न कहा गया है (श. ब्रा. १३.५.४.६)।

इंद्र-मरुत् विरोध—बृहस्पति आंगिरस ऋषि इसका पुरोहित था, एवं संवर्त आंगिरस इसका ऋत्विज था। बृहस्पति एवं संवर्त दोनों भाई तो अवश्य थे, किन्तु दोनों में बड़ा वैमनस्य था।

सम्राट मरुत् एवं इंद्र में सदैव युद्ध चलता ही रहता था, किन्तु इंद्र इसे कभी भी पराजित न कर पाया। अन्त में इंद्र को एक तरकीब सूझी, जिसके द्वारा मरुत् को तंग करके उसे नीचा दिखाया जा सके। इंद्र बृहस्पति के यहाँ गया, एवं बातों ही बातों में उसे राजी कर लिया कि, वह भविष्य में मरुत् के यज्ञकार्य में पुरोहित का कार्य न करेगा।

कालान्तर में मरुत् ने यज्ञ करना चाहा, तथा उसके लिए बृहस्पति के पास जाकर इसने उनसे प्रार्थना की कि, वह पुरोहित का पद सँभालें। किन्तु इंद्र के द्वारा दिये गये मंत्र के अनुसार, बृहस्पति ने इसे कोरा जवाब दे दिया। बृहस्पति से निराश होकर यह वापस लौटा रहा था कि, इसे रास्ते में नारद मिला, जिसने इससे कहा, 'इसमें घबराने की बात क्या है? बृहस्पति न सही, उसके भाई संवर्त को वाराणसी से लाकर अपना यज्ञकार्य पूर्ण कर सकते हो'। मरुत् को यह बात जँच गयी, तथा यह वाराणसी जाकर संवर्त को बड़े आग्रह के साथ यज्ञ में ऋत्विज बनाने के लिए ले आया।

जब इंद्र ने देखा कि बिना बृहस्पति के भी मरुत् का यज्ञ आरम्भ हो रहा है, तथा संवर्त उसका ऋत्विज बनाया गया है, तब उसने इस यज्ञ में विभिन्न प्रकार से कई बाधाएँ डालने का प्रयत्न किया। इंद्र ने पहले अग्नि के साथ मरुत् के पास यह संदेश भेजा कि, बृहस्पति यज्ञकार्य करने के लिए तैयार है, अतएव संवर्त की कोई आवश्यकता नहीं है। अग्नि मरुत् के पास आया, किन्तु वह संवर्त को वहाँ देखकर इतना डर गया कि, कहीं वह उसे शाप न दे दे। इसलिए वह मरुत् से इंद्र के संदेश को कहे बिना ही वापस लौट आया।

इसके बाद इंद्र ने धृतराष्ट्र नामक गंधर्व से मरुत् को संदेश भेजा, 'यदि तुम यज्ञ करोगे, तो मैं तुम्हें वज्र से मार डालूँगा'। किन्तु संवर्त के द्वारा आश्वासन दिलाये जाने पर, मरुत् अपने निश्चय पर कायम रहा। यज्ञ का प्रारंभ करते ही, इसे इंद्र के वज्र का शब्द सुनायी पड़ा। यह वज्रशब्द को सुन कर भयभीत हो उठा, परन्तु संवर्त ने इसे धैर्य बँधाया।

मरुत् का यज्ञ—इस प्रकार संवर्त की सहायता से मरुत् ने अपना यज्ञ यमुना नदी के तट पर 'प्लक्षारण तीर्थ' में प्रारंभ किया (म. व. १२९.१६)। वाल्मीकि रामायण के अनुसार, यह यज्ञ 'उत्तीरबीज' नामक देश में हुआ था (वा. रा. उ. १८)।

मरुत् की इच्छा थी कि, इंद्र, बृहस्पति एवं समस्त देवता इस यज्ञ में भाग ले कर हवन किये गये सोम को स्वीकार करें एवं उसे सफल बनायें। अतएव अपने मंत्रप्रभाव से संवर्त इन सभी देवताओं को बाँध कर यज्ञस्थान पर ले आया। मरुत् ने सभी देवताओं का सन्मान किया, एवं उनकी विधिवत् पूजा की।

उस यज्ञ में भगवान शंकर ने प्रचुर धनराशि के रूप में इसे हिमालय का एक स्वर्णमय शिखर प्रदान किया था। प्रतिदिन यज्ञकार्य के अन्त में, इसकी यज्ञसभा में इन्द्र आदि देवता, तथा बृहस्पति आदि प्रजापतिगण सभासद के रूप में बैठा करते थे। इसके यज्ञमण्डप की सारी सामग्रियाँ सोने की बनी हुयी थी। इसके घर में मरुद्रण रसोई परोसने का कार्य किया करते थे। विश्वेदेव इसकी यज्ञसभा के सभासद थे। इसने यज्ञवेदी पर बैठ कर, मंत्रपुरस्सर हविर्द्रव्य का हवन कर, देवताओं, ऋषियों, तथा पितरों को संतुष्ट किया था। ब्राह्मणों को शय्या, आसन, सवारी, तथा स्वर्णराशि प्रदान की थी। इस प्रकार इसके व्यवहार से इन्द्र बड़ा प्रसन्न हुआ, एवं दोनों में मित्रता स्थापित हो गयी। बाद को मरुद्राणो द्वारा यथेष्ट सोमपान कर के सभी लोग यज्ञ से संतुष्ट होकर वापस लौटे।

रावण से विरोध—बाद में मरुत्त के इस यज्ञ में विप्र डालने के हेतु से रावण आया। रावण को देख कर यह उससे युद्ध करने के लिए तत्पर हुआ। किन्तु इसने यज्ञ-दीक्षा ली थी, अतएव यज्ञ से उठना इसके लिए असम्भव था। रावण ने इसके यज्ञ के वैभव को देखा, तथा बिना किसी प्रकार की हानि पहुँचाये वापस लौट गया (वा. रा. उ. ८)।

राज्यवैभव—यज्ञ के उपरांत यह अपनी राजधानी वापस आया, एवं समुद्र से घिरी हुयी पृथ्वी पर राज्य करना प्रारम्भ किया। इस प्रकार प्रजा, मन्त्री, धर्मपत्नी, पुत्र तथा भाइयों के साथ, इसने एक हज़ार वर्षों तक राज्य किया था।

मार्कण्डेय के अनुसार, एकबार यह पृथ्वी के समस्त सर्पों का विनाश करने को उद्यत हुआ था, किन्तु अपनी माता भामिनी के द्वारा अनुरोध करने पर, इसने सर्पों के मारने का इरादा छोड़ दिया (मार्क. १२६.३-१५; १२७.१०)।

महाभारत में—महाभारत के अनुसार, यह पराक्रमी एवं धर्मनिष्ठ राजा था, जिसने सौ यज्ञ किये थे (म. द्रो. परि. १. क्र. ८ पंक्ति ३३६-३५०; शां. २९.१६-२१; आश्व. ४. १०; भा. ९. २)। महाराज सुसुकन्द से इसे एक खड्ग प्राप्त हुआ था, जिसे इसने रैवत राजा को प्रदान किया था (म. शां. १६०.७६)।

परिवार—मरुत्त की निम्नलिखित कुल सात पत्नियाँ थीः—१. विदमकन्या प्रभावती; २. सुवीरकन्या सौवीरी; ३. मगधनरेश केतुवीर्य की कन्या सुकेशी; ४. मद्रराज

सिंधुवीर्य की कन्या केकयी; ५. केकयनरेश की कन्या सैरंभी; ६. सिन्धुराज की कन्या वपुष्मती; ७. चेदिराज की कन्या सुशोभना।

मरुत्त को इन पत्नीयों से कुल अठारह पुत्र हुए, जिनमें से नरिष्यंत ज्येष्ठ था (मार्क. १२८.४५-४८)। महाभारत के अनुसार, इसे दम नामक एकलौता पुत्र, एवं एक कन्या थी। इसकी मृत्यु के उपरांत दम इसके राज्य का अधिकारी हुआ। इसकी कन्या का विवाह अंगिरस् ऋषि से हुआ था (म. शां. २२६.२८; अनु. १३७.१६)।

मरुत्वत्—प्राचेतस दक्ष की कन्या मरुत्वती का ज्येष्ठ पुत्र।

मरुत्वती—प्राचेतस दक्ष की एक कन्या, जो धर्मऋषि की पत्नी थी। इसे मरुत्वत् एवं जयन्त नामक दो पुत्र थे (भा. ६.६.४-८; पद्म. सू. ४०)।

मरुदेव—(सु. इ. भविष्य.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भविष्य के अनुसार सुप्रतीक राजा का, एवं मरुत्त के अनुसार सुप्रतीक का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सुनक्षत्र था।

मरुद्रण—देवताओं का एक गण (म. शा. ४४.६)।
२. एक दैत्य, जो कश्यप एवं दिति का पुत्र था (भवि. प्रति. ४.१७)।

मर्क—असुरों के सुविरुद्धात पुरोहितद्वय शंडामर्क (शंड एवं मर्क) में से एक (शंडामर्क देखिये)। कई ग्रंथों में मर्क का स्वतंत्र निर्देश भी प्राप्त है (वा. सं. ७.१३; १७)। हिलेब्रांट के अनुसार, शंड एवं मर्क दोनों ही ईरानी नाम हैं, एवं ऋग्वेद में अन्यत्र निर्दिष्ट 'श्र' नाम मर्क का ही प्रतिरूप है (वेदिशे माइथॉलोजी. ३.४४२)।

मर्कटय—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'कटक' पाठभेद प्राप्त है।

मर्यादा—एक विदमराजकुमारी, जो पुरुवंशीय राजा अपराचिन की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम अरिह था (म. आ. ९०.१८)।

२. विदेहराज की कन्या, जो पुरुवंशीय राजा देवातिथि की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम ऋत्त था।

मलद—पूर्व भारत में रहनेवाला एक लोकतमूह, जिसे भीमसेन ने जीता था (म. सं. २७.८)। भारतीय युद्ध में ये लोग कौरवपक्ष में शामिल थे (म. द्रो. ६.६)।

मलदा—अत्रि ऋषि की पत्नी (ब्रह्मांड. ३.८.७४-८७)।

मलय—एक राजा, जो प्रियव्रतवंशीय ऋषभदेव राजा का पुत्र था। वृषभदेव ने अपने अन्ननाभवर्ष के राज्य के नौ विभाग कर, उनमें से एक भाग इसे प्रदान किया था (मा. ५.४.१०; ऋषभदेव १०. देखिये)।

२. गरुड का एक पुत्र (म. स. १९.१४)। इसके नाम के लिए 'मलय' पाठभेद प्राप्त है।

मलयध्वज—मण्डूर नगरी के चित्रवाहन नामक पाण्डव राजा का नामान्तर (चित्रवाहन देखिये)।

२. एक पाण्डव राजा, जिसे वैदमी नामक पत्नी से कुण्डोक्षण (लोपामुद्रा) नामक कन्या उत्पन्न हुयी थी (मा. ४.२८.३० लोपामुद्रा देखिये)।

मलिन—एक पुरुवंशीय राजा, जो वायु के अनुसार वसु राजा का पुत्र था। इसे 'इल्लि' नामान्तर भी प्राप्त था (इल्लि देखिये)।

मल्ल—राम दशरथि राजा के सृञ्ज नामक मंत्रि का पुत्र। २. धर्म के सात पुत्रों में से एक। 'मल्लारि माहात्म्य' के अनुसार, मार्तण्ड नामक भैरव ने इसका वध किया।

३. मल्ल देश में रहनेवाले लोगों के लिए प्रयुक्त सामूहिक नाम। महाभारतकाल में, इन लोगों के राजा का नाम पार्थिव था, जिसे भीमसेन ने परास्त किया था (म. स. २७.३)। इन लोगों में गणतंत्रपद्धति का राज्य था, एवं इनकी राजधानी कुशीनगर (कुशीनारा) नगर में थी।

मल्लिकार्जुन (ज्योतिर्लिंग)—एक शिवावतार, जो श्रीशैल पर निवास करता था। इसके एक भवत ने अपने पुत्र के दर्शन के लिए इसकी प्रार्थना की थी, जिसकी पूर्ति करने के लिए यह स्वर्गिरी पर निवास करने के लिए गया (शिव. शत. ४२)। इसके उपलिंग का नाम 'स्त्रेश्वर' था (शिव. कोटि. १)।

मशक मार्ग्य—एक आचार्य, जो स्थिरक मार्ग्य नामक ऋषि का पुत्र एवं शिष्य था। सामवेदान्तगत 'मशक ऋषसूत्र' अथवा 'आष्येय कवःसूत्र' नामक ग्रंथ का यह रचयिता था (ला. श्रौ. ७.९.१४; अनुपदसूत्र. ९९)। इसके शिष्य का नाम अतिधन्वन् था (व. ब्रा. २)।

मशशरार—ऋग्वेद में निर्दिष्ट महर्षु लोगों का एक राजा (ऋ. २.१२२.१५)। इसे कुल चार पुत्र थे, जिन्होंने दीर्घतमसुपुत्र वक्षीवत् को काफी व्रत किया था।

मषपाल—एक राजा, जो मविष्य के अनुसार सुनीथ राजा का पुत्र था।

मसृण—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

महत्—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. (स्वा. नाभि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार विराट राजा का पुत्र था।

३. अमिताम देवों में से एक।

४. पितरों में से एक।

५. (सो. पूरु.) एक पुरुवंशीय राजा, जो अन्तिनार राजा का पुत्र था (म. आ. ८९.११)।

६. एक अग्नि, जो प्रजापति भरत नामक अग्नि का पुत्र था (म. व. २०९.८)।

महततर—एक अग्नि, जो 'पांचजन्य' नामक अग्नि के पाँच पुत्रों में से एक था (म. व. २१०.९)।

महतपौरव—(सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सार्वभौम राजा का पुत्र था। मत्स्य में इसके नाम के लिए 'महापौरव' पाठभेद प्राप्त है।

महस्वत्—(स. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार अमर्षण राजा का, एवं विष्णु के अनुसार अमर्ष राजा का पुत्र था। वायु में इसके नाम के लिए 'सहस्वत्' पाठभेद प्राप्त है।

महाकपाल—दूषण राक्षस का अमात्य (वा. रा. अर. २३.३३)।

महाकपि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

महाकर्ण—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

२. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

महाकर्ण—मगधराज अंबुवीच का दुष्ट मंत्री (म. आ. १९६.१९)।

महाकर्णी—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२६)।

महाकाय—एकादश रुद्रों में से एक।

२. रावण के पक्ष का एक राक्षस।

महाकाया—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२३)।

महाकाल (ज्योतिर्लिंग)—एक शिवावतार, जो उज्जयिनी में क्षिप्रा नदी के तट पर स्थित महाकाल नामक तीर्थस्थान में निवास करता है। यह द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक माना जाता है (ज्योतिर्लिंग देखिये)। इसके उपलिंग का नाम 'दुग्धेश' था (शिव. कोटि. १)।

इसने केवल अपनी हुंकार से ही दूषण नामक असुर को भस्मसात् किया था (शिव. शत. ४२)। इसने ब्रह्माजी का पाँचवाँ सिर नष्ट किया था (स्कंद. ५.१.३)।

२. वाणासुर का नामान्तर ।

महाकाली—एक देवी, जो महादेव की आदिशक्ति मानी जाती है (दे. भा. ६.६) ।

महागिरि—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का पुत्र था ।

महाचक्रि—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

महाचूडा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.५) ।

महाजय—नागराज वासुकि के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक । दूसरे पार्षद का नाम जय था (म. श. ४४.४८) ।

महाजवा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२१) ।

महाजानु—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

२. एक श्रेष्ठ द्विज, जो प्रमदरा के सर्पदशन के समय उसे देखने के लिए आया था (म. आ. ८.२०) ।

महाजिह्वा—ब्रह्मधना नामक राक्षसी की कन्या ।

२. एक राक्षसी, जिसका बर्बरिक ने वध किया था (बर्बरिक देखिये) ।

महातपस्—एक ऋषि, जिसने सुप्रभ राजा को विष्णु की उपासना करने का उपदेश दिया था (वराह. १७) ।

महातेजस्—एकादश रुद्रों में से एक ।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण ।

३. एक राजा, जो जनमेजय पारिक्षित (प्रथम) का पुत्र था (म. आ. ८९.५०) ।

४. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.२०) ।

महात्मन्—(सो. अनु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार महद्दानु का पुत्र था ।

महादंष्ट्र—रावण के पक्ष का एक राक्षस ।

महादेव—भविष्यपुराण नामक ग्रंथ का कर्ता ।

महादेवा—यादव राजा देवक की कन्या ।

महाद्युति—एक प्राचीन नरेश (म. आ. १.१७२ पाठ.) ।

२. ग्यारह रुद्रों में से एक ।

३. एक यक्ष, जो मणिमद्व एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था ।

महाद्युति—(स. निमि.) एक निमिवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार विस्त का, एवं विष्णु तथा वायु के अनुसार विबुध का पुत्र था ।

महानंद—मद्रदेश का एक राजा, जिसका नरिष्यन्त पुत्र दम ने सुमना के स्वयंवर के समय वध किया था (मार्क. १३०.५२) । इसके नाम के लिए 'महानाद' पाठभेद भी प्राप्त है ।

महानंदा—एक वेश्या, जो परम शिवमक्त थी । इसके पास एक बन्दर तथा एक मुर्गा था, जिन्हें वह रुद्राक्षों से सजाये रहती थी । जब यह शिव की भक्ति-भावना में मग्न करती हुयी उसीमें तल्लीन रहती, तब बंदर तथा मुर्गा इसके साथ नृत्य किया करते थे ।

शिव से भेंट—एक बार भगवान् शंकर एक वैश्य का रूप धारण कर, इसकी परीक्षा लेने के लिए स्वयं आये । वैश्यरूपधारी शंकर के पास एक रत्नकंकण था, जिसे देख कर महानंदा की इच्छा उसे प्राप्त करने की हुयी । वैश्य ने इससे कहा कि, वह रत्नकंकण तो दे सकता हूँ, पर उसकी मूल्य यह क्या देगी ? तब महानंदा ने कहा, 'इस कंकण को प्राप्त करने के लिए, मैं आपके पास तीन दिन पत्नीरूप में रह सकती हूँ' ।

वैश्यने कंकण और रत्नमय लिंग इसको रखने को दिया, और उसके बदले इसे तीन दिन तक पत्नीरूप में स्वीकार किया । एक रात को आग लगने के कारण, वह रत्नमय लिंग जल गया, जिससे दुःखित होकर वैश्य प्राण देने को उद्यत हुआ । महानंदा ने जब देखा कि, वह देहत्याग के लिए उद्यत है, तो यह भी उसके साथ सती होने को तैयार हुई । क्योंकि, इन तीन दिनों में, शर्त के अनुसार यह उसकी पत्नी थी, तथा पत्नी होने के कारण इसे पत्नीधर्म निवाहना जरूरी था ।

महानंदा की कर्तव्यभावना देखकर शंकर प्रसन्न हुए, एवं दर्शन दे कर इसके समस्त पापों का हरण किया (शिव. शत. २६) । महानंदा के सम्मुख प्रगट हुए शिव के इस अवतार को 'वैश्येश्वर' कहते हैं ।

महानंदिन—(शिशु. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार नंदिवर्धन का पुत्र था । शिशुनाग वंश का यह अंतीम राजा था, जिसके पश्चात् शूद्र वंश में उत्पन्न महापद्म नंद राजा मगध देश का राजा बन गया । यह नंद राजा इसीका ही एक शूद्रा से उत्पन्न पुत्र था (महापद्म देखिये) । मत्स्य, वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार इसने ४३ वर्षों तक राज्य किया ।

२. एक धर्मनिष्ठ राजा, जो पूर्वजन्म में भीमवर्मन् नामक दुराचारी क्षत्रिय था ।

महानाद—रावण के मामा प्रहस्त नामक राक्षस का अमात्य (वा. रा. यु. ५८.१९)।

२. शिशुनागवंशीय महानंदिन् राजा का नामांतर।

महानाम—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. एक राक्षस, जो हिरण्याक्ष एवं रुपामानु के पुत्रों में से एक था।

महानाल—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्र के पुत्रों में से एक था।

महानुभाव—चाक्षुष मन्वन्तर के देवों में से एक।

महापद्म—(नंद. मविष्य.) नंदवंश का प्रथम राजा, जो वायु, एवं मत्स्य के अनुसार शिशुनाग वंश के अंतिम राजा महानंदिन् का पुत्र था। यह उसे एक घृद्र स्त्री से उत्पन्न हुआ था। इसने अपने पिता का वध कर, अपने स्वतंत्र नंदवंश की स्थापना की। इसे नंद नामांतर भी प्राप्त था।

मत्स्य एवं ब्रह्मांड के अनुसार इसने ८८ वर्षों तक, एवं वायु के अनुसार २८ वर्षों तक राज्य किया था।

२. एक दिग्गज, जो भारतीययुद्ध में घटोत्कच के नजमेना में शामिल था (म. भी. ६०.५१)।

महापद्म—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्र के पुत्रों में से एक था।

महापरिषदेश्वर—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६१)।

महापार्श्व—एक राक्षस, जो रावण का अमात्य था। इसे 'मत्त' नामांतर भी प्राप्त था। विश्रवस् ऋषि को पुष्पाकटा नामक पत्नी से उत्पन्न पुत्रों में से यह एक था। राम-रावण युद्ध में यह अंगद के हाथों इसका वध हुआ (वा. रा. यु. ९८.२२)।

महापुरुवश—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो वायु के अनुसार नंदन राजा का पुत्र था।

महापौरव—(सो. द्विमीट.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सार्वभौम राजा का पुत्र था। वायु एवं हरिवंश में इसे क्रमशः 'महत्पौरव' एवं 'महत्' कहा गया है।

महावल्—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. (मो. पूरु.) एक पूर्ववंशीय राजा, जो वायु के अनुसार बृहदिष्णु राजा का पुत्र था।

३. विष्णु का एक पापेद।

४. शिव का एक पापेद।

५. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.१०६)।

६. वैवस्वत मन्वन्तर का इंद्र।

७. गुहावासिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

८. पितरों में से एक।

महावल्—स्कंद की अनुचरी मानुकाद्रय (म. श. ४४.१०६)।

महाबाहु—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था। पाटभेद (भांडारकर संहिता) — 'वीरबाहु'

२. (सो. कुव.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १३२.११३५०. पंक्ति. १)।

३. (सो. मगध. मविष्य.) मगध वंश का एक राजा, जो वायु के अनुसार धृतराज्य राजा का पुत्र था। मागधत एवं विष्णु के अनुसार इसे 'विप्र', मत्स्य के अनुसार इसे 'विम', एवं ब्रह्मांड के अनुसार 'रिपुञ्जय' नामांतर प्राप्त थे। इसने पैंतीस वर्षों तक राज्य किया।

महाद्वय—एक राक्षस, जो अधर्म एवं निर्रति का पुत्र था। निर्रति का पुत्र होने से, इसे एवं इसके मथ एवं मृत्यु नामक दो भाईयों को 'नैर्द्ध' राक्षस कहते थे।

महाभासा—युगकुलोत्पन्न गोजकार 'वासयन' के नाम के लिए उपलब्ध पाटभेद।

महाभामा—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं खषा की कन्याओं में से एक थी।

महाभिय—(सु. इ.) इक्ष्वाकुवंश में उत्पन्न एक प्राचीन राजा, जो सत्यवादी तथा पराक्रमी था। कुंभ-कोणम् प्रति में 'महाभिय' के स्थान पर 'महाभियज' नाम प्राप्त है।

पूर्वजन्म में इसने एक सहस्र अश्वमेध, एवं सौ राजसूय यज्ञों के द्वारा इन्द्र को संतुष्ट कर के स्वर्गलोक प्राप्त किया था (म. आ. ११.१-२)।

ब्रह्मा से शाप—एक बार जब यह ब्रह्मलोग गया, तब वहाँ इसने अन्य देवताओं ऋषियों तथा समस्त नदियों के साथ महानदी गंगा को भी देखा। जब इसने उसे देखा, तब गंगा के शरीर का वस्त्र हवा में उड़ रहा था, जिसे देख कर सब ने अपनी नज़रें झींझ झुका लीं। किन्तु महाभिय एकटक उसे देखता ही रहा। गंगा ने भी इसे प्रेमभरी दृष्टि से देखा, तथा दोनों एक दूसरे से रनेह-बन्धन में एकाएक बंध गये। दोनों के इस प्रेमभरे विन्चाव

को देख कर, ब्रह्मा ने दोनों को मृत्युलोक में जन्म लेने के लिए शाप दिया।

यह सुन कर दोनों ने ब्रह्मदेव की क्षमा माँगते हुए अत्यधिक अनुनय विनय किया। तत्र ब्रह्मा ने कहा, 'तुम लोग स्वर्गलोक वापस आओगे, किन्तु इसके लिए तुम दोनों को न जाने कितना पुण्य करना पड़ेगा'।

इस शाप के अनुसार, महाभिष सोमवंश में उत्पन्न होकर शंतनु नाम से प्रसिद्ध हुआ, तथा गंगा इसकी पत्नी बनी (म. आ. ११.१; दे. भा. २.३; भा. ९.२२; शंतनु देखिये)।

महाभोज—(सो. क्रोटु.) एक यादव राजा, जो सात्वत राजा का पुत्र था। आगे चल कर, इसके नाम से इसके वंशज 'भोजवंशीय' कहलाने लगे (भा. ९.२४. ७-११)।

महाभौम—(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो अरिह राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम आंगी था। इसकी पत्नी का नाम सुयज्ञा था, जिससे इसे अयुतानायिन् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. आ. ९०. ८९९; ९०.१९)।

महामख—एक आदित्य, जो सवितृ नामक आदित्य का पुत्र था। इसकी माता का नाम वृष्णि था (भा. ६. १८.१)।

महामणि—(सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा, जो विष्णु के अनुसार जनमेजय राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम महामनस् था।

महामती—अंगिरस् ऋषि की सात कन्याओं में से एक (म. व. २०८.७)।

महामनस्—(सो. अनु.) एक चक्रवर्ती राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार महाशाल नामक राजा का पुत्र था (वायु. ९९.१७)। विष्णु में इसे महामणि राजा का पुत्र कहा गया है। इसे उशीनर एवं तितिष्ठु नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे।

महामर—एक राजा, जो प्रमर नामक राजा का पुत्र था। इसने तीन वर्षों तक राज्य किया था (भवि. प्रति. ४.१)।

महामान—पारावत देवों में से एक।

महामालिन्—एक राक्षस, जो खर राक्षस का अमात्य था (वा. रा. अर. २३.३२)।

२. रावण के पक्ष का एक असुर।

महामुख—जयद्रथ की सेना का एक योद्धा, जो द्रौपदीहरण के समय हुए युद्ध में, नकुल के द्वारा मारा गया (म. व. २५५.१६-१७)।

महामुद्—एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था।

महामुनि—रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

महामूर्ति—विभीषण की पत्नी। राम दशरथि के अश्वमेध यज्ञ के समय, इसने अपने पति विभीषण के साथ सरयु नदी के तट पर जा कर, उस नदी का पवित्र जल अश्वमेधीय अश्व के स्नान के लिये लाया। आगे चल कर, उसी जल से राम ने अपने अश्वमेधीय अश्व को स्नान कराया (पद्म. पा. ६७)।

महायशस्—(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार संकृति राजा का पुत्र था।

१. प्रसूतदेवों में से एक।

३. लेखदेवों में से एक।

महायशा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२७)।

महायोग—गुहवासिन् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

महारथ—विश्वामित्र के पुत्रों में से एक।

२. (सो. ऋक्षः) उपरिचर बसु राजा के बृहद्रथ नामक पुत्र का नामान्तर।

महारव—एक यादव राजा, जो रैवतक पर्वत पर हुए उत्सव में शामिल था (म. आ. २११.११)। इसके नाम के लिए 'सहाचर' पाठभेद प्राप्त है।

महाराज—एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार अज राजा का पुत्र था।

२. ब्रह्म में निर्दिष्ट एक राजा, जिसकी कन्या का विवाह मणिकुण्डल नामक राजा से हुआ था (मणिकुण्डल देखिये)।

महारौमन्—(सू. निमि.) विदेह देश का राजा, जो कृतिरात जनक का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम स्वर्णरोमन् था।

महारौद्र—एक राक्षस, जो घटोत्कच का साथी था। भारतीययुद्ध में यह दुर्योधन के द्वारा मारा गया (म. भा. ९१.२०-२१)।

महालक्ष्मी—देवी लक्ष्मी का एक नामान्तर (देवी एवं लक्ष्मी देखिये)।

महाशरीर—(स. निमि.) विदेह देश का राजा, जो भागवत के अनुसार कृति राजा का पुत्र था।

महावीर—एक राजा, जो क्रोधवशसंज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५५)।

२. एक आचार्य, जो स्वयंभुव मनु के सुविख्यात पुत्र प्रियव्रत राजा के तीन विरक्त पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम बार्हिष्मती था। इसे 'पुत्रोद्' नामान्तर भी प्राप्त था। अपने राज्यकाल में ही तपस्य के लिए यह वन में चला गया, एवं पश्चान् इसने संन्यासआश्रम का स्वीकार किया। यह श्रीकृष्ण का परमभक्त था, जिस कारण ज्ञानसंपन्न हो कर, इसने ब्रह्मत्व प्राप्त किया (भा. ५.१)।

३. एक पराक्रमी राजा, जो राम के अश्वमेधीय अश्व की रक्षा करने के लिए शत्रुघ्न के साथ उपस्थित था (पद्म पा. ११)।

महावीर्य—(स. निमि.) विदेह देश का राजा, जो दैवराति बृहद्रथ राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सुवृति था।

२. (सो. पूर.) एक पूर्ववशीय राजा, जो भागवत के अनुसार मन्यु राजा का पुत्र था। मत्स्य में इसे कृमि राजा का पुत्र कहा गया है। इसके पुत्र का नाम दुरितक्षय था।

३. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार कर्षण।

महावेना—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१५)।

महाव्रत—विश्वामित्र के ब्रह्मवारी पुत्रों में से एक।

महाश—श्रीकृष्ण एवं मित्रविदा के दस पुत्रों में से एक।

महाशक्ति—श्रीकृष्ण एवं लक्ष्मणा के दस पुत्रों में से एक।

महाशंख—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रु के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६)। भागवत के अनुसार, यह पाताल में रहता था (भा. ५.२४.३१)। यह मार्गशीर्ष माह के सूर्य के साथ भ्रमण करनेवाले प्राणियों में से एक था (भा. १२.११.४१)।

महाशाल—(सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार जनमेजय राजा का पुत्र था।

२. एक ब्राह्मणसमूह, जिसने अश्वपति कैकेय राजा से शिक्षा प्राप्त की थी (श. ब्रा. १०.६.१.१)। संभव है, इन ब्राह्मणों का महत्त्व बढ़ाने के लिए इनका इस प्रकार वर्णन किया गया है।

महाशाल जावाल—शतपथ ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक आचार्य। इसने धीर शतपर्णय को शिक्षा प्रदान की थी (श. ब्रा. १०.३.१-१)। शतपथ ब्राह्मण में अन्यत्र इसे अश्वपति राजा से शिक्षा प्राप्त करनेवाले ब्राह्मणों में से एक कहा गया है (श. ब्रा. १०.६.१.१)। छंदोग्य उपनिषद् में इसके नाम का निर्देश 'प्राचीलशाल औषमन्यव' नाम से किया गया है, एवं 'महाशाल' शब्द 'एक महान् गृहवाला' इस अर्थ से एक विशेषण के रूप में प्रयुक्त किया गया है (छां. उ. ५.११.१; ३; ६.४.५)। मुण्डक उपनिषद् में भी 'महाशाल' शब्द एक उपाधि के रूप में शौनक के लिए प्रयुक्त किया गया है (सं. उ. १. १.३; ब्रह्म. उ. १)।

महाशिरस्—युधिष्ठिर के सभा का एक ब्रह्मर्षि (म. स. ४.८)।

२. एक नाग, जो वरुण की सभा में उपस्थित था (म. स. ९.१४)।

३. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

महाश्व—एक राजा, जो यमसभा में उपस्थित था (म. स. ८.१८)।

महासत्व—(सो. कुरु.) एक कुर्ख्वशीय राजा, जो वायु के अनुसार आराधित् राजा का पुत्र था।

महासुर—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

महासेन—स्कंद का नामान्तर (म. व. २१४.२६; स्कंद देखिये)।

महास्वना—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२५)।

महाहनु—(सो. वसु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था।

२. तक्षक कुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१६)।

महाहय—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो शतजित् राजा का पुत्र था।

महित—पितरों में से एक।

महिदास ऐतरेय—एक आचार्य, जो 'ऐतरेय ब्राह्मण' एवं 'ऐतरेय आरण्यक' नामक ग्रंथों का रचियता माना जाता है। इसीके ही नाम से उन ग्रंथों को 'ऐतरेय' उपाधि प्रदान की गयी होगी। संभव है, यह स्वयं 'इतर' अथवा 'इतरा' नामक किसी स्त्री का वंशज होगा,

जिस कारण इसे 'ऐतरेय' मातृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

ऐतरेय भारण्यक में इसका अनेक बार निर्देश प्राप्त है। किंतु वहाँ कहीं भी इसे उस ग्रंथ का रचयिता नहीं कहा गया है (ऐ. आ. २.१.८; ३.७)।

छंदोग्य उपनिषद् एवं जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण में के अनुसार, यह एक सौ सोलह वर्षों तक जीवित रहा। इसे रोग ने अनेक तरह के कष्ट दिये। किंतु इसने रोग को चुनौति दी, 'तुम मुझे चाहे कितने भी सताओं, मैं तुम्हारे कष्टों से नहीं मरूँगा' (छां. उ. ३.१६.७; जै. उ. ब्रा. ४.२.११)।

महिनेत्र—(सो. मगध.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार शुमत्सेन राजा का पुत्र था।

महिमत—एक आदित्य, जो भग एवं सिद्धि का पुत्र था (भा. ६.१८.२)।

महिमावत्—पितरों में से एक।

महिष—ब्रह्मांड के अनुसार, महिषासुर का नामांतर (ब्रह्मांड. ३.६.२८-३३)।

महिषदा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२७)। इसके नाम के लिए 'गोमहिषदा' पाठभेद प्राप्त है।

महिषानना—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२५)।

महिषासुर—एक असुर, जो मयासुर एवं रंभा का पुत्र था।

जन्म—इसका पिता रंभासुर बड़ा शंकरभक्त था, जिसने अपनी तपस्या से उसे प्रसन्न कर वरदान माँगा, 'हे प्रभो, मैं निःसंतान हूँ, मुझे एक भी पुत्र नहीं है। अतएव मेरी इच्छा है कि, तुम मेरे पुत्र हों।' शंकर ने 'तथास्तु' कहा। एक दिन मार्ग से जाते समय, रंभासुर को चित्रवर्ण की एक सुन्दर महिषी दिखी। तब उसने उसमें अपना वीर्य स्थापित किया, जिससे कालांतर में शंकरांश का बल लेकर महिषासुर उत्पन्न हुआ। महिषासुर ने देवी की आराधना कर के उसके भक्तों में शाश्वत स्थान किया। प्राप्त

वध—इसने तप से ब्रह्मदेव को प्रसन्न किया, तथा वरदान प्राप्त किया कि, यह मनुष्य के हाथों से न मारा जाये। बाद को ब्रह्मदेव के वरदान की प्राप्त कर इसने तीनों लोकों का कष्ट देना आरंभ किया। तब देवी ने अष्टादश-भुज रूप धारण कर इसका वध किया (दे. भा. ५.१६; मार्क. ८०; पार्वती देखिये)।

एक बार शिकार करते-करते यह अरुणाञ्जल पर्वत पर गया, जहाँ पार्वती तपस्या कर रही थी। वहाँ उसकी सौन्दर्यसुषमा को देखकर यह उस पर मोहित हो गया, तथा एक वृद्ध अतिथि का रूप धारण कर, उससे तपस्या करने का कारण पूछा। तब पार्वती ने कहा, 'मैं परम ब्रह्मवान् भगवान् शंकर का वरण करना चाहती हूँ, इसीसे तपस्या कर रही हूँ'। तब इसने कहा, 'मैं भी ब्रह्मवान् हूँ, एवं चाहता हूँ कि तुम मेरा वरण करो'। तब पार्वती ने इसे युद्ध के लिए लज्जकारते हुए अपना बल प्रदर्शन करने के लिए कहा। महिषासुर ने पार्वती के साथ घोर युद्ध किया, किंतु अन्त में उसके द्वारा यह मारा गया (स्कन्द. १.३; १०.११; शिव. उ. ४६)।

जिस स्थान पर देवी ने इसका वध किया था, वही स्थान सम्भवतः 'देवीपुर तीर्थ' है (स्कन्द. ३.१.६-७)।

महाभारत में, इसे महेश्वर द्वारा वर प्राप्त होने की चर्चा है (म. अनु. १४.२१४)। एक बार इसने देवताओं को परास्त कर के रुद्र के रथ पर भी आक्रमण किया था (म. व. २२१.५७)। महाभारत के अनुसार, स्कंद ने इसका वध किया था (म. व. २२१.६६)।

महिष्मत—(सो. सह.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार सोहंजी राजा का, एवं विष्णु के अनुसार साहंजि का पुत्र था। मत्स्य एवं वायु में इसके पिता का नाम क्रमशः 'संहत' एवं 'संज्ञेय' दिया गया है।

इसके पुत्र का नाम रुद्रश्रेण्य था। हरिवंश के अनुसार, इसने महिष्मती नगरी बसायी थी (ह. वं. १. ३३.५)।

महिष्मती—महर्षि अंगिरस् की छोटी कन्या। इसे 'अनुमती' नामांतर भी प्राप्त था (म. व. २०८.६)। मांडारकर संहिता में इसके नाम का 'हविष्मती' पाठ स्वीकार लिया है।

२. बृहस्पति की कन्याओं में से एक। इसकी माता का नाम शुभा था।

मही—एक दुराचारी ब्राह्मण स्त्री, जो धृतराज नामक ब्राह्मण की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम सनाज्जात था।

अपने पति के मृत्यु के पश्चात् यह निराधार हो गयी, जिस कारण इसे वेद्व्यावृत्ति का स्वीकार करना पड़ा। आगे चल कर, इसका इतना अधःपात हुआ कि, इसने अपना पुत्र सनाज्जात से भी समागत किया। किंतु इतनी

दुराचारी होने पर भी, गंगा स्नान के कारण इसका उद्धार हुआ (ब्रह्म. १२)।

महीजित्--माहिष्मती नगर का एक राजा, जो द्वापर युग में उत्पन्न हुआ था। इसने पुत्रप्राप्ति के लिए, श्रावण शुक्ल एकादशी के दिन 'पुत्रदा एकादशी' का व्रत किया, जिस कारण इसे एक सुपुत्र की प्राप्ति हुई (पद्म. उ. ५५)।

महीरथ--एक राजा, जिसने वैशाख माह में स्नान का व्रत कर, अपना एवं अपने परिवार के लोगों का उद्धार किया (पद्म. पा. १९-१०१; स्कंद. २.७.४)।

महीषक--एक जानिसमूह, जो पहले क्षत्रिय था, किंतु अंगे चल कर, अपने दुराचरण के कारण शूद्र बन गया (म. अनु. ३३.२२-२३)। इनके नाम के लिए 'महिषक' एवं 'माहिषक' पाठभेद भी प्राप्त हैं। संभवतः आधुनिक मैसूर प्रदेश में ये लोग रहते होंगे।

अर्जुन ने अपने दक्षिण दिग्बिजय के समय इन्हें जीता था (म. आश्र. ८४.४१)। महाभारत के अनुसार, ये लोग आचार विचार से अत्यधिक दूषित थे (म. क. ३७. ४५)।

महेंद्र--अगस्त्यकुलोत्पन्न एक ऋषि।

महेश--एक शिवावतार। एक बार शिव के वेताल नामक द्वारपाल ने पृथ्वी पर जन्म लिया जिस समय उसकी रक्षा के लिए शिव एवं पार्वती ने क्रमशः महेश एवं शारदा के नाम से पृथ्वी पर अवतार लिये थे (शिव. शत. १४; वेताल देविये)।

महैतरेय--एक आचार्य, जिसका ऋग्वेदी ब्रह्मयज्ञांग-तर्पण में निर्देश प्राप्त है।

महोदक--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

महोदय--वसिष्ठ ऋषि के पुत्रों में से एक। अयोध्या के राजा सत्यव्रत विशंकु ने विश्वामित्र ऋषि को ऋत्विज बना कर, एक यज्ञममारोह का आयोजन किया। उस समय इसके पिता वसिष्ठ के साथ इसे भी विशंकु राजा ने बड़े सम्मान के साथ निर्मंत्रित किया था। उस निर्मंत्रण को इसने अस्वीकार कर दिया, एवं संदेश भेजा, 'चाण्डाल विशंकु जहाँ यजमान है एवं चाण्डाल विश्वामित्र जहाँ ऋत्विज है, ऐसे यज्ञ में मैं नहीं आ सकता'। इसका यह अपमानजनक संदेश सुन कर, विश्वामित्र अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं उसने इसे निपाद बनने का शाप दिया (वा. रा. श. ५९.२०-२१)।

प्रा. च. ८०]

महोदर--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

२. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीमसेन ने नाराच नामक बाण इसकी छाती में मार कर इसका वध किया (म. भी. ८४.२६)।

३. एक राक्षस, जो घटोत्कच का मित्र था। कामकटंकटा को जीतने के लिए घटोत्कच जब प्राकृत्योतिषपुर जाने निकला, उस समय यह उसका एक अनुचर था (स्कंद. १. २.५९-६०)।

४. एक ऋषि। श्रीराम के द्वारा मारे गये एक राक्षस का मस्तक इसकी जाँव में आ कर चिपक गया था। पश्चात् सरस्वती नदी के तट पर स्थित 'औपनस' नामक तीर्थ में स्नान करने के कारण, वह चिपका हुआ सिर छुट गया। इसी कारण, औपनस तीर्थ को 'कपालमोचन' नाम प्राप्त हुआ (म. श. ३८.१०-२३)।

५. रावण के पुत्रों में से एक। राम-रावण युद्ध में इसने सर्व प्रथम अंगद से, एवं तत्पश्चात् नील नामक वानर से युद्ध किया, जिनसे इसका वध किया (वा. रा. यु. ७०. ३१)।

६. रावण का एक लुह्लुद्धि प्रधान (वा. रा. उ. १४.१)। रावण सीता को वध में लाने के लिए चाहता था। उस समय इसने रावण को सलाह दी थी कि, राम-वध की झूठी वार्ता फैलाने से ही सीता वध में आ सकती है। इसने रावण से कहा, 'मैं स्वयं द्विजिह्व, कुंभकर्ण, संह्यादिन् तथा वितर्दन नामक राक्षसों को साथ ले कर, राम से युद्ध करने के लिए जाता हूँ। उस युद्ध से लौट आते समय, हम 'राम मर गया' इस प्रकार चिल्लाते हुए अशोकवन में प्रवेश करेंगे। इस वृत्त को सुनते ही भयभीत हो कर सीता तुम्हारे वंश में आयेगी' (वा. रा. यु. ६४.२२-३३)।

महोदर प्रधान की यह सलाह रावण एवं कुंभकर्ण ने अस्वीकार कर दी, एवं रावण ने अकेले कुंभकर्ण को ही रणभूमि में भेजा दिया। पश्चात् इसका सुमीव के साथ युद्ध हो कर, यह उसीके हाथों मारा गया (वा. रा. यु. ९७.३६)।

७. रावण के मातामह सुमालि नामक राक्षस का सचिव। राम-रावण युद्ध के समय, रावण की सहाय्यता के लिए यह सुमालि राक्षस के साथ बाहर आया था (वा. रा. उ. ११.२)।

८. रावण का एक भाई, जो विश्रवस् एवं पुष्पोत्कटा के पुत्रों में से एक था (वा. रा. यु. ७०.६६)। हनुमत् ने इसका वध किया था।

९. एक प्रातःस्मरणीय नृप (म. अनु. १६५.५२)।

महौजस्—एक राजा, जो कालेय (पाँचवाँ) के अंश से उत्पन्न हुआ था। भारतीय युद्ध में यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ४.१९)।

२. एक राजा, जो भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्ष में शामिल था (म. आ. ६१.५०)।

३. एक क्षत्रिय कुल, जिसमें 'वरयु' (वरप्र) नामक कुलांगार राजा उत्पन्न हुआ था (म. उ. ७२.१५)।

४. वसुदेव एवं भद्रा के पुत्रों में से एक।

५. तुषित देवों में से एक।

महौदवाहि—एक आचार्य, जिसका ऋग्वेदी ब्रह्म-यज्ञांग तर्पण में निर्देश प्राप्त है (आश्व. ग. ३.४.४)।

माक्षति—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

माक्षान्य—एक आचार्य, जो मधु नामक महर्षि का पुत्र था। इसने संहिता शब्द का तात्त्विक अर्थ लगाने का प्रयत्न किया है, जिसके अनुसार सौ एवं पृथ्वी स्वयं एक आचार्य है, जिन्होंने आकाश नामक एक संहिता का निर्माण किया है (ऐ. आ. ३.१.१)।

मगध—एक राजा, जो भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्ष में शामिल था। महाभारत में इसे 'मगध देशाधिपति' कहा गया है। अभिमन्यु ने इसका वध किया था (म. मी. ५८.४४)।

२. मगधराज जरासंध का नामान्तर (मा. ३.३.१०)।

३. भौत्य मन्वन्तर का एक देवतागण।

४. भौत्य मन्वन्तर के सप्तार्षियों में से एक।

मांकायन—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'कार्मायन' पाठभेद प्राप्त है।

मांगलिन—एक आचार्य, जो भागवत के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से पौष्वजिन ऋषि का शिष्य था (व्यास देखिये)।

माचाकायि—तैत्तिरीय ब्राह्मणशास्त्र में निर्दिष्ट एक व्याकरणाचार्य। 'य'कार तथा 'व'कार का लोप कहाँ होता है, इसके बारे में इसका अभिमत प्राप्त है (तै. प्रा. १०.२२)।

माचेल—पाण्डवों के पक्ष का एक महारथि, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भेंट ले कर उपस्थित हुआ था

(म. स. ३१.१३)। इसके नाम के लिए 'माचेलक' पाठभेद भी प्राप्त है।

माचेलक—माचेलक देश के रहिवासी लोगों के लिए प्रयुक्त सामुहिक नाम। भारतीय युद्ध में ये लोक कौरवों के पक्ष में शामिल थे। इनके नाम के लिए 'माचेलक' पाठभेद भी प्राप्त है।

इन्होंने एवं विगर्तराज सुशमेन ने अर्जुन को युद्ध में विनष्ट करने की प्रतिज्ञा की थी (म. द्रो. १६.२०)। किंतु उस समय हुए युद्ध में अर्जुन ने इनका संहार किया (म. द्रो. १८.१६)।

द्रोणाचार्य कौरवसेना का सेनापति होने पर, उसे आगे कर के इन्होंने फिर एक बार अर्जुन पर आक्रमण किया (म. द्रो. ६६.३८)। किंतु अर्जुन ने पुनः एक बार इनका संहार किया (म. क. ४.४७-४९)।

माठर—सूर्य की एक पार्श्ववर्ती देवता, जो हमेशा सूर्य के दक्षिण में रहता है। सूर्य की सेवा करने के लिए इसकी नियुक्ति इन्द्र के द्वारा की गयी थी (भवि. ब्राह्म. २३)।

महाभारत के अनुसार, दक्षिण भारत में 'माठरवन' नामक एक तीर्थस्थान था, जहाँ इसका विजयस्तंभ सुशोभित होता था (म. व. ८६.७)।

२. अष्टादश विनायकों में से एक (साम्प्र. १६)।

३. एक आचार्य, जो 'सांख्यकारिकावृत्ति' नामक ग्रंथ का रचयिता माना जाता है। 'अष्टकाकर्म' में तंत्र करना चाहिए ऐसा इसका अभिमत था, जो कौपितकी ब्राह्मण में उद्धृत किया गया है (कौ. ब्रा. १३८. १६)।

४. कश्यप एवं भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

माठरीपुत्र—कश्यपि बालाक्य नामक आचार्य का नाम (वृ. उ. ६.४.३१ माध्यं; श. ब्रा. १४.९.४.३१-३२)। संभव है, किसी 'मठर' का स्त्रीवश होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

माणिचर—एक यक्ष, जो कुबेर का अत्यंत प्रिय सचिव था। इसके नाम के लिए 'माणिचार' (वा. रा. उ. १५), एवं 'माणिभद्र' (म. आ. ५७.५.०७* पंक्ति. १; स. १०.१६) पाठभेद प्राप्त हैं। संभव है, यह एवं मणिभद्र दोनों एक ही थे (मणिभद्र. २. देखिये)।

यह मंदार पर्वत के शिखर पर रहता था (म. व. १४०.४)। रावण एवं कुबेर के दरम्यान हुए युद्ध में, इसने रावणपक्षीय धूम्राक्ष नामक राक्षस को मरा-

प्रहार से मूर्च्छित किया था। यह देख कर रावण अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं उसने इसपर आक्रमण कर इसे पराजित कर दिया (वा. रा. उ. १५)।

मांति—एक आचार्य, जो गौतम ऋषि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम आत्रेय था (वृ. उ. २.६.३; ४.६.३ काण्व.)।

२. एक शिवभक्त, जो कालभूति नामक सुविख्यात शिवरापद का पिता था (कालभूति देखिये)।

मांडकर्मि—दण्डकारण्य में रहनेवाला एक ऋषि, जिसकी कथा धर्मभृत् ऋषि ने श्रीराम को सुनाई थी (वा. रा. अर. ११.८-२०)। यह अत्यन्त धर्मनिष्ठ ऋषि था, जिसने जलाशय में खड़े रहकर, एवं केवल वायु भक्षण कर दस हजार वर्षों तक कठोर तपस्या की थी। इसका इस तपस्या से अग्नि आदि सारे देव घबरा गये, एवं इसकी तपस्या में बाधा डालने के लिए, उन्होंने पाँच अप्सराएँ इसके पास भेज़ दीं।

उन अप्सराओं को देख कर यह मोहित हुआ, एवं इसने अपनी तपस्या का त्याग किया। पश्चात् इसने अपने तपःशामर्थ्य से पंचाप्सर नामक सरोवर में एक विद्यासहस्र का निर्माण किया, जहाँ यह उन अप्सराओं के साथ क्रीडा करने लगा। इसकी इस क्रीडा के कारण, उस सरोवर से गायनवादन की आवाज़ दिनरात आती रहती थी। उसी आवाज़ को सुनकर, उसका रहस्य श्रीराम ने धर्मभृत् ऋषि को पूछा था।

मांडवी—विदेह देश के कुशध्वज राजा की कन्या, जो अयोध्या के दशरथ राजा के पुत्र भरत की पत्नी थी (वा. रा. वा. ७३.३१-३२)।

२. एक स्त्री, जो सम्भवतः वासी मांडवीपुत्र नामक आचार्य की माता थी (वृ. उ. ६.४.३० माध्य.)। सम्भवतः मण्डु का स्त्री वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

मांडव्य—एक आचार्य, जो कौत्स ऋषि का शिष्य था (वा. रा. १०.६.५.९; सां. आ. ७.२; वृ. उ. ६.५.४ काण्व.)। इसके शिष्य का नाम मांडूकायनि था।

ऐतरेय आरण्यक के अनुसार, इसने ऋग्वेद संहिता का तात्त्विक अर्थ प्रतिपादन किया था (ऐ. आ. ३.१.१; ऋ. प्रा. प्रस्तावना)। इसने शुद्ध यजुर्वेद की शिक्षा की रचना की थी, जिसका निर्देश 'पाराशरी संहिता' में प्राप्त है (पा. सं. श्रो. ७७-७८)। ब्रह्मयज्ञांतर्गत पितृतपण में

इसका निर्देश प्राप्त है (आश्व. घ. ३.४.४; सां. घ. ४. १०; ६.१)।

२. एक आचार्य, जो विदेह देश के जनक राजा का मित्र था (वेत्त, इंडियो स्टूडियेन. १.४८२)।

३. एक प्रसिद्ध ब्रह्मर्षि, जो धैर्यवान्, सत्र धर्मों का ज्ञाता, सत्यनिष्ठ और तपस्वी था।

इसके नाम के लिये 'अणिमांडव्य' एवं 'आणि-मांडव्य' पाठभेद भी प्राप्त हैं।

चोरी का इल्जाम—चोरी के कारण इसको सजा मिलने की विभिन्न कथाएँ अनेक ग्रन्थों में प्राप्त हैं। मार्कण्डेय तथा गरुडपुराण में दिया गया है कि, राजा ने इस पर चोरी का इल्जाम लगाया; एवं चोरी के संशय पर ही इसे सूली पर चढ़ाया (गरुड. १.१४२)। पद्म के अनुसार, सुलक्षण राजा एक बार मृगयाके हेतु अरण्य में गया, तथा अपना घोड़ा एक पेड़ में बाँध दिया। जब वह लौट आया, तब वहाँ घोड़ा न था। अतएव राजा ने वहाँ पर तपस्या करते हुए मांडव्य से अपने घोड़े के बारे में पूछा, किन्तु यह मौन रहा। तब राजाज्ञा से राजदूतों ने समाधिस्थ मांडव्य को दर्दी बनाकर इसे सूली पर चढ़ा दिया। आगे चल कर असली चोर पकड़ा गया, तब राजा ने इसे छोड़ दिया। किन्तु इसके शरीर में किंचित झुलाग्र रह गया, जिसके कारण इसे 'आणिमांडव्य' नाम प्राप्त हुआ (पद्म. उ. १४१)। इसी पुराण में अन्यत्र यह भी लिखा है कि, राजा की कुछ चीजे चोरी चली गयी थी, और उसीके शक में इसे सजा मिली थी (पद्म. उ. ५१)।

प्रमोदिनी से विवाह—स्कंद के अनुसार, देवपन्न राजा की कन्या कामप्रमोदिनी का हरण कर, शंकर ने उसके गहने मांडव्याश्रम के पास डाल दिये। प्रमोदिनी को पता लगानेवाले दूतों को इसके आश्रम के पास गहने मिले। इससे राजा को यह शक हुआ कि, इसने ही उसकी कन्या का हरण किया है। अतः उसने इसे सूली पर चढ़ाने की आज्ञा प्रदान की। किन्तु अन्त में जब उसे अपनी कन्या शंकरासुर से पुनः प्राप्त हुयी, तब राजा ने प्रमोदिनी का विवाह मांडव्य से कर दिया (स्कंद. ५.३. १६९-१७२)।

स्कंद में अन्यत्र कहा गया है कि, यात्रा करते करते मांडव्य ऋषि 'विश्वामित्र तीर्थ' के पास आया। वहाँ इसने देखा कि, कुछ राजद्रव्य पड़ा हुआ है, जिसे छोड़कर चोर लोभ भाग गये थे। राजद्रव्य के पास खड़े हुए

मांडव्य को देख कर, दूतों ने इसे चोर समझकर पकड़ा, तथा राजाज्ञा से सूली पर चढ़ा दिया (स्कंद. ६. १३७)।

यम से संवाद—महाभारत के अनुसार, निरपराध होने पर भी इसको सूली पर चढ़ाया गया था (म. आ. ५७.७७-७९)। इसने शूल के अग्रभाग पर तपस्या की थी। इसकी दयनीय दशा से संतप्त, एवं तपस्या से प्रभावित हो कर, पक्षीरूपधारी महर्षिगण इसके पास आये थे।

पश्चात् यह ऋग्वेद धारण कर यमधर्म के पास गया था, एवं उससे प्रश्न किया, 'मैंने शुद्धभाव से सदैव तपस्या की, किंतु मुझे मयंकर सजा क्यों दी गयी?' तब यमधर्म ने कहा, 'तुम वचन में पतिंगो के पुच्छभाग में लीक घुसेड़ते रहे हो, इसी कारण तुम्हें सूली पर चढ़ाये जाने का दण्ड मिला है (म. आ. १०१)। यह सुनते ही मांडव्य ने नियम बनाया कि, बारह तथा चौदह-वर्षीय बालकों द्वारा नाशानी में किये गये अशुभ कर्मों का पाप उन्हें न भुगतना पड़ेगा।

इसके साथ ही इसने यम को शाप दिया कि, वह शूद्रकुल में जन्म लेगा। मांडव्य के शाप के ही कारण, यमधर्म को अगले जन्म में विदुर का जन्म लेना पड़ा (म. आ. १०१.२५-२७)।

यमधर्म की उपर्युक्त कथा में मांडव्य के द्वारा पीडित किटाणु का नाम पतिंगा कहा गया है (म. आ. १०१.२४)। किंतु अन्य स्थानों में उसके नाम बगुला (स्कंद. ६.१३६), टिड्डी (पद्म. उ. १४१) एवं भौरा (पद्म. सु. ५२) इत्यादि दिया गया है।

ब्राह्मण का शाप—जब यह सूली पर था, तब एक दिन आधी रात के समय कौशिक के कुल में उत्पन्न हुआ एक सर्वांगकुष्टी ब्राह्मण अपनी पत्नी के कंधे पर बैठा वेदिका के घर जा रहा था। अंधकार में जाते समय गलती से उसका पैर इसे लगा गया, तब इसने क्रोध में आकर तत्काल शाप दिया, 'सूर्योदय होते ही तुम मर जाओगे' (स्कंद. ६.१३५)। ऐसा सुनकर ब्राह्मण की उस पतिव्रता पत्नी ने अपने पातिव्रत्य के बल पर सूर्योदय ही रोक दिया। बाद में अनुसूया द्वारा समझाये जाने पर उसने सूर्योदय होने दिया, तथा देवों की कृपा से मृत पति को जीवित अवस्था में प्राप्त किया, जिसका शरीर कामदेव के समान सुंदर था (गरुड. १.१४२; मार्क. १६; स्कंद.

५.३.१६९-१७२; ६.१३५; पद्म. सु. ५१; कौशिक १४. देखिये)।

संवाद—महाभारत के अनुसार, यह बड़ा शानी था, तथा इसने विदेहराज जनक से तृष्णा का त्याग करने के विषय में प्रश्न किया था (म. शां. २६८)। इसने शिव-महिमा के विषय में युधिष्ठिर को अपना अनुभव बताया था (म. अनु. १८.४६-५२)। जब श्रीकृष्ण हस्तिनापुर जा रहे थे, तब उनसे अनेक ऋषिगण मिलने आये थे, जिसमें यह भी एक था (म. उ. ८१.३८८)।

इसके सम्बन्ध में यह भी प्राप्त है कि, यह भृगु-कुलोत्पन्न गोत्रकार था, एवं ज्योतिषशास्त्र का पंडित था। इसके नाम पर 'मांडव्यसंहिता' नामक ग्रन्थ भी उपलब्ध है (C. C.)।

मांडूक—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मांडूकायनि—एक आचार्य, जो मांडव्य नामक ऋषि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम सांजीवीपुत्र था (श. प्रा. १०.६.५.९; वृ. उ. ६.५.४ काण्व.)

मांडूकायनीपुत्र—एक आचार्य, जो मांडूकीपुत्र नामक ऋषि का पुत्र था। इसके शिष्य का नाम जायन्तीपुत्र था (वृ. उ. ६.५.२ काण्व.)। सम्भव है, मांडूक के किसी स्त्रीवंशज का पुत्र होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

मांडूकि—एक ऋग्वेदी श्रुतर्षि।

मांडूकीपुत्र—एक आचार्य, जो शांडिलीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम मांडूकायनीपुत्र था (वृ. उ. ६.५.२ काण्व.)। सम्भव है, मांडूक के किसी स्त्रीवंशज का पुत्र होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

मांडूकेय—एक आचार्यसमूह, जो ऋग्वेदपाठ के एक विशेष शाखा का प्रणयिता माना जाता है। ऐतरेय आरण्यक के 'मांडूकेयीय' नामक अध्याय की रचना इन्हींके द्वारा की गयी है (ऐ. आ. ३.२.६; सां. आ. ८.११)।

ऐतरेय आरण्यक में इस समूह के आचार्यों के अनेक मत प्राप्त हैं, जिनमें संहिता की व्याख्या दी गयी है। उस व्याख्या के अनुसार, पृथ्वी को पूर्वरूप संहिता, द्यौ को उत्तररूप संहिता, एवं वायु को द्यौ एवं पृथ्वी का संमिलन करनेवाली संहिता कहा गया है (ऐ. आ. ३.१. १; ऋ. प्रा. १.२)।

ऋग्वेद के आरण्यकों में निम्नलिखित आचार्यों का पैतृक नाम मांडूकेय दिया गया है—शरवीर, ह्रस्व, दीर्घ, मध्यमप्रातिबोधीपुत्र (ऐ. आ. ३.१.१; सां. आ. ७.१२; ७.२; ७.१३)।

२. एक आचार्य, जो मंडूक नामक महर्षि का पुत्र था। ब्रह्मयज्ञोत्सव में इसका निर्देश प्राप्त है (आश्व. ऋ. ३.४.४)। ऋक्सूत्रशास्त्र के अनुसार, स्वर्ग के बारे में इसने अनेक महत्त्वपूर्ण मत प्रतिपादन किये थे (ऋ. प्रा. २००)।

विष्णु, ब्रह्मांड एवं भगवत में, इसे व्यास की ऋक्सिष्य परंपरा में से इंद्रप्रमति ऋषि का शिष्य कहा गया है। इसके पुत्र का नाम सत्यश्रवस् था, जो इसका शिष्य भी था।

मातंग—एक मुनि, जिसके राजनीति विषयक अनेक मत महाभारत में दुर्योधन के द्वारा उद्धृत किये गये हैं। इसके ये मत निम्नप्रकार थे, 'वीर पुरुष को चाहिये कि, वह सदा उद्योग ही करे। किसीके सामने नतमस्तक न हो; क्यों कि, उद्योग करना ही पुरुष का कर्तव्य एवं पुरुषार्थ है। वीर पुरुष असमय में नष्ट भले ही हो जाये, परंतु कभी शत्रु के सामने सिर न झुकाये' (म. उ. १२५. १९-२०)।

२. एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा का एक पुत्र था।

मातंगिन्—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

मातंगी—कश्यप एवं क्रोधवशा की नौ कन्याओं में से एक। इसने हाथियों को जन्म दिया था (म. आ. ६०.६४)।

मातरिश्वन्—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक देवता, जो प्रायः अग्नि तथा अग्नि को उत्पन्न करनेवाले देवता से समीकृत की गयी है।

इस देवता का निर्देश ऋग्वेद के तृतीय मंडल में पाँच बार, एवं षष्ठ मंडल में एक बार प्राप्त है। उनमें से तीन स्थलों पर इसे अग्नि का ही नामांतर बताया गया है (ऋ. ३. ५.९; २६.२)। ऋग्वेद में अन्यत्र तनूत्पात्, नराशंस, यम एवं मातरिश्वन् को अग्नि के ही नामांतर बताया गये हैं (ऋ. १.१६४; ३.२९)।

अग्नि का दिव्यरूप—ऋग्वेद के प्रथम मंडल के अनुसार, मातरिश्वन् अग्नि के एक दिव्य रूप का मूर्तीकरण प्रतीत होता है। वहाँ इसे आकाश से पृथ्वीपर आनेवाला विवस्वत् का दूत बताया गया है, एवं इसके द्वारा गुप्त अग्नि को पृथ्वी पर लाने का संकेत भी किया गया है (ऋ. १.२८.२; ३.५.९; ६.८.४)। मातरिश्वन् को विद्युत् से समीकृत किया गया प्रतीत होता है। ऋग्वेद के विवाहसूक्त में दो प्रेमियों के हृदय को संयुक्त करने के

लिए मातरिश्वन् का आवाहन किया गया है (ऋ. १०.८५.४७)।

अथर्ववेद, ब्राह्मण ग्रंथ एवं उनके उत्तरकालीन साहित्य में मातरिश्वन् नाम वायु की उपाधि के रूप में प्रयुक्त किया गया है। इसे वायु के समान वेगवान्, एवं सर्प की भाँति फूँफकार मारता हुआ बताया गया है (श्रु. १.६.६०; ३. २९.११; जै. उ. ब्रा. ४.२०.८)।

व्युत्पत्ति—भाषाशास्त्रीय दृष्टि से मातरिश्वन् शब्द का अर्थ, 'जिसका अपनी माता में निर्माण हुआ हो' किया जाता है। यहाँ माता शब्द से गर्जन करनेवाले मेघ का आशय हो सकता है, क्यों कि, मातरिश्वन् आकाश से आ सकते हैं। यास्क के अनुसार, मातरिश्वन् की व्युत्पत्ति, 'जो अंतरिक्ष में (मातरि) साँस लेता है (श्वन्)' ऐसी की गयी है। वहाँ इसे वायु में साँस लेनेवाला पवन माना गया है (नि. ७.२६)।

२. एक सुविख्यात यज्ञकर्ता, जिसका निर्देश ऋग्वेद के वालखिल्य सूक्त में मेथ्य एवं पृषध्र नामक आचार्यों के साथ प्राप्त है (ऋ. ८.५२.२)। सांख्यायन श्रौतसूत्र में इसका निर्देश पृषध्र, मेथ्य मातरिश्वन्, एवं मातरिश्व नाम से किया गया है (सां. श्रौ. १६.११.२६)। किन्तु वे दोनों पाठ योग्य नहीं प्रतीत होते हैं, क्यों कि, पृषध्र एवं मेथ्य वे दोनों मातरिश्वन् से अलग व्यक्तिये। ऋग्वेद में अन्यस्थान पर इभ्यश्च को मातरिश्वपुत्र कहा गया है (ऋ. १०.४८.२)।

३. गरुड की प्रमुख सन्तानों में से एक (म. उ. ९९. १४)।

मातलि—इंद्र का सारथि। इसकी पत्नी का नाम सुधर्मा था, जिससे इसे गोमुख नामक पुत्र, एवं गुणकेशी नामक कन्या उत्पन्न हुयी थी (म. उ. ९५.१९-२०)।

अपनी कन्या गुणकेशी के लिए सुयोग्य वर खोजने के लिए, यह नारद को साथ लेकर पाताल लोक गया था (म. उ. ९६.८)। वहाँ नागकुमार सुमुख के साथ इसने अपनी कन्या का विवाह तय किया, एवं नागराज आर्यक को अपने साथ ले कर, यह स्वर्गलोक में इंद्र के पास गया। वहाँ इंद्र के संमति से गुणकेशी एवं सुमुख का विवाह हुआ (गुणकेशी एवं सुमुख देखिये)।

रामरावण युद्ध के समय, इंद्र का रथ ले कर यह श्रीराम की सेवा में उपस्थित हुआ था। इसीके रथ में बैठ कर श्रीराम ने रावण वध किया था (म. व. २७४. १३-२७)।

पाण्डवों के वनवास के समय, यह इंद्र की आज्ञा से अर्जुन को स्वर्ग में ले जाने के लिए उपस्थित हुआ था (म. व. ४३)।

मातृका—देवी के सुविख्यात अवतारों में से एक। महाभारत में इनका स्वरूपवर्णन प्राप्त है, जिनमें इन्हें दीर्घनखी, दीर्घदन्त, दीर्घतुण्ड, निर्मासगात्री, कृष्णमेघनिभ, दीर्घकेश, लंबकूर्ण, लंबपयोधर एवं पिंगाक्ष कहा गया है। ये जी चाहे रूप धारण करनेवाली (कामरूपधर), जी चाहे वहाँ भ्रमण करनेवाली (कामरूपचारी), एवं वायु के समान वेगवान् (वायुसमज्व) थी। इनका निवास-स्थान वृक्ष, चत्वार, गुफा, समशान, शैल एवं प्रसवण में रहता था (म. श. ४५.३०-४०)।

जन्मकथा—मत्स्य में मातृकाओं के जन्म की कथा विस्तृत रूप में दी गयी है। हिरण्याक्ष राक्षस का पुत्र अंधक शिव का परमभक्त था। शिव ने उसे वर प्रदान किया था, 'रणभूमि में तुम्हारे लहू के हर एक बूँद से नया अंधकासुर उत्पन्न होगा, जिस कारण तुम युद्ध में अजेय होंगे'। शिव के इस आशीर्वाद के कारण, सारी पृथ्वी अंधकासुरों से वस्तु हुयी। फिर इन अंधकासुरों का लहू चुसने के लिए शिव ने ब्राह्मी, माहेश्वरी आदि सात मातृकाओं का निर्माण किया। इन्होंने अंधकासुर का सारा लहू चूस लिया, एवं तत्पश्चात् शिव ने अंधकासुर का वध किया।

अंधकासुर का वध होने के पश्चात्, शिव के द्वारा उपन्न सात मातृका पृथ्वी पर के समस्त प्राणिजात का लहू चूसने लगीं। फिर उनका नियंत्रण करने के लिए, शिव ने नृसिंह का निर्माण किया, जिसने अपने जिह्वादि अवयवों से घंटाकर्णी, त्रैलोक्यमोहिनी, आदि त्रैतीस मातृकाओं का निर्माण किया। अपना नियुक्त कार्य समाप्त करने पर, शिव ने उन पर लोकसंरक्षण का काम सौंपा, एवं इस तरह रुद्र के साथ मातृका पृथ्वी पर चिरकाल तक रहने लगीं (मत्स्य. १७९)।

मातृकाओं की संख्या—महाभारत एवं पुराणों में मातृकाओं की कई नामावलियाँ प्राप्त हैं, जिनमें इनकी संख्या सात, अठारह, एवं त्रैतीस बतायी है। महाभारत के शल्यपर्व में कर्तिकेय (स्कंद) की अनुचारी मातृकाओं की नामावली प्राप्त है, जहाँ इनकी संख्या त्रैतीस बतायी गयी है, एवं उसमें प्रभावती, विशालाक्षी आदि नाम के निर्देश प्राप्त हैं।

पुराणों एवं महाभारत में प्राप्त मातृकाओं की नामावलियाँ इस प्रकार हैं :—

(१) सप्तमातृका—ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वाराही नारसिंही, वैष्णवी, ऐन्द्री (मार्क. ८८.११-२०; ३८)।

(२) अष्टमातृका—ब्राह्मी, माहेश्वरी, चंडी, वाराही, वैष्णवी, कौमारी, चामुण्डा एवं चर्चिका।

(३) दशमातृका—कार्की, हलिमा, रुद्रा, बृहली, आर्या, पलला एवं मित्रा (म. व. २१७.९)।

(४) अष्टादश मातृका—विनता, पूतना, कष्टा, पिशाची, अदिति (रेवती), मुखमण्डिका, दिति, सुरभि, शकुनि, सरमा, कद्रू, विलीनगर्भा, करंजनीलया, धात्री, लोहितायनि, आर्या (म. आर. २१९.२६-४१)। महाभारत के इस नामावली में कार्की दो नाम अप्राप्य हैं।

(५) चौदह मातृका—गौरी, पद्मा, शची, मेघा, सावित्री, विजया, जया, देवसेना, रवधा, स्वाहा, धृति, पुष्टि, तुष्टि एवं 'कुलदेवता', जो हरेक व्यक्ति के लिए अलग-अलग होती है (गोभिल. स्मृ. १.११-१२)।

मातृकाओं की प्राचीनता—वैदिक ग्रंथों में एवं गृह्यसूत्रों में मातृकाओं का निर्देश अप्राप्य है। ऋग्वेद में सप्तमाताओं का निर्देश प्राप्त है, किन्तु वहाँ सात नदियों एवं सात स्वर्गों को माता कहा गया है (ऋ. ९.१०२.४)। ईसा की पहली शताब्दि से मातृकापूजन का स्पष्ट निर्देश प्राप्त होता है। ब्राह्मिहिर के बृहत्संहिता में, एवं शूद्रक के मृच्छकटिक में मातृकापूजन का स्पष्ट निर्देश प्राप्त है (बृहत्सं. ५८.५६)। स्कंदगुप्त के विहार स्तंभलेख में मातृकापूजन का निर्देश प्राप्त है (गुप्त शिलालेख. पृ. ४७; ४९)। चालुक्य एवं कदंब-राजवंश मातृकाओं के उपासक थे (इन्डि. अर्न्टि. ६.७३; ६.२५)। मालवा के विश्वकर्मान् राजा के अमात्य मयूराक्ष ने ४२३ ई. में मातृकाओं का एक मंदिर बनवाया था (गुप्त शिलालेख. पृ. ७४)।

पश्चिमी एशिया के 'द्रो' नामक प्राचीन संस्कृति में, तथा मोहेंजोदड़ो एवं हड़प्पा में स्थित सिन्धु संस्कृति में मातृकाओं की पूजा की जाती थी। उस संस्कृति के जो सिक्के प्राप्त हुए हैं, वहाँ मातृका के सामने नर अथवा पशुबलि के दृश्य चित्रित किये गये हैं।

इससे प्रतीत होता है कि, मातृकाओं की उपासना वैदिकेतर संस्कृति में प्राचीनतम काल से अस्तित्व में थी। आगे चल कर, वैदिक संस्कृति के उपासकों ने इस देवता

को अपनाया, एवै उसे दुर्गा अथवा देवीपूजा में सम्मिलित कराया।

मातृकाओं की प्रतिमा—मातृका के प्रतिमाओं की पूजा सारे भारतभर की जाती है, जहाँ इनका रूप अर्धनग्न, एवं शिरोभूषण, कण्ठहार, तथा मखलायुक्त दिखाई देता है। जनश्रुति के अनुसार, मातृकाओं की सर्वाधिक पीड़ा दो वर्षों तक के बालकों की होती है। इसी कारण, बालक का जन्म होते ही पहले दस दिन में मातृकाओं की पूजा की जाती है।

२. अर्यमा नामक आदित्य की पत्नी (भा. ६.६. ४९)।

मातस्य—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

मातस्य—एक ऋषि, जो यज्ञ में अत्यधिक प्रवीण था (अ. वे. १९.३९.९)। तैत्तिरीय ब्राह्मण में इसका निर्देश मास्य नाम से किया गया है (तै. वा. १.५.२.१)। वहाँ इसे यज्ञेयु एवं सातयुग्न राजा का पुरोहित कहा गया है। कौनसा भी यज्ञसमारोह शुरू करना हो, तो वह सुअवसर या शुभमूर्त देख कर करना चाहिए, ऐसी प्रथा इसने शुरू की।

२. सरस्वती नदी के तट पर यज्ञ करनेवाला एक ब्राह्मणसमूह, जिसका अध्वर्यु ध्वसन् द्वैतवन था (श. ब्रा. १३.५.४.९; ध्वसन् द्वैतवन देखिये)।

माथव—विदेय नामक राजा का पैतृकनाम (विदेय देखिये)।

माथैत्य—(सो. कश्.) एक राजा, जो वायु के अनुसार उपरिचर बसु राजा का पुत्र था। महाभारत में इसके नाम के लिए 'मस्तिष्क' पाठभेद प्राप्त है (मस्तिष्क देखिये)।

माद्री—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

माद्रवती—अभिमन्युपुत्र परिक्षित् राजा की कन्या, जो जन्मवेद्य द्वितीय की माता थी। इसके नाम के लिए 'माद्रवती', 'मद्रा' एवं 'मद्रावती' पाठभेद प्राप्त है (म. आ. ९०.९२)।

२. पाण्डु राजा की द्वितीय पत्नी माद्री का नामांतर (म. आश्व. ५.२.५४; माद्री देखिये)।

माद्री—मद्रदेश के राजा ऋतायन की पुत्री, जो पाण्डु की द्वितीय पत्नी, तथा नकुल-सहदेव की माता थी। मद्रराज शल्य इसका भाई था। यह 'धृति' नामक देवी के अंश से उत्पन्न हुई थी (म. आ. ६१.९८)।

प्राचीन काल में रावी तथा व्यास नदी के बीच के दोआब का भाग 'मद्र' कहलाता था, जो आजकल पंजाब प्रान्त में स्थित है। उन दिनों शाकल मद्रदेश की राजधानी थी, तथा इस देश की राजकन्याओं को सामान्यतः 'माद्री' कहते थे (म. स. २९.१३)।

विवाह—यह परम रूपवती थी, कारण एक तो यह देवी से उत्पन्न हुयी थी, दूसरे पंजाब प्रान्त के लोग सुन्दर होते ही हैं। अतएव इसकी सुन्दरता की प्रशंसा सुन कर, भीष्म ने शल्य के यहाँ जा कर इसे पाण्डु के लिए माँगा था। शल्य के यहाँ यह नियम था कि, वरपक्ष से अत्यधिक धनसम्पत्ति लेकर लड़की दी जाती थी, अतएव भीष्म को उनकी प्रथा के अनुसार, कन्या के शुल्क के रूप में बहुतसा धन देना पड़ा था। तब उस देश की रीतिरिवाज के अनुसार, शल्य ने भी आभूषणों आदि से अलंकृत कर के माद्री को भीष्म के हाथों सौंप दिया। बाद में भीष्म ने हरितनापुर में आ कर शुभ दिन तथा शुभ मुहूर्त में पाण्डु से इसका विवाह किया (म. आ. १०५.५-६)।

पुत्रप्राप्ति—किंदम मुनि के द्वारा पाण्डु को शाप दिया जाने पर, पाण्डु के साथ माद्री भी वन में रहने के लिए गयी थी (म. आ. ११०)। वहाँ ऋषियों के कथनानुसार, पाण्डु ने कुन्ती को पुत्र उत्पन्न करने की आज्ञा दी। उसने दुर्वासस् के 'आकर्षण मंत्र' के प्रभाव से तीन पुत्र उत्पन्न किये। बाद में कुन्ती ने अधिक पुत्र उत्पन्न करने के लिए मनाही कर दी। तब माद्री की प्रार्थनानुसार, पाण्डु ने वह मंत्र कुन्ती से इसे दिलवाया। उस मंत्र के स्मरण से, इसे अश्विनीकुमार जैसे सुन्दर नकुल तथा सहदेव नामक पुत्र हुए (भा. ९.२२.२८; म. आ. ११५.२१)।

पाण्डु की मृत्यु—एक दिन यह मृगया खेलनेवाले पाण्डु के साथ वन में अकेली ही थी। उस समय वसंत ऋतु था, तथा मौसम भी बड़ा सुहावना एवं चित्ताकर्षक था। इसके द्वारा पहने हुए चारोंक वस्त्र इसकी सुंदरता में और चार चाँद लगा रहे थे। ऐसे सुंदर मौसम में, इसे इस तरह सुंदर देख कर पाण्डु के मन में कामेच्छा उत्पन्न हुयी, तथा इसके हजार बार मना करने पर भी, पाण्डु ने इसे बाहुपाश में भर लिया। पाण्डु का ऐसा करना ही था कि, शार के अनुसार, उसकी मृत्यु हो गयी। अपने पति पाण्डु के निधन पर, इसने न जाने कितना पश्चात्ताप किया, एवं खूब रोयी (म. आ. ११६.२५-३०)।

पाण्डु के साथ सती होने के लिए, इसने कुन्ती से बार बार प्रार्थना की। किन्तु शतशृङ्गनिवासी ऋषियों ने इसे आश्वासन देते हुए सती न होने के लिए बारबार अनुरोध किया। अन्त में कुन्ती की आज्ञा लेकर, इसने पाण्डु की मृतदेह के साथ चित्तारोहण किया (म. आ. ११६)।

सती होने के पूर्व इसने जो पाण्डवों को शिक्षा दी थी, वह भ्रातृत्व एवं एकता के लिए एक आदर्श शिक्षा है।

इसकी मृत्यु के उपरान्त, धृतराष्ट्र की आज्ञा से, विदुर आदि द्वारा पाण्डु तथा माद्री की अस्त्यैष्टिकर्म राजोचित ढंग से किया गया, एवं भाई-बन्धुओं द्वारा इन दोनों को जलाञ्जलि दी गयी।

मृत्योपरान्त माद्री ने अपने पति के साथ महेन्द्रभवन में निवास किया (म. स्व. ४.१६; ५.१२)।

२. मद्र कन्या एवं श्रीकृष्णपत्नी लक्ष्मणा का नामान्तर (लक्ष्मणा २. देखिये)।

३. सोमवंश के क्रोष्टु राजा की पत्नी, जिसे निम्नलिखित चार पुत्र थे:—युधाजित्, देवमीढुष, वृष्णि एवं अंधक (ब्रह्म. १४.१.३)

४. यादवराजा सात्वतपुत्र वृष्णि की पत्नी।

माधव—उत्तम मन्वन्तर के मनु का पुत्र।

२. भौत्य मनु का एक पुत्र।

३. भृगुकुल का एक गोत्रकार, जिसके लिए 'मथित' पाठभेद प्राप्त है।

४. एक राजा, जो तालध्वज नगर के विक्रम राजा का पुत्र था। इसकी चमत्कृतिपूर्ण जीवनकथा पद्म में प्राप्त है।

यह चन्द्रकला नामक क्षत्रिय स्त्री को अत्यधिक चाहता था, किन्तु वह इससे विवाह न करना चाहती थी। अतएव उसने माधव से कहा, 'सुलोचना नामक एक सुंदर राजकन्या की जानकारी मैं तुम्हें बताती हूँ, जो मुझसे कहीं अधिक सुंदर, तथा तुम्हारी जीवनसंगिनी बनने योग्य है।

ऋषद्वीप में—चंद्रकला के कथनानुसार, माधव अपने दिव्य अश्व की सहायता से समुद्र को लौंघ कर प्लक्ष-द्वीप गया, जहाँ सुलोचना रहती थी। वहाँ जाकर इसे पता चला कि, उसकी शादी एक 'विद्याधर' से होने वाली है। अतएव इसने तुरन्त ही सुलोचना को एक प्रेमपत्र भेजा, एवं अपनी जानकारी बताते हुए उससे शादी की इच्छा व्यक्त की। सुलोचना ने पत्रोत्तर देकर इसे आश्वासन दिया कि, विवाह मण्डप में विद्याधर का वरण न कर के, वह इसका ही वरण करेगी।

दूसरे दिन पाणिग्रहण के समय विवाहमण्डप में इसे नींद आ गयी। यह देखकर इसके प्रचेष्ट नामक सेवक ने सुलोचना का हरण किया, तथा यह सोता ही रहा। सुलोचना ने माधव से शादी करने का प्रण किया था। अतएव वह प्रचेष्ट के यहाँ से भाग कर, सुपेण नामक राजा के यहाँ वीरवर नामक पुरुष का वेष धारण कर के नौकरी करने लगी। एक दिन वहाँ उसने एक भेडा मारा, जो पूर्वजन्म में धर्मसुद्धि नामक राजा था (धर्मसुद्धि देखिये)।

सुलोचना से विवाह—सुलोचना के वियोग में पीड़ित होकर, एक दिन विद्याधर एवं प्रचेष्ट गंगा में प्राण देने के लिए जा रहे थे। किन्तु वे दोनों सुलोचना के द्वारा बचा लिये गये। बाद में सुलोचना को ढूँढते ढूँढते एकाएक वहाँ माधव भी आ पहुँचा, जो सुलोचना से निराश होकर गंगा के तट पर आत्महत्या के लिए आया था। सुलोचना को देखकर, इसने अपनी सारी कथा उसे कह सुनायी, एवं उसके साथ विवाह किया। आगे चलकर यही माधव प्रख्यात विष्णु-भक्त बना (पद्म. क्रि. ५.६)।

५. (सो. यदु.) एक यादव राजा, जो यदु राजा का पुत्र था। धूम्रवर्ण नामक नाम की कन्या इसकी माता थी।

इसके पुत्र का नाम सत्तत, एवं पौत्र का नाम भीम था। उनमें से भीम राजा राम दाशरथि राजा का समकालीन था।

सुविख्यात यादव वंश की स्थापना यदु एवं उसका पुत्र माधव राजा ने की थी। यादव-वंश का वंशक्रम निम्न-प्रकार है:—

माधव-सत्वत-भीम-कुश-लव-भीम-अंधक-रैवत-ऋक्ष-रैवत-विश्वगर्भ-वसु-बभ्रु-सुपेण-समाध- (ह. वं. २.३८)।

इनमें से सात्वतराज भीम राजा के राज्यकाल में मधुवन में स्थित लवणाक्ष का वध शत्रुघ्न ने किया, एवं मधुवन में मथुरा नगरों की स्थापना भीमराज के द्वारा की गयी।

६. एक धार्मिक ब्राह्मण। एक दिन होम में बलि देने के लिए यह एक बकरा लाया। यह उसका वध करने जा रहा था कि, उस बकरे ने मानव-वाणी में अपने पूर्व-जन्म की कथा बतायी, एवं इससे प्रार्थना की कि, यदि यह उसे गीता के नौवें अध्याय को सुना कर उसका वध करे, तो वह भी अपने दुःख से मुक्त हो जाये। माधव ने बकरे की प्रार्थना को मान कर उसे गीता के नौवें

अश्वथ को सुनाया, जिससे उसका उद्धार हुआ (म. उ. १८३)।

माधवी—नहुषकुलोत्पन्न राजा ययाति की कन्या (म. उ. ११३.८५५०)। यह अल्पयु थी। एक ब्रह्मनिष्ठ ने इसे बरदान दिया था कि, यह चाहे जितनी बार पुत्र उत्पन्न करे, लेकिन इसका जीवन सदैव एक मा रहेंगा, एवं पुत्र प्राप्त कर के भी यह बिरकुमारी रहेगी।

गालव ऋषि को दान—एक बार गुरुदक्षिणा ने सहायता प्राप्त करने के लिए गालव ऋषि ययाति के पास आया। उस समय गालव ऋषि का सारा पैसा पुण्यकार्य में खर्च हो गया था, किंतु उसे अपने गुरु विश्वामित्र को दक्षिणा कही न कही से देनी ही थी। ययाति के पास धन की कमी न थी, किंतु गालव ऋषि को देने के लिए उनके पास वैश्व आठ सौ अश्व न थे, जैसे कि गालव ऋषि ने विश्वामित्र के लिये ययाति से माँग थे। अतएव अपने अपनी पुत्री गालव को दे कर कहा, 'तुम मेरी पुत्री को ले सकते हो, दूसरे राजा का इसे दे कर तुम उनसे धन ही नहीं, बल्कि राज्य भी प्राप्त कर सकते हो (म. उ. ११४)।

हर्यश्व से विवाह—यह कन्या अत्यन्त सुंदर तथा सुलक्षणी थी, अतएव इसे दे कर गालव ऋषि इक्ष्वाकु-कुलोत्पन्न राजा हर्यश्व के पास गया। हर्यश्व ने पुत्र प्राप्ति के लिए अनेकानेक प्रयत्न किये थे, फिर भी वह निःसंतान था। वह माधवी को देखते ही उस पर मोहित हो गया, किंतु गालव ऋषि की माँग के अनुसार, उसके पास आठ सौ अश्व न थे, जो एक कान से कृष्ण तथा चन्द्रप्रमायुक्त हैं। इसलिए उसने गालव ऋषि के सामने शर्त रखी, 'इस समय मुझसे केवल दो सौ अश्व ले ले, जो मेरे पास हैं, तथा मुझे माधवी दे दो। इस मुझे माधवी से पुत्र प्राप्त हो जायेगा, तो मैं उसे तुम्हें वापस कर दूँगा'। ऐसा कह कर, गालव ऋषि की आज्ञा से राजा हर्यश्व ने माधवी को अपने पास रख लिया।

गालव ऋषि का कार्य पूर्ण करने के उद्देश्य से माधवी ने हर्यश्व से सारी वस्तुस्थिति बताकर कहा, 'मुझे अभी चार राजाओं को और दिया जायेगा'। कालान्तर में इसने अपने गर्भ से वसुमत् (वसुमत्सु) नामक पुत्र को जन्म दिया, जो आगे चलकर अयोध्या का राजा हुआ (म. उ. ११४.१७)।

प्रा. च. ८१]

काल अवधि समाप्त होते ही, गालव ऋषि ऐसे राजा हर्यश्व से ले गया, एवं यह भी राजवैभव के मोह से ऊन कर सहर्ष उसके साथ चलने को तैयार हो गयी। प्राप्त हुए वर के अनुसार, यह पुत्रः कुमारी बन गयी।

दिवोदास से विवाह—बाद में गालव माधवी को लेकर काशिराज दिवोदास राजा के पास गया। दिवोदास ने गालव को उसी प्रकार के दो सौ अश्व दिये, तथा हर्यश्व राजा के समान करार कर के, पुत्रोत्पन्न करने के लिए माधवी को अपने पास रख दिया। कालान्तर में माधवी से दिवोदास को 'प्रतर्दन' नामक पुत्र हुआ (म. उ. ११५.१५)। करार की अवधि समाप्त होने ही, गालव ऋषि दिवोदास के पास आया, तथा माधवी को वापस ले गया।

उशीनर से विवाह—अन्त में गुरुदक्षिणा की पूर्ति के लिए, गालव इसे भोज नगरी के उशीनर राजा के पास ले गया। उरलिखित प्रकार से करार कर के, गालव ने उशीनर से भी दो सौ अश्व प्राप्त किये, एवं पुत्र होने की अवधि तक के लिए माधवी को राजा के पास छोड़ दिया। कालान्तर में उशीनर राजा को माधवी से 'शिवि' नामक पुत्र हुआ (म. उ. ११६.२०)।

करार की अवधि समाप्त होने के बाद, जब गालव माधवी को उशीनर से ले कर जा रहा था, तब मार्ग में उसे गुरुदक्षिणा मिला। उसने इसे बताया, 'इसके बाद आरकी और ऐसे अश्व मिलना असम्भव है। इसलिए जो कुछ सौ अश्व मिले है, उन्हें लेकर आप अपने गुरु विश्वामित्र को दे दें, तथा शेष दो सौ अश्वों के स्थान पर, माधवी को ही उसे प्रदान करें'।

विश्वामित्र से विवाह—गालव को यह चीज पसन्द आयी, और उन्होंने ऐसा ही किया। विश्वामित्र ने भी गालव की यह प्रार्थना मान ली। कालान्तर में विश्वामित्र को माधवी से अष्टक नामक पुत्र हुआ (म. उ. ११७.१८)। अष्टक के जन्मोपरान्त, माधवी को गालव के हाथ सौंप कर विश्वामित्र तप के लिए चले गया।

विश्वामित्र को गुरुदक्षिणा देने में गालव सफल रहा, अतएव वह बड़ा प्रसन्न था। जिस कन्या के कारण, उसका यह संकट दूर हुआ, उस माधवी को ययाति राजा के यहाँ पहुँचाकर, गालव भी तपश्चर्या के लिए बन में चला गया।

स्वयंवर—राजा ययाति ने माधवी का स्वयंवर निश्चित करके, इसे रथ पर बैठा कर सारे देश में घुमाया। किन्तु

इसने किसी राजपुत्र को पसन्द न करके, वन में रहकर तपस्या करना ही स्वीकार किया।

पुत्र—इस तरह माधवी को कुल चार पुत्र उत्पन्न हुए, जिनके नाम निम्नप्रकार थे:— १. वसुमनस् (वसुमत), जो इसे हर्यश्च राजा से उत्पन्न हुआ था (म. उ. ११४. १७); २. प्रतर्दन, जो इसे दिवोदास राजा से उत्पन्न हुआ था (म. उ. ११५. १५); ३. शिवि, जो इसे उशीनर राजा से उत्पन्न हुआ था (म. उ. ११६. २०); ४. अष्टक, जो इसे विश्वामित्र ऋषि से उत्पन्न हुआ था। (म. उ. ११७. १८)।

ययाति का उद्धार—आगे चल कर, इसका पिता ययाति अपने इहलोक के पुण्यकर्मों के कारण स्वर्ग को प्राप्त हुआ। किन्तु वहाँ ययाति ने देव, ऋषि एवं ब्राह्मणों का अवमान किया, जिस पाप के कारण, देवों ने उसे स्वर्ग से भ्रष्ट कराया। फिर उसने देवों की प्रार्थना की, 'मेरे पापनाशनार्थ मुझे सुजनसंगति का लाम मिले, जिस कारण मैं स्वर्ग को पुनः प्राप्त कर सकूँ'।

देवों ने ययाति की इस प्रार्थना सुन ली, एवं उसके पौत्र एवं माधवी के पुत्र वसुमनस्, प्रतर्दन, शिवि एवं अष्टक जहाँ यज्ञ कर रहे थे, उसी नैमिषारण्य में उन्होंने ने ययाति को ढकेल दिया। माधवी के चारों पुत्रों ने स्वर्ग से भ्रष्ट हुए अपने मातामह का अत्यंत आदरभाव से स्वागत किया, एवं अपने यज्ञों का एवं धर्माचरण का सारा पुण्य स्वीकारने की प्रार्थना उसे की।

ययाति को पुण्यदान—इतने में माधवी वहाँ प्रविष्ट हुयी, एवं पुत्र एवं पौत्रों के पुण्य का स्वीकार करने का सर्वप्रथम अधिकार पिता एवं पितामह को ही है, ऐसी धर्माज्ञा इसने ययाति के बतायी। फिर अपने चारों पुत्रों के यज्ञकर्म का पुण्य स्वीकारने की, एवं उसके बल से स्वर्ग में पुनः प्रविष्ट होने की इसने उसे प्रार्थना की।

इस प्रकार माधवी ने गालव ऋषि को संकटमुक्त कराया, एवं अपने पुत्रों के पुण्य का दान स्वर्ग से च्युत अपने पिता को कर उसे स्वर्गप्राप्ति कराया (म. आ. ८७; म. उ. १०४-११८)।

अपनी कन्या के द्वारा ययाति का उद्धार होने की कथा मत्स्य में भी प्राप्त है। वहाँ वसुमनस्, प्रतर्दन, शिवि एवं अष्टक इन चारों का मातामह ययाति था, ऐसा निर्देश भी प्राप्त है। किन्तु मत्स्य में ययाति राजा के कथा में माधवी का निर्देश प्राप्त नहीं है (मत्स्य. ३५-४२)।

कालविपर्यास—उत्तम कन्या अपने कुल का, एवं पितरों का उद्धार करनेवाली होती है, इस तत्व का प्रतिपादन करने के लिए माधवी की कथा महाभारत में दी गयी है। इस कथा का प्रमुख उद्देश्य तत्त्वप्रतिपादन होने के कारण, उस में ऐतिहासिक दृष्टि से कालविपर्यास के अनेक दोष आये हैं। उस कथा में हर्यश्च, दिवोदास, उशीनर एवं विश्वामित्र समकालिन बताये गये हैं, जो ऐतिहासिक दृष्टि से वास्तव नहीं है।

२. रथध्वज राजा के पुत्र धर्मध्वज की पत्नी, जिसकी कन्या का नाम तुलसी था।

३. पुरुपुत्र जनमेजय 'प्रथम' की पत्नी।

४. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४.२.७)।

माधुकि—एक आचार्य का पौत्रक नाम, जिसे मान्यता नहीं प्रदान की गयी थी (श. ब्रा. २.१.४.२७)।

माधुच्छंदस—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। अन्नमर्षण एवं जेतु नामक आचार्यों का पौत्रक नाम 'माधुच्छंदस' बताया गया है।

माध्यंदिन—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. एक शाखाप्रवर्तक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की यजुःशिष्य परंपरा में से याज्ञवल्क्य के पंद्रह शिष्यों में से एक था। शुक्लयजुर्वेदसंहिता एवं शतपथ ब्राह्मण के काण्व एवं माध्यंदिन शाखाओं के स्वतंत्र ग्रंथ उपलब्ध है। उनमें से माध्यंदिन शाखा का, एवं उस शाखा के ग्रंथों का यह प्रवर्तक आचार्य था।

शुक्लयजुर्वेद की एक शिक्षा की रचना भी इसने की थी, जिसमें कुल चालीस श्लोक हैं। शुक्लयजुर्वेद की 'लघुमाध्यंदिन' नामक एक अन्य शिक्षा भी इसने लिखी थी, जिसमें कुल अठ्ठाईस श्लोक हैं।

माध्यंदिनायन—एक आचार्य, जो सौकरायण नामक ऋषि का शिष्य था। माध्यंदिन का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ था। इसके शिष्य का नाम जानालयन था (बृ. उ. ४.६.२ काण्व.)।

माध्यम—वैदिक ऋषिसमुदाय का एक सांकेतिक नाम, जो ऋग्वेद के दूसरे मण्डल से ले कर सातवें मण्डल तक के रचयिता ऋषियों के लिए प्रयुक्त किया जाता है (कौ. ब्रा. १२.३; ऐ. आ. २.२.२)। 'ऋग्वेद के मध्य से संबंधित' अर्थ से इन्हे 'माध्यम' नाम प्राप्त हुआ होगा। आश्वलायन गृह्यसूत्र के ब्रह्मयज्ञमर्षण में इनका निर्देश प्राप्त है (आश्व. गृ. ३.४.२)।

मान—अगस्त्य ऋषि का नामान्तर (ऋ. ७.३३.१३)। इसके वंशजों का निर्देश ऋग्वेद में 'मानाः' नाम से किया है, जो ऋग्वेद के मुख्यांत सूक्तद्वये माने जाते हैं (ऋ. १.१६९.८)। ऋग्वेद में मान्य नामक एक ऋषि का भी निर्देश प्राप्त है, जो संभवतः इसका ही पुत्र होगा। 'मान' 'मान्य', एवं 'मानाः', इन सारे ऋषियों का पैतृक नाम ऋग्वेद में 'मैत्रावरुणि' बताया गया है।

मानदन्तव्य—एक आचार्य (खा. य. २.१.५; गो. य. १.६.१)। संभवतः यह एवं 'मानुतन्तव्य' दोनों एक ही रहे होंगे।

मानव—नामानेन्द्रि एवं शार्ङ्गांत नामक आचार्यों का पैतृक नाम (म. ब्रा. ५.१४.२; ४.३१.७; श. ब्रा. ४.१.५.२)। मनु का वंशज इस अर्थ से यह नाम प्रयुक्त हुआ होगा। ऋग्वेद में चक्षुस् एवं नाहुप नामक सूक्त-द्रष्टाओं का पैतृक नाम 'मानव' बताया गया है (ऋ. १.१०६.४-६; ९.१०१.७-९)।

२. एक पुराणवेत्ता एवं धर्मशास्त्रकार, जिसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त है :—मानव उपपुराण (दे. भा. ३.३); मानव श्रौतसूत्र (मैत्रायणी शाखा); मानव बालुलक्षण।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

४. उत्तम मन्वंतर का एक देवविरोध।

मानवी—परतु एवं इडा नामक वैदिक वाङ्मय में निर्दिष्ट स्त्रियों का पैतृक नाम (श. ब्रा. १.८.१.२६; तै. सं. २.६.७.३; ऋ. १०.८६.३३)। मनु का स्त्रीवंशज इस अर्थ से यह नाम प्रयुक्त हुआ होगा।

मानस—ज्योतिर्भास नामक लोक में रहनेवाले पितरों का सानुदेक नाम।

२. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था।

३. दशवर्तिन् देवों में से एक।

४. बानुर्ककुलोत्पन्न एक नाम, जो जनमेजय के सपत्न्य में दम्य हुआ था (म. आ. ५.२.५)।

५. धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाम, जो जनमेजय के सपत्न्य में श्व हुआ था (म. आ. ५.२.१५)। इसके नाम के लिए 'मानव' पाठभेद प्राप्त है।

मानारि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मानिनी—विदूरथ राजा की कन्या, जो सूर्यवंशीय राजा की पत्नी थी (राज्यदर्शन देखिये)।

मानुतंतव्य—ऐकादशाक्ष नामक राजा का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ५.३०)। मनुतंतु का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा। ऋतपथ ब्राह्मण में सौम्य नामक दो आचार्यों का पैतृक नाम 'मानुतंतव्य' बताया गया है (श. ब्रा. १३.५.३.२)।

मान्दार्य मान्य—एक ऋषि का नाम, जो संभवतः अगस्त्य ऋषि का ही नामान्तर है। मान का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा। ऋग्वेद के अगस्त्य ऋषि के द्वारा रचित सारे सूक्तों के अंत में सूक्तकार के लिए यह उपाधि प्रयुक्त की गयी है (ऋ. १.१६५.१५; १.६६.१५; १.६७.११; १.६८.१०)।

मान्धातु यौवनाश्व—(सु. इ.) ऋग्वेद में निर्दिष्ट अयोध्या का एक सुविख्यात राजा, जो अश्विनो का आश्रित था (ऋ. १. ११२. १३) ऋग्वेद में इसका निर्देश अनेक बार प्राप्त है, किंतु यहाँ प्रायः सर्वत्र इसे 'मंधातु' कहा गया है। 'मान्धातु' का शब्दशाः अर्थ 'पवित्र व्यक्ति' है, जिस आशय में इसका निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १.११२.१३; ८.३९.८; १०.२.२)। अन्य एक स्थान पर इसे अंगिरस की भाँति पवित्र कहा गया है (ऋ. ८. ४०.१२)। लुडविग के अनुसार, यह एक राजर्षि था, एवं यह एवं नामाक दोनों एक ही व्यक्ति थे (ऋ. ८. ३९-४२; लुडविग-ऋग्वेद अनुवाद ३. १०७)।

यह इक्ष्वाकुवंशीय युवनाश्व (द्वितीय) अथवा सौमिनि राजा का पुत्र था, एवं इसकी माता का नाम गौरी था, जो पौरव राजा मतिनार राजा की कन्या थी। इसी कारण इसे 'यौवनाश्व' पैतृकनाम, एवं 'गौरिक' मातृक नाम प्राप्त हुआ था (बा. सु. ८. ६६-६७)। पुराणों में इसे विष्णु का पाँचवाँ अवतार, 'चक्रवर्तिन्' 'सम्राट' 'दानशूर धर्मात्मा' एवं सौ अश्वमेध एवं राजसूय करनेवाला बताया गया है। यह मनु वैवस्वत के वंश में वीसवीं पिढ़ी में उत्पन्न हुआ था, जिस कारण इसका राज्यकाल २७४० ई. पू. माना जाता है (मनु वैवस्वत देखिये)। यह यादव राजा शशबिन्दु का समकालीन था, जिससे इसका आरम्भ शत्रुत्व रहा था। इसने इन्द्र का आधा सिंहासन जीत लिया था।

इसने अपने राज्य के सीमावर्ती पौरव एवं कान्यकुब्ज राज्यों को जीता था, एवं उत्तरीपश्चिम में स्थित हृह्य एवं आनव राजाओं को परास्त किया था। यादव राजा इसके रिश्तेदार थे, जिस कारण इसने उनपर आक्रमण नहीं

किया था। किन्तु पश्चिमी भारत में स्थित हैहय राजाओं को इसने जीता था।

जन्म—इसके पिता युवनाश्व राजा को सौ पत्नियाँ थी, परन्तु उनमें से किसी को भी कोई संतान न थी। अतएव वह हमेशा दुःखी रहता था। एक बार वह जंगल में घूमते घूमते एक आश्रम में आ पहुँचा। वहाँ के ऋषियों ने उसके द्वारा पुत्रप्राप्ति के लिए एक यज्ञ करवाया। यज्ञ समाप्त होने के बाद, जड़ सारे लोग भोजन कर रात्रि को सो रहे थे, तब युवनाश्व राजा की नींद टूटी, तथा वह अत्यधिक प्यासा हुआ। प्यास बुझाने के लिए यज्ञमंडप में रखे हुए हविर्भागयुक्त पेय पदार्थ (पृषदाज्य) उसने भूल से प्राशन किया, जो ऋषियों ने उसकी राजपत्नियों को गर्भवती होने के लिए रक्खा था। कालान्तर में उसके द्वारा पिया गया 'पृषदाज्य जल' इसके उदर में गर्म का रूप धारण कर बढ़ने लगा, तब ऋषियों ने युवनाश्व राजा की कुक्षि का भेद कर उसके उदर से बालक को बाहर निकाला। यही मान्धातु है।

संगोपन एवं नामकरण—अब यह समस्या थी कि, इसका पालनपोषण कौन करे। उसी समय भगवान् इन्द्र प्रत्यक्ष प्रकट हुए, तथा उन्होंने कहा, 'यह मुझे पान करेगा (मां धाता), अर्थात् इसका पोषण मैं करूँगा'। ऐसा कह कर इंद्र ने अपनी अमृतपूर्ण करंगुली इसे पीने के लिए दे दी। इसीलिए इस बालक का नाम 'मान्धातु' (मुझे चूसनेवाला) रक्खा गया (म. व. १२६; श्रौ. परि. १. क्र. ८ पंक्ति. ५२८-५४९; शां. २९.७४-८६; दे. भा. ७.९-१०)।

पराक्रम—इन्द्रहस्त के पान करने के कारण, यह अत्यन्त बलवान् हुआ, एवं शीघ्रता के साथ बढ़ने लगा। बारह दिन की ही आयु में यह बारह वर्ष के लड़के के समान दिखाई देने लगा। शीघ्र ही यह सब विद्याओं का परमर्षित हो कर तप करने में तत्पर हुआ। अपने तप के सामर्थ्य पर ही इसने 'अजगत्र' नामक धनुष, तथा अन्य दिव्यास्त्रों को प्राप्त किया। यह बड़ा वीर एवं पराक्रमी राजा था, जिसने अंगार, मरुत्त, गथ तथा बृहद्रथ आदि को युद्ध में परास्त किया था। द्रुह्यु राजवंश के वसु राजा के पुत्र रिपु के साथ इसका चौदह माह तक घोर संग्राम चलता रहा। किन्तु अन्त में इसने उसे पराजित कर उसका वध किया (वायु. ९९. ८)। यही नहीं, इसने अपने बलवीर्य से रावण को भी पराजित किया था (भा. ९.६.२६-३८)।

यह इतना बहादुर था कि, एक दिन में ही इसने सारी पृथ्वी जीत ली थी (म. शां. १२४.१६), तथा अयसूनक सी राजसूय तथा अश्वमेध यज्ञ किये थे। इसके पराक्रम का वर्णन विष्णु पुराण में निम्नलिखित रूप से किया गया है—

यावत्सूर्य उदेति स्म, यावच्च प्रतिष्ठति ।

सर्वे तद्यौवनाश्वस्य, मांघातुः क्षेत्रमुच्यते ॥

(विष्णु. ४.२.१९)

शूरवीर होने के साथ साथ यह दानवीर भी था। इसने बृहस्पति से गोदान के विषय में प्रश्न किया था (म. अनु. ७६.४)। यही नहीं, यह सदा लाखों गोशान भी करता था (म. अनु. ८१.२-६)। दस्युओं से इसने अपने प्रजा की रक्षा की थी, जिससे इसे 'त्रसदस्यु' नाम प्राप्त हुआ था। इसने एक बार दानस्वरूप अपनी रक्तदान भी दिया था।

व्रतवैकल्य—प्रजापालन के प्रति हमको कर्तव्यभावना तथा दयालुता का परिचय पद्मपुराण से मिलता है। एक बार इसके राज्य में वर्षा न हुयी, जिसके कारण सारे देश में अकाल पड़ गया। सारे देश में हाहाकार मच गया, लोग अपने नित्यकर्मों को भूल गये। वेदों का पठनपाठन बन्द हो गया। प्रजा की इस दशा को देखकर यह बड़ा दुःखी हुआ, एवं इसका कारण जानने के लिए इसने आंभिरस ऋषि से पृच्छा की। तब उसने बताया, 'तुम्हारे राज्य में एक वृषल तप कर रहा है, इसीलिए यह अकाल फैला है। जब तक उसका वध न किया जायेगा, तब तक जलवर्षा न होगी'। किन्तु इसने तपस्वी का वध करना उचित न समझा, तथा दुर्मित्र को तमाप्त करने के लिए, पञ्चा नामक एकादशी का व्रत करना प्रारंभ किया। उस व्रत के कारण, सारे राज्य में खन्न वर्षा हुयी, एवं लोगों को भी अकाल से छुटकारा मिला (पद्म. उ. ५७)। पद्मपुराण में अन्यत्र कहा है कि, इसने 'वरुथिनी एकादशी' का व्रत भी किया था (पद्म. उ. ४८)।

संवाद—इसका विभिन्न ऋषिमुनियों के अनिरिक्त अन्य देवीदेवताओं के साथ भी संवाद था। इंद्र इसका परम मित्र था। सृजन्य को समझाते हुए नारदजी ने इसकी महत्ता का वर्णन किया था (म. द्रो. ५.९)। श्रीकृष्ण ने स्वयं अपने मुक्त से इसके गुणों का गान करते हुए, इसके यज्ञों के प्रभाव का वर्णन किया था (म. शां. २९.७४-८६)।

राजधर्म के विषय में इंद्र-रूपधारी विष्णु के साथ इसका संवाद हुआ था (म. शां. ६४-६५)। अंगिरापुत्र उतथ्य ने इसे राजधर्म के विषय में उपदेश दिया था, जो 'त्राथ्य गीता' नाम से सुविख्यात है (म. शां. ९१-९२)। इसके राज्य में मांसभक्षण का नियम था (म. अनु. ११५.६१)।

इसने वसुहोम (दसुदम) से वंशर्तति के विषय में जानकारी पूरी थी (म. शां. १२२)।

सृष्टि-इंद्र में देवयोग से इसके मन में अपने पराक्रम के प्रति गर्व की भावना उत्पन्न हो गयी, एवं इंद्र के आगे राज्य को प्राप्त करने की इच्छा से, इमने उसे युद्ध के लिए चुनौती दी। इंद्र ने स्वयं युद्ध न कर के इसे लक्षणासुर से युद्ध करने के लिए कहा। पश्चात् लक्षण ने इसे युद्ध में परास्त कर इसका वध किया (वा. रा. उ. ६७.२१)। आगे चल कर यही लक्षण दशरथ के पुत्र शत्रुघ्न के द्वारा मारा गया था।

परिवार--मोधातृ श्राविय था, किंतु अपनी तरस्या के चल भर ब्राह्मण बन गया था (वायु. ९१.११४)।

मोधातृ का विवाह यादव राजा शशविन्दु की कन्या विन्दुमती से हुआ था, जिनकी माता का नाम चित्ररथी था। उससे इस सुसुकेद, अम्बरीष तथा पुरुकुल्य नामक पुत्र हुए थे (वायु. ८८.७०-७२)। पद्मपुराण में इसके पुरुकुल्य, धर्मसेतु, सुसुकेद, शक्रमित्र नामक चार पुत्र विधि गोत्र हैं (पद्म. सू. ८)। इसे पञ्चास कन्याएँ भी थीं, जिनका विवाह सोमरि ऋषि के साथ हुआ था। इसे वावेरी नामक एक बहन भी थी, जिसका विवाह कान्यकुब्ज देश का राजा जह्नु से हुआ था। कई ग्रंथों में वावेरी को इत्यर्क कन्या अथवा पौत्री कहा गया है।

इसके पश्चात् इसका ज्येष्ठ पुत्र पुरुकुल्य अयोध्या देश का राजा बन गया, जिसने अपने पिता का राज्य और भी विस्तृत किया। उसने नर्मदा नदी के तट पर रहने-वाले नाम लेपा की कन्या नर्मदा से विवाह कर, मोनिय नगर्व नामक उनके शत्रुओं को परास्त किया था। इन सारे निषेधों से प्रतीत होता है कि, पुरुकुल्य के राज्य का विस्तार नर्मदा नदी के किनारे तक हुआ था (पुरुकुल्य देखिये)।

मोधातृ का तृतीय पुत्र सुसुकेद एक पराक्रमी राजा था, जिने नर्मदा नदी के तट पर ऋक्ष एवं पारियात्र पर्वतों के बीच एक नगर की स्थापना की थी। वही नगरी आगे

चल कर 'माहिष्मती' नाम से सुविख्यात हुयी (सुसुकेद एवं माहिष्मत् देखिये)।

मान्य—अगस्त्य ऋषि का नामान्तर (मान्यार्थ मान्य देखिये)। मान का वंशज होने के कारण, अगस्त्य ऋषि को यह पौत्रक नाम प्राप्त हुआ होगा।

मान्य मित्रानरुण—एक वैदिक यज्ञतट्ठा (ऋ. ८. ६७)।

मान्यमान—देवक नामक राजा का पौत्रक नाम (ऋ. ८.१८.२०)। मन्यमान का पुत्र होने के कारण, देवक को यह पौत्रक नाम प्राप्त हुआ होगा। मान्यमान का शब्दशः अर्थ 'अभिमानी व्यक्ति' होता है।

मान्यवती—करंधमपुत्र अविश्विन राजा की पत्नी, जो भीम राजा की कन्या थी। इसके स्वयंवर के समय, अविश्विन राजा ने इसका हृषण किया था (मार्क. ११९. १७)।

मासतेय—सर्वतमन् ऋषि का मातृक नाम (ऋ. १. १४.७.३; ऐ. शां. ८. २३. १)। मसता का वंशज होने के कारण, इसे यह मातृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

मांसुधि—सुशिककुलोत्पन्न एक गोधकार।

मायव—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक राजा (ऋ. १०. ९३. १५)। लुडकिग के अनुसार, यह राम का पौत्रक नाम था (लुडकिग, ऋग्वेद अनुवाद, ३.१६६)। मयु अथवा मायु का वंशज होने से, उसे यह पौत्रक नाम प्राप्त हुआ होगा।

मायव—अधर्म नामक धर्मविरोधी पुरुष की कन्या, जिनकी माता का नाम मृग था। ब्रह्म नामक अपने भाई से इसे लोम एवं निकृति नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (अधर्म देखिये)।

ऋषि का विनाश करने साय्य द्रवा ने इसकी मदद ली थी। उस समय विष्णु कीत वसुओं का निर्माण इसके द्वारा किया गया था :-

(१) मायवी—जिससे आगे चल कर समस्त वेदों का निर्माण हुआ। तदोपरान्त वेदों से समस्त संसार का निर्माण हुआ।

(२) पश्यवती—जिससे आगे चल कर समस्त ओषधी एवं जीवोपद्रव करारदियों का निर्माण हुआ।

(३) शानदिद्यः—जिससे आगे चल कर सारे शास्त्रों का निर्माण हुआ।

(४) लक्ष्मी—जिससे आगे चल कर वस्त्र एवं आभूषण उत्पन्न हुये।

(५) उमा--जिसने शिव की सहाय्यता ले कर समस्त शास्त्रों का भूलेक में प्रसार किया। इसी कारण उमा को ज्ञानमाता नाम प्राप्त हुआ।

(६) वर्णिका--जिसने समस्त सृष्टि के संरक्षण का भार अपने कंधे पर लिया, एवं दुष्टों का संहार किया। इसीने ही भागे चलकर मधु, कैटभ एवं रुद्र नामक दैत्यों का वध किया था।

(७) धर्मद्रवा--एक नदी, जो भागे चल कर गंगा नाम से प्रसिद्ध हुयी (पद्म. सू. ६२)।

मायामोह--विष्णु का अवतार, जो उसने दैत्यों की वंचना करने के लिए धारण किया था।

मायावती--मदन की पत्नी रति का नामांतर, जो उसने शंकरासुर के घर रहते समय धारण किया था।

शिव के द्वारा मदन का दाह होने पर, रति शंकरासुर के यहाँ रहने के लिए गयी। आगे चल कर, मदन ने श्रीकृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न के रूप में पुनः जन्म लिया। उस समय इसने प्रद्युम्न के द्वारा शंकरासुर का वध किया, एवं प्रद्युम्न के साथ विवाह किया (भा. १०.५५.१६; विष्णु. ५.२७; प्रद्युम्न देखिये)।

मायाविन्--एक असुर, जो मयासुर का पुत्र था। इसकी माता का हेमा था। ब्रह्मांड में इसकी माता का नाम 'रमा' दिया गया है (ब्रह्मांड. ३.६.२८-३०)। बालि ने इसका वध किया।

मायु--एक आचार्य, जिसका निर्देश तान्व एवं पार्थ नामक ऋषियों के साथ प्राप्त है।

मारिषा--दस प्रचेताओं की पत्नी, जो प्राचेतस वृक्ष की माता थी (म. आ. ७०.५)।

इसके पिता का नाम कण्डु ऋषि था, जिसे प्रम्लोचा नामक अप्सरा से यह उत्पन्न हुयी थी (विष्णु. १.१५; भा. ४.३०)। इसका जन्म होने ही, प्रम्लोचा अप्सरा ने इसे एक पेड़ के नीचे रख दिया, एवं वह स्वयं स्वर्ग चली गयी। इस समय यह भूल के मारे रोने लगी, तब सोम ने अपनी तर्जनी से अमृत पिला कर इसे पालभोस कर बड़ा किया (विष्णु. १.१५; ब्रह्म. १७८; ह. वं. १.२)। जिस वृक्ष के नीचे यह थी, उसी वृक्ष के सहारे यह बड़ी हुयी। इसलिये इसे 'वार्धी' नामांतर प्राप्त हुआ (भा. ४.३०.४७; म. आ. १८८.१०*)।

मारीच--एक राक्षस, जो रावण का आश्रित था। यह सुंद राक्षस का पुत्र था, एवं इसकी माता का नाम ताटका था (वा. रा. वा. २५)। ब्रह्मांड में इसे हाड

राक्षस का पुत्र, एवं हिरण्यकशिपु का नाती बताया गया है (ब्रह्मांड. ३.५.३६)। ब्रह्मा के वर के कारण, इसे देवताओं से भी अजेयत्व प्राप्त हुआ था (वा. रा. अर. ३८)।

पूर्वजन्म--पूर्वजन्म में यह एक यक्ष था, जिसके पिता का अगस्त्य ऋषि ने वध किया था। बड़ा होने पर, इसे अगस्त्य ऋषि के इस कृत्य का ज्ञान हुआ, जिस कारण इसने उस पर आक्रमण किया। पश्चात् अगस्त्य ऋषि ने इसे अगले जन्म में राक्षस प्राप्त होने का शाप दिया (वा. रा. वा. २५)।

राम से युद्ध--इसमें दस हजार हाथियों का बल था। यह सुमालि राक्षस के चार अमात्यों में से एक था। अपनी माता के साथ यह मलद तथा करुप देशों में रहता था, तथा पास ही होनेवाले विश्वामित्र के यज्ञ का विध्वंस करता था। इसलिये विश्वामित्र अपने यज्ञ के संरक्षण के लिए, राम को दशरथ से ले आये। राम के वाण से इसके भाई सुवाहु का वध हुआ, एवं उसी वाण के पुच्छभाग से आहत हो कर, यह समुद्र में जा गिरा (म. स. पारि. १. क्र. २१. पंक्ति ५०१)। बाद में यह लंका में राक्षसों का आश्रित बना कर रहने लगा।

जिस समय राम, लक्ष्मण तथा सीता वंचवटी में आ कर रहे थे, तब यह दो राक्षसों के साथ हिरन का रूप धारण कर, राम से अपनी शत्रुता का बदला लेने के लिए वहाँ गया। इन्हे देख कर राम ने बाण छोड़े, जिसमें इनके दोनों साथियों का वध हुआ, एवं यह वहाँ से भाग निकला (वा. रा. अर. ३८.३९)।

वध--बाद में जब रावण ने सीताहरण का विचार किया, तब उसने इसकी सहायता माँगी। परन्तु यह राम से इतना अत्यधिक पवराता था कि, 'रं' शब्द से आरम्भ होनेवाले राजीव, रत्न तथा रमणी शब्द सुनकर ही धैर्य खो बैठता। इसने रावण से बारबार अनुनाय विनय किया, किन्तु उसके डरवाने धमकाने में आ कर, इसे मजबूरन उसका साथ देना पड़ा (वा. रा. अर. ४०-४१)।

वंचवटी में आने के उतरांत, यह सुंदर मृग का रूप धारण कर घूमने लगा। इसे देखकर सीता ने राम से इसे मारने के लिये कहा, जिससे वह इसके मृगचर्म की सुंदर केशुकी बना सके। सीता की इच्छा पूर्ण करने के हेतु, राम ने इसका पीला किया, एवं इसका वध किया (वा. रा. अर. ४३-४५; म. व. २६२.१७-२१)। मरने समय इसने राम की मौलि पुकारा, 'लक्ष्मण दौड़ो'। इसे

सुन कर, सीता ने राम को आनक्ति में जान कर, तुरन्त लक्ष्मण को उसकी सहाय्यार्थ भेजा। इधर रावण ने सीता का हरण किया।

२. कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

मारीचि--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

मारुत--सृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

३. गितान एवं श्रुतान नामक वैदिक सूक्तद्रष्टाओं का सामूहिक नाम।

मारुतंनव्य--विश्वामित्र ऋषि के पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.२४)।

मारुताशन--स्कंद का एक सैनिक (म. ध. ४४. ५७)।

मारुताश्व--विश्व नामक राजा का पैतृक नाम (ऋ. ५.३६.९)। मरुताश्व का वंशज होने के कारण, उसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

मार्कट--मार्कंड नामक अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार के लिए उगलव्य पाठभेद (मार्कंड. २. देखिये)।

मार्कटि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मार्कंड--सृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'मार्कट' पाठभेद प्राप्त है।

मार्कंडेय--सृगुवंश में उत्पन्न एक महामुनि, जो मरुंड अथवा मरुंडु ऋषि का पुत्र था (अग्नि. २०.१०; विष्णु. १.१०.३; नारद. १.४; भा. ४.१-४५)। मरुंड का पुत्र होने से इसे 'मार्कंडेय' अथवा 'मार्कंड' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (मत्स्य. १०३.१३-१५)।

जन्म--पारिष्टर के अनुसार, उपनस्य युक्त का पुत्र मर्क इत्याका पिता था। उपनस्य युक्त के सारे वंशज दानव एवं अनार्य लोगों के साथ संबंध प्रस्थापित करने के कारण विनष्ट हुए। उनमें से केवल मर्क एवं शंख इन दो पुत्रों ने आर्य लोगों से संबंध प्रस्थापित किया, जिस कारण उनकी परंपरा अबाधित रही। मर्क का पुत्र मार्कंडेय तो सृगुकुल का सुविख्यात गोत्रकार बना (मत्स्य. १९५. २०)।

अमरत्व--दीर्घायु प्राप्त करनेवाले ऋषि के रूप में मार्कंडेय का निर्देश अनेक ग्रंथों में प्राप्त है (म. व. ८६. ५; १८०.३९)। कहीं कहीं इसके अमर होने का उल्लेख भी मिलता है (म. व. १८०.४)। संभव यही है कि,

अपने मार्कंडेय नामक वंशजों के कारण इसकी परंपरा अबाधित रही हो, एवं उसीका संकेत इसे अमर कह कर किया गया हो।

मार्कंडेय दशवें व्रतायुग में उत्पन्न हुआ था। इसकी पत्नी का नाम धूमोष्णा था (म. अनु. १४६.४)। प्रारम्भ में इसकी आयु कम थी, किन्तु बाद में यह दीर्घायु हुआ। पहले इसे केवल छः महीने की आयु प्राप्त हुयी थी। किन्तु पाँच महीने तथा चौबीस दिन वीतने के बाद, सप्तपियों ने इसे दर्शन देकर दीर्घायु प्राप्त करने का आशीर्वाद दिया। ब्रह्मा ने इसे ऋषिऋष्यत्वं तथा कल्यांत तक आयु प्रदान की, तथा पुराणों के रचने का वर प्रदान किया।

पाँचवे वर्ष में इसका उपनयन संस्कार हुआ था। सप्तपियों ने इसे दण्ड तथा यज्ञोपवीत दिया था (पद्म. सु. ३३)। इसने अपना एक आश्रम स्थापित किया था, जिसकी पूर्ण जानकारी पुलस्त्य ने राम को बतायी थी (नारद. १.५)।

तपस्या--मार्कंडेय ऋषि ने अत्यधिक शोर तप किया था। यह तप छः मन्वन्तरों तक चलता रहा। इसकी तपस्या से घबरा कर, पुरंदर नामक इन्द्र ने इसकी तपस्या में विघ्न उत्पन्न करने के लिए अनेकानेक प्रयत्न किये। पुरंदर ने सर्वप्रथम वसंत का निर्माण किया; बाद में अप्सराओं एवं गंधर्वों आदि के साथ कामदेव को इसकी तपस्या भंग करने के लिए भेजा, किन्तु यह अपनी तपस्या में निमग्न रहा। इसकी तपस्या से प्रवृत्त हो कर नर-नारायण, ब्रालनुकुंदरुपी ब्रह्म, तथा स्वयं शंकर भगवान् ने इसे दर्शन दिया। शंकर ने इसे वर प्रदान करते हुए कहा, 'तुम्हारी सारी इच्छायें पूर्ण होंगी। तुम्हें अविच्छिन्न यज्ञ प्राप्त होगा। तुम त्रिकालदर्शी होंगे, तुम्हें आत्मनात्मविचार का सम्यक ज्ञान होगा, तथा तुम श्रेष्ठ पुराण के कर्ता हो कर, कल्पसमाप्ति तक अबर एवं अमर होंगे (भा. १२.८-१०)। इस प्रकार शंकर ने इसे चौदह कल्पों तक की आयु प्रदान की (भा. ४.१.४५; म. व. १३०.३२)।

श्रेष्ठता--यह ब्रह्माजी की सभा में रह कर उसकी उपासना करता था (म. स. ११.१२)। ब्रह्माजी के पुंकर क्षेत्र में हुए यज्ञ में भी यह उपस्थित था (पद्म. सु. ३३)। इसने हजार हजार युगों के अंत में होनेवाले अनेक महाप्रलय के दृश्य देखे थे। ब्रह्मा को छोड़ कर संसार में इससे बड़ी आयुवाला कोई दूसरा व्यक्ति नहीं था। प्रलयकाल में जब सारा सृष्टि विनष्ट हो जाती है,

तत्र यह ब्रह्माजी के पास रह कर उनकी आराधना में निमग्न रहता है। प्रलयकाल के उपरांत, पुनः रची गयी सारी सृष्टि को सब से पहले यही देखता है। इसने अपनी चित्तवृत्तियों का निरोध कर, लोकगुरु ब्रह्मा की कृपा से मराचि आदि प्रजापतियों को भी जीत लिया था।

यह भगवान् नारायण के समीप रहनेवाले भक्तों में सर्वश्रेष्ठ था। इसने सर्वव्यापक परब्रह्मा की उपलब्धि के लिए, स्थानभूत हृदयकमल की कर्णिका का यौगिक-कला से उद्घाटन किया था, एवं वैराग्य तथा अभ्यास से प्राप्त हुयी दिव्यदृष्टि के द्वारा विश्वरचयिता भगवान् का अनेक बार दर्शन किया था। इसलिए सब को मारनेवाली मृत्यु, तथा शरीर का जंत्र बना देनेवाली जरा इसका स्वामी नहीं कर सकती थी (म. व. १८६.२-११)।

इसने कल्पांत में वटवृक्ष तथा प्रलय का भी दर्शन किया था (ब्रह्म. ५२.५३)। इसने बालमुकुन्द के उदर में प्रवेश कर वहाँ ब्रह्माण्ड का दर्शन किया था। (म. व. १८८.८८-१२५)। उदर से बाहर निकलने पर, इसने बालमुकुन्द का स्तन कर उसमें वातालय किया था (ब्रह्म. ५४.५६; म. व. १८६.८१-१२९)।

मयसभा में जब पाण्डवों ने प्रवेश किया था, तब यह वहाँ उपस्थित था (म. स. ४.१३)। ब्रह्मसभा में भी जब पाण्डव गये थे, तब यह वहाँ उपस्थित था (म. स. ११. १२५* पंक्ति. १)। युधिष्ठिर जब मार्कण्डेय के आश्रम में गया था, तब लोकेश ऋषि ने उसे मार्कण्डेय का चरित्र सुनाया था (म. व. १३०)। युधिष्ठिर के वनवास के समय जब यह उससे मिलने मय था, तब वहाँ श्रीकृष्ण भी उपस्थित थे।

उपदेश—इसने पाण्डवों को धर्म का आदेश दिया था। युधिष्ठिर के द्वारा प्रश्न किये जाने पर, इसने उससे महर्षियों तथा राजर्षियों के जीवनसम्बन्धी विविध उपदेश-पूर्ण कथायें सुनायी थीं। इसने युधिष्ठिर को विस्तार से बहुविधरूप से धर्मोपदेश दिया था, एवं प्रयागक्षेत्र का माहात्म्य बताया था (म. व. १७९-२२१; मत्स्य. १०३-११२)। इसने युधिष्ठिर आदि को श्रीराम का उपाख्यान, तथा सती सावित्री का चरित्र सुनाया था (म. व. २५७-२८३)। इसने भद्रतनु नामक ब्राह्मण को दास से उपदेश प्राप्त करने के लिए कहा था, एवं हेममाली को शाप से विमुक्त किया था (पद्म. कि. १७; पा. ५२)।

इसने धृतराष्ट्र को विपुरुष की कथा सुनायी थी (म. क. २४)। शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म को देखने

के लिए अन्य ऋषियों के साथ यह भी गया था (म. शां. ४७.६६*)। यह भीष्म के प्रयाणकाल के समय भी उपस्थित था (म. अनु. २६.६)।

इसने नारद से विभिन्न प्रकार के प्रश्न किये थे (म. अनु. २२.७)। नारद ने इसे चार युग तथा भार्याधर्म के बारे में बताया था (म. अनु. ५४; ५७)। युधिष्ठिर ने महा-प्रस्थान से पूर्व अन्य ऋषियों के साथ इसका भी पूजन किया था (म. महा. १.३*)।

मार्कण्डेय-युधिष्ठिर संवाद—महाभारत वनपर्व में 'मार्कण्डेयसमस्यापर्व' नामक एक उपपर्व है, जिसमें मार्कण्डेय एवं युधिष्ठिर के बीच में हुए तत्त्वज्ञानसम्बन्धी अनेकानेक संवादों का वृत्तान्त प्राप्त है (म. व. १७९-२२१)। उस पर्व में निम्नलिखित विषयों पर मार्कण्डेय ने अपने विचार एवं कथासूत्रों का विवेचन किया है;— ब्राह्मणमहात्म्य एवं हैहयवृत्तान्तग्रन्थ; पृथु वैश्य के यज्ञ में हुआ अग्नि-गौतम संवाद; स्वाध्याय दानवृत्तिमहात्म्य, (१८४); वैवस्वत मनु का चरित्र एवं मत्स्योपाख्यान (१८५); प्रलयकालीन भगवन्तमहात्म्य (१८६-१८७); वायुप्रोक्त कलिभविष्यकथन (१८८-१८९); द्वितीय बार ब्राह्मणमहात्म्य (१९०); वृद्धतम इन्द्रयुग्म कथा (१९१); धुंधमारआख्यान (१९२-१९५); पतिव्रता-ख्यान (१९६-१९७); ब्राह्मणव्याधसंवाद (१९८-२०६); आनिरसोत्पत्ति (२०७-२२१)।

इन सारे संवादों से प्रतीत होता है कि, महाभारतकाल में इसका आत्यधिक सम्मान था, एवं इसके तत्त्वज्ञान-सम्बन्धी विचारधारा से युधिष्ठिर आदि ज्ञानी भी प्रभावित थे।

ग्रन्थ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त हैं;— १. मार्कण्डेयस्मृति, २. मार्कण्डेयसंहिता। उसी प्रकार इसने 'मार्कण्डेयस्तोत्र' नामक शिव का स्तोत्र भी किया था (C. C.)। इसने तामस पुराणों में से 'मार्कण्डेय' तथा 'वाराह' नामक पुराणों की रचना की थी (भवि. प्रति. ३.२८.१३)।

परिवार—इसकी धर्मपत्नी का नाम धूमोर्णा था (म. अनु. १४६.४)। इसके पुत्र का नाम वैत्रशिरस् था (विष्णु १.१०.४)।

आश्रम—मार्कण्डेय ऋषि का आश्रम हिमालय के उत्तर भाग में पुष्पभद्रा नदी के तट पर चित्रा नामक शिला के पास था। वहाँ इसने अत्यंत उग्र तपस्या की, जिससे मयभीत हो कर इंद्र ने इसकी तपस्या में बाधा डालने का

प्रयत्न किया। किंतु इसकी तपस्या अटूट रही। अंत में नरनारायणों ने प्रसन्न हो कर, इस पर अनुग्रह किया।

२. एक ऋषि, जो अयोध्या के दशरथ राजा के उप-ऋषिजों में से एक था (वा. रा. ब्रा. ७.५)। राम दशरथ राजा के आठ धर्मशास्त्रियों में से यह एक था (वा. रा. उ. ७४.४)। सीतास्वयंवर के समय यह राम के साथ मिथिला गया था (वा. रा. ब्रा. ६९.४)। पद्म के अनुसार, इसने राम को 'अवियोगद कूप' नामक पवित्र कुआँ दिखाया था (पद्म. सू. ३३)।

वाल्मीकि रामायण में प्रायः सर्वत्र इसका निर्देश- 'दीर्घायु' नाम से प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, मार्कण्डेय इसका पैतृक नाम था, एवं मूकंड का पुत्र होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ था।

३. एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की ऋक्षिष्यपरंपरा में से इंद्रप्रमति ऋषि का शिष्य था। अन्य पुराणों में इसके नाम के लिए 'मांडुकैय' पाठभेद प्राप्त है (व्यास देखिये)।

मार्गणप्रिया—कश्यप एवं प्राधा की कन्याओं में से एक।

मार्गपथ—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मार्गवेय—मृगशुपुत्र राम नामक आचार्य का मातृ-नाम (राम-भागवेय देखिये)।

मार्गेय—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'भाग्येय' पाठभेद प्राप्त है।

मार्जार—एक राजा, जो प्रजापतिपुत्र जांबवत् का पुत्र था। ब्रह्मांड के अनुसार, आगे चल कर, इसीसे मार्जार जाति उत्पन्न हुयी (ब्रह्मांड ३.७.३०६)।

मार्जारास्या—केसरी बानर की पत्नी। आनंद रामायण के अनुसार, इसे निर्रक्ति चरंकरस्वन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (आ. रा. सार. १३)।

मार्जारि—(सो. मगध. भविष्य.) मगध देश का एक राजा, जो भागवत के अनुसार जरासंध का पौत्र, एवं सहदेव राजा का पुत्र था। अन्य पुराणों के अनुसार, इसे 'सोमापि' अथवा 'सोमापि' नामांतर भी प्राप्त थे। इसके पुत्र का नाम श्रुतश्रवण था।

मार्तांड—एक आदित्य, जो द्वादशादित्यों में से आठवाँ माना जाता है (म. आ. ७०.१०; भा. ५.२०. ४४; ब्रह्मांड. ३.७.२७८-३८८)। महाभारत में इसे कामधेनु का पति कहा गया है (म. अनु. ११७.११)।

प्रा. च. ८२]

'मार्तांड' का शब्दशः अर्थ मृत होता है। कई अन्त्यासकों के अनुसार, पृथ्वी के जिस स्थान पर सूर्य सात महिनों तक क्षितिज में रहता है, एवं आठवें माह में अस्तगत होता है, उसी स्थान में इस आदित्य का निवास होता है।

मार्तिकावत—एक लोकसमूह, जो समुद्र के किनारे अनु पहाड़ी के प्रदेश में निवास करता था। परशुराम ने इस देश के शत्रुियों का संहार किया था (म. द्रो. परि. १.८.८४७)। इस देश का सुविख्यात राजा शाह्व था, जिसका श्रीकृष्ण ने वध किया था (म. व. १५-१६; शाह्व देखिये)। भारतीय युद्ध के समय, इस देश का राजा भोज मार्तिकावत था। भोज मार्तिकावत के साथ अभिमन्यु का युद्ध हुआ था (म. द्रो. ४७.८)।

मार्तिकावतक—मार्तिकावत के राजा शाह्व का नामान्तर (म. द्रो. ४७.८)।

२. चित्ररथ गंधर्व का नामान्तर।

मार्दमर्षि—विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५७)।

मार्ष्टर्षिमालि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मार्ष्टि—(सो. वसु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सारण राजा का पुत्र था।

मार्ष्टिवत्—(सो. वसु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सारण राजा का पुत्र था।

मालतिका—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.४)।

मालती—इक्ष्वाकुवंशीय दशुधातिन् राजा की पत्नी।

२. मद्र देश के अश्रुपति राजा की पत्नी। इसके नाम के लिए 'मालती' पाठभेद प्राप्त है (मालती देखिये)। सत्यवान् राजा की पत्नी सावित्री इतीही ही कन्या थी (सावित्री देखिये)।

मालय—गण्ड की प्रमुख सन्तानों में से एक (म. उ. ९९.१४)। पाठभेद—'मलय'।

मालयनि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मालव—पश्चिम भारत में रहनेवाला एक लोकसमूह। नकुल ने अपने पश्चिम दिग्विजय में इनका पराजय किया था (म. स. २९.६)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय ये लोग उचरित थे, एवं इन्होंने विपुल धनराशि युधिष्ठिर को अर्पण की थी (म. स. ३१.११; ५२.१४)।

भारतीय युद्ध में ये लोग कौरव पक्ष में शामिल थे। भीष्म की आज्ञा के अनुसार, इन लोगों ने अजुंन से मुकाबिला किया था (म. भी. ५६.७४)। किंतु अन्त में

अर्जुन ने मालव योद्धाओं को गहरी चोट लगायी थी (म. द्रो. १८.१६)। युधिष्ठिर ने भी इन लोगों का संहार किया था (म. द्रो. १३२.२३-२५)। परशुराम ने इस देश के क्षत्रियों का संहार किया था (म. द्रो. परि. १.८. ८४५)।

सिकंदर के समय ये लोग पंजाब में रहते थे। इन्होंने एवं क्षुद्रक लोगों ने सिकंदर का काफ़ी प्रतिकार किया। किंतु अन्त में इन्हें हार खानी पड़ी, एवं पंजाब देश को छोड़ कर, एवं सिंधु नदी को पार कर, ये लोग राजस्थान के मार्ग से उज्जयिनि के पास आ कर रहने लगे। इन्हींके कारण, उस प्रदेश को 'मालव' नाम प्राप्त हुआ।

२. सौ क्षत्रियपुत्रों का एक समूह, जो मद्रदेश के अश्वपति राजा को मालवी नामक पत्नी से उत्पन्न हुआ था (मालवी देखिये)।

३. विदर्भ नगरी में रहनेवाला एक विष्णुभक्त ब्राह्मण (पद्म. उ. २१८)।

मालवी—नरेश अश्वपति राजा की बड़ी रानी, एवं सावित्री की माता। इसे मालव नामक सौ पुत्र उत्पन्न होने का वरदान प्राप्त हुआ था (म. व. २८१.५८)। इसके नाम के लिए 'मालती' पाठभेद भी प्राप्त है।

२. केकय राजा की पत्नी सुदेष्णा का नामांतर (म. वि. १.१९-३२)।

मालाधर—सिद्धेश्वर नामक राजा का पुत्र, जिसकी पत्नी का नाम क्यामवाला था (पद्म. ब्र. ११)।

मालावती—कुशाध्वज जनक राजा की पत्नी, जिसकी कन्या का नाम वेदवती था (वेदवती देखिये)।

मालि—एक राक्षस, जो सुकेश नामक राक्षस एवं देववती का पुत्र था। वसुदा नामक गंधर्वी इसकी पत्नी थी, जिससे इसे अनल, अनिल, हर एवं संपाति नामक चार पुत्र उत्पन्न हुए थे। उन पुत्रों को 'माल्य' सामूहिक नाम प्राप्त था।

इसने अनेक वर्षों तक तप कर अमरत्व एवं अजेयत्व प्राप्त किया था। विश्वकर्मा ने इसे रहने के लिए लंका नगरी प्रदान की थी। अन्त में श्रीविष्णु के द्वारा इसका वध हुआ (वा. रा. उ. ५)।

मालिनी—सप्त शिशुमानुषाओं में से एक (म. व. २१७.९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'बृहली'।

२. एक राक्षसकन्या, जो कुत्रे की आशा से विश्रवस् ऋषि के परिचर्या के लिए रही थी। विश्रवस् ऋषि से इसे विभीषण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. व. २५९.१-८)।

३. अज्ञातवास के समय द्रौपदी से धारण किया गया नाम (म. वि. ८.१९)।

४. एक अप्सरा, जो पुष्कर एवं प्रम्लोचा नामक अप्सरा की कन्या थी (म. वि. ८.१४)। इसका विवाह रुचि राजा से हुआ था, जिससे इसे रौच्य नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। रौच्य नामक मन्वन्तर का अधिपति रौच्य वही है (मार्क. ९५.५)।

५. एक दुर्वर्तनी ब्राह्मण स्त्री। अपने दुर्वर्तन के कारण, अगले जन्म में इसे श्वानयोनि प्राप्त हुयी। आगे चल कर, वैशाख शुक्ल द्वादशी के दिन द्वादशी व्रत करने के कारण, इसे मुक्ति प्राप्त हो गयी, एवं अगले जन्म में यह उर्वशी नामक अप्सरा हुयी (स्कंद. २.७.२४)।

माल्य—चार राक्षसों का एक समूह, जो विभीषण के अमात्य का काम करता था। इनके नाम इस प्रकार थे:—अनल, अनिल, हर एवं संपाति (वा. रा. उ. ५.४३)।

माल्य—आर्य नामक आचार्य का पैतृक नाम (पं. ब्रा. १३.१०.८)।

माल्यपिंडक—एक सर्प, जो नारद ने मालती को वर के रूप में प्रदान किया था (म. उ. १०१.१३)।

माल्यवत्—एक राक्षस, जो सुकेश राक्षस का ज्येष्ठ पुत्र था। इसकी माता का नाम देववती था। इसके दो छोटे भाइयों के नाम सुमालि एवं मालि थे। यह रावण का मातामह था।

आगे चल कर सुकेश के तीनों पुत्रों की शादियाँ नर्मदा नामक गंधर्वी की तीन कन्याओं से हुयीं। उनमें से सुन्दरी नामक कन्या की शादी माल्यवत् से हुयी थी।

तपस्या—अपने पिता के तप:सामर्थ्य एवं ऐश्वर्य को प्राप्त कर, यह अपने भाइयों के साथ घोर तपस्या करने लगी। शीघ्र ही इसने अपनी तपस्या से ब्रह्मदेव को प्रसन्न कर उससे वर प्राप्त किया, एवं विकृत पर्वत के शिखर पर, सौ योजन लम्बी एवं बीस योजन चौड़ी सुवर्णमंडित लंका नामक नगरी प्राप्त की। पश्चात् यह सपरिवार वहाँ जा कर रहने लगी।

विष्णु से युद्ध—कालोपरांत यह तथा इसके भाई गर्व में उन्मत्त हो कर देवादि को विभिन्न प्रकार से कष्ट देने लगे। उन कष्टों से ऊब कर सारे देव शंकर के निर्देश पर विष्णु के पास गये। तब इन राक्षसों के वध की प्रतिज्ञा कर के विष्णु ने देवों को भय से मुक्त किया। जैसे ही माल्यवत् को विष्णु की यह प्रतिज्ञा ज्ञात हुयी, यह बहुत ध्वराया, एवं विष्णु के द्वारा की गयी प्रतिज्ञा इसने अपने भाइयों से कह

सुगामी । भाइयों ने इसको धीरज धराया, एवं देवों से युद्ध करने का निश्चय किया । इस युद्ध में, विष्णु ने अन्य देवों के साथ इससे शोर संग्राम करते हुए, इसके भाई मालि का वध किया । तब विष्णु के पराक्रम से डर कर, यह अपने भाई सुमाली के साथ पाताल लोक में जाकर रहने लगा ।

लंकाप्रवेश—इधर लंका में वैश्रवण नामक कुवेर निवास करता रहा । कुछ समयोपरांत एक दिन यह अपने पातालपुरी से निकल कर मृत्युलोक जा रहा था कि, इसने वैश्रवण एवं उसके पिता विश्रवस् को पुष्पक विमान में बैठ कर जाते हुए देखा । उसके वैभव को देख कर यह आश्चर्यचकित हो उठा, एवं उस प्रकार के ऐश्वर्य के भोगलालसा की कामना से इसने अपनी कन्या कैकसी वैश्रवण को दी । कालोपरांत इसी कैकसी से रावण इत्यादि पुत्र हुए (सुमालि देखिये) । बाद में जब रावण लंका का राजा हुआ, तब माल्यवत् अपने भाई सुमालि तथा अपने परिवार के अन्य राक्षसों के साथ, लंकापुरी में आकर रहने लगा (वा. रा. उ. ११) ।

बाद में रावण के द्वारा सीता का हरण किया जाने पर, इसने उसे सीता को तुरन्त राम के पास लौटा देने के लिए कहा था (वा. रा. सु. ३५.९-१०) । उस समय इसने व्याकुलता से परिपूरित हो कर भावनापूर्ण उपदेश रावण को दिया था ।

परिवार—इसे अपनी पत्नी सुन्दरी से वज्रमुष्टि, विरुपाक्ष, दुर्मुख, सुप्तघ्न, यज्ञकोप, मत्त, तथा उन्मत्त नामक पुत्र, तथा अनला नामक पुत्री उत्पन्न हुयी थी (वा. रा. उ. ५. ३५-३६) ।

२. पुष्पदंत नामक गंधर्व का पुत्र । एक बार इन्द्रसभा में जब अनेक गंधर्व नृत्यगायन के लिए एकत्र हुए थे, तब उनमें माल्यवत् तथा चित्रसेन की नातिन पुष्पदंती उपस्थित थी । ये दोनों अत्यंत सुंदर थे, अतएव आपसी प्रेमभावना में अनुरक्त हो गये । इससे ये तालस्वर से अलग गाने लगे । इन्द्र ने इन्हें वेसुगा गाते हुए देख कर, राक्षस होने का शाप दिया । फिर ये दोनों पिशाच हो गये ।

काफ़ी समय बीत जाने के उपरांत, एक बार माघ माह की दशमी के दिन इनका आपस में झगड़ा हो गया, तथा पिशाचयोनि प्राप्त होने के कारण, ये दोनों आपस में एक दूसरे को सताने लगे । बाद को इन्होंने निश्चय किया कि, इस योनि से मुक्ति प्राप्त करने के लिए, कोई भी पापाचरण से ये दूर रहेंगे ।

दूसरे दिन उपवास कर के, इन लोगों ने एक पीपल के वृक्ष के नीचे बैठ कर 'रात्रिजागरण' किया, जिसके

फलस्वरूप इन्हें 'जया एकादशी' का पुण्य प्राप्त हुआ । इस पुण्य के बल पर ही ये शाप से मुक्त हो सके । बाद में इन्द्र की आज्ञा से, ये दोनों पतिपत्नी बन कर सुख से रहने लगे (पद्म. उ. ४३) ।

मावेल्लु—उपरिस्वर वसु राजा के 'मच्छिल' नाम पुत्र के लिए उपलब्ध पाटभेद (मच्छिल देखिये) ।

मावेल्लुक—एक लोकसन्त, जो त्रिगर्ताराज सुवर्मन् के साथ अजुन से लड़ने के लिए उपस्थित हुआ था । संभवतः 'मच्छिल' लोगों का यह नामान्तर होगा ।

माषशरावय—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषि गण । संभवतः 'माषशरावीय ब्राह्मण' नामक ग्रंथ की रचना इन्हींके द्वारा की गयी होगी । वह ब्राह्मण ग्रंथ के उद्धरण मात्र आज उपलब्ध है, मूल ग्रंथ नष्ट हो चुका है ।

मासकृत—सुतप देवों में से एक ।

माहकि—वंश ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक गुरु का पैतृक नाम (वं. ब्रा. २) । महक का वंशज होने के कारण, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा ।

महाचमस्य—एक गुरु, जिसे 'भूर, भुवस्, स्वर' की त्री में 'महस्' संयुक्त कराने का श्रेय दिया गया है (तै. आ. १.५.१) । महाचमस् का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा ।

माहित्थि—एक आचार्य, जो वामकशायण नामक ऋषि का शिष्य था । इसके शिष्य का नाम कौत्स था (वृ. उ. ६.५.४ काण्व.; श. ब्रा. १०.६.५.९) । यज्ञकर्म संबंधित विधियों में यह अत्यधिक तज्ज्ञ था, जिस कारण इसके तत्संबंधि मतों का उद्धरण शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है (श. ब्रा. ६.२.२.१०; ८.६.१.१६; ९.५.१.५७) ।

माहिष्मत—चंपावती नगरी का एक राजा, जिसे कुल पौत्र पुत्र थे । उनमें से ज्येष्ठ पुत्र अत्यंत दुराचारी था, जिस कारण उसे 'लुपक' नाम प्राप्त हुआ था । आगे चल कर, इसने उस पुत्र को नगर से बाहर निकाल दिया (पद्म. उ. ४) ।

माहेश्वरावतार—शिव का एक अवतार (शिव देखिये) ।

मिचकृत—रुद्रसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक ।

मिजिका एवं मिजिक—रुद्र के दो अपत्य, जो श्वेत पर्वत पर उत्पन्न हुए थे (म. व. २२०.१०-१६) । अपनी संतानों के आरोग्य चाहनेवाले मातापिता इनकी उपासना करते हैं ।

मित—(सो. पूर.) एक राजा, जो जय राजा का पुत्र था।

२. एक मरुत् देव, जो मरुतों के पाँचवे गण में सम्मिलित था।

मितध्वज—(सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो भागवत के अनुसार धर्मध्वज जनक का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम खाण्डिक्य जनक था।

मिति—उत्तम मन्वन्तर के सप्तार्षियों में से एक।

मित्र—एक वैदिक देवता, जिसका निर्देश ऋग्वेद में प्रायः सभी जगह वरुण के साथ प्राप्त है। ऋग्वेद में इस देवता को महान् आदित्य कहा गया है, एवं इसके द्वारा मनुष्यों में एकता लाने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.८२)। इससे प्रतीत होता है कि, मित्र एक सूर्यदेवता, एवं विशेषतः सूर्य से संबंधित प्रकाश की देवता है। वैदिक ग्रंथों में सभी स्थानों पर मित्र को दिन के साथ, एवं वरुण को रात्रि के साथ संबंधित किया है।

अथर्ववेद के अनुसार, मित्र प्रातःकाल के समय उन सभी वस्तुओं को अनादृत कर देता है, जिन्हे वरुण ने अच्छादित किया था (अ. वे. ९.३)। यज्ञवेदी पर मित्र को एक श्वेत, तथा वरुण को एक कृष्ण-वर्णीय प्राणि बलि अर्पित करने का निर्देश तैत्तिरीय संहिता में प्राप्त है (तै. सं. २.१.७.९.; मै. सं. २.५)।

वैदिक ग्रंथों के समान अवेस्ता में भी मित्र को सौर देवता माना गया है, जहाँ इसका निर्देश 'मिश्र' नाम से किया गया है। वैदिक ग्रंथों के भाँति अवेस्ता में भी, इसे समस्त प्राणिजाति का मित्र, एवं प्रकृति की एक हितकर शक्ति माना गया है।

२. वारह आदित्यों में से एक। इसकी माता का नाम आदिति, एवं पिता का नाम कश्यप था (म. आ. ५.९. १५)। अन्य आदित्यों के साथ यह अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था। खाण्डववनदाह के समय हुए युद्ध में, इसने इंद्र की ओर से हाथ में चक्र ले कर, अर्जुन एवं श्रीकृष्ण पर आक्रमण किया था। इसने स्कंद को सुव्रत एवं सत्यसन्ध नामक दो पापों प्रदान किये थे (म. श. ४४.३७)।

इसकी पत्नी का नाम रेवती था, जिससे इसे उत्सर्ग, अरिष्ट एवं पिंपल नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ६. १८.६)।

भविष्य के अनुसार, मार्गशीर्ष माह में प्रकाशित होनेवाले सूर्य को मित्र कहते हैं, एवं इसके ग्यारहवीं किरण रहते हैं (भवि. ब्राह्म. ७८.५७)। भागवत के

अनुसार यह ज्येष्ठ माह में प्रकाशित होता है (भा. १२. ११.३५; वरुण देखिये)।

३. लकुलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

४. वसिष्ठ तथा ऊर्जा के पुत्रों में से एक।

मित्रघ्न—रावणपक्षीय एक असुर, जो राम के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ४३.२७)।

मित्रजित्—(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सुवर्ण राजा का पुत्र था। भागवत, वायु एवं ब्रह्मांड में इसे 'अमित्रजित्,' तथा मत्स्य में इसे 'सुमित्र' कहा गया है।

मित्रज्ञ—पाँचजन्य नामक अग्नि का पुत्र, जो पाँच देव, विनायकों में से माना जाता है (म. व. २१०.१२)।

मित्रदेव—त्रिगर्ताराज सुधर्मन् राजा का भाई, जो भारतीय युद्ध में अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. कू. १८.८)।

२. रुद्रसावर्णि मनु का एक पुत्र।

मित्रधर्मन्—पाँचजन्य अग्नि का एक पुत्र, जो पाँच देव विनायकों में से एक माना जाता है।

मित्रबाहु—रुद्रसावर्णि मनु का एक पुत्र।

मित्रभू काश्यप—एक आचार्य, जो विभांडककाश्यप नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम इंद्रभू काश्यप था (वं. ब्रा. २)।

मित्रभूति लौहित्य—एक आचार्य, जो कृष्णदत्त लौहित्य नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३. ४२.१)।

२. एक आचार्य, जो विष्णु, वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण ऋषि का शिष्य था।

मित्रयु—(सो. नील.) एक नीलवंशीय राजा, जो दिवोदास राजा का पुत्र था। मत्स्य एवं वायु में इसे 'मित्रायु,' एवं भागवत एवं विष्णु में से इसे 'मित्रेयु' कहा गया है।

इसके पुत्र का नाम च्यवन था (गरुड. १.१४.२२)। किन्तु वायु एवं मत्स्य में इसके पुत्र का नाम 'मैत्रेय' कहा गया है। हरिवंश के अनुसार, यह एक शाखा-प्रवर्तक आचार्य था, जिससे 'मैत्रेय ब्राह्मण' एवं 'मैत्रायणी शाखा' उत्पन्न हुयी (ह. वं. १.३२)।

२. भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि, जिसकी कन्या का नाम मैत्रेयी था।

मित्रवत्—एक तपस्वी, जो सौपुर नामक नगर में रहता था। एक बार इसने शिव के मंदिर में गीता के दूसरे अध्याय का पाठ किया, जिस कारण इसके मन को पूर्णशान्ति प्राप्त हुयी।

आगे चल कर, देवशर्मा नामक एक ब्राह्मण को मनः शान्ति की इच्छा उत्पन्न हुयी। फिर मुक्तकर्मा नामक तपस्वी के कहने पर वह इसके पास आया। पश्चात् इसने देवशर्मा को भी गीता के दूसरे अध्याय का पठन करने के लिए कहा (पद्म. उ. १७६)।

२. पांचजन्य अग्नि का एक पुत्र, जो पाँच देव विनायकों में से एक माना जाता है (म. व. २१०.११)।

३. रुद्रसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

मित्रवर्चस् स्थैरकायण—एक आचार्य, जो सुप्रतीत औलुण्ठ्य नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम ब्रह्मवृद्धि छंदोग्यमाहर्कि था (वं. ब्रा. १)।

‘स्थिरक’ का वंशज होने के कारण, इसे ‘स्थैरकायण’ पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

मित्रवर्धन—पांचजन्य-अग्नि का पुत्र, जो पाँच देव विनायकों में से एक माना जाता है (म. व. २१०.११)।

मित्रवर्मन्—त्रिगर्तराजसुशर्मन् का भाई, जो भारतीय युद्ध में अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. क. १९.९)।

मित्रविंद—रुद्रसावर्णि मनु का एक पुत्र।

२. एक देवता। रथन्तर नामक अग्नि को दी हुयी हवि इसे प्राप्त होती है (म. व. २१०.१९)।

मित्रविंद काश्यप—एक आचार्य, जो सुनीथ कापटव नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम केतु वाज्य था (वं. ब्रा. १)।

मित्रविंदा—अवंतीनरेश जयसेन राजा की कन्या, जो श्रीकृष्ण की आठ पटरानियों में से एक थी। इसकी माता का नाम राजाधिदेवी था, जो श्रीकृष्ण की पूजा थी। इसे दिन्द एवं अनुविंद नामक दो भाई थे।

इसके स्वयंवर के समय, श्रीकृष्ण ने इसका हरण किया। श्रीकृष्ण से इसे निम्नलिखित दस पुत्र उत्पन्न हुये थे:—वृक, हृष, अनिल, रथ, वर्धन, उत्राद, महाश, पावन, वह्नि एवं क्षुधि (भा. १०.५८. ३०-३१; ६१.१६)।

द्वारका में इसका महल वैदूर्य मणि के समान कान्ति-मान्, एवं हरे रंग का था। देवगण भी उसका सराहना करते थे (म. स. परि. १.२१.१२६०)।

मित्रसह—इक्ष्वाकुवंशीय कल्पापपाद राजा का नामांतर।

मित्रसेन—दुर्योधन के पक्ष का एक राजा, जो अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. क. १९.२०)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—‘मित्रदेव’।

२. रुद्रसावर्णि मनु का एक पुत्र।

मित्रहन्—रुद्रसावर्णि मनु का एक पुत्र।

मित्रा—मैत्रेय कौणारव नामक आचार्य की माता (मैत्रेय कौणारव देखिये)।

२. देवी उमा की अनुगामिनी सखी (म. व. २२१. २०)।

मित्रातिथि—एक राजा, जो कुरुश्रवण राजा का पिता, एवं उमश्रवस् राजा का पितामह था (ऋ. १०.३३. ७)। इसकी सृष्ट्यु के पश्चात्, कवप ऐलुष नामक ऋषि ने इसके पौत्र उमश्रवस् की सात्वना की थी।

मित्रावरुण—‘मित्र एवं वरुण’ देवताओं के लिए प्रयुक्त संयुक्त नामांतर (म. श. ५३.१२; मित्र एवं वरुण देखिये)। इनका आश्रम ‘कारपवनतीर्थ’ के समीप था।

२. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक प्रवर, जिनके पुत्रों का नाम अगस्त्य एवं वसिष्ठ था (भा. ६.१८.५)।

मित्रेयु—नीलवंशीय राजा मित्रयु के लिए उपलब्ध पाठभेद (मित्रयु १. देखिये)।

मिथि—(सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो निमिराजा के मृत देह का मंथन करने पर उत्पन्न हुआ था। मंथन से उत्पन्न होने के कारण, इसे ‘मिथि’ अथवा ‘मिथिल’ नाम प्राप्त हुआ था (भा. ९.१३. १३)।

विदेह देश की राजधानी मिथिला की स्थापना इसी-ने की थी। इसके पुत्र का नाम उदावयु था (वायु. ८९. ४-६; ब्रह्मांड. ३.६४.१-६)।

मिथिल—(सो. अज.) एक राजा, जो भरत का वंशज था। इसके पुत्र का नाम जह्नु था (म. अनु. ७. २)। महाभारत के बम्बई संस्करण में प्राप्त बंशावली में, इसके स्थान पर अजमीठ राजा का नाम प्राप्त है।

२. (सू. निमि.) निमिपुत्र मिथि राजा का नामान्तर।

मिथु—एक शूर दानव। एक समय सरस्वती नदी के किनारे, आग्निपुत्र भर राजा अपने उपमन्यु नामक पुरोहित के साथ अश्वमेध यज्ञसमारोह कर रहा था। इसने भर एवं उपमन्यु इन दोनों को उठा कर पाताल में भगाया। पश्चात् उपमन्यु के देवापि नामक पुत्र ने शिव की उपासना कर उन दोनों की सुकृता की (ब्रह्म. १२७. ५६-५७)।

मिश्रकेशी—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्या थी (म. आ. ५९.४८)। पूरु राजा के पुत्र रौद्राश्व के साथ इसका विवाह हुआ था, जिससे इसे निम्नलिखित दस महाधनुर्धर पुत्र उत्पन्न हुए थे—अन्वगमानु, रुचेयु, कक्षेयु (कृकगेयु), स्थंडिलेयु, वनेयु, स्थलेयु, तेजेयु, सत्येयु, धर्मयु (धर्मयु), एवं संतनेयु (संतनेयु) (म. आ. ८९.८७३; ८९.९-१० पाठ.)।

२. वसुदेव के भाई कत्सक राजा की पत्नी, जिससे इसे वृक आदि पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ९.२४.४३; म. आ. ५९.४८)।

मिश्री—एक नाग, जो बलराम के स्वर्गरोहण के समय, उसके स्वागतार्थ प्रभासक्षेत्र में उश्रित था।

मीढुष—शक नामक आदित्य का एक पुत्र। इसकी माता का नाम पौलोमी था (पौलोमी १. देखिये)।

मीद्वस्—(सू. नरि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार दक्ष राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम कूर्च था।

मीनरथ—(सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो अनेनस् राजा का पुत्र था। भागवत में इसके नाम के लिए 'समरथ' पाठभेद प्राप्त है।

मुकुट—एक क्षत्रिय वंश, जिसमें 'विगाहन' नामक कुलंगार राजा उत्पन्न हुआ था।

मुकुटा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२३)।

मुकुंद—एक राजा, जिसकी अस्थियाँ सहजवश यमुना नदी में गिरने के कारण यह मुक्त हुआ था। (पद्म. उ. २०९-२१०)।

मुक्त—मौल्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

मुक्तकर्मन्—एक मुमुक्षु साधक, जो गीता के दूसरे अध्याय के पठन से मुक्त हुआ था (मित्रवत् देखिये)।

मुक्कर्णी—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२८)। इसके नाम के लिए 'मुकर्णी' पाठभेद प्राप्त है।

मुखमंडिका—शिशुग्रहस्वरूपा दिति का नामान्तर (म. व. २१९.२९)।

मुखर—एक कश्यपवंशीय नाग (म. उ. १०१.१६)।

मुखसेचक—धृतराष्ट्रकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१४)। इसके नाम के लिए 'मुखमेचक' पाठभेद प्राप्त है।

मुख्य—सावर्णि मन्वन्तर का एक देवविशेष।

मुचि—एक राक्षस, जो नमुचि का छोटा भाई था। इंद्र ने नमुचि का वध करने पर, इसने कुद्र हो कर इंद्र पर आक्रमण किया। पश्चात् इंद्र ने इसका भी वध किया (पद्म. स. ६८)।

मुचुकुंद—(सू. इ.) एक सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो मांधातृ राजा का तृतीय पुत्र था। राम दशरथि के पूर्वजों में से यह इक्ष्वालिसवाँ पुरुष था। इसके नाम के लिए 'मुचुकुंद' पाठभेद भी प्राप्त है (म. शां. ७५.४)।

इसकी माता का नाम विन्दुमती था (ब्रह्मांड. ३.६३. ७२; मत्स्य. १२.३५; ब्रह्म. ७.९५)। इसने नर्मदा नदी के तट पर पारिपात्र एवं ऋक्षपर्वतों के बीच में अपनी एक नयी राजधानी स्थापन की थी। आगे चल कर, हैहय राजा महिष्मंत ने उस नगरी को जीत लिया, एवं उसे 'माहिष्मती' नाम प्रदान किया। इससे प्रतीत होता है कि, मुचुकुंद राजा की उत्तर आयु में इक्ष्वाकु वंश की राजसत्ता काफी कम हो चुकी थी। इसने 'पुरिका' नामक और एक नगरी की भी स्थापना की थी, जो विंध्य एवं ऋक्षपर्वतों के बीच में बसी हुयी थी (ह. वं. २.३८.२; १४-२३)।

मुचुकुंद-वैश्रवण संवाद—मुचुकुंद ने अपने ब्राह्मण से पृथ्वी को अपने अधिकार में ला कर, उस पर राज्य स्थापित किया था। इसकी जीवनकथा एवं वैश्रवण नामक इंद्र के साथ हुआ इसके संवाद का निर्देश महाभारत में प्राप्त है, जो कुन्ती ने युधिष्ठिर को बताया था (म. उ. १३०.८-१०; शां. ७५)।

एक बार स्वर्ग की परीक्षा देखने के लिए इसने कुवेर पर आक्रमण कर दिया। तब कुवेर ने राक्षसों का निर्माण कर, इसकी समस्त सेना का विनाश किया। अपनी बुरी स्थिति देख कर, इसने अपना सारा दोष पुरोहितों के सर पर लादना शुरू किया। तब धर्मज्ञ वसिष्ठ ने उग्र तपश्चर्या कर राक्षसों का वध किया। उस समय कुवेर ने इससे कहा, 'तुम अपने शौर्य से मुझे युद्ध में परास्त करो। तुम ब्राह्मणों की सहायता क्यों लेते हो?' तब इसने कुवेर को तर्कपूर्ण उत्तर देते हुए कहा, 'तप तथा मेत्र का बल ब्राह्मणों के पास होता है, तथा शस्त्रविद्या क्षत्रियों के पास होती है। इस प्रकार राजा का कर्तव्य है कि, इन दोनों शक्तियों का उपयोग कर राष्ट्र का कल्याण करे'। इसके इस विवेकपूर्ण वचनों को सुन कर कुवेर ने इसे पृथ्वी का

राज्य देना चाहा, किन्तु इसने कहा, 'मैं अपने बाहुबल से पृथ्वी को जीत कर, उस पर राज्य करूंगा'।

कालयवन का वध—कालयवन नामक राक्षस एवं श्रीकृष्ण से संबंधित मुचुकुंद राजा की एक कथा पद्म, ब्रह्म, विष्णु, वायु आदि पुराणों में, एवं हरिवंश में प्राप्त है। उस कथा में इसके द्वारा कालयवन राक्षस का वध करने का निर्देश प्राप्त है। किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से यह कथा कालविषयस्त प्रतीत होती है ?

एक बार देवासुर संग्राम में, दैत्यों के विरुद्ध लड़ने के लिए देवों ने मुचुकुंद की सहाय्यता ली थी। उस युद्ध में देवों की ओर से लड़ कर इसने दैत्यों को पराजित किया, एवं इस तरह देवों की रक्षा की।

इसकी वीरता से प्रसन्न हो कर, देवों ने इसे वर माँगने के लिए कहा। किन्तु उस समय अत्यधिक थका होने के कारण, यह निद्रित अवस्था में था। अतएव इसने वरदान माँगा, 'मैं सुख की नींद सोऊ, तथा यदि कोई मुझे उस नींद में जगा दे, तो वह मेरी दृष्टि से जल कर खाक हो जाये'। इसके सिवाय, इसने श्रीविष्णु के दर्शन की भी इच्छा प्रकट की।

इस प्रकार पर्वत की गुफा में यह काफी वर्षों तक निद्रा का सुख लेता रहा। इसी बीच एक घटना घटी। कालयवन ने कृष्ण को मारने के लिए उसका पीछा किया। कृष्ण भागता हुआ उसी गुफा में आया, जहाँ पर यह सोया हुआ था। इसके ऊपर अपना उत्तरीय डाल कर, कृष्ण स्वयं छिप गया। पीछा करता हुआ कालयवन गुफा में आया, तथा इसे कृष्ण समझ कर, लात के प्रहार से उसने इसे जगाया। मुचुकुंद बड़े क्रोध से उठा, तथा जैसे ही इसने कालयवन को देखा, वह जलकर वही भस्म हो गया।

कृष्णदर्शन—वाद में कृष्ण ने इसे दर्शन दे कर, राज्य की ओर जाने को कहा, तथा वर प्रदान किया, 'तुम समस्त प्राणियों के मित्र, तथा श्रेष्ठ ब्राह्मण बनोगे, तथा उसके उपरांत मुक्ति प्राप्त कर मेरी शरण में आओगे'। श्रीकृष्ण के द्वारा पाये अश्वीर्वचनों से तुष्ट हो कर, यह अपनी नगरी आया। वहाँ इसने देखा कि, इसके राज्य को किसी दूतरे ने ले लिया है, एवं सभी मानव निम्न विचारधारा एवं प्रवृत्ति के हो गये हैं। यह देखते ही यह समझ गया कि, कलियुग का प्रारंभ हो गया है।

यह अपने नगर को छोड़ कर हिमालय के बदरिकाश्रम में जा कर तप करने लगा। वहाँ कुछ दिनों तक तपश्चर्या

करने के उपरांत, राजर्षि मुचुकुंद को विष्णुपद की प्राप्ति हुयी (भा. १०.५१; विष्णु. ५.२३; ब्रह्म. १९६; ह. वं. १.१२.९; २.५७)।

संवाद—यह उन राजाओं में था, जो सायंप्रातः—स्मरणीय हैं (म. अनु. १६५.५४)। इसने परशुराम से शरणागत की रक्षा के विषय में प्रश्न किया था, और उन्होंने इसे उचित उत्तर दे कर, कपोत की कथा बता कर, इसकी जिज्ञासा शान्त की थी (म. चां. १४१-१४५)। राजा कामोज से इसे खड्ग की प्राप्ति हुयी थी, जिसे बाद को इसने मरुत्त को प्रदान किया (म. चां. १६०.७५)। गोशानमहिमा के विषय में इसका निर्देश आदरपूर्वक आता है (म. अनु. ७६.२५)। यही नहीं, अपने जीवनकाल में इसने मांस भक्षण का भी निषेध कर रखा था।

परिवार—इसके पुरुकुत्स और अंबरीष नामक दो भाई थे (भा. ९.६.३८; वायु. ८८.७२; विष्णु. ४.२.२०)। इसकी बहनों की संख्या ५० थीं, जिनका वरण सौभरि ऋषि ने किया था (गरुड. १.१३८.२५)।

२. एक राजा, जिसकी कन्या का नाम चन्द्रभागा, तथा दामाद का नाम शोभन था (पद्म. उ. ६०)।

मुंज—एक ऋषि, जो द्वैतवन में पाण्डवों के साथ उपस्थित था।

मुंज सामश्रवस—एक राजा, जो समश्रवस् का वंशज था (जै. उ. ब्रा. ३.५.२; प. ब्रा. ४.१)।

मुंजकेतु—युधिष्ठिर की सभा का एक राजा (म. स. ४.१८)।

मुंजकेश—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, न्यास की अथर्वन्शिष्यपरंपरा में से सैधवायन नामक ऋषि का शिष्य था। अन्य पुराणों में इसे 'बभ्रु' का ही नामांतर बताया गया है। इसके नाम पर पौन ग्रंथ उपलब्ध हैं।

२. एक क्षत्रिय राजा, जो निचंद्र नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६.१.२६)। भारतीय युद्ध में पाण्डवों की ओर से इसे रणनिमंत्रण भेजा गया था (म. उ. ४.१४)।

मुंड—एक असुर, जो शुंभ एवं निशुंभ का सेनापति था। इसका निर्देश चण्ड नामक असुर के साथ प्रायः सर्वत्र प्राप्त है (चंडमुंड देखिये)।

२. भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार 'मंड' के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद।

३. कौरव दल का एक मुंडदेशीय योद्धा (म. भी. ५२.९ पाठ.)।

मुंडवेदांग—धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२. १५)।

मुंडी—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५. १७)। इसके नाम के लिए 'मंडोदरी' पाठभेद प्राप्त है।

मुंडिभ औदन्य (औदन्यव)—एक आचार्य (श. ब्रा. १३.३.५.४)। उदन्य का पुत्र अथवा वंशज होने से इसे 'औदन्य' पौत्रक नाम प्राप्त हुआ था (तै. ब्रा. ३.९.१५. ३)। सेंट पीटर्सबर्ग कोश के अनुसार, ओदन का पुत्र होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ था।

अश्वमेध यज्ञ के समय, यज्ञकर्ता पुरुष के हाथों भ्रूण-हत्या आदि के जो पातक होते हैं, उनसे मुक्तता मिलने के लिए इसने प्रायश्चित्तविधि बताया है, जो अबभृज स्नान के पहले किया जाता है।

मुद—एक ऋषि, जो स्वायंभुव मन्वन्तर के धर्म ऋषि का पुत्र था। इसकी माता का नाम तुष्टि था।

मुदायती—विदूरथ राजा की कन्या, जिसका हरण कुजुंभ नामक राक्षस ने किया था। भलंदन राजा के पुत्र वसुभि ने कुजुंभ का वध किया, एवं इसे छुड़ा कर इससे विवाह किया। इसे 'सुनंदा' नामान्तर भी प्राप्त था (मार्क. ११३.६४)।

मुदावर्त—हैहयवंश का एक कुलंगार राजा (म. उ. ७२.१३)।

मुदित—राम की सेना का एक वानर।

मुदिता—सह नामक अग्नि की भार्या (म. व. २१२. १)।

मुद्गर—तक्षककुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.९)।

मुद्गरपर्णक—एक कश्यपवंशीय नाग, जिसका विवाह मातलि की कन्या गुणकेशी के साथ करने का प्रस्ताव नारद ने किया था (म. उ. १०१.१३)।

मुद्गरपिंडक—एक नाग, जो कश्यप एवं ऋद्रू का पुत्र था।

मुद्रल—एक वैदिक राजा, जिसकी पत्नी का नाम मुद्रलानी था (ऋ. १०.१०२)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसकी पत्नी का नाम इंद्रसेना दिया गया है।

चोरों का पीछा—यह एवं इसकी पत्नी के संबंध में जो सूक्त ऋग्वेद में प्राप्त है, उसका अर्थ अत्यंत अस्पष्ट

है। पद्मगुरुशिष्य के अनुसार, एक समय चोरों ने इसकी सारी गायें एवं बैल चुरा लिए, केवल एक बूढ़ा बैल बच गया। पश्चात् उसे ही केवल गाड़ी को जोत कर इसने चोरों का पीछा किया, एवं एक लकड़ी का 'मुद्रल' (द्रुघण) को फेंक कर, भागनेवाले चोरों को पकड़ लिया (ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी पृष्ठ १५८)। यास्क के अनुसार, इसने दो बैलों की अपेक्षा बैल एवं द्रुघण गाड़ी को जोत कर, चोरों का पीछा किया था (नि. ९.२३-२४)।

पिशेल के अनुसार, रथ की एक दौड़ में अपनी पत्नी की सहायता से मुद्रल विजयी हुआ था, जिसका निर्देश ऋग्वेद के इस सूक्त किया गया है (वेदिशे स्टूडियेन १. १२४)।

२. (सो. अज.) एक राजा, जो भर्ग्याश्व या मद्राश्व राजा का पुत्र था। यह एवं इसके वंशज पहले क्षत्रिय थे, किन्तु बाद को ब्राह्मण बन गये थे। इसका वंश इसी के नाम से 'मुद्रल वंश' कहलाया जाता है, एवं इसके वंश में उत्पन्न क्षत्रिय ब्राह्मण 'मुद्रल' अथवा 'मौद्रल' ब्राह्मण कहलाते हैं (भा. ९.२१; वायु. ९९.१९८; ब्रह्मवै. ३.४३.९७; मत्स्य. ५०.३-६; ह. वं. १.३२. ६८; मैत्रेय सोम देखिये)।

३. एक आचार्य, जिसका निर्देश वैदिक ग्रंथों में प्राप्त है (अ. वे. ४.२९,६; आश्व. श्रौ. १२.१२; बृहदे. ६. ४६)। इसीके वंश में निम्नलिखित आचार्य उत्पन्न हुये, जो 'मौद्रल्य' कहलाते हैं:—नाक, शतबलक, एवं लॉंगलायन।

४. वेदविद्या में पारंगत एक आचार्य, जो जनमेजय के सर्पसत्र में सदस्य था। इसे 'मौद्रल्य' नामान्तर भी प्राप्त था (म. व. २४६.२७)।

यह कुरुक्षेत्र में शिलोच्छ्रुति से जीवन-निर्वाह करता था। एक समय दुर्वास ऋषि इसके आश्रम में आये, एवं उसने इसकी सत्वपरीक्षा लेनी चाही। किन्तु यह अपने सत्व से अटल रहा, जिस कारण प्रसन्न हो कर, दुर्वास ने इसे स्वर्गप्राप्ति का आशीर्वाचन दिया। किन्तु स्वर्ग अशाश्वत होने के कारण, इसने स्वर्ग में जाने से इन्कार कर दिया (म. व. २४६-२४७)।

शतयुग्म नामक राजा ने इसे एक सुवर्णमय भवन प्रदान किया था (म. शां. २२६.३२; अनु. १३७. २१)।

५. अधिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार, जो दत्त आत्रेय का पुत्र था।

६. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार, मंत्रकार एवं प्रवर ।
७. एक आचार्य, जो व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा में से देवमित्र ऋषि का शिष्य था। इसके नाम के लिए 'मौद्रल' पाठभेद प्राप्त है।

मुक्तिकोपनिषद् में इसका निर्देश उपलब्ध है (मु. उ. १.३६)। इसके नाम पर एक स्मृति भी प्राप्त है (C. C.)।

८. चोल देश के राजा का पुरोहित, जिसने अपने राजा के लिए विष्णुयाग नामक यज्ञ किया था। इसके द्वारा किया गया यह याग निष्फल शक्ति हुआ, जिस कारण चोल राजा ने आत्महत्या की, एवं इसने अपनी शिखा उखाड़ डाली। तब से मुद्रल वंश के ब्राह्मण शिखा नहीं रखते हैं (पद्म. उ. १.११; स्कंद. २.४.२७)।

इसकी स्त्री का नाम भागिरथी था, जिससे इसे मौद्रल्य नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (मौद्रल्य २. देखिये)।

पद्म में 'द्वादशीव्रत महात्म्य' कथन करने के लिए, मुद्रल नामक एक ब्राह्मण की कथा दी गयी है (पद्म. उ. ६६)। स्कंद में धीरकुंड का महात्म्य कथन करने के लिए, मुद्रल की एक कथा दी गयी है (स्कंद. १.३.३७)। संभवतः इन सारी कथाओं में निदिष्ट मुद्रल एक ही व्यक्ति होगा।

९. एक गणेशभक्त ब्राह्मण, जिसने संभवतः गणेश-जीवन पर आधारित 'मुद्रल पुराण' की रचना की थी।

मुद्रला—एक ब्रह्मवादिनी स्त्री।

मुद्रलानी—मुद्रल नामक राजा की पत्नी, जिसे इंद्रसेना नालयनी नामान्तर भी प्राप्त था (म. व. १.१४. २४; मुद्रल देखिये)। भांडारकर संहिता में इसके नाम के लिए 'नाडायनी' पाठभेद प्राप्त है।

मुद्रलायन—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मुनि—कश्यप ऋषि की पत्नी, जो प्राचेतस दक्ष प्रजापति की कन्या थी। इसकी माता का नाम अशिकी था। इसे कश्यप ऋषि से भीमसेन आदि सोलह देवसंधर्षी पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. ५.९.४१-४३; कश्यप देखिये)।

२. अहन् नामक वसु का एक पुत्र (म. आ. ६७. २३)।

३. (सो. पूर.) कुरु राजा के पाँच पुत्रों में से एक, जिसकी माता का नाम वाहिनी था। इसे निम्नलिखित चार भाई थे :—अश्ववान्, अभिष्यन्त, चैत्ररथ एवं जनमेजय (म. आ. ८८.५०)।

४. रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

प्रा. च. ८३]

५. दस विश्वेदेवों में से एक।

६. वैयस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

७. प्रसूत देवों में से एक।

८. अमिताभ देवों में से एक।

९. (सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो वासु के अनुसार प्रयुग्न राजा का पुत्र था। विष्णु एवं भागवत में इसे 'शुचि' कहा गया है।

१०. एक राजा, जो युतिमत् राजा के सात पुत्रों में से एक था। इसका देश (वर्ष) इसी के नाम से सुविख्यात था (मार्क. ५.२४)।

११. एक ऋषिविशेष। महाभारत एवं पुराणों में ऋषि एवं मुनियों का निर्देश अनेक बार आता है, उनमें से 'मुनि' शब्द की व्याख्या महाभारत में इसप्रकार दी गयी है :—

मौनाद्धि स मुनिर्भवति, नाण्यवसनामुनिः।

(म. उ. ४.३.२६)।

(कोई भी साधक मौनव्रत का पालन करने से मुनि बनता है, केवल वन में रहने से नहीं)।

उपनिषदों के अनुसार, अव्ययन, यज्ञ, व्रत एवं श्रद्धा से जो ब्रह्म का ज्ञान प्राप्त करता है, उसे मुनि कहा गया है (बृ. उ. ३.४.१; ४.४.२६; तै. आ. २. २०)।

सन्तान एवं दक्षिणा की प्राप्ति आदि पार्थिव विचारों का आचरण करनेवाले व्यक्तियों को प्राचीन ग्रंथों में पुरोहित कहा गया है।

मुनिवीर्य—एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. १.१. ३१)।

मुनिशर्मन्—एक विष्णुभक्त ब्राह्मण। इसने पिशाच-योनि में प्रविष्ट हुए निम्नलिखित व्यक्तियों का उद्धार किया था :—वारिवाहन, चन्द्रशर्मा, वेदशर्मा, विदुर, एवं नंद (पद्म. पा. ९४)।

मुसुचु—दक्षिण दिशा में रहनेवाला एक ऋषि (म. अनु. १.६५.३९)।

सुर—एक दैत्य, जो ब्रह्मा के अंश से उत्पन्न हुए तालजेष नामक दैत्य का पुत्र था। इसकी राजधानी चंद्रवती नगरी में थी। इसके नाम के लिए 'सुरु' पाठभेद प्राप्त है।

वध—ब्रह्मा के अंश से उत्पन्न होने के कारण, इसने समस्त देवों का ही नहीं, बल्कि साक्षात् श्रीविष्णु का भी पराजय किया। इससे घबरा कर, श्रीविष्णु ने रणभूमि से पलायन किया, एवं वह बद्रीकाश्रम की सिंहावती नामक गुँफा में योगमाया का आश्रय ले कर सो गया। किन्तु सुर

उसका पीछा करता हुआ वहाँ भी पहुँच गया। पश्चात् श्रीविष्णु ने अपनी योगमाया से एक देवी का निर्माण किया, जिसके द्वारा सुर का वध हुआ।

सुर का वध करनेवाले देवी पर श्रीविष्णु अत्यधिक प्रसन्न हुए, एवं उन्होंने उसे वर प्रदान किया, 'आज से तुम्हारा नाम 'एकादशी' रहेगा, एवं समस्त पापों का नाश करने का सामर्थ्य तुम्हें प्राप्त होगा' (पञ्च. उ. ३६. ५०-८०)।

२. एक पंचमुखी राक्षस, जो नरकासुर का सेनापति था। इसे निम्नलिखित सात पुत्र थे:—ताम्र, अन्तरिक्ष, श्रवण, विभावसु, वसु, नभस्वत् एवं अरुण (भा. १०.५९.३-१०)।

इसने नरकासुर के प्राञ्ज्योतिषपुर के राज्य के सीमा पर छः हजार पाश लगाये थे, जिनके किनारों पर छूरे लगाये थे। उन पाशों को इसके नाम से 'मौरव' पाश कहते थे। श्रीकृष्ण ने उन पाशों को अपने सुदर्शन चक्र से तोड़ कर, इसका एवं इसके सात पुत्रों का वध किया (म. स. परि. १.२१-१००६)।

३. एक यवन राजा, जो जरासंध का मांडलिक था (म. स. १३.१३)। इसकी कन्या का नाम मौर्वी कामकटंकटा था, जो धृतेरुच्य को विवाह में दी गयी थी (धृतेरुच्य देखिये)।

४. एक राक्षस, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था। शिव की तपस्या कर, इसने उससे वर प्राप्त किया था कि, अपना हाथ यह जिसके हृदय पर रखेगा वह तत्काल मृत होगा।

श्वेतद्वीप में इसका एवं श्रीकृष्ण का युद्ध हुआ, जिसमें इसका हाथ इसीके हृदय पर रखने के लिए कृष्ण ने इसे विवश किया, एवं इसका वध किया (वामन. ६०-६१)। इसका वध करने के कारण, कृष्णरूपधारी श्रीविष्णु को 'सुरारि' नाम प्राप्त हुआ।

मुरु—सुर राक्षस के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (सुर. १.२. ३. देखिये)।

मुष्कवत्—इंद्र नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का विशेषण।

मुष्टिक—वसिष्ठपुत्र 'महोदय' का नामांतर। विश्वामित्र के शाप के कारण, महोदय को एवं उसके भाईयों को निपाद बनना पड़ा, जिस समय उन्हें यह नाम प्राप्त हुआ था (वा. रा. वा. ५९.२०-२१; ६०.१)।

२. कंससभा का एक मूढ, जो बलराम के द्वारा मारा गया था (भा. १०.४४.२४)।

मुसल—विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५३)।

मुहूर्त—एक देवसमूह, जो धर्मत्रयि एवं मुहूर्ता के पुत्र थे।

मुहूर्ता—धर्मत्रयि की पत्नी, जो प्राचेतस दक्ष की कन्याओं में से एक थी। मुहूर्त नामक देवसमूह इसी के ही पुत्र थे (भा. ६.६.४-९)।

मूक—हिरण्यकशिपु के वंश का एक राक्षस, जो सुंद एवं ताटका का पुत्र था।

२. तक्षक वंश का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.८)।

३. एक चाण्डाल, जो अत्यंत मातृभक्त एवं पितृभक्त था। नरोत्तम नामक एक ब्राह्मण इसके पास उपदेशप्राप्ति के लिए आया था (पञ्च. सू. ५०; नरोत्तम देखिये)।

४. एक दानव, जो इंद्रकील पर्वत पर रहता था। उस पर्वत पर तपस्या करने के लिए आये अर्जुन को, इसने वराहरूप धारण कर काफ़ी वस्तु किया था, जिस कारण अर्जुन ने इसका वध किया था (म. व. ४०.७-३३)।

शिवपुराण के अनुसार, इसीके ही कारण किरातरूपधारी शंकर एवं अर्जुन का युद्ध हुआ था। एक समय, यह वराह रूप धारण कर घुमता था, जब किरात एवं अर्जुन दोनों ने ही इसे बाण मार कर विद्ध किया। तदोपरान्त इस वराह का वध किसने किया, इस संबंध में किरात एवं अर्जुन के बीच काद-विवाद हुआ, जिस कारण सुविख्यात 'किरातार्जुनीय' युद्ध हुआ (शिव. शत. ४१)।

मूर्चीष (मूर्वीष)—एक वर्धर जाति, जो संभवतः 'मूर्तिष' का पाठभेद है (सां. श्रौ. १२.२६-६)।

मूजवंत—एक जाति, जिसका निर्देश महावृष, गंधार एवं ब्रह्मिक लोगों के साथ प्राप्त है (अ. वे. ५.२२. ५)। संभवतः ये सारी जातियाँ समाज से बहिष्कृत थी, जिस कारण ऋषर को इन लोगों के प्रदेश में जाने की प्रार्थना की गयी है। एक दूरस्थ लोगों के रूप में इनका निर्देश यजुर्वेद संहिताओं में भी प्राप्त है (तै. सं. १.८; का. सं. ९.७)।

काश्मीर की दक्षिणपश्चिमी निचली पहाड़ीयों को मूजवंत पर्वत कहा जाता था। संभव है, उसी पर्वत के नाम से इन लोगों को 'मूजवंत' नाम प्राप्त हुआ होगा। बाद के महाकाव्य में मूजवंत पर्वत को हिमालय के अंतर्गत एक पर्वत बताया गया है।

ऋग्वेद में सोम को 'मौजवंत' (मूजवंत पर्वत से प्राप्त) कहा गया है (ऋ. १०.३४.१)।

मूढ—एक राक्षस, जिसका ऋषिका नामक उपासिका के लिए शिव ने वध किया था (शिव. कोटि. ७)।

मूतिव—एक वनर जाति, जो विश्वामित्र की जाति-बहिष्कृत संतानों में से एक थी (ऐ. ब्रा. ७.१८.२)। इनके नाम के लिए 'मूचीप' अथवा 'मूवीप' पाठभेद भी प्राप्त है (सां. श्रौ. १५.२६.६)।

मूर्तरय—(सो. अमा.) कान्यकुब्ज देश का एक राजा, जो कुश राजा का पुत्र था (भा. ९.१५.४)। ब्रह्म में इसे 'मूर्तिमत्', एवं विष्णु में इसे 'अमूर्तरयस्' कहा गया है (ब्रह्म. १०.३३; अमूर्तरयस् देखिये)। इसने भर्मारण्य नामक नगर बसाया था (वा. रा. वा. ३२.२)।

मूर्ति—प्राचेतस दक्ष की सोलह कन्याओं में से एक, जो धर्मऋषि की पत्नी थी। यह नर एवं नारायण की माता थी (भा. ४.१.५२)।

२. स्वरोचिष मन्वन्तर का एक प्रजापति, जो वसिष्ठ ऋषि के पुत्रों में से एक था।

३. स्वरोचिष मनु के पुत्रों में से एक।

४. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तार्षियों में से एक।

मूर्तिमत्—मूर्तरय नामक राजा के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (मूर्तरय देखिये)।

२. (सो. वृह.) एक पूर्ववंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार अन्तिनार राजा का पुत्र था।

मूर्ध्व—एक देव, जो भृगु एवं पौलोमी के पुत्रों में से एक था।

मूर्धन्वत् आंगिरस (वामदेव्य)—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.८८)।

मूल—सोम की पत्नियों में से एक।

मूलक—(स. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो नारीकवच नाम से सुविख्यात था। भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार, यह अश्वक राजा का पुत्र था। परशुराम के डर से, यह स्त्रियों में छिपा रहने के लिए विवश हुआ। इस कारण इसे 'नारीकवच' नाम प्राप्त हुआ।

ऐतिहासिक दृष्टि से, अश्वक एवं मूलक राजाओं से परशुराम काफी पूर्वकालीन माना जाता है। इक्ष्वाकु-वंशीय कर्माषपाद राजा के पश्चात् अयोध्या का राज्य काफी कमजोर हुआ। इसी के कारण, मूलक राजा का

संवर्धन काफ़ी गुप्तता से क्रिया गया होगा, जिसका संकेत इसके 'नारीकवच' नाम के जनश्रुति में प्राप्त है।

इसके पुत्र का नाम दशरथ था, जिससे आगे चल कर इक्ष्वाकुवंश का विस्तार हुआ।

२. एक राक्षस, जो कुंभकर्ण का पुत्र था। इसका जन्म मूल नक्षत्र में होने के कारण, कुंभकर्ण ने इसे अशुभ मान कर फेंक दिया था। किन्तु मधुमन्त्रियों ने इसे शहद पिला कर बड़ा किया।

बड़ा होने पर यह अत्यंत बलवान् हुआ, एवं समस्त पृथ्वी को त्रस्त करने लगा। इसी कारण सीता ने राम के द्वारा इसका वध करवाया (आ. रा. राज्य. ५-६)।

मूलचारिन्—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से लौगाक्षि नामक ऋषि का शिष्य था।

मूलमित्र गोभिल—एक आचार्य, जो वल्समित्र गोभिल का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम वरुणसिन्ध गोभिल था (वं. ब्रा. ३)।

मूलहर—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मूषकाद (मूषिकाद)—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था। इंद्रसारथी मातलि को नारद ने इसका परिचय कराया था (म. उ. १०१.१४)।

मृकंड (मृकंडु)—स्वायंभुव मन्वन्तर का एक ऋषि, जो धाता ऋषि का पुत्र था। इसकी माता का नाम आयति था। इसकी पत्नी का नाम मनस्विनी था, जिससे इसे मार्कंडेय नामक सुविख्यात पुत्र उत्पन्न हुआ (भा. ४.१.४३-४४; ब्रह्मांड. २.१-६; मार्क. ४१.२०)।

विष्णु, नारद, वायु एवं मार्कंडेय में इसके नाम के लिए 'मृकंडु' पाठभेद प्राप्त है (विष्णु. १.१०; वायु. २८.५; नारद. १.४)। इसने एक 'अयुत युग' तक शालिग्रामतीर्थ पर तपस्या की थी।

मृक्षतवाह द्वित आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.१८; द्वित देखिये)।

मृग—सोम की पत्नियों में से एक।

२. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'मृत' पाठभेद प्राप्त है।

मृगकेतु—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मृगमंदा—पुलह ऋषि की पत्नी, जो कश्यप एवं क्रोधा की कन्याओं में से एक थी। इससे रीठ आदि प्राणी उत्पन्न हुए (म. आ. ६०.६०)।

मृगय—एक दानव, जिसे इंद्र ने श्रुतर्वन् आर्क्ष राजा की रक्षा के लिए परास्त किया था (ऋ. १०.४९.५)।

२. कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

मृगवती—कृतवर्मा राजा की कन्या, जो पूर्वजन्म में अलंबुसा नामक देवस्त्री थी (अलंबुसा देखिये)।

मृगव्याध्र—ग्यारह रुद्रों में से एक, जो ब्रह्माजी के आत्मज्ञ स्थाणु का पुत्र था। यह आकाश में मृग नामक नक्षत्र के रूप में दिखाई देता है (ऐ. ब्रा. ३.३३)।

मृगी—पुलह ऋषि की एक पत्नी, जो कश्यप एवं क्रोधा की कन्याओं में से एक थी। संसार के समस्त मृग इसीके ही संतान माने जाते हैं।

मृगेंद्रस्वातिकर्ण—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्र-वंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार स्कंदस्वाति राजा का पुत्र था। इसने तीन वर्षों तक राज्य किया था।

मृतपसू—दानवों के सुविख्यात दस कुलों में से एक (म. भा. ५९.२८)।

मृत्यु—एक स्त्रीदेवता, जो ब्रह्मा के द्वारा जगत्-संहार के लिए उत्पन्न की गयी थी। ऋग्वेद एवं महा-भारतादि ग्रंथों में निर्दिष्ट यमदेवता से इसका काफी साम्य है। ऋग्वेद में कई स्थानों पर इसे यम से समीकृत किया गया है (ऋ. १.१६५)। अथर्ववेद में मृत्यु को यम का दूत कहा गया है (अ. वे. ५.३०)। उसी ग्रंथ में अन्यत्र मृत्यु को मनुष्यों का, एवं यम को पितरों का अधिपति कहा गया है (अ. वे. ५.२४)। यम के भौति, इसे भी समस्त प्राणियों का नाशक माना गया है (यम देखिये)।

ब्रह्मा से संवाद—इसकी उत्पत्ति के पश्चात् ब्रह्मा ने इसे जगत्क्षय करने के लिए कहा। ब्रह्मा के इस आज्ञा को सुन कर, यह रोदन करने लगी, एवं इसने उसकी प्रार्थना की, 'मृत्यु से प्राणिमात्र को अत्यंत दुःख होता है। अतः यह कार्य मैं करना नहीं चाहती हूँ'। उस पर ब्रह्मा ने इसे कहा, 'जगत्संहार का प्रत्यक्ष काम रोग करेंगे। उस संहार का तुम्हें केवल निमित्त बनना है। उत्पत्ति की तरह मृत्यु भी हर एक प्राणिमात्र के लिए आवश्यक है, एवं वही कार्य तुम्हें करना है' (म. ब्रौ. परि. १. क्र. ८. पंक्ति ६७-२१५; शां. २४९-२५०)।

सनत्सुजातआख्यान—महाभारत के 'सनत्सुजातीय' नामक आख्यान में, मृत्यु के संबंध में तात्त्विक विवेचन प्राप्त है। उस आख्यान में धृतराष्ट्र सनत्सुजात नामक ऋषि से प्रश्न करता है, 'देव एवं असुर ब्रह्मचर्य से मृत्यु

पर विजय पा सकते हैं, इस प्रकार तुम्हारा कहना है। फिर भी मृत्यु समस्त प्राणिजातियों के लिए अटल दिखाई देता है। इस मृत्यु पर विजय पानी हो, तो क्या करना चाहिये?' इस प्रश्न पर सनत्सुजात जवाब देते हैं:—

'धीरास्तु धैर्येण तरन्ति मृत्युम्।

(धैर्यशील लोग अपने धैर्य से मृत्यु पर विजय पाते हैं)
(म. उ. ४२.१२)।

मृत्यु से बचने एवं दीर्घायु प्राप्त करने के लिए, अथर्व-वेद में अनेक प्रकार के अभिचार दिये गये हैं (अ. वे. ६२)।

महाभारत में, मृत्यु एवं इक्ष्वाकु के बीच हुआ संवाद प्राप्त है (म. शां. १९२)। उसी ग्रंथ में अन्यत्र इसे कर्माधीन एवं परतंत्र कहा गया है (म. अनु. १.७४)।

२. समस्त प्राणियोंका नाश करनेवाला एक पुरुषदेवता, जो अधर्म एवं निर्ऋतिके तीन पुत्रों में से एक था। यह समस्त लोगों का अंतक है, इसी कारण इसे कोई पत्नी, या पुत्र न थे (म. आ. ६०.५३; ५४९*)।

अर्जुनक नामक व्याध एवं सर्प से इसका संवाद हुआ था (म. अनु. १.५०-६७)। इसने नचिकेतसु को ब्रह्मविद्या सिखायी थी (क. उ. ३.१६; ६.१८)।

३. एक आचार्य, जो प्रजापति नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम वायु था (वं. ब्रा. २)।

४. कलि एवं दुरुक्ति की कन्याओं में से एक।

५. एक व्यास (व्यास देखिये)।

६. वेन नामक सुविख्यात राजा का मातामह, जिसकी मानसकन्या का नाम सुनीथा था (वेन. २ देखिये)।

मृद—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो विष्णु के अनुसार श्वफल्क राजा का पुत्र था।

मृदु—(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार नृपंजय राजा का पुत्र था।

मृदुर—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो वायु एवं भागवत के अनुसार श्वफल्क राजा का पुत्र था।

मृदवित्—एक यादव राजा, जो भागवत के अनुसार श्वफल्क राजा का पुत्र था।

मृध्रवाच—दस्यु लोगों का नामान्तर। मृध्रवाच का शब्दशः अर्थ 'शत्रु की भाषा बोलनेवाला' होता है, एवं इसी अर्थ से दस्युओं के लिए इस शब्द का प्रयोग किया गया है (दस्यु देखिये)।

मूलिक—एक देव, जो स्वयंभुव मन्वन्तर के जिदाजित देवों में से एक था।

मृत्तिक वसिष्ठ—एक वैदिक सूत्रद्रष्टा (ऋ. १.१७. २५-२७; १०.१५०)।

मृषा—अधर्म की पत्नी, जिसे दम्भ एवं माया नामक दो सन्तानें थी (भा. ४.८.२)।

मेकल—एक लोकसमूह, जो पहले क्षत्रिय था, किन्तु ब्राह्मणों के साथ ईर्ष्या करने से नीच हुआ (म. अनु. ३५.१७-१८)। भारतीय युद्ध में ये लोग कोसलनरेश बृहद्बल के साथ उपस्थित थे, एवं भीष्म की रक्षा करते थे (म. भी. ४७.१३)।

२. (भविष्य.) एक राजवंश, जो वायु के अनुसार पट्टमित्र राजा के पश्चात् उत्पन्न हुआ था।

मेघ—तारकासुर के पक्ष का एक असुर।

२. स्वायंभुव मनु के पुत्रों में से एक।

३. (भविष्य.) एक राजवंश, जो कोमल नामक नगरी में राज्य करता था। ब्रह्मांड के अनुसार इस वंश में नौ राजा, एवं वायु के अनुसार सात राजा थे (नल देखिये)।

मेघकर्णा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२६)।

मेघजाति—(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो वायु के अनुसार पुरूरवस् राजा का पुत्र था।

मेघनाद—रावणपुत्र ' इंद्रजित् ' का नामांतर (इंद्रजित् १. देखिये)।

२. घटोत्कचपुत्र ' मेघवर्ण ' का नामांतर (मेघवर्ण १. देखिये)।

३. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५७)।

मेघानेनाद—घटोत्कच का पुत्र ' मेघवर्ण ' का नामांतर (मेघवर्ण १. देखिये)।

२. रावणपुत्र ' इंद्रजित् ' का नामांतर (इंद्रजित् १. देखिये)।

मेघपृष्ठ—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो घृतपृष्ठ राजा का पुत्र था।

मेघमाला—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२८)।

मेघमालिन्—खर राक्षस का एक अमात्य।

२. स्कंद का एक पार्षद, जो उसे मेरु के द्वारा प्रदान किया गया था। दूसरे पार्षद का नाम ' कांचन ' था (म. श. ४४.४३)।

मेघवत्—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

मेघवर्ण—घटोत्कच का पुत्र, जिसे ' मेघनाद ' एवं ' मेघानेनाद ' नामांतर प्राप्त थे। पाण्डवों के अश्वमेध यज्ञ के समय, यह अश्वरक्षणार्थ अर्जुन के साथ उपस्थित था।

२. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था।

मेघवर्णा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२८)। पाठभेद—' एकचक्रा '।

मेघवासस्—वृष्ण की सभा का एक असुर (म. स. १.१४)।

मेघवाह—जैगीपय्य नामक शिवावतार का एक शिष्या।

मेघवाहन—जरासंध का अनुयायी एक दृप (म. स. १३.१२)।

२. एक दैत्य, जो विष्णु के पदप्रहार से मृत हुआ (स्कंद. ७.१.२४)।

मेघवाहिनी—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१७)। पाठभेद—' मेघवासिनी '।

मेघवेग—कौरव पक्ष का एक वीर, जो अभिमन्यु के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ४८.१६)।

मेघशर्मन्—एक सूर्यभक्त ब्राह्मण, जिसने सूर्य का जाप कर शन्तनु के राज्य में पर्जन्यवृष्टि करायी (भवि. प्रति. ४.८)।

मेघसंधि—(सो. मगध. भविष्य.) मगध देश का एक राजकुमार, जो जरासंध का पौत्र, एवं सहदेव राजा का पुत्र था। पुराणों में इसके ' मार्जारि ', ' सोमाधि ' एवं ' सोमापि ' आदि नामांतर प्राप्त हैं।

अग्ने पिता सहदेव के साथ यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.७)। पाण्डवों के अश्वमेध यज्ञ का अश्व इसने रोक़ा था, एवं अर्जुन से युद्ध भी किया था। किन्तु इस युद्ध में अर्जुन ने इसे पराजित किया (म. आश्र. ८३)।

मेघस्वना—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.८)।

मेघस्वाति—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार दिवीलक राजा का, विष्णु के अनुसार दिवीलक राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार अपीलक राजा का पुत्र था।

मेघहन्तृ—सुमेधस् देवों में से एक।

मेघहास—राहु का एक पुत्र। अपने पिता का श्रीविष्णु के द्वारा शिरच्छेद हुआ, यह सुन कर इसने गौतमी नदी के तट पर घोर तपस्या की। इस तपस्या से,

इसने अपने पिता को आकाश की ग्रहमाला में स्थान, एवं स्वयं के लिए 'नैऋताधिपत्य' प्राप्त किया (ब्रह्म. १४२)।

मेघक—धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न 'सेचक' नामक सर्प का नामान्तर (सेचक देखिये)।

मेघ—ऐरावतकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ।

मेदिनी—पृथ्वी का एक नाम। भगवान् विष्णु के द्वारा मधु एवं कैटभ नामक दो दैत्यों का वध होने पर, उनकी लशों जल में डूब कर एक हो गयी, एवं उन्हींके मेघ से सारा पृथ्वी आच्छादित हो गयी। इसी कारण पृथ्वी को 'मेदिनी' नाम प्राप्त हुआ (मधुकैटभ देखिये)।

मेघोहन—भीष्म नामक राक्षस का पुरोहित।

मेघ—एक यज्ञकर्ता आचार्य, जिसका निर्देश कण्व एवं दीर्घनीच लोगों के साथ प्राप्त है (ऋ. ८.५०.१०)।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो प्रियव्रत राजा का पुत्र था (मार्क. ५०.१६)।

मेघज—सुमेधस् देवों में से एक।

मेघस्—स्वायंभुव मनु के पुत्रों में से एक।

२. सुमेधस् देवों में से एक।

मेघा—दक्ष प्रजापति की कन्या एवं धर्म ऋषि की पत्नी। इसके पुत्र का नाम स्मृति था।

मेधातिथि—(स्वा. प्रिय.) शाकद्वीप का एक सुविख्यात राजा, जो प्रियवत एवं बर्हिष्मती के पुत्रों में से एक था। इसे निम्नलिखित सात पुत्र थे :—पुरोजव, मनोजव, पवमान, धृष्टानीक, चित्ररेफ, बहुरूप, एवं विश्वाधार। अपने दक्षिसमुद्र से वेष्टित शाकद्वीप के राज्य के सात विभाग कर, इसने अपने उपरनिर्दिष्ट पुत्रों में बाँट दिये (भा. ५.१.२०-२५)।

मार्कण्डेय के अनुसार, यह प्रक्षद्वीप का राजा था, एवं इसने उस द्वीप के सात भाग कर, अपने निम्नलिखित भाईयों में बाँट दिये थे :—शाकम्भव, शिशिर, सुखोदय, आनन्द, शिव, क्षेमक एवं ध्रुव। आगे चल कर प्रक्षद्वीप के ये सात भाग इसके भाईयों के सात नाम से सुविख्यात हुये (मार्क. २९-३१)।

२. एक ऋषि, जो वसिष्ठ की अरुन्धती नामक पत्नी का पिता था। इसका आश्रम चन्द्रभागा नदी के तट पर था। इसने ज्योतिष्टोम नामक यज्ञ किया था (कालि. २२)।

३. वैवस्वत मन्वन्तर का सत्रहवाँ व्यास।

४. एक प्राचीन महर्षि, जिसका पिता कण्व पूरव के सप्तर्षियों में से एक था (म. शां. २०१.२६)।

महाभारत के अनुसार, यह एक दिव्य महर्षि था, एवं इसने वानप्रस्थाश्रम का स्वीकार कर, स्वर्ग-प्राप्ति की थी (म. शां. २३६.१५)। उपरिचर वसु राजा के यज्ञ का यह एक सदस्य था (म. शां. ३२३.७)। यह इंद्रसभा का भी सदस्य था (म. स. ७.१५)। शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से यह मिलने के लिये आया था, एवं युधिष्ठिर के द्वारा यह पूजित हुआ था (म. अनु. २६. ३-९)।

५. सुमेधस् देवों में से एक।

६. एक ऋषि, जो परिश्रित राजा की मृत्यु के समय उपस्थित था (भा. १.१९.१०)।

७. दक्षसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

मेधातिथि काण्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १.१२.२३; ८.१.३-२९; २.४१-४२; ९२)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसका निर्देश 'मेधातिथि काण्व' नाम से प्राप्त है (ऋ. १.३६.२०)। इसने स्वयं को 'काण्व मेधातिथि' कहलाया है (ऋ. ८.२०.४०)।

वैदिकऋषि—यह कण्व का वंशज, एवं प्रसिद्ध वैदिक ऋषि था। ऋग्वेद के अनुसार, इंद्र इसके पास एक मेघ के रूप में आया था (ऋ. ८.२.४०)। यही पुराकथा सुविख्यात 'सुब्रह्मण्य मंत्र' में भी निहित है, जिसमें इंद्र को 'मेधातिथि का मेघ' कहा गया है, एवं जिसका पाठन यज्ञमंडप में सोम को ले आते समय पुरोहित करते है (जै. ब्रा. २.७९; श. ब्रा. ३.३.४.१८)।

पंचविंश ब्राह्मण में, इसके एवं वत्स ऋषि के दरम्यान हुए वादतंत्रवाद का निर्देश प्राप्त है, जहाँ इसने उसे हीन-कुलत्व का लोचन लगाया था। किन्तु वत्स ने अग्निपरीक्षा के द्वारा, अपने कुल की श्रेष्ठता सावित की थी (पं. ब्रा. १४.६.६)।

यह विभिन्दुकियों के यज्ञ का बृहस्पति था, जिन्होंने इसे विपुल गायें प्रदान की थी (जै. ब्रा. ३.२३३)। आसंग राजा ने भी इसे विपुल धन प्रदान किया था। अतः इसने उसकी स्तुति की थी (ऋ. ८.२.४१-४२)। अथर्ववेद में इसका उल्लेख अनेक ऋषियों के साथ प्राप्त है (अ. वे. ४.२९.६)।

काण्वशाखा—आंगिरस गोत्र के लोगों में से 'काण्व' अथवा 'काण्वायन' गोत्र के आदिपुरुष मेधातिथि, एवं इसके पिता कण्व माने जाते हैं। वायु, मत्स्य, विष्णु -एवं गरुड

के अनुसार, सुविख्यात पौरव राजा अजमीढ को काण्व-नामक एक पुत्र था, जिसका पुत्र मेधातिथि था। आगे चल कर, इसी मेधातिथि से काण्वायन ब्राह्मण उत्पन्न हुए (मत्स्य. ४९.४६-४७; वायु. ९९.१६९-१७०)।

इसी 'काण्वायन' गोत्र में निम्नलिखित वैदिक सूक्तद्रष्टा आचार्य उत्पन्न हुए थे:—प्रगाथ काण्व (ऋ. ८.६५.१२ बृहदे. ६.३९-३९); पृषप्र काण्व, जो दस्यवेवृक का समकालीन था (ऋ. ८.५६.१-२); देवातिथि काण्व (ऋ. ८.४.१७); वत्स काण्व (ऋ. ८.६.४७); सध्वंस काण्व (ऋ. ८.८.४)।

मेधातिथि गौतम—एक ऋषि, जिसकी पत्नी का नाम अहल्या, एवं पुत्र का नाम चिरकारिन् था (चिरकारिन् देखिये)।

मेधाविन्—एक उद्दण्ड ऋषिपुत्र, जो बालधि ऋषि का पुत्र था। इसकी आयु पर्वतों पर निर्भर थी, इसलिए इसे 'पर्वतायु' भी कहते थे। धनुषाक्ष नामक मुनि ने इसकी आयु के निमित्तभूत पर्वतों को भैसों से विदीर्ण करा दिया, जिस कारण इसकी मृत्यु हुयी (म. व. १३४; बालधि देखिये)।

२. एक ब्राह्मण बालक, जिसने अपने पिता को संसार की क्षणभंगुरता बता कर मोक्ष एवं धर्म की ओर प्रेरित किया था (म. शां. १६९)। यही कथा मार्कंडेय में अधिक विस्तृत रूप में प्राप्त है (मार्क. १०)।

बौद्धधर्मीय 'धम्मपद' में, एवं जैनधर्मीय 'उत्तराध्यायन सूत्र' में यही कथा कुछ अलग ढँग से प्राप्त है, जहाँ इसे राजकुमार मृगपुत्र कहा गया है (धम्म. ४. ४७-४८; उत्तराध्यायन. १४.२१-२३)। इससे प्रतीत होता है कि, तत्कालीन समाज में प्रचलित एक ही लोक-कथा के आधार पर, इन तीनों कथाओं की रचना की गयी हैं। इनमें से महाभारत में प्राप्त कथा सर्वाधिक सुयोग्य प्रतीत होती है।

३. (सो. कुरु. भविष्य.) एक कुशवंशीय राजा, जो विष्णु, वायु एवं भागवत के अनुसार सुनय राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार सुतपस् राजा का पुत्र था।

४. न्यवन ऋषि का एक पुत्र, जिसकी कथा 'पापमोचनी एकादशी' का माहात्म्य बताने के लिए पद्म में दी गयी है।

पापमोचनी एकादशी—एक बार चैत्ररथ नामक वन में इसकी मंजुशोषा नामक अप्सरा से भेंट हुयी। उसके

रूप-यौवन से यह मोहित हुआ, एवं अपनी तपस्या छोड़ कर, यह उसीके साथ रहने लगा।

इस तरह अनेक साल वीत जाने पर मंजुशोषा ने इसे समय की कल्पना दी। फिर अपने तपःश्रय के विचार से यह विवहल हो उठा, एवं इसने मंजुशोषा को पिशाच बनने का शाप दिया। उसके द्वारा दया की याचना की जाने पर, इसने उःशाप दिया, 'चैत्र माह के कृष्णपक्ष की पापमोचनी एकादशी का व्रत करने पर तुम्हें मुक्ति प्राप्त होगी।'।

आगे चल कर, अपने पिता के कहने पर इसने भी उसी एकादशी का व्रत किया, जिस कारण इसे मुक्ति प्राप्त हुयी (पद्म. उ. ४६)।

मेधाविनी—कुलिंद राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम चंद्रहास था।

मेध्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.५३-५४; ५७-५८)। ऋग्वेद के बालखिल्य सूक्त में इसका मेध्य एवं मातरिश्वन् के साथ निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८. ५२.२)।

२. स्वायंभुव मनु के पुत्रों में से एक।

मेध्यातिथि काण्व—मेधातिथि काण्व नामक वैदिक ऋषि का नामान्तर (मेधातिथि काण्व देखिये)। ऋग्वेद में इसे वैदिक सूक्तद्रष्टा बताया गया है (ऋ. ८.३; ३३; ९.४१-४३)।

मेनका—स्वर्गलोक की एक श्रेष्ठ अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्याओं में से एक थी। इसकी गणना छः प्रधान अप्सराओं में की जाती थी (म. आ. ६८. ६७)। अर्जुन के जन्मोत्सव में, एवं उसके स्वागत-समारोह में इसने नृत्य किया था (म. आ. ११४.५३; व. ४४.२९)।

ऋग्वेद एवं ब्राह्मण ग्रंथों में इसे वृषणश्व की पुत्री अथवा कन्या कहा गया है (ऋ. १.५१.१३; श. ब्रा. ३.३.४.१८)। उन्ही ग्रंथों में वृषणश्व की एक उपाधि 'मेन' दी गयी है, जिस कारण इसे मेनका नाम प्राप्त हुआ होगा (प. ब्रा. १.१)।

विवाह—इसे उर्णासु गंधर्व की पत्नी कहा गया है। गंधर्वराज विश्वावसु से इसे प्रमद्वरा नामक कन्या उत्पन्न हुयी थी। स्थूलकेश ऋषि के आश्रम में प्रमद्वरा को जन्म दे कर, इसने उसे वहीं त्याग दिया (म. आ. ८.६-८)। इसके लावण्य से पृषन् राजा मोहित हुआ था, जिससे इसे द्रुपद नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था।

विश्वामित्र की तपस्या में बाधा डालने के लिए, इंद्र ने इसे उसके पास भेजा दिया था। इसने विश्वामित्र को मोहित कर, उसका तपोभंग किया। उससे इसे शकुन्तला नामक कन्या उत्पन्न हुयी। इसके अतिरिक्त, इसके वध्यश्च नामक एक पति का भी निर्देश प्राप्त है।

२. पितृकन्या मेना का नामान्तर।

३. पितृकन्या मेना की एक कन्या।

मेना—एक पितृकन्या, जो आप्य नामक पितरों की कन्या, एवं हिमवत् की पत्नी थी। कई ग्रंथों में इसे वैपाज नामक पितरों की मानसकन्या कहा गया है।

इसे मैनाक तथा कौंच नामक दो पुत्र, एवं अपर्णा, एकपर्णा, एकप्रताला एवं मेनका नामक चार कन्याएँ थीं (भा. ४७; ह. वं. १.१८.११-१५; मार्क. ५०.१६; मत्स्य. १३; पितर देखिये)।

मेरु—एक पर्वत, जिसे निम्नलिखित नौ कन्याएँ थीं :—मेरुदेवी, प्रतिरूपा, उग्रयंत्री, लता, रम्या, श्यामा, नारी, भद्रा, एवं देवकीति। मेरु की इन नौ कन्याओं के विवाह सुविख्यात सम्राट् आग्नीध्र के नौ पुत्रों के साथ हुए थे (भा. ५.२.२३; आग्नीध्र देखिये)।

भगवत में इसके आयति एवं नियति नामक और दो कन्याओं का निर्देश प्राप्त है, जिनके विवाह क्रमशः धातु एवं विधातु से हुए थे (भा. ४.१.४४)।

मेरुदेवी—मेरुपर्वत की एक कन्या, जिसका विवाह आग्नीध्र राजा का पुत्र नाभि राजा से हुआ था। इसके पुत्र का नाम ऋषभदेव था (भा. १.३.१३; ५.४.२)।

मेरुसावर्णि अथवा **मेरुसावर्ण**—एक ऋषि, जिसने युधिष्ठिर को हिमालय पर्वत पर धर्म एवं ज्ञान का उपदेश दिया था (म. स. ६९.१२)। यह अत्यंत तपस्वी, जितेन्द्रिय एवं त्रैलोक्य में विख्यात था (म. अनु. १५०. ४४-४५)।

२. दक्षकन्या सुव्रता के चार पुत्रों का सामूहिक नाम (वायु. १००.४२)। इस समूह में निम्नलिखित चार पुत्र शामिल थे, जो नौवें, दसवें, ग्यारहवें एवं बारहवें मन्वन्तर के अधिपति 'मनु' कहल्यते हैं :—दक्षसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि, धर्मसावर्णि एवं रुद्रसावर्णि (मार्क. ५०)।

इन्होंने मेरुपर्वत पर तपस्या की थी, जिस कारण इन्हें मन्वन्तरों का अधिपतिव प्राप्त हो गया (ब्रह्मांड. १.२४)।

३. मत्स्य के अनुसार, दसवें मन्वन्तर का अधिपति मनु।

४. पद्म के अनुसार, ग्यारहवें मन्वन्तर का अधिपति मनु।

मेघ—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५९)।

मेघकिरीटकायन—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

मेघप—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

मेघहृत्—गरुड के पुत्रों में से एक।

मैत्रावरुण अथवा **मैत्रावरुणि**—वसिष्ठ एवं अगस्त्य ऋषियों का नामान्तर (वसिष्ठ देखिये)।

मैत्रि—एक ऋषि, जो 'मैत्रि उपनिषद्' का प्रवर्तक माना जाता है। इसकी माता का नाम मित्रा था (मै. उ. २.२.२)।

मैत्रि उपनिषद्—'मैत्रि उपनिषद्' नामक सुविख्यात ग्रंथ का कर्ता इसे मानते हैं। विचार एवं शब्दसंपत्ति इन दोनों दृष्टि से, यह उपनिषद् अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना जाता है। इस ग्रंथ में सात अध्याय हैं, जिसमें से पहले चार काफी पूर्वकालीन हैं।

इस ग्रंथ के प्रारंभ में बताया गया है कि, एक बार बृहद्रथ राजा शाकायन्य ऋषि के पास आत्मज्ञान के हेतु गया। उस समय शाकायन्य ऋषि ने अपने गुरुमैत्रि ऋषि का तत्त्व उसे समझाया। वही 'मैत्रि उपनिषद्' है।

इस उपनिषद् में अंतरात्मा को मानवी शरीर का चालक कहा गया है, एवं उसीकी प्रेरणा से मानवी शरीर कुम्हार के चक्र की भाँति घूमता है, प्रेक्षा कहा गया है। आत्मा के सचेतनत्व का 'मैत्रि उपनिषद्' का यह सिद्धांत प्लेटो के सिद्धान्त से मिलता जुलता है।

इस ग्रंथ में मानवी शरीर का वर्णन करते समय, उसे एक रथ कहा गया है, जिसके अश्व कर्मेन्द्रियों से बने हैं, एवं ज्ञानेन्द्रिय को उसकी वागडोर, मानवी मन को उसका सारथी, एवं देहस्वभाव को उसका चातुक (सचेतक) कहा गया है (मै. उ. २.९)।

इस उपनिषद् में सात्विक, राजस एवं तामस गुणों का जो वर्णन प्राप्त है, वह भगवद्गीता से साम्य रखता है।

मैत्री—दक्ष की तेरह कन्याओं में से एक, जो स्वायंभुव मन्वन्तर के धर्मऋषि की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम प्रसाद था।

मैत्रेय—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

२. ग्लाव एवं वक्र दास्य नामक आचार्यों का पैतृक नाम (छां. उ. १.१२.१; गो. ब्रा. १.१.३१; अ. वे. ११०)।

मैत्रेय कौशारव—एक सुविख्यात आचार्य एवं तत्वज्ञानी। एतरेय ब्राह्मण में इसे 'कौशारव' नामक आचार्य का पैतृक अथवा मातृक नाम बताया गया है, एवं इसके द्वारा सुन्वन् कैरिश्य राजा को 'ब्राह्मण परीमर' विद्या प्रदान की जाने की कथा दी गयी है (ऐ. ब्रा. ८.२८.१८)।

नाम—यागिनि के अनुसार, यह मित्रेयु नामक आचार्य का पुत्र था, जिस कारण इसे 'मैत्रेय' पैतृक नाम प्राप्त हुआ (पा. सू. ६.४.१७४; ७.३.२)। छंदोग्य उपनिषद् के अनुसार, यह किसी मित्रा नामक स्त्री का पुत्र था, जिस कारण इसे 'मैत्रेय' यह मातृक नाम प्राप्त हुआ था (छं. उ. १.१२.१)।

भागवत में इसे कुषारव एवं मित्रा का पुत्र कहा गया है, जिस कारण इसे 'कौषारव' अथवा 'कौषारवि' पैतृक उपाधि प्राप्त हुयी होगी (भा. ३.४.२६; ३६; ५.१७)।

युधिष्ठिर की मयसभा में भी यह उपस्थित था (म. स. ४.८)।

दुर्योधन को शाप—जिस समय पांडव वनवास में थे, उस समय व्यास के आदेशानुसार, यह धृतराष्ट्र एवं दुर्योधन के पास उन्हें पाण्डवों के बल-पौरुष का ज्ञान झराने के लिए गया था। इसने दुर्योधन को बार बार समझाया, एवं अनुरोध किया, 'तुम पाण्डवों से द्रोह मत करो'। किन्तु दुर्योधन ने हँसते हुए इसकी खिल्ली उड़ाई, एवं जॉष ठोकते हुए इसके द्वारा दिये गये उपदेश का अनादर किया। तब इसने क्रोधावेश में दुर्योधन को शाप दिया, 'तुम्हारी यह जंघा भीम की गदा के द्वारा भंग होगी। यदि अब भी तुम पाण्डवों से मित्रता स्थापित करने को तैयार हो, तो मेरी यह शापवाणी व्यर्थ हो सकती है, अन्यथा नहीं' (म. व. ११.३२)।

व्यास-मैत्रेय संवाद—मैत्रेय धार्मिक प्रवृत्ति का ऋषि था, एवं ऋषि मुनियों के सत्संग के कारण, यह ज्ञानी, दानी एवं वेदमार्ग का अनुसरण करनेवाला हुआ था। यह एकान्त में रहना विशेष पसंद करता था। एक बार वाराणसी में यह गुप्तरूप से एग स्वैरिणी के घर में रहता था। यज्ञायक श्री व्यास ने वहाँ आ कर इसे दर्शन दिया। मैत्रेय व्यास को देख कर अति प्रसन्न हुआ, एवं इसने उसकी विधिवत् पूजा की। पश्चात् इसने व्यास से विज्ञान, ज्ञान एवं तप के संबंध नानाविध प्रश्न किये, एवं व्यास ने उन प्रश्नों के यथोचित जवाब दे कर इसे आत्मज्ञान

कराया। विद्या, ज्ञान, एवं तप का ज्ञान करानेवाला यह 'व्यास-मैत्रेय संवाद' महाभारत में प्राप्त है (म. अनु. १२०--१२२)

विदुर-मैत्रेय-संवाद—श्रीकृष्ण ने जिस समय उद्वव को उपदेश दिया था, उस समय मैत्रेय भी वहाँ उपस्थित था। श्रीकृष्ण की इच्छा थी कि, इस उपदेश के समय तत्वज्ञानी विदुर भी उपस्थित होता तो अच्छा था। किन्तु विदुर उन दिनों तीर्थयात्रा के लिए बाहर गया था। तीर्थयात्रा के उपरांत विदुर ने कृष्ण के उस उपदेश को सुनना चाहा, जिसे उसने उद्वव को दिया था। किन्तु विदुर के लौटने तक कृष्ण का निर्वाण हो चुका था।

उस उपदेश को सुनने तथा जानने की इच्छा से, विदुर उद्वव के पास गया, लेकिन उद्वव ने उसे मैत्रेय के पास भेज कर कहा, 'मैत्रेय परम ज्ञानी है। कृष्ण की वाणी का कथन वही कर सकता है'। तब विदुर मैत्रेय के पास आया। मैत्रेय ने विदुर को कृष्ण का उपदेश सुनाया। इस उपदेश के अन्तर्गत 'कर्मदेवहुति-संवाद', 'ध्रुवचरित्र' तथा 'दक्षयज्ञ' आदि की कथाओं का वर्णन तत्वज्ञान के दृष्टि से किया गया था।

मैत्रेय के द्वारा कृष्ण का यह उपदेश जो विदुर से कहा गया, वह भागवत के तृतीय तथा चतुर्थ स्कंदों में प्राप्त है, जिसे 'विदुर-मैत्रेय संवाद' कहा गया है। अध्यात्म के क्षेत्र में यह अपने किसम का अनूठा संवाद है।

कृष्ण के द्वारा उद्वव को दिया गया संवाद भागवत के एकादश स्कंद में प्राप्त है। महाभारत में जिस प्रकार गीता एवं अनुगीता है, उसी प्रकार भागवत में 'उद्वव-कृष्ण संवाद' एवं 'विदुर मैत्रेयसंवाद' भी महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं।

भीष्म के देहत्याग के समय, तमाम ऋषियों के साथ यह भी वहाँ उपस्थित था (म. शां. ४७.६५)। यह व्यास की भाँति चिरंजीव माना जाता है। लोगों का ऐसा विश्वास है कि, आज भी यह अपने भक्तों को दर्शन देता है।

मैत्रेय सोम—(तो. नील.) उत्तर पंचाल देश का सुविख्यात ब्रह्मक्षत्रिय राजा, जो 'मैत्रेय ब्राह्मणशास्त्र' का उत्पादक माना जाता है। अपने पितामह दिवोदास, एवं पिता मित्रेयु के समान, यह भी भृगुवंशीयों में समिलित हो गया था, जिस कारण इसे 'मैत्रेय भार्गव' भी कहा जाता है (मत्स्य. ५०.१३; वायु. ९९. २०६; ब्रह्म. १३; ह. वं.

१.३२.७५-७७)। इसके बाद इसका पुत्र संजय उत्तर पंचाल देश के राजगद्दी पर बैठा।

मैत्रेय ब्राह्मण—मैत्रेय राजा से 'मैत्रेय ब्राह्मण' नामक ब्राह्मणजाति का निर्माण हुआ। मैत्रेय एवं इसके पूर्वज 'क्षत्रिय ब्राह्मण' कहलाते थे। उत्तर पंचाल देश के मुद्गल राजा का ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मिष्ठ सर्वप्रथम ब्राह्मण बन गया, जिससे 'मुद्गल' अथवा 'मौद्गल्य' नामक क्षत्रिय ब्राह्मण उत्पन्न हो गये। ये ब्राह्मण स्वयं को 'अगिरस' कहलाते थे (मत्स्य. ५-७; वायु. ९०.१९८-२०१)।

ब्रह्मिष्ठ का पुत्र बन्धुश्व, एवं पौत्र दिवोदास ये दोनों वैदिक सूक्तद्रष्टा थे, एवं भार्गव कुल में शामिल हो गये थे (ऋ. १०.५९.२; ८.१०३.२)। स्वयं मैत्रेय, एवं इसका पिता मित्रयु 'भार्गव' कहलाते थे। पराशर ऋषि ने मैत्रेय को 'विष्णु पुराण' का ज्ञान कराया था (विष्णु. १.१. ४-५)।

मैत्रेय एवं मौद्गल्य ब्राह्मण कुलों में कोई भी विख्यात ऋषि उत्पन्न न हुआ था, किन्तु मैत्रेय कौशारव नामक एक ऋषि का निर्देश वैदिक ग्रंथों में प्राप्त है (मैत्रेय कौशारव देखिये)।

मैत्रेयी—एक सुविख्यात ब्रह्मवादिनी स्त्री, जो याज्ञवल्क्य महर्षि की दो पत्नियों में से एक थी (बृ. उ. ४. ५.१)। बृहदारण्यक उपनिषद् में इसका अनेक बार उल्लेख प्राप्त है, जहाँ इसके एवं याज्ञवल्क्य ऋषि के संवाद उद्धृत किये गये हैं (बृ. उ. २.४.१-२; ४.५.१५)। यह संभवतः ब्रह्मवाह के पुत्र याज्ञवल्क्य की पत्नी होगी।

मैत्रेयी-याज्ञवल्क्यसंवाद—याज्ञवल्क्य महर्षि ने संन्यास लेने पर, उसकी जायदाद में से उसके अध्यात्मिक ज्ञान का हिस्सा मैत्रेयी ने माँगा। उस समय मैत्रेयी एवं याज्ञवल्क्य के बीच हुए संवाद का निर्देश 'बृहदारण्यक उपनिषद्' में प्राप्त है (बृ. उ. ४.५.१-६)। मैत्रेयी ने कहा, 'मुझे अध्यात्मिक ज्ञान का आकांक्षा इसलिए है कि, साक्षात् सुवर्णमय पृथ्वी प्राप्त होने पर भी मुझे अमरत्व प्राप्त नहीं होगा, जो केवल अध्यात्मज्ञान से प्राप्त हो सकता है। जिस संपत्ति से मुझे अनरत्व प्राप्त नहीं होगा, उसे ले कर मैं क्या करूँ?' (येनाहं नामृता स्याम्, किमहं तेन कुर्याम्)।

फिर याज्ञवल्क्य ने इसे जवाब दिया, 'जो तुम कह रही हो वह ठीक है। तुम्हारे इन विचारों से मैं प्रसन्न हूँ। इसी कारण, मैं तुम्हें आत्मज्ञान सिखाना चाहता हूँ।

आत्मा का अध्ययन एवं मनन करने से ही संसार के हर एक वस्तु का ज्ञान प्राप्त होता है। इसी कारण, इस सर्वश्रेष्ठ ज्ञान का साक्षात्कार मैं तुम्हें करना चाहता हूँ'।

इस संवाद में आत्मा शब्द का अर्थ 'विश्व का अन्तीम सत्य' लिया गया है।

बृहदारण्यक उपनिषद् में अन्यत्र याज्ञवल्क्य एवं मैत्रेयी के बीच हुए अन्य एक संवाद का निर्देश प्राप्त है (बृ. उ. ४.५.११-१५)। मैत्रेयी याज्ञवल्क्य से पूछती है, 'मनुष्य जब वेहोश होता है, तब उसकी आत्मा का क्या हाल होता है? वह परमात्मा से विलया होता है, या वैसा ही रहता है?' उसपर याज्ञवल्क्य ने जवाब दिया, 'वेहोश अवस्था में भी आत्मा एवं परमात्मा एक ही रहते हैं, क्यों कि, आत्मा 'अग्र्य' 'अशीय' एवं 'असंग' रहता है'।

याज्ञवल्क्य के द्वारा आत्मज्ञान की प्राप्ति होने पर, अपनी सारी जायदाद अपनी सौत कात्यायनी को दे कर, यह याज्ञवल्क्य के साथ वन में चली गयी।

मैनाक—एक सुविख्यात पर्वत, जो हिमालय एवं मेनका (मेना) का पुत्र था (ह. वं. ११८.५३)। वाल्मीकिरामायण में इसका चरित्र एक व्यक्ति मान कर दिया गया है।

इन्द्र ने पृथ्वी के सारे सारे पर्वतों के पंख तोड़ डाले। उस समय, यह भय के मारे समुद्र में जा कर छिप गया। हनुमत् लंका दहन के लिए जा रहा था, उस समय यह समुद्र के कहने पर बाहर आया, एवं अपने शिलर पर सवार होने की प्रार्थना इसने हनुमत् से की। इसके पुत्र का नाम क्रौंच था (वा. रा. सुं. १.१०५)।

मैद—राम के पक्ष का एक वानर, जो सुपेण वानर के दो पुत्रों में से ज्येष्ठ था। इसके कनिष्ठ बन्धु का नाम द्विविद था। ये दोनों भाई अंगद वानर के मामा थे (भा. १०.६-२)।

वालिवध के पश्चात्, सुग्रीव ने सीता के शोचार्थ जो वानर गंधमादन पर्वत पर भेजे थे, उनमें यह भी शामिल था (वा. रा. कि. ४१.७)।

राम-रावण युद्ध में इसने अत्यधिक पराक्रम दिखाया था। इसने एक घूँसा मार कर, वज्रनुष्टि नामक असुर का वध किया (वा. रा. यु. ४३.२७)। इसने यूनाक्ष नामक असुर का भी वध किया था (वा. रा. यु. ७६.३४)।

इन्द्रजित् से युद्ध—इन्द्रजित् के साथ हुए मायावी युद्ध में राम एवं लक्ष्मण मूर्च्छित हुए। उस समय, विभीषण ने कुबेर से प्राप्त देवी उडक सारे रामपक्षीय वानरों को आँखों में लगाने के लिए दिया, जिसका उपयोग करते ही गुप्ता रूप से लड़ाई करनेवाले इन्द्रजित् के सैन्य के सारे असुर वानरसैन्य को साफ दिखाई देने लगे। इस उडक को अपनी आँखों को लगा कर, इसने भी काफी पराक्रम दिखाया था (म. व. २७३.१-१३)।

यह एवं इसका भाई द्विविद ने किष्किना नामक गुफा के समीप सहदेव से युद्ध किया था, जो दक्षिणदिग्विजय के लिए उस नगरी में आया था। आगे चल कर, इन्होंने सहदेव को रत्न आदि करभार प्रदान किया, एवं उसे विद्युत किया (म. स. परि. १. क्र. १३ पंक्ति. १५-२०)।

मैरावण—महिरावण नामक राक्षस का नामान्तर। अहिरावण एवं महिरावण राक्षसों की कथा 'आनन्द रामायण' में प्राप्त है, जहाँ उन्हें 'मैरावण' एवं 'ऐरावण' कहा गया है (अहिरावण-महिरावण देखिये)।

मोद—हिरण्यवर्ष के पक्ष का एक असुर, जिसका देवासुरसंग्राम के समय वायु ने वध किया था।

२. ऐरावतकुलोत्पन्न एक सर्प, जो जन्मजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१०)।

३. मौद्र नामक आचार्य का नामान्तर।

मोदोष—एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास की अथर्वन्शिष्यपरंपरा में से वेददर्श नामक आचार्य का शिष्य था (व्यास देखिये)।

मोह—ब्रह्मा का एक पुत्र, जो उसकी छाया से उत्पन्न हुआ था (मा. ३.२०)। मत्स्य के अनुसार, यह ब्रह्मा की बुद्धि से उत्पन्न हुआ था (मत्स्य. ३.११)।

मोहक—एक राजकुमार, जो राम के परमभक्त सुरथ नामक राजा का पुत्र था। सुरथ राजा ने राम का अश्वमेधीय अश्व रोक दिया था, जिस समय यह सुरथ की ओर से युद्ध में शामिल था (पद्म. पा. ४९)।

मोहना—सुग्रीव की पत्नी। राम के अश्वमेधीय अश्व को स्नान कराने के लिए, इसने अपने पति के साथ सरयू का जल ल्याया था (पद्म. पा. ६७)।

मोहिनी—विष्णु का एक अवतार, जो चाक्षुषमन्वन्तर में हुआ था। समुद्रमंथन से चौदह रत्न निकले, जिसमें अमृत भी था। देव एवं दानवों ने मिल कर समुद्रमंथन किया, जिस कारण दोनों को अमृतप्राशन करने का अधिकार था। इसलिए वे अमृतप्राशनार्थ एकत्रित हुए।

दानवों ने अपने अधिकार में अमृतकलश रक्खा था। देवों को अमृत पी कर अमर होने की इच्छा थी, किन्तु वे यह नहीं चाहते थे कि, दानव अमृतपान कर अमर हो जाये। इस अवसर पर, श्रीविष्णु ने मोहिनी नामक सुंदर अप्सरा का रूप धारण कर दानवों को मोहित किया। यह सुअवसर देखकर, देवों ने यथेष्ट अमृतपान किया, एवं वे अमर हुए (भा. १.३; ८.८-१२; म. आ. १७. ३९-४०; भस्मासुर देखिये)।

२. एक वेदया, जो मृत्यु के समय गंगाजल पीने के कारण, अगले जन्म में द्रविड देश के वीरवर्मा राजा की पटरानी हुयी (पद्म. उ. २२०)।

मौजवत—अक्ष नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम।

२. मूजवन्त लोमों का नामान्तर (मूजवन्त देखिये)।

मौज—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मौजकेश—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मौजवृष्टि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मौजायन—युधिष्ठिर की सभा का एक ऋषि (म. स. ४.११)। हस्तिनापुर जाते समय, मार्ग में श्रीकृष्ण से इसकी भेंट हुयी थी (म. उ. ८१.३८८३)।

मौजायनि—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद—'कौजायनि'।

मौद्र—एक आचार्य, जो भागवत के अनुसार व्यास की अथर्वन्शिष्यपरंपरा में से देवदर्श नामक आचार्य का शिष्य थे। पाठभेद—'मोद' एवं 'मोदोष'।

मौद्रल—एक आचार्य, जो वेदमित्र नामक आचार्य का शिष्य था। पाठभेद—'मुद्रल' (व्यास देखिये)।

मौद्रलायन—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मौद्रत्य—एक पैतृक नाम, जो नाक, शतवल्गु एवं लंगलायन आदि आचार्यों के लिए प्रयुक्त हुआ है (श. ब्रा. १२.५.२.१; मि. ११.६; ऐ. ब्रा. ५.३.८)। 'मुद्रल' का वंशज होने के कारण, उन्हें यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. एक ब्रह्मचारी पुरुष, जिसने ग्लव मैत्रेय नामक आचार्य से साथ वाद-विवाद किया था (गो. ब्रा. १.१. ३१)।

३. एक ब्राह्मण, जो मुद्रल एवं भागीरथी का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम जाबाल था। विष्णु की आज्ञानुसार गण्ड के द्वारा दिया हुआ भुष्टा इसने

गौतमी नदी के तट पर दान में दिया, जिस कारण इसे ऐश्वर्य एवं समृद्धि प्राप्त हुयी।

४. एक वृद्ध एवं कोढ़ी ब्राह्मण, जिसकी पत्नी का नाम मालायनी इन्द्रसेना था। इसकी पत्नी ने इसकी सेवा कर इसे प्रसन्न रखा था।

एक बार मालायनी की इच्छा होने पर, इसने पाँच प्रकार के रूप धारण कर, उसके साथ ब्रीडा की। फिर भी वह अतृप्त रही। इस पर क्रुद्ध हो कर, इसने उसे अगले जन्म में पाँच पाण्डवों की पत्नी द्रौपदी बनने का शाप दिया (म. आ. परि. १. क्र. १००. पंक्ति. ६०-८०)।

महाभारत में अन्यत्र इसका, एवं इसकी पत्नी का नाम क्रमशः 'सुद्रल' एवं 'चन्द्रसेना' दिया गया है (म. व. ११४.२४; उ. ४५.९*)।

५. अंगिराकुलोत्पन्न एक प्रवर।

६. राम की सभा का एक मंत्री (वा. रा. उ. ७४.४)।

७. जनमेजय के सर्पसत्र का एक सदस्य (म. आ. ४८.९)।

८. एक आचार्य, जो शतवृष्य नामक राजा का गुरु था। पाठभेद—'सुद्रल' (सुद्रल ४. देखिये)।

९. एक ऋषि, जो शरदाय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने के लिए उपस्थित था (म. शां. ४७. ६६*)। पाठभेद—'सुद्रल'।

मौन—अपीचिन् नामक आचार्य का पैतृक नाम (कौ. ब्रा. २३.५)। 'मुनि' वंशज होने से, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

मौर्य—(ऐति.) एक सुविख्यात राजवंश, जिसमें चन्द्रगुप्त आदि दस राजा हुए थे। पुराणों के अनुसार, इस वंश के राजाओं ने १३७ वर्षों तक राज्य किया। इस वंश में निम्नलिखित राजा प्रमुख थे:— चन्द्रगुप्त, बिन्दुसार, अशोक, सुयशस (कुनाल) एवं दशरथ। विन्सेन्ट स्मिथ के अनुसार, इस राजवंश का राज्यकाल इ. पू. ३२२-१८५ माना गया है।

मौर्वी कामकटंकटा—सुर नामक यवन राजा की कन्या, जो घटोत्कच की पत्नी थी। इसे 'काम' नामक देवी से युद्ध में अजेयत्व प्राप्त हुआ था।

कृष्ण के द्वारा सुर राजा का वध होने पर, इसने श्रीकृष्ण के साथ तीन दिनों तक युद्ध किया। अन्त में कामदेवी ने इस युद्ध में मध्यस्थता की।

आगे चल कर, यह प्राग्ज्योतिषपुर में रहने लगी, जहाँ इसका विवाह घटोत्कच के साथ हुआ (स्कंद. १. २. ५९-६०)।

मौलि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोजकार।

२. एक आचार्य, जो ब्राह्मण्य नामक आचार्य का पिता था। ब्राह्मण्य ने पृथ्वी राजा को शूद्र बनने का शाप दिया था (पृथ्वी देखिये)। उस समय इसने उन दोनों में मध्यस्थता की थी।

मौषिकीपुत्र—एक आचार्य, जो हारिकर्णीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम बाडेयीपुत्र था (श. ब्रा. १४.९.४.३०; बृ. उ. ६.४.३० माध्य.)। मूषिका के किसी स्त्री वंशज का पुत्र होने के कारण, इसे 'मौषिकीपुत्र' नाम प्राप्त हुआ होगा।

मौहूर्तिक—एक देव, जो धर्म ऋषि एवं मूर्हूर्ता के पुत्रों में से एक था।

म्लेच्छ—एक जातिविशेष, जो नन्दिनी गौ के फेन से उत्पन्न हुयी थी। महाभारत में इनका वर्णन 'मुण्ड', 'अर्धमुण्ड', 'जटिल', एवं 'जटिलानन' शब्दों में किया गया है (म. द्रो. ६८.४४)। सर्वप्रथम ये लोग भारत के उत्तर-पश्चिमी सीमा प्रदेश में रहते थे। किन्तु धर्म से भ्रष्ट हुये सारी जातियों को 'म्लेच्छ' सामान्य नाम मनुस्मृति के काल में दिये जाने लगा।

भाषा—शतपथ ब्राह्मण में म्लेच्छ भाषा का निर्देश प्राप्त है, जहाँ उसे अनार्य लोगों की बरबर भाषा कहा गया है (शा. ब्रा. ३.२.१.२४)।

महाभारत में—युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में, म्लेच्छों का राजा भगदत्त समुद्रतटवर्ति म्लेच्छ लोगों के साथ उपस्थित हुआ था (म. स. ३१.१०)।

महाभारत में सर्वत्र इन्हें नीच एवं धर्मभ्रष्ट माना गया है। प्रलय के पहले पृथ्वी पर म्लेच्छों का राज्य होने की, एवं विष्णुयशस कल्कि के द्वारा इनका संहार होने की भविष्यवाणी वहाँ दी गयी है (म. व. १८८. २९-८९)। युधिष्ठिर के अश्रमेष यज्ञ में, ब्राह्मणों को देने के बाद जो धन बचा हुआ था, वह शूद्र एवं म्लेच्छ लोगों ने उठा लिया था (म. आश्व. ११.२५)।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, भीमसेन ने अपने पूर्व-दिविजय में समुद्रतट पर रहनेवाले म्लेच्छ लोगों

को जीता था, एवं उन से मणि, रत्न, सुवर्ण, रजत, चंद्र आदि भेंटवस्तुएँ प्राप्त की थी (म. स. २७. १५-२६)।

सहदेव ने अपनी दक्षिण दिग्विजय में, एवं नकुल ने अपनी पश्चिम दिग्विजय में, इन लोगों पर विजय प्राप्त की थी (म. स. २८.४४; २९.१५)। युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के समय भी, अर्जुन ने इन्हें जीता था।

इससे प्रतीत होता है कि, महाभारतकाल में इन लोगों के उपनिवेश पश्चिम, पूर्व एवं दक्षिण भारत में समुद्र के तट पर भी थे।

भारतीय युद्ध में ये लोग कौरवपक्ष में शामिल थे। इस युद्ध में, इन्होंने पाण्डवसेना पर क्रोधी गजराज छोड़ दिये थे (म. क. १७.९)। किन्तु अर्जुन ने समस्त 'जटिलानन' म्लेच्छों का संहार किया (म. द्रो. ६८.४२)। यादवराजा सात्यकि ने भी इनका संहार किया था (म. द्रो. ९५.३६)। इनके अंग नामक राजा का वध नकुल के द्वारा हुआ था (म. क. १४.१४-१७)।

म्लेच्छहन्तु—म्लेच्छयज्ञ करनेवाले प्रयोत राजा का नामान्तर (प्रयोत २. देखिये)।

य

यक्ष—देवयोगिनी की एक जातिविशेष, जो पुलह एवं पुलस्त्य ऋषियों की संतान मानी जाती है (म. आ. ६०.५४१)। महाभारत में इन लोगों को 'धृद्रदेवता' कहा गया है, एवं कुबेर को इनका राजा कहा गया है (म. आ. १. ३३; व. ११९.१०-११)। ये लोग कुबेर की सभा में लाखों की संख्या में उपस्थित रह कर, उसकी उपासना करते थे (म. स. १०.१८)।

पद्म के अनुसार, ब्रह्मा के पाँचवें शरीर से यक्ष एवं राक्षस उत्पन्न हुये। इन्हें कोई माता न थी, क्यों कि, ब्रह्मा ने अपने मनःसामर्थ्य से इन्हें उत्पन्न किया था (ब्रह्मन् देखिये)।

उत्पन्न होते ही इन्होंने ब्रह्मा से पूछा, 'हमारा कर्तव्य क्या है?' (कि कुर्मः)। फिर ब्रह्मा ने इन्हें कहा, 'तुम यज्ञ करो' (यक्षध्वम्)। इसीकारण इन्हें 'यक्ष' नाम प्राप्त हुआ (वा. रा. उ. ४. १३)। यक्ष नाम की यह उपपत्ति कल्पनारम्य प्रतीत होती है। केन उपनिषद् में 'यक्ष' शब्द का अर्थ 'आदि कारण ब्रह्म' दिया गया है।

ये लोग विद्याधरों के निवासस्थान के नीचे मेरु पर्वत के समीप रहते थे। महाभारत एवं पुराणों में निम्नलिखित यक्षों का निर्देश प्राप्त है:—

१. कुबेर के सेनापति—मणिकंधर, मणिकामुकंधर, मणिभूष, मणिमत्, मणिभद्र, पूर्णभद्र, मणिसन्धिन् (दे. भा. १२.१०)।

२. कुबेरसभा में उपस्थित यक्ष—मणिमंत्र, मणिवर, जिसके पुत्र 'गुह्यक' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे। इन्हीं पुत्रों के कारण कुबेर को 'गुह्यकाधिपति' उपाधि प्राप्त हुयी थी।

भीमसेन ने मणिमत्, कुबेर आदि यक्षों को परास्त किया था (म. व. १५७; भीमसेन देखिये)। सुंद एवं उपसुंद नामक राक्षसों ने भी इन्हें पराजित किया था (म. आ. २०२.७)।

कुबेर यक्ष लोगों का राजा था, किन्तु उसके रावण विभीषणादि चार पुत्र राक्षस थे। इन राक्षसपुत्रों की सन्तति भी राक्षस ही थी। इसी कारण कुबेर को यक्ष एवं राक्षसों का राजा कहा गया है।

२. एक यक्ष, जिसने पाण्डवों के वनवासकाल में युधिष्ठिरादि पाण्डवों को तत्त्वज्ञानविषयक प्रश्न पूछे थे (म. व. २९८.६-२५)। ये सारे प्रश्न धर्म ने यक्ष का वेष धारण कर पूछे थे (धर्म १. देखिये)।

३. एक राक्षस, जो बह्यप एवं खशा का पुत्र था। इसका जन्म संन्यासमय में हुआ था। अपने बाल्यकाल में यह अपनी माता को खाने के लिए दौड़ा। किन्तु इसके छोटे भाई रक्षस् ने इसका निवारण किया।

स्वरूपवर्णन—ब्रह्मांड में इसका स्वरूपवर्णन प्राप्त है, जहाँ इसे विलोहित, एककर्ण, मुंजकेश, ह्रस्वाय, दीर्घजिह्व, बहुदंष्ट, महाहनु, रक्तपिंगाक्षपाद, चतुष्पाद, दो गतियों का, सारे शरीर पर बालवाला, चतुर्भुज, सुंदर

नाकवाला, एवं बड़े मुँहवाला कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.७. ४२)।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम वंतुधना था, जो शंभु नामक असुर की पत्नी थी (ब्रह्मांड. ३.७.८६)। अपनी इस पत्नी से, इसे 'यातुधान' सामूहिक नाम धारण करनेवाले राक्षस पुत्ररूप में उत्पन्न हुये (यातुधान देखिये)।

एक बार इसने वसुधनि नामक गंधर्व का रूप ले कर, क्रतुस्थला अम्बरा से संगम किया, जिससे इसे रजतनाम नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (ब्रह्मांड. ३.७.१-१२)। पुत्र-जन्म के पश्चात्, इसने क्रतुस्थला को अम्बरामणों में लौटा दिया।

४. एक व्यास (व्यास देखिये)।

यक्षिणी—एक देवी, जिसके प्रसादरूप नैवेद्य के भक्षण से ब्रह्महत्या के पातक से मुक्ति प्राप्त होती है।

यक्षु—एक राजा, जो दशरत्न युद्ध में सुदास राजा के विपक्ष में था (ऋ. ७.१८.६)। संभवतः यह 'यदु' राजा का ही नामान्तर होगा।

२. एक लोकसमूह, जिन्होंने दशरत्न युद्ध में भेद के नेतृत्व में सुदास राजा के विपक्ष में हिंसा लिया था (ऋ. ७. १८.१९)। अज्ञ एवं शिशु लोगों के साथ, इन्होंने परुष्णी एवं यमुना नदी के तट पर हुये संग्रामों में भाग लिया था। इंद्र के द्वारा भेद का वचन होने पर, ये लोग भेद ले कर इंद्र की शरण में गये।

ऋग्वेद में प्राप्त निर्देशों से ये लोग अनार्य जाति के प्रतीत होते हैं। अज्ञ एवं शिशु लोगों के साथ, ये संभवतः पूर्व भारत में निवास करते होंगे।

यक्षेश्वर—एक शिवावतार, जो देवों के गर्वहरण के लिए अवतीर्ण हुआ था। समुद्रमंथन के बाद देवताओं को अमृत प्राप्त हुआ, जिस कारण वे अत्यधिक गर्वोद्धत हुये। उस समय उनका गर्वहरण करने के लिए, शिव ने यक्षेश्वर नाम से अवतार लिया।

इसने देवताओं की परीक्षा लेने के लिए, उनके सामने घाँस का एक तिनका रख दिया, एवं उसे हिलाने को कहा। देवतागण उस कार्य में असफल होने पर, उन्हे अपने वास्तव सामर्थ्य का ज्ञान हुआ (शिव. शत. ३६)। इसी प्रकार की कथा 'केन उपनिषद्' में भी प्राप्त है।

यक्षमनाशन प्राजापत्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१.६१)।

यंक्रणा—रंक्रण नामक ब्राह्मण की स्त्री।

यजत—एक यज्ञकर्ता, जिसका अन्य ऋषियों के साथ निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.४४.१०-११)। ऋग्वेद में अन्यत्र निर्दिष्ट 'यजत आत्रेय' नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा, एवं यह दोनो एक ही होंगे (ऋ. ५.६७-६८)।

यजत आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (यजत देखिये)।

यजु—(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार उपरिचर वसु राजा का पुत्र था।

यजुदाय—(सो. वसु.) एक राजा, जो वासु के अनुसार वसुदेव एवं देवकी का पुत्र था।

यज्ञ—विष्णु का सातवाँ अवतार, जो स्वायंभुव मन्वन्तर में रुचि नामक ऋषि एवं आकृति के पुत्र के रूप में उत्पन्न हुआ था। इसकी पत्नी का नाम दक्षिणा था, जिससे इसे तृषित नामक बारह देव पुत्ररूप में उत्पन्न हुये। इसे 'सुयज्ञ' नामान्तर भी प्राप्त था (भा. २. ७.२)।

स्वायंभुव मनु राजा ने 'पुत्रिकापुत्रधर्म' से इसका स्वीकार कर, इसे अपना पुत्र मान लिया था, एवं इसे अपने मन्वन्तर का इंद्र बनाया था (भा. १.३.१२; ४.१. ८; ८.१.१८; विष्णु. ३. १. ३६)।

सुश्रुत संहिता के अनुसार, प्राचीन काल में रुद्र के द्वारा इसका शिरच्छेद किया गया था। उस समय, अश्विनी-कुमारों ने इन्द्र की सहाय्यता से, इसके सर पर शल्यकर्म किया, एवं इसका विर पूर्ववत् किया (सु. सं. १.१४)।

२. (आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार गौतमी का पुत्र था।

यज्ञ प्राजापत्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १३०)।

यज्ञकृत्—(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार विजय का राजा पुत्र था।

यज्ञकोप—रावण के पक्ष का एक राक्षस, जो राम के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ९.४३)।

यज्ञदत्त—कापिल्य नगर का एक अग्निहोत्री ब्राह्मण, जिसके पुत्र का नाम गुणनिधि था (शिव. स्त. ध्रु १८)।

२. भगदत्त राजा के पुत्र 'वज्रदत्त' का नामान्तर (वज्रदत्त देखिये)।

३. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक ब्राह्मण, जो यज्ञकर्म में निपुण था। यह यामुन पर्वत की तलहटी में निवास करता था (पद्म. पा. ९६)।

• ४. (सो. कु. भविष्य.) एक राजा, जो भविष्य के अनुसार शतानीक राजा का पुत्र था।

यज्ञपति—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

यज्ञार्पिडायन—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद—‘यद्रामिलायन’।

यज्ञवाहु—(स्वा. प्रिय.) शास्मलिद्वीप का एक सुविख्यात राजा, जो भागवत के अनुसार प्रियव्रत राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम बार्हिष्मती था।

इसे निम्नलिखित सात पुत्र थे—सुरोचन, सौमनस्य, रमणक, देववर्ष, पारिमद्र, आप्यायन एवं अविज्ञात (भा. ५.२०.९)। इसने शास्मलिद्वीप के अपने राज्य के सात भाग कर, उन्हें अपने उपनिर्दिष्ट पुत्रों में बाँट दिये। आगे चल कर, उस द्विप के सात भाग इसके सात पुत्रों के नाम से सुविख्यात हुये (भा. ५.१.२५)।

यज्ञवचस् राजस्तंबायन—एक आचार्य, जो तुर कावपेय नामक आचार्य का शिष्य था (श. ब्रा. १०.४. २.१; मै. सं. ३.१०.३; ४.८.२)। इसके शिष्य का नाम कुश्रि-था (बृ. उ. ६.५.४ काण्व)। राजस्तंब का वंशज होने कारण, इसे ‘राजस्तंबायन’ नाम प्राप्त हुआ होगा।

यज्ञवराह—वराहरूपधारी श्रीविष्णु का नामान्तर (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति. १२८)।

यज्ञवाह—अगस्त्यकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६५)।

यज्ञशत्रु—एक राक्षस, जो लंका में रहनेवाले खर नामक राक्षस का अनुगामी था (वा. रा. अर. २३. ३१)।

यज्ञशर्मन्—द्वारका में रहनेवाला एक ब्राह्मण, जो शिवशर्मन् नामक एक तपस्वी ब्राह्मण का पुत्र था।

एकबार इसकी पितृभक्ति की परीक्षा लेने के लिए, इसके पिता शिवशर्मन् ने माया से इसकी पत्नी का वध किया। पश्चात् उसने इसे पत्नी की शरीर टुकड़े टुकड़े कर, उन्हें फेंक देने के लिए कहा। अपने पिता की आज्ञानुसार, इसने यह पाशवी कृत्य किया। इस पर इसका पिता प्रसन्न हुआ, एवं उसने इसे अपनी पत्नी को पुनः जीवित करने के लिए कहा (पद्म. भृ. १.)।

यज्ञश्री—(आंश्र. भविष्य.) एक सुविख्यात आंश्र-वंशीय राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार गौतमीपुत्र राजा का पुत्र था। मरत्य में इसका ‘शिवश्री’ नामान्तर दिया गया है। इसके पितामह का नाम शिवस्वाति था।

भागवत एवं विष्णु में इसे शिवस्कंद राजा का, एवं वायु में गौतम राजा का पुत्र कहा गया है।

यज्ञसेन—पांचालनरेश द्रुपद राजा का नामान्तर (म. आ. १२२.२६; द्रुपद देखिये)।

यज्ञसेन चैत्र—एक आचार्य, जिसका पैतृक नाम ‘चैत्र’ अथवा ‘चैत्रियायण’ था (का. सं. २१.४; तै. सं. ५.३.८.१)।

यज्ञहन्—एक राक्षस, जो रक्षन् एवं ब्रह्मघना का पुत्र था।

२. कृष्णपुत्र वृष का पुत्र।

यज्ञहोत्र—उत्तम मनु के पुत्रों में से एक।

यज्ञापित—एक राक्षस, जो रक्षन् एवं ब्रह्मघना का पुत्र था।

यज्ञेषु—एक यज्ञकर्ता, जिसके पुरोहित का नाम मास्य था। यज्ञ प्रारंभ करने के लिए उत्तम सूर्त जाननेवाले मास्य ने, एक सुभूर्त पर इसका यज्ञ प्रारंभ किया, एवं संपन्न बनने में इसे सहाय्यता की (तै. सं. १. ५. २. १)।

यज्वन्—पारावत देवों में से एक।

यति—यज्ञविरोधी एक जातिमूढ़, जिनका निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार प्राप्त है (क. ८.३.९; ६.१८)। ये लोग यज्ञविरोधी होने के कारण, इन्द्र ने एक अशुभ सूर्त में इन्हें लकड़बग्गे (सालावृक) को दे दिया था। इनमें से पृथुरदिम, बृहत्गिरि एवं रायोवाज ही अपने को बचा सके। उनकी दया आ कर इन्द्र ने उनकी रक्षा की, एवं उन्हें क्रमशः क्षात्रविद्या, ब्रह्मविद्या, एवं वैश्य-विद्या सिखायी (तै. सं. २.४.९.२; वा. सं. ८.५; पं. ब्रा. १३.४.१६)।

मनुस्मृति में इस कथा का निर्देश प्राप्त है, एवं जानबूझ कर ब्रह्महत्या करने पर प्रायश्चित्त लेनेवाले लोगों में मनु ने इन्द्र का निर्देश किया है (मनु. ११.४५. कुट्टकमाध्य)।

२. एक आचार्य, जिसका निर्देश सामवेद में भृगु ऋषि के साथ किया गया है (सा. वे. २.३०४)।

३. (सो. पुरुरवस्) नहुष के छः पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र। कुकुरस्थ राजा की कन्या गो इसकी पत्नी थी (ब्रह्म. १२.३; वायु. ९३.१४)।

नहुष राजा का ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण, उसके पश्चात् प्रतिष्ठान के राजगद्दी पर इसका ही अधिकार था। किंतु यह प्रारंभ से ही विरक्त था, जिस कारण अपने छोटे भाई ययाति को राज्य दे कर, यह स्वयं वन में चला

गया (म. आ. ७०.२८४; ६९२; भा. ९.१८.१-२; पद्म. सू. १२; मत्स्य. २.४.५१; ह. वं. १.३०.३)।

४. ब्रह्मदेव का एक मानसपुत्र (भा. ४.८.१)।

५. विश्वामित्र का एक पुत्र।

६. शिवदेवों में से एक।

यतिनाथ—एक शिवावतार। अबु के पहाड़ पर आहुका नामक एक भिन्नदम्पती रहते थे। इसने उन पर कृपा की, जिसके कारण अगले जन्म में उन्हें राजवंश में नल एवं दमयंती के रूप में जन्म प्राप्त हुआ (शिव. शत. २८)।

यतीश्वर—शिल्पिण्डु नामक शिवावतार का शिष्य।

यदु—एक जातिसमूह, जो दाशराज युद्ध में भरत राजा सुदास के विपक्ष में था (ऋ. ७.१९.१८)। त्सीमर के अनुसार, यदु, अनु, द्रुह्यु एवं तुर्वश लोग मिल कर प्राचीन 'पंचजन' लोग बने थे, जिनका निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (त्सीमर—आल्टिन्डिशे लेवेन, १२२; १२४)। दाशराज युद्ध में अर्ण एवं चित्ररथ राजा पानी में डूब कर मर गये, जिनके साथ ये लोग भी मरनेवाले थे। किन्तु इन्द्र ने इन्हें बचाया। यदु एवं तुर्वश लोगों को सुदास राजा के हाथ में देने की प्रार्थना, ऋग्वेद में बसिष्ठ के द्वारा इन्द्र से की गयी है (ऋ. ७.१९.८)। इन्द्र के द्वारा इन्हें सुदास राजा के हाथ सौंप देने का निर्देश भी ऋग्वेद में प्राप्त है।

इससे प्रतीत होता है कि, ये लोग शुरु में सुदास राजा के शत्रु थे, किन्तु आगे चल कर उसके मित्र बने (ऋ. ४. ३०.१७; ६.२०.१२; ४५.१)।

२. यदु लोगों का राजा, जिसका निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार प्राप्त है। यह सुदास राजा का शत्रु था, किन्तु इंद्र का उपासक था (ऋ. १.१०८.८; १७४. ९; ५.३१.७; ७.१९.८.)। दाशराज युद्ध में यह एवं तुर्वश राजा अपनी जान बचा कर भाग गये थे, जब की इसके मित्र अनु एवं द्रुह्यु मारे गये थे। इसके साथ उपदेव, नर्य, तुर्वीति, एवं वैष्य आदि व्यक्तियों के निर्देश प्राप्त हैं (ऋ. १.३६.१८; ५४.६)। ऋग्वेद में इसके वंशजों का निर्देश 'याद्व' नाम से किया गया है (ऋ. ७.१९.८.)। किन्तु इनमें से किसी का भी निर्देश पुराणों में प्राप्त नहीं है।

३. (सो. आयु.) ययाति राजा के पाँच पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र। ययाति राजा को देवयानी से दो पुत्र उत्पन्न हुये थे, जिनके नाम यदु एवं तुर्वश थे (ह. वं. १.३०. ५; म. आ. ७८.९; मत्स्य. ३२.९)।

अपने पिता ययाति को युवावस्था देने से इसने अस्वीकार कर दिया। इस कारण, ज्येष्ठ पुत्र होते हुये भी ययाति ने प्रतिष्ठान देश के अपने राज्य से इसे वंचित कर, अपने कनिष्ठ पुत्र पूरु को राज्य प्रदान किया। ययाति के मृत्यु के पश्चात्, उसके राज्य का थोड़ा हिस्सा इसे प्राप्त हुआ, जिसमें मध्य भारत के चर्मण्वती (चंबल), वेजवती (वेतवा), शुक्तिमती (केन) नदियों से वेष्टित प्रदेश शामिल था। हरिवंश के अनुसार, ययाति के राज्य में से पूर्वोत्तर प्रदेश का राज्य इसे प्राप्त हुआ था (ह. वं. १.३०.१८)।

इसी प्रदेश में इसने अपना सुविख्यात राजवंश एवं स्थापित किया। इस राजवंश ने मथुरा, गुजराथ, काठियावाड़ प्रदेश में स्थित राक्षस लोगों का नाश किया। पश्चात् इन दोनों प्रदेश में यादव एवं उन्हीके ही वंश के हैहय लोगों का राज्य स्थापित हुआ।

शाप—शुक्राचार्य के शाप के कारण, इसके पिता ययाति का तारुण्य नष्ट हुआ। फिर ययाति ने अपने ज्येष्ठ पुत्र यदु को अपनी जरा ले कर उसके बदले इसका तारुण्य देने की प्रार्थना की। यदु ने अपने पिता की यह प्रार्थना अस्वीकार कर दी। इस पर क्रुद्ध हो कर ययाति ने इसे शाप दिया, 'आज से तुम एवं तुम्हारे वंशज राज्यधिकार से वंचित रहोगे' (म. आ. ७९.१-७)। यदु के जिस भाईयों ने इसका अंतुकरण किया, उन्हें भी ययाति का यही शाप प्राप्त हुआ।

पौराणिक ग्रंथों में ययाति ने इसे निम्नलिखित अन्य शाप देने का निर्देश प्राप्त है— १. 'तुम मातुलकन्या-परिणय करोगे'। २. 'तुम मातुद्रव्य का हरण करोगे' (पद्म. भू. ८०)। ३. 'तुम सोमवंश में न रहोगे'। ४. तुम यातुधान नामक राक्षस उत्पन्न करोगे' (वा. रा. उ. ५९.५; १४-१६; २०)।

ययाति का अत्यंत प्रिय पुत्र होते हुये भी, यदु ने अपने पिता की जरा लेना अस्वीकार क्यों कर दिया, इसका स्पष्टीकरण वायु एवं भागवत में प्राप्त है। इन ग्रंथों के अनुसार, अपना यौवन ले कर अपने पिता अपनी ही माता से भोगविलास करे, यह कल्पना इसे अपवित्र एवं अवैध प्रतीत हुयी। इसी कारण, यद्यपि पिता की प्रार्थना मान्य करने से पित्राज्ञा का पालन करने का पुण्य प्राप्त होगा, फिर भी उससे मात्रागमन का महान् दोष भी लगेगा, ऐसे सोच कर, इसने ययाति की प्रार्थना अमान्य कर दी (वायु. ९३; भा. ९.१९.२३)।

हरिवंश एवं ब्रह्म के अनुसार, यदु ने किसी ब्राह्मण को कई वस्तु दान में देने का अभिषेचन दिया था, जिस कारण इसने ययाति की जरा स्वीकार ने में असमर्थता प्रकट की (ह. वं. १.३०.२२-२४; ब्रह्म. १२)।

इसे एवं इसके भाई अनु को ययापि राज्य प्राप्त हुआ था, फिर भी सार्वभौम राज्याधिकार से वे सदा के लिए वंचित रहे (विष्णु. ५.३)। इसी कारण 'यादव वंश' में उत्पन्न हुये कृष्ण आदि राजा को, एवं 'अनुवंश' में उत्पन्न हुये कर्ण आदि को अन्य सार्वभौम राजाओं से उपेक्षा सहनी पड़ी। श्रीकृष्ण को 'ग्वाल्य', एवं कर्ण को 'सूतपुत्र' ध्वंजनात्मक उपाधियाँ उनके विपक्ष के लोगों के द्वारा प्रदान की जाती थी।

परिवार—हरिवंश के अनुसार, यदु को कुल पाँच पत्नियाँ थी, जो धूम्रवर्ण नामक नाग की कन्याएँ थी। इन पाँच पत्नियों से इसे निम्नलिखित पाँच पुत्र उत्पन्न हुये:— १. वसवर्ण, २. माधव, ३. मुचुकुंद, ४. सारस, ५. हरित (ह. वं. २.३८.२)। इसी ग्रंथ में अन्यत्र इसके 'सहस्रद' एवं 'पयोद' नामक दो पुत्रों का निर्देश प्राप्त है (ह. वं. १.३३.१)।

इनके अतिरिक्त, निम्नलिखित ग्रंथों में यदु के पुत्र इस प्रकार बताये गये हैं:—

१. भागवत में—क्रोष्टु, सहस्रजित्, नल, एवं रिपु (भा. ९.२३)।

२. मत्स्य में—नील, अंतिक, एवं लघु (मत्स्य. ४३. ७)।

३. वायु में—जित एवं लघु (वायु. ९४.२)।

४. विष्णु में—क्रोष्टु (विष्णु. ४.११)।

५. पद्म में—भोज, भीमक, अंधक, कुंजर, वृष्णि, श्रुतसेन, श्रुताधार, कालदंड एवं कालजित (पद्म. भू. १०९)।

पार्श्विक के अनुसार, भागवत में प्राप्त यदुपुत्रों की नामावली प्रक्षिप्त है। यदु के पुत्रों में केवल दो पुत्र ही महत्त्वपूर्ण थे:— १. क्रोष्टु, जिसने मथुरा में यादव वंश की स्थापना की; २. सहस्रजित्, जिसने हैहय वंश की स्थापना की (पार्श्विक. ८७)।

यादववंश—पुराणों में यादववंश की जानकारी विस्तृत रूप में उपलब्ध है, किंतु वहाँ प्राप्त बहुत सारे निर्देश एक दूसरे से मेल नहीं खाते हैं। वायु के अनुसार, यादववंश की ग्यारह शाखाएँ थी (वायु. ९६.२५५)। मत्स्य के अनुसार, इनकी एकसौ शाखाएँ थी (मत्स्य. ४७.२५-

२८)। हरिवंश के अनुसार, यदु के पाँच पुत्रों ने यादव वंश की पाँच शाखाएँ प्रस्थापित की। उनमें से माधव ने मथुरा नगरी में राज्य स्थापित किया, एवं मुचुकुंद, सारस, हरित एवं पद्मवर्ण राजाओं ने दक्षिण हिंदुस्थान में महाराष्ट्र में आ कर स्वतंत्र राज्य स्थापित किये, जो आगे चल कर करवीर (कोल्हापूर) आदि नामों से प्रसिद्ध हुये। हरिवंश में प्राप्त माधव की वंशावली निम्न प्रकार है:—माधव-सात्वत्-भीम सात्वत्-अंधक-रैवत-कृष्ण एवं विश्वगर्भ-वसुदेव, दमशेष, वसु, बभ्रु, सुवेण एवं समाक्ष-श्रीकृष्ण (ह. वं. २.३८.३६-५१)।

सात्वत् शाखा—इनमें से भीम सात्वत् राम दशरथि राजा का समकालीन था। उसने इक्ष्वाकुवंशीय शत्रुघातिन् राजा से मथुरा नगरी को जीत कर, वहाँ अपना राज्य स्थापित किया। सात्वत् राजा को भजमान, देवावृध, अंधक एवं वृष्णि नामक चार पुत्र थे, जिनके कारण, यादव वंश की चार शाखाएँ उत्पन्न हुयी। उनमें से देवावृध एवं उसके पुत्र बभ्रु ने अबु पहाड़ी के प्रदेश में स्थित मार्तिकावत देश में अपना राज्य स्थापित किया।

अंधक एवं उसके दो पुत्र कुकुर एवं भजमान, मथुरा में राज्य करते रहे। कंस राजा उन्हीं के वंश में उत्पन्न हुआ था। भजमान के पुत्र 'अंधक' नाम से ही सुविख्यात हुये, एवं उनका राज्य मथुरा के पास ही कहीं था। भारतीय युद्ध के समय कृतवर्मन् उनका राजा था। वृष्णि का राज्य गुजराथ में द्वारका प्रदेश में था (वृष्णि देखिये)।

अन्य शाखाएँ—इनके सिवा यादव वंशों के अन्य कई उपशाखाओं का राज्य विदर्भ, अंबली, दशार्ण प्रदेश में भी था।

हैहकों का मुख्य राज्य नर्मदा नदी के किनारे, माहिष्मती में था, एवं उनकी वीतहोज, शर्यात, भोज, अबन्ती एवं तुंडिकेर नामक पाँच शाखाएँ प्रमुख थी।

यद्यपि हैहयों के उपशाखाओं में से 'भोज' एक था, फिर भी गुजरात के वृष्णियों को छोड़ कर बाकी सारे यादव वंश 'भोज' सामुहिक नाम से प्रसिद्ध थे। इसी कारण, निम्नलिखित यादव राजाओं को 'भोज' कहा गया है:— उपसेन, कंस, कृतवर्मन्, विदर्भराज भीष्मक, एवं रुक्मिन्।

भीम सात्वत् से ले कर श्रीकृष्ण तक के यादव राजाओं का मुख्य राज्य मथुरा में ही था। जरासंध की भय से, श्रीकृष्ण ने एक स्वतंत्र यादव राज्य पश्चिम समुद्र के तट पर सुराष्ट्र में स्थित द्वारका नगरी में स्थापित किया।

श्रीकृष्ण के समय, यादवों की संख्या कुल तीन कोटि थी, जिनमें से साठ लाख लोग शूर योद्धा थे।

जत्रारह महारथ—भागवत में यादववंश में उत्पन्न अठारह शूर योद्धाओं की नामावलि दी गयी है, जो निम्न-प्रकार हैं:— प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, दीप्तिमत्, मानु, साम्ब, मधु, बृहद्मानु, चित्रमानु, वृक, अरुण, पुष्कर, वरबाहु, श्रुतदेव, सुनंदन, चित्रबाहु, विरूप, कवि एवं न्यग्रोध (भा. १०.९०.३३-३४)। इनमें से प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, एवं वज्र भारतीय युद्ध के पश्चात् हुये मौसल युद्ध में मारे गये। इसी युद्ध में समस्त यादव वंश का भी जड़मूल से संहार हुआ। इस महाभयानक संहार का वर्णन भागवत, एवं महाभारत में प्राप्त है (भा. ३.४.१-२; म. मौ. ४)। इस संहार से केवल चार पाँच यादव ही बच सके (भा. १.१५.२३)।

आर्यसंस्कृति का प्रसार—प्राचीन आर्यसंस्कृति का प्रचार राजपूताना, गुजरात, मालवा एवं दक्षिण के प्रदेशों में करने का महान् कार्य यादव लोगों ने किया। पूर्वकाल में ये सारे प्रदेश अनार्य थे, जिन्हे आर्य धर्म एवं संस्कृति की दीक्षा यादवों ने दी। यह कार्य करते समय, ये लोग अनार्य लोगों के साथ सम्मिलित हुये कर्मठ आर्यधर्म का पालन न कर सके। इसी कारण महाभारत एवं पुराणों में इन्हे 'असुर' कहा गया है, एवं उत्तरी पश्चिमी भारत के 'नीच्य' एवं 'अपाच्य' जातियों में इनकी गणना की गयी है। फिर भी आर्यधर्म के प्रसार में इन्होंने जो कार्य किया वह प्रशंसनीय है। यादवों का सर्वश्रेष्ठ नेता श्रीकृष्ण था, जो धर्मनीति एवं युद्धनीति में प्रवीण होने के कारण, समस्त भारतवर्ष का नेता बन गया एवं साक्षात् विष्णु का अवतार कहलाने लगा। आर्यसंस्कृति के प्रसार में यादवों के द्वारा किये गये कार्य में श्रीकृष्ण का बड़ा हाथ रहा है।

यादवनिंदा—महाभारत में बृरिश्रवस् राजा के द्वारा यादवों की अत्यधिक कटुशब्दों में आलोचना की गयी है, जहाँ उन्हें आचारहीन (ब्रात्य), निष्कर्म करनेवाले, एवं गर्हणीय योनि के कहा गया है (म. द्रो. ११८.१५)। कौटिलीय अर्थशास्त्र में भी इन्हे 'छलकपट करनेवाले' कहा गया है, एवं द्रैगयन के साथ कपट करने से इनका नाश होने का निर्देश प्राप्त है (कौ. अ. पृ. २२)।

४. विदर्भदेश का एकराजा, जिसने अपनी प्रभा अथवा सुमति नामक कन्या सगर राजा को विवाह में दी थी।

५. (सो. ऋक्ष.) एक राजकुमार, जो उपरिचर वसु राजा का पुत्र था। युद्ध में यह किसी से पराजित नहीं होता था (म. आ. ५७.२९)।

६. स्वायंभुव मन्वन्तर के जित देवों में से एक।

यदुध्न—रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

यद्रामिलायन—भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार 'यज्ञपिंडायन' का नामान्तर।

यम—एक पार्षद, जो वरुण के द्वारा स्कंद को प्रदान किया गया था। दूसरे पार्षद का नाम 'अतियम' था (म. श. ४.४.४१)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)— 'यस', एवं 'अतिघस'।

यम वैवस्वत—समस्त प्राणियों का नियमन करनेवाला एक देवता, जो मृत्युलोक का अधिष्ठाता माना जाता है। वैदिक ग्रंथों में इसे मृत व्यक्तियों को एकत्र करनेवाला, मृतकों को विश्रामस्थान प्रदान करनेवाला, एवं उनके लिए आवास निर्माण करनेवाला कहा गया है (ऋ. १०.१४; १८; अ. वे. १८.२)। ऋग्वेद में इसे मृतकों पर शासन करनेवाला राजा कहा गया है (ऋ. १०.१६)। इसके अश्व स्वर्ण नेत्रों तथा लौह खुरोंवाले हैं।

इसके पिता का नाम विवस्वत् था, एवं इसकी माता का नाम सरण्यु था (ऋ. १०.१४; १७)। इसी कारण इसे 'वैवस्वत' वैतृक नाम प्राप्त हुआ था (ऋ. १०.१४.१; ५८.१; ६०.१०; १६४.२)। अथर्ववेद में इसे 'विवस्वत्' से भी श्रेष्ठ बताया गया है (१८.२)। उपनिषदों में इसे देवता माना गया है (वृ. उ. १. ४. ४.११; ३.३.९.२१)।

पहला राजा—इसे पहला मनुष्य कहा गया है (अ. वे. ८.३.१३)। इसे राजा भी कहा गया है (कौ. उ. ४. १५; ऋ. ९.११३; १०.१४)। शतपथ में इसे दक्षिण का राजा माना गया है (श. ब्रा. २.२.४.२)। ऋग्वेद के तीन सूक्तों में इसका निर्देश हुआ है (ऋ. १०. १४. १३५; १५४)।

निवासस्थान—यम का निवासस्थान आकाश के दूरस्थ स्थानों में था (ऋ. ९.११३)। वाजसनेय संहिता में यम एवं उसकी बहन यमी को उच्चतम आकाश में रहनेवाले कहा गया है, जहाँ वे दोनों संगीत एवं वीणा के स्वरां से घिरे रहते हैं (वा. सं. १२.६३)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसका वासस्थान तीन लुलोकों में सब से उँचा कहा गया है (ऋ. १.३.५-६)।

दूत—यम के दूतों में दो श्वान प्रमुख थे, जो चार नेत्रोंवाले, चौड़ी नासिकावाले, शत्रुल, उडुंबल (मूरे), एवं सरमा के पुत्र थे (ऋ. १०.१४.१०) । ऋग्वेद में अन्यत्र 'उल्क' एवं 'कपोत' को भी यम के दूत कहा गया है (ऋ. १०.१६५.४) ।

मित्रपरिवार—यम के मित्रों में अग्नि प्रमुख है, जिसे यम का मित्र एवं पुरोहित कहा गया है (ऋ. १०.२१; ५२) । मृत लोगों को गुलोक में ले जानेवाला अग्नि यम का मित्र होना स्वाभाविक ही प्रतीत होता है । इसके अन्य मित्रों में वरुण एवं बृहस्पति प्रमुख थे, जिनके साथ यह आनन्द-पूर्वक निवास करता था । वैदिक साहित्य में अन्यत्र निम्न-लिखित देवताओं को यम से समीकृत किया गया है:— अग्नि (तै. सं. ३.३.८.३); वायु (नि. १०.२०.२); एवं सूर्य (ऋ. १०.१०; १३५.१) ।

यम-यमी संवाद—यम एवं उसकी जुड़वा बहन यमी का संवाद ऋग्वेद में प्राप्त है, जहाँ यमी इससे संभोग के लिए प्रार्थना करती है । उस समय यम ने भगिनीसंभोग अधर्म कह कर उसे निराश किया । फिर यमी ने इससे कहा, ' यहाँ कौन देख रहा है ? ' तब इसने कहा, ' देवदूत देखते हैं, जिनका निवास-संचार हर एक स्थान पर है ' (न निमिषन्त्येते देवानां स्पर्श इह ये चरन्ति) (ऋ. १०.८) । यह कथा उस समय की है, जब मानव-समाज में नीतिशास्त्र अप्रगल्भ अवस्था में था ।

आत्मसमर्पण—ऋग्वेद के एक सूक्त में यम के द्वारा मृत्यु की स्वीकार किये जाने का, एवं यज्ञकुंड में आत्माहुति देने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.१३.४) । उस सूक्त के अनुसार, देवों के कल्याण के लिए यम ने मृत्यु की स्वीकार की (अतृणीत मृत्युम्), एवं अपना प्रिय शरीर यज्ञकुंड में श्लोक दिया (प्रियां यमस्तन्व प्रारिरेचीत्) ।

ऋग्वेद के इस महत्वपूर्ण सूक्त से प्रतीत होता है कि, वैदिक आर्यों के यज्ञसंस्था के प्रारम्भ में यज्ञकर्ता स्वयं की आहुति देता था । आत्मबलिदान की इसी कल्पना से यज्ञसंस्था का प्रारंभ हुआ । प्रजा तथा देवों के कल्याण के लिए, आत्मसमर्पण करनेवाला यम एक आद्य यज्ञकर्ता माना जाता है । आगे चल कर, यज्ञ में आत्मबलिदान की जगह यशीय पशु का हवन करने की प्रथा प्रचलित हुयी ।

मृत्यु का देवता—यम मरणशील मनुष्यों में प्रथम था, अतएव उसे मृत होनेवालों में प्रधान माना गया, तथा इसे मृत्यु के साथ समीकृत किया गया । अथर्ववेद तथा बाद के पुराकथाशास्त्र में, मृत्यु का भय के साथ

घनिष्ठ रूप से संबद्ध होने के कारण, यम मृत्यु के देवता बन गया । बाद की संहिताओं में ' अंतक ' ' मृत्यु ' ' निर्कृति ' के साथ यम का उल्लेख कर, ' मृत्यु ' को इसका दूत कहा गया है (अ. वे. ५.३०; १८.२) । अथर्ववेद में मृत्यु को मनुष्यों का, तथा यम को पितरों का अधिपति कहा गया है, तथा ' मित्रा ' को कहा गया है कि, वह यम के क्षेत्र से आती है ।

मृत्युवृत्ति—यम शब्द का भाषाशास्त्रीय आशय ' यमज ' (जुड़वां पैदा होनेवाला) है, जिस अर्थ में इसका निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार प्राप्त है (ऋ. १०.१०) । अवेस्ता में निर्दिष्ट ' यिम ' का अर्थ भी यही है । इसके अतिरिक्त, ' निर्देशक ' अर्थ से ' यम ' का प्रयोग भी ऋग्वेद में कई बार हुआ है । उत्तरकालीन साहित्य में, यम को दुष्टों का यमन (नियंत्रित) करनेवाला देवता माना गया है ।

वेदकालोपरांत यम—महाभारत तथा पुराणों में इसे विवस्वत् तथा संज्ञा का पुत्र कहा गया है (ह. वं. १.९.८; मार्क. ७४.७; भा. ६.६.४०; मत्स्य. ११.४; विष्णु. ३.२.४; पद्म. सु. ८; वराह. २०.८; भवि. प्रति. ४.१८) । संज्ञा को सूर्य का तेज सहन न होता था, इसलिए वह उसके सामने आते ही नेत्र बन्द कर लेती थी । इसी लिए सूर्य ने उसे शाप दिया, ' तुम्हारे उदर से प्रजा-संहारक यम जन्म लेगा ' (मार्क. ७४.४) । यम यमी जुड़वा संतान थे (पद्म. सु. ८) ।

यम को शाप—इसने छाया नामक अपनी सौतेली माता की निर्मत्सना कर के उसे लतों से मारा था (ब्रह्म. ६); एवं दाहिना पैर उठा कर उसकी निर्मत्सना की थी (मत्स्य. ११.११; पद्म. सु. ८) । इसलिए छाया ने एकदम क्रोध से इसे शाप दिया, ' तुम्हारा यह पैर गल जायेगा । उसमें पीप, रक्त तथा कीड़े होंगे ' (मत्स्य. ११.१२) । उसके बाद यम अपने पिता के पास गया, तथा सारी स्थिति कह सुनाई । तब पिता ने इसे उःशाप दिया, जिसके संबंध से काफी मत मतान्तर है:— ' पैर हड्डी सहित न गलेगा, केवल पैर का मांस कीड़े खा लेंगे ' (ह. वं १.९.३१; वायु. ८४.५५) । ' पीप रक्त इत्यादि कीड़े खा लेंगे, तथा बाद में पैर पूर्ववत् हो जायेगा ' (मत्स्य. ११.१७) । ' एक लाल पैर का पक्षी पैर खा लेगा, तथा बाद में पैर छोटा परन्तु सुन्दर बन जायेगा ' ।

पितरों का प्रमुख—बाद में इसे वैराग्य उत्पन्न हुआ, और इसने तप करना प्रारंभ किया । तब ब्रह्मदेव ने इसे

पितरों का स्वामित्व, तथा संसार के पापपुण्यों पर नज़र रखने का काम दिया (पद्म. सू. ८)। इसे 'धर्म' नामांतर भी प्राप्त था (ब्रह्म. १४. १६-३२)।

यम-नचिकेत संवाद—कटोपनिषद् में 'यम-नचिकेत संवाद' नामक एक तत्त्वज्ञानविषयक संवाद प्राप्त है, जिसके अनुसार एक बार नचिकेतस् यम से मिलने यम लोक में गया। वहाँ यम ने उसे 'पितृक्रोधशमन' एवं 'अग्निज्ञान' ये दो वर प्रदान किये। उसके पश्चात् नचिकेतस् ने यम से पूछा 'मृत्यु के बाद प्राण कहाँ जाता है? यम ने कहा, 'मृत्यु के उपरांत प्राणगमन की स्थिति तुम मत पूछो' (मरण मानु प्राक्षीः)। किन्तु नचिकेतस् के अत्यधिक आग्रह पर यम ने कहा, 'मृत्यु के उपरांत प्राण नष्ट नहीं होता। कर्म के अनुसार, उसे गति प्राप्त होती है'।

इसके पश्चात् नचिकेतस् ने यम से ब्रह्म के स्वरूप के बारे में प्रश्न किया। तब यम ने उत्तर दिया, 'देवताओं को भी ब्रह्म के सत्यस्वरूप का ज्ञान नहीं है। क्यों कि, ब्रह्मज्ञान जटिल एवं गहन है'। इस प्रकार कटोपनिषद् में वर्णित यम, देवता न हो कर एक आचार्य है, जिसने धार्मिक मनोवृत्तियों के वशीभूत हो कर, तात्त्विक रूप से धर्म की व्याख्या कर के लोगों को उपदेश दिया है (क. उ. १.१६)। यही यम-नचिकेत संवाद अग्निपुराण में भी प्राप्त है (अग्नि. ३८५)।

यम को नारायण से 'शिवसहस्रनाम' का उपदेश मिला था, जिसे भी इसने नचिकेत को प्रदान किया था (म. अनु. १७.१७८-१७९)।

यमगीता—यम एवं यमदूतों के बीच हुए अनेकानेक संवाद 'यमगीता' नाम से प्रसिद्ध है। यमगीता निम्न-लिखित पुराणों में ग्रथित की गयी है:—विष्णुपुराण (३.७); वृषिहपुराण (८); अग्निपुराण (३८२); स्कंदपुराण।

सहभारत में वर्णित यम—महाभारत में इस प्राणियों का नियमन करनेवाला यमराज कहा गया है, जो भगवान् सूर्य का पुत्र, एवं सच के शुभाशुभ कर्मों का साक्षी बताया गया है (म. आ. ६७.३०)। इसे मारीच कश्यप एवं दाक्षायणी का पुत्र कहा गया है (म. आ. ७०.१०)। अर्षीमाण्डव्य ने इसे शूद्रयोनि में जन्म लेने के लिए शाप दिया था (म. आ. १०१.२५), क्यों कि, यम ने उसे निरपराधी होते हुए भी पौंसी की सजा दी थी। बाद को इसने विदुर के रूप में जन्म लिया था

(भा. १.१३.१५; म. आ. ५७.८०; १००.२८; १०१. २७)।

पूर्वकाल में नैमिषारण्य में यम वैवस्वत ने शामित्र (कर्म) नामक यज्ञ किया था। वहाँ इसने यज्ञदीक्षा ली, जिससे संसार मृत्यु के द्वारा नष्ट होने से बच गया। सभी व्यक्ति अमर हो गए, तथा इस प्रकार संसार में जनसंख्या बढ़ने लगी। तब इसने युद्धादि को जन्म दिया, जिससे प्राणियों की संख्या मृत्यु के द्वारा कम हो गयी (म. आ. १८९.१-८)। खाण्डवदाह के समय, श्रीकृष्ण तथा अर्जुन से युद्ध करने के लिए इंद्र की ओर से, यह भी कालदण्ड ले कर आया था (म. आ. २१८.३१)।

एक बार इसको उद्देशित कर कुन्ती ने मंत्र का उच्चारण किया, जिसके कारण इसे उसके पास जाना पड़ा। वहाँ उसके उदर से इसने एक पुत्र उत्पन्न किया। वही 'युधिष्ठिर' है (म. आ. ११४.३)। इसने अर्जुन को एक अस्त्र प्रदान किया था (म. व. ४२.२३)। इमने दमयन्तीस्वयंवर के समय राजा नल को भी वर प्रदान किया था। धर्मराज के द्वारा इसके प्रश्नों के योग्य उत्तर देने के कारण, एक सरोवर में मृत पड़े उसके चारों भाइयों को इसने जीवित किया था, तथा अज्ञातवास में सफल होने का उसे वरदान भी दिया था (म. व. २९७-२९८)। सावित्री को अनेक वर देने के उपरांत, इसने उसे सत्यवान् का पुनः जीवित होने का वर प्रदान किया था (म. व. २८१.२५-५३)।

इंद्र ने इसे पितरों का राजा बनाया था। पितरों के द्वारा पृथ्वीदोहन के समय यह बलुड़ा बना था (अ. वे. २.८.२८)। त्रिपुरदाह के समय, यह शिव के त्राण के पूछभाग में प्रतिष्ठित था। इसका महर्षि गौतम के साथ धर्मसंवाद हुआ था (म. शां. १२७)। इसने उसे मानु-पितृकृष्ण से मुक्त होने का मार्ग बताया था।

यम मुंब पर्वत पर शिव की उपासना करता था (म. आश्व. ८.१-६)। इसकी पत्नी का नाम धूमोर्णा था (म. अनु. १६५.११)।

अन्य पुराणों के अनुसार, इसकी नगरी का नाम संयमिनी था, जो मानसोत्तर पर्वत पर स्थित थी (भवि. ब्रह्म. ५३)। रामभक्त सुरथ की परीक्षा ले कर, इसने उसे वर दिया था, 'तुम्हें मृत्यु तभी प्राप्त होगी, जब तुम राम के दर्शन कर लोगे (पद्म. पा. ३९)।

यम की उपासना—यम को उसकी बहन यमी ने कार्तिक शुद्ध द्वितीया को भोजन दिया था। इसी लिए

इसने उसे बर दिया था कि, जो भी इस दिन बहन के हाथों बना भोजन ग्रहण करेंगे, उन्हें सदैव सौख्य प्राप्त होगा (स्कंद. २.४.११)।

हर्षण राजा के विश्वरूप नामक पिता को तथा विष्टि नामक माता को भीषण स्वरूप प्राप्त हुआ था। हर्षण ने यम की उपासना कर इससे प्रार्थना की कि, उन्हें सौम्य स्वरूप प्राप्त हो। तब इसने उन्हें गंगास्नान का व्रत बताया (ब्रह्म. १.६५)।

एक बार इसके तप को देख कर इंद्र को भय हुआ, एवं उसने एक अप्सरा को भेज कर, इसका तप भंग करना चाहा। तब इसने इंद्र को सूचित किया कि, यह उसका इंद्रासन नहीं चाहता। बाद को इसने 'धर्मरूप्य' नामक प्रदेश प्राप्त किया, जो शंकर का वासस्थान था (स्कंद. ३.२४)।

ग्रन्थ—यम के नाम पर तीन ग्रन्थ उपलब्ध हैं:—१. यमसंहिता, २. यमस्मृति, ३. यमगीता।

धर्मशास्त्रकार—याज्ञवल्क्य के द्वारा दी गयी धर्मशास्त्रकारों की सूची में यम का भी उल्लेख आता है (१.५)। वसिष्ठ धर्मसूत्र में यम के श्लोक आये हैं। अपराक ने शंकरस्मृति में यम के धर्मविषयक विचारों को व्यक्त किया है, जिसके अनुसार कुछ पक्षियों का ही मांस खाना उचित कहा गया है (अपराक पृ. ११६७)। हर एक रूप में दूसरे जीवों के प्राणों की रक्षा के लिए भी वहाँ गया है। जीवानंद संग्रह में इसके श्लोकों की संख्या अठत्तर दी गयी है, जो आत्मतुष्टि एवं प्रायश्चित्त से सम्बन्धित हैं। आनंदाश्रम के 'स्मृतिसमुच्चय' में इसकी निम्नानवे श्लोकों की स्मृति प्राप्त है, जिसमें प्रायश्चित्त, श्राद्ध आदि के बारे में विचार प्राप्त है। इसकी स्मृति में इसका निर्देश 'भास्वति' (सूर्यपुत्र) नाम से किया गया है।

यम के अनुसार, विवाह के पश्चात् पत्नी का स्वतंत्र गोन नष्ट हो कर, उसका एवं उसके पति का गोन एक ही होता है (याज्ञ. १.२५४)। 'बृहद् यम स्मृति' नामक एक अन्य स्मृतिग्रंथ भी प्राप्त है, जिसमें पौंच अध्याय, एवं १८२ श्लोक प्राप्त है। उस स्मृति में बुद्धि आदि विषयों का विचार किया गया है। इस स्मृति में 'यम' एवं 'शातातप' आचार्यों के निर्देश प्राप्त हैं (बृहद्-यम. ३.४२; ५.२०)।

विश्वरूप, विशानेश्वर, अपराक, स्मृतिचंद्रिका आदि उत्तरकालीन ग्रंथों में 'यमस्मृति' में से तीन सौ के उपर श्लोक उद्धृत किये गये हैं, जिनमें निम्नलिखित विषयों

पर यम के विचार प्राप्त हैं:— श्राद्ध (याज्ञ. १.२२५); गोवध का प्रायश्चित्त (याज्ञ. ३.२६२); कन्या का विवाह-योग्य वय (स्मृतिचं. पृ. ७९); अपवित्र अन्न शुद्ध कैसे किया जा सकता है (अपराक. पृ. २६७); ब्रह्मचारी का वेश कैसे चाहिए (अपराक. पृ. ५८); ब्राह्मण को देहान्त शासन न देना चाहिए (स्मृतिचं. पृ. ३१६); असुर पत्नी का स्त्रीधन (याज्ञ. २.१४५); व्यभिचार (अपराक. पृ. ८६०)। आयुष्यक्षय के संबंध में इसने नविकेता को बताया हुयी माथाएँ महाभारत में प्राप्त हैं (म. अनु. १०४.७२-७६)।

यम के अनुसार, स्त्रियों के लिए संन्यास-आश्रम अप्राप्य है। उन्हें चाहिये कि, वे अपनी एवं अपनी जाति के संतानों की सेवा करें (स्मृतिचं. पृ. २५४)।

यम के द्वारा रचित 'लघुयम' एवं 'स्वल्पयम' स्मृतिग्रंथों के उद्धरण भी हरदत्त, अपराक एवं स्मृति-रत्नाकर में प्राप्त हैं।

यमक—एक लोकसमूह, जो युधिष्ठिर के राजस्य यज्ञ के समय भेंट ले कर उपस्थित थे (म. स. ४८. १२)। पाठभेद (भांडारकर संहिता) 'वैयमक'।

यमदूत—विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र।

यमराज—एक ग्रंथकार, जिसने 'भास्करसंहिता' के अंतर्गत 'ज्ञानार्णवतंत्र' की रचना की थी (ब्रह्मवै. २.१६)।

यामिन—स्वायंभुव मन्वन्तर के जिताजित् देवों में से एक।

यमी वैवस्वती—यम वैवस्वत की बहन, जो विवस्वत आदित्य एवं संज्ञा की कन्या थी (भा. ६.६.४०; ८. १३.९)। कई ग्रंथों में इसकी माता का नाम सरण्यु दिया गया है। इसे 'यमुना' नामान्तर भी प्राप्त था। ऋग्वेद के एक सूक्त का प्रणयन भी इसने किया था (ऋ. १०.१०)।

ऋग्वेद में इसने अपने भाई यम के साथ किया हुआ 'यम-यमी संवाद' प्राप्त है, जहाँ इसने यम से संभोग की याचना की थी (ऋ. १०.८; यम वैवस्वत देखिये)। 'भय्यादूज' का व्रत कर, इसने अपने भाई यम को प्रसन्न किया था (स्कंद. २.४.११)।

यमुना—यमी वैवस्वती का नामान्तर।

ययाति—(सो. आयु.) प्रतिष्ठान देश का एक सुविख्यात राजा, जो नहुष राजा का पुत्र, एवं देवयानी तथा शर्मिष्ठा का पति था। महाभारत एवं पुराणों में इसे

‘सम्राट’ एवं ‘श्रेष्ठ विजेता’ कहा गया है। इसका राज्य-काल ३०००—२७५० ई. पू. माना जाता है।

इसने अपने पितामह आयु एवं पिता नहुष के कान्यकुब्ज देश के राज्य का विस्तार कर, अयोध्या के पश्चिम में स्थित मध्यदेश का सारा प्रदेश अपने राज्य में समाविष्ट किया। उत्तरी पश्चिम में सरस्वती नदी तक का सारा प्रदेश इसके राज्य में समाविष्ट था। इसके अतिरिक्त कान्यकुब्ज देश के दक्षिण, दक्षिणीपूर्व एवं पश्चिम में स्थित बहुत सारा प्रदेश इन्होंने अपने ब्राह्मण से जीता था।

ऋग्वेद में इसे एक प्राचीन यज्ञकर्ता माना गया है, जो वेद की कुछ ऋचाओं का द्रष्टा था (ऋ. १.३१.१७; १०.६३.१; ९.१०१.४-६)। ऋग्वेद में एक बार इसका निर्देश नहुष राजा के वंशज ‘नहुष्य’ के रूप में किया गया है। पुरु के साथ इसके सम्बन्ध का निर्देश वैदिक ग्रंथों में अप्राप्य है। इसलिए महाकाव्य की परम्परा को निश्चित रूप से त्रुटिपूर्ण मानना चाहिए।

जन्म—ययाति का वंश अग्नि, चन्द्र तथा सूर्य से उत्पन्न हुआ था (म. आ. १.४४)। प्रजापतिओं में यह दसवाँ था (म. आ. ७.१.१)। यह नहुष को, सुधन्वन् संस्रक पितृकन्या विरजा से उत्पन्न पुत्रों में से दूसरा था (म. आ. ७.०.२९; ८.४.१; ९.०.७; उ. १.१२.७; द्रो. १.१९.५; अनु. १.४७.२७; वा. रा. उ. ५८; भा. ९.१८; विष्णु. ४.१०; गरुड. १.१३९.१८; पद्म. सू. १.२; अग्नि. २.७४; वायु. ९.३; ह. वं. १.३०; ब्रह्म. १.२; कूर्म. १.२२; लिंघ. १.६६)। मत्स्य में, इसकी माता का नाम ‘सुधन्वन्’ की जगह ‘सुखधा’ दिया गया है (मत्स्य. १५.२०-२३)। पद्म के अनुसार, यह नहुष को अशोक-सुन्दरी नामक स्त्री से हुआ था (पद्म. सू. १.०९)। इसके भाइयों की संख्या तथा नाम पुराणों में भिन्न भिन्न दिये गये हैं (नहुष देखिये)। इसका ज्येष्ठ भ्राता यति योग का आश्रय लेकर मुनि हो गया, तथा नहुष अजगर बन गया, जिससे यह भूमण्डल का सम्राट बना।

महाभारत में इसका जीवनचरित्र दो विभागों में दिया गया है :—(१) पूर्वयाथात, जिसमें इसके स्वर्गगमन तक का चरित्र प्राप्त है; (२) उत्तरयाथात, जहाँ इसके स्वर्गगतन के बाद का जीवन ग्रथित किया गया है (म. आ. ७.०-८०; ८१-८८; मत्स्य. ३४-८८)।

देवयानी से भेंट—एक बार मृगया के निमित्त जंगल में विचरण करता हुआ, तृषा से व्याकुल होकर यह एक कुँए के निकट आया। जैसे ही इसने कुँए में पानी देखना

चाहा कि, इसे उसमें एक नम्र सुन्दरी दिख पड़ी। ययाति ने तत्काल उसे अपना उत्तरीय देकर, एवं उसका दाहिना हाथ पकड़ कर बाहर निकाला। बाद में उस स्त्री से इनमें पता चला कि, वह दैत्यराज शुक्र की कन्या देवयानी है। अन्त में यह अपने नगर वापस आया (म. आ. ७.३.२२-२३; भा. ९.१८)।

एक बार इसने देवयानी के साथ एक अन्य कन्या को देख कर उन दोनों का परिचय करना चाहा। तब देवयानी ने बताया, ‘मैं शुक्राचार्य की कन्या हूँ, तथा यह वृषपर्वा की कन्या शर्मिष्ठा है, जो मेरी दासी है। यह सुन कर राजा ने अपना परिचय दिया, एवं विदा होने के लिए देवयानी से आज्ञा माँगी। तब देवयानी ने राजा को रोक कर उससे प्रार्थना करते हुए कहा, ‘मैंने दो सहस्र दासी तथा शर्मिष्ठा के सहित आपको तन-मन धन-से वरण किया है। अतएव आप मुझे अपनी पत्नी बना कर गौरवान्वित करें’।

ययाति-देवयानीसेवाद—प्रतिलोम विवाह उस समय सर्वत्र प्रचलित न थे, अतएव इसने साफ इन्कार कर दिया। तब इसका तथा देवयानी का परस्परसंवाद हुआ, जिसमें देवयानी ने कहा, ‘हे राजा, तुम न भूलो कि, जब जब क्षत्रियकुल का संहार हुआ है, तब ब्राह्मणों से ही क्षत्रियों की उत्पत्ति हुयी है। लोपामुद्रादि क्षत्रिय कुमारिकाओं का भी ब्राह्मणों से विवाह हुआ है। मेरे पिता आपके न माँगने पर भी यदि मुझे आपको देते हैं, तो आपको कुछ भी आपत्ति न होनी चाहिए। मैं कहती हूँ, इसमें आपको कुछ भी दोष एवं पाप न लगेगा’।

भागवत के अनुसार, देवयानी ने ययाति से कहा, ‘कच के द्वारा मुझे यह शाप मिल चुका है कि, मुझसे कोई भी ब्राह्मणपुत्र शादी न करेगा। इसीलिए मैं तुमसे बार बार विवाह का निवेदन कर रही हूँ’ (भा. ९.१८)। किन्तु महाभारत के अनुसार, देवयानी ने कच के शाप की बात ययाति से न बतारी, तथा तर्क के द्वारा उसे समझाने की कोशिश की कि, ययाति उससे विवाह कर ले।

विवाह—बाद में शुक्राचार्य ने देवयानी की इच्छा के अनुसार, उसकी शादी ययाति से कर दी। शुक्र ने विवाह में धनसंपत्ति के साथ दो हजार दासियों के साथ शर्मिष्ठा को भी ययाति को दिया, तथा कहा, ‘शर्मिष्ठा कुलीन घराने की कन्या है, उसे कभी अपनी शय्या पर न बुलाना’। चलते समय शुक्राचार्य ने ययाति से कहा, ‘देवयानी मेरी प्रिय कन्या है। तुम इसे अपनी पटरानी

बनाओ; तुम्हें प्रतिलोमविवाह का कुछ भी दोष न लगेगा'। अंत में यह देवयानी को उनकी दासियों के सहित के अपने नगर वापस लाया।

पुत्रप्राप्ति—बाद में इसने अशोकवतिका के पास ही शर्मिष्ठा तथा उसकी दासियों की योग्य व्यवस्था कर दी। वहाँ देवयानी के साथ यह प्रसन्नपूर्वक विलासमय जीवन बिताता रहा। कालांतर में देवयानी से इसे दो पुत्र भी हुए।

एक बार ययाति को एकान्त में देख कर शर्मिष्ठा इसके पास आयी, तथा इससे अपने ऋतुकाल को सफल बनाने की प्रार्थना की। पहले ययाति एवं शर्मिष्ठा में परस्पर संवाद हुआ, किन्तु अंत में इसे शर्मिष्ठा की यथार्थता को स्वीकार कर, उसे अपनी भार्या बना कर सहवास करना पड़ा। कालान्तर में उससे इसे तीन तेजस्वी पुत्र हुए।

शुक्र से शाप—एक दिन देवयानी ने शर्मिष्ठा के तीन पुत्र देखे। पूछने पर जैसे ही उसे पता चला कि, शुक्र के द्वारा रोके जाने पर भी, ययाति ने शर्मिष्ठा को भार्या के रूप में स्वीकार कर उसे तीन पुत्र दिये हैं, वह क्रोध में जल उठी, एवं तत्काल पिता के घर को चली गयी। उसके पीछे पीछे यह भी जा पहुँचा। वहाँ जैसे ही शुक्राचार्य को सारी बातें पता चलीं, उन्होंने ने ययाति को ब्राह्मण्य होने का शाप दिया।

तब ययाति ने शुक्राचार्य से प्रार्थना की कि, वह उसे इस शाप से बचाये। तब शुक्राचार्य ने प्रसन्न हो कर कहा, 'तुमने मेरा स्मरण किया है, अतएव मैं तुम्हें वरदान देता हूँ कि, तुम अपनी यह जराबस्था किसी को भी दे कर, उसका तारण्य ले सकते हो। जो पुत्र तुम्हें अपनी तरुणता दे, तथा तुम्हारी वृद्धावस्था स्वीकार करे, उसे ही तुम अपने राज्य का अधिकारी बनाओ; चाहे वह कनिष्ठ ही क्यों न हो। तुम्हें तरुणता देनेवाला तुम्हारा पुत्र दीर्घ-जीवी, कीर्तिवान् तथा अनेक पुत्रों का पिता बनेगा' (भा. १.१८: ब्रह्म. १४६)। इस प्रकार वृद्धावस्था को धारण कर ययाति अपने नगर वापस आया (म. आ. ७८. ४०-४१)।

पुत्रों को शाप—राजधानी में आकर, इसने अपने ज्येष्ठ पुत्र यदु से कहा, 'तुम अपनी युवावस्था दे कर, मेरी वृद्धता एवं चित्तदुर्बलता हज़ार वर्षों के लिए स्वीकार करो'। यदु ने इन्कार करते हुए कहा, 'मेरे समान आपके अन्य भी पुत्र हैं। आप उनसे यही माँग करे, तो अच्छा होगा।

यह सुन कर ययाति ने उसे शाप दिया, तुम एवं तुम्हारे पुत्रों राज्य के अधिकार से वंचित होंगे' (यदु देखिये)।

आगे चल कर, यही प्रश्न इसने तुर्वसु से किया, किन्तु वह भी तैयार न हुआ। तब इसने उसे शाप दिया, 'तुम्हारी संतति नष्ट हो जायेगी, तथा जिन ग्लेश्छों के यहाँ धर्म, आचार, विचार को स्थान न दिया जाता हो, एवं जहाँ की कुलीन स्त्रियाँ नीच वर्णों के साथ रमण करती हो, उसी पापी जाति के तुम राजा बनोगे'।

पश्चात् यह शर्मिष्ठा के ज्येष्ठ पुत्र वृहस्रु के पास गया। वह भी जराबस्था को लेने के लिए तैयार न हुआ। फिर इसने उसे शाप दिया, 'तुम्हारा कल्याण कभी न होगा। तुम्हें ऐसे दुर्गम स्थान पर रहना पड़ेगा, जहाँ का व्यापार नावों के माध्यम से होता है। वहाँ भी तुम्हें अथवा तुम्हारे वंशजों को राज्यपद की प्राप्ति न होगी, तथा तुम राज्याधिकार से वंचित होकर 'भोज' कहलाओगे'।

इसके उररांत यह अपने पुत्र अनु के पास गया। वह भी राजी न होने पर, इसने उसे शाप दिया, 'तुम इसी समय जराग्रस्त हो जाओगे। तुम्हारे द्वारा 'श्रौत' अथवा 'स्मार्त' अग्नि की सेवा न होगी, एवं तुम नास्तिक बन जाओगे' (म. आ. ७९.२३)।

यौवनप्राप्ति—सबसे अन्त में यह अपने कनिष्ठ पुत्र पूरु के पास गया, एवं उसकी युवावस्था माँगी। पूरु तैयार हो गया। तब इसने उसके शरीर में अपनी जरा को दे कर उसका यौवन स्वयं ले लिया। पश्चात् इसने उसे वर प्रदान किया, 'आज से मेरा सारा राज्य तुम्हारा एवं तुम्हारे पुत्रों का होगा' (म. आ. ७९.२४-३०)।

पूरु का यौवन प्राप्त कर ययाति अपनी विषयवासनाओं को पूर्ण करने में निमग्न हुआ। इसने देवयानी तथा शर्मिष्ठा से खूब विषयसुख लिया। बाद में इसने विश्वाची नामक अप्सरा के सहित नन्दनवन में, तथा उत्तरस्थ मेरु पर्वत के अलक्य नामक नगरी में अनेक प्रकार की विलासात्मक लिप्साओं का भोग किया। गौनामक अप्सरा के साथ चैत्ररथवन वन में विलास किया। इतना सुख लूटने के बाद भी, जब इसका जी न भरा, तब इसने अनेक यज्ञ किये, दान दिये, तथा राजनीति का अनुसरण कर के प्रजा को सुखी बनाया। अब यह विषयवासनाओं से अत्यधिक उन्नत लुका था।

विरक्षावस्था—इसी विरक्त अवस्था में इसने अपनी जीवन गाथा रूपक में बौध कर देवयानी को कह सुनाई। इस कथा में एक बकरा एवं बकरी की कथा कथन कि थी,

जो सदैव भोगलिप्सा में ही विश्वास करते थे (भा. ९. १९)। अत्यधिक भोग लिप्सा से आत्मा किस प्रकार विरक्त बनती है, इसकी कथा इसने पुत्र पूरु को सुनाई, एवं कहा:—

न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति ।

हविषा कृष्णवर्मेव भूय एवामित्रर्षते ॥

(म. आ. ८०, ८४०*; विष्णु. ४. १०. ९-१५) ।

(कामोपभोग से काम की तृष्णा कम नहीं होती, बल्कि बढ़ती है, जैसे कि अग्नि में हविर्भाग डालने से वह और जोर से भड़क उठती है।)

वानप्रस्थाश्रम—अंत में इसने पूरु को उसकी ज्वानी लौटा कर, उससे अपनी वृद्धावस्था ले ली। इसके उपरांत, इसने बड़े शौक से पूरु को राज्याभिषेक किया। जनता ने इसका विरोध किया कि, राज्य ज्येष्ठ पुत्र को ही मिलना चाहिए। किन्तु इसने जनता को तर्कपूर्ण उत्तर दे कर शान्त किया, तथा वानप्रस्थाश्रम की दीक्षा ले कर ब्राह्मणों के साथ यह वन चला गया (म. आ. ८१. १-२)।

पुराणों के अनुसार, वनगमन के पूर्व ययाति ने अपने प्रत्येक पुत्र को भिन्न भिन्न प्रदेश दिये। तुर्वसु को आग्नेय, यदु को नैऋत्य, द्रुह्यु को पश्चिम, अनु को उत्तर, तथा पूरु को गंगा-जमुना के बीच में स्थित मध्य-प्रदेश दिया (वायु. ९३; कूर्म. १. २२)। कई पुराणों में यही जानकारी कुछ अन्य प्रकार से दी गयी है, जो निम्न-लिखित है:— यदु को ईशान्य (ह. वं. १. ३०. १७-१९); पूर्वे (ब्रह्म. १२), दक्षिण (विष्णु. ४. ३०; लिंग १. ६६); द्रुह्य को आग्नेय; यदु को दक्षिण; तुर्वसु को पश्चिम, तथा अनु को उत्तर प्रदेश का राज्य दिया गया (भा. ९. १९)।

उत्तरयायात आख्यान—अपने पुत्रों को राज्य प्रदान करने के पश्चात्, इसने भृगु पर्वत पर आ कर तप किया, एवं अपनी भायोंओं के साथ यह स्वर्गलोक गया। स्वर्ग में जाने के उपरांत, इसके धमण्डी स्वभाव, एवं दूसरों को अपमानित करने की भावना ने इसे निस्तेज कर दिया, एवं इंद्र ने इसे स्वर्ग से भौमनर्क में ढकेल दिया। किन्तु यह अपनी इच्छा के अनुसार, नैमिषारण्य में इसकी कन्या माधवी के पुत्र प्रतर्दन, वसुमनस, शिवि तथा अष्टक जहाँ यज्ञ कर रहे थे, वहाँ जा कर गिरा। तब इसकी कन्या माधवी ने अपना आधा पुण्य, तथा गालव

ने अपने पुण्य का अठवों अंश इसे प्रदान किया, जिस कारण यह पुनः स्वर्ग का अधिकारी बन गया (म. आ. ८१-८८; मत्स्य. २५-४२; माधवी देखिये)।

बाद में नैमिषारण्य में पाँच स्वर्णरथ आये, जिनमें चढ़ कर यह अपने चार नातियों के साथ पुनः स्वर्गलोक १। अधिकारी हुआ। स्वर्गलोक में जाने के उपरांत, ब्रह्मदेव ने इसे बताया, 'तुम्हारे पतन का कारण तुम्हारा अभिमान ही था! अब तुम यहाँ आ गये हो, तो अभिमान छोड़ कर स्वस्थ मन से यहाँ वास करो (म. आ. ८१-८८; उ. ११८-१२१; मत्स्य. ३४-४२)।

वाल्मीकि रामायण में—ययाति की यह कथा वाल्मीकि रामायण में भी प्राप्त है, किंतु वह कथा पुराणों से कुछ भिन्न है। उसमें लिखा है कि, जययदु ने इसकी जरावस्था को स्वीकार न किया, तब इसने शाप दिया, 'तुम यातुधान तथा राक्षस उत्पन्न करोगे। सोमकुल में तुम्हारी संतति न रहेगी, तथा वह उदभ्र होगी'। इसी के शाप के कारण, यदु राजा से क्रौंचवन नामक वन में हज़ारों यातुधान उत्पन्न हुए (वा. रा. उ. ५९)।

पद्म में—पद्म के अनुसार, पहले यह बड़ी धार्मिक प्रवृत्ति का राजा था, तथा धर्मभावना से ही राज्य करता था। किन्तु इंद्र के द्वारा भड़काने पर, इसका मस्तिष्क कुमारी की ओर लग गया।

इसकी धर्मपरायणता को देख कर इंद्र को शंका होने लगी कि, कहीं यह मेरे इंद्रासन को न ले ले। अतएव उसने अपने सारथी मातलि को भेजा कि, वह इसे ले आये। मातलि तथा इसके बीच परमार्थ के संबंध में संवाद हुआ, परंतु यह स्वर्ग न गया। तब इंद्र ने गंधर्वों के द्वारा ययाति के सामने 'वामनावतार' नाटक करवाया। उसमें रति की भूमिका देख कर यह विमुग्ध हो उठा।

अश्रुभिन्दुमती से विवाह—एक बार मलमूत्रोत्सर्ग करने के बाद, इससे पैर न धोया। यह देख कर जरा तथा मदन ने इसके शरीर में प्रवेश किया। कालांतर में एक बार जब यह शिकार के लिए अरण्य में गया था, तब इसे 'अश्रुभिन्दुमती' नामक एक सुंदर स्त्री दिखाई दी। तब इसने उसका परिचय प्राप्त करना चाहा। तब उसकी सखी विशाला ने उसका परिचय देते हुए इसे बताया, 'मदन-दहन के उपरांत रति ने अति विलाप किया, तब देवों ने उस पर दया कर के अनंग मदन का निर्माण किया। इस प्रकार अपने पति को पुनः पा कर रति प्रसन्नता से रोने लगी। रोते समय उसकी बाँयी आँख से

जो अश्रुविन्दु टपका, उसीसे इस सुंदरी का जन्म हुआ है। अब यह शही हो गयी है, तथा स्वयंवर करना चाहती है'। यह सुन कर ययाति ने अश्रुविन्दुमती से कहा, 'मैं तुमसे शादी करने को तैयार हूँ'। अश्रुविन्दुमती ने कहा, 'यदि तुम दूसरे को जरा दे कर यौवन प्राप्त कर लो, तब मैं तुम्हारे साथ विवाह कर सकती हूँ'।

यह सुन कर, यौवन माँगने के लिए यह अपने 'तुरु', 'यदु', 'कुरु', एवं 'पूरु' इन चार पुत्रों के पास गया। उनमें से तुरु एवं यदु ने इसे यौवन देने से इन्कार किया, जिस कारण इसने उन्हें नानाविध तरह के शाप दिये। तीसरा पुत्र कुरु अल्पवय का था, अतएव यह उसके पास न गया। चौथे पुत्र पूरु ने अपना यौवन इसे प्रदान किया। तत्पश्चात् इसने अश्रुविन्दुमती से विवाह किया, जिसने इसे अपनी अन्य दो परित्रियों से संबंध न रखने की शर्त विवाह के समय लगा दी।

इसे एवं अश्रुविन्दुमती को इस प्रकार रहते देख कर, देवयानी तथा शर्मिष्ठा को अत्यधिक सौतिया दाह हुआ। यह देख कर इसने यदु को आज्ञा दी, 'इन दोनों का वध करो'। किन्तु उसने इसकी आज्ञा का उल्लंघन किया। इससे क्रोधित हो कर ययाति ने यदु को शाप दिया, 'तुम्हारे वंश के पुरुष मामा की पुत्री के साथ वरण करेंगे, तथा मातृद्रव्य में हिस्सा लेंगे (पद्म. भू. ८०.१३)।

वध में, मेनका के सुश्राये जाने पर अश्रुविन्दुमती ने इससे अनुरोध किया कि, यह स्वर्ग देखने चले। तब इसने अपना सम्पूर्ण राज्य पूरु को दे कर, उसे राजनीति का उपदेश दिया, एवं यह वकूट चला गया (पद्म. भू. ६४. ८३; ७७.७७)।

श्रेष्ठ सम्राट—इसका जीवन विभिन्न प्रकार के मोड़ों से गुज़रा। एक ओर जहाँ यह धर्मात्मा, दानी महापुरुष था, वहीं कालचक्र में फँस कर भोग-लिप्सा में ऐसा चिरका कि, अपने को ही भूल बैठा। किन्तु विभिन्न प्रमावों के द्वारा किये गये इसके कार्यों को छोड़ कर, इसका निष्पक्ष रूप से अवलोकन करने पर पता चलता है कि, ययाति मन तथा इन्द्रियों को संयम में रखनेवाला भूमण्डल का श्रेष्ठ सम्राट था। इसके भक्तिभाव से देवताओं तथा पितरों का पूजन कर, यज्ञों के अनुष्ठानों को करते हुए, समस्त पृथ्वी का पालन किया था (म. आ. ८०)।

इन्द्र ने इसे एक स्वर्ण का रथ दिया था। इस रथ को ले कर इसने छः रात्रियों में सम्पूर्ण पृथ्वी को जीत लिया,

तथा समस्त देव, दानवों एवं मनुष्यों में यह अजेय सावित हुआ (ह. वं. १.३०.६-७)। लिग में यह भी दिया गया है कि, यह रथ ययाति को शुक के द्वारा दिया गया था, तथा उसके साथ अश्वय तूणीर भी इसे दिये गये थे (लिग. १.६६)। ब्रह्म के अनुसार, इसने पृथ्वी को छः दिनों में, तथा लिग के अनुसार छः महीनों में जीता था (ब्रह्म. १२; लिग. १.६६)। ब्रह्मदेव द्वारा निर्मित दिव्य खड्ग नहुष ने इसे दिये, तथा इसने वह पूरु को दे दिया था (म. शां. १६०.७३)।

यह अपने समय का बड़ा प्रसिद्ध राजा था, जिसके नाम के सामने स्थान स्थान पर 'सम्राट' 'सावंभौम' इत्यादि उपाधियाँ लगाई जाती थीं। जब यह यज्ञ करता था, तब सरस्वती तथा अन्य नदियाँ, सप्तसागर तथा पर्वत इसे दुग्ध तथा घी देते थे (म. शा. ४०.३०)। देवासुर-युद्ध में इसने देवताओं की सहायता की थी (म. द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति. ५७३; शां. २९.९०)। अज्ञात-वास के अन्त में पांडवों के द्वारा किया गया युद्ध देखने के लिये, यह देवों के विमान में बैठ कर आया था (म. वि. ५.१.९)।

धार्मिकता—जहाँ राजाओं में यह सम्राट था, वहीं इसमें दानवीरता की भी कमी न थी (म. व. परि. १. क्र. २)। यह बड़ा प्रजापालक राजा था (म. आ. ८४. ८५.७३; शां. २९.८८-८९; अनु. ८१.५)। इसने गुरुदक्षिणा देने के लिए, एक ब्राह्मण को हजार गौओं का दान किया था (म. व. १९०. परि. १.२०. ३)। सरस्वती नदी के किनारे जो 'यायत' नामक प्रसिद्ध तीर्थ है, वह इसीके कारण प्रचलित हुआ (म. शा. ४०.२९)। यह शंकर का बड़ा भक्त था (लिग. १. ६६)। इसे 'काशीपति' भी कहा गया है (म. उ. ११३. ३)। यह यमसभा में रह कर सूर्यपुत्र यम की उपासना करता था (म. स. ८.८)।

परिवार—ययाति को दो पत्नियाँ थीं—१. देवयानी, जो सुविख्यात भार्गव ऋषि उशनस शुक की कन्या थी; २. शर्मिष्ठा, जो असुर राजा वृषपर्वाण की कन्या थी। पद्म में इसकी अश्रुविन्दुमती नामक तृतीय पत्नी का निर्देश प्राप्त है (पद्म. भू. ६४.१०८)। किन्तु अन्य कहीं भी उसका निर्देश अप्राप्य है।

ययाति राजा को कुल पाँच पुत्र थे। उनमें से यदु एवं तर्वसु इसे देवयानी से, एवं अनु, द्रुह्यु एवं पूरु नामक तीन पुत्र शर्मिष्ठा से उत्पन्न हुए थे (म. आ. ८०.१३-

१४; ९०.८-९)। इन पुत्रों के अतिरिक्त इसे माधवी एवं सुकन्या नामक दो कन्याएँ भी थी (विष्णुधर्म. १. ३२)। किंतु अन्य ग्रंथों में सुकन्या को वैवस्वत मनु के पुत्र शर्याति की कन्या कहा गया है।

ययातिपुत्रों के राज्य—ययाति ने अपना साम्राज्य अपने पाँच पुत्रों में बाँट दिया, जहाँ उन्होंने पाँच स्वतंत्र राजवंशों की स्थापना की। उनकी जानकारी निम्न-प्रकार है :—

१. **यदु—**इसे मध्यदेश के चर्मण्वती (चंबल), वेतवती (वेतवा) एवं शुक्तिमती (केन) नदियों से वेदित प्रदेश का राज्य प्राप्त हुआ, जहाँ उसने यादववंश की स्थापना की।

२. **तुर्वसु—**इसे मध्यदेश के आग्नेय भाग में स्थित बाहरे प्रदेश का राज्य प्राप्त हुआ, जहाँ उसने तुर्वसु (यवन) वंश का राज्य स्थापित किया।

३. **अनु—**इसे मध्यदेश के उत्तर भाग में स्थित गंगा यमुना नदियों के दोआब का राज्य प्राप्त हुआ, जहाँ उसने अनु (मलेच्छ) राज्य स्थापित किया।

४. **द्रुह्यु—**उसे मध्यप्रदेश के यमुना नदी के पश्चिम में, एवं चंबल नदी के उत्तर में स्थित प्रदेश का राज्य प्राप्त हुआ, जहाँ उसने द्रुह्यु (भोज) वंश का राज्य स्थापित किया।

५. **पुरु—**इसने ययाति की बरा स्वीकारने के कारण, ययातिपुत्रों में सब से छोटा होने पर भी, पुरु प्रतिष्ठान देश का राजा बनाया गया। इसे राज्य का सब से बड़ा हिस्सा मिल गया, जिस में सारा मध्यदेश एवं गंगा-यमुना के दो आब का प्रदेश समाविष्ट था। सोमवंश की मुख्य शाखा पुरु राजा से 'पुरुवंश' अथवा 'पौरव' कहलाने लगी।

२. **स्वायंभुव मन्वन्तर के जित देवों में से एक।**

यवक्री—'यवक्रीत' ऋषि का नामांतर।

यवक्रीत—भरद्वाज ऋषि का एकलौता पुत्र, जिसने वेदों की विद्या को प्राप्त करने के लिए घोर तप किया था (म. व. १३५.१३)। 'यवक्रीत' का शाब्दिक अर्थ 'यव दे कर खरीदा गया' होता है। इसे 'यवक्री' नामांतर भी प्राप्त था। इसका आश्रम स्थूलशिरसु ऋषि के आश्रम के पास था (म. व. १३५.१३८)। ज्ञान केवल अध्ययन से ही प्राप्त हो सकता है, तप से नहीं, इस तत्व के प्रतिपादन के लिए इसकी कथा महाभारत में दी गयी है।

यवक्रीत एवं इसके पिता दोनों तपोनिष्ठ व्यक्ति थे, किंतु इन दोनों को ब्राह्मणयोग आडर की दृष्टि से न देखते थे, क्या कि, इनमें वेदों की ऋचाओं के निर्माण करने की शक्ति न थी।

तपस्या—यवक्रीत ने वेदज्ञान प्राप्त करने के लिए कठोर तप किया, जिससे घबरा कर इंद्र ने इसे सूचना की कि, यह अपने इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए व्यर्थ प्रयत्न न करे। किंतु यह प्रचंड अग्नि को प्रचलित कर के वेदप्राप्ति की लिप्सा में कठोर तप करता ही रहा। इंद्र के बार बार मना करने पर इसने उसे उत्तर दिया, 'अगर तुम मेरी मनःकामना पूरी न करोगे, तो मैं इससे भी कठिन तप कर के, अपने प्रत्येक अंग को छिन्नभिन्न कर, जलती हुई अग्नि में होम कर दूँगा।'

इंद्र से भेंट—यवक्रीत के न मानने पर, इंद्र ने बृद्ध ब्राह्मण का वेष धारण किया, एवं वह संन्या के समय घाट पर जाकर, भागीरथी में मुट्ठी भर भरकर बालू डालने लगा। उसे ऐसा करते देख कर, इसने उसका कारण पूछा। तब इंद्ररूपधारी ब्राह्मण ने कहा, 'भागीरथी में बालू डाल डाल कर, लोगों के लिए मैं एक पूल निर्माण करना चाहता हूँ। इसने उस ब्राह्मण की खिल्ली उड़ायी, एवं उसको इस निरर्थक कार्य को न करने की सलाह देते हुए कहा, 'यह भागीरथी की धारा का प्रवाह मुट्ठी भर मिट्टी से तुम नहीं रुका सकते। श्रेष्ठ वाँचने की कौरी कल्पना में तुम अपने श्रम को व्यर्थ न गवाँओं।' तब ब्राह्मण ने कहा, 'जिस प्रकार तुम वेदज्ञान की प्राप्ति के लिए तप कर रहे हो, उसी प्रकार मैं भी लगा हूँ। तब हँसने की बात ही क्या?'

यह सुन कर यवक्रीत ने इंद्र को पहचान लिया, तथा उससे क्षमा माँगते हुए वरदान माँगा, 'मेरी योग्यता अन्य सारे ऋषिओं से श्रेष्ठ हो'। तब इंद्र ने इसके द्वारा माँगे गये सभी वर देते हुए कहा, 'तुम्हें एवं तुम्हारे पिता में वेदों के सृजन करने की शक्ति जायत होगी। तुम अन्य लोगों से श्रेष्ठ होंगे, तथा तुम्हारे सभी मनोरथ पूर्ण होंगे' (म. व. १३५)।

इंद्र के द्वारा वर प्राप्त कर यह अपने पिता भरद्वाज के पास आया, एवं उसे वरप्राप्ति की कथा सविस्तार बतायी। भरद्वाज ने इसकी गर्वपूर्ण बाणी को सुन कर, इसकी अभिमानभावना को नाश करने के लिए, इसे बालधि ऋषि तथा उसके पुत्र मेधाविन् की कथा सुनायी, एवं

इसे उपदेश दिया की, गर्व करने के क्या दुष्परिणाम होते हैं।

रैभ्य से विरोध—जिस स्थान पर यह तथा इसके पिता रहते थे, वहीं पास में ही विश्वामित्र ऋषि का पुत्र रैभ्य भी आश्रम बना कर, अर्वावसु तथा परावसु नामक अपने पुत्रों के साथ रहता था। रैभ्य के साथ उसकी स्तुपा, परावसु की परम सुंदरी पत्नी भी रहती थी। एक बार घूमते घूमते यह रैभ्य आश्रम के पास आया, तथा स्तुपा के रूप को देख कर इतना अधिक पागल हो उठा कि, उसके बार बार मना करने पर भी, इसने उसके साथ बलाकार किया। बाद को स्तुपा ने सारी कथा रो रोकर अपने श्वशुर रैभ्य ऋषि को बतायी।

यवक्रीत की यह आचरणी एवं निर्लज्ज कामातुरता की कहानी सुन कर, रैभ्य क्रोध में तमतमाने लगा। उसने अपनी दो जटायें उखाड़ कर, उन्हे अग्नि में होम कर, एक राक्षस तथा एक सुंदर स्त्री का निर्माण किया, एवं उन्हे यवक्रीत का नाश करने की आज्ञा की। उस कृत्यालपी सुन्दर स्त्री ने तप करते हुए यवक्रीत को मोहित किया, एवं इसका समस्त तेज ले लिया। तब राक्षस अपने शूल को ले कर इस पर दौड़ा। वह राक्षस को भस्म करने के लिए पानी ढूँढने लगा। उसे न देख कर भागता भागता यह नदियों के पास गया, किंतु वहाँ नदीयों में भी पानी न था। तब इसने पिता की होमशाला में धा कर, उसमें घुस कर, प्राण बचाना चाहा। किंतु आश्रम के अंगे शूद्र के द्वारा यह बाहर ही रोक लिया गया। उसी समय अवसर देख कर, राक्षस ने अपने शूल से प्रहार कर इसके वक्षःस्थल को विदीर्ण किया, एवं इसका वध किया। इस प्रकार रैभ्य ऋषि की श्रमपूर्वक संपादित की हुयी विद्या के आगे यवक्रीत की वरप्राप्ति की विद्या टहर न सकी।

बाद में ब्रह्मयज्ञ कर के भरद्वाज मुनि आश्रम आये, तथा यह देख कर कि, आज होमशाला की अग्नि प्रज्वलित नहीं है, उन्होंने इसका कारण अपने गृहरक्षक शूद्र से पूछा। उस शूद्र ने सारी कथा कह सुनायी, तथा भरद्वाज तुरंत ही समझ गये कि, मना करने पर भी यह अबदय ही रैभ्य के आश्रम गया होगा। पुत्र को धरती पर पड़ा हुआ देख कर भरद्वाज ने कहा, 'हे मेरे एकलौते पुत्र, तुम्हें बार बार मना किया, किंतु तुम न माने। वेदों के ज्ञान को पा कर, तुम घमण्डी, तथा कटोर बन कर पाप-कर्म में रत हुए हो। आज मैं पुत्रशोक में कितना विह्वल हूँ। तुम्हारी मृत्यु तो हुई, किंतु तुमको मरवानेवाला

रैभ्य भी अपने पुत्र के द्वारा ही मारा जायेगा'। इस प्रकार विलाप करते हुए भरद्वाज मुनि ने रैभ्य को शाप दिया, एवं मृत पुत्र के साथ ही अग्नि में प्रविष्ट हो कर, उसने अपनी जान दे दी (म. व. १३७)।

मुक्ति—कालंतर में भरद्वाज के द्वारा दिये गये शाप के कारण, रैभ्य अपने पुत्र परावसु के द्वारा मारा गया। यह देख कर, रैभ्य के परमशुशील पुत्र अर्वावसु ने उग्र तप कर के सूर्य तथा देवों को प्रसन्न किया। उसने उनके द्वारा वर प्राप्त कर, भरद्वाज, यवक्रीत तथा रैभ्य को जीवित कर पितृहत्या के दोष से अपने वंश परावसु को मुक्त किया एवं दो अन्य वर भी प्राप्त किये। पहला वर माँगा कि, 'मेरे पिता भरद्वाज के द्वारा किये गये वध का स्मरण उसे न रहे,' तथा दूसरा माँगा कि, 'मुझे जो वेद को प्रकाशित करनेवाला सूर्यमंत्र प्राप्त हुआ है, वह हमारे परिवार एवं परम्परा में सदैव बना रहे'।

बाद में इंद्रादि देवों ने यवक्रीत से बताया, 'रैभ्य ने गुरु से वेदों का अध्ययन किया है, इसलिए सामर्थ्य में वह तुमसे श्रेष्ठ है'। भरद्वाज ने अर्वावसु का अभिनंदन किया, तथा उसके इस उपकार के लिए बार बार प्रार्थना की। अंत में यह अपने पिता के साथ उसके आश्रम रहने गया (म. व. १३८)।

यवन—कृष्ण के द्वारा मारे गये 'कालयवन' राजा का नामान्तर (म. व. १३.२९; कालयवन देखिये)।

२. हृह्यराज का एक साथी, जिसे सगर ने पराजित किया था। पश्चात् यह वसिष्ठ ऋषि की शरण में गया, जिसने इसे जीवितदान तो दिया; किन्तु इसके सर के बाल निकालने की, एवं दाढ़ी रखने की सजा इसे थी (पद्म. उ. २०)।

३. एक लोकसमूह, जो गांधार देश के सीमाभाग में स्थित 'अरिआ' एवं 'अर्कोशिया' प्रदेश में रहते थे। प्राचीन वाङ्मय में 'अयोनियन' ग्रीक लोगों के लिए 'यवन' शब्द प्रायः प्रयुक्त किया जाता है। इन युनानी लोगों को फारसी भाषा में 'यौन' कहते थे, जिसका ही रूपान्तर प्राकृत भाषा में 'यौन', एवं संस्कृत में 'यवन' नाम से किया गया प्रतीत होता है।

उपनिवेश—सिकंदर के हमले के पूर्वकाल में योन लोगों का एक उपनिवेश, अफगानिस्तान में बल्ल एवं समरकंद के बीच के प्रदेश में बसा हुआ था, जिन लोगों का राजा 'सेनर्स' था। पाणिनि के व्याकरण में 'यवन लिपि' का निर्देश है, जो संभवतः प्राग्भौय थी, एवं इन्ही

लोगों के द्वारा प्रस्थापित की गयी थी (पा. सू. ४.१.४९; कात्यायन वार्तिक. ३)।

सिकंदर के हमले के पश्चात्, यवन लोगों का एक उपनिवेश भारत के उत्तरीपश्चिम प्रदेश में बसा हुआ था। चंद्रगुप्त मौर्य के दरबार में आये हुये मेगस्थिनिस, दिओनिसअस आदि परदेशीय वकील यवन ही थे।

अशोक के बारहवें स्तंभलेख में, 'योन' लोगों के देश में महारक्षित नामक बौद्ध भिक्षु धर्मप्रचारार्थ भेजने का निर्देश प्राप्त है। 'योन धर्मरक्षित' नामक अन्य एक बौद्ध धर्मगुरु अशोक के द्वारा 'अपरान्त' प्रदेश में भेजा गया था। रुद्रदामन् के जुनागढ स्तंभलेख में, अपरान्त प्रदेश का राज्य योनराज गुप्ताय के द्वारा नियंत्रित किये जाने का, एवं वह सम्राट अशोक का राजप्रतिनिधि होने का निर्देश प्राप्त है। इससे प्रतीत होता है कि, अशोक के राज्यकाल में यवन लोगों की एक बसाहत पश्चिमी भारत में गुजरात प्रदेश में भी बसी हुयी थी।

पतंजलि के महाभाष्य में, मिनेन्डर नामक यवन राजपुत्र ने 'साकेत' (अयोध्या) एवं 'मध्यमिका' नगरी को युद्ध में घिरा लेने का निर्देश प्राप्त है (महा. २.११९)। आगे चल कर सुंगराज पुष्यमित्र एवं वसुमित्र ने यवनों को पराजित किया। अशोक राजा गौतमीपुत्र शातकर्णी ने इनका संपूर्ण नाश किया।

महाभारत में—महाभारत के अनुसार, यवन लोग ययातिपुत्र तुर्वसु के वंशज थे (म. आ. ८०.२६)। ये लोग पहले क्षत्रिय थे; किंतु ब्राह्मणों से द्वेष रखने के कारण, बाद में शूद्र बन गये थे (म. अनु. ३५.१८)। उसी ग्रंथ में अन्यत्र इन्हें नंदिनी के योनि (मूत्र) प्रदेश से उत्पन्न कहा गया है (म. आ. १६५.३५)।

सहदेव ने अपनी दक्षिणदिग्विजय में इनके नगरों को जीता था (म. स. २८.४९)। नकुल ने भी अपनी पश्चिम दिग्विजय में इन्हें परास्त किया था (म. स. २९.१५ पाठ)। कर्ण ने अपनी पश्चिम दिग्विजय में इन्हें जीता था (म. व. परि. १.२४.६६)।

भारतीय युद्ध में, ये लोग कौरवों के पक्ष में शामिल थे। कंबोजराज सुदक्षिण यवनों के साथ एक अशौहिणी सेना ले कर भारतीय युद्ध में उपस्थित हुआ था (म. उ. १९.२१-२२)। भारतीय युद्ध में यवनों के साथ अर्जुन का (म. द्रो. ६८.४१; ९६.१), एवं सायकिका (म. द्रो. ९५.४५-४६) घनशोर युद्ध हुआ था।

यवस—सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक। पद्म में इसे 'यवसु' कहा गया है (पद्म. सू. ७)।

२. इध्मजिह्वा राजा के सात पुत्रों में से एक।

यविष्ठ—स्वायंभुव मन्वन्तर के जिदाजित देवों में से एक।

२. अग्नि का एक नामान्तर।

यविनर—(सो. द्विमीट.) द्रुह्यकुलोत्पन्न एक सुविख्यात राजा, जो मत्स्य के अनुसार अजमीट राजा का, एवं भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार द्विमीट राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम ऋतिमंत (ऋतिमत्) था।

२. (सो. नील.) उत्तर पंचाल देश का एक राजा, जो भागवत के अनुसार भग्यश्व राजा का पुत्र था। इसे सुद्वल, संजय, बृहदिशु, एवं कापित्य नामक चार भाई थे। भग्यश्व राजा के ये पाँच पुत्र 'पंचाल' नाम से सुविख्यात थे।

यचियस्—(सो. नील.) एक राजा, जो वायु के अनुसार ऋक्ष राजा का पुत्र था।

२. एक आचार्य, जो वायु के एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से हिरण्यनाभ ऋषि का शिष्य था।

यश—सुतभ देवों में से एक।

२. विकुट देवों में से एक।

यशस्कर—शिवदेवों में से एक।

यशस्विन्—प्रतर्दन देवों में से एक।

यशस्विन् जयन्त्य लौहित्य—एक आचार्य, जो कृष्णराज त्रिवेद लौहित्य नामक आचार्य का शिष्य था (वं. ब्रा. ३; जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)। लौहित का वंशज होने से इसे 'लौहित्य' पौत्रक नाम प्राप्त हुआ होगा।

यशस्विनी—स्वेंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१०)।

यशोदा—हविष्मत् नामक पितरों की मानसकन्या (ह. वं. १.१८.६१)। कई ग्रंथों में इसे 'सुस्वधा' (उपहृत) पितरों की कन्या कहा गया है। इसका विवाह इक्ष्वाकुवंशीय विश्रमहत् (विश्रसह) राजा से हुआ था, जिससे इसे दिलीप खड्वांग नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (ब्रह्मांड. ३.१०.९०)।

मत्स्य में इसे इक्ष्वाकुवंशीय अंशुमत् राजा की पत्नी कहा गया है (मत्स्य. १५.१८)। किन्तु यह अव्यय प्रतीत होता है। अंशुमत् राजा के पुत्र का नाम भी दिलीप (प्रथम) ही था। संभव है, इसी नामसादृश्य से

मत्स्य में, इसे अंशुमत् की पत्नी होने का अयोग्य निर्देश किया गया होगा।

२. नंद गोप की पत्नी, जिसने श्रीकृष्ण को पालपोस कर बड़ा किया था (भा. १०.२.९)। यह देवक नामक गोप की कन्या थी। भागवत में, इसे द्रोण नामक वसु की पत्नी धरा का अवतार कहा गया है (भा. १०.८.५०; रापण देखिये)।

यशोदेवी—अनुवंशीय सम्राट् बृहन्मनस् की पत्नी।

यशोधन—पाण्डवपक्षीय दुर्मुख पंचाल नामक राजा का पुत्र। इसे 'दौर्मुखी' पैतृक नाम भी प्राप्त था (म. ब्र. १५.९.४)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'यशोधर'।

यशोधर—श्रीकृष्ण एवं रुक्मिणी का एक पुत्र (म. अनु. १४.३३)।

यशोधरा—विरोचन दैत्य की कन्या, जो त्वष्ट की पत्नी थी। इसे 'वैरोचनी यशोधरा' एवं 'रचना' नामान्तर भी प्राप्त थे। इसे त्वष्ट से निम्नलिखित दो पुत्र उत्पन्न हुये थे:—त्रिशिरस् विश्वरूप, एवं विश्वकर्मान् (संनिवेश) (ब्रह्मांड. ३.१.८६-८७)।

२. त्रिगर्तराज की कन्या, जो पूर्ववंशीय सम्राट् हस्तिन की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम विकुण्ठन था। पाठभेद—'यशोदा'।

यशोभद्र—एक राजा, जो मनोभद्र राजा का पुत्र था। इसके भाई का नाम वीरभद्र था। पूर्वजन्म में गंगास्तान का पुण्य करने के कारण, इसे राजकुल में जन्म प्राप्त हुआ था (पद्म. क्रि. ३)।

यशोमेधस्—सुमेधस् देवों में से एक।

यशोवती—हैहय राजा एकवीर की पत्नी।

यशोवसु—(सो. अमा.) एक राजा, जो वायु के अनुसारा कुश राजा का पुत्र था। विष्णु में इसे 'अमावसु' एवं भागवत में 'वसु' कहा गया है।

यस्क—एक व्यक्ति, जो गिरिक्षित का वंशज था (भा. सं. १३.१२)। इसी कारण इसे 'गैरिक्षित' कहा गया है।

२. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार, जिसके नाम के लिए 'यस्कधर' पाठभेद प्राप्त है। पाणिनि ने यस्क नामक एक आचार्य का निर्देश किया है (पा. सू. २.४.६३; ४.१.११२)। आश्वलायन श्रौतसूत्र के गोत्रधरों की तालिका में 'यस्क' का निर्देश प्राप्त है (आ. श्रौ. ६.१०.१०)। संभवतः ये सारे व्यक्ति एक ही होंगे।

याज्ञ—कश्यपकुलोत्पन्न एक ऋषि, जो यमुना नदी के तट पर निवास करता था। द्रोण का विनाश करनेवाला पुत्र उत्पन्न करने के लिए द्रुपद राजा ने इससे, एवं इसके भाई उपयाज से एक यज्ञ कराया था।

यह वेदाभ्यासक एवं सूर्यभक्त ऋषि था। किन्तु प्रारंभ से ही, यह अत्यंत हीन मनोवृत्ति का एवं लोभी था (म. आ. १५.५.१४-२१)। पंचाल देश का द्रुपद राजा एक ऐसे पुत्र की कामना मन में रखता था, जो उसके शत्रु द्रोणाचार्य का वध करे। इसने एवं इसके भाई उपयाज ने एक अशुद्ध वेतुओं के बटले में, द्रुपद राजा के पुत्रकामेष्टी यज्ञ का काम स्वीकार लिया (म. आ. १६.७.२१)। यज्ञ समाप्त होने पर, यज्ञ में सिद्ध किया गया 'चरु' भक्षण करने के लिए, इसने द्रुपदपत्नी सौत्रामणि को बुलया। उसे आने में विलंब होते ही, इस तामसी ऋषि ने वह चरु अग्नि में झांक दिया, जिससे द्रुपदपुत्र शृष्ट्युम्न उत्पन्न हुआ (द्रुपद देखिये)।

पंचाल देश में राज्य करनेवाला पुरुयशस् राजा भी याज्ञ एवं उपयाज ऋषियों का ही शिष्य था (स्कंद. २.७.१५-१६; पुरुयशस् देखिये)।

याज्ञ—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

याज्ञतुर—ऋषभ नामक अश्वमेध करनेवाले राजा का पैतृक नाम (श. ब्रा. १२.८.३.७; सां. श्रौ. १६.९.८.१०)। 'यज्ञतुर' का वंशज होने से, इसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

याज्ञदत्त—वसिष्ठकुलोत्पन्न याज्ञवल्क्य नामक गोत्रकार का नामान्तर (याज्ञवल्क्य २. देखिये)।

याज्ञवल्क्य—त्रिश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसे याज्ञदत्त नामान्तर भी प्राप्त था (मत्स्य. २००.६)।

३. एक आचार्य, जो व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा में से वाष्कल नामक ऋषि का शिष्य था। इसीके नाम से व्यास की उस ऋक्षशिष्यपरंपरा को 'याज्ञवल्क्य' नाम प्राप्त हुआ (वायु. ६०.१२-१५)।

४. एक आचार्य, जिसके आश्रय में विष्णुयशस् नामक ब्राह्मण के घर, कल्कि नामक विष्णु का ग्यारहवाँ अवतार उत्पन्न होनेवाला है (भा. १. २. ३५)। वास्तव में, कल्कि अवतार इसके पहले ही हो चुका है। किन्तु उस अवतार के जीवन-चरित्र में किसी याज्ञवल्क्य नामक आचार्य का निर्देश अप्राप्य है।

५. विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४. ५१)।

याज्ञवल्क्य वाजसनेय—एक सर्वश्रेष्ठ विद्वान्, वाद-पटु, एवं आत्मज्ञ ऋषि, जो 'शुक्लयजुर्वेद संहिता' का प्रणयिता माना जाता है। यह उद्दालक आरुणि नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६. ४. ३. माध्य.)। यह सांस्कारिक एवं दार्शनिक समस्या का सर्वश्रेष्ठ अविकारी विद्वान् था, जिसके निर्देश शतपथ ब्राह्मण, एवं बृहदारण्यक उपनिषद् में अनेक बार प्राप्त हैं (श. ब्रा. १. १. १. ९; २. ३. १. २१; ४. २. १. ७; बृ. उ. ३. १. २ माध्य.)।

ओल्डेनबर्ग के अनुसार, यह विदेह देश में रहनेवाला था। जनक राजा के द्वारा इसे संरक्षण मिलने की जो कथा बृहदारण्यक उपनिषद् में प्राप्त है, उससे भी यही प्रस्थापित होता है। किन्तु इसका गुरु उद्दालक आरुणि कुर्षपंचाल देश में रहनेवाला था, जिस कारण इसको भी उसी देश के निवासी होने की संभावना है।

नाम— यज्ञवल्क्य का वंशज होने के कारण, इसे 'याज्ञवल्क्य' पौत्रक नाम प्राप्त हुआ होगा। बृहदारण्यक उपनिषद् में इसे 'वाजसनेय' कहा गया है (बृ. उ. ६. ३. ७-८, ६. ५. ३; श. ब्रा. १. ४. ९. ४. ३३)। महीधर के अनुसार, वाजसनि का पुत्र होने के कारण, इसे वाजसनेय नाम प्राप्त हुआ होगा। इसके 'माध्यंदिन' नामक शिष्य के द्वारा इसके शुक्लयजुर्वेद संहिता का प्रचार होने के कारण, इसे 'माध्यंदिन' भी कहते हैं।

विष्णु में इसे ब्रह्मरात का पुत्र, एवं वैशंपायन का शिष्य कहा गया है (विष्णु. ३. ५. २)। वायु, भागवत, एवं ब्रह्मांड में इसके पिता का नाम क्रमशः 'ब्रह्मवाह', 'देवरात' एवं 'ब्रह्मराति' प्राप्त है (वायु. ६०. ४१; भा. १. २. ६. ६४; ब्रह्मांड. ३. ३५. २४)। ब्रह्मा के शरीर से उत्पन्न होने के कारण, इसे 'ब्रह्मवाह' नाम प्राप्त हुआ था (वायु. ६०. ४२)। महाभारत में इसे वैशंपायन ऋषि का भतिजा एवं शिष्य कहा गया है (म. शां. ३०६. ७७६ *)। उद्दालकशिष्य याज्ञवल्क्य एवं वैशंपायनशिष्य याज्ञवल्क्य दोनों संभवतः एक ही होंगे। उनमें से उद्दालक इसका दार्शनिक शास्त्री का, एवं वैशंपायन वैदिक सांस्कारिक शास्त्री का गुरु था।

इसके अतिरिक्त, हिरण्यनाम कौशल्य नामक इसका और एक गुरु था, जिससे इसने योगशास्त्र की शिक्षा प्राप्त की थी (ब्रह्मांड. ३. ६३. २०८; वायु ८८. २०७; विष्णु. ४. ४. ७७; भा. ९. १२. ४)।

योग्यता—याज्ञवल्क्य के दो प्रमुख पहलू माने जाते हैं। यह वैदिक संस्कारों का एक श्रेष्ठ ऋषि था, जिसे 'शुक्लयजुर्वेद' एवं 'शतपथ ब्राह्मण' के प्रणयन का श्रेय दिया जाता है। इसके साथ ही साथ यह दार्शनिक समस्याओं का सर्वश्रेष्ठ आचार्य भी था, जिसका विवरण 'बृहदारण्यक उपनिषद्' में विस्तारशः प्राप्त है। वहाँ इसने अत्यंत प्रगतिशील दार्शनिक विचार सरलतम भाषा में व्यक्त किये हैं, जो विश्व के दार्शनिक साहित्य में अद्वितीय माने जाते हैं।

यजुःशिष्यपरंपरा—याज्ञवल्क्य यजुःशिष्यपरंपरा में से वैशंपायन ऋषि का शिष्य था। वैशंपायन ऋषि के कुल ८६ शिष्य थे, जिनमें श्यामायनि, धामुरि, आलवि, एवं याज्ञवल्क्य प्रमुख थे (वैशंपायन देखिये)। वैशंपायन ने 'कृष्णयजुर्वेद' की कुल ८६ संहिताएँ बना कर, याज्ञवल्क्य के अतिरिक्त अपने शिष्यों को प्रदान की थीं। वैशंपायन के शिष्यों में से केवल याज्ञवल्क्य को 'कृष्णयजुर्वेद संहिता' प्राप्त न हुयी, जिस कारण इसने 'शुक्लयजुर्वेद' नामक स्वतंत्र संहिता-ग्रंथ का प्रणयन किया।

कृष्णयजुर्वेद का शुद्धीकरण—याज्ञवल्क्य ने 'कृष्णयजुर्वेद' के शुद्धीकरण का महान् कार्य सम्पन्न किया, एवं उसी वेद के संहिता में से चालीस अध्यायों से युक्त नये शुक्लयजुर्वेद का निर्माण किया (श. ब्रा. १. ४. ९. ४. ३३)। याज्ञवल्क्य के पूर्व, कृष्णयजुर्वेद संहिता में यज्ञविषयक मंत्र, एवं यज्ञप्रक्रियाओं की सूचनायें, उलझी हुई तन्निहित थीं। उदाहरणार्थ, तैत्तिरीय संहिता में 'इषेत्वेति छिनत्ति' मंत्र प्राप्त है। यहाँ 'इषेत्वेति' (इषे त्वा) वैदिक मंत्र है, जिसके पठन के साथ 'छिनत्ति' (लकड़ी तोड़ना) की प्रक्रिया बताई गयी है।

याज्ञवल्क्य की महानता यह है कि, इसने 'इषे त्वा' की भाँति वैदिक मंत्रभागों को अलग कर उन्हें 'शुक्ल यजुर्वेद' संहिता में बाँध दिया, एवं 'इति छिनत्ति' जैसे याज्ञिक प्रक्रियात्मक भागों को अलग कर, ब्राह्मण ग्रन्थों में एकत्र किया।

कृष्णयजुर्वेद के इस शुद्धीकरण के विषय में, याज्ञवल्क्य को अपने समकालीन आचार्यों से ही नहीं, बरिक्त, अपने गुरु वैशंपायन से भी झगड़ा करना पड़ा। आगे चल कर संहिताविषयक धर्मग्रंथसम्बन्धी यह वादविवाद, एक देशज्यापी आन्दोलन के रूप में उठ खड़ा हुआ। अन्त में यह विवाद हस्तिनापुर के सम्राट जनमेजय (तृतीय) के

पास तक जो पहुँचा, और उसने याज्ञवल्क्य की विचार-धारा को सही कह कर उसका अनुमोदन किया।

जनमेजय की राजसभा में—जनमेजय का राजपुरोहित उस समय वैशंपायन था, जिसे छोड़ कर यज्ञों के अश्वर्यु-कर्म के लिए उसने याज्ञवल्क्य को अपनाया। किन्तु इसके परिणामस्वरूप, जनमेजय के विरुद्ध उसकी प्रजा में अत्यधिक क्षोभ का भावना फैलने लगी, जिस कारण उसे राजसिंहासन को परित्याग कर वनवास की शरण लेनी पड़ी। इतना ही जाने पर भी, जनमेजय ने अपनी जिद्द न छोड़ी, और याज्ञवल्क्य के द्वारा ही अश्वमेधादि यज्ञ करा कर, 'महावाजसनेय' उपाधि उसने प्राप्त की। इसके परिणाम स्वरूप वैशंपायन और उसके अनुयायियों को मध्यदेश छोड़ कर पश्चिम में समुद्रतट, एवं उत्तर में हिमालय की शरण लेनी पड़ी।

इस प्रकार, धार्मिक आधार पर खड़ी हुई याज्ञवल्क्य और वैशंपायन के बीच के विवाद ने राज-नैतिक जीवन के आदर्शों का आमूल परिवर्तन किया, जो भारतीय इतिहास में एक अन्टी घटना साबित हुयी। इस प्रकार सर्वसाधारण से लेकर राजाओं तक को भी अपने प्रभाव से बदल देनेवाला याज्ञवल्क्य एक युगप्रवर्तक आचार्य बन गया।

शुक्ल यजुर्वेद का प्रणयन—अन्य वैदिक आचार्यों के समान याज्ञवल्क्य भी कर्म एवं ज्ञान के सम्मिलन को महत्त्व प्रदान करता था। इसी कारण, 'शुक्लयजुर्वेद' का प्रणयन करते समय, इसने उस ग्रंथ के अन्त में 'ईश उपनिषद्' का भी सम्मिलन किया है। शुक्लयजुर्वेद वैदिक कर्मकाण्ड का ग्रंथ है। उसे ज्ञानविषयक 'ईश उपनिषद्' के अठारह मंत्र जोड़ने के कारण, उस ग्रंथ की महत्ता कतिपय बढ़ गयी है। वैदिक कर्मकाण्ड का अंतिम साध्य आत्मज्ञान की प्राप्ति है। इसी तत्त्व का साक्षात्कार 'ईश उपनिषद्' से होता है।

अपने समय के सर्वश्रेष्ठ उपनिषद्कार माने गये याज्ञवल्क्य ने कर्म एवं ज्ञान का सम्मिलन करने-वाले 'शुक्लयजुर्वेद' की रचना की, इस घटना को वैदिक साहित्य के इतिहास में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। वैदिक परंपरा मंत्रों के अर्थ से संगठित है। वह अर्थ मूलस्वरूप में रखने के लिए, प्रसंगवश मंत्रों के शब्दों में बदला किया जा सकता है, इसी क्रांतिकारी विचारधारा का प्रणयन याज्ञवल्क्य ने किया, एवं यह वैदिक सूक्तकारों में एक श्रेष्ठ आचार्य बन गया।

ईश उपनिषद्—शुक्लयजुर्वेद संहिता का चालीसवाँ अंतिम अध्याय 'ईश उपनिषद्' अथवा 'ईशावाक्य उपनिषद्' से बना हुआ है। इस उपनिषद् में केवल अठारह मंत्र हैं, फिर भी, वह प्रमुख दस उपनिषदों में से एक माना जाता है। शंकराचार्य से ले कर विनोबाजी तक के सारे प्राचीन एवं आधुनिक आचार्य, उसे अपना नित्य-पाठन का ग्रंथ मानते हैं। इस उपनिषद् में, 'सारा संसार ईश्वर से भरा हुआ है' (ईशावाक्यमिदं सर्वम्), यह सिद्धान्त बहुत ही सुंदर तरीके से कथन किया गया है। इसी उपनिषद् के अन्य एक मंत्र में, धनलोभ का निषेध किया गया है।

शतपथ ब्राह्मण—शुक्लयजुर्वेद का ब्राह्मण ग्रंथ 'शतपथ ब्राह्मण' है। इस ग्रंथ में चौदह काण्ड, एवं सौ अध्याय हैं। उनमें से १-४ एवं १०-१४ काण्डों में याज्ञवल्क्य के 'यज्ञप्रक्रिया' 'देवताविज्ञान' आदि विषयक सिद्धान्त ग्रथित किये गये हैं। इस ग्रंथ के ५-९ काण्डों में तुर कावपेय एवं शांडिल्य के सिद्धान्तों का संग्रह याज्ञवल्क्य के द्वारा किया गया है। इस ग्रंथ का प्रचंड विस्तार, एवं उसमें प्रकट किये गये प्रगतिशील विचारों के कारण, 'शतपथब्राह्मण' वैदिक सांस्कृतिक सिद्धान्तों का एक अद्वितीय ग्रंथ माना जाता है।

इसी ग्रंथ के अंतिम भाग में 'बृहदारण्यक उपनिषद्' का समावेश किया गया है। ब्रह्मज्ञान एवं आत्मज्ञान के विषय में याज्ञवल्क्य का तत्त्वज्ञान इस उपनिषद् में समाविष्ट किया गया है।

काल्याण के वार्तिक में 'शतपथ ब्राह्मण' को पुराण-कल्प में विरचित अन्य ब्राह्मण ग्रंथों से उत्तरकालीन कहा गया है (पुराणप्रोक्तेषु ब्राह्मणकल्पेषु) (पा. सू. ३.२. १०५)।

वैशंपायन से विरोध—अपने गुरु वैशंपायन से याज्ञवल्क्य का विरोध किस कारण से हुआ, इसके संबंध में अनेकानेक कथाएँ पुराणों में प्राप्त हैं, जिनमें ऐतिहासिकता के बदले काल्पनिकता अधिक प्रतीत होती है।

एक बार सत्र ऋषियों ने नियत समय पर मेरु पर्वत पर एकत्र होने का निश्चय किया। उस समय यह भी तथ्य हुआ कि, जो भी ऋषि समय पर न आयेगा, उसे ब्रह्महत्या का पाप लगेगा। दैवयोग से, वैशंपायन समय पर न पहुँच सका, तथा उसे ब्रह्महत्या का पाप सहना पड़ा। तब उसने ब्रह्महत्या के अपने पाप को समाप्त करने के लिए, अपने सभी शिष्यों से प्रायश्चित्त लेने के लिए कहा। उस समय,

याज्ञवल्क्य ने आत्मप्रशंसा से चशीभूत हो कर कहा, 'सब शिष्यों की क्या आवश्यकता है? मैं अकेला ही काफी हूँ'। इसकी ऐसी गर्वोक्ति सुन कर वैशंपायन क्रोधित हो उठा, तथा उसने इससे कहा, 'तुमने मुझसे जो वेद सीख लिये हैं, वे मुझे वापस करो'।

गुरु के शाप के कारण, सीखे हुये सारे वेद इसे निगलने पड़े, जिसे वैशंपायन के शकी शिष्यों ने उठा लिये। वेद-विहीन होने के कारण, यह विद्याहीन, स्मृतिहीन एवं कुष्ठरोगी बन गया। किन्तु पश्चात्, सरस्वती की कृपा से इसने नया वेद प्राप्त कर लिया, एवं यह पूर्व की भाँति तेजस्वी बन गया (म-शां. ३०६; वायु. ६१.१८-२२)।

सूर्य से वेदप्राप्ति—सूर्य से वेद स्वीकार करते समय, याज्ञवल्क्य ने अश्व का रूप धारण किया था, जिस कारण इसके वेदों तथा शिष्यों को 'वाजिन' नाम प्राप्त हुआ (वायु. ६१.२२)। अन्य पुराणों के अनुसार, वेद लेते समय इसने नहीं, बल्कि सूर्य ने अश्व का रूप धारण किया था (भा. १२.६.७३; ब्रह्मांड. २.३५.२६-७४)।

स्कंद में इसके गुरु का नाम वैशंपायन नदेकर, शाकल्य दिया है एवं अपने आथर्वण मंत्र के ब्रह्म से शाकल्य ने इसकी समस्त वेदविद्या वापस लेने की कथा वहाँ बताया है (स्कंद. ६.१२९)।

कालनिर्णय—सूर्य से वेदविद्या सीखने के बाद, इसने वह विद्या जनक, कात्यायन, शतानीक, जनमेजय (तृतीय) आदि राजाओं को सिखायी थी (विष्णु. ४.२१.२)। इससे याज्ञवल्क्य ऋषि शतानीक एवं जनमेजय (तृतीय) राजाओं का समकालीन प्रतीत होता है।

महाभारत में, याज्ञवल्क्य के द्वारा देवराति जनक के सभा में वाद-विवाद करने का निर्देश प्राप्त है। किन्तु उस समय देवराति जनक का होना असंभव प्रतीत होता है। उस समय जो जनक था, उसका स्पष्ट उल्लेख यद्यपि अप्राप्य है, तथापि शतानीक, जनमेजय इत्यादि याज्ञवल्क्य के समकालीन राजाओं से प्रतीत होता है कि, उस समय का जनक उपरसेन होगा (पुष्करमालिन् देखिये)। एक तर्क यह भी दिया गया है कि, 'देवराति' जनक का विशेषण न होकर, याज्ञवल्क्य का विशेषण है (पं. भगवद्-वैदिक वाडमय का इतिहास, पृ. २६४)।

महाभारत में, जनक एवं विश्वासु गंधर्व के साथ याज्ञवल्क्य के द्वारा किये तत्त्वज्ञानविषयक संवाद का निर्देश प्राप्त है (म-शां २९८-३०६)। वहाँ इसने विश्वासु के

चौबीस प्रश्नों के उत्तर दिये हैं (म-शां. ३०६.२६-८०)।

दार्शनिक समस्याओं का आचार्य—'बृहदारण्यक उपनिषद्' के दूसरे, तीसरे एवं चौथे अध्यायों में याज्ञवल्क्य की दार्शनिक महत्ता, एवं सिद्धान्तों का परिचय प्राप्त होता है। उनमें से दूसरे अध्याय में, याज्ञवल्क्य का अपनी ब्रह्मवादिनी पत्नी मैत्रेयी से तत्त्वज्ञान पर संवाद प्राप्त है; तीसरे अध्याय में विदेह देश के जनक राजा के दरबार में इसके द्वारा अनेकानेक तत्त्वज्ञानियों से हुए वाद-विवादों की जानकारी दी गयी है; एवं चौथे अध्याय में स्वयं जनक राजा से हुए इसके तत्त्वज्ञान पर संवाद प्राप्त है। इन सारे संवादों से याज्ञवल्क्य के प्रागतिक व्यक्तित्व, एवं दार्शनिक तत्त्वज्ञान पर काफी प्रकाश पड़ता है।

जनक राजा के दरबार में—जनक राजा के यज्ञ-मंडप में कुरुक्षेत्र देश के अनेकानेक तत्त्वज्ञ उपस्थित हुये थे। याज्ञवल्क्य ने उन सारे तत्त्वज्ञों को वाद-विवाद में परास्त किया। बृहदारण्यक उपनिषद् के अनुसार, याज्ञवल्क्य ने जिन आचार्यों के साथ वाद-विवाद किये थे, उन के नाम, एवं वाद-विवाद के विषय निम्न प्रकार हैं:—

१. अश्वल—'मृत्यु से मुक्ति कैसे प्राप्त हो सकती है' (बृ. उ. ३.१)।

२. जारत्कारव आर्तभाग—'आठ ग्रह एवं आठ उपग्रह कौनसे हैं' (बृ. उ. ३.२)।

३. भृगु लब्धायनि—'मृत्यु के उपरांत परलोक में क्या होता है; यज्ञ करनेवाले परिशुद्ध राजा को कौन सी गति मिली (बृ. उ. ३.३)।

४. उपस्त चाक्रायण—'सर्वअन्तर्यामी आत्मा' (बृ. उ. ३.४)।

५. क्होल कौषीतकेय—'सर्वअन्तर्यामी आत्मा' (बृ. उ. ३.५)।

६. गानी वाचक्रवी—'जगत का मूल कारण क्या है' (बृ. उ. ३.६)।

७. वाचक्रवी—'ब्रह्म' (बृ. उ. ३.८)।

८. उद्दालक वारुण्य—'अन्तर्यामी आत्मा'; 'परलोक' (बृ. उ. ३.७)।

९. विदग्ध शाकल्य—'देव कितने हैं' (बृ. उ. ३.९)।

उपरिनिर्दिष्ट आचार्यों के सिवा, याज्ञवल्क्य ने निम्न लिखित आचार्यों से भी तत्त्वज्ञानसंबंधी वाद-विवाद किये

थे, जिनका निर्देश बृहदारण्यक उपनिषद् के चौथे अध्याय में प्राप्त हैं :—

१. उदक शौलशायन—‘प्राणब्रह्म’ (बृ. उ. ४.१.२.३)।

२. बर्कु वाष्प—‘चक्षुब्रह्म’ (बृ. उ. ४.१.४)।

३. गर्दभीविपीत भारद्वाज—‘श्रोत्रब्रह्म’ (बृ. उ. ४.५)।

४. सत्यकाम जाबाल—‘मनोब्रह्म’ (बृ. उ. ४.१.६)।

५. विदग्ध शाकल्य—‘हृदयब्रह्म’ (बृ. उ. ४.१.७)।

वादविवाद के विषय—जनक के दरबार में हुये वाद-विवाद में, अश्वल एवं विदग्ध शाकल्य ने याज्ञवल्क्य से ईश्वर एवं कर्मकाण्ड के विषय में प्रश्न पूछे थे, जो विशेष कठिन नहीं थे। शाकल्य ने इससे पूछा, ‘देव कितने हैं’ (कति देवाः)। इस पर याज्ञवल्क्य ने देवों की संख्या तीन हजार तैंतीस, तैंतीस, तीन, ऐसी विभिन्न प्रकार से बताकर, अंत में ये सारे एक ही परमेश्वर के विविध रूप हैं, ऐसा कह कर बहुत ही सुंदर जवाब दिया था (बृ. उ. ३.१.१-३)।

अपने इस जवाब से याज्ञवल्क्य ने शाकल्य को मौन कर दिया। यही नहीं, वादविवाद के शर्त के अनुसार, शाकल्य को मृत्यु स्वीकार करनी पड़ी, एवं उसकी अस्थियाँ भी उसके शिष्यों को प्राप्त न हुई (बृ. उ. ३.९.४-२६)।

शाकल्य की तुलना में, याज्ञवल्क्य से वाद विवाद करने-वाले जनकसभा के अन्य ऋषिगण अधिकतर अधिकारी व्यक्ति थे, एवं उनके द्वारा पूछे गये प्रश्न भी अधिक कठिन थे। मृत्यु के पश्चात् आत्मा की क्या गति होती है, यह पूछनेवाला जारत्कारव; अंतिम सत्य का स्वरूप क्या होता है, यह पूछनेवाला उपस्त; आत्मानुभव किस मार्ग से मिलता है, यह पूछनेवाला कहीोल; एवं परमात्मा सर्वांतरगत हो कर भी अचेतन अथवा चेतनायुक्त कैसे रह सकता है, यह पूछनेवाले उद्दालक एवं गार्गी, ये उस समय के सर्वश्रेष्ठ तत्त्वज्ञ थे। उनके प्रश्नों को तर्कशुद्ध जवाब दे कर, याज्ञवल्क्य ने विद्वत्सभा में अपना श्रेष्ठत्व प्रस्थापित किया।

निष्प्रपंच सिद्धान्त—इसी वाद-विवाद में याज्ञवल्क्य ने आत्मा के विषयक अपने ‘निष्प्रपंच सिद्धान्त’ का पुनरुच्चार किया। इसने कहा, ‘आत्मा बड़ा नहीं, उसी-तरह छोटा भी नहीं। वहा ऊँचा नहीं, उसी तरह नीचा भी नहीं। वह रुचि, दृष्टि एवं गंध के विरहित है (बृ. उ. ३.८.८)। वह सृष्टि के समस्त वस्तुमात्रों का अंतर्नियामक है, जिसके कारण सारी सृष्टि कठपुतलियों के जैसी नाचती है’।

पुराणों में—देवमित्र शाकल्य के साथ याज्ञवल्क्य ने किये वादविवाद की कथा, पुराणों एवं महाभारत में भी विस्तृत रूप से दी गयी है।

विदेह देश के देवराति (दैवराति) जनक ने अश्वमेध यज्ञ प्रारंभ किया, तथा उस सम्बन्ध में सैकड़ों ऋषियों को निमंत्रित भी किया (म. शां. ३.०६)। उस यज्ञमें, हजार गायों के अतिरिक्त न जाने कितने स्वर्ण, रत्नादि सामने रक्ल कर उसने कहा, ‘यह सारी सुखसामग्री, तथा ग्रामादि और सेवक आदि सारी संपत्ति वह ऋषि ले सकता है, जो उपस्थित सभा में सर्वश्रेष्ठ हो’। यह सुन कर कोई न उठा। तब याज्ञवल्क्य सामने आया, तथा अपने शिष्य साम-श्रवस् से इसने कहा, ‘मेरे समान वेदवत्ता यहाँ कोई नहीं है। इसलिए यह समस्त संपत्ती हमारी है। उसे तुम उठा लो’।

इतना कह कर फिर समस्त उपस्थितजनों को सम्बोधित कर याज्ञवल्क्य ने कहा, ‘यदि कोई भी व्यक्ति मुझे सर्वश्रेष्ठ नहीं समझता, तो उसे मेरी ओर से चुनौती है कि, वह मेरे सामने आये’। इतना सुनते ही सारी सभा में खलमली मच गई, और कई ब्राह्मण इससे वादविवाद करने आये। लेकिन सभी इससे परास्त हुए।

उपस्थित पंडितों से इसका कई विषयों पर वादविवाद हुआ। सब को जीतने के बाद, इसने देवमित्र शाकल्य को ललकारते हुए कहा, ‘भरी हुई घँकनी के समान लुप क्यों बैठे हो? कुछ बोलो तो’। इस प्रकार इसकी वाणी सुन कर शाकल्य ने अकेले ही समस्त धन ले जाने के संबंध में इससे शिकायत की। तब याज्ञवल्क्य ने कहा, ‘ब्राह्मण का बल है विश्वा, एवं तत्त्वज्ञान में निपुणता। क्यों कि, मैं किसी प्रकार के प्रश्न का उत्तर देने के लिए अपने को समर्थ समझता हूँ, इसलिए इस समस्त धन पर मेरा अपना अधिकार है’।

याज्ञवल्क्य की ऐसी वाणी सुन कर देवमित्र शाकल्य क्रोध से पागल हो गया, और उसने इससे एक हजार प्रश्न पूछे, जिनके सभी उत्तर इसने बड़ी निपुणता एवं विद्वत्ता के साथ दिये। फिर याज्ञवल्क्य की प्रश्न पूछने की बारी आई। याज्ञवल्क्य ने एक ही प्रश्न उससे किया। किन्तु शाकल्य उसका भी उत्तर न दे सका, जिसके परिणामस्वरूप उसे अपनी जान से हाथ धोना पड़ा।

देवमित्र शाकल्य की मृत्यु से सब ब्राह्मणों को ब्रह्महत्या का जो पाप लगा। इसलिए सभी उपस्थित जनों ने पवनपुर में जा कर द्वादशार्क, बालकेश्वर, एकादश रुद्र इत्यादि के दर्शन

किये, और चारों कुण्डों में स्नान किया। उसके उपरांत इन्होंने उत्तरेश्वर में जा कर वाडवों का दर्शन किया, जिससे सभी व्यक्ति ह-यादोष से मुक्त हुए (वायु. ६०.६९-७१)। प्रस्तुत कथा पुरातन इतिहास के रूप में भीष्म के द्वारा युधिष्ठिर से कही गयी है (म. शां २९८.४; ३०६.९२)। वंशावलि के अनुसार, दैवराति जनक दाशरथि राम से काफी पूर्वकालीन माना जाता है।

याज्ञवल्क्य-मैत्रेयी-संवाद—याज्ञवल्क्य ऋषि के द्वारा संन्यास लिये जाने पर, उसने अपनी संपत्ति कात्यायनी एवं मैत्रेयी नामक अपनी दो पत्नियों में विभाजित करनी चाही। उस समय इसकी ब्रह्मवादिनी पत्नी मैत्रेयी ने इससे अध्यात्मिक ज्ञान का हिस्सा माँगा, एवं इसे अमरत्व प्राप्त करने का मार्ग पूछा। उस समय इसने मैत्रेयी से कहा, 'पति, पत्नी, संतान, संपत्ति दे सारे आत्मा के ही अनेकविध रूप है। इस आत्मा का निरीक्षण, अध्ययन एवं मनन (निदिध्यास) करने से ही समस्त वस्तुजातों का ज्ञान प्राप्त होता है' (वृ. उ. २. ४.२-५; मैत्रेयी देखिये)।

आत्मा का स्वरूप बताते हुये याज्ञवल्क्य ने मैत्रेयी से कहा, 'जिस तरह समस्त रसों त्वचा में केंद्रीभूत होते हैं, अथवा सारे विचार मन में समा जाते हैं, उसी प्रकार संसार की सारी चीज़ें आत्मा में केंद्रीभूत होती हैं' (वृ. उ. २.८.११)। इसी कारण, आत्मप्राप्ति ही मानवी प्रयत्नों का सत्र से बड़ा साध्य है। बाकी सारे ध्येय भुलाने के (आर्तम्) हैं'।

ध्येयात्मक अद्वैतवाद—केवल आत्मा के ज्ञान से ही ब्राह्मसृष्टि का ज्ञान हो सकता है, इस सिद्धान्त का विवरण करते समय, याज्ञवल्क्य ने आत्मा एवं मानवी मन का ध्येयात्मक अद्वैत प्रतिपादित किया। इस प्रतिपादन के समय, इसने आत्मा को हुंदुभी बजानेवाला वादक कह कर, मानवी मन को हुंदुभी वाद्य की उपमा दे दी। याज्ञवल्क्य ने कहा, 'हुंदुभी बजानेवाले को हाथ में पकड़ लेने से, हुंदुभी का आवाज सहजवश हाथ में आता है। उसी प्रकार आत्मा की ज्ञान होने से, संसार की सारी वस्तुमात्रों का ज्ञान बिना किसी कष्टों से प्राप्त हो सकता है' (वृ. उ. २.४.६-९)।

अमरत्व की प्राप्ति—अमरत्व की प्राप्ति कैसे हो सकती है, इसका विवरण करते हुये याज्ञवल्क्य ने कहा, 'आत्मा के श्रवण, मनन एवं चिंतन कर आत्मतत्त्व के व्यापकत्व का अनुभव हर एक साधक ने करना चाहिये (आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः)। आत्मतत्त्व के इसी अनुभव

से अमरत्व प्राप्त हो सकता है (एतावद् खलु अमृतत्वम्)। आत्मतत्त्व का यह साक्षात्कार केवल मन से ही हो सकता है (मनसैवानुद्द्रष्टव्यम्)।

जनक-याज्ञवल्क्यसंवाद—बृहदारण्यक उपनिषद् के चौथे अध्याय में आत्मज्ञानसम्बन्धी 'जनक याज्ञवल्क्य-संवाद' प्राप्त है। उस संवाद के प्रारम्भ में याज्ञवल्क्य ने जनक से पूछा, 'अन्तिम सत्य के बारे में किन किन ऋषियों के उपदेश आज तक आने सुना है'। उस पर जनक ने कहा, 'वाणी को परमसत्य कहनेवाले जित्वन् शौलनि का, प्राण को ब्रह्म कहनेवाले उदक शौलत्रयन का, चक्षु को परमसत्य कहनेवाले यकुं वाष्णी का, कर्ण को ब्रह्म कहनेवाले गर्दभीविपीत भारद्वाज का, मन को ब्रह्म कहनेवाले सत्यकाम अवाल का, एवं हृदय को अन्तिम सत्य कहनेवाले विदग्ध शाकल्य का उपदेश आज तक मैंने श्रवण किया है'। उस पर याज्ञवल्क्य ने कहा, 'तुम्हारे द्वारा सुने गये ये उपदेश अंशतः सत्य हैं, पूर्णरूपेण नहीं' (वृ. उ. ४.१.२-७)।

अपने इस कथन से याज्ञवल्क्य यह कहना चाहता था कि, इन्द्रियों अथवा मन से परमसत्य प्राप्त होना असम्भव है। वह तो केवल आत्मज्ञान से ही प्राप्त हो सकता है। क्यों कि, आत्मा ही केवल सत्य है, मन एवं इन्द्रियाँ केवल साधनमात्र हैं।

मृत्यु का वर्णन—मृत्यु के समय मानवी देहात्मा की स्थिति क्या होती है, उसका अत्यंत सुंदर वर्णन याज्ञवल्क्य ने जनक राजा को बताया था। इसने कहा, 'मृत्यु के समय मनुष्य की प्रज्ञात्मा उसके देहात्मा पर आरूढ़ होती है। इसी कारण, बोझ से लदे हुए गाड़ी जैसा आर्त चित्तार मृत्यु की समय मानवी देहात्मा से निकलती है (वृ. उ. ४.३.३५)। मृत्यु के पूर्व आँखों में से प्राणरूपी पुरुष सर्व प्रथम निकल जाता है। पश्चात् हृदय का नोक प्रकाशित होता है, जिसकी सहाय्यता से नेत्र, मस्तक अथवा अन्य कौनसी भी इन्द्रियों के द्वारा आत्मा निकल जाती है। उस समय, मनुष्य का कर्म ही केवल उसके साथ रहता है, जो आत्मा के अगले जन्म का मार्गदर्शक बनता है (वृ. उ. ४.४.१-५)।

तत्त्वज्ञान—(१) सुलैकपुरुषसंवाद—'नैतिक कल्याण मानवीय जीवन का अन्तिम साध्य बरह है, फिर भी ऐहिक सुख का महत्त्व नैतिक कल्याण से कम नहीं है, ऐसा याज्ञवल्क्य का मत था। राजा जनक के सभ में जब यह गया तब उसने इसे उद्देशित कर कहा, 'आप धनलक्ष्मी तथा गायाँ को प्राप्त करने के लिए आये हैं, अथवा विद्वानों के बीच चल रही चर्चा में भाग ले कर विजय प्राप्त

करने आये हैं ?' उस समय विश्वास के साथ इसने जवाब दिया, 'दोनों के लिए (उभयमेव सम्राट्); जिनकी सीमाओं में स्वर्ण मुद्रिकाओं की थैलियाँ लगी हुई हैं, ऐसी गाँवों की प्राप्ति में उतनी ही आवश्यक समझता हूँ, जितना कि आवश्यक, विद्वानों के बीच अपनी विजय'।

अपने द्वारा कही उक्त बात का स्पष्टीकरण करते हुए इसने स्वयं कहा है, 'मेरा पिता का कथन था कि, बिना धन प्राप्त किये किसी को भी आत्मज्ञान न देना चाहिए'। 'किन्तु आत्मज्ञान का उपदेश किये बगैर किसी से दक्षिणा न लेनी चाहिये,' ऐसा भी इसका अभिमत था (अननुच्य हरेत-दक्षिणां न यक्षीयात्)।

जनक राजा के पुरोहित अश्वल के द्वारा पूछने पर भी याज्ञवल्क्य ने स्पष्ट शब्दों में कहा था, 'मैं ब्रह्मज्ञ जरूर हूँ, किन्तु मैं धन का कांक्षा भी मन में रखता हूँ (गोकामा एव वयं रमः)।'

इस प्रकार आध्यात्मिक एवं आधिभौतिक इन दोनों को मान्यता देनेवाला याज्ञवल्क्य पाश्चात्य 'साफिस्ट' लोगों जैसा प्रतीत होता है। 'साफिस्ट' वह लोग हैं, जो तत्त्वज्ञान के उपलक्ष्य में धनग्रहण करना कोई खराबी नहीं मानते हैं।

(२) आत्मज्ञान—'जीवन में आत्मज्ञान प्राप्त करना सम्भव है, और वही अन्तिम सत्य है', ऐसा इसका अभिमत था। जनक ने इससे प्रश्न किया था, 'मनुष्य की ज्योति कौन है, जो उसे प्रकाश देती है?' इस प्रश्न का यथाविध उत्तर देते हुए इसने सूर्य, चन्द्र तथा अग्नि को मनुष्य की ज्योति बता कर कहा, 'आत्मज्ञान मनुष्य की अन्तिम ज्योति है, जो सूर्य, चन्द्र तथा अग्नि की अनुपस्थिति में भी उसे प्रकाश देती है' (वृ. उ. ४.२.२-६)।

जब कि आत्मा ही केवल ज्ञेय एवं ज्ञाता रहता है, उस अवस्था का वर्णन याज्ञवल्क्य ने उक्त कथन में व्यक्त किया है। अरस्तू (अॅरिस्टॉटल) उसे 'थिओरिया' अथवा 'उन्मन' अवस्था कहता है।

(३) शुद्धाद्वैतवाद अथवा कर्ममीमांसा—याज्ञवल्क्य शुद्धाद्वैतवाद का पुरस्कर्ता था, जिसके अनुसार आत्मा भ्रम, अमर एवं कालातीत अवस्था में सर्वत्र उपस्थित रहता है। इस कारण, मृत्यु के साथ होनेवाले आत्मा के स्थानांतर अथवा जन्मान्तर में शोक अथवा दुःख करने की आवश्यकता नहीं है। जिस तरह घाँस का नया तिनका प्राप्त किये बगैर भँवरा अपना पहला तिनका नहीं छोड़ता है, उसी प्रकार अपने वास्तव्य की नयी

व्यवस्था हुये बगैर आत्मा अपनी पुरानी बदन को नहीं छोड़ता है। इस प्रकार, मृत्यु ही स्वयं एक माया होने के कारण, उसमें दुःख नहीं मानना चाहिये। जिस प्रकार सुवर्णकार पुराने अलंकारों से नया, एवं पहले से भी अधिक सुंदर अलंकार बना सकता है, उसी प्रकार आत्मा को पहले से भी अधिक सुंदर जन्म प्राप्त होना संभवनीय है (वृ. उ. ४.४.४)।

याज्ञवल्क्य के यह विचार सुन कर इसकी पत्नी मैत्रेयी भीतिग्रस्त हुयी। इसी कारण अपने मर्तों का अधिक विचार न करते हुए याज्ञवल्क्य ने कहा, 'जो मैंने कहा है वह संसार के अज्ञ लोगों के लिए काफी है' (वृ. उ. २.४.१३)।

चरित्रचित्रण—याज्ञवल्क्य अपने युग का एक अद्वितीय विद्वान्, वादपटु, एवं आत्मज्ञानी था। यह बड़ा उग्र स्वभाव का था। जनक की विद्वत्सभा में विवाद करते समय, इसने शाकल्य से आक्रोशपूर्ण शब्दों में कहा था, 'आगे तुम इस प्रकार के प्रश्न करोगे, तो तुम्हारा सर काट कर पृथ्वी पर लोटने लगेगा' (मूर्धां ते निप्रतिष्यति)। यह क्रोधी था, उसी प्रकार परमदयालु तथा कोमल प्रवृत्तियों का भी था, जो इसके द्वारा अपनी पत्नी मैत्रेयी के संवाद से प्रकट है।

यह जरूर है कि, वादविवाद के बीच खीजाति हो, अथवा कोई भी हो, किसी के प्रति यह कुपाभावना नहीं दिखाता था। गार्गी से चल रही चर्चा के बीच, इसने उसे 'तुम बहुत प्रश्न कर रही हो' (अतिप्रश्ने पृच्छसि) कह कर, उद्दामता न दिखाने के लिए डँटा था।

यह बड़ा होशियार भी था। जब जनक की सभा में जारकारव ने ज्ञान एवं कर्म के संबंध में कुछ ऐसे प्रश्न किये थे, जो केवल अविकारी व्यक्तियों ही जान सकते हैं। उसके जवाब इसने उसे सभा से अलग ले जा कर, एकान्त में बताये थे।

यह अपने समय का सब से बड़ा वादपटु था। अश्वल ने इससे 'आचार्य-सम्प्रदाय' के सम्बन्ध में बहुत कठिन प्रश्न पूछे, जिनके तत्काल उचित उत्तर दे कर इसने उसे निरुत्तर किया।

आत्मगत भाषण—अधिकारी विद्वान् के द्वारा तत्त्वज्ञान-सम्बन्धी प्रश्न पूछे जाने पर ही, उसका जवाब देने की इसकी पद्धति थी। किन्तु कभी कभी ऐसा भी होता था कि, भावतिरेक में यह प्रश्न की परिधि से अलग बातों विषयों की विवेचना कर, उनका भी कथन करने लगता

था। उदाहरणार्थ, जनक की सभा में उद्दालक के प्रश्न का उत्तर देते समय यह एकाएक ध्यानमग्न हुआ, तथा ईश्वर की व्यापकता बताते हुए इसने कहा, 'ईश्वर तो जगत्त्रयापी है'। याज्ञवल्क्य के उक्त विचार 'अन्तर्यामी ब्राह्मण' नामक ग्रन्थ में सम्मिलित है (वृ. उ. ३.७.१)।

जनक राजा के साथ हुए संवाद में, आत्मा के 'अव्यय रूप' के सम्बन्ध में अपने विचार भी इसने विना पूछे ही प्रकट किये थे। इस प्रकार, अब यह भावमग्न हो कर आत्मज्ञानसम्बन्धी विचारों को प्रकट करता था, तो प्रकट ही करता जाता था, जैसे कि आकाश के बादल बरसते नहीं, तथा जत्र ऋतु पा कर बरसते हैं, तो बरसते ही जाते हैं।

परिवार—याज्ञवल्क्य को मैत्रेयी एवं कात्यायनी नामक दो पत्नियाँ थीं। उनमें से मैत्रेयी आध्यात्मिक ज्ञान की पिपासु थीं। इस कारण, इसने उसे आत्मज्ञान कराया, एवं संन्यास लेने के पश्चात् भी यह उसे अपने साथ अरुण्य में ले गया (मैत्रेयी देखिये)। स्कंद में मैत्रेयी के लिए 'कल्याणी' नामान्तर प्राप्त है (स्कंद. ६.१३०-१३१)। वैदिक ग्रंथों में से 'जाबालोपनिषद्' एवं 'शतपथ ब्राह्मण' में भी उसका उल्लेख प्राप्त है (श. ब्रा. १.४.१०-१४)।

इसकी दूसरी पत्नी कात्यायनी एक सामान्य गृहिणी थीं, जिससे इसे कात्यायन एवं पिप्पलाद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुये थे (स्कंद. ५.३; ४२.१; पिप्पलाद देखिये)।

शिष्यपरंपरा—काण्व एवं माध्यंदिन परंपरा में इसके निम्नलिखित शिष्यों का निर्देश प्राप्त है :—

१. आसुरि—यह याज्ञवल्क्य का प्रमुख शिष्य था, जिससे 'आसुरि' नामक शिष्यशाखा का निर्माण हुआ (श. ब्रा. १.४.९.४.३३)। आसुरि के शिष्य का नाम 'पंचशिल' अथवा 'कापिलेय' अथवा 'कपिल' था (मत्स्य. ३. २९)। पंचशिल के शिष्यों में विदेह के राजा 'जनक जानदेव' एवं 'जनक धर्मध्वज' प्रमुख थे। पंचशिल के शिष्यों में आसुरायण प्रमुख था, जो यास्क का समकालीन था।

२. मधुक षैथ—इसके शिष्यों में चूड भागविति प्रमुख था। चूड भागविति से लेकर जानकि आयस्थूण, सत्यकाम जाशाल ऐसी इसकी शिष्यपरंपरा थी (वृ. उ. ६.३.७-११)।

३. सामश्रवस्—इसे जनक के विद्वत्सभा में अपनी ओर से संपत्ति उठाने के लिए याज्ञवल्क्य ने कहा था। इनके सिवा महाभारत में इसके सौ शिष्य बताये गये हैं (म. शां. ३०६.१७; व्यास देखिये)।

शाखाप्रवर्तक शिष्य—वायु में याज्ञवल्क्य के निम्न लिखित पंद्रह शाखाप्रवर्तक शिष्य बताये गये हैं—१. कण्व; २. वैषेय; ३. शालिन्; ४. मध्यंदिन; ५. शापेयिन; ६. विद्विथ; ७. उद्दल; ८. ताम्रायण; ९. वात्स्य; १०. गालव; ११. शैपिरिन्; १२. आटविन्; १३. पर्णिन्; १४. वीरगिन् १५. परायण (वायु. ६१.२४-२५)। इन शिष्यों को 'वाजिन्' सामुहिक नाम प्राप्त था। ब्रह्मांड में ये नाम कई पाठभेदों के साथ प्राप्त हैं (ब्रह्मांड. २.३५.८-३०)। अन्य पुराणों में भी इन शाखा-प्रवर्तक आचार्यों के नाम अनेकानेक रूप से दिये गये हैं।

इन शाखाप्रवर्तक आचार्यों में से 'कण्व' एवं 'माध्यंदिन' शाखाओं के ग्रंथ आज प्राप्त हैं। शक्ति शाखाओं के ग्रंथ नष्ट हो चुके हैं।

ग्रंथ—याज्ञवल्क्य के नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त हैं :—१. शुक्लयजुर्वेद संहिता (श. ब्रा. १.४.९.४.३३); २. ईशावास्योपनिषद्; ३. सांग शतपथ ब्राह्मण (म. शां. ३०६.१-२५); ४. बृहदारण्यक उपनिषद् (याज्ञ. ३. ११०); ५. याज्ञवल्क्यशिक्षा, जिसमें २३२ श्लोक हैं; ६. मनस्वारशिक्षा, जिसमें हस्तस्वर की अपेक्षा भिन्न प्रकार के विचारों को प्रतिपादित किया गया है; ७. बृहद्-याज्ञवल्क्य; ८. बृहयोगीयाज्ञवल्क्य; ९. योगशास्त्र। इनके सिवा इसके नाम पर 'याज्ञवल्क्यस्मृति' नामक एक स्मृतिग्रंथ भी प्राप्त है।

शुक्लयजुर्वेद—शुक्लयजुर्वेद संहिता के कुल चालीस अध्याय हैं, एवं उनमें निम्नलिखित विषयों का विवरण प्राप्त है :—अ. १-२, दशपूर्णमासमेव एवं पिंडविनृयज्ञ; अ. ३, नित्याग्निकर्म, अग्निप्रतिष्ठा, हवन एवं चातुर्मास्य-यज्ञ; अ. ४-८, सोमयज्ञ, पशुयज्ञ एवं राजसूययज्ञ के मंत्र अ. ९-१०, सोमयज्ञ के मंत्र; अ. ११-१८, अग्निचयन-विधि एवं मंत्र; अ. १९-२१, सौत्रामणियज्ञ के मंत्र; अ. २२-२५, अश्वमेधयज्ञ के मंत्र; अ. २६-३०, पुरुषमेध (यज्ञरहस्य); अ. ३१, पुरुषसूक्त; अ. ३२, तत्त्वज्ञान (उपनिषद्); अ. ३३-३४, शिवसंकल्पोपनिषद्; अ. ३५, अंत्येष्टिमंत्र, अ. ३६-३९, प्रवच्य मंत्र; अ. ४०, ईशावास्य उपनिषद्। इनमें से अध्याय २६-२५ को 'खिल' (परिशिष्ट) कहते हैं।

यह संहिता गद्य एवं पद्य भागों से बनी है। उनमें से पद्य भाग ऋग्वेद से लिया गया है, एवं गद्य भाग नया है। उस गद्य भाग को ही 'यजुः' कहते हैं, जिस कारण इस वेद को यजुर्वेद नाम प्राप्त हुआ है।

इस वेद के श्रौतसूत्र की रचना कात्यायन ने की है। उसमें 'श्रौत' एवं 'गृह्य' ये दोनों सूत्र समाविष्ट किये गये हैं, जिसमें से 'गृह्य' सूत्र 'पारस्कर गृह्यसूत्र' नाम से सुविख्यात है। इन सूत्रों का प्रतिशाख्य भी कात्यायन के द्वारा ही विरचित है।

शुक्लयजुर्वेद का शिक्षाग्रंथ 'याज्ञवल्क्यशिक्षा' है, जो इस वेद के उच्चारण की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। स्वर एवं उच्चारण की दृष्टि से यह वेद अन्य वेदों से काफी भ्रम है। प्रायः इस वेद में 'य' एवं 'व' का उच्चारण क्रमशः 'ज' एवं 'ख' जैसे किया जाता है। अनुस्वारों का उच्चारण भी सानुनासिक किया जाता है। इस वेदों के स्वर भी उच्चारण से व्यक्त करने के बदले, हाथों के द्वारा अधिकतर व्यक्त किये जाते हैं।

याज्ञवल्क्यस्मृति—इस ग्रंथ में एक हजार श्लोक हैं, जो तीन ऋषियों में विभाजित किये गये हैं। यद्यपि इस ग्रंथ के आरंभ में इसकी रचना का श्रेय 'शतपथ ब्राह्मण' 'योगशास्त्र' आदि ग्रंथों के रचयिता योगीराज याज्ञवल्क्य को दिया गया है, फिर भी 'मिताक्षरा' के अनुसार, इस ग्रंथ का रचयिता याज्ञवल्क्य न हो कर, इसका कोई शिष्य था। फिर भी इस ग्रंथ की विचारधारा शुक्लयजुर्वेद एवं तत्संबंधित अन्य ग्रंथों से काफी साम्य रखती है।

इस ग्रंथ में प्राप्त व्यवहारविषयक विवरण अग्निपुराण में प्राप्त 'व्यवहारकाण्ड' से मिलता जुलता है। इस स्मृति में प्राप्त वेदान्तविषयक विवरण शंकराचार्य के 'ब्रह्मसूत्र' से काफी मिलता जुलता है (याज्ञ. ३.६४; ६७; ६९; १०९; ११९; १२५; १४०; २०५)।

हर एक सप्ताह में अंतर्भूत किये गये 'इतवार', 'सोमवार' आदि वारों का संघेध आकाश में स्थित 'रवि,' 'सोम' आदि ग्रहों से है, ऐसा स्पष्ट निर्देश याज्ञवल्क्यस्मृति में, प्राप्त है। इस स्मृति में नाणक आदि सिक्कों का, एवं ताम्रपत्र, शिलालेख आदि उत्कीर्ण शिलालेखों का भी निर्देश प्राप्त है (याज्ञ. १.२९६; ३२५)। इन निर्देशों से प्रतीत होता है कि, इस ग्रंथ का रचनाकाल ई. स. पहली शताब्दी के लगभग होगा।

याज्ञसेन—शिखंडिन नामक आचार्य का पैतृक नाम (सां. ब्रा. ७-४)।

याज्ञसेनी—दुपयपुत्र शिखंडिन का नामान्तर (म. भी. १०८.१९)।

याज्ञेयि—भृगुकुल्येय्य एक गोत्रकार।

यातुधान—एक राक्षस, जो कश्यप एवं सुरसा के पुत्रों में से एक था। इसके कुल में उरान्न राक्षसों को 'यातुधान' वांशिक नाम प्राप्त था।

२. एक राक्षससमूह, जो राक्षस एवं जेतुघना की संतान मानी जाती है। इस समूह में निम्नलिखित राक्षस शामिल थे:— हेति, प्रहेति, उग्र, पौरुषेय, वध, विवृत, स्फूर्ज, वात, आय, व्याघ्र, सूर्य (ब्रह्मांड. ३.७.९०; राक्षस देखिये)।

यातुधानी—एक कृत्वा, जो राजा वृषादग्नि के द्वारा किये गये यज्ञ में से उत्पन्न हुयी थी (म. अनु. ९३. ५३)। वृषादग्नि ने इसे सप्तर्षियों का वध करने के लिए उत्पन्न किया था। 'मनसा' नाम धारण कर यह सप्तर्षियों के पास उनके नाशार्थ गयी। किन्तु वहाँ उपस्थित शुनःस्वरूपधारी इन्द्र ने इसका वध किया (वृषादग्नि देखिये)।

याद्व—एक लोकसमूह, जो संभवतः यदु लोगों का ही नामान्तर होगा। यदु राजा के वंशज होने से इन्हें यह नाम प्राप्त हुआ होगा। ऋग्वेद में इनके संपत्ति का एवं दानशूरता का उल्लेख प्राप्त है (ऋ. ७.१९.८)। उसी ग्रंथ में अन्यत्र आसंग प्लायोगि नामक आचार्य के द्वारा इनके पशुसंपत्ति का निर्देश किया गया है (ऋ. ८.१.३१)।

यदु राजा एवं उसका पुत्र तिरिंदर से इन लोगों का शत्रुत्व था। तिरिंदर ने इन्हें दास बना कर इनका दान किया था (ऋ. ८.६.४८)। सायणाचार्य के अनुसार, इनकी सारी संपत्ति तिरिंदर ने वास काण्व नामक आचार्य को प्रदान की थी।

यान—वसिष्ठ के पुत्रों में से एक।

याम—स्वायंभुव मन्वन्तर का एक देवतासमूह (म. भी. ८.१.१८)। इस समूह में निम्नलिखित बारह देव शामिल थे:— यदु, ययाति, विवध, स्वासत, मति, विभास, ऋतु, प्रयाति, विश्रुत, वृति, वायव्य एवं संयम (ब्रह्मांड. २.१३.९३)।

यामायन—एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित वैदिक सूक्तद्रष्टाओं के लिए प्रयुक्त है:— ऊर्ध्वकृषन (ऋ. १०. १४४); कुमार (ऋ. १०.१३५); देवश्रवस् (ऋ. १०. १७); मथित (ऋ. १०.१९); शंख (ऋ. १०.१५) एवं संकुसुके (ऋ. १०.१८)।

यामिनी—प्राचेतस दक्ष प्रजापति की कन्या, जो कश्यप ऋषि की पत्नियों में से एक थी। इसकी संतान शलभ

मानी जाती है। इसकी माता का नाम असिकनी था (भा. ६.६.२१)।

यामी—दक्ष राजा की कन्या, जो धर्मऋषि की पत्नियों में से एक थी। इसे 'जामि' नामान्तर भी प्राप्त था। इसके पुत्र का नाम स्वर्ग एवं कन्या का नाम नागवीथी था।

यामुनि—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद—'सामुकि'।

याम्य—स्वायम्भुव मन्वंतर का एक देव।

यायावर—एक व्यक्ति, जिसका कोई निश्चित आवास न था (तै. सं. ५.२.१.७; का. सं. १९.१२)। 'यायावर' का शब्दशः अर्थ 'इधर उधर घूमनेवाला' होता है।

२. संन्यासियों का एक समूह, जो मुनिवृत्ति से कटोर व्रत पालन करते हुये इधर उधर घूमते रहते थे। जल्कार नामक सुविख्यात ऋषि इनमें से ही एक था (म. आ. १३.१०-१३)। इस ऋषि के धार्मिकता का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. अनु. १४२)।

महाभारत में अन्यत्र जल्कार ऋषि के पितृगण का नाम 'यायावर' बताया गया है। उन्हें कोई संतान न होने के कारण, वे स्वर्ग से च्युत हो गये थे। अतएव पुनः स्वर्गप्राप्ति होने के लिए, इन्होंने जल्कार ऋषि से, विवाह कर पुत्रप्राप्ति करने की प्रार्थना की थी (म. आ. १३.१४-१६; ४१.१६-१७)।

यास्क—निरुक्त नामक सुविख्यात ग्रंथ का कर्ता, जो 'शब्दाश्वेतत्त्व' का परमज्ञाता माना जाता है। यास्क ऋषि का शिष्य होने से इसे संभवतः 'यास्क' नाम प्राप्त हुआ होगा। इसने प्रजापति कश्यप के द्वारा लिखित निषेदु नामक ग्रंथ पर विस्तृत भाष्य लिखा था, जो 'निरुक्त' नाम से प्रसिद्ध है। इसके द्वारा लिखित यह ग्रंथ वेदार्थ का प्रतिपादन करनेवाला सर्वाधिक प्राचीन ग्रंथ माना जाता है। महाभारत के अनुसार, देवी आगति से त्रिनष्ट हुआ निरुक्त ग्रंथ इसे विष्णुप्रवाद के कारण पुनः प्राप्त हुआ (म. शां. ३३०.८-९)। इसी कारण इसने अनेक यज्ञों में श्रीविष्णु का शिपिविष्ट नाम से गान किया है (म. शां. ३३०.६-७)।

बृहदारण्यक उपनिषद् में यास्क को आसुरायण नामक आचार्य का समकालीन, एवं भारद्वाज ऋषि का गुरु कहा गया है (बृ. उ. २.५.२१; ४.५.२७ माध्यं; श. ब्रा. १४.५.५, २१)। संभवतः निरुक्तकार यास्क एवं उपनिषदों में निर्दिष्ट यास्क दोनों एक ही व्यक्ति होंगे।

उसी ग्रंथ में अन्यत्र इसके शिष्य का नाम जातकथ्य दिया गया है (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)।

निरुक्त के अंत में यास्क को 'पारस्कर' कहा गया है, जिससे प्रतीत होता है कि यह पारस्कर देश में रहने वाला था।

पाणिनि के व्याकरणग्रंथ में यास्क शब्द की व्युत्पत्ति प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, यह पाणिनि के पूर्वकालीन था (पा. सू. २.४.६३)। पिंगल के छंदःसूत्र में एवं शौनक ऋकप्रातिशाख्य में इसका निर्देश प्राप्त है (छं. सू. ३.३०; शौनक देखिये)। इसका काल लगभग ई. पू. ७७० माना जाता है।

निरुक्त—वेदों में प्राप्त मंत्रों का शब्दव्युत्पत्ति, शब्द-रचना आदि के दृष्टि से अध्ययन करनेवाले शास्त्र को 'निरुक्त' कहते हैं। यद्यपि आश्रायण, औदुंबरायण, औपमन्यव, शाकपूणि आदि प्राचीन भाषाशास्त्रज्ञों ने निरुक्तों की रचना की थी, तथापि उनके ग्रंथ आज उपलब्ध नहीं हैं। प्राचीन निरुक्त ग्रंथों में से यास्क का निरुक्त ही आज उपलब्ध है, जिसमें ऋग्वेद के कई मंत्रों के अर्थ का स्पष्टीकरण, एवं देवताओं के स्वरूप का निरूपण किया गया है। इस ग्रंथ में मार्ग्य, औदुंबरायण, एवं शाकपूणि नामक पूर्वाचार्यों का निर्देश प्राप्त है।

निरुक्त तथा व्याकरण ये दोनों शास्त्र शब्दज्ञान एवं शब्दव्युत्पत्ति से ही संबंधित हैं। वेदमंत्रों का अर्थ जानने के लिए पहले उनकी 'निरुक्ति' जानना आवश्यक होता है। इसी कारण, जो कठिन शब्द व्याकरणशास्त्र से नहीं सुलभते थे, उनके अर्थज्ञान के लिए निरुक्त की रचना की गयी है।

यास्क के पहले 'निषेदु' नामक एक वैदिक शब्दकोश था, जिस पर इसने निरुक्त नामक अपने भाष्य की रचना की। वेदों में प्राप्त विशिष्ट शब्द विशिष्ट अर्थ में क्यों रुढ़ हैं, इसकी निरुक्ति इस ग्रंथ में की गयी है। इसी कारण वर्णगम, वर्णविपर्यय, वर्णविकार, वर्णनाश, आदि विषयों का प्रतिपादन निरुक्त में किया गया है। यास्क ने वैदिक शब्दों को धातुज मान कर उनकी निरुक्ति की है, जिस कारण वह एक असाधारण ग्रंथ बन गया है। इस ग्रंथ में वैदिक शब्दों की व्याख्या के साथ व्याकरण, भाषा-विज्ञान, साहित्य आदि विषयों की जानकारी भी प्राप्त है।

निरुक्त में नैषेदुक, नैगम एवं दैवत नामक तीन काण्ड हैं, जो बारह अध्यायों में विभक्त किये गये हैं।

पूर्वाचार्य—यास्क ने अपने 'निरुक्त' में इस विषय के बारह निम्नलिखित पूर्वाचार्यों का निर्देश किया है :—
 औदुम्बरायण, औपमन्यव, वार्ष्पायणि, गार्ग्य, आश्रहा-
 यण, शाकश्रुणि, और्णवाम, तैटीकि, मालव, स्थौल्यश्रीवि,
 क्रौष्टु एवं कात्यक्य ।

भाषाशास्त्रज्ञ—एक प्राचीन भाषाशास्त्रज्ञ के नाते, यास्क भाषाशास्त्रीय विचारप्रणालियों का आद्य आचार्य माना जाता है । इसका मत था, कि जो शब्द भाषा के प्रचलित (लौकिक) शब्दों के समान रहते हैं, वे ही अर्थवान् बनते हैं (अर्थवन्तः शब्दसाम्यात्) (नि. १. १६) ।

अपने ग्रंथ में वैदिक मंत्रों का अत्युद्ध उच्चारण करने-
 वाले व्यक्तियों की यास्क ने कटु आलोचना की है । इसने
 कहा है, स्वर एवं वर्ण से भ्रष्ट हुये मंत्र इंद्रशत्रु की भौंति
 वाग्ब्रज हो कर यजमान को विनष्ट कर देते हैं ।

वैदिक मंत्रों का प्रथम दर्शन करनेवाले प्रतिभावान् व्यक्ति
 को इसने मंत्रद्रष्टा अथवा ऋषि कहा है (ऋषिदर्शनात्,
 ऋषयः मंत्रद्रष्टारः) (नि. २. ११) ।

युक्त—रैवत मनु के पुत्रों में से एक ।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर के अजित देवों में से एक ।

३. भौत्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक ।

युक्ताश्व आंगिरस—एक सामद्रष्टा ऋषि (पं. ब्रा.
 ११.८.८) । अपनी पूर्वयुध्य में यह वेदवेत्ता ऋषि था ।
 किन्तु एक बार इसने दो नक्षत्रात शिशुओं का हरण कर
 उनका वध किया । इस पाप के कारण, इसका वेदों का
 सारा ज्ञान नष्ट हुआ ।

वेदों के पुनःप्राप्ति के लिए इसने कठोर तपस्या की,
 जिस कारण इसके प्रतिभा जागृत हो कर इसने एक साम
 की रचना की । आगे चल कर इसे पुनः वेदज्ञान प्राप्त
 हुआ ।

युगदत्त—(सो. पूर.) एक राजा, जो मत्स्य के
 अनुसार ब्रह्मदत्त का, एवं वायु के अनुसार योग राजा का
 पुत्र था (मत्स्य. ४९.५८; वायु. ९९.१८०) ।

युगंधर—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो
 भागवत के अनुसार कुणि राजा का, मत्स्य के अनुसार द्युमि
 का, एवं वायु के अनुसार भूति राजा का पुत्र था ।

२. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो सात्यकि
 राजा का पुत्र था । भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में
 शामिल था । द्रोण से युद्ध करते समय, द्रोण के द्वारा
 इसका वध हुआ (म. द्रो. १५.३१; सात्व. देखिये) ।

युगप—एक देवगंधर्व, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में
 उपस्थित था (म. भा. ११४.४५) ।

युगादिदेव—एक राजा, जिसका गया नदी में स्नान
 करने के कारण उदार हुआ (स्कंद. ५.१.५७) ।

युद्धतृष्ट—(सो. कुकुर.) एक राजा, जो वायु के
 अनुसार उग्रसेन राजा का पुत्र था । वायु तथा विष्णु में
 इसे 'युद्धमुष्टि', एवं भागवत में इसे 'मुष्टि' कहा
 गया है ।

युद्धमुष्टि—युद्धतृष्ट नामक यादव राजा का नामान्तर ।

युद्धोन्मत्त—रावण के पक्ष का एक राक्षस (वा. रा.
 सुं. ६) ।

युधांश्रौष्टि औग्रसैन्य—एक राजा, जिसे पर्वत एवं
 नारद ऋषि ने ऐन्द्र 'महाभिषेक' किया था (ऐ. ब्रा.
 ८. २१.७) । पौराणिक वाक्य में निर्दिष्ट 'युद्धमुष्टि'
 अथवा 'युद्धतृष्ट' राजा यही है (युद्धतृष्ट देखिये) ।
 उग्रसेन राजा का पुत्र होने से इसे 'औग्रसैन्य' पैतृक
 नाम प्राप्त हुआ होगा ।

युधाजित—केकय देश के अश्वपति राजा का पुत्र,
 जो दशरथ की पत्नी कैकेयी का भाई था । एक समय
 अपने भतिजे भरत एवं शत्रुघ्न को केकय देश को ले गया
 था, जो अवसर देख कर दशरथ ने राम को यौवराज्या-
 भिषेक किया (वा. रा. वा. ७७; दशरथ देखिये) ।

२. अवन्ति देश का एक राजा, जो इक्ष्वाकुवंशीय
 सुदर्शन राजा के लीलवती नामक पत्नी का पिता था ।
 अपने जामात सुदर्शन से इसका शत्रुत्व था, जिस कारण
 इसने उसे राजगद्दी से निकाल कर उसके भाई शत्रुजित्
 को अयोध्या का राज्य प्रदान किया था (सुदर्शन ९.
 देखिये) ।

३. (सो. क्रौष्टु.) एक यादव राजा, जो क्रौष्टु एवं
 माद्री का पुत्र था (ब्रह्म. १४; ह. वं. १.३८.११) ।
 अन्य पुराणों में इसे वृष्णि का पुत्र कहा गया है (पद्म.
 सु. १३; वायु. ९६; मत्स्य. ४५; विष्णु. ४.१३; भा.
 ९. २४) । इसे शिति एवं अनमित्र नामक दो पुत्र थे ।
 इसीके वंश में उपन्न हुये श्वफल्क एवं चित्ररथ नामक
 राजाओं ने स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की थी (भा. ९.
 २४; यदु. ३. देखिये) ।

४. भृगुकुलोत्पन्न एक मंत्रकार ।

युधाजित—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो
 अनमित्र एवं पृथ्वी का पुत्र था (मत्स्य. ४५.२५; पद्म
 सु. १३) ।

युधामन्यु—पंचाल देश का एक राजकुमार, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था। यह महारथि, महाधनुर्धर, तथा गदा एवं धनुष्य के युद्ध में अत्यंत प्रवीण था (म. उ. १६७.५; १९७.३)। भारतीय युद्ध में यह अर्जुन का चक्ररक्षक था (म. भी. १६.१९)। इसके रथ के अश्व 'सारंग' वर्णके थे (म. द्रो. २२. १६०*)। इसका निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध हुआ था :- कृतवर्मन एवं कृप (म. द्रो. ६७.२९); द्रोण एवं दुर्योधन (म. द्रो. १०५.८१९*); वर्ण का भाई चित्रसेन (म. क. ८३.३९)।

द्रोणपुत्र अश्वत्थामा ने शिविर में निद्रिस्त पांडव योद्धाओं का संहार किया, जिस समय उसके द्वारा यह भी मारा गया (म. सौ. ८.३४-३५)।

युधिष्ठिर—(सो. कुक.) पाण्डुराजा की पत्नी कुन्ती का ज्येष्ठ पुत्र (भा. ९.२२.२७; म. भा. ९०.६९)।

तत्त्वदर्शी राजा:—एक धीरोदात्त, ज्ञानी, धर्मनिष्ठ एवं तात्विक प्रवृत्तियों का महात्मा मान कर, युधिष्ठिर का चरित्रचित्रण श्रीव्यास के द्वारा महाभारत में किया गया है। एक महाधनुर्धर एवं पराक्रमी व्यक्ति के नाते से अर्जुन महाभारत का नायक प्रतीत होता है। किन्तु अर्जुन की एवं समस्त पाण्डवों की सर्वोच्च प्रेरकशक्ति एवं अधिष्ठाता पुरुष, वास्तव में युधिष्ठिर ही है।

अपने समय का सर्वश्रेष्ठ क्षत्रिय होते हुये भी, सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मण के सारे गुण इसमें सम्मिलित थे। इस तरह इसका व्यक्तिमत्त्व तत्कालीन क्षत्रिय नृपों से नहीं, बल्कि विदेह देश के तत्त्वचिंतक एवं तत्त्वज्ञ राजाओं से अधिक मिलता जुलता था। 'विदेह' जनक से ले कर गौतम बुद्ध तक के जो तत्त्वदर्शी राजा प्राचीन भारत में उत्पन्न हुये, उसी परंपरा का युधिष्ठिर भी एक तत्त्वदर्शी राजा था। महाभारत में प्राप्त युधिष्ठिर के अनेक नीति-वचन एवं विचार गौतमबुद्ध के वचनों से मिलते जुलते हैं।

चिंतनशील व्यक्तिमत्त्व—युधिष्ठिर पाण्डवों का ज्येष्ठ भ्राता था, जिस कारण यह आजन्म उनका नेता रहा। फिर भी इसका व्यक्तिमत्त्व क्रियाशील क्षत्रिय के बरले, एक तत्त्वदर्शी एवं पूर्णतावादी तत्त्वज्ञ होने के कारण, स्वयं पराक्रम न करते हुये भी इसे अपने भाईयों को कार्यप्रवण करने का मार्ग अधिक पसंद था। इसी कारण अपने पराक्रमी भाईयों को कार्यप्रवण करने का, एवं उनके कर्तृत्व को पूर्णत्व प्राप्त कराने का कार्य यह करता रहा। स्वभाव से

यह पूर्णतावादी था, इसलिए इसे जीवन की त्रुटियाँ तथा अपूर्णता का ज्ञान एवं विवेक अधिक था। इसकी चिंतन-शीलता एवं अन्य पाण्डवों की क्रियाशीलता का जो आंतरिक विरोध इसकी आयु में चलता रहा, वहीं पांडवों का संघर्ष एवं परस्परसौहार्द का अधिष्ठान था।

स्वभाव से अत्यंत चिंतनशील एवं अज्ञातशत्रु हो कर भी, इसे सारी आयुःकाल में अपने कौरव भाईयों के साथ झगड़ना पड़ा, एवं उत्तरकालीन आयु में उनके साथ महायुद्ध भी करना पड़ा। फिर भी धर्म, नीति, सत्य, क्षमा, आत्मोपम्य आदि जिन धारणाओं को इसने जीवन का मूलाधार मानने का व्रत स्वीकृत किया था, उससे यह आजन्म अटल रहा। धर्म का आद्य मूलतत्त्व उच्चतम नीतिमत्ता है, ऐसी इसकी धारणा थी। उसी नीतिमत्ता का पालन वैयक्तिक, कौटुंबिक एवं राजनैतिक जीवन में होना चाहिये, इस ध्येयपूर्ति के लिए यह आजन्म झगड़ता रहा।

धर्म का अधिष्ठान अध्यात्म में नहीं, बल्कि दया, क्षमा, शांति जैसे आचरण में है, ऐसी इसकी भावना थी। इसी कारण, धर्माचरण मोक्षप्राप्ति के लिए नहीं, बल्कि अपने बांधवों के सुखसमाधान के लिए करना चाहिये, ऐसी इसकी विचारधारा थी।

अपने इन अभिमतों के सिध्यधे, इसे आजन्म कष्ट सहने पड़े, शत्रुमित्रों की एवं पाण्डव बांधवों की नानाविध व्यंजना सुननी पड़ी। फिर भी यह अपने तत्त्वों से अटल रहा। अपनी इसी विचारों के कारण, यह आजन्म एकाकी रहा, एवं एकाकी अवस्था में ही इसकी मृत्यु हुयी।

जन्म—तूल राशि में जब सूर्य, तथा ज्येष्ठा नक्षत्र में जब चन्द्र था, तब दिन के आठवें अभिजित मुहूर्त पर आश्विन सुदी पंचमी के दिन दूसरे प्रहर में इसका जन्म हुआ (म. आ. ११४.४; नीलकंठ टीका—१२३.६)। युधिष्ठिर आदि सभी पाण्डव इन्द्रादि थे (मार्क ५.२०—२६)। इसके जन्मकाल में आकाशवाणी हुयी थी—'पाण्डु का यह प्रथम पुत्र युधिष्ठिर नाम से विख्यात होगा, इसकी तीनों लोकों में प्रसिद्धी होगी। यह यशस्वी, तेजस्वी तथा सदाचारी होगा। यह श्रेष्ठ पुरुष धर्मात्माओं में अग्रगण्य, पराक्रमी एवं सत्यावादी राजा होगा' (म. आ. ११४. ५-७)।

स्वरूपवर्णन—यह शरीर से कृश तथा स्वर्ण के समान गौरवर्ण का था। इसकी नाक बड़ी तथा नेत्र आरक्त एवं विशाल थे। यह लम्बे कद का था, एवं इसका वक्षःस्थल

विहाल था। इसके स्नायु प्रमाणबद्ध थे (म. आश्र. ३२.६)।

धन एवं आयुष्य—इसके धनुष्य का नाम ' माहेन्द्र ' एवं शंख का नाम ' अनंतविजय ' था। इसके रथ के अश्व हस्तिदंत के समान शुभ्र थे, एवं उनकी पूँछ कृष्ण-वर्णीय थी। इसके रथ पर नक्षत्रयुक्त चंद्रवाला स्वर्णध्वज था। उस पर यंत्र के द्वारा बजनेवाले ' मंत्र ' तथा ' उपनंद ' नामक दो मुद्रंग थे (म. द्रो. २२.१६२. परि. १. क्र. ५. पंक्ति ४-७)।

शिक्षा—इसके संस्कारों के विषय में मतभेद है। किसी प्रति में लिखा है कि सभी संस्कार शतशृंग पर हुए, और किसी में हस्तिनापुर के वारे में उल्लेख मिलता है। कहते हैं कि, शतशृंगनिवासी ऋषियों द्वारा इसका नामसंस्कार हुआ (म. आ. ११५.१९-२०), तथा वसुदेव के पुरोहित काश्यप के द्वारा इसके उपनयनादि संस्कार हुए (म. आ. परि १-६७)।

शर्यातिपुत्र शुक से इसने धनुर्वेद सीखा, तथा तोमर चलाने की कला में यह बड़ा पारंगत था (म. आ. परि. १.६७.२८-३४)। प्रथम कृप ने, तथा बाद में द्रोणाचार्य ने इसे शस्त्रास्त्र विद्या सिखायी थी (म. आ. १२०.२१:१२२)। कौरव पाण्डवों की द्रोण द्वारा ली गयी परीक्षा में इसने अपना कौशल दिखा कर ऋष को आनंदित किया था (म. आ. १२४-१२५)। गुरुदक्षिणा देने के लिए इसने भीमासुन की सहाय्यता ली थी (म. आ. परि. ७८. पंक्ति. ४२)।

पाण्डवों के पिता पाण्डु का देहावसान उनके बाल्यकाल में ही हुआ था। कौरव बांधवों की दुष्टता के कारण, इसे अपने अन्य भाइयों के भौति नानाविध कष्ट सहने पड़े। किन्तु इसी कष्टों के कारण इसकी चिंतनशीलता एवं नीति-परायणता बढ़ती ही रही। कौरवों की जिस दुष्टता के कारण, अर्जुन ने ईर्ष्यायुक्त बन कर नवनवीन अस्त्रसंपादन किये, एवं भीम में अत्यधिक कटुता उत्पन्न कर वह कौरवों के द्वेष में ही अपनी आयु की सार्थक्यता मानने लगा, उन्ही के कारण युधिष्ठिर अधिकाधिक नीतिप्रवण एवं चिंतनशील बनता गया। भारतीययुद्ध जैसे संहारक ऋण्ड के समय, भीष्मद्रोणादि नीतिपंडितों की सूझतासूझत-विषयक धारणाएँ जड़मूल से नष्ट हो गयीं, उस प्रलय-काल में भी युधिष्ठिर की नीतिप्रवणता वैसी ही अबाधित एवं निष्कलंक रही।

यौवराज्याभिषेक—यह क्षात्रविद्यासंपन्न होने पर, धृतराष्ट्र ने भीष्म की आज्ञा से इसे यौवराज्याभिषेक किया, एवं अर्जुन इसका सेनापति बनाया गया (म. आ. परि. १. क्र. ७९. पंक्ति. १९१-१९३)। इसने अपने शील, सदाचार एवं प्रजापालन की प्रवृत्तियों के द्वारा अपने पिता पाण्डु राजा की कीर्ति को भी टक दिया। इसकी उदारता एवं न्यायी स्वभाव के कारण, प्रजा इसे ही हस्तिनापुर के राज्य को पाने के योग्य व्रताने लगी।

पाण्डवों की बढ़ती हुयी शक्ति एवं ऐश्वर्य को देख कर दुर्योधन मन ही मन इसके विरुद्ध जलने लगा, एवं पाण्डवों को चिन्तित करने के पट्टयंत्र रचाने लगा, जिनमें धृतराष्ट्र की भी संमति थी (म. आ. परि. १. क्र. ८२. पंक्ति. १३१-१३२)।

लाक्षागृहदाह—धृतराष्ट्र एवं पाण्डवों के बढ़ते हुए शत्रुत्व को देख कर, इन्हे कौरवों से अलग वारणावत नामक नगरी में स्थित राजगृह में रहने की आज्ञा धृतराष्ट्र ने दी। इसी राजगृह को आग लगा कर इन्हे मारने का पट्टयंत्रदुर्योधन ने रचा। किन्तु विदुर की चेतावनी के कारण, पाण्डव इस लाक्षागृह—दाह से बच गये। विदुर के द्वारा भेजे गये नौका से ये गंगानदी के पार हुये। पश्चात् सभी पाण्डवों के साथ इसका भी द्रौपदी के साथ विवाह हुआ।

अर्धे राज्यप्राप्ति—द्रौपदी-विवाह के पश्चात्, धृतराष्ट्र ने हस्तिनापुर के अपने राज्य के दो भाग किये, एवं उसमें से एक भाग इसे प्रदान किया। अपने राज्य में स्थित खाण्डवप्रस्थ नामक स्थान में इन्द्रप्रस्थ नामक नयी राजधानी बना कर, यह राज्य करने लगा (म. आ. १९९)।

राजसूययज्ञ—इसकी राजधानी इन्द्रप्रस्थ में मयासुर ने मयसभा का निर्माण किया, जो स्वर्ग में स्थित इन्द्रसभा, वरुणसभा, ब्रह्मसभा के समान वैभवसंपन्न थी। एक बार युधिष्ठिर से मिलने आये हुये नारद ने मय-सभा को देख कर अत्यधिक प्रसन्नता व्यक्त की, एवं कहा, ' हरिश्चंद्र राजा ने राजसूय यज्ञ करने के कारण, जो स्थान इन्द्रसभा में प्राप्त किया है, वही स्थान तुम्हारे पिता पाण्डु प्राप्त करना चाहते हैं। यदि तुम राजसूय यज्ञ करोगे तो तुम्हारे पिता कि यह कामना पूर्ण होगी ' (म. स. ५.१२)।

नारद की इस सूचना का स्वीकार कर, युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण की सहाय्यता से राजसूययज्ञ का आयोजन किया।

इस यज्ञ के सिन्धुयर्थ इसने अर्जुन, भीम, सहदेव एवं नकुल इन भाईयों को क्रमशः उत्तर, पूर्व, दक्षिण एवं पश्चिम दिशाओं में भेज दिया। इन दिग्बिजयों से अपार संपत्ति प्राप्त कर, पाण्डवों ने अपने राजसूय-यज्ञ का प्रारंभ किया (भा. १०.७२.७४)।

श्रीकृष्ण की आज्ञा से, इसने स्वयं राजसूय यज्ञ की दीक्षा ली थी। इसके यज्ञ के प्रमुख पुरोहितगण निम्न-लिखित थे:—ब्रह्मा-द्वैपायन व्यास; सामग-सुसामन्; अध्वर्यु-ब्रह्मिष्ठ याज्ञवल्क्य; होता-वसुपुत्र पैल एवं धौम्य (म. स. ३०.३४-३५)।

इस यज्ञ में कौरव, यादव एवं भारतवर्ष के अन्य सभी राजा उपस्थित थे। इस यज्ञ की व्यवस्था युधिष्ठिर के द्वारा निम्नलिखित व्यक्तियों पर सौंपी गयी थी:—भोजन-शाला-दुःशासन; ब्राह्मणों का स्वागत-अश्वत्थामा, दक्षिणा-प्रदान-कृपाचार्य; आयव्ययनिरीक्षण-विदुर; ब्राह्मणों का चरणक्षालन-श्रीकृष्ण; सामान्य प्रशासन-भीष्म एवं द्रोण।

इस यज्ञ में प्रतिदिन दस हजार ब्राह्मणों को स्वर्ण की स्थालियों में भोजन कराया जाता था। एक लाख ब्राह्मणों को इस तरह भोजन दिया जाने पर, 'लक्षभोजन' सूचक शंखध्वनि की जाती थी (म. स. ४५.३०)। इस प्रकार इसका राजसूय यज्ञ सर्वतोपरि सफल रहा।

दुर्वोधनविद्वेष--युधिष्ठिर के द्वारा किये गये इस यज्ञ की सफलता को देख कर दुर्वोधन ईर्ष्या से जल-भूत गया। युधिष्ठिर के द्वारा स्वर्ण की गयी अगणित संपत्ति, एवं लोगों के द्वारा की गयी युधिष्ठिर की प्रशंसा उसे असह्य प्रतीत हुयी (म. स. ३२.२७; भा. १०.७४)। इसी कारण इसे जड़मूल से उखाड़ फेंकने की योजनाएँ वह बनाने लगा। इसे युद्ध में जीतना तो असंभव था। इसी कारण द्यूत के द्वारा इसकी समस्त धन-संपत्ति हरण करने की शकुनि मामा की सूचना उसने मान्य की। पश्चात् इसी सूचना को स्वीकार कर, धृतराष्ट्र ने विदुर के द्वारा युधिष्ठिर को द्यूत खेलने का निमंत्रण दिया।

द्यूत-पराजय--हरितनापुर में संपन्न हुए द्यूतक्रीडा में, दुर्वोधन के स्थान पर शकुनि ने बैठ कर युधिष्ठिर को पूरी तरह से हरा दिया, एवं इसका सबकुल जीत लिया। यह धन, राज्य, भाई तथा द्रौपदी सहित अपने को भी हार गया। द्यूत खेल कर पराजित होने के बाद, इसने बारह-वर्ष का वनवास एवं वर्ष एक का अज्ञातवास स्वीकार लिया, एवं यह भी शर्त मान्य की कि, यदि अज्ञातवास के समय

पाण्डव पहचाने गये, तो दून्हे बारह वर्षों का वनवास और सहना पड़ेगा (म. स. ७१)।

वनवास--कार्तिक शुक्ल पंचमी के दिन यह अपने अन्य भाई एवं द्रौपदी के साथ वनवास के लिए निकल। यह जत्र अरण्य की ओर चला, उस समय हरितनापुर के अनेक नगरवासी इसके साथ जाने के लिए तत्पर हुये। इसने इन सभी लोगों को लौट जाने के लिए कहा, एवं ऋषिजनों में से केवल इसके उपाध्याय धौम्य इसके साथ रहे। वनवास के प्रारंभ में ही इसने स्वर्ण की प्रार्थना कर, अक्षय्य अन्न-प्रदान करनेवाली एक स्थाली प्राप्त की। इस तरह अपनी एवं अपने बांधवों की उपजीविका का प्रश्न हल किया (म. व. १-४)।

युधिष्ठिर के द्यूत खेलने के समय एवं द्रौपदी वस्त्रहरण के समय श्रीकृष्ण हरितनापुर में नहीं था, क्यों कि, उसी समय शाल्व ने द्वारका पर आक्रमण किया था। पाण्डवों के वनवास की वार्ता श्रांत होते ही वह इनसे मिलने वन में आया। उस समय धार्तराष्ट्रों पर आक्रमण कर, उनका राज्य पाण्डवों को वापस दिलाने का आश्वासन कृष्ण ने इसे दिया। किन्तु इसने दृढता से कहा, 'मैंने कौरवों से शब्द दिया है कि, बारह साल वनवास एवं एक साल अज्ञातवास हम भुगत लेंगे। यह मेरी आन है, एवं उसे किसी तरह भी निभाना यह हमारा कर्तव्य है। इसी कारण वनवास की समाप्ति के पश्चात् ही हमें राज्य के पुनःप्राप्ति का विचार करना चाहिए'।

द्रौपदी-युधिष्ठिर संवत्--पाण्डवों के वनवास के प्रारंभ में ही, द्यूत-वन में द्रौपदी ने युधिष्ठिर के पास अत्यधिक विलाप किया। उसने कहा, 'दुपद राजा की कन्या, पाण्डुराजा की स्तुषा एवं-तुम्हारी पटरानी, जो मैं आज तुम्हारे कारण वनवासी बन गयी हूँ। भीम जैसे राजकुमार एवं अर्जुन जैसे योद्धा आज भूल एवं धरा से व्याकुल हो कर इधर उधर घूम रहे हैं। अपने बांधवों की यह हालत देख कर भी तुम चुपचाप क्यों बैठते हो? दुर्वोधन अत्यंत पापी एवं लोभी है, एवं उसका नाश करना ही उचित है'।

इस पर युधिष्ठिर ने कस्यपगीता का निर्देश करते हुए कहा, 'क्षमा पर ही सारा संसार निर्भर है। राज्य के लोभ से अपने मन में स्थित क्षमाभावना का त्याग करना उचित नहीं है। लोभ से बुद्धि मलीन हो जाती है।

'केवल पाण्डवों का ही नहीं, बल्कि सारे भरत वंश का नाश होने का समय आज समीप आया है। फिर भी अपनी मन की शान्ति हमें नहीं छोडनी चाहिये'।

युधिष्ठिर का यह वचन सुन कर द्रौपदी और भी क्रुद्ध हुयी। समस्त सृष्टि के संचालक विधातृ की दोष देते हुये उसने कहा, 'तुम्हारे आत्यंतिक धर्मभाव से मैं तंग आयी हूँ। कहते हैं कि, धर्म का रक्षण करने पर वह मनुष्यजाति का रक्षण करता है। किन्तु धर्माचरण का कुछ भी फायदा तुम्हें नहीं हुआ है। अपनी समस्त आयु में तुमने यज्ञ किये, दान दिये, सत्याचरण किया। एक साया जैसे तुम धर्म का पीछा करते रहे। फिर भी उसके बदले हमें दुःख के सिवा कुछ भी न मिला'।

द्रौपदी के इस कटुवचन को सुन कर युधिष्ठिर ने अत्यंत शान्ति से कहा, फलों की कामना मन में रखकर धर्म का आचरण करना उचित नहीं है। जो नीचे एवं कमीने होते हैं, वे ही धर्म का सौदा करते हैं। अपने दुर्भाग्य के लिए देवताओं को दोष देना श्रद्धाहीनता का चोतक है। धर्म असफल होने पर तप, ज्ञान एवं दान निष्फल हो जायेंगे, एवं समस्त मनुष्य जाति पशु बन जायेंगी। परमात्मा की कर्तृत्वशक्ति अगाध है। उसकी निंदा करने का पापाचरण तुमने न करना चाहिये। युधिष्ठिर ने आगे कहा, 'दुर्योधन की राजसभा में मैंने वनवास की प्रतिज्ञा की है, जो मुझे अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय है। हमें सत्य कभी भी न छोड़ना चाहिये (म. व. २८-३१)।

इसी संभाषण के अन्त में इसने अपने भाईयों से कहा 'कौरवों के साथ द्यूत खेलते समय मैं हारा गया, इस कारण आप मुझे जुआँरी एवं मूरख कह कर दोष देते हैं, यह ठीक नहीं। जब मैं द्यूत के लिए उद्यत हुआ था, उस समय आप चुपचाप क्यों बैठे ?'

इसी समय व्यास ने युधिष्ठिर से कहा, 'बांधवों के लिए यही अच्छा है कि, वे सदैव एकत्र न रहे। ऐसे रहने से प्रेम बढ़ता नहीं, बल्कि घटता है'। इसी कारण, व्यास ने इसे एक ही स्थान पर न रहने की सूचना दी (म. व. ३७, २७-३२)। व्यास के इस वचन को प्रमाण मान कर इसने अर्जुन को 'पाण्डुपत्तन' प्राप्त करने के लिए भेज दिया एवं द्रौपदी का भार भीम पर सौंप कर यह निश्चित हुआ।

इसके पश्चात् यह कुछ काल तक काव्यकवन में रहा, वहाँ इसके दुःख का परिहार करने के लिए, वृद्धश्व ऋषि ने नल राजा का चरित्र इसे कथन किया (म. व. ७८. १७)। इसी समय उसने इसे 'अश्वद्वय' एवं 'अश्वविद्या'

प्रदान की, जिस कारण यह द्यूतविद्या में अजिंक्य बन गया।

तीर्थयात्रा—एक बार लोमश ऋषि इसे वनवास में मिलने आये, एवं उन्होंने इसे कहा, 'अर्जुन को अपनी तपस्या से लौट आने में काफी समय लगनेवाला है। इसी कारण तुम्हारी मनःशांति के लिए तुम भारतवर्ष की यात्रा करोगे, तो अच्छा होगा। इसी समय पुलस्त्य एवं धौम्य ऋषि ने भी इसे तीर्थयात्रा करने का महत्त्व कथन किया था (म. व. ८०-८३-८४-८८)।

पश्चात् यह लोमश ऋषि के साथ तीर्थयात्रा के लिए निकल पड़ा। लोमश ऋषि ने इसे तीर्थयात्रा करते समय अनेकविध तीर्थस्थान, नदियाँ, पर्वत आदि का माहात्म्य कथन किया, एवं उस माहात्म्य के आधारभूत प्राचीन ऋषि, मुनि एवं राजाओं की कथा इसे सुनाई (म. व. ८९-१५३)। महाभारत के जिस 'तीर्थयात्रा पर्व' में युधिष्ठिर की इस यात्रा का वर्णन प्राप्त है, वहाँ पुष्कर-तीर्थ एवं कुरुक्षेत्र को भारतवर्ष के सर्वश्रेष्ठ तीर्थ कहा गया है, एवं समुद्रस्नान का माहात्म्य भी वहाँ कथन किया गया है।

नहुषमुक्ति—तीर्थयात्रा समाप्त करने के पश्चात्, पाण्डव गंधमादन पर्वत पर गये। वहाँ अर्जुन भी पाण्डुपत्तन संग्रहण कर स्वर्ग से वापस आया था (म. व. १६२-१७१)। गंधमादन पर्वत के नीचे पाण्डव जिस समय अरण्य में संचार कर रहे थे, उस समय अजगर रूपधारी नहुष ने भीम को मिला लिया। नहुष के द्वारा पूछे गये धर्मविषयक अनेकानेक प्रश्नों के युधिष्ठिर ने सुयोग्य उत्तर दिये, एवं इस तरह भीम को अजगर से मुक्तता की (म. व. १७७-१७८; नहुष देखिये)। तत्पश्चात् नहुष की अजगरयोनि से मुक्तता हो कर वह भी स्वर्ग चला गया। भीम के शारीरिक बल से युधिष्ठिर का आत्मिक सामर्थ्य अधिक श्रेष्ठ था, यह बताने के लिए यह कथा दी गयी है।

घोषयात्रा—पाण्डव जिस समय द्वैतवन में निवास करते थे, उस समय उन्हें अपना वैभव दिखाने के लिये दुर्योधन वहाँ ससैन्य उपस्थित हुआ। चित्रसेन गंधर्व ने उसे पकड़ लिया। तत्पश्चात् दुर्योधन के सेवक युधिष्ठिर के पास मदद की याचना करने के लिए आ पहुँचे। उस समय भीम ने कहा 'दुर्योधन हमारा शत्रु है। उसकी जितनी वेदज्जती हो, उतना हमारे लिए अच्छा ही है'। किन्तु युधिष्ठिर कहा, 'दुर्योधन हमारा कितना ही बड़ा शत्रु हो, उसकी किसी दूसरे के द्वारा वेदज्जती होना

हमारे कुरुकुल के लिए लंछन है। कौरवों के साथ संघर्ष करते समय, वी कौरव एवं पाँच पाण्डव अलग अलग रहेंगे, किन्तु किसी परकीय शत्रु से युद्ध करते समय, हम दोनों एक सौ पाँच बन कर उसका प्रतिकार करें, यही उचित है—

परस्पराणां संघर्षे, वयं पञ्च च ते शतम् ।

अन्यैः सह विरोधे तु, वयं पञ्चाधिकं शतम् ।

जयद्रथ की मुक्तता—इसीके ही पश्चात् थोड़े दिन में जयद्रथ ने द्रौपदी का हरण करने का प्रयत्न किया (म. व. २५५.४३)। उसी समय भी इसने जयद्रथ धृतराष्ट्र की कन्या दुःशीला का पति है, यह जान कर उसकी मुक्तता की (म. व. २५६.२१-२३)।

जयद्रथ के द्वारा किये गये द्रौपदीहरण से खिन्न हुये युधिष्ठिर को, मार्किण्डेय ऋषि ने रावण के द्वारा किये गये सीताहरण की, एवं अश्वपति राजा की कन्या सावित्री की कथा सुनाई, एवं मनःशांति प्राप्त करा दी।

यक्षप्रश्न—कालान्तर में यह काम्यकवन छोड़ कर फिर द्वैतवन में रहने लगा। एक बार सभी लोग प्यासे थे। इसने नकुल से पानी लाने के लिए कहा किन्तु नकुल वापस न लौटा। तब इसने बारी बारी से सहदेव, अर्जुन तथा भीम को भेजा। किन्तु कोई वापस न लौटा। हार कर यह जलाशय के तट पर आया तब अपने सभी भाइयों को मूर्च्छित देखकर अत्यधिक भुन्ध हुआ, एवं दुःख से पीड़ित हो कर विलाप करने लगा। तत्काल, इसे शंका हुयी कि दुर्योधन ने इस जलाशय में विष बुलवा दिया हो। इतने में एक ध्वनि आयी, 'तुम भरे प्रश्नों का उत्तर दो, फिर पानी ले सकते हो। यदि मेरी बात न मानोगे, तो तुम्हारी भी यही हालत होगी, जो तुम्हारे भाइयों की हुयी है।

तब बकरूप धारण कर, उस यक्ष ने इसे अस्सी प्रश्न किये, जो साधारण बुद्धि, तत्त्वज्ञान, दर्शन, धर्म तथा राजनीति सम्बन्धी थे। इसने उन सभी का उत्तर संतोषजनक दिया। उनमें से प्रमुख प्रश्न तथा उनके उत्तर निम्नलिखित थे (यक्ष प्रश्न की तालिका देखिये)।

इस प्रकार अरुने सभी प्रश्नों का तर्कपूर्ण उत्तर पा कर, बकरूपधारी यक्ष ने सन्तुष्ट होकर युधिष्ठिर से कहा, 'तुम अपने भाइयों में किसी एक को पुनः प्राप्त कर सकते हो'। तब इसने माद्रीपुत्र नकुल का जीवनदान माँगा। तब इसके पक्षपातरहित समत्वबुद्धि को देख कर यक्ष प्रसन्न हो उठा। उसने इसके सभी भाइयों को जीवित कर दिया,

युधिष्ठिर के उत्तर

ब्रह्मा ।
देवता ।
सत्य ।
धर्म से ।
धनहीन ।
जहाँ अराजकता है ।
विद्या से ।
शब्दादि से ।
देवता, आतिथि, नौकर चाकर, पितर
एवं आत्मा को श्रुप्त करनेवाला ।

यक्ष के प्रश्न

सूर्य का आधार क्या है ?
सूर्य के साथ कौन है ?
धर्म का अधिष्ठान क्या है ?
आदमी को बल कैसे प्राप्त होता है ?
कौन आदमी मृत है ?
कौन राष्ट्र मृत है ?
ब्राह्मण देवत्व किस प्रकार पा सकता है ?
क्षत्रिय देवत्व किस प्रकार प्राप्त कर सकता है ?
जीवित कौन है ?

तथा वर दिया, 'अज्ञातवास के समय तुम्हें कोई पहचान न सकेगा'। वह यक्ष कोई दूसरा न था, बल्कि साक्षात् यमधर्म ही था। उसने इसे विराटनगरी में रहने के लिए कहा, तथा ब्राह्मण की अरणी देते हुए वर प्रदान किया, 'लोभ, क्रोध तथा मोह को जीत कर दान, तप तथा सत्य में तुम्हारी आसक्ति हो (म. व. २९५-२९८)।

अज्ञातवास—पाण्डवों के अज्ञातवास में इसने युग रूप से जय, तथा प्रकट रूप से कंक नामक ब्राह्मण का रूप धारण किया था (म. वि. १.२०; ५. ३०)। अज्ञातवास शुरू होने के पूर्व धौम्य ऋषि ने इसे अज्ञातवास में

किस तरह आचरण करना चाहिये, इस विषय में उपदेश किया था। पशुान् अपने बन्धु एवं द्रौपदी के साथ, मत्स्यराज विराट के यहाँ इसने अज्ञातवास का एक वर्ष बिताया (म. वि. ६. ११)।

यह घृतक्रीडा का बड़ा शौकिन एवं ब्रडा प्रवीण खिलाडी था। यह घृत में विराट के धन को जीतता था, एवं गुप्त रूप से वह अपने भाईयों से देता था (म. वि. १२.५)। एक बार घृत खेलते समय इसने बृहन्नला (अर्जुन) की काफी तारीफ की, जिस कारण क्रुद्ध होकर विराट ने इसकी नाक पर एक पाँस फेंक कर मारा। उससे इसकी नाक से खून बहने लगा, जिसे द्रौपदी ने अपने पन्ने से पाँछ लिया था (म. वि. ६३)।

संधि का प्रयत्न—ज्येष्ठ कृष्ण अष्टमी के दिन पाण्डव अपने वनवास एवं अज्ञातवास से प्रकट हुये। तत्पश्चात् इसने द्रुपद राजा के पुरोहित को राज्य का आधा हिस्सा माँगने के लिए भेज दिया (म. उ. ६.१८)। पुरोहित ने धृतराष्ट्र से युधिष्ठिर का संदेश कह सुनाया, एवं भीष्म द्रोणादि ने भी उसका समर्थन किया। धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर की माँग का सीधा जवाब नहीं दिया, किन्तु संजय के हाथों इतना ही संदेश भेद दिया, 'मैं आप से सख्य भाव रखना चाहता हूँ। जो लोग मृद एवं अधर्मज्ञ होते हैं, वे ही केवल युद्ध की इच्छा रखते हैं। तुम स्वयं शांत हो। इसी कारण अपने बांधवों को युद्ध से परावृत्त करो, यही उचित है'।

इस पर युधिष्ठिर ने जवाब दिया, 'वनवास के आपत्काल में पाण्डवों ने भिक्षा माँग कर अपना गुजारा किया है। अभी आपत्काल समाप्त होने पर भिक्षावृत्ति से जीना हमारे लिए असंभव है। फिर भी शान्ति का आखिरी प्रयत्न करने के लिए मैं श्रीकृष्ण को धृतराष्ट्र के दरबार में भेज देता हूँ'।

युधिष्ठिर-कृष्ण संवाद—युधिष्ठिर पहले से ही युद्ध करने के विरुद्ध था। इसी कारण इसने कृष्ण से हर प्रयत्न से युद्ध टालने की प्रार्थना की। इसने कहा, 'युद्ध में सर्वनाश के सिवा कुछ संपन्न नहीं होता है। जिस तरह पानी में मछलियाँ एक दूसरी के साथ झगड़ती हैं, एवं एक दूसरी को खा जाती हैं, उसी तरह युद्ध में क्षत्रिय, क्षत्रिय के साथ झगड़ते हैं, एवं एक दूसरे का संहार करते हैं। क्षत्रिय लोग युद्ध में पराजय की अपेक्षा मृत्यु को अधिक पसंद करते हैं। किन्तु जिस युद्ध में अपने सारे बांधवों का संहार होता है, उससे सुख की प्राप्ति कैसे हो

सकती है? शत्रुत्व युद्ध से घटता नहीं, बल्कि बढ़ता है। इसी कारण शान्ति में जो सुख है, वह युद्ध में कहाँ?'

इसी दौत्यकर्म के समय धृतराष्ट्र के राज्य में रहने-वाली अपनी माता कुन्ती से मिलने के लिए, इसने श्रीकृष्ण को बार बार प्रार्थना की थी। इसने कहा, 'हमारी माता कुन्ती को जीवन में दुख के सिवा अन्य कुछ भी नहीं प्राप्त हुआ। फिर भी वाच्यकाल में उसने दुर्योधन से हमारा संरक्षण किया'।

कृष्णदौत्य—युधिष्ठिर के कहने पर श्रीकृष्ण दुर्योधन के दरबार में गया, एवं उसने कहा, 'अविश्वल, वृकस्थल माकंदी (आसंदी), वारणावत आदि पाँच गाँव पाण्डवों के भरणपोषण के लिए आप युधिष्ठिर को दे दे। इतना छोटा हिस्सा प्राप्त होने पर भी, युधिष्ठिर धार्तराष्ट्रों से संधि करने के लिए तैयार है (म. उ. ७०-७५)।

किन्तु दुर्योधन ने सुई की नोक के बराबर भी भूमि पाण्डवों को देना अमान्य कर दिया (म. उ. १२६.२६)। अन्त में कुरुक्षेत्र में हिरण्यवती नदी के किनारे खाई खोद कर युधिष्ठिर ने अपनी सेना एकत्र की (म. उ. १४९.७-७४)। युद्ध टालने का अखीर का प्रयत्न करने के लिए, इसने फिर एकवार उलूक राजा को मध्यस्थता के लिए दुर्योधन के पास भेज दिया, एवं कहा 'भाईयों का यह रिश्ता न टूटे तो अच्छा'। किन्तु मामला उलझता ही गया, सुलझा नहीं, एवं भारतीय युद्ध का प्रारंभ हुआ (म. उ. १५७)।

भारतीय युद्ध-पाण्डवपक्ष के थोड़ा—भारतीय युद्ध प्राचीन भारतीय इतिहास का पड़ल; महायुद्ध माना जाता है। इस कारण इस युद्ध में तत्कालीन भारतवर्ष का हर एक राजा, कौरव अथवा पाण्डव किसी न किसी पक्ष में शामिल था। भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में निम्न-लिखित देश शामिल थे :—

१. मध्यदेश के देश—वत्स, काशी, चेदि, करूप, दशार्ण एवं पांचाल। पार्थिव के अनुसार, मध्यदेश में से मत्स्य, पूर्व कोसल; एवं विन्ध्य एवं आडाकला पर्वत में रहनेवाली वन्य जातियाँ भी पाण्डवों के पक्ष में शामिल थी।

२. पूर्व भारत के देश—पूर्व भारत में से केवल पश्चिम मगध देश एवं उसका राजा जरासंधपुत्र सहदेव पाण्डवों के पक्ष में थे।

३. पश्चिम भारत—गुजरात में एवं गुजरात के पूर्व भाग में रहनेवाले यादव राजा, जैसे कि, वृष्णि राजा युयुधान एवं यादव राजा सात्यकि।

४. उत्तरी पश्चिम भाग के देश--अमिसार देश, जो कादमीर के दक्षिणी पश्चिम दिशा में स्थित था। पार्सिटर के अनुसार, इसी प्रदेश में स्थित केकय देश भी पाण्डवों के पक्ष में शामिल था।

५. दक्षिण भारत के देश--पाण्ड्य देश एवं कर्नाटक में रहनेवाली कई द्रविड जातियाँ।

उपर्युक्त नामावली से प्रतीत होता है कि, पाण्डवों के पक्ष में दक्षिण मध्यदेश के सारे देश, जैसे कि, मत्स्य, चेदि, करुप, काशी एवं पांचाल; पूर्व भारत के पश्चिम मगध आदि देश; गुजराथ के सारे यादव; एवं दक्षिणी भारत के पाण्ड्य राजा शामिल थे।

पाण्डवों के पक्ष में पांचाल देश का राजा द्रुपद, चेदिराज धृष्टकेतु, मगधदेशाधिपति जयत्सेन, यमुना-तीर निवासी पाण्ड्य एवं यादव राजा सात्यकि प्रमुख थे। इनमें से द्रुपद पाण्डवों का, श्वशुर था एवं सात्यकि श्रीकृष्ण का रिश्तेदार था। मकुलसहदेव का मामा मद्रराज शल्य एक अशौहीणी सैन्य ले कर पाण्डवों के सहाय्यार्थ निकला था। किन्तु रास्ते में उसका विपुल आदरातिथ्य कर दुर्योधन ने उसे अपने पक्ष में शामिल करा लिया।

विदर्भ देश का राजा रुक्मिण् ससैन्य पाण्डवों की सहाय्यार्थ आया था। किन्तु उसका कहना था, 'यदि पाण्डव मेरी सहाय्य की याचना करेंगे, तो ही मैं उनकी सहाय्यता करूंगा। इस पर अर्जुन ने उसे कहा, 'यह युद्ध एक रणयज्ञ है। जिसकी जैसी इच्छा हो, उस पक्ष में हर एक राजा शामिल हो सकता है। किसी की हम याचना करने के लिए तैय्यार नहीं है। बलराम पाण्डवों का रिश्तेदार था, किन्तु उसकी सारी सहाय्यता दुर्योधन की ओर थी। इस उलझन से छुटकारा पाने के लिए, वह किसी के पक्ष में शामिल न हो कर तीर्थयात्रा के लिए चला गया।

कौरवपक्ष के देश--भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्ष में निम्नलिखित देश शामिल थे:--

१. पूर्व भारत के देश--प्राचीन मगध साम्राज्य के पश्चिम मगध छोड़ कर बाकी सारे देश, जैसे कि, पूर्व मगध, विदेह, अंग, वंग, कर्लिंग, जिन सारे देशों पर अंगराज कर्ण का स्वामित्व था; प्राग्ज्योतिष (चीन एवं किरात जातियों के साथ)। इस समय प्राग्ज्योतिष का राजा भगदत्त था। पार्सिटर के अनुसार, उत्कल, मेकल, आंध्र एवं उन सारे प्रदेशों में रहनेवाली वन्य जातियाँ भी कौरवों के पक्ष में शामिल थी।

२. मध्यदेश के देश--कोसल, वत्स एवं शूरसेन। इस समय कोसल देश का राजा बृहद्रथ था।

३. उत्तरीपश्चिम भारत के देश--सिन्धुसौवीर, गांधार त्रिगर्त, केकय, शिवि, मद्र, वाह्लिक, धुद्रक, मालव, अंबथ, एवं कंबोज। इनमें से सिन्धुसौवीर, गांधार, त्रिगर्त, मद्र, अंबथ एवं कंबोज देशों के राजा क्रमशः जयद्रथ, शकुनि, सुशर्मन्, शल्य, श्रुतायु एवं सुदक्षिण थे। पार्सिटर के अनुसार, इन देशों में रहनेवाली वन्य जातियाँ भी कौरवों के पक्ष में शामिल थी।

४. मध्यभारत के देश--माहिष्मती, भोज-अंधक-वृष्णि, विदर्भ, निपाद, शात्व एवं अवन्ती देशों के यादव राजा। इन देशों में से माहिष्मती, भोज-अंधकवृष्णि एवं अवन्ती देशों के राजा क्रमशः नील, कृतवर्मन् एवं विंद-अनुविंद थे। पार्सिटर के अनुसार, आधुनिक बड़ौदा नगर के दक्षिण एवं दक्षिणीपूर्व प्रदेश में रहनेवाले सारे यादव राजा, दखन प्रदेश में रहनेवाली वन्य जातियाँ, एवं मध्य भारत में स्थित कुन्तल देश भी कौरवों के पक्ष में शामिल था।

उपर्युक्त नामावलि से प्रतीत होता है कि, कौरवों के पक्ष में उत्तर, उत्तरीपश्चिम, मध्य एवं पूर्वी भारत के प्रायः सारे देश शामिल थे। उन देशों में उत्तर एवं दक्षिणी पूर्व भारत के सारे देश; बंगाल एवं पश्चिमी आसाम के सारे देश; बंगाल के दक्षिण में गोदावरी तक का फैला हुआ सारा प्रदेश; मध्यदेश के शूरसेन, वत्स एवं कोसल देश; उत्तरी भारत के शात्व, मालव आदि सारे देश, एवं मध्य-भारत के अवन्ति आदि सारे देश समाविष्ट थे।

कौरवों के पक्ष में शक्यवनादि देशों का राजा, माहिष्मती का राजा नील, केकयाधिपति केकय, प्राग्ज्योतिषपुर का राजा भगदत्त, सौवीर देश का राजा जयद्रथ, त्रिगर्त-राज सुशर्मन्, गांधारराज बृहद्रथ, कौरव राजा भूरिश्रवस्, अंगराज कर्ण आदि राजा प्रमुख थे। इनमें से जयद्रथ, सुशर्मन् एवं कर्ण का पाण्डवों से पुरातन शत्रुत्व था, जिस कारण वे कौरवों के पक्ष में शामिल हो गये थे।

इस प्रकार, कौरव एवं पाण्डवों के बीच हुआ भारतीय युद्ध वास्तव में एक ओर दक्षिण मध्य देश एवं पांचाल देश, एवं दूसरी ओर बाकी सारा भारत देश इनके बीच हुआ था। इस तरह सेनाबल के दृष्टि से कौरवों का पक्ष पाण्डवों से कतिपय बलवान् था।

कई अभ्यासकों ने धार्मिक दृष्टि से इस युद्ध को उभय पक्षियों का अध्ययन करने का प्रयत्न किया है। किन्तु

उपमें कुछ तथ्य नहीं प्रतीत होता है, क्यों कि, पाण्डव एवं कौरव इन दोनों पक्ष में शामिल हुए राजाओं में कौनसा भी वार्षिक साधर्म्य नहीं था। इन दोनों पक्षों में शामिल होनेवाले देश प्रायः सर्वत्र अपने राजा के कारण विशिष्ट पक्ष में आये थे, एवं बहुत सारे स्थानों पर राजा एवं प्रजा अलग अलग वंशों के थे।

युद्धशिविर—पाण्डवों के पक्ष का युद्धशिविर मत्स्य देश की राजधानी उपपल्लव नगरों में था, एवं समस्त मत्स्य देश में उनकी सेना एकत्रित की गयी थी। कौरवपक्ष का युद्धशिविर कुरु देश की राजधानी हस्तिनापुर में था। किन्तु उनका सैन्यविस्तार इतना प्रचंड था कि, दक्षिण पंजाब में ले कर उत्तर कुरुक्षेत्र से होता हुआ वह उत्तर पंजाब देश तक अधःचंद्राकारत वह फैला हुआ था। उस शिविर का विस्तार ५ योजन (४० मील) था। एक प्रचंड नगर के समान उसकी शान थी, एवं वहाँ नौकर, शिल्पी, सूतमागध, गणिका आदि सारा परिवार उपस्थित था (म. उ. १. ११६, १५)।

सांख्यिक बलाबल—भारतीय युद्ध में पाण्डवों की सेना-संख्या सात अश्वौहिणी एवं कौरवों की सेनासंख्या ग्यारह अश्वौहिणी थी। कौरव पक्ष की ग्यारह अश्वौहिणी सेना में से एक एक अश्वौहिणी सेना निम्नलिखित दस राजाओं के द्वारा लयी गयी थी—भगदत्त, भूरिश्रवत्, कुतवर्मन्, विद, जयद्रथ, अनुविन्द, सुशर्मन्, नील, केकय, एवं कांबोज।

महाभारत में निर्दिष्ट 'अश्वौहिणी,' सैन्यसंख्या दर्शाने-वाली एक सामान्य गणनापद्धति न हो कर, वह रथ, हाथी, अश्व, पैदल आदि विभिन्न प्रकार के सैनिकों से बना हुआ एक 'सैनिकी विभाग' था। इस तरह एक अश्वौहिणी सेना में १०९३५० पैदल, ६५६१० अश्वदल, २१८७० गजदल, एवं २१८७० रथों का समावेश होता था। यह सेनाविभाग पत्नी, सेनामुख, गुल्म आदि उपविभागों में विभाजित किया जाता था, जिनमें से हर एक की गणसंख्या निम्नप्रकार रहती थी (सेनागणना पद्धति की तालिका देखिये)।

सेनाप्रमुख एवं सेनापति—पाण्डवों की सात अश्वौहिणी सेना के निम्नलिखित सात सेनाप्रमुख (अधिपति) चुने गये थे:—द्रुपद, विराट, धृष्टद्युम्न, भीम, शिखंडिन्, चेकितान एवं सात्यकि। पाण्डवों का मुख्य सेनापति धृष्टद्युम्न था, जो युद्ध के अठरह दिन सेनापरय का काम निभाता रहा। पाण्डव सेना का सर्वश्रेष्ठ मार्गदर्शक श्रीकृष्ण ही था।

सेनागणनापद्धति की तालिका

पत्नी	सेनामुख (= ३ पत्नी)	गुल्म (= ३ सेना- मुख)	गण (= ३ गुल्म)	बाहिनी (= ३ गण)	पुतना (= ३ बाहिनी)	चारू (= ३ पुतना)	आनीकिनी (= ३ चारू)	अश्वौहिणी (= १० आनी- किनी)
रथ	३	९	२७	८१	२४३	७२९	२१८७	२१८७०
हाथी		९	२७	८१	२४३	७२९	२१८७	२१८७०
अश्व		२७	८१	२४३	७२९	२१८७	६५६१	६५६१०
पैदल		४५	१३५	४०५	१२१५	३६४५	१०९३५	१०९३५०

(म. आ. २.१५-२३)

पाण्डवों के सेना में से रथी महारथी आदी विभिन्न श्रेणियों के योद्धाओं की विस्तृत जानकारी महाभारत में प्राप्त है (भीष्म देखिये)।

कौरव पक्ष के ग्यारह अश्वौहिणी सेना के निम्नलिखित सेनाप्रमुख चुने गये थे:—द्रुप, द्रोण, शल्य, कांबोज, कुतवर्मन्, कर्ण, अश्वत्थामन्, भूरिश्रवत्, जयद्रथ, सुदक्षिण एवं

शकुनि (म. उ. १५२.१२८-१२९)। भारतीय युद्ध के अठरह दिनों में कौरवपक्ष के निम्नलिखित सेनापति हुये थे:— पहले १० दिन—भीष्म; ११-१५ दिन—द्रोण; १६-१७ दिन—कर्ण; १८ वें दिन का प्रथमार्ध—शल्य; द्वितीयार्ध—दुर्योधन।

युद्ध का प्रारंभ—मार्गशीर्ष शुद्ध त्रयोदशी के दिन भारतीय युद्ध का प्रारंभ हुआ एवं पौष अमावस्या के दिन वह समाप्त हुआ। इस तरह यह युद्ध अठारह दिन अविरत चलता रहा। युद्ध के पहले दिन पाण्डवों का सैन्य उत्तर की ओर भागे बढ़ा, एवं कुरुक्षेत्र की प्रश्विम में आ कर युद्ध के लिए सिद्ध हुआ। इस पर कौरव सैन्य कुरुक्षेत्र की पश्चिम में प्रविष्ट हुआ, एवं उसी मैदान में भारतीय युद्ध शुरू हुआ।

युद्ध के प्रारंभ में युधिष्ठिर अपना कवच एवं शस्त्र उतार कर पैदल ही कौरव सेना की ओर निकला। इसका अनुकरण करते हुए इसके चारों भाई भी चल पड़े। अपने गुरु भीष्म, द्रोण एवं कृपाचार्य से बंदन कर इसने युद्ध करने की अनुज्ञा माँगी, एवं कहा, 'इस युद्ध में हमें जय प्राप्त हो, ऐसा आशीर्वाद आप दे दिजिए'। गुरुजनों का आशीर्वाद मिलने के बाद, इसने अपने सेनापति को युद्ध प्रारंभ करने की आज्ञा दी (म. भी. ४१.३२-३४)।

प्रारंभ में—प्रथम दिन के युद्ध में इसका शल्य के साथ युद्ध हुआ था। भीष्म के पराक्रम को देखकर इसे बड़ी चिन्ता हुई थी, एवं उसके युद्ध से भयभीत हो कर इसने धनुष्य बाण तक फेंक दिया था (म. भी. ८१.२९)। इसने भीष्म के साथ युद्ध भी किया, किन्तु पराजित रहा। भीष्म का विध्वंसकारी युद्ध देखकर इसने बड़े करुणपूर्ण शब्दों में भीष्मवध के लिए पाण्डवों की सलाह ली थी, तथा कृष्ण से कहा था, 'आप ही भीष्म से पूछे कि, उनकी मृत्यु किस प्रकार हो सकती है (म. भी. १०३.७०-८२)।

भीष्म के बाद द्रोण—दुर्योधन ने भीष्म के बाद द्रोणाचार्य को सेनापति बनाया। द्रोण द्वारा वर माँगने के लिए कहा जाने पर, दुर्योधन ने उससे यह इच्छा प्रकट की थी कि, वह उसके सम्मुख युधिष्ठिर को जिंदा पकड़ लाये। तब द्रोण ने कहा था, 'अर्जुन की अनुपस्थिति में ही यह हो सकता है'। दुर्योधन युधिष्ठिर को जीवित पकड़कर इस लिए लाना चाहता था कि, उसे फिर द्यूत

खेलने के लिए मजबूर करे, और समस्त पाण्डवों को फिर वनवास भेज कर चैन की बन्सी बजाओं।

युधिष्ठिर ने जब द्रोण की प्रतिज्ञा सुनी, इसने तब अर्जुन को अपने पास ही रहने के लिए कहा (म. द्रो. १३.७४२)। द्रोणाचार्य द्वारा निर्मित 'गरुडव्यूह' को देख कर यह अत्यधिक भयभीत हुआ था (म. द्रो. १९.२१-२४)। अभिमन्यु के मृत्यु के बाद इसने बहुत करुण विलाप किया था, तथा व्यासजी से मृत्यु की उत्पत्ति आदि के विषय में प्रश्न किया था। व्यास के द्वारा अत्यधिक समझाये जाने पर यह शोकरहित हुआ था (म. द्रो. परि. १.८)।

इसने युद्ध में दुर्योधन एवं द्रोणाचार्य को मूर्च्छित कर परास्त किया था (म. द्रो. १३७.४२)। किन्तु इसी युद्ध में कृतवर्मन् ने इसे परास्त किया था, एवं कर्ण से यह ध्वरा उठा था। अभिमन्यु की मौति भीमपुत्र घटोत्कच की मृत्यु से भी यह अत्यधिक शोकविह्वल हो उठा था।

पश्चात् द्रोण ने अपने अत्यधिक पराक्रम के बल से इसे विरथ कर दिया, एवं डर कर यह युद्धभूमि से भाग गया (म. द्रो. ८२.४६)। अन्त में—

'अश्वत्थामा हतो ब्रह्मन्निवर्तस्वाहवादिति'

कह कर यह द्रोण की मृत्यु का कारण बन गया (द्रोण देखिये; म. द्रो. १६४.१०२-१०६)। द्रोणवध के समय इसने 'नरो वा कुञ्जरो वा' कह कर द्रोणाचार्य से मिथ्या भाषण किया, जिस कारण पृथ्वी पर निराधार अवस्था में चलनेवाला इसका रथ भूमि पर चलने लगा (म. द्रो. १६४.१०७)।

द्रोणाचार्य के सेनापत्य के काल में कौरव एवं पाण्डवों के सैन्य का अत्यधिक संहार हुआ, जिस कारण उन दोनों का केवल दो दो अश्वैहिणी सैन्य बाकी रहा।

कर्णवध—द्रोण के उपरांत कर्ण सेनापति बना, जिसने इसका पराभव कर इसकी काफ़ी निर्भर्त्सना की (म. क. ४९. ३४-४०)। पराजित अवस्था में, इसका वध न कर कर्ण ने इसे जीवित छोड़ दिया। इस अपमानित एवं घायल अवस्था में लज्जित हो कर यह शिविर में लौट आया। इतने में इसे दूँदने के लिए गये कृष्ण एवं अर्जुन भी वापस आये। उन्हें देख कर यह समझा कि, वे कर्ण का वध कर के लौट आ रहे हैं। अतएव इसने उनका बड़ा स्वागत किया, किन्तु अर्जुन के द्वारा सत्यस्थिति जानने पर, यह अत्यंत शांत प्रकृति का धर्मात्मा क्रोध से

पागल हो उठा, एवं इसने अर्जुन की अत्यंत कटु आलोचना की।

युधिष्ठिर-अर्जुन-संवाद—इस समय युधिष्ठिर एवं अर्जुन के दरम्यान जो संवाद हुआ, वह उन दोनों के व्यक्तिव पर काफी प्रकाश डालता है।

इसने अर्जुन से कहा, 'चारह साल से कर्ण मेरे जीवन का एक कौटा वन कर रह गया है। एक पिशाच के समान वह दिनरात मेरा पीछा करता है। उसका वध करने की प्रतिज्ञा तुमने द्रैतथन से भी की थी, किन्तु वह अचुरी ही रही। तुम कर्ण का वध करने में यद्यपि असमर्थ हो, तो यहीं अच्छा है कि, तुम्हारा गांडीव धनुष, बाण, एवं रथ यहीं उतार दो'।

अर्जुन ने प्रतिज्ञा की थी कि, जो उसे गांडीव धनुष उतार देने को कहेगा, उसका वह वध करेगा। इसी कारण उसने युधिष्ठिर से कहा, 'युद्ध से एक योजन तक दूर भागनेवाले तुम्हें पराक्रम की बातें छेड़ने का अधिकार नहीं है। यज्ञकर्म एवं स्वाध्याय जैसे ब्राह्मणधर्म में तुम प्रवीण हो। ब्रह्मण का सारा सामर्थ्य मुँह में रहता है। ठीक यही तुम्हारी ही स्थिति है। तुम स्वयं पापी हो। तुम्हारे घूत खिलने के कारण ही हमारा राज्य चला गया, एवं हम संकट में आ गये। ऐसी स्थिति में मुझे गांडीव धनुष उतार देने को कहनेवाले तुम्हारा मैं यही शिरच्छेद करता हूँ'।

अर्जुन जैसे अपने प्रिय धनुष से ऐसा अपमानजनक (प्राकृत) भाषण सुन कर, पश्चाताप भरे स्वर में इसने उसे कहा, 'तुम ठीक कह रहे हो। मेरी मृदता, कायरता, पाप एवं व्यसनासक्तता के कारण ही सारे पाण्डव आज संकट में आ गये हैं। तुम्हारे कटु वचन मुझसे अभी नहीं सहे जाते हैं। इसी कारण तुम मेरा शिरच्छेद करो, यही अच्छा है। नहीं तो, मैं इसी समय वन में चला जाता हूँ'।

युधिष्ठिर की यह विकल मनस्थिति देख कर सारे पाण्डव भयभीत हो गये। अर्जुन भी आत्महत्या करने के लिए प्रवृत्त हुआ। अन्त में श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से आश्वासन दिया, 'आज ही कर्ण का वध किया जाएगा'। इस आश्वासन के अनुसार, अर्जुन ने कर्ण का वध किया (म. क. परि. १, क. १८, पंक्ति ४५-५०)।

जिस कर्ण के वधके लिए यह तरस रहा था, वह पाण्डवों का ही एक भाई एवं कुंती का एक पुत्र है, यह कर्ण-वध के पश्चात् ज्ञात होने पर, युधिष्ठिर आत्मग्लानि से तिलमिला

उठा। कर्ण एवं कुंती के चेहरे में साम्य है, यह पहले से ही यह जानता था। इस साम्य का रहस्यभेद न करने से कर्णवध का पादक अपने सर पर आ गया इस विचार से यह अत्यधिक खिन्न हुआ। यही नहीं, कर्णजनन का रहस्य विपानवाली अपनी प्रिय माता कुंती को इसने साप दिया।

कर्णवध के पश्चात्, शिविर में सोये हुए पाण्डवपरिवार का अश्रुत्थामन् ने अत्यंत क्रूरता के साथ वध किया, जिसमें सभी पाण्डवपुत्र मर गये। इस समाचार को सुन कर यह अत्यंत दुःखी हुआ था।

बाद में द्रौपदी ने विलाप करते हुए इससे अश्रुत्थामा तथा उसके सहकारियों के वध करने की प्रार्थना की। युधिष्ठिर ने कहा कि, वह अरण्य चला गया है। बाद को द्रौपदी द्वारा यह प्रतिज्ञा की गयी कि, अश्रुत्थामा के मस्तक की मणि युधिष्ठिर के मस्तक पर वह देखेगी, तभी जीवित रह सकती है। तब, भीम, कृष्ण अर्जुन तथा युधिष्ठिर के द्वारा द्रौपदी का प्रण पूरा किया गया (म. सौ. ९, १८)।

दुर्योधनवध—दुर्योधन एवं भीम के दरम्यान हुये द्रुपद्युद्ध में भीम ने दुर्योधन की वायी जाँघ फाड़ कर उसे नीचे गिरा दिया, एवं उसी वायल अवस्था में लत्ताप्रहार भी किया। उस समय युधिष्ठिर ने भीम की अत्यंत कटु आलोचना की। इसने कहा, 'यह तुम क्या कर रहे हो? दुर्योधन हमारा रिश्तेदार ही नहीं, बल्कि एक राजा भी है। उसे वायल अवस्था में लत्ताप्रहार करना अधर्म है'। पश्चात् इसने दुर्योधन के समीप जा कर कहा, 'तुम दुःख मत करना। रणभूमि में मृत्यु आने के कारण, तुम धन्य हो। सारे रिश्तेदार एवं बोधव मृत होने के कारण, हमारा जीवन हीनदीन हो गया है। तुम्हें स्वर्गगति तो जरूर प्राप्त होगी। किन्तु बोधवों के विरह की नरकवातना सहते सहते हमें यहीं ही जीना पड़ेगा'।

वचे हुए वीर—दुर्योधनवध के पश्चात् भारतीय युद्ध का समाप्ति हुयी। कौरव एवं पाण्डवों के अठारह अशौहिणी सैन्य में से केवल दस लोग बच सके। उनमें पाण्डवपक्ष में से पाँच पाण्डव, कृष्ण एवं सात्यकि, तथा कौरवपक्ष में से द्रुप, कृत एवं अश्रुत्थामन् थे (म. सौ. ९, ४७-४८)। युद्धभूमि से वचें हुए इन लोगों में धृतराष्ट्र पुत्र सुयुक्तु का निर्देश भी प्राप्त है, जो युद्ध के प्रारंभ में ही पाण्डवपक्ष में मिला था।

भारतीययुद्ध के मृतकों की संख्या युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र को तीन करोड़ बतायी थी, जो सैनिक एवं उनके अन्य सहाय्यक मिला कर बतायी होगी। युद्धभूमि में लड़नेवाले एक सैनिक के लिए दस सहाय्यक रहते थे (म. स्त्री. २६.९-१०)।

विरक्ति—युद्ध में मृत हुए अपने बांधवों का अशौच तीस दिनों तक मानने के बाद युधिष्ठिर हस्तिनापुर में लौट आया (म. शां. १.२)। युद्ध की विभीषिका को देख कर यह इतना दुःखी था कि, किसी से कुछ भी न कह पाता था, तथा मन ही मन आन्तरिक पीड़ा में सुलग रहा था। अपने मन की पीड़ा को अप्रजों से ही कह कर यह कुछ शान्ति का अनुभव कर सकता था, किन्तु कहे तो किससे? कृष्ण ने इसे युद्ध के लिए प्रेरित ही किया था, तथा उसका टोंचा भी उसीके द्वारा बनाया गया था। धृतराष्ट्र स्वयं अपने सौ पुत्रों एवं साधियों की पीड़ा से पीड़ित था। व्यास भी दुःखी था, कारण उसका भी तो कुल नाश हुआ था। इस प्रकार इसके मन में राज्यग्रहण के संबंध में विरक्ति की भावना उठी, एवं इसने राज्य छोड़ कर वान-प्रस्थाश्रम स्वीकारने का निश्चय किया। इस समय, अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव, द्रौपदी आदि ने इसे गृहस्थाश्रम एवं राज्यसंचालन का महत्त्व समझाते हुए इसकी कटु आलोचना की।

युधिष्ठिर-अर्जुन-संवाद—इस समय हुआ युधिष्ठिर-अर्जुनसंवाद अत्यधिक महत्वपूर्ण है। अर्जुन ने इसे क्रुद्ध हो कर कहा, 'राज्य प्राप्त करने के पश्चात्, तुम भिक्षापात्र लेकर वानप्रस्थाश्रम का स्वीकार करोगे तो लोग तुम्हें हँसेंगे। तुम युद्ध की सारी बातें भूल कर आनेवाले राज्य-वैभव का विचार करो, जिससे तुम जीवन के सारे दुःखों को भूल जाओगे। किन्तु मैं जानता हूँ कि, तुम्हारे लिए यह असंभव है, क्यों कि, सुख के समय भी, जीवन की दुःखी यादगारें तुम्हें आती ही रहती हैं'।

इस पर युधिष्ठिर ने कहा, 'जिसे तुम सुख तथा दुःख कहते हो वह सापेक्ष है। विदेह देश का जनक राजा अपनी राजधानी मिथिला जलने पर भी शान्त रहा, क्यों कि, उसकी आध्यात्मिक संपत्ति अपार थी'। इस पर अर्जुन ने कहा, 'अपना राज्य जला कर वानप्रस्थाश्रम लेनेवाले जनक जैसे मूढ़ राजा का दृष्टान्त देना यहाँ उचित नहीं है। प्रजापालन एवं देवता, अतिथि एवं पंचमहाभूतों का पूजन यही राजा का प्रथम कर्तव्य है'। इस पर युधिष्ठिर ने कहा 'तुम केवल अरुविद्या ही जानते हो, धर्म एवं

शास्त्रों का उचित अर्थ तुम्हें समझना असंभव है। मैंने वेद, धर्म एवं शास्त्रों का अध्ययन किया है। इसी कारण धर्म का सूक्ष्म स्वरूप केवल मैं ही जानता हूँ। धन एवं राज्य से तप अधिक श्रेष्ठ है, जिससे मनुष्यप्राणि को सद्गति प्राप्त होती है'।

अंत में युधिष्ठिर एवं अर्जुन के बीच श्रीव्यास ने मध्यस्थता की। उसने कहा, 'राज्य से सुख प्राप्त होता ही या न हो, उसका स्वीकार करना ही उचित है। आपत्तजनों के सहवास की परिणति वियोग में ही होती है। इस कारण उनकी मृत्यु का दुःख करना व्यर्थ है। रही बात धन की, यज्ञ करने में ही धन की सार्थकता है।

राज्याभिषेक—धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों की मृत्यु से हस्तिनापुर के कुलवंश का राज्य नष्ट हुआ। बाद में कृष्ण ने इसका राज्याभिषेक किया, एवं मार्कंडेय ऋषि के कथनानुसार इससे प्रयागयात्रा करवायी (पद्म. स्व. ४०.४९)। तत्पश्चात् व्यास की आज्ञानुसार इसने तीन अश्वमेध यज्ञों का आयोजन किया (म. आश्र. ९०.१५; भा. १.१२.३४)।

इस यज्ञ में व्यास प्रमुख ऋत्विज था, एवं ऋक दारुभ्य, पैल, ब्रह्मा, यामदेव आदि सोलह ऋत्विज थे (म. आश्र. ७१.३)। जैमिनि अश्वमेध में इन सोलह ऋत्विजों के नाम दिये हैं (जै. अ. ६३)। इस यज्ञ के लिए द्रव्य न होने के कारण, इसने वह हिमवत् पर्वत से मरुतों से लाया (म. आश्र. ९.१९-२०)। इस यज्ञ की व्यवस्था इसने अपने भाईयों पर निम्न प्रकार से सौंपी थी:—
अश्वरक्षण-अर्जुन. राज्यपालन-भीम एवं नकुल; कौटुंबिक व्यवस्था-सहदेव (म. आश्र. ७१.१४-२०)।

इस यज्ञ के समय, इसने पृथ्वी का अपना लारा राज्य व्यास को दान में दिया, जो व्यास ने इसे लौटा कर उसके मूल्य का धन ब्राह्मणों को दान में देने के लिए कहा (म. आश्र. ९१.७-१८१)।

गर्बहरण—अश्वमेध यज्ञ में एक नेवला के द्वारा किये गये युधिष्ठिर के गर्बहरण की चमत्कृतिपूर्ण कथा महा-भारत में दी गयी है। अश्वमेध यज्ञ के पश्चात्, एक विचित्र नेवला इसके पास आया, जिसका आधा शरीर किसी ब्राह्मण द्वारा अन्नदान किया जाने पर छोड़े गये पानी में लोट लगाने के कारण, स्वर्णमय हो गया था। उसने आ कर युधिष्ठिर से कहा, 'आपके अश्वमेध यज्ञ की प्रशंसा सुन कर अपने आवे वने अंग को स्वर्णमय बनाने आया था। किन्तु, यहाँ यह शरीर स्वर्णमय न हो सका'। इससे यज्ञकर्ता युधिष्ठिर के मन में उत्पन्न हुआ अभिमान नष्ट

हो गया, तथा नेवले का अधोग भी स्वर्णमय हो गया (म. आश्र. ९२-९५; जै. अ. ६६; उच्छृति देखिये)।

धृतराष्ट्र का वनगमन—अश्वमेध यज्ञ के पश्चात् धृतराष्ट्र की अनुमति से युधिष्ठिर ने राज्यसंचालन आरंभ किया। पश्चात् धृतराष्ट्र ने अन्न-सत्याग्रह कर के, वन में जाने के लिए इससे अनुमति माँगी। यह अत्यधिक दुःखी हुआ, एवं उसे ही राज्य अर्पित कर इसने स्वयं वन में जाने की इच्छा प्रकट की (म. आश्र. ६.७-९)। पश्चात् व्यास के समझाने पर युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र को वन जाने की अनुमति दे दी (म. आश्र. ८.१)। चलते समय धृतराष्ट्र ने इसे राजनीति का उपदेश दिया (म. आश्र. ९-१२)।

वन में जाते समय धृतराष्ट्र ने अपने पूर्वजों का श्राद्ध करने के लिए हस्तिनापुर राज्य के क्रोशाध्यक्ष भीम के पास कुछ द्रव्य की याचना की। किन्तु भीम ने उसे देने से साफ इन्कार कर दिया। फिर युधिष्ठिर एवं अर्जुन ने अपने खानगी द्रव्य दे कर उसे बिदा किया (म. आश्र. १७)। बाद को यह धृतराष्ट्र से मिलने के लिए 'शत-यूषाम' में भी गया था (म. आश्र. ३१-३२)।

विदुर का निर्याण हिमालय में हुआ, जिस समय यह उसके पास था। विदुर की मृत्यु के पश्चात् उसकी प्राणज्योति युधिष्ठिर के शरीर में प्रविष्ट हुयी, जिस कारण यह अधिक सतेज बना (म. आश्र. ३३.२६)।

महाप्रस्थान—द्वारका में वृष्णि एवं यादव लोग आपस में झगड़ा कर के विनष्ट हुये। तत्पश्चात् हुए कृष्ण-निर्याण की वार्ता सुन कर वह अत्यधिक खिन्न हुआ। अभिमन्यु के ३६ साल के पुत्र परिशित् को राज्याभिषेक कर, एवं धृतराष्ट्र को वैश्य स्त्री से उत्पन्न मृत्युन्तु नामक पुत्र को प्रधानमंत्री बना कर, यह महाप्रस्थान के लिए निकल पड़ा। इस समय इसके पाण्डव बन्धु एवं द्रौपदी भी राज्य छोड़ कर इसके साथ निकल पड़े (भा. १.१५. ३७-४०)।

महाभारत के अनुसार, परिशित् का भार उसके गुरु कृपाचार्य पर सौंप कर युधिष्ठिर ने महाप्रस्थान की तैयारी की। परिशित् राजा की गृहव्यवस्था इसने उसकी दादी सुभद्रा के उपर सौंप दी, एवं इंद्रप्रस्थ का राज्य श्रीकृष्ण का प्रपौत्र यज्ञ को दिया, जो यादवसंहार के कारण निराश्रित बन गया था। इसके पूर्व, इसने राजवैभव छोड़ कर बल्लभ धारण किये एवं अग्निहोत्र का विसर्जन किया। इस तरह पाँच पांडव, द्रौपदी एवं इसके साथ सहजवश आया

हुआ एक कुत्ता भारत प्रदेश के लिए निकले, एवं पूरव की ओर चल पड़े।

'लौहित्य' नामक सलिलार्णव में अपने धनुष्य बाण विसर्जित कर ये निःशस्त्र हुये। पश्चात् दक्षिणीपश्चिम दिशा में मुड़ कर ये द्वारका नगरी के पास आये। अन्त में पुनः उच्चर की ओर मुड़ कर हिमालय में प्रविष्ट हुये। वहाँ इन्होंने वालुकार्णव एवं मेरुपर्वत के दर्शन लिये। पश्चात् इन्होंने स्वर्गारोहण प्रारंभ किया (म. महा. १-२)।

स्वर्गारोहण—स्वर्गारोहण के समय, मार्ग में द्रौपदी, सहदेव, नकुल, अर्जुन एवं भीमसेन ये एक एक कर क्रमशः गिर पड़े। अन्त में युधिष्ठिर एवं श्वानरूपधारी यमधर्म ही बाकी रहे। ये दोनों स्वर्गद्वार पहुँचते ही, स्वयं इंद्र रथ ले कर इसे सदेह स्वर्ग में ले जाने के लिए उपस्थित हुआ। यह रथ में बैठनेवाला ही था कि, कुत्ते ने भी इसके साथ रथ में बैठना चाहा, जिसे इंद्र ने इन्कार कर दिया। इसने कुत्ते के सिवा स्वर्ग में प्रवेश करना अमान्य कर दिया। फिर यमधर्म अपने सही रूप में प्रकट हुआ, एवं इन्द्र इन दोनों को सदेह अवस्था में स्वर्ग ले गया।

मृत्यु—महाभारत के भीष्म, द्रोण, कर्ण, दुर्योधन आदि व्यक्तियों की मृत्यु में जो नाट्य प्रतीत होता है, वह युधिष्ठिर की मृत्यु में नहीं है। इसकी मृत्यु में उदात्ता जरूर है, किन्तु आजन्म सत्य एवं नीतितत्त्व के पालन में एकाकी अस्तित्व वितानेवाला युधिष्ठिर अपनी मृत्यु में भी एकाकी रहा। सारे तत्त्वदर्शी एवं ध्येयवादी व्यक्ति अपनी आयु में तथा मृत्यु में एकाकी रहे, यही विधिघटना युधिष्ठिर की मृत्यु में पुनः एकत्र प्रतीत होती है।

स्वर्गप्रवेश—स्वर्ग में पहुँचते ही नारद ने इसकी स्तुति की, एवं इन्द्र ने इसकी उत्तम लोक में रहने की व्यवस्था की। किन्तु इसने स्वर्ग में प्रवेश करते ही अपने भाइयों के संबंध में पूछा। फिर यमधर्म ने इसकी सत्वपरीक्षा लेने के लिए, इसके सारे पाण्डव बांधव नर्कलोक में वास कर रहे हैं, ऐसा मायावी दृश्य दिखाया। यह दृश्य देख कर इसने यमधर्म से कहा, 'मैं अकेला स्वर्गलोक का उपभोग लेना नहीं चाहता हूँ। मेरे समस्त बांधव जिस नर्कलोक में वास कर रहे हैं, वही मैं उनके साथ रहना चाहता हूँ (म. स्व. २. १४)।

यमधर्म से भेंट—इस पर यमधर्म ने अपने अंशावतार से उत्पन्न युधिष्ठिर को साक्षात् दर्शन दिया एवं कहा, 'आज तक तीन बार मैंने तुम्हारी सत्वपरीक्षा लेनी चाही। किन्तु उन तीनों समय तुमने खुद को एक सत्वनिष्ठ शत्रिय

सावित किया है। इसी कारण मैं तुमसे अत्यधिक प्रसन्न हूँ' (म. स्व. ५.१९)।

यमधर्म के द्वारा निर्दिष्ट युधिष्ठिर की सत्वपरीक्षा के तीन प्रसंग निम्न हैं :—(१) यक्षप्रश्न, जिस समय यमधर्म ने यक्ष का रूप ले कर युधिष्ठिर के पाण्डव बांधवों में से किसी एक को जीवित करने का आश्वासन दिया था। इस समय युधिष्ठिर ने माद्री से उत्पन्न अपना सौतेला भाई सहदेव को जीवित करने को कहा था।

(२) स्वर्गारोहण के समय, यमधर्म ने कुत्ते का रूप धारण कर युधिष्ठिर की परीक्षा लेनी चाहीं। उस अवसर पर कुत्ते को साथ ले कर ही स्वर्ग में प्रवेश करने का निर्धार युधिष्ठिर ने प्रकट किया, एवं कुत्ते के बगैर स्वर्ग में प्रवेश करने से इन्कार कर दिया।

(३) स्वर्ग में प्रवेश करने के पश्चात्, इसने अपने भाईयों के साथ नरक में रहना पसंद किया।

पश्चात् युधिष्ठिर ने स्वर्ग में स्थित मन्दाकिनी नदी में स्नान कर अपने मानवी शरीर का त्याग किया, एवं यह दिव्य लोक में गया (म. स्व. ३.१९)। वहाँ इसकी श्रीकृष्ण, अर्जुन आदि की भेंट हुयी। अन्त में यह यमधर्म के स्वरूप में मिलीन हुआ (म. स्व. ३.१९)।

परिवार—युधिष्ठिर को द्रौपदी एवं पौरवी नामक दो पत्नियाँ थी। उन में से द्रौपदी से इसे प्रतिविष्य एवं पौरवी से देवक नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (भा. ९.२२. २७-३०)। महाभारत में इसकी दूसरी पत्नी का नाम देविका, एवं उससे उत्पन्न इसके पुत्र का नाम योधिय दिया गया है (म. आ. ९.०.८३)।

भारतीय युद्ध में इसके दोनों पुत्र मारे गये, जिस कारण इसके पश्चात् अभिमन्यु का उत्तरा से उत्पन्न पुत्र परिशित् हस्तिनापुर का राजा बन गया (भा. १.१५-३२)।

परिशित् राजा के राज्यारोहण से द्वापर युग समाप्त हो कर, कलियुग प्रारंभ हुआ ऐसा माना जाता है। पुराणों में प्राप्त प्राचीनकालीन राजवंश का इतिहास भी इसी घटना के साथ समाप्त होता है। परिशित् राजा के उत्तरकालीन राजवंशों की पुराणों में प्राप्त जानकारी वहाँ भविष्यकालीन कह कर बतायी गयी है (परिशित् देखिये)।

भायु—युधिष्ठिर की आयु के संबंध में सविस्तृत जानकारी महाभारत कुम्भकोणम् संस्करण में प्राप्त है। किन्तु मांडारकर संहिता में उस जानकारी को प्रक्षिप्त माना गया है (म. आ. परि. १. क्र. ६७. पंक्ति ४५-६५)।

इस जानकारी के अनुसार, सोलहवें वर्ष में यह सर्वप्रथम हस्तिनापुर आया। वहाँ तेरह वर्ष विताने के बाद छः महीने तक जतुग्रह में, छः महीने एकचक्रा में, एक वर्ष द्रुपद के घर में, पाँच वर्ष दुर्योधनादि के साथ तथा तेइस वर्ष इन्द्रप्रस्थ में वितायें। बाद में कौरवों द्वारा शूतकीड़ा में हार जाने के कारण बारह वर्ष वनवास तथा एक वर्ष अज्ञातवास में रहा। अज्ञातवास के उपरांत युद्ध हुआ, तथा युद्ध के बाद इसने छत्तीस वर्षों तक राज्य किया। इस प्रकार इसने अपने जीवन के एक सौ आठ वर्ष वितायें। इसके छोटे भाई इससे क्रमशः एक एक वर्ष से छोटे थे। कई ग्रंथों के अनुसार इसने नौ वर्षों तक राज्य किया था (गर्ग. सं. १०.६०.९)। किन्तु यह जानकारी गलत प्रतीत होती है।

कालनिर्णय—पुराणों में प्राप्त परंपरा के अनुसार, भारतीय युद्ध का काल ई. पू. ३१०२ माना गया है। युधिष्ठिर के नाम से 'युधिष्ठिर शक' अथवा 'कलि अब्द' नामक एक शक भी अस्तित्व में था, जिसका प्रारंभकाल पुराणों में ई. पू. ३१०२ बताया गया है। किन्तु शिलालेख ताम्रपटादि कौनसे भी ऐतिहासिक साहित्य में 'युधिष्ठिर शक' का निर्देश प्राप्त नहीं है। इस कारण आधुनिक योरिपियन विद्वान् 'युधिष्ठिर शक' की धारणा निर्मूल एवं निराधार बताते हैं।

आधुनिक विद्वानों के अनुसार भारतीय युद्ध का काल ई. पू. १४०० माना जाता है (हिस्ट्री ऑफ़ इंडियन पीपल १. ३०४)। यद्यपि वेद एवं ब्राह्मण ग्रंथों में भारतीय युद्ध का निर्देश प्राप्त नहीं है, फिर भी सूत्र ग्रंथों में इस युद्ध का निर्देश प्राप्त है (आश्व. ग. ३. ४.४; सां. श्रौ. १५.१६)। पाणिनि के काल में भारतीय युद्ध में भाग लेनेवाले कृष्ण-अर्जुनादि व्यक्तियों का देवता मान कर पूजा होने लगी थी।

तिथिनिर्णय—महाभारत में प्राप्त तिथिवर्णनों से प्रतीत होता है कि, उस समय चान्द्रमास का उपयोग किया जाता था। पाण्डवों ने अपना वनवास भी चान्द्रवर्ष के अनुसार ही विताय था (म. वि. ४.२.३-६; ४७)।

युधिष्ठिर के जीवन में से कई घटनाओं का तिथिवर्णन महाभारत में प्राप्त है, जो निम्न प्रकार है :-

युधिष्ठिर का जन्म—अश्विन शुक्ल ५।

कौरवों से शूत—अश्विन कृष्ण ८।

वनवास का प्रारंभ—कार्तिक शुक्ल ५।

कौरवों की शोषयात्रा—ज्येष्ठ कृष्ण ८।

अज्ञातवास की समाप्ति—उद्येष्ठ कृष्ण ८।

अभिमन्यु एवं उत्तरा का विवाह—उद्येष्ठ कृष्ण ११।

भारतीय युद्ध का प्रारंभ—मार्गशीर्ष शुक्ल १३।

अभिमन्यु की मृत्यु—पौष कृष्ण ११।

भारतीय युद्ध की समाप्ति—पौष अमावस्या।

युधिष्ठिर का हस्तिनापुर प्रवेश—माघ शुक्ल १।

अश्वमेध यज्ञ का प्रारंभ—चैत्र शुक्ल १५।

युधामाधि—एक राजा, जो दाशराज युद्ध में सुदास के द्वारा मारा गया था (ऋ. ७.१८.२०)।

युयुत्सु—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का वैश्य स्त्री से उत्पन्न पुत्र (म. आ. ५७.१९, ५२८ पंक्ति. ४; १७७. २)। क्षत्रिय पिता को वैश्य स्त्री से उत्पन्न होने के कारण इसे 'करण' भी कहते थे। महाभारत में 'वरण' एक मित्र जाति का नाम बताया गया है।

धृतराष्ट्र का पुत्र हो कर भी, कौरवों का पाण्डवों के साथ का दुर्व्यवहार इसे पसंद न था, जिस कारण इसकी सद्भावना हमेशा पाण्डवों के ओर ही थी। दुर्योधन की प्रेरणा से भीमसेन को विषयुक्त अन्न खिलाया जाने की सूचना, इसने पहले ही उसे दी थी (म. आ. ११९. ४०)।

भारतीय युद्ध में यह प्रथम कौरवों के पक्ष में शामिल हुआ था (म. भा. ४१. ९५)। किन्तु बाद में यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल हुआ (म. द्रो. २२.२७)। यह कोदाओं में श्रेष्ठ, उत्तम धनुर्धर, धीर एवं बलवान् था। इसके श्व के अश्व शक्तिशाली एवं पृथुल थे (म. द्रो. २२.२७)। भारतीय युद्ध में इसका निम्नलिखित योद्धाओं से युद्ध हुआ था:—सुबाहु (म. द्रो. २४.१४), भगदत्त (म. द्रो. २५.४८-५१), उल्क (म. क. १८.१-१०);

भारतीय युद्ध से बचे हुये लोगों में से यह एक था। युद्ध के पश्चात्, युधिष्ठिर के द्वारा धृतराष्ट्र की सेवा में इसे नियुक्त किया गया था (म. शां. १४१.१६)। अश्वमेध यज्ञ के पूर्व पाण्डव जब धृतराष्ट्र से मिलने वन गये थे, एवं मरुत्त का धन लाने हिमालय गये थे, उन दोनों समय हस्तिनापुर की रक्षा का भार इसी पर सौंपा गया था (म. आश्र. ३०.१५; आश्र. ६२.२३)।

पाण्डवों के महाप्रस्थान के समय, परिक्षित् राजा की एवं कुरु राज्य की रक्षा का भार भी युधिष्ठिर ने इसी पर निर्भर किया था (म. महा १.६-७)। इससे प्रतीत होता है कि, धृतराष्ट्र का पुत्र हो कर भी युधिष्ठिर इससे काफी प्रेम एवं विश्वास करता था।

२. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

युयुध—(स. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो वस्वनन्त राजा का पुत्र था (भा. ९.१३.२५)।

युयुधान—(सो. वृष्णि.) सुविख्यात यादव राजा 'सात्यकि' का नामान्तर (सात्यकि देखिये)।

युवन् कौशिक—एक आचार्य, जिसके 'शांयुद्ध' यज्ञ के संबंधित मंत्रों के उद्धरण प्राप्त हैं (कौ. सू. ९.११)।

युघनस्—लेख देवों में से एक।

युवनाश्व—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो युवनाश्व (प्रथम) नाम से सुविख्यात है। भागवत के अनुसार यह चंद्रराजा का, विष्णु के अनुसार आर्द्र का, मत्स्य के अनुसार इन्दु का, एवं वायु के अनुसार आंश्र राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम श्रावस्त था।

२ (सू. इ.) इक्ष्वाकुवंश में उत्पन्न एक सुविख्यात नरेश, जो युवनाश्व (द्वितीय) नाम से सुविख्यात है। महाभारत में इसे सुयुग्म राजा का पुत्र कहा गया है, जिस कारण इसे सौयुग्मि नामान्तर भी प्राप्त था। विष्णु एवं वायु के अनुसार यह प्रसेनजित् राजा का, मत्स्य के अनुसार रणाश्व का एवं भागवत के अनुसार सेनजित् का पुत्र था।

इसकी सौ पत्नियाँ थीं, जिनमें से गौरी इसकी पटरानी थी। बहुत वर्षों तक इसे पुत्र न था। इसलिए पुत्रप्राप्ति के लिए भृगु ऋषि को आश्वर्य बना कर इसने एक यज्ञ का आयोजन किया। यज्ञसमारोह की रात्रि में अत्यधिक प्यासा होने के कारण, इसने भृगुऋषि के द्वारा इसकी पत्नियों के लिए सिद्ध किया गया जल गलती से प्राशन किया। इसी जल के कारण, इसमें गर्भस्थापना हो कर इसकी त्रायी कुत्री से 'मांघातृ' नामक सुविख्यात पुत्र का जन्म हुआ (म. व. १९.३.३; भा. ९.६.२५-३२; मांघातृ देखिये)।

इसकी गौरी नामक पत्नी पौरवराजा मतिनार की कन्या थी। वायु में इसके द्वारा गौरी को शाप दिये जाने की एक कथा प्राप्त है, जिस कारण वह बाहुदा नामक नदी बन गयी (वायु. ८८.६६; ब्रह्मांड. ३.६३.६७; ब्रह्म. ७. ९१; ह. वं १. १२. ५)।

इसकी एक कन्या का नाम कावेरी था, जो गंगा नदी का ही मानवी रूप थी (ह. वं. १.२७.९)। अपनी इस कन्या को इसने नदी बनने का शाप दिया, जो आज ही नर्मदा नदी की सहायक नदी के नाते विद्यमान है (मत्स्य. १८९. २-६)।

अपने पूर्ववर्ती रैवत नामक राजा से इसे एक दिव्य खड्ग की प्राप्ति हुयी थी, जो इसने अपने वंशज रघु

राजा को प्रदान किया था (म. शां. १६०.७६)। यह एक सुविख्यात दानी राजा था, जिसने अपनी सारी पत्नियाँ एवं राज्य ब्राह्मणों को दान में दिया था (म. शां. २१६. २५)।

३. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो युवनाश्व (तृतीय) नाम से सुविख्यात था। यह मांधातृपुत्र अंबरीष राजा का पुत्र था। मांधातृ एवं इसके वंशज क्षत्रिय ब्राह्मण कहलाते थे, जिस कारण इसे भी यही उपाधि प्राप्त थी। यह एवं इसका पुत्र हरित, अंगिरस ब्राह्मण कुल में प्रविष्ट हुये थे। एक वैदिक सूक्तद्रष्टा के नाते से इसका उल्लेख प्राप्त है (ऋ. १०.१३४)। इसे अंगिरस कुल का एक मंत्रकार भी कहा गया है। इसके पितामह मांधातृ ने एक प्रवर के नाते इसका स्वीकार किया था (भा. ९.७.१)।

४. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पृथु राजा का पुत्र था।

५. शूलिन् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

यूथग—चाक्षुष मन्वन्तर का देवगण।

यूथप—धूम्रपराशरकुलोत्पन्न एक ऋषि।

यूपकेतु—इक्ष्वाकुवंशीय शत्रुघातिन् राजा का नामान्तर (शत्रुघातिन् देखिये)।

२. कुरुवंशीय भूरिश्रवस् राजा का नामान्तर (म. द्रो. २४.५३)।

यूपध्वज—भूरिश्रवस् राजा का नामान्तर (म. स्त्री. २४.५)।

यूपाक्ष—रावण का एक सेनापति, जो हनुमत् के द्वारा मारा गया था (वा. रा. सुं. ४६.३२)।

२. एक राक्षस, जो रामरावण युद्ध में मैद नामक वानर के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ७६.३४)।

योग—एक ऋषि, जो धर्म एवं क्रिया के पुत्रों में से एक था (भा. ४.१.५१)। यह तपस्वी, जितेंद्रिय एवं त्रैलोक्य में सुविख्यात था (म. अनु. १५०.४५)।

योगदायन—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

योगवती—मेना की तृतीय कन्या, जो जैगीषव्य ऋषि की पत्नी थी (पद्म. सू. ९)।

योगस्तु—(सो. पूर.) पूरुवंशीय युगदत्त राजा का नामान्तर (युगदत्त देखिये)।

योगीश—जैगीषव्य नामक शिवावतार का एक शिष्य।

योगेश्वर—शिव का प्रथम अवतार, जो वैवस्वत मनु के रूप में इस पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था। यह बराह

कल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वन्तर में, द्वापर युग शुरू होने के पहले अवतीर्ण हुआ था।

२. विष्णु का एक अवतार, जो देवसावर्णि मन्वन्तर में बृहतीपुत्र देवहोत्र के रूप में अवतीर्ण हुआ था (भा. ८. १३.३२)।

३. रौच्य मन्वन्तर का एक देवावतार।

४. एक देवता का समूह, जो कल्पियुग के श्वेतकली नामक प्रथम खण्ड में उत्पन्न हुआ था। इसमें निम्नलिखित देवता सम्मिलित थे :—१. रुद्र, २. सुतार, ३. तारण, ४. सुहोत्र, ५. कंकण, ६. लोक, ७. जैगीषव्य, ८. दधिवाहन, ९. ऋषभ, १०. उग्र, ११. अत्रि, १२. गौतम, १३. वेदशीर्ष, १४. शोकर्ण आदि (स्कंद. १.२.४०)।

५. एक सुविख्यात योगीसमूह, जो भागवत धर्म के सर्वश्रेष्ठ ज्ञाता माने जाते हैं। ये ऋषभ ऋषि के पुत्र थे, एवं नग्न अवस्था में सर्वत्र घूमते थे। इस समूह में निम्नलिखित योगी शामिल थे :— कवि, हरि, अंतरिक्ष, प्रबुद्ध, पिप्पलायन, अविहोत्र, तुमिल, चमस एवं करभाजन।

इस योगीसमूह ने सिधित्थानरेश निमि के यज्ञ में भाग ले कर, उसे भागवतधर्म का उपदेश किया था (भा. ११.२-५)।

योजनगंधा—व्यासमाता सत्यवती का नामान्तर (सत्यवती देखिये)।

यौगंधरि—सात्व लोगों का एक नामान्तर (मंत्रपाठ २.११-१२)। युगंधर के वंशज होने से इन्हे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

यौघयान—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

यौधेय—(सो. कुरु.) युधिष्ठिर का एक पुत्र, जो उसे शैब्य गोवासन राजा की कन्या देविका से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०.८३)।

२. (सो. कुरु.) एक राजा, जो भस्व के अनुसार प्रतिविंध्य राजा का पुत्र था।

३. एक जातिविशेष, जो युधिष्ठिर के राज्यय यज्ञ में भेंट ले कर उपस्थित हुयी थी (म. स. ५.२. १४)।

यौन—यवन जाति का नामान्तर (यवन देखिये)।

यौयुधान अथवा **यौयुधानि**—यादव राजा सात्वकि का एक पुत्र, जो यादवों के हत्याकांड से बचे हुये वीरों में से एक था। युधिष्ठिर ने इसे सरस्वती नदी के तट पर स्थित इन्द्रप्रस्थ का राज्य प्रदान किया था (म. मौ. ८. ६९)। महाभारत के कई संस्करणों में इसकी माता का नाम सरस्वती बताया गया है, जो अयोग्य प्रतीत होता है।

यौवनाश्व—युवनाश्व राजा के पुत्र मांघातृ का पैतृक नाम (मांघातृ देखिये)।

२. भद्रावती नगरी के श्वेतपर्ण राजा का पैतृक नाम (श्वेतपर्ण यौवनाश्व देखिये)।

३. इक्ष्वाकुवंशीय युवनाश्व (तृतीय) राजा का नामान्तर (युवनाश्व ३. देखिये)।

यौवनाश्वि—मांघातृ राजा का नामान्तर।

र

रक्त—एक असुर, जो महिषासुर का पुत्र था। यह स्वायंभुव मन्वन्तर का सुविख्यात असुर हिरण्याक्ष के समान पराक्रमी था। इसे बल एवं अतिबल नामक दो पुत्र थे।

इसकी सेना अत्यंत प्रचंड थी, जिसके बल से इसने इन्द्र को भी परास्त किया था। इसके भूमाक्ष आदि तैत्तरीय सेनापति थे, जो प्रत्येकी एक हजार अक्षौहिणी सेना के अधिपति थे (स्कंद. ७.१.११९)।

रक्तकर्णी—एक राक्षसी, जो रक्षस् एवं ब्रह्मधना की कन्या थी।

रक्तबीज—एक असुर, जो शुंभ एवं निशुंभ के पक्ष में शामिल था। इसे रुद्र का वरदान था कि, जब भी यह घायल हो कर इसके खून की बूँद भूमि पर गिरेगी, उनसे इसके सादृश उतने ही राक्षस निर्माण होंगे। रुद्र के इस वर के कारण, यह अत्यंत उन्मत्त बन गया था।

एक बार यह शुंभ-निशुंभ के पक्ष में चामुंडा देवी से युद्ध करने गया। इस युद्ध में मध्यस्थता करते समय, इसने बड़ी उदण्डता से देवी से कहा, 'तुम शुंभ-निशुंभ की पत्नी हो जाओ, नहीं तो इस युद्ध में तुम्हारा पराजय अटल है।' फिर देवी ने अत्यंत भयंकर रूप धारण कर इसका सारा खून भूमि पर एक ही बूँद छिड़कने का मौका न देते हुये प्राशन किया। इस तरह देवी ने इसका एवं इससे उत्पन्न राक्षसों का संपूर्ण विनाश किया (दे. भा. ५.२७-२९; मार्क. ८५; शिव. उमा. ४७; देवी-चामुंडा देखिये)।

रक्तान्ध—पुतराक्षकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५.२.१६)।

रक्ष—एक व्यास (व्यास देखिये)।

रक्षस्—एक राक्षस, जो क्रव्यप एवं खशा का पुत्र था। इसका जन्म प्रातःकाल के समय हुआ था। इसकी

पत्नी का नाम ब्रह्मधना था, जिससे इसे नौ पुत्र एवं चार कन्याएँ उत्पन्न हुयीं थी (ब्रह्मधना देखिये)।

इसका सविस्तृत स्वरूपवर्णन ब्रह्मांड में निम्न प्रकार प्राप्त है :—यह तीन पैरोवाला, तीन हाथोंवाला, तीन सिरवाला, काली आँखेवाला, खड़े बालवाला, एवं पीली मूँछेवाला था। इसका शरीर शक्तिशाली किंतु कद में छोटा था। इसके स्कंध विशाल थे, किन्तु उदर अत्यंत कृश था। यह प्रवाहु, जिहास्य, शंकुकर्ण, पिंगलोद्बृत्तनयन, जटिल, महोरस्क, पृथुघोष, अस्थूल एवं लंबमेढ्राण्डपिंडक था। यह अत्यंत विरूप था, जिसका मुँह कानों तक फटा हुआ था, एवं नाक पैली हुयी थी। इसे केवल आठ ही दाँत थे। कौनसी भी शीला का यह भुष्टिप्रहार से चकनाचूर कर देता था, जिस कारण इसे 'शीलासंहनन' उपाधि प्राप्त हुयी थी (ब्रह्मांड. ३.७.४७)।

२. एक मानव जातिविशेष, जो वैदिक साहित्य में प्रायः सर्वत्र मनुष्यजाति के शत्रुओं, पार्थिव दैत्यों, एवं राक्षसों के लिए प्रयुक्त किया गया है।

वैदिक साहित्य में असुरों, राक्षसों एवं पिशाचों को क्रमशः देवों, मनुष्यों एवं पितरों का विरोधी कहा गया है (तै. सं. २.४.१)। इस कारण, जहाँ वृत्र, पिपु, शंबर आदि इंद्र के शत्रुओं को असुर कहा गया है, वहाँ मनुष्यजाति के यज्ञों का विनाश करनेवाले यातु एवं यातुधान राक्षसों को रक्षस् कहा गया है। वैदिक साहित्य में दैत्य, दानव एवं असुर शब्द समानार्थी रूप में प्रयुक्त किये गये हैं।

पाणिनि के अष्टाध्यायी में असुर, रक्षस् एवं पिशाच तीन स्वतंत्र मानव जातियाँ मानी गयी हैं, जिनके 'आयुध-जीवीसंत्रो' का निर्देश वहाँ स्वतंत्र रूप से किया गया है।

पौराणिक साहित्य एवं महाभारत, रामायण में रक्षस्, असुर, दैत्य इनके नामों से सारे शब्द समानार्थी मान कर प्रयुक्त किये गये हैं; जिससे प्रतीत होता है कि, उस समय मनुष्य एवं देवों के शत्रुओं के लिए ये सारे नाम उलझे हुए रूप में प्रयुक्त हो जाने लगे थे। उपनिषदों में भी मानवी देह को आत्मा माननेवाले दुष्टात्माओं को असुर अथवा रक्षस् कहा गया है।

ऋग्वेद में पचास से अधिक बार रक्षसों का निर्देश प्राप्त है, जहाँ प्रायः सर्वत्र किसी देवता को इनका विनाश करने के लिए आवाहन किया गया है, अथवा रक्षसों के संहारक के रूप में देवताओं की स्तुति की गयी है।

रक्षसों का वर्णन करनेवाले ऋग्वेद के दो सूक्तों में, इन्हें यातु (ऐन्द्रजालिक) नामान्तर प्रदान किया गया है। (ऋ. ७.१०४.१०; ८७)। यजुर्वेद में 'यतः' शब्द का प्रयोग एक दुष्ट जाति के रूप में किया गया है, एवं इन्हें रक्षसों की उपजाति कहा गया है।

स्वरूपवर्णन—अथर्ववेद में रक्षसों का अत्यंत विस्तृत स्वरूपवर्णन प्राप्त है, जहाँ उन्हें प्रायः मानवीय रूप हो कर भी, उनमें कोई न कोई दानवी विरूपता होने का वर्णन प्राप्त है। इन्हें तीन सर, दो मुख, रीछें जैसी ग्रीवा, चार नेत्र, पाँच पैर रहते थे, इनके पैर पीछे की ओर मुड़े हुये एवं उँगलीविहीन रहते थे। इनके हाथों पर सिंग रहते थे (अ. वे. ८.६)। इनका वर्ण नीला, पीला अथवा हरा रहता था (अ. वे. ११.२२)। इन्हें मनुष्यों जैसी पत्नि, पुत्र आदि परिवार भी रहता था (अ. वे. ५.२२)।

नानाविध रूप—ये लोग कुत्ता, गध, उद्धक, बंदर आदि पशुपक्षियों के वेशान्तर में (ऐन्द्रजालिक विद्या में) अत्यंत प्रवीण थे (अ. वे. ७.१०४)। माई, पति अथवा प्रेमी का वेश ले कर ये लोग स्त्रियों के पास जाते थे, एवं उनकी संतानों को नष्ट कर देते थे (अ. वे. १०.१६२)।

आहार—ये लोग मनुष्यों एवं अश्वों का माँस भक्षण करते थे एवं गायों का दूध पिते थे (ऋ. १०.८७)। माँस एवं रक्त की अपनी क्षुधा तृप्त करने के लिए, ये लोग प्रायः मनुष्य के शरीर में प्रवेश कर उन पर आक्रमण करते थे। मनुष्यों के शरीर में इनका प्रवेश (आ विश) रोकने के लिए ऋग्वेद में अग्नि का आवाहन किया गया है।

मनुष्यों को पीडा—ये लोग प्रायः भोजन के समय मुख से मनुष्यों के शरीर में प्रवेश करते थे, एवं तत्पश्चात् उनके माँस को विदीर्ण कर उन्हें व्याधी-ग्रस्त कर देते थे।

(अ. वे. ५.२९)। ये मनुष्यों की वाचाशक्ति नष्ट कर देते थे, एवं उनमें अनेक विकृतियाँ निर्माण कर देते थे।

विचरण—संध्यासमय अथवा रात्रि के समय ये लोग विचरण करते थे। उस समय, ये लोग नर्तन करते हुए, गडों की भाँति चिह्नित हुए, अथवा खोपड़ी की अस्थि से जलपान करते हुए नज़र आते थे (अ. वे. ८.६)। इनके विचरण का समय अमावास्या की रात्रि में रहता था। पूर्व दिशा में प्रकाशित होनेवाले सूर्य से ये डरते थे (अ. वे. १.१६; २.६)।

ये लोग दिव्य यज्ञों में विघ्न उत्पन्न कर देते थे, एवं हवि को इधर उधर फेंक देते थे (ऋ. ७.१०४)। ये पूर्वजों की आत्माओं का रूप धारण कर पितृयज्ञ में भी बाधा उत्पन्न करते थे (अ. वे. १८.२)।

अग्नि से विरोध—अंधकार को भगानेवाला एवं यज्ञ का अधिपति अग्नि रक्षसों का सर्वश्रेष्ठ संहारक माना गया है। वह इन्हें भस्म करने का, भगाने का एवं नष्ट करने का काम करता है (ऋ. १०.८७)। इसी कारण अग्नि को 'रक्षोहन्' (रक्षसों का नाश करनेवाला) कहा गया है।

ये केवल अपनी इच्छा से नहीं, किन्तु अभिचारियों के द्वारा बहकाने से मनुष्यजाति को दुःख पहुँचाते हैं। इसी कारण रक्षसों को बहकानेवाले अभिचारियों को ऋग्वेद में 'रक्षोयुञ्ज' (रक्षसों को कार्यप्रवण करनेवाला) कहा गया है (ऋ. ६.६२)। अथर्ववेद में अन्यत्र रक्षसों का प्रार्थना की गयी है कि, वे उन्हीं को भक्षण करे जिन्होंने इन्हें भेजा है (अ. वे. २.२४)।

व्युत्पत्ति—माषाशास्त्रीय दृष्टि से रक्षस् शब्द 'रक्ष्' (क्षति पहुँचाना) धातु से उत्पन्न माना जाता है। किन्तु कई अभ्यासकों के अनुसार, यहाँ रक्ष् धातु का अर्थ रक्षित करना लेना चाहिये, एवं 'रक्षस्' शब्द की व्युत्पत्ति 'बह, जिससे रक्षा करना चाहिये' माननी चाहिये। वर्गेन के अनुसार, ये लोग किसी दिव्य संज्ञा के 'रक्षक' (लोभी) थे, जिस कारण इन्हें रक्षस् नाम प्राप्त हुआ था।

रक्षस् कल्पना का विकास—दैनिक जीवन में मनुष्य-जाति पर उपकार करनेवाले आधिभौतिक शक्ति को प्राचीन साहित्य में देव नाम दिया गया। उसी तरह मनुष्यजाति को विनाश कर उन्हें क्षति पहुँचानेवाले दुष्टात्माओं की कल्पना विकसित हो गयी, जिसका ही विभिन्न रूप असुर, रक्षस्, पिशाच आदि में प्रतीत होता है। इस तरह इन सारी जातियों को मनुष्यों को नष्ट करनेवाले दुष्टात्माओं का वैयक्तीकृत रूप कहा जा सकता है।

इस कल्पना का प्रारंभिक रूप इंद्र एवं वृत्रासुर के युद्ध में प्रतीत होता है। बाद में वही कल्पना क्रमशः देवों एवं असुरों के दो परस्परविरोधी एवं संघर्षरत दलों के रूप में विकसित हुई।

असुरों का वैयक्तिकरण—वैदिक साहित्य में रक्षस् एवं पिशाचों की अपेक्षा, असुरों का वैयक्तिकरण अधिक प्रभावशाली रूप में आविष्कृत किया गया है, जहाँ देवों से विरोध करने वाले निम्नलिखित असुरों का निर्देश स्पष्ट रूप से प्राप्त है:—अनर्घानि (ऋ. ८.३२); अर्घुद (ऋ. १०.६७); इलीविश (ऋ. १.१.३३); उरण (ऋ. २.१४); चुमुरि (ऋ. ६.२६); त्वष्ट (ऋ. १०.७६); दम्भीक (ऋ. २.१४); धुनि (२.१५); नमुत्ति (ऋ. २.१४.५); गेमु (ऋ. १०.१२८); रुषिक्रा (ऋ. २.१४.५); क्ल (ऋ. १०.६७); वचिन् (ऋ. ७.९९); विश्वरूप (ऋ. १०.८); वृत्र (ऋ. ८.७८); शुष्ण (ऋ. ४.१६); श्रुविद (ऋ. ८.३२); स्वर्मानु (ऋ. ५.४०)। मैत्रायणि संहिता में कुसितापी नामक एक राक्षसी का निर्देश प्राप्त है, जिसे कुसित की पत्नी कहा गया है (मै. सं. ३.२.६)।

ऋग्वेद में—स्वयं देवता हो कर भी, जिनमें मायावी अथवा गुह्यशक्ति हों, ऐसे देवों को भी ऋग्वेद में 'असुर' कहा गया है। इससे प्रतीत होता है कि, असुरों की दुष्टता की कल्पना उत्तर ऋग्वेदकालीन है। ऋग्वेदरचना के प्रारंभिक काल में गुह्य शक्ति धारण करनेवाले सभी देवों को 'असुर' उपाधि प्रदान की जाती थी। जेद अवेस्ता में भी असुरों का निर्देश, 'अहुर' नाम से किया गया है। ऋग्वेद एवं अवेस्ता में असुर (अहुर) शब्द, कई जगह ऐसी सर्वोच्च देवताओं के लिए प्रयुक्त किया गया है, जो परमप्रतापी माने गये हैं। इतरतुष्ट्र धर्म का आद्य संस्थापक अहुर महद् स्वयं एक असुर ही था।

इरान में असुरपूजा—कई अभ्यासकों के अनुसार, वैदिक आर्य प्राचीन पंजाब देश में आये, उस समय उनमें 'सुर' एवं 'असुर' दोनों देवों की पूजा पद्धति शुरु थी। कालोपरान्त वैदिक आर्यों की दो शाखाएँ उत्पन्न हुयी, जिनमें से असुर देवों की उपासना करनेवाले वैदिक आर्य मध्य एशिया में स्थित इरान में चले गये। दूसरी शाखा भारत में रह गयी, जिसमें सुर देवों की पूजा जारी रही। इसी कारण उत्तरकालीन भारतीय वैदिक साहित्य में 'असुर' देव निष्ठ एवं गर्हणीय माने जाने लगे, एवं उन्हें देवताविरोधी मान कर उनका चरित्रचित्रण उत्तरकालीन

वैदिक साहित्य में किया गया। भारतीय वैदिक आर्यों में सुर देवों की पूजा प्रस्थापित होने के पूर्वकाल में प्रायः सभी वैदिक देवताओं को 'असुर' कहा गया है, जिनके नाम निम्नलिखित हैं:—अग्नि (ऋ. ३.३.४); इन्द्र (ऋ. १.१.७४.१); त्वष्ट (ऋ. १.१.१०.३); पर्जन्य (ऋ. ५.८.३.६); पूषन् (ऋ. ५.५.१.११); मरुत् (ऋ. १.६४.२)।

उपनिषदों में—छांदोग्य उपनिषद में विरोचन दैत्य की कथा प्राप्त है, जिसमें देव एवं असुरों के जीवन एवं आत्म-ज्ञानविषयक तत्त्वज्ञान का विभेद अत्यंत सुंदर ढंग से दिया गया है। उस कथा के अनुसार, प्रजापति के मिथ्याकथन को सही मान कर, विरोचन दैत्य आँखों में, आइने में, एवं पानी में दिखनेवाले स्वयं के परछाई को ही आत्मा समझ बैठा। इस तरह छांदोग्य उपनिषद के अनुसार, मानवी देह का अथवा उसकी परछाई को आत्मा समझनेवाले तामस लोग असुर कहलाते हैं। आंग चल कर, इन्ही असुर लोगों की परंपरा देहबुद्धि को आत्मा मानने की मूल करनेवाले चावांक आदि तत्त्वज्ञों ने चलायीं (छां. उ. ८.७; विरोचन देखिये)।

अष्टाध्यायी में—शागिनि के अष्टाध्यायी में रक्षस्, असुर आदि लोगों का अलग अलग निर्देश प्राप्त है। वहाँ निम्नलिखित असुरों का निर्देश देवों के शत्रु के नाते से किया गया है:—दिति, जो दैत्यों की माता थी (पा. सू. ४.१.८५); कद्रु, जो सर्पों की माता थी (पा. सू. ४.१.७१)। इनके अतिरिक्त निम्नलिखित असुर जातियों का भी निर्देश अष्टाध्यायी में प्राप्त है:—असुर (पा. सू. ४.४.१२३); रक्षस् (पा. सू. ४.४.१२१); यातु (पा. सू. ४.४.१२१)। इसी ग्रंथ में 'आसुरी माया' का निर्देश भी प्राप्त है, जिसका प्रयोग असुर विद्या के लिए होता था (पा. सू. ४.४.१२३)।

अष्टाध्यायी में असुर, पिशाच एवं रक्षस् इन तीनों जातियों का निर्देश 'आयुषजीवी' संघों में किया गया है, जिनकी जानकारी निम्नप्रकार है:—

(१) असुर—पशुसंघ की भाँति असुर लोग भी मध्य एशिया में रहते थे, जिनका निवासस्थान आयुषनिक असिरिया में था। ये लोग वैदिक आर्यों के पूर्वकाल में भारतवर्ष में आये थे, एवं सिंधु-घाटी में स्थित सिंधु सभ्यता के जनक संभवतः यही थे। बहिस्रून के शिलालेख में इनका निर्देश 'अयुरा' एवं 'असुर' नाम से किया गया है। अष्टाध्यायी में पशु आदि आयुषजीवी गण में

इन्हें समाधिष्ट किया गया है (पा. सु. ५.३.११७; पश्चादिगण)। भंडारकरजी के अनुसार, शतपथ ब्राह्मण में असुरों के मगध (दक्षिण विहार) में स्थित उपनिवेशों का निर्देश प्राप्त है।

(२) रक्षस्—उत्तरी ब्रह्मचिस्थान के चगाई प्रदेश में रहनेवाले आधुनिक रक्षानी लोग संभवतः यही हंगि। इन्हे राक्षस भी कहते थे।

(३) पिशाच—प्राचीन वाङ्मय में कच्चा मॉस खानेवाले लोगों को ' पिशाच ' सामुहिक नाम प्रदान किया गया है। श्रीअरसन के अनुसार, उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रदेश में दरदिस्थान एवं चित्ताराल प्रदेश के लोगों में कच्चा मॉस खाने का रिवाज था, जिस कारण, इस प्रदेश के लोग ही प्राचीन पिशाच लोग होने की संभावना है। बर्नेल के अनुसार, आधुनिक लमगान प्रदेश में रहनेवाले पशाई काफ़ि लोग ही प्राचीन पिशाच लोग थे (पिशाच देखिये)।

पुराणों में—पुराणों में असुर, दानव, दैत्य एवं राक्षस जातियों का स्वतंत्र निर्देश प्राप्त है (मत्स्य. २५.८; १७; ३०; ३७; २६.१७)। किन्तु इन ग्रंथों में इन सारी जातियों का स्वतंत्र अस्तित्व नष्ट हो कर, अनाय एवं दुष्ट लोगों के लिए ये सारे नाम उपाधि की तरह प्रयुक्त किये गये प्रतीत होते हैं। महाभारत एवं पुराणों में निर्दिष्ट रक्षस् (राक्षस), असुर, दैत्य एवं दानव निम्न हैं—१. वृषपर्षन्, जो दैत्य एवं दानवों का राजा था, एवं जिसकी कन्या शर्मिष्ठा का विवाह पूर्ववंशीय ययाति राजा से हुआ था; २. शाल्वलोग, जिन्हे दानव एवं दैत्य कहा गया है, एवं जिनका राज्य अंबु पहाड़ी के प्रदेश में था; ३. हिडिंब, जो राक्षसों का राजा था, एवं जिसकी बहन हिडिंबा का विवाह भीमसेन पाण्डव के साथ हुआ था; ४. घटोत्कच, जो राक्षसों का राजा था, एवं जो भारतीय-युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था; ५. भगदत्त, जो प्राग्ज्योतिषपुर के म्लेंच्छ लोगों का राजा था, एवं जिसके राज्य पर पूर्वकाल में सदियों तक दानव, दैत्य एवं दम्बुओं का राज्य था; ६. हिरण्यकशिपु, हिरण्याक्ष ब्रह्माद एवं वलि, जो सर्वश्रेष्ठ असुरसम्राट माने जाते थे; ७. रावण, जो लंका में स्थित राक्षसों के राज्य का अधिपति था; ८. बाण, जो दैत्यों का राजा था, एवं जिसकी कन्या उषा का विवाह श्रीकृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध से हुआ था।

पुराणों में प्राप्त पुलस्त्य, पुलह एवं अमस्त्य ऋषि की सतान राक्षस कही गयी हैं (वायु. ७०.५१-६५)। ययाति राजा के सुविख्यात आख्यान में, उसके द्वारा

अपने पुत्र यदु को 'यातुधान' नामक राक्षस संतति निर्माण करने का शाप देने की कथा प्राप्त है (यदु देखिये)।

सामान्य उपाधि—आगे चल कर, राक्षस एवं दैत्य एक वार्षिक उपाधि न रह कर, किसी भी दुष्ट, धर्मविहीन एवं खलप्रवृत्त राजा को ये उपाधियाँ लगायी जाने लगी, जिसके उदाहरण निम्नप्रकार है—१. यादवराजा मधु, जो वास्तव में पूर्ववंशीय ययाति एवं यदु राजाओं का वंशज था; २. कंस, जो वास्तव में मथुरा देश का यादव राजा था; ३. लवण माधव, जो मधु राजा का ही वंशज था; ४. जरासंध, जो वास्तव में मगध देश का भरतवंशीय राजा था। इसी तरह ब्रौद्ध तथा जैन लोगों को, एवं दक्षिण भारत के द्रविड लोगों को पुराणों में असुर एवं दैत्य कहा गया है (ब्रह्म. १६०.१३; विष्णु. ३.१७.८-९)।

रक्षा—ऋषि ऋषि की बहन, जो प्रजापति की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम जंबवत् था (ब्रह्मांड. ३.७.२१९-३००)।

रक्षिता—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्याओं में से एक थी।

रक्षोहन् ब्राह्म—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १६२)।

रघु—(सू. इ.) एक सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जिसका निर्देश महाभारत में प्राप्त प्राचीन राजाओं की नामावलि में प्राप्त है (म. आ. १.१७२)। भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार, यह दीर्घबाहु राजा का पुत्र, एवं दिलीप खट्वांग राजा का पौत्र था। मत्स्य एवं पद्म में इसे निम्न नामक राजा का पुत्र कहा गया है (पद्म. सू. ८)। किन्तु निम्न राजा के पुत्र का नाम रघूत्तम था, जो संभवतः इक्ष्वाकु-वंशीय होते हुये भी रघु राजा से अलग था (निम्न देखिये)।

कालिदास के रघुवंश में इसे दिलीप राजा का पुत्र कहा गया है, जो उसे नंदिनी नामक धेनु के प्रसाद से प्राप्त हुआ था (र. वं. २)। रघुवंश में प्राप्त यह कथा पद्म में भी पुनरुक्त है (पद्म. उ. २०३)।

यह इक्ष्वाकुवंश का एक श्रेष्ठ राजा होने के कारण इसे अयोध्या का पहला राजा कहा गया है (ह. वं. १.१५. २५)। इसकी महत्ता के कारण, आगे चल कर, इक्ष्वाकु-वंश 'रघुवंश' नाम से सुविख्यात हुआ।

पराक्रम—इसके पराक्रम एवं दानश्रुता की कथा रघु-वंश एवं स्कंद में प्राप्त है। एक बार दशदिशाओं में विजय कर, इसने विपुल संपत्ति प्राप्त की, एवं अपने गुरु वसिष्ठ की आज्ञानुसार विश्वजित् यज्ञ किया। उस यज्ञ के कारण,

इसकी सारी संपत्ति व्यतीत हुयी, एवं यह निष्कांचन बन गया।

इसी अवस्था में विश्वामित्र ऋषि का शिष्य कौत्स इसके पास द्रव्य की याचना करने आया, जो उसे अपनी गुरु-दक्षिणा की पूर्ति करने के लिए आवश्यक था। यह स्वयं द्रव्यहीन होने के कारण, कौत्स की माँग पूरी करने के लिए इसने कुवेर पर आक्रमण किया, एवं उसे इसके राज्य पर स्वर्ण की वर्षा करने के लिए मजबूर किया। इस स्वर्ण में से कौत्स ने चौदह करोड़ सुवर्णमुद्रा दक्षिणा के रूप में स्वीकार ली, एवं उन्हें अपने गुरु विश्वामित्र को दक्षिणा के रूप में दी (स्कंद. २.८.५)। रघुवंश में यही कथा प्राप्त है, किन्तु वहाँ कौत्स के गुरु का नाम विश्वामित्र की जगह वरतंतु बताया गया है (र. वं. ५)।

महाभारत के अनुसार, इसे अपने पूर्वज युवनाश्व राजा के द्वारा दिव्य खड्ग की प्राप्ति हुयी थी, जो आगे चल कर इसने अपने वंशज हरिणाश्व को प्रदान किया था (म. शां. १६०.७६)।

रघु के पश्चात् इसका पुत्र अज अयोध्या का राजा हुआ, जिसका पुत्र दशरथ एवं पौत्र राम दाशरथि इक्ष्वाकु वंश के सर्वश्रेष्ठ राजा साबित हुये।

रंगदास—एक शूद्र, जो वैकटाचल पर्वत पर स्थित श्रीनिवास का परमभक्त था। इसने वैकटाचल में अनेक मंदिर बंधवाये थे (स्कंद. २.१.९)।

रंगवेणी—सारंग नामक गोप की कन्या, जो पूर्वजन्म में हरिधामन् नामक ऋषि थी (हरिधामन् देखिये)।

रचना—विरोचन दैत्य की यशोधरा नामक कन्या का नामान्तर (यशोधरा देखिये)।

रज—एक सप्तर्षि, जो वसिष्ठ एवं ऊर्जा के पुत्रों में से एक था।

२. धर नामक वसु के पुत्रों में से एक।

३. (स्वा. नामि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार विरज राजा का पुत्र था।

४. स्कंद का एक सैनिक (म. शा. ४४.६८)।

रजत—शुक्राचार्यपुत्र के वरत्रिन् के तीन यज्ञविरोधी पुत्रों में से एक (वरत्रिन् देखिये)।

रजतनाभ—एक यक्ष, जो यक्ष एवं क्रतुस्थला के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम मणिवरा था, जो अनुह्राद नामक राक्षस की कन्या थी। उससे इसे मणिवर एवं मणिभद्र नामक दो पुत्र उत्पन्न हुये थे।

रजन कोणेय अथवा **कौणेय**—एक आचार्य, जो अंधा था (तै. सं. २.३.८.१; क. सं. २७.२)। क्रतुजित् जानकि नामक आचार्य ने इसके लिए सफलतापूर्वक यज्ञ संपन्न कर, इसे पुनः दृष्टि प्रदान की थी (क. सं. ११.१)। इसके पुत्र का नाम उग्रदेव राजनि था (वं. ब्रा. १३.४. ११)।

अथर्ववेद में इसे कुष्ठरोगी बताया गया है, एवं रजनी नामक पौधे के द्वारा यह पुनः निरोगी होने का निर्देश प्राप्त है (ऋद्धमफिड, अ. वे. २६६.२६७)।

रजि—(सो. पुरुरवस्.) पुरुरवस्वंशीय एक राजा, जो प्रतिष्ठान देश के आयु राजा के पाँच पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम प्रभा था, जो दानव राजा स्वर्मानु की कन्या थी (म. आ. ७०.२३)। इसके अन्य चार भाईयों के नाम क्रमशः नहुप, क्षत्रवृद्ध, (वृद्धशर्मन्), रंभ, एवं अनेनस् (विपापमन्) थे।

यह एवं इसके 'राजेय क्षत्रिय' नामक वंशज इन्द्र के साथ स्पर्धा करने से विनष्ट होने की कथा कई पुराणों में प्राप्त है। यह स्वयं अत्यंत पराक्रमी था, एवं युद्ध में जिस पक्ष में रहता था, उसे विजय प्राप्त कराता था। एक बार देवासुर संग्राम में इंद्रपद प्राप्ति की शर्त पर यह देवों के पक्ष में शामिल हुआ। उस समय इन्द्र भी स्वयं दुर्बल बन गया था, एवं स्वर्ग का राज्य सम्हालने की ताकद उसमें नहीं थी। इस कारण इंद्र ने खुशी से अपना राज्य इसे प्रदान किया। इस तरह यह स्वयं इंद्र बन गया।

आगे चल कर इससे सैंकड़ों पुत्र उत्पन्न हुये, जो 'राजेय क्षत्रिय' सामूहिक नाम से सुविख्यात थे। वे सारे पुत्र नादान थे, एवं इंद्रपद सम्हालने की ताकद उनमें से किसी एक में भी न थी। इस कारण, इन्द्र ने देवगुरु बृहस्पति की सलाह से उन पुत्रों को भ्रष्टबुद्धि बना कर उनका नाश किया, एवं उनसे इंद्रपद ले लिया (भा. ९. १७; वायु. ९२. ७६-१००; ब्रह्म ११; ह. वं. १.२८; मत्स्य. २४. ३४-४९)।

वायु में इसे विष्णु का अवतार बताया गया है, एवं इसके द्वारा कोलाहल पर्वत पर दानवों के साथ किये गये युद्ध का निर्देश किया गया है। इस युद्ध में देवताओं की सहाय्यता से इसने दानवों पर विजय प्राप्त की थी (वायु. ९९.८६)।

२. एक दानव राजा, जिसका इंद्र ने पिठीनस् नामक राजा के संरक्षण के लिए बंध किया था (ऋ. ६.२६.६)।

सायणाचार्य के अनुसार, रजि एक स्त्री का नाम है, जिसे इंद्र ने पिठीनस् राजा को प्रदान किया था।

रजेयु—(सो. पूर.) एक राजा, जो वायु के अनुसार रौद्राश्व राजा का पुत्र था। भागवत एवं विष्णु में इसे 'ऋतेयु,' एवं मत्स्य में इसे 'औनेयु' कहा गया है।

रज्जुकंठ—एक व्याकरणकार, जिसका उल्लेख पाणिनि के अष्टाध्यायी में एक वैदिक शाखाप्रवर्तक ऋषि के नाते किया गया है (पाणिनि देखिये)।

रज्जुवाल—जटायु के पुत्रों में से एक।

रज्जुमार—एक व्याकरणकार, जिसका उल्लेख पाणिनि के अष्टाध्यायी में एक वैदिक शाखाप्रवर्तक ऋषि के नाते किया गया है (पाणिनि देखिये)।

रण—एक राक्षस, जिसका हिरण्यक्ष एवं देवताओं के दरम्यान हुए युद्ध में वायु के द्वारा वध हुआ था (पद्म. सू. ७०५)।

रणक—(सू. इ. भविष्य.) अयोध्या का एक राजा, जो भागवत के अनुसार क्षुद्रक राजा का पुत्र था। इसे 'कुलक' नामान्तर भी प्राप्त था।

रणंजय—(सू. इ. भविष्य.) अयोध्या का एक राजा, जो कृतंजय राजा का पौत्र, एवं त्रात राजा का पुत्र था। भागवत, विष्णु एवं भविष्य में इसे कृतंजय राजा का ही पुत्र कहा गया है। मत्स्य के अनुसार, इसे 'रणेजय' नामान्तर प्राप्त था।

रणधृष्ट—धैवस्वत मनुपुत्र शृष्ट के तीन पुत्रों में से एक (धृष्ट देखिये)।

रणश्व—(सू. इ.) अयोध्या का एक राजा, जो मत्स्य एवं पद्म के अनुसार संहताश्व राजा का पुत्र था।

रणेजय—अयोध्या के रणंजय राजा का नामान्तर।

रणोत्कट—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४. २६४*)।

रत्ना—दक्षप्रजापति की एक कन्या, जो धर्मऋषि की पत्नी थी। अहन् नामक वसु इसका पुत्र था (म. आ. ६०.१९)।

रति—धर्म ऋषि के पुत्र कामदेव की पत्नी (म. आ. ६०.३२; मा १०.५५.७)। यह दक्षप्रजापति के धर्म-बिन्दुओं से उत्पन्न हुयी थी (कालि. ३; शिव, सू. स. ४)। शिव के तृतीय नेत्र से कामदेव का मत्स्य होने पर, यह अत्यधिक शोक करने लगी, जब शिव ने स्वयं प्रकट हो कर इसे संतवना दी (पद्म. सू. ४३)। पश्चात्,

यह ब्रह्मा की सभा में रह कर उसकी उपासना करने लगी (म. स. ११.१३२*)।

अगले जन्म में इसे शंकरारुर की पत्नी मायावती का जन्म प्राप्त हुआ, जिस समय इसने श्रीकृष्णपुत्र प्रद्युम्न के रूप में अपने पति कामदेव को पुनः प्राप्त किया (पद्म. पा. ७०; प्रद्युम्न देखिये)। अपने इस जन्म में इसकी उम्र अपने पति प्रद्युम्न से अधिक थी (पद्म. भू. १०३)।

२. अलकापुरी की एक अप्सरा, जिसने अष्टावक्र के स्वागतसमारोह में कुबेर भवन में नृत्य किया था (म. अनु. १९.४५)।

३. अजनाम बर्ष के राजा ऋषभदेव के वंशज विभु राजा की पत्नी (भा. ५. १५. १६)। इसके पुत्र का नाम प्रथुषेण था।

रतिकला—श्रीकृष्ण की एक प्राणसखी।

रतिगुण—एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था।

रतिनार—पुरुवंशीय रतिभार राजा का नामान्तर।

रतिविदग्धा—हस्तिनापुर की एक वैश्या, जिसे ब्राह्मणों को अन्नदान करने के पुण्य के कारण, मृत्यु की पश्चात् वैकुण्ठ की प्राप्ति हुयी (पद्म. क्रि. २०)।

रतिसर्वस्या—श्रीकृष्ण की एक प्राणसखी (पद्म. पा. ७४)।

रत्नकूटा—अग्नि ऋषि की पत्नियों में से एक (ब्रह्मांड. ३. ७४-८७)।

रत्नग्रीव—कांचन नगरी का एक राजा, जो विष्णु का परम भक्त था। नील पर्वत पर श्रीविष्णु की उपासना करने के कारण, इसे सरूप मुक्ति प्राप्त हो कर, यह विष्णुलोकवासी बन गया (पद्म. पां. १७-२२)।

रत्नचूड—पाताललोक का एक राजा (रत्नावलि देखिये)।

रत्ना—यादवराजा अक्रूर की पत्नियों में से एक।

रत्नाकर—एक वैश्य, जो एक बैल के द्वारा मारा गया था। इसकी मृत्यु के समय धर्मस्व नामक एक ब्राह्मण ने इस पर गंगोदक का संमार्जन किया, जिस कारण इसे विष्णुलोक की प्राप्ति हो गयी (पद्म. क्रि. ७)।

रत्नांगद—पाण्ड्य देश के वज्रंगद राजा का नामान्तर (वज्रंगद देखिये)।

रत्नावलि—एक राजकन्या, जिसे रत्नेश्वर नामक शिवमंदिर में शिव की नृत्योपासना करने के कारण, पाताल

लोक का रत्नचूड नामक राजा पति के रूप में प्राप्त हुआ (स्कंद. ४.२.६७)।

रथकार—एक जातिविशेष, जो वैश्यों से हीन, किन्तु शूद्रों से श्रेष्ठ मानी जाती थी (क. सं. १७.१३; श. ब्रा. १३.४.२.१७)। याज्ञवल्क्य के अनुसार, 'माहिष्य' (अश्वि पति एवं वैश्व पत्नी का पुत्र), एवं 'करणी' (वैश्व पति एवं शूद्र पत्नी की कन्या) इन दोनों की संतान रथकार नाम से कहलायी जाती थी (आज्ञ. १.९५)।

किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से, इन्हे रथ का निर्माण करने वाले एक जातिविशेष मानना ही अधिक सद्युक्तिक प्रतीत होता है। हिलेब्राण्ट के अनुसार, ये लोग अनु जाति से ही उत्पन्न हुये थे। अनु एवं रथकार ये दोनों जातियाँ उन ऋषुओं की उपासक थी, जो स्वयं अत्यंत उच्छुद्ध रथ बनाती थी (वेदिशे माइथोलोजी, ३.१५२-१५३)।

रथकृत—एक यज्ञ, जो धातु नामक आदित्य के साथ वैश्वमाह में भ्रमण करता है (भा. १२.११.३३)।

रथजुति—अथर्ववेद में निर्दिष्ट एक व्यक्तिनाम (अ. वे. १९.४४.३)।

रथध्वज—विदेह देश के कुशध्वज जनक राजा का पिता। इसकी पौत्री का नाम, वेदवती था (वेदवती देखिये)।

रथधान—वीर नामक अग्नि का नामान्तर (वीर १०. देखिये)।

रथन्तर—एक अग्नि, जो पांचजन्य नामक अग्नि का पुत्र था (म. व. २१०.७)। इसे 'तरसाहस' नामक दो भाई थे। यह पांचजन्य के मुख से प्रकट हुआ था।

२. एक साम, जो मूर्तिमान् स्वरूप में ब्रह्मा की सभा में उपस्थित रहता था (म. स. ११.२९)। इसीके द्वारा वसिष्ठ ऋषि ने इन्द्र का मोह दूर कर उसे प्रबुद्ध बनाया था।

रथन्तरी अथवा **रथन्तर्या**—पूरुवंशीय दुष्यन्त राजा की माता, जो ईलिन (इलिल) राजा की पत्नी थी (म. आ. ९०.२९)। दुष्यन्त के अतिरिक्त इसे निम्न-लिखित चार पुत्र थे:—शूर, भीम, प्रवसु एवं वसु (म. आ. ८९.१५)।

रथप्रभु—वीर नामक अग्नि का नामान्तर (वीर १०. देखिये)।

रथप्रोत दाम्य—मैत्रायणि संहिता में निर्दिष्ट एक आचार्य (मै. सं. २.१.३)। कई अन्यासकों के अनुसार, यह एक पुरोहित न हो कर एक राजा था। दर्भ का बंशज होने से इसे 'दाम्य' धैतुक नाम प्राप्त हुआ होगा।

रथराजी—वसुदेव की पत्नियों में से एक।

रथवर—(सो. क्रोष्ट्र.) एक यादव राजा, जो वायु के अनुसार भीमरथ राजा का पुत्र था।

रथवाहन—मत्स्यनरेश विराट के भाईयो में से एक। भारतीय युद्ध में यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. १३३.३९)।

रथवीति दाम्य—एक ऋषि, जो हिमालय के दूरस्थ पर्वतों में गावों से परिपूर्ण (गोमतीर अनु) प्रदेश में रहता था (क्र. ५.६१.१७-१९)। एक वार अश्विगु श्यावाश्र नामक आचार्य ने, तरन्त नामक राजा के यज्ञ में होमकर्म करने के लिए इसे आमंत्रित किया। उस समय यह अपनी कन्या को साथ ले कर यज्ञ करने गया। वहाँ श्यावाश्र के पिता अर्चनानसु अश्वि ने अपने वेदवेत्ता पुत्र के लिए इसके कन्या की माँग की। किन्तु इसने साफ़ इन्कार कर दिया, एवं श्यावाश्र को अपने यज्ञ से बाहर निकाल दिया। किन्तु अंत में तरन्त राजा के कहने पर इसने अपनी कन्या श्यावाश्र को दे दी (क्र. सायणभाष्य ५.६१)।

बृहदेवता के अनुसार, तरन्त राजा को शशीयसी नामक पत्नी से एक पुत्र उत्पन्न हुआ था, जिसके लिए उसने रथवीति के कन्या की माँग की थी (बृहदे. ५. ५०-८१)।

आधुनिक विद्वानों के अनुसार, रथवीति दाम्य एक आचार्य न हो कर एक राजा था, एवं श्यावाश्र इसका पुत्र था। श्यावाश्र ने अपने पिता एवं मरुतों की सहाय्यता से अपने लिए एक पत्नी प्राप्त की थी, जिसका निर्देश ऋग्वेद के उपर्युक्त सूक्त में प्राप्त है (ओल्डेनबर्ग: ऋग्वेद नोटें. १.३५३-३५४)।

रथसेन—पाण्डव पक्ष का एक योद्धा, जिसके रथ के अश्व मटर के फूल के समान रंगवाले थे, एवं उनकी रोमराजी श्वेतलोहित वर्ण की थी (म. द्रो. २२.५८)।

रथस्वन—एक यज्ञ, जो मित्र नामक सूर्य के साथ ज्येष्ठ माह में भ्रमण करता है (भा. १२.११.३५)।

रथाक्ष—स्कंद एक का सैनिक (म. श. ४४.५८)। पाठभेद—'इषाक्ष'

रथाग्रणी—एक योद्धा, जो रामचन्द्र के अश्वमेधीय अश्व के संरक्षण के लिए शत्रुघ्न के साथ उपस्थित था (पद्म. पा. ११)।

रथीतर—(सू. ह.) एक राजा, जो मनु वैवस्वत-कुलोत्पन्न नाभागवंशीय पृषदश राजा का पुत्र था।

नाभाग से ले कर रथीतर तक का वंशक्रम वायु में निम्न-प्रकार प्राप्त है :—नाभाग—अंगिरस—विरूप—पृषदश्व—रथीतर (वायु. ८८.५-७)।

रथीतर ब्राह्मण—इसे कुल दो पुत्र थे, जो जन्म से शत्रिय हो कर भी आंगिरसवंशीय ब्राह्मणों में शामिल हो गये। इसी कारण रथीतर वंश के लोग रथीतर गोत्र के शत्रिय ब्राह्मण बन गये (ब्रह्मांड. ३.६३.५-७), एवं उनका निर्देश आंगिरस कह कर किये जाने लगा (मत्स्य. १९६.३८)। रथीतर ब्राह्मण कौनसे समय आंगिरस वंश में शामिल हुये यह कहना मुश्किल है, किन्तु बाद के पौराणिक साहित्य में उनका निर्देश प्रायः अप्राप्य है। रथीतर का निर्देश अंगिरस कुल का गोत्रकार एवं प्रवर नाम से किया गया है।

रथीतरों की ब्रह्मक्षत्रिय बनने की यही कथा भागवत में विपरीत रूप में दी गयी है, जिसके अनुसार, रथीतर राजा को पुत्र न होने के कारण, इसने अंगिरस ऋषि से संतति उत्पन्न करायी। रथीतर राजा की यही संतान आगे चल कर रथीतर ब्राह्मण नाम से प्रसिद्ध हुयीं (भा. ९.६.३)।

२. वीवायन श्रौतसूत्र में निर्दिष्ट एक आचार्य (वौ. श्रौ. २२.११; बृहदे. १.२६; ३.४०)।

रथीतर शाकडूर्ण—एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा में से सोमति नामक आचार्य का शिष्य था। वायु एवं ब्रह्मांड में इसे सत्यश्री का शिष्य कहा गया है। विष्णु में इसे 'शाकडूर्ण' एवं ब्रह्मांड में 'शाकडूर्ण' कहा गया है। वेबर के अनुसार, इन पाठभेदों में से 'शाकडूर्ण' पाठ ही सर्वाधिक स्वीकरणीय है। यह ऋग्वेद के तीन प्रमुख शाखाप्रवर्तक आचार्यों में से एक माना जाता है। ऋग्वेद के अन्य दो शाखाप्रवर्तक आचार्यों के नाम देवमित्र शाकडूर्ण एवं बाष्कलि भारद्वाज थे।

इसने ऋग्वेद की तीन संहिताओं की एवं निरुक्त का रचना की। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थे :—केतन, दालकि, शतत्रयाक, एवं नैगम। विष्णु के अनुसार, निरुक्त ग्रंथ की रचना रथीतर के द्वारा न हो कर इसके शिष्य नैगम ने की थी।

रथीरामि—प्रतर्दन देवों में से एक।

रंति—रन्तिनार राजा का नामान्तर (रन्तिनार देखिये)।

रंतिदेव सांकृत्य—(सो. पूरु.) सुविख्यात भरत-वंशीय सम्राट, जिसका निर्देश महाभारत में प्राप्त सोलह

श्रेष्ठ राजाओं की नामावली में प्राप्त है। एक श्रेष्ठ दानी राजा के नाते इसका निर्देश महाभारत में पुनः पुनः प्राप्त है (म. शां. २९. ११३-१२१)।

मत्स्य, भागवत एवं विष्णु में इसे संस्कृति राजा का पुत्र कहा गया है, जिस कारण इसे 'सांकृत्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (म. अनु. १३७.६)। वायु के अनुसार इसे त्रिवेद नामान्तर प्राप्त था। इसकी माता का नाम संस्कृति था। सुविख्यात पौरव राजा रंतिनार (मत्तिनार, रंतिभार) से यह काफी उत्तरकालीन था। भरत से लेकर रंतिदेव तक का वंशक्रम इस प्रकार है :—भरत-वितथ-भुवमन्यु-नर-संस्कृति-रंतिदेव। इस वंशक्रम में प्रतीत होता है कि, हस्तिनापुर का सुविख्यात सम्राट हस्तिन् इसका चाचा था।

यज्ञपरायणता—इसका राज्य चर्मण्वती (आधुनिक चंबल) नदी के किनारे था, एवं इसकी राजधानी दशपुर-नगरी में थी (मेघ. ४६-४८)। महाभारत में इसकी दानशूरता का, एवं इसके द्वारा किये गये यज्ञयागों का तबिस्तर वर्णन प्राप्त है। अतिथियों की व्यवस्था के लिए अपने राजघर में इसने दो लाख पाकशास्त्रियों की नियुक्ति की थी। इसके यज्ञ में बलिप्राणि बन स्वर्ग प्राप्ति हुईं, इस उद्देश्य से यज्ञीय पशु स्वयं ही इसके यज्ञ में प्रवेश करते थे।

एक बार एक गौयज्ञ करने के लिए इसके राज्य की गायों ने इसे निवश किया, किन्तु इनमें से एक गाय आहुति देने के लिए नाराज दिखाई देने पर इसने अपना गौयज्ञ उसी क्षण बन्द कर दिया। यज्ञ में पशुओं की आहुति देने के बाद, उनकी बची हुयी चमड़ी यह नजीक ही स्थित नदी में फेंक देता था, जिस कारण उस नदी को चर्मण्वती (चमड़ी को धारण करनेवाली) नाम प्राप्त हुआ था (म. अनु. १२३.१३)।

दानशूरता—इसने अपनी सारी संपत्ति दान में दी थी (म. द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति. ६९५)। इसका नियम था कि, इसके यहाँ आया हुआ अतिथि विन्मुख न लौटे। इसके इस नियम के कारण, इसके परिवार को काफी कष्ट सहने पडते थे। एक बार तो ४८ दिनों तक इसके परिवार के सदस्यों को भूखा रहना पड़ा। अगले दिन यह अन्न-ग्रहण करनेवाला ही था कि, कई शूद्र एवं चाण्डाल अतिथि इसके यहाँ आ पहुँचे। फिर उस दिन भी भूखा रह कर इसने अपने अपना सारा अन्न उन्हें दे दिया (भा. ९. २१)। अपने गुरु वसिष्ठ को विधिवत् अर्थदान करने के

कारण इसे स्वर्गप्राप्ति हो गयी (म. शां. २६.१७; अनु. २००.६)।

सांकृत्य ब्राह्मण—रतिदेव राजा के एवं इसके भाई गुरुधि के वंशज जन्म से क्षत्रिय हो कर भी ब्राह्मण बन गये। इस कारण वे 'सांकृत्य ब्राह्मण' कहलाते थे। कालेपरान्त वे आंगिरस कुल में शामिल हो गये, जिसके एक मोत्रकार के नाते उनका निर्देश प्राप्त है (वायु. १९. १६०)।

रंतिनार—(सो. पूर.) सुविख्यात पूर्वशीय सम्राट, जो ऋतेयु नामक राजा का पुत्र था। मृत्यु में इसे अंतिनार, भागवत में इसे रंतिभार, एवं वायु में इसे रंति कहा गया है। मृत्यु एवं वायु में इसके पिता का नाम क्रमशः औत्तेयु एवं रजेयु दिया गया है।

इसकी पत्नी का नाम सरस्वती था (वायु. १९. १२९), जिसका नाम मृत्यु में मनस्विनी दिया गया है। अपनी इस पत्नी से इसे निम्नलिखित चार पुत्र उत्पन्न हुये थे:—तंसु, महान्, अतिरथ एवं द्रुह्यु। कई पुराणों के अनुसार, इसे अप्रतिरथ (प्रतिरथ) नामक और एक पुत्र भी था, जिसके पुत्र काण्व ने आंगिरसांतर्गत काण्व शाखा का प्रारंभ किया (पारिं. २२५)।

रभस—रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. ४. ३६)।

१. रावण पक्ष का एक राक्षस (वा. रा. यु. ९.१)।

३. (सो. पुरुरवस्.) एक राजा, जो आयुपुत्र रंभ का पुत्र था। महाभारत में इसे सोम एवं मनोहरा का पुत्र कहा गया है (म. आ. ६०.२१)।

रभेणक—तक्षक कुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में मारा गया था (म. आ. ५२.७)।

रभठ—एक भ्रैन्ध जाति, जो मांधातृ के राज्यकाल में उसके राज्य में निवास करती थी (म. शां. ६५.१४)।

रभण—एक वसु, जो धर नामक वसु के पुत्रों में से एक था।

रभणक—एक राजा, जो प्रियव्रत पुत्र यज्ञबाहु के सात पुत्रों में से तीसरा था। इसका राज्य (वर्ष) इसीके ही नाम से प्रसिद्ध था (भा. ५. २०.९)।

२. एक राजा, जो प्रियव्रतपुत्र वीतिहोत्र के दो पुत्रों में ज्येष्ठ था (भा. ५. २०. ३१)।

रंभ—(सो. पुरुरवस्.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार, पुरुरवस् राजा का पौत्र, एवं आयु राजा के पुत्रों में से चौथा पुत्र था। स्वर्मानु असुर की

कन्या प्रभा इसकी माता थी। हरिवंश के अनुसार, इसे कोई पुत्र न था (ह. वं. १.२९)। किन्तु भागवत में इसका वंशक्रम निम्नप्रकार दिया गया है:—रंभ-रभस-गंभीर-अक्रिय। रंभ के ये सारे वंशज जन्म से क्षत्रिय हो कर भी आगे चल कर ब्राह्मण बन गये (भा. ९.१७.१०)।

२. (सु. विष्ट.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, विविशति राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम खनिनेत्र था।

३. रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. २६)।

४. रंभ-करंभ नामक दो दानवों में से एक।

रंभ-करंभ—दानवद्वय, जो कश्यप एवं दनु के पुत्र थे। एक बार ये दोनों भाई पानी में तप कर रहे थे, जब इन्द्र ने मगर का रूप धारण कर इनमें से करंभ का वध किया।

अपने भाई की मृत्यु से रंभ अत्यधिक दुःखी हुआ, एवं आत्महत्या करने के लिए उद्यत हुआ। उस समय अग्नि ने प्रकट हो कर इसे सान्त्वना दी, एवं वरप्रदान किया, 'तुम्हारे वंश की परंपरा आगे चलानेवाला विजयी पुत्र तुम्हें प्राप्त होगा'। अग्नि के इस वर के अनुसार, इसे महिषासुर नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। आगे चल कर एक महिष के द्वारा रंभ का वध हुआ (दे. भा. ५.२; शिव. उ. ४६)।

रंभा—एक सुविख्यात अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्याओं में से एक थी (म. आ. ५९.४८)। यह कुबेरसभा में रहती थी। अर्जुन के जन्मोत्सव में, एवं अष्टावक्र के स्वागतसमारोह में इसने नृत्य किया था (म. आ. ११४.५१; अनु. १९.४४)। इसने इंद्रसभा में भी अर्जुन के स्वागतार्थ नृत्य किया था (म. व. ४४. २९)।

कुबेरपुत्र नलकूबर के साथ यह पत्नी के नाते से रहती थी। एक बार रावण ने इस संबंध में इसकी खिल्ली उड़ायी, जिस कारण क्रुद्ध हो कर नलकूबर ने रावण को शाप दिया, 'तुझे न चाहनेवाली किसी स्त्री से अगर तू बलात्कार करेगा, तो तुझे प्राणों से हाथ धोना पड़ेगा'। नलकूबर के इसी शाप के कारण राम के द्वारा रावण का वध हुआ (म. व. २६४.६८-६९)।

विश्वामित्र के तपोभंग के लिए इन्द्र ने इसे उसके पास भेजा था। किन्तु विश्वामित्र ने इन्द्र के प्रयत्न को पहचान लिया, एवं क्रुद्ध हो कर इसे शाप दिया, 'तुम हजारों वर्षों तक शिला बन कर रहोगी (म. अनु. ३.११)।

वाल्मीकि रामायण के अनुसार, विश्वामित्र ने इसे ब्राह्मण के द्वारा उदार होने का उःशाव भी प्रदान किया था।

स्कंद में श्वेतमुनि के द्वारा इसका उदार होने की कथा प्राप्त है। एकशर श्वेतमुनि का एक राक्षसी से युद्ध हुआ। उस समय श्वेतमुनि के द्वारा छोड़े गये 'वायु अस्त्र' के कारण वह राक्षसी एवं शिलाखंड बनी हुयी रंभा, दोनों भी आँधी में फैलकर 'कपितीर्थ' में जा गिरी। इस कारण रंभा एवं राक्षसी का रूप प्राप्त हुयी वारांगना दोनों भी मुक्त हो गयीं (स्कंद. ३.१.३९)।

महाभारत में अन्यत्र इसे तुंगरु नामक गंधर्व की पत्नी कहा गया है (म. उ. १०.११.११२*)। किन्तु वाल्मीकि रामायण में इससे संबंध रखने के कारण, तुंगरु को विराध नामक राक्षस का रूप प्राप्त होने की कथा प्राप्त है (वा. रा. अर. ४.१६-१९)। इससे प्रतीत होता है कि, तुंगरु इसका वास्तव पति नहीं था।

२. मयासुर की पत्नी, जिससे इसे निम्नलिखित छः संतान उत्पन्न हुयी थीः—मायाविन्, दुंदुभि, महिष, कालिका, अजकण्ठ एवं मंशोरि (ब्रह्मांड. ३.६.२८-२९)।

रम्यक—(स्वा. पिय.) 'रम्यकर्क' नामक देश का राजा, जो भागवत के अनुसार, आग्नीध्र राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम 'पूर्णविति' एवं पत्नी का नाम 'रम्या' था।

रम्या—मेरु की नौ कन्याओं में से पाँचवी कन्या, जो रम्यक राजा की पत्नी थी (भा. ५.२.६३)

रय—(सो. पुरुरवम्) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, पुरुरवम् राजा का पुत्र था।

२. एक प्रजापति, जो स्वयंभुव मन्वन्तर के वसिष्ठ ऋषि का पुत्र था।

रवि—सौर्य देश का एक राजकुमार, जो जयद्रथ राजा का भाई था। यह जयद्रथ के पीछे हाथ में ध्वजा ले कर चलता था (म. व. २४९.१०)। जयद्रथ के द्वारा द्रौपदी का हरण किये जाने पर हुये युद्ध में अज्ञेय के द्वारा इसका वध हुआ था।

२. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक, जो भीमसेन के द्वारा मारा गया था (म. श. २५.१२)।

रशादु—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार 'स्वाहि' राजा का, भागवत के अनुसार 'श्वाहि' राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार 'स्वाह' राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'रुशोक्तु,' एवं विष्णु तथा मत्स्य में इसे 'रुपद्रु' कहा गया है।

रश्मि—सुतय देवों में से एक।

रश्मिकेतु—रावण के पक्ष का एक राक्षस, जो राम के द्वारा मारा गया था (वा. रा.सं. ६; यु. ९; ४७)।

रश्मिवत्—एक सनातन विश्वदेव।

रस—तृपित देवों में से एक।

रसह्रीचि—अत्रिकुलोत्पन्न गोत्रकार हरप्रीति का नामांतर।

रसपासर—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से कुशुमि नामक आचार्य का शिष्य था। ब्रह्मांड में इसे पराशर कहा गया है।

रसमंधरा, रसवल्लरी, रसालया—श्रीकृष्ण की प्राणसखियाँ (पद्म. पा. ७४)।

रसिप—एक दानव, जो कश्यप एवं द्रु के पुत्रों में से एक था।

रहस्युदेव मलिम्लुच—एक व्यक्ति, जिमने 'मुनि-मरण' नामक स्थान पर संततुल्य वैखानसों का वध किया (पं. ब्रा. १४.४.७)।

रहूगण—एक परिवार, जिसमें गोतम राहूगण नामक ऋषि का जन्म हुआ था। शतपथ ब्राह्मण में इनका निर्देश 'राहूगण' नाम से प्राप्त है। इस पैतृक नाम को धारण करनेवाले अनेक आचार्यों का निर्देश वहाँ प्राप्त है (श. ब्रा. १.४.१०-१९)।

ऋग्वेद में गोतमऋषि का पैतृक नाम 'राहूगण' बताया गया है। गोतम के द्वारा रचित एक सूक्त में यह कहता है, 'हम राहूगण अग्नि के इन मनुस्तोत्रों की रचना करते हैं' (ऋ. १.७८.५; गोतम ३. देखिये)। गोतम राहूगण विदेय देश के माधव राजा का उपाध्याय था।

२. सिंधुसौर्य देश का एक राजा, जिसका भरत (जड) नामक तत्वज्ञ के साथ संवाद हुआ था।

एक बार यह पालकी में बैठकर कपिलाश्रम में ब्रह्मज्ञान का उपदेश सुनने जा रहा था। जब यह इधुमती नदी के तट पर जा पहुँचा, उस समय वहाँ के अधिपति ने जड भरत को पालकी उठाने के लिए पकड़ लाया। भरत स्वयं एक महान् तत्त्वज्ञ एवं सिद्ध पुरुष है, इसका पता चलते ही यह उसकी शरण में गया, एवं उससे शरीर तथा आत्मा की भिन्नाता के संबंध में, इसने ज्ञान संपादन किया (भा. ५.१०-१४; भरत जड देखिये)।

भागवत में प्राप्त 'भरत-रहूगण संवाद' में इधुमती नदी, चक्र नदी, शालग्राम तीर्थ, पुलक्य एवं पुलह

ऋषियों के आश्रम, कालेजर तीर्थ आदि तीर्थस्थानों का निर्देश प्राप्त है (भा. ५.८.३०; १०.१)।

रहूगण आंगिरस—आंगिरसकुलोत्पन्न एक आचार्य, जिसके द्वारा रचित दो सूक्त ऋग्वेद में प्राप्त हैं (ऋ. ९. ३७-३८)। ऋग्वेद में एक कुलनाम के नाते रहूगण का निर्देश प्रायः प्राप्त है। किन्तु 'रहूगण आंगिरस' के निर्देश से प्रतीत होता है कि, रहूगण एक व्यक्तिनाम भी था।

राका—अंगिरस ऋषि की कन्या, जो भागवत के अनुसार, उसे श्रद्धा नामक पत्नी से उत्पन्न हुई थी।

२. एक वैदिक देवता, जो समृद्धि एवं उदारता की देवी मानी गयी है (ऋ. २.३२; ५.४२)।

३. एक राक्षसकन्या, जो सुमाली राक्षस एवं केतुमती की कन्या थी। कुबेर की आज्ञा के अनुसार, यह विश्रवस् ऋषि की परिचर्या में रहती थी। आगे चल कर, उस ऋषि से इसे खर नामक राक्षस एवं शूर्पणखा नामक राक्षसी उत्पन्न हुयी (म. व. २५.९.३-८)। यह रावण-कुम्भकर्ण एवं विभीषण की सौतेली माँ थी, जो सारे पुत्र विश्रवस् ऋषि को पुष्पोक्त्या नामक पत्नी से उत्पन्न हुये थे।

४. द्वादश आदित्यों में से धाता नामक आदित्य की पत्नी।

रामकर्षि—राहुकर्ण नामक अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

रागा—बृहस्पति आंगिरस ऋषि की सात कन्याओं में से एक, जिसकी माता का नाम शुभा था। इसपर समस्त प्राणिसृष्टि अनुराग करती थी, जिस कारण इसका नाम रागा हुआ (म. व. २०.८.४)।

राजक—(प्रद्योत, मविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार विशालरूप राजा का पुत्र था। वायु एवं ब्रह्मांड में इसे 'अजक', विष्णु में 'जनक' एवं मत्स्य में 'सूर्यक' कहा गया है। वायु के अनुसार इसने ३१ वर्षों तक, एवं मत्स्य तथा ब्रह्म के अनुसार इसने २१ वर्षों तक राज्य किया था। इसके पुत्र का नाम नंदिवर्धन था।

राजकोशिन—अंगिराकुलोत्पन्न एक ऋषि।

राजधर्मन्—एक धर्मप्रवृत्त बकराज, जो कश्यपऋषि का पुत्र एवं ब्रह्मा का मित्र था (म. शां. १६३, १८-१९)। इसे नाडिजंघ नामान्तर भी प्राप्त था। एक बार गौतम नामक एक कृतघ्न ब्राह्मण इससे मिलने आया, जिसका उचित आदर सत्कार कर, इसने अपने विरुपाक्ष नामक राक्षस मित्र से उससे विपुल धन दिलाया। आगे चल कर

गौतम ने कृतघ्नता से इसका वध किया। किन्तु राक्षसराज विरुपाक्ष ने सुरभि गौ के दूध के झाग से इसे जीवित किया, एवं गौतम का वध किया। जीवित होने के पश्चात्, इसने इन्द्र से गौतम को पुनः जीवित करने के लिए अनुरोध किया, जिस पर इन्द्र ने अमृत लिङ्ग कर गौतम को प्राणदान दिया। तत्पश्चात् इसने गौतम को विपुल धन आदि दे कर विदा किया (म. शां. १६३-१६७; गौतम ५. देखिये)।

राजन्—सूर्य के दो द्वारपालों में से एक (भवि. ब्राह्म. ७६)।

राजनि—उग्रदेव नामक राजा का पैतृक नाम (पं. ब्रा. १४.३.१७; तै. आ. ५.४.१२)। 'रजन' का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

राजन्यार्षि—सिंधुक्षिन् राजा के लिए प्रयुक्त एक उपाधि (पं. ब्रा. १२.१२.६)। क्षत्रिय ब्राह्मण राजाओं के लिए यह उपाधि प्रयुक्त की जाती होगी।

राजवर्तप—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसे 'राजवल्लभ' नामान्तर भी प्राप्त था।

राजवल्लभ—राजवर्तप नामक कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

राजस्तंबायन—यज्ञवल्क्य नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १०.४.२.१)। राजस्तंब का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

राजश्रवस् वेन—देवी भागवत में निर्दिष्ट एक व्यास।

राजाज—शंभु राजा का एक पुत्र (ब्रह्मांड. ३.५.४०)।

राजाधिदेव—(सो. विदू.) एक राजा, जो मत्स्य एवं पद्म के अनुसार, विदूरथ राजा पुत्र था। वायु में इसे राज्याधिदेव कहा गया है। इसके पुत्र का नाम 'शोणाश्व' था (पद्म. सु. १३)।

राजाधिदेवी—सोमवंशीय शूर राजा की पाँच कन्याओं में से कनिष्ठ कन्या, जिसकी माता का नाम मारिषा था। इसका विवाह अवंती देश का राजा जयसेन से हुआ था (भा. ९.२४.३९; १०.५.८.३१)।

राजिक—एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से हिरण्यनाभ ऋषि का शिष्य था।

राज्ञ—सूर्य का द्वारपाल (भवि. ब्राह्म. १२४)।

राज्ञी—रैवत मनु की एक कन्या, जो विष्वान् आदित्य के तीन पत्नियों में से द्वितीय थी। इसके पुत्र का नाम रेवत था।

राज्यवर्धन—(स. दिष्ट.) वैशाली देश का एक राजा, जो दम राजा का पुत्र था। दक्षिणनरेश विदूरथ राजा की कन्या इसकी पत्नी थी।

यह बड़ा तपस्वी एवं त्रिकालदर्शी राजा था। अपनी मृत्यु निकट आयी है यह बात ज्ञात होने पर, यह वार्ता इसने अपनी प्रजा को सुनायी, एवं तपस्या के लिए यह वन चला गया।

पश्चात् इसकी प्रजा एवं अमात्यों ने सूर्य की आराधना की, एवं उससे वर प्राप्त किया, 'तुम्हारा राज्यवर्धन राजा दस हजार वर्षों तक रोगरहित, जितशत्रु, धनधान्यसंपन्न एवं स्थिरयौवन अवस्था में जीवित रहेगा'।

तदोपरान्त इसकी प्रजा ने वन में जा कर इसे सूर्य के द्वारा प्राप्त वर की सुवार्ता कह सुनाई। किन्तु यह वार्ता सुन कर इसे सुख के बदले दुःख ही अधिक हुआ। यह कहने लगा, 'इतने वर्षों तक जीवित रहने पर, मुझे पुत्र-पौत्रादि तथा प्रजा की मृत्यु देखनी पड़ेगी, एवं मेरा सारा जीवित दुःखमय हो जाएगा'। इस दुःख से छुटकारा पाने के लिये इसने स्वयं अपनी प्रजा पौत्र एवं भृत्य आदि के लिए भी दस हजार वर्षों की आयु का वरदान प्राप्त किया (मार्क. १०६-१०७)।

राज्याधिदेव—विदूरथवंशीय राजाधिदेव राजा का नामान्तर।

राड—एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार-व्यास की सामशिष्य परंपरा में से कृति नामक ऋषि का शिष्य था।

राडवीर्य—एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था।

राणायनि—एक आचार्य, जो व्यास की सामशिष्य-परंपरा में से लोकाक्षि नामक आचार्य का शिष्य था। इसी से ही आगे चल कर सामवेदीय ब्राह्मणों की 'राणायनीय' शाखा का निर्माण हुआ। सामवेदी लोगों के ब्रह्म-यज्ञांगतर्पण में इसका निर्देश प्राप्त है (जै. श. १.१४; गोभिल एवं द्राह्मयण देखिये)।

राणायनीपुत्र—एक आचार्य (ल. श्रौ. ६.९.१६)।

रातहृद्य आत्रेय—एक वैदिक सूत्रतद्रष्टा (ऋ. ५. ६५-६६)।

रात्रि—रात्रि की एक अधिष्ठात्री देवी, जिसका निर्देश ऋग्वेद में 'नक्ता' नाम से किया गया है।

ऋग्वेद में इसे उपस् की छोटी वहन कहा गया है (ऋ. १. १२४) एवं उपस् के साथ इसका अनेक बार एक युगल रूप में निर्देश किया गया है ('उपासानक्ता' अथवा 'नक्तोपासा')।

अपनी वहन उपस् की मौंति इसे भी आकाश की पुत्री कहा गया है। ऋग्वेद में रात्रि का एक सूक्त प्राप्त है, जहाँ तारों से प्रकाशमान रात्रि का बड़ा ही कान्यमय वर्णन प्राप्त है (ऋ. १०.१२७)। यह अपने तारदामय नेत्रों से प्रकाशित होती है, एवं अपने प्रकाश के द्वारा अंधकार को भगाती है। इसके आने पर, अपने घोसलों में लौट आनेवाले पक्षियों की मौंति, मनुष्य अपने अपने घर लौट आते हैं। चोरों को एवं भेड़ियों को दूर रखने के लिए, तथा पथिकों को सुरक्षित स्थान पर पहुँचाने के लिये इसकी प्रार्थना की गयी है।

यह अपने मूर्तिमान् स्वरूप धारण कर स्कंद के अभिषेक समारोह में उपस्थित हुई थी (म. श्रौ. ४४.१३)। शची ने अपनी मनोकामना की पूर्ति के लिए इसकी आराधना की थी (म. उ. १३.२१-२३)।

रात्रि भारद्वाजी—एक वैदिक सूत्रतद्रष्टा (ऋ. १०. १२७)।

राथीतर—सत्यवचस् नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. उ. १.९.१)। राथीतर का वंशज होने से उस यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा। इसके धर्मविपयक अनेक मतों का निर्देश बौधायन श्रौतसूत्र में प्राप्त है (शौ. श्रौ. ७.४)।

राथीतरीपुत्र—एक आचार्य, जो भालुकिपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (वृ. उ. ६.५.१ काण्व.)। अन्यत्र इसे क्रौंचिकीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य कहा गया है (वृ. उ. ६.४.३२ माथ्य.)। इसके शिष्य का नाम शांडिलीपुत्र था। राथीतर के किसी स्त्री वंशज का पुत्र होने से, इसे 'राथीतरीपुत्र' नाम प्राप्त हुआ था।

राधगौतम—वंश ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक आचार्यद्वय (वं. ब्रा. २)। ये गालु नामक आचार्य के पुत्र, एवं गौतम नामक आचार्य के शिष्य थे।

राधा—कृष्ण की सुविख्यात प्राणसखी एवं उपासिका, जिसका निर्देश गोपालकृष्ण की बालल्लिखणों में पुनः पुनः प्राप्त है। गोकुल में रहनेवाले एवं राधा के साथ नानाविध प्रीडा करनेवाले 'गोपालकृष्ण' का निर्देश पतञ्जलि के व्याकरण महाभाष्य, महाभारत एवं नारायणीय आदि ग्रंथों में अप्राप्य है। इसके नाम का सर्वप्रथम निर्देश

हरिवंश, कबु एवं भागवत में प्राप्त है, जिनका रचना-काल ई. स. तीसरी शताब्दी माना जाता है।

सद्विचारक पौत्र विष्णुशक्तियों में से राधा एक मानी गयी है (दे. भा. १.१; नारद. २.८१)। यह संपत्ति का अधिष्ठात्री है, तथा इसे कान्ता, धनिशान्ता, शान्ता, मुशीला, सर्वमेगला, आदि नाम प्राप्त हैं।

लक्ष्मी के दो रूप माने गये हैं—एक राधा एवं दूसरा लक्ष्मी। इसी प्रकार वैष्णवों के भी त्रिभुज एवं चतुर्भुज ऐसे दो रूप माने गये हैं। इनमें से त्रिभुज कृष्ण गोलोक में निवास करता है, जहाँ राधा उसकी पत्नी है। चतुर्भुज कृष्ण वैकुण्ठ में निवास करता है, एवं वहाँ उसकी पत्नी लक्ष्मी है (ब्रह्मवै. २.४९.२६-२७; दे. भा. १.१; आदि. ११)। यह गो लोक में नहीं, बल्कि वैकुण्ठ में ही रह कर श्रीकृष्ण की सेवा करती है, एसा निर्देश भी कई पुराणों में प्राप्त है (दे. भा. १.१८)।

जन्म—यह गोकुल में वैश्य वृषमानु नामक गोप को कलावती नामक पत्नी के उत्पन्न हुई थी (ब्रह्मवै. २.४९. ३२-४२; नारद. २.८१.)। पद्म में इसे वृषमानु राजा की कन्या कहा गया है। यह राजा यज्ञ के लिए पृथ्वी सफ़ कर रहा था, उस समय, उसे भृशिकन्या के रूप में राधा प्राप्त हुई। पश्चात् उसने इसे अपनी कन्या मान कर इसका भरणक्षेपण किया (पद्म. ब्र. ७)। कृष्ण के बाल्य में यह उत्पन्न हुई, ऐसी कथा भी कई पुराणों में प्राप्त है (ब्रह्मवै. २.१२.१६)।

पृथ्वी पर अवतार—राधा का अवतार पृथ्वी पर किस कारण से हुआ, यह बतानेवाली अनेक कथाएँ पुराणों में प्राप्त हैं, जो कभी कल्पनारम्य प्रतीत होती हैं। कृष्ण-व्रतार लेते समय विष्णु ने अपने परिवार के समस्त देवताओं को पृथ्वी पर अवतार लेने के लिए आज्ञा दी। इस आज्ञा के अनुसार, विष्णु की प्रियसखी राधा ने पृथ्वी पर ज्ञाना स्वीकार किया, एवं महाप्रद शुक्ल अष्टमी के दिन, ज्येष्ठ राक्षस के चतुर्थी चरण में प्रातःकाल के समय जन्म लिया (आदि. ११)।

नारद के अनुसार, एक बार श्रीविष्णु विराजा नामक गोपी को अपने साथ रासनेडल में ले गये। यह मुनि ही राधा कृद हुयी एवं विष्णु के पास गयी। किन्तु वहाँ पहुँचने के पहले ही वे दोनों लुप्त हो गये। बाद में इसने विराजा को पुनः एक बार कृष्ण एवं सुदामा के साथ बैठते हुए देखा। इस कारण इसने श्री विष्णु की काफ़ी निन्दा की। जब सुदामा ने इसे खूब डाँटा एवं इसे शाप दिया, 'तुम्हें

मानवयोनि में जन्म प्राप्त होगा, जिस समय तुम्हें कृष्ण से काफ़ी विरह सहना पड़ेगा' (नारद. २.८१; ब्रह्मवै. २. ४९)।

पश्चात् इसने भी सुदामा को शाप दिया, 'तुमने मुझे खूरा भला कहा है, अतः तुम्हें दानव-योनि में जन्म प्राप्त होगा (दे. भा. १.१९)। राधा के इस शाप के कारण, सुदामा बोलचाल नामक असुर बन गया (ब्रह्मवै. २.४९. ३४)। पश्चात् कृष्ण ने सुदामा को उःशाप दिया, 'गो-लोक का आधा क्षण अर्थात् एक मन्वन्तर तक ही तुम असुर रहोगे। पश्चात् तुम्हें मुक्ति प्राप्त होगी'। नारद में सुदामा की असुर-अवस्था की कालपर्यायों से छाल दी गयी है (नारद. २. ८१)।

कृष्ण से विवाह—मानव योनि में जन्म लेने के पश्चात् राधा का कृष्ण से विवाह, वैशाख शुक्ल तृतीया के दिन रोहिणी नक्षत्र पर हुआ था (आदि. ११)। किन्तु अन्य पुराणों में गोकुलनिवासी राधा को कृष्ण की सखी बताया गया है, एवं इसके पति का नाम 'रापाण' दिया गया है (ब्रह्मवै. २.४९. ३७)।

ब्रह्मवैवर्त के काण्व शाखा में राधा का आस्थान प्राप्त है, जहाँ राधा एवं कृष्ण को एक दूसरे का उपासक कहा गया है (ब्रह्मवै. २. ४८. १२-१३)। राधा एवं कृष्ण के उपासक 'राधाकृष्ण' नाम का जाप कर के इनकी उपासना करते हैं। 'राधाकृष्ण' के स्थान पर 'कृष्णराधा' इस क्रम से नामोच्चारण करने पर नरक की प्राप्ति होती है, ऐसी भक्तों की धारणा है (ब्रह्मवै. २. ४९-५९)।

राधा के नामस्मरण का माहात्म्य बतानेवाला एक मंत्र का पाठ राधाकृष्ण के उपासक प्रतिदिन करते हैं, जो निम्नप्रकार है :—

राशब्दोच्चारणाद्भवतो रति मुक्तिं सुहृल्लभाम् ।
धाशब्दोच्चारणाद् दुर्गे धावत्येव हरेः पद्म् ॥
रा इत्यनुज्ञानवचनो धा च निर्वाणवाचकः ।
ततोऽवाप्नोति मुक्तिं च येन राधा प्रकीर्तिता ॥
(ब्रह्मवै. २.४८. ४०; ४२)

राधा की उपासना—राधा एवं कृष्ण की उपासना का प्राचीनतम ग्रंथ 'ज्ञानामृतसार' है, जो 'नारद पंचरात्र' नामक संहिता में समाविष्ट है। इस ग्रंथ के अनुसार, कृष्ण गोलोक नामक दिव्य लोक में निवास करने हैं, जहाँ राधा भी उनकी प्रियतम सखी बन कर रहती है (ज्ञानामृत. २.३.२४)। इस ग्रंथ में राधा को

कृष्ण के श्रावण ही श्रेष्ठ माना गया है, एवं इन दोनों की उपासना करने से भक्त को भी गोलोक की प्राप्ति होती है, ऐसा कहा गया है। इस ग्रंथ का रचना काल ई. स. ४ थी शताब्दी माना गया है।

(१) निंबार्क सांप्रदाय—राधाकृष्ण संप्रदाय का अन्य एक उपासक निंबार्क माना जाता है, जो ई. स. ११ वी शताब्दी में उत्पन्न हुआ था। निंबार्क स्वयं रामानुज संप्रदाय का था। किंतु जहाँ रामानुज नारायण, एवं उसकी पत्नी लक्ष्मी (भू अथवा लीला) की उपासना पर जोर देते हैं, वहाँ निंबार्क गोपालकृष्ण एवं राधा के उपासना को प्राधान्य देते हैं। निंबार्क का यह तत्त्वज्ञान 'सनक सांप्रदाय' नाम से सुविख्यात है। निंबार्क स्वयं दक्षिण देश में रहनेवाला तैलंगी ब्राह्मण था, फिर भी वह स्वयं उत्तर भारत में मथुरा एवं वृन्दावन के पास रहता था। इस कारण इसके सांप्रदाय के बहुत सारे लोग उत्तर प्रदेश एवं बंगला में दिखाई देते हैं। ये लोग अपने मालप्रदेश पर गोपीचंद्रन का टीका लगाते हैं एवं तुलसीमाला पहनते हैं।

(२) बल्लभ सांप्रदाय—राधाकृष्ण सांप्रदाय का अन्य एक महान् प्रचारक 'बल्लभ' माना जाता है, जो १५ वीं शताब्दी में उत्पन्न हुआ था। गोकुल में नानाविध बाल-लीला करनेवाला गोपालकृष्ण एवं उसकी प्रियसखी राधा 'बल्लभ संप्रदाय' के अधिष्ठात्री देवता हैं। इस संप्रदाय के अनुसार, गोलोक, जहाँ कृष्ण एवं राधा निवास करते हैं, वह श्रीविष्णु के वैकुण्ठ से भी श्रेष्ठ है, एवं उस लोक में प्रवेश प्राप्त करना यहाँ प्रत्येक साधक का अंतीम ध्येय है।

(३) सखीभाव सांप्रदाय—राधाकृष्ण की उपासना का और एक आविष्कार 'सखीभाव' संप्रदाय है, जहाँ साधक स्वयं स्त्रीवेष धारण कर राधा-कृष्ण की उपासना करते हैं। राधा के समान स्त्रीवेष धारण करने से श्रीकृष्ण का साहचर्य अधिक सुलभता से प्राप्त हो सकता है, ऐसी इन लोगों की धारणा है। उन्हें राधाकृष्ण की उपासना का एक काफ़ी विस्तृत रूप माना जा सकता है (भांडारकर, वैष्णवविजय, पृ. ९३; ११७, १२३; १२६)।

(४) श्री विठ्ठल-उपासना—महाराष्ट्र में कृष्ण-उपासना का आद्य प्रवर्तक पुंडलीक माना जाता है, जिसकी परंपरा आगे चल कर नामदेव एवं तुकाराम आदि संतों ने चलायी। किन्तु महाराष्ट्र में प्राप्त श्रीविठ्ठल की उपासना में राधा का स्थान श्रीकृष्ण की पत्नी रुक्मिणी के द्वारा लिया गया प्रतीत होता है। रुक्मिणी के कारण श्रीकृष्ण पंढरपुर

(पुंडलीकपुर) में आया, तथा श्रीविठ्ठल नाम ने प्रसिद्ध हुआ।

२. (सो. अनु.) अधिरथ सूत की पत्नी, जिसे राधिक नामान्तर भी प्राप्त था। कुन्ती के द्वारा नदी में छोड़ा गया कर्ण इसे मिला था। इसने उसका नाम वसुष्ण रखा था। कर्ण को मिलने के बाद इसे अन्य औरस पुत्र भी हुए थे (म. आ. १०४.१४-१५; व. २९३.१२)।

राधिक—(सो. कुरु.) एक कुर्बुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार जयसेन राजा का पुत्र था। विष्णु, वायु एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'आराविन्', 'आराधि' एवं 'रुचिर' कहा गया है।

राधेय—सांख्यायन आरण्यक में निर्दिष्ट एक आचार्य (सो. आ. ७.६)। राधा का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. अंगराज कर्ण का मातृक नाम। अधिरथ सूत की पत्नी राधा ने कर्ण को पाल-पोस कर बड़ा किया था, जिस कारण, उसे यह मातृक नाम प्राप्त हुआ था (कथ १. देखिये)।

३. अधिरथ सूत एवं राधा के चार पुत्रों का सानुहिक नाम। भारतीय युद्ध में ये चार ही पुत्र कौरवों के पक्ष में शामिल थे, जिनमें से एक अभिमन्यु के द्वारा, एवं शक्रे तीन अश्विन के द्वारा मारे गये (म. द्रो. ३१.७)।

राम—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक राजा, जहाँ दुःशीम पृथिवान् एवं वेन नामक राजाओं के साथ इसके दानश्रुता की प्रशंसा की गयी है (ऋ. १०.९३.१४)। लुडविक के अनुसार, इसका पैतृक नाम 'मायव' था (लुडविक, ऋग्वेद का अनुवाद. ३.१६६)।

२. (सो. पुरुषसू.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सेनजित् राजा का पुत्र था। अन्य पुराणों में इसका निर्देश अप्राप्य है।

३. सावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि।

४. श्रीकृष्ण के श्रेष्ठ भ्राता बल्लभ का नामान्तर।

५. परशुराम जामदग्न्य का नामान्तर

राम औपतस्विनि—एक यज्ञवेत्ता आचार्य, जो उपतस्विन् का पुत्र एवं यज्ञवल्क्य का समकालीन था। 'अंसुग्रह' नामक यज्ञ के संबंधी इसके मतों का निर्देश शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है (श. ब्रा. ४. ६. १. ७)।

राम कानुजातेय वैयाघ्रपद्य—एक आचार्य, जो शंभु शात्यायनि आत्रेय नामक आचार्य का शिष्य, एवं शंख दाम्पत्य नामक आचार्य का गुरु था (जै. उ. ब्रा. ३.

४०.१; ४.१६.१)। 'क्रतुजात' एवं व्याघ्रपद' नामक आचार्यों का वंशज होने के कारण, इसे 'क्रतुजातेय' एवं 'वैयाघ्रपद्य' पौत्रक नाम प्राप्त हुए होंगे।

राम जामदग्न्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ११०; कात्यायन सर्वानुक्रमणी)। परशुराम जामदग्न्य एवं यह दोनों एक ही व्यक्ति थे (परशुराम देखिये)।

राम दशरथि—अयोध्या का एक सुविख्यात सम्राट, जो भारतीयों का प्रातःस्मरणीय विभूति मानी जाती है। यह अयोध्या के सुविख्यात राजा दशरथ के चार पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र था। ई. पू. २३५०-१९५० यह काल भारतीय इतिहास में अयोध्या के रघुवंशीय राजाओं का काल माना जाता है, जिसके वैभव की परमोच्च सीमा राम दशरथि के राज्यकाल में हुई।

आदर्श पुरुषश्रेष्ठ—एक आदर्श पुरुषश्रेष्ठ मान कर, वाल्मीकि रामायण में राम का चरित्रचित्रण किया गया है। प्राचीन भारतीय परंपरा के अनुसार, आदर्शपुत्र, आदर्शपति, आदर्श राजा इन तीनों आदर्शों का अद्वितीय संगम राम के जीवनचरित्र में हुआ है। एकवचन, एक-पत्नी, एकव्रत इन व्रतों का निष्ठापूर्वक आचरण करनेवाला राम सर्वतोपरी एक आदर्श व्यक्ति है, जिसका सारा जीवन-चरित्र आदर्श जीवन का एक वस्तुपाठ है। अहिंसा, दया, अध्ययन, सुस्वभाव, इंद्रियदमन एवं मनोनिग्रह इन छः गुणों से युक्त एक आदर्श व्यक्ति का जीवनचरित्र लोगों के सम्मुख रखना, यही वाल्मीकि रामायण का प्रमुख हेतु है।

इस दृष्टि से वाल्मीकि रामायण के प्रारंभ के श्लोक दर्शनीय है, जहाँ वाल्मीकि ऋषि नारद से पृथ्वी के एक आदर्श व्यक्ति का जीवनचरित्र सुनाने का प्रार्थना करते हैं:—

को न्वरिमन् सांप्रतं लोके, गुणवान् कश्च धीर्यवान्।

(इस पृथ्वी में जो गुणसंपन्न, पराक्रमी, धर्मज्ञ, सत्यवक्ता, दृढव्रत, चारित्र्यवान्, ज्ञाता, लोकप्रिय, संयमी, तेजस्वी ऐसे व्यक्ति का जीवनचरित्र मैं सुनना चाहता हूँ)।

वैयक्तिक सद्गुणों का आदर्श—इस तरह वैयक्तिक सद्गुणों का उच्चतम आदर्श, समाज के सम्मुख रखना यह वाल्मीकि-प्रणीत रामकथा का प्रमुख उद्देश्य है। इसकी तुलना महाभारत में बर्णित युधिष्ठिर राजा से ही केवल हो सकती है। किन्तु युधिष्ठिर का चरित्रचित्रण करते समय एक तत्त्वदर्शी एवं धर्मनिष्ठ राजा को कौटुंबिक एवं सामाजिक घटक के नाते कदम कदम पर

कौनसी कठिनाईयाँ उठानी पड़ती हैं, एवं मनस्ताप सहना पड़ता है, इसका चित्रण व्यास-प्रणीत महाभारत में किया गया है। वहाँ व्यक्तिधर्म का गौणत्व दे कर, समाजधर्म एवं राष्ट्रधर्म का चित्रण प्रमुख उद्देश्य माना गया है। उसके विपरीत, व्यक्तिगत सद्गुण एवं वैयक्तिक धर्माचरण का आदर्श राम दशरथि को मान कर, उसका चरित्रचित्रण वाल्मीकि के द्वारा किया गया है। इस कारण श्रीकृष्ण जैसा राजनीतिज्ञ, अथवा युधिष्ठिर जैसा धर्मज्ञ न होते हुए भी, राम प्राचीन भारतीय इतिहास का एक अद्वितीय पूर्ण-पुरुष प्रतीत होता है।

प्राचीन क्षत्रिय समाज में, जब बहुपत्नीकत्व रूढ था, उस समय एक पत्नीकत्व का आदर्श इसने प्रस्थापित किया था। परशुराम जामदग्न्य के पृथ्वी निःक्षत्रिय करने की प्रतिज्ञा के कारण, सारा क्षत्रिय समाज जब हतप्रभ एवं निर्वीर्य बन गया था, उस समय आदर्श क्षत्रिय व्यक्ति एवं राजा का आचरण कैसा हो, इसका वस्तुपाठ राम ने क्षत्रियों के सम्मुख रख दिया। रावण जैसे राक्षसों के आक्रमण के कारण, जब सारा दक्षिण भारत ही नहीं, बल्कि गंगा घाटी का प्रदेश ही भयभीत हो चुका था, उस समय राम ने अपने पराक्रम के कारण, इस सारे प्रदेश को भीतिमुक्त किया, एवं इस तरह केवल उत्तर भारत में ही नहीं बल्कि दक्षिण भारत में भी आर्य संस्कृति की पुनःस्थापना की। इस तरह एक व्यक्ति एवं एक राजा के नाते राम के द्वारा किया गया कार्य अद्वितीय ऐतिहासिक महत्त्व रखता है।

नाम—यद्यपि उत्तरकालीन साहित्य में 'रामचंद्र' नाम से राम दशरथि का निर्देश अनेक बार प्राप्त है, फिर भी वाल्मीकि रामायण में सर्वत्र इते राम ही कहा गया है। क्वचित एक स्थल में इसे चंद्र की उपमा दी गयी है (वा. रा. यु. १०२. ३२)। संभव है, चंद्र से इस सादृश्य के कारण, इसे उत्तरकालीन साहित्य में 'रामचंद्र' नाम प्राप्त हुआ होगा।

जन्म—जैसे पहले ही कहा गया है, ई. पू. २०००-१९५० लगभग यह राम दशरथि का काल माना गया है। भारतीय परंपरा के अनुसार, वैवस्वत मन्वन्तर के चौबीसवें त्रेतायुग में यह उत्पन्न हुआ था (ह. वं १.४१; वायु. ७०.४८; ब्रह्माण्ड. ३. ८.५४; ब्रह्म. २१३.१२४; मत्स्य. ४७.२४७; भा. ९.१०.५२; पद्म. पा. ३६)। महाभारत के अनुसार, यह अष्टाईसवें त्रेतायुग में उत्पन्न

हुआ था (म. स. परि. १. क्र. २१. पक्ति ४९४-४९५)।

दशरथ राजा को कौसल्या, सुमित्रा एवं कैकेयी नामक तीन पत्नियों होते हुए भी कोई भी पुत्र न था। इसी अवस्था में पुत्रप्राप्ति के हेतु उसने ऋष्यशृंग ऋषि से एक 'पुत्रकामेष्टी यज्ञ' कराया। उस यज्ञ में सिद्ध किये गये 'चक्र' का आधा भाग दशरथ की पटरानी कौसल्या ने भक्षण किया, जिस कारण यज्ञ के पश्चात् एक साल बाद उसके गर्भ से राम दशरथ का जन्म हुआ।

राम का जन्म चैत्र शुक्ल नवमी के दिन दोपहर के बारह बजे, जब पौंच ग्रह उच्चस्थिति में थे उस समय हुआ था। उस समय पुनर्वसु नक्षत्र, कर्क लग्न एवं लग्न में गुरुचंद्र योग था (वा. रा. वा. १८.८-९; अ. रा. १. ३; पद्म. उ. २४२)।

अवतार—पौराणिक साहित्य में इसे श्री विष्णु का सातवा अवतार कहा गया है। वाल्मीकि रामायण में इसे अनेक बार श्रीविष्णु के सदृश पराक्रमी कहा गया है (वा. रा. वा. १.३८), किन्तु श्रीविष्णु का अवतार कहीं भी नहीं कहा गया है। क्वचित् एक स्थान पर जहाँ इसे श्रीविष्णु का अवतार कहा गया है (वा. रा. यु. १.१७), वह भाग प्रक्षिप्त प्रतीत होता है।

उत्तरकालीन साहित्य में रामभक्ति की कल्पना का जो जो विकास होने लगा, तब उसके साथ साथ राम के अवतारवाद की कल्पना भी दृढ़ होती गयी। रामतापनीय उपनिषद् से ले कर अध्यात्मरामायण तक के समस्त राम भक्तिविषयक रचनाओं में राम को केवल विष्णु का ही नहीं, बल्कि साक्षात् परब्रह्म का ही अवतार माना गया है (अ. रा. वा. १)। इन ग्रंथों के अनुसार, जन्म लेते ही अपनी माता कौसल्या को इसने श्रीविष्णु के रूप में दर्शन दिया था (अ. रा. वा. १.३.१३-१५; पद्म. उ. २६९. ८०; आ. रा. १.२.४)। महाभारत के अनुसार, यह मार्कण्डेय के अंश से, एवं हरीवेश के अनुसार विश्वामित्र के अंश से उत्पन्न हुआ था। देवी भागवत में राम एवं लक्ष्मण को नरनारायण का अवतार कहा गया है।

स्वरूपवर्णन—राम का स्वरूपवर्णन 'वाल्मीकि रामायण' में प्राप्त है, जिसका पाठन रामभक्त लोग आज भी नित्यपाठ के स्तोत्र की भाँति करते हैं :-

त्रिगुलांतो महाबाहुः कम्बुधीनो महाहनुः ।
महोत्सको महेश्वातो, गृहज्वरविदमः ॥

आजानुबाहुः सुशिवाः, सुलल्लटः सुविक्रमः ।
समः समविभक्तार्ङ्गः, स्निग्धवर्णः प्रतापवान् ॥
पीनवक्षा विशालाक्षो, लक्ष्मीवान् शुभलक्षणः ।
धर्मज्ञः सत्यसंधश्च, प्रजानां च हिते रतः ॥
विष्णुना लक्ष्मो धीर्यो, सोमवत् प्रियदर्शनः ।
कालाग्नि सदृशः क्रोधे, क्षमया पृथिवीसमः ॥
(वा. रा. वा. १.१०-१८)।

नामकरण एवं शिक्षा—राम का नामकरण दशरथ राजा के कुलगुरु वसिष्ठ के द्वारा हुआ, जिसने 'रामस्य लोक-रामस्य' कह कर इसका नाम 'राम' रख दिया (वा. रा. वा. १८. २९)। नामकरण एवं उपनयन के पश्चात् वसिष्ठ से इसे शस्त्र एवं शास्त्रों की शिक्षा प्राप्त हुई (वा. रा. वा. १८.३६-३७)। इसे यजुर्वेद का भी ज्ञान प्राप्त था (वा. रा. सु. ३५.१४)।

वसिष्ठ से उपदेशप्राप्ति—शिक्षा समाप्त होने पर सोलह वर्ष का राम तीर्थयात्रा करने के लिए निकला। इस तीर्थयात्रा को समाप्त करने पर, राम के मन में यकायक विरक्ति की भावना उत्पन्न हुई, एवं धन, राज्य, माता आदि का त्याग कर प्राणत्याग करने के विचार इसके मन में आने लगे :-

किं धनेन किमस्त्रामि; किं राज्येन किमीहया।

इति निश्चयमात्रतः प्राणत्यागपरः स्थितः ॥

(यो. वा. १.१०.४६)।

राम की यह विलक्षण वैराग्यवृत्ति देख कर वसिष्ठ ने उसे शान्तकर्मसमुच्चयात्मक उपदेश प्रदान किया, जो 'योगवासिष्ठ' नामक ग्रंथ में समाविष्ट है।

वसिष्ठ ने राम से कहा, 'आत्मज्ञान एवं मोक्षप्राप्ति के लिए अपना दैनंदिन व्यवहार एवं कर्तव्य छोड़ने की आवश्यकता नहीं है। जीवन सफल बनाने के लिए कर्तव्य निभाने की उतनी ही जरूरत है, जितनी आत्मज्ञान की है:-

उभाभ्यामेव पक्षाभ्यां यथा खे पक्षिणां गतिः ।

तथैव ज्ञानकर्मभ्यां जायते परमं पदम् ॥

केवलात्मकर्मणो ज्ञानात्तद्दि मोक्षोऽभिजायते ।

किन्तूभाभ्यां भवेन्मोक्षः साधनं तूभयं विदुः ॥

(यो. वा. १.१.७-८)।

(आकाश में घूमनेवाला पंखी जिस तरह अपने दो पंखों पर तैरता है, उसी तरह ज्ञान एवं कर्मों का समुच्चय करने से ही मनुष्य को जीवन में परमपद की प्राप्ति हो सकती है। केवल ज्ञान अथवा केवल कर्म की उपासना करने

से मोक्ष की प्राप्ति होना असंभव है। इसी कारण इन दोनों का समन्वय कर के ही, जानी लोग मोक्ष की प्राप्ति कर लेते हैं।

विश्वामित्रसहवास—राम युवावस्था में प्रविष्ट होने पर, एक बार विश्वामित्र महर्षि दशरथ राजा से मिलने आये। उन्होंने कहा, 'मैंने दण्डकारण्य में आजकल एक यज्ञ का प्रारंभ किया है, जिसमें मारीच एवं सुबाहु नामक राक्षसों की दृष्टता के कारण, काफी रुकावटें पैदा हो रही हैं। ये दोनों राक्षस यज्ञस्थल में आ कर सड़ा हुआ रक्त एवं मॉस की वर्षा करते हैं, एवं यज्ञ में बाधा उत्पन्न करते हैं। उन राक्षसों का वध तुम्हारे नवयुवा पुत्र राम एवं लक्ष्मण ही केवल कर सकते हैं। उन्हें मेरी सहाय्यता के लिए दण्डकारण्य में भेजने की आप कृपा करें'।

वसिष्ठ की सूचना के अनुसार, दशरथ राजा ने विश्वामित्र की यह प्रार्थना मान्य कर दी, एवं राम लक्ष्मण को विश्वामित्र के साथ जाने की आज्ञा दी। कमर को विजयशाली तलवार एवं कंधे पर धनुष्य एवं बाण लगाये हुए राम एवं लक्ष्मण विश्वामित्र के साथ दण्डकारण्य की ओर चल पड़े।

दण्डकारण्य जाते समय इन्होंने सर्व प्रथम सरयू नदी पार की। उसी नदी के तट पर विश्वामित्र ने रामलक्ष्मण को 'बल' एवं 'अतिबल' नामक मंत्रों का ज्ञान कराया, जिनके कारण भूख एवं प्यास को सहन करने की ताकद इन्हें उत्पन्न हुई। तत्पश्चात् अंगदेश में स्थित कामाश्रम में ये पहुँचे, जहाँ विश्वामित्र ने इन्हें मदनदाह की कथा सुनाई (वा. रा. भा. ३२-४८)।

ताटकावध—तदोपरान्त गंगा नदी पार कर ये दण्डकारण्य में आ पहुँचे, जहाँ विश्वामित्र ने इन्हें दण्डकारण्य का पूर्व इतिहास बताया, एवं कहा, 'आज जहाँ तुम घना जंगल देख रहे हो, वहाँ पूर्वकाल में अगस्त्य ऋषि का संपन्न देश था। सुंद राक्षस की पत्नी ताटका एवं उसका पुत्र मारीच के कारण, यहाँ की सारी वस्ती आज उजड़ गयी है। ताटका में वीस हाथियों का बल है, जिसकारण उसे समस्त पौरजन दहते हैं। ऋषिमुनियों को पीड़ा देनेवाली उस राक्षसी का वध करने के लिए ही मैं आज तुम्हें यहाँ लाया हूँ'।

ताटका स्त्री होने के कारण, उसके हाथ एवं पैर ही तोड़ कर उसे हतबल बनाने का पहले इसका विचार था। किन्तु ताटका के द्वारा आकाश में से पत्थरों का मारा किये जाने पर, इसने अपना एक बाण छोड़ कर उस महाकाय एवं विलुप्त राक्षसी का वध किया, एवं उसके द्वारा विजय

किये गये मलद एवं करुणक देशों को पुनः आवाद बनाया (वा. रा. भा. २४)।

मारीच एवं सुबाहु से युद्ध—ताटकावध के पश्चात् विश्वामित्र रामलक्ष्मणों को साथ ले कर सिद्धाश्रम में गये, जहाँ उनका यज्ञतमारोह चल रहा था। वहाँ पहुँचने पर विश्वामित्र ने इससे कहा, 'यह वहाँ स्थान है, जहाँ बलि वैरोचन के वध के लिए भगवान् विष्णु ने वामनावतार धारण किया था। इस स्थान पर मेरा आश्रम बसा हुआ है, एवं यहाँ मैंने यज्ञ तमारोह भी प्रारंभ किया है। किन्तु मारीच एवं सुबाहु राक्षसों के कारण, यज्ञकार्य आज असंभव हो रहा है। इस कारण मेरी यही इच्छा है कि, तुम उनसे युद्ध कर उन्हें परास्त करो'।

विश्वामित्र की आज्ञा के अनुसार, राम एवं लक्ष्मण ने छः दिन अहोरात्र यज्ञमेडप में कड़ा पहारा किया। छठे दिन प्रातःकाल के समय, मारीच एवं सुबाहु ने यज्ञभूमि पर आक्रमण किया। राम ने मानवास्त्र का प्रयोग कर, मारीच को शतयोजन की दूरी पर सन्द्र में फेंक दिया, एवं 'अग्नि अस्त्र' से सुबाहु का वध किया।

अहल्योद्धार—इस प्रकार विश्वामित्र का कार्य समाप्त कर, राम एवं लक्ष्मण ने अयोध्या नगरी के लिए पुनः प्रस्थान किया। मार्ग में विश्वामित्र ने इन्हें गंगा नदी की कथा सुनाई। कान्यकुब्ज देश, शोण नदी, भार्गवी नदी, विशाला नगरी आदि तीर्थस्थानों का दर्शन लेते हुए ये मिथिला नगरी के समीप ही स्थित गौतमाश्रम में आ पहुँचे। वहाँ विश्वामित्र ने राम को अहल्या की कथा सुनाई, एवं तत्पश्चात् राम ने अपने पदस्पर्श से उस शापित स्त्री का उद्धार किया (वा. रा. भा. २७)।

कई अभ्यासकों के अनुसार, राम के द्वारा किये गये ताटकावध एवं अहल्योद्धार, ये दोनों कथाएँ रूपकात्मक हैं। दण्डकारण्य प्रदेश प्राचीन काल में गंगा नदी तक फैला हुआ था। उसे राक्षसों की पीड़ा से मुक्त कर वहाँ की जंगल भूमि को राम ने पुनः सुजला एवं सुफला बना दिया, यही इन दोनों कथाओं का वास्तव अर्थ प्रतीत होता है (अहल्या देखिये)।

सीतास्वयंवर—पश्चात् विश्वामित्र की सूचना के अनुसार, ईशान्य की ओर मुड़ कर राम एवं लक्ष्मण सीरध्वज जनक राजा की मिथिला नगरी में सीतास्वयंवर के लिए पधारे। वहाँ राम ने जनक राजा के द्वारा लगायी गयी सीतास्वयंवर की शर्तों के अनुसार, शिवधनुष को लीलया उठा कर उसे बाण लगाया, जिस समय शिव-

धनुष भंग हो कर उसके दो टुकड़े हुये। पश्चात् जनक राजा ने राम को सीता विवाह में दे दी, एवं कहा:—

इयं सीता मम सुता, सहधर्मचरी तव ॥
प्रतीच्छ चैतं भद्रं ते, पाणिं गृह्णीष्व पाणिना ।
पतिव्रता महाभाग, लघेवानुगता सदा ॥
(वा. रा. वा. ७३.२६-२७) ।

(मेरी कन्या सीता आज से धर्म मार्ग पर चलते समय तुम्हें साथ देगी। साया के समान वह तुम्हारे साथ रहेगी। उसका तुम स्वीकार करो)

उत्तर भारत में विवाहान्तर्गत कन्यादान के समय इन श्लोकों का आज भी बड़ी श्रद्धा भाव से पठन किया जाता है।

राम के विवाह के समय, जनक राजा ने राम के भाई लक्ष्मण, भरत एवं शत्रुघ्न के विवाह क्रमशः उर्मिला, मांडवी एवं श्रुतकीर्ति से कराये। उनमें से उर्मिला स्वयं जनक की, एवं माण्डवी एवं श्रुतकीर्ति जनक के छोटे भाई कुशध्वज की कन्याएँ थी (वा. रा. वा. ७३) ।

वाल्मीकि रामायण में अन्यत्र लक्ष्मण अविवाहित होने का, एवं भरत का विवाह सीतास्वयंवर के पहले ही होने का निर्देश प्राप्त है (वा. रा. अर. १८.३; वा. ७३.४) । इन निर्देशों को सही मान कर, कई अभ्यासक राम के साथ साथ उसके अन्य भाइयों का विवाह होने का वाल्मीकि रामायण में प्राप्त निर्देश प्रक्षिप्त मानते हैं।

परशुराम से संघर्ष—विवाह के पश्चात् अयोध्या आते समय, यज्ञायक परशुराम ने राम के मांग का अवरोध किया। उसने राम से कहा, 'मेरे गुरु शिव के धनुष का भंग कर तुमने उनका अवमान किया है। मैं यही चाहता हूँ कि, मेरे हाथ में जो विष्णु का धनुष्य है उसका भी भंग कर तुम्हारे ताकद की प्रतीति मुझे दो' ।

इस पर राम ने परशुराम से कहा, 'अपने पिता के वध का बदला लेने के लिए पृथ्वी के समस्त क्षत्रियों की नाश करने के लिए आप उद्यत हुए हैं, किन्तु अन्य क्षत्रियों की भौति में आतंकी शरण में न आऊँगा' । इतना कह कर राम ने परशुराम के विष्णुधनुष का भी भंग किया, जिस पर परशुराम इसकी शरण में आया।

इस तरह बड़ी उद्दण्डता से क्षत्रियसंहार के लिए तुले हुए परशुराम को रामने परास्त किया, एवं पृथ्वी पर बचे हुए क्षत्रियों का रक्षण किया (वा. रा. वा. ७६-७७) ।

यौवराज्याभिषेक—विवाह के समय, राम एवं सीता की आयु पंद्रह एवं छः वर्षों की थी। अयोध्या में आने के पश्चात् बारह वर्षों तक राम तथा सीता का जीवन परस्परों के सहवास में अत्यंत आनंद से व्यतीत हुआ। अपने सद्गुण एवं धर्मपरायणता के कारण यह अपने पौरजनों में भी काफी लोकप्रिय बना था।

इसकी आयु सत्ताअस्र वर्षों की होने पर, दशरथ राजा ने इसे यौवराज्याभिषेक करने का निश्चय किया। इस समय उसने अपने सभाजनों से कहा, 'राम राजकारणमें कुशल है, एवं शौर्य में इसकी बराबरी करनेवाला क्षत्रिय आज पृथ्वी पर नहीं है। इसी कारण मैं अपने सारे पुत्रों में से राम को ही यौवराज्याभिषेक करना चाहता हूँ' ।

इस तरह राम के यौवराज्याभिषेक का दिन चैत्र माह में पुष्यनक्षत्र में निश्चित किया गया। यौवराज्याभिषेक के अगले दिन रात्रि में राम तथा सीता ने उपोषण किया एवं दभासन पर निद्रा की। तत्पश्चात् होमहवनादि धार्मिक विधि भी कियें। दूसरे दिन प्रातःकाल में यह यौवराज्याभिषेक के लिए निकल ही रहा था, इतने में दशरथ राजा की ओर से सुमंत्र की हाथों इसे बुलावा आया।

कैकेयी से संभाषण—उस बुलावे के अनुसार, कैकेयी के महल में बैठे हुए अपने पिता से मिलने जाने पर, दशरथ ने इससे कोई भी भाषण न किया। फिर कैकेयी ने राम से कहा, 'दशरथ राजा तुमसे कुछ कहना चाहते हैं, किन्तु तुम्हारे प्रेम के कारण, कह नहीं पाते। इस अवस्था में तुम्हारा यही कर्तव्य है, कि उनकी इच्छा का तुम पालन करो' ।

इसपर दशरथ राजा की हर एक इच्छा का पालन करने का अपना दृढनिश्चय व्यक्त करते हुए राम ने कहा :—

‘अहं हि वचनाद्वाज्ञः, पतेयमपि पावके ॥
भक्षयेयं विषं तीक्ष्णं, पतेयमपि चार्णवे ।
नियुक्तो गुरुणा पित्रा, नृपेण च हितेन च ॥
तद्ब्रूहि वचनं देवि, राज्ञो यद्भिक्षांक्षितम् ।
करिष्ये प्रतिजाने च, रामो द्विर्नास्मिमापते ॥’

(वा. रा. अयो. १८.२८-३०) ।

(दशरथ के द्वारा आज्ञा किये जाने पर, मैं अग्रिप्रवेश, विषमक्षण आदि के लिए भी सिद्ध हूँ। वयों कि, दशरथ राजा मेरा पिता, गुरु, एवं हितदर्शी हैं। अतः राजा का मनोगत बताने की कृपा आप करें। उसका तुरंत ही पालन किया जाएगा, यही मेरी आन है। मैं सत्यप्रतिज्ञ हूँ, एवं प्रतिज्ञा का पालन करना अपना धर्म समझता हूँ।)

राम के इस कहने पर कैकेयी ने देवासुरसुद्ध के समय, दशरथ राजा के द्वारा दिये गये दो बरों की कथा कह सुनाई, एवं कहा, 'ये बर मैंने राजा से आज माँग लिये हैं, जिसके अनुसार अयोध्या का राज्य मेरे पुत्र भरत को प्राप्त होगा, एवं तुम्हें चौदह वर्षों के लिए वनवास जाना पड़ेगा'।

इस पर राम ने जीवनमुक्त सिद्ध की मौलि 'शुभ छत्र' एवं अन्य राजभूषणों का त्याग किया, एवं स्वजन एवं पौरजनों से विदा ले कर वन की ओर प्रस्थान किया (वा. रा. अयो. २०, ३२-३४)।

राम-का वनगमन का यह निश्चय सुन कर इसकी माता कौसल्या, एवं बन्धु लक्ष्मण ने इसे इस निश्चय से परावृत्त करने का काफी प्रयत्न किया। लक्ष्मण ने इसे कहा, 'बुढ़ापे के कारण, दशरथ राजा की बुद्धि विनष्ट हो चुकी है। इस कारण, उसकी आज्ञा का पालन करने की कोई भी बखरत नहीं है'।

इन आक्षेपों को उत्तर देते समय, एवं अपनी तात्त्विक भूमिका का विवरण करते हुए राम ने कहा—

धर्मोहि परमो लोके धर्मे सत्यं प्रतिष्ठितम् ।

धर्मसंश्रितमभ्येतस्वितुवचनमुत्तमम् ॥

(वा. रा. अयो. २१, ४१)।

(इस संसार में धर्म सर्वश्रेष्ठ है, एवं धर्म ही सत्य का अधिष्ठान है। मेरे पिता ने जो आज्ञा मुझे दी है, वह भी इसी धर्म का अनुसरण करनेवाली है)।

राम ने आगे कहा, 'राजा का यही कर्तव्य है कि वह सत्यमार्ग से चले। राजा के द्वारा असत्याचरण किये जाने पर, उसकी प्रज्ञा भी असत्यमार्ग की ओर जाने की संभावना है'।

वनवास—राम के साथ इसका भाई लक्ष्मण, एवं इसकी पत्नी सीता इसके साथ वनवास में गये। ये तीनों अयोध्या छोड़ कर सायंकाल के समय पैदल ही तमसा नदी पर आये, जहाँ अयोध्या के समस्त पौरजन वनवासगमन की इच्छा से इनके साथ आये। प्रातःकाल के समय वनवासगमन के लिए उसी पौरजनों का मुखावा दे कर राम, सीता तथा लक्ष्मण के साथ आगे बढ़े। तत्पश्चात् वेदश्रुति, स्पंदिका, गोमती आदि नदियों को पार कर, ये दक्षिण दिशा की ओर जाने लगे (वा. रा. अयो. ४९)।

अयोध्या राज्य के सीमा पर पहुँचते ही इसने अयोध्या एवं वहाँ की देवताओं को पुनः एकवार वंदन किया।

पश्चात् शृंगवेरपुर नगरी के समीप भागीरथी नदी को पार कर, निपादराज गुह ने इसे दक्षिण की ओर पहुँचा दिया। वहाँ पहुँचते ही राम ने पुनः एकवार लक्ष्मण को अयोध्या लौट जाने के लिए कहा, किन्तु लक्ष्मण अपने निश्चय पर अटल रहा (वा. रा. अयो. ५३)।

बाद में प्रयाग आ कर राम ने भरद्वाज से मुलाकात की, एवं वनवास के चौदह साल शान्तता से कहाँ बिताये जा सकेंगे, इसके संबंध में उस मुनि की सलाह ली। भरद्वाज ने इन्हें चित्रकूट पर्वत पर पर्णकुटी बना कर रहने की सलाह दी। इस सलाह के अनुसार, कालिंदी नदी को पार कर यह चित्रकूट पर्वत पर पहुँच गया, जहाँ पर्णकुटी बना कर रहने लगा।

तत्पश्चात् भरद्वाज ऋषि को साथ ले कर, भरत इससे मिलने चित्रकूट आया। वहाँ दशरथ राजा की मृत्यु की वार्ता उसने इसे सुनाई, एवं अयोध्या नगरी को लौट आने की इसकी बार बार प्रार्थना की। इसने उसे कहा, 'जो कुछ हुआ है, उसके संबंध में अपने आप को दोष दे कर, तुम दुःखी न होना। जो कुछ हुआ है उसमें किसी मानव का दोष नहीं, वह ईश्वर की इच्छा है। इस कारण तुम वृथा शोक मत करो, बल्कि अयोध्या जा कर, राज्य का संहाल करो। यही तुम्हारा कर्तव्य है'।

दण्डकारण्यप्रवेश—भरत के अयोध्यागमन के पश्चात् राम को चित्रकूट पर्वत पर रहने में उदासीनता प्रतीत होने लगी। इस कारण, इसने चित्रकूट पर्वत को छोड़ कर दक्षिण में स्थित दण्डकारण्य में प्रवेश किया। वहाँ सर्वप्रथम यह अग्नि ऋषि के आश्रम में गया, एवं उसका एवं उसकी पत्नी अनसूया का दर्शन लिया।

आगे चल कर घोर अरण्य प्रारंभ हुआ, जहाँ इसने विराध नामक राक्षस का वध किया। तत्पश्चात् यह शरभंग ऋषि के आश्रम में गया, जहाँ उस ऋषि ने अपनी सारी तपस्या का दान कर, इसे पुनः राज्य प्राप्त करा देने का आश्वासन दिया। किन्तु इसने अत्यंत नम्रता से उसका इन्कार किया, एवं यह सुतीक्ष्ण ऋषि के आश्रम में गया। वहाँ जाते समय इसे राक्षसों के द्वारा मारे गये तपस्वियों की हड्डियों का ढेर दिखाई दिया, तब इसने वहाँ स्थित ऋषियों को आश्वासन दिया, 'मैं अब इसी वन में रह कर राक्षसों की पीड़ा से तुम्हारी रक्षा करूँगा' (वा. रा. अर. ७)।

राक्षस-विरोध—राक्षस संहार की राम की इस प्रतिज्ञा को सुन कर सीता ने इसे इस प्रतिज्ञा से परावृत्त करने

का प्रयत्न किया। उसने कहा, 'राक्षसों का संहार कर, ऋषिकुलों का रक्षण करना चतुरंगसेनाधारी राजा का कर्तव्य है; हमारे जैसे एकाकी एवं शस्त्र-विहीन वनवासियों का नहीं। इसी कारण, स्वसंरक्षण के अतिरिक्त अन्य किसी कारण से भी राक्षसों का वध करना हमारे वनवासधर्म के लिए योग्य नहीं है'।

इस पर राम ने कहा, 'ब्राह्मणों को अभयदान देना, यह हर एक क्षत्रिय का कर्तव्य है, चाहे वह राज्य पर हो या न हो। मैंने ऋषियों को अभयदान दिया है। अब चाहे आकाश भी गिर पड़े; मैं अपनी प्रतिज्ञा से हटने-वाला नहीं हूँ'।

राम के इसी प्रतिज्ञा के कारण, दण्डकारण्यनिवासी राक्षसों से इसका अत्रुत्व उत्पन्न हुआ, एवं सीताहरण, रावण से युद्ध आदि अनेकानेक आपत्तियाँ इसके वनवास काल में उत्पन्न हुईं।

इस तरह दण्डकारण्य के, ऋषियों के सहवास में राम ने अपने वनवास के दस साल बिताये। कई आश्रम में यह तीन महिने रहा, तथा कहींकहीं यह एक साल तक भी रहा। जहाँ जहाँ यह गया, वहाँ इसका हार्दिक स्वागत ही हुआ।

इस प्रकार दस साल बड़े ही आनंद से बिताने के बाद, यह अगस्त्य एवं लोपामुद्रा के दर्शन के लिए अगत्य आश्रम में गया। वहाँ अगस्त्य ने इसे विश्वकर्मा के द्वारा भगवान् विष्णु के लिए बनाया गया दिव्य धनुष्य, एवं अक्षय्य तुण्डी प्रदान किये, एवं पंचवटी में रह कर वहाँ के राक्षसों का संपूर्ण नाश करने का आदेश इसे दिया (वा. रा. अर. १२.२४-३०)।

पंचवटी में—तत्पश्चात् राम पंचवटी में पर्णकुटी बौध कर रहने लगा। वहाँ गरुड के भाई अरुण का पुत्र जटायु इनसे मिला, एवं उसने रामलक्ष्मण का आश्रम में न होने के काल में, सीता के संरक्षण का भार स्वीकार लिया (वा. रा. अर. १४)।

शूर्पणखावध—पंचवटी में वास करते समय, एक बार लंकाधिपति रावण की बहन शूर्पणखा राम से मिलने आई। इसे देख कर उसकी कामवासना जाग्रत हुई, एवं उसने इससे विवाह करने की इच्छा प्रकट की। फिर इसकी आज्ञा के अनुसार, लक्ष्मण ने उस राक्षसी के नाक एवं कान काट दिये; तथा उसके भाई खर एवं उसके दूषण, त्रिशिरसु आदि चौदह सेनापतियों का भी वध किया।

पंचवटी में हुये राक्षससंहार से अक्रंयन नामक एक राक्षस ही केवल बच सका, जिसने एवं शूर्पणखा ने लंकाधिपति रावण को जनस्थान प्रदेश में पंचवटी ग्राम में राम के द्वारा किए गये राक्षससंहार की वार्ता कह सुनाई।

सीताहरण—इस पर रावण ने मारीच नामक अपने 'कामरूपधर' (मन चाहे रूप धारण करनेवाले) भिन्न से कांचनमृग का रूप धारण करने के लिए कहा, एवं उसकी सहाय्यता से रामलक्ष्मण को आश्रम से बाहर निकाल कर, ऋषियेश में सीता का हरण किया।

उसी समय सीता के द्वारा पुकारे जाने पर जटायु ने रावण से युद्ध किया। किंतु रावण ने उसके दोनों पंख काट लिये, जिस कारण वह आहत हो कर मूर्च्छित गिर पड़ा।

बाद में जब रामलक्ष्मण सीता को ढूँढने के लिए निकले, तब जटायु ने इन्हें रावण के द्वारा सीता के हरण किये जाने की, एवं दक्षिण की ओर प्रस्थान करने की वार्ता कह सुनाई। इतना कह कर जटायु ने देहत्याग किया। जटायु की मृत्यु देख कर राम अत्यधिक विह्वल हुआ, एवं इसने उसे साक्षात् अपना पिता मान कर उसका दाहसंस्कार किया (वा. रा. अर. ७२)।

कबंधवध—जटायु के दाहकर्म के पश्चात्, सीता की खोज करते हुए राम एवं लक्ष्मण अगस्त्याश्रम की ओर मुड़े। मार्ग में इन्हें कबंध नामक एक राक्षस मिला, जिसका राम ने वध किया। मरते समय, कबंध ने सीता की मुक्ति के लिए, ऋष्यमूक पर्वत पर पंपा सरोवर के किनारे वनवासी अवस्था में रहनेवाले सुग्रीव वानर की सहाय्यता लेने की राम को सलाह दी। तदनुसार राम ऋष्यमूक पर्वत की ओर मुड़ा, जहाँ जाते समय, इसने मत्तंगाश्रम में मत्तंग ऋषि की शिष्या शबरी के आतिथ्य का स्वीकार किया।

वालिबध—बाद में यह सतसागर तीर्थ पर जा कर, पंपा सरोवर की ओर चल पड़ा, जहाँसे यह ऋष्यमूक पर्वत पर पहुँच गया। अपने भाई वालि के द्वारा विज्ञानवासी किया गया सुग्रीव, राम को देख कर शंक्ति हुआ, जिस कारण उसने अपने मंत्री हनुमत् को राम के पास भेज दिया।

हनुमत् ने बड़ी कुशाग्र बुद्धि से इसका परिचय पूछा, एवं अंत में अपनी पीठ पर बिठा कर सुग्रीव के पास ले आया। सुग्रीव एवं राम ने आपस में मिल कर बात की, एवं पश्चात् अग्नि की शींगध त्याकर, परसरो को सहाय्यता

करने की प्रतिज्ञा की। सीताहरण के समय गिरें हुए आभूषण सुग्रीव ने इसे बतायें। इसी समय, राम ने वालि के वध की प्रतिज्ञा की। पश्चात् वालि एवं सुग्रीव का घमासान युद्ध होते समय, वही सुअवसर मान कर, वृक्ष के पीछे से इसने एक बाण वालि पर छोड़ दिया, एवं उसका वध किया (वा. रा. कि. २६-१४)।

बालि का आक्षेप—राम ने वालिवध करते समय जो कथाचरण किया, वह क्षत्रिययुद्धनीति के विरुद्ध माना गया है। इस युद्ध के पूर्व वालि ने अपनी पत्नी तारा से राम के संबंध में कहा था—

‘धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च कथं पापं करिष्यति’।

(वा. रा. कि. १६)।

(राम धर्मज्ञ एवं कृतज्ञ होने के कारण, उसके हाथों कौनसा भी पापकर्म होना असंभव है)।

इसी कारण, मृत्यु के समय, वालि ने राम को उसके कथाचरण के लिए काफी दोष दिया, जिसका कोई भी उत्तर राम न दे सका। राम ने उसे इतना ही कहा, ‘अपने भाई के राज्य एवं पत्नी का अपहरण करनेवाले तुम, अत्यंत पापी हो, जिस कारण मैंने तुम्हारा वध किया है (वा. रा. कि. १७-१८)। रे. बुल्के के अनुसार, राम-बालि संवाद के ये दोनों सर्ग प्रक्षिप्त हैं (राम-कथा पृ. ४७९)।

सीता की छोड़—बालिवध के पश्चात्, राम ने किष्किंधा के राज्य पर सुग्रीव को राज्याभिषेक किया। अनन्तर वर्षाऋतु अर्थात् श्रावण से कार्तिक मास तक के चार महिने राम ने प्रसन्नवर्णगिरी के एक गुफा में बितायें (वा. रा. कि. २७-२८)।

वर्षाकाल समाप्त होने पर भी, जब सुग्रीव ने सीताशोध के संबंध में कोई प्रयत्न नहीं शुरु किया, तब राम ने लक्ष्मण के द्वारा उसको काफी निभेत्सना की। फिर सुग्रीव ने सीता की खोज के लिए नाना दिशाओं में अपने निम्नलिखित वानर सेनापति भेज दिये:—उत्तर दिशा में—शतवली; पूर्व दिशा में—विनत; पश्चिम दिशा में—सुषेण; दक्षिण दिशा में—हनुमत्, तार एवं वालिपुत्र अंगद (वा. रा. कि. २९-४७)। हनुमत् के साथ गये वानर-सैन्य में निम्नलिखित वानर भी शामिल थे:—अनंग, नील, सुहोत्र, शरारि, शरगुल्फ, नज, गवाक्ष, गवय, वृषभ, सुषेण, मैद, द्विविद, गंधमादन, उल्कामुख, एवं जांबवन् (वा. रा. कि. ४१)।

उपर्युक्त सेनापतियों में से हनुमत् की योग्यता जान कर राम ने उसे ‘अभिज्ञान’ के रूप में ‘त्वनामांकोपशोभित’ अंगुठी सौंप दी थी (वा. रा. कि. ४४-१२)। रे. बुल्के के अनुसार, बाल्माकि रामायण में प्राप्त वानरों के प्रेषण की अधिकांश सामग्री प्रक्षिप्त है (रामकथा पृ. ४८६)।

हनुमत् एवं उसके साथियों ने विन्ध्य पर्वत की गुफाओं में, एवं ऋक्षविल गुफा में, सीता का शोध किया। वह न लगने पर, सभी वानर निरुत्साहित हो कर प्रायोपवेशन करने लगे। इतने में जटायु के भाई संपाति ने एक सौ योजना की दूरी पर समुद्र में निवास करनेवाले रावण का पता वानरों को बताया। फिर हनुमत् ने समुद्र लौंच कर सीता का शोध लगाया। इस कालावधि में सारे वानर एक पैर पर खड़े हो कर तपस्या करते रहे (वा. रा. कि. ६७-३४)।

लंका पर आक्रमण—मसीता को ढूँढ निकालने के उपलक्ष्य में राम ने हनुमत् की बड़ी प्रशंसा की, एवं लंका के द्वारे में सारी जानकारियाँ भी प्राप्त की। पश्चात् नील को सेनापति बना कर, उत्तर फाल्गुनी नक्षत्र के सुसुहूर्त पर इसने लंका की ओर प्रयाण किया। इस तरह यह महेन्द्रपर्वत के शिखर पर आ पहुँचा (वा. रा. यु. १-५)।

जब हनुमत् सीता से मिल कर वापस आया, तब उसके पराक्रमके कारण, रावण के मेघिमंडल में काफी कोलाहल मच गया। रावण के छोटे भाई विभीषण ने उसे सलाह दी कि, सीता को जल्द वापस किया जाए। रावण के द्वारा उसे इन्कार किये जाने पर, अपने अन्तल, पनम, संपाति एवं प्रमति नामक चार प्रधानों के साथ, विभीषण राम के पक्ष में शामिल होने के लिए उपस्थित हुआ।

विभीषण से मित्रता—विभीषण को अपने पक्ष में शामिल करने के संबंध में सुग्रीवादि वानर शुरु में अत्यंत नाराज थे। किन्तु, उस समय राम ने कहा—

बद्धांजलिपुटे दीनं याचन्तं शरणगतम्।

न हन्यादात्तुशंस्वार्थमपि शत्रु परंतप ॥

(वा. रा. यु. १८-२७)

(शरण में आये हुए किसी भी व्यक्ति को, उसके सारे प्रमादों की माफ़ी कर उसे अभयदान देना, यह मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ)।

राम ने आगे कहा, ‘इस समय, साक्षात् रावण भी मेरी शरण में आएगा, तो उसे मैं भी अभयदान दूँगा’। विभीषण के द्वारा किया गया रावण पक्ष का त्याग, एवं

राम के द्वारा उसे दिया गया अभयदान, ये दोनों प्रसंग वैष्णव धर्म का परंपरा में 'भगवद्गीता' के समान ही महत्त्वपूर्ण एवं पवित्र माने जाते हैं।

पश्चात् इसने विभीषण को रावण का वध कर, उसे लंका का राजा बनाने का आश्वासन दिया। विभीषण ने भी इसे वचन दिया कि, वह रावणवध में इसकी सहाय्यता करेगा (वा. रा. यु. १७-१९)।

राम के द्वारा लंका पर आक्रमण होने के पूर्व, रावण ने अपने युक्त नामक गुप्तचर के द्वारा, सुग्रीव को अपने पक्ष में लाने का प्रयत्न किया, किन्तु सुग्रीव ने उसकी उपेक्षा की।

सेतुबंध—लंका में पहुँचने के लिए समुद्र पार करना आवश्यक था। समुद्र में मार्ग प्राप्त करने के लिए, इसने कुशासन पर आधिष्ठित हो कर, एवं तीन दिनों तक प्रायो-पंचदान कर, समुद्र की आराधना की। किन्तु समुद्र ने इसे मार्ग न दिया, जिस कारण इसने क्रुद्ध हो कर समुद्र पर ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया (वा. रा. यु. २१)। तत्पश्चात् समुद्र इसकी शरण में आया, एवं विश्वकर्मापुत्र नल के द्वारा समुद्र पर वृश्चो तथा पत्थरों से एक सेतु बंधने की उसने इस सलाह दी।

नील के द्वारा निर्माण किया गया यह सेतु सौ योजन लंबा था, जो उसने पाँच दिनों में, प्रतिदिन चौदह, बीस, इक्कीस, बाइस, तेइस योजन इस क्रम से तैयार किया था। इस सेतु के द्वारा, ससैन्य, समुद्र को लँघ कर यह लंका पहुँच गया (वा. रा. यु. २०, ४१-७७)। वहाँ 'सुवेल पर्वत' के समीप इसने पड़ाव डाले (वा. रा. यु. २३-२४)।

लंका का अवरोध—वानर सेना के समुद्र पार करने के बाद, रावण ने युक्त, सारण एवं शाहुल नामक अपने गुप्तचरों को वानरवेश से राम सेना की ओर भेज दिया, तथा रामसेना की गणना करने के लिए कहा। किन्तु विभीषण ने उनको पहचान लिया, एवं राम के संमुख पेश किया। पश्चात् वे शरण आने के कारण, राम ने उन्हें जीवनदान दिया (वा. रा. यु. २५-२७)। रे. बुल्के के अनुसार, वाल्मीकि रामायण में प्राप्त गुप्तचरों का यह वृत्तान्त, एवं तत्पश्चात् दिया गया राम के कटे हुए मायाशीर्ष का वृत्तान्त प्रक्षिप्त है (रामकथा पृ. ५५५-५५६)।

युद्ध के पूर्व, राम ने अपनी सेना को सुसंघटित बनाया, जिसमें अंगद को लंका के दक्षिण द्वार पर, हनुमत् को पश्चिम द्वार पर, एवं नील को पूर्व द्वार पर आक्रमण के

लिए नियुक्त किया गया। लंका के उत्तर द्वार पर, लक्ष्मण की सहाय्यता से राम ने रावण से स्वयं ही सामना देने का निश्चय किया (वा. रा. यु. ३७)।

दूतप्रेषण—रावण से युद्ध शुरू करने के पूर्व, राम ने सुवेल पर्वत पर चढ़ कर लंका का निरीक्षण किया। उसी समय, सुग्रीव सहसा पर्वत पर चढ़ कर लंका का के गोपुर पर कूद पड़ा, एवं वहाँ अकेले ही उसने रावण को दंष्ट्रयुद्ध में परास्त किया (वा. रा. यु. ४०)।

तत्पश्चात् विभीषण के परामर्श पर, राम ने अंगद के द्वारा रावण को संदेश भेजा, 'यदि तुम सीता को नहीं लौटाओंगे, तो मैं सारे राक्षसों के साथ तुम्हारा संहार करूँगा'। अंगद के मुँह से राम का यह संदेश सुन कर, रावण ने उसका वध करने का आदेश दिया। चार राक्षसों ने अंगद को पकड़ना चाहा, किन्तु अंगद उन चारों को उठा कर इतने वेग से एक भवन पर कूद पड़ा कि, वे राक्षस निःसहाय्य भूमि पर गिर पड़े। पश्चात् अंगद उस भवन टूटा कर, सुरक्षितता से राम के पास आ पहुँचा। राम ने जब समझ लिया कि, किसी प्रकार मित्रता के साथ युद्ध टालना असंभव है, तब इसने अपने सेनापति नील को युद्ध शुरू करने की आज्ञा दे दी (वा. रा. यु. ४१-४२)।

प्रथम दिन—लंका को वानरसेना से अवरुद्ध जान कर, रावण ने उसका सामना करने के लिए अपनी सेना को भेज दिया। इस समय राम एवं इसके सहयोगियों के द्वारा निम्नलिखित राक्षस योद्धा मारे गये:—राम के द्वारा—अभिकेतु, रश्मिकेतु, मित्रप्र एवं यज्ञकेतु; प्रज्व के द्वारा—संपाति; सुर्गाव-प्रवस; लक्ष्मण-विरु-राक्ष; मैद-यज्ञमुष्टि; नील-निकुंभ; द्विविद-अशनिप्रभ; सुदेण-विलुम्बालिन्; गन्धर्व-तपन; हनुमत्-वेनुमालिन्; नल-प्रतपन (वा. रा. यु. ४३)।

सायंकाल के समय, प्रथम दिन का युद्ध समाप्त हुआ, किन्तु राक्षसों के द्वारा पुनः युद्ध प्रारंभ किये जाने पर राम ने यज्ञशत्रु, महापार्श्व, महोदर, युक्त एवं सारण आदि राक्षसों का पराजय किया।

नागपक्ष—तत्पश्चात् अंगद ने रावण के पुत्र इंद्रजित् से युद्ध प्रारंभ कर उसे परास्त किया। फिर इंद्रजित् ने ब्रह्मा के वरदान से अदृश्य हो कर, राम एवं लक्ष्मण को नागमय शरों से आहत किया, जिस कारण वे दोनों निश्चेष्ट पड़े रहे। तब इंद्रजित् ने इन दोनों को मृत स्मृत कर वैसी सूचना रावण को दी (वा. रा. यु. ४२-४६)।

यह सुन कर रावण ने सीता एवं त्रिजटा को पुष्पक विमान में बैठा कर, रणभूमि में मूर्च्छित पड़े हुए राम-लक्ष्मण को दिखलाया। सीता इन दोनों को मृत समझ कर विलाप करने लगी, किन्तु त्रिजटा ने उसको वास्तव परिस्थिति का ज्ञान दिया कर सांत्वना दी (वा. रा. यु. ४७-४८)।

बाद में राम को जैसे ही होश आया, यह लक्ष्मण को मूर्च्छित देख कर विलाप करने लगा (वा. रा. यु. ४९)। पश्चात् सुषेण ने राम को कहा कि, ओषधि लाने के लिए हनुमत् को द्रोणाचल भेज दिया जाये। किन्तु इसी समय, गरुड़ का युद्धभूमि में आगमन हुआ, जिसको देखते ही नागपाश के सारे नाग भाग गये, एवं उसके स्पर्शमात्र से ही राम एवं लक्ष्मण स्वस्थ हो गये (वा. रा. यु. ५०)। रे. बुरुके के अनुसार, गरुड़ के आगमन का यह कथाभाग प्रक्षिप्त है (रामकथा. ५६२)

राक्षससंहार—युद्ध के दूसरे दिन हनुमत् ने रावणपक्षीय योद्धा धूम्राक्ष का वध किया (वा. रा. यु. ५१-५२)। तीसरे दिन अंगद ने वज्रदंष्ट्र आदि राक्षसों का वध किया (वा. रा. यु. ५३-५४)। चौथे दिन हनुमत् ने अकंपनादि राक्षसों का वध किया (वा. रा. यु. ५५-५६)। पाँचवें दिन रावण का प्रमुख सेनापति प्रहस्त, अग्निपुत्र नीलवानर के द्वारा मारा गया, एवं उसके सैन्य से से नरान्तक, महानंद, कुंभहनु आदि राक्षसों का भी संहार हुआ (वा. रा. यु. ५७-५८)।

युद्ध के छठवें दिन, रावण स्वयं अपना पुत्र इंद्रजित एवं आतिकाय आदि राक्षसों के साथ स्वयं युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ। उसने सुग्रीव, गवक्ष आदि वानरों को परास्त किया, एवं 'अग्नि-अस्त्र' के द्वारा नील वानर का पराजय किया।

तत्पश्चात् रावण एवं लक्ष्मण का युद्ध हुआ, जिसमें 'ब्रह्मास्त्र' के द्वारा उसने लक्ष्मण को मूर्च्छित किया। रावण उसे उठा कर ले जाने लगा, किंतु हनुमत् लक्ष्मण को रणभूमि से उठा कर राम के पास ले आया। तत्पश्चात् राम ने हनुमत् के स्क्ंध पर आरूढ़ हो कर, रावण को आहत किया, एवं उसके मुकुट को शान मार कर नीचे गिरा दिया। पश्चात् राम ने रावण को रणभूमि से भाग जाने पर मजबूर कर दिया (वा. रा. यु. ५९)।

उसी दिन शाम को राम ने कुंभकर्ण का भी वध किया, जिस समय इसने सर्वप्रथम उसकी भुजाएँ, तत्पश्चात् उसके पैर, एवं अंत में उसका सिर अपने बाणों से काट दिया।

मृत्यु की पश्चात्, कुंभकर्ण का सिर सूर्योदयकालीन चंद्रमा के समान आकाश में दिखाई पड़ा, एवं वह स्वयं पृथ्वी पर गिर कर, उसके प्रचंड देह के कारण अनेक भवन गिर पड़े।

युद्ध के सातवें दिन रामपक्षीय वानरों ने देवान्तक, नरान्तक, त्रिशिरस् एवं अतिकाय नामक चार रावणपुत्रों का वध किया। महोदर एवं महापार्श्व नामक रावण के भाईयों का भी वध किया गया। उनमें से नरान्तक का वध अंगद के द्वारा, देवान्तक एवं त्रिशिरस् का वध हनुमत् के द्वारा, महोदर का वध नील के द्वारा, एवं अतिकाय का वध लक्ष्मण के द्वारा हुआ (वा. रा. यु. ६९-७१)।

इंद्रजित का वध—युद्ध के आठवें दिन रावण का पुत्र इंद्रजित अदृश्य रूप से रणभूमि में आया, एवं उसने वानरसेना पर ऐसा जोरदार हमला किया कि, उसमें ६८ करोड़ वानर मारे गये। इंद्रजित के द्वारा छोड़े गये ब्रह्मास्त्र के कारण, राम एवं लक्ष्मण मूर्च्छित हुये (वा. रा. यु. ७३)।

रात्री के समय विभीषण एवं हनुमत् मशाल ले कर युद्धभूमि में आये, एवं उन्होंने देखना शुरू किया कि, कौन मरा एवं कौन बचा। उस समय उन्हें सर्वप्रथम जांबवत् मिला, जिसने हनुमत् से आज्ञा दी, 'इसी समय, हिमालय के ऋषभ शिखर पर जा कर, वहाँसे संजीवनी, विशल्यकरिणी, सुवर्णकरिणी एवं संधानी नामक चार ओषधियाँ ले आना'। हनुमत् के द्वारा उपर्युक्त वनस्पतियाँ लाने के उपरान्त, जांबवत् ने राम एवं लक्ष्मण को होश में लाया, एवं संपूर्ण वानरसेना को पुनः जीवित किया (वा. रा. यु. ७४)।

युद्ध के नौवें दिन वानरों ने लंका में घुस कर, उसे आग लगा दी, एवं कुंभ, निकुंभ, यूमाक्ष आदि राक्षसों का वध किया (वा. रा. यु. ७५-७७)। इसी दिन राम के द्वारा मकराक्ष राक्षस मारा गया (वा. रा. यु. ७८-७९)।

बाद में इंद्रजित ने अपने मायावी युद्ध के कारण, वानरसेना में हाहाकार मचा दिया, एवं उन्हे धराने के लिए, उनकी आँखों के सामने सीतावध का मायावी दृश्य निर्माण किया। तत्पश्चात् वह निकुंभिला नामक स्थान में जा कर, वानरसंहार के लिए आसुरी-यज्ञ करने लगा। विभीषण की सलाह के अनुसार, लक्ष्मण ने वहाँ जा कर इंद्रास्त्र छोड़ कर उसका वध किया। पश्चात् इस युद्ध में मूर्च्छित एवं मृत हुये वानरों को सुषेण ने पुनः जीवित किया (वा. रा. यु. ९१)।

अपने पुत्र इंद्रजित् के वध की वार्ता सुन कर रावण अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं अपने स्वर्ग से सीता का वध करने के लिए प्रवृत्त हुआ। किन्तु सुपाश्र्व नामक उसके आमाश्व ने इस पापकर्म से उसे रोक लिया, एवं चैत्र कृष्ण १४ का दिन युद्ध की तैयारी में व्यतीत कर, अमावास्या के दिन राम पर आखिरी हमला करने की सलाह उसने उसे दी (वा. रा. यु. ९२.६२)।

रावणवध—चैत्र अमावास्या के दिन रावण ने राक्षसों के जय के लिए हवन शुरु किया, किन्तु वानरों ने उसके यज्ञकार्य में बाधा उत्पन्न की। फिर क्रोध में तमतमाता हुआ रावण, महाशार्श्व, महोदर एवं विरुराक्ष नामक तीन सेनापतियों के साथ युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ। राम ने उसके साथ घमासान युद्ध किया। उस समय राम की सहाय्यार्थ आये हुए विभीषण एवं लक्ष्मण को रावण ने मूर्च्छित किया। सुषेण ने हिमालय से प्राप्त वनस्पतियों से उन दोनों को पुनः होश में लाया (वा. रा. यु. १०२)।

तत्पश्चात् राम इंद्र के द्वारा दिये गये दिव्य रथ पर आरूढ़ हुआ, एवं अगस्त्य के द्वारा दिये गये ब्रह्मास्त्र से रावण का हृदय विदीर्ण कर इसने उसका वध किया (वा. रा. यु. ११०; म. व. २७४.२८)। वाल्मीकि रामायण के दक्षिणात्य पाठ के अनुसार, अगस्त्य ऋषि ने राम को 'आदित्य हृदय' नामक स्तोत्र सिखाया था, जिसके पाठन से रावण का वध करने में यह यशस्वी हुआ।

राम-रावण के इस अंतीम युद्ध में रावण के सिर पुनः पुनः उत्पन्न होने की कथा काल्पनिक रामायण में प्राप्त है। इस कथा के अनुसार, राम ने रावण के कुल एक सौ सिर काट दिये (एकमेव शतं छिन्नं शिरसा तुल्यवर्चसः) (वा. रा. यु. १०७.५७)।

अध्यात्म रामायण के अनुसार, रावण के नाभिप्रदेश में अमृत रखा था। विभीषण की सलाह के अनुसार, राम ने 'आग्नेय अस्त्र' छोड़ कर उस अमृत को सुखा दिया, एवं रावण का वध किया (अध्या. रा. युद्ध. ११.५३; आ. रा. १. ११.२७८;)

महामारत के अनुसार, रावण ने अंतीम युद्ध के समय राम एवं लक्ष्मण का रूप धारण करनेवाले बहुतेक से मायामय योद्धाओं का निर्माण किया था। किन्तु राम ने अपने ब्रह्मास्त्र से इन सारे योद्धाओं को रावण के साथ ही भला दिया, जिस कारण उनकी राख भी शेष न रही (म. व. २७४.८; ३१)।

रावणवध से राम-रावण युद्ध समाप्त हुआ। तत्पश्चात् राम के अनुरोध पर, विभीषण ने अपने भाई रावण का विधिवत् अभिसंस्कार किया (वा. रा. यु. १११)। मंदोदरी आदि रानियों को संतवना दे कर इसने उन्हें लंका के लिए रवाना किया। रावण की अंतीम क्रिया होने के उपरान्त, राम ने लक्ष्मण के द्वारा विभीषण को लंका का राजा बना कर उसका राज्याभिषेक किया। बाद में, राम ने समुद्र में बनाया हुआ सेतु भी तोड़ा, जिससे आगे चल कर लंका को परकीय आक्रमण का भय न रहे (पद्म. स. ३८)।

अग्नि-परीक्षा—तत्पश्चात् विभीषण के द्वारा सीता को शिविका में बैठा कर राम के पास लाया गया। इस समय राम ने सीता से कहा, 'रावण से युद्ध कर मैंने तुझे आज विमुक्त किया है। मैंने आज तक किया हुआ युद्ध तुम्हारे आसक्ति के कारण नहीं, बल्कि एक क्षत्रिय के नाते मेरा कर्तव्य निभाने के लिए किया है। तुझे पुनः प्राप्त करने में मुझे आनंद जरूर हुआ है; किन्तु इतने दिनों तक एक अन्य पुरुष के घर तुम्हारे रहने के कारण, तुम्हारा पुनः स्वीकार करना असंभव है'।

राम का यह कथन सुन कर, सीता ने अपने सतीत्व की सौम्य खाधी; एवं लक्ष्मण के द्वारा चिता तैयार कर, वह अग्निपरीक्षा के लिए सिद्ध हुई (वा. रा. यु. ११६)। इतने में अनेक देवता के सम्मुख अग्नि देवता ने सीता के सतीत्व का साक्ष्य दिया, एवं उसका स्वीकार करने के लिए राम से कहा। तब राम ने सीता के अग्निपरीक्षा के संबंध में अपनी भूमिका विशद करते हुए कहा, 'मुझे सीता पर संदेह नहीं है, एवं कभी नहीं था। मैंने यह सब कुल इसलिये कहा कि, कोई भी सीता के चरित्र पर आक्षेप न करें (वा. रा. यु. ११८)।

दक्षिण की विजययात्रा—इस तरह रावण से युद्ध कर, उसका वध करने के कारण, राम का वनवास पाण्डवों के वनवास की भाँति केवल एक वनवास ही न रह कर, दक्षिण भारत की विजययात्रा में परिणत हुआ।

अपने चौदह वर्षों के वनवास में से १२॥ वर्ष इसने पंचवटी में वनवासी तपस्वी की भाँति व्यतीत किये। वनवास के बाकी बचे हुए १॥ वर्ष इसने राक्षसों के संग्राम में व्यतीत किया, जो कार्तिक कृष्ण १० के दिन शूर्पणखा-वध से प्रारंभ हुआ, एवं अगले साल के वैशाख शुद्ध १२ के दिन रावणवध से समाप्त हुआ। इस राक्षससंग्राम के कारण, रावण के द्वारा लंका में

स्थापित बलाढ्य राक्षस साम्राज्य विनष्ट हुआ। दक्षिण भारत का सारा प्रदेश राक्षसों के भय से विमुक्त हो कर, वहाँ दक्षिणात्य वानरों का राज्य प्रस्थापित हुआ, एवं अगस्त्य के द्वारा दक्षिण भारत में प्रस्थापित किये गये आर्य संस्कृति का दृढ़ रूप से पुनरुत्थान हुआ। इस तरह राम का दक्षिण दिग्विजय अनेकानेक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है। इस दृष्टि से सीता के अग्नि-परीक्षा की कथा भी रूपकात्मक प्रतीत होती है, जो संभवतः राम के द्वारा शुरु किये गये दक्षिण भारत की आशादी एवं पुनर्वसन के कार्य की यशस्विता प्रतीकरूप से दर्शाती है। सीता शब्द का शब्दशः अर्थ भी भूमि ही है (सीता देखिये)।

राक्षससंग्राम का तिथिनिर्णय—राम एवं रावण का युद्ध कुल ८७ दिनों तक चलता रहा, उनमें से पंद्रह दिन कोई युद्ध न हुआ था, जिस कारण राम-रावण का प्रत्यक्ष युद्ध ७२ दिनों तक हुआ प्रतीत होता है। यह युद्ध माघ शुद्ध द्वितीया को शुरु हुआ, एवं वैशाख कृष्ण द्वादशी के दिन रावण वध से समाप्त हुआ।

लंका का स्थलनिर्णय—रावणसंग्राम के संबंध में, लंका के स्थलनिर्णय की समस्या महत्त्वपूर्ण प्रतीत होती है। रायचौधरी आदि अभ्यासकों के अनुसार, आधुनिक सिलोन ही लंका है, एवं आधुनिक महाराष्ट्र प्रदेश ही प्राचीन दण्डकारण्य है। किवे आदि अन्य अभ्यासक लंका का स्थान आधुनिक मध्य हिंदुस्थान में अमरकंटक पर्वत के पास मानते हैं। वडेर आदि कई अन्य अभ्यासक आधुनिक मालदिव अंतरीप को राक्षसद्वीप मानते हैं। अन्य कई अभ्यासकों के अनुसार, प्राचीन लंका देश आधुनिक आंध्र प्रदेश के उत्तर में बंगाल उपसागर के बीच कहीं बना हुआ था। डेनिएल जॉन के अनुसार, प्राचीन लंका आधुनिक सीलोन के दक्षिण में अथवा दक्षिणपूर्व में कहीं बसी हुई थी (डॉ. पुसालकर स्टडीज इन दि एपिक्स अंड पुराणाज पृ. १९१)।

वानर कौन थे—किवे एवं हिरालाल के अनुसार, अमरकंटक पर्वत के प्रदेश में रहनेवाले वन्य लोग प्राचीन काल में वानर, एवं आधुनिक गोंड लोग राक्षस कहलाते थे। अन्य कई अभ्यासक राक्षसों को असुरवंशीय मानते हैं। चक्रवर्ती राजगोपालचारी के अनुसार, आधुनिक द्रविड प्रदेश में रहनेवाले द्रविडवंशीय लोग रामायण काल में वानर कहलाते थे (डॉ. पुसालकर, पृ. १९२; वानर देखिये)।

उत्तर काण्ड का विश्लेषण—कई अभ्यासकों के अनुसार, रावणवध के साथ ही साथ राम का दैवी अवतार समाप्त होता है। अपने इस अवतारकार्य के समाप्ति के पश्चात्, इक्ष्वाकुवंश का एक राजा यही मयादित स्वरूप रामचरित्र धारण करता है। इसी कारण, वाल्मीकि रामायण के उत्तर काण्ड में चित्रित किया गया राम, पहले काण्डों में चित्रित राम से अलग व्यक्ति प्रतीत होता है। रे. बुल्के भी संपूर्ण उत्तर काण्ड को प्रक्षिप्त मानते हैं, जिसकी रचना वाल्मीकि के द्वारा नहीं, बल्कि भिन्न भिन्न उत्तरकालीन कवियों के द्वारा हुयी है (रामकथा, पृ. ६०५-६०६)। वाल्मीकिद्वारा रचित 'आदि रामायण' एवं अन्य प्राचीन ग्रंथों में भी राम के द्वारा रावण की पराजय, एवं सीता की पुनःप्राप्ति के साथ ही 'रामकथा' समाप्त की गयी है।

अयोध्यागमन—युद्ध के पश्चात् राम, सीता एवं लक्ष्मण को साथ ले कर पुष्पक विमान में बैठकर अयोध्या की ओर चल पड़े। उस समय राक्षससंग्राम में भाग लेनेवाले समस्त वानरों ने इच्छा प्रकट की, कि वे अयोध्या में रामराज्याभिषेक देखना चाहते हैं। इस कारण, उन्हे एवं सुग्रीवादि अपने मित्रों को साथ ले कर यह अयोध्या में आया। अयोध्या जाते समय, राम ने सीता को युद्धभूमि, नल के द्वारा बौधा गया सेतु, किष्किंधा आदि ऐतिहासिक स्थान बताये।

राम के चौदह वर्षों के वनवास में से एक दिन बाकी था, इसलिए वैशाख शुद्ध पंचमी के दिन, इसने भरद्वाज ऋषि के आश्रम में वास किया, एवं हनुमन् के द्वारा अपने आने का संदेश भेजा। दूसरे दिन पुष्य नक्षत्र के अवसर पर, नंदिग्राम में राम एवं भरत की भेंट हुयी, एवं उसके साथ अयोध्या जा कर, अपनी माताओं एवं वसिष्ठ आदि गुरुजनों के इसने दर्शन किये (वा. रा. यु. १२६)।

रामराज्याभिषेक—वैशाख शुद्ध सप्तमी के दिन, राम एवं भरत ने मंगल स्नान किये, एवं इसका राज्याभिषेक तथा भरत का यौवराज्याभिषेक वसिष्ठ के द्वारा किया गया। अनंतर राम ने पहले ब्राह्मणों को तथा बाद में सुग्रीवादि वानरों को विपुल दान दिया। राम ने लक्ष्मण को युवराज बनाना चाहा, किंतु लक्ष्मण के द्वारा उस पद को अस्वीकार किये जाने पर, भरत को युवराज बनाया गया।

वाल्मीकि रामायण में रामाभिषेक के लिए आर्मांत्रित राजाओं की जानकारी सविस्तृत रूप में प्राप्त है, जहाँ इसके

सीरध्वजादि आप्त, प्रतर्दनादि मित्र, एवं तीन सौ मांडलिक राजाओं के उपस्थिति का निर्देश प्राप्त है (वा. रा. उ. ३७-४०)। इस समारोह के समय, सुग्रीव आदि को छः महिने तक अतिथि के रूप में रख कर आदरपूर्वक विदा किया गया। विभीषण के द्वारा राम को दिया गया पुष्पक विमान कुवेर को वापस भेज दिया गया (वा. रा. उ. ४१)। तत्पश्चात् राम ने अत्यधिक कुशलता के साथ राज्य किया, जिस कारण आज भी आदर्श राज्य को लोग 'रामराज्य' कहते हैं (वा. रा. उ. १२८)।

सीतात्याग—कुछ समयोप्रांत सीता गर्भवती हुई, तथा उसने अरण्य में धूमने की इच्छा प्रकट की। उसको अगले दिन तपोवन में भेज देने का आश्वासन दे कर, राम अपने मित्रों के साथ परिहास की कहानियाँ सुनते बैठा। उस समय, राम ने भद्र नामक अपने मित्र से पूछी, 'मेरे, सीता, एवं भरत आदि के विषय में लोग क्या कहते हैं'? तब भद्र ने सीता के कारण हो रहे लोकप्रवाद, एवं जनता की आचरण पर पड़ने वाले उसके कुप्रभाव निर्देश करते हुआ कहा—

अस्माकमपि दारेषु सहनीयं भविष्यति।

यथा हि कुरुते राजा प्रजास्तमनुवर्तते॥

(वा. रा. उ. ४३.१९)

(राम के द्वारा सीता का स्वीकार किये जाने के कारण हमको भी अपनी स्त्रियों का वैसा ही आचरण अब सहना पड़ेगा। क्यों कि, जैसा आचरण राजा करता है, वैसा ही आचरण प्रजा करती है)।

लोकप्रवाद की यह कथा सुन कर, राम अत्यधिक व्याकुल हुआ। दूसरे दिन इसने लक्ष्मण को बुला कर सीता को गंगा नदी के उस पार छोड़वाने का आदेश दिया। तदनुसार, तपोवन दिग्गलाने के ब्रह्मणे लक्ष्मण सीता को रथ पर ले गया, एवं उसने सीता को वाल्मीकि ऋषि के आश्रम के समीप छोड़ दिया। उस समय, लक्ष्मण ने वंके दुःख के साथ सीता को बताया कि, लोकप्रवाद के कारण राम ने उसका त्याग किया है (वा. रा. उ. ६९)।

कालिदास के रघुवंश में प्राप्त सीतात्याग की कथा में भद्र को राम का मित्र नहीं, किंतु गुप्तचर बताया गया है (रघु. १४)। कथासरित्सागर एवं भागवत में एक घोवी का उदाहरण दे कर लोकप्रवाद की यह कथा प्रस्तुत की गयी है। एक बार गुप्तवेश में धुमते हुए राम ने देखा

कि, एक घोवी अपनी स्त्री को अपने घर से निकाल रहा है। उस समय घोवी ने अपनी पत्नी से कहा, 'मैं राम की तरह नहीं हूँ, जिन्होंने दीर्घकाल तक दूबरे के घर में रहनेवाली सीता का पुनः स्वीकार किया' (कथा. ९.१. ६६; भागवत. ९.११.९)।

कुश-लवजन्म—वाल्मीकि के आश्रम में, सीता ने दो पुत्रों को जन्म दिया, जिनका नाम वाल्मीकि ने कुश एवं लव रख दिया (वा. रा. उ. ६६)। बाद में कुश एवं लव वाल्मीकि के शिष्य बन गये, जिनने उन्हें समग्र रामायण सिखा दिया। बाद में ये दोनों समाजों में जा कर रामायण का गान करने लगे। किसी दिन राम ने उन दोनों को अयोध्या के राजमार्ग में रामायण का गान करते हुए देखा, जब उन्हें महल में ले जा कर इसने भरत आदि भाईयों के साथ रामायण का गान सुना (वा. रा. वा. ४)।

अश्वमेधयज्ञ—रावण स्वयं ब्राह्मण था, जिस कारण उसका वध करने से राम को ब्रह्महत्या का पाप लभ गया। उस पाप से बचने के लिए, राम ने अगस्त्य ऋषि के कथनानुसार अश्वमेधयज्ञ का आयोजन किया (पद्म. पा. ८-१०; शत्रुघ्न देखिये)। इसके पूर्व, राम ने राजसूय यज्ञ करने की इच्छा प्रकट की थी। किंतु भरत के द्वारा, उस यज्ञ के कारण राजवंश के विनाश का भय व्यक्त करने पर, राम ने दस अश्वमेध यज्ञ करने का निश्चय किया। लक्ष्मण ने भी उसी सूचना को अनुमोदन दिया (वा. रा. उ. ८३-८४)।

अश्वमेध यज्ञ करते समय पत्नी की उपस्थिति आवश्यक रहती है, अतएव इसने सीता की स्वर्णमूर्ति बनाया कर एवं उसे अपने पाद रख कर यज्ञतुष्टान किया (वा. रा. उ. ९९.७)। इसी अश्वमेध यज्ञ के समय, कुशलव के साथ ले कर वाल्मीकि ऋषि उपस्थित हुए, एवं उन्होंने उनके द्वारा रामायण का गान करा, राम से कुशलव का परिचय करवाया (कुशलव देखिये)।

उपर्युक्त यज्ञ के अतिरिक्त, राम के द्वारा वाजपेय, अग्निष्टोम, अतिरात्र आदि यज्ञ करने का निर्देश भी प्राप्त है (वा. रा. उ. ९९.९-१०)।

सीता का भूमिपूज—अश्वमेध यज्ञ के अवसर पर, अपने पुत्रों को देख कर, राम ने वाल्मीकि के द्वारा सीता को भी बुलावा भेज दिया। इस पर सीता को साथ ले कर वाल्मीकि रामसभा में उपस्थित हुए, एवं उसने सीता के सतीत्व की साक्ष्य दी। तदनंतर राम के द्वारा सीता

को अपने सतीत्व का प्रमाण देने के लिए अनुरोध किये जाने पर, सीता ने स्वयं को निष्पाप बताते हुए पृथ्वी में प्रवेश किया (वा. रा. उ. ९७; सीता देखिये)।

देहत्याग—कुछ समय के उपरांत, कौसल्या, सुमित्रा, कैकेयी आदि राम के माताओं का क्रमशः देहान्त हुआ (वा. रा. उ. ९९)। लक्ष्मण भी सरयू नदी के तट पर जा कर, एवं कृताञ्जलि हो कर सशरीर स्वर्ग चला गया (वा. रा. उ. १०३-१०६)। फिर लक्ष्मण के वियोग के कारण दुःखी हो कर, राम ने भरत, शत्रुघ्न एवं सुग्रीव के साथ सरयू नदी के तट पर देहत्याग किया। पश्चात् वह विष्णु के रूप में प्रविष्ट हुआ, एवं इसके साथ आये हुए बाकी सारे लोग 'संतानक' लोग में प्रविष्ट हुये (वा. रा. उ. १०७-११०)।

रामकथा का तिथिनिर्णय—जैसे पहले ही कह गया है कि, वनवास जाते समय राम एवं सीता की आयु क्रमशः सताईस एवं अठारह वर्षों की थी। चौदह वर्षों का वनवास सुमतने के पश्चात् राम को राज्याभिषेक हुआ, जिस समय राम एवं सीता की आयु क्रमशः बयालिस एवं तैतीस वर्षों की थी। रावण के ब्रिवास में सीता कुल ग्यारह मास एवं चौदह दिनों तक थी (स्कंद. ३.३.३०; पद्म. पा. ३६)।

राम के वनवास के प्रथम दिन से ले कर, राज्याभिषेक तक की महत्त्वपूर्ण घटनाओं का तिथिनिर्णय उपर्युक्त पुराणों में निम्न प्रकार दिया गया है:—

वैशाख शुक्ल १—वनवास का प्रथम दिन।

वैशाख शुक्ल २—चित्रकूट की ओर गमन।

वैशाख शुक्ल ६—चित्रकूट में भरत से भेंट।

(अरह वर्ष, छः महिनों तक पंचवटी में निवास)

कार्तिक कृष्ण १०—शूर्पणखा के नाक एवं कान काटना।

फाल्गुन कृष्ण ८—रावण के द्वारा सीता का हरण।

(दस महिनों के बाद)

मार्गशीर्ष शुक्ल ९—सीताशोध के लिए गये हनुमत् की संगाति से भेंट।

मार्गशीर्ष शुक्ल ११—महेंद्रपर्वत पर से हनुमत् का लंका के लिए उड़ान।

मार्गशीर्ष शुक्ल १२—अशोकवन में हनुमत् एवं सीता की भेंट।

मार्गशीर्ष शुक्ल १३—हनुमत् के द्वारा अक्ष आदि राक्षसों का वध, एवं अशोकवन का विध्वंस।

मार्गशीर्ष शुक्ल १४—रावण के द्वारा हनुमत्-बंधन, एवं हनुमत् के द्वारा लंकादहन।

मार्गशीर्ष शुक्ल १५—हनुमत् का महेंद्रपर्वत पर पुनरागमन।

पौष कृष्ण १-५—हनुमत् का महेंद्र से किष्किंधा तक प्रवास।

पौष कृष्ण ६—हनुमत् की वानरों से भेंट, एवं मधुवन का विध्वंस।

पौष कृष्ण ७—हनुमत् की राम से भेंट।

पौष कृष्ण ८—राम के द्वारा रावणवध की प्रतिज्ञा, एवं उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र तथा विजय योग पर, दक्षिण की ओर प्रयाण।

पौष कृष्ण ९-३०—राम का किष्किंधा से समुद्र तक का प्रवास।

पौष शुक्ल १-३—राम का समुद्र तट पर आगमन।

पौष शुक्ल ४—विभीषण का राम के पास आना।

पौष शुक्ल ५—राम के द्वारा समुद्र पार करने का विचार।

पौष शुक्ल ६-९—समुद्र के तुष्ट्यर्थ राम का प्रायो-पवेशन।

पौष शुक्ल १०-१३—सेतुबंधन।

पौष शुक्ल १४—राम का सुवेल पर्वत पर आगमन।

पौष शुक्ल १५—माघ कृष्ण २—राम सेना का सुवेल पर्वत पर आगमन।

माघ कृष्ण ३-१०—रामसेना के द्वारा लंका का अवरोध।

माघ कृष्ण ११—शुक एवं सारण नामक रावण के दूतों का राम के पास आगमन।

माघ कृष्ण १२—राम की सेनागणना।

माघ कृष्ण १३-३०—रावण की सेनागणना।

माघ शुक्ल १—रावण के पास अंगद का दूत के रूप में जाना।

माघ शुक्ल २-८—युद्धारंभ।

माघ शुक्ल ९—इंद्रजित के द्वारा रामलक्ष्मण का नागपाश में बंधन।

माघ शुक्ल १०—गरुडमंत्र की सहाय्यता से हनुमत् के द्वारा राम-लक्ष्मण की मुक्ति।

माघ शुक्ल ११-१२—हनुमत् के द्वारा धूम्राक्ष का वध।

माघ शुक्ल १३—हनुमत् के द्वारा अकंपन का वध।

माघ शुक्ल १४—फाल्गुन कृष्ण १—भील के द्वारा प्रहस्त का वध ।

फाल्गुन कृष्ण २-४—राम-रावण का युद्ध एवं रावण का युद्धभूमि से पलायन ।

फाल्गुन कृष्ण ५-८—कुंभकर्ण को जगाना ।

फाल्गुन कृष्ण ९-१४—राम के द्वारा कुंभकर्ण से युद्ध एवं वध ।

फाल्गुन कृष्ण ३०—युद्धविराम ।

फाल्गुन शुक्ल १-४—राम लक्ष्मणों वा इंद्रजित् से युद्ध ।

फाल्गुन शुक्ल ५-७—लक्ष्मण के द्वारा अतिक्रम्य का वध ।

फाल्गुन शुक्ल ८—इंद्रजित् से द्वितीय युद्ध ।

फाल्गुन शुक्ल ९-१२—कुंभ एवं निकुंभ का वध ।

फाल्गुन शुक्ल १३—चैत्र कृष्ण १-मकराक्ष का वध ।

चैत्र कृष्ण २—इंद्रजित् से तृतीय युद्ध, एवं लक्ष्मण की मूर्च्छा ।

चैत्र कृष्ण ३-७—युद्धविराम, एवं हनुमत् के द्वारा लक्ष्मण के लिए ओषधी लाना ।

चैत्र कृष्ण ८-१३—इंद्रजित् से चतुर्थ युद्ध एवं वध ।

चैत्र कृष्ण १४—रावण का आसुरि यज्ञ ।

चैत्र कृष्ण ३०—रावण का युद्धभूमि में प्रवेश ।

चैत्र शुक्ल १-५—राम-रावणयुद्ध, एवं रावण का युद्धभूमि से पलायन ।

चैत्र शुक्ल ६-८—महापार्श्व आदि राक्षसों का वध ।

चैत्र शुक्ल ९—राम-रावणयुद्ध एवं रावण का युद्धभूमि से पलायन ।

चैत्र शुक्ल १०—युद्धविराम ।

चैत्र शुक्ल ११—इंद्र के द्वारा राम के लिए रथ का प्रेषण ।

चैत्र शुक्ल १२—वैशाख कृष्ण ४—राम-रावणयुद्ध, एवं रावण का वध ।

वैशाख कृष्ण १५—युद्धसमाप्ति एवं रावण का अंतिम संस्कार ।

वैशाख शुक्ल २—विभीषण का राज्याभिषेक ।

वैशाख शुक्ल ३—राम एवं सीता की भेंट ।

वैशाख शुक्ल ४—राम का विमान में बैठ कर अयोध्या के लिए प्रस्थान ।

वैशाख शुक्ल ५—राम के चौदह वर्षों के वनवास की समाप्ति, एवं उसी दिन प्रयाग में भारद्वाज-आश्रम में आगमन ।

वैशाख शुक्ल ६—नंदियाम में राम एवं भरत की पुनर्भेंट ।

वैशाख शुक्ल ७—राम का राज्याभिषेक ।

सर्वमान्य तिथियाँ—वाल्मीकि रामायण के 'तिलक टीका' में एवं कालिकापुराण में राम के वनवास का तिथि-निर्णय कुछ अलग ढंग से प्राप्त है, जो निम्न प्रकार है:-
चैत्र शुक्ल १०—वनवास का प्रथम दिन; भाद्रपद शुक्ल १—युद्धारंभ; आश्विन शुक्ल १—राम-रावणयुद्ध; आश्विन शुक्ल ९—रावण वध; कार्तिक कृष्ण ६—राम का अयोध्या में आगमन। उत्तर भारत में रामलीला आदि भी इन्हीं तिथियों के अनुसार होते हैं ।

चांद्रमास के अनुसार, अधिक मास छोड़ कर काल गणना की जाएँ, तो यह कालगणना वाल्मीकि रामायण से भी बिल्कुल मिलती जुलती है (बा. रा. यु. १११ तिलक टीका; कालिका ६.२.२३-३९) ।

ताम्रपटों का निर्देश—जब वनवास के बाद राम अयोध्या में आया, तब इसने ताम्रपत्र पर अपने पराक्रम का वर्णन, एवं राज्यशासन के कुछ नियम लिखवाये। इसने उन ताम्रपटों की स्थापना श्रीमतास्थान, इक्षुलर्क, एवं धर्मस्थान आदि स्थानों में की, एवं इस समारोह के उपलक्ष्य में पचास गाँव ब्राह्मणों को दान में दिये (स्कंद. ३.२.२४) ।

'कालनिर्णयरामायण' ग्रन्थ—कई रामायणों में राम कथा की प्रधान घटनाओं की तिथियाँ दी हैं, जिनमें निम्न रामायणग्रंथ प्रमुख हैं:—१. अग्निवेश रामायण-श्लोक संख्या १०५; २. अद्भुतरामायण-(कल्याण 'रामायण'क' पृ. ३०४) ३. लोमश रामायण-जो पद्मपुराण के पातालखंड में प्राप्त है (पद्म. पा. ३६) ।

इनके अतिरिक्त व्यासकृत 'रामायणतात्पर्यटीपिका,' श्रीनिवासरायवकृत 'रामायणसंग्रह' एवं 'रामायणकाल-निर्णय सूचिका' आदि ग्रन्थों में भी रामचरित्र की तिथियों का वर्णन प्राप्त है ।

चरित्रचित्रण—एक सत्यपराक्रमी क्षत्रिय, आज्ञाधारक पुत्र एवं स्वदारनिरत पति के रूप में राम का चरित्र वाल्मीकि रामायण में किया गया है। तिब्बती, खोतानी, सिंहली एवं मलय आदि विदेशी रामकथाओं में भी राम प्रायः एक पत्नीव्रती राजा के रूप में चित्रित किया गया है। यह वाल्मीकीय आदर्श का ही स्वाभाविक विकास प्रतीत होता है ।

सीता के प्रति राम का विद्युद्ग एवं निरतिशय प्रेम का चित्रण वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है (वा. रा. अर. ३.६०-६६; ७५; सु. २७-२८; ३०; यु. ६६; उ. ५)। अत्रि ऋषि के आश्रम में सीता ने अत्रिपत्नी अनसूया से कहा था, 'राम मुझसे इतना ही प्रेम करते हैं, जितना मैं उनसे करती हूँ। इसी कारण, मैं अपने आप को अत्यंत मायवान् समझती हूँ।

रामचरित्र के दोष—राम स्वयं एक अत्यंत सचरित्र एवं क्षत्रियधर्म का पालन करनेवाला आदर्श राजा होते हुए भी, इसके चरित्र के कुछ दोष वाल्मीकि रामायण एवं उत्तररामचरित में दिखाये गये हैं, जो निम्न प्रकार हैं :— १. स्त्री होते हुए भी इसने ताटका का वध किया; २. खर से युद्ध करते समय यह तीन पग पीछे हटा (वा. रा. अर. ३०.२३); ३. वृक्ष के पीछे छिप कर इसने वालि का वध किया (उत्तरराम. ५); ४. लोकापवाद के भय से निर्दोष सीता का त्याग किया; ५. अहिरावण के पत्नी के महल प्रवेश किया।

इसमें से अंतिम आक्षेप अनैतिहासिक मान कर छोड़ा जा सकता है। ताटका का वध त्रिश्रामित्र के संमति से किये जाने के कारण, एवं खर के वध के समय शरसंधान के लिए पीछे हटने के कारण, इन दोनों प्रसंग में राम निर्दोष प्रतीत होता है। सीतात्याग के संबंध में व्यक्तिधर्म एवं राजधर्म का संघर्ष प्रतीत होता है। रही बात वालि-वध की, जिस समय राम का आचरण असमर्थनीय प्रतीत होता है।

परिवार—राम को अपनी पत्नी सीता से कुश एवं लव नामक दो पुत्र उत्पन्न हुये थे, जिनका जन्म राम के द्वारा सीता का त्याग किये जाने पर वाल्मीकि ऋषि के आश्रम में हुआ था। राम के पश्चात् कुश दक्षिण कोसल का राजा बन गया। लव को उत्तर कोसल देश का राज्य प्राप्त हुआ, जिसकी राजधानी थावस्ती नगरी में थी। राम के पश्चात् अयोध्या नगरी उड़ड़ गयी, जिस कारण कुश ने विश्व पर्वत के दक्षिण तट पर कुशावती नामक नवी राजधानी की स्थापना की।

राम के छोटे भाई लक्ष्मण का अंगद एवं चंद्रकेतु नामक दो पुत्र थे। उन्हें राम ने क्रमशः हिमालय पर्वत के समीप स्थित कारुपथ एवं महल देशों का राज्य प्रदान किया। उन प्रदेशों में 'अंगदिया' एवं 'चंद्रचक्रा' नामक राजधानियाँ बसा कर वे दोनों राज्य करने लगे (वा. रा. उ. १०२)।

राम के तृतीय वन्धु भरत को अपनी माता कैकेयी का कैकय राज्य प्राप्त हुआ, जिसमें सिन्धु (आधुनिक उत्तर सिंध) प्रदेश भी शामिल था। भरत के तक्ष एवं पुष्कल नामक दो पुत्र थे, जिन्होंने आगे चल कर गंधर्व लोगों से गांधार देश को जीत लिया, एवं वहाँ क्रमशः तक्षशिला एवं पुष्कलावती नामक राजधानियों की स्थापना की (वा. रा. उ. १०१)। इनमें से तक्षशिला नगरी के खण्डहर आधुनिक रावलपिंडी के उत्तरीपश्चिम में २० मील पर स्थित भीर में प्राप्त हैं, एवं पुष्कलावती के खण्डहर आधुनिक पेशावर के उत्तरीपश्चिम में १७ मील पर कुभा एवं सुवास्तु नदियों के संगम पर स्थित चारसदा ग्राम में प्राप्त हैं।

राम के चतुर्थ वन्धु शत्रुघ्न ने यमुना नदी के पश्चिम में सात्वत यादवों को पराजित कर, उनका राजा मधु राक्षस का पुत्र माधव लवण का वध किया, एवं मधुपुरी अथवा मधुरा (मथुरा) में अपनी राजधानी स्थापित की।

शत्रुघ्न को सुबाहु एवं शत्रुघातिन् नामक दो पुत्र थे। शत्रुघ्न के पश्चात् उनमें से सुबाहु मधुरा नगरी में राज्य करने लगा, एवं शत्रुघातिन् को वैदिश नगरी का राज्य प्राप्त हुआ (वा. रा. उ. १०७-१०८)।

राम के परिवार के इन लोगों के राज्य काफी दिनों तक न रह सके। गांधार देश में स्थित तक्ष एवं पुष्कल को उसी प्रदेश में रहनेवाले द्रुह्य लोगों ने जीत लिया। शत्रुघ्नपुत्र, सुबाहु एवं शत्रुघातिन् को यादव राजा भीम सात्वत ने मधुराराज्य से पदभ्रष्ट किया, जहाँ पुनः एक बार यादववंशीयों का राज्य शुरु हुआ। लक्ष्मणपुत्र अंगद एवं चंद्रकेतु के राज्य भी नष्ट हो गये, एवं लव के उत्तर कोसल देश के राज्य की भी वही हालत हुई। आगे चल कर अयोध्या का सूर्यवंशीय राज्य भी नष्टप्राय हुआ, एवं उत्तरी भारत का सारा राज्य पौरव एवं यादव राजाओं के हाथ में चला गया।

वाल्मीकि रामायण—रामचरित्र का प्राचीनतम विस्तृत ग्रन्थ 'वाल्मीकि रामायण' है, जो आदिकवि वाल्मीकि की रचना मानी जाती है। रे. तुल्के के अनुसार, इस ग्रंथ का रचनाकाल ई. पू. ३०० माना गया है। इस ग्रन्थ की कुल श्लोकसंख्या २४००० हैं, जो बाल, अयोध्या, अरण्य, किष्किंधा, सुंदर, युद्ध एवं उत्तर आदि सात कांडों में विभाजित है।

महाभारत में रामकथा—महाभारत के वनपर्व में 'रामोपाख्यान' नामक एक उपपर्व है, जिसमें उत्तरी

अध्याय है। जयद्रथ के द्वारा द्रौपदी का हरण किये जाने पर युधिष्ठिर की मनःशांति के लिए मार्कण्डेय ऋषि ने उसे प्राचीन राम-कथा सुनाई, जो 'रामोपाख्यान' में समाविष्ट की गयी है (म. व. २५८-२७६)।

इसके अतिरिक्त महाभारत वनपर्व में संक्षेप रामायण प्राप्त है, जो हनुमत् ने भीमसेन को कथन किया था (म. व. १४७. २३-३८)। महाभारत में प्राप्त 'पोडश राजकीय उपाख्यान' में भी राम दाशरथि का निर्देश प्राप्त है।

पुराणों में रामकथा—निम्नलिखित पुराण-ग्रन्थों में रामकथा प्राप्त है:—

(१) ब्रह्मांडपुराण—राम, विष्णु का अवतार (ब्रह्मांड. ३.७३); सीताजन्म (ब्रह्मांड. ३.६४)।

(२) विष्णुपुराण—संक्षिप्त रामकथा (विष्णु. ४.४) सीताजन्म (विष्णु. ४.५)।

(३) वायुपुराण—संक्षिप्त रामकथा (वायु. ८८. १८३-१९६); सीताजन्म (वायु. ८९.२२)।

(४) भागवतपुराण—रामकथा (भा. ९.१०-११)।

(५) कूर्मपुराण—राक्षसवंशवर्णन (कूर्म. पूर्व. १९); सूर्यवंश के अंतर्गत रामकथा (कूर्म. पूर्व. २१); पति-व्रतोपाख्यान में सीताचरित्र (कूर्म. उत्तर. ३४)।

(६) वराहपुराण—रामजन्म (वराह. ४५)।

(७) अग्निपुराण—रामकथा, जो वाल्मीकि रामायण के सात खण्डों का संक्षेप है (अग्नि. ५-११)।

(८) लिंगपुराण—संक्षिप्त रामकथा (लिंग. पूर्व. ६६.३५-३६)।

(९) नारदपुराण—संक्षिप्त रामकथा (नारद. १. ७५)।

(१०) ब्रह्मपुराण—रामचरित्र, जो संपूर्णतः हरिवंश से उद्धृत किया गया है (ब्रह्म. २१३); रावणचरित्र (ब्रह्म. १७६); रामतीर्थ महात्म्य (ब्रह्म. ७०-१७५)।

(११) गरुडपुराण—रामकथा (गरुड. १४३)।

(१२) स्कंदपुराण—रावणवध (स्कंद. माहेश्वर-); दशरथ का जन्म (स्कंद. २०-२५); वाल्मीकि की जन्म-कथा (स्कंद. वैष्णव. २०-२५); सेतुबंधन की कथा (स्कंद. ब्राह्म. २-५७); कालनिर्णय रामायण (स्कंद. धर्मोपनि. ३०-३१)।

(१३) पद्मपुराण—राम का अश्वमेध यज्ञ (पद्म. पा. १-६८); लोमश रामायण (पद्म. पा. ३६); जांबुवन्त

रामायण (पद्म. पा. ११२); रामचरित्र (पद्म. उ. २६९-२७१)।

(१४) नृसिंहपुराण—जिसमें वाल्मीकि रामायण के प्रथम छः खण्डों की कथा संक्षेप में दी गयी है (नृसिंह ४७-५२)।

रामभक्ति-सांप्रदाय—भागवतादि पुराण ग्रंथों-में राम एवं कृष्ण को विष्णु का अवतार माना गया है। किंतु फिर भी रामोपासना कृष्णोपासना की अपेक्षा कहीं उत्तरकालीन प्रतीत होती है। यद्यपि राम को विष्णु का अवतार मानने की कल्पना ईसा की पहली शताब्दी में प्रस्थापित हो चुकी थी, फिर भी इस सांप्रदाय की प्रतिष्ठा म्यारहवीं शताब्दी के बाद ही प्रस्थापित होती सी प्रतीत होती है (डॉ. मांडारकर, वैष्णवविजय पृ. ४७)। राम-पंचायतन की प्रतिष्ठा, जिसमें राम, लक्ष्मण, भरत, सीता एवं हनुमत् समाविष्ट किये जाते हैं, वह भी इसी काल में उत्पन्न प्रतीत होती है।

रामभक्तिप्रभावित उपनिषद् ग्रन्थ—निम्नलिखित तीन उपनिषद् ग्रंथ रामभक्ति सांप्रदाय से प्रभावित माने जाते हैं:— १. रामपूर्वतापनीय; २. रामोत्तरतापनीय; ३. रामरहस्य। इन तीनों ग्रंथों में रामयंत्र, राममंत्र एवं सीतामंत्र का निर्देश प्राप्त है, एवं इन ग्रंथों में राम एवं सीता को क्रमशः परमपुरुष एवं मूल प्रकृति माना गया है।

निम्नलिखित वैष्णवोपनिषदों में भी रामकथा का निर्देश प्राप्त है:— १. कलिसंतरण; २. गोपालोत्तर-तापनीय; ३. तारसार; ४. त्रिपाद-विभूति-महानारायण; ५. मुक्तिकर। इनके अतिरिक्त शाक्तोपनिषदों में भी 'सीतोपनिषद्' का निर्देश प्राप्त है।

रामभक्ति का विकास—रामभक्ति के विकास के साथ साथ रामकथा को भक्ति सांप्रदाय के ढाँचे में विठाने की आवश्यकता निर्माण हुई, जिसके फलस्वरूप अनेकानेक सांप्रदायिक रामायणों का निर्माण हुआ। इन सांप्रदायिक रामायणों में अध्यात्म, आनंद एवं अद्भुत ये तीन रामायण ग्रंथ प्रमुख माने जाते हैं।

आधुनिक भारतीय भाषाओं में लिखित रामायण ग्रंथों में तुलसी द्वारा विरचित 'रामचरितमानस' एक अद्वितीय ग्रंथ है, जिसमें रामचरित्र की सर्वांगीण डॉकि आदर्शात्मक रूप में प्रस्तुत की गयी है।

सांप्रदायिक रामायण ग्रन्थ—इन ग्रंथों में निम्नलिखित ग्रंथ प्रमुख माने जाते हैं:—

(१) अध्यात्मरामायणः—ग्रंथकर्ता—अनिश्चित, किन्तु कई अध्यासकों के अनुसार रामानंद इस ग्रंथ के रचयिता थे; रचनाकाल—ई. स. १४ वीं अथवा १५ वीं शताब्दी; श्लोकसंख्या—४३९९, जो ७ काण्डों में, एवं ६५ सर्गों में विभाजित है; महत्त्व—यह ग्रंथ सांप्रदायिक रामायणों में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता है। इस ग्रंथ में रामानुज के द्वारा प्रतिपादित समुच्चयवाद का स्पष्ट शब्दों में विरोध किया गया है, विशिष्टाद्वैत का कहीं भी समर्थन नहीं हुआ। आनंद रामायण, तुलसीदासजी-कृत रामचरितमानस एवं एकनाथ के मराठी भावार्थ—रामायण पर इसका काफी प्रभाव है। रामभक्ति के विकास में इस ग्रंथ का महत्त्व अधिक माना जाता है।

इस ग्रंथ में राम एवं सीता को क्रमशः परम पुरुष एवं माया माना गया है, एवं इसी रूपक के द्वारा शंकराचार्य-प्रणीत अद्वैत वेदांत का प्रतिपादन किया गया है। सरल प्रतिपादन, भक्तिप्राधान्य, अद्वैत तत्त्वज्ञान का प्राधान्य, एवं अस्वविस्तर, इन गुणों के कारण यह ग्रंथ भारतीय रामभक्तों में विशेष आदरणीय माना जाता है।

(२) आनंदरामायण—रचनाकाल—१५ वीं शताब्दी, अर्थात् अध्यात्म रामायण के पश्चात्, एवं एकनाथ के पूर्व; श्लोकसंख्या—१२२५२, जो निम्नलिखित ९ काण्डों में विभाजित है :—सार, यात्रा, याम, विलास, जन्म, विवाह, राज्य, मनोहर एवं पूर्ण। इस ग्रंथ में अध्यात्म रामायण के कई उद्धरण प्राप्त हैं।

(३) अद्भुतरामायण—रचनाकाल—ई. स. १३००-१४००; श्लोकसंख्या—१३५३, जो २७ सर्गों में विभाजित है; महत्त्व—इस ग्रंथ की रचना 'वाल्मीकिभारद्वाजसंवाद' के रूप में प्राप्त है, एवं उसके अधिकांश सर्गों में (११-१५) राम एवं हनुमत् का भक्ति के विषय में एक संवाद प्राप्त है।

(४) महारामायण (=योगवासिष्ठ=वसिष्ठ रामायण) ग्रंथकर्ता—वसिष्ठ; रचनाकाल—ई. स. ८ वीं शताब्दी (विदरनिस्त), अथवा ११ वीं शताब्दी (डॉ. राघवच); श्लोकसंख्या—३२ हजार; महत्त्व—यह ग्रंथ वसिष्ठ एवं राम के संवाद के रूप में लिखा गया है, जिसमें अध्यात्म का विस्तृत एवं प्रासादिक विवेचन प्राप्त है।

(५) तत्त्वसंग्रहरामायण—ग्रंथकर्ता—राम ब्रह्मानंद; रचनाकाल—ई. स. १७ वीं शताब्दी; महत्त्व—इस ग्रंथ में रामकथा के तत्त्व (अर्थात् राम के परब्रह्मत्व) पर प्रकाश डाला गया है।

(६) पुरातनरामायण (जांबवत् रामायण)—जो पञ्चपुराण पातालखंड में प्राप्त है। यह प्रायः गद्य में है, एवं जांबवत् के द्वारा राम की कथन किया गया है।

(७) संक्षेपरामायण—जो महाभारत वन पर्व में प्राप्त है (म. व. १४७.२३-३८), एवं हनुमत् के द्वारा भीम को कहा गया है।

(८) संतरामायण—जिसमें रामायण के वेदमूल्य का प्रतिपादन किया गया है। इस ग्रंथ में, ग्रंथकर्ता नीलकण्ठ ने वैदिक मंत्रों का एक संग्रह प्रस्तुत किया है, जिसका परोक्षार्थ रामकथा से संबंध रखता है।

(९) भुशुंडीरामायण (=मूलरामायण = आदि-रामायण)—जो पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर नामक पर्वों में विभाजित है।

(१०) वेदान्तरामायण—जिसमें वाल्मीकि के द्वारा परशुराम का जीवन चरित्र राम को सुनाया गया।

इनके अतिरिक्त निम्नलिखित रामायण-ग्रंथों का निदेश श्रीरामदास गौड के 'हिन्दुत्व' में प्राप्त है, जिनमें से अधिकांश ग्रंथ १७ वीं शताब्दी अथवा उसके बाद की रचनाएँ प्रतीत होती हैं :—महारामायण, संहृत्तरामायण, लोमश-रामायण, अगस्त्यरामायण, मंजुलरामायण, सौपथ्यरामायण, सौहार्दरामायण, सौर्यरामायण, चांद्ररामायण, मैदरामायण, सुब्रह्मरामायण, सुवचसरामायण, देवरामायण, श्रवण-रामायण, एवं दुरंतरामायण।

बौद्ध एवं जैन वाक्याय में रामकथा—ई. पू. चौथी शताब्दी से ई. स. सोलहवीं शताब्दी तक के बौद्ध एवं जैन साहित्य में, रामकथाविषयक अनेकानेक ग्रंथ प्राप्त हैं, जिनमें निम्नलिखित ग्रंथ प्रमुख हैं :—दशरथजातक की गाथाएँ (ई. पू. ४ थीं शताब्दी); अनामकजातक (ई. १ ली शताब्दी); पउमचरियम्, दशरथकथानकम् (ई. ४ थीं शताब्दी); पञ्चचरित (ई. ७ वीं शताब्दी); पउमचरिउ (ई. ८ वीं शताब्दी); रामलक्ष्मणचरियम् (ई. ९ वीं शताब्दी); अंजनापवनांजय (ई. १३ वीं शताब्दी); रामदेवपुराण; बलभद्रपुराण (ई. १५ वीं शताब्दी); सीमसेन विराचित रामचरित (ई. १६ वीं शताब्दी)।

आधुनिक भारतीय भाषाओं में रामकथा—आधुनिक भारतीय भाषाओं में रामकथा पर आधारित अनेकानेक ग्रंथों की निर्मिति ११ वीं शताब्दी के उत्तरकाल में हो चुकी है, जिनकी संक्षिप्त जानकारी निम्नप्रकार है :—

(१) असमीयः—शंकरदेव द्वारा विरचित माधव-कंदलीरामायण (१४ वीं शताब्दी); गीतिरामायण, रामविजय, श्रीरामकर्मन (१६ वीं शताब्दी); गणक-चरित, कथा रामायण (१७ वीं शताब्दी)।

(२) उड़ीया—‘उकलवाल्मीकि’ बलरामदासकृत जगमोहनरामायण, रामविमा (१६ वीं शताब्दी); रघुनाथविलास, अध्यात्मरामायण (१७ वीं शताब्दी)।

(३) उर्दू—मुन्शी जगन्नाथ कृत रामायण खुदतर (१९ वीं शताब्दी)।

(४) कन्नड—पंपरामायण (११ वीं शताब्दी); नरहरिकृत तोरवेरामायण, एवं मैरावण कालग (१६ वीं शताब्दी)।

(५) काश्मीरी—काश्मीरी रामायण, अर्थात् रामा-वतारचरित।

(६) गुजराती—रामलीला ना पदों (१४ वीं शताब्दी); रामविवाह, रामबालचरित, सीताहरण (१५ वीं शताब्दी); रावणमंदोदरीसंवाद, सीता-हनुमानसंवाद, लवकुशाख्यान (१६ वीं शताब्दी); रण-यज्ञ, सीताविरह (१७ वीं शताब्दी)।

(७) गुस्तुखी पंजाबी—गुरुगोविंदसिंह कृत रामा-वतार अर्थात् गोविंद रामायण (१७ वीं शताब्दी)।

(८) तमिल—कंबरामायण (१२ वीं शताब्दी)।

(९) तेलुगु—रंगनाथकृत द्विपदरामायण, निर्व-चनोत्तर रामायण, विष्टलराजुकृत उत्तररामायण (१३ वीं शताब्दी); भास्कररामायण (१४ वीं शताब्दी); मोल्लरामायण (१६ वीं शताब्दी); कट्टवरदकृत द्विपद रामायण।

(१०) बंगाली—कृत्तिसाररामायण (१५ वीं शताब्दी); अद्भुताश्चर्य रामायण, रामायणगाथा; अद्भुतरामायण, अध्यात्मरामायण (१७ वीं शताब्दी)।

(११) मराठी—भावार्थ रामायण (१६ वीं शताब्दी); श्रीधर द्वारा विरचित रामविजय (१८ वीं शताब्दी)।

(१२) मलयालम—रामचरितम् (१४ वीं शताब्दी); कृष्णशररामायण (१५ वीं शताब्दी); अध्यात्म-रामायण (१६ वीं शताब्दी)।

(१३) सिंहली—रामकथा (१५ वीं शताब्दी)।

(१४) हिन्दी—सरतमिलाप, रामचरितमानस (१६ वीं शताब्दी); रामचंद्रिका, अवधविलास, गोविंद-रामायण (१७ वीं शताब्दी)।

इनके अतिरिक्त तिब्बती, खोतानी, मलायी, स्वामी, कांभोदिया, एवं जावा की भाषाओं में भी, राम कथा-विषयक साहित्य प्राप्त है, जिसकी रचना नौवीं शताब्दी से लेकर सोलहवीं शताब्दी तक हो चुकी है।

राम मार्गवेय श्यापणैय—एक आचार्य, जो श्यापणों के पुरोहित परिवार में से एक था (ऐ. द्रा. ७.२७.३)। यह मृगवु का पुत्र था, जिस कारण इसे मार्गवेय पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

इसका मत था कि, क्षत्रियों के द्वारा किये गये यज्ञ में, सोम के स्थानपर आँदुंबर के फूलों का उपयोग करना चाहिए, जो मत इसने विश्वंतर राजा को कथन किया था। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र लोगों के लिये अलग अलग वस्तुओं का सोमरस इसके द्वारा बताया गया है, जिसके अनुसार इन चार जातियों को क्रमशः सोमबली, आँदुंबर (पीपल एवं प्रश्न), दधि, एवं जल का सोम के लिये उपयोग करने को कहा गया है।

यह विश्वंतर राजाओं का पुरोहित था। विद्यापण नामक पुरोहितों ने विश्वंतर राजाओं के पुरोहित बनने की कोशिश की। किन्तु इसने विद्यापणों को दूर हटा कर, अपना पौरोहित्य पुनः प्राप्त किया।

रामकाथन—वस्तु नामक आचार्य का पैतृक नाम।

रामकृष्ण—एक व्याकरणाचार्य, जिसके द्वारा रचित षोडशश्लोकी शिक्षाग्रंथ प्राप्त है। उस ग्रंथ में वर्णोच्चार का ही केवल विचार किया गया है। स्वयं शंकर के मुख से इस शिक्षाग्रंथ का प्रणयन हुआ ऐसा निर्देश उक्त ग्रंथ के प्रारंभ में है।

२. एक मुनि, जिसके तप के कारण दंडकाचल पर ‘रामकृष्णतीर्थ’ का निर्माण हुआ (स्कंद. २.१.१५)।

रामचंद्र—(पौर. भविष्य.) एक राजा, जो पुरंजय राजा का पुत्र था।

रामठ—एक म्लेंछ जाति, जिसे नकुल ने अपने पश्चिम दिग्बिजय के समय जीता था युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय ये लोग उपस्थित थे। पाठभेद—‘रमठ’।

रामेश्वर ज्योतिर्लिंग—शंकर का एक अवतार, जो रामेश्वर में प्रगट हुआ था। शिव का यह अवतार रामचंद्र के लिए लिया गया था (शिव. शत. ४२.)। इसके उपलिंग का नाम गुप्तेश्वर था (शिव. कोटि १.)।

रामोद—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

रायाण—मोकुल का एक स्वाध, जो कृष्ण की माता यशोदा का भाई था (ब्रह्मवै. २.४९.३७-३९)।

इसकी पत्नी का नाम राधा था। इसे 'रावण' नामान्तर भी प्राप्त था (ब्रह्मवै. ४.३)

रायोवाज—एक सामद्रष्टा आचार्य (पं. ब्रा. ८.१.४; १४.४.१७)। यह यति लोगों में ते एक था, एवं इन्द्र ने इसे वैद्यविद्या प्रदान की थी (यति १. देखिये)।

रावण 'दशग्रीव'—लंका का सुविख्यात राक्षस सम्राट, जो पुलस्त्यपुत्र विश्रवस् नामक राक्षस का पुत्र था। राम दशरथि की पत्नी सीता का हरण करने के कारण, रावण प्राचीन भारतीय इतिहास में पाशवी वासना एवं दुष्टता का प्रतीक बन गया है।

नाम—इसे रावण नाम क्यों प्राप्त हुआ, इस संबंधी कथा वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है। शिव के द्वारा इसकी मुजाएँ कैलास पर्वत के नीचे दशापी गयीं। उस समय, इसने क्रोध एवं पीड़ा से भीषण चीत्कार (रावः मुशरुणः) किया, जिस कारण इसे रावण नाम प्राप्त हुआ (वा. रा. ३.१६.२९)। इसी ग्रंथ में अन्यत्र 'शत्रु को भीषण चीत्कार करने पर विवश करनेवाला' इस अर्थ से इसे 'शत्रु रावण' कहा गया है (वा. रा. सुं. २३.८)।

हनुमत् की तरह रावण का नाम भी एक अनार्य नाम का संस्कृत रूपान्तर प्रतीत होता है। पार्श्वर के अनुसार, रावण शब्द तामिल 'इरवण' (=राजा) का संस्कृत रूप है (पार्श्व. २७७)। रायपुर जिले में रहनेवाले गांड लोग अपने को आज भी रावण कवंशज मानते हैं। रौंती जिले के कटकयों गाँव में 'रावना' नामक परिवार आज भी विद्यमान है। इससे स्पष्ट है कि, रामकथा में निर्दिष्ट लंकाधिपति रावण एवं उसकी राक्षस प्रजा विंध्य प्रदेश एवं मध्य भारत में निवास करनेवाली अनार्य जातियों से कुछ ना कुल संबंध जरूर रखती थी। इस तरह रावण एवं राक्षस वास्तव में यही नाम धारण करनेवाले इसी प्रदेश के आदिवासी थे (बुलके, रामकथा पृ. १२३)।

रावण का उपनाम 'दशग्रीव' (=दशशीर्ष, दशानन) था, जिस कारण इसे दस सिर एवं बीस हाथ थे, ऐसा कल्पनात्मक वर्णन अनेकानेक रामायण ग्रंथों में एवं पुराणों में किया गया है। किंतु संभव है, 'दशग्रीव' नाम पहले इसे रुक के रूप में प्रयुक्त किया होगा (दशग्रीव, अर्थात् जिसकी ग्रीवा दश अन्य साधारण ग्रीवों के समान बलवान् हो), एवं बाद में यह रूपकात्मक अर्थ नष्ट हो कर इसे दस मुख होने की कल्पना प्रसृत हो गयी हो। पार्श्वर

के अनुसार, दशग्रीव शब्द किसी द्राविड़ नाम का संस्कृत रूप होगा। वाल्मीकि रामायण में कई जगह, इसे एक मुख, एवं दो हाथ होने का स्पष्ट निर्देश प्राप्त है (वा. रा. सुं. २२.२८; यु. ४०.१३; १५.४६; १०७.५४-५७; १०९.३; ११०. ९-१०; १११.३४-३७)।

अथर्ववेद में एक 'दशास्य'वाले (दशमुख) ब्राह्मण का निर्देश प्राप्त है (अ. वे. ४.६.१)। इस निर्देश का प्रभाव भी रावण के स्वरूप की कल्पना पर पड़ा होगा।

स्वरूपवर्णन—रावण का शरीर प्रचंड, बलिष्ठ एवं 'नीलांजनचोपम' अर्थात् कृष्णवर्णीय था। इसकी आँखें क्रूर, विकृत एवं कृष्णपिंगल वर्ण की थीं (वा. रा. सुं. २२.१८)। इसकी दोनों भुजाएँ इंद्रध्वज के समान बलिष्ठ थीं, एवं उन पर स्वर्ण के बाहुभूषण रहते थे। इसके स्कंध अत्यंत विशाल थे, जिन पर इंद्रवज्र के आघात से उत्पन्न हुये अनेक घाव स्पष्ट रूप से दिखाई देते थे। क्रोधित होने पर इसकी आँखें लाल, महाभयंकर एवं दैरीप्यमान बनती थीं (वा. रा. सुं. १०.१५-२०)।

इसे केवल दो ही हाथ थे, किंतु युद्ध के समय अपनी इच्छा के अनुसार, दश (अथवा विंश) हस्तधारी बनने की शक्ति इसमें थी।

वाल्मीकि रामायण में क्वचित् इसे वाघ, उँट, हाथी अथ आदि की नानाविध शीर्ष धारण करनेवाला, फैली हुयीं (विद्युत्) आँखोवाला, एवं भूतगणों से परिबद्ध कहा गया है (वा. रा. यु. ५९.२३)। किंतु इस प्रकार का वर्णन वाल्मीकि रामायण में बहुत ही कम है।

जन्म—पुलस्त्य ऋषि का पुत्र विश्रवस् रावण का पिता था। उसकी माता का नाम केशिनी था, जो सुमालि राक्षस की कन्या थी।

वाल्मीकि रामायण में इसकी जन्मकथा निम्न प्रकार दी गयी है :—ब्रह्मा ने जलसृष्टि का निर्माण करने के पश्चात्, प्राणिसृष्टि का निर्माण किया, जिनमें से यक्ष एवं राक्षस उत्पन्न हुये। इन राक्षसों का एक प्रमुख नेता हेति था, जिसके पुत्र का नाम विद्युत्केश एवं पौत्र का नाम सुकेश था। सुकेश को माल्यवान्, सुमालि एवं मालि नामक तीन पुत्र थे, जिन्होंने ब्रह्मा से अमरत्व का वरदान प्राप्त किया था। उन राक्षसों के लिए विश्वकर्मा ने त्रिकूट पर्वत पर लंका का निर्माण किया। ये तीनों भाई देवताओं तथा तपस्वियों को त्रस्त करने लगे, जिस कारण विष्णु ने मालि का वध किया, एवं सुमालि को लंका छोड़ कर, रसाताल जाने पर विवश किया।

विश्रवस् ऋषि को अपनी देववर्णिनी नामक पत्नी से कुबेर (वैश्रवण) नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। एक बार सुमालि ने कुबेर को पुष्पक विमान पर विराजमान हो कर बड़े ही वैभव से भ्रमण करते हुए देखा, जिस कारण उसने अपनी कन्या कैकसी विश्रवस् ऋषि को विवाह में देने का निश्चय किया। विश्रवस् ऋषि ने कैकसी का स्वीकार करते हुए कहा, 'तुम इस दारुण समय पर आई हो, इस कारण तुम्हारे पुत्र क्रूरकर्मा राक्षस होंगे; किन्तु अंतीम पुत्र धर्मात्मा होगा'। इसी शाप के अनुसार, कैकसी को रावण, कुम्भकर्ण, एवं शूर्पणखा नामक लोकोद्दिग-कर्ता संतान, एवं विभीषण नामक धर्मात्मा पुत्र उत्पन्न हुआ।

महामारत में रावण को विश्रवस् एवं पुष्पोत्कटा का पुत्र कहा गया है। विश्रवस् का अन्य पुत्र कुबेर था, जिसने अपने पिता की सेवा के लिए पुष्पोत्कटा, राका एवं मालिनी नामक तीन सुंदर राक्षसकन्याएँ नियुक्त की। इन राक्षसकन्याओं में से पुष्पोत्कटा से रावण एवं कुम्भकर्ण का, राका से खर एवं शूर्पणखा का, एवं मालिनी से विभीषण का जन्म हुआ (म. व. २५९.७)।

वाल्मीकि रामायण एवं महामारत में प्राप्त उपर्युक्त कथाओं में रावण को ब्रह्मा का वंशज एवं कुबेर का भाई कहा गया है, जो कल्पनारम्य प्रतीत होता है। रावण का स्वतंत्र निर्देश प्राचीन साहित्य में रामकथा के अतिरिक्त अन्य कहीं भी प्राप्त नहीं है, जैसा कि ब्रह्मा अथवा कुबेर का प्राप्त है। इससे प्रतीत होता है कि, प्राचीन धैति-हासिक राक्षस कुल से रावण का कोई भी संबंध वास्तव में नहीं था। किन्तु रामकथा के विकास के साथ साथ रावण का भी महत्त्व बढ़ने पर, राक्षस वंश के साथ इसका संबंध प्रस्थापित किया गया।

भागवत में इसका संबंध हिरण्याक्षिपु एवं हिरण्याक्ष के साथ प्रस्थापित किया गया है, जहाँ विष्णु के द्वारपाल जय एवं विजय शापवश अपने अगले तीन जन्मों में, क्रमशः हिरण्यकशिपु एवं हिरण्याक्ष, रावण एवं कुम्भकर्ण, शिशुपाल एवं दंतवक्र के रूप में पृथ्वी पर प्रगट होने का निर्देश प्राप्त है (भा. ७.१.३५-३६)।

तपश्चर्या—रावण के सौतेला भाई वैश्रवण कुबेर ने तपस्या कर के चतुर्थ लोकपाल (धनेश) का पद एवं पुष्पक विमान प्राप्त किया। विश्रवस् ने भी अपने पुत्र कुबेर को लंका का राज्य प्रदान किया था, जो राक्षसों के द्वारा विष्णु के भय से छोड़ा गया था (वा. रा. उ. ३)।

एक बार, कुबेर पुष्पक विमान में बैठ कर अपने पिता विश्रवस् ऋषि से मिलने आया। रावण की माता कैकसी ने इसका ध्यान कुबेर की ओर आकर्षित कर के कहा, 'तुम भी अपने भाई के समान वैभवसंपन्न बन जाओ'। अतः यह अपने भाईयों के साथ गोकर्ण में तपस्या करने लगा (वा. रा. उ. ९.४०-४८)।

इस तरह यह दस हजार वर्षों तक तपस्या करता रहा, जिसमें प्रति सहस्र वर्ष के अंत में, यह अपना एक सिर अग्नि में हवन करता था। दस हजार वर्षों के अन्त में यह अपना दसवाँ सिर भी हवन करनेवाला ही था कि, इतने में प्रसन्न हो कर ब्रह्माने इसे कर दिया, 'तुम सुपर्ण, नाग, यक्ष, दैत्य, दानव, राक्षस तथा देवताओं के लिए अवध्य रहोगे'। पश्चात् ब्रह्माने इसके नौ सिर लौटा कर, इसे इच्छारूपी बनने का भी वर प्रदान किया (वा. रा. उ. १०-१८-२६; पञ्च. पा. ६; म. व. २६९. २६)।

ब्रह्मा से वर प्राप्त करने के पश्चात्, रावण ने अपने पितामह सुमालि के अनुरोध पर अपने मंत्री प्रहस्त को कुबेर के पास भेजा दिया, एवं लंका का राज्य राक्षसवंश के लिए माँग लिया। तत्पश्चात् अपने पिता विश्रवस् ऋषि की आज्ञा मान कर कुबेर कैलास चला गया, एवं रावण ने अपने राक्षसवांछनों के साथ लंका को अपने अधिकार में ले लिया (वा. रा. उ. ११.३२)।

अत्याचार—ब्रह्माने से वर प्राप्त करने के पश्चात्, लंका-धिपति रावण पृथ्वी पर अनेकानेक अत्याचार करने लगा। इसने अनेक देव, ऋषि, यक्ष, गंधर्वों का वध किया, एवं उनके उद्यानों को नष्ट किया। यह देख कर इसके सौतेले भाई कुबेर ने दूत भेजकर इसे सावधान करना चाहा। किन्तु रावण ने अपनी तलवार से उस दूत का वध किया, एवं अपने मंत्रियों के साथ कैलासपर्वत पर रहनेवाले कुबेर पर आक्रमण किया। वहाँ इसने यक्ष सेना को पराजित किया, एवं कुबेर को क्षुद्र युद्ध में परास्त कर उसका पुष्पक विमान छीन लिया (वा. रा. उ. ९)।

गवैहरण—कुबेर को पराजित करने के बाद, पुष्पक विमान में बैठकर यह कैलासपर्वत के उतर से जा रहा था, तत्र पुष्पक अचानक रुक गया। फिर रावण पुष्पक से पृथ्वी पर उतरा, एवं शिवपापदं नदी का वानरमुख देव कर इसने उसका उपहास किया। इस कारण नदी ने इसे शाप दिया, 'निरे जैसे वानरों के द्वारा तुम पराजित होंगे' (वा. रा. उ. १६)।

पश्चात् यह कैलास पर्वत को जड़मूल से उखाड़ देने की चेष्टा करने लगा। कैलास पर्वत को उड़ा कर यह लंका में ले जाना चाहता था। रावण के बल से पर्वत हिलने लगा, किन्तु शिव ने अपने पादांगुष्ठ से कैलास पर्वत को नीचे ढ़ाया, जिससे रावण की भुजाएँ उस पर्वत के नीचे बकड़ गयीं।

फिर रावण विविध स्तोत्रों के द्वारा शिव का गुणगान करने लगा, एवं एक सहस्र वर्षों तक विलाप करता रहा। तत्पश्चात् शिव इस पर प्रसन्न हुये, एवं उन्होंने रावण की भुजाएँ मुक्त कर उसे चंद्रहास नामक खड्ग प्रदान किया एवं अपने भक्तों में शामिल करा दिया। तदोपरान्त रावण परमशिवभक्त बन गया, एवं एक सुवर्णलिंग सदा ही साथ रखने लगा (वा. रा. उ. ३१)। रावण की शिवभक्ति की कथाएँ आनंद रामायण, एवं स्कंद तथा पद्म पुराणों में भी प्राप्त हैं (आ. रा. १.१३.२६-४४; पद्म. उ. २४२)।

विवाह—एक बार रावण ने मृगया के समय दिति के पुत्र मय को देखा, जो अपनी पुत्री मंशोदरी के साथ वन में रह रहा था। रावण का परिचय प्राप्त करने के पश्चात्, मय ने मंशोदरी का विवाह इससे करना चाहा। रावण ने इस प्रस्ताव को स्वीकार लिया। विवाह के समय मय ने रावण को एक अमोघ शक्ति प्रदान की, जिससे राम-रावण युद्ध में इसने लक्ष्मण को आहत किया था (वा. रा. उ. १२)।

वेदवती से शाप—एक बार कुशाश्वज ऋषि की कन्या वेदवती, नारायण को पतिरूप में प्राप्त करने के लिए तप करती थी। इस समय रावण उसके रूपयौवन पर मोहित हो कर, उस पर अत्याचार करने पर प्रवृत्त हुआ। इस पर वेदवती ने इसे शाप दिया, 'मैं तुम्हारे नाश के लिए अयोनिजा सीता के रूप में पुनः जन्म ग्रहण करूँगी' (वा. रा. उ. १७)।

विजययात्रा—रावण की विजययात्रा का सविस्तृत वर्णन वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है, जिसके अनुसार इसने निम्नलिखित राजाओं का पराभव किया :—महत्, दुष्यन्त, सुथ, गाधि, मय, पुरुरवस् एवं अनरण्य। तत्पश्चात् रावण ने नारद की सलाह से यमलोक पर आक्रमण किया, जिसमें इसने यम की सेवकों परास्त किया। अनंतर इसने वरुणालय में नागों का राजा बासुकि को परास्त किया, अश्वनगर में अपने बहनोई विद्युच्छिह्न का वध किया, एवं वरुणसेना को परास्त कर वह वापस आया (वा. रा. उ. १८-२३)।

अपनी विजययात्रा के उपलक्ष्य में रावण जब लंका में अनुपस्थित था, तब मधु नामक दैत्य ने इसकी बहन कुंभीनसी का हरण किया। यह सुन कर, रावण ने अपने तैन्य के साथ, मधुपुर पर आक्रमण किया। किन्तु अपनी बहन के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, इसने मधु दैत्य को अमय दिया (वा. रा. उ. २५.४६)।

मधुदैत्य के यहाँ से यह कैलासपर्वत की ओर गया, जहाँ इसने अपने भाई कुबेर की स्तुपा रंभा पर अत्याचार करना चाहा। रंभा ने इसे खूब समझाया कि, वह इसकी पुत्रवधू, अर्थात् कुबेरपुत्र नलकूबर की पत्नी है। किन्तु इसने उत्तर दिया, 'अपराधों को कोई पति होता ही नहीं' (पतिरप्सरसां नास्ति), एवं इसने रंभा के साथ बलत्कार किया। पश्चात् यह वार्ता सुन कर नलकूबर ने इसे शाप दिया, 'न चाहनेवाली किसी स्त्री की इच्छा करने से तुम्हारे मस्तक के सात टुकड़े हो जायेंगे (वा. रा. उ. २६.५५)।

तदोपरान्त रावण ने कैलास पर्वत पार कर इंद्रलोक पर आक्रमण किया, जहाँ हुए युद्ध में इसके पितामह सुमालि का वध हुआ। पश्चात् इसके पुत्र मेघनाद ने इंद्र को परास्त किया, एवं उसे लंका में ले आया, जिस कारण उसे इंद्रजित् नाम प्राप्त हुआ (वा. रा. उ. ३०)।

पराजय—इसकी विजययात्राओं के साथ इसके कई पराजयों का निर्देश भी वाल्मीकिरामायण में प्राप्त है। एक बार यह माहिष्मती नगरी के समीप नर्मदा नदी में स्नान कर शिवपूजा करने के लिए गया। वहाँ माहिष्मती का हैहय राजा कार्तवीर्य अर्जुन अपनी पत्नियों के साथ आया था। उसने अपनी सहस्र भुजाओं से नर्मदा की धारा रोक दी, जिस कारण नदी विपरीत दिशा से बहने लगी, एवं रावण के द्वारा चढ़ाई गयी शिवपूजा के फूल ले गयी। इस पर रावण अर्जुन से द्वंद्वयुद्ध करने गया। किन्तु इस युद्ध में कार्तवीर्य ने इसे परास्त कर माहिष्मती के कारावास में रख दिया। बाद में पुलस्त्य ऋषि ने मध्यस्तता कर रावण की मुक्तता की, एवं कार्तवीर्य के साथ मित्रता प्रस्थापित की (वा. रा. उ. ३१-३३)।

पार्ष्णिट के अनुसार, कार्तवीर्य अर्जुन पुलस्त्य से काफी पूर्वकालीन था, जिससे प्रतीत होता है कि, इस कथा में निर्दिष्ट रावण किसी अन्य द्रविड राजा था (पार्ष्णि. २४२)। कार्तवीर्य के कारागृह से मुक्त होने के पश्चात्, रावण फिर योग्य प्रतिद्वंद्वियों का शोध करने लगा। पश्चात् यह

किष्किंधा में बालि के पास युद्ध करने के लिए गया, जब बालि ने इसे बगल में दबा कर क्रमशः पश्चिम, उत्तर एवं पूर्व सामरों में घुमाया। तब यह बालि के सामर्थ्य को देख कर अत्यधिक आश्चर्यचकित हुआ, एवं अग्नि के साक्षी में यह उसका मित्र बना (वा. रा. उ. ३४)।

पराजय की अन्य कथाएँ—यह पाताललोक में बलि राजा को भी जीतने गया था। किन्तु वहाँ भी इसे नीचे देखना पड़ा (वा. रा. उ. प्रक्षिप्त १-५; बलि वैरोचन देखिये)।

एक बार नारद के कथनानुसार, यह श्वेतद्वीप में युद्ध करने गया। तब वहाँ की स्त्रियों ने इसे लीलापूर्वक एक दूसरी की ओर फेंक दिया। इस कारण अत्यंत भयभीत हो कर, यह समुद्र के मध्य में जा गिरा (वा. रा. उ. प्र. ३७)।

यह सीता-स्वयंवर के लिए जनक राजा की मिथिला नगरी में गया था। जनक राजा के प्रण के अनुसार, इसने शिवधनुष्य उठाने की कोशिश की। किन्तु उसे सम्हाल न सकने के कारण वह इसकी छाती पर गिरा; तब राम ने इसकी मुक्तता की (आ. रा. ७.३)। यह कथा वाल्मीकि रामायण में अप्राप्य है।

सीताहरण—एक बार राम के द्वारा विरूपित की गई रावण की बहन शूर्पणखा इसके पास आयी, एवं उसने खरबध का समाचार, एवं सीता के सौंदर्य की प्रशंसा इसे सुनाई। फिर इसने सीता का हरण करने का मन में निश्चय किया। इस कार्य में सहाय्यता प्राप्त करने के लिए यह मारीच नामक इच्छारूपधारी राक्षस के पास गया, एवं कांचनमृग का रूप धारण कर सीताहरण में सहाय्यक बनने की इसने उसे प्रार्थना की। मारीच ने इस प्रार्थना का इन्कार कर दिया, एवं स्पष्ट शब्दों में कहा, 'यदि तुम सीताहरण की जिद चलाओगे तो लंका का सत्यानाश होगा'।

किन्तु रावण ने मारीच की यह सलाह न मानी, एवं उसे इस कार्य में सहाय्यता करने के पुरस्कारस्वरूप, आधा राज्य प्रदान करने का आश्वासन दिया। रावण ने उसे यह भी कहा, 'यदि यह प्रस्ताव तुम स्वीकार नहीं करोगे, तो मैं तुम्हारा वध करूँगा'।

मारीच की संमति प्राप्त करने के बाद, रावण ने उसे अपने रथ में बिठा कर, जनस्थान की ओर प्रस्थान किया। वहाँ राम कांचनमृगरूपधारी मारीच के पीछे चले जाने पर, एवं लक्ष्मण उसकी खोज के लिए जाने पर, एक

परिव्राजक के रूप में रावण ने सीता की पर्णकुटी में प्रवेश किया। उससे आतिथ्यसत्कार ग्रहण करने के पश्चात्, इसने अपना परिचय देते हुए कहा—

भ्राता वैश्रवणस्याऽहं सापत्नो वशवर्णिनि ।
रावणो नाम भद्रं ते दशग्रीवः प्रतापवान् ॥
(वा. रा. अर. ४८.२)।

(मेरा नाम रावण है, एवं मैं कुवेर का सापत्न भाई हूँ। सुविख्यात पराक्रमी राजा दशग्रीव तो मैं ही हूँ)।

पश्चात् इसने सीता को अपने साथ आ कर लंका की महारानी बनने की प्रार्थना की। इसने उसके सामने राक्षस-विवाह का प्रस्ताव रखते हुए कहा—

अलं व्रीडेन वैदेहि धर्मलोपकृतेन ते ।
कार्षोऽयं देवि निष्पन्दी यस्वामभिभविष्यति ॥
(वा. रा. अर. ५५.३४-३५)।

(अपने पति का त्याग करने के कारण, धर्मविरुद्ध आचरण करने का भय तुम मन में नहीं रखना, क्यों कि, जिस विवाह का मैं प्रस्ताव रखता हूँ, वह वेदप्रतिपादित ही है)।

रावण के इस प्रस्ताव का सीता के द्वारा अस्वीकार किये जाने पर, इसने अपना प्रचंड राक्षस-रूप धारण किया, एवं सीता को जबरदस्ती से रथ में बिठा कर यह लंका की ओर चला गया। मार्ग में बाधा डालनेवाले जटायु के पंख तोड़ कर इसने उसका वध किया। पश्चात् इसने सीता को लंका में स्थित अशोकवन में रख दिया (वा. रा. अर. ४३-५४; पद्य. उ. २४२; भा. ९.१०. ३०; म. व. २६३)।

श्री. चि. वि. वैद्य के अनुसार, वाल्मीकि रामायण के सीताहरण के वृत्तांत में प्राप्त कांचनमृग का आख्यान प्रक्षिप्त है, एवं अद्भुत रस की उत्पत्ति के लिए यह आख्यान आद में रामायण में रखा गया है (वैद्य, दि रिडल ओफ दि रामायण पृ. १४४)।

रावण-सीता संवाद—हनुमत् ने अशोकवन में प्रवेश पा कर सीता की भेट ले ली। उसी रात्री के अन्त में रावण अपनी परिणियों के साथ सीता का दर्शन करने आया, एवं इसने दीनतापूर्वक सीता से प्रार्थना की, 'पति के रूप में तुम मेरा स्वीकार करो'। सीता के द्वारा इस प्रार्थना का इन्कार किये जाने पर, इसने क्रुद्ध हो कर कहा—

द्वाभ्यामूर्ध्वं तु मासाभ्यां भर्तारं मामन्विच्छतीम् ।

मम त्वां प्रातराशार्थं सूदाश्लेःस्थानित् लण्डशः ॥

(वा. रा. सुं. २२.९)

(दो महिने में अगर तुम स्वेच्छा से मेरी पत्नी न कोगी, तो रसोयें तुम्हारे शरीर के टुकड़े कर, मेरे प्रातःकाल के भोजन के लिए पकायेंगे ।)

इतना कह कर रावण ने पहारा देनेवाली राक्षसियों को भादेश दिया कि, वे सीता को इसके वश में लाने का प्रयत्न करती रहें। किन्तु सीता को वश में लाने के उनके हर प्रयत्न असफल रहे, एवं सीता अपने वचनों पर दृढ़ रही (वा. रा. यु. ३१-३२; म. व. २८१) ।

रावण-विभीषण संवाद—रावण के छोटे भाई विभीषण ने, धर्म एवं नीति का अनुसरण कर, सीता को राम के पास लौटाने के लिए इससे पुनः अनुरोध किया, एवं ऐसे न करने पर इसका एवं इसके लंका के राज्य का नाश होने की आशंका भी व्यक्त की ।

इसने विभीषण की एक न सुनी, एवं कहा —

धोराः स्वार्थप्रयुक्तास्तु ज्ञातियो नो भयावहा :

(वा. रा. यु. १६.७) ।

(अप्रामाणिक, संशयात्मा एवं स्वयं की जवाबदारी धारणवाले स्वजातीय लोग ही राज्य के सबसे बड़े शत्रु होते हैं ।)

आगे चल कर विभीषण को राक्षसकुल का कलंक (कुलपासन) बता कर इसने कहा, ' वीर पुरुष के सबसे बड़े शत्रु उसके भाई ही होते हैं, जैसे कि रानहाथी का सबसे बड़ा शत्रु व्याध के पक्ष में मिलनेवाला उसका भाई ही होता है ' । इस कठोर निर्मर्त्सना से घबरा कर विभीषण ने चार राक्षसों के साथ लंका छोड़ दी, एवं वह राम के पक्ष में जा मिला । रावण के मातामह माख्यवत् ने भी इसे बहुत समझाया । किन्तु 'उसके उपदेशों का इसके उपर कुछ प्रभाव न पड़ा (वा. रा. यु. ३५) ।

युद्धारंभ—राम से युद्ध शुरू होने के पूर्व रावण ने शुक को रामसेना की जानकारी प्राप्त करने के लिए भेजा था, एवं सुग्रीव के पास संदेश भी भेजा था कि, वह युद्ध में राम की सहायता न करे (वा. रा. यु. २०) । किन्तु उसका कुल भी परिणाम न हुआ, एवं शान्ति के सारे प्रयत्न अयशस्वी हो कर इसका राम के साथ युद्ध शुरू हुआ ।

सेनावर्णन—रावण की सेना बहुत बड़ी थी, जिसके छः सेनापति प्रमुख थे :—महोदर, प्रहस्त, मारीच, शुक, सारण एवं धूम्राक्ष (वा. रा. उ. १४.१) । युद्ध के प्रारंभ में इसने प्रहस्त, महापार्थ, महोदर एवं अपने पुत्र इंद्रजित् को लंका के चारों द्वार के संरक्षण के लिए नियुक्त किया था । लंका के मध्यभाग के संरक्षण का भार विरुपाक्ष पर सौंपा गया था, एवं यह स्वयं शुक, सारण एवं अन्य सेना के साथ उत्तरद्वार पर खड़ा हुआ था (वा. रा. यु. ३६) ।

युद्ध के प्रारंभ में, राम एवं लक्ष्मण को नागपाश में बंधा जाने का प्रसंग इसने सीता विजटा से विदित कराया, एवं सीता को वश में लाने का आखिरी प्रयत्न किया । किन्तु उस प्रयत्न में वह असफल रहा ।

वाद में राम के साथ किये गये युद्ध में एक एक कर के प्रहस्त, धूम्राक्ष, वज्रदंष्ट्र, अंकन आदि इसके सारे सेनापति, एवं इसका भाई कुमकर्ण एवं पुत्र इंद्रजित् मारे गये । तत्पश्चात् क्रोध में आकर यह सीता के वध के लिए उद्यत हुआ । किन्तु सुपाश्र्वे नामक इसके अमात्य ने स्त्रीवध से इसे रोक दिया (वा. रा. यु. ९२.५८) ।

रामरावणयुद्ध—राम एवं रावण का युद्ध कुल दो बार हुआ था । इसमें से पहले युद्ध में विभीषण ने इसके रथ के घोड़ों का वध किया था । तत्पश्चात् इसने रथ से उतर कर, शक्ति नामक एक बरछी विभीषण की ओर फेंक दी, किन्तु लक्ष्मण ने उस शक्ति को छिन्नभिन्न कर फेंक दिया । पश्चात् मय के द्वारा दी गयी ' अमोघा ' शक्ति लक्ष्मण पर छोड़ कर इसने उसे मूर्च्छित किया । तत्पश्चात् राम ने लक्ष्मण को हनुमान आदि वानरों की रक्षा में छोड़ कर, रावण पर ऐसा हमला किया कि, यह रणभूमि छोड़ कर भाग गया (वा. रा. यु. ९९-१००) ।

इंद्रजित् के वध के पश्चात् यह ' जयप्रापक ' नामक मंत्र का जाप करने बैठा । इस वार्ता को सुन कर, विभीषण ने राम से किसी तरह भी इस जाप में बाधा डालने की सूचना दी, क्यों कि, इस जाप का पूरा होते ही यह शिव की प्रसाद से अजेय होने की संभावना थी ।

विभीषण की सूचना के अनुसार, अंगद मंदोदरी के केशों को खींच कर रावण के पास ले आया, जिस कारण क्रुद्ध हो कर रावण ने अपना जाप यज्ञ अधुरा ही छोड़ दिया, एवं यह युद्धभूमि में आ डटा (वा. रा. यु. ८२ प. उ. पाठ) ।

वध—इसके उपरान्त राम-रावण का विकराल युद्ध हुआ । इस युद्ध के समय इन्द्र ने अपना रथ, एवं मातलि

नामक सारथी राम के सहाय्यार्थ भेजा। अगस्त्य ने भी राम को आदित्य नामक स्तोत्र प्रदान किया। राम-रावण का यह युद्ध सात दिनों तक चलता रहा। इस युद्ध में रावण एक बार मूर्च्छित हुआ, एवं अपने सारथि के द्वारा युद्धभूमि से दूर लाया गया (वा. रा. यु. १०२-१०३)।

होश में आते ही रावण पुनः एक बार युद्धभूमि में आ उतरा। अंत में अगस्त्य के द्वारा दिये गये ब्रह्मास्त्र इसकी छाती पर मार कर, राम ने इसका वध किया। (वा. रा. यु. १०८; म. ग. परि. १. क्र. २१ पंक्ति. ५३६; व. २९१.२९; द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति. ४४७)। राम-रावण के इस अंतीम युद्ध में रावण के सिर पुनः पुनः उत्पन्न होते थे, वहाँ तक कि, राम ने रावण के एकही सिर काट दिये (वा. रा. यु. १०७.५७)।

परिवार—मंदोदरी के अतिरिक्त रावण के धान्य-मालिनी नामक अन्य एक पत्नी का निर्देश प्राप्त है, जो अतिक्राय की माता थी (वा. रा. सुं. २२.३९; यु. ७१.३०)।

इन दो पत्नियों के अतिरिक्त रावण को हजार पत्नियों थी, जिनमें देव, गंधर्व, -नाग आदि स्त्रियों का समावेश था (वा. रा. अयो. १२३.१४; सुं. १०-११; १८; २२; यु. ११०; उ. २२)।

रावण के पुत्रों में इंद्रजित् सर्वाधिक प्रसिद्ध है। उसके अतिरिक्त इसे निम्नलिखित अन्य पुत्र भी थे:—अश्व, (वा. रा. सुं. ४७); अतिक्राय (वा. रा. यु. ७१.३०); त्रिशार्प (वा. रा. यु. ७०); नरान्तक (वा. रा. यु. ६९); देवान्तक (वा. रा. यु. ७०)।

रावण को कुंभकर्ण एवं विभीषण नामक दो भाई, एवं शूर्पणखा नामक बहन थी। उनके अतिरिक्त मत्त एवं युद्धोत्त नामक इसके अन्य दो भाईयों का, एवं कुंभिनसी नामक एक बहन का भी निर्देश प्राप्त है (वा. रा. यु. ७१.२)।

चरित्रचित्रण—राम जैसे परमवीर राजा को युद्ध में ललकारने की हिंमत करनेवाला रावण, स्वयं एक परमऐश्वर्युक्त, शोभासंपन्न एवं पराक्रमी राजा था। रावण स्वयं एक साधारण सम्राट न था, किन्तु समस्त पृथ्वी को जीतनेवाला एक लोकव्यापी आतंक भी था। स्वर्णासन पर बैठ कर अग्नि जैसे तेजस्वी दिखनेवाले रावण को देख कर, स्वयं राम भी प्रभावित हो चुका था (वा. रा. अर. ३२.५; यु. ५९.२६)। इस उग्र तथा पाप करनेवाले

राजा को देख कर, पृथ्वी के चर प्राणी ही क्या, वायु, वृक्ष, आदि अचर वस्तु भी कंपित होती थी (वा. रा. अर. ४६.६-८)।

यह कुशल राजनीतिज्ञ एवं दिग्विजयी सम्राट् था। इसकी प्रजा ऐश्वर्यसंपन्न एवं धनधान्य से पूरित थी (वा. रा. सुं. ४.२१-२७; ९.२-१७)। इसके राज्य में अनेकानेक वस्तुओं निर्माण करने की कला चरम सीमा पर थी (वा. रा. सुं. ६)।

यह अपने मंत्रिणों में अत्यधिक आदरणीय था, एवं यह स्वयं मंत्रियों के विचारविमर्श पूछ कर ही राज्य का कारोबार चलाता था (वा. रा. अर. ३८.२३-३३)।

परमपराक्रमी होने के साथ, यह उच्चश्रेणी का रसिक एवं संगीतज्ञ भी था (वा. रा. सुं. ४४. ३२)। अपने परिवार के लोगों के प्रति यह अत्यन्त स्नेहशील था। अपनी बहन शूर्पणखा विधवा होने पर, यह बड़े दुःखी हुआ था (वा. रा. उ. २४)।

महापंडित रावण—रावण वेदों का महापंडित, एवं समस्त शास्त्रों का माना हुआ विद्वान् था। वाल्मीकि रामायण में इसे 'वेदविद्यानिष्णात' (वेदविद्याव्रतस्नातः) एवं 'आचारसंपन्न' (स्वकर्मनिरतः) कहा गया है (वा. रा. यु. ९२.६०)। शास्त्राओं के क्रम के अनुसार वेदों का विभाजन करने का काम इसके द्वारा किया गया था। इसके नाम पर ऋग्वेद का एक भाष्य एवं वेदों का एक पदपाठ भी प्राप्त है। बलराम रामायण के अनुसार, इसने वैदिक मंत्रों का संपादन कर, वेदों की एक नयी शाखा का निर्माण भी किया था।

रावण के नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ भी प्राप्त हैं:—अकंप्रकाश, कुमारतंत्र, इंद्रजाल, प्राकृत कामधेनु, प्राकृत-लोकेश्वर, ऋग्वेदभाष्य, रावणभेट आदि।

कई अभ्यासकों के अनुसार, उपर्युक्त ग्रंथ लिखनेवाला रावण, लंकाधिपति रावण से कोई अलग व्यक्ति था।

'तुलसी रामायण' में—'मानस' में चित्रित किया गया रावण इंद्रियलोहुर, कुटिल राजनीतिज्ञ, क्रोधी एवं परम शक्तिशाली खलपुरुष है। यह एक वस्तुवादी, अधार्मिक, अभिमानी एवं हठी व्यक्ती है, जो मारीच, विभीषण, मात्यवन्, प्रहस्त, कुंभकर्ण एवं मंदोदरी के द्वारा किये गये सदुपदेश पर किंचित भी ध्यान नहीं देता है।

'मानस' में रावण के अनाचारों, अत्याचारों एवं निरंकुशता की ओर विशेष संकेत किया गया है; एवं इसे नीच, खल, अधम आदि विशेषणों से भूषित किया

गया हैं (मानस. ३.२३.८; ३.२८.८)। इससे प्रतीत होता है कि, राम के चरित्रचित्रण में तुलसी का मन जितना रमा है, उतना उसके प्रतिपक्षी रावण के चित्रण में नहीं।

रावण द्रुतमुख—मायापुरी का राक्षस नृप, जो कुम्भकर्ण का पौत्र पौंड्रक राजा का मित्र था। विभीषण के विरोधी पक्ष में होने के कारण राम ने इसका वध किया (भा. रा. राज्य. ५)।

रावण सहस्रमुख—पुष्करद्वीप का एक सहस्रमुखी राक्षस, जिसका सीता के द्वारा वध हुआ था (अद्भुत रा. १७)।

रांपू—(सो. क्षत्र) एक राजा, जो वायु के अनुसार काशि राजा का पुत्र था।

राष्ट्रपाल—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजकुमार, जो कंस राजा का भाई, एवं उग्रसेन के नौ पुत्रों में से एक था।

राष्ट्रपाला अथवा **राष्ट्रपालिका**—मथुरा के उग्रसेन राजा की कन्या, जो वसुदेव के भाई सुंजय राजा की पत्नी थी। इसे वृक एवं दुर्मेषण नामक दो पुत्र थे (भा. ९. २४-२५; ४२)।

राष्ट्रपिंड—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

राष्ट्रभृत—अथर्ववेद में निर्दिष्ट तीन अप्सराओं में से एक (अ. वे. १६.११८; वा. सं. १५.१५-१९)। अन्य दो अप्सराओं के नाम उग्रजित एवं उग्रयया थे।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार भरत एवं पंचजनी के पुत्रों में से एक था।

राष्ट्रवर्धन—दशरथ राजा के अष्टप्रधानों में से एक (वा. रा. वा. ७.३)।

२. राज्यवर्धन राजा का नामान्तर (राज्यवर्धन देखिये)।

राहु—एक दानव, जो अष्टग्रहों में से एक पापग्रह माना जाता है। सूर्य को ग्रसित करनेवाले दानव के रूप में इसका निर्देश अथर्ववेद में प्राप्त है (अ. वे. १९.९-१०)।

पुराणों में इसे कश्यप एवं दनु का पुत्र बताया गया है। अन्य ग्रंथों में से इसे कश्यप एवं सिंहिका का पुत्र कहा गया है (म. आ. ५९.३०; विष्णुधर्म. १.१०६; पद्म. स. ४०)। भागवत एवं ब्रह्मांड में इसे विप्रचित्ति एवं सिंहिका का पुत्र कहा गया है (भा. ६.६.३७; १८.१३; ब्रह्मांड. ३.६.१८-२०)।

स्वर्भानु नामक एक आसुर प्राणि का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है, जिसे सूर्य के प्रकाश को रोकनेवाला माना गया है (ऋ. ५.४०; स्वर्भानु देखिये)। वैदिक साहित्य में

निर्दिष्ट स्वर्भानु का स्थान ही वैदिकोत्तर पुराकथाशास्त्र में राहु के द्वारा लिया गया है, जिस कारण इसे 'चंद्रार्क-प्रमदन' (चंद्र एवं सूर्य को जीतनेवाला) कहा गया है (भा. ५.२३.७)। कई पुराणों में इसका नामान्तर स्वर्भानु बताया गया है (ब्रह्मांड. ३.६.२३)। शिशुमार चक्र के गले में इसका निवासस्थान था।

शिरच्छेद—समुद्रमंथन के उपरान्त देव-गण अमृत-पान करने लगा, जब यह दानव भी प्रच्छन्न रूप धारण कर अमृतपान में शामिल हुआ। अमृत इसके गले तक ही पहुँच पाया था कि, सूर्यचंद्र ने यह दैत्य होने की सूचना विष्णु को दी। विष्णु ने तत्काल इसका शिरच्छेद किया, जिससे इसका सिर वदन से अलग हो कर धरती पर जा गिरा (म. आ. १७.४.६)।

पश्चात् इसके सिर से केतु का निर्माण हुआ, एवं यह सिरविरहित अवस्था में घूमने लगा। तदोपरान्त विष्णु की डर से ये दोनों भाग गये। किन्तु सूर्य एवं चंद्रमा के प्रति राहु-केतुका द्वेष कम न हुआ। इसी कारण, ये आज भी उन्हें ग्रासते रहते हैं, जिसे क्रमशः सूर्यग्रहण एवं चंद्रग्रहण कहते हैं (पद्म. ब्र. १०)।

राहु ग्रह का आकार वृत्ताकार माना जाता है। इसका व्यास बारह हजार योजन, तथा दायरा ब्यालिस हजार योजन है।

जिस समय शंकर एवं जालंधर का युद्ध हुआ था, उस समय यह जालंधर की ओर से राजदूत बन कर शंकर के पास गया था (पद्म. उ. १०)। किन्तु वहाँ शंकर की क्रोधाग्नी से डर कर यह भाग गया (पद्म. उ. १९)। इस पापग्रह के प्रभाव की जानकारी संजय ने धृतराष्ट्र को बताई थी (म. स. १३.३९-४१)। ब्रह्मा की सभा में उपस्थित ग्रहों में भी इसका नाम प्राप्त है।

इसकी कन्या का नाम सुप्रभा था (पद्म. स. ६), जिसे भागवत में स्वर्भानुपुत्री कहा गया है। कई अन्य पुराणों में इसकी कन्या का नाम प्रभा दिया गया है (ब्रह्मांड. ३.६. २३; विष्णु. १.२१)।

राहुकर्णि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद- 'रागकर्णि'।

राहुल—(स. इ. भविष्य.) शुद्रोदन राजा के पुत्र पुष्कल राजा का नामान्तर (पुष्कल. २. देखिये)।

राहुगण—गोतम नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १.४.१.१०)। रहुगण का वंशज होने से, इसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा (रहुगण देखिये)।

रिश्त—(सो. नील.) नीलवंशीय चक्षु राजा का नामान्तर (चक्षु २. देखिये)।

रिपु—(सो. द्रुह्यु.) एक राजा, जो वायु के अनुसार बभ्रु राजा का पुत्र था।

२. (सो. पुरुरवस्) एक राजा, जो भागवत के अनुसार यदु राजा का पुत्र था।

रिपुञ्जय—(सो. द्विमीट.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार सुवीर राजा का पुत्र था। इसे नृपञ्जय नामान्तर भी प्राप्त था।

२. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो ध्रुवपुत्र शिष्ट राजा के चार पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम सुच्छाया था।

३. (सो. मगध. भविष्य.) मगधवंशीय महाबाहु राजा का नामान्तर। ब्रह्मांड में इसे श्रुतञ्जय का पुत्र कहा गया है (महाबाहु ३. देखिये)।

४. (सो. मगध. भविष्य.) मगधदेश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार विश्वजित का, एवं मत्स्य के अनुसार अचल राजा का पुत्र था। वायु एवं ब्रह्मांड में इसे अरिञ्जय, तथा भागवत में इसे पुरञ्जय कहा गया है। इसने पचास वर्षों तक राज्य किया। इसके शुक नामक प्रधान ने इसका वध कर, अपने प्रद्योत नामक स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की।

५. एक ब्राह्मण, जो उदारधी एवं भद्रा के दो पुत्रों में से एक था।

६. कुण्डलनगरी के सुरथ राजा का पुत्र। सुरथ ने राम का अश्वमेधीय अश्व पकड़ लिया था। उस समय शत्रुघ्न के साथ हुए युद्ध में, यह सुरथ के साथ युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ था (पद्म. पा. ४९)।

७. एक ब्राह्मण, जो अपने अगले जन्म में काशी देश के दिवोदास नामक राजा बना। एक बार काशीदेश में से अग्नि लुप्त हुआ, जिस समय इसने स्वयं अग्नि का काम निभाया (स्कंद. ४.२.३९-५८)।

रिपुताप—एक शर योद्धा, जो शत्रुघ्न के साथ राम के अश्वमेधीय अश्व के संरक्षण के लिए उपस्थित था (पद्म. पा. ११)।

रिपुवार—वीरमणि राजा का सेनापति। वीरमणि के द्वारा राम का अश्वमेधीय अश्व पकड़ लिये जाने पर, इसने शत्रुघ्न के साथ युद्ध किया था।

रिषा—कथ्य एवं क्रोधा की एक कन्या, जो धर्म ऋषि की पत्नी थी।

रिष्ट—वैवस्वत मनु के पुत्रों में से एक।

२. यम सभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८. १४)।

रुक्म—(सो. क्रोष्ट्र.) एक यादवराजा, जो भागवत के अनुसार रुक्म राजा का पुत्र था। इसके भाई का नाम पृथु था, जिस कारण इन दोनों का एकत्र निर्देश अनेक ग्रंथों में प्राप्त है।

रुक्मकवच—एक यादवराजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार कंबलबर्हिष राजा का पुत्र था। विष्णु एवं पद्म में इसे शिनेयु राजा का, एवं भागवत में इसे रुक्म राजा का पुत्र कहा गया है।

रुक्मकेश—एक राजकुमार, जो विदर्भदेशाधिपति भीष्मक राजा के पाँच पुत्रों में से चौथा पुत्र था (भा. १०.५२.२२)।

रुक्मवाहु—एक राजकुमार, जो विदर्भदेशाधिपति भीष्मक राजा के पाँच पुत्रों में से तीसरा पुत्र था (भा. १०.५२.२२)।

रुक्मभूषण—विदिशा नगरी का एक राजा, जो ऋतु ध्वज राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम धर्मोद्ग था (धर्मोद्ग देखिये)।

रुक्ममालिन—एक राजकुमार, जो विदर्भदेशाधिपति भीष्मक राजा के पाँच पुत्रों में से पाँचवा पुत्र था (भा. १०.५२.२२)।

रुक्मरथ—एक राजकुमार, जो विदर्भदेशाधिपति भीष्मक राजा के पाँच पुत्रों में से दूसरा पुत्र था (भा. १०.५२.२२)। द्रौपदी स्वयंवर के समय यह उपस्थित था (म. आ. १७७.१३)।

२. मद्रदेशाधिपति शल्य राजा का ज्येष्ठ पुत्र, जो अपने पिता एवं भाई रुक्मांगद के साथ द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१३)।

भारतीययुद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। युद्ध के प्रारंभ में इसका श्वेत से युद्ध हुआ था, जिसके बाणों से यह आहत हुआ था (म. भी. परि. १. क्र. ४. पंक्ति. १०)।

इसका अभिमन्यु से युद्ध हुआ था, जिसमें यह एवं इसके अन्य भाई प्रारे जाने का निर्देश प्राप्त है (म. द्रो. ४४.१३)। किन्तु सहदेव के द्वारा इसका वध होने का निर्देश भी महाभारत में अन्यत्र प्राप्त है (म. क. ४.२७)। इनमें से अभिमन्यु के द्वारा इसका वध होने की संभावना अधिक प्रतीत होती है। सहदेव के द्वारा मारा

गया योद्धा शल्यपुत्र रुक्मरथ न हो कर, शल्य का अन्य पुत्र रुक्मांगद होगा।

३. (सो. द्विमीद.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार महापौरव राजा का पुत्र था।

४. द्रोणाचार्य का नामांतर, जो उसे उसके सुवर्णरथ के कारण प्राप्त हुआ था (म. द्रो. १२.२२)।

५. विगर्तदेशीय राजकुमारों के एक दल का सामूहिक नाम। इसने कर्ण की आज्ञा से अर्जुन पर आक्रमण किया था (म. द्रो. ८७.१९-२५)।

रुक्मवती—विदम्बेशाधिपति भीष्मक राजा की पत्नी, एवं रुक्मिणी की कन्या। अपनी बहन रुक्मिणी के कहने पर रुक्मि ने अपनी इस कन्या का विवाह रुक्मिणी का पुत्र प्रद्युम्न के साथ किया था (भा. १०.६१.२३)।

रुक्मांगद—मद्रराज शल्य का द्वितीय पुत्र, जो अपने पिता एवं ज्येष्ठ बंधु रुक्मरथ के साथ द्रौपदी-स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१३)। भारतीय-युद्ध में यह सहदेव के द्वारा मारा गया (रुक्मरथ २. देखिये)।

२. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो ऋतुध्वज राजा का पुत्र था (नारद. २.१२.२०)। इसकी पत्नी का नाम विंध्यावली, एवं पुत्र का नाम धर्मांगद था।

रुक्मांगद राजा की एकादशीव्रत पर विशेष श्रद्धा थी। ब्रह्मा के मन में इसे उस व्रत से भ्रष्ट करने की इच्छा उत्पन्न हुई, जिस काम के लिए उसने मोहिनी नामक अप्सरा की नियुक्ति की। एक बार यह मंदर पर्वत पर शिकार करने गया था, जहाँ मोहिनी भी उपस्थित हुई। मोहिनी ने अपने नृत्यगायन से इसका मन आकर्षित किया, एवं इसने उससे विवाह की माँग की।

एक बार मोहिनी ने इसे अपने प्रेम की आन दे कर, एकादशीव्रत से इसे परावृत्त करने का प्रयत्न किया। किन्तु इसने मोहिनी की माँग अमान्य कर दी। फिर उसने इसे अपने पुत्र धर्मांगद का सिर तलवार से काटने को कहा। मोहिनी की इस माँग को यह पूरी करने-वाला ही था कि, इतने में श्रीविष्णु ने साक्षात् प्रकट हो कर, इस कृत्य से इसे परावृत्त किया, एवं प्रसन्न हो कर इसे अनेकानेक वर प्रदान किये (नारद. २.३६)।

३. वीरमणि राजा का पुत्र, जिसने राम का अश्व-मेधीय अश्व पकड़ लिया था। तत्पश्चात् हुए युद्ध में ऋतुध्वज पुष्कल ने इसे परास्त कर आहत कर दिया (पद्म. पा. ३९-४१)।

४. एक कुष्ठरोगी राजा, जो कौंडिन्यपूर के भीम राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम चारुहासिनी था। श्रीगणेश के त्रिंतामणि-क्षेत्र में स्नान करने के कारण, यह कुष्ठ रोग से मुक्त हुआ (गणेश १.२७-३५)।

रुक्मिणी—विदम्बाधिपति भीष्मक (हिरण्यरोमन्) राजा की लक्ष्मी के अंश से उत्पन्न कन्या, जो श्रीकृष्ण की पटरानी थी (ह. वं. २.५९.१६)। भीष्मक राजा की कन्या होने के कारण इसे 'मैष्मी,' एवं विदर्भराजकन्या होने के कारण इसे 'वैदर्भी' नामान्तर भी प्राप्त थे (भा. १०.५३.१; ६०.१)। इसके पिता भीष्मक को हिरण्यरोमन् नामान्तर होने के कारण, इसे एवं इसके पाँच बन्धुओं को 'रुक्मि' (सुवर्ण) उपपद से शुरु होने-वाले नाम प्राप्त हुये थे (भीष्मक देखिये)।

श्रीकृष्ण से प्रेम—विवाहयोग्य होने के उपरांत, एक बार, नारद के द्वारा कृष्ण के गुण, रूप तथा सामर्थ्य का वर्णन इसने सुना, जिस कारण कृष्ण के ही साथ विवाह करने का निश्चय इसने किया (भा. १०.५२.३९)।

इसके रूप एवं गुणों को सुन कर कृष्ण के मन में भी इसके प्रति प्रेम की भावना उत्पन्न हुई, तथा उन्होंने इसके साथ विवाह करने की अपनी इच्छा इसके पिता भीष्मक से प्रकट की। परन्तु इसका ज्येष्ठ भ्राता रुक्मि जरासंध का अनुयायी था, एवं कंसवध के समय से कृष्ण से क्रोधित था। अतएव उसने भीष्मक से कहा, 'रुक्मिणी की शादी कृष्ण से न कर के शिशुपाल के साथ कर दो, जो कन्या के लिए अधिक योग्य वर है।' भीष्मक ने अपने पुत्र की इस सूचना का स्वीकार किया, एवं इसका विवाह शिशुपाल से निश्चित किया।

यह वार्ता सुन कर यह अत्यधिक दुःखित हुई, एवं इसने मौका देख कर श्रीकृष्ण को एक पत्र लिखा, जो सुशील नामक एक ब्राह्मण के द्वारा इसने द्वारका भेज दिया। इस पत्र में इसने श्रीकृष्ण के प्रति अपनी प्रणय-भावना स्पष्ट रूप से प्रकट कर, आगे लिखा था, 'हमारे घर ऐसी प्रथा है कि, विवाह के एक दिन पूर्व कन्या नगर के बाहर स्थित अंगिका के दर्शन के लिए जाती है। उस समय गुप्त रूप में आ कर, आप मेरा हरण करें'।

श्रीकृष्ण का भागमन—रुक्मिणी का यह पत्र मिलते ही, कृष्ण सुशील ब्राह्मण के सहित रथ में बैठ कर एक रात्रि में आनर्त देश से कुंडिनपुर पहुँच गये। यह देख कर, एवं परिस्थिति गंभीर जान कर, बलराम भी यादवसेना को ले कर कृष्ण के पीछे निकल पड़ा। बलराम

एवं कृष्ण विदर्भ देश से ऋष तथा कौशिक देश में गये, जहाँ के राजाओं ने उनका काफ़ी सत्कार किया (ह. वं. २.५९) ।

भागवत एवं विष्णु के अनुसार, कृष्ण एवं बलराम शिशुपाल एवं रुक्मिणी के विवाहसमारोह में शामिल होने के त्रहाने कुंडिनपुर आये थे (भा. १०.५३; विष्णु. ५.२६) ।

चेदिराज शिशुपाल एवं रुक्मिणी का विवाह भली प्रकार निर्विघ्न सम्पन्न हो, इसके लिए निम्नलिखित राजा अपनी सेनाओं सहित विद्यमान थे—दंतवक्त्रपुत्र सुवक्त्र, पौंड्रधिपति वासुदेव, वासुदेवपुत्र सुदेव, एकलव्यपुत्र, पांड्य-राजपुत्र, कल्लिराज, वेणुद्वारि, अद्युमान, क्रोध, श्रुतधर्मा, कालिंग, गांधाराधिपति, क्षीशांवीराज आदि । इसके अतिरिक्त भगदत्त, शल, द्यात्व, भूरिश्रवा तथा कुंतिवीर्य आदि राजा भी आये हुए थे ।

रुक्मिणीहरण—विवाह के एक दिन पूर्व, कुलपरंपरा के अनुसार रुक्मिणी शहर के बाहर भवानी के दर्शन करने के लिए गई, तथा वहाँ जाकर कृष्ण को ही पति के रूप में प्राप्त करने की प्रार्थना इसने की। हरिवंश के अनुसार, यह इन्द्र एवं इन्द्राणी के दर्शन के लिए गई थी ।

दर्शन करने के उपरांत, रुक्मिणी बाहर आकर कृष्ण को इधर उधर देखने लगी । तब शत्रुओं को देखते देखते कृष्ण ने इसे अपने रथ में बैठा दिया, एवं शत्रुओं की सेना को पराजित करने का भार अपनी यादवसेना को सौंप कर कृष्ण ने इसका हरण किया । तब बलराम तथा अन्य यादवों ने विपक्षियों को पराजित किया ।

रुक्मी का पराजय—याद में रुक्मिणी के ज्येष्ठ भ्राता रुक्मी, कृष्ण को भली प्रकार दण्डित करने के लिए, नर्मदा तट से पीछा करता हुआ कृष्ण के पास आ पहुँचा । जैसे ही उसने रुक्मिणी तथा कृष्ण को एक दूसरे से निकट बैठा हुआ देखा, वह क्रोध से पागल हो उठा, एवं उसने कृष्ण से युद्ध करना प्रारम्भ कर दिया । भीषण संग्राम के उपरांत कृष्ण ने रुक्मी को पराजित किया । कृष्ण उसका वध करनेवाला ही था, कि इसने अपने भाई का जीवन-दान उससे माँगा । तब कृष्ण ने रुक्मी को विद्रूप कर के छोड़ दिया । भाई को विद्रूप देखकर यह रोने लगी, तब बलराम ने इसे सान्त्वना दी, एवं कृष्ण को उसके इस कृत्य के लिए काफ़ी डाटा ।

अन्त में बड़ी धूमधाम के साथ इसका एवं कृष्ण का विवाह द्वारका में संपन्न हुआ (भा. १०.५४; ८३; ह. वं. २.६०; विष्णु. ५.२६; पद्म. उ. २४७-२४९) ।

प्रासादवर्णन—विश्वकर्मा ने इन्द्र की प्रेरणा से कृष्ण एवं रुक्मिणी के लिए एक मनोहर प्रासाद का निर्माण किया था, जिसका विस्तार एक योजन था । उसके शिखर पर सुवर्ण चढ़ाया था, जिस कारण वह मेरु पर्वत के उत्तुंगशृंग की शोभा धारण करता था (म. स. परि. १. २१. १२४०)

भाग्यश्री किस तरह प्राप्त हो सकती है, इस संबंध में इसका स्वयं भाग्यश्री देवी से संवाद हुआ था, जिस समय श्रीकृष्ण भी उपस्थित था (म. अनु. ३२) । अपने स्वयंवर की कहानी इसने द्रौपदी को सुनाई थी (भा १०.८३) ।

भागवत में इसके द्वारा श्रीकृष्ण से किये गये प्रणय-कल्ह का सुंदर वर्णन प्राप्त है (भा. १०.६०) ।

पुत्रप्राप्ति—विवाह के पश्चात् इसे प्रद्युम्न नामक पुत्र उत्पन्न हुआ । उसके वचन में ही शंकरासुर ने उसका हरण किया, जिस कारण इसने अत्यधिक शोक किया था । प्रद्युम्न साक्षात् मदन का ही अवतार था, जिसे इसके भाई रुक्मिन् ने अपनी कन्या रुक्मवती विवाह में प्रदान की थी ।

अग्निप्रवेश—श्रीकृष्ण की मृत्यु के पश्चात् इसने एवं श्रीकृष्ण की अन्य चार पत्नीओं ने त्रितारोहण किया । ब्रह्म के अनुसार, श्रीकृष्ण की मृत्यु के पश्चात् उसकी आठ पत्नीयों ने अग्निप्रवेश किया, जिसमें यह प्रमुख थी ।

महाभारत में रुक्मिणी के एक आश्रम का निर्देश प्राप्त है, जो उज्जैनक प्रदेश की सीमा में स्थित था । इस स्थान पर इसने क्रोध पर विजय पाने के लिए घोर तपस्या की थी (म. व. १३०.१५) ।

परिवार—रुक्मिणी को श्रीकृष्ण से चाश्मती नामक एक कन्या, एवं निम्नलिखित दस पुत्र उत्पन्न हुये थे— प्रद्युम्न, चारुदेष्ण, सुदेष्ण, चारुदेह, सुचारु, चारुसुप्त, भद्रचारु, चारुचंद्र, विचारु, एवं चारु (भा. १०.६१; ह. वं. २. ६०) ।

महाभारत में इसके पुत्रों के नाम निम्न प्रकार प्राप्त हैं—चारुदेष्ण, सुचारु, चारुवेश, यशोधर, चारुश्रवन्, चारुयशस्, प्रद्युम्न एवं शंभु (म. अनु. १४.३३-३४) ।

रुक्मिन्—विदर्भदेश का एक श्रेष्ठ राजा, जो विदर्भाधिपति भीष्मक (हिरण्यरोमन्) के पाँच पुत्रों में से ज्येष्ठ

पुत्र था। यह एवं इसके पिता यादववंशीय विदर्भ राजा के वंश में उत्पन्न हुये थे, एवं स्वयं को भोजवंशीय कहलाते थे। महाभारत में इसे दन्तवक्र एवं क्रोधवश नामक असुरों के वंश से उत्पन्न हुआ कहा गया है (म. आ. ६१.५७)।

यह अत्यंत पराक्रमी था। इसने गंधमादननिवासी द्रुप ऋषि का शिष्य हो कर, चारों पादों से युक्त संपूर्ण धनुर्वेद की विद्या प्राप्त की थी। द्रुप ऋषि ने इसे इंद्र का विजय नामक एक धनुष भी प्रदान किया था, जो गांडीव, शाङ्खा आदि धनुष्यों के समान तेजस्वी था (म. उ. १५.५. ३-१०)। परशुराम ने इसे ब्रह्मास्त्र प्रदान किया था।

श्रीकृष्ण से पराजय—इसके मन के विरुद्ध, इसकी गहन रुक्मिणी का श्रीकृष्ण ने हरण किया। उस समय, क्रुद्ध हो कर अपने पिता के सामने इसने प्रतिज्ञा की, 'मैं कृष्ण का वध कर रुक्मिणी को वापस लाऊँगा, अन्यथा लौट कर कुण्डिनपुर कभी न आऊँगा'।

तत्पश्चात् अपनी एक अश्वौहिणी सेना के साथ, इसने श्रीकृष्ण पर हमला किया। इस युद्ध में श्रीकृष्ण ने इसे परास्त कर इसे विरूप कर दिया (भा. १०.५२-५४; रुक्मिणी देखिये)। तत्पश्चात् अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार, यह कुण्डिनपुर वापस न गया, एवं जिस स्थान पर कृष्ण ने इसे परास्त किया था, वहीं भोजकट नामक नई नगरी बसा कर यह रहने लगा। इसी कारण उत्तरकालीन साहित्य में इसे भोजकट नगर का राजा कहा गया है (म. उ. १५.२; व. २५.२.११)।

सहदेव के दक्षिणदिग्विजय के समय, इसने एवं इसके पिता भीष्मक ने उसके साथ दो दिनों तक युद्ध किया था, एवं तत्पश्चात् उसके साथ संधि किया था (म. स. २८.४०-४१)। दुर्योधन की ओर से दक्षिणदिग्विजय के लिए निकले हुए कर्ण के युद्धकौशल्य से प्रसन्न हो कर, इसने उसे भेंट एवं कर प्रदान किये थे (म. व. परि. १. क्र. २४. पंक्ति. ५१-५४)।

भारतीय युद्ध में—भारतीय युद्ध के प्रारंभ में, बड़े अभिमान से एक अश्वौहिणी सेना ले कर यह भोजकट से निकला, एवं कृष्ण को प्रसन्न करने के हेतु से पाण्डवों के पास गया। वहाँ इसने अर्जुन से बड़ी उद्वेगता से कहा, 'यदि पाण्डव मेरी सहाय्यता की याचना करेंगे, तो मैं उनकी सहाय्यता करने के लिए तैयार हूँ'। अर्जुन के द्वारा इन्कार किये जाने पर, यह दुर्योधन के पास गया, जहाँ इसने अपना उपर्युक्त कहना दोहराया (युधिष्ठिर

देखिये)। किन्तु अभिमानी दुर्योधन ने भी इसकी सहाय्यता ठुकरा दी। तब अपमानित हो कर यह अपने नगर में लौट आया (म. व. ११५)।

परिवार—इसे रुक्मवती अथवा शुभंगी नामक एक कन्या थी, जिसका विवाह रुक्मिणीपुत्र प्रद्युम्न से हुआ था। इसकी रोचना नामक पौत्री का विवाह कृष्ण के पौत्र अशिरुद्ध से हुआ था। रोचना के विवाह के समय इसने अलराम के साथ कपटता के साथ दूत खेला था, एवं उसकी निंदा की थी, तब क्रोधित हो कर अलराम ने स्वर्ण के पाँतों से इसका वध किया (ह. वं. २.६१.५; २७-४६; मा. १०.६१)।

रुक्मेषु—(सो. क्रोष्ट्र.) एक यादव राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार रुक्मकवच राजा का पुत्र था। भागवत में इसे रुक्म राजा का, तथा विष्णु एवं पद्म में इसे परावृत् राजा का पुत्र कहा गया है।

अपने भाई पृथुरुक्म की सहाय्यता से, इसने यादव राजा ज्यामघ को अपने राज्य से भगा दिया। तत्पश्चात् ज्यामघ ने शुक्तिमती नामक नगरी में नया राज्य स्थापित किया (ब्रह्म. १४.१०-१६; ज्यामघ देखिये)।

रुक्ष—पूरुवंशीय उरुक्षय राजा का नामान्तर।

रुच—(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सुनीय राजा का पुत्र था। इसे रुच नामान्तर भी प्राप्त था। इसके पुत्र का नाम वृचक्षु (त्रिचक्षु) था।

रुचक—(सो. क्रोष्ट्र.) एक यादव राजा, जो भागवत के अनुसार उशनस् राजा का पुत्र था।

२. (सू. ह.) इक्ष्वाकुवंशीय भरुक राजा का नामान्तर।

३. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

रुचि—एक प्रजापति, जो ब्रह्मा के मन से उत्पन्न हुआ था। इसकी पत्नी का नाम आकृति था, जो स्वायंभुव मनु की कन्या थी। आकृति से इसे यक्ष एवं दक्षिणा नामक जुड़वे संतान (मिथुन) उत्पन्न हुये। पुत्रिकाधर्म की शर्त के अनुसार, इसने उन दोनों पुत्रों को मनु को वापस दे दिया (भा. ३.१२.५६; ४.१.२; पद्म. सू. ३; ब्रह्मांड. १. १. ५८)।

२. एक प्रजापति। यह पहले ब्रह्माचारी था, किन्तु पितरों के कहने पर इसने मालिनी नामक अप्सरा से विवाह किया, जो वरुणपुत्र पुष्कर एवं प्रमलोचा नामक अप्सरा की कन्या थी (गरुड. १.८९-९०; मार्क. ९२)।

३. एक अप्सरा, जिसने अलकपुरी में अष्टावक्र के स्वामतसमारोह में नृत्य किया था (म. अनु. १९.४४)।

४. देवशर्मन् नामक ऋषि की पत्नी, जिस पर इन्द्र मोहित हुआ था (म. अनु. ४०.१७-१८)। एक बार इसकी रक्षा का भार अपने शिष्य विपुल पर सौंप कर, देवशर्मन् यज्ञ के लिए बाहर गया। तत्पश्चात् कामासक्त इन्द्र इसके पास आया, एवं भोग की याचना करने लगा। फिर विपुल ने इन्द्र का प्रतिकार किया एवं इसके सतीत्व की रक्षा की।

इसकी बहन का नाम प्रभावती था, जो अंगराज चित्ररथ की पत्नी थी। प्रभावती के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, इसने उसे एक दिव्य पुष्प प्रदान किया था (म. अनु. ४२; प्रभावती ४. देखिये)। अंत में अपने पति के साथ यह स्वर्गलोक गयी (म. अनु. ४३.१७)।

५. नहुष राजा की कन्या, जो आप्रवान् ऋषि की पत्नी थी।

रुचिपर्वन्—दुर्योधनराक्षीय एक राजा, जो कृति राजा का पुत्र था। भारतीय युद्ध में सुपर्वन् राजा ने इसका वध किया (म. द्रो. २५.४५)।

रुचिप्रभ—एक राक्षस, जो प्राचीन काल में पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२०.५२)। पाठभेद—‘रुचि-प्रभु’।

रुचिर—(सो. कुरु.) कुसुवंशीय राषिक राजा का नामान्तर। मत्स्य में इसे जयस्तेन राजा का पुत्र कहा गया है।

रुचिराधि—पुरुवरुसुवंशीय गुरु राजा का नामान्तर (सुक. २. देखिये)। विष्णु में इसे संकृति राजा का पुत्र कहा गया है।

रुचिराश्व—(सो. अज.) एक राजा, जो सेनजित् राजा का पुत्र था।

रुचिरोमा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.७)। पाठभेद—‘कद्रुवा’।

रुचिक—गुहवासिन् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

रुचिप्रत्—(सो. कुरु. भविष्य.) कुसुवंशीय वृष्णिमन् राजा का नामान्तर। वायु में इसे सुचिद्रथ राजा का पुत्र कहा गया है।

रुद्र—वैवस्वत मन्वन्तर का एक देवगण।

रुद्र-शिव—एक देवता, जो सृष्टिसंहार का मूर्तिमान् प्रतीक माना जाता है। प्राचीन भारतीय साहित्य में

निर्देशित त्रिमूर्ति की कल्पना के अनुसार, ब्रह्मा को सृष्टि उत्पत्ति का, विष्णु को सृष्टिसंचालन (स्थिति) का, एवं शिव को सृष्टिसंहार का देवता माना गया है।

भयभीत करनेवाले अनेक नैसर्गिक प्रकोप एवं रोग-व्याधि आदि के साथ मनुष्यजाति को दैनंदिन जीवन में सामना करना पड़ता है। वृक्षों को उखाड़ देनेवाले भ्रंशा-वात, मनुष्यों एवं पशुओं को विद्युत् एवं उल्कापात से नष्ट कर देनेवाले निसर्गप्रकोप, एवं समस्त पृथ्वी में संहारसत्र शुरू करनेवाले रोग एवं व्याधियों आदि की, मनुष्यजाति प्रागैतिहासिक काल से ही शिकार बन चुकी है। इसी नैसर्गिक एवं व्याधिजनित प्रकोपों का प्रतीकरूप मान कर रुद्रदेवता की उत्पत्ति वैदिक आर्यों के मन में हुई, जिस तरह उन्हें प्रातःकाल में ‘उषस्’ देवता का. एवं उदित होनेवाले सूर्य में ‘मित्र’ देवता का सञ्ज्ञाकार हुआ था।

वैदिक साहित्य में नैसर्गिक एवं व्याधिजनित उदरगत निर्माण करनेवाले देवता को रुद्र कहा गया है, एवं उसी उल्काओं का शमन करनेवाले देवता को शिव कहा गया है। इस प्रकार रुद्र एवं शिव एक ही देवता के रौद्र एवं शांत रूप हैं।

सृष्टि का प्रचंड विस्तार एवं सुविधाएँ निर्माण करनेवाले परमेश्वर के प्रति मनुष्यजाति को जो आदर, कृतज्ञता एवं प्रेम प्रतीत हुआ, उसीका ही मूर्तिमान् रूप भगवान् विष्णु है, एवं उसी सृष्टि का विनाश करनेवाले प्रलयकारी देवता के प्रति जो भीति प्रतीत होती है, उसीका मूर्तिमान् रूप रुद्र है। पार्श्वस्थ देवताविज्ञान में सृष्टिसंचालक एवं सृष्टिसंहारक देवता प्रायः एक ही मान कर, इन द्विविध रूपों में उसकी पूजा की जाती है। किन्तु भारतीय देवताविज्ञान में सृष्टि की इन दो आदि-शक्तियों को विभिन्न माना गया है, जिनमें से सृष्टि संचालक शक्ति को विष्णु-नारायण-वासुदेव-कृष्ण कहा गया है, एवं सृष्टिसंहारक शक्ति को रुद्र कहा गया है।

इस तरह ऋग्वेद से ले कर गृह्यसूत्रों तक के ग्रंथों में रुद्रदेवताविषयक कल्पनाओं की उद्वृत्ति अब हम देखते हैं, तब ऐसा प्रतीत होता है कि, ऋग्वेद आदि ग्रंथों में रुद्र निसर्गप्रकोप का एक सामान्य देवता था। वही रुद्र उत्तरकालीन ग्रंथों में पशु, ज्वाल, पर्वत, नदी, स्थान आदि सारा सृष्टि को व्यापनेवाला एक महाबलशाली देवता मानने जाने लगा, एवं थह विष्णु के समान ही सृष्टि का एक श्रेष्ठ देवता बन गया।

स्वरूप-वर्णन—ऋग्वेद में इसका स्वरूप वर्णन प्राप्त है, जहाँ इसका वर्ण भूरा (बधु), एवं रूप अतितेजस्वी बताया गया है (ऋ. २.३३)। यह सूर्य के समान आञ्जल्य, एवं सुवर्ण की भाँति प्रदीप्त है (ऋ. १.४३)। पूषन् देवता की भाँति यह जटाधारी है। ऋद की संहिताओं में इसे सहस्रनेत्र, एवं नीलवर्णीय ग्रीवा एवं केशवाला बताया गया है (वा. सं. १६.७; अ. वे. २.२७)। इसका पेट कृष्णवर्णीय एवं पीठ रक्तवर्णीय है (अ. वे. १५.१)। यह चर्मधारी है (वा. सं. १६.२-४; ५.१)।

महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त रुद्र का स्वरूपवर्णन कल्पनात्मक प्रतीत होता है। इस वर्णन के अनुसार, इसके कुल पाँच मुख थे, जिनमें से पूर्व, उत्तर, पश्चिम एवं उर्ध्व दिशाओं की ओर देखनेवाले मुख सौम्य, एवं केवल दक्षिण दिशा की ओर देखनेवाला मुख रौद्र था (म. अनु. १४०.४६)। इन्द्र के वज्र का प्रहार इसकी ग्रीवा पर होने के कारण, इसका कंठ नीला हो गया था (म. अनु. १४१.८)। महाभारत में अन्यत्र, समुद्र-मंथन से निकला हुआ हलाहल विष प्राशन करने के कारण, इसके नीलकंठ वर्णन का निर्देश प्राप्त है, जहाँ इसे 'श्रीकंठ' भी कहा गया है (म. शां. ३४२.१३)।

पुराणों में भी इसका स्वरूपवर्णन प्राप्त है, जहाँ इसे सहस्रमुख (विष्णुधर्म. ३.४४-४८; ५५.१); अर्धनारी-नटेश्वर (मत्स्य. २६०); एवं तीन नेत्रोंवाला कहा गया है।

निवासस्थान—वैदिक ग्रंथों में इसे पर्वतों में एवं मूजवत् नामक पर्वत में रहनेवाला बताया गया है (वा. सं. १६.२-४; ३.६१)।

इसका आद्य निवासस्थान मेरुपर्वत था, जिस कारण इसे 'मेरुधामा' नामान्तर प्राप्त था (म. अनु. १७.११)। विष्णु के अनुसार, हिमालय पर्वत एवं मेरु एक ही हैं (विष्णु. २.२)। कृष्ण द्वैपायन व्यास ने एवं कुबेर ने मेरुपर्वत पर ही इस की उपासना की थी।

महाभारत में अन्यत्र, इसका निवासस्थान मुंजवान् अथवा मूजवत् पर्वत बताया गया है, जौ कैलास के उत्तर-पार था (म. आश्र. ८.१; सौ. १७.२६, वायु. ४७.१९)। कैलास एवं हिमालय पर्वत भी इसका निवासस्थान बताया गया है (म. भी. ७.३१; ब्रह्म. २९.२२)।

इसका अत्यंत प्रिय निवासस्थान काशी में स्थित सशान था (म. अनु. १४१.१७-१९, नीलकंठ टीका)

इसी कारण शिव के भक्तों में काशी अत्यंत पवित्र एवं मुमुक्षुओं का वसतिस्थान माना गया है (मैत्रेय देखिये) संवत् को शबरूप में शिवदर्शन का लाभ काशीक्षेत्र में ही हुआ था।

तपस्यास्थान—हिमवत् पर्वत के मुंजवत् शिखर पर शिव का तपस्यास्थान है। वहाँ वृक्षों के नीचे, पर्वतों के शिखरों पर, एवं गुफाओं में यह अदृश्यरूप से उमा के साथ तपस्या करता है। इसकी उपासना करनेवाले, देव-गंधर्व, अप्सरा, देवर्षि, यातुधान, राक्षस एवं कुबेरादि अनुचर विकृत रूप में वहीं रहते हैं, जो रुद्रगण नाम से प्रसिद्ध हैं। शिव एवं इसके उपासक अदृश्य रूप में रहते हैं, जिस कारण वे चर्मचक्षु से दिखाई नहीं देते (म. आश्र. ८.१-१२)।

वाहन एवं ध्वज—द्रक्षप्रजापति ने शिव को नदिकेश्वर नामक वृषभ प्रदान किया, जिसे अपने अपना ध्वज एवं वाहन बनाया। इसी कारण शिव को 'वृषभध्वज' नाम प्राप्त हुआ (म. अनु. ७७.२७-२८; शैलद्र देखिये)।

आयुध—इसका प्रमुख अस्त्र विद्युत्-गर (विद्युत्) है, जो इसके द्वारा आकाश से फेंके जाने पर, पृथ्वी को विदीर्ण करता है (ऋ. ७.४६)। इसके धनुषबाण एवं वज्र आदि शस्त्रों का भी निर्देश प्राप्त है (ऋ. २.३३.३; १०; ५.४२.११; १०.१२६.६)।

ऋग्वेद में प्राप्त रुद्र के इस स्वरूप एवं अस्त्रवर्णन में आकाश से पृथ्वी पर आनेवाली प्रलयकर विद्युत् अभिप्रेत होती है।

पराक्रम—ऋग्वेद में इसे भयंकर एवं हिंसक पशु की भाँति विनाशक कहा गया है (ऋ. २.३३)। अपने प्रभावी शस्त्रों से यह गायों एवं मनुष्यों का वध करता है (ऋ. १.११४.१०)। यह अत्यंत क्रोधी है, एवं क्रुद्ध होने पर समस्त मानवजाति को विनष्ट कर देता है। इसी कारण, इसकी प्रार्थना की गयी है कि, यह क्रोध में आ कर अपने स्तोताओं एवं उनके पितरों, संतानों, संबंधियों, एवं अश्वों का वध न करे (ऋ. १.११४)।

अपने पुत्र एवं परिवार के लोगों को रोगविमुक्त करने के लिए भी इसकी प्रार्थना की गयी है (ऋ. ७.४६.२)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसे 'जलाप' (व्याधियों का उपशमन करनेवाला) एवं 'जलापभेषज' (उपशामक औषधियों से युक्त) कहा गया है (ऋ. १.४.३-४)। यह चिकित्सकों में भी श्रेष्ठ चिकित्सक है (ऋ. २.३३

४), एवं इसके पास हज़ारों औपविधायी हैं (ऋ. ७.४६. ३)।

यह जानवों की भाँति केवल क्रूरकर्मा ही नहीं, बल्कि प्रसन्न होने पर मानवजाति का कल्याण करनेवाला, एवं पशुओं का रक्षण करनेवाला होता है। इसी कारण, ऋग्वेद में इसे शिव (ऋ. १०.९२.९), एवं पशुप (ऋ. १.११४.९)। कहा गया है।

तैत्तिरीय संहिता में—यजुर्वेद के शतरुद्रीय नामक अध्याय में रुद्र का स्वभावचित्रण अधिक स्पष्ट रूप से प्राप्त है (तै. सं. ४.५.१; वा. सं. १६)। वहाँ इसका 'रुद्र स्वरूप' (रुद्रतनुः), एवं 'शिव स्वरूप' (शिवतनुः) का विभेद स्पष्ट रूप से बताते हुए कहा गया है :—

या ते रुद्र शिवा तनु शिवा विश्वस्य भेषजी ।

शिवा रुद्रस्य भेषजी तथा नो मृड जीवसे ॥

(तै. सं. रुद्राध्याय २)।

(रुद्र के घोरा एवं शिव नामक दो रूप हैं, जिनमें से पहला रूप दुःखनिवृत्ति एवं मृत्युपरिहार करनेवाला, एवं धन, पुत्र, स्वर्ग आदि प्रदान करनेवाला है; एवं दूसरा रूप आत्मज्ञान एवं मोक्ष प्रदान करनेवाला है)।

यजुर्वेद संहिता में मेघ से समीकृत कर के रुद्र का वर्णन किया गया है। इसे गिरीश एवं गिरित्र (पर्वतों में रहनेवाला) कहा गया है, एवं इसे जंगलों का, एवं वहाँ रहनेवाले पशुओं, जोर, डाकू एवं अन्यजों का अभि-नियन्ता कहा गया है। यजुर्वेद में अग्नि को रुद्र कहा गया है, एवं उसे मलयज विशेषण भी प्रयुक्त किया गया है (तै. सं. ३.२.४; तै. ब्रा. ३.२.८.३)। रुद्र के द्वारा दक्षयज्ञ के विश्वंस की जो कथा पुराणों में प्राप्त है, उसीका संकेत यहाँ किया होगा।

यजुर्वेद में इसे कर्पाईन् (जटा धारण करनेवाला), शर्व (धनुषबाण धारण करनेवाला), भव (चर एवं अचर सृष्टि को व्यापनेवाला), शंभु (सृष्टिकल्याण करनेवाला), शिव (पवित्र), एवं वृत्तिवसनः (पशुचर्म धारण करने-वाला) कहा गया है (वा. सं. ३.६१; १६.५१)।

इसके द्वारा असुरों के तीन नगरों के विनाश का निर्देश भी प्राप्त है (तै. सं. ६.४.३)।

यजुर्वेद में रुद्र-गणों का निर्देश प्राप्त है, एवं इस गण के लोग जंगल में रहनेवाले निपाद आदि वन्य जमातियों के 'गणपति' होने का निर्देश भी प्राप्त है। रुद्र वन्य

जमातियों का राजा अथवा प्रमुख होने का निर्देश सर्वप्रथम यजुर्वेद संहिता में ही प्राप्त होता है।

इस तरह जंगलों का देवता माना गया रुद्र, जंगलों में रहनेवाले लोगों का भी देव बन गया, जो संभवतः वैदिक रुद्र देवता का एवं अनाय लोगों के रुद्रसदृश देवता के सम्मिलन की ओर संकेत करता है।

अथर्ववेद में—इस वेद में रुद्र के कुल सात नाम प्राप्त हैं, किन्तु उन्हें एक नहीं, बल्कि सात स्वतंत्र देवता माना गया है। जिस तरह सूर्य के सवितृ, सूर्य, मित्र, पूषन् आदि नामान्तर प्राप्त हैं, उसी प्रकार अथर्ववेद में प्राप्त रुद्रसदृश देवता, एक ही रुद्र के विविध रूप प्रतीत होते हैं, जिनके नाम निम्न प्रकार हैं:—

१. ईशान,—जो समस्त मध्यमलोक का सर्वश्रेष्ठ अधिपति है।

२. भव,—जो मध्यमलोक के पूर्वविभाग का राजा, वात्य लोगों का संरक्षक एवं उत्तम धनुषधर है। यह एवं शर्व पृथ्वी के दृष्ट लोगों पर विद्युत्कामी बाण छोड़ते हैं। इसे सहस्र नेत्र हैं, जिनकी सहायता से यह पृथ्वी की हरेक वस्तु देख सकता है (अ. वे. ११.२.२५)। यह आकाश, पृथ्वी एवं अंतरिक्ष का स्वामी है (अ. वे. ११.२.२७)। भव, शर्व एवं रुद्र के बाण कल्याणप्रद (सदाशिव) होने के लिये, इनकी प्रार्थना की गयी है (अ. वे. ११.६.९)।

३. शर्व,—जो उत्तम धनुषधर एवं मध्यमलोक के दक्षिण विभाग का अधिपति है। इसे एवं भव को 'भूतपति' एवं 'पशुपति' कहा गया है (अ. वे. ११.२.१)।

४. पशुपति,—जो मध्यमलोक के पश्चिम विभाग का अधिपति है। इसे अश्व, मनुष्य, वक्रा, मंटक एवं गायों का स्वामी कहा गया है (अ. वे. ११.२.९)।

५. उग्र,—यह एक अत्यंत भयंकर देवता है, जो मध्यमलोक के उत्तर विभाग का अधिपति कहा गया है। यह आकाश, पृथ्वी एवं अंतरिक्ष के सारे जीवित लोगों का स्वामी है (अ. वे. ११.२.१०)।

६. रुद्र,—जो कनिष्ठ लोक का स्वामी है; एवं रोग-व्याधि, विषप्रयोग एवं आग फैलाने की अप्रतिहत शक्ति इसमें है। अग्नि, जल, एवं वनस्पतियों में इसका वास है, एवं पृथ्वी के साथ चंद्र एवं ग्रहमंडल का नियमन भी यह करता है (अ. वे. १३.४.२८)। इसी कारण, इसे 'ईशान' (राजा) कहा गया है।

७. महादेव,—जो उच्चलोक का अधिपति है।

ब्रह्मणं ग्रंथों में—इन ग्रंथों में रुद्र को उषस् का पुत्र कहा गया है, एवं जन्म के पश्चात् इसे प्रजापति के द्वारा आठ विभिन्न नाम प्राप्त होने का निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. ६.१.३.७; कौ. ब्रा. ६.१.९)। इनमें से सात नाम पशुवेद की नामावलि से मिलते जुलते हैं, एवं आठवाँ नाम 'अशनि' (उल्कापात) बताया गया है। किन्तु इन ग्रंथों में ये आठ ही नाम एक रुद्र देवता के ही विभिन्न रूप दिये गये हैं। इनमें से, रुद्र, शर्व, उग्र एवं अशनि रुद्र के जगत्संहारक रूप के प्रतीक हैं, एवं भव, पशुपति, महादेव एवं ईशान आदि बाकी चार नाम इसके शान्त एवं जगत्प्रतिपालक रूप के श्रोतक हैं। इस तरह ऋग्वेद काल में पृथ्वी को भयभीत करनेवाले जगत्संहारक-रुद्रदेवता को, ब्रह्मण ग्रंथों के काल में जगत्संहारक एवं जगत्प्रतिपालक ऐसे द्विविध रूप प्राप्त हुये।

ब्रह्मण ग्रंथों में रुद्र के उत्पत्ति की एक कथा भी दी गई है। प्रजापति के द्वारा दुहितृगमन किये जाने पर उसे सजा देने के लिए रुद्र की उत्पत्ति हुई। पश्चात् रुद्र ने पशुपति का रूप धारण कर मृगरूप से भागनेवाले प्रजापति का वध किया। प्रजापति एवं उसका वध करनेवाला रुद्र आज भी आकाश में मृग एवं मृगव्याध नक्षत्र के रूप में दिखाई देते हैं (ऐ. ब्रा. ३.३३; श. ब्रा. १.७.४.१-३; ब्रह्म. ६०९)।

उपनिषदों में—रुद्र-शिव से संबंधित सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपनिषद् 'श्वेताश्वतर उपनिषद्' है, जिसमें रुद्र-शिव को सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ देवता कहा गया है।

अनादि अनंत परमेश्वर का स्वरूप क्या है, एवं आत्म-ज्ञान से उसकी प्राप्ति कैसे हो सकती है, इसकी चर्चा अन्य उपनिषदों के माँति इस उपनिषद् में भी की गयी है। किन्तु यहाँ प्रथम ही जगत्संचालक ब्रह्मन् का स्थान जीवित व्यक्ति का रंग एवं रूप धारण करनेवाले रुद्र-शिव के द्वारा लिया गया है। इस उपनिषद् में रुद्र, शिव, ईशान एवं महेश्वर को सृष्टि का अधिष्ठात्री देवता (देव) कहा गया है, एवं इसकी उपासना से एवं ज्ञान से ब्रह्मज्ञान प्राप्त होता है, ऐसा कहा गया है। इस उपनिषद् के अनुसार, सृष्टि का नियामक एवं संहारक देवता केवल रुद्र ही है (श्वे. उ. ३.२), जो गृह, सर्वव्यापी एवं सर्वशासक है (श्वे. उ. ५.३), एवं केवल उसीके ज्ञान से ही मोक्षप्राप्ति हो सकती है (श्वे. उ. ४.१६)। इस ग्रंथ में विश्वमाया का नाम प्रकृति दिया गया है, एवं उस माया का शास्ता रुद्र बताया गया है (श्वे. उ. ४.१०)।

श्वेताश्वतर उपनिषद् शैवपंथीय नहीं, बल्कि आत्मज्ञान का एवं ईश्वरप्राप्ति का पंथनिरपेक्ष मार्ग बतानेवाला एक सर्वश्रेष्ठ प्राचीन उपनिषद् माना जाता है, एवं इसी कारण शंकराचार्य, रामानुज आदि विभिन्न पंथ के आचार्यों ने इसके उद्धरण लिये हैं।

यह उपनिषद् ग्रंथ भक्तिसंप्रदाय एवं रुद्र-शिव की उपासना का आद्य ग्रंथ माना जाता है, एवं इसका काल भगवद्गीता के पूर्वकालीन है, जिसे वासुदेव कृष्ण की उपासना का आद्य ग्रंथ माना जाता है। इससे प्रतीत होता है कि, भगवद्गीता तक के काल में भारतवर्ष में रुद्र-शिव ही एकमेव उपास्य देवता थी, जिसके स्थान पर भगवद्गीता के पश्चात्, रुद्र एवं वासुदेव कृष्ण इन दोनों देवताओं की उपासना प्रारंभ हुयी।

केन उपनिषद् में—रुद्र-शिव की पत्नी उमा (हैमवती) का सर्वप्रथम निर्देश इस उपनिषद् में प्राप्त है, जहाँ उसे स्पष्ट रूप से शिव की पत्नी नहीं, बल्कि साथी कहा गया है। इंद्र, वायु, अग्नि आदि वैदिक देवताओं की शक्ति, जिस समय काफी कम हो चुकी थी एवं रुद्र-शिव ही एक देवता पृथ्वी पर रहा था, उस समय की एक कथा इस उपनिषद् में दी गयी है:—एक बार देवों के सारे शत्रु को ब्रह्मन् ने पराजित किया, किन्तु इस विजयप्राप्ति का सारा श्रेय इंद्र, अग्नि आदि देवता लेने लगे। उस समय रुद्र-शिव देवों के पास आया। देवों का गर्वपरिहार करने के लिए इसने अग्नि, वायु एवं इंद्र के सम्मुख एक घोस का तिनका रखा, एवं उन्हें क्रमशः उसे जलाने, भगाने एवं उठाने के लिए कहा। इस कार्य में तीनों वैदिक देव असफल होने के पश्चात्, हैमवती उमा ने ब्रह्मस्वरूप रुद्र-शिव का माहात्म्य उन्हें समझाया।

'शिव अथर्वशिरस् उपनिषद्' में भी रुद्र की महत्ता का वर्णन प्राप्त है। किन्तु यहाँ रुद्र-शिव के संबंधी तार्किक जानकारी कम है, एवं शिवोपासना के संबंधी जानकारी अधिक है, जिस कारण यह उपनिषद् काफी उत्तकालीन प्रतीत होता है।

गृह्यसूत्रों में—इन ग्रंथों में गायों का रोग टालने के लिए शूलगव नामक यज्ञ की जानकारी दी गयी है, जहाँ वैल के 'वपा' की आहुति रुद्र के निम्नलिखित बारह नामों का उच्चारण के साथ करने को कहा गया है:—रुद्र; शर्व; उग्र; भव; पशुपति; महादेव; ईशान; हर; मृड; शिव; भीम एवं शंकर। इनमें से पहले तीन

जगत्संहारक रुद्र के, दूसरे चार नाम जगत्प्रतिपालक रुद्र के, एवं अंतिम पाँच नाम नये प्रतीत होते हैं।

पारस्कर सूत्र एवं हिरण्यकेशी सूत्रग्रंथों में ब्रह्मवय यज्ञ की प्रक्रिया दी गयी है। किन्तु वहाँ रुद्र के बदले इंद्राणी, रुद्राणी, शवांगी, भवानी आदि रुद्रपत्नियों के लिए आहुति देने को कहा है, एवं 'भवस्य देवस्य पत्न्यै स्वाहा' इस तरह के मंत्र भी दिये गये हैं (पा. गृ. ३. ८; हि. गृ. २.३.८)।

इन्हीं ग्रंथों में पर्वत, नदी, जंगल, तमशान आदि से प्रवास करते समय, रुद्र की उपासना किस तरह करनी चाहिये, इसका भी विवरण दिया गया है (पा. गृ. १५; हि. गृ. ५.१६)।

महाभारत में—इस ग्रंथ में रुद्र का निर्देश शिव एवं महादेव नाम से किया गया है। वहाँ इसकी पत्नी के नाम उमा, पार्वती, दुर्गा, काली, कराली आदि बताये गये हैं, एवं इसके पार्षदों को 'शिवरक्षण' कहा गया है।

मुंजवत् पर्वत पर तपस्या करनेवाले शिव को योगी अवस्था कैसे प्राप्त हुई इसकी कथा महाभारत में प्राप्त है। सृष्टि के प्रारंभ के काल में, ब्रह्मा की आज्ञा से शिव प्रजा-उत्पत्ति का कार्य करता था। आगे चल कर, ब्रह्मा के द्वारा इस कार्य समाप्त करने की आज्ञा प्राप्त होने पर, शिव पानी में जा कर छिप गया। पश्चात् ब्रह्मा ने दूसरे एक प्रजापति का निर्माण किया, जो सृष्टि उत्पत्ति का कार्य आगे चलाता रहा। कालोत्तरान्त शिव पानी से बाहर आया, एवं अपने अनुपस्थिति में भी प्रजा-उत्पत्ति का कार्य अच्छी तरह से चल रहा है, यह देख कर इसने अपना लिम्ब काट दिया, एवं यह स्वयं मुंजवत् पर्वत पर तपस्या करने के लिये चला गया।

इसी प्रकार की कथा वायुपुराण में भी प्राप्त है। ब्रह्मन् के द्वारा नील लोहित (महादेव) को प्रजाउत्पत्ति की आज्ञा दिये जाने पर, उसने मन ही मन अपनी पत्नी सती का स्मरण किया, एवं हज्जारों विरूप एवं भयानक प्राणियों (रुद्रसृष्टि) का निर्माण किया, जो रंगरूप में इसी के ही समान थे। इस कारण ब्रह्मा ने इसे इस कार्य से रोक दिया। तदोत्तरान्त यह प्रजा-उत्पत्ति का कार्य समाप्त कर 'पाशुपत योग' का आचरण करता हुआ मुंज पर्वत पर रहने लगा (वायु. १०; विष्णु. १.७-८; ब्रह्मांड. २.९.७९)।

उपासक-गण—महाभारत में निम्नलिखित लोगों के द्वारा शिव की उपासना करने का निर्देश प्राप्त है:—

१. अर्जुन, जिसने पाशुपतास्त्र की प्राप्ति के लिए शिव की शोवार उपासना की थी (म. भी ३८-४०; द्रो. ८०-८१); २. अश्वत्थामन्, जिसके शरीर में प्रविष्ट हो कर शिव ने पाण्डवों के रात्रिसंहार में मदद की थी (म. सौ. ७); ३. श्रीकृष्ण, जिसने अपनी पत्नी जांबवंती को तेजस्वी पुत्र प्राप्त होने के लिए तपस्या की थी, एवं जिसे शिव एवं उमा ने कुल चौबीस वर प्रदान किये थे (म. अनु. १४); ४. उपमन्यु, जिसने कड़ी तपस्या कर शिव से इच्छित वर प्राप्त किये थे; ५. शाकल्य, जिसने शिव-प्रसाद से ऋग्वेद संहिता एवं पद्माठ की रचना में हिस्सा लिया था (म. अनु. १४)।

इनके अतिरिक्त, शिव के उपासकों में अनेकानेक ऋषि, राजा, दैत्य, अप्सरा, राजकन्या, सर्प आदि शामिल थे, जिनकी नामावलि निम्नप्रकार है:— १. ऋषि—दुर्वासम्, परशुराम, मंजुक; २. राजा—राम शशरथि, जयद्रथ, द्रुपद, मणिपुरनरेश प्रमंजन, धैतकि; ३. दैत्य—अंधक, अंधकपुत्र आदि, जालंधर, त्रिपुर, नाण, भस्मासुर, रावण, रक्तवीज, वृक, हिरण्याक्ष; ४. अप्सरा—तिलोत्तमा; ५. राजकन्या—अंबा, गांधारी; ६. सर्व—मणि।

इतमं से दैत्य एवं असुरों के द्वारा शिव की उदारता एवं भोलापन का अनेकवार गौर फायदा लिया गया, जो त्रिपुर, भस्मासुर, रक्तवीज, रावण आदि के चरित्र से विदित है।

अष्ट-रुद्र—पुराणों में अष्टरुद्रों की नामावलि दी गयी है, जो शतपथ ब्राह्मण की नामावलि से मिलती जुलती है। इन ग्रंथों के अनुसार, ब्रह्मा से जन्म प्राप्त होने पर यह रोदन करते हुए इधर उधर भटकने लगा। पश्चात् इसके द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, ब्रह्मा ने इसे आठ विभिन्न नाम, पत्नियों एवं निवासस्थान आदि प्रदान किये।

प्रमुख पुराणों में से, विष्णु, मार्कंडेय, वायु एवं स्कंद में अष्टमूर्ति महादेव की नामावलि प्राप्त है (विष्णु. १. ८; मार्क. ४९; पद्म. सू. ३; वायु. २७; स्कंद. ७.१. ८७)। इन पुराणों में प्राप्त रुद्र की पत्नियों, संतान, निवासस्थान आदि की तालिका निम्नप्रकार है:—

रुद्र का नाम	पत्नी	संतान	निवासस्थान
रुद्र	सुवर्चला अथवा सती	शनैश्वर	सूर्य
भव	उमा (उषा)	शुक	जल
शिव (शिव)	विकेशी	मंगल	मही
पशुपति	शिवा	मनोजव	वायु
भीम	स्वाहा (स्वधा)	स्कंद	अग्नि
ईशान	दिशा	स्वर्ग	आकाश
उग्र	दीक्षा	संतान	यज्ञीय ब्राह्मण
महादेव	रोहिणी	बुध	चंद्र

कालिदास के शाकुन्तल की नांदी में, अष्टमूर्ति शिव का निर्देश है, जहाँ उपर्युक्त तालिका में दिये गये रुद्र के निवासस्थानों को ही 'अष्टमूर्ति' कहा गया है :—
ऊरु, बौह, सूर्य, चंद्र, आकाश, वायु, पृथ्वी (अवनी) एवं परकता (श. १.१)।

एकादश रुद्र—महाभारत एवं पुराणों में प्रायः सर्वत्र रुद्रों की संख्या एकादश बतायी गयी है, एवं उनकी उत्पत्ति ब्रह्मा के शरीर से उत्पन्न एक ही आय रुद्र से होने की कथा बताई गयी है। किन्तु इन ग्रंथों में प्राप्त एकादश रुद्रों की नामावलि एक दूसरी से मेल नहीं खाती है। इनमें से प्रमुख ग्रंथों में प्राप्त नामावलियाँ निम्न प्रकार हैं :—

१. महाभारत—मृगव्याध, शर्व, निर्कृति, अजैकपात्, भद्रेशुभ्र्य, पिनाकिन्, दहन, ईश्वर, कपालिन्, स्थाणु, एवं भव (म. आ. ५.०.१-३)।

२. स्कन्द पुराण में—भूतेश, नीलरुद्र, कपालिन्, वृषवाहन, त्र्यम्बक, महाकाल, भैरव, मृत्युञ्जय, कामेश, एवं योगेश (स्कंद, ७.१.१७)। इस पुराण के अनुसार, कृतयुग में अष्ट रुद्र उत्पन्न हुये, एवं कलियुग में ग्यारह रुद्रों का अवतार हुआ, जिनकी नामावलि यहाँ दी गयी है। ये ग्यारह रुद्र, दस वायु एवं एक आत्मा मिल कर

बन गये हैं, जिनमें से दस वायु के नाम निम्न हैं :—
प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, नाग, कूर्म, कुकल, देवदत्त एवं धनंजय।

३. भागवत में—इस ग्रंथ में ग्यारह रुद्रों के नाम, उनकी पत्नियाँ, एवं निवासस्थान दिये गये हैं, जो निम्न प्रकार हैं :—

रुद्र का नाम	पत्नी	निवासस्थान
मन्यु	धौ	दृढ्य
मनु	वृत्ति	इंद्रिय
सहितस् (सोम)	उशाना	अमु
महत्	उमा	व्योम
शिव	नियुता	वायु
ऋत्तध्वज	सर्षि	अग्नि
उग्ररेतस्	इला	जल
भव	अंबिका	मही
काल	इरावती	सूर्य
वामदेव	सुधा	चंद्र
धृत्तध्वज	दीक्षा	तप

(भा. २.१२.७-१८)।

विभिन्न पुराणों में—उपर्युक्त ग्रंथों के अतिरिक्त अन्य पुराणों में प्राप्त एकादश रुद्र के नाम एवं उनके संवन्धीय पाठभेद निम्न प्रकार हैं :— १. अजैकपात् (अज, एकपात्, अपात्); २. अहिर्बुध्न्य; ३. ईश्वर (सुरेश्वर, विश्वेश्वर, अपराजित, शास्त्र, त्वष्ट); ४. कपालिन्; ५. कपर्दिन्; ६. त्र्यम्बक (दहन, दमन, उग्र, चण्ड, महा-तेजस्, विलोहित, हवन); ७. वहरूप (निदित, निर्कृति महेश्वर); ८. पिनाकिन् (भीम); ९. मृगव्याध (रैवत, परंतप); १०. वृषाकपि (विरुपाक्ष, भग); ११. स्थाणु (शंभु, रुद्र, जयंत, महत्, अयोनिज, हर, भव, शर्व, रुद्र, सर्वसंज्ञ, संख्य एवं सर्प)।

जन्म की कथाएँ—रुद्र के जन्म के संबंधी विभिन्न कथाएँ पुराणों में प्राप्त हैं। सृष्टि के विस्तार का कार्य ब्रह्मा के सनदन आदि प्रजापतिपुत्रों पर सौंपा गया था। किन्तु वह काम उनके द्वारा यथावत् न किये जाने पर ब्रह्मा क्रुद्ध हुआ, एवं अपनी भ्रुकुटि उसने वक्र की। ब्रह्मा के उस वक्र किये भ्रुकुटि से ही रुद्र का जन्म हुआ (विष्णु, १.७.१०-११)। पद्म एवं भागवत में भी इसे

ब्रह्मा के क्रोध से उत्पन्न कहा गया है (पद्म. सू. ३; भा. ३.१२.१०)। अन्य पुराणों में, इसे ब्रह्मा के अभिमान से (ब्रह्मांड. २.९.४७); लल्यट से (भवि. ब्राह्म ५७); मन से (मत्स्य. ४.२७); मस्तक से (स्कंद. ५.१.२) उत्पन्न कहा गया है।

विष्णु के अनुसार, प्रजोत्पादनार्थ चिंतन करने के लिए बैठे हुए ब्रह्मा को एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जो शुरु में रक्तवर्णीय था, किन्तु पश्चात् नीलवर्णीय बन गया। ब्रह्मा का यही पुत्र रुद्र है। स्कंद में शंकर के आशीर्वाद से ही ब्रह्मा के रुद्र नामक पुत्र होने की कथा प्राप्त है।

अन्य पुराणों में रुद्राणों का कथन एवं सुरभि के (ह. वं. १.३; ब्रह्म ३.४७-४८; शिव. रुद्र. १७); भूतकन्या-सुरूपा के (भा. ६.६. १७); तथा प्रभास एवं बृहस्पतिमणिनी के (विष्णु १. १५. २३) पुत्र कहा गया है। महाभारत में कई स्थानों पर, रुद्र देवता के स्थान पर एकादश रुद्रों का निर्देश किया गया है (म. आ. ६.०.३; ११४. ५७-५८; शां. २०१. ५४८; अनु. २५५. १३; स्कंद. ६.२७७; पद्म सू. ४०)।

पराक्रम—इसके पराक्रम की विभिन्न कथाएँ पुराणों में प्राप्त हैं। संवत्सादन पर्वत पर अवतीर्ण होनेवाली गंगा इसने अपने जटाओं में धारण की (पद्म. स्व. ३)। अपने श्वसुर दक्ष के द्वारा अपमान किये जाने पर, इसने उसके यज्ञ का विध्वंस अपने वीरभद्र नामक पार्षद के द्वारा कराया। ब्रह्मा के द्वारा अपमान होने पर, इसने उसका पाँचवाँ सिर अपने दाहिने पाँव के अंगूठे के नाखुन से काट डाला। ब्रह्मा का सिर काटने से इसे ब्रह्महत्या का पातक लगा, जो इसने काशी क्षेत्र में निवास कर नष्ट किया (पद्म. सू. १४)। कई अन्य पुराणों में ब्रह्मा का पाँचवाँ सिर इसने अपने भैरव नामक पार्षद के द्वारा कटवाने का निर्देश प्राप्त है (शिव. विद्या. १.८)।

ब्रह्मा के यज्ञ में यह हाथ में कृपाल धारण कर गया, जिस कारण इसे यज्ञ के प्रवेशद्वार के पास ही रोक दिया गया। किन्तु आगे चलकर इसके तपःप्रभाव के कारण, इसे यज्ञ में प्रवेश प्राप्त हुआ, एवं ब्रह्मा के उत्तर दिशा में बहुमान का जगह इसे प्रदान की गई (पद्म. सू. १७)।

समुद्रमंथन से निकला हलाहल-विष इसने प्राशन किया जिस कारण, इसका ग्रीवा नीली हो गई, एवं इसके शरीर का अत्यधिक दाह होने लगा। उस

दाह का उपशम करने के लिए, इसने अपने जटासंभार में उसी समुद्रमंथन से निकला हुआ चंद्र धारण किया, जिस कारण इसे 'नीलकंठ,' एवं 'चंद्रशेखर' नाम प्राप्त हुये।

ब्राह्मणों का नाश करने के हेतु, एक दैत्य हाथी का वध धारण कर काशीनगरी में प्रविष्ट हुआ था, जिसका वधने वध किया, एवं उसका चर्म का वस्त्र बनाया। इसी कारण इसे 'कृत्तिवासस्' (हाथी का चर्म धारण करनेवाला) नाम प्राप्त हुआ (पद्म. स्व. ३४)।

देव असुरों के युद्ध में यह प्रायः देवों के पक्ष में ही शामिल रहता था, एवं देवसेना के सेनापति के नाते इसने अपने पुत्र कार्तिकेय को अमिषेक भी किया था (विष्णुधर्म. १.२३३)। फिर भी अपना श्रेष्ठत्व प्रस्थापित करने के लिए इसने देवों से तीन बार, एवं नारायण तथा कृष्ण से एक एक बार युद्ध किया था (म. शां. ३३०)। नारायण के साथ किये युद्ध में, इसने उसके छाति पर शूल से प्रहार किया था, जो त्रय 'श्रीवत्स-चिह्न' नाम से प्रसिद्ध है (म. शां. ३३०. ६५)।

महाभारत में वर्णन किये गये शिव के पराक्रम में दक्ष-यज्ञ का विध्वंस, एवं त्रिपुरासुर का वध (म. क. २४) इन दोनों को प्राधान्य दिया गया है (दक्ष प्रजापति एवं त्रिपुर देखिये)। त्रिपुरासुर के वध के पहले इसने उसके आकाश में तैरनेवाले त्रिपुर नामक तीन नगरों को जल दिया। शिव के द्वारा किये गये त्रिपुरदाह का तात्त्विक अर्थ महाभारत में दिया गया है, जिसके अनुसार स्थूल, सूक्ष्म, एवं कारण नामक तीन देहरूप नगरों का शिव के द्वारा दाह किया गया। हर एक साधक को चाहिए की, वह भी शिव के समान इन तीन नगरों का नाश करे, जो दुष्कर कार्य शिव की उपासना करने से ही सफल हो सकता है।

तामस-रूप—यह भूत पिशाचों का अधिपति था, एवं अमंगल वस्तु धारण कर इसने कंकाल, शैव, पार्षद, महादेव आदि अनेक तामस पंथों का निर्माण किया था। विष्णु की आज्ञानुसार, इसने निम्नलिखित ऋषियों को तामसी बनाया था :—कणाद, गौतम, शक्ति, उपमन्यु, जैमिनि, कपिल, दुर्वास, मृकंड, बृहस्पति, भार्गव एवं जामदग्न्य। देवों के यज्ञ में हविर्भाषा प्राप्त न होने के कारण, इसने क्रुद्ध हो कर भग एवं पूषन को क्रमशः

एकार्थ एवं दंतविहीन बनाया था, एवं यज्ञ देवता को मृग का रूप ले कर भागने पर विवश किया था।

भूतपिशाचों के गणों के वीरभद्र आदि अधिपति इसके ही पुत्र माने जाते हैं। इसी कारण इसको एवं इसकी पत्नी को क्रमशः 'महाकाल' एवं 'काली' कहा गया है। रुद्र में इसे सात सिरोंवाला कहा गया है, जिनमें से हर एक सिर अज्ञ, अश्व, बैल आदि विभिन्न प्राणियों से बना हुआ था। इन सिरों में से अपना अज्ञ एवं अश्व का सिर, इसने क्रमशः ब्रह्मा एवं विष्णु को प्रदान किया था।

वामन आदि पुराणों में रुद्र के तामस स्वरूप का अधिकारा वर्णन प्राप्त है। भूतपतित्व, शीघ्रकोपित्व, एवं आहारादि में मद्यमांस की आधिक्यता, ये रुद्र के तामस स्वरूप की तीन प्रमुख विशेषताएँ हैं।

शिवदेवता की उत्त्क्रांति—इस तरह हम देखते हैं कि, रुद्र-शिव के उपासकों के मन में इस देवता की दो प्रतिमाएँ प्रस्तुत की गयी हैं। इन ग्रंथों में निर्दिष्ट तामस रुद्र का वर्णन ज्ञानप्रधान एवं योग-साधना में मग्न हुए शिव से अलग है। वेदों के पूर्व-कालीन अनार्य रुद्र का उत्क्रान्त आध्यात्मिक रूप शिव माना जाता है। ऋग्वेद एवं ब्राह्मण ग्रन्थों में जो रुद्र था, वहीं आगे चल कर, उपनिषद् ग्रन्थों में शिव बन गया, एवं उसे परमशुद्ध आध्यात्मिक रूप प्राप्त हो गया। उसकी पूजा मद्यमांस से नहीं, बल्कि फलपुष्पादि पदार्थों से की जाने लगी। कोई न कोई कामना मन में रख कर, परमेश्वर की उपासना करनेवाले सामान्य जनों के अतिरिक्त, परब्रह्मप्राप्ति की आध्यात्मिक इच्छा मन में रखनेवाले तत्त्वज्ञ भी उसे 'महादेव' मानने लगे।

किंतु सामान्य भक्तों में उनके आध्यात्मिक अधिकार के अनुसार, शिव के तामस रूप की पूजा चलती ही रही, जिसका आविष्कार रुद्र के भैरव, कालभैरव आदि अवतारों की उपासना में आज भी प्रतीत होता है।

रुद्र-शिव के इसी दो रूपों का विशदीकरण महा-भारत में प्राप्त है, जहाँ रुद्र की 'शिवा' एवं 'घोरा' नामक दो मूर्तियाँ बतायी गयी हैं :-

द्वे तन् तस्य देवस्य वेदज्ञा ब्राह्मणा विदुः।

घोरामन्यां शिवामन्यां ते तन् बहुधा पुनः ॥

(म. अनु. १६१.३)

(शिव की घोरा एवं शिवा नामक दो मूर्तियाँ हैं, जिनमें से घोरा अभिरूप, एवं शिवा परमशुद्ध अध्यात्मस्वरूप महेश्वर है)।

परिवार—रुद्र-शिव को निम्नलिखित दो पत्नियाँ थीं:-
१. दक्षकन्या सती; २. हिमाद्रिकन्या पार्वती (उमा)
(दक्ष, सती एवं पार्वती देखिये)।

रुद्र को सती से कोई भी पुत्र नहीं था। पार्वती से इसे निम्नलिखित दो पुत्र उत्पन्न हुये थे:- १. गजानन (गणपति), जो पार्वती के शरीर के मूल से उत्पन्न हुआ था; २. कार्तिकेय स्कंद, जो शिव का सेनापति था (गणपति एवं स्कंद देखिये)।

उपर्युक्त पुत्रों के अतिरिक्त, पार्वती ने भूतपिशाचाधिपति वीरभद्र को, एवं बाणासुर को अपने पुत्र मान लिया था, जिस कारण ये दोनों भी शिव के पुत्र ही कहलाते हैं (वीरभद्र एवं बाण देखिये)। इसने शैल्यदपुत्र नंदिन् को भी अपना पुत्र माना था (नंदिन् देखिये)।

रुद्रोपासना—रुद्र शिव की उपासना प्राचीन भारतीय इतिहास में अन्य कौनसे भी देवता की अपेक्षा प्राचीन है। ऐतिहासिक दृष्टि से रुद्र-शिव की इस उपासना के दो कालखंड माने जाते हैं:- १. जिस काल में शिव की प्रतिकृति की उपासना की जाती थी; २. जिस काल में शिव की प्रतिकृति के उपासना का लोप हो कर, उसका स्थान शिवलिंगोपासना ने ले लिया।

यद्यपि ऋग्वेद में शिश्र देवता की उपासना करनेवाले अनार्य लोगों का निर्देश दो बार प्राप्त है (ऋ. ७. २१. ५; १०. ९९. ३), फिर भी रुद्र की उपासना में लिंगोपासना का निर्देश प्राचीन वैदिक वाङ्मय में कहीं भी प्राप्त नहीं होता है। यही नहीं, पतंजलि के व्याकरण महाभाष्य में शिव, स्कंद एवं विशाख की स्वर्ण आदि मौल्यवान् धातु के प्रतिकृतियों की पूजा करने का स्पष्ट निर्देश प्राप्त है (महा. ३. ९९)। वेम कृफिसस् के सिक्कों पर भी शिव की त्रिशूलधारी मूर्ति पाई जाती है, एवं वहाँ शिव के प्रतीक के रूप में शिवलिंगा नहीं, बल्कि नंदिन् दिखाया गया है।

शिवलिंगोपासना का सर्वप्रथम निर्देश श्वेताश्वतर उपनिषद् में पाया जाता है, जहाँ 'ईशान रुद्र' को सृष्टि के समस्त योनियों अधिपति कहा गया है (श्वे. उ. ४. ११; ५. २)। किन्तु यहाँ भी शिवलिंगा शिव का प्रतीक होने का स्पष्ट निर्देश अप्राप्य है, एवं सृष्टि के समस्त प्राणिजातियों का सृजन रुद्र के द्वारा किये जाने का तात्त्विक अर्थ अभिप्रेत है। महाभारत में दिये गये उपमन्यु के आख्यान में शिवलिंगोपासना का स्पष्ट रूप से निर्देश प्रथम ही पाया जाता है।

डॉ. भंडारकरजी के अनुसार, रुद्र-शिव सर्वप्रथम वैदिक देवता था, किन्तु आगे चल कर, वह वात्य, निषाद आदि वन्य एवं अनार्य लोगों का भी देवता बन गया। उन लोगों के कारण रुद्र-शिव के संबंधी प्राचीन वैदिक आर्यों के द्वारा प्रस्थापित की गयी कल्पनाओं में पर्याप्त फर्क किये गये, एवं भूतपति, सर्पधारण करनेवाला, स्मशान में रहनेवाला एक नया देवता का निर्माण हुआ। रुद्र के इस नये रूपान्तर के साथ ही साथ उसके प्रतिवृत्ति की उपासना करने की पुरातन परंपरा नष्ट हो गयी, एवं उसका स्थान शिवलिंग की उपासना करनेवाली नयी परंपरा ने ले लिया।

अन्य कई अभ्यासकों के अनुसार, अनार्य लोगों से पूजित रुद्रदेवता, वैदिक रुद्र देवता से काफी पूर्व-कालीन है, एवं इन्हीं रुद्रपूजक लोगों का निर्देश ऋग्वेद में यज्ञविरोधी, शिश्रपूजक अनार्य लोगों के रूप में किया गया है। अनार्य लोगों के इस मध्यमांसभक्षक, भूतों से वेधित, एवं अत्यंत क्रूरकर्मा तामस देवता को वैदिक रुद्र देवता से सम्मिलित कर, उसके उदात्तीकरण का एक महान् प्रयोग वैदिक आर्यों के द्वारा किया गया। इस प्रयोग के कारण, रुद्र देवता अपने नये रूप में जनमानस की एक अत्यंत लोकप्रिय देवता बन गई, एवं उसके अनार्य वन्य एवं अत्यंत भक्तों के भक्ति का भी एक नया उदात्तीकरण हो गया। अनार्यों के इस देवता के तामस स्वरूप को उदारता का, शक्ति का एवं तपश्चरण का एक नया पहलु वैदिक आर्यों के द्वारा प्रदान किया गया। श्वेताश्वतर जैसे उपनिषदों ने तो रुद्र-शिव को समस्त सृष्टि का नियंता एवं परब्रह्म प्राप्ति करानेवाला परमेश्वर बना दिया। यह उदात्तीकरण का कार्य करते समय, अनार्य रुद्र देवता के कुछ तामस पहलु वैदिक रुद्र देवता में आ ही गये, जिनमें से शिवलिंगोपासना एवं लिंगपूजा एक है।

मुँहेंजोदड़ो में—शिव की अत्यधिक प्राचीन प्रतिवृत्ति मुँहेंजोदड़ो एवं हड़प्पा के उत्खनन में प्राप्त हुए सिन्धु सभ्यता के खंडहरों में दिखाई देती हैं। इस उत्खनन में शिवस्वरूप से मिलते जुलते देवता के कई सिक्के प्राप्त हैं, जहाँ तीन मुखवाले एक देवता की प्रतिमा चित्रांकित की गई है। यह देवता योगासन में बैठी है, एवं उसके शरीर के निचला भाग विवस्त्र है। मुँहेंजोदड़ो के इस देवता का स्वरूप महाभारत में वर्णित किये गए शिव के 'त्रिशार्ध' (चतुर्भुज), 'विवस्त्र' (दिग्वास), 'ऊर्ध्वलिंग' (ऊर्ध्वरेतस्), 'योगेश्वर' (योगेश्वर),

स्वरूप से मिलता जुलता है (म. अनु. १४.१६९; १६५; ३२८; १७.४६; ७७; ९९)। इन सिक्कों के आधार पर, सर जॉन मार्शल के द्वारा यह अनुमान व्यक्त किया गया है कि, ई. पू. ३००० कालीन सिन्धुघाटी सभ्यता में शिव के सदृश कई देवताओं की पूजा अस्तित्व में थी।

मुँहेंजोदड़ो में प्राप्त देवता के बाये बाजू में व्याघ्र एवं हाथी है, एवं दाये बाजू में बैल एवं गण्डक हैं। यह चित्र महाभारत में प्राप्त शिव के वर्णन से मिलता जुलता है, जहाँ इसे 'पशुपति', 'शादूलरूप', 'व्यालरूप', 'मृगवाणरूप', 'नागचर्मोत्तरच्छद', 'व्याघ्राजीन', 'महिपन्न', 'गजहा' एवं 'मण्डलिन्', तथा इसकी पत्नी दुर्गा को 'गण्डिनी' कहा गया है (म. अनु. १४. ३१३; १७.४८; ६१; ८५; ९१)।

पश्चिम एशिया में—इस प्रकार महाभारत में प्राप्त शिववर्णन में एवं मुँहेंजोदड़ो में प्राप्त त्रिशिर देवता में काफी साम्य दिखाई देता है। किन्तु शिव का प्रमुख विशिष्टता जो वृषभ, वह मुँहेंजोदड़ो में प्राप्त सिक्कों में नहीं दिखाई देता है। महाभारत में शिव को सर्वत्र 'वृषभवाह' एवं 'वृषभवाहन' कहा गया है (म. अनु. १४.२९९; ३९०)। इस विशिष्ट दृष्टि से ई. पू. २००० में पश्चिम एशिया में 'हिटाइट' लोगों के द्वारा पूजित तेशव देवता से शिव का काफी साम्य दिखाई देता है। बाल्किलोनिया में प्राप्त अनेक शिल्पों में एवं अवशेषों में तेशव देवता की प्रतिमा दिखाई देती हैं, जहाँ उसे वृषभवाहन एवं त्रिशुलधारी बताया गया है। उसकी पत्नी का नाम मौं था, जिसकी जगन्माता मान कर पूजा की जाती थी।

वैदिक एवं पौराणिक वाङ्मय में निर्दिष्ट रुद्र में एवं तेशव देवता में काफी साम्य है। तेशव से समान रुद्र-शिव हाथ में विद्युत्, धनुष (धन्वी, पिनाकिन्), त्रिशुल (शूल), दण्ड, परशु, पशुध्वज आदि अस्त्र धारण करता है (क्र. २.३३.३; म. अनु. १४.२८८; २८९; १७.४३; ४४; ९९)। तेशव के समान रुद्रशिव भी अंबिका का पति है, जिसे पार्वती, देवी एवं उमा कहा गया है (म. व. ७८.५७; अनु. १४.३८४; ४२७)। तेशव देवता की पत्नी सिंहारूढ वर्णित है, जो सिंहावाहिनी देवी दुर्गा से साम्य रखती है (मार्क. ४.२)। सुषा में प्राप्त तेशव देवता के पत्नी का चित्रण—त्रायः मधुमक्षिका के साथ किया गया है, जो मार्कंडेय में निर्दिष्ट 'भ्रामरीदेवी' से साम्य रखता है (मार्क. ८८.५०; दे. भा. १०.१३)।

मार्कंडेय के अनुसार, भ्रामरीदेवी ने अरुण नामक असुर का वध किया था, जिससे प्रायः असीरिया एवं इराण में रहनेवाले कई विषकीय जाति का बोध होता है।

सुमेरु में—शुक्रयजुर्वेद में प्राप्त 'शतृजय-सूक्त' रुद्र-शिव को उद्देश्य कर लिखा गया है, जिसकी सारी विचारधारा सुमेरियन देवता नेर्यल को उद्देश्य कर लिखे गये सूक्त से काफी मिलती-जुलती है।

इन सारे निर्देशों से प्रतीत होता है की, अनातोल्या, मेसोपोटमिया एवं सिन्धुघाटी सभ्यता में प्राप्त नानाविध देवताओं से भारतीय रुद्रशिव कोई ना कोई साम्य जरूर रखता है (रॉय चौधरी—स्टडीज इन इंडियन ऐन्टि-क्विटीज, पृष्ठ २००-२०४)।

शिव के अवतार—अपने भक्तों के रक्षण के लिए एवं शत्रु के संहार के लिए शिव ने नानाविध अवतार नानाविध कल्पों में लिये, जिनकी जानकारी विभिन्न पुराणों में प्राप्त है। इन अवतारों की संख्या विभिन्न पुराणों में पाँच, दस, अष्टाईस एवं शत बताई गई है। शिव के इन सारे अवतारों में निम्नलिखित अवतार अधिक प्रसिद्ध हैं:—

(१) चार अवतार—१. शरभ, जो अवतार इसने रुसिह का पराजय करने के लिए धारण किया था, २. महारि, जो अवतार इसने मणिमल का वध करने के लिए धारण किया था, ३. दुर्वासस, जो अवतार त्रिमूर्ति में स्थित माना जाता है: ४. पंचशिख, जो अवतार त्रिपुर-दाह के पश्चात् अवतीर्ण हुआ था।

(२) पंच अवतार—शिव पुराण में शिव के निम्न-लिखित पाँच अवतार दिये गये हैं:—सद्योजात, अघोर, तत्पुरुष, ईशान, वामदेव (शिव. शत. १)।

(३) दश अवतार—विष्णु के समान शिव के द्वारा भी दश अवतार लिये गये थे, जो निम्नप्रकार हैं:—महाकाल, तार, भुवनेश, श्रीविद्येश, भैरव, लिङ्गमस्तक, भूमवत्, बगलामुख, मातेग, कमल (शिव शतरुद्र. १७)।

(४) अष्टाईस अवतार—वाराह कल्प के वर्तमान कल्प में शिव के द्वारा कुल अष्टाईस अवतार लिये गये थे, जो तत्कालीन द्वापर युग के व्यास को सहाय्यता करने के लिए उत्पन्न हुये थे। पुराणों में प्राप्त अवतारों की इस नामावलि में हर एक अवतार के चार चार शिष्य बताये गये हैं, एवं कहीं कहीं इन अवतारों का अवतीर्ण होने का स्थान भी बताया गया है। वायु में इन्हीं अवतारों को 'माहेश्वरावतार' कहा गया है। शिव के अष्टाईस

अवतार, उनका अवतीर्ण होने का स्थान, एवं शिष्यों के नाम निम्न प्रकार हैं:—

(१) श्वेत—(छागल पर्वत)—श्वेत, श्वेतशिख, श्वेताश्व, श्वेतलोहित।

(२) सुतार—दुंदुभि, शतरूप, हृषीक, केतुमत्।

(३) द्मन—विशोक, विशेष, वियाप, पापनाशन।

(४) सुहोत्र—सुमुख, दुर्मुख, दुर्धर्म, दुरतिक्रम।

(५) कंक—सनक, सनत्कुमार, समंदन, सनातन।

(६) लोकाक्षि—सुधामन्, विरजस्, संजय, अंडज।

(७) जैनीषव्य—(काशी)—तारस्वत, योगीश, मेघवाह, सुवाहन।

(८) दक्षिवाहन—कपिल, आसुरि, पंचशिख, शाखल।

(९) ऋषभ—पराशर, गर्ग, भार्गव, गिरीश।

(१०) मृगु—(भृगुगुण)—मृग, बलबंधु, नरामित्र, केतुगुण।

(११) तप—(गंगाद्वार)—लंबोदर, लंबाक्ष, केशलंब, प्रलंबक।

(१२) अत्रि—(हेमकंसुक)—सर्वश, समशुद्धि, साध्य, शर्व।

(१३) बलि—(बालखिल्याश्रम)—सुधामन्, काश्यप, वसिष्ठ, विरजस्।

(१४) गौतम—अत्रि, उग्रतपस्, श्रावण, श्रविष्ट।

(१५) वेदशिरस्—(सरस्वती के तट पर)—कुणि, कुणिबाहु, कुशरीर, कुनेत्रक।

(१६) गोकर्ण—(गोकर्णवन)—काश्यप, उशनस्, च्यवन, बृहस्पति।

(१७) मुहावासिन्—(हिमालय)—उतथ्य, वामदेव, महायोग, महाबल।

(१८) शिखंडिन्—(सिद्धक्षेत्र या शिखंडिवन)—वाचःश्रवस्, रुचीक, स्ववास्य, यतीश्वर।

(१९) जटामालिन्—हिरण्यनामन्, कौशल्य, लोकाक्षिन्, प्रथिमि।

(२०) अट्टहास—(अट्टहासगिरि)—सुमंतु, बर्वरि, कबंध, कुशिकंधर।

(२१) दारुक—(दारुवन)—शुक्ल, दार्भायणि, केतुमत्, गौतम।

(२२) लांगली भीम—(वाराणसी)—मह्यविन्, मधु, भिंग, श्वेतकेतु।

(२३) श्वेत--(कालंजर) -- उशिक, बृहदश्व, देवल, कवि ।

(२४) शूलिन्--(नैमिषारण्य)--शालिहोत्र, अग्नि-वेद्य, युवनाथव, शरद्वसु ।

(२५) दंडीमुंडीद्वर--छगल, कुंडकर्ण, कुमांड, प्रवाहक ।

(२६) सहिष्णु-- (रुद्रवट)--उत्क, विवृत्, शंबुक, आश्वलायन ।

(२७) सोम--(प्रभासतीर्थ)--अश्वपाद, कुमार, उत्क, वस ।

(२८) लकुलिन्--कुशिक, गर्ग, मित्र, तौरुष्य (वायु. २३; शिव. शत. ४-५; शिव. वायु. ८-९; लिख. ७) ।

(४) शत-अवतार--भिन्न कर्मों में उपपन्न हुये शिव के शत अवतारों की नामावलि भी शिवपुराण में प्राप्त है, जहाँ इन अवतारों के वस्त्रों के विभिन्न रंग, एवं पुत्रों के विभिन्न नाम विस्तृत रूप से प्राप्त हैं (शिव. शत. ५) ।

शिव-उपासना के सांप्रदाय--रुद्र शिव की उपासना भारतवर्ष के सारे विभागों में प्राचीन काल से ही अत्यंत श्रद्धा से की जाती थी। रुद्र के इन उपासकों के दो विभाग दिखाई देते हैं :--१. एक सामान्य उपासक, जो शिव-उपासना के कौनसे भी सांप्रदाय में शामिल न होते हुए भी शिव की उपासना करते हैं; २. शिव के अन्य उपासक, जो शिव-उपासना के किसी न किसी सांप्रदाय में शामिल हो कर इसकी उपासना करते हैं ।

कालिदास, सुबंधु, बाण, श्रीहर्ष, भट्टनारायण, भव-भूति आदि अनेक प्राचीन साहित्यिकों के ग्रंथ में श्रीविष्णु के साथ रुद्र-शिव का भी नमन किया गया है। प्राचीन चालुक्य एवं राष्ट्रकूट राजाओं के द्वारा शिव के अनेकानेक मंदिर बनाये गये हैं, जिनमें वेरूल में स्थित कैलास मंदिर विशेष उल्लेखनीय है। ये सारी कृतियाँ सामान्य शिवभक्तों के द्वारा किये गये सांप्रदायनिरपेक्ष शिवोपासना के उदाहरण माने जा सकते हैं ।

शिव-उपासना का आद्य सांप्रदाय--ई. स. १ ली शताब्दी में श्रीविष्णु-उपासना के 'पांचरात्र' नामक सांप्रदाय की उत्पत्ति हुई। उसका अनुसरण कर ई. स. २ ली शताब्दी में लकुलिन् नामक आचार्य ने 'पाशुपत' नामक शिव-उपासना के आद्य सांप्रदाय की स्थापना की, एवं इस हेतु 'पंचार्थ' नामक एक ग्रंथ भी लिखा। आगे चल कर इसी पाशुपत सांप्रदाय से शिव-उपासना के निम्नलिखित

तीन प्रमुख सांप्रदायों का निर्माण हुआ :--१. कापालिक; २. पाशुपत; ३. शैव ।

(१) कापालिक सांप्रदाय--रामानुज के अनुसार, शरीर के छः मुद्रिका का ज्ञान पा कर, एवं स्त्री के जननेंद्रिय में स्थित आत्मा का मनन कर, जो लोग शिव की उपासना करते हैं, उन्हें कापाल सांप्रदायी कहते हैं (रामानुज. २.२. ३५) । अपने इस हेतु के सिध्यर्थ इस सांप्रदाय के लोग निम्नलिखित आचारों को प्राधान्य देते हैं :-- १. खोंपडी में भोजन लेना; २. चिताभस्म सारे शरीर को लगाना; ३. चिताभस्म भक्षण करना; ४. हाथ में डण्ड धारण करना; ५. मद्य का चपक साथ में रखना; ६. मद्य में स्थित रुद्रदेवता की उपासना करना ।

ये लोग गले में रुद्राक्ष की माला पहनते हैं, एवं जटा धारण करते हैं। गले में मुद्रमाला धारण करनेवाले भैरव एवं चण्डिका की ये लोग उपासना करते हैं, जिन्हें ये लोग शिव एवं पार्वती का अवतार मानते हैं ।

इसी सांप्रदाय की एक शाखा को 'कालमुख' अथवा 'महाव्रतधर' कहते हैं, जो अन्य सांप्रदायिकों से अधिक कर्मठ मानी जाती है ।

(२) पाशुपत सांप्रदाय --इस सांप्रदाय के लोग सारे शरीर को चिताभस्म लगाते हैं, एवं चिताभस्म में ही सोते हैं। मीषण हास्य, नृत्य, गायन, हड्डककार एवं अस्थशब्दों में ॐ कार का जाप, आदि छः मार्गों से ये शिव की उपासना करते हैं ।

इस सांप्रदाय की सारी उपासनापद्धति, अनार्य लोगों के उपासनापद्धति से आयी हुई प्रतीत होती है ।

(३) शैव सांप्रदाय--यह सांप्रदाय कापालिक एवं पाशुपत जैसे 'अतिमार्गिक' सांप्रदायोंसे तुलना में अधिक बुद्धिवादी है, जिस कारण इन्हें 'सिद्धान्तवादी' कहा जाता है। इस सांप्रदाय में मानवी आत्मा को पशु कहा गया है, जो इंद्रियपाशों से बंधा हुआ है। पशुपति अथवा शिव की मंत्रोपासना से आत्मा इन पाशों से मुक्त होता है, ऐसी इस सांप्रदाय के लोगों की कल्पना है ।

काश्मीर शैव-सांप्रदाय--इस सांप्रदाय की निम्नलिखित दो प्रमुख शाखाएँ मानी जाती हैं :--१. संदशास्त्र, जिसका जनक वसुगुप्त एवं उसका शिष्य कल्याण माने जाते हैं। इस सांप्रदाय के दो प्रमुख ग्रंथ 'शिवसूत्रम्' एवं 'संदकारिका' हैं, एवं इसका प्रारंभकाल ई. स. ९ वीं शताब्दी माना जाता है; २. प्रत्यभिज्ञानशास्त्र, जिसका जनक सोमानंद एवं उसका शिष्य उदयाकर माने जाते हैं ।

इस सांप्रदाय का प्रमुख ग्रंथ 'शिवदृष्टि' है, जिसकी विस्तृत टीका अभिनवगुप्त के द्वारा लिखी गयी है। इस सांप्रदाय का उदयकाल ई. स. १० वीं शताब्दी का प्रारंभ माना जाता है।

इन दोनों सांप्रदायों में कापालिक एवं पाशुपत जैसे प्राणायाम एवं अघोरी आचरण पर जोर नहीं दिया गया है, बल्कि चित्तशुद्धि के द्वारा 'आनन्द', 'मायिय' एवं 'काय' आदि मलों (मालिन्य) को दूर करने को कहा गया है। इस प्रकार ये दोनों सिद्धान्त अघोरी रुद्र उपासकों से कतिपय श्रेष्ठ प्रतीत होते हैं।

राजतरंगिणी के अनुसार, काश्मीर का शैव सांप्रदाय अत्यधिक प्राचीन है, एवं सम्राट अशोक के द्वारा काश्मीर में शिव के दो देवालये बनवाये गये थे। काश्मीर का सुविख्यात राजा दामोदर (द्वितीय) शिव का अनन्य उपासक था। इस प्रकार प्राचीन काल से प्रचलित रहे शिव-उपासना के पुनरुत्थान का महत्वपूर्ण कार्य 'स्पन्दशास्त्र' एवं 'प्रत्यभिज्ञानशास्त्र' वादी आचार्यों के द्वारा ई. स. १० वीं शताब्दी में किया गया।

वीरशैव (लिंगायत) सांप्रदाय—इस सांप्रदाय का आद्य प्रसारक आचार्य 'बसव' माना जाता है, जिसकी जीवनगाथा 'बसवपुराण' में दी गयी है। इस सांप्रदाय के मत शैवदर्शन अथवा सिद्धान्तदर्शन से काफी मिलते जुलते हैं। इस पुराण से प्रतीत होता है की, प्राचीन काल में विश्वेश्वराध्य, पण्डिताराध्य, एकोराम आदि आचार्यों के द्वारा प्रस्तुत किये गये सांप्रदाय को बसव ने ई. स. १२ वीं शताब्दी में आगे चलाया।

इस सांप्रदाय के अनुसार, ब्रह्मन् का स्वरूप 'सत्', 'चित्' एवं 'आनन्द' मय है, एवं वही शिवतत्त्व है। इस आद्य शिवतत्त्व के लिंग (शिवलिंग), एवं अंग (मानवी आत्मा) ऐसे दो प्रकार माने गये हैं, एवं इन दोनों का संयोग शिव की भक्ति से ही होता है ऐसा कहा गया है। इस तत्त्वज्ञान में लिंग के महालिंग, प्रसादलिंग, चरलिंग, शिवलिंग, गुरुलिंग एवं आचारलिंग ऐसे प्रकार कहे गये हैं, जो शिव के ही विभिन्न रूप हैं। इसी प्रकार अंग की भी 'योगांग', 'भोगांग' एवं 'त्यागांग' ऐसी तीन अवस्थाएँ बतायी गयी हैं, जो शिव की भक्ति की तीन अवस्थाएँ मानी गयी हैं।

लिंगायतों के आचार्य स्वयं को लिंगी ब्राह्मण (पंचम) कहलाते हैं, एवं इस सांप्रदाय के उपासक गले में शिवलिंग की प्रतिमा धारण करते हैं।

द्रविड देश में शिवपूजा—ई. स. ७ वीं शताब्दी से द्रविड देश में शिवपूजा प्रचलित थी। इस प्रदेश के शैवसांप्रदाय का आद्य प्रचारक तिरुनानसंबंध था, जिसके द्वारा लिखित ३८४ पदिकम् (स्तोत्र) द्रविड देश में वेदों जैसे पवित्र माने जाते हैं। तंजोर के राजराजेश्वर मंदिर में प्राप्त राजराजदेव के ई. स. १० वीं शताब्दी के शिलालेख में तिरुनानसंबंध का अत्यंत आदर से उल्लेख किया गया है। कंची के शिव मंदिर में, एवं पल्लव राजा राजसिंह के द्वारा ई. स. ६ वीं शताब्दी बनवाये गये राजसिंहेश्वर मंदिर में शिवपूजा का अत्यंत श्रद्धाभाव से निर्देश प्राप्त है। पेरियापुराण नामक तमिल ग्रंथ में इस प्रदेश में हुये ६३ शिवभक्तों के जीवनचरित्र दिये गये हैं।

शक्तिपूजा—शिवपूजा का एका उपविभाग शक्ति अथवा देवी की उपासना है, जहाँ देवी की त्रिपुरसुंदरी नाम से पूजा की जाती है (देवी देखिये)।

शिवपूजा के अन्य कई प्रकार गणपति (विनायक) एवं स्कंद की उपासना हैं (विनायक एवं स्कंद देखिये)।

शिवरात्रि—हर एक माह के कृष्ण एवं शुक्ल चतुर्दशी को शिवरात्रि कहते हैं, एवं फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी को महाशिवरात्रि कहते हैं। ये दिन शिव-उपासना की दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण माने जाते हैं।

शिव-उपासना के ग्रन्थ—इस संबंध में अनेक स्वतंत्र ग्रंथ, एवं आख्यान एवं उपाख्यान महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त हैं, जो निम्नप्रकार हैं:—

(१) शिवसहस्रनाम, जो महाभारत में प्राप्त है। यह तण्डि ने उपमन्यु को, एवं उपमन्यु ने कृष्ण को कथन किया था (म. अनु. १७.३१-१५३)। इसके अतिरिक्त दक्षवर्णिने शिवसहस्रनाम महाभारत में प्राप्त है (म. शां. परि. १.२८)।

शिवसहस्रनाम की स्वतंत्र रचनाएँ भी लिंगपुराण (लिंग. ६५.९८), एवं शिवपुराण (शिव. कोटि. ३५) में प्राप्त हैं।

(२) शिवपुराण—शैवसांप्रदाय के निम्नलिखित पुराण ग्रंथ प्राप्त हैं:—कूर्म, ब्रह्मांड, भविष्य, मत्स्य, मार्कंडेय, लिंग, वराह, वामन, शिव एवं स्कंद (स्कंद. शिवरहस्य खंड, संभवकांड २.३०-३३; व्यास देखिये)।

(३) शिवगीता, जो पथ पुराण के गौडीय संस्करण में प्राप्त है, किन्तु आनंदाश्रम संस्करण में अप्राप्य है।

(४) शिवस्तुति, महाभारत में शिवस्तुति के निम्नलिखित आख्यान प्राप्त हैं:—१. अश्वत्थामन् कृत (म. मौ. ७) २. कृष्णकृत (म. अनु. १४; ह. वं. २.७४.२२-३४); ३. कृष्णाञ्जुनकृत (म. द्रो. ५७); ४. तण्डिनकृत (म. अनु. ४७); ५. दक्षकृत (म. शां. परि. १.२८); मरुत्कृत (म. आश्व. ८.१४)।

(५) शिवमहिमा, जो महाभारत के एक स्वतंत्र आख्यान में वर्णित है।

(६) लिंगाचन महिमा, जो महाभारत के एक स्वतंत्र आख्यान में प्राप्त है (म. अनु. २४७)।

(७) शिवनिंदा, दक्ष के द्वारा की गई शिवनिंदा भागवत में प्राप्त है (मा. ४.२.९-१६)।

रुद्र-शिव के तीर्थस्थान—रुद्र-शिव के नाम से, एवं इनके प्रासादिक विभूतिमत्त्व से प्रभावित हुए अनेक तीर्थ-स्थानों का निर्देश महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है, जिन में निम्नलिखित तीर्थस्थान प्रमुख हैं:—

(१) ज्योतिर्लिंग—जिनकी संख्या कुल बारह बतायी गयी है (ज्योतिर्लिंग देखिये)।

(२) मुंजपृष्ठ—एक रुद्रसेवित स्थान, जो हिमालय के शिखर पर स्थित था (म. शां. १२२.२-४)।

(३) मुंजवट—गंगा के तट पर स्थित एक तीर्थस्थान, जहाँ शिव की परिक्रमा करने से गणपति पद की प्राप्ति होती है (म. व. ८३.४४६३)।

(४) मुंजवत्—हिमालय में स्थित एक पर्वत, जहाँ भगवान् शंकर तपस्या करते हैं।

(५) रुद्रकोटि—एक तीर्थस्थान, जहाँ शिवदर्शन की अभिलाषा से करोड़ों मुनि एकत्रित हुये थे, एवं उन पर प्रसन्न हो कर शिव ने करोड़ों शिवलिंगों के रूप में उन्हें दर्शन दिया था (म. व. ८०.१२४-१२९)।

(६) रुद्रपद—एक तीर्थ, जहाँ शिव की पूजा करने से अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है (म. व. ८०. १०८; पाठभेद—'वस्त्रापथ')।

(७) हिमवत्—एक पवित्र पर्वत, जो त्रिपुरदाह के समय भगवान् रुद्र के रथ में आश्रयस्थ बना था। इस पर्वत में स्थित आदि-र्यागिरि नामक स्थान में शिव का आश्रम स्थित था (म. शां. ३१९-३२०)।

रुद्रकेतु—एक असुर। इसकी पत्नी का नाम शारदा था, जिससे इसे देवान्तक एवं नरान्तक नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे। इसके पुत्रों के पराक्रम से संतुष्ट हो कर नारद ने इसे 'पंचाक्षर महाविद्या' का उपदेश दिया था।

आगे चल कर इसके पुत्र देवान्तक एवं नरान्तक का भगवान् विनायक ने वध किया (गणेश. क्री. २)।

रुद्रभूति द्राहायण—एक आचार्य, जो त्रात ऐकमत नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम शर्वदत्त गार्ग्य था (वं. ब्रा. १.)।

रुद्रश्रेण्य—(सो. सह.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार महिष्मत राजा का पुत्र था।

रुद्र सावर्णि—बारहवें मन्वन्तर का अधिपति मनु, जो भव राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम सुवता था, जो प्राचेतस् दक्ष की कन्या थी (मार्क. ११; विष्णु. ३.२.३२)।

देवी भागवत में इसे तेरहवें मन्वन्तर का अधिपति कहा गया है, एवं वैवस्वत मनु के पुत्र शर्याति को बारहवें मन्वन्तर का अधिपति कहा गया है (दे. मा. १०.१३) वायु के अनुसार, यह चाशुष मन्वन्तर में हुआ था (वायु. १००.५८)। कई ग्रंथों में इसे चतुर्थ मन्सावर्णि भी कहा गया है।

रुद्रसेन—एक राजा, जो भारतीययुद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. १३३.३७)। पाठभेद—'मद्रसेन'।

रुद्रिका—एक असुर, जिसका पिप्पु नामक असुर के साथ निर्देश प्राप्त है। इन्द्र ने इन दोनों का वध किया (ऋ. २.१४.५)।

रुद्रिराक्ष—एक असुर, जो लवणासुर का मामा था।

रुद्रिराशन—एक राक्षस, जो खर राक्षस के ब्रह्म अमात्यों में से एक था (वा. रा. अर २३.३२)।

रुन्द—एक राजा, जो पहले क्षत्रिय था, किन्तु पश्चात् ब्राह्मण हुआ (वायु. ९३.११४)।

रुम—एक वैदिक जातिसमूह। रुशम, श्यावक, कृप राजाओं के साथ रुम लोगों के राजा का निर्देश भी इंद्र के कृपापात्र लोगों के नाते प्राप्त है (ऋ. ८.४.२)।

रुमण—राम की सेना का एक सुविख्यात वानर।

रुमणवत्—परशुराम का भ्राता, जो जमदग्नि एवं रेणुका के पाँच पुत्रों में से ज्येष्ठ था। इसके अन्य भाइयों के नाम मुग्ग, वसु, विश्वावसु एवं परशुराम थे।

इसे इसकी माता रेणुका का वध करने की आज्ञा जमदग्नि ने दी। किन्तु इसने उसका पालन नहीं किया, जिससे क्रुपित हो कर जमदग्नि ने इसे मृगपक्षियों की भाँति जडबुद्धि होने का शाप दिया (म. व. ११६.१०)

पश्चात् परशुराम ने पिता को प्रसन्न कर के इसे शापमुक्त कराया।

रुमा—सुग्रीव की पत्नी, जो पनस वानर की कन्या थी (ब्रह्मांड. ३७.२२१)।

सुग्रीव को विजयवासी बना कर उसके भाई बालि ने रुमा का हरण किया। बालिवध के पश्चात् रुमा पुनः एक बार सुग्रीव के पास आ गई, एवं बालि की पत्नी तारा भी सुग्रीव की पत्नी बन गई (वा. रा. कि. २०-२१; पद्म. ४.११२.१६१)।

इससे प्रतीत होता है कि, राज्य के साथ अपने बान्धवों की पत्नियों भी अपनाने की रूढ़ि वानरों में थी। फिर भी वाल्मीकि रामायण में बालि को भार्यापहार का दोष लगाया गया है।

विभीषण से मिलने के लिए जाते समय राम किष्किंश में ठहरा था। उस समय अन्य राजखियों के साथ राम के दर्शनार्थ यह उपस्थित हुई थी (पद्म. सू. ३८)।

रुरु—एक ऋषिकुमार, जो च्यवन ऋषि का पौत्र एवं प्रमति ऋषि का पुत्र था। वृताची नामक अप्सरा इसकी माता थी (म. अनु. ३०.६४)। इसके पुत्र का नाम शुनक था।

इसकी पत्नी का नाम प्रमदरा था, जो सर्पदंश के कारण मृत होने पर इसने अत्यधिक विलाप किया था। पश्चात् अपनी आधी आयु दे कर, इसने उसे पुनः जीवित किया।

इस प्रसंग के कारण, इसके मन में सर्पजाति के प्रति विद्वेष उत्पन्न हुआ, एवं सर्प को देखते ही उसे मारने का इशारे प्रारंभ किया। एक बार यह हुण्डुम नामक सर्प को मारनेवाला ही था, कि उस सर्प ने इसे कहा, 'सौर को मारने के पहले वह विषैला है या नहीं, यह सोंच कर तुम उसे मारा करो'। पश्चात् हुण्डुम ने इसे अहिंसा एवं वर्णधर्म का उपदेश प्रदान किया।

हुण्डुम पूर्वजन्म में सहस्रपात नामक एक ऋषि था, जिसे शाप के कारण सर्पयोगि प्राप्त हुई थी। रुरु ऋषि के दर्शन से उसे भी मुक्ति प्राप्त हुई (म. आ. ८-१२; दे. भा. २.९)।

२. एक भैरव, जो अष्टभैरवों में से द्वितीय माना जाता है।

३. एक असुर, जो हिरण्याक्ष के वंश में पैदा हुआ था। इसके पुत्र का नाम दुर्गामासुर था।

४. एक दैत्य, जो ब्रह्मा के द्वारा प्राप्त वर से अत्यंत उन्मत्त हुआ था। इसी उन्मत्तता के कारण, इसने देवताओं पर हमला किया। इस पर सारा देवगण भाग

गया, एवं वे आत्मरक्षा के लिए शंकर के जटा से निकली हुई एक शक्ति की शरण में आये, जो नीलपर्वत पर तपस्या कर रही थी।

इतने में देवताओं का पीछा करता हुआ रुरु दैत्य भी ससैन्य वहाँ आ पहुँचा। इस पर शक्ति देवी ने विकृत हास्य किया, जिससे डाकिनी की एक सेना उत्पन्न हुई। उस सेना ने इसके सैन्य के सारे दैत्यों का नाश किया। देवी ने अपने पाँव के अंगूठे के नाखून से वध किया। पश्चात् भगवान् शिव ने स्वयं प्रकट हो कर, डाकिनियों को अनेक वर प्रदान करते हुए कहा, 'आज से लोग तुम्हें जगन्माता मानेंगे' (पद्म. सू. ३१)।

स्कंद में इसे रथंतर कल्प में उत्पन्न हुआ दैत्य कहा गया है, एवं एक ऋषि के द्वारा उत्पन्न की गयीं कुमारिकाओं से इसका वध होने की कथा वहाँ प्राप्त है (स्कंद. ७.१. २४२-२४७)।

५. चाक्षुष मनु के पुत्रों में से एक।

६. कश्यपकुलोत्पन्न एक ऋषि, जो सावर्णि मन्वन्तर में उत्पन्न हुआ था।

७. (सू. इ.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार अहीनगु राजा का पुत्र था।

रुरुक—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार विजय राजा का पुत्र था। यह राजनीति एवं अर्थशास्त्र में अत्यंत प्रवीण था (ह. वं. १.१३.२९)।

रुशती—एक कन्या, जिसका विवाह अश्वियों के द्वारा श्याव राजा से संपन्न कराया था (ऋ. ११७.८)। रुशती का शब्दशः अर्थ 'श्वेतवर्णीय' होता है।

रुशदश्व—इक्ष्वाकुवंशीय वसुमनस् राजा का पिता।

रुशद्रथ—(सो. अनु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार तितिक्षु राजा का पुत्र था। मत्स्य में इसे वृषद्रथ, एवं विष्णु एवं वायु में उपद्रथ कहा गया है।

रुशाम—एक वैदिक ज्ञातिसमूह, जो इन्द्र का आश्रित था (ऋ. ८.३.१३; ४.२; ५.१.९)। इनके राजा का नाम 'रुणचय' था (ऋ. ५.३०.१२-१५)। अथर्ववेद में इनके राजा का नाम 'कौरम' दिया गया है (अ. वे. २०.१२७.१)।

रुशमा—एक ब्रह्मवेत्ता आचार्य, जिसकी कथा पंचविंश ब्राह्मण में कुरुक्षेत्र का माहात्म्य कथन करने के लिए दी गई है।

एकवार इंद्र एवं रुशमा में पृथ्वी प्रदक्षिणा के लिए शर्तें लगी। तदोपरान्त इंद्र ने पृथ्वीप्रदक्षिणा की, एवं रुशमा ने कुरुक्षेत्र की प्रदक्षिणा की। बाद में विजय किसका हुआ इस संबंध में निर्णय देते हुए देवों ने कहा, 'कुरुक्षेत्र ब्रह्मा की वेदि है, जिस कारण समस्त पृथ्वी उसमें समाविष्ट होती है। अतः विजय दोनों की ही हुई है' (पं. ब्रा. २५.१३.३)।

कई अभ्यासकों के अनुसार, इस कथा का संकेत रुशम ज्ञाति के लोगों की ओर है, एवं उनका कुरुओं के साथ संबंध होने का संकेत इस कथा में प्राप्त है।

रुशोकु—(सो. क्रोष्टु.) यादववंशीय रशादु राजा का नामान्तर।

रुशंगु—उशंगु ऋषि का नामान्तर (उशंगु देखिये)।

रुषदग्नु—(सो. क्रोष्टु.) यादववंशीय रशादु राजा का नामान्तर।

रुशादु—यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८.१२)।

रुषार्दिक—सुराद्ववंशीय एक कुलांगार राजा, जिसने अपने दुर्व्यवहार के कारण अपने स्वजन एवं ज्ञाति-बंधुओं का नाश किया (म. उ. ७२.११)। पाठभेद (मांडाकर संहिता) - 'कुशार्दिक'।

रुषाभानु—हिरण्यक्ष असुर की पत्नी (भा. ७. २.१९)।

रूपक—एक शिवभक्त राक्षस, जिसके पुत्र का नाम संपति था। ये दोनों अन्याय्य मार्ग से संपत्ति प्राप्त कर, वह शिव-उपासना के लिए व्यतीत करते थे। इस कारण मृत्यु की पश्चात्, शिव के मानसपुत्र वीरभद्र ने इन्हें कहा, 'अगले जन्म में तुम चोर बनेगे, किन्तु शिवभक्ति के कारण तुम्हारा उद्धार होगा' (पद्म. पा. ११५)।

रूपवती—त्रेतायुग की एक वेश्या, जो देवदास नामक एक स्वर्णकार से प्रेम करती थी। वैशाखस्तान के कारण, इन दोनों को मुक्ति मिल गयी (पद्म. पा. ९७)।

रूपि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

रूपिन्—अजमीठ नामक सोमवंशीय राजा का पुत्र, जिसकी माता का नाम केशिनी था। इसके जहू एवं जन नामक दो भाई थे (म. भा. ८९.२८)।

रेणु—एक आचार्य, जो विश्वामित्र ऋषि का पुत्र था (ऐ. ब्रा. ७.१७.७; सां. श्रौ. १५.२६.१)। ऋग्वेद के

एक सूक्त का प्रणयन [इसने किया है (ऋ. ९. ७०)]। इसे कुशिकगोत्र का मंत्रकार भी कहा गया है।

२. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जिसे प्रसेनजित्, प्रसेन, एवं सुवेणु नामान्तर प्राप्त थे। इसकी कन्या का नाम रेणुका था, जो जमदग्नि ऋषि की पत्नी एवं परशुराम की माता थी (भा. ९.१५.१२; म. व. ११६.२)।

रेणुकु—एक सत्वगुणसंपन्न नाग, जो रवातल में रहता था। इसने देवताओं के कहने पर दिग्गजों के पास जा कर धर्म के संबंधी प्रश्न पूछे थे (म. अनु. १३२.२६)।

रेणुका—इक्ष्वाकुवंशीय रेणु (प्रसेनजित्) राजा की कन्या, जो जमदग्नि महर्षि की पत्नी थी (भा. ९.१५.२; ह. वं. १.२७.३८; म. व. ११६.२)। कई अन्य ग्रंथों में इसे अनावसु की, एवं विकल्प में सुवेणु की कन्या कहा गया है (रेणु. ५)। कालिका पुराण में इसे विदर्भ राजा की कन्या कहा गया है (कालि. ८६)। इसे कामर्षी नामान्तर भी प्राप्त था।

जन्म—महाभारत के अनुसार, इसकी उत्पत्ति कमल में हुई थी, एवं इसके पिता एवं भ्राता का नाम क्रमशः सोमप एवं रेणु था (म. अनु. ५३.२७)। सोमप राजा के द्वारा इसका पालन होने कारण, संभवतः उसे इसका पिता कहा होगा। रेणुकापुराण के अनुसार, रेणु राजा ने कन्याकामेष्टियज्ञ किया। उस यज्ञकुण्ड से इसकी उत्पत्ति हुई (रेणु. ३)।

अपने पूर्वजन्म में यह अदिति थी। इसका स्वयंवर भागीरथी क्षेत्र में हुआ, जिस समय इसने स्वयंवर में जमदग्नि का वरण किया (रेणु. ११)। इसके स्वयंवर के समय इंद्र ने इसे कामवेनु, कल्पतरु, चिंतामणि एवं पारस आदि विभिन्न मौल्यवान् चीजें भेंट में दे दी (रेणु. १३)।

एक बार जमदग्नि ऋषि बाणक्षेपण का खेल खेल रहे थे, जिस समय बाण वापस लाने का काम इस पर सौंपा गया था। एकवार बाण लाने में इसे कुल देरी हो गयी, जिस कारण क्रुद्ध हो कर जमदग्नि ने अपने पुत्र परशुराम से इसका शिरच्छेद करने के लिए कहा (म. अनु. ९५. ७-१७)। अपने पिता की आज्ञानुसार, परशुराम ने इसका वध किया, एवं पश्चात् जमदग्नि से अनुरोध कर इसे पुनर्जीवित कराया (म. व. ११६.५-१८)।

परिवार—इसे निम्नलिखित पाँच पुत्र थे—रुमध्वन्, सुषेण, वसु, विश्वावसु एवं परशुराम (म. व. ११६. १०-११)। रेणुकापुराण में 'रुमध्वन्' एवं 'सुषेण' के बदले पुत्रों के नाम 'बृहत्मानु' एवं 'बृहत्कर्मन्'

दिये गये हैं (रेणू. १३) । कलिका पुराण में 'रुमण्वत्' के बदले 'मरुण्वत्' नाम प्राप्त है (कालि. ८६) ।

रेणुमती—नकुलपत्नी करेणुमती का नामान्तर ।

रेपलेद्र—एक राक्षस, जिसका घटोत्कचपुत्र बर्बरिक के द्वारा वध हुआ था ।

रेभ—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जो अवत्सार काश्यप नामक आचार्य के पुत्रों में से एक था (ऋ. ८.९७) ।

यह अश्वियों के कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था । एक बार असुरों के इसे बाँध कर कुए में डाल दिया, जहाँ इसे नौ दिन एवं दस रात्रियों तक भूखा एवं प्यासा रहना पड़ा (ऋ. १.११२.५) । तदोपरान्त अश्वियों ने इसकी मुक्तता की (ऋ. १.११६.२४; ११७.४) ।

एक गुफा की बंदिशाला में एकवार यह रखा गया था, जिल समय भी अश्वियों ने इसकी मुक्तता की (ऋ. १०.३९.९) ।

रेव—(सू. शर्याति.) एक शर्यातिवंशीय राजा, जो हरिवंश, भागवत विष्णु एवं वायु के अनुसार आनर्त राजा का पुत्र था । पद्म में इसे आनर्त का पौत्र, एवं रोचमान राजा का पुत्र कहा गया है । भागवत एवं विष्णु के अनुसार, इसे 'रेवत' नामान्तर प्राप्त था । ब्रह्म में इसे रैव कहा गया है ।

इसने पश्चिम समुद्र में कुशस्थली नामक नगरी की स्थापना कर उसे अपनी राजधानी बनाई (भा. ९.३.२८) । आगे चल कर यही नगरी द्वारका नाम से प्रसिद्ध हुई (मत्स्य. ६९.९) ।

द्वारका नगरी पर शर्याति राजवंशीय लोगों का राज्य अधिककाल न रहा सका, जिसे पुण्यजन राक्षसों ने नष्ट किया, एवं यह राजवंश हैहय वंश में विलीन हुआ ।

इसे रैवत ककुभिन् आदि सौ पुत्र थे । शर्याति राजा से ले कर रैवत तक का वंशक्रम इसप्रकार है:—शर्याति—आनर्त—रोचमान—रेव—रैवत ककुभिन् ।

रेवत—(सो. कुकुर.) एक राजा, जो वायु के अनुसार कपोतरोमन् राजा का पुत्र था ।

२. शर्यातिवंशीय रेव राजा का नामान्तर ।

३. एकादश रुद्रों में से एक ।

रेवती—शर्यातिवंशीय रैवत ककुभिन् राजा की कन्या, जो बलराम की पत्नी थी । यह उग्र में बलराम से बड़ी थी (पद्म. भू. १०३) । बलराम की मृत्यु होने पर, इसने उसके चिता में अग्निप्रवेश किया (ब्रह्म. २१२.३) ।

२. भरद्वाज ऋषि की बहन, जो उसने अपने कठ नामक शिष्य को विवाह में दी थी (ब्रह्म. १२१) ।

३. मित्र नामक आदित्य की पत्नी (भा. ६.१८.६) ।

४. रैवत नामक पाँचवे मन्वन्तर के अधिपति रैवत राजा की माता । इसकी जन्मकथा मार्कण्डेय पुराण में प्रात है, जो निम्नप्रकार है:—

ऋतवाच् नामक एक सञ्जील मुनि था, जिसे रेवती नक्षत्र के अवसर पर एक दुःशील पुत्र उत्पन्न हुआ । यह दुर्घटना रेवती नक्षत्र के प्रभाव से हो हुई है, यह गर्ग ऋषि से ज्ञान होते ही, ऋतवान् ऋषि ने रेवती नक्षत्र को शाप दिया, एवं उसे नीचे गिरा दिया ।

रेवती नक्षत्र के पतन के स्थान पर एक सरोवर निर्माण हुआ, जिस में से कालोपरांत एक कन्या उत्पन्न हुई । वही रेवती है ।

इस कन्या को प्रमुच मुनि ने पाल-पोस कर बड़ा किया, एवं विक्रमशील राजा के पुत्र दुर्गम से इसका विवाह कर दिया ।

इसके द्वारा प्रार्थना की जाने पर, प्रमुच ऋषि ने इसका विवाह रेवती नक्षत्र के मुहूर्त पर ही किया, एवं इसे मन्वन्तराधिप पुत्र होने का आशीर्वाद भी दिया । इस आशीर्वाद के अनुसार, रैवत नामक पराक्रमी पुत्र उत्पन्न हुआ (मार्क. ७२) ।

५. सत्ताईस नक्षत्रों में से एक (म. मी. १२.१६) ।

रेवन्त—एक सूर्यपुत्र, जो अश्व के रूप में उत्पन्न हुआ था । इसकी माता का नाम संज्ञा था । बड़ा होने पर इसे गुह्यकों का आधिपत्य दिया गया (मार्क. १०३) । भविष्य के अनुसार, इसे अश्वों का अधिपत्य दिया गया था (मवि. ब्राह्म. ८९.१२४) ।

रेवाग्नि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

रेवोत्तरस्—पाटव चाक्र स्थपती नामक आचार्य का उपनाम (श. ब्रा. १२.९.३.१; चाक्र देखिये) ।

रैक्व 'सयुग्वा'—एक तत्त्वज्ञानी आचार्य, जिसका जीवनचरित्र एवं तत्त्वज्ञान छांदोग्योपनिषद् में प्राप्त है । यह सदैव बैलों के गाड़ी के नीचे ही निवास करता था, जिस कारण इसे 'सयुग्वा' (गाड़ी के नीचे रहनेवाला) उपाधि प्राप्त हुई थी ।

जानश्रुति राजा से भेंट—एक बार जानश्रुति नामक राजा जंगल में शिकार के लिये घूमता था, जिस समय उसने दो हंसी के बीच हुआ संवाद सहजवश सुन लिया ।

इस संवाद में एक हंस दूसरे से कहता था, 'जिस प्रकार पौंसों का अंतिम डाय जीतनेवाले को उस खेल के सारे दान प्राप्त होते हैं, उसी प्रकार सृष्टि के हर एक पुण्यवान् व्यक्ति के द्वारा किया गया पुण्यसंचय, गांडी के नीचे निवास करनेवाले रैक्व ऋषि तक पहुँचता है'।

हंसों का यह संवाद सुन कर, जानश्रुति को अत्यंत आश्चर्य हुआ, एवं वह इसे ढूँढते ढूँढते वहाँ तक पहुँच गया, जहाँ खुजली को खुजलाते यह गांडी के नीचे बैठा था, राजा ने इसे अनेक गाँवें, सुवर्ण का रत्नहार, आदि अनेक उपहार देना चाहा, किंतु इसने उनका स्वीकार न कर, अपनी गांडी ही राजा को दान में दे दी।

पश्चात् जानश्रुति ने अपनी कन्या इसे विवाह में दे दी, एवं इसको प्रसन्न कर इससे तत्त्वज्ञान की शिक्षा पा ली। जानश्रुति ने इसे एक गाँव भी प्रदान किया था, जो महाद्वीप देश में रैक्वर्षण नाम से सुविख्यात हुआ (छां. उ. ४.३.१-२; स्कंद. ३.१.२६)।

तत्त्वज्ञान—रैक्व का कहना था कि, इंद्रशुभ्रन के समान समस्त सृष्टि का आविर्कारण एवं अदिदेवत वायु ही है, जिसमें सृष्टि की सारी वस्तुएँ विलीन होती हैं। इस प्रकार, अग्नि को बुझाने पर वह वायु में विलीन होता है; सूर्य एवं चंद्र अस्तंगत होने पर वे भी वायु में अंतर्धान होते हैं।

रैक्व का यह तत्त्वज्ञान ग्रीक तत्त्वज्ञ अॅनॉक्सेमिनीज़ के तत्त्वज्ञान से काफी मिलता जुलता है, जिसके अनुसार वायु को समस्त सृष्टि का आदि एवं अन्त माना गया है। वायु के कारण सृष्टि की सारी वस्तुएँ विनष्ट कैसी हो जाती हैं, इसका स्पष्टीकरण रैक्व के द्वारा नहीं दिया गया है। किन्तु जिस प्राचीन काल में, अथ एवं अग्नि को सृष्टि का आदि कारण माना जाता था, उस समय सृष्टि के अन्य वस्तुओं के समान, अथ एवं अग्नि स्वयं वायु में ही विलीन होते हैं, यह क्रान्तिदर्शी तत्त्वज्ञान रैक्व के द्वारा प्रस्थापित किया गया।

पद्म में भी रैक्व का निर्देश प्राप्त है, जहाँ इसने जानश्रुति को गीता के छठवे अध्याय के पठन से मनःशान्ति प्राप्त करने का उपदेश प्रदान करने की कथा प्राप्त है (पद्म. उ. १७६)।

रैभ्य—एक आचार्य, जो पौतिमाप्यायण एवं कौण्डिन्यायन नामक आचार्यों का शिष्य था (बृ. उ. २.५. २०; ४.५.२६)। रेभ का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. एक ऋषि, जो विश्वामित्र ऋषि का पुत्र, एवं भरद्वाज मुनि का मित्र था (म. शां. ४९.४९)। महाभारत में अन्यत्र इसे अंगिरस् ऋषि का पुत्र कहा गया है।

इसे अर्वावसु एवं परावसु नामक दो पुत्र थे (म. व. १३.५.१२-१३)। भरद्वाज ऋषि के पुत्र यवकीत के दुराचरण से क्रुद्ध हो कर इसने उसका वध किया, जिस पर भरद्वाज ऋषि ने इसे अपने ल्येष्ठ पुत्र के द्वारा वध होने का शाप दिया।

पश्चात् अपने पुत्र परावसु के द्वारा हिल्ह एगु के घोखे में इसका वध हुआ। किन्तु इसके द्वितीय पुत्र अर्वावसु ने अभ्ययन से प्राप्त वेदमंत्रों से इसे पुनः जीवित किया (म. व. १३.९.५-२३; स्कंद. ३.१.३३; यवकीत देखिये)।

३. (सौ. पुरूरवस्.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, सुमति राजा का पुत्र था।

४. ब्रह्मा के पुत्रों में से एक। एक बार यह वसु एवं अंगिरस् ऋषियों के साथ बृहस्पति के पास गया, एवं इसने मोक्षप्राप्ति के बारे में अनेकानेक प्रश्न किये। मोक्ष कर्म से नहीं, बल्कि ज्ञान से प्राप्त होता है, यह ज्ञान प्राप्त होने पर यह गया में तपश्चर्या करने लगा, जहाँ सनलुकुमारों से इसकी भेंट हुई थी (बराह. ७)।

एक बार इसकी तपस्या में बाधा डालने के लिये उर्वशी उपस्थित हुई, जिसे इसने विरूप होने का शाप दिया। पश्चात् उर्वशी के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, इसने उसे योगिनी-कुंड में स्नान कर पूर्ववत् बनने का उःशाप दिया, जब से योगिनी-कुंड को 'उर्वशीकुंड' नाम प्राप्त हुआ (स्कंद. २.८.७)।

५. एक मुनि, जो वीरण ऋषि का शिष्य था। वीरण से इसे सात्वत धर्म का उपदेश प्राप्त हुआ था, जो इसने अपने दिक्पाल कुक्षि नामक पुत्र को प्रदान किया था (म. शां. ३३६.१७)। पाठभेद—'रौच्य'।

६. रैवत मन्वंतर के भूतरजस् देवगणों में से एक।

रैवत—एक राजा, जो पंचम मन्वंतराधिप मनु माना जाता है। भागवत के अनुसार, यह प्रियव्रत राजा का पुत्र, एवं तामस राजा का भाई था। विष्णु में इसे प्रियव्रत राजा का वंशज कह कर, इसके माता एवं पिता के नाम क्रमशः रेवती एवं प्रनुच दिये गये हैं (विष्णु ३.१.२४; रेवती ४. देखिये)।

यह श्रेष्ठ धर्मवेत्ता था, एवं इसने वीजमंत्र का जप कर प्रजा की वर्णाश्रमधर्म के अनुसार पुनर्रचना की थी। मृत्यु के पश्चात् यह इंद्रलोक गया (दे. भा. १०-८)।

२. एकादश रुद्रों में से एक (म. शां. २०२.१८-१९)
रैवत ककुब्जिन—(सू. शर्याति.) एक राजा, जो शर्यातिवंशीय रेव राजा का पुत्र था (रेव देखिये)।

२. (सू. द.) एक सुविख्यात धर्मप्रवृत्त इक्ष्वाकुवंशीय राजा। एक नार दक्षिण दिशा में स्थित मंदराचल में इसने गंधर्वों से सामगान सुना, जिस कारण इसके मन में विरक्ति उत्पन्न हो कर, यह राज्य छोड़ कर वन में चला गया (म. उ. १०७.९-१०)। अपने पूर्ववर्ती मरुत्त राजा से इसे दिव्य खड्ग की प्राप्ति हुई थी, जो इसने अपने वंशज युवनाश्र राजा को प्रदान किया था (म. शां. १६०.७६)।

रैवस—भृगुकुलोत्पन्न एक प्रवर।

रोचन—स्वारोचिष मन्वंतर का इंद्र, जो भागवत के अनुसार यज्ञ एवं दक्षिणा का पुत्र था।

२. तुषित देवों में से एक।

रोचना—वसुदेव की एक पत्नी, जो देवक राजा की कन्या थी। इसके हेम एवं हेमांगद नामक दो पुत्र थे (भा. ९.२४.४५)।

२. विदर्भराज रुचिमन् की पौत्री, जो कृष्ण के पौत्र अश्वत्थ की पत्नी थी। इसका विवाह भोजकटपुर में संपन्न हुआ था (भा. १०.६५)।

रोचनासुख—एक दैत्य, जो गरुड़ के द्वारा मारा गया था (म. उ. १०३.१२)।

रोचमान—एक राजा, जो अश्वश्रीव नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.१८)। महाभारत में प्राप्त निर्देशों से यह पांचालदेशीय, अथवा चेदिदेशीय प्रतीत होता है। इसके पुत्र का नाम हेमवर्ण था (म. द्रो. २२.५७)।

यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१०)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, भीम ने अपने पश्चिम दिग्भिजय में इसे जीता था (म. स. २६.८)।

भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. १६९)। इसके अश्व तारकाओं से अंकित अंतरिक्ष के समान चितकअरे वर्ण के थे (म. द्रो. २२.४०)। यह अत्यंत पराक्रमी महारथी था, जिसका कर्ण के द्वारा कथ हुआ था (म. क. ४०.५१)।

२. उरगा देश का एक राजा, जिसे अर्जुन ने अपने उत्तरदिग्भिजय में जीता था (म. स. २४.१८)।

३. (सो. वसु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार वसुदेव एवं उपदेवी का पुत्र था।

४. (सू. शर्याति.) एक शर्यातिवंशीय राजा, जो आनर्त राजा का पुत्र था।

५. एक राजद्वय, जो भारतीय युद्ध में द्रोण के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ४.७१)।

६. विश्वेदेवों में से एक।

रोचमाना—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२८)।

रोचिधत्त—स्वारोचिष मनु के पुत्रों में से एक।

रोधक—पिशाचवृत्ति में प्रविष्ट हुये पापी लोगों का एक समूह, जिसमें निम्नलिखित लोग शामिल थे :—पर्युषित, सूक्त (सुचिमुख), शीघ्रग, (शीघ्रक), रोधक (रोहक), वाग्दुष्ट, विद्वैत, एवं नित्यवाचक।

इनमें से प्रथम पाँच लोगों का पृथु नामक वेदवेत्ता ब्राह्मण के नीतिपर उपदेश से उद्धार हुआ (पद्म. सु. ३२)। पद्म में अन्यत्र मुनिशर्मा नामक ब्राह्मण के द्वारा वैशाख स्नान का उपदेश दिये जाने से, इन लोगों का उद्धार होने की कथा प्राप्त है (पद्म. पा. ९४)।

रोमक—एक लोकसमूह, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपहार ले कर उपस्थित हुआ था (म. स. ४७.१५ पाठ.)।

रोमपाद—(सो. अनु.) अंगदेश का एक सुविख्यात राजा, जो धर्मरथ (बृहद्रथ) राजा का पुत्र था। इसे लोमपाद, चित्ररथ, एवं दशरथ आदि नामांतर प्राप्त थे (ह. वं. १.३१.४६)।

यह अयोध्या के दशरथ राजा का परम स्नेही था (म. ११३.१७)। इसे चतुरंग नामक पुत्र था। इसकी शान्ता नामक कन्या का विवाह ऋश्यशुंग ऋषि से इसने कराया था (म. व. ११३, ११; शां. २२६.३२; अनु. १३८.२५)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो विदर्भराज के तीन पुत्रों में से कनिष्ठ था।

रोमशा—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जो भावव्यय राजा की पत्नी थी (ऋ. १.१२६.७; बृहद्दे. ३.१५६)। ऋग्वेद के इसी सूक्त में 'रोमशा-भावव्यय संवाद' प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, रोमशा इसका वास्तव नाम न हो कर, केवल 'बालवाली' इस अर्थ से विशेषण के रूप में इसके लिये प्रयुक्त किया गया है।

रोमहर्षण 'सूत'—एक सूतकुलोत्पन्न मुनि, जो समस्त पुराणग्रंथों का आद्य कथनकर्ता माना जाता है।

पुराणों में प्राप्त परंपरा के अनुसार, यह कृष्ण द्वैपायन व्यास के पाँच शिष्यों में से एक था। समस्त वेदों की चार शाखाओं में पुनर्रचना करने के पश्चात्, व्यास ने तत्कालीन समाज में प्राप्त, कथा, आख्यायिका, एवं गीत (गाथा) एकत्रित कर, आद्य पुराणग्रंथों की रचना की, जो उसने सूतकुल में उत्पन्न हुए रोमहर्षण को सिखाई। रोमहर्षण ने इसी पुराणग्रंथ के आधार पर आद्य पुराण-संहिता की रचना की, एवं यह पुराणों का आद्य कथनकर्ता बन गया। भांडारकर संहिता में इसके नाम के लिए 'लोमहर्षण' पाठभेद प्राप्त है (म. आ. १.१)।

पुराण ग्रंथों में इसका निर्देश कई बार केवल 'सूत' नाम से ही प्राप्त है, जो वास्तव में इसका व्यक्तिगत नाम न हो कर, जातिवाचक नाम था।

कुलवृत्तान्त—पुराणों में प्राप्त जानकारी के अनुसार, सूतकुल में उत्पन्न लोग प्राचीनकाल से ही देव, ऋषि, राजा आदि के चरित्र एवं वंशावलि का कथन एवं गायन का काम करते थे, जो कथा, आख्यायिका, गीत आदि में समाविष्ट थीं। इसी प्राचीन लोकताहित्य को एकत्रित कर, व्यास ने अपने आद्य पुराण ग्रंथ की रचना की।

रोमहर्षण स्वयं सूतकुल में ही उत्पन्न हुआ था, एवं इसका पिता क्षत्रिय तथा माता ब्राह्मणकन्या थी। इसे रोमहर्षण अथवा लोमहर्षण नाम प्राप्त होने का कारण भी इसकी अमोघ वक्तृत्वशक्ति ही थी—

लोमानि हर्षवाचके, श्रोतॄणां यत् सुभाषितैः।

कर्मणा प्रथितस्तेन लोकेऽस्मिन् लोमहर्षणः ॥

(वायु. १.१६)।

(अपने अमोघ वक्तृत्वशैली के बल पर, यह लोगों को इतना मंत्रमुग्ध कर लेता था कि, लोग रोमांचित हो उठते थे, इसीलिए इसे लोमहर्षण वा रोमहर्षण नाम प्राप्त हुआ)

पुराणों की निर्मिती—व्यास के द्वारा संपूर्ण इतिहास, एवं पुराणों का ज्ञान इसे प्राप्त हुआ, एवं यह समाज में 'पुराणिक' (म. आ. १.१); 'पौराणिकोत्तम' (वायु. १.१५; लिङ्ग. १.७१; ९९); 'पुराणज्ञ' आदि उपाधियों से विभूषित किया गया था। व्यास के द्वारा प्राप्त हुआ पुराणों का ज्ञान इसने अच्छी प्रकार संवर्धित किया, एवं इन्हीं ग्रंथों का प्रसार समाज में करने का

काम प्रारंभ किया (भा. १.४.२२; विष्णु. ३.४.१०; वायु. ६०.१६; पद्म. सू. १; अमि. २७१; ब्रह्मांड २. ३४; कूर्म. १.५२)।

शिष्यपरंपरा—व्यास के द्वारा प्राप्त आद्य पुराण ग्रंथों की इसने छः पुराणसंहिताएँ बनायीं, एवं उन्हें अपने निम्नलिखित शिष्यों में बाँट दीं:—१. आत्रेय सुमति; २. काश्यप अकृतवर्ण; भारद्वाज अश्विर्चस् ४, वासिष्ठ मित्रयु; ५. सावर्णि सोमदत्ति; ६. शांशापायन सुशर्मन् (ब्रह्मांड. २.३५.६३-७०; वायु. ६१.५५-६२)। इनमें से काश्यप, सावर्णि एवं शांशापायन ने आद्य पुराणसंहिता से तीन स्वतंत्र संहिताएँ बनायीं जो, उन्हींके नाम से प्रसिद्ध हुयीं। इस प्रकार रोमहर्षण की स्वयं की एक संहिता, एवं इसके उपयुक्त तीन शिष्यों की तीन संहिताएँ इन चार संहिताओं को 'मूलसंहिता' सामूहिक नाम प्राप्त हुआ। इन संहिताओं में से प्रत्येक संहिता निम्न-लिखित चार पादों (भागों) में विभाजित थी:—प्रक्रिया, अनुपंग, उपोद्घात एवं उपसंहार। इन सारी संहिताओं का पाठ एक ही था, जिनमें विभेद केवल उचारों का ही था। शांशापायन की संहिता के अतिरिक्त बाँकी सारे संहिताओं की श्लोकसंख्या प्रत्येक चार हजार थी।

पुराणों का निर्माण—इन संहिताओं का मूल संस्करण आज उपलब्ध नहीं है। फिर भी आज उपलब्ध वायु, ब्रह्मांड जैसे प्राचीन पुराणों में रोमहर्षण, सावर्णि, काश्यपेय, शांशापायन आदि का निर्देश इन पुराणों के निवेद्यक के नाते प्राप्त है। इन आचार्यों का निर्देश पुराणों में जहाँ आता है, वह भाग आद्य पुराणसंहिताओं के उपलब्ध अवशेष कहे जा सकते हैं।

उपलब्ध पुराणों में से चार पादों में विभाजित ब्रह्मांड एवं वायु ये दो ही पुराण आज उपलब्ध हैं। उग्रहरणार्थ वायु पुराण का विभाजन इस प्रकार है:—प्रथम पाद,—अ. १-६; द्वितीय पाद,—अ. ७-६४; तृतीय पाद,—अ. ६५-९९; चतुर्थ पाद,—अ. १००-११२। अन्य पुराणों में आद्य पुराण संहिता का यह विभाजन अप्राप्य है।

रोमहर्षण के छः शिष्यों में से पाँच आचार्य ब्राह्मण थे, जिस कारण पुराणकथन की सूतजाति में चली आयी परंपरा नष्ट हो गई, एवं यह सारी विद्या ब्राह्मणों के हाथों में चली गई। इसी कारण उत्तरकालीन इतिहास में उत्पन्न हुए बहुत सारे पुराणज्ञ एवं पौराणिक ब्राह्मण जाति के प्रतीत होते हैं। इस प्रकार वैदिक साहित्यज्ञ

ब्राह्मण, एवं पुराण ब्राह्मण ऐसी दो शाखाएँ ब्राह्मणों में निर्माण हुईं गयीं।

इसके पुत्र का नाम उग्रश्रवस् था, जिसे इसने व्यास के द्वारा विरचित 'आदि पुराण' की शिक्षा प्रदान की थी (व्यास, एवं सौति देखिये)। कई अभ्यासकों के अनुसार, आदि पुराण का केवल आरंभ ही व्यास के द्वारा किया गया था, जो ग्रंथ बाद में रोमहर्षण तथा इसके शिष्यों के द्वारा पूरा किया गया।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, यह अपने पुत्र उग्रश्रवस् के साथ उपस्थित था, एवं इसने उसे पुराणों का कथन किया था (म. स. ४.१०)।

उत्तरकालीन पुराण ग्रंथों में इसका एवं इसके पुत्र उग्रश्रवस् का नामनिर्देश क्रमशः 'महामुनि' एवं 'जगद्गुरु' नाम से प्राप्त है (विष्णु. ३.४.१०; पद्म. उ. २१९.१४-२१)।

पुराण-कथन—एक बार नैमिषारण्य में हवद्गती नदी के तट पर एक द्वादशवर्षीय सत्र का आयोजन किया गया। शौनक आदि ऋषि इस सत्र के नियंता थे, एवं नैमिषारण्य के साठ हज़ार ऋषि इस सत्र में उपस्थित थे। एवं शौनक आदि ऋषियों ने व्यास के प्रमुख शिष्य के नाते रोमहर्षण को इस सत्र के लिए अत्यंत आदर से निमंत्रण दिया, एवं इसका काफी गौरव किया (वायु. ८.२. ब्रह्मांड १.३३. नारद. १.१)।

इस सत्र में शौनक आदि ऋषियों के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर रोमहर्षण ने साठ हज़ार ऋषियों के उपस्थिति में निम्नलिखित पुराणों का कथन किया:—१. ब्रह्मपुराण (ब्रह्म. १); २. वायुपुराण (वायु. १. १५); ३. ब्रह्मांडपुराण (ब्रह्मांड. १.१.१७); ४. ब्रह्मवैवर्त-पुराण (ब्रह्मवै. १.१.३८); ५. गरुडपुराण (गरुड. १.१); ६. नारदपुराण (नारद. १. १-२); ७. भागवतपुराण (भा. १.३-११) इत्यादि।

मृत्यु—इस प्रकार दस पुराणों का कथन समाप्त कर, यह ग्यारहवें पुराण का कथन कर ही रहा था कि, इतने में सत्रमंडप में बलराम का आगमन हुआ। उसे आता हुआ देख कर, सत्र में भाग लेने बाकी सारे ऋषियों ने उसे उत्थापन दिया। किन्तु व्रतस्थ होने के कारण, यह उत्थापन न दे सका। फिर क्रोध में आ कर बलराम ने इसका वध किया (बलराम देखिये)। इसकी मृत्यु के पश्चात्, पुराणकथन का इसका कार्य इसके पुत्र उग्रश्रवस् ने आगे चलाया। अपने मृत्यु के पूर्व, इसने साढ़ेदस

पुराणों का कथन किया था, बाकी बचे हुए साडेसात पुराणों के कथन का कार्य इसके पुत्र उग्रश्रवस् ने पूरा किया।

मृत्युतिथि—पद्म में इसका वध किये जाने की तिथि आपाठ शुक्ल १२ बताई गई है (पद्म. उ. १९८)। इस दिन के इसी दुःखद स्मृति के कारण, हरएक द्वादशी के दिन आज भी पुराणकथन का कार्यक्रम बंद रक्खा जाता है।

महाभारत में प्राप्त कालनिर्देश से बलराम भारतीय युद्ध के समय तीर्थयात्रा करने निकल पड़ा था, उसी समय सूत का द्वादशवर्षीय सत्र चल रहा था। इससे प्रतीत होता है कि, भारतीय युद्ध, नैमिषारण्य का द्वादशवर्षीय सत्र, एवं रोमहर्षण का पुराणकथन एक ही वर्ष में संपन्न हुये थे। यह जानकारी विभिन्न पुराणों में प्राप्त उनके रचनाकाल से काफी विभिन्न प्रतीत होती है। पुराणों में प्राप्त जानकारी के अनुसार, प्रमुख पुराणों की रचना निम्नलिखित राजाओं के राज्यकाल में हुई थी:—१. वायुपुराण—पूरु राजा असीमकृष्ण; २. ब्रह्मांड पुराण—इक्ष्वाकुवंशीय राजा दिवाकर; ३. मत्स्यपुराण—मगधदेश का राजा सेनजित् (व्यास देखिये)।

ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हैं:—

१. सूतसंहिता—रोमहर्षण के द्वारा लिखित सूत संहिता स्कंद पुराण का ही एक भाग मानी जाती है। स्कंद पुराण की कुल छः संहिताओं की रचना की गई थी, जिनके नाम निम्न थे:—१. सनत्कुमार; २. सूत; ३. शांक्पी; ४. वैष्णवी; ५. ब्राह्मी; ६. सौरी। इन छः संहिताओं में मिल कर कुल पचास खण्ड थे।

इनमें से सूत के द्वारा लिखित 'सूतसंहिता', आनंदाश्रम पूना के द्वारा प्रकाशित हो चुकी है, जो निम्नलिखित खण्डों में विभाजित है:—१. शिवमाहात्म्यखण्ड; २. ज्ञानयोगखण्ड; ३. मुक्तिखण्ड; ४. यज्ञवैभवखण्ड; (अधोभाग एवं उपरिभाग)।

इस ग्रंथ में शैवसांप्रदायान्तर्गत अद्वैत तत्त्वज्ञान का प्रतिपादन किया गया है। इस ग्रंथ पर माधवाचार्य के द्वारा लिखित एक टीका प्राप्त है। सूत के द्वारा लिखित 'ब्रह्मगीता' एवं 'सूतगीता' नामक दो ग्रंथ भी सूत संहिता में समाविष्ट हैं।

२. ब्रह्मगीता—उपनिषदों के अर्थ का विवरण करनेवाला यह ग्रंथ सूतसंहिता के यज्ञवैभवकाण्ड में समाविष्ट है। इस

ग्रंथ के कुल बारह अध्याय हैं, एवं उसमें शैवसांप्रदाय के तत्त्वों का प्रतिपादन किया गया है।

३. सूतगीता—सूत-व्याससंवादात्मक यह ग्रंथ सूत संहिता के यज्ञवैभवकाण्ड में अंतर्भूत है। इस ग्रंथ के कुल आठ अध्याय हैं, एवं उसमें शैवसांप्रदाय के मतों का प्रतिपादन किया गया है। इस ग्रंथ पर भी माधवाचार्य की टीका उपलब्ध है।

सूतजाति की उत्पत्ति—जैसे पहले ही कहा गया है, रोमहर्षण का निर्देश अनेकानेक प्राचीन ग्रंथों में 'सूत' नाम से प्राप्त है, जो वास्तव में इसके जाति का नाम था। इस जाति के उत्पत्ति के संबंध में एक कथा वायु में प्राप्त है। पृथु वैन्य राजा के द्वारा किये गये यज्ञ में, यज्ञीय ऋत्विजों के हाथों एक दोषार्ह कृति हो गई। सोम निकालने के लिए नियुक्त किये गये दिन (सुत्या), ऐन्द्र हविर्भाग में बृहस्पति का हविर्भाग गलती से एकत्र किया गया, एवं उसे इंद्र को अर्पण किया गया। इस प्रकार, शिष्य इंद्र के हविर्भाग में गुरु बृहस्पति का हविर्भाग संमिश्र करने के दोषार्ह कर्म के कारण, मिश्रजाति के सूत लोगों की उत्पत्ति हो गई।

क्षत्रिय पिता एवं ब्राह्मण माता से उत्पन्न संतान को प्रायः 'सूत' कहते थे। किन्तु कौटिलीय अर्थशास्त्र में मिश्रजाति के सूत लोग सूतवंशीय लोगों से अलग बताये गये हैं। पुराणों में इन लोगों के कर्तव्य निम्नप्रकार बताये गये हैं—

स्वधर्म एवं सूतस्य सद्भिर्दृष्टः पुरातनैः ।

देवतासामृषीणां च राज्ञां चामिततेजसाम् ॥

वंशानां धारणं कार्यं श्रुतानां च महात्मनाम् ।

इतिहासपुराणेषु दिष्टा ये ब्रह्मवादिभिः ॥

(वायु. १.२६-२८; पद्म. सू. २८) ।

(देवता, ऋषि एवं राजाओं में से श्रेष्ठ व्यक्तियों के वंशावलि को इतिहास, एवं पुराण में ग्रथित एवं संरक्षित करना, यह सूत लोगों का प्रमुख कर्तव्य है) ।

किन्तु सूतों का यह कर्तव्य उच्च श्रेणी के सूतों के लिए ही कहा गया है। इनमें से मध्यम श्रेणी के लोग श्रावकर्म करते थे, एवं नीच श्रेणी के लोग रथ, हाथी एवं अश्व का सारथ्यकर्म करते थे। इसी कारण इन लोगों को रथकार नामान्तर भी प्राप्त था।

इन तीनों श्रेणियों के सूतवंशीय लोग प्राचीन इतिहास में दिखाई देते हैं। उनमें से रोमहर्षण एवं इसका पुत्र

उग्रश्रवस् उच्चश्रेणी के सूत प्रतीत होते हैं। कीचक, कर्ण आदि राजाओं को भी महाभारत में सूतपुत्र कहा गया है। किन्तु वहाँ उनके सूत जाति पर नहीं, बल्कि उनके हीन जन्म की ओर संकेत प्रतीत होता है।

वैदिक साहित्य में राजकर्मचारी के नाते सूतों (रथपालों) का निर्देश प्राप्त है (पं. ब्रा. १९.१.४; का. सं. १५.४)। माध्वकार इसमें राजा के सारथि एवं अश्वपालक का आशय देखते हैं। एरिंग के अनुसार, ये लोग चारण एवं राजकवि थे। महाभारत में भी सूतों का निर्देश राजकीय अपद्रूत एवं चारण के रूप में आता है।

यजुर्वेद संहिता में इनके लिए 'अहन्ति' (वा. सं. १६.१८); अथवा 'अहन्य' (तै. सं. ४.५.२.१) शब्द प्रयुक्त किया गया है, जो एक साथ ही चारण एवं अपद्रूत के इनके कर्तव्य की ओर संकेत करता है। राजसेवकों में इनकी श्रेणी महिषी एवं ग्रामणी इन दोने के बीच मानी जाती थी (श. ब्रा. ५.३.१.५)।

जैमिनि अश्वमेध में सूत जाति का निर्देश सेवक जातियों में किया गया है, एवं सूत, मागध एवं बन्दिन् लोग क्रमशः प्राचीन, मृत, एवं वर्तमान राजाओं के इतिहास एवं वंशावलि संहारने का काम करते थे, ऐसा निर्देश प्राप्त है (जै. अ. ५.५.४४.१)।

इससे प्रतीत होता है कि, सुगल बादशाहों के बखरनवीस जिस प्रकार का काम करते थे, वही काम प्राचीन काल में सूत लोगों पर निर्भर था। इनके समवर्ती मागध एवं बन्दिन् लोग राजा के स्तुतिपाठक का काम ही केवल करते थे, जिस कारण वे सूत लोगों से काफी कनिष्ठ माने जाते थे। सूत एवं मागध लोगों का देश पुराणों में क्रमशः अनूर एवं मगध बताया गया है। पद्म में पृथु वैन्य राजा के द्वारा सूत, मागध, बन्दिन् एवं चारण लोगों को कलिंग देश दान में देने का निर्देश प्राप्त है (पद्म. भू. २९.)।

पद्म के अनुसार, सूत लोगों को वेदों का अधिकार प्राप्त था, एवं इनके आचारविचार भी ब्राह्मण जाति जैसे थे। मागध लोगों को वेदों का अधिकार प्राप्त न था, जो उनकी कनिष्ठता दर्शाता है।

परिवार—इसके पुत्र का नाम उग्रश्रवस् था, जिसे रोमहर्षणपुत्र, रोमहर्षणि, एवं सौति आदि नामान्तर भी प्राप्त थे (म. आ. १.१-५; सौति देखिये)।

रोहक—रोधक नामक पिशाचयोजि समूह में रहने-वाला एक पिशाच (रोधक देखिये)।

रोहिणी—चन्द्रमा की पत्नी, जो दक्ष प्रजापति की सत्ताईस कन्याओं में से एक थी। यह रूपयौवन में अपनी अन्य बहनों की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ थी, जिस कारण यह अपने पति की हृदयबलमा थी। इस कारण, इसकी बहने इससे नाराज हुईं, एवं इसके पिता दक्ष ने भी चन्द्रमा को क्षयरोगी बनने का शाप दिया (म. श. ३४.५५)। इसी प्रकार की कथा शिवपुराण में भी प्राप्त है (शिव. कोटि, १४)।

एक नक्षत्र के रूप में इसे आकाश में अक्षय्यस्थान प्राप्त हुआ था, जो इसके द्वारा किये गये गौरीव्रत का फल था (मन्वि. ब्राह्म. २१)।

परिवार—इसे बुध नामक एक पुत्र, एवं सुरूपा, हंस-काली, भद्रा एवं कामदुधा नामक चार कन्याएँ थीं।

२. वसुदेव की एक पत्नी, जो बलराम की माता थी (म. मौ. ८.१८; भा. २४.४५; पद्म. सू. १३)। बलराम का गर्भ पहले देवकी के उदर में था, जो योगमाया के कारण इसके उदर में प्रविष्ट हुआ। उस समय यह गोकुल में रहती थी (भा. १०.५-७; वसुदेव देखिये)।

कृष्णनिर्माण के पश्चात् इसने अग्निप्रवेश कर देहत्याग किया (ब्रह्म. २१२.४)। बलराम के अतिरिक्त, इसे एकानंगा नामक एक कन्या एवं रोहिताश्व नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे।

३. कृष्ण की पत्नियों में से एक।

४. एक गाय जो कश्यप एवं सुरभि की कन्याओं में से एक थी। इसकी विमला एवं अनला नामक दो कन्याएँ थी, जिनसे आगे चल कर सृष्टि के गाय एवं वृषभों का वंश उत्पन्न हुआ (म. आ. ६०.६५)।

५. हिरण्यकशिपु की पत्नी, जो भानु नामक अग्नि की कन्या थी। इसकी माता का नाम निशा था, जो भानु अग्नि की तृतीय पत्नी थी। यह 'स्विष्टकृत' मानी गयी है, जिस अशुभ कर्म के कारण यह हिरण्यकशिपु की पत्नी हो गई।

रोहित—(सू. इ.) एक सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो हरिश्चन्द्र राजा का पुत्र था। विष्णु एवं मार्कंडेय में इसे रोहिताश्व, एवं रोहितारस्य कहा गया है (मार्क. २.७-९)। इसकी माता का नाम तारामती था।

शुनःशेषाख्यान—पैतरेय ब्राह्मण में प्राप्त शुनःशेष संबंधी सुविख्यात कथा में इसका निर्देश प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ७.१४; गां. श्रौ. १५.१८.८)। हरिश्चन्द्र का यह पुत्र वरुण देवता की कृपा से उत्पन्न हुआ था। इस कृपा का बदला चुकाने के

लिए, इस बलि के रूप में प्रदान करने का आश्वासन हरिश्चन्द्र ने वरुण देवता को दिया था। अपत्यावात्सल्य के कारण, हरिश्चन्द्र अपना यह आश्वासन बाईस वर्षों तक पूरा न कर सका।

अपने पिता के आश्वासन का रहस्य ज्ञान होते ही, उससे छुटकारा पाने के लिये यह अरण्य में भाग गया। किन्तु वरुण को यह ज्ञात होते ही, उसने इसके पिता हरिश्चन्द्र के उदर में रोम उत्पन्न किया, जिसकी वार्ता सुनते ही यह अयोध्या लौट आया। किन्तु इसके पुरोहित देवराज वसिष्ठ ने इसे पुनः एकवार विजनवासी होने की सलाह दी।

इस प्रकार बाईस वर्ष जीत जाने के बाद, इसे भार्गव वंश के अजीमर्त ऋषि का मंडला पुत्र शुनःशेष आ मिला, जो सौ गायों के मोल में इसके बदले वरुण को बलि जाने लिये तैयार हुआ। तत्पश्चात् हुए यज्ञ में विश्वामित्र ने शुनःशेष की यज्ञस्तंभ से मुक्तता की, एवं उसे अपना पुत्र मान लिया (शुनःशेष देखिये; भा. ९.७.७-२५; ब्रह्म १०४)।

विश्वामित्र की दक्षिणा की पूर्ति करने के लिए, हरिश्चन्द्र ने इसे काशी नगरी के वृद्ध ब्राह्मण को बेचा था। विश्वामित्र के द्वारा ली गई सत्वपरोक्षा में, इसे सर्पदश हो कर यह मृत भी हुआ था, किन्तु पश्चात् देवताओं की कृपा से यह पुनः जीवित हुआ।

हरिश्चन्द्र के पश्चात् यह अयोध्या का राजा हुआ, जहाँ इसने रोहितपुर नामक दुर्गयुक्त नगरी की स्थापना की। वहाँ इसने काफी वर्षों तक राज्य किया। अंत में विरक्ति प्राप्त होने पर इसने रोहितपुर नगरी एक ब्राह्मण को दान में दी, एवं यह स्वर्लोक चला गया।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम चंद्रवती था, जिससे इसे हरित नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (ह. वं. १.१३)।

२. लोहित ऋषि का नामान्तर (विश्वामित्र देखिये)।
रोहितक—लोहितक देश का यवन राजा, जिसे कर्ण ने अपने दक्षिण दिग्विजय में जीता था (म. व. परि. १. क्र. २४. पंक्ति ६७)।

रोहिताश्व—(सो. वसु.) वसुदेव का रोहिणी से उत्पन्न पुत्र।

२. हरिश्चन्द्रपुत्र रोहित राजा का नामान्तर।

रोहितास्य—हरिश्चन्द्र पुत्र रोहित राजा का नामान्तर।

रोहितक—एक लोकसमूह, जिसे नकुल ने अपने राजसूययज्ञीय पश्चिम दिग्विजय के समय जीता था (म.

स. २९.४)। इसको आजकल 'रोहतक' (पंजाब) कहते हैं।

रौक्मायण (णि)—एक ब्रह्मर्षि, जो भृगुकुल का गोत्रकार था (भृगु. ३. देखिये)।

रौक्मिण्येय—एक राजा, जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१६)।

रौक्षक—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक ऋषि।

रौच्य—एक राजा, जो रौच्य नामक मन्वंतर का अधिपति था। यह रुचि राजा का पुत्र था, एवं इसकी माता का नाम मालिनी था (माकं. ९५.७) इसे देवसावर्णि नामांतर भी प्राप्त था (ब्रह्मवै. २.५४. ६४; मा. ८.१३)।

रौद्र—शुक्राचार्य के चार पुत्रों में से एक

२. कैलास एवं मंदर पर रहनेवाला एक राक्षसमूह। उत्तरखंड की यात्रा के समय, इससे सावधान रहने के लिए लोमश ऋषि ने युधिष्ठिर को कहा था।

रौद्रकर्मन्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया था (म. द्रो. १०२.९६)।

रौद्रकेतु—अंगदेश का एक ब्राह्मण, जिसकी पत्नी का नाम शारदा, एवं पुत्रों का नाम नरांतक एवं देवांतक थे।

रौद्राश्व—(सो. पुरुरवस्.) एक राजा, जो पूरु राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम पौष्टी था। इसके प्रवीर एवं ईश्वर नामक दो भाई थे।

इसे मिश्रकेशी नामक अप्सरा से ऋचेयु, अन्वग्मानु, आदि दस महाधनुर्धर पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. ८९.९-१०; ८७३)। वायु आदि पुराणों में घृताची नामक अप्सरा इसकी पत्नी बताई गयी है (वायु ९९.११९; ह. वं. १.३१; मत्स्य ४९.४; भा. ९.२०५)।

२. (सो. पुरुरवस्.) एक राजा, जो वायु के अनुसार संजाति राजा का, एवं भागवत एवं विष्णु के अनुसार अहंयाति राजा का पुत्र था।

३. एक ऋषि, जो कात्यायन ऋषि का शिष्य था। एक सुंदर स्त्री का रूप धारण कर, महिषासुर इसके तप में बाधा डालने के लिये उपस्थित हुआ, जब इसने उसे नारी के ही द्वारा ही वध होनेका झाप दिया (कालि. ६२)।

रौपसेवकि—वृश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

रौम्य—शिवगणों का एक दल, जिसे शिव के मान-सपुत्र वीरभद्र ने अपने रोमकूपों से उत्पन्न किया था (म. शां. परि. १.२८.८१-८२)।

रौसाल्य—शैल्यल्य नामक वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

रौरुकि—एक आचार्य, जो 'रौरुकि ब्राह्मण' नामक ग्रंथ का रचयिता माना जाता है।

रौहिम—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक ऋषि।

२. एक दानव, जो इंद्र का शत्रु था (ऋ. १.१०३.२; २.१२.१२; अ. वे. २०.१२८.१३)।

रौहिण वासिष्ठ—एक ऋषि, जो वसिष्ठ का वंशज था (तै. आ. १.१२.५)। रोहिणी नक्षत्र में उत्पन्न होने के कारण, इसे 'रौहिण' उपाधि प्राप्त हुई होगी।

रौहिणायन—एक आचार्य, जो शौनक ऋषि का शिष्य था (श. ब्रा. १४.७.३.२६)।

२. प्रियव्रत नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १०.३.५.१४)। 'रौहिण' का वंशज होने से, उसे यह पैतृकनाम प्राप्त हुआ होगा।

रौहिण्यायनि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

रौहित्यायनि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

रौहिदश्व—वसुमनस् नामक आचार्य का पैतृक नाम।

ल

लकुलिन्—एक शिवावतार, जो वाराहकल्प के वैवस्वत मन्वंतर के अष्टादश वें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। वायु के अनुसार शिव (महेश्वर) का यह अवतार, कृष्ण द्वैपायन व्यास, एवं वासुदेव कृष्ण का समकालीन

था (वायु २३.)। यह अवतार हाथ में डंडा (लकुट, लगुड, अथवा लकुल) धारण कर अवतीर्ण हुआ, जिस कारण इसे लकुलिन् नाम प्राप्त हुआ।

स्मशान में डाले गए एक भ्रेत के शरीर में योगमाया

से प्रविष्ट हो कर, यह कायावतार अथवा कायावरोहण नामक तीर्थ में अवतीर्ण हुआ। इसके कुशिक, गर्ग, मित्र, एवं कौशण्य नामक चार शिष्य थे, जो जाति से ब्राह्मण, वेदवेत्ता, एवं ऊर्ध्वरेतस् थे (शिव, शत. ५)। इसके इन शिष्यों ने पाशुपत नामक शिवोपासना की प्रतिष्ठापना की।

उदयपुर के उत्तर में १४ मैल पर स्थित नाथ-द्वार मंदीर में ई. स. ९७१ एक शिलालेख प्राप्त है, जहाँ भृगु ऋषि के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर लकुलिन् नामक शिवावतार भृगुकच्छ गांव में अवतीर्ण होने का निर्देश प्राप्त है। ई. स. १२९६ के 'चित्रप्रशस्ति' नामक शिलालेख में 'भट्टारक श्रीलकुलीश' नामक शिवावतार लाट देश में कारोहण नामक ग्राम में निवास करने का निर्देश प्राप्त है। मैसूर राज्य में हेमावती ग्राम में प्राप्त ई. स. ९४३ के अन्य एक शिलालेख में लकुलिन् के द्वारा मुनिनाथ चिल्लुक नाम से पुनः अवतार लेने का निर्देश प्राप्त है (डॉ. भांडारकर, वैष्णवविजय, पृ. १६६)।

डॉ. भांडारकरजी के अनुसार, लकुलिन् एक जीवित व्यक्ति था, जिसने पाशुपत नामक आद्य शैव संप्रदाय की स्थापना की। इसके वासुदेव कृष्ण का समकालीन होने के पुराणों में प्राप्त निर्देशों से प्रतीत होता है कि, पाशुपत संप्रदाय स्थापन करने की प्रेरणा इसे पांचरात्र नामक वैष्णव संप्रदाय से प्राप्त हुई थी। इसी कारण, इसका काल ई. पू. २ री शताब्दी माना जाता है (रुद्र-शिव देखिये)।

लक्ष्मणा—लक्ष्मणा नामक अप्सरा का नामान्तर।

२. दुष्यन्त राजा की पत्नी लक्ष्मणा का नामान्तर (म. आ. ८९.८७७ *; लक्ष्मणा देखिये)।

३. कृष्ण की पत्नी लक्ष्मणा का नामान्तर (लक्ष्मणा माद्रो देखिये)।

लक्ष्मण—(सो. कु.) दुर्योधन का एक पुत्र (म. उ. १६३.१४)। यह महारथि था, एवं कौरवसेना में इसकी श्रेणी 'रथसत्तम' थी।

भारतीय युद्ध में अभिमन्यु के साथ हुए युद्ध में यह परास्त हुआ था (म. भी. ५.१.८-११; ६.९.३०-३६)। अन्त में अभिमन्यु के द्वारा ही इसका वध हुआ था (म. द्रो. ४.५. १७)। वध के पूर्व, निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध कर इसने काफी पराक्रम दिखाया था:— क्षत्रदेव (म. द्रो. १३.४४); अंशु (म. क. ४.२६ *); शिवंडिपु क्षत्रदेव (म. क. ४.७७)।

प्रा. च. ९८]

२. अंगिरसकुल्येत्पन्न एक मंत्रकार।

लक्ष्मण दशरथि—राम दशरथि राजा का कनिष्ठ बन्धु, जो अयोध्या के दशरथ राजा को सुमित्रा से उत्पन्न दो पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र था। इसके कनिष्ठ बन्धु का नाम शत्रुघ्न था। किन्तु इसकी विशेष आत्मीयता अपने ज्येष्ठ सापत्न बन्धु राम दशरथि की ओर ही थी, जैसे इसके छोटे बन्धु शत्रुघ्न की सारी आत्मीयता भरत की ओर थी। इसी कारण राम एवं लक्ष्मण, तथा भरत एवं शत्रुघ्न का स्नेहभाव प्राचीन भारतीय इतिहास में बन्धुप्रेम एवं बन्धुनिष्ठा का एक उच्चतम प्रतीक बन गया है।

अपने ज्येष्ठ भाई राम के सुख एवं रक्षा के लिए तत्पर रहनेवाले एक आदर्श कनिष्ठ बन्धु के रूप में, लक्ष्मण का चरित्रचित्रण वाल्मीकिरामायण में किया गया है। इस ग्रंथ में वर्णित लक्ष्मण बृद्धों की सेवा करनेवाला, समर्थ, एवं मितभाषी है। अपने सौम्य स्वभाव, पवित्र आचरण, एवं सत्कार्यदक्षता के कारण, यह राम को अत्यंत प्रिय था (बा. रा. सुं. ३८.५९-६१)।

नाम—इसके लक्ष्मण नाम की निरुक्ति वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है। यह लक्ष्मी का वर्धन करनेवाला (लक्ष्मीवर्धन), अथवा लक्ष्मी से युक्त (लक्ष्मीसंपन्न) होने के कारण, वसिष्ठ के द्वारा इसका नाम लक्ष्मण रक्खा गया (वा. रा. वा. १८.२८; ३०)। यह सुभलक्षणी होने के कारण, इसे लक्ष्मण नाम प्राप्त होने की कथा भी कई पुराणों में प्राप्त है (पद्म. उ. २६९)। किन्तु इसके नाम की ये सारी निरुक्तियाँ कल्पनारम्य प्रतीत होती हैं।

बाल्यकाल—दशरथ राजा के पुत्रकामेष्टि यज्ञ से जो पायस कौसल्बा को प्राप्त हुआ था, उसी पायस के अंश से लक्ष्मण का जन्म हुआ था (अ. रा. बा. ३.४२)। इस कारण, लक्ष्मण बाल्यकाल से ही राम पर अत्यधिक प्रेम करता था। बाल्यकाल में राम जब मृगया खेलने जाता था, तब लक्ष्मण धनुष ले कर इसके साथ जाता था, एवं उसकी रक्षा करता था। सुबाहु एवं मारीच राक्षसों को परास्त कर, विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा करने के लिए यह भी राम के साथ गया था। इस कार्य में यशस्विता प्राप्त करने के पश्चात्, यह भी राम के साथ मिथिला नगरी में सीता स्वयंवर के लिये उपस्थित हुआ था।

वहाँ राम एवं सीता के विवाहमंडप में, इसका विवाह सीरध्वज जनक की कन्या उर्मिला से संपन्न हुआ (वा. रा. बा. ६७-७३; राम दशरथि देखिये)।

वनगमन के पूर्व— अपने पिता की वचनपूर्ति के लिए राम ने चौदह वर्षों का वनवास स्वीकार लिया। अपने पिता के द्वारा ही राम को वनगमन का आदेश दिया गया है, यह सुन कर लक्ष्मण दशरथ से अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं इसने उसकी अत्यंत कटु आलोचना की। यहीं नहीं, राम को अयोध्या के सिंहासन पर विठाने के लिए, यह अपने पिता, भाई आदि लोगों का वध करने के लिए भी सिद्ध हुआ।

किंतु राम वनवास जाने के अपने निश्चय पर अटल रहा। फिर राम के साथ वनवास जाने का अपना निश्चय प्रकट करते हुए, इसने अपनी माता सुमित्रा से कहा—

अनुरक्तोऽस्मि भावेन भ्रातरं देवि तत्त्वतः ।
सत्येन धनुषा चैव दत्तेनेष्टेन ते शपे ॥
दोसमक्षिमरण्यं वा यदि राम प्रवेक्ष्यति ।
प्रविष्टं तत्र मां देवि त्वं पूर्वमवधारय ॥
(वा. रा. अयो. २१.१६-१७)।

(राम में मेरी भक्तिपूर्ण सच्ची प्रीति है। सत्य से, धनुष से, दान से, तथा इष्ट से तेरी शपथ खाता हूँ कि, जलती हुई अग्नि में वा वन में यदि राम जायेंगे, तो तुम मुझे उनके पहले गया समझना)।

राम को पिता की आज्ञा में तत्पर देख, लक्ष्मण ने राम के साथ वनवास में जाना अपना कर्तव्य मान लिया, एवं यह वनगमन के लिए सिद्ध हुआ। राम के साथ वन जाने का हट करते हुए इसने कहा—

धनुरादाय सशरं खनित्रपिटकाधरः ।
अग्रतस्ते गमिष्यामि पन्थानमनुदर्शयन् ॥
(वा. रा. अयो. ३१.२५)।

(धनुष धारण कर, एवं हाथ में कुदासी तथा फावड़ा लिए, मैं आप लोगों का मार्ग प्रशस्त करने के लिए आगे रहूँगा)।

इसने राम से आगे कहा, ' वन में, तुम्हारे लिए कंद, मूल, फल, एवं तपस्वियों को देने के लिए होम के आवश्यक पदार्थ मैं तुम्हें ला कर दूँगा। जाग्रत तथा निद्रित अवस्था में मैं सदैव तुम्हारी ही सेवा करता रहूँगा ' (वा. रा. अयो. ३१.२६-२७)।

वनवास—वनवास के पहले दिन के अन्त में, राम ने इसे पुनः एकवार वनवास न आने की प्रार्थना की। किन्तु

इसने कहा, ' तुम्हारे वियोग में मुझे एक दिन भी रहना असंभव है; पानी के बिना मछली एक पल भर भी नहीं रह सकती है, वैसी ही मेरी अवस्था होगी (वा. रा. अयो. ५३.३१)।

वन में विचरते समय, सीता के आगे राम, एवं पीछे लक्ष्मण इस क्रम से वे चलते थे (वा. रा. अयो. ५२. ९४-९६)। यह हर प्रकार राम की सेवा करता था। यह नदियों पर लकड़ी के सेतु बाँध कर दूर स्थित नदी से पानी लाता था। राम की चित्रकूट एवं पंचवटी में स्थित पर्णशाला इसने ही बाँधी थी। (वा. रा. अयो. ९९. १०)। राम जब बाहर जाता था, तब यह सीता-संरक्षण के लिए उसके साथ रहता था।

सीताहरण—जनस्थान में स्थित पंचवटी प्रदेश में राक्षसों का प्राण्य देख कर, इसने राक्षससंग्राम करने से राम को पुनः पुनः मना किया था। आगे चल कर, राम की आज्ञा से इसने शूर्पणखा राक्षसी के नाक काट कर उसे विरुप कर दिया (वा. रा. अर. १८)। इसी कारण, क्रुद्ध हो कर, रावण ने मायामृग की सहाय्यता से सीता हरण करने के लिए जनस्थान में प्रवेश किया। मायामृग के संबन्ध में लक्ष्मण ने राम को पुनः पुनः चेतावनी दी, किन्तु राम ने इसकी एक न सुनी।

मायामृग के पीछे राम के चले जाने पर, यह सीता के संरक्षण के लिए पर्णकुटी में ही बैठा रहा। किन्तु सीता ने इसे राम के पीछे न जाने के कारण, इसकी कटु आलोचना की, जिस कारण विवश हो कर सीता को छोड़ कर इसे राम के पीछे जाना पड़ा। यही अवसर पा कर रावण ने सीता का हरण किया (राम दशरथ देखिये)।

राम से सात्वना—सीताहरण का वृत्त सुन कर, राम क्रुद्ध हो कर त्रैलोक्य को दग्ध करने के लिए तैयार हुआ। उस समय इसने राम को सात्वना दी एवं कहा—

सुमहान्यपि भूतानि देवाश्च पुरुषर्षभ ।
न दैवस्य प्रमुञ्चन्ति सर्वेभूतानि देहिनः ॥
(वा. रा. अर. ६६. ११)।

(इस सृष्टि के सारे श्रेष्ठ लोग एवं साक्षात् देव भी दैवजात दुःखों से छुटकारा नहीं पा सकते। इसी कारण इन दुःखों से कष्टी नहीं होना चाहिए)।

सीता की खोज—सीता की खोज में क्रमशः जटायु, अयोमुखी, कबंध एवं शबरी आदि से मिल कर यह, राम

के साथ पंपासरोवर के किनारे पहुँच गया। वहाँ पहुँचते ही सीता के विरह में शोक करनेवाले राम को इसने अति स्नेह के दुष्परिणाम समझाते हुए कहा, 'इस सृष्टि में प्रिय व्यक्तियों का विरह अटल है, यह जान कर तुम्हें अपने मन को कानू में रखना आवश्यक है (वा. रा. कि. १.१६)।

ऋषभक पर्वत पर रहनेवाले सुग्रीव आदि वानरों ने, सीता के द्वारा अपने उत्तरीय में बाँध कर फेंके गये अस्त्रकार इन्हें दिखाये। इस समय इसने सीता के समस्त अस्त्रकारों से केवल उसके नूपुर ही पहचान लिये, एवं कहा—

नाई जानामि केयूरे, नाई जानामि कुण्डले ।

नूपुरे खभिज्ञानामि, नित्यं पादाभिवन्दन्तः ॥

(वा. रा. कि. ६.२२)

(मैं सीता के बाहुभूषण या कुण्डल नहीं पहचान सकता। किन्तु उसके नित्यपादवेदन के कारण, उसके केवल नूपुर ही पहचान सकता हूँ।)

राम-रावण-युद्ध—राम-रावण युद्ध में राम का युद्ध-निपुण सलाहगार एवं मंत्री का कार्य यह निभाता रहा। युद्ध के शुरू में ही रावणपुत्र इंद्रजित् ने राम एवं लक्ष्मण को नागपाश में बाँध लिया, एवं इन्हें मूर्च्छित अवस्था में युद्धभूमि में छोड़ कर बह चला गया (वा. रा. यु. ४२-४६)। बाद में होश में आने पर, राम ने लक्ष्मण को मूर्च्छित देख कर, एवं इसे मृत समझ कर अत्यधिक विलाप करते हुए कहा,—

शक्या सीतासना नारी मर्त्यलोके विचिन्वता ।

न लक्ष्मणसमो भ्राता सचिवः सांपरायिकः ॥

(वा. रा. यु. ४९.६)

(इस मृत्युलोक में सीता के समान स्त्री दैववशात् मिलना संभव है। किन्तु मंत्री के समान कार्य करनेवाला, एवं युद्ध में निपुण लक्ष्मण जैसा भाई मिलना असंभव है)।

पश्चात् गरुड के आने पर राम एवं लक्ष्मण नागपाश से विमुक्त हो कर, युद्ध के लिए पुनः सिद्ध हुये।

इंद्रजित्-वध—रावण के पुत्र इंद्रजित् के साथ राम एवं लक्ष्मण ने छः बार युद्ध किया। इनमें से पहले तीन बार इंद्रजित् के द्वारा अदृश्य युद्ध किये गये। चौथे युद्ध के पूर्व इंद्रजित् ने इस युद्ध में अजेय बनने के लिए यज्ञ प्रारंभ किया। किन्तु उस यज्ञ में बाधा डालने के लिए लक्ष्मण ने हनुमत्, अंगद आदि वानरों को साथ लें

कर इंद्रजित् के सेना का संहार किया। उस समय अपना यज्ञ अधुरा छोड़ कर, वह लक्ष्मण के साथ द्रंद्रयुद्ध करने के लिए युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ। इंद्रजित् के इस पंचम युद्ध में, लक्ष्मण ने उसके सारथि का वध किया, एवं उसे पैदल ही लंका को भाग जाने पर विवश किया।

इंद्रजित् के साथ हुए अंतिम छठे युद्ध में, लक्ष्मण ने एक वटवृक्ष के नीचे ऐंद्र अस्त्र से उस का वध किया, जिस समय वह निकुम्बिला के मंदिर से होम समाप्त कर बाहर निकल रहा था (वा. रा. यु. ८५-८७; म. व. २७३.१६-२६)। इंद्रजित् का वध करना अत्यधिक कठिन था। किन्तु विभीषण की सहायता से, इंद्रजित् का अतु-घ्नान पूर्ण होने के पूर्व ही उसका वध करने में यह यशस्वी हुआ। इंद्रजित् की मृत्यु से राम-रावण युद्ध का सारा रंग ही बदल गया।

इंद्रजित् को ब्रह्मा से यह वरदान प्राप्त था कि, वह उसी व्यक्ति के द्वारा ही मर सकता है, जो बारह वर्ष तक आहार निद्रा लिये बगैर रहा हो। अयोध्यात्याग के उपरान्त वनवास के बारह वर्षों में, लक्ष्मण आहार-निद्रारहित अवस्था में रहा था, जिस कारण यह इंद्रजित् का वध कर सका (आ. रा. सार. ११)। इंद्रजित् के वध के पश्चात्, लक्ष्मण ने उसका दाहिना हाथ काट कर उसके घर की ओर फेंक दिया, एवं बाया हाथ रावण की ओर फेंक दिया। पश्चात् इसके द्वारा काटा गया इंद्रजित् का सर इसने राम को दिखाया (आ. रा. १.११.१९०-१९८)।

राक्षससंहार—इंद्रजित् के अतिरिक्त लक्ष्मण ने निम्न-लिखित राक्षसों का भी वध किया था—विरुपाक्ष (वा. रा. यु. ४३); अतिकाय (वा. रा. यु. ६९-७१)। महाभारत के अनुसार कुंभकर्ण का वध भी लक्ष्मण के द्वारा हुआ था (म. व. २७१.१७; स्कंद. सेतुमहात्म्य. ४४)। किन्तु काल्मीकिरामायण के अनुसार, कुंभकर्ण का वध राम के द्वारा ही हुआ था।

रावण से युद्ध—इंद्रजित् के पश्चात्, रावण स्वयं युद्धभूमि में उतरा, जिस समय लक्ष्मण ने विभीषण के साथ उसका सामना किया। इस युद्ध में रावण ने विभीषण की ओर एक शक्ति फेंकी, जिसे लक्ष्मण ने छिन्नविच्छिन्न कर दिया। पश्चात् रावण के द्वारा फेंकी गयी अमोघा शक्ति इसके छाती में लगी, जिससे यह मूर्च्छित हुआ। राम ने लक्ष्मण के छाती में घुसी हुई उस शक्ति को निकाल दिया, एवं

सुपेण तथा हनुमत् के साहाय्य से यह पुनः स्वस्थ हुआ (वा. रा. सु. १०२)।

सीतात्याग—राम को अयोध्या का राज्य पुनः प्राप्त होने पर, उसने लोकनिंदा के कारण, सीता का त्याग करने का निश्चय किया। उस समय, राजा के नाते उसका कर्तव्य बताते समय लक्ष्मण ने कहा, 'सृष्टि का यही नियम है कि, यहाँ संयोग का अन्त वियोग में, एवं जीवन का अन्त मृत्यु में होता है। पत्नी, पुत्र, मित्र एवं संपत्ति में अधिक आसक्ति रखने से दुःख ही दुःख उत्पन्न होता है। इसी कारण वियोग से उत्पन्न होनेवाले दुःख से भी कर्तव्य अधिक श्रेष्ठ है।

मृत्यु—लक्ष्मण के देहत्याग के संबंध में अनेक कथा वाल्मीकि रामायण में प्राप्त हैं। एक बार कालपुरुष एक तपस्वी के रूप में राम के पास आया, एवं उसने राम से यह प्रतिज्ञा करा ली कि, वह उससे एकांत में बात-चित्त करेगा, जहाँ अन्य कोई व्यक्ति न हो। तब राम ने लक्ष्मण को द्वार पर खड़ा किया, एवं आज्ञा दी कि जो व्यक्ति अंदर आयेगा उसका वध किया जायेगा (वा. रा. उ. १०३.१३)।

एकांत में कालपुरुष ने राम को ब्रह्मा का संदेश विदित किया कि, रामावतार की समाप्ति समीप आ रही है। इतने में दुर्वासस् ऋषि लक्ष्मण के पास आये। उन्होंने राम से उसी समय मिलने की इच्छा की, एवं कहा, 'अगर मेरी यह इच्छा पूर्ण न होगी, तो राम, उसके तीन बन्धु एवं उनकी संतति को मैं शपथ से नष्ट कर दूँगा'। लक्ष्मण ने वंशनाश की अपेक्षा अपना ही नाश स्वीकरणीय समझा, एवं दुर्वासस् को राम के पास जाने के लिए अनुज्ञा दी। पश्चात् राम ने अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार, लक्ष्मण को देहत्याग करने की आज्ञा दी (वा. रा. उ. १०६.१३)।

इस पर लक्ष्मण ने सरयू नदी के तट पर जा कर, एवं योगमार्ग से श्वास का निरोध कर देहत्याग किया (वा. रा. उ. १०६)। इसकी मृत्यु के पश्चात् स्वयं इंद्र ने इसका शरीर स्वर्ग में ले लिया, एवं वहाँ उपस्थित देवताओं ने इसे विष्णु का चतुर्थीय मान कर इसकी पूजा की (वा. रा. उ. १०३-१०६)। इसने जहाँ देहत्याग किया, वहाँ 'सहस्रधारा' नामक तीर्थ का निर्माण हुआ (स्कंद. २.८.२)।

हिमालय की तराई में हृषिकेश नामक स्थान में एक मंदिर है, जहाँ लक्ष्मण-शला नामक एक पूल है। इस स्थान

के संबंध में एक कल्पनामय कथा प्राप्त है। लक्ष्मण स्वयं शेषनाग का अवतार था, एवं रावणपुत्र इंद्रजित् की पत्नी सुलोचना शेषनाग की ही कन्या थी। इस कारण, एक दृष्टि से इंद्रजित् इसका दामात होता था। राम-रावण युद्ध में अपने दामात इंद्रजित् का वध करने का जो पाप इसे लगा, उसके निष्कृति के लिए इसने हृषिकेश में एक हजार वर्षों तक शायुभक्षण कर के तप किया। लक्ष्मण के इस तपश्चर्या के स्थान में ही इसका यह मंदिर बनवाए जाने की लोकश्रुति प्राप्त है।

परिवार—अपनी उर्मिला नामक पत्नी से इसे अंगद एवं चंद्रकेतु नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए (वा. रा. उ. १०२; राम दशरथि देखिये)।

चरित्र-चित्रण—लक्ष्मण परमक्रोधी, शूरवीर था, एवं राम के प्रति अटूट भक्तिभावना रखता था। इसका क्रोधी स्वभाव दर्शानेवाले अनेक प्रसंग वाल्मीकिरामायण में प्राप्त हैं, जिनमें निम्नलिखित तीन प्रमुख हैं:—

(१) दशरथ की आलोचना—राम के वनगमन के संबंध में अपने पिता दशरथ की आज्ञा सुन कर इसने दशरथ राजा की अत्यंत कटु आलोचना की।

(२) भरत से भेंट—राम के वनवासकाल में, भरत जब उससे मिलने आया, तब उसे शत्रु समझ कर, यह उससे युद्ध करने के लिए, प्रवृत्त हुआ।

(३) सुग्रीव की आलोचना—वालिबध के पश्चात्, राम को दी गयी अपनी आन भूल कर सुग्रीव विलास आदि में निमग्न हुआ। उस समय लक्ष्मण ने राम का संदेश सुना कर उसकी अत्यन्त कटु आलोचना की, एवं यह सुग्रीव का वध करने के लिए प्रवृत्त हुआ। किन्तु सुग्रीवपत्नी तारा ने इसका राग शान्त किया। इन सारे प्रसंगों से लक्ष्मण के क्रोधीस्वभाव पर काफी प्रकाश पड़ता है। किन्तु इसकी क्रोधभावना अन्याय के प्रतिकार के लिए अथवा राम की रक्षा के लिए ही प्रकट होती थी।

मानस-में—तुलसी के 'रामचरित मानस' में लक्ष्मण राम का अभिन्न संगी है। इस कारण लक्ष्मण का चरित्र राम से किसी प्रकार भिन्न नहीं है। इसके हृदय में भक्ति, ज्ञान एवं कर्मयोग की त्रिवेणी प्रवाहित होती हुई प्रतीत होती है—

बंदउँ लछिमन पद जल जाता, सीतल सुभग सुखदाता।
रघुपति कीरति विमल पताका, देउ समान भयउ जस राका॥
(मानस. भा. १६.५-६)।

तुलसीद्वारा चित्रित लक्ष्मण एक तेजःपुंज वीर है। वह स्वभाव से उग्र एवं असहिष्णु ज़रूर है, किन्तु इसका क्रोध राम के प्रति इसके अनन्य सेवाव्रत एवं उत्कट अनुराग से प्रेरित है। इसी कारण इसका असहिष्णु स्वभाव मोहक लगता है।

लक्ष्मणा—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं मुनि की कन्या थी। अर्जुन के जन्मोत्सव में इसने नृत्य किया था (म. आ. ११४.५१)। पाठभेद—‘लक्षणा’।

२. दुर्योधन की एक कन्या, जिसके स्वयंवर में श्रीकृष्ण पुत्र सायं ने इसका हरण किया था (भा. १०.६८.१; कलराम एवं सायं देखिये)।

३. दुष्यन्त राजा की प्रथम पत्नी (म. आ. ८९. ८७७*)। इसे लाक्षी नामान्तर भी प्राप्त था। इसके पुत्र का नाम जममेजय था।

लक्ष्मणा-माद्री—मद्र देश के बृहत्सेन राजा की कन्या, जो कृष्ण के पटरानियों में से एक थी (पद्म. सु. १३)। इसे लक्षणा नामान्तर भी प्राप्त था (म. स परि. १. क्र. २१. पंक्ति. १२५५-१२५६)।

स्वयंवर—द्रौपदीस्वयंवर के भौति इसके स्वयंवर की भी रचना की गई थी। इसके स्वयंवर की शर्त थी कि, उपर दैगी मल्लखी की छाया नीचे रखे जलपात्र में देख कर जो शरसंधान करेगा, उसीके साथ इसका विवाह होगा।

लक्ष्मणा के स्वयंवर में श्रीकृष्ण के अतिरिक्त जरासंध, अंबुष्ठ, शिशुपाल, भीम, दुर्योधन, कर्ण, अर्जुन आदि महाधनुर्धर उपस्थित थे। किन्तु उनमें से कोई भी वीर मत्स्यभेद में सफल न हुए। अर्जुन का वाण भी मत्स्य-संधान न कर सका, एवं मत्स्य को स्पर्श करता हुआ उपर से निकल गया। अन्त में मत्स्य का भेद कर, कृष्ण ने इसका हरण किया, एवं इसे अपनी आठ पटरानियों में एक स्थान दिया।

परिवार—इसे निम्नलिखित दस पुत्र थे:— प्रद्योष, गानक, सिंह, बल, प्रबल, ऊर्ध्वग, महाशक्ति, सह, ओन्न एवं अपराजित (भा. १०.५८.५७; ६१.१५)।

लक्ष्मण्य—श्वन्य नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ. ५.३३.१०)।

लक्ष्मी—समुद्र से प्रकट हुई एक देवी, जो भगवान् विष्णु की पत्नी मानी जाती है।

ऐश्वर्य का प्रतीकरूप देवता मान कर, ऋग्वेदिक आसूक्त में इसका वर्णन किया गया है। समृद्धि, संपत्ति, आयुरारोग्य

पुत्रपौत्रादि परिवार, धनधान्यविपुलता आदि की प्राप्ति के लिए लक्ष्मी एवं श्री की उपासना की जाती है। इसी कारण श्रीसूक्त में प्रार्थना की गयी है—

यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥ २ ॥

(सुवर्ण, गायें, अश्व एवं चाकरनौकर आदि परिवार से युक्त लक्ष्मी मुझे प्राप्त हो)।

धनधान्यादि भौतिक संपत्ति (धनलक्ष्मी) ही नहीं, बल्कि सैन्यसंपत्ति (सैन्यलक्ष्मी) का भी लक्ष्मी में ही समावेश किया जाता था—

अश्वपूर्वा रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम्।

श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मां देवी लुपताम् ॥ ३ ॥

(अश्व, रथ, हाथी आदि से सुसज्जित सैन्य का रूप धारण करनेवाली लक्ष्मी मुझे प्राप्त हो, एवं उसका निवास चिरंतन मेरे घर में ही हो)।

लक्ष्मीदेवता की उष्कांति—ऐश्वर्य प्रदान करनेवाले ‘लक्ष्मी’ देवता की कल्पना अथर्ववेदकालीन है। उस ग्रंथ में अनेक ‘भावानामक’ देवताओं का निर्देश प्राप्त है, जिनकी उपासना से प्रेम, विद्या, बुद्धि, वाक्चानुर्ष आदि इच्छित सिद्धिओं का लाभ प्राप्त होता है। अथर्व-वेद में निर्दिष्ट ऐसी देवताओं में काम (प्रेमदेवता), सरस्वती (विद्या), मेधा (बुद्धि), वाक् (वाणी) आदि देवता प्रमुख हैं, जिनमें ऐश्वर्य प्रदान करनेवाली लक्ष्मी देवता का प्रमुखता से निर्देश किया गया है।

स्वरूपवर्णन—श्रीसूक्त में लक्ष्मी का स्वरूपवर्णन प्राप्त है, जहाँ इसे हिरण्यवर्णा, पद्मस्थिता, पद्मवर्णा, पद्म-मालिनी, पुष्करिणी, आदि स्वरूपवर्णनात्मक विशेषण प्रयुक्त किये गये हैं। वाल्मीकि रामायण में प्राप्त इसके स्वरूपवर्णन में, इसे शुभ्रवस्त्रधारिणी, तरुणी, सुकृतधारिणी, कुंचितकेशा, चतुर्हस्ता, सुवर्णकान्ति, मणिमुक्तादिभूषिता कहा गया है (वा. रा. भा. ४५)। पुराणों में वर्णित लक्ष्मी कमलासना, कमलहस्ता, एवं कमलमालाधारिणी है। ऐरावतों के द्वारा सुवर्णपात्र में लाये हुए तीर्थजल से यह स्नान (सुस्नात) करती है, एवं सदैव विष्णु के वक्षःस्थल में रहती है (विष्णु. १.९.१८-१०५)।

निवासस्थान—लक्ष्मी क्षीरसागर में अपने पति श्रीविष्णु के साथ रहती है, एवं अपने अन्य एक अवतार राधा के रूप में कृष्ण के साथ गोलोक में रहती है (राधा देखिये)।

महाभारत में लक्ष्मी के 'विष्णुपत्नी लक्ष्मी' एवं 'राज्य-लक्ष्मी' ऐसे दो प्रकार बताये गये हैं। इनमें से लक्ष्मी हमेशा विष्णु के पास रहती है, एवं राज्यलक्ष्मी राजा एवं पराक्रमी लोगों के साथ घूमती है, ऐसा निर्देश प्राप्त है।

लक्ष्मी का निवासस्थान कहाँ रहता है, इसका रूप-कात्मक दिग्दर्शन करनेवाली अनेकानेक कथाएँ महा-भारत एवं पुराणों में प्राप्त हैं, जिनमें निम्नलिखित कथाएँ प्रमुख हैं—

(१) लक्ष्मी-प्रल्हादसंवाद—असुरराज प्रल्हाद ने एक ब्राह्मण को अपना शील प्रदान किया, जिस कारण क्रमानुसार उसका तेज, धर्म सत्य, वृत्त, बल एवं अंत में उसकी लक्ष्मी उसे छोड़ कर चले गये। तत्पश्चात् लक्ष्मी ने प्रल्हाद को साक्षात् दर्शन दे कर उपदेश दिया, 'तेज, धर्म, सत्य, वृत्त, बल एवं शील आदि मानवी गुणों में मेरा निवास रहता है, जिन में से शील अथवा चारित्र्य मुझे सबसे अधिक प्रिय है। इसी कारण सच्चील आदमी के यहाँ रहना मैं सबसे अधिक पसंद करती हूँ। 'शील परं भूषणम्, इस उक्ति का भी यही अर्थ है' (म. शां. १२४.४५-६०)।

(२) लक्ष्मी-इंद्रसंवाद—असुरराज प्रल्हाद के समान, उसका पौत्र बलि का भी लक्ष्मी ने त्याग किया। बलि का त्याग करने की कारणपरंपरा इंद्र से बताते समय लक्ष्मी ने कहा, 'पृथ्वी के सारे निवासस्थानों में से भूमि, (चित्त) जल (तीर्थोदि), अग्नि (यज्ञादि) एवं विद्या (ज्ञान) ये चार स्थान मुझे अत्यधिक प्रिय हैं। सत्य, दान, व्रत, तपस्या, पराक्रम, एवं धर्म जहाँ वास करते हैं, वहाँ मेरा भी निवास रहता है। देवब्राह्मणों से नम्रता के साथ व्यवहार करनेवाला मनुष्य मुझे अत्यधिक प्रिय है'।

लक्ष्मी ने आगे कहा, 'चोरी, वासना, अगवित्रता, एवं अशांति से मैं अत्यधिक वृणा करती हूँ, जिनके आधिक्य के कारण क्रमशः भूमि, जल, अग्नि, एवं विद्या में स्थित मेरे प्रिय निवासस्थानों का मैं त्याग कर देती हूँ।

'बलि दैत्य ने उच्छिष्टभक्षण किया, एवं देवब्राह्मणों का विरोध किया, जिस कारण वह मेरा अत्यंत प्रिय व्यक्ति हो कर भी, आज मैं उसका त्याग कर रही हूँ' (म. शां. २१)।

(३) लक्ष्मी-रुक्मिणीसंवाद—लक्ष्मी के निवासस्थान से संबंधित एक प्रश्न युधिष्ठिर ने भीष्म से पूछा था, जिसका जवाब देते समय भीष्म ने लक्ष्मी एवं रुक्मिणी

के दरम्यान हुए एक संवाद की जानकारी युधिष्ठिर को दी (म. अनु. ११)।

इस जानकारी के अनुसार, लक्ष्मी ने रुक्मिणी से कहा था, 'सृष्टि के सारे लोगों में प्रगल्भ, भाषणकुशल, दक्ष, निरलस, आस्तिक, अक्रोधन, कृतज्ञ, जितेंद्रिय, वृद्धजनों की सेवा करनेवाले (वृद्धसेवक), सत्यनिष्ठ, शांत स्वभाववाले (शांत), एवं सदाचारी लोग मुझे सब से अधिक प्रिय हैं, जिनके यहाँ रहना मैं विशेष पसंद करती हूँ।

'निलंबज, कलहप्रिय, मिद्राप्रिय, मलीन, अशांत, एवं असमाधानी लोगों का मैं अतीव तिरस्कार करती हूँ, जिस कारण ऐसे लोगों का मैं त्याग करती हूँ'।

महाभारत में अन्यत्र प्राप्त जानकारी के अनुसार, गांधे एवं गोबर में भी लक्ष्मी का निवास रहता है (म. अनु. ८२)।

जन्म—देवासुरों के द्वारा किये गये समुद्रमंथन से, चंद्र के पश्चात् लक्ष्मी का अवतार हुआ (म. आ. १६.३४; विष्णु. १.८.५; भा. ८.८.८; पद्म. सू. ४)। इस 'अयोनिज' देवता को ब्रह्मा ने श्रीविष्णु को प्रदान किया, एवं विष्णु ने इसे पत्नी के रूप में स्वीकार किया। पश्चात् यह उसके सन्निधि श्रीरसागर में निवास करने लगी।

ब्रह्मन् के पुत्र भृगु ऋषि की कन्या के रूप में लक्ष्मी पृथ्वीलोक में पुनः अवतीर्ण हुई। इस समय, दक्षकन्या ख्याति इसकी माता थी (विष्णु. १.८)। कालोपरान्त इसका विवाह विष्णु के एक अवतार नारायण से हुआ, जिससे इसे बल एवं उन्माद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए।

ब्रह्मवैवर्त के अनुसार, विष्णु के दक्षिणांग से लक्ष्मी का, एवं वामांग से लक्ष्मी के ही अन्य एक अवतार राधा का जन्म हुआ (ब्रह्मवै. २.४७.४४)।

भृगु से वरदान—विष्णु के वक्षस्थल में लक्ष्मी का निवासस्थान कैसे हुआ, इस संबंध में एक रूपकात्मक कथा पुराणों में प्राप्त है।

स्वार्थभुव मनु के यज्ञ के समय, ब्रह्मा, विष्णु, महेश इन तीन देवों में से श्रेष्ठ कौन, इसका निर्णय करने का कार्य भृगु ऋषि पर सौंपा गया। इस संबंध में जाँच लेने के लिए तीनों देवों के पास भृगु स्वयं गया। उस समय, ब्रह्मा एवं शिव ने भृगु का वृत्ती प्रकार से अपमान किया। केवल विष्णु ने ही भृगु का उचित आदरसंकार किया, एवं भृगु के द्वारा छाती पर किया गया लज्जाप्रहार

भी शांति से स्वीकार कर, उसे 'श्रीवत्सलाञ्जन' के रूप में अपने वक्षःस्थल पर धारण किया (भा. १०.८९. १-१२)। इस कारण, भृगु अत्यधिक प्रसन्न हुआ, एवं उसके द्वारा दिये गये 'श्रीवत्सलाञ्जन' के रूप में लक्ष्मी हमेशा के लिए श्रीविष्णु के वक्षःस्थल पर निवास करने लगी।

ब्रह्मा, विष्णु, महेशादि देवों से भी भृगु जैसे ब्राह्मण अधिक श्रेष्ठ है, एवं पृथ्वी के लक्ष्मी के जनक भी वे ही हैं, ऐसा उपयुक्त रूपकात्मक कथा का अर्थ प्रतीत होता है। वास्तव श्रीविष्णु को लक्ष्मी प्रदान करनेवाले भृगु ऋषि की इस कथा से ही, ब्राह्मणों की सेवा पूजन आदि से लक्ष्मी प्राप्त होती है, यह जनश्रुति का जन्म हुआ होगा।

भृगु का शाप—एक बार लक्ष्मी ने लक्ष्मीनगर नामक नगर का निर्माण कर, जो इसने अपने पिता भृगु ऋषि को प्रदान किया। कालोपरांत इसने भृगु से वह नगर लौट लेना चाहा, किंतु उसने एक बार प्राप्त हुआ नगर लौट देने से इन्कार कर दिया। इसी संबंध में मध्यस्थता करने के लिए आये हुए श्रीविष्णु की भी भृगु ने एक न सुनी, एवं क्रुद्ध हो कर उसे शाप दिया, 'पृथ्वी पर दस मानवी अवतार लेने पर तुम विवश होंगे' (पद्म.सू. ४)।

भृगु ऋषि के उपयुक्त शाप के अनुसार, विष्णु ने पृथ्वी पर दस अवतार लिये, जिन समय लक्ष्मी ने पत्नी-धर्म के अनुसार दस अवतार ले कर श्रीविष्णु को साथ दिया।

लक्ष्मी के अवतार—लक्ष्मी के इन दस अवतारों में निम्नलिखित अवतार प्रमुख हैं :—१. कमल्लोद्भव लक्ष्मी (वामनावतार); २. भूमि (परशुरामवातार); सीता (रामावतार); ४. रुक्मिणी (कृष्णावतार) (विष्णु. १.९. १४०-१४१; भा. ५.१८.१५; ८.८.८)।

ब्रह्मवैवर्त में लक्ष्मी के अवतार विभिन्न प्रकार से दिये गये हैं। वहाँ निर्दिष्ट लक्ष्मी के अवतार, एवं उनके प्रकट होने के स्थान निम्नप्रकार हैं :—१. महालक्ष्मी (वैकुण्ठ) २. स्वर्गलक्ष्मी (स्वर्ग); ३. राधा (गोलोक); ४. राजलक्ष्मी (पाताल, मूलोक); ५. गृहलक्ष्मी (गृह); ६. सुरभि (गोलोक); ७. दक्षिणा (यज्ञ); ८. शोभा (वस्तुमात्र) (ब्रह्म. २. ३५)। महालक्ष्मी के अवतार में, भृगुऋषि के शाप के कारण, इसे हाथी का शीर्ष प्राप्त हुआ था, जिसे काट कर ब्रह्मा ने इसे महालक्ष्मी नाम प्रदान किया था (सं. ६.८५)।

पद्म में गोकुल की भानु ग्वाले की कन्या राधा को भी लक्ष्मी का ही अवतार कहा गया है। राधा जन्म से ही अंधी, गुंगी एवं लली थी, किंतु उसे लक्ष्मी का अवतार जान कर, नारद ने उसका दर्शन लिया था (पद्म. पा. ७१)।

लक्ष्मी के दोष—ब्रह्म में लक्ष्मी एवं दरिद्रता (अलक्ष्मी) के दरम्यान हुआ एक कल्पनारम्य संवाद प्राप्त है, जो गोदावरी नदी के तट पर स्थित लक्ष्मीतीर्थ का माहात्म्य बताने के लिए दिया गया है (ब्रह्म. १३७)। इस संवाद में लक्ष्मी की अत्यंत कटोर शब्दों में निर्मत्सना की गई है।

एक बार लक्ष्मी एवं अलक्ष्मी के दरम्यान श्रेष्ठ कौन इस संबंध में संवाद हुआ था। इस समय लक्ष्मी ने अपना श्रेष्ठत्व बताते हुए कहा, 'मैं जिसके साथ रहूँ, उसका इस संसार में सर्वत्र सत्कार होता है, एवं मेरे अनुपस्थिति में निर्धन एवं याचक लोगों का सर्वत्र अवहेलना होती है। इस दुर्गति से शिव जैसा देवाधिदेव भी न बच सका, जिस कारण उसकी सर्वत्र उपेक्षा एवं अवहेलना हुई'।

इस पर लक्ष्मी के दोष बताते हुए अलक्ष्मी ने कहा, 'तुम सदैव पापी, विश्वासघाती, एवं दुराचारी लोगों में रहती हो, तथा मद्य से भी अधिक अनर्थ पैदा करती हो। रात्रिशित, पापी, खल, निष्ठुर, लोभी एवं कायर लोगों के घर तुम्हारा निवास रहता है, एवं अनार्य, कृतघ्न, धर्मघातकी, मित्रद्रोही एवं अविचारियों से तुम्हारी उपासना की जाती है'।

अलक्ष्मी ने आगे कहा, 'मेरा निवास धर्मशील, पापभीरु, कृतज्ञ, विद्वान् एवं साधु लोगों में रहता है, एवं पवित्र ब्राह्मण, संन्यासी एवं श्वेयनिष्ठ लोगों से मेरी उपासना की जाती है। इसी कारण काम, क्रोध, औद्धत्य आदि तामसी विकारों को मैं दूर रखती हूँ, एवं अपने भक्तों को मुक्ति प्रदान करती हूँ' (ब्रह्म. १३७)।

भर्तृहरि के अनुसार, उपयुक्त संवाद में लक्ष्मी एवं अलक्ष्मी का संकेत संज्ञता एवं दरिद्रता से नहीं, किन्तु लक्ष्मी की तामस उपासना करनेवाले बुभुक्षित लोग एवं दरिद्रता में ही तृप्त रहनेवाले सात्विक लोगों की ओर अभिप्रेत है।

परिवार—विष्णु से इसे बल एवं उन्माद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे। श्रीसूक्त में इसके निम्नलिखित पुत्रों का निर्देश प्राप्त है:— आनंद, कर्दम, श्रीद और चिह्नित।

इसके धातृ एवं विधातृ नामक दो भाई भी थे, जो इसीके तरह भृगु ऋषि एवं ख्याति के पुत्र थे।

लक्ष्मीप्रद सूक्त—इन सूक्तों में निम्नलिखित दो ग्रंथ प्रमुख माने जाते हैं:— १. श्रीसूक्त (ऋ. परि. ११) । २. इंद्रकृत लक्ष्मीस्तोत्र, जो विष्णु पुराण में प्राप्त है (विष्णु. १.९.११५-१३७) ।

२. दक्ष प्रजापति की एक कन्या, जो धर्मप्रजापति की पत्नी थी (म. आ. ६०-१३) ।

३. वीर नामक ब्राह्मण की पत्नी, जो अपने पूर्वजन्म में लोण्डमान नामक राजा की पद्मा नामक पत्नी थी (भीम. २४. देखिये) ।

लक्ष्मीनिधि—सीता का बंधु (पद्म. पा. ११) ।

लगध—एक ग्रंथकार, जो ' ऋग्वेदी वेदांग ज्योतिष ' का कर्ता माना जाता है । इसके नाम के लिए कई ग्रंथों में ' लगध ' पाठभेद भी प्राप्त हैं । किन्तु कै. शं. वा दिक्षित के अनुसार, ' लगध ' पाठभेद ही स्वीकरणीय है (दिक्षित, भारतीय ज्योतिष पृ. ७२) ।

वेदांग ज्योतिष—वेदांगज्योतिष का समावेश छः वेदांगों में सर्वतोपरि माना जाता है, जिस प्रकार मयुरों की शिखाएँ एवं नागों की मणियाँ सर्वोपरि रहती हैं—

यथा शिखा मयुराणां नागानां मणयो यथा ।

तद्वेदेदांगज्ञाणां ज्योतिषं मूर्धनि स्थितम् ॥

(वे. ज्यो. श्लोक ४)

भारतीय ज्योतिषशास्त्र का मूल ग्रंथ ' वेदांगज्योतिष ' माना जाता है, जिससे आंग चल कर, ज्योतिषशास्त्र ने संहिता, गणित एवं जातक इन तीन भागों में अपना विकास किया । आयमष्ट, वराहमिहिर, ब्रह्मगुप्त एवं भास्कराचार्य जैसे ज्योतिर्विदों ने इस शास्त्र को अभिनव रूप प्रदान किया ।

ऐसे महान् शास्त्रों को जन्म देनेवाले ' ऋग्वेदी वेदांग-ज्योतिष ' ग्रंथ में केवल ३६ श्लोक हैं । इसी ग्रंथ का ' यजुर्वेद वेदांगज्योतिष ' नामक एक अन्य संस्करण प्राप्त है, जिसमें ४३ श्लोक प्राप्त हैं । उनमें से ३६ श्लोक ऋग्वेद-वेदांगज्योतिष के, एवं ७ श्लोक नये हैं । मैक्स म्यूलर के अनुसार, इस छोटे ग्रंथ का उद्देश्य ज्योतिष की शिक्षा देना नहीं है, बल्कि आकाशीय ग्रह आदि के बारे में वह ज्ञान प्रदान करना है, जो वैदिक यज्ञों के दिन एवं मुहूर्त के निश्चयार्थ आवश्यक है ।

जन्मस्थान—वेदांगज्योतिषशास्त्र का प्रणयन करनेवाला लगध एक भारतीय व्यक्ति था, या विदेशी, इसके बारे में निश्चित जानकारी अप्राप्य है । इस ग्रंथ में लगध का जन्मस्थान ३४।४६ अथवा ३४।५५ अक्षांश पर

निर्दिष्ट है, जिससे प्रतीत होता है कि, यह उत्तर काश्मीर अथवा अफगाणिस्थान का निवासी था ।

कालनिर्णय—इस ग्रंथ में बतायी गई विषुवस्थिति के आधार पर कै. शं. वा. दिक्षित ने इस ग्रंथ का काल पाणिनि एवं यास्क के पूर्व अर्थात् ई. पू. १४०० निश्चित किया है (दिक्षित, भारतीय ज्योतिष पृ. ८८; पाणिनि देखिये) । किन्तु कई अन्य अभ्यासकों के अनुसार, तारों के सापेक्ष सूत्रों की स्थिति के आधार पर इस ग्रंथ का रचनाकाल का अनुमान लगाना योग्य नहीं है । इसी कारण, कई अन्य अभ्यासकों ने इसका कालनिर्णय निम्न प्रकार दिया है:— १. मैक्सम्यूलर—ई. पू. ३ वीं शताब्दी; २. वेबर—ई. पू. ५ वीं शताब्दी; ३. लोकमान्य तिलक—ई. पू. १२६९-११८१ (ओरायन. पृ. ३७-३८); ४. विल्यम जोन्स—ई. पू. ११८१; ५. कोल्लरूक— ई. पू. १३८१; ६. चिं. वि. वैद्य—ई. पू. १२०० ।

ऋग्वेद वेदांगज्योतिष का अंग्रेजी अनुवाद प्रो. थियो के द्वारा ई. स. १८८९ में प्रकाशित किया गया है । ऋग्वेद एवं यजुर्वेद वेदांगज्योतिष का मराठी अनुवाद ई. स. १८८५ में प्रसिद्ध हो चुका है, जो कै. ज. वा. मोडक के द्वारा किया गया है ।

लघु—(सो. यदु) एक राजा, जो वायु के अनुसार यदु राजा का पुत्र था ।

लघ्विन्—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

लज्जा—दक्षप्रजापति की एक कन्या, जो धर्मप्रजापति की पत्नी थी । (म. आ. ६०.१४) ।

लता—एक अप्सरा, जो वर्गा नामक अप्सरा की सखी थी । ब्रह्मा के शप के कारण, इसे ग्राह्योनि में जन्म प्राप्त हुआ था । किन्तु अजुन ने इसे ग्राह्योनि से विमुक्त कराया (म. आ. २०८.१९) ।

२. मेरु की एक कन्या, जो आग्नीप्रपुत्र इलाहृत राजा की पत्नी थी (भा. ५.२.२३) ।

लपिता—एक शाङ्गी, जो मंशाल ऋषि की द्वितीय पत्नी थी । इसकी सौत का नाम जरितृ था (म. आ. २२०.१७; मंशाल देखिये) ।

लव ऐंद्र—एक वैदिक सूक्तग्रथा (ऋ. १०.१२१) ।

लंपाक—एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्ष में शामिल था । इन्होंने यादव राजा सात्यकि पर आक्रमण किया, जिसने इन्हे परास्त किया (म. द्रो. १७. ४८; पाठ-अम्बष्ठ) ।

लंब—एक असुर, जो खर नामक दैत्य का भाई था (मत्स्य. १७३.२२)।

लंबन—एक राजा, जो ज्योतिष्मत् राजा के सात पुत्रों में से एक था। इसका राज्य 'लंबनवर्ष' पर था, जो कुशद्वीप का उपविभाग माना जाता था (माकं. ५०)।

लंबपयोधरा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१७)। पाटभेद—'लंबा'।

लंबा—प्राचेतस दक्ष की एक कन्या, जो धर्म ऋषि की पत्नी थी। इसके विद्योत एवं घोष नामक दो पुत्र थे (भा. ६.३.४)।

२. लंबपयोधरा का नामांतर।

लंबनी—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१७)।

लंबाक्ष—तप नामक शिवावतार का शिष्य।

लंबायन—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लंबोदर—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार पौर्णिमास राजा का, एवं विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार शातकर्णिक राजा का पुत्र था।

२. तप नामक शिवावतार का शिष्य।

ल्य—यमसभा में उपस्थित एक प्राचीन नरेश (म. श. ८.१९ पाट.)।

ललाटाक्ष—एक लोकसमूह, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय भेंट ले कर उपस्थित हुआ था (म. स. ४७.२)।

ललाटाक्षी—एक राक्षसी, जो अशोकवन में सीता के संरक्षण के लिए नियुक्त की गयी थी।

ललाटि—ललाटि नामक भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

ललित—एक गंधर्व, जो शाप के कारण राक्षस हुआ था। 'कामश एकादशी' का व्रत करने के कारण यह शापमुक्त हो गया (पद्म. उ. ४७)।

ललिता—दक्षकन्या सर्ता का एक नामांतर (पद्म. सू. २९)।

२. कृष्ण की पत्नियों में से एक (पद्म. पा. ७४)।

ललित्य—(सो. अज.) एक राजा, जो वायु के अनुसार इंद्रसख अथवा विद्योपरिचरवसु राजा का पुत्र था।

२. एक राजा, जो भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. ३३.२५)। इसने अभिमन्यु पर वीणा की वर्षा की थी (म. द्रो. ३६.२५)।

३. एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में द्रिग्विंशति राजसुधर्मन् के साथ उपस्थित था, एवं कौरवों के पक्ष में शामिल था। इन्होंने अर्जुन का वध करने का प्रतिज्ञा की थी (म. द्रो. १६.२०)। किंतु अंत में अर्जुन ने इनका संहार किया (म. क. ४.४६)।

अपने उत्तरदिग्विजय के समय, कर्ण ने इन्हें जीता था (म. द्रो. ६६.३८)।

लव—राम दाशरथि राजा के दो पुत्रों में से कनिष्ठ पुत्र (कुशल्य, एवं राम दाशरथि देखिये)।

लवंगा—एक गोपी, जो पूर्वजन्म में पुण्यश्रवस् नामक कृष्णभक्त ऋषि थी।

लवण—मधुवननिवासी एक राक्षस, जो मधु नामक राक्षस का पुत्र था। इसकी माता का नाम कुंभीनीसी था।

रुद्र की कृपा से इसे एक शूल प्राप्त हुआ था, जो हाथ में रहते यह अमर एवं युद्ध में अजेय रहता था। इसी शूल में इसने मांघातृ राजा का उसके सैन्य के सहित संहार किया था (वा. रा. उ. ६७.२१; म. अनु. १४.२६७-२६८)।

राम दाशरथि की आज्ञा से शत्रुघ्न ने इसपर आक्रमण किया, एवं इसे शूलरहित स्थिति में पकड़ कर इसका वध किया (शत्रुघ्न देखिये)।

२. रामणीयक द्वीप में रहनेवाला एक असुर, जिसे नागों ने इस द्वीप में प्रवेश करते समय देखा था (म. आ. २३.३०७*)।

३. (सू. इ.) हरिश्चंद्र के वंश का एक राजा। इसने कई राजसूय यज्ञ किये थे, जिनके करने के अभिमान के कारण इसका नाश हुआ (यो. वा. ३.१०४-११५)।

लवणाश्व—एक ऋषि, जो पाण्डवों के साथ वन में रहता था (म. व. २७.२३)।

लह्य—एक ऋषि, जो भुज्य ऋषि का पिता था।

लाक्षी—कृष्णपत्नी लक्ष्मणा माद्री का नामान्तर।

लंगलायन मौद्गल्य—ब्रह्मन् मौद्गल्य नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ५.३)। लंगल का वंशज होने के कारण, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

लंगलि—एक शतशाखाध्यायी आचार्य, जो विष्णु, वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से पौष्येजि नामक आचार्य का शिष्य था। भागवत में इसे 'मांगलि' कहा गया है। इसे 'शालिहोत्र' एवं 'सामवेदी श्रुतर्षि' आदि उपाधियाँ भी प्राप्त थी।

लांगलिन—इक्ष्वाकुवंशीय पुष्कल राजा का नामान्तर। भागवत में इसे शुद्धोद राजा का पुत्र कहा गया है (पुष्कल २. देखिये)।

लांगलिन भूमि—एक शिवावतार, जो वाराह कल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वन्तर के बाईसवें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। कई पुराणों में इसका नाम 'लांगुलिन्' प्राप्त है, किन्तु अष्टादशवें युगचक्र में उत्पन्न हुए लकुलिन् नामक शिवावतार से यह विभिन्न है।

यह शिवावतार हाथ में हल ले कर उत्पन्न हुआ था, एवं इसके भल्लविन्, मधु, पिंग एवं श्वेतकेतु नामक चार शिष्य थे (शिव. शत. ५)।

लाट—एक क्षत्रिय जाति, जो ब्राह्मणों के साथ ईर्ष्या रखने से नीच बन गई।

अशोक के शिलालेखों में इन लोगों का निर्देश 'लाटिक' नाम से प्राप्त है। ये लोग पश्चिम भारत में मुराष्ट्र के दक्षिण में रहते थे।

लाट्यायन—एक आचार्य, जो सामवेद के पंचविंश ब्राह्मण पर आधारित 'लाट्यायन श्रौतसूत्र' नामक ग्रंथ का कर्ता माना जाता है। यह ग्रंथ सामवेदान्तर्गत कौथुमीय शाखा का श्रौतसूत्र माना जाता है। वेबर के अनुसार, लाट्यायन, शाट्यायन एवं शालेकायन ये सारे आचार्य पश्चिम भारत के निवासी थे (वेबर, हिस्टरी ऑफ इंडियन लिटरेचर, पृ. ७७)।

लाट्यायन श्रौतसूत्र—इस ग्रंथ के कुल दस प्रपाठक (अध्याय) हैं। उनमें से पहले सात प्रपाठकों में सोमयज्ञों की; आठवे एवं नववे प्रपाठक के पूर्वार्ध में विभिन्न 'एकाह' यज्ञों की; नववें प्रपाठक के उत्तरार्ध में 'अहीन' यज्ञों की; एवं दसवें प्रपाठक में 'सत्र' यज्ञों की जानकारी प्राप्त है। वेबर के अनुसार, इस ग्रंथ का रचनाकाल अन्य वेदों के श्रौतसूत्रों से काफी पूर्व-कालीन था। इस ग्रंथ पर उपलब्ध भाष्यों में अग्निस्वामिन का भाष्य विशेष सुविख्यात है।

पूर्वाचार्य—'लाट्यायन श्रौतसूत्र' में निम्नलिखित पूर्वाचार्यों का निर्देश प्राप्त है:— स्वविर गौतम, शौचिवृद्धि, क्षैरकलेभि, कौत्स, वाषेगण्य, माण्डितायन, लामकायन, राणायनीपुत्र, तथा शाट्यायनि एवं शालेकायनि परंपरा के विविध आचार्य। इनमें से शौचिवृद्धि आचार्य का निर्देश पाणिनि के अष्टाध्यायी में भी प्राप्त है (पा. सू. ४.१.८१)।

लातव्य—कुशांत्र स्वायंभुव नामक आचार्य का पैतृक नाम (पं. ब्रा. ८.६.८)। लतु का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. एक गोत्रनाम। इंद्र के द्वारा ओंकार के संबंधी जानकारी पृथ्वी जाने पर, प्रजापति ने ओंकार का गोत्र 'लातव्य' बताया था (गो. ब्रा. १.१.३५)।

लामकायन—एक आचार्य, जो यज्ञक्रम से संबंधित समस्याओं का ज्येष्ठ अधिकारी व्यक्ति माना जाता था (ला. श्रौ. ४.९.२२; द्रा. श्रौ. ४.३८.४; नि. सू. ३.१२.१३)। वंश ब्राह्मण में संवर्गजित् नामक आचार्य का पैतृक नाम 'लामकायन' बताया गया है (वं. ब्रा. २; संवर्गजित् देखिये)। लमक का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

लालवि—एक राक्षस, जो कश्यप एवं स्वशा का एक पुत्र था।

लालाटि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लालायि—एक राक्षस, जो कश्यप एवं स्वशा का पुत्र था।

लावकि—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लावकृत—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लावण्यवती—रथन्तर कल्प के पुण्यवाहन राजा की कन्या (पद्म. सू. २०)।

लाहायन अथवा **लाहायनि**—भुजु नामक आचार्य का पैतृक नाम (वृ. उ. ३.३.१.२.)। लह्य का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

लिखित—एक मुनि, जो जैगीष्यव्य के दो पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम एकपर्णा, एवं भाई का नाम शंख था (ब्रह्मांड. ३.१०.२१)।

यह ब्राह्मण नदी के तट पर आश्रम बना कर रहता था, जहाँ निकट ही इसके भाई शंख का भी आश्रम था। एक बार शंख के अनुपस्थिति में यह उसके आश्रम में गया, एवं बिना पूछे ही आश्रम में से कुछ फल खाने लगा। इतने में शंख वहाँ उपस्थित हुआ, एवं इस पर चोरी का आरोप लगा कर, उसने इसे राजा के पास से इस अपराध की सजा लेने के लिए कहा।

तदोपरांत, यह सुशुभ्र राजा के पास गया, एवं अपना अपराध उसे बता कर उसकी सजा पूछने लगा। फिर राजा ने इससे कहा, 'तुमने स्वयं अपना अपराध कबूल किया है। इसलिए तुम्हें सजा देने की कोई ज़रूरत नहीं है'।

इस प्रकार राजा के द्वारा वेगुनाह सावित होने पर भी, इसने आत्मग्लानि को वशीभूत हो कर, खुद के दोनों हाथ कटवाये। पश्चात् यह नदी पर स्नान करने के लिए गया, जहाँ शंख ऋषि के तपोवलय से इसके दोनों हाथ इसे पुनः प्राप्त हुए (म. शां. २४; अनु. १३७.१९)।

यह एवं इसके भाई शंख के द्वारा लिखित 'शंख स्मृति' नामक एक स्मृतिग्रंथ उपलब्ध है (शंख ६. देखिये)।

२. चंपकापुरी के हंसध्वज राजा का एक दुष्टकर्मा पुरोहित। इसे शंख नामक एक भाई था, जो इसीके ही समान हंसध्वज राजा का पुरोहित था, एवं इसीके ही समान दुष्टबुद्धि था।

पाण्डवों का अश्वमेधीय अश्व हंसध्वज राजा के द्वारा रोक गया, जिस कारण उसका अर्जुन के साथ युद्ध हुआ। उस समय हंसध्वज राजा ने अपने सैन्य को ऐसी आज्ञा दी कि, हर एक सैनिक सूर्योदय पूर्व सैन्यसंचलन के लिए उपस्थित हो, एवं जो इस आज्ञा का भंग करेगा उसे उबलते तेल में डाला दिया जाए।

दूसरे दिन हंसध्वज राजा के पुत्र सुधन्वन् को ही संचलन के लिए आने में देर हुई, एवं राजा के आज्ञानुसार सजा भुगतने की आपत्ति आई। अपने पुत्र को इतनी बड़ी सजा देने में राजा का मन हिचकिचाने लगा। किन्तु इस दुष्टबुद्धि पुरोहित ने राजा को इस कार्य करने पर विवश किया।

फिर राजा की आज्ञानुसार, सुधन्वन् को उबलते तेल में डाला गया, किन्तु वह सुरक्षित ही रहा। फिर तेल बराबर उबला नहीं है, इस आशंका से इसने एक नारियल तेल में छोड़ दिया। तत्काल उस नारियल के दो टुकड़े हो कर, उनके द्वारा यह एवं उसके भाई शंख का कपालमोक्ष हुआ (जै. अ. १७)।

लिवुकि—नाकुलि नामक भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

ललि—सारस्वत नगरी के वीरवर्मन् राजा का पुत्र।

लीला—पद्मराज की पत्नी, जिसने अपने पति की मृत्यु के पश्चात् सरस्वती की कृपा से उसे पुनः प्राप्त किया (यो. वा. ३.१५-४९)।

लीलाद्वय—विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५३)।

लीलावती—कोसल देश के भुवसंधि राजा के दो पत्नियों में से एक। इसके पुत्र का नाम शत्रुजित् था।

२. रत्न नगरी के मथूरध्वज राजा की पत्नी। इसे कुमुद्वती नामान्तर भी प्राप्त था। इसके पुत्र का नाम ताम्रध्वज था।

३. साधु वैश्य की पत्नी, जिसका जीवनचरित्र 'सत्यनारायण माहात्म्य' की कथा में प्राप्त है (सत्यनारायण ३)। सत्यनारायण व्रत की पूर्ति न करने के कारण, इसे अनेकानेक कष्ट सहने पड़े।

४. वीर राजा की कन्या, जिसका अविधित् राजा ने हरण किया था (मार्क. ११९.१७)।

५. एक वेद्या, जिसका राधाष्टमी का व्रत करने के कारण उद्धार हुआ था (पद्म. ब्र. ७)।

६. एक वेद्या, जिसने पुष्करक्षेत्र में चतुर्दशी के दिन लवणाचल एवं सुवर्णवृक्ष की पूजा कर, उन्हें ब्राह्मणों को दान में दिया था। इस पुण्यकर्म के कारण, मृत्यु के पश्चात् इसे शिवलोक की प्राप्ति हुई (पद्म. मृ. २१)।

लुब्ध—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लुंपक—चंपावती नगरी के माहिष्मत राजा के पाँच पुत्रों में से एक। 'सफला एकादशी' का व्रत करने के कारण इसे मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. उ. ४०)।

लुश धानाक—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.३५-३६; ३८)। इंद्र की कृपा प्राप्त करने में इसका एवं कुत्स ऋषि का हमेशा द्वंद्व चलता था, जिसके अनेकानेक निर्देश ऋग्वेद एवं ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त हैं।

एक बार इसने एवं कुत्स ने एक ही समय पर इंद्र को निमंत्रण दिया। पूर्वज्ञेह के कारण, इंद्र कुत्स के पास गया। उस समय अपना आदरातिथ्य छोड़ कर, इंद्र लुश के पास जाएगा इस आशंका से कुत्स ने उसे चमड़ी के सौ रस्सियों से बाँध रखा। किन्तु उसी अवस्था में अपने पास आने के लिए लुश के द्वारा इंद्र की प्रार्थना की गई (ऋ. १०.३८.५. मं. ब्रा. ९.२.२२; जै. ब्रा. १.१२८)।

लुशाकपि स्वर्गलि—एक आचार्य, जो केशिन् दात्म्य नामक आचार्य का समकालीन था (क. सं. ३०.२)। लुगल का वंशज होने के कारण, इसे 'स्वर्गलि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

कुपीतक सामश्रवस नामक आचार्य ने शमनीचमेदू नामक त्राय लोको का आचार्यत्व का स्वीकार किया, जिस कारण इसने उसे एवं उसके कुपीतकी नामक अनुगायियों को भ्रष्ट होने का शाप दिया (पं. ब्रा. १७.४.३; कुपीतक सामश्रवस देखिये)।

लेख—रैवत मन्वन्तर का एक देवगण, जिसमें निम्न-लिखित आठ देव शामिल थे:—ध्रुव, ध्रुवक्षिति, प्रयास, प्रचेतस, बृहस्पति, मनोजव, महायशस् एवं युवन्सु (ब्रह्मांड. २.३६.७६)।

२. चाक्षुष मन्वन्तर का एक देवगण।

लेखक—सूर्य का एक प्रिय अनुचर (भवि. ब्राह्म. ५६)।

लेश—(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सुनहोत्र राजा का पुत्र था। वायु में इसे 'शल' कहा गया है।

लैद्राणि—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लैद्राणि—अंगिरसकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लोकाक्षि—एक शिवावतार, जो वाराहकल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वन्तर में लोकाक्षि नामक वेदविभाग निर्माण करनेवाले मृत्यु नामक व्यास के साहचर्यार्थ अवतीर्ण हुआ था। यह स्वयं निवृत्तिमार्गी था। इसके निम्न-लिखित चार शिष्य थे:—सुधामन, विरज्जु, संजय, एवं अंबडज (शिव. शत. ४-५)।

२. व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से लैगाक्षि नामक आचार्य का नामान्तर।

३. जयमालिन् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

लोपामुद्रा—अगस्त्य ऋषि की पत्नी, जो विदर्भ राजा की कन्या थी।

एक वैदिक मंत्रद्रष्ट्री के नाते लोपामुद्रा का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १.१७९.१-२)। उसी ग्रंथ में अन्यत्र अगस्त्य ऋषि की पत्नी के नाते इसका निर्देश प्राप्त है, जहाँ यह उसके आर्लिगन की इच्छा प्रकट करती है (ऋ. १.१७९.४: बृहद्दे. ४.५७)।

जन्म—महाभारत में इसे वैदर्भ राजा की कन्या कहा गया है, एवं दो स्थान पर इसके पिता का नाम विदर्भ-राज निमि दिया गया है। पार्श्वर के अनुसार, विदर्भराजवंश में निमि नामक कोई भी राजा न था, एवं लोपामुद्रा के पिता का नाम निमि न हो कर भीम था, जो विदर्भदेश के ऋथ राजा का पुत्र था (पार्श्व. १६८)। विदर्भराज की कन्या होने के कारण, इसे वैदर्भी नामान्तर प्राप्त था।

इसके जन्म के संश्लेष में एक कल्पनारम्य कथा महा-भारत में प्राप्त है। अपने पितरों को मुक्ति प्रदान करने के लिए, अगस्त्य ऋषि के मन में एक बार विवाह करने की

इच्छा उपज हुई। किन्तु उसके योग्यता की कोई भी कन्या उसे इस संसार में नज़र न आई। फिर अपनी पत्नी बनाने के लिए, उसने अपने तपोब्रह्म से एक सुंदर कन्या का निर्माण किया, एवं पुत्र के लिए तपस्या करनेवाले विदर्भराज के हाथ में उसे दे दिया। यहीं कन्या लोपामुद्रा नाम से प्रसिद्ध हुई।

अगस्त्य से विवाह—धीरे धीरे यह युवावस्था में प्रविष्ट हुई। सौ दासियाँ एवं सौ कन्याएँ इसकी सेवा में रहने लगीं। अपने शील एवं सदाचार से यह अपने पिता एवं स्वजनों को संतुष्ट रखती थी।

एक दिन महर्षि अगस्त्य विदर्भराज के पास आये, एवं उसने लोपामुद्रा से विवाह करने का अपना निश्चय प्रकट किया। राजा इसका विवाह अगस्त्य जैसे तपस्वी के साथ नहीं करना चाहता था, किन्तु महर्षि के शाप-के-डर से वह उसे इन्कार भी नहीं कर सकता था। अपने माता पिता को संकट में पड़ा देख, लोपामुद्रा ने अपने पिता से कहा, 'आप मुझे महर्षि के सेवा में दे कर अपनी रक्षा करें।' तब इसके पिता ने इसका विवाह अगस्त्य ऋषि के साथ करा दिया।

विवाह के पश्चात् इसने अगस्त्य ऋषि की आज्ञा से अपने राजवस्त्र एवं आभूषण उतार दिये, एवं वस्त्र एवं मृगचर्म धारण किये। पश्चात् अगस्त्य इसे ले कर संग-द्वार गया, एवं वीर तपस्या में संलग्न हुआ। यह पति के समान ही व्रत एवं आचार का पालन करने लगी, एवं तप करनेवाले अगस्त्य की सेवा कर इसने उसे प्रसन्न किया।

पुत्रप्राप्ति—पश्चात् इसका रूपवैबन, पवित्रता एवं इन्द्रिय-निग्रह से प्रसन्न हो कर, अगस्त्य ऋषि ने इससे संभोग करने की इच्छा प्रकट की। तब इसने अगस्त्य से कहा, 'इस तापसी षेप में एवं तपस्वी के पर्णशाला में नहीं, ब्रालक मेरे पिता जैसे राजमहल में मैं आपसे समागम करना चाहती हूँ।' फिर अगस्त्य ने अपने तपःशामर्थ्य से इच्छल से विपुल संपत्ति ला कर इसे प्रदान की, एवं इसकी इच्छा के अनुसार, हजारों को जीतनेवाला एक महान् पराक्रमी पुत्र इसे प्रदान किया।

इस पुत्र का गर्भ सात वर्षों तक इसके पेट में चलता रहा, एवं सात वर्ष विताने पर वह अपनी माता के उदर से बाहर निकला। अगस्त्य से उपज इसका पुत्र का नाम दृदस्यु अथवा दम्बवाह था (म. व. ९४-९७)।

काशी के सुविख्यात राजा प्रतर्दन का पौत्र अलर्क को लोपामुद्रा के द्वारा विपुल धनसंपत्ति एवं राज्यश्री प्राप्त होने की कथा पुराणों में प्राप्त है (वायु. १२.६७; ब्रह्म. ११.५३)। आनंद रामायण के अनुसार इसके पास एक 'अश्रय स्थाली' थी, जिससे अपरिमित अन्न की प्राप्ति होती थी (आ. रा. विवाह. ५)।

दक्षिण भारत में—अगस्त्य ऋषि का सर्वाधिक संबंध दक्षिण भारत से था, जिसकी पुष्टि देनेवाली लोपामुद्रा की एक नमस्कथा भागवत में प्राप्त है। इस कथा में इसका निर्देश कृष्णक्षणा नाम से किया गया है, एवं इसे मलयध्वज नामक पाण्डव राजा की कन्या कहा गया है। यहाँ इसकी माता का नाम वैदर्भी दिया गया है, एवं इसके सात भाईयों को द्रविड देश के राजा कहा गया है। अगस्त्य ऋषि से इसे दृढच्युत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसके पुत्र का नाम इधमवाहन था (भा. ४.२८)।

लोम—ब्रह्मा का एक मानस पुत्र, जो उसके अधरोष्ठ से उत्पन्न हुआ था (मत्स्य. ३.१०)। भागवत में इसे अधमपुत्र दंभ एवं माया का पुत्र कहा गया है।

लोमालोभ—एक ऋषेदी ब्रह्मचारी।

लोमगायनि अथवा लोमगायिन—एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से लोमलि नामक आचार्य का शिष्य था।

लोमपाद—अंगदेश के रोमपाद राजा का नामान्तर (रोमपाद १. देखिये)।

लोमश—एक तीर्थजीवी महर्षि, जिसका हृदय धर्मपालन से विद्युत् हो चुका था (म. व. ३२.११)। इसके शरीर पर अत्यधिक लोम (केश) थे, जिस कारण इसे लोमश नाम प्राप्त हुआ था। इसकी आयु इतनी अधिक थी कि, प्रत्येक करान्त के समय इसका केवल एक ही बाल झड़ता था। एक बार इसने सौ वर्षों तक कमल के फूलों से शिव की उपासना की थी, जिस कारण इसे प्रत्येक ऋण के अन्त में एक एक बाल झड़ने का, एवं प्रलयकाल के समय मुक्ति प्राप्त होने का आशीर्वाद प्राप्त हुआ था (स्कंद १.२.१३)।

इंद्र से भेंट—एकबार घृमते घृमते यह इंद्र के पास पहुँचा। वहाँ इंद्र के पास अस्त्रविद्या के प्राप्ति के लिए इंद्रलोक में आया हुआ अर्जुन इसे दिखाई पड़ा, जो इंद्र के अधोसन पर विराजमान हुआ था। इंद्र ने लोमश से कहा, 'अर्जुन साक्षात् नरनारायण का ही अवतार है, जो कौरवों पर विजय पानेवाले अस्त्रों की प्राप्ति करने के लिए

यहाँ आया है। काम्यकवन में रहनेवाला युधिष्ठिर अर्जुन के कारण चिंताग्रस्त हो चुका है; मैं यही चाहता हूँ कि, तुम युधिष्ठिर के पास जा कर अर्जुन का कुशल वृत्तों उसे बता देना, एवं उसके मनबहुल्य के लिए भारत के अन्यान्य तीर्थों का दर्शन उसे कराना' (म. व. ४५.२९-३३)।

तीर्थयात्रा—इंद्र की आज्ञानुसार, यह काम्यकवन में आया। इसने अर्जुन का कुशलवृत्त युधिष्ठिर को सुनाया, एवं तीर्थयात्रा प्रस्ताव उसके सम्मूह रखा। पश्चात् यह युधिष्ठिर के साथ तीर्थयात्रा करने के लिए निकला। पहले ये महेंद्र पर्वत पर गये, एवं चतुर्दशी के दिन परशुराम का दर्शन कर प्रभासक्षेत्र में गये। वहाँसे यमुना नदी के किनारे ये कैलास पर्वत के पास आ पहुँचे (म. व. ८९-१४०)।

पश्चात् गंधमादन पर्वत की तराई में सुवाहु नामक किराताधिपति का सत्कार स्वीकार कर, इन्होंने गंधमादन पर्वत का आरोहण करना प्रारंभ किया। किन्तु ये दोनों धकने के कारण, भीम ने प्रदोक्चक की सहाय्यता से इन्हें गंधमादन पर्वत पर स्थित 'नरनारायण' आश्रम में पहुँचा दिया (म. व. १४१-१४६)।

वाद में सत्रह दिनों तक प्रवास कर ये वृषपर्वत के आश्रम में पहुँच गये, एवं चार दिनों के उरारान्त आर्षिपेण ऋषि के आश्रम में आये (म. व. १५५)। वहाँ धौम्य ऋषि ने युधिष्ठिर को सूर्य चंद्र की गति के संबंध में जानकारी बतानी (म. व. १६०)।

इतने में इंद्र की सहाय्यता से अर्जुन गंधमादन पर्वत पर आ पहुँचा (म. व. १६१.१९)। पश्चात् यह युधिष्ठिर एवं अर्जुन के साथ चार वर्षों तक गंधमादन पर्वत पर ही रहा (म. व. १७३.८)। पाण्डवों के वनवास के दस साल पूर्ण होने के पश्चात्, लोमश उन्हें पुनः एक बार नरनारायण आश्रम में ले आया। किराताधिपति सुवाहु के प्र एक महिने तक रहने के पश्चात्, ये यासुनगिरि-पर स्थित विशालपूर में गये, एवं वहाँसे द्वैतवन में गये। वहाँ सरस्वती नदी के किनारे बरसात के चार महिने व्यतीत करने के पश्चात्, पौर्णिमा होते ही, इसने पाण्डवों को काम्यकवन में पहुँचाया, एवं यह स्वयं तपस्या के लिए चला गया (म. व. १७८-१७९)।

आख्यानकथन—तीर्थयात्रा के समय, लोमश ऋषि ने युधिष्ठिर को अनेक देवता एवं धर्मात्मा राजाओं के आख्यान सुनाये, जिनमें निम्न आख्यान प्रमुख थे:-

अगस्त्यचरित्र (म. व. ९६-९९); भगीरथचरित्र (म. व. १०६-१०९); ऋश्यमुंगचरित्र (म. व. ११०-११३); च्यवनकन्या सुकन्या का चरित्र (म. व. १२१-१२५); मांथानुचरित्र (म. व. १२६-१२७) ।

वरप्रदान—लोमश ने दुर्दम राजा को देवी भागवत का पाठ पाँच बार पढ़ कर सुनाया था, जिस कारण उसे पाँचवें मन्वन्तर के अधिपति रैवत नामक पुत्र की प्राप्ति हुई थी (दे. भा. महात्म्य. ५) । पिशाचयोनि में प्रविष्ट हुए मुशाल, सुन्वरा, सुतारा एवं चंद्रिका आदि गंधर्व-कन्याओं का, एवं वेदनिधि नामक ऋषिपुत्र का इसने नर्मदास्नान का उपदेश कर उद्धार किया था (पद्म. स. २३) ।

ग्रंथ—इसके नाम पर 'लोमशसंहिता' एवं 'लोमश-शिक्षा' नामक दो ग्रंथ उल्लेख्य हैं (C. C.) । उनमें से लोमशशिक्षा सामवेद का शिक्षा ग्रंथ है, जो आठ खण्डों में विभाजित है। इस ग्रंथ के पहले ही श्लोक में इसका गर्गान्वाय के साथ निर्देश प्राप्त है, जिसका संदर्भ ठीक प्रकार से ध्यान में नहीं आता है।

कश्यपसंहिता में प्राप्त ज्योतिषशास्त्र के प्रवर्तक अठारह महर्षियों में, लोमश ऋषि का निर्देश प्राप्त है। उन आचार्यों के द्वारा सिद्धान्त, होरा एवं संहिता इन तीन स्कंदों में विभाजित ज्योतिषशास्त्र की रचना किये जाने का निर्देश वहाँ प्राप्त है।

लोमशकथित रामकथा—पद्म में प्राप्त रामकथा का वक्ता लोमश ऋषि बताया गया है (पद्म. पा. ३६) । महाभारत में प्राप्त परशुराम के तेजोभंग के आख्यान का वक्ता लोमश ही है (म. अनु. ३५१) ।

लोमश के नाम पर 'लोमशरामायण' नामक एक ग्रंथ भी उपलब्ध है, जिसमें त्रैतीय हज़ार श्लोक हैं। उस ग्रंथ में राजा कुमुद एवं वीरमती के द्वारा दशरथ एवं कौसल्या के रूप में जन्म लेने की कथा प्राप्त है, एवं जालंधर के शाप के कारण रामावतार होने का आख्यान भी वहाँ दिया गया है।

तुलसी के द्वारा विरचित 'रामचरितमानस' में भी भृशुण्डि ऋषि को लोमश के द्वारा रामकथा प्राप्त होने का निर्देश है (मानस. उ. ११३) । रसिक सांप्रदाय में भी एक 'लोमशसंहिता' प्रचलित है, जिसमें इसका एवं पिप्पलाद ऋषि का एक संवाद प्राप्त है।

आश्रम—लोमश ऋषि के आश्रम निम्नलिखित दो स्थानों में दिखाये जाते हैं:— १. राजस्थान में बुंदी शहर के

उत्तर में सत्रह मील पर स्थित तिमाणाग्राम में उपर्या नामक शिवमंदिर एवं लोमश ऋषि का आश्रम प्राप्त है; २. पंजाब में स्थित ज्वालामुखी ग्राम से पचपन मील पर स्थित रिवालसर (रेवासर) ग्राम में लोमश आश्रम सुविख्यात है।

इसके अतिरिक्त गया जिले में स्थित बराबर पहाड़ी में दशरथ राजा के द्वारा खोदी गई एक गुफा 'लोमश गुफा' नाम से प्रसिद्ध है।

२. रावणपक्षीय एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६) ।

लोमहर्षण—पुराणों का आद्य कथनकर्ता रोमहर्षण 'सूत' का नामांतर (रोमहर्षण देखिये) ।

लोमायन—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। ब्रह्मांड में निर्दिष्ट व्यास के शिष्यपरंपरा में इसका निर्देश प्राप्त है।

लोल—सिद्धवीर्य ऋषि का पुत्र। अपने अगले जन्म में, इसने उत्पलावती नामक रानी के उदर में तामस मनु के रूप में जन्म लिया (मार्क. ७१; तामस देखिये) ।

लोलजि—एक राक्षस, जो धर्मारण्य जलाने के लिए प्रवृत्त हुआ था। इस कारण विष्णु ने इसका वध किया (स्कंद ३.२.११) ।

लोला—मधु नामक राक्षस की माता (वा. रा. उ. ६१.३) ।

लोलाक्षि—भृशुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लोह—एक असुर, जिसके नाम से लोहतीर्थ नामक एक तीर्थ प्रचलित हुआ (स्कंद. ३.२.२९) ।

२. एक असुर। अज्ञातवास के समय पाण्डवों ने अपने शास्त्र नीचे रख दिये। यही सुअवसर पा कर इसने उन पर आक्रमण किया, किन्तु देवताओं ने इसे अंधा बन कर पाण्डवों की रक्षा की। उस स्थान को लोहणपुर कहते हैं। (स्कंद. १.२.६५) ।

३. एक लोकसमूह, जिसे अर्जुन ने उत्तर दिक्जय के समय जीता था (म. स. २४.२४) ।

लोहगंध—गार्ग्यकुलोत्पन्न एक ऋषि, जिसका जनमेजय पारिक्षित (प्रथम) राजा ने वध किया था। इस ब्रह्महत्या के कारण, लोगों ने जनमेजय पारिक्षित को राज्यभ्रष्ट कर, उसे हृदयार किया (वायु. ९३.२०-२६) । इस पाप से छुटकारा पाने के लिए जनमेजय राजा ने 'इंद्रोत शौनक' नामक आचार्य के द्वारा एक अश्रमबंध यज्ञ किया (जनमेजय पारिक्षित १. देखिये) ।

कई अभ्यासकों के अनुसार, 'गार्ग्य' लोहगंध की उपाधि न हो कर जनमेजय (प्रथम) की उपाधि थी, जो उसके शरीर से आनेवाली दुर्गंधी के कारण उसे

प्राप्त हुई थी। जनमेजय को ब्रह्महत्या के पातक से मुक्त करानेवाले इंद्रोत्त शौनक ने उसके शरीर की यह दुर्गंधी भी दूर करायी (ब्रह्मांड. ३.६८.२३-२६; ह. वं. १.३० १०-१४; म. शां १४१.११)।

लोहल्लय—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लोहवैरि—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लोहिशवकत्र—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.७०)।

लोहित—विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक।

१. रुद्रसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

३. एक स्मृतिकार (C. C.)।

४. एक राजा, जिसे अर्जुन ने उत्तरदिग्विजय के समय लोहा था (म. श. २४.१७)।

५. वरुणसभा का एक नाम (म. श. ९.८; ११)।

लोहिताक्ष—एक ऋषि, जो जनमेजय के सर्पसत्र में ऋषि (वास्तुविद्याविशारद) नामक ऋषिज था। यज्ञ के लिए भूमि शुद्धि करते समय ही इसने भविष्यवाणी की थी, 'यह सत्र एक ब्राह्मण के द्वारा जल्द ही बन्द हो जायेगा (म. आ. ४७.१५; ५१.६; ५३.१२)।

२. ब्रह्मा को द्वारा स्कंद को दिये गये चार पापदों में से एक। अन्य तीन पापदों के नाम नन्दिपेण, घण्टाकर्ण, एवं कुमुदमलिन्ये (म. श. ४४.२१-२२)।

लोहितायनि—स्कंद की धाय, जो लालसागर की कन्या थी। इसकी कदंब के वृक्षों पर पूजा होती है (म. व. २१९.३९)।

लोहितारण—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो घृतशुभ्र राजा के सात पुत्रों में से एक था। इसका वर्ष इसीके ही नाम से प्रसिद्ध था।

लोहिताश्व—वसुदेवपुत्र रोहिताश्व का नामान्तर।

लौक्य—बृहस्पति का नामान्तर। 'लोकपुत्र' होने के कारण बृहस्पति को यह नाम प्राप्त हुआ था (बृहस्पति १. देखिये)।

लौक्षि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लौक्षिण्य—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद—'लौगाक्षि'।

लौगाक्षि—एक शतशान्वाध्यायी सामवेदी आचार्य,

जो व्यास की सामशिष्य परंपरा में से पौष्यंजि नामक आचार्य का शिष्य था।

एक स्मृतिकार के नाते से इसका निर्देश मिताक्षरा में प्राप्त है, जहाँ इसके अशौच एवं प्रायश्चित के संबंधी श्लोक उद्धृत किये गये हैं (याज्ञ. ३.१.२; २६०; २८९)। अपराक के द्वारा भी इसके निम्नलिखित विषयों के संबंधी गद्यापवात्मक उद्धरण दिये गये हैं:—संस्कार, वैश्वदेव, चानुमांस्य, द्रव्यशुद्धि, श्राद्ध, अशौच एवं प्रायश्चित।

योग एवं क्षेम शब्दों की व्याख्या करनेवाला, एवं उन दोनों का अभिन्नत्व प्रस्थापित करनेवाला लौगाक्षि का एक श्लोक प्रसिद्ध है, जो मिताक्षरा आदि धर्मशास्त्र ग्रंथों में प्राप्त है।

ग्रंथ—१. आर्षाध्याय; २. उपनयनतंत्र; ३. काठक गृह्यसूत्र; ४. प्रवराध्याय; ५. श्लोकदर्पण।

२. लौक्षिण्य नामक भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

लौपायन—एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए व्यवहृत है:—बन्धु (ऋ. ५.२४.१); विप्रबन्धु (ऋ. ५.२४.४); श्रुतबन्धु (ऋ. ५.२४.९); सुबन्धु (ऋ. ५.२४.२)। इस पैतृक नाम का 'लौपायन' पाठभेद भी प्राप्त है।

लौमहर्षणि—रोमहर्षण सूत के सौति नामक पुत्र का नामान्तर (सौति देखिये)।

लौहचैरिण—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लौहि—अष्टक ऋषि का पुत्र, जो विश्वामित्र ऋषि का पौत्र था।

२. (शिशु. भविष्य.) एक राजा, जो अजातशत्रु राजा का पुत्र था।

लौहित्य—एक पैतृक नाम, जो जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण में निम्नलिखित गुरु के लिए प्रयुक्त किया गया है:—कृष्णदत्त, कृष्णरात, जयक, त्रिवेद कृष्णरात, दक्ष जयन्त, पल्लिगुप्त, मित्रभूति, यशस्विन् जयन्त, विपश्चित् दृढ-जयन्त, वैपश्चित् दार्ढजयन्त, वैपश्चित् दार्ढजयन्त, दृढ-जयन्त, श्यामजयन्त, श्यामसुजयन्त, सत्यश्रवस् (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

लोहित का वंशज होने से इन आचार्यों को यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. एक आचार्य (सां. आ. ७.२२)।

व

वंशक—इक्ष्वाकुवंशीय यत्सक राजा का नामान्तर ।
वंशा—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्याओं में से एक ।

वक दाल्भ्य—वक दाल्भ्य नामक आचार्य का नामान्तर (वक दाल्भ्य देखिये) । कई अभ्यासकों के अनुसार, जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण में निर्दिष्ट 'वक दाल्भ्य' एवं छांदोग्य उपनिषद् एवं काठकसंहिता में निर्दिष्ट 'वक दाल्भ्य' दो अलग व्यक्ति थे । किन्तु इस संबंध में निश्चित रूप से कहना कठिन है ।

वकनरव—विश्वामित्र के वकनरव नामक पुत्र का नामान्तर (म. अनु. ४.५८) ।

वक्र—कश्यप राजकुमार वक्रदंत (दंतवक्र) का नामान्तर । यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १८.२४*) ।

वक्रदन्त—कश्यप राजकुमार दंतवक्र का नामान्तर (दंतवक्र देखिये) ।

वक्राक्ष—एक राक्षस, जो कश्यप एवं लशा के पुत्रों में से एक था ।

वक्षेयु—(सो. पूर.) एक राजा, जो वायु के अनुसार रौद्राक्ष राजा का पुत्र था ।

वक्षोऋषि—विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५३) ।

वंग—(सो. अनु.) वंश देश का एक राजा, जो बलि आनव राजा के पाँच पुत्रों में से एक था । इसीके ही कारण इसके देश को 'वंग' नाम प्राप्त हुआ (बलि आनव देखिये) ।

२. एक लोकसमूह, जिसका निर्देश मगध एवं मत्स्य लोगों के साथ अथर्ववेद परिशिष्ट में प्राप्त है (अ. वे. परि. १.७.७) । वंग एवं मगध लोगों का संयुक्त निर्देश ऐतरेय आरण्यक में भी प्राप्त है (ऐ. वा. २.१.१) । आधुनिक बंगाल देश में स्थित लोगों के लिए 'वंग' शब्द का निर्देश सर्वप्रथम बौधायन धर्मसूत्र में प्राप्त है (बौ. ध. १.१.१४) ।

पूर्व भारत के एक लोकसमूह के नाते वंग का निर्देश महाभारत में प्राप्त है । महाभारतकाल में इस देश में म्लेच्छ लोग रहते थे, जिन्हें राजसूययज्ञ के समय भीमसेन ने, एवं अश्वमेधयज्ञ के समय अर्जुन ने जीता

था (म. स. २७.२१; भा. ८३.२९) । परशुराम ने इस देश के क्षत्रियों का संहार किया था ।

वंगिरी—(किलकिला. भविष्य.) एक राजा, जिसका निर्देश भागवत में प्राप्त है ।

वंगुद—एक दानव, जो अतिथिग्व (दिवोदास) राजा का शत्रु था । इंद्र ने अतिथिग्व के संरक्षण के लिए इसका शिरच्छेद किया था (ऋ. १.५३.८) ।

ववक्नु—एक ऋषि, जो गार्गी वाचकवी नामक विदुषी का पिता था ।

वज्र—विश्वामित्र के वज्रनाभ नामक पुत्र का नामान्तर ।

२. श्रीकृष्ण के पौत्र अनिरुद्र का पुत्र, जो वज्र यादव नाम से सुविख्यात था । इसकी माता का नाम रोचना था ।

मौसल युद्ध में यादवों का संहार होने पर, अर्जुन इसे इंद्रप्रस्थ ले गया, एवं उसने इसे यादवी युद्ध से बचे हुए यादवों का राजा बनाया । इसके पुत्र का नाम प्रतिवाहु था (म. मौ. ८.७०; भा. १.१५.३९) । महाप्रस्थान के समय, युधिष्ठिर ने सुभद्रा से इसकी रक्षा के लिए कहा था (म. महा. १.८-९) ।

वज्रकाय—लंका का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६) ।

वज्रज्वाला—कुंभकर्ण की पत्नी, जो विरोचन दैत्य की प्रपौत्री थी (वा. रा. उ. १२.२४) ।

वज्रदंष्ट्र—त्रिपुरासुर का सेनापति । इसने पाताललोक जीत लिया, जिस कारण त्रिपुर ने गाँव, बन्न आदि दे कर इसका सम्मान किया (गणेश. १.४) ।

२. रावणपक्ष का एक राक्षस, जो अंधक के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ९.३; ५३-५४) ।

वज्रदत्त—प्रागज्योतिषपुर का एक राजा, जो भगदत्त राजा का पुत्र था । इसे यज्ञदत्त नामान्तर भी प्राप्त था ।

पाण्डवों के द्वारा छोड़ा गया अश्वमेधीय अश्व इसने पकड़ लिया, एवं तीन दिनों तक अर्जुन के साथ अत्यंत श्रुता से लड़ता रहा । अंत में अर्जुन ने इसका पराजय किया (म. आश्व. ७४.७५) ।

वज्रनाभ—(सु. इ.) अयोध्या देश का एक राजा, जो भागवत के अनुसार स्थल का, विष्णु के अनुसार ढक्य का, एवं वायु के अनुसार औक राजा का पुत्र था ।

२. एक राक्षस, जो निकुंभ राक्षस का भाई, एवं वज्रपुर नगरी का राजा था। कृष्णपुत्र प्रद्युम्न ने इसका वध किया, एवं नाटक का खेल ले कर वह इसके नगरी में पहुँच गया। वहाँ उसने इसकी प्रभावती नामक कन्या से बलात्कार किया। इस कारण, निकुंभ ने द्वारका नगरी पर हमला किया, जहाँ हुए युद्ध में कृष्ण ने निकुंभ का वध किया (ह. वं. २.१०)।

३. एक दुष्ट राक्षस, जो ब्रह्मदेव के हाथ में स्थित कमल के प्रहार के द्वारा मारा गया।

४. मथुरा नगरी का एक राजा, जो परीक्षित राजा का मित्र था। शांडिल्य ऋषि की आज्ञा के अनुसार, उद्धव ने इसे भागवत महात्म्य सुनाया था (स्कंद. २.६.१-६)। इसे वज्र नामान्तर भी प्राप्त था।

५. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५८)।

वज्रबाहु—रामसेना का एक वानर, जिसका कुंभकर्ण ने भक्षण किया (म. व. २७१.४)।

वज्रमित्र—(शुग. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत एवं ब्रह्मांड के अनुसार घोष का, विष्णु के अनुसार घोषवसु का, एवं मत्स्य के अनुसार पुलिंद राजा का पुत्र था। वायु में इसे 'विक्रमित्र' कहा गया है।

वज्रमुष्टि—एक राक्षस, जो मँद वानर के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ४३.२८)।

वज्रविष्कंभ—गण्ड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. १९.१०)।

वज्रवेग—एक राक्षस, जो दूषण का छोटा भाई, एवं कुंभकर्ण का अनुगामी था। इसके भाई का नाम प्रमाथी था। हनुमत् के द्वारा यह मारा गया (म. व. २७१.१९-२४)।

वज्रशीर्ष—भृगु प्रजापति के सात पुत्रों में से एक, जिसे निम्नलिखित छः भाई थे—च्यवन, शुचि, और्व, शुक्र, वरेण्य एवं सवन (म. अनु. ८५.१२७-१२९)।

वज्राक्ष—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का पुत्र था।

वज्रांग—एक दैत्य, जो कश्यप एवं दिति के पुत्रों में से एक था। एक बार इसकी माता दिति ने इसे इंद्र पर आक्रमण करने के लिए कहा। किंतु ब्रह्मा के विरोध के कारण, इस आक्रमण में यह यशस्विता प्राप्त न कर सका। फिर इसकी पत्नी वरांगी ने इससे इंद्र का पराजय करनेवाला महापराक्रमी पुत्र माँग लिया, जो तारकानुर नाम से प्रसिद्ध हुआ (मत्स्य. १४५-१४६; पद्म. सू. ४२; शिव. सू. पार्वती. १४)।

प्रा. च. १००]

वज्रांगद—पांड्य देश का एक राजा, जिसे 'अरुणा-चलेश्वर' की पूजा करने के कारण सद्गति प्राप्त हुई (स्कंद. १.३.२-२४)। पाठभेद—'रत्नांगद'।

वज्रिन्—एक सनातन विश्वेश्वर (म. अनु. ११.१३)।

वंजुलि—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वंजुल—एक वैश्य, जिसका कालिंजर पर्वत पर स्थित 'वासणसी तीर्थ' में सोमवती अमावस्या के दिन स्नान करने के कारण उद्धार हुआ (पद्म. भू. ११-१२)।

वंजुलि—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वट—स्कंद का एक पार्षद, जो अंश के द्वारा दिव्ये गये पाँच पार्षदों में से एक था। अन्य चार पार्षदों के नाम पुरिच, भीम, दहति एवं दहन थे (म. श. ४४.३१)।

वटिका—व्यास की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम शुक्र था (व्यास देखिये)।

वडवा—सूर्य की पत्नी संज्ञा का नामान्तर, जो उसे अश्विनी (वडवा) का रूप धारण करने के कारण प्राप्त हुआ था। सूर्य ने अश्व का रूप धारण कर इससे संभोग किया, जिससे इसे अश्विनीकुमार नामक जुड़वे पुत्र उत्पन्न हुए (भा. ६.६.४०)।

२. एक अग्नि, जो समुद्र के भीतर वास्तव्य करती है। और्व नामक अग्नि जन्म लेते ही समस्त पृथ्वी को जलाने लगी। तब उसके पितरों ने आ कर उसे समझाया, एवं उसे अपनी क्रोधाग्नि को समुद्र में डाल देने के लिए कहा। पितरों के आदेश से, और्व ने अपने क्रोधाग्नि को समुद्र में डाल दिया।

वहाँ आज भी अश्व की मुख जैसी आकृति बना कर, यह समुद्र का जल पीती रहती है (म. आ. १७१.२१-२२)। वायु के अनुसार, यह एवं और्व अग्नि दोनों एक ही हैं (वायु. १.४७; और्व २. देखिये)।

वडवा प्रातिथेयी—एक ब्रह्मवादिनी, जो ब्रह्मचर्य-व्रत से रहती थी। कई अभ्यासकों के अनुसार, लोपामुद्रा की यह गभस्तिनी एवं यह दोनों एक ही हैं (गभस्तिनी देखिये)। ब्रह्मयज्ञागतर्पण में इसका निर्देश प्राप्त है (आश्व. ग. ३.३.)।

वत्स—(सो. पू. ६.) एक राजा, जो सेनाजित राजा का पुत्र था।

२. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार चक्षु राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम नडवला था।

३. (सो. क्षत्र.) काशी देश का एक राजा, जो वायु के अनुसार प्रतर्दन राजा का पुत्र था। परशुराम के भय से, यह गोशाला में गायों के बल्ले (वत्सों) के बीच पालपोस कर बड़ा हुआ, जिस कारण इसे 'वत्स' नाम प्राप्त हुआ (म. शां. ४९.७१)।

४. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार उरुक्षेत्र राजा का पुत्र था। इसे 'वत्सद्रोह', 'वत्सवृद्ध', एवं 'वत्सव्यूह' आदि नामांतर प्राप्त थे।

५. कोसल देश का एक राजा, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.२०)।

६. सोम नामक शिवावतार का एक शिष्य।

७. कंस के पक्ष का एक दैत्य, जो 'गोवत्स' का रूप धारण कर कृष्ण का नाश करने गोकुल में उपस्थित हुआ था। इसे 'वत्सक' नामांतर भी प्राप्त था (भा. १०. ४३.३०)। कपिल के वृक्ष पर पटक कर, कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.११.४२)।

८. एक वैश्य, जो मंत्रविद्या में प्रवीण था (ब्रह्मांड, २.३२.१२१)।

९. एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से शाश्वत्क्य का वाजसनेय शिष्य था (व्यास देखिये)।

१०. एक आचार्य, जो व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा में से देवमित्र नामक आचार्य का शिष्य था। पाठभेद- 'वास्य'।

११. पूर्व भारत में रहनेवाला एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ५.२.२)। इस देश के योद्धा धृष्टद्युम्न के द्वारा निर्मित क्रौंचव्यूह के वाम पक्ष में खड़े थे (म. भी. ४६.५१)। काशिराज की कन्या अंजा इन्हीं लोगों के देश में तपश्चर्या करने आयी थी (म. उ. १८७.२३)।

वत्स आग्नेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १८७)। यह एवं अन्य एक सूक्तद्रष्टा कुमार आग्नेय, एक ही वंश में उत्पन्न हुए होंगे।

वत्स काण्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, एवं 'चरका-ध्वर्यु सूत्र' का रचयिता (ऋ. ८.६.११)। कण्व ऋषि का पुत्र होने से, इसे 'काण्व' पौत्रक नाम प्राप्त हुआ था (ऋ. ८.८.८)।

तिरिंदर पारश्वय राजा से इसे विपुल धन प्राप्त हुआ था (ऋ. ८.६.४६; सां. श्रौ. १६.११.२०)। मेवातिथि नामक इसके प्रतिद्वंद्वी ने इसे शूद्रपुत्र कहा, किंतु अग्निर्विद्य

कर इसने अपनी जातिविपयक शुद्धता प्रस्थापित की (पं. ब्रा. ८.६.१)। हेमाद्रि के 'परिशेष खंड' में इसका निर्देश प्राप्त है।

वत्सक—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार श्रावस्त राजा का पुत्र, एवं वृहदश राजा का भाई था। पुराणों में इसे 'वंशक' कहा गया है।

२. (सो. क्रोष्ट.) एक यादववंशीय राजा, जो वसुदेव का भाई, एवं शूर राजा के दस पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम मारिषा था। मिश्रकेशी नामक अप्सरा से इसे वृक आदि पुत्र उत्पन्न हुए (भा. ९.२४. २९-४३)।

३. वत्स नाम कंसपक्षीय राक्षस का नामांतर (वत्स, ७. देखिये)।

वत्सद्रोह—(सू. इ. भविष्य.) इक्ष्वाकुवंशीय वत्स राजा का नामांतर (वत्स, ४. देखिये)। मत्स्य में, इसे उरुक्षेत्र राजा का पुत्र कहा गया है।

वत्सनपात् वाभ्रव्य—एक आचार्य, जो पश्चिम सौभर नामक आचार्य का शिष्य था (वृ. उ. १.५.२२; ४.५.२८. माध्य.)। बभ्रुका वंशज होने से इसे 'वाभ्रव्य' पौत्रक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वत्सनाभ—एक महर्षि। एक बार यह बर्षा में फँस गया, जब इंद्र ने भैंस का रूप धारण कर इसकी रक्षा की। आगे चल कर, इसने कृतव्रता से उसी भैंस को भक्षण करने चाहा, किंतु योग्य समय पर इसे अपने विचारों से लज्जा उत्पन्न हुई, एवं यह प्राणत्याग करने निकला (म. अनु. १२)। किंतु धर्म रूप में इसे रोक लिया, एवं मनःशांति के लिए 'शंखतीर्थ' में इसे स्नान करने के लिए कहा (स्कंद. ३.१.२५)।

वत्सपाल—(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भविष्य के अनुसार उरुक्षेत्र राजा का पुत्र था।

वत्सप्रि भालंडून—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जो 'वालप्र सामन्त' नामक साम का द्रष्टा था (ऋ. ९.६८; १०. ४५-४६; तै. सं. ५.२.१.६; क. सं. १९.१.२; मै. सं. ३. २.२; पं. ब्रा. १२.११.२५; शं. ब्रा. ६.५.४.१)। प्रजा के दीर्घायु के लिए, इस साम का पटन किया जाता है।

२. (सू. विश्व.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार मलेदन राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'वत्सप्रिनि' कहा गया है, एवं इसके पुत्र का नाम प्रांथु बताया गया है। इसने कुजुंम राजस का वध कर, विदूरथ राजा की कन्या

औनदा अथवा मुद्रावती से विवाह किया था (मार्क. ११३)।

वत्सप्रीति—द्विध्वंशीय वत्सप्रि राजा का नामान्तर (वत्सप्रि मालेदन २. देखिये)।

वत्समित्र गोभिल—एक आचार्य, जो मौल्यगुलवी-पुत्र गोभिल नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम मूलमित्र गोभिल था (वे. ब्रा. ३)।

वत्सर—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो ध्रुव राजा के दो पुत्रों में से कनिष्ठ था। इसकी माता का नाम भ्रमी था। इसका ज्येष्ठ भाई उक्कल प्रारंभ से ही विरक्त था, जिस कारण कनिष्ठ होते हुए भी यह राजगद्दी पर बैठा।

इसकी पत्नी का नाम स्वर्वाथी था, जिससे इसे निम्न-लिखित छः पुत्र-उत्पन्न हुए थे:—पुण्याणी, तिग्मकेतु, ईश, ऊन, वसु एवं जय (भा. ४.१०.१; १३.११)।

२. ऋष्यकुलोत्पन्न एक प्रवर।

वत्सराज—कोसल नरेश वत्स राजा का नामान्तर (वत्स ५. देखिये)।

वत्सल—वसन नामक स्कंद के एक सैनिक का नामान्तर।

वत्सला—अभिमन्यु की पत्नी, जिसकी जीवनकथा मराठी 'वत्सलाहरण' नामक लोकप्रिय काव्य में प्राप्त है। २. श्रीकृष्ण की एक गोपी (पद्म. सू. ७७)।

वत्सवालक—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो विष्णु के अनुसार द्युमराज का पुत्र था।

वत्सवृद्ध—(सू. इ. भविष्य.) इक्ष्वाकुवंशीय वत्स राजा का नामान्तर (वत्स ४. देखिये)। भागवत में इसे उल्लिखित राजा का पुत्र कहा गया है।

वत्सद्यूह—(सू. इ. भविष्य.) इक्ष्वाकुवंशीय वत्स राजा का नामान्तर (वत्स ४. देखिये)। वायु में इसे जय राजा का पुत्र कहा गया है।

वत्सार—ऋश्यप ऋषि के अवत्सार काश्यप नामक पुत्र का नामान्तर (अवत्सार काश्यप देखिये)। काश्यप कुलोत्पन्न एक मंत्रकार के नाते इसका निर्देश प्राप्त है, किन्तु ऋग्वेद में इसके नाम पर एक भी मंत्र उपलब्ध नहीं है। इसे निश्रुव एवं रेथ्य नामक दो पुत्र थे।

वत्स्य—वात्स्य नामक भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर (वात्स्य ७. देखिये)।

वदाम्य—एक ऋषि, जिसकी कथा का नाम सुप्रभा था। अथावक राजा ने सुप्रभा से विवाह करने की इच्छा प्रकट की, जिस पर इसने उसे उत्तरदिशा की यात्रा

करने के लिए कहा। वह यात्रा पूरी होने पर इसने सुप्रभा का विवाह अथावक से कराया (म. अनु. ५०.११; अथावक देखिये)।

वद्य—एक राक्षस, जो यातुधान नामक राक्षस का पुत्र था। इसके पुत्रों के नाम विघ्न एवं शमन थे (ब्रह्मांड. ३.७.९४)।

वाधिमती—पुरंधि नामक स्त्री का नामान्तर (ऋ. ११६.१२)। अश्विनो की कृपा से इसके पति को पुनः पुरुषत्व प्राप्त हुआ था। आगे चल कर इसे हिरण्यहस्त नामक पुत्र भी उत्पन्न हुआ था (ऋ. १. ११६.१३; ११७. २४; ६.६२.७; १०.३९.७; ६५.१२)।

लो. तिलक के द्वारा वधिमती के इस कथा का अन्वयार्थ अन्य प्रकार से लगाया गया है, जिसमें उन्होंने आशों का मूलस्थान उत्तरध्रुव में होने के अपने सिद्धान्त का संकेत पाया है (आशों का मूलस्थान, पृ. २२८)।

वध्यश्व—(सो. नील.) एक राजा, जो मुद्रल राजा का पुत्र था।

ऋग्वेद में अग्निपूजा के समर्थक राजा के रूप में इसका निर्देश प्राप्त है, एवं सरस्वती के द्वारा इसे दिवोदास नामक पुत्र प्रदान किये जाने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ६. ३१.१; १०.६९.१; अ. वे. २.२९.४)। इसका पुत्र दिवोदास भी इसीके तरह श्रेष्ठ यज्ञकर्ता था। वध्यश्व का शब्दशः अर्थ 'बधिया अश्व' होता है। कई अभ्यासकों के अनुसार, इसे सुमित्र नामान्तर भी प्राप्त था।

पुराणों में इसके 'वध्यश्व', 'वधश्व', 'वध्यश्व' एवं 'विध्याश्व' नामान्तर प्राप्त हैं। मत्स्य में इसे इंद्रसेन राजा का, एवं वायु में 'ब्रह्मिष्ठ' राजा का पुत्र कहा गया है। मत्स्य में इसका वंशक्रम ब्रह्मिष्ठ-इंद्रसेन-विन्ध्याश्व-दिवोदास इस क्रम से दिया गया है। कई अभ्यासकों के अनुसार, यह ब्रह्मिष्ठ एवं इंद्रसेना का पुत्र था। किन्तु मत्स्य में 'इंद्रसेना' के बदले 'इंद्रसेन' पाठ का स्वीकार कर, इसे इंद्रसेन राजा का पुत्र कहा गया है, जो गलत प्रतीत होता है।

इसकी पत्नी का नाम मेनका था, जिससे इसे दिवोदास एवं अहल्या नामक संतान उत्पन्न हुई (मत्स्य. ५०.७; वायु. ९९.१९५; ह. वे. १.३२.७०)।

२. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वध्यश्व अनूप—एक सामद्वेष आचार्य (पं. ब्रा. १३.३.१७)। अनूप का वंशज होने के कारण, इसे 'अनूप' पितृक नाम प्राप्त हुआ था।

वन—(सो. भन्तु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार उशीनर राजा का पुत्र था। इसे 'नववत्' एवं 'नर' नामान्तर प्राप्त थे।

वनजात—(सो. विदू.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार हृदीक राजा का पुत्र था।

वनस्पति—वृत्तगुप्त राजा के सात पुत्रों में से एक (भा. ५.२०.२१)।

वनायु—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के दस प्रधान पुत्रों में से एक था।

२. पुरुरवस् राजा को उर्वशी से उत्पन्न छः पुत्रों में से एक पुत्र। अन्य पाँच पुत्रों के नाम निम्नप्रकार थे:—आयु, वीमत्, अमावसु, दृढायु एवं शतायु (म. भा. ७०.२२)।

वनाह—एक यादव राजा, जो वायु के अनुसार हृदीक राजा का पुत्र था।

वनेन—प्रयुक्त देवों में से एक।

वनेयु—(सो. पुरुरवस्) एक राजा, जो भागवत, वायु एवं विष्णु के अनुसार रौद्राश्व राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम मिश्रकेशी था। मत्स्य में इसे विनेयु कहा गया है।

इसके निम्नलिखित नौ भाई थे:— ऋचेयु, कक्षेयु, कृकण्यु, स्थण्डिलेयु, वनेयु, तेजेयु, स्थलेयु, धर्मयु एवं संतनेयु (म. भा. ८९.९-१०)।

वंदन—एक ऋषि, जिस पर अश्वियों की कृपा थी। यह जब कुएँ में गिरा था, तब अश्वियों ने इसे बाहर निकाला (ऋ. १.११६.११; १.१७.५; १०.२९.८)। पुराना रथ जिस प्रकार नया बनाया जाता है, उसी प्रकार अश्वियों ने इसे तरुण बनाया (ऋ. १.११९.७); इसकी आयु बढ़ाई; एवं इसका उद्धार किया (ऋ. १.११६)। सायण के अनुसार, कुएँ में गिरने के कारण इसे अपने पत्नी का विरह हुआ था, जिसे भी अश्वियों ने दूर किया।

वंदिन्—वंदिन् नामक वेदित का नामान्तर (वंदिन् देखिये)।

वपु—एक अप्सरा, जिसने दुर्वासस् के तपोभंग का असफल प्रयत्न किया था। दुर्वासस् ने इसे शाप दिया, जिस कारण अगले जन्म में यह कंधर एवं मेनका की ताश्री नामक कन्या बन गई (मार्क. १.४९-५६; २.४१)।

वपुष्टमा—काशिराज सुवर्णवर्मन् की कन्या, जो जनमेजय पारिक्षित राजा की पत्नी थी। इसके शतानीक

एवं शंकुकर्ण नामक दो पुत्र थे (म. भा. ४०.८; ९०.९४)।

वपुष्मत्—स्वायंभुव मनु के पुत्रों में से एक।

२. धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तपिपियों में से एक।

३. एक राजा, जो विदर्भराज संक्रंदन राजा का पुत्र था। सुविख्यात दिष्टवंशीय राजा दम के साथ इसका शत्रुत्व था। दशार्ण देश के राजा चाक्षवर्मन् की कन्या सुमना का दम ने हरण किया, जिस कारण दम से इसका शत्रुत्व बढ़ता ही गया।

कालोरान्त दम से बदला लेने के लिए, इसने उसके पिता नरिष्यन्त का वध किया। पश्चात् दम की माता इंद्रसेना ने अपने पति नरिष्यन्त के मृत्यु की बात उसे कह दी, एवं स्वयं पति के साथ सती हो गई।

माँ एवं पिता की मृत्यु की बात सुन कर दम अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं उसने इस पर आक्रमण कर के इसका वध किया। पश्चात् उसने इसके रक्त से पितृतर्पण किया, एवं इसके ही मांस से पिंडदान कर, राक्षसकुलोत्पन्न ब्राह्मणों को खाने के लिए दिया (मार्क. १.२३; सुमना देखिये)।

वपुष्मती—सिंधुराज की कन्या, जो मरुत् राजा की पत्नी थी (मार्क. १.२०.४७)।

२. स्कंद की अनुचरी एक मातृका।

वाप्रिन्—द्रापरयुगों में उत्पन्न अष्टादश व्यासों में से एक (व्यास देखिये)।

वमक—तामस मन्वन्तर के सप्तपिपियों में से एक।

वम्र—सोमयज्ञ करनेवाला एक ऋषि, जिस पर अश्वियों की कृपा थी (ऋ. १.५.१.९; १.२२.१.५; १०.९९.५)।

वम्र वैखानस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.९१.१२)। ऋग्वेद के इसी सूक्त में अन्यत्र इसका निर्देश वम्र एवं वम्रक नाम से किया है, एवं इसे इंद्र की उपासना करनेवाला धनाढ्य ऋषि कहा गया है (ऋ. १०.९१.५-१२)।

वम्रक—वम्र वैखानस नामक आचार्य का नामान्तर।

वम्री—एक व्यक्ति (ऋ. ४.११.९)। वम्र का शब्दशः अर्थ 'चींटी' होता है। पिरोल के अनुसार, यह एक ऐसा व्यक्ति था कि, जो अविवाहित माता से उपन्न होने के कारण वन में छोड़ा गया था। वहाँ यह चींटियों के द्वारा भक्षण किये जानेवाला था, जितने में इसकी मुक्तता की गई।

वय—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वयस्य—वयस्य नामक अंगिरसपुत्र का नामान्तर।

वयुन—एक ऋषि, जो कृष्णाश्व ऋषि का पुत्र था। इसकी माता का नाम धिपणा था (भा. ६.६.२०)।

वयुना—एक पितृकन्या, जो भागवत के अनुसार विर एवं स्वभा की कन्या थी।

वय्य—एक राजा, जिसका निर्देश ऋग्वेद में प्रायः सर्वत्र तुर्वीति राजा के साथ प्राप्त है (ऋ. १.५४.६; २.१३.१२; ४.१९.६)। अधियों ने इसका रक्षण किया था (ऋ. १.११२.६)।

सावण के अनुसार, तुर्वीति राजा का पैतृक नाम वय्य था, किन्तु रौध इसे तुर्वीति राजा का एक मित्र मानते हैं।

वर—पितरों में से एक।

वरंवरा—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं मुनि की कन्याओं में से एक थी।

वरतंतु—एक व्याकरणाचार्य, जिसका निर्देश एक शालाप्रवर्तक आचार्य के नाते पाणिनि के अष्टाध्यायी में प्राप्त है (पाणिनि देखिये)।

वरत्रिन्—शुक्र के चार पुत्रों में से एक। इसके पृथुरश्मि, बृहदांगिरस एवं रजत नामक तीन पुत्र थे, जो यज्ञकर्मविरोधी होने के कारण इंद्र के द्वारा मारे गये। बालोपरान्त उनके कटे हुए सर से खजूर के पेड़ निर्माण हुए (तथा. ३१.८२-८४)।

पंचविंश ब्राह्मण में पृथुरश्मि के संबंध में विभिन्न कथा दी गयी हैं, जहाँ उसे यज्ञविरोधी कहते हुए भी, वह इंद्र के द्वारा बचाया जाने का निर्देश प्राप्त है (पृथुरश्मि देखिये)।

वरद—पितरों में से एक।

२. स्कंद का एक सैनिक (म. स ४८. ५९)।

वरप्र—महौजस वंश का एक कुलंगार राजा, जिसने दुर्व्यवहार के कारण अपने जातिबंधुओं का एवं स्वजनों का नाश किया (म. उ. ७.२.१५)। पाठभेद—‘वरयु’।

वररुचि—एक सुविख्यात प्राकृत व्याकरणकार, जिसके द्वारा रचित ‘प्राकृतप्रकाश’ नामक ग्रंथ प्राकृत व्याकरण का आद्य ग्रंथ माना जाता है।

यह पाणिनीय व्याकरण के सुविख्यात वार्तिककार कात्यायन वररुचि से भिन्न, एवं उससे काफी उत्तरकालीन था। विक्रम संवत् के प्रवर्तक सम्राट् विक्रमादित्य के विद्वत्सभा का यह एक सभापद, एवं उसका धर्माधिकारी था (वाररुचि निरुक्त सम्बुद्ध पृ. ४२)।

वार्तिककार वररुचि के समान इसका गोत्र भी कात्यायन ही था, एवं इसे धृतिधर नामान्तर भी प्राप्त था

(समुद्रितकरणामृत पृ. २९७)। इसने पाणिनि के अष्टाध्यायी पर एक वृत्ति लिखी थी, जिसका निर्देश—हस्तलेखों के मुद्रि में प्राप्त है (C. C.)।

कातंत्र व्याकरण के वृत्तिकार दुर्गासिंह के अनुसार, उस व्याकरण का कृदंत नामक उचरार्थ इसके द्वारा विरचित था।

वररुचि के द्वारा यास्क के निरुक्त पर ‘निरुक्त समुच्चय’ नामक टीका का निर्माण किया गया था। स्कंद-स्वामिन् के द्वारा विरचित निरुक्त टीका में ‘वाररुचि निरुक्त समुच्चय’ की पर्याप्त सहाय्यता ली गयी है, एवं इसके अनेकानेक उद्धरण भी लिये गये हैं।

प्राकृतप्रकाश—वररुचि का ‘प्राकृतप्रकाश’ उपलब्ध प्राकृत व्याकरणों में सब से अधिक प्राचीन माना जाता है। इस ग्रंथ में वारह परिच्छेद हैं, जिनमें से पहले नौ परिच्छेदों में ‘महाराष्ट्री’ प्राकृत के नक्षत्रों का वर्णन है। दसवें परिच्छेद में ‘पैशाची’, एवं ग्यारहवें परिच्छेद में ‘मागधी’ के लक्षण बताये गये हैं। वारहवें परिच्छेद में ‘शौरसेनी’ का विवेचन प्राप्त है।

इस ग्रंथ में से आखिरी तीन परिच्छेद उत्तरकालीन माने जाते हैं, जो स्वयं वररुचि के द्वारा नहीं, बल्कि मामह अथवा अन्य कोई टीकाकार के द्वारा लिखे गये होंगे।

इस ग्रंथ की प्राचीनतम टीका कात्यायन द्वारा विरचित ‘प्राकृतमंजरी’ है, जिसका रचनाकाल लगभग ई. स. ६ वी-७ वीं शताब्दी माना जाता है। इस ग्रंथ की अन्य सुविख्यात टीकाएँ निम्न हैं :—मामहकृत ‘मनोरमा’; वसंतराजकृत ‘प्राकृत संजीवनी’ तथा सदानंद कृत ‘सदानंद’।

प्राकृत व्याकरण का सर्वमान्य संस्करण कौबेल द्वारा संपादित, एवं ई. स. १८६८ में लंदन में प्रकाशित किया गया है, जिसमें मामह की टीका के साथ अंग्रेजी अनुवाद एवं टिप्पणियाँ भी प्राप्त हैं :—

ग्रंथ—वररुचि क नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त हैं—१. तैत्तिरीयप्रातिशाख्यव्याख्या (त्रिभाष्यरत्न. १.१८.२.१४); २. निरुक्तसमुच्चय; ३. लिमाविशेषावधि (लिमानुशासन); ४. प्रयोगविधि; ५. कातंत्रउचरार्थ; ६. प्राकृतप्रकाश; ७. उपसंगमूद; ८. पत्रकौमुदी; ९. विद्यामुंदर काव्य; १०. यंत्रकौमुदी।

२. एक सुविख्यात व्याकरणकार, जो पाणिनीय व्याकरण के वार्तिकों का कर्ता माना जाता है। इसका संपूर्ण नाम कात्यायन वररुचि था (कात्यायन देखिये)।

३. एक सुविख्यात नाख्यशास्त्रप्रणेता (मत्स्य. १०. २५)।

वरशिशु—एक ज्ञातिप्रमुख, जिसके ज्ञाति का अभ्यावर्तिन् चायमान एवं वृचिवत् राजाओं ने पराजय किया था। (ऋ. ६.२७.४-५)। क्षिप्र के अनुसार, वरशिशु तुर्वश एवं रुचीवन्त लोगों का नेता था (अष्टिन्दिशो लेवेन. १३३)। किन्तु यह विधान केवल अनुमानात्मक ही प्रतीत होता है। ऋग्वेद के इसी सूक्त में अभ्यावर्तिन् चायमान के भय से इसका पुत्र मृत होने का निर्देश प्राप्त है।

बृहद्देवता में वरशिशु लोगों का विदेश प्राप्त है, जो संभवतः इसके ही वंशज होंगे (बृहदे. ५.१२४)।

वरस्त्री—बृहस्पति की एक बहन, जो प्रभास नामक वसु की पत्नी थी (म. आ. ६०.२६; वायु. ८४.१५)। यह ब्रह्मवादिनी थी, एवं योगसामर्थ्य के कारण समस्त सृष्टि में संचार करती थी।

वरा—हेमधर्म राजा की कन्या, जिसने अविश्वित् राजा का स्वयंवर में वरण किया था (मार्क. ११९. १६)।

वरांग—(पौर. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार धर्म राजा का पुत्र था।

वरांगना—मथुरा के उग्रसेन राजा की कन्या।

वरांगिन्—दिवंजय राजा का एक पुत्र (ब्रह्मांड. २. ३६.१०१)।

वरांगी—वज्रांग नामक असुर की पत्नी (मत्स्य. १४५)। ब्रह्मा ने इसे वज्रांग दैत्य की पत्नी बनने के लिए ही उत्पन्न किया था (पद्म. सु. ४२)। वज्रांग से इसे तारकासुर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (वज्रांग देखिये)। इसे वरांग नामान्तर भी प्राप्त था।

२. सोमवंशीय संयाति राजा की पत्नी, जो दशदत्त राजा की कन्या थी। इसके पुत्र का नाम अहंयाति था (म. आ. ९०.१४)।

वराह—विष्णु का तृतीय अवतार, जो हिरण्यक्ष नामक असुर के वध के लिए उत्पन्न हुआ था। इसे 'यज्ञ-वराह' नामान्तर भी प्राप्त था (म. स. परि. १ क्र. २१ पंक्ति. १४०)।

वैदिक साहित्य में—वराह अवतार का अस्पष्ट निर्देश वैदिक साहित्य में प्राप्त है। किन्तु वहाँ कौनसी भी जगह वराह-अवतार को विष्णु का अवतार नहीं बताया गया है।

ऋग्वेद में इंद्र के द्वारा वराह का वध होने की कथा दी गई है (ऋ. १०.९९.६)। प्रजापति के द्वारा वराह, का रूप लेने की कथा तैत्तिरीय-संहिता में प्राप्त है। पृथ्वी के उत्पत्ति के पूर्वकाल में प्रजापति वायु का रूप धारण कर अंतरिक्ष में घूम रहा था। उस समय समुद्र के पानी में डूबी हुई पृथ्वी उसने सहजवश देखी। फिर प्रजापति ने वराह का रूप धारण कर पानी में प्रवेश किया, एवं पानी में डूबी हुई पृथ्वी को उपर उठाया। तत्पश्चात् उसने पृथ्वी को पाल कर स्वच्छ किया, एवं वहाँ देव, मनुष्य आदि का निर्माण किया (तै. सं. ७.१.५.१)।

तैत्तिरीय ब्राह्मण में यही कथा कुछ अल्पा दँग से दी गई है, जिसके अनुसार ब्रह्मा के नामिकमल के निचले भाग में स्थित कीचड़ प्रजापति ने वराह का रूप धारण कर क्षीरसागर से उतर लाया, एवं उसे ब्रह्मा के नामिकमल के पत्रों पर फैला दिया। आगे चल कर उसी कीचड़ ने पृथ्वी का रूप धारण किया (तै. ब्रा. १.१.३)।

'पुराणों में—इन ग्रंथों में निर्दिष्ट विष्णु के अवतार प्रायः 'वराहअवतार' से ही प्रारंभ होता है। हिरण्यक्ष नामक असुर पृथ्वी का हरण कर उसे पाताल में ले गया। उस समय विष्णु ने वराह का रूप धारण कर, अपने एक ही दाँत से पृथ्वी को उपर उठा कर समुद्र के बाहर लाया, एवं उसकी स्थापना चोप नाग के मस्तक पर की। तत्पश्चात् उसने हिरण्यक्ष का भी वध किया (म. व. परि. १. क्र. १६. पंक्ति. ५६-५८; क्र. २७. पंक्ति. ४७-५०; शां. २६०; मत्स्य. ४७.४७.२४७-२४८; भा. १.२.७; २.७.१; ३.१३.३१; लिग. १.९४; वायु. ९७.७; ह. वं. १.४१; पद्म. उ. १६९; २३७)।

विष्णु का यह अवतार वराह-रूप के प्रारंभ में हुआ (वायु. २३.१००-१०९)। कई पुराणों में इसका स्वरूपवर्णन प्राप्त है, जहाँ इसे चतुर्नाडु, चतुष्पाद, चतुर्नेत्र एवं चतुर्मुख कहा गया है। हिरण्यक्ष के वध के पश्चात् इसने यथाविधि श्राद्ध किया था (म. शां. ३३३. १२-१७)।

वराहस्थान—जिस स्थानपर इसने पृथ्वी का उद्धार किया, उस स्थान को 'वराहतीर्थ' कहते हैं (म. व. ८१.१५; पद्म. उ. १६९)। वराह पुराण के अनुसार, यह 'वराहक्षेत्र' अथवा 'कोकासुखक्षेत्र' बंगाल में त्रिवेणी नदी के तट पर नाथपूर ग्राम के पास स्थित है (वराह. १४०)। गंगानदी के तट पर सोरोन ग्राम में वराह-लक्ष्मी का मंदिर है (वराह. १३७)।

वराह-अवतार का अन्वयार्थ—विष्णु के दस अवतारों में से मत्स्य, कूर्म एवं वराह ये 'दिव्य,' अर्थात् मनुष्यजाति के उत्पत्ति के पूर्व के अवतार माने जाते हैं। विष्णु के मानुषी अवतार अर्धमनुष्याकृति नृसिंह से, एवं वामन अवतार से प्रारंभ होते हैं। इससे प्रतीत होता है कि, मत्स्य, वराह एवं कूर्म अवतार पृथ्वी के उस अवस्था में उत्पन्न हुए थे, जिस समय पृथ्वी पर कोई भी मनुष्य प्राणि का अस्तित्व नहीं था। प्राणिजाति की उत्क्रान्ति के दृष्टि से भी मत्स्य, कूर्म, वराह यह क्रम सुयोग्य प्रतीत होता है। क्योंकि, प्राणिशास्त्र के अनुसार सृष्टि में सर्वप्रथम जलचर प्राणि (मत्स्य) उत्पन्न हुए, एवं तत्पश्चात् क्रमशः जमीन पर घसीट कर चलनेवाले (कूर्म), स्तनोंवाले (वराह), एवं अन्त में मनुष्यजाति का निर्माण हुआ। इस प्रकार पुराणों में निर्दिष्ट विष्णु के दैवी अवतार प्राणिजाति के उत्क्रान्ति के क्रमशः विकसित होनेवाले रूप प्रतीत होते हैं।

प्राणिशास्त्र की दृष्टि से, प्राणिजाति के उत्पत्ति के पूर्व समस्त सृष्टि जलमय थी, जहाँ के कीचड़ में सर्वप्रथम प्राणिजाति की उत्पत्ति हुई। इस दृष्टि से देखा जाये तो, प्रजापति ने वराह का रूप धारण कर समुद्र का सारा कीचड़ पानी के बाहर लाया, एवं उसी कीचड़ से सर्वप्रथम पृथ्वी का, एवं तत्पश्चात् पृथ्वी के प्राणिसृष्टि का निर्माण किया, यह तैत्तिरीय ब्राह्मण में निर्दिष्ट कल्पना उत्क्रान्तिवाद की दृष्टि से सुयोग्य प्रतीत होती है।

वैदिक वाङ्मय में सर्वत्र ब्रह्मा को सृष्टि का निर्माण करनेवाला देवता माना गया है, जिसका स्थान ब्राह्मण एवं पौराणिक ग्रंथों में क्रमशः प्रजापति एवं विष्णु के द्वारा लिया गया है (ब्रह्मन्, विष्णु एवं प्रजापति देखिये)। यही कारण है कि, ब्राह्मण एवं पौराणिक ग्रंथों में वराह को क्रमशः प्रजापति एवं विष्णु का अवतार कहा गया है।

२. युधिष्ठिर की सभा का एक ऋषि (म. स. ४.१५)।

वराहक—श्रुतराक्षकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में डूब हुआ था (म. आ. ५२. १८)।

वराहक—कुबेरसभा में उपस्थित एक यक्ष (म. स. १०.१६)।

वराहाश्व—एक दानव (म. शां. २२०.५२)।

वरिष्ठ—नाक्षत्र मनु के पुत्रों में से एक (म. अनु. १८.२०)। इसने गृह्यसूत्र ऋषि को साम के अशुद्ध पाठन

के कारण शाप दिया था (म. अनु. १८.२३-२५; गृह्यसूत्र १. देखिये)।

वरिन्—एक सनातन विश्वदेव (म. अनु. ९.१. ३३)।

वरीताक्ष—एक असुर, जो पूर्वकाल में पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२०.५६)। पाठभेद—'वीरताम्र'।

वरीयस्—(स्वा.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पुलह राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम गति था।

२. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

वरु—एक व्यक्तिनाम (ऋ. ८.२३.२८; २४.२८; २६.२)। इसका निर्देश प्रायः सर्वत्र सुषामन् के साथ प्राप्त है (सुषामन् देखिये)।

वरु आगिरस—एक वैदिक सूतद्रष्टा (ऋ. १०. ९६)।

वरुण—एक सर्वश्रेष्ठ वैदिक देवता, जो वैदिक साहित्य में आकाश का, एवं वैदिकोत्तर साहित्य में समुद्र का प्रतीक माना गया है।

वैदिक साहित्य में—इंद्र के साथ वरुण भी एक महत्त्व देवता माना गया है। नियमित रूप से प्रकाशित होनेवाले मित्र (सूर्य) देवता से संबंधित होने के कारण, वैदिक साहित्य में वरुण सृष्टि के नैतिक एवं मौक्तिक नियमों का सर्वोच्च प्रतिपालक माना गया है। वैदिकोत्तर साहित्य में, सृष्टि के सर्वोच्च देवता के रूप में प्रजापति का विकास होने पर, वरुण का श्रेष्ठ धीरे धीरे कम होता गया, एवं इसके भूतपूर्व अधिराज्य में से केवल जल पर ही इसका प्रभुत्व रह गया। इसी कारण उत्तर-कालीन साहित्य में यह केवल समुद्र की देवता बन गया।

स्वरूपवर्णन—वरुण का मुख (अनीकम्) अग्नि के समान तेजस्वी है, एवं सूर्य के सहस्र नेत्रों से यह मानवजाति का अन्विलोकन करता है (ऋ. ७.३४; ८८)। इसी कारण इसे 'सूर्यनेत्री' कहा गया है (ऋ. ७.६६)। मित्र एवं त्वाष्ट्र के भीति यह सुंदर हाथोंवाला (सुगणि) है, एवं एक स्वर्णद्रापी एवं युतिमान वस्त्र यह परिधान करता है (ऋ. १०.२५)। इसका रथ सूर्य के समान युतिमान है, जिसमें स्तंभों के स्थान पर नधियाँ लगी हैं (ऋ. १. १२२)।

शतपथ ब्राह्मण में इसे श्वेतवर्ण, गंजा एवं पीले नेत्रोंवाला वृद्ध पुरुष कहा गया है (श. प्रा. १३.३.६)।

निवासस्थान—मित्र एवं वरुण का गृह स्वर्णनिर्मित है, एवं वह चुल्लोक में स्थित है (ऋ. ५.६७)। इसके गृह में सहस्रद्वार हैं, जहाँ यह सहस्र स्तंभोवाले आसन (सदस) पर बैठता है (ऋ. ५.६८)। अपने इस भवन में (पस्यासु) बैठ कर यह समस्त सृष्टि को अवलोकन करता है (ऋ. १.२५)।

सर्वदर्शी सूर्य अपने गृह से उदित हो कर, मनुष्यों के कृत्यों की सूचना मित्र एवं वरुणों को देता है (ऋ. ७. ६०)।

गुप्तचर—वरुण के गुप्तचर (सदाः) चुल्लोक से उतर कर संसार में भ्रमण करते हैं, एवं सहस्र नेत्रों से युक्त होने के कारण, संपूर्ण संसार का निरीक्षण करते हैं (अ. वे. ४.१६)। संभवतः आकाश में स्थित तारों को ही वरुण के दूत कहा गया है। ऋग्वेद में सूर्य को ही वरुण का स्वर्ण पंखोवाला दूत कहा गया है (ऋ. १०.१२३)। ईरान के 'मिश्र' देवता के गुप्तचर भी 'स्पशू' नाम से प्रसिद्ध हैं, जो वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट मित्र एवं वरुणों के गुप्तचरों से काफी मिलते जुलते हैं।

सृष्टि का राजा—अकेले एवं मित्र के साथ वरुण को देवों का, मनुष्यों का तथा समस्त संसार का राजा (सम्राट्) कहा गया है (ऋ. १.१३२; ५.८५)। ऋग्वेद में यह उपाधि प्रायः इंद्र को प्रदान की जाती है, किन्तु वह वरुण को इंद्र से भी अधिक बार प्रदान की गयी है। ऋग्वेद में अन्यत्र इसके सार्वभौम सत्ता (क्षत्र) का, एवं एक शासक के नाते (क्षत्रिय) इसका अनेक बार निर्देश प्राप्त है।

वरुण को प्रकृति के नियमों का महान् अधिपति कहा गया है। इसने चुल्लोक एवं पृथ्वी की स्थापना की, एवं इसके विधान के कारण ही चुल्लोक एवं पृथ्वी अलग अलग हैं (ऋ. ६.७०; ८.४२)। इसने ही अग्नि की जल में, सूर्य की आकाश में, एवं सोम की पर्वतों पर स्थापना की (ऋ. ५.८५)। वायुमंडल में भ्रमण करनेवाला वायु वरुण का ही श्वास है (ऋ. ७.८७)।

पृथ्वी पर रात्रि एवं दिनों की स्थापना वरुण के द्वारा ही की गई है, एवं उनका नियमन भी यही करता है। रात्रि में दिखाई देनेवाले चंद्र एवं ताराका इसके कारण ही प्रकाशित होते हैं (ऋ. १.२४)। इस प्रकार जहाँ मित्र केवल दिन के दिव्य प्रकाश का अधिपति है, वहाँ वरुण को रात एवं दिन दोनों के ही प्रकाश का अधिपति माना गया है।

असुर वरुण—ऋग्वेद में मित्र एवं वरुण को अनेक बार असुर (रहस्यमय व्यक्ति) कहा गया है (ऋ. १. ३५.७; २.७.१०; ७.६५.२; ८.४२.१)। इसे एवं मित्र को रहस्यमय एवं उदात्त (असुरा आर्या) भी कहा गया है (ऋ. ७.६५)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसके माया (गुह्य-शक्ति) का निर्देश प्राप्त है, एवं अपनी इस माया के द्वारा सूर्यरूपी परिमाणयंत्र के द्वारा यह पृथ्वी को नापता है, ऐसा भी कहा गया है (ऋ. ५.८५)। यहाँ 'असुर' एवं 'गुह्यशक्ति' ये दोनों शब्द गौरव के आशय में प्रयुक्त किये गये हैं।

वरुण-देवता का अन्वयार्थ—डॉ. रा. ना. शंकरजी के अनुसार, समस्त सृष्टि का संचालन करने की 'यात्त्वामक' अथवा आसुरी शक्ति वरुण के पास थी, जिस कारण इसे वैदिक साहित्य में असुर (असु नामक शक्ति से युक्त) कहा गया है। इसी आसुरी माया के कारण, वरुण निसर्ग, देव एवं मनुष्यों का सम्राट् बन गया था, एवं इसी अपूर्व शक्ति के कारण, वैदिक साहित्य में वरुण को यक्षिन् (जादुगर) कहा गया है (ऋ. ७. ८८. ६)।

वरुण की इस आसुरी शक्ति का उद्गम निम्नप्रकार बताया जा सकता है। वैदिक आर्यों ने जब देखा कि, इस सृष्टि का जीवनक्रम प्रबंध हो कर भी अत्यंत नियमबद्ध एवं व्यवस्थापूर्ण है, तब इस नियमबद्ध सृष्टि का संचालन करनेवाले देवता की कल्पना उनके मन में उत्पन्न हो गयी।

आकाश में प्रतिदिन प्रकाशित हो कर अस्तगत होनेवाले सूर्य चंद्र एवं तारका; अपने नियत मार्ग से बहनेवाली नदियाँ; एवं अपने नियत क्रम से बढ़नेवाली ऋतु को देख कर, इसे सारे विश्वचक्र का संचालन करनेवाली कोई न कोई अदृश्य देवता होती ही चाहिए, ऐसी धारणा उनके मन में उत्पन्न हुई। इसी अदृश्य शक्ति अथवा देवता को वैदिक आर्यों के द्वारा वरुण कहा गया, एवं यह अपने दैवी शक्ति (माया) के द्वारा सृष्टि का संचालन करता है, यह कल्पना प्रसृत हो गई।

वैदिक साहित्य के अनुसार, वरुण अपने सृष्टिसंचालन का यह कार्य सृष्टि के सारे चर एवं अचर वस्तुमात्रों को ध्यान में रख कर करता है। अपनी 'माया' के कारण वरुण ने अनेक पाश निर्माण किये हैं, जिनकी सहाय्यता से पृथ्वी के समस्त नैसर्गिक शक्तियों को यह

बोध देता है, एवं इसी प्रकार सारे सृष्टि का नियमन करता है।

इतना ही नहीं, यह धैर्यशाली (वृत्तवत्) देवता अपने नियमनों के द्वारा वैश्विक धर्म (ऋत) का संरक्षण करने के लिए पापी लोगों का शासन भी करता है। इस तरह वैदिक साहित्य में वरुण देवता के दो रूप दिखाई देते हैं— १. बंधक वरुण, जो सृष्टि के सारे नैसर्गिक शक्तियों को बाँध कर योजनाबद्ध बनाता है, २. शासक वरुण, जो अपने पाशों के द्वारा आज्ञा पालन न करनेवाले लोगों को शासन करता है।

आगे चल कर वैदिक आर्यों को अनेकानेक मानवीय शक्तियों के साथ सामना करना पड़ा, जिस कारण युद्ध में शत्रु पर विजय प्राप्त करनेवाले विजिगीषु एतद् जेतृ-त्वरूपी नये देवता की आवश्यकता उन्हें प्राप्त होने लगी। इसीसे ही इंद्र नामक नये देवता का निर्माण वैदिक साहित्य में निर्माण हुआ, एवं आर्यों के द्वारा अपने नये युक्तुल्य ध्वज-धारण के अनुसार, उसे राष्ट्रीय देवता के रूप में स्वीकार किया गया। इंद्र के प्रतिष्ठापना के पश्चात्, वरुणदेवता की 'विश्वध्यापी सम्राट्' उपाधि कीरे कीरे खिलीन हो गई, एवं सृष्टि के अनेक विभागों में से, केवल समुद्र के ही स्वामी के रूप में उसका महत्व स्थापित किया गया।

जल का स्वामी—अथर्ववेद में वरुण एक सार्वभौम शासक नहीं, बल्कि केवल जल का नियंत्रक बताया गया है (अ. वे. ३.३)। ब्राह्मण ग्रंथों में भी मित्र एवं वरुण को वर्षा के देवता माने गये हैं। जलेश्वर से पीडित व्यक्ति का निर्देश वैदिक साहित्य में 'वरुणग्रहीत' नाम से किया गया है (तै. सं. २.१.२.१; श. ब्रा. ४.४. ५.११; ऐ. ब्रा. ७. १५)।

अथर्ववेद में निर्दिष्ट यह कल्पना ऋग्वेद में निर्दिष्ट वरुणविषयक कल्पना से सर्वथा भिन्न है। ऋग्वेद में वरुण को नदियों का अधिपति एवं जल का नियामक जरूर बताया गया है। किन्तु वहाँ इसे सर्वत्र सामान्य जल से नहीं, बल्कि अंतरिक्षीय जल से संबंधित किया गया है। यह मेघमंडल के जल में विचरण करता है, एवं वर्षा कराता है। ऋग्वेद का एक संपूर्ण सूक्त इसकी वर्षा करने की शक्ति को अर्पित किया गया है (ऋ. ५.६३)। किन्तु वहाँ सर्वत्र वरुण का निर्देश नैसर्गिक शक्तियों का संचालन करनेवाले देवता के रूप में है, जहाँ जल का महत्व प्रासंगिक है।

वैदिकोत्तर साहित्य में वरुण का सारा सामर्थ्य लुप्त हो कर, यह केवल समुद्र के जल का अधिपति बन गया।

व्युत्पत्ति—वरुण शब्द संभवतः वर (ढकना) धातु से उत्पन्न हुआ है, एवं इस प्रकार इसका अर्थ 'परिवृत करनेवाला' माना जा सकता है। सत्यण के अनुसार, 'वरुण' की व्युत्पत्ति 'पापियों को जेबनो से परिवेशित करनेवाला' (ऋ. १.८९) अथवा 'पापियों को अंधकार की भाँति अन्धकारित करनेवाला' (तै. सं. २.१.७) बतायी गयी है। किन्तु डॉ. दांडेकरजी के अनुसार, वैदिक साहित्य में वरुण शब्द का अर्थ 'जबन में रखना' अभिप्रेत है, एवं इस शब्द का मूल किसी युरोभारतीय भाषा में ढूँढना चाहिए।

सेमेटिक साहित्य में—ओल्डेनबर्ग के अनुसार, वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट मित्र एवं वरुण भारोपीय देवता नहीं हैं, बल्कि इनका उद्गम ज्योतिषशास्त्र में प्रवीण सेमेटिक लोगों में हुआ था, जहाँसे वैदिक आर्यों ने इनका स्वीकार किया। इस प्रकार वरुण एवं मित्र क्रमशः चंद्र एवं सूर्य थे, तथा लघु आदित्यगण पाँच ग्रहों का प्रतिनिधित्व करते थे (ओल्डेनबर्ग, वैदिक रिलिजन २८५-९८)।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इसे चौथा लोकपाल, आदिति का पुत्र, जल का स्वामी एवं जल में ही निवास करनेवाला देवता बताया गया है। कश्यप के द्वारा आदिति से उत्पन्न द्वादश आदित्यों में से यह एक था (म. आ. ५.९.१५)। १५)। इसे पश्चिम दिशा का, जल का एवं नागलोक का अधिपति कहा गया है (म. स. ९.७; उ. ८६. २०)।

इसने अन्य देवताओं के साथ 'विशाखरूप' में तपस्या की थी, जिस कारण वह स्थान पवित्र माना गया है (म. व. ८८.१२)। इसे देवताओं के द्वारा 'जलेश्वर-पद' पर अभिषेक किया गया था (म. श. ४६.११)।

सोम की कन्या भद्रा से इसका विवाह होनेवाला था। किन्तु उसका विवाह सोम ने उच्चथ ऋषि से करा दिया। तत्पश्चात् क्रुद्ध हो कर इसने भद्रा का हरण किया, किन्तु उच्चथ के द्वारा सारा जल पिये जाने पर इसने उसकी पत्नी लौटा दी (म. अनु. १५७.१३-२८)।

वरप्रदान—अग्नि ने इसकी उपासना करने पर, इसने उसे दिव्य धनुष, अक्षय तरकस एवं कपिश्वज-रथ प्रदान किये थे (म. आ. २१६.१-२७)। इसने अर्जुन को पाश नामक अस्त्र प्रदान किया था (म. व. ४२. २७)। ऋचीक मुनि को इसने एक हज़ार श्यामकर्ण अथ

प्रदान किये थे (म. व. ११५.१५-१६)। इसने स्कंद को यम एवं अतियम नामक दो पार्यद प्रदान किये थे (म. श. ४४.४१ पाठ.)। इसने अपने पुत्र श्रुतायुध को एक गदा प्रदान की थी, एवं उसके प्रयोग के नियम उसे बताये थे (म. द्रो. ६७.४९)। रावण के इंद्रियाला से सीता की मुक्ति होने के पश्चात्, वह निष्कलंक होने के संबंध में इसने राम को विश्वास दिलया था (म. व. २७५.२८)।

परिवार—इसकी ज्येष्ठ पत्नी का नाम देवी (ज्येष्ठा) था, जो शुक्राचार्य की कन्या थी। उससे इसे बल, अघर्म एवं पुष्कर नामक एक पुत्र, एवं सुरा नामक एक कन्या उत्पन्न हुई थी (म. आ. ६०.५१-५२; उ. ९६.१२)।

इसकी अन्य पत्नी का नाम वारुणी अर्थात् गौरी था, जिससे इसे गो नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. स. ९. ६.९७*; ९.१०८*)।

इसकी तृतीय पत्नी का नाम शीततोया था, जिससे इसे श्रुतायुध नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (श्रुतायुध देखिये)।

इनके अतिरिक्त, जनक की सभा का सुविख्यात ऋषि बन्दिन् इसीका ही पुत्र था (म. व. १३४.२४)। रुद्र के दूत से उत्पन्न हुए भृगु, अंगिरस् एवं कवि नामक तीन पुत्रों में से, इसने भृगु का पुत्र के रूप में स्वीकार किया था। इसके कारण यही पुत्र 'भृगु वारुणि' नाम से सुविख्यात हुआ (म. अनु. १३२.३६; भृगु वारुणि देखिये)। अगस्त्य एवं वसिष्ठ ऋषियों को भी मित्रावरुणों के पुत्र कहा गया है (विवस्वत देखिये)।

२. एक आदित्य, जो बारह आदित्यों में से नौवाँ आदित्य माना जाता है। यह श्रावण माह में प्रकाशित होता है (भवि. ब्राह्म. ७८)। भागवत के अनुसार, यह शुचि (आषाढ) माह में प्रकाशित होता है, एवं इसकी चौदह सौ किरणें रहती हैं (भा. १२.११)। इसकी पत्नी का नाम चर्षणी था, जिससे इसे भृगु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ६.१८.४)।

३. एक मरुत्, जो मरुतों के तीसरे गण में शामिल था।

४. एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.४१)।

वरुणमित्र गोभिल—एक आचार्य, जो मूलमित्र नामक आचार्य का शिष्य था (पं. ब्रा. ३)।

वरुचिन्—शुक्राचार्य के पुत्र वरुचिन् का नामान्तर। वायु में इसके ब्रह्मिष्ठ एवं सुरयाजक पुत्रों के नाम निम्न-

प्रकार दिये गये हैं:—रंजन, पृथुरश्मि, विद्रस् एवं बृह-द्रिरस् (वायु. ६५.७८; वरुचिन् देखिये)।

वरुथ—एक गंधर्व, जो कश्यप एवं अरिष्टा के पुत्रों में से एक था।

२. एक ब्राह्मण, जिसने अपनी कंदजा नामक कन्या दुर्गम नामक असुर को विवाह में दी थी (मार्क. ७२. ४२)।

वरुथप—एक ग्वाला, जो कृष्ण का समवर्ती था (भा. १०.२२.३१)।

वरुथिनी—एक अप्सरा, जो अर्जुन के स्वागत-समारोह में उपस्थित थी (म. व. ४४.२९)।

वरुण्य—भृगु वारुणि के सात पुत्रों में से एक, जिसे विभु नामान्तर प्राप्त था। इसके अन्य छः भाइयों के नाम निम्न थे:—च्यवन, शुचि, और्व, शुक्र, वज्रशीर्ष एवं सवन (म. अनु. ८५.१२६-१२९)।

२. पितरों में से एक।

३. एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं अरिष्टा के पुत्रों में से एक था।

४. माहिष्मति देश का एक राजा (गणेश. २.१३१-१४८)।

वर्कु वारुणि—एक राजा, जो वृष्णि राजा का पुत्र था। इसे 'वारुणि' वैतृक नाम प्राप्त था।

वर्गा—एक अप्सरा, जो कुवेर की प्रेयसी थी। इसकी सौरभेयी, संमीची, बुदबुदा एवं लता नामक चार सखियाँ थीं।

किसी ब्राह्मण के शाप के कारण, यह एवं इसकी चार ही सखियाँ ग्राह बन गयी थी (म. आ. २०८. १९)। अर्जुन ने इनका ग्राहयोगिनी से उद्धार किया, जहाँ 'पंचाप्सरसीर्थ' नामक तीर्थ का निर्माण हुआ।

वर्चस्—सोम नामक वसु का पुत्र, जो अगले जन्म में अभिमन्यु बन गया (म. आ. ६०.२१)।

२. एक राक्षस (भा. १२. ११.४०)।

३. सुचेतस् ऋषि का एक पुत्र, जिसके पुत्र का नाम विह्व्य था (म. अनु. ३०.६१)।

वर्चिन्—एक असुर, जो शंबर नामक दस्यु (असुर) का सहकारी था। इंद्र के द्वारा इसका वध हुआ (ऋ. ७. ९९.५)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसे दास भी कहा गया है, एवं इसे वृचीवन्त लोगों से संबंधित किया गया है (ऋ. ४.३०.१५; ६.२७.५-७)।

वर्चोधामन्—सत्यदेवों में से एक।

वर्णिका—अधर्मकन्या माया के सात रूपों में से एक (माया देखिये)।

वर्तिवर्धन—(प्रद्योत, भविष्य.) प्रद्योत वंश में उत्पन्न हुआ एक राजा (प्रद्योत २, देखिये)। वायु में इसे अजक राजा का पुत्र कहा गया है।

वर्धन—कृष्ण एवं मित्रविदा के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.१६)।

१. एक स्कंदपार्षद, जो अश्विओं के द्वारा स्कंद को प्रदान किये गये दो पार्षदों में से एक था। दूसरे पार्षद का नाम नंदन था (म. स. ४४.३४)।

वर्धमान—(सो. वसु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार वसुदेव एवं उपदेवी का पुत्र था।

वर्मक—पूर्व भारत में स्थित एक लोकसमूह, जिसका भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्विजय के समय पराजय किया था। इस देश के राजा का नाम भी वर्मक ही था (म. स. २.७.१२)।

वर्वरि—अट्टहास नामक शिवावतार का एक शिष्य।

वर्ष—सुदेव एवं उपदेवी के पुत्रों में से एक।

२. (सो. सह.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सहस्रार्जुन राजा का पुत्र था।

३. एक व्याकरणाचार्य, जो पाणिनि का गुरु था।

वल्—एक असुर, जिसका इंद्र ने अंगिरस् की भ्राता के अनुसार वर्ष के अन्त में (परिववत्सरे) वध किया था (ऋ. १०.६२.२)। पुराणों में भी इसका निर्देश प्राप्त है (पद्म. भू. २२-२३)।

वलय—मगधनिवासी देवदास नामक ब्राह्मण की कन्या (पद्म. उ. २१२)।

वल्ल—भीमसेन का सुतनाम, जो उसने अज्ञातवास के समय धारण किया था (म. वि. २.२)। महाभारत के कई अन्य संस्करणों में, भीमसेन का अज्ञातवासकाल का नाम 'पौरोगव बल्लव' दिया गया है (भीमसेन षोडश देखिये)।

वलीमुख—रामसेना का एक प्रमुख वानर (वा. रा. यु. ४.३६)।

वल्गुजंघ—विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५२)।

वल्गुतक—अत्रिकुलोत्पन्न एक मंत्रकार। इसे 'वल्गु', 'बलास्क', एवं 'बल्गुतक' नामान्तर भी प्राप्त हैं।

वल्गुभ—कांचनपुर का एक ब्राह्मण, जिसकी पत्नी का नाम हेमप्रभा था (हेमप्रभा देखिये)।

२. बलकाश्व नामक राजा का पुत्र, जो साक्षात् धर्म के समान था। इसके पुत्र का नाम कुशिक था (म. अनु. ४.४-५)।

वल्लिक—एक राक्षस, जो देवासुरसंग्राम में अग्नि के द्वारा दग्ध किया गया था (पद्म. स. ७५)।

ववल्गु—वल्गुतक नामक अत्रिकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

ववि आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.१९)।

वश—मध्यदेश में रहनेवाला एक जातिसमूह, जिसका निर्देश ऐतरेय ब्राह्मण में कुरुपांचाल एवं उशीनर लोगों के साथ प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ८.१४.३)। कौपीतिक उपनिषद् में इन लोगों का निर्देश मत्स्य लोगों के साथ प्राप्त है (कौ. उ. ४.१)। अन्य कई ग्रंथों में इनका निर्देश केवल उशीनर लोगों के साथ प्राप्त है (गो. ब्रा. १.२.९)।

ओल्डेनबर्ग के अनुसार, वश एवं उशीनर ये दोनों शब्द 'वश' धातु से व्यवहृत हुए थे, जिस कारण इन दोनों का काफी घनिष्ठ संबंध प्रतीत होता है (ओल्डेनबर्ग, बुद्ध. ३१३)।

वश अश्वत्थ—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जो अश्विओं का आश्रित था (ऋ. ८.४६)। इसे हज़ारों प्रकारों से धनप्राप्ति कराने की व्यवस्था अश्विओं ने की थी (ऋ. १.११६.२१)। प्रथमवत्स कानीत नामक राजा ने भी इसे काफी धन दान में दिया था (ऋ. ८.४६)। सायण के अनुसार, यह एक ऋषि न हो कर वश नामक लोगों का राजा था (ऋ. १०.४०.७; सां. श्रौ. १६.११.१३)।

वशवर्तिन्—उत्तम मन्वन्तर का एक देवगण, जिस में निम्नलिखित दस देव शामिल थे:—ज्योति, बृहद्गु, मानस, विभास, विरजस्, विश्वकर्मन्, विश्वधा, विश्वायु, समितार, सहस्रधार (ब्रह्मांड. २.३६. २९-३०)।

वश्यायु—पुरूरवस् का उर्वशी से उत्पन्न एक पुत्र (पद्म. स. १२)।

वश्याश्व—एक ऋषिक (ब्रह्मांड. २.३२.१०१-१०२)।

वसन—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६७)। पाटभेद—'वसल'।

वसाति—दुर्योधन के पक्ष का एक राजा। अभिमन्यु के द्वारा चक्रव्यूह में प्रवेश करने पर इसने प्रतिज्ञा की थी कि, यह अभिमन्यु का वध करेगा, अथवा प्राणत्याग करेगा। जब यह अभिमन्यु का वध करने के लिए आगे

ब्रह्मा, तत्र अभिमन्यु ने इसका वध किया (म. द्रो. ४३. ८-१०)।

२. (सो. कुक.) एक राजा, जो जनमेजय पारीक्षित का आठवाँ पुत्र था (म. आ. ८९.५०)।

३. एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में भीष्म की रक्षा करता था (म. भी. ४७.१४)। अर्जुन ने इन लोगों का संहार किया।

वसतीय—अभिमन्यु के द्वारा मारे गये 'वसति' राजा का नामान्तर (म. द्रो. ४३.८)। इसे 'वसात्य' नामान्तर भी प्राप्त था (म. द्रो. ४३.११; वसति १. देखिये)।

वसित—दक्षसावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि।

वसिष्ठ—एक ऋषि, जो स्वायम्भुव मन्वन्तर में उत्पन्न हुए ब्रह्मा के दस मानसपुत्रों में से एक माना जाता है। वसिष्ठ नामक सुविख्यात ब्राह्मणवंश का मूलपुरुष भी यही कहलाता है। यह ब्राह्मणवंश सदियों तक अयोध्या के इक्ष्वाकु राजवंश का पौराहित्य करता रहा।

जन्म—यह ब्रह्मा के प्राणवायु (समान) से उत्पन्न हुआ था (भा. ३.१२.२३)। दक्ष प्रजापति की कन्या ऊर्जा इसकी पत्नी थी। इस प्रकार यह दक्ष प्रजापति का जमाई एवं शिव का साढ़ू था। दक्षयज्ञ के समय दक्ष के द्वारा शिव का अपमान हुआ, जिस कारण क्रुद्ध हो कर शिव ने दक्ष के साथ इसका भी वध किया।

विश्वामित्र से शत्रुत्व—वसिष्ठवंश के सारे इतिहास में एक उल्लेखनीय घटना के नाते, इन लोगों का विश्वामित्र वंश के लोगों के साथ निर्माण हुए शत्रुत्व की अखंड परंपरा का निर्देश किया जा सकता है। देवराज वसिष्ठ से ले कर मैत्रावरुण वसिष्ठ के काल तक, प्राचीन भारत के इन दो श्रेष्ठ ब्राह्मण वंशों में वैर एवं प्रतिशोध का अग्नि सदियों तक सुलभता रहा। प्राचीन भारतीय राजवंशों में भार्गव वंश (परशुराम जामदग्न्य) एवं हैहयों का, तथा द्रुपद एवं द्रोण का शत्रुत्व इतिहासप्रसिद्ध माना जाता है। ऊर्जाके समान पिढीयों तक चलनेवाला ज्वलंत वैर, वसिष्ठ एवं विश्वामित्र इन दो ब्राह्मणवंशों में प्रतीत होता है।

परिवार—इसकी कुल दो पत्नियाँ थी :- १. ऊर्जा, जो दक्ष प्रजापति की कन्या थी; २. अरुन्धती, जो कर्दम प्रजापति के नौ कन्याओं में से आठवाँ कन्या थी। इनके अतिरिक्त इसकी शतरूपा नामक अन्य एक पत्नी भी थी, जो स्वयं इसकी ही 'अयोनिंसंभवा' कन्या थी।

(१) ऊर्जा की संतति—ऊर्जा से इसे पुंडरिका नामक एक कन्या, एवं 'सप्तर्षि' संज्ञक निम्नलिखित सात पुत्र उत्पन्न हुए थे :- दक्ष (रत्न), गर्त, ऊर्ध्वबाहु, सवन, पवन, सुतपस्, एवं शकु। भागवत में ऊर्जा के पुत्रों के नाम चित्रकेतु आदि बताये गये हैं (भा. ४.१.४१)।

इसकी कन्या पुंडरिका का विवाह प्राण से हुआ था, जिसकी यह पटरानी थी। प्राण से उसे द्युतिमत् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था।

इसके पुत्र 'रत्न' का विवाह मांकिडेयी से हुआ था, जिससे उसे पश्चिम दिशा का अधिपति केतुमत् 'प्रजापति' नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (ब्रह्मांड. २.१२.३९-४३)।

इनके अतिरिक्त इसे हर्वात्र आदि सात पुत्र उत्पन्न हुए थे। सुकांत आदि पितर भी इसीके ही पुत्र कहलाते हैं।

(२) शतरूपा की संतति—इसकी 'अयोनिंसंभवा' कन्या शतरूपा से इसे वीर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। वीर का विवाह कर्दम प्रजापति की कन्या काभ्या से हुआ था, जिससे उसे प्रियव्रत एवं उत्तानपाद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे। इनमें से प्रियव्रत को अपनी ममता काभ्या से ही सम्राट, कुश्रि, विराट एवं प्रभु नामक चार पुत्र उत्पन्न हुए। उत्तानपाद को अत्रि ऋषि ने गोद में लिया था (ह. वं. १.२)।

वसिष्ठकुल में उत्पन्न प्रमुख व्यक्ति—पार्गिर के अनुसार, कालानुक्रम से देखा जाये तो, वसिष्ठ के वंश में उत्पन्न निम्नलिखित व्यक्ति प्राचीन भारतीय इतिहास में विशेष महत्त्वपूर्ण प्रतीत होते हैं:-

(१) वसिष्ठ देवराज, जो अयोध्या के त्रय्यरुण, त्रिशंकु एवं हरिश्चंद्र राजाओं का समकालीन था (वसिष्ठ देवराज देखिये)।

(२) वसिष्ठ आपव, जो हैहय राजा कार्तवीर्य अर्जुन का समकालीन था (वसिष्ठ आपव देखिये)।

(३) वसिष्ठ अथर्वनिधि (प्रथम), जो अयोध्या के बाहु राजा का समकालीन था (वसिष्ठ अथर्वनिधि १. देखिये)।

(४) वसिष्ठ श्रेष्ठभाज, जो अयोध्या के मित्रसह कल्पापाद सौदास राजा का समकालीन था (वसिष्ठ श्रेष्ठभाज देखिये)।

(५) वसिष्ठ अथर्वनिधि (द्वितीय), जो अयोध्या के दिलीप खट्वांग राजा का समकालीन था (वसिष्ठ अथर्वनिधि २. देखिये)।

(६) वसिष्ठ, जो अयोध्या के दशरथ एवं राम दशरथि राजाओं का समकालीन था (वसिष्ठ २. देखिये)।

(७) वसिष्ठ मैत्रावरुण, जो उत्तर पांचाल देश के पैजवन मुद्रास राजा का समकालीन था, एवं जिसका निर्देश ऋग्वेद आदि वैदिक ग्रंथों में प्राप्त है (वसिष्ठ मैत्रावरुण देखिये)।

(८) वसिष्ठ शक्ति, जो वसिष्ठ मैत्रावरुण का पुत्र था (वसिष्ठ शक्ति देखिये)।

(९) वसिष्ठ सुवर्चस्, जो हस्तिनापुर के संवरण राजा का समकालीन था (वसिष्ठ सुवर्चस् देखिये)।

(१०) वसिष्ठ, जो अयोध्या के मुचकुंद राजा का समकालीन था (वसिष्ठ ३. देखिये)।

(११) वसिष्ठ, जो हस्तिनापुर के हस्तिन् राजा का समकालीन था (वसिष्ठ ४. देखिये)।

(१२) वसिष्ठ 'धर्मशास्त्रकार,' जो 'वसिष्ठस्मृति' नामक धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथ का कर्ता माना जाता है (वसिष्ठ धर्मशास्त्रकार देखिये)।

वसिष्ठ की वंशावलि—महाभारत एवं पुराणों में वसिष्ठ ऋषि की तीन विभिन्न वंशावलियाँ प्राप्त हैं:—१. अरुंधती-शाखा; २. घृताचीशाखा; ३. व्याघ्रीशाखा। इनमें से अरुंधती एवं घृताची क्रमशः ब्रह्मानसपुत्र वसिष्ठ एवं वसिष्ठ मैत्रावरुण ऋषियों की पत्नियाँ थीं। व्याघ्री कौनसे वसिष्ठ की पत्नी थी, यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता।

(१) अरुंधतीशाखा—वसिष्ठ (अरुंधती)—शक्ति (स्वयं अथवा सागर)—पराशर (काली)—कृष्ण-द्वैपायन (अरणी)—शुक (पीवरों)—भूरिश्रवस्, प्रभु, शमु, कृष्ण, गौर, एवं कार्तिकेय (ब्रह्मदत्त की पत्नी)।

(२) घृताची शाखा—वसिष्ठ मैत्रावरुण (घृताची)—इंद्रप्रमति अथवा कुणीति अथवा कुरीति—वसु (द्रुमुसुता)—उपमन्यु (ब्रह्मांड. २.८०.९०-१००; वायु. ७१.८३-९०; लिग. १.६३.७८-९२; कूर्म. १.१९; मत्स्य. २००)।

(३) व्याघ्री शाखा—वसिष्ठ को व्याघ्री से व्याघ्रपाद मन्थ, ब्रादलोम, जाबालि, मन्थु, उपमन्यु, सेतुकर्ण आदि कुल १९ गोत्रकार पुत्र उत्पन्न हुए (म. अनु. ५३. ३०-३२ कुं.)।

वसिष्ठकुल के गोत्रकार—वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकारों में एक प्रवरात्मक (एक प्रवरवाले), एवं त्रिप्रवरात्मक (तीन प्रवरवाले) ऐसे दो प्रमुख प्रकार हैं।

(१) एकप्रवरात्मक गोत्रकार—वसिष्ठकुल के निम्न-लिखित गोत्र एकप्रवरात्मक हैं, जिनका वसिष्ठ यह एक ही प्रवर होता है:—अलब्ध, आपस्थुण (ग), उपावृद्धि, औपगाव (अपगवन, ग), औपलोम (अपशोम, ग), कट (ग), कपिष्ठल (ग), मौपायन (गोपायन, ग) गौडिनि (गौडिलि), चोडि, दाक्य (ग), पालिशय (ग), पौडव (स्याडव), पौलि, चालिश्य (ग), वाहुरि (ग), बोधप (ग), ब्रह्मदल, ब्राह्मपुरेयक (ब्रह्मकृतेजन, ग), याज्ञवल्क्य (याज्ञदत्त), लोमायन (ग), वाग्धथि, वाडोहलि, वाह्यक (ग), वैकुव (ग), चोडि, व्याघ्रपाद (ग), घट (ग) (घटाकुर, शठकट), शांडिलि, शादलायन (ग), शीतवृत्त (ग), श्रवस् (श्रवण), सुमन् (ग), स्तरितकर (ग)।

(२) त्रिप्रवरात्मक गोत्रकार—वसिष्ठकुल के निम्न-लिखित गोत्रकार त्रिप्रवरात्मक हैं, जिनके इंद्रप्रमदि (चेद्रसंमति), भगीवन् (भगिबेनु) एवं वसिष्ठ ये तीन प्रवर होते हैं:—उद्राह (उद्राट, ग), उरुप (ग), उहाक (ग), औपमन्यय, कपिष्ठल (ग), काण्व (ग), कालशिशु, कौरकृपा (कौरकृष्ण, ग), कौरव्य, कौलायन (कौमान-रायण), क्रोडोदरायण, क्रोडिन, गोरथ (ग), तर्पय, डाकयन, पलागारि (पणागारि), पालेकायन, (पाद-पायन), प्रलेकायन (ग), वलेधु (दलेपु, ग), बालवय, ब्रह्ममालिन (ग), भागवित्तायन (ग) (भागवित्तासन), महाकर्ण, मातेय (ग), मापशरावय (ग), लंबायन (ग), वाक्य (ग), बालखिल्य (ग), वेदशरक (ग), शाकथिय, शाकयन (ग), शाकाहाय (ग), शैलालय (शैरालय, शैवलेय), श्यामवय, संख्यायन, सुरायण।

वसिष्ठकुल के निम्नलिखित गोत्रकार भी त्रिप्रवरात्मक ही हैं, किन्तु उनके कुंडिन, मित्रावरुण एवं वसिष्ठ ये तीन प्रवर होते हैं:—औपस्थल (जपस्थल, ग), कुंडिन, वैश्रुंगायण (वैश्रुंग, ग), पैण्डलादि, बाल (वद), माध्वति (ग), माध्वदिन, लोहलय (हाल-हल का पाठभेद), विचक्षुष (विवर्धक), सैवल्क (सर्वसैवल्क), स्वस्थलि (ग)।

वसिष्ठकुल के निम्नलिखित गोत्रकार अत्रि, जानुकर्ण एवं वसिष्ठ इन तीन प्रवरों के होते हैं:—आलंत्र (ग), क्रोडोदय, दानकाथ (ग), नाभेय (ग), परम (ग), पादप, महावीर्य (ग), वय, वायन, शिवकर्ण (शिवकर्ण)।

जानुकर्ण्य लोग—वसिष्ठगोत्रीय लोगों में 'जानुकर्ण्य' पौत्रक नाम धारण करनेवाले लोग प्रमुख थे। इसी नाम के एक ऋषि ने व्यास को वेद एवं पुराणों की शिक्षा प्रदान

की थी। इसी कारण जातुकर्ण्य को अष्टाईस द्वापारों में से एक युग का व्यास कहा गया है (वायु. २३.११५-२१९)।

वसिष्ठकुल के मंत्रकार—वसिष्ठकुल के मंत्रकारों की नामावलि वायु, मत्स्य एवं ब्रह्मांड पुराणों में प्राप्त है (वायु. ५९.१०५-१०६; मत्स्य. १४५.१०९-११०; ब्रह्मांड. २.३२.११५-११६)।

इनमें से वायु में प्राप्त नामावलि, मत्स्य एवं ब्रह्मांड में प्राप्त पाठान्तरों के सहित नीचे दी गयी है :—इंद्रप्रमति (इंद्रप्रतिम), कुंडिन, पराशर, बृहस्पति, भरद्वाज, भरद्वाज, मैत्रावरुण (मैत्रावरुणि), वसिष्ठ, शक्ति, सुद्युम्न।

२. एक आचार्य, जो अयोध्या के दशरथ एवं राम दाशरथि राजाओं का पुरोहित था। एक नीतिविशारद प्रमुख मंत्री, एवं पुरोधे के रूप में इसका चरित्रचित्रण वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है।

यह सर्वश्रेष्ठ ब्रह्मज्ञानी, एवं तपस्वियों में श्रेष्ठ था (वा. रा. वा. ५२.१; २०)। अरुनी तपस्या के बल पर इसने ब्रह्मर्षिपद प्राप्त किया था। यह अत्यधिक शांति-संपन्न, क्षमाशील एवं सहिष्णु था (वा. रा. वा. ५५-५६)।

दशरथ राजा के पुरोहित के नाते, उसके पुत्र-कामेष्टि यज्ञ में यह प्रमुख ऋषिज बना था। राम एवं लक्ष्मण का नामकरण भी इसने ही किया था। राम दाशरथि को यौवराज्याभिके का दीक्षा भी इसीके ही हाथों प्रदान की गयी थी (राम दाशरथि देखिये)।

३. एक ऋषि, जो अयोध्या के मांघातृ राजा के पुत्र मुचकुंद राजा का पुरोहित था (म. शां. ७५.७)।

४. एक ऋषि, जो भरतवंशीय सम्राट रंतिदेव सांक्रत्य का पुरोहित था। रंतिदेव राजा हरतिनापुर के हरितन राजा का समकालीन था। उसने इसे ब्रह्मर्षि मान कर अर्घ्यप्रदान किया था (म. शां. २६.१७; अनु. २००. ६)।

५. रैवत मन्वंतर का एक ऋषि।

६. सार्वर्षि मन्वंतर का एक ऋषि।

७. ब्रह्मसार्वर्षि मन्वंतर का एक ऋषि।

८. धर्मनारायण नामक शिवावतार का एक शिष्य।

९. एक ऋषि, जो श्राद्धदेव का पुरोहित था। श्राद्धदेव को कोई भी पुत्र न था, जिस कारण इसने मित्रवशनों को उद्देश्य कर एक यज्ञ का आयोजन किया।

श्राद्धदेव की पत्नी श्रद्धा की इच्छा थी कि, उसे कन्यारत्न की प्राप्ति हो। इन इच्छा के अनुसार, इसके यज्ञ से उसे इला नामक कन्या प्राप्त हुई। किन्तु श्राद्धदेव पुत्र का कांक्षी था, जिस कारण इसने उस कन्या का सुद्युम्न नामक पुत्र में रूपांतर किया (भा. ९.१.१३-२२)। अंबरीष राजा के अश्रमेय यज्ञ में भी यह उपस्थित था (मत्स्य. २४५. ८६)।

१०. आठवा वेदव्यास, जिसे इंद्र ने ब्रह्मांड पुराण सिखाया था। आगे चल कर, यही पुराण इसने सारस्वत ऋषि को सिखाया (ब्रह्मांड. २.३५.११८)। इसका आश्रम उज्ज्वल पर्वत पर था (ब्रह्मांड. ३.१३.५३)।

११. एक ऋषि, जो वारुणि यज्ञ के 'वसुमन्' से उत्पन्न हुआ था। इसी कारण इसे 'वसुमन्' कहते थे। आगे चल कर, इसीसे ही सुक्रात नामक पितर उत्पन्न हुए (ब्रह्मांड. ३.१.२१; मत्स्य. १९५. ११)।

१२. बृहत्कल्प के धर्ममूर्ति राजा का पुरोहित (मत्स्य. १२.२१)। इसने त्रिपुरदहन के हेतु शिव की स्तुति की थी (मत्स्य. १३३. ६७)।

१३. एक शिष्यशास्त्रज्ञ (मत्स्य. २५२.२)।

१४. एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने के लिए उपस्थित हुआ था (भा. १.९.७)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय भी यह उपस्थित था (भा. १०.७४.७)।

१५. अगस्त्य ऋषि का छोटा भाई, जो विदेह देश के निमि राजा का पुरोहित था (वसिष्ठ मैत्रावरुणि देखिये; मत्स्य. ६१.१९)।

महाभारत के अनुसार, यह ब्रह्माजी के मानसपुत्रों में से एक था। भगवान् शंकर के शाप से ब्रह्माजी के सारे पुत्र दग्ध हो कर नष्ट हो गये। वर्तमान मन्वन्तर के प्रारंभ में ब्रह्माजी ने उन्हें पुनः उत्पन्न किया। उनमें से वसिष्ठ एक था। यह अग्नि के मध्यम-भाग से उत्पन्न हुआ था। इसकी पत्नी का नाम अक्षमाला था (म. उ. ११५. ११)।

एक बार निमि राजा से इसका झगड़ा हो गया, जिसमें दोनों ने एक दूसरे को विदेह (देहरादूत) वनने का शान दिया। उन शापों के कारण इन दोनों की मृत्यु हुयी (निमि देखिये)।

वसिष्ठ अथर्वेनिधि—एक ऋषि, जो अयोध्या के हरिश्चंद्र राजा के आठवें पिढी में उत्पन्न हुए बाहु राजा का राक्षपुरोहित था। हैहय तालज्वेव राजाओं ने

काञ्चोज, यवन, पारद, पल्लव आदि उत्तरीपश्चिम प्रदेश में रहनेवाले लोगों की सहाय्यता से बाहु राजा को राज्यभ्रष्ट किया। आगे चल कर बाहु राजा के पुत्र सगर ने इन सारे शत्रुओं का पराजय कर पुनः राज्य प्राप्त किया। सगर राजा इन सारे लोगों का संहार ही करनेवाला था किन्तु वासिष्ठ ने इसे इस पापकर्म से रोक दिया।

इसने सगर को परशुराम की कथा कथन की थी। इसने सगर के पुत्र अंशुमत् को यौवराज्याभिषेक किया (ब्रह्म. ३.३१.१; ४७.९९)।

ब्रह्मांड एवं बृहन्नारदीय पुराणों में इसे क्रमशः आपव. एवं अथर्वनिधि कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.४९. ४३; बृहन्नारदीय. ८.६३)। महाभारत में, इसके नंदिनी नामक गाय के द्वारा शक, काञ्चोज, पारद आदि म्लेच्छ जाति के निर्माण होने का, एवं उनकी सहाय्यता से इसके के द्वारा विश्वामित्र का पराजय होने का निर्देश प्राप्त है (म. आ. १६५; वा. रा. वा. ५४.१८-५५)। किन्तु वहाँ वासिष्ठ अथर्वनिधि को वासिष्ठ देवरात समझने की भूल की गई सी प्रतीत होती है, क्यों कि, विश्वामित्र ऋषि का समकालीन वासिष्ठ देवरात था, वासिष्ठ अथर्वनिधि उससे काफी पूर्वकालीन था।

२. एक ऋषि, जो अयोध्या के दिल्लीखट्वांग राजा का पुरोहित था। इसीके ही सलाह से दिल्ली राजा ने नंदिनी नामक कामधेनु की उपासना की, जिसकी कृपा से उसे रघु नामक सुविख्यात पुत्र उत्पन्न हुआ (रघु. १-३; पद्म उ. २०२-२०३; दिल्लीखट्वांग देखिये)।

वासिष्ठ आपव—एक ऋषि, जिसका आश्रम हिमालय पर्वत में था। हैहय राजा कार्तवीर्य अर्जुन ने इसका आश्रम जला दिया, जिस कारण इसने उसे शाप दिया (वायु. १४.३९-४७; ह. वं. ३३.१८८४)। ब्रह्मांड पुराण में इसके 'मध्यमा भक्ति' का निर्देश प्राप्त है ब्रह्मांड. ३.३०.७०; ३४.४०-४१)। मत्स्य में इसे ब्रह्मवादिन् कहा गया है (मत्स्य. १४५. ९०)।

वासु में इसे वासुणि कहा गया है (वायु. १४. ४२-४३)। इसका पैतृक नाम आपव था, जिससे यह भ्रू (जल) का पुत्र होने का संकेत मिलता है। इस प्रकार इसके वासुणि एवं आपव ये दोनों पैतृक नाम समानार्थी प्रतीत होते हैं।

वासिष्ठ चैकितानेय—एक आचार्य, जो स्थिरक गार्ग्य नामक आचार्य का शिष्य था (वं. ब्रा. २)। गौतमी आरुणि नामक आचार्य से वादसंवाद करनेवाला

चैकितानेय वासिष्ठ एवं यह दोनों संभवतः एक ही होंगे (जै. उ. ब्रा. १.४.२.१)।

वासिष्ठ देवराज—एक ऋषि, जो अयोध्या के नय्यारण, सत्यव्रत त्रिशंकु एवं हरिश्चंद्र राजाओं का पुरोहित था। हरिश्चंद्र के यज्ञ में यह 'ब्रह्मा' था (ऐ. ब्रा. ७.१६; सां.श्रौ. १५.२२.४; श. ब्रा. १२.६.१. ४१; ४.६.६.५)। इसका त्रिशंकु राजा से हुआ विरोध एवं उसीके ही कारण इसका विश्वामित्र ऋषि से हुआ भयानक संघर्ष, प्राचीन भारतीय इतिहास में सुविख्यात है (त्रिशंकु देखिये)।

सत्यव्रत त्रिशंकु के राज्यकाल में शुरू हुआ इसका एवं विश्वामित्र ऋषि का संघर्ष सत्यव्रत के पुत्र हरिश्चंद्र, एवं पौत्र रोहित के राज्यकाल में चार ही रहा। सत्यव्रत के सदेह स्वर्गारोहण के पश्चात् उसके पुत्र हरिश्चंद्र ने विश्वामित्र को अपना पुरोहित नियुक्त किया। किन्तु उसके राजसूय-यज्ञ में बाधा उत्पन्न कर, वासिष्ठ ने अपना पौरोहित्यपद पुनः प्राप्त किया (हरिश्चंद्र देखिये)।

हरिश्चंद्र के ही राज्यकाल में, उसके पुत्र रोहित के बदले विश्वामित्र के रिश्तेदार शुनःशेष को यज्ञ में बलि देने का पट्टयंत्र देवराज वासिष्ठ के द्वारा रचाया गया, किन्तु विश्वामित्र ने शुनःशेष की रक्षा कर, उसे अपना पुत्र मान लिया (रोहित देखिये)।

वासिष्ठ 'धर्मशास्त्रकार'—एक स्मृतिकार, जिसका तीस अध्यायों का 'वासिष्ठस्मृति' नामक स्मृतिग्रंथ आनन्द-श्रम के 'स्मृतिसमुच्चय' में प्राप्त है। उसमें आचार, प्रायश्चित्त, संस्कार, रजस्वला, संन्यासी, आततापि आदि के लिए नियम दिखे हैं। उसी प्रकार दत्तकप्रकरण, साक्षिप्रकरण, प्रायश्चित्त आदि विषयों का भी विवेचन किया है। व्यंकटेश्वर प्रेस के संस्करण में भी उपर्युक्त विषयों का विवेचन करनेवाली इसकी स्मृति उपलब्ध है, परन्तु वह केवल २१ अध्यायों की है। वह तथा जीवानन्द संग्रह की प्रति एक ही है। दोनों प्रतियों में प्रायः एक सौ ही श्लोक हैं।

इसकी ९-१० अध्यायोंवाली भी एक स्मृति है, जिसमें वैष्णवों के दैनिक कर्तव्यों का विवेचन किया गया है (C. C.)। 'वासिष्ठधर्मसूत्र' गौतमधर्मसूत्र के सूत्रों से बहुत से विषयों में मिलते जुलते हैं। उसी तरह बौधायनधर्मसूत्रों के बहुत से सूत्रों से वासिष्ठधर्म-सूत्र के सूत्रों का साम्य है। वासिष्ठधर्मसूत्र ऋग्वेद का है। तन्त्रवार्तिक में भी पुरातन गृह्यसूत्रकार के रूप में वासिष्ठ का उल्लेख है (१.३.२४)।

मिताक्षरादि ग्रन्थों में वासिष्ठ के धर्मशास्त्र से उद्धरण लिये गये हैं। उसी तरह बृहदारण्यकोपनिषद् के शंकराचार्यभाष्य में भी वासिष्ठ के धर्मसूत्र के बहुत से सूत्र लिये गये हैं। वासिष्ठ ने अपने ग्रन्थों में वेद तथा संहिता से उद्धरण लिए हैं। निदानग्रन्थों की भाँलविन द्वारा विरचित एक गाथा भी वासिष्ठ ने अपने स्मृति में दी है। इसके अतिरिक्त मनु, हरीत, यम एवं गौतम आदि धर्मशास्त्रप्रकारों के मत भी कई बार दिये गये हैं। मनुस्मृति तथा याज्ञवल्क्यस्मृति में वासिष्ठस्मृति का उल्लेख प्राप्त है।

‘बृहद्वसिष्ठ’ नामक अन्य एक ग्रंथ की रचना इसने की थी, जिसका निर्देश विश्वरूप (१, १९,) एवं मिताक्षरा (२, ९१) में प्राप्त हैं। इसके ‘ज्योतिर्वसिष्ठ’ नामक ग्रंथ के कुछ उद्धरण ‘स्मृतिचंद्रिका’ में लिये गये हैं।

ग्रन्थ—उपनिर्दिष्ट ग्रंथों के अतिरिक्त, इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त हैं:—१. वासिष्ठ-कल्प; २. वासिष्ठ-तंत्र, ३. वासिष्ठपुराण, ४. वासिष्ठ लिंगपुराण, ५. वासिष्ठ-शिक्षा, ६. वासिष्ठश्राद्धकल्प, ७. वासिष्ठसंहिता, ८. वासिष्ठ-होमप्रकार (C. C.)

वासिष्ठ मैत्रावरुणि—एक ऋषि, जो उच्चरपांचाल के सुविख्यात सम्राट् पैजवन सुदास राजा का पुरोहित था।

वैदिक परंपरा के सर्वाधिक प्रसिद्ध पुरोहित में से यह एक माना जाता है। ऋग्वेद के सातवें मंडल के प्रणयन का श्रेय इसे दिया गया है (ऋ. ७.१८.३३)।

ऋग्वेद सर्वांतुकर्मणी में, ऋग्वेद के नवम मंडलमेंत सचानवे सूक्त के प्रणयन का श्रेय भी वासिष्ठ एवं उसके वंशजों को दिया गया है। इस ग्रंथ के अनुसार, इस सूक्त की पहली तीन ऋचाओं का प्रणयन स्वयं वासिष्ठ ने किया, एवं इस सूक्त के चार से तीस तक की ऋचाओं का प्रणयन, वासिष्ठ ऋषि के कुल में उत्पन्न निम्नलिखित नौ वासिष्ठों के द्वारा किया गया था:—इंद्रप्रमति—ऋचा ४-६; वृषगण—ऋचा ७-९; मन्वु—ऋचा १०-१२; उपमन्वु—ऋचा १३-१५; व्याघ्रपाद—ऋचा १६-१८; शक्ति—ऋचा १९-२१; कर्णश्रुत—ऋचा २२-२३; मुलीक—ऋचा २५-२७; वसुक—ऋचा २८-३०।

इस सूक्त में से ३१-४४ ऋचाओं की रचना पराशर शाक्त्य (शक्ति पुत्र) के द्वारा की गई थी, जो स्वयं वासिष्ठपुत्र शक्ति का ही पुत्र था। किन्तु पार्मिटर के अनुसार, इन अंतिम ऋचाओं की रचना वासिष्ठकुलोत्पन्न

पराशर के द्वारा नहीं, बल्कि शंतनु राजा के समकालीन किसी अन्य पराशर के द्वारा हुई होगी (पार्मि. पृ. २१३)।

जन्म—ऋग्वेद में वासिष्ठ ऋषि को वरुण एवं उर्वशी अप्सरा का पुत्र कहा गया है (ऋ. ७.३३.११)। ऋग्वेद के इसी सूक्त में इसे मित्र एवं वरुण के पुत्र अर्थ से ‘मैत्रावरुण’ अथवा ‘मैत्रावरुणि’ कहा गया है। एक बार मित्र एवं वरुण ने उर्वशी अप्सरा को देखा, जिसे देखते ही उनका रेत स्वल्पित हुआ। उन्होंने उसे एक कुंभ में रत्न दिया, जिससे आगे चल कर वासिष्ठ एवं अगस्त्य ऋषिओं का जन्म हुआ (ऋ. ७.३३.१३)। इसी कारण, इन दोनों को ‘कुंभयोनि’ उपाधि प्राप्त हुई, एवं उनके वंशजों को ‘कुण्डिन्’, ‘कुण्डिनेय’ एवं ‘कौण्डिन्य’ नाम प्राप्त हुए (ऋ. सर्वांतुकर्मणी. १, १६६; नि. ५.१३)। ऋग्वेद में अन्यत्र वासिष्ठ का जन्म कुंभ में नहीं, बल्कि उर्वशी के गर्भ से होने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ७.३३.१२)।

पार्मिटर के अनुसार, ‘मैत्रावरुण’ वासिष्ठ का पैतृक नाम न हो कर, उसका व्यक्तिनाम था, जो मित्रावरुण का ही अपभ्रष्ट रूप था (पार्मि. पृ. २१६; बृहदे. ४.८२)। इसी कारण, वासिष्ठ के ‘मैत्रावरुण’ पैतृक नाम का स्पष्टीकरण देने के लिए, इसकी जो जन्मकथा ऋग्वेद में प्राप्त है, वह कल्पना-रम्य प्रतीत होती है। वासिष्ठ मित्रावरुण का पुत्र कैसे हुआ इसके संबंध में, अरुनी पूर्वजन्म में इसने विदेह के निमि राजा के साथ किये संवर्ष की जो कथा बृहदेवता एवं पुराणों में प्राप्त है, वह भी कल्पनामय है (बृहदे. ५.१५६; मत्स्य. २०१.१७-२२; निमि विदेह देखिये)।

विश्वामित्र से विरोध—वासिष्ठ ऋषि का विश्वामित्र के प्रति विरोध का स्पष्ट निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है। वासिष्ठ ऋषि के पूर्व सुदास का पुरोहित विश्वामित्र था (ऋ. ३. ३३.५३)। किन्तु उसके इस पद से भ्रष्ट होने के पश्चात्, वासिष्ठ भरत राजवंश का एवं सुदास राजा का पुरोहित बन गया। तदोपरान्त विश्वामित्र ऋषि सुदास के शत्रुपक्ष में शामिल हुआ, एवं उसने सुदास के विरुद्ध दाशराज्ञ युद्ध में भाग लिया था।

गण्डनर के अनुसार, ऋग्वेद में वासिष्ठ एवं विश्वामित्र के शत्रुत्व का नहीं, बल्कि वासिष्ठपुत्र शक्ति के साथ हुए विश्वामित्र के संवर्ष का निर्देश प्राप्त है। ऋग्वेद के कृतीय मंडल में ‘वसिष्ठ द्वेषिण्यः’ नामक वसिष्ठविरोधी मंत्र प्राप्त है, जो वसिष्ठपुत्र शक्ति को ही संकेत कर रचायें गये थे (ऋ. ३.५३.२१-२४)। कालोपरान्त शक्ति से प्रतिशोध लेने के लिए, विश्वामित्र ने सुदास राजा के

सेवकों के द्वारा उसका वध किया (तै. सं. ७.४.७.१; पं. ब्रा. ४.७.३; ऋ. सवोऽनुक्रमणी ७.३२)।

किंतु उपर्युक्त सारी कथाओं में, वसिष्ठ का सुदास राजा के साथ विरोध होने का निर्देश नहीं भी प्राप्त नहीं है। ऐतरेय ब्राह्मण में, वसिष्ठ को सुदास राजा का पुरोहित एवं अभियेककर्ता कहा गया है (ऐ. ब्रा. ७. ३४.९)।

फिर भी सुदास राजा की मृत्यु के पश्चात्, विश्वामित्र पुनः एक बार सुदास के वंशजों (सौदासों) का पुरोहित बन गया (नि. २.२४; सां. श्रौ. २६.१२.१३)। तत्पश्चात् अपने पुत्र के वध का प्रतिशोध लेने के लिए, वसिष्ठ ने सौदासों को परास्त कर पुनः एक बार अपना श्रेष्ठत्व स्थापित किया।

किंतु सौदासों के साथ वसिष्ठ का यह शत्रुत्व स्थायी स्वरूप में न रहा। भरत राजकुल एवं राज्य का कुलपरंपरागत पुरोहित पद वसिष्ठवंश में ही रहा, जिसके अनेकानेक निर्देश ब्राह्मणग्रंथों में प्राप्त हैं (पं. ब्रा. १५.४.२४; तै. सं. ३.५.२.१)।

यज्ञकर्ता आचार्य—शतपथ ब्राह्मण में एक यज्ञकर्ता आचार्य के नाते वसिष्ठ का निर्देश अनेकवार प्राप्त है। यज्ञ के समय, यज्ञकर्ता पुरोहित ने 'ब्रह्मन् के रूप में कार्य करना चाहिए, यह सिद्धान्त वसिष्ठ के द्वारा ही सर्वप्रथम प्रस्थापित किया गया। पुनः शेष के यज्ञ में वसिष्ठ ब्रह्मन् बना था (ऐ. ब्रा. ७.१६; सां. श्रौ. १५.२१.४)। एक समय, केवल वसिष्ठगण ही 'ब्रह्मन्' के रूप में कार्य करनेवाले पुरोहित थे, किन्तु बाद में अन्य सारे पुरोहितगण भी इस रूप में कार्य करने लगे (श. ब्रा. १२.६.१.४१)।

ऋतृत्व—वसिष्ठ ने सुदास पैजवन राजा को सोम के विशेष संप्रदाय की दीक्षा दी, जिस कारण सुदास को समस्त राजर्षियों में उँचा पद प्राप्त हुआ।

एक बार यह तीन दिनों तक भूखा रहा। चौथे दिन अपनी भुजा को शांत करने के लिए, इसने वरुण के भोजनगृह में खुसने का प्रयत्न किया। किन्तु रसोई-घर के द्वार पर कुत्त थे, जिन्होंने इसे अंदर जाने को मना किया। उन श्वक कुत्तों को सुलाने के लिए इसने कुछ ऋचाएँ कही। ऋग्वेद की यही ऋचाएँ 'निद्राशुक्त' नाम से प्रसिद्ध हैं (ऋ. ७. ५५)। ऋग्वेद में प्राप्त सुविख्यात 'महामृत्युंजय' मंत्रों की रचना भी वसिष्ठ के द्वारा ही की गयी है (ऋ. ७.५९.१२)।

मित्रावरुणों से उत्पन्न होने के कारण, इसे स्वयं का गोत्र नहीं था। इस कारण इसने पैजवन सुदास राजा के 'तृसु' गोत्र को ही अपना लिया। इसी कारण, ऋग्वेद में इसे अनेकवार 'तृसु' कहा है (ऋ. ७.६३.८)। यह एवं इसके वंश के लोग दाहिनी ओर शिखा रखते थे।

ऋग्वेद में 'राशोन्न' सूक्त नामक सूक्त के प्रणयन का श्रेय भी वसिष्ठ को दिया गया है (ऋ. ७.१०४)। इस सूक्त में वसिष्ठ अपने पर गेदे आक्षेप करनेवाले लोगों को गाली-गलौज दे रहा है, ऐसी इस सूक्त की कहरना है। बृहद्देवता के अनुसार, इस सूक्त का संदर्भ वसिष्ठ-विश्वामित्र के विरोध से जोड़ा गया है (बृहद्दे. ६.२८-३४)।

तैत्तिरीय संहिता में प्राप्त 'एकोनपंचाशद्ब्राह्मण' का जनक वसिष्ठ माना गया है (तै. सं. ७.४.७.)। उसी संहिता में प्राप्त 'स्तोमभाग' नामक मंत्रों का भी प्रवर्तक यही है (तै. सं. ३.५.२)।

आश्रम—विपाश नदी के किनारे वसिष्ठ का 'वसिष्ठ-शिला' नामक आश्रम था। इसका 'कृष्णशिला' नामक अन्य एक आश्रम भी था, जहाँ इसने तपस्या की थी (गो. ब्रा. १.२.८.)। इसी तपस्या के कारण, यह पृथ्वी के समस्त लोगों का पुरोहित बन गया (गो. ब्रा. १.२.१३)।

वैदिकोत्तर साहित्य में—वसिष्ठ एवं विश्वामित्र के विरोध की कथा वैदिकोत्तर साहित्य में भी प्राप्त है। बृहद्देवता के अनुसार, वसिष्ठ वारुणिके सौ पुत्रों का सौदास (सुदास) राजा ने वध किया, जिस कारण क्रुद्ध हो कर, इसने उसे राक्षस बनने का शाप दिया (बृहद्दे. ५.२८; ३३-३४)। लिग के अनुसार, विश्वामित्र के द्वारा निर्माण किये गये राक्षसों ने कल्पाप-पाद सौदास राजा को गिरा लिया, एवं उसके द्वारा शक्ति आदि वसिष्ठ के सौ पुत्रों का वध किया। शक्ति की मृत्यु के पश्चात् उसकी पत्नी अदृश्यन्ती को पराशर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (लिग. १.६३.८३)। किंतु पार्गिटर के अनुसार, अयोध्या के कल्पापपाद सौदास के द्वारा मारे गये कसिष्ठपुत्रों का पिता वसिष्ठ मैत्रावरुणिके न हो कर, इससे काफी उत्तरकालीन वसिष्ठ श्रेष्ठभाज् नामक वसिष्ठ-कुलोत्पन्न अन्य कथि था, एवं अयोध्या के सुदास राजा के द्वारा वसिष्ठ मैत्रावरुणिके शक्ति नामक केवल एक ही पुत्र का वध हुआ था (पार्गि. २०९)।

पुराणों में—इन ग्रंथों के अनुसार, निमि राजा के द्वारा शाप दिया जाने पर वायुरूप में वसिष्ठ ब्रह्मा के पास गया,

तथा ब्रह्मा की इच्छा से, उर्वशी को देख कर स्खलित हुए मित्रावरुणों के वीर्य से यह कुंभ में उत्पन्न हुआ (वा. रा. उ. ५७; मत्स्य. ६०.२०-४०; २००)।

विश्वामित्र से शत्रुत्व—एक बार विश्वामित्र ऋषि इसके आश्रम में इसे मिलने आया। कामधेनु की सहायता से विश्वामित्र का उत्कृष्ट आतिथ्य वसिष्ठ ने किया। तब उसने कामधेनु माँगी। किन्तु इसने अनाकानी की, तब उसने कामधेनु को जबरदस्ती ले जाने का प्रयत्न किया। परंतु धेनु के शरीर से शक, पल्लव इत्यादि प्लेच्छ उत्पन्न हुए, जिन्होंने विश्वामित्र को पराजित किया। पराजित हो जाने के उपरान्त, विश्वामित्र ने-यह अनुभव किया कि, शत्रियवल की अपेक्षा ब्राह्मणवल श्रेष्ठ है, तथा तपश्चर्या करना आरंभ किया। विश्वामित्र ने वसिष्ठ से ब्रह्मर्षि कहलाने का काफ़ी प्रयत्न किया था। उक्त कथा संभवतः वसिष्ठ देवराज की होगी।

बाद में क्रोध से विश्वामित्र ने वसिष्ठ के सौ पुत्र राक्षसों के द्वारा भक्षण करवाये। इससे यह जीवन से विरक्त हो कर नदी में प्राण देने गया, किन्तु बच गया। इसीलिए उस नदी को विपाशा नाम दिया गया (म. व. १३०.८-९)। क्या कि, उस नदी ने वसिष्ठ को पाशमुक्त कर के उसे बचाया था, उसे शतद्रु नाम प्राप्त हुआ। उसे यह नाम क्यों प्राप्त हुआ उसका कारण यही है कि, जब यह शतद्रु (आधुनिक सतलज नदी) में व्याकुल होकर कूद पड़ा, तब वह नदी इसे अग्नि के समान तेजस्वी समझ कर सैकड़ों धाराओं में फूट कर इधर उधर भाग चली। शतधा विद्रुत होने से उसका नाम 'शतद्रु' हुआ (म. आ. १६७.९)।

वसिष्ठ ने जब विश्वामित्र पर सौ पुत्रों के समाप्त करने का आरोप लगाया, तब पैजवन के समक्ष शपथपूर्वक उसने यह बात अमान्य की (मनु. ८.१०)। किन्तु कालदृष्टि से यह कथा असंगत प्रतीत होती है (शक्ति देखिये)।

व्रतवैकल्य—कक्षसेन ने इसे अपनी संपत्ति की थी (म. अनु. २००.१५. कुं.)। इसने पक्षधर्मिणी एकादशी का व्रत किया था (पद्म. उ. ३६)। इसने वक्रुत्व-संगम पर परमेश्वर की सेवा की थी (पद्म. उ. १३९)। इन्द्र-प्रस्थ के सप्ततीर्थ के प्रभाव से इसे महापवित्र पुत्र हुए थे (पद्म. उ. २२२)। ब्रह्मदेव के पुंकरक्षेत्र के यज्ञ में यह होतृगणों का ऋत्विज था (पद्म. सु. ३४)। इसने

भीष्मपंचक व्रत किया था (पद्म. उ. १२४)। यह एक व्यास भी था (व्यास देखिये)।

परिवार—ऋग्वेद के अनुसार, इसे शक्ति नामक एक पुत्र था (ऋ. ३.५३.१५-१६)। उसी ग्रंथ में अन्यत्र शतयातु एवं पराशर को क्रमशः इसका पुत्र एवं पौत्र कहा गया है (ऋ. ७.१८.२१)।

पुराणों में प्राप्त जानकारी के अनुसार, वसिष्ठ के पुत्र का नाम शक्ति, एवं पौत्र का नाम पराशर शाक्य था, जो कृष्ण द्रैपायन व्यास का पिता था।

इन्हीं ग्रंथों में वसिष्ठ की पत्नी का नाम कर्जिञ्जी वृताची दिया गया है, जिससे इसे इंद्रप्रमति (कुणि अथवा कुणीति) नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। इंद्रप्रमति को पृथु राजा की कन्या से वसु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसके पुत्र का नाम उपमन्यु था। इस प्रकार वसिष्ठ, शक्ति, वसु, उपमन्यु एवं अन्य ऋ. वसिष्ठ के वंशजों में 'वसिष्ठवंश' का प्रारंभ हुआ।

वसिष्ठ वैडव—एक आचार्य, जिसने 'वसिष्ठ साम' नामक साम की रचना कर, मुखसमृद्धि एवं ऐश्वर्य प्राप्त किया (मं. ब्रा. ११.८.१४)। वीड का पुत्र होने के कारण, इसे 'वैडव' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

वसिष्ठ श्रेष्ठभाज—एक ऋषि, जो अयोध्या के मित्रसह कल्माषपाद राजा का पुरोहित था (म. आ. १६३.१५; १६८.१०)। महाभारत में अन्यत्र इसे 'ब्रह्मशेखर' उपाधि प्रदान की गई है।

कल्माषपाद राजा ने एक दुष्टबुद्धि राक्षस के वशीभूत हो कर इसे नरनासयुक्त भोजन खिलाया, जिस कारण इसने उसे नरनासभक्षक होने का शाप दिया। शरह वर्षों के पश्चात् कल्माषपाद राजा शापयुक्त हुआ। तत्पश्चात् इसने उसकी पत्नी मर्दयन्ती को अश्मक नामक पुत्र उत्पन्न होने का वर दिया (ब्रह्मांड. ३.६३.१५; वा. रा. सुं. २४.१२)।

वसिष्ठ सुवर्चस्—एक ऋषि, जो हृन्निनापुर के संवरण राजा का पुरोहित था (मं. आ. ८९.३६-४०)। यह सुदास राजा के पुरोहित वसिष्ठ ऋषि का पुत्र था, एवं इसके भाई का नाम शक्ति था।

पांचाल देश के राजा सुदास ने संवरण राजा को राज्य भ्रष्ट किया। तदुपरान्त वसिष्ठ की सहाय्यता से ऋषपुत्र संवरण ने पुनः राज्य प्राप्त किया, एवं इसीकी सहाय्यता से विवस्वत् की कन्या तपती से उसका विवाह हुआ (म. आ. १८०)। कालोपरान्त संवरण के राज्य में अकाल

डा गया, जिस समय उसके न होते हुए भी इसने बारह वर्षों तक हस्तिनापुर के राज्य का कारोबार योग्य प्रकार से चलाया (म. आ. १६०-१६४)। तारकामय युद्ध के बाद, ऋषि में महान अकाल आ गया, जिस समय इतने फल-मूल-औषधि आदि का निर्माण कर देव, मनुष्य एवं पशुओं के प्राणों की रक्षा की (ब्रह्मांड. ३.८. ८९.९०; म. शां. २२६.२७; अनु. १३७.१३)।

वसिष्ठ हिरण्यनाभ कौशल्य—एक आचार्य, जो जैमिनि नामक आचार्य का शिष्य था। जैमिनि ने इसे केंद्रों की पाँच सौ संहिताएँ सिखायी थीं, जो आगे चल कर इसने अपने याज्ञवल्क्य नामक शिष्य को प्रदान की (वायु. ८८.२०३)।

वसिष्ठपुत्र—वसिष्ठ ऋषि के ऊर्ज नामक पुत्र का नामान्तर, जो सप्तर्षियों में से एक था (वायु. ६२.१६)।

वसु—प्राचेतस दक्ष की कन्या, जो धर्म ऋषि की पत्नी थी। विभिन्न कल्पों में इसने अनेकानेक अवतार लिये, जिस कारण इसे विभिन्न नाम प्राप्त हुए। महाभारत में प्राप्त इसके विभिन्न नाम निम्नप्रकार हैं:—१. शांडिल्या; २. श्वासा; ३. रता; ४. धूम्रा; ५. प्रभाता; ६. मनस्विनी। इन वसुओं को अनेकानेक पुत्र उत्पन्न हुए, जो वसु नामक देवतासमूह कहलाते हैं (भा. ६.६.४; ब्रह्मांड. २.९.५०; वसु. २. देखिये)।

२. एक देवतासमूह, जिसकी संख्या आठ होने के कारण ये 'अष्टवसु' नाम से प्रसिद्ध हैं (ऐ. ब्रा. २.१८; श. ब्रा. ४.५.७)।

तैत्तिरीय संहिता में इनकी संख्या ३३३ दी गयी है (तै. सं. ५.५.२)। ऋग्वेद में देवताओं का त्रिपदीय विभाजन निर्देशित है, जहाँ वसु, रुद्र एवं आदित्यों को क्रमशः पृथ्वी, अंतरिक्ष एवं स्वर्ग में निवास करनेवाले देव कहा गया है (ऋ. ७.३६.१४)। ग्राहणग्रंथों में वसु, रुद्र एवं आदित्यों की संख्या क्रमशः आठ, ग्यारह एवं बारह बतायी गयी है। इन्हीं देवों में शौ एवं पृथ्वी मिला कर देवों की कुल संख्या तैत्तिरीय बतायी गयी है।

पौराणिक साहित्य में—इन ग्रंथों में वसुओं को धर्म एवं वसु के पुत्र माने गये हैं। किन्तु वहाँ वसु एक स्त्री न हो कर, कल्पभेदानुसार अनेकानेक स्त्रियाँ मानी गयी हैं (भा. ६.६.१०; ब्रह्मांड. २.३८.२; वसु १. देखिये)।

ऐश्वर्यप्राप्ति के लिए वसुओं की उपासना की जाती है (भा. २.३.३)। ये वासुदेव के अंश माने जाते हैं, एवं

वैवस्वत मन्वन्तर के सात देवतासमूह में इनका निर्देश प्राप्त है (मत्स्य. ५. २०-२१; ९.२९)।

वैदिक ग्रंथों में तथा पुराणों में, अग्नि को वसुओं का नायक बताया गया है (ब्रह्मांड. २. २७. २४; मत्स्य. ८.४)। देवामुर संग्राम में इन्होंने कालेय नामक दैत्यों से युद्ध किया था (भा. ८.१०.३४)। इन्हें साध्य देवों के बन्धु कहा गया है, एवं वसिष्ठ ऋषि से इन्हें लैंगिक समागम से पुनः जन्म प्राप्त होने का शाप प्राप्त हुआ था।

अष्टवसु—पुराणों में अष्टवसु नाम निम्नप्रकार दिव्ये गये हैं:—१. अनल; २. अनिल; ३. अप; ४. धर; ५. ध्रुव; ६. प्रत्यूष; प्रभास; ८. सोम।

परिवार—अष्टवसुओं की माता, पत्नियाँ एवं पुत्र आदि के बारे में विस्तृत जानकारी महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है (पृ. ८१२ पर दी गयी 'अष्टवसुओं का परिवार' की तालिका देखिये)।

भागवत में—इस ग्रंथ में अष्टवसुओं के नाम एवं परिवार के संबंध में अन्य सारे पुराण एवं महाभारत से विभिन्न जानकारी प्राप्त है, जो निम्नप्रकार है:—

वसु	पत्नी	पुत्र
(१) द्रोण	अभिमति	हर्ष, शोक, भय।
(२) प्राण	ऊर्जस्वती	सह, आयु, पुरोजव।
(३) ध्रुव	धरणि	पुरस्थ देवता।
(४) अर्क	वासना	तर्ष।
(५) अग्नि	वसोधारा	द्रविणक, स्कंद, कृत्तिका
(६) दोष	शर्वरी	शिमुमार
(७) वसु	आंगिरसी	विश्वकर्मन्
(८) विभावसु	उषा	च्युष्ट, रोचिष, आतप, पंचयाम।

(भा. ६.६.११-१६)।

३. वैवस्वत मन्वन्तर का देवगण।
४. प्रतर्दन देवों में से एक।
५. आद्य देवों में से एक।
६. दस विश्वदेवों में से तीसरा देव। यह ऋगु ऋषि का पुत्र था (मत्स्य. १९५.१३)।
७. ब्रह्मज्योति अग्नि का नामान्तर। पाठभेद—'वसुधाम' (ब्रह्मांड. २.१२.४३)।

अष्टवसुओं का परिवार

वसु का नाम	माता	पत्नी	पुत्र
(१) अनल (२) अनिल	शांडिल्या शासा	शिवा (कृत्तिका) कल्याणिनी	स्कंद, शाख, विशाख, नैऋमेय । मनोजव, जीव, अधिज्ञातगति । रमण, शिशिर ।
(३) अप् (अह)	रता		वैतण्ड्य (वंड) ; श्रम (शांभ, शम), श्रांत (शांत) ; मुनि (ध्वनि, मणिवक्र), ज्योति ।
(४) धर	धूम्रा	मनोहरा	शिशिर, रमण (द्रविण), प्राण, हव्यवाह ।
(५) ध्रुव (६) प्रस्थूप (७) प्रभास	धूम्रा प्रभाता प्रभाता		काल । देवल । विश्वकर्मन् ।
(८) सोम (चंद्र)	मनस्विनी	वरुन्नी आंगिरसी (बृहस्पतिभगिनी)	वर्चस्, बुध, धर (धार), ऊर्मि, कालिल ।

(ब्रह्मांड. ३, ३.२१-२९; वायु. ६६.२०-२८; विष्णु. १.१५.१११-१२०; मत्स्य. ५.१७-२७;
ब्रह्म. ३.३६-४४; ह. वं. १.३; म. आ. ६०. १७-२६) ।

८. सोम की अनुचरी देवताओं में से एक ।

९. दक्षसावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि ।

१०. सावर्णि मनु का एक पुत्र (मत्स्य. ९.३३; मनु
आदिपुरुष देखिये) ।

११. स्वायंभुव मनु का एक पुत्र (मत्स्य. ९.५; मनु
आदिपुरुष देखिये) ।

१२. एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार पुरूरवस् एवं
उर्वशी का पुत्र था (मत्स्य. २४.३३) । पाठभेद-
'अमावसु' ।

१३. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो भागवत के
अनुसार वत्सर राजा का पुत्र था । इसकी माता का नाम
स्वर्वाधि था ।

१४. (सो. अमा.) एक राजा, जो भागवत के
अनुसार कुश राजा के चार पुत्रों में से एक था । विष्णु
एवं वायु में इसे क्रमशः 'अमावसु' एवं 'यशोवसु'
कहा गया है । इसने गिरिवज नामक नगरी की स्थापना
की, जो रामायणकाल में 'वसुमती' नाम से सुविख्यात
थी (वा. रा. वा. ३२.७) ।

१५. (सो. ऋक्ष.) चेदि देश के उपरिचर वसु राजा
का नामांतर (उपरिचर देखिये) । भागवत एवं विष्णुमें

इसे क्रमशः 'कृति' एवं 'कृतक' राजा का पुत्र कहा
गया है ।

१६. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो उत्तानपाद राजा
का पुत्र था । इसकी माता का नाम सुनता था । एक बार
पशुयज्ञ के संबंध में वादविवाद का निर्णय देने के लिए
कई ऋषि इसके पास आये । उस समय इसने पशुयज्ञ
हिसक, अतएव त्याग्य होने का अपना मत प्रकट किया,
जिस कारण ऋषियों ने इसे रसातल में जाने का शाप
दिया । आगे चल कर तपस्या के कारण, इसे स्वर्गलोक
की प्राप्ति हो गयी (मत्स्य. १४३.१८-२५) ।

इसकी कन्या का नाम अन्धोदा-मत्स्यगंधा-सत्यवती था,
जिसे पराशर ऋषि से व्यास नामक पुत्र उत्पन्न हुआ
(मत्स्य. १४.१४) । स्कंद के अनुसार, इसके वीर्य से
एक मत्स्यी के गर्भ से सत्यवती अथवा मत्स्यगंधा नामक
कन्या का जन्म हुआ था (स्कंद ५.३.९७) ।

१७. (सू. इ.) एक राजा, जो नृग राजा का पुत्र था ।

१८. (सू. नृग.) एक राजा, जो सुमति राजा का पुत्र था ।

१९. (सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं देव-
राक्षिता के पुत्रों में से एक था । कंस ने इसका वध किया ।

२०. (सो. वसु.) एक राजा, जो कृष्ण एवं सत्या के पुत्रों में से एक था। भागवत में इसकी माता का नाम नात्रजिति दिया गया है (भा. १०.६१.१३)।

२१. (सो.) एक राजा, जो ईलिन एवं रथेतरी के पाँच पुत्रों में से एक था। इसके अन्य चार भाईयों के नाम दुष्यंत, शूर, भीम एवं प्रवसु थे (म. आ. ८१.१५)।

२२. क्रमिकुल का एक कुलांगार राजा, जिसने दुर्व्य-बहार के कारण अपने जातिबंधव एवं स्वजनों का नाश किया (म. उ. ७२.१३)। पुराणों में इसे चेदि देश का राजा एवं श्रुत राजा का प्रतीक कहा गया है। इसके पुत्र का नाम उपमन्यु था, जिससे औमन्व्यव कुल का निर्माण हुआ (मत्स्य. ५०.२५-२६)।

२३. एक राजा, जो भूतज्योति नामक राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम प्रतीक था (भा. १.२.१७-१८)।

२४. एक ऋषि, जो इंद्रप्रमति वसिष्ठ नामक ऋषि का पौत्र, एवं मद्र नामक ऋषि का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम उपमन्यु था।

२५. एक ऋषि, जो जगदग्नि एवं रेणुका के पाँच पुत्रों में से एक था। इसके अन्य भाईयों के नाम समण्वन्, सुषेण, विश्वावसु एवं परशुराम थे। पिता की मातृव्य स्वधेवी आज्ञा न मानने के कारण, इसे पिता के द्वारा शाप प्राप्त हुआ था। परशुराम के द्वारा उस शाप से इसका उद्धार हुआ।

२६. एक आंगिरसवंशीय ऋषि, जो पैल ऋषि का पिता था (म. स. ३०.३५)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह 'होता' था।

२७. (स्या. प्रिय.) एक राजा, जो कुशद्वीप के हिरण्यरेतस राजा के सात पुत्रों में से एक था (भा. ५. २०.१४; हिरण्यरेतस देखिये)। कुशद्वीप का इसका राज्यविभाग इसीके ही नाम से सुविख्यात हुआ।

२८. एक यज्ञ, मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१२३)।

२९. एक दैत्य, जो मुर दैत्य के पुत्रों में से एक था। कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.५९.१२१)।

३०. एक वसु, जिसकी पत्नी का नाम आंगिरसी, एवं पुत्र नाम विश्वकर्मन् था (भा. ६.६.११; वसु २. देखिये)।

३१. कर्म ऋषि के दस पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. २. १८.९)।

३२. मारीच कश्यप नामक ऋषि की पत्नी, जिसने सोम के लिए अपने पति का त्याग किया (मत्स्य. २३. २५)।

३३. एक ऋषि, जो भृगु वारुणि एवं पौलोमी के सात ऋषिपुत्रों में से एक था।

३४. एक ऋषि, जो कुणीति एवं पृथुकन्या के पुत्रों में से एक था। इसके पुत्र का नाम उपमन्यु था।

३५. काश्मीर देश का एक राजा, जिसने पुष्करतीर्थ पर तपस्या की थी। इसने पुंडरिकाक्ष के स्तोत्र का पठन किया, जिस कारण इसे मोक्ष की प्राप्ति हुई (वराह. ५-६)।

अपने पूर्वजन्म में, चाक्षुप मनु के राज्यकाल में यह ब्रह्मा का पुत्र था। एक बार इसने रैभ्य ऋषि के द्वारा बृहस्पति को प्रश्न किया, 'कर्म से मोक्ष प्राप्त होता है, या ज्ञान से?' उस समय बृहस्पति ने इसे जवाब दिया, 'ज्ञानपूर्वक किये कर्म से मनुष्य को मोक्षप्राप्ति होती है'। उस जन्म में इसके पुत्र का नाम दिवस्वत् था।

अपने इस पूर्वजन्म का स्मरण एक व्याध के द्वारा इसे हुआ, जिस कारण इसने उस व्याध को अगले जन्म में 'धर्मव्याध' होने का वर प्रदान किया।

३६. केरल देश में रहनेवाला एक ब्राह्मण (पद्म. उ. ११९)। पापकर्म के कारण इसे निशाचयोनि प्राप्त हो गयी। पश्चात् गणेशक से यह मुक्त हुआ।

३७. बेंकटाचल पर रहनेवाला एक निषाद। इसकी पत्नी का नाम चित्रवती था, जिससे इसे नीर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। विष्णु की उपासना करने से यह मुक्त हुआ।

वसु काश्यप—रोहित मन्वन्तर का एक ऋषि (ब्रह्मांड ४.१.६२)।

वसु भारद्वाज—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.८०-८२)।

वसुकर्ण वासुक—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ६५.६६)।

वसुकृत् वासुक—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. २०-२६)।

वासुक ऐंद्र—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.२७-२९)। किन्तु एतरेय अरण्यक में इन सूक्तों के प्रणयन का श्रेय इसे नहीं, बल्कि इसकी पत्नी को दिया गया है (ऐ. आ. १.२.२; सां. आ. १.३)।

एक बार इसके द्वारा किये गये यज्ञ में, इंद्र गुप्तरूप में उपस्थित हुआ। किन्तु इसकी पत्नी के द्वारा अनुरोध

किये जाने पर, अपने वास्तव रूप में इंद्र ने इसे दर्शन दिया। उस समय इंद्र ने इसके साथ किया हुआ संवाद ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १०.२८)।

वसुक वासिष्ठ—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.९७. २८-३०)।

वसुकपत्नी—एक वैदिक सूक्तद्रष्टी (ऋ. १०.२८. १)।

वसुचंद्र—एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. १३३.३७)।

वसुज्येष्ठ—(युग. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार पुष्यमित्र राजा का पुत्र था (मत्स्य. २७२. २८)। भागवत, विष्णु एवं ब्रह्मांड में इसे 'सुज्येष्ठ' कहा गया है। इसने सात वर्षों तक राज्य किया।

वसुद—एक देव, जो भृगु एवं पौलोमी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.१.२९)।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार पुरुकुल एवं नर्मदा के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. १२. ३६)। इसे 'वसुदस्यु' नामांतर भी प्राप्त था।

वसुदत्त—एक राजा, जो अपने पूर्वजन्म में सुव्रत नामक राजा था। विष्णु के आशीर्वाद से इसे इंद्रपद की प्राप्ति हुई (पद्म. सू. २२; भू. ५)।

वसुदा—मालि नामक राक्षस की पत्नी।

२. अंगिरस् ऋषि के सुभा नामक पत्नी का नामान्तर (म. व. २०८.१; शिवा देखिये)।

वसुदान—शि-देवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६. ३२)।

२. एक राजा, जो कुशद्वीप के हिरण्यरेतस् राजा के पुत्रों में से एक था (भा. ५.२०.१४)।

३. पांशुराष्ट्र का अतिरथि सम्राट्, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. १६८.२५)। इसे 'वसुमत्' नामान्तर भी प्राप्त था (म. स. ४.५१४)।

युधिष्ठिर के राजस्य यज्ञ के समय, इसने २६ हाथी, २००० घोड़े आदि भेंटवस्तुएँ उसे अर्पित की थीं (म. स. ४८.२६-२७)।

भारतीय युद्ध में, इसने युधिष्ठिर के साथ युद्धभूमि में प्रवेश किया था (म. उ. १४९.५८), जहाँ इसने काफी पराक्रम दिखाया (म. क. ४.८६)। इस युद्ध में यह एवं इसका पुत्र क्रमशः द्रोण एवं कर्ण के द्वारा मरे गये (म. द्रो. १६४.८४; क. ४.७४)।

४. पाण्डवों के पक्ष का अन्य एक राजा, जो द्रोण के ही द्वारा मारा गया (म. द्रो. २०.४३)।

५. (सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार बृहद्रथ राजा का पुत्र था। मत्स्य एवं भागवत में इसे क्रमशः 'वसुदामन्' एवं 'सुदास' कहा गया है (मत्स्य. ५०.८५)।

वसुदानपुत्र—कौरवपक्ष का एक राजा, जिसने भारतीय युद्ध में काशिराज का पुत्र अभिम्ब का वध किया था (म. क. ४.७४)।

वसुदामन्—बृहद्रथपुत्र वसुदान राजा का नामान्तर।

वसुदामा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.५)।

वसुदेव—(सो. कृष्ण.) एक यादव राजा, जो श्रीकृष्ण का पिता था। यह मथुरा के उग्रसेन राजा का मंत्री, एवं (पांडुपत्नी) कुंती का वन्धु था। इसके पिता का नाम शूर (देवमीट) एवं माता का नाम मारिषा था। इसके जन्म के समय देवताओं ने आनक एवं दुंदुभियों का घोष किया, जिस कारण इसे ' आनकदुंदुभि ' नामान्तर भी प्राप्त था (भा. ९.२४.२८; वायु. ९६.१४४; ब्रह्म. १४)।

कृष्णजन्म—उग्रसेन के भाई देवक के सात कन्याओं के साथ इसका विवाह हुआ था, जिसमें देवकी प्रसूत थी। इस विवाह के समय, देवकी का चचेरा भाई एवं उग्रसेन राजा का पुत्र-कंस, स्वयं रथ का सारथ्य करने बैठा था। नारात के समय, देवकी के आठवें पुत्र के द्वारा कंस का वध होने की आकाशवाणी उसने सुनी, जिस कारण कंस ने इसे एवं देवकी को कारागृह में रख दिया। किन्तु इसके आठवें पुत्र श्रीकृष्ण का जन्म होते ही, यह रात्री में ही ब्रज में नंद गोप के घर गया, एवं वहाँ श्रीकृष्ण को छोड़ कर उसके बदले नंद गोप एवं यशोदा की भवजात कन्या ले आया। यशोदा एवं देवकी सहेलियों थी, जिन्होंने यह संकेत पहले से ही निश्चित किया था (दे. भा. ४.२३)।

पश्चात् कंस ने इसे मुक्त किया, एवं इसने गर्ग ऋषि के द्वारा नंद गोप के घर में रहनेवाले अपने बलराम एवं कृष्ण इन दो पुत्रों के जातकमादि संस्कार किये (भा. १०.५.२०-२१)। भागवत के अनुसार, स्वयं श्रीकृष्ण ने इसकी कंस के कारागृह से मुक्तता की थी (भा. १०. ३६.१७-२४)।

पराक्रम—पौण्ड्रक वसुदेव राजा के साथ यादवों का युद्ध हुआ था, जिस समय यह भी उपस्थित था। नारद ने इसे भागवतधर्म का उपदेश किया था, जिसमें उसने

इसे निमि जनक एवं नौ योगेश्वरों के बीच हुआ तत्त्वज्ञान-पर उपदेश कथन किया था (भा. ११.२-५) ।

अश्वमेधयज्ञ—इसने स्यमन्तपंचकक्षेत्र में अश्वमेध यज्ञ किया था, जिस समय इसके अश्वमेधीय अश्व का ब्राह्मण ने हरण किया था (म. स. ४२.९) । किन्तु श्रीकृष्ण ने वह अश्व लौट लाया, एवं इसका यज्ञ अश्वमेधीय समाप्त हुआ । इस यज्ञ के समय इसने नंदगोप का विपुल भेटदस्तुएँ दे कर सत्कार किया था (भा. १०.६६) ।

मृत्यु—कृष्ण की मृत्यु की वार्ता सुन कर, यह अत्यंत उद्विग्न हुआ (म. मे. ५) । इसने अपने पुत्रों में से सौमी एवं कौशिक को अपने भाई वृक के रोद में दिया, एवं प्रभासक्षेत्र में देहत्याग किया । पश्चान् अर्जुन की नेत्रुध में, एक अत्यंत मौल्यवान् मनुष्यवाहक वान से इसका शव स्पर्शान में ले जाया गया । इसकी स्मशान-यात्रा के अग्रभाग में इसका आश्रमेधिक छत्र था, एवं पीछे इसके स्त्रियों का परिवार था । इसके अत्यंत प्रिय स्थान पर इसका ब्रह्मकर्म किया गया (म. मौ. ८.१९-२३) । इसकी पत्नियों में से देवकी, भद्रा, रोहिणी एवं मदिरा आदि स्त्रियाँ इसके शव के साथ संती हो गयीं ।

परिवार—इसकी पत्नियों एवं परिवार की जानकारी विभिन्न पुराणों में प्राप्त है, किन्तु वह एक दूसरे से मेल नहीं खाती ।

पत्नियों—इसकी पत्नियों की संख्या वायु एवं हरिवंश में क्रमशः १३ एवं १४ दी गयी है (वायु. ९६.१५०-१६१; ह. वं. १.३५.१) । मत्स्य एवं भागवत में पत्नियों की कुल संख्या अप्राप्य है, किन्तु भागवत में इसके १३ पत्नियों का अपत्यपरिवार दिया गया है ।

इसकी पत्नियों में निम्नलिखित स्त्रियाँ प्रमुख थीं:-

(१) देवककन्याएँ—१. देवकी; २. सहदेवा; ३. शान्तिदेवा, जिसे वायु एवं मत्स्य में क्रमशः 'शाङ्गदेवा' एवं 'श्राङ्गदेवा' कहा गया है; ४. श्रीदेवा; ५. देव-रक्षिता; ६. वृकदेवा (धृतेदेवा); ७. उपदेवा ।

(२) पूरुकुलोत्पन्न स्त्रियाँ—१. रोहिणी, जिसे हरिवंश एवं ब्रह्मांड में ब्राह्मी राजा की, एवं वायु में वाल्मीकि राजा की कन्या कहा गया है; २. मदिरा (इंदिरा-ह. वं.); ३. भद्रा; ४. वैशाखी (वैशाखी-विष्णु.); ५. सुनाम्नी ।

उपर्युक्त पत्नियों में से वैशाखी एवं सुनाम्नी का निर्देश भागवत में अप्राप्य है, जहाँ उनके स्थान पर 'रोचना' एवं 'इला' नाम प्राप्त हैं ।

(३) भोगांगना—१. सुमंथा (सुतनु-ह. वं.); २. वनराजी (रथराजी-मत्स्य. ; वडवा-ह. वं.) । भागवत एवं विष्णु में इनके निर्देश अप्राप्य हैं ।

(४) अन्य पत्नियों—१. वैश्या; २. कौसल्या ।

पुत्र—(१) रोहिणीपुत्र—१. राम; २. सारण; ३. दुर्मद (दुर्मद); ४. शट (गद-भा., निशव-वायु.); ५. दमन (विपुल-भा., भद्राश्व-विष्णु.); ६. शुभ्र (सुभ्रु-मत्स्य., श्वभ्र-ह. वं., कृत-भा., भद्रवाहु-विष्णु.); ७. भिडारक (कृत-भा., दुर्गमभूत-विष्णु.); ८. कुशीतक (उशीगर-ह. वं., महाहनु-मत्स्य., सुभद्र-भा.) ।

सारे पुराणों में रोहिणी की पुत्रसंख्या आठ बतायी गयी है । केवल भागवत में उसके चारह पुत्र दिये गये हैं, जिनमें से उर्वरीत चार निम्नप्रकार हैं— १. भद्रवाह; २. दुर्मद, ३. भद्र, ४. भूत ।

इनके अतिरिक्त रोहिणी को दो निम्नलिखित कन्याएँ भी थी, जिनका उल्लेख हरिवंश में प्राप्त है— १. चित्रा (चित्राक्षी-मत्स्य.), २. सुभद्रा (चित्राक्षी-मत्स्य.) ।

(२) मदिरापुत्र—१. नंद, २. उभनंद; ३. कृतक (स्थित-वायु.); ४. कुक्षिसेत्र; ५. मिश्र; ६. मुष्टि; ७. चित्र; ८. उपचित्र; ९. बेल; १०. मुष्टि ।

इनमें से पहले तीन पुत्रों का निर्देश हरिवंश एवं मत्स्य के अतिरिक्त बाकी सारे पुराणों में प्राप्त है । ४-८ पुत्रों के नाम केवल वायु एवं विष्णु में प्राप्त है । ९-१० पुत्रों के नाम केवल विष्णु में प्राप्त है । वायु में इन दो पुत्रों के स्थान पर 'चित्रा' एवं 'उपचित्रा' नामक दो कन्याओं का निर्देश प्राप्त है । भागवत में ४-१० पुत्रों के नाम अप्राप्य है, किन्तु वहाँ 'धर' आदि विस्फुल नये नाम दिये गये हैं ।

(३) यद्रापुत्र—(अ) वायु एवं ब्रह्मांड में—१. धिन्न; २. उपधिन्न; ३. सत्ववंत; ४. महौज्म । (ब) विष्णु में—१. उरनिधि; २. राद ।

(४) वैशाखी (वैश्या) पुत्र—कौशिक, जिसे भागवत में कौसल्यापुत्र कहा गया है ।

(५) सुनाम्नीपुत्र—१. वृक; २. गद (ह. वं.) ।

(६) सहदेवापुत्र—(अ) ब्रह्मांड में—१. पूर्व ।

(ब) भागवत में—१. पुर; २. विश्रुत आदि (क) वायु में—१. भयासक ।

(७) शान्तिदेवापुत्र (अ) ब्रह्मांड में— १. जनस्तंभ ।

(ब) भागवत में—१. श्रम; २. प्रतिश्रुत आदि । (क) हरिवंश में—१. भोज; २. विजय ।

(८) श्रीदेवापुत्र—(अ) भागवत में—१. वसु; २. हंस; ३. सुवंश। (ब) ब्रह्मांड में—१. मंदक।

(९) देवशिक्षितापुत्र—(अ) भागवत में—१. उपासंग; २. वसु। इन दोनों पुत्रों का कंस ने वध किया। (ब) हरिवंश में—१. उपासंगवर। (क) भागवत में—१. गद। (ड) मत्स्य में—एक कन्या, जिसका कंस ने वध किया।

(१०) वृकदेवापुत्र—(अ) हरिवंश एवं ब्रह्मांड में—१. अगावह। (ब) वायु में—१. स्वगाहप; २. अगाहिन्। (क) मत्स्य में—१. अवागह; २. नंदक। (ड) भागवत में—विपुत्र।

(११) उपदेवापुत्र—(अ) वायु एवं मत्स्य में—१. विजय; २. रोचन (रोचमत); ३. वर्धमत्; ४. देवल। (ब) भागवत में—१. कल्प; २. वृक्ष।

(१२) देवकीपुत्र (अ) मत्स्य में—१. सुपेण; २. कीर्तिमत्; ३. भद्रसेन; ४. भद्रविदेह (भद्रदेव—ब्रह्मांड; भद्रविदेक—वायु; भद्र—भागवत.); ५. ऋषिदास (ऋजुकाय—ब्रह्मांड; यजुदाय—वायु; ऋजु—भागवत.); ६. दमन (उदधि—ब्रह्मांड; तदय—वायु; संमर्दन—भागवत.); ७. गवेषण। ये सारे पुत्र कंस के द्वारा मारे गये।

इनके अतिरिक्त देवकी के कृष्ण एवं सुभद्रा नामक संतानों का निर्देश वायु एवं मत्स्य में, तथा संकषण नामक पुत्र का निर्देश भागवत एवं विष्णु में प्राप्त है।

(१३) नाम्नापुत्र—सहदेव।

(१४) सुपंचापुत्र—१. पुंड्र, जो राजा बन गया; २. कपिल, जो वन में गया।

(१५) वनराजीपुत्र—१. जरत्, जो धनुर्विद्याप्रवीण था, किन्तु कालोत्तरांत निपाद बन गया (ब्रह्मांड. ३.७१; वायु. १६.१५९-२१४; मत्स्य. ४६; भा. ९.२४.२७-२८; विष्णु. ४.१५; ह. वं. १.३५.१-१०)।

२. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो विष्णु के अनुसार चंचु राजा का पुत्र था। वायु एवं भागवत में इसे 'सुदेव' कहा गया है।

३. एक दुराचारी ब्राह्मण, जो अपने ईश्वरभक्ति के कारण, अगले जन्म में असुरराज प्रल्हाद बना (पद्म. उ. १७४)।

वासुदेव काण्व—(कण्व. भविष्य.) काण्वायन राजवंश का ध्याय राजा, जो हुंग राजा देवभृति (देवभूमि) का अमात्य था। देवभृति का वध कर यह हुंगराज्य का अधिपति बना। इसने पाँच वर्षों तक

राज्य किया। इसके पुत्र का नाम भूमित्र था (भा. १२. १.१९-२०; मत्स्य. २७२.३२; ब्रह्मांड. २.७४.१५६)।

वासुदेवा—गंदिनो की कन्या (वायु. १६.१११)।

वासुंधर—शाहमलिद्वीप में रहनेवाला एक लोकसमूह (भा. ५.२०.११)।

वासुप्रभ—स्कंद का एक सैनिक (म. चा. ४४.५८)।

वासुभृद्यान—(स्वा.) स्वायंभुव मन्वन्तर के वसिष्ठ ऋषि के सात पुत्रों में से एक। इसकी माता का नाम ऊर्जा था (भा. ४.१.४१)। कई अभ्यासकों के अनुसार 'वासुभृद्यान' एक व्यक्ति न हो कर, यहाँ 'वासुभृत्' एवं 'यान' ऐसे दो व्यक्तियों के नाम की ओर संकेत किया गया है।

वासुमत्—वैवस्वत मनु के पुत्रों में से एक।

२. (सो. पुरुरवस्.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार श्रुतायु राजा का पुत्र था।

३. जमदग्नि एवं रेणुका के वसु नामक पुत्र का नामान्तर (वसु २५. देखिये)।

४. कृष्ण एवं जांबवती के पुत्रों में से एक।

५. युधिष्ठिर की सभा का एक राजा (म. स. ४.३८)। भारतीय युद्ध में यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ४.१८)।

६. (सू. निमि.) एक जनकवंशीय राजकुमार, जिसे एक ऋषि के द्वारा धर्मज्ञान प्राप्त हुआ था (म. शां. २९७. २)।

७. (सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय वसुमनस् कौसल्य राजा का नामान्तर।

वसुमती—वालेय गंधर्वों की एक कन्या, जिससे आंग चल कर 'वसुमती सूतगण' की उत्पत्ति हुई (वायु. ६९. २१-२३)।

२. पृथ्वी का नामान्तर (वायु. ९७.१६)।

वसुमनस्—वैवस्वत मनु के वसुमत् नामक पुत्र का नामान्तर (भा. ८.१३.३)।

२. जमदग्नि के वसु नामक पुत्र का नामान्तर (भा. ९. १५.१३)।

३. श्रीकृष्णपुत्र वसुमत् का नामान्तर (भा. १०.६१.१२)।

४. एक सप्तर्षि, जो वैवस्वत् मन्वन्तर में उत्पन्न वसिष्ठ के सात पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. २.३८.२९)। भागवत में इसे वसुमत् कहा गया है।

५. (सो. पुरुरवस्.) श्रुतायु राजा के वसुमत् नामक पुत्र का नामान्तर।

६. युधिष्ठिर की सभा का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. स. ४.५.१३, उ. ४.२१)।

वसुमनस् कौसल्य—(स. इ.) कोसल देश का एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो वायु के अनुसार हर्यश्च राजा का पुत्र था। ययाति राजा की कन्या माधवी इसकी माता थी। वायु में इसे वसुमन् कहा गया है (वायु. ८८. ७६)। इसके भाइयों के नाम अशक वैश्रामित्रि, प्रतर्दन, एवं शिनि औशीनर थे (म. व. परि. १. क्र. २१. पंक्ति ६)।

ययाति को पुण्यदान—एक बार यह अपने भाइयों के साथ यज्ञ कर रहा था, जहाँ स्वर्ग से अष्ट हुआ इसका मातामह ययाति आ गिरा। पश्चात् अपनी माता माधवी की आज्ञा से, इन्होंने अपना पुण्य ययाति को प्रदान किया, जिस कारण उसे पुनः एक बार स्वर्ग की प्राप्ति हुई (मत्स्य. ३५.५; माधवी देखिये)। ययाति राजा को पुण्यफल प्रदान करने के कारण, यह 'दानपति' नाम से सुविख्यात हुआ।

संवाद—इसने बृहस्पति ऋषि से राजधर्म का ज्ञान प्राप्त किया था (म. शां. ६८)। वामदेव ऋषि ने इसे राजनीति कथन की थी (म. शां. ९२-९४)। तीर्थयात्रा एवं विद्वत्सहवास के कारण, इसने काफ़ी पुण्यसंचय किया था, जिस कारण इसे स्वर्गप्राप्ति हुई (मत्स्य. ४२.१४)।

यह यमसभा का सभासद था (म. स. ८.१३)। षोषयात्रा युद्ध में अर्जुन एवं कृप का संग्राम देखने के लिए, यह इंद्र के रथ पर आरूढ़ हो कर उपस्थित हुआ था (म. वि. ५१.९-१०)।

वसुमनस् रौहिदश्व—एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०. १७९.३)।

वसुमित्र—एक क्षत्रिय राजा, जो दनायुपुत्र विक्षर नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था। भारतीय-युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था (म. आ. ६८.४१)।

१. (शुग. भविष्य.) एक शुंगवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु एवं ब्रह्मांड के अनुसार सुज्येष्ठ राजा का, वायु के अनुसार पुष्पमित्र का, एवं मत्स्य के अनुसार वसुज्येष्ठ राजा का पुत्र था। इसने दस वर्षों तक राज्य किया। इसके पुत्र का नाम भद्रक (उदंक) था (भा. १२.१.१७)।

वसुरुच—एक आचार्य (ऋ. ९.११०.६)।

प्रा. च. १०३]

वसुरुचि—एक यक्ष, जो ऋष्यप एवं अरिष्टा के पुत्रों में से एक था। इसीके ही वेष में यक्ष ने ऋतुस्थला उपभोग लिया था (वायु. ६९.१४०)।

२. एक अप्सरा (ब्रह्मांड. ३.७.११)।

वसुरोचिस् आंगिरस—एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. ८. ३४.१६)। लुडविग इन्हें हजार गायकों का एक परिवार मानते हैं, जिन्होंने इंद्र से विपुल संपत्ति प्राप्त की थी (लुडविग, ऋग्वेद अनुवाद. ३.१६२)। किन्तु शिफिथ इस शब्द का एकवचनी रूप ग्राह्य मानते हैं, एवं इसे एक राजा समझते हैं (शिफिथ, ऋग्वेद के सूक्त. २. १७५)।

वसुश्री—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१२)। पाठभेद—'केतकी'।

वसुश्रुत आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ३-६)।

वसुषेण—अंगराज कर्ण का मूल नाम, जो अधिरथ सूत एवं राधा के द्वारा उसकी बाल्यावस्था में रखा गया था।

वसुहोम—अंगदेश का एक प्राचीन राजा, जिसे 'वसुहुम' नामान्तर प्राप्त था। मुंजयुद्ध पर्वत पर तप करते समय, मांधातृ राजा ने इसे दण्डनीति के संबंध में उपदेश प्रदान किया था (म. शां. १२२)।

वसूयव आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. २५-२६)।

वसोर्धारा—अग्नि नामक वसु की पत्नी (भा. ६.६.१३)।

वस्तु—(सो. क्रोष्ट.) यादव राजा बभ्रु का नामान्तर (बभ्रु २. देखिये)। वायु में इसे लोमपाद राजा का पुत्र कहा गया है (वायु. ९५.३७)।

वस्वन्त—(स. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो भागवत के अनुसार उपगुप्त राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम युयुध था (भा. ९.१३.२५)।

वहीनर—(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार दुर्दमन राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार उदयन राजा का पुत्र था। विष्णु में इसे अहीन कहा गया है। इसके पुत्र का नाम दंडयाणि था (भा. ९.२२.४३)।

२. यमसभा का एक क्षत्रिय (म. स. ८. १५)। पाठभेद—'इषीरथ'। यह 'वह+नर' (= नरवाहन) शब्द का फारसी रूपान्तर होगा।

वाह्नि—शिवदेवों में से एक।

२. (सो. तुर्वसु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार तुर्वसु राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम भर्ग (गोभानु) था (भा. १.२३.२६; ब्रह्मांड. ३.७४.१)।

३. (सो. कुकुर.) एक राजा, जो कुकुर राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम विलोमन् था। विष्णु में इसे धृष्ट कहा गया है (धृष्ट ५. देखिये)।

४. कृष्ण एवं मित्राविंदा के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.१६)।

५. रामसेना एक वानर।

६. अग्नि का नामांतर (अग्नि ५. देखिये)।

वाक्य—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाका—माल्यवत् राक्षस की कन्या, जो विश्रवस् ऋषि की चार पत्नियों में से एक थी। महाभारत में विश्रवस् ऋषि के पत्नियों के पुण्योक्त्या, राका एवं मालिनी ये तीन ही नाम प्राप्त हैं। किन्तु ब्रह्मांड एवं वायु में विश्रवस् ऋषि की चतुर्थे पत्नी वाका बतायी गयी है (ब्रह्मांड. ३.८.३९-५६; वायु. ७०.३४-५०)। इसके त्रिशिरस्, दूषण एवं विद्युत्बिह्व नामक तीन पुत्र, एवं अनु-पालिका नामक कन्या थी।

वाक्पति—सत्यदेवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६.३४)।

वामाग्यनि—धृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाग्निद्र—एक ऋषि, जो गृहसमदंशरीय प्रकाश ऋषि का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम प्रमति था। यह वीत-हृव्य नामक ब्रह्मक्षत्रिय के वंश में उत्पन्न हुआ था (म. अनु. ३०.६३; वीतहृव्य देखिये)।

वाग्निधि—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद—'बाहुरि'।

वाग्दुष्ट—कौशिक ऋषि के सात पुत्रों में से एक (मत्स्य. २०.३)। इसके कनिष्ठ भाई का नाम पितृवर्तिन् था (पितृवर्तिन् देखिये)।

वाग्मिन्—(सो. पूरु.) एक राजा, जो पूरुराजा के पौत्र मनस्यु के तीन पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम सौवीरी था। इसके अन्य दो भाइयों के नाम सुभ्र एवं संहनन थे (म. आ. ८९.७)।

वाच्—सावर्णि मनु के नौ पुत्रों में से एक (वायु. १००.२२)।

वाच् आमभृणी—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १२५)। इसके द्वारा रचित ऋग्वेद का सूक्त तेजस्वी विचारों से ओतप्रोत भरा हुआ है, जहाँ इसने वाणी

का सामर्थ्य निम्नलिखित शब्दों में बताया है, 'जो ज्ञान देव एवं मानवों के लिए अप्राप्य है, वह मैं बता सकती हूँ। इस ज्ञान के कारण, किसी भी व्यक्ति को मैं श्रेष्ठ बना सकती हूँ, ब्राह्मण बना सकती हूँ, ऋषि बना सकती हूँ, बुद्धिमान् बना सकती हूँ। मेरे पास रुद्र का धनुष सदैव सज्ज है, जिसकी सहाय्यता से मैं समस्त ब्रह्मद्रेष्टा शत्रुओं का नाश कर सकती हूँ' (ऋ. १०. १२५.५-७)।

वाचःश्रवस्—शिखांडिन् नामक शिवावतार का शिष्य, जो अठारहवें द्वापारयुग में उत्पन्न हुआ था (वायु. २३. १८३)।

वाचःकवी—गार्गी नामक ब्रह्मवादिनी स्त्री का पैतृक नाम (वृ. उ. ३.६.१; ८.१)। 'वचःकवु' का वंशज होने से इसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वाचःरूपत—अलीक्यु नामक आचार्य का पैतृक नाम (सां. ब्रा. २६.५; २८.४)।

वाचाबुद्ध—भौत्य मन्वन्तर का एक देवगण (ब्रह्मांड. ४.१.१०७)।

वाच्य—प्रजापति नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम।

वाच अथवा **वाजिन्**—सावर्णि मनु के नौ पुत्रों में से एक।

वाजंभर—सति नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम।

वाजरत्नायन—सोमशुग्मन् नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ८.२१.५)।

वाजश्रव—अंगिरस् कुल में उत्पन्न हुआ एक ऋषि। इसे वायुपुराण की संहिता निर्यन्तर नामक आचार्य से प्राप्त हुई, जो आगे चल कर इसने सोमशुग्म नामक शिष्य को प्रदान की (ब्रह्मांड. २.३५.१२२; वायु. १०३.६४)। इसके नाम के लिए 'वाजिश्रव' पाठभेद भी प्राप्त है।

वाजश्रवस्—एक आचार्य, जो जिह्वावत् ब्राह्मण नामक आचार्य का शिष्य था (वृ. उ. ६.४.३३ मार्ष्य.) इसके शिष्य का नाम कुश्रि था। नचिकेतस् इसका पुत्र था। पुराणों में इसे ऋषिक एवं चौबीसवें वेद व्यास कहा गया है।

२. एक व्यास, जो बाईसवें द्वापारयुग में उत्पन्न हुआ था।

वाजश्रवस—कुश्रि नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १०.५.५.१)। नचिकेतस् का पैतृक

नाम भी यही बताया गया है (तै. ब्रा. ३.११.८.१)। वाजश्रवस के वंशज होने से उन्हें वाजश्रवस पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. एक ऋषिकुल, जो गोतम कुल में उत्पन्न हुआ था (तै. ब्रा. ३.११.८)। इस कुल के लोग अत्यंत पूज्य माने जाते थे (तै. ब्रा. १.३.१०३)।

वाजसनेयि अथवा **वाजसनेय**—याज्ञवल्क्य नामक सुविख्यात आचार्य का पैतृक नाम (बृ. उ. ६.३.७; ५. ३ ऋष्व; जै. ब्रा. २.७६)। इसकी शिष्यपरंपरा 'वाजसनेयित' नाम से सुविख्यात है (अनुषद. सूत्र. ७.१२.८.१), जिसमें याज्ञवल्क्य के पंद्रह शिष्य प्रमुख थे। एक शास्त्रप्रवर्तक आचार्य के नाते, याज्ञवल्क्य का निर्देश पाणिनि के अष्टाध्यायी में प्राप्त है (पाणिनि देखिये)।

२. एक आचार्यसमूह, जो व्यास की यजुःशिष्य परंपरा में से याज्ञवल्क्य नामक आचार्य के पंद्रह शिष्यों से बना हुआ था।

याज्ञवल्क्य ने सूर्य से यजुःसंहिता को प्राप्त किया था। भागे चल कर उसने उस संहिता के पंद्रह भाग किये, एवं वे अपने ऋष्व, माध्यदिन आदि शिष्यों में बाँट दिये। इसी कारण याज्ञवल्क्य के ये पंद्रह शिष्य 'वाजसनेय' नाम से सुविख्यात हुए। याज्ञवल्क्य के ही कारण, शुक्लयजुर्वेदसंहिता 'वाजसनेयि संहिता' नाम से प्रसिद्ध हुई है।

वाजिजि—मरीचिगर्भ देवों में से एक (ब्रह्मांड. ४.१. ५८)।

वाजिन्—सावर्णि मनु के वाजनामक पुत्र का नामांतर।

२. याज्ञवल्क्य के पंद्रह शिष्यों का सामूहिक नाम (वायु. ६१.२४-२६; वाजसनेयि २. देखिये)।

वाजिश्रवस्—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाज्य—केतु नामक आचार्य का पैतृक नाम (वं. ब्रा. १)।

वाटधान—एक राजा, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५.८)। इसका राज्य उत्तर भारत में बना था, एवं भारतीययुद्ध के समय वह कौरवों की सेना से घिरा गया था (म. उ. १९.३०)। भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था।

२. एक लोकसमूह, जिसे नकुल ने अपने पश्चिम-दिक्विक्रय के समय जीता था (ब्रह्मांड २.१६.४६; म. स.

२९.७)। भारतीययुद्ध में, ये लोग कौरवों के पक्ष में शामिल थे, एवं भीष्म के द्वारा निर्मित गरुड़-ध्यूह के शिरोभाग में खड़े हुए थे (म. मी. ५२.४)। अर्जुन ने इन लोगों का संहार किया था (म. क. ५१.१६)।

वाटिक—पराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाडव—एक व्याकरणकार, जो पतंजलि के व्याकरण महाभाष्य में निर्दिष्ट सात वातिककारों में से एक था (महा. ८.२.१०६)। उस ग्रंथ में अन्यत्र इसका निर्देश दो बार किया गया है, जहाँ इसे सौर्यनगर का रहिवासी कहा गया है (महा. ३.२.१४; ७.३.१)। कैयट के अनुसार, सौर्य एक नगर का ही नाम था।

वाडोहधि—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वात—(सो. क्रोटु) एक राजा, जो वायु के अनुसार शूर राजा का पुत्र था।

२. एक क्रूरकर्मा राक्षस, जो यातुधान राक्षस का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम विरोध था (ब्रह्मांड ३.७.९६)।

३. स्वरोचिप मन्वंतर के सप्तपियों में से एक।

वातघ्न—विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक।

वातजूति (वातरशन)—एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१३६.२)।

वातपति—द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित एक राजा (म. आ. २०१.२०)।

वातरशन—नम्र मुनियों का एक समुदाय (ऋ. १०.१३६.१०२; तै. आ. १.२३.२; २४.४; २. ७.१)। इससे प्रतीत होता है कि, भारत में आज दिखाई देनेवाले नम्र गोसाइयों की परंपरा काफी पुरातन है।

ऋग्वेद में निम्नलिखित ऋषियों को 'वातरशन' उपाधि प्रदान की गई है:—ऋष्यशृंग, एतश, करिकत, जूति, वातजूति, विप्रजूति (ऋ. १०. १३६)।

वातवत्—एक ऋषि, जो दृति नामक आचार्य का मित्र था (पं. ब्रा. २५.३.६)। एक बार इसने एवं दृति ने एक यज्ञ का आयोजन किया। किन्तु इसने उस यज्ञ का कार्य बीच में ही छोड़ दिया। इस कारण, इसे अनेकानेक कष्टों का सामना करना पड़ा, एवं इसके वंशज 'वातवत्-गण' दृति के वंशजों (दातव्यों) की अपेक्षा कम संपन्न हो सके।

वातवेग—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया।

२. गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. ११. १०)।

वातस्कंध—पुराणों में निर्दिष्ट एक देवतासमूह, जिस में सात मरुत् गणों के देवता समविष्ट हैं (ब्रह्मांड. २.५. ७८-८०, मरुत् देखिये)।

२. इन्द्रसभा का एक महर्षि (म. स. ७.१२)।

वातापि—एक असुर, जो ह्राद नामक असुर का पुत्र, एवं इल्वल नामक असुर का छोटा भाई था। अगस्त्य ऋषि के द्वारा, इसका एवं इल्वल का गर्वहरण होने की कथा महाभारत में प्राप्त है (म. व. १७.४९३*)। पुराणों में इसे विप्रचित्ति राक्षस का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. ६.२६; विष्णु. १.२१.११)।

ब्रह्मांड में इसे तेरह वैहिकेय असुरों में से एक कहा गया है, एवं परशुराम के द्वारा इसका वध होने की कथा वहीं प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.६.१८-२२)।

२. एक राक्षस, जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका के पुत्रों में से एक था। परशुराम ने इसका वध किया (ब्रह्मांड. ३. ६.१८-२२)।

३. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

वातायन—उल नामक वैदिक सुक्तद्रष्टा का पैतृक नाम।

वातावत—वृषशधमन् नामक आचार्य का पैतृक नाम।

वात्सतरायण—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वात्सप्र—एक व्याकरणकार, जिसके 'य' कार एवं 'व' कार के सूक्ष्म उच्चारण के संबंधित मतों का निर्देश 'तैत्तिरीय-प्रातिशाख्य' में प्राप्त है (तै. प्रा. १०.२३)।

वातिक—एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध के काल में वृत्तनिवेदन एवं वृत्तप्रसारण का काम करता था।

दुर्योधन एवं युधिष्ठिर ने क्रमशः 'वैष्णवयज्ञ' एवं राजसूय यज्ञ किये। इन दोनों यज्ञसमारोह में वातिक लोग उपस्थित थे, जिन्होंने सारे कुबराज्य में वृत्त फैलाया कि, युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के हिसाब में दुर्योधन का वैष्णव यज्ञ बिलकुल फीका, अतएव अथशस्वी था (म. व. २४३.३-४)।

भारतीय युद्ध के निम्नलिखित महत्वपूर्ण प्रसंगों में भी वातिकों के उपस्थित होने का निर्देश प्राप्त है—१. जयद्रथ-वध के समय हुआ संकुलयुद्ध (म. द्रो. १२०.७२); २. अश्वत्थामा-दुपदयुद्ध (म. द्रो. १३५. ३९); ३.

दुर्योधन-भीम द्रुपद्युद्ध (म. श. ५४); ४. दुर्योधन की मृत्यु (म. श. ५७. ५९)।

आगे चल कर वातिकों के द्वारा ही, दुर्योधनवध की वार्ता अश्वत्थामन, कृप एवं कृतवर्मन को प्राप्त हुई (म. श. ६४.१)। संभव है, संजय भी वातिकों में से एक था।

२. स्वंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६२)।

वात्सि—सर्पि नामक आचार्य का पैतृक नाम। कस का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा (ऐ. ब्रा. ६.२४.१६)।

वात्सीपुत्र—एक आचार्य, जो पाराशरीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.५.२ काण्व.)। अन्यत्र इसे भारद्वाजीपुत्र का शिष्य कहा गया है (बृ. उ. ६.४. ३१ माध्य.)। इसके शिष्य का नाम पाराशरीपुत्र ही था। कस के किसी स्त्री वंशज का पुत्र होने के कारण, इसे 'वात्सीपुत्र' नाम प्राप्त हुआ होगा।

वात्सीमांडवीपुत्र—एक आचार्य, जो पाराशरी-पुत्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम भारद्वाजीपुत्र था (बृ. उ. ६.४.३० माध्य.)।

वात्स्य—एक आचार्य (सां. आ. ८.३; भाव्य देखिये)। ऐतरेय आरण्यक में इसे भाध्व कहा गया है।

२. एक आचार्य, जो कुश्रि नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम शांडिल्य था (बृ. उ. ६.५. ४ काण्व.)।

३. एक आचार्य, जो शांडिल्य नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम गौतम था (बृ. उ. २. ६.३, ४.६ काण्व.)। शतपथब्राह्मण में भी इसका निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. १.५.१.६२; १०.६.५.९)।

४. एक ऋषि, जो वत्स्य नामक ऋषि का शिष्य था। यह जनमेजयसर्पसत्र के समय उपस्थित था (म. आ. ४८.९)। शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से भी यह मिलने आया था। इसके नाम पर कई ज्योतिषशास्त्रविषयक ग्रंथ उपलब्ध हैं (C.C.)।

५. एक आचार्य, जो वासु के अनुसार व्यास की यज्ञ-शिष्यपरंपरा में से याज्ञकृत्य का वाजसनेय शिष्य था।

६. एक आचार्य, जो मागवत के अनुसार व्यास की ऋकृशिष्यपरंपरा में शाकल्य नामक आचार्य का शिष्य था (व्यास देखिये)।

७. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद—'वत्स'।

वात्स्यायन—एक आचार्य, जो 'वात्स्यायन कामयंत्र' नामक सुविख्यात कामशास्त्रविषयक ग्रंथ का रचयिता था।

विष्णुशर्मनकृत पंचतंत्र में वात्स्यायन एवं अश्वशास्त्रकार शालिहोत्र को वैद्यकशास्त्रज्ञ कहा गया है। मधुसूदन सरस्वतीकृत 'प्रस्थानभट्ट' में भी वात्स्यायनप्रणीत कामसूत्र को आयुर्वेदशास्त्रान्तर्गत ग्रंथ कहा गया है।

व्यक्तिपरिचय—वात्स्यायन यह इसका व्यक्तिनाम न हो कर गोत्रनाम था। सुवंधु के अनुसार, इसका सही नाम मल्लनाम था। यशोधर के द्वारा लिखित 'कामसूत्र' के टीका में भी इसे आचार्य मल्लनाम कहा गया है। वात्स्यायन स्वयं ब्रह्मचारी एवं योगी था, ऐसा कामसूत्र के अंतिम श्लोक से प्रतीत होता है। कामसूत्र में अवंति, माल्य, अपरान्त, सौराष्ट्र, महाराष्ट्र एवं आंध्र आदि देशों के आचारविचारों के काफी निर्देश प्राप्त हैं, जिनसे प्रतीत होता है कि, यह पश्चिम या दक्षिण भारत में रहनेवाला था।

कामसूत्र के 'नागरकवृत्त' नामक अध्याय में नागर नामक एक नगर का निर्देश प्राप्त है। यशोधर के अनुसार, कामसूत्र में निर्दिष्ट 'नागर' पाटलिपुत्र है। अन्य कई भव्यासक उसे जयपुर संस्थान में स्थित नागर ग्राम मानते हैं।

कालनिर्णय—वात्स्यायन का काल ३०० ई. स. माना जाता है। वेबर के अनुसार, इसका 'वात्स्यायन' नाम लक्ष्यायन, बौधायन जैसे सूत्रकालीन आचार्यों से मिलता जुझता प्रतीत होता है (वेबर पृ. १६४)। कौटिल्य अर्थशास्त्र एवं कामसूत्र की निवेदनप्रवृत्ति में काफी साम्य है। कामसूत्र में प्राप्त 'ईश्वरकामितम्' (राजाओं की भोगनृणा) नामक अध्याय में प्रायः आंध्र राजाओं का ही वर्णन किया गया है। आयुर्वेदीय 'वाग्भट' ग्रंथ में कामसूत्र के 'वार्जाकरण' संबंधी उपचार उद्धृत किये गये हैं। इन सारे निर्देशों से कामसूत्र का रचनाकाल ई. स. ३री शताब्दी निश्चित होता है।

पूर्वाचार्य—कामसूत्र में प्राप्त निर्देश के अनुसार, इस शास्त्र का निर्मिति शिवातुचर नदी के द्वारा हुई, जिसने सहस्र अध्यायों के 'कामशास्त्र' की रचना की। नदी के इस विस्तृत ग्रंथ का संक्षेप औद्दालिक श्वेतकेतु नामक आचार्य ने किया, जिसका पुनःसंक्षेप आंगे चल कर वाग्भय पांचाल ने किया। वाग्भय का कामशास्त्र-त्रिपयक ग्रंथ सात 'अधिकरणों' में विभाजित था। वाग्भय के इसी ग्रंथ का संक्षेप कर वात्स्यायन ने अपने कामसूत्र की रचना की।

उपर्युक्त ग्रंथकारों के अतिरिक्त, वात्स्यायन के कामसूत्र में निम्नलिखित पूर्वाचार्यों का, एवं उनके विभिन्न ग्रंथों का निर्देश प्राप्त है:—इत्काचाय—वैशिक; चारायणाचार्य—साधारण अधिकरण; सुवर्णनाभ—सांप्रयोगिक; बोटकमुल—कन्यासंप्रयुक्त; गोनदीय—भार्याधिकारिक; गोलिकापुत्र—पारदारिक; कुचुमार—औग्निपदिक।

इस ग्रंथ की निम्नलिखित टीकाएँ विशेष सुविख्यात हैं:—१. वीरभद्रकृत 'कंदर्पचूडामणि', २. भास्कर मुक्तिहृत्कृत 'कामसूत्रटीका', ३. यशोधरकृत 'कंदर्पचूडामणि'। वेबर के अनुसार, सुवंधु एवं शंकराचार्य के द्वारा भी 'कामसूत्र' पर भाष्य लिखे गये थे।

कामसूत्र—वात्स्यायन का 'कामसूत्र' सात 'अधिकरणों' (विभागों) में विभाजित है, एवं उसमें कामशास्त्र से संबंधित तीन मुख्य उपागों का विचार किया गया है:—१. कामपुरुषार्थ का आचारशास्त्र, जिसमें धर्म, अर्थ एवं मोक्ष इन तीन पुरुषार्थों से अविरोध करते हुए भी कामपुरुषार्थ का आचार एवं उपभोग किस प्रकार किया जा सकता है, इसका दिग्दर्शन किया गया है; २. शृंगाररसशास्त्र, जिसमें स्त्रीपुरुषों को उत्तम रतिसुख किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है इसका वर्णन प्राप्त है; ३. तत्कालीन भारत में प्राप्त कामशास्त्रविषयक आचारविचारों का वर्णन, जिसमें विभिन्न देशाचार, 'वैशिक' (वेद्याव्यवसाय) एवं 'पारदारिक' (स्त्रीपुरुषों के विवाहवाह्यसंबंध) आदि विषयों की चर्चा की गयी है।

कामसूत्र का तत्त्वज्ञान—प्राचीन भारतीय तत्त्वज्ञान के अनुसार, धर्म एवं अर्थ के समान 'काम' भी एक पुरुषार्थ माना गया है, जिसकी परिणति वैवाहिक सुखप्राप्ति में होती है। काम मनुष्य की सहजप्रवृत्ति है, जो मानवी शरीर की स्थिति एवं धारणा के लिए अत्यंत आवश्यक है। इसी कारण धर्म, अर्थ एवं काम पुरुषार्थों का रक्षण कर मनुष्य को जितेंद्रिय बनाना; यह वात्स्यायन कामसूत्र का प्रमुख उद्देश्य है—

रक्षन् धर्मार्थकामानां स्थितिं स्वां लोकवर्तिनीम्।

अरय शास्त्रय तत्त्वज्ञः भवत्येव जितेंद्रियः॥

(का. सु. ७.२.१६)।

वात्स्यायन कामसूत्र में कामतेवन की तुलना मानवी आहार से की गयी है। उस ग्रंथ में कहा गया है कि, आहार एवं काम का योग्य सेवन करने से मनुष्य को आरोग्यप्राप्ति होती है। किन्तु उसीका ही आधिक्य होने

से हानी पहुँचती है। इसी कारण, मनुष्यजाति को काम का सुयोग्य एवं प्रमाणित सेवन करने को सिखाना, यह कामशास्त्र का प्रधान हेतु है। जनावरों के भय से कोई खेती करना नहीं छोड़ते हैं, उसी प्रकार कामविकार के डर से कामसेवन का त्याग करना उचित नहीं है (का. स. १.२.३८)।

श्रेष्ठत्व—स्त्री-पुरुषों का रतिसुख मानवी-जीवन का साथ्य नहीं, बल्कि यशस्वी विवाह का केवल साधनमात्र ही है, यह तत्त्वज्ञान आचार्य वात्स्यायन ने सर्वप्रथम प्रस्थापित किया। स्त्री-पुरुषों के रतिसुख पर ही केवल जोर देनेवाले पाश्चात्य कामशास्त्रज्ञों की तुलना में, वात्स्यायन का यह तत्त्वज्ञान कतिपय श्रेष्ठ प्रतीत होता है।

किन्तु अपना यह तत्त्वज्ञान प्रमृत करते समय, विवाह के यशस्वितता के लिए, स्त्री-पुरुषों का रतिसुख अत्यधिक आवश्यक है, यह तत्त्व वात्स्यायन के द्वारा दोहराया गया है, जो आधुनिक शारीरशास्त्र की दृष्टि से सुयोग्य प्रतीत होता है। इसी कारण, वात्स्यायन कामसूत्र के अंतर्गत रतिशास्त्रविषयक चर्चा भी क्रांतिदर्शी मानी जाती है।

२. एक न्यायदर्शनकार, जो अक्षपाद गौतम नामक आचार्य के द्वारा लिखित 'न्यायसूत्र' का प्राचीनतम भाष्यकार माना जाता है। इसके ग्रंथ पर उद्योतकर ने 'न्यायवार्तिक' नामक सुविख्यात भाष्यग्रंथ की रचना की है।

दक्षिण भारत के सुविख्यात विद्याकेंद्र कांची में यह निवास करता था। इसका काल ई. स. ४७० लगभग माना जाता है।

३. पंचवर्ण नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. आ. १.७.२)। 'वात्स्य' का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

४. एक ज्योतिषशास्त्रज्ञ (C. C.)।

वात्स्यायनि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाद—अमिताभदेवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६. ५४)।

वाडुलि—विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक।

वाधूल—एक कृष्णयजुर्वेदी आचार्य, जो श्रौतसूत्र आदि अनेकानेक ग्रंथों का रचयिता था। कल्पसूत्रों के सुविख्यात भाष्यकार महादेव ने यजुर्वेदीय कल्पसूत्रों के आचार्यों में, इसका निर्देश वौधाथन, हिरण्यकेशी, वैलानस आदि ग्रन्थकारों के साथ किया है। इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रन्थ प्राप्त हैं :—१. वाधूलश्रौतसूत्र;

२. वाधूलवृत्तिरहस्य; ३. वाधूलगङ्गागमवृत्तिरहस्य; ४. वाधूलस्मृति।

वाध्व्यश्व—मुमित्र नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का नामान्तर (ऋ. १०.६९.१)। वध्व्यश्व का पुत्र होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. अग्नि की एक उपाधि (ऋ. १०. ६९.५)।

३. यमसभा का एक राजा (म. स. ८.१२)।

वानर—दक्षिण भारत में निवास करनेवाला एक प्राचीन मानवजातिसमूह, जिसका अत्यंत गौरवपूर्ण उल्लेख वात्समीकि-रामायण में प्राप्त है।

इन लोगों का राज्य किंकिधा में था एवं वालिन, सुग्रीव एवं अंगद उनके राजा थे। वानरराज सुग्रीव का प्रमुख अमात्य हनुमत् था, जो आगे चलकर भारतीयों की प्रमुख देवता बन गया। सुग्रीव, हनुमत् आदि वानरों की सहाय्यता से ही राम दशरथि ने लंका के बलाढ्य राक्षस राजा रावण को परास्त किया (राम दशरथि देखिये)।

राज्य एवं समाजव्यवस्था—रामायण में निर्दिष्ट वानर, मनुष्यों की तरह बुद्धिसंपन्न हैं, मानवभाषा बोलते हैं, कपड़े पहनते हैं, घरों में निवास करते हैं, विवाह संस्कार को मान्यता देते हैं, एवं राजा के शासन के अधीन रहते हैं। इससे स्पष्ट है कि, रामायणकाल में ये लोग आज की तरह गिरे हुए जानवर नहीं, बल्कि वास्तव में एक मानवजाति के लोग थे।

पुराणों में—इन ग्रंथों में वानरों को हरि नामांतर दिया गया है, एवं उन्हें पुलह एवं हरिमित्रा को संतान बताया गया है।

ब्रह्मांड के अनुसार, पुलह ऋषि की कुल वारह पत्नियों थी, जो क्रोधा की कन्याएँ थीं। उनके नाम निम्न थे :— १. हरिमित्रा; २. मृगी; ३. मृगमदा; ४. इरावती; ५. भृता; ६. कपिश्या; ७. दंष्ट्रा; ८. ऋषा, ९. तिया; १०. श्वेता; ११. सरमा; १२. सुरसा (ब्रह्मांड. ३.७. १७१-१७३)।

अपनी उपर्युक्त पत्नियों से पुलह को अनेकानेक प्राणि पुत्र के रूप में प्राप्त हुए, जिनमें से हरिमित्रा की संतति निम्नप्रकार थी :—वानर, गोलंगुल, नील, द्वीपिन, नील, माज्जर, तरशु, किन्नर। हरिमित्रा नामक माता से उत्पन्न होने के कारण, वानरों को 'हरि' नामांतर प्राप्त हुआ।

वानरसमूह—ब्रह्मांड में वानरों के ग्यारह प्रमुख कुल दिये हैं, जिनके नाम निम्नप्रकार हैं:—द्वीपिन्, शरभ, सिंह, व्याघ्र, नील, शल्यक, ऋक्ष, माज्जर, लोहास, वानर, मायाव। ये सारे वानर किष्किंधा में रहते थे, एवं उनका राजा वालिन् था (ब्रह्मांड. ३.७.१७६; ३२०)।

वानरवंश—ब्रह्मांड में ऋक्ष, सुग्रीव, केसरी एवं अग्नि इन चार प्रमुख वानरों के वंश निम्नप्रकार दिये गये हैं:—

(१) ऋक्षशाखा:—ऋक्ष (पत्नी विरजाकन्या चारु-हासिनी)—महेंद्र-सुग्रीव एवं वालिन् (पत्नी सुपेणकन्या तारा)—अंगद (मैदकन्या)—ध्रुव (ब्रह्मांड. ३.७.२४६-२७५)।

(२) सुग्रीवशाखा:—ऋक्ष-सुग्रीव (पत्नी पनसकन्या रमा)—तीन पुत्र।

(३) केसरीशाखा:—केसरिन् (पत्नी कुजरकन्या अंजना)—हनुमत्, श्रुतिमत्, केतुमत्, मतिमत्, श्रुति-मत्।

(४) अग्निशाखा:—अग्नि-नल-तार, कुसुम, पनस, गंधमादन, स्पश्री, विभव, गवयु, विकट, सर, सुपेण, सधनु, सुबंधु, शतदुंदुभि आदि (ब्रह्मांड. ३.७.२४५)।

जैन ग्रंथों में—इन ग्रंथों में राक्षस एवं वानर इन दोनों को एक ही विद्याधरवंश की विभिन्न शाखाएँ मानी गयीं हैं। ये दोनों जातियाँ मानववंशीय ही थीं, किंतु उन्हें आकाशगमित्व, कामरूपित्व आदि ऐंद्रजालिक विद्याएँ अवगत थीं। वानरवंशीय विद्याधरों की ध्वजाओं तथा महलों तथा के शिखरों पर वानर की प्रतिमा रहती थी।

वानर कौन थे—चि. वि. वैद्य के अनुसार, ये सच-सच ही वानर के समान दिखते थे, अतः इन्हें वानर नाम प्राप्त हुआ था। कई अन्य अभ्यासकों के अनुसार, आजकल के आदिवासियों के समान ये लोग वानर, ऋक्ष, गीध आदि की पूजा करते थे। इसी कारण इन विभिन्न प्रणियों की पूजा करनेवाले आदिवाजियों को क्रमशः वानर, ऋक्ष (जांबवन्), एवं गीध (जटायु, संपाति) नाम प्राप्त हुए।

रे. बुल्के के अनुसार, रामकथा में निर्दिष्ट वानर विन्ध्यप्रदेश एवं मध्यभारत में रहनेवाली अनार्य जातियाँ थीं। छोटा नागपूर में रहनेवाली उराओं तथा सुण्डा जातियों में, आज भी तिग्गा, हल्यमान, चकरंग, गड़ी नामक गोत्र प्राप्त हैं, जिन सब का अर्थ 'वंश' ही है।

विधभूम की भुईयाँ जाति के लोक अपना वंश 'पवन' अथवा 'हनुमत्' बताते हैं (बुल्के, रामकथा पृ. १२१-१२२)।

वानरहृष्ट—पृथुक देवों में से एक।

वान्धव दुवस्यु—एक वैदिक सक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १००)।

वाम—श्रीकृष्ण एवं भद्रा के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.१७)।

२. एकादश रुद्रों में से एक, जो भूत एवं सरुषा का पुत्र था (भा. ६.६.१७)।

वामऋक्षायण—एक आचार्य, जो वात्स्य एवं शांडिल्य का शिष्य था (श. ब्रा. १०.५.६.९; वृ. उ. ६.५.४. काण्व.)।

वामदेव—एक सुविख्यात वैदिक सक्तद्रष्टा (वामदेव गोतम देखिये)।

२. एक ऋषि, जो अंगिरस् एवं सुरुरा के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.१)। मत्स्य में इसकी माता का नाम स्वराज दिया गया है।

यह अंगिराकुल का गोत्रकार, मंत्रकार एवं ऋषि था। युधिष्ठिर के राज्यस्य यज्ञ में यह उपस्थित था। स्यमंतपंचक क्षेत्र में यह श्रीकृष्ण से मिलने आया था (भा. १०.८४. ५)। इसके द्वारा दिये गये भस्म से एक द्रव्यराक्षस का उद्धार हुआ था (स्कंद. ३.३.१५-१६)। रथन्तरकल्प में, मेरु पर्वत के कुमारशिखर पर इयत्ता स्कंद से संवाद हुआ था (शिव. कै. २२)।

इसने ब्रह्मकुलसंगमतीर्थ पर तपस्या की थी (पद्म. उ. १३८)। मनुस्मृति में इसकी एक कथा प्राप्त है, जिसके अनुसार एक बार इसने श्रुधार्ता होने के कारण, कुत्ते का माँस खाने की इच्छा प्रकट की थी। किन्तु यह पापकर्म आपद्धर्म में किये जाने के कारण, इसे कुछ दोष न लया (मनु. १०.१०६)।

३. एक ऋषि, जो अथर्वन् अंगिरस् का पुत्र था। इसके पुत्रों के नाम असिज एवं बृहदुक्थ थे (वायु. ६५. १००)। यह तपस्यामय परशुराम से मिलने गया था (ब्रह्मांड. ३.१.१०५)।

४. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो कुशद्वीप के हिरण्यरेतस् राजा का पुत्र था (भा. ५.२०.१४)।

५. मोदापूर देश का एक राजा, जिसे अर्जुन ने अपने उत्तरदिग्विजय के समय जीता था (म. स. २४.

१०)। इसका शल राजा से झगड़ा हुआ था (शल. ३. देखिये)।

६. एकादश रुद्रों में से एक।

७. गुवाहासिन् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

८. एक विश्रूलधारी शिवावतार, जो मनु एवं शतरूपा के सात पुत्रों में से एक था। इसके मुख, हाथ, जंघा एवं पावों से क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्रों की उत्पत्ति हुई (मत्स्य. ४.२७.३०)। आगे चल कर इसका सृष्टि के उत्पत्ति का कार्य ब्रह्मा के द्वारा स्थगित किया गया, जिस कारण इसे 'स्थानु' नाम प्राप्त हुआ (मत्स्य. ४.३१)।

शिव के इस अवतार को पाँच मुख थे। बृहस्पति-पत्नी तारा का हरण सोम के द्वारा किये जाने पर, इसने सोम से युद्ध किया था (मत्स्य २३.३६)। इसने पार्वती को 'शिवसहस्र' नाम का पाठ सिखाया था (पद्म. भू. २५४)।

९. राम दाशरथि के सभा का एक ऋषि।

वामदेव गोतम—एक आचार्य एवं वैदिक सूक्तद्रष्टा, जिसे अपनी माता के गर्भ में ही आत्मानुभूति प्राप्त हुई थी। ऋग्वेद के प्रायः समय चौथे मंडल का यह प्रणयिता कहा जाता है। इस मंडल के केवल ४२-४४ सूक्तों का प्रणयन त्रसदस्यु, पुरुमीहळ एवं अजमीहळ के द्वारा किया गया है; बाकी सारे सूक्त वामदेव के द्वारा प्रणीत ही हैं। किन्तु इस मण्डल में केवल एक ही स्थान पर इसका प्रत्यक्ष निर्देश प्राप्त है (ऋ. ४.१६.१८)। अन्य वैदिक ग्रंथों में भी इसे ऋग्वेद के चतुर्थ मंडल का प्रणयिता कहा गया है (का. सं. १०.५; मै सं. २.१.१३; ऐ. आ. २.२.१)।

जन्म—वैदिक ग्रंथ में इसे सर्वत्र गोतम ऋषि का पुत्र कहा गया है (ऋ. ४.४.११)। इसी कारण यह स्वयं को 'गोतम' कहलाता था।

इसके जन्म के संबंधी अस्पष्ट विवरण वैदिक साहित्य में प्राप्त है (ऋ. ४.१८; २६.१; ऐ. आ. २.५)। अपने जन्म के संबंधी ज्ञान इसे माता के गर्भ में ही प्राप्त हुआ था। तत्र इसने सोचा कि, अन्य लोगों के समान मेरा जन्म न हो। इसी कारण इसने अपनी माता का उदर विदारण कर बाहर आने का निश्चय किया। इसकी माता को यह बात ज्ञात होते ही, उसने अदिति का ध्यान किया। उस समय इंद्र के साथ अदिति वहाँ उपस्थित हुई, जहाँ गर्भ

से ही इसने इंद्र के साथ तत्त्वज्ञान के संबंधी चर्चा की (ऋ. ४.१८; वेदार्थदीपिका)।

ऋग्वेद में अन्यत्र वर्णन है कि, योगसामर्थ्य से श्येन पक्षी का रूप धारण कर, यह अपनी माता के उदर से बाहर आया (ऋ. ४.२७.१)। ऐतरेय उपनिषद् के अनुसार, इसके जन्म के पूर्व इसे अनेकानेक लोह के कारागार में बंद करने का प्रयत्न किया गया, जिन्हें तोड़ कर यह श्येन पक्षी की भाँति पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ (ऐ. उ. ४.५)। वामदेव के जन्म के संबंधी सारी कथाएँ स्वकात्मक प्रतीत होती हैं, जहाँ गर्भवास को कारागृह कहा गया है।

संबंधित व्यक्ति—ऋग्वेद के चतुर्थ मंडल के अधिकांश सूक्तों में सुगस, दिवोदास, सृञ्जय, अतिथिश्च, कुत्स आदि राजाओं का निर्देश प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, इसका इन राजाओं से घनिष्ठ संबंध था।

बृहदेवता में इंद्र एवं वामदेव के संबंध में कई असंगत कथाओं का निर्देश प्राप्त है, जिनका सही अर्थ समझ में नहीं आता है। एक बार जब यह कुत्ते की अंतर्द्वियाँ पका रहा था, तो इंद्र एक श्येनपक्षी के रूप में इसके सम्मुख प्रकट हुआ था (बृहदे. ८.१.२६)। इसी ग्रंथ में प्राप्त अन्य कथा के अनुसार, इसने इंद्र को परास्त कर अन्य ऋषियों को उसका विक्रय किया था (बृहदे. ४.१३१)। सीग ने बृहदेवता में प्राप्त इन कथाओं को ऋग्वेद में प्राप्त इसकी जन्मकथाओं से मिलाने का प्रयत्न किया है (सीग, सा. ऋ. ७६)।

तत्त्वज्ञान—पुनर्जन्म के संबंध में विचार करनेवाले तत्त्वज्ञों में वामदेव सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। मनु एवं सूर्य नामक अपने दो पूर्वजन्म इसे ज्ञात हुए थे, एवं माता के गर्भ में स्थित अवस्था में ही इसे सारे देवों के भी पूर्वजन्म ज्ञात हुए थे।

पुनर्जन्म के संबंधी वामदेव का तत्त्वज्ञान 'जन्मत्रयी' नाम से सुविख्यात है, जिसके अनुसार हर एक मनुष्य के तीन जन्म होते हैं—पहला जन्म, जब पिता के शुक्र-जंतु का माता के शोणित द्रव्य से संगम होता है; दूसरा जन्म, जब माता की योनि से बालक का जन्म होता है; तीसरा जन्म जब मृत्यु के बाद मनुष्य को नया जन्म प्राप्त होता है। अमरत्व प्राप्त करने की इच्छा करनेवाले साधकों के लिए, वामदेव का यह तत्त्वज्ञान प्रमाणभूत माना जाता है।

आत्मानुभूति—आत्मानुभूति प्राप्त होने पर इसने कहा था, 'मैंने ही सूर्य को प्रकाश प्रदान किया था, मनु मेरा ही रूप था' (अहं मनुरभव सूर्यश्चाहम) (ऋ. ४. २६.१; बृ. उ. १.४.१०)। वामदेव का यह आत्मकथन मराठी संत तुकाराम के आत्मकथन से मिलता-जुलता प्रतीत होता है, जहाँ उन्होंने अपना पूर्वजन्म युक्रमुनि के रूप में बताया था (डॉ. रानडे, उपनिषद्ग्रहस्य पृ. ११२)।

वामदेवी—ऋत्वि ऋषि की पत्नी (म. धा. १०. १३)। पाठभेद—'सुदेवी'।

वामदेव्य—ऋग्वेद में प्राप्त एक पौत्रक नाम, जो निम्न-लिखित वैदिक सूक्तद्रष्टाओं के लिए प्रयुक्त किया गया है—अहोमन्त्र (ऋ. १०.१२७); बृहदुक्थ (ऋ. सर्वानु-क्रमणी: श. ब्रा. ८.२.२.१४); मूर्धन्वत् (ऋ. १०. ८८)।

वामन—श्री विष्णु का पाँचवाँ अवतार, जो इंद्र के सरक्षण के लिए, एवं बलि वैरोचन नामक दैत्य के 'बंधन' के लिए अवतीर्ण हुआ था। भागवत में इसे विष्णु का पंद्रहवाँ अवतार कहा गया है (भा. १.२.१९)।

वैदिक साहित्य में—वामन अवतार के कथन का अष्ट उद्गम ऋग्वेद में पाया जाता है, जहाँ श्रीविष्णु के द्वारा तीन पगों में समस्त पृथ्वी, सुलोक एवं अंतरिक्ष का व्याप्त होने का निर्देश प्राप्त है—

इदं विष्णुर्विचक्रमे श्रेया निदधे पदम्।

समळहमस्य पांसुरे ॥ (ऋ. १.२२.१७-१८)।

(श्रीविष्णु ने तीन पगों में समस्त सृष्टि का व्यापन किया)।

ऋग्वेद में श्रीविष्णु का स्वतंत्रदेवता के रूप में निर्देश नहीं है, बल्कि उसे सूर्यदेवता का ही एक रूप माना गया है। इसी विष्णुरूपी सूर्यदेवता का वर्णन करते समय, उसके द्वारा तीन पगों में पृथ्वी का व्यापन करने का निर्देश ऋग्वेद में किया गया है।

निष्कत में विष्णु के तीन पगों की निरुक्ति प्राप्त है, जहाँ शाकपृष्णि एवं औष्णिवाम नामक दो आचार्यों के अभिमत उद्धृत किये गये हैं (नि. १२.१९)। शाक-पृष्णि के अनुसार, पृथ्वी, अंतरिक्ष एवं आकाश क्रो; तथा औष्णिवाम के अनुसार, समारोहण (उदयगिरि), विष्णु-पद (खखस्तिक) एवं गयाशिरस् (अस्तगिरि) को श्रीविष्णु ने अपने पगों के द्वारा व्याप लिया।

तैत्तिरीय संहिता में विष्णु एवं सूर्य की एकात्मता स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट है, एवं अपने मित्र इंद्र का विगत राज्य उसे पुनः प्राप्त कराने के लिए श्रीविष्णु ने पृथ्वी पर अवतार लेने की कथा वहाँ प्राप्त है (तै. सं. २.४. १२.२)।

वामन-अवतार की उल्कान्ति—वैदिक साहित्य में प्राप्त इन निर्देशों से प्रतीत होता है कि, वामन अवतार की कल्पना का उद्गम प्रथम सूर्यदेवता के आकाश संचरण के रूप में हुआ, एवं श्रीविष्णु सूर्य का ही एक प्रतिरूप होने के कारण, आकाश संचरण का यह पराक्रम श्रीविष्णु का ही मानने जाने लगा। आगे चल कर, श्रीविष्णु के दशावतार की कल्पना जब प्रसृत हुई, तब तीन पगों में समस्त पृथ्वी का व्यापन करनेवाले श्रीविष्णु का वैदिक रूप, उत्तरकालीन वैदिक ग्रन्थों में एवं पुराणों में वामनावतार के रूप में निर्धारित हुआ।

वामन-अवतार का सर्वप्रथम निर्देश तैत्तिरीय संहिता में अस्पष्ट रूप में प्राप्त है। एक बार तीनों लोगों के स्वामित्व के लिए देव एवं असुरों में संग्राम हुआ। उस समय श्रीविष्णु ने अपने 'वामन-स्वरूप' की आहुति दे कर तीनों लोगों को जीत लिया (तै. सं. २.१.२)।

शतपथ ब्रह्मण में—इस ग्रंथ में श्रीविष्णु के वामन अवतार की कथा प्राप्त है, जो पुराणों में निर्दिष्ट कथा से सर्वथैव विभिन्न है। एक बार देवासुरों के संग्राम में, देवों का पराजय हो कर वे भाग गये। तदुपरान्त असुर समस्त पृथ्वी का बटवारा करने के लिए बैठे। उस समय विष्णु के नेतृत्व में देवभण असुरों के पास गये, एवं पृथ्वी का कुछ हिस्सा प्राप्त होने के लिए असुरों की प्रार्थना करने लगे। उस समय असुर विष्णु के तीन पगों इतनी ही छोटी भूमि देवों को देने के लिए तैयार हुए। फिर वामनरूपधारी विष्णु ने विरट रूप धारण कर समस्त तीनों लोगों का व्यापन किया, एवं इस तरह देवताओं को त्रैलोक्य का राज्य प्राप्त हुआ (श. ब्रा. १. २.२.१-५)।

पुराणों में—इन ग्रंथों में इसे कश्यप एवं अदिति का पुत्र कहा गया है। इसकी पत्नी का नाम कीर्ति एवं पुत्र का नाम बृहत्श्लोक था।

इसका जन्म भाद्रपद शुक्ल द्वादशी के दिन श्रवण नक्षत्र में एवं अभिजित् मूहूर्त में हुआ था (भा. ८.१८. ५-६)। अपना विष्णुरूपी वास्तवदर्शन ब्रह्मा एवं अदिति को प्रकट करने के बाद, इसने ब्राह्मण ब्रह्मचारिन्

का रूप धारण किया। महाभारत में इसका विस्तृत स्वरूप-वर्णन प्राप्त है, जहाँ इसे मुण्डी, यज्ञोपवीती, कृष्णजिन-धारी, शिखी, पलाशदण्डधारी कहा गया है। इसी ब्राह्मण बटु के रूप में यह बलि वैरोचन के यज्ञमण्डप में प्रविष्ट हुआ।

वामन ने बलि वैरोचन से त्रिपाद भूमि की याचना की, जिसे बलि ने 'तथास्तु' कहा। तत्पश्चात् वामन ने विराट रूप धारण कर पहले दो पगों में पृथ्वी एवं स्वर्ग का व्यापन किया, एवं तीसरा पग बलि के मस्तक पर रखने के लिए उद्यत हुआ (भा. ८.१८.२१)। उस समय वीरभद्रादि असुर युद्ध करने के लिए उद्यत हुए, जिन्हें वामन ने परास्त किया। उस समय बलि, प्रह्लाद एवं बलिपत्नी विंध्यावालि ने वामन की स्तुति की। फिर वामन ने प्रसन्न हो कर बलि को नमुचि, शंवर, प्रह्लाद आदि असुरों के साथ 'सुतल' नामक पाताल लोक में स्थापित किया, एवं इंद्र को त्रिभुवन का राज्य समर्पित किया (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति ३११-३७४; वामन. ३१; स्कंद. १.१.१८-१९; मत्स्य. २४४-२४६)।

वामन-अवतार का अन्वयार्थ—प्राचीन भारत के बिहार प्रदेश में वामन का अवतार हुआ, ऐसा माना जाता है। बलि वैरोचन का बंधन कर वामन ने उसे उसके परिवार के साथ समुद्र में टकेल दिया। बंगाल की खाड़ी में 'बलिद्वीप' नामक प्रदेश आज भी दिखाई देता है, जो आधुनिक काल में आग्नेय एशिया में स्थित 'बाली' देश नाम से प्रसिद्ध है। इन सारे निर्देशों से प्रतीत होता है कि, प्रागैतिहासिक काल में पूर्व-भारत में लंबे कद एवं मोटे शरीर के कई लोग रहते थे, जिन्हें उत्तरीपूर्वदिशा से भारत में प्रवेश करनेवाले छोटे कद के कई वृक्ष लोगों ने परास्त किया। यही कारण है कि, पूर्व भारत में आज भी मंगोलवंशीय लोग अधिक रूप में पाये जाते हैं।

उवासना—कुश्क्षेत्र में वामन का एक मंदिर बनवाया गया था, जो आज भी विद्यमान है (मत्स्य. २४८. २-३)। भाद्रपद शुक्ल द्वादशी के जिस दिन वामन अवतीर्ण हुआ, वह दिन आज भी 'वामन द्वादशी' नाम से सुविख्यात है।

बिहार प्रदेश में सहायना जिले में बक्सर ग्राम में वामन का आश्रम दिखाया जाता है, जो सिद्धाश्रम नाम से प्रसिद्ध है। इस स्थान पर सर्वप्रथम वामन का आश्रम

था, जहाँ आगे चल कर विश्वामित्र ने अपना आश्रम प्रस्थापित किया।

वामन पुराण में वामन के एक सौ इकतीस वामनस्थानों का निदेश प्राप्त है, जहाँ विभिन्न नामों से वामन की पूजा की जाती थी (वामन. ९०)। इससे प्रतीत होता है कि, एक समय भारत के सारे प्रदेशों में वामन को देवता मान कर उसकी पूजा की जाती थी।

१. एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

२. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

४. एक पक्षिराज, जो गरुड के पुत्रों में से एक था।

५. एक दिग्गज, जो इरावती के चार पुत्रों में से एक था। इसके अन्य तीन भाईयों के नाम ऐरावत, सुप्रतीक एवं अंजन थे (ब्रह्मांड. ३.७.२९२)। घटोत्कच के सैन्य में से एक राक्षस का यह वाहन था (म. भी. ६०.५१)।

वामनिका—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२३)।

वामरथ्य—अत्रिवंश का एक गोत्रकार एवं प्रवर।

वामा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५. १२)। पाठभेद—'भ्रमा'।

वायत—वाशुयुज नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ. २. ३३. २)। वायत का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वाग्नेय—बृहदुक्त्य वामदेव नामक आचार्य का नामान्तर (बृहदुक्त्य वामदेव देखिये)।

वायु—एक वैदिक अंतरिक्षदेवता, जिसका एक संपूर्ण सूक्त ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. ४.४६)। एक देवता के रूप में इसका निर्देश प्रायः सर्वत्र इंद्र के साथ प्राप्त है, तथा इंद्र एवं वायु में से कौनसा भी एक देव वैदिक अंतरिक्ष-देवताओं का प्रतिनिधित्व कर सकता है, ऐसा निर्देश निरुक्त में प्राप्त है (नि. ७.५)।

जन्म एवं स्वरूपवर्णन—विश्वपुरुष की श्वात से इसकी उत्पत्ति हुई (ऋ. १०.९०)। त्वष्टृ इसका जामात था, एवं इसने आकाश के गर्भ में से मरुतों को उत्पन्न किया था (ऋ. ८.२६; १.१३४)।

यह सुंदर, मनोज्ञ एवं सहस्रनेत्रवाला बताया गया है (ऋ. १.२३)। इसके पास एक प्रकाशमान रथ था, जिसे हजार अश्वों का एक दल खींचता था (ऋ. १.

२३)। इसी कारण, इसे 'नियुक्त्व' (एक दल के द्वारा खींचा जानेवाला) कहा गया है।

अन्य देवों की भाँति यह भी सोमप्रेमी था, एवं सभी देवों में 'क्षिप्र' होने के कारण, यह सर्वप्रथम अपना पेषभाग प्राप्त करता था (श. ब्रा. १३.१.२)।

एक बार सोम प्राप्त करने के लिए देवताओं में होड़ लगी, जिस समय यह एवं इंद्र क्रमशः प्रथम एवं द्वितीय पहुँच गये (ऐ. ब्रा. २.२५)।

इसकी उपासना करने से यश, संतान एवं संपत्ति प्राप्त होती है (ऋ. ७.१०)। यह शत्रुओं को भगाता है एवं निश्रंखों की रक्षा करता है (ऋ. १.१३४)।

पुराणों में—इन ग्रन्थों में इसे वायुत्व की देवता कहा गया है, एवं इसका जन्म आकाश से होने का निर्देश प्राप्त है। यह भूर्बर्लोक का अधिपति था, इस कारण इसे 'भुवस्यति' एवं 'मातरिश्वन्' नामान्तर प्राप्त थे। शाकद्वीप में प्राणायाम के द्वारा इसकी उपासना की जाती थी (भा. ५.१५.१५)। मत्स्य में कृष्णमृग पर सवार हुए इसकी प्रतिमा के पूजन का निर्देश प्राप्त है (मत्स्य. २६१.१९)।

परिवार—पुराणों में इसके अंश से उत्पन्न हुए निम्न-लिखित संतानों का निर्देश प्राप्त है:—१. इल्य (भा. ४.१०.२); २. सुदा नामक अप्सरासमूह; ३. भीमसेन पाण्डव; ४. 'मनोजव' हनुमत् (विष्णु. १.८.११)।

२. एक आचार्य, जो मृत्यु नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम इंद्र था (वं. ब्रा. २)।

३. एक राक्षस, जो वायु के अनुसार अनुह्राद नामक राक्षस का पुत्र था (वायु. ६३.१२)।

वायुवक्र—मंकणक ऋषि के सात पुत्रों में से एक (मंकणक देखिये)।

२. युधिष्ठिर की सभा का एक ऋषि (म. स. ४.११)।

वायुज्वाल एवं वायुबल—मंकणक ऋषि के पुत्र।

वायुभक्ष—एक ब्रह्मर्षि, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था (म. स. ४.११; शां. ४७.६६*)। हस्तिनापुर जानेवाले श्रीकृष्ण से इसकी भेंट हुई थी (म. उ. ३८८.८*)।

वायुमंडल एवं वायुरेतस्—मंकणक ऋषि के पुत्र।

वायुवेग—मंकणक ऋषि के सात पुत्रों में से एक। इसके नाम के लिए 'वातवेग' पाठभेद भी प्राप्त है।

२. (सो. कु. ६) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.२)।

३. एक राजा, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५८)। भारतीययुद्ध में यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल था।

वायुहन—मंकणक ऋषि का एक पुत्र।

वाय्य सत्यश्रवस्—एक वैदिक आचार्य (ऋ. ५. ७९.१०२)। वय्य का वंशज होने से इसे 'वाय्य' पैतृक नाम प्राप्त था।

इस पर अनुग्रह करने के लिए, आत्रेय सत्यश्रवस नामक ऋषि के द्वारा उपसृ की प्रार्थना की गयी थी।

वारकि—कंस नामक आचार्य का पैतृक नाम (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

वारक्य—जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त है:—कंस, कुबेर, जनश्रुत, जयंत एवं प्रोष्ठपद (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)। 'वरक' का वंशज होने के कारण, इन आचार्यों को यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वारण—(सो. अनु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार चंप राजा का, एवं वायु के अनुसार चित्ररथ राजा का पुत्र था।

वाराह—श्रीविष्णु के वराह नामक तृतीय अवतार का नामान्तर (भा. ११.४.१८; वराह देखिये)।

२. एक असुर (मत्स्य. १७२)।

वाराहि—अंगि (अकुलोत्पन्न गोत्रकारद्वय)।

वाराही—सात मातृकाओं में से एक, जिसका वाहन बैल था (ब्रह्मांड. ४.१९.७)।

वारिप्लव—रैवत मन्वन्तर के 'वारिप्लव' नामक देवगण का नामान्तर।

वारिषेण—यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८.१८)। पाठभेद—'वारिसेन'।

वारिसार—(मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार चेद्रगुप्त मौर्य राजा का पुत्र, एवं अशोकवर्धन राजा का पिता था (भा. १२.१.१३)।

वारुणि—धर्मसावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि।

२. एक पक्षिराज, जो कश्यप एवं विनता के पुत्रों में से एक था।

३. एक पैतृक नाम, जो अगस्त्य, भृगु एवं वसिष्ठ आदि ऋषियों के लिए प्रयुक्त किया जाता है (ऐ. ब्रा. ३.३४. १; श. ब्रा. ११.६.१.१)। ब्रह्मा के यज्ञ में से ये सारे ऋषि उत्पन्न होने पर, वरुण ने इनका पुत्र के रूप में

स्वीकार किया, जिस कारण इन्हें 'वारुणि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ।

४. वानरां का एक राजा (ब्रह्मांड. ३.७.२३४)।

वारुणी—स्वायंभुव मन्वन्तर के वंश की पत्नी।

२. अरण्य प्रजापति की कन्या, जो चक्षुस् राजा की पत्नी, एवं चक्षुस् मनु की माता थी (ब्रह्मांड. २.३६. १०२-१०४)।

वार्कलि अथवा **वार्कलिन्**—एक आचार्य (श. ब्रा. १२.३.२.६)। वृकत्य का वंशज होने से इसे यह मातृक नाम प्राप्त हुआ था। ऐतरेय आरण्यक में इसे 'वार्कलिन्' कहा गया है, किन्तु वह अशुद्ध रूप प्रतीत होता है (ऐ. आ. ३. २.२)।

वार्कारुणीपुत्र—एक आचार्य, जो आर्त्तमागीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम वार्कारुणीपुत्र (द्वितीय) था (वृ. उ. ६.४.३१ माध्य.)।

वार्कारुणीपुत्र (द्वितीय)—एक आचार्य, जो वार्कारुणीपुत्र (प्रथम) का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम पाराशरोपुत्र था (वृ. उ. ६.५.२ काण्व.)।

वार्क्षी—प्रचेतस् पत्नी मारिया का पैतृक नाम।

वार्जिनीवत्—ब्राहि नामक यादव राजा का पैतृक नाम। वृजिनवत् नामक राजा का पुत्र होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

वार्धक्षत्रि—सौराष्ट्र देश के जयद्रथ राजा का नामांतर (म. व. २४८.६)।

वार्धक्षेमि—पांचाल देश के सुशर्मन् राजा का पैतृक नाम (सुशर्मन् ३. देखिये)। वृधक्षेम राजा का पुत्र होने के कारण, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

२. त्रिगर्त देश के सुशर्मन् राजा का पैतृक नाम (म. उ. १६८.१६; सुशर्मन् १. देखिये)।

वार्धगण—असित नामक आचार्य का पैतृक नाम (वृ. उ. ६.४.३३ माध्य.)। वृधगण का वंशज होने के कारण, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वार्धगणीपुत्र—एक आचार्य, जो गौतमीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम शालंकायनीपुत्र था। वृधगण के किसी स्त्रीवंशज का पुत्र होने से, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वार्धगण्य—एक आचार्य, जिसका एक सांख्ययोगाचार्य के नाते निर्देश प्राप्त है (व्यासकृत योगशास्त्रभाष्य ४. ५३)। जैमिनिवृत्त उपकर्मशास्त्र में इसका निर्देश प्राप्त है (जै. ग. १.१४)।

२. सुश्रवम् नामक राजा का पैतृक नाम (सुश्रवम् वार्धगण्य देखिये)।

वार्धगिर—एक पैतृक नाम, जो ऋग्वेद में निम्नलिखित राजाओं के लिए प्रयुक्त किया गया है :—अंबरोप, ऋत्राश्व, भयमान, सहदेव एवं सुराधम् (ऋ. १.१००. १७)। वृधगिर के वंशज होने के कारण, उन्हें यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वार्धहृदय—उपस्तुत नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (ऋ. १०.१.१५)।

वार्ध—एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है :—१. गोवल् (तै. ब्रा. ३. ११.९.३; जै. उ. ब्रा. १.६.१); २. वृकुं (श. ब्रा. १. १.१. १०; वृ. उ. ४.१.८ माध्य.); ३. ऐश्वक (जै. उ. ब्रा. १.५.४)। 'वृधन्', 'वृधि' अथवा 'वृधि' के वंशज होने से, उन्हें यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वार्धग्यन—धूम्रपराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वार्धिपुत्र—उल नामक आचार्य का पैतृक नाम (कौ. ब्रा. ७.४)। वृधिपुत्र का पुत्र होने से, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वार्धिपुत्र—शुप नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. ब्रा. ३.१०)। वृधि का वंशज होने से, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. निधराज नल राजा का सारथी। नल के वनवास के समय, यह ऋतुपर्ण राजा का सारथी बना था।

वार्धिपुत्र—एक आचार्य, जिसका शास्त्रवल्क्य के साथ 'देवयजन' के संबंध में संवाद हुआ था (श. ब्रा. ३.१. १.४)। इसे 'वार्धि' नामान्तर भी प्राप्त था।

वार्धिपुत्र—एक वैश्याकरण, जिसका निर्देश एक पूर्वाचार्य के नाते वाल्क के 'निरुक्त' में प्राप्त है (नि. १.२)।

वालखिल्य—एक ऋषिसमुदाय, जो अंगुष्ठ के आकार के साठ हजार ऋषियों से बना हुआ था। प्रजा उत्पन्न करने के लिए तपस्या करनेवाले प्रजापति के केशों से ये उत्पन्न हुए थे (तै. आ. १.२३.३)।

वैदिक साहित्य में—ऋग्वेद में वालखिल्य नामक ग्यारह सूक्त हैं (ऋ. ८. ४९—५९), जिनका निर्देश ब्राह्मण ग्रंथों में ऋग्वेद के परिशिष्टात्मक सूक्तों के नाते से किया गया है (ऐ. ब्रा. ५.१५.१; ३; कौ. ब्रा. ३०.४.८; पं. ब्रा. १३.११.३; ऐ. आ. ५.२.४)। तैत्तिरीय आरण्यक में इन सूक्तों के प्रणयन का श्रेय इन्हीं ऋषियों

को दिया गया है (तै. आ. १.२३)। एक ब्रह्मचारी ऋषिण के नाते इनका निर्देश मैत्रुपनिषद् में प्राप्त है (मैत्र्यु. २.३)।

पौराणिक साहित्य में—इन ग्रंथों में इन्हें ब्रह्मापुत्र ऋतु के पुत्र कहा गया है, एवं इनकी माता का नाम सन्नति अथवा क्रिया बताया गया है (विष्णु. १.१०; भा. ४.१.९)। वायु के अनुसार, इनका जन्म कुशाभों से हुआ था, एवं वाष्पियज्ञ के कारण इन्हें अप्रतिहत तपःसामर्थ्य प्राप्त हुआ था (वायु. ६५.५५; १०१.२१३)। इसी कारण, इन्हें 'मनोवक्त्र', 'सर्वगत' एवं 'सर्वसौम' कहा गया है।

स्वरूपवर्णन— इस सन्तुष्टाय में से हर एक ऋषि कद से बहुत ही छोटा, याने कि अंगुष्ठ के मध्यभाग के बराबर शरीरवाला था। सूर्य के अनन्य भक्त होने के कारण, ये स्वर्लोक में रहते थे, एवं वहाँ पक्षियों की भाँति एक एक शना वीन कर उसीसे ही अपना जीवननिर्वाह करते थे। सूर्यकिरणों का पान करते हुए, ये तपस्या में व्यग्र रहते थे (म. त. ११. १२२)। ब्रह्मांड के अनुसार, ये ब्रह्मलोक में रहते थे, एवं केवल वायु' भक्षण करते थे (ब्रह्मांड. २.२५.४)।

अपने पिता ऋतु के समान ये भी पवित्र, सत्यवादी एवं व्रतपरायण थे (म. आ. ६.०.८)। प्रातःकाल से सायंकाल तक ये सूर्य के 'गौरवस्तोत्र' गाते गाते उसीके ही सम्मुख चलते थे। मृगयाला, चीर एवं बल्कल ये इनके वस्त्र रहते थे। ये दन्तुश्च की शाला पर उल्टे लटक कर तपस्या करते थे।

इन्द्र का निर्माण—एक बार कश्यप ऋषि ने पुत्र-प्राप्ति के लिए एक यज्ञ का आयोजन किया। उस समय यज्ञ में सहाय्यता करने के लिए एक छोटी सी पलाश की दहनी पर लटक कर ये उपस्थित हुए। इनकी अंगुष्ठमात्र शरीरयाष्टि देख कर बलाढ्य इंद्र ने इनका उपहास किया। तदुपरान्त अत्यधिक क्रुद्ध हो कर इन्होंने एक नया इंद्र निर्माण करने का निश्चय किया, एवं इस हेतु एक यज्ञ का आयोजन किया। उस समय कश्यप ऋषि ने इन्हें बार बार समझाया एवं कहा, 'देवराज इंद्र के स्थान पर अन्य इंद्र को उत्पन्न करना उचित नहीं है। अतएव यही अच्छा है कि, आप देवों के नहीं, बल्कि पक्षियों के इंद्र का निर्माण करें'। इसी समय, इंद्र भी इनकी शरण में आया।

फिर कश्यप ऋषि के अनुरोध पर, देवेंद्र का निर्माण करने का अपना निश्चय इन्होंने छोड़ दिया, एवं अपने यज्ञ का फल कश्यप को प्रदान किया। वही फल आगे चल कर कश्यप ने विनता को दिया, जिससे स्वर्गद्वार गुरुड का निर्माण हुआ (म. आ. २६-२७; गण्ड देविव्ये)।

तपःसामर्थ्य—अपनी तपस्या के फल पर ये सिद्धमुनि एवं ऋषि बन गये थे (मत्स्य. १२६.४५)। ये सर्व धर्मों के ज्ञाता थे, एवं अपनी तपस्या से सृष्टि के समस्त पापों को दग्ध कर, अपने तेज से समस्त दिशाओं को प्रकाशित करते थे। इनके तपोवृक्ष पर ही सारा जग निर्भर था, एवं इन्हीं की तपस्या, सत्य, एवं क्षमा के प्रभाव से संपूर्ण भूतों का स्थिति बनी रहती थी (म. अनु. १४१-१४२)।

इन्होंने सरस्वती नदी के तट पर यज्ञ किया था (म. व. ८८.९)। ये पृथु राजा के मंत्री बने थे (म. शां. ५९.११७)। दिवाली के समय, प्रकाशित किये जाने वाले आकाशदीप का महत्त्व सर्वप्रथम इन्होंने ही कथन किया था (स्कंद. २.४.७)। इन्होंने चित्ररथ को कौशिक ऋषि की अस्थियाँ सरस्वती नदी में विसर्जित कर मुक्ति प्राप्त कराने की सलाह दी थी (भा. ६.८. ४०)।

परिवार—इनकी पुण्या एवं आत्म सुमति नामक दो कनिष्ठ बहनों का निर्देश वासु में प्राप्त है (वासु. २८.३३)।

वाल्मीक्यनि—वाष्कलि नामक अंगिराकुलोत्पन्न ऋषि के तीन शिष्यों में से एक। वाष्कलि ने 'वाल्मीक्य संहिता' का प्रणयन कर, उसे दो अन्य शिष्यों के साथ इसे सिखाया थी (वाष्कलि ३. देखिये)।

वाल्मिन्—किष्किधा देश का सुदित्कृत वानरराजा, जो महेंद्र एवं ऋक्षकन्या विरजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३. ७.२१४-२४८; भा. ९.१०.१२)। वास्मीकि रामायण के प्रक्षिप्त काण्ड में इसे ऋक्षरजम् नामक वानर का पुत्र कहा गया है (वा. रा. उ. प्रक्षिप्त. ६)।

इसके छोटे भाई का नाम सुग्रीव था, जिसे इसने यौवराज्याभिषेक किया था (वा. रा. उ. ३४)। इसकी पत्नी का नाम तारा था, जो इसके तार नामक अमाल्य की कन्या थी (वा. रा. उ. ३४; म. व. २६४.१६)। वास्मीकि रामायण में अन्यत्र तारा को सुपेण वानर की कन्या कहा गया है (वा. रा. कि. २२; ब्रह्मांड. ३.७. २१८)। वाल्मिन् स्वयं अत्यंत पराक्रमी वानरराज था, जो राम दाशरथि के द्वारा किये गये इसके वध के कारण रामकथा में अमर हुआ है।

जन्म--वाल्मीकि रामायण के दक्षिणात्य पाठ में, वालिन एवं सुग्रीव को ब्रह्मा के अश्रुविन्दुओं से उत्पन्न हुए ऋक्षरजस् बानर के पुत्र कहा गया है। एक बार ब्रह्मा के तनूया में मग हुआ ऋक्षरजस् पानी में कूद पड़ा। पानी के बाहर निकलते ही उसे एक लवण्यवती नारी का रूप प्राप्त हुआ, जिसे देख कर इंद्र एवं सूर्य कामासक्त हुए। उनका वीर्य क्रमशः स्त्रीरूपधारिणी ऋक्षरजा के बाल एवं ग्रीवा पर पड़ गया। इस प्रकार इंद्र एवं सूर्य के अंश से क्रमशः वालिन एवं सुग्रीव का जन्म हुआ (वा. रा. कि. १६.२७-३९)।

जन्म होने के पश्चात्, इंद्र ने अपने पुत्र वालिन को एक अक्षय्य सुवर्णमाला दे दी, एवं सूर्य ने अपने पुत्र सुग्रीव को हनुमत् नामक बानर सेवा में दे दिया। पश्चात् ऋक्षरजस् को ब्रह्मा की कृपा से पुनः पुरुषदेह प्राप्त हुआ, एवं वह किष्किंधा का राजा बन गया (वा. रा. बा. दक्षिणात्य. १७.१०; ऋक्षरजस् देखिये)।

पराक्रम--वालिन के पराक्रम की अनेकानेक कथाएँ वाल्मीकि रामायण एवं पुराणों में प्राप्त हैं। एक बार लंकाधिपति रावण अपना बलपौरुष का प्रदर्शन करने इससे युद्ध करने आया, किंतु इसने उसे पुष्करक्षेत्र में परास्त किया था (वा. रा. उ. ३४; रावण देखिये)। गोलभ नामक गंधर्व के साथ भी इसने लगातार पंद्रह वर्षों तक युद्ध किया, एवं अंत में उसका वध किया था (वा. रा. कि. २२.२९)। इसके बाणों में इतना सामर्थ्य था कि, एक ही बाण से यह सात साल वृक्षों को पर्णरहीत करता था (वा. रा. कि. ११.६७)। पंचमेद्र नामक राक्षस से भी इसने युद्ध किया था, जिस समय उस राक्षस ने इसे निगल लिया था। तदुपरांत शिवपार्वत वीरभद्र ने उस राक्षस को खड़ा चीर कर, इसकी मुक्तता की थी (पद्म. पा. १०७)।

दुंदुभिवध--दुंदुभि नामक महानलाढ्य राक्षस का भी वालिन ने वध किया था। उस राक्षस के द्वारा समुद्र एवं हिमालय को युद्ध के लिए ललकारने पर, उन्होंने उसे वालिन से युद्ध करने के लिए कहा। अतः दुंदुभि ने महिष का रूप धारण कर इसे युद्ध के लिए ललकारा। इसने अपने पिता इंद्र के द्वारा प्राप्त सुवर्णमाला पहन कर दुंदुभि को द्वंद्वयुद्ध में मार डाला, एवं उसकी लश एक योजन दूरी पर फेंक दी। उस समय दुंदुभि के कुछ रक्तकण ऋष्यमूक पर्वत पर स्थित मातंग ऋषि के आश्रम में गिर पड़े। इससे क्रुद्ध हो कर मातंग ऋषि ने वालिन को

शाप दिया, 'मेरे आश्रम के निकट एक योजन की कक्षा में तुम आओगे, तो तुम मृत्यु की शिकार वनोंगे' (वा. रा. कि. ११)। यही कारण है कि, ऋष्यमूक पर्वत वालिन के लिए अगम्य था।

सुग्रीव से शत्रुत्व--दुंदुभि के वध के पश्चात्, उसका पुत्र मायाविन् ने वालिन से युद्ध शुरु किया, जिसके ही कारण आंगे चल कर, यह एवं इसका भाई सुग्रीव में प्राणविक शत्रुता उत्पन्न हुई। एक बार वालिन एवं सुग्रीव मायाविन् का वध करने निकल पड़े। इन्हें आते देख कर मायाविन् ने एक विल में प्रवेश किया। तदुपरांत इसने सुग्रीव को विल के द्वार पर खड़ा किया, एवं यह स्वयं मायाविन् का पीछा करता विल के अंदर चला गया।

इसी अवस्था में एक वर्ष बीत जाने पर, एक दिन सुग्रीव ने विल में से फेन के साथ रक्त निकलते देखा, एवं उसी समय असुर का गर्जन भी सुना। इन दुश्चिह्नों से सुग्रीव ने समझ लिया कि, वालिन मारा गया है। अतः उसने पत्थर से विल का द्वार बंद किया, एवं वह अपने भाई की उदकक्रिया कर के किष्किंधा नगरी लौटा। वालिवध की वार्ता सुन कर, मंत्रियों ने सुग्रीव की इच्छा के विरुद्ध उसका राज्यभियेक किया। अपनी पत्नी रमा एवं वालिन की पत्नी तारा को साथ ले कर, सुग्रीव राज्य करने लगा।

तदुपरांत मायाविन् का वध कर वालिन किष्किंधा लौटा। वहाँ सुग्रीव को राजभिहासन पर देख कर यह अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं इसने उसकी अत्यंत कटु आलोचना की। सुग्रीव ने इसे समझाने का काफी प्रयत्न किया, किंतु यह यही समझ बैठा कि, सुग्रीव ने वह सारा पट्टयंत्र राज्यलिप्सा के कारण ही किया है। अतएव इसने उसे भगा दिया, एवं उसकी रमा नामक पत्नी का भी हरण किया। सुग्रीव सारी पृथ्वी पर भटक कर, अंत में वालिन के लिए अगम्य ऋष्यमूक पर्वत पर रहने लगा (वा. रा. कि. ९-१०)।

राम-सुग्रीव की मित्रता--ऋष्यमूक पर्वत पर राम एवं सुग्रीव की मित्रता प्रस्थापित होने पर, राम ने अपना बलपौरुष दिखाने के लिए अपने एक ही बाण से वहाँ स्थित सात ताड़ वृक्षों का भेदन किया। आनंद रामायण में, इन सात ताड़ वृक्षों के संदर्भ में एक कथा प्राप्त है। एक बार ताड़ के सात फल वालिन ने ऋष्यमूक पर्वत की गुफा में रक्खे थे। पश्चात् एक सर्प उस गुफा में आया, एवं सहृदयता उन ताड़फलों पर बैठ गया। वालिन ने

कुद हो कर सर्प से शाप दिया, 'इन फलों से तुम्हारे शरीर पर ताड़ के सात वृक्ष उगेंगे'। तब साँप ने भी वालि से शाप दिया, 'इन सातों ताड़ के वृक्ष जो अपने बाण से तोड़ेगा, उसीके द्वारा तुम्हारा मृत्यु होगी'। राम के द्वारा इन वृक्षों का भेदन होने के कारण, उसीके हाथों वालिवध हुआ (आ. रा. ८)।

वालिबध—राम के कहने पर सुग्रीव ने वालि को द्रुपयुद्ध के लिए ललकारा (वा. रा. कि. १४)। पहले दिन हुए वालि एवं सुग्रीव के द्रुपयुद्ध के समय, ये दोनों माई एक सराखे ही दिखने के कारण, राम अपने मित्र सुग्रीव को कोई सहायता न कर सका। इस कारण सुग्रीव को पराजित हो कर ऋष्यमूक पर्वत पर लौटना पड़ा।

दूसरे दिन राम ने 'अभिज्ञान' के लिए सुग्रीव के गले में एक मन्त्रपुत्र की माला पहनायी, एवं उसे पुनः एक बार वालि से द्रुपयुद्ध करने भेजा दिया। सुग्रीव का आह्वान सुन कर, यह अपनी पत्नी तारा का अनुरोध टुकार कर पुनः अपने महल से निकला। इंद्र के द्वारा दी गयी सुवर्णमाला पहन कर, यह युद्ध के लिए चल पड़ा। आनन्द रामायण के अनुसार, गले में सुवर्णमाला धारण करनेवाले वालि युद्ध में अजय था, जिस कारण युद्ध के पूर्व, राम ने एक सर्प के द्वारा इसकी माला को चुप लिया था (आ. रा. ८)। तत्पश्चात् हुए द्रुपयुद्ध के समय, राम ने वृक्ष के पीछे से बाण छोड़ कर इसका बध किया (वा. रा. कि. १६३, १६६)।

राम की आलोचना—मृत्यु के पूर्व, इसने वृक्ष के पीछे से बाण छोड़ कर अपना बध करनेवाले राम का अक्षत्रिय वर्तन बताते समय, राम की अत्यंत कटु आलोचना की—

अयुक्तं यदधर्मेण स्वयाऽहं निहतो रणे।

(वा. रा. कि. १७, ५२)।

इसने राम से कहा, 'मैंने तुम्हारे साथ कोई अन्याय नहीं किया था। फिर भी जब मैं सुग्रीव के साथ युद्ध करने में व्यस्त था, उस समय तुमने वृक्ष के पीछे से बाण छोड़ कर मुझे आहत किया। तुम्हारा यह वर्तन संपूर्णतः अक्षत्रिय है। तुम क्षत्रिय नहीं, बल्कि खनी हो। तुम्हें मुझसे युद्ध ही करना था, तो क्षत्रिय की भाँति चुनौति दे कर युद्धभूमि में चले आते। मैं तुम्हारा आवश्य ही पराजय कर लेता'।

वालि ने आगे कहा, 'ये सब पापकर्म तुमने सीता की मुक्ति के लिए ही किये। अगर यह बात तुम मुझसे कहते,

तो एक ही दिन में मैं सीता की मुक्ति कर देता। दशमुखी रावण का बध कर, उसकी लाश की गले में रखी बाँध कर एक ही दिन में मैं तुम्हारे चरणों में रख देता। मैं मृत्यु से नहीं डरता हूँ। किन्तु तुम जैसे स्वयं को क्षत्रिय कहलानेवाले एक पापी पुरुष ने विश्वासघात से मेरा बध किया है, यह शक्य मैं कभी भी भूल नहीं सकता'।

अत्यधि—वालि के इस आक्षेप का राम ठीक प्रकार से जवाब न दे सका (राम दाशरथि देखिये)। मृत्यु के पूर्व वालि ने अपनी पत्नी तारा एवं पुत्र अंगद को सुग्रीव के हाथों साँप दिया।

स्वभावचित्रण—राम का शत्रु होने के कारण, उत्तर-कालीन बहुत सारे रामायण ग्रन्थों में एक क्रूरकर्मन् राजा के रूप में वालि का चरित्रचित्रण किया गया है। राम के द्वारा किये गये इसके बध का समर्थन देने का प्रयत्न भी अनेक प्रकार से किया गया है।

किन्तु ये सारे वर्णन अयोग्य प्रतीत होते हैं। वालि स्वयं एक अत्यंत पराक्रमी एवं धर्मनिष्ठ राजा था। इसने चार ही वेदों का अध्ययन किया था, एवं अनेकानेक यज्ञ किये थे। इसकी धर्मपरायणता के कारण स्वयं नारद ने भी इसकी स्तुति की थी (ब्रह्मांड. ३.७.२१४-२४८)। मृत्यु के पूर्व राम के साथ इसने किया हुआ संवाद भी इसकी श्रुता, तार्किकता एवं धर्मनिष्ठता पर काफी प्रकाश डालता है।

२. वरुणलोक का एक असुर (म. स. ९.१४)।

वालिशय—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोविकार।

वालिशिराव—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

वालिशिखायनि—एक आचार्य (सां. आ. ७.२१)।

वाल्मीकि—एक व्याकरणकार, जिसके विसर्गसंक्षी के संबंधित अभिमतों का निर्देश तैत्तिरीय प्रातिशाख्य में प्राप्त है (तै. प्रा. ५.३६; ९.४; १८.६)।

२. एक पक्षिराज, जो गरुडवंशीय सुपर्णपक्षियों के वंश में उत्पन्न हुआ था। इस के अनुसार, ये पक्षी न हो कर, सप्तसिंधु की यायावर आर्य जाति थी (ऋग्वेदिक इंडिया, पृ. ६५, १४८)। ये कर्म से क्षत्रिय थे, एवं बड़े ही विष्णुभक्त थे (म. उ. ९.९.६; ८)।

३. एक व्यास (व्यास देखिये)।

४. एक शिवभक्त, जिसने शिवभक्ति के संज्ञ में अपना अनुभव युधिष्ठिर को कथन किया था (म. अनु. १८.८-१०)।

वाल्मीकि 'आदिकवि'—एक सुविख्यात महर्षि, जो 'वाल्मीकि रामायण' नामक संस्कृत भाषा के आद्य आर्य महाकाव्य का रचयिता माना जाता है।

नाम—वाल्मीकि रामायण के युद्धकाण्ड के फलश्रुति-अध्याय में आदिकवि वाल्मीकि का निर्देश प्राप्त है (वा. रा. यु. १२८.१०५)। वहाँ वाल्मीकि के द्वारा प्राचीन काल में विरचित 'रामायण' नामक आदिकाव्य के पठन से पाठकों को धर्म, यश एवं आयुष्य प्राप्त होने की फलश्रुति दी गयी है। समस्त प्राचीन वाङ्मय में आदिकवि वाल्मीकि के संबंध में यह एकमेव निर्देश माना जाता है।

रामायण के बाल एवं उत्तर काण्डों में—आधुनिक अभ्यासकों के अनुसार, वाल्मीकि-रामायण के दो से छः तक काण्डों की रचना करनेवाले आदिकवि वाल्मीकि, एवं वाल्मीकि-रामायण के बाल एवं उत्तर काण्डों में निर्दिष्ट राम दशरथि राजा के समकालीन वाल्मीकि दो विभिन्न व्यक्ति थे। किन्तु ई. पू. १ ली शताब्दी में, इस ग्रंथ के बाल एवं उत्तर काण्ड की रचना जब समाप्त हो चुकी थी, उस समय आदिकवि वाल्मीकि एवं महर्षि वाल्मीकि ये दोनों एक ही मानने जाने की परंपरा प्रस्थापित हुई थी।

वाल्मीकि-रामायण के उत्तर-काण्ड में निर्देशित महर्षि वाल्मीकि प्रचेतस् ऋषि का दसवाँ पुत्र था, एवं यह जाति से ब्राह्मण तथा अयोध्या के दशरथ राजा का मित्र था (वा. रा. उ. १६.१८; ४७.१६)।

आश्रम—वाल्मीकि-रामायण के बालकाण्ड में इसे तपस्वी, महर्षि एवं मुनि कहा गया है (वा. रा. वा. १.१; २.४; ४.४)। इसका आश्रम तमसा एवं गंगा के समीप ही था (वा. रा. वा. २.२)। यह आश्रम गंगा नदी के दक्षिण में ही था, यहाँ कि, सीता त्याग के समय, लक्ष्मण एवं सीता अयोध्या से निकलने के पश्चात् गंगा नदी पार कर इस आश्रम में पहुँचे (वा. रा. उ. ४७)। बाद में प्रस्थापित हुए एक अन्य परंपरा के अनुसार, वाल्मीकि का आश्रम गंगा के उत्तर में यमुनानदी के किनारे, चित्रकूट के पास मानने जाने लगा (वा. रा. अयो. ५६.१६ दक्षिणात्य; अ. रा. २.६. रामचरित. २. १२४)। आजकल भी वह बाँदा जिले में स्थित है।

वाल्मीकि-रामायण में इसे अपने आश्रम का कुलपति कहा गया है। प्राचीन भारतीय परंपरा के अनुसार, 'कुलपति' उस ऋषि को कहते थे, जो दस हजार विद्यार्थियों का पालनपोषण करता हुआ उन्हें शिक्षा

प्रदान करता था। इससे प्रतीत होता है कि, वाल्मीकि का आश्रम काफी बड़ा था।

आख्यायिकाएँ—वाल्मीकि के पूर्वार्थ्य से संबंधित अनेकानेक आख्यायिकाएँ महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त हैं। किंतु वे काफी उत्तरकालीन होने के कारण अविश्वसनीय प्रतीत होती हैं।

महाभारत एवं पुराणों में वाल्मीकि को 'भार्गव' (सृष्टि में उत्पन्न) कहा गया है। महाभारत के 'राजोपाख्यान' का रचयिता भी भार्गव बताया गया है (म. शां. ५७.४०)। भार्गव च्यवन नामक ऋषि के संबंध में यह कथा प्रसिद्ध है कि, यह तपस्या करता हुआ इतने समय तक निश्चल रहा की, उसका शरीर 'धर्मीक' से आच्छादित हुआ (भा. १.२; च्यवन भार्गव देखिये)। यह कथा 'वाल्मीकि' (जिसका शरीर वल्मीक से आच्छादित हो) नाम से मिलती-जुलती होने के कारण, वाल्मीकि एवं च्यवन इन दोनों के कथाओं में संमिश्रण किया गया, एवं इस कारण वाल्मीकि को भार्गव उपधि प्रदान की गयी।

अध्यात्म रामायण में—वाल्मीकि के द्वारा वल्मीक से आच्छादित होने का इसी कथा का विकास, उत्तरकालीन साहित्य में वाल्मीकि को दस्यु, ब्रह्मघ्न एवं डाकू मार्गने में हो गया, जिसका संविस्तृत वर्णन स्कंद पुराण (स्कंद. वै. २१), एवं अध्यात्म रामायण में प्राप्त है।

इस कथा के अनुसार, यह जन्म से तो ब्राह्मण था, किंतु निरंतर किरातों के साथ रहने से, एवं चोरी करने से इसका ब्राह्मणत्व नष्ट हुआ। एक शूद्रा के गर्भ से इसे अनेक शूद्रपुत्र भी उत्पन्न हुए।

एक बार इसने सात मुनियों को देखा, जिनका वस्त्रादि छीनने के उद्देश्य से इसने उन्हें रोक लिया। फिर उन ऋषियों ने इससे कहा, 'जिन कुटुंबियों के लिए तुम नित्य पापसंचय करते हो, उनसे जा कर पूछ लो कि, वे तुम्हारे इस पाप के महामार्गी बनने के लिए तैयार हैं, या नहीं?' इसके द्वारा कुटुंबियों को पूछने पर उन्होंने इसे क्रोधा ज्वाला दिया, 'तुम्हारा पाप तुम सहाल लो, हम तो केवल घन के ही भोगनेवाले हैं'।

यह सुन कर इसे वैराग्य उत्पन्न हुआ, एवं इसने उन ऋषियों की सलाह की अनुसार, निरंतर 'मरा' ('राम' शब्द का उल्टा रूप) शब्द का जप करना प्रारंभ किया। एक सहस्र वर्षों तक निश्चल रहने के फलस्वरूप, इसके शरीर पर 'वल्मीक' बन गया।

मालेप्रांत ऋषियों ने इसे बाहर निकलने का आदेश दिया, एवं कहा, 'वाल्मीकि में तपस्या करने कारण तुम्हारा दूसरा जन्म हुआ है। अतएव आज से तुम वाल्मीकि नाम से ही सुविख्यात होंगे' (अ. रा. अयो. ६. ४२-८८)।

स्कंद पुराण में भी यही कथा प्राप्त है, किंतु वहाँ ऋषि करने के पूर्व का इसका नाम अग्निधर्मन दिया गया है।

आख्यायिकाओं का अन्वयार्थ—कई अभ्यासकों के अनुसार, पुराणों में प्राप्त इन सारे कथाओं में वाल्मीकि की नीच जाति प्रतिव्वमित होती है। किंतु इस संबंध में निश्चित रूप से कहना कठिन है। जो कुछ भी हो, इन कथाओं के मूल रूप में 'रामनाम' का निर्देश अप्राप्य है। इससे प्रतीत होता है की, रामनामिकांप्रदाय का विकास होने के पश्चात्, यह सारा वृत्तांत रामनाम के गुणगान में परिणत कर दिया गया है (बुल्के, रामकथा पृ. ४७)। पुराणों में इसे छव्वीसवाँ वेदव्यास एवं श्रीविष्णु का अवतार कहा गया है (विष्णु. ३.३.१८)। यह निर्देश भी इसका महात्म्य बढ़ाने के लिए ही किया गया होगा।

क्रौंचवध—इस की शिष्य शाखा काफी बड़ी थी, किंतु उसमें भरद्वाज ऋषि प्रमुख था। एक बार यह भरद्वाज के साथ नदी से स्नान कर के वापस आ रहा था। मार्ग में इसने एक व्याध मैथुनासक्त क्रौंच पक्षियों में एक पर शरसंधान करते हुए देखा। उस समय उस पक्षी के प्रति इसके मन में दया उत्पन्न हुई, एवं इसके मुख से छंदोवद्ध आर्तवाणी निःसृत हुई:—

मा निपाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।

यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ॥

(वा. रा. वा. २.१५)।

अकस्मात् मुख से निकले हुए शब्दों को एक वृत्तवद्ध अनुष्टुप् श्लोक का रूप प्राप्त होने का चमत्कार देख कर, इसे मन ही मन अत्यंत आश्चर्य हुआ। इसके साथ ही साथ, क्रोध में एक निपाद को इतना कड़ा श्राप देने के कारण, इसे अत्यंत दुःख भी हुआ।

इसी दुःखित अवस्था में यह भैठा था कि, ब्रह्मा वहाँ प्रकट हुए एवं उन्होंने कहा, 'पढ़ताने का कोई कारण नहीं है। यह श्लोक तुम्हारी कीर्ति का कारण बनेगा। इसी छंद में तुम राम के चरित्र की रचना करो'।

मा. च. १०५]

ब्रह्मा के इस आदेशानुसार, इसने चौबीससहस्र श्लोकों से युक्त रामायण ग्रन्थ की रचना की (वा. रा. वा. २)।

रामायण की जन्मकथा—रामकथा की रचना करने की प्रेरणा वाल्मीकि को कैसे प्राप्त हुई, इस संबंध में इसने नारद के साथ किये एक संवाद का निर्देश वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है। एक बार तप एवं स्वाध्याय में मग्न, एवं भाषणकुशल नारद से इसने प्रश्न किया, 'इस संसार में ऐसा कौन महापुरुष है, जो आचार विचार, एवं पराक्रम में आदर्श माना जा सकता है'। उस समय नारद ने इसे रामकथा का सार सुनाया, जिसे ही श्लोकवद्ध कर, इसने अपने 'रामायण' महाकाव्य की रचना की (वा. रा. वा. १)।

इस आख्यायिका से प्रतीत होता है कि, तत्कालीन समाज में रामकथा से संबंधित जो कथाएँ लोककथा के रूप में वर्तमान थीं, उन्हींको वाल्मीकि ने छंदोवद्ध रूप दे कर रामायण की रचना की।

सीता संरक्षण—राम के द्वारा सीता का त्याग होने पर इसीने उसे संभाला, एवं उसकी रक्षा की। उस समय सीता गर्भवती थी। नाद में यथावकाश उसे दो जुड़वे पुत्र उत्पन्न हुए। उनका 'कुश' एवं 'लव' नामकरण इसीने ही किया, एवं उन्हें पालपोस कर विद्यादान भी किया। वे कुमार बड़े होने पर, इसने उन्हें स्वयं के द्वारा विरचित रामायण काव्य सिखाया। पश्चात् कुश लव ने वाल्मीकि के द्वारा विरचित रामायण का गायन सर्वत्र करना शुरू किया। इस प्रकार वे अयोध्या नगरी में भी पहुँच गये, जहाँ राम दशरथिके अश्वमेध यज्ञ के स्थान पर उन्होंने रामायण का गान किया (वा. रा. उ. ९३-९४)।

रामसभा में—कुशलव के द्वारा किये गये रामायण के साभिनय गायन से राम मंत्रमुग्ध हुआ, एवं जब उसे पता चला कि, ये ऋषिकुमार सामान्य भाट नहीं, बल्कि उसीके ही पुत्र हैं, तत्र वह बहुत ही प्रसन्न हुआ। उसने सीता को अपने पास बुलवा लिया। उस समय वाल्मीकि स्वयं सीता के साथ रामसभा में उपस्थित हुआ, एवं इसने सीता के सतीत्व की साक्ष दी। उस समय इसने अपने सहस्र वर्षों के तप का, एवं सत्यप्रतिज्ञता का निर्देश कर सीता का स्वीकार करने की प्रार्थना राम से की (वा. रा. उ. ९६.२०)। पश्चात् इसीके कहने पर सीता ने पातिव्रत्य की कसम खा कर भूमि में प्रवेश किया।

पौराणिक वाङ्मय की प्रस्थानत्रयी—पौराणिक साहित्य में रामायण, महाभारत एवं भागवत ये तीन प्रमुख ग्रंथ माने जाते हैं, एवं इस साहित्य में प्राप्त तत्त्वज्ञान की 'प्रस्थानत्रयी' भी इन्हीं ग्रंथों से बनी हुई मानी जाती है। वेदांत ग्रंथों की प्रस्थानत्रयी में अंतर्भूत किये जानेवाले भगवद्गीता, उपनिषद् एवं ब्रह्मसूत्र की तरह, पौराणिक साहित्य की प्रस्थानत्रयी बनानेवाले ये तीन ग्रंथ भी भारतीय तत्त्वज्ञान का विकास एवं प्रसार की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं।

उपर्युक्त ग्रंथों में से रामायण एवं भागवत क्रमशः कर्मयोग, और भक्तितत्त्वज्ञान के प्रतिपादक ग्रंथ हैं। इसी कारण दैनंदिन व्यवहार की दृष्टि से, रामायण ग्रंथ भागवत से अधिक हृदयस्पर्शी एवं आदर्शभूत प्रतीत होता है। इस ग्रंथ में आदर्श पुत्र, भ्राता, पिता, माता आदि के जो कर्तव्य व्रतायें गये हैं, वे एक आदर्श बन कर व्यक्तिमात्र को आदर्श जीवन की स्फूर्ति प्रदान करते हैं।

व्यक्तिगुणों का आदर्श—इस प्रकार रामायण में भारतीय दृष्टिकोण से आदर्श जीवन का चित्रण प्राप्त है, किन्तु उस जीवन के संबंधित तत्त्वज्ञान वहाँ ग्रथित नहीं है, जो महाभारत में प्राप्त है। महाभारत मुख्यतः एक तत्त्वज्ञानविषयक ग्रंथ है, जिसमें आदर्शात्मक व्यक्तिचित्रण के साथ साथ, आदर्श-जीवन के संबंधित भारतीय तत्त्वज्ञान भी ग्रथित किया गया है। व्यक्तिविषयक आदर्शों को शास्त्रप्रामाण्य एवं तत्त्वज्ञान की चौखट में घिसाने के कारण, महाभारत सारे पुराण ग्रंथों में एक श्रेष्ठ श्रेणि का तत्त्वज्ञान-ग्रंथ बन गया है।

किन्तु इसी तत्त्वप्रधानता के कारण, महाभारत में वर्णित व्यक्तिगुणों के आदर्श धुंधले से हो गये हैं, जिनका सर्वोच्च श्रेणि का सरल चित्रण रामायण में पाया जाता है। इस प्रकार जहाँ महाभारत की सारी कथावस्तु परस्पर-स्पर्धा, मत्सर, कुटिलता एवं विजिगिषु वृत्ति जैसे राजस एवं तामस वृत्तियों से ओतप्रोत भरी हुई है, वहाँ रामायण की कथावस्तु में स्वार्थत्याग, पितृपरायणता, वंधुप्रेम जैसे सात्विक गुण ही प्रकर्ष से चित्रित किये गये हैं।

यही कारण है कि, वाल्मीकि-रामायण महाभारत से कतिपय अधिक लोकप्रिय है, एवं उससे स्फूर्ति पा कर भारत एवं दक्षिणीपूर्व एशिया की सभी भाषाओं में की गयी रामकथाविषयक समस्त रचनाएँ, सदियों से जनता के नित्यपाठ के ग्रंथ बन चुकी हैं (राम दशरथि देखिये)।

इस प्रकार, जहाँ महाभारत में वर्णित व्यक्तिगतत्वज्ञान-विषयक चर्चाओं के विषय बन चुकी हैं, वहाँ वाल्मीकि-रामायण में वर्णित राम, लक्ष्मण एवं सीता देवतास्वरूप पा कर सारे भरतखंड में उनकी पूजा की जा रही है।

महाभारत से तुलना—संस्कृत साहित्य के इतिहास में रामायण एवं महाभारत इन दोनों ग्रंथों को महाकाव्य कहा जाता है। किन्तु प्रतिपाद्य विषय एवं निवेदनशैली इन दोनों दृष्टि से वे एक दूसरे से विस्कुल विभिन्न हैं। जहाँ महाभारत एक इतिहासप्रधान काव्य है, वहाँ रामायण एक काव्यप्रधान चरित्र है। महाभारत के अनुक्रमणीपूर्व में उस ग्रंथ को सर्वत्र 'भारत का इतिहास' (भारतस्येतिहास), भारत की ऐतिहासिक कथाएँ (भारतसंज्ञिताः कथाः) कहा गया है (म. आ. १.१४. १७)। इसके विरुद्ध रामायण में, 'राम एवं सीता के चरित्र का, एवं रावणवध का काव्य में कथन करता हूँ' ऐसे वाल्मीकि के द्वारा कथन किया गया है—

काव्यं रामायणं कृत्स्नं सीतायाश्चरितम् महत्
पौलस्त्यवधमित्येव चकार चरितव्रतः ॥

(वा. रा. वा. ४.७.)।

इस प्रकार महाभारत की कथावस्तु अनेकानेक ऐतिहासिक कथाउपकथाओं को एकत्रित कर रचायी गयी है। किन्तु वाल्मीकि-रामायण की सारी कथावस्तु राम एवं उसके परिवार के चरित्र से मर्यादित है। राम, लक्ष्मण, सीता, दशरथ आदि का 'हसित', 'माणित' एवं 'चेष्टित' (पराक्रम) का वर्णन करना, यही उसका प्रधान हेतु है (वा. रा. वा. २.४)।

इन दोनों ग्रंथों का प्रतिपाद्य विषय इस तरह सर्वतोपरि भिन्न होने के कारण, उनकी निवेदनशैली भी एक दूसरे से विभिन्न है। रामायण की निवेदनशैली वर्णनात्मक, विशेषणात्मक एवं अधिक तर काव्यमय है। उसमें प्रसाद होते हुए भी गतिमानता कम है। इसके विरुद्ध महाभारत की निवेदनशैली साफसुथरी, नाट्यपूर्ण एवं गतिमान है।

रामायण की श्रेष्ठता—इसी कारण हिन्दुधर्मग्रंथों में रामायण की श्रेष्ठता के संबंध में डॉ. विंटरनिट्ज़ ने ले कर विनोवाजी भावे तक सभी विद्वानों की एकवाक्यता है। श्री. विनोवाजी ने लिखा है, 'चित्तशुद्धि प्रदान करनेवाले समस्त हिन्दुधर्म ग्रंथों में वाल्मीकिरामायण भगवद्गीता से भी अधिक श्रेष्ठ है। जहाँ भगवद्गीता नवनीत

है, वहाँ रामायण माता के दूध के समान हैं। नवनीत का उपयोग मर्यादित लोग ही कर सकते हैं, किन्तु माता का दूध तो सभी के लिए लाभदायक रहता है'।

इसीलिए वाल्मीकि रामायण के प्रारंभ में ब्रह्मा ने रामायण के संबंधित जो आशीर्वचन वाल्मीकि को प्रदान किया है, वह सही प्रतीत होता है:—

यावत्स्थायन्ति गिरयः सरितश्च महीतले
 • तावद्रामायणकथा लोकेषु प्रचरिष्यति ॥
 (वा. रा. वा. २.३६)।

(इस सृष्टि में जब तक पर्वत खड़े हैं, एवं नदियाँ बहती हैं, तब तक रामकथा का गान लोग करते ही रहेंगे)।

रामायण की ऐतिहासिकता—डॉ. याकोबी के अनुसार, वर्ष विषय की दृष्टि से 'वाल्मीकि-रामायण' दो भागों में विभाजित किया जा सकता है:—१. बाल एवं अयोध्या कांड में वर्णित अयोध्य की घटनाएँ, जिनका केंद्रविंदु इक्ष्वाकु राजा दशरथ है; २. दंडकारण्य एवं रावणवध से संबंधित घटनाएँ, जिनका केंद्रविंदु रावण-दशग्रीव है। इनमें से अयोध्या की घटनाएँ ऐतिहासिक प्रतीत होती हैं, जिनका आधार किसी निर्वासित इक्ष्वाकुवंशीय राजकुमार से है। रावणवध से संबंधित घटनाओं का मूल-उद्गम वेदों में वर्णित देवताओं की कथाओं में देखा जा सकता है (याकोबी, रामायण पृ. ८६; १२७)।

रामकथा से संबंधित इन सारे आख्यान-काव्यों की रचना इक्ष्वाकुवंश के सूतों ने सर्वप्रथम की, जिनमें रावण एवं हनुमत् से संबंधित प्रचलित आख्यानों को मिला कर वाल्मीकिने रामायण की रचना की।

जिस प्रकार वाल्मीकि के पूर्व रामकथा मौखिक रूप में वर्तमान थी, उसी प्रकार दीर्घकाल तक 'वाल्मीकि-रामायण' भी मौखिक रूप में ही जीवित रहा। इस काव्य की रचना के पश्चात्, बुद्धीलवों ने उसे कंठस्थ किया, एवं वर्यों तक वे उसे गाते रहे। किन्तु अंत में इस काव्य को लिपिबद्ध करने का कार्य भी स्वयं वाल्मीकि ने ही किया, जो 'वाल्मीकि रामायण' के रूप आज भी वर्तमान है।

इसीसे ही स्फूर्ति पा कर भारत की सभी भाषाओं में रामकथा पर आधारित अनेकानेक ग्रन्थों की रचना हुई, जिनके कारण वाल्मीकि एक प्रातःस्मरणीय विभूति बन गया:—

मधुममय-भणतीनां मार्गदर्शी महर्षिः ।

आदिकवि वाल्मीकि—वाल्मीकिप्रणीत रामायण संस्कृत भाषा का आदिकाव्य माना जाता है, जिसकी रचना अनुष्टुप् छंद में की गयी है।

वाल्मीकि रामायण के पूर्वकाल में रचित कई वैदिक ऋचाएँ अनुष्टुप् छंद में भी थीं। किन्तु वे लघु गुरु-अक्षरों के नियंत्रणरहित होने के कारण, गाने के लिए योग्य (गेय) नहीं थीं। इस कारण ब्राह्मण, आरण्यक जैसे वैदिकोत्तर साहित्य में अनुष्टुप् छंद का लोप हो कर, इन सारे ग्रन्थों की रचना गद्य में ही की जाने लगी।

इस अवस्था में, वेदों में प्राप्त अनुष्टुप् छंद को लघु-गुरु अक्षरों के नियंत्रण में बिठा कर वाल्मीकि ने सर्वप्रथम अपने 'मा निपाद' श्लोक की, एवं तत्पश्चात् समग्र रामायण की रचना की। छंदःशास्त्रीय दृष्टि से वाल्मीकि के द्वारा प्रस्थापित नये अनुष्टुप् छंद की विशेषता निम्न प्रकार थी:—

श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं सर्वत्र लघु पंचमम् ।

द्विचतुःपादायोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः ॥

(वाल्मीकि के द्वारा प्रस्थापित अनुष्टुप् छंद में, श्लोक क हर एक पाद का पाँचवाँ अक्षर लघु, एवं छठवाँ अक्षर गुरु था। इसी प्रकार समपादों में से सातवाँ अक्षर ह्रस्व, एवं विषमपाद में सातवाँ अक्षर दीर्घ था)।

इसी अनुष्टुप् छंद के रचना के कारण वाल्मीकि संस्कृत भाषा का आदि-कवि कहाला गया। इतना ही नहीं 'विश्व' जैसे संस्कृत भाषा के शब्दकोश में 'कवि' शब्द का अर्थ भी 'वाल्मीकि' ही दिया गया है।

गेय महाकाव्य—वाल्मीकि के द्वारा रामायण की रचना एक पाठ्य काव्य के नाते नहीं, बल्कि एक गेय काव्य के नाते की गयी थी। रामायण की रचना समाप्त होने के पश्चात्, इस काव्य को नाट्यरूप में गानेवाले गायकों कि खोज वाल्मीकि ने की थी:—

चिन्तयामास को न्वेतत् प्रयुजादिति प्रभुः ॥

पाठये गेये च मधुरं प्रमाणैस्त्रिभिरन्वितम् ।

जातिभिः सप्तभिर्युक्तं तंत्रीलय-समन्वितम् ॥

(वा. रा. वा. ४.३; ८)।

(रामायण की रचना करने के पश्चात्, इस महाकाव्य के सामिनय गायन का प्रयोग त्रिताल एवं सप्तजाति में

तथा वीणा के स्वरो में कौन गायक कर सकेगा, इस संबंध में वाल्मीकि खोज करने लगा।)

वाल्मीकि के काल में रामायण का केवल गायन ही नहीं, बल्कि अभिनय भी किया जाता था, ऐसा स्पष्ट निर्देश वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है। वहाँ रामायण का गायन करनेवाले कुशल को 'स्थानकोविदः' (कोमल, मध्य एवं उच्च स्वरोच्चारों में प्रवीण), 'मार्गमानतज्ञः' (मार्ग नामक गायनप्रकार में कुशल) ही नहीं, बल्कि 'गांधर्वतत्त्वज्ञः' (नाट्यशास्त्रज्ञ), एवं 'रूपलक्षणसंपन्नः' (अभिनयसंपन्न) कहा गया है (वा. रा. बा. ४.१०. ११; कुशीलव देखिये)।

वाल्मीकिप्रणीत रामकथा को आधुनिक काव्य के गेय छंदों में बाँध कर गीतों के रूप में प्रस्तुत करने का सफल प्रयत्न, मराठी के सुविख्यात कवि ग. दि. माडगूळकर के द्वारा 'गीतरामायण' में किया गया है। गेय रूप में रामायणकाव्य अधिक मधुर प्रतीत होता है, इसका अनुभव 'गीतरामायण' के श्रवण से आता है।

आर्ष महाकाव्य—जिस प्रकार वाल्मीकि संस्कृत भाषा का आदिकवि है, उसी प्रकार इसके द्वारा विरचित रामायण संस्कृत भाषा का पहला 'आर्ष महाकाव्य' माना जाता है। 'आर्ष महाकाव्य' के गुणवैशिष्ट्य महाभारत में निम्नप्रकार दिये गये हैं—

इतिहासप्रयानार्थं शीलचरित्रवर्धनम् ।
धीरोदात्तं च गहनं श्रव्यैवृत्तैरलंकृतम् ॥
लोकयात्राक्रमश्रापि पावनः प्रतिपाद्यते ।
विचित्रार्थपदार्थान् सुक्ष्मार्थन्यायगृहितम् ॥

(इतिहास पर आधारित, एवं सदाचारसंपन्न आदर्शों का प्रतिपादन करनेवाले काव्य को आर्ष महाकाव्य कहते हैं। वह सद्गुण एवं सदाचार को पोषक, धीरोदात्त एवं गहन आशय से परिपूर्ण, श्रवणीय छंदों से युक्त रहता है)।

वाल्मीकि रामायण में प्राप्त भूगोलवर्णन—इस ग्रंथ में उत्तर भारत, पंजाब एवं दक्षिण भारत के अनेकानेक भौगोलिक स्थलों का निर्देश एवं जानकारी प्राप्त है। कोसल देश एवं गंगा नदी के पड़ोस के स्थलों का भौगोलिक स्थान, एवं स्थलवर्णन उस ग्रंथ में जितने स्पष्ट रूप से प्राप्त है, उतनी स्पष्टता से दक्षिण भारत के स्थलों का वर्णन नहीं मिलता। इससे प्रतीत होता है कि, वाल्मीकि को उत्तर भारत एवं पंजाब प्रदेश की जितनी सूक्ष्म जानकारी थी, उतनी दक्षिण भारत एवं मध्यभारत की नहीं थी। कई अभ्यासकों के

अनुसार, वाल्मीकि स्वयं उत्तर भारत का निवासी था, एवं गंगा नदी को मिलने वाली तमसा नदी के किनारे अयोध्या नगरी के समीप इत्था आश्रम था। वाल्मीकि रामायण में निर्दिष्ट प्रमुख भौगोलिक स्थल निम्न प्रकार हैं:—

(१) उत्तर भारत के स्थल:—१. अयोध्या (वा. रा. बा. ६.१); २. सरयू नदी (वा. रा. बा. २४.१०); ३. तमसा नदी (वा. रा. बा. २.४); ४. कोसल देश (वा. रा. अयो. ५०.१०); ५. शृंगवेरपुर (वा. रा. अयो. ५०.२६); ६. नंदिग्राम (वा. रा. अयो. ११५.१२); ७. मिथिला, सिद्धाश्रम, गौतमाश्रम, एवं विशाला नगरी (वा. रा. बा. ३१.६८); ८. गिरिवज्र अथवा राजगृह (वा. रा. अयो. ६८.२१); ९. भरद्वाजाश्रम (वा. रा. अयो. ५४.९); १०. वाह्लीक (वा. रा. अयो. ६८.१८); ११. भरत का अयोध्या-केकय-गिरिवज्र प्रवास (वा. रा. अयो. ६८. १२-२१; ७१.१-१८)।

(२) दक्षिण भारत के स्थल—१. पंचवटी (वा. रा. अर. १३.१२); २. पंपा नदी, (वा. रा. अर. ६.१७); ३. इण्डकारण्य (वा. रा. बा. १०.२५); ४. अगस्त्याश्रम (वा. रा. अर. ११. ८३); ५. जनस्थान (वा. रा. उ. ८१.२०); ६. किष्किंधा (वा. रा. कि. १२.१४) ७. लंका (वा. रा. कि. ५८.१९-२०); ८. विंध्यद्रि (वा. रा. कि. ६०.७)।

रामायण का रचनाकाल—रामायण के सात कांडों में से, दूसरे से ले कर छठवे तक के कांडों (अर्थात् अयोध्या, अरण्य, किष्किंधा, सुंदर एवं युद्ध) की रचना स्वयं वाल्मीकि के द्वारा की गयी थी। बाकी बचे हुए दो कांड (अर्थात् पहला बालकांड, एवं सातवा उत्तरकांड) वाल्मीकि के द्वारा विरचित 'आदि रामायण' में अंतर्भूत नहीं थे। उनकी रचना वाल्मीकि के उत्तरकालीन मानी जाती है। इन दोनों कांडों में वाल्मीकि का एक पौराणिक व्यक्ति के रूप में निर्देश प्राप्त है।

आधुनिक अभ्यासकों के अनुसार, वाल्मीकि के 'आदिकाव्य' का रचनाकाल महाभारत के पूर्व में, अर्थात् ३०० ई. पू. माना जाता है; एवं वाल्मीकि के प्रचलित रामायण का रचनाकाल दूसरे शताब्दी ई. पू. माना जाता है।

वाल्मीकि के 'आदिकाव्य' के रचनाकाल के संबंध में विभिन्न संशोधकों के अनुमान निम्नप्रकार हैं:— १.

डॉ. याकोबी-६ वी शताब्दी ई. पू.; २. डॉ. मैकडोनेल ६ वी शताब्दी ई. पू.; ३. डॉ. मोनियर विल्यम्स-५ वी शताब्दी ई. पू.; ४. श्री. चि. वि. वैद्य-५ वी शताब्दी ई. पू.; ५. डॉ. कीथ-४ शताब्दी ई. पू.; ६. डॉ. विंश्लिस्-३ वी शताब्दी ई. पू.।

उपर्युक्त विद्वानों में से, डॉ. याकोबी, डॉ. विल्यम्स, श्री. वैद्य, एवं डॉ. मैकडोनेल वाल्मीकि के 'आदिकाव्य' की रचना बौद्ध साहित्य के पूर्वकालीन मानते हैं। किंतु बौद्ध साहित्य में जहाँ रामकथा संबंधी स्फुट आख्यान आदि का निर्देश प्राप्त है, वहाँ वाल्मीकि रामायण का निर्देश अप्राप्य है। इससे उस ग्रन्थ की रचना बौद्ध साहित्य के उत्तरकालीन ही प्रतीत होती है।

पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' में भी वाल्मीकि अथवा वाल्मीकि रामायण का निर्देश अप्राप्य है। किंतु उस ग्रंथ में कैकेयी, कौसल्या, शूर्पणखा आदि रामकथा से संबंधित व्यक्तियों का निर्देश मिलता है (पां. सू. ७.३.२; ४.१.१५५; ६. २.१२२)। इससे प्रतीत होता है कि, पाणिनि के काल में यद्यपि रामकथा प्रचलित थी, फिर भी वाल्मीकि रामायण की रचना उस समय नहीं हुई थी।

महाभारत में प्राप्त रामायण के उद्धरण—महाभारत एवं 'वाल्मीकि रामायण' में से रामायण ही महाभारत से पूर्वकालीन प्रतीत होता है। कारण कि, महाभारत में वाल्मीकि के कई उद्धरण प्राप्त हैं, पर रामायण में महाभारत का निर्देश तक नहीं आता।

सात्यकि ने भूरिश्रवम् राजा का प्रायोपविष्ट अवस्था में शिरच्छेद किया। अपने इस कृत्य का समर्थन देते हुए, सात्यकि वाल्मीकि का एक श्लोकार्य (हनुमत्-इंद्रजित् संवाद, वा. रा. यु. ८१.२८) उद्धृत करते हुए कहता है :—

अपि चायं पुरा गीतः श्लोको वाल्मीकिना भुवि ।
न हन्तव्या स्त्रियश्चेति यद्ब्रवीषि पुत्रंगम ॥
सर्वकालं मनुष्येण ध्यवसायवता सदा ॥
वीडाकरममित्राणां यत्स्यात्कर्तव्यमेव तत् ॥
(म. द्रो. ११८.४८.९७५--९७६*)।

महाभारत में अन्यत्र रामायण को प्राचीनकाल में रचा गया काव्य (पुरागीतः) कहा गया है (म. व. २७३.६)। वाल्मीकि रामायण के संस्करण—इस ग्रंथ के संप्रति चार प्रामाणिक संस्करण उपलब्ध हैं, जिनमें १०-१५ सर्गों से बढ़ कर अधिक विभिन्नता नहीं है :—

(१) उद्विच्य पाठ, जो निर्णयसागर प्रेस एवं गुजराती प्रिन्टिंग प्रेस, वेवई के द्वारा प्रकाशित है। इस पर नागोजीभट्ट के द्वारा 'तिलक टीका' प्राप्त है, जो रामायण की सब से विस्तृत एवं उत्कृष्ट टीका मानी जाती है।

(२) दक्षिणात्य पाठ, जो मध्वविलास बुक डेपो, कुंभकोणम् के द्वारा प्रकाशित है। इस संस्करण पर श्रीमध्वाचार्य के तत्त्वज्ञान का काफी प्रभाव प्रतीत होता है। फिर भी, यह संस्करण 'उद्विच्य पाठ' से मिलता-जुलता है।

(३) गौडीय पाठ, जो डॉ. जी. गोरेसियो के द्वारा संराहित, एवं कलकत्ता संस्कृत सितोज में १८४३-१८६७ ई. के बीच प्रकाशित हो चुका है।

(४) पश्चिमोत्तरीय (काश्मीरी) पाठ, जो ल्यहोर के जी. ए. व्ही. कॉलेज के द्वारा १९२३ ई. में प्रकाशित किया गया है।

ग्रन्थ—'वाल्मीकि रामायण' के अतिरिक्त इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त हैं :—१. वाल्मीकिसूत्र; २. वाल्मीकिशिक्षा; ३. वाल्मीकिहृदय; ४. गंगाष्टक (C. C.)।

वाल्मीकि धर्मग्रन्थ—एक ऋषि, जो वरुण एवं चरुणी के दो पुत्रों में से एक था (भा. ६.१८.४)। इसके भाई का नाम भृगु था। केवल भार्गव नाम से ही इसका निर्देश अन्यत्र प्राप्त है (म. शां. ५.७.४०)।

महाभारत में इसे एवं च्यवन नर्गव ऋषि को एक ही माना गया है, एवं इसीके द्वारा 'रामायण' की रचना किये जाने का निर्देश वहाँ प्राप्त है। किंतु वह सही नहीं प्रतीत होता है (वाल्मीकि आदिकवि देखिये)।

वासना—अकं नामक वसु की पत्नी (भा. ६.६.१३)।

वासव—इंद्र का नामान्तर (ब्रह्मांड. २.१८.४४)।

वासवी—सत्यवती (मत्स्यगंधा) का पैतृक नाम (म. आ. ५.७.५७)। यह उपरिचर वसु की कन्या थी, जिस कारण इसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ। इसकी माता का नाम अद्रिका था, जो स्वयं एक मत्सवी थी। इसका विवाह पराशर ऋषि से हुआ था, जिससे इसे व्यास नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (बायु. १.४०)।

वासाश्व—एक मेघद्रष्टा ऋषि, जो वैश्य जाति में उत्पन्न हुआ था (मत्स्य. १४५.११६)।

वासिष्ठ—एक पैतृक नाम, जो ऋग्वेद में एवं उत्तर-कालीन वैदिक संहिताओं में निम्नलिखित आचार्यों के

लिए प्रयुक्त किया गया है:- इंद्रप्रमति, उपमन्यु, कर्णश्रुत, चित्रमहस्, चैकितानेय, सुम्नीक, प्रथ, मन्यु, मृळीक, रौहिण, वसुक, वृषगण, व्याघ्रपाद, शक्ति, एवं सात्यहृद्य (ऋ. ९. ९७; तै. सं. ६.६.२.१; का. सं. ३४.१७; तै. आ. १.१२.७)।

२. एक आचार्यसमूह (जै. उ. ब्रा. ३.१५.२)।

३. बसिष्ठपुत्र शक्ति का नामान्तर (शक्ति देखिये)।

वासिष्ठ मित्रयु—एक आचार्य, जो व्यास के छः पुराणप्रवक्ता शिष्यों में से एक था (वायु. ६१.५६; ब्रह्मांड. २.३५.६५)।

वासुकि—नागों का एक राजा, जो कश्यप एवं कद्रु के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम शतशीर्षा था (म. उ. ११५.४६०*)। जरत्कार ऋषि की पत्नी जरत्कार इसकी बहन थी (म. आ. ३५.३८९*)।

देवासुरों के समुद्रमंथन के समय, यह मंथनदण्ड की रस्सी बन गया था (म. आ. १६-१२)। इसका निवासस्थान 'नागधन्वातीर्थ' में था, जहाँ देवताओं ने नागराज के पद पर इसका अभिषेक किया था। धृतराष्ट्र नामक नाग ने इसे विष्णुपुराण कथन किया था, जो भागे चल कर इसने वत्स को कथन किया (विष्णु. ६. ८.४६)।

यह शिव का अनन्य भक्त था, एवं शिव के ही शरीर पर निवास करता था। त्रिपुरदाह के समय, यह शिव के धनुष की प्रत्येका, एवं उसके रथ का कुंवर बन गया था (म. ब्रौ. परि. १.२५.१२; क. २४.२५.८*)।

सर्पसत्र—जनमेजय के सर्पसत्र में इसके निम्नलिखित पंद्रह कुल जल कर भस्म हुए:- १. कोटिश; २. मानस; ३. पूर्ण; ४. शल; ५. पाल; ६. हलीमक; ७. पिच्छल; ८. कौणप; ९. चक्र; १०. कालवेग; ११. प्रकालन; १२. हिरण्यवाहु; १३. शरण; १४. कक्षक एवं १५. कालदन्तक (म. आ. ५२.५-६)।

आस्तीक नामक ऋषि इसका भतिजा था, जिसने इसके बाकी कुलों को संहार से बचा लिया।

वासुक—एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:—वसुकरण (ऋ. १०.६५); वसुकन् (ऋ. १०.२०)।

वासुदेव—श्रीविष्णु के श्रीकृष्ण नामक आठवें अवतार का नामान्तर (कृष्ण देखिये)। भगवान् विष्णु के उपासक वासुदेव कृष्ण के रूप में ही प्रायः उसकी उपासना करते हैं (विष्णु देखिये)।

२. एक वास्तुशास्त्रज्ञ, जिसका वास्तुशास्त्रविषयक ग्रन्थ उपलब्ध है (मत्स्य. २५२.३)।

३. पुंड्र देश के वासुदेव नामक राजा का नामान्तर (पौण्ड्रक वासुदेव देखिये)।

वास्तु—विश्वामित्र कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वास्तुपश्य—एक ब्राह्मण (जै. ब्रा. ३.१२०)। पाठभेद—'वास्तुपस्य'।

वास्त्य—एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास की ऋक्षिष्यपरंपरा में से वेदमित्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसे वत्स, वास्त्य, एवं मस्त्य नामान्तर प्राप्त थे (व्यास देखिये)।

वाहन—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्य परंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था। ब्रह्मांड में इसे कृत का शिष्य कहा गया है (ब्रह्मांड. २.३५.५१)।

वाहनप—गौरपराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसे 'वाहयौज' नामान्तर भी प्राप्त था।

वाहिक—एक वेदवेत्ता ब्राह्मण, जो दुःस्थिति के कारण नमक वेंच कर अपनी जीविका चलाता था। इसने जौदन में अनेकानेक पापकर्म किये। अंत में यह एक शेर के द्वारा मारा गया। किंतु इसका मांस गंगा नदी में गिरने के कारण, इसका उद्धार हुआ (स्कन्द. २.४.१-२८)।

वाहिनी—सोमवंशीय कुरु राजा की पत्नी, जिसे अभिष्वत् आदि पाँच पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. ८९. ४५)।

वाहिनीपति—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाहीक—एक लोकसमूह, जो पंजाब प्रदेश में विवाशा नदी के तटपर स्थित था (म. क. ४४.२०-२६; भी. १०.४५)। महाभारत में इन्हे, 'माद्र,' 'जार्तिक' 'आरड' एवं 'पंचनद' आदि नामान्तर दिये गये हैं।

वाहीक का शब्दशः अर्थ 'बाहर के' होता है। उत्तर पंजाब प्रदेश में हिमालय की तलहटी में दरद लोगों के मजदूरी रहनेवाले 'वाहलिक' लोग, सरस्वती नदी के कारण, मध्यदेश में रहनेवाले आर्य लोगों से अलग हो गये। इसी कारण, इन्हें वाहीक नाम प्राप्त हुआ। आगे चल कर पंजाब में रहनेवाले कंबोज, यवन, दरद आदि सारे लोगों को वाहीक सामूहिक नाम प्राप्त हुआ।

महाभारत में प्राप्त कर्ण-शक्यसंवाद में इन लोगों की कर्ण ने कद्रु आलोचना की है। शक्य स्वयं मद्र एवं

वाहीक लोगों का राजा था। इन लोगों की उत्पत्ति के बारे में एक कल्पनारम्य एवं व्यंजनायुक्त कथा वहीं दी गयी है। विपाशा (व्यास) नदी के किनारे 'वही' एवं 'हीक' नामक निशाचर पिशाचों का एक जोड़ा रहता था, जिसकी संतान आगे चढ़ कर 'वाहीक' नाम से प्रसिद्ध हुई (म. क. ३०.४४)।

वाहुरि—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाहनिक—एक राजकुल, जिसमें तीन राजा समाविष्ट थे (वायु. १९. ३७३)।

वाह्यक—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाह्यका—एक राजकन्याद्वय, जो मत्स्य के अनुसार संवत् राजा की कन्याएँ, एवं यादव राजा सत्यत भजमान राजा की पत्नियाँ थीं। इनके पुत्रों के नाम निम्नि, कुमिल एवं वृष्णि थे (मत्स्य. ४४.४९-५०)।

वाह्यमय—नीलमशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाहायन—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद—महाभाग।

विंश—(स. दिष्ट.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार क्षुप राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम कल्याण था (वायु. ८६.६)।

२. (स. इ.) इक्ष्वाकु राजा का पुत्र, जिसके पुत्र का नाम विंश था (म. आश्र. ४.५)।

विकचा—विरूपाक नामक नैर्ऋत राक्षस की पत्नी, जिसे भूमिराक्षस नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (ब्रह्मांड. ३. ७.२२)।

विकट—धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। यह द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.३)। भीमसेन को धायल करनेवाले धृतराष्ट्र के चौदह पुत्रों में से यह एक था। अन्त में भीमसेन ने इसका वध किया (म. क. ३२.१४)।

२. रावणपक्षीय एक राक्षस, जो अंगद के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. १२५)।

३. रुद्रगणों में से एक।

४. एक राक्षस, जिसे गंगाजल पिने के कारण मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. उ. २०४-२०५)।

विकटा—एक राक्षसी, जो अशोकवन में सीता पर पहरा देनेवाली राक्षसियों में से एक थी (वा. रा. सु. २३.१४)।

विकटानन—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र विकट का नामान्तर।

विकंपन—रावण के पक्ष का एक राक्षस, जो राम-रावण युद्ध में मारा गया (भा. ९.१०.१८)।

२. रुद्रगणों में से एक।

विकर्ण—धृतराष्ट्र का एक महारथि पुत्र, जो कौरव पक्ष के ग्यारह महारथियों में से एक था। द्रौपदी स्वयंवर में यह उपस्थित था।

यह बड़ा न्यायी था, एवं द्रौपदीवल्लहरण के समय, विदुर की तरह इसने भी इस पापकर्म की ओर धृष्टा प्रकट की थी (म. स. ६१.१२-२४)। भारतीय युद्ध में इसका निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध हुआ था:—सुतकीम (म. भी. ४३.५६); सहदेव (म. भी. ६७. २०); वयोत्कच (म. भी. ८८.३२); नकुल (म. द्रो. ८२.३०)। अंत में भीमसेन ने इसका वध किया, जिस समय, इसके लिए उसने काफी दुःख प्रकट किया था (म. द्रो. ११२.३०)।

विकर्तन—कोढ़ से पीड़ित एक सर्ववंशीय राजा, जो साभ्रमती नामक नदी में स्नान करने के कारण मुक्त हुआ। उस स्थान को 'राजखड्ग' कहते हैं (पद्म. उ. १३५)।

विकुक्षि—इक्ष्वाकु राजा के शशाद नामक पुत्र का नामान्तर (शशाद देखिये)।

विकुंज—एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में कौरव-पक्ष में शामिल था (म. भी. ५२.९)।

विकुंजन अथवा **विकुंठन**—(सो. पू.व.) एक राजा, जो सोमवंशीय हस्तिन् राजा का पुत्र था। त्रिगर्तराज की कन्या यशोधरा इसकी माता थी। दशार्ण राजकन्या सुदेवा इसकी पत्नी थी, जिससे इसे अजमीढ़ नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०.३८)।

विकुंठ अथवा **वैकुंठ**—रैवत मन्वन्तर का एक देव-तासमूह, जिसमें निम्नलिखित चौदह देव शामिल थे:—अजेय, कृश, गौर, जय, भीम, दम, ध्रुव, नाथ, यश, विद्वस्, वृष, शुचि, भेनु, एवं दांत (ब्रह्मांड. २.३६.५७)।

विकुंठा—एक देवी, जो रैवत मन्वन्तर में उत्पन्न विकुंठ नामक देवताओं की माता मानी जाती है। चाक्षुष मन्वन्तर में उत्पन्न वैकुंठ नामक देवतावतार भी इसीका ही पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.४.३१; विष्णु. ३.१.४१)। इसके पति का नाम शुभ्र था।

विकुंडल—निषध नगर का एक पापी पुरुष, जिसे यमुना नदी में स्नान करने के कारण मुक्ती प्राप्त हुई (पद्म. स्व. ३०)।

विकुंभ—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

विकृत—ब्राह्मण का वेश धारण किया हुआ कामदेव, जिसने इसी वेश में इक्ष्वाकु राजा के साथ संवाद किया था (म. शां. १९३.८३-११६)।

विकृति—(सो. क्रोष्ट्र.) एक यादव राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार जीमूत राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम भीमरथ था। मत्स्य में इसे 'विमल' कहा गया है।

२. हृद्रगणों में से एक।

विक्रम—धृतराष्ट्रपुत्र बलवर्धन का नामांतर।

विक्रमशील—एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम कालिंदी, एवं पुत्र का नाम दुर्गम था (मार्क. ७२)।

विक्रमित्र—शुंगवशीय वज्रमित्र राजा का नामांतर (वायु. ९९.३४१)।

विक्रांत—(सू. दिष्ट.) एक प्रजाहितक्ष राजा, जो दम राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सुयुति था (वायु. ८६.१३)।

२. एक प्रजापति, जो बालेय गंधर्वों का जनक माना जाता है (वायु. ६५.५३; ६९.१८)।

विक्षम—कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार।

विक्षर—एक असुर, जो कश्यप एवं दनायु के चार पुत्रों में से एक था। इसके अन्य तीन भाइयों के नाम बल, वीर एवं वृत्र थे (म. आ. ५९.३२)। आगे चल कर, यही पृथ्वी पर वसुमित्र राजा के रूप में अवतीर्ण हुआ (म. आ. ६१.३९)।

विक्षोभण—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

विखनस—एक कृष्णयजुर्वेदी आचार्य, जिसका निर्देश 'वैखानसधर्मप्रश्न' नामक ग्रंथ में एक पूर्वार्चाय के नाते किया गया है (वै. ध. २.५.९; ३.१५.१४)। वसिष्ठधर्मसूत्र में भी इसके सूत्र का निर्देश प्राप्त है (व. ध. ९.१०), जहाँ इसने वानप्रस्थाश्रम लेने के अनेकानेक विधि बताये हैं। अनुलोम एवं प्रतिलोम विवाह की संतति के लिए कौनसे व्यवसाय सुयोग्य है, इस संबंध में भी इसके उद्धरण प्राप्त हैं।

विख्यात—एक राक्षस, जो तेरह सैहिकेयों में से एक माना जाता है।

विगाहन—मुकुटवंश में उत्पन्न एक कुलंगार राजा, जिसने अपने दुर्व्युहहार के कारण अपने जातिबंधों का एवं स्वजनों का नाश किया (म. उ. ७२.१६)।

विग्रह—एक स्कंदपार्षद, जो समुद्र के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक था। दूसरे पार्षद का नाम संग्रह था (म. शा. ४४.४६)।

विघ्न—रावणपक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

विघ्न—वध नामक राक्षस का पुत्र (वायु. ६९.१३०)।

२. नरमांसभक्षक एक राक्षस, जो कालि एवं अयोमुखी नामक राक्षस का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.५९.१०)।

विघ्नेश—श्रीगणेश नामक देवता का नामांतर। ब्रह्मांड में इसके इक्ष्वाकवत नामान्तर दिये गये हैं (ब्रह्मांड. ४. ४८.६३-६६)।

विचक्राक्ष—एक राजा, जिसने मांसभक्षण का त्याग किया था (म. अनु. १७७.७१)।

विचक्षण ताण्ड्य—एक आचार्य, जो गर्दभीमुख शांडिल्यायन नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम शाकदास भाडितायन था (वं. ब्रा. १.)।

विचक्षुष—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद- 'विचक्षे'।

विचस्तु—एक राजा, जो 'यज्ञकर्म में अहिंसाव्रत का पालन करना चाहिए' इस तत्व का प्रतिपादक था। अपने इस मत के प्रतिपादन के लिए इसने 'विचस्तु गीता' की रचना की थी, जो भीष्म ने युधिष्ठिर को निवेदित की थी। पाठभेद- 'विचस्त्यु' (म. शां. २५७.१)।

विचारिन् काबन्धि—एक आचार्य, जो मांधातृ राजा के यज्ञ में उपस्थित था (गो. ब्रा. १.२.९; १८)। कश्यप का वंशज होने से इसे 'काबन्धि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

विचार—कृष्ण एवं रुक्मिणी के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.९)।

विचित्र—रौच्य मनु के पुत्रों में से एक (वायु. १००.१०८)।

२. देवसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक (भा. ८. १३.३०)।

३. एक राजा, जो क्रोधवंश नामक वैश्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ५१.५६)। भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। पाठभेद- 'विचित्य'।

४. यम का एक लेखक (स्कंद. ७.१.१४३)।

विचित्रवीर्य—(सो. पुरु.) एक राजा, जो शंतनु एवं सत्यवती से उत्पन्न दो पुत्रों में कनिष्ठ पुत्र था। इसके ज्येष्ठ भाई का नाम चित्रांगद था।

गोर्ध्व युद्ध में इसके ज्येष्ठ ऋतु चित्रांगद की मृत्यु हो गयी, जिस कारण कनिष्ठ होते हुए भी भीष्म ने इसे राजगद्दी पर बैठाया (म. आ. ११.१३)। यह भीष्म की आज्ञा से ही राज्यशासन करता था।

विवाह एवं मृत्यु—भीष्म ने काशिराज की कन्याएँ अंबा, अंबिका एवं अंबालिका को स्वयंवर में जीत लिया, एवं उनका विवाह इससे करना चाहा। किन्तु उनमें से अंबा ने इससे विवाह करने से इन्कार कर दिया। इसी कारण, भीष्म ने विका एवं अंबालिका से इसका विवाह करा दिया। असंयमपूर्ण जीवन के कारण, यह राज्यधमा का शिकार बन गया, एवं अल्पवय में ही अनपत्य अवस्था में इसकी मृत्यु हुई (म. आ. १६.५७-५८)।

इसकी मृत्यु के पश्चात्, भीष्म ने इसकी पत्नियाँ अंबिका एवं अंबालिका को नियोग-पद्धति से संतति उत्पन्न करने की आज्ञा दी। तदनुसार, कृष्णद्वैपायन व्यास से अंबिका एवं अंबालिका को क्रमशः धृतराष्ट्र एवं पाण्डु नामक पुत्र उत्पन्न हुए। अंबिका की दासी से विदुर उत्पन्न हुआ (म. आ. १०.६०)।

२. एक शिवभक्त, जो शिव की उपासना के कारण जीवन्मुक्त हुआ था (स्कंद. १.३३)।

विचेतस्—भव्य देवों में से एक।

विजय—(सो. अनु.) एक राजा, जो बृहन्मनस् राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम सत्या था।

२. (सु. निमि.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार जय राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम ऋतु (ऋतु) था (भा. ०.१३.२५)।

३. (सो. शत्रु.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार मंजय राजा का पुत्र था। वायु में इसे मंजय राजा का पौत्र, एवं जय राजा का पुत्र कहा गया है।

४. (सो. पुरुरवम्.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पुरुरवस् एवं उर्वशी का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम भीम था (भा. १.१५.१-३)। अन्यत्र इसे 'अमावसु' कहा गया है।

५. (सो. वसु.) एक यादव राजा, जो वसुदेव एवं उपदेवी का पुत्र था (मत्स्य. ४६.१७)।

६. (सो. अनु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु, वायु एवं मत्स्य के अनुसार जयद्रथ राजा का पुत्र था। इसके का नाम धृति था।

७. (सु. इ.) एक क्षत्रियविजेता सम्राट्, जो भागवत के अनुसार चंप राजा का, एवं वायु, विष्णु एवं भविष्य के अनुसार चन्तु राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम रुक् था।

८. विष्णु के जय-विजय नामक दो द्वारपालों में से एक (जय-विजय देखिये)।

९. कृष्ण एवं जांबवती के पुत्रों में से एक।

१०. विष्णु का एक पार्षद (भा. ८.२१.१६)।

११. (आंश्र. भविष्य.) एक आंश्रवेरीय राजा, जो यज्ञश्री (यज्ञ) राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम चंद्रविश्र था। इसने छः वर्षों तक राज्य किया था (भा. १२.१.२७)।

१२. राम दाशरथि राजा के अष्टप्रधानों में से एक।

१३. राम दाशरथि राजा की सभा का एक विदूषक।

१४. भव्य देवों में से एक।

१५. पृथुक देवों में से एक।

१६. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१३०)।

१७. अज्ञातवास के समय अर्जुन के द्वारा धारण किया गया एक गुप्त सांकेतिक नाम (म. वि. ५.३०)।

अर्जुन के सुविख्यात नामांतरों में से 'विजय' एक था, एवं इसी नाम से उसने कालकेयो को परास्त किया था (भा. १.१.३३)।

१८. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में, इसने जय एवं दुर्जय नामक अपने भाइयों को साथ ले कर, नील, काश्य एवं जयस्तेन राजाओं से युद्ध किया था (म. द्रो. २४.४३)। इसने सात्यकि एवं अर्जुन से भी युद्ध किया था (म. द्रो. १२.८)।

१९. (सु. इ.) एक राजा, जो सुदेव राजा का पुत्र, एवं भरुक राजा का पिता था (भा. १.८.१)।

२०. मगधदेश का एक ब्राह्मण, जिसने घटोत्कचपुत्र वर्षरिक् को देवी की कृपा प्राप्त कराने में सहाय्यता दी थी (स्कंद. १. २.६०-६६)।

२१. लोकाक्षि नामक शिवावतार का एक शिष्य।

२२. भैरववंश में उत्पन्न वाराणसी नगरी का एक राजा, जिसने खाण्डवी नगरी नष्ट कर, वहाँ खाण्डववन का निर्माण किया था। पश्चात् वह वन इसने इंद्र को फ्रीडा करने के लिए दिया। इसके कुल तेरह पुत्र थे, जिनमें उपरिचर सर्वाधिक बलवान् एवं धार्मिक था (कालि. १२)।

विजया—शल्य राजा की कन्या, जो सहदेव पाण्डव की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम सुहोत्र था (म. आ. १०.८७)। महाभारत के कई संस्कारणों में इसे मद्र देश के युतिमन् राजा की कन्या कहा गया है। मागवत में इसे पर्वत राजा की कन्या कहा गया है (भा. १.२२.३१)।

२. श्रीकृष्ण की पत्नियों में से एक (मत्स्य. ४७.१४)।

३. एक योगमाया, जो पार्वती की सखी थी (भा. १०.२.११)। पार्वती का मानसपुत्र वीरक को खाने के लिए इसे भेजा गया था (मत्स्य. १५४.५४९)। इसने पार्वती के साथ तप किया था।

४. दशार्ह राजा की कन्या, जो सम्राट् भुमन्वु की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम सुहोत्र था (म. आ. १०.३५)। पाठभेद—'जया'।

विजय अथवा **विजय**—एक राक्षस, जो अनायुषा नामक राक्षसी का पुत्र था। इसे खर एवं कालक नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे।

विजिताश्व 'अंतर्धान'—एक राजा, जो पृथु वैन्व्य राजा के पाँच पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम अर्चि था।

सौ अश्वमेध का निश्चय कर, इसने निम्नान्वें अश्वमेध यज्ञ पूर्ण किये। इस पर इंद्र को डर उत्पन्न हुआ कि, यह शायद इंद्रद ले लेगा। अतएव उसने इसका अश्वमेधीय अश्व चुरा लिया।

उस समय इंद्र से किये युद्ध में इसने काफ़ी पराक्रम दर्शा कर, अपना अश्व पुनः प्राप्त किया, जिस कारण इसे 'विजिताश्व' नाम प्राप्त हुआ। इसी समय इंद्र ने प्रसन्न हो कर इसे अंतर्धान होने की विद्या सिखायी, इस लिये इसे 'अंतर्धान' नाम प्राप्त हुआ। यज्ञकर्म में किये जानेवाले पशुहवन का यह पुरस्कर्ता था, जिस कारण इसने अग्ने आयुष्य में अनेकानेक यज्ञ किये।

परिवार—इसे शिखण्डिनी एवं नभस्वती नामक दो पत्नियाँ थीं। उनमें से शिखण्डिनी से इसे पावक, पवमान एवं युचि नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए। नभस्वती से इसे हविर्धान नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (भा. ४.१८-१९)।

विठ्ठल—विष्णु की एक सुविख्यात प्रतिकृति, जिसकी उपासना मुख्यतः आंध्र कर्नाटक एवं महाराष्ट्र में की जाती है (पद्म. उ. १७६.५७)। विठ्ठल की उपासना के संबंध

में, वै. गोपाल अण्णा कन्हाडकर कृत 'विठ्ठलभूषण' ग्रंथ सुविख्यात है (विष्णु देखिये)।

विदूरथ—(सो. पू.) एक पूर्वशीय सम्राट्। परशुराम जब पृथ्वी निःक्षत्रिय कर रहा था, तब इसकी माता ने इसे ऋष्यवत् पर्वत पर एक ऋषि के आश्रम में लिया कर रखा था। वहाँ एक रीछ ने इसकी रक्षा की।

अपना क्षत्रियसंहार समाप्त कर परशुराम जब यूपारक क्षेत्र में चला गया, तब यह ऋष्यवत् पर्वत से नीचे उतरा, एवं पुनः राज्य करने लगा (म. शां. ४९.६०)। पाठभेद—'विदूरथ'।

२. (सो. कुरु.) एक राजा, जो कुरु राजा एवं दशार्हीं शुभांगी का पुत्र था। मधुकुल में उत्पन्न संप्रिया इसकी पत्नी थी, जिससे इसे अनश्वन् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. १०.४१-४२)। पाठभेद—'विदूर'।

वितत्य—एक ऋषि, जो गुल्ममदवैशीय विह्व्य ऋषि का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सत्य था (म. अनु. ३०.६२)।

वितथ—(सो. पू.) एक राजा, जो दुष्यन्तपुत्र भरत राजा का पुत्र था। भरत राजा ने भरद्वाज ऋषि को गोद में लिया, एवं उसका नाम 'वितथ' रखा गया। इसी कारण, इसे 'वितथ मरदाज' भी कहते थे।

यह बृहस्पति के वीर्य से उत्पन्न हुआ था। इस कारण यह जन्म से ब्राह्मण था, किन्तु आगे चल कर क्षत्रिय बन गया। इसी लिये इसे 'ब्रह्मक्षत्रिय' भी कहते थे।

कई पुराणों के अनुसार, भरत राजा ने भरद्वाज ऋषि को नहीं, बल्कि उसके पुत्र को गोद में लिया था, जिसका नाम वितथ था। इसे भरत राजा के गोद में दे कर भरद्वाज स्वयं वन में चला गया (ब्रह्म. १३.५९-६१; ह. वं. १.३२.१६-१८)।

वितदु—एक यादव, जिसकी गणना यादवों के सात प्रधान मंत्रियों में की जाती थी (म. स. १३. १५९५)।

वितर्क—एक राजा, जो कुरु राजा के वंशज धृतराष्ट्र का पुत्र था (म. आ. ८९.५१५)।

वितर्दन—रावणपक्षीय एक राक्षस (वा. रा. यु. ६४.२२)।

विताना—भौत्य मन्वन्तर के बृहद्रानु नामक अवतार की माता (भा. ८.१३.३५)।

विति—तुपित अथवा साध्य देवों में से एक।

वित्त—एक आचार्य, जो कुशुभि नामक आचार्य का शिष्य था (ब्रह्मांड. २.३५.४३)।

२. प्रतर्दन देवों में से एक।

३. सुत्र देवों में से एक।

वित्तदा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२७)।

विदग्ध शाकल्य—एक आचार्य, जिसने विदेह जनक के राजसभा में याज्ञवल्क्य के साथ वाद-विवाद किया था। वाद-विवाद में पराजित होने के कारण, इसे पूर्व-निवोजित शर्त के अनुसार, मृत्यु का स्वीकार करनी पड़ी (बृ. उ. ३.९.१; ४.१.७ माथ्य; जै. उ. ब्रा. २.७६; श. ब्रा. ११.६.३.३)। पौराणिक साहित्य में इसका निर्देश 'देवमित्र शाकल्य' नाम से किया गया है (देवमित्र शाकल्य देखिये)।

२. एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की यजुःशिल्पपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था (व्यास देखिये)।

विदूषड—एक राजा, जो अपने पुत्र दण्ड के साथ द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. भा. १७७.१)। पाठभेद (मांडारकर संहिता)—'सुदण्ड'।

विदथिन् बार्हस्पत्य—भरद्वाज ऋषि के पुत्र वितथ का नामांतर।

विदन्वत् भार्गव—एक सामद्रष्टा आचार्य (पं. ब्रा. १३.११.१०; जै. उ. ब्रा. ३.१)। भृगु का वंशज होने से इसे 'भार्गव' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

विदग्ध—एक राजा, तो तरंत एवं पुस्मीठ नामक राजाओं का पिता था (बृहदे. ५.५.०.८१; ऋ. ५.६१)।

विदर्भ—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो ऋषभदेव राजा के नवखंडाधिपति नौ पुत्रों में से एक था। ऋषभदेव के नौ खंडों में से एक खंड का राज्य इसे प्राप्त हुआ, जो आगे चल कर 'विदर्भखंड' नाम से सुविख्यात हुआ। अगस्त्यपत्नी लोरासुद्रा संभवतः इसीकी ही कन्या होगी (भा. ५.४.१०)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो ज्यामघ राजा का पुत्र था।

नारदपुराण में इसका पैतृक नाम 'काश्यप' बताया गया है (नारद. १.८.६३)। इसकी माता का नाम 'शैब्या' अथवा 'चैत्रा' औशिनरी था। इसका विवाह भोज-राजकन्या उपदानवी से हुआ था, जो इतके जन्म के पूर्व ही, इसके पिता ज्यामघ के द्वारा युद्ध में जीत कर लायी

गयी थी (ज्यामघ देखिये)। उससे इसे रोमपाद (लोमपाद), कथ एवं कौशिक नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए, जिनमें से रोमपाद अत्यंत सुविख्यात था (ह. वं. १.३६.१८-२०)। इसके केशिनी एवं सुमति नामक दो कन्याओं का निर्देश भी प्राप्त है, जो समर राजा को दी गयी थीं।

३. एक क्षत्रिय राजा, जो कार्तवीर्य अर्जुन का मित्र था। परशुराम ने इसका वध किया (ब्रह्मांड. ३. ३९.२)।

४. एक लोकसमूह, जिसे सहदेव ने अपने दक्षिण-दिग्विजय के समय जीता था (म. स. २८.४१)। इस लोकसमूह में उत्पन्न निम्नलिखित व्यक्तियों का निर्देश महाभारत में प्राप्त है:— भीष्मक, दमयंती (म. व. ५०-२१); भीम, जो दमयंती का पिता था; रुक्मिणी, जो भीष्मक राजा की कन्या थी; रुक्मिन्, जो भीष्मक राजा का पुत्र था।

विदर्भिन कौडिन्य—एक आचार्य, जो वत्सनपात् ब्राह्मण्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम गालव था (बृ. उ. २.५.२२; ४.५.२८ माथ्य.)।

विदल—एक राक्षस, जो पार्वती के द्वारा अपने साथी उत्तल के साथ काशी नगर में गंद के प्रहार से मारा गया। इसी कारण, काशी में स्थित शिवलिंग को 'कंदुकेश्वर' कहते हैं (शिव. रुद्र. यु. ६९)।

२. सूर्यवंशीय ध्रुवसंधि राजा का प्रधान।

विदारण—सिंधुनरेश जयद्रथ राजा के भाइयों में से एक (म. व. २५०.१२)।

विदारुण—चंपकनगरी का एक दुष्ट राजा। ब्राह्मणों एवं वेदों की निंदा करने के कारण इसके शरीर में कोढ़ उत्पन्न हुआ, जो चेत्रवती नदी में स्नान करने के कारण नष्ट हुआ (पद्य. उ. १३५)।

विदुर—एक नीतिवेत्ता धर्मगुरु, जो व्यास ऋषि का दासीपुत्र एवं कौरवों का मुख्यमंत्री था (म. स. ५.१.२०)। व्यास ऋषि के द्वारा, विचित्रवीर्य राजा की पत्नी अंबिका की दासी के गर्भ से यह उत्पन्न हुआ था (ब्रह्म. १.५.४; भा. ९.२२)।

महाभारत में वर्णित जीवन-चरित्रों में से विदुर एवं कर्ण ये दोनों शापित प्रतीत होते हैं, जिनका सारा पराक्रम एवं बुद्धिमत्ता केवल हीन जन्म के दाग के कारण चूर मूर हो गया। इसी दाग के कारण, इन्हें सारा जीवन अवमानित अवस्था में जीना पड़ा, एवं अनेकानेक प्रकार के कष्ट उठाने

पड़े। इसी 'दैवायत्' शाप की कृष्णछाया कर्ण के समान विदुर के ही सारे जीवन को प्रस्त करती हुई प्रतीत होती हैं।

महाभारत में वर्णित व्यक्तियों में से कृष्ण, युधिष्ठिर, भीष्म एवं विदुर ये चार ही व्यक्ति, सत्य के मार्ग से चल कर अपने अपने पद्धति से जीवन का सही अर्थ लोजने का प्रयत्न करते हैं। इनमें से अत्यात्म का एक ब्रह्मज्ञान का अधिक बड़बवार न करते हुए भी, सदाचरण, नीति एवं मानवता के परंपरागत पद्धति से, सत्य की खोज करने-वाना विदुर सचमुच ही एक धर्मात्मा प्रतीत होता है।

विदुर केवल तत्त्वज्ञ ही नहीं, बल्कि श्रेष्ठ राजनीतिज्ञ राजपुरुष भी था। धृतराष्ट्र, दुर्योधन, युधिष्ठिर आदि भिन्न भिन्न लोगों को सलाह देने का कार्य इसने आजन्म किया, परन्तु कभी भी अपने श्रेष्ठ तत्वों से एवं सत्यमार्ग से यह न्युत नहीं हुआ। धृतराष्ट्र के प्रमुख सलाहगार के नाते, यह उसे सत्य एवं शांति का मार्ग दिखाता रहा, परन्तु यह कार्य इसने इतनी सौम्यता से किया कि, इसके द्वारा कहे गये अप्रिय भाषण सुन कर भी धृतराष्ट्र आजन्म इसका मित्र ही रहा।

विदुर का हीनकुलीनत्व—एक समस्या—महाभारत में समस्त पात्रों में से केवल विदुर एवं कर्ण ही हीनयोनि के नहीं माने जाते हैं, यह एक अनाकलनीय समस्या है। विदुर के पाण्डु एवं धृतराष्ट्र ये दोनों भाई 'नियोगज' संतान थे, एवं अपने पिता विचित्रवीर्य की मृत्यु के पश्चात्, अंबालिका एवं अंबिका को व्यास के द्वारा उत्पन्न हुए थे। पाण्डवों का जन्म भी अपने पिता पांडु के द्वारा नहीं, बल्कि विभिन्न देवताओं के द्वारा हुआ था। ऐसी स्थिति में इन सारे लोगों को 'हीन' जन्म का दोष न लगा कर, केवल विदुर एवं कर्ण ही इस दोष के शिकार क्यों बने हैं, यह निश्चित रूप से कहना मुश्किल है।

इस विरोधाभास के केवल दो ही कारण प्रतीत होते हैं। एक तो क्षत्रिय स्त्रियों के द्वारा की गयी नियोग की विवाहब्रह्म संतति महाभारत काल में धर्म्य मानी जाती थी, एवं दूसरा यह कि, व्यक्ति का कुल उसके पिता के कुल से नहीं, बल्कि माता के कुल से मूल्यांकित किया जाता था। संभवतः इसी मानुप्रधान समाज्यवस्था के कारण, अंबिका, अंबालिका एवं कुंती आदि के पुत्र उच्छुकुलीन क्षत्रिय राजपुत्र कहलाये, एवं विदुर एवं कर्ण जैसे दासीपुत्र एवं सूतपुत्र हीनकुलीन माने गये।

जन्म—कुरु राजा विचित्रवीर्य की निःसंतान अवस्था में मृत्यु होने के पश्चात्, उसकी माता सत्यवती ने अपनी स्तुपा अंबिका को व्यास से पुत्रप्राप्ति कराने की आज्ञा दी। अंबिका को व्यास से धृतराष्ट्र नामक अंधा पुत्र उत्पन्न हुआ। अतएव सत्यवती ने अंबिका को पुनः एक बार व्यास के पास जाने के लिए कहा। किन्तु उस समय अंबिका ने स्वयं न जा कर, अपनी दासी को व्यास के पास भेज दिया। तदुपरान्त उस दासी को व्यास से एक तेजस्वी एवं बुद्धिमान् पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम विदुर रखा गया (म. आ. १००.२६-२७)। दासी से उत्पन्न होने के कारण, इसे 'क्षत्ता' भी कहते थे। शूद्रा के गर्भ से ब्राह्मण के द्वारा उत्पन्न होने के कारण, इसको राज्य की प्राप्ति न हुई थी।

पूर्वजन्म—महाभारत में इसके पूर्वजन्म की कथा प्राप्त है। एक बार अणिमांडव्य ऋषि का यमधर्म से झगड़ा हुआ, जिसमें उसने यमधर्म को सूद्रयोनि में जन्म लेने का शाप दिया। उसी शाप के कारण, यमधर्म ने विदुर के रूप में जन्म लिया था (म. आ. १०१. २५-२७; माण्डव्य देखिये)।

पाण्डवों की सहाय्यता—विदुर की प्रवृत्ति बाल्यकाल से ही धर्म तथा सत्य की ओर थी। भीष्म ने धृतराष्ट्र एवं पाण्डु के साथ इसका भी पालन-पोषण किया था। इसका पाण्डवों पर असौम्य स्नेह था, तथा यह उन्हें प्राणों से भी अधिक मानता था। इसने समय समय पर पाण्डवों का साथ दिया, उन्हें सांत्वना दी, तथा मृत्यु से बचाया। भीमसेन जब नागलोक में चला गया था, तब इसने कुंती का वीर बचाया था।

दुर्योधन के द्वारा पाण्डवों को लाक्षाग्रह में जलवा देने की योजना, इसी के ही कारण असफल हुई। इसने कौरवों के षड्यंत्र से बचने के लिए, सांकेतिक भाषा में युधिष्ठिर को सारे वस्तुस्थिति का ज्ञान कराया। लाक्षाग्रह में सुरंग बनाने के लिए इसने सनक नामक अपने दूत को पाण्डवों के पास भेजा था। लाक्षाग्रह से मुक्तता होने के पश्चात्, एक मौंशी की सहाय्यता से इसने उन्हे गंगा नदी के पार पहुंचाने के लिए सहाय्यता की थी। लाक्षाग्रहदाह की वार्ता सुन कर दुःखित हुए भीष्म को, वस्तुस्थिति का ज्ञान इसने ही कराया था (म. आ. १३५-१३७)।

धृतराष्ट्र का सलाहगार—यह अत्यंत निःस्पृह राजनीतिशास्त्रज्ञ था, जिस कारण अंधे धृतराष्ट्र राजा ने

इसे अपना मुख्य मंत्री नियुक्त किया था, एवं यद्यपि यह उससे उम्र में छोटा था, फिर भी वह इसीके ही सलाह से राज्य का कारोबार चलाता था।

दुर्योधन एवं शकुनि के द्वारा द्यूतक्रीडा का षडयंत्र जब रचाया गया, तब इसने संभाव्य दुष्परिणामों की चेतावनी धृतराष्ट्र को दी थी। इसने द्यूत-क्रीडा का तीव्र विरोध किया था, तथा जुएँ के अवसर पर दुर्योधन की कटु आलोचना की थी।

जिस समय दुर्योधन ने द्रौपदी को पकड़ कर समा-भवन में लाने का आदेश दिया, उस समय इसने पुनः एक बार दुर्योधन को चेतावनी दी। समाग्रह में द्रौपदी ने भीष्म से अपनी रक्षा करने के लिए कई तात्त्विक प्रश्न पूछे, तब इसने प्रह्लाद-सुधन्वन के आख्यान का स्मरण भीष्म को दे कर, द्रौपदी के प्रश्नों का विचारपूर्वक जवाब देने के लिए उससे प्रार्थना की थी (म. स. ५२-८०)। किन्तु इसके सारे प्रयत्न दुर्योधन की जिद्द एवं धृतराष्ट्र की दुर्बलता के कारण सदैव असफल ही रहे।

पाण्डवों के वनवाससमाप्ति के पश्चात्, इसने उनका राज्य वापस देने के लिए धृतराष्ट्र को काफी उपदेश दिया। इस समय इसने अतीव राज्यतृष्णा एवं कौटुंबिक कलह के कारण, राजकुल विनाश की गतां में किस तरह जाते हैं, इसका भी विदारक चित्र धृतराष्ट्र को कथन किया था। श्रीकृष्णदौत्य के समय, श्रीकृष्ण को धोखे से कैद कर लेने की योजना दुर्योधन आदि ने बनायी। उस समय भी इसने उसे चेतावनी दी थी, 'इस प्रकार का दुःसाहस तुमको मिटा देगा (म. उ. ९०)।

विदुरनीति—कृष्णदौत्य के पूर्वरात्रि में, आनेवाले युद्ध की आशंका से धृतराष्ट्र अत्यधिक व्याकुल हुआ, एवं उसने सारी रात विदुर के साथ सलाह लेने में व्यतीत की। उस समय विदुर से धृतराष्ट्र के द्वारा दिया गया उपदेश महाभारत के 'प्रजागर पर्व' में प्राप्त है, जो 'विदुर-नीति' नाम से सुविख्यात है। विदुर-नीति का प्रमुख उद्देश्य, सन्तुष्टि हुए धृतराष्ट्र को सुयोग्य मार्ग दिखलाना है, जो श्रीकृष्ण के द्वारा अर्जुन को कथन किये गये भगवद्गीता से साम्य रखता है। किन्तु जहाँ भगवद्गीता का सारा उद्देश्य अर्जुन को युद्धप्रवण करना है, वहाँ 'विदुर-नीति' में सार्वकालिक शांतिमय जीवन का एवं युद्धविरोध का उपदेश किया गया है।

अपने द्वारा की गयी गलतियों के परिणाम मनुष्य ने भुगतना चाहिये, एवं इस प्रकार किया गया पश्चात्ताप-

विधि एक तरह की तपस्या ही मानी जा सकती है, यह 'विदुर-नीति' का प्रमुख सूत्रवाक्य है। अपना यह तत्त्व-ज्ञान विदुर के द्वारा अनेकानेक नीतितत्व एवं सुभाषितों की सहायता से कथन किया गया है। जिस प्रकार उपनिषदों के बहुसंख्य विचार श्रीकृष्ण ने भगवद्गीता में अंतर्भूत किये हैं, उसी प्रकार तत्कालीन राजनीतिशास्त्रज्ञों के बहुत सारे विचार विदुर के द्वारा 'विदुर-नीति' में प्रथित किये हैं। इन विचारों के कारण, महाभारत भारतीययुद्ध का इतिहास कथन करनेवाला एक सामान्य, इतिहास ग्रंथ न हो कर, राजनीतिशास्त्र का एक श्रेष्ठ ग्रंथ बन गया है।

विदुर के द्वारा किये गये इस उपदेश से धृतराष्ट्र अत्यधिक संतुष्ट हुआ। किन्तु दुर्योधन के संबंध में अपनी असहाय्यता प्रकट करते हुए उसने कहा, 'तुम्हारे द्वारा कथन की गयी नीति मुझे योग्य प्रतीत होती है। फिर भी दुर्योधन के सामने इन सारे उच्च तत्त्वों को मैं भूल बैठता हूँ'।

तत्पश्चात् मनःशांती के लिए कुछ धर्मोपदेश प्रदान करने की प्रार्थना धृतराष्ट्र ने विदुर से की। इस पर विदुर ने कहा, 'मैं शूद्र हूँ, इसी कारण तुम्हें धर्मविषयक उपदेश प्रदान करना मेरे लिए अयोग्य है'। तत्पश्चात् विदुर के कहने पर, धृतराष्ट्र ने सनत्सुजात से अव्यात्मविद्याविषयक उपदेश सुना (म. उ. ३३-४१; सनत्सुजात देखिये)।

विदुर-तीर्थयात्रा—इस प्रकार भारतीय-युद्ध रोकने में असफलता प्राप्त होने के कारण, यह अत्यधिक उद्विग्न हुआ, एवं युद्ध में भाग न ले कर तीर्थयात्रा के लिए चला गया। विदुर के द्वारा किये गये इस तीर्थ-यात्रा का निर्देश केवल भागवत में ही प्राप्त है।

भारतीय-युद्ध के समाप्ति की वार्ता इसे प्रभास क्षेत्र में शत हुयी। वहाँ से यमुना नदी के तट पर जाते ही, इसे उद्धव से श्रीकृष्ण के महानिर्वाण की वार्ता विदित हुई। मृत्यु के पूर्व श्रीकृष्ण ने कथन की 'उद्धव-गीता' इसने गंगाद्वार में मैत्रेय से पुनः सुन ली। यह मैत्रेय-विदुर संवाद तत्त्वज्ञान की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना जाता है, जिसमें देवहूति-कपिलसंवाद, मनुवंशवर्णन, दक्षयज्ञ, ध्रुवकथा, पृथुकथा, पुरंजनकथा आदि विषय शामिल हैं (भा. ३-४)।

युधिष्ठिर के राज्यकाल में—हस्तिनापुर के राजगद्दी पर बैठने के उपरांत, युधिष्ठिर ने अपने मंत्रिमंडल की रचना की, जिस समय राज्यव्यवस्था की मंजूषा एवं निर्णय के मंत्री नाते विदुर की नियुक्ति की गयी थी। युधिष्ठिर के

मंत्रिमंडल के अन्य मंत्री निम्न प्रकार थे :- भीम-युवराज; संजय-अर्थमंत्री; नकुल-सैन्यमंत्री; अर्जुन-परचक्रनिवारण मंत्री (म. शां. ४१.८-१४)।

युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के लिए धनप्राप्ति के हेतु अर्जुनादि पाण्डव हिमालय में धन लाने गये थे। वे हस्तिनापुर के सनीप आने पर, विदुर ने पुष्पमाला, चित्र-विचित्र पताका, ध्वज आदि से हस्तिनापुर सुशोभित किया, एवं देवमंदिरों में विविध प्रकारों से पूजा करने की आज्ञा दी (म. आश्र. ६९)। धृतराष्ट्र एवं गांधारी से मिलने के पश्चात्, पाण्डव विदुर से मिलने आये थे (म. आश्र. ७०.७)।

अंतिम समय—विदुर के कहने पर धृतराष्ट्र भार्गवी की पावन तट पर तपस्या करने लगा। इस प्रकार जित नीति एवं मनःशान्ति का उपदेश इसने धृतराष्ट्र को आज्ञा किया, वह उसे प्राप्त हुई। अपने जीवित की यह सफल फलश्रुति देख कर विदुर को अत्यधिक समाधान हुआ, एवं बल्कल परिधान कर यह शतयूगाश्रम एवं व्यासाश्रम में आ कर, धृतराष्ट्र एवं गांधारी की सेवा करने लगा।

कालोत्तरान्त मन बश में कर के इसने धोर तपस्या करना प्रारंभ किया (म. आश्र. २५)। विदुर के यज्ञायक अंतर्धान होने के कारण, युधिष्ठिर अत्यधिक व्याकुल हुआ। उसने धृतराष्ट्र से विदुर का पता पूछते हुए कहा, 'मेरे गुरु, माता, पिता, पालक एवं सखा सभी एक विदुर ही हैं। उसे मैं मिलना चाहता हूँ'।

इस पर धृतराष्ट्र ने अरण्य में धोर तपस्या में संलग्न हुए विदुर का पता युधिष्ठिर को बताया। वहाँ जा कर युधिष्ठिर ने देखा, तो मुख में पत्थर का टुकड़ा लिये जटाधारी, कृशकाय विदुर उसे दिखाई पड़ा। यह दिग्भ्रम अवस्था में था, एवं वन में उड़ती हुई धूल से इसका शरीर आवेशित था (म. आश्र. ३३. १५-२०)।

मृत्यु—शुरु से ही विदुर की यही इच्छा थी कि, मृत्यु के पश्चात् इसके अस्तित्व की कोई भी निशानी बाकी न रहे। इसने कहा था, 'जिस प्रकार प्रज्ञावान् मुनियों के कोई भी पदचिह्न भूमे पर नहीं उठते हैं, ठीक उसी प्रकार के मृत्यु की कामना मैं मन में रखता हूँ'।

मृत्यु के संबंध में विदुर की यह कामना पूरी हो गयी, एवं विदुर को महाभारत के सभी व्यक्तियों से अधिक सुंदर मृत्यु प्राप्त हुई।

जब युधिष्ठिर विदुर के पीछे वन में गया, तब किसी वृक्ष का सहारा ले कर यह खड़ा हो गया। पश्चात्

युधिष्ठिर इसके आगे खड़े होने पर, यह उसका ओर एक-एक देखने लगा, एवं उसकी दृष्टि में अपनी दृष्टि झलक कर एकाग्र हो गया। अपने प्राणों को उसके प्राणों में, तथा अपनी इंद्रियों को उसकी इंद्रियों में स्थापित कर, यह उसके भीतर समा गया। इस प्रकार योगबल का आश्रय लेकर यह युधिष्ठिर के शरीर में विलीन हो गया (म. आश्र. ३३.२५)।

पद्म के अनुसार, माण्डव्य ऋषि के द्वारा दिये गये शाप की अवधि समाप्त होते ही, यह साधर्मती एवं धर्ममती नदियों के संगम पर गया। वहाँ स्नान करते ही शूद्रयोनि से मुक्ति पा कर, यह स्वर्गलोक चला गया (पद्म. उ. १४१)। भागवत के अनुसार, इसने प्रभास-क्षेत्र में देहत्याग किया था (भा. १.१५.४९)।

अन्यसंस्कार—मृत्यु की पश्चात् विदुर का शरीर वृक्ष के सहारे खड़ा था। अग्नि अत्र भी उसी तरह निर्निमित्त थी, किन्तु अत्र वे चेतनारहित बन गयी थी। युधिष्ठिर ने विदुर के शरीर का दाहसंस्कार करने का विचार किया, किन्तु उसी समय आकाशवाणी हुयी :-

ज्ञानदग्धस्य देहस्य पुनर्दीहो न विद्यते।

(म. आश्र. ३५.३७४)।

(ज्ञान से दग्ध हुए शरीर को अंतिम दाहकर्म की जरूरी नहीं होती है)।

इससे प्रतीत होता है कि, महाभारतकाल में संन्यासियों का दाहकर्म धर्मविरुद्ध माना जाता था। वहाँ भीष्म जैसे सेनानी की लाश रेशमी वस्त्र एवं मालाएँ पहना कर चेदनादि सुगंधी काष्ठों से जलयी गयी, वहाँ विदुर जैसे यति का मृतदेह बिना दाहसंस्कार के ही वन में छोड़ा गया (म. अनु. १६८.१२-१८)।

परिवार—देवक राजा की 'पारशवी' कन्या से विदुर का विवाह हुआ था। अपनी इस पत्नी से विदुर को कई पुत्र भी उत्पन्न हुए थे, किन्तु विदुर के पत्नी एवं पुत्रों के नाम महाभारत में अप्राप्य हैं (म. आ. १०६.१२-१४)।

२. एक वेश्यागामी ब्राह्मण, जिसकी पत्नी का नाम बहुला था। अपनी पत्नी के द्वारा किये गये पुण्यों के कारण, इसे मुक्ति प्राप्त हुई (बहुला देखिये)।

३. पांचाल देश का एक क्षत्रिय, जो सोमवती अमावस्या के दिन प्रयाग के गंगासंगम में स्नान करने के कारण, ब्रह्महत्या के पातक से मुक्त हुआ (पद्म. उ. ९१-९२)।

एष में निर्दिष्ट इस कथा का संकेत सम्भवतः महाभारत में निर्दिष्ट धर्मात्मा विदुर से ही होगा, जिसे पूर्वजन्म में क्षणीमाण्डव्य ऋषि से ज्ञान प्राप्त हुआ था (विदुर १. देखिये)।

विदुला—एक प्राचीन क्षत्रिय स्त्री, जो महाभारत में निर्दिष्ट 'विदुला-पुत्र संवाद' के कारण अमर हो गयी है।

यह सीनर देश के राजा की पत्नी थी, जिसके पुत्र का नाम संजय था। इसका पुत्र जब छोटा था, उस समय इसका पति मृत हुआ। यही सुधवसर था, कि सीनर देश के पास ही उसे हुए सिन्धुनरेश ने संजय पर आक्रमण किया, एवं उसे रणभूमि से भागा कर उसका राज्य छीन लिया। रणभूमि से भाग कर आये हुए अपने पुत्र की इतने कटु आलोचना की, जिसका पुनर्निवेदन कुंती ने युधिष्ठिर को बुद्धप्रवृत्त बनाने के लिए किया था। महाभारत में यही संवाद 'विदुला-पुत्र संवाद' नाम से प्रसिद्ध है (म. उ. १३१-१३४)। इसके नाम के लिए 'विदुरा' शब्द भी प्राप्त है।

विदुला-पुत्र संवाद—महाभारत में राजनैतिक दृष्टि से उपदेश देनेवाले जो भी कुछ संवाद प्राप्त हैं, उनमें यह संवाद श्रेष्ठ माना जाता है। इस संवाद में महाभारत के नाम से प्रसिद्ध हुए बहुत सारे सुभाषित ग्रथित किये गये हैं। इसने अपने पुत्र से कहा था, 'पराक्रमी पुरुष के लिए यही योग्य है कि, पौरुषहीन जीवन दीर्घकाल तक जीने की अपेक्षा, वह अल्पकाल तक ही जी कर सारे संसार को अपने पराक्रम से सिमित करे (सुहूर्तं ज्वलितं श्रेयः न तु भूमाशितं शिरम्)। आत्मसंतुष्टता के कारण ऐश्वर्य विनष्ट होता है (संज्ञो वा वै श्रियं हन्ति)। इसी कारण पराक्रमी पुरुष ने सदैव कार्यरत रहना चाहिए, एवं इसी धारणा से काम करना चाहिए कि, जान जायें, मगर मस्तक नीचा न हो जायें (उच्यतेऽदेव न नमेदुद्यमो ह्येव पौरुषम्) (म. उ. १३१.१३; ३१; १३२.३८)।

इसने आगे कहा था, 'उद्योगी पुरुष को यही चाहिये कि—

उत्थातव्यं जागृतव्यं योक्तव्यं भूतिकर्मसु।

भविष्यतीत्येव मनः कृत्वा सततमव्यथैः॥

(म. उ. १३३.२७)।

(सदैव विजिबिनु एवं जाग्रत रह कर ऐश्वर्य संपादन करें। जो कार्य अंगीकृत किया है, वह यशस्वी होनेवाला ही है, ऐसी धारणा मन में रख कर सतत प्रयत्न करते रहें)।

विदुला के इसी संवाद का निर्देश युधिष्ठिर ने कुंती के पास पुनः एक बार किया था (म. आश. २२. २०)। 'जय' नामक महाभारत की रचना भी; इसी संवाद को आधारभूत मान कर की गयी है।

विदुष—(सो. द्रुह्यु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार घृत राजा का पुत्र था।

विदूर—पूरु राजा विदूरथ का नामान्तर (विदूरथ देखिये)।

विदूरथ—(सो. यदु. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो मजमान राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७१.१३६)।

२. (सो. यदु. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो चित्ररथ राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम घूर था (भा. ९.२४.१८)।

३. (सो. यदु. वृष्णि.) एक वृष्णवंशीय क्षत्रिय, जो वृद्धशर्मन एवं वसुदेवभगिनी श्रुतदेवा का पुत्र था। इसके भाई का नाम दन्तवक्र था। यह रुचिमणी तथा द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १८६)।

यह शिशुपाल, शात्व, जरासंध आदि का मित्र था, एवं जरासंध ने मथुरा नगरी के पूर्वद्वार का संरक्षण करने के लिए इसकी नियुक्ति की थी। इसका भाई दन्तवक्र तथा शात्व, शिशुपाल आदि का श्रीकृष्ण के द्वारा वध होने के पश्चात्, उनकी मृत्यु का बदला लेने के लिए इसने कृष्ण पर आक्रमण किया। किन्तु उसने इसका मस्तक काट कर इसका वध किया (भा. १०.७८.११-१२)।

४. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो लोमपाद-वंशीय विभृति राजा का पुत्र था। इसे 'उदक' एवं 'दाशार्ह' नामान्तर प्राप्त थे (अभि. २७५.१९-२०)। पद्म, एवं मत्स्य में इसे निर्भृति राजा का पुत्र कहा गया है, एवं दशार्ह राजा का पिता कहा गया है (पद्म. घ. १३; मत्स्य. ४४.४०)।

५. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. ४.१.९४)।

६. (सो. पूरु.) एक राजा, जो सुरथ राजा का पुत्र एवं सार्वभौम राजा का पिता था (भा. ९.२२.१०)।

७. चंरक नगरी के हंसध्वज राजा का भाई।

८. दक्षिण भारत का एक राजा, जिसने अरुन्धी कन्या दिष्टवंशीय राज्यवर्धन राजा को विवाह में प्रदान की थी।

९. एक राजा, जो मल्लदन ऋषि का मित्र था। इसके सुनीति एवं सुमति नामक दो पुत्र, एवं सुदावती नामक एक कन्या थी।

कुजुंभ से युद्ध—एक बार यह जंगल में मृगया के हेतु गया था, जहाँ इसने बहुत बड़ी दरार देखी, जो कुजुंभ राक्षस की जमुहाई से भूमि पर पड़ी हुई दरारों में से एक थी। वहाँ पास ही बैठे हुए सुवत मुनि ने इसे बताया, 'कुजुंभ राक्षस के पास एक देवी मूसल है, जिसके कारण वह अजेय बन कर पृथ्वी के सारे लोगों त्रस्त कर रहा है।

आगे चल कर कुजुंभ ने इसकी कन्या सुदावती का हरण किया, एवं उसका वध करने गये सुनीति एवं सुमति नामक इसके दोनो पुत्रों को कैद किया। फिर इसके मित्र भल्लदन ऋषि के पुत्र वसप्रि ने कुजुंभ का वध किया, एवं सुदावती की मुक्तता कर उससे विवाह किया (मार्क. ११३)।

विदेह माथव—एक राजा, जो विदेह लोगों का प्रमुख था (श. ब्रा. १.४.१.१०)। ये 'विदेह' लोग ही आगे चल कर 'विदेह' नाम से सुविख्यात हुए। मधु का वंशज होने से, इसे 'माथव' पैतृक नाम हुआ होगा।

शतपथ ब्राह्मण में—इस राजा के संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है, जिसके अनुसार इसने अपने मुख में अग्नि को बँध कर रखा था। मुँह खोलने से अग्नि बाहर आयेगा, इस आशंका से यह किसी से भी बात न करता था। इसके पुरोहित का नाम रहुगण गौतम था, जिसने इसके मुख में बँध रखे हुए अग्नि को बाहर लाने के लिए अनेकानेक प्रयत्न किये। उसने अग्नि की विविध प्रकार से स्तुति भी की, किन्तु उसका कुछ असर न हुआ।

एक बार गौतम ने सहजवश 'वृत' शब्द का उच्चारण किया, जिससे इसके मुख में बंध किया गया अग्नि अपनी सहस्र जिह्वाएँ फैला कर बाहर आया। वह अग्नि सारे संसार को जलाने लगा, एवं विदेह एवं गौतम को दग्ध करने लगा। उसने सृष्टि रक्षक नदियाँ भी सुखाना प्रारंभ किया।

अग्नि के इस दाह को शांत कराने के लिए, विदेह राजा ने अपने राज्य की सीमा पर बहनेवाली 'सदानीरा' नदी में स्वयं को शोक दिया, जहाँ अग्नि आखिर शान्त हुआ। फिर भी सदानीरा नदी का पानी अविरत बहता ही रहा। इसी कारण, वह नदी सदानीरा नाम से सुविख्यात हुई (श. ब्रा. १.४.१.१०-१७)।

सायणाचार्य के अनुसार, आज भी उपर्युक्त नदी कोसल एवं विदेह देश के सीमा पर ही बहती है।

विदेह—विदेह देश के सीरध्वज जनक राजा का नामान्तर (भा. १.१.२.१४; जनक देखिये)।

२. विदेह देश के निमि राजा का नामान्तर (निमि देखिये)।

३. एक लोकसमूह, जिस पर विदेहवंशीय राजा राज्य करते थे (बौ. श्रौ. २.५; २१.१३)। इसकी राजधानी मिथिला नगरी में थी। पाण्डुराजा ने अपने दिग्विजय के समय मिथिला पर आक्रमण किया था, एवं विदेहवंशीय क्षत्रिय राजाओं को परास्त किया था (म. आ. १०५-११)। इसी वंश में हयग्रीव नामक कुलंगार राजा उत्पन्न हुआ था।

वैदिक साहित्य में—इन लोगों का सर्वप्रथम निर्देश शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त विदेह माथव की कथा में आता है, जहाँ इस देश के पश्चिम में स्थित कोसल देश की संस्कृति विदेह से श्रेष्ठतर बतायी गयी है।

आगे चल कर इस देश के जनक राजा ने विदेह देश को नयी प्रतिष्ठा प्रदान की। बृहदारण्यक उपनिषद् के काल में सांस्कृतिक दृष्टि से यह एक श्रेष्ठ देश मानने जाने लगा (वृ. उ. ३.८.२)।

कौषीतकि उपनिषद् में विदेह लोगों का निर्देश काशि एवं कोसल लोगों के साथ किया गया है, एवं इन तीनों को 'प्राच्य' सामूहिक नाम प्रदान किया गया है (कौ. उ. ४.१)। इन तीनों देशों का 'जल जानूकर्म्य' नामक एक ही पुरोहित होने का निर्देश प्राप्त है (सं. श्रौ. १६.२९.५)।

इस देश का पर आट्णार नामक राजा कोसल देश के हिरण्यनाभ राजा का रिश्तेदार ही था (सं. श्रौ. १६. २९.५)। शतपथ ब्राह्मण में पर आट्णार को हिरण्यनाभ का वंशज, एवं कोसल देश का राजा कहा गया है। पंचविंश ब्राह्मण में नमी साप्य नामक विदेह देश के अन्य एक राजा का निर्देश प्राप्त है (पं. ब्रा. २५.१०.१७)।

कोसल एवं विदेह देशों की सीमा सदानीरा (आधुनिक गण्डक) नदी से बँध गयी थी। यह नदी नेपाल से निकल कर पटना के पास गंगा नदी को मिलती है।

महाभारत में—पूर्वोक्त भारत का एक जनपद के नाते विदेह देश का निर्देश महाभारत में प्राप्त है, जिसे परशुराम, कर्ण एवं भीम आदि वीरों ने जीता था (म. द्रो. परि. १.८.८४६; क. ५.१९; स. २६.४)। इस देश का सबसे से सुविख्यात राजा सीरध्वज जनक था, जिसकी कन्या सीता का विवाह राम दशरथ से हुआ था।

ब्रह्मांड के अनुसार, जरासंध के मय से मथुरा से निकलवासी हुए यादव लोग विदेह देश में रहने के लिए आये थे (ब्रह्मांड. २.१६.५४)।

४. (सो. वसु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार ऋदेव एवं देवकी के पुत्रों में से एक था।

विदेवत—एक पिशाच, जो पूर्वजन्म में हरिचौर नामक क्षत्रिय था। नास्तिकता के कारण, इसे पिशाच-योनि प्राप्त हुई (पद्म. पा. ९५; ९८)।

विद्य—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं प्रवर। षट्-‘श्रितिसुखाविद्ध’।

विद्या—एक देवता, जो वैदिक साहित्य में मुख्यतः तीन वेदों के ज्ञान (त्रयी विद्या) की देवता मानी गयी है। सायणाचार्य के ऋग्वेद भाष्य की प्रस्तावना में इस देवता के संबंधी एक ऋचा दी गयी है। एक बार यह एक ब्राह्मण के पास गयी, एवं इसने उसे कहा, ‘मैं तुम्हारी भ्रमान्त (शर्वत्रि) हूँ। तुम्हारा यही कर्तव्य है कि, तुम्हारे शिष्यों में से जो पवित्र, ब्रह्मचारी, नियमनिष्ठ, निरक्षरक एवं अनवधानशून्य होंगे, उन्हींको तुम मुझे प्रदान करना। अमुझा बरनेवाले शिष्यों से मैं अत्यधिक शृणा करती हूँ, इसी कारण तुम मुझे उन्हें प्रदान नहीं करना (सायणाचार्य, ऋग्वेद प्रस्तावना)।

विद्याचंड—कांपिल्य नगरी के सुदरिद्र नामक ब्राह्मण के चार पुत्रों में से एक (पितृवर्तिन् देखिये)।

विद्याधर—एक देवयोनिविशेष। पुराणों में इनके राजाओं का नाम चित्रकेतु, चित्ररथ अथवा सुदर्शन दिया गया है (भा. ६.१७.१; ११. १६. २९)। वायु में पुलोमन् को ‘विद्याधरपति’ कहा गया है (वायु. ३८. १६)। इन लोगों की स्त्रियाँ ‘विद्याधरी’ कहलाती थी (ब्रह्मांड. ३.५०.४०)।

इन देवताओं के शैलेय, विक्रान्त एवं सौमनस नामक तीन प्रमुख गण थे (वायु. ३०.८८)। इन देवताओं का विद्याधरपुर नामक नगर ताम्रवर्ण शरीवर एवं पतंग पहाड़ियों के बीच बसा हुआ था (मत्स्य. ६६.१८)।

विद्याधीश—सुराष्ट्र देश के सोमकांत राजा का प्रधान।

विद्यापति—उज्जैनि के इंद्रयुग्म राजा का उपाध्याय (स्तं. २.२.८)।

विद्युच्छुत्रु—एक राक्षस, जो मार्गशीर्ष माह में सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.१२.३१)।

विद्याजङ्घ—एक राक्षस, जो खशा राक्षसी का पुत्र, एवं शूर्पणखा का पति था। पूर्वजन्म में यह कालकेंद्र

नामक दानव था (वा. रा. उ. १२.२)। राम ने इसका वध किया था।

२. रावण का एक प्रधान, जिसने माया-जाल से राम का दूरा हुआ मस्तक, एवं धनुष्य सीता को दिखाया था। इसने सीता को रावण के वश में जाने के लिए पुनः पुनः अनुरोध किया, किन्तु सीता अपने सतीत्व पर अटल रहीं।

३. एक राक्षस, जो विश्रवस् एवं वाका के पुत्रों में से एक था। यह महातल नामक पाताललोक में स्थित अर्वाकृतलम् नामक नगर में रहता था (वायु. ५०.३५)।

४. घटोत्कच का साथी एक राक्षस, जिसका दुर्योधन के द्वारा वध हुआ (म. मी. ८७.२०)।

५. अमृत की रक्षा करनेवाले दो सर्प (म. आ. २९. ५-६)। विद्युत् के समान जिह्वा होने के कारण, इन्हें यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

विद्युज्जिज्ञा—स्तंभ की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.८)।

विद्युत्—एक राक्षस, जो यातुधान नामक राक्षस का पुत्र, एवं रसन नामक राक्षस का पिता था (ब्रह्मांड. ३.७. ९५)।

२. सहिष्णु नामक शिवावतार का एक शिष्य।

विद्युता—कुबेरसभा की एक अप्सरा, जिसने अष्टावक्र से स्वागतसमारोह में नृत्य किया था (म. अनु. ५०.४८)।

विद्युत्केश—एक राक्षस, जो हेति राक्षस का पुत्र था। मयासुर की कन्या इसकी माता थी। संध्या की कन्या सालकटंकटा से इसका विवाह हुआ था। कालोपरान्त उसने इससे उत्पन्न हुआ गंगे मंदर-पर्वत पर छोड़ दिया, जिसका भरण-पोषण शिव ने किया।

विद्युत्पर्णा—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्या थी (म. आ. ५९.४८)।

विद्युत्प्रभ—एक ऋषि, जिसकी इंद्र से ‘पापमोचन’ एवं ‘सुश्रम-धर्म’ के संबंध में चर्चा हुई थी (म. अनु. १२५.४५-५७)।

२. एक दानव, जिसे रुद्रदेव की कृपा से एक लाख वर्षों तक तीनों लोगों का आधिपत्य, शिव का नित्यपार्षद एवं कुशद्वीप का राज्य, वरों के रूप में प्राप्त हुए थे (म. अनु. १४.८२-८४)।

विद्युत्प्रभा—उत्तर दिशा में रहनेवाली दस अप्सराएँ (म. उ. १०९.१८)।

विद्युदक्ष—स्तंभ का एक सैनिक (म. श. ४४.५७)।

विद्युद्ग—रामसेना का एक वानर।

विद्युदूप—लंका का एक राक्षस।

२. एक यक्ष, जो कुबेर का सेवक था। इसकी पत्नी का नाम मदनिका था, जो मेनका की कन्या थी। एक बार यह कैलासपर्वत पर अपनी पत्नी के साथ मद्यपान करते हुए बैठा था, जहाँ कंक नामक गरुड-वंश का एक पक्षी आया। इसका कंक से झगडा हुआ, एवं इसने खड्ग-प्रहार कर उसका वध किया।

यह वार्ता सुन कर, कंक का भाई कंदर इससे युद्ध करने आया, एवं उसने इसका वध किया। तत्पश्चात् मदनिका ने कंदर से विवाह कर लिया (मार्क. २.४-२८)।

विद्युदूर्ध्वम्—एक सनातन विश्वदेव (म. अनु. ११.१३)।

विद्युन्मालिन—एक राक्षस, जो तारकासुर के तीन पुत्रों में से एक था। त्रिपुरों में से लोहमयपुर का यह अधिपति था। इसके अन्य दो भाइयों के नाम ताराक्ष एवं कमलाक्ष थे। शिव के अन्न के द्वारा अपने लोहमयपुर के साथ यह भी दग्ध हुआ।

२. एक असुर, जो तारकामय युद्ध में मयासुर के पक्ष में शामिल था। शिव के पार्षद नन्दिन के द्वारा इसका वध हुआ (मत्स्य. १२९.५; १३६.१६)।

३. एक महापराक्रमी राक्षस, जो रावण का मित्र था, एवं पाताल में रहता था। रावण के वध का बदला लेने के लिए, इसने राम का अश्वमेधीय अश्व चुरा लिया। भ्रागे चल कर शत्रुघ्न ने इसका वध कर, अश्वमेधीय अश्व पुनः प्राप्त किया (पद्म. पा. ३४)।

४. रावण के पक्ष का एक राक्षस, जो सुषेण वानर के द्वारा मारा गया (वा. रा. सुं. ६; यु. ४३)।

विद्योत—एक ऋषि, जो धर्मऋषि एवं दक्षकन्या लंबा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम स्तनयित्तु था (मा. ६.६५)।

विद्योता—कुबेरसभा की एक अप्सरा (म. अनु. १९.४५)।

विद्योपरिचर—कृत नामक वसु का पुत्र (वायु. १९.२२०)।

विद्रावण—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६.१८)।

विधातृ—ब्रह्मा का एक मानसपुत्र, जो भृगु ऋषि एवं ख्याति का पुत्र कहल्यता है। इसके धातृ एवं श्री नामक दो भाई थे। अपने इन भाइयों के साथ, यह शिशुमार

पर्वत पर रहता था। कमलों में निवास करनेवाली लक्ष्मी इसकी बहन थी।

मेरुकन्या नियति इसकी पत्नी थी, जिससे इसे प्राण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ४.१.४३-४४)।

२. एक आदित्य, जो आपाद अथवा 'सहस्र' (मार्गशीर्ष) माह में प्रकाशित होता है (भवि. ब्राह्म. ७८)। इसकी पत्नी का नाम क्रिया था, जिससे इस पंचचित नामक अग्नि पुत्ररूप में उत्पन्न हुआ था (विश्वत् देखिये)।

३. ब्रह्मन् का नामान्तर।

विधान—सुख देवों में से एक।

विधिसार—(शिशु. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार क्षेत्रज्ञ राजा का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार क्षत्रीजस् राजा का पुत्र था। इसे 'विदुसार,' 'विष्यसेन' एवं 'त्रिधिसार' आदि नामान्तर भी प्राप्त थे। इसके पुत्र का नाम अजातशत्रु था। इसने ३८ वर्षों तक राज्य किया था।

विधुम—अष्टवसुओं में से एक, जिसकी पत्नी का नाम अलंबुसा था (अलंबुसा देखिये)।

विधृत—एक दुष्ट राजा, जो जीवन भर 'प्रहर' (वध करों) शब्द का उच्चारण करता रहा। इस प्रकार 'हर' शब्द का सहजवश उच्चारण होने से, इसे सुनिद्र प्राप्त हुई (पद्म. पा. ११)।

विधृति—(सू. ६.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार खगण राजा का पुत्र, एवं हिरण्यनाभ राजा का पिता था (भा. ९.१२.३)।

२. तामस मन्वंतर के 'वैधृति' नामक देवतासमूह की माता (भा. ८.१.२९)।

३. अभूतरजस् देवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६.५५)।

चिनता—रामसेना का एक वानर—सेनापति, जो श्वेत नामक वानर का पुत्र था। इसकी सेना में साठ लक्ष वानर थे (वा. रा. यु. २६)।

२. वैवस्वत मनुपुत्र इल (सुवृष्ण) का पुत्र, जो उसके पश्चिम साम्राज्य का अधिपति बन गया (ब्रह्मांड. ३. ६०.१८)।

३. एक दिग्गज, जो पुलह एवं श्रुता के पुत्रों में से एक था।

चिनता—प्राचेतस दक्ष प्रजापति की एक कन्या, जो अरिष्टनेमि कश्यप की भार्या थी। तार्क्ष्य ऋषि के पतियों

में इसका निर्देश प्राप्त है (भा. ६.६.२१)। इसकी माता का नाम असिक्री था।

एक बार इसके पति कश्यप ने इसे चर माँगने के लिए कहा। उस समय इसने अपनी सौत कद्रू के पुत्रों से भी अधिक बलशाली दो पुत्रों की याचना की। तदनुसार, कद्रू के नागपुत्रों से भी अधिक बलशाली गरुड एवं अरुण नामक दो पुत्र कश्यप ने इसे प्रदान किये। इसके ये दोनों पुत्र अण्डे से उत्पन्न हुए थे। उनमें से एक अण्डा इसके द्वारा ऋद्धिमाने के कारण, उससे उत्पन्न हुआ अरुण अधूरे शरीर से उत्पन्न हुआ था।

अपनी इस दुर्गति के कारण, अरुण ने इसे पाँच सौ वर्षों तक अपनी सौत कद्रू की दासी होने का शाप दिया। इस शापित अवस्था में कद्रू ने इसका अनेकानेक प्रकार से छल किया। अन्त में इसके पुत्र गरुड ने स्वर्ग से अमृत ल कर, इसकी शाप से मुक्तता की (म. आ. ३०; गरुड देखिये)।

परिवार—गरुड एवं अरुण के अतिरिक्त इसके अरिष्टनेमि तार्क्ष्य एवं आकर्णि नामक दो पुत्र थे (मवि. ब्राह्म. १५९)। वायु के अनुसार इसके दो पुत्र, एवं ३६ कन्याएँ थीं, जिनमें गायत्री आदि छंद, एवं सुवर्णा आदि पक्षिणीयों प्रमुख थीं (वायु. ६९. ६६-६७)। यह स्वयं हवा में तैरने की कला में प्रवीण थी, एवं इसकी कृत सारी संतान भी पक्षी ही थे। इससे प्रतीत होता है होता है कि, यह स्वयं भी एक पक्षिणी थी।

विनताश्व—एक राजा, जो वैवस्वत मनुपुत्र इल (कुयुम्न) का पुत्र था। इल के पश्चात्, उसके पश्चिम साम्राज्य यह का अधिपति बन गया (वायु. ८५. १९)।

विनायक—विद्वेश्वर (गणपति) नामक देवता का नामान्तर (गणपति देखिये)। रुद्रगणों के एक अधिपति के नाते भी इसका निर्देश प्राप्त है (भूत देखिये)।

२. शिवगणों का एक समुदाय, जिसमें कुष्मांड, गजकुंड, जयंत आदि रुद्रगण समाविष्ट थे। इस समूह के शिवगणों के मुख सिंह, शेर आदि के समान थे (मत्स्य. १८३. ६३-६४)।

विनाशन—एक दानव, जो कश्यप एवं काला के पुत्रों में से एक था। अपने अन्य भाईयों के समान यह अन्नविद्या में कुशल, एवं साक्षात् यम धर्म के समान भयंकर था।

विनीत—उत्तम मनु के पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. १. ३६. ४०)।

२. पुलस्त्य एवं प्रीति के तीन पुत्रों में से एक (वायु. २८. २२)।

विन्द—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १०२. ९८)।

२. एक केकय-राजकुमार, जो भारतीय युद्ध में कौरव-पक्ष में शामिल था। सात्यकि ने इसका वध किया (म. क. ९. ६)।

३. अवंती देश का राजकुमार, जो जयसेन एवं वसुदेव-भगिनी राजाचिदेवी के दो पुत्रों में से एक था। इसे अनुविंद नामक कनिष्ठ भाई, एवं मित्रविंदा नामक एक बहन थी।

आरंभ से ही यह दुर्योधन एवं जरासंध का पक्षपाती एवं मित्र था। अपनी बहन मित्रविंदा का विवाह भी यह दुर्योधन से ही करना चाहता था, किंतु उसने श्रीकृष्ण से प्रीतिविवाह कर लिया (भा. १०. ५८. ३०-३१)। अपने दक्षिणदिग्विजय के समय, सहदेव ने इसे जीता था (म. स. २८. १०)।

भारतीय युद्ध के समय, यह एक अशौहिणी सेना के साथ कौरवपक्ष में शामिल हुआ था (म. उ. १९. २४)। कौरवसेना में इसकी श्रेणी 'रथी' थी, एवं सेना के दस प्रधान अधिनायकों में से यह एक था (म. भी. १६. ३३-३५)।

भारतीय युद्ध में पाण्डव पक्ष के निम्नलिखित योद्धाओं के साथ इसका युद्ध हुआ था:—१. कुंतिभोज (म. भी. ४३. ६९) ; २. इरावत् (म. भी. ७९. १२-२०) ; ३. धृष्टद्युम्न (म. भी. ८२. ३२-३६) ; ४. विराट (म. द्रो. २४. २०-२१)। अंत में यह अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ७४. २५)।

विन्दु आगिरस—एक वैदिक सप्तद्रष्टा (ऋ. ८. ९४; ९. ३०)।

विंध्य—रैवत मनु के पुत्रों में से एक (भा. ८. ५. २)।

विंध्यशक्ति—(पौर. भविष्य.) एक राजा, जो किल-किल नामक राजा का पुत्र, एवं पुरंजय राजा का पिता था (ब्रह्मांड. ३. ७४. १७८)।

विंध्यसेन—(शिशु. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार क्षेमजित् राजा का पुत्र था (मत्स्य. २७२. ८)।

विध्यावलि—बलि दैत्य की पत्नी (बलि वैरोचन देखिये)। इसे बाण नामक पुत्र एवं कुंभीनसी नामक एक कन्या थी (मत्स्य. १८७. ४०)। वामन के द्वारा

बलि का वंधन किये जाने पर इसने वामन की स्तुति की, एवं बलि के लिए अभयदान माँगा (भा. ८.२०.१७)।

विंध्याश्व—(सो. अज्ञ.) एक राजा, जो इंद्रसेन राजा का पुत्र था। मेनका नामक अप्सरा से इसे जुड़वी संतान उत्पन्न हुई थी।

विपक्व—मरीचिगर्भ देवों में से एक।

विपाश्चित्—स्वारोचिष मन्वन्तर का इंद्र।

२. एक राजा, जो विदर्भराजकन्या पीवरी का पति था। अपनी पत्नी से किये पापकर्म के कारण, इसे नरक की प्राप्ति हुई (मार्क. १३.१३-१५)।

विपाश्चित् दृढजयंत लौहित्य—एक आचार्य, जो दक्षजयन्त लौहित्य नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)। लोहित का वंशज होने से, इसे 'लौहित्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

विपाश्चित् शकुनिमित्र पाराशर्य—एक आचार्य, जो आषाढ उत्तर पाराशर्य नामक आचार्य का शिष्य था। पाराशर का वंशज होने से, इसे 'पाराशर्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

विपाट—कर्ण का एक भाई, जो अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ३१.५९)।

विपाटा—दुर्गम राजा की पत्नियों में से एक (मार्क. ७२. ४६; रेवती १. देखिये)।

विपाद्—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. एक पिशाचगण (ब्रह्मांड. ३. ७. ३७७)।

विपाप—दमन नामक शिवावतार का एक शिष्य।

विपाप्मन्—निश्वन्त नामक अग्नि का पुत्र, जो वास्तुकार्य में अधिष्ठाता देवता माना जाता है।

२. (सो. पुरुरवस्.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार आयु राजा का पुत्र था।

विपुल—(सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४.४६)।

२. एक ऋग्वंशीय ऋषि, जो देवशर्मन् नामक ऋषि का शिष्य था। इसकी गुह्यपत्नी 'रुचि' पर इंद्र आसक्त हुआ। उस समय इसने इंद्र से उसका संरक्षण किया। इसके इस गुरुनिष्ठा से प्रसन्न हो कर, देवशर्मन् ऋषि ने इसे अनेकानेक वर प्रदान किये (म. अनु. ४०-४५)।

३. सौर देश का एक यवन राजा, जिसे 'वित्तल,' 'सुमित्र,' एक 'दत्तमित्र' आदि नामान्तर भी प्राप्त थे। पाण्डु राजा ने इसे जीतने का प्रयत्न किया था, किन्तु वह

यशस्वी न हो सका। अन्त में अर्जुन ने इसका वध किया (म. आ. परि १. ८०. ४०-४६)।

विपुलस्वान्—एक ऋषि, जिसके सुकृप एवं तुङ्ग नामक दो पुत्र थे (मार्क. ३. १५)।

विपूजन शौराकि (सौराकि)—कृष्ण यजुर्वेद संहिताओं में निर्दिष्ट एक आचार्य (मै. सं ३.१.३; ऋ सं. २.७.५)।

विपृथु—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार चित्रक राजा का पुत्र था (वायु. ९६. ११३)। जरासंध के संग्राम में, श्रीकृष्ण ने इसे मथुरानगरी के उत्तरद्वार का रक्षण करने के लिए नियुक्त किया था। यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था। मुद्गा-हरण के समय, बलराम की ओर से इमने अर्जुन से युद्ध किया था (म. आ. १७७.१७; २११.१०; स. ४.२६)। प्रभासक्षेत्र में हुए 'यादवी युद्ध' में यह मारा गया (विष्णु. ५.३७.४६)।

विपृष्ठ—(सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं वृकदेवा के पुत्रों में से एक था।

विप्र—(सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो भगवत् के अनुसार सतंत्रय राजा का, एवं विष्णु के अनुसार श्रुतंत्रय राजा का पुत्र था। वायु में इसे 'महाबाहु' कहा गया है (महाबाहु ३. देखिये)। इसके पुत्र का नाम सुचि था।

विप्रचित्ति अथवा **विप्रजित्ति**—एक आचार्य, जो व्यष्टि नामक आचार्य का शिष्य था (वृ. उ. २.६.३ काण्य.; २.५.२२ माथ्य.)।

२. एक दानव राजा, जो कश्यप एवं दनु के सौ पुत्रों में से प्रमुख पुत्र था (भा. ६.६.३१)। महाभारत में दनु के पुत्रों की संख्या चौत्तीस दी गयी है, जिनमें इसे प्रमुख कहा गया है (म. आ. ५.९.२१)। इसके भाइयों में ध्वज नामक अमुर प्रमुख था (वायु. ६७.६०)।

पराक्रम—वृत्रासुर एवं हिरण्यकशिपु के द्वारा इंद्र से किये गये युद्ध में, यह अमुर पक्ष में शामिल था (म. स. ५.१.७; भा. ६.७०)। बलि वैरोचन एवं इंद्र के युद्ध में भी यह सहभागी थी। वामन के द्वारा किये गये 'बलि-बंधन' के समय, यह वामन से युद्ध करने के लिए उद्यत हुआ था (म. स. परि. २१.३३७)। देवासुरों के द्वारा किये गये 'अमृतमंथन' के समय भी, यह उल्लिखित था (मत्स्य. २४.३१)।

परिवार—अपनी सिंहािका नामक पत्नी से इसे एक सौ एक पुत्र उत्पन्न हुए थे, जो 'सिंहिकेय' सामूहिक नाम से सुविख्यात थे। एक राहु एवं सौ केतु मिल कर, ये १०१ सिंहिकेय राक्षस बने थे (भा. ६.६.३७)।

भासवत के अतिरिक्त, ब्रह्म, मत्स्य आदि बाकी सारे पुराणों में इसके पुत्रों की संख्या तेरह दी गयी है। हरिवंश, विष्णु एवं ब्रह्मांड में वह बारह बतायी गयी है।

विप्रचिन्ति के पुत्रों की हरिवंश में प्राप्त नामावलि, अन्य पुराणों में प्राप्त पाठभेदों के साथ नीचे दी गयी है:—१. अंजिक (अजन, अंजक, सुपुंजिक); २. इन्डल; ३. कालनाभ; ४. खस्त्रुम (शालभ, श्वसुप); ५. नभ (नल, भौम); ६. नसुचि; ७. नरक (कनक) ८. राहु (पोतरण, सरमाण, स्वभांतु); ९. वज्रनाभ (कालवीर्य, चक्रयोषिन्, बल); १०. वातापि; ११. व्यंश (वंश, व्यंस, सव्यसिन्धु); १२. शुक्र (विख्यात, केतु, कंसु) (ह. वं. १.३; मत्स्य. ६; विष्णु. १.२१; ब्रह्म. ३; ब्रह्मांड. ६.१८.२२)।

२. एक असुर, जो हिरण्यकशिपु का सेवक था (विष्णु. १.१९.५२)।

विप्रजूति वातरदान—एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१३६.३)।

विप्रबंधु गौपायन (लौपायन)—एक वैदिक सूक्त-द्रष्टा (ऋ. ५.२४.४; १०.५७.६०)।

विशुध—(सू. निमि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार कृति राजा का, एवं वायु के अनुसार देवमीढ राजा का पुत्र था। भा. वत में इसे 'विस्तृत', एवं अन्य पुराणों में 'विश्रुत' कहा गया है।

विभा—दुर्गम राजा की पत्नियों में से एक। इसकी माता का नाम कावेरी था।

विभांड—एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए मीधम से मिलने आया था।

विभांडक—कश्यपकुल में उत्पन्न एक ऋषि, जो ऋश्य-शृंग ऋषि का पिता था। इसके पुत्र ऋश्यशृंग ऋषि के ऋम की, एवं अंग देश के चित्ररथ राजा के शान्ता नामक कन्या से उसके विवाह की अनेकानेक चमत्कृति-पूर्ण कथाएँ महाभारत में प्राप्त हैं (म. व. ११०.११; ऋश्यशृंग देखिये)।

इसके नेत्र हरे-पिले रंग के थे, एवं सर से ले कर पैरों के नाखूनों तक इसके शरीर के सारे भागों पर केश ही केश थे (म. व. १११.१९)। इसका आश्रम कौशिकी

नदी पर था। इसने हिमालय पर्वत पर रहनेवाले सन-त्कुमार से ब्रह्मज्ञान प्राप्त किया था (म. शां. परि. १.२०)।

विभांडक काश्यप—एक आचार्य, जो ऋश्यशृंग ऋषि का पुत्र एवं शिष्य था। इसके शिष्य का नाम मित्रभू काश्यप था (सं. ब्रा. २)।

विभाभ—जिताजित् देवों में से एक।

विभाचरी—ब्रह्मा की एक मानसकन्या, जो रात्रि का प्रतीकरूप देवता मानी जाती है। ब्रह्मा की आज्ञा से इसने देवी उमा के शरीर में प्रवेश किया, जिस कारण वह कृष्णवर्णीय बन गयी (मत्स्य. १५४.५०-९६; ब्रह्मन् देखिये)।

विभावसु—प्रतर्दन देवों में से एक।

२. विवस्वत् के पुत्रों में से एक (म. आ. १.४०)।

३. एक दैत्य, जो मुर नामक दैत्य का पुत्र था। कृष्ण ने इसका वध किया (मुर २. देखिये)।

४. एक ऋषि, जो युधिष्ठिर का विशेष आदर करता था। पाण्डवों के वनवासकाल में, यह द्वैावन में उनके साथ रहता था (म. व. २७.२४)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'ऋतावसु'।

५. एक क्रोधी महर्षि, जो सुपतीक नामक ऋषि का भाई था। अपने भाई के शाप के कारण, यह एक कटुभा बन गया। इसके इसी अवस्था में गरुड ने इसका भक्षण किया (म. आ. २५.१२)।

६. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था। वृत्र-इंद्र युद्ध में यह वृत्र-पक्ष में शामिल था (भा. ६.६.३०)।

७. एक वसु, जिसकी पत्नी का नाम युति था। सोम के प्रीति के कारण, युति ने इसका त्याग किया (मत्स्य. २३.२४)।

८. एक वैश्य, जो अपने पूजापाठ के समय अम्ब्र घंटा का निनाद करता था। इस पापकर्म के कारण, मृत्यु के पश्चात् इसे घंटा के आकार का मुख प्राप्त हुआ। इसी कारण, इसे 'घंटामुख' नाम प्राप्त हुआ।

विकास—जित देवों में से एक।

२. अमिताम देवों में से एक।

३. वशवर्तिन् देवों में से एक।

विभिन्दु—एक राजा, जिसके दानश्रुता की प्रशंसा मेधातिथि काण्व नामक आचार्य के द्वारा की गयी है। इसने मेधातिथि को ४८ हजार गायें दान में दी थी

(क. ८.२.४१-४२)। पंचविंश ब्राह्मण में भी इस कथा का निर्देश प्राप्त है, किन्तु वहाँ इसे 'विभिदुक' कहा गया है (पं. ब्रा. १५.१०.११)।

हॉपकिन्स के अनुसार, विभिदुक एक स्वतंत्र व्यक्ति न हो कर, वह मेघातिथि का ही पैतृक नाम था, एवं इस शब्द का सही पाठ 'वैभिदुक' था (हॉपकिन्स, ग्र. सा. १५.६०)।

विभिदुक—'विभिदु' राजा का नामान्तर (विभिदु देखिये)। इसीके वंश में उत्पन्न हुए 'विभिदुकीय' पुरोहितों का निर्देश ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त है (जै. उ. ब्रा. ३.२३३)।

विभीषण—रावण का कनिष्ठ भाई, जो विश्रवस् ऋषि एवं कैकसी के तीन पुत्रों में से एक था (वा. रा. उ. ९.७)। भागवत के अनुसार, इसकी माता का नाम केशिनी अथवा मालिनी था (भा. ४.१.३७)। वाल्मीकि-रामायण में वर्णित विभीषण धार्मिक, स्वाध्यायनिरत, नियताहार, एवं जितेंद्रिय है (वा. रा. उ. ९.३९)। इसी पापभीरता के कारण, अपने भाई रावण का पक्ष छोड़ कर यह राम के पक्ष में शामिल हुआ, एवं जन्म से असुर होते हुए भी, एक धर्मात्मा के नाते प्राचीन साहित्य में अमर हुआ।

जन्म—कैकसी को विश्रवस् ऋषि से उत्पन्न हुए रावण एवं कुम्भकर्ण ये दोनों पुत्र दुष्टकर्मा राक्षस थे। किंतु इसी ऋषि के आशीर्वाद के कारण, कैकसी का तृतीय पुत्र विभीषण, विश्रवस् के समान ब्राह्मणवंशीय एवं धर्मात्मा उत्पन्न हुआ (वा. रा. उ. ९.२७)। भागवत के अनुसार, यह स्वयं धर्म का ही अवतार था (भा. ३७.१४)।

तपस्या—इसने ब्रह्मा की घोर तपस्या की थी, एवं उससे वरस्वरूप धर्मबुद्धि की ही माँग की थी (वा. रा. उ. १०.३०)। इस वर के अतिरिक्त, ब्रह्मा ने इसे अमरत्व एवं ब्रह्मास्त्र भी प्रदान किया था (वा. रा. उ. १०.३१-३५)।

रावण से विरोध—यह लंका में अपने भाई रावण के साथ रहता था, किंतु स्वभावविरोध के कारण इसका उससे त्रिंशुकुल न जमता था। रावण के द्वारा सीता का हरण किये जाने पर, सीता को राम के पास लौटाने के लिए इसने उनकी बार बार प्रार्थना की थी। किन्तु रावण ने इसके परामर्श की अवज्ञा कर के, सीता को लौटाना अस्वीकार कर दिया (वा. रा. सुं. ५.३७)।

सीता की खोज में आये हुए हनुमत् का वध करने को रावण उद्यत हुआ। उस समय भी, इसने रावण से प्रार्थना की, 'दूत का वध करना अन्याय्य है। अतः उसका वध न कर, दण्डस्वरूप उसकी पूँछ ही केवल जला दी जाये'। हनुमत् के द्वारा किये गये लंकादहन के समय, उसने इसका भवन सुरक्षित रख कर, संपूर्ण लंका जला दी थी (वा. रा. सुं. ५४.१६)।

रावण की सभा में—राम-रावण युद्ध के पूर्व, रावण ने अपने मंत्रिणियों की एक सभा आयोजित की थी, जिस समय विभीषण भी उपस्थित था। उस सभा में इसने सीताहरण के कारण सारी लंकानगरी का विनाश होने की सूचना स्पष्ट शब्दों में की थी, एवं सीता को लौटाने के लिए रावण से पुनः एक बार अनुरोध किया था (वा. रा. यु. ९)। उस समय, रावण ने विभीषण की अत्यंत कटु आलोचना की, एवं इसे राक्षसकुल का कलंक बताया (रावण दशग्रीव देखिये)। इस घोर मत्सना से घणा-कर, अनल, पनस, संपाति एवं प्रमाति नामक अपने चार राक्षस-मित्रों के साथ यह लंकानगरी से भाग गया एवं राम के पक्ष में जा मिला।

शरणागत विभीषण—वानरसेना के शिबिर के पास पहुँच कर अपना परिचय राम से देते हुए इसने कहा, "मैं रावण का अनुज हूँ। उसने मेरे सलाह को बुझा कर मेरा अपमान किया है। अतः मैं अपना परिवार छोड़ कर, तुम्हारी शरण में आ गया हूँ (त्वक्त्वा पुत्रांश्च दारांश्च राघवं शरणं गतः) (वा. रा. यु. १७.१६)।

इस अवसर पर विभीषण का वध करने की सलाह सुग्रीव ने राम से दी, किन्तु राम ने शरणागत को अवश्य व्रता कर इसे अभयदान दिया (वा. रा. यु. १८.२७; राम दाशरथि देखिये)।

अनंतर विभीषण ने रावण की सेना एवं युद्धव्यवस्था की पूरी जानकारी राम को बता दी, एवं युद्ध में राम की सहायता करने की प्रतिज्ञा भी की। तब राम ने विभीषण को लंकानगरी का राजा उद्घोषित कर, इसे राज्याभिवेक किया (वा. रा. यु. १९.१९)।

राम की सहायता—रामरावण युद्ध में राम का प्रमुख परामर्शदाता विभीषण ही था। इसीके ही परामर्श पर, राम ने समुद्र की शरण ली, एवं वाल्मिपुत्र अंगद को वृत् के नाते रावण के पास भेज दिया। रामसेना का निरोक्षण करने आये हुए शुक, सारण, शार्दूल आदि रावण के गुप्तचरों को पट्टचान कर पकड़वाने का कार्य भी इसीने ही किया

।। रावणसेना का समाचार लाने के लिए इसने अपने परित्राण भेज दिये थे। कुंभकर्णी एवं प्रहस्त का परिचय इसीने ही राम को कराया था। मायासीता के वचन के प्रसंग में भी, रावण की माया के रहस्य का उद्घाटन भी इसने ही राम के पास किया था। इंद्रजित् एवं रावण के द्वारा किये जानेवाले 'आसुरी यज्ञ' का विध्वंस करने की सलाह भी इसने ही राम को दी थी।

मायावी युद्ध—रामरावण युद्ध में विभीषण ने स्वयं भाग भी लिया था, एवं प्रहस्त, धूम्राक्ष आदि राक्षसों का वध किया था (वा. रा. यु. ४३; म. व. २७०.४)। मायावी युद्ध में प्रवीण होने के कारण, इसने इंद्रजित् से युद्ध करते समय काफ़ी पराक्रम दर्शाया था, एवं उसके सेना में से पर्वण, पृतन, जंभ, खर, क्रोधव्रल, हरि, प्रसन्न, आसन्न, प्रयस आदि क्षुद्र राक्षसों का वध किया था (वा. रा. यु. ८९.१०३; म. व. २६९.२-३)।

इंद्रजित् के बहुत सारे सैनिक स्वयं अदृश्य रह कर युद्ध करते थे। रामसेना में से केवल विभीषण ही उन अदृश्य सैनिकों को देखने में समर्थ था। अंत में, इसने कुदर से ऐसा वैवी जल प्राप्त किया कि, जो आँखों में लगाने से अदृश्य प्राणी दृष्टिगोचर हो सके। इसने उस जल से प्रथम सुग्रीव एवं रामलक्ष्मण, तथा अनंतर रामसेना के प्रमुख वानरों के आँखें धोयीं, जिस कारण वे सारे इंद्रजित् की अदृश्य सेना से युद्ध करने में सफल हो गये (म. व. २७३.९-११)।

युद्ध के अंतिम कालखंड में, इसने लक्ष्मण से युद्ध करनेवाले रावण के रथ के सारे अश्व मार डाले (वा. रा. यु. १००)। इस प्रकार राम को समय-समय पर उचित सलाह एवं सहायता दे कर, इसने उसे युद्ध में विजय पाने के लिए मदद की।

रावण का अन्वयसंस्कार—रावणवध के तत्पश्चात्, इसने रावण के दुष्टकर्मों का स्मरण कर, उसका दाहकर्म करना अस्वीकार कर दिया। किन्तु राम ने इसे समझाया, 'मृत्यु के पश्चात् मनुष्यों के वैर समाप्त होते हैं। इसी कारण उनका स्मरण रखना उचित नहीं है (मरणान्ताग्नि वैराग्नि)' (वा. रा. यु. १११.१००)। फिर राम की आज्ञा से, इसने रावण का उचित प्रकार से अन्वयसंस्कार किया। रावण के वध पर विभीषण के द्वारा किये गये विलाप का एक सर्ग वाल्मीकिरामायण के कई संस्करणों में प्राप्त है (वा. रा. उ. दक्षिणात्य. १०९)। किन्तु वह सर्ग प्रक्षिप्त प्रतीत होता है।

राज्याभिषेक—अयोध्या पहुँचने के बाद, श्रीराम ने विभीषण को राज्याभिषेक करने के लिए लक्ष्मण को लंका भेज दिया था (वा. रा. यु. ११२)। बाद में अपने परिवार के लोगों के साथ विभीषण अयोध्या गया, एवं वहाँ राम के राज्याभिषेकसमारोह में सम्मिलित हुआ (वा. रा. यु. १२१; १२८)। राज्याभिषेक के पश्चात् राम ने विभीषण को राजकर्तव्य का सुयोग्य उपदेश प्रदान किया, एवं बड़े दुःख से इसे विदा किया।

अश्वमेधयज्ञ में—राम के द्वारा किये गये अश्वमेध-यज्ञ के समय विभीषण उपस्थित था। उस समय, ऋषियों की सेवा करने की ज़ाबदारी इस पर सौंपी गयी थी (पूर्वा चके ऋषीणाम्) (वा. रा. उ. ९१.२९)।

राम का आशीर्वाद—अपने देहत्याग के समय, राम ने विभीषण को आशीर्वाद दिया था :—

यावच्चन्द्रश्च सूर्यश्च यावत्तिष्ठति मेदिनी ।

यावच्च मत्कथा लोके तावद्राज्यं तवास्तिवह ॥

(वा. रा. उ. १०८.२५)।

(जिस समय तक आकाश में चंद्र एवं सूर्य रहेंगे, एवं पृथ्वी का अस्तित्व होगा, एवं जिस समय तक मेरी कथा से लोग परिचित रहेंगे, उस समय तक लंका में तुम्हारा राज्य चिरस्थायी रहेगा)।

परिवार—शैल्य गोधर्व की कन्या सरमा विभीषण का पत्नी थी (वा. रा. उ. १२.२४-२५)। पुराणों में में इसकी पत्नी का नाम महामूर्ति दिया गया है (पद्म. पा. ६७)। अशोकवन में बंदिस्त किये गये सीता के देखभाल की ज़ाबदारी सरमा पर सौंपी गयी थी, जो सीता के 'प्रणयिनी सखी' के नाते उसने निभायी थी (वा. रा. यु. ३३.३)।

सरमा से इसे कला नामक कन्या उत्पन्न हुई थी (वा. रा. सुं. ३७)। अन्यत्र इसकी कन्या का नाम नंदा दिया गया है (वा. रा. सुं. गौडिय. ३५.१२)।

२. लंकानगरी का एक विभीषणवंशीय राजा, जिसे सहदेव 'पाण्डव' ने अपने दक्षिण दिग्बिजय के समय जीता था। यह रामकालीन विभीषण से काफ़ी उत्तरकालीन था, एवं इन दोनों में संभवतः ३०-३५ पीढ़ियों का अन्तर था। इस कालखंड में गति का स्पष्टीकरण पौराणिक साहित्य में राम-कालीन विभीषण को चिरंजीव मान कर किया गया है। किन्तु संभव यही है कि, यह विभीषण के वंश में ही उत्पन्न कोई अन्य राजा था।

इसके राजप्रासाद एवं नगरी का सविस्तृत वर्णन महाभारत में प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, लंका का वैभव इसके राज्यकाल में चरमसीमा पर पहुँच गया था (म. स. ३१)।

सुग्रीव के दूत के नाते घटोत्कच इसके दरबार में आया था। उस समय युधिष्ठिर का परिचय सुन कर, इसने घटोत्कच का उचित आदर-सत्कार किया, एवं उसे युधिष्ठिर के पास पहुँचाने के लिए निम्नलिखित 'उपायन' वस्तुएँ प्रदान कीं—हार्थी के पीठ पर बिछाने योग्य स्वर्ण से बने हुए आसन, बहुमूल्य आभूषण, सुंदर मूंग, स्वर्ण एवं रत्न से बने हुए अनेकानेक कलश, जलपात्र, चौदह सुवर्णमय ताड़ वृक्ष, मणिजडित शिबिकाएँ, बहुमूल्य मुकुट, चंद्रमा के समान उज्वल शतावर्त शंख, श्रेष्ठचंद्रन से बनी हुयी अनेकानेक वस्तुएँ आदि (म. स. २८. ५०-५३; परि. १.१५. पंक्ति २३५-२५३)।

३. एक यज्ञ (म. स. १०.१३)।

विभीषणा—स्कंद की अनुचरी एक मानुषा (म. स. ४५.२२)।

विभु—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. एक देव, जो यज्ञदेव एवं दक्षिणा के पुत्रों में से एक था (भा. ४.१.७)।

३. (स्वा.) एक राजा, जो प्रस्ताव एवं नियुक्ता के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम रति, एवं पुत्र का नाम धृष्टकेतु था (भा. ५.१५.६)।

४. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो सत्यकेतु राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सुविभु था (वायु. ९२. ७१)।

५. सौवीर देश के शकुनि राजा का भाई, जो अपने चार भाइयों के साथ भीमसेन के रात्रियुद्ध में मारा गया (म. द्रो. १३२.२०-२१)।

६. एक ऋषि, जो भृगु वारुणि का पुत्र था। इसे वरेण्य नामान्तर प्राप्त था।

७. साध्य देवों में से एक (वायु. ६६.१६)।

८. तुषित देवों में से एक।

९. रैवत मन्वन्तर का इंद्र (विष्णु. ३.१.२०)।

१०. स्वायंभुव मन्वन्तर में उत्पन्न श्रीविष्णु का एक अवतार।

११. एक भव देव, जो भग एवं सिद्धि के पुत्रों में से एक था (भा. ६.१८.२)।

१२. त्रिताजित् देवों में से एक।

१३. अमिताभ देवों में से एक।

१४. (सो. मगध.) मगधवंशीय महाबाहु राजा का नामान्तर (मत्स्य. २७१.२४; महाबाहु ३. देखिये)

१५. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो पृथु वैश्य एवं अर्चिष्मती के पुत्रों में से एक था।

१६. स्वायंभुव मनु के पुत्रों में से एक (पद्म. स. ७)।

इसे स्वयंभुव मनु का पौत्र भी कहा गया है (वायु. ३१.१७)।

विभूति—विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५७)।

विभूवस—एक ऋषि, जो त्रिन ऋषि का पिता था (ऋ. १०.४६.३)।

विभ्राज—(सो. पूर.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार सुकृति राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार सुकृत राजा का पुत्र था। कई अभ्यासकों के अनुसार भागवत में निर्दिष्ट पार राजा एवं यह दोनों एक ही थे, किन्तु वह अयोग्य प्रतीत होता है (पार. २. देखिये)।

२. पांचाल देश का एक राजा, जो ब्रह्मदत्त राजा का पिता था। इसे 'अनव' नामान्तर भी प्राप्त था (मत्स्य. २१.११-१६)।

विभ्राज सौर्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १७०)।

विमद ऐंद्र प्राजापत्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. २०-२६)। ऋग्वेद के इन सूक्तों में इसका श्लो नामोल्लेख, तथा इसके 'विमल' नामक परिवार का निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.२०.१०; २३.७)।

यह इंद्र एवं आश्विनों के कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था (ऋ. १.११२.१९; ११६.१; ११७.२०; १०. ३९.७; ६५.१२)। यह इंद्र एवं 'प्रजापति' का मानसपुत्र था, जिस कारण इसे 'ऐंद्र' एवं 'प्राजापत्य' पैतृक नाम प्राप्त हुए थे।

पुरुमित्र की कन्या कमलु इसकी पत्नी थी, जिसने इसका स्वयंवर में वरण किया था। इस कारण स्वयंवर के लिए उपस्थित हुए अन्य राजाओं ने इससे युद्ध शुरु किया। उस समय आश्विनों ने इसे अपने शत्रुओं को परास्त करने में साहाय्य किया, एवं कमलु को रथ में बैठा कर इसके पास पहुँचा दिया (अ. वे. ४.२९.४; ऐ. ब्रा. ५. ५.१)।

कई अभ्यासकों के अनुसार, ऋग्वेद का सूक्तद्रष्टा विमद, एवं आश्विनों का कृपापात्र विमददो अलग व्यक्ति

वे। बुदविग के अनुसार, वल्स काव्य एवं आश्रयों का कृतागत विमद दोनों एक ही श्रे (बुदविग, ऋग्वेद अनुवाद ३.१०५)। ऋग्वेद की एक कथा में विमद एवं वल्स का एकत्र निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८.९.१५)।

विमनुष्या—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं मुनि की कन्याओं में से एक थी (ब्रह्मांड. ३.७.५)।

विमर्द—एक किरात राजा, जिसका शिवपूजा के कारण उदार दृष्टा (स्कंद. ३.३.४)।

विमल—शङ्खायण का एक राजा, जो इल (सुयुध्न) राजा का पुत्र था (भा. ९.१.४१)।

१. (सो. श्रेष्ठ.) एक राजा, जो जीमूत राजा का पुत्र, एवं भीमरथ राजा पिता था (मत्स्य. ४८.४१)। पाट, 'कृति'।

३. हिमालय की तलहटी में रहनेवाला एक ब्राह्मण, जिसे ब्रह्मा की तपस्या के कारण पुत्रप्राप्ति हुई थी (पद्म. ३.२०७)।

४. सनातन नगरी का एक राजा, जिसने राम के अध्वंश यज्ञ के समय शत्रुघ्न की सहाय्यता की थी (पद्म. प. १७)।

५. एक यज्ञ, जो मणिवर एवं पुण्यवनी के पुत्रों में से एक था।

विमलपिंडक—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

विमला—एक नाय, जो मुरभिमुखी रोहणी के दो कन्याओं में से एक थी। दूसरी कन्या का नाम अनला था (म. भा. ६०.२.१३)।

अनला से पिण्डाकार फल देनेवाले सात वृक्ष निर्माण हुए (म. भा. ६०.३६)।

विमुसु—शङ्ख भारत में रहनेवाला एक ऋषि (वा. रा. ३.१)।

विमौदल—अशिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वियाति—एक राजा, जो भगवत एवं विष्णु के अनुग्रह नहुप राजा का पुत्र था (भा. ९.१८.१; विष्णु. ४.१०.१)।

विरज—(स्वा. नाभि.) एक राजा, जो त्वष्टृ एवं शिोचना के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम विपुत्रे था, जिसमें इसे शतजिन् आदि सौ पुत्र एवं एक कन्या उत्पन्न हुई।

२. चाक्षुष मन्वन्तर का एक ऋषि।

३. सावर्णी मन्वन्तर का एक देवगण।

भा. च. १०८]

४. सावर्णी मनु के पुत्रों में से एक।

५. (स्वा.) एक राजा, जो भगवत के अनुसार पूर्वमत राजा का पुत्र था।

६. एक आचार्य, जो व्यास की ऋषिशिष्य परंपरा में से जानूकर्म्य नामक आचार्य का शिष्य था (भा. १२.६. ५८)।

विरजम्—भगवान् नारायण का एक मानसपुत्र, जिसने अपना राज्य छोड़ कर संन्यासव्रत की दीक्षा ली। इसके पुत्र का नाम कीर्तिमन् था (म. भा. ५.९.९४-९६)।

२. नारायण नामक शिवावतार का एक शिष्य।

३. लोकाक्षि नामक शिवावतार का एक शिष्य।

४. चाक्षुष मन्वन्तर का एक ऋषि, जो वसिष्ठ एवं ऊर्जा के सात पुत्रों में से एक था (भा. ४.१.४१)।

५. वशवर्तिन् देवों में से एक।

६. एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

७. (सो. कुच.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. ११३.११३५३, पंक्ति. २-५)।

८. एक प्रजापति, जो वारुणि कवि नामक ऋषि के आठ पुत्रों में से एक था। इसके अन्य सात भाईयों के नाम निम्न प्रकार थे:—कवि, काव्य, धृष्णु, उशनस, भृगु, विरजस् एवं काशि। इसकी विरजा एवं नहुवला नामक दो कन्याएँ, एवं सुवन्वन् नामक एक पुत्र था। इनमें से विरजा का विवाह ऋक्ष वानर से, एवं नहुवला का विवाह चाक्षुष मनु से हुआ था। वैराज नामक पितर भी इसीके ही पुत्र कहलाते हैं (ब्रह्मांड. ३.७.२१२)।

विरजस्क—सावर्णी मनु के पुत्रों में से एक।

विरजा—विरजस् नामक प्रजापति की कन्या, जो चुकपुत्र ऋक्ष वानर की पत्नी थी। इसे इंद्र एवं सूर्य से क्रमशः बालिन् एवं सुधीव नामक पुत्र उत्पन्न हुए (ब्रह्मांड. ३. ७. २१२-२१५)। वाल्मीकिरामायण के दक्षिणात्य पाठ में, बालि एवं सुधीव को स्त्रीधरधारी ऋक्षरजम वानर के पुत्र कहा गया है (बालिन् देखिये)।

२. सुवन्वा नामक 'आश्रयण' पितरों की कन्या, जो नहुप की पत्नी, एवं ययाति की माता थी (मत्स्य. १५.२३)।

३. एक राक्षसी, जिसने अदितिपुत्र महोत्कट का वेष धारण किये हुए श्रीगणेश को भक्षण किया। महोत्कटरूपी श्रीगणेश इसका उदर विदीर्ण कर बाहर आया। अन्त में उसीके ही स्पर्श से इसे मुक्ति प्राप्त हुई।

४. कृष्ण की एक प्रियपत्नी, जो राधा की सौत थी। सवती-मत्सर के कारण राधा ने इसे नदी बनने का शाप दिया, जिस कारण, यह विरजा नामक नदी बन गयी। क्षार-समुद्रादि अष्टसमुद्र इसके ही पुत्र माने जाते हैं (ब्रह्मवै. ४.२)।

विरजामित्र—स्वायंभुव मन्वन्तर के 'विरजम्' नामक वसिष्ठपुत्र का नामान्तर। इस शब्द का शुद्ध पाठ विरजम्+मित्र होने की संभावना है।

विरथ—(सो. द्विमीढ.) द्विमीढवंशीय बहुरथ राजा का नामान्तर। मत्स्य में इसे नृपञ्जय राजा का पुत्र कहा गया है।

विरस—एक कश्यपवंशीय नाम (म. उ. १०१.१६)

विराज—(स्वा. नामि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार नर राजा का पुत्र था।

२. स्वायंभुव मनु का नामान्तर (मत्स्य. ३.४५; ब्रह्माण्ड. २.९.३९; मनु स्वायंभुव देखिये)।

विराज—(सो. कुरु.) एक राजा, जो कुरु राजा का पौत्र, एवं अविश्वित् राजा का पुत्र था (म. आ. ८९. ४५)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक, जो भीम के द्वारा मारा गया (म. भी. ९९.२६)।

विराट—मत्स्य देश का सुविख्यात राजा, जो मरुदणों के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. वि. ३०.६; आ. ६१. ७६)। मत्स्य देश में स्थित विराट-नगरी में इसकी राजधानी थी। इसी कारण संभवतः इसे विराट नाम प्राप्त हुआ था।

यह अपने समय का एक श्रेष्ठ एवं आदरणीय राजा था। अपने पुत्र उत्तर एवं शंख के साथ यह द्रौपदी-स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.८)। यह मगध-राज जरासंध का मांडलिक राजा था। जरासंध के द्वारा उत्तरदिग्विजय के लिए नियुक्त किये गये मांडलिक राजाओं में से यह एक था (ह. वं. २.३५; जरासंध देखिये)। युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ के समय, सहदेव के द्वारा किये दक्षिणदिग्विजय में, उसने इसे जीता था (म. स. २८.२)। उस यज्ञ के समय, इसने युधिष्ठिर को सुवर्णमालाओं से विभूषित दो हज़ार हाथी उपहार के रूप में दिये थे (म. स. ४८.२९)।

पाण्डवों का अज्ञातवास—वनवास समाप्ति के पश्चात् अपने अज्ञातवास का एक वर्ष पाण्डवों के द्वारा विराट-नगरी में ही व्यतीत किया गया। उस समय अपने समस्त

शस्त्रसंभार को शमीवृक्ष में छिपा कर, पाण्डव विराटनगरी में पहुँच गये। युधिष्ठिर के दुर्भाग्य की कहानी सुन कर, यह मत्स्यदेश का अपना सारा राज्य उसे देने के लिए उद्यत हुआ। किन्तु युधिष्ठिर ने उसका इन्कार कर, स्वयं को एवं अपने भाइयों को अज्ञात अवस्था में एक वर्ष तक रखने के लिए इसकी प्रार्थना की। (म. वि. ९)।

पाण्डवों के अज्ञातवास की जानकारी प्रथम से ही विराट को थी, यह महाभारत में प्राप्त निर्देश अयोग्य, एवं उसी ग्रंथ में अन्यत्र प्राप्त जानकारी से विसंगत प्रतीत होता है।

पश्चात् पाँच पाण्डव एवं द्रौपदी विराटनगरी में निम्नलिखित नाम एवं व्यवसाय धारण कर रहने लगे :—१. युधिष्ठिर (कंक)—विराट का द्यूतविजयप्रदौष राजमेवक (म. वि. ६.१६); २. अर्जुन (वृहन्नया)—विराट के अंतःपुर का सेवक, जो विराटकन्या उत्तरा को गीत, वादन, नृत्य आदि सिखाने के लिए नियुक्त किया गया था (म. वि. १०.११-१२); ३. भीमसेन (वल्लभ)—पाकशालाध्यक्ष (म. व. ७.९-१०); ४. नकुल (वैशिक अथवा दामग्रथी)—अश्वशालाध्यक्ष (म. वि. ११.९-१०); ५. सहदेव (तंतिपाल अथवा अरिष्टनेमि)—गोशालाध्यक्ष (म. वि. ९.१४); ६. द्रौपदी (सैरंथ्री)—विराट-पत्नी सुदेव्या की सैरंथ्री (म. वि. ३.१७; ८)।

कीचकवध—इस प्रकार पाण्डव छद्म नामों से अपने अपने कार्य करते हुए रहने लगे। इतने में विराट के सेनापति कीचक ने द्रौपदी पर पापी नज़र डाल दी। जिस कारण वह भीम के द्वारा मारा गया (म. वि. ६.१६८; परि. १. क्र. १९. पंक्ति ३१-३२)।

सुशर्मन् से युद्ध—सेनापति कीचक की मृत्यु से इसकी सेना काफ़ी कमजोर हो गयी। वही सुधवन्तर पा कर, धिर्मतराज सुशर्मन् ने मत्स्य-देश पर आक्रमण किया, एवं इसकी दक्षिण दिशा में स्थित गोशाला लूट ली। यह देख कर अपनी सारी सेना एकत्रित कर, विराट ने सुशर्मन् पर हमला बोल दिया। इस सेना में, इसके शतानीक एवं मदिराक्ष नामक दो महारथी भाई; उत्तर एवं शंख नामक दो पुत्र, एवं अर्जुन को छोड़ कर बाकी चार ही पाण्डव शामिल थे (म. वि. ३.१.५८)।

काफ़ी समय तक युद्ध चलने पर, सुशर्मन् ने इसे जीवित पकड़ कर वन्दी बना लिया। जैसे ही युधिष्ठिर को यह पता चला, उसने भीमसेन को एवं उसके चक्रवर्धक के रूप में नकुल-सहदेव को इसे छुड़ाने के लिए भेज दिया। शीघ्र ही भीम ने सुशर्मन् को चारों ओर से घिरा

कर परास्त किया, एवं इसकी तथा इससे गाथों की सुकता की। पश्चात् सुशर्मन् को बंध कर वह उस युधिष्ठिर के मामले ले आया, किन्तु युधिष्ठिर ने सुशर्मन् की सुकता करने के लिए भीम को आज्ञा दी। पश्चात् सुशर्मन् ने विराट को क्षमायाचना की, एवं वह त्रिगवे देश चला गया (म. वि. २०.३२)। इस प्रकार सुशर्मन् के साथ हुए युद्ध में पाण्डवों ने काफी पराक्रम दर्शाने के कारण, विराट ने उनका बहुत ही सम्मान किया (म. वि. ६६)।

दुर्योधन से युद्ध—उपर्युक्त युद्ध के समय, सुशर्मन् के अनुरोध पर दुर्योधन ने मन्थ्य देश की गोशालाओं पर आक्रमण किया, एवं इसकी गाथों का हरण किया (म. वि. ३३)। उस समय स्वयं विराट सुशर्मन् से युद्ध करने में व्यस्त था, इस कारण इसके पुत्र उत्तर ने बृहन्नला को अपना सारथी बना कर, कौरवों पर आक्रमण किया (म. वि. ३५)।

सुशर्मन् को जीत कर विराट अपनी नगरी में लौट आते ही इन सूक्तना प्राप्त हुई कि, उत्तर भी कौरवों को परास्त कर गाथों के साथ आ रहा है। तत्काल इसने उत्तर के स्वागत के लिए अपनी सेना भेज दी, एवं यह स्वयं कंक (युधिष्ठिर) के साथ युद्ध खेलने बैठ गया।

युधिष्ठिर का अश्रमान—वृत्त खेलते समय विराट ने अपने पुत्र उत्तर की वीरता का गान युधिष्ठिर को सुनाना प्रारंभ किया। युधिष्ठिर इस बात को न सह सका, एवं सहस्वश कह बैठे, 'बृहन्नला जिसका सारथी हो उसे विजय प्राप्त होनी ही चाहिए'। कंक की यह बाणी सुन कर विराट क्रुद्ध हुआ, एवं इसने जोश में आ कर कंक के मुख पर जोर से पाँसा फेंक मारा, जिस कारण उसका नाक से रक्त बहने लगा। उसी समय उत्तर वहाँ आ पहुँचा, एवं उसने बृहन्नला के पराक्रम की बातें कह सुनायी। पश्चात् उसने इसे युधिष्ठिर की क्षमा माँगने के लिए भी कहा।

उत्ता-अभिमन्यु-विवाह—पाण्डवों का अज्ञातवास समाप्त होने पर, उनकी सही जानकारी जब विराट को प्राप्त हुई, तब इस बड़ा दुःख हुआ। पाण्डवों के उपकारों का बल सूक्ताने, तथा उनका संस्कार करने की दृष्टि से, इन्होंने अपनी कन्या उत्तरा का विवाह अर्जुन के साथ करना चाहा। किन्तु अर्जुन ने इस प्रस्ताव का इन्कार किया, एवं अपने पुत्र अभिमन्यु का उत्तरा के साथ विवाह कराने की इच्छा प्रकट की। अर्जुन का यह प्रस्ताव सुन कर विराट को अत्यंत आनंद हुआ, एवं इसने अपने उपपुत्र्य नामक

नगरी में उत्तरा एवं अभिमन्यु का विवाह संयोजन कराया (म. वि. ६६-६७)।

भारतीय युद्ध में—इस युद्ध के समय, यह यद्यपि अत्यंत वृद्ध हुआ था, फिर भी अपने व्रथु एवं पुत्रों के साथ यह पाण्डवों के पक्ष में युद्ध करने के लिए उपस्थित हुआ था। युधिष्ठिर के सात प्रमुख सेनापतियों में से यह एक था (म. उ. १५४.१०-११)। इस युद्ध में इसका निम्नलिखित योद्धाओं से युद्ध हुआ था :—१. भगदत्त (म. भी. ४३.४८); २. अश्वत्थामन् (म. भी. १०६. ११; १०७.२१); ३. जयद्रथ (म. भी. ११२.४१-४२); ४. विंद एवं अनुविंद (म. द्रो. २४.२०); ५. शल्य (म. द्रो. १४२.३०)।

मृत्यु—जयद्रथ वध के उपरान्त हुए रात्रियुद्ध में यह द्रोण के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १६१. ३४)। इसकी मृत्यु पौष कृष्ण एकादशी के दिन प्रातःकाल में हुई थी (भारत-सावित्री)। इसकी मृत्यु के उपरान्त युधिष्ठिर ने इसका दाह-संस्कार किया (म. स्त्री. २६.३३), एवं इसका आद भी किया (म. शां. ४२.२)। मृत्यु के उपरान्त यह स्वर्ग में जा कर विश्वेदेवों में सम्मिलित हुआ (म. त्व. ५.१३)।

परिवार—इसकी कुल दो पत्नियाँ थीं :—१. कोसलराज-कुमारी सुरथा, जिससे इसे श्वेत एवं शंख नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे; २. केकय देश के सूत राजा की कन्या सुदेष्णा, जो इसकी पटरानी थी (म. वि. ८.६); एवं जिससे इसे उत्तर (भूमिजय), एवं वधु नामक दो पुत्र, एवं उत्तरा नामक एक कन्या उत्पन्न हुई थी।

इसके कुल ग्यारह भाई थे, जिनके नाम निम्नप्रकार थे :—१. शतानीक; २. मदिराश्र (मदिराश्र, विशालाश्र); ३. श्रुतानीक; ४. श्रुतध्वज; ५. वलानीक; ६. जयानीक; ७. जयाश्र; ८. रथवाहन; ९. चंद्रोदय; १०. समरथ; ११. सूर्यदत्त (म. द्रो. १३३.२९-४०)। इन भाइयों में से शतानीक इसका सेनापति था, एवं मदिराश्र 'महारथी' था।

इसके सारे पुत्र एवं सारे भाई भारतीय युद्ध में शामिल थे। उनमें से शंख, सूर्यदत्त एवं मदिराश्र द्रोण के द्वारा, श्वेत एवं शतानीक भीष्म के द्वारा, एवं उत्तरशल्य के द्वारा मारे गये।

२. सुतप देवों में से एक (वायु. १००.१५)।

३. आनंद नामक मालव्यकुलोत्पन्न ब्राह्मण का मानस-पुत्र (आनंद १. देखिये)।

४. प्रतदन देवों में से एक (वायु. ६२.२६)।

५. स्वायंभुव मनु का नामांतर (मत्स्य. ३.४५)।

विराडप—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद—'विडालज'।

विराध—वितल नामक पाताललोक में रहनेवाला एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (वायु. ५०.२८)।

२. दंडकारण्य में रहनेवाला एक राक्षस, जो जब एवं शतहृदा का पुत्र था। राम ने इसका वध किया, एवं लक्ष्मण ने एक गड्ढा खोद कर इसे गाड़ दिया।

पूर्वजन्म में यह तंबुरु नामक गंधर्व था, जिसे रंभा पर अत्याचार करने के कारण, राक्षसयोनि प्राप्त हुई थी (वा. रा. अर. २.१२; ४.१३-१९; म. स. परि. १. क. २१. पंक्ति ५१९)।

विराव—अमिताभ देवों में से एक।

विराविन्—धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

विरुद्ध—ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण (भा. ८.१३.२२)।

विरूप—एक असुर, जो श्रीकृष्ण के द्वारा मारा गया था (म. स. ९.१४)।

२. क्रोध के द्वारा लिया गया मानवी रूप, जिस रूप में उसने इक्ष्वाकु राजा के साथ तत्त्वज्ञानपर संवाद किया था। महाभारत में 'विरूप-इक्ष्वाकु संवाद' विस्तृत रूप में दिया गया है।

महाभारत में अन्यत्र 'विकृत-विरूप संवाद' भी प्राप्त है, जो इसने मानवरूपधारी 'काम' से किया था (म. शां. १९२.८८-११६)।

३. श्रीकृष्ण के महारथी पुत्रों में से एक (भा. १०. ९०.३४)।

४. (सू. नाभाग.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार अंत्ररीप राजा का पुत्र, एवं वृषदशव राजा का पिता था (भा. ९.६.१)।

विरूप अंगिरस—अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार एवं प्रवर, जिसका निर्देश ऋग्वेद में एक वैदिक सूक्तद्रष्टा के नाते किया गया है (ऋ. १.४५.३; ८.७५.६)। ऋग्वेद-अनुक्रमणी में भी एक सूक्तकार के नाते इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८.४३; ४४.७५)। ऋग्वेद में अन्यत्र भी इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. १.४५.३; ८.७५.६)।

महाभारत में इसे अंगिरस् ऋषि के आठ पुत्रों में से एक कहा गया है, एवं इसे 'वारुण' एवं 'अग्नि' पैतृक-नाम प्रदान किये गये हैं। इसके अन्य सात भाइयों के

नाम निम्नप्रकार थे :—बृहस्पति, उतथ्य, पयस्य, शान्ति, योर, संवर्त, एवं सुधन्वन् (म. अनु. ८.५.१३०-१३१)।

विरूपक—एक राक्षस, जो नैकेत (आलंदेय) राक्षस गण का अधिपति था। ये सारे राक्षस शिव के उपासक थे, जिस कारण स्वयं श्री रुद्र-गण कहलते थे।

इसकी पत्नी का नाम नीलकन्या विक्रान्ता था, जिसे इसे दंष्ट्राकराल आदि भूमि-राक्षस उपासक हुए (ब्रह्मांड. ३.७.१४०-१४३; १५३; वायु. ६९.१७४)।

२. एक दानव, जो प्राचीनकाल में पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२०.५१)।

विरूपाक्ष—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के चौतीस पुत्रों में से एक था। इंद्र-वृत्र युद्ध में यह वृत्र के पक्ष में शामिल था (वायु. ६८.११)। आगे चल कर यह चित्रवर्मा राजा के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. आ. ६१.२३)।

२. रावणपक्षीय एक राक्षस, जो मात्यवन् राक्षस का पुत्र था (वा. रा. उ. ५.३५)। यह रावण के सेना-पतियों में से एक था, एवं सुग्रीव से इसका युद्ध हुआ था (म. व. २६९.८; वा. रा. यु. ९.३; ९६.३४; ९९.१)। हनुमत् ने इसका वध किया।

३. एक राक्षस, जो घटोत्कच का सारथी था। कर्ण-घटोत्कच युद्ध में यह कर्ण के द्वारा मारा गया (म. श्रो. १५०.९२)।

४. एक राक्षस, जो नरकासुर का सेनापति था। 'औंडका' के अंतर्गत लोहितगंगा नदी के पास श्रीकृष्ण ने इसका वध किया (म. स. ३५. परि. १. क्र. २१ पंक्ति. १०१३)।

५. एक राक्षस, जो महिषासुर का अमात्य था (दे. ना. ५.११)।

६. एक राक्षस, जो सुमालि राक्षस का अमात्य था। सुग्रीव ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ९६)।

७. रुद्र-शिव का नामांतर (ब्रह्मांड. २.२५.६४)।

८. एकादश रुद्रों में से एक (मत्स्य. ५.२९)।

९. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार (मत्स्य. १९५. १९)। इसे अंगिरस्-कुल का मंत्रकार भी कहा गया है।

१०. एक राक्षसराज, जो राजधर्मन नामक वक्र का मित्र था (राजधर्मन देखिये)।

विरोचन—एक राक्षससम्राट्, जो प्रह्लाद के तीन पुत्रों में से उद्येष्ठ था। सुविस्वात राक्षससम्राट् वलि-वैरोचन का यह पिता था। सप्तशतालों में से पाँचवें शताब्दी में इसका अविराज्य था। दैत्यों के द्वारा किये गये पृथ्वी-

दोहन के समय, यह 'वस्त' (वृद्धा) बना था (म. श्रौ. परि. १. क्र. ८. पंक्ति. ८०२)।

प्रह्लाद की न्यायप्रियता—इसके पिता प्रह्लाद के न्यायनिष्ठता के संबंध में एक कथा महाभारत में प्राप्त है। एक बार केशिनी नामक सुंदर राजकन्या से यह एवं अंगिरस ऋषि का पुत्र सुधन्वन् एकसाथ ही प्रेम करने लगे। उस समय केशिनी ने इन दोनों से कहा, 'तुम दोनों में से जो अपने को श्रेष्ठ साबित करेगा, उससे मैं विवाह करूँगी'।

श्रेष्ठता के संबंध में इसका एवं सुधन्वन् का काफी वादविवाद हुआ। अंत में इस वाद का निर्णय करने के लिए, वे दोनों विरोचन के पिता असुरराज प्रह्लाद के पास गये। इनका यह भी तय हुआ कि, इनमें से जो श्रेष्ठ साबित होगा, उसका दूसरे के प्राणों पर अधिकार होगा।

असुरराज प्रह्लाद इन दोनों का श्रेष्ठता के संबंध में कुछ भी निर्णय न दे सका, जिस कारण उसने कदयप ऋषि की सलाह ली। उसीके कहने पर, प्रह्लाद ने अपने पुत्र की अपेक्षा सुधन्वन् को श्रेष्ठ उहाराया, एवं उसे कहा, 'तुम विरोचन के प्राणों के मालिक हो, उसका जीवन तुम्हारी मुझी में है'। प्रह्लाद की यह अपत्य-निरोधक न्यायप्रियता देख कर, सुधन्वन् असत्यिक प्रसन्न हुआ, एवं उसने विरोचन का जीवन उसे वाप दे दिया, एवं इसे ज्ञातायु बनने का आशीर्वाद दिया (म. स. ६१. ५८-५९)।

इंद्र-विरोचन-ब्राह्मण—छांदोग्य उपनिषद् में इंद्र एवं विरोचन का आत्मज्ञान के संबंध में एक कथा प्राप्त है। एकबार देव एवं असुरों को ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने की इच्छा हुई, एवं इस हेतु वे प्रजापति के पास गये। उनके प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रजापति ने उन्हें कहा, 'पृथ्वी के निष्पाप, अजर, अमर, अकाम एवं संकलपरहित आद्य तत्व को आत्मा कहते हैं'। तदुपरांत इसी आत्मा के सत्य स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कराने के हेतु देवों ने इंद्र को, एवं असुरों ने विरोचन को प्रजापति के पास शिष्य के नाते भेज दिया।

ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिए इंद्र एवं विरोचन बत्तीस साल तक प्रजापति के पास रहे। फिर भी प्रजापति ने इनको ब्रह्मज्ञान न दिया, एवं इनकी परीक्षा लेने के लिए इनसे अमृत (असत्य) वचन कहे, 'आँसों में, पानी में, आग्ने में अपनी जो परछाईं नज़र आती है, वही आत्मा है'।

प्रजापति का यह अमृत-कथन सत्य मान कर, विरोचन ने उत्तम स्नान किया, एवं उत्कृष्ट वस्त्र एवं अलंकार परिधान कर, अपनी परछाईं का पानी में निरीक्षण किया। पश्चात् उसी परछाईं को आत्मा मान कर, उसी तत्व का प्रचार यह अपने अनुगामियों में करने लगा। इसीके कारण, देह को ही आत्मा समझने वाले असुरों का 'आसुरी सांप्रदाय' निर्माण हुआ। यह सांप्रदाय देवों से संपूर्णतः विभिन्न था, जो शारीरिक एवं मानसिक बंधनों से अतीत, शुद्ध एवं स्वसंवेद्य आत्मतत्त्व को ही आत्मा मानते थे (छां. उ. ८. ७. २; ९. २; रक्षम एवं देव देखिये)।

मृत्यु—देवासुरों के बीच संघर्ष हुए 'तारकामय युद्ध' में असुरों के एक सेनादल का यह सेनापति था (म. स. परि. १ क्र. २१ पंक्ति. ३६७)। इसी युद्ध में यह इंद्र के द्वारा मारा गया (म. श्रौ. १९. ४८; ब्रह्मांड. २. २०. ३५; मत्स्य. १०. २१; पद्म. सू. १३)।

गणेश पुराण में इसकी मृत्यु की संबंध में एक कल्पनारम्य कथा दी गयी है। सूर्य के प्रपाद से इसे एक मुकुट प्राप्त हुआ था। उसके संबंध में शर्त थी कि, यह मुकुट किसी दूसरे के हाथों लग जायेगा, तो इसकी मृत्यु होगी। कालोपरांत इसके द्वारा देवों को अत्यधिक वस्तु किये जाने पर, श्रीविष्णु ने स्त्रीरूप धारण कर इसे मोहित किया, एवं इसका मुकुट हस्तगत कर के इसका विनाश किया (गणेश. २. २९)।

नारदपुराण के अनुसार, श्रीविष्णु ने ब्राह्मणबंध धारण कर, इसकी धर्मनिष्ठ पत्नी विशालाक्षी का बुद्धिभ्रंश करवाया, एवं कण्ठ से इसका वध किया (नारद. २. ३२)।

परिवार—इसकी विशालाक्षी एवं देवी नामक दो पत्नियाँ थीं (नारद. २. ३२; भा. ६. १८. १६)। इनमें से देवी से इसे बलि नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. आ. ५९. १९-२०; पद्म. सू. ६)। इसकी कन्या का नाम यशोधरा था (ब्रह्मांड. ३. १. ८६; यशोधरा देखिये)।

इसके निम्नलिखित पाँच भाई थे— कुंभ, निकुंभ, आयुष्मत्, शिषि एवं वाष्कलि। इसकी बहन का नाम विरोचना था (वायु. ८४. १९)।

२. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७. २)। भारतीय-युद्ध में यह भीमसेन के द्वारा मारा गया। इसे 'दुर्विरोचन' एवं 'दुर्विभोचन' नामांतर भी प्राप्त थे।

विरोचना—असुरराज प्रह्लाद की कन्या, जो विरोचन दैत्य की बहन थी। इसका विवाह त्वष्ट से हुआ था, जिससे इसे विरज नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ५. १५.१५)। वायु में विश्वरूप त्रिशिरस् नामक मुनि को भी इसीका ही पुत्र कहा गया है (वायु. ८४.१९)।

२. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५. २८)।

विरोध—एक राक्षस, जो वात नामक राक्षस का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम जनान्तक था (ब्रह्मांड. ३.७. ९६)।

विरोहण—तक्षक कुल में उत्पन्न एक नाग, जो जन-मेजय के सर्वसत्र दग्ध हुआ था।

विलास—पश्चिमी घाट में रहनेवाला एक तपस्वी। इसके मित्र का नाम भास था। 'विमलज्ञान' की प्राप्ति हो कर ये दोनों मुक्त हुए (यो. वा. ५.६५-६७)।

विलोमन्—(सो. कुकुर.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वह्नि राजा का, एवं विष्णु के अनुसार कपोत-रोमन् राजा का पुत्र था। भागवत में इसे कपोतरोमन् का पिता कहा गया है (भा. ९.२४.१९-२०)।

विलोहित—एक रुद्र, जो ऋषय एवं सुरभि के पुत्रों में से एक था।

२. एक राक्षस, जो कश्यप एवं स्वशा के पुत्रों में से एक था। इसका तीन सिर, तीन पैर एवं तीन हाथ थे (वायु. ६९.७६)।

विचक्षु—(सो. कुह. भविष्य.) कुह्वंशीय निमिचक्र राजा का नामान्तर। मत्स्य में इसे अविशोमकृष्ण राजा का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. ५०.७८; निमिचक्र देखिये)।

विचर्धक—वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार विचक्षुष का नामान्तर।

विचर्धन—युधिष्ठिर की सभ्य का एक राजा (म. स. ४.१८)।

२. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था।

विवस्वत्—एक देवता, जो संभवतः उदित होनेवाले सूर्य का प्रतिनिधित्व करता है।

ऋग्वेद में विवस्वत्, आदित्य, पृषन्, सूर्य, अर्यमन्, मित्र, मम आदि सूर्य से संबंधित (सौर्य) देवताओं को विभिन्न देवता माना गया है (ऋ. ५.८१.४; १०.१३९. १)। किंतु वे स्वतंत्र देवता न हो कर एक ही सूर्य देवता की विभिन्न रूप प्रतीत होते हैं (सूर्य देखिये)।

ऋग्वेद में—इस ग्रंथ में यद्यपि विवस्वत् का स्वतंत्र सूक्त अप्राप्य है, फिर भी एक स्वतंत्र देवता के नाते इसका निर्देश ऋग्वेद में प्रायः तीस बार आया है। इसे अश्वियों का एवं यम का पिता कहा गया है (ऋ. १०. १७; १०.१४.१; ५८.१)। ऋग्वेद में अन्यत्र सभी देवताओं को भी विवस्वत् की संतान (जनिमा) कहा गया है (ऋ. १०.६३.१)। त्वष्ट की कन्या सरथ्यू इसकी पत्नी थी (ऋ. १०.१७.१-२)।

दूत—ऋग्वेद में एक ही बार मातरिश्वन् की विवस्वत् का दूत कहा गया है (ऋ. ६.८.४)। अन्यथा सर्वत्र अग्नि को इसका दूत कहा गया है (ऋ. १.५८.१; ८.७.४; ८. ३९.३; १०.२१.५)।

निवासस्थान—विवस्वत् के सदन का निर्देश ऋग्वेद में अनेकवार प्राप्त है। देवगण एवं इंद्र इस सदन में आनंद मनाते हैं (ऋ. ३.५१), एवं इसी सदन में गायक-गण इंद्र एवं जल की महानता का गुणगान करते हैं (ऋ. १. ५३; १०.७५)।

देवताओं का मित्र—विवस्वत् का सबसे बड़ा मित्र इंद्र है, जिसकी यह पुनः पुनः स्तुति करता है। इंद्र इसकी स्तुति से प्रसन्न होता है (ऋ. ८. ६), एवं अपना समस्त धनकोश विवस्वत् के ब्रह्म में रख देता है (ऋ. २. १३)। विवस्वत् की दस उँगलियों के द्वारा इंद्र बुलोक से जल नीचे गिराता है (ऋ. ८.६१)।

विवस्वत् का अन्य एक मित्र सोम है। वह विवस्वत् के साथ ही रहता है (ऋ. ९.२६.४), एवं विवस्वत् की कन्याएँ (उँगलियाँ) सोम को खचल करती हैं (ऋ. ९.१४)। विवस्वत् की स्तुतियाँ पिशांग नामक सोम को प्रवाहित करती हैं (ऋ. ९.९९)। इसका आशीर्वाद प्राप्त कर लेने पर, सोम की धाराएँ बहने लगती हैं (ऋ. ९.१०)।

अश्विनीकुमार भी इसके साथ रहते हैं (१.४६. १३)। अश्वियों के रथ जोतने के समय, विवस्वत् के उज्वल दिनों का प्रारंभ होता है (ऋ. १०. ३९; श. ब्रा. १०.५.१)।

एक उपास्य-देवता के नाते, वरुण एवं अन्य देवताओं के साथ विवस्वत् का निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.६५) अपने उगासकों के द्वारा उपासित विवस्वत् एक आक्रमक देवता है, जो यम से एवं आदित्यों से उनकी रक्षा करती है (अ. वे. १८. ३; ऋ. ८.५६)।

व्युत्पत्ति—अग्नि एवं उपम के संदर्भ में विवस्वत् शब्द कई बार 'वैदीयमान' अर्थ में प्रयुक्त किया गया है (क. १.१६: ७.९)। विवस्वत् का शब्दशः अर्थ 'प्रकाशित होना' है, जो उपम (उदय होना) से काफी मिलता जुलता है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, यह दिन एवं रात्रि को प्रकाशित (विवस्वत्) करता है, इसी कारण इसे विवस्वत् नाम प्राप्त हुआ (श. ब्र. १०.५.२)।

विवस्वत् देवता का अन्वयार्थ—व्युत्पत्तिजन्य अर्थ, अग्नि, अश्विनी एवं सोम के साथ इसका संबंध, एवं यज्ञस्थल में इसका निवास, इन सारों सामग्री को धोर संकेत कर, कई अभ्यासकों का कहना है कि, उदित होनेवाला सूर्य ही वैदिक विवस्वत् है। अभ्य कई अभ्यासक इसे सूर्यदेवता ही मानते हैं (सूर्य देखिये)। ब्रह्म के अनुसार, विवस्वत् मुख्यतः एक अग्निदेवता है, जिसका ही एक रूप सूर्य है (ब्रह्म, १.७८)।

एक देवता के नामे विवस्वत् का महत्त्व वैदिकोत्तर साहित्य में कम होता गया, एवं अन्त में इसका स्वतंत्र अस्तित्व विनष्ट हो कर यह सूर्य एवं आदित्य देवताओं में विलीन हो गया (सूर्य देखिये)।

२. मानवजाति का प्रथम यज्ञकर्ता, जो मनु एवं यम का पिता माना जाता है (क. ८.५.२; १०.१४.१७)। मनु इसका पुत्र होने के कारण, उसे 'विवस्वत्' एवं 'वैवस्वत्' पितृक नाम से भूषित किया गया है (अ. वे. ८.१०; श. ब्र. १३.७.३)। तैत्तिरीय संहिता में मनुष्यों को भी विवस्वत् की संतान कहा गया है (तै. सं. ६.५.६)।

महाभारत में भी यम एवं मनु को विवस्वत् की संतान कहा गया है (म. आ. ७०.१०; ९०.७)।

इग्नोति साहित्य में—इस साहित्य में निर्दिष्ट विवस्वत् (यम के पिता) ने विवस्वत् काफी साभय रखता है। जिन प्रकार विवस्वत् पृथ्वी के अग्नि का आद्यजनक माना जाता है, उसी प्रकार 'विवस्वत्' को 'हओम' बनाने-बाला पहला व्यक्ति कहा गया है।

३. एक आदित्य, जो बारह आदित्यों में से एक माना जाता है (वायु. ३.३; ६६.६६; विष्णु. १.१५.१३१)। यद्यपि ऋग्वेद में विवस्वत् को अदिति का पुत्र नहीं कहा गया है, फिर भी यजुर्वेद एवं ब्राह्मण ग्रंथों में विवस्वत् को आदित्य कहा गया है (वा. सं. ८.५; मै. सं. १.६)।

महाभारत में इसे कश्यप एवं अदिति के बारह पुत्रों में से एक कहा गया है (म. आ. ७०.९)।

इसका निर्देश एक स्वतंत्र आदित्य के नाते नहीं, बल्कि लोकेश्वर सूर्य के नाते ही किया गया प्रतीत होता है।

पुराणों में इसे अदिति का नहीं, बल्कि दाक्षायणी का पुत्र कहा गया है। इसे श्रावण माह का आदित्य एवं प्रजापति भी कहा गया है (वायु. ६५.५३)। इन ग्रंथों में भी इसे सूर्य का ही प्रतिरूप माना गया है, एवं मनु, शत्रुदेव, यम एवं यमी को इसकी संतान मानी गयी है (विष्णु. ४.१.६)।

महाभारत में इसकी पत्नी का नाम संज्ञा दिया गया है, एवं नासत्य एवं दक्ष नामक दो अधिर्नाकुमार इसके पुत्र बताये गये हैं, जो वस्तुतः इसकी नहीं, बल्कि सूर्य की ही संतान हैं। इसने वेदोक्त विधि के अनुसार यज्ञ कर के अपने पिता आचार्य कश्यप को दक्षिणा के रूप में एक दिशा का दान कर दिया था। इसी कारण, उस दिशा को दक्षिण दिशा कहते हैं।

४. एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (क. १०.१३)।

५. ज्येष्ठ माह में प्रकाशित होनेवाला सूर्य, जिसकी चौदह सौ किरणें रहती हैं (मत्स्य. १.७८)। भागवत एवं ब्रह्मांड के अनुसार, यह नभस्य (भाद्रपद) माह में प्रकाशित होता है।

६. चाक्षुष मन्वन्तर के समर्पियों में से एक (मत्स्य. ९.२३)।

७. एक असुर, जो गरुड के द्वारा मारा गया था (म. उ. १०३.१२)।

८. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३१)।

विचित्रत—(सू. इ.) एक सूर्यवंशीय राजा, जो महाभारत, विष्णु एवं वायु के अनुसार विश राजा का पुत्र था (म. आश्व. ४.५; वायु. ८६.६)। इसके खनी-नेत्र आदि पंद्रह पुत्र थे।

२. एक राजा, जो अश्व राजा का पुत्र था। विदर्भ कन्या नंदिनी इसकी माता थी (मार्क. ११६)।

विचित्रत—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक महारथी पुत्र। यह द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१)। दुर्योधन के द्वारा विराट की गोशाला पर किये गये आक्रमण में भी यह उपस्थित था (म. भी. ३३.३)। भारतीय युद्ध में यह भीम के द्वारा मारा गया।

२. एक राजा, जो चाक्षुष राजा का पुत्र, एवं रंभ राजा का पिता था (भा. ९.२.२४-२५)।

विचित्रत—कुशद्वीप का एक राजा, जो हिरण्यरेतस राजा का पुत्र था (भा. ५.२०.२४)।

विविध—(सो. कु. ६.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. क. ३५.११)।

विविध—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

विविध—एक दानव, जो शाख का अनुयायी था। कृष्ण पुत्र चाण्डेय ने इसका वध किया (म. व. १७. २६)।

विशाल—(शि. भविष्य.) शिशुपालवंशीय 'विशाल' एवं 'विन्दुसार' राजा का नामान्तर (विशाल एवं विन्दुसार देखिये)।

विशाल—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १६३)।

विशाल—बलराम एवं रेवती के पुत्रों में से एक (वायु. ३१.६)।

विशाल—प्रित देवों में से एक।

विशाल—(सो. पुरुरवम्.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार अथर्व राजा का पुत्र, एवं सेनजित् राजा का पिता था (भा. ९.२१.२३)।

विशाल—इंद्रसभा का एक ऋषि (म. स. ७.१२)।
२. (सो. पुरुरवम्.) एक राजा, जो आयु राजा का पुत्र था (पद्म. सु. १२)।

३. स्कंद के तीन छोटे भाइयों में से एक। इसके अन्य दो भाइयों के नाम शाख एवं नैगमेय थे।

इसके जन्म के संभव में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा महा-भारत में प्राप्त है। एक बार स्कंद अपने पिता शिव से मिलने जा रहा था। उस समय शिव, पार्वती, अग्नि एवं गंगा चारों ही एकसाथ मन ही मन सोचने लगे कि, स्कंद उनके पास रहने आवे तो अच्छा होगा। उनके मनोभाव को समझ कर, स्कंद ने योगशल से अपने स्कंद, विशाल, शाख एवं नैगमेय नामक चार रूप बना दिये, जो क्रमशः शिव, पार्वती, अग्नि एवं गंगा के पास रहने लगे। स्कंद से उत्पन्न होने के कारण, ये परस्पर अभिन्न माने जाते हैं (म. श. ४४.३४)।

४. स्कंद का एक रूप। एक समय इंद्र ने स्कंद पर वज्र का प्रहार किया, जिस कारण उसकी दायी पैसली पर गहरी चोट लगी। इस चोट में से स्कंद का एक नया रूप प्रकट हुआ, जिसकी युवावस्था थी। उसने सुवर्णमय कवच धारण किया था, एवं उसके हाथ में एक शक्ति थी। वज्र के दाव से उसकी उत्पत्ति होने के कारण, उसे 'विशाल' नाम प्राप्त हुआ।

विशाल—(प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा, जो पालक राजा का पुत्र, एवं राजक राजा का पिता था। वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार इसने पचास वर्षों तक, तथा मरु के अनुसार इसने तिरपन वर्षों तक राज्य किया।

विशाल—सोम की पत्नियों में से एक।

विशाल—(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो भागवत, ब्रह्मांड एवं वायु के अनुसार तृणविंदु राजा का पुत्र था। इसने वैशाली नामक नगरी की स्थापना की (भा. ९.२.३३; ब्रह्मांड. ३.६१.१२; विष्णु. ४.१.१६; वायु. ८६.१२-२२)। किन्तु रामायण के अनुसार वैशाली नगरी की स्थापना इसके द्वारा नहीं, बल्कि इक्ष्वाकु के पुत्र के द्वारा हुई थी (वा. रा. वा ४७.११-१७)।

इसके पुत्र का नाम हेमचंद्र था। विशाल एवं हेमचंद्र को वैशालराजवंश के संस्थापक माने जाते हैं (भा. ९.२. ३३-६६)।

वैशाली नगरी—इस नगरी का त्रिविस्तृत वर्णन वाल्मीकि रामायण, बौद्धधर्मीय जातक ग्रंथ, एवं ह्य एन्-संग आदि चिनी प्रवासियों के प्रवासवर्णनों में प्राप्त है, जहाँ इस नगरी के वैभव एवं विस्तार की जानकारी दी गयी है। इस नगरी के खण्डहर आधुनिक विहार राज्य में मुज़फरपुर जिले में बसाइ ग्राम में प्राप्त हैं, जो गण्डकी नदी के दाहिने तट पर बसा हुआ है। इस नगरी में इक्ष्वाकु राजाओं के समान, लिच्छवी गण की एवं बज्जीराज्यसंघ की राजधानी भी स्थित थी। जैनों का चौकीसवां तीर्थंकर महावीर, एवं बौद्ध धर्म का संस्थापक गौतम बुद्ध इस नगरी में धर्मप्रचारार्थ आये थे। इसी कारण, बौद्ध एवं जैन ग्रंथों में इस नगरी का निर्देश पुनः पुनः प्राप्त है।

वैशाल राजवंश—वैशाल राजवंश की विभिन्न जानकारी भागवत एवं वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है, जो निम्न प्रकार है :—

(१) भागवत में—इस ग्रंथ में सूर्यवंश के दिष्टशाखा के तृणविंदुपुत्र विशाल राजा को 'वैशालराजवंश' का संस्थापक कहा गया है, एवं उसकी वंशावलि निम्नप्रकार दी गयी है :—विशाल-हेमचंद्र-धूम्राश्र-संथम-महोदेवपुत्र कुशाश्र-सोमदत्त-सुमति-जनमेजय (भा. ९.२.३३-३६)।

(२) वाल्मीकि रामायण में—इस ग्रंथ में इक्ष्वाकुपुत्र विशाल को विशालपुरी (वैशाली), एवं वैशालराजवंश का संस्थापक कहा गया है, एवं उसका राजवंश निम्नप्रकार दिया गया है :—विशाल-हेमचंद्र-मुचंद्र-धूम्राश्र संजय-

सहदेव-कुशाश्र-सोमदत्त-कामुत्थ-सुमति (वा. रा. वा. ४७.११-१७)।

वायु में सोमदत्त से सुमति राजाओं तक का वंशक्रम सोमदत्त-जनमेजय-सुमति इस क्रम से दिया गया है (वायु. ८६.१५-२२)। विष्णु में भी 'वैशालक वृषो' का निर्देश प्राप्त है, एवं इस वंश के हेमचंद्र, सुचंद्र एवं पुष्कराक्ष के साथ परशुराम का युद्ध होने का निर्देश वहाँ किया गया है (विष्णु. ४.१.१६)।

२. लक्ष्म नगरी का एक राक्षस (वा. रा. सं. ६.२६)।

३. कृष्ण का एक बालमित्र (भा. १०.२२.३१)।

४. एक राजा, जो विश्रवस् राजा एवं अलेक्षुपा अप्सरा का पुत्र था।

५. एक राजा। इसकी कन्या का नाम वैशालिनी था, जो परिक्षित् राजा की पत्नी थी (वैशालिनी देविये)।

विशालक--कुबेर सभा का एक यक्ष (म. स. १०.१५)।

२. एक राजा, जिसने अपनी भद्रा नामक कन्या वसुदेव को विवाह में दी थी। किन्तु शिशुपाल ने उसका हरण किया (म. स. ४२.११)।

विशाला--सोमवंशीय अरुभीह राजा की पत्नी (म. भा. १०.३९)। पाठ--'विमला'।

२. महावीर्यपुत्र भीम राजा की पत्नी, जिससे इसे कन्याशर्णि, पुष्करिन् एवं कपि नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए (वायु. ३७.१५८)। मत्स्य में इसे उरुक्षय राजा की पत्नी कहा गया है।

३. वरुण की कन्या, जो ययातिपत्नी अश्रुविन्दुमती की सखी थी (पद्म. भू. ७७)।

४. कौशिक राजा की पत्नी (कौशिक ११. देखिये)।

विशालाक्ष--गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. ११.९)।

२. (सो. कुह.) भृतराष्ट्र के दानपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया था (म. भा. ८४.२५)।

३. बिराट राजा का छोटा भाई, जिसे 'मदिराक्ष' नामांतर भी प्राप्त था। कीचकवध के पश्चात् यह बिराट का सेनापति हुआ (म. वि. ३१.१५; मदिराक्ष १. देखिये)।

४. मिथिला देश का एक राजा, जो युधिष्ठिर के राजसूय व्रत में उपस्थित था (भा. १०.८२.२६)।

५. एक वास्तुशास्त्रकार, जो वास्तुशास्त्रविषयक अठारह प्रमुख ग्रंथकारों में से एक माना जाता है।

विशालाक्षी--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.३)।

विशिक्ष--एक पक्षिराज, जो गरुड एवं युक्ती के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.४५०)।

विशिरा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२८)।

विशिशिम--एक आचार्य, जिसका निर्देश सदाशुभ नामक ऋषि के सूक्त में प्राप्त है। वहाँ मनु ने इसे बाद-विवाद में जीतने का निर्देश प्राप्त है (श्रु. १.४५.६)।

विशेष--दमन नामक शिवावतार का एक शिष्य।

विशोक--एक केकय राजकुमार, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ७.३)।

२. भीमसेन का सारथि (म. स. ३०.३०; भी. ७३.२५)। भारतीय युद्ध के समय इसका एवं भीम का यार्णों के विविध जातियों के संबंध में संवाद हुआ था (म. क. ५४.१४-१५)।

३. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं त्रिवक्रा के पुत्रों में से एक था। यह नारद का शिष्य था, एवं इसने 'सात्वत तंत्र' नामक ग्रंथ की रचना की थी, जिसमें स्त्रियों, शूद्र एवं मुसलम लोगों के लिए विविध प्रकार का उपदेश दिया गया है (भा. १०.१०.३४)।

४. दमन नामक शिवावतार का एक शिष्य। पाठ--'विशेष'।

विशोका--कृष्ण की एक पत्नी (म. स. परि. १. २२.१४१२)।

२. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.५)।

विष्पला--खेल नामक राजा की पत्नी। किसी युद्ध में इसका पाँव टूट गया। उस समय अश्विनो ने इसे एक लोहे का (आयसी) पैर प्रदान किया, एवं एक रात्रि में ही इसे पुनः एक बार युद्ध के लिए योग्य बनाया। पिरोल के अनुसार, विष्पला एक स्त्री का नाम न हो कर एक अश्व का नाम था (वेदिको स्टूडियन्. १.१७१-१७३)। किन्तु यह तर्क अयोग्य प्रतीत होता है।

विश्रवस्--(स्वा.) एक ऋषि, जो वैश्रवण कुबेर का पिता था (वायु. ५९.१०-११; ब्रह्मांड. २.३३.९८-१००)। इसके भाई का नाम अगस्त्य था।

जन्म--भागवत में इसे पुलस्त्य एवं हविर्भू का पुत्र कहा गया है (भा. ४.१.३६-३७)। ब्रह्मांड में इसकी माता का नाम हलविला दिया गया है, जो तृणधनु एवं

अलंबुषा की कन्या थी (ब्रह्मंड. ३.७.३९-४२)। वायु में इसकी माता का नाम द्रविडा दिया गया है (वायु. ८६.१६)। इलविला एवं द्रविडा इसकी माता का नाम था, या पत्नी का, इस संबंध में पुराण में एकवाक्यता नहीं है।

परिवार—इसकी निम्नलिखित पत्नियाँ थीः—१. इडविडा (इलविला, इडविला); २. केशिनी (कैकसी); ३. पुष्पोत्कटा; ४. राका (बाका); ५. बलका; ६. चेडविडा; ७. देववर्णिनी; ८. मंदाकिनी (पद्म, पा. ६); ९. मालिनी (म. व. २५९.६०)।

अपनी उपयुक्त पत्नियों से इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुएः—

(१) इडविडापुत्र—कुबेर वैश्रवण।

(२) केशिनीपुत्र—रावण, कुंभकर्ण, विभीषण नामक पुत्र एवं शूर्पणखा नामक कन्या।

(३) पुष्पोत्कटापुत्र—महोदर, प्रहस्त, महापांशु एवं खर नामक पुत्र, एवं कुंभोत्तरी नामक कन्या।

(४) राकापुत्र—त्रिशिरस्, दूषण, विद्युच्छिह्न नामक पुत्र, एवं असलिका नामक कन्या (वायु. ७०.३२-३५; ४१; ४९-५०)।

महाभारत के अनुसार, इसकी पत्नियों में से पुष्पोत्कटा, राका एवं मालिनी ये तीनों राक्षसकन्याएँ थीं, जो कुबेर ने अपने पिता की सेवा के लिए नियुक्त की थी।

महाभारत में विभीषण को मालिनी का, कुंभकर्ण एवं रावण को पुष्पोत्कटा का, एवं खर एवं शूर्पणखा को राका की संतान बताया गया है (म. व. २५९.७-८)।

आश्रम—विश्वरूप ऋषि का आश्रम आनर्त देश की सीमा में स्थित था। इसी आश्रम में कुबेर का जन्म हुआ था।

२. (सू. विष्ट.) एक राजा, जो तृणविन्दु का पुत्र था।

३. एक राजा, जो द्रविड राजा का पौत्र, एवं विशाल राजा का पुत्र था (वायु. ८६.१६)।

विश्रुत—एक यादव राजकुमार, जो भगवत के अनुसार वसुदेव एवं सहदेवी के पुत्रों में से एक था।

२. अभिताम देवों में से एक।

३. पारावत देवों में से एक।

विश्रुतवत्—एक राजा, जो वायु के अनुसार सरस्वत राजा का पुत्र, एवं बृहद्रथ राजा का पिता था (वायु. ८८.२१२)।

विश्व—एक राजा, जो मयूर नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था। भरतीय युद्ध में, यह कौरवों के पक्ष में शामिल था (म. आ. ६१.३६)।

२. एक गंधर्व, जो 'तपरय' (फारगुन) माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है (आ. १२.११.४०)।

३. सत्य देवों में से एक।

विश्वक कर्षिण (कृष्णिय)—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.२६)। यह अश्विनो के कुरापात्र व्यक्तियों में से एक था, जिन्होंने विष्णु नामक इसका खोया हुआ पुत्र इसे पुनः प्रदान किया था (ऋ. १.११६.२३; ११७.७; ८.८६.१; १०.६५.१२)। कृष्ण आगिरस नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पुत्र होने के कारण, इसे 'कर्षिण' अथवा 'कृष्णिय' नेत्रक नाम प्राप्त हुआ होगा (कृष्ण ३. देखिये)।

विश्वकर्मन्—एक शिवशास्त्रज्ञ, जो स्वायम्भुव मन्वन्तर का 'शिवप्रजापति' माना जाता है। महाभारत एवं पुराणों में निर्दिष्ट देवों का सुविख्यात शिल्पी स्वष्ट इसी का ही प्रतिरूप माना जाता है (स्वष्ट देखिये)।

वैदिक साहित्य में—एक देवता के रूप में विश्वकर्मन् का निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार प्राप्त है (ऋ. १.०.८१-८२)। वैदिक साहित्य में इसे 'सर्वद्रष्टा' प्रजापति कहा गया है (वा. सं. १२.६१)।

स्वरूपवर्णन—यह सर्वद्रष्टा है, एवं इसके चारों तरफ चार ही ओर नेत्र, मुख, भुजा एवं पैर हैं। इसे पंच भौ हैं। विश्वकर्मन् का यह स्वरूपवर्णन पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट चतुर्भुज ब्रह्मा से काफी मिलता जुलता है।

गुणवर्णन—प्रारंभ में विश्वकर्मन् शब्द 'सौर देवता' की उपाधि के रूप में प्रयुक्त किया जाता था। किन्तु शब्द में यह समस्त प्राणिसृष्टि का जनक माना जाने लगा। ब्राह्मण ग्रंथों में विश्वकर्मन् को 'विधातृ' प्रजापति के साथ स्पष्टरूप से समीकृत किया गया है (श. भा. ८.२.१.३), एवं वैदिकोत्तर साहित्य में इस देवों का शिल्पी कहा गया है।

ऋग्वेद में इसे द्रष्टा, पुरोहित एवं समस्त प्राणिसृष्टि का पिता कहा है। यह 'धातृ' एवं 'विधातृ' है। इसने पृथ्वी को उत्पन्न किया, एवं आकाश को अनावरण किया। इसीने ही सब देवों का नामकरण किया (ऋ. १०.८२.३)। इसी कारण, एक देवता मान कर इसकी पूजा की जाने लगी (ऋ. १०.८२.४)।

महाभारत एवं पुराणों में—महाभारत में इसे 'शिल्प-प्रणपति' एवं 'कृतीपति' कहा गया है (भा. ६.६. १५)। ब्रह्मांड में इसे स्वयं का पुत्र एवं मय का पिता कहा गया है (ब्रह्मांड. १.२.१९)। किन्तु यह वंशक्रम कल्पना-रूप प्रतीत होता है (मय देखिये)। यह प्रनास वसु एवं बृहस्पति भूमिनी योगसिद्धा का पुत्र था। भगवत में इसे वातु एवं अंगिरसी का पुत्र कहा गया है। ब्रह्मा के दक्षिण वक्षसग से यह उद्वह्न होने की कथा भी महाभारत में प्राप्त है (म. आ. ६०.२६-३२)।

शिल्पशास्त्र—यह देवों के शिल्पसहस्रों का निर्माता एवं 'वर्धक' बहुर्य था। देवों के सारे अस्त्र-शस्त्र, आभूषण एवं विमान इसीके द्वारा ही निर्माण किये गये थे। इसी कारण, यह देवों के लिए अत्यंत पूज्य बना था।

इसके द्वारा निर्मितलिखित नगरियों का निर्माण किया गया था:— १ इंद्रप्रस्थ (धृतराष्ट्र के लिए) (म. आ. ११९.१९२०३. पंक्ति. ३-४); २. द्वारका (श्रीकृष्ण के लिए) (भा. १०.२०; ह. कं. २.९८); ३. वृन्दावन (श्रीकृष्ण के लिए) (ब्रह्मवै. ४.१७); ४. लंका (सुकेश-पुत्र राक्षसों के लिए) (त्रा. रा. उ. ६.२२-२७); ५. इन्द्रलोक (इंद्र के लिए) (भा. ६.९.५४); ६. सुतल नामक पताललोक-- (भा. ७.४.८); ७. हस्तिनापुर (पाण्डवों के लिए) (भा. १०.२८.२४); ८. गरुड का भवन (मत्स्य. १६३.६८)।

अस्त्रों का निर्माण—श्रीविष्णु का सुदधान, शिव का त्रिशूल एवं रथ, तथा इंद्र का वज्र एवं विजय नामक धनुष्य आदि अस्त्रों का निर्माण भी विश्वकर्मन् के ही द्वारा किया गया था। इनमें से शिव का रथ इमने त्रिपुरगह के उपलक्ष्य में, एवं इंद्र का वज्र इमने दधीचि ऋषि की आस्थियों से बनाया था (म. क. २४.६६; भा. ६.१०)।

इन अस्त्रों के निर्माण के संबंध में एक नमस्कृतिपूर्ण कथा वज्र में प्राप्त है। इसकी संज्ञा नामक कन्या का विवाह विवस्वन् (स्य) से हुआ था। विवस्वन् का तेज वह न सह सकी, जिस कारण वह अपने पिता के पास वापस आयी। अपनी पत्नी को वापस लेने के लिए विवस्वन् भी वहाँ आ पहुँचा। पश्चान् विवस्वन् का थोड़ा ही तेज अक्षी रख कर, उसका उर्वरित सारा तेज इमने निकाल लिया, एवं उसी तेज से देवताओं के अनेकानेक अस्त्रों का निर्माण किया।

परिवार—इसकी कृति (आकृति) नामक भार्या का निर्देश भगवत में प्राप्त है। उसके अतिरिक्त इसकी रति,

प्राप्ति एवं नंदा नामक अन्य तीन पत्नियों भी थी (म. आ. ६०.२६-३२)।

(१) पुत्र—इसके निम्नलिखित पुत्र थे:— १. मनु चाधुप; २. राम, काम एवं हर्ष, जो क्रमशः रति, प्राप्ति एवं नंदा के पुत्र थे; ३. मल्ल वानर (म. व. २६७.४१); ४. विश्वरूप, जो इसने इंद्र के प्रति द्रोहबुद्धि होने से उत्पन्न किया था; ५. वृत्रासुर, जो इसने विश्वरूप के मारे जाने पर इंद्र से वधका लेने के लिए उत्पन्न किया था (म. उ. ९.४२.४९)।

(२) कन्याएँ—इसकी निम्नलिखित कन्याएँ थी:— १. बर्हिष्मती, जो प्रियव्रत राजा की पत्नी थी; २. संज्ञा एवं छाया जो विवरवत् की पत्नियाँ थी; ३. तिलोत्तमा, जिसे इसने ब्रह्मा की आज्ञा से निर्माण किया था (म. आ. २०३.१४-१७)।

ग्रंथ—इसके नाम पर शिल्पशास्त्रविषयक एक ग्रंथ भी उपलब्ध है (मत्स्य. २५२. २१; ब्रह्मांड. ४.३१.६-७)।

२. विश्वकर्मन् का एक ब्राह्मण अवतार। अपने पूर्वजन्म में इसने क्रोध में आ कर पुताची नामक प्रिय अप्सरा को सूद्रकुल में जन्म लेने का शाप दिया, जिसके अनुसार वह एक ग्वाले की कन्या बन गयी। ब्रह्मा की कृपा से इसे भी ब्राह्मणवंश में जन्म प्राप्त हुआ। इस प्रकार ब्राह्मण पिता एवं ग्वाले की कन्या के संयोग से दर्जी, कुम्हार, स्वर्णकार, बहुर्य आदि तंत्रविद्याप्रवीण जातियों का निर्माण हुआ। इसी कारण, ये सारी जातियाँ स्वयं को विश्वकर्मन् के वंशज कहलाते हैं (ब्रह्मवै. १. १०)।

३. वशवर्तिन् देवों में से एक। यह प्रभत वसु एवं भुवना के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. २.३६.२९)।

• विश्वकर्मन् भौवन्—एक सुविख्यात वैदिक राजा। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, इसे कश्यप ने इंद्र अभिषेक किया था, जिस समय इसने कश्यप को दक्षिण के रूप में पृथ्वी का दान दिया था (ऐ. ब्रा. ८. २१. ८)। शतपथ ब्राह्मणमें इसके द्वारा 'सर्वमेवयज्ञ' में कश्यप को समस्त पृथ्वी का दान देने का निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. १३.७.१.१५)।

किन्तु इन दोनों ही अवसरों पर, पृथ्वी ने अपना इस प्रकार दान दिया जाना अस्वीकृत कर दिया। इस कारण, क्रुद्ध हो कर इसने समस्त प्राणिसृष्टि की, एवं अंत में स्वयं की यज्ञ में आहुति दे दी (ऋ. १०.८१.१; ऐ. ब्रा. ८. १०; नि. १०.२६)।

यज्ञमंस्था के प्रारंभिक काल में भूमिदान वृणास्वद माना जाता था, जिसका ही संकेत विश्वकर्मेन्द्र की उपर्युक्त कथा में दिया हुआ प्रतीत होता है।

विश्वकाय—हिरण्यकशिपु की सभा का एक राक्षस (पद्म. सू. ४५)।

विश्वकृत्—एक सनातन विश्वेश्वर (म. अनु. ११. ३६)।

विश्वग—(स्वा.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पूर्णिमत् राजा का पुत्र था।

विश्वगन्धर्व—(सू. इ.) एक राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार, पृथु वैश्व राजा के पाँच पुत्रों में से एक था। इसे ' विश्वरंधि, ' ' वृषरंध, ' ' विष्टराग, ' एवं ' विश्वग ' नामान्तर भी प्राप्त थे।

विश्वकर्षणि—एक पौरुष नाम, जो युग्न विश्वकर्षणि आग्नेय नामक आचार्य के लिए प्रयुक्त किया गया है (ऋ. ५. २३)।

विश्वचित्ति—हिरण्यकशिपु के दरवार का एक राक्षस (पद्म. सू. ४५)।

विश्वजित्—(सो. पुरुरवस्.) एक राजा, जो वायु के अनुसार बृहद्रथ राजा का, एवं विष्णु के अनुसार जयद्रथ राजा का पुत्र था (वायु. १९. १७२)। मत्स्य में इसे ' अश्वजित् ' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम सेनजित् था।

२. एक अग्नि, जो बृहस्पति के पुत्रों में से एक था (म. व. २०९. १६)। यह समस्त विश्व की बुद्धि को अपने दश में रखता है। इसलिए अध्यात्मशास्त्र के विद्वानों के द्वारा इसे ' विश्वजित् ' नाम दिया गया है।

३. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं ब्रह्मांड के अनुसार सत्यजित् राजा का पुत्र था। वायु में इसे वीरजित् कहा गया है।

४. एक दानव, जो कश्यप एवं इन्दु के पुत्रों में से एक था। एक समय यह समस्त पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२७. ५३; वायु. ६८. ६)।

विश्वदंष्ट्र—एक दैत्य, जो पूर्वकाल में पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२७. ५३)।

विश्वदत्त—सोमवंश का एक राजा, जो बकुलासंगम पर क्षीरपेशा की उपासना करने के कारण, उस देवता के गणों का आधिपति बन गया।

विश्वदेव—जिताजित् देवों में से एक।

२. पारावत देवों में से एक (ब्रह्मांड. २. १३. ९५)।

३. विश्वेश्वर नामक देवता समूह का नामान्तर (वायु. ६२. २२; विश्वेश्वर देखिये)।

विश्वधा—वशवर्तिन् देवों में से एक।

विश्वन्तर सौषघ्न—एक राजा, जिसके पुरोहित दयापर्ण थे। अपने उन पुरोहितों का त्याग कर, इसने कई अन्य पुरोहितों के द्वारा यज्ञ का आयोजन किया। आगे चल कर, दयापर्ण पुरोहितगणों में से राम मार्गंडेय नामक आचार्य ने इसे समझा कर, पुनः एक बार दयापर्णों की राजपुरोहित के नाते नियुक्त करवायी, एवं एक मूहक गायें उन्हें दिलवायीं (ऐ. ब्रा. ७. २७. ३. ४; ३४. ७. ८)।

सुषघ्न का वंशज होने से इसे ' सौषघ्न ' पौरुष नाम प्राप्त हुआ होगा।

विश्वपति—मनु नामक अग्नि का द्वितीय पुत्र। यह वेदों के संपूर्ण विश्व का पति था, जिस कारण इसे विश्वपति नाम प्राप्त हुआ था (म. व. २११. १७)।

विश्वपात्—वितरों में से एक।

विश्वपाल—एक राजा, जो व्युत्थिताश्व (ध्युपिताश्व) राजा का पुत्र, एवं हिरण्यनाभ कौसल्य राजा का पिता था। विष्णु एवं वायु में इसे ' विश्वसह ' कहा गया है।

विश्वभुज—पाकयज्ञ का एक अग्निदेवता, जो बृहस्पति के चार पुत्रों में से चतुर्थ पुत्र था। यह समस्त प्राणियों के उदर में रह कर उनके द्वारा खाये हुए पदार्थों को पचाता है। गोमती नदी इज्जती पत्नी मानी जाती है (म. व. २०९. १७)।

२. पाण्डवों के रूप में प्रकट होनेवाले पाँच इंद्रों में से एक। अन्य चार इंद्रों के नाम भूतबामन्, शिवि, शांति, एवं तेजस्विन् थे (म. आ. १८९. १९१६४)।

३. वितरों में से एक।

विश्वमनस् वैश्व—एक ऋषि, जो इंद्र का मित्र था (ऋ. ८. २३. २; २४. ७; पं. ब्रा. १५. ५. २०)। ' वरोसुपामन् ' को धनप्राप्त कराने के लिए एक सूक्त के द्वारा इसने प्रार्थना की है (ऋ. ८. २३. २८)। सायणाचार्य के अनुसार, यहाँ ' वरोसुपामन् ' किसी व्यक्ति का नाम नहीं था।

यह ' वैश्व ' का वंशज था, जिस कारण इसे ' वैश्व ' पौरुष नाम प्राप्त हुआ था। ऋग्वेद के कई सूक्तों के प्रणयन का श्रेय भी इसे दिया गया है (ऋ. ८. २३-२६)।

विश्वमहत्—(म. इ.) एक राजा, जो वायु के अनुसार कृतघ्नमन्त्र राजा का पुत्र था। विश्वु एवं भावव्रत में इसे 'विश्वह' कहा गया है।

विश्वेभर—विश्वरूपनगर का एक व्यापारी, जिसे लोमश ऋषि ने लोगों का साहाय्य कथन किया था (महड. २.६)।

विश्वमानुष—एक व्यक्ति (क. ८. ४२.२२)। कई अभ्यासकों के अनुसार, यह व्यक्तिनभम न हो कर इसमें अश्विन मानवव्रत की ओर संकेत किया गया है।

विश्वरथ—विश्वामित्र ऋषि का नामान्तर (ब्रह्म. १०.२६)।

विश्वरथि—(म. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय विश्वगन्ध राजा का नामान्तर (विश्वगन्ध देखिये)।

विश्वरूप—वज्रगणेश का एक राक्षस (म. स. ९.११)।

विश्वरूप त्रिशिरस् त्वाष्ट्र—एक आचार्य, जो देवों का पुरोहित था। किन्तु प्राणियों से ही यह देवों से भी अधिक असुरों पर धन करता था, जिससे प्रतीत होता है कि यह स्वयं देव न हो कर असुर ही था।

वैदिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे त्रिशिरस् (तीन शिरोदात्र) देव्य कहा गया है (ऋ. १०. ८)। यह त्वष्ट्र का पुत्र था, जिस कारण इसे 'त्वाष्ट्र' कहा गया है (ऋ. १०.७६)। यद्यपि यह असुरों से संबंधित था, फिर भी इन देवों का पुरोहित कहा गया, है (तै. सं. २.२.१)।

इंद्र के द्वारा किये गये इसके वध की कथा तैत्तिरीय-संहिता में प्राप्त है। यद्यपि यह देवों का पुरोहित था, फिर भी यज्ञ का अधिकार हकिमांग यह असुरों को देता था। इस कारण इंद्र ने अपने वज्र से इसके तीनों सिर काट कर इसका वध किया।

इसका वध करने के कारण, इंद्र को ब्रह्महत्या का पातक लग गया। अपने इस पातक के इंद्र ने तीन भाग किये, पृथ्वी पृथ्वी, वृक्ष एवं स्थियों में बाँट दिये। इस कारण, पृथ्वी में सड़ने का, वृक्षों में टूटने का, एवं स्थियों में रज्जवाव होने का दोष निर्माण हुआ। इसी कारण रज्जवाव की से संभोज करता त्वाष्ट्र माना गया एवं ऐसे संभोज से दोषयुक्त संसृति उत्पन्न होने लगी (तै. सं. २.२.१)।

आने लल कर, वित ने इसका वध किया, एवं इंद्र की ब्रह्महत्या के पातक से मुक्तता की (वा. वा. १.२.३.२)।

महाभारत एवं पुराणों में—इन ग्रंथों में इसे प्रजापति त्वष्ट्र का द्वितीय पुत्र माना गया है, एवं इसे वृत्र से समीकृत किया गया है (भा. ६.५; म. उ. ९. ४; शां. २०.१.१८)। इसकी माता का नाम विरोचना (वैरोन्वनी, रचना अथवा यज्ञोचरा) था, जो असुरराज प्रह्लाद की कन्या, एवं विरोचन दैत्य की छोटी बहन थी (भा. ६.६.४४; वायु. ८४.१९; ब्रह्मंड. ३.१.८१; गणेश. १.६६.१२)।

स्वरूपवर्णन—इसे तीन सिर थे, जिनमें से एक मुख से यह अन्न भक्षण करता था (अन्नद), दूसरे से यह सोमपान करता था (सोमपीथ), एवं तीसरे से यह सुरापान करता था (सुरापीथ)। महाभारत के अनुसार, अपने तीन मुखों में से, एक से यह नेत्र पढ़ता था, दूसरे से सुरापान करता था, एवं तीसरे से धुनिया देला करता था (म. शां. ३२९.२३)।

देवों का पुरोहित—एक बार इंद्र ने देवगुरु बृहस्पति का अपमान किया, जिस कारण वह देवगुरु का त्याग कर चला गया। इस कारण इंद्र ने विश्वरूप को देवों का पुरोहित बनाया।

वध—शुरु से ही यह असुर पक्ष को देव पक्ष से अधिक चाहता था (म. शां. ३२९.१७)। यह बात होते ही, इंद्र ने इसके पास अनेकानेक अप्सराएँ भेज कर इसे देवगुरु-पद से भ्रष्ट करना चाहा। किन्तु इसने इंद्र का पदच्युत पहचान लिया, एवं यह इंद्रवध के लिए तपस्या करने लगा (म. शां. ३२९.३४)।

इसका वध करने में इंद्र का वज्र भी विफल हुआ। फिर इंद्र ने तक्षक के द्वारा कुटार से इसके तीनों मस्तक तोड़ डाले (म. उ. ९.३४)। महाभारत में अन्यत्र, दधीचि ऋषि के अस्थियों से बने हुए अस्त्रों से इंद्र के द्वारा इसका वध होने का निर्देश भी प्राप्त है (म. शां. ३२९.२७)।

इसकी मृत्यु के पश्चात् इसके 'सोमपीथ', 'सुरापीथ' 'अन्नद' मस्तकों से क्रमशः कर्मिजल, कलविक एवं तिस्रि पशियों का निर्माण हुआ।

अपने पुत्र के वध से त्वष्ट्र अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं उसने इंद्रवध करने के लिए अपने तपःप्रभाव से वृत्र नामक असुर निर्माण किया। पश्चात् देवों ने त्रिभिका के द्वारा वृत्र का वध किया (म. उ. ९.४-३४; भा. ६. ६-९)।

परिवार—सूर्यवंश्या विष्टि इसकी पत्नी थी, जिससे इसे निम्नलिखित भयानक पुत्र उत्पन्न हुए थे:— गण्ड, रक्ताक्ष, क्रोधन, व्यय, दुर्मुख एवं हर्षण।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो वृषभदेव पुत्र भरत राजा के पंचजनी नामक पत्नी का पिता था।

३. अजित देवों में से एक।

विश्वरूपा—धर्म ऋषि की पत्नी, जिसकी कन्या का नाम धर्मव्रता था (वायु. १०७.२)।

विश्वचार—एक वैदिक यज्ञकर्ता। यज्ञ एवं मायिन् नामक 'होताओं' के साथ इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५. ४४. १)।

विश्ववारा आत्रेयी—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. २८)।

विश्ववेदिन्—एक राजनीतिज्ञ, जो शौरि राजा का मंत्री था। शौरि एवं उसके चार भाई खनित्र, उदावसु, सुनय एवं महारथ ये प्रजापति के पुत्र थे। इन भाइयों में से खनित्र मुख्य अविपति था, एवं शौरि, उदावसु, सुनय एवं महारथ क्रमशः उसके राज्य के पूर्व, दक्षिण, पश्चिम एवं उत्तर भागों का कारोबार देखते थे। इन चार राजाओं के चार पुरोहित थे, जिनके नाम निम्न प्रकार थे:— अत्रिकुलोत्पन्न सहोत्र, गौतमकुलोत्पन्न कुशावर्त, कश्यपकुलोत्पन्न प्रमति, एवं वसिष्ठ।

इसने उपर्युक्त चार ही पुरोहितों को खनित्र के विरुद्ध जारणमारणादि उपाय करने की प्रार्थना की। तदनुसार, इन चार पुरोहितों ने चार कृत्याओं का निर्माण किया, जिन्होंने आगे चल कर खनित्र पर आक्रमण किया। किन्तु खनित्र के शुद्धाचरण के कारण, चार ही कृत्या परास्त हो कर लौट आयी, एवं उन्होंने अपने निर्माण कर्ता चार पुरोहितों के साथ इसका भी भक्षण किया (मार्क. ११४)।

विश्वसह—एक राजा, जो भागवत के अनुसार ऐडविड राजा का, एवं विष्णु के अनुसार इल्वील राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम खर्वांग था (भा. ९. ९. ४१; विष्णु. ४. ४. ७५)।

२. (सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय विश्ववाल राजा का नामांतर। विष्णु में इसे व्युपिताश्व राजा का, एवं वायु में व्युपिताश्व राजा का पुत्र कहा गया है।

३. (सो. क्रोष्टु.) लोमवाश्वंशीय एक राजा, जो श्वेत राजा का पुत्र था।

विश्वसामन् आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. २२)। इसके सूक्त में अग्नि के उपासना की प्रेरणा दी गयी है।

विश्वसाह—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो महत्वन् राजा का पुत्र, एवं प्रसेनजित् राजा का पिता था (भा. ९. १२. ७)।

विश्वसृज—एक आचार्यसमूह, जिन्होंने सहस्र संवत्सरो तक चलनेवाले एक यज्ञसत्र का आयोजन किया था। आगे चल कर उसी सत्र से सृष्टि का निर्माण हुआ (पं. ब्रा. २५. १८)। भाष्य के अनुसार, यहाँ संवत्सर शब्द का अर्थ 'दिन' ही लेना चाहिए।

२. ब्रह्मसावर्णि मन्त्रन्तर के एक अवतार का पिता।

विश्वफणि अथवा विश्वरूपति—(मगध, मथिय.) मगध देश का एक सार्वभौम राजा, जिस पुरंजय नामांतर भी प्राप्त था (पुरंजय ६. देखिये)। इसने अपने राज्य के जातियों की पुनर्रचना की थी। इसने क्षत्रियों का वर्चस्व विनष्ट कर, उनका स्थान कैवर्त, मद्रक, पुल्लिड, ब्राह्मण, पंचक आदि नवनिर्मित जातियों को दे दिया। इसका मृत्यु गंगातीर पर हुई (ब्रह्मांड. ३. ७४. १९०-१९३; वायु. ९९. ३७०-३८२)।

विश्वा—प्राचेतस् दक्ष एवं असिकनी से उत्पन्न एक कन्याद्वय, जिनका विवाह क्रमशः धर्म एवं कश्यप से हुआ था। इनसे क्रमशः विश्वेदेव, तथा यक्ष एवं राक्षस उत्पन्न हुए।

विश्वाची—प्राधा अप्सरा की कन्या (म. स. १०. ११)। यह ययाति राजा के साथ रत हुई थी (म. आ. ८०. ८३८. पंक्ति. १-२)।

विश्वधाधार—मेषातिथि का पुत्र।

विश्वदानर—एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम मुचि-श्मती था। शिव की कृपा से इसे गृहपति नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसने तीन वर्षों के अल्पावधि में सांगवदों का अध्ययन कर, शिव से दीर्घायु प्राप्त किया (स्कंद. ४. १. ११)।

विश्वामित्र—(सो. अमा.) एक सुविख्यात ऋषि, जो अपने युयुत्सु, विजिगिषु एवं युगधर्वनक व्यक्तित्व के कारण, वैदिक एवं पौराणिक साहित्य में अमर हो चुका है। कान्यकुब्ज देश के कुशिक नामक सुविख्यात क्षत्रियकुल में उत्पन्न हुआ विश्वामित्र, ज्ञानोपासना एवं तपःसामर्थ्य के कारण, एक श्रेष्ठतम ऋषि एवं वैदिक सूक्तद्रष्टा आचार्य बन गया। इस कार्य में देवराज वसिष्ठ जैसे परंपरागत

ब्राह्मण आचार्यों में इसे आभरण संवर्ष करना पड़ा। अंत में इस संवर्ष में पूरी तरह से यशस्वी हो कर, यह एवं इसके वंश के लोग सर्वप्रथम ब्राह्मण मानने जाने लगे, जो इसके जीवन की सब से बड़ी फलश्रुति कही जा सकती है।

व्युत्पत्ति—इसके 'विश्वामित्र' नाम की व्युत्पत्ति आर्यक ग्रंथों में 'विश्व का मित्र' शब्दों में दी गयी है (दे. आ. १.२.२)। व्याकरणशास्त्रीय दृष्टि से 'विश्वामित्र' एक अनिर्वात रूप है। पाणिनि के अनुसार, 'मित्र' शब्द के पहले जय 'विश्व' शब्द का उपसर्ग होता है, एवं उस शब्द का अर्थ ऋषि होता है, नव उक्त शब्द 'विश्वामित्र' नहीं, बल्कि 'विश्वामित्र' बनता है (पा. सू. ६.३.१३०)।

जन्म—विश्वामित्र का जन्म कान्यकुब्ज देश के सुविश्यात अनावृत वंश में हुआ था; एवं यह कुशिक राजा का पौत्र, एवं गाथिन (गाथि) राजा का पुत्र था। इसका जन्मनाम विश्वरथ था। विश्वामित्र यह नाम इन्से ब्राह्मण होने के पश्चात् प्राप्त हुआ।

वंशधर्म विधिकारों में विश्वामित्र के जन्म के संबंध में निम्न कथा प्राप्त है। इसका पितामह कुशिक स्वयं एक अत्यंत बलाढ्य राजा था, एवं अपने पिता ह्यीरथ के समान प्रसहितक्ष था। इंद्र के समान तेजस्वी पुत्र प्राप्त होने के लिए कुशिक ने तपस्या की। उस समय स्वयं इंद्र ने ही गाथिन नाम कारण कर, कुशिक-पुत्र के रूप में जन्म लिया, एवं इसी गाथिन-पुत्रको इंद्र ने विश्वामित्र का जन्म हुआ। इस प्रकार विश्वामित्र का वंशक्रम निम्न-प्रकार कहे जा सकता है :—ह्यीरथ—कुशिक—गाथिन (इंद्र)—विश्वामित्र (वंशधर्म. ३.१)।

वाल्मीकि रामायण में विश्वामित्र का वंशक्रम निम्न-प्रकार दिया गया है :—प्रत्नरथि—कुश—कुशनाभ—गाथिन—विश्वामित्र (वर. रा. वा. ५१)।

समवर्ती लोग—विश्वामित्र के पितामह कुशिक की पत्नी का नाम पौत्रकुसी था, जो अयोध्या के पुरुकुत्स राजा की कन्या थी। इसकी बहन का नाम सत्यवती था, जिसका विवाह ऋचीक भागवत ऋषि से हुआ था। सत्यवती के पुत्र का नाम जम्भवि था। इस प्रकार जम्भवि ऋषि एवं उसका पुत्र परपुराम जम्भदग्ध ये दोनों विश्वामित्र के समवर्ती एवं निकट के रिश्तेदार थे।

राज्यप्राप्ति—अपने पिता के पश्चात् विश्वामित्र कान्यकुब्ज देश का राजा बन गया। पुराणों में इसका निर्देश कुशिक एवं गाथिन राजाओं का 'वायाव' (उत्तर काशीयत राजा) नाम से किया गया है।

आगे चल कर, इसने क्षत्रियधर्म का त्याग कर ब्राह्मण बनने का निश्चय किया, एवं यह सरस्वती नदी के किनारे 'रुषंगु-तीर्थ' पर तपस्या करने चला गया (म. श. ३८.२२-३४; ४१.२३०७; वा. रा. वा. ५१-५६)। वायु के अनुसार, इसने 'सगरानुव प्रदेश' में तपस्या की थी (वायु. ९१.१२-१३)। इन निर्देशों से प्रतीत होता है कि, विश्वामित्र का तपस्यास्थान आधुनिक राजपुताना के रेगिस्तान में कहीं था, जो प्रदेश प्राचीन काल में पश्चिम समुद्र का तटवर्ती प्रदेश माना जाता था।

घोर तपस्या के द्वारा विश्वामित्र को ब्राह्मणत्व प्राप्त होने का निर्देश अनेकानेक वैदिक संहिता एवं ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त है (का. सं. १६.१९; मै. सं. २.७.१९; तै. सं. २.२.१.२; ऋ. ब्रा. ६.१.८.१; कौ. ब्रा. १५.१; कै. उ. ब्रा. २.३.१३; ऐ. आ. २.२.३; वृ. उ. २.२.४)। इससे प्रतीत होता है कि, विश्वामित्र का यह वर्षांतर प्राचीन काल में एक अत्यंत महत्वपूर्ण घटना मानी गयी थी।

वसिष्ठ से विरोध—विश्वामित्र को क्षत्रियधर्म छोड़ कर ब्राह्मण बनने की इच्छा क्यों हुई, इस संबंध में एक कल्पनामय कथा महाभारत एवं वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है। एक बार यह वसिष्ठ ऋषि के आश्रम में अतिथि के नाते गया, जहाँ वसिष्ठ ने अपनी नंदिनी नामक कामवेतु की सहाय्यता से इसका उत्तम आश्रासिथ्य किया। अनेकानेक दैवी गुणों से युक्त नंदिनी कामवेतु को देख कर, यह अत्यधिक प्रसन्न हुआ, एवं इसने उस वेतु की माँग वसिष्ठ से की। वसिष्ठ ने उसका इन्कार करने पर, यह उस वेतु की प्राप्ति के लिए अपना सारा राज्य देने के लिए सिद्ध हुआ। फिर भी वसिष्ठ ने इसे नंदिनी न दी।

पश्चात् इसने अपने सैन्यबल से नंदिनी का हरण करना चाहा। किंतु उस वेतु से उत्पन्न हुए शक, यवन, पह्लव, बर्बर, किात आदि लोगों ने विश्वामित्र की सेना को परास्त किया, एवं इस प्रकार नंदिनी का हरण करने का इसका प्रयत्न असफल ही रहा।

तदुपरांत वसिष्ठ का पराजय करने के लिए, इसने अनेकानेक प्रकार के अस्त्र संग्रहण करने का निश्चय किया, एवं उस हेतु अत्यंत कठोर तपस्या भी की। किंतु अस्त्रप्राप्ति के पश्चात् भी वसिष्ठ अजेय ही रहा, एवं इसे जीवन में सर्वप्रथम ही साक्षात्कार हुआ कि, क्षत्रबल से ब्रह्मबल अधिक श्रेष्ठ है। पश्चात् वसिष्ठ के समान ब्रह्मबल प्राप्त करने के हेतु इसने स्वयंब्राह्मण बनने का

निश्चय किया, एवं तप्रीत्यर्थ कौशिकी नदी और 'स्वर्ण तीर्थ' पर घोरतपस्या करके यह ब्राह्मण बन गया (म. व. ८५.९.१२; वा. रा. धा. ५१-५६)।

महाभारत में प्राप्त उपर्युक्त कथा कालदृष्टि से विसंगत प्रतीत होती है। नंदिनी गाय का पालनकर्ता वसिष्ठ ऋषि 'वसिष्ठ देवराज' न हो कर 'वसिष्ठ अथर्ववेदि' था, जो विश्वामित्र से काफी पूर्वकालीन था (वसिष्ठ अथर्ववेदि देखिये)। फिर भी महाभारत में विश्वामित्र ऋषि के समकालीन देवराज वसिष्ठ को नंदिनी का पालनकर्ता चित्रित किया गया है। अतएव विश्वामित्र-वसिष्ठ संघर्ष की कारणपरंपरा बतानेवाली महाभारत में प्राप्त उपर्युक्त सारी कथा अनेकतिहासिक प्रतीत होती है।

आपत्प्रसंग—ब्राह्मणपद प्राप्त होने के पश्चात्, विश्वामित्र ने अपनी पत्नी एवं पुत्र कोसल देश में स्थित एक आश्रम में रख दीं, एवं यह स्वयं पुनः एक वार सामान्य तीर्थ पर तपश्चर्या करने चला गया। इसकी अनुपस्थिति में कोसल देश में बड़ा भारी अवर्षण आया, एवं विश्वामित्र की पत्नी एवं पुत्र भूय के कारण तड़पने लगे। अत्र प्राप्त कराने के लिए अपने एक पुत्र के गले में रस्सी बाँध कर, उसे खुले बाजार में बेचने का आपत्प्रसंग विश्वामित्र ऋषि की पत्नी पर आया, जिस कारण उस पुत्र को 'गालव' नाम प्राप्त हुआ।

त्रिशंकु की सहाय्यता—उस समय कोसल देश के त्रैव्याहण राजा के पुत्र कश्यप (त्रिशंकु) विश्वामित्रपत्नी की सहाय्यता की, तथा उसकी एवं विश्वामित्र पुत्रों की जान बचायी। त्रिशंकु स्वयं जंगल से शिकार कर के लाता था, एवं वह मांस विश्वामित्र के परिवार को खिलाया करता था। इन्हीं दिनों में एक वार त्रिशंकु राजा ने वसिष्ठ ऋषि के नंदिनी नामक गाय का वध कर, उसका मांस विश्वामित्र परिवार को खिलाने की कथा पुराणों में प्राप्त है। किन्तु जैसे पहले ही कहा गया है, नंदिनी का पालनकर्ता वसिष्ठ विश्वामित्र के समकालीन नहीं था। इसी कारण, यह कथा कल्पनारम्य एवं विश्वामित्र वसिष्ठ का सञ्जव बढ़ाने के लिए वर्णित की गयी प्रतीत होती है।

बारह वर्षों के पश्चात् अपनी तपस्या समाप्त कर विश्वामित्र कोसल देश को लौट आय। वहाँ अपने न होने के काल में त्रिशंकु ने अपने परिवार के लोगों की अच्छी तरह से देखभाल की, यह बात जान कर इसे त्रिशंकु के प्रति काफी कृतज्ञता प्रतीत हुई। देवराज वसिष्ठ के द्वारा अयोध्या के राजगद्दी से पद्मभूषण किये गये उस

राजकुमार को पुनः राजगद्दी पर विठाने का आश्वासन देने दे दिया।

त्रिशंकु का राजपुरोहित—आगे चल कर विश्वामित्र ने अयोध्या के राजपुरोहित देवराज वसिष्ठ को भ्रान्त कर, त्रिशंकु को अयोध्या के राजगद्दी पर विठया। त्रिशंकु ने भी अपने राजपुरोहित देवराज वसिष्ठ को हटा कर उसके स्थान पर विश्वामित्र की नियुक्ति की, एवं इस प्रकार ब्राह्मण बन कर वसिष्ठतुल्य राजपुरोहित बनने की विश्वामित्र की आकांक्षा पूर्ण हो गयी।

त्रिशंकु का संदेह स्वर्गरोहण—आगे चल कर विश्वामित्र ने त्रिशंकु के अनेकसेवक यत्नों का आवोजन किया। यही नहीं, संदेह स्वर्गरोहण करने की उन राजा की इच्छा भी अपने तपःशामर्थ्य से पूर्ण की। इस संशय में अपने पुराने शत्रु देवराज वसिष्ठ से इतने अन्याय कटोर संघर्ष करना पड़ा। देवराज इंद्र के द्वारा त्रिशंकु के स्वर्गरोहण के लिए विरोध किये जाने पर, इने उससे भी घोर संग्राम करना पड़ा। किन्तु अन्त में यह अपने कार्य में यशस्वी हो कर ही रहा (त्रिशंकु देखिये)।

परिणत के अनुसार, त्रिशंकु के स्वर्गरोहण की पुराणों में प्रातः सारी कथा कल्पनारम्य प्रतीत होती है। आकाश में स्थित ग्रहों से एक ब्रह्मकुंड को विश्वामित्र ने त्रिशंकु का नाम दिलवाया, यही इस कथा का तादृश अर्थ है। वाल्मीकि रामायण में भी, त्रिशंकु का वर्णन चंद्रमार्ग पर स्थित एक ब्रह्म के नाम भुव, वृष, मंगल आदि अन्य ग्रहों के साथ किया गया है (वा. रा. अयो. ४१.१०)।

उपर्युक्त कथा में वर्णित इंद्र-विश्वामित्र संघर्ष भी कल्पनारम्य प्रतीत होता है, एवं देवराज वसिष्ठ से विश्वामित्र के द्वारा किये गये संघर्ष का वर्णन वहाँ देवराज इंद्र के संघर्ष में परिवर्धित किया गया है।

विश्वामित्र के कार्य का महत्त्व—विश्वामित्र के द्वारा त्रिशंकु को पुनः राज्य प्राप्त होने की घटना, अयोध्या के इक्ष्वाकु राजवंश के इतिहास में महत्त्वपूर्ण घटना मानी जाती है। अयोध्या के पुरातन इक्ष्वाकु राजवंश को दूर हटा कर वहाँ अपना स्वयं का राज्य स्थापन करने का प्रयत्न देवराज वसिष्ठ कर रहा था। उसे असफल बना कर, इक्ष्वाकु राजवंश का अधिराज्य अक्षयित रखने का कार्य विश्वामित्र ने किया। इस प्रकार, 'त्रिशंकु-वसिष्ठ-विश्वामित्र' आख्यान का वास्तव नायक इक्ष्वाकुराज त्रिशंकु ही है। उसे गौण स्थान प्रदान कर, विद्वधर्मन एवं वसिष्ठ-

का जो संघर्ष रामायण महाभारतादि ग्रन्थों में सचित्ररूप में वर्णित किया गया है, वह अनैतिहासिक प्रतीत होता है।

हरिश्चंद्र के राज्यकाल में—सत्यव्रत त्रिशंकु के राज्यकाल में गुरु हुआ इसका एवं देवराज वसिष्ठ का संघर्ष सत्यव्रत के पुत्र हरिश्चंद्र, एवं धीव रोहित के राज्यकाल में चले ही रहा। सत्यव्रत के मंदह स्वर्गारोहण के पश्चात्, उसके पुत्र हरिश्चंद्र ने विश्वामित्र को अपना पुरोहित नियुक्त किया। किन्तु उसके राजसूय यज्ञ में बाधा उत्पन्न कर, वसिष्ठ ने अग्नि पुरोहित्यरूप पुनः प्राप्त किया।

सत्यव्रत के विघ्नकास में, उसका पुत्र हरिश्चंद्र वसिष्ठ के ही मन्मथसंग में बल्लभ बन बड़ा हुआ था। अयोध्या के ब्राह्मण लोग भी पहले से ही विश्वामित्र के विरुद्ध थे। इन दोनों घटनाओं की परिणति हरिश्चंद्र के राजसूय यज्ञ के समय हुई, जहाँ हरिश्चंद्र ने विश्वामित्र को दक्षिणा देने से इनकार कर दिया। इस अपमान के कारण रूढ़ हो कर इसके अयोध्या का पुरोहितपद छोड़ दिया, एवं यह पुष्करतीर्थ में तपस्या करने के लिए चला गया।

मार्कंडेय पुराण में—इस संदर्भ में मार्कंडेय-पुराण में वसिष्ठ एवं विश्वामित्र के संघर्ष की, अनेकानेक कहानारम्य कथाएँ प्राप्त हैं, जहाँ विश्वामित्र के द्वारा हरिश्चंद्र राजा को दक्षिणा प्राप्ति के लिए चरत करने का, इसने एक पक्षी बन कर वसिष्ठ पर आक्रमण करने का, एवं वसिष्ठ के सौ पुत्रों का बध करने का निर्देश प्राप्त है (मार्क. ८-९)। इस तीनों कथाओं में से पहली दो कथाएँ संयुक्तः कहानारम्य हैं, एवं तीसरी हरिश्चंद्रकालीन विश्वामित्र की न हो कर, सुदासकालीन विश्वामित्र की प्रतीत होती है (विश्वामित्र ४. देखिये)।

हरिश्चंद्र के ही राज्यकाल में उसके पुत्र रोहित को यज्ञ में बलि देने का, एवं इक्ष्वाकु राजवंश को निर्वेश करने का पञ्चम वसिष्ठ के द्वारा रचाया गया था। किन्तु विश्वामित्र ने रोहित की, एवं तपश्चान् उसके स्थान पर बलि जानेवाले अपने मर्त्याने युनःशेष की रक्षा कर, इक्ष्वाकु राजवंश का पुनः एक बार रक्षण किया। तदुपरांत विश्वामित्र ने युनःशेष को आनन्दपुत्र मान कर, उसका नाम देवराज रख दिया (इ. ब्रा. ३.१६; सां. श्रं. १५.१७; युनःशेष देखिये)।

ब्रह्मर्षिपद की प्राप्ति—अत्रिय विश्वामित्र को ब्रह्मर्षिपद कैसे प्राप्त हुआ, इसकी कथाएँ वाल्मीकि रामायण एवं पुराणों में प्राप्त हैं। कथं-तीर्थ पर तपस्या करने के कारण

यह ब्राह्मण बना गया। युनःशेष का संरक्षण करने के पश्चात्, कौशिकी नदी के तट पर तपस्या करने के कारण, इसे ब्रह्मर्षिपद प्राप्त हुआ। इतना होते हुए भी, यह क्रोध, मोह आदि विकार काबू में न रख सकता था। इसी कारण अपने तपस्या का भंग करने के लिए आयी हुई रंभा को इसने शिल्प बनाया था। पश्चात् काम क्रोध पर विजय पाने के लिए इसने पुनः एक बार तपस्या की, जिस कारण इसे जितेंद्रियत्व एवं ब्रह्मर्षिपद प्राप्त हुआ (वा. रा. भा. ६२-६६; स्कंद. ६.१.१६७-१६८)। ब्रह्मर्षिपद प्राप्त होने के पश्चात्, इसे इंद्र के साथ सोमपान करने का सम्मान प्राप्त हुआ (म. आ. ६९.५०)। इंद्र के कृपापात्र व्यक्ति के रूप में आरण्यक ग्रंथों में इसका निर्देश प्राप्त है (ऐ. आ. २.२.३; सां. आ. १.५)।

सत्त्वपरीक्षा—विश्वामित्र को ब्रह्मर्षिपद कैसे प्राप्त हुआ, इस संबंध में एक कथा महाभारत में प्राप्त है। एक बार धर्म ऋषि इसके पास आया एवं इसके पास भोजन माँगने लगा। धर्म के लिए यह चावल पकाने लगा, जितने में वह चला गया। पश्चात् यह सौ वर्षों तक धर्मऋषि की राह देखते वैसा ही खड़ा रहा। इतने दीर्घकाल तक खड़े रह कर भी इसने अपनी मनःशांति नहीं छोड़ी, जिस कारण धर्म ने इसकी अत्यधिक प्रशंसा की, एवं इसे ब्रह्मर्षिपद प्रदान किया (म. उ. १०४.७-१८)। महाभारत में अन्यत्र त्रिशंकु-आख्यान, रंभा को शाप, विश्वामित्र के द्वारा कुन्ते का मौसमक्षण आदि इसके जीवन से संबंधित कथाएँ एकत्र रूप दी गयी हैं।

भविष्यपुराण के अनुसार, ब्रह्मा को अत्यंत प्रिय 'प्रतिपदा' का व्रत करने के कारण, इसे देहान्तर न करते हुए भी ब्राह्मणत्व की प्राप्ति हो गयी (भवि. ब्राह्म. १६)। मृत्यु के पश्चात् यह शिवलोक गया, जो फल इसे हिरण्या नदी के संगम पर स्नान करने के कारण प्राप्त हुआ था (पद्म. उ. १४०)।

आश्रम—विश्वामित्र का आश्रम कुरुक्षेत्र में सरस्वती तीर नदी के पश्चिम तट पर स्थानु-तीर्थ के समुल्ल था (म. श. ४१.४-३७)। इस आश्रम के समीप, सरस्वती नदी पर स्थित रुधंगु-आश्रम में विश्वामित्र ने ब्राह्मणत्व प्राप्त किया था (म. श. ३८.२२-३२)।

विश्वामित्र का अन्य एक आश्रम आधुनिक बक्सार में 'ताटका-वन' के समीप था। महाभारत के अनुसार, इसका आश्रम कौशिकी नदी (उत्तर बिहार की आधुनिक कोशी नदी) के तट पर स्थित था

एवं उस नदी का 'कौशिकी' नाम भी इसीके 'कौशिक' पैतृक नाम से प्राप्त हुआ था (म. भा. ६५.३०)। यह वही पुण्य स्थान था, जहाँ पूर्वकाल में वामन ने बलि वैरोचन में त्रिपाद भूमि की माँग की थी। यही स्थानमाहात्म्य जान कर इसने 'सिद्धाश्रम' में अपना आश्रम बनाया था (वा. रा. वा. २७-२९)। संभवतः यह आश्रम आज विश्वामित्र ऋषि का न हो कर, रामायणकालीन विश्वामित्र महर्षि का होगा।

इनके अतिरिक्त इसके देवकुण्ड (वेदगर्भपुरा), एवं विश्वामित्रि नदी के तट पर स्थित अन्य दो आश्रमों का निर्देश भी प्राप्त है।

परिवार—विश्वामित्र के कुल एक सौ एक पुत्र थे, जिनमें से मँझले (इक्कावनवे) पुत्र का नाम मधुच्छन्दस् था। अपने भतिजे शुनःशेष को पुत्र मान लेने पर, विश्वामित्र ने उसे 'देवरात' नाम प्रदान कर, अपना ज्येष्ठ पुत्र नियुक्त किया, एवं अपने बाकी सारे पुत्रों को उसका 'ज्येष्ठपद' मानने की आज्ञा दी। विश्वामित्रपुत्रों में से पहले पचास पुत्रों ने विश्वामित्र की यह आज्ञा अमान्य कर दी, जिस कारण इसने उन्हें भलेचल बनने का शाप दिया। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, अपने इन पुत्रों को इसने अन्न, पुण्ड्र, शबर, पुल्लि, मूतिव आदि अन्य जाति के लोग बनने का शाप दिया (ऐ. ब्रा. ७.१८; रथ्य एवं ऋषभ याज्ञनुर देखिये)। मधुच्छन्दस् एवं अन्य पचास कनिष्ठ पुत्रों ने विश्वामित्र की आज्ञा मान ली, जिस कारण इसने उन्हें अनेकानेक आशीर्वाद प्रदान किये।

विश्वामित्र के उर्युक्त शाप के कारण, इसके पुत्रों की एवं वंशजों की निम्नलिखित दो शाखाएँ बन गयीं—

१. कुशिक शाखा,—जो विश्वामित्र के कृपापात्र पुत्रों से उत्पन्न हुयी, जिनमें देवरात प्रवर आता है (म. भा. १६.२८-३७);

२. विश्वामित्र शाखा,—जो विश्वामित्र के शाप के कारण हीनकुलीन बन गये।

पत्नियों—विश्वामित्र की पत्नियों, एवं उनसे उत्पन्न इसके पुत्रों की जानकारी ब्रह्म, हरिवंश, वायु, ब्रह्माण्ड आदि पुराणों में प्राप्त है, जो संक्षेपरूप में नीचे दी गयी है—

पत्नी का नाम

पुत्रों के नाम

१. रेणु	रेणु, सांकृति, मालव, मधुच्छन्दस्, जय, देवल, कच्छप, हरित, अष्टक।
२. शालावती	हिरण्याक्ष, देवश्रवस्, कति।
३. सांकृति	मौदल्य, मालव।
४. माधवी	अष्टक।
५. द्रपदती	कृत, ध्रुव, पूरण। वायु में द्रपदती का पुत्र केवल अष्टक ही बताया गया है।

(ह. वं. १.३२; ब्रह्म. १०; वायु. ९१.९९-१०३)।

पुत्र—विश्वामित्र के पुत्रों की नामावली महाभारत, वाल्मीकि रामायण एवं विभिन्न पुराणों में प्राप्त है, जो निम्न दी गयी है—

महाभारत में—अक्षीण, अंभोहद, अरालि, अंत्रिक, आश्वलायन, आमुरायण, उज्जयन, उद्रापेक्षिन्, उपगहन, उलूक, ऊज्योनि, कपिल, कारीप, कालपथ, कृत्वाभुष, गार्ग्य, गार्दभि, मालव, चक्रक, चांपेय, चारुमत्स्य, जंगारि, जावालिक, तंतु, ताडकाग्रन, देवरात (शुनःशेष), नवतंतु, नाचिक, नारद, नारदिन, नैकटश, पर, पर्णजंब (कल्पजंब), पौरव, वक्रनख, वभ्रु, वाघ्रवायणि, भूति, मधुच्छन्दस्, मारुततय्य, मार्दम, मुसल, यति, यमदूत, याज्ञवल्क्य, लीलाञ्ज, वक्षोश्रीव, वज्र, वातन्न, वादुलि, विभूति, शकुन्त, शिरोशिन्, शिलायूप, शुचि, श्यामायन, संश्रुत्य, सालकायन, सित, सुरकृत, सुश्रुत, सत, सेयन, सैधवायन, स्थूण, हिरण्याक्ष (म. अनु. ४.४९-५९)। इन पुत्रों में से हिरण्याक्ष को छः पुत्र उत्पन्न हुए थे।

(२) रामायण में—दृढनेत्र, मधुष्पद, महारथि एवं हविष्पद (वा. रा. वा. ५७)। विश्वामित्र के ये सारे पुत्र ब्राह्मणवंशविवर्धक एवं गोचकार माने जाते हैं।

(३) हरिवंश एवं पद्म में—कवि, ओषधन, स्वस्म (स्वस्म), पितृवति (पितृवर्तिन्), पित्रुन, वाग्दुष्ट, हिंस्र (ह. वं. १.२१.५; पद्म. सू. १०)।

(४) अन्य ग्रंथों में—हिरण्याक्ष, देवश्रवस् (देवरात, शुनःशेष), कति, रेणु (रेणुक, रेणुमन्), सांकृति, मालव, मधुच्छन्दस्, जय (जय), देवल (देव), कच्छप, हरित (हारित), अष्टक, कृत, ध्रुव, पूरण। इनमें से

कति एवं अटक को क्रमशः कात्यायन एवं लौहित नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे।

(५) वायु एवं ब्रह्मांड में—मधुच्छेदस, नय एवं देव (वायु, ११.१६; ब्रह्मांड. ३. ३६)।

(६) ब्रह्म में—मौदर्य, गालव, कात्यायन (ब्रह्म. १०.१३)।

विश्वामित्रकुलोत्पन्न गोत्रनाम—विश्वामित्रकुल में उत्पन्न निर्मलक्षित गोत्रों की नामावलि महाभारत एवं पुराणों में दी गयी है:—१. उदुंबर, २. कारुपक (करीषय, कारीपव, करीषि); ३. कौशिक (कुशिक); ४. गालव; ५. चांद्रव (यमभुजत); ६. जात्राल; ७. तालकायन (तारक, तारकायन); ८. देवरात; ९. देवल. १०. ध्यानजाप्य; ११. पाणिन् (पाणिन्, पाणिनि); १२. पाथिव; १३. वभ्रु; १४. वादर; १५. वाष्कल (वाष्कल); १६. मधुच्छेदस; १७. यमदूत (यामदूत, यामभूत); १८. यान्नवल्क्य; १९. रेणव; २०. लालक्य (ददाति); २१. लौहित (लौहित, लोहित); २२. दाताड्य (उदुमभ्यन); २३. शालकायन; २४. श्यामायन (शालकाय); २५. समवण; २६. सांडूत (स्यंकृत); २७. सैंधवायन; २८. सौश्रव (सोश्रुन्, सोश्रुम); २९. हिरण्यश्व (म. अनु. ४.५०-६०; वायु. ११.१७-१०२; ब्रह्मांड. ३.६६.६९-७४; ह. वं. २७.१४६३-१४६९; ब्रह्म. १०.६१-६३; १३)।

उपर्युक्त नामावलि में से १०-२६ नाम ब्रह्म के तेरहवें अध्याय में, एवं १२-२६ नाम ब्रह्म के दसवें अध्याय में अभिप्राय हैं।

विश्वामित्रकुलोत्पन्न गोत्रकार—इन गोत्रकारों के विश्वरान्वित (तीन प्रवरोंवाले) एवं द्विप्रवरान्वित (दो प्रवरोंवाले) जैसे दो प्रमुख प्रकार हैं:—

(१) त्रिप्रवरान्वित गोत्रकार—विश्वामित्रकुल के बहुसंख्य गोत्रकार 'तीन प्रवरोंवाले' ही हैं, किंतु प्रवरभेद के अनुसार उनके अनेक उपविभाग हैं, जिनकी जानकारी नीचे दी गयी है:—

(अ) उडल, देवरात एवं विश्वामित्र प्रवरों के गोत्रकार—अभय, आयतायन, उल्लय (ग, उल्लय), औपहाव (ग), करीप (ग), खरवाच, जनमादय (ग), जात्राल (ग), देवरात, पयोद (ग), त्राध्न्य (ग), याज्ञवल्क्य (ग), वतंड, वास्तुकौशिक (ग), विश्वामित्र, वैश्रुतिगालव (वैश्रुतिनायन), शलंक, श्यामायन (ग),

संश्रुत (ग), संश्रुय (ग), साधित (ग), सैंधवायन (ग), हलयम (ग)।

(ब) वैश्वामित्र, देवश्रवस, देवरात प्रवरों के गोत्रकार—कासकायण (कामुकायन, ग), कुशिक, देवश्रवस, वैदेहरात, वैदेहजात, वैदेहनात, वैदेवरात्र (ग), सुजातेय, सौमुक (तौमुक)।

(क) वैश्वामित्र, मधुच्छेदस, आज (बाद्य) प्रवरों के गोत्रकार—कपदेय, धनंजय, परिकूट, पाणिनि।

(ड) अत्रवर्षग, मधुच्छेदस एवं विश्वामित्र प्रवरों के गोत्रकार—आच, मधुच्छेदस, विश्वामित्र।

(इ) आशमरथ्य, वंजुलि एवं वैश्वामित्र प्रवरों के गोत्रकार—अदमरथ्य (ग), कामलायनिज, वंजुलि।

(ई) ऋणवत्, गनिन् एवं विश्वामित्र प्रवरों के गोत्रकार—उदरेणु, विश्वामि, उदाहि, ऋथक।

(उ) खिलिखिलि, आज (विद्य) एवं वैश्वामित्र प्रवरों के गोत्रकार—उदुंबर, करीराशिन्, त्राक्षायणि, मौजायनि (कौटुशायनि), लवकि, शाश्वायनि (कात्यायनि), शालकायनि, सैविरिदि। इन गोत्रकारों के लिए खिलि, क्षितिमुखाविद्ध, एवं विश्वामित्र ये प्रवर भी कई पुराणों में प्राप्त हैं।

(२) द्विप्रवरान्वित गोत्रकार—विश्वामित्र, एवं पूरण दो प्रवरों के गोत्रकार—अटक, पूरण, लोहित (मत्स्य. १९८)।

२. एक ऋषि, जिसे ऊर्वशी अप्सरा से शकुंतला नामक कन्या उत्पन्न हुई थी (भा. ९.१६.२८-३७)। यह ऋषि पूर्ववर्तीय दुष्यंत एवं भरत राजाओं का समकालीन था। इस प्रकार, अयोध्या के विशंकु, हरिश्चंद्र आदि राजाओं से यह काफ़ी उत्तरकालीन था।

३. एक ऋषि, जिसने अयोध्या के राम दाशरथि के द्वारा ताटका राजसी, एवं म. रा. च. सुबाहु आदि राजाओं का वध करवाया था (वा. रा. वा. २४-२७; राम दाशरथि देखिये)। यह साक्षान् धर्म का अवतार था, एवं इसके समान पराक्रमी एवं विद्यावान् सार संसार में दूसरा कोई न था (वा. रा. वा. २१)।

४. एक ऋषि, जो उत्तर पंचाल देश के पैजवन सुदास राजा का पुरोहित था (ऋ. ३.५३; ७.१२)। ऋग्वेद के तृतीय मंडल के प्रणयन का श्रेय इसे एवं इसके वंश में उत्पन्न ऋषियों को दिया गया है।

ऋग्वेद में इसने स्वयं को 'कुशिक' का वंशज कहलाया है (ऋ. ३.५३.५)। इसी कारण इसका निर्देश

‘कुशिक’ नाम से भी प्राप्त है (ऋ. ३.३३.५)। इसके परिवार के लोगों को भी ‘कुशिकाः’ कहा गया है। इसके परिवार के लोगों को ‘विश्वामित्र’ उपाधि भी प्राप्त है (ऋ. ३.५३.१३; १०.८९.१७)।

गाथिन् का वंशज—विश्वामित्र ‘गाथिन्’ राजा का वंशज था, जिस कारण इसे ‘गाथिन’ पैतृक नाम प्राप्त है। विश्वामित्र गाथिन के द्वारा विरचित अनेक सूक्त ऋग्वेद में प्राप्त हैं [ऋ. ३.१-१२; २४; २५; २६ (१-६; ८; ९); २७-३२; ३३ (१-३, ५, ७, ९, ११-१३); ३४; ३५; ३६ (१-९, ११); ३७-५३; ५७-६२; ९.६७.१३-१५; १०.१३७.५; १६७]। पुराणों में भी इसे कुशिककुलोत्पन्न कहा गया है (वायु. ९१.९३)।

नदीसूक्त—इसके द्वारा विरचित एक सूक्त में विपाश् एवं शुतुद्री (आधुनिक विशास् एवं सतलज नदियाँ) नदियों की संगम पर राह देने के लिए प्रार्थना की गयी है (ऋ. ३.३३)। अभ्यासकों का कहना है कि, इस सूक्त के प्रणयन के समय विश्वामित्र पैजवन सुदास राजा का पुरोहित था, एवं पंजाब के संवरण राजा पर-आक्रमण करनेवाली सुदास की विजयी सेना को मार्ग प्राप्त कराने के लिए इसने इस ‘नदीसूक्त’ को रचना की थी (गैल्डनर, वेदिक स्टूडियन, ३.१५२)।

सायण के अनुसार, सुदास राजा से विपुल धनसंपत्ति प्राप्त करने के पश्चात्, विश्वामित्र के कई विरक्षियों ने इसका पीछा करना शुरू किया। उस समय भागते हुए विश्वामित्र ने इस नदीसूक्त की रचना थी (ऋ. ३.३३, सायणभाष्य)। किन्तु सायण का यह मत अयोग्य प्रतीत होता है। स्वयं यास्क भी सायण के इस मत से असहमत हैं (नि. २.२४)।

वसिष्ठ से विरोध—ऋग्वेद में प्राप्त निर्देशों से प्रतीत होता है कि, यह शुरू में सुदास राजा का पुरोहित था (ऋ. ३.५३)। किन्तु इसके इस पदसे भ्रष्ट होने के पश्चात्, वसिष्ठ सुदास का पुरोहित बन गया। तदुपरांत यह सुदास के शत्रुपक्ष में शामिल हुआ, एवं इसने सुदास के विरुद्ध दाशराज-युद्ध में भाग लिया (वसिष्ठ देखिये)।

इसी संदर्भ में इसने ‘वसिष्ठ-द्वेषिण्यः’ नामक कई ऋचाओं की रचना की, जो शौनक के काल से सुविख्यात हैं। वसिष्ठगोत्र में उत्पन्न लोग आज भी इन ऋचाओं का पठन नहीं करते। ऋग्वेद का एक भाष्यकार दुर्गाचार्य ने स्वयं वसिष्ठगोत्रीय होने के कारण, इन ऋचाओं पर

भाष्य नहीं लिखा है (ऋ. ३.५३.२०-२४; नि. १०.१४)।

शक्ति का वध—वसिष्ठ ऋषि के पुत्र शक्ति ने विश्वामित्र के द्वारा किये गये संघर्ष का निर्देश भी ऋग्वेद में प्राप्त है। सुदास राजा के यज्ञ के समय हुए वादविवाद में शक्ति ने इसे परास्त किया। फिर विश्वामित्र ने जमदग्नि ऋषि से ‘ससर्परी’ विद्या प्राप्त कर, शक्ति को परास्त किया (ऋ. ३.५३.१५-१६, वेदार्थटीका)। आगे चल कर इसने सुदास के सेवकों के द्वारा शक्ति का वध करवाया (तै. सं. ७.४.७.१; ऋ. सर्वानुक्रमणी ७.३२)।

शक्ति ऋषि से हुए वादविवाद में इसने कथन की हुई ऋचाएँ ‘मौनी विश्वामित्र’ की ऋचाएँ नाम से प्रसिद्ध हैं, जिनमें इसने कहा है, ‘आप लोग इस ‘अन्तक’ (विश्वामित्र) के पराक्रम को नहीं जानते। इसी कारण सुदों वादविवाद में स्तब्ध देख कर आप हँस रहे हैं। किन्तु आप नहीं जानते, कि विश्वामित्र अपने शत्रु से लड़ना ही जानता है। शत्रु से शरणागति उसे मंजूर नहीं है (ऋ. ३.५३.२३-२४)।

ब्राह्मण ग्रंथों में निम्नलिखित वैदिक मंत्रों के प्रणयन का श्रेय भी विश्वामित्र को दिया गया है :—१. संवत् ऋचाएँ—जिनका प्रणयन एवं प्रचार क्रमशः विश्वामित्र एवं वामदेव ऋषियों ने किया (ऐ. ब्रा. ६.१८); २. रोहित-कृत्वीय-सामसंज्ञ—जिनका प्रणयन सौवर्नित लोगों से मिलने के लिए जानेवाले विश्वामित्र ने नदी को लाँघते समय किया था (ऐ. ब्रा. १४.३.१३)।

५. एक धर्मशास्त्रकार, जिसका निर्देश ‘वृद्धयाज्ञवल्क्य स्मृति’ में प्राप्त है। ‘अवराक’, ‘स्मृतिचंद्रिका’, जीमूतवाहनकृत ‘कालविवेक’ आदि धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथों में विश्वामित्र के निम्नलिखित विषयों से संबंधित अभिमत उद्धृत किये हैं :—व्यवहार, पंचमहायातक श्राद्ध, प्रायश्चित्त आदि।

इसके द्वारा विरचित नौ अध्यायों की ‘विश्वामित्र-स्मृति’ मद्रास राज्य के द्वारा प्रकाशित की गयी है (मद्रास राज्य कृत पाण्डुलिपियों की सूचि पृ. १९८५, क्रमांक २७१७)।

६. एक ऋषि, जो रैभ्य नामक ऋषि का पिता, एवं अर्वावसु एवं परावसु ऋषियों का पितामह था। यह चेदि देश का राजा वसु एवं वृहद्युम्न राजाओं का समकालीन था (यवक्रीत एवं भरद्वाज देखिये)।

७. वैवस्वत मन्वन्तर का एक ऋषि, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था (भा. ८.१३.५; १०.७८.८)। यह स्यमंतपंचक क्षेत्र में श्रीकृष्ण से मिलने आया था, एवं कृष्ण के द्वारा किये गये यज्ञ का यह पुरोहित था (भा. १०.८८.३; ११.१.१२)।

८. एक ऋषि, जो फाल्गुन माह के सूर्य के साथ घूमता है (विष्णु. २.१०.१८)।

९. ब्रह्मराक्षसों का एक समूह, जो 'रात्रिराक्षसों' के चार सद्वहों में से एक माना जाता है (ब्रह्मांड. ३.८.५९-६१)। इन्हें 'कौशिक' नामान्तर भी प्राप्त था।

विश्वामयु--(सो. पुरुवरवस्.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार पुरुवरवस् राजा के छः पुत्रों में से एक था (वायु. ११.५२)।

२. वशवर्तिन् देवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६.२९)।

३. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ११.३४)।

विश्वामयु—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १३१)। तैत्तिरीय तंहिता में इसे एक गंधर्व कहा गया है (तै. सं. १.१.११.१)। गायत्री के द्वारा लये गये सोम की इतने चोरी की थी (शं. ब्रा. ३.२.२.२)।

२. एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था। इसने सोम से चाक्षुषी विद्या सीखी थी, जो आगे चल कर इसने चित्ररथ गंधर्व को प्रदान की थी (म. आ. १२.८.४०-४२)।

गंधर्व एवं अप्सराओं के द्वारा, गंधर्वमधु प्राप्त करने के लिए किये गये पृथ्वीदोहन में इसे बन्ध बनाया गया था (भा. ४.१८.१७)। इंद्र-मन्त्रि युद्ध में यह इंद्रपक्ष में शामिल था (भा. ८.११.४१)। याज्ञवल्क्य ऋषि के साथ इसने अश्वामविषयक चर्चा की थी, जिस समय इसने उसे चौबीस प्रश्न पूछे थे (म. शां. ३०६. १६-८०)।

मेनका अप्सरा से इसे प्रमदरा नामक कन्या उत्पन्न हुई थी (म. आ. ८.६)। इसका चित्रसेन नामक एक अन्य पुत्र भी था। कर्दम प्रजापति की पत्नी देवहूति से इसका प्रथमदर्शन में ही प्रेम हुआ था (भा. ३. २०.३९)।

ब्राह्मणों के शाप के कारण, इसे पृथ्वीलोक में कबंध राक्षस के रूप में जन्म प्राप्त हुआ था। आगे चल कर, राम दशरथ के द्वारा यह मारा गया, एवं इसे मुक्ति प्राप्त हुई (म. व. २६३.३३-३८)।

३. एक गंधर्व, जो श्रावण माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३०)।

४. एक ऋषि, जो जमदग्नि ऋषि के पाँच पुत्रों में से एक था। जमदग्नि के शाप के कारण, अपने अन्य भाइयों के साथ यह पापाण बना था। किन्तु आगे चल कर, इसके भाई परशुराम ने इसे शारमुक्त कराया (म. व. ११६.१७; परशुराम देखिये)।

५. एक राक्षस, जो मधु राक्षस की पत्नी कुंभीनसी का पिता था। इसकी पत्नी का नाम अनला था, जो माल्यवन्त राक्षस की कन्या थी (वा. रा. उ. ६१)।

६. एक गंधर्व, जो पुरुवरवस् एवं उर्वशी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६६.२३)। इसने ही उर्वशी को पृथ्वीलोक से स्वर्गलोक वापस लाया था।

७. एक वसु, जो धर्म एवं सुदेवी के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. १७१.४६)।

विश्वेदेव—एक यज्ञीय देवतासमूह, जिसे ऋग्वेद के चालीस से भी अधिक सूक्त समर्पित किये गये हैं।

वैदिक साहित्य में—विश्वेदेव का शब्दशः अर्थ अनेक देवता है। यह एक काव्यनिक यज्ञीय देवतासमूह है, जिसका मुख्य कार्य सभी देवताओं का प्रतिनिधित्व करना है, क्यों कि, यज्ञ में की गई स्तुति से कोई देवता छूट न जाय। वेदों के जिन मंत्रों में अनेक देवताओं का संवेष्ट आता है, एवं किसी भी एक देवता का निश्चित रूप से उल्लेख नहीं होता है, वहाँ 'विश्वेदेव' का प्रयोग किया जाता है। भाषाशास्त्रीय दृष्टि से यह सामासिक शब्द नहीं है, बल्कि 'विश्वे+देवाः' ये दो शब्द मिल कर बना हुआ संयुक्त शब्द है। इसी कारण इसे 'सर्वदेव' नामान्तर भी प्राप्त है।

विश्वेदेवों से संबंधित सूक्तों में सभी श्रेष्ठ देवता एवं कनिष्ठ देवताओं की क्रमानुसार प्रशस्ति प्राप्त है। यज्ञ करानेवाले पुरोहितों को जिस समय समस्त देवतासमाज को आवाहन करना हो, उस समय वह आवाहन विश्वेदेवों के उद्देश्य कर किया गया प्रतीत होती है।

नामावलि—कई अभ्यासकों के अनुसार, ऋग्वेद में प्राप्त 'आग्नी सूक्त' विश्वेदेवों को उद्देश्य कर ही लिखा गया है, जहाँ बारह निम्नलिखित देवताओं को आवाहन किया गया है :— १. सुसमिद्ध, २. तनुनगन्, ३. नराशंस, ४. इला, ५. बर्हि, ६. द्वार, ७. उपस् एवं रात्रि, ८. होतृ नामक दो अग्नि, ९. सरस्वती, इला, एवं भारती (मही) आदि देवियाँ, १०. त्वष्ट, ११. वनस्पति,

१२. स्वाहा (ऋ. १.१३)। इस सूक्ता में निर्दिष्ट ये चारह देवता एक ही अग्नि के विभिन्न रूप हैं।

ऋग्वेद में प्राप्त विश्वेदेवों के अन्य सूक्तों में इस देवता-समूह में त्वष्टा, ऋभु, अग्नि, पर्जन्य, पूषन्, एवं वायु आदि देवता; बृहद्देवा आदि देवियों, एवं अद्विष्ट्य आदि सर्प समाविष्ट किये गये हैं।

ऋग्वेद में निर्दिष्ट 'मरुद्गण' ऋभुगण' आदि देवगणों जैसा 'विश्वेदेव एक देवगण प्रतीत नहीं होता है। फिर भी कभी-कभी इन्हें एक संकीर्ण समूह भी माना गया प्रतीत होता है, क्यों कि, 'वसु' एवं 'आदित्यों' जैसे देवगणों के साथ इन्हें भी आवाहन किया गया है (ऋ. २.३.४)।

ऐतरेय ब्राह्मण में—इस ग्रंथ में विश्वेदेवों का एक देवतासमूह के नाते निर्देश प्राप्त है, जहाँ आविष्कृत कामग्नि राजा क यज्ञ में इनके द्वारा यज्ञीय समासद के नाते कार्य करने का निर्देश प्राप्त है—

मरुतः परिवेदारः मरुत यान्कन्पुहे।

आविष्कृतय क मरेः विश्वेदेवाः उभापद इति ॥
(ऐ. ब्रा. ३९.८.२१)।

पुराणों में—विश्वेदेवों का उल्कांत रूप पौराणिक साहित्य में पाया जाता है, जहाँ इन्हें स्वरूप से देवता-समूह कहा गया है। वायु में इन्हें दक्षकन्या विश्वा एवं धर्म ऋषि के पुत्र कहा गया है, एवं इनकी संख्या दस बतायी गयी है। राज्यप्राप्ति के लिये इनकी उपासना की जाती है।

नामावलि—पुराणों में प्राप्त इनकी नामावलि निम्न प्रकार है:—१. क्रतु, २. श्रव, ३. श्रव, ४. सय, ५. काल, ६. काम, ७. मुनि, ८. पुरुवरु, ९. आर्द्रवास (आर्द्रव), १०. रोचनान (ब्रह्मांड. ३.१२:४.२.२८)। कई अन्य पुराणों में, इनके वसु, कुरज, मनुज, वीज, धुरि, लोचन, आदि नामांतर भी प्राप्त है (भा. ६.६. ६०; मत्स्य. २०२; सां. १८)। महाभारत में भी इनकी विस्तृत नामावलि दी गयी है, जहाँ इनका निवासस्थान 'भुवर्लोक' बताया गया है (म. अन्. ९१.२८)।

ये स्वयं अग्रज (संततिहीन) थे, एवं इन्द्र की उपासना करते इन्द्रसभा में उपस्थित थे (भा. ६.६.६०)। देवासुर संग्राम में देवपक्ष में शामिल होकर, इन्होंने पौलोमों के साथ युद्ध किया था (भा. ८.१०.३४)। सोम के द्वारा किये गये राजसूय यज्ञ में इन्होंने 'चमसाध्वर्यु' के नाते काम

किया था (मत्स्य. १७.१४)। मरुत के यज्ञ में भी ये समासद थे (भा. ९.२.२८)। इन्हींके ही कृपा से ज्यामय को पुत्रप्राप्ति हुई थी (भा. ९.२.२८)।

ब्रह्मा की उपासना—इन्होंने हिमालय पर्वत पर पितरों की एवं ब्रह्मा की, उपासना की थी, जिसे कारण इन्होंने प्रसन्न हो कर इन्हें आशीर्वाद दिया, 'आज से मनुष्यों के द्वारा, किये गये श्राद्धविधियों में तुम्हें अग्रमान प्राप्त होगा। देवों से भी पहले तुम्हारी पूजा की जायेगी। तुम्हारी पूजा करने से श्राद्ध का संरक्षण होगा, एवं पितर सर्वाधिक तृप्त होंगे' (वायु. ७६.१-१५; ब्रह्मांड. ३.३. १६)।

कौन-कौन से श्राद्धविधियों में कौनसे विश्वेदेवों को प्राधान्य दिया जाता है, इसकी जानकारी 'निर्णयसिंधु' में प्राप्त है, जो निम्नप्रकार है:—१. पार्वणश्राद्ध—पुरुवरु, आर्द्रव; २. महालय श्राद्ध—धूरि, लोचन; ३. नान्दी श्राद्ध—सय, वसु; ४. जिवपितृक श्राद्ध—क्रतु, दक्ष (निर्णय-सिंधु पृ. २७९)।

भागवत में इन्हें वर्तमानकालीन वैवस्वत मन्वन्तर के देवता कहा गया है (भा. ९.१०.३४) विश्वामित्र के शाप के कारण, इन्हें द्रौपदी के पाँच पुत्रों के रूप में जन्म प्राप्त हुआ था। आगे चल कर ये पाँच ही पुत्र अश्वत्थामन के द्वारा मारे गये (मार्क. ६२-६९)।

विश्वेश्वर—शिव का एक अवतार, जो काशी में अवतीर्ण हुआ था (शिव. शत. ४२)। इसे अविमुक्तेश्वर नानान्तर भी प्राप्त है (शिव. कोटि. १)।

२. एकादश रुद्रों में से एक।

चिष—शिव देवों में से एक।

२. एक असुर, जो नकुलि देवी के द्वारा मारा गया था (ब्रह्मांड ४. २८.३९)।

३. एक असुर, जो दनायुष नामक असुर का पुत्र था (वायु. ६८.३०)।

विषया—चन्द्रनावती नगरी के दुष्टबुद्धि प्रधान की कन्या (चन्द्रहास देखिये)।

विषाणिन्—एक ज्ञातिसमूह, जो दशरथ युद्ध में सुगस राजा के पक्ष में शामिल था (ऋ. ७.१८.७)। रोथ इन्हें सुदास राजा के विपक्षी मानते हैं, किंतु वह अयोग्य प्रतीत होता है।

अलिन, भलानस, शिव, एवं पक्थ लोगों के साथ इनका निर्देश प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि,

ये अहंके समान उत्तरीयग्राम भारत में रहनेवाले लोग हों।

‘विष्णु’ का शब्दार्थ अर्थ ‘संगमयुक्त’ है। ये लोग संभवतः संग के आकार का अथवा संगों से अलंकृत शिरस्त्राण धारण करते होंगे, जिस कारण इन्हें ‘विष्णु’ नाम प्राप्त हुआ था।

विष्णु—विरज नामक राजपराज की पत्नी, जिससे इनमें पुत्र, एवं एक कन्या उत्पन्न हुई थी (भा. ५. १२.११)। इसे विष्णुवसेन की माता भी कहा गया है (भा. ८.१३.२३)।

२. ब्रह्मनाबधि मन्वेतर के श्रीविष्णु की माता।

विष्णु—एक राक्षस, जो पूर्वकाल में पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२०.५२)।

विष्णु—इश्वरकुर्वेराय विश्वाम्श राजा का नामभर (विश्वाम्श देग्विये)। विष्णु के अनुसार इसके पुत्र का नाम चंद्राश्व था।

विष्णु—धर्मसाधने मन्वेतर का एक ऋषि।

२. विष्णु एवं लया की एक कन्या, जो दिखने में अत्यंत भयंकर थी। इसी कारण तद्रूपुत्र विश्वरूप राक्षस से इसका विवाह हुआ।

विष्णु—एक ऋषिकुमार, जो विश्वक ‘कृष्णय’ नामक अधियों के कुशापात्र ऋषि का पुत्र था। एकबार यह खो गया था, जिस समय अधियों ने इसे इसके पिता के पास पहुँचा दिया था (क्र. १.११६.२३; ११७.७; ८. ८६.३; १०.६५.१२)।

विष्णु—जगत्संचालक एक आद्य देवता, जिसकी पूजा जगत्संहार का आद्य देवता माने गये रुद्र-शिव के साथ सारे भरतवन्द में भक्तिभाव से की जाती है। वैदिक देवतविज्ञान में निर्दिष्ट देवताओं में से विष्णु एवं रुद्रशिव ये दो देवता ही ऐसे हैं कि, जिनके प्रति भारतीयों की श्रद्धा एवं भक्ति स्थलकालादि सारे बंधन लौंघ कर लदियों से अर्पित रही है। यही कारण है कि ये देवता भारतीय जनता के केवल देवत ही नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति का एक अधिभाष्य भाग बन गये हैं।

मानवकृति देवतोपासना का आद्य प्रतीक—भारतीय देवतात्व के इतिहास में, विष्णु एवं रुद्र-शिव मानवाकृति देवतोपासना के आद्य प्रतीक माने जाते हैं। इन देवताओं का मानवीकरण उत्तर वैदिककाल में हुआ, जब वेदों के द्वारा प्रणीत यज्ञयागात्मक उपासना-पद्धति आधिसादिक तंत्रबद्ध, एवं नित्याचरण के लिए कठिन

होती जा रही थी। इस अवस्था में, जिस प्रकार वेदों में निर्दिष्ट रुद्र-शिव का परिवर्धित मानवी स्वरूप शैव उपासना पद्धति के द्वारा साकार हुआ, उसी प्रकार वेदों में निर्दिष्ट विष्णु देवता का परिवर्धित मानवी रूप वैष्णव-उपासना संप्रदायों के द्वारा आविष्कृत हुआ।

विष्णु देवता के इस नये परिवर्धित स्वरूप में, वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट विष्णु को, सांस्कृत लोगों के द्वारा पूजित वासुदेव से, एवं ब्राह्मणादि ग्रंथों में निर्दिष्ट जगत्संचालन के नारायण देवता से सन्तुलित करने का यशस्वी प्रयत्न किया गया। आगे चल कर पौराणिक साहित्य में विष्णु के अनेकानेक अवतारों की कल्पना प्रसृत हुई, जिसके अनुसार कृष्ण, राम दाशरथि आदि देवतातुल्य पुरुषों को विष्णु के ही अवतार मान कर, वैष्णव उपासना की कक्षा और भी संवर्धित की गयी। इस प्रकार ऋग्वेद में चतुर्थ श्रेणि का देवता माना गया विष्णु पौराणिक काल में एक सर्वश्रेष्ठ देवता बन गया।

वैदिक साहित्य में—इस साहित्य में निर्दिष्ट इन्द्र, वरुण, अग्नि आदि देवताओं की तुलना में विष्णु का स्थान काफी कनिष्ठ प्रतीत होता है। ऋग्वेद के केवल पाँच हि सूक्त विष्णु को उद्देश्य कर रचे गये हैं। इन सूक्तों में इसे स्वतंत्र अस्तित्व अथवा पराक्रम प्रदान नहीं किये गये हैं, बल्कि सूर्यदेवता का ही एक प्रतिरूप इसे माना गया है, एवं इन्द्र के सहायक के नाते इसका वर्णन किया गया है।

स्वरूपवर्णन—एक बृहदीकार शरीरवाले नवयुवक के रूप में ऋग्वेद में इसका स्वरूपवर्णन प्राप्त है। इसे ‘उरुगाय’ (विस्तृत पादप्रक्षर करनेवाला) एवं ‘उरुक्रम’ (चीड़े पग रखनेवाला) कहा गया है, एवं अपने इन पगों से यह सारे विश्व को नापता है, ऐसा निर्देश भी वहाँ किया गया है।

निवासस्थान—अपने तीन पगों के द्वारा विष्णु ने पृथ्वी अथवा पार्थिव स्थानों को नाप लिया था, ऐसे निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त हैं। इनमें से दो पग अथवा स्थान मनुष्य को दिखाई देते हैं, किन्तु इसका तीसरा अथवा उच्चतम पग मनुष्यों के द्रक्कक्षा के बाहर है। यही नहीं, पक्षियों के उड़ान के भी बाहर है (क्र. १.१५५.५)। विष्णु के इस उच्चतम स्थान (परमं पदम्) अग्नि, के उच्चतम स्थान के समान माना गया है। वहाँ अग्नि, विष्णु के रहस्यात्मक गायों (मेघ) की रक्षा करता है (क्र. ५.३३)।

इस स्थान पर विष्णु का निवास रहता है, एवं पुण्यात्मा लोग आनंद से रहते हैं। वहाँ मधु का एक कूप है, वहाँ

देवतागण सुखपूर्वक रहते हैं (ऋ. १.१५४.५; ८.२९)। इसी तेजस्वी निवासस्थान में इन्द्र एवं विष्णु का निवास रहता है, एवं वहाँ पहुँचने की कामना प्रत्येक साधक करता है। ऋग्वेद में अन्यत्र इसे तीन निवासस्थानोंवाला (त्रिपदस्थ) कहा गया है (ऋ. १.१५६.५)।

ऋग्वेद में अन्यत्र विष्णु को पर्वत पर रहनेवाला (गिरिशिखर), एवं पर्वतानुकूल (गिरिशिखर) कहा गया है (ऋ. १.१५४)।

पराक्रम—विष्णु के पराक्रम की अनेकानेक कथाएँ ऋग्वेद में प्राप्त हैं। इसे साथ लेकर इंद्र ने वृत्र का वध किया था (ऋ. ६.२०)। इन दोनों ने मिल कर दासों को पराजित किया, शंवर के ९९ दुर्गों को ध्वस्त किया, एवं वसिष्ठ के दल पर विजय प्राप्त किया (ऋ. ७.९८)।

विष्णु के तीन पग—विष्णु का सत्र से बड़ा पराक्रम (विक्रम) इसके 'त्रिपदों' का है, जहाँ इसने तीन पगों में समस्त पृथ्वी, तुलोक एवं अंतरिक्ष का व्यापन किया था (ऋ. १.२२.१७-१८)। अधिकांश युरोपीय विद्वान् एवं यास्क के पूर्वाचार्य औरणवाह, विष्णु के इन त्रिपदों का अर्थ सूर्य का उदय, मध्याह्न, एवं स्यास्त मानते हैं।

किन्तु योन, मैकडोनेल आदि युरोपीय विद्वान् एवं शाक्युणी आदि भारतीय आचार्य, उपर्युक्त प्रकृत्यात्मक व्याख्या को इस कारण अयोग्य मानते हैं कि, उसमें विष्णु के अस्त्युच्च तृतीय पग (परमपद) का स्पष्टीकरण प्राप्त नहीं होता। विष्णु के इस तृतीय पग को स्यास्त मानना अवास्तव प्रतीत होता है। इसी कारण इन अभ्यासकों के अनुसार, यद्यपि विष्णु एक सौर देवता हैं, फिर भी उसके तीन पगों का अर्थ, सूर्योदय, मध्याह्न, स्यास्त आदि न हो कर, पृथ्वी, अंतरिक्ष, एवं आकाश इन तीन लोगों का विष्णु के द्वारा किया गया व्यापन मानना ही अधिक योग्य होगा। ऐसे माने से विष्णु का 'परम पद' स्वर्लोक से समीकृत किया जा सकता है, जो समीकरण 'परम पद' के अन्य वर्णनों से मिलता जुलता है।

नियमबद्ध गतिमानता—पराक्रमी होने के साथ साथ, विष्णु अत्यंत गतिमान, द्रुतगामी एवं तेजस्वी भी है। यह अग्नि, सोम, सूर्य, उपस की भौति विश्व के विधिनियमों का पालन करनेवाला, एवं उन नियमों का प्रेरक भी है। इसी कारण, इसे 'श्रिप' 'एष', 'एवया', 'स्वहंदा', 'विभूतशुभ्र', 'एववावर्' कहा गया है (ऋ. १.१५६.५; १५६.१)।

एक सौरदेवता—ऋग्वेद में प्राप्त उपर्युक्त निर्देशों से प्रतीत होता है कि, अपने विस्तृत पगों के द्वारा समस्त विश्व को नियमित रूप से पार करनेवाले सूर्य के रूप में ही विष्णुदेवता की धारणा वैदिक साहित्य में विकसित हुई थी। प्रत्येकी चार नाम (ऋतु) धारण करनेवाले अपने नव्वें अश्वों (दिनों) को विष्णु एक घूमते पहिये के भौति गतिमान बनाता है, ऐसा एक रूपकात्मक वर्णन ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १.१५५.६)। यहाँ साल के ३६० दिनों को प्रवर्तित करनेवाले सूर्यदेवता का एक स्वरूप से प्रतीत होता है।

ब्राह्मण ग्रंथों में विष्णु का कटा हुआ मस्तक ही सूर्य बनने का निर्देश प्राप्त है (या. ब्रा. १४.१.१.१०)। इसके हाथ में प्रवर्तित होनेवाला चक्र है, जो सूर्य के सट्टा ही प्रतीत होता है (ऋ. ५. ६३)। विष्णु का वाहन गरुड़ है जिसे ' गरुडमत् ' एवं ' सुपर्ण ' ये ' सूर्यपक्षी ' अर्थ की उपाधियाँ प्रदान की गयी हैं (ऋ. १०.१४४. ४)। विष्णु के द्वारा अपने वक्षःस्थल पर धारण किया गया कौस्तुभ मणि, इसके हाथ में स्थित पद्म, इसका पीतांबर एवं इसके 'केशव' एवं 'दृषीकेश' नामान्तर ये सारे इसके सौरस्वरूप की ओर संकेत करते हैं।

कई अभ्यासकों के अनुसार, विष्णुदेवता की आविष्कृति सर्वप्रथम ' सूर्यपक्षी ' के रूप में हुई थी, एवं ऋग्वेद में निर्दिष्ट ' सुपर्ण ' (गरुड पक्षी) यही विष्णु का आद्य स्वरूप था (ऋ. १०.१४९.३)। विष्णु के ' श्रीवत्स ' ' कौस्तुभ ' ' चतुर्भुजत्व ' ' नाभिकमल ' आदि सारे गुण-विशेष एवं उपाधियाँ, इसके इस पक्षीस्वरूप के ही द्योतक प्रतीत होते हैं।

भक्तवत्सलता—विष्णु के भक्तवत्सलता का निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार प्राप्त है। अपने सारे पराक्रम इसने व्रत मनुष्यों को आवास प्रदान करने के लिए एवं लोकरक्षा के लिए किये थे (ऋ. ६.४९.१३; ७.१००; १.१५५)। विष्णु की इसी भक्तवत्सलता का दिक्काम आगे चल कर विष्णु के अनेकानेक अवतारों की कल्पना में आविष्कृत हुआ, जहाँ नानाविध स्वरूप धारण करने की श्रीविष्णु की अद्भुत शक्ति का भी सुयोग्य उपयोग किया गया (ऋ. ७.१००.१)।

विष्णु के अवतारों का सुस्पष्ट निर्देश यद्यपि ऋग्वेद में अग्रपक्ष है, फिर भी वामन एवं बराह अवतारों का शुंघलासा संकेत वहाँ पाया जाता है (ऋ. १.६१.७)।

८.७३.१०)। इन्हीं अवतार-कल्पनाओं का विकास आगे चल कर ब्राह्मण ग्रंथों में किया हुआ प्रतीत होता है।

अव्ययता का देवता—डॉ. डांडेकरजी के अनुसार, ऋग्वेद में निर्दिष्ट विष्णु अव्ययता (फर्टिलिटी) का एक देवता है, एवं 'इंद्र-वृषाकपि-सूक्त' में निर्दिष्ट 'वृषाकपि' स्वयं विष्णु ही है (ऋ. १०.८६)। ऋग्वेद में अन्यत्र विष्णु को 'शिपिविष्ट' (गृहरूप धारण करनेवाला) कहा गया है, एवं इसकी प्रार्थना की गयी है 'अपने इस रज को हमसे गुप्त न रखो' (ऋ. ७. १००.६)। यह भूगोला रक्षक है, एवं गर्भाधान के लिए अन्य देवताओं के साथ इसका भी आवाहन किया गया है (ऋ. ७.३६)। एक अन्यंत सुंदर बालक गमंस्थ करने के लिए भी इसकी प्रार्थना की गयी है (ऋ. १०. १८४.१)।

व्युत्पत्ति—विष्णु शब्द का मूल रूप 'विप' (सतत क्रियाशील रहना) माना जाता है। मैक्डोनेल, श्रेडर आदि अभ्यासकों ने इसी मत का स्वीकार किया है, एवं उनके अनुसार सतत क्रियाशील रहनेवाले सौर सारूपी विष्णु को यह उपाधि सुयोग्य है। अन्य कई अभ्यासक विष्णु शब्द का मूल रूप 'विश्व' (व्यापन करना) मानते हैं, एवं विश्व की उत्पत्ति करने के बाद विष्णु ने उसका व्यापन किया, यह अर्थ वे 'विष्णु' शब्द से ग्रहण करते हैं। पौराणिक साहित्य में भी इसी व्युत्पत्ति का स्वीकार किया गया है, जैसा कि विष्णुसहस्रनाम की टीका में कहा गया है:—

वराचरेषु भूतेषु वेशनात् विष्णु रुच्यते।

डॉ. डांडेकरजी के अनुसार, विष्णु का मूल रूप 'विष्भु' था, एवं उससे हवा में तैरनेवाले पक्षी की ओर संकेत पाया जाता है (डॉ. डांडेकर, पृ. १३५)।

ब्राह्मण ग्रंथों में—ऋग्वेद में कनिष्ठ श्रेणी का देवता माना गया विष्णु ब्राह्मण ग्रंथों में सर्वश्रेष्ठ देवता माना गया प्रतीत होता है (श. ब्रा. १४.१.१.५)।

यशविधि में सर्वश्रेष्ठ देवता विष्णु है, एवं सर्वाधिक कनिष्ठ देवता अग्नि है, ऐसा स्पष्ट निर्देश एतरेय ब्राह्मण में प्राप्त है:—

अग्निर्वै देवानामवमो, विष्णुः परमः।

तदन्तरेण सर्वाः अन्याः देवताः ॥

(ऐ. ब्रा. १.१)।

अथर्ववेद में यज्ञ को उष्णता प्रदान करने के लिए विष्णु का स्तवन किया गया है। ब्राह्मणों में विष्णु के तीन पगों का प्रारंभ पृथ्वी से होकर वे तुलोक में समाप्त होते हैं, ऐसा माना गया है। विष्णु के परमपद को वहाँ मनुष्यों का चरम अभीष्ट, सुरक्षित शरणस्थल माना गया है (श. ब्रा. १.९.३)।

विष्णु का श्रेष्ठत्व—ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त विष्णु देवता के वर्णन से प्रतीत होता है कि, उस समय विष्णु एक सर्वश्रेष्ठ देवता मानना जाने लगा था। उसी श्रेष्ठता का साक्षात्कार कराने के लिए अनेकानेक कथाएँ उन ग्रंथों में रचायी गयी हैं, जिनमें से निम्न दो कथाएँ प्रमुख हैं।

एक बार देवों ने ऐश्वर्यप्राप्ति के लिए एक यज्ञ किया, जिस समय यह तय हुआ कि, जो यज्ञ के अंत तक सर्वप्रथम पहुँचेगा वह देव सर्वश्रेष्ठ माना जायेगा। उस समय यज्ञस्वरूपी विष्णु अन्य सारे देवों से सर्वप्रथम यज्ञ के अंत तक पहुँच गया, जिस कारण यह सर्वश्रेष्ठ देव साबित हुआ। आगे चल कर इसका धनुष टूट जाने के कारण, इसका सिर भी टूट गया, जिसने सूर्यविजय का आकार धारण किया (श. ब्रा. १४.१.१)। उसी सिर को अश्विनो के द्वारा पुनः जोड़ कर, यह तुलोक का स्वामी बन गया (तै. आ. ५.१.१-७)।

एक बार देवासुर-संग्राम में देवों की पराजय हुई, एवं विजयी असुरों ने पृथ्वी का विभाजन करना प्रारंभ किया। वामनाकृति विष्णु के नेतृत्व में देवगण असुरों के पास गया, एवं पृथ्वी का कुछ हिस्सा माँगने लगा। फिर विष्णु की तीन पगों इतनी ही भूमि देवों को देने के लिए असुर तैयार हुए। तत्काल विष्णु ने विराट रूप धारण किया, एवं अपने तीन पगों में तीनों लोक, वेद, एवं वान् को नाप लिया (श. ब्रा. १.२.५; ऐ. ब्रा. ६.१५)।

अवतारों का निर्देश—उपर्युक्त वामनावतार की कथा के अतिरिक्त, विष्णु के वाराह अवतार का भी निर्देश ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त है, जहाँ वाराहरूपधारी विष्णु पृथ्वी का उद्धार करने के लिए जल से बाहर आने की कथा दी गयी है (श. ब्रा. १४.१.२)। वहाँ इस वाराह का नाम 'एमूप' बताया गया है।

विष्णु के दो अन्य अवतारों के स्रोत भी ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त हैं, किन्तु उन्हें सृष्ट रूप से विष्णु के अवतार नहीं कहा गया है। प्रलयजल से मनु को बचानेवाला मत्स्य, एवं आद्यजल में भ्रमण करनेवाला कश्यप ये शतपथब्राह्मण में निर्दिष्ट दो अवतार पौराणिक साहित्य

में विष्णु के अवतार के नाते सुविख्यात हुए (श. ब्रा. १.८.१; ७.५१)।

उपनिषदों में—मैत्री उपनिषद् में, समस्त सृष्टि धारण करनेवाले अन्नपरब्रह्म को भगवान् विष्णु कहा गया है। कटोपनिषद् में साधक के आध्यात्मिक साधना का अंतिम 'श्रेयस्' विष्णु का परम पद बताया गया है। इन निर्देशों से प्रतीत होता है कि, उपनिषद् काल में, विष्णु इत सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ देवता माना जाने लगा था। डॉ. भांडारकरजी के अनुसार, उपनिषदों में वर्णित 'परब्रह्म' की कल्पना वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट विष्णु के 'परमपद' की कल्पना से काफी मिलती-जुलती है। इसी कल्पनासाधर्म्य के कारण, वैदिकोत्तर काल में विष्णु तत्त्वज्ञों के द्वारा पूजित एक सर्वमान्य देवता बन गया।

गृह्यसूत्रों में—आगे चल कर, विष्णु भारतीयों के नित्यपूजन का देवता बन गया। आपस्तंब, हिरण्यकेशिन्, पारस्कर आदि आचार्यों के द्वारा प्रणीत विवाहविधि में, सप्तपदी-समारोह के समय निम्नलिखित मंत्र वैदिक मंत्रों के साथ अत्यंत श्रद्धाभाव से पठन किया जाता है:—

विष्णुस्त्वां आनयतु।

(पा. गृ. १.७.१)।

(इस जीवन में विष्णु सदैव तुम्हारा मार्गदर्शन करता रहे)।

महाभारत में—इस प्रकार विष्णु देवता का माहात्म्य बढ़ते बढ़ते, महाभारतकाल में यह समस्त सृष्टि का नियन्ता एवं शास्ता देवता माना जाने लगा। महाभारत में प्राप्त ब्रह्मदेव परमेश्वर संवाद में, ब्रह्मा के द्वारा 'परमेश्वर' को नारायण, विष्णु एवं वासुदेव आदि नामों से संबोधित किया गया है। इससे प्रतीत होता है कि, महाभारतकाल में ये तीनों देवता एकरूप हो कर, सम्मिलित स्वरूप में इन तीनों की उपासना प्रारंभ हुई थी (म. भी. ६.१.६२)।

महाभारत में प्राप्त 'अनुगीता' में वासुदेव कृष्ण एवं श्रीविष्णु का साधर्म्य स्पष्टरूप से प्रतीत होता है। भगवद्-गीता तक के समस्त वैष्णव साहित्य में एक ही एक 'वासुदेव कृष्ण' की उपासना प्रतिपादन की गयी है, एवं वहाँ कहीं भी विष्णु का निर्देश प्राप्त नहीं है, जो सर्वप्रथम ही अनुगीता में पाया जाता है।

भारतीय-युद्ध के पश्चात्, द्वारका आते हुए भगवान् श्रीकृष्ण की भेंट भृगुवंशीय उत्तक ऋषि से हुई। भारतीय युद्ध के संहारसत्र की बार्ता सुन कर उत्तक ऋषि अत्यंत

कुद्व हुआ, एवं श्रीकृष्ण को शाप देने के लिए प्रवृत्त हुआ। इस समय कृष्ण ने उसे 'अनुगीता' के रूप में अत्यात्म-तत्त्वज्ञान कथन किया, एवं उत्तक को अपना वहीं विराट स्वरूप दिखाया, जो भगवद्गीता-कथन के समय उसने अर्जुन को दिखाया था। किन्तु उस विराट स्वरूप को अनुगीता में 'विष्णु का सही स्वरूप' (वैष्णव रूप) कहा गया है, जिसे भगवद्गीता में 'वासुदेव का सही स्वरूप' कहा गया था (म. आश्व. ५.३-५५)।

महाभारत में अन्यत्र युधिष्ठिर के द्वारा किये गये कृष्ण-स्तवन में कृष्ण को विष्णु का अवतार कहा गया है (म. शां. ४३)। महाभारत में बहुधा सर्वत्र विष्णु को 'परमात्मा' माना गया है, फिर भी विष्णुस्वरूपों में से नारायण एवं वासुदेव-कृष्ण के निर्देश वहाँ अधिकरूप में पाये जाते हैं।

विष्णु-उपासना के तीन स्रोत—जैसे पहले ही कहा गया है, महाभारत में एवं उस ग्रंथ के उत्तरकाल में प्रचलित विष्णु-उपासना में, वैदिक विष्णु में वासुदेव कृष्ण एवं नारायण ये दो देवता सम्मिलित किये गये हैं। विष्णु-उपासना में प्राप्त, वैदिक विष्णु के अतिरिक्त अन्य दो स्रोतों की संश्लिष्ट जानकारी निम्न दी गयी है:—

(१) वासुदेव-कृष्ण उपासना—वासुदेव उपासना का सर्वाधिक प्राचीन निर्देश पतंजलि के व्याकरणग्रन्थ-भाष्य में प्राप्त है, जहाँ वासुदेव को एक उपासनीय देवता कहा गया है (महा. ४.३.९८)। इससे प्रतीत होता है कि, पाणिनि के काल में वासुदेव की उपासना की जाती थी।

राजपुताना में स्थित धोसुडि ग्राम में प्राप्त २०० ई. पू. के शिलालेख में वासुदेव एवं संकषण की उपासना का निर्देश प्राप्त है। वेसनगर ग्राम में प्राप्त हेलिओदोरस के २०० ई. पू. के शिलालेख में भी वासुदेव की उपासना प्रीत्यर्थ एक गरुडखंज की स्थापना करने का निर्देश प्राप्त है, जहाँ उसने स्वयं को भागवत कहा है। इससे प्रतीत होता है कि, पूर्व मालव देश में २०० ई. पू. में वासुदेव की देवता मान कर पूजा की जाती थी, एवं उसके उपासकों को भागवत कहा जाता था। हेलिओदोरस स्वयं तक्षशिला का युनानी राजदूत था, जिससे प्रतीत होता है कि, भागवतधर्म का प्रचार उत्तर-पश्चिम प्रदेश में रहनेवाले युनानी लोगों में भी प्रचलित था। इसी प्रकार नानाघाट में प्राप्त ई. स. १. वी शताब्दी

के शिलालेख में भी वासुदेव एवं संवर्षण देवताओं का निर्देश प्राप्त है।

पतञ्जलि के महाभाष्य में वासुदेव-देवता का स्पष्टीकरण देते समय, यह ब्रह्मिण-वैश्वंश में उत्पन्न क्षत्रिय राजा न हो कर, एक स्वतंत्र देवी देवता है, ऐसा स्पष्टीकरण प्राप्त है। किन्तु फिर भी भागवत-संप्रदाय में सर्वत्र वासुदेव-कृष्ण को ब्रह्मिण राजकुमार ही माना जाता है, जिस परंपरा का निर्देश पतञ्जलि के उपर्युक्त स्पष्टीकरण में प्राप्त है।

डॉ. भांडारकरजी के अनुसार, वासुदेव, संवर्षण एवं अनिरुद्ध ये तीनों ब्रह्मिण अथवा सांख्य राजकुमार थे, जिनमें से वासुदेव की पूजा एक परमात्मन के नाते पतञ्जलि-काल में सांख्य लोगों में की जाती थी। वासुदेव-कृष्ण की इसी पूजा का निर्देश मेगास्थनीस के प्रवास-वर्णनों में प्राप्त है, जहाँ यमुना नदी के तट पर स्थित शरमेन देश में इस देवता की उपासना प्रचलित होने का उल्लेख है। किन्तु इस प्राचीनकाल में केवल वासुदेव की ही पूजा की जाती थी।

२. नारायण उपासना—महाराष्ट्र के शान्तिपर्व में 'नारायणोय' नामक उपासकान में नारायण की उपासना की संविस्तर जनकद्वारा प्राप्त है। इस जानकारी के अनुसार इस मूर्ति का परमात्मन नारायण है, जिसने अपने ऐकांतिक धर्म का कथन सर्वप्रथम नारद को किया था, जो आगे चल कर उसने 'हरिगीता' के द्वारा अनमोक्ष्य को कथन किया था। यही उपदेश कृष्णरूपधारी नारायण ने भारतीय युद्ध के प्रारंभ में अर्जुन को किया था। इस सांख्य धर्म का कथन स्वयं नारायण हर एक मन्वन्तर के प्रारंभ में करते हैं, एवं मन्वन्तर के अन्त में वह नष्ट हो जाता है। इस मन्वन्तर के प्रारंभ में भी नारायण ने अपने इस धर्म का निवेदन दक्ष, विवस्वत्, मनु एवं इन्द्राकु राजाओं को किया था।

इस धर्म में, यज्ञ में की जानेवाली न्युहोला एवं ऋषियों के द्वारा अरण्य में की जानेवाली तपस्या त्याज्य मानी गयी है, एवं इन दोनों उपासनाओं के बदले में नारायण की निष्ठापूर्वक भक्ति प्रतिपादन की गयी है। इसी संदर्भ में बृहस्पति के द्वारा की गयी यज्ञसाधना, एवं एकत, द्वित, एवं त्रित आदि के द्वारा हजारों वर्षों तक की गयी तपःसाधना निष्फल बतायी गयी है, एवं इन दोनों उपासना-पद्धति को त्याग कर हरि की भक्ति करनेवाला उपरि-चर वसु राजा श्रेष्ठ बताया गया है।

इससे प्रतीत होता है कि, यज्ञमार्ग एवं तपस्यामार्ग छोड़ कर अरण्यकों में निर्दिष्ट मार्गों से निलंब भक्ति सिखाने वाला 'नारायण संप्रदाय' एक श्रेष्ठ श्रेणि का भक्तिसंप्रदाय है। बौद्ध एवं जैन धर्मों को प्रतिभिया स्वरूप में इस संप्रदाय का प्रथम जन्म हुआ, एवं इसीसे आगे चल कर वैष्णव संप्रदाय का विकास हुआ।

इस संप्रदाय में कंसवध के लिए मथुरा में उत्पन्न हुए कृष्ण को 'नारायण' अथवा 'वासुदेव' का अवतार कहा गया है। नारायण के इसी अवतार के द्वारा प्रणयन किये गये 'भगवद्गीता' के द्वारा वैष्णवधर्म का पुनरुत्थान हुआ, एवं एक देशध्यायी धार्मिक आंदोलन के रूप में यह संप्रदाय पुनराविष्कृत हुआ।

विष्णु देवता की उष्कान्ति—धैदिक साहित्य में एक और देवता के नाते वर्णन किया गया विष्णु, ब्राह्मण ग्रंथों में यज्ञदेवता बन गया। आगे चल कर यज्ञयागादि कर्म-काण्डों की लोकप्रियता ज्वरकम होने लगी, तब इन कर्मकाण्डों से प्राप्त होनेवाला पुण्य केवल विष्णु की उपासना में ही प्राप्त होता है, ऐसी धारणा समाज में दृढ़पल हुई (मै. उ. ६.१६)। इसी काल में ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश इस त्रिमूर्ति की कल्पना प्रचलित हुई, एवं इन तीन देवता क्रमशः सृष्टि के उत्पत्ति, स्थिति एवं लय की अविष्टायी देवता बन गये (मै. उ. ४.५; शिखा. २)। इसी समय, विष्णु को ॐ कार उपासना में स्थान प्राप्त हुआ, एवं ॐ कार में से 'उ' कार के साथ श्रीविष्णु को समीकृत किया जाने लगा (नृसिंहोत्तर तापिनी. ३)। उपनिषदों में अन्यत्र विष्णु के नाम से एक गायत्रीमंत्र दिया गया है, एवं गोपीचंदन को 'विष्णुचंदन' कहा गया है (वासु. उ. २.१)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे सत्त्वगुण प्रधान देवता माना गया है, एवं अमृतसंचालन एवं पालन का कार्य इसीके ही अधीन माना गया है। इसी कारण विभिन्न युगों में, यह नानाविध अवतार धारण कर पृथ्वी पर अवतीर्ण होता है, तथा दुष्टों के संहार का एवं पृथ्वी के पालन का कार्य निभाता है।

स्वरूपवर्णन—विष्णु का विस्तृत स्वरूपवर्णन पुराणों में प्राप्त है, जहाँ इसे चतुर्हस्त, एवं दाल, चक्र पद्म, गदाधारी बताया गया है। इसके आयुधों में शार्ङ्ग धनुष एवं नंदन खड्ग प्रमुख थे। इसके आभूषणों में पितोवर, वनमाला, किरौटकुंडल एवं श्रीवत्स प्रमुख थे। इसकी पत्नी का नाम लक्ष्मी है, जिसके साथ यह वैकुण्ठलोक में निवास करता

है। कभी-कभी यह क्षीरसागर में शेषनाग पर ध्यान करता है। विष्णु के इन्हीं गुणवैशिष्ट्यों को अंतर्भूत कर इसके सहस्र नाम बताये गये हैं, जो 'विष्णुसहस्रनाम' में उपलब्ध हैं।

विष्णुदेवता का निम्नलिखित वर्णन भागवत में प्राप्त है :-

क्षीरोदं मे प्रियं धाम, श्वेतद्वीपं च भास्वरम् ॥
श्रीवत्सं कौस्तुभं मालां, गङ्गां कौमोदकीं मम ।
सुदर्शनं पाञ्चजन्यं सुपर्णं पतंगेश्वरम् ॥
शेषं मत्कलां सुदृशं प्रियं देवीं मद्गोश्रयाम् ।
(भा. ८.४.१८-२०) ।

विष्णु की उपासना—स्कंद में विष्णु की उपासना सविस्तृत रूप में बतायी गयी है, जहाँ हर एक माह में उपासनायोग्य विष्णु के नाम, एवं उसके प्रिय फूल, एवं फल बताये गये हैं:—

विष्णु का नाम	फूल	फल
विष्णु	अशोक	अनार
मधुसूदन	मोगरा	नारियल
त्रिविक्रम	पाटली	आम
श्रीधर	कलत्र	कटहल
हृषीकेश	करवीर	खजूर
पद्मनाभ	जाई	ताड़फल
दामोदर	मालती	रायआंवला
केशव	सूर्यकमल	बेलफल
नारायण	चंद्रविक्रासी कमल	नारंगी
माधव	जुही	पुगीफल
गोविंद	उंडली	करौंदा
?	?	जायफल

(स्कंद २.४४) ।

विष्णु के अवतार—वैदिक साहित्य में केवल प्रजापति के ही अवतार दिये गये हैं। किन्तु पुराणों में विष्णु, रुद्र, गणपति, आदि सारे देवताओं के अवतार दिये गये हैं।

पुराणों में निर्दिष्ट इन अवतारों के अतिरिक्त, द्वादश देवामुर संग्रामों में विष्णु एवं रुद्र ने स्वतंत्र अवतार लिये थे (देव देखिये) ।

महाभारत में प्राप्त नारायणीय में विष्णु के अवतारों की जानकारी दी गयी है, जहाँ विष्णु के द्वारा दुष्टों के

संहारार्थ, एवं सज्जनों के रक्षणार्थ लिये गये 'पाथिव' रूपों को ही केवल अवतार कहा गया है। वहाँ विष्णु के निम्नलिखित दस अवतार बताये गये हैं:— ब्राह्म, नारसिंह, वामन, परशुराम, राम दत्तत्रयि, वासुदेव कृष्ण (सात्वत), हंस, कूर्म, मत्स्य, एवं कल्कि (म. शा. ३.२६.८३५) ।

वायु में विष्णु के अवतार दस बताये गये हैं, किन्तु वहाँ हंस, कूर्म एवं मत्स्य के स्थान पर दत्तात्रेय, वेदव्यास एवं एक अनामिक अवतार बताया गया है (वायु. १८. २११; ब्राह्म. १.१३) । उसी पुराण में अन्यत्र इन अवतारों की संख्या ७७ बतायी गयी है (वायु. १७. ६४) ।

भागवत में विष्णु के बाईस अवतार बताये गए हैं, जहाँ कपिल, दत्तात्रेय, ऋषभ, एवं धन्वंतरि को विष्णु के अवतार कहा गया है। इनमें से ऋषभ जैनों का प्रथम तीर्थकर माना जाता है। मत्स्य में प्राप्त दशावतारों में नारायण, मातृध-सप्त, वेदव्यास एवं गौतम बुद्ध ये नये अवतार बताये गये हैं (मत्स्य. ४७.२३७-२५२) । ब्राह्म एवं नृसिंह में भी दशावतारों की जानकारी प्राप्त है (ब्राह्म. १.१३; नृसिंह ५४.६) ।

हरिवंशवि पुराणों में विष्णु के अवतारों की संख्या अनन्त बतायी गयी है—

प्रादुर्भावसहस्राणि अतीतानि न संशयः ।

भूयश्चैव भविष्यन्तीत्येवमाह प्रजापतिः ॥

(ह. वं. १.४१.११; ब्रह्म. २.१३.१७) ।

(विष्णु के अनन्त अवतार पूर्वकाल में हुए हैं, एवं उतने ही अवतार भविष्यकाल में होनेवाले हैं) ।

नामावलि—महाभारत एवं विभिन्न पुराणों में प्राप्त विष्णु के अवतारों की नामावलि निम्नप्रकार है:—

(१) अजित (विभु)—चाक्षुष एवं स्वरोचिष मन्वन्तरों में तुषित के पुत्र के रूप में उत्पन्न (भा. ८.५. ९) ।

(२) अंभिरुद्र—(चतुर्व्यूह देखिये) ।

(३) अपान्तरतम सारस्वत व्यास—कृष्ण द्वैपायन व्यास का पूर्वजन्म (म. शा. ३.३७.३८-४०) ।

(४) इंद्र—इसने अंधक, प्रह्लाद, विरोचन, वृत्र आदि असुरों का पराजय किया (पद्म. ख. ६३) ।

(५) उरुकर्म—यह नाभि एवं मेरुदेवी का पुत्र था (भा. १.३.१३) ।

(६) ऋषभ—दक्षसावित्री मन्वन्तर में उत्पन्न एक अवतार, जो नाभि एवं मुदेवी का पुत्र था (भा. २.७.९; ५.३: स्कंद. वैष्णव. १८)।

(७) कच—वृहस्पतिपुत्र (ह. वं. २.२२.३९)।

(८) कपिल—सांख्यशास्त्रप्रवर्तक एक आचार्य, जो स्वयंभुव मन्वन्तर में उत्पन्न हुआ था। इसके शिष्य का नाम आसुरि था (भा. १.३.१०; २.७.३; ३.२४; ८.१.६; म. शां. ३२६.६४; स्कंद. वैष्णव. १८)।

(९) कल्कि विष्णुप्रयास—यह अवतार गंगा-यमुना नदियों के बीच में स्थित संमलनाम में संभव होगा (म. शां. ३२६.७२; अग्नि. १६.८-१०; ब्रह्म. २१३.१६४; ब्रह्मै. प्रकृति. ७.५८; पद्म उ. २५२; भा. १.३.२५; २.७.३८; ११.४.२२; मत्स्य. ४७; वायु. ९८.१०४-११५; ह. वं. १.४१.१६२-१६६; ब्रह्मांड. ३.७३.१०४)।

(१०) कूर्म—म. शां. ३२६.७२; भा. १.३.१६; २.७.१३; ११.४.१८; ह. वं. २.२२.४२; विष्णु. १.४.८; अग्नि. ३)।

(११) कृष्ण—(अग्नि. १२; पद्म. उ. २४५-२५२; ब्रह्म. २१३.१५९-१६२; भा. १.३.२८; २.७.२६-३५; १०; ११.४.२२; ह. वं. १.४१.१५६-१६०; २.२२.४८; वायु. ९८.९४-१०३; ब्रह्मांड. ३.७३.९३-९४)।

इसका वर्ण कृत्, त्रेता, द्वापर, एवं कलियुगों में क्रमशः श्वेत, रक्त, पीत, एवं कृष्ण रहता है (म. व. १४८.१६-३३; शां. ३२६.८२-९३)।

(१२) चतुर्भुज—चार अवतारों का एक देवतासमूह, विषम विन्यासित अवतार शामिल थे:—

नाम	गुणवैशिष्ट्य	कार्य
वासुदेव	ज्ञान, ऐश्वर्यादि से युक्त	सुक्तिप्राप्ति
संकर्षण	ज्ञान-बलयुक्त	शास्त्रप्रवर्तन, संहार
प्रद्युम्न	ऐश्वर्य-वीर्ययुक्त	धर्मनयन, सृष्टि निर्माण
अनिरुद्ध	शक्ति तेजोयुक्त	तत्त्वगमन एवं सृष्टिरक्षण

(म. शां. ३२६.३५-४३; ६८-६९; ब्रह्म. १८०; कूर्म. पूर्व. ५१.३७-५०; स्कंद. वैष्णव. वासुदेव. १८; रामानुजदर्शन प्र. ११५)।

इसके नाम नर, नारायण, हरि तथा कृष्ण भी प्राप्त है (म. शां. ३२१.८-१८)।

(१३) जामदग्न्य राम—(परशुराम देखिये)।

(१४) दत्तात्रेय—(ब्रह्म. २१३.१०६; भा. १.३.११; मत्स्य. ४७; वायु. ९८.८९; ब्रह्मांड. ३.७३.८८; ह. वं. १.४१.१०४-११०; २.४८.१९-२०)।

(१५) धन्वंतरि—(भा. १.३.१७; २.७.२१)।

(१६) धर्मसेतु—धर्मसावित्री मन्वन्तर में उत्पन्न एक अवतार।

(१७) नरनारायण—धर्म एवं मूर्ति के पुत्र। हरि एवं कृष्ण इन्हींकी ही मूर्तियाँ हैं (भा. १.३.९; २.७.६; ११.४.६-१६; म. शां. ३२६.११; ९९)।

(१८) नरसिंह—(नृसिंह देखिये)।

(१९) नारद—सात्वतधर्मोपदेशक (भा. १.३.८; २.७.१९)।

(२०) नारायण—हिरण्यकशिपु का बधकर्ता (मत्स्य. ४७; ह. वं. २.७१.२४; वायु. ९८.७१-७३; ब्रह्मांड. ३.७३.७२)।

(२१) नृसिंह—(म. स. ३५. परि. १.२१.३१०; शां. ३२६.७३; ३३७.३६; अग्नि. ४.३-४; ब्रह्म. २१३.४३-१०४; विष्णु. १.२०; भा. १.३.१८; २.७.१४; ७.८; ११.४.१९; ह. वं. १.४१.३९-७९; २.२२.३७; ४८.१७; ७१.३३; ब्रह्मांड. ३.७३.७३; ७३.७४; वायु. ९८.७३; मत्स्य. ४७; पद्म. उ. २३८)।

(२२) पद्मनाभ—(ह. वं. २.७१.२९)।

(२३) परशुराम जामदग्न्य—(म. शां. ३२६.७७; अग्नि. ४.२२-१९; पद्म. उ. २४१; ब्रह्म. २१३.११३-१२३; ह. वं. १.४१.१११-१२१; २.८.२०; भा. १.३.२०; २.७.२२; मत्स्य. ४७; ब्रह्मांड. ३.७३.९०-९१; वायु. ९८.९१)।

(२४) पौष्करक—(ब्रह्म. २१३.३१; भा. १.३.१-२; ह. वं. १.४१.२७; म. स. परि. १.२१.१४०; शां. ३२६.६९)।

(२५) बलराम—(भा. १.३)।

(२६) बालमुकुंद—(म. व. १८६.११४-१२२; १८७.१-४७)।

(२७) बुध—(म. शां. ३२६.७२; नृसिंह. ३६.९; अग्नि. १६.१-८; पद्म. उ. २५२; मत्स्य. ४७)।

(२८) बृहद्भानु—भौत्य मन्वन्तर का एक अवतार।

(२९) मत्स्य—(म. शां. ३२६.७२; अग्नि. २; भा. १.३; २.७.१२; ११.४.१८; विष्णु. १.४.८)।

(३०) सांघातु चक्रवर्तिन्—(मत्स्य. ४७.१५; वायु. ९८.९०; ब्रह्मांड. ३.७३.९०)।

(३१) मोहिनी—(म. भा. १६.२९; भा. १.३.१७; ८.८; ह. वं. २.२२.४१; विष्णु. १.९.१०६-१०९)।

(३२) यज्ञ—पद्मनाभ का नामांतर (ह. वं. २.७१.३०; भा. १.३.१२; ८.१.६)।

(३३) राम दाशरथि—(अमि. ५-११; वायु. ९८.९२; म. व. २५७-२७६; शां. ३२६.७८-८१; व. १४६.१५७; भा. २.७.२५; ११.४.२१; ह. वं. १.४१.१२१-१५५; २.२२.४४; ४८.२२; ७१.३८; मत्स्य. ४७.२४; ब्रह्मांड. ३.७३.९१-९२; विष्णु. ४.४.४०; ब्रह्म. २१३.१२४-१५८; पद्म. उ. २४२-२४४)।

(३४) रामकृष्ण—(भा. १.३.२३)।

(३५) रुद्र—त्रिपुराह्न (पद्म. सू. १९१)।

(३६) वराह—(म. स. ३५; परि. १.२१.१४०-१६९; शां. २०२.१५-२८; ३२६.७२; ३३७.३६; भा. १.३.७; २.७.१; ३.१३-१९; ११.७.१८; ह. वं. १.४०; ४१.२८.३९; २.२२.४०; ४८.१२-१३; ७१.३३; विष्णु. १.४.८; अमि. ४.१-२; ब्रह्म. २१३.३२-७३; ब्रह्मांड. ३.७२.७३; पद्म. सू. १३.१९४; उ. २३७)।

(३७) वामन—(म. स. ३५; परि. १.२१.३७०; शां. ३२६.७४-७५; ब्रह्मांड. ३.७३.७७; ३३७.३६; भा. १.३.१९; २.७.१७; ६.१.४.२०; ह. वं. १.४१.७९-१०६; २.२२.४३; ४८.१८; ७१.३४; मत्स्य. ४७; ब्रह्म. २१३.१०५; वायु. ९८.७४-७७. ब्रह्मांड. ३.७२.७३; पद्म. सू. २३९-२४०; अमि. ४.७-११)।

(३८) विष्णुवर्सेन—ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का एक अवतार।

(३९) वैकुण्ठ—रैवत एतौ चाक्षुष मन्वन्तर का एक अवतार।

(४०) व्यास—(भा. ३.१.२१; २.७.३६; मत्स्य. ४७; ह. वं. १.४१.१६१-१६२; वायु. ९८.९३; ब्रह्मांड. ३.७३.९२-९३; कूर्म. पूर्व. ५१.१-११; म. शां. ३३४९; ३३७.३८-४०; ५३-५७)।

(४१) शिव (भव) (ह. वं. २.२२.३९)।

(४२) संकर्षण—(भा. ५.२५.१)।

(४३) सत्य (मत्स्यसेन)—उत्तम मन्वन्तर का एक अवतार।

(४४) सनक; (४५) सनकुमार; (४६) सनेदन,

(४७) सनातन—(भा. २.७.५; ३.१२.४; ४.८.१)।

(४८) सार्वभौम—सावर्णि मन्वन्तर का एक अवतार।

(४९) सुयज्ञ—रुचि एव आकृति का पुत्र (भा. २.७.२)।

(५०) स्वधामन्—रुद्रसावर्णि मन्वन्तर का एक अवतार।

(५१) हंस—(म. शां. ३२६.९४; भा. १.३.१३)।

(५२) हयग्रीव—(म. शां. ३२६.५६; १.४; ३३५; भा. २.७.११; ११.४.१७)।

(५३) हरि—१. गजेन्द्रमोक्ष (भा. ८.२-४: १०); २. चतुर्व्यूह अवतारों में से एक (म. शां. ६२१.८-१७; नरनारायण देखिये)।

विष्णु सांप्रदाय के ग्रंथ—इस सांप्रदाय के निम्नलिखित ग्रंथ प्रमुख हैं जो, 'पंचरत्न' सामुहिक नाम से प्रसिद्ध हैं। 'पंचरत्न' में समाविष्ट पाँच आख्यान महाभारत एवं भागवत में समाविष्ट हैं, एवं विष्णु के उपासक उसका नित्य पठन करते हैं—

(१) भगवद्गीता—भगवान् कृष्ण ने यह अचुन की कथन की थी। यह वैष्णव सांप्रदायांतर्गत 'एकान्तिक धर्म' का आद्य ग्रन्थ माना जाता है।

(२) विष्णुसहस्रनाम—महाभारत के अनुशोभन पर्व में विष्णुसहस्रनाम प्राप्त है, जिसमें १०७ श्लोकों में विष्णु के सहस्रनाम दिये गये हैं। इस ग्रंथ पर आद्य शंकराचार्य के द्वारा लिखित भाष्य उल्लेख है। इसके अंतर्गत विष्णु के बहुत सारे नाम वैदिक साहित्य में से (ऋषिभिः परिगीतानि) उद्धृत किये गये हैं। इन्हीं नामों का कथन भीष्म के द्वारा युधिष्ठिर को एक सर्वश्रेष्ठ जपसाधन के रूप में किया गया था (म. अनु. १४१.१४-१२०)।

(३) अयुगीत—यह कृष्ण के द्वारा उत्तक को कथन की गयी थी (म. आश्व. ५३-५५)।

(४) भीष्मस्तवराज—इसमें भीष्म के द्वारा की गयी विष्णु की स्तुति संग्रहित की गयी है।

(५) गजेन्द्रमोक्ष—यह आख्यान शुक के द्वारा परिक्षित राजा को सुनाया गया था, जहाँ उत्तम मन्वन्तर में हुए 'गजेन्द्रमोक्ष' की कथा सुनायी गयी है (भा. ८.२-४)।

उपर्युक्त आख्यानों के अतिरिक्त निम्नलिखित पुराण-ग्रन्थ भी विष्णु से संबंधित, अतएव 'वैष्णव' कहलाते हैं—१. गरुडपुराण; २. नारदपुराण; ३. भागवत-पुराण; ४. विष्णुपुराण, जिनमें विष्णुधर्मोत्तर पुराण भी समाविष्ट है (स्कंद. शिवरहस्यखंड. संभवकाण्ड. २.३४)।

विष्णु के तीर्थस्थान—महाभारत एवं पुराणों में विष्णु के निम्नलिखित तीर्थस्थानों का निर्देश प्राप्त है:—

(१) विष्णुपदतीर्थ—यह कुरुक्षेत्र में था। यही नाम के अन्य तीर्थ भी भारतवर्ष में अनेक थे इस तीर्थ में स्नान का कर्मान की पूजा करनेवाला मृत्यु विष्णु लोक में जाता है (म. व. ८१.८७)।

(२) विष्णुपद—गया में स्थित एक पवित्र पर्वत, जहाँ धर्मरथने यज्ञ किया था (मत्स्य. ४८.१३)। ब्रह्मांड में निपद पर्वतों में स्थित एक सरोवर का नाम भी 'विष्णुपद' दिया गया है (ब्रह्मांड. २.१८.६७)। इसी ग्रन्थ में अन्त्यय गंगानदी के उसमस्थान को 'विष्णुपद' कहा गया है, एवं शिव का तपस्यास्थान भी वही बताया गया है (ब्रह्मांड. २.२१.१७६)।

बड़े प्रमुख वैष्णव सांप्रदाय—श्रीविष्णु एवं वासुदेव-कृष्ण की उपासना के अनेकानेक सांप्रदाय ऐतिहासिक काल में उत्पन्न हुए थे, जिन्होंने विष्णु-उपासना का स्रोत सदियों तक जाग्रत रखने का महनीय कार्य किया।

विष्णु उपासना के निम्नलिखित सांप्रदाय प्रमुख माने जाते हैं:—१. रामानुज-सांप्रदाय (११ वीं शताब्दी); २. माध्व अथवा आनंदतीर्थ सांप्रदाय (११ वीं शताब्दी); ३. निंबार्क-सांप्रदाय (१२ वीं शताब्दी); ४. नामदेव एवं तुकाराम-सांप्रदाय (१३ वीं शताब्दी); ५. कबीर-सांप्रदाय (१५ वीं शताब्दी); ६. बल्लभ-सांप्रदाय (१५ वीं शताब्दी); ७. चैतन्य-सांप्रदाय (१५ वीं शताब्दी); ८. तुलसीदास-सांप्रदाय (१६ वीं शताब्दी)।

२. एक धर्मशास्त्रकार, जिसके द्वारा रचित स्मृतिग्रंथ में संस्कार एवं आश्रमधर्म का प्रतिपादन किया गया है। यह स्मृति त्रेतायुग में कलापनगरी में कथन की गयी थी। इस स्मृति के पाँच अध्याय हैं, एवं स्वकटेश्वर प्रेस के द्वारा मुद्रित 'अष्टादशस्मृतिसमुच्चय' में यह उपलब्ध है।

इसके 'वृद्धविष्णुस्मृति' का निर्देश संस्कारकौस्तुभ ग्रंथ में, एवं विश्वानेश्वर के द्वारा किया गया है।

३. एक अग्नि, जो मनु (मनु) नामक अग्नि का पुत्र था। यह अग्निरसुगोत्रीय था, एवं इसे श्रुतिमत् नामान्तर भी प्राप्त था। दर्शगौणमास नामक ग्रंथ में इसे हविष्य समर्पण किया जाता है (म. व. २११.१२)।

४. आमृतरज्जु देवों में से एक।

५. एक सूर्य, जो कार्तिक माह में अश्वरत्न नाम, रंभा अमरा, गंधर्व एवं यक्षों के साथ घूमता है। इसे उरुकम

नामान्तर भी प्राप्त था (भा. १२.११.४४; उरुकम देखिये)।

६. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार (मत्स्य. ११५.२०)।

७. पाण्डवों के पक्ष का एक राजा, जो कर्ण के द्वारा मारा गया था।

८. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

९. धर्मसवर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

१०. मीलय मनु के पुत्रों में से एक।

विष्णु प्रजापति—एक प्रजापति, जिसके मानसपुत्र का नाम विरज्जु था। महाभारत में विरज्जु राजा का वंश निम्नप्रकार दिया गया है:—विरज्जु—कीर्तिमत्—कर्दम—अनंग—अतिव्रत (पत्नी-सुनीथा)—वेन—श्रुथु वैन्य (म. शां. ५.९.१२-१९)।

विष्णु प्राजापत्य—एक वैदिक ऋतद्रष्टा (क्र. १०. १८४)।

विष्णुगुप्त चाणक्य—एक आचार्य, जो कौटिलीय 'अर्थशास्त्र' नामक सुविख्यात राजनैतिक ग्रंथ का कर्ता माना जाता है।

यह एक ऐसा अद्भुत राजनीतिज्ञ था कि, एक ओर इसने मगध देश के नंद राजाओं के द्वारा शासित राजसत्ता को विनष्ट कर, उसके स्थान पर मौर्य साम्राज्य की प्रतिष्ठापना की, एवं दूसरी ओर 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' जैसे राजनीतिशास्त्रविषयक अपूर्व ग्रंथ की रचना कर, संस्कृत साहित्य के इतिहास में अपना नाम अमर कर दिया। (विष्णु. ४.२४.६-७; भा. १२.१.१२-१३)।

इसी कारण कौटिलीय अर्थशास्त्र के अन्त में इसने स्वयं के संबंध में जो कथन किया है वह योग्य प्रतीत होता है:—

येन शास्त्रं च शास्त्रं च नंदराजगता च भूः।

अमर्षेणोद्घृतान्याशु तेन शास्त्रमिदं कृतम् ॥

(कौ. अ. १५.१.१८०)।

(नंदराजों जैसे दुष्ट राजवंश के हाथ में गये पृथ्वी, शास्त्र एवं शास्त्रों को जिसने विमुक्त किया, उसी आचार्य के द्वारा इस ग्रंथ की रचना की गयी है)।

राजनीतिशास्त्र जैसे अन्ठे विषय की चर्चा करने के कारण ही केवल नहीं, बल्कि चंद्रगुप्त मौर्यकालीन भारतीय शासनव्यवस्था की प्रामाणिक सामग्री प्रदान करने के कारण, 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण ग्रंथ माना जाता है। उसकी तुलना मेगस्थिनिस के द्वारा लिखित 'इंडिका' से की केवल हो सकती है, जो ग्रंथ

अपने संपूर्ण स्वरूप में नहीं, बल्कि टूटे-फूटे एवं पुनरुद्भूत रूप में आज उपलब्ध है।

नाम—यद्यपि इसे चाणक्य, कौटिल्य आदि नामान्तर प्राप्त थे, फिर भी इसका पितृप्रदत्त नाम विष्णुगुप्त था। ई. स. ४०० में रचित 'कामंदकीय नीति-सार' में इसका निर्देश विष्णुगुप्त नाम से ही किया गया है:—

नीतिशास्त्रासृत्तं श्रीमानर्थशास्त्रमहोदधेः।

समुद्रध्रे नमस्तस्मै विष्णुगुप्ताय वेधसे ॥

(अर्थशास्त्ररूपी समुद्र से जिसने नीतिशास्त्ररूपी नवनीत का दोहन किया, उस विष्णुगुप्त आचार्य को मैं प्रणाम करता हूँ)।

चणक नामक किसी आचार्य का पुत्र होने के कारण, इसे संभवतः 'चाणक्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा। कौटिलीय अर्थशास्त्र में इसने स्वयं का निर्देश अनेक बार 'कौटिल्य' नाम से किया है, जो संभवतः इसका गोत्रज नाम था। कई अभ्यासकों के अनुसार, यह राजनीति-शास्त्र में कुटिल नीति का पुरस्कर्ता था, जिस कारण इसे 'कौटिल्य' नाम प्राप्त हुआ था। म. म. गणपतिशास्त्री के अनुसार, इसके नाम का सही पाठ 'कौटल्य' था, जो इसके 'कुटल' नामक गोत्रनाम से व्युत्पन्न हुआ था।

नामांतर—हेमचंद्र के 'अभिवानचिंतामणि' में इसके निम्नलिखित नामांतर प्राप्त हैं:—वात्स्यायन, महानाग, कुटिल, चणकात्मज, द्रामिल, पक्षिलस्वामिन, विष्णुगुप्त, अंगुल (अभिवान, ८५३-८५४)।

जीवनवृत्त—इसके जीवन के संबंध में प्रामाणिक सामग्री अनुपलब्ध है, एवं जो भी सामग्री उपलब्ध है वह प्रायः सारी आख्यायिकात्मक है। उनमें से बहुतसारी सामग्री विशाखदत्त कृत 'सुद्राराक्षस' नाटक में प्राप्त है, जहाँ यह 'ब्राह्मण' चित्रित किया गया है, एवं महापद्म नंद राजा के द्वारा किये अपमान का बदला लेने के लिए, इसने चंद्रगुप्त मौर्य को मगध देश के राजागद्दी पर प्रतिष्ठापित करने की कथा वहाँ प्राप्त है।

कौटिलीय अर्थशास्त्र—यह एक राजनीतिशास्त्रविषयक ग्रंथ है, जिसमें राज्यसंवादन एवं संचालन के शास्त्र को 'अर्थशास्त्र' कहा गया है। इस ग्रंथ में पंद्रह अधि-करण, एक सौ पचास अध्याय, एक सौ अस्सी प्रकरण एवं छः हजार श्लोक हैं। यह ग्रंथ प्रायः गद्यमय है, जिस कारण इसकी श्लोकसंख्या अक्षरों की गणना से दी गयी है।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में राज्यशासन से संबंधित समस्त अंगोपंगों का सविस्तृत परामर्ष लिया गया है। इस ग्रंथ में चर्चित प्रमुख विषय निम्नप्रकार हैं, जो उसमें प्राप्त अधिकरणों के क्रमानुसार दिये गये हैं:—

१. विनयाधिकारिक (राजा के लिए सुयोग्य आचरण);
२. अध्यक्षप्रचार (सरकारी अधिकारियों के कर्तव्य);
३. धर्मस्थीय (न्यायविधि);
४. कंटकशोधन (राज्य की अंतर्गत शांति एवं सुव्यवस्था);
५. योगवृत्त (फिर लोगों का बंधोवस्त);
६. मंडलयोनि (राजा, अमात्य आदि 'प्रकृतियों' के गुणवैशिष्ट्य);
७. पाङ्गुण्य (पर-राष्ट्रीय राजकारण);
८. व्यसनाधिकारिक (प्रकृतियों के व्यसन एवं उनका प्रतिकार);
९. अभियास्यनकर्म (युद्ध की तैयारी);
१०. सांग्रमिक (युद्धशास्त्र);
११. संवृत्त (राज्य के नानाविध संघटनाओं के साथ व्यवहार);
१२. आवलीयस (बलाढ्य शत्रु से व्यवहार);
१३. दुर्गलभोपाथ (दुर्गों पर विजय प्राप्त करना);
१४. और्गनपदिक (गुप्तचरविद्या);
१५. तंत्रयुक्ति (अर्थशास्त्र की युक्तियाँ)।

इस प्रकार इस ग्रंथ में, राज्यशासन के अंतर्गत पर-राष्ट्रीय, युद्धशास्त्रीय, आर्थिक, वैधानिक, वाणिज्य आदि समस्त अंगों का सविस्तृत परामर्ष लिया गया है, यहाँ तक की, राज्य में उपयोग करने योग्य वजन, नाप एवं काल-मापन के परिमाण भी वहाँ दिये गये हैं।

भाषाशैली—इस ग्रंथ की भाषाशैली आपस्तंब, वीवायन आदि सूत्रकारों से मिलती जुलती है। इस ग्रंथ में उपयोग किये गये अनेक शब्द पाणिनीय व्याकरण, एवं प्रचलित संस्कृत भाषा में अप्राप्य हैं। उदाहरणार्थ, इस ग्रंथ में प्रयुक्त 'प्रकृति' (सम्राट); 'युक्त' (सरकारी अधिकारी); 'तत्पुरुष' (नोकर); 'अयुक्त' (विनसरकारी नोकर) ये शब्द संस्कृत भाषा में अप्राप्य, एवं केवल अशोक शिलालेख में ही निर्दिष्ट हैं।

पूर्वाचार्य—अपने ग्रंथ में इसने अर्थशास्त्रसंबंधी ग्रंथ-रचना करनेवाले अनेकानेक पूर्वाचार्यों का निर्देश किया है, एवं लिखा है, 'पृथिवी की प्राप्ति एवं उसकी रक्षा के लिए पुरातन आचार्यों ने जितने भी अर्थशास्त्रविषयक ग्रंथों का निर्माण किया है, उन सब का सार-संकलन कर प्रस्तुत अर्थशास्त्र की रचना की गयी है' (कौ. अ. १.१.११)।

इसके द्वारा निर्देशित पूर्वाचार्यों में मनु, बृहस्पति, द्रोण-भरद्वाज, उशनस, किचलक, कात्यायन, घोटकसुस,

बृहतीपुत्र, वातव्याधि, विशालाक्ष, पाराशर, पिशुन (नारद), गुलाचार्य, कौण्यदन्त प्रमुख हैं। महाभारत के अनुसार, प्रारंभ में धर्म, अर्थ एवं काम इन तीन शास्त्रों का एकात्र विचार 'त्रिवर्गशास्त्र' नाम से किया जाता था। इस त्रिवर्गशास्त्र का आद्य निर्माता ब्रह्मा था, जिसका संक्षेप सर्वप्रथम शिव ने 'वैशाल्यक्ष' नामक ग्रंथ में किया, एवं उसी ग्रंथ का पुनःसंक्षेप इंद्र ने 'बाहुदंतक' नामक ग्रंथ में किया। आगे चल कर बृहस्पति ने इसी ग्रंथ का पुनः एक बार संक्षेप किया, जिसमें अर्थवर्ग को प्रधानता दी गयी थी।

ये सारे ग्रंथ 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' के रचनाकाल में वृषि अनुसूक्तव्येय, फिर भी उदानस् का 'औशनस अर्थशास्त्र', पिशुन का 'अर्थशास्त्र' एवं द्रोण भारद्वाज का 'अर्थशास्त्र' उस समय उपलब्ध था, जिनके अनेक उद्धरण 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' में प्राप्त हैं (कौ. अ. १.७; १५-१६; २.६; ८.३)।

कौटिलीय अर्थशास्त्र का प्रभाव--प्राचीन भारतीय साहित्य में ये ब्राह्मणायन, विशालाक्षदत्त, दण्डिन्, चाण, विष्णुधर्मन् आदि अनेकानेक ग्रंथकार एवं मल्लिनाथ, मेघानिधिन आदि टीकाकार 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' से प्रभावित प्रतीत होते हैं, जो उनके ग्रंथों में प्राप्त उद्धरणों से स्पष्ट है। दण्डिन् के 'दशकुमारचरित' में प्राप्त निशेधों ने प्रतीत होता है कि, राजकुल में उत्पन्न राजकुमारों के अध्ययनग्रंथों में भी इस ग्रंथ का समावेश होता था (दशकुमार. ८)।

आगे चल कर 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' में प्रतिपादित व्यापक राजनीतिशास्त्रविषयक सिद्धान्तों को लोग भूल बैठे, एवं इस ग्रंथ में प्राप्त विषयप्रयोगादि कुटिल उपचारों के लिए ही इस ग्रंथ का पठनपाठन होने लगा। इस कारण, इस ग्रंथ को कुख्याति प्राप्त हुई, एवं समाज में इसकी प्रतिष्ठा क्रम होने लगी। इसी कारण, चाणक्य ने अपने 'कादम्बरी' में इस ग्रंथ को अतिवृत्तसं कार्य को उचित माननेवाला एक हीन श्रेणी का ग्रंथ कहा है।

यही कारण है कि, मेघानिधिन के उत्तरकालीन ग्रंथों में 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' के कोई भी उद्धरण प्राप्त नहीं होते हैं, जो इस ग्रंथ के लोप का प्रत्यंतर माना जा सकता है।

'कौटिलीय अर्थशास्त्र' के आधुनिक कालीन पुनरुद्धार का श्रेय सुंवरस्यत दार्शिन्याय पण्डित डॉ. श्यामशास्त्री को

दिया जाता है, जिन्होंने इस ग्रंथ की प्रामाणिक आवृत्ति सानुवाद रूप में ई. स. १९०९ में प्रथम प्रकाशित की थी।

मेगैस्थिनिस के 'इंडिका' से तुलना-कौटिलीय अर्थशास्त्र एवं मेगैस्थिनिस के 'इंडिका' में अनेक साम्यस्थल प्रतीत होते हैं, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं:--१. इन दोनों ग्रंथों में गुलाम लोगों का निर्देश प्राप्त है; २. राज्य की सारी जमीन का मालिक स्वयं राजा है, जो उसे अपने प्रजाजनों को उपयोग करने के लिए देता है; ३. इन दोनों ग्रंथों में निर्दिष्ट मजदूर एवं व्यापार विषयक विधि-नियम एक सरीखे ही हैं।

इन साम्यस्थलों से प्रतीत होता है कि, उपर्युक्त दोनों ग्रंथों का रचनाकाल एक ही था, जो मनु, नारद, याज्ञवल्क्य आदि स्मृतियों से काफी पूर्वकालीन था। इस प्रकार इस ग्रंथ का रचनाकाल ३०० ई. पू. माना जाता है।

विष्णुदास--एक ब्राह्मण, जो विष्णु का परमभक्त था (चोल. २. देखिये)।

विष्णुधर्मन्--गरुड की प्रमुख संतानों में से एक।

विष्णुयशस् कल्कि--विष्णु का दसवाँ अवतार, जो वर्तमान युग के अंत के समय सम्मल नामक ग्राम में अवतीर्ण होनेवाला है (भा. १.३.२५; १२.२.१८)। विष्णु का यह अवतार अश्वारूढ एवं खड्गधारी होगा।

विष्णु का यह अवतार याज्ञवल्क्य के पुरस्कारसे उत्पन्न होनेवाला है। यह अत्यंत पराक्रमी, महात्मा, सदाचारी एवं प्रजाहितरक्ष होगा। इच्छा करते ही नाना प्रकार के अस्त्र, बाहन, कवच इसे प्राप्त होंगे।

अवतार-हेतु--कलियुग का अंत करने के लिए इसका प्रादुर्भाव होगा। यह मलेच्छों का एवं बौद्धधर्मियों का संहार करेगा, एवं इस प्रकार नये सत्ययुग का प्रवर्तन करेगा (म. व. १८८.८९-९३)।

इसके अर्थ का नाम देवदत्त होगा। इस अश्व की सहायता से यह अश्वमेध करेगा, एवं सारी पृथ्वी विधिपूर्वक, ब्राह्मणों को दे देगा। यह सदैव दस्युवध में तत्पर रह कर, समस्त पृथ्वी पर फिरता रहेगा। अपने द्वारा जीते हुए देशों में यह कृष्ण, मृगचर्म, शक्ति, विशूल आदि अस्त्रशस्त्रों की स्थापना करेगा।

इसके द्वारा दस्युओं का नाश होने पर अवधर्म का भी नाश हो जायेगा, एवं धर्म की वृद्धि होने लगेगी। इस प्रकार सत्ययुग का प्रारंभ होगा, एवं पृथ्वी के सभी मनुष्य सत्यधर्मपरायण होंगे। सत्ययुग के इस प्रारंभकाल में, चंद्र, सूर्य, गुरु एवं शुक्र ये चारों ग्रह एक राशि में आये

गे। इस प्रकार सत्ययुग की स्थापना करनेवाला विष्णुयज्ञस् चक्रवर्ती एवं युगप्रवर्तक सम्राट माना जाएगा।

इस प्रकार अपना अवतारकार्य समाप्त करनेपर यह वन में तपस्या के लिए चला जायेगा। किन्तु इस जगत् के निवासी इसके शील स्वभाव का अनुकरण करते ही रहेंगे (कूर्म. १.३१.१२; वायु. ९८.१०४-११५ ब्रह्मांड. ३.७३.१०४-११०; ह. वं. १.४१.६४-६७)।

विष्णुरात—परिश्रित राजा का नामान्तर (भा. १. १२.१६)।

विष्णुवृद्ध—(स. इ.) एक राजा, जो त्रसदस्यु राजा का पुत्र था। यह पहले क्षत्रिय था, किन्तु आगे चल कर तपस्या के कारण ब्राह्मण हुआ (ब्रह्मांड. ३.६६.८८; वायु. ९१.११४)। इसके वंशज अंगिरस् कुलोत्पन्न क्षत्रिय ब्राह्मण बन गये (वायु. ६५.१०७)।

विष्णुशर्मन्—एक राजा, जो शिवशर्मन् राजा का पुत्र था। इसने इंद्र को अपनी शरण में लाया था (पद्म. सू. ३) 'निगमोद्बोधक तीर्थ' में स्नान करने के कारण इसे मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. उ. २००-२०५)।

विष्णुसावर्णि—मौल्य मनु का नामान्तर।

विष्णुसिद्धि—अंगिराकुलोत्पन्न एक मोत्रकार। पाठ-भेद—'विष्णुवृद्ध'।

विष्णुहरि—एक विष्णुभक्त (स्कंद. २.८.१)।

विश्वभसेन—एक आचार्य, जो नारद का शिष्य था।

२. इंद्रसभा का एक ऋषि (म. स. ७.१३)।

३. विष्णु का एक पार्वद (भा. ८.२१.२६)।

४. (सो. पू.) एक राजा, जो ब्रह्मदत्त राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम गो था। मत्स्य में इसे योगसुनु राजा का पुत्र कहा गया है। इसने जैगीप्रत्य ऋषि के मार्गदर्शन में 'योगतंत्र' नामक ग्रंथ की रचना की थी।

इसके पुत्र का नाम उदकस्वन था (भा. ९.२१.२५)। ब्रह्मदत्त राजा ने इसे अपना राज्य प्रदान किया, एवं वह वन में चला गया।

५. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर में उत्पन्न होनेवाला एक अवतार।

६. एवं चौदहवाँ मनु, जो भविष्यकाल में होनेवाला है (मत्स्य. ९; पद्म. सू. ५)।

विश्वगंश्व—(स. इ.) एक राजा, जो पृथु राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम अद्रि था (म. आ. १९३. २-३)।

विश्वगंश्व गौरव—एक पूर्ववंशीय सम्राट, जिसे अर्जुन ने उत्तरदिग्बिजय के समय जीता था (म. स. २४.१३)।

विश्रुत—(स. निमि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार देवमीढ राजा का पुत्र। विष्णु एवं वायु में इसे विबुध कहा गया है। इसके पुत्र का नाम महाश्रुति था (मा. ९.१३.१६)।

विस्वर्जन—एक यदु-जाति, जिसका यादवी युद्ध में संहार हुआ (भा. ११.३०.१८)।

विस्फूर्जन—एक राक्षस, जो कश्यप एवं स्वशा के पुत्रों में से एक था।

विहंग—ऐरावतकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दम्भ हुआ था (म. आ. ५२.१०)।

विहंगम—धर्मसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण। २. खर राक्षस का एक अमात्य (वा. रा. अंर. २३. ३१)।

विहृद्य—एक ऋषि, जो गृत्समदवंशीय वर्चस् ऋषि का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम वितथ्य था (म. अनु. ३०.६२)।

विहृद्य आंगिरस—एक वैदिक सूतद्रष्टा (ऋ. १०. १२८)।

विहुंड—एक राक्षस, जो हुंड राक्षस का पुत्र था। इसके पिता हुंड का नहुष के द्वारा वध हुआ था। इस कारण यह अत्यंत क्रोधित हुआ, एवं नहुषवध के हेतु शिव की तपस्या करने लगा। किन्तु विष्णु ने सुंदर स्त्री का रूप धारण कर, इसकी तपस्या में बाधा उत्पन्न की। अन्त में पार्वती के द्वारा इसका वध हुआ (पद्म. सू. ११८-१२१)।

वीतहृद्य—(स. निमि.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार सुनय राजा का पुत्र था। भागवत में इसे शुनक राजा का पुत्र कहा गया है।

२. (सो. सह.) एक राजा, जो हैहयवंशीय तालव्य राजा का पुत्र था। यह सुविख्यात हैहय सम्राट कर्तवीर्य अर्जुन का प्रपौत्र, एवं जयश्वज राजा का पौत्र था। इसे कुल सौ भाई थे।

परशुराम के द्वारा किये गये क्षत्रियसंहार के समय यह अपना राज्य छोड़ कर भाग गया। रास्ते में इसने अपने पिता तालव्य को देखा, जो परशुराम के शशांग से आहत हुआ था। उसे रथ पर बिठा कर यह हिमालय प्रदेश में में गया, एवं वहीं एक दर्रे में छिप गया।

आगे चल कर क्षत्रियसंहार से परशुरामके निवृत्त होने पर, यह हिमालय से लौट आया, एवं इसने माहिष्मती नामक नगर की स्थापना की। पश्चात् इसने अयोध्या पर आक्रमण किया, एवं वहाँके इक्ष्वाकुवंशीय फल्गुवंश राजा को पराजित किया। आगे चल कर, इसने काशि देश पर आक्रमण किया, किन्तु यह उस देश पर विजय न पा सका, एवं इसका एवं काशिराजाओं का युद्ध पीढ़ियों तक चलता रहा।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इसे हैहय कहा गया है, एवं इसकी दस पत्नियों का निर्देश वहाँ प्राप्त है। अपनी इन पत्नियों से इसे प्रत्येक से दस पुत्र उत्पन्न हुए, जिन्होंने काशि देश के हर्यश्च; सुदेव एवं दिवोदास राजाओं को पराजित किया।

आगे चल कर, काशि के दिवोदास राजा को भरद्वाज ऋषि के कृपाप्रसाद से प्रतर्दन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। प्रतर्दन ने इसके सारे पुत्रों का वध किया, एवं इस पर भी इतना जोरदार आक्रमण किया कि, यह भृगु ऋषि के आश्रम में जा कर छिप गया।

इसका पीछा करते हुए, प्रतर्दन भृगुऋषि के आश्रम में पहुँच गया, एवं इसे हँडने लगा। इस पर भृगुऋषि ने प्रतर्दन से कहा कि, उसके आश्रम में रहनेवाले सारे लोग ब्राह्मण ही हैं, एवं वहाँ क्षत्रिय कोई भी नहीं है। पश्चात् भृगुऋषि के कहने पर इसने अपने क्षत्रियधर्म को छोड़ दिया, एवं यह ब्राह्मण बन गया।

तपस्वी—आगे चल कर भृगुऋषि के कृपाप्रसाद से यह ब्रह्मर्षि बन गया, एवं इसे यत्समद नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. अनु. ३०.२७-५८)। इसका गोत्र भार्गव था एवं यह उस गोत्र का संरक्षक भी था। वीतहव्य नामक एक जीवन्मुक्त ऋषि की कथा वसिष्ठ ने राम से कथन की थी, जो संभवतः इसीकी ही होगी। कई क्षम्यासक, वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट वीतहव्य आंगिरस नामक ऋषि एवं यह दोनों एक ही मानते हैं।

वीतहव्य आंगिरस—एक राजा, जो ऋग्वेद के कई मंत्रों का प्रणयिता माना जाता है (ऋ. ६.१५)। ऋग्वेद में सुदास राजा के समकालीन के रूप में, एवं भरद्वाज ऋषि के साथ साथ इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ६.१५.२-३; ७.१९.१३)।

अथर्ववेद में, एक गाय (अथवा ब्राह्मण स्त्री) का हरण करने के कारण, इसका एवं इसके 'वीतहव्य' नामक अनु-गायियों का पराजय होने की एक संदिग्ध कथा प्राप्त है।

वहाँ उस गाय का संबंध जमदग्नि एवं असित ऋषियों के साथ निर्दिष्ट है (अ. वे. ५.१७.६-७; १८.१०-१२)। किन्तु इस कथा का सही अर्थ अस्पष्ट है।

अथर्ववेद में अन्यत्र इसे सृज्यों का राजा बताया गया है, एवं इसीके द्वारा भृगुऋषि का वध होने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (अ. वे. ५.१९.१)। संभवतः इस कथा का संकेत परशुराम के पिता जमदग्नि भार्गव की मृत्यु से होगा, एवं इस कथा में निर्दिष्ट वीतहव्य हैहय वंशीय होगा। यदि यह सच हो, तो हैहयवंशीय वीतहव्य एवं यह दोनों एक ही होंगे (वीतहव्य २, देखिये)।

वीतहव्य श्रायस—एक राजा (तै. सं. ५.६; ५.३; का. सं. २२.३; पं. ब्रा. २५.१६.३)। यह संभवतः वीतहव्य आंगिरस के वंश में ही उत्पन्न हुआ होगा। पंचविंश ब्राह्मण में इसे 'निर्वासित जीवन व्यतीत करनेवाला' (निःशुद्ध) राजा बताया गया है (पं. ब्रा. ९.१.९)। किन्तु भाष्यकार इसे एक राजा नहीं, बल्कि एक ऋषि मानते हैं।

संतति प्रदान करनेवाले यह की प्रशंसा करते समय, इसका निर्देश उदाहरण के रूप में प्राप्त है, जहाँ ऐसा ही एक यज्ञ करने के कारण इसे १००० पुत्र उत्पन्न होने की जानकारी दी गयी है।

वीति—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. एक अग्निविशेष।

वीतिमत्—एक राजा, जो रैवत मनु का पुत्र था (पद्म. सू. ७)।

वीतिहोत्र—हैहयवंशीय वीतहव्य राजा का नामान्तर (वीतहव्य २, देखिये)।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार प्रियव्रत एवं बर्हिष्मती के पुत्रों में से एक था। इसके पुत्रों के नाम रमणक एवं धातकि थे (भा. ५.१.२५; २०.३१)।

३. (सु. नरि.) एक राजा, जो इंद्रसेन राजा का पुत्र, एवं सत्यश्रवस राजा का पिता (भा. ९.२.२०)।

४. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो मुकुमार राजा का पुत्र, एवं भर्गु राजा का पिता था (भा. ९.१७.९)। विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः 'वैनहोत्र' एवं 'वेणुहोत्र' कहा गया है।

५. एक ऋषि, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था।

वीर—एक असुर, जो कश्यप एवं दत्तायु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५.९.३२)।

२. (सो. कुट.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक।

३. एक अग्नि, जो भरद्वाज एवं वीरा के पुत्रों में से एक था (म. व. २०९.९-१०)। इसे 'रथध्वज' एवं 'कुंभरेतस्' नामान्तर भी प्राप्त थे। इसकी पत्नी का नाम सरयु था, जिससे इसे सिद्धि नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. व. २०९.११)। सोमदेवता के साथ द्वितीय 'आज्यभाग' इसी को ही प्राप्त होता है।

४. एक अग्नि, जो पांचजन्य अग्नि का पुत्र था (म. व. २१०.९)।

५. एक राजा, जो कलिंगराज चित्रांगद की कन्या के स्वयंवर में उपस्थित था (म. शां. ४.७)।

६. (सो. अनु) अनुवंशीय पुरंजय राजा का नामान्तर।

७. तामस मन्वन्तर का एक देव।

८. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं सत्या के पुत्रों में से एक था।

९. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं कालिंदी के पुत्रों में से एक था।

१०. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

११. एक राजा, जो अविश्रितपत्नी लीलावती का पिता था (लीलावती ४. देखिये)।

१२. सोमवंश में उत्पन्न एक राजा, जिसके पुत्र का नाम तोण्डमान था।

वीरक—चाक्षुष मन्वन्तर का ऋषि (भा. ८.५.८)।

२. शिव के वीरभद्र नामक पार्षद का नामान्तर (वीरभद्र देखिये)।

वीरकेतु—पांचालराज दुपद के पुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में यह द्रोण के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. १८.३५)।

२. हंसध्वज राजा के सुमति नामक प्रधान का पुत्र।

वीरजित्—(सो. मगध. भविष्य) मगधवंशीय विश्वजित् राजा का नामान्तर (विश्वजित् ३. देखिये)। वायु में इसे सत्यजित् राजा का पुत्र कहा गया है।

वीरण—चाक्षुष मन्वन्तर का एक प्रजापति, जिसे सनत्कुमार के द्वारा सत्वत धर्म का ज्ञान प्राप्त हुआ था। यही ज्ञान इसने आगे चला कर रैभ्यऋषि को प्रदान किया था (म. शां. ३३६.३७)।

इसकी कन्या का नाम असिकनी (वीरिणी) था, जो दक्ष की पत्नी थी।

वीरणक—धृतराष्ट्रकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१७पाठ)।

वीरणि—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की यजुःशिष्य परंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

वीरद्युम्न—एक राजा, जिसका तनुविप्र नामक ऋषि के साथ आशा-निराशा के संबंध में तत्त्वज्ञान पर संवाद हुआ था (म. शां. १२६.१४)। इसका भूरिद्युम्न नामक पुत्र वन में खो गया था, जिसके संबंध में यह संवाद हुआ था (कृशतनु देखिये)।

वीरधन्वन्—त्रिगर्त देश का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष में शामिल था। धृष्टकेतु के द्वारा इसका वध हुआ (म. द्रो. ८२.१६-१७)।

वीरधर्मन्—एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था।

वीरबाहु—धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में यह भीम के द्वारा मारा गया। पाटलिपुत्र (मंडारक संहिता) में 'भीमबाहु'।

२. चेदि देश का एक राजा, जिसका विवाह दशार्ण-राज सुदामन् की कन्या के साथ हुआ था। दमयंती को वन में अकेली छोड़ कर, नल जब चला गया, उस समय, इसने ही दमयंती को आश्रय दिया था (म. व. ६६.१३)।

इसके पुत्र का नाम सुबाहु एवं कन्या का नाम सुनंदा था। किन्तु महाभारत के कुंभकोणम् संस्करण में इसे ही सुबाहु कहा गया है।

३. सुग्रीवसेना का एक वानर (वा. रा. कि. ३३.१०)।

४. एक गंधर्व, जिसने तक्षक के साथ युद्ध किया था (विष्णुधर्म. १.२६१.७)।

५. कांपिल्य नगरी का एक राजा (स्कंद. २.५.४)।

वीरभद्र—एक शिवपार्षद, जो शिव के क्रोध से उत्पन्न हुआ था।

जन्म—स्वयंभुव मन्वन्तर में दक्ष प्रजापति के द्वारा किये गये यज्ञ में शिव का अग्रमान हुआ। इस अग्रमान के कारण क्रुद्ध हुए शिव ने अपनी जटाओं को झटक कर, इसका निर्माण किया (भा. ४.५. स्कंद. १.१-३; शिव. ख्र. ३२)।

इसके जन्म के संबंध में विभिन्न कथाएँ पद्य एवं महाभारत में प्राप्त हैं। क्रुद्ध हुए शिव के मस्तक से पसीने का जो बूँद भूमि पर गिरा, उसीसे ही यह निर्माण हुआ (पद्म. स्त. २४)। यह शिव के मुँह से उत्पन्न हुआ था (म. शां. २७४. परि. १. क्र. २८. पंक्ति

७०-८०; वायु. ३०. १२२)। भविष्य में स्वयं शिव ही वीरभद्र बनने की कथा प्राप्त है (भवि. प्रति. ४.१०)।

दक्षयज्ञविध्वंस—उत्पन्न होते ही इसने शिव से प्रार्थना की, 'मेरे लायक कोई सेवा आप बताइये'। इस पर शिव ने इसे दक्षयज्ञ का विध्वंस करने की आज्ञा दी। इस आज्ञा के अनुसार, यह कालिका एवं अन्य रुद्राणां को साथ ले कर दक्षयज्ञ के स्थान पर पहुँच गया, एवं इसने दक्षपत्नीय देवतागणों से धमासान युद्ध प्रारंभ किया।

रुद्र के वरप्रसाद से इसने समस्त देवपक्ष के योद्धाओं को परास्त किया। तदुपरांत इसने यज्ञ में उपस्थित ऋषियों में से, भृगु ऋषि की दाढ़ी एवं मुँछे उखाड़ दी, भाग की आँखें निकाल ली, पूषन् के दाँत तोड़ दिये। पश्चात् इसने दक्ष प्रजापति का सिर खड्ग से तोड़ना चाहा। किन्तु वह न टूटने पर, इसने घुँसे मार कर उसे बन्धा दिया, एवं वह उसीके ही यज्ञकुंड में झोंक दिया। तत्पश्चात् यह कैलासपर्वत पर शिव से मिलने चला गया (भ. ४.५; म. शां. परि. १. क्र. २८; पञ्च. सू. २४; स्कंद. १.१.३-५; कालि. १७; शिव. रुद्र. स. ३२, ३७)।

भविष्य के अनुसार, दक्षयज्ञविध्वंस के समय दक्ष एवं यज्ञ मृग का रूप धारण कर भाग रहे थे। उस समय वीरभद्र ने व्याध का रूप धारण कर उनका वध किया, एवं एक टोकर मार कर दक्ष का सिर अग्निकुंड में झोंक दिया (भवि. प्रति. ४.१०; लिग. १.९६; वायु. ३०)। इसने अपने रोमकुंडों से 'रौम्य' नामक गणेश्वर निर्माण किये थे (म. शां. परि. १.२८)।

वरप्राप्ति—दक्षयज्ञविध्वंस के पश्चात्, यह समस्त सृष्टि का संहार करने के लिए प्रवृत्त हुआ, किन्तु शिव ने इसे शान्त किया। तदुपरान्त शिव ने आकाश में स्थित ब्रह्मात्मिका में 'अंगारक' अथवा 'मंगल' नामक ग्रह बनने का इत्ते आशीर्वाद दिया, एवं वरप्रदान किया, 'तुम समस्त ब्रह्ममंडल में श्रेष्ठ ग्रह कहलाओगे। सकल मानवजाति द्वारा तुम्हारी पूजा की जायेगी, एवं जो भी मनुष्य तुम्हारी पूजा करेगा, उस आयुष्य भर आरोग्य, एवं ऐश्वर्य प्राप्त होगा' (भा. ७.१७; वायु. १०१.२९९; पञ्च. सू. २४)।

दक्षयज्ञविध्वंस के पश्चात्, शिव की आज्ञा से इसने अपने तेज का कुछ अंश अलग किया, जिससे आगे चल

कर आद्य शंकराचार्य का निर्माण हुआ (भवि. प्रति. ४.१०)।

पराक्रम—यह शिव का प्रमुख पार्षद ही नहीं, बल्कि उसका प्रमुख सेनापति भी था। शिव एवं शत्रुघ्न के युद्ध में, इसने पुष्कल से पाँच दिनों तक युद्ध किया था, एवं अंत में इसने उसका मस्तक विदीर्ण किया था। त्रिपुरद्रोह के युद्ध में भी, इसने त्रिपुर का सारा सैन्य निमिषांध में विनष्ट किया था (पञ्च. पा. ४३)। शिव एवं जालंधर के युद्ध में भी इसने रौद्र पराक्रम दर्शाया था (पञ्च. उ. १७)।

देवों का संरक्षणकर्ता—यह असुरों का आतंक, एवं देवों का संरक्षणकर्ता था। एक बार शौकट पर्वत पर कदयपादि सारे ऋषि, एवं समस्त देवगण दावाग्नि में त्रि कर भस्म हुए। तदुपरांत इसने समस्त दावाग्नि का प्राशन किया, एवं मंत्रों के साथ सिद्ध किये गये भस्म से सारे ऋषियों को, एवं देवताओं को पुनः जीवित किया।

इसी प्रकार एक सर्प के द्वारा निगल गये देवताओं की भी, उस सर्प के दो टुकड़े कर इसने मुक्तता की थी।

एक बार पंचमेढू नामक राक्षस ने समस्त देवता, ऋषि एवं वालिसुग्रीवों को निगल लिया था। उस समय भी इसने पंचमेढू से दो वर्षों तक खड्ग एवं गदायुद्ध कर, उसका वध किया।

इस प्रकार देवता एवं ऋषिओं के तीन बार पुनः जीवित करने के इसके पराक्रम के कारण, शिव इससे अत्यधिक प्रसन्न हुए, एवं उसने इसे अनेकानेक वर प्रदान किये। जिस भस्म की सहायता से इसने देवताओं को पुनः जीवित किया था, उसे 'त्रायुष' नाम प्राप्त हुआ (पञ्च. पा. १०७)। आगे चल कर, देवताओं ने भी इसकी स्तुति की थी (लिग. १.९६)।

वीरक—आख्यान—पद्म में प्राप्त 'पार्वती—आख्यान' में इसे 'वीरक' कहा गया है, एवं इसे पार्वती का प्रिय पार्षद कहा गया है। गौरवर्ण प्राप्त करने के हेतु, पार्वती जब तपस्या करने गयी थी, उस समय उसने इसे शिव की सेवा करने के लिए नियुक्त किया था (पञ्च. सू. ४३-४४)।

नृसिंहदमन—लिग में वीरभद्र को शिव का 'भैरव-स्वरूप' कहा गया है, एवं इसके द्वारा किये गये नृसिंह-दमन की कथा भी वहाँ प्राप्त है। विष्णु का नृसिंहअवतार हिरण्यकशिपु के वध के पश्चात्, जब विश्वसंहार के लिए उद्यत हुआ, तब शिव ने वीरभद्र को उसका दमन करने की आज्ञा दी।

सर्वप्रथम इसने नृसिंह की स्तुति कर उसे शांत करने का प्रयत्न किया। किंतु न मानने पर, इसने उसका दमन किया, एवं उसे अदृश्य होने पर विवश किया (लिग. १.९६)।

उपासना--महाराष्ट्र में स्थित धारापुरी एवं वेरुल के गुफाशिल्पों में, शिव के पार्षद के नाते वीरभद्र की प्रतिमाएँ पायी जाती हैं, जहाँ यह अष्टभुजायुक्त एवं अत्यंत रौद्रस्वरूपी चित्रांकित किया गया है। महाराष्ट्र में होली के दिनों में, वीरों की पूजा की जाती है, एवं उनका जुलूस भी निकाला जाता है।

ग्रंथ--इसके नाम पर 'वीरभद्रकालिका-कवच' एवं 'वीरभद्रतंत्र' नामक दो ग्रंथ उपलब्ध हैं।

२. सोमवंशीय मनोभद्र राजा के दो पुत्रों में से एक। एक यशराज के द्वारा इसे पूर्वजन्म का ज्ञान प्राप्त हुआ था (पद्म. क्रि. ३; गर देखिये)।

३. एक राजा, जो अविश्वरूपा राजा की निभा नामक पत्नी का पिता था (मार्क. ११९.१७)।

४. यशोभद्र राजा का भाई (यशोभद्र देखिये)।

वीरभद्रक--गौड देश का एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम चंपकमंजरी था। अपने बुद्धिसागर नामक प्रधान के कथनानुसार इसने एक बड़ा तालाब बंधवाया था (नारद. १.१२)।

वीरमणि--एक शिवभक्त राजा, जिसकी पत्नी का नाम श्रुतवती था (पद्म. पा. ६७)। इसके द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, स्वयं शिव ने योगिनियों से युद्ध किया था। किंतु अंत में योगिनियों ने इसे परास्त किया (पद्म. पा. ३९-४६)।

२. एक राजा, जिसने अपने पुत्र रुक्मांगद की सहायता से राम का अश्वमेधीय अश्व रोकने की कोशिश की थी। किंतु इस प्रयत्न में यह असफल रहा (रुक्मांगद ३. देखिये)।

वीररथ--(सो. द्विमीट.) द्विमीटवंशीय बहुरथ राजा का नामांतर। बायु में इसे नृपंजय राजा का पुत्र कहा गया है (बहुरथ देखिये)।

वीरवत--सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

२. ब्रह्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

३. साध्य देवों में से एक।

वीरवर--तालशब्द नगरी के माधव राजा की पत्नी सुलोचना के द्वारा पुरुषवेष में धारण किया गया नाम (माधव ५. देखिये)।

वीरवर्मन्--सारस्वत नगरी का एक राजा, जो यम-कन्या मालिनी का पति था। पाण्डवों का अश्वमेधीय अश्व इसने रोक दिया था, एवं अपने श्वशुर यम की सहायता से कृष्णार्जुनों के साथ घोर संग्राम किया था। आगे चल कर कृष्ण ने इससे संधि किया, एवं अश्वमेधीय अश्व छुड़वा दिया।

इसके सुमाल, सुलम, लोल, कुवल एवं सरस नामक पाँच पुत्र थे (जै. अ. ४७-४९)।

२. द्रविड देश का एक राजा, जिसकी पत्नी हेमांगी अपने पूर्वजन्म में मोहिनी नामक अप्सरा थी (पद्म. उ. २२०)।

वीरवाहन--एक राजा, जो ब्रह्महत्या के कारण अत्यंत दुःखी हुआ था (मुनिशर्मन् देखिये)।

२. विराघनगरी का एक राजा, जिसने वसिष्ठ ऋषि के साथ धर्मसंबंधी चर्चा की थी (गरुड. २.६)।

वीरविक्रम--एक शूद्र, जिसने वचनपूर्ति के लिए अपनी कन्या का विवाह एक चांडाल से कर दिया। आगे चल कर, कृष्ण ने उन दोनों का उद्धार कर दिया (पद्म. ब्र. २६)।

वीरवत्--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार मधु राजा एवं सुमनस् का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम भोज था, जिससे इसे मंथु एवं प्रमंथु नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ५.१५.१५)।

वीरसिंह--एक राजा, जो वीरमणि राजा का पुत्र एवं रुक्मांगद का बन्धु था। राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, इसने शत्रुघ्न से युद्ध किया था (पद्म. पा. ४०)।

वीरसेन--निषध देश का एक राजा, जो नल राजा का पिता था। यह स्वयं धर्मज्ञ एवं तपस्वी था (नल १. देखिये)। इसने जीवन में मांसभक्षण नहीं किया था (म. अनु. ११५.७४)।

२. एक ऋषि, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था (भा. १०.७४.९)।

३. एक राजा, जो ऋतुपर्ण राजा का पुत्र, एवं सुशर राजा का पिता था (ब्रह्मांड. ३.६३.१७४)।

४. अर्धति नगरी का एक राजा, जिसने तीन राजसूय एवं सोलह अश्वमेध यज्ञ किये थे (पद्म. उ. १२८)।

५. दक्ष राजा का श्वशुर, जिसे स्वर्ण में दक्ष को कन्या देने के लिए दृष्टान्त हुआ था (गणेश. १.२६-२७)।

वीरहोत्र--(सो. सह.) एक सुविख्यात हैहयसम्राट, जो हैहय-राजवंश का आद्यपुरुष माना जाता है। इसे

वीरह्वय नामान्तर भी प्राप्त था (वीरह्वय २. देखिये)। वायु में इसे तालकव्य का पुत्र कहा गया है (वायु. १४. ५२)।

वीरा—एक राज्ञी, जो वीर्यचंद्र राजा की कन्या, वरधम राजा की पत्नी, एवं अविश्वित् राजा की माता थी (मर्क. ११९.२)। एक वार सर्पों ने समस्त मृष्टि को श्रव्यत व्रत किया था, जिस कारण इसने अपने पौत्र मरुत् के द्वारा सर्पसंहार प्रारंभ किया। पश्चात् सारे सर्प इसकी लुभा अविश्वित्पत्नी वैशालिनी की शरण में गये, जिसने अपने पति अविश्वित् के द्वारा सर्पसत्र बन्द करवाया (मर्क. १२६)।

२. शंयुपुत्र भरद्वाज नामक अग्नि की पत्नी। इसके पुत्र का नाम वीर था (म. व. २०९.१०)।

वीरिणी—वीरण प्रजापति की कन्या, जो दक्ष प्राचेतस की पत्नी थी। यह ब्रह्मा के बाये पैर के अंगूठे से उत्पन्न हुई थी (म. आ. ७०.५)।

इसे कुल एक हजार पुत्र, एवं पचास कन्याएँ उत्पन्न हुई थी। इसके पुत्रों में सुव्रत प्रमुख था।

३. शुकपत्नी पीवरी का नामान्तर।
३. वीरसेन राजा की कन्या, जो ब्रह्मा की पौत्री, एवं चाक्षुप राजा की पत्नी थी (मत्स्य. ४.३९)।

वीरुधा—एक नागकन्या, जो नागमाता सुरसा के तीन कन्याओं में से एक थी। इसकी अन्य दो बहनों का नाम अनला एवं रुहा था। इसकी संतानों में लता, गुल्म, बह्नी भदि वनस्पति विशेष प्रमुख थे (म. आ. ६०.५५.२३)।

वीर्यचंद्र—करधम—पत्नी वीरा का पिता (वीरा १. देखिये)।

वीर्यवत्—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

१. एक सनातन विश्वदेव (म. अनु. ११.३१)।

वृक—एक राजा, जो द्रौपदी-स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.९)। भारतीय-युद्ध में यह कौरवों के शत्रु में शामिल था। नकुल के पराजय के पश्चात्, ग्यारह गण्डव वीरों के साथ हुए युद्ध में यह शामिल था (म. क. ६२.४८)। अन्त में किसी पर्वतीय नरेश के द्वारा यह मारा गया।

२. पाण्डवों के पक्ष का एक राजा। भारतीय युद्ध में यह अपने अश्व एवं सारथि के साथ द्रोण के द्वारा मारा गया (म. द्रो. २०.१६)।

३. एक सदान्वित राजा, जिसने अपने जीवन में मांस-भक्षण बर्ज्य किया था (म. अनु. ११५.७२)।

४. एक राजा, जो पृथु वैश्व एवं अचिन्मती के पुत्रों में से एक था। अपने पिता की मृत्यु के पश्चात्, यह उसके पश्चिम साम्राज्य का अधिपति बन गया (भा. ४.२२.५४)।

५. एक असुर, जो हिरण्यकशिपु का अनुयायी था (भा. ७.२.१८)। यह शकुनि नामक राक्षस का पुत्र था। इसकी जीवनकथा भस्मासुर के जीवन से काफी साम्य रखती है।

इसे शिव से आशीर्वाद प्राप्त हुआ था कि, जिसके मस्तक पर यह हाथ रखेगा वह जल कर भस्म हो जायेगा। फिर यह उन्मत्त हो कर स्वयं शिव को ही दग्ध करने के लिए प्रवृत्त हुआ। पश्चात् विष्णु ने ब्रह्मचारिन् का रूप धारण कर, इसे स्वयं के ही मस्तक पर हाथ रखने के लिए प्रवृत्त किया, जिस कारण यह भस्म हुआ (भा. १०.८८. १३-१६)।

६. (सु. इ.) एक राजा, जो भरुक राजा का पुत्र, एवं बाहुक राजा का पिता था (भा. ९.८.२)।

७. एक राजा, जो शूर एवं मारिषा के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम दुर्वाशी था, जिससे इसे तक्ष एवं पुष्कर नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ९.२४.२९; ४३)।

८. एक यादव-राजकुमार, जो कृष्ण एवं मित्रविंदा के पुत्रों में से एक था (भा. १०.६१.१६)।

९. एक यादव राजकुमार, जो बत्सक यादव एवं मिश्र-केशी नामक अक्सरा के पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४. ४३)।

१०. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो शिष्ट एवं सुच्छाया के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ४.३९)।

११. (सु. इ.) एक राजा, जो रोहित राजा का पुत्र था (मत्स्य. १२.३८)।

१२. पुष्टि (मृष्टि) एवं छाया के पुत्रों में से एक (वायु. ६२.८३)। पाठ—'वृकल'।

१३. एक यादव-राजकुमार, जो कृष्ण एवं सत्या (माद्री) के पुत्रों में से एक था (भा. १०.९०.३३)।

१४. हरित राजा का नामान्तर।

वृकद्धरम्—शण्डिल लोगों का एक राजा, जिसके विरुद्ध किये गये एक युद्ध का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. २.३०.४)। रथ एवं ओत्वेनर्ग के अनुसार,

इसका सही पाठ 'वृकध्वरस्' था। हिलेब्रांट के अनुसार, यह इरान से संबंधित किसी राजा का नाम था।

वृकदेवा अथवा **वृकदेवी**—देवक राजा की सात कन्याओं में से एक, जो वसुदेव की पत्नी थी। इसे अवगाहक एवं नंदक नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे (वायु. १६.१३०)।

वृकल—वृक राजा का नामान्तर (वृक १२. देखिये)।

२. अक्रूर के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.२९)।

वृकोदर—भीमसेन पाण्डव का नामान्तर (भा. १. ७.१३)।

वृकोदरी—पूतना राक्षसी की बहन (आदि. १८. १०१)।

वृक्षावासिन्—कुबेरसभा का एक यक्ष।

वृचया—कक्षीवत् नामक ऋषि की पत्नी, जो उसे अश्विनों के द्वारा प्रदान की गयी थी (ऋ. १.५.१.३; कक्षीवत् देखिये)।

वृचीवत्—एक ज्ञातिसमूह, जिसे संजयराज दैववात ने जीत लिया था (ऋ. ६.२७.५)। ऋग्वेद में इनका निर्देश तुर्वश लोगों के साथ प्राप्त है। ऋग्वेद के इसी सूक्त में अभ्यावर्तिन् चायमन के द्वारा इन लोगों का हरिथूपीया नदी के तट पर पराजित होने का निर्देश प्राप्त है। ओल्डेनबर्ग के अनुसार, ये लोग एवं तुर्वशलोग संजयों के विपक्ष में थे (ओल्डेनबर्ग, बुद्ध. ४०४)। त्सीमर के अनुसार, ये एवं तुर्वश लोग दोनों एक ही थे (त्सीमर, अस्ट्रिडविडो लेवेन. १२४)। किन्तु यह तर्क अयोग्य प्रतीत होता है।

पंचविंश ब्राह्मण के अनुसार, ये एवं जह्नु लोगों में राजसत्ता प्राप्त करने के लिए संघर्ष हुआ था, जिसमें जह्नु लोगों का राजा विश्वामित्र ने इन्हें परास्त किया था (तां. ब्रा. २१.१२.२)।

वृजिन्वत्—(सो. क्रोष्ट्र.) एक राजा, जो क्रोष्ट्र राजा का पुत्र एवं स्वाही राजा का पिता था (भा. ९.२३. ३१)। महाभारत में इसके पुत्र का नाम उपद्रुग्ण दिया गया है (म. अनु. १४७.२८-२९)।

वृत्त—एक सर्प, जो कश्यप एवं कद्र के पुत्रों में से एक था।

२. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो शिष्ट एवं सुन्ध्याय के पुत्रों में से एक था।

वृत्ति—मनु नामक रुद्र की पत्नी (भा. ३. १२.१३)।

२. अमिताभ देवों में से एक।

वृत्र—एक अंतरिक्षीय दैत्य, जो इंद्र के प्रमुख शत्रु था। यास्क ने इसे 'मेघ दैत्य' माना है, जो आकाशस्थ जल का अवरोध करता है। प्रमंननों के स्वामी इंद्र ने अपने वज्र (विद्युत्) से इस असुर का विच्छेद किया, एवं पृथ्वी पर जल वर्षा की। इसीका वध करने के लिए इंद्र ने जन्म लिया था, जिस कारण उसे ऋग्वेद में 'वृत्रहन्' उपाधि दी गयी है (ऋ. ८.७८)। वृत्र के साथ इंद्र ने किये संघर्ष को ऋग्वेद में 'वृत्रहत्या' एवं 'वृत्रत्यं' कहा गया है।

जन्म—वृत्र की माता का नाम दानु था, जो शब्द ऋग्वेद में जलधारा के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है (ऋ. १. ३२)। इसी शब्द का पुर्हिङ्गी रूप 'दानव' एक मात्रक नाम के नाते वृत्र अथवा सर्प के लिए, और्णवाभ नामक दैत्य के लिए, एवं इंद्रद्वारा वधित सात दैत्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है (ऋ. २.११; १२; १०.१२०.६)।

स्वरूपवर्णन—वृत्र का रूप सर्पवत् माना गया है, अतः इसके हाथ एवं पैर नहीं हैं (ऋ. ३.३०.८)। किन्तु इसके सर का एवं जवड़ों का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १.५२.१०; ८.६.६; ७३.२)। सर्प की भाँति यह फूँकफारता है (ऋ. ८.८५); एवं गर्जन, विद्युत् एवं झंझावात इसके आश्रीन हैं (ऋ. १.८०)।

निवासस्थान—वृत्र का एक गुप्त (निगय) निवासस्थान था, जो एक शिल्लर (सानु) पर स्थित था (ऋ. १.३३; ८०)। इसी निवासस्थान में इंद्र ने जलधाराएँ छोड़ कर वृत्र का वध किया था, एवं बहुत उँचाई से इसे नीचे गिराया था (ऋ. ८.३)। इसके निन्यान्ध्वे दुर्ग थे, जो इंद्र ने इसकी मृत्यु के समय ध्वस्त किये थे (ऋ. ७.१९; १०.८९)।

पराक्रम—वृत्र के निम्नलिखित पराक्रमों का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है :—१. जलधाराओं को रोकना (ऋ. १. १५.६); २. गावों का हरण करना (ऋ. २.१९.३); ३. सूर्य को रोकना (ऋ. २.१९.३); ४. सूर्योदय (उषस्) को रोकना (ऋ. ४.१९.८)। ऋग्वेद में अन्यत्र वृत्र के द्वारा मेघों को अपने उदर में छिपाने का निर्देश भी प्राप्त है (ऋ. १.५७)। शंषर, बल, अहि आदि दानवों के लिए भी ऋग्वेद में यही पराक्रम वर्णित है।

वध—इसका वध करने के लिए देवों ने इंद्रका वध किया (ऋ. ३.४९.१; ४.१९.१)। इंद्र एवं वृत्र का युद्ध

विकृष्ट पर्यंत पर हुआ। इंद्र ने इसका वध किया, एवं इसके द्वारा वध किये गये नेशों को मुक्त कर (अपवृ) उसी बल से इसे डुबो दिया (वृत्रे अवृणोत; ऋ. ३.४३)। इसकी मृत्यु की वार्ता थायु के द्वारा सर्व विध को ज्ञात हुई। वृत्र-इंद्रयुद्ध का निधिनिर्णय भी। तिलकजी के द्वारा किया गया है, जो उनके द्वारा १० अक्षरों के दिन निश्चित किया गया है (लो. तिलक, आर्यों का मूलस्थान पृ. २०८)।

व्युत्पत्ति—'वृत्र' शब्द 'वृ' (आवृत्त करना, ढँकना) धातु से व्युत्पन्न हुआ माना जाता है। इसने जलों को भावित कर दिया था (अप वारिवासम्)। इस कारण इसे 'वृत्र' नाम प्राप्त हुआ था (ऋ. २.१४)। यास्क के अनुसार, इसे 'भेद द्रव्य' कहा गया है, एवं त्वष्ट्र असुर के पुत्र (त्वाष्ट्र असुर) मानने के ऐतिहासिक परंपरा को अयोग्य बताया गया है (नि. २.१६)।

सामूहिक नाम—ऋग्वेद में 'वृत्र' शब्द का बहु-वचनी रूप 'वृत्राणि' अनेक स्थान पर प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, एक सामूहिक नाम के नाते वृत्र के अतिरिक्त कई अन्य असुरों के लिए भी यह शब्द प्रयुक्त किया जाता था। ऐसे कई विभिन्न असुरों के नामों का ऋग्वेद में उल्लेख प्राप्त है (ऋ. ७.१९)। दधीचि ऋषि के आस्थियों से बने हुए अस्त्रों की सहायता से, इंद्र ने निम्नान्तर्ध्वे वृत्रों का वध किया था (ऋ. १.८४)। ऋग्वेद में जहाँ सामान्य विरोधक अथवा शत्रु को 'दास' अथवा 'द्रव्यु' कहा गया है, वहाँ दैत्य शत्रुओं को 'वृत्र' कहा गया है।

इस प्रकार सामूहिक रूप में 'वृत्र' शब्द 'दानवी अवरोधक' अर्थ में ही प्रयुक्त किया गया प्रतीत होता है। अवेस्ता में 'वेरथ्र' शब्द 'विजय' अर्थ में प्रयुक्त किया गया है, जो अवरोधक का ही विकसित रूप प्रतीत होता है।

तैत्तिरीय संहिता में—इस ग्रंथ में वृत्र को त्वष्ट्र का पुत्र कहा गया है, एवं इसकी जन्मकथा निम्नप्रकार की गयी है। एक बार त्वष्ट्र ने यज्ञ किया, जहाँ यज्ञ में सिद्ध किया गया सोम उसने समस्त देवताओं को दिया, किन्तु अपने पुत्र विधरूप का वध करनेवाले इंद्र को नहीं दिया। इंद्र के हिस्से का सोम उसने अग्नि में डाल दिया, जिससे आगे चल कर वृत्र का जन्म हुआ।

बड़ा होने पर, इसने समस्त मृष्टि को व्रस्त करना प्रारंभ किया। इसके भय से विष्णु ने स्वयं के तीन भाग किये, एवं उन्हें तीनों लोकों में छिपा दिये। इंद्र ने विष्णु की सहायता से दूधे ज्वाला बहने न दिया, एवं अपने पेट में

समा लिया। किन्तु वहाँ भी इसने भूल का रूप धारण कर सारी मृष्टि को व्रस्त करना पुनः प्रारंभ किया (तै. सं. २.४.१२)।

इंद्र के द्वारा इसके वध के संबंधी एक कथा तैत्तिरीय संहिता में प्राप्त है। वृत्र के द्वारा विदेह देवा की गायां का निर्माण हुआ, जिनमें कृष्ण ग्रीवायुक्त एक बैल भी था। इंद्र ने उस बैल का अग्नि में हवन किया, जिससे प्रसन्न हो कर अग्नि ने इंद्र को वृत्र का वध करने के लिए समर्थ किया (तै. सं. २.१.४)।

ब्राह्मण ग्रंथों में—इन ग्रंथों में वृत्र एवं इंद्र को क्रमशः चंद्र एवं सूर्य की उपमा दी गई है। जिस प्रकार अमा-वास्या के दिन सूर्य चंद्र को निगल लेता है, उसी प्रकार इंद्र ने वृत्र को डुबो देने का निर्देश वहाँ प्राप्त है। एक बार असुरों ने वेद एवं वेदविद्या हस्तगत की, जिस कारण सारा देव पक्ष हतबल हुआ। आगे चल कर, इंद्र ने विश्वकर्मानुपुत्र वृत्र नामक ब्राह्मण से तीनों वेद (ऋक्, यजुः। साम) जीत लिये, एवं वृत्र का वध किया (श. ब्रा. १.१.३.४; ३.१.३.१२; ४.१.३.१; ५.५.५.१)।

महाभारत एवं पुराणों में—महाभारत में इसे कृतयुग का एक असुर कहा गया है, एवं इसके पिता एवं माता के नाम क्रमशः कश्यप एवं दिति (दनायु) दिये गये हैं। दिति के बल नामक पुत्र का इंद्र ने वध किया, जिस कारण क्रुद्ध हो कर दिति ने इंद्र का वध करने-वाला पुत्र निर्माण करने की प्रार्थना कश्यप से की। इस पर कश्यप ने अपनी जटा शकट कर अग्नि में हवन की। इसी अग्नि से अजस्ककाय वृत्र का निर्माण हुआ (पद्य. उ. ९)।

भागवत में इसे त्वष्ट्र का पुत्र कहा गया है, जो उसने अपने पुत्र विधरूप का वध करनेवाले इंद्र का बदला लेने के लिए निर्माण किया था (भा. ६.९-१२)। ब्रह्मांड में इसकी माता का नाम अनायुषा दिया गया है (ब्रह्मांड. ३.६.३५)।

तपस्या—अपने पिता की आज्ञा से इसने ब्रह्मा की अत्यंत कठोर तपस्या की, जिस कारण ब्रह्मा ने प्रसन्न हो कर इसे वर प्रदान किया, 'आज से तुम अमर होगे, तथा लोह एवं काष्ठ, आद्र एवं लुङ्क आदि कौनसे भी अस्त्र से दिन में या रात में तुम्हें मृत्यु न आवेगी (दे. भा. ६.१.७)। आगे चल कर इसी वर के प्रभाव से, इसने

इंद्र को परास्त कर इंद्रपद प्राप्त किया (वा. रा. उ. ८४-८६)।

भागवत में इसे ब्राह्मण एवं श्रीविष्णु का परमभक्त कहा गया है (भा. ६.९; पद्म. सू. २५)। इस कारण इंद्र-वृत्र युद्ध में श्रीविष्णु ने गुप्त रूप से ही इंद्र की सहायता की थी। यह ब्राह्मण होने के कारण, इसका वध करने से इंद्र को ब्रह्महत्या का दोष लग गया था।

इंद्र से युद्ध—इंद्र-वृत्र युद्ध की अनेकानेक कथाएँ पुराणों में प्राप्त हैं, जहाँ युद्धसामर्थ्य से नहीं बल्कि उल्ल कपट से इंद्र के द्वारा इसका वध होने के निर्देश प्राप्त हैं। इंद्र ने रंभा अप्सरा के द्वारा इसे शराव पिलवायी, एवं शराव की उसी नशीली एवं त्रतहीन अवस्था में जब यह समुद्र किनारे सोया था, उसी समय इससे संधि कर, आधा इंद्रपद पुनः प्राप्त किया (पद्म. सू. २५; वा. रा. उ. ८४-८६; स्कंद. १.१.१६)।

वध—आगे चल कर जब यह असावधान अवस्था में था, तब इंद्र ने इस पर हमला किया, एवं दधीचि ऋषि की अस्थियों से त्रने हुए वज्र पर समुद्र का ज्ञान लपेट कर उससे इसका वध किया (दे. भा. ६.१.६; पद्म. सू. २४; भा. ६.९; म.व. १००; उ. १०)। इंद्र ने इसका वध संव्यासमय किया, एवं इस प्रकार ब्रह्मा के द्वारा इसे प्राप्त हुए वर के शर्तों की पूर्ति करते हुए ही, इंद्र ने इसका वध किया।

भागवत के अनुसार, वृत्रवध के समय इंद्र ने सर्वप्रथम इसका एक हाथ काट दिया। इतने में इंद्र का वज्र नीचे गिर गया। इसने इंद्र को अपना वज्र उठाने के लिए कहा, जब उसने इसका दूसरा हाथ काट दिया। पश्चात् यह इंद्र के उदर में प्रविष्ट हुआ, जहाँ से बाहर आने पर इंद्र ने इसका शिरच्छेद किया (भा. ६.१२)।

इंद्र-वृत्रयुद्ध में निम्नलिखित असुर इसके पक्ष में शामिल थे:—अनर्वन्, अंबर, अयोमुख, उक्कल, ऋषभ, नमुचि, पुलोमत्, प्रहेति, विप्रचित्ति, वृषपर्षन्, शुकुशिरस्, शंघर, हयग्रीव, हेति एवं पाताल में रहनेवाले कालेय अथवा कालकेय राक्षस (भा. ६.१०; स्कंद. १.१.१६; पद्म. पा. १९)।

तत्त्वज्ञ—पूर्वजन्म में यह चित्रकेतु नामक विष्णुभक्त राजा था (भा. ६.१४)। मृत्यु के पूर्व इसने इंद्र को भागवधर्म का उपदेश प्रदान किया था। सनत्कुमारों से इसे योगज्ञान की प्राप्ति हुई थी, जिस कारण इसे मृत्यु के पश्चात् सद्गति प्राप्त हुई (म. शां. २८१)। महा-

भारत में उद्यानस् ऋषि के साथ इसका किया 'वृत्र-उद्यानम् संवाद' प्राप्त है, जहाँ ज्ञान से मोक्षप्राप्ति किस तरह हो सकती है, इसकी चर्चा प्राप्त है। उसी ग्रंथ में 'वृत्र-गीता' का निर्देश भी मिलता है।

परिवार—इसके पुत्र का नाम मधुर था (वा. रा. उ. ८४.१०)। ब्रह्मांड में इसे अनायुषा का पुत्र कहा गया है, एवं इसका वंश विस्तृत रूप में दिया गया है। अनायुषा के कुल पाँच पुत्र थे:— १. अरु; २. वल; ३. वृत्र; ४. विज्वर; ५. वृष। ये पाँच ही भाइयों को महेंद्रा-गुचर एवं ब्रह्मवेत्ता पुत्र उत्पन्न हुए, जो निम्न प्रकार थे:— १. वृत्रपुत्र-वक्र आदि सहस्र पुत्र; २. बलपुत्र-निर्कुंभ एवं चक्रवर्मन्; ३. विज्वरपुत्र-कालक एवं खर; ४. वृषपुत्र-श्राद्धाह, यशह ब्रह्म एवं पशुह; ५. अरुपुत्र-धृषु, जो कुशलाश्र पेशवाक के द्वारा मारा गया (ब्रह्मांड. ३.६.३५-३७)।

२. एक अनुर, जो हिरण्यवक्र का सेनापति था। इंद्र-हिरण्यवक्र युद्ध में, इंद्र ने इसकी शिखा पकड़ कर खड्ग से इसका वध किया था (पद्म. सू. ७३)।

वृत्रघ्न—एक राजा, जिसने यमुना एवं गंगा नदियों के तट पर अश्वों को बाँधा था (ऐ. ब्रा. ८.२३.५)। रीथ के अनुसार, यहाँ वृत्रघ्न इंद्र की ओर संकेत किया गया है।

वृत्रघातक—विष्णु के बारह अवतारों में से नौवाँ अवतार (मत्स्य. ४७.४४)।

वृद्धकन्या—एक बालब्रह्मचारिणी, जो कुणि गंग महर्षि की कन्या थी। इसके पिता ने इसका विवाह करना चाहा, किन्तु यह जन्म से ही अत्यंत विरक्त होने के कारण, इसने विवाह करने से इन्कार कर दिया।

तपस्या—आगे चल कर इसने घोर तपस्या प्रारंभ की। किन्तु नारद इसे आ मिला, एवं उसने इसे कहा कि, विवाह-संस्कार किये वगैर स्त्री के लिए स्वर्गलोक की प्राप्ति असंभव है।

नारद के कथनानुसार, इसने विवाह करने का निश्चय किया, एवं अपना आश्रा पुण्य प्रदान करने की शर्त पर मालव्य ऋषि के शिष्य शृंगवत् ऋषि से विवाह किया। विवाह करते समय शृंगवत् ने इसे कहा था कि, केवल एक रात के लिए ही वह इसके साथ रहेगा। अपने पति के इस शर्त के अनुसार, इसने एक रात के लिए वैवाहिक जीवन व्यतीत किया, एवं तत्पश्चात् अपनी तास्या के बल से यह स्वर्गलोक गयी (म. शा. ५१)।

वृद्धकन्यातीर्थ—अपने कुरुक्षेत्र में स्थित जिस आश्रम में इसने तपस्या की थी, वहाँ आगे चल कर 'वृद्धकन्यातीर्थ' नामक तीर्थस्थान का निर्माण हुआ। भारत के तीर्थस्थानों का यात्रा करता हुआ बलराम इस तीर्थस्थान में आया था, जहाँ उसे शल्यवध की बातों ज्ञात हुई थी।

वृद्धगौतम—एक वैश्य, जो मणिकुंडल नामक वैश्य का मित्र था (मणिकुंडल देखिये)।

वृद्धक्षत्र—एक राजा, जो सिंधुनरेश जयद्रथ का पिता था। इसने जयद्रथ को वर प्रदान किया था, 'जो भी तुम्हारे सिर को पृथ्वी पर गिरायेगा, उसके मस्तक के सैकड़ों टुकड़े हो जायेंगे'।

भारतीय युद्ध में अर्जुन ने अपने बाणों से जयद्रथ का सिरच्छेद किया, एवं उसका सिर वृद्धक्षत्र के ही गोद में गिरा दिया, जिस कारण इसकी मृत्यु हुई (म. द्रो. १२१)।

वृद्धक्षत्र पौरव—एक पुरुवंशीय राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था। यह अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १७१.५६-६४)।

वृद्धक्षेम—एक राजा, जो निगतराज सुशर्मन् का पिता था। इसी कारण सुशर्मन् को 'वार्धक्षेमि' पौत्रक नाम प्राप्त था (म. आ. १७७.८; वार्धक्षेमि १. देखिये)।

२. एक ऋषिबंधशीय राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. १६८.१६)। इसे 'वार्धक्षेमि' नामान्तर प्राप्त था।

भारतीय युद्ध में इसका कृप के साथ युद्ध हुआ था (म. द्रो. २४.४९)। अन्त में ब्राह्मिक ने इसका वध किया (म. क. ४.७९)।

वृद्धगर्ग—एक आचार्य, जिसने राज्य में उत्पन्न होने-वाले दुश्मिह के बारे में अग्नि ऋषि को ज्ञान प्रदान किया था (मत्स्य. २२९.३८)।

वृद्धगर्ग्य—एक आचार्य, जिसने पितरों की तृप्ति किस प्रकार होती है इस संबंध में अपने पितरों के साथ संवाद किया था। उस समय पितरों ने इसे वर्षा ऋतु में दीपदान करने का, एवं अमावास्या के दिन तर्पण करने का माहात्म्य रूपन किया था (म. अनु. १२५.७७-८३)।

२. एक ऋषि, जो मनुकुंद राजा का समकालीन था (विष्णु. ५.२३.२५८)।

वृद्धगौतम—एक ऋषि, जो पूर्वकाल में जड़बुद्धि था। किन्तु वृद्धा नामक स्त्री के तप के कारण यह बुद्धिमान बन गया (ब्रह्म. १.७७)।

वृद्धद्युम्न आभिप्रतारिण—एक कुर्वंशीय राजा (राजज्ञ), जिसके पुरोहित का नाम शुचिवृत्र गौपालायन था (ऐ. ब्रा. ३.४८.९)। अपने इस पुरोहित की सहायता से इसे विपुल धनलक्ष्मी प्राप्त हुई।

एक बार इसने 'तृष्टोम-क्षत्रश्रुति' नामक यज्ञ किया था। उस समय यज्ञकर्म में इसके द्वारा एक त्रुटि हो गयी, जिस कारण पुरोहित ने इसे शाप दिया, 'जल्द ही कुरु-राजवंश का कुरुक्षेत्र से लोप होगा'। आगे चल कर पुरोहित की यह शापवाणी सच साबित हुई (सां. श्रौ. १५.१६.१०-१३)।

अभिप्रतारिन् का वंशज होने से इसे 'आभिप्रतारिण' यह पौत्रक नाम प्राप्त हुआ होगा। संभवतः यह अभिप्रतारिन् काशसेन राजा के वंश में उत्पन्न हुआ होगा।

वृद्धशर्मन्—(सो. पुरुवरवस्.) एक राजा, जो आयु राजा एवं स्वर्भानु का पुत्र था। इसके अन्य चार भाइयों के नाम नहुष, रजि, रश्म एवं अनेनस् थे (म. आ. ७०.२३)। इसे क्षत्रधर्मन् नामान्तर भी प्राप्त था।

२. कुरु-देशीय एक राजा, जो वसुदेव-भगिनी श्रुतदेवा का पति था। इसके पुत्र का नाम दन्तवक्र था (भा. ९.२४.३७)।

वृद्धसेना—एक राजस्त्री, जो सुमति राजा की पत्नी, एवं देवताजित् राजा की माता थी (भा. ५.१५.१-२)।

वृद्धा—एक राजकन्या, जो आर्षिपणपुत्र ऋतध्वज राजा एवं सुश्यामा की कन्या थी। इसका विवाह वृद्धगौतम ऋषि से हुआ था (ब्रह्म. ११७)।

वृधु तक्षन्—एक हीनकुलीन अंत्यज, जिसने भरद्वाज ऋषि को गोदान किया था। यह हीन जाति का होने के कारण, इससे दान लेना अवर्ज्य था। किन्तु भरद्वाज ऋषि धुधार्त एवं आपद्ग्रस्त थे, जिस कारण उन्हें कोई दोष न लगा (मनु. १०.१०७)।

ऋग्वेद में निर्दिष्ट 'वृधु तक्षन्' नामक दास संभवतः यही होगा।

चुंदा—एक दैत्यकुलोत्पन्न स्त्री, जो कालनेमि एवं स्वर्णा की कन्या, एवं जालंधर दैत्य की पत्नी थी (पद्म. उ. ४; शिव. उद्. यु. १४)।

जालंधर दैत्य की मृत्यु के पश्चात् इसने अग्निप्रवेश किया था। इसकी पतिभक्ति से विष्णु प्रसन्न हुए, एवं उन्होंने इसके अग्निप्रवेश के स्थान पर गौरी, लक्ष्मी एवं स्वरा के अंश से क्रमशः आमला, तुलसी एवं मालती पेड़ों का निर्माण किया (पद्म. उ. १०५; जालंधर देखिये)।

उसी दिन से ये तीनों पेड़ पवित्र माने जाने लगे, एवं यह स्वयं 'तुलसीवृंदा' नाम से प्रसिद्ध हुई।

वृंदाकर—कौरवपक्ष का एक योद्धा, जो अभिमन्यु के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. ४६.१२)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में यह भीम के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. १०२.९५)।

वृशजान अथवा **वैजान**—एक आचार्य, जो व्यरुण राजा का पुरोहित था। 'जन' का वंशज होने से इसे 'जान' अथवा 'वैजान' पौत्रक नाम प्राप्त हुआ होगा।

एक बार यह एवं व्यरुण राजा रथ में बैठ कर जा रहे थे, जब एक बालक की इनके रथ के नीचे मृत्यु हो गयी। उस समय, रथ का लगाम इसीके हाथ में होने के कारण इसे मृत्यु का पातक लगा। पश्चात् 'वार्श' साम का पठन कर इसने मृत बालक को पुनः जीवित किया (पं. ब्रा. १.३. ३.१२)। सांख्यायन, तांड्य एवं भालवि ब्राह्मण, तथा बृहद्देवता में भी इस कथा का संक्षिप्त निर्देश प्राप्त है।

सीम के अनुसार ऋग्वेद में भी इस कथा का निर्देश प्राप्त है—(ऋ. ५.२)। किंतु वह तर्क अयोग्य प्रतीत होता है।

वृष—शिव का एक अवतार, जो वृषभ रूप में उत्पन्न हुआ था। समुद्र-मंथन के पश्चात्, उस-मंथन से उत्पन्न हुए सुंदर स्त्रियों से विष्णु कामासक्त हुआ, एवं उसे उन स्त्रियों से सैकड़ों पुत्र उत्पन्न हुए। पाताल में उत्पन्न हुए विष्णु के इन पुत्रों ने समस्त पृथ्वी कंपित करना प्रारंभ किया, जिनका परामर्ष लेने के लिए शिव ने वृष का अवतार धारण किया।

विष्णुपुत्रों से शाप—उत्पन्न होते ही इसने विष्णु की पराजय कर, उसका सुदर्शन-चक्र हरण किया, एवं उसे स्वर्लोक में भाग जाने पर भी विवश किया। जाते समय विष्णु ने अपने पुत्रों को पाताल में भाग जाने की सलाह दी, जिस पर इसने उन्हें शाप दिया, 'शांत-वृत्ति के ऋषि एवं मेरे अंश से उत्पन्न दानवों के अतिरिक्त, जो भी मनुष्य पाताल में जायेगा, उसे मृत्यु प्राप्त होगी'। उस समय से पाताल लोक मनुष्यप्राणियों के लिए निश्चिद्र बन गया (शिव. शत. २२-२३)।

२. स्कंद का एक सैनिक।

३. एक दैत्य, जो पूर्वकाल में पृथ्वी का शासक था।

४. विकुंठ देवों में से एक।

५. एक दैत्य, जो अनायुषा के पुत्रों में से एक था। इसे श्रद्धाद, यज्ञहन्, ब्रह्महन्, एवं पशुहन् नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (ब्रह्मांड. ३.६.३१)।

६. (सो. अनु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार शिवि राजा का पुत्र था। इसे 'वृषादर्भि' नामान्तर भी प्राप्त था (वृषादर्भि देखिये)।

७. (सो. सह.) एक राजा, जो भरत राजा का पुत्र, एवं मधु राजा का पिता था (विष्णु. ४.११.२५-२६)।

८. एक राजा, जो सृंजय एवं राष्ट्रपाली का पुत्र था (भा. ९.२४.४२)।

९. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं सत्या के पुत्रों में से एक था (भा. १०.६१.१३)।

१०. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं कालिंदी के पुत्रों में से एक था (भा. १०.६१.१४)।

११. एक हैहयवंशीय राजकुमार, जो कार्तवीर्य अर्जुन के पुत्रों में से एक था। यह परशुराम के क्षत्रियसंहार से बच गया था (ब्रह्मांड. ३.४१.१३)।

१२. अंगराज कर्ण का नामान्तर (म. व. २९३.१३)।

१३. धर्मशावर्णि मन्वन्तर का इंद्र।

वृषक—एक राजकुमार, जो गांधारराज सुमल का पुत्र था। यह द्रौपदीस्वयंवर में, एवं युधिष्ठिर के राज्य-यज्ञ में उपस्थित था (म. आ. १७७.५; म. स. ३१.७)। भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था, जहाँ इसकी श्रेणि 'रथी' थी (म. उ. १६५.१)। अर्जुनपुत्र द्रावत् का इसने पराजय किया था (म. भी. ८६.२४-४३)। अंत में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. २८.११-१२; क. ४.३९)।

भारतीय-युद्ध के पश्चात्, व्यास के द्वारा आवाहन करने पर, यह गंगाजल से प्रकट हुआ था (म. आश ४०.१२)।

वृषकंड—ऋषयकुलोत्पन्न एक गोवर्कार।

वृषक्राथ—कौरवपक्ष का एक योद्धा, जो द्रोण-निर्मित गरुडब्यूह के हृदयस्थान में खड़ा था (म. द्रो. १९.३१)।

वृषकेतु—अंगराज कर्ण के पुत्रों में से एक। युधिष्ठिर के अश्वमेधीय अश्व की रक्षा के लिए यह गया था। वही काम करते समय, यह वधुवाहन के द्वारा मारा गया (जै. अ. ३०)।

वृषगण वासिष्ठ—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.९७. ७-९)।

वृषजार—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२)।

वृषण—(सो. सह.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सहस्राजुन राजा का पुत्र था। भागवत एवं वायु के अनुसार, इसे क्रमशः 'वृषभ' एवं 'वर्ष' नामांतर भी प्राप्त थे।

वृषणश्व—एक मनुष्य, जिसकी पत्नी का नाम मेना था। मेना का रूप धारण कर स्वयं इंद्र इसकी पत्नी बना था (ऋ. १.५.१३)। ब्राह्मण ग्रंथों में भी इसका निर्देश प्राप्त है (जै. ब्रा. २.७९; स. ब्रा. ३.३. ४.१८; प. ब्रा. १.१.१६; तै. आ. १.१२.१३)।

वृषदर्भ—एक राजा, जिसने अपने राज्यकाल में एक गुप्त नियम बनाया था, 'ब्राह्मणों को तुवर्ण एवं चांदी ही दान दिया जाय'।

एक बार इसके मित्र सैन्दुक के पास एक ब्राह्मण आया, एवं उससे १००० अश्वों का दान मांगने लगा। यह दान देने में सैन्दुक ने असमर्थता प्रकट की, एवं उस ब्राह्मण को इसके पास भेज दिया।

इसने अपने गुप्त नियम के अनुसार, ब्राह्मण के द्वारा अश्वों का दान मांगते ही उसे क्रोध से फटकारा। ब्राह्मण के द्वारा इस अन्याय का रहस्य पृच्छने पर, इसने उसे अपना गुप्तदान (उपायु) का संकल्प निवेदित किया, एवं उसकी माफी मांगी। पश्चात् इसने उस अपने राज्य की एक दिन की आय दान के रूप में प्रदान की (म. व. परि १. क. २१. वृत्ति ४.)। भण्डारकर संहिता में यह कथा अप्राप्य है। इसे 'वृषदर्भ' नामान्तर भी प्राप्त था।

२. उशीर देश के शिशिर राजा का पुत्र। इसी के नाम ने इसके राज्य को 'वृषादर्भ' जनपद नाम प्राप्त हुआ (ब्रह्मांड ३.७४.२३)।

वृषदश्व—(सू. इ.) एक राजा, जो वायु के अनुसार ष्टीरोमन् अथवा अनेनम् राजा का पुत्र था।

वृषध्वज—एक जनकवंशीय राजा, जिसके पुत्र का नाम रथध्वज था। यह सीरध्वज जनक राजा के पूर्वकाल में उत्पन्न हुआ था। किन्तु वंशावलि में इसका नाम अप्राप्य है।

२. एक असुर, जिसने वृत्र-इंद्र युद्ध में वृत्र के पक्ष में भाग लिया था (भा. ६.१०)।

३. कर्णपुत्र वृषकेतु का नामान्तर।

४. प्रवीर वंश में उत्पन्न एक कुलांगार राजा, जिसने अपने दुर्बलता के कारण अपने स्वजनों का नाश किया (म. उ. ७२. १६ पाठ.)। पाठभेद—'वृहद्वल'।

वृषन् पाथ्य—अग्नि का एक उपासक (ऋ. १.३६. १०)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसका पैतृक नाम 'पाथ्य' दिया गया है (ऋ. ६.१६.१५)।

वृषपर्वाण—एक दानवराज, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.२४)। यह दीर्घप्रज्ञ राजा के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. आ. ६१.१६)। उशनस शुक्राचार्य इसीका ही राजपुरोहित था, जिसने 'संजीवनी-विद्या' के कारण इसकी राज्य की एवं असुरों की ताकद काफी बढ़ायी थी।

इंद्रवृत्र युद्ध में इसने इंद्र से युद्ध किया था। देवानुर-युद्ध में इसने अश्विनों से युद्ध किया था (भा. ६.६. ३१-३२; १०.२०)।

इसकी कन्या शर्मिष्ठा ने शुक्रकन्या देवयानी का अपमान किया, जिस कारण शुक्र इसका राज्य छोड़ जाने के लिए सिद्ध हुआ। इसपर अपने राज्य में रहने के लिए इसने शुक्र से प्रार्थना की, एवं तत्परीत्यर्थ अपनी कन्या शर्मिष्ठा को देवयानी की आश्रम दासी बनाने की उसकी शर्त भी मन्थ्य की (भा. ९.१८.४)। शर्मिष्ठा ने भी असुरवंश के कल्याण के लिए, देवयानी की दासी बनने के प्रस्ताव को मान्यता दी (म. आ. ७५)।

परिवार—शर्मिष्ठा के अतिरिक्त, इसकी सुदरी एवं चेद्रा नामक अन्य दो कन्याएँ भी थी।

२. एक ऋषि, जिसका आश्रम हिमालय प्रदेश में शेषमादन पर्वत के समीप स्थित था। वनवासकाल में तीर्थयात्रा करते समय यश्विष्ठिरादि पांडव इसके आश्रम में आये थे। इसने पांडवों को उचित उपदेश कथन किया, एवं आगे बदरी-केदार जाने का मार्ग भी बताया (म. व. १५.१६-२५)। बदरी-केदार से लौट आते समय भी, पुनः एक बार पांडव इसके आश्रम में आये थे (म. व. १७.६-८)।

३. एक असुर, जो वृत्र का अनुयायी था (भा. ६. १०.१९)।

४. अंगिराकुल्योत्पन्न एक गोत्रकार।

वृषभ—(सो. सह.) एक हेहयवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार कार्तवीर्य सहस्राजुन राजा का पुत्र था (भा. ९.२३.२७)।

२. (सो. अज.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार कुशाग्र राजा का पुत्र, एवं पुण्यवन्त राजा का पिता था (मत्स्य. ५०.२९)।

३. एक राजकुमार, जो कलिङ्ग देश के राजा का भाई था। यह भीम के द्वारा मारा गया (म. क. ४.१६)।

४. गांधारराज सुबल का पुत्र, जो शकुनि का छोटा भाई था। इसने अपने अन्य पाँच भाइयों के साथ इरावत् पर हमला किया था, जिसमें इसके अतिरिक्त इसके पाँचों भाई मारे गये (म. भी. ८६.२४ पाठ.)।

५. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो अनमित्र राजा का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम जयन्ती था, जो काशिराज की कन्या थी (मत्स्य. ४५.२५-२६)।

६. एक राजा, जो सृष्टि एवं छाया का पुत्र था (ब्रह्मांड. २.३६.९८)।

७. एक गोप, जो कृष्ण का मित्र था (भा. १०.१८.२३)।

८. रामसेना का एक वानर (वा. रा. कि. १४१)।

९. एक असुर, जो कृष्ण के द्वारा मारा गया था (ब्रह्मांड. ३.३६.३७)।

१०. ब्रह्मसर्वाणि मनु के पुत्रों में से एक।

वृषभानु—एक राजा। एक बार यह यज्ञ के लिए भूमि शुद्ध कर रहा था, जिस समय इसे राधा नामक कन्या प्राप्त हुई। अपनी कन्या मान कर, इसने उसे पालपोस कर बड़ा किया (पद्म. ब्र. ७.) ब्रह्मवैवर्त में इसे राधा का पिता कहा गया है (ब्रह्मवै. २.४९.३२-४२)।

वृषभेक्षण—श्रीकृष्ण का एक नामांतर (म. उ. ६.८.७)।

वृषवाहन—एकादश रुद्रों में से एक।

वृषशुभ वातावत जानुकर्ण्य—एक आचार्य, जो निकोथक भायजात्य नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम इन्द्रोत शौनक था (वं. ब्रा. २; कौ. ब्रा. २.९)। 'वातावत्' का वंशज होने के कारण, इसे 'वातावत' पौत्रकनाम प्राप्त हुआ होगा।

'उदित होम' पक्ष का यह पुरस्कर्ता था, जिस पक्ष का इसने अच्छा समर्थन किया था (सां. ब्रा. २.९; ऐ. ब्रा. ५.२९; तै. ब्रा. ५.२९.१)।

वृषसेन—अंगराज कर्ण का पुत्र, जिसकी पत्नी का नाम मद्रावती था।

भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था, एवं इसकी श्रेणि 'रथी' थी (म. उ. १६४.२३)। इसका निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध हुआ था :—

१. शतानीक आदि द्रौपदीपुत्र (म. द्रो. १५.१.१०); २. सुपुण (म. द्रो. ५३.९-११); ३. पाण्ड्य (म. द्रो. २४.१८३ पाठ.); ४. अभिमन्यु (म. द्रो. ४३.५-७); ५.

अर्जुन (म. द्रो. १२०.४०); ६. द्रुपद (म. द्रो. १४०.१३; १४३.१९) ७. नकुल (म. क. ६२.३२)।

अंत में अर्जुन के द्वारा इसका वध हुआ (म. क. ९२.६१)। इसकी मृत्यु पौष कृष्ण त्रयोदशी के दिन हुई (भारतसावित्री)। इसकी मृत्यु से अंग राजवंश समाप्त हुआ (भा. ९. २३.१४)।

भारतीय युद्ध के पश्चात्, श्रीध्यास के द्वारा आवाहन किये जाने पर, इसने उसे दर्शन दिये थे (म. आश्र. ४०.१०)।

२. एक राजा, जो यमसभा में उपस्थित था (म. स. ८.१२)।

३. ब्रह्मसर्वाणि मनु के पुत्रों में से एक।

४. एक हैहय राजा, जो कर्तवीर्य अर्जुन के पुत्रों में से एक था (विष्णु. ४.११.२१)।

वृषाकपि—भगवान् विष्णु का एक नाम (म. शां. ३४२.८९)।

२. ग्यारह रुद्रों में से एक (म. अनु. १५०.१२-१३)। यह भूत एवं सलया का पुत्र था, एवं इसने देवासुर युद्ध में जग्म से युद्ध किया था (भा. ६.६.१७)।

३. एक ऋषि, जो अन्य ऋषियों के साथ देवताओं के यज्ञ में उपस्थित हुआ था (म. अनु. ६६.२३)।

वृषाकपि ऐन्द्र—एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. ७.१३.२३; १०.८६.३)। इंद्र एवं इंद्राणी के साथ इसके द्वारा किये गये संवाद का निदेश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १०.८६.५)।

लो. तिलक के अनुसार, दक्षिणायन विंदु के समीप स्थित सूर्य को ही ऋग्वेद में 'वृषाकपि' कहा गया है। दक्षिणी ध्रुव प्रदेश में छः महीने की अंधरी रात शुरू होने के पूर्व, अन्तरिक्ष में दिखाई देनेवाले सूर्य को ही वैदिक आर्यों के द्वारा 'वृषाकपि' कहा गया होगा (लो. तिलक, आर्यों का मूलस्थान पृ. २५१)।

वृषागक वातरशन—एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१३६.४)।

वृषादर्भि—(सो. अनु.) अनुवंशीय वृषादर्भि राजा का नामांतर। भगवत में इसे शिवि राजा का पुत्र कहा गया है (भा. ९.२३.३; वृषादर्भि देखिये)।

२. अंगिरा कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वृषादर्भि शैच्य—(सो. अनु.) शिवि (वृषदर्भ) राजा का पुत्र, जिसे महाभारत में काशि देश का राजा कहा गया है (म. अनु. ९३.२७-२९; १३७. १०)।

मामवत, मर्त्य एवं वायु में इमे क्रमशः 'वृषादर्भ,' 'पृथुदर्भ' एवं 'वृषदर्भ' कहा गया है। विष्णु में इसके नाम की निश्चित वृष + दर्भ दी गयी है। महाभारत में इसके 'वृषदर्भ' (म. अनु. ३२.४), एवं वृषादभि (म. शां. २७६.२५) नामान्तर प्राप्त है। भांडारकरसंहिता में 'वृषादर्भ' पाठ स्वीकृत किया गया है।

सप्तर्षियों से संबंध—इसने सप्तर्षियों से क्रिये संबंध की कथा महाभारत में प्राप्त है। एक बार सप्तर्षि पृथ्वी की प्रदक्षिणा कर रहे थे, जिस समय इसने एक यज्ञ कर अपना पुत्र उन्हें दक्षिणा के रूप में प्रदान किया। आगे चल कर, अत्यायुच के कारण इसका पुत्र मृत हुआ, जिसे अश्वत्थ के कारण भुंखे हुए सप्तर्षियों ने भक्षण करना चाहा। इसने सप्तर्षियों को इस पाशवी कृत्य से रोकना चाहा, किन्तु सप्तर्षियों ने इसकी एक न सुनी। अपने पुत्र के मृत देह की पुनःप्राप्ति के लिए, इसने सप्तर्षियों को अनेकानेक प्रकार के दान देने का आश्वासन दिया, किन्तु कुछ भयशा न हुआ।

अन्त में अभ्यधिक क्रुद्ध हो कर इसने सप्तर्षियों का वध करने के लिए एक कृत्या का निर्माण किया। उस कृत्या का सही नाम यद्यपि 'यातुधानी' था, फिर भी इसने उसे 'मस्ता' नाम धारण कर सप्तर्षियों पर आक्रमण करने के लिए कहा। इसकी आज्ञा से उस कृत्या ने सप्तर्षियों पर आक्रमण किया, किन्तु सप्तर्षियों के साथ रहने वाले शुनःसख (इंद्र) ने उसका वध किया (म. अनु. २३)।

दानशूरता—इसकी दानशूरता की विभिन्न कथाएँ महाभारत में प्राप्त हैं। इसने ब्राह्मणों को अनेकानेक रत्न एवं गृह दान में प्रदान किये थे (म. शां. २१६.२५; अनु. १३७.१०)। अपने पिता शिवि राजा के समान, इसने भी एक कपोत पक्षी का रक्षण करने के लिए अपने शरीर के मांसखंड श्येनपक्षी को खिलाये थे (म. अनु. ३२.३९)।

वृषामित्र—एक ऋषि, जो पाण्डवों के वनवासकाल में उनके साथ रहता था (म. व. २७.२४)।

वृषु—(सो. पुरुवरवस्) पुरुवरवस्वंशीय वृषु राजा का नामान्तर (पृथु. ८. देखिये)।

वृष्टि—(सो. कुकुर.) कुकुरवंशीय वृष्ट राजा का नामान्तर। वायु में इसे कुकुर राजा का पुत्र कहा गया है (वृष्ट ५. देखिये)।

२. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

वृष्टिनेभि—अकूर एवं अश्विनी के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.३३)।

वृष्टिमत्—(सो. कुकुर. भविष्य.) एक राजा, जो नामवत के अनुमार कविरथ राजा का पुत्र, एवं सुपेण राजा का पिता था।

वृष्टिहृद्य—एक आचार्य, जो उपस्तुत वाष्टिहृद्य नामक आचार्य का पिता था।

वृष्ट्याद्य—(सो. सह.) एक हैहयवंशीय राजा, जो कातकीय एवं महारथा के पुत्रों में से एक था (वायु. ९४. ४९)।

वृष्णि—(सो. क्रोष्टु.) कुंति राजा के पुत्र वृष्ट राजा का नामान्तर (वृष्ट ४. देखिये)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो सात्वत मञ्जमान राजा का पुत्र था। इसे क्रोष्टु नामान्तर भी प्राप्त था (ह. वं. १.३४; ब्रह्म. १४.१; १५.३१)।

कृष्ण के साथ इसका स्वयंसेवक मणि के संबंध में संबंध हुआ था, जिस समय उस मणि की चोरी कृष्ण के द्वारा किये जाने का शक इसके मन में पैदा हुआ था। किन्तु श्रीकृष्ण ने अपने को निर्दोष साबित किया (ब्रह्मांड. ३. ७१.१)।

यह क्रोष्टु वंश का सुविख्यात राजा था, एवं सुविख्यात वृष्णि वंश इसी से ही प्रारंभ होता है (वायु. ९५.१४; म. आ. २११.१-२; ५; ८)।

परिवार—इसकी मांघारी एवं माद्री नामक दो पत्नियाँ थीं, जिनमें से माद्री से इसे युजाजित् आदि पाँच पुत्र उत्पन्न हुए थे (मत्स्य. ४४.४८)।

वृष्णिवंश—वृष्णि राजा से उत्पन्न यादवों को 'वृष्णि-वंशीय यादव' कहा जाता है, जो द्वारवती (द्वारका) में रहते थे। इसी वंश में कृष्ण एवं बलराम उत्पन्न हुए थे (भा. १.३.२३; ११.११)। इन लोगों का राजा कृष्ण होते हुए भी, उसका 'परमात्मन स्वरूप' ये लोग न पहचान सके (भा. १.९.१८)। महाभारत में इन लोगों के राजा का नाम उग्रसेन दिया गया है (म. आ. २११.८)।

इस वंश में उत्पन्न लोग 'वात्य' (हीन जाति के) थे, ऐसा निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. द्रो. ११८. १५)। प्रभास क्षेत्र में हुए यादवी-युद्ध में इस वंश के लोगों का संपूर्ण संहार हुआ। महाभारत में इन लोगों का निर्देश 'अंधक' एवं 'भोज' राजाओं के साथ मिलता है। ये तीनों वंश एक ही यादव वंश की उपशाखाएँ थीं (म. आ. २११.२; २१२.१४)। महाभारत में इस

वंश में उत्पन्न महारथि, महारथ, रथ एवं मंत्रिपुंगवों की सविस्तृत जानकारी प्राप्त है:—

(१) महारथ—कृतवर्मन्, अनाशुष्टि, समीक, समि-
तिजय, कह (कंस), शंकु, निशान्त (म. स. १३.
५७-५८)।

(२) महारथ—प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, मानु, अकूर,
सारण, निशट, गद (म. स. १३.१५.१६)।

(३) रथ—आहक, चारुदेष्ण, चक्रदेव, सात्यकि,
कृष्ण, रोहिणेय (वल्लभ), सांव, शौरि (म. स.
१३.५६)।

(४) मंत्रिपुंगव—वितद्व, झलि, वभु, उदव, विडूरथ,
वसुदेव एवं उग्रसेन (म. स. १३.१५.१६)।

३. (सो. वृष्णि.) वृष्णिवंशीय वृष्णि राजा का
नामान्तर (वृष्णि ४. देखिये)।

४. (सो. कुकुर.) कुकुरवंशीय धृष्ट राजा का
नामान्तर (धृष्ट. ५. देखिये)। इसके करोतवर्मन् एवं
धृति नामक दो पुत्र थे (मत्स्य. ४४.६२)।

५. (सो. सह.) एक राजा, जो मधु राजा के सौ
पुत्रों में से एक था। यह एक अत्यंत सुविख्यात राजा
था, जिसके कारण इसका वंश सुविख्यात हुआ।

वृष्णिमत्—(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो
विष्णु के अनुसार शुचिरथ राजा का, एवं मत्स्य के
अनुसार शुचिद्रव राजा का पुत्र था। भागवत एवं वायु
में इसे क्रमशः 'वृष्टिमत्' एवं 'रतिमत्' कहा गया है।
इसके पुत्र का नाम सुपेण था (मत्स्य. ५०.८०; विष्णु.
४.२१.१२)।

वृहंगिरस्—एक राजा, जो मनु एवं वरुची के पुत्रों
में से एक था।

वेगदशित्—रामसेना का एक वानर। राम के
राज्याभिषेक के समय इसने जल लाया था (वा. रा.
यु. १२८.५२)।

वेगवत्—(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो विष्णु के
अनुसार धेनुमत् राजा का, एवं भागवत तथा वायु के
अनुसार धेनुमत् राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम
बंधु था (भा. १.२.३०)।

२. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं सत्या के
पुत्रों में से एक था।

३. एक यादव, जो कृष्ण और नामजिती राजा का
पुत्र था (भा. १०.६१.१३)।

४. धृतराष्ट्रकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जन्मज्य के
संपन्न में मारा गया था (म. आ. ५२.१६)।

५. एक सुविख्यात दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों
में से एक था (म. आ. ५१.२३)। पृथ्वी पर यह केकय
राजकुमार के रूप में अवतीर्ण हुआ था (म.
आ. ६१.१०)।

६. एक दैत्य, जो शात्व का अनुयायी था। कृष्ण-
शात्व युद्ध में शामिल था, जहाँ कृष्णपुत्र सांव के द्वारा
यह मारा गया (म. व. १७.२०)।

वेगवाहन—तक्षककुलोत्पन्न एक नाग, जो जन्मज्य
के संपन्न में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.९)।

वैकटेश—एक भारतीय वैष्णव देवता, जो दक्षिण
भारत में श्रीपर्वत अथवा शोपाचल (= तामील 'तिरुमलै')
नामक पर्वतीय स्थान पर स्थित है। स्कंद में इस देवता
का निर्देश 'श्रीनिवास' नाम से किया गया है, एवं
इसकी पत्नी का नाम पद्मिनी दिया गया है (स्कंद. २.१.
४-८)। उत्तर भारत में यही देवता बालाजी नाम से
सुविख्यात है जो मुख्यतः वैश्य एवं व्यापारी लोगों की
देवता माना जाता है।

दक्षिण भारत में स्थित विद्वल एवं वैकटेश ये विष्णु के
ही साक्षात् स्वरूप माने जाते हैं, एवं विष्णु के अन्य
अवतारों से इनका स्वरूप पूर्णतया विभिन्न है।

वैकटेश का शब्दशः अर्थ 'पापनाशक' (वैक. पापः
कट=नाशक) है। इसी कारण स्वयं वैकटेश देवता एवं जिस
पर्वत पर यह स्थित है, वह वैकटाद्रि अत्यंत पवित्र माने
जाते हैं।

जिस प्रकार वैकटेश श्रीविष्णु का रूप माना जाता है,
उसी प्रकार वैकटाद्रि शोपनाग का स्वरूप कहल्यता है।
वैकटाद्रि का तामिल नाम 'तिरुमलै' (तिरु = श्री; मलै
= पर्वत) है, एवं वह 'श्री-पर्वत' एवं 'शोपाचल' इन
संस्कृत शब्दों का तामिल रूप प्रतीत होता है। दक्षिण
भारत में स्थित वैकटेश मंदिर सात पर्वतों के एक समूह में
स्थित है, जहाँ पहुँचने के लिए सात मील चढ़ान
चढ़नी पड़ती है।

उपासना—स्कंद में 'वैकटेश महात्म्य' विस्तृत रूप
में प्राप्त है। वल्लभ-तीर्थयात्रा वर्णन में भी वैकटेश का
निर्देश प्राप्त है (भा. ५.११.१६; १०.७१.१३)।
वेङ्कयती कोश में भी 'वैकटाद्रि' का निर्देश प्राप्त है (वैङ्.
४१.१०)।

दक्षिण भारत में प्रचलित वैकटेश-उपासना का आद्य प्रचारक रामानुजाचार्य माने जाते हैं, जिनके द्वारा प्रणीत रामानुज वैष्णव सांप्रदाय की अधिष्ठात्री देवताओं में वैकटेश एक माना जाता है।

दक्षिण भारत में स्थित तिरुवति देवस्थान भारत का एक सर्वाधिक संवन्न देवस्थान माना जाता है, जहाँ विश्वविद्यालय, पाठशाला, धर्मशाला, बैंक, बस सर्विस आदि सारी सुविधाएँ देवस्थान के द्वारा संचालित हैं। वारे भारतवर्ष में रहनेवाले इस देवता के उपासक ल्हावधि रूपियों की भेट इसे प्रतिवर्ष स्वयंस्फूर्ति से अर्पित करते हैं।

वेणी एवं वेणीस्कंद—कौरव्यकुलोत्पन्न एक नाम, जो क्रमेण्य के सर्वसत्र में दग्ध हुआ था।

वेणु—(सो. सह.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार शतसिन् राजा का पुत्र था। इसके भाई का नाम ह्य था, जिसके साथ इसका निर्देश 'वेणुहय' नाम से अनेक बार प्राप्त है (विष्णु ४.११.७)।

इस अन्य पुराणों में, इसका नाम वेणुहय दिया गया है, एवं इसके भाइयों के नाम 'हैहय' एवं 'हय' क्राये गये हैं (भा. ९.२३.२१; वायु. ९४.४)।

वेणुजंघ—युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१५)।

वेणुदारि—एक यादव, जो दक्षिणी भारत में स्थित असमक देश का अधिपति था (ह. वं. २.६१.१९)। इसने दभृ (अक्र) की पत्नी का हरण किया था (म. स. परि. १.२१.१५.७२)। वर्ण ने अपने दक्षिणदिग्बिजय में इसके पुत्र का पराजय किया था (म. व. परि. १. क्र. २४. पत्रित. ५७-५८)।

वेणुहय—वेणु राजा का नामांतर (वेणु देखिये)।

वेणुहोत्र—(सो. क्षत्र.) शत्रुवृद्धवंशीय वीतिहोत्र राजा का नामांतर (वीतिहोत्र ४. देखिये)। वायु में इसे पृथक्त् राजा का पुत्र कहा गया है (वायु. ९२.७२)।

वेतसु—एक दानव, जो द्योतन एवं कुत्स नामक आचार्यों का शत्रु था। इंद्र ने अपने इन दोनों मित्रों की सहायता के लिए इसका वध किया (ऋ. ६.२०.८; २६. ४)।

२. एक जातिविशेष, जिसका अधिपति का नाम दशयु था। इस जाति के लोगों ने तुर लोगों को पराजित किया था (ऋ. १०.४९.४)।

वेताल—विद्याओं का एक समूह, जो रुद्रगणों में शामिल था। ये लोग युद्धभूमि में उपस्थित रह कर मानवी रक्त एवं मांस भक्षण करते थे (भा. २.१०.३९)। देवता मान कर इनकी पूजा की जाती थी, जहाँ सर्वत्र इन्हें शिव के उपासक ही माना जाता था (मत्स्य. २५.९.२४)।

२. रुद्रशिव का एक गर्पद, जो उसके द्वारपाल का काम करता था। एक बार शिव एवं पार्वती क्रीडा कर रहे थे, उस समय क्रीडा के उन्मत्त वेश में पार्वती सहजवश द्वार पर आयीं उसे देख कर वह काममोहित हुआ, एवं उनका अनुनय करने लगा। इसका यह धाष्टर्य देख कर पार्वती अत्यंत क्रुद्ध हुई, एवं उसने इसे पृथ्वी पर मनुष्य बनने का शाप दिया।

पार्वती के शाप के कारण, इसने 'वेताल' के रूप में पृथ्वी पर जन्म लिया। तदुपरांत अपने पार्षद के प्रति भक्तवत्सलता से प्रेरित हो कर, शिव एवं पार्वती भी महेश एवं शारदा नाम से पृथ्वी पर अवतीर्ण हुए (शिव. शत. १४)।

कालिका पुराण में—इस ग्रंथ में इसके भाई का नाम भैरव बताया गया है, एवं इन दोनों को चंद्रशेखर राजा एवं तारावती के पुत्र कहा गया है। अपने पूर्वजन्म में ये मुंगी एवं महाकाल नामक शिवदूत थे, जिन्हें पार्वती के शाप के कारण पृथ्वीलोक में जन्म प्राप्त हुआ था।

इनके पिता चंद्रशेखर ने इन्हें राज्य न दे कर इनके अन्य तीन भाइयों को वह प्रदान किया। इस कारण ये अरण्य में तपस्या करने गये, एवं शिव की उपासना करने लगे। आगे चल कर वसिष्ठ की कृपा से, इन्हें संध्याचल पर्वत पर शिव का दर्शन हुआ, एवं कामाख्या देवी की उपासना से इन्हें शिवगणों का आधिपत्य भी प्राप्त हुआ। इनके वंश में उत्पन्न लोगों का 'वेतालवंश' भी कालिका पुराण में दिया गया है।

वेतालजननी—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१३)।

वेद—सृगुकुलोत्पन्न एक मंत्रकार। पाठभेद (वायु-पुराण) - 'विद'।

२. एक ऋषि, जो धौम्य ऋषि का शिष्य, एवं जन्मजय का उपाध्याय था (म. आ. ३.७९-८५)। इसे 'वेद' नामान्तर भी प्राप्त था।

इसके शिष्य का नाम उत्तंक था। एक बार यह परदेश गया था, जिस समय अपने घर की एवं पत्नी की रक्षा करने के लिए इसने उत्तंक को कहा था। यह कार्य उत्तम

प्रकार से निभाने के कारण इसने उत्तक को अनेकानेक आशीर्वाद प्रदान किये ।'

अपनी शिक्षा समाप्त होने के पश्चात्, उत्तक ने इसकी पत्नी को पौष्य राजा की पत्नी के कुण्डल गुरुदक्षिणा के रूप में प्रदान किये (उत्तक देखिये) ।

३. एक शिवभक्त राजा, जो सिंधुद्वीप राजा का भाई था ।

वेददर्शन—देवदर्श नामक आचार्य का नामान्तर (देवदर्श देखिये) । इसने सुमन्तु से अथर्ववेद संहिता सीखी थी, जो आगे चल कर इसने अपने शौक्यायानि आदि शिष्यों को प्रदान की (भा. १२.७.१-२) ।

वेदनाथ—एक राजा, जो ब्राह्मण के द्रव्य का अपहरण करने के कारण वानर बन गया था । अपने मित्र सिंधुद्वीप की सलाह के अनुसार, धनुषकोटी तीर्थ में स्नान कर, यह वानरयोनि से मुक्त हुआ (स्कंद. १.३.१४) । इसे ' वेदभृतिपुत्र ' एवं ' भालंकिपुत्र ' नामान्तर भी प्राप्त थे ।

वेदवाहु—कृष्ण के पुत्रों में से एक (भा. १०.१०.३४) ।

२. रैवत मन्वन्तर का एक ऋषि ।

वेदमित्र—एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास की ऋक्षशिष्य परंपरा में से मांडुक्य नामक आचार्य का शिष्य था । यह स्वयं शाकलगोत्रीय था, एवं व्याकरणशास्त्र के संबंधित इसके अनेकानेक मतों के उद्धरण ऋक्षप्रतिशाख्य में प्राप्त है (ऋ. प्रा. ५२) ।

इसके कुल पाँच शिष्य थे । इसके नाम के लिए ' देवमित्र ' पाठभेद प्राप्त हैं (व्यास देखिये) ।

वेदवती—एक राक्षस्या, जो कुशध्वज जनक की कन्या थी । इसकी माता का नाम मालावती था । इसे सीता का पूर्वजन्मकालीन अवतार माना जाता है । जन्म होते ही इसने मुख से वेदध्वनि निकाला, जिस कारण इसे ' वेदवती ' नाम प्राप्त हुआ ।

इसके पिता की इच्छा थी कि, इसका विवाह विष्णु से किया जाय । एक बार शंभु नामक राक्षस ने इससे विवाह करना चाहा, किन्तु अपने पूर्वयोजना के अनुसार कुशध्वज ने उसे ना कह दिया । इस कारण क्रुद्ध हो कर, शंभु राक्षस ने कुशध्वज जनक का वध किया ।

तपस्या—अपने पिता के मृत्यु की पश्चात्, यह पुष्करतीर्थ पर जा कर तपस्या करने लगी, जिस कारण अगले जन्म में विष्णु की पत्नी बनने का आशीर्वाद इसे प्राप्त हुआ । इसी आशीर्वाद के अनुसार, अपने अगले जन्म में यह श्रीविष्णुस्वरूपी राम दाशरथि राजा की पत्नी बनी ।

अग्निप्रवेश—एक बार रावण ने इस पर बलात्कार करना चाहा, किन्तु उससे अपनी मुक्तता कर इसने अग्नि-प्रवेश कर अपनी इज्जत बचायी । मृत्यु के पूर्व इसने रावण को शाप दिया था । राम दाशरथि के द्वारा रावण का वध होने की विधिघटना का यही प्रारंभ हुआ, जिसका स्मरण रावण को अपनी मृत्यु के समय हुआ था (ब्रह्मवै. २.१४.५२; वा. रा. उ. १७)

वेदबृध्द—एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मर्षि के अनुसार, व्यास की सामशिव्यपरंपरा में से कौथुम पाराशर्य नामक आचार्य का शिष्य था (व्यास देखिये) ।

वेदव्यास—एक सुविख्यात ऋषिसमुदाय । वैश्वत मन्वन्तर के अट्टाईस द्वापारों में उत्पन्न होने वाले अष्टादश वेद व्यासों की नामावलि पुराणों में प्राप्त है । ये सभी ऋषि वेदव्यास नाम से ही अधिक सुविख्यात हैं (ब्रह्मवै. २.३३.३३; ३५.११७-१२५; व्यास देखिये) ।

२. कृष्ण द्वैपायन व्यास का नामान्तर (व्यास पाराशर्य देखिये) ।

वेदशर्मन्—(सो. विदू.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार शोणाश्व राजा का पुत्र था ।

२. विदुर का एक मित्र, जो उसके साथ ऋक्षि पर्यत पर गया था । वहाँ सिद्धों के द्वारा प्राप्त उपदेश के अनुसार, इसने सोमवती अमावास्या के दिन ' अष-तीर्थ ' पर स्नान किया, जिस कारण इसे मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. भू. ११-१२) ।

३. पिशाचयोनि में प्रविष्ट हुआ एक ब्राह्मण, जो मुनिशर्मन् नामक विष्णुभक्त ब्राह्मण के द्वारा मुक्त हुआ (पद्म. पा. १४) ।

४. शिवशर्मन् नामक विष्णुभक्त ब्राह्मण का पुत्र ।

वेदशिरस्—एक शिवावतार, जो वाराहकल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वन्तर में से पंद्रहवें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था । सरस्वती नदी के उत्तरीतट पर हिमालय पर्वत के अंतर्भाग में स्थित वेदशीर्ष नामक स्थान में यह अवतरण हुआ । इसका प्रमुख अस्त्र महावीर्य था, एवं इसके शिष्यों में निम्नलिखित चार शिष्य प्रमुख थे:— १. कुणि; २. कुणियाहु; ३. कुशरीर; ४. कुनेत्रक (शिव. दत्त. ५; वायु. २३.१३६-१६८) ।

२. एक मगुवंशीय ऋषि, जो मार्कंडेय ऋषि का पुत्र था । इसकी माता का नाम मूर्धन्या (भ्रूया) था । इसकी पत्नी का नाम पौवरी था, जिससे इसे ' मार्कंडेय '

सामूहिक नाम धारण करनेवाले अनेकामिक पुत्र उत्पन्न हुए (ब्रह्मांड. २.११.७; वायु. २८.६)।

एक बार इसके तप में बाधा डालने के लिए शूचि नाम एक अप्सरा इसके पास आयी, जिससे इसे एक कन्या उत्पन्न हुई। इस कन्या का हरण यमधर्म ने करना चाहा, जिस कारण इसने उसे नदी बनने का शाप दिया। काशी में स्थित 'धर्म' नद वही है (स्कंद ४.२.५९)।

३. (स्वा.) एक राजा, जो प्राण राजा का पुत्र था (भा. ४.१.४५)।

४. स्वारात्रिप मन्वन्तर के विभु नामक इंद्र का पिता।

५. वैवत मन्वन्तर के सप्तपत्नियों में से एक।

६. एक ऋषि, जो कृशाश्व ऋषि एवं विषणा का पुत्र था। इसे पाताल में स्थित नौगां से 'विष्णु पुराण' का ज्ञान प्राप्त हुआ था, जो इसने आगे चल कर प्रमति नामक अपने शिष्य को प्रदान किया (विष्णु. ६.८.४७)।

वेदशोरक—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषि-गण।

वेदश्री—वैवत मन्वन्तर का एक ऋषि (ब्रह्मांड. २. ३६.२२)।

वेदश्रुत—उत्तम मन्वन्तर का एक देव (भा. ८.१. १४)।

वेदस्पर्श—देवदर्श नामक आचार्य का नामान्तर। वायु में इसे ऋषेय ऋषि का शिष्य कहा गया है, एवं इसने अथर्ववेद के चार भाग कर उसे अपने चार शिष्यों में बाँट देने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (वायु. ६१.५०)।

वेध्रस—ब्रह्मा का नामान्तर (भा. ८.५.२४)।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार (मत्स्य. १४५-१९)।

वेन—(स्वा. उत्तान.) अंग देश का एक दुष्टकर्मा राजा, जो अंग एवं मृत्यु की मानसकन्या सुनीथा का पुत्र था। भागवत में इसे तेईसवाँ वेदव्यास कहा गया है। महाभारत में कदमपुत्र अनंग को इसका पिता कहा गया है (म. शा. ५९.९६-९९)।

बनाचार—यह शुरु से ही दुर्वृत था। यह अपने मातामह मृत्यु (अधर्म) के घर में पालपोस कर बड़ा हुआ था। इसके दुष्ट कर्मों के कारण, व्रत हो कर इसका पिता अंगदेश छोड़ कर चला गया। राज्यपद प्राप्त होते ही इसने यज्ञयागादि सारे कर्म बंद करवाये। यह स्वयं को ईश्वर का अवतार कहलाता था। इसके दुश्चरित्र के कारण, ऋषियों ने इसका वध किया (म. शां. ५९.१००)।

मृत-देह का मंथन—इसकी मृत्यु के पश्चात्, अंगवंश निर्वंश न हो इस हेतु इसकी माता सुनीथा ने इसके मृत-शरीर का दोहन करवाया। इसके दाहिनी जाँघ की मंथन से निषाद नामक एक कृष्णवर्णीय नाटा पुरुष उत्पन्न हुआ, जिससे आगे चल कर निषाद जाति-समूह के लोग उत्पन्न हुए। आगे चल कर ऋषियों ने इसके दाहिने हाथ का मंथन किया, जिससे पृथु वैन्थ नामक चक्रवर्ति राजा उत्पन्न हुआ, जो साक्षात् विष्णु का अवतार था (म. शां. ५९.१०६)।

ऋषियों के द्वारा वेन का वध होने की, एवं इसके दाहिने हाथ के मंथन से पृथु वैन्थ का जन्म होने की कथा सभी पुराणों में प्राप्त है (ह. वं. १.५.३-१६; वायु. ६२.१०७-१२५; भा. ४.१४; विष्णुधर्म. १.१०८; १.१३; ७.२९; ब्रह्म. ४; मत्स्य. १०.१-१०)।

महाभारत के अनुसार, इसकी दाहिनी जाँघ की मंथन से निषाद, एवं विंध्यगिरिवासी म्लेच्छों का निर्माण हुआ था (म. शां. ५९.१०१-१०३)। पद्म के अनुसार, यह ऋषियों के द्वारा मृत नहीं हुआ, बल्कि एक बस्मीक में छिप गया था (पद्म. भू. ३६-३८)।

वायु में—इस ग्रंथ में वेन के शरीर के दोहन की कथा कुछ अलग प्रकार से प्राप्त है। दुष्टप्रकृति वेन ने मरीचि आदि ऋषियों का अपमान किया, जिस कारण ऋषियों ने इसके हाथ एवं पाव पकड़ कर इसे नीचे गिराया। पश्चात् उन्होंने इसके हाथ एवं पाव खूब धुमाये, जिस कारण इसके दाहिने एवं बाये हाथ से क्रमशः पृथु वैन्थ एवं निषाद का निर्माण हुआ। इनमें से निषाद का जन्म होते ही ऋषियों ने 'निषाद' कह कर अपना निषेध व्यक्त किया, जिस कारण इस कृष्णवर्णीय पुत्र को निषाद नाम प्राप्त हुआ। इस मंथन के बाद वेन मृत हुआ (वायु. ६१.१०८-११३)।

इसके दो पुत्रों में से, पृथु इसके पिता अनंग के अंश से उत्पन्न हुआ था, एवं निषाद की उत्पत्ति इसके स्वयं के पापों से हुई थी। निषाद के रूप में इसका पाप इसके शरीर से निकल जाते ही यह पापरहित हुआ। पश्चात् तृणश्रिंदु ऋषि के आश्रम में इसने विष्णु की उपासना की, जिस कारण इसे स्वर्लोक की प्राप्ति हुई (पद्म. भू. ३९-४०; १२३-१२५)। महाभारत के अनुसार, अपनी मृत्यु के पश्चात् यह यमसभा में स्वर्गपुत्र यम की उपासना करने लगा (म. स. ८.१८)।

२. एक राजा, जो वैवस्वत मनु के दस पुत्रों में से एक था (म. आ. ७०.१३)।

वेन पार्थ—एक राजा, जिसके औदार्य की प्रशंसा तान्व पृथुपुत्र नामक आचार्य के द्वारा की गयी है (ऋ. १०.९३. १४)। 'पृथा' का वंशज होने से इसे 'पार्थ' मानक नाम प्राप्त हुआ होगा (ऋ. १०.९३.१५)।

डॉ. तिलकजी के अनुसार, वेन एक व्यक्ति का नाम न हो कर, आकाशस्थ ग्रह का नाम था (ऋ. १०.१२३)। किन्तु इस संबंध में निश्चित प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

वेन आर्गव—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १.८५; १०. १२३)।

वेन वाजश्रवस—एक ऋषि, जो बाईसवाँ व्यास था (व्यास देखिये)।

वेश—एक दानव, जिसे इंद्र ने आयु राजा की रक्षा के लिए पराजित किया था (ऋ. ७.१८.११)। संभवतः 'दास वेश' एवं यह दोनों एक ही व्यक्ति होंगे (ऋ. २.१३.८)।

वैकर्ण—एक राजद्वय, जिनके इक्कीस जातियों (जनान्) का सुदास ने दाशराज्ञ-युद्ध में उन्मूलन किया था (ऋ. ७.१८.२१)। त्सीमर के अनुसार, वैकर्ण दो राजाओं का नाम न हो कर, कुरु एवं क्रिषि जातियों का सामूहिक नाम था (त्सीमर, अष्टिण्डिशे लेवेन १०३)।

एक जाति के रूप में विकर्ण लोगों का निर्देश महा-भारत में प्राप्त है (म. भी. ४७.१५), जो काश्मीर प्रदेश में बसे हुए थे। इससे प्रतीत होता है कि, ऋग्वेद में निर्दिष्ट वैकर्ण लोग इसी प्रदेश के रहनेवाले थे।

वैकर्णिक—वैकर्ण्य नामक कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार-गण का नामान्तर।

वैकर्णिनि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैकर्ण्य—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण। पाठभेद—'वैकर्णिक'।

वैकालिनायन—वैकृति गालव नामक विश्वामित्र कुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

वैकुण्ठ—चाक्षुष एवं रैवत मन्वन्तरों में उत्पन्न अवतार।

१. रैवत मन्वन्तर का एक देवगण।

२. इंद्र का अवतार (इंद्र देखिये)।

३. एक ब्राह्मण, जिसकी कथा 'दीन-महात्म्य' बताने के लिए पत्र में कथन की गयी है (पत्र. ब्र. ३)।

वैकृति गालव—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

पाठभेद—'वैकालिनायन'।

वैक्लव—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैखानस—एक ऋषिविशेष, जो 'व्योहिनी' नामक यज्ञसंस्कार की दीक्षा ले कर उत्पन्न हुए थे। पुराणों में निम्नलिखित ऋषियों का निर्देश 'वैखानस संप्रदायी' ऋषि के नाते प्राप्त है :— १. नहुपपुत्र पृथु (मत्स्य. २४.५१), २. अमलय, (मत्स्य. ६१.३७); ३. ययाति-भ्राता यति (ब्रह्मांड. ३.६८.१४; ब्रह्म. १२.३; ह. बं. १.३०.३; मत्स्य. २४.५१)।

२. एक वैदिक ऋषिसमुदाय, जिसमें सौ ऋषि समाविष्ट थे (ऋ. ९.६६)। ये ब्रह्मा के नाप्तुन से उत्पन्न हुए थे (तै. आं. १.२३)। पंचविंश ब्राह्मण के अनुसार रहस्य देवमलिभृत् ने मुनिमरण नामक स्थान में इक्ष्वा वध किया था (पं. ब्रा. १४.४.७; तै. आ १.२३. ३)। इस ऋषिसमूह में पुरुहन्मन नामक ऋषि समाविष्ट था (तै. आ. १४.९.२९)।

३. एक धर्मशास्त्रकार, जिसका धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथ 'वैखानस धर्मप्रश्न' नाम से सुविख्यात है। यह ग्रंथ कृष्ण-यजुर्वेदान्तर्गत धर्मसूत्र ग्रंथ माना जाता है, एवं अनेक शयनग्रंथावलि में सुद्धित किया गया है (क. २.८; इ. म. १९१३)।

वैखानस धर्मप्रश्न—इस ग्रंथ में वानप्रस्थाश्रम ग्रहण करने का धार्मिक विधि विस्तारपूर्वक दिया गया है, एवं वानप्रस्थियों के लिए सुयोग्य आचार भी काले गये हैं।

इस ग्रंथ में अनुश्रम एवं प्रतिलोम विवाह से उत्पन्न संतानों के लिए सुयोग्य व्यवसाय भी बताये गये हैं। इसके साथ ही साथ निम्नलिखित विषयों की चर्चा भी इस ग्रंथ में प्राप्त है :— चार वर्ण एवं चार आश्रम के लोगों के कर्तव्य; संध्या, वैश्वदेव, स्नान, आचमन आदि के धार्मिक विधि, चार वर्णों के लोगों के लिए सुयोग्य व्यवसाय, आदि।

'वैखानस धर्मप्रश्न' के अनेक उद्धरण मनुस्मृति में प्राप्त हैं (मनु. ६.२१)। इसके अतिरिक्त इसके नाम पर 'वैखानस श्रौतसूत्र' नामक ग्रंथ भी उपलब्ध है।

४. चंपक नगरी एक राजा, जिसने मार्गशीर्ष युद्ध एकादशी के व्रत का पुण्य अपने वितरों को दे कर उल्ला उद्धार किया (पत्र. उ. ३९)।

वैगायन—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैजभृत्—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैजवापयन—वैजवापयन नामक आचार्य का नामान्तर।

वैजान—ब्रह्म नामक आचार्य का पैतृक नाम (पं. ब्रा. १३.३.१२) । विजान का वंशज होने के कारण, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा । वेबर के अनुसार, इस पैतृक नाम का सही पाठ 'वैजानः' था (वेबर, इन्डियै स्कूडियेन. १०.३२) ।

वैदभतीपुत्र—एक आचार्य, जो काशिकेयीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (वृ. उ. ६.५.२. काण्व) । पाठ—'वैश्रुतिपुत्र' ।

वैडव—वसिष्ठ ऋषि का पैतृक नाम (पं. ब्रा. ११.८.१४) । 'वीडु' का वंशज होने से इसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा । किन्तु सायण भाष्य में वसिष्ठ को वीड का पुत्र कहा गया है (तां. ब्रा. ११.८.१४) ।

वैणव—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

वैतञ्ज्य—(सो. आयु.) एक राजा, जो आयु (आप) राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.३.२४; ता. ६६.२३) ।

वैतरण—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक पैतृक नाम (ऋ. १०.६१.१७) । भरत एवं वध्व्यश्व के भौति, वैतरण के अग्नि का निर्देश भी ऋग्वेद में प्राप्त है ।

वैतहव्य—एक परिवार का सामूहिक नाम । एक ब्राह्मण की गाय भक्षण करने के कारण, इस परिवार के लोगों के पतन होने का निर्देश अथर्ववेद में प्राप्त है (अ. वे. ५.१८.१०-११; १९.१) । इन्हें संजय कहा गया है, किन्तु रसीमर के अनुसार, वैतहव्य कोई स्वतंत्र लोग न हो कर, वह संजय लोगों की केवल उपाधि मात्र ही थी । अन्य अभ्यासक लोग इन्हें स्वतंत्र परिवार मानते हैं, एवं 'वैतहव्य का वंशज' इस अर्थ से वैतहव्य की निशंक बताते हैं ।

वैदिक साहित्य में निम्नलिखित आचार्यों का पैतृक नाम 'वैतहव्य' दिया गया है:—१. अरण (ऋ. १०.९१); २. वीतहव्य आंगिरस (ऋ. ६.१५); संजय (अ. वे. ५.१९.१) ।

वैतान—एक आचार्य, जो कृष्णयजुर्वेदान्तर्गत 'वैतान श्रौतसूत्र' नामक ग्रंथ का रचियता माना जाता है ।

वैताल—एक आचार्य, जो भागवत के अनुसार, व्यास की ऋषिशिष्यपरंपरा में से जानकपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था । पाठभेद—'वैतालिक' ।

वैतालिक—एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास का ऋषिशिष्यपरंपरा में से शाकपूणि नामक आचार्य का शिष्य था । भागवत में इसे 'वैताल' कहा गया है ।

वैताली—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६२) ।
वैद—हिरण्यदत्त नामक आचार्य का पैतृक नाम (पं. ब्रा. ३.६.४; पं. आ. १०.९) । विद का वंशज होने से इसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा । पाठभेद—'वेद' ।

वैदथिन—ऋजिष्वन् नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ. ४.१६.१३; ५.२९.११) । विदथिन् का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा ।

वैदश्वि—एक पैतृक नाम, जो वैदिक साहित्य में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:— १. तरंत (ऋ. ५.६१.१०); २. पुरुमीडह (पं. ब्रा. १३.७.१२; जै. ब्रा. १.५१; ३.१३९) ।

वैदभतीपुत्र—एक आचार्य, जो काशिकेयीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य, एवं कौत्तिकीपुत्र नामक आचार्यद्वय का गुरु था (वृ. उ. ६.४.३२ माध्य.) । बृहदारण्यक उपनिषद् के काण्व संस्करण में इसे वैदभतीपुत्र कहा गया है (वृ. उ. ६.५.२ काण्व.) । शतपथ ब्राह्मण में इसे मालकीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य कहा गया है (श. ब्रा. १४.९.४.३२) ।

वैदर्ध—भीम नामक राजपुत्र का 'देशीय' नाम (ऐ. ब्रा. ७.३४.९) । विदर्भ देश का राजा होने के कारण, उसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा ।

वैदर्भि—एक राजा, जिसने अपनी लोपासुद्रा नामक कन्या अगस्त्य को विवाह में दी थी (म. अनु. १३७.११) ।

२. भार्गव नामक आचार्य का पैतृक नाम (प्र. उ. १.१) । विदर्भ का वंशज होने के कारण उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा ।

वैदर्भी—एक देशीय नाम, जो निम्नलिखित विदर्भ राजकन्याओं के लिए प्रयुक्त किया गया है:— १. दमयन्ती; २. रुषिमर्षी; ३. लोपासुद्रा; ४. सगरपत्नी कोशिनी; ५. मलयध्वजपत्नी ।

वैदेह—(स. निमि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार निमि राजा का पुत्र था । निमि राजा के वंशजों के लिए भी यह नाम प्रयुक्त है (भा. ९.१३.३) ।

२. एक देशीय नाम, जो विदेह देश के निम्नलिखित राजाओं के लिए प्रयुक्त किया गया है:— १. जनक (तै. ब्रा. ३.१०.९.२१); २. नमी साय्य (पं. ब्रा. २५.१०.१७) ।

वैदेहरात—विश्वामित्र कुशोत्पन्न एक ऋषिगण । पाटलिपुत्र-‘देवराज’ ।

वैदेही—जनमेजयपुत्र शतानीक की पत्नी ।

वैद्य—वरुण एवं सुनादेवी के पुत्रों में से एक । इसके पुत्रों के नाम ऋषि एवं मुनि थे, जो आपस में लड़ कर मर गये (वायु. ८४.६-८) ।

२. सुखदेवों में से एक ।

वैद्यग—अंगिरसकुलोत्पन्न एक मंत्रकार ।

वैद्यनाथ—शिव का एक अवतार, जो रावण की प्रार्थना से चिताभूमि में प्रकट हुआ था (शिव. शत. ४२) । कई विद्वानों के अनुसार, महाराष्ट्र में स्थित ‘परली वैजनाथ’ का शिवस्थान यही है (ज्योतिर्लिख देखिये) ।

वैद्यस—हरिश्चंद्र नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७.१३.१; सां. श्रौ. १५.१७.१) । वैद्यस् का वंशज होने से उसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा ।

वैधृत—धर्मसावर्णि मन्वन्तर का इंद्र (भा. ८. १३.२५) ।

वैधृति—विधृति के पुत्रों का सामूहिक नाम, जिन्होंने सारे वेद अपने मन में एकत्रित कर रखे थे (भा. ८.१.२९) ।

२. तामस मन्वन्तर का देवगण ।

३. धर्मसावर्णि मन्वन्तर के धर्मसेतु नामक अवतार की माता ।

४. धर्मसावर्णि मन्वन्तर का इंद्र ।

५. तामस मन्वन्तर के देवों की माता ।

वैधेय—एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की यज्ञःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था ।

वैन—एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से शृंगीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था ।

वैनतेय—गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. ९९.१०) ।

२. गरुड का नामान्तर (मत्स्य. १५०.२१४) ।

वैनहोत्र—(सो. क्षत्र.) क्षत्रवृद्धवंशीय वीतिहोत्र राजा का नामान्तर । विष्णु में इसे षृष्टकेतु राजा का पुत्र कहा गया है ।

वैन्य—भृगुकुलोत्पन्न एक मंत्रकार ।

२. एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित राजर्षियों के लिए प्रयुक्त किया गया है :—१. अत्रि; २. पृथि; ३. पृथु;

४. पृथी (ऋ. ८.९.१०; पं. ब्रा. १३.५.२०; श. ब्रा. ५.३.५.४) ।

वैपश्चित—ताश्च्य नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३.४.३.१३) ।

वैपश्चित दार्ढजयन्ति गुप्त लौहित्य—एक आचार्य, जो वैपश्चित दार्ढजयन्ति दृढजयन्त लौहित्य नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१) । विपश्चित्, दृढजयन्त, एवं लोहित का वंशज होने के कारण इसे ‘वैपश्चित’, ‘दार्ढजयन्ति’ एवं ‘लौहित्य’ वे पैतृक नाम प्राप्त हुए होंगे ।

वैपश्चित दार्ढजयन्ति दृढजयन्त लौहित्य—एक आचार्य, जो विपश्चित दृढजयन्त लौहित्य नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१) ।

वैभांडक अथवा **वैभांडकि**—पूर्णभद्र नामक आचार्य का पैतृक नाम (पूर्णभद्र देखिये) ।

वैभूवस—त्रित नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ. १०.४६.३) ।

वैभीषणि—विभीषण का पुत्र, जिसने मणिकुंडल नामक वैश्य को शापमुक्त किया था (मणिकुंडल देखिये) ।

वैमुग—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६.११) ।

वैश्व—विश्वमनुस् नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ. ८. २३.२५; २४.३३) । वैश्व का वंशज होने से उसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा ।

वैयाघ्रपदीपुत्र—एक आचार्य, जो काण्वीपुत्र एवं कापिपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.५.१ काण्व.) । इसके शिष्य का नाम कौशिकिपुत्र था । व्याघ्रपद्य के किसी स्त्री वंशज का पुत्र होने से, इसे यह मातृक नाम प्राप्त हुआ होगा ।

वैयाघ्रपद्य—एक पैतृक नाम, जो वैदिक साहित्य में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है :— १. इंद्रशुभ्र भास्वलेय (श. ब्रा. १०.६.१.८; छां. उ. ५. १४.१); २. बुडिल आश्वतराधि (छां. उ. ५.१६.१); ३. गोश्रुति (छां. उ. ५.२.३; सां. व्या. ९.७); ४. राम क्रातुजातेय (जै. उ. ब्रा. ३.४०.१; ४.१६.१); ५. उपमन्यु वासिष्ठ (ऋ. ९.९७.१३-१५) ।

२. एक आचार्य (ल. श्री. ४.९.६७) ।

३. युधिष्ठिर के द्वारा अज्ञातवास में धारणा किया गया नाम (म. वि. ३.२.४४) ।

वैयासकि—शुक का पैतृक नाम ।

वैयास्क—उल्लेख्य का एक आचार्य (ऋ. प्रा. १७. २५)। रोथ के अनुसार, यहाँ निरुक्तकार यारक की ओर संकेत किया गया है, एवं 'वैयास्क' का सही रूप वै + यास्क है।

वैरपरायण—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैराज—महाभारत में निर्दिष्ट सात प्रमुख पितरों में एक (पितर देवियो)। बाकी छः पितरों के नाम निम्न थे— १. अग्निपिता; २. सोमप; ३. गार्हपत्य; ४. एक-सुंग; ५. ऋग्वेद एवं ६. कल (म. स. ११.१३३६)।

ब्रह्मांड में इन्हें विरज्जु नामक प्रजापति के पुत्र कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.७.२१२)। मस्य में इन्हें अमूर्त पितरों में से एक कहा गया है। प्रारंभ में ये योगी थे। वहाँ से योगभ्रष्ट होने पर, इन्हें सनातन ब्रह्मलोक में पुनः जन्म प्राप्त हुआ। वहाँ ब्रह्मा के एक दिन तक उसके साथ रहने पर, अगले कलारंभ में इन्हें ब्रह्मवादिन् के रूप में पुनः जन्म प्राप्त हुआ। इस जन्म में इन्हें अपने पूर्वजन्म का स्मरण हुआ, एवं ये पुनः एक बार योगाभ्यास में मग हुए।

आगे चल कर इसी योगसाधना में इन्हें मुक्ति प्राप्त हुई। इनकी मानसकन्या का नाम मना था, जो हिमवत् की पत्नी थी। ये पितर अत्यंत परोपकारी रहते हैं, एवं योगाभ्यास करनेवाले हर एक व्यक्ति को सहायता पहुँचाते हैं (मस्य. १३.३-६)।

वैरूप—एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:— १. अष्टादेष्ट (पं. ब्रा. ८.१.२१); २. नमःप्रमेदन (ऋ. १०.११२); ३. शत-प्रमेदन (ऋ. १०.१२३); ४. सध्रि (ऋ. १०.११४)।

वैरोचन—असुरराज बलि का पैतृक नाम, जो उसे विरोचन का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था।

वैरोचनी—त्वष्टृपत्नी यशोधरा का पैतृक नाम, जो उसे विरोचन असुर की कन्या होने के कारण प्राप्त हुआ था।

वैवशप—कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण।

वैवस—अंगुकुलोत्पन्न एक प्रवर।

वैवस्वत—एक पैतृक नाम, जो वेदों में निम्नलिखित व्यक्तियों के लिए प्रयुक्त किया गया है:— १. यम (ऋ. १.११३.८); २. मनु (ऋ. १०.४७.१७; अ. वे. ८.१०)।

वैवस्वत मनु—वैवस्वत नामक सातवें मन्वन्तर का अधिपति मनु, जिसे पुराणों में विवस्वत एवं संजा का पुत्र कहा गया है (मनु वैवस्वत देखिये)।

वैशंपायन—एक महर्षि, जो महर्षि व्यास के चार वेदप्रवर्तक शिष्यों में से एक, एवं कृष्ण यजुर्वेदीय 'तैत्तिरीय संहिता' का आद्य ऋणक था। 'विशंप' का वंशज होने के कारण, इसे 'वैशंपायन' नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैदिक साहित्य में—इस साहित्य में से केवल तैत्तिरीय आरण्यक एवं गृह्यसूत्रों में वैशंपायन का निर्देश मिलता है। ऋग्वेद के कई मंत्रों का नया अर्थ व्याने का युग-प्रवर्तक कार्य वैशंपायन ने किया। ऋग्वेद में 'सात दिशो गाना सूर्याः' नामक एक मंत्र है (ऋ. १.११४.३), जिसका अर्थ 'पृथ्वी के सात दिशाओं में सात सूर्य हैं, एवं श्रौतकर्म में सात दिशाओं में अधिष्ठित हुए सात ऋत्विज (होता) ही सूर्यरूप है,' ऐसा अर्थ वैशंपायन के काल तक किया जाता था। किंतु वैशंपायन ने ऋग्वेद में अन्यत्र प्राप्त 'यज्ञाव इद्र सहस्त्रं सूर्या अनु' (ऋ. ८. ७०.५), के आधार से सिद्ध किया कि, ऋग्वेद में निर्दिष्ट सूर्यों की संख्या सात नहीं, बल्कि एक सहस्र है (तै. आ. १७)।

पाणिनीय व्याकरण में—एक वैदिक गुरु के नाते, वैशंपायन का निर्देश पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' में प्राप्त है (पा. सू. ४.३.१०५)। परंजलि के 'व्याकरण महाभाष्य' में इसे कठ एवं कल्पिन् नामक आचार्यों का गुरु कहा गया है।

कृष्णयजुर्वेद का प्रवर्तन—वैशंपायन ऋषि 'निगद' (कृष्णयजुर्वेद) का प्रवर्तक, एवं वेदव्यास के चार प्रमुख वेदप्रवर्तक शिष्यों में से एक था। वेद व्यास के पैल, वैशंपायन, जैमिनि एवं सुमंतु नामक चार प्रमुख शिष्य थे, जिन्हें उसने क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद का ज्ञान प्रदान किया था (वृ. उ. २.६.३; ब्रह्मांड. १.१.११)। वैशंपायन को संपूर्ण यजुर्वेद का ज्ञान प्राप्त होने का गौरवपूर्ण उल्लेख महाभारत एवं पुराणों में भी प्राप्त है (म. भा. १.६१-६३३; ५७.७४; शां. ३२७. १६-१८; ३२९; ३३७.१०-१२; वायु. ६०.१२-१५; ब्रह्मांड. २.३४.१२-१५; विष्णु. ३.४.७-९; लिंग. १. ३९. ५७-६०; कर्म. १.५२.११-१३)।

शिष्यशाखा—वेदव्यास से प्राप्त 'कृष्णयजुर्वेद' की वैशंपायन ने ८६ संहिताएँ बनायी, एवं उसे याज्ञवल्क्य के सहित, ८६ शिष्यों में बाँट दी। विष्णु के अनुसार, इसने २७ संहिताएँ बनायी, जो अपने २७ शिष्यों बाँट दी (विष्णु. ३.५.५-१३)।

याज्ञवल्क्य का तिरस्कार—विष्णु में वैशंपायन एवं इसके शिष्य याज्ञवल्क्य के बीच हुए संघर्ष का निर्देश प्राप्त है (याज्ञवल्क्य देखिये)। अपने अन्य शिष्यों के समान, वैशंपायन ने याज्ञवल्क्य को भी कृष्णयजुर्वेद संहिता सिखायी थी। किन्तु संघर्ष के कारण यह याज्ञवल्क्य से अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं इसने उसे कहा, 'मैंने तुम्हें जो वेद सिखाये हैं, उन्हें तुम वापस कर दो'। अपने गुरु की आज्ञानुसार, याज्ञवल्क्य ने वैशंपायन से प्राप्त वेदविद्या का वमन किया, जिसे वैशंपायन के अन्य शिष्यों ने तित्तिर पक्षी बन कर पुनः उठा लिया। इसी कारण कृष्णयजुर्वेद को 'तैत्तिरीय' नाम प्राप्त हुआ (म. शां. ३०६)।

कृष्णयजुर्वेद का प्रसार—याज्ञवल्क्य के अतिरिक्त इसके बाकी ८५ शिष्यों ने आगे चल कर कृष्ण यजुर्वेद के प्रसारण का कार्य किया। भौगोलिक विभादानुसार, इस शिष्यपरंपरा के उत्तर भारतीय, मध्य भारतीय एवं पूर्व भारतीय ऐसे तीन विभाग हुए, जिनका नेतृत्व क्रमशः श्यामायनि, आसुरि एवं आलंबि नामक शिष्य करने लगे (ब्रह्मांड. २.३१.८-३०; वासु. ६१. ५-३०)। आगे चल कर कृष्ण यजुर्वेद को 'चरक' नाम प्राप्त हुआ, जिस कारण वैशंपायन के यह शिष्य 'चरकाध्ययु' अथवा 'तैत्तिरीय' नाम से सुविख्यात हुए।

वैशंपायन के द्वारा प्रणीत कृष्णयजुर्वेद की ८५ शाखाओं में से तैत्तिरीय, मैत्रायणी, कठ एवं कपिष्ठल शाखाएँ केवल आज विद्यमान हैं, बाकी विनष्ट हो चुकी हैं।

महाभारत का कथन—वैशंपायन श्रीव्यास के केवल कृष्णयजुर्वेद-परंपरा का ही नहीं, बल्कि महाभारत-परंपरा का ही महत्वपूर्ण शिष्य था। इसी कारण महाभारत-परंपरा में भी वैशंपायन एक अत्यंत महत्वपूर्ण आचार्य माना जाता है।

महाभारत से प्रतीत होता है कि, श्रीव्यास ने महाभारत का स्वयं के द्वारा विरचित 'जय' नामक आद्य ग्रंथ वैशंपायन को ही सर्वप्रथम सुनाया था। व्यास के द्वारा विरचित यह ग्रंथ केवल आठ हजार आठ सौ श्लोकों का छोटा ग्रंथ था, एवं उस के कथा का प्रतिपाद्य विषय पाण्डवों की विजय होने के कारण, उसे 'जय' नाम प्रदान किया गया था।

व्यास के द्वारा 'जय' ग्रंथ उत्तम-इतिहास, अर्थशास्त्र, एवं मोक्षशास्त्र का ग्रंथ था, एवं पौरुष निर्माण की सभी शिक्षाएँ उसमें अंतर्भूत थी। महाभारत में 'जय' ग्रंथ का

निर्देश अनेक बार प्राप्त है, एवं महाभारत के प्रारंभ में उसका निर्देश निम्न शब्दों में किया गया है—

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत्।

'भारत' ग्रंथ का निर्माण—अपने गुरु व्यास के द्वारा कथन किये गये 'जय' ग्रंथ के आधार पर वैशंपायन ने 'भारत' नामक अपने सुविख्यात ग्रंथ की रचना की, जिसमें कुल चौबीस हजार श्लोक थे। इस प्रकार यह ग्रंथ व्यास के आद्य ग्रंथ की अपेक्षा काफी विस्तृत था, किन्तु फिर भी महाभारत के प्रचलित संस्करण में उपलब्ध विविध आख्यान एवं उपाख्यान उसमें नहीं थे:—

चतुर्विंशति-साहस्रीं चक्रे भारतसंहिताम्।

उपाख्यानैर्विना तावत् भारतं प्रोच्यते बुधैः॥

(म. आ. ६१)।

भारत ग्रंथ का कथन—स्वयं के द्वारा विरचित भारत ग्रंथ का कथन, इसने सर्वप्रथम जनमेजय राजा के द्वारा सपों की राजधानी तक्षशिला नगरी में किये गये सर्पसत्र के समय किया।

यह स्वयं जनमेजय राजा का राजपुरोहित था, इसी कारण जनमेजय के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर इसने 'भारत' ग्रंथ का कथन किया। अपने इस ग्रंथ का वर्णन करते समय इसने कहा, 'यह ग्रंथ हिमवत् पर्वत एवं सागर जैसा विशाल, एवं अनेक रत्नों से युक्त है। इसी कारण—

धर्मं चार्थं च कामं च, मोक्षं च भरतर्षभ।

यदिहास्ति तद्रन्ध्रं, यद्येहास्ति न तत् क्वचित्।

(म. आ. ५६.३३. स्व. ५.३८)।

(इस संसार में धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष पुरुषार्थों के संश्लेष में जो भी ज्ञान उपलब्ध है, वह इस ग्रंथ में समाविष्ट किया गया है। इसी कारण यह कहना ठीक होगा कि, जो कुछ भी ज्ञानधन संसार में है, वह यहाँ उपस्थित है, किन्तु इस ग्रंथ में जो नहीं है, वह संसार में अन्यत्र प्राप्त होना असंभव है)।

वैशंपायन कृत आस्तीक-पर्व—वैशंपायन के द्वारा विरचित 'भारत' ग्रंथ में 'आस्तीक-पर्व' महत्वपूर्ण माना जाता है, जहाँ अपनी ग्रंथरचना की पार्श्वभूमि वैशंपायन के द्वारा निवेदित की गयी है। यहाँ जनमेजय के सर्पसत्र

की मारी लंबी विस्तृत रूप में दी गयी है, एवं इसी सूत्र में भारत ग्रंथ सर्वप्रथम कथन किये जाने का निर्देश वहाँ स्पष्ट रूप से प्राप्त है (म. आ. ५३)।

‘भारत’ ग्रंथ का प्रचार—वैशंपायन के ‘भारत’ ग्रंथ को जो मौलि ने काफी परिद्वेषित किया, एवं एक लक्ष श्लोकों का यह महाभारत ग्रंथ, शौनकादि ऋषियों के द्वारा नैमिषारण्य में आयोजित द्वादशदर्शीय सूत्र में सर्वप्रथम कथन किया। अनेक आस्थान एवं उपास्थान सम्मिलित किये जाने के कारण, सौति के इस महाभारत ग्रंथ को कितार काफी बड़ गया था। उसी परिद्वेषित रूप में महाभारत ग्रंथ आज उपलब्ध है।

व्यास, वैशंपायन एवं सौति के द्वारा विरचित ‘जय’ ‘भारत’, एवं ‘महाभारत’ ग्रंथों का रचनाकाल क्रमशः ३१०० ई. पू. २५०० ई. पू. एवं २००० ई. पू. लगभग माना जाता है।

स्वयं के अनुसार, व्यास के द्वारा प्राप्त ‘जय’ ग्रंथ इसने सुमन्तु को कथन किया, जो आगे चल कर सुमन्तु ने जनमेजय पुत्र यतार्नाक राजा को कथन किया (मति. ब्राह्म. १.३०-३८)।

याज्ञवल्क्य से शिरोधार्य—वैशंपायन के उत्तरकालीन आयुष्य में, याज्ञवल्क्य से इसका ‘यजुर्वेद संहिता’ से संबंधित विवाद बहुत ही गया, यहाँ तक कि, स्वयं अनेक राजा ने भी वैशंपायन के ‘कृष्णयजुर्वेद’ का त्याग कर याज्ञवल्क्य के द्वारा प्रणीत ‘गुह्ययजुर्वेद’ को स्वीकार किया। स्वयं के द्वारा किये गये अश्वमेध यज्ञ में उसने इसे डाल कर, याज्ञवल्क्य को अपने यज्ञ का ब्रह्मा बनाया।

आगे चल कर वैशंपायन एवं याज्ञवल्क्य का यह बाद-विवाद इतना बढ़ गया कि, उस कारण जनमेजय को राज्यत्याग करना पड़ा (मत्स्य. १०.५७-६४; वायु. ११.३०-३२; याज्ञवल्क्य वाजसनेय, एवं जनमेजय ८. देखिये)।

आथर्वान्न श्रौतसूत्र एवं हिरण्यकेशिन् लोगों के पितृ-तर्पण में वैशंपायन का निर्देश प्राप्त है (आ. श्रौ. ३.३; क. र. २०.८-२०)। इसके नाम पर ‘नीतिप्रकाशिका’ नामक अन्य एक ग्रंथ भी उपलब्ध है, जिसका अंग्रेजी अनुवाद डॉ. ओस्ट के द्वारा किया गया है। इस ग्रंथ में शत्रु के साथ शत्रु के वारुद का उल्लेख भी प्राप्त है।

प्र. च. ११५]

ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हैं:—
१. वैशंपायन-संहिता; २. वैशंपायन-नीतिसंग्रह; ३. वैशंपायन स्मृति; ४. वैशंपायन नीतिप्रकाशिका (C. C.)।

२. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रधार।

३. युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित एक ऋषि (भा. १०.७४.८)।

४. एक ऋषि, जिसका शौनक ऋषि के साथ तत्त्वज्ञान पर संवाद हुआ था (वायु. १९.२५१)।

वैशाख्य—एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामंशिक्यपरंपरा में से कौथुम पराशर्य नामक ऋषि का शिष्य था।

वैशाल—एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामंशिक्यपरंपरा में से हिरण्यनाम नामक आचार्य का शिष्य था। याज्ञवल्क्य (ब्रह्मांड पुराण)—‘वैशालिन्’।

वैशालि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रधार।

वैशालिनी—अविश्विन् राजा की पत्नी, जो मरुत् आविश्विन् राजा की माता थी। इसके पिता का नाम विशाल था। इसके स्वयंवर के समय अविश्विन् राजा ने इससे विवाह करना चाहा। किन्तु अन्य राजाओं ने उसे पराजित कर, इसका पुनः स्वयंवर करने की आज्ञा विशाल राजा को दी। किन्तु इसी समय, अविश्विन् राजा के पिता करंजम ने उपस्थित राजाओं को परास्त कर इसका हरण किया, एवं अपने पुत्र अविश्विन् से इसका विवाह कराया।

अविश्विन् राजा से इसे मरुत् आविश्विन् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था, जो अपने समय का सर्वश्रेष्ठ सम्राट् था। इसके पति अविश्विन् के द्वारा सर्पयज्ञ किये जाने पर, इसने अपने पुत्र मरुत् के द्वारा सर्पों को अभय दिया था (मार्क. ११९-१२६)।

इसके अतिरिक्त अविश्विन् राजा की निम्नलिखित पत्नियाँ थी, जो सभी उसे स्वयंवर में प्राप्त हुई थी:—

१. हेमप्रभाकन्या वरा; २. मुदेवकन्या गौरा; ३. वलिकन्या मुमद्रा; ४. वीरकन्या लीलावती; ५. वीरप्रकन्या विभा; ६. भीमकन्या मान्यवती, एवं ७. दंभकन्या कुमुद्वती (मार्क. ११९.१६-१७)।

वैशाल्य—तक्षक नामक आचार्य का पैतृक नाम (अ. वे. ८.१०.१९)। विशाल का वंशज होने से, इसमें यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैशीपुत्र—एक व्यक्ति (तै. ब्रा. ३.९.७.३; श. ब्रा. १३.२)। एक वैश्यपत्नी का पुत्र होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैश्वेश्वर—एक शिव-अवतार, जो महानंदा के उद्धार के लिए अवतीर्ण हुआ था (महानंदा देखिये)।

वैश्रवण—कुबेर का पैतृक नाम, जो उसे विश्रवस् ऋषि का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था। प्राचीन साहित्य में सर्वत्र इसे 'यक्षराज' कहा गया है, केवल ब्रह्मांड में इसका स्वरूप राक्षसों जैसा बताया गया है। यह महाहनु, शंक्रुर्गण एवं ह्रस्ववाहु था। इसका शरीर बड़ा था, एवं सिर मोटा था। इसके केश भूरे थे एवं इसके शरीर का वर्ण पीला था। इस प्रकार इसका शरीर जन्म से ही अत्यंत विरूप होने के कारण, इसे कुबेर नामान्तर प्राप्त हुआ था (ब्रह्मांड. ३.८.४०-४४; कुबेर देखिये)।

महाभारत में मुचकुंद राजा से हुआ इसका संवाद प्राप्त है, जो 'मुचकुंद-वैश्रवण संवाद' नाम से प्रसिद्ध है (म. उ. १३०. ८-१०; मुचकुंद देखिये)।

वैश्वानर—इंद्रसभा का एक ऋषि।

२. एक अग्नि, जो भानु (मनु) नामक अग्नि का प्रथम पुत्र था। इसकी उपासना के लिए पौंच वैश्वदेव-विधि बताये गये हैं (भा. २.२.२४)।

३. एक दानव, जो कश्यप एवं भु के पुत्रों में से एक था। इसकी उग्रदानवी, हयशोरा, पुलोमा एवं कालका नाम चार कन्याएँ थीं, जिनमें से अंतिम दो कन्याओं का विवाह कश्यप प्रजापति से हुआ था (भा. ६.६.६)।

वैश्वानरि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैश्वामित्र—एक पैतृक नाम, जो विश्वामित्र के पुत्र एवं वंशजों के लिए प्रयुक्त किया जाता है। ऋग्वेद में निम्नलिखित सूत्रद्रष्टाओं के लिए 'वैश्वामित्र' पैतृक नाम प्रयुक्त किया गया है:—१. अष्टक (ऋ. १०.१०४); २. कत (ऋ. ३.१७); ३. पूरण (ऋ. १०.१६०); प्रजापति (ऋ. ३.३८.४); ५. मधुच्छेदस् (ऋ. १.१-१०); ६. रेणु (ऋ. ९.७०)।

एतरेय ब्राह्मण में, देवरात के लिए भी इस पैतृक नाम का प्रयोग किया गया है (ऐ. ब्रा. ७.१७)।

वैष्टपुरेय—एक आचार्य, जो रौहिणायन एवं शांडिल्य नामक आचार्यों का शिष्य था (बृ. उ. २.५. २०; ४.१.५ माथ्यं.)। विष्टपुर का वंशज होने से, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैश्वप—एक दानव, जो कश्यप एवं भु के पुत्रों में से एक था।

वैहीनरी—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वोदु—एक आचार्य, जिसका निर्देश शुक्यसुवंशीय लोगों के ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में प्राप्त है (पा. य. परिशिष्ट; मत्स्य. १०८; १०२.१८) अन्य पुराणों में भी इसे एक सिद्धिप्राप्त ब्रह्मर्षि कहा गया है (वायु. १०१.३३८; ब्रह्मांड. ४.२. २७३; कर्म. १.५३.१५)।

वोहलि—एक आचार्य, जिसका निर्देश ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में प्राप्त है (दे.मा. ११.२०)।

वौलि—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वौशडि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

व्यंस—एक दानव, जो इंद्र का शत्रु था (ऋ. २.१४.५)। सायणाचार्य इसे व्यक्तिशःचक्र नाम नहीं मानते।

व्यश्व—एक ऋषि, जो अश्विनो की कृताशय व्यक्तियों में से एक था (ऋ. १.११२.१५)। ऋग्वेद के आठवें मंडल के अनेक सूक्तों में इसका निर्देश प्राप्त है, जिनकी रचना संभवतः इसके विश्वमनस् वैश्वश्व नामक शिष्य के द्वारा की गयी थी (ऋ. ८.२३.१६; २३; २४.२२; २६.९)। ऋग्वेद में अन्यत्र एक प्राचीन ऋषि के नाते इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८.९.१०; ९.६५.७)।

२. एक जातिविशेष, जिसमें वंश अश्वय नामक आचार्य उत्पन्न हुआ था (ऋ. ८.२४.२८)।

व्यश्व अगिरस—एक सोम एवं सूक्तद्रष्टा ऋषि (ऋ. ८. २६; पं. ब्रा. १४.१०.९)।

व्यष्टि—एक आचार्य, जो सनाक नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम विप्रचिति था (बृ. उ. ४.५.२२; ४.५.२८ माथ्यं.)।

व्याघ्र—एक राक्षस, जो यातुवान नामक राक्षस का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम निरामंद था (ब्रह्मांड. ३.७.७९)।

२. एक यक्ष, जो माद्रपद माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है।

व्यात्रकेतु—पाण्डव पक्ष का एक पांचाल योद्धा, जो भारतीय युद्ध में कर्ण के द्वारा मारा गया (म. क. ४०.४६-४८)।

व्यात्रदत्त—मगध देश का एक राजकुमार, जो भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्ष में शामिल था। सात्यकि ने इसका वध किया (म. द्रो. ८२.३२)।

२. पाण्डवों के पक्ष का एक पांचाल योद्धा, जो भारतीय युद्ध में द्रोण के द्वारा मारा गया। इसके अश्व

कृष्ण-रक्त एते संमिश्र रंगे कं थे (म. द्रो. २२.१६६*, पंक्ति. १-२)।

३. एक पाण्डववधायी राजा, जो अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया (म. क. ४.३.७*)।

व्याघ्रपद—वसिष्ठ ऋषि का एक पुत्र। यह व्याघ्रयोनि में उत्पन्न होने के कारण इसे 'व्याघ्रपद' नाम प्राप्त हुआ था (म. अनु. ५.३.३०)। इसके उपमन्यु एवं धौम्य नामक दो पुत्र थे, जिसमें से उपमन्यु को 'वैयाघ्रपद' पैंतक नाम प्राप्त हुआ था (म. अनु. १४.४५)।

२. वांसिप्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषियण।

व्याघ्रपाद् वासिष्ठ—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (क. ९. १७.१६-१८)।

२. एक स्मृतिकार जिसके नाम पर एक स्मृतिग्रंथ रचला है (C. C.)।

व्याघ्रहस्त—एक राक्षस, जो उध्वेष्टी नामक राक्षस का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम शरभ था (ब्रह्मांड. ३.७. २०३)।

व्याघ्राक्ष—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५४)।

व्याज—एक देव, जो भृगु ऋषि का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.१.७९)।

२. वृषि देवों में से एक।

व्याघ्री—वसिष्ठ ऋषि की पत्नी। इसके कुल १९ गोत्रकार पुत्र थे, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख थे :—१. व्याघ्रपाद २. मन्थ; ३. वादलोम; ४. जवालि; ५. मन्थु; ६. उपमन्यु; ७. नेतुकर्ण आदि (म. अनु. ५.३.३०-३२ कुं.)।

व्याडि दाक्षायण—एक सुविख्यात व्याकरणकार जो 'संग्रह' नामक वैदिक व्याकरणविषयक ग्रन्थ का कर्ता माना जाता है। इसका यही ग्रन्थ लुप्त होने पर, पतंजलि ने व्याकरण महाभाष्य नामक ग्रंथ की रचना की थी। अमरकोश के अनेकानेक भाष्यग्रन्थों में, व्याडि एवं वररुचि को व्याकरणशास्त्र के अंतर्गत लिंगभेदादि के शास्त्र का सर्वश्रेष्ठ आचार्य कहा गया है।

व्याकरण महाभाष्य में एवं काशिका में इसका निर्देश क्रमशः 'दाक्षायण' एवं 'दाक्षि' नाम से प्राप्त है (महा. २.३.६६; काशिका. ६.२.६९)। काशिका के अनुसार, दाक्षि एवं दाक्षायण समानार्थि शब्द माने जाते थे (काशिका. ४.१.१७, तत्रभवान् दाक्षायणः दाक्षिर्वा)।

वक्त्र—आचार्य पाणिनि दाक्षीपुत्र नाम से सुविख्यात था। इसी कारण 'दाक्षायण' व्याडि एवं 'दाक्षीपुत्र'

पाणिनि अपने मातृवंश की ओर से रिश्तेदार थे, ऐसा माना जाता है।

व्याडि की बहन का नाम व्याड्या था (पा. सू. ४. १.८०), एवं पाणिनि की माता का नाम दाक्षी था। कई अभ्यासकों के अनुसार, व्याड्या एवं दाक्षी दोनों एक ही थे, एवं इस प्रकार व्याडि आचार्य पाणिनि के मामा थे। किंतु वेबर के अनुसार, इन दो व्याकरणकारों में दो पीढ़ियों का अंतर था, एवं 'ऋक्यातिशाख्य' में निर्दिष्ट व्याडि पाणिनि से उत्तरकालीन था।

संभवतः इसके पिता का नाम व्यड था, जिस कारण इसे 'व्याडि' पैंतक नाम हुआ होगा। इसके 'दाक्षायण' नाम से इसके वंश के मूल पुरुष का नाम दक्ष विदित होता है। किंतु अन्य कई अभ्यासक, 'दाक्षायण' इसका पैंतक नहीं, बल्कि 'दक्षिक' नाम मानते हैं, एवं इसे दाक्षायण देश का रहनेवाला बताते हैं। मत्स्य में दाक्षि को अंगिराकुलोत्पन्न ब्राह्मण कहा गया है (मत्स्य १९५.२५)।

ऋक्यातिशाख्य में—शौनक के 'ऋक्यातिशाख्य' में वैदिक व्याकरण के एक श्रेष्ठ आचार्य के नाते व्याडि का निर्देश अनेक बार मिलता है, जिससे प्रतीत होता है कि, यह शौनक के शिष्यों में से एक था। अपने 'विकृतबह्वी' ग्रंथ के आरंभ में इसने आचार्य शौनक को नमन किया है।

पाणिनीय व्याकरण का व्याख्याता—व्याडि वैदिक व्याकरण का ही नहीं, बल्कि पाणिनीय व्याकरण का भी श्रेष्ठ भाष्यकार था—

रसाचार्यः कटिव्याडिः शब्दप्रज्ञैकवाङ्मुनिः।

दाक्षीपुत्रवचोव्याख्यापटुर्मीमांसाग्रणिः।

(समुद्रगुप्तकृत 'कृष्णचरित' १६)।

[संग्रहकार व्याडि पाणिनि के अष्टाध्यायी का ('दाक्षी-पुत्रवचन') का श्रेष्ठ व्याख्याता, रसाचार्य, एवं मीमांसक था।]

इसके 'मीमांसाग्रणि' उपाधि से प्रतीत होता है कि, इसने मीमांसाशास्त्र पर भी कोई ग्रंथ लिखा होगा। पतंजलि के व्याकरण-महाभाष्य में इसे 'द्रव्यपदार्थवादी' कहा गया है (महा. १.२.६४)। अष्टाध्यायी में भी 'व्याडिशाला' शब्द का निर्देश प्राप्त है, जिसका संकेत संभवतः इसी के ही विस्तृत शिष्यशाखा की ओर किया गया होगा (पा. सू. ६.२.८६)।

संग्रह—व्याडि के द्वारा रचित ग्रन्थों में 'संग्रह' श्रेष्ठ ग्रन्थ माना जाता है, किन्तु वह वर्तमानकाल में अप्राप्य है। इस ग्रंथ के जो उद्धरण उत्तरकालीन ग्रंथों में लिये गये हैं, उन्हींसे ही उसकी जानकारी आज प्राप्त हो सकती है। पतंजलि के व्याकरण-महाभाष्य के अनुसार, यह व्याकरण का एक श्रेष्ठ दार्शनिक ग्रंथ था, जिसकी रचनापद्धति पाणिनीय अष्टाध्यायी के समान सूत्रात्मक थी (महा. ४.२.६०)। इस ग्रंथ में चौदह सहस्र शब्द-रूपों की जानकारी दी गयी थी (महा. १.१.१)। चांद्र व्याकरण में प्राप्त परंपरा के अनुसार, इस ग्रंथ के कुल पैंच अध्याय थे, एवं उनमें १ लक्ष श्लोक थे (चांद्र-व्याकरणवृत्ति. ४.१६१)।

कालनिर्णय—आधुनिक अभ्यासकों के अनुसार, यास्क, शौनक, पाणिनि, भिंगल, व्याडि, एवं कौस ये व्याकरणाचार्य प्रायः समकालीन ही थे। इनमें से शौनक के द्वारा विरचित 'ऋष्यातिशाख्य' का रचनाकाल २८०० ई. पू. माना जाता है। व्याडि का काल संभवतः यही होगा (युधिष्ठिर मीमांसक, पृ. १३९)।

ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त हैं:— १. संग्रह. २. विकृतवल्ली. ३. व्याडिव्याकरण. ४. बल-रामचरित. ५. व्याडि-परिभाषा. ६. व्याडिशिक्षा (C.C.) गण्डपुराण के अनुसार, इसने रत्नविद्या के संबंध में भी एक ग्रंथ की रचना की थी (गण्ड. १.६९.३७)।

व्याध्याज्य—भृगुकुलोत्पन्न एक पौत्रकार।

व्यास 'धर्मशास्त्रकार'—एक धर्मशास्त्रकार, जिसके द्वारा रचित एक स्मृति आनंदाश्रम, पूना, ध्यंकेश्वर प्रेस, वेवई एवं जीवानंद स्मृतिसंग्रह में प्रकाशित की गयी है। इस 'स्मृति' के चार अध्याय, एवं २५० श्लोक हैं।

व्यासस्मृति—'व्यासस्मृति' में वर्णाश्रमधर्म, नित्यकर्म, स्नानभोजन, दानधर्म आदि व्यवहारविषयक धर्मशास्त्रीय विषयों की चर्चा की गयी है। 'अपराक', 'स्मृतिचंद्रिका' आदि ग्रंथों में इसके व्यवहारविषयक उद्धरण प्राप्त हैं।

अन्य ग्रंथ—'व्यासस्मृति' के अतिरिक्त इसके निम्नलिखित ग्रंथों का निर्देश भी निम्नलिखित स्मृतिग्रंथों में प्राप्त हैं:— १. गद्यव्यास-स्मृतिचंद्रिका; २. बृहद्व्यास-अपराक; ३. बृहद्व्यास-मिताक्षरा; ४. लघुव्यास, महाव्यास, दान-व्यास-दानसागर।

पुराण में यह एवं कृष्ण द्वैपायन व्यास एक ही व्यक्ति होने का निर्देश प्राप्त है (भा.व. ब्राह्म. १)। किन्तु इस संबंध में निश्चित रूप से कहना कठिन है।

व्यास पाराशर्य—एक सुविख्यात आचार्य, जो वैदिक संहिताओं का पृथकरणकर्ता, वैदिक शास्त्राप्रवर्तकों का आद्य आचार्य, ब्रह्मसूत्रों का प्रणयिता, महाभारत पुराणादि ग्रंथों का रचयिता, एवं वैदिक संस्कृति का पुनरुज्जीवक तत्त्वज्ञ माना जाता है। यह सर्वज्ञ, सत्यवादी, सांख्य, योग, धर्म आदि शास्त्रों का ज्ञाता एवं दिव्यदृष्टि था (म. स्व. ५. ३१-३३)। वैदिक, पौराणिक एवं तत्त्वज्ञान संबंधी विभिन्न क्षेत्रों में व्यास के द्वारा किये गये अपूर्व कर्तृत्व के कारण, यह सब दृष्टि से श्रेष्ठ ऋषि प्रतीत होता है।

प्राचीन ऋषिविषयक व्याख्या में, असामान्य प्रतिभा, क्रांतिदर्शी द्रष्टापन, जीवनविषयक विरागी दृष्टिकोण, अगमध विद्वत्ता, एवं अप्रतीम संगठन-कौशल्य इन सारे गुणों का सम्मिलन आवश्यक माना जाता था। इन सारे गुणों की व्यास जैसी मूर्तिमेंत साकार प्रतिभा प्राचीन भारतीय इतिहास में क्वचित् ही पायी जाती है। इसी कारण, पौराणिक साहित्य में इसे केवल ऋषि ही नहीं, किन्तु साक्षात् देवतास्वरूप माना गया है। इस साहित्य में इसे विष्णु का (वायु. १.४२-४३; कूर्म. १.३०.६६; गरुड. १.८७.५९); शिव का (कूर्म. २.१५.१३६); ब्रह्मा का (वायु. ७७.७४-७५; ब्रह्मांड. ३.५३.७६); एवं ब्रह्मा के पुत्र का (लिंग. २.४९.१७) अवतार कहा गया है।

सनातन हिंदुधर्म का रचयिता—श्रुतिस्मृतिपुराणोक्त सनातन हिंदु धर्म का व्यास एक प्रधान व्याख्याता कहा जाता है। व्यास महाभारत का केवल रचयिता ही नहीं, बल्कि भारतीय सांस्कृतिक पुनरुज्जीवन का एक ऐसा आचार्य था कि, जिसने वैदिक हिंदुधर्म में निर्दिष्ट सनस्त धर्मतत्त्वों को बदलते हुए देश काल-परिस्थिति के अनुसार, एक विशुद्ध नया स्वरूप दिया। भगवद्गीता जैसा अनुपम रत्न भी इसकी कृपा से ही संसार को प्राप्त हो सका, जहाँ इसने श्रीकृष्ण के अमर संदेश को संसार के लिए सुलभ बनाया।

इसी कारण युधिष्ठिर के द्वारा महाभारत में इन 'भगवान्' उपाधि प्रदान की गयी है—

भगवानेव नो मान्यो भगवानेव नो गुरुः।

भगवानस्य राज्यस्य कुलस्य च परायणम्॥

(म. आश्र. ८.७)।

(भगवान् व्यास हमारे लिये अत्यंत पूज्य, एवं हमारे गुरु हैं। हमारे राज्य एवं कुल के वे सर्वश्रेष्ठ आचार्य हैं)।

वैदिक साहित्य में—वैदिक-संहिता साहित्य में व्यास का निर्देश अप्राप्य है। 'सामविधान ब्राह्मण' में इसे 'पाराशर्य' पैतृक नाम प्रदान किया गया है, एवं इसे विश्वरूपेण नामक आचार्य का शिष्य कहा गया है (सा. ब्रा. १.४.३७)। तैत्तिरीय आरण्यक में भी महाभारत के रचयिता के नाते व्यास एवं वैशंपायन ऋषियों का निर्देश प्राप्त है (ता. अ. १.१.२)। वेबर के अनुसार, शुक्ल-यजुर्वेद की आचार्यपरंपरा में पराशर एवं उसके वंशों का काफी प्रभुत्व शुरू से ही प्रतीत होता है।

बौद्धसाहित्य में बुद्ध के पूर्वजन्मों में से एक जन्म का नाम 'कह वीपायन' (कृष्ण द्वैपायन) दिया गया है (वेबर, पृ. १८४)। इससे प्रतीत होता है कि, बौद्ध साहित्य की रचनकाल में व्यास का कृष्ण द्वैपायन नाम काफी प्रसिद्ध हो चुका था।

पाणिनीय व्याकरण में—पाणिनि के अष्टाध्यायी में व्यास का निर्देश अप्राप्य है, एवं महाभारत ग्रंथ का निर्देश भी वहीं एक ग्रंथ के नाते नहीं, बल्कि भरतवंश में उत्तम युधिष्ठिर, आदि श्रेष्ठ व्यक्तियों को उद्दिश्य कर प्रयुक्त किया गया है (पा. सू. ६:२.३८)।

पतंजलि के व्याकरण—महाभाष्य में महाभारत कथा का निर्देश अनेकवार प्राप्त है, इतना ही नहीं, शुक्र वैयासकि नामक एक आचार्य का निर्देश भी वहीं प्राप्त है, जिसे व्यास का पुत्र होने के कारण 'वैयासकि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (महा. २.२५३)।

इससे प्रतीत होता है कि, महाभारत का निर्माण पाणिनि के उत्तर काल में, एवं पतंजलि के पूर्वकाल में उत्पन्न हुआ होगा।

महाभारत एवं पुराणों में—इन ग्रंथों में इसे महर्षि पराशर का पुत्र कहा गया है, एवं इसकी माता का नाम सत्यवती (काली) बताया गया है, जो कैवर्तराज (शिवर) की कन्या थी। इसका जन्म यमुनाद्वीप में हुआ था, जिस कारण इसे 'द्वैपायन' नाम प्राप्त हुआ था (म. आ. ५.४.२)। इसकी माता का नाम 'काली' होने के कारण, इसे 'कृष्ण' अर्थात् कृष्ण द्वैपायन नाम प्राप्त हुआ था। भागवत के अनुसार, यह स्वयं कृष्ण-वर्ण था, जिस कारण इसे 'कृष्ण' द्वैपायन नाम प्राप्त हुआ था।

जन्मतिथि—वैशाख पूर्णिमा यह दिन व्यास की जन्मतिथि मानी जाती है। उसी दिन इतका जन्मोत्सव

भी मनाया जाता है। अष्टाष्ट पौर्णिमा को इसीके ही नाम से 'व्यास पौर्णिमा' कहा जाता है।

विभिन्न नामान्तर—इसने समस्त वेदों की पुनर्रचना की थी, जिस कारण इसे व्यास नाम प्राप्त हुआ था:—

विश्वानु वेदात् यस्मात्स तस्माद् व्यास इति स्मृतः।

(म. आ. ५.७.७३)।

महाभारत में इसके पराशरामुत्र, पाराशर्य, सत्यवती सुत नामान्तर बताये गये हैं। वायु में इसे 'पुराणप्रवक्ता' कहा गया है, जो नाम इसे आख्यान, उपाख्यान, गाथा कुल, कर्म आदि से संयुक्त पुराणों की रचना करने के कारण प्राप्त हुआ था (वायु. ६०.११-२१; विष्णुधर्म. १.७४)।

तपस्या—अत्यंत कठोर तपस्या कर के इसने अनेकानेक सिद्धियां प्राप्त की थी। यह दूरश्रवण, दूर-दर्शन आदि अनेक विद्याओं में प्रवीण था (म. आश्र. ३७.१६)।

अपनी तपस्या के बारे में यह कहता है—

पश्यन्तु तपसो वीर्यमद्य मे चिरसंभृतम्।

तद्गुच्यतां महाबाहो कं कामं प्रदिशामि ते॥

प्रवणोऽस्मि वरं दातुं पश्य मे तपसो बलम्।

(म. आश्र. ३६.२०-२१)।

कौरवपाण्डवों का पितामह—यह कौरवपाण्डवों का पितामह था, इसी कारण यह सदैव उनके हित के लिए तत्पर रहता था। इसके द्वारा विरचित महाभारत ग्रंथ में यह केवल निवेदक के नाते नहीं, बल्कि पांडवों के हितचिंतक के नाते कार्य करता हुआ प्रतीत होता है।

जनमेजय के यज्ञमण्डप में—महाभारत के अनुसार, यह जनमेजय के सर्पसत्र में उपस्थित था। इसे आता हुआ देख कर जनमेजय ने इसका यथोचित स्वागत किया, एवं सुवर्ण सिंहासन पर बैठ कर इसका पूजन किया था। पश्चात् जनमेजय ने 'महाभारत' का वृत्तंत पढ़ा, तब इसने अपने पास बैठे हुए वैशंपायन नामक शिष्य को स्वरचित 'महाभारत' कथा सुनाने की आज्ञा दी (म. आ. ५४)।

उस समय व्यास को नमस्कार कर वैशंपायन ने 'कार्णा-वेद' नाम से सुविख्यात महाभारत की कथा कह सुनाई।

पाण्डवों का हितचिंतक—इसने पाण्डवों को द्रौपदी-स्वयंवर की वार्ता सुनाई थी। इसने युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय अर्जुन, भीम, सहदेव एवं नकुल को क्रमशः उत्तर, पूर्व, दक्षिण तथा पश्चिम दिशाओं की ओर जाने के लिए उपदेश दिया था।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, यह ब्रह्मा बना था। उसी यज्ञ में, आनेवाले क्षत्रियसंहार का भविष्य इसने युधिष्ठिर को सुनाया था।

प्रतिस्मृतिविद्या का उपदेश—पांडवों के वनवासकाल में भी, समय समय उनका धीरज धँवाने का कार्य यह करता रहा। वनवास के प्रारंभकाल में युधिष्ठिर जब अत्यंत निराश हुआ था, तब इसने उसे 'प्रतिस्मृतिविद्या' प्रदान की थी। इसी विद्या के कारण, अर्जुन रुद्र एवं इंद्र से अनेकानेक प्रकार के अस्त्र प्राप्त कर सका (म. व. ३७.२७-३०)।

पश्चात् यह कुरुक्षेत्र में गया, एवं वहाँ स्थित सभी तीर्थों का इनने एकत्रीकरण किया। वहाँ स्थित 'व्यासवन' एवं 'व्यासस्थली' में इसने तपस्या की।

भारतीय युद्ध में—भारतीय युद्ध के समय, इसने धृतराष्ट्र को दृष्टि प्रदान कर, उसे युद्ध देखने के लिए समर्थ बनाना चाहा। किंतु धृतराष्ट्र के द्वारा युद्ध का रौद्र स्वरूप देखने के लिए इन्कार किये जाने पर, इसने संजय को दिव्यदृष्टि प्रदान की, एवं युद्धकर्ता धृतराष्ट्र तक पहुँचाने की व्यवस्था की थी (म. भी. २.९)।

भारतीय युद्ध में, सात्यकि ने संजय को पकड़ने का (म. श. २४.५१), एवं मार डालने का (म. श. २८. ३५-३८) प्रयत्न किया। किंतु इन दोनों प्रसंग में व्यास ने संजय की रक्षा की। युद्ध के पश्चात्, व्यासकुशा से संजय को प्राप्त हुई दिव्यदृष्टि नष्ट हो गयी (म. सौ. ९.५८)।

पुत्रवध के दुःख से गांधारी पांडवों को शाप देने के लिए उद्यत हुई, किंतु अंतर्ज्ञान से यह जान कर, व्यास ने उसे परावृत्त किया (म. स्त्री. १३.३-५)। धृतराष्ट्र एवं गांधारी की दिव्यचक्षु प्रदान कर, इसने उन्हें गंगा नदी के प्रवाह में उनके मृत पुत्रों का दर्शन कराया था (म. आश्र. ४०)।

भारतीय युद्ध के पश्चात्—युद्ध के पश्चात् इसने युधिष्ठिर को शंख, लिखित, मृग्युग्न, हयग्रीव, सेनाजित् आदि राजाओं के चरित्र सुना कर राजधर्म एवं राजदंड का उपदेश किया। इसने युधिष्ठिर को सेनाजित् राजा का उदाहरण दे कर निराशावादी न बनने का, एवं जनक की कथा सुना कर प्रारब्ध की प्रकृता का उपदेश निवेदित किया। पश्चात् इसने उसे मनःशांति के लिए प्रायश्चित्त-विधि भी कथन किया।

शुकदेव को उपदेश—इसने अपने पुत्र शुकदेव को निम्नलिखित विषयों पर आधारित तत्त्वज्ञानपर उपदेश कथन किया था :—सृष्टिकर्म एवं युगधर्म; ब्राह्मणप्रत्य एवं महाप्रलय, मोक्षधर्म एवं क्रियाफल आदि।

उपदेशक व्यास—नारद के मुखा से इसे सात्वतधर्म का ज्ञान हुआ था, जो इसने आगे चल कर युधिष्ठिर को कथन किया था। इसके अतिरिक्त इसने भीष्म (म. अनु. २४.५-१२); मैत्रेय (म. अनु. १२०-१२२); शुक आदि को भी उपदेश प्रदान किया था।

अश्वमेध यज्ञ में—इसने युधिष्ठिर को मनःशांति के लिए अश्वमेध यज्ञ करने का आदेश दिया था। इस यज्ञ में अर्जुन, भीष्म, नकुल एवं सहदेव को क्रमशः अश्वरक्षा, राश्वरक्षा, कुटुंबव्यवस्था का कार्य इत्ते के द्वारा ही सौगा गया था।

यज्ञ के पश्चात्, युधिष्ठिर ने अपना सारा राज्य इसे दान में दिया। इसने उसे स्वीकार कर के उसे पुनः एक बार युधिष्ठिर को लौटा दिया, एवं आज्ञा दी कि, वह समस्त धनलक्ष्मी ब्राह्मणों को दान में दे।

परिवार—गुलाची अप्सरा (अरणी) से इलं शुक नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ५७.७४)। स्कंद में शुक को जाबालि ऋषि की कन्या वटिका से उत्पन्न पुत्र कहा गया है (स्कंद. ६८.१४०-१४८)।

शुक के अतिरिक्त, इसे विचित्रवीर्य राजाओं की अंबिका एवं अंबालिका नामक पत्नियों से क्रमशः धृतराष्ट्र एवं पाण्डु नामक नियोगज पुत्र उत्पन्न हुए थे। विदुर भी इसीका ही पुत्र था, जो अंबालिका के शूद्रजातीय दासी से इस उत्पन्न हुआ था।

व्यास-वेश—इसके पुत्र शुक ने इसका वेश आगे चलाया। शुक का विवाह पीवरी में हुआ था, जिससे उसे भूरिश्रम, प्रभु, शंभु, कृष्ण एवं गौर नामक पाँच पुत्र, एवं कीर्तिमती नामक एक कन्या उत्पन्न हुई थी, जिसका विवाह अशुह राजा से हुआ था। कीर्तिमती के पुत्र का नाम ब्रह्मदत्त था (वायु. ९०.८४-८६)।

चिरंजीविविच—कुशवंशीय राजाओं में से शंतनु, विचित्रवीर्य, धृतराष्ट्र, कौरवपांडव, अभिमन्यु, परिक्षित्, जनमेजय, शतानीक आठ पीढ़ियों के राजाओं से व्यास का जीवनचरित्र संबंधित प्रतीत होता है। ये सारे निर्देश इसके दोषायुष्य की ओर संकेत करते हैं। प्राचीन साहित्य में इसे केवल शीघ्रयुपी ही नहीं, बल्कि चिरंजीव कहा गया है।

व्यास स्थूल—व्यास के जीवन से संबंधित निम्नलिखित स्थलों का निर्देश महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है :—

(१) व्यासवन—यह कुरुक्षेत्र में है (म. व. ८१. ७८; तारक. ३.६५.५; ८२: वामन. ३५.५; ३६.५६)।

(२) व्यासश्रुती—यह कुरुक्षेत्र में है। यहाँ पुत्रशोक के कारण, व्यास वेद-याग के लिए प्रवृत्त हुआ था (म. व. ८१.८१; तारक. ३. ६५.८५; वामन. ३६.६०)।

(३) व्यानाश्रम—यह हिमालय पर्वत में वदरिकाश्रम के पास अलकनंदा-सरस्वती नदियों के संगम पर शम्भा-प्रासदीय के समीप बना हुआ था।

इसी आश्रम में व्यास के द्वारा सुमेतु, वैशंपायन, जैमिनि एवं पैतृ आदि आचार्यों को वेदों की शिक्षा दी गयी थी। व्यास का वेदप्रसार का कार्य इसी आश्रम में प्रारंभ हुआ था, एवं चारों श्रेणों में वेदप्रसार करने के नियम आदि इसी आश्रम में व्यास के द्वारा निश्चित किये गये थे (म. शं. ३१४)।

(४) व्यानकाश्री—यह वाराणसी में रामनगर के समीप बसी हुई थी।

अद्वैत व्यास—चरित्र महाभारत की रचना करनेवाले व्यास महर्षि एक ही थे, फिर भी पुराणों में अष्टाईस व्यासों की एक नामावलि दी गयी है, जिसके अनुसार वैश्वत मन्वन्तर के हर एक द्वापर में उत्पन्न हुआ व्यास अल्प व्यक्ति प्रताया गया है। वर्तमान वैश्वत मन्वन्तर के अष्टाईस द्वापर आज तक पूरे हो चुके हैं, इसी कारण पुराणों में व्यासों की संख्या अष्टाईस बतायी गयी है, जहाँ कृष्ण दैवधन व्यास को अष्टाईसवें व्यास कहा गया है।

पुराणों में दी गयी अष्टाईस व्यासों की नामावलि कल्पना-रम्य, अनैतिहासिक एवं आद्य व्यास महर्षि की महत्ता बढ़ाने के लिए तैयार की गयी प्रतीत होती है। विभिन्न पुराणों में प्राप्त अष्टाईस व्यासों के नाम एक दूसरे से मेल नहीं खाते हैं। इन व्यासों का निर्देश एवं जानकारी प्राचीन साहित्य में अन्यत्र वहाँ भी प्राप्त नहीं है।

विष्णु पुराण में प्राप्त अष्टाईस व्यासों की नामावलि नीचे दी गयी है, एवं अन्य पुराणों में प्राप्त पाठभेद क्रम में दिये गये हैं:— १. स्वयंभु (प्रभु, ऋभु, क्रतु); २. प्रजापति (मय); ३. उग्रजम् (भागीव); ४. बृहस्पति (अंगिरस); ५. मयितु; ६. मृत्यु; ७. इंद्र; ८. वसिष्ठ; ९. सासपद; १०. त्रिवामन् ११. त्रिवृपन (निवृत्त); १२. भगवान् (शततेजस्); १३. अन्तर्गिर (धर्म-नायायण); १४ वपिन् (धर्म, रक्ष, स्वरक्षस, सुरक्षण);

१५. शयःरुण (आरुणि); १६. धनेत्रय (देव, कुतंत्रय, संजय, कृतंत्रय); १७. कुतंत्रय (मेधातिथि); १८. ऋगजय (प्रतिभु); १९. भगवान्; २०. गौतम; २१. उत्तम (ह्योमन्); २२. वेन (राजःखवसु, वाजश्रवसु, वाजश्रवस, वाचःश्रवस); २३. गुण्मायण सोम (तुणवितु, सोम आमुप्यायण); २४. वाल्मीकि (ऋक्ष-भागीव); २५. शक्ति (शक्ति वासिष्ठ, भागीव, यक्ष, कृष्ण); २६. पराशर (शाकतेय); २७. जातुकण; २८. कृष्ण वैशंपयन (प्रभुत) (विष्णु. ३.३.११-२०; दे. भा. १.३; लिग. १.२४. शिव. शत. ५; शिव. वायु. सं. ८; वायु. २३; स्कंद. १.२.४०; कर्म. पूर्व. ५१.१-११)।

व्याससहायक शिवावतार—पुराणों में निर्दिष्ट उपयुक्त अष्टाईस व्यासों के अनिश्चित कई पुराणों में व्यास, सहायक शिवावतार भी दिये गये हैं, जो कलियुग के प्रारंभ में उत्पन्न हो कर द्वापर युग के व्यासों का कार्य आगे चलाते हैं। व्याससहायक शिवावतार के, एवं उसके चार शिष्यों के नाम विभिन्न पुराणों में दिये गये हैं (शिव. शत. ४-५; शिव. वायु. ८.५; वायु. २३; लिग. ७)।

कर्तृत्व—व्यास के कर्तृत्व के तीन प्रमुख पहलू माने जाते हैं:— १. वेदरक्षार्थ वेदविभाजन; २. पौराणिक साहित्य का निर्माण; ३. महाभारत का निर्माण।

व्यास के इन तीनों कार्यों की संश्लिष्ट जानकारी नीचे दी गयी है।

वेदसंरक्षणार्थ वेदविभाज—द्वापर युग के अन्त में वेदों का संरक्षण करने वाले द्वित्र लोग दुर्बल होने लगे, एवं समस्त वैदिक वाङ्मय नष्ट होने की संभावना उत्पन्न हो गयी। वेदों का नाश होने से समस्त भारतीय संस्कृति का नाश होगा, यह जान कर व्यास ने समस्त वैदिक वाङ्मय की पुनर्रचना की। इस वाङ्मय का ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद इन चार स्वतंत्र संहिताओं में विभाजन कर, इन चार वेदों की विभिन्न शाखाएँ निर्माण की। आगे चल कर, इन वैदिक संहिताओं के संरक्षण एवं प्रचार के लिए इसने विभिन्न शिष्यपरंपराओं का निर्माण किया (वायु. ६०.१-१६)। व्यास के द्वारा किये गये वैदिक संहिताओं की पुनर्रचना या यह क्रान्तिदर्शी कार्य इतना सफल साबित हुआ कि, आज हजारों वर्षों के बाद भी वैदिक संहिता ग्रंथ अपने मूल स्वरूप में ही आज उपलब्ध हैं।

वेदों का विभाजन—पुराणों के अनुसार, व्यास के द्वारा चतुष्पाद वैदिक संहिता ग्रंथ का विभाजन कर, इनकी चार स्वतंत्र संहिताएँ बनायी गयीं—

ततः स ऋच उद्ध्युष्य ऋग्वेदसमकल्पयत् ।

(वायु. ६०.१९; ब्रह्मांड. ३.२४.१९) ।

(व्यास ने ऋग्वेद की ऋचाएँ अलग कर, उन्हें 'ऋग्वेद संहिता' के रूप में एकत्र कर दिया) ।

व्यास के पूर्वकाल में ऋक्, यजु, साम, एवं अथर्व मंत्र यद्यपि अस्तित्व में थे, फिर भी वे सारे एक ही वैदिक संहिता में मिलेजुले रूप में अस्तित्व में थे। इसी एकात्मक वैदिक संहिता को चार स्वतंत्र संहिताओं में विभाजित करने का अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य व्यास ने किया। इस प्रकार विद्यमानकालीन वैदिक संहिताओं का चतुर्विध विभाजन, एवं उनका रचनात्मक आविष्कार ये दोनों वैदिक साहित्य को व्यास की देन है, जो इस साहित्य के इतिहास में एक सर्वश्रेष्ठ कार्य माना जा सकता है।

व्यास के द्वारा रचित वैदिक संहिताओं का तत्कालीन भारतीय ज्ञाताओं ने बिना हिचकिचाहट स्वीकार किया, यह एक ही घटना व्यास के कार्य का निर्दोषत्व एवं तत्कालीन समाज में इसका महत्वपूर्ण स्थान प्रस्थापित कर देती है (पार्थि. ३१८) ।

व्यास की वैदिक शिष्यपरंपरा—व्यास की वैदिक शिष्यपरंपरा की विस्तृत जानकारी पुराणों में दी गयी है। इनमें से सर्वाधिक प्रामाणिक एवं विस्तृत जानकारी वायु एवं ब्रह्मांड में प्राप्त हैं, जिसकी तुलना में विष्णु एवं भागवत में दी गयी जानकारी त्रुटिपूर्ण एवं संक्षेपित प्रतीत होती है।

इस जानकारी के अनुसार, व्यास की वैदिक शिष्य-परंपरा के ऋक्, यजु, साम एवं अथर्व ऐसे चार प्रमुख विभाग थे।

व्यास की उग्रयुक्त शिष्यपरंपरा में से 'मौखिक' संप्रदाय के प्रमुख आचार्यों की नामावलि 'वैदिक शिष्य-परंपरा' के तात्त्विका में दी गयी है। 'प्रथिक' संप्रदाय के आचार्यों की नामावलि 'वैदिक धर्मग्रन्थ' की तात्त्विका में दी गयी है।

(१) व्यास की ऋक्षिष्यपरंपरा—व्यास की ऋक्षिष्यपरंपरा का प्रमुख शिष्य पैल था। व्यास से प्राप्त ऋक्संहिता की दो संहिताएँ बना कर पैल ने उन्हें अपने

इंद्रप्रमति एवं वाष्कल (वाष्कलि) नामक दो शिष्यों को प्रदान किया।

(अ) वाष्कल-शाखा—यही संहिता आगे चल कर वाष्कल ने अपने निम्नलिखित शिष्यों को सिखायी :— १. श्रेष्य (श्रेष, शैष्य); २. अग्निमाटर (अग्निमित्र, अग्निमातर); ३. पराशर; ४. याज्ञवल्क्य; ५. कालायनि (बालायनि); ६. गार्ग्य (भृग्य); ७. कथाज्व (कासार)। इनमें से पहले चार शिष्यों के नाम सभी पुराणों में प्राप्त हैं, अंतिम नाम केवल भागवत एवं विष्णु में ही प्राप्त हैं।

(आ) इंद्रप्रमति-शाखा—इंद्रप्रमति का प्रमुख शिष्य माण्डुक्य (मार्कंडेय) था। आगे चल कर माण्डुक्य ने वह संहिता अपने पुत्र सत्यश्रवम् को सिखायी। सत्यश्रवम् ने उसे अपने शिष्य सत्यहित को, एवं उसने अपने पुत्र सत्यश्री को सिखायी।

विष्णु में इंद्रप्रमति के द्वितीय शिष्य का नाम शाकपूणि (शाकवैण) रथीतर दिया गया है, किन्तु वायु एवं ब्रह्मांड में सत्यश्री शाकपूणि को सत्यश्री का पुत्र बताया गया है।

(इ) सत्यश्री-शाखा—सत्यश्री के निम्नलिखित तीन सुविख्यात शिष्य थे :—१. देवमित्र शाकत्य, जिसे भागवत में सत्यश्री का नहीं, बल्कि माण्डुक्य का शिष्य कहा गया है। २. शाकवैण रथीतर (रथंतर, रथान्तर); ३. वाष्कलि भारद्वाज, जिसे भागवत में जातुकर्य कहा गया है।

(ई) देवमित्र शाकत्य-शाखा—देवमित्र के निम्नलिखित शिष्य प्रमुख थे :—१. भुद्रल; २. गोवल् (गोवल्, गोल्ल); ३. शालीय (खालीय, खलियस); ४. वस (मस्य, वास्य, वास्य); ५. शैत्रिय (शिशिर); ६. जातुकी, जिसका निर्देश केवल भागवत में ही प्राप्त है।

(उ) शाकवैण रथीतर-शाखा—इसके निम्नलिखित चार शिष्य प्रमुख थे :—१. केतव (कौतव, पैव, पैल); २. दालकि (वैतालिक, वैताल, इक्षलक); ३. शनभलक (बलक, धर्मशर्मन्); ४. नैगम (निरुक्तकृत, विरग गज, देवशर्मन्)।

(ऊ) वाष्कलि भारद्वाज-शाखा—इसके निम्नलिखित तीन शिष्य प्रमुख थे :—१. नभयनीय (अनभय); २. पन्नगारि; ३. अर्जव (अर्यव) (विष्णु. ३.८.१६-२६; भा. १२.६.५४-५९; वायु. ६०.२४-६६; ब्रह्मांड. २.३४-३५)।

व्यास की वैदिक शिष्यपरंपरा

ऋग्वेद	यजुर्वेद	सामवेद	अथर्ववेद
पैल	वैशंपायन	जैमिनि	सुमन्त
इंद्रप्रमति, वाष्कल	—	सुमन्तु-जैमिनि	कव्य
बोधय, याज्ञवल्क्य, पराशर, माण्डुक्येय	याज्ञवल्क्य-ब्रह्मराति	सुखन्-जैमिनि	पथ्य, देवादश
सत्यश्रवस्	तित्तिरी	सुकर्मन्-जैमिनि	पिप्पलाद
सत्यहित	—	पौण्ड्रिण्ड्य	जाजलि-शौनक
सत्यश्री	माध्यंदिन, काण्व	लौगाक्षि, कुशुमि, कुशितिन्, लंगलि	सैन्धवायन, बभ्रु
शाकव्य, वाष्कलि, शाकपूर्ण	याज्ञवल्क्य	राणायनीय, तण्डि-पुत्र, पराशर, भागविति	—
पन्नगारि, शैशिरेय, वत्स, शतबलाक	व्यामायनि, आसुरि अल्गिन्	—	मुञ्जकेश
—	—	लोमगायनि, पाराशर्य, प्राचीनयोग	—
—	—	आसुरायण, पतंजलि	—

ऋग्वेद की प्रमुख-शाखाएँ—व्यास के प्रमुख शिष्य-प्रशिक्ष्यों को 'शाखाप्रवर्तक आचार्य' कहा जाता है, एवं उनके द्वारा प्रणीत संहितापरंपरा को 'शाखा' कहा जाता है। इन विभिन्न शाखाओं द्वारा पुरस्कृत वैदिक संहिता यद्यपि एक ही थी, फिर भी विभिन्न 'दृष्टि-विश्रम' एवं 'स्वरवर्ण' (उच्चारणपद्धति) के कारण हर एक शाखा की संहिता विभिन्न बन जाती थी।

पौराणिक साहित्य में ऋग्वेद के विभिन्न शाखाओं का यद्यपि निर्देश है, फिर भी इनमें से बहुत ही थोड़ी

शाखाएँ व्यासशिष्य परंपरा में निर्दिष्ट आचार्यों के नामों से मिलती जुटती दिखाई देती हैं।

पतंजलि महाभाष्य एवं महाभारत में ऋग्वेद की इकौस शाखाओं का निर्देश प्राप्त है। किंतु उनकी नामावलि वहाँ अप्राप्य है (महा. १; म. शां. ३३०-३२; कर्म. पूर्व. ५२.५९)।

'चरणव्यूह' में ऋग्वेद की निम्नलिखित पाँच शाखाओं का निर्देश प्राप्त है:—१. शाकल (शैशिरीय); २. वाष्कल; ३. आश्वलायन; ४. शांखायन; ५. मण्डूका-

उपलब्ध वैदिक धर्मग्रंथ

वेद	शाखा	उपलब्ध संहिता	ब्राह्मण	आरण्यक	उपनिषद्	श्रौतसूत्र	गृह्य, धर्म एवं शुल्ब सूत्र	व्याकरण
ऋग्वेद	१ शकल २ वाष्कल ३ शांख्यायन	१ पृत्रेय २ शांख्यायन	१ पृत्रेय २ शांख्यायन	१ पृत्रेय २ कौथिली ३ वाष्कल	१ आश्वलायन २ शांख्यायन	१ आपस्तम्ब २ बौधायन ३ भारद्वाज ४ मानव ५ वाथूल ६ वाराह ७ वैश्वानस ८ हिरण्यकेशी (सत्यापाह)	१ आश्वलायन (गृह्य) २ शांख्यायन (गृह्य) ३ वसिष्ठ (धर्म)	१. ऋक्संहिता-शास्त्र
कुष्मण्डुवेद	१ तैत्तिरीय २ मैत्रायणी ३ कठ ४ कात्थिल	१ तैत्तिरीय २ कठ	१ तैत्तिरीय २ मैत्रायणी	१ तैत्तिरीय २ महानारायण ३ मैत्रायणी ४ कठ ५ श्वेताश्वतर ६ मैत्री	१ आपस्तम्ब २ बौधायन ३ भारद्वाज ४ मानव ५ वाथूल ६ वाराह ७ वैश्वानस ८ हिरण्यकेशी (सत्यापाह)	१ आपस्तम्ब (गृह्य, शुल्ब, धर्म), २ कठ (गृह्य) वागाह (गृह्य), ३ बौधायन (गृह्य, शुल्ब, धर्म) ४ मानव (गृह्य), ५ वैश्वानस (धर्म), ६ हिरण्यकेशी (गृह्य, धर्म)	१. तैत्तिरीय प्रातिशास्त्र	
सुह्यवेद	१ काण्व २ माण्डूकिन	शतपथ १. काण्व (१७ ब्राण्ड) २. माण्डूकिन (१४ ब्राण्ड)	शतपथ १. काण्व (१७ ब्राण्ड) २. माण्डूकिन (१४ ब्राण्ड)	१ इंशावास्यक २ वृहदारण्यक	१ इंशावास्य (संहिता में से ४० वीं अध्याय) २ वृहदारण्यक	१ काण्व्यायन	१ पारस्कर गृह्य (काण्व्यायन)	१. काण्व्यायन प्रातिशास्त्र २. भाषिकसूत्र
सामवेद	१ कौथुम २ राणाशनीय	१ पंचविंश (श्रीड, तांड्य) २ षड्विंश, ३ सप्तविंशान, ४ आष्येय, ५ मंत्र, ६ देवताध्याय, ७ वंश, ८ संहितापनिषद्, ९ जैमिनीय १० जैमिनीयोपनिषद्	१ पंचविंश (श्रीड, तांड्य) २ षड्विंश, ३ सप्तविंशान, ४ आष्येय, ५ मंत्र, ६ देवताध्याय, ७ वंश, ८ संहितापनिषद्, ९ जैमिनीय १० जैमिनीयोपनिषद्	१ जैमिनीय २ केव (जैमिनीयोपनिषद् ब्रा. में से ४.१८.२१)	१ खादिर (तांड्य) २ द्रहरायन ३ लाड्यायन	१ खादिर (गृह्य) २ गोभिल (गृह्य) ३ मौतम (गृह्य और धर्म) ४ जैमिनि (गृह्य)	१. पुष्पसूत्र	
अथर्ववेद	१ तिल्लार २ शौनक	१ गोपथ	१ गोपथ	१ प्रथ, २ मांडूक्य ३ मुडक इत्यादि	१ वैतान	१. कौत्तिक	१. पंचमंडलिका २. अथर्व प्रातिशास्त्र	

यन्। इनमें से शाकल, चाकल एवं माण्डूकायन इन शाखा प्रवर्तकों का निर्देश व्यास की वैदिक शिष्य-परंपरा में प्राप्त है। किन्तु आश्र्वलायन एवं शांखायन शाखाओं के प्रवर्तक आचार्य कौन थे, यह कहना मुश्किल है। इन दोनों शाखाओं का निर्देश अग्नि में प्राप्त है (अग्ने. २७१.२)।

अर्थात् शाखाओं में से शांखायन के अतिरिक्त शक्यी सारी शाखाएँ शाकल्य के शिष्यों के द्वारा शुरू की गयी थीं, जिस कारण वे 'शाकल' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध हैं (वेदाश्र्वरीषिका प्रस्तावना)।

वर्तमानकाल में उपलब्ध सायण भाष्य से सहित ऋत्विहिता आश्र्वलायन शाखान्तर्गत मानी जाती है। 'चरणव्यूह' ग्रंथ के महिषर-भाष्य से यही सिद्ध होता है। सत्यव्रत सामाश्रमी के ऐतरेयालोचन में भी यही सिद्धान्त प्रस्थापित किया गया है।

(२) व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा—व्यास की यजुः-शिष्यपरंपरा का प्रमुख शिष्य वैशंपायन था। वैशंपायन के कुल ८६ शिष्य थे, जिनमें याज्ञवल्क्य वाजसनेय प्रमुख था। आगे चल कर, याज्ञवल्क्य ने अपनी स्वतंत्र यजुर्वेद शाखा प्रस्थापित की, एवं वैशंपायन की ८५ शिष्य बाकी रहे। ये सारे शिष्य 'तैत्तिरीय' अथवा 'नारकाष्वर्यु' सामूहिक से सुविख्यात हैं।

(अ) वैशंपायन शाखा—इस शाखा में उदित्य, मध्यदेश एवं प्राच्य ऐसी तीन उपशाखाएँ प्रमुख थीं, जिनके प्रमुख आचार्य क्रमशः द्यामायनि, आसुरी एवं आलभि थे।

(आ) याज्ञवल्क्य शाखा—इस शाखा में अंतर्गत याज्ञवल्क्य के शिष्य 'वाजिन' अथवा 'वाजसनेय' सामूहिक नाम से सुविख्यात थे। याज्ञवल्क्य के पंद्रह शाखाप्रवर्तक शिष्यों का निर्देश वायु एवं ब्रह्मांड में प्राप्त है, जिनमें से ब्रह्मांड में प्राप्त नामावली नीचे दी गयी है:—१. ऋषभ; २. शैब्य; ३. मध्यदिन; ४. सापरय; ५. वैश्व; ६. आड; ७. शौद्रक; ८. तामनीय; ९. वास; १०. जात्राल; ११. केवल; १२. आवर्दिन्; १३. पुण्ड; १४. वैण; १५. पराशर (ब्रह्मांड. २.३५.८-३० : याज्ञवल्क्य वाजसनेय देखिये)।

(इ) व्यास की सामशिष्यपरंपरा—व्यास की साम-शिष्यपरंपरा का प्रमुख शिष्य जैमिनि था, जिसके पुत्रपौत्रों ने सामशिष्यपरंपरा आगे चलायी। जैमिनि के सामशिष्य-

परंपरा का विद्यावंश निम्नप्रकार था:—जैमिनि-सुमंतु-सुत्वन् (सुवत्)—सुकर्मन्।

(अ) सुकर्मन्-शाखा—सुकर्मन् ने 'सामवेदसंहिता' के एक हजार संस्करण बनाये, एवं उनमें से पाँचसौ संहिता पौष्यजि नामक आचार्य को, एवं उर्वरीत पाँचसौ हिरण्यनाभ कौशल्य (कौशिक्य) राजा को प्रधान की। उनमें से पौष्यजि एवं हिरण्यनाभ के शिष्य क्रमशः 'उदित्य सामग' एवं 'प्राच्य सामग' नाम से सुविख्यात हुए। त्रिष्णु में इन दोनों सामशिष्यों की संख्या प्रत्येक की पंद्रह बतायी गयी है।

हिरण्यनाभ के शिष्यों में कृत (कृति) प्रमुख था, जो एक प्रमुख शाखाप्रवर्तक आचार्य माना जाता है।

(आ) कृत-शाखा—कृत के कुल चौबीस शिष्य थे, जिनकी नामावली वायु एवं ब्रह्मांड में निम्नप्रकार दी गयी है:— १. राडि (राड); २. राडवीय (महावीर्य); ३. पंचम; ४. वाहन; ५. तलक (तालक); ६. मांडुक (पांडक); ७. कालिक, ८. रात्रिक, ९. गौतम; १०. अजवस्ति, ११. सोमराजायन (सोमराज); १२. पुष्टि (पुष्टन); १३. परिकृष्ट; १४. उद्वलक; १५. यवियस; १६. शालि (वैशाल); १७. अंगुलीय; १८. कौशिक; १९. शालिमंजरिषाक (शालिजीमंजरिसत्य); २०. शधीय (कापीय); २१. कामिनि (कानिक), २२. पाराशर्य (पराशर); २३. धर्मात्मन्; २४. वाँ नाम प्राप्त नहीं है।

(इ) पौष्यजि-शाखा—पौष्यजि के निम्नलिखित शिष्य प्रमुख थे:— १. लौगाक्षि (लौकाक्षि, लौकाक्षिन); २. कुशीभि; ३. कुशीदि (कुसीद, कुसीदि); ४. लंगलि (मांगलि), जिसे ब्रह्मांड एवं वायु में 'शालिहोत्र' उपाधि प्रदान की गयी है; ५. कुत्य; एवं ६. कुक्ष।

(ई) लंगलि-शाखा—लंगलि के निम्नलिखित छः शिष्य थे, जो 'लंगलि' अथवा 'लंगलि' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे:— १. हालिनी (भालकि); २. ज्यामहानि (कामहानि); ३. जैमिनि; ४. लोमगायनि (लोमगायिन); ५. कण्डु (कण्ड); ६. कोहल (कोलह)।

(उ) लौगाक्षि-शाखा—लौगाक्षि के निम्नलिखित छः शिष्य थे:— १. राणायनीय (नाडायनीय); २. सहतंडि-पुत्र (सहितंडिपुत्र); ३. वैन (मूलचारिन्); ४. सक्रोति-पुत्र (सकतिपुत्र); ५. सुसहस् (सहसात्यपुत्र); ६. सुनामन्।

इनमें से राणायनीय के निम्नलिखित दो शिष्य थे:—
१. शौरिद्यु (शोरिद्यु); २. शंभीपुत्र। इनमें से शंभीपुत्र के वैत (चैल); प्राचीनयोग एवं सुबाल नामक तीन शिष्य थे।

(ऊ) कुथुमि अथवा कुथुमिशाला—कुथुमि के निम्नलिखित तीन शिष्य थे:—१. औरस (पाराशर्य कौथुम); २. नाभिविचि (भागविचि); ३. पाराशरगोत्री (रस-पासर)।

इनमें से औरस (पाराशर्य कौथुम) के निम्नलिखित छः शिष्य थे:— १. आसुरायण; २. वैशाख्य; ३. वेद-वृद्ध; ४. पाराथण; ५. प्राचीनयोगपुत्र; ६. पतेजलि। इन शिष्यों में से पौष्यजि एवं कुत ये दो शिष्य प्रमुख होने के कारण, उन्हें 'सामसंहिताविकल्पक' कहा गया है (ब्रह्मांड. २.३५.३१-५४; वायु ६१.२७-४८)।

(ख) व्यास की अथर्वशिष्यपरंपरा—व्यास की अथर्व शिष्यपरंपरा का प्रमुख शिष्य सुमन्तु था। सुमन्तु के शिष्य का नाम कबंध था, जिसके निम्नलिखित दो शिष्य थे:—
१. देवदर्शन (वेददर्श, वेदरपश); २. पथ्य।

(अ) देवदर्श-शाखा-देवदर्श के निम्नलिखित पाँच शिष्य थे:— १. शौल्क्ययनि (शौल्क्यायनि); २. पिप्पलाद (पिप्लायनि); ३. ब्रह्मवल (ब्रह्मशलि); ४. मोद (मोदोप, मोद्ग); ५. तपन (तपसिस्थित)।

(आ) पथ्य-शाखा-पथ्य के निम्नलिखित तीन शिष्य थे:—१. आजलि; २. कुमुदादि (कुमुद); ३. शौनक (शुनक)।

(इ) शौनक-शाखा-शौनक के निम्नलिखित दो शिष्य थे:—१. वधु, जिसे ब्रह्मांड एवं वायु में 'मुंजकेश्य', एवं 'मुंजकेश' उपाधियाँ प्रदान की गयी हैं।

(ई) सैंधवायन-शाखा—सैंधवायन के दोनों शिष्यों ने प्रत्येकी दो दो संहिताओं की रचना की थी।

अथर्ववेदसंहिता के पाँच कल्प—इस संहिता के निम्नलिखित पाँच कल्प माने गये हैं:—१. नक्षत्रकल्प, २. वेदकल्प (वैतान) ३. संहिताकल्प; ४. आंगिरसकल्प, ५. शान्तिकल्प (विष्णु. ६.६.९-१४; मा. १२.७.१-४; वायु. ६१.४९-५४; ब्रह्मांड २.५.५५-६२)।

व्यासोत्तर वैदिक वाङ्मय का विकास—व्यास के द्वारा किये गये वैदिक संहिताओं के विभाजन को आदर्श मान कर, आगे चल कर संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद तथा श्रौत, गृह्य, धर्म, श्रुत्यपत्र आदि वैदिक साहित्य का विस्तार हुआ।

व्यास के शिष्यपरंपरा में से अनेकानेक आचार्यों का निर्देश यद्यपि पुराणों में प्राप्त है, फिर भी, इन आचार्यों के द्वारा निर्माण की गयी बहुत सारी ग्रंथसंपत्ति आज अप्राप्य, अतएव अज्ञात है।

इसका कारण संभवतः यही है कि, व्यास की उपर्युक्त सारी शिष्यपरंपरा 'ग्रंथिक' न हो कर 'मौखिक' थी, जिनका प्रमुख कार्य ग्रंथनिष्पत्ति नहीं, बल्कि वैदिकसंहिता-साहित्य की मौखिक परंपरा अदृष्ट रखना था।

व्यास के कई अन्य शिष्यों के द्वारा रचित वैदिक ग्रंथसंपत्ति में से जो भी कुछ साहित्य उपलब्ध है, उसमें जानकारी पृष्ठ ९२२ पर दी गयी 'वैदिक साहित्य के धर्म-ग्रंथों की तालिका' में दी गयी है।

वैदिक संहिताओं का विशुद्ध रूप—व्यास के द्वारा विभाजन की गयी वैदिक संहिताएँ विशुद्ध रूप में कायम रखने के लिये व्याकरणशास्त्र, उच्चारणशास्त्र, वैदिक स्वरों का लेखनशास्त्र आदि अनेकानेक विभिन्न शास्त्रों का निर्माण हुआ, जिनकी संक्षिप्त जानकारी नीचे दी गयी है।

वैदिक व्याकरणविषयक ग्रंथों में शौनककृत 'ऋग्व्याजि-शाख्य', 'तैत्तिरीय प्रातिशाख्य', कात्यायनकृत 'शुक्रयजुर्वेद प्रातिशाख्य', अथर्ववेद का 'पंचपरतिका ग्रंथ', एवं सामवेद का 'पुष्यसूत्र', आदि ग्रंथ विशेष उल्लेखनीय हैं।

वैदिक मंत्रों के उच्चारणशास्त्र के संबंध में अनेकानेक शिक्षाग्रंथ प्राप्त हैं, जिनमें वेदों के उच्चारण की संपूर्ण जानकारी दी गयी है। इन शिक्षा-ग्रंथों में अनुस्वार एवं विसर्गों के नानाविध प्रकार, एवं उनके कारण उत्पन्न होनेवाले उच्चारणभेदों की जानकारी भी दी गयी है।

वैदिक साहित्य की परंपरा शुरू में 'मौखिक' पद्धति से चल रही थी। आगे चल कर, इन मंत्रों का लेखन जब शुरू हुआ, तब उच्चारणानुसारी लेखन का एक नया शास्त्र वैदिक आचार्यों के द्वारा निर्माण हुआ। इस शास्त्र के अनुसार, उदात्त, अनुदात्त, स्वरित आदि स्वरों के लेखन के लिये, अनेकानेक प्रकार के रेखाचिह्न वैदिक मंत्रों के अक्षरों के ऊपर एवं नीचे देने का क्रम शुरू किया गया। यजुर्वेद संहिता में तो वैदिक मंत्रों के अक्षरों के मध्य में भी स्वरचिह्नों का उपयोग किया जाता है।

विनष्ट हुए 'ब्राह्मण ग्रंथ'—ब्राह्मण ग्रंथों में से जिन ग्रंथों के उद्धरण वैदिक साहित्य में मिलते हैं, किंतु जिसके मूल ग्रंथ आज अप्राप्य हैं, ऐसे ग्रंथों की नामावली निम्न प्रकार है:—

(१) ऋग्वेदीय ब्राह्मण-ग्रन्थ—१. शैलालि ।
(२) कृष्णयजुर्वेदीय ब्राह्मण-ग्रन्थ—१. आह्वरक;
२. कंकटिन; ३. चरक; ४. छागलेय (तैत्तिरीय); ५.
वैषायनि; ६. मंत्रायणी; ७. श्रेताश्वतर (चरक, चारा-
णीय); ८. हारिद्राविक (चरक, चाराणीय) ।

(३) शुक्लयजुर्वेदीय ब्राह्मण-ग्रन्थ—१. जावाल ।

(४) सामवेदीय ब्राह्मण-ग्रन्थ—१. जैमिनीय २.
तत्त्वकार (राणायनीय); ३. कालवक्त्रिन्; ४. भास्वतिन्;
५. रौद्रकि; ६. शाश्वत्यायन (रामायनीय); ७. माण्डशरा-
तिन् (दक्षुष्ण षोप, कलेकदान ऑफ दि फ्रेग्मेण्ट्स ऑफ
लैट ब्राह्मणज) ।

पुराण ग्रंथों का प्रणयन—वैदिक ग्रंथों की पुनर्रचना के साथ साथ, व्यास ने तत्कालीन समाज में प्राप्त कथा आख्यायिका एवं गीत (गाथा) एकत्रित कर आद्य 'पुराण-ग्रंथों' की रचना की, एवं इस प्रकार यह प्राचीन पौराणिक साहित्य का भी आद्य जनक बन गया ।

प्राचीन भारत में उत्पन्न हुए राजवंश एवं मन्वन्तरो की परंपरागत जानकारी एकत्रित करना यह पुराणों का आद्य हेतु है । किन्तु उनका मूल अधिष्ठान नीतिप्रवण धर्म-ग्रंथों का है, जहाँ धर्म एवं नीति की शिक्षा सामान्य मनुष्य-मात्र की शैक्षिक धारणा ध्यान में रखकर दी गयी है । ऋग्वेदमन्त्र, प्राणिसृष्टि एवं मनुष्यसृष्टि की ओर भूतदया-वाद का आदर्श पुराणग्रंथों में रखा गया है, जहाँ व्रत, उपासना एवं तपस्या को अधिकाधिक प्राधान्य दिया गया है ।

कुटुम्ब, राज्य, राष्ट्र, शासन आदि की ओर एक आदर्श नागरिक के नाने हर एक व्यक्तिक के क्या कर्तव्य है, इनका उच्चतम आदर्श सामान्य जनो के सम्मुख पुराण ग्रंथ रखते हैं । इस प्रकार जहाँ राज्यशासन के विधि-नियम अयशस्क होते हैं, वहाँ पुराणग्रंथों का शासन सामान्य जनमानस पर दिखाई देता है ।

पुराणों के प्रकार—पौराणिक साहित्य के 'महापुराण,' 'उपपुराण' एवं 'उपोपपुराण' नामक तीन प्रमुख प्रकार माने जाते हैं । जिन पुराणों में वंश, वंशानुचरित, मन्वन्तर, सर्ग एवं प्रतिसर्ग आदि सारे विषयों का समावेश किया जाता है, उन पुराणों को महापुराण कहते हैं—

आख्यानेश्वर्युपाख्यानेर्गाथाभिः कल्पशुद्धिभिः ।

पुराणसंहितां चक्रे पुराणार्थविशारदः ॥

(विष्णु. ३.६.१६-१६) ।

उपर्युक्त विषयों में से एक ही उपांग पर जो पुराणग्रंथ आधारित रहता है, उसे 'उपपुराण' कहते हैं । उपोप-पुराण स्वतंत्र ग्रंथ न हो कर, महापुराण का ही एक भाग रहता है ।

पुराणों में चर्चित विषय—पौराणिक साहित्य में चर्चित विषयों की जानकारी वायु में प्राप्त है, जिसके अनुसार ब्रह्मचारिन्, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यासी, रागी, विरागी, स्त्री, शूद्र एवं संकर जातियों के लिए सुयोग्य धर्माचरण क्या हो सकता है, इसकी जानकारी पुराणों में प्राप्त होती है । इन ग्रंथों में यज्ञ, व्रत, तप, दान, यम, नियम, योग, सांख्य, भागवत, भक्ति, ज्ञान, उपासनाविधि आदि विभिन्न धार्मिक विषयों की जानकारी प्राप्त है ।

पुराणों में समस्त देवताओं का अविरोध से समावेश करने का प्रयत्न किया गया है, एवं ब्राह्म, शैव, वैष्णव, सौर, शाक्त, सिद्ध आदि संप्रदायों के द्वारा प्रणीत उपासना वहाँ आत्मोपम्य बुद्धि से दी गयी है । देवताओं का माहात्म्य बढ़ाना, एवं उनके उपासनादि का प्रचार करना, यह पुराणग्रंथों का प्रमुख उद्देश्य है ।

पुराणों के विभिन्न प्रकार—मत्स्य में पुराणों के साहित्यिक, राजस एवं तामस तीन प्रकार बताये गये हैं । मत्स्य में प्रतिपादन किया गया पुराणों का यह विभाजन देवता-प्रमुखत्व के तत्त्व पर आधारित है, एवं विष्णु, ब्रह्मा एवं अग्नि-शिव की उपासना प्रतिपादन करनेवाले पुराणों को वहाँ क्रमशः 'सात्विक,' 'राजस' एवं 'तामस' कहा गया है । सरस्वती एवं पितरो का माहात्म्य कथन करनेवाले पुराणों को वहाँ 'संकीर्ण' कहा गया है (मत्स्य. ५३.६८-६९) ।

पद्म एवं भविष्य में भी पुराणों के सात्विक आदि-प्रकार दिये गये हैं, किन्तु वहाँ इन पुराणों का विभाजन विभिन्न प्रकार से किया गया है (पद्म. उ. २६३.८१-८५, आनंदाश्रम संस्करण; भविष्य. प्रति. ३.२८.१०-१५) ।

श्लोकसंख्या—विभिन्न पुराणों की श्लोकसंख्या बहुत सारे पुराणों में दी गयी है, जिसमें प्रायः एकवाक्यता है । पुराणों के इसी श्लोकसंख्या से विशिष्ट पुराण पूर्ण है, या अपूर्णवस्था में उपलब्ध है, इसका पता चलता है ।

पुराणों के वक्ता—पुराणों का कथन करनेवाले आचार्यों को 'वक्ता' कहा जाता है, जिनकी सविस्मृत नामावलि भविष्य पुराण में प्राप्त है (भवि. प्रति. ३.२८.१०-१५) ।

महापुराण—महापुराणों की संख्या अटारह बतायी गयी है, जिनके नामों के संबंध में प्रायः सर्वत्र एक-वाक्यता है ।

इन पुराणों के नाम, उनके अधिष्ठात्री देवता, श्लोक-संख्या एवं निवेदनस्थल आदि की जानकारी 'महापुराणों की तालिका' में दी गयी है। इस तालिका में जिन पुराणों के नाम के आगे *चिन्ह लगाया गया है, उनके महापुराण होने के संबंध में एकवाक्यता नहीं है।

उपपुराणों की नामावलि—उपपुराणों की संख्या भी अठारह बतायी गयी है, किन्तु विभिन्न पौराणिक ग्रंथों में से कौन-कौन से ग्रंथों का 'अठारह उपपुराणों' की नामावलि में समाविष्ट करना चाहिये, इस संबंध में मतेक्य नहीं है। विभिन्न पुराणों में प्राप्त उपपुराणों के नाम नीचे दिये

महापुराणों की तालिका

महापुराण	वक्ता	देवता	युग	श्लोक संख्या	अपूर्ण या पूर्ण	प्रसंग एवं स्थल
१. अग्नि (सर्व-विद्यायुक्त)	अंगिरस् (अग्नि-वसिष्ठ संवाद)	अग्नि	तामस	१५,४००	अपूर्ण	नैमिषारण्य
२. कूर्म	व्यास	शिव	सात्विक	१७,०००	अपूर्ण	नैमिषारण्य सत्र
३. गरुड	हरि	विष्णु	सात्विक	१९,०००	अपूर्ण	नैमिषारण्य
४. नारद	नारद	विष्णु	सात्विक	२५,०००	अपूर्ण	नैमिषारण्य, सिद्धाश्रम
५. पद्म	ब्रह्मन् (रोम-हर्षण पुत्र प्रोक्त)	ब्रह्मन्	सात्विक	५५,०००	अपूर्ण (प्रक्षययुक्त)	नैमिषारण्य,
६. ब्रह्म	ब्रह्मन्-मरीचि संवाद	ब्रह्मन्	राजस	१०,०००	पूर्ण	नैमिषारण्य, द्वादशवार्षिकसत्र
७. ब्रह्मवैवर्त	सावर्णि-नारद संवाद	सूर्य	राजस	१८,०००	पूर्ण	नैमिषारण्य
८. नृसिंह*	व्यास	विष्णु				
९. ब्रह्मांड	तंडिन्	शिव	राजस	१२,०००	पूर्ण	सुत-भारद्वाज संवाद, प्रयाग
१०. भविष्य	सुमन्तु शतानीक	शिव	राजस	१४,५००	अपूर्ण	नैमिषारण्य, सहस्रवार्षिकसत्र
११. भागवत (अ) विष्णु* (ब) देवी*	शुक	विष्णु देवी	सात्विक	१८,०००	पूर्ण	सहस्रवार्षिकसत्र
१२. मत्स्य	व्यास	शिव	तामस	१४,०००	अपूर्ण	नैमिषारण्य, दीर्घसत्र
१३. मार्कंडेय	मार्कंडेय	शिव	राजस	९,०००	अपूर्ण	
१४. लिंग	तंडिन्	शिव	राजस	११,०००	पूर्ण	नैमिषारण्य
१५. वराह	मार्कंडेय	शिव	सात्विक	२४,०००	अपूर्ण	पृथ्वी-वराह संवाद
१६. वासन	व्यास	शिव	राजस	१०,०००	अपूर्ण	
१७. वायु*	व्यास	शिव		२४,०००	पूर्ण	
१८. विष्णु	पराशर	विष्णु	सात्विक	७०००वि.	पूर्ण	दृषदतीतीर दीर्घसत्र
१८-अ विष्णु-धर्मोत्तर				१६००० विष्णुध.		हिमालय राक्षससत्र
				२३०००		
१९. शिव*	व्यास	शिव	तामस	२४,०००	पूर्ण	प्रयाग महासत्र
२०. स्कंद	शिव	शिव	तामस	८१,०००	अपूर्ण	नैमिषारण्य, दीर्घसत्र
			कुल श्लोकसंख्या	४,२५,०००		

(अग्नि. २७२; ३८३; कूर्म. पूर्व. १.१३-१५; नारद अनुक्रमणिका; ब्रह्मवै. कृष्ण. २.१३३.११-११; भा. १२.१३.४-८ संख्यायुक्त; मत्स्य. ५३.११-५६; वराह. ११२; वायु. १०४.२-१०; विष्णु. ३.६.१९-२३; स्कंद. प्रभास. २; रोमहर्षण देखिये)।

गये हैं:—आखेटक, आंगिरस, आण्ड, आय, आदित्य, उशनस्, एकपाद, एकाग्र, कपिल, कालिका, काली, कौमार, कौर्म, क्रियायोगसार, गणेश, गरुड, दुर्वास, देवी, दैव, धर्म, नदी, नारद, नृसिंह, पराशर, प्रभासक, ब्राह्मस्पत्य, बृहद्धर्म, बृहन्नदी, बृहन्नारद, बृहन्नारसिंह, बृहद्वैष्णव, ब्रह्मांड, भागवत (देवी अथवा विष्णु), मर्मव. भास्कर, मानव, मारीच, माहेश, वसिष्ठ, मृत्युंजय, लीलावती, बामन, वायु, वारुण, विष्णुधर्म, लघुभागवत, शिवधर्म, शौक्येय, सनकुमार, संव, सौर (ब्रह्म) (एकाग्र. १.२०-२३; कूर्म. पूर्व. १.१७-२०; गरुड. १.२२३; १७-२०; दे. मा. १.३.१३-१६; स्कंद. प्रभास. २.११-१५; सूत-संहिता १.१३-१८; पद्म. पा. १.१५; उ. १४-१८; ब्रह्मांड. १.२५.२३-२६; पराशर. १.२८-३१; वारुण. १; मत्स्य. ५३.६०-६१)।

पुराणों का दैवतानुसार पृथक्करण—पुराणों के शैव, वैष्णव, ब्राह्म, अग्नि आदि विभिन्न प्रकार हैं, जो उनके द्वारा प्रतिपादित उपासना-संप्रदायों के अनुसार किये गये हैं। उपास्य दैवतों के अनुसार, पुराणों का विभाजन निम्न प्रकार किया जाता है:—

(१) शिव-उपासना के पुराण—१. कूर्म; २. ब्रह्मांड; ३. भविष्य; ४. मत्स्य; ५. मार्कंडेय; ६. लिंग; ७. वराह; ८. बामन; ९. शिव; १०. स्कंद।

(२) विष्णु-उपासना के पुराण—१. गरुड; २. नारद; ३. भागवत; ४. विष्णु।

(३) ब्रह्मा-उपासना के पुराण—१. पद्म; २. ब्रह्म।

(४) अग्नि-उपासना के पुराण—१. अग्नि।

(५) सवितृ-उपासना के पुराण—१. ब्रह्मवैवर्त (स्कंद. शिवरहस्य. संभव. २.३०-३८; पंडित ज्वाला-प्रसाद, अष्टादशपुराणदर्पण. पृ. ४६)।

गीताग्रंथ—कूर्मपुराण में निम्नलिखित 'गीताग्रंथ' प्राप्त है, जो महाभारत में प्राप्त 'भगवद्गीता' के ही समान श्रेष्ठ श्रृंगि के तत्त्वज्ञानग्रंथ माने जाते हैं:—१. ईश्वरगीता (कूर्म. उत्तर. १-११); २. व्यासगीता (कूर्म. उत्तर. १२-२९) इत्यादि।

व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा—पुराणग्रंथों के निर्माण के पश्चात्, व्यास ने ये सारे ग्रंथ अपने पुराणशिष्यपरंपरान्तर्गत प्रमुख शिष्य रोमहर्षण 'सूत' को सिखाये, जो आगे चल कर व्यास के पुराणशिष्यपरंपरा का प्रमुख आचार्य बन गया।

रोमहर्षण शाखा—रोमहर्षण के शिष्यों में निम्नलिखित आचार्य प्रमुख थे:— १. सुमति आत्रेय (त्रैयारुणि); २. अकृतत्रण काश्यप (कश्यप); ३. अग्निवर्चस् भारद्वाज; ४. मित्रयु वासिष्ठ; ५. सोमदत्ति सावर्णि (ब्रह्मांड. २.३५. ६३-६६; भा. १.२.६); ६. सुशर्मन् शांशापायन (शांतापायन) (वायु. ६१.५५-५७; विष्णु. ३.६.१५-१८); ७. वैशम्पायन; ८. हस्ति; ९. सूत।

महाभारत का निर्माण—पौराणिक साहित्य के साथ-साथ संस्कृत साहित्य का आद्य एवं सर्वश्रेष्ठ 'इतिहास पुराण ग्रंथ' माने गये 'महाभारत' का निर्माण भी व्यास के द्वारा हुआ।

शतपथ ब्राह्मण, तैत्तिरीय आरण्यक, एवं छांदोग्य उपनिषद् में 'इतिहास पुराण' नामक साहित्य प्रकार का निर्देश प्राप्त है। किन्तु इन ग्रंथों में निर्दिष्ट 'इतिहास पुराण' स्वतंत्र ग्रंथ न हो कर, आख्यान एवं उपाख्यान के रूप में ब्राह्मणादि ग्रंथों में ग्रथित किये गये थे। ये आख्यान अत्यंत छोटे होने के कारण, उनका विभाजन 'पर्व' 'उपपर्व' आदि उपविभागों में नहीं किया जाता था, जैसा कि उन्हीं ग्रंथों में निर्दिष्ट 'सर्वविद्या', 'देवजन-विद्या' आदि पौराणिक कथानकों में किया गया है।

इतिहास-पुराण ग्रंथ—व्यास की श्रेष्ठता यह है कि, इसने ब्राह्मणादि ग्रंथों में निर्दिष्ट 'इतिहास-पुराण' साहित्य जैसा तत्कालीन राजकीय इतिहास, 'सर्वविद्या' जैसे पौराणिक कथानकों के लिए ही उपयोग किये गये पर्व, उपपर्वदि से युक्त साहित्यप्रकार में बाँध लिया। इस प्रकार यह एक विरल नये साहित्यप्रकार का आद्य जनक बन गया, एवं इसके द्वारा विरचित 'महाभारत' बृहदाकार 'इतिहास पुराण' साहित्य का आद्य ग्रंथ साबित हुआ।

भारतीययुद्ध में विजय प्राप्त करनेवाले पाण्डुपुत्रों की विजयगाथा चित्रित करना, यह इसके द्वारा रचित 'जय' नामक ग्रंथ का मुख्य हेतु था। पाण्डुपुत्रों के पराक्रम का इतिहास वर्णन करते समय, इसने तत्कालीन धार्मिक, राज-नैतिक तत्त्वज्ञानों के समस्त स्रोतों को अपने ग्रंथ में ग्रथित किया। इतना ही नहीं, इसी राजनीति को धार्मिक, राज-नैतिक एवं आध्यात्मिक आधिष्ठान दिलाने का सफल प्रयत्न व्यास के इस ग्रंथ में किया गया है।

अपने इस ग्रंथ में, आदर्श राजनैतिक जीवन के उपलक्ष में प्राप्त भारतीय तत्त्वज्ञान व्यास के द्वारा ग्रथित किया गया है। इस प्रकार व्यक्तिविषयक आदर्शों को शास्त्रप्रमाण्य

एवं तत्त्वज्ञान की चौखट में बिटाने के कारण, महाभारत सारे पुराणग्रंथों में एक श्रेष्ठ श्रेणि का तत्त्वज्ञानग्रंथ बन गया है।

धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष इन चतुर्विध पुरुषार्थों के आचरण में ही मानवीय जीवन की इतिकर्तव्यता है, एवं कर्म, ज्ञान, उपासना आदि से प्राप्त होनेवाला मोक्ष अन्वय तीन पुरुषार्थों के आचरण के बिना व्यर्थ है, यही संदेश व्यास के द्वारा महाभारत में दिया गया है। व्यास के द्वारा विरचित महाभारत के इस राजनैतिक एवं तात्त्विक अधिष्ठान के कारण, यह एक सर्वश्रेष्ठ एवं अमर इतिहास-ग्रंथ बना है। इस ग्रंथ की सर्वकंपता के कारण, मानवी जीवन के एवं समस्याओं के सारे पहलू किसी न किसी रूप में इस ग्रंथ में समाविष्ट हो चुके हैं, जिस कारण 'व्यासोच्छिष्टे जगत्सर्वम्' यह आर्षनाणी सत्य प्रतीत होती है (वैशंपायन एवं वाल्मीकि देखिये)।

महाभारत की व्याप्ति—इस ग्रंथ की विषयव्याप्ति बताते समय स्वयं व्यास ने कहा है, 'हस्तिनापुर के कुरु वंश का इतिहास कथन कर पाण्डुपुत्रों की कीर्ति संवर्धित करने के लिए इस ग्रंथ की रचना की गयी है। इस वंश में उत्पन्न गांधारी की धर्मशीलता, विदुर की बुद्धिमत्ता, कुंती का धैर्य, श्रीकृष्ण का माहात्म्य, पाण्डवों की सत्य-परायणता एवं धृतराष्ट्रपुत्रों का दुर्व्यवहार चित्रित करना, इस ग्रंथ का प्रमुख उद्देश्य है (म. आ. १. ५९-६०)।

महाभारत की शिष्यपरंपरा—व्यास के द्वारा विरचित महाभारत ग्रंथ का नाम 'जय' था, जिसकी श्लोकसंख्या लगभग २५,००० थी। अपना यह ग्रंथ इसने वैशंपायन नामक अपने शिष्य को सिखाया, जिसने आगे चल कर उसी ग्रंथ का नया परिवर्धित रूप 'भारत' नाम से तैयार किया, जिसका नया परिवर्धित संस्करण रोमहर्षण सौति के द्वारा 'महाभारत' नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस प्रकार महाभारत का प्रचलित संस्करण सौति के द्वारा तैयार किया गया है (वैशंपायन एवं रोमहर्षण मृत देखिये)।

महाभारत के पर्व—महाभारत का विद्यमान संस्करण एक लाल श्लोकों का है, जो निम्नलिखित अठारह पर्वों में विभाजित है :—१. आदि; २. सभा; ३. वन- (आरण्यक); ४. विराट; ५. उद्योग; ६. भीष्म; ७. द्रोण; ८. कर्ण; ९. शल्य; १०. सौप्तिक; ११. स्त्री; १२. शांति; १३. अनुशासन; १४. आश्रमवैशिक; १५. आश्रमवासिक; १६. मौसल; १७. महाप्रस्थानिक; १८. स्वर्गरोहण।

महाभारत के उपपर्व—उपयुक्त पर्वों में से बहुत सभों पर्वों के अंतर्गत कई छोटे-छोटे आख्यान भी हैं, जिन्हें 'उपपर्व' कहते हैं। महाभारत के पर्वों में प्राप्त उपपर्वों की संख्या नीचे की गयी है :—१. वनपर्व—११; २. आदिपर्व—१९; ३. उद्योगपर्व—२०; ४. सभापर्व—८; ५. द्रोणपर्व—८; ६. भीष्मपर्व—४; ७. शल्यपर्व—३; ८. स्त्रीपर्व—२; ९. शांतिपर्व—३; १०. आश्रमवैशिक पर्व—३; १०. आश्रमवासिकपर्व ३; ११. सौप्तिकपर्व—२; १२. अनुशासनपर्व—२। कर्ण, मौसल, महाप्रस्थानिक एवं स्वर्गरोहण पर्वों में उपपर्व नहीं हैं।

हरिवंश—महाभारतान्तर्गत 'हरिवंश' महाभारत का ही एक भाग माना जाता है। इसी कारण उसे महाभारत का 'खिल' एवं 'परिशिष्ट' पर्व कहा जाता है। महाभारत की एक लक्ष श्लोकसंख्या भी 'हरिवंश' को समाविष्ट करने के पश्चात् ही पूर्ण होती है।

'हरिवंश' के निम्नलिखित तीन पर्व हैं :—१. हरिवंश पर्व (५५ अध्याय) २. विष्णुपर्व (१२८ अध्याय); ३. भविष्यपर्व (१३५ अध्याय)।

हरिवंश में यादववंश की सन्निवृत्त जनकारी प्राप्त है, जो पुरुवंश एवं भारतीय युद्ध का ही केवल वर्णन करनेवाले 'महाभारत' में अप्राप्त है। हरिवंश में प्राप्त यादवों के इस इतिहास से, महाभारत में विद्यमान पुरुवंश के इतिहास की पूर्ति हो जाती है।

भगवत्तादि पुराणों में यादववंश की जनकारी प्राप्त है, उससे कतिपय अवधिक जनकारी हरिवंश में प्राप्त है। 'हरिवंश माहात्म्य' के छः अध्याय पत्र में उद्धृत किये गये हैं। किन्तु आनंदश्रम पुत्रा के द्वारा प्रकाशित पत्र के संस्करण में वे अध्याय अप्राप्त हैं।

'भारतसावित्री' नामक सौ श्लोकों का एक प्रकरण उपलब्ध है, जिसमें भारतीय युद्ध की विशिष्ट जनकारी एवं प्रमुख वीरों की मृत्युतिथियाँ दी गयी हैं।

व्यास की संशयनिवृत्ति—व्यास के जीवन में संबंधित एक उद्बोधक आख्यायिका वाक्य में प्राप्त है। पुरुषों की रचना करने के पश्चात् एक बार हमें संदेह उत्पन्न हुआ कि, 'यज्ञकर्म', 'नित्य' (ज्ञान) एवं 'उपासना' में परमस्थिति के जो तीन मार्ग इसने पुराणों में प्रतिपादित किये हैं, उसमें से कौन सा सही है या नहीं? इसके इस संशय का निवृत्ति करने के लिए, चार ही वेद मानवीरूप धारण कर इसके पास आये। इन वेदपुरुषों के शरीर पर यज्ञकर्म, ज्ञान एवं उपासना ये तीनों ही उपासनापद्धति विराजित थीं, जिन्हें देख कर व्यास

को अत्यंत आनंद हुआ, एवं अपने द्वारा प्रणीत परमेश्वर-
प्रार्थि के मार्ग सत्य होने का साक्षात्कार इसे प्राप्त हुआ
(वायु, १०४.५८-९४)।

व्यास का जीवन-संदेश—चतुर्विधपुरुषार्थों में से केवल
धर्मचरण से ही अर्थकामादि पुरुषार्थ साध्य हो सकते हैं,
क्यों कि, मानवीय जीवन में एक धर्म ही केवल शाश्वत,
विरतन एवं नित्य है, बाकी सारे सुखोपभोग एवं पुरुषार्थ
अनित्य हैं, ऐसा व्यास का मानवजाति के लिए प्रमुख
संदेश था। महाभारत पुराणादि अपने सारे साहित्य में
इसने यही संदेश पुनः पुनः कथन किया। इतना ही नहीं,
महाभारत के अंतिम भाग में भी इसने यही संदेश
दुहराया है, जिसमें एक द्रष्टा के नाते इसकी जीवनव्यथा
बहुत ही उत्कृष्ट रूप से प्रकट हुई है--

उर्ध्वबाहुर्विरौस्येय नच कच्छिच्छृणोति माम् ।
धर्मादर्थश्च कामश्च स किमर्थं न सेव्यते

(म. स्व. ५, ४९)।

(हाथ ऊंचा कर सारे संसार से मैं कहता आ रहा हूँ
कि, अर्थ एवं काम से भी अधिक धर्म महत्त्वपूर्ण है। किंतु
कोई भी मनुष्य मेरे इस कथन की ओर ध्यान नहीं देता
है।)।

व्यास बादरायण—ब्रह्मसूत्रों का कर्ता माने गये बाद-
रायण नामक आचार्य का नामांतर (बादरायण देखिये)।
भागवत के अनुसार, मह एवं कृष्ण द्वैपायन व्यास दोनों
एक ही व्यक्ति थे (भा. ३.५.१९)। किंतु इस संबंध में
निश्चित रूप से कहना कठिन है।

व्याहृति—एक कन्यात्रय, जो सवितृ तथा पृथ्वी की
संतान थी (भा. ६.१८.१)।

व्युत्थिताश्व—इक्ष्वाकुवंशीय व्युत्थिताश्व राजा का
नामांतर।

व्युत्थिताश्व—(सो. पूरु.) एक राजा, जिसकी पत्नी
श्राम नाम काशीवती भद्रा था। इसकी पत्नी अत्यधिक

सुंदर थी, जिसके प्रति अत्यधिक कामासक्त होने के कारण,
इसकी राज्यधमा से असामयिक मृत्यु हो गयी।

इसकी मृत्यु के पश्चात्, इसके शव से भद्रा को सात
पुत्र उत्पन्न हुए (म. आ. ११२. ७-३३)। इसके इन
सात पुत्रों में से, तीन पुत्र शाल्व नाम से, एवं बाकी चार
भद्र नाम से सुविख्यात हुए।

व्युष्ट—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो पुष्पार्ण एवं
दोषा के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम
पुष्करिणी था, जिससे इसे सर्वतेजस् नामक पुत्र उत्पन्न
हुआ था (भा. ४.१३.१४)।

२. एक वसु, जो विभावसु एवं उषा के पुत्रों में से एक
था (भा. ६.६.१६)।

व्यूढोरस्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से
एक, जो भीमसेन के द्वारा मारा गया।

व्यूढोरु—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से
एक, जो भीमसेन के द्वारा मारा गया।

व्योमन्—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो भागवत,
विष्णु, मत्स्य एवं वायु के अनुसार दशार्ह राजा का पुत्र
था। इसके पुत्र का नाम जीमूत था (दाशार्ह देखिये)।

व्योमासुर—एक असुर, जो मयासुर का पुत्र एवं
कंस का अनुगामी था। कृष्णबध करने के लिए यह गोप-
वेश धारण कर गोकुल में आया, जहाँ कृष्ण ने इसका
वध किया (भा. १०.३७.२८-३२)।

व्रज—ऊरु एवं षडामेयी के पुत्रों में से एक।

व्रत—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो चाभुष मनु के
पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम नड्वल था
(भा. ४.१३.१६)।

२. अभूतरजस् देवों में से एक।

व्रतित्—वर्तमान वैवस्वत मन्वन्तर का अठारहवाँ
व्यास।

व्रतेयु—(सो. पुरुरवस्.) एक राजा, जो रौद्राश्व
राजा का पुत्र था।

व्रात—(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु
के अनुसार कृतंजय राजा का पुत्र था (वायु. ९९.२८७)।

श

शंयु—एक आचार्य, जो एक विशिष्ट प्रकार के यज्ञ-पद्धति का ज्ञाता माना जाता था। इसकी मृत्यु के पश्चात् वह यज्ञपद्धति नष्ट होने का धोखा निर्माण हुआ। इसी कारण इसके अनुयायियों ने वह ज्ञान पुनः प्राप्त करने का प्रयत्न किया था (श. ब्रा. १.१.१.२४)।

यजुर्वेद संहिताओं में इसे अग्नि का ही प्रतिरूप माना गया है (तै. सं. २.६.१०.१; ५.२.६.४; तै. ब्रा. ३.३. ८.११; तै. आ. १.५.२)।

शंयु बर्हस्पत्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जो बृहस्पति के पुत्रों में उद्येष्ट पुत्र था (ऋ. ६.४४-४६; ४८)। शतपथ ब्राह्मण में निर्दिष्ट शंयु बर्हस्पत्य एवं यह दोनों एक ही होंगे (श. ब्रा. १.१.१.२५)।

पौराणिक साहित्य में इसे एक अग्नि कहा गया है, एवं इसकी माता एवं पत्नी का नाम क्रमशः तारा, एवं धूमकन्या सत्या दिया गया है। अपनी इस पत्नी से इसे भरत एवं भारद्वाज नामक दो पुत्र, एवं अन्य तीन कन्याएँ उत्पन्न हुई (म. व. २०९.२-५)।

चातुर्मास्यसंवेधित यज्ञों में एवं अश्वमेध यज्ञ में इसका पूजन किया जाता है।

शंसपि—शंलमन् नामक अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर (शंलमन् देखिये)।

शक—एक विदेशीय जातिसमूह, जो पूर्वकाल में मध्य एशिया के निवासी थे। आगे चल कर ये लोग उत्तर पश्चिम भारत में आ कर रहने लगे।

ये लोग ई. पू. २ वीं शताब्दी में इरान के पूर्व भाग में स्थित प्रदेश में रहते थे, जिस कारण उस प्रदेश को 'शकस्तान' अथवा 'सीस्तान' कहते थे। ई. स. पू. १७४ में हूण लोगों के आक्रमण के कारण, शक लोग शकस्तान छोड़ने पर विवश हुए, एवं उत्तर पश्चिम भारत में आ कर निवास करने लगे। आगे चल कर ये सुराष्ट्र (काठियावाड़) में रहने लगे।

उत्तरपश्चिम भारत में निवास—राजयोग्यर की काव्य-मीमांसा में उत्तरपश्चिम भारत में निवास करनेवाले लोगों में शक लोगों का निर्देश हूण, कांबोज एवं बाल्हिक लोगों के साथ प्राप्त है। पतंजली के व्याकरण महाभाष्य में इनका निर्देश प्राप्त है (पा. सू. ३.७५ भाष्य)।

महाभारत में इनका निर्देश बाल्हिक लोगों के साथ प्राप्त है, एवं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, भीम के द्वारा किये गये पूर्व दिग्बिजय में इन्हें जीते जाने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (म. स. २७.२८९)। नकुल ने भी अपने पश्चिम दिग्बिजय में इन्हें जीता था (म. स. २९. १५ पाठ)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में ये लोग भेंट ले कर उपस्थित हुए थे (म. स. ५१.२६)।

मत्स्यपुराण में इन्हें चक्षु नदी के तट पर निवास करनेवाले लोग कहा गया है, एवं तुषार, पल्लव, पार, ऊर्ज, औरस लोगों के साथ इनका निर्देश प्राप्त है (मत्स्य. १२१.४५-५१)। मार्कंडेय में इन्हें विषुदेशनिवासी कहा गया है (मार्क. ५७.३९)।

'अल्खाहावाद प्रशस्तिलेख' से प्रतीत होता है कि, सङ्ग गुप्त के द्वारा परास्त हुए विजातीय लोगों में शक सुदक्षिण प्रसूय थे। कई अभ्यासकों के अनुसार, यहाँ सुदक्ष शक का अर्थ 'राजा' अभिप्रेत है, एवं सुराष्ट्र प्रदेश में रहने वाले शक लोगों के राजाओं की ओर इस शिलालेख में संकेत किया गया है।

महाभारत में इन्हें नंदिनी गाय के गोवर ने होने का निर्देश प्राप्त है (म. आ. १६५.३५)। इस निर्देश से प्रतीत होता है कि, ये लोग महाभारतकाल में तिब्बत जाते थे। ये लोग पहले क्षत्रिय थे, किन्तु बाद में वे शू वने (म. अनु. ३३.३१)।

भारतीय युद्ध में—इस युद्ध में, ये लोग कांबोजर सुदक्षिण के साथ दुर्योधन के पक्ष में शामिल थे (म. ३. १९.२१)। सात्यकि ने इन लोगों का संहार किया था (म. द्रो. ९५.३८)। कर्ण ने भी इन्हें परास्त किया था (म. क. ५.१८)।

भागवत के अनुसार, शक एवं यवन लोग हैहय राजाओं के सहायक थे। इसी कारण परशुराम, सगर एवं भरत राजाओं ने इन्हें परास्त किया था, एवं इनकी अधिसू कर, एवं विरूप कर इन्हें छोड़ दिया था (भा. ९.८५)। इन लोगों को वेदाधिकार प्राप्त नहीं था, जिस कारण वे आगे चल कर भलेचल बन गये थे (भा. ४.३.४८)।

२. (मौर्य. भविष्य, एक राजा, जो बृहद्रथ मौर्य राजा का पुत्र था (मत्स्य. २७२.२४)।

१. अजातशत्रु राजाओं का एक सन्तुह, जो शिशुनाग राजाओं का सनकालीन था (मत्स्य, ५०.७६)।

शकट—एक कंसपक्षीय असुर, जो कृष्ण के द्वारा मारा गया (म. स. परि. १. क. २१. पंक्ति. ६५२-६५३; भा. १०.७.८; ह. वं. २.६; ५.२०; विष्णु. ५. ६३; यज्ञ. क्र. १३; उ. २४६)।

२. अगस्त्यकुलसंबन्ध एक गोवर्धन ऋषिगण।

शकभूत नामेंध—एक राजा, जिसे ऋग्वेद के एक सूक्त के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (ऋ. १०.१३२)। भुक्तमणी में इसे रूनेध राजा का पुत्र कहा गया है। इसके द्वारा रचित सूक्त में, इन्होंने वरुण से अपना रक्षा करने के लिए प्रार्थना की है।

शकुन—पशुक देवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३३.७३)।

शकुनि—एक असुर, जो वृकसासुर का पिता था। इंद्र एवं बलि के दरम्यान हुए युद्ध में, इसने बलि राजा के पक्ष में भाग लिया था (भा. ८.१०.२०)।

३. इन्द्राकु राजा के सौ पुत्रों में से एक। दक्षिणापथ पर राज्य करनेवाले अपने पचास भाइयों का यह अधिपति था (वायु. ८८.९)।

३. (स. निनि.) एक राजा, जो वायु के अनुसार लुहना राजा का पुत्र, एवं स्वागत राजा का पिता था (वायु. ८९.२०)।

४. (सं. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भागवत एवं शिषु के अनुसार दशरथ राजा का, वायु के अनुसार एका-स्यथ राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार ददरथ राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम करंभक था (भा. ९.२४. ५-६)।

शकुनि सौवल—गांधार देश के सुवल् राजा का पुत्र, जो दुर्योधन का मामा था (म. आ. ५५.३९)। सुवल् राजा का पुत्र होने के कारण इसे 'सौवल' शैलक नाम प्राप्त हुआ होगा (म. क. ५५)।

यह युग में ही अन्यतः दुःप्रकृति था। देवताओं का श्रेय होने के कारण यह धर्मविरोधी बन गया, एवं भगवान् श्रेय करने लगा (म. आ. ५७.९३-९४)। वह द्वापर युग के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.३२; भा. ३.९.१०)।

पाण्डवों का द्वेष—गांधारी के साथ धृतराष्ट्र का विवाह होने के ही मध्यस्थता से हुआ था (म. आ. १०३.१४-१५)। यह द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १०७.५)। यह युग से ही पाण्डवों का द्वेष करता था,

एवं इन्होंने द्रुपदनगर में ही पाण्डवों को जड़मूल से समाप्त करने की दुर्योधन को सलाह दी थी (म. आ. परि. १. १०३)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भी यह दुर्योधन के साथ उपस्थित हुआ था, एवं पाण्डवों के प्रति दुर्योधन की द्वेषाग्नि सुलघाने का प्रयत्न इसने किया था (म. स. ३१.६; ४२.६०)।

द्यूतक्रीड़ा—पाण्डवों पर विजय प्राप्त करने के लिए, एवं युधिष्ठिर का ऐश्वर्य हड़पने के लिए इसने दुर्योधन को द्यूतक्रीड़ा का आयोजन करने की सलाह दी। पश्चात् द्यूत के लिए युधिष्ठिर को निमंत्रित करवा कर, इसने उसे बल-कमट से द्यूत में परास्त किया (म. स. ५३-५४)।

इसके साथ द्यूत खेल कर कर युधिष्ठिर अपना सब कुछ खो बैठा। पश्चात् इसका युधिष्ठिर के साथ द्यूत का और एक दौब हुआ, जिसमें शर्त के अनुसार इसने युधिष्ठिर को वन जाने के लिए विवश किया।

घोषयात्रा—द्वैतवन में पाण्डव जप वनवास भुगत रहे थे, तब दुर्योधन एवं इसने ऐसी योजना बनायी कि, उनके सम्मुख अपने सामर्थ्य का प्रदर्शन किया जाये। तदनुसार यह दुर्योधन के साथ घोषयात्रा के लिए गया। किन्तु वहाँ दुर्योधन चित्रसेन संभव से परास्त हुआ, एवं वह उन्हीं पाण्डवों के द्वारा बचाया गया, जिनके सामने अपने सामर्थ्य का प्रदर्शन करने वह गया था (म. व. २२७-२३०)।

भारतीय युद्ध में—भारतीय युद्ध में इसका निम्न-लिखित पाण्डव पक्षियों से युद्ध हुआ था, जिनमें बहुत सारे युद्धों में यह परास्त हुआ था :—१. प्रतिविन्द्य (म. भी. ४५); २. युधिष्ठिर, नकुल एवं सहदेव (म. भी. १०१. ८-२४); ३. अर्जुन (म. द्रो. १४६.२५-४१); ४. भीमसेन (म. क. ५५)।

भारतीय युद्ध के अंतिम दिन, पाण्डवों के युद्धसवारों ने इस पर आक्रमण किया था। उस समय यह युद्धभूमि से भाग गया (म. श. २२.३९-८७)। अन्त में सहदेव के द्वारा इसका वध हुआ (म. श. २७.६२)। पीप अमावास्या के दिन इसकी मृत्यु हुई।

परिवार—इसके निम्नलिखित ग्यारह भाई थे :—
१. द्रुपक; २. बृहद्रथ; ३. अचल; ४. सुभग; ५. विभु; ६. भानुदेव; ७. गज; ८. गवाक्ष; ९. चर्मवत; १०. आर्जव; ११. शुक्र। इन भाइयों में से छः भाई दुरावत के द्वारा (म. भी. ८६.२४-३७), एवं पाँच भीमसेन के द्वारा मारे गये (म. द्रो. १३२.२०-२१)।

इसके पुत्र का नाम उद्धक था ।

शकुनिका—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.) ।

शकुनिमित्र—विपश्चित् पाराशर्य नामक ऋषि का नामान्तर (विपश्चित् शकुनिमित्र पाराशर्य देखिये) ।

शकुन्त—विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५०) ।

शकुन्तला—महर्षि कण्व की पोषित कन्या, जो दुष्यन्त राजा की धर्मपत्नी एवं भरत राजा की माता थी । यह एवं दुष्यन्त राजा कालिदास के ' अभिज्ञानशाकुन्तलम् ' के कारण अमर हो चुके हैं ।

वैदिक साहित्य में—शतपथ ब्राह्मण में इसे एक अप्सरा कहा गया है, एवं इसके द्वारा ' नाडपितृ ' के तट पर भरत को जन्म दिये जाने को निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. १३.५.४.१३) । इसी कारण इसे ' नाडपिती ' अथवा ' नाडपितृ ' ही जाती थी ।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इसे विश्वामित्र एवं मेनका अप्सरा की कन्या कहा गया है । विश्वामित्र के तपःकाल में, उसका तपोभंग करने के लिए इंद्र के द्वारा मेनका भेजी गयी थी । उसी समय हिमालय पर्वत में मालिनी नदी के किनारे इसका जन्म हुआ था । इसका जन्म होते ही मेनका इसे पृथ्वी पर छोड़ कर चली गयी । तत्पश्चात् इसका लालन-पालन शकुन्त पक्षियों ने किया, जिस कारण, इसे ' शकुन्तला ' नाम प्राप्त हुआ (म. आ. ६६. ११-१४) ।

दुष्यन्त से विवाह—तत्पश्चात् कण्व ऋषि ने इसे अपनी कन्या मान कर, अपने आश्रम में इसे पालपोस कर बड़ा किया । एक बार मृगया खेलता हुआ हस्तिनापुर का राजा दुष्यन्त कण्व ऋषि के दर्शनार्थ आश्रम में आया । उस समय कण्व ऋषि आश्रम में नहीं थे, जिस कारण इसकी एवं दुष्यन्त की भेट हुई, एवं कण्व ऋषि के द्वारा ज्ञात हुई अपनी जन्मकथा इसने उसे कह सुनायी ।

दुष्यन्त के द्वारा प्रेमदान माँगने पर इसने बताया कि, अपने पिता की संमति के बिना यह विवाह करना नहीं चाहती । उस समय दुष्यन्त ने इसे विवाह के आठ भेद बताये, एवं कहा कि, इन विवाहों में से गांधर्व-विवाह पिता के संमति के बिना ही हो सकता है । उस समय यह इस शर्त पर विवाह के लिए तैयार हुई कि, इसका पुत्र हस्तिनापुर का सम्राट् बने ।

शकुन्तला की यह शर्त दुष्यन्त के द्वारा मान्य किये जाने पर, कण्व ऋषि के अनुपस्थिति में इसका दुष्यन्त से विवाह हुआ । विवाह के पश्चात्, हस्तिनापुर पहुँचते ही इसे दूत के द्वारा बुलाने का आश्वासन दे कर दुष्यन्त चला गया (म. आ. ६७.२०) ।

भरतजन्म—आश्रम आने पर कण्व ऋषि को सारी घटना ज्ञात हुई, एवं उसने प्रसन्न हो कर इसे शुभाशीर्वाद दिये । कालांतर में इसे एक परमतेजस्वी बालक उद्भूत हुआ, जिसका नाम ' भरत ' अथवा ' सर्वदमन ' रखा गया ।

काफी दिन बीत जाने पर भी, दुष्यन्त की ओर से कोई बुलवा नहीं आया । इस कारण भरत के जातकर्मों-संस्कार हो जाने पर, कण्व ने इसे पातित्रत्यधर्म का उपदेश दिया, एवं पतिग्रह के लिए विद्या किया ।

दुष्यन्त की राजसभामें—दुष्यन्त के राजसभामें पहुँचते ही, इसने उसे अपनी सारी शर्तें उसे याद दिलायीं, एवं भरत को यौवराज्याभिषेक करने के लिए कहा । किन्तु दुष्यन्त ने इसका यह प्रस्ताव अमान्य किया, एवं अल्प-रोषपूर्ण शब्दों में इसकी आलोचना की ।

दुष्यन्त की यह कठोर वाणी सुन कर इसे बड़ी लज्जा प्रतीत हुई, एवं इसने धर्म की श्रेष्ठता, एवं सूर्यादि-देवताओं को साक्षी बनाकर, अपने प्रति न्याय करने के लिए बार-बार अनुरोध किया । इसी समय इसने फले एवं पुत्र के बारे में प्रति के कर्तव्य तुहारारे, एवं इन कर्मों का पालन करने के लिये उसकी बार-बार प्रार्थना की । कि भी दुष्यन्त ने इसकी एक न सुनी । तब इसने उसे शाप दिया, ' अगर तब भरत को युवराज नहीं बनाओगे, तो भरत तुम्हारे राज्य पर आक्रमण कर के स्वयं राजा-बिकारी बनेगा ' ।

इतने में आकाशवाणी के द्वारा दुष्यन्त को ज्ञात हुआ कि, शकुन्तला उसकी धर्मपत्नी है, एवं भरत उसका पुत्र है । इस पर दुष्यन्त ने इन दोनों को स्वीकार किया, एवं इसे अपनी पटरानी एवं भरत को अपना युवराज बनाया (वायु. ११.१३२; म. आ. ६९.४४) । पश्चात् दुष्यन्त ने इसे समझाया कि, लोकापवाद के भय से युग में उसने इसको अस्वीकार किया था (म. आ. ६२, भा .९.२०) ।

अभिज्ञानशाकुन्तलम्—कालिदास के द्वारा विरचित संस्कृत नाटक ' अभिज्ञानशाकुन्तलम् ' में, दुर्दास ऋषि के द्वारा इसे दिया शाप, शक्रवतारतीर्थ में ' अभिज्ञान ' की

अंगूठी इसके द्वारा खो जाना, दुष्टत राजा विस्मृति का शिकार बनना, मत्स्यगर्भ से प्राप्त अभिज्ञान की अंगूठी से उसे पुनः स्मृति प्राप्त होना, आदि अनेकानेक उपकथा-विभाग दिये गये हैं। किंतु वे सारे कल्पनारम्य प्रतीत होते हैं, क्योंकि, उन्हें प्राचीन साहित्य में कोई भी आधार प्राप्त नहीं होता। किंतु पद्मपुराण के अंगला संस्करण में 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' से मिलती जुलती कथा प्राप्त है।

शक्त—(सो. पूर.) एक पूर्ववशीय राजा, जो पूरु राजा का प्रपौत्र, एवं मनुष्यु राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम सौवीरी, एवं भाइयों के नाम संहनन एवं वाग्मी धे (म. आ. ८९.७ पाठ.)।

शक्ति—देवी पार्वती का एक अवतार। पौराणिक साहित्य में शक्तियों की संख्या इकावन बतायी गयी है, जिनके विभिन्न स्थानों को वहाँ 'शक्तिपीठ' कहा गया है।

शक्तिदेवता का विकास—रुद्र के द्वारा किये गये दक्षयज्ञ के विध्वंस की कथा ब्राह्मणग्रंथों में एवं महा-भारत में प्राप्त है। किन्तु जिस कल्पना के आधार से शक्तिपूजा के पीठों की निर्मिति भारतवर्ष में हुई, उस रुद्र-शिव एवं पार्वती के कथा का निर्देश, इन ग्रंथों में कहीं भी प्राप्त नहीं है, जो सर्वप्रथम उत्तरकालीन 'देवीभागवत' एवं 'कालिकापुराण' में पाया जाता है (दे. भा. ७.३०; कालिका. १८)।

इस कथा के अनुसार, दक्षयज्ञ में अपमानित हो कर सती ने यज्ञकुंड में अपना शरीर झोंक दिया। तत्पश्चात् शोध से पागल हुआ रुद्र-शिव सती का प्राणहीन देह कंधे पर ले कर समस्त त्रैलोक्य में नृत्य करता हुआ उन्मत्त अवस्था में घूमने लगा।

यह देख कर विष्णु ने अपने चक्र से सती के शरीर के टुकड़े टुकड़े कर उन्हें विभिन्न स्थानों पर गिरा दिया। सती के शरीर के खंड तथा आभूषण, इकावन स्थानों पर गिरे, जहाँ एक-एक शक्ति, एवं एक-एक भैरव विभिन्न रूप धारण कर अवतीर्ण हुए। आगे चल कर, इन्हीं स्थानों पर 'शक्तिपीठों' का निर्माण हुआ।

शक्तिपीठ—उत्तरकालीन पौराणिक साहित्य में, एवं शक्त उपासना के 'शिवविजय', 'दाक्षायणीतंत्र', 'योगीनीतंत्र' 'तंत्रचूड़ामणि' आदि तांत्रिक ग्रंथों में 'शक्तिपीठों' की विस्तृत जानकारी प्राप्त है, जहाँ सर्वत्र इन पीठों की संख्या प्रायः सर्वत्र इकावन बतायी गयी है। इनमें से 'तंत्रचूड़ामणि' में प्राप्त ५२ 'शक्तिपीठों' की, वहाँ स्थित 'शक्ति' की, एवं वहाँ गिरे हुए सती

के अंग या आभूषणों की नामावलि नीचे इसी क्रम से दी गयी है:—

१. अट्टहास (फुलरा, अधरोष्ठ); २. उज्जयिनी (मांगल्य-चंडिका, कूर्पर); ३. करतोयातट (अपर्णा, वामतल्प); ४. कन्यकाश्रम (शर्वाणी, पृष्ठ); ५. करवीर (महिषमर्दिनी, तीनों नेत्र); ६. कर्णाट (जयदुर्गा, दोनों कर्ण); ७. कश्मीर (महामाया, कंठ); ८. कांची (देवगर्भा, अस्थि); ९. कालमाधव (काली, वामनिर्भव); १०. कामगिरि (कामाख्या, योनि); ११. कालीपीठ (कालिका, पादांगुलि); १२. कुरुक्षेत्र (सावित्री, दक्षिणगुल्फ); १३. गण्डकी (गण्डकी, दक्षिण गण्ड); १४. किरीट (विमला, किरोट); १५. गोदावरीतट (विधेशी, वामगण्ड); १६. चहल (भवानी, दक्षिणदाहु); १७. जनस्थान (भ्रामरी, चिबुक); १८. जयन्ती (जयन्ती, वामजंघ); १९. जालंधर (त्रिपुरमालिनी, वामस्तन); २०. ज्वालामुखी (सिद्धिदा, जिह्वा); २१. त्रिपुरी (त्रिपुरसुंदरी, दक्षिणपाद); २२. त्रिस्तोता (भ्रामरी, वामपाद); २३. नलहारी (कालिका, उदरनलिका); २४. नन्दपुर (नदिनी, कंठहार); २५. नैपाल (महामाया, जानु); २६. पंचसागर (बाराही, अधोदंतपंक्ति); २७. प्रभास (चन्द्रभागा, उदर); २८. प्रयाग (ललिता, हस्तांगुलि); २९. भैरवपर्वत (अवन्ती, ऊर्ध्वओष्ठ); ३०. मगध (सर्वादेवकरी, दक्षिणजंघ); ३१. मणिवेदेका (गायत्री, मणिवेध); ३२. मानस (दाक्षायणी, दक्षिणपाणि); ३३. मिथिला (उमा, वामस्कंध); ३४. युगाद्या (भूतधात्री, दक्षिणपदांगुष्ठ); ३५. यशोर (यशोरेश्वरी, वामपाणि); ३६. रामगिरि (शिवानी, दक्षिणस्तन); ३७. रत्नावली (कुमारी, दक्षिणस्कंध); ३८. बहुला (बहुला, वामदाहु); ३९. लंका (इंद्राक्षी, नूपुर); ४०. बक्रेश्वर (महिषमर्दिनी, मन); ४१. बाराणसी (विशादाक्षी, कर्णकुंडल); ४२. वैद्यनाथ (जयदुर्गा, हृदय); ४३. विभाष (कपालिनी, वामगुल्फ); ४४. विराट (अंबिका, वामपदांगुष्ठ); ४५. विरजाक्षेत्र (विमला, नाभि); ४६. वृंदावन (उमा, केशकलाप); ४७. श्रीपर्वत (श्रीसुंदरी, दक्षिणतल्प); ४८. धीशूल (महालक्ष्मी, श्रोत्र); ४९. छुचि (नारायणी, ऊर्ध्वदंतपंक्ति); ५०. शोण (शोणाक्षी, दक्षिणनिर्भव); ५१. सुगंधा (सुगंधा, नासिका); ५२. हिंगुला (कोटरी, ब्रह्मरंज)।

२. एक आचार्य, जिसने अपने शिष्य दम को 'सामवेद' सिखाया था (माकं. १३०)।

३. हुंदि नामक शिवावतार का पिता (दुरासद देखिये)।

शक्ति वासिष्ठ—एक ऋषि, जो वसिष्ठ एवं अश्वती के सौ पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र था (भा. ४.१.४१; म. आ. १६६.४)। मत्स्य में इसे 'शक्तिवर्धन' कहा गया है (मत्स्य. १४५.९२-९३)। इसे वर्तमान वैवस्वत मन्वंतर का छव्वीसवाँ वेद-व्यास कहा गया है।

वैदिक साहित्य में—ऋग्वेद एवं ब्राह्मण ग्रंथों में विश्वामित्र ऋषि से हुए इसके संवर्ष की, एवं इस संवर्ष में इसे जला कर मत्स्य किये जाने की, अनेकानेक कथाएँ प्राप्त हैं।

ऋग्वेद के कई मंत्रों का यह द्रष्टा है (ऋ. ७.३२.२६-२७; ९.९७. १९-२१; १०.८.३. १४-१६)। इन मंत्रों में से छव्वीसवें ऋचा का केवल पहला ही चरण इसके द्वारा रचाया गया था।

ऋग्वेद में प्राप्त एक ऋचा से प्रतीत होता है, कि एक बार जब यह विश्वामित्र के उत्थान में गया था, तब वहाँ के सेवकों ने इसे जला कर मत्स्य किया था (ऋ. तैत्तिरीय-दीपिका ७.३२.२६)।

गण्डनर के अनुसार, ऋग्वेद की अन्य एक ऋचा में शक्ति के मृत्यु-संवर्ष का वर्णन प्राप्त है (ऋ. ३.५३. २२)। किंतु यह व्याख्या अस्यधिक संदिग्ध प्रतीत होती है।

ऋग्वेद के सायणभाष्य में, इसके संवर्ष में शाश्वत्यान ब्राह्मण के अंतगत एक आख्यायिका उद्धृत की गयी है। एक बार सौदास राजा के घर में एक यज्ञ हुआ जहाँ इसने विश्वामित्र ऋषि को पराजित किया। तदुपरांत, विश्वामित्र ने जमदग्नि के घर आश्रय लिया, जिसने उसे 'ससर्पा विद्या' सिखायी। इसी विद्या के आधार से विश्वामित्र ने इसे वन में भस्म किया, एवं इस प्रकार अपने पराजय का प्रतिशोध लिया (ऋग्वेद. सायणभाष्य ३.५३.१५-१६; ऋग्वेद सत्यनिकमणी ७.३२)।

जैमिनि ब्राह्मण में, विश्वामित्र ऋषि के अनुयायियों के द्वारा इसे आग में फेंक दिखे जाने की कथा अधिक स्पष्ट रूप से प्राप्त है (जै. ब्रा. २.६९०)।

महाभारत एवं पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में यह विश्वामित्र के अनुयायियों के द्वारा नहीं, बल्कि राक्षस-रूप प्राप्त हुए कम्पापवाद सौदास राजा के द्वारा भक्षण किये जाने का निर्देश प्राप्त है (म. आ. १६६.३६)। महाभारत में प्राप्त यह निर्देश अयोग्य प्रतीत होता है, क्योंकि, यह कम्पापवाद सौदास के द्वारा नहीं, बल्कि सुदास राजा के द्वारा मारा गया था।

राक्षस के द्वारा इसे भक्षण किये जाने की कथा लिव में भी प्राप्त है (लिव. ६४-६५)। इसका मृत्यु होने पर, इसके पुत्र पराशर ने इसका वध का प्रतिशोध लेने के लिए राक्षसत्र प्रारंभ किया। आगे चल कर, उसके पितामह वसिष्ठ ने उसे इस पापकर्म से परावृत्त किया (पराशर देखिये)। अपनी मृत्यु की पश्चात्, यह शिवभक्ति के कारण स्वर्गलोक पहुँच गया (पद्म. पा. ११०)।

वायुपुराण का कथन—इस दश से 'वायुपुराण' का ज्ञान प्राप्त हुआ था, जिसे इसने चर्मोवासा में स्थित अपने पराशर नामक पुत्र को निवेदित किया था (ब्रह्मांड. २. ३२.१९)।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम अटश्यन्ती था, जिससे इसे पराशर नामक मुनिख्यात पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ४.१.४१)। इसका यह पुत्र इसकी मृत्यु के पश्चात् बरह वषों के उपरांत उत्पन्न हुआ था (पराशर देखिये)।

शक्तिवर्धन—वसिष्ठपुत्र शक्ति का नामांतर (मत्स्य. १४५.९३; शक्ति वासिष्ठ देखिये)।

शक्तिसेन—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो मत्स्य एवं पद्म के अनुसार निरा राजा का पुत्र था। निष्णु एवं मागधत में इसे 'सथाजित्', एवं वायु में इसे 'शक्रजित्' कहा गया है (मत्स्य. ४५.३; वायु. ९६.२०-२९)।

यह परम सूर्यभक्त था, जिसने इसे 'स्यमेतक' नामक दिव्य मणि दिया था। इसी 'स्यमेतक' मणि के कारण, इसका कृष्ण से संवर्ष हुआ। किंतु अंत में इसे यह मणि पुनः प्राप्त हुआ।

इसकी कुल दस पत्नियाँ थी, जिनसे इसे सौ पुत्र उत्पन्न हुए थे। इसके पुत्रों में भंगकार, व्रतपति, एवं अपस्वान्त प्रमुख थे (वायु. ९६.५०-५३)।

२. (सो. विदू.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार शोणाश्र राजा का पुत्र था।

शक्तिहस्त—एक राक्षस, जो जयंत के द्वारा मारा गया (पद्म. सू. ७५)।

शक्र—बारह आदित्यों में से एक (म. आ. ५९-१५)। यह इंद्र था, एवं इसे शतक्रतु नामांतर प्राप्त था (इंद्र १. देखिये)। इसके भाई का नाम उषंद्र था (भा. ६.६.३९)।

शक्रज्योति—मरुतों के प्रथम गणों में से एक।

शक्रदेव—कलिंग देव का एक राजकुमार, जो भामुमत्त राजा का पुत्र था। भारतीय युद्ध में, यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। भीमसेन के द्वारा इसका वध हुआ (म. भा. ५०.२२)।

शक्रमित्र—(सू. इ.) एक राजा, जो मांधान् राजा का कनिष्ठ पुत्र था।

शक्य—कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण।

शक्रहोम—एक राजा, जो भविष्य के अनुसार यज्ञहोत्र राजा का पुत्र था। यह इंद्र के कृपेपात्र व्यक्तियों में से एक था, जिस कारण इसे अयोध्या का राज्यपद प्राप्त हुआ था। आगे चल कर, इंद्र की कृपा से इसे स्वर्गप्राप्ति भी हो गयी।

शंकरमान—महिष लोभों का एक नागवंशीय राजा, जो प्रवीर राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७४.१८७)।

शंकर—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (विष्णु. १.२१.४)।

२. रुद्र-शिव एक नामांतर। इसे 'शंभु', 'उमापति', 'शुलपानि', 'वृषभध्वज', 'हर' आदि नामांतर भी प्राप्त थे (विष्णु. ५.३२.८)।

इसने 'वैद्यालक्ष' नामक इस हजार अध्यायों से युक्त एक राजनीतिविषयक ग्रंथ की रचना की थी, जो ब्रह्मा के द्वारा विरचित एक बृहद्ग्रंथ का संक्षेप कर लिखा गया था (म. भा. ५.१.८६-८८; रुद्र शिव देखिये)।

३. एक चांडाल, जो अपने पत्नी के पुण्यकर्मों के कारण मुक्त हुआ (पद्म. ब्र. २०)।

४. उग्रतप्त प्रकृति का एक शिवभक्त ऋषि, जो गौतम ऋषि का शिष्य था। वृषभदेव ने इसका वध किया, किंतु आगे चल कर शिव ने इसे पुनः जीवित किया (पद्म. पा. ११४)।

५. एक पापी पुरुष, जिसकी कथा स्कंद में 'रामनाथ-तीर्थ' का माहात्म्य कथन करने के लिए दी गयी है (स्कंद. ३.१.४८)।

६. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ११.३५)।

शंकु—(सो. कुकुर.) एक यादव राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार उग्रसेन राजा के नौ पुत्रों में से एक था (भा. ९.२०.२४)। विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः 'शंकु' एवं 'कद्वशंकु' कहा गया है। मत्स्य के अनुसार, यह शंख का अनुगामी था (मत्स्य. २४५.३१)।

२. कृष्ण एवं सत्या के पुत्रों में से एक (भा. १०. ६१.१३)।

३. एक ऋषि, जो वसिष्ठ एवं ऊर्जा के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. २.११.४२)।

४. एक महारथी यादव राजा, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. स. १४.५९; आ. १७७.१८१८*)। अर्जुन एवं सुभद्रा के विवाहसमारोह में, यह वहेज लं कर उपस्थित हुआ था।

शंकुर्ण—'अतल' नामक पाताललोक में रहने-वाला एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. २.२०.१६)।

२. दक्ष के अनुचरों का समूहिक नाम (मत्स्य. ४.५२)।

३. एक राक्षस, जो अशोकवन में सीता के संरक्षणार्थ नियुक्त किया गया था (वा. रा. सुं. १८.२८)।

४. (सो. कुकुर.) एक राजा, जो जनमेजय एवं वपुष्टमा के पुत्रों में से एक था (म. आ. ९०.९४)। पाण्डव (भा. सं.)—'शंकु'।

५. श्रुतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाम, जो जनमेजय के सर्प-सत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१४)।

६. एक स्कंदपापद, जो उसे पार्वती के द्वारा दिये गये दो पापदों में से एक था। दूसरे पापद का नाम पुण्यदंत था (म. श. ४४.४७)।

७. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५२)।

८. कुबेरसभा में रहनेवाला एक शिवपापद (म. स. परि. १.३.२०)।

९. एक पापी ब्राह्मण, जो गीता के सातवें अध्याय के पठन से मुक्त हुआ था (पद्म. उ. १८१)।

१०. एक ब्राह्मणवेपथारी शिवावतार, जिसने एक पिशाच को मुक्ति प्रदान की थी (पद्म. स्व. ३५)।

शंकरथ—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६.४)।

शंकुरोमन्—एक सहस्रशीर्ष नाम, जो कश्यप एवं कद्र के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६.४१)।

शंकुशिरस्—एक पराक्रमी दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था। इंद्र-वृत्र युद्ध में यह वृत्र के पक्ष में, एवं देवासुर युद्ध में यह बलि की सेना में शामिल था (भा. ६.६.३०; १०.१९; विष्णु. १२१.४)।

शंकुशिरोधर—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६.१७)।

शंख—एक पराक्रमी अमुर, जो समुद्र का पुत्र होने के कारण, समुद्र में ही निवास करता था (म. स. ९.

१३)। अपने बल एवं पराक्रम से, इसने समस्त देव एवं लोकपाशों को सुवर्ण-पर्वत की गुफा में भगा दिया था।

वेदों पर आक्रमण—आगे चल कर, देवपक्ष के देव वेदों के बल से पुनः सामर्थ्यशाली न हो जायें, इस हेतु से इसने चारों वेदों को नष्ट करना चाहा। एक बार विष्णु जब गहरी निद्रा में सो रहे थे, तब इसने वेदों पर आक्रमण किया। इसके मग से चारों वेद भाग कर समुद्र में छिप गये।

वेदों के लुप्त हो जाने से, पृथ्वी की सारी जनता संत्रस्त हुई। पश्चात् ब्रह्मा ने विष्णु के पास जा कर उन्हें ज्ञाया, एवं शंख का वध करने की प्रार्थना की।

वध—तदुपरांत विष्णु ने मत्स्य का रूप धारण कर समुद्र में प्रवेश किया, एवं कार्तिक शुक्ल एकादशी के दिन इसका वध किया। इसके वध के पश्चात्, विष्णु ने चारों वेदों को विमुक्त किया। इसी कारण कार्तिक माह, एवं विशेषतः कार्तिक शुक्ल एकादशी विष्णुभक्तों में अत्यंत पवित्र मानी जाती है (पद्म. म. १; उ. १०-११)।

स्कंद के अनुसार, इसका वध कार्तिक एकादशी के दिन नहीं, बल्कि आपाद शुक्ल एकादशी के दिन हुआ था (स्कंद. ४.२.३३)।

२. पाताल में रहनेवाला एक सहस्रशीर्ष नाग, जो कश्यप एवं कद्र के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१.८; भा. ५.२४.३१)। नारद ने इंद्रसारथि मातलि से इसका परिचय कराया था (म. उ. १०१.१२)। बलराम के निर्वाण के समय, यह उनके स्वागतार्थ उपस्थित हुआ था (म. भी. ५.१४)।

३. उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

४. एक मत्स्यवंशीय महारथ राजकुमार (म. उ. ५६९ *), जो विराट एवं सुरथा का पुत्र, तथा उत्तर एवं उत्तरा का भाई था। भारतीय युद्ध में, यह द्रोण के द्वारा मारा गया (म. भी. ७८. २१)।

५. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यवती के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१२३)।

६. एक ऋषि, जो जैमीपथ्य एवं एकपर्णा (एकपाटला) का पुत्र, एवं लिखित ऋषि का भाई था (ब्रह्मांड. २.३०. ४०; वायु ७२.१९)।

महाभारत में—इसकी एवं इसके भाई लिखित की कथा महाभारत में विस्तृत रूप में प्राप्त है, जो व्यास के द्वारा युधिष्ठिर को कथन की गयी थी। भारतीय युद्ध के पश्चात्, युधिष्ठिर विरागी बन कर राज्यत्याग करने के लिए

प्रवृत्त हुआ। उस समय, व्यास ने उसे राजधर्म का उपदेश करते समय कहा—

दण्ड एवं ही राजेंद्र क्षत्रधर्मो न सुण्डनम्।

(क्षत्रिय का प्रथम कर्तव्य राज्य करना है, संन्यास लेना नहीं है)।

अपने उपर्युक्त कथन के पुष्ट्यर्थ, व्यास ने शंख एवं लिखित नामक ऋषियों में संघर्ष होने पर, सुशुभ्र राजा ने किस प्रकार व्यक्तिनिरपेक्ष न्याय दिया, इस संबंध में एक प्राचीन कथा का निवेदन किया (म. शां. २४; लिखित देखिये)।

धर्मशास्त्रकार— इसके नाम पर निम्नलिखित तीन स्मृतिग्रंथ उपलब्ध हैं— १. लघुशंखस्मृति, जिसमें ७१ श्लोक हैं, एवं जो आनंदाश्रम, पूना के 'स्मृतिसमुच्चय' में प्रकाशित की गयी है; २. बृहत्शंखस्मृति, जिसमें अठारह अध्याय हैं, एवं जो वैकटेश्वर प्रेम, बंबई के द्वारा प्रकाशित हो चुकी है; ३. शंख-लिखितस्मृति, जो इसने अपने भाई लिखित के सहयोग से लिखी थी। इस स्मृति में कुल ३४ श्लोक हैं, एवं उसमें पराज-भोजन, अतिथिपूजन आदि विषयों की चर्चा की गयी है। आनंदाश्रम, पूना के द्वारा वह प्रकाशित की गयी है।

७. (सो. पू.) एक राजा, जो जनमेजय पारश्वित राजा एवं वपुष्मा का पुत्र, एवं क्षात्रीय राजा का भाई था (म. आ. १०.९४)।

८. एक ऋषि, जिसे ब्रह्मदत्त राजा ने अपना सारा धन दान के रूप में प्रदान किया था (म. शां. २२६. २९; अनु. १३७.१७)।

९. एक केकयराजकुमार, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था, एवं जिसकी भ्रगी 'रथी' थी (म. उ. १६८.१४)।

१०. कुवेरसभा का एक यक्ष (म. स. ९.१३)।

११. एक जगन्नाथभक्त राजा, जो हैहयवंशीय भूत राजा का पुत्र था। जगन्नाथ ने दर्शन दे कर, इसे मुक्ति प्रदान की (स्कंद. २.१.३८)। हैहय राजाओं के वंश-वलि में इसका नाम अभ्यास्य है।

१२. एक राजा, जिसे सप्तपुत्रों के पदधूलि से मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. क्रि. २१)।

१३. एक ब्राह्मण, जिसने स्वयं की चोरी करने आये व्याध को 'वैशाख-माहात्म्य' सुना कर उसका उद्धार किया (स्कंद. २.७.१७-३१)।

शंख कौष्य—एक आचार्य, जो यज्ञकर्म से संबंधित अनेकानेक नये मंत्रों का प्रवर्तक था। यह जात शाकायन्य नामक आचार्य का समकालीन था (का. सं. २२.७)।

शंख ब्राह्मण्य—एक आचार्य, जो राम कानुजातेय वैश्याप्रय नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१; ४.१७.१)।

शंख यामायन—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (क. १०.१५)।

शंखचूड—रामसेना का एक वानर। राम के द्वारा प्रशस्ति की जाने के कारण, यह सुग्रीव के कृपापात्र वानरों में से एक बना था (वा. रा. उ. ४०.७)।

२. एक विष्णुपूजन राक्षस, जो त्रिप्रचिस्ति राक्षस का पुत्र, एवं दंन राक्षस का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम तुलसी था, जिसे इसने गोश्रवणविवाह किया था। देवी भागवत में इसकी पत्नी का नाम यक्षिणी अथवा विरजा दिा गया है। अपने पूर्वजन्म में, यह मुदामन् नामक विष्णु-वापद था (दे. भा. ९.१८)।

अनाचार—इसकी पत्नी तुलसी के पातिव्रत्य के कारण, एवं विष्णु से प्राप्त किये विष्णुकवच के कारण, यह समस्त पृथ्वी में अजेय बन गया था। इसी कवच के बल से इसने देवों को दस्त करना प्रारंभ किया, एवं उनके राज्य यह हस्तगत करने लगा।

वध—इसके दुःकार्यों को देख कर, श्रीविष्णु ने इसका वध करने का निश्चय किया। तत्पश्चात् उसने इसकी पत्नी तुलसी का पातिव्रत्यप्रभाव नष्ट किया, एवं तत्पश्चात् एक ब्राह्मण का रूप धारण कर, इससे विष्णुकवच भी वान के रूप में प्राप्त किया।

तदुपरांत शिव ने काली के समवेत इस पर आक्रमण किया, एवं विष्णु के द्वारा दिये गये शूल की सहायता से इसका वध किया। इस युद्ध में शिव की ओर से काली, एवं इसकी ओर से तमाम राक्षसियों ने भाग लिया था।

महाभय—इसकी मृत्यु के पश्चात्, इसके हड्डियों से अन्न अने, जिन्हें विष्णुपूजा में अग्रमान प्राप्त हुआ। शंकर को छोड़ कर अन्य देवताओं पर डाला गया जल तीर्थजल के समान पवित्र माना जाता है। इसका शब्द भी शुभ माना जाता है, किंतु इसके ऊपर तुलसीदल चढ़ाना निषिद्ध एवं अशुभ माना गया है (दे. भा. ९.१७.२५; ब्रह्मवै. २.१६-२०; शिव. सूत्र. पु. २७-४०)।

३. पताल में रहनेवाला एक प्रसूत नाग (म. ५. २४.३१)।

प्रा. च. ११८]

४. एक यक्ष, जो कुबेर का अनुचर था। एक बार इसने गोकुल में रहनेवाली कई गोपियों का हरण किया, जिस कारण कृष्ण ने इसका वध किया, एवं इसके सिर का मणि बलराम को अर्पण किया (भा. १०.३४.२५-३२)।

शंखण एवं शंखनाभ—(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय खगण राजा का नामांतर। ब्रह्मांड में इसके पुत्र का नाम व्युपिताश्र दिया गया है (ब्रह्मांड. ३.६३.२०५-२०६)।

शंखनख—वृषणसभा का एक नाग (म. स. ९.९९*)।

शंखपद—एक राजा, जो स्वःरोचिप मनु का पुत्र एवं शिष्य था। मनु ने इसे सात्वत धर्म का ज्ञान प्रदान किया था, जो आगे चल कर इसने सुधर्मन् दिशापाल नामक अपने शिष्य को सिखाया था (म. शां. ३३६.३४-३५)।

२. दक्षिण देश का एक राजा, जो कर्दम प्रजापति, एवं धृति के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.८.१९)। अपने उत्तर आयुष्य में, यह तपस्वी एवं ऋषिक बन गया (मत्स्य. १४५.९६)।

शंखपाद्—एक राजर्षि, जो लोकाक्षि नामक शिवावतार का एक शिष्य था (वायु. २३.१३५)।

शंखपाद अथवा शंखपाल—एक सहस्रशीर्ष नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था। यह भाद्रपद माह के पूर्ण के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३८)।

शंखपिंड—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

शंखमत्—एक ऋषिक (वायु. ५९.९४)। पाठभेद—‘शंखपाद्’, एवं ‘शंखापा’।

शंखमुख—शंखद्वीप में रहनेवाला नागों का एक राजा, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (म. आ. ६५. ११; वायु. ४८.३३)।

शंखमेखल—एक ब्रह्मर्षि, जो सर्पदेश से मृत हुई प्रमदरा को देखने के लिए उपस्थित हुआ था (म. आ. ८.२०)। यह यमसभा का एक सदस्य भी था (म. स. ९.३४)।

शंखरोमन्—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

शंख लिखित—एक ऋषिद्वय (शंख एवं लिखित देखिये)।

शंखशिरस्—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१.१२)। पाठ—‘शंखशीर्ष’।

शंग—तामस मन्वंतर एक का योगवर्धन।

५. उत्तम मन्वंतर का एक ऋषि (मत्स्य. ९.१४)।

शंग शास्त्रायनि आत्रेय—एक आचार्य, जो नगरिन् जानश्रुतेय नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३. ४०.१)। 'शास्त्रायन' का वंशज होने के कारण, इसे 'शास्त्रायनि' पौत्रक नाम प्राप्त हुआ होगा।

शची पौलोत्तमी—एक वैदिक सूक्तग्रथी, जो पुलोमन् राजा की कन्या थी। इसके द्वारा रचित सूक्त में सौत का नाश करने के लिए प्रार्थना की गयी है (ऋ. १०. १५९)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे इन्द्र की पत्नी एवं जयन्त की माता कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.६. २३) इन्द्र-नहुष संवर्ष में इसने महत्त्वपूर्ण भाग लिया था (नहुष २. देखिये)। इसका सूर्य के साथ संवाद हुआ था (म. अतु. १४.५-६ कुं.)।

शठ—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.२८)।

२. (सो. वसु.) एक यादव, जो वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था। कृष्ण के साथ, यह उपद्रव्य नगरी में पांडवों से मिलने गया था।

३. एक राक्षस, जिसके घर पर हनुमत् ने लंकादहन के समय छलांग मारी थी (वा. रा. सुं. ६.२४)।

४. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

शंड—शंडामर्क नामक ऋषिद्वय में से एक (शंडामर्क देखिये)।

२. एक कुष्मांड पिशाच, जो कपि नामक पिशाच के दो पुत्रों में से एक था। इसके भाई का नाम अज था। इसकी जेठुधना, एवं ब्रह्मधामा नामक दो कन्याएँ थीं, जिनका विवाह क्रमशः यक्ष एवं रक्षस् से हुआ था। शंड की इन दोनों कन्याओंका वंशविस्तार पुराणों में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.७.७४-९७)।

शंडामर्क—एक ऋषिद्वय, जो असुरों का पुरोहित था (तै. सं. ६.४.१०.१; मै. सं. ४.६.३; तै. ब्रा. १.१.१. ५; श. ब्रा. ४.२.१.४-६)। वैदिक साहित्य में इन दोनों का अलग-अलग निर्देश भी प्राप्त है (वा. सं. ७.२.१२-१३; १६.१७)। 'शुक्रामेधिग्रह' ग्रहण करने की पद्धति इन दो पुरोहितों के कारण प्रस्थापित हुई थी (तै. सं. ६. ४.१०)।

असुरों के पुरोहित—वृहस्पति जिस प्रकार देवों का पुरोहित था, उसी प्रकार शंड एवं मर्क असुरों के पुरोहित थे। इन्हींके कारण असुर-पक्ष सदैव अजेय रहता था। अंत में इन्हें सोम की लालच दिखा कर, देवों ने इन्हें

अपनी ओर आकृष्ट किया, एवं इस प्रकार असुरों को पराजित किया।

आगे चल कर, देवों के द्वारा यज्ञ प्रारंभ करते ही, सोमप्राप्ति की आशा से ये उपस्थित हुए। किंतु देवों ने इन्हें सोम देने से साफ इन्कार किया, एवं फजिहत कर इन्हें यज्ञस्थान से दूर भगा दिया (तै. सं. ६.४.१०; तै. ब्रा. १.१.१)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इन्हें शुक एवं गो के चार पुत्रों में से दो कहा गया है, एवं इनके अन्य दो भाइयों के नाम त्वष्ट एवं वरविन् बताया गये हैं।

ये शुक के प्रमुख शिष्यों में से दो थे, एवं असुरत्व को विजय प्राप्त कराने के हेतु शुक ने इन्हें असुरों का प्रमुख गुरु बनाया था। किंतु अंत में देवों ने इन्हें सोम की लालच दिखा कर अपने पक्ष में झगल कराया, एवं इस प्रकार असुरों को पराजित करने के कार्य में देवत्व सफल बन गया (वायु. ९.८.६२-६७; मत्स्य. ४७.२४; २२९.३३; ब्रह्मांड. ३.७.२-७३)।

प्रव्हाद के गुरु—असुरराज हिरण्यकशिपु ने इन्हें अपने पुत्र प्रव्हाद का गुरु नियुक्त किया था, किंतु यह कार्य भी ये सुयोग्य प्रकार से पूरा न कर सके (म. ७.५.१)।

शंडिल—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. अष्टादश व्यासों में से एक (व्यास पाराशर देखिये)।

शत—जमासुर के शतदुदुभि नामक पुत्र का नामाल (वायु. ६७.७८)।

शतकिलाक—जैगीपव्य ऋषि का पिता।

शतगामि—ज्जायु के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ६. ३६; पद्म. सू. ६)।

शतगुण—एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं क्रोधा के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६.३९)।

शतग्रीव—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६.११)।

शतघंटा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४१.११)।

शतचंद्र—कौरव पक्ष का एक योद्धा, जो गांधार-राज सुबल का पुत्र, एवं शकुनि का भाई था। भीमसेन ने इसका वध किया (म. द्रो. १३२.२०)।

शतजित्—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो विरज एवं विपूची के सौ पुत्रों में से एक था (मा. ५.५.१५)।

२. (सो. सहं.) एक राजा, जो सहस्रजित् राजा का पुत्र था। इसके महाहय, वेणुहय एवं हँहय नामक तीन सुविख्यात पुत्र थे (भा. ९.२३.२१)।

३. कृष्ण एवं जांबवती का एक पुत्र, जो प्रभासक्षेत्र में यादवीयुद्ध में मारा गया था (भा. ९.६१.११)।

४. एक यक्ष, जो आश्विन माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है।

५. (स्वा. नाभि.) एक राजा, जो रजस् राजा का पुत्र, एवं विश्वग्योति आदि सौ पुत्रों का पिता था (ब्रह्मांड. २.१४.७०-७२)। इस 'शतति' नामान्तर भी प्राप्त था।

शतज्योति--धैवस्वत मनुपुत्र सुभ्राज् के तीन पुत्रों में से एक। इसे एक लक्ष-पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. १.४२)।

शततारका--सोम की सत्ताइस पत्नियों में से एक।

शतति--(स्वा. नाभि.) रजस्पुत्र शत राजा का नामान्तर (शत ५. देखिये)।

शततेजस्--वारहृषी व्यास (व्यास पाराशर देखिये)।

शतदंष्ट्र--एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१३५)।

शतदुंदुभि--जम्भासुर के पुत्रों में से एक (जम्. ९. देखिये)।

शतद्युम्न--एक राजा, जिस पर मत्स्य देवता ने क्रुमा की थी (तै. ब्रा. १.५.२.१)।

२. (मृ. निमि.) एक दानवराज, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार भानुमत् राजा का पुत्र था (भा. ९. १३.२१-२२)। वायु में इसे 'प्रद्युम्न' कहा गया है।

इसने मौद्गल्य ऋषि को एक सोने का यह प्रदान किया था, जिस कारण इसे स्वर्गप्राप्ति हुई (म. शां. १२६.३२; अनु. १२६.३२)।

३. चाक्षुष पत्न एवं नहुवला के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. २.३६.७२)।

शतद्रुति--छाया अथवा सर्वा का नामान्तर।

शतधनु--(सो. क्रोष्ट्र.) यादववंशीय शतधन्वन् राजा का नामान्तर।

६. (मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार देववर्मन् मौर्य राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७४. १४८)। विष्णु, भागवत, एवं मत्स्य में इसे 'सोम-शर्मन्पुत्र शतधन्वन्' एवं वायु में इसे 'शतधर' कहा गया है।

शतधन्वन्--(सो. क्रोष्ट्र.) मिथिला देश का एक दुष्टप्रकृति भोजवंशीय यादव राजा, जो हरीक राजा का पुत्र, एवं कृतवर्मन् राजा का भाई था। भागवत एवं श्रिष्णु में उसे शतधनु कहा गया है।

कलिंग देश के राजा चित्रांगद की कन्या के स्वयंवर में यह उपास्थित था (म. शां. ४.७)। अक्रूर एवं कृतवर्मन् के कथनानुसार, इसने यादवराजा सत्राजित् का वध किया, एवं उसका त्यमंतक मणि ले कर यह भाग गया (भा. १०.५७.५-२०)।

पश्चात् कृष्ण ने इस पर आक्रमण किया, एवं यह विशातहृदया नामक घोड़ी पर सवार होकर भागने लगा। मिथिला नगरी के समीप श्रीकृष्ण ने इसे पकड़ कर इसका शिरच्छेद किया (ह. वं. १. ३९. १९)। किंतु त्यमंतक मणि अक्रूर के पास रखने के कारण, श्रीकृष्ण को वह प्राप्त न हो सका (भा. १०.५८.९; अक्रूर एवं सत्राजित् देखिये)।

२. मौर्यवंशीय शतधनु राजा का नामान्तर।

३. एक विष्णुभक्त राजा, जिसके पत्नी का नाम शैव्या था। एक पाखंडी व्यक्ति से मिलने के कारण, इसे एवं इसकी पत्नी को अनेकानेक कष्ट सहने पड़े (विष्णु. ३. १८.५३-९५)।

४. हंसध्वज राजा का प्रधान, जिसकी माता का नाम सुमति था।

शतपर्वा--शुक्राचार्य की भार्या (म. उ. ११५.१३)।

शतप्रभेदन वैरूप--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ११३)।

शतबल--रामसेना का एक बानर सेनापति (वा. रा. कि. ४३.१)

शतबलाक--एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा में से शाक्यैव रथीतर नामक आचार्य का शिष्य था।

शतबलाक्ष मौद्गल्य--एक वैचारण, जिसके द्वारा की गयी 'मृत्यु' शब्द की निरुक्ति का निर्देश यास्क के निरुक्त में प्राप्त है (नि. ११.६)।

शतबाहु--एक असुर, जो हिरण्यकशिपु का अनुगामी था।

शतभेदन वैरूप--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ११३)।

शतमायु--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (वायु. ६८.११)।

शतमुख—एक शिवभक्त असुर, जिसने सौ साल तक अपने मांसखंडों की आहुति दे कर शिव की तपस्या की थी, जिस कारण संतुष्ट हो कर शिव ने इसे अनेकानेक वर प्रदान किये थे (म. अन्. ४५.६८)।

शतमुखी राघव—मायापुरी का एक राक्षसराज, जिसने निकुंभपुत्र पौंड्रक राक्षस के साथ लंकाधिपति विभीषण को पदच्युत करने का पक्ष्यत्र रचा था, किन्तु अंत में राम ने इसका वध किया (आ. रा. राव्य. ५: पौंड्रक देखिये)।

शतयातु—एक ऋषि, जिसका निर्देश ऋग्वेद में पराशर के पश्चात् एवं वसिष्ठ के पहले किया गया है (ऋ. ७. १४.२१)। मेरुवनर के अनुसार यह वसिष्ठ ऋषि के पुत्रों में से एक था (मेरुवनर, वैदिके स्टूडियस ७.१८.२१)।

शतयूप—केकय देश का एक तपस्वी राजा, जिसने अपना राज्य अपने पुत्रों को सौंप कर कुक्षेत्र के वन में तपस्या प्रारंभ की थी। इसके पितामह का नाम सहस्रचित्य था। अपने आशुष्य के उत्तरकाल में धृतराष्ट्र इसके आश्रम में आया था जिसे इसने वनवास की विधि बतायी थी (म. आश्र. २५.९)।

शतरथ—(सू. इ.) एक राजा, जो मूलक राजा का पौत्र, एवं दशरथ राजा का पुत्र था। वायु में इसे मूलक राजा का पुत्र कहा गया है (वायु. ८८.१८०)।

इसे 'इलविल' एवं 'इडविड' नामांतर भी प्राप्त था, जिस कारण इसके पुत्र 'एलविल' अथवा 'एडविड' नाम से सुविख्यात हुए।

शतरूप—सुतार नामक शिवावतार का एक शिष्य।

शतरूपा—ब्रह्मा की एक मानसकन्या, जो उसके वामांग से उत्पन्न हुई थी। इसे सरस्वती नामांतर भी प्राप्त था (भा. ३.१२.५२)।

इसने दीर्घकाल तक तपस्या कर स्वायंभुव मनु राजा को पतिरूप में प्राप्त किया था। स्वायंभुव मनु से इसे प्रियव्रत, उत्तानपाद आदि सात पुत्र, एवं देवहूति नामक तीन कन्याएँ उत्पन्न हुई थी (ब्रह्मांड. २.१.५७)।

मत्स्य में इसे अपने पिता ब्रह्मा से ही स्वायंभुव मनु, मारीच आदि सात पुत्र उत्पन्न होने का निर्देश प्राप्त है। आंगे चल कर मारीच को वामदेव, सनत्कुमार आदि पुत्र उत्पन्न हुए थे (मत्स्य. ४.२४-३०)।

शतर्चिन—एक ऋषिसमुदाय, जिसे ऋग्वेद के कई सूक्तों के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (ऐ. आ. २.२.

१; आश्व. सू. ३३)। इस ऋषिसमुदाय में कुल सोलह ऋषि समाविष्ट थे (आर्षानुक्रमणी १.५)।

३. एक ऋषि, जो वंग राजकुमार हेमकांत के द्वारा मारा गया था (हेमकांत देखिये)।

शतलोचन—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.१६)।

शतशलाक—जैगीपथ्य ऋषि का पिता, जिसकी पत्नी का नाम एकपाताला था। पांडभेद (वायु पुराण) - 'शतशलाक' (ब्रह्मांड. ३.१०.२०; वायु. ७२.१८)।

शतशाद—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

शतशीर्षा—वासुकि नाम की पत्नी (म. उ. ११५. ४६०)।

शतहय—तामस मनु के पुत्रों में से एक।

शतहृद्—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६.१८)।

शतहृदा—एक राक्षसी, जो जवासुर की पत्नी एवं विराच की माता थी।

शताजिन—(सो. क्रोष्ट.) एक यादव राजा, जो भजमान एवं वाहयका के पुत्रों में से एक था।

शतानंद—एक ऋषि, जो गौतम शरद्वत् तथा ब्रह्मानसकन्या एवं दिवोदासमंगिनी अहल्या का पुत्र था। यह विदेह देश के जनक राजा का पुरोहित था, एवं राम दशरथ के विवाह में यह मुख्य पुरोहित था (वा. रा. ब्रा. ५०-५१; भा. ९.२१.३४-३५)। इसके पुत्र का नाम सत्यभृति था। पांडभेद (मत्स्यपुराण) - 'शरद्वत्'।

२. सप्तर्षि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

शतानीक—(सो. कुरु.) एक राजकुमार, जो नकुल एवं द्रौपदी का पुत्र था (म. आ. ५.७.१०२; ९०.८२; भा. ९.२२. २९; मत्स्य. ५०.५३)।

भारतीय युद्ध में इसका निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध हुआ था :—१. भृतरुचमन् (म. द्रो. २७.२२); २. चित्रसेन (म. द्रो. १४३.९); ३. श्रुतकर्मन (म. क. १८. १२-१६); ४. अश्वत्थामन् (म. क. ३९.१५); ५. कुण्डिपुत्र (म. क. ६२.५२)। इसके रथ के अथ शालपुष के समान रक्त्तम पीले वर्ण के थे (म. द्रो. २२.२३)।

भारतीय युद्ध के अठारहवें दिन हुए रात्रियुद्ध में अश्वत्थामन् ने इसका वध किया (म. सौ. ८.५४)।

२. (सो. कुरु. मत्स्य.) एक राजा, जो परिश्विनपुत्र जननेत्रय का पुत्र था। इसकी माता का नाम वसुष्मा था, जो काशिराज की कन्या थी (म. आ. ९०.१४)।

इसने याज्ञवल्क्य, कृप, एवं शौनक से क्रमशः वेदविद्या, अन्नविद्या, एवं आत्मविद्या प्राप्त की थी। समुद्र नामक सान्ध्य ने इसे भारत एवं भविष्यपुराण कथन किया था (भवि. ब्राह्म. १.३०-३६)।

इसकी पत्नी का नाम वैदेही था, जिससे इसे अश्वमेधन्त (सहस्रानीक) नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. १.२२ ३८-३९)। शतानीक राजा के जीवन्मृत्यु से महाभारत में प्राप्त कुरुवंश का वृत्तान्त समाप्त होता है, (मं. आ. १०.९४-९६)। किन्तु विष्णु में परिशुत्रि राजा से ही कुरुवंश का वर्णन समाप्त होता है, एवं उसके आगे 'भविष्य वंश' प्रारंभ होता है (विष्णु. ८.२१.१-२; भा. १.२२.३६)।

यह अत्यंत विरक्त प्रकृति का राजा था, जिस कारण अपनी ऊपर आवृष्य में आत्मज्ञान प्राप्त कर, यह स्वर्गलोक प्रविष्ट हुआ।

३. (सो. कु. भविष्य) एक कुरुवंशीय राजा, जो महाभारत के अनुसार वसुदान राजा का, मत्स्य के अनुसार वसुधामन राजा का, एवं भागवत के अनुसार सुदास राजा का पुत्र था (मत्स्य ५.०.८६)। इसके पुत्र का नाम दुर्धन (उद्यन) था (भा. ९.२२.४३)। इसका सविस्मृत क्रांक्रम विष्णु में निम्नप्रकार दिया गया है—वसुधामन-शतानीक-उद्यन-वहीनर-खंडपाणि-निरमित्र-क्षेमक। क्षेमक राजा के साथ सोमवंश समाप्त होता है (विष्णु. ४.२१.३)।

४. मत्स्यनरेश विराट के सोमदत्त नामक छोटे भाई का नामान्तर (म. वि. ३०.१३)। भारतीय युद्ध में यह द्रोण के द्राघ मारा गया (म. वि. ३.१९; म. द्रो. २०.२२; क. ४.८३)।

५. मत्स्यनरेश विराट का भाई एवं सेनापति। विराट के द्वारा किये गये शोषयात्रा युद्ध में, इसने त्रैगुणों के साथ युद्ध किया था (म. वि. ३१.१६)।

भारतीय युद्ध में यह पांडवों का प्रमुख योद्धा था (म. द्रो. १४३.२७)। इसी युद्ध में, शल्य के द्वारा इसका वध हुआ (म. द्रो. १४३.२७)।

६. ब्रह्मनाबर्षि मनु के पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. ४. १.०२)।

७. एक राजा, जो बृहद्रथ राजा का पुत्र था (विष्णु. ४.२१.१४)।

शतानीक सात्राजित—एक भरतवंशीय सम्राट्, जिसने काशिनरेश शत्रुघाट्ट को पराजित कर, उसके

यज्ञाश्व का हरण किया था (श. ब्रा. १३.५.४.९-१३)।

यह सत्राजित राजा का पुत्र था, एवं वाजरत्नपुत्र सोमशुभ नामक आचार्य ने इसे 'देन्द्र महाभियेक' किया था (ऐ. ब्रा. ८.२१)। अथर्ववेद के अल्पथ अर्थ के एक सूक्त में, दाशायणों के द्वारा इसे बांधा जान का निर्देश प्राप्त है (अ. वे. १.३५.१; वा. सं. ३४.५२)।

शतायु—(सो. पुत्रवत्.) एक राजा, जो विष्णु, मत्स्य एवं वायु के अनुसार, पुरुरवत् एवं उर्वशी के छः पुत्रों में से एक था (मत्स्य. २४.३४)। भागवत में इसे 'सत्यायु' कहा गया है।

शात्रे आश्रिवेश—एक उदार राजा, जो अश्रिवेश का पुत्र था। सांवरण प्राजापत्य नामक आचार्य के द्वारा इसके दानुत्व की प्रशंसा की गयी है (क. ५.३४.९)।

शत्रुघातिन्—(स. इ.) शत्रुघ्न का ज्येष्ठ पुत्र, जिसकी माता का नाम श्रुतकीर्ति था (वा. रा. उ. १०८. ११)। इसे निम्नलिखित नामान्तर भी प्राप्त थे—यूपकेट; श्रमेन (वायु. ८८. १८६); श्रुतमेन (भा. ९.११.१३)। लक्ष्मण के पश्चात्, यह वैदिश राज्य के राजसिंहासन पर अधिष्ठित हुआ था (वा. रा. उ. १०८.११)।

परिवार—इसकी निम्नलिखित पत्नियों थीं— १. मदनसुरी एवं २. शिवकांति, जो कंबुकंट राजा की कन्याएँ थी, एवं जो इसे स्वयंवर में प्राप्त हुई थी (आ. रा. विवाह. ८); ३. मालती (आ. रा. विवाह. ७)।

शत्रुघ्न—(स. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो दशरथ राजा का पुत्र, एवं राम दशरथि का कनिष्ठ सापत्न वंशु था। इसकी माता का नाम सुमित्रा था, एवं लक्ष्मण इसका ज्येष्ठ सगा भाई था। फिर भी अपने सापत्न वंशु भरत से ही यह अधिक सहानुभाव रखता था, जिस-कारण 'राम-लक्ष्मण' के समान 'भरत-शत्रुघ्न' का जोड़ा भ्रातृभाव की ज्वलंत प्रतिमा बन कर प्राचीन इतिहास में अमर हो चुका है।

राम का यौवराज्याभियेक—दशरथ के द्वारा राम का यौवराज्याभियेक जब निश्चित हुआ, उस समय यह भरत के साथ उसके ननिहाल में था। अयोध्या आने पर इसे राम को वनवास प्राप्त होने के संवंध में बार्ता ज्ञात हुई। पश्चात् इस सारे अनर्थ का कारण मंत्ररा है, यह ज्ञात होते ही इसने उसे पकड़ कर बसीटा, एवं नृत्त पीटा। यह उसका वध भी करना चाहता था, किन्तु भरत ने इसे इस आचिार से परावृत्त किया।

अपनी सापत्न माता कैकेयी के मोह में फँस कर राम जैसे पुण्यपुरुष को वनवास देनेवाले अपने पिता दशरथ को भी इसने बुरा-भला कहा, एवं इस दुःखी घटना का अवरोध न करनेवाले अपने ज्येष्ठ भाई लक्ष्मण को भी काफ़ी दोष दिया (वा. रा. अयो. ७८.२-४)।

पाटुका संरक्षण—राम की पाटुका ले कर नन्दिग्राम लौट आनेवाले भरत के शरीररक्षक के नाते यह भी उपस्थित था। राम के वनवासकाल में शत्रुघ्न कहीं रहता था, इस संबंध में कोई भी जानकारी 'वाल्मीकि रामायण' में उपलब्ध नहीं है। राम के वनवाससमाप्ति के पश्चात्, यह उसका धनुष एवं बाण ले कर उसका स्वागत करने गया था।

लवणवध—वनवासकाल के पश्चात् राम अयोध्या का राजा बन गया, तब उन्हींके आदेश से इसने लवणासुर पर आक्रमण किया।

लवणासुर यमुनातट के निवासी च्यवन भार्गवादि ऋषियों को व्रत करता था। उसके पिता मधु को शिव से एक अजेय शूल प्राप्त हुआ था, एवं शिव ने उसे आशीर्वाद दिया था कि, जब तक वह शूल लवण के हाथ में रहेगा, तब तक वह अवध्य होगा (वा. रा. उ. ६१.२४)। इसी शूल के बल से लवण अब समस्त पृथ्वी पर अत्याचार करने के लिए प्रवृत्त हुआ था।

च्यवन भार्गवादि ऋषियों ने लवण की शिकायत राम से की, जिस पर राम ने शत्रुघ्न को इस प्रदेश का राज्याभिषेक किया, एवं इसे लवण का वध करने की आज्ञा दी। इसने एक विशाल सेना को मधुवन की ओर भेज दिया, एवं स्वयं एक राज्ञि वाल्मीकि के आश्रम में व्यतीत कर, यह मधुवन के लिए रवाना हुआ। अयोध्या से निकलने के पश्चात् नौथे दिन यह मधुपुर पहुँच गया।

मधुपुर पहुँचते ही इसने देखा कि, शिव के द्वारा दिया गया शूल अपने राजभवन में रख कर, लवण कहीं बाहर गया था। इसने वह शूल हस्तगत किया, एवं यह उस राक्षस की राह देखते मधुपुर के द्वार में ही खड़ा हुआ। पश्चात् इन दोनों में घमासान युद्ध हुआ, जिसमें इसने लवण का वध किया।

मथुरा की स्थापना—लवणवध के पश्चात्, इसने मधुवन में स्थित मधुपुरी अथवा मथुरा नगरी में अपनी राजधानी स्थापित कर, उसका नाम 'मथुरा' रखवा (ब्रह्मांड. ३.६३.१८६; वायु. ८८.१८५-१८६; भा. ९.११.१४)। पश्चात् इसने 'मधुवन' राज्य का नाम बदल

कर उसे 'शरसेन' नाम प्रदान किया। आगे चल कर इसी नाम से यह प्रदेश सुविख्यात हुआ।

राम से भेंट—इस प्रकार, बाहर वपों तक मधुपुरी में राज्य करने के पश्चात्, राम के दर्शन की इच्छा इसके मन में उत्पन्न हुई। तदनुसार यह अयोध्या पहुँचा, एवं इसने मधुपुरी छोड़ कर राम के पास ही अयोध्या में रहने की इच्छा प्रदर्शित की। किंतु राम ने इसे इस निश्चय से परावृत्त कर, क्षात्रधर्म के अनुसार मधुपुरी में प्रजापालन का कार्य करने की आज्ञा दी (प्रजा हि परिपाल्या क्षत्रधर्मेण; वा. रा. उ. ७२.१४)। पश्चात् सात दिनों तक अयोध्या में रह कर, यह मधुपुरी लौट गया। मधुपुरी वापस जाते समय, इसे वाल्मीकि के आश्रम में कुशलकों के द्वारा रामायण सुनने का अवसर प्राप्त हुआ।

राम का अश्वमेधयज्ञ—राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, अश्वमेधीय अश्व के संरक्षण का भार इसे सौंपा गया था (वा. रा. उ. ११)। अश्वसंरक्षण के हेतु शत्रुघ्न के द्वारा किये गये पराक्रम का कल्पनात्मक वर्णन पद्य में प्राप्त है, जहाँ इस कार्य के लिए इसने पाताल में दिग्विजय करने का (पद्य. पा. ३८), एवं शिव से युद्ध करने का निर्देश प्राप्त है (पद्य. पा. ४३)।

शत्रुघ्न के अश्वमेधीय दिग्विजय में निम्नलिखित वीर शामिल थे:—प्रताप्राय, नीलरत्न, लक्ष्मीनिधि, रिपुताप, उग्रहय, शस्त्रविन्, महावीर, रथाग्रणी, एवं दंडभृत् (पद्य. पा. ११)।

दिग्विजय—अश्वमेधीय अश्व के साथ इसने निम्नलिखित देशों में दिग्विजय कर अपना प्रभुत्व प्रस्थापित किया था:—पांचाल, कुरु, उत्तरकुरु, दशार्ण, श्रीविशाल, अहिच्छत्र, पयोष्णी, रत्नातटनगर, नीलपर्वत, चक्राकनगर, तेजःपुर, नर्मशतीर, पाताललोक, विंध्यपर्वत में स्थित देवप्रनगर, भारतवर्ष की सीमा के बाहर स्थित हेमकूटपर्वत, अंग, वंग, कलिंग, कुंडलनगर, गंगातीर में स्थित वाल्मीकि आश्रम (पद्य. पा. १-६८)।

मृत्यु—अपना आयुःकाल समाप्त हो गया है, यह जान कर राम ने भरत एवं शत्रुघ्न को अयोध्या में बुला लिया, एवं ये तीनों भाई सरयू नदी के तट पर 'गो-प्रतारतीर्थ' में वैष्णव तेज में विलीन हुए (वा. रा. उ. ११.०)। लक्ष्मण की मृत्यु इसके पहले ही हो चुकी थी (राम दशरथ देखिये)।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम श्रुतकमति था, जो कुशाध्वज जनकराज की कन्या थी (वा. रा. वा. ७३.

३३)। अपनी इस पत्नी से इसे शत्रुघातिन् एवं सुबाहु नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे। भागवत एवं विष्णु में इसके पुत्र शत्रुघातिन् का नाम क्रमशः 'श्रुतसेन' एवं 'शरसेन' दिया गया है (भा. ९.११.१३-१४; विष्णु. १.१२.४)। वायु में भी इसके प्रथम पुत्र का नाम शरसेन बताया गया है (वायु. ८८.१८६)।

अपनी मृत्यु के पूर्व इसने सुबाहु एवं शत्रुघातिन् को क्रमशः मथुरा एवं शरसेन देश का राज्य दिया था (वा. रा. उ. १०७.१०८)। वायु के अनुसार दोनों ही पुत्रों को इसने मथुरा का ही राज्य प्रदान किया था।

२. लंका का एक रावणपक्षीय राक्षस (वा. रा. यु. ४३)।

३. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजकुमार, जो श्वफल्क यादव के तरह पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४.१७)।

४. अक्रूर यादव के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.२९)।

५. एक यादव राजकुमार, जो भङ्गकार एवं नरा के पुत्रों में से एक था। अक्रूर ने इसका वध किया (वायु. १६.८५)।

शत्रुजिन्—(सो. विद्रु.) एक राजा, जो शोणाश्र राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४४.७९)।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार मंथातृ राजा का पुत्र था (मत्स्य १२.३५)। भागवत, विष्णु, एवं वायु में इसे 'अंबरोप' कहा गया है।

३. (सू. इ.) एक राजा, जो ब्रुवसंधि राजा एवं लीलावती का पुत्र था।

४. प्रतर्ध्व राजा का नामांतर (विष्णु. ४.८.१२)।

५. कुकलयाश्र राजा का नामांतर (भा. ९.१७.६)।

शत्रुंजय—श्रुतराष्ट्र का एक पुत्र। भारतीय युद्ध में इस रर भीष्म के रक्षण का भार सौं ग गया था (म. भी. ४७.८)। भीमसेन ने इसका वध किया (म. द्रो. ११२.३०)।

२. कौरवपक्ष का एक योद्धा, जो कर्ण का छोटा भाई था। अर्जुन ने इसका वध किया था (म. द्रो. ३१.५९)।

३. द्रुपद राजा का एक पुत्र, जो अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया था।

४. कौरवपक्ष का एक योद्धा, जो अभिमन्यु के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. ४७.१५)।

५. सौवीर देश का एक राजकुमार, जो जयद्रथ के माहियों में से एक था। जयद्रथ के द्वारा किये गये द्रौपदी-

हरण के समय, अर्जुन के द्वारा यह मारा गया (म. व. २४९.१०)।

६. एक भैरव योद्धा, जो अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. क. १९.१०)।

७. सौवीर देश के कणिक राजा का नामांतर, जिसे भरद्वाज ऋषि ने राजधर्म एवं कृत्नीति का उपदेश किया था (म. शां. १३८.४)।

शत्रुंजया—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.६)।

शत्रुतपन—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.२८)।

शत्रुतप—दुर्योधन की सेना का एक राजा, जो कर्ण का भाई था। अर्जुन ने 'उत्तर-गोग्रहण' के समय, इसका वध किया (म. वि. ४९.१३)।

शत्रुमर्दन—एक राजा, जो ऋतुश्वज एवं मदालसा का तृतीय पुत्र था (मार्क. २३.२६)।

शत्रुसह—(सो. कुरु.) श्रुतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में कर्ण का शरीरसंरक्षक था। भीमसेन के द्वारा यह मारा गया (म. द्रो. ११२.४०)।

शत्रुसदन—उद्यरथ राजा के सूत्र नामक मंत्री का पुत्र।

शार्थीय—एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास के सामशिष्य परंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था।

शनि—एक पापग्रह, जो नौ ग्रहों में से एक प्रमुख ग्रह माना जाता है (मत्स्य. ९२.४४)। इसे 'शनेश्वर' नामांतर भी प्राप्त था। लोहे से बने हुए रथ से यह समस्त ग्रहमंडल का परिभ्रमण तीस माह में पूरा करता है (भा. ५.२२.१६)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे महा-तेजस्वी एवं तीक्ष्ण स्वभाववाला ग्रह कहा गया है। इसे छाया एवं विषस्यन् (मार्तंड) का पुत्र कहा गया है (भा. ६.६.४१; विष्णु. १.८.११)। इसके भाई का नाम सावर्णि था (विष्णुधर्म. १.१०६)। आगे चल कर अपने पिता सूर्य की आज्ञा से यह ग्रह बन गया।

कालिकापुराण में भी इसे सूर्यपुत्र कहा गया है, एवं सती की मृत्यु के पश्चात् शिव के आँसु से जो आंसू टपके, उसीके कारण इसके कृष्णवर्णीय बनने की कथा वहाँ प्राप्त है (कालि. १८)। आगे चल कर वह मनुष्यों को असंत्यत व्रत करने लगा, जिस कारण शिव ने मेघादि राशि इसके अधिकार में दी, एवं पूजा करनेवाले लोगों

को सुख एवं समृद्धि प्रदान करने की आज्ञा इसे दी (स्कंद. ५.१.५०)।

पराक्रम—शिव एवं त्रिपुर के युद्ध में, इसने शिव के रथ पर आरूढ़ हो कर नरकासुर से युद्ध किया था (भा. ८.१०.३३)। एक बार अश्वत्थ एवं पिप्पल अगत्य ऋषि को अत्यधिक वस्त करने लगे, जिस कारण इसने उनका वध किया था (ब्रह्म. ११८)।

दशरथ राजा से युद्ध—ज्योतिषशास्त्र की दृष्टि से शनि जब रोहिणी नक्षत्र को पीडित करता है (रोहिणी-शकट का भेदन), तत्र पृथ्वी के मनुष्यों के लिए वह एक अशुभ योग माना जाता है। रोहिणी नक्षत्र का देवता प्रजापति होता है, जिस कारण शनि के द्वारा रोहिणी-शकट का भेद होने पर उसका दुष्परिणाम प्रजापति पर हो कर, सारे पृथ्वी पर लोकक्षय होता है।

दशरथ राजा के राज्यकाल में ऐसा ही कुयोग उत्पन्न हुआ था। उस समय दशरथ राजा ने शनि से युद्ध कर, इसे रोहिणीशकट के भेदन से परावृत्त किया। उस समय दशरथ के द्वारा शनि का गुणगान किये जाने पर, इसने उसे आशीर्वाद दिया, 'जो लोग अपनी प्रिय वस्तुओं का दान कर गरी उपासना करेंगे, उनकी मैं रक्षा करूँगा'।

शांतनु—कुब्जवंशीय 'शांतनु' राजा का नामांतर (शांतनु तथा शांतनव देखिये)।

शबर—एक म्लेंच्छ जातिविशेष, जो दक्षिणापथ प्रदेश के निवासी थे। वायु में इन्हें 'दक्षिणापथवासिनः' कहा गया है, एवं इनका निर्देश आभीर, आटव्य, पुलिंद, वैदर्भ, दण्डक आदि लोगों के साथ प्राप्त है (वायु. ४५. १२६)।

ब्राह्मण ग्रंथों में—ऐतरेय ब्राह्मण में, विश्वामित्र ऋषि के ज्येष्ठ पचास पुत्र उसीके ही शाप से आंत्र, पुण्ड्र, शबर, पुलिंद एवं मृत्वि आदि म्लेंच्छ बनने का निर्देश प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ७.१८.२; सां. श्रौ. १५.२६.६)। ये लोग दक्षिण भारत में पेन्नार नदी के प्रदेश में रहते थे। रामायण में प्राप्त शबरी की कथा भी यही संकेत को पुष्टि प्रदान करती है। किन्तु इन लोगों की अन्य कई वस्तियाँ राजपुताना, हिमालय प्रदेश आदि में थी।

महाभारत के अनुसार, ये लोग पहले क्षत्रिय थे, किन्तु बाद में हीन आचारों के कारण म्लेंच्छ बन गये। भारतीय युद्ध में ये लोग कौरवों के पक्ष में शामिल थे, जहाँ सात्यकि ने इनका संहार किया था (म. द्रो. १५.३८)।

२. कीकट देश में रहनेवाला एक शिवभक्त अंत्यज, जो चिताभस्म की प्राप्ति के लिए स्वयं को दग्ध करने के लिए प्रवृत्त हुआ था (स्कंद. ३.३.१७)।

३. एक विष्णुभक्त अंत्यज, जो तुलसीपत्र के प्रसाद में यमदूतों के पंजे से मुक्त हुआ (पद्म. पं. २०)।

४. अमिताभ देवों में से एक।

शबर काशीवत—एक वैदिक सूत्रतद्रथ (क. १०. १६९)।

शबरी—शबर जाति की एक स्त्री, जो पंचासरोवर के पश्चिमी तट पर रहनेवाले मातंग ऋषि की परिचारिका थी। राम के प्रति अनन्य भक्ति के कारण, इसे 'सिद्धा,' 'श्रमणा' आदि श्रेष्ठ उपाधियाँ प्राप्त हुईं, एवं श्रेष्ठ भक्ति की साकार प्रतिमा यह माने जाने लगी।

राम से भेंट—कथंथ राजस्य के कथनानुसार, राम-लक्ष्मण सीता का शोध करते मतेगवन आ पहुँचे। वहाँ इसने उनका उचित आदरसंस्कार किया, एवं कहा, 'आपके आने से पूर्व ही मातंग ऋषि का स्वर्गवास हुआ। अब उन्हींके आदेश से मैं आपकी प्रतीक्षा कर रही हूँ'।

राम का स्वागत—इतना कह कर, शबरी ने राम के भोजन के लिए वन के विविध कन्दमूल उन्हें अर्पण किये (वा. रा. अर. ७४.१७)। तत्पश्चात् मतेगवन में स्थित मतेग ऋषि का तपस्या एवं यज्ञ का स्थान, 'प्रत्यवस्थली' नामक यज्ञवेदी, 'सप्तसागर' नामक तीर्थ आदि का दर्शन इसने राम को कराया।

स्वर्गप्राप्ति—पश्चात् राम की अनुज्ञा से इसने अग्नि प्रदीप्त किया, एवं उसमें स्वयं की आहुति दे कर यह स्वर्गलोक वासी प्रष्ट हुई।

अध्यात्म रामायण में—इस ग्रंथ में शबरी के हीन जाति पर विशेष जोर दिया है। रामभक्तिसंप्रदाय का प्रचार करने के दृष्टि से इसकी जीवनगाथा वहाँ दी गयी है, जिससे यह स्पष्ट हो जाये कि, रामभक्ति भेदभाव से ऊपर उठ कर सब को मुक्ति प्रदान करती है (भक्ति-मुक्तिविधायनी भगवतः रामचन्द्रस्य)। इसी कारण शबरी की गुरुभक्ति, सेवाभाव, तपस्या एवं अपार रामभक्ति का इस कथा में सविस्तृत वर्णन किया गया है।

इस कथा के अनुसार, शबरी ने राम का उचित आदरसंस्कार कर, उसे प्रश्न किया, 'मैं मृदु एवं हीन जाति में उत्पन्न होने के कारण, आपके दर्शन एवं उपासना की योग्यता नहीं रखती हूँ'। इस पर राम ने इसे उत्तर दिया, 'परमेश्वरप्राप्ति के लिए जाति की उच्चनीचता,

अथवा स्त्रीरूप सैदामेद आदि का कुछ भी महत्त्व नहीं है। महत्त्व है केवल भक्ति का, जिसमें कोई भी व्यक्ति परमेश्वर प्राप्त कर सकता है। (अ. रा. अर. १०.१-४४)।

पौराणिक साहित्य में—पद्म आदि उत्तरकालीन पौराणिक साहित्य में 'अश्वामरामायण' की ही कथा उद्धृत की गयी है (पद्म. उ. २६९.२६५-२६८), जिस कारण यह कथा भारत के सभी प्रांतिक भाषाओं में राममन्त्रि के प्रचार का एक सर्वश्रेष्ठ माध्यम बन गयी।

शयल—एक नाग, जो कश्यप एवं कटु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१.७)।

१. एक श्वान, जो गरमा का पुत्र, एवं यम वैवस्वत का अनुचर था (ब्रह्मांड. ३.७.११२)।

३. श्व एवं अश्विनी के एक हजार पुत्रों में से एक। ब्रह्मंड—शयलाना (भा. ६.५.२८)।

शयलाश्व—(शु. दिष्ट.) एक राजा, जो कुरु राजा का पौत्र, एवं परिश्वि राजा के भात पुत्रों में से एक था। इसके अन्य भाइयों के नाम परिश्वि, आदिराज, विराज, शालधि, रज्ज्विश्रवस्, मज्जकार एवं जितारिथ (म. आ. ८५.४५)।

शम—एक राजा, जो धर्म प्रजापति के तीन पुत्रों में से एक था। इसके अन्य दो भाइयों के नाम काम एवं ह्य, तथा अश्वि का नाम प्रणित था (म. आ. ६०.३१)।

१. (सो. मत्स्य. मांडव्य.) एक राजा, जो धर्मसूद तक्षक राजा का पुत्र, एवं दृमस्मिन राजा का पिता था (भा. ९.२२.४८)। विष्णु एवं ब्रह्मांड में इसे 'सुश्रम' एवं वायु में इसे 'सुवत' कहा गया है।

३. एक वसु, जो अहः नामक वसु के चार पुत्रों में से एक था। इसके अन्य भाइयों के नाम उद्योति, शोत एवं मुनि थे (म. आ. ६०.२२)। पाठभेद—भांडारकर सहिता—'श्रम'।

४. आयु राजा का पुत्र (ब्रह्मांड. ३.३.२४)।

५. सुवद्यों में से एक।

६. संदिश्वरकुशोपन्न एक कुक्षींगार राजा, जिसने अपने दुर्बलता के कारण, अपने वंश एवं राज्य के लोगों का श्राप किया (म. उ. ८२.१७)।

शमठ—एक ऋषि, जो गयाशीर पर्वत पर 'ब्रह्मसर' श्रोत्र के पास निवास करता था। इसने वनवासी पांडवों को अमृतोद्यम-पुत्र गय राजा की कथा कथन की थी (म. व. ९३.१६)।

शमन—साम्पति मनु के पुत्रों में से एक।

भा. च. ११९.]

शमि—(सो. उशी.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार उशीनर राजा का पुत्र था (१.२३.३)।

शमिन्—(सो. विदु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार योगेश्वर राजा का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार शूर राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम प्रतिश्वन था (मत्स्य. ४८.७९-८०; ब्रह्मांड. ३.७१.१३८)।

शमीक—अंगिरस कुलोत्पन्न एक ऋषि, जिसकी पत्नी का नाम गौ, एवं पुत्र का नाम शंगी था। यह आज्ञम मौनव्रत का पालन करता था। यह गौओं के रहने के स्थान में रहता था, एवं गौओं का दूध पीते समय बड़ों के मूत्र से जो फेन निकलता था, उगीकी त्यागी कर लपट्या करता था।

परिश्वि से भेट—एक बार परिश्वि राजा मृगया करता हुआ इसके आश्रम में आ पहुँचा। किन्तु इसका मौनव्रत होने के कारण, इसने उसमें कोई भी भाषण नहीं किया। यह इसका औदार्य समझ कर, परिश्वि इससे अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं उसने इसकी अवहेलना करने के हेतु, इसके गले में एक मृतमर्ष डाल दिया।

कृश नामक इसके शिष्य ने यह घटना इसके पुत्र शंगी को बताया। अपने पिता के अपमान की यह कहानी सुन कर, शंगी अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं उसने शापवाणी कह की, 'सात दिन के अंदर नामराज तक्षक के देश से परिश्वि राजा की मृत्यु हो जायेगी'।

परिश्वि की मृत्यु—अपने पुत्र के द्वारा, परिश्वि राजा को दिये गये शाप का वृत्तान्त ज्ञात होते ही, इसने अपने पुत्र की अत्यंत कटु आलोचना की। पश्चात् अपने गौरमुख नामक शिष्य के द्वारा परिश्वि राजा को शंगी के इस शाप का समाचार, भेजा, एवं उसे सावधान रहने के लिए कहा। किन्तु अंत में यह चेतावनी विफल हो कर, तक्षकवंश से परिश्वि राजा की मृत्यु हो ही गयी (म. आ. ३६.३८; भा. १.१८)।

गरुडवंशीय पक्षियों की रक्षा—भारतीय युद्ध के समय गरुडवंश में उत्पन्न विगाश्व, विबोध, सुपुत्र, एवं सुसुख नामक पक्षी मुष्नीक नामक हाथी के घंटा के नीचे छिप कर बच गये। आगे चल कर इसने उन्हें अपने आश्रम में ला कर, एवं उनका पीरज किया कर, उन्हें सुरक्षित स्थल पर पहुँचाया (मार्क. २.४४; ३.८६)।

२. (सो. क्रोष्ट.) एक राजा, जो वायु एवं विष्णु के अनुसार शूर राजा का पुत्र था। विष्णु, भागवत एवं मत्स्य में, इसे 'सत्यप्रिय' कहा गया है। इसकी माता का

नाम मारिषा, एवं पत्नी का नाम मुद्रामिनी था, जिससे इसे प्रतिशत्रु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (वायु. १६.१३७; विष्णु. ४.१४.२३)। ब्रह्मा के द्वारा पुष्कर क्षेत्र में किये गये यज्ञ में यह उपस्थित था (पद्म. सू. २३)।

शंपाक—हस्तिनापुर में रहनेवाला एक जीवन्मुक्त एवं त्यागी ब्राह्मण; जो भीष्म का गुरुतुल्य स्नेही था। इसे 'शम्पाक' नामांतर भी प्राप्त था।

त्याग की महिमा के विषय में इसने भीष्म को उपदेश प्रदान किया था (म. शां. १७०)। यह 'शंपाक गीता' का प्रणयिता माना जाता है।

शंवर कौलितर—एक असुर, जो इंद्र का शत्रु था (ऋ. १.५१.६; ५४.४)। 'कौलितर' का पुत्र होने के कारण, इसे 'कौलितर' वैतृक नाम प्राप्त हुआ था (ऋ. ४.३०.१४)। सायण के अनुसार, आकाश में स्थित मेघ को ही वैदिक साहित्य में 'शंवर' कहा गया है। इस संबंध में यह 'वृत्र' से साम्य रखता है (वृत्र देखिये)।

ऋग्वेद में—इस ग्रंथ में शुष्ण, पिपु, वर्चिन् आदि असुरों के साथ इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. १.१०१; १०३; २.१९.६)। यह एक दास था, एवं यह पर्वत पर रहता था (ऋ. २.१२)।

वृत्र के समान इसके भी आकाश में अनेकानेक दुर्ग (शंवरानि) थे, जिनकी संख्या ऋग्वेद में नव्वे (ऋ. १.१३०); निग्यान्वे (ऋ. २.१९); अथवा एक सौ (ऋ. २.१४) बतायी गयी है।

इंद्र से युद्ध—यह स्वयं को देवता समझने लगा, जिस कारण इंद्र ने इसे काट कर पर्वत से नीचे गिरा दिया, एवं इसके सारे दुर्ग ध्वस्त किये (ऋ. ७.१८; १.५४; १३०)। इसका प्रमुख शत्रु दिवोदास अतिथिव था, जिसके कहेने पर इंद्र ने इसका वध किया (ऋ. १.५१)। इसका वध करने के लिए, मरुतो ने एवं अश्विनो ने इंद्र की सहायता की थी (ऋ. ३.४७; १.११२.१४)।

ऋग्वेद में अन्यत्र, वृहस्पति के द्वारा इसके दुर्ग ध्वस्त किये जाने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. २.२४)।

पौराणिक साहित्य में—इन ग्रंथों में इसे कश्यप एवं दनु का पुत्र कहा गया है (भा. ६.१०.१९)। यह वृत्रासुर का अनुयायी था, जिस कारण इंद्र-वृत्र युद्ध में इंद्र ने इसका वध किया (म. सौ. ११.२२)। अपनी मृत्यु के

पूर्व इंद्र को इसने ब्राह्मण-माहात्म्य समझाया था (म. अनु. ३६.४-११)।

धर्म ने अपने समर्थन के लिये, इसके अनेकानेक उद्धरणों का उपयोग किया था (म. उ. ७२.२२)। इससे प्रतीत होता है कि, यह स्वयं एक राजनीतिज्ञ एवं ग्रन्थकार भी था। योगवासिष्ठ में इसकी कथा 'ब्रह्मत्वभाव' के तत्त्व का प्रतिपादन करने के लिए दी गयी है (यो. वा. ४.२५)।

२. कंस का अनुयायी एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम मायावती था। वृष्ण-पुत्र प्रद्युम्न के द्वारा अपना वध होने की वार्ता एक बार इसे आकाशवाणी से ज्ञात हुई जिस कारण, इसने उसका अर्भकावस्था में वध करना चाहा। किंतु इसकी पत्नी मायावती ने प्रद्युम्न की जान बचायी। आगे चल कर प्रद्युम्न ने 'महामाया विद्या' की सहायता से इसका पुत्र आमात्य, एवं सेनापतियों के साथ वध किया (म. अनु. १४.२८; विष्णु. २७; भा. १०.३६.३६; प्रद्युम्न एवं मायावती देखिये)।

पुराणों में इसके सौ पुत्रों का निर्देश प्राप्त है, किंतु इसकी पत्नी मायावती संतानरहित होने का भी निर्देश प्राप्त है। इससे प्रतीत होता है कि, इसकी मायावती के अतिरिक्त कई अन्य पत्नियाँ भी थीं।

३. एक दानव राजा, जो हिरण्यपथ का पुत्र था (भा. ६. २.४)। बलि वैरोचन के साथ, वाहन ने इसे भी पाताल-लोक में टंकेल दिया (ब्रह्मांड. ३.१६)।

४. त्रिपुर नगरी का एक असुर, जिनसे इंद्रबलि-युद्ध में बलि के पक्ष में भाग लिया था (भा. ८.६.३१)।

५. क्रीकट देश का एक अंस्यज, जो शांतिग्राम तीर्थ में स्नान करने के कारण मुक्त हुआ (पद्म. पा. २०)।

शंभुसादन—एक राक्षस, जो केशरी वानर के द्वारा मारा गया।

शंभुक अथवा **शंभूक**—एक शूद्र, जो अपना शूद्र-धर्म छोड़ कर तपस्वी बना था। महामारत एवं रामायण में इसकी कथा प्राप्त है, जहाँ इसे क्रमशः 'शंभुक' एवं 'शंभूक' कहा गया है (म. शां. १४९.६२; वा. रा. उ. ७६.४)।

त्रैवर्णिकों की सेवा करने का अपना शूद्रधर्म त्याग कर, यह जनस्थान में तपस्या करने लगा। इसके इस पापकर्म के कारण, एक सोलह वर्ष के ब्राह्मण वृत्र की असामयिक मृत्यु हो गयी। अपने इस पुत्र की-मृत्यु की तकरार ब्राह्मण

ने राम के सम्मुख पेश की, एवं एक राजा के नाते उसे इस घटना के लिए दोषी ठहराया।

इसी समय राम को ज्ञात हुआ कि, शंभुक के वर्णांतर के पाप के कारण, ब्राह्मणपुत्र के अपमृत्यु की घटना घटित हुई है। यह ज्ञात होते ही, राम विमान में बैठ कर दक्षिणापथ में शैवलक के उत्तर में स्थित जनस्थान में गया, एवं वहाँ तपस्या करनेवाले इस शूद्रजातीय मुनि का उसने वध किया। इसका वध होते ही मृत हुआ ब्राह्मणपुत्र पुनः जीवित हुआ।

इसी प्रकार की एक कथा मांभानु राजा के संबंध में भी प्राप्त है, किंतु वहाँ मांभानु राजा ने शूद्र मुनि का वध न कर, अपनी तपस्या के प्रभाव से ब्राह्मणपुत्र को पुनः जीवित करने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (पद्म. उ. ५७)।

शंभुककथा का अन्वयार्थ—चातुर्वर्ण्य में हर एक वर्ण को अपना नियत कर्तव्य निभाना चाहिये, एवं वर्णान्तर नहीं करना चाहिये, क्योंकि, ऐसे वर्णान्तर से समाज की रचना बिगड़ जाने की संभावना है, इस तत्त्व के प्रतिपादन के लिए शंभुक की कथा महाभारत एवं रामायण में दी गयी है।

बौद्ध धर्म जैसे संन्यासधर्म को प्रधानता देनेवाले धर्म के प्रचार के पश्चात्, समाज के हरएक व्यक्ति का शूकाव अपना नियत कर्तव्य छोड़ कर, संन्यासधर्म को स्वीकार करने की ओर होने लगा। उस समय समाज की संन्यास-प्रवणता कम करने के हेतु उपर्युक्त कथा की रचना की गयी होगी, जिसमें तपश्चर्या के समान अनुत्पादक व्यवहार की कटु आलोचना की गयी है।

आगे चल कर पौराणिक साहित्य के रचनाकाल में भक्तिमार्ग की प्रबलता समाज में पुनः एक बार बढ़ गयी, जिस समय इस कथा को बदल कर उसका परिवर्तन तपस्याप्रधान कथा में किया जाने लगा, जिसका यथार्थ रूप मांभानु की कथा में पाया जाता है।

२. सहिष्णु नामक शिवावतार का एक शिष्य।

३. एक आदिश्य, जो ऋषय एवं दिति के पुत्रों में से एक था।

४. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.७१)।

शंभु—ऋषय एवं सुरभि के पुत्रों में से एक।

२. (सो. नाभाग.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार अंबरीष राजा का कनिष्ठ पुत्र था (भा. ९.६.१)।

३. एक अग्नि, जो तप नामक अग्नि का पुत्र था (म. व. २११.५)।

४. एक यादव राजकुमार, जो श्रीकृष्ण एवं रुक्मिणी के पुत्रों में से एक था (म. अनु. १४.३३)।

५. एक धर्मप्रवण प्राचीन राजा, जिसने जीवन में कभी मांस नहीं खाया था (म. अनु. ११५.६६)।

६. ग्यारह रुद्रों में से एक (मत्स्य. १५३.१९)।

७. ब्रह्मावर्णि मन्वन्तर का इंद्र, जो विष्वक्सेन का मित्र था (भा. ८.१३.२२)।

८. शुक एवं पीवरी का पुत्र (ब्रह्मांड. ३.८.९३)।

९. सत्य देवों में से एक।

१०. सुख देवों में से एक।

११. विरोचन दैत्य के छः पुत्रों में से एक (वायु. ६७.७६-८१)।

१२. एक राक्षस, जो संहार राक्षस का पुत्र था। इसके पुत्रों के नाम राजाज एवं गोमथे (ब्रह्मांड. ३. ५.४०)।

१३. एक ऋषि, जिसने राम को श्राद्धविधि, भस्माहात्म्य एवं शिवपूजाविधि आदि बताया थी (पद्म. पा. १०६)।

१४. एक ब्राह्मण, जो पुराणों से 'शलाकाप्रश्न' कथन करने के कार्य में प्रवीण था (पद्म. पा. १०४)।

शंभुचा—धृतराष्ट्र की एक पत्नी, जो गांधारराज सुबल राजा की कन्या, एवं गांधारी की बहन थी (म. आ. १०४. १११३* पंक्ति. ५)।

शंभु आंगिरस—एक सामद्रष्टा ऋषि (पं. ब्रा. १५.५.१०-११)। अपने साम के कारण इसे स्वर्ग की प्राप्ति हुई।

शश्याक—शंषाक नामक ब्राह्मण का नामांतर।

शश्यु बार्हस्पत्य—एक आचार्य (श. ब्रा. १.९.१. २५)।

शशु—एक ऋषि, जो अश्विनों का अश्वित था। अश्विनों ने इसके वध्या गाय को दुग्धा बनाया था (ऋ. १.११२. १६; १.१६.२२; १.१७.२०)।

शश्याति—शश्यात राजा का नामांतर।

शर आर्चक—एक ऋषि, जिसे अश्विनों ने गहरे कुएँ से पानी निकाल कर दिया था (ऋ. १.११६.२२)। संभवतः 'आर्चक' उसका पेतक नाम (= ऋचक का पुत्र) न हो कर, केवल इसकी उपाधि मात्र ही थी।

शर शौरदेव्य—एक राजा, जिसने तीन ऋषियों को एक ही बछड़ा दान में दिया था (ऋ. ८.७०.१३-१५)। ऋग्वेद में इसकी यह 'दानस्तुति' ध्यंगोत्मक प्रतीत

होती है (पिशेल, वेदिशे स्टूडियन. १.५-७)। शरदेव का पुत्र होने के कारण, इसे 'शौरदेव्य' वैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

शरगुल्म—रामसेना का एक वानर (वा. रा. कि. ४१.३)।

शरण—वासुकिकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.६)।

शरद्वत्—(सो. द्रुह्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सेतु राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४८.६)। इसे 'अंगार' नामांतर भी प्राप्त था (अंगार देखिये)।

२. एक ऋषि, जो प्रायोपवेशन करनेवाले परिक्षित राजा से मिलने आया था।

३. एक ऋषि, जिसे त्रिवामा ऋषि ने 'वायुपुराण' कथन किया था, जो इसने आगे चल कर त्रिविष्ट का कथन किया था (वायु. १०३.६१)।

४. सावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

५. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं मंत्रकार, जो अंगिरस् ऋषि का पुत्र था।

६. गौतमगोत्रीय एक ऋषि, जो उत्तथ्य ऋषि का शिष्य था (वायु. ६४.२६)।

७. गौतम ऋषि का नामान्तर (गौतम देखिये)।

शरद्वत् गौतम—एक महर्षि, जो गौतम ऋषि एवं अहल्या का पुत्र था। वायु में इसे 'शारद्वत्' कहा गया है (वायु. ९९.२०१)।

तपोभंग—यह शुरु से ही अत्यंत बुद्धिमान् था, तथा वेदाध्ययन के साथ-साथ धनुर्वेद में भी प्रवीण था। इसकी तपस्या से डर कर, इंद्र ने तपोभंग करने के लिए जालपत्री नामक अप्सरा इसके पास भेज दी। उसे देख कर इसके धनुष एवं बाण पृथ्वी पर गिर पड़े, एवं इसका वीर्य दर्भासन पर गिर पड़ा।

कृप एवं कृपी का जन्म—श्रवात् यह धनुर्वाण, मृग-चर्म, आश्रम आदि छोड़ कर वहाँ से चला गया। दर्भासन पर पड़े हुए इसके वीर्य के दो भाग हुए, जिनसे आगे चल कर एक पुत्र एवं एक कन्या उत्पन्न हुईं। उन दोनों का सुविख्यात कुरुवंशीय राजा शांतनु ने कृपापूर्वक पालन किया, जिस कारण उन्हें 'कृप' एवं 'कृपी' नाम प्राप्त हुए। इसकी इन संतानों में से कृप कौरव पाण्डवों का आचार्य बन गया, एवं कृपी का विवाह द्रोणाचार्य के साथ हुआ (म. आ. १२०)। पश्चात् इसने गुप्तरूप से कृपाचार्य को उसके गोत्र आदि का परिचय दिया, एवं

उसे चार प्रकार के धनुर्वेद एवं शस्त्र-शास्त्रों की शिक्षा प्रदान की।

शरद्वत्सु—शुल्लिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

शरभ—एक ऋषि, जिसे इंद्र ने विपुल धन प्रदान किया था (क्र. ८.१००.६)।

२. चेदिराज धृष्टकेतु का भाई, जो शिशुपाल के पुत्रों में से एक था। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ४९.४३)।

युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के समय, युक्तिवा नगरी में राज्य करनेवाले शरभ ने सर्वप्रथम अर्जुन से युद्ध करना चाहा। किंतु पश्चात् इसने अर्जुन को करभार अर्पण कर, अश्वमेधीय अश्व की विधिपूर्वक पूजा की (म. आश्र. ८४.३)।

३. गांधारराज सुचल का पुत्र, जो शकुनि के ग्यारह भाइयों में से एक था। भीमसेन के द्वारा किये गये रात्रियुद्ध में उसने इसका वध किया (म. द्रो. १३२.२१)।

४. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के प्रमुख चौतीस पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.२६)।

५. तक्षककुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.९ पाठ.)।

६. ऐरावतकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१०)।

७. यमसमा का एक ऋषि (म. स. ८.१४)।

८. यम के पाँच पुत्रों में से एक।

९. एक रामपत्नीय वानर, जो साल्वेय पर्वत का निवासी था (वा. रा. यु. २६.३०)।

१०. एक विन्ध्यपर्वतवासी वानरजाति, जो हरि एवं पुलह की संतान थी (ब्रह्मांड. ३.७.१७४)।

११. एक वानर, जो जांबवत् वानर का पुत्र था। आगे चल कर इसीसे ही 'शरभ' नामक वानरजाति का निर्माण हुआ (ब्रह्मांड. ३.७.२०४)।

१२. कृष्ण एवं रुक्मिणी के पुत्रों में से एक (वायु. ९६.२३७)।

१३. शिव की क्रोधमूर्ति वीरभद्र का एक अवतार, जो उसने नृसिंह को पराजित करने के लिए धारण किया था। इसने नृसिंह को परास्त कर, उसका चमड़ा एक बसन के नाते अपने शरीर पर ओढ़ लिया, जिस कारण शिव को 'नृसिंहकृत्स्विसन' उपाधि प्राप्त हुई (शिव. धत. १२)।

१४. एक ऋषि, जिसे 'निगमोद्घोषक तीर्थ' में स्नान करने के कारण, शिवकर्मन् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (पद्म. उ. २०१; २०४-२०५)। इसीके कारण विकट नामक राक्षस का उद्धार हुआ था (विकट ४. देखिये)।

शरभंग—गौतम कुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि, जो दंडकारण्य में तप करता था। दंडकारण्य में गोदावरी नदी के तट पर इसका आश्रम था (म. व. ८३.३९; २६१.४०)। वाल्मीकि रामायण में इसका आश्रम मंदाकिनी नदी के तट पर स्थित होने का निवेश प्राप्त है (वा. रा. अर. ५.३६)। किंतु वहाँ 'मंदाकिनी' का संकेत 'गोदावरी' नदी की ओर ही होना संभव अधिक प्रतीत होता है। महाभारत में अन्यत्र इसका आश्रमस्थान उत्तराखंड में बताया गया है (म. व. ८८.८ पाठ.)।

तपःसामर्थ्य—विराट राक्षस के कथनानुसार, राम दशरथ अपने वनवासकाल में इससे मिलने के लिए इसके आश्रम में आया था। उस समय इसके तपः-सामर्थ्य से प्रसन्न होकर, इंद्र स्वयं अपना रथ ले कर इसे ब्रह्मलोक में ले जाने के लिए उपस्थित हुआ था। किंतु राम के दर्शन की अभिलषणा मन में रखनेवाले इस ऋषि ने इंद्र का यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया, एवं यह राम की प्रतीक्षा करते आश्रम में ही बैठा रहा।

राम से भेंट—राम के इसके आश्रम में आते ही, इसने उसका उचित आदर-सत्कार किया, एवं अपने तपः-सामर्थ्य की सहायता से प्राप्त होनेवाले स्वर्गलोक एवं ब्रह्मलोक को स्वीकार करने की प्रार्थना राम से इसने की। किंतु राम ने इसका यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया, एवं स्वयं के ही तपःसाधन से स्वर्गलोक प्राप्त करने का अपना निर्धार प्रकट किया।

तदुत्पत्ति राम ने इससे तपस्या के लिए सुयोग्य स्थान दर्शाने की प्रार्थना की। मंदाकिनी नदी के तट पर सुतीक्ष्ण ऋषि के आश्रम के पास तपस्या करने की सूचना राम को इसने प्रदान की। पश्चात् इसने अग्नि में अपना शरीर झोंक दिया, एवं इस प्रकार यह स्वर्गलोक चला गया (वा. रा. अर. ५.)।

शरथु—वीर नामक अग्नि की पत्नी।

शररि—एक वानर, जो हनुमत् के साथ सीताशोध के लिए दक्षिण दिशा की ओर गया था (वा. रा. कि. ४१)।

शरासन—भृतराष्ट्रपुत्र 'चित्रशरासन' का नामांतर (म. द्रो. १११.१९)।

शरीर—एक आचार्य, जो वेदभित्र शाकल्य का शिष्य था (विष्णु. ३.४.२२)।

शरू—एक देवगंधर्व, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. ११४.४७ पाठ.)।

शरूथ—(सं. तुवैस.) एक राजा, जो वायु के अनुसार दुष्कृत (दुष्यंत) राजा का पुत्र था (वायु. ९९.५)। पाठभेद—(ब्रह्मंड पुराण)—'सरथु'।

शर्कर—शिशुमार ऋषि का नामांतर (शिशुमार १. देखिये)।

शर्मिन्—अगस्त्यकुलोत्पन्न एक ब्राह्मण, जो गंगा-यमुना नदियों के बीच यामुन पर्वत के तलहाटी में स्थित पर्णशाला नामक ग्राम में रहता था। 'तिलाञ्जलि दान' का माहात्म्य बताने के लिए, इसकी कथा भीष्मने युधिष्ठिर को कथन की थी (म. अनु. ६८)।

पर्णशाला ग्राम में शर्मिन् नाम के ही दो ब्राह्मण रहते थे। एक बार यम ने अपने एक दूत को इसे पकड़ कर लाने के लिए कहा, किंतु उसने गच्छी से इसीके नाम के अन्य ब्राह्मण को पकड़ कर यम के समुल्ल पेश किया। अपने दूत की भूल यम को ज्ञात होते ही, उसने उस ब्राह्मण को अन्न, जल, तिल के दान का महत्त्व कथन किया, एवं उसे सम्मानपूर्वक विदा किया।

पश्चात् यमदूत इसे पकड़ कर ले आये। किंतु इसके मृत्युयोग की वाटिका बताने के कारण, यम ने इसे भी पूर्वोक्त दान का महत्त्व कथन किया, एवं इसे विदा कर दिया।

शर्मिष्ठा—वृषपर्वन् नामक दैत्य की कन्या, जो ययाति राजा की अत्यंत प्रिय द्वितीय पत्नी थी (देवयानी एवं ययाति देखिये)।

इसने अपने असुर जाति के कन्याण के लिए देवयानी का दास्यत्व स्वीकार लिया था (म. आ. ७३-७५; भा. ९.१८; मत्स्य २७-२९)। किंतु आगे चलकर, ययाति राजा ने देवयानी के साथ इसे भी अपनी रानी बनाया। ययाति से इसे अन्त, द्रुह्यु, एवं पूरु नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए।

वाल्मीकि रामायण एवं वायु में इसका पूरु नामक केवल एक ही पुत्र दिया गया है (वा. रा. उ. ५८.६९; वायु. २.७)।

शर्यात मानव—एक सुविख्यात यज्ञकर्ता राजा, जो अश्विनो का कृपापात्र था (ऋ. १.११२.१७)। एक वैदिक सूक्तद्रष्टा के नाते इसका निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १०.९२), किंतु वहाँ इसे 'शर्यात' कहा गया है। शतपथ ब्राह्मण एवं पुराणों में इसे क्रमशः 'शर्यात', एवं 'शर्याति' कहा गया है (श. ब्रा. ४.१.५.२)। मनु का वंशज होने के कारण, इसे 'मानव' पौत्रक नाम प्राप्त हुआ था (जै. उ. ब्रा. ४.७.१; ८.३.५)।

अश्वमेधयज्ञ—यह इंद्र का मित्र था, एवं इंद्र इसके वर सोम पीने के लिए आया करता था (ऋ. १.५१.१२; ३.५१.७)। भृगुपुत्र च्यवन ऋषि ने इसे राज्याभिषेक किया था। आगे चल कर इसने बड़ा साम्राज्य संपादन किया, एवं च्यवन ऋषि को ऋषिज बना कर एक अश्वमेध यज्ञ का भी, आयोजन किया। इसे देवों के यज्ञ में 'ग्रहपतित्व' का महत्त्वपूर्ण स्थान भी प्राप्त हो चुका था।

इसकी कन्या का नाम 'शर्याती सुकन्या' था, जिसका विवाह इसने च्यवन ऋषि से कराया था। इस विवाह के कारण च्यवन इस पर अत्यंत प्रसन्न हुआ था। विवाह के समय, च्यवन अत्यंत बूढ़ा था, किंतु पश्चात् अश्विनो ने उसे यौवन प्रदान किया था।

पौराणिक साहित्य में—इन ग्रंथों में इसे वैवस्वत मनु का पुत्र कहा गया है, एवं इसकी पत्नी का नाम श्यविष्ठा कहा गया है। अपनी इस पत्नी से इसे आनर्त एवं सुकन्या नामक जुड़वाँ संतान उत्पन्न हुई थी। पौराणिक साहित्य में इसे 'शर्यात', 'शर्याति', 'शर्याति' आदि अनेक नामांतर दिये गये हैं।

यह अत्यंत शूर, एवं वेदविद्यापारंगत राजा था। आगिरस ऋषि के द्वारा किये सत्र में, द्वितीय दिन के सारे कर्म एक ऋषिज के नाते इसने निभाये थे। देवी को प्रसन्न करने के लिए भी इसने तपस्या की थी।

छियों की परीक्षा—इसका प्रमुख पुरोहित मधुच्छेदम् वैश्वामित्र था। एक बार यह अपने पुरोहित के साथ, मृगया करने जा रहा था। मधुच्छेदम् के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर इसने मृगयागमन स्थगित किया। किन्तु अपनी राजाछियों की परीक्षा लेने के लिए, अपने एवं मधुच्छेदम् के वध की झूठी बातों अपने नगर में पहुँचा दी। इसके वध की वार्ता सुन कर इसकी दोनों ही पत्नियाँ तत्काल मृत हुईं। आगे चल कर, गोमती नदी के तीर पर तपस्या कर इसने अपनी दोनों पत्नियों को पुनः जीवित किया (ब्रह्म. १३८)।

च्यवन ऋषि से भेंट—एक बार यह अपने सुकन्या नामक कन्या के साथ च्यवन ऋषि के आश्रम में गया। वहाँ इसकी कन्या ने असावधानी से च्यवन ऋषि की दोनों आँखें फोड़ डालीं। आगे चल कर, अतृता-दग्ध हो कर इसने ऋषि से क्षमा माँगी, एवं अपनी कन्या सुकन्या उसे विवाह में दे दी। अश्विनो की कृपा से च्यवन ऋषि की आँखें एवं गतज्ञानव्य उले पुनः प्राप्त हुआ (भा. ९.३.१८; १२.३.१०; च्यवन देखिये)।

परिवार—इसके उत्तानवर्हि, आनर्त एवं मूर्च्छिण नामक तीन पुत्र थे (भा. ९.३)। आगे चल कर, इसी के ही वंश में हैहय एवं तालवंध नामक दो सुविख्यात राजा उत्पन्न हुए थे (म. अनु. ३०.६-७)।

शर्याति—(सो. पूरु.) एक पूर्व्यशायि राजा, जो प्राचीनवत् राजा का पुत्र, एवं अहंशानि राजा का पिता था (म. आ. १०.१४)। इसके नाम के लिए 'अहंपत्नी', 'शर्याति' पाठभेद प्राप्त हैं। इसकी माता का नाम अश्वकी था, एवं विशंकु राजा की कन्या इसकी पत्नी थी।
२. (सो. आयु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुत्तर नहुप राजा का पुत्र था (मत्स्य. २४.१५)।

३. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजकुमार, जो अक्षर एवं अश्विनी का पुत्र था (मत्स्य. ४५.३३)।

४. एक सुविख्यात यज्ञकर्ता राजा, जो वैवस्वत मनु राजा का पुत्र था (शर्यात मानव देखिये)।

शर्य—शततेजस् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

२. ग्यारह रुद्रों में से एक (भा. ६.१५.२८)।

शर्वदत्त गार्ग्य—एक आचार्य। शर्यदेव के द्वारा प्रदान किये जाने के कारण, इसे 'शर्वदत्त' नाम प्राप्त हुआ था (वं. ब्रा. १)।

शर्वरी—दोष नामक वसु की पत्नी।

शल—(सू. इ.) अयोध्या का एक राजा, जो परिक्षित एवं सुशोभना के तीन पुत्रों में से एक था। इसके अन्य दो भाइयों के नाम दल एवं दल थे।

वामदेव का शाप—एक बार यह शिकार करने वन में गया। वहाँ इसके रथ के अश्व थक गये, जिस कारण वहाँ समीप ही स्थित वानदेव ऋषि के आश्रम में यह गया, एवं उसके अश्व इसने थोड़े समय के लिए मँगा लिये। वामदेव ने इसे यह शर्त बतायी थी कि, अश्वों का क्षम होते ही वे उसे वापस मिलने चाहिये।

आगे चल कर वचनभंग कर, इसने वामदेव के अश्व वापस करने से इन्कार किया। इतना ही नहीं,

वे अश्व वामदेव के न हो कर, स्वयं के है, ऐसा मिथ्या वचन यह कहने लगा। इस कारण क्रुद्ध हो कर वामदेव ने चार राक्षस निर्माण किये, एवं उन्हींके द्वारा इसका वध करवाया। इसके वध के पश्चात् इसका भाई दल अयोध्या का राजा बन गया (म. व. १९०.६-९)।

२. (सो. कुरु.) एक राजा, जो कुरुवंशीय सोमदत्त राजा का पुत्र, एवं मूरिश्रवण राजा का भाई था। इसे 'सांयमनि' पितृक नाम प्राप्त था। द्रौपदी के स्वयंवर में, एवं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह उपस्थित था (म. आ. १७७.१४)।

भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था, एवं भीम के द्वारा निर्माण किये गये गरुडव्यूह के वामभाग में खड़ा था। इसने निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध किया था:—१. अभिमन्यु (म. द्रो. ३६.७); २. द्रौपदी के पुत्र (म. द्रो. ८१.१५)। अंत में श्रुतकर्मन के द्वारा इसका वध हुआ (म. द्रो. ८३.१०)।

३. धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक, जो भीम के द्वारा मारा गया था (म. क. ६२.५)।

४. वासुकिकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.५ पाठ.)।

५. एक असुर, जो विप्रचिन्ति एवं सिहिका के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६.१९)। परशुराम ने इसका वध किया।

६. कंसपत्नीय एक पहलवान, जो कृष्ण के द्वारा मारा गया (भा. १.१५.१६)।

७. एक असुर, जो वृक एवं दुर्वाक्षी के पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४.४३)।

८. सुतहोत्र राजा का पुत्र (वायु. ९२.३)।

शलकर—तक्षककुलोत्पन्न एक सर्प (म. आ. ५२.८)।

शलक—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार (पाणिनि देखिये)।

शलभ—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. एक राक्षससमूह, जो यामिनी एवं तार्क्ष्य कश्यप की संतान मानी जाती हैं।

३. चेदि देश का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०.५१)।

४. एक सैहिकेय असुर, जो विप्रचिन्ति एवं सिहिका के पुत्रों में से एक। परशुराम ने इसका वध किया।

शलभा—अग्नि ऋषि की पत्नी (ब्रह्मांड. ३.८. ७४-८७)।

शल्य—ब्राह्मीक एवं मद्र देश का सुविख्यात राजा, जो नकुल-सहदेव की माता माद्री का भाई, एवं पाण्डवों का मामा था। इसके पिता का नाम ऋतायन था (म. मी. ५८.१४)।

पाण्डवों का अत्यंत निकट का रिश्तेदार होने हुए भी, भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। संभवतः इसी कारण, महाभारत में इसे हिरण्यकशिपु के द्वितीय पुत्र 'संहाद' के आसुरी अंश से उत्पन्न एक दुष्ट पुरुष कहा गया है (म. आ. ६१.६)।

महाभारतकाल में मद्र एवं ब्राह्मीक देश हीन जाति के लोग माने जाते थे, इसका प्रत्यंतर शल्य के चरित्र में अनेक बार प्राप्त है। यद्यपि शल्य अत्यंत पराक्रमी, 'ब्राह्मीकपुंगव,' एवं पांडवों का रिश्तेदार था, फिर भी मद्रदेशीय होने के कारण इसे जीवन भर उपहासात्मक वचन एवं अगमान सहने पड़े, जिसकी चरम सीमा भारतीय युद्ध के समय हुए 'कर्ण-शल्य संवाद' में पायी जाती है।

माद्री का विवाह—इसकी वहन माद्री अत्यंत स्वरूप-सुंदर थी। इसी कारण हस्तिनापुर के राजा पांडु का विवाह उससे करने का प्रस्ताव भीष्म ने इसके सामने रखा। उस समय मद्र देश में प्रचलित रिवाज के अनुसार कन्यादान के शुल्क की माँग इसने भीष्म से की। भीष्म के इस शर्त को मान्यता देने पर इसने माद्री का विवाह पांडु से कराया।

द्रौपदीस्वयंवर में—अपने स्वर्मांगद एवं हनुमथ नामक दो पुत्रों के साथ यह द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित था। उस समय यह मत्स्यनेद के लिए धनुष तक न चढ़ा सका था, जिस कारण स्वयंवरमंडप में इसे लज्जित होना पड़ा (म. आ. १७७.१३)। इसी मंडप में, इसका भीमसेन से युद्ध भी हुआ था, जिसमें यह उससे पराजित हुआ (म. आ. १८१.२४)।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में—नकुल के द्वारा किये गये पश्चिम दिग्बिजय के समय, इसने शाकलनगरों में उसका अत्यंत उत्कृष्ट स्वागत किया, एवं उसे अनेकानेक भेंट वस्तुएँ प्रदान की। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भी यह उपस्थित था, जहाँ शिशुपाल ने इसे श्रीकृष्ण से भी अधिक श्रेष्ठ दहराने की कोशिश की थी किंतु अपने इस प्रयत्न

में वह असफल रहा। इस समारोह में इसने युधिष्ठिर को एक रत्नजडित तलवार, एवं एक सुवर्णकलश प्रदान किया था। युधिष्ठिर एवं शकुनि के दरम्यान हुई कुतकीड़ा में भी यह उपस्थित था।

भारतीय युद्ध में—इस युद्ध के समय, पांडवों ने अपनी ओर से इसे रणनिर्माण भेजा था। नकुल सहदेवों का मामा होने के कारण, इसका पांडवों के पक्ष में शामिल होना स्वाभाविक भी था। किंतु पांडव पक्ष में दाखल होने के लिए एक अश्वीहिणी सेना के साथ निकले हुए शल्य को दुर्योधन ने राह में ही बड़ी चतुरता से रोक़ा, एवं इसका इतना मन्थ आदरसंस्कार किया कि, वह पांडवों का पक्ष छोड़ कर कौरवपक्ष में शामिल हुआ। पश्चात् यह युधिष्ठिर के पास गया, एवं इसने कौरव पक्ष में रह कर ही युद्ध करने का अपना निश्चय उसे विदित किया (म. उ. ८. २५-२७)। उस समय युधिष्ठिर ने इसे कौरवपक्षीय योद्धाओं का, एवं विशेषतः कर्ण का तेजोभंग करने की प्रार्थना की। इसने युधिष्ठिर की यह प्रार्थना मान्य कर उससे 'इंद्रविजय' नामक उपाख्यान भी सुनाया। इसी कारण महाभारत में शल्य को 'उपहित' (शत्रु की वचना करने के लिए निथुन) कहा गया है।

भारतीय युद्ध में इसकी श्रेणी 'अतिरथी' थी, एवं हर एक युद्ध में यह कृष्ण के साथ स्वर्ण करने में प्रयत्नशील रहता था।

युद्धप्रसंग—भारतीय युद्ध में इसने निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध किया था :—१. विराटपुत्र उच्चर (म. भी. ४५.४१) २. विराटभ्राता शतानीक (म. द्रो. १४२.२७); ३. युधिष्ठिर (म. भी. ४३.२६)।

इसी युद्ध में यह निम्नलिखित योद्धाओं के हाथों पराजित हुआ था :—(१) भीमसेन (म. भी. ६०. २३); (२) सहदेव (म. भी. ७९.२०); (३) अभिमन्यु (म. द्रो. ४७.१३)।

कर्ण का सारथ्य—द्रोण वध के पश्चात्, कर्ण कौरवसेना का सेनापति बन गया। उस समय इससे अपना सारथी बनने का प्रार्थना कर्ण ने की। इसमें अपना अपमान समझ कर इसने इस प्रस्ताव को अमान्य कर दिया। किंतु अंत में स्वयं दुर्योधन के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, इसने कर्ण का सारथ्य स्वीकार लिया। किंतु यह बात रखी कि, सारथ्यकर्म करते समय जो भी कुछ भलाबुरा यह कर्ण से कहेगा, वह उसे सुनना पड़ेगा (म. क. २२.२५)।

कर्ण—शल्यसंवाद—दूसरे दिन कर्ण एवं अर्जुन के दरम्यान हुए युद्ध में, इसने कर्ण से नाना प्रकार के उपहासपूर्ण वचन कह कर, उसका तेजोभंग किया। चित्रसेन संशय के युद्ध में कर्ण के द्राग किया गया पत्ययन, विराटपुत्र उत्तर के द्वारा केश गया उसका पराजय आदि कर्ण के जीवन के अनेकानेक लंछनास्पद प्रसंगों का स्मरण इसने उसे दिलाया। अर्जुन के तुलना में कर्ण एक 'काक' के समान शूद्र एवं नीच है ऐसा कह कर, 'हंसकाकीय' नामक एक व्यंजनात्मक उपाख्यान भी उसे सुनाया (म. क. २६.२७-२९)।

इस समय, कर्ण ने भी व्यक्तिगतः इसकी एवं ब्रह्मिक देश में रहनेवाले लोगों की यथेच्छ निंदा की, एवं इन्हें चोर, हीन जाति के, व्यभिचारी आदि अनेकानेक भोखुरे शब्द कहे। पश्चात् दुर्योधन ने मन्थस्थता कर, इन दोनों में शांतिता प्रस्थापित की (म. क. ३०)। आगे चल कर, कर्ण एवं भीम के दरम्यान हुए युद्ध में, इसने कर्ण की जान भी बचायी थी (म. क. ६२.८.१४)।

सेनापति शल्य—कर्णवध के पश्चात्, यह कौरवसेना का सेनापति बन गया (म. अ. १.८)। वह कर्णवध आद्य दिन के लिए ही कौरवों का सेनापति रहा। अन्त में माध्याह्न के समय, यह युधिष्ठिर के द्वारा नाग वध (म. अ. १.१०; १६.२९-६५)। इसकी मृत्यु नैमिष्ण्य अमावस्या के दिन हुई।

शिवकर्ण—शिवकर्ण नामक वसिष्ठगोत्रोत्पन्न ऋषिकार का नामांतर।

शिवस्—एक आचार्य, जो अग्निभू काश्यप नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम देवतर शिवसायन था (वं. ब्रा. २)।

शश भारद्वाज—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (क. १०. १५२)।

शशाक—एक जातिसमूह, जो कर्ण के दिग्विजय में परास्त हुआ था (म. व. परि. २४.७०)।

शशाकर्ण काण्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (क. ८.१)।

शशविंदु—(सो. सह.) एक सुविख्यात यादववंशीय चक्रवर्ती राजा, जो महातपस्वी था (वायु. ९५.११)। यह चित्ररथ राजा का पुत्र था।

नारद के द्वारा युंजय राजा को मोल्ह प्रतःश्वरणीय राजाओं के जो आख्यान सुनाये गये थे, उनमें यह भी एक था (म. द्रो. परि १. क. ८ पैकि. ६२३-६४५; शं. २९.९८-१०३; २०१.११)। संसार के अग्रतम

एवं पुण्यशील राजा भी मृत्यु से नहीं बच सकते हैं, इस तत्व के प्रतिपादन के लिए नारद ने इसका जीवन-चरित्र संज्ञय को सुनाया था। रुद्रेश्वर-लिंग की आराधना करने के कारण इसे राजकुल में जन्म प्राप्त हुआ था (स्कंद. १.१.३९)।

परिवार—इसकी कुल दस हजार स्त्रियाँ थीं, जिनमें से हर एक स्त्री से इसे दस हजार पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. शां. २९.९८-९९)। इसके पुत्रों में पृथुश्रवसु, पृथुकीर्ति, एवं पृथुशसु प्रमुख थे। इसकी कन्या का नाम विंदुमती था, जिसका विवाह मांधातृ राजा से हुआ था (भा. ९.६)।

इसकी संतानों की संख्या के संबंध में अतिशयोक्त वर्णन भागवतादि पुराणों में प्राप्त है, जहाँ इसकी संतानों की कुल संख्या एक अर्बन बतायी गयी है (भा. ९.२३. ३१-३३)। इस प्रकार, इस सृष्टि की सारी प्रजा शशांविन्दु की ही संतान कही गयी है।

शशालोमन—एक राजा, जिसने कुरुक्षेत्र के तपोवन में तप कर के स्वर्ग प्राप्त कर लिया था (म. आश्व. २६.१४)।

शशाद—(स. इ.) एक सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जिसे 'विदुक्षि' भामांतर भी प्राप्त था (म. व. १९३.१)। यह इक्ष्वाकु राजा के सौ पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र था, एवं उसीके पश्चात् राजगद्दी पर बैठा था (भा. ९.६.६-११)।

इक्ष्वाकु का जाप—एक बार इसके पिता ने इसे वन में जा कर कुल मांस लाने के लिए कहा, जो उसे 'अष्टका श्राद्ध' करने के लिए आवश्यक था। अपने पिता की आज्ञा के अनुसार यह वन में गया, एवं इसने दस हजार प्राणियों का वध किया। पश्चात् अत्यधिक क्षुधा के कारण, यज्ञार्थ इकट्ठा किये गये मांस में से खरगोश का थोड़ासा मांस इसने भक्षण किया। यह ज्ञात होते ही इसके पिता ने इसे राज्य से बाहर निकाल दिया, एवं इसे 'शशाद' व्यंजनात्मक नाम रख दिया।

अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् यह अयोध्या के राजसिंहासन पर आरुढ़ हुआ, एवं शशाद नाम से ही राज्य करने लगा।

परिवार—इसके कुल पाँच सौ पुत्र थे, जिन में पुरंजय प्रमुख था (भा. ९.६.६-१२)। मत्स्य के अनुसार, इसे कुल १६३ पुत्र थे, जिन में से पंद्रह पुत्र मेरु पर्वत के उत्तर भाग में, एवं उर्वरित १८८ मेरु के दक्षिण में स्थित प्रदेश में राज्य करने लगे। मेरु के दक्षिण में राज्य

करनेवाले इसके पुत्रों में 'ककुत्स्थ' प्रमुख था (मत्स्य. ११.२६.२८)।

शशि—(सो. क्रोष्टु.) यादववंशीय द्युचि राजा का नामांतर (द्युचि १. देखिये)। मत्स्य में इसे अंधक राजा का पुत्र कहा गया है।

शशिकला—काशिराज सुबाहु राजा की कन्या, जो सूर्यवंशीय सुदर्शन राजा की पत्नी थी।

शशीयसी—तरंत राजा की पत्नी (ऋ. अनुक्रमणी ५.६१.६)।

शश्वती आंगिरसी—एक वैदिक मंत्रद्रष्ट्री, जो आसंग नामक ऋषि की पत्नी थी (ऋ. ८.१.३४)।

शांत्व्य—एक आचार्य, जिसके यज्ञविषयक अनेकानेक मतों का निर्देश आश्वलायन गृह्यसूत्र में प्राप्त है। 'मूलभाव याग' में मारे गये पशु का चमड़ा पादत्राण तैयार करने के लिए उपयोजित किया जा सकता है, ऐसा इसका अभिमत था (आश्व. ग. ९.२४)।

शांशपायन—एक पुराणप्रवक्ता आचार्य, जो व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा का एक शिष्य था। व्यास से इसे वायुपुराण की संहिता प्राप्त हुई, जो इसने आगे चल कर अपने पुत्र एवं शिष्य रोमहर्षण सूत को प्रदान की थी (वायु. १०३.६६-६७)।

शांशपायन सुशर्मन्—एक आचार्य, जो रोमहर्षण सूत नामक आचार्य के पुराणशिष्यपरंपरा का एक प्रमुख शिष्य था (ब्रह्मांड. २.३५.६३-७०; वायु. ६१.५५-६२ अग्नि. २७२.११-१२)।

संभवतः 'शांशपायन' इसका पैतृक नाम था, जो इसे शंदाप का वंश होने के कारण प्राप्त हुआ होगा।

शाकराक्ष—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाकटायन—एक वैयाकरण, जो पाणिनि एवं यास्क आदि आचार्यों का पूर्वार्च्य, एवं 'उणादिसूत्र-पाठ' नामक सुविख्यात व्याकरण ग्रंथ का कर्ता माना जाता है। पाणिनि के अष्टाध्यायी में इसे सारे व्याकरण-कारों में श्रेष्ठ कहा गया है (अनुशाकटायन वैयाकरणाः; पा. सू. १.४.८६-८७)। इसमें प्रतीत होता है कि, पाणिनि के काल में भी यह आदरणीय वैयाकरण माना जाता था। केशवकृत 'नानार्थानव' में शाकटायन को 'आदिशाब्दिक (शब्दशास्त्र का जनक) कहा गया है।

नाम—पतंजलि के व्याकरण में इसके पिता का नाम शकट दिया गया है (महा. ३.३.१)। किंतु पाणिनि के

अनुसार शकट इसके पिता का नाम न हो कर, इसके पितामह का नाम था (पा. सू. ४.१.९६)। पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' में एवं शुक्रयजुर्वेद प्रातिशाख्य में इसे काण्ववंशीय कहा गया है।

गुरुरंपरा—व्याकरण साहित्य में इसे काण्व ऋषि का शिष्य कहा गया है (शु. प्रातिशाख्य. ४.१.२९)। किन्तु शैशिरि शिक्षा के प्रारंभ में इसे शैशिरि परंपरा का आचार्य कहा गया है, एवं इसे स्वयं शैशिरि ऋषि का शिष्य कहा गया है (शैशिरस्य तु शिष्यस्य शाकटायन एव च)।

उणादि सूत्र—इस सुविख्यात व्याकरणशास्त्रीय ग्रंथ का शाकटायन प्रणीता माना जाता है। संस्कृत भाषा में पाये जानेवाले सर्व शब्द 'धातुसाधित' (धातुओं से उत्पन्न) हैं, ऐसा इसका अभिमत था। इसी दृष्टि से लौकिक एवं वैदिक शब्दों का एवं पदों का अन्वाख्यान लगाने का सफल प्रयत्न इसने अपने 'उणादिसूत्र' में किया है। वैदिक साहित्यान्तर्गत 'प्रातिशाख्य' ग्रंथों में इसके व्याकरणविषयक मतों का निर्देश अनेक बार प्राप्त है (ऋ. प्रा. १७.७४७; अ. प्रा. २.२४; शु. प्रा. ३.८; ९; १२; ४.५; १२७; १८९)।

पाणिनि के सूत्रपाठ में 'उणादिसूत्रों' का निर्देश कई बार आता है, जिससे प्रतीत होता है कि, इसका यह ग्रंथ पाणिनि से भी पूर्वकालीन था। पाणिनि के पूर्वकालीन चाक्रायण चाक्रवर्मण नामक आचार्य का निर्देश भी उणादिसूत्रों में प्राप्त है।

'प्रकृति प्रथय' कथन करने की पद्धति सर्वप्रथम इसने ही शुरू की, जिसका अनुकरण आगे चल कर पाणिनि ने किया। फिर भी शब्दों की सिद्धि के संबंध में, पाणिनि अनेक बार अपने स्वयं का स्वतंत्र मत प्रतिपादन करता हुआ प्रतीत होता है।

गार्थ्य को छोड़ कर समस्त 'नैस्त' आचार्य शाकटायन को अपना आद्य आचार्य मानते हैं, एवं संस्कृत भाषा में प्राप्त समस्त नाम 'आख्यातज्ञ' समझते हैं। इसका उपसर्गविषयक एक मत 'बृहद्देवता' में पुनरुद्धृत किया गया है (बृहद्दे. २.९)।

उणादि सूत्र के उपलब्ध संस्करण में 'मिहिर' 'दीनार' 'सूप', आदि अनेकानेक बुद्धोत्तरकालीन असंस्कृत शब्दों का निर्देश प्राप्त है। इससे प्रतीत होता है कि, इस ग्रंथ का उपलब्ध संस्करण प्रक्षेपयुक्त है। इस ग्रंथ की उल्लेख के द्वारा लिखित टीका ऑफ्रेक्ट

के द्वारा प्रकाशित की गयी है, उसमें भी यही अभिमत व्यक्त किया गया है।

इसी ग्रंथ की श्वेतवनवासिन् एवं नारायण के द्वारा लिखित टीकाएँ मद्रास विश्वविद्यालय के द्वारा प्रकाशित की गयी हैं।

उणादि सूत्रों का रचयिता शाकटायन न हो कर स्वयं पाणिनि ही था, ऐसा सिद्धान्त स्व. प्रा. का. वा. पाठक के द्वारा प्रतिपादित किया गया है।

दैवतशास्त्र—बृहद्देवता में शाकटायन के अनेकानेक दैवतशास्त्रविषयक उद्धरण प्राप्त हैं (बृहद्दे. २.१.६५; २.१.६६; ४.१.३८; ६.४३; ७.६९; ८.११.९०)। इससे प्रतीत होता है कि, शाकटायन के द्वारा 'दैवतशास्त्र' विषयक कोई ग्रंथ की रचना की गयी होगी। किंतु इसके इस ग्रंथ का नाम भी आज उपलब्ध नहीं है।

इसके अतिरिक्त शौनक के 'चतुराध्यायी' में (२. २४); 'ऋक्तंत्र' में (१.१); एवं हेमाद्रि कृत 'चतुर्वर्गचिन्तामणि' में शाकटायन के अभिमतों का निर्देश प्राप्त है।

अन्य ग्रंथ—उपर्युक्त ग्रंथों के अतिरिक्त, इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ भी प्राप्त हैं:— १. शाकटायन स्मृति; २. शाकटायन-व्याकरण (C. C.)।

२. एक व्याकरणाचार्य, जिसका निर्देश अनंतमद्भू कृत 'शुक्रयजुर्वेद-प्रातिशाख्य भाष्य' में प्राप्त है। इस भाष्य में इसे काण्व ऋषि का शिष्य कहा गया है। 'उणादिसूत्रों' का रचयिता शाकटायन एवं यह समवतः एक ही होंगे (शाकटायन १. देखिये)।

३. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

४. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाकटायन आडितायन—एक आचार्य, जो विचक्षण तांड्य नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम संवर्गजित् लामकायन था (वं. ब्रा. २)।

शाकपूणि—वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण।

शाकपूणि—एक व्याकरणाचार्य, जिसके व्याकरण-विषयक अनेकानेक मतों का निर्देश यास्क के 'निरुक्त' में प्राप्त है (नि. ३.११; ६.१४; ८.५; १२.१९; १३. १०-११)।

ऋग्वेदार्थ का ज्ञान—ऋग्वेद के मंत्रों के अर्थों का ज्ञान शाकपूणि को किस प्रकार प्राप्त हुआ, इस संबंध में एक कथा यास्क के निरुक्त में प्राप्त है। एक बार शाकपूणि को वैदिक देवता के संबंध में ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा हुई।

इसका यह मनोगत जान कर वैदिक देवता इसके सम्मुख उपस्थित हुए, एवं उन्हें इनसे ऋग्वेद की ऋचा (ऋ. १. १६४.२९), एवं उसका अर्थ कथन किया। इसीसे आगे चल कर शाकपूणि ऋग्वेद का मतार्थद्रष्टा आचार्य बन गया (नि. २.८)।

शाकपूणि रथीतर—एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार, व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा में से इंद्रप्रमति नामक आचार्य का शिष्य था। वायु में इसे 'रथीतर' अथवा 'रथांतर', तथा ब्रह्मांड में इसे 'रथीतर' कहा गया है।

शाकपूरुण रथीतर (रथांतर)—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा में से सत्यश्री नामक आचार्य का शिष्य (व्यास पारशर्य देखिये)।

शाकंभरी—देवी का एक अवतार (देवी देखिये)।

शाकल—देवमित्र (वेदमित्र) शाकल्य नामक आचार्य के शिष्यों का सामूहिक नाम। इसी सामूहिक नाम के कारण इस शिष्यपरंपरा के आचार्य एवं उनके द्वाग संस्कारित ऋग्वेद संहिता 'शाकल शाखान्तर्गत' मानी जाती है। पाणिनि के अष्टाध्यायी में भी 'शाकल' शब्द का अर्थ भी 'शाकल्य का शिष्य' किया गया है।

ब्राह्मण ग्रंथों में—ऐतरेय ब्राह्मण में 'शाकल' शब्द का अर्थ एक प्रकार का सौंप ऐसा दिया गया है, जो शाकल्य के शिष्यों की ही व्यंजना प्रतीत होती है। वहाँ अग्निश्रोम यज्ञ, रथचक्र के सदृश आदि एवं अंतविरहित होता है, इस कथन के लिए चक्राकार बैठे हुए 'शाकल' की उपमा दी गयी है (मे. ब्रा. ३.५)।

व्याकरण ग्रंथों में—पाणिनि, काश्यायन, एवं पतंजलि के ग्रंथों में 'शाकल' का निर्देश प्राप्त है (पा. सु. ४.१.१८; ३.१२८; ६.१.१२७), जहाँ सर्वत्र 'शाकल' का निर्देश एक सामूहिक नाम के नाते से प्राप्त है। ऋग्वेद प्रातिशाख्य में 'शाकल' का निर्देश अनेक बार प्राप्त है (ऋ. प्रा. ६५; ७६; ३००; ४०३; ६३१; ६३३)।

मंस मूलक आदि पाश्चात्य वैदिक अभ्यासक, शाकल को एक आचार्य मानते हैं, जिसने शाकलशाखान्तर्गत प्रचलित ऋक्संहिता का निर्माण किया था। किंतु यह अभिमत भारतीय वैदिक परंपरा के दृष्टि से भ्रममूलक प्रतीत होता है; क्योंकि, जैसे पहले ही कहा जा चुका है, कि शाकल नामक कोई भी आचार्य प्राचीन वैदिक परंपरा में नहीं था।

शाकल शाखा—वर्तमानकाल में प्राप्त ऋग्वेद की संहिता शाकल शाखा की मानी जाती है। वायु के अनु-

सार, देवमित्र (वेदमित्र, विदग्ध) शाकल्य के निम्न-लिखित पाँच शाखाप्रवर्तक शिष्य थे :—१. मुद्गल; २. गालव; ३. शालीय, ४. वास्य, ५. शैशिरिय (शैशर, अथवा शैशिरी)। शाकल्य के यही पाँच शिष्य ऋग्वेद के शाखाप्रवर्तक आचार्य नाम से सुविख्यात हुए। इन आचार्यों के द्वारा प्रणीत ऋग्वेद की विभिन्न शाखाओं की जानकारी निम्नप्रकार है :—

(१) **मुद्गल शाखा**—इस शाखा की ऋग्वेद संहिता ब्राह्मण आदि ग्रंथ अप्राप्य हैं। किंतु उस शाखा का निर्देश 'प्रश्नचूडय' आदि ग्रंथों में प्राप्त है। इस शाखा के प्रवर्तक भर्ग्याश्च मुद्गल नामक आचार्य का निर्देश ऋग्वेद एवं बृहद्देवता में प्राप्त है (ऋ. १०.१०२; बृहद्दे. ६.४६)।

इसका वंशक्रम निम्नप्रकार माना जाता है :—भृम्यश्च—मुद्गल—वच्यश्च—दिवोदास।

(२) **गालव शाखा**—इस शाखा के प्रवर्तक गालव अथवा वाभ्रव्य पांचाल का निर्देश 'अष्टाध्यायी' ऋक्संप्रातिशाख्य', 'निरुक्त', बृहद्देवता' आदि ग्रंथों में प्राप्त है। इस शाखा की संहिता, ब्राह्मण आदि ग्रंथ अप्राप्य हैं।

(३) **शालीय शाखा**—'काशिका वृत्ति' में शालीय का निर्देश एक शाखाप्रवर्तक आचार्य के नाते प्राप्त है। किंतु इस शाखा की संहिता आदि अप्राप्य है।

(४) **वास्य शाखा**—पतंजलि के 'व्याकरणमहाभाष्य' में वात्सी नामक आचार्य का निर्देश प्राप्त है (महा. ४.२.१०४)। किंतु इस शाखा की संहिता आदि अप्राप्य है (भा. २. पु. २९७)।

(५) **शैशिरिय शाखा**—इस शाखा के संहिता का निर्देश ऋग्वेद अनुवाकानुक्रमणी में प्राप्त है। शौनक के 'अनुवाकानुक्रमणे' के अनुसार इस शाखा के संहिता में ८५ अनुवाक, १०१७ सूक्त, २००६ वर्ग एवं १०४१७ मंत्र थे।

इस शाखा का एक 'प्रातिशाख्य' भी उपलब्ध है, जो शौनक के द्वारा विरचित है। इस प्रातिशाख्य में वेदमित्र शाकल्य का निर्देश 'शाकल्यपिता' एवं 'शाकल्यस्थविर' नाम से किया गया है (ऋ. प्रा. १.२२३; १८५)।

शौनक स्वयं शैशिरिय शाखा का ही आचार्य था, जिस कारण उसके द्वारा विरचित प्रातिशाख्य ग्रंथ 'शाकल प्रातिशाख्य' अथवा 'शैशिरिय प्रातिशाख्य' नाम से सुविख्यात था।

शौनक के द्वारा विरचित एक 'अथर्वप्रातिशाख्य' भी प्राप्त है, जो 'चतुराध्यायिका' नाम से सुविख्यात है।

शाकल्यसंहिता—शाकल शाखा की आद्यसंहिता 'शाकल्य संहिता' थी, जिसका निर्देश 'व्याकरण-महाभाष्य' में प्राप्त है (महा. १.४.८४)। कात्यायन की 'ऋक्सर्वानुक्रमणी' एवं शाकल्य का पदपाठ इसी संहिता को आधार मान कर लिखा गया है। इस पदपाठ के अनुसार, शाकल्य के मूल संहिता में १५३८२६ पद थे।

शाकलायनि—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाकलि—ऋग्वेदी श्रुतिर्षि।

शाकल्य—ऋग्वेद का सुविख्यात शाखाप्रवर्तक आचार्य, जो व्यास के वैदिक शिष्यों में प्रमुख था। इसे शतपथ ब्राह्मण में 'विद्वन्' शाकल्य, ऐतरेय आरण्यक में 'स्थविर' शाकल्य एवं पौराणिक साहित्य में वेदमित्र (देवमित्र) शाकल्य कहा गया है (श. प्रा. ११.६.३. ३; वृ. उ. ३.९.१.४; ७; ऐ. आ. ३.२.१.६; सं. आ. ७. १६; ८.१.११; वायु. ६०; ब्रह्मांड. २.३४)।

शाखाप्रवर्तक आचार्य—व्यास से इसे जो 'ऋग्वेद संहिता' प्राप्त हुई, वह 'शाकल संहिता' नाम से प्रसिद्ध है, जो आगे चल कर इसने अपने पाँच शाखा-प्रवर्तक शिष्यों में बाँट दी। इसी के नाम से वे शाखाएँ 'शाकल' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध हैं (शाकल देखिये)।

ऋग्वेद की वर्तमानकाल में उरुल्लभ्य संहिता 'शाकल्य के शाखा की' अर्थात् 'शाकल संहिता' मानी जाती है। इसी कारण पंडित ने अपने सर्वानुक्रमणी में 'शाकलक' की व्याख्या करते समय 'शाकल्योच्चारणम् शाकलकम्' कहा है (क. सर्वानुक्रमणी १.१)।

इससे प्रतीत होता है कि, इसने 'ऋग्वेद संहिता' का 'पदपाठ' तैयार किया, अनेकानेक प्रवचनों द्वारा उसका प्रचार किया एवं संकड़ों शिष्यों के द्वारा उसे स्थायी स्वरूप प्राप्त कराया।

पतंजल के 'महाभाष्य' से, एवं 'महाभारत' से प्रतीत होता है कि, ऋग्वेद की इक्षीय शाखाएँ थी। किंतु उनमें से केवल पाँच शाखाओं के नाम आज प्राप्त हैं (चरणव्यूह; शाकल देखिये)। ऋग्वेदी ब्रह्मयज्ञांग तपण में केवल तीन शाखाप्रवर्तकों का निर्देश पाया जाता है। देवी भागवत जैसे पौराणिक ग्रंथ में भी शाकल्य की तीन ही शाखाएँ बतायी गयी हैं (दे. भा. ७)।

पदपाठ का रचयिता—ऋग्वेद के वर्तमान 'पदपाठ' की रचना शाकल्य के द्वारा की गयी है। इस पदपाठ में ऋग्वेद में प्राप्त समानार्थी पदों का संग्रह परिगणना-पद्धति से किया गया है। किंतु कौन से नियम का अनुसरण कर इस 'पदपाठ' की रचना की गयी है, इसका पता पदपाठ में प्राप्त नहीं होता।

व्याकरणार्थ—शौनक के 'ऋक्संप्रातिशाख्य' में भी इसका निर्देश प्राप्त है, जहाँ इसे एक 'व्याकरणकार' कहा गया है। 'ऋग्वेद संहिता' में संधि किस प्रकार साधित किये जाते हैं, इस संबंध में इसके अनेकानेक उद्धरण 'शौनकीय ऋक्संप्रातिशाख्य' में प्राप्त हैं (क. प्रा. १.९.२०८; २.३२; शु. प्रा. ३.१०)।

पाणिनि के अष्टाध्यायी में—इस ग्रंथ में संधिनियमों के संदर्भ में इसका निर्देश अनेक बार प्राप्त है (पा. सू. ६.१.१२७; ८.३.१९; ४.५०)। इसी ग्रंथ में 'पदकार' नाम से इसका निर्देश प्राप्त है (पा. सू. ३.२.२३)। इसके द्वारा लिखित पदपाठ में जिस 'पद' का निर्देश 'इति' से किया गया है, जो पाणिनि के अनुसार 'अनाप' है (पा. सू. १.१.१६)।

पाणिनि ने 'उपस्थित' शब्द की व्याख्या करते समय पुनः एक बार इसका निर्देश किया है, एवं कहा है, "शाकल्य के अनुसार, 'इतिकरण' से सहित 'पद' को 'उपस्थित' कहते थे" (पा. सू. ६.१.१२९)।

याज्ञवल्क्य से संबंध—याज्ञवल्क्य वाजसनेय से इसने किये प्राणांतिक वादविवाद का निर्देश 'बृहदारण्यक उपनिषद्' में प्राप्त है (याज्ञवल्क्य वाजसनेय, एवं देवमित्र शाकल्य देखिये)।

पौराणिक साहित्य में—महानारत में इसे एक ब्रह्मर्षि कहा गया है, एवं इसके नौ सौ वर्षों तक शिवोपासना करने का निर्देश वहीं प्राप्त है। इसकी तपस्या से प्रसन्न हो कर शिव ने इसे वर प्रदान किया, "तुम बड़े ग्रंथकार बनेंगे, एवं तुम्हारा पुत्र स्वातन्त्र्य सृजकार बनेगा" (म. अनु. १४; शिव. रुद्र. ४३-४७)। महाभारत में प्राप्त इस कथा में, इसके पुत्र का नाम अप्राप्य है।

ग्रंथ—ऋक्संहितासाहित्य के अतिरिक्त इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त हैं:— १. शाकल्यसंहिता २. शाकल्यमत (C. C.)।

३. एक विष्णुसक्त ऋषि, जो ईश्वरारि पर निवास करता था। एक बार परशु नामक राक्षस इसे खाने के लिए दौड़ा। उस समय विष्णु की कृपा से यह लोहमूर्ति

में रूपांतरित हुआ, एवं इस प्रकार इसकी जान बच गयी। आंग चल कर इसने परशु राक्षस का उद्धार किया (ब्रह्म. १६३)।

शाकल्यपितृ—एक वैद्याकरण; जिसका संधिनियम के संबंध में अभिमत 'ऋक्सप्रतिशाख्य' में प्राप्त है (क. प्रा. २६३)।

शाकल्यवज्र—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.७१)।

शाकवैण रथीतर—एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा में से सत्यश्री नामक आचार्य का शिष्य था। पाठनेद—'शाकपूणि'

शाकायन—वासिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. एकायन नामक भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

शाकायनि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाकायन्य—एक तस्वन्न आचार्य, जिसने बृहद्रथ ऐश्वका राजा को आत्मज्ञान कराया था (मै. उ. १.२)।

२. जात नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे 'शाक' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (क. सं. २२.७)।

शाकहार्य—वासिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाकिनी—गौड देश में रहनेवाले दुर्व नामक ब्राह्मण की पत्नी। इसके पुत्र का नाम बुध था (बुध ७. देखिये)।

शाकिनि—मधुवन में रहनेवाला एक ऋषि, जिसके कुल नौ पुत्र थे। इनके पुत्रों में से ध्रुव, शील, बुध, तार एवं व्यंतिभक्त ये पुत्र गृहस्थाश्रमी एवं असिहोत्री थे। इनके चार पुत्र निर्मोह, जितकाम, स्यागकेश एवं गुणाश्रीक विरक्त एवं संन्यस्त वृत्ति के थे (पद्म. स्व. ३१)।

शाकन्य—गौरवाति पराशर ऋषि का पैतृक नाम, जो उसे 'शक्ति' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (ऐ. ब्रा. ३.१९.४; श. ब्रा. १२.८.३.७; पं. ब्रा. ११.५. १४; १२.१३.१०; आप. श्री. २३.११.१०)।

शाक्य—(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत, मत्स्य, विष्णु, भविष्य एवं वासु के अनुसार संजय राजा का पुत्र था। भविष्य में इसे 'शाक्यवर्धन' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम शुद्धोद था।

शाकतव—शौकतव नामक अत्रिकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

शाक्यायण—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाक्यर—ऋषभ नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (ऋ. १०.१६६)।

शाख—अनल नाम . वसु का पुत्र, जो कार्तिकेय का छोटा भाई था। यह एवं इसके छोटे भाई विशाल एवं नैगम स्वयं कार्तिकेय के ही रूप माने जाते हैं (म. श. ४३.३७)।

शाखेय—पाणिनीय व्याकरण का एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

शांखायन—ऋग्वेद का एक अद्वितीय शाखाप्रवर्तक आचार्य, जो स्वयं के शाखान्तर्गत 'संहिता', 'ब्राह्मण', 'आरण्यक', 'उपनिषद्' श्रौतमन्त्र, गृह्यसूत्र आदि ग्रंथों का रचयिता माना जाता है। कुपीतक ऋषि का पुत्र होने के कारण, इसके द्वारा विरचित समस्त वैदिक साहित्य 'कौपीतकि' अथवा 'शांखायन' नाम से सुविख्यात है। टीकाकार आनर्तीय के अनुसार, इसे 'सुयज्ञ' नामांतर भी प्राप्त था (सां. गृ. ४.१०; ६.१०)। 'शांखायन आरण्यक' में भी इसका निर्देश प्राप्त है (शां. आ. १५.१)।

शांखायन संहिता—व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरान्तर्गत पाँच प्रमुख शाखाएँ मानी जाती थीं, जिनकी नामावलि निम्न प्रकार है:—१. शाकल २. वाष्कल ३. आश्वलायन ५. शांखायन ५. माण्डुक्येय। इन पाँच शाखाओं में से शांखायन शाखा का प्रणयिता यह माना जाता है, जिसकी शांखायन, कौपीतकि आदि विभिन्न उपशाखाएँ थीं।

इस शाखा में प्रचलित 'ऋग्वेद संहिता' प्रायः सर्वत्र शाकल शाखान्तर्गत ऋक्संहिता से मिलती जुलती थीं। वर्तमानकाल में प्राप्त ऋग्वेदसंहिता शाकल शाखा की मानी जाती है।

शांखायन ब्राह्मण—ऋग्वेदसंहिता के दो ब्राह्मण ग्रंथ माने जाते हैं:—१. ऐतरेय; २. शांखायन अथवा कौपीतकि। 'कौपीतकि ब्राह्मण' में कुल ३० अध्याय हैं, एवं यज्ञ की श्रद्धता प्रतिपादन करना, एवं उसकी दान्त्रीय व्याख्या करना इस ग्रंथ का प्रमुख उद्देश्य है। यद्यपि ऐतरेय एवं कौपीतकि ब्राह्मण एक ही ऋग्वेद के हैं, फिर भी, विषय प्रतिपादन के दृष्टि से ये दोनों ग्रंथ काफी विभिन्न हैं। विषय प्रतिपादन के स्पष्टता के दृष्टि से 'कौपीतकि ब्राह्मण' ऐतरेय ब्राह्मण से कतिपय श्रेष्ठ प्रतीत होता है। इस ब्राह्मण में इसका निर्देश 'कौपीतकि' एवं 'कौपीतक' इन दोनों नाम से प्राप्त है।

शांखायन आरण्यक—यद्यपि आरण्यक ग्रंथों की संख्या अनेक बतायी गयी है, फिर भी इनमें से केवल आठ ही आरण्यक ग्रंथ आज उपलब्ध हैं, जिनकी

नामावलि निम्न प्रकार है :—१. ऐतरेय; २. शांखायन; ३. तैत्तिरीय; ४. माध्यंदिन; ५. बृहदारण्यक; ६. जैमिनीय उपनिषदारण्यक ७. छान्दोग्यारण्यक। इनमें से 'कौषीतकि आरण्यक' में 'कौषीतक ब्राह्मण' का ही कई भाग पुनरुद्धृत किया गया है, जिनके पंद्रह अध्याय हैं।

सायण के अनुसार अरण्यों में पढ़ाये जाने के कारण इन ग्रन्थों को 'आरण्यक' नाम प्राप्त हुआ। वनवासी वान-प्रस्थियों को यज्ञयागादि कर्मों की दीक्षा देना इन ग्रन्थों का प्रमुख उद्देश्य है। जिस प्रकार यहस्थाश्रम के यज्ञादि कर्मों का वर्णन 'ब्राह्मण' ग्रन्थों में प्राप्त है, इसी प्रकार वानप्रस्थाश्रम के यज्ञादि विधियों का वर्णन आरण्यक ग्रन्थों में प्रतिपादित किया है। उनमें कर्मकांड के साथ, धर्म की आध्यात्मिक व्याख्या भी दी गयी है, एवं इस प्रकार, ज्ञानमार्ग एवं कर्ममार्ग का समन्वय किया गया है।

'ऐतरेय' एवं 'कौषीतकि' दोनों ग्रंथों के आद्य भाष्यकार सायण एवं शंकराचार्य माने जाते हैं। शंकर-भाष्य के सुप्रसिद्ध टीकाकारों में आनंदगिरि, आनंदतीर्थ (आनंदज्ञान), नारायणेंद्र सरस्वती एवं कृष्णदास प्रमुख माने जाते हैं।

शांखायन (कौषीतकि) उपनिषद्—यह ग्रंथ उपनिषद् ग्रंथों में काफ़ी प्राचीन माना जाता है। इस ग्रंथ में 'कौषीतकि आरण्यक' का ही तीसरा एवं छठा अध्याय एकत्रित किया गया है।

शांखायन श्रौतसूत्र—वैदिक संहिताओं में वर्णित यज्ञ-यागादि विधियों का सार संकलित करनेवाले ग्रंथों को 'श्रौतसूत्र' कहा जाता है, जिनमें वेदों में प्रतिपादित चौदह यज्ञों की जानकारी प्राप्त है।

प्राचीन श्रौतसूत्रों में से बारह प्रमुख श्रौतसूत्र आज प्राप्त हैं, जिनकी नामावलि निम्नप्रकार है :—१. शांखायन श्रौतसूत्र; २. आश्वलायन श्रौतसूत्र; ३. मानव श्रौतसूत्र; ४. बौधायन श्रौतसूत्र; ५. आपस्तंब श्रौतसूत्र; ६. हिरण्य-केशी श्रौतसूत्र; ७. कात्यायन श्रौतसूत्र, ८. लखायन श्रौतसूत्र; ९. द्राह्यायण श्रौतसूत्र; १० जैमिनीय श्रौतसूत्र; ११ वैतान श्रौतसूत्र; १२ वाराह श्रौतसूत्र।

शांखायन श्रौतसूत्र के कुल अठारह अध्याय हैं, एवं उसके अनेक उद्धरण शांखायन ब्राह्मण से मिलते जुलते हैं। इस ग्रंथ के सत्रहवाँ एवं अठारहवाँ अध्याय 'कौषीतकि आरण्यक' के पहले एवं दूसरे अध्याय से उद्धृत किये गये हैं। उस श्रौतसूत्र में शौनक, जानूक्य, पैग्य, आरुणि

आदि आचार्यों का निर्देश प्राप्त है। एक सर्पसत्र का निर्देश भी वहाँ किया गया है, जो संभवतः जनमेजय के द्वारा किये गये सर्पसत्र का होगा (सां. श्रौ. १३.२३.८)।

शांखायन गृह्यसूत्र—शांखायन का एक गृह्यसूत्र भी प्राप्त है, जिसमें पितृयज्ञ, आग्रहायणी यज्ञ आदि सात गृह्ययज्ञों की, एवं देवयज्ञ, भूतयज्ञ, आदि पाँच महा-यज्ञों की जानकारी दी गयी है।

उपलब्ध गृह्यसूत्रों में 'शांखायन गृह्यसूत्र' प्रमुख माना जाता है। उपलब्ध गृह्यसूत्रों की नामावलि निम्न प्रकार है :—१. शांखायन गृह्यसूत्र; २. आश्वलायन गृह्यसूत्र; ३. मानव गृह्यसूत्र; ४. बौधायन गृह्यसूत्र; ५. आपस्तंब गृह्यसूत्र; ६. हिरण्यकेशी गृह्यसूत्र; ७. भारद्वाज गृह्यसूत्र; ८. पारस्कर गृह्यसूत्र, ९. द्राह्यायण गृह्यसूत्र; १०. गोमिल गृह्यसूत्र; ११. स्वादिर गृह्यसूत्र; १२. कौशिक गृह्यसूत्र।

आचार्य-परंपरा—ऐतरेय ब्राह्मण का रचयिता महिदास ऐतरेय, शांखायन का पूर्ववर्ती आचार्य माना जाता है। कई अभ्यासकों के अनुसार, ऐतरेय ब्राह्मण ग्रंथ का कर्तृत्व भी महिदास ऐतरेय (ऐ. ब्रा. १-६ पंचिका), एवं शांखायन तथा आश्वलायन (ऐ. ब्रा. ७-८ पंचिका) में विभाजित किया जाता है। इस दृष्टि से ऋग्वेदीय शाखाप्रवर्तक आचार्यों की परंपरा निम्नप्रकार बतायी जाती है :—महिदास ऐतरेय—शांखायन—आश्वलायन।

शांखायन के ग्रंथों में सुमन्तु, जैमिनि, वेदांगयन, पैल आदि पूर्वाचार्यों का निर्देश प्राप्त है।

शाखायनि—एक आचार्य, जो 'शाखायन ब्राह्मण' एवं 'शाखायन गृह्यसूत्र' आदि ग्रंथों का रचयिता माना जाता है। इनमें से 'शाखायन ब्राह्मण' आज उपलब्ध नहीं है।

आचार्य परंपरा—एक गुरु के नाते इसका निर्देश ब्राह्मण ग्रंथों में अनेक बार प्राप्त है (श. ब्रा. ८.१.८१; १०.४.५.२; जै. उ. ब्रा. १.६.२; ३०.१; २.२.८; ४. ३)। 'जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण' में इसका सही नाम संग दिया है, एवं शाखायन इसका पैतृक नाम बताया गया है, जो इसे 'शाख्य' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था। इस ग्रंथ में इसे आश्वलायन का शिष्य कहा गया है (जै. उ. ब्रा. ४.१६.१)। 'सामविधान ब्राह्मण' में इसे वादरायण का शिष्य कहा गया है।

शाखायन ब्राह्मण—शाखायन ब्राह्मण में प्राप्त अनेक कथा सायणभाष्य में पुनरुद्धृत की गयी हैं। इस ग्रंथ के अनेक उद्धरण जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण में भी प्राप्त हैं

(जै. उ. ब्रा. १.१०; ३.१३.६; २८.५)। 'आश्व-
लयन श्रौतसूत्र' में इसके अभिमतों का निर्देश 'शाठ्या-
यनक' नाम से प्राप्त है (आश्व. श्रौ. १.४.१३)।
आट्टेल के अनुसार, यह ब्राह्मण ग्रन्थ 'जैमिनीय ब्राह्मण'
से काफी मिलता जुलता था।

जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण (शाठ्युपनिषद्)—इस ग्रंथ
का प्रमुख प्रणयिता भी शाठ्यायनि माना जाता है। इस ग्रन्थ
में प्राप्त गुरुवररा के अनुसार, यह ग्रन्थ सर्वप्रथम इंद्र ने
व्यालयन नामक आचार्य को प्रदान किया, जिसने वह
अपने शिष्य शाठ्यायन को सिखाया। आगे चल कर
वही ग्रंथ शाठ्यायन ने अपने शिष्य राम कानुजातेय
वैशामित्र को प्रदान किया। इन सारे आचार्यों में से,
शाठ्यायनि ने इस ग्रन्थ को विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त करायी
(जै. उ. ब्रा. ४.१६-१७)।

शिष्यपरंपरा—इसके अनुगामी 'शाठ्यायनिक,'
'शाठ्यायनक' अथवा 'शाठ्यायनिन' नाम से प्रसिद्ध
थे, जिनका निर्देश सूत्रग्रंथों में, एवं 'शाठ्यायन ब्राह्मण' में
प्राप्त है (ला. श्रौ. ४.५.१८; १.२.२४; आ. श्रौ. ५.
२३.३; आश्व. श्रौ. १.४.१३)।

२. विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शांडिल—शांडिल्य ऋषि के वंशजों के लिए प्रयुक्त
सामूहिक नाम (ते. आ. १.२२.१०)।

शांड—एक उदार दाता, जिसने भरद्वाज ऋषि को
विपुल धन प्रदान किया था (ऋ. ६.६३.९)।

शांडिलायन—एक वैतुक नाम, जो वैदिक साहित्य
में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया
है: १. सुतेमनस् (वं. ब्रा. १); २. गर्दभीमुख (वं.
ब्रा. २)।

शांडिलि—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शांडिली—दक्ष प्रजापति की कन्या, जो धर्म ऋषि
की पत्नियों में से एक थी (म. आ. ६६.१७-२०)।

२. कौशिक ऋषि की पत्नी दीर्घिका का नामांतर
(दीर्घिका एवं कौशिक १४. देखिये)।

३. शांडिल्य ऋषि की तपस्विनी कन्या, जो स्वयंप्रभा
नाम से भी सुविख्यात थी। यह ऋषभ पर्वत पर तपस्या
करती थी।

गरुड का गर्वहरण—एक बार गालव ऋषि एवं
पश्चिराज गरुड इसके आश्रम में अतिथि के नाते आये।
इसने उनका उत्तम आदरसत्कार किया, एवं रात्रि के
लिए उन्हें अपने आश्रम में ठहराया।

रात्रि में सोते सोते गरुड के मन में विचार आया, 'इस
तपस्विनी को अगर मैं अपने पंखों पर विटा कर विष्णुलोक
ले जाऊँ, तो बहुत ही अच्छा होगा'। गरुड के इस औद्ध-
त्यपूर्ण विचारों के कारण, एक ही रात्रि में उसके पंख
गिर गये, एवं वह पंखविहीन बन गया।

पश्चात् गरुड एवं गालव दोनों इसकी शरण में आये,
जिस कारण इसने उन्हें अनेकानेक वर प्रदान किये (म.
उ. १११.१-१७; स्कंद. ८.८१-८२)।

केकयदेशीय सुमना नामक राजकन्या से इसने पातिव्रत्य
के संबंध में उपदेश प्रदान किया था (म. अनु. १२३.
८-२३)।

शांडिल्य—एक श्रेष्ठ आचार्य, जो अग्निर्कार्य से
संबंधित समस्त यज्ञप्रक्रियाओं में अधिकारी व्यक्ति माना
जाता था। बृहदारण्यक उपनिषद् में इसे वास्त्य नामक
आचार्य का शिष्य कहा गया है (वृ. उ. ६.५.४ काण्व.)
'शांडिल' का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त
हुआ होगा।

यज्ञप्रक्रियों का आचार्य—शतपथ ब्राह्मण के पाँचवे एवं
उसके बाद के कांडों में, अग्नि से संबंधित जिन संस्कारों
का निर्देश प्राप्त है, वहाँ सर्वत्र इसका निर्देश इन प्रक्रियों
का श्रेष्ठ आचार्य के नाते किया गया है (श. ब्रा. ५.२.
१५; १०.१.४.१०; ४.१.११; ६.३.५; ५.९; ९.४.४.
१७)। शतपथ ब्राह्मण के इन सारे अध्यायों में
यज्ञाग्नि को 'शाण्डिल' कहा गया है, (श. ब्रा. १०.६.
५.९)।

शतपथ ब्राह्मण के अग्निर्कांड—शतपथ ब्राह्मण के छः
से नौ कांड 'अग्निचयन' से संबंधित हैं, जिनमें कुल
६० अध्याय हैं। ये चार कांड 'अग्नि' अथवा 'षष्ठिपथ'
सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे, एवं उनका अध्ययन अल्पा
किया जाता था। इन कांडों का अध्ययन करनेवाले
आचार्यों को 'षष्ठिपथक' कहा जाता था। इन सारे कांडों
का प्रमुख आचार्य शांडिल्य माना गया है।

शतपथ ब्राह्मण का दसवाँ कांड 'अग्निहस्य कांड'
कहलाता है, जिसमें अग्निचयन के रहस्यत्वोंका निरूपण
किया गया है। यहाँ भी शांडिल्य को इस विद्या का
प्रमुख आचार्य माना गया है। यज्ञ की वेदि की रचना
करना, आदि विषयों में इसके मत पुनः पुनः उद्धृत किये
गये हैं।

'बृहदारण्यक उपनिषद्' में—इस ग्रंथ में इसे निम्न-
लिखित आचार्यों का शिष्य कहा गया है:— १. कैशोय

काण्व (वृ. उ. २.५.२२; ४.५.२८ माध्य.); २. वैष्ट-
पुरेय (वृ. उ. २.५.१०; ४.५.२६ माध्य.) ३. कौशिक (वृ.
उ. २.६.१; ४.६.१ काण्व.); ४. गौतम (वृ. उ. २.
५.२०; ४.५.२६ माध्य.); ५. ब्रैजवाप (वृ. उ. २.५.
२०; ४.५.२६ माध्य.); ६. आनभिम्बलात (वृ. उ. २.
६.२ काण्व.)।

इसी ग्रंथ में निम्नलिखित आचार्यों को इसकी शिष्य
कहा गया है:— कौंडिन्य, आग्निवेश्य, वात्स्य, वाम-
कशायण, वैष्टपुरेय, भारद्वाज (वृ. उ. २.६.१.३; ६.५.
४; श. ब्रा. १४.७.३.२६)।

किंतु यहाँ संभवतः एक ही 'शांडिल्य' का
संकेत न हो कर, 'शांडिल्य' पैतृक नाम धारण करने-
वाले अनेकानेक आचार्यों का निर्देश प्रतीत होता है।
इनमें से 'शततथ ब्राह्मण' में निर्दिष्ट 'शांडिल्य' कौनसे
आचार्य का शिष्य था, यह कहना कठिन है।

तत्त्वज्ञान—'छांदोग्य उपनिषद्' में शांडिल्य का
तत्त्वज्ञान दिया गया है (छां. उ. ३.१५)। इस तत्त्वज्ञान
के अनुसार, ब्रह्मा को 'तज्जलान्' कहा गया है; एवं
सारी सृष्टि इसी तत्त्व से प्रारंभ होती है, जीवित रहती
है, एवं अंत में इसी तत्त्व में विलीन होती है, ऐसा
कहा गया है। शांडिल्य के इस तत्त्वज्ञान का तात्पर्य यही
था कि, सृष्टि के समस्त भूतमात्रों के उत्पत्ति, स्थिति एवं
लय का अधिष्ठाता केवल एक ईश्वर ही है।

आत्मा का स्वरूप—शांडिल्य के तत्त्वज्ञान में 'आत्मा'
का वर्णन अर्थपूर्ण एवं निश्चयात्मक शब्दों में किया गया
है, एवं उसके 'महत्तम' एवं 'लघुतम' ऐसे दो स्वरूप
वहाँ वर्णन किये गये हैं। इनमें से 'महत्तम' आत्मा
अनंत एवं सारे विश्व का व्यापन करनेवाला कहा गया
है, एवं 'लघुतम' आत्मा अणुस्वरूपी वर्णन किया गया
है। आत्मा का नकारात्मक वर्णन करनेवाले याज्ञवल्क्य के
तत्त्वज्ञान से शांडिल्य के इस तत्त्वज्ञान की तुलना अक्सर
की जाती है (याज्ञवल्क्य याज्ञसनेय देखिये)। इन दोनों
तत्त्वज्ञानों की कथनपद्धति विभिन्न होते हुए भी, उन
दोनों में प्रणीत आत्मा के संबंधित तत्त्वज्ञान एक ही प्रतीत
होता है।

शांडिल्य के अनुसार, मानवीय जीवन का अंतिम
ध्येय मृत्यु के पश्चात् आत्मन् में विलीन होना बताया
गया है।

शंकराचार्य विरचित 'ब्रह्मसूत्रभाष्य' में शांडिल्य के
उपर्युक्त तत्त्वज्ञान का निर्देश 'शांडिल्यनिशा' नाम से
किया गया है।

गोत्रकार आचार्य—आश्वलायन गृहसूत्र में प्राप्त गोत्र-
कारों के नामावलि में शांडिल्य का निर्देश प्राप्त है, जहाँ
इसके गोत्र के प्रवर शांडिल्य, असित, एवं देवल दिये
गये हैं। इसके द्वारा लिखित 'गृह्यसूत्र' का निर्देश
'आपस्तंब धर्मसूत्र' में प्राप्त है (आप. ध. १.११.
२१)। भक्ति के संबंध इसके उद्धरण भी उत्तरकालीन
सूत्रग्रंथों में प्राप्त हैं।

ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त हैं:—

१. शांडिल्यस्मृति; २. शांडिल्यधर्मसूत्र; ३. शांडिल्यतत्त्व-
दीपिका (C. C.)।

२. एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के
लिए प्रयुक्त किया गया है:—१. उद्गर (छां. उ. १.
१.३); २. सुयज्ञ (जै. उ. ब्रा. ४.१७.१)।

३. एक ऋषि, जो मरीचिपुत्र कश्यप ऋषि के वंश में
उत्पन्न हुआ था। आंगे चल कर, इसीके कुल में अग्नि ने
जन्म लिया था, जिस कारण उसे 'शांडिल्यगोत्रीय'
कहा जाता है (वैश्वदेवप्रयोग देखिये)।

सुमन्थु राजा ने इसे 'मध्य-मोल्यादि' पञ्चमों की
पर्वतप्राय राशि दान में प्रदान की थी (म. अनु. १३७.
२२)। इसने अन्यत्र बैलगाड़ी के दान को सुवर्ण-द्रव्य
आदि द्रव्यों के दान से श्रेष्ठ बताया है (म. अनु. ६४.
१९; ६५.१९)।

४. एक ऋषि, जिमने वैदिक मार्ग से विष्णु की पूजा
न कर, अवैदिक मार्गों से उसकी उपासना करना चाहा।
एक ग्रंथ की रचना कर इसने अपने इस अवैदिक तत्त्व-
प्रणाली का समर्थन भी किया।

इस पापकर्म के कारण, इसे 'नर्कवास' की शिक्षा भुग-
तनी पड़ी, एवं आंगे चल कर भृगुवंश से जमश्रि के रूप
में इसे जन्म प्राप्त हुआ (बृद्धहारितस्मृति, १८०-१९३)।

५. ब्रह्मदेव का सारथि (स्कंद. ७.१.१२६)।

६. एक शिवभक्त राजा। युवावस्था में प्रविष्ट होते
ही, कामासक्त बन कर यह अनेकानेक स्त्रियों पर
अत्याचार करने लगा। शिव की कृपा के कारण, साक्षात्
यमधर्म भी इसे कुछ सजा नहीं कर सकता था।

अंत में शिव को इसके अत्याचार ज्ञान होने ही,
उसने इसे एक हजार वर्षों तक कच्छुआ (कूर्म) करने का
शान दिया (स्कंद. १.२.१२)।

७. अग्नि का ज्येष्ठ पुत्र, जो कश्यप का ज्येष्ठ भाई था (म. अनु. ५३.२६ कुं.)।

शांडिल्यायन—गर्दभीमुख नामक आचार्य का पैतृक नाम।

शांडिल्यायन 'चेलक'—एक आचार्य, जिसका निर्देश शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है (श. ब्रा. १.५.१.६४)। इसका सही नाम चेलक था, एवं शांडिल्यायन इसका पैतृक नाम था, जो इसे शांडिल्य का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (श. ब्रा. १.०.४.५.३)। इसके पुत्र का नाम वैलेकि जीवल था (श. ब्रा. १.०.४.५.३)। कई अभ्यासकों के अनुसार, प्रवाहण जैवल इसका ही पौत्र था। किंतु प्रवाहण नवयं एक ब्राह्मण न हो कर राजा था। इसी कारण इस संबंध में निश्चित रूप से कहना कठिन है।

दैव्यापति नामक आचार्य ने अग्निचयन के संबंध में इसमें चर्चा की थी (श. ब्रा. १.५.१.१४)।

शातकर्णि—(आंध्र. भविष्य.) एक आर्षवंशीय राजा, जो विष्णु एवं ब्रह्मांड के अनुसार कृष्ण राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'शातकर्ण', वायु में इसे 'सातकर्णि' एवं ब्रह्मांड में 'श्रीमल्लकर्णि' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम पूर्णोत्संग था (विष्णु. ४.२४.४५)।

२. (आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य एवं विष्णु के अनुसार पूर्णोत्संग राजा का पुत्र था। इसने ५६ वर्षों तक राज्य किया था (मत्स्य. २७३.४)।

३. (आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार पुरीषभीरु राजा का पुत्र था। वायु में इसे 'सातकर्णि' कहा गया है।

४. (आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार अहिमानु राजा का पुत्र, एवं शिवश्री राजा का पिता था।

शातपर्ण्य—धीर नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १.०.३.३.१)।

शातचनेय—एक राजा, जो भरद्वाज ऋषि का आश्रय-दाता था (ऋ. १.५.९.७)।

शातातप—एक स्मृतिकार (याज्ञ. १.५)। इसकी छः अध्यायवाली एक गद्यपद्यात्मक स्मृति है, जो वेकटेश्वर ऋषि, एवं आनंदाश्रम, पूना के द्वारा प्रकाशित 'स्मृतिसंग्रह' में प्राप्त है।

शातातप स्मृति—श्री. मित्रा के द्वारा ८७ अध्याय एवं १३७६ श्लोकवाली इसकी एक स्मृति प्रकाशित की गयी है। इसके अतिरिक्त 'लघु-शातातप स्मृति' एवं 'बृह-

शाताताप स्मृति' आनंदाश्रम, पूना के द्वारा प्रकाशित की गयी है।

'मिताक्षरा' (३.२९०), एवं विश्वरूप (३.२३६) ने इसके स्मृति के उद्धरण उद्धृत किये हैं। 'बृहत्शातातप स्मृति' का निर्देश 'मिताक्षरा' में प्राप्त है (याज्ञ. ३.२९०)। 'बृहत्शातातप स्मृति' का, एवं उसके भाष्य का निर्देश क्रमशः 'व्यवहारमामुक्ता' (३०५) में, एवं हेमाद्रि (३.१.८०१) में प्राप्त है।

शुक्ल युजुर्वेदशास्त्रीय ब्राह्मणों में प्रचलित मातृगोत्र-पालन करने के परंपरा का निर्देश, इसकी स्मृति में पाया जाता है।

शाद्वलायन—कसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शांत—अहन् अथवा आप नामक वसु के चार पुत्रों में से एक। इसके अन्य तीन भाइयों के नाम शम, ज्योति एवं मुनि थे (म. आ. ६०.२२; मत्स्य. ५.२२)।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो प्रियव्रतपुत्र इधमजिह्व राजा का पुत्र था। पृश्नद्वीपान्तर्गत एक 'वर्ष' पर इसका राज्य था (भा. ५.२०.३)।

३. (सो. पुरुरवम्.) एक राजा, जो आयु राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.३.२४)।

४. तामस मनु के पुत्रों में से एक।

५. एक राजा, जो दुर्दम राजा की पत्नी सुभद्रा का पिता था (माकै. ७२.४५; दुर्दम १. देखिये)।

शांतकर्ण—शातकर्णि राजा का नामांतर।

शांतनव—एक व्याकरणकार, जो वेदों के स्वर के संबंध में विचार करनेवाले 'फिद् सूत्रों' का रचयिता-माना जाता है। इसके द्वारा रचित सूत्रों के अंत में 'शांतनवाचार्य प्रणीत' ऐसा स्पष्ट निर्देश प्राप्त है। इसका सही नाम शांतनु था, किंतु 'तद्धित' प्रत्यय का उपयोग कर इसका 'शांतनव' नाम प्रचलित हुआ होगा। इसके नाम से यह दक्षिण भारतीय प्रतीत होता है।

फिद्सूत्र—'फिद्' का शब्दशः अर्थ 'प्रातिपदिक' होता है। प्रातिपदिकों के लिए नैसर्गिक क्रम से उपयोजित 'उदात्त', 'अनुदात्त', एवं 'स्वरित' स्वरों की जानकारी प्रदान करने के लिए इन सूत्रों की रचना की गयी है। इन सूत्रों की कुल संख्या ८७ हैं, जो निम्नलिखित चार पादों (अध्यायों) में विभाजित की गयी है:—१. अन्तोदात्त; २. आयुदात्त; ३. द्वितीयोदात्त; ४. पर्योयोदात्त।

रचनाकाल—पतेजति के व्याकरणमहाभाष्य में इन सूत्रों के उद्धरण प्राप्त हैं (महा. ३.१.२; ६.१.११; १२३)। इसके अतिरिक्त काशिका, कैयट, भट्टोजी दीक्षित, नागेशभट्ट आदि के मान्यवर व्याकरणविषयक ग्रंथों में भी इन सूत्रों का निर्देश प्राप्त है।

व्याकरणशास्त्रीय दृष्टि से पाणिनि एवं शांतनव 'अव्युत्पत्ति पक्षवादी' माने जाते हैं, जो शाकटायन के सर्व शब्द 'धातुज' हैं (सर्व धातुज), इस सिद्धांत को मान्यता नहीं देते हैं (शाकटायन देखिये)। इसी कारण हर एक शब्दप्रकृति के स्वर नमूद करना वे आवश्यक समझते हैं। हर एक शब्द के 'प्रकृतिस्वर' गृहीत समझ कर शांतनव ने अपने 'फिट्सूत्रों' की रचना की है, एवं शांतनव के द्वारा यह कार्य पूर्व में ही किये जाने के कारण, पाणिनि ने अपने ग्रंथ में वह पुनः नहीं किया है।

इसी कारण शांतनव आचार्य पाणिनि के पूर्वकालीन माना जाता है। इसकी परंपरा भी पाणिनि से स्वतंत्र थी, जिसका अनुवाद पाणिनि के 'अंगभूत परिशिष्ट' में पाया जाता है।

परिभाषा—इसके 'फिट्सूत्रों' में अनेकानेक पारिभाषिक शब्द पाये जाते हैं, जो पाणिनीय व्याकरण में अप्राप्य हैं। इनमें से प्रमुख शब्दों की नामावलि एवं उनका शब्दार्थ नीचे दिया गया है:—अनुच्च (अनुदात्त); अष (अच्); नप् (नपुंसक); फिप् (प्रातिपदिक); यमन्वन् (वृद्ध); सिद् (सर्वनाम); स्फिग् (लुप्); ह्य् (हल्)।

'फिट्सूत्रों' का महत्त्व—उदात्त, अनुदात्तादि स्वर केवल वैदिक संहिताओं के उच्चारणशास्त्र के लिए आवश्यक हैं, सामान्य संस्कृत भाषा के उच्चारण के लिए इन स्वरों की कोई आवश्यकता नहीं है, ऐसा माना जाता है। किंतु इन स्वरों की संस्कृत भाषा के उच्चारण के लिए भी नितांत आवश्यकता है, यह सिद्धांत शांतनव के 'फिट्सूत्रों' के द्वारा सर्वप्रथम प्रस्थापित किया गया, एवं आगे चल कर 'पाणिनीय व्याकरण' ने भी इसे मान्यता दी।

'फिट्सूत्रों' में प्राप्त ८७ सूत्रों में से केवल पाँच ही सूत्रों में वैदिक शब्दों के (ऊन्इसि) स्वरों की चर्चा की गयी है, बाकी सभी सूत्रों में प्रचलित संस्कृत भाषा एवं वेद इन दोनों में प्राप्त संस्कृत शब्दों के स्वरों की एवं उच्चारण की चर्चा प्राप्त है।

इसी कारण 'फिट्सूत्र' केवल वैदिक व्याकरण का ही नहीं, बल्कि 'पाणिनीय व्याकरण' का भी एक महत्त्व-

पूर्ण विभाग माना जाता है। पाणिनीय व्याकरण के 'शब्दप्रक्रिया' 'धातुज शब्दों का अध्ययन', 'लिङ्गज्ञान' 'गणों का अध्ययन', 'शब्दों का उच्चारणशास्त्र' आदि प्रमुख विभाग हैं, जिनके अध्ययन के लिए क्रमशः 'अष्टाध्यायी', 'उणादिसूत्रों' 'लिङ्गानुशासन' 'गणशास्त्र' 'शिक्षा' आदि ग्रंथों की रचना की गयी है। स्वरों के उच्चारणशास्त्र की चर्चा करनेवाला शांतनवकृत 'फिट्सूत्र' पाणिनीय व्याकरणशास्त्र के इसी परंपरा का एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ प्रतीत होता है।

शांतनु—(सो. कु.क.) एक सुविख्यात कुरुवंशीय सम्राट्, जो प्रतीप राजा के तीन पुत्रों में से द्वितीय पुत्र था। इसकी माता का नाम सुनंदा था, एवं अन्य दो भाइयों के नाम देवापि एवं ब्राह्मीक थे। इसका मूल नाम 'महाभिपृज्' था। किन्तु शान्त स्वभाववाले प्रतीप राजा का पुत्र होने के कारण इसे 'शांतनु' नाम प्राप्त हुआ (म. आ. १२.१७-१८)। सागवत के अनुसार, इसके केवल हस्तशरीर से ही अर्थात् व्यक्ति को शान्ति, एवं वृद्ध व्यक्ति को वीर्य प्राप्त होता था, इस कारण इसे शांतनु नाम प्राप्त हुआ था (भा. १.२२.२२; म. आ. १०.४८)।

महाभारत की भांडारकर संहिता में इसके नाम का 'शांतनु' पाठ स्वीकृत किया गया है; किन्तु अन्य सभी ग्रंथों में इसे शांतनु ही कहा गया है।

इसका ज्येष्ठ भाई देवापि बाल्यावस्था में ही राव्य छोड़ कर वन में चला गया। इस कारण, कनिष्ठ हो कर भी इसे राव्य प्राप्त हुआ (देवापि देखिये)। यह अत्यंत धर्मशील था, एवं इसने यमुना नदी के तट पर सात बड़े यज्ञ एवं अनुष्ठान किये (म. व. १११. २२-२५)।

गंगा से विवाह—एक बार यह मृगया के हेतु वन में गया, जहाँ इसकी गंगा (नदी) से भेंट हुयी। गंगा के अनुपम रूप से आकृष्ट होकर, इसने उससे अपनी पत्नी बनने की प्रार्थना की। गंगा ने वसुओं के द्वारा उससे को गयी प्रार्थना की कहानी सुना कर, इसे विवाह से परावृत्त करने का प्रयत्न किया, किन्तु इसके पुनः पुनः प्रार्थना करने पर उसने इससे कई शतों निवेदित की, एवं उसी शतों का पालन करने पर इससे विवाह करने की मान्यता दी (गंगा देखिये)।

अग्नी इस शर्त के अनुसार, गंगा ने इससे उत्पन्न सात पुत्र नदी में डुबो दिये। इससे उत्पन्न आठवाँ पुत्र भीष्म वह नदी में डुबोने चली। उस समय अग्नी शर्त भंग कर, इसने उसे इस कार्य से परावृत्त करना चाहा। इसके द्वारा शर्त का भंग होते ही, गंगा नदी अपने पुत्र को लेकर चली गयी।

पश्चात् छत्तीस वर्षों के बाद, इसके द्वारा पुनः पुनः प्रार्थना किये जाने पर गंगा नदी ने इसके पुत्र भीष्म को इसे वापस दे दिया।

सत्यवती से विवाह—एक बार सत्यवती नामक धीवर-कन्या से इसकी भेंट हुई, एवं उससे विवाह करने की इच्छा प्रकट की। उस समय, इसके पुत्र भीष्म को यौवराज्यपद से हटा कर; अपने होनेवाले पुत्र को राज्य प्राप्त होने की शर्त पर सत्यवती ने इससे विवाह करने की संमति दी। अपने प्रिय पुत्र को यह यौवराज्यपद से दूर करना नहीं चाहता था, किंतु भीष्म ने अपूर्व स्वार्थत्याग कर, स्वयं ही राज्याधिकार छोड़ दिया।

परिवार—पश्चात् इसका सत्यवती से विवाह हुआ, जिसमें इसे विचित्रवीर्य एवं चित्रांगद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए। उनमें से चित्रांगद की रणभूमि में अकाल मृत्यु हुई, जिस कारण उसके पश्चात् विचित्रवीर्य राजगद्दी पर बैठ गया। इससे विवाह होने के पूर्व, सत्यवती को व्यास नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था, किंतु यह बचना इसे ज्ञात न थी (दे. भा. २.३)।

अग्ने इन पुत्रों के व्यतिरिक्त इसने शरद्वत् गौतम ऋषि के कृप एवं कृपी नामक संतानों का अपत्यवत् संगमन किया था (शरद्वत् देखिये)।

मृत्यु के पश्चात्, भीष्म के द्वारा दिये गये पिंडादन को स्वीकार करने के लिए यह पृथ्वी पर स्वयं अवतीर्ण हुआ था। उस समय इसने उसे इच्छामरणी होने का वर प्रदान दिया था (म. अनु. ८४.१५)।

शांतपायन—एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास को पुराण शिष्य परंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था। पाठभेद—(वायुपुराण)—‘शांशापायन’।

शांतमय—एक प्राचीन राजा (म. आ. १.१७६) पाठभेद—‘शांतमय’।

शांतस्थ (सो. आयु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार विक्रुद् (धर्मकारथि) राजा का पुत्र था (भा. १.१७.१२)।

शांता—ऋश्यशृंग ऋषि की पत्नी, जो वाल्मीकि रामायण एवं वायु के अनुसार रोमपाद राजा की गोद में ली हुई कन्या थी। रोमपाद राजा को ‘चित्ररथ’ ‘अंगराज’ ‘लोमपाद’ आदि नामांतर भी प्राप्त थे।

मत्स्य एवं महाभारत में भी, इसे दशरथ राजा की कन्या कहा गया है (मत्स्य. ४८.१५)। रोमपाद राजा दशरथ राजा का परम स्नेही था, एवं निपुत्रिक था, जिस कारण दशरथ ने अपनी इस कन्या को रोमपाद राजा को गोद में दे दी (भा. १.२३.७-१०)। हरिवंश में लोमपाद को दशरथ का ही नामांतर बताया गया है, किंतु वह सही प्रतीत नहीं होता है (ह. वं. १.३१.४६)। आगे चल कर रोमपाद राजा ने इसका विवाह ऋश्यशृंग ऋषि से कराया (ऋश्यशृंग एवं रोमपाद १. देखिये)।

२. भारद्वाज ऋषि की माता (वायु. १११.६०)।

शान्ति—दश प्रजापति की कन्या, जो धर्म ऋषि की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम सुव्र (क्षेम) था (भा. ४.१.४९; वायु. १०.२५)।

२. कर्दम प्रजापति की कन्या, जो अथर्वन् ऋषि की पत्नी थी। इसकी माता का नाम देवहूति था। इसने पृथ्वी लोक में यज्ञसंस्था का माहात्म्य संवर्धित किया था। इसके पुत्र का नाम दध्यन् आथर्वण था (भा. ३.२४.२४)।

३. (सो. नील.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार नील राजा का पुत्र, एवं सुशांति राजा का पिता था (भा. १.२१.३०-३१)।

४. एक तुषित देव, जो यज्ञ एवं दक्षिणा का पुत्र था (भा. ४.१.७-८)।

५. एक ऋषि, जो वारुणि आंगिरस ऋषि के आठ पुत्रों में से चतुर्थ पुत्र था। अधिवंश में उत्पन्न होने के कारण, इसे ‘आशेष’ उपाधि प्राप्त थी (म. अनु. ८५.३०)। उपरिचर वसु राजा के यज्ञ में यह सदस्य बना था (म. शां. ३२३.८ पाठ.)।

६. ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर का इंद्र (विष्णु. ३.२.२६)। यह सुधामन् एवं विरुद्ध देवों का इंद्र था (ब्रह्मांड. ४. १.६९)।

७. तामस मनु के पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६. ४१)।

८. स्वरोत्थिष मन्वंतर का एक देव।

९. कृष्ण एवं कालिंदी के पुत्रों में से एक (भा. १०. ६१.१४)।

१०. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो शीघ्र राजा का पुत्र था।

११. एक ऋषि, जो भूति नामक ऋषि का शिष्य था। एक बार अपने कनिष्ठ भाई सुवर्चस् के द्वारा बुलाये जाने पर भूति ऋषि ने अपने आश्रम की व्यवस्था इस पर सौंप दी, एवं वह सुवर्चस् के यज्ञ के लिये चला गया।

अग्नि से वरप्राप्ति—इसके गुरु की अनुपस्थिति में आश्रम में स्थित अग्नि लुप्त हुयी, जिस कारण अत्यंत घबरा कर इसने अग्नि की स्तुति की। पश्चात् इसने अग्नि से अपने आश्रम में पुनः अधिष्ठित होने की, एवं अपने निपुत्रिक गुरु को पुत्र प्रदान करने की प्रार्थना की। पश्चात् अग्नि के आशीर्वाद से भूति ऋषि को 'भौत्य मनु' नामक सुविख्यात पुत्र हुआ।

पश्चात् इसकी गुरुनिष्ठा से संतुष्ट हो कर, भूति ऋषि ने इसे सांग वेदों का ज्ञान कराया (मार्क. १७.५-२७)।

शांतिदेवा अथवा **शांतिदेवी**—देवक राजा की कन्या, जो वसुदेव की पत्नियों में से एक थी (वासु. ९६.१३०)।

शापहस्त—दक्ष सावर्णि मनु के खड्गहस्त नामक पुत्र का नामांतर।

शापेय—एक आचार्य, जो पाणिनीय व्याकरण में शाखाप्रवर्तक आचार्यों में एक था (पाणिनि देखिये)।

शापेयिन्—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का 'वाजसनेय' शिष्य था।

शाम—यम का अनुचर एक कुत्ता, जो सरमा के दो पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.३१२)। स्कंद के अनुसार, यम के शाम एवं शबल नामक दो कुत्ते इसीके ही पुत्र थे (स्कंद २.४.९)।

शांभ—आप नामक वसु के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ५.२२)।

शांभ शार्कराक्ष्य—एक आचार्य, जो मद्रगार शौगयनि नामक आचार्य का शिष्य, एवं 'आनंद चांघनायन' नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)। इसका पैतृक नाम 'शार्कराक्ष्य', शार्कराख्य (का. सं. २२.८८), एवं 'शार्कराक्षि' (आश्र. श्रौ. १२.१०.१०) आदि विभिन्न रूपों में भी प्राप्त है, जो इसे 'शार्कराक्ष' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुए होंगे।

शांबव्य—एक आचार्य, जो 'शांबव्य रत्नसूत्र' का रचयिता माना जाता है (ओल्डेनबर्ग, इंडिगे स्टूडियेन १५.४.१५४)।

शांबु—एक ऋषिसमुदाय, जो आंगिरस कुल में उत्पन्न हुआ था (अ. वे. १९.३१.५)।

शांबेय—प्रोति कौशांबेय कामरुचिन्दि नामक आचार्य का पैतृक नाम।

शारदंडायनि—एक केकय राजा। इसकी पत्नी का नाम श्रुतसेना था, जो कुंती की बहन थी। इस पुत्र ने, जिस कारण श्रुतसेना ने इसकी संमति से एक ब्राह्मण के द्वारा 'पुसवन' नामक यज्ञसंस्कार कर दुर्भ्य आदि तीन पुत्र प्राप्त किये (म. आ. १११.३३-३५)।

शारदा—अंग देश के रौद्रकेतु नामक ब्राह्मण की पत्नी (रौद्रकेतु देखिये)।

२. एक ब्राह्मण स्त्री, जिसकी कथा स्कंद में 'महेश्वर व्रत माहात्म्य' कथन करने के लिए दी गयी है (स्कंद. ३.३.१८-१९)।

शारद्वत—गौतम-आंगिरसान्तर्गत एक गोत्रनाम (अंगिरस् देखिये)।

शारद्वतिक—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शारद्वती—द्रोणाचार्य की पत्नी कृपी का नामांतर, जो उसे शरद्वत गौतम ऋषि की कन्या होने के कारण प्राप्त हुआ था (शरद्वत् देखिये)।

२. एक अप्सरा, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित थी (म. आ. ११४.५३)।

शारायण—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिकार।

शारिमेजय—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो विष्णु के अनुसार श्रकल राजा का पुत्र था। अश्वत्थ में इसे 'सारमेय' कहा गया है।

शार्कराक्षि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शार्कराक्ष्य—एक पैतृक नाम, जो वैदिक साहित्य में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है—
१. शांभ (वं. ब्रा. १); २. जन (श. ब्रा. १०.६.११; छां. उ. ५.११.१; १५.१)।

शार्कराक्ष्य कुस्तुक—एक आचार्य, जो शार्कराक्षि नामक महर्षि का पुत्र था। इसने उरर में ब्रह्मदृष्टि की प्रतिष्ठापना कर, उपासना की थी (वे. ब्रा. २.१.४) संसार का आवरण कारण आकाश ही है ऐसा इसका मत था (छां. उ. ५.१५.१)।

शार्ङ्ग—एक पैतृक नाम, जो ऋषिदेव में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है—
१. जरीतु (ऋ. १०.१४२.१); २. द्रोण (ऋ. १०.१४२.३-४); ३. सारिधन्व (ऋ. १०.१४२.५-६); ४. स्तंबमित्र

(ऋ. १०.१४२.७.८)। महाभारत में मद्रपाल ऋषि की, एवं शङ्गे पत्नी का रूप धारण करनेवाले उसके चार पुत्रों की कथा प्राप्त है, जो संभवतः इसी सूक्त पर आधारित होगी (मद्रपाल देखिये)।

शार्ङ्गारव—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. पाणिनीय व्याकरण का एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

शायस्थि—एक पैतृक नाम, जो वंशब्राह्मण में निम्न-लिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है :— १. बृहस्पतिगुप्त; २. भवत्रात (व. ब्रा. १.)।

शार्दूल—रावण पक्ष का एक राक्षस, जो उसके गुप्त-चरदल का प्रमुख था (वा. रा. यु. २९.२२)।

३. एक शाखाप्रवर्तक आचार्य, जो द्राह्यायण नामक सामवेदपरंपरा के आचार्य का शिष्य था। सुविख्यात लादिर 'गुह्य' एवं 'श्रौत' सूत्र शार्दूलशाखा के ही माने जाते हैं (द्राह्यायण देखिये)।

शार्दूलौ—कश्यप एवं क्रोधा की एक कन्या, जिसने आगे चल कर सिंह, बाघ, एवं चीतों को जन्म दिया (म. आ. ६०.६३)।

शार्यात—शार्यात राजा का नामांतर (शार्यात मानव देखिये)।

२. एक ग्रंथकार एवं वैदिक सूक्तद्रष्टा, जिसका पैतृक नाम मानव था (ऋ. १०.९२; मानव देखिये)।

शाल—एक राजा, जो वृक एवं दुर्वाक्षी के पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४.४३)।

शालकटंकट—अलेजुस राक्षस का नामांतर (म. द्रो. ८४.५७; अलेजुस देखिये)।

शालंकायन—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं मंत्रकार।

२. मुक्षारद नामक आचार्य का पैतृक नाम (आश्व. श्रौ. १२.१०.१०; आप. श्रौ. २४.९.१)।

शालंकायनि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शालंकायनिपुत्र—एक आचार्य, जो वापेगणीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (वृ. उ. ६.४-३१ माध्य.)। 'शलेक' के किसी स्त्रीवंशज का पुत्र होने के कारण, इसे 'शालंकायनि' नाम प्राप्त हुआ होगा।

शालहलेय—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं ऋषिगण।

शालायनि—भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि।

शालावती—विश्वामित्र ऋषि की पत्नियों में से एक।

शालावत्य—एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है :— १. शिल्क (छां. उ. १.८.१); २. गदतस आर्षाकायण (जै. उ. ब्रा. १.३८.४)।

शालि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शालिक—एक ऋषि, जो हस्तिनापुर जाते समय श्रीकृष्ण से मिलने आये थे (म. उ. ३८८*)।

शालिन्—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

शालिर्षिड—एक नाम, जो कश्यप एवं कद्रु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१.१४)।

शालिमंजरीपाक—एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से हिरण्यनाभ आचार्य का शिष्य था (व्यास देखिये)।

शालिय—एक आचार्य, जो शाकल्य का शिष्य था (भा. १२.६.५७)।

शालिशिरस्—एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.४३)। यह अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उगसित था (म. आ. ११४.२५)।

शालिशूक—(मैथिली. भविष्य.) एक राजा, जो मागधत एवं विष्णु के अनुसार संगत राजा का पुत्र, एवं सोमशर्मन राजा का पिता था (भा. १२.१.१४)।

शालिहोत्र—एक आचार्य, जो प्राचीन भारतीय वैद्यकीय परंपरा में आद्य पशुवैद्यक-शास्त्रज्ञ माना जाता है। पंचतंत्र में, अश्वशास्त्रज्ञ शालिहोत्र का, एवं काम-सूत्रकार वात्स्यायन का निर्देश दो प्रमुख आयुर्वेदाचार्यों के नाते किया गया है।

शालिहोत्र-तंत्र—महाभारत के अनुसार, यह अश्वविद्या का आचार्य था, एवं घोड़ों की जाति एवं अश्वशास्त्र-संबंधित अन्य तात्त्विक बातों के संबंध में यह अत्यंत प्रवीण था (म. व. ६९.२७)। इसने सुश्रुत नामक आचार्य को अश्वों का आयुर्वेद सिखाया था (अग्नि. २९२.४४)। 'अश्वायुर्वेद' के संबंध में इसने 'शालिहोत्र-तंत्र' अथवा 'शाल्यहोत्र' नामक एक ग्रंथ की भी रचना की थी, जिस ग्रंथ की दो हस्तलिखित पांडु-लिपियाँ लंदन के इंडिया ऑफिस लायब्ररी में विद्यमान हैं। इसी ग्रंथ का एक अनुवाद अरेबिक भाषा में १३६१ ई. स. में किया गया था।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इसे एक श्रेष्ठ ऋषि कहा गया है, जिसके आश्रम में, व्यास एवं पांडव इसकी भेंट लेने के लिए उपस्थित हुए थे (म. आ. १४३, परि. १.८७-८८)।

इसके आश्रम के समीप एक सरोवर एवं पवित्र वृक्ष था, जिनका निर्माण इसने अपनी तपस्या के द्वारा किया था (म. आ. १४४.१५७९*)। इस सरोवर का केवल जल पी लेने से मृत्युवास दूर हो जाती थी।

तीर्थ—इसके नाम से 'शालिशूर्प' (शालिशूर्प अथवा शालिसूर्य) नाम से एक तीर्थस्थान प्रसिद्ध हुआ था, जहाँ स्नान करने से सहस्र-गोदान का फल प्राप्त होता था (म. व. ८१.९०)।

२. शूलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

३. पौष्यजिपुत्र लंगलिन् नामक सामवेत्ता आचार्य का नामांतर (लंगलिन् देखिये)।

शालीय—एक आचार्य, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार, व्यास की ऋक्षिशिष्यपरंपरा में से क्रमशः 'शाकल्य' एवं 'वेदमित्र' का शिष्य था (विष्णु. ३.४. २२)। शाकल्य एवं वेदमित्र ये दोनों एक ही वेदमित्र (वेदमित्र) शाकल्य के नाम से (शाकल्य देखिये)।

बापु एवं ब्रह्मांड में इसे क्रमशः 'खालीय' एवं 'खलीयस' कहा गया है।

शात्व—(सो. क्रोटु.) एक दानव अथवा दैत्य, जो सौम देश का अधिपति था (ह. वं. २.५२; अग्नि. २७६.२२, म. व. २१.५)। किंतु भागवत के अनुसार 'सौम' इसके विमान का नाम था, जिस कारण इसे 'सौमपति' नाम प्राप्त हुआ था (भा. १०.७६)।

महामारत में इसे मार्तिकावत का राजा कहा गया है, जो नगर अथु पहाड़ी के समीप स्थित था (म. व. १५. १६; २१. १४)। इसे यौगंधरि नामांतर भी प्राप्त था।

यह चेदिराज शिशुपाल राजा का भाई था (म. व. १५.१२)। किंतु भागवत में इसे शिशुपाल राजा का मित्र कहा गया है (भा. १०.७६)। यह प्रारंभ से ही मगधराज जरासंध का पक्षपाती, एवं कृष्ण का विरोधक था। इसी कारण, महाभारत एवं पुराणों में इसे दानव एवं दैत्य कहा गया होगा (शात्व देखिये)।

जरासंध-दैत्य—प्रथम से ही जरासंध कृष्ण से अत्यधिक डरता था। किस प्रकार कृष्ण का वध किया जा सकता है, इसके प्रयत्न वह रातदिन रचाया करता था। एक बार इसने गार्ग्य ऋषि को रुद्रप्रसाद से प्राप्त

हुए काल्यवन के द्वारा कृष्ण का वध कराने का सलाह जरासंध को दी।

पश्चात् जरासंध की ओर से यह स्वयं काल्यवन के पास गया, एवं इसने उससे कृष्ण का वध करने की प्रार्थना की। इस प्रार्थना के अनुसार, काल्यवन ने कृष्ण को काफी वस्तु कर, उसे अपनी मथुरा राजधानी के त्याग करने पर विवश किया। किंतु अंत में कृष्ण ने मुचुकुंद राजा के द्वारा काल्यवन का वध कराया (ह. वं. २.५२-५४; काल्यवन देखिये)।

सौम विमान की प्राप्ति—रुक्मिणीस्वयंवर के समय, यादवों के द्वारा जरासंध एवं शात्व पुनः एक बार परास्त हुए। तत्पश्चात् एक वर्ष के कालावधि में समस्त पृथ्वी को 'निर्यादव' करने की ओर प्रतिज्ञा इसने की, एवं तत्पश्चात् रुद्र की तपस्या प्रारंभ की।

इसकी तपस्या से प्रसन्न हो कर, रुद्र ने इसे मयासुर के द्वारा निर्मित 'सौम' विमान प्रदान किया, जो देवासुरों के लिए अजेय एवं अदृश्य होने की दैवी शक्ति से युक्त था।

प्रद्युम्न से युद्ध—पश्चात् कृष्ण जब पांडवों के राक्षस यज्ञ के लिए हस्तिनापुर गया था, यहीं सुभक्षर समन कर इसने द्वारका नगरी पर आक्रमण किया। उस समय इसने सत्ताइस दिनों तक कृष्ण द्वारा प्रद्युम्न से युद्ध किया, एवं इस युद्ध में विजयी हो कर यह अपने नगर को लौट आया।

कृष्ण से युद्ध—कृष्ण को यह वृत्तना ज्ञात होते ही, उसने इसके वध का निश्चय कर इस पर आक्रमण किया। इसने सौम विमान की सहायता से कृष्ण के साथ अनेक प्रकार के मायावी युद्ध के प्रयोग किये, यहाँ तक की कृष्णपिता वसुदेव के मृत्यु का मायावी दृश्य भी कृष्ण के सम्मुख प्रस्तुत किया (भा. १०.७७)। किंतु अंत में कृष्ण ने अपने सुदर्शन चक्र से इसके 'सौम' विमान का विच्छेद किया, एवं इसका वध किया (म. व. १५-२३; भा. १०.७६-७७)।

भीष्म से युद्ध—वाराणसी के काशिराज की तीन कन्याओं में से अंबा ने इसका वरण किया था। किंतु अंबा के स्वयंवर के समय, भीष्म ने अंबा का एवं अंबिका एवं अंबालिका नामक उसके दो बहनों का भी हरण किया। उस समय इसने भीष्म का पीछा कर उससे युद्ध करना चाहा। किंतु इस युद्ध में भीष्म ने इसे परास्त किया।

पश्चात् भीष्म की अनुज्ञा प्राप्त कर अंश इसके पास आयी, एवं इससे विवाह करने के लिए उसने इसका बार बार अनुनय-विनय किया। किंतु भीष्म ने इसका हरण करने के कारण, उससे विवाह करने से इसने साफ इन्कार कर दिया।

भारतीय युद्ध में—इस युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। इसका हाथी, पर्यंत के समान विशाल बल, पैरान्त के समान शक्तिशाली, एवं महाभद्र नामक सुविख्यात गजकुल में उत्पन्न हुआ था (म.श. १९. २-३)।

इसी हाथी पर आरूढ़ हो कर, इसने पांडवसेना पर आक्रमण किया, एवं उसमें हाहाकार मचा दिया। पश्चात् इसने दृष्टयुग पर आक्रमण किया, एवं उसके रथ को कुचल डाल। पश्चात् धृष्टयुग के द्वारा इसके हाथी का, एवं सशक्ति के द्वारा इसका बध हुआ (म. श. १९. २५)।

२. एक भेकेल राजा, जो वृषपर्वाण के छोटे भाई अजक के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१. १७ पाठ; न. व. १९. १)।

३. पांडवपक्ष का एक योद्धा, जो कौरवपक्षीय भीमरथ राजा के द्वारा मारा गया था। यह भीमरथ धृतराष्ट्र-पुत्र भीमरथ से भिन्न था (म. द्रो. २४. २६)।

४. तीन राजाओं का एक समूह, जो व्युपिताश्व राजा की पत्नी भद्रा ने अपने पति की मृत्यु के पश्चात्, उसके मृतदेह से उत्पन्न किये थे (म. आ. ११२. ३३)।

५. एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. १२९. ७)। ये लोग जरासंध के मय से दक्षिण दिशा में भाग गये थे (म. स. १३. १४-२६)। इन योद्धाओं ने द्रोण पर आक्रमण किया था।

६. एक असुर, जो सिंहिका का पुत्र होने के कारण 'सिंहिकापुत्र' अथवा 'सिंहिकेय' नाम से सुविख्यात था। शिव की आज्ञा से परशुराम ने इसका बध किया (विष्णुवर्म. १. ३७. ३८-३९)।

७. एक दैत्य, जिसने अपने अनाचार के कारण वैदिक धर्म का उच्छेद किया था। इसी कारण श्रीविष्णु ने समलग्राम में विष्णुमशाम् नामक ब्राह्मण के घर अवतार ले कर इसका बध किया (स्कंद. १. २. ४०)। इस कथा का संकेत संभवतः विष्णु के कर्तिक अवतार की ओर प्रतीत होता है (विष्णुयज्ञात् कर्त्तिक देखिये)।

८. शात्वदेश के युतिमत् राजा का नामान्तर (युतिमत् देखिये)।

शात्वल—उपिवाहन नामक शिवायतार का एक शिष्य।

शावस्त—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो युवनाश्व (द्वितीय) राजा का पुत्र था। मत्स्य, विष्णु एवं वायु में इसे 'श्रावस्त' कहा गया है।

शाश्वत—(सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार श्रुत राजा का पुत्र था।

शाप्तेय—पाणिनीय व्याकरण के शास्त्राप्रवर्तक आचार्यों में से एक (पाणिनि देखिये)।

शास् भारद्वाज—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १२२)।

शास्तु—कश्यप एवं सुरभि के पुत्रों में से एक।

शिक्ष—एक देवगंधर्व, जो ऋषभपर्वत पर रहता था।

शिक्ष—एक आचार्य, जिसने अपने अनुशिष्य नाम के मित्र के साथ संपयन में क्रमशः 'नेष्टु' एवं 'पोतु' का काम निमाया था (पं. ब्रा. २५. १५. ३)।

शिवडिन्—(सो. अज.) पांचाल देश के द्रुपद राजा का एक पुत्र, जो पहले 'शिवडिनी' नामक कन्या के रूप में उत्पन्न हुआ था। पश्चात् स्थूणाकर्ण नामक यक्ष की कृपा से यह पुरुष बन गया (म. उ. १९२-१९३)। महाभारत में अन्यत्र यह शिव की कृपा से पुरुष बनने का निर्देश प्राप्त है। इसे 'याज्ञसेनि' नामान्तर भी प्राप्त था।

बाल्यकाल एवं विवाह—इसके मातापिता इसका स्त्रीत्व छिनाना चाहते थे, जिस कारण उन्होंने एक पुत्र जैसा ही इसका पालनपोषण किया। इतना ही नहीं, जवान होने पर दशाण राजा हिरण्यवर्मन् की कन्या से उन्होंने इसका विवाह संपन्न कराया।

इसके पत्नी को इसके स्त्रीत्व का पता चलते ही, उसने अपने पिता के पास यह समाचार पहुँचा दिया। अपना जमाई नौ है, यह ज्ञात होते ही हिरण्यवर्मन् अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं इस प्रकार धोला देवेवाले द्रुपद राजा को जड़मूल से उखाड़ फेंकने के लिए उद्यत हुआ।

इसी दुरवस्था में यह घर से भाग कर वन में चला गया, जहाँ स्थूणाकर्ण यक्ष की कृपा से, पुनः लीला-ने की शर्त पर इसे पुरुषत्व की प्राप्ति हुई। इसी पुरुषत्व के आधार से इतने अपने श्वसुर हिरण्यवर्मन् राजा की चिंता दूर की। पश्चात् स्थूणाकर्ण यक्ष को कुवेर का शाप प्राप्त होने के कारण, शिवडिन् का पुरुषत्व आभरण इसके पास ही रहा (म. उ. १९०-१९३): किंतु फिर भी स्त्रीजन्म का इसका कलेक सारे आयुष्य भर इसका पीछा करता रहा।

भारतीय युद्ध में—भारतीय युद्ध में वह पांडवपक्ष का 'महारथ', एवं एक अशौहिणी सेना का सेनामुख था। यह युद्धनिपुण एवं उच्च श्रेणी का व्यूहरचनातज्ञ था, जो विश्वा इसने द्रोणाचार्य से प्राप्त की थी। पांचाल देश के बारह हजार वीरों में से, छः हजार वीर इसीके ही सैन्य में समाविष्ट थे (म. द्रो. २२.१६०.३; पंक्ति. ७-८)। इसके रथ के अश्व भूरे वर्ण के थे, जो इसे तुंगुरु ने प्रदान किये थे। इसका ध्वज 'अमंगल' वर्ण का था (म. भी. १०८.१९-२०)।

भीष्मवध—भारतीय युद्ध के पहले दस दिनों में, भीष्म ने अपने पराक्रम के कारण पांडवसेना में हाहाकार मचा दिया। उस समय भीष्म ने स्वयं ही शिखंडिन को आगे कर युद्ध करने की सलाह पांडवों को दी (भीष्म देखिये)। यह जन्म से स्त्री था, जिस कारण धर्मयुद्ध के नियमानुसार इससे युद्ध करना भीष्म निषिद्ध मानता था।

भारतीय युद्ध के दसवें दिन, यह भीष्म के सम्मुख लड़ा होते ही, भीष्म ने अपने शस्त्र नीचे रख दिये, जिसे सुअवसर समझ कर अर्जुन ने भीष्म का वध किया (म. भी. ११४.५३-६०)।

वध—भारतीय युद्ध के अठारहवें दिन हुए रात्रियुद्ध में अश्वत्थामन ने इसका वध किया (म. सौ. ८.६०)। इसकी मृत्यु का दिन पौष्य अमावस्या माना जाता है (भारतसावित्री)।

भीष्मवध का पूर्ववृत्त—महाभारत के कुंभकोणम् संस्करण में, शिखंडिन भीष्मवध के लिए कारण किस प्रकार बन गया, इसकी चमत्कारपूर्ण कथा दी गयी है। काशिराज की कन्या अंबा ने भीष्मवध की प्रतिज्ञा की थी, जिस हेतु उसने कार्तिकेय के द्वारा एक दिव्य माला प्राप्त की थी। वह माला प्रदान करते समय, कार्तिकेय ने उसे वर दिया था कि, जो मनुष्य वह माला परिधान करेगा, वह भीष्मवध के कार्य में सफलता प्राप्त करेगा।

पश्चात् अंबा ने वह माला द्रुपद के राजभवन में फेंक दी, जो आगे चल कर शिखंडिन ने परिधान की। इसी दैवी माला के कारण, शिखंडिन भीष्मवध के कार्य में सफल हुआ (म. द्रो. २२.१६०; पंक्ति ७-८)।

२. एक शिवावतार, जो सातवें वाराह कल्पार्गत वैवस्वत मन्वन्तर के अठारहवें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। हिमालय पर्वत में स्थित 'शिखंडिन' नामक शिवर पर यह शिवावतार अवतीर्ण हुआ। इसके निम्नलिखित

चार शिष्य थे:—१. वाचःश्रवम्; २. रुचीक; ३. शावाश्व; ४. यतीश्वर (शिव. शत. ५)।

शिखंडिन याज्ञसेन—एक आचार्य, जो केशिन दाल्भ्य राजा का पुरोहित था (कौ. ब्रा. ७.४)। केशिन दाल्भ्य के द्वारा किये गये यज्ञ में, इसने कई आचार्यों के साथ वादविवाद किया था।

यज्ञसेन का वंशज होने के कारण, इसे 'याज्ञसेन' पौत्रक नाम प्राप्त हुआ होगा।

शिखंडिनी—विजिताश्व राजा की पत्नी, जिससे इसे तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ४.२४.३)।

२. अंतर्धान राजा की पत्नी, जो हविर्धान राजा की माता थी।

३. द्रुपद राजा की कन्या, जो आगे चल कर शिखंडिन नामक पुत्र में रूपांतरित हुई (शिखंडिन देखिये)।

शिखंडिनी अप्सरा काश्यपी—एक वैदिक सूक्त-द्रष्ट्रीद्वय (ऋ. ९.१०४)।

शिखाग्रीचिन्—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिखावन्त—युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१२)।

शिखावर्ण—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिखावर्त—कुवेरसभा में उपस्थित एक यक्ष (म. स. १०.१६)।

शिखि—तामस मन्वन्तर का इंद्र।

शिखिध्वज—एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम सुडाला था।

२. मथूरध्वज राजा का नामोत्तर।

शिखिन—कश्यपकुलोत्पन्न एक नाग (म. उ. १०.३. १२)।

शिथु—एक जातिविशेष, जो दाशराज युद्ध में सुदास राजा के शत्रुपक्ष में शामिल थी। अज एवं यक्षु लोगों के साथ, ये लोग भी सुदास राजा से परास्त हुए थे (ऋ. ७.१८.१९)। छुडविग के अनुसार ये लोग भेद राजा के नेतृत्व में थे (छुडविग, ऋग्वेद अनुवाद ३.१७३)।

संभवतः ये लोग उत्तरकाल में प्रसिद्ध हुए 'सहजन्-वृक्ष' से संबंधित थे। इसी कारण ये लोग अनार्य प्रतीत होते हैं।

शिजय—एक राजा, जो पहले क्षत्रिय था, किंतु आगे चल कर तपोबल से ब्राह्मण एवं ऋषि बन गया (वायु. ९.१.१४)।

शिखर—एक ऋषि, जो अश्विनो के कुपासात्र लोगों में समाविष्ट था। ऋग्वेद में इसका निर्देश काण्व, प्रियमेध, अश्वत्थ एवं अत्रि ऋषियों के साथ प्राप्त है (ऋ. ८.५. १५; १०.४०.७)। गेहडनर के अनुसार, यह अत्रि ऋषि का नामांतर, अथवा उपाधि थी (गेहडनर, ऋग्वेद ऋषियों १७९)।

शित—विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवर्षी पुत्रों में से एक।

शितिपृष्ठ—एक आचार्य, जिसने सर्पसत्र में ' मैत्रा-वर्ण' नामक ऋग्वेद का काम निभाया था (पं. ब्रा. १५.१५.३)।

शितियाहु ऐषकृत नैमिषि—एक यज्ञकर्ता, जिसके ऋके 'अपु' (हविभाग) को एक वेद लेकर भाग गया था (ऋ. ब्रा. १.२६३)।

शित्नि—(सो. पुरुरवसु.) एक राजा, जो विष्णु एवं भगवत के अनुसार गंग राजा का पुत्र, एवं गार्ग्य राजा का पिता था। मत्स्य में इसे ' शिवि ' कहा गया है।

यह पहले अश्वि था, किन्तु आगे चल कर ' गार्ग्य ' नाम से ब्राह्मण, एवं अंगिरसु कुल का मंत्रकार बन गया। इसी कारण ' गार्ग्य ' एवं ' शैल्य ' लोग आगे चल कर ' क्षत्रोत्तंजिन ' नाम से सुविख्यात हुए (भा. ९.२१. १९; विष्णु. ८.१९.२३)।

२. (सो. यदु. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भजमान राजा का पुत्र, एवं स्वयंभोक्त राजा का पिता था (भा. ९. २४.२६)।

३. (सो. यदु. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो मत्स्य के अनुसार शर राजा का पुत्र, एवं देवभीटु राजा का वंशज था (मत्स्य. ४६.३)।

वेदकी स्वयंवर के समय, इसने विरुद्धपक्षीय सारे राजाओं को परास्त कर, देवकी को वसुदेव के लिए जीत लिया था। उस समय सोमदत्त नामक राजा को पटक कर उसे लजप्रहार किया था, किन्तु आगे चल कर उस पर दया कर उसे छोड़ दिया था (म. द्रो. १.१९.९-१४)।

४. (सो. यदु. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भगवत, मत्स्य एवं वायु के अनुसार अनन्वित्र राजा का पुत्र, एवं सयक राजा का पिता था (भा. ९.२४.१३; मत्स्य. ४५.२३)। विष्णु में इसे सुमित्र राजा का पुत्र कहा गया है (विष्णु. ४.१४.१-२)।

५. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो चधु एवं नहुवत्या पुत्रों में से एक था।

प्रा. च. १२२]

शिनिक—एक ऋषि, जिसे मैत्रेय ऋषि से विष्णु पुराण प्राप्त हुआ था (विष्णु. ६.८.५१)। पाठभेद- ' सनिक '।

शिनियु—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो विष्णु के अनुसार उशनस राजा का पुत्र था।

शिपक—(आश्र. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार आश्रवशा का सर्वप्रथम राजा था। इसे ' बलि, ' ' सिंधुक, ' ' शियुक ' आदि नामांतर प्राप्त थे।

शिवि—एक लोकसमूह, जो आधुनिक पंजाब प्रदेश में इरावती, एवं चंद्रभागा (असिक्नी) नदियों के बीच प्रदेश में स्थित था।

वैदिक साहित्य में—ऋग्वेद में इन लोगों का निर्देश ' शिव ' नाम से प्राप्त है, जहाँ अत्तिन, पक्थ, मलयानसु, एवं विपाणित्र लोगों के साथ, इनके सुशस राजा के द्वारा पराजित होने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ७.१८.७)। त्रैधायन के श्रौतसूत्र में, इन लोगों के शिवि औशीनर राजा का निर्देश प्राप्त है (वी. श्रौ. ३.५३.२२)। इन लोगों के अमित्रतपन नामक राजा का निर्देश भी ऐतरेय ब्राह्मण में प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ८.२३.१०)।

पाणिनीय व्याकरण में—पाणिनि के अष्टाध्यायी में, इन लोगों के शिविपुर, (शिवपूर) नामक नगर का निर्देश प्राप्त है, जो उत्तर प्रदेश में स्थित था (महा. २.२८२; २.९३-२.९४)। आधुनिक पंजाब के डंग प्रदेश में स्थित शोरकोट प्रदेश में शिवि लोग रहते थे, ऐसा माना जाता है। सिकंदर के आक्रमण के समय भी ये लोग पंजाब प्रदेश में रहते थे, एवं ' सित्रै ' अथवा ' सीवोइ ' नाम से सुविख्यात थे (अरियन, इंडिका ५.१२; शिव २. देखिये)।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इन लोगों का निर्देश शक, किरात, यवन, एवं वसाति आदि विदेशीय जातियों के साथ प्राप्त है। उशीनर लोगों से ये लोग शुरू से ही संबंधित थे, एवं शिवि औशीनर राजा के वृषभ, सुवीर, केकय, एवं मद्रक इन चारों पुत्रों के कारण, समस्त पंजाब देश में इन्होंने अपना राज्य स्थापित किया था (शिवि औशीनर देखिये)।

शांतनु राजा की माता सुनंदा, एवं युधिष्ठिर का श्वशुर गोवासन इसी प्रदेश के रहनेवाले थे (म. भा. ९०.४६; ९०.९३)। भारतीय युद्ध में, ये लोग सीवीर देश के राजा जयद्रथ के साथ कौरवपक्ष में शामिल थे (म. उ. १९६. ७-८)।

२. एक दैत्य, जो हिरण्यकशिपु का पुत्र था (म. आ. ५.९.११)। किंतु पौराणिक साहित्य में इसे प्रह्लाद का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. ६.९; विष्णु. १.२१.१)। यह द्रुम राजा के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. आ. ६.१.८)।

३. तामस मन्वंतर का इन्द्र (वायु. ६२.४०)।

४. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो चाक्षुष मनु एवं नड्वला के पुत्रों में से एक था (भा. ४.१३.१६)।

५. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो वृष्णि एवं माद्री के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ४५.२)।

६. पुरुरवमवंशीय शिबि राजा का नामांतर (शिबि १. देखिये)।

७. एक आचार्य, जो शुनकर्ण ब्राह्मीह नामक आचार्य का पिता था (शुनकर्ण ब्राह्मीह देखिये)।

८. भूतपूर्व पाँच इंद्रों में से एक, जो शिव की आज्ञा में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. आ. १९.१६*)।

शिबि औशीनर (औशीनरि)—एक सुविख्यात दानधर राजा, जो शिबि लोगों का सबसे अधिक ख्यातनाम राजा था (शिबि १. देखिये)। उशीनर राजा का पुत्र होने के कारण, इसे 'औशीनर' अथवा 'औशीनरि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था। इसकी राजधानी शिवपुर में थी (ब्रह्मांड. ३.७४.२०-२३)।

वैदिक साहित्य में—एक वैदिक मंत्रद्रष्टा के नाते इसका निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १०.१७९.१)। यह इंद्र के कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था, जिसने इसके लिए 'वाशिष्ठिय' के मैदान में यज्ञ किया था, एवं इसे विदेशियों के आक्रमण से बचाया था (त्रै. श्रौ. २१. १८)।

महाभारत एवं पुराण में—इस ग्रंथ में इसे उशीनर राजा एवं माधवी का पुत्र कहा गया है, एवं इसके औदार्य की अनेकानेक कथाएँ वहाँ प्राप्त हैं (म. उ. ११७.२०)। पौराणिक साहित्य में इसकी माता का नाम दृपद्वती दिया गया है (वायु. ९९.२१-२३; ब्रह्मांड. ३.७४.२०-२३; मत्स्य ४८.१८)।

औदार्य—इसके औदार्य की निम्नलिखित कथा सबसे अधिक सुविख्यात है। एक बार इसकी सस्वरीक्षा लेने के लिए अग्नि ने कपोत का, एवं इन्द्र ने बाज (श्येन) पक्षी का रूप धारण किया, एवं श्येन पक्षी कपोत का पीछा करता हुआ इसके संसृष्ट उग्रस्थित हुआ। उस समय कपोत

पक्षी इसकी शरण में आया, एवं उसने इन श्येन को समझाने के लिए कहा।

इसके द्वारा प्रार्थना किये जाने पर श्येन ने इससे कहा, 'अंगर तुम इस कपोत के वजन के बराबर अपना मांस काट कर मुझे दोगे, तो मैं अपने मध्य, इस कपोत को छोड़ दूंगा'। इसने श्येन पक्षी की यह शर्त मान्य कर दी, एवं अपने शरीर का मांस काट कर तराजू में रखना प्रारंभ किया। पश्चात् शरीर के मांसखंड पूरे न पड़ने पर, यह स्वयं ही तराजू के पलड़े में जा कर बैठ गया।

इसका यह आत्मनिरपेक्ष दानुत्सव देख कर, इंद्र एवं अग्नि इससे अत्यधिक प्रसन्न हुए, एवं उन्होंने इस अनेकानेक वर प्रदान किये (म. व. १३०.१९-२०; १३१. परि. १ क्र. २१ पंक्ति ५)।

महाभारत में अन्यत्र उपर्युक्त कथा इसी न हो कर, इसके पुत्र दृपदर्भ की बतलायी गयी है (म. अनु. ६७)।

औदार्य की अन्य एक कथा—महाभारत में अन्यत्र इसके औदार्य की एक अन्य कथा दी गयी है, जो उपर्युक्त कथा का ही अन्य रूप प्रतीत होता है। एक बार इसके पास एक ब्राह्मण अतिथि आया, जिसने इसके बृहद्वर्ण नामक पुत्र का मांस भोजनाथ माँगा। यह उसे पत्राञ्ज सिद्ध कर ही रहा था, कि इतने में उस ब्राह्मण ने इसके अन्तःपुर, शस्त्रागार, एवं हाथी, एवं अश्वशाला आदि को जलाना प्रारंभ किया। यह ज्ञात होते ही, अपने पुत्र का पका हुआ मांस अपने सर पर रख कर यह ब्राह्मण के पीछे दौड़ा। उस समय उस ब्राह्मण ने वह मांस इसे ही भक्षण करने की आज्ञा दी। तदनुसार यह उसे भक्षण करनेवाला ही था, कि इतने में ब्राह्मण ने संसृष्ट हो कर इसका पुत्र पुनः जीवित किया, एवं इसे अनेकानेक वर प्रदान कर वह चला गया (म. शां. २२६. १९; अनु १३७.४)।

पुण्यश्रील राजा—महाभारत में इसे ययाति राजा का पौत्र, एवं ययाति कथा माधवी का पुत्र कहा गया है। अपनी माता की आज्ञा से इसने अपने वसुन्धर, अष्टक, एवं प्रतर्दन नामक तीन भाइयों के साथ एक यज्ञ किया, जिसका सारा पुण्य इन्होंने स्वर्ग से अधर्माति हुए अपने पितामह ययाति को प्रदान किया। इस प्रकार इन्होंने ययाति को पुनः एकवार स्वर्गप्राप्ति करायी (माधवी देखिये)।

ययाति के स्वर्गप्राप्ति के लिए इसने अन्तरिक्ष में स्थित अपना सारा राज्य उसे प्रदान किया, ऐसा एक रूपकक

निर्देश महाभारत में प्राप्त है, जिसका संकेत भी इसी पुण्यदान के आख्यान की ओर प्रतीत होता है (म. आ. ८८. ८) महाभारत में अत्यत्र नारद का, एवं इसका एक संवाद प्राप्त है, जहाँ उसने इसे अपने से भी अधिक पुण्यवान् वर्णन किया है (म. व. परि. १.२१.५)।

यह अत्यंत संपत्तिमान्, उदार, पराक्रमी, राजनीति-प्रवण एवं यज्ञकर्ता राजा था (म. द्रो. परि. १.८.४०९-४३६)। यह कुछ काल तक इंद्र बना था, एवं ब्रह्मा के यज्ञ का 'प्रतिष्ठता' भी यही था।

दान का महत्त्व—इसने सुहोत्र राजा को दान का महत्त्व कथन किया था। उस समय उसने इसे कहा, 'दान यह एक ही संपत्ति ऐसी है कि, जो देने से अधिक बढ़ती है' (म. व. परि. १.२१.२)। इसका यह उपदेश सुन कर, सुहोत्र ने इसे सम्मानपूर्वक विदा किया।

मृत्यु—मृत्यु के पश्चात् यह यमसभा का सदस्य हुआ (म. स. ८.९)। मृत्यु के पश्चात्, उत्तर-गोग्रहणयुद्ध के समय पांडवों के पराक्रम को देखने के लिए अन्य देवों के साथ यह उपस्थित हुआ था (म. वि. ५१.९१७* पंक्ति. ३०)। इसके माहात्म्य की अनेकानेक कथाएँ पद्य में प्राप्त हैं (पद्म. उ. ८२; १९९)।

परिवार—इसके निम्नलिखित चार पुत्र थे:— १. वृषादर्भ, २. सुवीर; ३. मद्र; ४. केकय (भा. ९.२३. ३)। इसके इन पुत्रों ने पंजाब प्रदेश में क्रमशः वृषादर्भ, सौवीर, केकय, एवं मद्र राज्यों की स्थापना की, एवं इस प्रकार वे समस्त पंजाब प्रदेश के स्वामी बन गये।

उपर्युक्त पुत्रों के अतिरिक्त, इसके गोपति, एवं बृहद्गर्भ नामक पुत्रों का निर्देश भी महाभारत में प्राप्त है (म. शां. ४९.७०)।

२. उशीनर देश का एक राजा, जो द्रौपदी-स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. ६०.२१)। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था। अन्त में यह द्रोण के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १३०.१७)।

शिमिदा—एक दानव (अ. वे. ४.२५.४; श. भा. ७.४.१.७)। यह शब्द 'शिमिद्' से व्युत्पन्न है, जिसका शब्दशः अर्थ 'व्याधि' है (ऋ. ७.५०.४)।

शिम्यु—एक राजा, जो दाशराज युद्ध में सुदास राजा के द्वारा नहुष, भरत, वाषिष्ठ, ऋषभ, अंबरीष, सहदेव, भ्रमण आदि राजाओं के साथ परास्त हुआ था (ऋ. ७.१८.५)।

२. एक जातिविशेष, जिसका निर्देश दस्यु लोगों के साथ प्राप्त है (ऋ. १.१००.१८)। त्सीमर के अनुसार, ये लोग अनार्य थे (अल्बिन्डियो लेवेन, ११८-११९)।

शिरिबिठ भारद्वाज—एक वैदिक सुक्तरथ (ऋ. १०.१५५.१)। 'ऋग्वेद अनुक्रमणी' में इसे भरद्वाज का पुत्र कहा गया है। किंतु यास्क इसे व्यक्ति न मान कर 'मेघ' मानते हैं (नि. ६.३०)।

शिरीष—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिरीषक—कश्यपकुलोत्पन्न एक नाम, जो नारद ने इंद्रसारथि मातलि को वर के रूप में प्रदान किया था (म. उ. २०१.१४)।

शिरीषिन्—विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५९)।

शिलक शालावत्य—एक आचार्य, जो वैकितायन दाल्भ्य, एवं प्रवाहण जैवलि नामक आचार्यों का समकालीन था (छं. उ. १.८.१)। 'शलावति' का वंशज होने के कारण, इसे शालावत्य पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

शिल्दनि—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिलवृत्ति—एक ऋषि, जिसने गंगा नदी के माहात्म्य के संबंध में एक सिद्ध से संवाद किया था (म. अनु. २६.१९-१०३)। इसे 'शिलोच्छ्रुति' नामांतर भी प्राप्त था (म. अनु. २६.१९)।

शिलस्थलि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिला—धर्म ऋषि की कन्या, जो मरीचि ऋषि की पत्नी थी। अपने पति के शाप के कारण, यह गयाक्षेत्र में शिला बन कर रहने पर विवश हुई (वायु. १०७)।

शिलाद्—शिवपार्षद नदिन् का पिता (लिंग. १-४२; नदिन् १. देखिये)।

शिलायूप—विश्वामित्र ऋषि एक पुत्र (म. अनु. ४.५४)।

शिलास्थलि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिलीन—जित्वन् शैलिनि ऋषि का पिता (वृ. उ. ४.१.५ माथ्यं.)।

शिल्व काश्यप—एक आचार्य, जो काश्यप निम्बुवि नामक आचार्य का शिष्य, एवं हरित काश्यप नामक आचार्य का गुरु था (वृ. उ. ६.४.३३ माथ्यं.)।

शिव—एक देवता, जो सृष्टिसंहार का आद्य देवता माना जाता है (सुद-शिव देखिये)।

२. एक जातिविशेष, जो दाशराज युद्ध में सुदास राजा के द्वारा अलिन्, पत्रथ, भल्लनस्, विद्यागिन् आदि जातियों के साथ हुआ था (ऋ. ७.१८.७)।

सिकंदर के समय सिंधु एवं असिकनी नदियों के तट पर बसे हुए 'सिन्धे' अथवा 'सिन्धेड' लोग संभवतः यही होंगे (अरियन, इंडिका ५.१२)। पाणिनीय व्याकरण में निर्दिष्ट 'शिवपुर' ग्राम संभवतः इन्हीं लोगों का ही था (पा. सू. ४.२.१०९; शिवि. १. देखिये)।

३. उत्तम मन्वंतर का एक देवगण, जिस में निम्न-लिखित बारह देवता समाविष्ट थे :—१. प्रतर्दन; २. यति; ३. यम; ४. यशस्कर; ५. वसि; ६. वसुदान; ७. विष; ८. सुदान; ९. सुचित्र; १०. सुमंजस; ११. स्वार १२. हंस (ब्रह्मांड. २.३६.३२-३३)।

४. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

५. उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक (मत्स्य. ९.१४)।

६. तामस मन्वंतर का एक योगवधेन।

७. एक ब्राह्मण, जो वितस्त का पुत्र, एवं श्रवस् का पिता था (म. अनु. ८. ६२)।

८. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो इध्मजिह्वा राजा के सात पुत्रों में से एक था। इसका द्वीप इसीके ही नाम से प्रसिद्ध हुआ।

९. एक ब्राह्मणसमूह, जो दक्षिण दिशा में निवास करता था। मनु ने गालव ऋषि को पृथ्वी का दर्शन कराया, जिस समय इन वेदपारंग लोगों का देश भी उसने उसे दिखाया था (म. उ. १०७.१८)।

शिवकर्ण—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद—'शवकर्ण'।

शिवशर्मन्—एक विष्णुभक्त ब्राह्मण, जिसके यज्ञ-शर्मन् एवं सोमशर्मन् नामक पुत्रों के पितृभक्ति के कारण, इसके संपूर्ण कुटुंब का उद्धार हुआ (यज्ञशर्मन् एवं सोमशर्मन् देखिये)।

२. एक ब्राह्मण, जिसे तीर्थयात्रा के पुण्य के कारण नंदिवर्धन राजा के कुल में जन्म प्राप्त हुआ (स्कंद. ४.१. ८-२४)।

शिवशातकर्णी अथवा **शिवश्री**—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार पुलोमन् राजा का पुत्र था (मत्स्य. २७३.१३)। भागवत एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'मेदःशिरस्' एवं 'शिवश्री' कहा गया है।

शिवस्कंध—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार, क्रमशः

'मेदःशिरस्', 'शातकर्ण' एवं 'शिवश्री' राजा का पुत्र था (मत्स्य. २७३.१४)।

शिवस्वाति अथवा **शिवस्वामिन्**—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार चकोर राजा का, विष्णु के अनुसार चकोर शातकर्ण राजा का, एवं वायु के अनुसार शातकर्ण राजा का पुत्र था।

शिवा—अंगिरस् ऋषि की पत्नी, जो आपव वसिष्ठ ऋषि की कन्या थी। पाठभेदः—'वसुधा' 'सुधा' एवं 'सुमा' (म. व. २०८.१)।

२. अनिल नामक वसु की पत्नी, जिससे इसे मनोज्ञ एवं अविज्ञातमति नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. ६०२४)।

३. एक 'शैव्य' राक्षसी, जो कश्यप एवं लक्ष्म की कन्याओं में से एक थी (ब्रह्मांड. ३.७.१३८)।

शिशिर—एक वसु, जो धर एवं मनोहरा के चार पुत्रों में से एक था। इसके अन्य तीन भाइयों के नाम वर्कस, प्राण एवं रमण थे (म. आ. ६०.२)।

२. विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक भेनकार।

३. एक आचार्य, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार व्यास की ऋक्षिष्यपरंपरा में से क्रमशः वेदान्त एवं देवमित्र शाकल्य का शिष्य था। वायु एवं ब्रह्मांड में इसे 'शैशिरेय' कहा गया है।

शिशु—(सो. वसु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सारण राजा का पुत्र था (विष्णु. ४.१५.२१)।

२. सप्तमातृकाओं के पुत्रों का सामूहिक नाम, जो 'वीराशुक' नाम से भी सुविख्यात थे।

शिशु आंगिरस—एक वैदिक सूतद्रष्टा एवं समग्रशा (क. ९.११२; प. ब्रा. १३.३.९४)।

शिशुक—(आंध्र. भविष्य.) आंध्रवंशीय शिशुक राजा का नामांतर। मत्स्य में इसे आंध्र वंश का सर्वप्रथम राजा कहा गया है (मत्स्य. २७३.२)। इसने काण्वराज सुशर्मन् को परास्त किया था।

२. (किलकिला. भविष्य.) दौहित्रपुरिका नगर का एक राजा, जो ब्रह्मांड एवं विष्णु के अनुसार, नन्दिशशु राजा का पुत्र था।

शिशुनान्दिन्—(किलकिला. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत एवं भविष्य के अनुसार भूतनंद राजा का पुत्र था। इसने बीस वर्षों तक राज्य किया।

शिशुनाग—(शिशु. भविष्य.) शिशुनाग वंश का सर्वप्रथम राजा, जिसने मगध देश के प्रद्योतवंशीय नन्दिवर्धन

राजा को परास्त कर, शिशुनाग राजवंश की स्थापना की। यह काशिमिश्र देश का रहनेवाला था, किंतु आगे चल कर, यह मगध देशनिवासी बन गया। इसके पुत्र का नाम काकवर्षण था।

इसके राजवंश में निम्नलिखित दस राजा उत्पन्न हुए, जिन्होंने ३६० वर्षों तक मगध देश पर राज्य किया :—
१. शक्रवर्ण; २. क्षेमधर्म; ३. क्षेमजित्; ४. विन्ध्यसेन; ५. भूमिनिव; ६. अज्ञातशत्रु; ७. वंशक; ८. उदासि; ९. नन्दिवर्षण; १०. महानन्दिन् (मत्स्य. २७२.६-१७; वायु. ११.३१४-३१५)।

शिशुपाल—चेदि देश का मुखियात राजा, जो चेदि राजा भस्मरोप एवं वसुदेवमणिनी श्रुतश्रवा का पुत्र था। इस प्रकार यह कृष्ण का कुकरा भाई, एवं पांडवों का मौसरा भाई था (म. स. ४०.२१; भा. ७.१.१७; ९.२४.४०)। इन्हें 'जैय' एवं 'मुनीय' नामांतर भी प्राप्त थे (म. स. ३३.३५२० पंक्ति. ४; पारि. १.२१.२; ३६.१३)।

यह शुरु से ही अत्यंत दृष्टप्रकृति, एवं कृष्ण का प्रखर विद्वेषक था, जिसका संकेत पुराणों में इसे द्विरण्यकक्षिपु एवं रात्रण का अंशावतार मान कर रकिया गया है (मत्स्य. ४६.६; वायु. ८. १४.११; ब्रह्म. १४.२०; वायु. १६. १५८; ब्रह्मांड. ३.३१.१५९)।

जन्म—इसके स्वरूप के संबंध में एक जन्मकृतिपूर्ण कथा महाभारत में प्राप्त है, जिसके द्वारा कृष्ण से इनका जन्मजात शत्रुत्व प्रस्थापित करने का प्रयत्न किया गया है। जन्म से यह अत्यंत विद्वान् था, एवं इसके तीन नेत्र, एवं चार भुजाएँ थीं। इसकी आवाज भी गर्दम के समान थी। इसके जन्म के समय आकाशवाणी हुई थी, जिस पुरुष के गोद में यह बालक देते ही, इसकी दो भुजाएँ एवं एक नेत्र लुप्त हो कर इनका विरूपत्व नष्ट हो जायेगा, उसीके हाथों शस्त्र के द्वारा इसकी मृत्यु होगी।

इस विचित्र बालक को देखने के लिए, अन्य राजाओं एवं रिश्तेदारों की भौति कृष्ण एवं बलराम भी उपस्थित हुए थे। उस समय, कृष्ण के इस बालक को गोद में लेते ही, इसका विरूपत्व नष्ट हुआ, एवं आकाशवाणी के कथनानुसार कृष्ण इसका शत्रु साबित हुआ (म. स. ४०. १-१७)। कृष्ण की फुकी श्रुतश्रवा ने अपने बालक को बचाने के लिए उससे बार-बार प्रार्थना की। उस समय कृष्ण ने उसे अभिवचन दिया, 'शिशुपाल के सौ अपराधों को मैं क्षमा करूँगा, एवं उसके सौ अपराध पूर्ण होने पर ही मैं उसका वध करूँगा'।

कृष्ण का विद्वेष—यह शुरु से ही मगधराज जरासंध का पक्षपाती था, एवं कृष्ण से द्वेष करता था (ह. वं. २३४.१३)। इसके कृष्ण की तुलना में अधिक सामर्थ्य-शाली राजा होते हुए भी, सभी लोग कृष्ण को ही अधिक मान देते थे, यह इसे बिल्कुल अच्छा नहीं लगता था।

शिशुपाल के अनाचार—इसी विद्वेष के कारण यह अनेकानेक पापकर्म एवं अनाचार करता रहा। कृष्ण जब प्राण्योतिष पुर गया था, उस समय उसकी अनुपस्थिति में इसने द्वारका नगरी जलायी थी। रैवतक पर्वत पर हुए यादवों के उत्सव के समय, इसने हमला कर अनेकानेक यादवों को मारपीट कर उन्हें कैद किया था। कृष्णपिता वसुदेव के अश्वमेध यज्ञ के समय, इसने उसका अश्व-मंघीय अश्व चुरा कर, यज्ञ में विघ्न उपस्थित किया था। वधु राजा की पत्नी का इसने हरण किया था, एवं अपने मामा विशालक की कन्या भद्रा पर बलात्कार किया था। रुक्मिणीस्वयंवर के समय इसने कृष्ण पर आरोप लगाया था की, कृष्ण ने रुक्मिणी को बहका कर उससे जवर्दस्ती शादी की है।

कृष्ण की निंदा—कृष्ण के प्रति इसके विद्वेष का रौद्र उद्रेक युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में हुआ, जहाँ इसने कृष्ण की अग्रपूजा का मान देने के प्रस्ताव को अत्यंत कठोर शब्दों में विरोध किया। इसने कहा, 'कृष्ण एक कायर एवं अप्रशंसनीय व्यक्ति है, एवं उसकी शूरता एवं पराक्रम की जो गाथाएँ आज समाजमें प्रचलित हैं, वे सारी सरासर झूठ एवं अतिशयोक्त हैं। वचन में कृष्ण ने पूतना का वध किया, जो एक चिड़िया मात्र थी। बल्मीक जैसा टोटा गोवर्धन पर्वत उसने उठाया, इसमें बहादुरी क्या? बछड़े, साँप, गधे को मारनेवाले को क्या तुम शूरवीर कहोगे? रुई जैसे झाड़ु उखाड़ डाले, अथवा एक आधा नाग नष्ट ही किया, तो क्या यह वीरता कही जायेगी? रही बात कंसवध की, उसमें भी कोई शौर्य नहीं था? गौओं को चरानेवाले एक शूद्र व्यक्ति की तुम लोग प्रशंसा क्यों करते हो, यह मेरे समझ में नहीं आता' (म. स. ३८)।

इसी सभा में कृष्ण की स्तुति करनेवाले भीष्म से इसने कहा, 'तुम सरासर नपुंसक हो, जो अन्य सम्राटों को छोड़ कर आज मेरी सभा में कृष्ण की स्तुति कर रहे हो'।

शिशुपालवध—शिशुपाल के इन आक्षेपों को सुन कर, भीष्म क्रुद्ध हो कर इसे मारने के लिए दौड़ा, किंतु भीष्म ने उसे रोक दिया (म. स. ३९.९-१४)।

कृष्ण भी इन मिथ्या आरोपों के कारण, इसका वध करना चाहता था, किन्तु अपनी फूँकी को दिये वचन का स्मरण कर, वह शांत रहा। किन्तु राजसूय यज्ञमंडप से बाहर आता ही शिशुपाल पुनः एक बार कृष्ण के संबंध में मलाचुरा कहने लगा। इसने कहा, 'रुक्मिणी मेरी पत्नी है, एवं उसने मेरा ही वरण किया है। किन्तु श्रीकृष्ण ने उसका हरण किया है'।

शिशुपालका यह वचन सुन कर, एवं इसके सौ अपराध पूर्ण हुए हैं, यह जान कर श्रीकृष्ण ने अपने सुदर्शन चक्र से इसका वध किया (म. स. ४२.२१; भा. १०.७४)। मृत्यु के पश्चात् इसके शरीर का तेज कृष्ण की देह में विलीन हो गया।

परिवार—इसके शृष्टकेतु, गुकेतु, एवं शरभ नामक तीन पुत्र, एवं करेणुमती (रेणुमती) नामक एक कन्या थी।

महाभारत में इसका करकर्म नामक अन्य एक पुत्र भी दिया गया है। इसका बहन का नाम काली था, जो भीम का पत्नी थी (म. आश्र. ३२.११)।

शिष्टमार—एक ऋषि, जो पानी में ग्राह का रूप धारण कर रहता था (पं. ब्रा. १४.५.१५)। 'शिष्टमार' का शब्दशः अर्थ 'ग्राह' ही है। इसे 'शिष्टमार' नामांतर भी प्राप्त था।

इसका सही नाम शर्कर था। एक बार सृष्टि के समस्त ऋषियों ने इंद्र की स्तुति की, किंतु यह मौन ही रहा। इंद्र के द्वारा स्तुति करने की आज्ञा होने पर, इसने औदत्य से कहा, 'तुम्हारी स्तुति करने के लिए मेरे पास समय नहीं है। फिर भी एक बार पानी उछालने के कार्य में जितना समय ध्वंतीत होगा, उतने ही समय तुम्हारी स्तुति करूँगा'।

किंतु इंद्र की स्तुति प्रारंभ करने पर इसे पता चला कि, इंद्र की जितनी स्तुति की जाये, उतनी ही कम है। फिर इसने तपश्चर्या कर सामावचा प्राप्त की, एवं इंद्र के स्तुति-वाचक साम की रचना की, जो आगे चल कर इसीके नाम के कारण 'शर्कर साम' नाम से सुविख्यात हुआ (पं. ब्रा. १४.५.१५)।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर का एक प्रजापति, जिसकी अनी नामक कन्या का विवाह ध्रुव से हुआ था (भा. ४.१०. ११)।

३. भगवान् विष्णु का एक अवतार, जो दोष वसु एवं शर्वरी का पुत्र था (भा. ६.६.१४)।

शिशुरोमन्—तथककुलोत्पन्न एक नाम, जो जन्मजय के संपत्त में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.९)।

शिष्ट—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो ध्रुव एवं धन्या का का पुत्र था। अग्नि की कन्या मुन्धलाया इसकी पत्नी थी, जिससे इसे कृम, रिपुञ्जय, वृत्त, एवं वृकनामक चार पुत्र उत्पन्न हुये (मत्स्य. ४.३८)। इसे 'सृष्टि' नामांतर भी प्राप्त था।

शीघ्र—(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो मागधत, विष्णु एवं वायु के अनुसार, अश्विनी राजा का पुत्र, एवं मरु राजा का पिता था (भा. ९.२.५)। भविष्य पुराण में इसे 'शीघ्रगन्तु' कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम अपवर्मन् दिया गया है।

शीघ्रस—एक पक्षिराज, जो संपाति के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६.३५)।

शीघ्रगन्तु—इक्ष्वाकुवंशीय शीघ्र राजा का नामांतर।

शीततोया—वरुण की पत्नियों में से एक।

शीतवृत्त—वसिष्ठकुलोत्पन्न गोविकार ऋषिगण।

शुक—एक महर्षि, जो व्यास पाराशर्य ऋषि का पुत्र था (शुक ब्रैयासकि देखिये)।

२. एक वानर, जो शरभ वानर का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम व्याथ्री था, जिससे इसे कक्ष नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (ब्रह्मंड ३.७.२०८)। पुराणों में इसका विस्तृत वंशक्रम प्राप्त है (वानर देखिये)।

३. रावण का एक अमात्य, जो अपने सारण नामक मित्र के साथ उसके गुप्तचर का काम भी निभाता था।

राम-रावण-युद्ध के समय, राम का सैन्यबल, शस्त्रबल आदि की जानकारी प्राप्त करने के लिए, रावण ने इसे एवं सारण को गुप्तचर के नाते राम के सेनाशिविर में भेजा था। पश्चात् ये दोनों वानर का रूप धारण कर, राम के शिविर में आ पहुँचे।

विभीषण ने इनका सही रूप पहचाना, एवं उन्हें गिरफ्तार कर, इन्हें राम के सम्मुख पेश किया। राम ने इनकी निःशस्त्र अवस्था की ओर ध्यान दे कर इन पर दया की, एवं इन्हें देहदण्ड के बिना ही मुक्त किया।

पश्चात् इसने रावण के पास जा कर राम की सैन्य-सामर्थ्य एवं उदारता की काफ़ी प्रशंसा की, एवं उससे संधि करने की प्रार्थना रावण से की। किंतु रावण ने इसकी एक न सुनी, एवं अन्य गुप्तचर राम की सेना के ओर भेज दिये (वा. रा. यु. २५-२९; म. व. २६७. ५२-५३)।

पूर्वजन्मवृत्त—अपने पूर्वजन्म में यह ब्राह्मण था। किन्तु अगस्त्य ऋषि को नरमांसयुक्त भोजन खिलाने की गलती इससे हुई, जिस कारण इसे राक्षसयोनि प्राप्त हुई। आगे चल कर, राम के पुण्यदर्शन के कारण यह मुक्त हुआ।

८. (सू. नरिष्यंत.) एक राजा, जो नरिष्यंत राजा का पुत्र था (पद्म. सू. ८.१२५)।

९. गांधारराज सुव्रल का पुत्र, जो शकुनि का भाई था। भारतीय युद्ध में अर्जुनपुत्र दुरावत् ने इसका वध किया (म. भा. ८.२४-३१)।

६. एक ऋषि, जो दीर्घतमसु व्यास ऋषि का पुत्र था। कृष्ण के पुण्यस्पर्श के कारण, अपने अगले जन्म में यह उपनन्द नामक गोप की कन्या बन गया (पद्म. पा. ७२)। पुराणों में प्राप्त अष्टाईस व्यासों की नामावलि में इसका नाम अप्राप्य है।

७. एक राजा, जो शर्यातिवंशीय पृषत् राजा का पुत्र था। इसने समस्त पृथ्वी को जीत कर, सौ अश्वमेध यज्ञ किये।

अपने उत्तर आयुष्य में इसने वानप्रस्थाश्रम को स्वीकार किया, एवं शतश्रृंग पर्वत पर पर्णकुटी में रहने लगा। अस्त्रविद्याशास्त्र में यह पांडवों का गुरु था, एवं इसीने ही भीम को गदायुद्ध, युधिष्ठिर को तोमर युद्ध, नकुल-सहदेवों को खड्गयुद्ध, एवं अर्जुन को धनुर्वेद की शिक्षा प्रदान की थी (म. भा. परि. ६७. २८-३७)।

८. एक ऋषि, जो दक्षिण पांचाल के अणुह एवं ब्रह्मदत्त राजा का समकालीन था। यह व्यास पाराशर्य ऋषि के पुत्र शुक वैयासकि से काफी पूर्वकालीन था।

पौराणिक साहित्य में शुक ऋषि की अनेकानेक पत्नियाँ एवं विस्तृत वंशक्रम प्राप्त हैं। पार्श्विक के अनुसार, यह सारा परिवार व्यास ऋषि के पुत्र शुक वैयासकि का न हो कर अणुह एवं ब्रह्मदत्त राजा के समकालीन शुक ऋषि का था। शुक वैयासकि जन्म से ही अत्यंत विरागी एवं ब्रह्मचारी था।

परिवार—इसकी निम्नलिखित दो पत्नियाँ थीं :—
१. पीवती, जो विभ्राज अथवा बर्हिषद पितरों की मानस-कन्या थी। हरिवंश में इसे सुकाल पितरों की कन्या कहा गया है (ह. वं. १.१८.५८), २. गो (एकशृंगा)। हरिवंश में एकशृंगा गो की नहीं, बल्कि पीवरी का नामांतर बताया गया है।

इसके निम्नलिखित पुत्र थे :— १. भूरिश्रवस् (भूरिश्रुत, भूरि); २. शोभु; ३. प्रभु; ४. कृष्ण; ५. गौर (गौर-प्रभ); ६. देवश्रुत (ब्रह्मांड. ३.८.९३; वायु. ७०.८४-दे. भा. १.१४; नारद. १.५८)।

इसकी कन्या का नाम कृत्वी (कीर्तिमती, योगमाता, योगिनी) था, जो अणुह राजा की पत्नी थी (ह. वं. १. २३.६; वायु. ७३.२८-३०)। अणुह राजा से उसे ब्रह्मदत्त नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (मत्स्य. १५)।

शुक वैयासकि—एक महर्षि, जो व्यास पाराशर्य नामक सुविख्यात ऋषि का पुत्र एवं शिष्य था। व्यास ने इसे संपूर्ण वेद तथा महाभारत की शिक्षा प्रदान की थी (म. भा. ५७.७४-७५)। अपने ज्ञान एवं नैष्ठिक ब्रह्मचर्य के कारण, यह प्राचीन काल से प्रातःस्मरणीय विभूति माना जाता है। इसी कारण, पुराणों में इसे 'महातप,' 'महायोगी,' एवं 'योगशास्त्र का प्रणयिता' कहा गया है (वायु ७३.२८)।

जन्म—वृताची अप्सरा (अरणी) को देख कर व्यास महर्षि का वीर्य स्वलित हुआ, जिससे आगे चल कर शुक का जन्म हुआ (म. भा. ५७.७४)। महाभारत में अन्यत्र, व्यास के वीर्य के द्वारा अरणीकाष्ठ से इसका जन्म होने का निर्देश प्राप्त है (म. भा. ३११.९-१०)।

विद्याध्ययन—इसका लौकिक गुरु बृहस्पति था (म. भा. ३११.२३)। अपने पिता के आदेशानुसार, इसने अपने गुरु से मोक्षतत्त्व का उपदेश प्राप्त किया था (म. भा. ३१२)। शिव के द्वारा इसका उपनयनसंस्कार संपन्न हुआ था (म. भा. ३११.१९)। व्यास ने इसे भागवत सिखाया था।

इसके उपनयन के समय इंद्र ने इसे कर्मबल एवं कषायवस्त्र प्रदान किये। बृहस्पति ने इसे वेदादि का ज्ञान दिया था, एवं उपनिषद, वेदसंग्रह, इतिहास, राजनीति एवं मोक्षादि धर्म आदि का ज्ञान स्वयं व्यास ने इसे दिया था। आगे चल कर ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिए, यह बहु-लाश्र जनक राजा के पास गया। वहाँ जनक राजा ने इसे स्त्री-जाल में फँसाने की कोशिश की, किन्तु उसका यह प्रयत्न असफल ही रहा। इसने नारद से भी आत्मकल्याण का उपाय पूछा था (म. भा. ३१८)।

विरक्ति—यह शुरु से ही अत्यंत विरक्त था, एवं उपनयन के पूर्व ही इसने जीवन के समस्त भोगवस्तुओं का त्याग किया था। अपने पिता की आज्ञा से यह नमावस्था में कुरुजांगल एवं मिथिला नगरी गया था। मिथिला नगरी

में जनक राजा ने इसका यथोचित स्वागत किया, एवं इससे ज्ञान-विज्ञानविषयक अनेकानेक प्रश्न पूछे (म. शां. ३१३.३-२१)। मिथिला नगरी से लौट कर यह पुनः एक बार अपने पिता व्यास के पास आया (म. शां. ३१४.२९)।

भागवत का कथन—शुक के जीवन से संबंधित घटनाओं में एक अत्यंत महत्वपूर्ण घटना, व्यास पाराशर्य से इसे हुई भागवतपुराण की प्राप्ति मानी जाती है। भागवत ग्रंथ की प्राप्ति होने के पूर्व ही शुक परमज्ञानी था, किंतु फिर भी यह पुराण इसने अत्यंत भक्तिभावना से सुना, एवं उसे सुनते ही इसका हृदय भक्तिभावना से भर आया (भा. १.७.८)। पश्चात् यह पुराण इसने परिक्षिप्त राजा को सुनाया था। पुराण सुनाते समय, यह तेजस्वी, तरुण एवं आज्ञानवाहु प्रतीत होता था (भा. १. १९.१६-२८)।

भागवत पुराण की रचना अन्य पुराणों से भिन्न है। अन्य पुराणों में जहाँ परमेश्वरप्राप्ति के लिए उपासना, चिंतन एवं तपस्या पर जोर दिया गया है, वहाँ भागवत में भक्ति को प्राधान्य दिया गया है। यही भक्तिप्राधान्यता भागवत का प्रमुख वैशिष्ट्य है। इसी कारण, भागवत को 'अखिलश्रुतिसार' एवं 'सर्ववेदान्तसार' कहा गया है (भा. ३.२.३: १२.१३.१२)। इस ग्रंथ के संबंध में प्रत्यक्ष भागवत में कहा गया है—

राजन्ते तावदन्यानि पुराणानि सतां गणे।

यावन्न दृश्यते साक्षाच्छ्रीमद्भागवतं परम् ॥

(भा. १२.१३.१४)।

भागवत के अनुसार, इस ग्रंथ के कथन से स्वयं व्यास को भी अत्यधिक समाधान प्राप्त हुआ। परमेश्वरप्राप्ति का 'साधनचतुष्टय' इस ग्रंथ से पूर्ण होने के कारण, अपने जीवन का सारा कार्य परिपूर्ण होने की धारणा उसके मन में उत्पन्न हुई।

व्यास-शुकसंवाद—महाभारत में 'शुकानुप्रश्न' नामक एक उपखंडान प्राप्त है, जहाँ शुक के द्वारा अपने पिता व्यास से पूछे गये अनेकानेक प्रश्नों का, एवं व्यास के द्वारा दिष्टे गये संक्षेपसाधनों का वृत्तान्त प्राप्त है। उस उपखंडान में चार्चित प्रमुख विषय निम्नप्रकार है:—१. ज्ञान के साधन एवं उनकी महिमा; २. योग से परमपद की प्राप्ति; ४. कर्म एवं ज्ञान में अंतर; ५. ब्रह्मप्राप्ति के उपाय; ६. ज्ञानोपदेश में ज्ञान का निर्णय; ७. प्रकृति-पुरुष विवेक;

८. ब्रह्मवेत्ता के लक्षण; ९. मन एवं बुद्धि के गुणों का वर्णन (म. शां. २२४-२४७)।

शुक-निर्वाण—इसके महानिर्वाण का चित्तुत वर्षेन महाभारत में प्राप्त है, जो सत्पुरुष को प्राप्त होनेवाले 'योगमति' का अपूर्व शब्दकाव्य माना जाता है। अपने पिता वेदव्यास को अभिवादन कर यह कैलास पर्वत पर ध्यानस्थ बैठ गया। पश्चात् यह वायुरूप बना, एवं उपस्थित लोगों के आँसुओं के सामने आकाशमार्ग से सूर्य (आदित्य) लोक में प्रविष्ट हुआ। इसके पिता व्यास 'हे शुक' कह कर शोक करने लगे, एवं त्राकी तभी लोग अनिमिष नेत्रों से यह अपूर्व दृश्य देखते ही रहे (म. शां ३१९-३२०)।

व्यास से तुलना—शुक सदैव नग्नस्थिति में रहता था। इसके सोलह वर्षों तक नग्नवस्था में रहने का निर्देश प्राप्त है (भा. १.१९.२६)। इसी नग्न अवस्था में यह परिक्षिप्त राजा से मिलने गया था। इमें नग्न अवस्था में सरोवर पर स्नान के लिए जाते समय वहाँ के उपस्थित लोग लज्जित नहीं होते थे, बल्कि व्यास की वैसी अवस्था में देवने पर उन्हें लज्जा का अनुभव होता था। इसका कारण यही था कि, शुक स्त्री पुरुषों के भेदों के अतीत अवस्था में पहुँच गया था, जिस अतीत अवस्था में व्यास नहीं पहुँचा था (म. शां. ३२०. २८-३०; भा. १.४.४)।

शुकनाभ—रावण के पक्ष का एक राक्षस (वा. रा. मुं. ६)।

शुकी—कश्यप एवं ताम्रा की कन्या। इसका विवाह गरुडमत् से हुआ था। सृष्टि के सारे शुक (तोते) इसकी संतान माने जाते हैं। इसके पुत्रों में सुल, सुनेत्र, विशिष्य, सुरूप, सुरस; एवं बल प्रमुख माने जाते थे (ब्रह्मांड. ३.७.४५०)।

शुक्ति आंगिरस—एक सामद्रष्टा आचार्य (प. ब्रा. १२. ५. १६)।

शुक उशनस्—मार्गवकुलोत्पन्न एक ऋषि, जो देवियों का एक सुविख्यात आचार्य था। यह भृगु ऋषि एवं हिरण्यकशिपु की कन्या दिव्या का पुत्र था। पौराणिक साहित्य में इसे कवि का पुत्र भी कहा गया है, जिस कारण इसे 'काव्य' पैतृक नाम प्राप्त था। यह एवं च्यवन भृगुकुल में उत्पन्न ऋषियों में सर्वाधिक प्राचीन ऋषि माने जाते हैं।

देवियों का आचार्य—महाभारत एवं पुराणों में इसे देवियों का गुरु, आचार्य, उपाध्याय, पुरोहित एवं याज्ञक कहा गया है।

यह शुक्र से ही असुरों का पक्षपाती था। वामन अवतार के समय, बलि वामन को त्रिपादभूमि देने के लिए सिद्ध हुआ। उस समय, इस क्रिया में रुकावट पैदा करने के हेतु वह शरीर के मूल में जा धँसा। उस समय बलि ने दर्भास से शरीर का मूल साफ़ करना चाहा, जिस कारण इसकी एक आँख फूट गई। इसी कारण इसे 'एकाक्ष' कहने थे (नारद. १.११)।

संजीवनी विद्या—यह एवं अंगिरसपुत्र जीव, अंगिरस ऋषि के शिष्य थे। किन्तु विद्यादान के समय अंगिरस ऋषि काशी पक्षपात करने लगे, जिस कारण इसने उसका शिष्यत्व छोड़ दिया, एवं यह शिवाराधना करने लगा। पश्चात् शिव ने इसे मृत-संजीवनी विद्या प्राप्त हुई, जिसके आधार पर वैदामूर संग्राम में इसने असुरों को अनेकवार विजय प्राप्त करायी। पश्चात् इसकी यह संजीवनी विद्या बृहस्पतिपुत्र कच ने इससे प्राप्त की (कच एवं देवयानी देविये)। कच से वह विद्या उसके पिता देवगुरु बृहस्पति ने, एवं बृहस्पति ने समस्त देव-पक्षों ने प्राप्त की। इस प्रकार असुरों का अजेयत्व विनष्ट हुआ।

लिंग पुराण में इसे अघोर ऋषि का पुत्र कहा गया है, एवं इसके द्वारा हिरण्याक्ष को 'मिथहविधि' बताये जाने का विवेक भी वही प्राप्त है (लिंग. २.५०)।

बर्हस्पत्य-शास्त्र—इसने १००० अव्यायोंवाले 'बर्हस्पत्य-शास्त्र' का निर्माण किया था, जो आगे चल कर आर्य आचार्यों के द्वारा संश्लिष्ट किया गया (म. शां. ११-१२)।

परिवार—इसकी पितृकन्या गो, एवं इद्रकन्या जयंती नामक दो रत्निया थीं।

(१) जयंती की संतान—जयंती से इसे देवयानी नामक कन्या उत्पन्न हुई थी, जिसका विवाह ययाति राजा से हुआ था (ययाति देविये)।

(२) गो की संतान—गो से इसे निम्नलिखित चार पुत्र उत्पन्न हुए थे—१. स्वष्ट; २. वसुमित्र; ३. शण्ड; ४. मर्क। ये चार ही पुत्र एवं उनके संतान असुरों के पक्षपाती होने के कारण विनष्ट हुए, एवं इस प्रकार मार्गव वंशांतगते शुक्र-शास्त्रा विनष्ट हुई।

शुक्र जांचाल—एक आचार्य (जै. उ. प्रा. ३.७.७)। यह 'जवाला' का वंशज होने के कारण, इसे 'जांचाल' के नाम प्राप्त हुआ था।

शुक्र पांचाल—पांचाल देश का क्षत्रिय, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था। कर्ण ने इसका वध किया था (म. व. ४०.४६-४८)। इसके अन्ध, प्रतुप, कवच एवं ध्वज संकेत थे (म. द्रो. २२.४९)। पाठभेद (मोंडरकर संहिता)—'शुकु'।

शुक्र—(स्वा. उत्तान) एक राजा, जो हविधान एवं हविधानी का पुत्र था (भा. ८.२८.८)।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोपकार।

३. उत्तन मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

४. पांचालदेशीय शुक्र नामक योद्धा का नामांतर (शुक्र पांचाल देविये)।

शुंग—एक राजवंश, जिसका आरंभ संस्थापक पुष्यमित्र था। मौर्यवंश का अंतीम राजा बृहद्रथ का पुष्यमित्र सेनापति था, जिसने बृहद्रथ का वध कर अपने स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की। इस वंश में उत्पन्न निम्नलिखित इस राजाओं ने ११२ वर्षों तक राज्य किया—पुष्यमित्र, वसुदेव, वसुमित्र, अंतक, पुलिक, बलमित्र, समाभाग, देवभूमि (मत्स्य. २७२.२६-३८)।

शुचन्ति—अश्विनी का एक आश्रित (श. १. ११२.७)।

शुचि—(सो. क्रौटु.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार अंधक राजा का पुत्र था। पाठभेद (मत्स्यपुराण)—'शशि'।

२. (स्वा. उत्तान.) एक ऋषि, जो भरद्वाज एवं अंगिरस कुल में उत्पन्न हुआ था। वसिष्ठ ऋषि के शाप के कारण, इसे मनुष्य यौगि में जन्म प्राप्त हुआ, एवं यह विजिताश्व राजा का पुत्र बन गया (भा. ४.२४.४)।

३. (सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार शतशुभ जनक राजा का पुत्र था। पाठभेद (वायुपुराण)—'सुनि' (भा. ९.१३.२२)।

४. विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवाशी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५४)।

५. उत्तम मनु के पुत्रों में से एक।

६. सौम्य मनु के पुत्रों में से एक।

७. भौत्य मन्वन्तर का इंद्र (भा. ८.१३.१४)।

८. विकुंठ देवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६.५७)।

९. सुधामन् देवों में से एक।

१०. (सो. पूरुवरवम्.) एक राजा, जो अनेनम् राजा का पौत्र, एवं शुद्ध राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम त्रिकशुद्र था।

११. (सो, मगध, भविष्य) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार विप्र राजा का, वायु के अनुसार महाबाहु राजा का, ब्रह्मांड के अनुसार रिपुञ्जय राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार विभु राजा का पुत्र था। इसके एक पुत्र का नाम क्षेम (क्षेम्य) था (भा. ९.२२.४७-४८; विष्णु. ४.२३.५-७)

१२. एक यणिकूल का मुख्य, जो वन में दमयन्ती से सहजवश मिला था।

१३. एक आर्गव देव, जो भृगु ऋषि के पुत्रों में से एक था।

१४. भौत्य मन्वंतर के सप्तपियों में से एक।

१५. कश्यप एवं ताम्रा की एक कन्या।

१६. एक अग्नि (म. व. २११.२४)।

१७. एक अप्सरा, जो वेदशिरस् ऋषि की पत्नी थी (वेदशिरस् २. देखिये)।

शुचिका—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं मुनि की कन्या थी। अर्जुन के जन्मोत्सव में यह उपस्थित थी (म. आ. ११४.५१)।

शुचिद्रव—पुरुवंशीय कविरथ राजा का नामांतर।

शुचिविद्य—(सो. पुरुरवस्) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार पुरुरवस् राजा का पुत्र था (मत्स्य. २४.३४)।

शुचिवृक्ष गोपालायन—एक आचार्य, जो वृद्धशुभ्र आभिप्रतारिण नामक राजा का पुरोहित था (ऐ. ब्रा. ३. ४८.९; मै. सं. ३.१०.४)।

शुचिश्रवस्—एक प्रजापति, जो ब्रह्मा के मानसपुत्रों में से एक था (वायु. ६५.५३)।

२. स्वायंभुव मन्वंतर के अजित देवों में से एक।

शुचिभृत्—कर्दम प्रजापति का पुत्र, जो उसे समुद्र से प्राप्त हुआ था। शिव ने इसे समुद्र का आधिपत्य एवं पश्चिम दिशा का अधिराज्य प्रदान किया था (स्कंद. २. ४.१-१२)।

शुचिहिमता—कुबेरसभा की एक अप्सरा (म. स. १०.१०)।

शुद्ध—(सो. आयु.) एक राजा, जो अनेनस् राजा का पुत्र, एवं शुचि राजा का पिता था (भा. ९.१७.११)।

२. भौत्य मन्वंतर के सप्तपियों में से एक।

शुद्धोद—(य. इ., भविष्य.) एक राजा, जो वायु, विष्णु, एवं भागवत के अनुसार शाक्य राजा का पुत्र था। भविष्य एवं मत्स्य में इसे शुद्धोदन कहा गया है।

इसके पुत्र का नाम लांगल (राहुल, अथवा पुष्कल) था (भा. ९.१२.१४; वायु. ९९. २८८)।

शुद्धोदन—गौतम बुद्ध का पिता (अभि. १६) इसे 'शुद्धोद' नामांतर भी प्राप्त था।

शुनःपुच्छ—शुनःशेष ऋषि का भाई (ऐ. ब्रा. ७.१५.७; सां. श्रौ. ५.२०.१)।

शुनःशेष आजीर्गति—एक सुविख्यात ऋषि, जो विश्वामित्र ऋषि का भतीजा एवं आगे चल कर उसका प्रमुख शिष्य था। विश्वामित्र का शिष्य होने के पश्चात्, यह देवरात नाम से प्रसिद्ध हुआ। शुनःशेष शब्द का शब्दशः अर्थ 'कुत्ते की पूँछ' होता है।

भृशुकुल में उत्पन्न ऋचीक अजीर्गते नामक ऋषि का यह मंडल्य पुत्र था, एवं इसके अन्य दो भाइयों के नाम शुनःपुच्छ, एवं शुनोलांगल थे। इसे 'आजीर्गति,' एवं 'सौयवसि' पितृक नाम प्राप्त थे। ऋग्वेद के ईं मुक्तों का प्रणयन इसके द्वारा हुआ है (ऋ. १.१४. ३०; ९.३)

हरिश्चन्द्राख्यान—इसके जीवन से संबंधित विल्ल कथा ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त हैं (ऐ. ब्रा. ७.१३-१८; सां. श्रौ. १५.२०-२१; १६.११.२)। हरिश्चन्द्र राजा को पुत्र न होने के कारण, उसने वरुण के पास मनौती मानी थी कि, अगर उसे पुत्र होगा, तो वह उसे वस्त्र को वलिद्वारुप में प्रदान करेगा। आगे चल कर, हरिश्चन्द्र को रोहित नामक पुत्र उपज हुआ, किन्तु वह मनौती पूरी करने में देर लगाने लगा। अपने पिता के द्वारा कष्ट की गयी यह मनौती की कथा ज्ञात होते ही, रोहित कर्म में भाग गया।

पश्चात् हरिश्चन्द्र को उरुदरोग ने ग्रस्त किया। स्व रोहित ने वरुण को वलि देने के लिए अपने स्थान पर अजीर्गतेपुत्र शुनःशेष को नियुक्त किया, एवं इसके पिता को विपुल द्रव्य दे कर, बलिप्राणी के नाते इसे स्वरीद लिया।

पश्चात् इसे बलिस्तंभ में बाँध भी दिया गया। इतने में विश्वामित्र ऋषि ने इसे देवताओं की प्रार्थना करने के लिए कहा। शुनःशेष के द्वारा की गयी ये प्रार्थनाएँ ऋग्वेद के इसीके द्वारा रचित सूक्त में प्राप्त हैं।

पश्चात् विश्वामित्र ने इसे बलिस्तंभ से मुक्त किया, एवं 'देवरात' नाम से इसे अपना पुत्र एवं प्रमुख शिष्य मान कर, इसे 'जह्लू' एवं 'गायिकुल का उपाधिकारी

बनाया। विश्वामित्र का पुत्र बनने के कारण, इसका भृगु-गोत्र बदल कर, यह विश्वामित्रगोत्रीय बन गया।

ब्रह्मण ग्रंथों में प्राप्त इस कथा का संश्लेष, ऋग्वेद में प्राप्त इसके सूक्तों से दिशाने का सफल प्रयत्न वेदार्थ-दीपिका में किया गया है। ऋग्वेद के अन्य एक सूक्त में भी इसके पाशानुक वन जाने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५. २.७ सायणभाष्य)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट इसकी उपर्युक्त कथा अनेक बार सविस्तृत रूप में दी गयी है (म. अनु. ३: शां. २९४; दे. भा. ७. १४-१७; भा. ९.७; १६; वा. रा. वा. ६१-६२; ह. वं. १.२७; विष्णु. ४.७; ब्रह्म. १०)।

शुनःशेष कथा का अन्वयार्थ—कई अभ्यासकों के अनुसार, वैदिक साहित्य में दर्शित शुनःशेष की कथा एकत्मक है, जहाँ दीपरात्रि के पश्चात् अस्तमान होनेवाले सूर्य की ओर संकेत किया हुआ प्रतीत होता है। इसके द्वारा, विरचित ऋग्वेद के सूक्त में, इसे उपसु के द्वारा वषण के पशुओं से मुक्त किये जाने का निर्देश प्राप्त है, जो इस तर्क को पुष्टि देता है (ऋ. १.२४)।

शुनःस्वयं—इंद्र का एक तापसवेशधारी रूपांतर। बृहस्पति राजा ने एक कृत्या का निर्माण कर, सप्तपितृओं का वध करना चाहा। उस समय शुनःस्वयं रूपधारी इंद्र ने उस कृत्या का वध किया, एवं इस प्रकार सप्तपितृओं का संरक्षण किया (म. अनु. १४२.४२)।

शुनक—(सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार कटु राजा का, एवं विष्णु तथा वायु के अनुसार सुव राजा का पुत्र था (भा. ९.१३.२६)। इसके पुत्र का नाम वीतहव्य था।

२. (नो. कश्यप.) एक राजा, जो भागवत एवं वायु के अनुसार रत्समद राजा का पुत्र, एवं शौनक राजा का पिता था (भा. ९.१७.२)।

महाभारत में इसे एक महर्षि कहा गया है, एवं इसके पिता एवं माता का नाम क्रमशः रुद्र, एवं प्रमदरा कहा गया है (म. आ. ८)। पुराणों में रुद्र राजा का नाम गुरुती से छोड़ दिया गया है, जिस कारण इसे रत्समद राजा का पुत्र कहा गया है।

आगे चल कर यह महर्षि बन गया, एवं इसके वंश के लोग अपने को क्षत्रियब्राह्मण कहने लगे। सुविख्यात शौनक ऋषि इसका ही पुत्र था (म. अनु. ३०.६५)।

शुनक स्वयं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में एक ऋषि के नाते उपस्थित था (म. स. ४.१५)।

३. एक राजा, जो चंद्रहन्तु असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६.१.३५)। इसे अपने पूर्वज हरिणाश्र राजा से एक खड्ग की प्राप्ति हुई थी, जो इसने भागे चल कर उशीनर राजा को प्रदान किया था (म. शां. १६०.७७)। चंद्रतीर्थ नामक तीर्थस्थान में इसे सुवित प्राप्त हुई थी।

४. (प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा, जो प्रद्योत राजवंश का संस्थापक माना जाता है। यह प्रारंभ में रिपुंजय राजा का अमात्य था, जिसका इतने वध कर अपने प्रद्योत नामक पुत्र को राजगद्दी पर विठाया (रिपुंजय ४, देखिये)।

५. एक आचार्य, जो भागवत के अनुसार व्यास की अथर्वन् शिष्यपरंपरा में से पथ्य नामक आचार्य का शिष्य था।

शुनस्कर्मण वाष्किह—एक राजा, जो शिवि अथवा वष्किह राजा का पुत्र था। इसके नाम से 'शुनस्कर्मणस्तोम' नामक एक याग प्रसिद्ध है (पं. ब्रा. १७.१२.६)। इसने सर्वस्वार नामक एक यज्ञ किया था, जिस कारण निरोगी अवस्था में इसे मृत्यु प्राप्त हुई (वा. श्रौ. २१.१७)।

शुनहोव भारद्वाज—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ६. ३३-३४)।

शुनोलांगुल—एक ऋषि, जो अजीमती ऋषि का कनिष्ठपुत्र, एवं शुनःशेष ऋषि का छोटा भाई था (पं. ब्रा. ७.१५; सां. श्रौ. १५.२०.१)।

शुभ—धर्म एवं श्रद्धा के पुत्रों में से एक।

२. रैवत मन्वन्तर का एक देवगण।

३. जालंधर दैत्य का सेनापति (वज्र. उ. ४)।

शुभा—बृहस्पति की दो पत्नियों में से एक।

२. अंगिरस् ऋषि की शिवा नामक पत्नी का नामांतर (म. व. २०८.१)।

शुभांगद—द्वैपदीस्वयंवर में उपस्थित एक क्षत्रिय (म. आ. १७७.२०)।

शुभांगी—कुच राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम विदूरथ था।

शुभानन—एक नाम, जो कश्यप एवं कटु के पुत्रों में से एक था।

२. पितरों में से एक।

शुभ्र—वसुदेव एवं पौरवी के पुत्रों में एक।

२. रैवत मन्वन्तर के अवतार का पिता।

शुंभ—एक असुर, जो तारकासुर का सेनापति था। इसका वाहन मंडुक था। यह दुर्गा के द्वारा मारा गया (मत्स्य. १५.१.५)।

२. रामसेना का एक वानर।

३. जालंधर देव का प्रिय देव। स्वर्ग जीतने के पश्चात् जालंधर ने इसे अमरावती का राज्य प्रदान किया था (पद्म. ३.८)।

शुंभ-निशुंभ—पाताललोक में रहनेवाले राक्षसद्वय। इनके आश्रितों में चंड-मुंड, रक्तवीर्य एवं भूस्र-लोचन आदि प्रमुख थे। ब्रह्मा ने इन्हें वरप्रदान किया था कि, सृष्टि के किसी भी पुरुष के लिए ये अवश्य रहेंगे। इस वर-प्रसाद के कारण ये अत्यंत उन्मत्त बने, एवं अपने गुरु भृगु की सलाह के अनुसार पाताललोक में राज्य करने लगे। इनके राज्य में शुंभ राजा का, एवं निशुंभ अमात्य का काम करने लगे। अन्त में कालिका देवी ने इनका इनके परिवार के सभी राक्षसों के साथ वध किया (दे. भा. ५.२१-३१; स्कंद. १.३.२-१७; मार्क. ८६)।

शुत्व—अंधक ऋषि का पिता।

शुष्क—गोकर्ण क्षेत्र में रहनेवाला एक मुनि। भगीरथ के द्वारा गंगा भूतल में लार्धी जाने पर, समुद्र का पानी बहने लगा, एवं पृथ्वी पर स्थित सारे समुद्रवर्ती तीर्थक्षेत्र बूझने लगे। उस समय अन्य सभी ऋषियों के साथ यह महेंद्र पर्वत पर रहनेवाले परशुराम से मिलने गया। इसने परशुराम से प्रार्थना कि, वह हाथ में शस्त्र धारण कर समुद्र को हटाये, एवं इस प्रकार तीर्थक्षेत्रों का रक्षण करे। इसकी प्रार्थना के अनुसार परशुराम ने गोकर्ण क्षेत्र का पुनरुद्धार किया (ब्रह्मांड. ३.५७-५८)।

शुष्कभृंगार—एक आचार्य (कौ. उ. २.६; सां. श्रौ. १७.७.१३)।

शुष्करेवती—एक देवी, जिसने अंधकासुर का वध किया था (अंधक देखिये)।

शुष्ण—एक असुर, जिसका इंद्र ने कुत्स के संरक्षण के लिए वध किया था (क्र. २. १९६)।

शुष्मायण सोम—अट्टाईस व्याधियों में से एक।

शुष्मिण—शिवियों का राजा अमित्रतपन का पैतृक नाम।

शूद्र—एक जातिसमूह, जो विक्रम के आक्रमण के समय उत्तर भारत में निवास करती थी। युनानी साहित्य में इनका निर्देश 'सोद्राय' नाम से किया गया है, एवं सूषक लोगों के साथ आधुनिक सिंध प्रदेश में इनका निवासस्थान

बताया गया है। पतंजलि के व्याकरण महाभाष्य में इन लोगों का निर्देश आभीर लोगों के साथ प्राप्त है (महा. १.२५२)।

पौराणिक साहित्य में—महाभारत में इनका निर्देश आभीर लोगों के साथ प्राप्त है, एवं इनका निवासस्थान पश्चिम राजपुताना प्रदेश में 'चिनशन-तीर्थ' के समीप बताया गया है (म. श. ३७.१)। मार्कंडेय पुराण में इन्हें अररान्त प्रदेश का निवासी बताया गया है, एवं इनका निर्देश बार्हतीक, वातधान, आभीर, पल्लव लोगों के साथ प्राप्त है।

युधिष्ठिर के राज्ययत्र के समय, नकुल ने अपने पश्चिम दिग्बिजय के समय इन्हें जीता था (म. स. ३२. १०)। भारतीय युद्ध में ये लोग कौरवों के पक्ष में शामिल थे एवं कर्ण के सेनादल में समाविष्ट थे (म. द्रो. ६.६-१६)।

शूद्रा—अग्नि ऋषि की दस पत्नियों में से एक, जो मद्राक्ष एवं वृताची की कन्या थी (ब्रह्मांड. ३.८.७५)।

शून्यपाल—एक ऋषि, जो हस्तिनापुर जानेवाले श्रीकृष्ण से मिला था।

शून्यबन्धु—(स. दिष्ट.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार ऋषिबन्धु राजा का पुत्र था।

शूर—(सो. बटु. सह.) एक राजा, जो विष्णु, मत्स्य एवं वायु के अनुसार हृदय राजा कार्तवीर्यार्जुन के पाँच पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.४१.१३; मत्स्य. ४३. ४६)। परशुराम ने इसका वध किया।

२. (सो. द्रुपु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार द्रुपु राजा का पुत्र था।

३. (सो. बटु. क्रोष्ट.) एक यादव राजा, जो वसुदेव का पिता एवं कृष्ण का पितामह था। भा. व्रत के अनुसार यह देवमीढ राजा का, एवं विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार देवमीढुप राजा का पुत्र था। कई ग्रंथों में इसे चित्ररथ राजा का पुत्र कहा गया है। संभवतः 'चित्ररथ' देवमीढराजा का ही नामान्तर था (म. अनु. १८७.२१-३२)। इसे राजाधिदेव नामान्तर भी प्राप्त था।

परिवार—आर्यक नाम की कन्या भोज या मारिया इसकी पत्नी थी, जिसने इसे निर्नालियावत पुत्र उत्पन्न हुए थे:—१. वसुदेव; २. देवभाग; ३. देवश्रवस्; ४. आनक; ५. मृजय; ६. श्यामक; ७. कंक; ८. शमीक; ९. वसक; १०. वृक।

उत्सुक पुत्रों के अतिरिक्त इसकी निम्नलिखित कन्याएँ भी थीं—१. पृथा, जो इसने अपने मित्र कुंतिभोज राजा की भेट में दी थी, एवं इसी कारण जो कुंती नाम से प्रसिद्ध हुई (म. आ. १०४.१-३; म. द्रो. ११९.६-७) २. श्रुतदेवा (श्रुतवेदा); ३. श्रुतश्रवा; ४. राजाधिदेवा (ह. कं. १.३४.१७-२३; म. आ. परि. १.४३.३; १०४.१; मा. १.२४.२८-३१)।

अन्य पत्नियों—वायु में इसकी आश्रमकी, मापी एवं मापी नामक अन्य तीन पत्नियों का निर्देश प्राप्त है। इनमें से मापी, भोज का ही नामान्तर प्रतीत होता है। अपनी इन पत्नियों से इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए थे—१. आश्रमकीपुत्रः देवमानुष; २. भार्वापुत्रः—वसुदेव, देवभाग, देवश्रवण, अनादृष्टि, कड, नन्दन भुजिन, श्याम, शमीक, गंडुप; ३. मापीपुत्रः—देवमीढुप (वायु. ९६. १४३-१४८)।

८. (सो. सू. क.) एक पूर्ववशीय राजा, जो इतिन् एवं रथतरी के पाँच पुत्रों में से एक था। इसके अन्य चार भाइयों के नाम दुष्यन्त, भीम, प्रवसु एवं वसु थे (म. आ. ८९.१४-१५)।

९. सौवीर देश का एक राजकुमार, जो जयद्रथ राजा का सार्थी था। जयद्रथ के द्वारा किये गये द्रौपदी-हरण के समय अर्जुन ने इसका वध किया (म. व. २५५.२७)।

६. एक प्राचीन नरेश (म. आ. १.१०२)।

७. (सो. यदु. वसु.) वसुदेव एवं मादिरा के पुत्रों में से एक।

८. (सो. यदु. वसु.) कृष्ण एवं भद्रा के पुत्रों में से एक।

९. मगधदेश का एक राजा, जो दशरथ की पत्नी सुमित्रा का पिता था। दशरथ के द्वारा किये गये पुत्र-कान्ति यज्ञ का निमंत्रण इसे भेजा गया गया था (वा. रा. वा. १३.२६)।

शूरतर—एक राजा, जिसने पटञ्चर राक्षस का वध किया था। भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था, एवं इसके रथ के अश्व हरे रंग के थे (म. द्रो. २२. ५३)।

शूरभू अथवा शूरभूमि—कंस की कन्याओं में से एक।

२. उपसेन राजा की कन्या, जो वसुदेवभ्राता श्यामक की पत्नी थी।

शूरवीर माण्डूक्य—एक आचार्य (म. आ. ३.१. ३-४; सां आ. ७.२.८.१-१०)। पाठभेद—'शौरवीर'।

शूरसेन—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुस्वार यजुष्य राजा का पुत्र था। यह मथुरा में राज्य करता था, एवं इसीके ही कारण मथुरन में इसके राज्य को 'शूरसेन देश' नाम प्राप्त हुआ था।

२. कर्णपुत्र वृपसेन का नामान्तर।

३. हैहय राजा शूर का नामान्तर।

४. एक राजा, जो भारतीय युद्ध में कौरव पक्ष में शामिल था। भीष्म के द्वारा निर्माण किये गये कौंचयूह के ग्रीवाभाग में यह दुर्योधन के साथ खड़ा था (म. भी. ७१.१७)।

५. प्रतिष्ठानपुर का एक सोमवंशीय राजा। इसे कोई पुत्र न था, जिसकी प्राप्ति के लिए इसने अनेक-नेक उपाय किये। अंत में इसे पुत्र के रूप में एक सर्प प्राप्त हुआ। अग्रे पुत्र का सर्परूप गुप्त रखने के लिए, इसने उसके उपनयन विवाहदि संस्कार किये। अंत में गौतमी-देवी की कृपा से इसके पुत्र को मनुष्यरूप प्राप्त हुआ (ब्रह्म. १११)।

६. मध्यदेश के सहस्र ग्राम का राजा, जिसकी कथा 'चतुर्थी माहात्म्य' कथन करने के लिए गणेश पुराण में दी गयी है (गणेश. १.५६)।

७. पाण्डवों के पक्ष का एक पांचालदेशीय योद्धा। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ३२.३७)।

शूरसेनी—पूर्ववशीय पर्वीर मनस्यु राजा की पत्नी। इसे श्येनी नामान्तर भी प्राप्त था। पाठभेद—'शौवीरी' (म. आ. ८९.६)।

शूर्पणखा अथवा शूर्पणखी—एक राक्षसी, जो विश्रवसु एवं कैकसी की कन्या, तथा रावण, विभीषण एवं कुम्भकर्ण की बहन थी। खर एवं द्रूपण राक्षस इसके मौसरे भाई थे। महाभारत में इसकी माता का नाम राका बताया गया है, एवं खर एवं द्रूपण इसके सगे भाई बताये गये हैं (म. व. २५९.१४)।

कालकेय राक्षसी का अधिपति त्रिवृञ्जिह्व राक्षस से इसका विवाह हुआ था। आगे चल कर इसका पति रावण के हाथों अशमनगरों में गलती से मारा गया। इस कारण यह लंका नगरी में रहने लगी। कालोपरांत यह अपने मौसरे भाई खर के साथ दण्डकारण्य में रहने लगी। (वा. रा. उ. २३-२४)।

दण्डकारण्य में—वनवास के समय राम के दण्डकारण्य में आने पर यह उस पर मोहित हुई। किन्तु एकपत्नीवती राम ने इसकी प्रणथाराधना की मज़ाक उड़ायी, एवं इसकी

पवित्र करने के हेतु इसे लक्ष्मण से विवाह करने के लिए कहा।

लक्ष्मण ने इसकी और भी मजाक उड़ायी, जिस कारण क्रुद्ध हो कर यह सीता को मारने के लिए दौड़ी। उसी क्षण लक्ष्मण ने इसके नाक एवं कान काट कर इसे विरूप बनाया।

राम एवं लक्ष्मण की शिकायत ले कर यह अपने भाई खर के पास दौड़ी। अपने बहन के अपमान का बदला लेने के लिए, खर ने राम पर आक्रमण किया, जिसमें खर स्वयं मारा गया (वा. रा. अर. १७-१९; खर १. देखिये)।

रावण की राजसभा में—पश्चात्, यह पुनः एक बार लंका में गयी, एवं इसने रामलक्ष्मण के द्वारा दण्डकारण्य में किये गये सारं अत्याचारों की कहानी रावण से बतायी (वा. रा. अर. ३३-३४; म. व. २६१.४५-५१)। उसी समय इसने सीता के सौंदर्य की प्रशंसा रावण को सुनायी, एवं राम से बदला लेने के लिए सीताहरण की मंत्रणा उसे दी।

रावण के द्वारा सीत हरण किये जाने पर, इसने उसे रावण की श्रेष्ठता बता कर उसका वरण करने के लिए बार-बार आग्रह किया था (वा. रा. सुं. २४; ४३)।

शुलिङ्ग—एक शिवावतार, जो वैवस्वत मन्वन्तर के चौबीसवें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। यह अवतार कलियुग में नैमिषारण्य में अवतीर्ण हुआ था। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थे:—१. शालिहोत्र; २. अश्विनेश; ३. सुवनाश्व; ४. शरदसु।

शूष वाणेश्य—एक आचार्य, जिसे आदित्य ने 'सवित्राग्नि' का उपदेश दिया था (तै. ब्रा. ३.१०; ९. १५)।

शूष वाङ्मय भारद्वाज—एक आचार्य, जो अराल शतैय शौनक नामक आचार्य का शिष्य था (वे. ब्रा. २)।

शृगाल—स्त्रीराज्य का अधिपति, जो कलिंगराज चित्रांगद की कन्या के स्वयंवर में उपस्थित था (म. शां. ४.७; पाठ-सृगाल)।

शृगाल वासुदेव—करवीरपुर का एक राजा, जो कृष्ण से अत्यधिक द्वेष करता था। इसकी पत्नी का नाम पद्मावती, एवं पुत्र का नाम शक्रदेव था। परशुराम की आज्ञा से कृष्ण ने इसका वध किया, एवं करवीरपुर की राजगद्दी पर इसके पुत्र शक्रदेव को बिठाया (ह. वे. २. ४४)।

शृंग—एक शिवयापद, जो बंताल एवं कामपेनु का पुत्र था। इसकी शिवभक्ति से प्रसन्न हो कर शिव ने इसे अपना पादद बनाया।

यह सृष्टि के समस्त गो-संतति का पिता माना जाता है, जो इसके वरुण के घर में रहनेवाली सुरभि-कन्याओं से उत्पन्न हुई थी।

२. ऋष्यशृंग ऋषि का नामान्तर।

शृंगवत्—गालव ऋषि का पुत्र, जिसने एक सत्रि के लिए वृद्धकन्या नामक तपस्विनी को अपनी पत्नी बनाया था (म. शा. ५१.१४; वृद्धकन्या देखिये)। वृद्धकन्या के चले जाने पर उसकी स्मृति से यह अश्वेत दुःखी हुआ, एवं देहत्याग कर स्वयंलोक चला गया।

शृंगवृष—कुंडगायिन् ऋषि के कुल में उत्पन्न एक ऋषिक। इसके उदर से इंद्र ने जन्म लिया था (ऋ. ८. १७.१३)। लुडविग के अनुसार, यह पृथाकुमानु नामक ऋषि का पिता था (लुडविग, ऋग्वेद अनुवाद ३. १६१)।

शृंगवेग—कौरवकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनेमन्स के संपत्त में दग्ध हुआ था (म. आ. ५७. ६३)।

शृंगिन—एक ऋषि, जो अंगिरसकुलोत्पन्न शर्मक ऋषि का पुत्र था। इसे गविजात नामान्तर भी प्राप्त था (दे. भा. २.८; मत्स्य. १४५.९५-९९)। यह महान् तपस्वी, एवं अश्वेत कौपी था।

एक बार यह अपने गुरु की सेवा करके घर वापस आ रहा था, जब कृश नामक इसके मित्र ने परिशित् राजा के द्वारा की गयी इसके पिता की विध्वना की दुर्वाहता इससे कह सुनायी। इससे क्रोधित होकर इसने परिशित् राजा को तक्षकदेश से मृत होने का शाप दिया।

घाट में इसके पिता ने इसे काफी समझाया, किन्तु इसने अपना शाप वापस नहीं लिया (म. आ. ३६.२१-२५; ४६.२ परिशित् १. देखिये)।

शृंगीपुत्र—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यस की सामशिष्यपरंपरा में कुशुमि नामक आचार्य का शिष्य था।

शोणित्—अंगिरस कुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

शोरभ एवं शोरभक—अथर्ववेद में निहित एक संपन्न अथवा राक्षसद्वय (अ. वे. २.२४.१)।

शेष—एक आचार्य, जो यजुर्वेदोक्त वेदांगज्योतिष का कर्ता माना जाता है। इसके द्वारा विरचित 'यजुर्वेदीय-वेदांगज्योतिष' में कुल ४३ श्लोक हैं, जिनमें से ३०

श्लोक लगभग के द्वारा विरचित 'कृष्णवेदीय वेदांगज्योतिष' से लिखे गये हैं, एवं १३ इसके अपने थे। इसके ग्रंथ पर सोमक की टीका उपलब्ध है (लगभग देखिये)।

२. एक प्रमुख नाग, जो नागराज अनंत का अवतार माना जाता है। यह भगवान् नारायण का अंशवतार माना जाता है, एवं उसके लिए शय्यारूप हो कर उसे धारण करता है।

भागवत में इसे कश्यप एवं कृत्वा पुत्र कहा गया है, एवं इसका निवासस्थान पाताल-लोक बताया गया है। इसके सहस्र शीर्ष थे, एवं यह गले में शुभ्रवर्णीय रत्नमाला परिधान करता था (भा. १०.३.४९)। यह हाथ में हल एवं कोयती धारण करता था। गंगा ने इसकी उपासना की थी, जिसे इसने ज्योतिषशास्त्र एवं खगोल शास्त्र का ज्ञान प्रदान किया था (विष्णु. २.५.१३-२७)।

अन्य नागों की तरह इसे भी कामरूपधरत्व की विया अवगत थी। इसी कारण इसके अनेकविध अवतार (कला) उत्पन्न हुए थे। इसकी एक कला क्षीरसागर में थी, जिस पर विष्णु शयन करते हैं। बालकृष्ण को बसुदेव जब गोकुल ले जा रहे थे, उस समय अपनी फणा फैला कर इसने उसकी रक्षा की थी।

अपने सर पर यह समस्त पृथ्वी को धारण करता है, जो सिद्धि इसे ब्रह्मा के आशीर्वाद के कारण प्राप्त हुई थी (म. आ. ३२.५-१९)।

शैषसेवाकि—रौपसेवकि नामक कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

शैखावत्य—एक ऋषि, जो शास्त्र एवं आरण्यक आदि ग्रंथों का महान् आचार्य था। भीष्म एवं शात्व के द्वारा अपमानित हुई अंश इसके आश्रम में आ कर रही थी, एवं वहीं उसने भीष्मवच के लिए कठोर तपस्या की थी (म. उ. १७३.११-१८)।

२. एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पाण्डव पक्ष में शामिल था। इसे शैव्य चित्ररथ नामान्तर भी प्राप्त था। इसके रथ के अश्व नीलोत्पल वर्ण के थे, एवं वे सुवर्णलंकार तथा अनेक प्रकार की मालाओं से विभूषित किये गये थे।

शैत्यायन—एक वैयाकरण, जिसके द्वारा विरचित संघिनियमों का निर्देश तैत्तिरीय प्रातिशाख्य में प्राप्त है (तै. प्रा. ५.४०)।

शैनेय—सुविख्यात यादवराजा सात्यकि युवुधान का पैतृक नाम। शिनि राजा का पुत्र होने के कारण, उसे यह पैतृकनाम प्राप्त हुआ था (म. मौ. ४.३२ सात्यकि देखिये)।

शैव्य—अभिमतपन शुष्मिण नामक राजा की उपाधि (ए. ब्रा. ८.२३.१०)। शिनि जाति में उत्पन्न, इस अर्थ से संभवतः यह उपाधि उसे प्राप्त हुई होगी।

२. सत्यकाम नामक आचार्य का पैतृक नाम (म. उ. १.१: ५.१)।

३. एक राजा, जो संजय राजा का पिता था (म. द्रो. परि. १.८.२७४ पाठ)।

४. शिनि देश का एक राजा, जो युधिष्ठिर का श्वशुर था। इसका सही नाम गोवासन था। महाभारत में इसे उशीनर राजा का पौत्र कहा गया है। यह एवं काशिराज युधिष्ठिर के सत्र से बड़े हितचिंतक थे। उग्रव्यव नगरी में संपन्न हुए अभिमन्यु के विवाह के समय, यह अपनी एक अश्वीहिणी सेना के साथ उपस्थित हुआ था।

भारतीय युद्ध में यह पाण्डव-पक्ष के प्रमुख धनुर्धरों में से एक था। इसके रथ के अश्व नीलकमल के समान रंगवाले एवं सुवर्णमय आभूषणों से युक्त थे। शृष्टयुग्म के द्वारा निर्माण किये गये कौंचव्यूह की रक्षा का भार इस पर सौंपा गया था, जो इसने तीस हजार रथियों को साथ ले कर उत्कृष्ट प्रकार से सम्हाला था (म. भी. ४६.३९; ५४)।

५. एक यादव राजा, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था (म. स. ४.५३)। यह अर्जुन का शिष्य था, जिससे इसने धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की थी।

६. एक क्षत्रिय राजा, जिसे कृष्ण ने पराजित किया था (म. व. १३.२७)।

७. एक कौरवपक्षीय राजा, जो भीष्म के द्वारा निर्माण किये गये 'सर्वतोभद्र' नामक व्यूह के प्रवेशद्वार पर खड़ा हुआ था (म. भी. ९५.२७)।

८. शिनि देश के वृषादभि राजा का पैतृक नाम, जो उसे शिनि राजा का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था (म. अनु. ९३.२०-२९; वृषादभि देखिये)।

९. शिनि नरेश सुरथ राजा का नामान्तर (म. व. २५०. ४; सुरथ शैव्य देखिये)।

१०. (सो. पू.) एक पूर्ववंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार शिनि राजा का पुत्र था।

११. सुवीर देश का एक राजा, जो भारतीय-युद्ध में पाण्डवपक्ष में शामिल था (भा. १०.७८)। जरासंध के द्वारा गोमंत पर आक्रमण किये जाने पर, उस नगरी के पश्चिम द्वार की रक्षा का कार्य इस पर सौंपा गया था (भा. १०.५२.११)। इसकी कन्या का नाम रत्ना था, जिसका विवाह अक्रूर से हुआ था (मत्स्य. ४५.२८)।

शैव्या—शाक्यदेश के युमत्सेन राजा की पत्नी, जो सावित्रीपति सत्यवन् (सत्यवान्) राजा की माता थी (म. व. २८.२.२)।

२. पुरुवंशीय प्रतीपराजा की पत्नी सुनंदा का नामान्तर (म. आ. १०.४६)।

३. इक्ष्वाकुवंशीय सगर राजा की पत्नी सुमति का नामान्तर, जो असमंजस राजा की माता थी।

४. कुण्डपत्नी मित्रविदा का नामान्तर (म. मौ. ८.७१)।

५. हरिश्चंद्रपत्नी तारामती का नामान्तर।

६. ज्यामथ राजा की पत्नी चैत्रा का नामान्तर, जो विदर्भ राजा की माता थी।

७. शतधन्वन् नामक विष्णुभक्त राजा की पत्नी (शतधन्वन् ३. देखिये)।

शैरालय—शैलालय नामक वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

शैरीषि—सुवेदस् नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृकनाम।

शैलन—एक आचार्यसमूह (जै. उ. ब्रा. १.२.३; २.४.६)। इस समुदाय में निम्नलिखित आचार्य प्रमुख थे:—१. पाण्ड (जै. उ. ब्रा. २.४.८); २. सुचित (जै. उ. ब्रा. १.१८.४)।

शैलालय—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठ—‘शैरालय;’ ‘शैवलेय’।

२. एक राजा, जो भरद्वाज राजा का पितामह था। कुरुक्षेत्र के तपोवन में तपस्या कर के, यह इंद्रलोक चला गया (म. आश्र. २६.१०)।

शैलालि—एक सांस्कारिक आचार्य, जो ‘शैलालि ब्राह्मण’ नामक ब्राह्मण ग्रंथ का रचयिता माना जाता है। यद्यपि यह ब्राह्मण ग्रंथ आज अप्राप्य है, फिर भी उस ग्रंथ के उद्धरण सूत्रग्रंथों में पाये जाते हैं (आ. श्रौ. ६.४.७; अनुपद. ४.५)। शिलालिन् का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

शतपथ ब्राह्मण में इसका निर्देश प्राप्त है, जहाँ आहुति देने का क्रम किस प्रकार होना चाहिये इस संबंध में इसके मत उद्धृत किये गये हैं (श. ब्रा. १३.५.३.३)। पाणिनि के अष्टाध्यायी में इसे ‘नटसूत्रकार’ कहा गया है एवं इसके सांप्रदाय का निर्देश ‘नटवर्ग’ नाम से किया गया है (पा. सू. ४.३.११०)।

शैलिन् अथवा **शैलिनि**—जिस्वन् नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे शिलिन् का वंशज होने से प्राप्त

हुआ था (वृ. उ. ४.१.५. माथ्यः ४.१.२ काण्व.)। कई अभ्यासकों के अनुसार ‘शैलन’ इसीका ही पाठभेद है (शैलन देखिये)।

शैलूष—एक व्यक्तिनाम, जिसका निर्देश यजुर्वेद में दिये गये वलिप्रणियों की तालिका में प्राप्त है (वा. सं. ३०.६; तै. ब्रा. ३.४.२.१)। शैलूष का शब्दार्थ अर्थ ‘अभिनेता’ अथवा ‘नर्तक’ है। सायण के अनुसार, इस शब्द का अर्थ ‘अपनी पत्नी की वेदयाज्ञुति पर उपजीविका चलायेवाला’ किया गया है।

२. विश्वीष्णपत्नी सरमा का पिता, जो ऋषभ पर्वत पर निवास करता था।

शैलूषि—कुलमलवर्हिण नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (ऋ. १०.१.२६)।

शैवल्य—शैलालेय नामक वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

शैशिर—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शैशिरिन्—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाक्-नेय शिष्य था।

शैशिरायण मार्ग्य—एक ऋषि, जिसे गोपात्री नामक स्त्री से काल्यवन नामक अमुर पुत्र उत्पन्न हुआ था (काल्यवन देखिये)। यह त्रिभारराज का पुरोहित था, जिसने इसके पुरुषत्व की परीक्षा लेने के लिए अपनी पत्नी वृक-देवी के साथ संभोग करने की आज्ञा दी थी (ह. वं. १.३५.१२)।

शैशिरैय—एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा में से देवमेघशाक्य का शिष्य था। यह शाक्यशाखा का प्रमुख आचार्य था, एवं इसीके द्वारा प्रणीत शैशिरैय-संहिता शाक्य शाखा का प्रमाणभूत संहिता मानी जाती है (शाक्यएवंशाक्य देखिये)। शाक्य का शिष्य होने के कारण इसके द्वारा प्रणीत संहिता ‘शाक्य संहिता’ नाम से प्रसिद्ध है।

शौनक के द्वारा विरचित ‘अनुवाकानुक्रमणी’ भी इसीके संहिता को आधार मान कर लिखी जा चुकी है (अनुवाकानुक्रमणी ७; ३०)। व्याडिकृत ‘विकृतिवल्ली’ में भी अष्टविश्वकृतियों के कथन के लिए शैशिरैय-संहिता को आधार माना गया है।

शैशिरोद्बहि—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शोकपाणि—ऋषेयी श्रुतिर्षि।

शोण—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. एक व्यक्ति, जिसकी कथा पद्य में 'सोमवारव्रत' श्रु. माहात्म्य कथन करने के लिए दी गई है।

शौणसात्रसह—एक पांचाल राजा, जो कोक राजा का पिता था। इसके के द्वारा किये अश्वमेध यज्ञ में तुर्वेश लोग भी उपस्थित थे (श. ब्रा. १३.५.४.१६-१८)।

शौणाश्व—(सो. विदु.) एक राजा, जो राजाधिदेव राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४८.३८)।

शौणित—(सो. क्रोष्टु.) एक यादवराजा, जो वायु के अनुसार दूर राजा का पुत्र (ब्रह्मांड. ३.७१.१३८)।

शौणितक्ष—रावणपक्ष का एक राक्षस (वा. रा. मं. ६.२३)।

शौणितोद—कुन्वरसभा का एक यज्ञ (म. स. १०. १७)।

शौभन—मुचुकुंद राजा का दामात, जिसकी कथा 'रमा-एकादशी' का माहात्म्य कथन करने के लिए बतायी गयी है (पद्य. उ. ६०)।

शौभना—त्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५)।

शौक्रतव, शौक्रतु, शौक्रवत—अत्रिकुलोत्पन्न गोत्रकार।

शौंग—एक ऋषि, जो अंगिरसकुलोत्पन्न शुंग ऋषि का पुत्र था। आंग चल कर विश्वामित्रकुलोत्पन्न शैशिर ऋषि ने इसे अपना पुत्र मान लिया। इसी कारण यह द्वितीयशुंग (द्वयामुष्यायण) बन गया।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शौंगायनि—मद्रगर नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे शौंग का वंशज होने से प्राप्त हुआ होगा (वं. ब्रा. १.१)।

शौंगीपुत्र—एक आचार्य, जो सांक्रुतिपुत्र नामक आचार्य का शिष्य, एवं आर्नगागीपुत्र नामक आचार्य का गुरु था (श. ब्रा. १४.९.४.३०)।

शौच—अद्वैत नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. आ. २.१२)।

शौचद्रथ—सुनीथ नामक आचार्य का पैतृक नाम (क. ५.७९.२)। शौचद्रथ का पुत्र होने के कारण, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

शौचय सार्वसेनि—एक आचार्य, जिसने पंचरात्र यज्ञ कर के अनेकानेक पशु प्राप्त किये थे (तै. मं. ७.१. १०२)।

शौचिबुक्ष—एक आचार्य (वा. श्री. ६.९.१४)।

शौचिय प्राचीनयोष्य—एक आचार्य, जो शुचि एवं प्राचीनयोग का वंशज था (श. ब्रा. ११.५.३.१; ८)।

प्रा. च. १२४]

शौण—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शौनक—एक शास्त्राप्रवर्तक आचार्य, जो विष्णु, वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की अथर्वन्शिष्य-परंपरा में से पथ्य नामक आचार्य का शिष्य था (व्यास एवं पाणिनि देखिये)। इसे भृगुकुल का मंत्रज्ञ भी कहा गया है।

२. एक पैतृकनाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:—१. अतिधन्वन् (छां. उ. १. ९.३); २. इद्रोत देवापि (श. ब्रा. १३.५; ३.५.१); ३. स्वैदायन (श. ब्रा. ११.४.१.२); ४. दृति ऐंद्रोत (वं. ब्रा. २);।

३. एक आचार्य, जो रौहिणायन नामक आचार्य का गुरु था (वृ. उ. २.५.२०; ४.५.२६ माध्यं.)।

शौनक कापेय—एक राजा, जो अभिप्रतारिन् काशसेनि राजा का समकालीन था। इसके पुरोहित का नाम शौनक ही था (छां. उ. १.९.३; जै. उ. ब्रा. ३. १.२१)।

शौनक गृत्समद—(सो. काश्य.) एक सविख्यात आचार्य, जो 'ऋग्वेद-अनुक्रमणी', 'आरण्यक', 'ऋक्सप्रतिशाख्य' आदि ग्रंथों का कर्ता माना जाता है। महाभारत में इसे 'योगशास्त्रज्ञ' एवं 'सांख्यशास्त्र-निपुण' कहा गया है।

आश्वलायन नामक सविख्यात आचार्य का गुरु भी यही था, एवं काल्यायन, पतंजलि, व्यास, आदि आचार्य इसके ही परंपरा में उत्पन्न हुए थे। इसका अपना नाम गृत्समद था, एवं शौनक इसका पैतृक नाम था, जो इसे शुनक राजा का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था।

जन्मवृत्त—पद्मगुरुशिष्य के द्वारा विरचित 'काल्यायन सर्वानुक्रमणी' के भाष्य में इसका जन्मवृत्त सविस्तृत रूप में दिया गया है। शुनहोत्र भारद्वाज ऋषि के पुत्र शौनहोत्र गृत्समद के द्वारा एक यज्ञ किया गया, उस समय स्वयं इन्द्र उपस्थित था। इस यज्ञ के समय असुरों के आक्रमण से शौनहोत्र ने इन्द्र का रक्षण किया। इस कारण इन्द्र ने प्रसन्न हो कर, शौनहोत्र को आशीर्वाद दिया 'अगले जन्म में, तुम भृगुकुल में 'शौनक भार्गव' नाम से पुनः जन्म लेंगे'।

पौराणिक साहित्य में—इन ग्रंथों में, इसे गृत्समदपुत्र शुनक का पुत्र कहा गया है, एवं इसे 'क्षत्रोपेत द्विज', 'मंत्रकृत्', 'मध्यमाश्वर्यु', एवं 'कुलपति' कहा गया है (वायु ९३.२४)।

वायु में इसका भृगुवंशीय वंशक्रम निम्नप्रकार दिया गया है :—रुद्र (प्रमदरा)—युनक—शौनक—उप्रश्रवम् । इसी ग्रंथ में अन्वय इसे नहुषवंशीय कहा गया है; एवं इसका वंशक्रम निम्नप्रकार दिया गया है :—वर्मवृद्ध—सुतहोत्र—गृहसमद—युनक—शौनक (वायु. १२.२६) ।

‘ ऋथ्यानुक्रमणी ’ के अनुसार, यह युनहोत्र ऋषि का पुत्र था, एवं युनक के इधे अपना पुत्र मानने के कारण, इसे ‘शौनक’ पँवृक नाम प्राप्त हुआ । यह पहले अंगिरस्-गोत्रीय था, किन्तु बाद में भृगु-गोत्रीय बन गया ।

महाभारत के अनुसार, दशसहस्र विद्यार्थियों के भोजन एवं निवास की व्यवस्था कर, उन्हें विद्यादान करनेवाले गुरुकुलप्रभुष को ‘कुलपति’ उपाधि दी जाती थी (म. आ. १.१; द. वं. १.१.४ नीलकण्ठ) ।

भागवत में इसे चातुर्वर्ण्य का प्रवर्तक, एवं ‘ बह्वृच-प्रवर ’ कहा गया है (भा. १.४.१; १.१७३; विष्णु. ४. ८.१) । वायु में इसमें ही चारों वर्णों की उत्पत्ति होने का निर्देश प्राप्त है (वायु. १२.३-४; ब्रह्म. १.१.३४; द. वं. १.२१.६-७) ।

कर्तृत्व—इसने ऋग्वेद के द्वितीय मंडल की पुनर्रचना की, एवं इस मंडल में से ‘स जनास इद्रः’ नामक चारहवें सूक्त का प्रणयन किया ।

इसने ऋक्संहिता के शाकल एवं शाकल शान्वाओं का एकत्रीकरण कर, उन दोनों के सहयोग से शाकल अथवा शैशिरेय शान्वांतगत ऋक्संहिता का निर्माण किया । शौनक के द्वारा निर्मित नये ऋक्संहिता की सूक्तों की संख्या १०१७ बताया गया है ।

ऋग्वेद की अनुक्रमणी—ऋग्वेद की उपलब्ध अनुक्रमणियों में से शौनक की अनुक्रमणी प्राचीनतम मानी जाती है, जो कात्यायन के द्वारा विरचित ऋग्वेद सर्वा-नुक्रमणी से काफी पूर्वकालीन प्रतीत होती है । शौनक के अनुक्रमणी में ऋग्वेद का विभाजन, मंडल, अनुवाक एवं सूक्तों में किया गया है, जो अष्टक, अध्याय, वर्ग आदि में विभाजन करनेवाले कात्यायन से निश्चित ही प्राचीन प्रतीत होता है ।

गृहपति शौनक—पौराणिक साहित्य में शौनक ऋषि के द्वारा आयोजित किये गये यज्ञों (सत्रों) का निर्देश प्राप्त है, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख थे :—१. नैमिषारण्य द्वादशवर्षीय सत्र (म. आ. १.१.१; ब्रह्म. १.१.१); २. नैमिषारण्य दीर्घसत्र (मत्स्य १.४; अग्नि. १.२);

३. नैमिषारण्य सहस्रवार्षिक सत्र (भा. १.१.४; एश. आदि. १.६) ।

इसके द्वारा आयोजित द्वादशवर्षीय सत्र में रोमहर्षण सूत ने महाभारत का कथन किया था (म. आ. १.१) । इसके द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, नैमिषारण्य के सहस्र-वर्षीय सत्र में रोमहर्षण सूत ने प्रायोगवेदान करनेवाले परिक्षिप् राजा को शुक्र के भागवत पुराण का कथन किया (भा. १.४.१) । यह पुराण परिक्षिप्-शुकसंवादात्मक है, एवं उसमें कृष्ण का जीवनचरित्र अत्यंत प्रासादिक शैली से वर्णन किया गया है ।

प्रमुख ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हैं :—१. ऋषप्रतिशाख्य; २. ऋग्वेद छंदानुक्रमणी; ३. ऋग्वेद ऋथ्यानुक्रमणी; ४. ऋग्वेद अनुवाकानुक्रमणी; ५. ऋग्वेद सूक्तानुक्रमणी; ६. ऋग्वेद कथानुक्रमणी; ७. ऋग्वेद पादविधान; ८. बृहद्देवता; ९. शौनके-स्मृति १०. चरणव्यूह; ११. ऋग्निधान ।

शौनक के उर्युक्त ग्रंथों में इसके द्वारा कृतः की ऋग्वेद की विभिन्न अनुक्रमणियों प्रमुख हैं । पद्मपुराण ने कात्यायन सर्वानुक्रमणी के भाष्य में, शौनक के द्वारा विरचित अनुक्रमणियों का संख्या कुल दस बतायी है, किन्तु उनमें से केवल चार ही अनुक्रमणियाँ आज उपलब्ध हैं ।

अन्य ग्रंथ—उर्युक्त ग्रंथों के अतिरिक्त, इसके नाम पर शौनक-गृह्यसूत्र, शौनक-गृह्यपरिशिष्ट आदि अन्य छोटे छोटे ग्रंथ हैं (C. C.) । मत्स्य के अनुसार इसके एक वास्तुशास्त्रांगी ग्रंथ की भी रचना की थी (मत्स्य. २५.२.३) ।

सायणभाष्य से प्रतीत होता है कि, ऐतरेय आरण्यक का पाँचवाँ आरण्यक इसके ही द्वारा निर्माण किया गया था (ऐ. आ. १.४.१) ।

व्याकरणशास्त्रकार—शौनक के द्वारा विरचित ‘ ऋषप्रति-शाख्य ’ उपलब्ध प्रातिशाख्य ग्रंथों में प्राचीनतम माना जाता है । शौनक के इस ग्रंथ में शाकल शाखांतगत विभिन्न पूर्वान्यायों के अभिमत उद्धृत किये गये हैं । वैदिक ऋचाओं का उच्चरण, एवं विभिन्न गाथाओं में प्रचलित उच्चारणपद्धति की जानकारी भी शौनक के इस ग्रंथ में दी गयी है ।

शौनक के प्रतिशाख्य में व्याकरणकार व्याडि का निर्देश पुनः पुनः आता है, जिनमें प्रतीत होता है कि, व्याडि इसीका ही शिष्य था (क. मा. २०९; २१४)

व्याडि ने अपने 'विकृतबद्धी' नामक ग्रंथ के प्रारंभ में शौनक को गुरु कह कर इसका वेदन किया है (व्याडि देखिये)। 'शुक्रयजुर्वेद प्रातिशाख्य' में संधिनियमों के संबंध में मतानंद व्यक्त करते समय, इसके मतों का उद्धरण प्राप्त है (शु. प्रा. ४. १२०)। शब्दों के अंत में कौन से वर्ण आते हैं, इस संबंध में इसके उद्धरण 'अथर्ववेद प्रातिशाख्य' में प्राप्त हैं (अ. प्रा. १.८)।

शिक्षाकार शौनक—'शौनकीय शिक्षा' में दिये गये एक सूत्र का उद्धरण पाणिनि के अष्टाध्यायी में प्राप्त है (पा. सु. ८.३.१०३)। इसी शौनकीय शिक्षा में ऋग्वेद के शाखाप्रवर्तक शौनक को 'कल्पशर' कहा गया है, जिससे प्रतीत होता है कि, 'शाखा' का नामांतर 'शर' था। गंगाधर मधुचाथर्विरचित 'विकृति कौमुदी' नामक ग्रंथ में इन दोनों की समानता स्पष्ट रूप से वर्णित है (शकशाः शौनकाः सर्वे कदम्बशाखां प्रचक्षते)।

तत्त्वज्ञानी शौनक—जनमेजय पारिक्षित राजा के पुत्र शतानीक को अपने तत्त्वज्ञान की शिक्षा प्रदान की थी (विष्णु. ४.२१.२)। महाभारत में इसका निर्देश अश्वत्थ, देवदत्त, मार्कण्डेय, गालङ्ग, भरद्वाज, वसिष्ठ, उद्दालक, व्यास आदि ऋषियों के साथ अत्यंत गौरवपूर्ण शब्दों में किया गया है (म. व. ८३. १०२-१०४)। द्वैतधर्म में जिन ऋषियों ने धर्म का स्वागत किया था, उनमें यह प्रमुख था (म. व. २८. २३)।

शिष्यपरंपरा—शौनक का प्रमुख शिष्य आश्वलायन था। अपने गुरु को प्रसन्न करने के लिए आश्वलायन ने गृह्य एवं श्रौतसूत्रों की रचना की। आश्वलायन का यह ग्रंथ देव्य कर शौनक इतना अधिक प्रसन्न हुआ कि, इसने अपने श्रौतशास्त्रविराट् ग्रंथ विनष्ट किया (विपाटितम्)। ऋग्वेद से संबंधित शौनक के दस ग्रंथों का अध्ययन करने के बाद, आश्वलायन ने अपने गृह्य एवं श्रौतसूत्रों की, एवं ऐतरेय आरण्यक के चतुर्थ आरण्यक की रचना की।

शौनक के दस एवं आश्वलायन के तीन ग्रंथ आश्वलायन के शिष्य काल्यायन को प्राप्त हुए। काल्यायन ने स्वयं यजुर्वेदकल्पसूत्र, सामवेद उग्रग्रंथ आदि की रचना की, जिन्हें उसने अपने शिष्य पतंजलि (योगशास्त्रकार) को प्रदान किये।

इस प्रकार शौनक की शिष्यपरंपरा निम्नप्रकार प्रतीत होती है:—शौनक—आश्वलायन—काल्यायन—पतंजलि—व्यास।

शौनक स्वेदायन—एक यज्ञशास्त्रनिपुण आचार्य (श. ब्रा. ११.४.१.२-३; गो. ब्रा. १.३.६)।

शौनकायन जीवन्ति—भृगुकुलोत्पन्न एक गोविकार।

शौनाकिन्—एक आचार्य, जिसके यज्ञकुण्डके परिमाण के संबंधित मतों का उल्लेख कौपीतकि ब्राह्मण में प्राप्त है (कौ. ब्रा. ८५.८)।

शौनकीपुत्र—एक आचार्य, जो काश्यपी बालाक्या माटरीपुत्रनामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम पैगीपुत्र था (श. ब्रा. १४.९.४.३१-३२)।

शौनहोत्र—यसमद आंगिरस ऋषि का पैतृक नाम (यसमद १. देखिये)।

शौरियु—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में कुशुभि नामक आचार्य का शिष्य था।

शौरि—कृष्णपिता वसुदेव का नामांतर (म. द्रो. ११९.७)।

शौलकायनि अथवा **शौक्यायनि**—एक आचार्य, जो व्यास की अथर्वनशिष्यपरंपरा में देवदर्श नामक आचार्य का शिष्य था।

शौलवायन अथवा **शौलव्यायन**—उदक नामक आचार्य का पैतृक नाम (वृ. उ. ६.१.३)।

श्याकार—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोविकार।

श्यापर्ण—एक पुरोहितसमुदाय, जो विश्वतर राजा का पुरोहित था। एक बार विश्वतर ने सोमयज्ञ किया, जहाँ उसने इन्हें डाल कर अन्य पुरोहितों को बुझाना चाहा। उस समय इनमें से राम मार्गवेय नामक एक पुरोहित ने सोम के संबंध में एक नयी उपर्याप्त कथन कर, अपना पुरोहितपद पुनः प्राप्त किया (ऐ. ब्रा. ७.२७, राम मार्गवेय देखिये)।

श्यापर्ण सायकायन—एक यज्ञवेत्ता आचार्य, जिसके द्वारा यज्ञवेदी पर पाँच पशुओं का बध करने का निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. १०.४.१.१०; ६.२.१.३९)।

श्याम—(सो. क्रो. पु.) एक याज्ञ्य राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार शूर राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४६.३)।

भागवत में इसे 'श्यामक' कहा गया है। इसकी पत्नी का नाम शूरभू अथवा शूरभूमि था, जिससे इसे हिरण्यश्र एवं हरिकेश नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ९.३४. २१)।

२. एक श्वान, जो सरमा के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.११२)। यज्ञ में इसे बलि अर्पण किया जाता है।

श्यामपराशर—पराशर कुलोत्पन्न एक ऋषि समुदाय। इस समुदाय में निम्नलिखित ऋषि समाविष्ट थे:—पाठिक, वादरिस्तंभ, श्रोत्रनाथन, क्षेमि।

श्यामवाला—सौराष्ट्र में रहनेवाले भद्रश्रवण नामक वैश्य की कन्या। लक्ष्मीव्रत का माहात्म्य कथन करने के लिए इसकी कथा पद्म में दी गयी है (पद्म. ब्र. ११)।

श्यामवय—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्यामजुजयन्त लौहित्य—एक आचार्य, जो कृष्ण-धृति सत्यकि नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम कृष्णदत्त लौहित्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

२. एक आचार्य, जो जयंत पारशर्य नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम पल्लिगुप्त लौहित्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

श्यामा—मेरु की कन्या, जो हिरण्य ऋषि की पत्नी थी (भा. ५.२.२३)।

श्यामायन—विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५५)।

२. अंगिरसकुल का एक गोत्रकार।

श्यामायनि—एक आचार्य, जो व्यास की कृष्णयजुः-शिष्यपरंपरा में से वैशंपायन ऋषि का 'उद्विष्य' शिष्य था (वैशंपायन १. एवं व्यास देखिये)।

२. अंगिरसकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्यामावत्—अत्रिकुलोत्पन्न एक मंत्रकार, जो इत्त आत्रेय के वंश में उत्पन्न हुआ था (वासु. ५९.१०४)। इसे निम्नलिखित नामान्तर भी प्राप्त थे:—शावास्य अथवा शावाश्र (मत्स्य. १४५.१०७-१०८); शावाश्र (ब्रह्मांड. २.३२.११३-११४)।

श्यामोद्गर—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्याव—एक राजा, जो वसिष्ठ की पुत्र था (क. १०.६५.१२)। किन्तु सायण इसे स्वतंत्र व्यक्ति न मान कर, हिरण्यहस्त राजा की उपाधि मानते हैं।

यह अश्विनो की कुशमाच्य व्यक्तियों में से एक था, जिन्होंने इसे कश्मी नामक स्त्री प्रशन की थी (क. १. ११७.८)।

२. मुवास्तु नदी के तट पर रहनेवाला एक उदार दाता (क. ८.१९.३७)। ऋग्वेद में अन्यत्र श्यावक नामक एक राजा का निर्देश आता है, जो संभवतः यही होगा (क. ५.६१.९)।

श्यालायनि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्यावक—एक यक्षकता आचार्य, जो इंद्र का मित्र था (क. ८.३.१२; ४.२)। ऋग्वेद में अन्वय मुवास्तु नदी के तट पर रहनेवाले श्याव नामक एक राजा का निर्देश प्राप्त है, जो संभवतः यही होगा (श्याव २. देखिये)।

श्यावथान—देवतरण नामक आचार्य का पैतृक नाम (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

श्यावाश्र आत्रेय—अत्रिकुलोत्पन्न एक ऋषि, जिसे ऋग्वेद के कई सूक्तों के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (क. ५.५२-६१; ८.१-८२; ८.३५-३८; ९.३२)।

इसे श्यामावत् नामान्तर भी प्राप्त था (मत्स्य. १४५. १०७-१०८; श्यामावत् देखिये)। इसके पिता का नाम अर्चनानस आत्रेय था (पं. ब्रा. ८.५.९)। ऋग्वेद में अनेक स्थानों पर इसका निर्देश प्राप्त है (क. ५.५२-६१; ८.३५-३८; ८.१-८२; ९.३२)। अर्थात् श्रेय ऋषि की कन्या इसकी पत्नी थी (रथवीर्य श्रेय देखिये)।

श्यावाश्रिव—तरन्त एवं पुरगीहल राजाओं के वंशज नामक पुरोहित का पैतृक नाम (तरन्त देखिये)।

श्यावास्य—श्यामावत् नामक अत्रिकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

श्येन—इंद्रगमा में उपस्थित एक ऋषि।

२. पश्चिम की एक जालि, जो ताजरा की कन्या यमों की संतान मानी जाती है (म. भा. ६.०.५४-५५)।

श्येन आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (क. १०. १८८)।

श्येनगामिन्—सर राजसूय के करण अमात्या में से एक (वा. रा. अर. २३.३१)।

श्येनचित्र—एक राजा, चित्रने जीवम में क्रमा में भक्षण नहीं किया था। शारद एवं कौमुद माह में मि राजाओं ने मांस भक्षण वर्ज्य किया था, किन्तु श्येनचित्र राजाओं की एक नामावलि महाभारत में प्राप्त है, जहाँ इसका निर्देश किया गया है (म. अनु. १.१५.२२)।

श्येनजित्—(सु. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो दल राजा का पुत्र था। इसके चाचा दल ने वामदेव ऋषि के अश्व श्रेष्ठ समय के लिए मांग किया, एवं यक्षान् उन्हें वापस देने से इनकार कर दिया। इतना ही नहीं, ऋषि वामदेव का वध करने के लिए एक विपयुक्त बाण का उपयोग करना चाहा।

तदुपरांत वामदेव ने इसी बाण से दश वर्ष के इयेन-जित् राजकुमार का वध किया। पश्चात् इसके पिता दल का शरीर भी वामदेव ने अचेतन बनाया। इस दुरवस्था में इसकी माता ने वामदेव ऋषि से क्षमा माँगी, एवं अपने पति एवं पुत्र की जान बचायी (म. व. १९०.७३; शल देखिये)।

२. येनजित् राजा का नामान्तर।

३. एक महारथी राजा, जो भीमसेन का मामा था। भारतीय युद्ध में यह पाण्डव पक्ष में शामिल था (म. उ. १.१३९.२७)।

इयेनभद्र—प्रसूत देवी में से एक।

इयेनी—कश्यप एवं ताम्रा की कन्या। सृष्टि के समस्त बाज पक्षी इसीकी ही संतान माने जाते हैं। ब्रह्मांड के अनुकार यह पक्षिराज गरुड की पत्नी थी (ब्रह्मांड, ३.३ ४४९)। किन्तु महाभारत में इसे गरुड के भाई अरुण की पत्नी बताया गया है, जिससे इसे जटायु एवं संपाति नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. ६६.६७; वा. रा. अर. १४.३३)।

२. पूर्वशीघ्र प्रवीर राजा की पत्नी (म. आ. ८९.६)।

श्रद्धा (स्वा.)—स्वायंभुव मन्वन्तर के दश प्रजापति की कन्या, जो धर्म ऋषि की दस पत्नियों में से एक थी। इसकी माता का नाम प्रसूति था (म. आ. ७.१३)। इसके पुत्रों के नाम शुभ एवं काम थे (भा. ४.१.४९-५०)।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर के कर्षण प्रजापति एवं देवहृति की कन्या, जो अंगिरस् ऋषि की पत्नी थी। इसके उत्तथ्य एवं बृहस्पति नामक दो पुत्र, एवं सिनीवाली, कुहू, राका एवं अनुमति नामक चार कन्याएँ थी (भा. ३. २४. २२)।

३. सूर्य की एक कन्या, जिसे 'सावित्री,' 'प्रसावित्री,' 'वैतस्वती' आदि नामान्तर प्राप्त थे (म. ब्रां. २५६.२१)।

४. वैदस्यत मनु की एक पत्नी।

श्रद्धा कामायनी—एक वैदिक सूक्तद्रष्टी (ऋ. १०. १५१)।

श्रद्धादेवी—वसुदेव की पत्नियों में से एक, जिसके पुत्र का नाम गन्धर्षण था (मत्स्य. ४६.१९)।

श्रद्धालु—हंसध्वज राजा का प्रधान।

श्रम—वसुदेव एवं शक्तिदेवा के पुत्रों में से एक (भा. ९.२४.५०)।

श्रमदागोपि—अंगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्रमिष्ठ—अक्रूर एवं अश्विनी के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.३३)।

श्रावण—श्रवण नामक वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

२. गौतम नामक शिवावतार का एक शिष्य।

३. अक्रूर एवं अरुण के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.३३)।

४. मुर देव्य के सात पुत्रों में से एक (भा. १०.५९. १२)। कृष्ण ने इसका वध किया।

५. सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक।

६. श्रावण नामक तमस्वी का पिता; (श्रावण देखिये)।

श्रावणदत्त कौहल—एक आचार्य, जो सुखारट शाले-कायन नामक आचार्य का शिष्य, एवं कुस्तुक शाकरीश्वर नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)।

श्रावस्—एक ऋषि, जो यमसंवंशीय संत ऋषि का पुत्र, एवं तम ऋषि का पिता था (म. अनु. ३०.६२)।

२. दक्षसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

३. अमिताम देवों में से एक।

४. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद—'श्रावण'।

५. सृगु ऋषि के पुत्रों में से एक (वायु. ६५.८७)।

श्राविष्कट—गौतम नामक शिवावतार का एक शिष्य (वायु. २३.१६४)।

श्राद्धदेव—सर्वपुत्र वैदस्यत मनु राजा का नामान्तर। इसकी पत्नी का नाम श्रद्धा था, एवं पुरोहित का नाम वसिष्ठ था, जिमने इसकी इत्या नामक कन्या का रूपान्तर सुतुम्न नामक पुत्र में करने के कार्य में सहायता की थी (दे. भा. महात्म्य ३; वसिष्ठ ९. देखिये)।

श्राद्धाद—वृष नामक दैत्य का पुत्र (वृष ५. देखिये)।

श्रायस्—एक पैतृक नाम, जो वैदिक साहित्य में निम्नलिखित आचार्यों के स्थिर प्रयुक्त किया गया है:— १. कण्व (तै. सं. ५.४.७.५; का. सं. २१.८); २. वीतहृष्य (तै. सं. ५.६.५.३; पं. ब्रा. ९.१.९)।

श्राव—(सृ. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो महाभारत के अनुसार युवनाश्व श्रावस्त राजा का पुत्र था (म. व. १९३.४)।

श्रावण—एक तमस्वी, जो वैश्य पिता एवं शूद्र माता का पुत्र था (वा. रा. अयो. ६३)। ब्रह्म में इसे ब्राह्मण कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम श्रवण दिया गया है (ब्रह्म. १२३.३७)। इससे प्रतीत होता है कि, श्रवण इसका पैतृक नाम था।

अपने अंग्रे माता पिता को अपने कंधे पर बिठा कर यह कारीयावादा को जा रहा था। एक बार रात के समय, यह कुएँ में पानी लेने गया था, जिस समय इसके पानी भरने की आवाज ने इसे कोई बन्धु जानवर समझ कर, मृगयातुर दशरथ ने इस पर धरसंधान किया। दशरथ के वाण से इसको मृत्यु हो गयी।

अपनी अभावधानी से हुए ब्रह्महत्या के कारण दशरथ विह्वल हो उठा, किन्तु श्रावण ने उसका समाधान किया। पश्चात् इसके माला-पिता ने दशरथ राजा को 'पुत्र पुत्र' करते हुए गृध्रु जाने का श्रावण दिया, एवं वे स्वयं इसकी अकाल मृत्यु से दुःखी हो कर मृत हुए।

श्रावस्त अथवा **श्रावस्त**—(सु. इ.) एक सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु, वायु एवं मत्स्य के अनुभार इंदु राजा का भ्रात्र, एवं युवनाश्व (द्वितीय) राजा का पुत्र था। महाभारत में इसे युवनाश्व (द्वितीय) राजा का भ्रात्र, एवं श्राव राजा का पुत्र कहा गया है, एवं इस प्रकार श्रावस्त इसका पैतृक नाम बताया गया है।

इसने श्रावस्ति (श्रावस्त) नगरी की स्थापना की, एवं अपने उत्तर कोशल देश की राजधानी वहीं बसायी (ह. वं. १११.२२ ब्रह्मांड. ३.६३.२८; वायु. ८८. २००)।

इसके पुत्र का नाम बृहदश्व (ब्रह्मदश्व) था (म. व. १९३.४)। इसके अन्य पुत्र का नाम वंशक अथवा वत्सक था।

इसका राज्यकाल राम दशरथि के पूर्वकाल में पचास पीढ़ियों माना जाता है। राम दशरथि के कनिष्ठपुत्र लव ने उत्तर कोशल देश की राजधानी अयोध्या नगरी से हटा कर, वह पुनः एक बार श्रावस्ति नगरी में बसायी। इस कारण अयोध्या नगरी उजड़ गयी, जो आगे चल कर लव के ल्येष्ट वन्धु कुश ने पुनः एक बार बसायी (रघु. १६.९७)।

श्राविश्रायन—पराशर कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्री—(स्वा.) ऐश्वर्य की अधिष्ठात्री देवता; लक्ष्मी का नामान्तर, जिसे पुराणों में भुजु एवं ख्याति की कन्या कहा गया है (लक्ष्मी देस्त्रिये)।

२. धर्म ऋषि की पत्नियों में से एक।

श्रीकर—एक शिवगण, जो गोव का पुत्र था। इसने काशी में मध्येश्वर की आराधना कर 'शिवगणपतिस्व' प्राप्त किया (शिव. उ. ४४.८५)।

श्रीदामन—कृष्णसखा सुदामन अथवा कुचेल का नामान्तर (भा. १०.१५-२०; कुचेल देस्त्रिये)।

श्रीदेव—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो कर्म के अनुसार लोमपाद शाखा का बृहन्मन्थरा राजा का पुत्र था।

श्रीदेवा—देवक राजा की कन्या, जो कृष्ण के पत्नियों में से एक थी। इसके कुल लः पुत्र थे, जिनमें नंदक प्रमुख था (भा. १.२४.२३; विष्णु. ४.१८)।

श्रीधर—एक ब्राह्मण, जिसकी कथा 'शालग्र' का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. ब्र. ५)।

श्रीनिवास—तिरुपति में स्थित वैकुण्ठेश का नामान्तर (वैकुण्ठेश देस्त्रिये)। स्कंद में इसकी पत्नी का नाम पत्नी बताया गया है।

श्रीभानु—कृष्ण एवं सत्यभामा का एक पुत्र (भा. १०.६१.११)।

श्रीमत्—एक राजकुमार, जो दत्तात्रेय राजा का भ्रात्र, एवं निमि राजा का पुत्र था। इसकी असात्मिक मृत्यु होने पर एक वर्ष के पश्चात् अमात्रय्या के दिन, इसके पिता निमि ने इसका पहला वर्षश्राद्ध किया।

श्राद्धविधि—इस प्रकार निमि इस संसार में प्रचलित श्राद्धविधि का आद्यजनक बन गया। आगे चल कर अत्रि ऋषि ने निमि के द्वारा प्रणीत श्राद्धविधि को स्वयंभु के द्वारा प्रणीत बता कर उसका पुरस्कार किया, एवं मृत रिश्तेदारों के लिए श्राद्धविधि करने की प्रथा भारतवर्ष में सर्वत्र प्रचलित हुई (म. अनु. ११.१-२१)।

महाभारत में इसका वंशकम निम्नप्रकार दिया गया हैः—स्वयंभु-अत्रि-दत्तात्रेय-निमि-श्रीमत्।

श्रीमती—भृञ्जय राजा की कन्या दमयन्ती का नामान्तर (दमयन्ती २. देखिये)। पौराणिक साहित्य में इसके संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा दी गयी है। एक बार इसके प्रति नारद एवं उसके मित्र पर्वत को शोक दे कर विष्णु ने इसका हरण किया, जिस कारण वे दोनों विष्णु की उपासना छोड़ कर शिवोपासक बन गये (लिंग. २.५; अ. रा. ४; शिव स्तु. २.४)।

श्रीमलकर्णी—आंध्रवंशीय शातकर्णी राजा का नामान्तर (शातकर्णी १. देखिये)।

श्रीमाता—देवी का एक अवतार, जिसने मातंगी का रूप धारण कर, कर्नाटक नामक राक्षस का वध किया। यह राक्षस ब्राह्मण का वेश धारण कर ऋषियों के स्त्रियों का हरण करता था (स्कंद. ३.२.१७-१८)।

श्रीमानिन्द्र—मौल्य मनु के पुत्रों में से एक।

श्रीवह—कश्यपकुलोत्पन्न एक नाम (म. आ. ३१.१३)।

श्रुत—(स. निमि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार उग्रु राजा का, भागवत के अनुसार सुभाषण राजा का, एवं वायु के अनुसार, सुवर्चस् राजा का पुत्र था।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार भगीरथ राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम नाभाग था।

३. (सो. अज.) एक राजकुमार, जो पांचालराज द्रुपद के पुत्रों में से एक था। भारतीय युद्ध के रात्रि युद्ध में अश्वत्थामन् ने इसका वध किया।

४. कृष्ण एवं कालिंदी के पुत्रों में से एक (भा. १०. ६१.१४)।

५. वसुदेव एवं शांतिदेवा के पुत्रों में से एक (भा. ९. २८.५०)।

श्रुतकश्य आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जिसके द्वारा विरचित सूक्त में विपुल पद्यधन देने के लिए इंद्र की प्रार्थना की गयी है (ऋ. ८. ९२.२५)। एक साम के प्रणयन का श्रेय भी इसे दिया गया है (प. ब्रा. ९. २.५)।

श्रुतकर्मन्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। इन्होंने शतानीक के साथ युद्ध किया था (म. क. १८.१२.१३)।

२. अर्जुनपुत्र श्रुतकीर्ति का नामांतर।

३. (सो. कुरु.) एक राजकुमार, जो सहदेव एवं द्रौपदी के पुत्रों में से एक था। भारतीय युद्ध में यह अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया (म. आ. ९०.८४; ५७.१०३)।

श्रुतकीर्ति—(सो. कुरु.) एक राजकुमार, जो अर्जुन एवं द्रौपदी के पुत्रों में से एक था (म. आ. ९०. ८२; ५७.१०२; द्रो. २२.२५; भा. ९.२२.२९)। यह विश्वदेव के अंश से उत्पन्न हुआ था।

इसे श्रुतकर्मन् नामांतर भी प्राप्त था (म. आ. २१३. ७६)। इसके रथ के अश्व चास पशों के पंखों के वर्ण के थे (म. द्रो. २२.२५)।

भारतीय युद्ध में शल्य के साथ इसका युद्ध हुआ, जिसमें यह पराजित हुआ था। अश्वत्थामन् के द्वारा किये गये रात्रियुद्ध में यह मारा गया (म. सौ. ८.५८)।

२. (स्त्री) कुशध्वज जनक राजा की कन्या, जो राम दाशरथि के कनिष्ठ भाई शत्रुघ्न की पत्नी थी (वा. रा. भा. ७३.३३)।

३. (स्त्री) केकय देश के धृष्टकेतु शारङ्गध्वजि की पत्नी, जो शूर राजा की कन्या, एवं वसुदेव की बहन थी। इसकी कन्या का नाम भद्रा था, जो कृष्ण की पत्नी थी। इसके कुल चार पुत्र थे, जिनमें अर्जुन प्रमुख था (भा. ९.२४.३०)।

धृतरंजय—(सो. पुरुवरण्) एक राजा, जो भागवत के अनुसार सत्यायु राजा का पुत्र था (भा. ९.१५.२)।

२. एक राजा, जो त्रिगर्ताराज सुशर्मन् का भाई था। यह भारतीय युद्ध में कौरवपक्ष में शामिल था, अर्जुन ने इसका वध किया (म. क. २७.१० पाठ.)।

३. (मगध. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य, वायु, एवं ब्रह्मांड के अनुसार सेनाजित् राजा का, एवं विष्णु के अनुसार सेनजित राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'सुतंजय' कहा गया है। वायु, मत्स्य, एवं ब्रह्मांड के अनुसार इसने चालीस वर्षों तक राज्य किया था।

श्रुतदेव—एक विरागी कृष्णभक्त ब्राह्मण, जो बहुलाश्व जनक के काल में मिथिला नगरी में रहता था। एक बार कृष्ण जत्र मिथिला नगरी में आया था, उस समय बहुलाश्व राजा ने, एवं इस ब्राह्मण ने एक साथ ही उसे अपने घर बुला लिया। उस समय इन दोनों की भक्तिभावना एक समान ही उत्कट देख कर, कृष्ण ने दो रूप धारण किये, एवं एक समय ही वह इन दोनों के घर जा पहुँचे। पश्चात् उसने इन दोनों को उपदेश प्रदान किया (भा. १०.८६)।

२. कृष्ण के महारथी पुत्रों में से एक (भा. १०. ९०.३३)।

३. एक यादव, जो कृष्ण का अनुयायी था (भा. १. १४.३२)।

४. विष्णु का एक पार्षद, जिसने बलि वैरोचन के असुर अनुगामियों पर हमला किया था (भा. ८. २१.१७)।

श्रुतदेवा अथवा **श्रुतदेवी**—कुरुपदेशीय वृद्धशर्मन् (वृद्धशर्मन्) राजा की पत्नी, जो शूर राजा की कन्या एवं वसुदेव की बहन थी (म. भा. ४.२४.३०)। इसे श्रुतकीर्ति नामांतर भी प्राप्त था। सुविलयात असुर दंतवक्र इसका ही पुत्र था (ब्रह्म. १४)।

श्रुतध्वज— मत्स्यराज विराट का भाई, जो भारतीय युद्ध में पांडवों का रक्षक था (म. द्रो. १३३.३९)।

श्रुतबंधु औपायन (लौपायन)—एक वैदिकयुक्त-द्रष्टा (ऋ. ५.२४; १०.५७-६०)।

श्रुतय—श्रोतन नामक कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

श्रुतरथ—एक तम्रण राजा, जो कक्षीवत् नामक आचार्य का, एवं उसके पञ्च परिवार का आश्रयदाता था (ऋ. १.१२२.७)। प्रभुवसु अंगिरस ऋषि ने भी इसके दातृत्व की प्रशंसा की है (ऋ. ५.३६.६)।

श्रुतरथ—अश्विनो की कृपापात्र एक व्यक्ति, जिसका उल्लेख संरक्षण किया था (ऋ. १.११२.९)।

श्रुतर्वज—श्रुतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में यह भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. द्रा. २.५.२७)।

श्रुतर्वज आर्क्ष—एक उदार राजा, जिसके दातृत्व की प्रशंसा ऋषेद में गोपबन नामक ऋषि के द्वारा की गयी है (ऋ. ७.७४.४-१३)। इसने मृगय पर विजय प्राप्त की थी (ऋ. १०.७९.५)। ऋक्ष का वंशज होने के कारण, इसे 'आर्क्ष' वैदिक नाम प्राप्त हुआ था।

महाभारत में—इसके दातृत्व का वर्णन महाभारत में भी प्राप्त है। एक बार अगस्त्य ऋषि इसके पास धन माँगने के लिए आये। इसके दातृत्व के कारण इसके खजाने में कुल भी द्रव्य बाकी नहीं था। इसने धन देने के संबंध में अपनी असमर्थता अगस्त्य ऋषि से निवेदित की, एवं अपने आयव्यय के सारे हिसाब भी उसे दिखाये।

पश्चात् यह अगस्त्य को साथ ले कर ब्रध्नश्च आदि राजाओं के पास गया, एवं उनसे इसने अगस्त्य ऋषि को विपुल धन दिलवाया (म. व. ९६.१-५)।

श्रुतवत्—(सो. मगध.) मगध देश का एक राजा, जो मेविथ्य एवं विष्णु के अनुसार सोमाधि राजा का पुत्र था। अन्य पुराणों में इसे श्रुतश्रवण कहा गया है। (भा. ९.२२.९)। इसके पुत्र का नाम अनुतायु था।

श्रुतवर्मन्—दुर्योधन के पक्ष का एक राजा (म. क. ४.१०१)। यह संभवतः श्रुतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक था। पाठभेद (भांडारकर संहिता) 'श्रुतकर्मन्'।

श्रुतविद् आत्रेय—एक वैदिक युक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ६२)। ब्रह्मदेव में अन्यत्र भी इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.७७.१२)।

श्रुतश्रवस्—(मगध. मेविथ्य.) एक राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार सोमाधि राजा का, भागवत के अनुसार मार्जारि राजा का, एवं ब्रह्मिंड के अनुसार गोर्माणि राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम अनुतायु था।

२. यमसना में उदात्तित एक राजा (म. न. ८.८)।

३. एक ऋषि, जिसने तप ने सिद्धी प्राप्त की थी (म. शां. २८१.१६-१७)। इसके पुत्र का नाम सोमश्रवस् था, जो इसे एक सर्पिणी से उत्पन्न हुआ था (म. धा. ३.१२)।

जन्मेयय के सर्पसत्र में—जन्मेयय के द्वारा किये गये वर्षसत्र में उसके पुरोहित देवगुनी ने उसे श्राप दिया, एवं उसके पौरोहित्य का त्याग किया। पश्चात् जन्मेयय इसमें मिलने आया, एवं उसने इसके पुत्र सोमश्रवस् को अपना पुरोहित बनने की प्रार्थना की। इसने उसे मत्स्यवादी, एवं इस प्रकार सोमश्रवस् जन्मेयय के सर्पसत्र का पुरोहित बन गया (सोमश्रवस् देखिये)।

यह स्वयं भी जन्मेयय के सर्पसत्र का सदस्य था (म. आ. ४८.९)।

४. एक असुर, जो गरुड के द्वारा मारा गया था।

५. स्यंपुत्र शर्नेश्वर का नामांतर (वायु. ८४.५१)।

६. सार्वणि मनु का नामांतर (वायु. ८८.५१)।

श्रुतश्रवा—केदिराज दमंत्रोप का पत्नी, जो धाराराम की कन्या, वसुदेव की भगिनी, एवं कृष्ण की पितृवला (पूजा) थी। इसके पुत्र का नाम शिशुसाल था (शिशुसाल देखिये)।

श्रुतश्री—एक असुर, जो गरुड के द्वारा मारा गया था (म. उ. १०३.१२)।

श्रुतसेन—सहदेवपुत्र श्रुतकर्मन् का नामांतर। कृत्तिका नक्षत्र के अवसर पर इसका जन्म हुआ था, जिस कारण इसे श्रुतसेन नाम प्राप्त हुआ था (श्रुतकर्मन् देखिये)।

२. (सो. कु. ६.) एक राजा, जो परिक्रित राजा का पुत्र था (म. आ. ३.१)। वैदिक साहित्य में एवं जन्मेयय राजा का भाई कहा गया है (श. ब्रा. १.३.५.८३; सां. श्रौ. १६.९.४)।

३. शत्रुघातिन् राजा का नामांतर।

४. एक राजा, जो भारतीय युद्ध में कौरवपक्ष में शामिल था। अनुज ने इसका वध किया (म. क. १.९.१५)।

५. एक असुर, जो गरुड के द्वारा मारा गया था (म. उ. १०३.१२)।

श्रुतसेना--कुन्ती की वहन, जो केकय राजा शृष्टकेतु शार्ङ्गाश्यायिनी की पत्नी थी (म. आ. १११.११८३*)। विष्णु, वायु, एवं भागवत में इसे श्रुतकीर्ति कहा गया है (श्रुतकीर्ति ३. देखिये)।

परिवार--महाभारत के अनुसार, नियोगविधि से इसे दुर्जयादि तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे। पौराणिक साहित्य में इसके पुत्रों की नामावलि निम्नप्रकार की गयी है :—१. मत्स्य में--अनुव्रत, २. वायु में--संतर्दन, चैकितान, बृहक्षय, विंद, एवं अनुविंद।

श्रुतानीक--विराट का भाई, जो भारतीय युद्ध में पांडवों का सहायक था (म. द्रो. १३३.३९)।

श्रुतांत--(सो. कुरु.) श्रुतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. द्रो. २५.८)।

श्रुतायु--(स. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार भानुश्रेष्ठ राजा का पुत्र था। भारतीय युद्ध में यह मारा गया (मत्स्य. १२.५५)।

२. (सो. पुरुवरुस्) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार पुरुवरुस् एवं उर्वशी के पुत्रों में से एक था। इसके पुत्र का नाम वसुमन् था।

३. (सो. कुरु.) श्रुतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया था (म. क. ३५.३७.११)।

४. अंगु देश का एक राजा, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५९)। द्रौपदी के स्वयंवर में, एवं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह उपस्थित था (म. आ. १७७.१९; स. ४.२४)।

भारतीय युद्ध में यह कौरव पक्ष में शामिल था एवं इसका निम्नलिखित योद्धाओं से युद्ध हुआ था:—१. अर्जुन-पुत्र इरावन् (म. भी. ४३.६८); २. युधिष्ठिर (म. भी. ४३.६६)। भीष्म के द्वारा निर्माण किये गये कंचिच्यूह के ज्वनभाग में खड़ा था (म. भी. ७१.२२)। अन्त में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. ६८.६४)।

५. कर्लिग देश का एक क्षत्रिय राजा, जिसके भाई का नाम अयुतायु था (म. क. ५०.५२)। भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था, एवं भीष्म के साथ इसका युद्ध हुआ था (म. भी. ५०.६)। अपने भाई अयुतायु के साथ, यह कौरवसेना के दक्षिण भाग का संरक्षण करता था (म. भी. ४७.१८)। अन्त में ये दोनों भाई अर्जुन के द्वारा मारे गये (म. द्रो. ६८.७-२५)।

इसके दीर्घायु एवं नियतायु नामक दो पुत्र थे। अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिए, उन्होंने अर्जुन पर आक्रमण किया था, किन्तु अर्जुन ने उन दोनों का भी वध किया (म. द्रो. ६८. २७-२९)।

६. (स. मिमि.) विदेह देश का एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार अरिष्टनेमि राजा का पुत्र, एवं सुरार्धक राजा का पिता था (भा. ९.१३.२३; विष्णु. ४.५.३१)।

श्रुतायुध--कर्लिग देश का एक राजा, जो वरुण एवं शीततोया (पर्णाशा) का पुत्र था (म. स. ४.२३; मी. १६.३४)। इसके पिता वरुण ने इसे एक गदा अभिमंत्रित कर दी थी, एवं कहा था, 'इस गदा के कारण तुम युद्ध-भूमि में सदैव अजेय रहोगे। किन्तु युद्ध न करनेवाले किसी भी व्यक्ति पर इस गदा का प्रहार तुम नहीं करना, अन्यथा तुम मारे जाओगे।

भारतीय युद्ध में यह कौरव पक्ष में शामिल था, एवं एक अश्वैहिणी सेना ले कर यह युद्धभूमि में उपस्थित हुआ था (म. भी. १६.३४-३५)। युद्ध के प्रारंभ में ही, इसका भीष्म के साथ युद्ध हुआ, जिसमें इसके सत्य एवं सत्यदेव नामक दो चक्ररक्षक मारे गये (म. भी. ५०. ६९)। अन्त में वरुण के द्वारा प्रदान की गयी गदा इसने युद्ध न करनेवाले श्रीकृष्ण पर फेंकी, जिस कारण अपनी ही गदा से इसकी मृत्यु हो गयी (म. द्रो. ६७.४३-५८)।

श्रुताचती--एक तपस्विनी जो भरद्वाज ऋषि एवं प्रताची अप्सरा की कन्या थी। इसने शीर तपस्या कर के, इन्द्र को पतिरूप में प्राप्त किया था (म. श. ४७.२)।

श्रुति--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. एक प्राचीन राजा (म. आ. १.२३८)।

श्रुति आत्रेयी--स्वायंभुव मन्वन्तर के आत्रि ऋषि की कन्या। पुलहपुत्र कर्दम प्रजापति से इसका विवाह हुआ था (पुलह १. देखिये)।

श्रुतिविद्ध--(सो. कुरु.) एक राजा, जो वायु के अनुसार धर्म राजा का पुत्र था।

श्रुतुशृण--स्वायंभुव मन्वन्तर के जिताजित् देवों में से एक।

शुभ वाह्येय काश्यप--एक आचार्य, जो देवतरम् श्यावसायन नामक आचार्य का शिष्य, एवं इंद्रोत वैवाप शौनक नामक आचार्य का गुरु था (जै. उ. ब्रा. ३.४०. २)। 'वाह्ये' एवं 'काश्यप' का वंशज होने के कारण, इसे

‘बह्विद्य’ एवं ‘काश्यप’ पौत्रक नाम प्राप्त हुआ होगा। इसके ‘श्रुप’ नाम का सही पाठ संभवतः ‘श्रुप’ ही होगा।

श्रुष्टि आंगिरस—एक सामद्रष्टा आचार्य (पं. ब्रा. १३.११.२१-२३)।

श्रुष्टिगु काण्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.५१)। इसके सूक्त में निम्नलिखित आचार्यों के साथ इसका निर्देश प्राप्त है :—१. सांवरणे मनु; २. नीपातिथि; ३. मेथ्या-तिथि (ऋ. ८.५१.१)। पार्षदाण राजा के द्वारा प्रस्कण्व नामक आचार्य को विपुल धन दिये जाने का निर्देश इसके सूक्त में प्राप्त है (ऋ. ८.५१.२)।

श्रेणिमन्—गोश्यां पर्वत पर निवास करनेवाला एक राजा। भीमसेन ने अपने पूर्व दिग्विजय में, तथा सहदेव ने अपने दक्षिण दिग्विजय में इसे पराम्न किया था (म. स. २७.१; २८.५)।

भारतीययुद्ध में यह पांडव पक्ष में शामिल था (म. द्रो. २२.३०)। इसके रथ के अश्व फीले रेशमी वस्त्र के वर्ण के थे, एवं उनका जीन स्वर्ण का था। उनके गलों में स्वर्ण मालाएँ थीं (म. द्रो. २२.३०)। पांडव सैन्य में इसकी श्रेणी ‘अतिरथि’ थी। अंत में वह कौरवपक्षीय वीरों के द्वारा मारा गया (म. द्रो. २२.३०)।

२. कुमार देश का एक राजा, जिसे भीम ने अपने पूर्व दिग्विजय के समय जीता था (म. स. २७.१)।

श्रेष्ठ—सुवामन् देवों में से एक (ब्रह्मांड. २. ३६.२८)।

श्रेष्ठभाज् वसिष्ठ—कल्पापवाद सौदास राजा के पुरोहित वसिष्ठ ऋषि का नामांतर (म. आ. १६७.१५; १६८. २२; वसिष्ठ श्रेष्ठभाज् देखिये)।

श्रोतन—कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण। पाठभेद—‘श्रुतय’।

श्रोत—श्रावण माह का यज्ञ (भा. १२.११.३७)। २. आद्य देवों में से एक।

श्रोत्र—तुषिति देवों में से एक (वायु. ६६.१८)।

श्रौतर्षि—देवभाग नामक आचार्य का पौत्रक नाम (पं. ब्रा. ७.१.६; श. ब्रा. २.४.४; तै. ब्रा. ३.१०.९. ११)।

श्रौतश्रवस—शिशुगाल राजा का मातृक नाम, जो उसे उसके ‘श्रुतश्रवा’ नामक माता के कारण प्राप्त हुआ था (श्रुतश्रवा देखिये)।

श्रौमत्य—एक आचार्य (श. ब्रा. १०.४.५.१)। ‘श्रुमन्’ का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

श्वफल्क—(सो. यजु. वृष्णिग.) एक पुण्यश्लोक यादव राजा, जो वृष्णि राजा का पुत्र, एवं चित्रक राजा का ज्येष्ठ भाई था। मत्स्य एवं पत्र में इसे ‘जयंत’ कहा गया है।

एक बार काशी देश में बारह वर्षों तक वर्षा न होने से अकाल पड़ गया। उस समय यह सहज ही काशी देश जा पहुँचा। इसके वहाँ जाने ही, वृष्टि हो कर अकाल नष्ट हुआ। इस कारण इसे पुण्यशील मान कर काशिराज ने इसका सत्कार किया, एवं अपनी गांदिनी नामक कन्या इसे विवाह में दे दी।

परिवार—गांदिनी से इसे निम्नलिखित तेरह पुत्र उत्पन्न हुए :— १. अक्रुर; २. आंसंग; ३. सारमेय; ४. सुदु; ५. मृदुविद्; ६. गिरि; ७. धर्मवृद्ध; ८. सुवर्मन; ९. क्षेत्रो-पेक्ष; १०. अरिमदन; ११. दानुध्न; १२. गंधमाह; १३. प्रतिवाहु।

उपर्युक्त पुत्रों के अतिरिक्त, इसकी सुचारी नामक एक कन्या भी (भा. ९.२४.१६-१७)।

श्वसन—धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाम, जो कर्मभय के संयंत्र में दंष्ट्र हुआ था (म. आ. ५२.१७)। पाठभेद—‘सुवर्ण’।

श्वसृप—एक संहिकेय असुर, जो हिरण्यकशिपु का भतीजा था (मत्स्य. ६.२७)।

श्वजनि—एक वैश्य (जै. उ. ब्रा. ३.५.२)।

श्वत—एक राक्षस, जो कश्यप एवं ब्रह्मधना के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१८)।

श्वहि—(सो. श्रोष्ठु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वृजिनवत् राजा का पुत्र, एवं वदोक्तु राजा का पिता था (भा. ९.२३.३१)। मत्स्य एवं वायु में इसे क्रमशः ‘स्वाह’ एवं ‘स्वाहि’ कहा गया है।

श्विक—एक जातिविशेष, जिनके राजा का नाम ऋषभ याज्ञनुर था (श. ब्रा. १२.८.३.७; १३.५.४.१५)। गौरवति नामक आचार्य इनका पुरोहित था।

श्वेत—पाताल में रहनेवाला एक नाम, जो कश्यप एवं ऋद्ध के पुत्रों में से एक था (भा. ५.२८.२१)।

२. एक शिवावतार, जो सातवें वाराह कल्पांतर्गत वैकुण्ठत मन्वन्तर के प्रथम युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। यह अवतार प्रभु व्यास के समकालीन माना जाता है।

हिमालय के छागल नामक शिखर में यह अवतीर्ण हुआ था। इसके शिखा धारण करनेवाले निम्नलिखित चार शिष्य थे :—१. श्वेत; २. श्वेतशिख; ३. श्वेताश्व; ४. श्वेतलोहित (शिव. शत. ४)।

३. एक शिवावतार, जो सातवें वाराह कल्मान्तगत वैवस्वत मन्वन्तर के तेइसवें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। यह कालेंद्र पर्वत पर अवतीर्ण हुआ था। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थे :—१. उशिक; २. बृहदश्व; ३. देवल; ४. कवि (शिव. शत. ५.)।

४. श्वेत नामक शिवावतार का शिष्य था (श्वेत. २. देखिये)।

५. एक दिग्गज, जो क्रोधवशाकन्या श्वेता का पुत्र था।

६. एक असुर, जो विप्रचित्ति असुर का पुत्र था। इसने तारकासुर-युद्ध में भाग लिया था (मत्स्य. १७७. ७)।

७. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था (वायु. ६९. १६९)।

८. एक राजा, जो वाष्पमत राजा के पुत्रों में से एक था। इसके ही नाम से इसके देश को 'श्वेतदेश' नाम प्राप्त हुआ था (वायु. ३३. २८)।

९. मत्स्यनरेश विराट राजा के पुत्रों में से एक। कोसलराजिकन्या सुरथा इसकी माता थी। यह अत्यंत पराक्रमी था, एवं इसने भारतीय युद्ध में शत्रु एवं भीष्म से युद्ध किया था। अन्त में यह भीष्म के द्वारा मारा गया (म. भी. परि. १. क. ११८)।

१०. एक धर्मनिष्ठ राजर्षि, जिसने अपने मृत हुए पुत्र को पुनः जीवित किया था (म. शां. १४९. ६३)।

११. एक राजा, जिसकी गणना भारतवर्ष के प्रमुख वीरों में की जाती थी।

१२. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४. ६३)।

१३. राम के पक्ष का एक वानर (वा. रा. यु. ३०)।

१४. (सो. क्रोट्ट.) एक राजा, जो कर्म के अनुसार अर्हति राजा का पुत्र था।

१५. एक पापी राजा, जो अगस्त्य ऋषि के दर्शन से मुक्त हुआ था। यह सुदेव राजा का ज्येष्ठ पुत्र था।

इसने अपनी उत्तर आयु में कटोर तपस्या की, किन्तु भ्रमदान का पुण्य कहीं भी संपादन नहीं किया। इस कारण यद्यपि इसे स्वर्गप्राप्ति हुई, फिर भी यह सदैव दुःख एवं तृषा से तड़पता रहा। यहाँ तक कि, अपनी ही माँस खाने लगा।

अन्त में ब्रह्मा ने इसे मुक्ति का मार्ग बताते हुए पुनः एक बार पृथ्वीलोक पर जाने के लिए कहा, एवं अगस्त्य ऋषि के दर्शन से मुक्ति प्राप्त करने की आज्ञा दी।

तदनुसार यह पृथ्वीलोक में आया, एवं इसने अगस्त्य ऋषि के दर्शन से मुक्ति प्राप्त की (वा. रा. उ. ७८; पद्म. सू. ३४)।

१६. एक राजा, जो अर्जुन एवं कौरवों के बीच हुआ 'उत्तर गोग्रहण' युद्ध देखने के लिए स्वर्ग से पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. भी. ९१. ७३, पंक्ति. २८)।

१७. एक शिवभक्त, जिसने शिवभक्ति कर मृत्यु पर विजय प्राप्त की थी (स्कंद. १. १. ३२; ब्रह्म. ५९. ७४; लिग. ३१)।

श्वेतकि—एक राजा, जो सदैव यज्ञकार्य में रत रहता था। इसने यज्ञकार्य में सिद्धि प्राप्त करने के लिए शिव की कटोर तपस्या की थी। इसकी तपस्या से प्रसन्न हो कर, शिव ने दुर्वासस् ऋषि को इसका पुरोहित बनने की आज्ञा दी। आंग चल कर दुर्वासस् की सहायता से इसने शत-संवत्सरात्मक सत्र का आयोजन किया, एवं इस प्रकार बारह वर्षों तक निरंतर यज्ञकार्य कर अगणित पुण्य संपादन किया।

श्वेतकेतु औद्दालकि आरुणेय—एक सुविख्यात तत्त्वज्ञानी आचार्य, जिसका अत्यंत गौरवपूर्ण उल्लेख शतपथ ब्राह्मण, छांदोग्य उपनिषद्, बृहदारण्यक उपनिषद् आदि ग्रंथों में पाया जाता है। यह अरुण एवं उद्दालक नामक आचार्यों का वंशज था, जिस कारण इसे 'आरुणेय' एवं 'औद्दालकि' पौत्रक नाम प्राप्त हुए थे (श. ब्रा. ११. २. ७. १२; छां. उ. ५. ३. १; बृ. उ. ३. ७. १; ६. १. १)।

कौपीतिक उपनिषद् में इसे आरुणि का पुत्र, एवं गोतम ऋषि का वंशज कहा गया है (कौ. उ. १. १)। छांदोग्य उपनिषद् में इसे अरुण ऋषि का पौत्र, एवं उद्दालक आरुणि का पुत्र कहा गया है (छां. उ. ५. ११. २)। कौसुक्विदु औद्दालकि नामक आचार्य इसका ही भाई था। यह मौतमगोत्रीय था।

निवासस्थान—अपने पिता आरुणि की मूर्ति यह कुरु पंचाल देश का निवासी था। अन्य ब्राह्मणों के साथ यात्रा करते हुए यह विदेह देश के जनक राजा के दरबार में गया था। किन्तु उस देश में इसने कभी भी निवास नहीं किया था (श. ब्रा. ११. ६. २. १)।

कालनिर्णय—यह पंचाल राजा प्रवाहण जैवल राजा का समकालीन था, एवं उसका शिष्य भी था (बृ. उ. ६. १. १. १. १. १. १. १)। यह विदेह देश के जनक

राजा का भी समकालीन था एवं इस राजा के दरबार में इसने वाजसनेय से वादविवाद किया था (वृ. उ. ३.७. १)। इस वादविवाद में यह याज्ञवल्क्य से पराजित हुआ था।

बाल्यकाल—इसके शाल्यकाल के संबंध में संक्षिप्त जानकारी छांदोग्य उपनिषद् में प्राप्त है। बचपन में यह अत्यंत उद्विग्न था, जिस कारण चारह वर्ष की आयु तक इसका उपनयन नहीं हुआ था। बाद में इसका उपनयन हुआ, एवं चौबीस वर्ष की आयु तक इसने अध्ययन किया।

इसके पिता ने इसे उपदेश दिया था, 'अपने कुल में कोई विद्याहीन पैदा नहीं हुआ है। इसी कारण तुमहारा यही कर्तव्य है कि, तुम ब्रह्मचर्य का सेवन कर विद्यासंपन्न बने'। अपने पिता की आज्ञा के अनुसार, अपनी आयु के चारहवें वर्ष से चौबीस वर्ष तक इसने गुरुद्वय में रह कर विद्याग्रहण किया।

विद्यार्जन—कौपीतिक उपनिषद् के अनुसार, इसने चित्र गार्यायणि के पास जा कर ज्ञान संपादन किया (कौ. उ. १.१)। अपने समकालीन प्रवाहण जैवल नामक राजा से भी इसके विद्या प्राप्त करने का निर्देश भी बृहदारण्यक उपनिषद् में प्राप्त है। एक बार जब यह पांचालों की विद्रोह में गया था, तब उस समय पांचाल राजा प्रवाहण जैवल से इसका तत्त्वज्ञानविषयक वादविवाद हुआ। इस वादविवाद में प्रवाहण के द्वारा कई प्रश्न पूछे जाने पर, यह उनका योग्य जवाब न दे सका। इतना ही नहीं, इसका पिता उद्दालक आरुणि भी प्रवाहण के इन प्रश्नों का जवाब नहीं दे सका। इस कारण यह एवं इसके पिता परास्त हो कर प्रवाहण की शरण में गये, एवं उसे अपना गुरु बना कर इन्होंने उससे ज्ञान प्राप्त किया (वृ. उ. ६.२)।

धर्मदीपन—इस प्रकार विद्याग्रहण कर विद्वान होने के कारण, यह अपने को बड़ा विद्वान समझने लगा, एवं दिन-ब-दिन इसका अहंकार बढ़ता ही गया। उस समय इसके पिता ने किताबी ज्ञान से अनुभवगम्य ज्ञान किस प्रकार अधिक श्रेष्ठ है, इसका ज्ञान इसे दिया, एवं इसे आत्मज्ञान का उपदेश किया, जो 'तत्त्वमसि' नाम से सुविख्यात है।

'तत्त्वमसि' उपदेश—इसके पिता उद्दालक अरण्य ऋषि के द्वारा इसे दिया हुआ 'तत्त्वमसि' का उपदेश छांदोग्य उपनिषद् में प्राप्त है (छां. उ. ६. ८-१६)।

इसने अपने पिता से प्रश्न किया, 'मिट्टी के एक परमाणु का ज्ञान होने से उसके सभी भेदों, नामों एवं रूपों का ज्ञान हमें प्राप्त होता है। उसी प्रकार आप ऐसी सूक्ष्माति सूक्ष्म वस्तु का ज्ञान मुझे बतायें कि, जिस कारण सृष्टि के समस्त चराचर वस्तुओं का ज्ञान मुझे प्राप्त हो सके।' इस पर इसके पिता ने इसे जवाब दिया, 'तुम (याने तुम्हारी आत्मा), एवं इस सृष्टि की सारी चराचर वस्तुएँ दोनों एक हैं, एवं ये सारी वस्तुओं का रूप तू ही है (तत्त्वमसि)। अगर तू अपने आत्मको (याने अपनी आत्मा को) ज्ञान सकेगा, तो तुझे इस सृष्टि का ज्ञान पूर्ण रूप से हो जायेगा'।

इसे उपर्युक्त तत्त्व समझते हुए इसके पिता ने नले समुद्र, पानी, नमक आदि नौ प्रकार के द्रव्य इसे दिये, एवं हर समय 'तत्त्वमसि' शब्द का पुनरुच्चारण किया। यही 'तत्त्वमसि' शब्दप्रयोग, आपे लक्ष कर, अद्वैत वेदान्त के महावाक्यों में से एक बन गया।

यज्ञसंस्था का आचार्य—कौपीतिक ब्राह्मण में इसे कौपीतिक लोगों के यज्ञसंस्था का प्रमुख आचार्य कहा गया है। यज्ञसंस्था में विविध पुरोहितों के कर्तव्य बंध होना चाहिए, यज्ञपरंपरा में कौनसी त्रुटियाँ हैं, इस संबंध में अनेकानेक मौलिक विचार इसने प्रकट किये हैं। ब्रह्मचारी एवं तापसी लोगों के लिए विभिन्न आचरण भी इसने प्रतिपादित किये हैं, एवं उस संबंध में अपने मौलिक विचार प्रकट किये हैं। इसके पूर्व कालीन धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथों में, ब्रह्मचारियों के द्वारा मधु भक्षण करने का निषेध माना गया है। किन्तु इसने मधुभक्षण करने के संबंध में यह आक्षेप को व्यर्थ बतलाया (शां. ब्रा. ३.१. ५.४.१८)। अन्य ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त यज्ञविषयक कथाओं में भी इसके अभिमतों का निर्देश प्राप्त है (शां. ब्रा. २६. ४; गो. ब्रा. १.६३)।

आचार्यों के द्वारा किये गये यज्ञकर्मों में ज्ञान की उपासना प्रमुख, एवं अर्थीगार्वन गौण मानना चाहिए इस संबंध में इसका एवं इसके पिता उद्दालक आरुणि का एक संवाद शांखायन श्रौतसूत्र में प्राप्त है (शां. श्रौ. १६.२७.६)। एक बार जल जातुकर्ष्य नामक आचार्य काशी, कोसल एवं विदेह इन तीनों देश के राजाओं का पुरोहित बन गया। उस समय यह अत्यधिक क्रुद्ध हो कर पिता से कटु वचन करने लगा। इस पर पिता ने इसे, कहा:—

कृत्स्नके ब्रह्मग्रन्थौ व्यजिज्ञासिषि ।

(पुरोहित के लिए यही चाहिए कि वह ज्ञान से प्रेम करें, एवं भौतिक सुखों की व्याधा लालच न करें) ।

धर्मसूत्रों में—आपस्तम्ब धर्मसूत्र में इसे 'अवर' (श्रेष्ठ आचार्य) कहा गया है (आप. ध. १.२.५.४-६) । अन्य उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में इसके अनेकानेक निर्देश मिलते हैं। फिर भी इसका सर्वप्रथम निर्देश शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त होने के कारण, यह पाणिनि पूर्वकालीन आचार्य माना जाता है ।

कामशास्त्र का प्रणयिता—वात्स्यायन कामसूत्र में प्राप्त निर्देशों के द्वारा प्रतीत होता है कि, नंदिन् के द्वारा विरचित आद्य कामशास्त्र ग्रंथ का इसने संक्षेप कर, उसे ५०० अध्यायों में ग्रथित किया। आगे चल कर श्वेतकेतु के इसी ग्रंथ का श्राभ्रव्य पांचाल ने पुनःसंक्षेप किया; एवं उसे सात अधिकरणों में ग्रथित किया। श्राभ्रव्य के इसी ग्रंथ को पुनः एक बार संक्षेप कर, एवं उसमें दत्तकाचार्य कृत 'वैशिक', चारव्याचार्य कृत 'साधारण अधिकरण', सुवर्णनाभ कृत 'सांप्रयोगिक', श्रोटकमुख कृत 'कन्या-संप्रयुक्त', गोमिथिय कृत 'भाषाधिकारिक', गोणिकापुत्र कृत 'पारथारिक' एवं कुचुमारकृत 'औपनिषदिक' आदि विभिन्न ग्रंथों की सामग्री मिला कर वात्स्यायन ने अपने कामसूत्र की रचना की। फिर भी उसके मुख्य आधार-भूत ग्रंथ श्वेतकेतु एवं श्राभ्रव्य पांचाल के द्वारा लिखित कामशास्त्रविषयक ग्रंथ ही थे।

ब्राह्मण जाति के लिए मद्यपान एवं परस्त्रीगमन वर्ज्य ठहराने का महत्त्वपूर्ण सामाजिक सुधार श्वेतकेतु के द्वारा ही प्रस्थापित हुई (का. सू. १.१.९)। ब्राह्मणों के लिए परस्त्रीगमन वर्ज्य ठहराने में इसका प्रमुख उद्देश्य था कि, ब्राह्मण लोग अपने स्वभार्या का संरक्षण अधिक सुयोग्य प्रकार से कर सकें (का. सू. ५.६.४८)।

इस प्रकार श्वेतकेतु भारतवर्ष का पहला समाजसुधारक प्रतीत होता है, जिसने समाजकल्याण की दृष्टि रख कर, अनेकानेक नये यम-नियम प्रस्थापित किये। इसीने ही सर्व प्रथम लैंगिक व्यवहारों में नीतिवचनों का निर्माण किया, एवं सुप्रजा, लैंगिक नीतिमत्ता, परदारामननिषेध आदि के संबंध में नये नये नियम किये, एवं इस प्रकार विवाहसंस्था की नींव मजबूत की।

महाभारत में—वैवाहिक नीति नियमों का निर्माण करने की प्रेरणा इसे किस कारण प्रतीत हुई, इस संबंध में अनेकानेक चतुर्निर्णय कथा महाभारत में प्राप्त है। यह उद्दालक

ऋषि का औरस पुत्र न हो कर, उसके पत्नी से उसके एक शिष्य के द्वारा उत्पन्न हुआ था (म. शा. ३.५.२२)। आगे चल कर इसकी माता का एक ब्राह्मण ने हरण किया। उसी कारण, इसने स्त्रियों के लिए पातिव्रत्य का, एवं पुरुषों के लिए एकपत्नीव्रत के नियमों का निर्माण किया।

महाभारत में इसे उद्दालक ऋषि का पुत्र कहा गया है, एवं इसके मामा का नाम अष्टावक्र बताया गया है (म. आ. १.१३.२२)। जन्म से ही इस पर सरस्वती का वरद हस्त था (म. व. १.३२.१)।

जनमेजय के सर्पसत्र का यह सदस्य था, एवं वेदिन् नामक आचार्य को इसने वाद-विवाद में परास्त किया था (म. आ. ४.८.७; व. १.३३)। किंतु जनमेजय के सर्पसत्र में भाग लेनेवाला श्वेतकेतु कोई उत्तरकालीन आचार्य होगा।

परिवार—देवल ऋषि कन्या सुवर्चला इसकी पत्नी थी। इससे उसने 'पुरुषार्थ-सिद्धि' पर वादविवाद किया था (म. शा. परि. १.१९.९९-१.१८)।

महाभारत में इसका वंशक्रम निम्नप्रकार दिया गया है:—उपवेश--अरुण उद्दालक-श्वेतकेतु। उसी ग्रंथ में इसे शाकल्य, आसुरि, मशुक, प्राचीनयोग्य एवं सत्यकाम ऋषियों का समकालीन कहा गया है।

२. लंगलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

श्वेतचक्षु—प्रसूत देवों में से एक।

श्वेतपराशर—पराशरकुलोत्पन्न एक उपशास्त्र।

श्वेतपर्ण यौवनाश्व—एक राजा, जो हस्तिनापुर के पूर्व में स्थित भद्रावती नगरी का राजा था। इसके पास एक सुंदर अश्व था, जो बुधिशिर के अश्वमेध यज्ञ के लिए, भीम जीत कर लाया था (जै. अ. १७)।

श्वेमभद्र—एक गुह्यक यक्ष, जो कुवेर का सेवक था (म. स. १०.१४)।

श्वेतलोहित—श्वेत नामक शिवावतार का एक शिष्य।

श्वेतवक्त्र—स्कंद का एक सैनिक (म. श ४.४.६८)।

श्वेतवराह—विष्णु के वराह अवतार का नामांतर। इसे 'आदिबराह' नामांतर भी प्राप्त था।

श्वेतवाहन—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो वायु के अनुसार शूर राजा का पुत्र था (वायु. ९६. १३६)। मत्स्य में इसे शूर राजा के राजाधिदेव नामक भाई का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. ४.४.७८)।

श्वेतशिव—श्वेत नामक शिवावतार का शिष्य।

श्वेता—कश्यप एवं क्रोधा की कन्या, जिसे श्वेत नामक दिग्गज पुत्र के रूप में उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६०.३४)। यह वानरजाति की भी माता मानी जाती है, जिनकी वंशावलि विस्तृत रूप में दी गयी है (श्रद्धांड. ३.७.१८०-१८१ वानर देखिये)।

श्वेताश्व—श्वेत नामक शिवावतार का एक शिष्य।

श्वेताश्वतर—एक आचार्य, जो श्वेताश्वतर नामक सुविख्यात उपनिषद् का रचयिता माना जाता है (श्वेता-श्वतर ६.२१)। इसने स्वयंभूव ऋषि से ब्रह्मविद्या प्राप्त की थी। इसके नाम की एक कृष्णयजुर्वेदी शाला भी उपलब्ध है। इसके नाम पर श्वेताश्वतर नामक एक ब्राह्मण ग्रंथ भी निर्दिष्ट है, जो वर्तमानकाल में केवल नाममात्र ही उपलब्ध है।

श्वेताश्वतर उपनिषद्—समस्त उपनिषद् वाङ्मय में श्वेताश्वतर उपनिषद् एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ माना जाता है (सुद-शिव देखिये)। ईश्वर समस्त सृष्टि का शास्ता एवं नियंता है, यही इस उपनिषद् का प्रमुख प्रतिपाद्य विषय है। दर्शनशास्त्रों में से सांख्य एवं वेदान्त दर्शन जत्र एक ही शास्त्र माने जाते थे, उस समय इस ग्रंथ की रचना की गयी थी।

इस उपनिषद् के पहले अध्याय में त्रैमूर्त्यात्मक अद्वैत शैवमत की श्रेष्ठता प्रतिपादन की गयी है। दूसरे अध्याय में योग एवं योगररिणाम का प्रतिपादन किया गया है।

तीसरे एवं चौथे अध्याय में सांख्य एवं शैव मत का कथन प्राप्त है। पाँचवें अध्याय के दूसरे मंत्र में कपिल शब्द की आध्यात्मिक निरुक्ति दी गयी है। छठे अध्याय में सगुण ईश्वर का वर्णन प्राप्त है, जो मां प्रदाय-निरपेक्ष होने के कारण अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना जाता है।

श्वैक्म—प्रतीदश नामक ऋषि की उपाधि, जिसका शब्दशः अर्थ 'श्विकनों का राजा' माना जाता है। यह दाक्षायण यज्ञ की प्रक्रिया में निपुण था, जिस यज्ञ की शिक्षा इसने सुप्लम् साञ्जय नामक आचार्य को दी थी। (श. ब्रा. २.४.४.३)। वेद के अनुसार, श्विकन एवं संजय लोगों का यह एकत्र निर्देश इन दोनों जातियों के घनिष्ठ संबंध की ओर संकेत करता है (इन्डि-स्टूडियन १.२०९-२१०)।

श्वैत्य—शैव्यपुत्र मुंजय राजा का पैतृक नाम। पाठ-भेद—'शैव्य' (म. टो. परि. १.८.२७४)।

श्वैत्रेय—एक व्यक्ति, जिसे इंद्र ने जीवित किया था (ऋ. ६.२६.४)। सायण के अनुसार, 'श्वैत्रेय' शब्द की निरुक्ति 'श्विना के वंशज' की गयी है। रुद्रविग के अनुसार, दशगु एवं श्वैत्रेय एक ही था, एवं यह कुत्स का पुत्र था। गेल्डनर के अनुसार यह श्विना नामक गाय का पुत्र था, जिसका युद्ध के लिए उपयोग किया जाता था। ऋग्वेद में अन्यत्र 'श्वैत्रेय' शब्द का एक प्रेक्ष के नाते उल्लेख किया गया है।

प

पटपुर—निकुंभ राक्षस का नामांतर, जिसका वध कृष्ण के द्वारा हुआ था।

हरिवंश में प्राप्त 'पटपुर' का आख्यान शिवचरित्र में त्रिपुराहा से मिलता जुलता प्रतीत होता है। जिस प्रकार त्रिपुर किसी व्यक्ति का नाम न हो कर, असुरों के निवास-स्थान का नाम था, उसी प्रकार पटपुर भी निकुंभ राक्षस के निवासस्थान का नाम था।

निकुंभ राक्षस अनेकानेक रूप धारण कर विभिन्न स्थानों में घूमता था। उनमें से दो स्थानों का एवं वहाँ स्थित निकुंभ

के देहों का कृष्ण ने विनाश किया। कृष्ण के इसी पराक्रम को 'पटपुर-विनाश' कहा गया है (ह. वं. २.८५-९०)।

पटांकुर—शंभु एवं कट नामक राक्षसों का सामूहिक नाम।

पंड—एक पुरोहित, जो संभुत्र में उपस्थित था (पं. ब्रा. २.५.२.५३)। शंडामर्क नामक आचार्यों में से शंड का ही यह संभवतः नामांतर होगा।

षडिक—केशिन नामक आचार्य के षडिक नामक प्रतिशर्षी का नामांतर (मै. सं. १.४.१२)।

षष्ठी—स्कंदपत्नी देवसेना का नामांतर । इसीके ही कारण स्कंद को 'षष्ठीप्रिय' कहते हैं (म. व. परि. १. २२.११)। यह ब्रह्मा की सभा में उपस्थित रह कर उसकी उपासना करती थी (म. स. ११.१३२*, पंक्ति ३)। इसके ही कृपा के कारण, प्रियव्रत राजा का 'सुव्रत' नामक पुत्र पुनः जीवित हुआ था।

षोडश-राजकीय—सोलह प्राचीन भारतीय राजाओं का एक समूह, जिनके जीवनचरित्र महाभारत के 'षोडश राजकीय' नामक उपाख्यान में प्राप्त हैं, जो नारद के द्वारा संजय राजा को सुनाये गये थे (म. द्रो. परि. १.८. ३२५-८७२; नारद देखिये)। येही जीवनचरित्र आगे चल कर कृष्ण ने युधिष्ठिर को सुनाये थे (म. शां. २९)

स

संयम—दिष्टवंशीय संजय राजा का नामांतर । बायु में इसे धूम्राक्ष राजा का पुत्र कहा गया है (संजय ६. देखिये)।

२. एक राक्षस, जो शतशृंग राक्षस का पुत्र था। अंबरीष के सेनापति सुदेव के द्वारा यह मारा गया (म. शां. परि. १.११.५.२०)।

संयमन—दुर्योधन के पक्ष के शल राजा का नामांतर । इसके पुत्र को 'सांयमनि' कहते थे।

२. काशिराज का एक राजा, जो शुरु से ही अत्यंत विरक्त एवं धर्मप्रवण था। 'पंचशिल्प' नामक आचार्य से सांख्ययोग का ज्ञान प्राप्त करने के लिए, यह राज्य छोड़ कर वन में चला गया। वहाँ इसकी इच्छा के अनुसार पंचशिल्प ने इसे सांख्ययोग का ज्ञान प्रदान किया (म. शां. परि. १.२९)।

संयमन प्रातर्दन—एक आचार्य (कौ. उ. २.५)।

संयाति—ऋष्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. (सो. पुरुरवस्.) एक राजा, जो नहुष राजा का पुत्र था (भा. ९.१८.१)। मुनिवर्म को स्वीकार कर यह वन में चला गया।

संयुप—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो मत्स्य के अनुसार शूर राजा का पुत्र था।

संयोधकंटक—एक यक्ष, जो कुबेर का अनुचर था (वा. रा. उ. १४.२१)।

संवनन आंगिरस—एक वैदिक सूक्तप्रथा (ऋ. १०. १९१)।

संवरण—(सो. अज.) अयोध्या का सुविख्यात राजा, जो अजमीठ राजा का पौत्र, एवं ऋक्ष राजा का पुत्र था। महाभारत में इसे 'वंशकर', 'पुण्यश्लोक' एवं 'सायंप्रातःस्मरणीय' राजा कहा गया है (म. अनु. १६५. ५४)।

राज्य से पदच्युति—एक बार इसके राज्य में महान् अकाल पड़ा, जिस कारण सारे लोग अत्यंत दुर्बल हो गये। इसी दुर्बलता का फायदा उठा कर, पांचाल देश के नृप ने दस अश्विहिणी सेना के साथ इस पर आक्रमण किया, एवं इसे राज्यभ्रष्ट कर, अयोध्या से भाग जाने पर विवश किया।

भागते भागते यह सिंधुनद के किनारे एक दुर्ग तक पहुँच गया, जहाँ यह छिप कर रहने लगा। वहाँ वसिष्ठ सुवर्चस् से इसकी भेंट हुई, जिनने इसका राज्य पुनः प्राप्त कराया। पश्चात् वसिष्ठ की ही सहायता से इसने सारी पृथ्वी जीत कर, यह चक्रवर्ति राजा बन गया (म. आ. ८९.२७-४३)।

तपनी से विवाह—वसिष्ठ की ही कृपा से, सूर्यकन्या तपती से इसका विवाह हुआ। तपती के सहवास-सुख में मग्न रहने के कारण, इसके राज्य में पुनः एक बार भयंकर अकाल पड़ा, जो लगातार बारह वर्षों तक चलता रहा। इस अकाल के कारण, इसके पुनः एक बार राज्यभ्रष्ट होने का धोखा निर्माण हुआ था, किंतु उस समय भी वसिष्ठ ने ही राष्ट्र की रक्षा की (म. आ. १६०-१६५)।

परिवार—अपनी पत्नी तपती से इसे कुरु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जो आगे चल कर चक्रवर्ति सम्राट् बना।

२. एक ऋषि, जो ध्वन्य लक्ष्मण्य नामक राजा का पुरोहित था (ऋ. ५. ३३. १०)।

संवरण प्राजापत्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ३३-३४)।

संवर्गजित् लामकायन—एक आचार्य, जो शाकदास भाडितायन नामक आचार्य का शिष्य, एवं गानु गौतम नामक आचार्य का गुरु था (बं. ब्रा. २)।

संवर्त—एक सुविख्यात स्मृतिकार, जिसका निर्देश याज्ञवल्क्य के द्वारा निर्दिष्ट स्मृतिकारों की नामावलि में प्राप्त है।

संवर्त स्मृति—इसके द्वारा विरचित स्मृति का निर्देश आनंदाश्रम के 'स्मृतिसमुच्चय' में, जीवानंद के 'स्मृति-संग्रह' में, एवं वैकटेश्वर प्रस के 'स्मृतिसंग्रह' में प्राप्त है, जहाँ इसकी स्मृति में २३०, २२७, एवं २३२ श्लोक दिये गये हैं। इसकी उपलब्ध स्मृति में आचार एवं प्रायश्चित्त के संबंध में वचन प्राप्त हैं। इसके व्यवहार संबंधी मतों के अनेकानेक उद्धरण विश्वरूपादि टीकाग्रंथों में प्राप्त हैं। इसकी छपी हुई स्मृति के कई श्लोक अपराक में पुनरुद्धृत किये गये हैं।

इसके द्वारा 'बृहत्संवर्त' एवं 'स्वल्पसंवर्त' नामक अन्य दो स्मृतिग्रंथों का निर्देश क्रमशः 'मिताक्षरा' में, एवं हरिनाथ के 'स्मृतिसार' में प्राप्त है (याज्ञ. ३. २६५; २८८)।

संवर्त आंगिरस—एक ऋषि, जो ब्रह्मपुत्र अंगिरस ऋषि के तीन पुत्रों में से एक था। इसके अन्य दो भाइयों के नाम बृहस्पति एवं उत्थय थे (म. आ. ६०. ४-५)। महाभारत में अन्यत्र इसके भाइयों के नाम बृहस्पति, उत्थय, पयस्य, शान्ति, शोर, विरूप एवं सुधन्वन् दिये गये हैं (म. अनु. ८५. ३०-३६)। इसे 'वीतहृद्य' नामांतर भी प्राप्त था (यो. वा. ५. ८२-९०)।

वैदिक साहित्य में—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा एवं प्राचीन यज्ञकर्ता के नाते ऋग्वेद में इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०. १७२; ८. ५४. २)। ऐतरेय ब्राह्मण इसे मरुत्त आविश्चित राजा का पुरोहित कहा गया है (ऐ. ब्रा. ८. २१; मरुत्त आविश्चित ३. देखिये)।

बृहस्पति से इंध्या—अपने भाई बृहस्पति से यह शुरु से ही अत्यंत इंध्या रखता था, जिस कारण 'मरुत्त-बृहस्पति संघर्ष' में इसने सदा ही मरुत्त की ही सहायता की।

यहाँ तक कि, बृहस्पति के द्वारा अयुरा छोड़ा गया मरुत्त राजा का यज्ञ भी इसने यमुना नदी के किनारे 'प्रज्ञाव-तरणतीर्थ' में यज्ञस्वी प्रकार से पूरा किया (म. शां. २१. १७)। मरुत्त के साथ इसका स्नेहसंबंध होने के अन्य निर्देश भी प्राप्त हैं (म. आथ. ६-७)।

देवताओं पर प्रभाव—यह महान् तपस्वी था, एवं जिस स्थान पर इसने तपस्या की थी, वह आंग नल कर 'संवर्तवापी' नाम से सुविख्यात हुआ (म. व. ८३. २८)। इसकी अत्यधिक तपस्या के कारण समस्त देवता भी इसके आधीन रहते थे।

मरुत्त के यज्ञ के लिए सुवर्ण की आवश्यकता होने पर, इसने हिमालय के सुवर्णमय भुंजवन् पर्वत से विपुल सुवर्ण शिवप्रसाद से प्राप्त किया (म. आथ. ८; मार्क. १२६. ११-१३)। इसने मरुत्त के यज्ञ के समय, साक्षान् अग्नि देव को जलाने की धमका दे दी थी (म. आथ. ३. १९)। इंद्र का वज्र इसने स्तम्भित किया था, एवं इस प्रकार उसे मरुत्त के यज्ञ में आने पर विवश किया था (म. आथ. १०)।

कुणप आख्यान—मरुत्त आविश्चित राजा ने इसकी सर्व प्रथम भेंट कैसे हुई, इस संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथन महाभारत में प्राप्त है। अपने यज्ञकार्य की पूर्ति के लिए मरुत्त आविश्चित इससे मिलना चाहता था, लेकिन इसके उन्मत्त अवस्था में इधर उधर भटकते रहने के कारण, इसकी भेंट अत्यंत दुष्प्राप्य थी।

अंत में इसे हँदते मरुत्त काशीनगरी में आ पहुँचा। वहाँ यह नमावस्था में इधर उधर घूमता था, एवं एक कुणप (शव) को काशीविश्वेश्वर मान कर उसकी पूजा करता था। रास्ते में 'कुणप' को देख कर, जो उसे वंदन करता हुआ उसके पीछे जायेगा, वही संवर्त ऋषि होगा, ऐसी धारणा इसके संबंध में काशिवासियों में प्रचलित थी।

इसी धारणा के अनुषार, मरुत्त राजा ने एक कुणप ला कर उसे काशी के नगरद्वार में रख दिया, जिसका बंदन करने के लिए संवर्त वहाँ पहुँच गया (म. आथ. ५)।

शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने उद्विग्न हुए ऋषियों में यह एक था (म. शां. ४७. ६६६; अनु. २६. ५)।

संवर्तक—एक नाग, जो कश्यप एवं कट्ट के पुत्रों में एक था।

२. धर्मतावर्णि मन्वन्तर के पुत्रों में से एक।

संज्ञती—पवमान अग्नि की पत्नी, जिससे इसे सथ्य एवं आवसथ्य नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (मत्स्य. ५१. १२)।

संश्रवम् संवर्चनम्—एक आचार्य, जिसने तुर्मिज नामक आचार्य के साथ यज्ञप्रक्रिया के संबंध में वाद-विवाद किया था। सत्र में होता के द्वारा किये जानेवाले इडोपाह्वान के संबंध में यह चर्चा हुई थी (तै. सं. १.७. २.१)।

संश्रुत्य—विश्वामित्र के ब्रह्मवारी पुत्रों में से एक। एक गोत्रकार के नाते भी इसका निर्देश प्राप्त है (म. अनु. ४.५५)।

संस्कृति—(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार जयसेन राजा का, तथा विष्णु एवं वायु के अनुसार जयसेन राजा का पुत्र था। विष्णु एवं वायु में इसे संस्कृति कहा गया है।

संहत (सो. सह.)—एक राजा, जो सांची (साहजनि) नगरी का संस्थापक माना जाता है। भागवत, विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः 'सोहंजि,' 'साहंजि' एवं 'संजेय' कहा गया है। हरिवंश में इसे 'साहंजि' कहा गया है (ह. वं. १.३३:४; साहंजि देखिये)। मत्स्य में इसे कुंति राजा का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. ४३.९)।

संहताग्द—ऐरावतकुल का एक नाग, जो जन्मेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१०)।

संहताश्व—इक्ष्वाकुवंशीय वर्हणाश्व राजा का नामान्तर।

संहिता—भृतराष्ट्र की द्वितीय पत्नी, जो गांधारराज कुल की कन्या एवं गांधारी की कनिष्ठ भगिनी थी।

संहनन—(सो. पूर.) एक महारथी राजा, जो पूर राजा का प्रपौत्र, एवं मनस्यु राजा का पुत्र था (म. आ. ८९.७)। इसकी माता का नाम सौवीरी था।

संहति—अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

संडाद्—एक असुर, जो हिरण्यकशिपु का द्वितीय पुत्र एवं प्रह्लाद का छोटा भाई था। इसके अन्य भाइयों के नाम प्रह्लाद, अनुह्लाद, शिबि एवं बाष्कल थे (म. आ. ८९.१७-१८)। इसकी माता का नाम कयाधु एवं पत्नी का नाम कृति था। मृत्यु के पश्चात् यह वरुण-रथ में रह कर वरुण की उपासना करने लगा (म. स. १.१२)। पाटभेद—प्रह्लाद।

पुत्र—महाभारत एवं पुराणों में इसके पुत्रों के नाम विभिन्न प्रकार से दिये गये हैं:—१. महाभारत में—इस ग्रंथ में मद्रदेश का सुवेख्यात राजा शल्य इसी के अंश से उत्पन्न कहा गया है (म. आ. ६१.६); २. ब्रह्मांड में—जंभ, बाष्कल, कालनेमि, शंभु। इस पुराण में इसकी

वंशावलि भी दी गयी है (ब्रह्मांड. ३.५.३८-३९)। ३. विष्णु में—आयुष्मत्, शिबि एवं बाष्कल (विष्णु. १. २१.१); ४. भागवत में—पंचजन (मा. ६.१८.१३); ५. मत्स्य में—इस ग्रंथ में इसके पुत्रों का सामूहिक नाम 'निवातकवच' दिया गया है, एवं उन्हें देव, गंधर्व एवं उरग आदि के लिए अवध्य बताया गया है (मत्स्य. ६.९.२८-२९)।

२. जालंधरसेना का एक सैनिक।

सकृतिपुत्र—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से लौगाक्षि नामक आचार्य का शिष्य था। ब्रह्मांड में इसे 'सकृतिपुत्र' कहा गया है।

सकौगाक्षि एवं सकौवाक्षि—भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार-द्वय।

सकतुप्रस्थ—उच्छ्रुति नामक ब्राह्मण का नामान्तर (उच्छ्रुति देखिये)।

२. एक आचार्य, जो पूषामित्र गोमिल नामक आचार्य का शिष्य था (वं. ब्रा. ३)।

सगर—(स. इ.) एक सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो बाहु अथवा बाहुक राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम कालिंदी अथवा केशिनी था। भागवत एवं पत्र में इसे क्रमशः 'फल्गुतंत्र,' एवं 'गर' राजा का पुत्र कहा गया है, जो संभवतः बाहुराजा के ही नामान्तर थे।

यह पराक्रमी सत्यवर्मी, सत्यवक्ता, दानशूर एवं विचारज्ञ था। इसके कई सिक्के मोहेंजोदड़ो के उत्खनन में प्राप्त हुए हैं।

जन्म—इसका जन्म अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् हुआ था। बाहुराजा की मृत्यु के समय उसकी पत्नी केशिनी, और्य ऋषि के आश्रम में गर्भवती थी। उस समय बाहु राजा की अन्य पत्नियों ने केशिनी को स्वतीमत्सर से प्रेरित हो कर विष दिया। इस विष के कारण, यह सात वर्षों तक अपनी माता के गर्भ में रहा, एवं जन्म के पश्चात् यह दुर्बल ही रहा। अपनी माता की गर्भ में जो विष इसके शरीर में उतर गया, इसके कारण इसे सगर विपयुक्त नाम प्राप्त हुआ। और्य ऋषि का कृपा के ही कारण, अपनी सापत्न माता के विषप्रयोग से यह बच सका।

शिक्षा—इसके धर्मविद्योचित सारे संस्कार और्य ऋषि ने किये, एवं इसे भार्गव नामक अग्न्यस्त्र उसीने ही प्रदान किया (विष्णु. ४.४)। च्यवन ऋषि ने भी इसे अनेकानेक अस्त्रशस्त्रों की जानकारी दी थी।

पराक्रम—उपरोक्त अस्त्रों की सहायता से इसने हैहय तालजंत्रव राजा का नाश कर अपना राज्य पुनः प्राप्त किया। पश्चात् इसने यवन, शक, हैहय, बर्बर आदि लोगों को परास्त किया। किन्तु अपने गुरु वसिष्ठ की सलाह से उनका वध न कर, एवं उन्हें केवल विलुप्त बना कर छोड़ दिया। ये लोग आगे चल कर भलेच्छ एवं ब्राह्म्य श्रेण बन गये (भा. १.८)।

अश्वमेध यज्ञ—एक बार इसने अश्वमेध यज्ञ किया, जिस समय इसका अश्वमेधीय अश्व इंद्र ने चुरा लिया। आगे चल कर यह अश्व कपिलऋषि के आश्रम के पास इंद्र ने छोड़ दिया। इसके साठ हजार पुत्रों ने अश्वमेधीय अश्व के लिए पृथ्वी, स्वर्गलोक, एवं पाताल हँड डाले। हँडते-हँडते अपना अश्व कपिलऋषि के आश्रम के पास मिलते ही, उन्होंने इस अश्व के चोरी का इल्जाम कपिल ऋषि पर लगाया। इस झूठे इल्जाम के कारण, कपिल ऋषि ने क्रुद्ध हो कर उन साठ हजार सगरपुत्रों को जला कर भस्म कर दिया। इस प्रकार इसके पुत्रों में से हृषिकेतु, सुकेतु, धर्मरथ, पंचजन एवं अंशुमत् नामक केवल पाँच ही पुत्र बच सके। उन्होंने इसका अश्वमेधीय अश्व अयोध्या में लया, एवं तदुपरांत इसने अपना अश्वमेध यज्ञ पूर्ण किया।

परिवार—इसकी निम्नलिखित दो पत्नियाँ थीं—
१. केशिनी (दौलिया, भानुमती), जो विदम्बकन्या थी, एवं जो इसकी ज्येष्ठ पत्नी थी (वायु. ८८.१५५);
२. प्रभा (सुमति), जो यादवराजा अरिष्टनेमि की कन्या थी (मत्स्य. १२.४२०)।

पुत्र—(१) केशिनीपुत्र—उपर्युक्त पत्नियों में से केशिनी से इसे असमंजस नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जो इसका वंशकर्ता एवं इसके पश्चात् अयोध्या नगरी का राजा बन गया (वायु. ८८.१५७); (२) प्रभापुत्र-प्रभा को साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुए, जो कपिल ऋषि के शाप के कारण दग्ध हो गये।

इसके साठ हजार पुत्रों के जन्म से संबंधित एक चमत्कृतपूर्ण कथा महाभारत में प्राप्त है। और्व ऋषि के आश्रम में पुत्रप्राप्ति के लिए तपस्या करने पर, इसकी पत्नी प्रभा को एक तुंडी उत्पन्न हुई। यह उसे फेंक देना चाहता था, किन्तु आकाशवाणी के द्वारा मना किये जाने पर इसने उस तुंडी के एक एक बीज निकाल कर साठ हजार वृत्तपूर्ण कल्पों में रख दिये, एवं उनकी रक्षा के लिए धान्य नियुक्त की। तदुपरांत उन कुंभों से इसके साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुए (म. व. १०४.१७; १०५.२)।

ब्रह्मांड के अनुसार, इसकी पत्नी प्रभा को पुत्र के रूप में एक मांसखंड उत्पन्न हुआ था, जिससे आगे चल कर, और्व ऋषि की कृपा प्रसाद से साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुए थे (ब्रह्मांड. ३.४८)।

आधुनिक अभ्यासकों के अनुसार, सगर राजा के साठ हजार पुत्रों के उपर्युक्त कथाभाग में इसके पुत्रों का नहीं, बल्कि अयोध्या राज्य की इसकी प्रजाजनों की ओर संकेत किया गया है, जो इसके राज्य में उत्पन्न हुए अकाल के कारण मृत हुए। आगे चल कर इसके पुत्र असमंजस के प्रवृत्त भगीरथ ने इसके राज्य में गंगा नदी को लय कर, इसका राज्य भ्रष्ट बना दिया। इस प्रकार भगीरथ के कारण, इसकी प्रजा को नवजीवन प्राप्त हुआ (भगीरथ देखिये)।

सागरोपद्वीप—इसके पुत्र जब इसका अश्वमेधीय अश्व हँड रहे थे, उस समय उन्होंने जेनुद्वीप के समीप के प्रदेश से आठ उपद्वीप उत्खनन कर के बाहर निकाले। ये ही द्वीप आगे चल कर 'सागरोपद्वीप' नाम से प्रसिद्ध हुए (भा. ५.१९.२९-३०)।

सगालव—सुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

संकट—धर्म एवं ककुभ के पुत्रों में एक (भा. ६.६.६)।

संकर गौतम—एक आचार्य, जो अर्यमराध गौतम, एवं पूषमित्र गोमिल नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम पुष्यशस औदवत्रि था (वे. ब्रा. ३.)।

संकल्प—धर्म एवं संकल्पा के पुत्रों में से एक। यह उदात्त जीवनहेतु का मानवीकरण प्रतीत होता है। इसके पुत्र का नाम काम था (भा. ६.६.१०.)।

संकल्पा—श्व प्रजापति की एक कन्या, जो धर्म ऋषि की दस पत्नियों में से एक थी। इसके पुत्र का नाम संकल था (भा. ६.६.४)।

संकील—एक मंत्रकार, जो वैश्य जाति में उत्पन्न हुआ था (ब्रह्मांड. २.३२.१२१; मत्स्य. १४५.१३६)।

संकु—कुकुर वंशीय शकु राजा का नामान्तर (शकु. १. देखिये)।

संकुसुक यामायन—एक वैदिक रुक्नदश (क. १०.१८)।

संस्कृति—एक क्षत्रोपेत ब्राह्मण, जो अपने तपस्या के कारण अंगिरस कुल का गोत्रकार, एवं मंत्रकार बन गया (ब्रह्मांड. २.३२.१०७; गुरु २. देखिये)।

२. (सो. पूरु.) एक पूर्ववशीय राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार नर राजा का पुत्र था। वायु में इसको 'संस्कृति' नामान्तर दिया गया है। इसकी पत्नी का नाम सत्कृति था, जिससे इसे रंतिदेव एवं गुरु नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. व. २७८.१७; द्रो. ६७.१५; भा. ९.२१.१-२)।

३. क्षत्रवंशीय संस्कृति राजा का नामान्तर।

संकोच—एक राक्षस, जो प्राचीनकाल में पृथ्वी का शासक था।

संक्रंदन—मौल्य मनु के पुत्रों में से एक।

२. विदर्भ देश का एक राजा, जो वपुष्मत् राजा का पिता था। इसके पुत्र वपुष्मत् ने दशार्णाधिप चारुवर्मन् राजा की कन्या सुमता का हरण करना चाहा। किन्तु निरर्ष्यत राजा के पुत्र दम ने उसे परास्त किया (निरर्ष्यत एवं सुमता देखिये)।

संक्रम—स्कंद का एक पार्षद, जो विष्णु के द्वारा उसे दिये गये तीन पार्षदों में से एक था। अन्य दो पार्षदों के नाम चक्र एवं विक्रम थे (म. श. ४४.१३)।

संग प्रायोगि—असंग प्रायोगि नामक आचार्य का नामान्तर (मै. सं. ३.१.९)।

संगत—(मौल्य. भविष्य.) एक मौल्यवंशीय राजा, जो सुयशस्य राजा का पुत्र, एवं शालिश्क राजा का पिता था (भा. १२.१.१४)। विष्णु में इसे दशरथ राजा का पुत्र कहा गया है।

संगर—एक ब्राह्मण, जो गंगास्तान के पुण्य के कारण यज्ञोभद्र नामक राजा बन गया (पद्म. क्रि. ३)।

संगव—दुर्योधन का गोशालाधिपति, जिसने घोषयात्रा युद्ध के समय दुर्योधन की सहाय्यता की थी (म. व. २२८.२)। पाठ—'संगम'।

संग्रह—समुद्र के द्वारा दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम विग्रह था (म. श. ४४.३३)।

संग्रामजित्—कृष्ण एवं भद्रा के पुत्रों में से एक। प्रभासक्षेत्र में हुए यादवीयुद्ध में सुभद्र ने इसका वध किया (भा. ३.७१.२५१)।

२. कृष्ण एवं शैब्यकन्या सुदेवी का पुत्र (ब्रह्मांड. ३. ७१.२५१)।

३. युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ४. १९)।

३. कर्ण का एक भाई, जो विराट के उत्तर-गोप्रहण

युद्ध के समय अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. वि. ५९. १८)।

सचैलेय—सचैलेय नामक अत्रिकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

सच्य—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार हविर्धान राजा का पुत्र था।

सजातंबी—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सजीवि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सज्जनाद्रोहक—धर्माकर नामक धार्मिक व्यक्ति का नामान्तर।

संचारक—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६९)।

संजय—लोकक्षि नामक शिवावतार का एक शिष्य।

२. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो वायु के अनुसार प्रतिपद राजा का, एवं भागवत के अनुसार प्रति राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम जय था। विष्णु में प्रतिक्षत्र राजा के पुत्र का नाम 'संजय' नहीं, बल्कि संजय दिया गया है (विष्णु. ४.९.२६)।

३. (सो. अनु.) अनुवंशीय संजय राजा का नामान्तर।

४. (सो. नील) नीलवंशीय पांचाल संजय राजा का पुत्र (संजय ७. देखिये)।

५. (सु. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सुपाश्र्व राजा का पुत्र था। भागवत में इसे चित्ररथ कहा गया है।

६. सौवीर देश का एक राजकुमार, जो विदुला नामक रानी का पुत्र था। इसके पिता की मृत्यु के पश्चात्, इस अल्पवयी राजा पर सिंधुराजा ने आक्रमण कर, इसे रण-भूमि से भागने पर विवश किया। उस समय इसकी माता विदुला ने बहुमूल्य उपदेश प्रदान कर, इसे पुनः एक बार युयुत्सु बनाया। विदुला के द्वारा इसे किया गया राजनीति पर उपदेश महाभारत में 'विदुला-पुत्र संवाद' नामक उपाख्यान में प्राप्त है (म. उ. १३१-१३४; विदुला देखिये)।

७. एक राजकुमार, जो सिंधु नरेश वृद्धक्षत्र का पुत्र, एवं जयद्रथ के स्यारह भाइयों में से एक था (म. व. २४९. १०)। जयद्रथ के द्वारा किये गये द्रौपदी-हरण के युद्ध में यह अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. व. २५५.२७)।

८. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

९. (सु. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु, विष्णु एवं भागवत के अनुसार रणजय राजा का, एवं मत्स्य के

अनुसार रणेजय राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम युद्धोद था (वायु. ९९.२८८; मत्स्य. २७१.११)।

१०. एक व्यास, जो वाराह कल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वंतर के सोलहवें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था (वायु. २३.१७१)।

संजय गावल्पाणि—धृतराष्ट्र राजा का सारथि, एवं सलाहगार मंत्री, जो सूत जाति में उत्पन्न हुआ था, एवं गवल्पाण नामक सूत का पुत्र था (म. आ. ५७.८२)। गवल्पाण का पुत्र होने के कारण, इसे 'गावल्पाणि' पशुक नाम प्राप्त हुआ था। यह उन 'वातिक' व्यवसायी लोगों में से था, जो महाभारतकाल में वृत्तनिवेदन एवं वृत्तप्रसारण का काम करते थे (वातिक देखिये)।

यह वेद व्यास का कृपापात्र व्यक्ति था, एवं अर्जुन एवं कृष्ण का बड़ा भक्त था। दुर्योधन के अत्याचारों का यह आज्ञम जोर से प्रतिवाद करता रहा। यह स्वामिभक्त, बुद्धिमान्, राजनीतिज्ञ एवं धर्मज्ञ था। यह धार्मिक विचार-वाला स्वामिभक्त मंत्री था, जिसने सत्य का अनुसरण कर सदैव सत्य एवं सच्ची बातें धृतराष्ट्र से कथन की।

धृतराष्ट्र का प्रतिनिधित्व—धृतराष्ट्र के प्रतिनिधि के नाते, यह युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था, जहाँ युधिष्ठिर ने इसे राजाओं की सेवा तथा संहार में नियुक्त किया था (म. स. ३२.५)। धृतराष्ट्र के आदेश से, काभ्यकवन में गये विदुर को बुलाने के लिए यह गया था (म. व. ७)।

भारतीय युद्ध के पूर्व, धृतराष्ट्र के राजदूत के नाते यह उपलब्ध नगरी में पांडवों से मिलने गया था। उपलब्ध नगरी में संजय के द्वारा किये गये दौल्यकर्म का सर्वस्वत वृत्तांत महाभारत के 'संजययानपर्व' में प्राप्त है (म. उ. २२-३२)।

अपने इस दौल्य के समय केवल राजदूत के नाते ही नहीं, बल्कि पांडवों के सच्चे मित्र के नाते, इसने उन्हें शान्ति का उपदेश दिया। इसने उन्हें कहा, 'संधि ही शांति का सर्वोत्तम उपाय है। धृतराष्ट्र राजा भी शांति चाहते हैं, युद्ध नहीं'। युधिष्ठिर ने संजय के उपदेश को स्वीकार तो किया, किन्तु यह शर्त रखी कि, यदि धृतराष्ट्र शान्ति चाहते हैं, तो इंद्रप्रस्थ का राज्य पांडवों को लौटा दिया जाय।

धृतराष्ट्र को उपदेश—हस्तिनापुर लौटते ही इसने सर्वप्रथम धृतराष्ट्र की एकांत में भेट ली, एवं उसे युद्ध डालने के लिए पुनः एक बार उपदेश दिया। इसने

धृतराष्ट्र से कहा, 'आनेवाले युद्ध में केवल कुंभकुल का ही नहीं, बल्कि अपनी समस्त प्रजा का भी नाश होगा, यह निश्चित है। विनाशकाल समीप आने पर बुद्धि मलिन हो जाती है, एवं अन्याय भी न्याय के समान दिखने लगता है। अपने पुत्रों की अन्धी ममता के कारण आज तुम युद्ध के समीप आ गये हो। युद्ध डालने का मौका अब हाथ से निकलता जा रहा है, तुम हर प्रयत्न कर पांडवों से संधि करो'।

दूसरे दिन, धृतराष्ट्र के खुली राजसभा में इसने युधिष्ठिर का शान्तसंदेश कथन किया, एवं पांडव पक्ष के सैन्य आदि का आन्वो देखा हाल भी कथन किया। इस कथन में इसने अर्जुन एवं कृष्ण के स्नेहमन्त्र पर विशेष जोर दिया, एवं कहा कि, कृष्ण का मैत्री पांडवों की सबसे बड़ी सामर्थ्य है (म. उ. ६६)।

श्रीकृष्ण का महिमा—पश्चात् यह पुनः एक बार धृतराष्ट्र के अंतःपुर गया, एवं वेदव्यास, गंधारी एवं विदुर की उपस्थिति में, इसने धृतराष्ट्र को श्रीकृष्ण का माहात्म्य विस्तृत रूप में कथन किया। इसने कहा, 'श्रीकृष्ण साक्षात् ईश्वर का अवतार हैं, एवं भरे ज्ञानदंड के कारण मैंने उसके इस रूप को पहचान लिया है। मैंने सारे आयुष्य में कभी भी कष्ट का आश्रय नहीं लिया, एवं किसी मिथ्या धर्म का आचरण भी नहीं किया। इस प्रकार ध्यानयोग के द्वारा मेरा अंतःकरण शुद्ध हो गया है, एवं उसी साधना के कारण, श्रीकृष्ण के सही स्वतः का ज्ञान मुझे हो पाया है'।

इसने आगे कहा, 'प्रमाद, हिंसा एवं भोग, इन तीनों के त्याग से परम पद की प्राप्ति, एवं श्रीकृष्ण का दर्शन शक्य है। इसी कारण तुम्हारा यही कर्तव्य है कि, इसी ज्ञानमार्ग का आचरण कर तुम मुक्ति प्राप्त कर लो (म. उ. ६७.६९)।

दिव्यदृष्टि की प्राप्ति—भारतीय युद्ध के समय, युद्ध देखने के लिए व्यास ने धृतराष्ट्र को दिव्यदृष्टि देना चाहा, किन्तु धृतराष्ट्र ने उस इन्कार किया; क्यों कि आपस में ही होनेवाले इस भयंकर संहार को नहीं देखना चाहता था। तदुपरान्त व्यास ने संजय को दिव्यदृष्टि का वरदान दिया, जिस कारण, युद्ध में घटित होनेवाली सारी घटनाओं का हाल, यह धृतराष्ट्र से कथन करने में समर्थ हुआ।

इस दिव्यदृष्टि के बल से, सामने की अथवा परोक्ष की, दिन रात में होनेवाली, तथा दोनों पक्षों

के मन में सोची हुई बातें इसे ज्ञात होने लगीं। इसी बदाम के साथ साथ, युद्ध में अवश्य एवं अजेय रहने का, एवं अत्यधिक परिश्रम करने पर भी थकान प्रतीत न होने का आशीर्वाद भी व्यास के द्वारा इसे प्राप्त हुआ था (म. भी. १६.८-९)।

युद्ध-कथन--इसने धृतराष्ट्र से भारतीय युद्ध का जो वर्णन सुनाया, वह युद्धक्षेत्रीय वृत्तनिवेदन का एक आदर्श रूप माना जा सकता है। कौन वीर किससे लड़ रहा है, कौन से वाहन पर वह सवार है, एवं कौन से अस्त्रों का प्रयोग वह कर रहा है, इन सारी घटनाओं की समग्र जानकारी संज्ञय के वृत्तनिवेदन में पायी जाती है।

संज्ञय के वृत्तनिवेदनकौशल्य की चरम सीमा इसके 'भगवद्गीता निवेदन' में दिव्याई देती है, जहाँ श्रीकृष्ण का सारा सन्वज्ञान ही नहीं, बल्कि उसके हावभाव, सुखमुद्रा भी प्रत्यक्ष की भाँति पाठकों के सामने खड़ी हो जाती है।

युद्ध में उपस्थिति—भारतीय युद्ध में, केवल वृत्तनिवेदक के नाते ही नहीं, बल्कि एक योद्धा के नाते भी इसने भाग लिया था। इसने धृष्टशुभ पर आक्रमण किया था, जिसमें यह उससे परास्त हुआ था। सात्यकि ने भी इसे एक बार मूर्च्छित किया था, एवं जीते जी इसे कर्न्त बनाया था। आंग चल कर व्यास की कृपा से यह सात्यकि के कैदस्थान से विमुक्त हुआ था (म. श. २४. ५०-५१)। युद्धभूमि से धृतराष्ट्र को उद्देश्य कर अपने सारे संदेश दुर्योधन इसीके ही द्वारा भेजा करता था (म. श. २८.४८-४९)।

इससे प्रतीत होता है कि, यह युद्धभूमि में स्वयं उपस्थित था। संभव है, यह युद्धभूमि की सारी घटनाएँ दिन में देख कर, रात्रि के समय धृतराष्ट्र को बताता रहा हो।

युद्धोपरान्त--युद्ध समाप्त हो जाने बाद, इसकी दिव्य-दृष्टि विनष्ट हुई (म. सौ. ९.५८)। युधिष्ठिर के राज्या-रोहण के पश्चात्, उसने इस पर राज्य के आध्यक्ष्य निराक्षण का कार्य सौंप दिया था (म. शां. ४१.१०)।

वनगमन--अंत में विदुर की सलाह से यह धृतराष्ट्र एवं गांधारी के साथ वन में चला गया (भा. १.१३. २८-५७)। यह वन में धृतराष्ट्र की हर प्रकार की सेवा करता था, एवं उसके साथ विभिन्न विषयों पर वादसंवाद भी करता था।

एक बार वन में लग गये दावानल में धृतराष्ट्र फँस गया। उस समय उसे बचाने की कोशिश इसने की, किंतु इसके सारे प्रयत्न अवफल होने पर, इसने धृतराष्ट्र से अपना कर्त्तव्य पूछा। उस समय धृतराष्ट्र ने इससे कहा, 'मेरे जैसे वानप्रस्थियों के लिए यह मृत्यु अनिष्टकारी नहीं है, बल्कि उत्तम ही है। तुम जैसे गृहस्थ धर्मियों के लिए इस प्रकार आत्मघात करना उचित नहीं है, अतः मेरी यही इच्छा है, कि तुम यहाँ से भाग जाओ'।

धृतराष्ट्र के कथनानुसार यह दावानल से निकल पड़ा। पश्चात् धृतराष्ट्र, गांधारी एवं कुन्ती के साथ मरम हुआ। पश्चात् इसने गंगातट पर रहनेवाले तपस्वियों को धृतराष्ट्र के दग्ध होने का समाचार सुनाया, एवं यह हिमालय की ओर चला गया (म. आश्र. ४५.३३)।

संज्ञाति--पूर्ववंशीय संज्ञाति राजा का नामांतर (संज्ञाति ३. देखिये)।

संज्ञा--त्वष्ट्र की कन्या, जो विवस्वत् की पत्नी थी। पौराणिक साहित्य के अनुसार, इसे मनु, यम एवं यमी नामक संतान उत्पन्न हुई। तत्पश्चात् सूर्य का तेज अधिक काल तक न सह सकने के कारण, इसने छाया नामक अपनी नौकरानी को सूर्य के पास पत्नी के नाते भेज दिया, एवं यह स्वयं तपस्या करने लगी गयी (भा. ८.१३.८-९)।

छाया को यम से शनैश्चर, मनु सावर्णि एवं तपती नामक तीन संतान उत्पन्न हुए। तीन संतान उत्पन्न होने के पश्चात्, यम को छाया का सही रूप ज्ञात हुआ, एवं वह संज्ञा को ढूँढने के लिए बाहर निकला। तद्दुपरान्त उत्तर कुरु देश के तपोवन में एक अधि के रूप में तपस्या करनेवाली संज्ञा से उसकी भेंट हुई। उसने अश्व का रूप धारण कर संज्ञा से संभोग किया, जिससे इसे अधिनी कुमार एवं रेवंत नामक और दो पुत्र उत्पन्न हुए (म. आ. ७.३४; अनु. १५०.१७-१८)।

विवस्वत् के तेज का आधिक्य सहन न सकने की तक्रार इसने अपने पिता विश्वकर्म्मन् से की। इस कारण विश्वकर्म्मन् ने विवस्वत् का बहुत सारा तेज दोगुण किया, एवं उसीसे विष्णु का सुदर्शन चक्र, शिव का विशूल, कुबेर का पुष्पक विमान, एवं कार्तिकेय की शक्ति का निर्माण किया (ब्रह्मांड. २.२४.९०; सर्वर्णा एवं छाया देखिये)।

संज्ञेय--(सो. सह.) सोमवंशीय संहत राजा का नामांतर।

सती--अंगिरस् ऋषि की पत्नी, जिसने अयर्वेन

अंगिरस् को पुत्र के रूप में स्वीकार किया (भा. ६.६. १९)।

२. दक्ष एवं प्रसूति की कन्या, जो देवी का एक प्रमुख अवतार मानी जाती है (देवी तथा शक्ति देखिये)। विष्णु के अंश से यह उत्पन्न हुई (पद्म. सू. १९)। नारी सृष्टि का निर्माण करना देवी के इस अवतार का प्रमुख उद्देश्य था (शिव. शत. ३; दे. भा. ७)।

इसके पति शिव का अपमान किये जाने के कारण, इसके दक्षयज्ञ के अत्रिकुण्ड में आत्माहुति देने की कथा सभी पुराणों में प्राप्त है (भा. ४; वायु. १०.२७; मत्स्य १३.१४-१६; पद्म. सू. ५; कार्तिक. १८)। किन्तु शिव के द्वारा इसका त्याग किये जाने के कारण, इसके देहत्याग करने की चमत्कृतिपूर्ण कथा भी कई पुराणों में प्राप्त है (शिव. रुद्र. स. २५)।

३. विश्वामित्रऋषि की पत्नियों में से एक।

सत्यकर्मन्—(सो. अनु.) एक राजा, जो धृतव्रत राजा का पुत्र, एवं अधिरथ राजा का पिता था (भा. १. २३.१२)।

विष्णु एवं वायु में इसे सत्यवर्मन् कहा गया है। यह स्वयं 'सूतवृत्ति' से रहता था। किन्तु एक ब्राह्मणकन्या से इसने विवाह किया था।

सकृत्—पृथक् देवों में से एक।

संकृति—संकृति राजा की पत्नी, जो रंतिदेव राजा की माता थी। मत्स्य में इसे संकृति राजा के पुत्र महायशस की कन्या कहा गया है (मत्स्य. ४९.३७)।

सत्य—कलिा देश का एक योद्धा, जो कलिंगराजा श्रुतायु का चक्ररक्षक था। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ५०. ६९)।

२. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो हविर्धान एवं हविर्धानी के पुत्रों में से एक था।

३. उत्तम मन्वन्तर का एक देवविशेष (भा. ८.१०. २४)।

४. ब्रह्मसवर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (भा. ८.१३.२२)।

५. दस विश्वेदेवों में से एक (वायु. ६६.५१)।

६. एक राजा, जो वीतहव्यवंशीय वितत्य राजा के पुत्रों में से एक था। इसके पुत्र का नाम संत था (म. अनु. ३०.६२)।

७. एक देव, जो अंगिरस् एवं सुस्था के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. १९६.२)।

८. तामस मन्वन्तर का एक देवविशेष।

९. दक्षसवर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

१०. उत्तम मन्वन्तर का एक अवतार, जो सत्या का पुत्र माना जाता है।

११. अट्टाईस व्यासों में से एक, जो दूसरे द्वारा में उत्पन्न हुआ था।

१२. उच्छ्रुति नामक ब्राह्मण का अवतार (उच्छ्रुति देखिये)। यह विदर्भदेश में रहता था, एवं इसने एक अहिंसापूर्ण यज्ञ आयोजित किया था (म. शां. २६४)।

१३. सुधामन् देवों में से एक।

१४. अमिताभ देवों में से एक।

१५. आभूतरजस् देवों में से एक।

१६. एक आचार्य, जो व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था।

१७. तामस मन्वन्तर का एक देवगण, जिनमें निम्नलिखित देव शामिल थे—१. अश्व; २. आमद; ३. क्षेम; ४. दिक्पति; ५. दिवि; ६. बृहद्रथु; ७. चक्षुधामव; ८. वाक्पति; ९. विश्व; १०. शंभु; ११. सदश्व; १२. स्वमृडिक (ब्रह्मांड. २.३४-३५)।

१८. युधिष्ठिरी की सभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.८)।

१९. निष्कृति नामक अग्नि का नामान्तर (निष्कृति देखिये)।

सत्यक—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो शिनि राजा का पुत्र, एवं युयुधान (सत्यकि) राजा का पिता था (म. आ. ५.७.८८; भा. ९.२४.१३-१४)। श्रीकृष्ण के द्वारा रैवतक पर्वत पर आयोजित किये गये उत्सव में यह उपस्थित था (म. आ. २.११.११)। अभिमन्यु की मृत्यु पश्चात्, उसका श्राद्धकर्म इसीके द्वारा किया गया था (म. आश्व. ६.१.६)। मत्स्य में इसे 'सत्यवन्' कहा गया है (मत्स्य. ४५.२२)।

इसका विवाह काशिराज की कन्या से हुआ था, जिससे इसे ककुद, भजमान, शमी एवं कंत्रलवर्द्धिप नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (वायु. ९६.११५)।

२. रैवत मनु के पुत्रों में से एक।

३. कृष्ण एवं भद्राके पुत्रों में से एक (भा. १०.६.१.१७)।

४. तामस मन्वन्तर का एक देवगण।

सत्यकर्मन्—(सो. अनु.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार धृतव्रत राजा का पुत्र, एवं अतिरथ राजा का पिता था (वायु. ९९.११७)।

सत्यकर्मन त्रैवर्त—त्रिगर्तराज सुशर्मन का एक भाई, जो एक 'संघातक' घोड़ा था (म. द्रो. १६.१७-२०)। अर्जुन ने इसका वध किया (म. श. २६.३७)।

सत्यकाम जाबाल—एक सुविख्यात तत्त्वज्ञ, जो जगदाल नामक स्त्री का पुत्र था। मन को ही परब्रह्म मानने वाला यह आचार्य याज्ञवल्क्य वाजसनेय ऋषि का समकालीन था (श्रु. उ. ४.१.६ काण्व.)।

जन्म—जगदाला नामक दासी से किसी अज्ञात पुरुष से यह उत्पन्न हुआ था। इसके जन्म से संबंधित एक सविस्तृत कथा छांदोग्य उपनिषद में प्राप्त है, जहाँ उच्च कुल में जन्म होने की अपेक्षा अज्ञात एवं तप अधिक श्रेष्ठ है, यह तत्त्व प्रतिपादित किया गया है।

यह अपनी माता से उस पुरुष के द्वारा उत्पन्न हुआ, जिसका नाम उसे ज्ञात न था। लज्जा के कारण, उसने कभी भी उसका नाम न पूछा था। इसके जन्म के पश्चात् थोड़े ही दिनों में इसका पिता मृत हो गया, जिस कारण इसे अपने पिता का नाम सदैव अज्ञात ही रहा।

आगे चल कर यह गौतम हरिदुमत नामक आचार्य के पास शिक्षा पाने के लिए गया। वहाँ गौतम ऋषि के द्वारा इक्ष्वा गोत्र आदि पूछे जाने पर इसने उसे अपनी सारी हस्तकृत कह सुनायी, एवं कहा, 'मेरा जन्म ऐसे पिता से हुआ है, जिसका नाम मुझसे अज्ञात है। मेरी माता का जगदाला नाम ही केवल मुझे ज्ञात है'।

इसके सत्यभाषण के कारण गौतम ऋषि अत्यधिक प्रसन्न हुए, एवं उसने इसका उपनयन कर इसे ब्रह्मचर्य-श्रुत की दीक्षा दी।

विक्षा—तदुपरान्त यह गौतम ऋषि के आश्रम में ही रह कर अध्ययन करने लगा। इसी कार्य में यह अनेक वर्षों तक अरण्य में रहा। छांदोग्य-उपनिषद में प्राप्त रूपकात्मक निर्देश से प्रतीत होता है कि, यह चारलौ गावें ले कर अरण्य में गया, एवं उनकी संख्या एक सहस्र होने के काल तक यह अरण्य में रहा।

ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति—इसे ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति किस प्रकार हुई, इसकी सविस्तृत जानकारी छांदोग्य-उपनिषद में प्राप्त है। वायु देवता के अंश में उत्पन्न हुए एक वृषभ ने इसे ब्रह्मज्ञान का चौथा हिस्सा सिखाया। आगे चल कर गौतम ऋषि के आश्रम में स्थित अग्नि ने इसे ब्रह्मज्ञान का अन्य चौथा हिस्सा सिखाया। ब्रह्मज्ञान के चार्की दो हिस्से इसे हंस का रूप धारण करनेवाले आदित्य ने, एवं

मद्गु नामक जलचर प्राणि का रूप धारण करनेवाले प्राण ने प्रदान किये।

इस प्रकार संपूर्ण ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर यह गौतम ऋषि के आश्रम में लौट आया। तत्पश्चात् इसका मुख्यावलोकन कर, गौतम ऋषि ने इससे कहा, 'संपूर्ण ब्रह्मज्ञान तुझे हो चुका है। जो ज्ञान तुझे हुआ है, उससे बढ़ कर अधिक ज्ञान इस संसार में कहीं भी प्राप्त होना असंभव है' (छां. उ. ४.४-९)।

तत्त्वज्ञान—आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिए सुयोग्य गुरु के उपदेश की अत्यधिक आवश्यकता है, ऐसा इसका मत था। परमार्थ की साधना के लिए नैतिक सद्गुणों की अत्यधिक आवश्यकता रहती है। किन्तु इस सदाचरण के कारण परमार्थ ज्ञान की केवल पूर्वतैयारी मात्र होती है, इस ज्ञान का उपदेश केवल सुयोग्य गुरु ही कर सकता है, ऐसा इसका अभिमत था (छां. उ. ४.१.९)। इसका यह अभिमत समस्त औपनिषदिक वाङ्मय में पुनः पुनः पाया जाता है।

अंतिम सत्य की व्याख्या औपनिषदिक साहित्य में अनेक प्रकार से की गयी है। इस अंतिम तत्त्व का साक्षात्कार मानवी इंद्रियों के द्वारा नहीं, बल्कि मानवी मन से होता है, ऐसे कथन करनेवाले आचार्यों में सत्यकाम जाबाल प्रमुख माना जाता है। इसके इसी अभिमत का विकास आगे चल कर याज्ञवल्क्य वाजसनेय ने किया, जिसने संसार के अंतिम तत्त्व का साक्षात्कार केवल आत्मा के द्वारा हो सकता है, यह तत्त्व प्रस्थापित किया (याज्ञवल्क्य वाजसनेय देखिये)।

सृष्टि का आद्य अधिष्ठान—सृष्टि का मूल कारण सूर्य, चंद्र, विद्युत् आदि पंचमहाभूत न हो कर, आँसों से प्रतीत होनेवाले आद्य पुरुष के दर्शन से ही सृष्टि के मूल कारण का ज्ञान हो सकता है, ऐसा इसका अभिमत था। औपनिषदिक तत्त्वज्ञान की उत्कृष्टता के इतिहास में पंचमहाभूतों को सृष्टि का आधार मानने की शुरु में प्रवृत्ति थी। इस प्रवृत्ति को हटा कर पंचेन्द्रियों को सृष्टि का आद्य अधिष्ठान माननेवाले कई आचार्यों की परंपरा आगे चल कर उत्पन्न हुई, जिसमें सत्यकाम जाबाल प्रमुख था। इसी कल्पना का विकास आगे चल कर याज्ञवल्क्य वाजसनेय ने किया, जिसने सृष्टि के आद्य अधिष्ठान के रूप में मानवी आत्मा को दृढ़ रूप से प्रतिष्ठापित किया।

सत्यकाम-उपकोसल संवाद—सत्यकाम के इसी तत्त्वज्ञान का रूपकात्मक चित्रण करनेवाली एक कथा छांदोग्य

उपनिषद् में प्राप्त है। इसके उपकोसल नामक शिष्य ने बाराह वर्षों तक इसके आश्रम में रह कर अध्ययन किया। आगे चल कर सृष्टि के अंतिम सत्य का ज्ञान प्राप्त करने के लिए उपकोसल अरण्य में गया। वहाँ उसके द्वारा उपासित 'गार्हपत्य', 'अन्वाहार्य' एवं 'आहवनीय' नामक तीन अग्नि मनुष्य रूप धारण कर उसके सम्मुख उपस्थित हुए, एवं उन्होंने सृष्टि का अंतिम तत्त्व क्रमशः सूर्य, चंद्र, एवं विद्युत् में रहने का ज्ञान इसे प्रदान किया।

आगे चल कर उपकोसल ने अग्नि देवताओं के द्वारा प्राप्त हुए आत्मज्ञान की कहानी इसे कथन की। उस समय उसे प्राप्त हुए ज्ञान की विकलता बताते हुए इसने उसे कहा, 'अग्नि देवताओं ने जो ज्ञान तुझे बताया है, वह अपूर्ण है। सृष्टि के अंतिम तत्त्व का दर्शन सूर्य, चंद्र एवं विद्युत् में नहीं, बल्कि मनुष्य के आँखों में दिखाई देनेवाले इस संसार की प्रतिबिम्ब में ही पाया जाता है। तत्त्वज्ञ जिसे अमृत, अभय, एवं तेजःपुंज आत्मा बताते हैं, वह इस प्रतिबिम्ब में ही स्थित है'।

सत्यकाम के इस तत्त्वज्ञान में आधिमौलिक सृष्टि कनिष्ठ मान कर मानवी देहान्ता उससे अधिक श्रेष्ठ बताया गया है। इस प्रकार बाह्य सृष्टि को छोड़ कर मानवी शरीर की ओर तत्त्वज्ञों की विचारधारा इसने केंद्रित की, यही इसके तत्त्वज्ञान की श्रेष्ठता कही जा सकती है।

अन्य निर्देश—शतपथ ब्राह्मण, बृहदारण्यक उपनिषद् आदि ग्रंथों में इसके अभिमतों के उद्धरण अनेक बार पाये जाते हैं। इनमें से शतपथ ब्राह्मण में यज्ञहोम के संबंध में इसका अभिमत षण्य ऋषि के साथ उद्धृत किया गया है (श. ब्रा. १३.५.३.२)। राज्याभिषेक के समय पठन किये जानेवाले मंत्र का इसके द्वारा सूचित किया गया एक विभिन्न पाठ ऐतरेय ब्राह्मण में प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ८.७)।

मैत्रि उपनिषद् में भी इसके नाम का निर्देश प्राप्त है (मै. उ. ६.५)। किन्तु अन्य उपनिषद् ग्रंथों में निर्दिष्ट सत्यकाम से यह आचार्य अलग प्रतीत होता है।

२. एक आचार्य, जो जानकि आयस्थूष नामक आचार्य का शिष्य था (वृ. उ. ६.३.१२ काण्व.)।

सत्यकाम शैष्य—एक तत्त्वज्ञ आचार्य, जो आत्मज्ञान प्राप्त करने के हेतु पिप्पलाद के पास गये हुए पाँच आचार्यों में से एक था। प्रणवक ध्यान करने से आत्मज्ञान प्राप्त होता है, या नहीं, इस संबंध में इसने पिप्पलाद से प्रश्न पूछे थे (प्र. उ. १.११.५.१)।

सत्यकामा—मङ्गकार राजा की कन्या, जो श्रीकृष्ण की पत्नी थी।

सत्यकेतु—(सो. क्षत्र.) एक महाराजकी राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार धर्मकेतु राजा का पुत्र, एवं धृष्टकेतु राजा का पिता था (भा. ९.१७.८-९)।

२. एक यज्ञ, जिसने अर्सेन राजा की पत्नी पद्मावती का हरण किया था (गोमिल २. देविवे)।

सत्यघोष—एक शूद्र, जिसके पुत्रों के नाम गर एवं सगर थे (पञ्च. क्रि. ३)।

सत्यजिन्—एक नाग, जो कश्यप एवं कट्ट के पुत्रों में से एक था।

२. उत्तम मन्वन्तर का इंद्र (भा. ८.१.२४)।

३. एक यज्ञ, जो कार्तिक माह के विष्णु के साथ भ्रमण करता है।

४. एक यादव राजा, जो आनक एवं कंका का पुत्र था (भा. ९.२४.४१)।

५. (सो. मगव. भविष्य.) एक राजा, जो सुनीथ राजा का पुत्र, एवं विश्वजिन् राजा का पिता था। वायु एवं ब्रह्मंड में इसे सुनेत्र राजा का पुत्र कहा गया है (भा. ९.२२.४५)।

६. पांचाल देश के द्रुपद राजा का भाई, जो भारतीय युद्ध में द्रोण के द्वारा मारा गया (म. आ. परि. १.७८-७९; द्रो. २०.१६)।

७. मरुतों के द्वितीय गण में से एक (वायु. ६७.१२४)।

सत्यज्योति—मरुतों के प्रथम गण में से एक (वायु. ६७.१२३)।

सत्यतपस्—उत्थय नामक ऋषि का नामान्तर। इसे 'सत्यवत' नामान्तर भी प्राप्त था। यह सदैव सत्यभाषण ही करता था, जिस कारण इसे 'सत्यतपस्' एवं 'सत्यवत' नाम प्राप्त हुए थे। सत्य हमेशा सापेक्ष रहता है, इस तत्व का प्रतिपादन करने के लिए इसकी कथा देवी भागवत में दी गयी है (दे. भा. ३.११)।

यह शुरु में अव्येत आचारहीन एवं विद्याहीन पुरुष था। किन्तु एक बार सहज ही इसके मुख से 'ऐ' नामक 'सारस्वत वीजमंत्र' का उच्चारण होने के कारण, यह ऋषि बन गया, एवं सत्यकथन की विभिन्न मयांग इसे ज्ञात हुई।

एक बार एक व्याध एक बराह का पीछा करता हुआ इसके पास आया, एवं इससे बराह का पता पूछने लगा। इस समय अपने सत्यकथन से बराह की मृत्यु हो

जायेगी, यह जान कर इस सत्यप्रतिज्ञे मुनि ने मौन धारण किया।

२. एक ऋषि, जिसने अपने तप को भंग करने के लिए आगी हुई अम्बरा को वेर का वृक्ष बनने का शाप दिया था। आगे चल कर उन अम्बराओं का भरत ऋषि ने उद्धार किया (पद्म. उ. १७८; भरत १०, देखिये)।

३. एक कृष्णभक्त ऋषि, जो अपने अगले जन्म में ऋदा नामक गोपी बन गया।

सत्यतर—एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की ऋक्षिष्यपरंपरा में से सत्यहित नामक आचार्य का पुत्र एवं शिष्य था (वायु. ६०.२९)।

सत्यदृष्टि—पृथुक देवों में से एक।

सत्यदेव—कलिग देश का एक योद्धा, जो कल्किराज श्रुतायु का चक्ररक्षक था। भारतीय युद्ध में भीमसेन ने इसका वध किया (म. भी. ५०.६९)।

सत्यदेवी—देवक राजा की कन्या, जो वसुदेव की सात पत्नियों में से एक थी (मत्स्य. ४४.७३)।

सत्यधर्म—बर्षावर्षिण मनु के पुत्रों में से एक।

सत्यधर्मन्—एक राजा, जिसकी कथा गंगास्तान एवं नामभरण का माहात्म्य बताने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. कि. ९)।

सत्यधर्मन् त्रैगर्त—त्रैगर्त राज सुशर्मन् का एक भाई, जो एक 'संशप्तक' योद्धा था (म. द्रो. १६.१७-२०)। अर्जुन ने इसका वध किया (म. श. २६.३६)।

सत्यधर्मन् सोमक—सोमकवंशीय राजकुमार, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. १९.२५)।

सत्यधृत—(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार पुष्पवन् राजा का पुत्र, एवं सुधन्वन् राजा का पिता था। भागवत एवं वायु में इसे 'सत्यहित', एवं मत्स्य में 'सत्यधृति' कहा गया है।

सत्यधृति—(सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार कृतिमत् राजा का, तथा मत्स्य एवं वायु के अनुसार धृतिमत् राजा का पुत्र था (भा. ९.२१.२७; मत्स्य. ४९.७०)।

२. एक ऋषि, जो शतानन्द ऋषि का पुत्र, एवं शरद्वत् गौतम ऋषि का पिता था (भा. ९.२१.३५)। भागवत में प्राप्त इस निर्देश से यह शरद्वत् गौतम ऋषि का नामान्तर प्रतीत होता है।

३. पांचालराज द्रुपद का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में द्रोण के द्वारा मारा गया (म. क. ४.८१)।

४. (सो. वसु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सारण राजा का पुत्र था (विष्णु. ४.१५.२१)।

५. (सो. ऋक्ष.) ऋक्षवंशीय सत्यधृत राजा का नामान्तर (सत्यधृत देखिये)।

६. (सु. निमि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार महावीर्य राजा का पुत्र था। वायु एवं भागवत में इसे सुधृति कहा गया है।

७. बलराम के पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. ३.७१. १६६)।

सत्यधृति क्षेमि—पाण्डवपक्ष का एक योद्धा, जो क्षेम राजा का पुत्र था (म. द्रो. २२.४८)।

सत्यधृति वारुणि—एक वैदिक स्वतद्रष्टा (ऋ. १०.१८५)।

सत्यधृति सौचित्य—पाण्डव पक्ष का एक महारथी योद्धा, जो सुचित राजा का पुत्र था (म. उ. परि. १.१४. १२)। पाण्डवपक्ष में इसकी श्रेणि 'रथोदार' थी, एवं स्वयं भीष्म ने भी इसके युद्धकौशल्य की स्तुति की थी। यह अस्त्रविद्या, धनुर्वेद एवं ब्राह्मवेद में पारंगत था (म. द्रो. २२.४८)।

द्रौपदी स्वयंवर में यह उपस्थित था। इसके रथ के अश्व लाल रंग के थे, एवं सुवर्णमय विचित्र कवचों से वे सुजोमित थे। भारतीय युद्ध के आरंभ में इसने द्रुपद की सहायता की थी (म. भी. ८९.१२)। अंत में द्रोण ने इसका वध किया (म. क. ४.८३)।

सत्यध्वज—(सु. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो ऊर्ज्वह राजा का पुत्र था। भागवत एवं वायु में इसे क्रमशः 'सनद्वाज' एवं 'सुतद्वाज' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम शकुनि था।

सत्यनेत्र—वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

सत्यपाल—युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१२)।

सत्यभामा—श्रीकृष्ण की रानी, जो यादवराजा सत्राजित् (भङ्गकार) की कन्या थी। सत्राजित् राजा ने स्वयंसेवक मणि के चोरी का झूठा दोष कृष्ण पर लगाया। इस संबंध में कृष्ण संपूर्णतया निर्दोष है, इसका सचूत प्राप्त होने पर सत्राजित् ने कृष्ण से क्षमा माँगी, एवं अपनी उद्येष्ठ कन्या सत्यभामा उसे विवाह में अर्पित की। इसके

विवाह के समय, सत्राजिन् ने स्वयंसेवक मणि भी वरदक्षिणा के रूप में देना चाहा, किन्तु कृष्ण ने उसे लौटा दिया।

इस सत्या नामान्तर भी प्राप्त था। यह अत्यंत स्वल्पमुद्र थी, एवं अक्षर आदि अनेक यादव राजा इससे विवाह करना चाहते थे। किन्तु उन्हें टाल कर सत्राजिन् ने इसका विवाह कृष्ण से कर दिया।

प्रासाद—श्रीकृष्ण के द्वारा इसका नगरी में इसके लिए एक सत्य प्रासाद बनवाया गया था, जिसका नाम सतिवन् था (म. स. परि. १.२१.१२४?)।

सत्राजिन् का वध—आगे चल कर कृष्ण जब बलराम के साथ पाण्डवों से मिलने हस्तिनापुर गया था, वहीं सुभ्रवसर समझ कर यादवराजा शतधन्वन् ने इसके पिता सत्राजिन् का वध किया। अपने पिता का मृत्यु के पश्चात् इसने उसका शरीर तैल आदि द्रव्यों में सुरक्षित रखा, एवं यह श्रीकृष्ण को वृत्तान्त के लिए हस्तिनापुर गयी। पश्चात् इसीके द्वारा प्रार्थना किये जाने पर श्रीकृष्ण ने शतधन्वन का वध किया (सत्राजिन् देखिये)।

पारिजात वृक्ष की प्राप्ति—नरकासुर के युद्ध के समय, एवं कृष्ण के इंद्रलोक गमन के समय, यह उसके साथ उपस्थित थी। स्वर्ग की इसी यात्रा में इसने पारिजात वृक्ष को देना। आगे चल कर नारदके द्वारा लिये गये पारिजात पुष्प, कृष्ण ने इसे न दे कर, अपनी हस्तिनापी आदि अन्य रानियों को दे दिया। इस कारण क्रुद्ध हो कर इसने कृष्ण से प्रार्थना की कि, वह इंद्र से युद्ध कर उससे पारिजात-वृक्ष प्राप्त करे। तदनुसार कृष्ण ने पारिजात वृक्ष की प्राप्ति कर ली (भा. १०.५९; ह. वं २.६४-७३; विष्णु. ५.३०)।

द्रौपदी से उरुदेश—पाण्डवों के वनवास काल में यह श्रीकृष्ण के साथ उनसे मिलने गयी थी। उस समय इसने द्रौपदी से पूछा था कि, अपने पति को वध करने के लिए त्वी यो क्या करना चाहिए। उस समय द्रौपदी ने इसे सलाह दी, 'अहंकार छोड़ कर निर्दोष वृत्ति से पति की सेवा करना ही पति की प्रीति प्राप्त करने का उत्कृष्ट साधन है। मैं ने स्वयं ही यही मार्ग अनुसरण किया है'।

भोलापन—इसका भोलापन एवं कृष्ण की प्रीति प्राप्त करने के लिए इसके विभिन्न प्रयत्न आदि की अनेक रोचक कथाएँ पौराणिक साहित्य में प्राप्त हैं। एक बार इसने नारद से प्रार्थना की कि, पति के रूप में श्रीकृष्ण उसे अगले जन्म में प्राप्त होने के लिए कोई न कोई व्रत

वह इसे बताये। उस समय इसका मजाक उड़ाने के हेतु नारद ने इसे कहा कि, पारिजात वृक्ष का एवं स्वयं श्रीकृष्ण का दान उठे कर देने से उसकी यह इच्छा पूरी हो सकती है। नारद की यह सलाह सच मान कर इसने इन दोनों का दान नारद को कर दिया। पश्चात् अपना भूल ज्ञात होने पर इसने नारद से क्षमा माँगी, एवं उसे विपुल दक्षिण प्रदान कर कृष्ण एवं पारिजात उसके पुनः प्राप्त किये।

कृष्णनिर्वाण के पश्चात्—कृष्ण का निर्वाण होने के पश्चात्, यह स्वर्गलोक की प्राप्ति करने के हेतु तपस्या करने के लिए वन में चली गयी (म. मौ. ८.७२)।

परिवार—इसकी संतान की नामावलि विभिन्न पुराणों में प्राप्त है, जो निम्न प्रकार हैं :—१. विष्णु वं—भानु एवं मैमरिक (विष्णु. ५.३२.१); २. भागवत वं—भानु, सुभानु, स्वभानु, प्रभानु; बृहद्भानु, भानुमन्, चंद्रभानु, अतिभानु श्रीभानु एवं प्रतिभानु (भा. १०.६१.१०); ३. ब्रह्मवं एवं वायु वं—भानु, भानु, अश्व, रोहित, मध्य, अश्वक, तम्रवक्र, सोमरि, वंशधम नामक पुत्र; एवं भानु, मैमरिका, ताम्रवर्णी, उरुवमा नामक कन्याएँ (ब्रह्मव. ३.७. २४७; वायु. ९६.२४०)।

सत्ययज्ञ पौलुषि प्राचीनयोग्य—एक आचार्य, जो पुत्रपुत्र एवं प्राचीनयोग नामक आचार्यों का वंशज था (श. ब्रा. १०.६.१.१; छां. उ. ५.११.१)। कई अन्य ग्रंथों में, इसे 'पुत्रपुत्र प्राचीनयोग्य' भी कहा गया है (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

सत्ययज्ञ पौलुषित—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. १. ३९.१)।

सत्यरता—एक केकय राजकन्या, जिसका विवाह अयोध्या के सत्यव्रत शिशुकु से हुआ था (वायु. ८८. ११७)।

सत्यरथ—(सु. निनि.) विदेह देश का एक राजा, जो भागवत के अनुसार समरथ राजा का, एवं विष्णु के अनुसार मीनरथ राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम उपगुरु था (भा. ९.१३.२४)।

२. (सो. अनु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुगत चित्ररथ राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४८.९४)।

३. (सु. इ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सत्यव्रत राजा का पुत्र था (मत्स्य. १२.३७)।

४. विदर्भ देश का एक राजा, जिसे सत्यसंघ नामांतर भी प्राप्त था (स्कंद. ३.३.६)। शिवपूजा का माहात्म्य

कथन करने के लिए इसकी कथा 'शिवपुराण' में की गयी है (शिव. शत. ३१; वाङ्मय २. देखिये)।

सत्यरथ त्रैगर्तै—एक राजकुमार, जो त्रिगर्तराज सुशर्मन् का भाई था। अपने पाँच 'रथी' (रथोदार) कथुओं का यह नेता था (म. उ. १६३.११)।

भारतीय युद्ध में एक संशप्तक योद्धा के नाते यह कौरवों के पक्ष में शामिल था, एवं इसने अर्जुन को मारने की प्रतिज्ञा की थी (म. द्रो. १६.१७-२०)। किन्तु अंत में अर्जुन ने इसका वध किया (म. श. २६.४६)।

सत्यवचस् राथीतर—एक तत्त्वज्ञ आचार्य, जो सत्यकथन का विद्वेष पुरस्कृत था (तै. उ. १.९.१)। रथीतर का वंशज होने से, इसे 'राथीतर' वैवृक नाम प्राप्त हुआ था।

सत्यवन्—एक राजा, जो शात्वन्तरंश गुमस्तेन का पुत्र, एवं मद्रराज अश्वपति की कन्या सावित्री का पति था। इसे वचन से अश्वों के चित्र चित्रित करने का शौक था, जिस कारण इसे 'चित्राश्व' नामांतर भी प्राप्त था।

इस अत्यायु राजकुमार के प्राण यमधर्म के पंजे से युद्धाने का कार्य इसकी पत्नी सावित्री ने अपने पातित्रत्य-सामर्थ्य से किया, जिस कारण ये दोनों अमर हो गये (सावित्री देखिये)।

१. (सो. वृष्णि.) यादववंशीय सत्यक राजा का नामांतर। मत्स्य में इसे शिति राजा का पुत्र कहा गया है (सत्यक ४. दोग्रवे)।

४. तेजपुर नगरी का एक राजा, जो ऋतेभर राजा का पुत्र था। इसका पिता ऋतेभर परम रामभक्त, गो-सेवक एवं दानो राजा था। राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, उसका अश्वमेधीय अश्व शत्रुत्र के द्वारा इसकी नगरी में लब्ध गया। उस समय इसने शत्रुत्र का सहर्ष स्वागत किया, एवं अश्वरक्षक बन कर उसके साथ यह आगे बढ़ा (पद्म. पा. ३०-३२)।

सत्यवती—शांतनु राजा की पत्नी, जो चित्रांगद एवं विचित्रवीर्य राजाओं की माता थी। इसे 'काली', 'मत्स्यगंधा', 'गंधवती', 'योजनगंधा', 'गंधकाली' आदि नामान्तर भी प्राप्त थे।

जन्म—यह उपरिचर वसु राजा की कन्या थी। इसकी माता का नाम अद्रिका था, जो ब्रह्मा के शाप के कारण मछली का स्वरूप प्राप्त हुई अम्सरा थी। आगे चल कर, कई मछलाहों ने अद्रिका मछली को पकड़ लिया, एवं उस मछली का पेट चीर दिया, जिससे मत्स्य नामक

एक पुरुष, एवं यह बाहर निकल पड़े। मछली से उत्पन्न होने के कारण, इसकी शरीर से मछली की गंध आती थी। इसी कारण यह 'मत्स्यगंधा' नाम से प्रसिद्ध हुई। अत्रियकुलोत्पन्न वसु राजा की कन्या होने के कारण, यह स्वयं क्षत्रियकन्या थी (स्कंद. ५.३.९७)।

वेदव्यास का जन्म—आगे चल कर यमुना नदी के मछलाहों ने इसे पाल पोस कर बड़ा किया, एवं यह अपने पिता की सेवा के लिए यमुना नदी में नाव चलाने का काम करने लगी (म. आ. ५७.५०-६९)। एक दिन पराशर ऋषि ने इसे देखा, एवं इसके साथ समागम की इच्छा प्रकट की। पराशर ऋषि से इसे वेदव्यास पराशर्य नामक सुविख्यात पुत्र की उत्पत्ति हुई (म. आ. ५७. ८४-८५; पराशर देखिये)।

शांतनु से विवाह—इस प्रकार इसके कौमार्यावस्था में ही व्यास का जन्म होने के पश्चात्, शांतनु राजा से इसका विवाह हुआ, जिससे इसे चित्रांगद एवं विचित्रवीर्य नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए।

चित्रांगद एवं विचित्रवीर्य ये इसके दोनों ही पुत्र निपुणिक अवस्था में मृत हुए। अतः कुस्वंश का निवेश न हो इस हेतु से, इसने अपनी स्तुपा अंबिका एवं अंबालिका को अपने पुत्र व्यास से पुत्र उत्पन्न करने की आज्ञा दी। ये पुत्र आगे चल कर वृतराष्ट्र एवं पाण्डु नाम से प्रसिद्ध हुए।

२. जमदग्नि ऋषि की माता, जो गांधि राजा की कन्या, ऋचीक ऋषि की पत्नी, एवं विश्वामित्र ऋषि की रत्न थी। एक हजार श्यामकरण अश्व ले कर गांधि राजा ने इसका विवाह ऋचीक ऋषि से किया था (ऋचीक देखिये)। जमदग्नि के अतिरिक्त इसके गुनःपुच्छ, गुनःदीप एवं गुनोलांगूल नामक अन्य तीन पुत्र थे (वायु. ९१.९२; ब्रह्मांड. ३.६६.६४)। अपने पातित्रत्य धर्म के कारण, यह मृत्यु के पश्चात् स्वर्गलोक चली गयी, एवं अपने अगले जन्म में कौशिकी नदी के रूप में पुनः पृथ्वी पर अवतीर्ण हुई।

३. अगस्त्य पत्नी लोपामुद्रा का नामांतर।

४. अयोध्या के हरिश्चंद्र त्रैशंख नामक राजा की माता, जो त्रिशंकु राजा की पत्नी थी।

५. सुनाहु राजा की पत्नी। राम के अश्वमेध यज्ञ के समय जो 'दंपती' अश्व को नहलाने के लिए सरस्वती नदी के तट पर गये थे, उनमें यह एवं इसका पति सुनाहु एक थे (पद्म. पा. ६७)।

सत्यवर्मन् त्रैगर्तै—त्रिगर्तराज सुशर्मन् का एक भाई, जो 'संशप्तक' योद्धाओं में से एक था (म. द्रो.

१६.१७-२०)। भारतीय युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. श. २६.४६)।

सत्यवाच—एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक था।

२. एक राजा, जो चाक्षुष मनु एवं नहुवला के पुत्रों में से एक था। इसे सत्यवत् नामान्तर भी प्राप्त था (भा. ४.१३.१६)।

३. रैवत मनु के पुत्रों में से एक।

४. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सत्यव्रत—अयोध्या के त्रिशंकु राजा का नामान्तर (त्रिशंकु देखिये)। भागवत में इसे त्रिवेदन राजा का पुत्र कहा गया है (भा. ९.७.५)।

२. द्रविड देश का एक राजा, जो भगवान् विष्णु के मत्स्यावतार की कृपा से श्राद्धदेव (वैवस्वत मनु) बन गया (भा. ८.२४.१०; मत्स्य. १.२; २९०)। पुराणों में प्राप्त इसकी जीवनकथा वैवस्वत मनु के जीवन चरित्र में वर्णित मत्स्यावतार से संबंधित कथा से काफी मिलती जुलती है। फर्क सिर्फ इतना ही है कि, इन दक्षिणात्य पुराणों में वैवस्वत मनु का मूल नाम मनु नहीं, बल्कि सत्यव्रत बताया गया है।

तपस्या—अपने राज्य का भार अपने पुत्रों पर सौंप कर, वह मलय पर्वत से उद्भव पानेवाली कृतमाला नदी के तट पर तपस्या करने के लिए गया। आधुनिक मदुरा नगरी, जिस वैष्णव नदी के तट पर बसी हुई है, वही नदी प्राचीन काल में कृतमाला नाम से सुविख्यात थी (मार्क. ५७; विष्णु. २.३)। पश्चात् विष्णु ने इसे पृथ्वी पर स्थित समस्त स्थिरचर प्रदेशों का राजा बनने का आशीर्वाद दिया (मत्स्य. १)।

मत्स्यावतार—मत्स्य के अनुसार, एक बार नैसर्गिक ब्राह्मप्रलय के समय ह्यग्रीव नामक राक्षस ने ब्रह्मा से वेद चुरा लिये। उन्हें पुनः प्राप्त करने के लिए विष्णु ने पुनः एक बार मत्स्यावतार धारण किया। विष्णु का यह मत्स्यावतार सत्यव्रत राजा के करोंजलि में एक छोटी सी मछली के रूप में अवतीर्ण हुआ। अवतीर्ण होते ही, थोड़े ही दिन में आनेवाले ब्राह्मप्रलय की सूचना उसने इस राजा को दी (मत्स्य. २.३)।

उस समय मत्स्यस्वरूपी श्रीविष्णु ने इससे कहा, 'प्रलय के समय, एक नौका तुझे लेने आयेगी, जिसमें अपने परिवार के सभी लोगों को तुम बिठाता। उस समय समस्त पृथ्वी पर अंधकार होगा, फिर भी वह नौका प्रकाश से

जगमगाती रहेगी। उसी समय एक प्रचंड मछली के रूप में मैं आऊंगा। उस समय वासुकि सर्प की रस्सी बना कर तुम अपनी नौका मेरे सिंग से बाँधना। ब्रह्मा की राखे अर्थात् 'ब्राह्मप्रलय' समाप्त होने तक मैं तुम्हें, एवं तुम्हारे नौका को सुरक्षित स्थान पर बाँध कर रखूंगा। प्रलय समाप्त होने पर मैं तुम्हें आत्मज्ञान का उपदेश दूंगा।'

आत्मज्ञान की प्राप्ति—ब्राह्मप्रलय समाप्त होने पर मत्स्य ने इसे ज्ञान, योग एवं क्रिया का उपदेश दिया, एवं आत्मज्ञानस्वरूपी मत्स्यपुराण का इसे कथन किया। अन्त में मत्स्य की ही कृपा से यह श्राद्धदेव नामक वैवस्वत मनु बन गया।

सत्यव्रत—कथा का अन्वयार्थ—मत्स्य पुराण के टीकाकार श्रीधर के अनुसार, सत्यव्रत के आयुःकाल में हुआ ऋ-प्रलय पृथ्वी का आय प्रलय न हो कर, भगवान् विष्णु की माया से उत्पन्न हुआ एक 'प्रलयाभास' था, जे सत्यव्रत के मन में वैराग्यभावना उत्पन्न करने के लिए, एवं अपने स्वयं के सामर्थ्य के साक्षात्कार की प्रचीति इसके धेरे के लिए निर्माण किया गया था। इसी प्रकार का अन्य एक प्रलयाभास विष्णु के द्वारा मार्कंडेय ऋषि को दिखाया गया था।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र 'सत्यसंध' का नामान्तर।

४. सत्यतपस् नामक ऋषि का नामान्तर (सत्यतप १. देखिये)।

५. एक ऋषिसमुदाय, जो धर्मऋषि का संतान माना जाती है।

सत्यव्रत त्रैगर्त—त्रिगर्त राज सुशर्मन् का एक भाई, जो संशतक योद्धाओं में से एक था (म. द्रो. १६.१७-२०)। भारतीय युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया।

सत्यव्रता—धृतराष्ट्र की एक पत्नी, जो गांधारराज सुबल की कन्या, एवं गांधारी की कनिष्ठ भगिनी थी।

सत्यश्रवस्—(सू. नरि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वीतिहाय राजा का पुत्र, एवं उलश्रवस् राज का पिता था (भा. ९.२.२०)।

२. कौरव पक्ष का योद्धा, जो अभिमन्यु के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ४४.३)।

३. एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा में से मार्कंडेय ऋषि का पुत्र एवं शिष्य था। ब्रह्मांड में इसे मांडुक्य ऋषि का पुत्र एवं शिष्य कहा गया है (वायु. ६०. २८)।

सत्यश्रवस् आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.७९-८०)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसे वाय्य सत्यश्रवस् कहा गया है (ऋ. ५.७९.२)

सत्यश्रवस् वाय्य—एक ऋषि, जिसका निर्देश उपम् के कृपापात्र व्यक्ति के नाते ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. ५.७९.२)। ऋग्वेद में अन्यत्र निर्दिष्ट सत्यश्रवस् आत्रेय, एवं सुनीथ शौचद्रथ संभवतः यही होगा। लुडविग के अनुसार, यह सुनीथ शौचद्रथ का पुत्र था (लुडविग ऋग्वेद अनुवाद ३.१५६)। वाय्य का वंशज होने से इसे 'वाय्य' पितृकनाम प्राप्त हुआ होगा।

सत्यश्रीय—एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा में से सत्यहित (सत्यतर) नामक आचार्य का पुत्र एवं शिष्य था। इसके शिष्यों के नाम शाकह्य, रथीतर, एवं वाष्कलि थे।

सत्यसंध—एक प्रजाहितदक्ष राजा, जिसने अपने प्राणों का त्याग कर एक ब्राह्मण की रक्षा की थी (म. शां. २२६.१६)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। इसे सत्यव्रत एवं संध नामान्तर भी प्राप्त थे। कौरव पक्ष के ग्यारह महारथियों में से यह एक था। अभिमन्यु, सात्यकि, सुपेण आदि राजाओं से इसका युद्ध हुआ था। अन्त में भीमसेन के द्वारा यह मारा गया (म. क. ६२. २-५ पाठ.)।

३. सत्यरथ नामक विदर्भ देश के राजा का नामान्तर (सत्यरथ ५. देखिये)।

४. मित्र के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पाषण्डों में से एक। अन्य पाषण्ड का नाम सुव्रत था।

सत्यसहस्—एक राजा, जो रुद्रसावर्णि मन्वन्तर के स्वधामन् नामक अवतार का पिता था। इसकी पत्नी का नाम सुव्रता था (भा. ८.१.२५)।

सत्यसेन—उत्तम मन्वन्तर का एक अवतार, जो धर्म एवं सुव्रता का पुत्र था (भा. ८.१.२५)।

२. अंगराज कर्ण का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में नकुल के द्वारा मारा गया (म. शं. ९.२१; ३९)।

३. धृतराष्ट्र के सत्यसंध नामक पुत्र का नामान्तर।

सत्यसेन त्रैगर्त—त्रिगर्त राजा सुधर्मन् का एक भाई, जो अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. क. १९.३-१७)।

सत्यसेना—धृतराष्ट्र की एक पत्नी, जो गांधारराज सुव्रत की कन्या एवं गांधारी की कनिष्ठ बहन थी।

सत्यहविस्—एक अश्वर्यु एवं आचार्य (मे. सं. १. ९.१५)।

सत्यहित—(सो. ऋक्ष.) ऋक्षवंशीय सत्यव्रत राजा का नामान्तर।

२. एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की ऋक्षशिष्यपरंपरा में से सत्यश्रवस् नामक आचार्य का पुत्र एवं शिष्य था।

३. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो पुष्पवत् राजा का पुत्र एवं सुधन्वन् राजा का पिता था।

सत्या—मन्थु राजा की पत्नी, जो भौवन राजा की की माता थी (भा. ५.१५.१५)।

२. धर्म की कन्या, जो शंभु नामक अग्नि की पत्नी थी। इसे भरद्वाज नामक एक पुत्र एवं तीन कन्याएँ उत्पन्न हुई थी (म. व. २०९.४)।

३. मगध देश के बृहद्रथ राजा की पत्नी, जो जरासंध राजा की माता थी।

४. कोसल देश के नम्रजित् राजा की कन्या, जो श्रीकृष्ण की पटरानी थी। इसके स्वयंवर के समय इसके पिता ने शर्त रखी थी कि, सात मस्त बैलों के साथ जो लड़ंगा उसके साथ इसका विवाह किया जायेगा। यह शर्त जात कर कृष्ण ने इसका वरण किया (भा. १०.५८.३२-४७)। अपने विवाह का वृत्तान्त इसने द्रौपदी से कथन किया था (भा. १०.८३.१३)। अपने पूर्वजन्म में किये विष्णुभक्ति के कारण, कृष्णपत्नी बनने का भाग्य इसे प्राप्त हुआ।

परिवार—कृष्ण से इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए थे:—वीर, चंद्र, अश्वसेन, चित्रगु, वेगवत्, वृष, आम, मंडु, वसु एवं कुन्ति (भा. १०.६१.१३)।

५. उत्तम मन्वन्तर के सत्य नामक अवतार की माता (विष्णु. ३.१.३८)।

६. बृहन्मनस् राजा की पत्नी, जो दैव्य नामक राजा की कन्या, एवं विजय नामक राजा की माता थी (मत्स्य. ४८.१०५)।

सत्याधिकवाच् चैत्ररथि—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. १.३९.१)।

सत्यायु—(सो. पुरुरवस्.) शतायु नामक पुरुरवस् पुत्र का नामान्तर (भा. ९.१५.१)।

सत्याषाढ—एक आचार्य, जो कृष्णयजुर्वेद के तैत्तिरीय शाखान्तर्गत हिरण्यकेशिन् नामक शाखा का प्रवर्तक आचार्य माना जाता है। यद्यपि इसका सही नाम सत्या-

पाठ था, फिर भी यह हिरण्यकेशिन् नाम से ही सुविख्यात था (हिरण्यकेशिन् देखिये)।

सत्येयु—(सो. पूर.) एक पूर्वशीय राजा, जो रुद्राश्व एवं मिश्रकेशी अप्सरा का पुत्र था (म. आ. ८९. १०)।

सत्येयु त्रैमर्त—त्रिगर्तराज सुशर्मन् का एक भाई, जो भारतीय युद्ध में अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. श. २६.२९)।

सत्राजित् अथवा **सत्राजित्**—(सो. वृष्णि.) एक सुविख्यात यादव राजा, जो निम्न राजा का पुत्र था (भा. ९.२४)। ब्रह्मांड एवं विष्णु में इसे विष्णु राजा का पुत्र कहा गया है (विष्णु. ५.१३.१०; ब्रह्मांड. ३.७१.२१)। इसे शक्तिसेन नामांतर भी प्राप्त था (मत्स्य. ४५.३: पञ्च. सू. १३)। इसके जुड़वे भाई का नाम प्रसेन था (भा. ९.२४.१३)। सत्यमामा के पिता, एवं स्यमंतक मणि के स्वामी के नाते यादव वंश के इतिहास में इसका नाम अत्यधिक प्रसिद्ध था।

पूर्वजन्म—पूर्वजन्म में यह मायापुरी में रहनेवाला देवशर्मन् नामक ब्राह्मण था, एवं इसकी कन्या का नाम गुणवती था, जो इस जन्म में इसकी सत्यमामा नामक कन्या बनी थी।

स्यमंतक मणि की प्राप्ति—सूर्य के प्रसाद से इसे स्यमंतक नामक एक अत्यंत तेजस्वी मणि प्राप्त हुई थी (भा. १०.५२.३)। इस मणि में रोगनाशक एवं समुद्रि वर्षक अनेकानेक दैवी गुण थे। यही नहीं, यह मणि प्रतिदिन आठ भार स्वर्ण देती थी। यह मणि सूर्य के समान तेजस्वी थी, एवं इसे धारण करनेवाला व्यक्ति साक्षान् सूर्य ही प्रतीत होता था।

एक बार कृष्ण ने इसके पास स्यमंतक मणि देखा, जिसे देख कर उसने चाहा कि, मथुरा के राजा उग्रसेन के पास यह मणि रहे तो अच्छा होगा। इस हेतु कृष्ण स्वयं इसके प्रासाद में आया, एवं किसी भी शर्त पर यह मणि उग्रसेन राजा को देने के लिए इससे प्रार्थना की। किन्तु इसने कृष्ण इस माँग को साफ इन्कार कर दिया।

तदुपरांत एक दिन इसका भाई प्रसेन स्यमंतक मणि गले में पहन कर शिकार करने गया। वहाँ एक सिंह ने उसका वध किया, एवं वह दैवी मणि ले कर अपनी गुहा की ओर जाने लगा। इतने में जांबवन् नामक राक्षस ने मणि की प्राप्ति की इच्छा से उस सिंह का वध किया, एवं वह मणि छीन लिया।

श्रीकृष्ण पर चोरी का दोषारोप—बहुत समय तक प्रसेन के वापस न आने पर, इसके मन में संशय उत्पन्न हुआ कि, श्रीकृष्ण के द्वारा ही प्रसेन का वध हुआ है, एवं यह क्रूरकर्म करने में उसका हेतु स्यमंतक मणि की प्राप्ति के सिवा और कुछ नहीं है। इस कारण प्रसेन का श्वर्गी एवं स्यमंतक मणि के अपहर्ता के नाते, यह श्रीकृष्ण पर प्रकट रूप में दोषारोप करने लगा। इस कारण यादव राजसमूह में श्रीकृष्ण की काफी वेदव्यवृत्ती होने लगी।

स्यमंतक मणि की खोज—इस कारण श्रीकृष्ण ने उन्मुक्त दोषारोप से बृटकारा पाने के लिए, स्यमंतक मणि की खोज शुरू की। खोजने खोजते कृष्ण जांबवन् की गुफा में पहुँच गया, जहाँ जांबवन् से अछाईस दिनों तक युद्ध कर उसे परास्त किया, एवं उससे स्यमंतक मणि पुनः प्राप्त किया। पश्चात् कृष्ण ने वह मणि इसे वापस दिया, एवं उसकी चोरी के संबंध में सारी घटनाएँ इसने कह सुनायीं।

कृष्ण सत्यमामा विवाह—स्यमंतक मणि के संबंध में सत्यमामाक ज्ञात होते ही, इसने कृष्ण से श्रमा माँगी, एवं अपनी कन्या सत्यमामा का उसमें विवाह कर दिया। विवाह के समय, इसने कृष्ण को वरदक्षिणा के रूप में स्यमंतक मणि देना चाहा, किन्तु श्रीकृष्ण ने उसे लेने से इन्कार किया, एवं उसे इसके पास ही रख दिया।

वध—आगे चल कर, कृष्ण जय हरितनापुर में पांडवों से मिलने गया था, यही सुअवसर समझ कर, अक्रूर एवं कुतबर्मन् आदि यादव राजाओं ने इसका वध करने का प्रयत्न रचा। ये दोनों यादव राजा सत्यमामा से विवाह करना चाहते थे, एवं उन्हें डाल कर कृष्ण को जमाई बनानेवाले सत्राजित् से अत्यधिक रष्ट थे।

इसी कारण उन्होंने शतधन्वन् नामक अपने कनिष्ठ भाई को इसका वध कर, स्यमंतक मणि की चोरी करने की आज्ञा दी। तदनुसार शतधन्वन् ने इसका निद्रित अवस्था में ही वध किया, एवं स्यमंतक मणि चुरा लिया (भा. १०.५७.५)। अपने मृत्यु के पश्चात्, स्यमामा के पुण्य के कारण इसे मुक्ति प्राप्त हुई (मवि. ब्राह्म. ११६-११७)। अपने पिता के निवृण वध की वार्ता सत्यमामा ने श्रीकृष्ण से कथन की, एवं किसी भी प्रकार शतधन्वन् का वध करने की इसे प्रार्थना की।

शतधन्वन् का वध—पश्चात् शतधन्वन् का पीछा करता श्रीकृष्ण आनर्त देश पहुँच गया। यह ज्ञात होते ही शतधन्वन् ने स्यमंतक मणि अक्रूर के पास दिया,

एवं वह नन्द्य विदेह देश भाग गया। वहाँ मिथिला-नगरी के समीप स्थित ङ्गल में श्रीकृष्ण ने उसका वध किया, किन्तु फिर भी स्वमेतक मणि की प्राप्ति न होने के कारण, निराश हो कर वह द्वारका-नगरी पहुँच गया। पश्चात् मणि अक्षर के पास ही है, एवं उससे वह प्राप्त करना संभव है, यह बात शर कृष्ण ने उससे संधि की, एवं मंत्र निकटवर्ती लोगों को इकट्ठा कर वह मणि अक्षर को दे दिया।

निरुपम—अत्यंतक मणि से संबंधित उपर्युक्त कथा का निर्देश यस्क के निरुपम में प्राप्त है, जहाँ अक्षर मणि धारण करता है (अक्षरौ यदने मणिम्), इस वाक्य-प्रयोग का निर्देश एक बह्मवदत के नाते दिया गया है (ति. २.२.११)। इस निर्देश से स्वमेतक मणि के संबंधित उपर्युक्त कथा की प्राचीनता एवं ऐतिहासिकता स्पष्टरूप से प्रतीत होती है। कई अभ्यासकों के अनुसार, मुगल राज्य में सुविख्यात कोहिनूर ही प्राचीन स्वमेतक मणि है।

परिवार—इसकी कुल दस पत्नियाँ थी, जो कैकयरज की कन्याएँ थी। इनमें से वीरवती (द्वारवती) इसकी परधानी थी (ब्रह्मांड. ३.७१.५६; मत्स्य. ४५.१७-१९)। इसके कुल एक ही एक पुत्र थे, जिनमें से प्रमुख पुत्रों की नामावलि विभिन्न पुराणों में विभिन्न दी गयी है :—
१. ब्रह्मांड में—भङ्गकार, वातपति, एवं तपस्वी नामक तीन पुत्र, एवं सत्यभामा, त्रितीनी एवं दृढव्रता नामक तीन कन्याएँ (ब्रह्मांड. ३.७१.५४-५७); २. वायु में—भङ्गकार, व्रतपति, एवं तपस्वीत (वायु. ३४.५३); ३. ब्रह्म में—वसुदेव, भङ्गकार एवं वातपति (ब्रह्म. १६.४६)।

सत्राजिती—दुष्णपरनी सत्यभामा का नामांतर (विष्णु. ५.२८.५)।

सत्रायण—दृढव्रतानु नामक इंद्रशक्ति मन्वंतर के अवतार का पिता। इसकी पत्नी का नाम विताना था।

सन्ध—रैवत मनु का एक पुत्र (मत्स्य. ९.२१)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

३. (सो. कुरु.) एक यादव राजा, जो पुरुवह राजा का पुत्र, एवं सात्वत राजा का पिता था (वायु. १५.४७)।

सन्धत्—एक जालिबिंदीय, जो भारतवर्ष के दक्षिण विभाग में बसी हुई थी। भरत ने इन राजाओं को परास्त किया, एवं इनका अध्वनेवीय अश्व भी छीन लिया था (श. ब्रा. १३.५.४.२१)। ऐतरेय ब्राह्मण में इन लोगों

का निर्देश 'सन्धत्' और 'सन्धत्' (ऐ. ब्रा. ८.१४; २. २५) नाम से किया गया है।

कौपीतकि उपनिषद में भी इन लोगों का निर्देश मत्स्य लोगों के साथ प्राप्त है (कौ. उ. ४.१)। किन्तु वहाँ इनके नाम का मूल पाठ 'वसत्' है।

सन्धत—यादववंशीय सत्वत राजा का नामांतर (सात्वत देखिये)।

सन्धदंत—एक यादव राजकुमार, जो वसुदेव एवं भद्रा के पुत्रों में से एक था (वायु. १६.१७१)।

सन्ध—एक देव, जो अंगिरा एवं सुहस्र के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ११६.२)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शत पुत्रों में से एक।

सन्धश्च—एत्यदेवों में से एक।

२. (सो. पूरु.) एक राजा, जो विष्णु, वायु, एवं मत्स्य के अनुत्तर समर राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.५४)।

३. यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८.१२)।

सदसस्पति—कश्यप एवं सुरभि का एक पुत्र।

२. ग्यारह रुद्रों में से एक (वायु. ६६.६९)।

सदस्यवत् अथवा सदस्यवत्—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार, एवं मंत्रकार।

सदस्यु—अंगिरस कुलतर्गत कुत्स गोत्री लोगों का एक प्रवर।

सदस्थोर्मि—यमसभा में उपस्थित एक राजा। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—सदश्रोर्मि।

सदाशंद्र—एक राजा, जो वायु के अनुसार, मथुरा-नगरी में राज्य करता था। ब्रह्मांड में इसे विदिशा-नगरी का नागवंशीय राजा कहा गया है।

सदापृष्ण आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ४५)। ऋग्वेद के कई मंत्रों में भी इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.४४.५२)।

सद्योजात—शिव के अवतारों में से एक।

सन्धि काण्व—एक ऋषि (ऋ. ५.४४.१०)।

सन्धि वैरूप—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ११४)।

सध्वंस काण्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.८)।

सनक—ब्रह्मा के चार मानसपुत्रों में से एक, जो साक्षात् विष्णु का अवतार माना जाता है। इसके साथ उत्पन्न हुए ब्रह्मा के अन्य तीन मानसपुत्रों के नाम सनत्कुमार, सनंद, एवं सनातन थे (भा. २.७.५; सनत्कुमार देखिये)।

ब्रह्मा के ये चारों ही पुत्र, कुमार के रूप में उत्पन्न हुए थे, एवं शालक के समान दिखते थे, जिस कारण इन्हें कुमार कहा जाता था।

पौराणिक साहित्य में—विष्णु के एक अवतार के नाते इनका निर्देश विभिन्न पुराणों में प्राप्त है। यह एवं इसके भाई जन्म से अत्यधिक विरक्त थे, एवं ब्रह्मा के मानसपुत्र होते हुए भी इन्होंने कभी भी प्रजोत्पादन नहीं किया (पद्म. सू. ३.)। एक बार यह अपने बंधुओं के साथ वैकुण्ठ गया, जहाँ जय एवं विजय नामक द्वारपालों ने इसे अंदर जाने से मना किया। इस कारण इसने इस दोनों द्वारपालों को धाप दिया (भा. ७.१. ३५)। गंगा नदी के सीता नामक नदी के तट पर इसका नारद के साथ तत्त्वज्ञान पर संवाद हुआ था (नारद. १.१-२)।

पारस्कर गृह्यसूत्रों के तर्पण में इसका एवं सनत्कुमार को छोड़ कर इसके अन्य दो भाइयों का निर्देश प्राप्त है, एवं ये कंक नामक शिवावतार के शिष्य बताये गये हैं। निशाक के द्वारा प्रणीत कृष्ण एवं राधा के उपासना सांप्रदाय, 'सनक सांप्रदाय' नाम से सुविख्यात है, जहाँ सनक के रूप में ही कृष्ण की पूजा की जाती है (राधा देखिये)। इसके नाम पर 'सनकसंहिता' नामक एक ग्रंथ भी उपलब्ध है, जिसमें इसे मृगुकुलोत्पन्न कहा गया है (C. C.)। इसने प्रतीत होता है कि, इस ग्रंथ की रचना करनेवाला आचार्य स्वयं यह न हो कर, इसकी उपासना करनेवाला अन्य कोई ऋषि था।

२. एक असुर गण, जो वृत्र का अनुयायी था (ऋ. १. ३३.४)।

सनक काप्य—एक आचार्य, जो काप्य नामक आचार्य द्वयों में से एक था। इसके साथी दूसरे आचार्य का नाम नवक था। इन दोनों ने विभिन्नुक्तिओं के यज्ञ में भाग लिया था (जै. ब्रा. ३.२३३)। लुडविग के अनुसार, ऋग्वेद में भी एक यज्ञकर्ता आचार्यद्वय के रूप में इनका निर्देश प्राप्त है (ऋ. १.३३.४)। किन्तु इस संबंध में निश्चित-रूप से कहना कठिन है।

सनम—एक आचार्य, जो परमेश्विन् नामक आचार्य का शिष्य, एवं सनातन नामक आचार्य का गुरु था (वृ. उ. २.६.३; ४.६.३ काण्व; शा. ब्रा. ४.१.७.३.२८)।

सनति—(सो. द्विमीट.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सन्ततिमत् राजा का पुत्र था (वायु. ९९.१८९)।

सनत्कुमार—एक सुविख्यात तत्त्ववेत्ता आचार्य, जो साक्षात् विष्णु का अवतार माना जाता है। इसे 'सनत्कुमार', 'कुमार' आदि नामांतर भी प्राप्त है। सनत्कुमार का शब्दशः अर्थ 'जीवन्मुक्त' होता है (म. शां. ३.२६. ३५)। यह एवं इसके भाई कुमारावल्या में ही उत्पन्न हुए थे, जिस कारण, ये 'कुमार' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे।

ब्रह्मानसपुत्र—विष्णु के अवतार माने गये ब्रह्मानस-पुत्रों की नामावलि महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है:-

(१) महाभारत में—इस ग्रंथ में इनकी संख्या सात बतायी गयी है, एवं इनके नाम निम्न दिये गये हैं:— १. सन; २. सनत्सुजात; ३. सनक; ४. सनंदन; ४. सनत्कुमार; ६. कपिल; ७. सनातन (म. शां. ३.२.७.६४-६६)। महाभारत में अन्यत्र 'ऋषु' को भी इनके साथ निर्दिष्ट किया गया है (म. उ. ४.१.२-५)।

(२) हरिवंश में—इस ग्रंथ में इनकी संख्या सात बतायी गयी है:— १. सनक; २. सनंदन; ३. सनातन; ४. सनत्कुमार; ५. स्कंद; ६. नारद; एवं ७. रुद्र (ह. वं. १.१.३४-३७)।

(३) भागवत में—इस ग्रंथ में इनकी संख्या चार बतायी गयी है:— १. सनक; २. सनंदन; ३. सनत्कुमार; एवं ४. सनातन (भा. २.७.५; ३.१२.४; ४.८.१)।

गुणवर्णन—ये ब्रह्मज्ञानी, निर्वृतिमार्गी, योगवेत्ता, सांख्यज्ञानविशारद, धर्मशास्त्रज्ञ, एवं मोक्षधर्म-प्रवर्तक थे (म. शां. ३.२७.६६)। ये विरक्त, ज्ञानी, एवं क्रियारहित (निष्क्रिय) थे (भा. २.७.५)। ये निरपेक्ष, नीतराग, एवं निरिच्छ थे (वायु. ६.७१)। ये सर्व-गामी, चिरंजीव, एवं इच्छानुगामी थे (ह. वं. १.१.३४-३७)। अत्यधिक विरक्त होने के कारण, इन्होंने प्रजा निर्माण से इन्कार किया था (विष्णु. १.७.६)।

निवासस्थान—इनका निवास हिमगिरि पर था, जहाँ विभांडक ऋषि इनसे मिलने गये थे। अपने इसी निवास-स्थान से इन्होंने विभांडक को ज्ञानोपदेश किया था (म. शां. परि. १.२०)।

उपदेशप्रदान—इसने निम्नलिखित साधकों को ज्ञान, वैराग्य, एवं आत्मज्ञान का उपदेश किया था:— १. नारद—आत्मज्ञान (छां. उ. ७.१.१.२६); एवं भागवत का महत्त्व (पद्म. उ. १.९३-१.९८); २. सांख्ययन—भागवत (भा. ३.८.७); ३. वृत्रासुर—विष्णुमाहात्म्य (म. शां. २.७१); ४. रुद्र—तत्त्वसूट्टि (म. अनु. १.६५)।

१६), ५. विभिन्न ऋषिसमुदाय—भगवत्स्वरूप (म. शां. परि. १.२०); विश्वामित्र गंधर्व—आत्मज्ञान (म. शां. ३०६.५९-६१); ७. धृतराष्ट्र—धर्मज्ञान (म. उ. ४२-४५); ८. ऐल—श्राद्ध (विष्णु. ३.१४.११)।

सात्वत धर्म का उपदेश—सात्वत धर्म की आचार्य-परंपरा में सनत्कुमार एक सर्वश्रेष्ठ आचार्य माना जाता है। इस धर्म का ज्ञान सर्वप्रथम ब्रह्मा ने इसे प्रदान किया, जो आगे चल कर इसने वीरण प्रजापति को दे दिया (म. शां. ३३६.३७)।

आगे चल कर सनत्कुमार का यही उपदेश नारद ने शुक को प्रदान किया, जिसका सार निम्नप्रकार बताया गया है:—

नास्ति विद्यासमं चक्षुर्नास्ति सत्यसमं तपः।

नास्ति रागसमं दुःखं नास्ति त्यागसमं सुखम् ॥

(म. शां. ३१६.६)।

(विद्या के समान श्रेष्ठ नेत्र इस संसार में नहीं है। साथ ही साथ, सत्य के समान श्रेष्ठ तप, राग के समान बड़ा दुःख, एवं त्याग के समान श्रेष्ठ सुख भी इस संसार में अन्य कोई नहीं है)।

नारद के द्वारा प्राप्त इस उपदेश के कारण, शुक ने परंक्रम ज्ञान का निश्चय किया, एवं वह आदित्यलोक में प्रविष्ट हुआ (शुक वैयासकि देखिये)।

धृतराष्ट्र से उपदेश—महाभारत के 'प्रजागर' नामक उपपर्व में धृतराष्ट्र को सनत्कुमार के द्वारा दिया तत्त्वोपदेश प्राप्त है, जो 'सनत्सुजातीय' नाम से सुविख्यात है। यह उपदेश कृष्ण दौत्य के पूर्वरात्रि में सनत्सुजात के द्वारा दिया गया था (विदुर देखिये)।

उस उपदेश में मानवीय आयुष्य की मृत्यु को इसने भ्रममूलक बता कर, मनुष्य की सही मृत्यु उसके द्वारा किये गये प्रमादों में है, ऐसा कथन किया है। इन प्रमादों से बचने के लिए, मौनादि साधनों का उपयोग करने का, एवं क्रोधादि दोषों को दूर रखने का उपदेश इसने धृतराष्ट्र को दिया। क्रोधादि दोषों का त्याग करने से, एवं मौनादि गुणों का संग्रह करने से, मनुष्य न केवल प्रमादों से दूर रहता है, किन्तु उसे ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति भी होती है, ऐसा अपना अभिमत इसने स्वष्टरूप से कथन किया है (म. उ. ४२-४५)।

महाभारत में प्राप्त यह 'सनत्सुजातीय' उपदेश भगवद्-गीता के समान ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है। आद्य

प्रा. च. १२८]

शंकराचार्य आदि आचार्यों ने इस पर स्वतंत्र भाष्य की भी रचना की है।

पृथ्वी पर अवतार—कृष्णपुत्र प्रद्युम्न इसका ही अवतार माना जाता है (म. आ. ६१.९१)। प्रद्युम्न की मृत्यु होने पर, वह इस के ही स्वरूप में विलीन हुआ (म. स्व. ५.११)।

तत्त्वज्ञान—नारद को उपदेशप्रदान करनेवाला सनत्कुमार एक श्रेष्ठ उपनिषद्कालीन तत्त्वज्ञ माना जाता है। इसका समय तत्त्वज्ञान इसके द्वारा नारद को दिये गये उपदेश में प्राप्त है, जो छांदोग्योपनिषद् में प्रथित किया गया है। अपने उस उपदेश में इसने 'आध्यात्मिक सुख-वाद्' का प्रतिपादन किया है। इस तत्त्वज्ञान के अनुसार, आध्यात्मिक सुख प्राप्ति के लिए मनुष्य कर्म करता है, जिससे आगे चल कर श्रद्धा निर्माण होती है। इसी श्रद्धा से ज्ञान की प्राप्ति होती है, जो आगे चल कर आत्मज्ञान कराती है। अपने इस तत्त्वज्ञान में, आत्मातुभूति की नैतिक सोचानपत्ति सनत्कुमार के द्वारा सुख, कर्म, श्रद्धा, ज्ञान, एवं साक्षात्कार, इस प्रकार बताया गयी है (छां. उ. ७.१७-२२)।

भूमन् तत्त्वज्ञान—सनत्कुमार के द्वारा की गयी 'भूमन्' शब्द की मीमांसा इसके तत्त्वज्ञान का एक महत्त्वपूर्ण भाग मानी जाती है। इस तत्त्वज्ञान के अनुसार सृष्टि के हरएक वस्तुमान में एक ही परमात्मा का साक्षात्कार होने की अवस्था को 'भूमन्' कहा गया है। इस साक्षात्कार से मनुष्य को अत्युच्च आनंद की प्राप्ति होती है, जिसकी तुलना में स्त्री, भूमि, ऐश्वर्य आदि ऐहिक वस्तुओं से प्राप्त होनेवाला आनंद यःकश्चित् प्रतीत होता है (छां. उ. ७.२३-२४)।

सनत्कुमार के अनुसार, साधक को जत्र आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है (सोऽई आत्मा), उस समय उसे 'भूमन्' तत्त्व का संपूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है (छां. उ. ७.२५)। इस प्रकार, आत्मा ही इस सृष्टि के उत्पत्ति का कारण है, एवं इसी आत्मा से मानवीय आशा एवं स्मृति निर्माण होती है। इसी आत्मा से सृष्टि के हरएक वस्तु का विकास होता है, एवं विनाश के पश्चात् सृष्टि की हरएक वस्तु इसी आत्मा में ही विलीन होती है, ऐसा सनत्कुमार का अभिमत था।

ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ एवं आख्यान प्राप्त हैं:— १. सनत्कुमार उपपुराण (कर्म. पूर्व. १. १७); २. सनत्सुजातीय आख्यान (म. उ. ४२-४५);

शांकरभाष्य के सहित); ३. सनत्कुमार संहिता (शिव. स्कंद. सूतसंहिता. १.२२.२४), ४. सनकुमार वास्तुशास्त्र; ५. सनत्कुमार तंत्र; ६. सनत्कुमार कल्प (C. C.)।

२. आर्य नामक वसु का पुत्र (ब्रह्मोड ३.३.२४)।

३. स्कंद का नामांतर।

सनत्तुजान—सनत्कुमार नामक आचार्य का नामांतर (सनत्कुमार १. देखिये)।

सनद्वाज—(सो. निमि.) एक राजा, जो युधि राजा का पुत्र, एवं ऊर्ध्वकेतु राजा का पिता था। इसे सत्यध्वज नामांतर भी प्राप्त था।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

सनंदन—सनक नामक आचार्य का नामांतर (सनक १. देखिये)।

सनश्रुत—एक आचार्य। इसे सोम की विशेष परंपरा अग्नि के द्वारा प्राप्त हुई थी, जो इसने आगे चल कर अपने अरिंदम नामक शिष्य को प्रदान की थी (ऐ. ब्रा. ७. ३४)।

कई अस्थासक इसे एक राजा मानते हैं, एवं 'अरिंदम' इसका पैतृक नाम बताते हैं (वैदिक इंडेक्स २.४६६)।

सनातन—ब्रह्मन् के बालब्रह्मचारिन् मानसपुत्रों में से एक, जो 'कुमार' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे (सनत्कुमार देखिये)। तैत्तिरीय संहिता में इसका निर्देश प्राप्त है, जहाँ यज्ञ के इष्टकों के उपाधान के समय, पूर्व, दक्षिण, पश्चिम एवं उत्तर दिशाओं में सानग, सनातन, अहभून एवं प्रलन नामक ब्रह्मानसपुत्रों का निवास बताया गया है (तै. सं. ४.३.३.१)। युधिष्ठिर की मयसभा में भी वह अपने अन्य बन्धुओं के साथ उपस्थित था।

बृहदारण्यक उपनिषद् में इसे सनग नामक आचार्य का शिष्य, एवं सनाह नामक आचार्य का गुरु कहा गया है (बृ. उ. २.६.३ काण्व.)।

२. तामस मनु के पुत्रों में से एक।

सनाच्छुब—एक आचार्य (क. सं. २०.१)। कपिश्ल संहिता में इसे 'शहनाच्छिव' कहा गया है (कवि. सं. ३१.३)।

सनाह—एक आचार्य, जो सनातन नामक आचार्य का शिष्य, एवं व्यष्टि नामक आचार्य का गुरु था (श्र. ब्रा. १४.७.३.२८; बृ. उ. २.६.३; ४.६.३ काण्व.)।

२. एक ऋषि, जिसके पुत्र का नाम उपब्रज था। शिवपूजा का माहात्म्य कथन करने के लिए इसकी कथा स्कंद में दी गयी है (स्कंद. ४.२.९४)।

सनेयक—(सो. पुरुवर्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार भद्राश्व राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४१.५)।

संत—एक राजा, जो वीतहृदयवंशीय सत्य राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम श्रवस था (म. अनु. ३०. ६२)। कुंभकोणम् संस्करण में इसे 'शिव' कहा गया है (म. अनु. ८.६२. कुं.)।

संतति—(सो. क्षत्र.) क्षत्रवंशीय सन्नति राजा का नामांतर (सन्नति २. देखिये)।

२. दक्ष की एक कन्या, जो ऋतु की पत्नी थी। बालखिल्य इसीके ही संतान माने जाते हैं।

संततेयु—(सो. पूरु.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार रौद्राश्व राजा का पुत्र था (भा. ९.१०. ४)।

संतजेन—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५३)।

संतर्दन—एक राजकुमार, जो केकयराज षुष्टकेतु का पुत्र था। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह उपस्थित था (भा. ९.२४.३८)।

संतानिका—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.९)।

संतोष—एक तुषित देव, जो यज्ञ एवं दक्षिणा का पुत्र था (भा. ४.१७.७)।

२. धर्म एवं तुष्टि का एक पुत्र, जिसे हर्ष नामान्तर भी प्राप्त था (वायु. १०.३४)।

संधग—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार शूर राजा का पुत्र था।

संधि—(सु. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार प्रनुश्रुत राजा का पुत्र, एवं अमर्षण राजा का पिता था। (भा. ९.१२.७)। विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः 'सुगवि' एवं 'सुसंधि' कहा गया है।

संध्य—ब्रह्मा के द्वारा उत्पन्न ग्यारह रुद्रों में से एक (पद्म. सु. ४०)।

संध्या—ब्रह्मा की एक मानसकन्या। इसके प्रति ब्रह्मा के मन में कामवासना उत्पन्न हुई, जिस कारण इसने देह-त्याग किया। अपने अगले जन्म में यह वसिष्ठरत्नी अश्वती वनी (शिव. रुद्र. स. ५; कालि. २२-२३)।

२. पुलस्त्य ऋषि की पत्नी (म. उ. ११५.११)।

३. एक राक्षसी, जो विश्वनरेशिन् राजस की पत्नी सालकरंका की माता थी।

सन्नति—ब्रह्मदत्त (प्रथम) राजा की तपस्विनी पत्नी, जिसने अपने पति के साथ मानससरोवर में तपस्या की थी (पद्म. सू. १०)।

२. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार अलर्क राजा का पुत्र था। भागवत में इसे संतति कहा गया है, एवं इसके पुत्र का नाम सुनीथ दिया गया है (भा. ९.१७.८)।

सन्नतिमत्—(सो. द्विमीट.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु, मत्स्य एवं वायु के अनुसार सुमति राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम कुति था (भा. ९.११.२८)।

सन्नतेयु—(सो. पूर.) एक राजा, जो पूर राजा का पौत्र, एवं रौद्राश्व राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम मिश्रकेशी अप्सरा था (म. आ. ८९.१०)। इसने इंद्रको परास्त किया था। इसके निम्नलिखित भाई थे:— १. रुचेयु; २. पक्षेयु; ३. कुक्कणेयु; ४. स्थंडिलेयु; ५. वनेयु; ६. जलेयु; ७. तेजेयु; ८. सत्येयु; ९. धर्मेयु (म. आ. ८९.१०)। पाठभेद (भांडारकर संहिता) 'संज्ञतेयु'।

सन्नाहन—रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. २०.१८)।

सन्निवेश—खट्ट प्रजापति एवं रचना के पुत्रों में से एक (भा. ६.६.४४)।

सन्निहित—एक ऋषि, जो मनु का तृतीय पुत्र था (म. व. २११.१९)।

सप्तय्य—एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की यज्ञःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

सपरायण—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की यज्ञःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

सपौल—एक राजा, जो उन्तीसवें युगचक्र में उत्पन्न होनेवाले देवापि राजा का पुत्र माना गया है (सुवचस् १. देखिये)।

सप्तकर्ण प्लाक्षि—एक तत्त्वज्ञ आचार्य, जो प्लक्ष नामक आचार्य का पुत्र था (तै. आ. १.७.३)।

सप्तकेतु—ब्रह्मसाविर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

सप्तकृत—एक सनातन विश्वदेव (म. अनु. ११. ३६)।

सप्तगु आंगिरस—एक वैदिक सूतद्रष्टा (ऋ. १०. ४७)। इसके द्वारा विरचित सूक्त के अंतिम ऋचा में इसने स्वयं को अंगिरसुकुलोत्पन्न (आंगिरस) बताया है।

सप्तजित्—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६.१९)।

सप्तति—(मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार दशरथ राजा का पुत्र था।

सप्तपाल—युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१२)। पाठभेद (भांडारकर संहिता) 'सत्यपाल'।

सप्तराव—वृष्ण के पुत्रों में से एक।

सप्तवार—गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ.)।

सप्तर्षि—सात ऋषियों का एक समुदाय, जिनका निर्देश ऋग्वेद सर्गानुक्रमणी, महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है। पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट मन्वन्तरों की तालिका में हर एक मन्वन्तर के लिए विभिन्न सप्तर्षि बताये गये हैं। इस प्रकार चौदह मन्वन्तरों के लिए ९८ सप्तर्षियों की नामावलि पुराणों में दी गयी है (मनु आदिपुरुष देखिये)। विभिन्न मन्वन्तरों के सप्तर्षियों के संबंध में विभिन्न पुराणों में भी एकवाक्यता नहीं है। इस प्रकार पौराणिक साहित्य में अनेकानेक सप्तर्षियों के नाम प्राप्त होते हैं।

सप्तर्षि-कल्पना का विकास—पौराणिक साहित्य में मन्वन्तर कल्पना के विकास के साथ साथ सप्तर्षि कल्पना का विकास हुआ, जो विभिन्न मन्वन्तरों के मनु, देव, इंद्र, अवतार आदि के साथ मन्वन्तरों के प्रमुख अधियंता-गण माने गये हैं। इन सप्तर्षियों की संख्या प्रारंभ में केवल सात ही थी, बल्कि आगे चल कर उनमें अनेकानेक नये नाम समाविष्ट किये गये। इससे प्रतीत होता है कि, उत्तर-कालीन सप्तर्षि आज सप्तर्षियों के वंदाज थे। विभिन्न मन्वन्तरों में प्रजोत्पादन का कार्य इन ऋषियों पर निर्भर रहता था (ब्रह्मांड. ३६; ह. वं. १.७; मार्क. ५०; विष्णु. २.१; ब्रह्म. ५; मनु आदिपुरुष देखिये)।

पौराणिक साहित्य में इन्हें द्वापरयुग के ऋषि कहा गया है, एवं इनका निवासस्थान शनैश्वर ग्रह से एक लाख योजन दूरी पर बताया गया है (वायु. ५३.९७; विष्णु. २.७.९)। इनकी कालगणना मनुष्यप्राणियों से विभिन्न थी, एवं इनके एक वर्ष में मानवीय ३०३० वर्ष समाविष्ट होते थे।

ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी में—इस ग्रंथ में, ऋग्वेद के निम्न-लिखित सूक्तद्रष्टा ऋषियों को सप्तर्षि कहा गया है :—
१. भारद्वाज बार्हस्पत्य; २. कश्यप मारोच; ३. गौतम राहूगण; ४. अत्रि भोम; ५. विश्वामित्र गाथिन; ६. जमदग्नि भार्गव; ७. वसिष्ठ मैत्रावरुणि (ऋ. सर्वानुक्रमणी. ९. १०७.१-२६; १०.१३७.१-७)।

ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी में दो स्थानों पर सप्तर्षियों की नामावलि प्राप्त है, एवं उनमें संपूर्णतया एकताक्यता है। महाभारत में—इस ग्रंथ में सप्तर्षियों की दो नामावलियाँ प्राप्त हैं, जो निम्नप्रकार हैं :—

(१) नामावलि क्रमांक—१. कश्यप; २. अत्रि; ३. भरद्वाज; ४. विश्वामित्र; ५. गौतम; ६. जमदग्नि; ७. वसिष्ठ (म. श. ४७.२८७; अनु. १४.४)।

(२) नामावलि क्रमांक २—१. परीचि; २. अत्रि; ३. अंगिरस; ४. पुलह; ५. पुलह; ६. कतु; ७. वसिष्ठ (म. श. ३२२.२७)।

दिशाओं के स्वामी—महाभारत में अन्यत्र सप्तर्षियों को दिशाओं के स्वामी कहा गया है, एवं पूर्व, दक्षिण, पश्चिम एवं उत्तर दिशाओं के सप्तर्षियों की नामावलि वही निम्न प्रकार दी गयी है :—

(१) पूर्वदिशा के सप्तर्षि :—१. यक्नीत; २. अर्वावसु; ३. परावसु; ४. कधीवत्; ५. नल; ६. कण्य; ७. बर्हिपद्।

(२) दक्षिण दिशा के सप्तर्षि :—१. उन्मुच; २. विमुञ्ज; ३. वीर्यवत्; ४. प्रमुञ्ज; ५. भगवत्; ६. अगस्त्य; ७. दृढवत्।

(३) पश्चिम दिशा के सप्तर्षि :—१. रूपदग्नु; २. कवप; ३. धौम्य; ४. परिव्याध; ५. एकत द्वित-त्रित; ६. दुर्वासस्; ७. सारस्वत।

(४) उत्तर दिशा के सप्तर्षि :—१. आत्रेय; २. वसिष्ठ; ३. कश्यप; ४. गौतम; ५. भरद्वाज; ६. विश्वामित्र; ७. जमदग्नि (म. श. २०१.२६)।

सप्तवर्षि आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जो अधिनों के कुशापात्र व्यक्तियों में से एक था (ऋ. ५.७८; ८.७३)। इसके भाइयों ने इसे एक संदूक में बंद कर रखा था, जहाँ से अधिनों ने इसकी मुक्तता की थी। अथर्ववेद में भी इसका निर्देश प्राप्त है (अ. वे. ४.२९.४; बृहदे. ५.८२-८५)।

सप्तसिंधु—एक लोकसमूह, जो प्रानुस्यतः आधुनिक पंजाब के पाँच नदियों के प्रदेश में निवास करता था (ऋ. ८.२४.२७)।

सप्तसूर्य—एक ग्रहसमुदाय, जिसमें निम्नलिखित सात ग्रह शामिल थे :—१. आरोग; २. भ्राज; ३. पर्य; ४. पतेम; ५. स्वर्णर; ६. ज्योतिष्मन्त; ७. विनाम (अ. वे. १३.३.१०; का. सं. ३.७.९; तै. आ. १.७; सर्वत्र देखिये)।

सप्ताश्व—रैवत मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक (मत्स्य. ९.२०)।

सप्ति दार्जभर—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ७९-८०)।

सप्रथ भारद्वाज—एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (तद. १०. १८.२)।

सखल—भौत्य मनु के पुत्रों में से एक।
२. दशसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

३. उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।
सखालेय—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोधकार।

सभाक्ष—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो मङ्गकार राजा का पुत्र था।

सभानर—(सो. अनु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु, मत्स्य एवं वायु के अनुसार अनु राजा का पुत्र, एवं कालानल राजा का पिता था (भा. ९.२३.१)।

सभापति—कौरवश्रेष्ठ एक योद्धा, जो अर्जुन के द्वारा मारा गया था (म. क. ६५.२८)।

२. भूतकर्मन् नामक कौरवश्रेष्ठ योद्धा का नामान्तर (भूतकर्मन् देखिये)।

सभ्य—एक अग्नि, जो पवमान अग्नि एवं संशानि का पुत्र था।

सम—शुतराट्ट के सौ पुत्रों में से एक, जो भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. क. ३५.७-१४)।

२. अमिताभ देवों में से एक।

३. चंपक नगरी के हंसध्वज राजा का पुत्र।

समंग—एक ऋषि, जो अपने आयुष्य के पूर्वकाल में कहेलपुत्र अष्टावक्र था (अष्टावक्र देखिये)। ज्ञानप्रप्ति से मानकी दुःख किस प्रकार कम हो सकता है, इस संदेह में इसका एवं नारद का तत्त्वज्ञान पर संवाद हुआ था (म. श. २७५)।

२. दुर्योधन के संगव नामक गोशात्याघिपति का नामान्तर (संगव देखिये)।

समचेतन—एक मत्स्य, जो मत्स्यों के गण में समाधि था।

समंज—पारावत देवों में से एक।

समतापन—भीमतापन नामक गौरपराशरकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर ।

समदुद्धि—शततेजस् नामक शिवावतार का एक शिष्य ।

समथ—अज्ञित देवों में से एक ।

१. रैवत मन्वन्तर के सप्तपिंशों में से एक ।

३. वैदव नामक गौरपराशरकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर ।

समर—(मो. कु.क.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुगार काव्य राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.५४)। विष्णु एवं वायु में इसे भीम राजा का पुत्र, एवं संगार राजा का पिता कहा गया है। इसकी राजधानी कांसिख्य नगरी में थी (वायु. ११.१०६)।

समरथ—(सु. नि.भि.) एक राजा, जो मगध के अनुगार क्षेमधि राजा पुत्र, एवं सवस्थ राजा का पिता था (म. १.१३.२४)। पाठभेद—'कामरथ'।

३. मन्वराज विराट के भाइयों में से एक (म. द्रो. १३३.४०)। पाठभेद—(मांडवकर संहिता)—'कामरथ'।

समवृत्ति—एक मरुत्, जो मरुत्तों के छैठवों गणों में समाविष्ट था (द्रव्याड. ३.५.१७)।

समसौरभ—भृङ्ग वेदविद्यापारंगत ब्राह्मण, जो जनमेजय के संसथ का एक सदस्य था (म. आ. ४८.१)। पाठभेद (मांडवकर संहिता)—'समसौरभ'।

समाधि—एक वैश्य, जो सुमंथस् ऋषि के आश्रम में मनःशान्ति के लिए कुछ काल तक रहा था (सुरथ १३. देखिये)।

समाद—गुपित देशों में से एक (वायु. ६६.१८)।

समिय—एक मरुत्, जो मरुत्गणों के पाँचवें गण में समाविष्ट था।

समितार—वदावर्तिन् देवों में से एक (वायु. १००. १६)।

समितिजय—एक यादव थोढ़ा, जो द्वारका में रहनेवाले बाल महारथियों में से एक था (म. स. १३.५७)। भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था।

सभीक—एक यादव महारथी, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१८; स. ७.१४)। भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था।

२. शक्रजना में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ७.१४)।

समीची—यमतामा की एक अम्हरा, जो वर्गा नामक अम्हरा की सखी थी। ब्राह्मण के शपथ के कारण, इसे ब्राह्मणों में जन्म प्राप्त हुआ था। अर्जुन ने 'मारी-

तीर्थ पर ब्राह्मणों में से इसका उद्धार किया (म. आ. २०८. ११; स. १०.११)।

समुद्रसेन—पांडवपक्ष का एक राजा, जिसके पुत्र का नाम चंद्रसेन था (म. द्रो. २२. ५०)। भीम ने अपने पूर्वदिग्विजय के समय, इते एवं इसके पुत्र चन्द्रसेन को जीता था (म. स. २७.२२)।

भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था, जहाँ इसका पुत्र चंद्रसेन अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. १३१.१२८)।

२. काट्यवंश का एक श्रद्धिय राजा, जो भारतीय युद्ध में कौरवपक्ष में शामिल था। यह काट्य नामक वैश्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१. ५२)। इसने पांडवश्रेष्ठ चित्रसेन राजा का वध किया था (म. क. ४.२७.७, पंक्ति १-२)।

समुद्र—वृत्रराक्षकुलोत्पन्न एक नाम, जो जनमेजय के संसथ में दत्त हुआ था (म. आ. ५२.१६)।

समेडी—स्वर् के अनुचरों एक मानवृक्ष (म. श. ४५.१३)।

संपाति—एक तीर्थगीर्वाणी पक्षी, जो अरण एवं ग्रधि के पुत्रों में से एक था (वा. रा. कि. ५६; द्रव्याड. ३.७. ४८६)। अन्य पौराणिक साहित्य में इसकी माता का नाम द्येनी दिया गया है (वायु. ७०.३१७; म. आ. ६०.६७)। इसके भाई का नाम जटायु था।

वाल्मीकि रामायण में, इसका एवं इसके भाई जटायु का एक गीध पक्षी के नाम निदेश पुनः पुनः प्राप्त है। फिर भी वाल्मीकि रामायण में ही प्राप्त एक निदेश से प्रतीत होता है, यह अपने को एक पक्षी नहीं, बल्कि मनुष्यप्राणी ही मानता था (वा. रा. कि. ५६.४)। अतः संभव यही है कि, वाल्मीकि रामायण में निर्दिष्ट वानरों के समान, संपाति एवं जटायु ये भी गीधयोनिज पक्षी न हो कर, गीधों की पूजा करनेवाले आदिवासी लोगों का प्रातिनिधित्व करते थे (वानर देखिये)।

इंद्र से युद्ध—यह एवं इसका भाई जटायु विन्ध्य-पर्वत के तलहटी में रहनेवाले निशाकर (चंद्र अथवा चंद्रमसु) ऋषि की सेवा करते थे। एक बार वृत्रासुर का छलकपट से बध कर लौट आनेवाले इंद्र से इसकी तथा जटायु की भेंट हुई। इंद्र ने इसको काफी दुरुत्तर दिये जिस कारण इन दोनों में युद्ध प्रारंभ हुआ। इंद्र ने अपने वज्र से इसे शायल किया, एवं वह जटायु का पीछा करने लगा। अन्त में जटायु थक कर नीचे गिरने

लगा। अपने भाई को नीचे गिरते हुए देख कर, इसने उसकी रक्षा के लिए अपने पंख फैला कर उस पर छाया की।

इस कार्य में शूर्यताप के कारण इसके पंख दग्ध हो गये, एवं यह एवं जटायु धायल हो कर पृथ्वी पर गिर पड़े। इन में से जटायु इनस्थान में, एवं यह विषय पर्वत के दक्षिण में निशाकर ऋषि के आश्रम के समीप गिर पड़े। अपने पंख दग्ध होने के कारण, यह अत्यंत निराश हुआ, एवं आत्मघात के विचार सोचने लगा। किन्तु निशाकर मुनि ने इसे इन विचारों से परावृत्त किया, एवं भविष्य काल में रामसेवा का पुण्य संपादन कर, जीवन्मुक्ति प्राप्त कराने की सलाह इसे दी।

सीताहरण—यह एवं इसका पुत्र सुगार्थ कितने विशाल-काय एवं बलशाली थे, इसका दिग्दर्शन करनेवाली एक कथा 'वाल्मीकी रामायण' में प्राप्त है। सीता का हरण कर रावण जब लंका लौट रहा था, उस समय उसे पकड़ कर उसका मध्य वनाने का प्रस्ताव इसके पुत्र सुगार्थ ने इसके सामने रखा। इसके द्वारा संमति दिये जाने पर, सुगार्थ ने रावण पर हमला कर उसे पकड़ लिया। किन्तु रावण के द्वारा अत्यधिक अनुनय-विनय किये जाने पर उसे छोड़ दिया।

जटायुवच—एक बार यह अपनी गुफा में बैठा था, उस समय सीता की श्लोत्र के लिए दक्षिण दिशा की ओर जाने वाले अंगदादि वानर इसकी गुफा में आये। उन्हीं के द्वारा रावण के द्वारा किये गये अपने भाई जटायु के वध की बाता इसे ज्ञात हुई। इस पर इसने सीता का हरण रावण के द्वारा ही किये जाने की बातों उन्हें कह सुनायी, एवं पश्चात् अंगद के कंधे पर बैठ कर यह दक्षिण समुद्र के किनारे गया। वहाँ इसने अपने भाई जटायु को तर्पण प्रदान किया। पश्चात् निशाकर ऋषि के वर के कारण इसे अपने पंख पुनः प्राप्त हुए (वा. रा. कि. ५६-६३; म. व. २६६.४८-५६; अ. रा. कि. ८)।

परिवार—इसके सुगार्थ, वसु, एवं शीब्रग नामक तीन पुत्र थे (पद्म. सु. ६; मत्स्य. ६.३५)। इसके एक पुत्र एवं एक कन्या होने का निर्देश वायु में प्राप्त है, किन्तु वहाँ उनके नाम अप्राप्य हैं (वायु. ६९.३२७; ७०.८-३६)। इसके अनेक पुत्र होने का निर्देश ब्रह्मांड में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.७.४४६)।

२. किंकिश नगरी का एक वानर (वा. रा. कि. ३३.१०)।

३. विभीषण का एक अमात्य (वा. रा. सुं. ३७)।

४. रावणपक्ष का एक असुर। लंकादहन के समय हनुमन् ने इसका घ्नर जलया था (वा. रा. सुं. ६)।

५. एक कौरवपक्षी योद्धा, जो द्रोण के द्वारा निर्मित गरुड़व्यूह के हृदयस्थान में लड़ा था (म. द्रो १३.२३; पाठ—'संपाति')।

संपार—(सो. कु. ६.) एक राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार समर राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९. ५४)।

संप्रिया—विदूरथ राजा की पत्नी, जो मगधराज का कन्या थी (म. आ. ९.०.४२)।

संबंधि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

संभव—(सो. वृक्ष.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सर्व राजा का पुत्र था (मत्स्य. ५.३१.)। वायु में इसे नमस् कहा गया है।

संभूत—दक्षसाविणी मन्वंतर का एक देवगण।

२. (सु. इ.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार वसुदेव्यु राजा का पुत्र, एवं अनरण्य राजा का पिता था (वायु ८८. ७४-७६)। मत्स्य में इसे संभूति कहा गया है।

संभूति—चाक्षुष मन्वंतर के अत्रित्व नामक अवतार की माता, जिसके पति का नाम वैराज था।

२. दक्ष की कन्या, जो मरीचि ऋषि की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम पूर्णमास था (वायु. १०.२७)।

३. जयद्रथ राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम विजय था (भा. ९.२३.१२)।

४. रैवत मन्वंतर के मानस नामक अवतार की माता (विष्णु ३.१.४०)।

५. (सु. इ.) एक राजा, जो वसुदेव के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. १२.३६)। पद्म में इसे दुःसह एवं नर्मग का पुत्र कहा गया है। इसके पुत्र का नाम त्रिधन्वन् था (पद्म. सु. ८)।

संमर्दन—वसुदेव एवं देवकी के पुत्रों में से एक (भा. ९.२४.५४)।

संमित—एक मरुत्, जो मरुतों के छठवें गण में समाविष्ट था (ब्रह्मांड. ३.५.१७)।

संभिति—उत्तम मन्वंतर के सप्तपित्रियों में से एक।

संमोद—एक असुर, जो हिरण्याक्ष के मुकुट में वायु के द्वारा मारा गया (पद्म. सु. ७५)।

सम्राज्—(द्वा. धिय.) एक राजा, जो चित्रस्थ एवं ऊर्णा का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम उरुल्ला

था, जिससे इसे मरीचि नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ५.१५.१४)।

२. चक्रवर्ति राजा की एक सामान्य उपाधि, जो समस्त भारतवर्ष को जीतनेवाले राजा को प्राप्त होती थी (वायु. ४५.८६)। पौराणिक साहित्य में हरिश्चंद्र एवं कार्तवीर्य राजाओं के लिए यह उपाधि प्रयुक्त की गयी है (वायु. ८८.११८; ब्रह्मांड. ३.१६.२३; चक्रवर्तिन् देखिये)।

वैदिक साहित्य में—ऋग्वेद कालमें राजा (राजन्) की अपेक्षा शक्ति में श्रेष्ठ शासक को 'सम्राज्' कहा जाता था (ऋ. ३.५५.६०; वा. सं. ५.३२)। शतपथ ब्राह्मण में वाजपेय यज्ञ करनेवाले राजा को 'सम्राज्' कहा गया है (श. वा. ५.१.१.१३)। बृहदारण्यकोपनिषद् में राजा के उपाधि के नाते 'सम्राज्' का निर्देश प्राप्त है (बृ. उ. ४.१.१)।

सयष्टव्य—रैवत मनु के पुत्रों में से एक।

सरघा—त्रिदुमत् राजा की पत्नी, जो मधु रजा की माता थी (भा. ५.१५.१५)।

सरघा—(स्वा. प्रिय.) प्रियव्रतवंशीय त्रिदुमत् राजा का नामांतर (त्रिदुमत् देखिये)।

सरण्यू—सूर्य की पत्नी (ऋ. १०.१७.२)।

सरभमेरुंड—एक पापी पुरुष, जिसकी कथा गीता-पठन का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में प्राप्त है (पद्म. सू. ३८)।

सरमा—विभीषण की पत्नी, जो ऋषभ पर्वत पर निवास करनेवाले शैल्य नामक गंधर्व की कन्या थी (वा. रा. उ. १२.२४-२७)।

जन्म—मानससरोवर के तट पर इसका जन्म हुआ। इसके जन्म के समय सरोवर में बाढ़ आने के कारण, उसका पानी लगातार बढ़ रहा था। उस समय इसकी माता ने प्रवरा कर बढ़ते हुए पानी से प्रार्थना की, 'सर मा' (आंग मत बढ़ना)।

इसकी माता की उपर्युक्त प्रार्थना के कारण, सरोवर का पानी बढ़ना बंद हुआ। इस कारण, अपनी नवजात कन्या का नाम उसने 'सरमा' ही रख दिया।

सीता को सांत्वना—रावण के द्वारा सीता का हरण किये जाने पर, उसके देखमाल का कार्य अशोकवन में इस पर ही सौंपा गया था। यह शुरु से ही सीता से सहानुभूति रखती थी। इस कारण यह सीता को रावण के सारे षड्यंत्र समझाकर उसे सांत्वना देती थी। इसी सांत्वना से सीता का भय कम होता था, एवं इसका धीरज बँधा जाता था (विभीषण देखिये)।

पद्म के अनुसार, विभीषण के राज्यकाल में राम एवं सीता पुनः एकत्रार लंका गये थे, जिस समय उन्होंने लंका में स्थित वामनमंदिर का उद्घाटन किया था। अपनी लंका भेंट में सीता ने बड़े ही सौहार्द से इसकी पूछताछ की थी (पद्म. सू. ३८)।

२. कश्यप ऋषि की पत्नी, जो दक्ष प्रजापति एवं असिकी की कन्या थी। संसार के समस्त हित पशु इसीके ही संतान माने जाते हैं (भा. ६.६.२६)।

सरमा देवशुनी—देवलोक की एक कुतिया, जो इंद्र की दूती मानी जाती थी। यम के श्याम एवं शत्रु नामक दो कुत्ते इसीके ही पुत्र थे, जिप्त कारण वे 'सारमेय' (सरमा के पुत्र) नाम से सुविख्यात थे। संसार के समस्त 'सारमेय' (कुत्ते) भी इसीके ही संतान माने जाते हैं।

वैदिक साहित्य में—ऋग्वेद में इंद्र के दूत के रूप में इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.१०८)। यद्यपि ऋग्वेद में कहीं भी इसे स्पष्ट रूप से कुतिया नहीं कहा गया है, फिर भी उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में, एवं यास्क के 'निरुक्त' में इसे 'देवों की कुतिया' (देवशुनी) ही माना गया है।

इंद्रदौत्य—पणि नामक कृपण लोगों का धन ढँढ़ निकालने के लिए इंद्र ने अपने दूत एवं गुप्तचर सरमा को पणियों के निवासस्थान में भेजा था (ऋ. १०.१०८. १-२)। पणियों ने वैदिक ऋत्विजों की गायों को पकड़ कर, उन्हें रसा नामक नदी के तट पर स्थित कंदरों में छिपा रखा था। सरमाने उन गायों का पता लगाया, एवं इंद्र के दूत के नाते उनकी माँग की। किन्तु उन्हें देने से इन्कार कर, पणियों ने सरमा को कैद कर दिया। अन्त में इंद्र ने सरमा की एवं पणियों के द्वारा बन्दी की गयी गायों की मुक्तता की।

इंद्र के दूत के नाते इसका पणियों से किया संवाद ऋग्वेद में 'सरमा-पणि संवाद' नाम से प्राप्त है (ऋ. १०.८. २; ४; ६; ८; १०; ११)। बृहदेवता में भी इस संवाद का निर्देश प्राप्त है (बृहदे. ८.२४.३६)। उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में भी सरमा-पणि कथा अधिक विस्तृत स्वरूप में दी गयी है।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे कश्यप एवं क्रोधा की कन्या कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.७.३१२)। यह इंद्र की दूती थी, एवं सारे दानव इससे डरते थे (भा. ५.२४.३०)।

एक धार इसका पुत्र जनमेजय के सर्पसत्र में गया, जहाँ जनमेजय के वाधकों ने उसे खूब पीटा, एवं वज्रभूमि से भगा दिया। अरुने पीटे गये पुत्र के दुःख से अत्यधिक दुःखी हो कर, इसने जनमेजय को शाप दिया, 'तुम एवं तुम्हारे सर्पसत्र पर अनेकानेक आश्चर्यों आ गिरंगी (म. आ. ३.१-८)। आगे चल कर इसकी यह शापवाणी सही सिद्ध हुई, एवं जनमेजय का सर्पसत्र आस्तिक ऋषि के द्वारा ब्रेद किया गया।

सरमाण—एक सैहिकेय अमुर, जो हिरण्यकशिपु का भतीजा था (मत्स्य. ६.२७)।

सरयू—वीर नामक अग्नि की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम सिद्धि था (म. व. २०१.११)।

सरस—सारस्वत नगरी के वीरवर्मन् राजा के पुत्रों में से एक (वीरवर्मन् देखिये)।

सरस्वत—एक राजकुमार, जो पुरुरवस् एवं सरस्वती के पुत्रों में से एक था। इसके पुत्र का नाम बृहद्रथ था (ब्रह्म. १०१.९)।

सरस्वती—ब्रह्मा की कन्या शतरूपा का नामान्तर। यह स्वयंभूव मनु की पत्नी थी (म. उ. ११५.१४; शतरूपा देखिये)। पद्म में इसे ब्रह्मा की पत्नी कहा गया है, एवं इसके 'ज्ञानशक्ति', 'सावित्री' 'गायत्री' एवं 'वाच' नामान्तर दिये गये हैं (पद्म. पा. १०७)।

महान्तर में भी इसे 'शतरूपा' का नामान्तर बताया गया है, एवं इसे दण्ड, नीति आदि शास्त्रों की कर्त्री कहा गया है (म. शां. १२२.२५)।

२. सार्वभौम नागक विष्णु के अवतार की माता (भा. ८.१३.१७)।

३. पूर्वशतीय अतीनारभ्याज की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम वस्तु था (म. आ. ९०.२६)।

४. पुरुरवस् राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम सारस्वत था (ब्रह्म. १०१.९)।

५. दक्षीणि ऋषि की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम सारस्वत था (वायु. ६५.०१; सारस्वत देखिये)।

६. आदित्य की पत्नी, जो दनु एवं दिति की माता थी (मत्स्य. १७१.७०)।।

७. रन्ति राजा की पत्नी (वायु. ९९.१२५)।

सरिभूधि—अशिराकुलोत्पन्न एक मोचकार।

सरियुम वृकक—एक मरुत्, जो मरुतों के पाँचवें गण में समाविष्ट था।

सरूपा—भूत कृषि की पत्नी, जो रुद्रगणों की माता मानी जाती है (भा. ६.६.१७)।

सरूपा—तृपेमुवशीय शरूथ राजा का नामान्तर।

सरोगय—एक असुरविरोध, जिन्होंने भीमसेन पाण्डव को परास्त किया था (स्कंद. १.२.६६)।

सरोजवदना—एक स्त्री, जिसकी कथा भगद्गीता के २४वें अध्याय का महान्मय कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है।

सर्प—ग्यारह रुद्रों में से एक, जो ब्रह्मा का पीढ़, एवं स्थाणु का पुत्र था (म. आ.)।

२. एक नागजातिविरोध, जिनके राजा का नाम तक्षक था (मत्स्य. ८.७; नाग देखिये)। जनीन पर दसीट कर चलने के कारण (सदोम्व) इन्हें सर्प नाम प्राप्त हुआ (मत्स्य. ३८.१०)।

प्राचीन पौराणिक साहित्य में तीन मुखियत्वात सर्पसत्रों के निर्देश प्राप्त हैं:— १. जनमेजय सर्पसत्र, जे जनमेजय ने अपने पिता परिक्षित् का वध करनेवाले तक्षक नाम का बरला लेने के लिए आयोजित किया था (जनमेजय पारिक्षित देखिये); २. मरुत् का सर्पसत्र, जो उसने अपनी मातामही के कहने पर आयोजित किया था। पश्चात् मरुत् की माता भामिनी ने मध्यस्थता कर मरुत् का यह सर्पसत्र स्थगित करवा दिया था। मरुत् का यह सर्पसत्र संवर्त ऋषि के द्वारा आयोजित किये गये वर के पश्चात् आयोजित किया गया था (भा. १.२६-१२७; मरुत् आदिक्षित एवं भामिनी देखिये); ३. तीसरा सर्पसत्र, जो सथों के समृद्धि के लिए किया गया था (जनमेजय देखिये)।

इन्से उत्पन्न राक्षसमूह भी 'सर्प' नाम ने ही सुविख्यात था (ब्रह्मंड. २.३२.१)।

३. कश्यप एवं सुरभि के पुत्रों में से एक।

४. एक राक्षस, जो ब्रह्मघ्न के पुत्रों में से एक था (वायु. ६९.१३३)।

५. अर्बुद काश्मथ नामक ऋषि का नामान्तर।

सर्पराज्ञी—एक वैदिक मूकद्वी, जिसे कश्यप के एक मूकत् (क. २०.१८९) के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (ते. सं. १.५.४.६; ७.३.१.३; तै. शा. १.४.६.६; २.२.६.१; प. शा. ५.२.३.१.२)। इसके नाम के लिए 'सर्पराज्ञी' पाठभेद प्राप्त है।

सर्पान्त—गण्ड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. ९९.१२)।

सर्पास्य—एक राक्षस, जो खर राक्षस का अनुयायी था (वा. रा. अर. २३.३२)।

सर्पिमालिन्—युधिष्ठिर की मयसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.८)।

सर्पिर्वास्ति—एक आचार्य, जिसने कई स्तोत्रों का पद्यन कर सौबल नामक राजा को विपुल पशुसंपत्ति प्राप्त कराया थी (ऐ. ब्रा. ६.२४)।

सर्पाति—(सो. पुरुरवस्) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार पुरुरवस् राजा का पुत्र था।

सर्व—(सो. अज.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार धनुष राजा का पुत्र था (मत्स्य. ५०.३०)।

सर्वकर्मन्—(सू. इ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सौदास कल्माषपाद राजा का पुत्र था (मत्स्य. १२.४६)। अन्य पुराणों में इसे ऋतुपर्ण राजा का पुत्र कहा गया है, एवं इसे नल राजा का मित्र बताया गया है।

परशुराम के द्वारा किये गये क्षत्रियसंहार के समय पराशर ऋषि के द्वारा इसका रक्षण हुआ था। अपने इस यनवाकाल में अपना क्षत्रियधर्म छोड़ कर इसने शूद्र के समान आचरण किया, जिस कारण इसे 'सर्वकर्मन्' नाम प्राप्त हुआ (म. शां. ४९.६९)। इसे 'सर्वकामन्' नामान्तर भी प्राप्त था।

परशुराम का क्षत्रियसंहार समाप्त होने पर, पृथ्वी की पुनर्व्यवस्था करनेवाले कश्यप ऋषि को इसके जीवित होने की बाती स्वयं पृथ्वी ने बताया थी (म. शां. ४९.६९.७८)।

सर्वकाम—(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय सर्वकर्मन् राजा का नामान्तर।

सर्वकामदुधा—एक धेनु, जो कामधेनु की कन्या थी (म. उ. १००.१०)।

सर्वग—एक राजकुमार, जो भीमसेन एवं बलंधरा के पुत्रों में से एक था (म. आ. ९०.८४)।

२. धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सर्वजनि—एक ब्राह्मण, जिसकी कथा विष्णुमहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. क्रि. १९)।

सर्वजित—कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक।

सर्वज्ञ—शततेजस् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

सर्वतेजस्—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो व्युष्ट एवं पुष्करिणी के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम आकुति था, जिससे इसे चाक्षुष मनु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ४.१३.१४)।

सर्वत्रग—धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सर्वदमन—दुष्यन्तपुत्र भरत राजा का नामान्तर (म. आ. ६८.५)।

५. सर्वधर्मन्—धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सर्वमेधस्—सुमेधस् देवों में से एक।

सर्ववेग—धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सर्वसौह—एकादश रुद्रों में से एक।

सर्वसारंग—शूतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१६)।

सर्वसेन—(सो. पू. काशी) का एक राजा, जो ब्रह्मदत्त राजा का पुत्र था। इसने अपने भवन में स्थित पूजनी नामक चिड़िया के बच्चों का वध किया, जिस कारण क्रुद्ध हो कर पूजनी ने इसकी आँखें फोड़ डाली (ह. वं. १.२०.८९; पूजनी देखिये)।

इसकी कन्या का नाम सुनंदा था, जिसका विवाह सम्राट् भरत के साथ हुआ था। सुनंदा से उत्पन्न इसके दौहित्र का नाम भूमन्तु था (म. आ. ९०.३४)।

सर्वहरि ऐन्द्र—एक वैदिक सूतत्रद्वय (ऋ. १०.९६)।

सल्लोमधि—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार चंद्रविश राजा का पुत्र था (भा. १२.१.२७)। इसे 'पुलोमधि' एवं 'पुलोमन्' नामान्तर भी प्राप्त थे।

सल्लौगाक्षि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सवन—(स्वा. प्रिय.) एक ऋषि, जो स्वायंभुव मनु का पौत्र, एवं प्रियव्रत राजा के तीन विरक्त पुत्रों में से एक था। प्रियव्रत राजा के अन्य दो विरक्त पुत्रों के नाम महावीर एवं कवि थे (प्रियव्रत देखिये)।

ब्रह्मांड में इसे स्वायंभुव मनु का पुत्र, एवं पुष्करद्वीप का राजा कहा गया है, एवं इसके पुत्रों के नाम महावीर एवं घातकी दिये गये हैं (ब्रह्मांड. २.१३.१०४)।

२. वारुणि भृगु ऋषि के सात पुत्रों में से एक। इसे एवं इसके भाइयों को 'वारुण' पैतृक नाम प्राप्त था (म. अनु. ८५.१२९)।

३. दक्षसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

४. वसिष्ठ एवं ऊर्जा के सात पुत्रों में से एक (वायु. २८.३६)।

५. सूर्य का नामान्तर (ब्रह्मांड. २.२४.७६)।

सवर्णा—सागर एवं वेला की कन्या, जो प्राचीन-बर्हिस् प्रजापति की कन्या थी। इसके कुल दस पुत्र थे, जो 'प्रचेतस्' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे।

हरिवंश के अनुसार, इसे शतदृष्टि नामान्तर भी प्राप्त था (ह. वं. १.२)। कई अभ्यासक, इसे छाया का ही प्रतीक मानते हैं (संज्ञा देखिये)।

सवितृ—एक सुविख्यात देवता, जो अदिति का पुत्र माना जाता है। इसी कारण इसे 'आदित्य' अथवा 'आदित्य' नामान्तर भी प्राप्त थे (ऋ. १.५.०.१३; ८.१०.१.११; १०.८८.११)। ऋग्वेद में आदित्य, सूर्य, विवस्वन्, पूषन्, आर्यपन्, वरुण, मित्र, भग आदि देवताओं को यद्यपि विभिन्न देवता माना गया है, फिर भी वे सारे एक ही सूर्य अथवा सवितृ देवता के विभिन्न रूप प्रतीत होते हैं (ऋ. ५.८१.४; १०.१३३.१; विवस्वन् देखिये)। सवर्णा के अनुसार, उदित होनेवाले सूर्य को ऋग्वेद में 'सवितृ' कहा गया है, एवं उदय से अस्तकाल तक आकाश में भ्रमण करनेवाले सूर्य को वहाँ 'सूर्य' कहा गया है (ऋ. ८.५११. सवर्णाभाष्य)।

उत्पत्ति—सवितृ की उत्पत्ति किस प्रकार हुई इस संबंध में अनेक निर्देश प्राप्त हैं। ऋग्वेद में निम्नलिखित देवताओं के द्वारा सवितृ की उत्पत्ति होने का निर्देश प्राप्त है—१. इंद्र (ऋ. २.१२.७); २. सिन्धवारुण (ऋ. ४. १३.२); ३. सोम (ऋ. ६.४४.२३); ४. इंद्र-सोम (ऋ. ६.७२.२); ५. इंद्र एवं विष्णु ((ऋ. ७.९९.४); ६. इंद्र-वरुण (ऋ. ७.८२.३); ७. अग्नि एवं धातृ (ऋ. १०.१०.३); ८. अंगिरस् (ऋ. १०.६२.३)।

गुणवर्णन—सूर्य के गुणवैशिष्ट्य के संबंध में अनेकानेक काव्यनय वर्णन ऋग्वेद में प्राप्त हैं। मनुष्यजाति की सारी शारीरिक व्याधियाँ दूर कर (अनमोवा), यह उनका आवुष्य बढ़ाता है (ऋ. ८.४८.७; १०.३७.७)। इत सृष्टि के सारे प्राणि इस पर निर्भर रहते हैं (ऋ. १.१६४.१०)। यह सारे विश्व को उत्पन्न करता है, जिस कारण इसे 'विश्वकर्मन्' कहा जाता है (ऋ. १०.१७०.४)। यह देवों का पुरोहित है (ऋ. ८.१०१.१२)। यह मित्र, वरुण आदि अन्य देवताओं का मित्र है। इसी कारण इन देवताओं की की गयी प्रार्थना इसके द्वारा ही उन्हें पहुँचती है (ऋ. ६०.१)।

ऋग्वेद में सूर्यविव का उल्लेख कर अन्य भी बहुत सारा वर्णन प्राप्त है। किन्तु इसे मानव मान कर जितना भी वर्णन ऋग्वेद में दिया है, इतना ही ऊपर दिया गया है।

ऋग्वेद में प्राप्त सवितृ के वर्णन में सारी मानवीय सृष्टि इसी पर निर्भर रहती है, यह मध्यवर्ति कल्पना

प्रसृत है (ऋ. १.११५.१)। इसी कारण संभाव्यतः जैसे धार्मिक नित्यकर्म में इसे प्रतिदिन अर्घ्य दे कर, स्व संसार को वस्तु करनेवाले असुरों से संरक्षण करने के लिए इसकी प्रार्थना की जाती है (तै. आ. २; ऋ. ४.४)।

स्वरूपवर्णन—यह स्वर्णनेत्र, स्वर्णहस्त एवं स्वर्णनिहावाला बताया गया है (ऋ. १.३५; ६.७१)। इसकी मुद्राएँ भी स्वर्णमय हैं, एवं इसके देहा पीले हैं (ऋ. ६.७१.१०.१३१)। यह विशाल देवधारो है, एवं इसके पास स्वर्णस्नेहवाला स्वर्णगन्ध है (ऋ. ४.५३.१.३५)। इसका यह रथ दो प्रकाशमान अश्वों के द्वारा खींचा जाता है।

यह महान् वैभव (अमति) से युक्त है, एवं इसवैभव को यह वायु, आकाश, पृथ्वी आदि को प्रकाशमय कर तीनों लोगों में प्रसृत कर देता है (ऋ. ७.३८.१)। अने मुषण श्वजाओं को उँचा उड़ा कर यह सभी प्राणियों को जागृत कर देता है, एवं उन्हें आशीर्वाद देता है (ऋ. ३.३८)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे कश्यप प्रजापति एवं अदिति का कनिष्ठ पुत्र कहा गया है (विष्णु धर्म. १.१०६)। जन्म से ही इसके अवयवरहित होने के कारण, इसे 'मार्तण्ड' नामान्तर प्राप्त था। अन्य देवताओं से पहले निर्माण होने के कारण इसे 'आदित्य' भी कहते थे (भवि. ब्राह्म. ७५)। इसी पुराण में अन्यत्र इसे ब्रह्मा के वंशान्तर्गत मरीचि ऋषि का पुत्र कहा गया है (भवि. ब्राह्म. १५५)। इसके ज्येष्ठ भाई का नाम अरुण था।

अनुचर—इसके अनुचरों की विस्तृत नामावलि पुराणों में प्राप्त है, जिनमें निम्नलिखित अनुचर प्रमुख बताये गये हैं—१. दण्डधारी—राजा एवं श्रेष्ठ; २. लेखनिक-पिंगल; ३. द्वारपाल—कर्मण्य एवं सृष्टि के विभिन्न परिष्कार (भवि. ब्राह्म. ७९)।

पत्नियों—इसकी निम्नलिखित पत्नियों थीं—१. त्वष्टकन्या संज्ञा; २. रैवतकन्या राजी ३. प्रभा (मत्स्य. ११)। इनके अतिरिक्त इसे श्रौ, राजी, पृथ्वी, एवं निशुभा नामक अन्य पत्नियों भी थीं (स्कंद. ७.१.१८)। किन्तु बहुत सारे पुराणों में इसकी संज्ञा नामक एक ही पत्नी का निर्देश प्राप्त है (वायु. २२.३९; विं. ३.२; ब्रह्म. ६; ह. वं. १.९; म. आ. ६०.३४)।

परिवार—अपनी पत्नी संज्ञा से इसे मनु, यम एवं यमी नामक तीन संतान उत्पन्न हुए। आगे चलकर इसका तेज उसे अवल्य हुआ, जिस कारण उसने अपने शरीर से

छाया (सवणा) नामक अन्य एक स्त्री उत्पन्न की, एवं उसे इसकी सेवा में भेज कर वह तपस्या करने चली गयी। इसे छाया से श्रुतश्रवस् (सावर्णि मनु), श्रुतकर्मन् (शनि), एवं तपती नामक तीन संतान उत्पन्न हुए (संज्ञा देखिये)।

आगे चल कर छाया का त्याग कर यह पुनः एक बार अपनी संज्ञा नामक पत्नी के पास गया, जिससे इसे अश्विनीकुमार (नासत्य एवं दम्भ), एवं रेवन्त नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए (विष्णु. ३.२; भवि. ब्राह्म. ७९; मार्क. ७५)। अन्य पुराणों में इसके पुत्रों की नामावलि निम्न-प्रकार दी गयी है:—१. संज्ञापुत्र—वैवस्वत मनु (श्राद्धदेव), यम एवं यमुना; २. छायापुत्र—सावर्णि मनु, शनि, तपती एवं विष्टि; ३. अश्विनीपुत्र—अश्विनी-कुमार, रेवन्त; ४. प्रभापुत्र—प्रभात; ५. राज्ञीपुत्र—रेवन्त; ६. पृथिवीपुत्र—सावित्री, ध्याहति, त्रयी, अग्निहोत्र, पशु, सोम, चातुर्मास्य, पंचमहायज्ञ (भा. ६.१८.१)। इसकी संतानों में से यम एवं यमुना, तथा अश्विनीकुमार बुद्धी संतान थीं (मत्स्य. ११; पद्म. सू. ८; विष्णु. ३.५; ब्रह्म. ६; भवि. ब्राह्म. ७९; म. आ. ६७; भा. ८.१३)।

कई अन्य पुराणों में इसके इलापति एवं पिंगलापति नामक अन्य दो पुत्र दिये गये हैं, एवं उन्हें 'संज्ञापुत्र' कहा गया है (भवि. प्रति. ४.१८; पद्म. सू. ८)।

रूपकल्पक वर्णन—भविष्य पुराण के अनुसार इसकी पत्नियों एवं परिवार का अन्य पुराणों में प्राप्त वर्णन रूप-काल्पक है। इस रूपक में संज्ञा एवं छाया नामक इसकी दो पत्नियों क्रमशः अंतरिक्ष (यौः) एवं पृथ्वी हैं। इन दोनों पत्नियों के पुत्र क्रमशः 'जल' एवं 'सत्य' हैं। ग्रीष्म ऋतु में यह जल का शोषण करता है, एवं वही जल वर्षाऋतु में पृथ्वी पर गिरा कर उससे सत्य (अनाज) की निर्मिति करता है। इसी कारण इसे अमस्त सृष्टि का पिता माना गया है (भवि. ब्राह्म. ७९)। इसी पुराण में अन्यत्र इसे चंद्र एवं नक्षत्रों का पिता, एवं स्वामी कहा गया है।

३. अष्टाईस व्यासों में से एक।

सवेदस्—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सवैलेय—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद—'सवैलेय'।

सव्य आंगिरस्—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १. ५१-५७)।

सव्यसिन्धु—एक संहिकेय अमुर, जो विप्रचित्ति एवं सिंधिका के पुत्रों में से एक था। परशुराम ने इसका वध किया (ब्रह्मोड. ३.६.१८-२२)।

२. दशसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

सस आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२१)।

सस्मित—उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. तामस मन्वन्तर का एक योगवर्धन।

सह—स्वायंभुव मनु के पुत्रों में से एक।

२. प्राण नामक वसु के पुत्रों में से एक।

३. उत्तम मनु के पुत्रों में से एक।

४. आभूतरजस् देवों में से एक।

५. (सो. पूर.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक, जो भारतीय युद्ध में मारा गया (म. क. ३.५.१४)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'सम'।

६. कृष्ण एवं लक्ष्मणा के पुत्रों में से एक।

७. एक अग्नि, जो समुद्र में छिप गया था। इसके शरीर के अवयवों से धातुओं की उत्पत्ति हुई। आगे चल कर देवताओं के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, यह अग्नि पुनः एक बार पृथ्वी पर प्रकट हुआ।

सहज—चेहि एवं मत्स्य देश का एक कुल्यंगार नरेश, जिसने अपने दुर्भ्यवहार के कारण, अपने स्वजनों का एवं परिवार के लोगों का नाश किया (म. उ. ७२.११-१७)।

सहजन्य—एक यक्ष, जो आपाह माह में सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३६)।

सहजिन्यु—एक अप्सरा, जो हिरण्यकशिपु के प्रिय अप्सराओं में से एक थी (पद्म. सू. ४५)।

सहदेव—(सो. कुरु.) हस्तिनापुर के पाण्डु राजा के पाँच पुत्रों में से एक (सहदेव पाण्डव देखिये)।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो दिवाक (दिवाकर) राजा का पुत्र, एवं बृहदश्व राजा का पिता था (भा. ९. १२.११)।

३. (सू. इ.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार संजय राजा का पुत्र, एवं कृशाश्व राजा का पिता था (वायु. ८६.२०)। भागवत में इसे संजय राजा का पुत्र कहा गया है (सहदेव साञ्जय देखिये)।

४. एक राजा, जो भागवत विष्णु एवं वायु के अनुसार सुदास राजा का पुत्र, एवं सोमक राजा का पिता था (भा. ९.२२.१)।

५. (सो. मगध.) मगध देश का एक राजा, जो जरासंध राजा का पुत्र था। इसकी अस्तित्व एवं प्राप्ति नामक दो बहनें थीं, जो मथुरा के कंस राजा को विवाह में दी गयी थीं।

अरासंध के वध के पश्चात् कृष्ण ने इसे मगध देश के राजाही पर बिठाया, एवं इससे मित्रता स्थापित की।

भारतीय युद्ध में यह एक अशौहिणी सेना के साथ पाण्डव पक्ष में शामिल हुआ था। युधिष्ठिरसेना के सात प्रमुख सेनापतियों में यह एक प्रमुख था। इसके पराक्रम का गौरवपूर्ण वर्णन संजय के द्वारा किया गया है। अंत में यह द्रोण के द्वारा मारा गया (भा. ९.२२.९; १०.७२.४८; म. द्रो. १०१.४.३)।

परिवार—इसके सोमाधि, मार्जारिव एवं मेघसंधि नामक तीन पुत्र थे। इसकी मृत्यु के पश्चात् सोमाधि (सोमाधि) मगध देश का राजा बन गया।

६. (सो. बहु.) वसुदेव एवं हाम्ना के पुत्रों में से एक।

७. (सु. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सुप्रतीत राजा का पुत्र था (वायु. ९९.२८४)। इस 'मरुदेव' नामान्तर भी प्राप्त था।

८. (सो. शत्रु.) एक राजा, जो वायु के अनुसार हर्यश्व राजा का, विष्णु के अनुसार हर्षवर्धन राजा का, भागवत के अनुसार हव्यवन राजा का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार हव्यश्व राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम हीन अहीन, अर्दीन था (वायु. ९.२.९; भा. ९.१७.१७; ब्रह्मांड. ३.६८.९)।

९. भास्करसंहितासंगत 'व्याधिंसिबुधिमर्दनतत्र' नामक ग्रंथ का कर्ता।

१०. कुण्डल नगरी के सुरथ राजा का पुत्र।

सहदेव पाण्डव—हस्तिनापुर के पाण्डु राजा का क्षेत्रज्ञ पुत्र, जो अश्विनो के द्वारा पाण्डुवस्तीमाद्री के उपपन्न हुए दो जुड़वे पुत्रों में से एक था (म. आ. ९.०.७९)। यह पाण्डुपुत्रों में से पाँचवाँ पुत्र था, एवं नकुल का छोटा भाई था। स्वरूप, पराक्रम एवं स्वभाव इन सारे गुण-वैशिष्ट्यों में यह अपने ल्येष्ट भाई नकुल से साम्य रखता था, जिस कारण नकुल-सहदेव की जोड़ी प्राचीन भारतीय इतिहास में एक अभेद्य जोड़ी बन कर रह गयी (नकुल देखिये)। इसके जन्म के समय इसकी महत्वा वर्णन करने-वाली आकाशवाणी हुई थी (म. आ. १.१५.१७; भा. ९.२२.२८; ३०.३१)।

बाल्यकाल—इसका जन्म एवं उपनयनादि संस्कार अन्य पाण्डवों के साथ शतश्रावण पर्व पर हुए थे। द्रोण ने इसे शस्त्रास्त्रविद्या, एवं श्यामतिपुत्र शुक्र ने इसे धनुर्वेद की शिक्षा प्रदान की थी। सह्यगयुद्ध में यह विशेष निपुण था। द्रौपदीस्वयंवर के समय इसने दुःशासन के साथ

युद्ध कर उसे परास्त किया था (म. आ. १.८६.६४; पर्वि २.)।

दक्षिण दिग्विजय—युधिष्ठिर के राज्ययुद्ध के समय, यह दक्षिण दिशा की ओर दिग्विजय के लिए गया था (भा. १०.७२.१३)। सर्वप्रथम इसने वृरतेन देव जीत कर मत्स्य राजा पर आक्रमण किया। उसे जीतने के बाद इसने कम्प देश के दन्तवक्र राजा को पराजित किया। पश्चात् इसने गिन्नल्लिखित देशों पर विजय प्राप्त किया—पश्चिम मत्स्य, त्रेपादभूमि, अष्टगिरि, गोदुंग एवं नरतार। इसी दिग्विजय में इसने सुमित्र एवं श्रेणिवन् राजा पर विजय प्राप्त किया। पश्चात् यह कुन्तिभोज राजा के साथ में कुछ काल तक उहरा, जो पाण्डवों का मित्र था।

पश्चात् इसने सिन्धु नदी के तट पर कृष्ण के सु जेयकसुर के पुत्र से युद्ध किया। अन्त में धोर संग्राम का इसने उत्सुक वध किया। पश्चात् यह दक्षिण दिशा की ओर मुड़ा। वहाँ सेक एवं अपरसेक राजाओं को पराजित कर, एवं उनसे करभार प्राप्त कर यह नर्मदा नदी के तट पर आ गया। वहाँ अर्बली देश के विंद एवं अर्बुद राजाओं को पराजित कर, यह सोनकट नगरी में आ पहुँचा। वहाँ के भीष्मक राजा के साथ इसने दो दिनों तक संघर्ष किया, एवं उसे जीत लिया।

आगे चल कर कोसल एवं वंशवापीर देश के राजाओं को पराजित कर, यह कान्तारक देश में प्रविष्ट हुआ। वहाँ कान्तारक, प्राक्कोसल, नाटनेय, हेरक, मारुथ, रम्यग्राम, नाचीन, अतर्बुक देश के राजाओं से इसने पराजित किया। पश्चात् इसी प्रदेश में स्थित वनाधिपतियों को जीत कर, इसने वाताधिप राजा पर आक्रमण किया, एवं उसे जीत लिया।

आगे चल कर पुलिंद राजा को परास्त कर यह दक्षिण दिशा की ओर जाने लगा। रास्ते में पाण्डव राजा के साथ इसका एक दिन तक घोर संग्राम हुआ, एवं इसने उसे परास्त किया। पश्चात् यह किराँकिया देश जा पहुँचा, जहाँ भेंद एवं द्विविंद नामक वातर राजाओं के साथ सात दिनों तक युद्ध कर, इसने उन्हें परास्त किया।

पश्चात् इसने माहिष्मती नगरी के नील राजा के साथ सात दिनों तक युद्ध किया। इस युद्ध के समय, अग्नि ने नील राजा की सहायता कर, इसकी सेना को जलना प्रारंभ किया। इस प्रकार सहदेव की पराजय होने का शोका उत्पन्न हुआ। इस समय सहदेव में गुचिभूत हो कर अग्नि

की स्तुति की, एवं उसे संतुष्ट किया। पश्चात् अग्नि की ही सूचना से नील राजा ने इससे संघि की।

आगे चल कर सहदेव ने त्रैपुर एवं पौरवेश्वर राजाओं को परास्त किया। पश्चात् सुराष्ट्र देश के राजा कौशिका-चार्य आकृति राजा को इसने परास्त किया, एवं यह कुछ काल तक उस देश में ही रहा।

पश्चात् इसने पश्चिम समुद्र के तटवर्ति निम्नलिखित देशों पर आक्रमण किया:— सर्पारक, तालकट्ट, टण्डक, सनुद्रद्वीपवासी, ग्लेच्छ, निपाट, पुरुपाद, कणप्रावरण, नरराक्षसयोनि, कालसुख, कोलगिरि, सुरभिपट्टण, ताम्रद्वीप, रामकवचैत, तिमिगल।

सहदेव के द्वारा किये गये पराक्रम के कारण, निम्न-लिखित दक्षिण भारतीय देशों ने बिना युद्ध किये ही, केवल दूतप्रेषण से ही पाण्डवों का सार्वभौमत्व मान्य किया:— एकराट, पुरुव, वनवासी, केरल, संजयती, पावंड, करहाटक, गण्ड्य, द्रविड, उट्ट, अंध्र, तालवन, कर्णा, उट्टकर्णिक, आटवीपुरी, यजनपुर।

इस प्रकार दक्षिण भारत के बहुत सारे देशों पर अपना आधिपत्य प्रस्थापित करने के बाद, इसने लंकाधिपति विभीषण की ओर अपना प्रयोत्कच नामक दूत भेजा, एवं उससे भी करभार प्राप्त किया। पश्चात् दक्षिणदिग्विजय में प्राप्त किया गया सारा करभार ले कर, यह इंद्रप्रस्थ नगरी में लौट आया, एवं सारी संगति इसने युधिष्ठिर को अर्पित की (म. स. २८)। राजसूय यज्ञ समाप्त होने पर, अन्य पाण्डवों के समान इसने भी कृष्ण की अग्रपूजा भी की (म. स. ३३.३०; भा. १०.७५.४)।

सूतकीडा एवं वनवास—युधिष्ठिर के द्वारा पाण्डवों का सारा राज्य सप्तकीडा में हार दिये जाने पर, इस आपद्रवसंघके जिम्मेदार शकुनि को मान कर इसने उसके वध करने की प्रतिज्ञा की (म. स. ६८.४१)।

पाण्डवों के अज्ञातवास में, तैतिगल नाम धारण कर यह विराट नगरी में रहता था। यह उत्कृष्ट अश्वचिकित्सक था (म. वि. ३.७)। इस कारण विराट की अश्व-शाळा में अश्वसेवा का काम इसने स्वीकार किया। अज्ञातवास में इसका सांकेतिक नाम 'जयद्रुल' था (म. वि. ५.३०)।

भारतीय युद्ध में—इस युद्ध में इसके रथ के अश्व तित्तिर पक्षी के रंग के थे, एवं इसके ध्वज पर हंस का चिह्न रहता था। इसके धनुष्य का नाम 'अश्विन,' एवं शूल का नाम 'मणिपुष्पक' था (म. द्रो. परि. १.५.

११-१२; भी. २३.१६)। रथयुद्ध में यह अत्यंत निष्णात था (म. उ. १६६.१८)। द्रोण के सेनापत्य—काल में इसने उस पर आक्रमण करना चाहा; किन्तु उस समय कर्ण ने इसे परास्त किया (म. द्रो. १४२.१३)। अंत में अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार इसने शकुनि का वध किया (म. श. २७.५८)।

भारतीय युद्ध के पश्चात्—युधिष्ठिर के हतिनापुर का राज्याभिषेक किये जाने पर, उसने इस पर धृतराष्ट्र की देख काल का कार्य सौंप दिया (म. शां. ४१.१४)।

पाण्डवों के महाप्रस्थान के समय, द्रौपदी के पश्चात् सर्वप्रथम इसका ही पतन हुआ। इसे अपनी बुद्धि का अत्यधिक गर्व था, जिस कारण इसका शीघ्र ही पतन हुआ (म. महा. २.८; भा. १.१५.४९)। मृत्यु के समय इसकी आयु १०५ वर्षों की थी (युधिष्ठिर देखिये)।

परिवार—इसकी चार कुल पत्नियाँ थी:—१. द्रौपदी (म. आ. १०.८१); २. विजया, जो इसके मामा मत्स्यनरेश शल्य की कन्या थी (म. आ. १०.८७); ३. भानुमती, जो भानु राजा की कन्या थी (ह. व. २.१०.७३); ४. मगधराज नरासंध की कन्या (म. आश्र. ३२.१२)।

इसके कुल दो पुत्र थे:—१. श्रुतकर्मन्, जो द्रौपदी से उत्पन्न हुआ था (म. आ. १०.८२); २. सुहोत्र, जो इसे विजया से उत्पन्न हुआ था (म. आ. १०.८७)।

ग्रन्थ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त हैं:—१. व्याधिसंघविमर्दन; २. अमिस्तोत्र; ३. शकुनपरीक्षा।

सहदेव चार्पागिरि—एक राजा, जिसे ऋग्वेद के एक सूक्त के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (ऋ. १.१००)। इसने रुद्राश्व, भयमान, सुराधम् एवं अंबरीष नामक अपने माइयों के साथ इंद्र की स्तुति की थी, जिस कारण यह शिम्बु एवं दस्यु नामक अपने शत्रु पर विजय प्राप्त कर सका (ऋ. १.१००.१७-१८)।

सहदेव सार्जय—एक राजा, जो सोम की एक विशिष्ट परंपरा में से सोमक साहदेव्य नामक आचार्य का शिष्य था (ऐ. ब्रा. ७.३-४)। एक धर्मप्रेषण राजा के नाते वामदेव के द्वारा इसकी स्तुति की गयी थी। इसका सही नाम 'सुल्न् सार्जय' था, किन्तु 'दाशायण' नामक यज्ञ करने पर इसने 'सहदेव सार्जय' नाम धारण किया (श. ब्रा. २. ४.४.४)। ऋग्वेद एवं ऐतरेय ब्राह्मण में सोमक साहदेव्य नामक आचार्य के साथ इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ४.

११.७; गे. ब्रा. ७.३४.९)। ब्राह्मण ग्रंथों में अन्यत्र भी इसका निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. १२.८.२.३)।

कई अभ्यासकों के अनुसार सहदेव सार्वभ्य एवं सहदेव वापांगिर दोनों एक ही व्यक्ति थे।

सहदेवा—देवक राजा की एक कन्या, जो वसुदेव की पत्नियों में से एक थी। इसके कुल आठ पुत्र थे, जिनमें अथासत्र प्रसन्न था (भा. ९.२४.२३)।

सहस्रात्थपुत्र—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से लोकाक्षि नामक आचार्य का शिष्य था।

सहस्राद्—मरुतराम का सारथि (म. वि. ११.२४२३; ब्रह्मांड. ३.४६.१४)।

सहस्रचित्स्य—केकय देश का एक राजा, शताश्रु राजा का पितामह था। इसने अपने प्राणों को त्याग कर एक ब्राह्मण की जान बचायी (म. अनु. १३७.२०; शां. २६६.३०)। पाठभेद—'सहस्रजित्'।

सहस्रजित्—(सो. पुरुवशीय) एक राजा, जो भागवत, नस्य, वायु एवं पद्म के अनुसार वायु राजा का ज्येष्ठ पुत्र, एवं शतजित् राजा का पिता था। इसे 'सहस्राद्' नामान्तर भी प्राप्त था।

२. कृष्ण एवं जांबवती के पुत्रों में से एक।

३. केकय राजा सहस्रचित्स्य का नामान्तर (म. शां. २२६.३१)।

सहस्रज्योति—विवस्वत् के पुत्रों में से एक। इसके कुल दस लाख पुत्र थे (म. आ. १.४४)।

सहस्रजार—वशावर्तिन् देवों में से एक।

सहस्रपाद्—एक ऋषि, जो शप के कारण डुण्डुभ नामक सर्प हो गया था। इसी सर्पयोगि में रुरु नामक ऋषि इसका वध करने के लिए प्रवृत्त हुआ था, किन्तु इसने उसे इस पापकर्म से प्रवृत्त किया था (रुरु देखिये)। पाण्डवों के वनवास काल में यह द्वैतवन में उनके साथ उपस्थित था (म. व. २७.२२)।

सहस्रमुख—पुष्करद्वीप के रावण नामक राक्षस की उपाधि (रावण सहस्रमुख देखिये)।

सहस्रवाक्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। पाठभेद—'सस्तुवाक्'।

सहस्राजित्—(सो. क्रौट्यु.) एक यादव राजा, जो भजमान एवं उपवाह्यका के पुत्रों में से एक था (विष्णु. ४.१३.२)।

सहस्राद्—पुरुवशीय सहस्रजित् राजा का नामान्तर (सहस्रजित् १. देखिये)।

सहस्रानीक—(सो. पू. क.) एक पूर्वशीय राजा, जो शतानीक राजा का पुत्र, एवं अश्वमेधव्रत (अश्वमेधव्रत) नामक राजा का पिता था (भा. ९.२२.३९; म. आ. १०.१५)। इसके द्वारा अश्वमेध व्रत किये जाने पर इसे पुत्रप्राप्ति हुई, जिस कारण इसके पुत्र का नाम 'अश्वमेधव्रत' रखा गया।

भागवत एवं महाभारत के अतिरिक्त अन्य पुराणों में इसका निर्देश अप्राप्य है, जहाँ शतानीक राजा के पुत्र का नाम असीमकृष्ण दिया गया है।

सहस्राश्व—(सू. इ.) एक राजा, जो मत्स्य एवं पद्म के अनुसार अहिनग राजा का पुत्र, एवं चंद्रावशीक राजा का पिता था (मत्स्य. १२.५४)।

सहस्रवत्—(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय महस्रवत् राजा का नामान्तर।

सहानंदित्—(शिशु. भविष्य.) मगध देश के महानन्दित् राजा का नामान्तर। ब्रह्मांड में इसे नंदिवर्धन राजा का पुत्र, एवं महापद्म राजा का पिता कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.७४. १३४)।

सहाभोज—(सो. क्रौट्यु.) क्रौट्युवंशीय महाभोजराजा का नामान्तर। वायु में इसे सात्वत राजा का पुत्र कहा गया है।

सहितंडिपुत्र—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से लोकाक्षि नामक आचार्य का शिष्य था।

सहित्पु—एक शिवावतार, जो वैवस्वत मन्वंतर के लक्ष्मीमयें युगचक्र में भद्रवटपुर नामक नगरी में अवतीर्ण हुआ था। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थे:— १. उरुक; २. त्रियुत्; ३. शत्रुक; ४. आश्वलायन (शिव. शत. ५)।

२. चाक्षुष मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक, जो पुलह ऋषि एवं गती का पुत्र था।

३. स्वायंभुव मन्वंतर का एक ऋषि, जो पुलह ऋषि एवं गती का पुत्र था (मार्क. ५२.२३-२४)।

४. एक गधर्व, जो अपने अगले जन्म में शक्र नामक कंसपक्षीय असुर बन गया था (वक्र. १. देखिये)।

सांयमनि—(सो. कुरु.) सोमदत्तपुत्र शल राजा का नामान्तर (म. भी. ६१.११)।

२. दुर्योधन के पक्ष के शल्य (शल) नामक राजा का एक पुत्र। धृष्टद्युम्न ने इसका वध किया।

सांवरणि-- मनु सांवरणि राजा का पैतृक नाम, जो उसे संवरण का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था (ऋ. १.१०१.१०-१२ मनु सांवरण देखिये)।

साकमश्व देवरात--एक आचार्य, जो विश्वामित्र ऋषि का शिष्य था (सां. आ. १२.१)।

सागर--शक्ति नामक ऋषि का पैतृक नाम।

सागररक्त--सागर देश का एक राजा, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में मंत्र ले कर उपस्थित हुआ था।

सागरध्वज--पांड्य देश का एक राजा, जो अल्ल-विद्या में परशुराम, भीष्म, द्रोण, एवं कृप आदि आचार्यों का शिष्य था।

इसके पिता एवं भाई का कृष्ण ने युद्ध में वध किया। इस कारण यह कृष्ण से बदला लेने के लिए, द्वारका नगरी पर आक्रमण करने के लिए प्रवृत्त हुआ। किन्तु उस अविचार से इसके मित्रों ने इसे परावृत्त किया।

भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था। इसके रथ के अश्व चन्द्रकिरणों के समान शुभ्रवर्णीय, एवं वैदूर्यरत्नों की जाली से सुशोभित थे। इसकी सेना में एक लाख नादीस हजार रथ थे, जिन्हें श्वेतवर्णीय अश्व जोते गये थे।

साशि--एक पितर।

सांहाश्य--यमसभा में उपस्थित एक राजर्षि (म.स. ८.१०)।

सांकृति--एक क्षत्रोपेत ब्राह्मणसमूह, जो सांकृति राजा का वंशज था। आगे चल कर, ये आगिरसभोजीय ब्राह्मण बन गये (वायु. ९९.१६४)।

२. अत्रिवंश में उत्पन्न एक ऋषि, जिमने अपने शिष्यों को निर्गुण ब्रह्म का उपदेश प्रदान किया था (म. सां. २२६.२२)।

३. विश्वामित्र ऋषि की पत्नियों में से एक।

सांकृत्य--एक वैयाकरण (तै. प्रा. ८.२१)।

२. एक आचार्य, जो पाराशर्य नामक आचार्य का गुरु था (वृ. उ. २.५.२०, ४.५.२६ माध्यं.)।

सांतव्य--अत्रि नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (अत्रि देखिये)।

सांकृतीपुत्र--एक आचार्य, जो अलम्बीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य, एवं शौरीपुत्र नामक आचार्य का गुरु था (श. ब्रा. १४.९.४.३१)।

सांख्यानन--एक आचार्य, जो भागवतशिष्यपरंपरा

में से सनत्कुमार का शिष्य था। इसके शिष्यों में पराशर एवं बृहस्पति प्रमुख थे (भा. ३.८.७)।

२. सांख्यान नामक सुविख्यात वैदिक आचार्य का नामान्तर।

३. एक ऋषि, जो गायत्री नामक सुविख्यात वैदिक सूक्तद्रष्टा का पूर्वज था।

४. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सांग--(स्वा. उचान.) हविर्धानपुत्र मय राजा का नामान्तर।

सांगर--एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पणिनि देखिये)।

सांजीवीपुत्र--एक आचार्य, जो प्राण्यपुत्र आसुर-वासिन् एवं मांडूकायनि नामक आचार्यों का शिष्य, एवं प्राचीनयोगीपुत्र नामक आचार्य का गुरु था (वृ. उ. ६. ५.४ काण्व; ६.४.३ माध्यं.)। शतपथ ब्राह्मण में अन्यत्र इसे माण्डव्य ऋषि का शिष्य कहा गया है (श. ब्रा. १०.६.५.९)। इससे प्रतीत होता है कि, यह दो आचार्यों की परंपराओं का प्रतिनिधित्व करता था:--

१. शांडिल्य की अग्निपूजकपरंपरा, जिसका प्रमुख आचार्य माण्डुकायनि था; २. शांखवत्क्य वाजसनेय की तत्त्वज्ञान विषयक परंपरा, जिसका प्रमुख आचार्य प्राण्यी-पुत्र आसुरवासिन् था।

सातकर्णि--(आंश्र. भविष्य.) आंध्रवंशीय शातकर्णि राजा का नामान्तर। वायु में इसे कृष्ण राजा का पुत्र कहा गया है।

२. एक आंध्रवंशीय राजा, जो वायु के अनुसार पुत्रिकेण राजा का पुत्र था।

साति औप्राक्षि--एक आचार्य, जो सुश्रवस् वार्षगण नामक आचार्य का शिष्य, एवं मद्रवार शौंगायनि नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)। उप्राक्ष नामक आचार्य का वंशज होने के कारण, इसे 'औप्राक्षि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

सात्यकामि--केशिन् नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. सं. २.६.२.३)।

सात्यकि (युयुधान)--(सो. बृष्णि.) एक यादव राजा, जो कृष्णावुर्जा का अत्यंत प्रिय मित्र था। यह शिनि नामक यादव राजा का पौत्र, एवं सत्यक राजा का पुत्र था (म. आ. २११.११; भा. ९.२४.१४)। महाभारत में अन्यत्र इसे शिनि राजा का पुत्र कहा गया है (म. द्रो. ९७.२७; ५३; ११९.१७)।

इसे निम्नलिखित नामान्तर भी प्राप्त थे:—१. सात्यत (म. द्रो. ७३.१३; ८८.१५); २. दाशार्ह (म. द्रो. ११७.४); ३. शौनेय; ४. माधव, जो नाम इसे मधु यादव का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (म. द्रो. ७३.११; ८८.२६)।

यह वृष्णिकुलभूषण, सत्यप्रतिज्ञ, शत्रुमर्दन वीर था एवं इसका स्वभाव अत्यंत क्रोधी एवं निर्भय था। यह कृष्ण को अपना ज्येष्ठ मित्र, तथा अर्जुन को अपना अस्त्रविद्या का गुरु मानता था, जिस कारण अर्जुन यह अपने इन दोनों ज्येष्ठ मित्रों की सहायता करता रहा। इसकी गणना महा-भारतकालीन श्रेष्ठ वीरों में की जाती थी। इसका प्रमाण निम्नलिखित विदुरवचन में पाया जाता है, जो उसने धृतराष्ट्र से कहा था:—

येषां पक्षधरों रामो येषां मंत्री जनावर्धनः।

किं नु तैरजितं संख्ये येषां पक्षे च सात्यकिः ॥

(म. आ. १९७.२०)।

(जिस पक्ष में बलराम एवं सात्यकि जैसे वीरप्रवर हैं, एवं जिनके मंत्री स्वयं श्रीकृष्ण हैं, उन पाण्डवों के लिए युद्ध में अजेय क्या हो सकता है ?)

स्वरूपवर्णन—इसका सचित्र स्वरूपवर्णन महा-भारत में अर्जुन के द्वारा निम्नप्रकार किया गया है:—
‘महान् स्कंध एवं विशाल बक्षःस्थलवाला, अजानुबाहु, महाबली, महावीरवान्, एवं महारथी सात्यकि मेरा शिष्य एवं मेरा सखा है’ (म. द्रो. ८५.६०)।

विद्याभ्यासंग—इसने श्रीकृष्ण से अस्त्रविद्या प्राप्त की थी (भा. ३.१.३१)। अर्जुन से भी इसने युद्धविद्या एवं धनुर्विद्या सीखी थी (भा. ३.१.१; म. द्रो. १५६.१४)। वृष्णिवंशीय यादवों के सात अतिरथी वीरों में इसकी गणना की जाती थी। इसके रथ के अस्त्र शुभ्र एवं रुपहले थे (म. द्रो. २३.२; ७३.११; ११५.१)।

कृष्ण का सहायक—कृष्ण के द्वारा किये गये हर एक युद्ध में यह उसका प्रमुख सहायक रहा करता था। बाणासुर के युद्ध में यह कृष्ण के साथ उपस्थित था, एवं इसने बाणासुर के मंत्री कुमाण्ड से युद्ध किया था (भा. १.३.१६)। जरासंध के आक्रमण के समय, मथुरानगरी के पश्चिम द्वार के संरक्षण का भार इसके ऊपर था। उस समय इसने जरासंध की सेना को परास्त कर उसका पाँच योजनों तक पीछा किया था (भा. १०.५०.२०)। शात्त्वयुद्ध के समय इसने द्वारका नगरी का रक्षण किया था (भा. १०.५२)। पौण्ड्रक वासुदेव के युद्ध में, इसने

कृष्ण की काफ़ी सहायता की थी (भा. १०.७८)। कृष्ण के अश्वमेधीय अश्व के साथ यह उपस्थित था।

पाण्डवों का मित्र—कृष्ण के समान यह भी पाण्डवों का हितैषी एवं मित्र था। द्रौपदी के स्वयंवर के समय यह उपस्थित था (म. आ. १७७.१७)। अर्जुन एवं सुभद्रा के विवाह के समय, यह ददृज ले कर इंद्रप्रस्थ गया था। इंद्रप्रस्थ में किये गये बुधिशिर के राक्षसनिष्क के समय यह उपस्थित था।

पांडवों के वनवापकाल में—पांडवों के वनव्रत के पश्चात्, इसने कृष्ण एवं बलराम को मलाह दी थी ‘यादवों के द्वारा धृतराष्ट्रपुत्रों का वध कर, अभिमन्यु को हस्तिनापुर के राजगद्दी पर बैठा देने से सारी समस्या दूर जायेगी’। इस समय कृष्ण ने इसे पांडवों की प्रतीका याद दिलायी, जिसके अनुसार किमी अन्य के द्वारा जीता हुआ राज्य उन्हें अस्वीकरणीय था।

युद्ध का समर्थन—कृष्णदीय के पूर्व संपन्न हुई यादव-सभा में, पांडवों की पक्ष की न्यायसंगतता एवं उचितता इसने स्पष्ट शब्दों में कथन की थी (म. उ. ३)। पांडवों के शांतिदूत के नाते कौरवों के यहाँ जानेवाले कृष्ण ने इसने पुनः पुनः यही कही कहा था कि, केवल युद्ध के द्वारा ही पांडवों के न्याय्य माँगों की रक्षा की जा सकती है। इस समय शान्ति का पुरस्कार करनेवाले कावच लोगों को कटु आलोचना करते हुए इसने कहा:—

नाधर्मो विद्यते कश्चिच्छत्र्यूनं ह्वाऽततायिनः।

अधर्म्यमयशरथं च शत्रवाणां प्रयाचनम् ॥

(म. उ. ८.२०)।

(भाततापी शत्रु का वध करना अधर्म नहीं है, बल्कि ऐसे शत्रु से कुछ याचना करना अपमान एवं अधर्म जरूर है)।

पश्चात् यह अपने सवारे हुए रथ में बैठ कर, कृष्ण के साथ हस्तिनापुर गया था (म. उ. ७९-८१)।

कौरवों की राजसभा में—कौरवसभा में कर्ण, शत्रुनि, एवं दुर्योधन ने श्रीकृष्ण को पकड़ने का मंत्रणा की। उस समय इसने कृतवर्मान से अपनी सेना व्यूहाकार में संरक्षित करने की आज्ञा दी। पश्चात् अत्यंत निर्भयतापूर्वक कौरव-सभा में प्रवेश कर इसने दुर्योधन एवं उसके मित्रों को अत्यंत कटु आलोचना की। कृष्ण जैसे पाण्डवों के राजदूत को कैदी बनाने का दुर्योधन का पद्धत्य इस प्रकार विफल हुआ।

भारतीय युद्ध में—इस युद्ध के पहले दस दिनों में इतने निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध कर अत्यधिक पराक्रम दिखाया था:—१. शकुनि (म. भी. ५४.८-९); २. भूरिश्रवसु एवं अर्जुन (म. भी. ५९-६०); ३. कृतवर्मन्, भीष्म, दुर्योधन, भगदत्त एवं अश्वत्थामन् ।

द्रोण के सैन्यकाल में—भारतीय युद्ध के आरम्भ के दिन इतने द्रोण के साथ वनघोर युद्ध किया था, एवं उसके एक ही एक धनुषों को खण्डित कर ध्वस्त कर दिया । इसके युद्धकौशल्य से प्रसन्न हो कर, द्रोण ने इसे स्वयंस्फूर्ति से परशुराम, कार्त्तवीर्य, अर्जुन एवं भीष्म के समान श्रेष्ठ धनुर्धर के नाते संबोधित किया—

पुत्रद्वयवत् रामे कार्तवीर्ये धनंजये ।

भीष्मे च पुरुषस्यात्रे यद्विद्रं सात्वतां वरे ॥

(म. द्रो. ७३.३७) ।

पश्चात् युधिष्ठिर के आदेश से, यह द्रोण से युद्ध छोड़ कर अर्जुन की सहायता के लिए चला गया (म. द्रो. ८५.३९-६८) । जयद्रथवध के दिन युधिष्ठिर की रक्षा का भार इस पर सौंपा गया था । किन्तु अर्जुन को संकट में देख कर इतने भीम को युधिष्ठिर की रक्षा करने के लिए कहा, एवं यह अर्जुन की सहायता के लिए दौड़ा । उस दिन इसका निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध हुआ:—१. कृतवर्मन् (म. द्रो. ८६.८८); २. दुःशासन; ३. भूरिश्रवसु (म. द्रो. ११७; १६९.२४) ४. दुर्योधन (म. द्रो. १६४.२८); ५. कर्ण (म. द्रो. ३१.६७) ।

उपयुक्त युद्धों में से बहुत सारे युद्धों में यह अजेय रहा । केवल भूरिश्रवसु ने इसे पराजित किया, एवं इसके बलों को पकड़ कर यह इसका वध करने के लिए प्रवृत्त हुआ । उस समय अर्जुन ने पीछे से आ कर उसके दोनों हाथ तोड़ दिये । बाद में भूरिश्रवसु आमरण अनशन करने लगा, तब इतने उसका वध किया । इस प्रकार अपने छ पुत्रों का वध करनेवाले भूरिश्रवसु से इतने वशला ले लिया ।

कर्ण के सैन्यकाल में—इस काल में इतने निम्नलिखित योद्धाओं ने युद्ध कर काफी पराक्रम दिखाया:—१. कंकय राजकुमार विद्र एवं अनुविद्र (म. क. ९.२०); २. कर्ण (म. क. २१.२४); ३. वृषसेन (म. क. ३२.४१); ४. शकुनि (म. क. ४१.३१-४५); ५. कर्णपुत्र प्रसेन (म. क. ६०.४) ।

भारतीय युद्ध के अन्तर्हर्षे दिन—युद्ध के अंतिम दिन इतने क्षेमधूर्ति एवं म्लेच्छराज शाल्य का वध किया (म.

भा. च. १३०]

श. २०.८-२५) । संजय को जीवित पकड़ कर यह उसे मारने के लिए उद्यत हुआ, किन्तु श्रीध्यास की आज्ञा से इतने उसे छोड़ दिया (म. श. २८.३८) ।

पराक्रम—भारतीय युद्ध में कृष्ण एवं अर्जुन के बाद सब से अधिक पराक्रम सात्यकि ने ही दिखाया । इसी कारण संजय ने धृतराष्ट्र से कहा था, 'कृष्ण एवं अर्जुन के अतिरिक्त, सात्यकि के समान अन्य कोई भी धनुर्धर पाण्डवसेना में नहीं है' (म. द्रो. १२२.७३) ।

जयद्रथवध के पश्चात् कृष्ण ने भी इसकी अत्यधिक प्रशंसा की थी, जहाँ उसने कहा था, 'सात्यकि के सजान कोई भी योद्धा पाण्डव एवं कौरवसेना में नहीं है (यस्य नास्ति समो योधः कौरवेषु कथंचन)' (म. द्रो. ११६.११.२५) ।

भारतीय युद्ध के पश्चात्—युद्ध के उपरान्त यह कृष्ण के साथ द्वारका गया, एवं रैवतक पर्वत पर होनेवाले महोत्सव में सम्मिलित हुआ (म. आश. ५.८.४) । युधिष्ठिर के द्वारा किये गये अश्वमेधीय यज्ञ में भी यह उपस्थित था ।

मृत्यु—भारतीय युद्ध में पाण्डव पक्ष के जो थोड़े वीर बचे थे, उन में यह एक था । इस युद्ध के पश्चात् यह कई साल तक जीवित रहा ।

प्रभास क्षेत्र में हुए यादवी युद्ध के समय, अन्य यादवों के समान इतने भी 'मैरेयक' नामक मद्य का सेवन किया, एवं आपस में लड़ना झगड़ना इतने शुरू किया । उस समय इसका पुरातन शत्रु कृतवर्मन् इससे वाद-विवाद करने लगा । उस समय कृतवर्मन् ने कृष्ण के द्वारा किये गये स्पर्मतक मणि के अपहरण की चर्चा प्रारंभ की । कृतवर्मन् की ये बातें सुन कर सत्यभामा रोने लगी । उसे रोती देख कर यह अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं इतने कृतवर्मन् का शिरच्छेद किया (म. मौ. ४.२७) ।

कृतवर्मन् के वध के उपरान्त इतने अन्य यादवों का वध करना प्रारंभ किया । कृष्ण ने इसे बहुत रोका, किन्तु इतने उसकी एक न सुनी । इसे सभी यादवों को मारते देख कर उन्होंने इस पर सामूहिक हमला किया, एवं अन्य कोई शस्त्र प्राप्त न होने पर जूट्टे बर्तनों से ही इसे मारना शुरू किया । इतने इस प्रकार फँसा हुआ देख कर कृष्णपौत्र प्रद्युम्न इसे बचाने के लिए बीच में कूद पड़ा, एवं ये दोनों यादवों के द्वारा मारे गये (म. मौ. ४.३४) ।

परिवार—महाभारत में इसके पुत्र का नाम यौयुधानि दिया गया है । इसकी मृत्यु के पश्चात् अर्जुन ने उसे

सरस्वती नदी के तट पर स्थित प्रदेश का राजा बनाया (म. मौ. ८.६९; सरस्वती देखिये)।

अन्य पुराणों में इसके पुत्र का नाम निम्नप्रकार बताया गया है :--जय (भा. ९.२४.१४); असंग (मत्स्य. ४६.२३); सृति (वायु. ९६.१००)।

सात्यमुग्र—सामवेद का एक शाखा प्रवर्तक आचार्य, जिसका निर्देश सामवेद के उरकर्मोंग तर्पण में प्राप्त है। पाठभेद—'शात्यमुग्र', 'साह्यमुग्र'।

सात्यमुग्री—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सात्ययज्ञा—एक आचार्य, जिसका निर्देश याज्ञवल्क्य एवं वाष्प नामक आचार्यों के बीच हुए संवाद में प्राप्त है (श. ब्रा. ३.१.१.४)।

सात्ययज्ञि—सोमशुभ्र नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. ११.६.२.१-३)।

२. एक आचार्यसमूह, जिसका निर्देश शैलन एवं कारीरादि नामक आचार्य परंपराओं के साथ प्राप्त है (जै. उ. ब्रा. २.४.५)।

सात्यरथि—(सू. निमि) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सत्यरथ राजा का पुत्र था।

सात्यहृदय वासिष्ठ—एक आचार्य, जो अत्यराति जानन्तपि एवं देवभाग श्रौतर्षि नामक आचार्यों का समकालीन था (ऐ. ब्रा. ८.२३.९; तै. सं. ६.६.२.२)। उपर्युक्त आचार्यों में से देवभाग से इसका मंत्रपठन के संबंध में संवाद हुआ था। सत्यहृदय का वंशज होने से इसे 'सात्यहृदय' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

सात्राजित—शतानीक नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ८.२१.५; श. ब्रा. १३.५.४.१९)।

सात्वत—विष्णु का एक पार्षद।

२. (सो. क्रोष्टु.) यादवकुलोत्पन्न एक राजा, जो भागवत के अनुसार आयु राजा का, वायु के अनुसार सत्व राजा का, मत्स्य के अनुसार ऋतु राजा का, एवं विष्णु के अनुसार अंश राजा का पुत्र था। यह स्वयं एक 'वंशकर' राजा था, जो सात्वत राजवंश का मूल पुरुष माना जाता है। सुविख्यात यादव योद्धा 'सात्यकि' इसके ही वंश में उत्पन्न हुआ था। पुराणों में इसके नाम के लिए 'सात्वत' (भा. ९.२४.६) एवं 'सत्वत' (विष्णु. ४.१३.१; इ. वं. १.३०.१) ये दोनों पाठ प्राप्त हैं।

इसके निम्नलिखित सात पुत्र थे :-- १. भजमान; २. भाजि; ३. दिव्य; ४. वृष्णि; ५. देवावृध; ६. अंधक;

७. महामोज। इन पुत्रों में से भजमान इसके पश्चात् राजगद्दी पर बैठा।

सात्वत धर्म—इस धर्मपरंपरा का यह प्रमुख संवर्क माना जाता है। महाभारत में सात्वत-धर्म एवं उसकी परंपरा सविस्तृत रूप में प्राप्त है, जहाँ ब्रह्मा से लेकर इक्ष्वाकु तक के इस पंथ के प्रमुख संवर्कों की जानकारी दी गयी है। हरिगीता नामक ग्रंथ में सात्वत धर्मतत्त्वों की जानकारी दी गयी है (म. शां. ३.३६.३१-४९)।

३. भगवान् कृष्ण का एक नामांतर (म. शां. ३.४२.७७) इसके ही नाम से कृष्ण का एक उपासना सांप्रदाय सात्वत-धर्म नाम से सुविख्यात हुआ था (सात्वत २. देखिये)।

साद्गमुग्रीवि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

साधक—एक राक्षस, जो हिरण्यशक्ष से हुए देवान् संग्राम में वायु के द्वारा मारा गया (पद्म. सू. ७५)।

साधन मौवन—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १५७)।

साधित—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं ऋषिगण।

साधु—एक वैश्य, जिसकी कथा 'सत्यनारायण-स्तो' एवं उसके प्रसाद का माहात्म्य कथन करने के लिए भविष्य एवं स्कंद पुराण में दी गयी है (भवि. प्रति. २. २९; स्कंद. रे. ३)। वर्तमान स्कंदपुराण के रेवाखंड में इसकी कथा अप्राप्य है।

साधु द्विज—शिव का एक अवतार, जो हिमालय एवं मैनाक पर्वतों की तपस्या में बाधा डालने के लिए उत्पन्न हुआ था।

इस अवतार के संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा शिवपुराण में प्राप्त है। एक बार हिमालय एवं मैनाक पर्वतों ने अत्यंत कठोर शिवोपासना प्रारंभ की। उस तपस्या को देख कर देव एवं ऋषियों के मन में डर उत्पन्न हुआ कि, अगर हिमालय को मोक्षप्राप्ति होगी, तो इस संसार की अत्यंत हानि होगी। इस कारण, उनकी तपस्या में बाधा डालने की प्रार्थना अर्हति शिव से की।

इस प्रार्थना के अनुसार, साधु नामक ब्राह्मण का वे धारण कर शिव हिमालय के पास गया, एवं वहाँ शिव की यथेष्ट निंदा कर, इसने हिमालय को शिवभक्त से निवृत्त किया (शिव. शत. ३५)।

साध्य—एक देवतासमूह, जो धर्म एवं साध्या के पुत्र माने जाते हैं। शंशेयोगनिपट में जिन पाँच प्रमुख

देवता-समूहों का निर्देश प्राप्त है, वहाँ इनका निर्देश वसु, रुद्र, आदित्य, एवं मरुतों के साथ किया गया है (छां. उ. ३.६-१०)। वहाँ इनकी अधिष्ठात्री देवता ब्रह्मा बताया गया है। ऋग्वेद में भी इन देवताओं का अस्पष्ट निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.९०.१६)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इनकी उत्पत्ति ब्रह्मा के मुख से बतायी गयी है। विभिन्न मन्वन्तरों में इनके विभिन्न अवतार दिये गये हैं। जो निम्नप्रकार हैं:— १. स्वायम्भुव मन्वन्तर—जित देव; २. तामस मन्वन्तर—हरि देव; ३. रैवत मन्वन्तर—वैकुण्ठ देव; ४. स्वरोचिप मन्वन्तर—तुषित देव; ५. उत्तम मन्वन्तर—सत्य देव; ६. चाक्षुप मन्वन्तर—छांदज देव; ७. वैवस्वत मन्वन्तर—साध्य देव। वैवस्वत मन्वन्तर में उत्पन्न हुए आदित्य भी इन्हींके ही अवतार माने गये हैं (ब्रह्मांड. ३.३.८-१२)।

वसु नामक सुविख्यात देवगण इनके भाई हैं, एवं ये स्वयं भुवर्लोक में रह कर गौ देवता की उपासना करते हैं (मत्स्य. १५.१५)। इनका प्रमुख अधिष्ठात्री देवता नारायण है।

नामावलि—चाक्षुप एवं वैवस्वत मन्वन्तरों में उत्पन्न हुए साध्य-देवों की नामावलि पौराणिक साहित्य में निम्न-प्रकार की गयी है:— १. मनस् २. अनुमन्तु, ३. प्राण; ४. नर; ५. नारायण; ६. वृत्ति (वीति); ७. तपस (अगान); ८. हय; ९. हंस; १०. विभु; ११. प्रभु; १२. धर्म (नय) (मत्स्य. २०३.११; सां. १८)।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इन्हें यज्ञ एवं शुभ कार्यों से-संबंधित देवतागण माना गया है, एवं निम्नलिखित प्रसंगों पर इनके उपस्थिति का निर्देश वहाँ प्राप्त है:— १. नैमिषारण्य द्वादशवर्षीय सत्र; २. मरुत् आविश्चित राजा का यज्ञ; ३. अर्जुन एवं स्कंद के जन्मोत्सव; ४. अमृत के लिए गरुड एवं देवताओं का युद्ध; ५. अर्जुन के द्वारा किया गया खांडववनदाह-युद्ध; ६. स्कंद-तारकासुरयुद्ध ७. कर्णाईन-युद्ध।

२. चाक्षुप मनु के पुत्रों में से एक (भा. ६.६.१५)।
३. एक रुद्रगण, जिसमें ८४ करोड़ रुद्रोपासक समाविष्ट थे। रुद्र के ये सारे उपासक तीन नेत्रोंवाले (त्रिनेत्र) थे (मत्स्य. ५.३१)।

४. शततंजस् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

साध्या—इक्ष प्रजापति की कन्या, जो धर्मकर्मों की इस पत्नियों में से एक थी। साध्यगणों के देव इसीके ही पुत्र माने जाते हैं (भा. ६.६.४-७)।

सानुप्रस्थ—रामसेना का एक वानर।

सांदीपनि (सांदीपन)—अवंती में रहनेवाला एक कश्यपकुलोत्पन्न ब्राह्मण, जो कृष्ण एवं बलराम का गुरु था। यह अवंती नगरी में रहता था, एवं इसके आश्रम का नाम 'अंकपाद' था (भा. ३.३.२; १०.४५.३१; पद्म. उ. २४६)।

कृष्ण एवं बलराम का उपनयन होने के पश्चात् वे दोनों इसके आश्रम में विद्यार्जन के लिए रहने लगे। इसने उन्हें वेद, उपनिषद्, धनुर्वेद, राजनीति, चित्रकला, गणित, गान्धर्व-वेद, गजशिक्षा, अश्वशिक्षा आदि ६४ कलाएँ सिखायी।

यह धनुर्वेद का श्रेष्ठ आचार्य था। इसने श्रीकृष्ण एवं बलराम को दस अंगों से युक्त धनुर्वेद का ज्ञान प्राप्त कराया। कृष्ण एवं बलराम का विद्यार्जन समाप्त होने पर इसने उन्हें गुरुदक्षिणा के रूप में समुद्र में डूबे हुए अपने मृत पुत्र को पुनः जीवित कर देने की माँग की। तदनुसार कृष्ण ने इसका मृतपुत्र पुनः जीवित कराया (म. स. परि. १.२१.८५-८७; विष्णु. ५.१)।

साध्य—नमी नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ. ६. २०.६)।

सामलोमकि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सामश्रवस्—याज्ञवल्क्य वाक्सनेय का एक शिष्य (वृ. उ. ३.१.२)।

याज्ञवल्क्य ने इसे अपनी 'स्मृति' की शिक्षा प्रदान की थी। मैक्स म्यूलर इसे स्वयं याज्ञवल्क्य की उपाधि मानते हैं, किन्तु इसके याज्ञवल्क्य का शिष्य ही होने की संभावना अधिक है।

सामश्रवस्—कुरीतक नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १७.४.३)।

सामुकि—यामुनि नामक कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

सांब—एक सुविख्यात यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं जांबवती के पुत्रों में से एक था (म. भा. १७७. १६; स. ४.२९; भा. १०.६१.११)। विष्णु में इसे कृष्ण एवं रुक्मिणी का पुत्र कहा गया है, किन्तु यह असंभव प्रतीत होता है। यह अत्यंत स्वरूपसुंदर, एवं स्वैराचरणी था।

जन्म—उपमन्यु ऋषि के आदेशानुसार कृष्ण ने पुत्र-प्राप्ति के लिए शिव की उपासना की थी, जिससे आगे चल कर इसका जन्म हुआ। इस कारण इसे 'सांब' नाम

प्राप्त हुआ। भागवत में इसे शिवपुत्र गृह का अवतार कहा गया है (भा. १.२०.२९)।

पराक्रम—यह अत्यंत पराक्रमी था, एवं कृष्ण के द्वारा किये गये बहुत सारे युद्धों में इसने भाग लिया था। यादव सेना के साथ इसने चाणासुर की नगरी पर आक्रमण किया था, एवं चाणासुर के पुत्र के साथ युद्ध किया था (भा. १०. ६१.२६)। शाह्व के आक्रमण के समय इसने द्वारका नगरी का रक्षण किया था (भा. १०.६८.१-१२)। इस समय शाह्व के सेनापति क्षेमधूर्ति के साथ इसका प्रभासान युद्ध हुआ था। कृष्ण के अश्वमेधीय अश्व के साथ भी यह उपस्थित था।

द्रौपदीस्वयंवर के लिए उपस्थित राजाओं में यह भी शामिल था (म. आ. १७७.१६)। रैवतक पर्वक पर अर्जुन के द्वारा किये गये सुमद्राहरण के समय यह उपस्थित था (म. आ. २११.९)।

लक्ष्मणा का हरण—दुर्योधनकन्या लक्ष्मणा के स्वयंवर के समय इसने उसका हरण किया। उस समय कौरवों ने इसे कैद किया। यह वार्ता सुनते ही बलराम समस्त यादवसेना के साथ इसकी सहायताार्थ दौड़ा। पश्चात् बलराम के युद्धसामर्थ्य से प्रवरा कर दुर्योधन ने इसकी लक्ष्मणा से विवाह को संमति दे दी (भा. १०.६८)।

प्रभावती का हरण—सुपुर नगरी के व्रजनाम नामक राजा के प्रभावती नामक कन्या का इसने हरण किया। तद्हेतु यह अपने भाई प्रद्युम्न के साथ-नाटक मंडली का खेल ले कर सुपुर नगरी में गया। वहाँ इन्होंने 'रम्भाभिसार' 'कौवेर' आदि नाट्यकृतियों का प्रयोग किया, जिनमें प्रद्युम्न ने नायक का, एवं इसने विदूषक का काम किया था (ह. वं. २.९३)। पश्चात् इसने प्रभावती का हरण किया।

दुर्वासस् का शाप—यह गुरु से ही अत्यन्त शरारती था, एवं इसकी कोई न कोई हरवत हमेशा चलती ही रहती थी। एक बार इसके सारणादि मित्रों ने इसे स्त्री वेश में विभूषित किया, एवं इसे दुर्वासस् ऋषि के पास ले जा कर झूठी नम्रता से कहा 'यह बन्धु यादव की पत्नी गर्भवती है। आप ही बतायें कि, इसके गर्भ से क्या उत्पन्न होगा?'। यदुपुत्रों की इन जलील हरकतों से क्रुद्ध हो कर दुर्वासस् ने कहा, 'श्रीकृष्ण का यह पुत्र सांघ लोहे का एक भयंकर मूसल उत्पन्न करेगा, जो समस्त वृष्णि एवं अंधक वंश का संपूर्ण विनाश कर देगा।

मौसल युद्ध—दूसरे दिन, सुबह होते ही इसके पेट से लोहे का मूसल उत्पन्न हुआ। यादव लोगों ने इस मूसल का नाश करने का काफ़ी प्रयत्न किया, किन्तु उससे कुछ फायदा न हो कर, इसी मूसल से इसका एवं समस्त यादवों का नाश हुआ। प्रभास क्षेत्र में भैरवक नामक भय पीने के कारण इसकी स्मृति नष्ट हुई, एवं उसी क्षेत्र में हुए मौसल युद्ध में अपने भाई प्रद्युम्न से लड़ने लड़ने इसकी मृत्यु हुई (भा. ११.३०.२६)।

सूर्योपासना—अत्यंत स्वरूपसंपन्न होने के कारण वह अत्यंत सैराचारी था, यहाँ तक कि, कृष्ण की कई पत्नियाँ एवं इसकी सापत्न माताएँ इस पर अनुरक्त थीं। अपने पुत्र एवं पत्नियों के दुराचरण की यह बात कृष्ण को नारद के द्वारा शत हुई। इस कारण क्रुद्ध हो कर, अपने इसे कुष्ठरोगी होने का, एवं अपनी पत्नियों को चोर दुष्टों के द्वारा भगाये जाने का शत्रु प्रदान किया। तदनुसार, वह कुष्ठरोगी बन गया, एवं द्वारका नगरी दूब जाने के पश्चात् कृष्णस्त्रियों का आभीरों के द्वारा अपहरण किया गया।

तत्पश्चात् कुष्ठरोग से मुक्ति प्राप्त करने के लिए, नारद के सलाह के अनुसार इसने सूर्योपासना प्रारंभ की, एवं इस प्रकार यह कुष्ठरोग से मुक्त हुआ। इसके सूर्यतपसा का स्थान चंद्रभागा नदी के तट पर स्थित सांघपुर (मूलस्थान) था, जिस नगरी की स्थापना इसने ही की थी। सूर्य की उपासना करने के लिए इसने मग नामक ब्राह्मण शास्त्री द्वीप से बुलवाया (सांघ, ३; भा. वं. ब्राह्म. ६६.७१-७३; ७५; १२७; स्कंद. ४.१.४८; ६.२.१३; मग संखिते)। इसकी मृत्यु के पश्चात् मग ब्राह्मण मूलस्थान में ही विवाह करने लगे। मूलस्थान का यह प्राचीन सूर्य मंदिर, एवं वहाँ स्थित मग ब्राह्मण भारत में आज भी ख्यातनाम हैं।

२. एक अंजुज, जिसकी कथा गणेश-उपासना का माहात्म्य बताने के लिए गणेश पुराण में दी गयी है (गणेश. १.५९)।

३. चक्रपाणि राजा का प्रधान, जिसकी कथा गणेश उपासना का माहात्म्य बताने के लिए गणेश पुराण में दी गयी है (गणेश. २.७३.१३)।

४. एक सदाचारी ब्राह्मण, जिसने धृतराष्ट्र के अनगमन के समय प्रजा की ओर से उभरे सांघना प्रभु की थी (म. आश्र. १५.११)।

सांघ मन्स्य—एक वैदिक सृष्टतद्रागण (क. ८.६७)।

सायक जानश्रुतेय—एक आचार्य, जो जनश्रुत काण्विये नामक आचार्य का शिष्य था (ज. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

सायकायन—श्यापण नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १०.३.६.१०; ५.२.१)।

२. एक आचार्य, जो कौशिकायनि नामक आचार्य का शिष्य, एवं काशायण नामक आचार्य का गुरु था (श्र. उ. ४.६.३ काण्व.)।

सायकायनि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सायम्—एक राजा, जो पुष्पाणि एवं प्रभा का पुत्र था।

२. एक आदिश्व, जो धातृ आदित्य एवं कुहू का पुत्र था (भा. ६.१८.३)।

सारंग—एक गोन, जिसकी कन्या का नाम रंगवेणी था।

सारण—(सो. वसु.) एक मुखियात योद्धा, जो वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था। इसके निम्न-लिखित पुत्र थे:— १. मारि; २. मारिमत्; ३. शिशु; ४. सत्यधृति (विष्णु. ४.१५.१४)।

२. रावण का एक अमात्य एवं गुप्तचर (वा. रा. यु. ५; म. व. २६७.५२; शुक देखिये)।

३. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था।

सारमेय—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो श्रकृष्ण एवं मांदिनी के पुत्रों में से एक था (भा. ९. २४. १६)।

२. सरमा नामक कुतिया के वंशजों का सामूहिक नाम (ब्रह्मांड. ३.७.३१३; सरमा देखिये)।

सारवाह—अगस्त्यकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सारस्—गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (ब्रह्मांड. १.७.४५६)।

२. (सो. यदु.) यदु राजा का एक पुत्र, जिसने दक्षिण भारत में वेणा नदी के तट पर स्थित कौंचपूर नामक नगरी की स्थापना की। आगे चल कर यही कौंचपूर 'वनवासी' नाम से प्रसिद्ध हुआ (ह. वं. २.३८.२७)।

सारस्वत—एक ऋषि, जो दधीचि ऋषि का पुत्र था। दधीचि ऋषि की तपस्या को भंग करने के लिए इंद्र ने अलेखुष नामक अप्सरा को भेज दिया। उसे देख कर दधीचि ऋषि का वीर्य सरस्वती नदी के किनारे स्वलित हुआ। आगे चल कर उसी वीर्य से सरस्वती नदी को एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसे सरस्वती नदी का पुत्र होने के कारण 'सारस्वत' नाम प्राप्त हुआ।

दधीचि ऋषि के आत्मसमर्पण के पश्चात् लगातार बारह वर्षों तक भारतवर्ष में अकाल पड़ा। इस समय सरस्वती नदी के तट पर रहनेवाले बहुत सारे ऋषि अन्न

के शोथार्थ इधर उधर घूमने लगे। केवल एक सारस्वत मात्र सरस्वती नदी के किनारे वेदाभ्यास करता हुआ रह गया। इस प्रकार देश के बाकी सारे ऋषियों ने वेदाभ्यास छोड़ कर मुसाफिर जीवन अपनाया था, उस समय इसने वेदाभ्यास की परंपरा जीवित रखी। अकाल के बारह वर्षों में यह नदी में प्राप्त मछलियों पर निर्वाह करता था।

अकाल समाप्त होने पर सारे ऋषियों के मन में वेदाध्ययन करने की इच्छा उत्पन्न हुई। उस समय केवल सारस्वत के ही वेदविद्यापारंगत होने के कारण, समस्त ऋषिसमुदाय शिष्य के नाते इसके आश्रम में उपरिषत हुआ। इस प्रकार साठ हजार ऋषियों को इसने वेदविद्या सिखायी (म. श. ५०)।

सारस्वत तीर्थ—आगे चल कर इसके आश्रम का स्थान 'सारस्वत तीर्थ' नाम से प्रसिद्ध हुआ। उस स्थान को तुंगकरण्य नामान्तर भी प्राप्त था (म. व. ८३.४३-५०)।

सारस्वतपाठ—तैत्तिरीय संहिता की दो अध्ययन पद्धति प्राचीनकाल में प्रचलित थी, जो 'काण्डानुक्रमपाठ' एवं 'सारस्वतपाठ' नाम से सुविख्यात थी। उनमें से 'काण्डानुक्रमपाठ' का आज लोप हो चुका है एवं सारस्वत ऋषि के द्वारा प्राप्त 'सारस्वतपाठ' ही आज सर्वत्र प्रचलित है।

सारस्वतपाठ की स्फूर्ति इसे किस प्रकार हुई इस संबंध में एक आख्यायिका 'संस्काररत्नमाला' में प्राप्त है। एक बार दुर्वास ऋषि के द्वारा दिये गये शाप के कारण सरस्वती नदी लुप्त हुई, एवं ततश्चात् मानवीय रूप धारण कर, अत्रियवंशीय एक ब्राह्मण के घर अवतीर्ण हुई। पश्चात् उसी ब्राह्मण से सरस्वती नदी को सारस्वत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

पश्चात् सरस्वती नदी ने इसे संपूर्ण वेदविद्या सिखायी, एवं इसे कुरुक्षेत्र में तप करने के लिए कहा। इसी तपस्या में तैत्तिरीय संहिता का एक स्वतंत्र क्रमपाठ इसे प्राप्त हुआ, जो आगे चल कर इसने अपने सारे शिष्यों को सिखाया। पश्चात् इसके इस पाठ को शास्त्रमान्यता एवं लोकमान्यता भी प्राप्त हुई (संस्काररत्नमाला पृ. ३०२)।

२. जैगीपथ्य नामक शिवावतार का एक शिष्य (वायु. २३.१३९)।

३. भार्गवकुलोत्पन्न एक मंत्रकार एवं गोत्रकार।

४. स्वायंभुव मन्वन्तर का एक व्यास। यह ब्रह्मा का पौत्र एवं सरस्वती नदी का पुत्र था। इसे 'अर्धांतरतम',

‘वेदान्तार्थ एवं ‘प्राचीनगर्भ’ नामान्तर भी प्राप्त थे। इसने स्वायंभुव मन्वन्तर में वेदविभाजन का कार्य अत्यंत यशस्वी प्रकार से किया (म. शां. ३३७, ३७-३९; ६६; व्यास पाराशर्य देखिये)।

अन्य पुराणों में इसे वैवस्वत मन्वन्तर का व्यास कहा गया है। इसे बलिष्ठ ऋषि ने वायुपुराण सिखाया था, जो इसने आगे चल कर अपने विधामन् नामक शिष्य को प्रदान किया था (वायु. १०३.६०)।

५. एक आचार्य, जो कौशिक ऋषि के सात शिष्यों में से एक था (अ. रा. ७)।

६. पश्चिम दिशा में निवास करनेवाला एक ऋषि, जो अग्नि ऋषि का पुत्र का था (म. शां. २०१.३०)।

७. तुंगकारण्य में निवास करनेवाला एक ऋषि, जिसने अपने अनेकानेक शिष्यों को वेदविद्या सिखायी (पद्म. ख. ३९)।

८. एक लोकसमूह, जो पश्चिम भारत में निवास करता था (भा. १.१०.३४)।

सारिक—युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.११)।

सारिमेजय—वृष्णिकुल में उत्पन्न एक यादव (म. आ. १७७.१८)। पाठभेद (भांडारकर संहिता) — ‘सारमेजय’।

सारिसुक शाङ्गा—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१४२.५-६)। महाभारत में इसे ‘सारिसुक’ कहा गया है, एवं इसे मंदपाल ऋषि एवं जरितु शाङ्गा का पुत्र बताया गया है।

खांडववनदाह के समय इसने अग्नि की स्तुति की, जिस कारण प्रसन्न हो कर अग्नि ने इसे दाह से मुक्त किया (म. आ. २२३.३)।

सार्जय—एक संजय राजा, जिसका निर्देश ऋग्वेद की एक दानस्तुति में प्राप्त है (ऋ. ६.४७.२५)। यह भरद्वाजों का आश्रयदाता था (श. ब्रा. २.४.४.४; १२. ८.२.३)।

२. एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है :— १. प्रस्तोक (सां. श्रौ. १६.११.११); २. सहदेव (पे. ब्रा. ७.३.४); ३ सुप्रन् (श. ब्रा. २.४.४.४)। किंतु सायणाचार्य सहदेव एवं सार्जय को विभिन्न व्यक्ति मानते हैं।

सार्धनीम—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सार्धसुग्रीवि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सार्पराज्ञी—सर्पराज्ञी नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का नामांतर (पं. ब्रा. ४.९.४; कौ. ब्रा. २७.४)।

सार्पि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सार्धमौम—(सो. द्विगीट.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सुधर्मन् राजा का, एवं वायु के अनुसार सुधर्मन् राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.७१; वायु. ९९. १८६)।

२. (सो. कुरु.) एक राजा, जो विदूरथ राजा का पुत्र, एवं जयत्सेन (जयत्सेन) राजा का पिता था (भा. ९. २२.१०)।

३. (सो. पूरु.) एक राजा, जो अहंयाति राजा एवं भानुमती का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम सुंरा था, जिससे इसे जयत्सेन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६३.१५)।

४. सार्षणि मन्वन्तर का एक अवतार, जो देवगुह्य एवं सरस्वती का पुत्र था (भा. ८.१३.१७)।

सार्धलोनि—शौचेय नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. सं. ७.१.१०.३)।

सालकटंकट—अल्लुस नामक राक्षस का नामांतर।

सालकटंकटा—विश्वकेस्य राक्षस की पत्नी, जिसकी माता का नाम संध्या था (वा. रा. उ. ४.२३)।

सालकटंकटी—हिडिम्बा राक्षसी का नामांतर (म. आ. १४३.१५५.६६; पंक्ति ६)।

सालंकायन—विश्रामित्र ऋषि का एक पुत्र।

सालिमंजरिसत्य—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था।

साल्व—एक प्राचीन लोकसमूह, जिसका निर्देश प्राचीन साहित्य में प्रायः सर्वत्र मत्स्य लोगों के साथ प्राप्त है। आधुनिक दक्षिण पंजाब एवं दक्षिण राजस्थान में अल्वार प्रदेश में ये लोग बसे हुए थे।

इन लोगों का प्राचीनतम निर्देश गोपथ ब्राह्मण में प्राप्त है, जहाँ इन्हें मत्स्य लोगों के साथ संबंधित किया गया है (गो. ब्रा. १.२.९)। पाणिनि के व्याकरण में भी इन लोगों का निर्देश प्राप्त है (पा. सू. ४.१.१७३; २.१३५)।

महाभारत के अनुसार, ये लोग कुरुक्षेत्र के समीप बसे हुए थे, एवं इनकी राजधानी शाल्वपुर (सौभगनगर) नगर में थी। भारतीय युद्ध में ये लोग मत्स्य, केकय, अंबुष्ठ, त्रिगर्त आदि लोगों के साथ कौरवपक्ष में शामिल थे, एवं इनकी गणना भीष्म के सैन्य में की जाती थी।

इन लोगों के समूह में निम्नलिखित लोग शामिल थे:—
१. उतुंबर; २. तिलखल; ३. मद्रक; ४. युगंधर; ५. भूलिग;
६. मारदण्ड (काशिका)

सालाडि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सावर्णि—युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१३)।

सावयस—अषाढ (आषाढ) नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १.१.१.७)।

सावर्णि—सावर्णि नामक आठवें मन्वन्तर के अधिपति मनु का पैतृक नाम (ऋ. १०.६२.११)। सवर्णा नामक स्त्री के वंशज होने के कारण उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा (मनु सावर्णि देखिये)। रौथ के अनुसार 'सवर्णा' सूर्यपत्नी सरण्यु का ही नामान्तर होगा। इस पैतृक नाम का 'सावर्ण्य' एवं 'सावर्णि' पाठ भी ऋग्वेद में प्राप्त हैं (ऋ. १०.६२.९)। महाभारत में इस पैतृक नाम का 'सौवर्णि' नामान्तर प्राप्त है (म. अनु. १८.४३)।

पौराणिक साहित्य में भी 'सावर्णि' मनु राजा का मातृक नाम बताया गया है, एवं यह मातृक नाम सवर्णा का पुत्र होने के कारण इसे प्राप्त हुआ था ऐसी भी निर्देश वहाँ प्राप्त है (विष्णु. ३.२.१३; ब्रह्म. ६.१९)। किन्तु अन्य पुराणों में इसकी माता का नाम सवर्णा नहीं, बल्कि 'अया' अथवा 'मृगमयी' दिया गया है (भा. ६.६.४१; मार्क. ७.२.२१; म. अनु. ५३.२५ कुं.)।

इसके बड़े भाई का नाम श्राद्धदेव था, जो सातवें मन्वन्तर का अधिपति मनु था। अपने ज्येष्ठ वन्धु के वर्ण के समान होने के कारण इसे सावर्णि उपाधि प्राप्त हुई, ऐसी भी चमत्कृतिपूर्ण कथा कई पुराणों में प्राप्त है, किन्तु वह कल्पनारम्य प्रतीत होती है। वायु में इसका सही नाम 'श्रुतश्रवन्' दिया गया है (वायु. ८४.५१)। मनु सावर्णि राजा पूर्वजन्म में चैत्रवंशीय सुरथ नामक राजा था (दे. भा. १०.१०; मार्क. ७.८.३; सुरथ १३. देखिये)।

२. सत्ययुग में उत्पन्न एक ऋषि, जिसने छः हजार वर्षों तक शिव की उपासना की थी। इस तपस्या के कारण शिव ने प्रसन्न हो कर इसे विख्यात ग्रंथकार होने का, एवं अजरामर होने का आशीर्वाद प्रदान किया था (म. अनु. ४५. ८७ कुं.)। पश्चात् यह इंद्रसभा का सदस्य भी बन गया था (म. स. ७.९)।

३. एक ग्रंथकर्ता ऋषि, जो कृतयुग में उत्पन्न हुआ था।

४. एक आचार्य, जिसका निर्देश उपकर्मोपनिषद् में प्राप्त है।

सावर्णि सौमदत्ति—एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था (वायु. ६१. ५६)।

सवर्णिक—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सावर्ण्य—मनु सावर्णि राजा के 'सावर्णि' पैतृक नाम का नामान्तर (सावर्णि १. देखिये)।

सावित्र—ग्यारह रुद्रों में से एक (मत्स्य. ५.३०)।

२.—कर्ण का नामान्तर (सावित्री ५. देखिये)।

सावित्र वसु—अष्टवसुओं में से एक, जिसने रावण के पितामह सुमालिन् का वध किया था (वा. रा. उ. २७. ४३-५०)।

सावित्री—मद्र देशाधिपति अश्वपति राजा की कन्या, जो शात्व देश के सत्यवत् राजा की पत्नी थी। अपने पातिव्रत्य प्रभाव के कारण इसने अपने अल्पायु पति के प्राण साक्षात् यमधर्म से पुनः प्राप्त किये, जिस कारण यह प्राचीन भारतीय साहित्य में पातिव्रत्यधर्म की अमर प्रतिमा बन चुकी है। तैत्तिरीय ब्राह्मण में भी सावित्री नाम का निर्देश प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, सावित्री की कथा ब्राह्मण ग्रंथों के रचनाकाल में किसी रूप में अस्तित्व में थी (सीता सावित्री देखिये)।

जन्म—इसकी माता का नाम मालती (मालवी) था। बसिष्ठ ऋषि की आज्ञा से इसके पिता ने गायत्री मंत्र का दस लाख बार जाप किया, जिस कारण इसका जन्म हुआ।

विवाह—यह अत्यंत स्वरूपसुंदर थी, एवं इसका पिता अत्यंत धनसंपन्न था। इस कारण इसके साथ विवाह करने में सभी राजपुत्र इरते थे। अतः पति-संशोधनार्थ यह स्वयं निकल पड़ी, एवं इसने शात्वदेश के शुभस्तेन राजा के पुत्र सत्यवत् से विवाह करना निश्चित किया। सत्यवत् अत्यंत गुणसंपन्न था, किन्तु अत्यंत अल्पायु होने के कारण एक वर्ष के पश्चात् ही उसकी मृत्यु होनेवाली थी। नारद ऋषि ने सत्यवत् का यह भीषण भविष्य इस कथन किया, एवं उससे विवाह करने के इसके निश्चय से विचलित करने का काफी प्रयत्न किया। किन्तु यह अपने निश्चय पर अटल रही।

त्रिरात्रव्रत—सत्यवत् की मृत्यु का दिन जब चार दिन शेष रहा तब इसने तीन अहोरात्र खड़े रह कर तपस्या करने का 'त्रिरात्रव्रत' किया। इस व्रत के चौथे दिन यह अपने व्रत की समाप्ति करना चाहती थी, इतने में सत्यवत् के मृत्यु की घटिका आ पहुँची।

यम से आशीर्वाद प्राप्ति—पश्चात् यम ने अपने पाशों के द्वारा सत्यवत् के शरीर में से अंगुष्ठमात्र आकार का प्राणपुरुष स्वीच लिया, एवं वह यमलोक लौट जाने लगा। उस समय इसने यम का अत्यधिक अनुनय विनय किया, एवं अनेकानेक अध्यात्मविषयक प्रश्न पूछ कर उसे निरुत्तर किया। इस कारण यम ने सत्यवत् के प्राण इसे वापस दे दिये (म. क. २८१.२५-५३)।

इसके श्वशुर द्युमत्सेन का राज्य पुनः प्राप्त होने का, एवं उसकी खोयी हुई दृष्टि उसे पुनः प्राप्त होने का वर भी यम ने इसे प्रदान किया।

पश्चात् यम के आशीर्वाद के अनुसार इसे सत्यवत् से सौ पुत्र उत्पन्न हुए, एवं द्युमत्सेन का राज्य भी उसे पुनः प्राप्त हुआ। द्युमत्सेन के पश्चात् सत्यवत् शाल्वदेश का राजा बन गया, जहाँ उसने चार सौ वर्षों तक राज्य किया (म. क. २७७-२८३; मत्स्य. २०७-२१३; दे. भा. ९. २६-३८; ब्रह्मवै. २. २३-२४)।

२. ब्रह्मा की पत्नी शतलया का नामान्तर (ब्रह्मन् देखिये)।

३. एक देवी, जो सूर्य एवं पुष्पि की कन्या मानी जाती है (भा. ६.१८.१)। यह गायत्री मंत्र की अधिष्ठात्री देवी मानी गयी है। इसके उपासकों में अश्वपति राजा प्रमुख था, जिसे इसने अग्निहोत्र से प्रकट हो कर प्रत्यक्ष दर्शन दिया था (म. क. २७७.१०; मत्स्य. २०८-६)। त्रिपुर-दाह के समय, शिव ने इसे अपने रथ के घोड़ों की बागडोर, एवं संवत्सरमय शत्रुध्व की प्रार्थना बनाया था (म. द्रो. १४.५७)। विदर्भ देश में रहनेवाले सत्यनामक ब्राह्मण के गायत्री जप से संतुष्ट हो कर, इसने उसे दर्शन दिया था (म. शां. २६४.१०)।

४. शिवपत्नी उमा की एक सहचरी (म. क. २२१.२०)।

५. एक धर्मपरायण राजपत्नी, जिसने दिव्य कुंडलों का दान कर उत्तम लोक की प्राप्ति की थी (म. शां. २२६. २४)। संभवतः इस कथा में सत्यवत् की पत्नी सावित्री की ओर संकेत किया होगा।

महाभारत के अनुशासनवर्ग में यही कथा पुनरुद्धृत की गयी है (म. अनु. २०९)। किन्तु वहाँ 'सावित्री'

के स्थान पर 'सावित्र' (सूर्य का पुत्र) ऐसा निर्देश है। इससे प्रतीत होता है कि, अपने दोनों कुंडल दान में प्रदान करनेवाले अंगराज कर्ण की ओर इस कथा में संकेत किया है।

सासिसाहरितायन—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

साश्व—यमसभा में उपस्थित एक प्राचीन राजा (म. स. ९३*)।

साहंजि—(सो. सह.) सहदेववंशीय संवर्न राजा का नामान्तर। विष्णु में इसे कुंती राजा का पुत्र कहा गया है। भागवत एवं हरिवंश में इस क्रमशः 'सोहंजि' एवं 'साहंज' कहा गया है (ह. वं. १.३३.४)। इसने 'साहंजनि' नगरी (सांची) की स्थापना की थी (ब्रह्म. १३.१५६)।

साहदेव्य—सोमक नामक आचार्य की पत्नी का नाम (ऐ. ब्रा. ७.३४.९)।

साहरि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

साहुर—विश्वामित्रकुलीत्पन्न एक गोत्रकार।

साहय—एक मरुत, जो मरुतगणों में से चौथे मरुत गण में शामिल था।

सिंह—कृष्ण एवं लक्ष्मणा के पुत्रों में से एक।

२. राम दाशरथि के सूत्र नामक मंत्रि का पुत्र (कुशल देखिये)।

सिंहकेतु—चेदिदेश का एक राजकुमार, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था। कर्ण ने इसका वध किया (म. द्रो. ४०.५१)।

सिंहचंद्र—पांचाल देश का एक राजा, जो बुधिशि का मित्र था। भारतीय युद्ध में वह पांडवपक्ष में शामिल था (म. द्रो. १३३.३७)।

सिंहल—एक म्लेच्छजातीय लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में कौरवपक्ष में शामिल था। ये लोग द्रोण के द्वारा निर्मित गरुड़यूह के ग्रीवाभाग में स्थित थे (म. द्रो. १९. ७)।

सिंहसेन—पांचाल देश का एक योद्धा, जो भारतीय युद्ध में पांडवपक्ष में शामिल था। द्रोण ने इसका वध किया (म. द्रो. १५.३९)।

२. पांचाल देश का एक योद्धा, जो गोपति पांचाल का पुत्र था। यह भारतीय युद्ध में कर्ण के द्वारा मारा गया (म. क. ४०.४८)। इसके रथ के अश्व अंतरक्त वर्ग के थे (म. द्रो. २२.४३)।

सिंहिका—प्राचेतस इक्ष्व प्रजापति की एक कन्या, जो कश्यप को पत्नी थी। 'सिंहिकेय' नामक चार सुविख्यात असुर इसके ही पुत्र माने जाते हैं।

२. एक राक्षसी। हनुमत् के समुद्रोत्थवन के समय इसने उसका मार्ग रोक कर उसे ब्रह्म करता चाहा। उस समय हनुमत् ने इसका वध किया, एवं इसकी लाश समुद्र में फेंक दी।

३. एक राक्षसी, जो कश्यप एवं दिति की कन्या, एवं हिरण्यकशिपु की बहन थी। इसका विवाह विप्रचिन्ति धनुष से हुआ था, जिससे इसे एक सौ एक पुत्र उत्पन्न हुए। इसके पुत्रों में राहु नामक असुर प्रमुख था (भा. ५.२४.१; वायु. ६७.७; विप्रचिन्ति २. देखिये)।

सिकता निचावरी—एक वैदिक मंत्रद्रष्टी (ऋ. ९. ८६.११-२०; ३१-४०)।

सित—विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र।

२. तामस मन्वेतर का एक योगवर्धन।

सिद्ध—एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था।

२. एक देवगण, जो हिमालय पर्वत में कथाश्रम के समीप निवास करता था (म. आ. ५.७१.३)।

३. एक मुनि, जिसने कश्यप ऋषि से निर्मालिखित विषयों पर तात्त्विक चर्चा की थी:— १. अनुगीता; २. इननमरण; ३. जीवात्मा का गर्भप्रवेश; ४. मोक्षसाधन (म. आश. १६-२२)। शिलोच्छ्रवृत्ति ब्राह्मण नामक ग्रंथ में इसने गंगामाहात्म्य के संबंध में चर्चा की थी (म. अनु. ६५.२९)।

सिद्धपात्र—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६१ पाठ)।

सिद्धसमाधि—कोल्हापूर का एक ब्राह्मण, जिसकी कथा पद्य में गीता के शारहवें अध्याय का माहात्म्य कथन करने के लिए की गयी है (पद्य. उ. १८६)।

सिद्धार्थ—शशरथ राजा का एक आमात्य (वा. रा. अयो. ३६)।

२. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

३. एक राजा, जो शुद्रोदन राजा का पुत्र था (मत्स्य. १७२.१२)। इसे पुष्कल नामांतर भी प्राप्त था।

४. एक राजा, जो 'क्रोधवश' संज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५५)।

५. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५९)।

भा. च. १३१]

सिद्धि—दक्ष प्रजापति की कन्या, जो धर्मऋषि की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम सुख था (वायु. १०. २५)।

२. भग नामक आदित्य की पत्नी (भा. ६.१८.२)।

३. एक अग्नि, जो वीर नामक अग्नि का पुत्र था। इसकी माता का नाम सरयू था। इसने अपनी प्रभा से सूर्य को आच्छादित कर दिया था (म. व. २०९.११)।

४. एक देवी, जो कुंती के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुई थी (म. आ. ६१.९८)।

सिनीवाक—युधिष्ठिर की मयसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१२)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)।
—'शिनीवाक'।

सिनीवाली—एक देवी, जिसका निर्देश ऋग्वेद के दो सूक्तों में प्राप्त है (ऋ. २.३२; १०.१८४)। यह देवों की बहन मानी गयी है। यह विस्तृतनितंबा, सुंदरभुजाओं एवं सुंदर उँगलियोंवाली, बहुप्रसवा एवं विशाल परिवार की स्वामिनी है। मंतानप्रदान करने के लिए इसका स्तवन किया गया है। सरस्वती, राका, गुंगु आदि देवियों के साथ इसका आवाहन किया गया है। अथर्ववेद में इसे विष्णु की पत्नी कहा गया है (अ. वे. ८.४६)।

वाद के वैदिक ग्रंथों में, राका एवं सिनीवाली का चंद्रमा की कलाओं के साथ संबंध दिया गया है, जहाँ सिनीवाली को नवचंद्रमा (प्रतिपदा) के दिन की, एवं राका को पूर्णिमा के दिन की अधिष्ठात्री देवी माना गया है। किन्तु इस कल्पना का ऋग्वेद में कहीं भी निर्देश प्राप्त नहीं है।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे अंगिरस् ऋषि एवं श्रद्धा की तृतीय कन्या कहा गया है। इसका विवाह धातु नामक आदित्य से हुआ था, जिससे इसे दश (सायंकाल) नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था।

यह अत्यंत क्रुद्ध थी, जिस कारण यह कभी दृश्यमान, एवं कभी अदृश्य रहती थी। इसी कारण इसे 'दृश्यादृश्य' नामान्तर प्राप्त हुआ था (भा. ६.१८.३)।

२. कर्दमपत्नी देवहूति का नामान्तर।

३. बृहस्पति एवं शुभा की कन्या, जिसका विवाह कर्दम प्रजापति से हुआ था। अपने पति का त्याग कर, यह क्षेम से प्रेम करती थी (वायु. १०.२५)।

सिंदूर—एक असुर। श्रीगणेश ने इसका वध कर, इसके रक्त का लेप स्वयं के शरीर पर लगा दिया था (गणेश. २.१३७)।

सिंधु—इक्ष्वाकुवंशीय सिंधुद्वीप राजा का नामान्तर (ब्रह्म. १६९.१९)।

२. एक असुर, जो श्रीगणेश के द्वारा मारा गया (गणेश. २.७३-१२६)।

३. एक लोकसमूह, जिसका निर्देश प्राचीन साहित्य में सौवीर लोगों के साथ प्राप्त है। ये दोनों लोकसमूह सिंधुनदी के तट पर निवास करते थे।

बौधायन धर्मसूत्र में इन्हें म्लेच्छ जाति का, एवं अपवित्र माना गया है। भारतीय युद्ध के समय, अपने राजा जयद्रथ के साथ ये लोग कौरवपक्ष में शामिल थे (म. भी. १८.१३-१४)।

सिंधुक—(आंघ्र. भविष्य.) आंघ्रवंशीय शिशुप्रक राजा का नामान्तर। वायु एवं ब्रह्मांड में इसे आंघ्रवंश का सर्वप्रथम राजा कहा गया है।

सिंधुक्षित—एक राजा, जो दुर्भाग्य के कारण राज्य-भ्रष्ट हुआ था। आगे चल कर एक साम के पठन से इसे अपना विगत राज्य पुनः प्राप्त हुआ (पं. ब्रा. १२. १२.६)।

सिंधुक्षित प्रैयमद—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.७५)।

सिंधुद्वीप—(सो. अमा.) एक राजा, जो जह्नु राजा का पुत्र, एवं बलाकाश्व राजा का पिता था। जन्म से यह क्षत्रिय था, किन्तु आगे चल कर 'पृथुदक तीर्थ' में स्नान करने के कारण यह ब्राह्मण बन गया (म. श. ३९.१०; अनु. ७.४)।

२. एक ऋषि, जो वेद नामक ऋषि का भाई था (ब्रह्म. १६९.४)।

३. एक ऋषि, जिसने वेदनाथ नामक ब्राह्मण का उद्धार किया था (स्कंद. १.३.१४)।

सिंधुद्वीप आंवरीष—(सु. इ.) एक राजा, जो विष्णु, वायु, एवं मत्स्य के अनुसार अंवरीष राजा का पुत्र, एवं अयुतायु राजा का पिता था। भागवत एवं हरिवंश में इसे नाभ राजा का पुत्र कहा गया है।

सिंधुद्वीप आंवरीष नामक एक वैदिक सूक्तद्रष्टा का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋग्वेद. १०.९), जो संभवतः यही होगा।

सिंधुवीर्य—मद्रदेश का एक राजा, जिसकी कन्या का नाम केकयी था। अपनी इस कन्या का विवाह इसने मरुत्त आविक्षित राजा से किया था।

सिंधुसेन—एक राक्षस, जिसने संसार के समस्त यज्ञमंत्रों का हरण कर उन्हें रसातल में छिपा दिया। इस कारण संसार के सारे यज्ञ बन्द पड़ गये। आगे चल कर विष्णु ने वराह का रूप धारण कर इसका नाश किया, एवं यज्ञमंत्रों को रसातल से वापस लाया।

सीता वैदेही—विदेह देश के सीरध्वज जनक राजा की कन्या, जो इक्ष्वाकुवंशीय रामदाशरथि राजा की पत्नी थी।

सतीत्व की साकार प्रतिमा—जिस काल में बहुपत्नी-कत्व रुढ़ि क्षत्रिय समाज में प्रतिष्ठित थी, उस समय एक-पत्नीकत्व का नया आदर्श राम दाशरथि राजा के रूप में वात्सीकि ने अपने 'वात्सीकि रामायण' के द्वारा प्रस्थापित किया (राम दाशरथि देखिये)। उसके साथ ही साथ एक-पत्नीकत्व के व्रत का आचरण करनेवाले क्षत्रिय के पत्नी को किस प्रकार वर्तन करना चाहिए, इसका आदर्श वात्सीकि ने सीता के रूप में चित्रित किया। इसी कारण राम दाशरथि के साथ सीता भारतीय स्त्री जाति के सतीत्व, एकनिष्ठा एवं पवित्रता की उल्लेख एवं साकार प्रतिमा बन कर अमर हो गयी है।

स्वरूप वर्णन—वात्सीकि रामायण में सीता के स्वरूप का अत्यंत काव्यमय वर्णन प्राप्त है, जहाँ इसे पूर्ण-चंद्रवदना, अपनी प्रभा से सभी दिशाओं को प्रकाशित करनेवाली (वा. रा. सुं. १५.२७-३९); कोमलांगिनी, शुद्धस्वर्णवर्णा (वा. रा. अर. ४३.१-२); लक्ष्मी एवं रति की प्रतिरूपा, नन्दशिख सौंदर्यमयी (वा. रा. अर. ४६.१६; २२) कहा गया है। इसके अप्रतीम सौंदर्य के संबंध में स्वयं रावण कहता है—

नैव देवी न गंधर्वा न यक्षी न च किञ्चरी ।

नैवरूपा मया नारी दृष्टपूर्वा महीतले ॥

(वा. रा. अर. ४६.२३)।

(सीता के समान सौंदर्यवती स्त्री मैं ने इस धरती पर देव, गंधर्व, यक्ष, किञ्जर आदि में कहीं भी नहीं देखी है)

भूमिजा सीता—यद्यपि यह सीरध्वज जनक की कन्या मानी जाती है, फिर भी यह उसकी अपनी कन्या नहीं। वात्सीकि रामायण में इसका जन्म भूमि से बताया गया है, एवं इसके जन्म के संबंधी निम्नलिखित कथा वहाँ दी गयी है। एक दिन जनक राजा यज्ञभूमि तैयार करने के लिए हल चला रहा था, उस समय एक छोटीसी कन्या मिट्टी से निकली। उसने इसे पुत्री के रूप में ग्रहण किया, एवं उसका नाम सीता रखा (वा. रा. वा. ६६.१३-

१५)। सीता का यह अवतार उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में हुआ।

रे. बुल्के के अनुसार भूमिजा सीता की अलौकिक जन्म कथा सीता नामक कृषि की अधिष्ठात्री देवी के प्रभाव से उत्पन्न हुई थी। सीता का शब्दशः अर्थ 'हल से खींची हुई रेखा' होता है। अतएव भूमि में हल चलते समय इसके निकलने के कारण इसे सीता नाम प्राप्त हुआ होगा। संभव है, किसी निश्चित कुलपरंपरा के अभाव में ऐतिहासिक राजकुमारी सीता की जन्मकथा पर कृषि के अधिष्ठात्री देवी के व्यक्तित्व का प्रभाव पड़ा हो।

जन्मसंबंधी अन्य आख्यायिकाएँ—इसके जन्म के संबंध में अन्य आख्यायिकाएँ विभिन्न रामायण ग्रंथों में एवं पुराणों में प्राप्त हैं, जो निम्नप्रकार हैं :—

(१) अग्निजा सीता—'आनंद रामायण' (१५ वीं शताब्दी) के अनुसार इसके पिता का नाम पद्माक्ष दिया गया है। पद्माक्ष राजा ने लक्ष्मी को पुत्रीरूप में पाने के लिए विष्णु की उपासना की। विष्णु ने उसे महालिंखा दिया, जिससे एक सुंदर कन्या निकली, जिसका नाम पद्मा रखा गया।

पद्मा के स्वयंवर के समय, दैत्यों ने स्वयंवर मंडप ध्वस्त किया, एवं पद्माक्ष राजा का संपूर्ण विनाश हो कर वह स्वयं भी मारा गया। यह देख कर पद्मा ने अग्नि में प्रवेश किया। इसकी खोज के लिए दैत्यों ने बड़ी खोज बिन की, किन्तु इसका कहीं पता न चला।

एक बार यह अग्निकुंड से बाहर आ कर बैठी थी, तब विमान से जानेवाले रावण ने इसे देखा, एवं वह कामातुर हो कर इसकी ओर दौड़ा। उसे आता हुआ देख कर यह फिर अग्नि में प्रविष्ट हुई। इसे ढूँढने के लिए रावण ने समस्त यज्ञकुंड खोद डाल्य, जिससे इसे जीवित सीता तो न मिली, किन्तु इसीका ही एक जड़ रूप पाँच रत्नों के रूप में प्राप्त हुआ।

इन रत्नों को एक पेटिका में बन्द रख कर रावण लंका में गया, एवं उसे अपनी पत्नी मंदोदरी के हाथ सौंप दिया। वहाँ पेटिका खोलते ही पद्मा अपने मूल कन्यारूप में प्रकट हुई। इस पर पद्माक्ष के सारे कुल का एवं राज्य का विनाश करनेवाली इस कन्या को लंका से बाहर छोड़ देनेकी प्रार्थना रावण ने मंदोदरी से की। मंदोदरी की इस प्रार्थना के अनुसार रावण ने इस कन्या को पुनः एक बार पेटिका में बंद किया, एवं वह पेटिका मिथिला में गड़वा दी। पेटिका में बन्द करने के पूर्व इसने रावण को

शाप दिया, 'मैं तुम्हारा एवं तुम्हारे सारे परिवार का नाश करने के लिए लंका में फिर आऊँगी'।

पश्चात् मिथिला के एक ब्राह्मण को जमीन पर हल चलते समय वही पेटिका प्राप्त हुई, जो उसने राजधन मान कर जनक राजा को सुपूर्द किया। उस पेटिका से निकली हुई कन्या को जनक ने बेटी के रूप में पाला, एवं उसका नाम सीता रख दिया।

मातुलिंखा से निकलने के कारण इसे 'मातुलिंखी'; रत्न में होने के कारण 'रत्नावलि'; धरणी से निकलने के कारण 'धरणीजा'; जनक के द्वारा पाले जाने के कारण 'जानकी'; जमीन से निकलने के कारण 'सीता'; अग्नि से निकलने के कारण 'अग्निजा'; एवं पूर्वजन्म के नाम के कारण 'पद्मा' आदि नामान्तर प्राप्त हुए (अ. रा. ७.३; भावार्थ रा. १.१५)।

(२) रक्तजा सीता—रक्तजा के रूप में सीता का जन्म होने की कथा 'अद्भुत रामायण' में पायी जाती है। रावण जनस्थान के मुनियों पर अत्याचार करता था, एवं अपने नाण की नोक से ऋषियों के शरीर से रक्त निकाल कर एक मटके में जमा करता था। इसी वन में रत्समद नामक एक ऋषि रहता था, जो लक्ष्मी के समान कन्या की इच्छा से तपस्या करता था। दर्भ के अग्रभाग से दूध को ले कर, मंत्रोच्चारण के साथ वह उसे प्रतिदिन इकट्ठा करता था।

एक दिन रावण ने रत्समद ऋषि का मटका चुरा लिया, एवं उसमें इकट्ठा किया दूध ऋषियों के रक्त से भरे हुए मटके में डाल दिया, एवं उसे मंदोदरी के पास रखने के लिए दे दिया।

आगे चल कर रावण के कुटुंबों से तंग आ कर मंदोदरी ने आत्महत्या के हेतु से मटके में स्थित दूधयुक्त रक्त प्राशन किया, जिससे वह गर्भवती रही। अपना यह गर्भ उसने कुरुक्षेत्र की भूमि में गाड़ दिया। उसी गर्भ से आगे चल कर सीता का जन्म हुआ, जिसे विदर्भ देश के जनक राजा ने पालपोस कर बड़ा किया (अ. रा. ८)।

(३) रावणवत्सजा सीता—सीताजन्म के संबंधित सर्वाधिक प्राचीन कथा में, सीता को रावण की कन्या माना गया है। इस कथा के अनुसार रावण ने मय राक्षस की कन्या मन्दोदरी से विवाह करना चाहा। उस समय मय ने रावण से कहा कि, मन्दोदरी के जन्मजातक से मंदोदरी की पहली संतान कुलभातक उत्पन्न होनेवाली है; अतएव उस संतान का बध करना उचित होगा। मय की इस

सलाह को न मान कर, रावण ने अपनी प्रथमजात कन्या को पेटिका में बन्द कर जनकपुरी में गड़वा दिया। इसी कन्या ने आगे चल कर रावण के समस्त कुल का नाश कर दिया (दे. भा. ४२)।

(४) जनकामजा सीता—महाभारत में सर्वप्रथम सीता को जनक राजा की अपनी कन्या माना गया है (म. व. २५.८.९)।

सीता के जन्मसंबंधित उपर्युक्त सारी कथाएँ कल्मशारभ्य प्रतीत होती हैं, जिनकी रचना राम के द्वारा किया गया रावणवध गृहीते मान कर की गयी हैं।

सीतास्वयंवर—एक बार परशुराम अपना प्रचंड शिव धनुष ले कर जनक राजा से मिलने आया। परशुराम का यह धनुष इतना बड़ा था, कि उसे ले जाने के लिए दो सौ पचास बैल जोड़ियों की शक्ति आवश्यक थी। परशुराम का यह अकल्प धनुष इसने सहज ही उठा लिया, एवं उसे घोड़ा बना कर यह लेलने लगी। यह देख कर इसके दैवी अंश के संबंध में परशुराम को आभास मिल गयी, एवं उसने जनक राजा को अपना धनुष दे कर आज्ञा दी, 'जो वीर इस धनुष के तोड़ने का सामर्थ्य रखता हो, उसीके साथ ही सीता का विवाह कर देना (वा. रा. वा. ६६.२६; आ. रा. सार. ३)।

परशुराम की आज्ञा के अनुसार, जनक राजा ने इसका स्वयंवर उद्घोषित किया। इस स्वयंवर में उपस्थित सारे राजा धनुष तोड़ने में असमर्थ रहे। अन्त में अयोध्या के राम दाशरथि राजा ने शिवधनुष को मज्ज कर सीता का वरण किया (वा. रा. वा. २३.)।

वनवासगमन—राम के वनवासगमन के समय वन की भयानकता बता कर राम ने इसे अत्यधिक भयभीत किया, किन्तु 'जहाँ राम वहाँ सीता' ऐसे कह कर यह अपने निश्चय पर अटल रही (वा. रा. अयो. २६-३०)। उस समय इसने यह भी कहा कि, ज्योतिर्विंदो के द्वारा चारह वर्ष के वनवास का जातक पहले ही कहा जा चुका है (वा. रा. अयो. २९.८; अ. रा. २. ४.७६)। अपनी सारी आनु राजप्रसादों में व्यतीत करने-वाली सीता को वनवास का सारा ही जीवन अननुभूत था, यहाँ तक कि, वल्कल पहनना भी इसे न आता था। किन्तु राम के साथ ही यह वानवासिक जीवन से जल्द ही परिचित हो गयी।

सीतहरण—जनस्थान में रावण ने इसका घोखे से हरण किया, एवं अत्यधिक विलाप करते हुए सीता को

वह लंका ले जाने लगा। रास्ते में ऋष्यमूक पर्वत पर इसने अपने उत्तरीय वस्त्र, एवं अलंकार फेंक दिये, जिससे राम को पता चल जाए कि यह हरण की गयी है।

पश्चात् रावण ने इसे लंका नगरी में स्थित अशोकवन में राक्षसियों की रखवाली में रख दिया, एवं वह प्रतिदिन कामातुर हो कर अपने वश में लाने के लिए इसकी प्रार्थना करने लगा। उस समय उसने इसे डराया, धमकाया एवं काफ़ी प्रलोभन भी दिखाये। किन्तु यह अपने सतीत्व पर अचल रही। रावण के आते ही लोकलज्जा में लिपटी हुई सीता अपने जेवाओं से अपने पेट को, एवं अपने दोनों बाहुओं से वक्षःस्थलों को ढँक देती थी (वा. रा. सुं. १९.३)। परस्त्री पर पापदृष्टि रखने वाले रावण की इसने काफ़ी निभेसना की। किन्तु रावण पर इसका कुछ भी असर न हुआ, एवं अपने राक्षसियों के द्वारा वह इसे वश में करने का प्रयत्न करता ही रहा।

हनुमत् से भेंट—एक दिन सीता के शोध के लिए राम के द्वारा भेजा गया हनुमत् अशोकवन में आ पहुँचा, एवं उसने राम के द्वारा दी गयी अभिज्ञान की अंगुठी इसे दिखा कर अपना परिचय दिया। उसी समय अपने पीठ पर इसे बिठा कर, रावण के कारवास से इसे मुक्त करने की तैयारी भी हनुमत् ने दिखायी। उस समय एक शत्रियकुलोत्पन्न वीरस्त्री के नाते हनुमत् के इस प्रस्ताव को अस्वीकार करते हुए इसने कहा—

बलैः समग्रैर्विदे मां हत्वा रावणमःह्वये ।

चिजयी स्वपुरी रामो नयेत्तत् स्याद्यसत्करम् ॥

यथाहं तस्य वीरस्य वनादुपधिना हता ।

रक्षसा तद्वयादेव तथा नार्हेति रावणः ।

(वा. रा. सुं. ६८.१२-१३)।

(मेरे पति राम ही रावण को परास्त कर मुझे ले जाएंगे। रावण के समान लज्जित कर मुझे ले जाना राम को, तथा उसकी कीर्ति को शोभा न देगा)।

अग्निपरीक्षा—बुद्ध के पश्चात् राम ने विभीषण को इसे अपने पास लाने की आज्ञा दी। तदनुसार सुलत हुई यह मूल्यवान् वस्त्र एवं आभूषण पहन कर, एवं शिक्षिका में बैठ कर यह राम से मिलने गयी। वहाँ ध्यानस्थ बैठ हुए राम को इसके आगमन की वार्ता विभीषण ने सुनायी।

विभीषण के पीछे-पीछे चल कर, यह लज्ज में लिपटी हुई अपने पति के सम्मुख गयी। किन्तु राम के चेहरे पर

इस सहस्रभूति के स्थान पर कठोरता ही दिखायी दी। पश्चात् पराये घर में एक साल तक निवास करने के कारण राम ने इसका अस्वीकार करना चाहा (राम दास्यरथि देखिये)।

राम का यह निश्चय लुन कर इसने अपने सतीत्व की सौगंध खार्या। पश्चात् अग्निपरीक्षा के लिए इसने लक्ष्मण को त्तित्त तैयार करने की आज्ञा दी, एवं उसमें अपना शरीर ओक दिया। तदुपरान्त इसे हाथ में धारण कर अग्नि देवता स्वयं प्रकट हुई, एवं इसके सतीत्व की साक्ष दे कर कर इसको स्वीकार करने की आज्ञा उसने राम को दी (वा. रा. यु. ११६.११)।

राजीवद—पश्चात् राम के साथ यह अयोध्या नगरी में गयी, जहाँ इसे राम के साथ राज्याभिषेक किया गया। कुछ समयोपरान्त यह गर्भवती हुई, एवं इसने वनविहार की इच्छा राम से प्रकट की। उसी दिन रात को लोकापवाद के कारण राम ने इसका त्याग करने का निश्चय किया।

दूसरे दिन सुकह राम ने लक्ष्मण को बुलाया, एवं इसे गंगा के उस पार छोड़ आने का आदेश दिया। तपोवन दिखाने के बहाने लक्ष्मण इसे स्थ पर ले गया, एवं उसने इसे वाल्मीकि के आश्रम के समीप छोड़ दिया। उस समय यह आभङ्गस्था कर के प्राणत्याग करना चाहती थी, किन्तु गर्भवती होने के कारण यह बह पापकर्म न कर सकी।

पुत्रजन्म—राम के द्वारा परित्याग किये जाने पर, वाल्मीकि के आश्रम का सहारा ले कर यह वहीं रहने लगी। पश्चात् इसी आश्रम में इसने दो यमल पुत्रों को जन्म दिया, जिनके नाम वाल्मीकि के द्वारा कुशा एवं लव रहे (वा. रा. उ. ६६)।

ब्रह्म्याग—कालोपरान्त राम के द्वारा किये गये अश्वमेध यज्ञ में, इसके पुत्र कुशलत्व का राम से भेंट हुई। उस समय कुशलत्वों से इसका सारा वृत्तान्त जान कर राम ने इसे पुनः एक बार अयोध्या बुला लिया। वाल्मीकि ऋषि इसे स्वयं रामसभा में ले गये, एवं वहाँ सभा में उन्होंने इसके सतीत्व की साक्ष दी। उस समय जनता को विश्वास दिलाने के उद्देश्य से राम ने इससे अनुरोध किया कि, यह अपने सतीत्व का प्रमाण दे। इस समय इसने सौगंध खाते हुए कहा—

मनसा कर्मणा वाचा यथा रामं समर्चये।

तथा मे माययी देयी विवरं त्रानुमहति॥

(वा. रा. उ. १७.१५)।

(मन से, कर्म से अथवा वाचा से अगर मैंने राम के सिवा किसी अन्य पुरुष का चितन न किया हो, तो पृथ्वी-माता दुर्भंग हो कर मुझे स्वीकार करें)।

सीता के द्वारा उपर्युक्त आर्त प्रार्थना किये जाने पर, पृथ्वी देवी एक दिव्य सिंहासन पर बैठी हुई प्रकट हुई, एवं इसे अपने शरण ले कर पुनः एक बार गुप्त हुई। यह दिव्य दृश्य देख कर राम स्तिमित हो उठा, एवं अत्यधिक विलाप करने लगा। पश्चात् उसने इसे लौटा देने का पृथ्वी को अनुरोध किया, एवं इसे न लौटा देने पर समस्त पृथ्वी को दग्ध करने की धमकी दी। अन्त में ब्रह्मा ने स्वयं प्रकट हो कर राम को सांत्वना दी।

चरित्रचित्रण—एक आदर्श भारतीय-न्यातिव्रता मान कर वाल्मीकि रामायण में सीता का चरित्र चित्रण किया गया है। राम इसके लिए देवता है, एकमान गति है, इसलोक एवं परलोक का स्वामी है (इह प्रेय च नारिणां पतिरेको गतिः सदा) (वा. रा. अयो. २७.६)। पातिव्रत्य धर्म के संबंध में यह सावित्री को आदर्श मानती है (वा. रा. अयो. २९.१९)। सावित्री के ही समान यह कुलरोति (वा. रा. अयो. २६.१०), राजनीति (वा. रा. अयो. २६.४), लौकिक नीति (वा. रा. कि. ९.२) इन सारे तत्त्वों का ज्ञान रखती है, जिसकी सराहना स्वयं राम के द्वारा की गयी है।

मानस में—दुलखी के 'मानस' में चित्रित की गयी सीता, शिव, पार्वती, गणेश आदि की उपासिका है (मानस. २.२.२६.७-८)। यह राम की केवल पत्नी ही नहीं, बल्कि अनन्य भक्त भी हैं। इसका ध्यान सदैव रामचरण में ही रहता है—

सियमन राम चरण मन लागा।

(मानस. २.२.२६.८)।

सीतासावित्री—प्रजापति की एक कन्या, जो सोम की पत्नी थी (तै. ब्रा. ३.३.१०; प्रजापति देखिये)।

सीमन्तिनी—चित्रवर्मन् राजा की कन्या, जो चित्रांगद राजा की पत्नी थी। 'सोमप्रदोपवत' का माहात्म्य कथन करने के लिए इसकी कथा स्कंद में दी गयी है। चौदह वर्ष की आयु में इसे वैधव्य प्राप्ति का कुयोग था। उस कुयोग के नाशनाथ याज्ञवल्क्यपत्नी मैत्रेयी ने इसे 'सोमप्रदोपवत' करने के लिए कहा, जिस कारण इसका पति समुद्र में डूबने से बच गया (स्कंद. ३.३.८-९)।

सीरध्वज (जनक)—(सू. निमि.) विदेह देश का सुविख्यात राजा, जो सीता का पिता था। इसके पिता का नाम हस्वरोमन् था (७१.१२)। 'सीर' का शब्दः

अर्थ 'हल' होता है। यही हल इसके कीर्ति का कारण बन जाने के कारण, इसे 'सीरध्वज' नाम प्राप्त हुआ (भा. ९.१३.१८)।

सीता की प्राप्ति—एक बार यह अग्निचयन के लिए भूमि पर हल चला रहा था, उस समय इसे सीता की प्राप्ति हुई (सीता देखिये)। सीता बड़ी होने पर संकाश्या नगरी के सुधन्वन् राजा ने सीता की माँग की। इसके द्वारा इस माँग का इन्कार किये जाने पर सुधन्वन् ने इस पर हमला किया। उस युद्ध में इसने सुधन्वन् का वध किया, एवं अपने पुत्र कुशध्वज को संकाश्या नगरी का अधिपति नियुक्त किया (वा. रा. वा. ७१.१६-१९)।

मिथिला पर हमला—सीता अत्यंत स्वरूपसुंदर होने के कारण, भारतवर्ष के अनेकानेक राजा उससे विवाह करना चाहते थे। सीताविवाह के लिए इसने शिवधनु-भंग का प्रण निश्चित किया। वह प्रण किसी भी राजा ने पूर्ण नहीं किया। अन्त में सीताविवाह के संबंध में निराश हुए राजाओं ने एकत्रित हो कर मिथिला नगरी को घेर लिया। यह घेरा लगातार एक वर्ष तक चालू रहा, जिससे यह अत्यधिक वस्त हुआ। अन्त में देवी सहायता के कारण, इस संकट से यह मुक्त हुआ (वा. रा. वा. ६६)।

वाजपेय यज्ञ—आगे चल कर, इसने वाजपेय यज्ञ किया, जिसके उपलक्ष्य में विश्वामित्र ऋषि अयोध्या के राजकुमार राम एवं लक्ष्मण को मिथिला नगरी में ले आये। शिवधनुर्भंग का इसका प्रग राम ने पूरा किया, एवं सीता का वरण किया।

पश्चात् इसकी दो कन्याएँ सीता एवं जर्मिला, एवं इसके भाई कुशध्वज की दो कन्याएँ मांडवी एवं श्रुतकीर्ति के विवाह क्रमशः अयोध्या के राजकुमार राम, लक्ष्मण, भरत एवं दानुज से सुसुहूर्त पर संभल हुए (वा. रा. वा. ७०-७४)। पद्म में जर्मिला इसकी नहीं बल्कि इसके बंधु कुशध्वज की कन्या दी गयी है।

सुकक्ष आंगिरस—एक वैदिक सूतद्रष्टा (क्र. ८. ९२-९३)।

सुकन्या—शर्याति राजा की कन्या, जो च्यवन ऋषि की भार्या थी (श. ब्रा. ४.१.५.६; जै. ब्रा. ३.१.२१)। इसके पुत्र का नाम प्रमति, एवं पौत्र का नाम रुरु था (म. आ. ८.१; पद्म. पा. १५; च्यवन १. देखिये)। इसकी कन्या का नाम सुमेश्वर था, जिसका विवाह निशुव काण्व ऋषि से हुआ था।

२. मातरिश्वन् ऋषि की पत्नी, जो मेक्रणक ऋषि की माता थी (म. श. ३७.५० पाठ.)।

सुकमल—एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी का एक पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७.१२९)।

सुकर्मन्—एक पापी पुरुष, जिसकी कथा गीता के दूसरे अध्याय के पठन का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. उ. १७२)।

२. (सां. वृष्णि) यादव राजा श्वकटक के पुत्रों में से एक (भा. ९.२४; १६)।

३. रुद्रसवर्णि मन्वंतर का एक देवगण।

४. रौच्य मन्वंतर का एक देवगण।

५. एक आचार्य, जो विष्णु एवं भगवत के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से वैदिनि नामक आचार्य का, वायु के अनुसार सुवन् का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार सुवन् नामक आचार्य का शिष्य था। इससे सामवेद की कुल एक सहाय शाखाएँ तैयार की, एवं वे उदात्त दिशा से आये हुए पाँच सौ, एवं पूर्व दिशा के से आये हुए पाँच सौ शिष्यों में बाँट दी।

यह अनध्याय के दिन में भी अपने शिष्यों को संहिताओं के पाठ सिखाता था, जिस कारण क्रुद्ध हो कर इंद्र ने इसके सारे शिष्यों का वध किया। पश्चात् इसने प्रायोपवेशन कर इंद्र को प्रसन्न किया। फिर इंद्र ने इसके सारे शिष्य पुनः जीवित किये, इतना ही नहीं, उसने इसे हिरण्यनाभ एवं पौष्यजि नामक दो नये शिष्य भी प्रदान किये (ब्रह्मांड. २.३५.३२)।

६. युधिष्ठिर की राजसभा में उपस्थित एक द्रविड (म. स. ४२३)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)- 'सुशर्मन्'।

७. कुरुक्षेत्र का एक ब्राह्मण, जिसकी कथा 'मातृपितृ-माहात्म्य' कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है। इसने अपने मातापिताओं की सेवा कर, 'सर्ववश्यता' नामक सिद्धि प्राप्त की थी। इसी सिद्धि के बल से इसने दशारण्य में उग्र तपस्या करनेवाले पिप्पलाद काश्यप नामक ऋषि का गर्वहरण किया (पद्म. भू. ६१-६३; ८४)।

८. एक स्कंद-पार्षद, जो विशातु के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक था। दूसरे पार्षद का नाम सुवत था।

सुकला—वाराणसी के इकल नामक वैश्य की पत्नी, जिसकी कथा पतिपत्नियों के द्वारा एक साथ तीर्थयात्रा

करने का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्य में दी गयी है (पद्म. सु. ४१-६१)।

सुकाल—सुमूर्तिमत् नामक पितरों का नामान्तर ।

सुकीर्ति—उत्तम मन्वंतर का इन्द्र ।

२. ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर के समर्पियों में से एक ।

सुकीर्ति काक्षीवत—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.२३१)। ऋग्वेद के ब्राह्मण ग्रंथों में इसे इस सूक्त के प्रणयन का श्रेय इसे दिया गया है (ऐ. ब्रा. ५.१५.४; ६.२९.१; सां. ब्रा. ३०.५)।

सुकुट्ट—एक लोकसमूह (म. स. १३.२५)।

सुकुंडल—(सो. कुरु.) श्रुतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक ।

सुकुमार—(सो. काश्य.) एक राजा, जो श्रुतकेतु राजा का पुत्र, एवं वीतहोत्र राजा का पिता था (भा. ९. १७.९)। विष्णु एवं वायु में इसे सुविभु राजा का पुत्र कहा गया है।

२. पुलिंद देश का एक राजकुमार, जो सुमित्र राजा का पुत्र था। सहदेव ने अपने दक्षिणदिग्बिजय में, एवं भीम ने अपने पूर्वदिग्बिजय में इसे जीता था (म. स. २६.१०)। भारतीय युद्ध में यह पांडव पक्ष में शामिल था।

३. एक राजा, जो मत्स्य देश के समीप स्थित प्रदेश का अधिपति था। द्रौपदी स्वयंवर में यह उपस्थित था (म. आ. १७७.९)। सहदेव ने अपने दक्षिण दिग्बिजय में इसे जीता था (म. स. २८.४)।

४. तक्षककुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.८)।

५. एक राजकुमार, जो शाकद्वीपाधिपति भव्य राजा का पुत्र था। इसके ही नाम से इसका जलवारामिरी के समीप स्थित देश को 'सुकुमारवर्ष' नाम प्राप्त हुआ था (मार्क. ५०.२२; म. भी. १२.२३)। वायु एवं ब्रह्मांड में इसके पिता का नाम 'हव्य' दिया गया है।

सुकुमारी—परिक्षितपुत्र भीमसेन राजा की पत्नी (म. आ. ९०.४५)।

२. संजय राजा की कन्या, जो नारद की पत्नी थी (म. शां. ३०.१२; नारद २. देखिये)।

सुकुसुमा—स्कन्द की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५)।

सुकुत्त—स्वारोचिष मन्वन्तर का एक प्रजापति, जो वसिष्ठ ऋषि का पुत्र था (पद्म. सु. ७)।

२. (सो. पूरु.) एक राजा, जो विष्णु एक मत्स्य के अनुसार पृथु राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.५५)। वायु में इसे सुकृति कहा गया है।

सुकृति—ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तार्षियों में से एक ।

२. स्वारोचिष मनु का एक पुत्र ।

३. पूर्ववंशीय सुकृत राजा का नामान्तर ।

सुकृत्त—(सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार निरामित्र राजा का पुत्र था। ब्रह्मांड, विष्णु, भागवत एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'सुक्षत्र', 'सुनक्षत्र' एवं 'सुरक्ष' कहा गया है।

सुकृष—एक ऋषि, जो विपुलस्वत ऋषि का पुत्र था। इसकी जीवनकथा शिवि औशीनर राजा से काफ़ी मिलती जुलती है। इसके कुल चार पुत्र थे।

एक बार इसकी सत्त्वपरीक्षा लेने के लिए इंद्र पक्षीरूप से इसके पास आया, एवं नरमांस का भोजन माँगने लगा। इसने उसकी इच्छा पूर्ण करने का आश्वासन दिया, एवं अपने पुत्रों को मांस निकाल देने की आज्ञा दी। इसकी यह प्रार्थना इसके पुत्रों ने अस्वीकार कर दी। इस पर क्रुद्ध हो कर इसने उन्हें 'तिर्यग्' (पक्षी) योनि में जन्म प्राप्त होने का शाप दिया। तदनुसार इसके पुत्र गरुडवंश में द्रोणपुत्र, पिशाक्ष, विबोध, सुपुत्र एवं सुमुख नामक पक्षी बन गये (मार्क. ३.) इसके पुत्रों के द्वारा निदान माँगे जाने पर, इसने उन्हें पक्षीयोनि में रह कर भी ज्ञानी बनने का उःशाप दिया।

इंद्र को दिये गये अभिवचन की पूर्ति के लिए यह अपना स्वयं का मांस निकालने लगा। इस पर इंद्र अपने सही रूप में प्रकट हुआ, एवं उसने इसे महाशानी बनने का, एवं तपस्या में कहीं भी विघ्न न उत्पन्न होने का आशीर्वाद प्रदान किया।

सुकेतन—(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार सुनीथ राजा का पुत्र, एवं धर्मकेतु राजा का पिता था (भा. ९.१७.८)। विष्णु एवं वायु में इसे सुकेतु कहा गया है।

सुकेतु—(सू. निमि.) एक धर्मप्रवृत्त राजा, जो वायु एवं भागवत के अनुसार नन्दिवर्धन राजा का पुत्र, एवं देवरात राजा का पिता था (भा. ९.१३.१४)।

२. क्षत्रवंशीय सुकेतन राजा का नामान्तर ।

३. एक दानव, जो ताटका राक्षसी का पिता था (वायु. ६८.६)।

४. राम दशरथि राजा के सुकृत नामक प्रधान का पुत्र (कुशलव देखिये)।

५. पाण्डवपक्ष का एक पराक्रमी राजा, जो चित्रकेतु राजा का पुत्र था (म. आ. १७७.९)। यह द्रौपदीस्वयंवर में भी उपस्थित था। भारतीय युद्ध में कृपाचार्य ने इसका वध किया (म. क. ३८.२१-२९)। पाठभेद—'अभिगु'।

६. एक राजा, जो अपने सुनामन् एवं सुवर्चस् नामक पुत्रों के साथ द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.९)।

७. शिशुपाल का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवपक्ष में शामिल था। द्रोणाचार्य ने इसका वध किया (म. क. ३.८२)।

८. एक राक्षस, जो ताडका राक्षसी का पुत्र, एवं सुबाहु राक्षस का भाई था। राम के अश्वमेधयज्ञ के समय, अपने भाई सुबाहु के साथ इसने शत्रु से युद्ध किया था। यह गदायुद्ध में अत्यंत प्रवीण था। शत्रु-युद्ध में इसने सीता के भाई लक्ष्मिनिधि से व्रमासन युद्ध किया था (पद्म. पा. २५-२६)।

९. सगर राजा का एक पुत्र, जो कपिल ऋषि के शाप से बचे हुए सगरपुत्रों में से एक था।

१०. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का एक पुत्र था।

सुकेतुमत्—मद्रावती नगरी का एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम चंपका था। 'पुत्रदा एकादशी' के व्रत का माहात्म्य कथन करने के लिए इसकी कथा पद्म में दी गयी है (पद्म. उ. ४१)।

सुकेश—एक राक्षस, जो वियुक्केश राक्षस का पिता था। इसकी मृता का नाम सालकटकटा था। इसने शिव-पार्वती की कठोर तपस्या की, जिस कारण इसे रुद्रगणों में स्थान प्राप्त हुआ (वा. रा. उ. ४.२७-३२)। ग्रामणी नामक गंधर्व की कन्या इसकी पत्नी थी, जिससे इसे मालिन्, सुमालिन् एवं मात्यवत् नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे।

सुकेशिन् शारद्वाज—एक आचार्य, जो आत्मज्ञान प्राप्ति के लिए पिप्पलाद नाम आचार्य के पास गये हुए पाँच आचार्यों में से एक था (प्र. उ. १.१)। 'षोडश-कल पुत्र' के संबंध में इसने पिप्पलाद से कृच्छ्रा की थी।

सुकेशी—अलकापुरी की एक अप्सरा, जिसने

अश्वक के स्वानत समारोह में नृत्य किया था (म. अनु. १९.४५)।

२. गांधारराज की एक कन्या, जो कृष्ण की पत्नी थी। शारका में स्थित इसके प्रासाद का नाम पञ्चकट था (म. म. परि. १.२१.१२५१-१२५२)।

३. मगधराज केतुवीर्य की एक कन्या, जे मल्ल (तृतीय) राजा की, पत्नी थी (मार्क. १२८)।

४. हेति राक्षस की एक कन्या, जो दुर्जय राक्षस की पत्नी थी (हेति देखिये)।

५. तुंगुरु की एक कन्या (वायु. ६९.८९)।

सुकुतु—एक राजा, जिसका निर्देश संजय के द्वारा प्राचीन राजाओं की गणना में किया गया है (म. आ. १.१७५)।

सुकुञ्ज—कोसल देश का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवपक्ष में शामिल था। इसके रथ के अश्व अत्यंत सुंदर थे, जिनके उदरभाग का रंग चक्रवात् पक्षी के सदृश श्वेतवर्णीय था (मा. द्रो. २२.४७)।

२. (सो. मगध. भविष्य.) मगधवंशीय सुकृत्त राजा का नामान्तर।

सुकुञ्ज—ब्रह्मसवर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सुख—सावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण, जिसमें निम्न-लिखित तीस देव शामिल थे:—ऋत, तप, दानिन्, शक्र, वाम, देय, हुब, निधि, नियम, यम, विच, विधान, वैश, शम, सोम, स्थान, हव्य, हुत, होम (ब्रह्मांड. ८.१२०)।

२. धर्म एवं शान्ति के पुत्रों में से एक।

३. एक पक्षी, जो गरुड एवं शुक्र के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड ६.७.४५०)।

सुखद—पितरों में से एक।

सुखदा—स्कंद की अनुचरी एक मातृश्व (म. श. ४५)।

सुखसंगित—एक गंधर्व, जिसकी कन्या का नाम प्रमोदिनी था (पद्म. उ. १२८)।

सुखामन एवं **सुखासीन**—ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का देवगणद्वय।

सुखानिल—(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत एवं वायु के अनुसार नृचक्रु राजा का पुत्र, एवं परिश्रव राजा का पिता था (भा. ९.२२.४१)। विष्णु एवं मन्स्य में इसे 'सुखीवल' कहा गया है।

सुगति—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो गया एवं गर्यति के पुत्रों में से एक था (भा. ५.१५.१४)।

२. हंसध्वज राजा का प्रधान ।

सुगंध—एक राक्षस, जो हिरण्याक्ष एवं देवों के संग्राम में अग्नि के द्वारा दग्ध किये गये सात राक्षसों में से एक था (पद्म. सु. ७५) ।

२. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवज्ञी के पुत्रों में से एक था ।

सुगंधा—एक अप्सरा, जिसने अजुन के जन्मोत्सव के समय नृत्य किया था (म. भा. ११४.५२) ।

२. कृतवीर्य राजा की पत्नी ।

सुगणा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२६) ।

सुगंधी—बसुदेव की तेरह पत्नियों में से एक जिसके पुत्र का नाम पुण्ड्र था (वायु. ९६.१६१) ।

सुगवि—(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय संधि राजा का नामान्तर ।

सुगोप्ता—एक प्राचीन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३७) ।

सुगृधि—कश्यप एवं ताम्रा की कन्याओं में से एक ।

सुग्रीव—किष्किंधा नगरी का एक सुविख्यात वानर राजा, जो महेंद्र एवं ऋक्षकन्या विरना का पुत्र था (श्रद्धांड. ३.७.२१४-२४८; भा. ९.१०.१२) । यह वालिन् का छोटा भाई था । वाल्मीकिरामायण के प्रक्षिप्त काण्ड में इसे ऋक्षरज्जु नामक वानर का पुत्र कहा गया है, जिसकी धीवा (गदंन) से उत्पन्न होने के कारण इसे 'सुग्रीव' नाम प्राप्त हुआ था (वा. रा. उ. प्रक्षिप्त. ६) । इस ग्रंथ में अन्यत्र इसे सूर्य का पुत्र अंशवतार कहा गया है । इसके अमात्य का नाम द्विविद था (भा. १०. ६७.२) ।

इसके एवं इसकी वानरसेना की सहायता के कारण ही, राम दाशरथि लंकाधिराजि रावण जैसे बलाढ्य राक्षस पर विजय पा सका । इस कारण समस्त रामकथाओं में यह अमर हो चुका है ।

वालिन् से शत्रुत्व—यह वालिन् का छोटा भाई था, जिस कारण वालिन् के सभी पराक्रमों में एवं साहसों में यह उसकी सहायता करता था । आगे चल कर भायाविन् राक्षस के युद्ध में वालिन् एक वर्ष तक किष्किंधा नगरी में वापस न आया । इस कारण उसे मृत समझ कर, यह किष्किंधा नगरी का राजा बन गया, एवं वालिन्पत्नी तारा को इसने पत्नी के रूप में स्वीकार किया ।

एक वर्षके पश्चात् वालिन् किष्किंधा नगरी लौट आया, एवं इसे धातृद्रोही शत्रु मान कर उसने इसे किष्किंधा राज्य

प्रा. च. १३२]

से बाहर निकाल दिया । पश्चात् यह विजनवासी वन कर इधर उधर भ्रमने लगा । इस समय इसने समस्त भूमंडल का भ्रमण किया, एवं अंत में यह ऋष्यमूक पर्वत पर आ कर रहने लगा, जो स्थान वालि के लिए अगम्य था (वा. रा. कि. ४६; वालिन् देखिये) ।

राम से मैत्री—आगे चल कर ऋष्यमूक पर्वत पर, सीता को खोज के लिए आये हुए रामलक्ष्मण से इसकी भेंट हुई । वहाँ अग्नि को साक्ष रख कर इन्होंने आपस में मित्रता प्रस्थापित की, जिसके अनुसार इसने सीताशोध के कार्य में राम की सहायता करने का, एवं राम ने वालिन् का वध कर इसे किष्किंधा का राजा बनाने का आश्वासन दिया ।

वालिन् वध—पश्चात् अपने आश्वासन के अनुसार, राम ने वालिन् का वध किया एवं इसे किष्किंधा के राजगद्दी पर बिठाया । पश्चात् इसे अपनी पत्नी रमा एवं वालिन् की पत्नी तारा ये दोनों पत्नियों के रूप में पुनः प्राप्त हुई (वा. रा. कि. २६; वालिन् एवं राम दाशरथि देखिये) । इसी समय वालिन् के पुत्र अंगद को किष्किंधा का यौवराज्याभिषेक किया गया ।

लक्ष्मण का क्रोध—इसके राज्याभिषेक के पश्चात् राम एवं लक्ष्मण चार महीनों तक प्रखण्ड पर्वत पर रहे । इस समय, यह विषयसुखों में इतना निमग्न रहा कि, एक वार भी रामलक्ष्मण को मिलने न गया (वा. रा. कि. ३१.२३; ३९; ३३.४३; ४८; ५४; ५५) । इस कारण लक्ष्मण ने स्वयं किष्किंधा नगरी में जा कर इसकी अत्यंत कटु आलोचना की, एवं वह उसका वध करने के लिए प्रवृत्त हुआ । इस समय तारा ने लक्ष्मण को प्रार्थना कि, वह इसे क्षमा करे । स्वयं सुग्रीव भी हाथ जोड़ कर खड़ा हुआ, एवं इसने अपने अकृतज्ञता के लिए लक्ष्मण से बार बार क्षमा माँगी ।

पश्चात्ताप—पश्चात् यह स्वयं सीता की खोज करने जाने के लिए प्रवृत्त हुआ, किंतु हनुमत् ने इसे परावृत्त किया, एवं चारों दिशाओं में सीता को ढूँढने के लिए वानरदूत भेज दिये, जिनमें दक्षिण दिशा के वानरों का नेतृत्व उसने स्वयं स्वीकृत किया ।

इसी समय हनुमत् ने इसे उपदेश दिया कि, यह अपने वचनों का ख्याल कर राम के उपकारों का बदला योग्य प्रकार से लुकाये । हनुमत् का यह उपदेश सुन कर, इसे अपने कृतकर्म का पश्चात्ताप हुआ, एवं सीता की मुक्तता करने के लिए अपनी सारी सेना सुसज्ज रखने की आज्ञा इसने अपने सेनापति नील को दी ।

युद्ध की तैयारी—हनुमत् के द्वारा सीता का शोध लगाये जाने पर इसने समस्त वानरसेना एकत्रित कर रावण पर आक्रमण करने की तैयारी की। लंका पर आक्रमण करने के लिए समुद्र में सेतु बंधवाने की कल्पना भी इसीने ही राम को दी, एवं उसको भीरव बंधाया। पश्चात् अपनी संपूर्ण सेना के साथ यह समुद्रतट पर आ पहुँचा (वा. रा. यु. २)।

समुद्रतट पर पहुँचने ही रावण ने इसे संदेश भेजा कि यह राम की सहायता न करे, किन्तु यह अपने निश्चय पर अटल रहा, एवं इसने रावण को प्रतिसंदेश भेजा।

न भेऽसि मित्रं न तथानुकम्प्यो,
न चोपकर्तृमि न मे प्रियोऽसि ।
अरिश्च रामस्य महानुबन्धः,
स मेऽसि वालीव वचार्हं वक्ष्यः ॥

(वा. रा. यु. २०.२३)

(तुम मेरे मित्र, उपकारकर्ता, प्रिय एवं मेरे प्रति दया भावना रखनेवाले नहीं हो। मेरे मित्र राम के तुम शत्रु होने के कारण, वालिन् की भाँति तुम भी वध करने योग्य ही हो)।

बाद में यह स्वयं छलांग मार कर रावण के राज-प्रासाद में पहुँच गया, जहाँ इसने उसका मुकुट गिरा दिया। इस प्रकार राम रावण युद्ध प्रारंभ हुआ (वा. रा. यु. ४०)।

राम-रावण युद्ध में—इस युद्ध में इसने एवं इसकी वानरसेना ने अत्यधिक पराक्रम दिखाया। इसने निम्न-लिखित राक्षसों के साथ युद्ध कर उनका वध किया:— १. कुंभकर्णपुत्र कुंभ (वा. रा. यु. ७५-७६); २. रावण-सेनापति विरुपाक्ष; ३. रावणसेनापति महोदर (वा. रा. यु. ९७)। कुंभकर्ण एवं रावण से भी इसने युद्ध किया था, जिन दोनों युद्धों में यह उनके हाथों परास्त हुआ (वा. रा. यु. ५९; ६७)।

रामरावणयुद्ध में लक्ष्मण जब मूर्च्छित हुआ, तब इसने वानरसेना का भीरव बंधा कर मूर्च्छित लक्ष्मण को युद्धभूमि से उठाया, एवं शिविर पहुँचा दिया (वा. रा. यु. ५०)।

कुंभकर्णवध के पश्चात् इसने हनुमत् को आज्ञा दी कि, लंका को आग लगा दी जाये। हनुमत् के द्वारा वैसा ही किये जाने पर लंका के सभी राक्षस इधर उधर भागने

लगे। उस समय इसने लंका के सभी दरवाजे रोक कर राक्षसों का संहार किया।

राम का राज्याभिवेक—राम रावण युद्ध समाप्त होने पर, राम दाशरथि का राज्यारोहणसमय अयोध्या में संपन्न हुआ, जहाँ यह अपने समस्त परिवार के साथ उपस्थित हुआ था। उस समारोह में राम ने इसका अत्यधिक सत्कार किया, एवं युद्ध में यशस्विता प्राप्त होने का बहुत सारा श्रेय इसे प्रदान किया (वा. रा. १२३-१२८)। बाद में राम ने जब देहत्याग किया, तब किर्किंधा के राजगद्दी पर अंगद को बिठा कर इसने भी मृत्यु स्वीकार ली।

चरित्रचित्रण—वाल्मीकि रामायण में सुग्रीव का महत्व राजनैतिक है, जहाँ इसे 'शरथ्य' (शरण जाने के लिए योग्य) कहा गया है। इसकी भैत्री के कारण राम दाशरथि सीता को पुनः प्राप्त कर सका, जिस संबंध में इसकी प्रयत्ना राम के द्वारा भी की गयी है (वा. रा. कि. ७.१७-१८)।

सुग्रीव कुशल सैन्यसंचालक था, एवं इसका भौगोलिक ज्ञान भी परमकोटि का था (वा. रा. कि. ४.१७-२३; ४१.७-४५; ४२.६-४९)।

सुग्रीवचरित्र के दोष—वाल्मीकि रामायण में इसके चरित्र के निम्नलिखित दोषों का निर्देश अंगद के द्वारा किया गया है:—१. समयाजित् राक्षस के युद्ध के समय वालिन् को गुफा में बन्द करना; २. वालिन्वध के पश्चात् वालिपत्नी तारा का अपहरण करना; ३. राम दाशरथि को दिव्य गेय वचन का भंग करना (वा. रा. कि. ५५.२-५)।

परिवार—इसकी तारा एवं रुमा नामक दो पत्नियाँ थी। इसके विजयवास में इसके दोनों पत्नियों को इसके भाई वालिन् ने भ्रष्ट किया (वा. रा. कि. १८-२२)। वालिन्वध के पश्चात् इसे पुनः राज्यप्राप्ति होने पर, इसकी ये दोनों पत्नियाँ पुनः एक बार इसके पास रहने लगी। इसकी मोहना नामक अन्य एक पत्नी का निर्देश भी प्राप्त है (पद्म. पा. ६०)।

इसका कोई पुत्र न था, जिस कारण इसकी मृत्यु के पश्चात् अंगद किर्किंधा नगरी का राजा बन गया।

मानस में—तुलसी द्वारा विरचित मानस में सुग्रीव का चरित्रचित्रण एक राजनीतिज्ञ के नाते नहीं, बल्कि राम के एक शरणार्थी सेवक एवं सत्पा के नाते किया गया है। इसी कारण राम से इसकी मित्रता राजनैतिक गठ

बंधन नहीं, बल्कि आध्यात्मिक एकात्मता है, जो इसके निकृष्ट हृदय का चोतक है। इसी कारण 'मानस' का सुग्रीव राम के परिवार के अन्य लोगों की भाँति केवल निमित्तमात्र ही है, इसकी असली प्रेरक शक्ति तो स्वयं राम ही है।

सुग्रीवी—कश्यप एवं ताम्रा की एक कन्या, जो इस संसार के समस्त अश्व, उड़ू एवं गर्दभों की आद्य जननी मानी जाती है (मत्स्य. ६.३०)।

सुघोर—एक राक्षस, जो हिरण्याक्ष एवं देवों के बीच हुए युद्ध में कार्तिकेय के द्वारा मारा गया (पद्म सू. ७५)।

सुचंद्र—एक देवगंधर्व जो, कश्यप एवं प्रावा के पुत्रों में से एक था (म. आ. ६९.८६)।

२. एक सैहिकेय अंशुर, जो कश्यप एवं सिहिका के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.३०)।

३. (सू. विष्ट.) एक राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार हेमचंद्र राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.६१.१३)। इसे काली देवी की कृपा से एक कवच प्राप्त हुआ था, जिस कारण यह युद्ध में अजेय हुआ था।

कार्तवीर्य एवं परशुराम के बीच हुए युद्ध में यह कार्तवीर्य के पक्ष में शामिल था (ब्रह्मांड. ३.३९.१८-५३)। उस समय इसके रथ में स्वयं कालीदेवी अवतीर्ण हुईं, जिसने परशुराम के द्वारा फेंके गये हर एक शस्त्र-अस्त्र को भक्ष्य करना प्रारंभ किया। इस कारण भयभीत हो कर परशुराम ने इसे अपना 'कालीकवच' उतार कर देने की प्रार्थना की। इस पर इस उदारचरित राजा ने अपना कवच उतार कर परशुराम को दे दिया। कवच प्राप्त होते ही परशुराम ने इसका वध किया।

४. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१२९)।

५. अंधकवंशीय राजा, जो सूर्यग्रहण के समय 'स्यमेत-पंचक' क्षेत्र में तीर्थयात्रा के लिए गया था।

सुचल—(सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार समति राजा का पुत्र था। मागधत एवं किणु में इसे 'सुकल' एवं मत्स्य में इसे 'अचल' कहा गया है।

सुचारु—धृतराष्ट्रपुत्र 'चारु' का नामान्तर। इसे 'चारुचित्र' नामान्तर भी प्राप्त था। अपने अन्य सात भाइयों के साथ इसने अभिमन्यु पर आक्रमण किया था।

२. कृष्ण एवं रुक्मिणी का एक पुत्र।

३. (सो. वसु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार प्रतिब्राह्म राजा का पुत्र था (वायु. ९६.२५१)। यह वज्र का पौत्र था, एवं इस प्रकार कृष्ण के छठवें पीढ़ी में उत्पन्न हुआ था।

सुचित्त—एक राजा, जो सत्यधृति नामक राजा का पिता था (सत्यधृति सौचित्य देखिये)।

सुचित्त सैलन—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. १.४.४)।

सुचित्ति—सुचित्ति नामक अंगिराकुलोत्पन्न मंत्रकार का नामान्तर।

सुचित्र—(सो. कुरु.) चित्र नामक धृतराष्ट्रपुत्र का नामान्तर। इसे 'सुचारु' नामान्तर भी प्राप्त था।

२. पांचाल देश का एक महारथी राजा, जिसके पुत्र का नाम चित्रवर्मन् था। भारतीय युद्ध में द्रोण ने इन दोनों का वध किया (म. द्रो. २०.१५५४, पवित्र. ८-२२)।

३. शिवदेवों में से एक।

सुचिरा—एक राजकन्या, जो क्षफल्क एवं गाँदिनी की कन्या थी (मा. ९.२४.१७)।

सुचेतस्—(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो वीतहव्य-वंशीय यत्समद राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम वर्चस् था (म. अनु. ३०.६१)।

२. द्रुह्युवंशीय प्रचेतस् राजा का नामान्तर (प्रचेतस् ७. देखिये)।

सुच्छाया—अग्नि की एक कन्या, जो ध्रुवपुत्र शिष्ट राजा की पत्नी थी। इसके कृन्, रिपुंजय, वृक आदि पुत्र थे।

सुजन—एक देव, हो भृगु एवं पौलोमी के पुत्रों में से एक था।

सुजन्तु—(सो. अमा.) अमावसुवंशीय पूरु राजा का नामान्तर (पूरु. ३. देखिये)। इसे सुहोत्र नामान्तर भी प्राप्त था।

सुजन्य—एक देव, जो बारह भार्गव देवों में से एक था।

सुजय—भव्य देवों में से एक।

२. एक राजा, जिसने अश्वमेध यज्ञ के समय पांडवों की मदद की थी (जै. अ. १३)।

सुजात—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. द्र. २५.१५)।

२. (सो. सह.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार भरत राजा का पुत्र था।

३. एक वानर राजा, जो पुलह एवं श्वेता के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१८०-१८१)।

सुजातवक्र—एक आचार्य, जिसका निर्देश ऋग्वेदीय ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में प्राप्त है (आश्व. ग. ३.३)।

सुजाता—महर्षि उदालक की कन्या, जो कहोल ऋषि की पत्नी, एवं अष्टावक्र की माता थी (म. व. १३२.७)।

३. सुराष्ट्र राजा की कन्या, जो दुर्गम राजा की पत्नी थी।

सुजातेय—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

सुजानु—एक ऋषि, जो शांतिदीप्य के लिए जाने-वाले श्रीकृष्ण से मार्ग में मिले थे (म. उ. ३८८* पाठ)।

सुहृ—दशरथ राजा का मंत्री, जिसके निम्नलिखित दस पुत्र थे:—१. जितश्रम; २. धामिक; सुकेतु; ४. यनुसूदन; ५. चंद्र; ६. मंड; ७. शल; ८. काल; ९. मल्ल; १०. सिंह (जै. अ. ३४.४३)।

सुउद्येष्ट—(शुंग. भविष्य.) एक राजा, जो अग्निमित्र राजा का पुत्र, एवं वसुमित्र राजा का पिता था (भा. १२.१६.१७)।

सुतंजय—त्रिगर्त देश के 'श्रुतंजय' राजा का नामांतर (श्रुतंजय ३. देखिये)।

सुतह्राज—(स. निमि.) विदेह देश के सत्यश्वज राजा का नामांतर।

सुतनु—आहुक (उग्रसेन) राजा की कन्या, जो अक्रूर की पत्नी थी (म. स. १३.१२)। मत्स्यादि में इसे वसुदेव की पत्नी कहा गया है, एवं इसके पुत्र का नाम पौण्ड्रक दिया गया है (मत्स्य. ४४.७६; ४६.२१; विष्णु. ४.१४.५)।

२. उग्रसेन राजा का पुत्र (वायु. ९६.१३२)।

३. (सो. कुरु.) युधिष्ठिर राजा की कन्या, जिसका विवाह वज्र राजा के पुत्र अश्वसुत से हुआ था (वायु. ९६.२५०)।

४. कलापग्राम में रहनेवाले एक ब्राह्मण का पुत्र (स्कंद. १.२.६)।

सुतपस—सावर्णि मन्वंतर का एक देवगण, जिसमें निम्नलिखित बीस देव शामिल थे:—आर्षिभृत्, कीर्ति, क्रतु, कृतिनेमि, तपस्, तेजस्, द्योतन, धर्म, धृति, प्रभाकर, प्रभास, बुध, मानु, मासकृत्, यशस्, रश्मि, विराड्, एवं शुक्र (ब्रह्मांड. ४.१.१२)।

२. एक ऋषि, जो निवृत्तिचक्षु ऋषि का पुत्र था। एक बार इसने उत्पलावती से संभोग की प्रार्थना की। उसके द्वारा इसकी प्रार्थना अस्वीकार किये जाने पर, इसने उसे मृगी बनने का शाप दिया। उत्पलावती के द्वारा उःशाप की माँग किये जाने पर, उसके गर्भ से 'लोल'

नामक तामस मनु निर्माण होने का उःशाप इसने उसे प्रदान किया (मार्क. ७१)।

३. भरद्वाजकुलोत्पन्न एक ऋषि। इसकी कुल दो पत्नियाँ थीं। उनमें से एक पितृकन्या थी, जिससे इसे कत्याणमित्र नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

इसकी दूसरी पत्नी पर सूर्य ने बलात्कार किया, जिससे इसे अधिनीसुत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। अपनी इस व्यभिचारिणी पत्नी का, एवं उसके पुत्र का इसने त्याग किया। किंतु आगे चल कर स्वयं कृष्ण के द्वारा आज्ञा दिये जाने पर, इसने अपने इन स्त्रीपुत्रों को पुनः स्वीकार किया (ब्रह्म. वै. १.११)।

४. सावर्णि मन्वंतर का एक देवगण।

५. एक मरुत, जो मरुतों के पहले गण में समाविष्ट था।

६. एक प्रजापति, जिसने इस पृथ्वी पर वसुदेव के रूप में जन्म लिया था (भा. १०.३.३२)।

७. उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

८. तामस मनु के पुत्रों में से एक।

९. दक्षसावर्णि मन्वंतर का एक ऋषि।

१०. रुद्रसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

११. रौच्य मनु के पुत्रों में से एक।

१२. रौच्य मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

१३. (सो. अनु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु, एवं वायु के अनुसार हेम राजा का पुत्र, एवं शलि राजा का पिता था (भा. ९.२३.४)। मत्स्य में इसे सेन राजा का पुत्र कहा गया है।

१४. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार अंतरिक्ष राजा का पुत्र, एवं अमित्रजित् राजा का पिता था (भा. ९.१२.१२)। वायु, विष्णु, मत्स्य, एवं भविष्य में इसे क्रमशः 'सुपर्ण', 'सुवर्ण', 'सुयेण', एवं 'सुवर्णीम' कहा गया है।

१५. (सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार परिष्णाव (परिप्रव) राजा का पुत्र था (मत्स्य. ५०.८३)। पाटमेद-सुनय।

सुतमित्र—एक मरुत, जो मरुतों के द्वितीय गण में से एक था।

सुतंभर—एक व्यक्तिनाम (क. ९.६.५)।

सुतंभर आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (क. ५.११-१४)। इसके सूक्त में 'नहुषपुत्र' राजा का निर्देश तथ्य

है (क्र. ५.१३.६)। ऋग्वेद में अन्यत्र यही नाम एक विशेषण के रूप में प्रयुक्त किया गया है (क्र. ५.४४.१३)।

सुतरा—श्वफल्क राजा की कन्याओं में से एक।

सुतसोम—(सो. कुरु.) एक राजकुमार, जो भीमसेन एवं द्रौपदी का पुत्र था। इसकी उत्पत्ति विश्वेदेवों के अंश से हुई थी। भारतीय युद्ध में इसका निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध हुआ था :—१. विकर्णी (म. भी. ४३. ५५); २. दुमन्त (म. भी. ७५, ३६-३७); ३. विविंशति (म. द्रो. २४.२४); ४. अश्र्वत्थामन् (म. क. ३९.१५-१६)। अन्त में अश्र्वत्थामन् के द्वारा किये हुए रात्रिसंहार के समय इसका वध हुआ (म. सो. ८.५२)।

सुतहोत्र—(सो. अत्र.) अश्र्ववंशीय सुहोत्र राजा का नामान्तर (सुहोत्र २, देखिये)। इसके पुत्र का नाम शल था (शल ८, देखिये)।

सुतार—एक शिवावतार, जो वैवस्वत मन्वन्तर के दूसरे युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। ध्यानयोग की सहायता से इसने मोक्ष प्राप्त किया था। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थे :—दुंदुभि, शतरूप, हृदीक एवं केतुमत् (शिव. मत. ४)।

२. अनुशास्त्र राजा का सेनापति।

सुतारा—सुप्रभ गंधर्व की कन्या (पद्म. स्व. २२)। पद्म में अन्यत्र इसे चन्द्रकान्त गंधर्व की कन्या कहा गया है (पद्म. उ. १२८)।

सुनीक्षण—एक ऋषि, जो अगस्त्य ऋषि का शिष्य था। ज्ञान एवं कर्म के मसुच्चय की शिक्षा अगस्त्य ने इसे दी (यो. वा. १)। रामकृष्ण पर दीर्घकाल तक तपस्या कर त्रैलोक्य में इच्छानुरूप विचरण करने का सामर्थ्य इसने प्राप्त किया था (स्कंद. ३.१.१८)। राम के वनवासकाल में, वह इसके आश्रम में दो बार आ कर ठहरा था।

सुतेजन—एक राजा, जो भारतीय युद्ध में युधिष्ठिर का सहायक था (म. द्रो. १३२.४०)।

सुतीर्थ—दुरुवंशीय सुनीथ राजा का नामान्तर (सुनीथ ५, देखिये)।

सुनेमन्स शांडिल्यायन—एक आचार्य, जो अंशु धानंजय नामक आचार्य का शिष्य, एवं सुनीथ क्रापटव नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)।

सुत्रामन्—रोच्य मन्वन्तर का एक गोत्रकार।

सुतुम्ब—एक आचार्य, जो ब्रह्मांड एवं वायु के अनुभार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से सुमन्तु नामक आचार्य का शिष्य था।

सुत्वन् कैरिश्यि भार्गयण—एक राजा, जिसे मैत्रेय कौपारव नामक आचार्य ने 'ब्राह्मण परिमर' नामक अभिचार विद्या सिखायी थी। इस विद्या के कारण अपने पाँच शत्रु राजाओं का वध कर, यह महान् राजा बन गया (ऐ. ब्रा. ८.२८.१८)।

सुदक्षिण—पांडवपक्ष का एक राजा, जिसे द्रोणाचार्य वध कर रख से नीचे गिरा दिया था (म. द्रो. २०.४४)।

२. कामरूप देश का एक शिवभक्त राजा, जिसका रक्षण करने के लिए भीमाशंकर ने भीमामुर का वध किया था (शिव. शत. ४२.१९)।

सुदक्षिण कांबोज—एक राजा, जो कांबोज (कालुल) देश का अधिपति था। महाभारत में इसका निर्देश 'कांबोजाधिपति' (म. वा. १७७.१५), एवं 'कांबोज' (म. स. २४.२२) नाम से किया गया है। महाभारत में अन्यत्र इसे दक्ष एवं यवन लोगों का राजा कहा गया है (म. उ. १९.२१)।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, अर्जुन ने अपने पश्चिम दिग्बिजय में इसे जीता था (म. स. २४.२२)।

भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था, एवं उस पक्ष के उद्घाटन रथियों में इसकी गणना की जाती थी (म. उ. १६३.१)। इस युद्ध में सहदेवपुत्र श्रुतवर्मन् के साथ इसका वनासान युद्ध हुआ था (म. भी. ४३. ६४)। अन्त में अर्जुन ने इसका एवं इसके छोटे भाई का वध किया (म. द्रो. ६७-६८; क. ४०.१०५)। इसके मृत शरीर को देख कर इसकी पत्नी ने अत्यधिक विलाप किया (म. स्त्री. २५.१५)।

सुदक्षिण काशिराज—एक राजा, जो पाँचक वासुदेव के साथ कृष्ण का शत्रुत्व करनेवाले काशिराज का पुत्र था।

इसके पिता का कृष्ण के द्वारा वध किये जाने पर, इसने अपने पिता का बदला लेने के लिए कृष्ण का वध करने की बोर प्रतिज्ञा की, एवं तप्तीत्यर्थ वाराणसी क्षेत्र में शिव की तपस्या प्रारंभ की। इसकी तपस्या से प्रसन्न हो कर, शिव ने इसे ज्वरणमारण की अधिप्राप्ति देवी दाक्षिणाग्नि की आराधना करने का आदेश दिया।

शिव के उपर्युक्त आदेशानुसार, इसने अपने ऋत्विजों के साथ दाक्षिणाग्नि की आराधना प्रारंभ की। इस आराधना के कारण इसके यज्ञकण्ड से एक महाभयंकर 'अभिचार' अग्नि बाहर निकली, एवं दशदिशाओं को जलती हुयी द्वारका नगरी में पहुँच गयी। अश्वकीड़ा में

निमग्न हुए कृष्ण को वह जलानेवाली ही थी कि, कृष्ण ने अपना सुदर्शन-चक्र छोड़ कर उस अग्नि को लौटा दिया। पश्चात् उस अग्नि ने वाराणसी की ओर पुनः एक बार मुड़ कर, इसे एवं इसके ऋत्विजों को जला कर भस्म कर दिया: (भा. १०.६६.२७-४२)।

सुदक्षिण क्षैमि--एक आचार्य, जिसे तिरस्कृत मान कर एक यज्ञसमारोह से निकाल दिया था। पश्चात् इसके स्थान पर, शक्र एवं गोशु जात्रालि नामक आचार्यों को उस यज्ञ में नियुक्ति की गयी थी (जै. उ. ब्रा. ३.६.३; ७.१.३-६)।

सुदक्षिणा--अंशुमन राजा के पुत्र दिक्षिप (प्रथम) राजा की पत्नी।

सुदत्ता--श्रीकृष्ण की एक पत्नी। द्वारका में स्थित इसके प्रासाद का नाम 'केतुमत्' था (म. स. परि. १. २१.१२६४)।

सुदती--एक अन्तरा, जो कश्यप एवं सुनि की कन्या थी (ब्रह्मंड. ३.७.८)।

सुदत्त पाराशर्य--एक आचार्य, जो जनश्रुत वारक्य नामक आचार्य का शिष्य, एवं आपाढ उत्तर नामक आचार्य का गुरु था (जै. उ. ब्रा. ३.४१; ४.१७)।

सुदमोदम--दम नामक अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

सुदरिद्र--कापिल्य नगरी का एक ब्राह्मण, जिसके वेदविद्यानिपुण पुत्रों के नाम धृतिमत्, तत्त्वदर्शिन, धियाचन्द्र, एवं सत्यदर्शिन थे (पितृवर्तिन देखिये)।

सुदर्शन--एक विद्याधर, जो आंगिरस ऋषि के शाप के कारण सर्प बन गया था। आगे चल कर, इसने कृष्णापिता नंद को निगल लिया, जिस कारण कृष्ण ने इसका वध कर, इसे मुक्ति प्रदान की (भा. १०.३४. १-१८)।

२. चंपक नगरी के हंसखन्न राजा का एक पुत्र।

३. (सो. कुक.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीमसेन ने इसका वध किया (म. द्रो. १०२.१९; श. २६.४८)।

४. कौरवपक्ष का एक राजा, जो सात्यकि के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ९४.१४)।

५. एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए भीम से मिलने उपस्थित हुआ था (भा. १.९.७)।

६. अग्निदेव का एक पुत्र, जो इक्ष्वाकुवंशीय दुर्वीचन की कन्या सुदर्शना का पुत्र था। ओषवत् राजा के

ओषवती नामक कन्या से इसका विवाह हुआ था (म. ९.२.१८)।

यहस्थाश्रमधर्मांतर्गत अतिथिसंस्कार आदि का आचरण करने के कारण, प्रत्यक्ष मृत्यु पर विश्व प्राप्त कर यह ब्रह्मलोक में प्रविष्ट हुआ था। इक्ष्वाकी पत्नी ओषवती भी तपस्विनी थी, जिन्होंने अपने तपोबल से अपना आधा शरीर एक नदी में रूपांतरित किया था। अपने बच्चे हुए आगे शरीर से वह अपने पति के साथ स्वर्लोक गयी (म. अनु. ३. ८४)।

७. एक राजा, जो गांधार देश के नमजित राजा के द्वारा बंदी बनाया गया था। कृष्ण ने नमजित के पुत्रों का वध कर, इसे बंधमुक्त किया, (म. उ. ४३.६९)।

८. एक नरेश, जो भारतीय युद्ध में पांडव पक्ष में शामिल था। इस युद्ध में अश्वत्थामान के द्वारा वह मारा गया (म. द्रो. १७.६३)।

९. (सू. इ.) एक राजा, जो मनुवंशीय दीर्घबाहु राजा का पुत्र था। काशिराज की कन्या इसकी पत्नी थी, एवं वसिष्ठ ऋषि इनके पुरोहित थे। गंपूणे पृथ्वी जीत कर, यह चक्रवर्ती सम्राट् बन गया था।

एक बार महाकाल्य देवी ने इसे सपने में आकर दष्टत दिया कि, पृथ्वी में जल ही जलप्रलय होनेवाला है। पश्चात् महाकाल्यी के आदेशानुसार, यह अपनी पत्नी एवं पुरोहित वसिष्ठ के साथ हिमालय पर्वत के पूरुष में चला गया। तदुपरांत उत्तर दिशा का हिम समुद्र, पश्चिम दिशा का रत्नाकर, एवं दक्षिण दिशा का बाडव समुद्र, इन तीनों में स्थित समस्त देश जलप्रायन से विनष्ट हुए।

आगे चल कर दस सालों के बाद, पृथ्वी का जलप्रलय समाप्त हो कर सारी पृथ्वी पुनः एक बार आकाश हो गयी। इस पर वैशाख शुक्ल तृतीया के दिन यह अयोध्या लौट आया, एवं पुनः एक बार राज्य करने लगा (भवि. प्रति. १.१)।

कालिका पुराण के अनुसार, जलप्रायन के पश्चात् हिमालय पर्वत का ही एक अरुण्य तोड़ कर, हमने वहाँ खांडवी नामक नगरी की स्थापना की थी। कालोत्पत्ति तैरवदेश में उत्पन्न विजय नामक राजा ने इसका वध कर, इसका राज्य जीत लिया (कालि. ९२)।

१०. (सू. इ.) एक राजा, जो श्रुवसधि राजा का पुत्र, एवं कुस्वंशीय अग्निवर्ण राजा का पिता था (म. ९.१२. ५)। इसकी माता का नाम मनोरमा था। देवी उषासना

का माहात्म्य करने के लिए इसकी कथा देवी भागवत में दी गयी है।

इसकी सौतेली माता लीलावती के पड़ोशियों के कारण इसे राज्य भ्रष्ट होना पड़ा, एवं यह अपनी माता के साथ मरदाज ऋषि के आश्रम में रहने लगा, जहाँ इसने देवी की उपासना प्रारंभ की।

आगे चल कर, देवी की कृपा से दशिकला नामक एककन्या ने इसका स्वयंवर में वरण किया। पश्चात् इसे अपना विगत राज्य भी देवी की कृपा से पुनः प्राप्त हुआ (दे. भा. ३.१३-२५)।

११. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था (वायु. ६९.१५६)।

१२. एक गंधर्व, जो गालव ऋषि के शाप के कारण कैाल बन गया था। 'वितालवरदतीर्थ' में स्नान करने के कारण यह मुक्त हुआ (स्कंद. ३.१.९)।

सुदर्शनी—माहिष्मती के नील (दूर्वाधन) राजा की अनुपम सुंदरी कन्या, जिसकी माता का नाम नर्मदा (नदी) था। यह प्रतिदिन अपने पिता के अग्निहोत्रग्रह में अग्नि को प्रज्वलित करने के लिए उपस्थित होती थी। इसके व्रत से अग्निदेव इससे प्रेम करने लगा, एवं अन्त में इसका विवाह उसीके साथ संपन्न हुआ (म. स. २९.९०)। अग्नि से इसे सुदर्शन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. अनु. २.३६)।

१. सुयुग्म राजा की पत्नी (सुयुग्म ५. देखिये)।

सुदान—शिवदेवों में से एक।

सुदान्त—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो वायु के अनुसार दृशक राजा का पुत्र था (वायु. ९६.१४०)।

सुदामन्—सीरध्वज जनक राजा का एक मंत्री।

२. कृष्ण के बालमित्र कुचैल का नामान्तर। भागवत में प्राप्त इसकी कथा में, इसका निदेश सर्वत्र 'कुचैल' नाम से ही किया गया है। किन्तु लोकश्रुति में यह सुदामन नाम से ही अधिक सुविख्यात है (कुचैल देखिये)।

श्रीकृष्ण ने इसे एक सुवर्ण नगरी प्रदान की थी, जो बड़े अभयानकों के अनुसार आधुनिक मुराई में स्थित पोखर मानी जाती है। कृष्ण की कृपा से इसे स्वर्गलोक से भी श्रेष्ठ तर 'गोलोक' की प्राप्ति हुई।

३. दशाण देश का एक राजा, जो चेदिराजसुवाहु एवं निर्दराजकन्या दमयेंती का पितामह था (म. व. ६६. १२)।

इसकी कुल दो कन्याएँ थीं, जिनमें से एक का विवाह विदम राजा भीम से, एवं दूसरे का विवाह चेदिराज वीरवाहु से हुआ था।

४. मोठपुर देश का एक राजा (म. स. २४.१०)।

५. पाण्डवों के पक्ष का एक राजा, जिसके रथ के अश्व मृगालिनी के समान नीले, एवं द्येनपथी के समान वेगवान् थे (म. द्रो. २२.४२)।

६. काशिदेश का एक राजा, जो अभिम् (सुकेतु) नामक राजा का पुत्र था। अपने पिता के साथ यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित हुआ था।

७. उत्तरभारत का एक लोकसमूह, जिसे अर्जुन ने अपने उत्तरदिग्बिजय के समय जीता था (म. स. २४.१०)।

८. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१०)।

९. एक गोप, जो कृष्ण के आठ प्रमुख गोप सखाओं में से एक था (दे. भा. ९.१८.२)। अपने अगले जन्म में यह शंखचूड़ नामक राक्षस बना था (शंखचूड़ २. देखिये)।

१०. चाक्षुप मन्वन्तर के सप्तपियों में से एक।

११. कंस का एक माली, जिसने मथुरा में आये हुए कृष्ण एवं बलराम को पुष्पमालाएँ अर्पित की थी (भा. १०.४१.४३-५२)।

१२. एक यादव राजा। जरासंध के द्वारा किये मथुरा नगरी के आक्रमण के समय, इस पर उस नगरी के उत्तर द्वार के संरक्षण का भार सौंपा गया था।

सुदामिनी—बसुदेवदन्धु शमीक की पत्नी। इसे सुमित्र एवं अर्जुनसाल नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे।

सुदास—(सो. नील.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार न्यवन राजा का पुत्र, एवं सहदेव राजा का पिता था (वायु. ९९.२०८; विष्णु. ४.१९.७१)। मत्स्य में इसे चैत्र राजा का पुत्र कहा गया (मत्स्य. ५०.१५)। इसे बृहद्रथ नामान्तर भी प्राप्त था। पौराणिक साहित्य में प्राप्त इसकी वंशावलि उत्तर पांचाल देश के सुदास पैजवन राजा से काफी मिलती जुलती है, जिससे प्रतीत होता है कि ये दोनों एक ही थे (सुदास पैजवन देखिये)।

२. (सो. कु. ६.) एक कुरुवंशीय राजा, भागवत के अनुसार बृहद्रथ राजा का पुत्र, एवं दत्तानीक राजा का पिता था (भा. ९.२२.४३)। अन्य पुराणों में इसे तिमि राजा का पुत्र कहा गया है।

३. एक यवन राजा (मनु. ७)।

४. एक शूद्र, जो अपने अगले जन्म में कृतघ्न नामक पिशाच बन गया। वैशम्पयन का माहात्म्य बताने के लिए इसकी कथा पद्य में दी गयी है (पद्य. पा. ९८)।

मुद्रास पैजवन—उत्तर पांचाल देश का एक सुविख्यात राजा, जिसने 'दाशराज युद्ध' नामक सुविख्यात युद्ध में इस सामर्थ्यशाली राजाओं पर विजय प्राप्त किया था (ऋ. ७.१८)। दाशराज में इसके द्वारा प्राप्त किये गये विजय का निर्देश ऋग्वेद में अन्यत्र भी प्राप्त है (ऋ. ७.२०.२; २५.३; ३२.१०)। 'दाशराज युद्ध' से संबंधित निर्देशों में, इसे सर्वत्र 'तृसुभरतों' का राजा कहा गया है।

नाम—ऋग्वेद में सर्वत्र मुद्रास राजा को 'पैजवन' उपाधि दी गयी है (ऋ. ७.१८.२३)। मुद्रास 'पैजवन' का एक सूक्त भी प्राप्त है (ऋ. १०.१३३)। किन्तु 'पैजवन' इसका पैतृक नाम है, या कुल नाम है यह कहना कठिन है। निश्चित में इसे 'पिजवन' राजा का पुत्र कहा गया है, एवं इस प्रकार 'पैजवन' इसका पैतृक नाम बताया गया है (नि. २.२८)। किन्तु प्रत्यक्ष ऋग्वेद में एक स्थान पर इसे दिवोदास राजा का पुत्र (ऋ. ७.२८.२५), एवं देववन् राजा का पौत्र (ऋ. ७.१८.२२) कहा गया है।

ऐतरेय ब्राह्मण में, दिवोदास को वध्वन्श राजा का पुत्र कहा गया है। संभवतः 'देववन्' वध्वन्श राजा की ही एक उपाधि होगी, अथवा वह वध्वन्श का मातामह होगा (ऐ. ब्रा. ८.२१)। आधुनिक अभ्यासक इसे 'पिजवन' का पुत्र, एवं दिवोदास का पौत्र मानते हैं। इसके नाम का 'मुद्रास' पाठ भी ऋग्वेद में कई स्थानों पर प्राप्त है।

पुरोहित—वसिष्ठ ऋषि के द्वारा इसके राज्याभिषेक किये जाने का निर्देश ऐतरेय ब्राह्मण में प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ८.२१)। किन्तु ऋग्वेद में एक स्थान पर विश्वामित्र को इसका पुरोहित कहा गया है, एवं विवासा (विवास) एवं शुतुद्री (सतलज) नदियों पर इसके विजयी अभियानों के साथ उसके उपस्थित होने का, एवं इसके द्वारा एक अश्रमेध यज्ञ कराने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (ऋ. ३.५३.९-११)।

इन सारे निर्देशों से प्रतीत होता है कि, सर्वप्रथम इसका पुरोहित विश्वामित्र था (ऋ. ३.३३.५३)। किन्तु उसके इस पद से अलग होने के पश्चात्, वसिष्ठ ऋषि भरत राजवंश का एवं मुद्रास राजा का पुरोहित बन गया। तदुपरांत विश्वामित्र

ऋषि इसके शत्रुपक्ष में शामिल हुआ, एवं उमने इसके विरुद्ध दाशराज युद्ध में भाग लिया (वसिष्ठ मैत्रावरुणिवं विश्वामित्र देविवे)। उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में भी मुद्रास एवं विश्वामित्र ऋषि के वसिष्ठ संबंधों का निर्देश पुनः प्राप्त है।

दाशराज युद्ध—ऋग्वेद के सभी मंडलों में दाशराज युद्ध का निर्देश पुनः पुनः आता है, जिससे प्रतीत होता है कि उक्त ग्रंथरचना काल में, यह युद्ध का भी महत्वपूर्ण माना जाता था। ऋग्वेद के सातवें मण्डल में इस युद्ध का सविस्तृत वर्णन करनेवाले अनेक सूक्त प्राप्त हैं (ऋ. ७. १८)।

इस युद्ध में इसने तुर्यश, दृह्य आदि दस राजाओं से युद्ध किया, एवं इन सारे राजाओं को परास्त कर यह विजयी साबित हुआ। दाशराज युद्ध में इसके विश्व में भाग लेनेवाले राजाओं के नाम वैदिक साहित्य में विभिन्न प्रकार से पाये जाते हैं, जिनकी संख्या १० से कहीं अधिक प्राप्त होती है। इससे प्रतीत होता है कि, इस युद्ध में 'दाशराज' (दस राजा) शब्द का प्रयोग 'अनेक' अर्थ से किया गया होगा।

विपक्षीय राजा—दाशराज युद्ध में मुद्रास के विपक्ष में भाग लेनेवाले राजाओं की नामावलि निम्न प्रकार प्रकृत जाती है:—१. शिग्यु; २. तुर्यश; ३. दृह्य; ४. स्वः; ५. पुष (पूष); ६. अनु; ७. भेद ८. शंभर; ९. धर्म्य; १०. दूसरा वैकर्ण; ११. यदु; १२. मत्स्य; १३. वध; १४. मलयन्; १५. अलिन; १६. विधाणिन; १७. अरु; १८. शिव; १९. शिष्ट; २०. यदु; २१. युष्मानि; २२. याद्र; २३. देवक मान्यमान; २४. नायमान ऋषि; २५. सुतक; २६. उचथ; २७. धृत; २८. वृद्ध; २९. मन्यु; ३०. पृथु।

उपस्थित राजाओं की नामावलि के संवेद में ऋग्वेद के भाष्यकारों में भी एकवाक्यता नहीं है। उक्त नामावलि में से १३ से १६ तक के नाम राजाओं के न हो कर पुरोहितों के थे, ऐसा सायणाचार्य का कहना है। १७ से २९ तक के राजाओं का ऐतिहासिकता विवादास्पद है।

अन्य पराक्रम—ऋग्वेद के एक सूक्त में त्रमदस्यु राजा के साथ इसके द्वारा युद्ध करने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ७.१९.३)। ऋग्वेद में अन्यत्र त्रमदस्यु राजा के पिता पुरुकुत्स राजा के द्वारा यह पराजित होने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. १.६३.७)।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम सुदेवी था, जो इसे अभिनों की कृपा से प्राप्त हुई थी (ऋ. ३.५३.९-११)। इसके पुत्र एवं वंशज 'सुदास' सामूहिक नाम से सुविख्यात थे। वसिष्ठ ऋषि के पुत्र शक्ति वासिष्ठ के गौशालों के साथ किये संवर्ष का निर्देश वैदिक साहित्य में प्राप्त है।

उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में, अयोध्या के मित्रसह कल्माषपाद राजा के पिता सुदास, एवं सुदास पैजवन इन दोनों को एक ही राजा मानने की भूल अनेक बार की गयी है। विशेष कर शक्ति वासिष्ठ के संबंधित कथाओं में, यह भूल विशेष कर प्रतीत होती है। किन्तु ये दोनों संबंधतः विभिन्न राजा थे (सुदास सर्वकाम देखिये)।

सुदास सर्वकाम—(सू. इ.) अयोध्या का एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार सर्वकाम राजा का पुत्र, एवं मित्रसह कल्माषपाद राजा का पिता था (भा. ९.९.१८; विष्णु. ४.४.३०; कल्माषपाद देखिये)।

सुदिवा तण्डि—एक वानप्रस्थाश्रमी ऋषि, जो वानप्रस्थ धर्म का पालन करता हुआ स्वर्गलोक को प्राप्त हुआ (म. शां. २३६.१७)।

सुदीति आंगिरस—एक वैदिक यज्ञतद्रष्टा (ऋ. ८.४१)।

सुदेव—एक वैदिक यज्ञकर्ता (ऋ. ८.५.६)।

२. एक ब्राह्मण, जो विदर्भनरेश भीम के द्वारा दमयंती की खोज में नियुक्त किये गये ब्राह्मणों में से एक था (म. श्रौ. ६.५.६)। यह दमयंती के दम नामक भाई का मित्र था। इसने जेदिराज के महल में सैरुश्री नामक दासी के नाते रहनेवाले दमयंती को पहचान लिया (म. व. ६८.२)। पश्चात् इसके द्वारा ही दमयंती ने अयोध्या-नरेश ऋतुपर्ण राजा को स्वयंवर का संदेश भेज दिया था।

३. स्वरोचिष मन्वन्तर का एक देवगण।

४. (सू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार चण राजा का पुत्र था। विष्णु एवं वायु में इसे संसु राजा का पुत्र कहा गया है (वायु. ८८.१२०)।

५. विदर्भ देश का एक राजा, जो राम दाशरथि का सम-कालीन था। इसके पुत्रों के नाम श्वेत एवं सुरथ थे (वा. रा. उ. ७८.४)।

६. तुषित देवों में से एक।

७. (सो. काश्य.) एक राजा, जो काशिराज हर्यश्च का पुत्र था। यह देवता के समान तेजस्वी एवं न्यायप्रिय

था। हेहय राजा वीतहृद्य ने इसे परास्त कर इसे राज्य-भ्रष्ट किया। पश्चात् इसके पुत्र दिवोदास ने अपने पुरोहित वसिष्ठ की मदद अपना राज्य पुनः प्राप्त कर दिया।

८. अंबरीष का एक सेनापति, जो धर्मयुद्ध में मृत हुआ था। एक बार अंबरीष राजा की आज्ञा से यह राक्षसों के साथ लड़ने गया था, जहाँ वियम नामक राक्षस के द्वारा यह मारा गया।

धर्मयुद्ध में मृत होने के कारण, अंबरीष राजा के पूर्व ही इसे स्वर्गलोक प्राप्त हुआ। विना यज्ञ-याग किये और इसे स्वर्गप्राप्ति हुई, यह देख कर अंबरीष राजा को अत्यंत आश्चर्य हुआ, एवं इस संबंध में इसने इंद्र से पूछा। फिर इंद्र ने जवाब दिया 'धर्मयुद्ध में मृत्यु प्राप्त होने का पुण्य यज्ञयागों के पुण्य से कहीं अधिक है (म. शां. ९.९.१०-१३)।

९. (सो. कुकुर.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु, मत्स्य, वायु एवं पद्म के अनुसार देवक राजा का पुत्र था (भा. ९.२४.२२)।

१०. एक वैश्य, जो सर्वस्वी अनाथ था। इसके मरने पर, इसका अंत्य संस्कार करने के लिए इसका कोई सम्बन्धी न था। इस कारण इसकी मृतात्मा वञ्चुवाहन राजा के पास सपने में गयी, एवं इसने उसके कार्तिक पौर्णिमा के दिन 'वृषोत्सव' करने की प्रार्थना की (गरुड. २.९)।

११. एक राजा, जिसकी कन्या का नाम गौरी था। उसका विवाह करंभमपुत्र आशिक्षित राजा से हुआ था (मार्क. ११.९.१६)।

१२. एक सुविख्यात राजा, जिसकी कन्या का नाम सुप्रभा था। सुविख्यात राजा नाभाग का यह श्वशुर था।

यह राजा प्रारंभ में क्षत्रिय था, किन्तु कालोपरांत च्यवन-पुत्र प्रमति ऋषि के शाप के कारण यह वैश्य बन गया। इस संबंध में सविस्तृत कथा मार्कंडेय में प्राप्त है। एक बार धूम्राश्वधु नल नामक इसके मित्र ने शराव के नदी में प्रमति ऋषि की पत्नी पर बलात्कार करना चाहा। इस समय यह नाजूम ही खड़ा रह कर, यह सारा पाशवी दृश्य देखता रहा।

उस समय प्रमति ऋषि ने अपनी पत्नी का रक्षण करने के लिए इसकी बार बार प्रार्थना की। तब इसने बड़ी व्यंग्योक्ति से जवाब दिया, 'क्षत्रों की रक्षा करनेवाला एक क्षत्रिय ही केवल तुम्हारी पत्नी की रक्षा कर सकता है। मैं क्षत्रिय कहाँ? मैं तो वैश्य हूँ'।

इसके इस औद्धत्य से क्रुद्ध हो कर प्रमति ऋषि ने इसे तत्काल धैर्य होने का शाप दिया । पश्चात् इसके द्वारा उःशाप की प्रार्थना किये जाने पर प्रमति ऋषि ने इसे उःशाप दिया, 'एक क्षत्रिय के द्वारा तुम्हारी कन्या का हरण किया जायेगा, जिस कारण अप्रसन्नतः तुम क्षत्रिय बनोगे' ।

प्रमति ऋषि के उःशाप के अनुसार इसकी कन्या सुप्रभा का नाममा राजा ने हरण किया, एवं इस प्रकार यह पुनः क्षत्रिय बन गया (मार्क. १११-११२) ।

१३. एक ऋषि: जिसे मिलने के लिए राम अपने परिवार के साथ उपस्थित हुआ था (पद्म. पा. ११७) ।

१४. एक वैदिक यज्ञकर्ता (ऋ. ८.५.६) ।

सुदेव काश्यप—एक आचार्य । ब्रह्मचर्यव्रत का भंग होने पर किये जाने वाले प्रायश्चित्त का विधान इसके द्वारा बताया गया है (तै. आ. २.१८) ।

सुदेवला—ऋतुपर्ण ऋषि की पत्नी (श्री. श्री. २०.१२) ।

सुदेवा—काशी के देवराज राजा की कन्या, जो इक्ष्वाकु राजा की पत्नी थी (पद्म. सू. ४२.१-५) ।

२. एक स्त्री, जिसकी कथा स्त्री के द्वारा पति के साथ किये गये दुर्व्यवहार के दुष्परिणाम कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. सू. ४७.५२) ।

सुदेवी—मेरुकन्या मेरुदेवी का नामान्तर (भा. २. ७.१०) ।

२. सुदास पैजवन राजा की पत्नी (ऋ. १.११२.१९; सुदास पैजवन देखिये) ।

सुदेष्ण—कृष्ण एवं रुक्मिणी के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.१) ।

२. एक प्रमुख यादव राजा, जिसे मिलने के लिए स्वयं देवराज इंद्र उपस्थित हुआ था ।

सुदेष्णा—बलि आनव राजा की पत्नी, जिसे दीर्घ-तमसु ऋषि से निम्नलिखित पुत्र इत्यत्र हुए थे:— १. अंग; २. वंग; ३. कलिमा; ४. पुण्ड्र; ५. सुह्र (म. आ. १८.३०; भा. ९.२३; ह. वं. १. ३१; बलि आनव देखिये) ।

२. मत्स्यनरेश विराट की पत्नी, जो रथकार केकय की द्वितीय पत्नी मालवी की कन्या थी । इसे चित्रा नामान्तर भी प्राप्त था । इसके छोटे भाई का नाम कीचक था । इसके उत्तर एवं उत्तरा नामक दो संतानें थी (म. वि. परि. १.१९-३२-३७; विराट देखिये) ।

३. गांधारराज सुबल की एक कन्या, जो गांधारी की छोटी बहन, एवं धृतराष्ट्र की पत्नियों में से एक थी ।

सुद्यु—(लो. पू.) एक राजा, जो भगवत के अनुसार चारुद राजा का पुत्र, एवं बभ्रुव राजा पिता का पुत्र था (भा. ९.२०.३) । इसे ध्रुव एवं सुयुम्न नामान्तर भी प्राप्त थे । विष्णु में इसे अमर्यद राजा का पुत्र, एवं बभ्रुव राजा का पिता कहा गया है (विष्णु ४. १९.१) ।

सुयुम्न—वैवस्वत मनु के इल (इला) नामक पुत्र का नामान्तर (इल देखिये) ।

२. वसिष्ठकुक्षीरव्रत एक मंत्रकार ।

३. एक न्यायी राजा, जिनसे शंख एवं लिखित नामक दो ऋषि वंशुओं के बीच हुए वाग्म का अत्यंत निःपक्षपाती वृत्ति से न्याय दिया (म. द्वां. २४; शंखलिखित १. देखिये) । आगे चल कर इतने लिखित ऋषि को त्रिपुल दान प्रदान किया (म. अनु. १३७.१९) ।

महाभारत में अमर्यव इसे सुवनाश्व राजा का पिता कहा गया है (म. व. १२६.९) । इस ग्रंथ में निर्दिष्ट यमस्था के वर्णन में इसका निर्देश प्राप्त है (म. स. ८.१५) ।

४. एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम सुदर्शना था । राजस्थल नामक तीर्थ में स्नान करने के कारण इसे पुत्र-प्राप्ति हुई (स्कंद. ५.१.१४) ।

सुधनु—(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो कुरु राजा का पुत्र एवं सुहोत्र राजा का पिता था (भा. ९.२२.४) । मत्स्य एवं वायु में इसे सुधन्वन् कहा गया है ।

चेदि एवं मगध देश के ऋक्षवंशीय राजपरानों का यह मूल पुरुष माना जाता है । इसके वंश की सविस्तृत जानकारी अनेक पुराणों में दी गयी है, जहाँ उपरिचर वसु इसके वंश का प्रमुख राजा बताया गया है (उपरिचर वसु देखिये) ।

२. एक संशप्तक योद्धा, जो भारतीय युद्ध में कौरवक्ष में शामिल था (म. द्रो. १७.२०) । अंत में यह अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १७.२०-२१) ।

३. पाण्डवपक्ष का एक पांचाल योद्धा, जो द्रुपद राजा का पुत्र एवं वीरकेतु का भाई था (म. द्रो. २२.१६६*) । इसके रथ के अश्व कृष्णवर्णीय, एवं विभिन्न वर्ण के पुत्रों से सुशोभित थे (म. द्रो. १२२.१६६* पंक्ति. ३) । इसके भाई वीरकेतु के मारे जाने पर इतने अपने भाईयों सहित द्रोण पर आक्रमण किया । इस युद्ध में द्रोण ने इसे रथहीन कर के इनका वध किया (म. द्रो. १८. ३७-४०) ।

४. एक राजा, जिसे मांघावृ ने जीत लिया था (म. द्रो. परि १.८.१५)।

सुधन्वन्—एक ब्राह्मण, जो धनुर्वेद एवं अर्थशास्त्र में निष्णात था (वा. रा. अयो. १००.१४)।

२. सांक्राश्य नगरी का एक राजा, जो सीरध्वज जनक राजा का समकालीन था। इसने सीरध्वज की कन्या सीता से विवाह करना चाहा। इसका यह प्रस्ताव सीरध्वज द्वारा अस्वीकार किये जाने पर, इसने मिथिला नगरी पर आक्रमण किया। पश्चात् हुए युद्ध में यह स्वयं ही मारा गया (वा. रा. ब्रा. ७१.१६-२१)। इसकी मृत्यु के पश्चात् सांक्राश्य नगरी पर सीरध्वज का वंश कुशध्वज राज्य करने लगा।

३. (सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार शाश्वत राजा का पुत्र था।

४. (सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सत्यधृत राजा का, वायु एवं भागवत के अनुसार सत्यहित का, एवं मत्स्य के अनुसार सत्यवृत्ति राजा का पुत्र था (विष्णु. ४.१९.८२; वायु. ९९.२२५)। भागवत एवं मत्स्य में इसे क्रमशः जह्नु एवं धनुष कहा गया है।

५. जंपक नगरी के हंसध्वज राजा का कनिष्ठपुत्र, जो अपने पिता के लिखित एवं शंखध्वज नामक दुष्टबुद्धि प्रधानों के प्रहयंत्र के कारण मृत्यु का शिकार बननेवाला था, किन्तु कृष्णभक्तिके कारण जीवित रहा (लिखित १. देखिये)।

सुधन्वन् आंगिरस—एक तत्त्वज्ञ आचार्य, जो अंगिरस् ऋषि के पुत्रों में से एक था। इसने पतंचल काण्य की कन्या के शरीर में प्रविष्ट हो कर भुज्यु लह्यायनि नामक आचार्य को आत्मज्ञानविषयक ज्ञान प्रदान किया था। इसी ज्ञान के बल से आगे चल कर भुज्यु लह्यायनि ने याज्ञवल्क्य वाजसनेय को परास्त करना चाहा (बृ. उ. १.३.१; भुज्यु लह्यायनि देखिये)।

२. अंगिरस् ऋषि के पुत्रों में से एक (म. अनु. १३२.४३)। केशिनी राजकन्या की प्राप्ति के लिए इसने विरोचन दैत्य के साथ श्रेयता के संबंध में शर्त लगायी थी, जिसमें इसने उसे परास्त किया (म. स. ६१-७६; उ. १५; विरोचन १. देखिये)।

सुधर्मन्—पूर्वदर्शाण देश का एक राजा। भीमसेन ने अपने पूर्व दिग्बिजय में इससे युद्ध किया था। पश्चात् इसके पराक्रम से संतुष्ट हो कर इसे अपना सेनापति बनाया (म. स. २६.५-६)।

२. एक संशक्त योद्धा, जो भारतीय युद्ध में कौरव पक्ष में शामिल था। अर्जुन ने इसका वध किया।

३. पाण्डव पक्ष का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में से बचे हुए वीरों में से एक था। इस युद्ध में मृत हुए वीरों की और्ध्वदेहिक क्रियाएँ धौम्य, विदुर, युयुत्सु, संजय आदि लोगों ने की, उस समय यह उपस्थित था (म. स्त्री. २६.२४.)।

४. दुर्योधन राजा का एक पुरोहित (म. शां. ४०.५; ४४.१४)।

५. धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

६. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो अक्रूर एवं अश्विनी के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ४५.३३)।

७. (सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो मध्य के अनुसार दृढनेमि राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.७१)। वायु में इसे सुवर्मन् कहा गया है।

८. रुद्रसावर्णि मन्वन्तर का देवगण।

९. एक दिक्पाल, जो पृथु राजा का समकालीन था (मत्स्य. ८.९)।

१०. दक्षसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

११. रौच्य मन्वन्तर का एक देवगण।

१२. प्रतर्दन देवों में से एक।

१३. काश्मीर देश के भद्रसेन राजा का शिवभक्त पुत्र (भद्रसेन ३. देखिये)।

१४. उत्तम मन्वन्तर का एक देवगण, जिसमें निम्न-लिखित बारह देव समाविष्ट थे:—१. इप; २. ऊर्ज; ३. क्षम; ४. क्षाम; ५. सत्य; ६. दम; ७. दान्त; ८. वृत्ति; ९. ध्वनि; १०. श्रुति; ११. श्रेष्ठ; १२. एवं सुपर्ण (ब्रह्मांड. २.३६.२८)।

सुधर्मन् विशापाल—सात्वत धर्म का एक आचार्य, जो शंखपद नामक आचार्य का पुत्र एवं शिष्य था (म. शां. ३३६.३५)।

सुधर्मा—इंद्रसारथि मातलि की पत्नी, जिसकी कन्या का नाम गुणकेशी था (म. उ. ९५.१९-२०)।

२. सुराष्ट्र देश के सोमकान्त राजा की पत्नी।

सुधा—काल नामक रुद्र की पत्नी (भा. ३. १२.१३)।

सुधामन—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो वृत्तपृष्ठ राजा के पुत्रों में से एक था। इसका राज्य कौंचद्रीय में था (भा. ५.२०.२१)।

२. चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तपिंशों में से एक।

३. रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।
४. लोकाक्षि नामक शिवावतार का एक शिष्य।
५. नारायण नामक शिवावतार का एक शिष्य।
६. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

सुधार्मिक—केरल देश का एक राजा, जिसके पुत्र का नाम चंद्रहास था।

सुधावत्—पितरों में से एक।

सुधिय—तामस मन्वन्तर का एक देवगण (वायु. ६२.३७)।

सुधृति—(सू. विष्ट.) एक राजा, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार राज्यवर्धन राजा का पुत्र, एवं नर राजा का पिता था (भा. ९.२.२९)।

२. (सू. विष्ट.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार दम राजा का पुत्र था।

३. विदेह देश के सत्यधृति राजा का नामान्तर (सत्यधृति ८. देखिये)। भागवत में इसे महावीर्य राजा का पुत्र, एवं धृष्टकेतु राजा का पिता कहा गया है (भा. ९.१३.१५)।

सुनक्षत्र—मगध देश के सुकृत्त राजा का नामान्तर। भागवत में इसे निरमित्र राजा का पुत्र, एवं बृहत्सेन राजा का पिता कहा गया है (भा. ९.२२.४७)।

२. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सहदेव राजा का पुत्र था (वायु. ९९.२८४)। मत्स्य, भागवत एवं विष्णु में इसे मरुदेव राजा का पुत्र कहा गया है (भा. ९.१२.१२)।

सुनक्षत्रा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.८)।

सुनंद—(प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा, जो भविष्य के अनुसार प्रद्योत राजा का पुत्र था। सुनंद राजा के पश्चात्, भविष्य पुराण में प्राप्त इतिहासकथन समाप्त हो कर, भविष्यकथन प्रारंभ होता है।

इसी राजा के पश्चात् समस्त संसार म्लेंच्छमय होने की आशंका से नैमिषारण्य में रहनेवाले अष्टासी हजार ऋषि उस अरण्य को छोड़ कर हिमालय की ओर चले गये, जहाँ विशाल नगरी में विष्णुपुराण का कथन किया है (भवि. प्रति. १.४)।

२. विष्णु का एक पार्षद (भा. २.९.१४)।

३. एक गोप, जो नंदगोप का मित्र था। इसके घर उग्रतपस् नामक ऋषि ने सुनंदा नामक कन्या के रूप में जन्म लिया (पद्म. पा. ७२)।

४. एक ब्राह्मण, जिसकी कथा गीता के ग्यारहवें अध्याय का महत्त्व कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. उ. १८५)।

सुनंदन—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पुरुषभीरु राजा का पुत्र, एवं चकोर राजा का पिता था (भा. १२.१.२५)।

सुनंदा—काशिराज सर्वसेन राजा की कन्या, जो द्रुप्यंतपुत्र सम्राट् भरत की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम सुमन्यु था। इसे 'काशेयी सार्वसेनी' नामान्तर भी प्राप्त था (म. आ. ९०.३४)।

२. चेदि नरेश वीरबाहु की कन्या, जिसके भाई का नाम सुबाहु था। यह दमयंती की मौसेरी बहन थी (म. व. ६२.४२; दमयंती देखिये)।

३. केकय देश की एक राजकुमारी, जो कुन्वशीष सार्वभौम राजा की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम ज्यत्सेन था (म. आ. ९०.१६)।

४. वत्सप्रि राजा की पत्नी मुदावती का नामान्तर। इसके पुत्र का नाम सुनय था (सुनय ३. देखिये)।

५. माहिष्मती नगरी के नीलध्वज राजा का नामान्तर (जै. अ. ६१)।

६. एक गोपी, जो सुनंदगोप की कन्या थी (सुनंद ३. देखिये)।

सुनंदा मागधी—जनमेजय (प्रथम) राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम प्राचीन्वत् था। पाठभेद (भांडाकर संहिता)—'अनंता'।

सुनंदा शैब्या—शिवि देश की राजकन्या, जो प्रतीप राजा की पत्नी थी। इसके देवापि, शांतनु एवं वाह्लीक नामक तीन पुत्र थे (म. आ. ९०.४६)।

सुनय—(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो परिश्रव राजा का पुत्र, एवं मधाविन् राजा का पिता था (भा. ९. २२.४३)। इसके पुरोहित का नाम काश्यप प्रमति था (मार्क. ११४)।

२. (सू. निमि.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार ऋतु राजा का पुत्र, एवं नीतहृद्य राजा का पिता था (वायु. ७.२२)। भागवत में इसे युनक कहा गया है।

३. एक राजा, जो वत्सप्रि भालेंद्र एवं सुनंदा (मुदावती) का पुत्र था (मार्क. ११४.२)।

सुनर्तकनट—शिव का एक अवतार, जो तप करनेवाले पार्वती के सम्मुख प्रकट हुआ था। शिव के

द्वारा पार्वती को दृष्टांत मिला कि, वह उसका वरण करने-वाला है।

पश्चात् बाये हाथ में सिंगी, दाहिने हाथ में डमरू एवं पीट पर रक्तवर्णीय वस्त्र धारण करनेवाले एक विचित्र व्यक्ति के रूप में यह पार्वती के आँगन में प्रकट हुआ, एवं बाकी कुछ न कहते हुए इसने पार्वती से शिक्षा मांगी। शिव के इस रूप में भी पार्वती ने उसे पहचान लिया, एवं अपने साथ विवाह करने की प्रार्थना की (शिव. शत. ३४)।

सुनहोत्र—ध्रुववंशीय सुहोत्र राजा का नामान्तर (सुहोत्र २. देखिये)।

सुनाभ—(सो. विदूरथ) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार अज्ञात राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४४.८४)।
२. कट देश का एक राजा, जिसे अर्जुन ने अपने उत्तर दिग्बिजय के समय जीता था (म. स. २३.२७०*; पंक्ति. ५-७)।

३. धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. भी. ८४.१२)।

४. वरुण का एक मंत्री, जो अपने पुत्र एवं पौत्रों के साथ गौ एवं पुष्करतीर्थ में वरुण की उपासना करता था।

५. एक दानव, जो वज्रनाभ दानव का भाई था। इसकी चन्द्रवती एवं गुणवती नामक दो कन्याएँ थीं। गद एवं सांव नामक असुरों ने इसके उन कन्याओं का हरण किया (ह. वं. २.९७.१९-२०)।

सुनामन्—मथुरा के उग्रसेन राजा का पुत्र, जो कंस का भाई था। यह कंस का सेनापति, एवं उसके लड़कवारों की सेना का सरदार था। बलराम ने इसका वध किया (भा. ९.२४.२४; म. स. १३.३३; परि. १.२१.८४७)। पाठभेद (भांडारकर संहिता) — 'सुदामन्'।

२. गरुड के पुत्रों में से एक (म. उ. ९९.२)।

३. सुकेतु राजा का एक पुत्र, जो द्रौपदीस्वयंवर में अपने पिता के साथ उपस्थित था (म. आ. १७७.९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता) — 'सुदामन्'।

४. एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिव्यपरंपरा में से लोकाधि नामक आचार्य का शिष्य था।

५. स्कंद का एक सैनिक।

सुनीक—(प्रद्योत. भविष्य.) प्रद्योतवंशीय सुनक राजा का नामान्तर।

सुनीत—मगध देश के सुनीथ राजा का नामान्तर।

सुनीति—उत्तानपाद राजा की पत्नी, जो ध्रुव एवं कीर्तिमत् की माता थी। इसे सुनता नामान्तर भी प्राप्त था।

सुनीथ—(सो. काश्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार संतति का, एवं विष्णु एवं वायु के अनुसार सन्नति राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सुकेतन था (भा. ९.१७.८)।

२. (सो. द्विमीढ.) एक राजा जो मत्स्य के अनुसार क्षेम राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.७९)। भागवत विष्णु, एवं वायु में इसे सुवीर कहा गया है।

३. शिशुपाल राजा का नामान्तर (म. स. ३५, परि. १.२१.२; ३६.१३)।

४. (सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो सुपेण राजा का पुत्र, एवं वृचक्षु राजा का पिता था (भा. ९.२२. ४१)। वायु में इसे सुतीर्थ कहा गया है।

५. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो सुवल राजा का पुत्र एवं सत्यजित् राजा का पिता था (भा. ९.१२. ४९)। विष्णु में इसे सुनीथ, तथा वायु एवं ब्रह्मांड में इसे 'सुनेत्र' कहा गया है।

६. इंद्रसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ७.१४)।

७. यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८.११. १५)।

८. एक वृष्णिवंशीय राजकुमार, जिसे कृष्णपुत्र प्रद्युम्न के द्वारा धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त हुई थी (म. व. १८०. २७)।

सुनीथ कापटव—एक आचार्य (वं. ब्रा. १; कापटव सुनीथ देखिये)।

सुनीथ सौचद्रथ—एक ऋषि, जिसके द्वारा रचित सूक्त में वाय्य सत्यश्रवस् नामक ऋषि को उपस् देवता से प्रकाश प्राप्त होने का निर्देश किया गया है (ऋ. ५.७९. २)। लुडविग के अनुसार, यह वाय्य सत्यश्रवस् का पिता था।

सुनीथा—अंगराजा की पत्नी, जो यम की कन्या, एवं वेन राजा की माता थी (भा. १४.१३.१८)। अपने पुत्र वेन की मृत्यु के पश्चात्, अंगराजवंश का निर्वंश न हो, इस हेतु से इसने उसके शरीर का मंथन किया, जिससे पृथु वैन्य एवं निषाद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए (वेन देखिये)।

इसे वेन नामक दुष्ट पुत्र बर्यो उत्पन्न हुआ, इस संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा पद्म में प्राप्त है। अपने बाल्यकाल

में इसने तपस्या में निमग्न हुए सुशंख नामक गंधर्व को व्रत किया, जिससे क्रुद्ध हो कर उसने इसे एक 'कुलपांसन' पुत्र को जन्म देने का शाप दिया (पञ्च. सू. ८; भू. ३०-३६)।

सुनेत्र—(सो. कुट्ट.) एक राजा, जो जनमेजयपुत्र धृतराष्ट्र के चारह पुत्रों में से एक था (म. आ. ८९२*)।

२. गरुड का एक पुत्र।

३. रौच्य मनु के पुत्रों में से एक।

४. किष्किंशा का एक वानर (वा. रा. कि. ३३)।

सुनेत्रा—कश्यप ऋषि की पत्नियों में से एक।

सुन्द—एक असुर, जो सुन्द एवं उपसुन्द नामक सुविख्यात असुरद्वय में से एक था (सुदोपसुन्द देखिये)।

२. एक असुर, जिसकी पत्नी का नाम ताटका था। इसके सुबाहु एवं मारोच नामक दो पुत्र थे। इसके पिता का नाम जंमामुर था।

सुन्दर—एक गंधर्व, जो नीरवाहु गंधर्व का पिता था। बलिष्ठ के शाप के कारण, इसे राक्षसयोनि प्राप्त हुई, किन्तु आगे चल कर श्रीविष्णु ने इसे राक्षसयोनि से मुक्त किया (स्कंद. २.१.२४)।

सुन्दर शातकर्ण—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्र-वंशीय राजा, जो विष्णु के अनुसार पुलिंदसेन राजा का पुत्र, एवं शातकर्ण राजा का पिता था (विष्णु. ४.२४. ४७)।

सुरर शांतिकर्ण—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सोम राजा का पुत्र था (मत्स्य. २७३)।

सुन्दरा—कैकय देश की सुनंदा नामक राजकुमारी का नामान्तर (सुनंदा. ३. देखिये)।

सुन्दरी—नर्मदा नामक गंधर्वी की कन्या, जो माल्यवत् राक्षस की पत्नी थी।

२. एक अत्यंत स्त्री, जो शिवमंदिर की सफाई करने के कारण स्वर्गलोक को प्राप्त हुई (स्कंद. १.१.७)।

सुदोपसुन्द—एक अतिभयंकर राक्षसद्वय, जो निकुंभ दैत्य के पुत्र थे। ये दोनों भाई आपस में मिल जुल कर अत्यंत स्नेहभाव से रहते थे। दो भाईयों के आपसी भ्रातृभाव का सब से बड़ा शत्रु स्त्री ही होती है, इस तथ्य का कथन करने के लिए नारद के द्वारा इनकी कथा युधिष्ठिर को सुनाई गयी (म. आ. २००-२०४)।

ब्रह्मा से वरप्राप्ति—त्रिसुवन पर विजय पाने के लिए इन दोनों ने अत्यंत उग्र तपस्या की। इस तपस्या के

कारण ब्रह्मा ने इन्हें अनेकानेक वर प्रदान किये, जिनमें मायावी विद्या, अतुल बल, इच्छारूपधारित्व, आदि वरों के साथ, अपने भाई के अतिरिक्त किसी अन्य मानव से अवश्यत्व, यह वर प्रमुख था।

उपर्युक्त वरप्राप्ति के कारण, ये दोनों अत्यंत उन्मत्त हो गये, एवं पृथ्वी पर अनन्वित अत्याचार करने लगे। ये ऋषियों के यज्ञयागों में बाधा डालने लगे, जिस कारण इस संसार के सारे यज्ञयाग बंद हो गये।

मृत्यु—अंत में ब्रह्मा ने इन दोनों में कलह निर्माण कर क इन दोनों का विनाश करने का निश्चय किया। इस हेतु उसने विश्वकर्मानु के द्वारा एक अप्रतिम लक्षणयवती अप्सरा का निर्माण करवाया, जिसका नाम तिलोत्तमा था। पश्चात् ब्रह्मा की आज्ञानुसार तिलोत्तमा इन दोनों राक्षसों के सामने नृत्य करने लगी। उसे देख कर ये दोनों आपसी भ्रातृभाव की भावना को विलकुल भूल बैठे, एवं तिलोत्तमा की प्राप्ति के आपस में झगड़ने लगे। एक दूसरे के हाथ से गदायुद्ध में इनकी मृत्यु हो गयी।

सुन्वत्—एक अन्वय, जो सुमन्तु नामक अन्वय का शिष्य था। व्यासशिष्य जैमिनि ने इसे सामवेद की एक संहिता सिखायी थी (भा. १२.६.७५)।

सुपक्ष—अजित देवों में से एक।

सुपथ—एक अन्वय, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (वायु. ९८.११)।

सुपर्ण—एक ऋषि (तै. सं. ४.३.३.२; का. सं. ३९.७)।

२. एक ऋषि, जिसने इंद्रियसंयम, एवं मनोनिग्रह के साथ तपश्चर्या की थी। उस तपस्या के कारण इसे स्वयं भगवान् पुरुषोत्तम ने सात्वत धर्म का ज्ञान सिखाया, जो इसने आगे चल कर वायुदेव को प्रदान किया (म. शां. ३३६.१८-२१)।

त्रिसौपर्ण धर्म—महाभारत के अनुसार, भगवान् पुरुषोत्तम से उपर्युक्त धर्मज्ञान की प्राप्ति इसे ब्रह्मा के तीसरे 'वाचिक-युगांतर' में हुई थी। स्वयं को प्राप्त हुए धर्म का यह तीन बार पठन करता था, जिस कारण उस धर्म को 'त्रिसौपर्ण' नाम प्राप्त हुआ। दिन में तीन बार धर्मज्ञान का पठन करने के इसी व्रत का निवेश ऋग्वेद में 'चतुष्कपर्दी युवतिः' आदि ऋचाओं में किया गया है (ऋ. १०.११४.२-३)।

३. पक्षिराज गरुड का नामान्तर। वैदिक एवं पौराणिक साहित्य में सर्वत्र सुपर्ण एवं गरुड के द्वारा क्रमशः सोम

एवं अमृत प्राप्त कराने का निर्देश मिलता है। इन सारी कथाओं का मूल स्रोत एक ही है, जहाँ सूर्य के द्वारा प्राप्त नवचैतन्य को अमृत अथवा सोम माना गया है (श. ब्रा. १०.२.२.४)।

४. एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.४५)।

५. एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक (म. आ. ५९.४१)।

६. मयूर नामक असुर का छोटा भाई, जो कालकीर्ति राजा के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था।

७. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो अंरिक्ष राजा का पुत्र, एवं अमित्रजित राजा का पिता था (वायु. ९९. २८६)।

८. सुधामन् देवों में से एक।

सुपर्ण काण्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.५९)।

सुपर्ण तार्क्ष्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.११४)।

सुपर्णा—गरुड की माता विनता का नामान्तर (भा. ६. ६.२२)। ब्रह्म में इसकी कथा 'शिवमाहात्म्य' कथन करने लिए पुनरुद्धृत की गयी है (ब्रह्म. १००)।

सुपर्णा—गरुड की माता विनता का नामान्तर। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, विनता एवं गरुड की सापलमाता कद्रु इन दोनों का जन्म स्वर्ग से पृथ्वी पर सोम लाने के हेतु हुआ था। इन दोनों की आपसी ईर्ष्या आदि की बहुत सारी कथाएँ भी उस ग्रंथ में दी गयी हैं (श. ब्रा. ३.५.१-७; कद्रु देखिये)। इसी ग्रंथ में अन्यत्र 'सुपर्णा' शब्द की व्युत्पत्ति 'वाचा' इस अर्थ से की गयी है (श. ब्रा. उ. ३.२.२)।

सुपर्णवन्—पांडव पक्ष का राजा, जिसके कृतिपुत्र रत्नपर्व का वध किया था (म. द्रो. २५.४५)।

२. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के मनु का एक पुत्र।

३. प्राग्व्योत्तिपपुर के मगदन्त राजा का नामान्तर—(म. द्रो. २५.८५)।

सुपाटल—राम का एक वानर (वा. रा. कि. ३३)।

सुपार—ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

सुपार्श्व—(सो. द्विमीढ) एक राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार रुक्मरथ का, तथा भागवत एवं विष्णु अनुसार हृदनेमि राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.७३; भा. ९. २१. २७)। भागवत एवं विष्णु में हृदनेमि से लेकर सुपार्श्व तक की पीढ़ियों का निर्देश अप्राप्य है।

२. (सू. निमि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार श्रुतायु राजा का पुत्र था (विष्णु. ४.५.३१)। भागवत में इसे सुपार्श्वक कहा गया है।

३. दुर्योधनपक्ष का एक राजा, जो कुपट नामक असुर अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५.५५; पंक्ति २१)।

४. एक लोकसमूह, जिनके क्रथ नामक राजा को भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्विजय में जीता था।

५. रावण का एक अमात्य, जिसने रावण को सीतावध जैसे पापकर्म करने से परावृत्त किया था (वा. रा. यु. ९२. ६०)।

६. पक्षिराज संपाति का पुत्र, जिसने सीतावध की वार्ता अपने पिता को सुनायी थी (वा. रा. कि. ५९.८)। इसके सीता की मुक्तता के कार्य में कोई भी प्रयत्न न करने के कारण, इसका पिता इस पर अत्यंत क्रुद्ध हुआ। इसी कारण यह डर से दूरवर्ती प्रदेश में भाग गया (आ. रा. ७.८)।

सुपार्श्वक—निमिर्वंशीय सुपार्श्व राजा का नामान्तर (सुपार्श्व २. देखिये)।

२. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो अक्रूर एवं अश्विनी का पुत्र था (मत्स्य. ४५.१२)।

३. (सो. वसु.) वसुदेव एवं रोहिणी का एक पुत्र (वायु. ९६.१६८)।

सुपार्जिक—एक संहिकेय असुर, जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका का पुत्र था। परशुराम ने इसका वध किया (ब्रह्माड. ३.६.१८-२२)।

सुप्रचेतस्—प्रसूत देवों में से एक।

सुप्रह्ला—कोचरश राजा की पत्नी।

सुप्रतीक—(सो. सह.) एक राजा, जो दुर्जयाभिन्न-कर्षण नामक राजा का उर्वशी से उत्पन्न पुत्र था। इसने एवं इसके भाइयों ने गंधर्व कन्याओं से विवाह किया था (कूर्म १.२६)।

२. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार प्रतीकाश्व राजा का, विष्णु के अनुसार प्रतीताश्व राजा का, एवं भविष्य के अनुसार भानुरत्न राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम मरुदेव था (भा. ९.१२.१२)। वायु एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'सुप्रतीत' एवं 'सुप्रतीप' कहा गया है।

३. एक ऋषि, जो विभावसु नामक अपने भाई के शाप के कारण हाथी बन गया। पश्चात् इसने उसे कटुभा बनने का शाप दिया (विभावसु ५. देखिये)।

४. एक दिग्गज, जो ऐरावत के पुत्रों में से एक था (म. भी. १३.३३)। यह हारितवर्णीय था, एवं वरुण का अत्यंत प्रिय वाहन था। इसके वंश में नागराज ऐरावत वापन, कुमुद, अंजन आदि हाथियों की उत्पत्ति हुई थी (म. उ. १५.१५)। इसकी पत्नी का नाम चित्ति था, जिससे इसे प्रहारिन्, संपति एवं पृथु नामक पुत्र उत्पन्न हुए (वायु. ६९.२२५)।

५. (नाग. भविष्य) एक राजा, जो वायु के अनुसार मथुरा नगरी में राज्य करनेवाले भूमिनंद राजा का पुत्र था।

६. कृतयुग का एक राजा, जिसकी विद्युत्प्रभा एवं कांतिमती नामक दो पत्नियाँ थीं। आत्रेय ऋषि की कृपा से इसकी पत्नी विद्युत्प्रभा के गर्भ में स्वयं इंद्र ने जन्म लिया, जो दुर्जय नाम से प्रसिद्ध हुआ।

सुप्रतीक औलुण्डच—एक आचार्य, जो बृहस्पति-गुप्त शायस्थि नामक आचार्य का शिष्य, एवं मित्रवर्चस् स्वैर्यकायण नामक आचार्य का गुरु था (व. ब्रा. १.)।

सुप्रतीत एवं **सुप्रतीप**—इक्ष्वाकुवंशीय सुप्रतीक राजा का नामान्तर।

सुप्रभ—एक राजा, जिसे महातेजस् ऋषि ने विष्णु-पासना का आदेश दिया था।

सुप्रभा—स्वर्मानु (राहु) की एक कन्या, जो नमुचि की पत्नी थी (भा. ६.६.३२)।

२. वदान्य ऋषि की एक कन्या, जो अष्टावक्र ऋषि की पत्नी थी।

३. सुरथ राजा की कन्या, जो नाभाग राजा की पत्नी थी। इसे कृपावती नामान्तर भी प्राप्त था। एक बार इसने अगस्त्य ऋषि को व्रत किया, जिस कारण उसने इसे वैश्ययोनि में अधःपतित होने का शाप दिया। तदनुसार यह एवं इसका पुत्र मलेन्दन वैश्य बन गये।

पश्चात् इसका पुत्र बड़ा होने पर इसने उसे क्षत्रियोचित राजधर्म पर उपदेश किया, जिस कारण सद्गति पा कर वह पुनः एक बार क्षत्रिय बन गया (माकं. ११२)। इसकी कथा माकंडेय में निर्दिष्ट सुदेव राजा की कथा से काफी मिलती-जुलती प्रतीत होती है (सुदेव १०. देखिये)।

४. कृशाश्व प्रजापति से उत्पन्न दो कन्याओं में से एक, जिसकी ब्रह्म का नाम जया था। इन दो बहनों से आगे चल कर सौ संहारअस्त्रों का निर्माण हुआ, जिन्हें विश्वामित्र ऋषि ने प्राप्त किया (वा. रा. वा. २१.१५)।

५. आश्रिपेण राजा की स्तुपा, जो उसके भर नामक पुत्र की स्त्री थी।

६. श्रीकृष्ण की एक पत्नी, जिसके द्वारका में स्थित प्रासाद का नाम सूर्यप्रभ था (म. स. परि. १.२१.१२५४)।

सुप्रवृद्ध—सौवीर देश का एक राजकुमार, जो जयद्रथ राजा का छोटा भाई था। ' द्रौपदीहरणसुद्ध ' में अर्जुन के द्वारा यह मारा गया (म. व. १.२१४* पाठ.)।

सुप्रत्न सार्ज्य—सहदेव सात्रज्य नामक राजा का नामान्तर।

सुबंधु गौपायन (लौपायन)—एक आचार्य, जो असमाति राथप्रोष्ठि नामक राजा का पुरोहित था (ऋ. १०. ५९.८)। आगे चल कर असमाति राजा ने इसे पौरोहित्य-पद से दूर कर, किरात एवं आकुलि नामक आचार्यों को अपने पुरोहित नियुक्त किये (बृहदे. ७.८२)।

पश्चात् इन नये पुरोहितों ने राजा की प्रेरणा से इसका वध करवाया। किंतु इसके अन्य तीन भाइयों ने कुछ सूतों का उच्चारण कर इसे पुनः जीवित किया (ऋ. १०.५०-६०; असमाति राथप्रोष्ठि देखिये)। एक वैदिक सूतग्रंथ के नाते भी इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.२४)।

सुचल—गांधार देश का एक सुविख्यात राजा, जो धृतराष्ट्रपत्नी गांधारी एवं शकुनि का पिता था। यह प्रह्लाद-शिष्य नम्रजित् के अंश से उत्पन्न आ था। इस कारण, इसकी सारी संतति धर्मविरोधी एवं धर्मनाशी उत्पन्न हुई।

गांधारी का विवाह—इसकी संतानों में से शकुनि एवं गांधारी राज्यशास्त्र में प्रवीण थे (म. आ. ५७.९३-९४)। भीष्म ने हस्तिनापुर के राजा धृतराष्ट्र के लिए इसकी कन्या गांधारी की माँग की। धृतराष्ट्र राजा अंधा होने के कारण इसके मन में संदेह उत्पन्न हुआ। किन्तु पश्चात् उसका उरुचकुल एवं राज्याधिकार का विचार कर इसने विवाह के इस प्रस्ताव को मान्यता दी (म. आ. १०३.१०-११)। गांधारी के विवाह के साथ, अपनी निम्नलिखित कन्याओं का विवाह भी इसने धृतराष्ट्र से कराया था :—१. सत्यव्रता; २. सत्यसेना; ३. सुदेष्णा; ४. सुसंहिता; ५. तेजश्रवा; ६. सुश्रवा; ७. विकृति; ८. शुभा; ९. शंभुवा; १०. दशार्णा (म. आ. १०३.१.११३*)।

सुधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में—इस यज्ञ में यह अपने पुत्र शकुनि, अचल एवं वृषक के साथ उपस्थित हुआ था (म. स. ३१.६-७)। यज्ञ के पश्चात् नकुल ने अपने राज्य की सीमा तक इसे सन्मानपूर्वक विदा किया था। इसका सुभग सुबल नामक और एक पुत्र भी था (सुभग सुबल देखिये)।

२. इक्ष्वाकुवंश का एक राजा, जिसका पुत्र जयद्रथ का साथी था (म. व. २४९.८)।

३. गरुड के पुत्रों में से एक (म. उ. १९.३)।

४. एक प्राचीन नरेश (म. आ. १.१७६)।

५. चंपक नगरी के हंसध्वज राजा के पुत्रों में से एक।

६. मौल्य मनु का एक पुत्र।

७. सौराष्ट्र देश के सोमकांत राजा का एक प्रधान गणेश (१.२९)।

८. कृष्ण एवं बलराम का एक सखा (भा. १०.१५. २०; २२.३१)।

९. (सो. मगध. भविष्य) एक राजा, जो भागवत एवं वेणु के अनुसार सुमति राजा का पुत्र, एवं सुनीथ राजा का पिता था (भा. ९.२२.४५-४८)।

सुबालक—पूरुवंशीय ब्रह्मदत्त राजा के अमात्य का पुत्र।

सुबाहु—रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. एक अन्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्या थी (म. आ. ५.९.४९)।

३. एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रु के पुत्रों में से एक था।

४. चेदि देश का एक राजा, जो वीरबाहु राजा का पुत्र था। यह दमयंती का मौसैरा भाई था, जिस कारण वह अपने वनवास काल में सैरन्धी के रूप में इसके यहाँ रही थी (म. व. ६२.१८; ६६.१३)।

५. एक राक्षस, जो ताटका राक्षस का पुत्र, एवं मारीच का भाई था। इसके पिता का नाम सुंद था। विशामित्र ऋषि के यज्ञ का विध्वंस करने के लिए यह उपस्थित हुआ था। उस समय राम दाशरथि ने इसका वध किया (म. स. परि. १.२१.५०१)।

६. रामसेना का एक दानर।

७. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो शत्रुघ्न दाशरथि राजा का पुत्र था। इसके भाई का नाम शूरसेन था (वायु. ८८.१८६)। इसकी पत्नी का नाम सत्यवती

था। शत्रुघ्न ने इसे मथुरा (मथुरा) प्रदेश का राज्य प्रदान किया था (वा. रा. उ. १०८)।

८. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो ऋतध्वज राजा एवं मदालसा का पुत्र था। इसकी कन्या का नाम शशिकला था, जिसका विवाह सुदर्शन राजा से हुआ था (दे. भा. ३.२१.२२)। इसने अपने ज्येष्ठ भाई अलर्क पर आक्रमण किया था। किन्तु उसने स्वयं ही अपना राज्य इसे दे दिया (मार्क. ४१)।

९. एक वन्यदेशाधिपति, जो किरात, तंगण, कुलिंद आदि लोगों का अधिपति था। इसका राज्य हिमालय की तलहटी में था। पांडवों के वनवासकाल में अर्जुन को छोड़ कर बाकी सारे पाण्डव कुछ काल तक यहाँ रहे थे (म. व. १४१.२४-३०; १७४.१५)। भारतीय युद्ध में यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल था।

१०. (सो. वृष्णि.) अक्रूर के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.३२)।

११. कृष्ण एवं कालिंदी का एक पुत्र।

१२. एक संशप्तक योद्धा, जो भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष में शामिल था। इसी युद्ध में यादव राजा युयुत्सु ने इसके हाथ तोड़ डाले (म. द्रो. २३. १३-१४)।

१३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ९२.२६; क. ३५. ७-८)।

१४. चोल देश का एक राजा, जिसकी कथा 'दान-माहात्म्य' कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. भू. ९४-९९)।

१५. एक क्षत्रिय, जिसकी पत्नी का नाम चंद्रकला था (पद्म. क्रि. ५)।

१६. काशीदेश का एक राजा, भीमसेन ने अपने पूर्व-दिग्बिजय में इसे जीता था।

१७. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४५)।

१८. एक प्राचीन नरेश, जिसने अपने जीवन में कभी भी मांस भक्षण नहीं किया था (म. अनु. ११५.६६)।

१९. अंगराज कर्ण के सुदामन नामक पुत्र का नामान्तर।

२०. चक्रांग नगरी का एक राजा, जिसने राम दाशरथि के अश्वमेध यज्ञ के पूर्व शत्रुघ्न से युद्ध किया था। अपने पूर्वजन्म में यह ऋषि था, जो राम की निंदा करने के कारण अपनी नयी आयु में एक संसारव्रद्ध पुरुष बना।

राज्य के साथ हुए युद्ध में हनुमत् ने इसे मूर्च्छित किया। हनुमत् के स्पर्श के कारण इसका उद्धार हुआ। पश्चात् अपने पुत्र दमन को राज्य प्रदान कर, यह स्वयं अश्वरक्षा के लिए सेना में शामिल हुआ।

सुबुद्धि—बभ्रुवाहन राजा का अमात्य।

सुभग सौवर्ल—गांधारराज सुम्रल का एक पुत्र, जो युद्धनि का छोटा भाई था। भीमसेन ने रात्रियुद्ध में इसका वध किया (म. द्रो. १३२.११३६७)।

सुभगा—कथ्यन एवं प्राधा (अरिष्ट) की एक कन्या।

२. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१७)।

सुभद्र—(स्वा. प्रिय.) प्रक्षदीन का एक राजा, जो इधमजिह्व राजा के पुत्रों में से एक था (भा. ५.२०.३)।

२. (सो. वसु.) वसुदेव एवं पौरवी के पुत्रों में एक।

३. कृष्ण एवं भद्रा का एक पुत्र।

४. एक गोप। इसकी कन्या का नाम भद्रा था, जो पूर्वजन्म में सत्यतपस् नामक ऋषि थी (पद्म. पा. ७२)।

५. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

सुभद्रक—रुद्रगणों में से एक।

सुभद्रा—वसुदेव एवं देवकी की एक कन्या, जो कृष्ण एवं बलराम की छोटी बहन थी (म. आ. २११.१४)। स्कंद में इसकी माता का नाम सुप्रभा दिया गया है।

नाम—इसे सुभद्रा नाम क्यों प्राप्त हुआ, इस संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा स्कंद में प्राप्त है। पूर्व जन्म में यह गालव ऋषि की कन्या माधवी थी। एक बार गालव ऋषि इसे विष्णु के पास ले गये, जहाँ यह बाल-मुलमता से गद्दी पर बैठ गयी। इस कारण कुछ ही कर लक्ष्मी ने इसे अगले जन्म में 'अश्वत्खी' कन्या बनने का शाप दिया। इसका जन्म होते ही कृष्ण एवं बलराम ने ब्रह्म की प्रार्थना कर इसे भद्रमुखी बनाया, जिस कारण इसे 'सुभद्रा' नाम प्राप्त हुआ (स्कंद ६.८१.८४)।

सुभद्राहरण—बलराम इसका विवाह दुर्योधन से करना चाहता था। किन्तु एक बार अर्जुन ने इसे देखा, एवं श्रीकृष्ण के समक्ष इसे अपनी रानी बनाने का अपना मनोदय प्रकट किया (म. आ. २११.२०)। पश्चात् श्रीकृष्ण की सलाह से रैवतक पर्वत में हुए महोत्सव के समय अर्जुन ने यतिवेष में इसका हरण किया (म. आ. २१२)। रैवतक पर्वत से भागते समय इसने अर्जुन

का सारथ्य किया था (म. आ. परि. १.२०)। अर्जुन चल कर अर्जुन की सलाह से एक गोपी का वेश धारण कर यह द्रौपदी से मिलने गयी, एवं अपने विवाह के लिए इसने उसकी संमति प्राप्त की (म. आ. परि. १.१४.२१२-२१४)।

द्वारका में कृष्ण ने भी क्रोधित हुए, बलराम का यह इस विवाह के लिए अनुकूल बनाया। पश्चात् कुंती विदुर, युधिष्ठिर आदि ज्येष्ठ लोगों की संमति कृष्ण ने ही प्राप्त कर ली। इस प्रकार सभी लोगों के आशीर्वाद के साथ इसका एवं अर्जुन का विवाह द्वारका नगरी में संपन्न हुआ (म. आ. २१३.१२)।

अर्जुन से विवाह—इसके विवाह के समय कृष्ण ने अर्जुन को निम्नलिखित वस्तु दहेज के रूप में प्रदान की थी:—एक हजार सुवर्णरथ, दस हजार दुवाल गायें, एक हजार सुवर्णालंकृत अश्व, पाँच सौ तट्ट, एक हजार दासी, एक लाख ब्राह्मीकदेशीय अश्व, दस मन सोना, एक हजार उन्नत हाथी (म. आ. २०७८-२०८५)।

परिवार—इसके पुत्र का नाम अभिमन्यु था, जिसका विवाह उपग्रन्थ नगरी में संपन्न हुआ था (म. आ. १०.८५; वि. ६७.२१)। पाण्डवों के वनवास के समय यह अभिमन्यु के साथ द्वारका नगरी में रही थी (म. व. २३.४४)। अभिमन्यु की मृत्यु के पश्चात् उसके मृत्यु पर परिश्रित को जिलाने के लिए श्रीकृष्ण ने प्रार्थना की थी (म. आश्र. ६७.१३-२४)।

अभिमन्यु की मृत्यु के पश्चात् यह सदैव अप्रसन्न एवं हर्षशून्य रहती थी, केवल परिश्रित को देल कर ही जीवन धारण करती थी (म. आश्र. २८.१२-१६)। अपने महाप्रस्थान के पूर्व, परिश्रित एवं वज्र की युधिष्ठिर ने इसीके ही हाथों शांति दिया था।

२. सुरभि की एक धेनुरूपा कन्या, जो पश्चिम दिशा को धारण करती है (म. उ. १००.९)।

३. दयन्त आश्वर्यण ऋषि की दासी।

सुभव—सुपुष्पित नामक राजा का पिता।

सुभा—अंगिरस् ऋषि की पत्नी, जिसे वृहत्सर्वाति आदि सात पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. व. २०८.१)।

सुभानु—कृष्ण एवं सत्यभामा का एक पुत्र।

सुभाल—वीरवर्मन् राजा का एक पुत्र।

सुभाषण—(स. निमि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार युयुव राजा का पुत्र, एवं श्रुत राजा का पिता था

(भा. ९.१३.२५)। विष्णु में इसे 'सुभास' कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम सुधन्वन् दिथा गया है।

सुभ्रीम—पांचजन्य नामक अग्नि का एक पुत्र, जो यज्ञ में विघ्न डालनेवाले पंद्रह 'विनायकों' में से एक माना जाता है (म. व. २१०.११ पाठ.)।

सुभ्रीमा—कृष्ण की एक पत्नी।

सुभुजा—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं मुनि की कन्याओं में से एक थी।

सुभ्राज—वैवस्वत मनु का पुत्र (म. भा. १.४१)।

सुभ्राज—सूर्य के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम भास्वर था (मं. श. ४४. २८)।

सुभ्रु—(सो. वसु.) वसुदेव एवं रोहिणी का एक पुत्र।

सुमंगल—अत्रिकुलोत्पन्न एक ऋषि।

सुमंजस—शिव देवों में से एक।

सुमति—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भरत एवं पंचजनी के पुत्रों में से एक था। यह स्वयं जैनधर्मीय था, एवं ऋषभदेव का अनन्य उपासक था। इसी कारण जैन लोग इसे देवता मानते हैं।

इसकी वृद्धसेना एवं आसुरी नामक दो पत्नियाँ थीं, जिनसे इसे क्रमशः देवताजित् एवं देववृष्म नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए (भा. ५.१५.१-३)। इसके तेजस् नामक अन्य एक पुत्र का निर्देश भी प्राप्त है (ब्रह्मांड. २.१४. ६२)।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वृग राजा का पुत्र, एवं भूतज्योतिस् नामक राजा का पिता था (भा. ९.२.१७)।

३. (सू. दिष्ट.) विशाल नगरी का एक राजा, जो दशरथ राजा का समकालीन था। यह सोमदत्त राजा का पुत्र, एवं जनमेजय राजा का पिता था। विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः 'स्वमति' एवं 'प्रमति' कहा गया है, एवं इसे जनमेजय राजा कर पुत्र कहा गया है।

राम एवं लक्ष्मण जब विश्वामित्र के साथ मिथिला नगरी में जा रहे थे, उस समय वे कुछ काल तक इसके राज्य में ठहरे थे (वा. रा. वा. ४८)।

४. (सो. पूर.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार रंतिभार राजा का पुत्र, एवं रैभ्य राजा का पिता था (भा. ९.२०.६)।

५. (सो. द्विमीठ.) एक राजा, जो सुपाश्र्व राजा का पुत्र, एवं सन्नतिमत् राजा का पिता था (भा. ९. २१.२८)।

६. (सो. मगध. अविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार शुमत्सेन राजा का पुत्र, एवं सुबल राजा का पिता था (भा. ९.२२.४८)। मत्स्य में इसे 'महिनेत्र' कहा गया है।

७. एक ऋषि, जो सोमदत्त ऋषि का पुत्र, एवं जनमेजय ऋषि का पिता था। यह सुविंशिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था (भा. १०.७४.८)।

८. राम दाशरथि के पुत्र लव की पत्नी।

९. चंपक नगरी के हंसध्वज राजा का मुख्य प्रधान।

१०. वभ्रुवाहन राजा का सेनापति।

११. सार्वणि मनु के पुत्रों में से एक।

१२. वरुणसभा का एक असुर (म. स. ९.१३)।

१३. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार गय राजा का पुत्र था।

१४. नल राजा का पुरोहित (परा. मा. प्रस्तावना)।

१५. भृगुकुलोत्पन्न एक ब्राह्मण, जिसे अपने दस हजार जन्मों का स्मरण था। इसने अपने पिता को आत्मज्ञान सिखाया था (मार्क. १०.१०-१८)।

१६. अमिताभ देवों में से एक।

१७. आभूतरजस् देवों में से एक।

१८. सुबाहु राजा का एक प्रधान (पद्म. पा. २६)।

१९. एक दुष्ट महाराष्ट्रीय ब्राह्मण, जो वैकटाचल में स्थित पुष्करिणी तीर्थ में स्नान करने के कारण मुक्त हुआ (स्कंद. २.१.१४)।

२०. एक दुष्ट ब्राह्मण, जो पापविनाशन तीर्थ में स्नान करने के कारण मुक्त हुआ (स्कंद. २.१.१४)।

२१. एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने उपस्थित हुआ था (म. अनु. २६.४)।

२२. वरुणसभा में उपस्थित एक राक्षस (म. स. ९.१३)।

२३. वालिन् वानर की भगिनी।

सुमति आत्रेय—एक आचार्य, जो विष्णु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था (वायु. ६.१.५६)।

सुमति शैब्या—सगर राजा की पत्नी, जो अरिष्टनेमि राजा की कन्या थी। सगर राजा से इसे साठ हजार पुत्र

उत्पन्न हुए थे, जो 'सागर' नाम से प्रसिद्ध थे (ब्रह्मांड. ३. ६३. १५९)।

भागवत में इसे विदर्भराज की कन्या कहा गया है (भा. ९. ८. ९)। इसे महती (ब्रह्मांड. ८. ६४), एवं प्रभा यादवी (मत्स्य. १२. ४२) आदि नामान्तर भी प्राप्त थे। और्व ऋषि की कृपा से इसे साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुए थे (पञ्च. उ. २०-२१; म. व. १०४-१०७; पञ्च. उ. २०-२१; ब्रह्मवै. २. ६१. १०; सगर देखिये)।

सुमद—एक राजा, जिसने कामाक्षी देवी के कहने पर अपना राज्य शत्रुघ्न को प्रदान किया (पञ्च. पा. १२-१३)।

सुमध्याम—मदिराश्र राजा की कन्या, जो हिरण्य-हस्त ऋषि की पत्नी थी (म. अनु. १३७. २४)।

सुमन—एक नाम, जो कश्यप एवं कद्रु के पुत्रों में से एक था।

सुमनस—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो उत्सुक एवं पुष्करिणी के पुत्रों में से एक था (भा. ४. १३. १७)।

२. रुद्रसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

३. प्रसूत देवों में से एक।

४. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

५. वरुणसभा में उपस्थित एक असुर (म. स. ९. १३)।

६. यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८. ११)।

७. एक किरात राजा, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था (म. स. ४. २२)।

८. पितृवर्तिन् के हंसयोनि में उत्पन्न भाइयों में से एक (पितृवर्तिन् देखिये)।

सुमना—दशार्णाधिप चारुवर्ण राजा की कन्या, जिस से भद्रराजपुत्र महानंद, एवं विदर्भराज संकदनपुत्र वपुष्मत् ये दोनोही प्रेम करते थे। इसने अपने स्वयंवर में नरिष्यंत पुत्र दम को पति के रूप में स्वीकार किया। इस कारण इस से प्रेम करनेवाले दोनों राजपुत्रों ने इसका हरण किया। कालोपरांत दम ने महानंद का वध कर, एवं वपुष्मत् को पराजित कर इससे विवाह किया (माकं. १३०)।

२. च्यवन ऋषि की कन्या, जिसके पति का नाम सोम-शर्मन् था।

३. मधु नामक राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम वीरजन था।

४. एक केकय राजकन्या, जिसका देवलोक में रहनेवाली शांडिल्या देवी से पातिव्रत्य के संश्लेष में संवाद हुआ था (म. अनु. १८५)।

सुमन्त—(सो. अनु.) एक राजा, जो कूर्म के अनुसार कौशिक राजा का पुत्र था।

सुमन्तु—एक आचार्य, जो व्यास की अर्ध वेद शिष्यपरंपरा में से एक शिष्य था। व्यास ने इसे महाभारत का भी कथन किया था (भवि. ब्राह्म. १. ३०-३८)। यह जैमिनि नामक आचार्य का पुत्र, एवं सुवन्- (सुवन्) नामक आचार्य का पिता था। इसके शिष्यों में कबंध नामक आचार्य प्रसूत था।

युधिष्ठिर की मयसभा में यह उपस्थित था। इन्ने शतानीक नामक अपने शिष्य को 'भागवत' एवं 'भविष्य पुराण' कथन किया था। शरदशय्या पर पड़े हुए भीष से मिलने यह उपस्थित हुआ।

२. एक आचार्य, जो व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से जैमिनि नामक आचार्य का शिष्य था।

३. अट्टहास नामक शिवावतार का एक शिष्य।

४. एक स्मृतिकार, जिसके द्वारा रचित स्मृति के ग्रंथ एवं पद्य उद्धरण 'मिताक्षरा', 'विश्वरूप', 'सरस्वती-विलास' आदि में प्राप्त हैं। मिताक्षरा में इसके निम्न-विषयों से संबंधित उद्धरण प्राप्त हैं:—१. ब्रह्महत्या (३. २३७); २. मद्यपान (३. २५०); ३. सुवर्ण का अपहरण (३. २५२); ४. परदारागमन (३. २५३-२५४); ५. गोहत्या (३. २६१)।

५. विदर्भ देशाधिपति भीम राजा का नामान्तर (भीम वैदर्भ देखिये)।

सुमन्तु वाश्रव गौतम—एक आचार्य, जो वाशिष्ठ अरिहृथ्य राजन्य नामक आचार्य का शिष्य, एवं शत्रुवाह्येय भारद्वाज नामक आचार्य का गुरु था (वे. ब्रा. २)।

सुमंत्र—दशरथ के अष्टप्रधानों में से एक। राम दशरथि के वनवास के समय, यह उसे भागीरथी नदी तक पहुँचाने आया था।

राम दशरथि के राज्यकाल में यह उसका भी अमात्य था। राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, अश्वरक्षणार्थ नौ पराक्रमी वीरों का एक दल तैयार करने की आज्ञा राम ने इसे दी थी (पञ्च. पा. ११)।

२. दशरथ का एक सारथि (म. वि. ११. २४२३)।

सुमन्वु—एक राजा, जिसने शांखिल्य ऋषि को खाद्य-सामग्री का पर्वतप्राय ढेर दान के रूप में प्रदान किया (म. अनु. १३७.२२)। पाठभेद—'भूमन्वु'।

सुमहायदास्—(सो. नील.) एक राजा, जो सुद्रल राजा का पुत्र था। इसे 'ब्रह्मिष्ठ' भी कहा गया है, जो संभवतः इसकी उपाधि होगी।

सुमागध—रामसभा में उपस्थित एक विद्वेषक।

सुमालिन—एक असुर, जो वृत्र का अनुयायी था। यह प्रहेति राक्षस का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७.९०)। वृत्र-इंद्र युद्ध में इसने वृत्र के पक्ष में भाग लिया था। असुरों के द्वारा किये गये पृथ्वीदोहन में यह बछड़ा बना था (भा. ६.१०.२१)।

२. रावण का मातामह एवं मंत्री, जो लखा राक्षस का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम केतुमती था, जिससे इसे निम्नलिखित कन्याएँ उत्पन्न हुई थीं:—१. राका; २. पुष्पोत्कटा; ३. बलाका; ४. कुंभीनसी; ५. कैकसी (केशिनी)। इसकी इन कन्याओं में से केशिनी, राका, पुष्पोत्कटा एवं बलाका का विवाह विश्रवस् ऋषि से, एवं कुंभीनसी का विवाह मधु दैत्य से हुआ था (विश्रवस् एवं रावण देखिये)।

३. एक राक्षस, जो कश्यप एवं लखा के पुत्रों में से एक था।

सुमाल्य—नंदवंश में उत्पन्न एक राजा (नंद ५. देखिये)।

सुमित्र—(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु, वायु एवं भागवत के अनुसार सुरथ राजा का पुत्र था। यह इक्ष्वाकुवंश का अंतिम राजा माना जाता है, जो पूरु-वंशीय क्षेमक राजा का, एवं मगधवंशीय महानंदी नंद राजा का समकालीन था। इसके ही राज्यकाल में सिकंदर ने भारतवर्ष पर आक्रमण किया था। इसे 'सुमाल्य' नामान्तर भी प्राप्त था (भा. ९.१२.१५-१६)।

२. (सो. वृष्णि.) एक राजा, जो विष्णु, पद्म, वायु एवं भागवत के अनुसार विष्णु राजा का ज्येष्ठ पुत्र, एवं अनमित्र राजा का पिता था (भा. ९.२४.१२)।

३. एक राजा, जो शमीक एवं सुदामिनी के पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४.४४)।

४. कृष्ण एवं जांबवती का एक पुत्र, जो यादवीयुद्ध में मारा गया (भा. १०.६१.११)।

५. एक हैहय राजा, जिसने ऋषभ ऋषि के साथ 'आशा' के संबंध में तन्त्रज्ञान पर चर्चा की थी। ऋषभ

ऋषि ने इसे वीरयुग्म एवं तनु नामक मुनियों का वृत्तांत सुनाया (म. शां. १२५.८)।

६. कुलिंद नगरी के राजा का एक नाम, जिसके पुत्र का नाम सुकुमार था। भीम ने अपने पूर्वदिविजय में, तथो सहदेव ने अपने दक्षिणदिग्विजय में इसे जीता था (म. स. २६.१०)।

७. सौवीर देश के विपुल नामक यवन राजा का नामान्तर (विपुल ३. देखिये)। यह 'दत्तमित्र' नाम से भी सुविख्यात था।

८. अर्जुनपुत्र अभिमन्यु का सारथि (म. द्रो. ३४.२९)।

९. फेनप नामक भृगुकुलोत्पन्न ऋषि का नामान्तर (फेनप २. देखिये)।

१०. पांचालराज द्रुपद का एक पुत्र, जिसे 'सौमित्र' नामान्तर भी प्राप्त था। भारतीय युद्ध में जयद्रथ ने इसका वध किया (म. भा. परि. १.१०३.१०८-१३१)।

११. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सुषेण राजा का पुत्र था।

१२. देवद्युति नामक एक ऋषि का पुत्र (पद्म. उ. १२८)।

१३. एक राजा, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. भा. १७७.९)।

सुमित्र कौत्स—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १०५)।

सुमित्र वाध्रचश्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ६९-७०)। वाध्रचश्व का वंशज होने के कारण इसे 'वाध्रचश्व' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था। इसके वंश के 'सुमित्र' लोगों का निर्देश भी ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १०.६९.१; ७-८)।

सुमित्रा—मगध देशाधिपति शूर राजा की कन्या, जो इक्ष्वाकुवंशीय दशरथ राजा की तीन पत्नियों में से एक थी। इसके पुत्रों के नाम लक्ष्मण एवं शत्रुघ्न थे (दशरथ देखिये)।

एक अत्यंत विवेकशील एवं धर्मनिष्ठ राजपत्नी के नाते वाल्मीकि रामायण में सुमित्रा का चरित्रचित्रण किया गया है (वा. रा. अयो. ४४.१)। राम के वनगमन के समय इसने अपने सकुशल संभाषणों के द्वारा राम की माता कौसल्या को संतवना दी थी (वा. रा. अयो. ४४.३०)।

मानस में—तुलसी के द्वारा विरचित 'मानस' में वर्णित सुमित्रा केवल विवेकशील ही नहीं, बल्कि अत्यंत मित-

भाषणी एवं राजनैतिक जीवन से संपूर्णतया दूर है। अयोध्या में बया हो रहा है, इसका कुछ भी पता! इस सेवापरायण एवं सरलहृदय स्त्री को नहीं है (मानस. २.७३-७४)।

२. कृष्ण की एक पत्नी।

३. एक दुराचारी स्त्री, जो शिव को 'त्रिलोक्य' चढ़ाने के कारण जीवन्मुक्त हुई (स्कंद. ३.३.२)।

सुमीढ—(सो. पूर.) एक राजा, जो सुहोत्र राजा का पुत्र था। इसके अत्य दो भाइयों के नाम अजमीद एवं पुरुमीद थे (म. आ. ८९.२६)।

सुमीहळ—एक राजा, जो भरद्वाज ऋषि का आश्रय-दाता था। इसने भरद्वाज ऋषि को सौ गाँव दान में दी थी (ऋ. ६.६३.९)।

सुमुख—गरुड का एक पुत्र (म. उ. ९९.२-१२)।

२. ऐरावतकुलोत्पन्न एक नाग, जो आर्यक नामक नाग का पौत्र, वामन नामक नाग का दौहित्र, एवं चिकुर नामक नाग का पुत्र था (म. आ. ३१.१४)। इसकी पत्नी का नाम गुणकेशी था, जो इंद्रसारथि मातलि की कन्या थी।

मातलि एवं नारद के द्वारा इसका एवं गुणकेशी का विवाह जब निश्चित हो चुका, उसी समय नागों का पुरातन शत्रु गरुड इसे अपना भक्ष्य बनाना चाहता था। मातलि ने इंद्र से प्रार्थना कर इसे अमर बना दिया, एवं इस प्रकार गरुड के सारे मनोरथ विफल हो गये।

पश्चात् गरुड क्रुद्ध हो कर इंद्र एवं विष्णु से बदला लेने के विचार सोचने लगा। विष्णु को यह ज्ञात होते ही उन्होंने गरुड की कट्ट आलोचना की, एवं अपने पैर के अंगुठे से सुमुख नाम को उठा कर उसे गरुड के छाती पर रख दिया। तब से यह हमेशा गरुड के छाती पर ही निवास करने लगा (म. उ. १०२-१०३)।

३. एक ऋषि, जो नारद के साथ युधिष्ठिर की मयसभा में उपस्थित हुआ था (म. स. ५.३)।

४. रामसभा का एक वानर।

५. एक राजा। उद्वेगता के कारण नष्ट हुए राजाओं की 'मनुस्मृति' में प्राप्त नामावलि में इसका निर्देश किया गया है (मनु. ७.४१)।

६. सुहोत्र नामक शिवावतार का एक शिष्य।

७. भरत दाशरथि राजा का प्रधान।

८. धृतराष्ट्र के दत्तपुत्रों में से एक (म. द्रो. १०२. ६९)।

सुमुखी—अश्वसेन नाम की माता। खाण्डववनदाह के समय अर्जुन के द्वारा इसके पुत्र अश्वसेन का वध हुआ था। इसी कारण यह उससे बदला लेना चाहती थी।

भारतीय युद्ध में कर्णाजिन युद्ध के समय यह कर्ण के सर्पमुख बाण पर बैठी, एवं इस बाण के आधार में इसने अर्जुन पर हमला करना चाहा। किन्तु कृष्ण ने इसका दुष्ट हेतु ज्ञान कर अपने रथ के अश्व यज्ञायक विटा दिये, जिस कारण सर्पबाण के साथ यह अर्जुन के शिरस्त्राण पर जा टकरायी, एवं वहाँ से भूमि पर गिर पड़ी। पश्चात् अर्जुन ने इसका वध किया (म. क. ६६.५-२४)।

२. कुबेरभवन की एक अप्सरा, जिसने अष्टावक्र के स्वागतसमारोह में नृत्य किया था (म. अनु. १२.४५)।

सुसुष्टि—(सो. कुकुर.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार उग्रसेन राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४४.७८)।

सुमूर्तिमत्—पितरों का एक समूह, जिसे 'तुकार' नामान्तर भी प्राप्त था (ह. वं. १.१८)।

ये वसिष्ठ के मानसपुत्र हैं, एवं स्वर्ग के उस पार स्थित 'ज्योतिर्मासिन' नामक लोक में निवास करते हैं। श्राद्ध करनेवाले ब्राह्मणों के पास इनका आना जाना रहता है। इनकी मानसकन्या का नाम गो था, जो शुक की पत्नी थी (मत्स्य. १५)।

सुमेध—एक ऋषि, जो संभवतः नृमेध नामक ऋषि का भाई था। शक्रपूत नामधेय के द्वारा विरचित एक सूक्त में मित्रावरुण के द्वारा इसकी रक्षा करने का निर्देश प्राप्त है।

२. एक ब्राह्मण, जिसने हरिमेघ को 'तुलसी माहात्म्य' कथन किया था (स्कंद. २.४.८)।

सुमेधस्—भार्गवकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

२. एक देवगण, जिसमें निम्नलिखित देव शामिल थे:—१. अल्पमेधस्; २. वातिमेधस्; ३. पृष्णिमेधस्; ४. प्रतिमेधस्; ५. प्रभु; ६. भूयोमेधस्; ७. नेधहन्तु; ८. मेधस्; ९. मेधस्; १०. मेधातिथि; ११. यशोमेधस्; १२. सत्यमेधस्; १३. सर्वमेधस्; १४. सुमेधस् (ब्रह्मांड. २.३६.५८-६०)।

३. अमल्यकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

४. चाक्षुष मन्वंतर के सप्तपिंडों में से एक।

६. एक ऋषि, जिसने राज्य से भ्रष्ट हुए सुरथ राजा को अपने आश्रम में आश्रय दिया था (सुरथ १३. देखिये)।

सुमेधा—निम्बव काष्ठी ऋषि की पत्नी, जो च्यवन एवं सुकन्या की कन्या थी।

२. सीरध्वज जनक राजा की पत्नी।

३. और्वे नामक ब्राह्मण की पत्नी (और्वे ३. देखिये)

सुमन्थु—एक आचार्य, जो उद्दालक नामक आचार्य का शिष्य था (सां. आ. १५.१)। इसके शिष्य का नाम बृहदिव आथर्वण था।

सुमजुस्—एक राजा, जो भरत राजा का पौत्र, एवं सुमन्थु राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम पुष्करिणी था (म. आ. ८९.२१)।

सुयज्ञ—एक आचार्य, जो शांख्यायनशास्त्रीय गृह्य-सूत्र का रचयिता माना जाता है। इसी कारण ब्रह्मयज्ञांग-तर्पण में इसका निर्देश प्राप्त है (आश्व. घ. ३.३.)।

२. (सो. ब्रह्म.) यादववंशीय तम राजा का नामांतर (तम २. देखिये)। मत्स्य में इसे पृथुश्रवस् राजा का पुत्र कहा गया है।

३. उशीनर देश का एक राजा (भा. ७.२.२८)।

४. दशरथ का एक पुरोहित, जो वसिष्ठ का पुत्र था।

५. राम दशरथि के सभा का एक सदस्य।

६. (सू. इ.) एक राजा, जो वाडव ऋषि के शाप के कारण कुष्ठरोगी एवं राज्यभ्रष्ट हो गया (ब्रह्म. वै. २.५५)।

७. विष्णु के यज्ञ नामक अवतार का नामांतर (यज्ञ १. देखिये)।

सुयज्ञ शांडिल्य—एक आचार्य, जो कंस वारक्य नामक आचार्य का शिष्य था, एवं जयंत वारक्य नामक आचार्य का गुरु था (जै. उ. ब्रा. ४. १७.२)।

सुयम—एक राक्षस, जो शतशंग राक्षस का तृतीय पुत्र था। अंबरोप राजा के सेनापति सुदेव के द्वारा यह मारा गया (म. शां. परि. १.११ पाठ)।

सुयज्ञा—महाभौज नामक पूर्ववंशीय राजा की पत्नी, जो प्रसेनजित राजा की कन्या एवं 'अयुतनायिन्' राजा की माता थी (म. आ. ९०.१९)।

सुयज्ञास्—(मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार अशोक राजा का पुत्र, एवं दशरथ राजा का पिता था (विष्णु. ४.२४.३०)।

सुयज्ञा—काशि देश के भीमरथपुत्र दिवोदास राजा की पत्नी जिसने पुत्रप्राप्ति के लिए निकुंभ की आराधना की थी। फिर भी इसे पुत्र प्राप्ति न होने पर, दिवोदास

राजा ने काशि में स्थित निकुंभ मंदिर का नाश करवाया (वायु. ९२. ४४-५१; निकुंभ ४. देखिये)।

२. बाहुद राजा की कन्या, जो अनश्वन् राजा के पुत्र परिशित (द्वितीय) राजा की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम भीमसेन था। इसे 'बहुदा सुयज्ञा' नामांतर भी प्राप्त था। पाठभेद—'सुवेष्ठा'।

सुयोधन—धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधन का नामांतर।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो मत्स्य एवं पन्न के अनुसार ककुत्स्थ राजा का पुत्र था (मत्स्य. १२.२८)।

सुर—एक असुर, जो संहारपुत्र वाष्कलि का पुत्र था।

सुरकृत्—विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र (म. अनु. ४. ५७)।

सुरक्ष—मगध देश के सुकृत् राजा का नामांतर।

सुरधु—एक राजा, जो तपस्या के कारण ज्ञानी बन गया (यो. वा. ५.६१-६४)।

सुरजा—एक अम्बरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्या थी। अर्जुन के जन्मोत्सव में इसने नृत्य किया था (म. आ. ५.९. ४९ पाठ)।

सुरतचंद्रिका—सौराष्ट्र देश के मद्रश्रवस् नामक राजा की पत्नी (पद्म. ब्र. ११)।

सुरता—एक अम्बरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्या थी। अर्जुन के जन्मोत्सव में इसने नृत्य किया था (म. आ. ११४.५२ पाठ)।

सुरथ—एक त्रिगर्तदेशीय राजा, जो जयद्रथ एवं दुःशल के पुत्रों में से एक था। युधिष्ठिर के अश्वमेधयज्ञ के समय, अर्जुन इसके देश में अश्वमेधीय अश्व के साथ उपस्थित हुआ। यह समाचार सुन कर, अर्जुन के द्वारा किये गये अपने पिता के वध का स्मरण कर यह भयभीत हुआ, एवं इसने तत्काल प्राणत्याग किया (म. आश्व. ७७)। किन्तु कृष्ण की कृपा से यह पुनः जीवित हुआ, एवं युधिष्ठिर के अश्वमेधयज्ञसमारोह में उपस्थित रह सका (जै. अ. १.६१)।

२. एक त्रैगर्त राजकुमार, जो जयद्रथ का छोटा भाई एवं दुर्योधनपक्षीय दस संघातक योद्धाओं में से एक था। भारतीय युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. १७.३६)।

३. शिबि देश का एक राजा, जो त्रिगर्तराज जयद्रथ का परम मित्र था। यह सुरत शैब्य नाम से सुविख्यात था, इसके पुत्र का नाम कोटिकाश्य था (म. व. २५०)।

४)। जयद्रथ के द्वारा किये गये द्रौपदीहरण के युद्ध में नकुल ने इसे परास्त किया (म. व. २५५.१८-२२)।

४. एक पांचाल राजकुमार, जो द्रुपद राजा का पुत्र था। भारतीय युद्ध में यह अश्वत्थामन के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १३१.१२६; श. १३.३९)।

५. कृपाचार्य का एक चक्ररक्षक (म. वि. ५२.९२८* पंक्ति. ८)।

६. यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८. ११)।

७. चंपकनगरी के हंसध्वज राजा के पाँच पुत्रों में से एक। अर्जुन के अश्वमेध-दिविजय के समय उसने इसका शिरच्छेद किया था (जै. अ. २०-२१)।

८. कुंडल नगरी का एक राजा, जिसने राम दशरथि का अश्वमेधीय अश्व पकड़ रक्खा था। इसने हनुमत्, सुग्रीव आदि को कैद कर रक्खा था, एवं शत्रुओं को मूर्च्छित किया था। पश्चात् स्वयं राम ने युद्ध-भूमि में प्रविष्ट हो कर, इसे परास्त किया। इसके पुत्र का नाम बलमोदक था (पद्म. पा. ४९.५२; बलमोदक देखिये)।

९. (सो. ऋश.) एक राजा, जो जह्नु राजा का पुत्र, एवं विदुरथ राजा का पिता था (मत्स्य. ५०.३४)।

१०. सुरथद्वीप नामक देश का एक राजा, जो कुश-द्वीपाधिप ज्योतिष्मत् राजा का पुत्र था (मार्क. ५०.२६)।

११. एक राजा, जो विदर्भ देश के सुदेव राजा का पुत्र था (वा. रा. उ. ७८)।

१२. एक राजा, जो नामाग राजा की पत्नी सुप्रभा का पिता था। मंत्रमादत प्रयत्न पर तर्स्या करतें समय, यह कन्या इसे प्राप्त हुई थी।

१३. स्वारोचिष मन्वंतर का एक राजा, जो देवी की उपासना करने के कारण अपने अगले जन्म में सावर्णि मनु नामक राजा बन गया था।

एक बार म्लेच्छों ने इसके राज्य पर आक्रमण किया, जिस कारण राज्यभ्रष्ट हो कर यह सुमेधस् ऋषि के आश्रम में रहने पर विवश हो गया। आगे चल कर इसे एवं समाधि नामक वैश्य को सुमेधस् ऋषि ने देवी की उपासना करने का आदेश दिया। तदनुसार आराधना करने पर देवी ने समाधि वैश्य को स्वर्ग, एवं इसे राज्य पुनः प्राप्त होने का आशीर्वाद दिया।

देवी के आशीर्वाद के कारण, अपने अगले जन्म में यह विवस्वत् आदित्य का सावर्णि नामक पुत्र बन गया, एवं वैवस्वत मन्वंतर के पश्चात् उत्पन्न हुए सावर्णि मन्वंतर

का अधिपति बन गया (दे. भा. ५.३२-३५; ब्रह्मवै. ३. ६२; मार्क. ७८-९०; शिव. उ. ४५)।

१४. (सु. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार रणक राजा का, विष्णु के अनुसार कुंडक राजा का, वायु के अनुसार क्षुलिक राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार कुलक राजा का पुत्र था। भागवत एवं विष्णु में इसके पुत्र का नाम 'सुमित्र' दिया गया है (भा. ९.१२. १५; विष्णु ४.२२.९-१०)।

सुरथा—उशीनर राजा की पत्नी, जो शिवि राजा की माता थी।

२. मत्स्यनरेश विराट की प्रथम पत्नी।

सुरपुरंजय—(किलकिला. भविष्य.) एक नागवंशीय राजा, जो ब्रह्माण्ड के अनुसार वैदेश देश का राजा था।

सुरप्रवीर—तप नामधारी पांचजन्य अग्नि का एक पुत्र, जो यज्ञ में विघ्न डालनेवाले पंद्रह धिनायकों में से एक माना जाता है (म. व. २१०.१३)।

सुरभ—सारस्वत नगरी के वीरवर्मन् राजा का पुत्र।

सुरभि—कामवेनु नामक गौ का नामांतर, जो प्राचेत्स वज्रप्रजापति एवं असिक्री की कन्या मानी जाती है। महा-भारत में इसके समुद्र से प्रकट होने का निर्देश प्राप्त है (म. आ. २६९*)। इसी ग्रंथ में अन्यत्र प्रजापति के सुरभिगंधयुक्त श्वास से इसकी उत्पत्ति का वर्णन प्राप्त है (म. अनु. ७७.१७)।

इसका निवासस्थान गोलोक में था, जो स्वर्ग से भी बड़ कर अधिक श्रेष्ठ था। इसने ब्रह्मा की उपासना कर अमरत्व की प्राप्ति की थी (म. अनु. २९.३९)। कश्यप ऋषि से इसे तंदिनी नामक गाय कन्या के रूप में प्राप्त हुई थी, जो आगे चल कर ऋषिप्र कश्यप की होमवेनु बन गयी (म. आ. ९३.८)। इस संसार के सारे गाय एवं बैलें की यह जननी मानी जाती है। इसने कर्तिकेय को एक लाख गायें भेट के रूप में प्रदान की थी।

सुरभि-इंद्रसंवाद—महाभारत में इसने इंद्र के साथ किये एक संवाद का निर्देश प्राप्त है, जहाँ अपने पुत्र वृषभ वैल के साथ एक किसान के द्वारा अत्यंत क्रूरता से व्यवहार करने की वास्तव्यपूर्ण शिकायत की गयी है। पृथ्वी से भरपूर इस संवाद का कथन व्यास ने धृतराष्ट्र से किया था (म. व. १०)।

२. कश्यप एवं क्रोधा की कन्या, जो रोहिणी एवं गंधर्वी नामक दो कन्याओं की माता मानी जाती है (म. आ. ६०.५९)।

३. एक गाय, जो ब्रह्मा के हुंकार के उत्पन्न हुई थी। इसके बड़ी होने पर इसके वक्ष से पृथ्वी पर दूध टपकने लगी, जिससे ही आगे चल कर क्षीरसागर की उत्पत्ति हुई। इसका निवासस्थान रसातल नामक सातवें भूतल में था।

परिवार—इसकी कुल चार कन्याएँ थीं, जो चार दिशाओं की प्रतिपालक मानी जाती हैं :—१. सुरुपा, (पूर्व दिशा); २. हंसिका (दक्षिण दिशा); ३. सुमद्रा (पश्चिम दिशा); ४. सर्वकामदुषा (उत्तर दिशा) (म. उ. १००)।

सुरभिमत—एक अग्नि, जिसे अष्टकपाल नामक हविर्भाग प्रदान किया जाता है।

सुरस—गरुड एवं शुक्रि के पुत्रों में से एक।

२. एक कश्यपवंशीय नाग (म. उ. १०१.१६)।

सुरसा—एक नाग माता, जो कश्यप एवं क्रोधवशा की कन्याओं में से एक थीं। इसके पुत्र का नाम कंक था। इसने हनुमत् की सत्वपरीक्षा ली थी, जिसमें वह सफल होने पर इसने उसे अंगिकृत कार्य यज्ञस्त्री होने का आर्चीर्वाह प्रदान किया था (वा. रा. सुं. १; स्कंद. ३.१.४६)।

सुरा—एक देवी, जो मद्य की अधिष्ठात्रि देवी मानी जाती है। यह वरुण एवं देवी की कन्या थीं, एवं समुद्र-मंथन के समय वरुणालय (समुद्र) से उत्पन्न हुई थीं (म. आ. १६.३४; विष्णु देखिये)।

सुराजि—रामसभा में उपस्थित एक विद्वक्क।

सुराधस् वार्षागिर—एक वैदिक यज्ञतद्रष्टा (ऋ. १.१००)। ऋग्वेद में अन्यत्र वृषागिरपुत्र के नाम से इसका निर्देश अंबरीष, रुद्राश्र आदि ऋषियों के साथ (ऋ. १.१००.१७)।

सुराप—विश्रुत नामक राजा का प्रवान (पद्म. पा. १११)।

सुरामित्र—एक मरुत्, जो मरुतों के दूसरे गण में से एक था।

सुरायण—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सुरारि—एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवपक्ष में शामिल था (म. उ. ४.२०)। पाटभेद (मांडारकर संहिता)—‘अदारि’।

सुराल—एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की सामशिव्यपरंपरा में से शंरीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था।

प्रा. च. १३५]

सुराव—एक अश्व, जो इत्थलराजा के द्वारा अगस्त्य ऋषि को प्रदान किया गया था (म. व. १७.१५ पाठ)।

सुराष्ट्र—एक क्षत्रियवंश, जिसमें स्वयंभू नामक कुलपांसन राजा उत्पन्न हुआ था (म. उ. ७२.११)।

२. दक्षिण पश्चिम भारत का एक लोकसमूह, जहाँ के कौशिकाचार्य आकृति नामक राजा को सहदेव ने अपने दक्षिणदिग्विजय में जिता था (म. स. २८.३९)। इस देश में स्थित चमसोद्रेद, प्रभासक्षेत्र, पिंडारक, उज्जयन्त (रैवतक) आदि विभिन्न तीर्थक्षेत्रों का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. व. ८८)।

३. दशरथ राजा के अष्टप्रधानों में से एक (वा. रा. वा. ७)।

सुरसू—पक्षिराज गरुड का एक पुत्र।

सुरसुचि—उत्तानगाद राजा की पत्नियों में से एक।

२. एक अप्सरा, जो माघ माह में पूषन् नामक सूर्य के साथ भ्रमण करती है।

३. बलि वैरोचन नामक असुर की माता (स्कंद. १.१. १८)।

४. कश्यप एवं अरिष्टा का एक पुत्र।

सुररूप—(सो. क्रोष्टु.) एक पक्षी, जो शुक्र एवं गरुड का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७.४५०)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो असमंजस राजा का पुत्र था (वायु. १६.१४१)।

३. रौच्य मन्वन्तर के सप्तपिंधों में से एक।

४. तामस मन्वन्तर का एक देवगण।

सुररूपा—वैवस्वत मन्वन्तर के मरौचि ऋषि की कन्या, जो वारुणि आंगिरस ऋषि की पत्नी थी।

२. दशरथपत्नी कैकेयी का नामान्तर (पद्म. पा. २.१६)।

३. मंकिशौशीतकि ऋषि की पत्नियों में से एक।

४. सुरभि की एक धेनुस्वरूपी कन्या, जो पूर्व दिशा को धारण करती है (म. उ. १००.८)।

सुरेणु—संज्ञा का नामान्तर (ह. वं. १.९)। स्कंद में इसे संज्ञा की माता कहा गया है।

सुरेश्वर—शिव का एक अवतार, जो उपमन्यु वासिष्ठ ऋषि के लिए अवतीर्ण हुआ था (शिव. शत. ३२; उपमन्यु वासिष्ठ १. देखिये)।

सुरैषिण—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सुरोचन—(स्वा. प्रिय.) शात्मलीद्रीप का एक राजा, जो भागवत के अनुसार इन्द्रबाहु राजा का पुत्र था (भा. ५.२०.९)।

सुरोचना—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२८)।

सुरोधि—बलिष्ठ एवं अरुन्वति का एक पुत्र (भा. ४.१.८१)।

सुरोमन्—तक्षककुलोत्पन्न एक नाम, जो जनमेजय के सपेंसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—‘सुमना।

सुलक्षण—एक राजा, जिसने माण्डव्य ऋषि को अश्व चुराने के इत्जाम में खूली पर चढ़ाया था (पद्म. उ. १२१)।

सुलभा—एक संन्यासिनी कुमारी, जो प्रधान नामक राजा की कन्या थी। यह स्वयं संन्यासमार्ग एवं योग-मार्ग की पुरस्कृती थी, जिनने कर्मयोग एवं गृहस्थाश्रम की प्रशंसा करनेवाले मिथिअ नरेश जनक राजा से तत्त्व-ज्ञान पर वादविवाद की थी। यही संवाद महाभारत में ‘सुलभा-जनक संवाद’ नाम से प्रसिद्ध है (म. शां. ३०८)।

सुलभा-जनक संवाद—कर्मयोग एवं गृहस्थाश्रम की प्रशंसा करते हुए जनक ने इसे कहा, ‘मैं स्वयं गृहस्थाश्रमी हूँ, फिर भी मेरा मन विप्रयोगभोग की इच्छा से संपूर्णतया अल्पित है। जिस प्रकार भूमि से बाहर रहा वीज अंकुरित नहीं होता है, उसी प्रकार मेरे मुक्त मन में विषयों की उत्पत्ति नहीं होती है’।

इतना कह कर जनक ने कहा कि, उपर्युक्त तत्त्वज्ञान इसे पंचशिल नामक आन्तर्य के द्वारा प्राप्त हुआ है। आगे चल कर जनक राजा ने अनेकानेक व्यंग्य वचन कह कर इसका तिरस्कार किया, एवं इसके नाम आदि के संबंध में पुच्छा कर इसे कोई अगण्य एवं अनधिकारी स्त्री सावित करने का प्रयत्न किया।

जनक राजा के उपर्युक्त अपमानजनक संभाषण से यह जरा भी विचलित न हुई। इसने अत्यंत शान्ति से अपनी गुरुवरंपरा का परिचय दिला कर, अपने संन्यास एवं योगशास्त्र विषयक तत्त्वज्ञान का अत्यंत सुरगृह निवेदन किया, ‘जिस प्रकार जनुकृष्ट एवं जत्रविदुओं का संबंध तत्कालिष्ठ रहता है, एवं इन दोनों की मिलावट असंभव है, उसी तरह आत्मा एवं इंद्रियोपभोग का एक साथ रहना असंभव है। इसी कारण मेरा यह कहना है कि, राजा का कर्तव्य निभानेवाले व्यक्ति को मोक्षज्ञान असंभव है। यद्यपि वह उसे प्राप्त भी हो जाये, तो टिकना असंभव है।

सुलभा ने आगे कहा, ‘तुम स्वयं को मोक्षधर्म के ज्ञानी कहते हो, फिर भी मैं कौन हूँ, मैं कहीं से

आयी हूँ, ऐसे मामूली प्रश्नों के उत्तर भी नहीं जानते। यदि सचमुच ही मुक्त रहते, तो ऐसी अनभिज्ञता दर्शानेवाले प्रश्न तुम नहीं पूछते। जो व्यक्ति मुक्त है, उसे मनुष्य-प्राणि कहीं से आया, एवं कहीं जानेवाला है इसका ज्ञान अवश्य ही होना चाहिए’।

इस प्रकार अपने तत्त्वपूर्ण संभाषण के द्वारा इसने जनक राजा का आत्मज्ञान के संबंध का सारा गर्व खू कर दिया।

सुलभा मैत्रेयी—एक तपस्विनी, जो कुण्डिनी नामक कन्या थी। आश्वलायन गृह्यसूत्र के ब्रह्मयज्ञोपनिषत् में इसका निर्देश प्राप्त है, जिसमें प्रतीत होती है, कि यह कोई सुविख्यात ऋषिणी तन्वयादिनी स्त्री होगी।

यज्ञवल्क्य ऋषि की पत्नी मैत्रेयी, एवं जनक राजा के साथ चर्चा करनेवाली सुलभा, इन दोनों ब्रह्मवादिनी स्त्रियों से यह सर्वथा भिन्न स्त्री होगी।

सुलोचन—(मो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. भा. ६०.३२)।

सुलोचना—रावणपुत्र इंद्रजित् की पत्नी, जो अपनी पति के मृत्यु के पश्चात् सती हो गयी।

२. प्लक्षद्वीप के गुणाकर राजा की कन्या। इसका विवाह तालध्वज नगरी के विक्रम राजा के माधव नामक पुत्र से हुआ था (पद्म. वि. ५-६; गुणाकर १. एवं माधव ५. देखिये)।

३. हरिस्वामिन् नामक एक ब्राह्मण की कन्या, जिसका कथा काशीक्षेत्र में स्थित ज्ञानवापी का महात्म्य बध्न करने के लिए स्कंद में प्राप्त है (स्कंद. ४.१.३३)।

सुलोमन्—एक व्याध, जो अमावस्या के दिन नदी में स्नान करने के कारण मुक्त हुआ (पद्म. सू. ३०)।

सुवेंश—(सो. वसु.) वसुदेव एवं श्रीदेवा का एक पुत्र (भा. ९२.४.५१)।

२. (मो. भज.) एक राजा, जो पद्म के अनुसार समौजम् राजा का पुत्र था।

सुवक्त्र—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४)।

सुवचोतथ्य—अंगिरसकुलोत्पन्न एक प्रवर।

सुवर्चला—देवल ऋषि की ब्रह्मचारी कन्या। अपने पिता के द्वारा आयोजित किये गये स्वयंवर में, इसने श्वेतकेतु औदारालिक का वरण किया। इस स्वयंवर के समय इसका श्वेतकेतु के साथ किया तत्त्वज्ञान पर संवाद, महा-

भारत में 'श्वेतकेतु सुवर्चला संवाद' नाम से प्राप्त है (म. शां.-३०४; २२८, २२९)।

यह संवाद महाभारत के केवल कुंभकोणम् संस्करण में भी प्राप्त है; भांडारकर संहिता में वह परिशिष्ट में दिया गया है।

२. परमेष्ठिन् राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम प्रतीह था (भा. ५. १५. ३)।

३. परमेष्ठिन् पुत्र प्रतीह राजा की पत्नी। इसके प्रतिहर्तु आदि तीन पुत्र थे (भा. ५. १५. ५)।

४. सूर्य की पत्नी (म. अनु. १४६. ५; विष्णु. ३. ८)।

सुवर्चस्—दक्षीचि ऋषि की पत्नी। इसके पति दक्षीचि ऋषि की अस्थियोंको इंद्र ने इस धोखा दे कर प्राप्त की (दक्षीचि देखिये)। देवताओं का, विशेषतः इंद्र का यह स्थायी कृत्य देख कर इसने उन्हें पशु बनने का एवं उनका निवेश होने का शाप दिया।

पश्चात् यह अपने पति के साथ सती होने के लिए प्रवृत्त हुई। उसी समय आकाशवाणी से इसे ज्ञात हुआ कि, यह गर्भवती है। यह मनु कर इसने पत्थर से अपना उदर विदीर्ण कर गर्भ बाहर निकाला, एवं उसे एक पीलवृक्ष के पास रख कर, यह पति के मृत देह के साथ सती हो गयी (पद्म. उ. १५५; शिव. शत. २४-२५)।

इसके गर्भ से उत्पन्न हुआ दक्षीचि ऋषि का पुत्र, आगे चल कर पिप्पलाद नाम से सुविख्यात हुआ (पिप्पलाद १. देखिये)।

२. (सू. निमि.) एक राजा, जो वायु के अनुसार स्वामत राजा का पुत्र था।

३. (सू. दिष्ट.) दिष्टवंशीय करंधम राजा का नामान्तर (करंधम २. देखिये)।

४. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. क. ६२. ५)।

५. कौरवपक्ष का एक योद्धा, जो भारतीय युद्ध में अभिमन्यु के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ४७. १५)।

६. ब्रह्मसार्वाणि मनु का एक पुत्र।

७. रुद्रसार्वाणि मनु का एक पुत्र।

८. एक राजा, जो ऐश्वकाव मरु नामक राजा का पुत्र माना गया है। पौराणिक साहित्य के अनुसार, कालियुग में पृथ्वी के समस्त क्षत्रिय लोग विनष्ट होनेवाले हैं, एवं विद्यमान क्षत्रियकुलों में से पौरव, देवापि एवं ऐश्वकाव मरु नामक केवल तीन ही वंश इस संहार से बचने वाले हैं।

ये तीनों क्षत्रिय लोग अपने योगसामर्थ्य के कारण कालियुग के अंत तक क्षत्रिय राजा रहेंगे।

इनमें से ऐश्वकाव मरु को उत्तीसवें युगचक्र के प्रारंभ में वर्चस् नामक पुत्र उत्पन्न होनेवाला है, जो आगे चल कर समस्त क्षत्रियकुलों का उद्धार करेगा (ब्रह्मांड. ३. ७४, २५१)। अन्य पुराणों में देवापि के पुत्र का नाम सपील अथवा सत्य दिया गया है (वायु. ९९. ४३८; मत्स्य. २७३. ५६-५८)।

९. एक ऋषि, जो भूति ऋषि का भाई था। एकवार इसने एक वृक्ष का आयोजन किया, जिसके लिए इसने बड़े सम्मान से भूति ऋषि को निमंत्रण दिया था (मार्क. १६)।

१०. एक राजा, जो सुकेति राजा का पुत्र, एवं सुनामन् राजा का भाई था। अपने भाई एवं पिता के साथ यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७. ९)।

११. एक अग्नि, जो पांचजन्य नामक अग्नि का पुत्र था (म. व. २१०. १३)।

१२. एक ऋषि, जिसने सत्यवान् एवं सावित्री के विरह-दुःख से व्याकुल हुए शुमसेन राजा को सात्वना प्रदान की थी (म. व. २८२. १०)।

१३. गरुड का एक पुत्र।

१४. हिमवन् के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम अतिवर्चस् था (म. श. ४५. ४२)।

सुवर्चस् वासिष्ठ—एक ऋषि, जो कुरुवंशीय सम्राट् संवरण का पुरोहित था (म. आ. ७९. ३६)।

सुवर्ण—एक तपस्वी ब्राह्मण, जिसकी कान्ति सुवर्ण के समान थी। इसने मनु से पुण्य, भूय दीप आदि के दानविषय में चर्चा की थी (म. अनु. १५५)।

२. सार्वाणि मनु का एक पुत्र।

३. रुद्रसार्वाणि मन्वन्तर का एक देवगण।

४. इक्ष्वाकुवंशीय सुतपस् राजा का नामान्तर (सुतपस् १५. देखिये)।

५. एक ऋषि, जो कुशध्वज ऋषि के दो पुत्रों में से एक था। इसने पैर के अंगुठे पर खड़े रह कर तीन अक्षरों के एक मंत्र का जाप किया, जिस पुण्य के बल से अगले जन्म में इसे सुवीर नामक गोप के घर एक गोपी का जन्म प्राप्त हुआ (पद्म. पा. ७२)।

६. एक राजा, जिसकी कथा 'ॐ नमो नारायण' मंत्र का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. क्रि. १०)।

७. एक देवगंधर्व, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था।

सुवर्णचूड—गरुड का एक पुत्र।

सुवर्णरेतस्—विश्रामित्रकुलोत्पन्न एक ऋषि।

सुवर्णवर्मन् काशिराज—काशी देश का राजा, जो जनमेजय पारिक्षित (अंतिम) की पत्नी वपुष्मा का पिता था। तक्षक नाग के द्वारा पारिक्षित का वध होने के बाद, मंत्रियों ने बालराजा जनमेजय को हस्तिनापुर के राजगद्दी पर बिठाया, एवं उसका विवाह इसकी कन्या वपुष्मा से किया। इसके शतानीक एवं शंख नामक अन्य दो पुत्र भी थे (म. आ. ४०.८-९; ९०.९५)।

सुवर्णशिरस्—एक महर्षि, जो पश्चिम दिशा में रह कर अज्ञात-अवस्था में सामगान करता है (म. उ. १०८.१२)।

सुवर्णग्रीविन्—एक राजा, जो संजय श्रेष्ठ (श्रेष्ठ) राजा का पुत्र था। इसका धर्म, मल, मूत्र, आदि सारा मलोत्सर्ग सुवर्णमय रहता था। इसी कारण, भोरों ने इसका अपहरण किया, एवं इसका वध किया (म. द्रो. परि. १.८.३१०-३२५)। आगे चल कर नारद ने इसे पुनः जीवित किया (म. द्रो. ७१.८-९)।

महाभारत में अन्यत्र प्राप्त कथा के अनुसार, इसे हिरण्यनाभ नामान्तर प्राप्त था, एवं यह गुणों में साक्षात् इंद्रतुल्य था। अपने गुणों के कारण, भविष्य में यह कहीं इंद्रपद प्राप्त न कर ले, इस आशंका से इंद्र ने व्याध्र के द्वारा इसका वध किया। मृत्यु के समय इसकी आयु पंद्रह वर्षों की थी। आगे चल कर इसके पिता भृज्य के द्वारा प्राथेना किये जाने पर नारद ने इसे पुनः जीवित किया।

इसकी सुकुमारी नामक एक बहन थी, जो नारद की पत्नी थी। इसकी अकाल मृत्यु के पश्चात् पुत्रशोक से व्याकुल हुए संजय राजा को, नारद ने सोलह श्रेष्ठ प्राचीन राजाओं के जीवनचरित्र (पोडश राजकीय), एवं उनकी मृत्यु की कथाएँ सुनाई, एवं हर एक श्रेष्ठ व्यक्ति के जीवन में मृत्यु अटल व्रता कर उसे संतुष्टा की। नारद के द्वारा वर्णित यही 'पोडश राजकीय' आख्यान अभिमन्यु वध के पश्चात् व्यास के द्वारा सुविष्टिर को कथन किया गया था (म. शां. परि. १)।

सुवर्णा—एक इक्ष्वाकुवंशीय राजकन्या, जो पूरुवंशीय सुहोत्र राजा की पत्नी, एवं हस्तिन् राजा की माता थी (म. आ. १०.३६)।

सुवर्णाभ—एक दिक्पाल, जो त्वारोचिप मनु का पौत्र एवं शंखपद का पुत्र था। इसे पिता ने सालत धर्म का उपदेश दिया था (म. शां. ३३६.२५)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'सुधर्मन्'।

सुवर्मन्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र, जो भीम के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १०२.९८)।

२. द्विमीदवंशीय सुवर्मन् राजा का नामान्तर (सुधर्मन् ८. देखिये)।

सुवर्मन् वैगर्त—विगर्त राजा सुधर्मन् का एक भाई (म. वि. ३२.४)।

सुवाच्—एक ऋषि, जो पाण्डवों के वनवास काल में द्वैतवन में उनके साथ निवास करता था (म. व. २७.२४)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र।

सुवासन—प्रससावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

सुवास्तुक—पाण्डवराज का एक राजा (म. उ. ४.१३)।

सुवाह—स्कंद का एक सैनिक (म. वा. ४२)।

सुविन्त—एक ऋषिक।

सुविन्ति—अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार। पाठभेद—'सुचिन्ति'।

सुविभु—(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो विष्णु एवं ब्रह्म के अनुसार विभु राजा का पुत्र, एवं सुकुमार राजा का पिता था (वायु. ९२.७१)।

सुवीर—भोमवंशीय तोड्मान् राजा का नामान्तर।

२. एक राजा, जो सौवीरी नामक राजकन्या का पिता, एवं मरुत्त राजा का श्वशुर था (मां. १२८)।

३. (सो. द्विमीद.) द्विमीदवंशीय मुनीथ राजा का नामान्तर (मुनीथ ३. देखिये)।

४. (सो. क्रोष्ट.) एक राजा, जो देवश्रयन् एवं कंसावती का उद्येष्ठ पुत्र था (मा. ९.२८.४१)।

५. (मृ. इ.) एक राजा, जो कृतिमान् राजा का पुत्र, एवं दुज्य राजा का पिता था (म. अनु. २.१०)। पौराणिक वंशावलिओं में इसका नाम अप्राम्य है।

६. एक शत्रियवंश, जिसमें अर्जुन नामक एक कुलकर्ता राजा उत्पन्न हुआ था (म. उ. ७२.१७)।

७. एक राजा, जो क्रोववश संजक श्रेष्ठ के अंश में उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५५)।

८. वाराणसी में रहनेवाला एक बणिक, जिसकी पत्नी का नाम चित्रा था (चित्रा ४. देखिये)।

१. एक गोप, जिसकी कन्या के रूप में सुवर्ण ऋषि ने जन्म लिया था (सुवर्ण ५. देखिये)।

सुवीर शैब्य—(सो. अनु.) सौवीर देश का एक राजा, जो विष्णु, मत्स्य एवं भागवत के अनुसार शिवि राजा का पुत्र था। इसीके ही कारण इसके राज्य को 'सौवीर' नाम प्राप्त हुआ था।

सुवेघन—पांडव पक्ष का एक राजा (म. द्रो. १३३. ३७)।

सुवेधस् शौरिषि—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १४७)।

सुवेषा—कुरुवंशीय परिश्रित राजा की बाहुदा सुयशा नामक पत्नी का नामान्तर (परिश्रित ३. देखिये)।

२. दशरथ राजा की पत्नी, जो पद्म के अनुसार शत्रुघ्न की माता थी।

सुव्रत—पुलह एवं श्वेता का एक पुत्र।

२. (सो. उशी.) एक राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार उशीनर राजा का पुत्र था (वायु. ९९.२०)।

३. एक आचार्य, जिसे पराशर ऋषि ने 'पराशर स्मृति' कथन की थी।

४. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत एवं ब्रह्मांड के अनुसार क्षेम राजा का, एवं विष्णु के अनुसार क्षेभ्य राजा का पुत्र था। वायु एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'सुव्रत' एवं 'अनुव्रत' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम धर्मसूत्र था। इसने ६४ वर्षों तक राज्य किया (भा. ९.२२.४८)।

५. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार नृपति राजा का पुत्र था।

६. रौच्य मनु का एक पुत्र, जो मृच्यु के पश्चात् पृथी नामक देवी की कृपा से पुनः जीवित हुआ (ब्रह्मवै. २. ४३)।

७. एक ऋषि, जिसने विदूरथ राजा को कुञ्जभ राक्षस की जानकारी बतायी थी (मार्क. ११३)।

८. मित्र के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम सत्यसंध था (म. श. ४४. ७)।

९. विधानु के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम सुकर्मन् था।

१०. एक राजा, जो पूर्वजन्म में विदिशा के रुक्मभूषण राजा का पुत्र था (पद्म. भू. २०-२२)।

सुव्रता—दक्ष एवं वीरिणी की एक कन्या, जिसे दक्ष, धर्म, ब्रह्मा एवं रुद्र से क्रमशः दक्षसावर्णि, धर्मसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि एवं रुद्रसावर्णि नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (ब्रह्मांड. ४.१.३९-५१)।

सुशंस—एक गंधर्व, जिसके शाप के कारण सुनीथा रानी को वेन नामक दुष्ट पुत्र उत्पन्न हुआ था।

सुशर्मन्—कर्ण का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में नकुल के द्वारा मारा गया। पाठभेद (भांडारकर संहिता) 'सुपेण'।

२. (कण्व. भविष्य.) कण्ववंश का अंतिम राजा, जो अपने बलि नामक अमात्य के द्वारा मारा गया (भा. १२. १.२२)।

३. धर्मसावर्णि मनु का एक पुत्र।

४. एक दुराचारी ब्राह्मण, जिसकी कथा भगवद्गीता के प्रथम अध्याय का मोहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. उ. १७५)।

५. एक ब्राह्मण, जो विशाल नामक ब्राह्मण का पुत्र था। बलाक नामक राक्षस ने इसकी पत्नी का हरण किया, जिसे आगे चल कर उत्तम नामक राजा ने छुड़ा कर इसे वापस दे दिया (मार्क. ६६.६७)।

सुशर्मन् त्रैगर्त प्रस्थलाधिपति—त्रिगर्त देश का सुविख्यात राजा, जो दृढक्षेम राजा का पुत्र था। इसी कारण, इसे 'वार्धक्षेभि' पैतृक नाम प्राप्त था। यह एवं इसके सत्यरथ, सत्यधर्मन्, सत्यवर्मन्, सत्येपु एवं सत्यकर्मन् नामक पाँच भाई अत्यंत पराक्रमी थे, एवं स्वयं को 'संशप्तक' योद्धा कहलाते थे। महाभारत में अन्त्येष्ट इसे 'त्रिगर्त' एवं 'प्रस्थलाधिपति' भी कहा गया है (म. द्रो. १६.१९)।

विराट से युद्ध—यह युद्ध ही दुर्योधन का पक्षपाती था, एवं पाण्डवों से द्वेष करता था। पाण्डवों के अज्ञातवास में, इसने दुर्योधन के लिए विराट की गायों का हरण किया था, एवं विराट को कैद कर दुर्योधन के सम्मुख पकड़ कर लाया। किन्तु पश्चात् भीम ने इस पर हमला कर इसे कैदी बनाया, एवं इसे युधिष्ठिर के सामने लाया। उस समय युधिष्ठिर ने इसे विना किसी शर्त के मुक्त किया (म. वि. २९-३२)।

भारतीय युद्ध में—इस युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था, एवं इसने एवं इसके भाइयों ने अर्जुन का वध करने की प्रतिज्ञा की थी। किन्तु यह एवं इसके सारे

भाई अर्जुन के द्वारा मारे गये (म. द्रो. २७; ध. २६.४४)।

संशप्तक योद्धा—महामारत के द्रोणपर्व में 'संशप्तक पर्व' नामक एक उपपर्व है, जहाँ इसे एवं इसके पाँचों भाइयों को 'संशप्तक योद्धा' कहा गया है (म. द्रो. १६-३१)। रण में अपने विशिष्ट प्रतिपक्षी का वध करने की, एवं उनमें यशस्वितता प्राप्त न होने पर आत्महत्या करने की प्रतिज्ञा करनेवाले वीरों को 'संशप्तक योद्धा' कहा जाता था (म. द्रो. १६.३९)। इन योद्धाओं की यह प्रतिज्ञा होमहवन के साथ, एवं अग्निदेवता की साक्षी में ली जाती थी। प्रतिज्ञाग्रहण के पश्चात् ये वीर धर्म से बने हुए वस्त्र धारण करते थे, एवं अपने वस्त्रों पर अग्नि-चिह्नित वृत्त का प्रयोग करते थे (म. द्रो. १६. २१-३७)।

जयद्रथवध के समय अर्जुन ने भी इसी प्रकार की प्रतिज्ञा की थी, किन्तु वहाँ उसे संशप्तक नहीं कहा गया है (म. द्रो. ५१.३४-३७)।

सुशर्मन् वार्धक्षेमि—पांचाल देश का एक योद्धा, जो भारतीय युद्ध में पाण्डव पक्ष में शामिल था (म. उ. १६८.१६)। वृद्धक्षेम का पुत्र होने के कारण, यह 'वार्धक्षेमि' नाम से ही अधिक सुविख्यात था (वार्धक्षेमि १. देखिये)।

सुशर्मन् शांशपायन—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था (वायु. ६१.५६)।

सुशांति—(सो. अज.) एक राजा, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार शांति राजा का पुत्र, एवं पुरुज राजा का पिता था (भा. ९.२१.२१)।

२. (सो. नील.) एक राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार नील राजा का पुत्र था (मत्स्य. १५०.१)।

३. उत्तम मन्वन्तर का इंद्र।

सुशारद् शालंकायन—एक आचार्य, जो ऊर्जवत् औषमन्यव नामक आचार्य का शिष्य, एवं श्रवणदत्त कौहल नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)।

सुशील—एक गंधर्व (पद्म. स्व. २२; उ. १२८)।

सुशीला—स्वर्ग की नामक गंधर्व की कन्या (पद्म. स्व. २२)। पद्म में अन्यत्र इसे सुशील गंधर्व की कन्या कहा गया है (पद्म. उ. १२८)।

२. वराहपुर में रहनेवाले कृष्णदेव नामक ब्राह्मण की पत्नी (पद्म. ब्र. १२)।

सुशोभना—मण्डूक राज की कन्या, जो दशवाकुर्वाय परिश्रित राजा की एक पत्नी थी। इसके शल, दल एवं बल नामक तीन पुत्र थे।

२. चेदिराज की कन्या, जो मरुत आविधित की पत्नी थी (मार्क. १२८)।

सुश्यामा—एक अप्सरा, जो आर्षिपिण्डुय कृतव्यव की पत्नी थी। इसकी कन्या का नाम वृद्धा था (ब्रह्म. १०७; वृद्धा देखिये)।

सुश्रम—(सो. मगध. भविष्य.) मगध देश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार धर्म का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार नृपति राजा का पुत्र था।

सुश्रवस्—एक राजा, जिसने एक साथ साठ राजाओं के साथ युद्ध किया था। इसी युद्ध में इंद्र ने इसकी रक्षा की थी (ऋ. १.५३.९)।

२. एक आचार्य, जो उपगु सौश्रवस नामक आचार्य का पिता था (पं. ब्रा. १४.६.८)।

३. देवताओं का एक गुप्तचार, जिसने कात्यायन ऋषि के तप की वार्ता सरस्वती को बतायी थी। इसपर सरस्वती ने कात्यायन को दृष्टान्त दे कर कहा, 'जिस ज्ञान की तुम्हें अपेक्षा है, वह सारस्वत मुनि तुम्हें बतावेगा' (स्कं. १.२.२.)।

४. अमृतरज्जु देवों में से एक।

५. एक प्रजापति, जो ब्रह्मा के मानसपुत्रों में से एक था (वायु. ६५.५३)।

सुश्रवस् कौश्य—एक आचार्य, जो कुश्रि वाष्श्रवम नामक आचार्य का समकालीन था (श. ब्रा. १०. ५.५.१)।

सुश्रवस् वार्षगण्य—एक आचार्य, जो प्राप्तरह नामक आचार्य का शिष्य, एवं सानि औषाक्षि नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)।

सुश्रवा—एक विदमं राजकन्या, जो कुरुवंशीय जयत्सेन राजा की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम अदाचन था (म. आ. ९०.१७ पाठ.)।

सुश्रवा सौवला—गांधारराज सुवल राजा की कन्या, जो धृतराष्ट्र की पत्नियों में से एक थी।

सुश्रुत—एक सुविख्यात शल्यचिकित्साशास्त्रज्ञ, जो 'सुश्रुत संहिता' नामक विख्यात ग्रंथ का रचयिता माना जाता है। यह गांधि राजा का पुत्र, एवं त्रिधामित्र का पुत्र था (म. अनु. ४.५५)। यह शल्यचिकित्सा के आद्य

आचार्य धन्वंतरि दिवोदास के सात शिष्यों में से एक प्रमुख शिष्य था (ग. १.१७५)। अन्य पुराणों में इसे शालिहोत्र का शिष्य कहा गया है (अभि. २९२. ४४)।

सुश्रुत संहिता—आयुर्वेदीय शल्यचिकित्साशास्त्र का आय आचार्य धन्वंतरि दिवोदास माना जाता है, जिसके सात शिष्यों ने मिल कर आयुर्वेदीय 'शल्यचिकित्सापद्धति' का सर्वप्रथम प्रसार किया। इन शिष्यों में से सुश्रुत ही एक आचार्य ऐसा है कि, जिसका 'सुश्रुत-संहिता' नामक ग्रंथ आज उपलब्ध है। इस ग्रंथ में, आचार्य धन्वंतरि से प्राप्त शल्यमूल आयुर्वेदीय ज्ञान इसने तंत्र-रूप में संग्रहित किया है। यह ग्रंथ पूर्वतंत्र एवं उत्तर-तंत्र नामक दो भागों में विभाजित किया गया है।

उपलब्ध 'सुश्रुत संहिता' से प्रतीत होता है कि, सुश्रुत के द्वारा विरचित आयु 'सुश्रुत-संहिता' के प्रतिसंस्करण का कार्य नागार्जुन के द्वारा हुआ था (स. सं. वि. ३.१३)। 'बृद्ध सुश्रुत' नामक और एक संहिता उपलब्ध है, जो संभवतः इसके उत्तरकालीन किसी आचार्य की रचना होगी।

समवर्ती आचार्य—सुश्रुता संहिता में, औपधेनेव नामक धन्वंतरि के और एक शिष्य का निर्देश समवर्ती आचार्य के माते प्राप्त है (स. सं. सू. ४.९)। इसके साथ ही उरभ्र पौष्कल्यवत, करवीर्य, वैतरण आदि धन्वंतरि-शिष्यों का भी निर्देश भी इसके ग्रंथ में प्राप्त है।

परिवार—इसके पुत्रपौत्रदि संतानों का निर्देश वाग्भट (अष्टांगसंग्रहसूत्र पृ. १५२); कात्यायन (महाभाष्य १. पृ. ४०६); एवं पाणिनि (पा. सू. ६.२.३६ कार्तिकौजपादिगण); आदि में प्राप्त है।

२. (सू. निभि.) एक राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार सुवर्चस् राजा का पुत्र, एवं जय राजा का पिता था (ब्रह्मांड. ३.६४.२१)। विष्णु में इसे नुभाष राजा का पुत्र कहा गया है (विष्णु. ४.५.३१)।

सुषामन्—एक व्यक्तिनाम (ऋ. ८.२५.२२); जो संभवतः ऋग्वेद में अन्यत्र निर्दिष्ट वरोसुषामन् नामक व्यक्ति का अपभ्रष्ट रूप होगा (ऋ. ८.२३.२८)। सायणाचार्य के अनुसार, ये दोनों भी नाम व्यक्तिनाम न हो कर, किसी अन्य वस्तु के थे।

सुषिर्नदिन्—(किलकिला. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार कृतनंद राजा का पुत्र था। वायु एवं ब्रह्मांड में इसे सूतिनंद कहा गया है।

सुषेण—धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्वसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५७.१६)।

२ (सो. पूर.) एक राजा, जो अविश्वित्पुत्र परिश्वित् राजा का पुत्र था (म. आ. ८९.४८)।

३. जमदग्नि एवं रेणुका के पुत्रों में से एक। रेणुका का वध करने की जमदग्नि ऋषि की आज्ञा इसने अमान्य की थी। इस कारण उसने इसे शाप दिया। आगे चल कर, परशुराम ने जमदग्नि के शाप से इसे मुक्त कराया (म. व. १३६.१०-१७)।

४. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. भी. ७.२८; द्रो. १०२.९४)। इसके वध का निर्देश महाभारत में दो स्थानों पर प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, यह एक व्यक्ति न हो कर एक ही नाम के दो व्यक्ति थे।

५. एक यादव राजा, जो बभ्रु राजा का पुत्र, एवं समाश राजा का पिता था (ह. वं. २.३८)।

६. (सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार वृष्णिमत् राजा का, भागवत के अनुसार वृष्णिमत् राजा का, एवं वायु के अनुसार कतिमत् राजा का पुत्र था।

७. कंस के द्वारा मारा गया देवकी का एक पुत्र।

८. स्वरोचिष मनु का एक पुत्र।

९. एक मरुत्, जो मरुतों के द्वितीय गण में समाविष्ट था।

१०. सुतपस् देवों में से एक (सुतपस् १६. देखिये)।

११. एक गंधर्व, जो माघ माह के पूषन् के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३९)।

१२. कर्ण का एक पुत्र एवं चक्ररक्षक, जो दुर्योधन पक्ष का प्रमुख योद्धा था (म. क. ३९.४०)। यह द्रौपदी-स्वयंवर में उपस्थित था। भारतीय युद्ध में यह उत्तमौजस् के द्वारा मारा गया (म. क. ५३.१०.११)।

१३. कर्ण का एक पुत्र (म. श. ५.३)। भारतीय युद्ध में यह नकुल के द्वारा मारा गया (म. श. ९.४७-४९)।

१४. कर्ण का एक पुत्र, जिसने भारतीय युद्ध में केकयाधिपति उग्रधन्वन् के साथ युद्ध किया था। अंत में यह यादव राजा सत्यकि के द्वारा मारा गया (म. क. ६०.४-६)।

सुषेण वानर—एक सुविख्यात वानरप्रमुख, जो धर्म नामक वानर का पुत्र, एवं वानरराज वालि का श्वशुर

था। यह एक सुविख्यात युद्धविशारद ही नहीं, बल्कि वैद्यक शास्त्रज्ञ भी था। सीता शोध के लिए, पश्चिम दिशा में गये हुए वानरदल का यह प्रमुख था।

राम-रावण युद्ध में—इस युद्ध में लक्षावधि वानर सैनिकों को ले कर, यह राम के पक्ष में शामिल हुआ था। (म. व. २६७.२)। विद्युन्मालिन राक्षस से युद्ध कर, इसने उसका वध किया था (वा. रा. यु. ४३, १४)।

रावणपुत्र इंद्रजित् का वध होने के पश्चात्, रावण ने लक्ष्मण पर अमोघ शक्ति फेंकी, जिस कारण लक्ष्मण मूर्च्छित हो गया, एवं हजारों वानर आहत हो गये। उस समय, इसने विशाल्यकरिणी, सवर्ण्यकरिणी, संजीवनी संधानी आदि औषधियों का उपयोग कर, लक्ष्मण की मूर्च्छा भंग की। उसी समय, मूर्च्छना लानेवाली औषधियों का उपयोग कर आहत वानर सैनिकों के शरीर में पुसे हुए शस्त्र बाहर निकाले (वा. रा. यु. ११.२४-२७) लक्ष्मण के लिए आवश्यक औषधियाँ महादेव पर्वत से लाने की आज्ञा इसने हनुमत् को दी थी, किंतु उन औषधियों का ज्ञान न होने के कारण, हनुमत् उस पर्वत को ही अपने हाथ पर उठा कर ले आया (वा. रा. यु. १०१)।

राम के राज्याभिषेक के समय यह उपस्थित था, उस समय दक्षिण समुद्र का पानी इसने राज्याभिषेक के लिए इसने उन्हें अर्पित किया था (वा. रा. यु. १२८. ५४)। •

परिवार—इसकी कन्या का नाम तारा था, जिसका विवाह वानरराज बालिन से हुआ था। इसके भैंस एवं द्विविद अन्य नामक दो पुत्र भी थे (वा. रा. कि. ४२.१)।

सुसन्ध—एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से लोकाक्षि नामक आचार्य का शिष्य था।

सुसंधि—(स. इ.) एक राजा, जो प्रसुश्रुत राजा का पुत्र, एवं अमर्ष राजा का पुत्र था (वायु. ८८.२११)।

सुसंभाव्य—रैवत मनु का एक पुत्र।

सुसामन्—एक धनंजयगोत्रीय ब्राह्मण, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में सामगान करने के लिए उपस्थित था (म. स. ३०.३४)।

सुस्वधा—आज्यर पितरों का सामूहिक नाम। ये नियुक्त थे, एवं कामदुत्रलोक में निवास करते थे (पद्म. सू. १९)।

सुस्वर—गरुड का एक पुत्र।

सुस्वरा—स्वरवेदी गंधर्व की कन्या (पद्म. उ. १२८)।

सुहनु—वरुण की सभा में उपस्थित एक असुर (म. स. ९.१३)।

सुहवि—(सो. पूर.) एक राजा, जो भरत राजा का पौत्र, एवं भुमन्तु का पुत्र था। इसकी माता का नाम पुष्करिणी था (म. आ.: सुहोत्र ६. देखिये)।

सुहाविस् आंगिरस्—एक वैदिक सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १४.३.२५)।

सुहस्त—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १३२.११३५)।

सुहस्त्य घौषेय—एक वैदिक शुकद्रष्टा (ऋ. १०. ४१)। 'घोषा' का पुत्र होने के कारण, इसे घौषेय मानुक नाम प्राप्त हुआ होगा। सायण के अनुसार, घौषेय इसका मातृक नाम न हो कर, वह 'सुहस्त्य' का ही समानार्थी शब्द है।

सुहू—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो उपसेन का पुत्र था (भा. ९.२४.२४)।

सुहोत्र—एक शिवावतार, जो व्यास की सहायता के लिए अवतीर्ण हुआ था। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थे:—१. सुहोत्र; २. दुर्मुख; ३. हृदभ; ४. दुरतिक्रम (शिव. शत. ४)।

२. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार शत्रुवृद्ध का, एवं वायु के अनुसार धर्मवृद्ध राजा का पुत्र था (भा. ९.१७.२-३)। यह काश्यपशा का सर्वप्रथम राजा माना जाता है। इसके काश्य (काश्यप), कुशा (काश), एवं यत्समद नामक तीन पुत्र थे। पौराणिक साहित्य में अन्यत्र इसके 'सुनहोत्र', एवं 'सुतहोत्र' नामांतर प्राप्त हैं (अभि. २७७; ब्रह्म. १३)।

३. (सो. अज.) एक राजा, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार सुवतुपु राजा का पुत्र, एवं च्यवन राजा का पिता था (भा. ९.२२)। वायु में इसे सुधन्वन् राजा का पुत्र कहा गया है।

४. (सो. कुरु.) एक कुरुवंशीय राजा, जो सहदेव पांडव का पुत्र था। इसकी माता का नाम माद्री विजया था, जिसे सहदेव ने स्वयंवर का प्रण जीत कर प्राप्त किया था (म. आ. ९०.८७)।

विष्णु, मत्स्य एवं वायु में, इसे नकुल पांडव का पुत्र कहा गया है, किंतु यह असंभव प्रतीत होता है।

५. एक ऋषि, जो वनवासकाल में पांडवों के साथ निवास करता था (म. व. २७.२४)।

६. एक राजा, जो भरत राजा का पौत्र, एवं भुमन्थु का पुत्र था। इसे 'सुहोत्र', 'सुहवि', 'सुयजु' आदि नामांतर भी प्राप्त थे। इसकी माता का नाम पुष्करिणी था।

यह अत्यंत दानशूर एवं अतिथिप्रिय राजा था। इसकी दानशूरता से प्रसन्न हो कर, इन्द्र ने इसके राज्य में एक वर्ष तक सुवर्ण की वर्षा की थी। इस सुवर्णवर्षा से प्राप्त सारी संसृति इसने ब्राह्मणों में बाँट दी थी (म. द्रो. परि. १.८.३६०-३८३; शां. २९.२२१)।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम इक्ष्वाकुकन्या सुवर्णा था, जिससे इसे अन्नमीढ, सुमीढ एवं पुरुमीढ नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे।

इसकी निम्नलिखित अन्य पत्नियाँ एवं पुत्र भी थे:—

१. धूमिनी—ऋक्ष;
२. नीली—दुष्प्रन्त, परमेष्ठिन;
३. केशिनी—ऋहू, जन एवं रुपिन् (म. आ. ८९.२०-२८)।

महाभारत में अन्यत्र इसके हस्तिन् नामक पुत्र का निर्देश प्राप्त है, जिसके वंश में आगे चल कर विकुण्ठन, अन्नमीढ एवं संवरण आदि राजा उत्पन्न हुए। इनमें से संवरण राजा 'वंशकर' हुआ, जिसने हरितनापुर का पूरु वंश आगे चलाया (म. आ. ९०.३५-३९)।

७. रामसेना का एक वानर।

८. (सो. अमा.) एक राजा, जो वायु के अनुसार जहू राजा का पुत्र, था। इसकी माता का नाम कावेरी था (वायु. ९१.७)।

९. (सो. अमा.) एक राजा, जो कंचनप्रभ (कंचन) राजा का पुत्र, एवं जहू राजा का पिता था (विष्णु. ४.७.३)। इसकी पत्नी का नाम केशिनी था। भागवत में इसे 'होत्रक' कहा गया है।

१०. (सो. पूरु.) एक राजा, जो बृहत्क्षत्र नामक राजा का पुत्र, एवं हस्तिन् राजा का पिता था (वायु. ९९.१६५)।

सुहोत्र धौवेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.४१)।

सुहोत्र भारद्वाज—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ६.३१-३२)।

सुह्रा—(सो. अनु.) एक राजा, जो बलि आनव राजा के पुत्रों में से एक था (बलि आनव देखिये)।

२. पूर्व भारत का एक जनपद, जिसे भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्विजय में जीता था (म. स. २७.१४)।

प्रा. च. १३६।

सुहृदय—घटोत्कचपुत्र दर्वरिक का नामांतर (दर्वरिक देखिये)।

सूक्त—एक मंत्रद्रष्टा आचार्य, जो प्राणदेवता का माहात्म्य कथन करनेवाले मंत्र का रचियता माना जाता है (ऐ. आ. २.२.२)। ऐतरेय आरण्यक में इस शब्द का 'वैदिक मंत्रसमुदाय' अर्थ अभिप्रेत है, जो ऋग्वेद मंडल, सूक्त एवं मंत्र में विभाजित हैं।

सूक्ष्म—एक दानव, जो कश्यप एवं वनु का पुत्र था।

सूक्ष्मायणि—अट्टाईस व्यासों में से एक (व्यास पाराशर्य देखिये)।

सूत—एक जातिविशेष, जो पुराणों के पठन आदि का कार्य करती थी (रोमहर्षण 'सूत' देखिये)।

२. विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र (म. अनु. ४.५७)।

३. एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने उपस्थित हुआ था (म. आ. ६६.११*)।

सूनामुख—एक नाग, जो कश्यप एवं क्रदू के पुत्रों में से एक था।

सुनु आर्भच—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१७६)। यह संभवतः ऋभु ऋषि का पुत्र होगा।

सूनुता—रुद्रसावर्णि मन्वन्तर के स्वधाम नामक अवतार की माता, जो सत्यसह नामक ऋषि की पत्नी थी (मा. ८.१३.२९)।

२. उत्तानपादपत्नी सुनीति का नामान्तर।

सूरि—शिवदत्त ब्राह्मण का एक पुत्र, जिसे ऋषि शाप के कारण सुगयोनि प्राप्त हुई थी। आगे चल कर अमस्त्याश्रम में राम ने इसका वध किया (ब्रह्मांड. ३.३२)।

सूर्भी अथवा **सूर्या**—अनुह्राद नामक राक्षस की पत्नी।

सूर्य—एक देवता, जिसके लिए वैदिक एवं पौराणिक साहित्य में 'सवितृ', 'विवस्वत्', 'पूषन्' आदि विभिन्न नामान्तर दिये गये हैं। संभवतः सूर्य की विभिन्न अवस्थाओं को प्रतीकरूप मान कर सूर्यदेवता को ये नामांतर प्राप्त हुए होंगे (सवितृ, पूषन् एवं विवस्वत् देखिये)। अथर्ववेद में सूर्य के सात नाम (सप्तसूर्याः) दिये गये हैं, जो संभवतः सूर्य के सात रश्मियों का प्रतिनिधित्व करते हैं (अ. वे. १३.३.१०; सवितृ देखिये)।

महाभारत में इसके निम्नलिखित ग्रह नाम दिये गये हैं:—१. दिवस्पुत्र, २. बृहद्भानु, ३. चक्षु, ४. आत्मा, ५. विभावसु, ६. सवितृ, ७. ऋचीक, ८. अर्क, ९. मानु,

१०. आशावह, ११. रवि, १२. विवस्वत (म. आ. १.४०)।

सूर्यदेवता के कल्पना का उद्गम—आधुनिक भौतिक शास्त्र के अनुसार पृथ्वी की उत्पत्ति सूर्य से होने की कल्पना स्वीकृत की गयी है। वैदिक साहित्य में इसी कल्पना को स्वीकार किया गया है, जहाँ सूर्य को इस विश्व का आत्मा एवं पिता माना गया है:-

आप्रा चावापृथिवी अन्तरिक्षे ।

सूर्य आत्मा जगत्स्तस्थुषश्च ॥

(ऋ. १.११.१)।

(इस विश्व के चर एवं अचर वस्तुओं का आत्मा सूर्य ही है)।

इसी कल्पना के अनुसार सूर्यवत्नी अदिति अथवा दिति को विश्व की माता कहा गया है; एवं दितिपुत्र देव्य को एवं अदितिपुत्रों को 'आदित्य' कहा गया है।

पौराणिक साहित्य में कश्यप ऋषि को सूर्य का ही प्रतिरूप माना गया है, एवं उसकी अदिति एवं दिति नामक दो पत्नियों की गयी है, जो क्रमशः दिन एवं रात का प्रतिनिधित्व करती हैं। इन दोनों का पुत्र अग्नि है, जो पृथ्वी में सूर्य का प्रतिनिधित्व करता है। इस प्रकार सूर्य एवं उससे संबंधित देवतापरिवार का संबंध सृष्टिउत्पत्ति एवं सृष्टि संचालन कार्य में स्पष्ट रूप में होता है।

सूर्य उपासना—सूर्य की गति, उपासना एवं इसके एकसौ अष्ट नामों का ज्ञान प्राचीन काल से भारतवर्ष में प्रचलित है। इसी उपासना का उपदेश श्रौम्य ऋषि ने युधिष्ठिर को किया था (म. व. ३.१६-३३; १६०. २४-३७)।

सूर्य उपासना के ग्रंथ—विश्वामित्र ऋषि के द्वारा विरचित 'गायत्रीमंत्र' एवं विभिन्न 'सौर सूक्त' ऋग्वेद में प्राप्त हैं, जो सूर्य देवताविषयक सर्वाधिक प्राचीन साहित्य कहा जा सकता है। उपनिषद ग्रंथों में से 'सूर्योपनिषद,' सूयोपासना से ही संबंधित है। 'सूर्य गीता' नामक एक ग्रंथ भी उपलब्ध है, जो 'गुरुज्ञानवासिष्ठ तत्वसारायण' नामक ग्रंथ में अंतर्भूत है (कर्मकाण्ड. ३.१-५)। पौराणिक साहित्य में से 'भविष्य' एवं 'ब्रह्मवैवर्त' पुराण 'सौर' पुराण माने जाते हैं।

शाकद्वीप से सूर्यप्रतिमा तथा सूयोपासना भारत में सर्वप्रथम आयी, जिसका का स्वरूप वैदिक सूर्य उपासना से कई अंश में भिन्न था (सां. देखिये)।

सूर्य सौवश्व—एतश नामक ऋषि का शत्रु, जिसे

इसने आहत किया था (ऋ. १.६१.१५; ८.१७.१४; एतश देखिये)।

सूर्यक—(प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा, जो मल्ल के अनुसार विद्याख्यूप राजा का पुत्र था।

सूर्यतेजस—एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यवती के पुत्रों में से एक था।

सूर्यदत्त—विराट का एक भाई, जो भारतीय युद्ध में द्रोण के द्वारा मारा गया (म. उ. १६.८.१४; वि. ३०. १३; द्रो. १३३.३९; क. ५.८३)। वाटनेद (मंडाकर संहिता)—'सुदर्शन'।

सूर्यध्वज—एक राजा, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७.७.१०)।

सूर्यनेत्र—गुरु का एक पुत्र।

सूर्यभास—कौरवपक्ष का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में अभिमन्यु के द्वारा मारा गया (म. प्रो. २७.१५)।

सूर्यवर्चस—एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं नृषि के पुत्रों में से एक था। यह कार्तिक माह के विष्णु नामक आदित्य के साथ भ्रमण करता है। अपने अगले जन्म में यह षटोक्च पुत्र वधैरिक बन गया।

सूर्यवर्मेन—त्रिगर्त देश का एक राजा, जो सुशिक्ष के अश्वमेधीय अश्व की रक्षा करनेवाले अजैन से परास्त हुआ था (म. आश. ७३.११)। इसी युद्ध में इक्ष्वाकु के तुवर्मेन नामक भाई मारा गया।

सूर्यशत्रु—लेका का एक राक्षस (वा. रा. यु. ९)।

सूर्यश्री एवं **सूर्यसवित्री**—एक सनातन विश्वेश (म. अनु. १.१.३३-३४)।

सूर्यसावित्री—एक वैदिक यज्ञतट्टी (ऋ. १०. ८५)। इसके द्वारा रचित सूक्त में इसके विवाह का वर्णन प्राप्त है। ऋग्वेद में अन्यत्र इसे सवित्रकन्या कहा गया है, एवं अश्विनों के विवाहग्रंथ में इसके आरूढ होने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. १.११६.१७; १.१९.५)। ऐतरेय ब्राह्मण में, अश्विनों के द्वारा होड़ में विजय प्राप्त करने पर उनका विवाह इसके साथ संपन्न होने का निर्देश स्पष्ट रूप से प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ४.७; प्रज्ञापति देखिये)। अश्विनों के साथ इसका विवाह होने का उपर्युक्त वर्णन वस्तुस्थितिनिर्देशक है, या रूपकात्मक है यह कहना मुश्किल है।

सूर्योक्ष—रामसेना का वानर।

२. एक राजा, भारतीय युद्ध में कौरवपक्ष में शामिल था। यह क्रथ नामक असुर के अंश में उत्पन्न हुआ था।

सृगाल—एक राजा, जो स्त्रीराज्य का अधिपति था। कलिंगराज चित्रांगद की कन्या के स्वयंवर में यह उपस्थित था (म. शां. ४.७)। पाठभेद—‘शृगाल’।

सृजय—उत्तम मनु के पुत्रों में से एक।

२. (स. नाभाग.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार नाभाग राजा का पुत्र था।

३. (सो. अनु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार कालनर राजा का पुत्र, एवं जनमेजय राजा का पिता था। वायु एवं मत्स्य में इसे क्रमशः ‘कालनल’ एवं ‘कोलाहल’ राजा का पुत्र कहा गया है। मत्स्य में इसका संजय नामान्तर प्राप्त है। यह प्रारंभ से ही कृष्ण का विरोधक था, जिसने इसको परास्त किया था।

४. (सो. नील) एक राजा, जो पंचजन नामक राजा का पिता था (ह. वं. १.३२)। संभवतः संजय पांचाल एवं यह दोनों एक ही होंगे (संजय पांचाल देखिये)।

५. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो भागवत, मत्स्य एवं वायु के अनुसार शूर राजा का पुत्र, एवं धनु एवं वज्र नामक राजाओं का पिता था (मत्स्य. ४६.३)। इसकी पत्नी का नाम राष्ट्रपाली था, जो कन्न राजा की भगिनी थी। कई पुराणों में इसके पुत्रों के नाम कृश एवं दुर्मर्षण दिये गये हैं।

६. क्षत्रवंशीय संजय राजा का नामान्तर (संजय २. देखिये)।

७. एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में पाण्डव पक्ष में शामिल था (म. द्रो. ३४.५; ३९.१७)।

वैदिक साहित्य में—इस साहित्य में इन लोगों का उल्लेख तृसु लोगों के साथ प्राप्त है, जहाँ तृसु राजा दिवोदास एवं संजय राजा की एकसाथ ही प्रशस्ति की गयी है, एवं उन दोनों को तुर्वशों के शत्रु बताया गया है (ऋ. ६.२७. ७)। शतपथ ब्राह्मण में भी देवभाग औरतर्षि को कुरु एवं संजय लोगों का पुरोहित बताया गया है (श. ब्रा. २.४-५)।

अथर्ववेद के अनुसार ये लोग कोई नैसर्गिक आपत्ति की शिकार बने थे, एवं इसी आपत्ति में इनके विनष्ट होने का अस्मृष्ट निर्देश वहाँ प्राप्त है (अ. वे. ५.१९.१)। काठक संहिता एवं तैत्तिरिय संहिता में भी इसी तर्क की पुष्टि मिलती है, जहाँ किसी सांस्कारिक त्रुटि के कारण इनके विनष्ट होने का निर्देश प्राप्त है (का. सं. १.२.३; तै. सं. ६.६.२.२)।

निवासस्थान—हिलेब्रॉट के अनुसार संजय लोग दिवोदास के साथ सिंधु नदी के पश्चिम में कहीं निवास करते थे। कई अभ्यासक इन्हें युनानी ‘सेरांगै’ लोगों के साथ समीकृत करते हैं, एवं इनका आद्य निवासस्थान ट्रेन्जिस्त्राना में बताते हैं। त्सीमर के अनुसार ये लोग सिंधुघाटी के उपरि भाग में बसे हुए थे। इनके मित्र तृसु-गण मध्य देश में स्थित थे, इस कारण इनके सिंधु नदी के पूर्व भाग में निवास करने की संभावना प्रतीत होती है।

ऐतिहासिक निर्देश—इन लोगों के द्वारा दुष्टरितु पौसायन नामक राजा को, एवं रेवोत्तरस् पाटव चाक्रस्थपति नामक अमात्य को अधिकारभ्रष्ट करने का निर्देश शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है (श. ब्रा. १.२.९.३.१)। आगे चल कर रेवोत्तरस् पाटव ने कुरु राजा साहिक प्रातीप्य के विरोध के विपरित भी अपने राजा का पुनः एक बार राजगद्दी पर प्रतिष्ठापित किया।

इन लोगों के राजाओं में, संजय दैववात, प्रस्तोक संजय (ऋ. ६.४७.२२); वीतहव्य संजय; साहदेव्य सोमक (ऋ. ४.१५.७; ऐ. ब्रा. ७.३४.९); एवं साहदेव्य सोमक के पिता सहदेव (सुप्रन्) साञ्जय (ऐ. ब्रा. ७.३४.९) का निर्देश विशेष प्रमुखता से पाया जाता है। इनमें से अंतिम दो राजाओं को पर्वत एवं नारद ने राज्याभिषेक किया था।

संजय दैववात—संजय लोगों का एक राजा, जिसने तुर्वश एवं वृचीवन्त जाति के अपने शत्रुओं पर विजय किया था (ऋ. ६.२७.७)। स्वयं इंद्र ने इसकी मदद कर तुर्वशों को इसके हाथ सौंपा दिया। देवत् का वंशज होने के कारण इसे ‘दैववात’ पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (ऋ. ४.१५.१)। इसके यज्ञाग्नि का निर्देश भी ऋग्वेद में प्राप्त है।

संजय पांचाल—(सो. नील.) पांचाल देश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार हर्षथ राजा का, एवं वायु के अनुसार रिश्व राजा का पुत्र था। भागवत एवं मत्स्य में इसे क्रमशः ‘संजय’ एवं ‘जय’ कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम क्रमशः मर्ष्याश्व एवं भद्राश्व दिया गया है।

संजय वैतहव्य—एक लोकसमूह, जो संभवतः संजय लोगों का ही नामान्तर था। भृगु ऋषि की हत्या करने के कारण, इन लोगों का नाश हुआ (अ. वे. ५. १९.१)।

संज्ञय वैशालि—(स. विष्ट.) एक राजा, जो वायु एवं विष्णु के अनुसार धूम्राश्व राजा का पुत्र, एवं सहदेव राजा का पिता था (वायु. ८.६.१९; विष्णु. ४.१.५३)। ब्रह्मांड में इसे धूम्राश्व राजा का पुत्र कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.६१.१४)। भागवत में इसे 'संयम' कहा गया है।

संज्ञय शैब्य—एक राजा, जो त्रिविराजा का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम कैकेयी था, जिससे इसे सुवर्ण-श्रीविन् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। इसकी कन्या का नाम द्रमयंती (मदयंती) अथवा श्रीमती था, जिसका विवाह नारद से हुआ था (नारद. ३. देखिये)।

इसके पुत्र सुवर्णश्रीविन् की त्वरों के द्वारा हत्या होने पर यह अत्यधिक शोक करने लगा। इस पर इसके मामाद नारद ने इसे सात्वना देने के लिए सोलह श्रेष्ठ राजाओं (गोडश राजकीय) का एक आख्यान सुनाया, जिसमें मानवीय जीवन में मृत्यु की नित्यता, एवं तद्देतु शोक करने का वैफल्य बहुत ही सुंदर प्रकार से विशद किया था (म. द्रो. परि. १.८.३२५-८७२; सुवर्णश्रीविन् एवं नारद २. देखिये)। पश्चात् नारद ने इसके पुत्र सुवर्ण-श्रीविन् को पुनः जीवित किया।

संज्ञय होत्रवाहन—एक राजर्षि, जो काशिराज की कन्या अंश का मातामह, एवं परशुराम का मित्र था। अंश के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर यह अपने मित्र परशुराम के पास गया, एवं इसने उसे भीष्म से मिल कर उसका मन अंश से विवाह करने के लिए अनुकुल बनाने के लिए प्रार्थना की (म. उ. १७.५.१५-२७; ३०)। पाण्डवों के वनवासकाल में इसने उनके साथ निवास किया था (म. व. २७.२४)।

सृतंज्ञय—मगधवंशीय श्रुतंज्ञय राजा का नामान्तर (श्रुतंज्ञय ३. देखिये)।

सृविद्—इंद्र का एक शत्रु, जिसका उसने वध किया।

सृष्टि—(सो. वृष्णि.) उग्रसेन राजा का आठवाँ पुत्र (भा. ९.२४.२४)।

२. ध्रुव एवं भूमि का एक पुत्र।

३. ब्रह्मा की सभा में उपस्थित एक देवी (म. स. १३२३)।

सेक—एक लोकसमूह, जिसे सहदेव ने अपने दक्षिण दिग्भ्रज्य के समय जीता था (म. स. २८.२९७)।

सेवक—श्रुतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाम, जो जनमेजय के

सर्वसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१४)। पाठ-भेद (भांडारकर संहिता)—'सेवक'।

सेतु—(सो. द्रुह्यु.) एक राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार द्रुह्यु राजा का पुत्र, एवं अरुद्र राजा का पिता था (मत्स्य. ४८.६; वायु. ९९.७)। भागवत में इसे वभ्रु राजा का पुत्र कहा गया है, एवं इसके पुत्र का नाम 'आरुध्व' बताया गया है (भा. ९.२३.१४)। विष्णु में इसे 'सेतुपुत्र' अथवा 'आरुद्र' कहा गया है। महा-भारत में निर्दिष्ट अंगारसेतु अथवा अंगार राजा संभवतः यही होगा (अंगार देखिये)।

सेतुक—एक राजा, जो वृषदर्भ राजा का मित्र था (वृषदर्भ देखिये)।

सेन—(सो. अनु.) अनुवंशीय हेम राजा का नामान्तर।

सेनक—एक वैयाकरण (पा. सू. ५.४.११२)।

सेनजित्—(सो. अज.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार विषद राजा का पुत्र, एवं रुचिराश्व राजा का पिता था (भा. ९.२१.२३)। रुचिराश्व के अतिरिक्त इसके ददहन, काश्य एवं वत्स नामक अन्य तीन पुत्र थे।

विष्णु एवं वायु के अनुसार यह विश्वजित् राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार अश्वजित् राजा का पुत्र था। इसके द्वारा प्रणीत नीतिशास्त्र (भजधर्म) का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. शां. २६.१३-२९)।

२. (स. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो कृशाश्व राजा का पुत्र, एवं युवनाश्व राजा का पिता था (भा. ९. ६.२५)। अन्य पुराणों में इसे प्रसेनजित् कहा गया।

३. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो बृहत्कर्म राजा का पुत्र था। यह अभिमोमकृष्ण पौरव, एवं दिवाकर ऐश्वक आदि राजाओं का समकालीन था। इसके ही शासनकाल में पुराणों का लेखन हुआ।

४. एक अप्सरा, जो फाल्गुन माह के सूर्य के साथ भ्रमण करती है (भा. १२.११.४०)।

५. एक मरुत्, जो मरुतों के दूसरे गण में समाविष्ट था।

सेनानी—एकादश रुद्रों में से एक (म. मी. ६०.२७)।

सेनापति—(सो. कुह.) श्रुतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. मी. ६०.२७)।

सेनाविंदु—एक क्षत्रिय राजा, जो तुह्युडु नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.२०)। इसे

क्रोधहन्तु नामान्तर भी प्राप्त था। इसकी राजधानी देव-प्रस्थ नगरी में थी।

द्रौपदीस्वयंवर में यह उपस्थित था (म. आ. १७७, ८)। अर्जुन ने अपने उत्तरदिग्विजय के समय, उदक-राज के साथ इस पर आक्रमण कर इसे राज्यभ्रष्ट किया था (म. स. २४.९)।

भारतीय युद्ध में यह पाण्डवपक्ष में शामिल था, एवं इसकी श्रेणि 'रथसत्तम' थी (म. उ. १६०.१९)। यह श्रीकृष्ण एवं भीमसेन के समान पराक्रमी माना जाता था। इसके रथ के अश्व पीले नेशम के वर्ण के थे, एवं उन पर स्वर्ण का जीन लगा हुआ था (म. द्रो. २२. १६३३)। इसी युद्ध में यह कर्ण के द्वारा मारा गया (म. क. ३२.३७)।

सेयन—विश्वामित्र का एक पुत्र।

सैंहिकेय—एक सुविख्यात राक्षससमूह, जो विप्रचित्ति दानव एवं सिंहिका के पुत्र थे। इस समूह में कुल एक सौ राक्षस थे (विप्रचित्ति देखिये)।

सैंहिकेय साल्व—एक असुर, जिसका परशुराम ने देवताओं की आज्ञा से वध किया (विष्णुधर्म १.५२)।

सैतत्र—एक आचार्य, जो पाराशर्य नामक आचार्य का शिष्य था (वृ. उ. २.५.२१; ४.५.२७)। इसके शिष्यों में गौतम (वृ. उ. २.६.२; ४.६); एवं आश्विदेश्य (श. ब्रा. १४.७.३.२७) प्रमुख थे।

सैत्य—अंगिराकुलोत्पन्न एक प्रवर।

सैन्धव—सिंधु देश के निवासियों का सामूहिक नाम (म. व. ५१.२१)।

सैन्धवायन—विश्वामित्र का एक पुत्र, एवं विश्वामित्र कुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषियण।

२. एक आचार्य, जो व्यास की अथर्वन् शिष्यपरंपरा में से शौनक नामक आचार्य का शिष्य था।

सैबलक—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद—'सर्वशौलाव'।

सैरंघ्रि—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सैरंध्री—विराट नगर में अज्ञातवास के समय द्रौपदी के द्वारा धारण किया गया नाम।

२. केकयराज की एक कन्या, जो मरुत्त आविश्चित राजा की पत्नी थी (मार्क. १२८)।

सैषिरि—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सोपित—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सोदन्ति—एक आचार्य, जिस पर विश्वामित्र ऋषि ने विजय प्राप्त की थी (पं. ब्रा. १४.५.१३)।

सोभरि काण्व—एक आचार्य, जिसे ऋग्वेद के कई सूक्तों के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (ऋ. ८.१९.२२; १०३)। इसके द्वारा विरचित सूक्त में इसके सोभरि नामक पिता का, एवं इसके परिवार के लोगों का कई बार उल्लेख प्राप्त है (ऋ. ८.५.२६; १९.३२; २२.१५)। त्रसदास्यु के द्वारा इसे पचास वधुओं की प्राप्ति होने का निर्देश वहाँ प्राप्त है। पौराणिक साहित्य में इसी कथा का संकेत प्राप्त है। किन्तु वहाँ इसे सोभरि कहा गया है (सोभरि देखिये)।

सोम—एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१२४.१;५-९)।

२. चंद्रमा का नामान्तर। यह एक प्रजापति एवं स्वायं-भुव मन्वन्तर के अत्रि ऋषि का पुत्र था। इसकी सत्ताईस पत्नियाँ थीं, जो दक्ष प्रजापति की कन्या थीं (चन्द्र एवं दक्ष देखिये)। सप्तपत्नियों के द्वारा किये गये पृथ्वीदोहन के समय यह बल्लडा बना था। इसके नगरी का नाम विभावरी था, जो मेरु पर्वत की उत्तर में स्थित थी (मत्स्य. २६६.२६)।

३. एक अग्नि, जो भानु एवं निशा के दो पुत्रों में से एक था। इसकी बहन का नाम रोहिणी या (म. व. २११. १५)।

४. सवितृ एवं पृष्णि के पुत्रों में से एक।

५. अंगिरसकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

६. सुख देवों में से एक।

७. एक शिवावतार।

८. एक वसु, जो धर्म एवं वसु के पुत्रों में से एक था (विष्णु. १.१५.१११)।

९. सोमतन्त्री नामक अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

सोम-प्रातिवेश्य—एक आचार्य, जो प्रतिवेश्य नामक आचार्य का शिष्य था (सां आ. १५.१)।

सोम शुषमायण—अट्टाईस व्यासों में से एक।

सोमक—कृष्ण एवं कालिंदी का एक पुत्र।

२. सोमकवंशीय क्षत्रियों का सामूहिक नाम।

सोमक साहदेव्य (सार्ज्य)—(सो. नील.) सृज्य लोगों का एक राजा (ऋ. ४.१५.७-१०; सृज्य १. देखिये)। सहदेव का वंशज होने से इसे 'साहदेव्य' पैतृक नाम, एवं सृज्यों का वंशज होने से इसे 'सार्ज्य' वांशिक नाम प्राप्त हुआ होगा (ऐ. ब्रा. ७.३४; श. ब्रा. २.४.४.४)। पर्वत

एवं नारद ऋषि इसके पुरोहित थे (ऐं. ब्रा. ७.३४.९)। यह वामदेव ऋषि का आश्रयदाता था, एवं इसने उसे अनेकानेक अश्व प्रदान किये थे (क. ४.१५.८.८)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे पांचाल देश का राजा कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम सहदेव बताया गया है (भा. ९.२२; ह. वं. १.३२; ब्रह्म. १३.वायु. ३७)। इसके द्वारा अपने पुत्र का नरमेध किये जाने की कथा महाभारत एवं विभिन्न पुराणों में प्राप्त है (म. व. १२७-१२८)।

पुत्र का नरमेध—इसकी कुल सौ पत्नियाँ थीं। किन्तु जंतु (जह्नु) नामक केवल एक ही पुत्र था। एकवार चिंटी ने जंतु को काट लिया, जिस कारण इसके अंतःपुर की सभी पत्नियाँ रोंते लगीं। इस प्रसंग को देख कर इसे मन ही मन अत्यंत दुःख हुआ, एवं इसने सोचा कि, राजा के लिए केवल एक ही पुत्र रहना दुःख का मूल हो सकता है। पश्चात् अधिक पुत्र प्राप्त होने के उद्देश्य से एक नरमेध करने की, एवं उसमें इसके जंतु नामक इकलौते पुत्र का हवन करने की कल्पना इसके पुरोहित ने इस दी। तदनुसार इसने अपने पुत्र जंतु को बलि दे कर एक नरमेध किया, जिससे उत्पन्न हुए भुएँ से इसे पुत्र आदि सौ पुत्र उत्पन्न हुए।

मृत्यु के पश्चात्—अपनी मृत्यु के पश्चात् यह स्वर्गलोक को प्राप्त हुआ, किन्तु इसको नरमेध की सलाह देनेवाले इसके पुरोहित को नर्क प्राप्त हुआ। अपने पुरोहित को छोड़ कर स्वयं स्वर्गोपमोग लेने को इसने इन्कार किया, एवं यह स्वयं नर्क में रहने के लिए गया। इसकी यह पुरोहितमिथा देख कर यमधर्म अत्यंत प्रसन्न हुआ, एवं उसने इन दोनों को स्वर्ग में स्थान दिया।

सोमकान्त—सुराष्ट्र देश का एक गणेशभक्त राजा, जो कुष्ठ रोग से पीडित था। भृगु ऋषि के द्वारा 'गणेश-पुराण' का श्रवण किये जाने पर इसका कुष्ठ नष्ट हुआ, एवं यह पूर्ववत् आरोग्यसंपन्न रहा (गणेश. १.१९)।

सोमकीर्ति—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र (म. आ. १०.८.८)।

सोमन्तन्वी—अंगिरस् कुलोत्पन्न एक गोवन्कार। पाठभेद-सोम' एवं 'तन्वी'।

सोमदक्ष कौश्रेय—एक आचार्य (क. सं. २०.८; २१.९; मै. सं. ३.२.७)।

सोमदत्त—(सो. कुरु.) एक कुशवंशीय राजा, जो प्रतीप राजा का पौत्र, एवं ब्राह्मीक राजा का पुत्र था। इसके

भूरिश्रवस् एवं शाल नामक तीन पुत्र थे, जिनमें से भूरिश्रवस् इसे रुद्र की कृपा से प्राप्त हुआ था। अपने इन पुत्रों के साथ यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७.७.९; १४)।

शिनि यादव से शत्रुत्व—देवकी के स्वयंवर के समय शिनि नामक यादव ने अपने मित्र वसुदेव के लिए देवकी का हरण किया। उस समय इसके शिनि से विरोध करते ही उसने इसे भूमि पर पटक कर एक लात मार दी, एवं इसकी चुटियाँ पकड़ कर इसे खूत पीटा। शिनि के द्वारा छोड़ दिये जाने पर, अपने इस अपमान का बदला लेने के लिए इसने रुद्र कि घोर तरस्या की, एवं शिनि का वध करनेवाला एक पुत्र उससे माँग लिया। रुद्र के प्रसाद से प्राप्त हुआ इसका पुत्र आंगे चल कर भूरिश्रवस् नाम से सुविख्यात हुआ।

भारतीय युद्ध में—भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था। इस युद्ध में इसके पुत्र भूरिश्रवस् ने शिनि-यादव के पुत्र युगधान सात्यकि की ठीक वही अवस्था की, जो शिनि राजा ने देवकी स्वयंवर के समय इसकी की थी। इस प्रकार भूरिश्रवस् ने अपने पिता के अपमान का बदला ले ही लिया।

इसी समय सात्यकि का रक्षण करने के लिए उपस्थित हुए अजुन ने भूरिश्रवस् का अत्यंत निन्दा वध किया (भूरिश्रवस् देखिये)। आंगे चल कर सात्यकि ने ही इसका वध किया (भा. ९.२२.१८; म. द्रो. ११.९.३१; १३.७)।

२. एक ब्रह्मराक्षस, जिसने कल्माषपाद राजा से तत्त्वज्ञान पर संवाद किया था (कल्माषपाद देखिये)।

३. (सू. दिष्ट.) एक राजा, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार कृशाश्व राजा का पुत्र, एवं सुमति नामक राजा का पिता था (म. ९.२.१.३५)। इसने सौ अश्वमेध यज्ञ कर उत्तम गति प्राप्त की थी।

४. (सो. नील.) नीलवंशीय सुदास राजा का नामांतर (सुदास देखिये)।

सोमदत्ति सावर्णि—एक आचार्य, जो व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था।

सोमदा—ऊर्मिल्य नामक गंधर्व की कन्या, जिसे चूली नामक ऋषि से ब्रह्मदत्त नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। यही ब्रह्मदत्त आंगे चल कर राजा बन गया।

सोमधेय—पूर्व भारतीय लोकसमूह, जिसे भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्बिजेय में परास्त किया था (म. स. १७. ९)। पाठभेद—'सोपदेश'।

सोमनाथ—शिव का एक अवतार, जो काठियावाड़ प्रदेश में अवतीर्ण हुआ था। इसने चंद्र के सारे कष्ट दूर किये, जिस कारण 'चंद्रकुण्ड' नामक नामक स्थान में चंद्र ने इसकी पूजा की।

इसकी पूजा आदि करने से राज्यक्षमा कुष्ठ आदि व्याधियाँ दूर होती हैं ऐसी उपासकों की श्रद्धा है (शिव. शत. ४२)। इसके उपलिंग का नाम उपवेश है (शिव. कोटी. १)।

सोमप—पितरों का एक समूह, जो मानस (सूमनस) नामक स्वर्ग में निवास करते हैं। इन्हें ब्रह्मत्व प्राप्त हुआ था, एवं ये मूर्तिमान् धर्म ही माने जाते हैं। मनु के सहित सारी चर सृष्टि इन्हींकी ही संतान मानी जाती है। इनकी मानसकन्या का नाम नर्मदा था (मत्स्य. १५; पद्म. सू. ९; ह. वं. १.१८)।

२. रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. जमदग्निपत्नी रेणुका का प्रतिपालक पिता।

४. स्कंद का एक सैनिक (म. अनु. ११.३४)।

५. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ११.३४)।

सोमभोजन—गरुड का एक पुत्र।

सोमराजन्—एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की सामशिव्यपरंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था। ब्रह्मांड में इसका 'सोम-राजायन' नामान्तर प्राप्त है।

सोमवाह—अगस्त्यकुलोत्पन्न गोत्रकार।

सोमवित्—(सो. अज.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सहदेव राजा का पुत्र था (मत्स्य. ५०.३३)।

सोमशर्भन्—(मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार शालिशुक राजा का पुत्र, एवं शतधन्व राजा का पिता था (भा. १२.१.१४)।

२. शिकशर्मन् नामक ब्राह्मण का पितृभक्त पुत्र, जो अपने अगले जन्म में प्रह्लाद बन गंगा (पद्म. भू. ४-५)।

३. वामनक्षेत्र का एक ब्राह्मण, जिसे विष्णु की कृपा से सुव्रत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था।

सोमशुष्म सत्ययज्ञि—एक भ्रमणशील ब्राह्मण, जो विदेह देश के जनक राजा से आ मिला था (श. ब्रा. ११. ६. २. १)। जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण में निर्दिष्ट सत्ययज्ञ प्राचीनयोग्य नामक आचार्य संभवतः यही होगा (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

सोमशुष्मन् वाजरत्नयान—एक आचार्य, जिसने शतानीक राजा का राज्यामिषेक किया था (ऐ. ब्रा. ८. २१.५)।

सोमश्रवस्—एक तपस्यापरायण ऋषि, जो जनमेजय (द्वितीय) राजा का पुरोहित था (म. आ. ३.१२)। यह श्रुतश्रवस् ऋषि को एक सर्पिणी से उत्पन्न हुआ पुत्र था।

यह सदैव मूकव्रत से रहता था, एवं ब्राह्मण के द्वारा मोंग किये जाने पर उसे पूरी करने का इसका गुप्त व्रत था। जनमेजय के द्वारा इस व्रत को स्वीकार किये जाने पर ही, इसने उसका पौरोहित्य का कार्य स्वीकृत किया था।

आगे चल कर इसी व्रत के कारण ही, आस्तीक ऋषि की मोंग पूरी करने के लिए जनमेजय को अपना सर्पसत्र बंद करना पड़ा (म. आ. ३.१८)।

सोमाहुति भार्गव—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. २. ४-७)।

सोम्य—(आंश्र. भविष्य) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार पुरीद्रसेन राजा का पुत्र था।

सोहंजि—(सो. सह.) सहदेववंशीय संवर्त राजा का नामान्तर (संवर्त एवं साहंजि देखिये)।

सौकारायण—एक आचार्य, जो काशायण नामक आचार्य का शिष्य, एवं माथ्यदिनायन नामक आचार्य का गुरु था (वृ. उ. ४.६.२. काण्व)। शतपथ ब्राह्मण में इसे त्रैवणि नामक आचार्य का शिष्य कहा गया है (श. ब्रा. १४.७.३.२७)।

सौचकि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौचित्ति—सत्यधृति नामक पांडवपक्षीय योद्धा का पैतृक नाम (म. उ. परि. १.१४.१२; सत्यधृति देखिये)।

सौचीक—अग्नि नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (ऋ. १०.५१.२)।

सौजन्य—एक देव, जो भृगु एवं पौलोमी के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. १९५)।

सौजात आराह्नि—एक आचार्य, जिसके यज्ञाहुति के संबंध के मतों का निर्देश ऐतरेय ब्राह्मण में प्राप्त है।

सौटि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौति रोमहर्षणसुत—एक सुविख्यात पुराण प्रवक्ता आचार्य, जो रोमहर्षण सूत नामक पुराणप्रवक्ता आचार्य का पुत्र एवं शिष्य था। यह व्यास की पुराण-शिष्यपरंपरा एवं महाभारत परंपरा का प्रमुख आचार्य

था। इसी कारण पौराणिक साहित्य में इसका निर्देश 'महा-सुनि' एवं 'जगद्गुरु' आदि गौरवात्मक उपाधियों के साथ किया गया है (विष्णु, ३.४.१०)। इसका सही नाम उपश्रवण था।

दुःश्लेष में समन्त-पंचक क्षेत्र में, दौनकादि नैमिषारण्य-वासी ऋषियों को महाभारत की कथा कथन करने का ऐतिहासिक कार्य इसने किया। इसी कारण महाभारत-परंपरा में इसका नाम व्यास एवं वैशंपायन इतना ही आदरणीय माना जाता है।

महाभारत की परंपरा—महाभारत की कथा तीन विभिन्न आचार्यों के द्वारा तीन विभिन्न प्रसंगों में कथन की गयी थी। इस कथा का आद्य प्रवक्ता व्यास था, जिसने अपना 'जय' नामक ग्रंथ अपने शिष्य वैशंपायन को कथन किया। उसी ग्रंथ को काफी परिवर्धित कर 'भारत' नाम से वैशंपायन ने उसे अनमेजय राजा को कथन किया था।

आगे चल कर सौति ने इसी ग्रंथ को अनेकानेक आख्यान एवं उपाख्यान जोड़ कर, एवं उसमें 'हरिवंश' नामक एक स्वतंत्र परिशिष्टात्मक ग्रंथ की रचना कर, उसे दौनकादि आचार्यों को कथन किया। सौति का यही ग्रंथ 'महाभारत' नाम से प्रसिद्ध हुआ, एवं 'महाभारत' का आज उपलब्ध संस्करण सौति के द्वारा विरचित ही है।

इसी कारण, उपलब्ध महाभारत संस्करण के प्रवर्तक आचार्य यद्यपि व्यास एवं वैशंपायन हैं, उसका रचयिता सौति है। सौति के द्वारा विरचित महाभारत के उपलब्ध संस्करण काल २०० इ. पू. माना जाता है।

महाभारत का विस्तार—भारत एवं महाभारत के कथन के समय, वैशंपायन एवं अनमेजय; तथा सौति एवं दौनक के दरम्यान जो प्रश्नोत्तर हुए, एवं तत्त्वज्ञान पर जो संवाद हुए, इसके कारण ही यह महाभारत ग्रंथ प्रतिदिन बढ़ता ही रहा, यहाँ तक कि, महाभारत के उपलब्ध संस्करण में लगभग एक लाख श्लोक संख्या है।

महाभारत का कथन—अनमेजय के सर्पसत्र में वैशंपायनप्रोक्त 'भारत' ग्रंथ इसने सुना था। पश्चात् दौनक ऋषि के द्वारा नैमिषारण्य में द्वादशवर्षीय सत्र नामक एक यज्ञ का आयोजन किया गया। वहाँ दौनक ऋषि के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर इसने 'महाभारत' का कथन किया (म. आ. १.५; ४)।

महाभारत का प्रारंभ—इस ग्रंथ का प्रारंभकौन से श्लोक से होता है इस संबंध में विद्वानों में एकवाक्यता नहीं

है। कई अभ्यासकों के अनुसार, महाभारत का आरंभ 'नारायण नमस्कृत्य' श्लोक से होता है (म. आ. २.१)। किन्तु अन्य कई अभ्यासक इस ग्रंथ का प्रारंभ 'आस्तिक पर्व' से (म. आ. १३), एवं अन्य कई अभ्यासक उसे उपरिचर वसु की कथा से (म. आ. ५७) मानते हैं।

महाभारत के उपलब्ध संस्करण—इस ग्रंथ के मुंबई, कलकत्ता एवं मद्रास (कुम्भकोणम) ये तीन पाठ प्रकाशित हो चुके हैं। इस ग्रंथ का एक काश्मीरी पाठ भी उपलब्ध है।

उपर्युक्त सारे पाठों को एकत्रित कर, एवं अनेकानेक प्राचीन पाण्डुलिपियों का संशोधन कर, इस ग्रंथ का प्रमाण-भूत एवं चिकित्सक संस्करण पूना के भांडारकर प्राच्यविद्या संशोधन मंदिर के द्वारा प्रकाशित किया गया है। इस संस्करण के सारे खंड प्रकाशित हुए हैं, केवल हरिवंश ही बाकी है।

हरिवंश—इस ग्रंथ को महाभारत का खिल (परिशिष्ट) पर्व कहा जाता है, एवं इसकी रचना एकमात्र सौति के द्वारा ही हुई है। व्यास एवं वैशंपायन के द्वारा विरचित 'महाभारत' में भारतीय युद्ध का सारा इतिहास संग्रहित हुआ, किन्तु यादववंश में पैदा हुए कृष्ण की एवं उनके वंशजों की जानकारी वहाँ कहीं भी नहीं है। इस वृत्ति की पूर्ति करने के लिए सौति ने 'हरिवंश' की रचना की, जिसका कथन 'महाभारत' के 'स्वर्गरोहणपर्व' के पश्चात् सौति के द्वारा किया गया।

सौत्रामणि—सांचलराजा दुपद की पत्नी, जिसे कौकिली नामान्तर भी प्राप्त था (म. आ. परि. १.७९.९६)।

सौदन्ति—एक पुरोहितसमुदाय, जो सुदन्त के वंशज थे (पं. ब्रा. १४.३.१३)। विश्वामित्र ऋषि के स्वर्णक के रूप में इनका निर्देश प्राप्त है।

सौदामिनी—एक पक्षिणी, जो कश्यप एवं विनता की कन्या थी।

सौदास—सुदास राजा के पुत्रों के लिए प्रयुक्त सामूहिक नाम। इन्होंने वसिष्ठ के पुत्र शक्ति की अग्नि में फेंक दिया था (जै. उ. ब्रा. २.३९०)। अमन पुत्र का वध होने पर वसिष्ठ ने इनसे प्रतिशोध लेना चाहा, एवं अन्त में उसे इस कार्य में सफलता प्राप्त हुई (तै. सं. ७.४.७.१; कौ. ब्रा. ४.८; पं. ब्रा. ४.७.३)।

२. कोसल देश के मित्रसह कल्माषपाद राजा का नामान्तर, जो सुदास राजा का पुत्र होने के कारण उसे प्राप्त हुआ था (कल्माषपाद देखिये)।

३. (सो. नील.) नीलवंशीय महदेव राजा का नामान्तर (सहदेव ३. देखिये)।

सौदेव—सुदेवपुत्र दिवोदास राजा का नामान्तर (दिवोदास २. देखिये)।

सौद्युम्नि—इक्ष्वाकुवंशीय युवनाश्व राजा का पैतृक नाम (म. च. १२६.९; युवनाश्व ३. देखिये)।

२. पूरुवंशीय भरत दौष्यन्ति राजा का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३.५.४.१२)।

सौधिक—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौनकर्णि—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौनंदा—विदूरथराजा की कन्या मुदावती का नामान्तर।

सौपुरि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौपुष्पि—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौबल—गांधार देश के शकुनि राजा का पैतृक नाम।

२. सर्पि वासि नामक आचार्य का एक शिष्य (ऐ. ब्रा. ६.२४.१६)।

सौबुधि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौभग—बृहच्छ्लोक नामक आदित्य का एक पुत्र (भा. ६.१८.८)।

सौभद्र—(सो. वसु.) वसुदेव एवं रथराजा के पुत्रों में से एक।

२. सुभद्रापुत्र अभिमन्यु का मातृक नाम।

सौभपति—सौभ देश के शाल्व राजा का नामान्तर।

सौभर—पथिन नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे 'सोभरि' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (वृ. उ. २.५.२२; ४.५.२८ मार्थ्य.)।

सौभरि—एक ऋषि, जिसने मांधातृ राजा की पचास कन्याओं के साथ विवाह किया था। ऋग्वेद में एक वैदिक सूक्तद्रष्टा के नाते निर्दिष्ट सौभरि काण्व नामक ऋषि संभवतः यही होगा। ऋग्वेद में इसके द्वारा त्रसदस्यु राजा की पचास कन्याओं के साथ विवाह करने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८.१९.३६)। विष्णु में इसे बहुवृच् कहा गया है (विष्णु. ४.२)।

पौराणिक साहित्य में—मांधातृ राजा की सौ कन्याओं के साथ इसका विवाह किस प्रकार हुआ, इसकी कथा पौराणिक साहित्य में प्राप्त है। एक वार यमुना नदी के किनारे तपस्या करते समय, इसने रतिसुख में निमग्न एक मछली का जोड़ा देखा, जिसे देख कर इसके मन में विवाह की इच्छा उत्पन्न हुई। तदनुसार यह मांधातृ राजा

के पास गया, एवं इसने उसकी एक कन्या विवाह के लिए माँगी।

इसे बहुत मुद्दा देख कर राजा के मन में इस प्रस्ताव के प्रति श्रुणा उत्पन्न हुई। इसी कारण इसे परेशान करने के हेतु उसने झूठी मन्त्रता से कहा 'मेरी पचास कन्याओं में से जो भी कन्या आपका वरण करे उससे आप विवाह कर सकते हैं'।

मांधातृ का कपट पहचान कर इसने अपने बुद्धे रूप का त्याग कर, एक नवयुवक का रूप धारण किया, एवं इसी वेष में यह उसके अंतःपुर में गया। इसके नये रूप को देख कर मांधातृ की सभी कन्याओं ने इसका वरण किया। आगे चल कर अपनी हर एक पत्नी से इसे सौ सौ पुत्र उत्पन्न हुए।

इसप्रकार संसारसुख का यथेष्ट अनुभव लेने के पश्चात् इसके मन में पुनः एक वार वैराग्यभावना उत्पन्न हुई, एवं यह वन में चला गया। इसकी पत्नियाँ भी विरागी बन कर इसके साथ वन में चली गयी (भा. ९. ६.३८-५५; विष्णु. ४.२.३; पद्म. उ. २६२; गरुड १. १३८)।

२. एक ऋषि, जिसने गरुड को शाप दे कर, उसे यमुना नदी में आने में प्रतिबंध डाल दिया था (भा. १०. १७.१०)।

३. एक आचार्य, जो भागवत के अनुसार, व्यास की ऋषिशिष्यपरंपरा में से देवमित्र नामक आचार्य का शिष्य था।

४. एक ऋषि, जिसका आश्रम विंध्य पर्वत पर स्थित था। युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के समय अर्जुन इसके आश्रम में आया था, जहाँ इसने उसे उद्दालक ऋषि के द्वारा चंडी को दिये गये शाप की पुरातन कथा सुनायी थी। आगे चल कर इसने अर्जुन के द्वारा चंडी का उद्धार कराया (जै. अ. ९६)।

सौमदत्ति—यादव राजा भूरिश्रवन् का पैतृक नाम।

२. सावर्णि मनु का पैतृक नाम।

सौमनस्य—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार यज्ञवाहु राजा का पुत्र था (भा. ५.२०.९)।

सौमाप—मानुतंतव्य नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३.५.३.२)।

सौमापि—प्रियव्रत नामक ऋषि का पैतृक नाम, जो उसे सोमाप ऋषि का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (सां. आ. १५.१)।

सौम्यायन—बुध नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे सोम का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (पं. ब्रा. २४.१८.६)।

सौमुक—विश्वामित्र कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौम्य—एक पितरविशेष (भा. ४.१.६३)।

२. (सो. क्रोष्ट्र.) एक यादवराजा, जो मत्स्य के अनुसार श्वट् राजा का पुत्र था।

३. बुध ग्रह का पैतृक नाम।

सौयवसि—अर्जीगर्त ऋषि का पैतृक नाम (पं. ब्रा. ७. १५.६; सं. श्रां. १५.१९.२९)।

सौर—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौरभेय—एक ऋषि, जो दीर्घतमस् ऋषि का गुरु था (म. आ. १८.१०३८; पंक्ति १-२)।

सौरभेयी—एक अप्सरा, जो वर्गा नामक अप्सरा की सखी थी, एवं एक ब्राह्मण के शाप के कारण ग्राहवनी थी। आगे चल कर अर्जुन ने इसका ग्राहयोनि से उद्धार किया (म. आ. २०.८.१९; स. १०.११)।

सौरि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौर्य—एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित वैदिक सूक्त-द्रष्टाओं के लिए प्रयुक्त किया गया है:—१. अभितपस् (ऋ. १०.३७); २. धर्म. (ऋ. १०.१८१.३); ३. चक्षुस् (ऋ. १०.१५८); ४. विश्राज् (ऋ. १०.१७०)।

सौर्यायणिन् गार्ग्य—एक आचार्य, जो पिप्पलाद के पास 'स्वप्रविवा' के संबंध में प्रश्न पूछने गया था (प्र. उ. १.१.४.१)।

सौवर्चनस्—संश्रवस् नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. सं. १.७.२.१)।

सौवीर—सुवीर श्रेष्ठ नामक राजा का नामान्तर।

२. एक लोकसन्त, जिसका निर्देश सिंधु लोगों के साथ प्राप्त है। इन लोगों का विपुल नामक राजा अर्जुन के द्वारा मारा गया था (म. आ. परि. १.८०.४५)।

सौवीरी—सुवीर राजा की कन्या, जो मरुत् आविहित राजा की पत्नी थी (मार्क. १२८)।

२. पूर्वशोय मनसु राजा की पत्नी (म. आ. ८.७. ७)। पाठमंद—'शूरसेनी'।

सौवैष्ट—अंगिरस्कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौश्रवस्—उपगु नामक आचार्य का पैतृक नाम (पं. ब्रा. १४.६.८)। इसीके वंशज आगे चल कर 'संश्रवस्' नाम से सुविख्यात हुए (का. सं. १३.१२)।

सौश्रवस काण्व—एक आचार्य (का. सं. १३.१२)।

सौश्रुति—दुर्योधनपत्नीय एक राजा, जो विगर्तराज सुशर्मन् का भाई था। भारतीय युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. क. १९.१०)।

सौश्रोमतेय—आशुति नामक आचार्य का मातृक नाम, जो उसे 'सुश्रोमता' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ होगा (झ. ब्रा. ६.२.२.१.३७)।

सौषड्यन्—विश्वन्तर नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे सुषड्यन् का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (ए. ब्रा. ७.२७.१; ३४.७)।

सौसुक—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौह—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौह सोक्ति—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौहोत्र—एक पैतृक नाम, जो अजमिहळ एवं पुहमिहळ नामक आचार्य वेधुओं के लिए प्रयुक्त किया गया है (ऋ. ४.४३-४४)।

स्कंद—देवों का सेनापति, जो तारकामुर का वध करने के लिए इस पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था। सात दिनों की आयु में ही इसने तारकामुर का वध किया। पुराणों में सर्वत्र इसे शिव एवं पार्वती का, अथवा अग्नि का पुत्र माना गया है, एवं इसे 'छः मुनीवाला' (षण्मुख) कहा गया है।

जन्मकथा—इसके जन्म के संबंध में विभिन्न कथाएँ महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त हैं। ब्रह्मांड के अन्त, एकवार शिव एवं पार्वती जब एकांत में बैठे थे, उस समय इंद्र ने अश्रुबसुओं में से अनल नामक अग्नि के द्वारा उनके एकांत का भंग किया। इस कारण शिव के वीर्य का आधा भाग भूमि पर गिर पड़ा। अग्नि के इस औद्धत्य के कारण पार्वती अत्यंत क्रुद्ध हुई, एवं उसने अग्नि को शाप दे कर शिव का वीर्य धारण करने पर उसे विवश किया।

शिव के वीर्य को अग्नि ज्यादा समय तक धारण न कर सका, इसलिए उसने उसे गंगा को दे दिया। गंगा ने भी उसे कुछ काल तक धारण कर भूमि पर छोड़ दिया। आगे चल कर उसी वीर्य से स्कंद का जन्म हुआ (ब्रह्मांड. ३.१०.२२-६०; वायु. ११.२०-४९)।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इसकी जन्मकथा कुछ भिन्न प्रकार से दी गई है। एक बार सप्तर्षियों के यज्ञ में, अग्नि सप्तर्षियों के पत्नियों पर कामसक्त हुआ, एवं अपनी अप्रिय पत्नी स्वाहा को छोड़ कर उनसे रमण करने के लिए प्रवृत्त हुआ। अग्निपत्नी स्वाहा को यह बात होने ही वह अरुंधती के अतिरिक्त अन्य छः सप्तर्षि पत्नियों में

समाविष्ट हुई। पश्चात् उसे ही सप्तपिपत्नियों समझ कर अग्नि ने उससे संभोग किया। स्वाहा ने अग्नि से प्राप्त उसका सारा वीर्य एक कुण्ड में रख दिया, जिससे आंगे चल कर स्कंद का जन्म हुआ (म. व. २२३-२१४)। छः ऋषिपत्नियों के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण, इसे छः मुख प्राप्त हुए थे। अमावस्या के दिन इसका जन्म हुआ था।

यही कथा महाभारत एवं विभिन्न पुराणों में कुछ फर्क से दी गयी है (म. व. २२०.९-१२; पद्म. सू. ४४; स्कंद. १.१.२७; मत्स्य. १५८.२७-२८; वा. रा. वा. ३६)।

नामान्तर—महाभारत में इसके विभिन्न नामान्तर निम्न प्रकार दिये गये हैं :—१. स्कंद; जो नाम इसे 'स्कंद' वीर्य से उत्पन्न होने के कारण, अथवा दानवों का स्कंदन करने के कारण प्राप्त हुआ था; २. षण्मातुर, जो नाम इसे छः ऋषिपत्नियों के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण प्राप्त हुआ था; ३. कार्तिकेय, जो नाम इसे छः कृत्तिकाओं के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण प्राप्त हुआ था; ४. विशाख, जो नाम इसे अनेक शाखा (हाथ) होने के कारण प्राप्त हुआ था; ५. षण्मुख, जो नाम इसे इसके छः मुख होने के कारण प्राप्त हुआ था; ६. सेनानी अथवा देव सेनापति, जो नाम इसे देवों का सेनापति होने के कारण प्राप्त हुआ था; ७. स्वाहेय, जो नाम इसे अग्निपत्नी स्वाहा का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था (म. व. परि. १.२२); ८. सनत्कुमार—(म. व. १. ३; म. व. २१९)।

अस्त्रप्राप्ति—इसका जन्म होते ही विभिन्न देवताओं ने इसे निम्नलिखित अस्त्र प्रदान किये :—१. विष्णु—गरुड, मयूर एवं कुक्कुट आदि वाहन; २. वायु—पताका; ३. सरस्वती—वीणा; ४. ब्रह्मा—अज; ५. शंभु—मंडक; ६. जृम्भदैत्य—अपराजिता नामक शक्ति, जो इस दैत्य के मुख से उत्पन्न हुई थी (ब्रह्मांड. ३.१०.४५-४८)। इसका उपनयन संस्कार विश्वामित्र ऋषि ने किया (म. व. २१५.९)।

तारकासुर वध—तारकासुर का वध करने के लिए स्कंद ने अवतार लिया था। ब्रह्मा ने तारकासुर को अवध्यत्व का वर देते हु कहा था कि, इस सृष्टि में केवल सात दिन का अभेद ही केवल उसका वध कर सकता है। इसी कारण जन्म के पश्चात् सात दिनों की अवधि में ही इसने तारकासुर से युद्ध कर, उसका वध किया (पद्म. सू. ४४;

मत्स्य. १६०)। महाभारत में इसके द्वारा तारकासुर के साथ, महिषासुर का भी वध करने का निर्देश प्राप्त है (म. श. ४५.६४; अनु. १३३.१९; व. २२१.६६)।

इसका जन्म अमावस्या के दिन हुआ, एवं शुक्ल षष्ठी के दिन इसने तारकासुर का वध किया। तारकासुर का वध करने के पूर्व शुक्ल पंचमी के दिन देवों ने इसे क्रींच पर्वत पर (ब्रह्मांड. उ. ३.१०); स्थाणुतीर्थ में (म. श. ४१.७); अथवा वारुणित्तीर्थ में (पद्म. स्त. २७) सेनापत्य का अभिषेक किया। उसी दिन से यह देवों का सेनापति माना गया। शुक्ल पंचमी का इसका अभिषेक दिन, एवं शुक्ल षष्ठी का तारकासुर के वध का दिन कार्तिकेय की उपासना करनेवाले लोग विशेष पवित्र मानते हैं।

अन्य पराक्रम—तारक एवं महिषासुर के अतिरिक्त इसने त्रिपाट, हृदोदर, बाणासुर आदि राक्षसों का वध किया था (म. श. ४५.६५-८१)। इसने क्रींचपर्वत का अपने बाण से विदरण किया था, एवं अपने 'शक्ति' से हिमालय पर्वत उखाड़ देने की प्रतिज्ञा की थी (म. शां. ३१४.८-१०)।

ब्रह्मचर्यव्रत—तारकासुर के वध के पश्चात् पार्वती के अत्यधिक लाड प्यार से यह समस्त देवस्त्रियों पर अपनी पापवासना का जाल बिछाने लगा, एवं बलात्कार करने लगा। इसके स्वैराचार की शिकायत देवस्त्रियों ने पार्वती के पास की। इस पर पार्वती ने इसे सन्मार्ग पर लाने के हेतु, सृष्टि की हर एक स्त्री में अपना ही रूप दिखाना प्रारंभ किया। उन्हें देखते ही इसे कृतकर्मों का अत्यधिक पश्चात्ताप हुआ, एवं इसने पार्वती के पास जा कर प्रतिज्ञा की, 'आज में संसार की सारी स्त्रियाँ मुझे माता के समान ही हैं' (ब्रह्म. ८१)।

स्त्रियों के प्रति इसकी अत्यधिक विरक्त वृत्ति के कारण आगे चल कर इसका दर्शन भी उनके लिए अयोग्य माना जाने लगा। आज भी स्कंद का दर्शन स्त्रियाँ नहीं लेती हैं, एवं इसकी प्रतिमा के दर्शन से स्त्री को सात जन्म तक वैधव्य प्राप्त होता है, ऐसी जनश्रुति है। इस जनश्रुति के लिए पौराणिक साहित्य में कहीं भी आधार प्राप्त नहीं है; केवल मराठी 'शिवलीलामृत' ग्रंथ में यह कथा प्राप्त है (शिवलीला. १३)।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम देवसेना था, जिससे इसे शाख, विशाख, एवं नैगमेय नामक पुत्र प्राप्त हुए थे। पौराणिक साहित्य में शाख, विशाख, एवं नैगमेय को स्कंद के पुत्र नहीं, बल्कि भाई बताये गये हैं, एवं वे अनल नामक वसु एवं शंडिल्या के पुत्र बताये गये हैं

(यसु. १. देखिये)। महाभारत के अनुसार, एक बार इन्द्र के द्वारा इसके पीठ पर वज्र प्रहार करने से, उसी प्रहार से इसका विशाल नामक पुत्र, एवं कन्यापुत्र आदि पार्षद उत्पन्न हुए (म. व. २१७.१; २१९)।

कई अभ्यासकों के अनुसार इसकी पत्नी देवसेना एक स्त्री न हो कर, देवों के उस सेना का प्रतिरूप है, जिसका आधिपत्य इस पर रखा गया था।

स्कंद के पार्षद—इसके सप्तमाताओं के अभिप्रेत के समय विभिन्न देवताओं के द्वारा इसे अनेकानेक पार्षद, एवं महापार्षद दिये गये, जिनकी नामावलि महाभारत में दी गयी है (म. व. २१३-२२१; श. ४४-४५)।

मातृका—स्कंद के सप्तमाताओं को मातृका कहा जाता है, जिनकी नामावलि निम्नप्रकार प्राप्त है:—१. काकी; २. हलिमा; ३. माता; ४. हली; ५. आर्था; ६. बाला; ७. धात्री। इन सप्तमाताओं के ब्राह्मी, माहेश्वरी आदि विभिन्नगण भी प्राप्त हैं। इन मातृकाओं की, एवं इसकी, शिशुओं के आरोग्यप्राप्ति के लिए पूजा की जाती है।

स्कंद की अनुचरी मातृकाओं की नामावलि भी महाभारत में वविवृत रूप में प्राप्त है (म. व. २१३-२२१)। इन मातृका, एवं उनके साथ उपस्थित पुरुषग्रह स्कंद के ग्रह माने जाते हैं (म. व. २१९)। कई अभ्यासकों के अनुसार, 'स्कंदारस्मार' आदि 'स्कंदग्रह' अपस्मार आदि व्याधियों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

२. एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

३. धर्मपुत्र आयु नामक वसु का एक पुत्र (आयु ८. देखिये)।

स्कंदस—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्कंदस्वाती—(आंश्र. भविष्य.) एक अश्र्वत्थीय राजा, जो स्वाती राजा का पुत्र था (मत्स्य. २७३.६)।

स्कंध—एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

२. भृतराक्षुलोत्पन्न एक नाम, जो जन्मजय के संपत्तन में द्रव्य हुआ था।

स्कंध—एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

स्तनयित्नु—धर्मपुत्र विद्योत के पुत्रों का सामूहिक नाम (भा. ६.६.५)।

स्तनित—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्तंब—शाभपराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. स्वरोच्चिप मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

स्तंभमित्र शाङ्गी—एक शाङ्गीक पक्षी, जो मंगल ऋषि एवं जरितृ शाङ्गी का पुत्र था। खांडववनवाह से इसे अग्नि ने मुक्त कराया (म. आ. २२३.१२)।

२. एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१४२.७-८)।

स्तंभ—स्वरोच्चिप मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

२. एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

स्तुति—(स्वा. प्रिय.) प्रतिहर्तृ राजा की पत्नी, जिससे द्येय अज, एवं भूमन् नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ५.१५.५)।

स्तुत्यवत—(स्वा. प्रिय) एक राजा, जो कुवशीप के हिरण्यरतन् राजा का पुत्र था। इसके राज्य का नाम इसीके ही कारण 'स्तुत्यवत' नाम से प्रसिद्ध हुआ (भा. ५.२०.१४)।

स्तुत्र—मानु नामक अग्नि के छः पुत्रों में से एक।

स्तोक—एक गोप, जो कृष्ण का मित्र था (भा. १०. १५.२०)।

स्थंडिलेयु—(सो. पूरु.) एक राजा, जो रौद्राश्व राजा के दस पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम 'भृताची' था (भा. १०.२०.४)।

स्थपति—जन्मजय राजा का एक यत्न, जिसका मूल नाम लीहिताश था। इसे स्थलमापनादि अनेक शास्त्र अवगत थे (म. आ. ४०.१४; ५३.१२)।

स्थल—(यू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वल राजा का पुत्र था।

स्थलपिंड—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्थलेयु—एक राजा, जो रौद्राश्व राजा के दस पुत्रों में से एक था।

स्थविर कौंडिन्य—एक वैयाकरण, जिसके द्वारा 'भकार' का उच्चार सादृशासिक एवं तीव्रतर बताया गया है (तै. प्रा. १७.४)।

स्थविर जातुकर्ण्य—जातुकर्ण्य नामक आचार्य का एक उपाधि, जिसका शब्दशः अर्थ 'श्रेष्ठ' होता है (श्री. प्रा. ६.५.१)।

स्थविर शाकल्य—एक उच्चारशास्त्र आचार्य (ऋ. प्रा. १८५)। शतपथ ब्राह्मण में एक तत्त्व आचार्य के नाते इसका निर्देश प्राप्त है, जहाँ मानवीय प्राण में चक्षु, कर्ण आदि पंच इंद्रियों सूक्ष्मरूप से विद्यमान होने के इसके मत का निर्देश प्राप्त है (ऐ. आ. ३. २.१.६; सां. आ. ७.१६)। पाठभेद—'स्थवीर'।

स्थाणु—ग्यारह रुद्रों में से एक। यह ब्रह्मा का पौत्र, एवं 'स्थाणु' का पुत्र था (म. आ. ६०.३)। इसका प्रजापति से संवाद हुआ था (म. शां. २४९.१-१२)।

२. ब्रह्मा का एक मानसपुत्र, जो ग्यारह रुद्रों का पिता माना जाता है (म. आ. ६०.३)।

३. इन्द्रसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ७.१५)।

स्थान—सुख देवों में से एक।

स्थिरक गार्ग्य—एक आचार्य, जो वसिष्ठ चैकितानेय नामक आचार्य का शिष्य, एवं मशक गार्ग्य नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. २.)।

स्थूण—विश्वामित्र का एक पुत्र।

२. स्थूणाकर्ण नामक यक्ष का नामांतर।

स्थूणाकर्ण—एक ऋषि, जो पांडवों के वनवासकाल में उनके साथ द्वैतवन में निवास करता था (म. स. २७. २३)।

स्थूणाकर्ण—एक यक्ष, जिसने शिखण्डिन् को ध्वजा पुरुषत्व प्रदान किया था (शिखण्डिन् देखिये)। यह कुबेर का अनुचर था (म. उ. १९२.२०-२२)। पाठभेद—'स्थूण'।

स्थूलकर्ण—एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था।

स्थूलकेश—एक ऋषि, जिसने जंगल में अनाथ पड़ी हुई प्रमद्वारा को पालोस कर बड़ा किया था। आगे चल कर यही कन्या इसने कुरु ऋषि को विवाह में प्रदान की था (म. आ. ८)।

स्थूलशिरस्—एक ऋषि, जो 'अश्वशिरस्' ऋषि का पुत्र था। इसने विश्वावसु नामक गंधर्व को कबंध राक्षस बनने का शाप दिया था (यवक्रीत देखिये)।

स्थूलशक्ष—एक राक्षस, जो दूषण राक्षस का अमात्य था (वा. रा. अर. २३-३०)।

स्थैरकायन—मित्रवचस् नामक आचार्य का पैतृक नाम (वं. ब्रा. १)।

स्थैर—अग्निशूष (अग्निशूष) नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (ऋ. १०.११६)।

स्थौलाक्षीचि—एक वैयाकरण (नि. १०.३.१)।

स्नातप—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्पर्श—तृपित देवों में से एक।

स्फूर्ज—एक राक्षस, जो पौष माह में भग नामक तृष के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.४२)।

२. एक राक्षस, जो यातुधान राक्षस का पुत्र, एवं निकुम राक्षस का पिता था (ब्रह्मांड. ३.७.१५)।

स्फोटन—एक व्याकरणकार (अ. प्रा. १.१०३; २.३८)।

स्फोटायन—एक व्याकरणकार (पा. सू. ६.१. १२३)।

स्मदिभ—इन्द्र का एक शत्रु, जिसे उसने तुव्र के साथ कुन्त के अधिकार में सौया था (ऋ. १०. ४९.४)।

स्मय—स्वारोचिष मन्वन्तर का एक प्रजापति।

२. धर्म एवं पुष्टि का एक पुत्र।

स्मर—मरीचि एवं ऊर्जा के पुत्रों में से एक।

स्मरदूती—जालंधर दैत्य की वृंदा नामक पत्नी की एक सखी (पद्म. ३.९)।

स्मृत—स्वारोचिष मनु का एक पुत्र।

स्मृति—धर्म एवं मेधा के पुत्रों में से एक।

२. अंगिरस कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

३. दक्ष की कन्या, जो अंगिरस् ऋषि की पत्नी थी।

स्यातपायन—जपातय नामक पराशरकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

स्यावास्य—शिखण्डिन् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

स्यूमरदिभ—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.७७-७८)। यह अश्विनो के कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था, एवं अपने ब्रणों से उन्होंने इसकी रक्षा की थी (ऋ. १.११२.१६)। इसके घर में इंद्र सोमपान के लिए उपस्थित हुआ था।

२. एक ऋषि, जो कपिल ऋषि का शिष्य था। गोरूप धारण करनेवाले कपिल ऋषि से इसका प्रवृत्ति एवं निवृत्ति मार्ग के विषय में संवाद हुआ था (म. शां. २६०-२६२)।

स्योद—भद्र्य देवों में से एक।

स्ववस्—स्वायंभुव मन्वन्तर के जित देवों में से एक।

स्वकेतु—निमिबंधीय सुकेतु राजा का नामान्तर।

स्वधर्मेन्—वैवस्वत मनुपुत्र ऋष के पुत्रों में से एक (पद्म. सू. ८)।

स्वधा—दक्ष की एक कन्या, जो पितरों को हविर्भाग पहुँचानेवाले अंगिरस् ऋषि की पत्नी थी। इसकी वयुना एवं धारिणी नामक दो कन्याएँ; एवं पितर तथा अथर्व अंगिरस नामक दो पुत्र थे (भा. ४.१.६३; ६.६.९)।

स्वधामन्—उत्तम मन्वन्तर का एक देवगण ।

२. रवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक ।

३. ऋद्रसावर्णि मन्वन्तर का एक अवतार, जो सत्यसह एवं सुनता के पुत्रों में से एक था ।

स्वनद्वय—एक राजा, जो मेधातिथि का आश्रय दाता था (क. ८.१.३२) । छठविस के अनुसार यह आसङ्ग का ही नामान्तर था (छठविस, ऋग्वेद का अनुवाद- ३. १५०) ।

स्वनय भावयव्य—सिंधु देश का एक राजा, जिसने कक्षीवत् को उपहार प्रदान किया था (क. १.१२६. १) । बृहस्पति की कन्या रोमशा इसकी पत्नी थी । (क. १.१२६. ६-७; बृहदे. ३.१४५-१५५; सा.श्री. १६. ११५) । इसे 'स्वनय भाव्य' नामान्तर भी प्राप्त था ।

स्वभूमि—(सो. कुकुर.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार उग्रसेन राजा का पुत्र था ।

स्वमति—(य. विष्ट.) दिष्टवंशीय प्रमति राजा का नामान्तर (प्रमति ५. देखिये) ।

स्वमूर्धन—एक देव, जो सृगुक्वपि का पुत्र था ।

स्वमृडीक—सत्य देवों में से एक ।

स्वयप्रभा—एक अप्सरा, जो मेरुसपावर्णि की कन्या, एवं हेमा नामक अप्सरा की सखी थी । इसे प्रभावती नामान्तर भी प्राप्त था ।

इसकी सखी हेमा ने अपने स्वर्गवास के समय, मय के द्वारा तैयार किया गया देवी स्थान इसे प्रदान किया था । उसी स्थान के कारण इसे अनेकानेक देवी शक्तियाँ प्राप्त हुई थी । सीताशोच के लिए निकले हुए अंगदादि वानरों को इसने ही समुद्र के तट पर पहुँचाया था । आगे चल कर, राम के दर्शन से मुक्ति प्राप्त कर यह स्वर्गलोक चली गयी (वा. रा. कि. ५०-५२) ।

स्वयंप्रभु—अष्टाईस व्यासों में से एक ।

स्वयंभु ब्रह्मन्—अष्टाईस व्यासों में से एक ।

स्वयंभू—एक आचार्य, जो श्राद्धविधि का प्रथम पुरस्कृत माना जाता है (म. अनु. १९१) ।

स्वयंभोज—(सो. क्रोष्ट.) एक यादव राजा, जो मागवत के अनुसार शिनिराजा का पुत्र, एवं हविक राजा का पिता था (सा. ९.२४.४६) । विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः प्रतिक्षेत्र एवं प्रतिक्षिप्त राजा का पुत्र कहा गया है ।

स्वरक्षस—अष्टाईस व्यासों में से एक ।

स्वरपुरंजय—एक राजा, जो वायु के अनुसार मथुरा नगरी में राज्य करता था ।

स्वरवेदिन्—एक मेधर्व, जिसकी कन्या का नाम सुस्वरा था ।

स्वरा—मद्रदेशीय राजकन्या (पञ्च. उ. १०५) ।

२. उत्तानपाद एवं सूनता की कन्याओं में से एक ।

स्वराज्ञ—कर्दम प्रजापति की एक कन्या, जो अश्वदे आंगिरस की कन्या थी । इसके अग्रान्वय, उतथय, उशिति, गौतम एवं वामदेव नामक पाँच पुत्र थे (ब्रह्मांड. ३.१. १०२) ।

स्वराष्ट्र—एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम उत्पलावती, एवं पुत्र का नाम तामस मनु था (तामस ३. देखिये) ।

स्वरूप—वरुणलोक का एक असुर (म. स. ९.१४) । पाठभेद (भांडारकर सहिता)—सुरूप ।

स्वरोत्तिष्—एक राजा, जो कृत्वि राजा का पुत्र, एवं स्वरोत्तिष् (युतिमत्) मनु राजा का पुत्र था । इसकी माता का नाम वरधिनी था ।

इसे समस्त प्राणियों की भाषाएँ जानने की विद्या, एवं 'पश्चिमीविद्या' ज्ञात थी, जो इसे क्रमशः मंत्रविद्याधर की कन्या विभावरी, एवं पार यक्ष की कन्या कलावती से प्राप्त हुई थी (मार्क. ६१) ।

'पश्चिमी' विद्या के चल से इसने पूर्वदिशा में पूर्व-कामरूप में विजय, उत्तर दिशा में नंदवती नगर, एवं दक्षिण में ताल नगर नामक नगरों का निर्माण किया । एक बार एक हंसयुगल ने इसे कामासक्त कह कर इसकी आलोचना की, जिस कारण विरक्त हो कर यह वन में चल गया (मार्क. ६३) ।

परिवार—इसकी मनोरमा, विभावरी एवं कलावती नामक तीन पत्नियाँ थी, जिससे इसे क्रमशः विजय, मेरुमन्द, एवं प्रभाव नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे । आगे चल कर एक वनेदेवता से इसे स्वरोत्तिष् अर्थात् युतिमत् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जो आगे चल कर चक्रवर्ती सम्राट् बन गया ।

स्वर्ग—धर्म एवं यासी का एक पुत्र, जिसके पुत्र का नाम नदिन् था (भा. ६.६.६) ।

स्वर्जित् नाशजित्—एक राजा (श. ब्र. ८.१. ४.१०) ।

स्वर्णर—एक यज्ञकर्ता (क. ८.३.१२; १२.२) ।

स्वर्णरोमन्—(य. निमि.) बिदेह देश का एक राजा, जो महारोमन् जनक का पुत्र था ।

स्वर्णा—एक अप्सरा, जो वृन्दा की माता थी (पञ्च. उ. ४) ।

स्वर्भानवी—आयु राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम नहुष था (म. आ. ७०.२३)।

स्वर्भानु—एक असुर, जिसके द्वारा सूर्य को ग्रस्त करने का निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार प्राप्त है (ऋ. ५. २०.५-९)। पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट राहु ग्रह संभवतः यही है (राहु देखिये)।

इसने सूर्य को अंधकार से आवृत किया, एवं सारी सृष्टि हीनवीन बन गयी। आगे चल कर देवताओं ने साम का पठन कर इस ग्रहण को दूर किया (पं. ब्रा. ४.५.२; ६.१३)। यह ग्रहण अग्नि के द्वारा (पं. ब्रा. ६.६.८); सोम एवं रुद्र के द्वारा (श. ब्रा. ५.३.२.२) दूर होने का निर्देश भी प्राप्त है।

देवताओं के द्वारा ग्रहण नष्ट करने पर, उस विनष्ट अंधकार से अनेक वर्ण के मंडक उत्पन्न हुए, जिनके वर्ण क्रमशः काले, लाल, एवं सफेद थे। इन सारे मंडकों को आदित्य को दे कर देवताओं ने विभिन्न ओषधियों का निर्माण किया (तै. सं. २.१.२२; सां. ब्रा. २४.३)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे कश्यप एवं दनु का पुत्र कहा गया है (भा. ६.६.३; म. आ. ५९.२४; विष्णु. १.२१.५)। इसकी कन्या का नाम प्रभा (सुप्रभा) था (विष्णु. १.२१.५), जिसका विवाह नमुचि (भा. ६.६.३२), अथवा नहुष से हुआ था (ब्रह्मांड. ३.६.२३-२५)।

२. एक सैहिकेय असुर, जो जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका के पुत्रों में से एक था।

स्वर्वाथि—(स्वा. उत्तान.) वत्सर राजा की पत्नी, जो पुष्पाणि आदि यौच पुत्रों की माता थी (भा. ४.१३. १२)।

स्वइत—एक असुर, जो इंद्र का शत्रु था। इंद्र ने इसका वध किया (ऋ. २.१४.५)।

स्वश्रव—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्वश्व—एक राजा, जिसके पुत्र के रूप में स्वयं सूर्य ने जन्म लिया था। एक बार इसका एवं एतश राजा का युद्ध चालू था, उस समय इंद्र ने एतश के पक्ष को सहायता की। इस कारण यह एवं इसका पुत्र पराजित हुए (ऋ. ४.१७.१४)।

स्वसृप—कौशिक ऋषि के पुत्रों में से एक (पितृवर्तिन देखिये)।

स्वस्तिकर—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्वस्तितर—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्वस्त्यात्रेय—एक ऋषिसमुदाय, जिसका निर्देश ऋग्वेद में वैदिक सूक्तद्रष्टा के नाते प्राप्त है (ऋ. ५.५०-५१)। महाभारत में इन्हें अत्रिकुलोत्पन्न ऋषि कहा गया है (म.आ. ८.२०)। हरिवंश में इनकी संख्या दस बताया गयी है (ह. वं. १.३१.१७; प्रमाकर एवं अत्रि देखिये)।

स्वस्थली—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्वह—स्वारोचिष मन्वन्तर के देवगणों में से एक।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार यक्ष एवं दक्षिणा का पुत्र था (भा. ४.१.७)।

स्वागज—शक्तिपुत्र पराशर ऋषि का नामान्तर।

स्वागत—(सु. निमि.) एक राजा, जो वायु के अनुसार शकुनि राजा का पुत्र था।

स्वाति—सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक।

२. (आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा जो मेघस्वाति राजा का पुत्र था।

स्वातिवर्ण—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार कुन्तलस्वाति राजा का पुत्र था।

स्वायंभुव मनु—एक सुविख्यात राजा, जो स्वायंभुव नामक पहले मन्वन्तर का अधिपति मनु माना जाता है। 'मनुस्मृति' नामक सुविख्यात धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथ का कर्ता यही माना जाता है (मनु स्वायंभुव देखिये)।

राज्यविस्तार—भागवत में नवखण्डात्मक पृथ्वी का वर्णन प्राप्त है, जिनमें से भरतखंड नामक नौवाँ खण्ड आधुनिक भारतवर्ष माना जाता है। इस खण्ड में से ब्रह्मावर्त नामक प्रदेश में स्थित बर्हिष्मती नगरी का सर्वाधिक प्राचीन राजा स्वायंभुव मनु मना जाता है।

पृथ्वी का सम्राट—भागवत में स्वायंभुव मनु को समस्त पृथ्वी का सम्राट कहा गया है (भा. ३.२१.२५; २२. २९)। उस समय सारी पृथ्वी समतल एवं अखण्ड थी, वह आज की तरह समुद्रों में विभाजित न थी।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम शतरूपा (बर्हिष्मती) था, जिससे इसे प्रियव्रत एवं उत्तानपाद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए। इनमें से अपने ज्येष्ठ पुत्र प्रियव्रत को स्वायंभुव ने अपना पृथ्वी का सारा राज्य प्रदान किया।

प्रियव्रत के राज्यकाल में पृथ्वी में स्थित समुद्रों का विस्तार हुआ, एवं सारी पृथ्वी सात द्वीप एवं सात समुद्रों में विभाजित हुई। प्रियव्रत के कुल दस पुत्र थे, जिनमें से तीन बाल्यकाल से ही वन में चले गये। इसी कारण अपना सात द्वीपों का पृथ्वीव्याप्त राज्य प्रियव्रत ने अपने उर्वरित सात पुत्रों में बाँट दिये।

प्रियव्रत के द्वारा अपने सात पुत्रों में विभाजित किये गये सात द्वीपों के नाम, एवं उनका आधुनिककालीन संभाव्य भौगोलिक स्थान आदि निम्नलिखित तालिका में दिया गया है। प्राचीन-कालीन सप्तद्वीपसमूह पृथ्वी की भौगोलिक जानकारी की दृष्टि से यह तालिका अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जाती है:—

पुत्र का नाम	द्वीप	संभाव्य आधुनिक स्थान
अग्निध्र	जंबूद्वीप	एशिया खण्ड (इसी खण्ड में अग्निध्र की बाहिष्मती नामक नगरी थी)।
इक्ष्मजिह्व यज्ञबाहु	प्रक्षद्वीप शाल्मलिद्वीप	यूरप खण्ड। अटलैंटिस् खण्ड, जहाँ वर्तमानकाल में अटलैंटिक महासागर है।
हिरण्यरेतस् घृतपृष्ठ मेधातिथि कीर्तिहोत्र	कुशद्वीप क्रौंचद्वीप शाकद्वीप पुष्करद्वीप	आफ्रिका खण्ड। उत्तर अमरिका खण्ड। दक्षिण अमरिका खण्ड। दक्षिण भूखण्ड (अँटाटिका खण्ड)।

जंबूद्वीप की जानकारी—अग्निध्र को जंबूद्वीप का राज्य प्राप्त हुआ, जो आगे चल उसने अपने अपने नौ पुत्रों में विभाजित किया। प्राचीन जंबूद्वीप (एशिया-खण्ड) के भौगोलिक विभाजन की जानकारी प्राप्त करने की दृष्टि से, अग्निध्र का यह राज्यविभाजन अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है:—

पुत्र का नाम	द्वीपविभाग
इलावृत	इलावृतवर्ष।
रम्यक	रम्यकवर्ष।
हिरण्य	हिरण्यवर्ष।
कुरु	उत्तरकुरुवर्ष।
भद्राश्व	भद्राश्ववर्ष।
किपुरुष	किपुरुषवर्ष।
नाभि	नाभिवर्ष, जो आगे चल कर अजनामवर्ष अथवा भारतवर्ष नाम से सुविख्यात हुआ।

पौराणिक साहित्य में—एस साहित्य में हम ब्रह्मा का पुत्र कहा गया है, एवं सृष्टि एवं प्रजा की सृष्टि के लिए इसका निर्माण ब्रह्मा के द्वारा किये जाने का निर्देश यहाँ प्राप्त है (मत्स्य. ३.३१)। इस विराट नामान्तर भी प्राप्त था (मत्स्य. ३.४५)।

जन्म के समय यह अर्धनारी देहधारी था। आगे चल कर ब्रह्मा ने इसे आज्ञा दे कर, इसके शरीर से स्त्री एवं पुरुषात्मक दो भाग किये गये जिसमें से पुत्र्य देह भाग से यह, एवं स्त्री देहभाग से इसकी पत्नी शतरूपा बन गयी (मार्क. ५.०; विष्णु. १.७२; भा. ३.१२, ५३; वायु. १. १.१०)।

स्वायम्भू—कृशांन लतव्य नामक आचार्य का पौत्र नाम (पं. ब्रा. ८.६.८)।

स्वायम्भू—श्वेतपराशर कुलोत्पन्न एक गोत्रकर ऋषिगण।

स्वार—शिव देवों में से एक।

स्वारोचिष मनु—द्वितीय मन्वन्तर का अधिपति मनु, जो अग्नि का पुत्र माना जाता है (भा. ८.१.१९)। मार्कंडेय में इसे स्वरोचिप् राजा का वनदेवी से उत्पन्न पुत्र माना गया है। स्वरोचिप् का पुत्र होने के कारण, इसे स्वरोचिप पितृक नाम प्राप्त हुआ (मार्क. ६३; स्वरोचिप् देखिये)।

देवी भागवत में इसे प्रियव्रत का पुत्र कहा गया है। इसने अपने कल्पकाल में ही देवी का मूर्धभय मूर्ति बना कर, एवं केवल सत्य पत्ते खा कर देवी की अत्यंत कठोर उपासना की, जिस कारण इसे मन्वन्तराधिपत्य प्राप्त हुआ (दे. भा. १०.८)।

स्वाह—(सं. क्रौट्.) क्रौट्युवेशीय श्राद्ध राजा का नामान्तर।

स्वाहा—स्वायंभुव मन्वन्तर के दस एवं प्रसूति की एक कन्या, जो अग्नि की पत्नी थी। इसने अपने पुत्रायुष्य में अत्यधिक तप किया, जिस कारण देवों के हविर्भाग पहुँचाने का शुभकार्य इस पर सौंपा गया।

अग्नि से इने पावक, पञ्चमान एवं शुचि नामक तीन अधिस्वरूपा पुत्र, एवं स्वरोचिप मनु नामक मन्वन्तराधिप राजपुत्र उत्पन्न हुए (अश्व. २.४०; भा. ४.१.६०)।

एक बार इसने सप्तपत्नियों की पत्नियों का तप धारण कर अग्नि से संयोग किया, जिस कारण इसे ' स्कंद ' नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (भ. व. २.१४-२२०; स्कंद. १. देखिये)। आगे चल कर स्कंद ने अपनी माता को आशीर्वाद दिया, ' तुम यमस्त प्राणिमात्र काल्य पुत्र्य

रहोगी, एवं अग्नि में आहुति देते समय लोग 'स्वाहा' कह कर तुम्हारा नाम लेते रहेंगे' (म. व. २२०.५)।

२. वैवस्वत मन्वन्तर के बृहस्पति एवं तारा की एक कन्या, जो वैश्वानर अग्नि की पत्नी थी। इसके काम, अमोघ एवं उक्थ नामक तीन पुत्र थे (म. व. २०९.२३-२५)।

३. माहिष्मती के नीलध्वज राजा की कन्या, जो अग्नि की पत्नी थी (जै. अ. १५)।

स्वाहि—(सो. क्रोष्टु.) क्रोष्टुवंशीय स्वाहि राजा का नामान्तर।

स्वाहेय—स्कंद का मातृक नाम।

स्विष्टकृत्—एक अग्नि, जो बृहस्पति एवं तारा का एक पुत्र था (म. व. २०९.२१)।

स्विष्टयन—शौनक नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. ११.४.१.२-३)।

ह

हंस—ब्रह्मा का एक मानसपुत्र, जो आजन्म ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करता रहा (भा. ४.८.१)।

२. कृतयुग में उत्पन्न श्री विष्णु का एक अवतार, जिसने सनकादि आचार्यों को ब्रह्मा की उपस्थिति में योग की शिक्षा प्रदान की थी। इसे 'यज्ञ' नामान्तर भी प्राप्त था (भा. ११.१३.१९-४१)।

यह प्रजापति था, एवं इसने साध्यदेवों को मोक्षसाधन का कथन किया था। इसके द्वारा साध्यदेवों को दिया गया यही उपदेश महाभारत में 'हंसगीता' नाम से उपलब्ध है (म. शां. २८८)। भागवत में और एक 'हंस-गीता' दी गयी है, जिसमें 'मिशुगीता' भी समाविष्ट है (भा. ११.११-१३)।

३. साध्य देवों में से एक।

४. एक गंधर्व, जो कश्यप एवं अरिष्टा के पुत्रों में से एक था। इसीके ही अंश से धृतराष्ट्र का जन्म हुआ था (म. आ. ६१.७७)।

५. शिवदेवों में से एक।

६. (सो. वसु.) वसुदेव एवं श्रीदेवा के पुत्रों में से एक।

७. जरासंध का एक मंत्री, जो शाखाधिपति ब्रह्मदत्त का पुत्र था। इसके भाई का नाम डिम्भक था, एवं ये दोनों अन्नविद्या में परशुराम के शिष्य थे (ह. वं. ३.१०३)। महाभारत में इसके भाई का नाम 'डिम्भक' दिया गया है। ये दोनों भाई जरासंध के मंत्री, एवं सलाहगार के नाते काम करते थे।

प्रा. च. १३८]

शिक्षा—इसके मित्रों में विचक्र एवं जनार्दन प्रमुख थे। इनमें से जनार्दन, इसके पिता के मित्रसह नामक मित्र का पुत्र था।

हंस, डिम्भक एवं जनार्दन इन तीनों मित्र की शिक्षा एवं विवाह एक साथ ही हुआ था। आगे चल कर इसने एवं डिम्भक ने शिव की कड़ी तपस्या की, जिससे प्रसन्न हो कर शिव ने इन्हें युद्ध में अजेयत्व, एवं स्वसंरक्षणार्थ दो भूतपार्श्व इन्हें प्रदान किये थे। उसीके साथ ही साथ इन्हें रुद्रान्न, माहेश्वरास्त्र, ब्रह्मशिरास्त्र आदि अनेकानेक अस्त्र भी शिवप्रसाद से प्राप्त हुए थे (ह. वं. ३.१०५)।

दुर्वासस् का शाप—शिव से प्राप्त अस्त्रशस्त्रों के कारण, ये दोनों भाई अत्यंत उन्मत्त हुए, एवं सारे संसार को त्रस्त करने लगे। एक बार इन्होंने दुर्वासस् ऋषि को त्रस्त करना प्रारंभ किया, जिस कारण क्रुद्ध हो कर उस क्रोधी मुनि ने इन्हें विष्णु के द्वारा विनष्ट होने का शाप दिया (ह. वं. ३.१०७-१०८)। आगे चल कर अपने शाप का वृत्त दुर्वासस् ने द्वारका में जा कर कृष्ण से कथन किया, एवं इन उन्मत्त भाईयों की वध करने की प्रार्थना उससे की।

राजसूय यज्ञ—अगले साल इन्होंने राजसूय यज्ञ किया, एवं तद्देहु करभार प्राप्त करने के लिए अपने मित्र जनार्दन को इन्होंने कृष्ण के पास भेजा (ह. वं. ३.११३-११५)। कृष्ण ने इन्हें करभार देने से इन्कार किया, एवं युद्ध का आह्वान दिया। पश्चात् संपन्न हुए युद्ध में कृष्ण ने इसके मित्र विचक्र का वध किया,

एवं इसे लत्ताप्रहार कर पाताल में ढकेल दिया। वहाँ पाताल के सर्पों के दंश से इसकी मृत्यु हो गयी (ह. वं. ३.१२८)।

महाभारत के अनुसार, अपने भाई डिम्भक के वध की वार्ता सुन कर, इसने स्वयं ही यमुना नदी में क्रुद कर आत्महत्या कर ली (म. स. १३.४०-४२)।

जरासंध का विलाप—इनके वध की वार्ता ज्ञात होते ही जरासंध राजा ने अत्यधिक शोक किया, एवं दीर्घकाल तक विलाप करता रहा। आगे चल कर भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्विजय में जरासंध पर आक्रमण किया, उस समय भी उसने अपने इन दोनों स्वर्गीय मंत्रियों का स्मरण किया था (म. स. १३.३६)।

८. जरासंध की सेना का एक राजा, जो कृष्ण एवं जरासंध के दरम्यान हुए सत्रहवें युद्ध में बलराम के द्वारा मारा गया (म. स. १३.४२-४३)।

९. एक श्रेष्ठ पक्षी, जो कश्यपपत्नी ताम्रा का पौत्र, एवं ताम्राकन्या धृतराष्ट्री की संतान मानी जाती है (म. आ. ६०.२६)।

महाभारत में हंस पक्षियों का निर्देश अनेकवार आता है। सुवर्ण से विभूषित एक हंस ने नल एवं दमयंती के संदेश एक दूसरे को पहुँचा कर, उनमें अतुराग उत्पन्न किया था (म. व. ५०.१९-३२)।

भीष्म की मृत्यु के समय, सप्तर्षियों ने हंस का रूप धारण कर उसे दक्षिणायन में प्राणत्याग करने से रोका था (म. भी. ११४.९०)। एक हंस एवं काक का रूपकामक आख्यान भी कर्णाजिन युद्ध के समय निर्दिष्ट है (म. क. २८.१०-५४)।

हंसकायन—एक क्षत्रिय लोकसमूह, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भेट ले कर उपस्थित हुआ था।

हंसचूड़—कुबेरसभा का एक यक्ष (म. स. १०.१६)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—‘अंगचूड़’।

हंसजिह्व—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हंस-डिम्भक—शाल्वदेव का एक राजाद्वय, जो जरासंध के प्रमुख मंत्री एवं सलाहकार थे (हंस ७. देखिये)।

हंसध्वज—चंपक नगर का एक विष्णुभक्त राजा, जिसके विदूरथ, चंद्रकेतु, चंद्रसेन आदि बन्धु थे। इसके मंत्रियों के नाम सुमति, सुगति, तृष्ट एवं श्रद्धालु थे, एवं शंख एवं लिखित नामक वंशुद्वय इसके पुरोहित थे। अपने राज्य में इसने एकपत्नीव्रत का पुरस्कार किया था।

अर्जुन से युद्ध-युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के समय, अर्जुन के द्वारा रक्षण किया गया अश्व इसने पकड़ लिया, जिस कारण इसके सुधन्वन् एवं सुरथ नामक दो पुत्रों का अर्जुन ने वध किया।

पश्चात् अत्यधिक क्रुद्ध हो कर यह स्वयं युद्धभूमि में प्राविष्ट हुआ, एवं अर्जुन से युद्ध करने लगा। इससे युद्ध करने पर अर्जुन की निश्चित ही मृत्यु होगी, यह जान कर कृष्ण ने इन दोनों में मध्यस्थता की, एवं अश्वरक्षण के कार्य में अर्जुन की सहायता करने की इससे प्रार्थना की।

परिवार—इसके सुरथ, सुधन्वन्, सुदर्शन, सुबल एवं सम नामक पाँच पुत्र थे (जै. अ. १७.२१)।

हंसवक्त्र—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.७०)।

हंसिका—सुरभि नामक कामधेनु की एक गोस्वरूपा कन्या, जो दक्षिण दिशा को धारण करती है (म. उ. १००.८)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—‘हंसका’।

हंसी—भगीरथ राजा की कन्या, जो कौत्स ऋषि की पत्नी थी (म. अनु. २००.२६)।

हंडिदास—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हनुमत् अथवा **हनुमत्**—एक सुविख्यात वानर, जो सुमेरु के केसरिन् नामक वानर राजा का पुत्र, एवं किष्किंधा के वानरराजा सुग्रीव का अमात्य था। एक कुशल एवं संभाषणचतुर राजनीतिज्ञ, वीर सेनानी एवं निपुण दूत के नाते इसका चरित्र-चित्रण वाल्मीकि रामायण में किया गया है।

वाल्मीकि रामायण में इमे शौर्य, चातुर्य, बल, धैर्य, पाण्डित्य, नीतिमानता एवं पराक्रम इन दैवी गुणों का आलोक्य कहा गया है—

शौर्यं, दाक्ष्यं, बलं, धैर्यं, प्राज्ञता नयसाधनम्।

विक्रमश्च प्रभावश्च हनुमति कृतालयाः॥

(वा. रा. उ. ३५.३)।

इस प्रकार निपुण राजनीतिज्ञ, सम्योचित मंत्रणा देनेवाला सच्चित्तम, एवं महापराक्रमी वीर पुरुष हो कर भी यह विनम्रता, निरभिमानीता, दीनता, वाणी की मनोहारिता आदि सत्त्वगुणों से भी भरपूर था। इसी कारण एक पराक्रमी वीरपुरुष के नाते नहीं, बल्कि राम के परम-भक्त एवं दासानुदास के नाते ही लोग इसे पहचानते हैं, एवं यही सेवापरायणता इसका सर्वश्रेष्ठ विरह माना गया है।

• 'हनुमत्' एक द्राविड शब्द—'रावण' शब्द की मॉति 'हनुमत्' भी एक द्राविड शब्द है, जो 'आणमंदी' अथवा 'आणमंती' का संस्कृत रूप है; 'अण्' का अर्थ है 'नर', एवं 'मंदी' का अर्थ है 'कपि'। इस प्रकार एक नरवानर के प्रतीकरूप में हनुमत् की कल्पना सर्व-प्रथम प्रसृत हुई। इसी नरवानर को आगे चल कर देवता-स्वरूप प्राप्त हुआ, एवं उत्तरकालीन साहित्य में राम एवं लक्ष्मण के समान हनुमत् भी एक देवता माना जाने लगा।

गुणवैशिष्ट्य—हनुमत् की इस देवताविषयक धारणा में इसका अर्थ वानराकृति रूप यही सब से बड़ी भूल कही जा सकती है। सुग्रीव, वाल्मि आदि के समान यह वानरजातीय अवश्य था, किन्तु बंदर न था, जैसा कि, आधुनिक जनश्रुति मानती है। वाल्मीकिरामायण में निर्दिष्ट अन्य वानरजातीय वीरों के समान यह संभवतः उन आदिवासियों में से एक था, जिनमें वानरों को देवता मान कर पूजा की जाती थी (वानर देखिये)।

हनुमत् के व्यक्तित्व की यह पार्श्वभूमि भूल कर, उसे एक सामान्य वानर मानने के कारण इसका स्वरूप, पराक्रम एवं गुणवैशिष्ट्यों को काफी विद्वत स्वरूप प्राप्त हुआ है, जो उसके सही स्वरूप एवं गुणवैशिष्ट्यों को धूँसला सा बना देता है।

हनुमत् देवता का मूल स्रोत—कई अभ्यासकों के अनुसार, प्राचीन काल में हनुमत् कृषिसंबंधी एक देवता था, जो संभवतः वर्षाकाल का, एवं वर्षाकाल में उत्पन्न हुए वायु का अधिष्ठाता था। इसी कारण हनुमत् का बहुत सारा वर्णन वैदिक मरुत् देवता का स्मरण दिलाता है। यह वायुपुत्र बादलों के समान कामरूपधर, एवं आकाश-गामी है। यह दक्षिण की ओर से, जहाँ से वर्षा आती है, सीता अर्थात् कृषि के संबंध में समाचार राम को पहुँचाता है। इस प्रकार इंद्र के समान हनुमत् का भी संबंध वैदिककालीन वर्षादेवता से प्रतीत होता है।

औद्युगी शताब्दी तक यह रुद्रावतार माने जाने लगा, एवं इसके ब्रह्मचर्य पर जोर दिया जाने लगा। बाद में महावीर हनुमत् का संबंध, प्राचीम यक्षपूजा (वीरपूजा) के साथ जुड़ गया, एवं बल एवं वीर्य की देवता के नाते इसकी लोकप्रियता एवं उपासना और भी व्यापक हो गयी है। आनंद रामायण के अनुसार, पृथ्वी के सभी वीर हनुमत् के ही अवतार हैं :—

ये ये वीरास्वत्र भूम्यां वायुपुत्रांशरूपिणः।

(आ. रा. ८.७.१२३)।

हनुमत् देवता का सद्यःस्वरूप—भारतवर्ष के सभी प्रदेशों में हनुमत् की उपासना अत्यंत श्रद्धा से आज की जाती है, जहाँ इसे साक्षात् रुद्रावतार एवं सदाचरण का प्रतीक रूप देवता माना जाता है। आध्यात्मिक ज्ञान प्रदान करनेवाले शिव की, एवं व्यावहारिक कामनापूर्ति करनेवाले हनुमत्, भारत के सभी प्रांशों में आज सब से अधिक लोकप्रिय देवता हैं। इनमें से हनुमत् की उपासना आरोग्य, संतान आदि की प्राप्ति के लिए, एवं भूतपिशाच आदि की पीड़ा दूर करने के लिए की जाती है। हनुमत् का यह 'ग्रामदेवता स्वरूप' वाल्मीकि रामायण में निर्दिष्ट हनुमत् से सर्वथा विभिन्न है, एवं वह ई. स. ८ वीं शताब्दी के उत्तरकाल में उत्पन्न हुआ प्रतीत होता है।

जन्म—जैसे पहले ही कहा जा चुका है, यह सुमेरु के राजा केशरिन् एवं गौतमकन्या अञ्जना का पुत्र था। यह अञ्जना को वायुदेवता के अंश से उत्पन्न हुआ था, एवं इसका जन्मदिन चैत्र शुद्ध पुर्णिमा था।

इसके जन्म के संबन्ध में अनेकानेक कथाएँ पौराणिक साहित्य में प्राप्त हैं, जो काफी चमत्कृतिपूर्ण प्रतीत होती हैं। शिवपुराण के अनुसार, एक बार विष्णु ने मोहिनी का रूप धारण कर शिव को कामोत्सुक किया। पश्चात् मोहिनी को देख कर स्वलित हुआ शिव का वीर्य सप्तार्थियों ने अपने कानों के द्वारा अंजनी के गर्भ में स्थापित किया, जिससे यह उत्पन्न हुआ (शिव. शत. २०)।

आनंदरामायण के अनुसार, दशरथ के द्वारा किये गये पुत्रकामेष्टियज्ञ में उसे अग्नि से पायस प्राप्त हुआ, जो आगे चल कर उसने अपने पत्नियों में बाँट दिया। इसी पायस में से कुछभाग एक चील उड़ा कर ले गयी। आगे चल कर, वहीं पायस चील के चोंच से छूट कर तपकरती हुयी अंजनी के अंजुलि में जा गिरा। उसी पायस के प्रसाद से इसका जन्म हुआ।

मविध्यपुराण में इसके कुरूपता की मीमांसा इसे शिव एवं वायु का अंशावतार बता कर की गयी है। एक बार शिव ने अपने रौद्रतेज के रूप में, अंजनी के पति केशरिन् वानर के मुह में प्रवेश किया, एवं उसीके द्वारा अंजनी के साथ संभोग किया। पश्चात् वायु ने भी केशरिन् वानर के शरीर में प्रविष्ट हो कर अंजनी के साथ रमण किया।

इन दो देवताओं के संभोग के पश्चात् अंजनी गर्भवती हुई, एवं उसने एक वानरमुख वाले पुत्र को जन्म दिया, जो हनुमत् नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसका विरूप मुख देख

कर अंजनी ने उसे पवित्र के नीचे फेंकना चाहा, किंतु वायु की कृपा से यह जीवित रहा (मंत्रि. प्रति. ४.१३. ३१.३६)।

नामांतर—वाल्मीकि रामायण एवं महाभारत में इसे सर्वत्र 'वायुपुत्र', 'पद्मनाभज', 'अनिलात्मज', 'वायुतनय' आदि उपाधियों से भूषित किया गया है।

इसके अतिरिक्त इसे निम्नलिखित नामांतर भी प्राप्त थे :—१. मारुति, जो नाम इसे मरुतपुत्र होने के कारण, प्राप्त हुआ था; २. हनुमत्, जो नाम इसे इन्द्र के वज्र के द्वारा इसकी हनु टूट जाने के कारण प्राप्त हुआ था; ३. वज्रांग (वज्ररंग), जो नाम इसे वज्रदेही होने के कारण प्राप्त हुआ था; ४. बलभीम, जो नाम इसे अत्यंत बलशाली होने के कारण प्राप्त हुआ था।

अन्नप्राप्ति—यह बाल्यकाल से ही बलशैली से युक्त है, जिसके संबंध में चमत्कृतिपूर्ण कथाएँ विभिन्न पुराणों में प्राप्त हैं। एक बार अमावास्या के दिन अंजनी फल खाने गयी, उस समय भूला हुआ हनुमत् खाने के लिए फल टूटने लगा। पश्चात् उदित होनेवाले रक्तवर्णीय सूर्यदेव को देख कर यह उसे ही एक फल समझ बैठा, एवं उसे प्राप्त करने के लिए सूर्य की ओर उड़ा। उड़ान करते समय इसने राह में स्थित राहु को धक्का लगाया, जिससे क्रोधित होकर इंद्र से इसकी शिक्षायत की।

इंद्र ने अपना वज्र इस पर प्रहार किया, एवं यह एक पर्वत पर मूर्च्छित हो कर गिर पड़ा। अपने पुत्र को मूर्च्छित हुआ देख कर वायुदेव इंद्र से युद्ध करने के लिए उद्यत हुआ। यह देख कर समस्त देवतागण घबरा गया, एवं अंत में स्वर्धे ब्रह्मा ने मध्यस्थता कर हनुमत् एवं इंद्र में मित्रता प्रस्थापित की।

उस समय इंद्र के सहित विभिन्न देवताओं ने इसे निम्नलिखित अनेकानेक अन्न एवं वस्त्र प्रदान किये:— १. इंद्र—वज्र से अव्यक्त एवं हनुमत् नाम; २. सूर्य—सूर्यदेव का सौवें अंश, एवं अनेकानेक शास्त्र एवं अस्त्रों का ज्ञान; ३. बरुण—वरुणमाशों से अन्नदत्त्व; ४. यम—आरोग्य, युद्ध में अजेयत्व एवं चिरउत्साह; ५. ब्रह्मा—युद्ध में भयोत्साह, मित्रभयनाशकत्व, कामरूपवासिष्ठ एवं यथेष्टगामित्व; ६. शिव—अर्धाक्षुष, शास्त्रज्ञ एवं समुद्रोद्धरणनामार्थ्य (पञ्च. पा. ११४; उ. ६६; नारद १. ७९)।

कृषियों से ज्ञाप—देवताओं से प्राप्त अन्नशास्त्रों के कारण यह अत्यधिक उन्नत हुआ, एवं समस्त सृष्टि को

चला करने लगा। एक बार इसने भृगु एवं अंजित् कृषियों को चला किया, जिस कारण उन्होंने इम ज्ञाप दिया, 'अपने अगाध देवी सामर्थ्य का तुम्हें स्मरण न रहेगा, एवं कोई देवतातुल्य व्यक्ति ही केवल उसे पहचान कर उसका सुयोग्य उपयोग कर सकेगा'।

सुग्रीव का मंत्री—सूर्य ने इसे व्याकरण, सूत्रवृत्ति, गार्तिक, भाष्य, संग्रह आदि का ज्ञान कराया, एवं यह सर्वशास्त्रविद् बन गया। पश्चात् सूर्य की ही आज्ञा से यह सुग्रीव का स्नेही एवं बाद में मंत्री बन गया (शिव. शत. २०)।

सीताशोध के लिए किष्किन्धा राज्य में आये हुए राम एवं लक्ष्मण से परिचय करने के हेतु सुग्रीव ने इसे ही भेजा था। उस समय भिक्षुक का रूप धारण कर यह भंगारोत्तर गया, एवं अत्यंत मार्मिक भाषा में अपना परिचय राम को दे कर, किष्किन्धा राज्य में आने का उसका हेतु पूछ लिया।

संभाषणचतुर्थ—उस समय इसका वाक्चतुर्थ एवं संभाषण पदवि से राम अत्यधिक प्रसन्न हुआ :—

अविस्तरमपेदिग्धमविलम्बितमव्ययम् ।

उरस्थं कण्ठं वाच्यं वचने मध्यमस्वरम् ॥

संस्कारक्रमसंपन्नाम्, अद्रुतामविलम्बिताम् ।

उच्चारस्यति कल्याणीं वाचं हृदयहृदयिणीम् ॥

(वा. रा. कि. ४.३१-३२)।

(हनुमत् का संभाषण अविस्मृत, स्पष्ट, सुगंकारित एवं सुमंगत है। वह कंठ, हृदय एवं बुद्धि से एकसाथ उत्पन्न हुआ सा प्रतीत होता है। इसी कारण इसका संभाषण एवं व्यक्तित्व श्रोता के हृदय के लिए प्रसन्न, एवं हर्षजनक प्रतीत होता है)।

पश्चात् इसकी ही सहायता से राम एवं सुग्रीव ने मित्रता प्रस्थापित हुई। तदुपरांत राम एवं सुग्रीव में जहाँ कलह के, या मतभेद के प्रसंग आये, उस समय यह उन दोनों में मध्यस्थता करता रहा। चार्त्विन्वध के पश्चात् विपयोभोग में लित सुग्रीव को इसने ही जसाया, एवं राम के प्रति उसके कर्तव्य का स्मरण दिलाया (वा. रा. कि. २९)।

सीताशोध—सीताशोध के लिए दक्षिण दिशा की ओर निकले हुए वानरदल का यह प्रमुख नेता, एवं सीताशोध के लिए निकल पड़ा। इस कार्य के लिए जाते समय राक्षसों में यह कण्डुक कृषि का आश्रम, लोभ-

वन् एवं सुपर्णवन आदि होता हुआ तपस्विनी स्वयंप्रभा के आश्रम में पहुँच गया। स्वयंप्रभा ने इसे एवं अन्य वानरों को समुद्रकिनारे पहुँचा दिया। वहाँ जटायु का माई संपाति इससे मिला, एवं सीता का हरण रावण के द्वारा ही किये जाने का वृत्त उसने इसे सुनाया। उसी समय लंका में स्थित अशोकवन में सीता को वेदिनी किये जाने का वृत्त भी इसे ज्ञात हुआ (वा. रा. कि. ४८-५९)।

समुद्रोत्थान—लंका में पहुँचने में सब से बड़ी समस्या समुद्रोत्थान की थी। इसके साथ आये हुए बाकी सारे वानर इस कार्य में असमर्थ थे। अतएव इसने अकेले ही समुद्र लांघने के लिए छलांग लगायी। राह में इसे आराम देने के लिए मेरुपर्वत समुद्र से उभर आया। देवताओं के द्वारा भेजी गयी नागमाता सुरसा ने इसके सामर्थ्य की परीक्षा लेनी चाही, एवं पश्चात् इसे अंगीकृत कार्य में यशस्वी होने का आशीर्वाद दिया।

आग चल कर लंका का रक्षण करनेवाली सिंहिका राक्षसी इससे युद्ध करना चाही, किन्तु इसने उसे परास्त किया। पश्चात् एक सूक्ष्माकृति मन्थी का रूप धारण कर यह लंका पर्वत पर उतरा, एवं वहाँ से लंका में प्रवेश किया (वा. रा. सु. १; म. व. २६६)। वहाँ लंका-देवी को युद्ध में परास्त कर यह सीता शोध के लिए निकल पड़ा।

अशोकवन में—सीता को खोज करने के लिए इसने लंका के सारे मकान ढूँढे। पश्चात् रावण के सारे महल, शयनागार, भंडारघर, पुष्पक विमान आदि की भी इसने छानबीन की। किन्तु इसे कहीं भी सीता न मिली। अतः सीता की सुरक्षा के संबंध में यह अत्यंत चिंतित हुआ, एवं अत्यंत निराश हो कर वानप्रस्थ धारण करने का विचार करने लगा—

हस्तादानो मुखादानो नियतो वृक्षमूलिकः ।

वानप्रस्थो भविष्यामि अट्टवा जनकामजाम् ॥

(वा. रा. सु. १३.३८)।

(सीताशोध के कार्य में अयशस्विता प्राप्त होने के कारण यही अच्छा है कि, मैं वानप्रस्थ का स्वीकार कर, एवं विरागी बन कर यहीं कहीं फलमूल भक्षण करता रहूँ)।

सीता से भेंट—अंत में यह नलिनी नदी के तट पर स्थित अशोकवन में पहुँच गया, जहाँ राक्षसियों के द्वारा यातना पार्ती हुई सीता इसे दिखाई दी। वहाँ एक पेड़

पर बैठ कर इसने रामचरित्र एवं स्वचरित्र का गान किया, एवं अपना परिचय सीता से दिया। राम के द्वारा दी गयी अभिज्ञान की अंगूठी भी इसने उसे दी (वा. रा. सु. ३२-३५)।

पश्चात् अपने पाँट पर बिठा कर सीता को वंशमनुक्त कराने का प्रस्ताव इसने उसके सम्मुख रखा, किन्तु सीता के द्वारा उसे अस्वीकार किये जाने पर (सीता देखिये), इसने उसे आश्वासन दिया कि, एक महीने के अंदर राम स्वयं लंका में आ कर उन्हें मुक्त करेंगे (वा. रा. सु. ३८)।

लंकादहन—सीताशोध का काम पूरा करने के पश्चात् इसने चाहा कि वह रावण से मिले। अपनी ओर रावण का ध्यान खींच लेने के हेतु इसने अशोकवन का विध्वंस प्रारंभ किया। यह समाचार मिलते ही उसने पहले जंबुमालिन्, एवं पश्चात् विरूपाक्षादि पाँच सेना-पतियों के साथ अपने पुत्र अक्ष को इसके विनाशार्थ भेजा। किन्तु इन दोनों का इसने वध किया। पश्चात् इंद्रजित् ने इसे ब्रह्मास्त्र से बंध कर रावण के सामने उपस्थित किया (वा. रा. सु. ४१-४७)।

रावण ने इसके वध की आज्ञा दी, किन्तु विभीषण के द्वारा समझाये जाने पर इसके वध की आज्ञा स्थगित कर दण्डरुप इसकी पूँछ में आग लगाने की आज्ञा दी (वा. रा. सु. ५२)। इस समय अपनी माया से पूँछ बढ़ाने की, एवं रावणसभा में कोलाहल मचाने की चमत्कृतिपूर्ण कथा आनंदरामायण में प्राप्त है (आ. रा. सार. ९)। यहाँ तक की इसने रावण के मूँडदाटी में आग लगायी।

पश्चात् इसने अपनी जलती पूँछ से सारे लंका में आग लगायी। पश्चात् इसे यक्षक होश आया कि, लंका-दहन से सीता न जल जाये। यह ध्यान आते ही, यह पुनः एक बार सीता के पास आया, एवं उसे सुरक्षित देख कर अत्यंत प्रसन्न हुआ। राट में सीता को बंदन कर एक छलांग में यह पुनः एक बार महेंद्र पर्वत पर आया (वा. रा. सु. ५७-६१)।

सुग्रीव से भेंट—सीता का शोध लगाने का दुर्घट कार्य यशस्वी प्रकार से करने के कारण सुग्रीव ने इसका अभि-नंदन किया। पश्चात् राम ने भी एक आदर्श सेवक के नाते इसकी पुनः पुनः सराहना की (वा. रा. यु. १. ६-७)। उस समय राम ने कहा, 'हनुमत् एक ऐसा आदर्श सेवक है, जिसने सुग्रीव के प्रेम के कारण एक अत्यंत दुर्घट कार्य यशस्वी प्रकार से पूरा किया है

(सृष्ट्यकार्थं हनुमता सुग्रीवस्य कृतं महत्) (वा. रा. यु. १-६) ।

राम-रावण युद्ध में—इस युद्ध में समस्त वानरसेना का एकमात्र आधार, सेनाप्रमुख एवं नेता एक हनुमत् ही था । इस युद्ध में इसने अत्यधिक पराक्रम दिखा कर निम्नलिखित राक्षसों का वध किया:—१. जंबुमादिन् (वा. रा. यु. ४३); २. धूम्राक्ष (वा. रा. यु. ५१-५२; म. व. २७०, १४); ३. अकंपन (वा. रा. यु. ५५-५६), ४. देवान्तक एवं त्रिशिरम् (वा. रा. यु. ६९-७१); ५. वज्रवेग (म. व. २७१, २४) ।

रामरावण युद्ध के छठवें दिन रावण के ब्रह्मास्त्र के द्वारा नृशंखित हृष्ट लक्ष्मण को हनुमत् ने ही राम के पास लाया । पश्चात् इसके स्केभ पर आरूढ़ हो कर राम ने रावण को आहूत किया (वा. रा. यु. ५९; राम दायरथि देखिये) ।

इंद्रजित के द्वारा किये गये अदृश्ययुद्ध में जब वानरसेना का निर्वृण संहार हुआ, तब इसने ही हिमाचल के वृष शिखर पर जा कर वहाँ से संजीवनी, विशाखकिण्ठी, सुवर्णकिण्ठी, एवं संयान्ती नामक ओपवी वनस्पतियाँ ला कर वानरसेना को जीवित किया (वा. रा. यु. ७४) । पश्चात् युद्ध के अंतिम दिन रावण के द्वारा लक्ष्मण मूर्छित होने पर यह पुनः एक बार हिमालय के ओपधि पर्वत गया था । काफ़ी दूँदने पर वहाँ इसे वनस्पतियाँ न प्राप्त हुई । इस कारण सारा शिखर यह अपने बाँधे हस्त पर उठा कर ले आया (वा. रा. यु. १०१) । वाल्मीकि रामायण के अनुसार, इसने दो बार द्रोणागिरि उठा कर लाया था (वा. रा. यु. ७४; १०१) ।

युद्ध में इसके दिखाये पराक्रम के कारण राम ने अत्यधिक प्रसन्न हो कर कहा था:—

न कालस्य, न शक्रस्य, न विष्णोर्वित्तपस्य च ।

कर्मणि तानि श्रूयन्ते यानि युद्धे हनुमतः ॥

(वा. रा. उ. ३५, ८) ।

(इस युद्ध में हनुमत् ने जो अत्यधिक पराक्रम दिखाया है, वह इंद्र, विष्णु एवं कुबेर के द्वारा भी कभी किसी युद्ध में नहीं दिखाया गया है) ।

अयोध्या में—युद्ध समाप्त होने पर अयोध्या के सभी लोगों का कुशल देख आने के लिए, एवं सप्त को अपने आगमन का सूचना देने के लिए राम ने इसे भेजा था (वा. रा. यु. १२५-१२७; म. व. २६६) । राम के राज्याभिषेक के समय इसने समुद्र का जल लाया था,

जिसके फलस्वरूप सीता ने इसे अयना हार इसे भेट में दिया था ।

ब्रह्मचर्य—प्राचीन वाङ्मय में इस सर्वत्र 'ब्रह्मचरिन्' 'जितेंद्रिय' 'ऊर्ध्वरेतस्' आदि 'उपाधियों' में मूर्छित किया गया है । राम के अश्वमेधीय यज्ञ के समय हुए युद्ध में शत्रु आहूत हुआ, उस समय इसने अपने ब्रह्मचर्य के बल से उसे पुनः जीवित किया था (पद्म. पा. ४५, ३१) ।

चिरंजीवित्व—प्राचीन साहित्य में इसे सर्वत्र 'चिरंजीव' माना गया है । इसके चिरंजीवत्व के संबंध में एक कथा पद्य में दी है । युद्ध के पश्चात् राम की सेवा करने के हेतु, यह उसके साथ ही अयोध्या में रहने लगा । इसकी सेवावृत्ति से प्रसन्न हो कर राम ने इसे ब्रह्मविद्या प्रदान की, एवं वर प्रदान दिया, 'जब तक रामकथा जीवित रहेगी तब तक तुम अमर रहोगे' (पद्म. उ. ४०) ।

किंतु पद्य में अन्यत्र राम-रावणयुद्ध के पश्चात्, इसका सुग्रीव के साथ किष्किंधा में निवास करने का निर्देश प्राप्त है (पद्म. मृ. ३८) ।

महाभारत में इसे चिरंजीव कहा गया है, एवं इसका स्थान अजुन के रथध्वज पर वर्णन किया गया है । (म. व. १४७, ३७) । इसके द्वारा भीम का गर्वहर्ण करने का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. व. १४६, ५९-७९) ।

वाङ्मय—इसे ग्यारहवाँ व्याकरणकार कहा गया है, एवं इसके द्वारा विरचित 'महानाटक' अथवा 'हनुमन्नाटक' का निर्देश प्राप्त है ।

परिवार—इसके ब्रह्मचारी होने के कारण इसका अपना परिवार कोई न था । फिर भी इसके पत्नी के एक वृद्ध के द्वारा एक मछली से इसे मकरध्वज अथवा मरस्यराज नामक एक पुत्र उत्पन्न होने का निर्देश आनंद-रामायण में प्राप्त है (आ. रा. ७, ११; मकरध्वज देखिये) ।

मानस में—तुलसी के मानस में चित्रित किया गया हनुमत् एक सेतानी नहीं, बल्कि अधिकतर रूप में राम का परमभक्त है । यद्यपि मानस में इसके समुद्रातंवन, अशोक वाटिकाविश्वंख, लंकाग्रहण, गंधानादयुद्ध, कुंभकण्युद्ध आदि पराक्रमों का निर्देश प्राप्त है, फिर भी इन सारे पराक्रमों की सही पार्श्वभूमि इसका राम के प्रति अनन्य भक्ति की है । इसी कारण तुलसी कहते हैं:—

‘महावीर विनवउं हनुमाना ।

राम जासु जस आपु बरवाना ।

(मानस. १.१६.१०) ।

हन्तु—अमिताभ देवों में से एक ।

हय—तुपित एवं साध्य देवों में से एक ।

हयग्रीव—विष्णु का एक अवतार । यह अश्वमुखी होने के कारण इसे ‘हयग्रीव’ नाम प्राप्त हुआ था । इसे ‘हयशिरस्’ ‘अश्वशिरस्’ नामांतर भी प्राप्त थे (विष्णु देखिये) ।

स्वरूपवर्णन—अगस्त्य ऋषि को कांचीनगरी में इसके दिये दर्शन का वर्णन ब्रह्मांड में प्राप्त है, जहाँ इसे शंख, चक्र, अश्वचल्य एवं ‘पुस्तक’ (ग्रंथ) धारण करनेवाला कहा गया है (ब्रह्मांड. ४.५, ९.३५-४०) ।

वैदिक साहित्य में—इस साहित्य में सर्वत्र इसे विष्णु का नहीं, बल्कि यज्ञ का अवतार कहा गया है । किन्तु तैत्तिरीय आरण्यक में यज्ञ को विष्णु का ही एक प्रतिरूप कथन किया गया है । इससे प्रतीत होता है कि, वैदिक एवं पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट हयग्रीवकथा का स्रोत एक ही है, जिसका प्रारंभिक रूप वैदिक साहित्य में पाया जाता है ।

पंचविंश ब्राह्मण में हयग्रीव अवतार की कथा निम्न-प्रकार बतायी गयी है । एक बार अग्नि, इंद्र, वासु एवं यज्ञ (विष्णु) ने एक यज्ञ किया । इस यज्ञ के प्रारंभ में यह तय हुआ था कि, यज्ञ को जो हविर्भाग प्राप्त होगा, वह सभी देवताओं में बाँट दिया जायेगा । उस समय यज्ञ को सर्वप्रथम हविर्भाग प्राप्त हुआ, जिसे ले कर वह भाग गया । इस कारण बाकी सारे देव इसका पीछा करने लगे ।

अपने दैवी धनुष की सहायता से यज्ञ ने सभी देवताओं को हरा दिया । अन्त में एक दीमक के द्वारा देवों ने यज्ञ के धनुष की प्रत्यंचा कटवा दी, एवं इस प्रकार असहाय हुए यज्ञ का मस्तक कटवा दिया । तत्पश्चात् अपने कृतकर्म के लिए यज्ञ देवों से माफ़ी माँगने लगा । इस पर देवों ने अश्विनो के द्वारा एक अश्वमुख यज्ञ के कर्त्र पर लगा दिया (पं. ब्रा. ७.५.६; तै. आ. ५.१; तै. सं. ४.९.१) ।

पौराणिक साहित्य में—यही कथा स्कंद पुराण आदि पौराणिक साहित्य में कुछ मामूली फरक के साथ दी गयी है । एक बार देवाताओं की प्रतियोगिता में विष्णु सर्वश्रेष्ठ

देव सिद्ध हुआ । इस कारण क्रुद्ध हो कर, ब्रह्मा ने उसे उसका मस्तक टूट जाने का शाप दिया । आगे चल कर एक अश्वमुख लगा कर यह देवताओं के यज्ञ में शामिल हुआ । यज्ञसमाप्ति के पश्चात् इसने धर्मारण्य में तप किया, जहाँ शिव की कृपा से इसका अश्वमुख नष्ट हो कर इसे अपना पूर्वरूप प्राप्त हुआ ।

हयग्रीव असुर का वध—पौराणिक साहित्य में हयग्रीव एवं मधुकैटभ असुरों का वध करने के लिए श्रीविष्णु का हयग्रीव नामक अवतार होने का निर्देश प्राप्त है । एक बार हयग्रीव नामक असुर ने पृथ्वी में स्थित वेदों का हरण किया । उस पर ब्रह्मादि सारे देव हयग्रीव की शिषायत ले कर विष्णु के पास गये । पश्चात् विष्णु आदि देव हयग्रीव के पास पहुँच गये, जहाँ इन्होंने देखा कि, वह असुर भूमि पर अपने धनुष रख कर पास ही सो गया है । तदुपरांत विष्णु ने पास ही स्थित दीमक की सहायता से हयग्रीव असुर के धनुष की प्रत्यंचा को तोड़ डाला, एवं उसका नाश किया ।

हयग्रीव के धनुष की प्रत्यंचा टूटते ही विष्णु का स्वयं का मुख भी टूट गया, जो आगे चल कर विश्वकर्मन् की सहायता से पुनः जोड़ा गया । उस समय विश्वकर्मन् ने विष्णु को जो मुख प्रदान किया था, वह अश्व का था । इस कारण हयग्रीव असुर का वध करनेवाले इस अवतार को ‘हयग्रीव’ नाम प्राप्त हुआ (दे. भा. १.५) ।

देवी भागवत के अनुसार, हयग्रीव असुर को देवी का आशीर्वाद था कि, केवल ‘हयग्रीव’ नाम धारण करनेवाला व्यक्ति ही उसका वध कर सकती है । इस कारण हयग्रीव का अवतार ले कर विष्णु को इसका वध करना पड़ा । विष्णु के इस अवतार का निर्देश महाभारत में भी प्राप्त है (म. उ. १२८.४९; शां. १२२.४६; ३२६.५६) ।

रसातल में रहनेवाले मधु एवं कैकटक नामक राक्षसों का वध भी इसी अवतार के द्वारा होने का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. शां. ३३५.५२-५५; भा. ५. १८.१-६) ।

क्रम-पाठ—इसीके आराधना से पंचाल ऋषि ने वेदों का क्रमपाठ प्राप्त किया था (म. शां. ३३५.६९-७१) ।

२. एक असुर, जो कश्यप एवं दिति के पुत्रों में से एक था (पद्म. उ. २३०) । इसका जन्म पूर्वकल्प की रात्रि में हुआ था । पृथ्वीप्रलय के समय इसने वेदों का हरण किया जिन्हें हयग्रीव का अवतार ले कर श्रीविष्णु ने पुनः प्राप्त किया (हयग्रीव देखिये) । भागवत के अनुसार, इसका

वध हयग्रीव अवतार के द्वारा नहीं, बल्कि विष्णु के मत्स्या-वतार के द्वारा हुआ था (भा. ८.२४.९-५७) ।

२. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था । यह वृत्र का (भा. ६.१०.१९) ; हिरण्यकशिपु का (भा. ७.२.४) ; एवं तारकासुर का अनुगामी था ।

४. एक असुर, जो नरकासुर का प्रमुख अनुयायी, एवं उसके राज्य की रक्षा करनेवाले पाँच प्रमुख असुरों में से एक था । श्रीकृष्ण ने इसका वध किया (म. स. परि. १. १९.१३७७ ; उ. १२८.४९) ।

५. एक राजा, जिसने क्षात्रधर्मानुसार उत्तम रीति से राज्य कर मुक्ति प्राप्त की थी (म. शां. २५.२२-३३) ।

६. विदेहवंश का एक कुलांगार राजा (म. उ. ७२. १९) ।

हयगिरिस्—विष्णु के हयग्रीव नामक अवतार का नामांतर (हयग्रीव देखिये) ।

हर—एकादश रुद्रों में से एक (मत्स्य. ५.२९) ।

२. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था । यह सुबाहु राक्षस के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. आ. ६१.२४) ।

३. एक असुर, जो विभीषण का अमात्य था । यह मालिन् राक्षस का पुत्र था ।

४. रामसेना का एक प्रमुख वानर (वा. रा. यु. २७.३) ।

हरकल्प—एक सैहिकेय असुर, जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका के पुत्रों में से एक था । परशुराम ने इसका वध किया (वायु. ६८.१९) ।

हरप्रीति—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार गण । पाठ-भेद—' रसद्रीचि ' ।

हरयाण—एक दाता, जिसने विश्वामनस् को दान प्रदान किया था (ऋ. ८.२५.२२) । ऋग्वेद में इसका निर्देश उक्षण्यायन एवं वरोसुवापन के साथ प्राप्त है । सायणाचार्य के अनुसार, ये तीनों स्वतंत्र व्यक्ति न हो कर, हरयाण एवं उक्षण्यायन ये दोनों नाम एक ही वरोसुवापन की उपाधियाँ होगी (नि. ५.१५.) ।

हरि—श्रीकृष्ण का एक नाम, जो चतुर्व्यूह में से एक माना जाता है (म. शां. २२१.८-१७) ।

२. एक असुर, जो तारकाक्ष नामक असुर का पुत्र था । इसने तपस्या के द्वारा ब्रह्मा को प्रसन्न कर, असुरों के तीनों पुरों में मृतसंजीवनी वापियों का निमाण किया था ।

३. अकंपन राजा का पुत्र, जो अस्त्रविद्या में पारंगत एवं युद्ध में इंद्र के समान पराक्रमी था । भारतीय युद्ध में

यह पांडवों के पक्ष में शामिल था, जहाँ कौरव योद्धाओं के द्वारा इसकी मृत्यु हो गयी (म. द्रो. परि. १.२८. ४७ ; शां. २४८.७) । पाठभेद (भांडारकर संहिता)—' अविकंपक ' ।

४. पांडव पक्ष का एक वैद्य राजा, जो भारतीय युद्ध में कर्ण के द्वारा मारा गया था (म. क. ४०.५०) ।

५. यज्ञ एवं दक्षिणा के पुत्र सुयम का नामांतर । देवताओं का दुःख हरण करने के कारण ब्रह्माने इसे यह नाम प्रदान किया था (भा. २.७.२) ।

६. तामस मन्वंतर का एक देवगण ।

७. तामस मन्वंतर का एक अवतार, जो हरिमेषस् एवं हरिणी के पुत्रों में से एक था । विष्णु के इसी अवतार ने गजेन्द्र का उद्धार किया था (भा. ८. ३१) ।

८. गरुड़ के पुत्रों में से एक ।

९. अंगिरसकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

१०. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार ऋषभ एवं जयन्ती के पुत्रों में से एक था । इसीने ही निमि को ' भागवतोत्तमधर्म ' का उपदेश किया था (भा. ११.२.४५) ।

११. रावण पक्ष का एक असुर ।

१२. हरिहरपुर का एक कर्मठ ब्राह्मण, जिसके दुराचारी पत्नी को एक व्याघ्र ने खा डाला (पद्म. उ. १८७) ।

हरिकर्णी—अंगिरसकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

हरिकेश—गंधमादन पर्वत में रहनेवाले रत्नमद्र नामक यक्ष का एक पुत्र, जो शिव के कृपाप्रसाद से गणेश बन गया (मत्स्य. १८० ; पूर्णभद्र २. देखिये) ।

२. वसुदेव के द्यामक नामक भाई का एक पुत्र । इसकी माता का नाम शरभूमि था (भा. ९.२८.४२) ।

हरिजटा—एक राक्षसी, जो रावण के द्वारा अशोकवन में सीता के संरक्षणार्थ रक्खी गयी थी (वा. रा. सुं. २३.५) ।

हरिण—ऐरावतकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१०) ।

२. एक नैबला, जिसका निर्देश महाभारत के विडालोपाख्यान में प्राप्त है (म. शां. १३६.३० पाठ) ।

हरिणाश्व—एक राजा, जिसे रतुराजा के द्वारा द्विज खड्ग को प्राप्ति हुई थी । वही खड्ग आगे चलकर इसने शुनक राजा को प्रदान किया था (म. शां. १६०.७७) ।

हरिणी—तामस मन्वन्तर के हरि नामक अवतार की माता, जिसके पति का नाम हरिमेधस था।

२. हरिण्यकशिपु अमुर की एक कन्या, जो विश्वपति नामक अमुर की पत्नी थी। इसे रोहिणी नामान्तर भी प्राप्त था (म. व. २११.१८)।

हरित—(म. इ.) एक राजा, जो हरिश्चंद्र राजा का पौत्र, एवं रोहित राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम कप था। मत्स्य में इसे वृक कहा गया है (मा. १०.८.१)।

२. शात्मलिद्वीप में स्थित हरितवर्ष का एक राजा, जो स्वायम्भुव मनु के वपुष्मत् नामक पुत्र का पुत्र था (मार्क. ५०.२८; ब्रह्मांड. २.३२.३२)।

३. रुद्रसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

४. (म. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो युवनाश्र राजा का पुत्र था।

५. (सो. यदु.) यदु राजा का एक पुत्र, जो उसे धूम्रवर्णा नामक नागकन्या से उत्पन्न हुआ था। इसने समुद्रद्वीप में स्वतंत्र राज्य की स्थापना की। आगे चल कर उसी द्वीप में स्थित मद्रुर नामक गणों का यह प्रमुख बन गया (ह. वं. २.३८.२; २९.३४)।

हरित काश्यप—एक आचार्य, जो शिल्प काश्यप नामक आचार्य का शिष्य, एवं असित वाषिष्ण नामक आचार्य का गुरु था (बृ. उ. ६.५.३ काण्व.)।

हरितक—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हरिताश्व—दक्षिण देश का एक राजा, जो इल राजा का पुत्र था (पद्म. सू. ८)।

हरिदत्त—एक ब्राह्मण, जो हिमालय में रहनेवाले विमल नामक ब्राह्मण का पुत्र था (पद्म. उ. २०७; विमल ३. देखिये)।

हरिदास—एक वानर राजा, जो पुलह एवं श्वेता के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१८१)।

हरिद्रक—कश्यपकुलोत्पन्न एक नाग।

हरिधामन—एक ऋषि, जो वीस अक्षरों से युक्त कृष्णमंत्र का पाठ करने से, अगले जन्म में रंगवेणी नामक गोपी बन गया (पद्म. पा. ७२)।

हरिप्रिया—कृष्ण की एक पत्नी (पद्म. पा. ७०)।

हरिप्रीति—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हरिवभ्रु—युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित ऋषि (म. स. ४.१४)।

हरिभद्रा—कश्यप एवं क्रोधा की एक कन्या, जो पुलह ऋषि की पत्नी थी। इसके पुत्रों में वानर, किन्नर,

एवं किंपुरुषयोनि के लोग प्रमुख थे (ब्रह्मांड. ३.७. १७२)।

हरिमंत आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९. ७२)।

हरिमित्र—एक ब्राह्मण, जिसकी कथा 'कमला एकादशी' के त्रत का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है।

हरिमेध—एक व्यक्ति, जिसे सुमेध ऋषि ने तुलसी-माहात्म्य कथन किया था (स्कंद. २.४.८)।

हरिमेधस्—तामस मन्वन्तर के अवतार का पिता।

२. एक राजा, जिसके द्वारा किये गये सर्पसत्र को आधारभूत मान कर, जनमेजय ने अपना सर्पसत्र आयोजित किया था। इसकी कन्या का नाम ध्वजवती था, जो पश्चिम दिशा में निवास करती थी (म. उ. १०८.१३)।

हरिलोमन्—रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. ७३)।

हरिवर्मन्—(सो. तुर्वसु.) एक राजा, जिसके पुत्र का नाम एकवीर था। वंशावलि में इसका नाम अप्राप्य है (एकवीर देखिये)।

हरिवर्ष—(स्वा. प्रिय.) निपथ देश का एक राजा, जो आग्नीत्र एवं पूर्वचिन्ति का पुत्र था (भा. ५.२.१९-२३)। आगे चल कर इसका देश इसके ही 'हरिवर्ष' नाम से सुविख्यात हुआ (मार्क. ५०.३५)। यह देश हेमकूट पर्वत के उत्तर में स्थित था, जहाँ से अर्जुन ने अपने उत्तरदिग्बिजय के समय करभार प्राप्त किया था।

हरिवर्ष आंगिरस—एक सामद्रष्टा आचार्य (पं. ब्रा. ८.९.४.५)।

हरिवाहन—(सो. ऋक्ष.) ऋक्षवंशीय मणिवाहन राजा का नामान्तर।

हरिवीर—एक राजा, जो अपने नास्तिक मतों के कारण विदेवत नामक पिशाच बन गया (पद्म. पा. ९५; विदेवत देखिये)।

हरिदार्मन्—एक विष्णुमत्त ब्राह्मण, जिसकी कथा अन्नदान का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. क्रि. २०-२१)।

हरिश्चंद्र वैधस त्रैशंकव—एक सुविख्यात इक्ष्वाकु-वंशीय राजा, जो त्रिशंकु राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम सत्यवती था (म. स. ११.१३९६)। देवराज वसिष्ठ इसका गुरु था। शैब्या तारामती इसकी पत्नी थी (दे. भा. ७.१८; रोहित १. देखिये)।

वैदिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे 'वैवस' (वैवस राजा का वंशज), एवं 'विश्वामित्र' (इश्वामित्र राजा का वंशज) कहा गया है। ऐतरेय ब्राह्मण में इसकी कुल सौ पत्नियाँ होने का निर्देश प्राप्त है, एवं वरुण देवता को अपना रोहित नामक पुत्र दत्त के रूप में प्रदान करने के इसके आश्रासन का अस्पष्ट निर्देश वहाँ प्राप्त है (मि. ब्रा. ७.१४.२; सां. श्रौ. १५.१७)।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इसे समस्त भूगोलों का सम्राट् कहा गया है, एवं अपने जैत्र नामक रथ में बैठ अपने शस्त्रों के प्रताप से सातों द्वीपों पर विजय प्राप्त करने का निर्देश वहाँ प्राप्त है। इसके द्वारा किये गये राज्ययज्ञ के कारण इसे इंद्रसभा में स्थान प्राप्त हुआ था, एवं इसके ही उदाहरण से प्रभावित हो कर पाण्डु राजा ने अपने पुत्र युधिष्ठिर से राज्ययज्ञ करने का संदेश स्वर्ग से मंगा था (म. स. ११.५२-७०)।

विश्वामित्र से विरोध—अपने पिता विश्वामित्र के समान इसका पुरोहित सर्वप्रथम विश्वामित्र ही था। किन्तु आगे चल कर इश्वामित्र के भूतपूर्व पुरोहित वसिष्ठ देवराज की प्रेरणा से अपने राज्ययज्ञ के समय इसने विश्वामित्र ऋषि का अपमान किया। पश्चात् इस अपमान के कारण विश्वामित्र ने इसका पौरोहित्य छोड़ दिया, एवं देवराज वसिष्ठ पुनः एक बार इसका पुरोहित बन गया (विश्वामित्र देखिये)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में विश्वामित्र ऋषि के द्वारा इसे अनेकानेक प्रकार से शस्त करने की कल्पना-रम्य कथाएँ प्राप्त हैं (मार्क. ८-९)। ब्रह्म के अनुसार, विश्वामित्र के दक्षिणा की पूर्ति के लिए इसे स्वयं को, अपनी पत्नी तारामती को, एवं पुत्र रोहित को बेचना पड़ा। इनमें से तारामती एवं रोहित को इसने एक बृद्ध ब्राह्मण को, एवं स्वयं को एक स्मशानाधिकारी चांडाल को बेच दिया।

आगे चल कर, विश्वामित्र ने अपनी माया से रोहित का संपर्क के द्वारा बंध कराया। अपने पुत्र की मृत्यु से शोकविह्वल हो कर यह एवं तारामती आग्निप्रवेश के लिए उद्यत हुए। किन्तु वसिष्ठ एवं देवों ने इस आपत्प्रसंग से इसे बचाया, एवं इसका विगत वैभव एवं राज्य पुनः प्राप्त कराया (ब्रह्म. १०४; मार्क. ७-८)। पुराणों में निर्दिष्ट ये सभी कथाएँ, वसिष्ठ एवं विश्वामित्र का पुरातन विरोध कल्पनारम्य पद्धति में चित्रित करने के लिए दी गयी प्रतीत होती हैं।

पुत्रवलि—यह दीर्घकाल तक निःसंतान था। आगे चल कर वरुण की कृपाप्रसाद से इसे रोहित नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसके बड़ा होते ही पुत्रवलि के रूप में प्रदान करने का आश्रासन इसने दिया था। किन्तु आगे चल कर रोहित ने अपनी दत्त देन से इन्कार कर दिया, एवं वह अरण्य में भाग गया। वरुण को दिया गया आश्रासन पूर्ण न होने के कारण यह 'वरुण रोग' (जलोदर) से पीड़ित हुआ। यह शात होते ही रोहित अरण्य से लौट आया, एवं अपने स्थान पर युनःशेप नामक ब्राह्मणकुमार उसने प्रशस्ति के लिए तैयार किया। किन्तु विश्वामित्र ने युनःशेप की रक्षा की (रोहित एवं युनःशेप देखिये)।

हरिश्चरन्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के दत्तपुत्रों में से एक।

हरिश्चामिन्—एक ब्राह्मण, जिसकी कन्या का दाम सुलोचना था (सुलोचना देखिये)।

हरिषेण—ब्रह्मसामर्षि मनु का एक पुत्र।

हरी—करयप एवं क्रोधा की एक कन्या, जो इससगर के सिंह, वानर, अश्व एवं लकडवृक्षों की माना मानो जाती है (म. आ. ६०.६२)।

हर्यक्ष—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो पृथु राजा एवं अर्चिस का पुत्र था। अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् यह उसके पूर्व साम्राज्य का अधिपति बन गया।

२. कुण्डल नगरी के सुरथ राजा का पुत्र। इसके पिता के द्वारा राम के अश्वमेधीय अश्व पकड़ लिये जाने के समय, इसने राम की सेना के साथ युद्ध किया था (पद्म. पा. ४९)।

हर्यंग—(सो. अनु.) एक राजा, जो मन्थ के अह्वार चंप राजा का पुत्र, एवं भद्ररथ राजा का पिता था (मत्स्य. ४८.९८-९९)।

अपने पिता चंपक को यह पूर्णभद्र वैमाण्डिक ऋषि की कृपा से उत्पन्न हुआ था। वायु में इसे विश्वरथ राजा का पुत्र कहा गया है (वायु. ९९.१००)। इसके द्वारा किये गये अश्वमेध यज्ञ में, इसके गुरु पूर्णभद्र ने अपने मंत्र-प्रभाव से इंद्र का ऐरावत लया था (ब्रह्म. १३.८३; ह. वं. १.३१; मत्स्य. ४८.९८)।

हर्यन्त—(सो. शत्रु.) एक राजा, जो वायु के अनुसार जय राजा का पुत्र था (वायु. ९३.९)। किन्तु एवं भागवत में इसे क्रमशः हर्षवर्धन एवं हयन कहा गया है।

हर्यन्त प्रागाथ—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.७२)।

हर्यश्व—प्राचेतस दक्ष के दस हजार पुत्रों का सामूहिक नाम ।

२. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु, एवं वायु के अनुसार दृढाश्व राजा का पुत्र, एवं निकुंभ राजा का पिता था (भा. ९.६.२४) । मस्य में इसे प्रमोद राजा का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. १२.३३) ।

३. (सू. इ.) अयोध्या नगरी का एक राजा, जो भागवत के अनुसार अनरण्य राजा का, विष्णु के अनुसार प्रवक्ष राजा का, एवं वायु के अनुसार असदस्यु राजा का पुत्र था ।

एक बार ययातिकन्या माधवी के साथ गालव ऋषि इसकी राजसभा में आये, एवं उन्होंने दो सौ श्यामकर्ण अश्वों की माँग इससे की । पश्चात् इसने गालव को दो सौ अश्व दे कर, एक संतान पैदा कराने के लिए माधवी को अपनी पत्नी बना ली । माधवी के गर्भ से इसे वसु-मनस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ । पुत्रोत्पत्ति के बाद इसने माधवी को गालव ऋषि के पास वापस दे दिया (म. उ. ११४.२०) ।

परिवार—माधवी के अतिरिक्त इसकी निम्नलिखित दो पत्नियाँ थीं:—१. मधुमती, जो मधु दैत्य की कन्या थी, एवं जिससे इसे मधु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (ह. वं. २.३७); २. दृपद्वती, जिससे इसे अरुण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (ब्रह्मांड. ३.६३.७५) ।

४. काशीदेश का एक राजा, जो काशीराज सुदेव राजा का पिता, एवं दिवोदास का पितामह था । हैहय राजा वीतहव्य के पुत्रों ने इसका वध किया (म. अनु. ३०.१०-११) ।

५. (सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो धृष्टकेतु जनक राजा का पुत्र, एवं मनु राजा का पिता था ।

हर्यश्वि—नीलपराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

हर्यात्मन्—अष्टाईस व्यासों में से एक ।

हर्ष—धर्म के तीन पुत्रों में से एक । इसकी माता का नाम तुष्टि, एवं अन्य दो भाइयों के नाम शम एवं काम थे । इसकी पत्नी का नाम नन्दा था (म. आ. ६०. ३१-३२) ।

हर्षण—विश्वरूप नामक असुरपुरोहित का पुत्र, जिसकी माता का नाम विष्टि था । यमधर्म की उपासना कर इसने अपने मातापितरों का दुष्टरूप नष्ट किया (ब्रह्म. १६५) ।

हर्षवर्धन—क्षत्रवंशीय हर्यद्वन्त राजा का नामांतर ।

हल—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ।

हलधर—वलराम का नामान्तर (वलराम देखिये) ।

हलमय—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार । पाठभेद—'हलयम' ।

हला—अत्रिऋषि की पत्नी (ब्रह्मांड. ३.८.७५) ।

हलिक—कश्यपकुलोत्पन्न एक नाग (म. आ. ३१. १५) ।

हलीसक—वासुकिकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमे-जय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.५) ।
पाठभेद—'हलीमक' ।

हवन—न्यारह रुद्रों में से एक (म. अनु. १५०.१३) ।

हवि—स्वारोचिष मन्वन्तर का एक प्रजापति, जो वसिष्ठ ऋषि के पुत्रों में से एक था ।

हविःश्रवस्—(सो. कुरु.) एक राजा, जो धृतराष्ट्र (प्रथम) राजा का पुत्र था (म. आ. ८९.५१) ।

हविहन—स्वारोचिष् मनु का एक पुत्र ।

२. एक धर्मप्रवण नरेश (म. अनु. १६५.५८) ।

हविर्धान—एक तपःसिद्ध राजा, जो विजिताश्व एवं नभस्वती के पुत्रों में से एक था । इसकी पत्नी का नाम हविर्धानी था, जिससे इसे बर्हिषद, गय, शुक्ल, सत्य, जितव्रत एवं कृष्ण नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ४. २४.८) ।

हविर्धान आंगि—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ११.१२) ।

हविर्धानी—हविर्धान राजा की पत्नी ।

हविर्भू—कर्दम एवं देवहुति की एक कन्या, जो पुलस्त्य ऋषि की पत्नी थी । इसके पुत्रों के नाम अगस्त्य एवं विश्रवस् थे (भा. ३.२४.२२) ।

हविष्मत् आंगिरस—एक सामवष्टा आचार्य, जिसका निर्देश हविष्मत् आंगिरस नामक आचार्य के साथ प्राप्त है (पं. ब्रा. ११.१०.९-१०; २०.११.३; तै. सं. ७.१.४.१) ।

हविष्पद—विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र ।

हविष्मत्—चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक ।

२. धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक ।

३. इंद्रसभा का एक ऋषि (म. स. ७.११) ।

४. मरीचिगर्भलोक में निवास करनेवाला एक पितृ-समुदाय, जिसकी पूजा क्षत्रियों के द्वारा की जाती है । इनकी पत्नी का नाम कुहू था । इनकी मानसकन्या का

नाम यशोदा या, जो अंशुमन् राजा की पत्नी, एवं दिलीप राजा की माँ थी।

५. एक देव, जो अंगिरस् एवं सुरुषा के पुत्रों में से एक था (मन्व्य. १८६)।

हविष्मन् आंगिरस्—एक सामद्वय आचार्य, जिसका निर्देश हविष्मन् आंगिरस् नामक आचार्य के साथ प्राप्त है (हविष्मन् आंगिरस् देखिये)।

हविष्मती—अंगिरस् ऋषि की पाँच कन्याओं में से एक (म. व. २०८.६)।

हवीन्द्र—स्वरोचिप मन्वन्तर का प्रजापति, जो वसिष्ठ ऋषि का एक पुत्र था।

हव्य—स्वार्थसुव मनु का एक पुत्र।

२. हव्यवाहन नामक दशसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षि का नामान्तर।

३. सुव देवों में से एक।

४. आद्य देवों में से एक।

हृष्यधृ—एक राक्षस, जो भरद्वाज ऋषि के यज्ञाग्नि के धुँएँ से उत्पन्न हुआ था। एक बार भरद्वाज ऋषि ने गौतमी नदी के किनारे अपनी पैठीनसी नामक पत्नी के साथ एक यज्ञ प्रारंभ किया। उस यज्ञ के धुँएँ में से यह उत्पन्न हुआ, एवं हविर्द्रव्य भक्षण करने लगा।

भरद्वाज ऋषि के द्वारा पूछे जाने पर इसने कहा, 'मैं ब्रह्मा के द्वारा शापित एक अभागी व्यक्ति हूँ, एवं मेरा नाम हृष्यण है। मेरी प्रार्थना है कि, आप मुझे भोगोक्त, सुवर्ण एवं गोघृत एवं भोग से 'प्रोक्षण' करें, जिससे मैं मुक्त हो जाऊँगा'।

इसकी प्रार्थना के अनुसार, भरद्वाज ऋषि ने प्रोक्षण किया, जिस कारण यह मुक्त हुआ (ब्रह्म. १३३)।

हव्यप—रैवत मनु का एक पुत्र।

२. रौन्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

हव्यवन्—रैवत मनु का एक पुत्र।

हव्यचाह—धर नामक वसु का एक पुत्र।

२. पवमान नामक अग्नि का एक पुत्र।

हव्यवाहन—दशसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

हस्त—दक्ष की कन्या, जो सोम की पत्नी थी।

२. वसुदेव एवं रोचना के पुत्रों में से एक (भा. ९.२४. ४९)।

हस्तिकर्ण—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१.१४)।

हस्तिदान—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

हस्तिन्—(सो. पूर.) एक सुविख्यात पुरुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार बृहत्क्षत्र राजा का, एवं वायु के अनुसार सुहोत्र राजा का पुत्र था (भा. ९.२१.२०-२१; वायु. ९९.१६५)। महाभारत में इसे सुहोत्र एवं जयंती का पुत्र कहा गया है, एवं इसकी पत्नी का नाम त्रैगती यशोदा (यमोधरा) दिया गया है, जिससे इसे विकुण्डन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०.३६)। इसीने ही हस्तिनापुर नगर को नया वैभव प्राप्त करा दिया, जिस कारण उस नगर को 'हस्तिनापुर' नाम प्राप्त हुआ।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र (प्रथम) राजा का एक पुत्र।

हस्तिपद, **हस्तिपिण्ड** एवं **हस्तिभद्र**—कश्यपकुलोत्पन्न तीन नाग (म. आ. ३१.९; १४; उ. १०१. १३)।

हस्तिमुख—रावणवध का एक राक्षस (वा. रा. मु. ६)।

हस्तिन्द्र—स्वरोचिप मन्वन्तर का एक प्रजापति, जो कश्यप ऋषि का एक पुत्र था।

हार्य—एक राक्षस, जो ब्रह्मा के अश्रुचिन्दुओं से उत्पन्न हुआ था। शिवलिंग से निकली हुई एक ज्योति के कारण, यह भस्म हुआ (स्कंद. ५.२.४८)।

हार-हृण—पश्चिमभारत का एक लोकसमूह, जिसे नकुल ने अपने पश्चिमदिग्बिजय में जीता था (म. व. २९.११)।

हारिकर्णि—अंगिरस्कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हारिकर्णिपुत्र—एक आचार्य, जो भरद्वाजीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.४.३०)।

हारितक—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार

हारितायन—साखिसाहारितायन नामक कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

हारिद्रव—एक शाखाप्रवर्तक आचार्य, जो वैश्याणीय शास्त्रान्तर्गत माना जाता है। निरुक्त में इसके प्रणीत मतों का निर्देश 'हारिद्राविक' नाम से किया गया है (नि. १०.५)।

इसके द्वारा लिखित 'हारिद्राविक ब्राह्मण' नामक ग्रंथ का उद्धरण प्राप्त है, किन्तु वह ग्रंथ मूल स्वरूप में आज अप्राप्य है।

हारिद्रुमत गौतम—एक आचार्य, जो सत्यकाम जाबाल नामक आचार्य का शिष्य था (छां. उ. ४.४.३)।

हारीत—एक अंगिरसकुलोत्पन्न तत्त्वज्ञ, जिसके द्वारा प्रणीत संन्यास मार्ग का तत्त्वज्ञान 'हारीतगीता' नाम से सुविख्यात है। यही 'हारीतगीता' भीष्म ने युधिष्ठिर को कथन की (म. शां. २६९)।

२. एक ऋषि, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था। शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से भी यह मिलने आया था (म. व. २७.२३.)।

३. एक स्मृतिकार, जिसके पुत्र का नाम कमठ था (सं. १.२.५१)। इसके द्वारा विरचित 'लघुहारीत स्मृति' एवं 'बृहद् हारीत स्मृति' नामक दो स्मृति ग्रंथ आनंदाश्रम स्मृतिसमुच्चय में प्राप्त हैं।

इसमें से 'लघुहारीत स्मृति' में ११७ श्लोक हैं, एवं उसमें प्रायश्चित्त का विचार किया गया है।

अन्य स्मृतिग्रंथ—इसके द्वारा विरचित 'बृहद् हारीत स्मृति' के ११ अध्याय, एवं ३५४ श्लोक हैं, एवं उसमें श्रौतियों की उपासना आदि की जानकारी प्राप्त है। इसकी अन्य एक स्मृति व्यंजेश्वर प्रस के स्मृतिसंग्रह में प्राप्त है, जिसमें सात अध्याय हो कर चातुर्वर्ण्य के आचारों का विवेचन वहाँ प्राप्त है।

अभिमत—ब्रह्मचर्य एवं अपत्य के संबंध में इसके मतों के उद्धरण आपस्तंब एवं बौधायन धर्मसूत्र में प्राप्त हैं (आप. ध. १.१३.१०; १८.२; १९.१२; बौ. ध. २. १.२.२१)। ब्रह्मवादिनी स्त्रियों की उपनयन, एवं वेदाध्ययन का अधिकार मिलना चाहिये, ऐसा इसका अभिमत था (स्मृतिचं. १.२४)। इसके स्मृति में राजधर्म—विषयक भी अनेक अभिमत प्राप्त हैं, जो बहुशः अन्य स्मृतियों से लिए गये हैं।

अन्य ग्रंथ—इसके नाम पर एक शिक्षा ग्रंथ भी प्राप्त है।

४. (य. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार युवनाश्व राजा का, एवं विष्णु के अनुसार मांधातु राजा का पुत्र था (भा. ९.७.१)। 'आंगिरस हारीत' नामक सुविख्यात ब्राह्मण इसीके ही वंशज माने जाते हैं।

५. विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र।

६. एक आचार्य, जो व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था।

७. एक वैश्वानरवृत्ति ब्राह्मण, जिसने दिलीप राजा को माघस्तान का माहात्म्य कथन किया था। इस संबंध में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए, इसने दिलीप राजा को वसिष्ठ ऋषि से मिलने के लिए कहा था।

८. मौलिस्थान (मुल्तान) में रहनेवाला एक ब्राह्मण, जिसके पुत्र के रूप में स्वयं नृसिंह देवता ने जन्म लिया था (पद्म. उ. १७७)।

९. एक वैयाकरण (तै. प्रा. १४.१८)।

हार्दिभ्य—(सो. अंबक.) कृतवर्मन् नामक सुविख्यात यादव राजा का नामांतर (म. द्रो. ९.०.८; मा. १०.७५. ६; कृतवर्मन् देखिये)। इसकी मृत्यु के पश्चात् इसका पुत्र मालिकावत नगर की राजाद्री पर अधिष्ठित हुआ (म. मौ. ८.६७)। यह अश्वपति नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था। भारतीय युद्ध में यह पांडवपक्ष में शामिल था (म. उ. १९.१७)।

हाल—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. (आं. भविष्य.) एक सुविख्यात आंध्रवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार अरिक्तवर्ण राजा का, ब्रह्मांड एवं भागवत के अनुसार अनिष्टकर्मन् राजा का, एवं वायु के अनुसार नैमिष्ठाण राजा का पुत्र था। भागवत में इसे हाडेय कहा गया है।

हालाहल—एक असुर, जो शिव एवं विष्णु के द्वारा मारा गया (दे. भा. ७.२९-३०)।

हालिङ्ग—एक आचार्य (श. ब्रा. १०.४.५.९)।

हालेय—आंध्रवंशीय हाल राजा का नामांतर (हाल २. देखिये)।

हासिनी—कुबेरभवन की एक अप्सरा (म. अनु. १.९.१५)।

हाहा—एक गोत्रवर्त्य, जो कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था (म. आ. ११४.४८)। यह कुबेरसभा का एक सदस्य था। यह ज्येष्ठ माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है (मा. १२.११.३५)। पाठभेद—'हा हा'।

हिंसा—लोम एवं विहृती की एक कन्या, जो धर्म ऋषि की पत्नी थी।

हिंस्र—कौशिक ऋषि का एक पुत्र (पितृवर्तिन् देखिये)।

हिंडिच—एक नरमांसभक्षक राक्षसराज, जो किर्मीर राक्षस एवं हिंडिजा राक्षसी का भाई था (म. व. १२. ३२)। यह शाल के वृक्ष पर रहता था, एवं जंगल से जानेवाले पांथस्थों को भक्ष्य बनाता था। एक बार इसके जंगल में पांडव आ कर सो गये। उन्हें देख कर इसने अपनी बहन हिंडिजा को उनके पास भेजा, एवं उनका वध करने के लिए कहा। दैववशात् हिंडिजा राक्षसी भीमसेन पर मोहित हो गयी, एवं इसके द्वारा कहे गये कार्य को मूल बैठी। यह ज्ञान होते ही इसने भीमसेन पर आक्रमण

उसके गर्भ में स्थित बालक ने भी सुन लिया, जिस कारण वह जन्म से पूर्व ही विष्णुभक्त बन गया।

इस प्रकार हिरण्यकशिपु जैसे देवताविरोधी असुरके घर में ही, प्रह्लाद के रूप में एक सर्वश्रेष्ठ विष्णुभक्त का जन्म हुआ। आगे चल कर प्रह्लाद को शिक्षा देने के लिए नियुक्त किये गये गुरु ने भी उसे विष्णुभक्त के पाठ सिखाये।

हिरण्यकशिपु को यह ज्ञात होते ही, इसने प्रह्लाद की विष्णुभक्ति नष्ट करने के लिए हर तरह के प्रयत्न किये, यही नहीं, प्रह्लाद का काफ़ी छल भी किया। किन्तु प्रह्लाद अपने विष्णुभक्ति पर अटल रहा (प्रह्लाद देखिये)।

वध—एक बार यह अपने पुत्र प्रह्लाद की विष्णुभक्ति के संबंध में कटु आलोचना कर रहा था। उस समय पास ही स्थित एक खेव के ओर दृष्टिक्षेप कर, इसने बड़ी ही व्यंजना से प्रह्लाद से कहा, 'सारे चराचर में भरा हुआ तुम्हारा विष्णु इस खेव में भी होना चाहिये। तुम इसे बाहर आने के लिए क्यों नहीं कहते ?'

इतना कहते ही उक्त खेव से श्रीविष्णु का रौद्र वृसिंहावतार प्रकट हुआ; एवं उन्होंने अपने नाखुनों से सायंकाल के समय इसका वध किया। वृसिंह स्वयं अर्धमनुष्य एव अर्धपशु था। इस कारण, ब्रह्मा से प्राप्त अवध्यत्व के बरदान का भंग न करते हुए भी वह इसका वध कर सका।

पश्चात् प्रह्लाद के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, वृसिंह ने इसके सारे पूर्वपापों से इसे मुक्तता प्रदान की (वृसिंह देखिये)।

परिवार—इसकी निम्नलिखित तीन पत्नियाँ थी :—
१. जम्बकन्या कयाधु (भा. ६.१८.१२); २. उत्तानपादकन्या कल्याणी (पद्म. उ. २३८); ३. कीर्ति (वा.रा.सुं. २० २८)।

अपनी उपयुक्त पत्नियों से इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए थे :—१. प्रह्लाद; २. संह्लाद; ३. ह्लाद; ४. अनुह्लाद; ५. शिवि; ६. बाष्कल (भा. ६.१८.१३; विष्णु. १.१७. १४०; ह. वं. १.३; वायु. ६७.७०; म. आ. ५९.१८)।

अपने इन पुत्रों के अतिरिक्त इसकी निम्नलिखित कन्याएँ भी थी :—१. सिंहिका (भा. ६.१८.१३); २. हरिणी अथवा रोहिणी (म. व. २११.१८); ३. भृगुपत्नी दिव्या (वायु. ६५.७३; ६७.६७; ब्रह्मांड. ३.१.७४; भृगु देखिये)।

वंश—इसके पुत्रों से आगेचल कर, विभिन्न दैत्यवंशों का निर्माण हुआ, जिनकी संक्षिप्त जानकारी निम्न प्रकार है:—

(१) प्रह्लाद शाखा:—प्रह्लाद—विरोचन—गवेष्टिन्, कालनेमि, जंभ, बाष्कल, शंभु।

(अ) विरोचन शाखा:—विरोचन—वलि, बाण (सहस्रबाहु), कुंभनाभ, गर्दभाक्ष, कुशि आदि।

(ब) गवेष्टिन् शाखा:—गवेष्टिन्—शंभु, निशुंभ, विश्वकसेन।

(क) कालनेमि शाखा:—कालनेमि—ब्रह्मजित्, क्षत्रजित्, देवान्तक, नरान्तक।

(ङ) जंभ शाखा:—जंभ—शततुंदुभि, दक्ष, खण्ड।

(इ) बाष्कल शाखा:—बाष्कल—विराध, मनु, वृक्षायु, कुशलीमुख।

(फ) शंभु शाखा:—शंभु—धनक, असिल्येमन्, नाबल, गोमुख, गवाक्ष, गोमत्।

२. हृद शाखा:—हृद—निमुंद, सुंद।

(अ) निमुंद शाखा:—निमुंद—मूक, जो अर्जुन के द्वारा मारा गया।

(ब) सुंद शाखा:—सुंद—मारीच, जो राम के द्वारा मारा गया।

(३) संह्लाद शाखा:—संह्लाद—निवातकवच।

(४) अनुह्लाद शाखा:—अनुह्लाद—वायु (सिनीवाली)—हलाहलमण।

(५) सिंहिका शाखा:—सिंहिका—सिंहिकेय गण (ब्रह्मांड. ३.५.३३-४५; वायु. ६७.७०-८१; म. आ. ५९.१७-२०)।

२. एक दानव, जिसने एक अशुंद वपों के लिए सारे देवताओं का ऐश्वर्य शिव की कृपा से प्राप्त किया था। आगे चल कर इसने मेरुपर्वत को भी हिलया था (म. अनु. १४.७३-७४)।

हिरण्यकेशिन्—एक सुविख्यात आचार्य, जो कृष्ण यजुर्वेद के तैत्तिरीय शाखातर्गत हिरण्यकेशिन् नामक शाखा का सूत्रकर्ता माना जाता है। इसके द्वारा प्रणीत शाखा खाण्डवीय शाखा का पोटविभाग माना जाता है।

इसका सही नाम सत्यापाठ था, जिस कारण इसके द्वारा प्रणीत श्रौतसूत्र 'सत्यापाठ श्रौतसूत्र' नाम से प्रसिद्ध है। आद्य कल्प में यह ब्रह्मदत्त नाम से सुविख्यात था (महादेव कृत वैजयंती प्रस्तावना, १२-१४)। स्कंदोपपुराण के अनुसार, इसने सद्वादि के पूर्व में स्थित परशुराम क्षेत्र में हरणकाशि नदी के तट पर कड़ी तपस्या की, जिस कारण यह अनेकानेक सूत्रग्रंथों की रचना कर सका।

ग्रंथ—इसके द्वारा विरचित 'सत्यापाद श्रौतसूत्र' सुविख्यात है, जिसके निम्नलिखित उपभाग समाविष्ट हैं:—
१. सत्यापाद धर्मसूत्र (अ. २६-२७); २. सत्यापाद गृह्यसूत्र (अ. १९-२०); ३. सुल्वसूत्र (अ. २५)। इस सूत्र पर महादेव दिक्षित्र के द्वारा 'वैजयंती' नामक भाष्य प्राप्त है। इस सूत्रग्रंथ का अंतिम भाग भरद्वाज सूत्रों से लिखा गया है। इस सूत्र का आपस्तंब सूत्रों से भी काफी साम्य प्रतीत होता है।

हिरण्यकेशिन् लोग—इस शाखा के लोग सहाद्रि के पश्चिम में स्थित चिफ्फून आदि गाँवों में रहते हैं। इन लोगों का निर्देश पाँचवीं शताब्दी ई. स. के कोंगणी राजाओं के ताम्रपत्र में प्राप्त है। इससे प्रतीत होता है कि, हिरण्यकेशिन आचार्य, एवं इसके द्वारा विरचित सूत्रों का रचनाकाल पाँचवीं शताब्दी ई. स. पूर्व में कहीं होगा (इन्डि. अर्न्टि. ४.१३६)।

हिरण्यगर्भ—उत्तम मन्वन्तर में उत्पन्न ऊर्ध्व नामक ऋषि का पिता।

हिरण्यगर्भ राजापत्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१२१)।

हिरण्यद्—इंद्रसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ७.१६)।

हिरण्यवत्स वैद्—एक तत्त्वज्ञानी आचार्य (ऐ. ब्रा. ३. ६.३; ऐ. आ. २.१.५)। इसके द्वारा ब्रह्मकार का वर्णन किया है, एवं मानवीय प्राण अमिरूप होने का अभिमत इसके द्वारा प्रकट किया गया है (ऐ. ब्रा. ३.७)।

हिरण्यधनुस्—एक तिपाद राजा, जो एकलव्य का पिता था (म. आ. १२३.२४)। इसे हिरण्यधेनु नामान्तर भी प्राप्त था।

हिरण्यनाभ—हिरण्यनाभ कौशुमि नामक आचार्य का नाम (कौशुमि देखिये)।

हिरण्यनाभ कौसल्य—कोसल देश का एक राजा, जिसके पुरोधित का नाम पर आटनार था (सां. श्रौ. १६.९.१३)। प्रशोपलिपद में भी इसका निर्देश प्राप्त है। यह स्वयं सामवेदी श्रुतिवि, एवं योगाचार्य था। इसके पुत्र का नाम पुष्य था।

पौराणिक साहित्य में—भागवत के अनुसार यह विष्णुति राजा का, एवं दिष्णु तथा वायु के अनुसार यह व्यास की परंपरा में से सुकभन् नामक आचार्य का शिष्य था, एवं इसके शिष्य का नाम हृत था। इसने सामवेद की

१०५ संहिसाई बना कर उन्हें अपने विभिन्न शिष्यों में बाँट दी थी (वायु. ८८.२०७)।

यह स्वयं योगाचार्य भी था, एवं योगविषय में पीथंजि नामक आचार्य का शिष्य, एवं याज्ञवल्क्य नामक आचार्य का गुरु था।

हिरण्यरेतस्—(स्व. प्रिय.) कुशद्वीप का एक राजा, जो मागवत के अनुसार प्रियव्रत राजा के पुत्रों में से एक था। इसके निम्नलिखित सात पुत्र थे:—१. वसु; २. वसुदान; ३. दृढरुचि; ४. नाभिपुत्र; ५. सत्यव्रत; ६. विविकत एवं ७. वामदेव।

अपने इन पुत्रों को इसने अपना कुशद्वीप का राज्य प्रदान किया था, जो आंग चल कर उन्हीं पुत्रों के नाम से सुविख्यात हुआ (भा. ५.१.२५; २०.१४)।

२. विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हिरण्यरोमन् अथवा हिरण्यलोमन्—रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. रुक्मिणी के पिता भीष्मक का नामान्तर (म. उ. १५५.१)।

हिरण्यवर्मन् दाशार्थ—एक राजा, जिसने अपनी कन्या का विवाह शिखण्डिन् के साथ किया था। आगे चल कर शिखण्डिन् के स्त्रीत्व का ज्ञानकारी होने ही, कुपित हो कर इसने दुष्ट राजा पर आक्रमण किया (म. उ. १९०-१९३; शिखण्डिन् देखिये)।

हिरण्यवाह—ऋषयकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. वासुकिकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्वसभ में दग्ध हुआ था (म. आ. ५.२.६)। पाटलिपुत्र—'हिरण्यवाहु'।

हिरण्यशुंग—कुक्षर का एक वृत्।

हिरण्यस्तूप आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऐ. ब्रा. १.३२)। ऋग्वेद सप्तानुक्रमणी में ऋग्वेद के अन्य ऋग्वेद सूक्तों के प्रणयन का श्रेय भी इसे दिया गया है (ऋ. १.३१-३५; १.४; ६९)। ऐतरेय ब्राह्मण में आंगिरस नाम से इसका स्पष्ट उल्लेख किया गया है (ऐ. ब्रा. ३.२८.११)।

एक व्यक्ति के नाते इसका निर्देश ऋग्वेद एवं सतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है (ऋ. १०.१४९.५; वा. ब्रा. १.६. ४.२)।

हिरण्यहस्त—वधिमती नामक स्त्री का एक पुत्र, जो उसे अश्विनो के द्वारा प्रदान किया गया था (ऋ. १. ११६.१३; ११७.२४; वा. ब्रा. २.७; १०.३९.७)। ऋग्वेद में अन्धव हते श्याव कहा गया है (ऋ. १०.६५.१५)।

२. एक प्राचीन ऋषि, जिसे मदिराश्व राजा ने अपनी सुपथ्यमा नामक कन्या विवाह में दी थी (म. अनु. ५३. २३; १३७.२४; भां. २२६.३५)।

हिरण्याक्ष—एक दैत्य, जो कश्यप एवं दिति का एक पुत्र, तथा हिरण्यकशिपु का भाई था। यह स्वायम्भुव मन्वन्तर में उत्पन्न हुआ था (लिंग. १.९४)।

विष्णु से युद्ध—यह अत्यधिक पराक्रमी था, एवं देवों को काफी नस्त करता था। अन्त में इसके भय से सारे देवगण भाग गये। पश्चात् विष्णु ने इसके साथ युद्ध प्रारंभ किया। इस युद्ध में प्रारंभ से ही विष्णु की विजय होने लगी। यह देख कर यह पृथ्वी ले कर भागने लगा। किन्तु विष्णु ने इसका पीछा किया एवं वराह रूप धारण कर इसका वध किया (पद्म. सू. ७५)।

भागवत के अनुसार यह पृथ्वी ले कर समुद्र में भाग गया। वराहरूपी विष्णु ने पानी से पृथ्वी बाहर निकाली। इस समय वराह के पाँव के नीचे दब कर यह मारा गया (भा. ३.२८)।

इसके वध के पश्चात् इसके भाई हिरण्यकशिपु ने इसके वध का बदला देवों से लेना चाहा। किन्तु अन्त में वह भी वृसिंह अवतार के द्वारा मारा गया (हिरण्यकशिपु देखिये)।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम रुषामानु था, जिससे इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए थे:—१. उत्कुर (शंवर) २. शकुनि; ३. कालनाभ; ४. महानाभ; ५. विक्रान्त (सुविक्रान्त); ६. मृतसंतापन (मृतसंतापन) (वायु. ६७.६७-६८; ब्रह्मांड. ३.५.३०-३२)। विष्णु एवं भागवत में इसके पुत्रों की नामावलि में इंजैर, धृत, वृक एवं हरिश्मश्रु ये पुत्र अधिक दिये गये हैं (विष्णु. १. २०.३; भा. ७.२.१५)। इसके ये सारे पुत्र-पौत्रादि परिवार के साथ तारकासुरयुद्ध में विनष्ट हुए।

२. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

३. एक असुर, जो वैश्वानरकन्या का पति था (भा. ६.६.३४)। मत्स्य में इसे मथासुरकन्या उपशानवी का पति कहा गया है।

४. विश्वामित्र का एक पुत्र।

५. वसुदेव के श्याम नामक एक भाई का पुत्र। इसकी माता का नाम शरभू अथवा शूरभूमि था (भा. ९. २४.४२)।

प्रा. च. १४०]

हीक—एक पिशाच, जो विपाशा नदी के तट पर निवास करता था। इसके साथी का नाम वही था (म. क. ३०.४४; वाहीक एवं वाह्लीक देखिये)। पाठभेद (भांडारकर संहिता) - 'वाह्लीक'।

हीन—(सो. शत्र.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार सहदेव राजा का पुत्र, एवं जयसेन राजा का पिता था (भा. ९.१७.१७)।

हुंड—एक राक्षस, जो विप्रचित्ति दानव का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम विहुंड था। पार्वती की कन्या अशोक-सुंदरी पर इसका प्रेम था। किन्तु विवाह के प्रस्ताव को उसने नकार दिया। पश्चात् इसने स्त्री रूप धारण कर उसका हरण किया, उस समय उसने इसे शाप दिया, 'मेरा भावी पति नहुव तुम्हारा वध करेगा'।

नहुव से होनेवाले संभाव्य वध की आशंका से इसने उसका वध करना चाहा, किन्तु इसके सारे प्रयत्न असफल हुए। अन्त में उसने इसका वध किया (पद्म. भू. ११३-११८)।

हुत—अंगिरसकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. सुख देवों में से एक।

हुतहृदयवह—धर नामक वसु के दो पुत्रों में से एक। दूसरे वसु का नाम द्रविण था (म. आ. ६०.२०)।

हुण—एक लोकसमूह, जो मध्य एशिया से आये हुए विदेशीय जातिसमूह में से एक था। नकुल ने अपने पश्चिम दिग्विजय में इन लोगों को जीता था (म. स. २९. ११)।

हुहू—एक गंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था। यह कुबेर की सभा का, एवं इंद्र की सभा का सदस्य था (म. स. परि. १.३.२; व. ४४.१४)। अर्जुन के जन्मोत्सव में भी यह उपस्थित था (म. आ. ११४. ४८)।

देवल ऋषि के शाप से इसे नक्रयोनि प्राप्त हुई थी। किन्तु आगे चल कर गजेंद्र के साथ इसे भी मुक्ति प्राप्त हुई (भा. ८.४.३; आ. रा. सार. ९)। यह आषाढ माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३६)।

हत्स्वाशय आलुकेय महावृष राजन्—एक आचार्य, जो सोमशुभ सात्ययज्ञि प्राचीनयोगी का शिष्य, एवं जनश्रुत काण्डिव्य नामक आचार्य का गुरु था (जि. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

हृदिक अथवा **हृदीक**—(सो. क्रोटु.) एक भोजयंशीय यादव, जो कृतवर्मन का पिता था (म. आ. ५७.५२५७)। भागवत, विष्णु एवं वायु में इसे स्वयंभोज राजा का पुत्र कहा गया है। कृतवर्मन के अतिरिक्त इसके देवनाहु, शतधनु एवं देवनीह नामक अन्य पुत्र भी थे (भा. ९. २४.२६)।

मत्स्य एवं पद्म में इसे विदूरथपुत्र राज्यविदेव राजा का पुत्र कहा गया (पद्म. सू. १३)।

हृद्य—इंद्रसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ७. ११)।

हृषीक—सुतार नामक शिवावतार का एक शिष्य।

हृषीकेतु—ऋषि ऋषि के कोप से बचे हुए चार तगरपुत्रों में से एक (पद्म. उ. २०)।

हेति अथवा **हेतु**—एक असुर, जो प्रहेति नामक असुर का भाई था। इसकी पत्नी का नाम कालकन्या मया था, जिससे इसे त्रिशुकेश नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ६.१०.२०; वा. रा. उ. ४.१४)। यह वृषानुयायी असुरों में से एक था।

इसकी कन्या का नाम सुकेशी, एवं इसके भाई प्रहेति की कन्या का नाम मित्रकेशी था। इन दोनों कन्याओं का विवाह दुर्जय नामक असुर से हुआ था, जिनसे उसे क्रमशः प्रभव एवं सुदर्शन नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (वराह. १०)।

चैत्र माह के साथ भ्रमण करनेवाले असुरों की नामावलि में इसका निर्देश प्राप्त है।

हेम—(सो. अनु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार, उपद्रथ राजा का पुत्र, एवं सुतभू राजा का पिता था (भा. ९.२३.४)। मत्स्य में इसे 'सेन' कहा गया है।

हेमकंपन—एक राजा, जो भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. १३१.८५)। पाठभेद (भांडारकर संहिता) — 'सेमकंपन'।

हेमकान्त—कंगाधिपति कुशकेतु राजा का पुत्र। इसने शतर्षी नामक ऋषि का वध करने के कारण इसे ब्रह्महत्या का पातक लग गया था। आगे चल कर त्रित नामक ब्राह्मण को पानी पिलाने के कारण, यह ब्रह्महत्या के पातक से मुक्त हुआ (स्कंद. २.७.१२)।

हेमकुण्डल—निपथपुर का एक व्यापारी, जिसकी कथा 'दानमाहात्म्य' कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. स्व. ३०)।

हेमकूट—वरुणपुत्र एक वानर, जिसकी जन्कारी रावण के शार्दूल नामक गुप्तचर ने उसे कथन की थी (वा. रा. सु. ३०)।

हेमगुह—कश्यपकुलोत्पन्न एक नाग (म. आ. ३१.९)।

हेमचंद्र—(मू. विद्.) एक राजा, जो विशाल राजा का पुत्र एवं सुचेद्र राजा का पिता था (भा. ९.२.३४)।

हेमधन्वन्—धर्मसावर्णि मनु का एक पुत्र।

हेमधर्म—अविश्वित् राजा की पत्नी दरा का पिता (माके. ११९.१६)।

हेमनेत्र—कुवेरसभा का एक यक्ष (म. स. १०. १६)।

हेमप्रभा—कांचनपुर के वरुण नामक ब्राह्मण की स्त्री, जिसकी कथा 'परिव्रतिनी एकादशी' का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. ब्र. १६)।

हेमप्रभावती—चेतायुग के श्रीधर नामक ब्राह्मण की स्त्री, जिसकी कथा 'वालवत' का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. ब्र. २५)।

हेमालिन्—कुवेर का एक यक्ष, जिसकी कथा 'योगिनी एकादशी' के व्रत का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. उ. ५२)।

२. खर राक्षस का एक अमात्य (वा. रा. भा. २३.३२)।

३. दुषद का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में अश्वत्थाम के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. १३१.२८)। पाठभेद (भांडारकर संहिता) — 'रुक्ममालिन्'।

हेमवर्षी—गरुड का एक पुत्र

२. रोचमान राजा का पुत्र, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवपक्ष में शामिल था। इसके अश्व कमल के रंग के थे।

हेमवर्मन्—दशार्णाधिपति हिरण्यवर्मन का नामान्तर।

हेमसदन्—एकादश स्त्री में से एक।

२. मगध देश का राजा, जिसके पुत्र का नाम बुध था (स्कंद. १.२.४०)।

हेमा—एक अम्बरा, जो मयासुर की पत्नी थी। इस के निवासस्थान में से इंद्र के द्वारा भगया दिवे जने पर, इसने वह स्थान अपनी सखी स्वयंप्रजा को दे दिया (वा. रा. कि. ५०.२२, उ. १२. मय १ देविवे)।

हेमांग—(मू. इ.) एक राजा, जिसकी कथा विद्वत् परामर्ष माहात्म्य कथन करने के लिए स्कंद में दी गयी है (स्कंद. १.१६)।

हेमांगद--(सो. वसु.) वसुदेव एवं रोचना का एक पुत्र

२. (सू. इ.) एक राजा (स्कंद. २.६)।

हेमांगी--द्रविड देश के वीरवर्मन् राजा की पत्नी, जिसकी कथा पद्म में प्रयागक्षेत्र का माहात्म्य कथन करने के लिए दी गयी है (पद्म. उ. २२१-१२२)।

हेरंब--शिवकांची का एक शिवभक्त, जिसकी कथा शिव एवं विष्णु का विरोध चित्रित करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. उ. २२२)।

हैतनामन आहूत--एक आचार्य (मै. सं. ३.४.६)।

हैमवत--एक यक्ष, जो मणिवर एवं पुण्ड्रिणी के पुत्रों में से एक था।

हैमवती--पार्वती का पैतृक नाम।

२. विश्वामित्र ऋषि की पत्नी (म. उ. ११५.१३)।

३. कृष्ण की एक पत्नी, जो उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके साथ सती हो गयी (म. मौ. ८.७१)।

हैमिनी--विक्रान्त राजा की पत्नी, जिससे इसे चैत्र नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। जातहरिणी ने इसके पुत्र का हरण किया था, किन्तु आगे चले कर, इसके पति विक्रान्त ने अपने पुत्र को पुनः प्राप्त कराया (मार्क. ७३)।

हैरण्यनाभ--पर आटनार नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रां. १३.५.४.४)।

हैहय--क्षत्रियों का एक कुल, जिसका संहार परशुराम ने किया था। इस वंश में उत्पन्न निम्नलिखित राजाओं का निर्देश महाभारत में प्राप्त है--१. कार्तवीर्य अर्जुन, जो परशुराम के द्वारा मारा गया (म. स. परि. १.२१. ४३०-४९०); २. परपुरंजय, जिसने हैहय वंश की प्रतिष्ठा कतिपय बढ़ायी थी (म. व. १८२.३-५); ३. उदावर्त, जो एक कुलांगार नरेश था (म. उ. ७२.१३); ४. अर्जुन कार्तवीर्य, जो कुतवीर्य राजा का पुत्र था (म. शां. ४९.३०.४३); ५. सुमित्र (म. शां. १२५.९)।

चंद्रसेनीय कायस्थ प्रभु ज्ञाति का आद्य पुरुष चंद्रसेन हैहयवंशीय ही था (कायस्थ धर्मप्रदीप)। किन्तु हैहय वंशावलि में उसका नाम अप्राप्य है।

२. (सू. शर्याति.) शर्याति वंश में उत्पन्न एक राजा, जो हैहय वंश का आद्य संस्थापक माना जाता है। यह वत्स राजा का पुत्र था, एवं इसे वीतहव्य नामान्तर प्राप्त था (म. अनु. ३०.७-८; वीतहव्य देखिये)। आगे चले कर, यह भृगु ऋषि का शिष्य बन कर ब्राह्मण हुआ (म. अनु. ३०.५४-५७)।

होड--एक ऋषि, जिसने बकुलासंगम पर तप किया था (पद्म. उ. १३८)।

होत--पारावत देवों में से एक।

होत्रक--(सो. अमा.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार कांचन राजा का पुत्र, एवं जहू राजा का पिता था (भा. ९.१५.३)। वायु में इसे सुहोत्र कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम कांचनप्रभ दिया गया है।

होत्रवाहन--सृजय नामक राजर्षि का पैतृक नाम।

होम--सुख देवों में से एक।

होदोदर--एक राक्षस, जो स्कंद के द्वारा मारा गया (म. श. ४५.६६)।

ह्रस्वकर्ण--रावणपक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६.)।

ह्रस्वरोमन्--(सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत एवं वायु के अनुसार स्वर्णरोमन् राजा का पुत्र, एवं सीरध्वज एवं कुशध्वज जनक राजाओं का पिता था (भा. ६.१८.१३)। विष्णु में इसे सुवर्णरोमन् राजा का पुत्र कहा गया है।

हाद--एक नाग, जो बलराम के परधाम गमन के समय स्वागत के लिए उपस्थित था (म. मौ. ५.१५)।

२. हिरण्यकशिपु एवं कयाधु का एक पुत्र।

ही--ब्रह्मा की सभा में उपस्थित एक देवी, जो स्कंद के अभिषेक के समय उपस्थित थी (म. स. १३२*; श. ४४.१२)। अर्जुन के इंद्रलोक जाते समय, उसकी भंगलकामना के लिए द्रौपदी ने इस देवी का स्मरण किया था (म. व. ३८.१४९*)।

हीनिधि--एक दैत्यराज, जो एक समय इस पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२०. ५०)।

हीमन्त--एक सनातन विश्वदेव (म. अनु. ९१.३१)।

जैन ग्रंथों में निर्दिष्ट

श्री वर्धमान महावीर के समकालीन प्रमुख व्यक्ति

अजित केशि कंबलिन्—एक आचार्य, जो वर्धमान महावीर के सात विरोधकों में से एक था। इसका तत्त्वज्ञान 'उच्छेदवाद' नाम से सुविख्यात था। इसका तत्त्वज्ञान 'सर्व नास्तित' इस आद्य तत्त्व पर आधारित था, एवं दान, यज्ञ, पापपुण्य, स्वर्ग, देवी माहात्म्य ये सारे मिथ्या हैं, ऐसा इसका अभिमत था। इसके अनुसार मानवीय शरीर, चार मूलद्रव्यों से बना हुआ था, जिसमें मृत्यु के पश्चात् वह विहीन होता है। इसी कारण, मृत्यु के पश्चात् आत्मा को सद्गति या दुर्गति प्राप्त होने का वर्णन यह सरासर कल्पनारम्य एवं झूठ मानता था (सूत्र. १.१.१. ११-१२)।

इंद्रभूति गौतम—महावीर का सर्वप्रथम शिष्य।

किंस संकिच्च—आजीवक सांप्रदाय के पूर्वाचार्यों में से एक (गोशाल मंखलीपुत्र देखिये)।

गोशाल मंखलीपुत्र—एक आचार्य, जो आजीवक (नर्म) सांप्रदाय के प्रवर्तकों में से एक था। पाली सूत्रों में इसे 'मंखली गोशालो' कहा गया है। इसके द्वारा प्रणीत तत्त्वज्ञान 'संसार विशुद्धि' नाम से सुविख्यात है। इसके पूर्वाचार्यों में नंद वच्च, किंस संकिच्च ये दो आचार्य प्रमुख थे (मच्छिम. ३६; ७६)।

'संसार विशुद्धि' तत्त्वज्ञान—इसके द्वारा प्रणीत इस तत्त्वज्ञान के अनुसार, हर एक प्राणिमात्र के लिए संसार नित्य एवं अपरिहार्य है, एवं इस संसारचक्र से कोई भी प्राणि मुक्ति नहीं पा सकता।

महाभारतादि ग्रंथों में निर्दिष्ट मंकि नामक आचार्य यही माना जाता है (मंकि देखिये)।

गोष्ठा माहिल—वर्धमान महावीर के प्रतिस्पर्धियों में से एक। वर्धमान के सात पालंडी प्रतिस्पर्धियों में इसका समावेश किया जाता था।

चन्द्र प्रद्योत—शवंती का एक राजा, जो वैशालि के चेटक राजा की कन्या शिवा का पुत्रि था। इसे 'चन्द्रप्रद्योत महासेन' नामांतर भी प्राप्त था। इसकी कन्या का नाम वासवदत्ता था, जो वत्सदेश के उदयन राजा को विवाह में दी गयी थी। कौशांबी के शतानीक राजा के मृगावती नामक पत्नी का यह हरण करना चाहता था। किन्तु वर्धमान महावीर ने इसे इस पापी हेतु से परावृत्त किया। यह स्वयं जैनधर्मीय था, एवं इसने अपनी आंटी ही पत्नियों को जैन धर्म की दीक्षा दी थी।

त्रिशाला—वर्धमान महावीर की माता, जो लिच्छवी देश के चेटक राजा की बहन थी।

नंद वच्च—आजीवक सांप्रदायों के पूर्वाचार्यों में से एक (गोशाल मंखलिपुत्र देखिये)।

निगंठ नातपुत्र—जैन धर्मसांप्रदाय के संस्थापक वर्धमान महावीर का नामांतर (महावीर वर्धमान देखिये)।

नेमिनाथ—जैनों का वाइसवाँ तीर्थंकर, जो कृष्ण का चचेरा भाई था। वर्तमानकालीन जैन धर्म के पुनरुत्थान का यह आद्य जनक माना जाता है, जिसकी परंपरा आगे चल कर पार्श्वनाथ एवं वर्धमान महावीर ने चलायी।

शूरसेन देश के शौरिपुर नामक नगरी में इसका जन्म हुआ। बाल्यावस्था में ही यह शौरिपुर का त्याग कर के द्वारका नगरी आ पहुँचा। द्वारका में कृष्ण ने प्रवृत्ति का मार्ग अपनाया, एवं इसने निवृत्ति का। पश्चिम एवं दक्षिण भारत में इसने जैन धर्म की प्रतिष्ठापना की, जहाँ प्राप्त तीर्थंकरों की प्रतिमा में इसकी प्रतिमाएँ सर्वाधिक संख्या में पायी जाती हैं।

काठियावाड़ में स्थित गिरनार (ऊर्जवन्त) पर्वत में इसका निर्वाण हुआ, जहाँ इसके नाम का तीर्थस्थान आज

भी उपलब्ध है। कई अभ्यासकों के अनुसार, पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट अरिष्टनेमि राजा संभवतः यही होगा।

पकुध काच्चायन—एक आचार्य, जो 'अशाश्वत वाद' नामक सिद्धांत का आद्य जनक माना जाता है। वर्धमान महावीर के सात प्रमुख विरोधकों में से यह एक था। प्रश्नोपनिषद् में निर्दिष्ट ककुद कात्यायन संभवतः यही होगा। श्वेत दिगंबर सांप्रदाय के 'सूत्रगड' नामक सूत्रग्रंथ में इसका निर्देश प्राप्त है (सूत्र, ३-१.११-१६)।

पार्श्वनाथ—जैनों का तेइसवॉ तीर्थंकर, जिसका काल ७५० ई. पू. माना जाता है। जैन धर्म की तात्त्विक विचारप्रणाली निर्माण करने का श्रेय इसे दिया जाता है, जिसका परिवर्धन एवं प्रचार करने का काम आगे चल कर जैनों का चौकीसवॉ तीर्थंकर वर्धमान महावीर एवं उसके शिष्यों ने किया (महावीर वर्धमान देखिये)।

वनारस का राजा अश्वसेन का यह पुत्र था, एवं इसकी माता का नाम वामा था। यद्यपि यह राजा का पुत्र था, फिर भी इसने अपनी सौ वर्ष की आयु में से सत्तर वर्ष धार्मिक तत्त्वचिंतन में, एवं निर्वाण प्राप्ति के हेतु तपस्या में व्यतीत किये। इसने सधर्मों के लिए एक चतुःसूत्री युक्त आचरण संहिता का प्रणयन किया था। इस आचरण संहिता का अनुगमन करनेवाले इसके अनेक अनुयायी उत्पन्न हुए, जिनमें महावीर के मातापिता सिद्धार्थ एवं विशाला प्रमुख थे। इनके अनुयायियों में मगध देश के लोग प्रमुख थे।

कुशस्थत्री नगरी के प्रतेनजित् राजा की प्रभावती नामक कन्या से इसका विवाह हुआ था, जिसे इसने कश्मिर देश के यवन राजा से छुड़ाया था।

इसकी राजप्रतिमा परस्पर सटे हुए दो नागशिरों से बनी थी, जो इसकी हरएक प्रतिमा एवं इसके द्वारा खोदी गयी हरएक गुफा पर पामी जाती है।

केश्री—मोतमसंवाद—इसके द्वारा साधकों के लिए निर्माण किये गये आचारसंहिता में इसके पश्चात् २५० वर्षों के बाद उत्पन्न हुए महावीर ने पयोपत्त परिवर्तन किये, एवं इसके द्वारा विरचित आचरणके बहुदूसारे नियम अधिकतर कटोर बनाये। कौन सी सामाजिक परिस्थिति के कारण महावीर को ये परिवर्तन अवश्यक प्रतीत हुए, इसका विवरण करनेवाला एक संवाद 'उत्तराध्ययन सूत्र' में प्राप्त है, जो पार्श्वनाथशिष्य केशिन्, एवं महावीरशिष्य गौतम के बीच हुए संवाद के रूप में वर्णित है।

यह संवाद श्रावस्ती में तिरुदक उद्यान में हुआ था, जिसमें भिक्षुओं के लिए ब्रह्मचर्यपालन की, एवं श्वेतवस्त्रों की आवश्यकता पुनरुन्चारित की गयी थी। इस संवाद में महावीर शिष्य गौतम ने कहा था, 'प्रारंभ में भिक्षु सीधेसाधे एवं विरक्त प्रकृति के थे। आगे चल कर वे अधिक चंचल प्रकृति के हो गये, एवं धर्माचरण की ओर उनकी प्रवृत्ति कम होने लगी। इसी कारण नये नियमों का निर्माण महावीर को करना पड़ा'।

पूरण कस्सप—एक आचार्य, जो महावीर के सात विरोधकों में से एक था। इसका तत्त्वज्ञान 'अक्रियावाद' नाम से सुविख्यात है, जिसके अनुसार पाप एवं पुण्य की सारी कल्पनाएँ अमृत एवं कल्पनारम्य मानी गयी थीं। इसके तत्त्वज्ञान के अनुसार, खून चोरी व्यभिचार आदि से मनुष्यप्राणी को पाप नहीं लगता था, एवं गंगास्नान दानधर्म आदि से पुण्यप्राप्ति नहीं होती थी। इस प्रकार, इसका तत्त्वज्ञान चार्वाक के तत्त्वज्ञान से काफी मिलता जुलता प्रतीत होता है (संयुक्त. २.३.१०)।

भद्रबाहु—एक सुविख्यात जैन आचार्य, जो दक्षिण भारत में श्रवण बेलगोल ग्राम में प्रसृत हुए 'श्वेतांबर जैन सांप्रदाय' का आद्य जनक माना जाता है। इसकी जीवन विषयक सारी सामग्री 'भद्रबाहुचरित्र' नामक ग्रंथ में प्राप्त है।

बारह वर्षों का अकाल—अवन्ति देश के संप्रति चंद्रगुप्त राजा का यह राजपुरोहित था, एवं इसने उसे जैनधर्म की दीक्षा दी थी। एकवार एक वणिक् के घर यह धर्मोपदेशार्थ गया था, जहाँ उस वणिक् के साठ दिन के एक छोटे शिशु ने इसे 'चले जाओ' कहा। यह दुःश्चिन्ह समझ कर, यह अपने पाँचसौ शिष्यों को साथ लेकर, अवन्ति देश छोड़ कर दक्षिण देश चला गया। पश्चात् अवन्ति देश में लगातार बारह वर्षों तक अकाल उत्पन्न हुआ, जिससे देशांतर के कारण यह एवं इसके शिष्य बच गये।

श्रवण बेलगोल में—श्रवण बेलगोल में पहुँचते ही इसने 'श्वेतांबर जैन' सांप्रदाय की स्थापना की। इसके साथ ही 'संप्रति मौय' दक्षिण में आया था, एवं इसकी सेवा करता रहा।

बुद्धकाल आते ही इसने अपना सारा शिष्यपरिवार अपने प्रमुख शिष्य विशालानाचार्य को सौंप दिया, एवं यह अपनी मृत्यु की राह देखने लगा। इसकी मृत्यु के पश्चात् इसके प्रिय शिष्य संप्रति मौय राजा ने

‘संलेखना’ (प्रायोपवेशन) की । इसका निर्वाणकाल २९७ ई. पू. माना जाता है ।

जैन साहित्य में प्राप्त परंपरा के अनुसार, सम्प्रति मौर्य को ही चंद्रगुप्त मौर्य माना गया है । किंतु वह असंभव प्रतीत होता है ।

ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हैं—

१. श्रीमंडलप्रकरणवृत्ति (ज्योतिष) ;
२. चतुर्विंशति-प्रबन्ध ;
३. दशवैकालिकानियुक्ति ;
४. आवश्यकसूत्रनियुक्ति ;
५. उत्तराध्यायनसूत्रनियुक्ति ;
६. आचारांगसूत्रनियुक्ति ;
७. सूत्रकृतांगसूत्रनियुक्ति ;
८. दशश्रुतस्कंधसूत्र ;
९. कल्पसूत्र ;
१०. व्यवहारसूत्र ;
११. सूर्यप्रशंसितसूत्र ;
१२. श्रीभाषितसूत्र ।

महावीर वर्धमान—जैन धर्म का अंतिम एवं चौबीसवाँ तीर्थंकर, जो उस धर्म का सर्वश्रेष्ठ संवर्धक माना जाता है । अपने से २५० साल पहले उत्पन्न हुए पार्श्वनाथ नामक तत्त्वज्ञ के धर्मविषयक तत्त्वज्ञान का परि-वर्धन कर, महावीर ने अपने धर्मविषयक तत्त्वज्ञान का निर्माण किया । इसीसे आगेचल कर जैनधर्मियों के प्राप्तःस्मरणीय माने गये तेइस तीर्थंकरों की कल्पना का विकास हुआ, जिसमें पार्श्वनाथ एवं वर्धमान क्रमशः तेईसवाँ एवं चौबीसवाँ तीर्थंकर माने गये हैं ।

जैन साहित्य में हर एक तीर्थंकर का विशिष्ट शरिरिक चिन्ह (लक्षण) वर्णन किया गया है, जहाँ वर्धमान का लक्षण ‘ सिंह ’ बताया गया है । इसका एक और भी मंगलचिन्ह प्रचलित है, जो ‘ वर्धमानक्य ’ नाम से सुविख्यात है ।

विश्व के धार्मिक इतिहास में महावीर एक ऐसी असामान्य विभूति है, जिसने राजाश्रय अथवा किसी भी प्रमुख आधिभौतिक शक्ति का आश्रय न ले कर, केवल अपनी श्रद्धा के बल से जैनधर्म की पुनः-स्थापना की । अपनी सारा आयुष्य एक सामान्य मनुष्य के समान व्यतीत कर, इसने तीर्थंकरों के द्वारा प्रतिपादित आत्मकल्याण का मार्ग शुद्धतम एवं श्रेष्ठतम रूप में अंगीकृत किया, एवं अपने सारे आयुष्य में उसी मार्ग का प्रतिपादन किया ।

अपने इसी द्रष्टेयन के कारण यह जैन धर्म के पच्चीस-सौ वर्षों के इतिहास में उस धर्म की प्रेरक शक्ति बन कर रह गया । इस धर्म के विद्यमान व्यापक स्वरूप एवं तत्त्वज्ञान का सारा श्रेय इसीको दिया जाता है । इसी कारण इसे ‘ अर्हत ’ (पूज्य), ‘ जिन ’ (जेता), ‘ निर्ग्रंथ ’

(बंधनरहित) एवं ‘ महावीर ’ (परम पराक्रमी पुरुष) कहा गया है । जैन वाङ्मय में इसे ‘ वीर ’, ‘ अतिवीर ’, ‘ सम्मतिवीर ’ आदि उपाधियों भी प्रदान की गयी हैं । इसी ‘ जिन ’ के अनुयायी होने के कारण, इस धर्म के अनुयायी आगे चल कर ‘ जैन ’ नाम से सुविख्यात हुए ।

बुद्ध का समकालीन—गौतम बुद्ध के ज्येष्ठ समवर्ती तत्त्वज्ञ के नाते महावीर का निर्देश ‘ दीघनिकाय ’ आदि बौद्ध ग्रंथों में प्राप्त है । मगध देश के अजातशत्रु राजा से मिलने आये छः श्रेष्ठ धार्मिक तत्त्वज्ञों में महावीर एक था, जिसका निर्देश बौद्ध ग्रंथों में ‘ निगंत नातपुत्त ’ नाम से किया गया है । अजातशत्रु राजा से मिलने आये अन्य पाँच धार्मिक तत्त्वज्ञों के नाम निम्नप्रकार हैं— १. मकली गोसार, जो सर्वप्रथम महावीर का ही शिष्य था, किन्तु उसने आगे चल कर आजीवक नामक स्वतंत्र सांप्रदाय की स्थापना की; २. पूरण कस्सप, जो ‘ आक्रियावाद ’ नामक तत्त्वज्ञान का जनक था; ३. अजित केशि कंबलिन, जो ‘ उच्छेदवाद ’ नामक तत्त्वज्ञान का जनक माना जाता है, ४. पकुध काच्यायन, जो ‘ अशाश्वत ज्ञान ’ नामक तत्त्वज्ञान का जनक माना जाता है, ५. संजय वेलट्टीपुत्त, जिसका तत्त्वज्ञान ‘ विक्षेपवाद ’ नाम से प्रसिद्ध है ।

जन्म—वृजि नामक संभराज्य में वैशालि नगरी के समीप स्थित कुण्डग्राम में इसका जन्म हुआ । ५९९ ई. पू. इसका जन्मवर्ष माना जाता है । यह शातुक वंश में उत्पन्न हुआ था, एवं इसके पिता का नाम सिद्धार्थ था, जो ‘ वृजिगण ’ में से एक छोटा राजा था । इसकी माता का नाम त्रिशला, एवं जन्मनाम वर्धमान था । आधुनिक कालीन बिहार राज्य में मुजफ्फरपुर जिले में स्थित बसाढ़ ग्राम ही प्राचीन कुण्डग्राम माना जाता है ।

इसकी माता त्रिशला वैशालि के लिच्छवी राजा चेटक की बहन थी । इसी कारण पिता की ओर से इसे ‘ शातुकपुत्र ’, ‘ नातपुत्त ’, ‘ काश्यप ’ आदि पैतृक नाम, एवं माता की ओर से इसे ‘ लिच्छविक ’ एवं ‘ वेसालिय ’ नाम प्राप्त हुए थे ।

समकालीन मृप—वैशालि के चेटक नामक राजा के परिवार की सविस्तृत जानकारी जैन साहित्य में प्राप्त है, जिससे महावीर के समकालीन राजाओं की पर्याप्त जानकारी प्राप्त होती है । चेटक राजा के कुल दस पुत्र, एवं सात कन्याएँ थी, जिनमें से ज्येष्ठ पुत्र सिंह अथवा सिंहभद्र वृजिराज्य का ही सेनापति था । चेटक की सात कन्याओं में से चंदना एवं ज्येष्ठा ‘ ब्रह्मचारिणी ’ महावीर की

अनुगामिनी थीं। बाकी पाँच कन्याओं का विवाह निम्न-लिखित राजाओं से हुआ था :—१. मगधराजा विविसार; २. कौशांबीनरेश शतानीक; ३. दशार्णाराज दशरथ; ४. सिंधुमीनरेश उदयन; ५. अवन्तीनरेश चण्ड-प्रद्योत। चेटक राजा के परिवार के ये सारे राजा आगे चल कर महावीर के अनुयायी बन गये।

उपर्युक्त राजाओं के अतिरिक्त निम्नलिखित राजा भी महावीर के समकालीन एवं अनुयायी थे:— १. दधिवाहन (चंपादेश); २. जितशत्रु (कलिंग); ३. प्रसेन-जित् (श्रावस्ति); ४. उदितोदय (मथुरा); ५. जीवंधर (हेमागढ़); ६. विद्रदाज (पौडन्यपुर); ७. विजयसेन (पलाशपुर); ८. जय (पांचाल); ९. हस्तिनापुरनरेश।

तपस्या—कलिंगनरेश जितशत्रु की कन्या यशोदा के साथ महावीर का विवाह हुआ था। किन्तु आगे चल कर इसके मन में विरक्ति उत्पन्न हुई। तीस वर्ष की आयु में अपने ज्येष्ठ शत्रु की आज्ञा ले कर इसने घर छोड़ दिया (६७० ई. पू.)। कई अभ्यासकों के अनुसार, यशोदा के साथ इसके विवाह का प्रस्ताव जब हो रहा था, उसी समय अर्थात् विवाह के पूर्व ही इसने अपना घर छोड़ दिया।

पश्चात् बारह वर्षों तक यह अनेकानेक वनों में धूमता एवं तपस्या करता रहा। अन्त में ५४७ ई. पू. में विहार प्रान्त में झुमकग्राम में ऋजुकुल्या नदी के किनारे एक शालवृक्ष के नीचे ध्यानवस्था में ही इसे केवलज्ञान की प्राप्ति हुई। इस प्रकार वह सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, अर्हत् एवं परमात्मन् बन गया। केवलज्ञान प्राप्ति के समय इसकी आयु ४२ वर्ष की थी।

प्रथम समवशरणसभा—केवलज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् यह पंचशैलपुर नामक नगरी के समीप में स्थित विपुलाचल नामक पर्वत पर था पहुँचा। वहाँ श्रावण कृष्ण प्रतिपदा के दिन इसने 'प्रथम समवशरण सभा' का आयोजन किया, जहाँ इसने जैनधर्म का तत्त्वज्ञान उपस्थित साधकों को अधेमागवी लोकभाषा में कथन किया। वर्धमान का यह सर्वप्रथम धर्मप्रवचन गौतम बुद्ध के द्वारा सारनाथ में किये गये 'धर्मचक्रप्रवर्तन' के प्रथम प्रवचन इतना ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है। इस प्रवचन के लिए उपस्थित श्रोताओं में मगध देश का सुविख्यात सम्राट् श्रेणिक विविसार प्रमुख था।

शिष्यशाळा—वर्धमान का तत्त्वज्ञान इतना प्रभावी साबित हुआ कि, इसके जीवनकाल में ही लगभग पाँच

लाख लोगों ने जैन धर्म को स्वीकार किया। वर्धमान का यह शिष्यसमुदाय मुनि, श्रावक, आर्थिका एवं श्राविका इन चार संघों में विभाजित था। इनमें से तापसजीवन का आचरण कर धर्मप्रचार का कार्य करनेवाले धर्मप्रचारक एवं प्रचारिका को 'मुनि' एवं 'आर्थिका' कहा जाता था। गृहस्थधर्म का आचरण कर जैन धर्मतत्त्वों का पालन करनेवाले जैनधर्मात्तुयायी 'श्रावक' एवं 'श्राविका' कहलाते थे।

जाति, वर्ण, धर्म, लिंग आदि भेदों के निरपेक्ष रह कर, हर एक व्यक्ति को यह अपने तत्त्वज्ञान का उपदेश प्रदान करता था, एवं कौनसा भी भेदाभेद न मान कर हर व्यक्ति को इसके धर्म में प्रवेश प्राप्त होता था। इस प्रकार इसके श्रावक एवं श्राविका शिष्यपरिवार में भारत के सभी भागों के, सभी वर्णों के, एवं सभी जातियों के लो पुरुष समाविष्ट थे। भारत के बाहर भी गंधार, कपिशा, पार्थिक आदि देशों में इसका शिष्यपरिवार उत्पन्न हुआ था। इसके श्राविकासंघ के प्रमुखत्व का कार्य मगधमग्राज्ञी चेलना पर सौंपा गया था।

धर्मसंगठन—जैन धर्म के प्रचारकार्य का प्रत आजन्म पालन करनेवाले मुनि, एवं आर्थिका कुल नौ गणों (बुद्धों) में विभाजित थे, एवं उनके संज्ञात्मक कार्य ग्यारह गणधरों पर निर्भर था। वर्धमान का प्रमुख शिष्य गौतम गणेश महावीर उनका सर्वोच्च भद्रुप माना जाता था। वर्धमान के ग्यारह गणधरों के नाम निम्न प्रकार थे:—१. इंद्रभूति गौतम; २. अभिभूति; ३. वायुभूति; ४. आयव्यक्त; ५. सुधर्म; ६. मण्डिकपुत्र; ७. मोयपुत्र; ८. अकंपित; ९. अचल; १०. मैत्रेय; ११. कौण्डिन्यगोत्रीय प्रभास।

धर्मप्रचार का कार्य करनेवाले आर्थिका 'संघ' की अध्यक्ष महासती चंद्रना थी, जो वैशालि के चेटक राजा की ज्येष्ठ कन्या थी।

पर्यटन—अपने तत्त्वज्ञान के प्रचारार्थे वर्धमान भारत-वर्ष के तत्कालीन सारे जनपदों में, एवं ग्रामों में लगतार तीस वर्षों तक धूमता रहा। इन जनपदों में से सिंधिया, मगध, कलिंग, एवं कोशल जनपदों में इसका संचार अधिकतर रहता था। इसी कार्य में यह गंधार, कपिशा जैसे बृहत्भारतीय देशों में भी गया। जैते पहुँचे ही कहा जा चुका है कि, भारत के बृहत्सारे जनपदों के प्रमुख इसके शिष्यों में शामिल थे। यही नहीं, इनमें से अनेक

राजा आगे चल कर जैन मुनि बन कर स्वयं ही धर्मप्रसार का कार्य करने लगे।

निर्वाण—इस प्रकार धर्मसाधना एवं धर्मप्रसार का कार्य अत्यंत यशस्वी प्रकार से निभाने के पश्चात्, महत् देश के पावा नगरी में स्थित कमलसरोवरान्तर्गत द्वीप प्रदेश में वर्धमान का निर्वाण हुआ। इसके निर्वाण का दिन कार्तिक कृष्ण अर्धमास्या; समय प्रातःकाल में सूर्योदय के पूर्व; एवं साल ५२७ इ. पू. (विक्रम. पूर्व. ४७०; शक. पूर्व. ६०५) माना जाता है।

इसके निर्वाण के समय, लिच्छवी राजा चेटक एवं मल्लराजा शंखश्री हस्तिपाल उपस्थित थे। पश्चान् मल्ल एवं लिच्छवी के जनपदों के नौ नौ राजप्रमुखों ने एकत्रित आ कर इसका निर्वाणविधि सुयोग्य रीति से निभाया, एवं उसी रात्रि को जैन धर्म की परंपरा के अनुसार दीपोत्सव भी मनाया। कई अभ्यासकों के अनुसार, भारतवर्ष में दीपोत्सव का त्यौहार वर्धमान के निर्वाण के समय किये गये दीपोत्सव से ही प्रारंभ हुआ। इसके निर्वाण के साथ साथ 'महावीर निर्वाणसंवत्' का प्रारंभ हुआ, जो 'वीरसंवत्' नाम से जैनधर्मीय लोगों में आज भी प्रचलित है।

आचारसंहिता—महावीर के द्वारा प्रणीत धर्मविषयक तत्त्वज्ञान इसके पंचशतनात्मक आचारसंहिता में संग्रहित है, जो इसके २५० साल पहले उत्पन्न हुए पार्श्वनाथ के द्वारा प्रणीत चतुःसूत्रात्मक आचारसंहिता से काफी मिलती जुलती है।

महावीर के द्वारा प्रणीत पंचसूत्रात्मक आचारसंहिता के सूत्र निम्नप्रकार हैं— १. किसी भी जीवित प्राणी अथवा कीटक की हिंसा न करना (अहिंसा); २. किसी भी वस्तु का किसीके दिये गये स्वीकार न करना (अयाचिकत्व); ३. अवृत्त भाषण न करना (सत्य); ४. आजन्म ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करना (ब्रह्मचर्य); ५. वस्त्रों के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु का संचय न करना (अपरिग्रह)।

वर्धमान के इस तत्त्वज्ञान में से पहले तीन तत्त्व पार्श्व के तत्त्वों से बिल्कुल मिलते जुलते हैं। अंतिम दो तत्त्व पार्श्व के 'अपरिग्रह' नामक एक ही तत्त्व से लिये गये हैं, फर्क केवल इतना है कि, जहाँ पार्श्व ब्रह्मचर्य को अपरिग्रह में ही समाविष्ट करता है, वहाँ वर्धमान ब्रह्मचर्य को स्वतंत्र तत्त्व बता कर उसे ज्यादा महत्त्व प्रदान करते हैं। पार्श्व एवं वर्धमान के अपरिग्रह की व्याख्या में अन्य एक

फर्क है कि, जहाँ पार्श्व वस्त्र का भी संग्रह न कर अर्चलक (नग्न) रहना पसंद करते हैं, वहाँ वर्धमान के द्वारा अपने अनुयायियों को श्वेतवस्त्र परिधारण करने की एवं उनका संग्रह करने की संमति दी गयी है।

पार्श्व एवं वर्धमान के इस तत्त्वसाधन्य के कारण, इन दोनों आचार्यों के अनुयायियों ने श्रावस्ती में एक महासभा बुला कर इन दोनों सम्प्रदायों को सम्मिलित करने का निर्णय लिया। आगे चल कर, इन दोनों सम्प्रदायों के सम्मिलन के द्वारा जैन धर्म का निर्माण हुआ (उत्तराध्ययन सूत्र. २२)।

अहिंसा तत्त्व की महत्ता—दैनंदिन मानवीय जीवन में अहिंसा तत्त्व को सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक दृष्टि से जितना सुस्पष्ट, उँचा एवं व्यापक रूप वर्धमान के द्वारा दिया गया है, उतना अन्य किसी भी धर्मग्रंथ में नहीं दिया होगा। इस प्रकार अहिंसाचरण को दिया यह सर्वोच्च विकसित रूप वर्धमान के आचारसंहिता का एक प्रमुख वैशिष्ट्य कहा जा सकता है।

वर्धमान का अनेकान्तवाद—आचार संहिता के साथ ही साथ, आत्मज्ञान एवं मुक्ति प्राप्त करने के लिए वर्धमान का एक स्वतंत्र तत्त्वज्ञान भी था, जो 'अनेकान्तवाद' नाम से सुविख्यात है। इस तत्त्वज्ञान के अनुसार आत्मा को सद्गति केवल सदाचरण से ही प्राप्त होती है, जिसका मूल दैनंदिन मानवीय जीवन में अहिंसाचरण ही कहा जा सकता है।

वर्धमान का कहना था कि, इंद्रियोन्मोग के आधिक्य से आत्मा मलिन हो जाती है। इसी कारण आत्मा की पवित्रता अनाश्रित रखने के लिए सर्वोत्कृष्ट मार्ग इंद्रियदमन है, जो केवल सद्बिचार एवं सद्धर्म से साध्य हो सकता है।

वर्धमान का क्रियावाद—जैन सूत्रों में कुल ३६३ सम्प्रदायों का निर्देश प्राप्त है, जिनमें निम्नलिखित चार प्रमुख थे— १. क्रियावाद; २. अक्रियावाद; ३. अज्ञानवाद; ४. विनयवाद। इनमें से महावीर स्वयं 'क्रियावाद' सम्प्रदाय का पुरस्कर्ता था। इस सम्प्रदाय के अनुसार, मानवीय आयुष्य का बहुत सारा दुःख मनुष्य के अपने कर्मों के परिणामरूप ही होते हैं, एवं इस दुःख के बाकी सारे कारण प्रासंगिक होते हैं। मानवीय जीवन के ये दुःख जन्म, मृत्यु एवं पुनर्जन्म के दुश्चक्र से उत्पन्न होते हैं। इस दुःख से छुटकारा पाने के लिए आत्मज्ञान एवं सदाचरण ये ही दो मार्ग उपलब्ध हैं।

बौद्धधर्म से तुलना—यद्यपि वर्धमान एवं गौतम बुद्ध दोनों भी अनीश्वरवादी एवं वैदिक धर्म के विरोधी थे, फिर इन दोनों के धार्मिक तत्त्वज्ञान में पर्याप्त फर्क है। जहाँ बुद्ध ईश्वरप्राप्ति के साथ साथ तपःसाधना को भी स्याज्य मान कर इन दोनों के बीच का 'मध्यम मार्ग' प्रतिपादन करते हैं, वहाँ वर्धमान तप एवं कृच्छ्र को जीवन-सुधार का मुख्य उपाय बताता है। तपःसाधना को पाप-नाशन का सर्वश्रेष्ठ उपाय माननेवाले जैन तत्त्वज्ञान की 'अंगुत्तर' एवं 'टीका निपात' आदि ग्रंथों में स्थाना की गयी है।

ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित बारह ग्रंथ उपलब्ध हैं, जो इसके तत्त्वज्ञान का संग्रह कर इसके निर्वाण के पश्चात् ग्रंथनिबद्ध किये गये हैं। इन सारे ग्रंथों की रचना अश्वमेधागर्भी भाषा में की गयी है:— १. आचारंग; २. सूत्रकृतसंग; ३. स्थानांग; ४. समवायांग; ५. भगवती; ६. अंतकृद्दशांग; ७. अनुत्तरोपपातिकदशांग; ८. विपाक; ९. उपासकदशांग; १०. प्रश्रव्याकरण; ११. ज्ञाताधर्म-कथा; १२. दृष्टिवाद।

परंपरा—वर्धमान की मृत्यु के पश्चात्, जैन धर्म की परंपरा अवाधित रखने का कार्य इसके शिष्य प्रशिष्यों ने किया। इसके इन शिष्य प्रशिष्यों में निम्नलिखित प्रमुख थे:—

(१) इंद्रभूति गौतम—वर्धमान के निर्वाण के पश्चात् यह प्रमुख गणधर बन गया। वर्धमान के धर्मविषयक तत्त्वज्ञान को, एवं उपदेशों को सुव्यस्थित रूप में गठित एवं वर्गीकृत करने का कार्य इसने किया। ५१५ इ. पू. में इसका निर्वाण हुआ।

बौद्ध धर्म के संस्थापक गौतम बुद्ध एवं न्याययूथ के अक्षपाद् गौतम का यह समकालीन था। किंतु फिर भी इन दोनों व्यक्तियों से यह सर्वथा भिन्न व्यक्ति था।

(२) अर्हत् केवली सुधर्माचार्य—यह इंद्रभूति गौतम के पश्चात् जैन धर्म संप्र का प्रधान गणधर बन गया। ५०३ इ. पू. में इसका निर्वाण हुआ।

(३) जंबुस्वामिन्—यह अर्हत् केवली के पश्चात् जैनधर्म संप्र का प्रमुख बन गया। अपने पूर्वशुष्य में यह चम्पा के कोट्याधीश वणिक् का पुत्र था। किंतु आगे चल कर जैन मुनि बन गया। मथुरा नगरी के समीप स्थित चौरामी नामक स्थान पर इसने शोर तपस्या की थी। अन्त में इसी स्थान पर ४६५ इ. पू. में इसका निर्वाण हुआ।

(४) विष्णुकुमार; (५) नदिमिन्; (६) अपराजित; (७) गोपधेन; (८) धूमकेवलि भद्रबाहु—ये जैन आचार्य जंबुस्वामिन् के पश्चात् क्रमशः जैन संप्र के आचार्य बन गये। इनमें से अंतिम आचार्य भद्रबाहु का निर्वाण ३६५ इ. पू. में ही गया।

सांप्रदायभेद—भद्रबाहु की मृत्यु के पश्चात् जैनधर्म 'उदाच्य' (श्रैतांवर) एवं 'दाक्षिणात्य' (दिसंवर) इन दो सांप्रदायों में विभाजित हुआ। इ. पू. ३री शताब्दी में मध्यदेश के द्वादशवर्षीय अकाल के कारण, भद्रबाहु नामक जैन आचार्य अपने सहस्रावधि शिष्यों के साथ मध्यप्रदेश छोड़ कर दक्षिण भारत की ओर निकल पड़े। पश्चात् ये लोग कर्नाटक देश में 'श्रद्धा बेलगोल' नामक स्थान में आ कर स्थायिक हुए, एवं आगे चल कर 'दाक्षिणात्य' अथवा 'दिसंवर' सांप्रदाय नाम से प्रसिद्ध हुए।

आचार्य स्थूलभद्र के नेतृत्व में बहुत सारे जैन मुनि मध्यदेश में ही रह गये, जो आगे चल कर, 'श्रैतांवर जैन' नाम से प्रसिद्ध हुए।

उपयुक्त सांप्रदायों की संक्षिप्त जानकारी निम्नप्रकार है:—

१. दिसंवर जैन—आचार्य भद्रबाहु के नेतृत्व में श्रद्धा-बेलगोल में स्थायिक हुए जैन लोग आगे चल कर दक्षिण भारत के विभिन्न प्रदेशों में जैन धर्म का प्रचार करने लगे। दक्षिण भारत में आने के पश्चात् अपने कठोर निमग्न-आचारविचार, एवं तार्किकता से ये पूर्ण उभे ही अलग रहे। इसी कारण भारत के अन्य सभी सांप्रदायों से वे अधिक सनातनी, एवं तत्त्वनिष्ठ साबित हुए।

२. श्रैतांवर जैन—आचार्य स्थूलभद्र के नेतृत्व में मध्य देश में रहनेवाले जैन श्रवणों को अत्यंत दुर्भर अकालने सामना देना पड़ा। इसी दुर्बस्था के कारण, इनके आचारविचार, शिथिल पड़ गये, एवं इन लोगों की ज्ञान-साधना भी क्षीण होती गयी। इन लोगों का केंद्र-स्थान सर्वप्रथम मगध देश के पाटलिपुत्र नगर में था, जिस कारण इन्हें 'मागधी' नामान्तर प्राप्त था। आगे चल कर ये लोग पाटलिपुत्र छोड़ कर उज्जैन में आ कर रहने लगे। अन्त में ये लोग मौरस्य में बलभीपुर नगर में निवास करने लगे। ये ही लोग पहली शताब्दी के अन्त में श्रैतांवर जैन नाम से सुविख्यात हुए।

(३) मथुरा निवासी जैन—उत्तरांचल प्रदेश में जैन के अनेक उपनिवेश थे, जो आगे चल कर मथुरानगरी

में निवास करने लगे। दिगंबर एवं श्वेतांबर जैनों से ये सर्वथा विभिन्न थे, एवं इन लोगों की आचारपद्धति दिगंबर एवं श्वेतांबर पंथियों की आचारपद्धति के समन्वय से उत्पन्न हुई थी।

संप्रति मौर्य—मगध देश का एक राजा, जो अशोक राजा का पौत्र, एवं कुनाल का पुत्र था। इसे चंद्रगुप्त (द्वितीय) नामांतर भी प्राप्त था। इसका राज्य काल २१६ ई. पू.—२०७ ई. पू. माना जाता है।

यह जैन धर्म का एक श्रेष्ठ पुरस्कृत था, एवं बौद्ध धर्म के इतिहास में अशोक का जो महत्त्व है, वहीं महत्त्व इसे जैन धर्म के इतिहास में दिया जाता है। जैन धर्म के प्रचार के लिए इसने अनेकानेक धर्मोपदेशक गांधार, कपिशा आदि देशों में भेज दिये थे। यही नहीं इसने

अपने सैन्यदल के अनेक योद्धाओं को मिथुवेप में धर्म-प्रचारार्थ भेजा था।

दक्षिण भारत में आगमन—एक बार इसके राज्य में लगातार चारह वर्षों तक अकाल उत्पन्न हुआ। इस कारण, अपने गुरु भद्रबाहु के साथ यह दक्षिण भारत में स्थित श्रवणबेलगोल नामक नगर में आया। भद्रबाहु के निर्वाण के पश्चात् इसने चंद्रगिरि पर्वत पर प्राणत्याग किया।

इसकी मृत्यु के पश्चात् शालिश्चक मगध देश के राज गद्दी पर बैठा। तिब्बती साहित्य में इसके उत्तराधिकारी का नाम वृपसेन दिया गया है, जो संभवतः इसके उस प्रदेश में स्थित राज्य का राजा बन गया होगा।

सिद्धार्थ—वर्धमान महावीर का पिता, जो लिच्छवी-गण में से एक गण का राजा था।

परिशिष्ट २

बौद्ध ग्रंथों में निर्दिष्ट

गौतम बुद्ध के समकालीन प्रमुख व्यक्ति

आडार कालाम—गौतम बुद्ध का एक गुरु, जिसने उसे 'अकिंचनायतन' नामक ज्ञान का उपदेश प्रदान किया था। किन्तु उस विद्या ने समाधान न होने पर बुद्ध अन्यत्र चला गया।

आनंद—गौतम बुद्ध का प्रमुख शिष्य, जो उसका चचेरा भाई था। इसके पिता का नाम अमितोदन था, जो गौतम बुद्ध के पिता शुद्धोदन का छोटा भाई था।

गौतम बुद्ध को आत्मज्ञान होने के पश्चात् बीस वर्षों की कालावधि में नाग, श्यामल, नागित, चण्ड, राव, मेघीय आदि अनेक लोग उसके सेवक के नाते काम करते थे। बुद्ध की उत्तर आयु में उसे एक विश्वासु मित्र एवं सेवक की आवश्यकता उत्पन्न हुई, उस समय उसने बाकी सारे लोगों को दूर कर आनंद की इस कार्य के लिए नियुक्त की। तत्पश्चात् पचीस वर्षों तक यह हर एक प्रकार से बुद्ध की सेवा करता रहा (थेरीगाथा. ५. १०३९)।

बुद्ध से संवाद—गौतम बुद्ध ने अनेकानेक धार्मिक विषयों पर संवाद किये थे, जिनमें निम्न लिखित प्रमुख थे:—

१. निरोध (संयुक्त. ३. २४); २. लोक (संयुक्त. ४. ५३) ३. वेदना (संयुक्त. ४. २१९-२२१) ४. भव (अंगुत्तर. १. २२३); ५. समाधि (अंगुत्तर. ५. ७); संवमेद (अंगुत्तर. ५. ७५)।

इसके मित्रों में सारीपुत्त, मौद्गल्लयन, महाकश्यप, अनुरुद्ध, देवत आदि प्रमुख थे (मज्झिम १. २१२)।

बुद्ध की मृत्यु के पश्चात् यह दीर्घकाल तक जीवित रहा। धम्मपद के अनुसार मृत्यु के समय इसकी आयु १२२ वर्षों की थी (धम्म. २. ९९)।

आम्रपालि (अम्बपालि)—वैशाली की एक गणिका, जो गौतमबुद्ध की अनन्य उपासिका थी। अपने निर्वाण के पूर्व गौतम बुद्ध कोटिग्राम गया था, जिस समय इसने उसे वैशाली में अपने घर भोजन के लिए आमंत्रित किया था। उसी समय 'आम्रपालिवन' नामक सुविख्यात उपवन एवं बौद्धसंघ के लिए भेंट में दिया था (विनय. १. २३१. २३३; दीघ. २. ९५-९८)। इसके द्वारा लिखित कई धार्मिक गीत 'थेरी गाथा' में समाविष्ट हैं (थेरीगाथा २०६-२०७)।

उपालि—बुद्ध का एक प्रमुख शिष्य, जिसे स्वयं बुद्ध के द्वारा 'विनय पिटक' की शिक्षा प्राप्त हुई थी (दीपवंश ४.३.५)।

इसका जन्म कपिलवस्तु के एक नाई-कुटुम्ब में हुआ था। शाक्य देश के अनिलद्व आदि राजपुत्रों के साथ यह बुद्ध से मिलने गया, जहाँ बुद्ध ने अन्य सभी व्यक्तियों से पहले इसे 'प्रवच्यः' प्रदान करा, एवं इसे अपना शिष्य बनाया। 'प्रवच्यः' प्रदान करने के पश्चात् उपस्थित सभी राजकुमारों को बुद्ध ने आज्ञा दी कि, वे इसे संजम करें। बौद्धधर्मसंघ में सामाजिक प्रतिष्ठा से भी बहुत अधिक महत्व व्यक्ति की धर्मव्ययक्त निष्ठा को है, इस तत्त्व का साक्षात्कार कराने के हेतु बुद्ध ने इसके साथ इतने बहुमान से वर्ताव किया।

विनयापिटक का अधिकारी व्यक्ति—स्वयं बुद्ध के द्वारा इसे विनयपिटक का सर्वश्रेष्ठ आचार्य कहा गया था (अंगुत्तर, १.२४)। इस ग्रंथ के अधे के संबंध में जहाँ कहीं शंका उत्पन्न होती थी, तब इसीका ही मत अंतिम माना जाता था। इस संबंध में भास्करच्छक एवं कुमार कश्यप की कथाओं का निर्देश बौद्ध साहित्य में पुनः पुनः पाया जाता है (विनय. ३.२९)। राजशह में हुई बौद्ध सभा में विनयपिटक के अधिकारी व्यक्ति के नाते इसने भाग लिया था (धम्मसद. ३.१४५)। गौतमबुद्ध एवं उपालि के दरम्यान हुए 'विनय' संबंधित से संवाद पर आधारित 'उपालि पंचक' नामक एक अध्याय बौद्ध ग्रंथों में प्राप्त है (विनय. ५.१८०-२०६)।

'गौतम बुद्ध'—बुद्धधर्म का बुद्धियुक्त संस्थापक, जो बौद्ध वाङ्मय में निर्दिष्ट पच्चीस बुद्धों में से अंतिम बुद्ध माना जाता है। बोध प्राप्त हुए साधक को बौद्ध वाङ्मय में 'बुद्ध' कहा गया है, एवं ऐसी व्यक्ति धर्म के ज्ञान के कारण अन्य मानवीय एवं दैवी व्यक्तियों से श्रेष्ठ माना गया है।

बुद्धों की नामावलि—'दीपवंश' जैसे प्राचीनतर बौद्ध ग्रंथ में बुद्धों की संख्या सात बतायी गयी है, एवं उनके नाम निम्न प्रकार दिये गये हैं :- १. विपश्य; २. शिविन् ३. वेस्यभू; ४. ककुसंध; ५. कोणामन; ६. कश्यप; ७. गौतम (दी. २.५, संयुक्त. २.५)।

'बुद्धवंश' जैसे उत्तरकालीन बौद्ध ग्रंथ में बुद्धों की संख्या पच्चीस बतायी गयी है, जिनमें उपनिर्दिष्ट बुद्धों के अतिरिक्त निम्नलिखित वृद्ध विषय से पूर्वकालीन बताये गये हैं :-

१. दीपंकर; २. कौडन्य; ३. मंगल; ४. सुमन, ५. रेवत; ६. शोभित, ७. अनोमदर्पिन्; ८. पद्म; ९. नारद १०. पञ्चुत्तर; ११. सुमंथ; १२. सुजात; १३. प्रियदर्शन; १४. अर्थदर्शिन्; १५. धर्मदर्शिन्; १६. सिद्धांत; १७. तिष्य; १८. पुष्य।

जन्म—गौतम के पिता का नाम शुद्धोदन था, जो श्रावस्ती से साठ मील उत्तर में एवं रोहिणी नदी के पश्चिम तट पर स्थित शाक्यों के संघराज्य का प्रभु था। शाक्यों की राजधानी कपिलवस्तु में थी, जहाँ गौतम का जन्म हुआ था। प्राचीन शाक्य जनपद कोसल देश का ही भाग था, इसी कारण गौतम 'शाक्य' एवं 'कोसल' कहा जाता था (मज्झिम. २.१२४)।

गौतम की माता का नाम महामाया था, जो रोहिणी नदी के पूरव में स्थित कोसल्य देश की राजकुन्या थी। आषढ माह की पौर्णिमा के दिन महामाया गर्भवती हुई, जिस दिन बोधिसत्व ने एक हार्था के रूप में उसके गर्भ में प्रवेश किया। इस महोत्सव के बाद कपिलवस्तु से देवदह नगर नामक अपने मायके जाने समय लुंबिनीवन में वह प्रसूत हुई। वैशाख माह की पौर्णिमा बौद्ध का जन्मदिन मानी गयी है। इसी दिन, इसका पत्नी राहुलमाता, बोधिवृक्ष, इसका कथक नामक अध, एवं छत्र एवं कालदाई नामक इनके नाँकर पृथ्वी पर अवतीर्ण हुए। गौतम का जन्मस्थान लुंबिनी आधुनिक काल में 'सुमिनदेश' नाम से सुविख्यात है, जो नेपाल की तराई में वर्ती नामक जिले की सीमा पर स्थित है। इसके जन्म के पश्चात् सात दिनों के बाद इसकी माता की मृत्यु हुई। जन्म के तीसरे दिन इसका नामकरणविधि सम्पन्न हुई, जिसमें इसका नाम 'सिद्धार्थ' रक्खा गया।

स्वरूपवर्णन—इसका स्वरूपवर्णन बौद्ध साहित्य में प्राप्त है। यह लंबे कद का था। इसकी आंखें नीली, रंग गोरा, कान लटकते हुए, एवं हाथ लंबे थे, जिनकी अंगुलियों पेटने तक पहुँचती थी। इसके केश दुबरेले थे, एवं छाती चौड़ी थी।

इसकी आवाज अतिमुंदर एवं मधुर थी, जिसमें उत्कृष्ट वक्ता के लिए आवश्यक प्रवाह, माधुर्य, सुस्पष्टता, तर्कशुद्धता एवं नादमधुरता ये चार गुण समाविष्ट थे (मज्झिम. १.२६९; १.७५)। बौद्ध साहित्य में निर्दिष्ट महापुरुष के वक्तीस लक्षणों से यह युक्त था।

बाल्यकाल एवं तरुण्य—उत्तरकाल आद्य के पहले उन्तीस वर्ष शाही आराम में व्यतीत हुए। इसके रम्य, सुर्य,

एवं युम नामक तीन राजप्रसाद थे, जहाँ यह वर्ष के तीन ऋतु व्यतीत करता था (अंगुत्तर. १.१४५)। सोलह वर्ष की आयु में सुप्रबुद्ध की कन्या यशोधरा (भद्रकच्छा अथवा विवा) से इसका विवाह संपन्न हुआ, जो आगे चल कर राहुलनामा नाम से सुविख्यात हुई। कालोपरान्त अपनी इस पत्नी से इसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसे अपने आध्यात्मिक जीवन का सर्वोत्तम मान कर उसका नाम 'राहुल' (वेदन) रख दिया।

विरक्ति—इसकी मनोवृत्ति शुरु से ही चिंतनशील, एवं वैराग्य की ओर झुकी हुयी थी। आगे चल कर एक बूढ़ा, एक रोगी, एवं एक लाश के रूप में इसे आधिभौतिक जीवन की वृत्तियों प्रकर्ष से ज्ञात हुई, एवं लगा कि, धृष्ट मानवीय बंधु जिसे सुख मान कर उसमें ही लिप्त रहता है, वह केवल श्रमिक ही नहीं, बल्कि समस्त मानवीय दुःखों का मूल है। उसी समय इसने एक शांत एवं प्रमत्तमुल संन्यासिन् को देखा, जिसे देख कर इसका संन्यास जीवन के प्रति झुकाव और भी बढ़ गया।

महाभिनिष्क्रमण—पश्चात् आषाढ माह की पौर्णिमा की रात्रि में इसने समस्त राजवैभवं एवं पत्नीपुत्रों को त्याग कर, यह अपने कथक नामक अश्वपर आरुढ़ हो कर कपिलवस्तु छोड़ कर चला गया। पश्चात् शान्त्य, कोस्य, एवं मल्ल राज्यों को एवं अनुमा नदी को पार कर, यह राजगृह नगर पहुंच गया। इमे गौतम का महाभिनिष्क्रमण कहते हैं।

तपःसाधनः—राजगृह में त्रिंशत्सागर राजा से भेंट करने के उपरान्त यह तपस्या में लग गया। आधिभौतिक गृहस्थधर्म से यह पहले से ही ऊब चुका था। अब यह संन्यास देहदण्ड का आचारण कर तपस्या करने लगा। सर्वप्रथम यह आहार, कालम एवं उदक रामपुत्र आदि आचार्यों का शिष्य बना, किन्तु उनकी सुखी तत्त्वचर्चा से ऊब कर यह उरुवेला में स्थित सेनानीग्राम में गया, एवं वहाँ पंचवर्षीय ऋषियों के साथ इसने छः वर्षों तक कठोर तपस्या की। इस तपस्या के पश्चात् भी इसका मन अशान्त रहा, इस कारण यह हटयोगी तापसी का जीवन छोड़ कर सामान्य जीवन विताने लगा। इस समय इसे प्रतीत हुआ कि, मानकी शरीर को अत्यधिक ब्रह्म करना उतना ही हानिकारक है, जितना उसे अत्यधिक सुख देना है।

पश्चात् यह अकेला ही देहाती स्त्रियों से भिक्षा माँग कर धीरे धीरे स्वास्थ्य प्राप्त करने लगा। इसी काल में, सुजाता

नामक स्त्री पीने पीपल के वृक्ष के नीचे बैठ हुए इसे वृक्ष-देवता समझ कर लगातार पाँच दिनों तक सुवर्ण पात्र में पायस खिलायी।

परमज्ञानप्राप्ति—वैशाख-पौर्णिमा के दिन नैरेजरा नदी में स्थित सुप्रतीर्थ में इसने स्नान किया, एवं वही स्थित शालवन में सारा दिन व्यतीत किया। पश्चात् श्रोत्रिय के द्वारा दिये गये घांस का आसन बना कर, यह श्रेष्ठ वृक्ष के पूर्व भाग में बैठ गया। उसी समय, गिरिमेखल नामक हाथी पर आरुढ़ हो कर, मार (मनुष्य की पापी वासनाएँ) ने इस पर आक्रमण किया, एवं अपना चक्रायुध नामक अस्त्र इसपर फेंका। इसने मार को जीत लिया, एवं इसके विचक्षणित के सारे विधेय नष्ट हुए।

पश्चात् उसी रात्रि में इसे अपने पूर्वजन्मों का, एवं विश्व के उत्पत्ति कारणपरंपरा (प्रतीत्य संसृष्टाद) का ज्ञान हुआ, एवं दिव्यचक्षु की प्राप्ति हुई। बाद में उसे वह बोध (ज्ञान) हुआ, जिसकी खोज में यह आज तक भटकता फिरता था। उसी दिन इसे ज्ञात हुआ, कि संयमसहित सत्साचरण एवं जीवन ही धर्म का सार है, जो इस संसार के सभी यज्ञ, शास्त्रार्थ एवं तपस्या से बढ़ कर है।

पश्चात् यह तीन सप्ताहों तक श्रेष्ठवृक्ष के पास ही चिंतन करता रहा। इसी समय इसके मन में शंका उत्पन्न हुई कि, अपने को ज्ञात हुआ बोध यह अपने पास ही रखें, अथवा उसे सारे संसार को प्रदान करें। उसी समय ब्रह्मा ने प्रत्यक्ष दर्शन दे कर इसे आदेश दिया कि, 'उत्थान' (सतत उद्योगत रहना) एवं 'अप्रमाद' (कभी ढील न खाना) यही इसका जीवन कर्तव्य है। ब्रह्मा के इस आदेश के अनुसार, इसने स्वयं को प्राप्त हुए बोध का संसार में प्रसार करना प्रारंभ किया।

धर्मचक्रप्रवर्तन—अपने धर्मरूपी चक्र का प्रवर्तन (सतत प्रचार करना) का कार्य इसने सर्व प्रथम सारनाथ (वाराणसी) में प्रारंभ किया, जहाँ इसने पाँच तापसों के समुदाय के सामने अपना पहला धर्मप्रवचन दिया। इसने कहा, 'संन्यासियों को चाहिये कि, वे दो अन्तों (सीमाओं) का सेवन न करें। इनमें से एक 'अन्त' काम एवं विषय सुख में फँसना है, जो अत्यंत हीन ग्राम्य एवं अनार्य है। दूसरा 'अन्त' शरीर को व्यर्थ कष्ट देना है, जो अनार्य एवं निरर्थक है। इन दोनों अन्तों का त्याग कर 'तथागत' ठीक समझनेवाले (बुद्ध) ने

‘मध्यम प्रतिष्ठा’ (मध्यम मार्ग) को स्वीकरणीय माना है, जो विचारप्रणाली और खोल देनेवाली एवं ज्ञान प्राप्त करनेवाली है।

मध्यम मार्ग का प्रतिपादन करनेवाला बुद्ध का यह पहला प्रवचन ‘धर्मचक्रप्रवर्तन सूत्र’ नाम से सुविख्यात है। जिस प्रकार राजा लोग चक्रवर्ती बनने के लिए अपने रथ का चक्र चलाते हैं, वैसे ही हमने धर्म का चक्र प्रवर्तित किया। वे चातुर्मास्य के दिन थे, जिसमें संन्यासियों के लिए यात्रा निर्दिष्ट मानी गयी है। इसी कारण चार महिनों तक यज्ञ सारनाथ में ही रहा। इसी काल में इसने ‘अत्तलसंख्यण सूत्र’ नामक अन्य एक प्रवचन किया, एवं इसके शिष्यों में साठ भिक्षु एवं बहुत से उपासक (ग्रहस्थ अनुयायी) शामिल हो गये।

बुद्धसंघ की स्थापना—अपने उपर्युक्त भिक्षुओं को इसने ‘संघ’ (प्रज्ञासंघ) के रूप में संबोधित किया, जहाँ किसी एक व्यक्ति को हुकूमत न हो कर, संघ की ही सत्ता चरती थी। चानुमास्य समाप्त होते ही इसने अपने संघ के भिक्षुओं आज्ञा दी, ‘अब तुम जनता के हित के लिए व्रतना प्रारंभ करो। मेरो यही इच्छा है कि, कोई भी दो भिक्षु एक साथ न जाये, किन्तु अलग स्थान पर जा कर धर्मापदेश करता रहे’।

‘गवायतीये’ में—चातुर्मास्य के पश्चात् यह सेनाना-ग्राम एवं उरुवेल्ल से होता हुआ गया पहुँच गया। वहाँ ‘आविस्त परीशय’ नामक सुविख्यात प्रवचन दिया, जिस कारण इसे अनेकानेक नये शिष्य प्राप्त हुए। उनमें तीन काश्यप वन्धु भी थे, जो बड़े विद्वान् धर्मकाण्डी थे, एवं जिनके एक सहस्र शिष्य थे। इसका प्रवचन सुन कर उन्होंने वहाँ की सभी सानयी निरंजना नदी में बहा दी, एवं वे इसके शिष्य बन कर इसके साथ निकल पड़े। काश्यप वन्धुओं के इस वर्तन का काफी प्रभाव मगध की जनता पर पड़ा।

राजग्रह में—पश्चात् यह अपने शिष्यों के साथ राजग्रह के श्रेणिक शिविसार राजा के निमंत्रण पर उस नगरी में गया। वहाँ राजा ने इसका उचित आदरसकार किया, एवं राजग्रह में स्थित वेत्थवन बुद्धसंघ को भेट में दे दिया। इसी नगर में रहनेवाले सारिपुत्त एवं मौद्गल्यान नामक दो सुव्यस्यत प्राधान बुद्ध के अनुयायी बन गये, जो आगे चल कर ‘अग्रश्रावक’ (प्रमुत्त शिष्य) कहल्ये जाने लगे (विनय. १-२३)।

इसी काल में बुद्ध के विरोधकों की संख्या में बढ़ती गयी, जो इसे पाखंडी मान कर अपने बंधक, आदि आपत्तियों के लिए इसे जिम्मेदार मानते लगे। किन्तु इसने इन आरोपों को संकष्ट एवं सप्रमाण उठा दे कर स्वयं को निरपराध साबित किया (विनय १.)

कपिलवस्तु में—इसका यज्ञ अब कपिलवस्तु तक पहुँच गया, एवं इसके पिता शुद्धोदन ने इसे प्राप्त निवेद्य दिया। पश्चात् फाल्गुन पूर्णिमा के दिन, यह अपने साथ हजार भिक्षुओं के साथ कपिलवस्तु का और निकल पड़ा (यरगाथा ५२७, ३६)। कपिलवस्तु में यह व्यसोकारण ने रहने लगा, एवं वही इसने ‘विशालर आत्मक’ का प्रवचन किया। दूसरे दिन इसने अन्य भिक्षुओं के साथ कपिलवस्तु में भिक्षा माँगते हुए भ्रमण किया। पश्चात् इसका पिता शुद्धोदन अन्य अन्य भिक्षुओं के साथ इसे अपने महल में ले गया, जहाँ इसकी पत्नी यशोधरा के अतिरिक्त सभी स्त्री पुरुषों में इसका उपदेश श्रवण किया।

पश्चात् यह सारिपुत्त एवं मौद्गल्यान इन दो शिष्यों के साथ यशोधरा के महल में गया, एवं उसे ‘चण्डकिन्नर ज्ञातक’ दुनाया। इसे देखते ही यशोधरा गिर पड़ी एवं रोने लगी। किन्तु पश्चात् उसने अपने आप को सहाया, एवं इसका उपदेश स्वीकार लिया। पश्चात् इसके पुत्र राहुल के द्वारा ‘विनुदय’ की माँ किये जाने पर इसने उसे भी प्रवचन (संन्यास) का ज्ञान किया।

यह सुन कर शुद्धोदन को अत्यधिक दुःख हुआ, जिसमें द्रवित हो कर इसने यह नियम बनाया कि, अपनी मातापिताओं की संमति के बिना किसी भी श्रावक को भिक्षु न बना दिया जाय।

इसकी इस कपिलवस्तु की भेट में ८० हजार राक्षस लोग भिक्षु बन गये, जिनमें आनंद एवं उपरि प्रमुत्त थे। आगे चल कर आनंद इस का ‘उपस्थावक’ (संघ सहायक) बन गया, एवं उपरि इस के पश्चात् बौद्ध संघ का प्रमुत्त बन गया।

पुनश्च राजग्रह में—एक वर्ष के भ्रमण के पश्चात् यह पुनः एक बार राजग्रह में लौट आया, जहाँ श्रावस्ती का करोड़ानि सुदत्त अनार्थभिडक इसे निमंत्रण देने आया। इस निमंत्रण का स्वीकार कर यह वैशाली नगरी होता हुआ श्रावस्ती पहुँच गया। वहाँ सुदत्त ने राजकुमार जेत से ‘जैतवन’ नामक एक बगीचा खरीद कर, उसे बुद्ध एवं उसके अनुचायियों के निवास के लिए दान में दे

दिया। यह ब्रगीचा खरीदने के लिए सुदत्त ने जेत को उतने ही सिक्के अदा किये, जितने उस ब्रगीचे में विछाये जा सकते थे।

इसी काल में श्रावस्ती के विद्याप्या ने इसे 'पूर्वाराण' नामक वन इसे भेंट में दिया। श्रावस्ती के उपसेन ने भी इसी समय बौद्धधर्म का स्वीकार किया (धम्मपद, ४.५९)।

शुद्धोदन का निवृत्त—इसे परमज्ञान होने के पश्चात् इसके पिता शुद्धोदन का देहान्त हुआ। इसके पिता की मृत्यु के पश्चात्, इसकी माता महाप्रजापति गौतमी एवं अन्य शाक्य स्त्रियों ने बौद्ध भिक्षुणी बनने की इच्छा प्रकट की। इससे तीन बार उस प्रस्ताव का अस्वीकार किया, किन्तु आग चल कर आतंज की मल्यस्थता के कारण इसने स्त्रियों को बौद्धधर्म में प्रवेश करने की अनुज्ञा दी।

तत्पश्चात् भिक्षुणी के संघ की अलग स्थापना की गयी, एवं जिस प्रकार बृद्ध भिक्षु 'थेर' (स्थविर) नाम से प्रसिद्ध थे, उसी प्रकार बृद्ध भिक्षुणियों 'थेरी' (स्थविरी) कहलायी जाने लगीं। इन दो बुद्धसंघों का साहित्य क्रमशः 'थेरगाथा' एवं 'थेरीगाथा' में संग्रहित है।

भ्रमण गाथा—तदुपरान्त अपनी आयु का ४५ वर्षों तक का काल इसने भारत के विभिन्न सोलह जनपदों में भ्रमण करने में व्यतीत किया, जिसकी संक्षिप्त जानकारी निम्न प्रकार है:— १. छठवें साल में—श्रावस्ती, जहाँ इसने 'यमकगठिहारिय' नामक अभियानकर्म का दर्शन अपने भिक्षुओं को दिया (धम्मपद. ३.१९९); २. सातवें साल में—मंकुलप्रवत; ३. आठवें साल में—भर्ग (मनोरथ-पूरणी. १.२१७); ४. नौवें साल में—कौशांबी; ५. दसवें साल में—पारिलेयकवन; ६. ग्यारहवें साल में—एकनाला ग्राम; ७. बारहवें साल में—वेराजाग्राम; ८. तेरहवें साल में—चालिकप्रवत; ९. चौदहवें साल में—श्रावस्ती; १०. पंद्रहवें साल में—कपिलवस्तु; ११. सोलहवें एवं सत्रहवें साल में—अलावी; १२ अठारहवें एवं उन्नीसवें साल में—चालिकप्रवत; १३. बीसवें साल में—राजगृह।

घटन क्रम—प्रचलित बौद्ध साहित्य से प्रतीत होता है कि, पच्चीस वर्ष की आयु में इसे परमज्ञान की प्राप्ति हुई। उसके बाद के पच्चीस साल इसने भारत के विभिन्न जनपदों के भ्रमण में व्यतीत किये। इस भ्रमणपर्व के पश्चात् पच्चीस साल तक यह जीवित रहा, किन्तु बौद्धजीवन से संबंधित इस पर्व की अधिक जानकारी उपलब्ध नहीं है।

उपलब्ध सामग्री से प्रतीत होता है कि, वर्षाकाल के चार महिने यह श्रावस्ती के जेतवन, एवं पूर्वाराण में व्यतीत करता था, एवं बाकी आठ महिने विभिन्न स्थानों में घूमने में व्यतीत करता था।

भ्रमणस्थल—बुद्ध के द्वारा भेंट दिये गये स्थानों में निम्नलिखित प्रमुख थे:— अश्रालवचेतीयः अनवतप्त सरोवर, अंबकविंद, आग्रपालीवन, अंबयष्टिकावन, अश्रपुर, आपण, उग्रनगर, उत्तरग्राम, उत्तरका, उत्तरकुरु, उरुवेलाकण्ठ, एकनाल, ओपसाद, कजंगल, किंविला, कीटगिरि, कुण्डधानवन, केशपुत्र, कोट्टिग्राम, कौशांबी, खानुमत, गोशिंगशालवन, चंडालकण्ठ, चंपा, चेतीयगिरि, जीवकवन, तपोदाराम, दक्षिण गिरि, दण्डकण्ठ, देवदह, नगरक, नगरविंद, नालंदा, पंकथा, पंचशाला, पाटिकाराम, वेल्ह, भद्रावती, मद्रिय, भगनगर, मनसाकेत, मातुला, मिथिला, मोरणिवाप, रम्यकाश्रम, यष्टिवन, विदेह, वेनागपुर, वेल्द्वार, वैशालि, साकेत, व्यामग्राम, शालवाटिक, शाला, शालावती, सीतावन, सेतव्य, हरितग्राम, हिमालय पर्वत।

देवदत्त से विरोध—बुद्ध के महानिर्वाण के पूर्व की एक महत्त्वपूर्ण घटना, इसका देवदत्त से विरोध कही जा सकती है। परिनिर्वाण के आठ साल पहले मगध देश का सुविख्यात सम्राट् एवं बुद्ध का एक एकनिष्ठ उपासक राजा बिम्बिसार मृत हुआ। इस सुसंधी का लाभ उठा कर देवदत्त नामक बुद्ध के शिष्य ने बौद्धधर्म का संचालकत्व इससे छीनना चाहा। इसी कार्य में मगध देश के नये सम्राट अजातशत्रु ने देवदत्त की सहायता की। ग्रन्थकृत पर्वत से एक प्रचंड शीला गिरा कर देवदत्त ने इसका वध करने का प्रयत्न किया। यह प्रयत्न तो असफल हुआ, किन्तु आहत हो कर इसे जीवक नामक वैद्यकशास्त्रज्ञ का औषधोपचार लेना पड़ा।

इसके वध का यह प्रयत्न असफल होने पर, देवदत्त ने अपने पाँच सौ अनुयायियों के साथ एक स्वतंत्र सांप्रदाय स्थापन करना चाहा, जिसका मुख्य केंद्र गया-शीर्ष में था। किन्तु सारीपुत्र एवं मौद्गल्यायन के प्रयत्नों से देवदत्त का यह प्रयत्न भी असफल हुआ, एवं वह अत्यावधी में ही मृत हुआ।

अंतीमयात्रा—बुद्ध के अंतीमयात्रा का सविस्तृत वर्णन 'महापरिनिर्वाण' एवं 'महासुदर्शन' नामक सूत्र ग्रंथों में प्राप्त है। ग्रन्थकृत से निकलने के पश्चात् यह अंबयष्टिका, नालंदा, पाटलिग्राम, गौतमद्वार, गौतमतीर्थ,

बोधीग्राम आदि ग्रामों से होता हुआ वैशाली नगरी में पहुँच गया। वहाँ लिच्छवी के नगरप्रमुख के निमंत्रण का अस्वीकार कर, बुद्ध ने आश्रमाली गणिका के आमंत्रण का स्वीकार किया। उसी समय आश्रमाली ने वैशालि में स्थित अपना 'आश्रमालीवन' इसे अर्पित किया। पश्चात् यह वैशालि से वेदुवग्राम गया, जहाँ यह बीमार हुआ।

महापरिनिर्वाण—बीमार होते ही इसने आनन्द से कहा "मेरा अवतारकार्य समाप्त हो चुका है। जो कुछ भी मुझे कहना था वह मैंने कहा है। अब तुम अपनी ही ज्योति में चलो, धर्म की शरण में चलो"। पश्चात् इसने जन्मचक्र से छुटकारा पाने के लिए एक चतुःसुत्री कथन की, जिसमें पवित्र आचरण, तपःसाधन, ज्ञान-साधना एवं विचारस्वातंत्र्य का समावेश था।

पश्चात् महलों के अनेक गाँवों से होता हुआ यह पावा पहुँच गया, वहाँ बुद्ध नामक लुहार ने 'सूकरमदव' नामक सूकरभोज से युक्त पदार्थ का भोजन इमे कराया, जिस कारण रक्ताक्तिकार हो कर कुशीनगर के शालवन में इसका महापरिनिर्वाण (बृहन्ना) हुआ। महापरिनिर्वाण के पूर्व अपना अंतिम संदेश कथन करते हुए इसने कहा था, 'संसार की सभी सत्ताओं की अपनी अपनी आयु होती है। अप्रमाद से काम करते रहो, यही 'तथागत' की अंतिम वाणी है'।

महापरिनिर्वाण के समय इसकी आयु अस्सी वर्ष की थी, एवं इसका काल इ. पूर्व ५४४ माना जाता है।

दाहकर्म—कुशीनगर के मत्तों ने इसका दाहकर्म कर, एवं इसकी धातुओं (अस्थियों) को मालाधनुषों से विरत कर आठदिनों तक गृध्रगायन किया। पश्चात् इसकी धातु निम्नलिखित राजाओं ने आरस में बाँट लिये:—१. अजातशत्रु (मगध) २. लिच्छवी (वैशालि); ३. शाक्य (कपिलवस्तु); ४. वुलि (अलकल्प); ५. कोलिय (रामग्राम); ६. मल्ल (पावा); ७. एक ब्राह्मण (वेदद्वीप)। बुद्ध की रक्षा पिपत्तीवन के मोरिय राजाओं ने ले ली।

पश्चात् बुद्ध की अस्थियों पर विभिन्न स्तूप बनवाये गये। किसी पवित्र अवशेष के उपर यादगार के रूप में वास्तु बनाने की पद्धति वैदिक लोगों में प्रचलित थी। बौद्ध सांप्रदायी लोगों ने उसका ही अनुकरण कर बुद्ध के अवशेषों पर स्तूपों की रचना की।

तत्त्वज्ञान—बुद्ध का समस्त तत्त्वज्ञान तार्किक एवं नैतिक मार्गों में विभाजित किया जा सकता है। किन्तु यही

रूप में, वे दो विभिन्न तत्त्वज्ञान एक ही तत्त्वज्ञान के दो पहलू कहे जा सकते हैं। इस तत्त्वज्ञान में मानवीय जीवन दुःखपूर्ण बताया गया है, एवं उस दुःख को उत्पन्न करनेवाले कारणों को दूर कर उससे छुटकारा पाने का संदेश बुद्ध के द्वारा दिया गया है। मानवीय जीवन की इस दुःखरहित अवस्था को बुद्ध के द्वारा 'निर्वाण' कहा गया है।

बुद्ध के द्वारा प्रणीत 'निर्वाण' की कल्पना परलोक में 'भुक्ति' प्राप्त कराने का आश्वासन देनेवाले वैदिक हिंदुधर्म से सर्वश्री भिन्न है। सुसुशु साधक को इसी आयु में मुक्ति मिल सकती है, एवं उसे प्राप्त करने के लिए चित्तशुद्धि एवं सदानुचरण की आवश्यकता है, यह तत्त्व बुद्ध ने ही प्रथम प्रतिपादन किया, एवं इस प्रकार धर्म को 'परलोक' का नहीं, बल्कि 'इहलोक' का साधन बताया।

इस निर्वाणप्राप्ति के लिए 'मध्यममार्ग' से चलने का आदेश बुद्ध के द्वारा दिया गया है, एवं देहदण्ड एवं सारीरिक सुखोपभोग इन दोनों आत्यंतिक विचारों का त्याग करने की सुलाह बुद्ध के द्वारा ही गयी है। बुद्ध के द्वारा प्रणीत 'मध्यममार्ग' के तत्त्वज्ञान में, निर्वाणप्राप्ति के निम्नलिखित आठ मार्ग बताये गये हैं:—१. सुयोग्य धार्मिक दृष्टिकोण, जो हिंसक यत्नयोग, एवं परमेश्वरप्रधान धार्मिक तत्त्वज्ञान से अलिप्त है; २. सुयोग्य मानसिक निश्चय, जो जातीय, वर्णिय एवं सामाजिक भेदभाव से अलिप्त है; ३. सुयोग्य संभाषण, जो अशुभ, काम, क्रोध, भय आदि से अलिप्त है; ४. सुयोग्य वर्तन, जो हिंसा, सौम्य-कर्म एवं कामक्रोधादि विकारों से अलिप्त है; ५. सुयोग्य जीवन, जो हिंसा आदि निषिद्ध व्यवसायों से अलिप्त है; ६. सुयोग्य प्रयत्नशीलता, जो व्याजित के मानसिक एवं नैतिक उन्नति की दृष्टिकोण से प्रेरित है; ७. सुयोग्य तपस्या, जिसमें निर्वाण के अतिरिक्त अन्य कौनसे भी विचार निषिद्ध माने गये हैं; ८. सुयोग्य जाग्रति, जिसमें मानवीय शरीर की दुर्बलता की ओ सदैव ध्यान दिया जाता है।

बुद्ध की चतुःसुत्री—बुद्ध के अनुसार, निर्वाणेशु साधक के लिए एक चतुःसुत्रीय आचरण संदिता बतायी गयी है, जिसमें मत्त (सारे विश्व से प्रेम), कष्टण, मुक्ति (ऋहानुभूतिमय आनन्द), उपेक्ष्य (मानसिक शांति) ये चार आचरण प्रमुख कहे गये हैं।

प्रसूक बौद्ध सांप्रदाय—बुद्ध की मृत्यु के पश्चात्, बौद्ध संघ अनेकानेक बौद्ध सांप्रदायों में विभाजित हुआ,

जिनमें निम्नलिखित प्रमुख थे:— १. स्थविरवादिन्, जो बौद्ध संघ में सनातनतम सांप्रदाय माना जाता है; २. महासांघिक, जो उत्तरकालीन महायान-सांप्रदाय का आद्य प्रवर्तक सांप्रदाय माना जाता है। बौद्ध संघ में सुधार करने के उद्देश्य से यह सांप्रदाय सर्वप्रथम मगध देश में स्थापन हुआ, एवं उसने आगे चल कर काशी उन्नति की।

(१) स्थविरवादिन्—इस सांप्रदाय के निम्नलिखित उपविभाग थे:— १. सर्वास्तिवादिन् (उत्तरी पश्चिम भारत; प्रमुख पुरस्कर्ता—कनिष्क); २. हैमवत, (हिमालय पर्वत); ३. वाल्मिपुत्रीय, (आवंतिक, अवंतीदेश; प्रमुख-पुरस्कर्ता—हर्षवर्धनमगिनी राज्यश्री); ४. धर्मगुप्तिक, (मध्यएशिया एवं चीन); ५. महिशासक (सिलोन);

(२) महासांघिक सांप्रदाय—इस सांप्रदाय के निम्नलिखित उपविभाग थे:— १. गोकुलिक (कुक्कुलिक); २. एकव्यावहारिक; ३. चैत्यक; ४. बहुश्रुतीय; ५. प्रज्ञप्तिवादिन्; ६. पूर्वशैलिक; ७. अपरशैलिक; ८. राजगिरिक ९. सिद्धार्थिक।

बौद्धधर्म के प्रसारक—इस धर्म के प्रसारकों में अनेक विभिन्न राजा, भिक्षु एवं पाली तथा संस्कृत ग्रंथकार प्रमुख थे जिनकी संक्षिप्त नामावलि नीचे दी गयी है:—

(१) राजा—त्रिविसार, अजातशत्रु, अशोक, मिनेंडर (मिलिंड), कनिष्क, हर्षवर्धन।

(२) भिक्षु—सारीपुत्र, आनंद, मौद्गल्यन, आनंद, उपाल।

(३) पाली ग्रंथकार—नागसेन, बुद्धद, बुद्धघोष, धम्मपाद।

(४) संस्कृत ग्रंथकार—अश्वघोष, नागार्जुन, बुद्धपालित, भावविश्वक, असंग, वसुबंधु, दिङ्नाग, धर्मकीर्ति।

बौद्धधर्म के प्रमुख तीर्थस्थान—बौद्धसाहित्य में बुद्ध के जीवन से संबंधित निम्नलिखित आठ प्रमुख तीर्थस्थानों (अष्टमहास्थानानि) का निर्देश प्राप्त है:— १. लुम्बिनीवन, जहाँ बुद्ध का जन्म हुआ था; २. बोधिगया, जहाँ बुद्ध को परमज्ञान की प्राप्ति हुई थी; ३. सारनाथ (इषिपट्टन), जहाँ बुद्ध के द्वारा धर्मचक्रप्रवर्तन का पहला प्रवचन हुआ था; ४. कुशीनगर, जहाँ बुद्ध का महापरिनिर्वाण हुआ था; ५. धावस्ती (कोसलदेश की राजधानी), जहाँ तीर्थिक सांप्रदाय के लोगों को पराजित करने के लिए बुद्ध ने अनेकानेक चमत्कार दिखाये थे; ६. संकाश्य, जहाँ अपनी माता मायादेवी को मिलने के लिए बुद्ध कुछ

काल तक तृषित स्वर्ग में प्रविष्ट हुआ था; ७. राजगृह, (मगधदेश की राजधानी), जहाँ देवदत्त के द्वारा छोड़े गये नालगिरि नामक वन्य हाथी को इसने अपने चमत्कार-सामर्थ्य से शांत किया; ८. वैशालि, जहाँ कई वानरों ने बुद्ध को कुछ सहद ला कर अर्पण किया था।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे विष्णु का नौवाँ अवतार कहा गया है, एवं असुरों का विनाश तथा धर्म की रक्षा करने के लिए इसके अवतीर्ण होने का निर्देश वहीं प्राप्त है (मत्स्य. ४७.२४७)।

पुराणों में अन्यत्र इसे दैत्य लोगों में अधर्म की प्रवृत्ति निर्माण करनेवाला मायामोह नामक अधम पुरुष कहा गया है (शिव. खड. युद्ध. ४; पद्म. सू. १३.३६६-३७६)। किंतु पौराणिक साहित्य में प्राप्त बुद्ध का यह सारा वर्णन सांप्रदायिक विद्वेष से प्रेरित हुआ प्रतीत होता है।

जीवक—एक सुविख्यात वैद्यकशास्त्रज्ञ, जो राजगृह के शालावती नामक गणिका का पुत्र था। यह मगध देश के त्रिविसार एवं अजातशत्रु राजाओं का वैद्य था।

पैदा होते ही माता ने इसका परित्याग किया था। तत्पश्चात् त्रिविसार राजा के पुत्र अभय ने इसे पालपोस कर बड़ा किया। इसने तक्षशीला में सात वर्षों तक वैद्यक-शास्त्र का अध्ययन किया, एवं आयुर्वेद शास्त्रांतर्गत 'कौमारभूय' शास्त्र में विशेष निपुणता प्राप्त की। मगध देश लौटने पर यह सुविख्यात वैद्य बना। यह बुद्ध का अनन्य उपासक था, एवं इसने राजगृह के आम्रवन में एक विहार बाँध कर वह बुद्ध को प्रशान किया था (सुमंगल. १.१३३)। बुद्ध ने इसके लिए 'जीवकसुत्त' का उपदेश दिया था। इसीके कहने पर बुद्ध ने अपने भिक्षुओं को टहलने का व्यायाम करने के लिए कहा।

देवदत्त—गौतमबुद्ध का एक शिष्य, जो उसके मामा सुप्रबुद्ध का पुत्र था। इसकी माता का नाम अमिता था।

बुद्ध की परमज्ञान प्राप्ति के पश्चात् उसके जन्मग्राम कपिलवस्तु में से जो कई शाक्य लोग बौद्ध बने, उनमें यह प्रमुख था। बौद्ध होने के पश्चात् कुछ काल तक बौद्धसंघ में इसका बड़ा सम्मान था। अपने द्वारह श्रेष्ठ शिष्यों में गौतमबुद्ध ने इसका निर्देश किया था (संयुत्तनिकाय. १८३)।

बुद्ध के परिनिर्वाण के आठ वर्ष पहले, इसके मन में इच्छा उत्पन्न हुई कि, गौतमबुद्ध को हटा कर यह बौद्ध संघ का प्रमुख बने। इस हेतु मगध देश के सम्राट अजातशत्रु की सहायता इसने प्राप्त किया, एवं उसकी

सहायता से बुद्ध का वध करने के दो तीन प्रयत्न भी किये। वे प्रयत्न असफल होने पर इसने बौद्ध संघ में विभेद निर्माण करने का भी प्रयत्न किया। इस प्रयत्न में असफलता प्राप्त होने के कारण, अत्यंत निराश अवस्था में जेतवन में इसकी मृत्यु हुई (विनय. ४.६६; गौतम बुद्ध देखिये)।

प्रसेनजित्—कोशल देश का एक सुविख्यात राजा, जो गौतम बुद्ध का परम मित्र एवं शिष्य था। यह महा-कोशल राजा का पुत्र था, एवं इसकी शिक्षा तक्षशिला में हुई थी, जिस समय महाराजकुमार वंधुल एवं लिच्छवी राजकुमार महालि इसके सहाय्यायी थे। शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् अपने पिता के द्वारा यह कोशल देश का राजा बनाया गया। राजा होने के पश्चात् अल्पावधि में ही इसका बुद्ध से परिचय हुआ, एवं यह बौद्धधर्म का निःसीम उपासक बना था।

इसकी बहन कोसलादेवी का विवाह मगध सम्राट् त्रिविंशति से हुआ था। आगे चल कर, त्रिविंशति के पुत्र अजातशत्रु ने अपने पिता का वध किया, एवं वह स्वयं मगध देश का राजा बन गया। प्रसेनजित् की बहन कोसलादेवी पतिनिधन के दुःख से मृत हुई। तत्पश्चात् इसने अजातशत्रु पर आक्रमण कर उसे कैदी बनाया। पश्चात् इसने उससे संधि की, एवं अपने बजिरा नामक बहन उसे विवाह में दे दी (जातक. २. २३७)।

त्रिविंशति श्रेणिय शिशुनाग—मगध देश का एक सुविख्यात सम्राट्, जो गौतम बुद्ध एवं वर्धमान-महावीर के अनन्य उपासकों में से एक था। इसे 'श्रेण्य' एवं 'हर्यणक' नामांतर भी प्राप्त थे। इसका राज्यकाल ५२८ इ. पू. — ५०० इ. पू. माना जाता है।

इसके पिता का नाम भद्रिय था, जो कुमारसेन राजा का सेनापति था। भद्रिय ने तालजत्र राजा के द्वारा कुमारसेन का वध करवा कर, इस मगध देश के राजगद्दी पर बैठाया। राज्य पर आते ही इसने अंगराज ब्रह्मदत्त पर आक्रमण कर, अंगदेश का राज्य मगध राज्य में शामिल किया। पश्चात् लिच्छवी राजकुमारों चेलना एवं कोशलराजकुमारों से विवाह कर इसने कोशल एवं वृज्जि देशों से मैत्री संपादन की। महावग्ग के अनुसार, इसके राज्य का विस्तार तीन सौ योजन था, एवं उसमें अरसी हज़ार ग्राम थे।

इसके पूर्वकाल में मगध देश की राजधानी गिरिवज्ज नगरी में थी। इसने उसे बदल कर 'राजगृह' नामक नयी

राजधानी बसायी। इस नगर की रचना महागोविंद नामक स्थापत्यविशारद के द्वारा की गयी थी।

बौद्ध साहित्य में—बौद्ध साहित्य के अनुसार, त्रिविंशति एवं गौतम बुद्ध शुरू से ही अत्यंत परम मित्र थे, एवं सारनाथ में किये गये ' धर्मचक्रप्रवर्तन ' के प्रवचन के पश्चात् गौतम बुद्ध सर्वप्रथम इससे ही मिलने आया था। तत्पश्चात् अपने परिवार के ग्यारह लोगों के साथ यह बौद्ध बन गया। अपने सारे जीवनकाल में यह बौद्धधर्म की सहायता करता रहा (विनय. १.३५)।

धार्मिक दृष्टिकोण—बौद्ध एवं जैन साहित्य में, त्रिविंशति के द्वारा बौद्ध एवं जैन धर्मों को स्वीकार किये जाने के निर्देश प्राप्त है। पौराणिक साहित्य में भी इसके द्वारा अनेक ब्राह्मणों की परामर्श लेने का उल्लेख किया गया है। इससे प्रतीत होता है कि, यह किसी भी एक धर्म को स्वीकार न कर, तत्कालीन भारतीय परंपरा के अनुसार सभी धर्मों का एवं धर्मप्रचारकों की समान रूप से परामर्श लेता था। इसके काल में बौद्धधर्म संव विशेष क्रियाशील एवं संगठित था, जिस कारण जैन एवं पौराणिक साहित्य की अपेक्षा बौद्ध साहित्य में इसका निर्देश एवं कथाएँ विशेषरूप से पायी जाती हैं।

अजातशत्रु, उदयन, महापद्म नंद, चंद्रगुप्त मौर्य आदि बौद्धकालीन सम्राट्, जैन, हिन्दु एवं बौद्ध धर्म का समानरूप से आदर करते थे, जिससे प्रतीत होता है कि तत्कालीन राजा किसी एक धर्म को स्वीकार न कर सभी धर्मों को आश्रय प्रदान करते थे।

मृत्यु—त्रिविंशति का अन्त अत्यंत दुःखपूर्ण हुआ। इसके पुत्र अजातशत्रु को बुद्ध के एक शिष्य देवदत्त ने अपनी सिद्धि के प्रभाव से मोहित किया। पश्चात् देवदत्त ने अजातशत्रु को अपने पिता त्रिविंशति का वध करने की मंत्रणा दी। किन्तु यह प्रयत्न असफल हुआ, एवं उस प्रयत्न में अजातशत्रु देवदत्त के साथ पकड़ा गया। पश्चात् इसने अजातशत्रु को क्षमा कर उसे मगधदेश का राज्य प्रदान किया, एवं यह स्वयं राज्यनिवृत्त हुआ।

राज्यसत्ता प्राप्त होते ही अजातशत्रु ने इसे कैद कर लिया, एवं इसे भूला प्यासा रख कर इस पर अनन्वित-अत्याचार करना प्रारंभ किया। इसका कोठरी में घूमना फिरना बंद करने के लिए नाई के द्वारा उसके पैरों में अण्ड उत्पन्न कराये, एवं उसमें नमक एवं मश्याक भरवाया। पश्चात् अजातशत्रु ने कोयले के द्वारा इसके पाँव जला दिये। उसी बलेश में इसकी मृत्यु हो गयी।

समकालीन राजा—इसके समकालीन राजाओं में निम्न-लिखित प्रमुख थे:—१. कोसलराज प्रसेनजित्, जो इसका सत्र से बड़ा मित्र था, एवं जिसके कोसलादेवी नामक बहन से इनने विवाह किया था; २. तक्षशिला का राजा पुष्कलाति ३. उज्जैनी का राजा चंद्र प्रद्योत, जिसकी ऋणपरिचर्या के लिए इसने अपना राजवैद्य जीवक उज्जैनी नगरी में भेजा था; ४. रोहक देश का राजा रुद्रायण ।

पत्नियाँ—इसकी निम्नलिखित पत्नियाँ थी:— १. कोसलादेवी, जो कोसल देश के महाकोशल राजा की कन्या, एवं प्रसेनजित् राजा की बहन थी। इसके विवाह के समय महाकोशल राजा ने त्रिविसार राजा को कार्शानगरी श्रेष्ठ के रूप प्रदान की थी; २. क्षेमा; ३. पद्मावती, जो उज्जैनी नगरी की गणिका थी ।

परिवार—इसके निम्नलिखित पाँच पुत्र थे:—१. अजात-शत्रु; २. विमल; ३. दर्शक; ४. अभय; ५. शीलवन्त । इसकी मृत्यु के बाद, अजातशत्रु मगध देश का राजा बन गया ।

वैशाखि के आम्रवालि नामक गणिक्यु से इसे द्वीमल कौंडिन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था । इनके अतिरिक्त इसके सोसव, जयसेन नामक दो पुत्र, एवं चंडी नामक एक कन्या उत्पन्न हुई थी ।

महामौद्गलायन (महामोगलान)—गौतम बुद्ध के दो प्रमुख शिष्यों में से एक। इसका जन्म राजग्रह के समीप कोलितग्राम में हुआ था, जिस कारण इसे 'कोलित' नाम प्राप्त हुआ था। यह जन्म से ब्राह्मण था, एवं इसकी माता का नाम मौद्गलायनी (मोगलानी) था। गौतमबुद्ध का अन्य एक शिष्य सारीपुत्त इसके ही ग्राम का रहनेवाला था, एवं इसका परम मित्र था ।

इसका पिता कोलितग्राम का ग्रामप्रमुख था, एवं इसी कारण अत्यंत श्रीमान् था। किन्तु बाल्यकाल से ही अत्यंत विरक्त होने के कारण, इसने एवं सारीपुत्त ने संन्यास लेने का निश्चय किया, एवं ये दोनों संजय नामक ऋषि के शिष्य बन गये। किन्तु मन:शांति प्राप्त न होने पर ये दोनों जंबुद्वीप में आदर्श गुरु की खोज में घूमते रहे। अंत में राजग्रह में स्थित वेलुवन में इनकी गौतम बुद्ध से भेंट हुई। पश्चात् ये उसके शिष्य बन गये, एवं बुद्ध ने इन दोनों को अपने प्रमुख शिष्य के नाते नियुक्त किया ।

बुद्ध के शिष्यों में यह अपने सिद्धि (इद्धि) के कारण, एवं सारीपुत्त अपने संभाषणकौशल्य के कारण

विशेष सुविख्यात थे। कालशिला नामक ग्राम में निर्ग्रथ नामक लोगों के द्वारा यह मारा गया। इसकी मृत्यु सारीपुत्त के मृत्यु से दो हफ्ते बाद हुई (सारथ्य. ३.१८१) ।

माया अथवा महामाया—गौतम बुद्ध की माता, जो देवदहग्राम के अंजन नामक शाक्य राजा की कन्या थी। इसकी माता का नाम यशोधरा था। इसके दण्डपाणि एवं सुप्रबुद्ध नामक दो भाई, एवं महाप्रजापति नामक बहन थी। महाप्रजापति का विवाह भी शुद्धोदन राजा से हुआ था ।

यह अत्यंत सात्त्विक प्रवृत्ति की थी, एवं मद्यमांसादि का कभी भी सेवन न करती थी। इस-प्रकार बुद्ध जैसे महान् धर्मप्रवर्तक की माता होने के लिए सारे आवश्यक गुण इसके पास थे ।

बुद्ध के जन्म के समय इसकी आयु ४०-५० वर्षों की थी (संमोह. २७८)। कपिलवस्तु के समीप ही स्थित लुविनीवन में इसके पुत्र गौतम बुद्ध का जन्म हुआ। गौतम बुद्ध के जन्म के पश्चात् सात दिनों के बाद इसकी मृत्यु हुई ।

यशोधरा—गौतमबुद्ध की पत्नी, जो राहुल की माता थी। इसे भद्रकच्छा, विंवादेवी, विंवासुंदरी, सुमद्रका एवं राहुलमाता आदि नामान्तर भी प्राप्त थे। कई अभ्यासकों के अनुसार, इसका सही नाम विंवा था, एवं इसके बाकी सारे नाम उपाधिस्वरूप थे ।

इसका एवं गौतम बुद्ध का जन्म दिन एक ही था। सोलह साल की आयु में इसका गौतम बुद्ध से विवाह हुआ था। गौतम बुद्ध के द्वारा बौद्ध धर्म की स्थापना किये जाने के पश्चात्, इसने भी बौद्धधर्म की दीक्षा ली (गौतम बुद्ध देखिये) ।

राहुल—गौतम बुद्ध का इकलौता पुत्र। इसका जन्म उसी दिन हुआ था, जिस दिन गौतम बुद्ध को सर्वप्रथम बाह्य विश्व का निरीक्षण करने का अवसर प्राप्त हुआ। आगे चल कर इसने अपने पिता से दाय के रूप में बौद्धधर्म की दीक्षा देने की प्रार्थना की थी। इस प्रार्थना के अनुसार, बुद्ध ने इसे दीक्षा दी, एवं इसे कई महत्त्वपूर्ण सूत्रों का उपदेश प्रदान किया। इसकी सात वर्ष की आयु में बुद्ध ने इसे 'अंबयष्टिका राहुलोवादसूत्र' का उपदेश दिया, एवं कभी भी अदृत भाषण न करने के लिए कहा। बुद्ध ने इसे 'महाराहुलोवादसूत्र' का उपदेश दिया था ।

इसकी मृत्यु तार्वर्तिश नामक स्थान में हुई, जिस समय गौतम बुद्ध एवं सारिपुत्र उपस्थित थे (वीच. २. ५४९)।

सारिपुत्र उपतिश्य (सारिपुत्र)—गौतम बुद्ध का एक प्रमुख शिष्य। यह उपतिश्य ग्राम का रहनेवाला था, जिस कारण इसे यह उपाधि प्राप्त हुई थी। यह ब्राह्मणकुल में उत्पन्न हुआ था, एवं इसके मातापितरों के नाम क्रमशः रूपसारि एवं दगन्त थे। इसकी माता के नाम के कारण ही इसे सारिपुत्र नाम प्राप्त हुआ था। संस्कृत साहित्य में इसका निर्देश 'शालिपुत्र', 'शारिसुत' एवं 'शारद्वतीपुत्र' नाम से भी प्राप्त है। इसके चण्ड, उपसेन एवं रेवत नामक तीन भाई थे, जो सारे बौद्ध धर्म के उपासक थे।

बुद्ध का शिष्य होने के पहले इसने संजय नामक गुरु के पास विद्या प्राप्त की थी। गौतम बुद्ध ने इसे राजग्रह में 'वेदान्तपरिग्रहसूत्र' का उपदेश दिया था, एवं यह अहंत बन गया। पश्चात् यह बुद्ध का सर्वश्रेष्ठ शिष्य बन गया, एवं स्वयं बुद्ध ने इसके ज्ञान एवं साधना के संबंध में

प्रशंसा की थी (अंगुत्तर. १.२३)। इसी कारण इसे 'धम्मसेनापति' उपाधि प्राप्त हुई।

बौद्धधर्म संघ का व्यवस्थापन का कार्य इस पर ही निर्भर था। इस प्रकार देवदत्त जब स्वतंत्र धर्मोपासना की स्थापना करनेवाला था, उस समय मध्यस्थता के लिए बुद्ध ने इसे भेजा था।

इसकी मृत्यु बुद्ध के निर्वाण के पूर्ण ही नालग्रामक नामक गाँव में हुई थी। इसकी मृत्यु से बुद्ध को अत्यधिक दुःख हुआ, किंतु मृत्यु की निश्चिता ध्यान में ला कर बुद्ध ने अपना मन काबू में रखा।

सुदत्त—श्रावस्ति का सुत्रिख्यान वर्णिक, जो गौतम बुद्ध के निश्चयन्त शिष्यों में से एक था। बौद्धधर्म के दीक्षा लेने के पश्चात् इस अनार्थिक नाम प्राप्त हुआ था। इसने गौतम बुद्ध को अत्यंत सम्मान के साथ श्रवस्ति नगरी में बुलाया, एवं श्रावस्ति के राजकुमार जेत से जेतक नामक उपवन खरीद कर उसे बौद्धों को धर्मसंघके के लिए प्रदान किया (जातक. १.९२; गौतम बुद्ध देवनिवे)।

परिशिष्ट ३

सिकंदर के आक्रमणकालीन

उत्तर पश्चिम भारतीय लोकसमूह एवं गणराज्य

अभिसार—एक गणराज्य, जो वितस्ता एवं असिनी नदियों के बीच में हिमालय की उपत्यका में बसा हुआ था। आधुनिक कश्मीर के दक्षिण हिमालय के निचले पहाड़ों के राजौरी, मिग्गर एवं पुंच प्रदेश में यह देश प्राचीन काल में बसा हुआ था। यह देश प्राचीन केकय देश के उत्तर में स्थित था, एवं यहाँ का राजा केकयराज पोरस का मित्र था। सिकंदर के साथ पोरस के द्वारा किये गये युद्ध में, वह पोरस की सहायता करना चाहता था। किन्तु इसकी सहायता के पूर्व ही सिकंदर ने पोरस राजा को परास्त किया (सिकंदर देखिये)।

अंचगु (संबर्ग)—एक गणराज्य, जो दक्षिण पंजाब में सिंधु तथा चिनाब नदियों के संगम के समीप स्थित तीन छोटे गणराज्यों में से एक था। अन्य दो जनपदों के नाम क्षत्रु एवं वसति थे।

अपने देश लौट जाते समय, सिकंदर ने इन लोगों को परास्त किया था।

आग्नेय (अगलरसी, अगिरि, अगनिर्ग)—दक्षिण पंजाब का एक जनपद, जो शिबि जनपद के पूर्व भाग में स्थित था। यह देश आधुनिक शेग-मन्धिकारा प्रदेश में बसा हुआ था। अपने देश वापस जाते समय शिबि जनपद के पश्चात् सिकंदर ने इन लोगों के साथ युद्ध किया था।

इस आग्नेय गण का प्रवर्तक अग्रसेन था, एवं इनकी प्रधान नगरी का नाम ही अग्रोदक था, जो सतलज नदी के पूर्वोदक्षिण में बसी हुई थी। सिकंदर के समय यह गण अत्यंत शक्तिशाली था, एवं ग्रीक लेखकों के अनुसार इनकी जिस सेना ने सिकंदर के साथ युद्ध किया था,

उसमें चालिस हजार पदाति, एवं तीन हजार अश्वरोही सैनिक थे।

इन लोगों को जीत कर सिकंदर ने मालव गण के लोगों को जीता था, जिससे प्रतीत होता है कि, ये दोनों गण एक दूसरे के पड़ोस में थे। महाभारत के कर्णदिग्विजय में भी इन दोनों गणों का एकत्र निर्देश प्राप्त है (म. व. परि. १.२४.६७)।

आश्वकायन (अस्केन, अस्केनाई)—एक गणराज्य, जो दक्षिण अफगानिस्तान में गौरी एवं सुवास्तु नदियों की घाटी में स्थित था। ये लोग एवं इनके समीप ही स्थित 'अस्पस' ये दोनों मिल कर आधुनिक अफगाण लोग बने थे। इन लोगों की राजधानी मस्साग नगरी में थी, जो दुर्ग के समान बनी हुई थी। उस नगरी की रक्षा का काम वाहीक देश से लिये गये सात हजार 'भूत' सैनिकों पर सौंपा गया था। सिकंदर ने भूत सैनिकों का विश्वासघात से वध किया, एवं इस देश को अपने आधीन कर लिया (पा. सु. नडावि. ७५)।

आश्वायन (अस्पस आरिपसिओई)—एक गणराज्य, जो दक्षिण अफगानिस्तान में अलिशांग एवं कुनार नदियों की घाटी में निवास करते थे। भारतवर्ष पर आक्रमण करने के पूर्व सिकंदर ने इन लोगों को जीता था (पा. सु. ४.१.११०)।

यह गणराज्य हस्तिनायन (अस्तकेनोई) लोकसमूह के समीप बसा हुआ था (पा. सु. ६.४.१७४)।

कट्ट (कटिओई)—एक गणराज्य, जो पंजाब में इरावती नदी के पूर्वभाग में बसा हुआ था। आधुनिक अमृतसर (तरनतारन) प्रदेश में संभवतः इस गणराज्य के लोगों का निवास था। इन लोगों की राजधानी सांगल नगरी में थी। पाणिनि के अष्टाध्यायी में वाहीक देश की राजधानी के नाते से सांगल नामक ग्राम का निर्देश प्राप्त है, जो संभवतः यही होगा (पा. सु. ४.२.७५)।

कटोपनिषद् का निर्माण संभवतः इसी जाति के तत्त्व-चित्तकों के द्वारा हुआ था। ग्रीक लेखकों के अनुसार इन लोगों में यह रिवाज था कि, नवजात बच्चों में जो भी बच्चे कुरूप एवं निर्बल हो, वे राजदूतों के द्वारा पकड़वा कर मरवा दिये जाते थे। कटोपनिषद् में नचिकेतस् नामक बालक को उसके पिता द्वारा यम को प्रदान करने की जो कथा आती है, वह संभवतः इसी रिवाज की परिचायक होगी। इसी ढंग का रिवाज ग्रीस के स्पार्टा नामक जनपद में भी प्रचलित था।

सिकंदर के आक्रमण के समय, इन लोगों ने अत्यंत वीरता के साथ उसका सामना किया। सांगल की रक्षा करने के लिए इन लोगों ने उस नगरी के चौगिर्द शकट-व्यूह की रचना की, एवं सिकंदर के साथ बड़ा भारी मुकाबला किया। इस युद्ध में प्रारंभ में इन लोगों को जीत हो रही थी, किंतु केकयराज पौरस पीछे से पाँच हजार भारतीय सैनिकों के साथ सिकंदर की सहायता करने आ पहुँचा, जिस कारण इन्हें युद्ध में हार मानना पड़ी।

इस युद्ध में १७,००० वीरों ने अपने जीवन की बलि दी। इस युद्ध के कारण सिकंदर इतना संतप्त हो गया कि, सांगल के परास्त हो जाने पर उसने उसे भूमिसात् करने का आदेश दिया। सिकंदर इस नीति का अनुसरण तभी करता था, जब वह अपने शत्रु से हतप्रभ हो जाता था।

इन लोगों में सौंदर्य को बहुत महत्त्व दिया जाता था। एवं राजपुरुषों का चुनाव करते समय भी, सौंदर्य को ही सर्वाधिक महत्त्व दिया जाता था। इस जाति के स्त्रीपुरुष अपना विवाह स्वेच्छा से करते थे, एवं उनमें सती की प्रथा भी विद्यमान थी।

केकय—उत्तरीपश्चिम भारत का एक जनपद, जो वितस्ता (जेहलम) नदी के पूर्वभाग में बसा हुआ था। सिकंदर के आक्रमणकाल में इस देश के राजा का नाम पौरस था, जिसने सिकंदर का अत्यंत कड़ा प्रतिकार किया। किन्तु अंत में सिकंदर के हाथों परास्त हो कर, उसे सिकंदर की अधीनता स्वीकार करनी पड़ी (सिकंदर देखिये)।

क्षत्र (क्सेथ्रोई)—एक जनपद, जो सिंधु एवं चिनाब नदियों के संगम के समीप स्थित तीन छोटे जनपदों में से एक था (अम्बष्ठ देखिये)।

शुद्रक (आक्सिड्राकोई)—एक गणराज्य, जो दक्षिण पंजाब में व्यास (विभास) नदी के किनारे मालवगण के पूर्वभाग में बसा हुआ था। अपने पड़ोस में रहनेवाले मालव लोगों से इनका प्राचीनकाल से वैर था। अपने देश वापस जानेवाले सिकंदर के द्वारा इन दो गणों पर हमला किये जाने पर, ये दोनों एक हो गये, एवं इन्होंने उससे इतना गहरा मुकाबला किया कि, यद्यपि ये युद्ध में विजय प्राप्त न कर सके, फिर भी सिकंदर ने इनके साथ अत्यंत सम्मानपूर्वक संधि की (मालव देखिये)।

पतञ्जलि के व्याकरण महाभाष्य में, इन लोगों के द्वारा अकेले ही अपने शत्रु पर विजय प्राप्त करने का निर्देश प्राप्त है (एकाकिर्णः क्षुद्रकैः जितम्) (महा. १.८.३:३२१:४१२)। यह निर्देश संभवतः सिकंदर के साथ इन लोगों के किये युद्ध के उपलक्ष्य में ही किया गया होगा।

गांधार (पश्चिम)—एक गणराज्य, जो सिंधुनदी के पश्चिम तट पर बसा हुआ था। सिकंदर के राज्यकाल में इन लोगों के राजा का स्मरण हस्ति था। सिकंदर के हेमिक्लिप्टन एवं गडिक्कप नामक दो सेनापतियों ने इस देश को जीत लिया था। इस देश की राजधानी पुकरावती थी, जिसे जीतने में सिकंदर के सेनापतियों को एक माह लग गया। इससे प्रतीत होता है कि, सिकंदर के काल में यह जनपद काफी बलशाली था।

गांधार (पूर्व)—एक जनपद, जो सिंधुनदी के पूर्व तट पर बसा हुआ था। इसका राजधानी तक्षशिला थी। सिकंदर के आक्रमण के समय, इस देश का राजा आग्नि (अग्नि) था। आग्नि राजा ने सिकंदर की अधीनता स्वयं ही स्वीकार कर ली।

गुज्जरायन (श्लोगनिकाई)—एक गणराज्य, जो उत्तरी पश्चिम भारत में कंकय जनपद के समीप ही स्थित था। पतञ्जलि के महाभाष्य में बाहीक देश में स्थित 'गुज्जरायन' गण का निर्देश प्राप्त है, जो संभवतः ये ही होगा (महा. २.२.९६-२.९७)।

इस गणराज्य में कुल ३७ ग्राम थे, जिन पर सिकंदर ने विजय प्राप्त की थी, एवं इस देश का शासन अपने मित्र कंकयराज पोरस के हाथों सौंप दिया।

नुसा—एक गणराज्य, जो दक्षिण अफगाणिस्तान में गौरी नदी के पूर्व तट पर बसा हुआ था। गौरी नदी के पश्चिम तट पर अपने हुए अस्तकेन (अश्वक, अकराण) लोगों पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् सिकंदर ने इन लोगों को जीत लिया था।

पातानप्रस्थ (पातालेन)—दक्षिण सिंध में स्थित एक गणराज्य, जो सिंधु नदी के मुहाने के प्रदेश में स्थित था। इसका स्थान हैद्रावाद (सिंध) के इर्द गिर्द कहीं होगा। अपने देश छोड़ जाते समय सिकंदर ने इन लोगों के साथ युद्ध किया था। इस युद्ध में वे परास्त हुए, एवं अपनी स्वतंत्रता की रक्षा करने के लिए अपना प्रदेश छोड़ कर अन्यत्र चले गये।

पाणिनीय व्याकरण में पातानप्रस्थ नामक ग्राम और लोगों का निर्देश प्राप्त है, जो संभवतः यही होंगे (महा. २.२.९८)। किन्तु कई अभ्यासक इसका सही नाम 'पाताल' मानते हैं। सिकंदर के आक्रमणकाल में इस राज्य में दो कुलपरंपरागत राजाओं का शासन था, जो कुलवृद्धों की सभा की सहायता से राज्य का संचालन करते थे। ग्रीक लेखकों ने इन लोगों की शासन-विधि की तुलना ग्रीक जनपद स्वार्ता के साथ की है।

ब्राह्मणक—उत्तर सिंध का एक गणराज्य, जो मूचिकर्ण जनपद के दक्षिण में स्थित था। अपने देश वापस आते समय सिकंदर ने इन लोगों के साथ युद्ध किया था, एवं बहुत से ब्राह्मणक लोगों की लाशें लुटे रास्ते पर देखा गी।

मद्र—एक गणराज्य, जो पंजाब में अशिकी एवं इरावती (रावी) नदियों के बीच के प्रदेश में स्थित था। सिकंदर के आक्रमण के समय इस देश का राजा पोरस (कॉन्ड) था, जो कंकयराज पोरस का भतिजा था। सिकंदर के इस देश के आक्रमण के समय, कंकयराज पोरस उमदा मित्र एवं सहायक बना था। इसी कारण मद्रराज पोरस ने भी सिकंदर का कोई प्रतिकार न किया, एवं उसकी अधीनता स्वीकृत की।

मालव (महोई)—एक गणराज्य, जो दक्षिण पंजाब में इरावती (रावी) नदी के तट पर बसा हुआ था। अपने देश वापस जाते समय सिकंदर ने इन्हें एवं वान नदी के तट पर स्थित क्षुद्रक लोगों को परास्त किया था।

मालव एवं क्षुद्रक पंजाब के सब से अधिक पराक्रमी एवं स्वाधीनताप्रिय लोग माने जाते थे। सिकंदर के आक्रमण के समय इनके पास कोई खड़ा सेना न थी। इसी कारण इनके बहुत सारे जवान अपने स्वतंत्रता के भये। उसी अवस्था में इन्होंने सिकंदर के साथ बड़ा मुकाबला किया।

पश्चात् इन्हें एवं क्षुद्रकों को सिकंदर ने परास्त किया, एवं इन्हें संधि करने पर विवश किया। संधि करते समय इन्होंने सिकंदर से कहा, 'आज तक हम सदा स्वतंत्र रहे हैं, किन्तु सिकंदर के लोकोत्तर पुरुष होने के कारण, हम स्वच्छापूर्वक उसकी अधीनता स्वीकृत करते हैं'।

मूचिकर्ण (मूचिकर्णोई)—उत्तर सिंध का एक जनपद, जो ब्राह्मणक जनपद के उत्तर भाग में स्थित था। अपने देश वापस जाते समय सिकंदर ने इस देश पर आक्रमण किया।

एक गणराज्य के नाते पाणिनीय व्याकरण में इसका निर्देश प्राप्त है। कई अभ्यासकों के अनुसार, इसका सही नाम मूक्तिक था। इनकी राजधानी का नाम रोस्क था, जो आधुनिक काल में रोरी नाम से सुविख्यात है। रोरी नामक ग्राम के समीप अरोर नामक एक पुरानी बस्ती भी है, जो अब उजड़ी हुई दशा में है।

ग्रीक ग्रंथकारों के अनुसार, ये लोग सात्त्विक भोजन करते थे, एवं नियमित जीवन बिताते थे। इस कारण इनकी आयु एक सौ तीस वर्षों की होती थी। एक ग्राम के सब लोग इकट्ठे बैठ कर भोजन करते थे। इन लोगों में दास प्रथा का अभाव था, एवं सब लोगों को एक दृष्टि से देखा जाता था।

वसाति (ओस्सिडोई)—एक जनपद, जो दक्षिण पंजाब में सिंधु एवं चिनाब नदियों के संगम पर स्थित तीन छोटे जनपदों में से एक था (अम्बथ देखिये)।

शकस्थान—एक जनपद, जो प्राचीन भारत की पश्चिम सीमा पर स्थित था। यह देश सेतुपन्त (हेतुमन्त = आधु. हेलमन्द) नदी के तट पर बसा हुआ था। भारत-वर्ष पर आक्रमण करने के पूर्व, सिकंदर ने इस देश को ३३० इ. पू. में जीता था।

झावि (सिओही)—एक गणराज्य, जो दक्षिण पंजाब में बितस्ता एवं चिनाब के संगम के दाये ओर स्थित था। सिकंदर के अपने देश लौटते समय इन लोगों ने बिना लड़े ही उसकी अधीनता स्वीकृत की थी।

सिकंदर (अलेक्झांडर)—एक सुविख्यात मक-दूनियन (मॅसिडोनियन) जगज्जेता सम्राट्, जो ३२७ इ. पू.—३२३ इ. पू. के दरम्यान उत्तरी-पश्चिम भारत पर किये गये आक्रमण के कारण, प्राचीन भारतीय इतिहास में अमर हो चुका है।

इसके भारतीय आक्रमण के इतिहास की जो प्रमाणित सामग्री उपलब्ध है, उसमें इ. पू. ४ थीं शताब्दी में उत्तरी पश्चिम भारत में स्थित संघराज्यों की अत्यंत महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। सिकंदर के भारतीय आक्रमण के उपलक्ष्य में, उत्तरी पश्चिम भारत के संघराज्यों की जो जानकारी टॉलेमी आदि ग्रीक इतिहासकारों के द्वारा पायी जाती है, वह पाणिनीय व्याकरण में निर्दिष्ट जनपदों की जानकारी से काफी मिलती जुलती है।

इस काल का इतिहास कथन करने वाले महाभारत, पुराणों जैसे जो भी ग्रंथ उपलब्ध हैं, उनमें उत्तर पश्चिम भारत के प्राचीन जनपदों की उपयुक्त जानकारी अप्राप्य

है। इसी कारण सिकंदर के उत्तरी पश्चिम भारतीय आक्रमण का इतिहास प्राचीन भारतीय इतिहास में एक अपूर्व महत्त्व रखता है।

अपनी चतुरंगिणी सेना के साथ सारा भारतवर्ष पादाक्रांत करने के लिए आये हुए जगज्जेता सिकंदर को उत्तर पश्चिम भारतीय जनपदों पर विजय प्राप्त करने के लिए साठेतीन वर्षों तक रातदिन झगड़ना पड़ा। इससे उन जनपदों की श्रुता एवं पराक्रम पर काफी प्रकाश पड़ता है। विशाल इरानी साम्राज्य को चार साल में जीतनेवाले सिकंदर को भारत की उत्तरी पश्चिम विभाग में साठे तीन वर्ष लगे, एवं वहाँ पग-पग पर सख्त सामना करना पड़ा। इस प्रकार एक आँधी की भाँति इस प्रदेश पर आक्रमण करनेवाले सिकंदर को अन्त में एक बगूले की तरह लौट जाना पड़ा।

उत्तरी पश्चिम भारत में स्थित जनसत्ताक पद्धति के छोटे छोटे राज्यों का स्वतंत्र अस्तित्व सिकंदर के आक्रमण के कारण विनष्ट हुआ, यही नहीं, प्रचल परकीय आक्रमण के सामने इस पद्धति के छोटे राज्य असहाय साबित होते हैं, यह नया राजनैतिक साक्षात्कार भारतीय राजनीतिज्ञों को प्रतीत हुआ। इसी अनुभूति से शिक्षा पा कर आर्य चाणक्य ने आगे चल कर बलाढ्य साम्राज्यरचना का अभिनव प्रयोग चंद्रगुप्त मौर्य के द्वारा कराया, एवं उसे प्राचीन भारत के सर्वप्रथम एकवैत्री एवं सामर्थ्यसंगत साम्राज्य का अधिपति बनाया।

भारतवर्ष पर आक्रमण—३३० इ. पू. के अन्त में सिकंदर ने सर्वप्रथम भारत की पश्चिम सीमा पर स्थित शकस्थान पर हमला किया। उस प्रदेश को जीत कर इसने दक्षिण अफगाणिस्तान पर हमला किया, एवं वहाँ स्थित हरउवती (आधु. अरगन्दाब) प्रदेश को जीत लिया। पश्चात् इसने वहाँ सिकन्दरिया (अलेक्झांड्रिया) नामक नये नगरों की स्थापना की।

पश्चात् इसने बल्ल देश पर आक्रमण किया, तथा वक्षु नदी (आमुदरिया) एवं सीर नदी के बीच में स्थित सुग्ध (सोग्दिआना, समरकंद) देश अपने कब्जे में ले लिया। सुग्ध के इसी युद्ध में सिकंदर को शशिगुप्त नामक किसी भारतीय राजा से युद्ध करना पड़ा, जो संभवतः कजोज महाजनपद का राजा था।

इस प्रकार बल्ल एवं सुग्ध पर अपना अधिकार जमा कर यह काबूल की घाटी में आ उतरा। काबूल घाटी से सीधे भारतवर्ष पर हमला करने के पूर्व, इसने

इस घाटी के उत्तरभाग में स्थित 'आश्रायन', 'आश्रकायन' (एवं उसकी राजधानी 'मस्सग') आदि गणराज्यों पर आक्रमण किया। मस्सग की इसी लड़ाई में इसने बाहोक देश के सात हजार भूत सैनिकों को विश्वासघात से वध किया। पश्चात् इसने गौरी नदी के पश्चिम तट पर स्थित नुसा जनपद को जीत लिया। इस प्रकार छः मास तक निरंतर युद्ध कर के, सिकंदर उत्तरी अफगाणिस्थान में स्थित जातियों एवं जनपदों को जीतने में यशस्वी हुआ।

भारतवर्ष में प्रवेश—काबुल से तक्षाशिला तक का रास्ता उस समय खैबर घाटी से नहीं, बल्कि पश्चिम गांधार देशान्तर्गत पुष्करावती नगरी हो कर जाता था। इसी कारण सिकंदर ने पश्चिम गांधार देश के हरित राजा से एक महिने तक युद्ध कर उसे परास्त किया, एवं यह आगे बढ़ा। सिन्धु नदी के पश्चिम तट पर स्थित विविध जनपदों पर विजय पा कर सिकंदर भारतवर्ष की सीमा में प्रविष्ट हुआ।

उस समय सिन्धु नदी के पूर्व तटवर्ती प्रदेश पर पूर्व गांधार देश का अधिपत्य था, जिनके राजा का नाम आभिष था। इस प्रदेश की राजधानी तक्षशिला नगरी में थी। आभिष ने स्वेच्छापूर्वक सिकंदर की अधीनता स्वीकार कर ली। पश्चात् ओहिंद (अटक) नामक नगरी के पास सिकंदर ने नौकाओं से द्वारा पूल का निर्माण किया, एवं यह तक्षशिला आ पहुँचा।

केकयराज पोरस से युद्ध— सिन्धु एवं वितस्ता (जेहलम) नदियों के बीच पूर्व गांधार देश बसा हुआ था, उसी प्रकार वितस्ता नदी के पूर्व भाग में केकय जनपद था, जो उस युग में बाहोक देश (पंजाब) का सत्र से शक्तिशाली राज्य था। वितस्ता एवं असिनी (चिनाब) नदी के बीच एवं केकयदेश की उत्तर में अभिसार देश (आधुनिक पंज एवं राजौरी) था, जिसका राजा केकयराज पोरस का मित्र था, एवं उसकी सहायता करना चाहता था।

इन दोनों देशों के सैन्य मिलने के पहले ही, सख्त गरमी की चिन्ता न कर सिकंदर वितस्ता नदी के किनारे आ पहुँचा। उस समय पोरस वितस्ता नदी के पूर्व तट पर, अपनी छावनी डाले हुए शत्रु के आक्रमण की प्रतीक्षा कर रहा था, एवं दिन के उजाले में वितस्ता नदीको पार करना असंभव था। इसी कारण एक वरसाती रात में सिकंदर ने पोरस की छावनी से बीस मील पहिले भाग से अपनी बहुसंख्य सेना पार करा दी। इस समय

पोरस ने अपनी सेना पुनः एक बार इकट्ठा कर सिकंदर से जोर से युद्ध किया।

पोरस का सैन्यबल—सैन्यबल की दृष्टि से पोरस सिकंदर से काफी भारी था। ग्रीक लेखक प्लुटार्क के अनुसार, पोरस के सैन्य में बीस हजार पदाती, दो हजार अश्वरोही, एक हजार रथ, एवं एक सौ तीस हाथी थे। किन्तु सिकंदर के फूर्तिले सवारों के आगे उसका कोई बल न चला। अन्त में युद्ध में परास्त हो कर, वह आहत अवस्था में सिकंदर के सामने लाया गया। उस समय सिकंदर ने आगे बढ़ कर उसका स्वागत किया एवं पूछा 'आपके साथ कैसा बर्ताव किया जाये?' उस समय पोरस ने अभिमान से कहा, 'जैसा राजा राजाओं के साथ करता है'।

पोरस से भिन्नता—सिकंदर ने पोरस के साथ वैसा ही बर्ताव किया, एवं उसे उसका राज्य वापस दे दिया। आगे चल कर पोरस ने सिकंदर के भारत आक्रमण में बहुमूल्य सहायता दी। केकय देश में प्राप्त किये विजय के उपलक्ष्य में सिकंदर ने केकय देश में दो नये नगरों की स्थापना की:—१. बुक्कला—यह नगर उसी स्थान पर बसा हुआ था, जिस स्थान पर सिकंदर ने वितस्ता नदी पार की थी; २. निकीया—यह नगर सिकंदर एवं पोरस के रणभूमि पर स्थापन किया गया था।

केकय के परास्त हो जाने पर अभिसार ने भी सिकंदर की अधीनता स्वीकार ली।

ग्लुचुकायन पर विजय—केकयराज्य के पूर्व भाग में असिनी नदी के किनारे ग्लुचुकायन नामक एक छोटासा गणराज्य था। सिकंदर ने उसे जीत कर, उसे पोरस के हाथ सौंप दिया।

कठ देश पर आक्रमण—पश्चात् सिकंदर ने असिनी एवं इरावती (राप्ती) नदियों के बीच में स्थित मद्रदेश पर आक्रमण करना चाहा। किन्तु इस देश के पोरस (कनिष्ठ) राजा ने बिना युद्ध किये ही सिकंदर का अधिकार स्वीकार लिया। पश्चात् सिकंदर ने इरावती (राप्ती) नदी के पूरव में स्थित कठ (आधुनिक अमृतसर प्रदेश) जनपद पर आक्रमण किया। उस देश के साकल नामक राजधानी में कठों के द्वारा रचे गये शकटव्यूहों का भेद कर, इसने उन पर विजय प्राप्त की। इस युद्ध में सत्रह हजार से भी अधिक कठवीरों ने अपने प्राण समर्पण किये।

इस युद्ध से सिकंदर इतना परेशान हुआ कि, सांकल पर विजय प्राप्त कराने के पश्चात्, उसने उसे भूमिसात् करने का आदेश अपने सैनिकों को दे दिया। इसके पहलू इरानी साम्राज्य की राजधानी 'पार्सिपोलिस' को भी इसी ढंग से इसने भूमिसात् कराया था। इससे प्रतीत होता है कि, जो शत्रु इसे विरोध कर प्रस्त करता था, उसके राज्य को यह भूमिसात् करवाता था।

यवनसेना का विद्रोह—कटों को परास्त कर सिकंदर की सेनाएँ विपाशा (व्यास) नदी के पश्चिमी तट पर आ पहुँची। उस समय सिकंदर चाहता था कि, विपाशा नदी को पार कर भारतवर्ष में आगे बढ़े, एवं अपने साम्राज्य का और भी अधिक विस्तार करे।

किन्तु इसकी सेना का हिम्मत हार चुकी थी। उन्हें ज्ञात हुआ कि, व्यास नदी के पूर्व में जो जनपद हैं, वह कटों से भी अधिक पराक्रमी हैं, एवं उनके आगे नंद का विशाल साम्राज्य है, जिनकी सेना अनंत है। इसी कारण इसकी सेना ने विपाशा नदी को पार करने से इन्कार कर दिया।

अपनी सेना को उत्साहित करने का इसने अनेक प्रकार से प्रयत्न किया, एवं उनके सम्मुख अनेक व्याख्यान दिये। किन्तु अपने प्रयत्न में इसे सफलता न प्राप्त हुई। अन्त में अत्यंत निराश हो कर यह अपने शिबिर में जा बैठा, एवं कई दिन बाहर न आया। फिर भी इसके सैनिकों के न मानने पर, इसने व्यास नदी के पश्चिमी तट पर देवताओं को बलि दिया, एवं सैन्य को वापस लौट जाने की आज्ञा दी।

सिकंदर की वापसी—वापस जाने के लिए, सिकंदर ने दक्षिण पंजाब एवं सिंध के रास्ते से लौट जाने का निश्चय किया, एवं उस कार्य में दो हजार नावों का वेड़ा बनवाया। पश्चात् बिना किसी विघ्नवाधा के यह वितस्ता (जेहलम) नदी के किनारे आ पहुँचा (३२६ ई. पू.)।

वितस्ता नदी के किनारे इसने एक बड़े दरबार का आयोजन किया, एवं उत्तरी पश्चिम भारत में जीते हुए प्रदेश में निम्नलिखित शासनव्यवस्था जाहीर की:—१. केकराज पोरस-विपाशा एवं वितस्ता नदी के बीच में स्थित प्रदेश; २ गांधारराज आंभि-वितस्ता एवं सिंधु नदी के बीच में स्थित प्रदेश; ३ सेनापति फिलिप्स—सिंधु नदी के पश्चिम में स्थित भारतीय प्रदेश।

खिबि एवं आग्नेय-पश्चात् वितस्ता नदी के समीप स्थित सौभूति लोगों को परास्त कर, इसने जलमार्ग से अपनी

वापसी यात्रा प्रारंभ की। इस यात्रा में इसका विशाल जहाजी वेड़ा वितस्ता नदी में चल रहा था, एवं इसकी स्थलसेना नदी के दोनों तट पर उसका अनुगमन करती थी। पश्चात् बिना किसी लड़ाई के, यह वितस्ता एवं असिकी नदी के संगम पर आ पहुँचा। वहाँ स्थित शिवि लोगों ने इसका अधिकार मान लिया। किन्तु आग्नेय (आगलस्सी) नामक लोगों ने इसका विरोध किया। उन लोगों का निवासस्थान शतद्रु (सतलज) नदी के पूर्व दक्षिण में स्थित प्रदेश में था। अपनी ४० हजार पयती एवं ३ हजार अश्वरोही सैनिकों के साथ, इन लोगों के अग्रसेन नामक राजा ने सिकंदर से जोरदार सामना किया। सिकंदर ने इन लोगों को युद्ध में परास्त किया। किन्तु नगरी इसके हाथ आने के पूर्व ही, उन लोगों ने उसे भस्मसात् किया था।

मालव एवं क्षुद्रक—असिकी नदी के दक्षिण की ओर, इरावती (रावी) नदी के बाये तट पर मल्ल (मल्लोई) एवं क्षुद्रक (ओक्सिड्राकाई) लोग निवास करते थे। शिवि आग्नेय आदि लोगों के समान वे लोग भी 'शत्रोपजीवी' थे। पहले तो सिकंदर के सैनिक इन लोगों से लड़ाई करने में काफ़ी डरते थे। किन्तु सिकंदर ने उन्हें समझाया कि, क्षुद्रक एवं मालवियों से सामना किये बिना स्वदेश लौटना संभव नहीं है। पश्चात् सिकंदर ने क्षुद्रक-मालवों में से मालवों पर अचानक हमला कर दिया, एवं बहुत से मालव क्षुद्रक अपने खेतों में ही लड़ते हुए मारे गये। मालवों के साथ युद्ध करने में सिकंदर की छाती पर सख्त चोट लगी, जो भविष्य में उसकी अकाल मृत्यु का कारण बनी। इस घाव के कारण सिकंदर इतना क्रुद्ध हुआ कि, इसने कालेआम का आदेश दिया। स्त्री-पुरुष-बृद्ध एवं बालक किसी की भी यवन सैनिकों ने परवाह न की, एवं हजारों नर-नारी सिकंदर के क्रोध के शिकार बन गये।

इस बीच में क्षुद्रकसेना मालवों की सहायता के लिए आ गयी। मालवों के साथ युद्ध करने से सिकंदर इतना त्रस्त हुआ कि, इसने उनके साथ संधि करना उचित समझा। क्षुद्रक लोगों ने भी सिकंदर जैसे जगज्जेता वीर के साथ युद्ध करना निरर्थक समझा। इसी कारण दोनों पक्षों में संधि हुई, उस समय क्षुद्रकों एवं मालवों ने कहा, 'आज तक हम स्वतंत्र रहे हैं। सिकंदर के लोकोत्तर पुरुष होने के कारण हम स्वच्छापूर्वक उसकी अधीनता स्वीकृत करते हैं'।

कई अभ्यासकों के अनुसार, सिकंदर क्षुद्रक लोगों का परामर्श करने में असमर्थ रहा, जिसका अस्पष्ट निर्देश पतंजलि के व्याकरणमहाभाष्य में पाया जाता है (एकाकिभिः क्षुद्रकैः जितम्) (महा. १.८३; ३२१; ४१२)। इसी कारण क्षुद्रकों से संधि कर लेने में सिकंदर ने अपना कल्याण समझा होगा।

अंबष्ठ, क्षत्र एवं वसालि—मालव एवं क्षुद्रकगणों के साथ समझौता कर सिकंदर दक्षिण की ओर चलने लगा। सिंधु एवं चिनाब नदियों के संगम के समीप अंबष्ठ, क्षत्र आदि छोटे-छोटे गणराज्य बने हुए थे। उनमें से अंबष्ठ गण को सिकंदर ने युद्ध में परास्त किया, एवं अन्य दो गणराज्यों ने युद्ध के बिना ही सिकंदर की अधीनता स्वीकृत कर ली। सिंधु एवं चिनाब के संगम पर सिकंदर ने अलेक्झांड्रिया (सिकंदरिया) नामक नगरी की स्थापना की।

मूचिकर्ण एवं ब्राह्मणक—उत्तरी सिंध में पहुँचने के पश्चात् मूचिकर्ण नामक लोगों से सिकंदर को सामना करना पड़ा, जो लड़ाई उन लोगों के रोक्त नामक नगरी में संघर्ष हुई। उन लोगों को परास्त कर सिकंदर दक्षिण की ओर आगे बढ़ा। वहाँ ब्राह्मणक नामक गणराज्य के लोगों से इसे युद्ध करना पड़ा। सिकंदर ने क्रूरता के साथ उन लोगों का वध किया, एवं बहुत से ब्राह्मणक लोगों की लाशों को खुले मार्ग पर लटकवा दिया, ताकि अन्य लोग उन्हें देखें, एवं यवनों के विरुद्ध युद्ध करने का साहस न करें।

पातानप्रस्थ—पश्चात् सिकंदर सिंध प्रान्त के उस भाग में पहुँचा, जहाँ सिंधुनदी दो धाराओं में विभक्त हो कर समुद्र की ओर आगे बढ़ती है। इस प्रदेश में स्थित पातानप्रस्थ गणराज्य के लोग सिकंदर का मुकाबला करने में असमर्थ रहे, एवं अपनी स्वतंत्रता की रक्षा के लिए अपना प्रदेश छोड़ कर अन्यत्र चले गये।

वापसी एवं मृत्यु—इस प्रकार सिंधु नदी के मुहाने पर पहुँचने के पश्चात् सिकंदर ने अपनी सेना को जलसेना एवं भूमिसेना में विभक्त किया। इनमें से जलसेना को जल सेनापति नियार्कस के आधिपत्य में समुद्रमार्ग से जाने की आज्ञा इसने दी, एवं भूमिसेना के साथ यह स्वयं मकान के किनारे किनारे भूमिमार्ग से अपने देश की ओर चल पड़ा। पश्चात् अपने देश पहुँचने के पूर्व ही ३२३ ई. पू. में अश्विन में इसकी मृत्यु हो गयी।

सुग्ध (सोग्दिआना)—एक बृहद्भारतीय जनपद, जो दक्षिण अफगाणिस्तान में सीर नदी के प्रदेश में था हुआ था। सिकंदर के आक्रमण के समय, इस देश में ईरानी एवं भारतीय दोनों प्रकार के आर्यों की बस्तियाँ एवं नगरराज्य थे।

सौभूति (सौफाडित्ज)—एक गणराज्य, जो दक्षिण पंजाब में वितस्ता नदी के समीपवर्ती प्रदेश में था हुआ था। अपने देश वापस जाते समय सिकंदर ने इन लोगों को परास्त किया था। इन्हें 'सुभूत' एवं 'सौभूत' नामों से भी प्राप्त था (पा. नू. ४.२.७५; संकलादि गण)।

ग्रीक विवरण से ज्ञात होता है कि, इन लोगों के सारे गुणवैशिष्ट्य एवं रीतिरिवाज कट लोगों के समान ही थे, एवं ये लोग शारीरिक सौन्दर्य को अधिकतर महत्त्व प्रदान करते थे। कट लोगों के समान इनमें यह रिवाज था कि कुरूप एवं निर्बल बच्चों को बचपन में ही मरवा दिया जाता था (कट देखिये)।

हरउवती—दक्षिण अफगाणिस्तान में स्थित एक देश, जो आधुनिक काल में कंधार नाम से प्रसिद्ध है। यकस्थान देश को जीतने के बाद, सिकंदर ने इस देश को जीत लिया, एवं वहाँ सिकंदरिया नामक नगरी की स्थापना की। वही नगर आधुनिककाल में कंधाहार नाम से सुविख्यात है।

पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट राजवंश

पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट राजवंशों में निम्नलिखित राजवंश प्रमुख थे:—

(१) सूर्यवंश—(सू.), जो मनु वैवस्वत के द्वारा स्थापित किया गया था।

(२) सोमवंश—(सो.), जो सोमपुत्र पुरूरवस् एल के द्वारा स्थापित किया गया था।

(३) स्वायंभुव वंश—(स्वा.), जो स्वायंभुव मनु के द्वारा स्थापित किया गया था।

(४) भविष्य वंश — जिसमें भारतीय युद्धोत्तर अनेकानेक राजवंश सम्मिलित थे।

(५) मानवेतर वंश,—जिसमें वानर, रक्षस् आदि मानवेतर वंश समाविष्ट किये जाते हैं।

(१) सूर्यवंश (सू.)

इस वंश का आद्य संस्थापक वैवस्वत मनु माना जाता है। वैवस्वत मनु ने भारतवर्ष का अपना राज्य अपने नौ पुत्रों में बाँट दिया। इन नौ पुत्रों में से पाँच पुत्र एवं एक पौत्र 'वंशकर' साबित हुए, जिन्होंने अपने स्वतंत्र राजवंश स्थापित किये:—

पुत्र का नाम	राजवंश	देश
इक्ष्वाकु	इक्ष्वाकुवंश (सू. इ.)	अयोध्या
निमि 'इक्ष्वाकुपुत्र'	निमिवंश (सू. निमि.)	विदेह
नाभानेदिष्ट	दिष्टवंश (सू. दिष्ट.)	वैशाली
शर्याति	शर्याति वंश (सू. शर्याति.)	आनर्त
रुग	रुग वंश (सू. रुग.)	-
नरिष्यन्त	नरिष्यन्तवंश (सू. नरिष्यन्त)	-

मनु राजा के उपर्युक्त पाँच पुत्र एवं एक पौत्र यद्यपि वंशकर साबित हुए, फिर भी उनमें से केवल चार पुत्र ही दीर्घजीवी राज्य स्थापित कर सके। बाकी दो पुत्रों का वंश भी अल्पावधि में ही विनष्ट हुआ।

मनु के बाकी तीन पुत्र कर्ण, धृष्ट एवं धृषत्र क्रमशः कर्ण एवं धृष्ट नामक क्षत्रिय, एवं धृषत्र नामक शूद्र वर्णों के जनक बन गये, एवं अल्पावधि में ही विनष्ट हुए।

मनु के वंशकर पुत्रों के द्वारा स्थापित किये गये वंशों की जानकारी निम्नप्रकार है:—

इक्ष्वाकु वंश—(सू. इ.)—मनु के ज्येष्ठ पुत्र इक्ष्वाकु को मध्यदेश का राज्य प्राप्त हुआ, जहाँ अयोध्या

नगरी में उसने सुविख्यात इक्ष्वाकु वंश की प्रतिष्ठापन की। इक्ष्वाकु के वंशविस्तार के संबंध में पुराणों में दो विभिन्न प्रकार की जानकारी प्राप्त है। इनमें से छः पुराणों की जानकारी के अनुसार, इक्ष्वाकु को कुल सौ पुत्र थे, जिनमें विकुक्षि, निमि, दण्ड, शकुनि एवं वसाति प्रमुख थे। इसके पश्चात् विकुक्षि अयोध्या का राजा बन गया। निमि ने विदेह देश में स्वतंत्र निमिवंश की स्थापना की। बाकी पुत्रों में से शकुनि उत्तरापथ का, एवं वसाति दक्षिणापथ का राजा बन गया (वायु. ८८. ८-११; ब्रह्मांड. ३.६३. ८-११; ब्रह्म. ७.४५-४८; शिव. ७.६०.३३-३५)।

अन्य पुराणों के अनुसार, इक्ष्वाकु के सौ पुत्रों में विकुक्षि, दण्ड एवं निमि प्रमुख थे। इनमें से विकुक्षि अयोध्या का राजा बन गया, जिसके कुल १२९ पुत्र थे। उन पुत्रों में से पंद्रह पुत्र मेरु के उत्तर भाग में स्थित प्रदेश के, एवं बाकी ११४ पुत्र मेरु के दक्षिण भाग में स्थित प्रदेश के राजा बन गये (मत्स्य. १२. २६-२८; पद्म. पा. ८. १३०-१३३; लिंग. १.६५.३१-३२)।

इक्ष्वाकुवंश में कुल कितने राजा उत्पन्न हुए इस संबंध में एकवाक्यता नहीं है। यह संख्या विभिन्न पुराणों में निम्नप्रकार दी गयी है:—१. भागवत-८८; २. वायु-९१; ३. विष्णु-९३; ४. मत्स्य-६७। इनमें से मत्स्य में प्राप्त नामावलि संपूर्ण न हो कर केवल कई प्रमुख राजाओं की है, जिसका स्पष्ट निर्देश इस नामावलि के अंत में प्राप्त है (मत्स्य. १२.५७)। पुराणों में प्राप्त इक्ष्वाकुवंश की वंशावलियों में भागवत में प्राप्त वंशावलि सर्वाधिक परिपूर्ण

प्रतीत होती है, जो आगे दी गयी 'पौराणिक राजाओं की तालिका' में उद्धृत की गयी है।

ब्रह्म, हरिवंश, एवं मत्स्य में प्राप्त इक्ष्वाकुवंश की नामावलि अरूणी सी प्रतीत होती है, जो क्रमशः नल, मरु एवं खगग राजाओं तक ही दी गयी है।

प्रमुख राजा—इस वंश में निम्नलिखित राजा विशेष महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं :—१. पुरंजय (कुरुस्थ); २. श्रावस्त; ३. कुवलाश्व 'ध्रुवमार' ४. युवनाश्व (द्वितीय) 'सौशुम्नि'; ५. मांधातृ 'यौवनाश्व' ६. पुरुकुत्स; ७. वसदस्यु; ८. चैव्याचण; ९. सत्यव्रत 'त्रिशंकु' १०. हरिश्चन्द्र; ११. सगर (वाहु); १२. भगीरथ; १३. सुदास; १४. मित्रसह कल्माषपाद सौदास; १५. दिलीप (द्वितीय) खट्वांगे; १६. रघु; १७. राम दशरथि; १८. हिरण्यनाभ कौसत्य; १९. बृहद्रथ।

पाठभेद एवं मतभेद—भागवत में प्राप्त दृष्टाश्व एवं हृदयेश्व राजाओं के बीच प्रमोद नामक एक राजा का निर्देश मत्स्य में प्राप्त है। कल्माषपाद सौदास से लेकर, दिलीप खट्वांगे तक के राजाओं के नाम ब्रह्म, हरिवंश, एवं मत्स्य में भागवत में प्राप्त नामावलि से अलग प्रकार से दिये गये हैं, जिसमें सर्वकर्मन्, अनरण्य, निघ्न, अनमित्र, दुर्लीदुह आदि राजाओं के नाम प्राप्त हैं।

पौराणिक साहित्य में कई राजा ऐसे भी पाये जाते हैं, जो इक्ष्वाकुवंशीय नाम से सुविख्यात हैं, किन्तु जिनके नाम इक्ष्वाकुवंश के वंशावलि में अप्राप्य हैं :—१. असमाति ऐश्वक; २. क्षेमदर्शिन; ३. सुर्वार चौतिभत।

कई अभ्यासकों के अनुसार, क्षेमधन्वन् से ले कर बृहद्रथ राजाओं तक की प्राप्त नामावलि एक ही वंश के लोगों की वंशावलि न होकर, उसमें दो विभिन्न वंश मिलाये गये हैं। इनमें से क्षेमधन्वन् से ले कर हिरण्यनाभ कौसत्य तक की वंशावलि पुष्य से ले कर बृहद्रथ तक के शाखा से संपूर्णतः विभिन्न प्रतीत होती है। प्रश्नोपनिषद् में निर्दिष्ट हिरण्यनाभ कौसत्य व्यास की सामशिष्यपरंपरा में याज्ञवल्क्य नामक आचार्य का गुरु था। प्रश्नोपनिषद् में निर्दिष्ट हिरण्यनाभ कौसत्य, एवं पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट हिरण्यनाभ कौसत्य ये दोनों एक ही व्यक्ति थे। इस अवस्था में इक्ष्वाकुवंशीय वंशावलि में हिरण्यनाभ कौसत्य को दिया गया विशिष्टस्थान कालदृष्टि से असंगत प्रतीत होता है।

स्कंद में इक्ष्वाकुवंशीय राजा विधृति एवं पूरुवंशीय राजा परिश्रित् को समकालीन माना गया है। भागवत के

वंशावलि के अनुसार, इन दो राजाओं में अठारह पीढ़ियों का अन्तर था। यह असंगति भी उपर्युक्त तर्कों को पुष्टि प्रदान करती है।

इसके विरुद्ध इस वंशावलि को पुष्टि देनेवाली एक जानकारी भी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है। कलियुग के अन्त में जिन दो राजाओं के द्वारा क्षत्रियकुल का पुनरुद्धार होनेवाला है, उनके भाम पौराणिक साहित्य में मेरु ऐश्वक, एवं देवापि पौरव दिये गये हैं। भागवत के वंशावलि में इन दोनों राजाओं को समकालीन दर्शा गया है, जो संभवतः उसकी ऐतिहासिकता का प्रमाण हो सकता है।

राम दशरथि के पश्चात् उसके पुत्र लव ने श्रावस्ती में स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की। लव के काल से अयोध्या के इक्ष्वाकुवंश का महत्त्व कम हो कर, उसका स्थान 'श्रावस्ती उपशाखा' ने ले लिया। इसी शाखा में आंग चल कर प्रसेनजित् नामक राजा उत्पन्न हुआ, जो गौतम बुद्ध का समकालीन था। गौतम बुद्ध के चरित्र में श्रावस्ती के राजा प्रसेनजित् का निर्देश बार-बार आता है, किन्तु उस समय अयोध्या के राजगद्दी पर कौन राजा था, इसका निर्देश कहीं भी प्राप्त नहीं है।

अंतिम राजा—अयोध्या के इक्ष्वाकु वंश का अंतिम राजा क्षेमक माना जाता है, जो मगध देश के महापद्म नंद राजा का समकालीन माना जाता है।

दिष्ट वंश—(स. दिष्ट.) इस वंश के संस्थापक का नाम नाभानेदिष्ट अथवा नेदिष्ट था, जो मनु के नौ पुत्रों में से एक था। कई पुराणों में उसका नाम दिष्ट दिया है, एवं उसे मनु राजा का पौत्र एवं मनुपुत्र श्रुट राजा का पुत्र कहा गया है। पौराणिक साहित्य में से सात पुराणों में, एवं महाभारत रामायण में, इस राजवंश का निर्देश प्राप्त है, जहाँ कई बार इसे 'वैशाल राजवंश' कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.६१.३१८; वायु. ८६.३-२२; लिङ्ग. १.६६.५३; मार्क. ११०-१३३; विष्णु. ४.१.१६; गरुड. १३८.५-१३; भा. ९.२.२३; वा. रा. वा. ४७.११; म. आश्व. ४.४)।

पौराणिक साहित्य में प्राप्त दिष्ट वंश की जानकारी प्रमति (सुमति) राजा से समाप्त होती है, जो अयोध्या के दशरथ राजा का समकालीन था। प्रमति तक का संपूर्ण वंश भी केवल वायु, विष्णु, गरुड एवं भागवतपुराण में ही पाया जाता है। बाकी सारे पुराणों में प्राप्त नामावलियों किसी न किसी रूप में अपूर्ण हैं।

इस वंश में उत्पन्न प्रथम दो राजाओं के नाम भलेदन एवं वत्सप्री थे। इनमें से भलेदन आगे चल कर वैश्य बन गया। इसी वंश में उत्पन्न हुए संकील, वत्सप्री एवं वत्स नामक आचार्यों के साथ, भलेदन का निर्देश एक वैश्य सूक्तद्रष्टा के नाते प्राप्त है (ब्रह्मांड. २.३२.१२१-१२२; मत्स्य. १४५.११६-११७)। किंतु ऋग्वेद में, इनमें से केवल वत्सप्री भालेदन के ही सूत्र प्राप्त हैं (ऋ. ९.६८; १०. ४५-४६)। इन्हीं सूक्तों की रचना करने के कारण भलेदन पुनः एक बार ब्राह्मण बन गया (ब्रह्म. ७.४२)।

इसी वंश में उत्पन्न हुए विशाल राजा ने वैशालि नामक नगरी की स्थापना की। उसी काल से इस वंश को 'वैशाल' नाम प्राप्त हुआ।

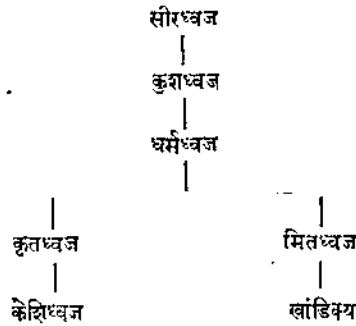
निमि वंश—(सू. निमि.) इस वंश की स्थापना मनु राजा के पौत्र एवं इक्ष्वाकु राजा के पुत्र निमि 'विदेह' राजा ने की। निमि के पुत्र का नाम मिथि जनक था, जिस कारण इस राजवंश को जनक नामान्तर भी प्राप्त था। इस राजवंश के राजधानी का नाम भी 'मिथिला' ही था, जो विदेह राजा ने अपने पुत्र मिथि के नाम से स्थापित की थी।

इस वंश की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.६४.१-२४; वायु. ८९.१-२३; विष्णु. ४.५.११-२४; गरुड. १.१३८.४४-५८; भा. ९. १३)। वाल्मीकि रामायण में भी इस वंश की जानकारी प्राप्त है, किंतु वहाँ इस वंश की जानकारी सीरध्वज तक ही दी गयी है।

इस वंश के राजाओं के संबंध में पौराणिक साहित्य में काफी एकवाक्यता है। किंतु विष्णु, गरुड एवं भागवत में शकुनि राजा के पश्चात् अंजन, उपगुप्त आदि बारह राजा दिये गये हैं, जो वायु एवं ब्रह्मांड में अप्राप्य हैं। इन दो नामावलि में से विष्णु, भागवत आदि पुराणों की नामावलि ऐतिहासिक दृष्टि से अधिक सुयोग्य होती है। किंतु कई अभ्यासकों के अनुसार, शकुनि एवं स्वागत के बीच में प्राप्त बारह राजा निमिवंश से कुछ अलग शाखा के थे, एवं इसी कारण इस शाखा को आद्य निमिवंश से अलग माना जाता है (ब्रह्मांड. ३.६४; वायु. ८९; भा. ९.१३)।

इस वंश का सत्र से अधिक सुविख्यात राजा सीरध्वज जनक था, जिसके भाई का नाम कुशध्वज था (ब्रह्मांड. ३.६४.१८-१९; वायु. ८९.१८; वा. रा. वा. ७०.२-३)। कुशध्वज सांकाय्या पुरी का राजा था। किंतु

भागवत में सीरध्वज राजा का पुत्र माना गया है, एवं उसका वंशक्रम निम्न प्रकार दिया गया है—



उपरोक्त जनक राजाओं में से केशिध्वज एक बड़ा तन्त्रज्ञानी राजा था, एवं उसका चचेरा भाई खांडिक्य एक सुविख्यात यज्ञकर्ता था। केशिध्वज जनक एवं खांडिक्य की एक कथा विष्णु में दी गयी है, जिससे इस वंशावलि की ऐतिहासिकता पर प्रकाश पड़ता है (विष्णु. ६.६.७-१०४)।

महाभारत में देवरात जनक राजा को याज्ञवल्क्य का समकालीन कहा गया है, किंतु वंशावलियों का संदर्भ अच्छी प्रकार से देखने से प्रतीत होता है कि, याज्ञवल्क्य के समकालीन जनक का नाम देवराति न हो कर जनदेव अथवा उग्रसेन था।

पौराणिक साहित्य में निम्नलिखित राजाओं को जनक कहा गया है—१. सीरध्वज २. धर्मध्वज (विष्णु. ४.२४.५४); ३. जनदेव, जो याज्ञवल्क्य का समकालीन था; ४. देवराति; ५. खांडिक्य; ६. बहुलाश्व, जो श्रीकृष्ण से आ मिला था; ७. कृति, जो भारतीय युद्ध में उपस्थित था। ये सारे राजा 'विदेह', 'जनक', 'निमि' आदि बहुविध नामों से सुविख्यात थे, किंतु उनका 'सू. निमि.' वर्णन ही ऐतिहासिक दृष्टि से अधिक उचित प्रतीत होता है। ये सारे राजा आत्मज्ञान में प्रवीण थे (विष्णु. ६.६.७-९)।

पौराणिक साहित्य में निम्नलिखित राजाओं को निमिवंशीय कहा गया है, किंतु उनके नाम निमि वंश की वंशावलि में अप्राप्य है—१. कराल; २. ऐंद्रशुमि; ३. उग्र; ४. जनदेव; ५. पुष्करमालिन्; ६. माधव ७. शिखिध्वज।

वैदिक साहित्य में—इस साहित्य में निम्नलिखित निमिवंशीय राजाओं का निर्देश प्राप्त है—१. कुणि (शकुनि) २. रंजन (अंजन); ३. उग्रदेव; ४. ऋतुजित्। ये सारे राजा वैदिक यज्ञकर्म में अत्यंत प्रवीण थे।

वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट उपयुक्त बहुत सारे राजाओं के नाम पौराणिक साहित्य में प्राप्त वंशावलियों में अप्राप्य हैं। संभव है कि, इन सारे राजाओं ने क्षत्रिय धर्म का त्याग कर ब्राह्मण धर्म स्वीकार लिया होगा। इस वर्णान्तर के कारण उनका राजकीय महत्त्व कम होता गया, जिसके ही परिणाम स्वरूप पौराणिक राजवंशों में से उनके नाम हटा दिये गये होंगे।

नभग वंश—(सू. नभग.) मनु के पुत्र नभग के द्वारा प्रस्थापित किये गये वंश का निर्देश पुराणों में अनेक स्थान पर प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.६३.५-६; भा. ९.४-६; ब्रह्म. ७.२४; वायु. ८८.५-७)। इनका राज्य गंगानदी के दोआब में कहीं बसा हुआ था। इस वंश में नाभाग, अंबरीष, विरूप, पृषदश्व, रथीतर आदि राजा उत्पन्न हुए। किन्तु आगे चल कर सोमवंशीय एल राजाओं के आक्रमण के कारण इनका राज्य आदि सारा वैभव चला गया, एवं ये लोग वर्णान्तर कर के अंगिरसगोत्रीय रथीतर ब्राह्मण बन गये।

नरिष्यन्त वंश—(सू. नरि.) मनु के पुत्र नरिष्यन्त के द्वारा प्रस्थापित किये गये इस वंश का निर्देश पुराणों में अनेक स्थान पर प्राप्त है (भा. ९.२.१९-२२; वायु. ८६.१२-२१)। इस वंश में उत्पन्न राजाओं में निम्न-लिखित राजा प्रमुख थे:—१. चित्रसेन; २. दश; ३. भीह्वम; ४. कूर्च; ५. इंद्रसेन; ६. वीतिहोत्र ७. सत्यश्रवम्; ८. उरुश्रवम्; ९. देवदत्त; १०. कालीन जातुकर्ण्य; ११. अंग्रवश्य।

आगे चल कर, ये लोग क्षत्रियधर्म छोड़ कर ब्राह्मण बन गये, एवं आग्निवेश्यायान नाम में सुविख्यात हुए। दिष्ट राजवंश में भी नरिष्यन्त नामक एक उपशाखा का निर्देश पाया जाता है, किन्तु ये लोग आद्य नरिष्यन्त शाखा से बिलकुल विभिन्न थे।

नृग वंश (सू. नृग.)—मनु के इस पुत्र के वंश का निर्देश भागवत में पाया जाता है, जिसमें सुमति, वसु, ओषवन् नामक राजा प्रमुख थे (भा. ९.२.१७-१८)।

शर्याति वंश (सू. शर्याति)—मनु के शर्याति नामक पुत्र ने गुजरात देश में आकार इस स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की। शर्याति राजा के पुत्र का नाम अमर्त था, जिसके ही कारण, प्राचीन गुजरात देश को अमर्त नाम प्राप्त हुआ था। गुजरात में स्थित हैहय राजवंशीय राजाओं ने इन लोगों का अत्यंत यमिष्ट संबंध था।

शर्याति राजवंश की जानकारी विभिन्न पुराणों में प्राप्त है (भा. ९.३; ह. वं. १.१०. ३१-३२; वायु. ८६.२३-३०; ब्रह्मांड. ३.६१.१८-२०; ६३.१; ४; ब्रह्म. ७.२०-२९)। इस वंश में निम्नलिखित राजा उत्पन्न हुए थे—१. आनर्त; २. रोचमान रेवत; ३. ककुब्ज। इनमें से ककुब्ज राजा की कन्या रेवती वलराम को विवाह में ले गयी थी। इनकी राजधानी कुशास्थली (डारका) नगरी में थी।

इस वंश के आद्य संस्थापक शर्याति राजा की कन्या का नाम सुकन्या था, जिसका विवाह च्यवन ऋषि से हुआ था। शर्यातिकन्या सुकन्या एवं च्यवन ऋषि की कन्या वैदिक साहित्य में प्राप्त है।

(२) सोमवंश (सो.)

सोमवंश का महत्त्व—पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट बहुत-सारा राजकीय इतिहास सोमवंश में उत्पन्न हुए राजाओं का, एवं उनके वंशजों का इतिहास कहा जा सकता है। यद्यपि प्राचीन इतिहास के प्रारंभ में सूर्यवंश में उत्पन्न हुए राजाओं का भारतवर्ष में काफी प्राबल्य था, फिर भी उत्तरकालीन इतिहास में उनकी राजसत्ता अयोध्या, विदेह एवं वैशाखि राज्यों से ही मर्यादित रही। उक्त उत्तरकालीन इतिहास में मांधातृ एवं समर ये केवल दो ही सूर्यवंशीय राजा ऐसे थे, जिन्होंने समस्त उत्तरभारत-वर्ष पर अपना स्वामित्व प्रस्थापित किया था।

उत्तरकालीन भारतीय इतिहास में अयोध्या, विदेह एवं वैशाखि इन तीन देशों को छोड़ कर बाकी सारे

उत्तरभारत, एवं उत्तरीपश्चिम दक्षिणी भारत पर सोमवंशीय राजाओं का ही राज्य था, जिनकी सांक्षेप जानकारी निम्नलिखित है:—

(१) वीरव शाखा—इनका राज्य काशी एवं सुरसेन देश छोड़कर गंगा एवं यमुनानदियों के समस्त समतल प्रदेश में स्थित था। इस वंश के राज्यों में हस्तिनापुर, पांचाल, चेदि, वत्स, कल्प, मगध एवं मत्स्य आदि राज प्रमुख थे।

(२) यादव शाखा—इन लोगों का राज्य पश्चिम में राजपुताना मरुभूमि से लेकर उत्तर में यमुना नदी तक फैला हुआ था।

(३) अनु शाखा—इन लोगों के एक शाखा का राज्य पंजाब देश में था, जिनमें सिंधु, सौवीर, कैकेय, मद्र, वाहीक, शिवि एवं अंबष्ठ प्रमुख थे। इन लोगों के दूसरी एक शाखा का राज्य पूर्व बिहार, बंगाल एवं ओरिसा में था, जहाँ इन लोगों के अंग, वंग, पुण्ड्र, सुह्य एवं कलिंग राज्य प्रमुख थे।

(४) द्रुह्य शाखा—इन लोगों का राज्य गंधारदेश में था, एवं कई अभ्यासकों के अनुसार इनका विस्तार उत्तरी पश्चिमभारत की सीमाभाग पर स्थित म्लेच्छ लोगों तक फैला हुआ था।

(५) तुर्वसु शाखा—इन लोगों का उत्तरभारत में स्थित राज्य तो नष्ट हुआ था। किन्तु कई अभ्यासकों के अनुसार, दक्षिण भारतवर्ष के पाण्ड्य, चोल एवं केरल राजवंश इन्हींसे उत्पन्न हुए थे।

(६) काश्य शाखा—इन लोगों का राज्य काशिदेश में था। इसी कारण यद्यपि से उत्पन्न पाँच वंशों का राज्य सारी पृथ्वी पर था, ऐसा स्पष्ट निर्देश पौराणिक साहित्य में था (वायु. ९३.१०३.९९-४७२; ब्रह्मांड. ३.६८.१०५-१०६)। पौराणिक साहित्य में प्राप्त इस निर्देश से यादव, तुर्वसु, आनव, द्रुह्य एवं पौरव इन पाँच उपशाखाओं का निर्देश अभिप्रेत है।

स्थापना—बुध का इला से उत्पन्न पुत्र पुरुरवस् ऐल सोमवंश का संस्थापक माना जाता है। यद्यपि इन लोगों का राज्य प्रतिष्ठान (आधुनिक प्रयाग) प्रदेश में था। फिर भी इन लोगों का मूलस्थान हिमालय प्रदेश में कहीं था, पुरुरवस् के द्वारा स्थापित किया गया राज्य ऐल राज्य नाम से सुविख्यात था, जो सात द्वीपों में विभाजित था। यही राज्य आंग चल कर, पुरुरवस् के आयु, एवं अमावसु नामक दो पुत्रों के पुत्रपौत्रों में विभाजित हुआ। इन्हीं से आंगचल कर सोमवंश के निम्नलिखित शाखाओं का निर्माण हुआ:—

(१) अमावसु शाखा (सो. अमा.)—पुरुरवस् राजा के अमावसु नामक पुत्र के द्वारा यह स्थापित की गयी थी, एवं कान्यकुब्ज देश पर राज्य करती थी।

(२) आयु शाखा (सो. पुरुरवस्.)—पुरुरवस् के ज्येष्ठ पुत्र आयु के अनेनस्, नहुप, क्षत्रवृद्ध, रम्म एवं रजि नामक पाँच पुत्र थे। इनमें से अनेनस् के द्वारा आयु नामक स्वतंत्र राजवंश (सो. आयु.) की स्थापना की गयी। आयु के बाकी पुत्रों के द्वारा स्थापित किये

गये राजवंश पुरुवंश (सो. पूरु.) सामूहिक नाम से सुविख्यात हुए, जिनमें निम्नलिखित राजवंश प्रमुख थे:—

१. क्षत्रवृद्धवंश—(सो. क्षत्र.) जो आयु राजा के पुत्र क्षत्रवृद्ध के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं काशी देश में राज्य करता था; २. यदुवंश, (सो. यदु.) जो आयु राजा के पौत्र यदु के द्वारा स्थापित किया गया था; ३. तुर्वसुवंश (सो. तुर्वसु.) जो आयु राजा के पौत्र तुर्वसु के द्वारा स्थापित किया गया था; ४. द्रुह्यवंश (सो. द्रुह्य.) जो आयु राजा के पौत्र द्रुह्य राजा के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं गंधार देश में राज्य करता था; ५. अनुवंश (सो. अनु.) जो आयु राजा के पौत्र अनुराजा के द्वारा स्थापित किया गया था; ६. पूरुवंश—(सो. पूरु.) जो आयु राजा के पौत्र पूरुराजा के द्वारा स्थापित किया गया था।

(अ) यदुवंश की उपशाखाएँ—इस राजवंश की निम्नलिखित उपशाखाएँ प्रमुख थीं:—१. सहस्रजित् शाखा (सो. सह.) जो वंश यदुपुत्र सहस्रजित् के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं जो 'हैहय' सामूहिक नाम से सुविख्यात था; २. क्रोष्टु शाखा (सो. क्रोष्टु.) जो वंश क्रोष्टु के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं 'यादव' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध था।

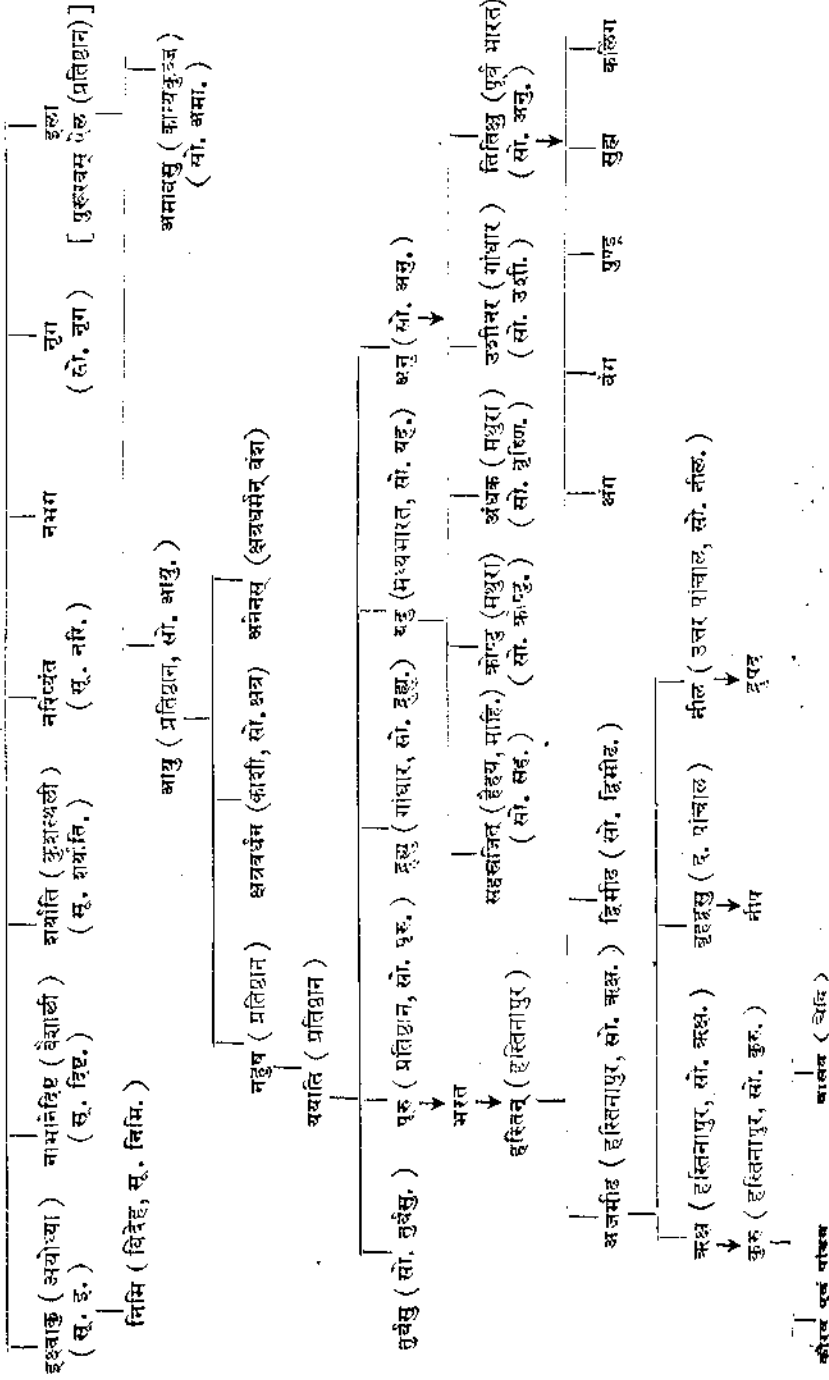
(आ) अनुवंश की उपशाखाएँ—इस वंश की निम्नलिखित उपशाखाएँ प्रमुख थीं:—१. उशीनर शाखा (सो. उशी.) जो वंश अनुवंश में उत्पन्न उशीनर राजा के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं जिसमें सौवीर, कैकेय, मद्रक आदि उपशाखाएँ प्रमुख थीं; २. तितिशु शाखा (सो. तितिशु.) जो वंश अनुवंश में उत्पन्न तितिशु राजा के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं जिसमें अंग, वंग आदि अनेक उपशाखाएँ समाविष्ट थीं।

(इ) पूरुवंश की उपशाखाएँ—इस वंश के लोग 'भरत' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे, एवं उनकी निम्नलिखित शाखाएँ प्रमुख थीं:—१. अजमीढ शाखा (सो. अज.) जो अजमीढ के द्वारा स्थापित की गयी थी, एवं जिसकी हस्तिनापुर के कुच (सो. कुच.) एवं उत्तर पांचाल के नील (सो. नील.) ये दो शाखाएँ प्रमुख थीं; २. द्विमीढ शाखा—(सो. द्विमीढ.) जो भरतवंश में उत्पन्न द्विमीढ राजा के द्वारा स्थापित की गयी थी।

सोमवंश के उपर्युक्त राजवंशों की एवं उनकी विभिन्न शाखाओं की जानकारी अकारादि क्रम से नीचे दी गयी है:—

सूर्य एवं सोमवंशों का विस्तार

वैवस्वत मनु



अजमीद वंश (सो. अज.)—अजमीदपुत्र बृहद्विशु के द्वारा इस वंश की स्थापना हुई, जिसकी संपूर्ण जानकारी छः पुराणों में प्राप्त है (वायु. ९९.१६६; द. वं. १.२०. १८-७६; भा. ९.२१-२२; मत्स्य. ४९.७-५९)। इस राजवंश का राज्य दक्षिण पांचाल देश में था, एवं इनकी राजधानी कांपिल्य नगरी में थी। इस राजवंश के संस्थापक अजमीद राजा को प्रियमेध, ऋक्ष, बृहद्विशु एवं नील नामक चार पुत्र थे। इनमें से बृहद्विशु ने हस्तिनापुर के मुख्य राज्य की परंपरा आगे चलायी, एवं इस प्रकार वह हस्तिनापुर ऋक्षवंशीय (सो. ऋक्ष.) राजवंश का वंशकर राजा सावित हुआ। इसी वंश से आगे चल कर हस्तिनापुर के कुर्वंश (सो. कुर्व.) की उत्पत्ति हुई।

अजमीद राजा के पुत्रों में से नील ने आगे चल कर क्रिवि देश में उत्तर पांचाल (सो. नील.) राजवंश की स्थापना की।

इस राजवंश की वंशावलि के संबंध में पौराणिक साहित्य में एकवाक्यता नहीं है। इनमें से लगभग पूरे वंशावलि मत्स्य में दी गयी है, जो 'पौराणिक राजवंशों की तालिका' में उद्धृत की गयी है। भागवत में प्राप्त नामावलि में बहुत सारे राजाओं के नाम अनलिखित हैं। गरुड में अंतिम तीन राजाओं के नाम नहीं दिये गये हैं। विष्णु के नामावलि में अंतिम राजा जनमेजय का नाम अप्राप्य है। मत्स्य में काव्य राजा के पुत्र का नाम समर दिया गया है।

अनु वंश—(सो. अनु.) ययाति राजा के पुत्र अनु के द्वारा स्थापित किये गये इस वंश की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (वायु. ९९.१२; ब्रह्म. १३. १५-२१; भा. ९.२३.१-३; मत्स्य. ४८.१०)। अनु राजा से आठवीं पीढ़ी में उत्पन्न हुए महामनस् राजा को उशीनर एवं तितिक्षु नामक दो पुत्र थे, जिन्होंने क्रमशः उशीनर एवं तितिक्षु राजवंशों की स्थापना की। उनमें से उशीनर शाखा में से कृक्य, मद्रक, आदि वंश उत्पन्न हुए, एवं तितिक्षु राजवंश में से अंग, वंग, कल्या, सुह, पुंड्र आदि उपशाखाओं का निर्माण हुआ। अनिल, कोटिक सुरथ, आदि वंश के लोग भी अनुवंशीय ही माने जाते हैं।

इस वंश की जानकारी के संबंध में पौराणिक साहित्य में प्रायः सर्वत्र एकवाक्यता है। केवल ब्रह्म एवं हरिवंश में इस वंश के आद्य संस्थापक का नाम ययातिपुत्र अनु के जगह पूर्ववंशीय रौद्राश्व राजा का पुत्र कक्षेयु दिया गया है। ययाति राजा के अन्य एक पुत्र ह्यु के

गांधार शाखा का कई हिस्सा कई स्थानों पर अनु का ही मानकर कई पुराणों में दिया गया है। किन्तु वह गलत प्रतीत होता है।

अनेनस् वंश—आयु राजा के अनेनस् नामक पुत्र से 'क्षत्रधर्मन्' सामूहिक नाम धारण करनेवाले एक राजवंश की स्थापना हुई, जिसमें निम्नलिखित राजा समाविष्ट थे:—अनेनस्—क्षत्रधर्मन्—प्रतिक्षत्र—संजय—जय—विजय कृति—हर्यत्त—सहदेव—अदीन—जयसेन—संकृति—कृतधर्मन् (ब्रह्मांड. ३.६८.७-११; वायु. ९३.७-११)।

अंधक वंश—यदुपुत्र अंधक राजा के द्वारा प्रस्थापित इस वंश की जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है, जहाँ इस वंश की कुकुर, एवं भजमान नामक दो शाखाएँ दी गयी हैं। उनमें से कुकुर वंश में देवक, उग्रसेन, आदि राजा उत्पन्न हुए थे, एवं भजमान (अंधक) वंश में प्रतिक्षत्र, कृतधर्मन्, कंबलवर्हिष, असमौजस् आदि राजा उत्पन्न हुए थे (ह. वं. १.३४)।

अमावसु वंश—(सो. अमा.) पुरुरवस् के पुत्र अमावसु का वंश सात पुराणों एवं रामायण में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.६६.२२-६८; वायु. ९९.५१-११८; ब्रह्म. १०.१३; ह. वं. १.२७; विष्णु. ४.७.२; वा. रा. वा. ३२-३४)। अमावसु स्वयं कान्यकुब्ज देश का राजा था, एवं उसके वंश में निम्नलिखित राजा प्रमुख थे:—अमावसु—भीम—कांचनप्रभ—सुहोत्र—जहु।

अग्नि एवं महाभारत में इस वंश की मूल पुरुष अमावसु ही बताया गया है, किन्तु इसमें उत्पन्न जहु राजा को 'भरतवंशीय' एवं अजमीद राजा का पुत्र कहा गया है (अग्नि. २७७.१६-१८)। किन्तु यह जानकारी अनैतिहासिक प्रतीत होती है। जहु के आठवें पीढ़ी में उत्पन्न विश्वामित्र ऋषि को ऋग्वेद एवं अन्य वैदिक साहित्य में 'भरत' एवं 'भरतर्षभ' जरूर कहा गया है (ऋ. ३. ५३.१२; ऐ. ब्रा. ७.३.५; सां. श्रौ. १५.२५)। किन्तु वहाँ आद्य विश्वामित्र नहीं, बल्कि भरत राजा सुदास राजा के राजपुरोहित का कार्य करनेवाले आद्य विश्वामित्र के किसी वंशज का निर्देश अभिप्रेत है। इस प्रकार भरत राजा का पुरोहित होने के कारण विश्वामित्र ऋषि स्वयं अमावसुकुलोत्पन्न हो कर भी 'भरतर्षभ' कहलाया।

आनव वंश—अनु राजा के वंश में उत्पन्न हुए बलि आनव के अंग, वंग आदि पाँच पुत्रों ने पूर्व भारत में पाँच स्वतंत्र वंशों की स्थापना की। इन पाँच पुत्रों के

द्वारा स्थापन किये गये राजवंश 'आनव' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे। इन आनव वंशों में अंग, बंग, पुण्ड्र सुहा एवं कर्लिंग राजवंश समाविष्ट थे, जिनका राज्य गंगम से ले कर गंगा नदी के त्रिभुज प्रदेश तक फैला हुआ था। कई अभ्यासकों के अनुसार, इन लोगों के द्वारा समुद्र के मार्ग से इन देशों पर आक्रमण किया गया था, एवं इन प्रदेशों में स्थित सौम्य लोगो को उत्कल पहाडियों के प्रदेश में टकेल दिया था।

आयु वंश—आयु राजा के अनेनस् नामक पुत्र का वंश आयु वंश (सो. आयु.) अथवा अनेनस् वंश नाम से सुविख्यात है (पुरुरवस् देखिये; ह. वं. १.२९)।

उशीनर वंश—(सो. उशी.) ययातिपुत्र अनु के राजवंश की पश्चिमोत्तर भारत में स्थित शाखा उशीनर वंश नाम से सुविख्यात थी (अनु देखिये)।

ऋक्ष वंश—(सो. ऋक्ष.) हस्तिनापुर के हस्तिना राजा के अजमीढ एवं द्विमीढ नामक दो पुत्र थे। इनमें से अजमीढ एवं उसके पुत्र ऋक्ष का हस्तिनापुर में राज्य करनेवाला वंश ऋक्षवंश नाम से प्रसिद्ध है। इस वंश के चौथे पुरुष कुरुपुत्र जह्नु से हस्तिनापुर में कुरुवंश का राज्य प्रारंभ हुआ। इसी वंश में उत्पन्न वसुपुत्र बृहद्रथ ने आगे चल कर मगधदेश में राज्य करनेवाले मगधवंश की स्थापना की। इन दो उपशाखाओं के अतिरिक्त ऋक्ष शाखा में उत्पन्न हुए राजा ऋक्षवंशीय (सो. ऋक्ष.) माने जाते हैं।

ऐल वंश—पुरुरवम् एवं मनुकन्या इला से उत्पन्न सोमवंश का नामांतर (सोम वंश देखिये)।

करूप वंश (सो. कुरु.) इस वंश की स्थापना कुरुवंश में उत्पन्न वसु राजा के करूप (मत्स्य) नामक पुत्र के द्वारा की गयी थी। इसी वंश के लोगों ने करूप देश की स्थापना की (पूरु देखिये)।

काश्य वंश (सो. क्षत्र.)—काशीदेश में राज्य करने वाले इस राजवंश की स्थापना पुरुरवस् के पौत्र, एवं आयुराजा के पुत्र क्षत्रवृद्ध ने की। इन वंश के पहले चार राजाओं के नाम क्षत्रवृद्ध, सुनहोत्र (सुहोत्र), काश (काश्य) एवं दीर्घतपस् (क्षत्रवृद्ध देखिये)।

कुकुर वंश—यादव वंश की एक उपशाखा, जो यादव-वंशीय अंधक राजा एवं उसके पुत्र कुकुर के द्वारा स्थापित की गयी थी (ब्रह्म. १५; अंधक वंश देखिये)।

कुरुवंश—(सो. पूरु.) हस्तिनापुर के ऋक्ष राजा के वंश में उत्पन्न हुए एक उपशाखा को कुरुवंश कहते थे, जिसमें

कुरुराजा से ले कर पाण्डवों तक के राजा समाविष्ट थे। इस वंश की जानकारी विभिन्न पुराणों में प्राप्त है (वायु. ९९.२१७-२१८; ब्रह्मांड १२. १०८-१२३; ह. वं. ३२. १८०१-१८०२)।

कुशाव वंश (सो. कुरु.)—इस वंश की स्थापना कुरुवंशीय वसु राजा के कुशाव नामक पुत्र के द्वारा की गयी थी। इसी वंश के लोगों ने कौशावि देश की स्थापना की।

कृष्ण वंश—यादववंश की वृष्णि शाखा में उत्पन्न हुए कृष्ण का सविस्मृत वंश, एवं उसके परिवार की जानकारी हरिवंश में दी गयी है (ह. वं. १.३५)।

क्रोष्टु वंश (सो. क्रोष्टु.)—यदुराजा के पुत्र क्रोष्टु ने मथुरा नगरों के यादव वंश की स्थापना की। इसीके नाम से मथुरा देश का यादव वंश क्रोष्टु नाम से सुविख्यात हुआ। आगे चल कर इसी वंश के ज्यामत्र, मरमान, वृष्णि एवं अंधक शाखाओं का निर्माण हुआ (ब्रह्म. १४. १५; यदु देखिये)।

क्षत्रवृद्ध वंश (सो. क्षत्र.)—काशीदेश के इस सुविख्यात राजवंश की स्थापना आयुराजा के पौत्र एवं क्षत्रवृद्ध राजा के पुत्र सुनहोत्र (सुहोत्र) ने की। इस वंश की सविस्मृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (ब्रह्मांड ३.६६.२; वायु. ९२.६६-७४; ९३. ७-१६; ब्रह्म. ११.३२; ह. वं. १.२९; विष्णु. ४.८; भा. ९.१७. २-५)। काशीदेश में राज्य करने के कारण, इस वंश को काश्य नामांतर भी प्राप्त था। पौराणिक साहित्य में वृद्धक्षत्र राजा का वंश भी प्राप्त है, जो प्रायः क्षत्रवृद्ध वंश से ही मिलता जुलता है।

इस वंश के पहले चार राजाओं के नाम क्षत्रवृद्ध, सुनहोत्र, काश (काश्य) एवं दीर्घतपस् थे। भारतीय युद्ध के काल में इस वंश के सुबाहु एवं अभिभू (सुधिभू) काशी देश में राज्य करते थे। मागवत में प्राप्त इस वंश की वंशावलि में काश्य एवं दीर्घतपस् के दरम्यान काशी एवं राष्ट्र इन दो राजाओं के नाम अन्य पुराणों से अधिक पाये जाते हैं।

दिवोदास एवं प्रतर्दन ये सुविख्यात राजा इसी वंश में उत्पन्न हुए थे। किन्तु दिवोदास (प्रथम) से ले कर दिवोदास (द्वितीय) तक के राजाओं का निश्चित काल एवं वंशक्रम समझ में नहीं आता है। हरिवंश, ब्रह्म एवं अग्नि पुराणों में इस वंश के आश पुरुष के नाते आयुपुत्र सुहोत्र का नहीं, बल्कि पौरववंशीय सुहोत्र राजा का नाम दिया गया

है। किन्तु इस वंश में उत्पन्न हुए दिवोदास एवं प्रतर्दन राजा पौरववंशीय सुहोत्र राजा से काफी पूर्वकालीन थे, यह बात ध्यान में रखते हुए यह जानकारी अनैतिहासिक प्रतीत होती है।

इस वंश के राजपुरोहित भरद्वाज थे। हैहय राजाओं से इस वंश के लोगों का अनेकानेक पीढ़ियों तक युद्ध चलता रहा।

काशीदेश के राजाओं के निम्नलिखित राजाओं का निर्देश पौराणिक साहित्य में पाया जाता है। किन्तु क्षत्र-वृद्धवंश की नामावलि में उनका नाम अप्राप्य है :—१. अजातरिपु; २. धृतराष्ट्र वैचित्र्यवीर्य; ३. सुवाहु; ४. सुवर्णवर्मन्; ५. होमवाहन; ६. ययाति; ७. अंश का पिता।

क्षत्रवृद्ध के अन्य एक पुत्र का नाम प्रतिक्षत्र था, जिसने भी अपने स्वतंत्रवंश की स्थापना की। प्रतिक्षत्र के इस वंश में उत्पन्न हुए १०—१३ राजाओं का निर्देश पौराणिक साहित्य में प्राप्त है। किन्तु उनका काल एवं राज्य आदि के संबंध में निश्चित जानकारी अप्राप्य है।

चैदि अथवा **चैय वंश**—(सो. कुरु.) इस वंश की स्थापना कुरुवंशीय चैयोररिचर वसु राजा के प्रत्यग्रह नामक पुत्र के द्वारा की गयी थी। कई अभ्यासकों के अनुसार, इस वंश का संस्थापक विद्मपुत्र चिदि था। किन्तु इन दोनों राजाओं के जीवनचरित्र में 'चैय' वंश की जानकारी अप्राप्य है।

इस वंश का सबसे सुविख्यात राजा शिशुपाल था, जो कृष्ण एवं पाण्डवों का समकालीन था, निम्नलिखित राजाओं का निर्देश पौराणिक साहित्य में 'चैय' नाम से किया गया है; किन्तु चैय वंश की वंशावलि में उनका निर्देश अप्राप्य है :—१. दमघोष, जिसके पुत्र का नाम धृष्टकेतु, एवं पौत्र का नाम शिशुपाल सूतीथ था; २. कशु चैय ३. कौशिक ४. चित्र; ५. चिदि कौशिकपुत्र; ६. दण्डधार; ७. देवापि ८. शलम; ९. सिंहकेतु; १०. हरि; ११. जहु।

जहु वंश—सुविख्यात कुरु वंश का नामान्तर।

ज्यामघ वंश—यादववंश की एक उपशाखा, जो परावृत राजा के पुत्र ज्यामघ के द्वारा स्थापित की गयी थी (भा. ९.२४; वायु. ९५; ब्रह्म. १५.१२-२९; विष्णु. ४.१६; भा. ९.२४)।

तितिशु वंश—(सो. अनु.) पूर्व हिंदुस्थान का एक राजवंश, जिसका विस्तार आग चल कर पूर्व हिंदुस्थान में स्थापित हुए अंग, वंग आदि आनव वंशों में हुआ। अनुवंशीय सम्राट महामनस् को उशीनर एवं तितिशु नामक

दो पुत्र थे, जिनमें से तितिशु ने पूर्व भारत में स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की।

तुर्वसु वंश—ययाति राजा के तुर्वसु नामक पुत्र के द्वारा इस वंश की स्थापना हुई, जिसमें निम्नलिखित राजा प्रमुख थे :— तुर्वसु—बहि—गर्भ—गोमानु—त्रिसानु—करंधम मरुत्। मरुत् राजा को कोई पुत्र न होने के कारण, उसने पूरुवंशीय राजा दुष्यन्त को गोद में लिया, एवं इस प्रकार तुर्वसु वंश पूरुवंश में सम्मिलित हुआ।

किन्तु कई पुराणों में इनकी एक दाक्षिणात्य शाखा का निर्देश प्राप्त है, जिसे पांडव चोल, केरल, आदि राजवंशों की स्थापना का श्रेय दिया गया है (पद्म. उ. २९०.१-२)। पार्मिटर के अनुसार, किसी तुर्वसु राजकन्या के द्वारा इन दाक्षिणात्य वंशों की स्थापना की गई होगी।

इस वंश की जानकारी विभिन्न पुराणों में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.७४.१-४; वायु. ९९.१-३, भा. ९.२३. १६-१८; मत्स्य. ४८.१-५)। अंग्रि में गांधार लोगों को इसी वंश में शामिल किया गया है, किन्तु गांधार लोग तुर्वसुवंशीय न होकर द्रुह्युवंशीय थे।

वैदिक साहित्य में कुसंग को तुर्वसुवंशीय कहा गया है। इसी साहित्य में इसे म्लेच्छों का राजा कहा गया है। हरिवर्मन् नामक एक तुर्वसुवंशीय राजा का निर्देश कई ग्रंथों में प्राप्त है, किन्तु इसके वंश के वंशावलि में उसका नाम अप्राप्य है।

द्रुह्यु वंश (सो. द्रुह्यु.) ययाति राजा के द्रुह्यु नामक पुत्र के द्वारा स्थापना किये गये इस वंश का विस्तार प्रायः पश्चिमोत्तर भारत में था (ब्रह्म. १३.१४८; ह. वं. १.३२; मत्स्य. ४८.६-१०; विष्णु. ४.१६; भा. ९.२३.१४-१५; ब्रह्मांड. ३.७४.७; वायु. ९९.७-१२)।

द्रुह्यु राजा के बभ्रु एवं सेतु नामक दो पुत्र थे, जिनके अंगारसेतु, गांधार, धृत, प्रचेतस् आदि वंशजों के द्वारा इस वंश का विस्तार हुआ। पौराणिक साहित्य के अनुसार, प्रचेतस् के वंशजों ने भारतवर्ष के उत्तर में स्थित म्लेच्छ देशों में नये राज्यों का निर्माण किया।

इसी वंश का जो वर्णन ब्रह्म एवं हरिवंश में प्राप्त है, वहाँ गांधार के बाद उत्पन्न हुए राजा गलती से अनु-वंशीय राजा बतलाये गये हैं। इन लोगों का निर्देश वैदिक साहित्य में भी प्राप्त है।

द्विमीढ़ वंश—(सो. द्विमीढ़.) पूरुवंशीय हस्तिन् राजा के अजमीढ एवं द्विमीढ़ नामक दो पुत्र थे, जिनमें से अजमीढ हस्तिनापुर का राजा हो गया, एवं द्विमीढ ने स्वतंत्र

राजवंश की स्थापना की, जो द्विमीढ़ राजवंश नाम से प्रसिद्ध हुआ (ह. वं. १.२०; विष्णु. ४.१९.१३; भा. ९.२१; २७-३०; वायु. ९९.१८४; १९३; मत्स्य. ४९. ७०-७९)। जनमेजय राजा के पश्चात् यह वंश कुरुवंश में शामिल हुआ।

वायु में प्राप्त द्विमीढ़वंशीय राजाओं के नाम एवं वंशक्रम की तालिका 'पौराणिक राजवंशों की नामावलि' में दी गयी है। मत्स्य एवं हरिवंश में इस राजवंश की स्थापना अजमीढ़ राजा के द्वारा की जाने का निर्देश गलती से किया गया है। विष्णु में द्विमीढ़ राजा को मल्लाट राजा का पुत्र कहा गया है, जो निर्देश भी अतिहासिक प्रतीत होता है।

वायु एवं विष्णु में प्राप्त इस वंश की नामावलि में उत्तरीय राजाओं के नाम प्राप्त हैं। विष्णु, भागवत एवं गरुड में इनमें से सुवर्मान्, सार्वभौम, महर्षोरव एवं स्वमरथ राजाओं के नाम अप्राप्य हैं। भागवत में उग्रायुध राजा को नीप कहा गया है। इस राजा ने मल्लाटपुत्र जनमेजय राजा का वध कर दक्षिण पांचाल देश की राजाद्वी प्राप्त की। पश्चात् भीष्म ने उग्रायुध राजा का वध किया।

नीप वंश—(सो. पूर.) इस वंश की स्थापना पार राजा के पुत्र नीप राजा ने की। इस वंश में उत्पन्न हुए जनमेजय दुष्युद्ध नामक कुलांगार राजा का उग्रायुध ने वध किया, एवं इस प्रकार नीपवंश नष्ट हो कर द्विमीढ़वंश में सम्मिलित हुआ (मत्स्य. ४९; ह. वं. १.२०)।

नील वंश—उत्तर पांचाल देश का एक सुविख्यात राजवंश, जो अजमीढ़पुत्र नील के द्वारा स्थापित किया गया था। इस वंश में उत्पन्न हुए नील से लेकर वृषत् तक के सोलह राजाओं का निर्देश पुराणों में अनेक स्थानों पर प्राप्त है (वायु. ९३.५५-१०४; ब्रह्म. १३.२-८; ५०-६३; ८०-८१; ह. वं. १.२०.३१-३२; विष्णु. ४. १९; भा. ९.२०-२१; म. आ. ८९-९०; मत्स्य. ४९. १-४२)। इस वंश के भर्थाश्व राजा को 'पांचाल' सामूहिक नाम धारण करनेवाले पाँच पुत्र थे, इसी कारण इनके राज्य को 'पांचाल' नाम प्राप्त हुआ।

यह राजवंश बहुत ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है, क्योंकि, इस वंश में उत्पन्न हुए सुहृल, वसन्धश्च, दिवोदास, सुदाम, च्यवन, सहदेव, सोमक, पित्रवन आदि राजाओं का निर्देश वैदिक साहित्य में प्राप्त है।

इस वंश का अंतिम राजा दुष्युध था, जिसे जीत कर द्रौण ने उत्तर पांचाल देश का राज्य अपने अधीन

किया, एवं दक्षिण पांचाल देश का राज्य उसे दे दिया। इसी वंश की एक शाखा (अहल्या-घातान्द) आगे चल कर 'आंगिरस ब्राह्मण' बन गयी।

पुरूरवस् वंश—पुरूरवस् राजा एवं मनुकन्या इला से उत्पन्न 'सोमवंश' का नामांतर। पुरूरवस् ने ले कर आयु, नहुष, ययाति, एवं यदु तक का राजवंश पुरूरवस् वंश (सो. पुरूरवस्) नाम से सुविख्यात है। पुरूरवस् से ले कर आशुपुत्र अनेकपुत्र तक का वंश 'आशु वंश' (सो. आशु) नाम से सुविख्यात है।

पूर वंश—(सो. पूर.) ययातिपुत्र पूर ने उत्पन्न हुआ वंश पूर वंश नाम से सुविख्यात है। इस वंश के तीन प्रमुख भाग माने जाते हैं:—१. सो. पूर, जिसमें पूर ने ले कर अजमीढ़ तक के राजा समाविष्ट थे: १. सो. ऋष, जिसमें अजमीढ़ से ले कर कुरु तक के राजा समाविष्ट थे; ३. सो. कुरु, अथवा सो जह्नु, जिसमें सुनपुत्र जह्नु से ले कर पाण्डवों तक के राजा समाविष्ट थे। इन तीनों वंशों की जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (वायु. ९३.५५-१०४; ब्रह्म. १३.२-८; ५०-६३; ८०-८१; ह. वं. १. २०.३१-३२; विष्णु. ४.१९; भा. ९.२०-२१; म. आ. ८९-९०; मत्स्य. ४९.१-४३)।

(१) सो. पूर वंश—इस वंश के मतिनार राजा तक सभी पुराणों में एकवाक्यता है। किन्तु महाभारत में प्राप्त वंशावलि कुछ अलग ढँग से दी गयी है। वहाँ सिद्राक्ष एवं रुच्यु राजाओं के नाम अप्राप्य हैं, एवं अहंयाति तथा मतिनार राजाओं के बीच निम्नलिखित दस राजाओं का समावेश किया गया है:—१. सार्वभौम; २. जयर्षन; ३. अवाचोम; ४. अरिह; ५. महाभौम; ६. अनुनादयन्; ७. अक्रोधन; ८. देवातिथि; ९. ऋष; १०. ऋष। किन्तु महाभारत के द्वारा दी गयी यह नामावलि अतिहासिक प्रतीत होती है, क्योंकि, वहाँ इन राजाओं के द्वारा अंग, कलिंग एवं विदर्भ राजकुमारों के साथ विवाह करने का निर्देश प्राप्त है, जो राज्य इस काल में अस्तित्व में नहीं थे। इससे प्रतीत होता है कि, इन राजाओं को पूर्ववंश के तृतीय कालविभाग (सो. कुरु) में सुरथ एवं भीमसेन के दरभ्यान अंतर्भूत करनेवाली पौराणिक परंपरा कहीं प्रतीत होती है।

तंतु एवं दुष्युध के दरभ्यान उत्पन्न हुए राजाओं की नामावलि महाभारत एवं पौराणिक साहित्य में अल्प एवं अस्पष्ट रूप में प्राप्त है। पौराणिक साहित्य में दुष्युध राजा की मातामही का नाम इतिना दिया गया है।

महाभारत में उसी इतिहास का निर्देश 'इलिन (अनिल)' राजा के नाम से किया गया है।

(२) सो. ऋक्ष वंश—हस्तिन् राजा को अजमीट एवं द्विमीट नामक दो पुत्र थे। इसमें से अजमीट एवं ऋक्ष से ले कर कुरु तक का वंश ऋक्ष वंश (सो. ऋक्ष) नाम से सुविख्यात था। इस शाखा के राजाओं की नामावलि के संबंध में महाभारत एवं पुराणों में एकवाक्यता है, किन्तु फिर भी इन दोनों में प्राप्त नामावलि अपूर्ण सी प्रतीत होती है। विशेष कर ऋक्ष राजा के पूर्वजलीन एवं उत्तरकालीन राजाओं के संबंध में वहाँ प्राप्त जानकारी अत्यंत संदिग्ध प्रतीत होती है। आगे चल कर ऋक्ष के वंश से ही कुरुवंश का निर्माण हुआ।

(३) सो. कुरु वंश—कुरुवंश की स्थापना करनेवाले कुरु राजा को परिशित्, जहु एवं एवं सुधन्वन् नामक तीन पुत्र थे। इनमें से परिशित् राजा को जनमेजय (प्रथम) नामक पुत्र, एवं श्रुतसेन एवं भीमसेन नामक पौत्र थे। परिशित् राजा के इन पौत्रों का निर्देश राजा के माते कहीं भी प्राप्त नहीं है। इससे प्रतीत होता है कि, राजा के ज्येष्ठ पुत्र हो कर भी उनका राज्याधिकार नष्ट हो चुका था। इस प्रकार परिशित् (प्रथम) के पश्चात् जहु राजा के पुत्र सुरथ हस्तिनापुर का राजा बन गया, एवं उसी राजा से कुरुवंश को कुरु नाम प्राप्त हुआ। सुरथ से ले कर अभिमन्यु तक के राजाओं के संबंध में पौराणिक साहित्य में काफी एकवाक्यता है।

कुरु राजा का तृतीय पुत्र सुधन्वन् के वंशज वसु ने मगध एवं चैथ राजवंशों की स्थापना की (मगध वंश देखिये)।

पौराणिक साहित्य में निम्नलिखित राजाओं को कौरव कहा गया है, किन्तु कौरव वंशावलि में उनका नाम अप्राप्य है:— १. अभिप्रतारिन् काक्षसेनि; २. उचैश्रवस; ३. कौपेय; ४. पीरव; ५. बाह्लिक प्रातिपीय; ६. ब्रह्मदत्त चैकितानेय।

प्रतिक्षत्र वंश—इस वंश की स्थापना क्षत्रवृद्धपुत्र प्रतिक्षत्र राजा के द्वारा हुई थी (क्षत्रवृद्ध देखिये)। पौराणिक साहित्य में इस वंश का निर्देश अनेक स्थानों पर प्राप्त है (भा. ९.१७.१६-१८; वायु. ९३.७-११; ब्रह्म. ११.२७-३१; ह. वं. १.२९.१-५)।

बालेय क्षत्रिय वंश—बलि आनव राजा के द्वारा पूर्व भारत में स्थापना किये गये अंग, वंग आदि वंशों से उपन्न लोगों का सामुहिक नाम (अनु वंश देखिये)।

बभ्रु वंश—बभ्रु देवावृध नामक यादवराजा के द्वारा स्थापन किये गये इस वंश के रूप भोज मूर्तिकावतिक नाम से सुविख्यात थे (ब्रह्म. १.३५-४५)। यह वंश यादव वंशांतर्गत क्रोष्टु वंश की ही उपशाखा माना जाता था (हं. वं. १.३७)।

भजमान वंश—(सो. क्रोष्टु.) यादव राजा अंधकपुत्र भजमान के द्वारा स्थापित इस वंश को अंधक वंश नामान्तर भी प्राप्त था (यदु देखिये; ब्रह्म. १५.३२-४५; विष्णु. ४.१४; भा. ९.२४)।

भरत वंश—(सो. पूरु.) पूरुवंशीय सम्राट् भरत राजा के वंश में उत्पन्न हुई पूरुवंश की सारी शाखाएँ भरतवंशीय कहलाती थी। इन उपशाखाओं में अजमीट शाखा, द्विमीट शाखा एवं उत्तर एवं दक्षिण पांचाल के पूरुवंशीय राजवंश समाविष्ट थे (वायु. ९९.१३४; मत्स्य. २४.७१; ब्रह्म. १३.५७)।

भोज वंश—(सो. सह.) हैहय वंश की पौत्र उपशाखाओं में से एक। अन्य चार उपशाखाओं के नाम वीतिहोत्र, शर्याति, अवंती एवं तुण्डिकेर थे (हैहय एवं बभ्रु वंश देखिये)।

मगध वंश—इस राजवंश की स्थापना कुरुपुत्र सुधन्वन् राजा के वंश में उत्पन्न हुए वसु राजा के द्वारा की गयी थी। वसुराजा की मृत्यु के पश्चात् उसका पूर्वभारत में स्थित साम्राज्य उसके निम्नलिखित पुत्रों में निम्नप्रकार बाँट दिया गया :— १. बृहद्रथ (मगध); २. प्रत्यग्रह (चेदि); ३. कुशांब (कौशांबी); ४. यदु (कर्ण); ५. मावेल् (मत्स्य)।

मगध राजवंश की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (विष्णु. ४.१९.१९; वायु. ९९.२१७-२१९; भा. ९.२२.४९; ह. वं. १.३२; ८८.९८)। इनमें से ब्रह्म की वंशावलि बृहद्रथ राजा के पौत्र ऋषभ राजा तक दी गयी है। विष्णु एवं भागवत में जरासंध को बृहद्रथ राजा का पुत्र कहा गया है। किन्तु वस्तुतः वह बृहद्रथ राजा की तेरहवी पीढ़ी में उत्पन्न हुआ था।

यदु वंश अथवा **यादव वंश**—इस सुविख्यात राजवंश का प्रारंभ यदुपुत्र क्रोष्टु के द्वारा हुआ। कालक्रम की दृष्टि से इस वंश के कालखण्ड माने जाते हैं:— १. क्रोष्टु से सात्वत तक; २. सात्वत से प्रारंभ होनेवाला बाकी उर्वरित भाग।

(१) क्रोष्टु से सात्वत तक—इस वंश की जानकारी बारह पुराणों में प्राप्त है (वायु. ९६.२५५; ब्रह्मांड. ३.

७०.१४; वायु. ९४-९६; ब्रह्म. १३.१५३-२०७; ह. वं. १.३६; २. ३७-३८; पद्म. सू. १२-१३; विष्णु. ४. १२; भा. ९.२३.३०-३४)। महाभारत में भी इस वंश की जानकारी प्राप्त है (म. अनु. २५१.२६)।

क्रोष्टु से ले कर परावृत्त तक के राजाओं के संबंध में सभी पुराणों में प्रायः एकवाक्यता है। फिर भी कई पुराणों में पृथुश्रवम्, उदानम्, रक्मकवच, एवं निवृत्ति राजाओं के पश्चात् एक पीढ़ी ज्यादा दी गयी है। परावृत्त राजा को दो पुत्र थे, जिनमें से ज्यामघ नामक उनका कनिष्ठ पुत्र यदुवंश का वंशकर राजा साबित हुआ। उसने एवं उसके पुत्र विदर्भ ने सुविख्यात विदर्भराज्य की स्थापना की। विदर्भराजा के ज्येष्ठपुत्र रोमपाद ने विदर्भ का राज्य आगे चलाया। उसी के वंश में क्रथ (भीम), देवक्षत्र, मधु आदि राजा उत्पन्न हुए, एवं उसी वंश में उत्पन्न हुए सात्वत राजा ने इस वंश का वैभव चरम सीमा पर पहुँचाया। मधु से ले कर सात्वत तक के राजाओं के नामावलि के संबंध में पुराणों में एकवाक्यता नहीं है।

विदर्भ राजा के द्वितीय पुत्र का नाम कौशिक था, जिसने चेदि देश में नये राजवंश की स्थापना की।

विदर्भ राजा के तृतीय पुत्र का नाम लोमपाद था, जिसके वंश में उत्पन्न हुए तेरह राजाओं की नामावलि भागवत एवं कूर्म में निम्न प्रकार दी गयी है:—१ लोमपाद; २. बभ्रु; ३. आहति; ४. श्वेत; ५. विश्वसह; ६. कौशिक; ७. सुयंत; ८. अनल; ९. श्वेति; १०. शुतिमंत; ११. वपुष्मन्त; १२. बृहन्मधम्; १३. श्रीदेव; १४. कीतरथ (भा. ९.२४.१-२)। किन्तु इस वंश का राज्य कहाँ था, इस संबंध में कोई भी जानकारी वहाँ नहीं दी गयी है।

(२) सात्वत के पश्चात्—(सो. वृष्णि.) सात्वत राजा ने इक्ष्वाकुवंशीय दानुचानिन् राजा से मथुरा नगरी को जीत कर वहाँ अपना राज्य प्रस्थापित किया। सात्वत राजा को भजमान, देवावृध, वृष्णि, अंधक नामक चार पुत्र थे, जिनके द्वारा प्रस्थापित किये गये वंश वृष्णि (सो. वृष्णि.) सामूहिक नाम से सुविख्यात थे। इस वंश की निम्नलिखित शाखाएँ थीं:—

(अ) भजमान शाखा—भजमान एवं उसके वंश में उत्पन्न हुए अन्य राजा मथुरा में ही राज्य करते थे।

(आ) देवावृध शाखा—देवावृध एवं उसका पुत्र बभ्रु ने मार्तिकावत नगरी में राज्य करनेवाले भोज राजवंश की स्थापना की।

(इ) अंधक शाखा—अंधक राजा को कुल चार पुत्र थे, जिनमें कुकुर एवं भजमान प्रमुख थे। इन दो पुत्रों ने क्रमशः कुकुर एवं अंधक नामक राजवंशों की स्थापना की। ये दोनों वंश मथुरा प्रदेश में राज्य करते थे, एवं उनमें क्रमशः कंस एवं कृष्ण उत्पन्न हुए थे।

(४) वृष्णि शाखा (क्रोष्टु शाखा)—वृष्णि राजा को सुमित्र (अनमित्र), युवाजित्, देवर्मादृप एवं अनमित्र (माद्रीपुत्र) नामक चार पुत्र थे, जिन्होंने चार स्वतंत्र वंशों की स्थापना की। इन वंशों में उत्पन्न हुए प्रमुख यादव निम्न प्रकार थे:—१. सुमित्र शाखा—सत्राजित्, मेघकार, २. युवाजित् शाखा—शकटक, अकूर; ३. देवर्मादृप शाखा—वसुदेव, बलराम एवं कृष्ण; ४. अनमित्र (माद्री-पुत्र) शाखा—शानि, युयुधान सात्यकि, अर्जुन आदि।

अन्य शाखाएँ—उपर्युक्त यादव राजाओं में से कुर-पुत्र वसुदेव का वंश वसुदेव वंश (सो. कर्पू.) नाम से सुविख्यात है। अंधकवंश ही एक उदात्ता शाखा विदूरथवंश (सो. विदू.) नाम से सुविख्यात है, जिनमें विदूरथपुत्र राजाविदेव से ले कर तमोत्रस तक के राजा समविष्ट थे।

वायु एवं मत्स्य में यादववंश की क्रमशः ग्यारह, एवं एक सौ शाखाएँ दी गयी हैं (वायु. ९६.२५५; मत्स्य. ४७.२५-२८)।

इन शाखाओं का विस्तार केवल मथुरा में ही नहीं, बल्कि दक्षिण हिंदुस्थान में भी हुआ था (ह. वं. १. ३८.३६-५१)।

यदु राजा का अन्य एक पुत्र सहस्राक्षन् ने सुविख्यात हेहयवंश की स्थापना की, जो यादववंश की ही एक शाखा मानी जाती है (हेहय वंश देखिये)।

“पौराणिक वंशों की तालिका” में दी गयी यादववंश की जानकारी विष्णुपुराण का अनुसरण कर दी गयी है। अन्य पुराणों में प्राप्त जानकारी वहाँ कौटुक में दी गयी है।

ययाति वंश—ययाति राजा के यदु, पूरु, उर्वरु, दृह्यु, अनु आदि पाँच पुत्रों के द्वारा उत्पन्न हुए राज-वंश ‘ययाति वंश’ सामूहिक नाम से सुविख्यात थे (वायु. ९३.१५-२८)।

रजि वंश—आयु राजा के रजि नामक पुत्र के द्वारा उत्पन्न हुआ वंश ‘रजि वंश’ नाम से सुविख्यात है। आंग नल कर इसी वंश से ‘राज्ये क्षत्रिय’ नामक लेकमहू का निर्माण हुआ (वायु. ९२.७४-१९)।

रम्म वंश—आयुपुत्र रम्म के द्वारा स्थापन किया गया वंश 'रम्मवंश' नाम से सुविख्यात है (भा. १०.१७.१०)। इस वंश के संबंध में अन्य कोई भी जानकारी उपलब्ध नहीं है।

वसुदेव वंश (सो. वसु.)—यादववंशांतर्गत देवमीढुप शाखा में से शूरपुत्र वसुदेव राजा का वंश 'वसुदेव वंश' नाम से सुविख्यात है (ब्रह्म. १५.३०)।

वासव वंश—कुरुवंशीय सुधन्वन् राजा के वसु नामक पुत्र ने पूर्व हिंदुस्थान में स्थित यादवों का चेदि साम्राज्य जीत लिया, एवं उसे अपने पाँच पुत्रों में बाँट दिया। वे पाँच वंश वासव वंश नाम से सुविख्यात थे।

विदूरथ वंश (सो. विदू.)—सात्वतवंशांतर्गत भजमान शाखा में से विदूरथपुत्र राजाधिदेव से ले कर तमोजस तक के राजा विदूरथवंशीय (सो. विदू.) कहलाते हैं (यदु देखिये)।

विष्णु वंश—यादववंशीय कृष्णवंश को वायु में विष्णु-वंश कहा गया है (वायु. ९६-९८)।

वृष्णि वंश—यादववंशांतर्गत सात्वत राजा के वृष्णि नामक पुत्र का वंश वृष्णि नाम से सुविख्यात है (ब्रह्म. १४.२-१५; ३१; ह. वं. १.३४; भा. ९.२४.१२-१८; यदु देखिये)।

सहस्रजित् वंश (सो. सह.)—यदु राजा के पुत्र सहस्रजित् के द्वारा प्रस्थापित किये गये 'हैहय वंश' का नामान्तर (हैहय वंश देखिये)।

सात्वत वंश—यदुवंशांतर्गत इस वंश शाखा का संस्थापक सात्वत माना जाता है। इस वंश की भजमान, देववृध, अंधक एवं वृष्णि नामक चार शाखाएँ मानी जाती हैं (म. शां. ३३६, ३१-४९)। सात्वत धर्म की जानकारी भी महाभारत में प्राप्त है।

हैहय वंश (सो. सह.)—यदुराजा के सहस्रजित् नामक पुत्र के द्वारा स्थापित किये गये इस राजवंश की जानकारी पौराणिक साहित्य में सर्वत्र प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.६९.३; वायु. ९४.१-१०; विष्णु. ४.११.३; भा. ९.२३.२०-२८; ब्रह्म. १३.१५४; ह. वं. १.३३)। इस वंश का मुख्य राज्य मालवा में नर्मदा नदी के किनारे माहिष्मती नगरी में था, एवं उनकी वीतिहोत्र, शयीति, भोज, आनर्त (अवंती) एवं कुण्डिकेर (कुण्डिकेर) ये पाँच शाखाएँ प्रमुख थी। हरिवंश एवं ब्रह्म के अनुसार, भरत लोगों का अंतर्भाव भी 'हैहय समूह' में किया जाता था।

इनमें से प्रमुख राजा का नाम तालजंघ था। किन्तु आगे चल कर वह सारे हैहय वंश की उपाधि बन गयी। भार्गव ऋषि इन लोगों के पुरोहित थे, एवं इनका उपास्य दैवत दत्त आश्रेय था। इसके अतिरिक्त वसिष्ठ, पुलस्त्य आदि ऋषियों से भी इनका घनिष्ठ संबंध था।

परशुराम जामदग्न्य से इसका प्राणांतिक शत्रुत्व हुआ था, जिसने इन्हें जड़मूल से उखाड़ देने की कोशिश की थी। किन्तु अन्त में अपने इन प्रयत्नों में परशुराम असफल हुआ, एवं इनका अस्तित्व अबाधित रहा।

इस वंश के निम्नलिखित राजा विरोध प्रख्यात थे:—कार्तवीर्य अर्जुन, एकवीर, कुमार, शशिर्षिदु, भूत, शंख। इसी वंश में उत्पन्न हुआ वीतहव्य राजा राज्यभ्रष्ट हो कर भृगुवंश का एक श्रेष्ठ ऋषि बन गया। इसी कारण पौराणिक साहित्य में उसे राजा न समझ कर उसके वंश-शाखा की कोई भी जानकारी वहाँ नहीं दी गयी है। महाभारत में वीतहव्य से ले कर शौनक तक के वंश की जानकारी प्राप्त है। कई अभ्यासकों के अनुसार, वीतहव्य ही हैहयवंश का अंतिम राजा माना गया है।

(३) स्वायंभुव मनु वंश (स्वा.)

प्राचीन भारतखण्ड के ब्रह्मावर्त नामक प्रदेश में स्थित बर्हिष्मती नगरी का सर्वाधिक प्राचीन राजा स्वायंभुव मनु था, जिसका वंश 'स्वायंभुव मनु वंश' नाम से सुविख्यात है। इस वंश की उत्तानपाद एवं प्रियव्रत नामक दो शाखाएँ प्रमुख मानी जाती हैं।

उत्तानपाद वंश—(स्वा. उत्तान.)—स्वायंभुव मनु के उत्तानपाद नामक ज्येष्ठ पुत्र के द्वारा प्रस्थापित किये गये उत्तानपाद वंश की सविस्तृत जानकारी भागवत में

प्राप्त है (भा. ४.८)। वहाँ हविर्धान राजा के पुत्रों तक इस वंश की जानकारी दी गयी है। इस वंश में ध्रुव, प्रथु वैन्य आदि सुविख्यात राजा उत्पन्न हुए थे।

नाभि वंश—(नामि.) स्वायंभुव मनुपुत्र प्रियव्रत राजा के कनिष्ठ पुत्र नाभि का स्वतंत्र वंश विष्णुपुराण में दिया गया है (विष्णु. २.१)।

प्रियव्रत वंश—(स्वा. प्रिय.)—स्वायंभुव मनु के कनिष्ठ पुत्र प्रियव्रत के द्वारा प्रस्थापित किये गये इस

वंश की सविष्टृत जनकारी भागवत में दी गयी है (भा. ५.१; विष्णु. २.११)। प्रियव्रत राजा के कुल सात पुत्र थे, जिनमें उसने अपने सप्तद्वीपामक पृथ्वी का राज्य विभांशत किया:— १. आग्नीध्र (जेजुद्वीप); २. इध्मजिह्व (प्रश्नद्वीप); ३. यज्ञशङ्कु (चाण्डालि-द्वीप); हिरण्यरेतस (कुशद्वीप); ५. वृत्शुष्ट (कौंच-

द्वीप); ६. मेधातीर्थ (साकद्वीप); ७. वीतिहोत्र (पुष्करद्वीप)।

प्रियव्रत राजा के ज्येष्ठपुत्र आग्नीध्र का वंश भी भागवत में दिया गया है, जहाँ उसके पुत्रों के नाम निम्न प्रकार बताये गये हैं:—१. इत्यवृत; २. रम्यक; ३. हिरण्य; ४. कुरु; ५. भद्राश्व; ६. किंपुरुष; ७. नाभि।

(४) भविष्य वंश (भविष्य.)

कलियुग का प्रारंभ—पौराणिक साहित्य के अनुसार, भारतीय युद्ध के अंतिम दिन धैतायुष की समाप्ति हो कर कलियुग का प्रारंभ हुआ। डॉ. फ्रीड के अनुसार, इस युग का प्रारंभ भारतीय युद्ध के अंतिम दिन नहीं, बल्कि कृष्ण के निराण के दिन हुआ था, जिसका काल भारतीय युद्ध के बीस साल बाद माना जाता है। इसी वर्ष में युधिष्ठिर ने राज्यत्याग कर हरितनापुर का राज्य अपने पौत्र परिक्षित को दे दिया। इस प्रकार परिक्षित के राज्यारोहण से ही कलियुग का प्रारंभ होता है, ऐसा डॉ. फ्रीड का अभिमत है। किन्तु पौराणिक साहित्य में सर्वप्रथम भारतीय युद्ध का अंतिम दिन ही कलियुग का प्रारंभ माना गया है।

पौराणिक साहित्य में प्राप्त प्राचीन भारतीय राजाओं की वंशावलीयों भारतीय युद्ध से ही समाप्त होती हैं। इस युद्ध के उत्तरकाल में भारतवर्ष में उत्पन्न हुए राजाओं की जानकारी केवल महत्त्व, वायु, ब्रह्मांड, विष्णु, भागवत एवं गरुड पुराणों में ही कबल दी गयी है।

यह जानकारी पौराणिक साहित्य में भूतकाल में उत्पन्न हुए राजाओं के नाते नहीं, बल्कि भविष्य में उत्पन्न होने-वाले राजाओं के भविष्यवाणी के रूप में दी गयी है, जिसका प्रणयन श्री व्यास के द्वारा किया गया है। इसी कारण, पौराणिक साहित्य में प्राप्त कलियुग के राजाओं की जानकारी को ' भविष्य वंश ' सामूहिक नाम दिया गया है।

भविष्य राजवंशों का मूल स्रोत—पार्षितर के अनुसार कलियुगीन राजाओं की पुराणों में प्राप्त बहुतेसारी जानकारी सर्वप्रथम ' भविष्य पुराण ' में ग्रथित की गयी थी, जिसकी रचना दूसरी शताब्दी के पश्चात् मगध देश में पाली अथवा अर्धमगधी भाषा में, एवं खरोड़ी लिपि में दी गयी थी। भविष्य पुराण के इस सर्वप्रथम संस्करण की रचना आश्र राजा शातकर्ण के राज्यकाल में (द्वितीय शताब्दी का अंत) की गयी थी। भविष्यपुराण के इस आद्य संस्करण

में तत्कालीन मृत एवं मगध लोगों में प्रचलित राजवंशों के सारे इतिहास की जानकारी ग्रथित की गयी थी। काले-परांत भविष्य पुराण के इसी संस्करण में उत्तरवर्तीन राजवंशों की जानकारी ग्रथित की जाने लगी, एवं इस प्रकार इस एक ही ग्रंथ के अनेकानेक संस्करण उत्तरकाल में उपलब्ध हुए।

भविष्य पुराण के इन अनेकानेक संस्करणों को अन्वय-भूत मान कर विभिन्न पुराणों में प्राप्त भविष्यवंशों की जानकारी ग्रथित की गयी है। इस प्रकार मध्य युष्ण में ई. स. ३ री शताब्दी के मध्य में उपलब्ध भविष्यपुराण के संस्करण का आधार लिया गया है, एवं उसमें आश्र राजवंशों के अधःपतन के समय तक के राजाओं की जानकारी दी गयी है।

इसी प्रकार वायु एवं ब्रह्मांड में ३ री शताब्दी के मध्य में उपलब्ध भविष्य पुराण के संस्करण का आधारग्रंथ के नाते उपयोग किया हुआ प्रतीत होता है। इसी कारण इन दोनों ग्रंथों में चंद्रगुप्त (प्रथम) के अंत तक (ई. स. ३२०) के राजवंशों का निर्देश पाया जाता है। इस प्रकार इन ग्रंथों में प्रयाग, साकेत, मगध इन देशों पर गुप्त राजाओं का आधिपत्य होने का निर्देश प्राप्त है, एवं इन देशों के परवर्ती प्रदेश पर नाग, मणिप्रस्थ लोगों का राज्य होने का निर्देश स्पष्टरूप से प्राप्त है। समुद्रगुप्त के भारतवर्षी साम्राज्य का निर्देश वहाँ कहीं भी प्राप्त नहीं है, जिसे इन पुराणों की रचना का काल निश्चित हो जाता है।

विष्णु एवं भागवत पुराण में ऋतुर्वं शताब्दी के अंत में उपलब्ध भविष्य पुराण का उपयोग किया गया है, एवं उसका रचनाकाल तीसरी शताब्दी माना जाता है। गरुडपुराण में भी इसी भविष्य पुराण का उपयोग किया गया है। किन्तु इस पुराण का रचनाकाल अनिश्चित है।

महत्त्व—भविष्य वंश में निर्दिष्ट राजवंशों में नैऋत, मगध, प्रद्योत, शिशुनाग आदि वंशों की ऐतिहासिकता प्रमाणित हो चुकी है। इस कारण इन वंशों का पौराणिक

साहित्य में प्राप्त जानकारी इतिहासाध्यायन की दृष्टि से क्रांती महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। किन्तु अन्य कई वंश ऐसे भी हैं, जिनकी ऐतिहासिकता अनिश्चित एवं विवादग्रस्त है।

भविष्य पुराण का उपलब्ध संस्करण—भविष्यपुराण के उपरिनिर्दिष्ट संस्करणों में से कोई भी संस्करण आज उपलब्ध नहीं है। इस ग्रन्थ के आज उपलब्ध संस्करण में बहुत सारी प्राचीन ऐतिहासिक सामग्री छुप्त हो चुकी है, एवं जो भी सामग्री आज उपलब्ध है, उसमें मध्ययुगीन एवं अर्वाचीन कालीन अनेकानेक राजाओं की जानकारी भविष्यकथन के रूप में इतनी मद्दी एवं अनैतिहासिक पद्धति से दी गयी है कि, इतिहास के नाते उसका महत्त्व नहीं के बराबर है। उपलब्ध भविष्य पुराण के प्रतिसर्ग पर्व में निर्दिष्ट किये गये मध्ययुगीन एवं अर्वाचीन प्रमुख राजाओं कि एवं अन्य व्यक्तियों की नामावलि निम्नप्रकार है—अक्षर (४.२२); आदम (१.४); इत्र (२.५); खुदक (४.२२); गंगासिंह (३.४-५; ४.१); गजमुक्ता (३.६); गववर्मन् (४.४); गोविंशर्मन् (४.७); गोरख (३.२४; ४.१२); घोरवर्मन् (४.४); चंडिका (३.१५); चतुर्वेदिन् (२.६; ४.११); चंद्रकान्ति (३.३२); चंद्रगुप्त चपहानि (४.२); चंद्रदेय (४.३); चंद्रमट्ट (३.३२); चंद्रराय (४.२); चरउ (२.४) चामुंड (३.९); चित्रगुप्त (४.१८); चित्रिणी (४.७); चूडामणि (२.१२); जयचंद्र (३.६; ४.३); जयदेव (४.९.३४-६६); जयंत (३.१३); जयमाल (४.३); जयवान् (३.४१); जयशर्मन् (३.५); जयसिंह (४.२); जूज (१.२५); तालन (३.७); दुर्मुख (८-९); नादर (४.२२); न्यूह (१.५); पद्मिनी (३.३०); पृथ्वीराज (३.५-६); प्रमर (१.६; ४.१); वावर (४.२२); बुद्धसिंह (२.७); मध्वाचार्य (४.८; १९); महामत्स्य (४.२२); महामद (३.३); लार्डल (४.२०); विकटावती (४.२२); शंकराचार्य (४.२२)।

उपर्युक्त व्यक्तियों में से जूज, महामद एवं विकटावती क्रमशः जीझस खाइस्ट, महमद पैगंबर, महारानी व्हिक्टोरिया के संस्कृत रूप हैं।

भविष्यवंश—पौराणिक साहित्य में प्राप्त भविष्यवंशों की जानकारी अकाराधिक क्रम से नीचे दी गयी है:—

आंध्र (भृत्य) वंश—इस वंश के राजाओं की संख्या मत्स्य, वायु, एवं विष्णु में क्रमशः ३०, २२

(१८), एवं २४ दी गयी है। ब्रह्मांड, भागवत एवं विष्णु के अनुसार, इन राजाओं ने ४५६ वर्षों तक, एवं मत्स्य के अनुसार ४६० (३६०) वर्षों तक राज्य किया। इन राजाओं का काल ई. स. पू. २२०-ई. स. २२५ माना गया है।

इस वंश में उत्पन्न राजाओं की नामावलि, एवं उनका संभाव्य राज्यकाल निम्नप्रकार है:—१. सिमुक (सिंधुक, शिप्रक)—२३ वर्ष; २. कृष्ण (भात)—१० वर्ष; ३. श्रीशातकर्णि (श्रीमलकर्णि)—१०; ४. पूर्णोत्संग (पूर्णमास)—१८ वर्ष; ५. स्कंधरत्न—१८ वर्ष; ६. शातकर्णि (शांतकर्णि, सातकर्णि)—५६ वर्ष; ७. लंबोदर—१८ वर्ष; ८. आपीतक (आपीलक, दिविलक)—१२ वर्ष; ९. मेघस्वाति—१८ वर्ष; १०. स्वाति (पट्टमत्, अटमान्)—१८ वर्ष; ११. स्कंदस्वाति—७ वर्ष; १२. मृगेंद्रस्वातिकर्ण—३ वर्ष; १३. कुंतलस्वातिकर्ण—८ वर्ष; १४. स्वातिवर्ण—१ वर्ष; १५. पुलोमावी—३६ वर्ष; १६. अरिष्टकर्ण (अनिष्टकर्ण)—२५ वर्ष; १७. हाल—५ वर्ष; १८. मंतलक (पत्तलक, मंदुलक)—७ वर्ष; १९. पुरिकषेण (प्रविलसेन, पुरीषभीरु)—२१ वर्ष; २०. सुंदरशातकर्णि (सुनंदन)—१ वर्ष; २१. चकोरशातकर्णि—६ माह २२ शिवस्वाति—२८ वर्ष; २३. गौतमीपुत्र शातकर्णि (गौतमीपुत्र); २४. पुलोमत्—२८ वर्ष; २५. शातकर्णी (शिवशातकर्णि)—२९ वर्ष; २६. शिवश्री—७ वर्ष; २७. शिवस्कंध—३ वर्ष; २८. यशश्री शातकर्णि—२९ वर्ष; ३०. विजय—६ वर्ष; ३१. चंडश्री—१० वर्ष; ३२. पुलोमत् (द्वितीय)—७ वर्ष।

उपर्युक्त राजाओं में से पुरुषभीरु राजा से उत्तर-कालीन राजाओं की ऐतिहासिकता अन्य ऐतिहासिक साधनों के द्वारा सिद्ध हो चुकी है। मेघस्वाति राजा के द्वारा २७ ई. पू. में काण्वायन राजाओं का विच्छेद किये जाने का निर्देश प्राप्त है।

काण्वायन (शुंगभृत्य) वंश—इस वंश का संस्थापक वसुदेव था, जो शुंगवंश का अंतिम राजा देवभृति (देवभूमि, क्षेमभूमि) का अमात्य था। उसने देवभृति को पदच्युत किया, एवं वह स्वयं काण्वायन वंश का पहला राजा बन गया।

इस वंश के कुल चार राजा थे, जिन्होंने ४५ वर्षों तक राज्य किया। इस वंश का पहला राजा वसुदेव एवं अंतिम राजा सुशर्मन् था। दक्षिण प्रदेश में उदित आंध्र लोगों ने सुशर्मन् को राज्यभ्रष्ट किया, एवं इस प्रकार

काण्वायन वंश का राज्य समाप्त हुआ। इस वंश के 'विज' उपधि से प्रतीत होता है कि, काण्वायन राजा ब्राह्मण थे। इनका राज्यकाल ई. स. ७२-२७ माना जाता है।

इस वंश के निम्नलिखित राजा प्रमुख थे:— १. वसुदेव— १ वर्ष; २. समिन्ध्र— १४ वर्ष; ३. नारायण— १२ वर्ष; ४. सुभर्मन्— १० वर्ष।

नन्द वंश—मगधदेश में राज्य करनेवाले इस वंश में कुल नौ राजा हुए, जिन्होंने सौ वर्षों तक राज्य किया। इनका राज्यकाल ४२२ ई. पू. से ३२२ ई. पू. तक माना जाता है।

इनका सर्वप्रथम राजा महापद्म नन्द था, जो महानन्दिन राजा को एक शत्रु स्त्री से उत्पन्न हुआ था। उसने ८८ वर्षों तक राज्य किया, एवं पृथ्वी के समस्त क्षत्रियों का उच्छेद किया। उसके पश्चात् उसके आठ पुत्रों में से मुकत्य राजा राजगद्दी पर आरूढ़ हुआ, एवं उसके पश्चात् अन्य अष्ट नन्दवंशीय राजा हुए। अंत में कौटिल्य नामक ब्राह्मण ने इस वंश को जड़मूल से उखाड़ दिया, एवं मगध का राज्य मौर्यवंशीय राजाओं के हाथ चला गया।

भविष्यपुराण में नन्दवंशीय राजाओं की नामावलि निम्नप्रकार दी गयी है:— १. नन्दसुत; २. प्रगद; ३. परानन्द; ४. समानन्द; ५. प्रियानन्द; ६. देवानन्द; ७. यशोदत्त; ८. मौर्यानन्द; ९. महानन्द।

प्रद्योत वंश—मगधदेश के इस राजवंश की स्थापना शुनक (पुटिक) के द्वारा की गयी थी, जिसने अर्थति के राजाओं में से एक राजा का बंध कर, अपने पुत्र प्रद्योत को राजगद्दी पर धिटाया। इस वंश में कुल पाँच राजा उत्पन्न हुए थे, जिन्होंने १३८ वर्षों तक राज्य किया था। इनका राज्यकाल ई. पू. ६८९-५५२ माना जाता था। ये राजा मगध के ब्राह्मणवंश के राजाओं से काफी उत्तरकाय्यीन माने जाते हैं।

इस वंश के निम्नलिखित राजा प्रमुख माने जाते हैं:— १. प्रद्योत—२३ वर्ष; २. बालक—२४ वर्ष; ३. विशालधृप—५० वर्ष; ४. अशक—२१ वर्ष; ५. नरिवधेन—२० वर्ष।

मगध वंश (बाहद्रेथ वंश)—भारतीय बुद्ध के समय इस वंश का ब्राह्मणपुत्र सहदेव राज्य करता था। इस बुद्ध में सहदेव के मारे जाने के बाद, उसका पुत्र सोमाधि गिरिवज्र का राजा बन गया।

इस प्रकार मगधदेश का भविष्यवंश सोमाधि राजा से प्रारंभ होता है, एवं रिपुंजय राजा से समाप्त होता है।

इस वंश में से सेनाजित् राजा के राज्यकाल में मत्स्य, वायु एवं ब्रह्मांड पुराणों की रचना की गयी थी। बृहस्पति से ले कर रिपुंजय तक इस वंश में कुल बत्तीस राजा हुए, एवं उन्होंने एक हजार वर्षों तक राज्य किया। इनमें से मत्स्य पुराण की रचना के पश्चात् उत्पन्न हुए श्रुतंजय राजा के पश्चात् सोलह राजा हुए, एवं उन्होंने ७०३ वर्षों तक राज्य किया।

इन राजाओं की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है, यहाँ इस वंश के केवल प्रमुख राजाओं की जानकारी दी गयी है (ब्रह्मांड. ३.७४; वायु. ९९.२९६-३०९; मत्स्य. २७३; विष्णु. ४.२३; भा. ९.२२)।

इस वंश में उत्पन्न हुए प्रमुख राजाओं के नाम एवं उनमें से हर एक का राज्यकाल निम्नप्रकार था:— १. सोमाधि (सोमाधि, माजोरि)— ५८ वर्ष; २. श्रुतशक् (श्रुतशक्)—६४ वर्ष; ३. अयुतायु (अप्रतिवर्ष; अयुतायुत)—२६ वर्ष; ४. निरानिन्त्र—४० वर्ष; ५. सुशत्रु—५३ वर्ष; ६. बृहत्कर्मन्—२३ वर्ष; ७. सेनाजित् (सेनाजित्, कर्मजित्)—२३ वर्ष; ८. श्रुतंजय—४० वर्ष; ९. विभु (महावाहू)—२८ वर्ष; १०. सुत्रि—५८ वर्ष; ११. क्षेम—२८ वर्ष; १२. सुव्रत (अनुव्रत)—६४ वर्ष; १३. सुनेत्र (धर्मनेत्र)—३५ वर्ष; १४. निरुति (नृपति)—५८ वर्ष; १५. जित्नेत्र (सुश्रम)—२८ वर्ष (३८ वर्ष); १६. हृदसेन (सुमसेन)—४८ वर्ष; १७. महीनेत्र (सुमति)—३३ वर्ष; १८. सुचल—३३ वर्ष; १९. सुनेत्र (सुनीत)—४० वर्ष; २०. सत्यजित्—८३ वर्ष; २१. विश्वजित् (वीरजित्)—२५ वर्ष; २२. रिपुंजय—५० वर्ष।

मौर्य वंश—मगध देश के इस वंश की स्थापना चंद्रगुप्त मौर्य के द्वारा हुई। इस वंश में कुल दस राजा थे, जिन्होंने कुल १३७ वर्षों तक राज्य किया। इस वंश का शासनकाल ई. स. पू. ३२१-१८४ माना जाता है।

इस वंश में निम्नलिखित राजा प्रमुख थे:— १. चंद्रगुप्त—२४ वर्ष; २. बिंदुसार (भद्रसार)—२५ वर्ष; ३. अशोक—वर्षन (अशोक)—२६ वर्ष; ४. कुनाल (सुयशम)—८ वर्ष; ५. वैशुमालिन् (दशरथ)—८ वर्ष; ६. संप्रति—९ वर्ष; ७. शालिशुक—१३ वर्ष; ८. देववर्मन्—७ वर्ष; ९. शतवर्मन्—८ वर्ष; १०. बृहद्रथ—७ वर्ष।

शिशुनाम वंश—इस वंश का संस्थापक काशी देश का राजा शिशुनाम था। उसने मगध देश के प्रद्योत वंशीय अन्तिम राजा नन्दिवधेन की पराजय कर,

अपना स्वतंत्र राजवंश मगध देश में प्रस्थापित किया। इस वंश के कुल दस राजा थे, जिन्होंने ३६० वर्षों तक राज्य किया। इस वंश का सर्वाधिक सुविख्यात राजा अजातशत्रु था, जिसके राज्यकाल में बौद्ध धर्म का उदय हुआ।

इस वंश के निम्नलिखित राजा प्रमुख माने जाते हैं:-
- १. शिशुनाग-४० वर्ष; २. काकवर्ण-३६ वर्ष ३. क्षेम-धर्मन्-२० वर्ष; ४. क्षत्रौज्स् (अजातशत्रु प्रथम)-४० वर्ष; ५. त्रिभिसार श्रेणिक-२८ वर्ष; ६. अजातशत्रु द्वितीय-२५ वर्ष; ७. दशक-२५ वर्ष; ८. उदधिन्-३३ वर्ष; ९. नन्दिवर्धन्-४० वर्ष; १०. महानन्दिन्-४३ वर्ष।

शुंग वंश—इस वंश की स्थापना पुष्यमित्र शुंग ने की थी, जो मगध देश के अंतिम मौर्यवंशीय राजा बृहद्रथ का सेनापति था। उसने बृहद्रथ राजा का बध कर शुंगवंश की स्थापना की। इस वंश में कुल दस राजा थे, जिन्होंने कुल एक सौ बारह वर्ष तक राज्य किया। पुष्यमित्र स्वयं शूद्रवर्णीय था। शुंगवंश का राज्यकाल ई. स. पू. १८४-ई. स. पू. ७२ तक माना जाता है।

इस वंश में निम्नलिखित राजा प्रमुख थे:- १. पुष्यमित्र-३६ वर्ष; २. अग्निमित्र-८ वर्ष; ३. वसुज्येष्ठ-७ वर्ष; ४. वसुमित्र-१० वर्ष; ५. अंभ्रक-२ वर्ष; ६. पुलिङ्क-३ वर्ष; ७. घोष-३ वर्ष; ८. वज्रमित्र-९ वर्ष; ९. भागवत-३२ वर्ष; १०. देवभूमि-१० वर्ष।

अन्य भविष्य वंश—उपर्युक्त प्रमुख वंशों के अतिरिक्त निम्नलिखित 'भविष्य वंशों' का निर्देश भी पौराणिक साहित्य में पाया जाता है:— १. अवन्ती; २. आभीर; ३. ऐश्वक, जिसका अंतिम राजा सुमित्र माना जाता है; ४. कलिग; ५. काशी; ६. कुरु; ७. कैलकिल; ८. गर्दमिल; ९. तुषार; १०. नंद; ११. पंचाल; १२. पौरव, जिनका अंतिम राजा क्षेमक माना जाता है; १३. मुरंड; १४. मैथिल; १५. मौन; १६. ववन; १७. शक; १८. शरसेन; १९. हूण (ब्रह्मांड, ३.७४; वायु, ९९.२०७-४६४; विष्णु, ४.२४; भा. १२.१; मत्स्य, २७३)। इन में से बहुत सारे वंश ऐतिहासिक साबित हो चुके हैं। गर्दमिल, मौन, मुरंड ऐसे थोड़े ही वंश हैं कि, जिनकी ऐतिहासिकता अब तक सिद्ध नहीं हो पायी है।

(५) मानवेतर वंश

पौराणिक साहित्य में देव, गंधर्व, दानव, अशुरा, राक्षस, यक्ष, नाग, गरुड आदि अनेकानेक मानवेतर वंशों का निर्देश प्राप्त है। इनमें से बहुत सारे मानवेतर वंशों को पौराणिक साहित्य में कश्यप ऋषि की संतान मानी गयी है, जिसकी तेरह पत्नियों के द्वारा पृथ्वी के सारे मानवेतर वंशों का निर्माण होने का निर्देश वहाँ प्राप्त है:—

सप्तर्षियों की संतान—पौराणिक साहित्य एवं महाभारत में अन्यत्र राक्षस, यक्ष, एवं गंधर्व आदि को पुलह, पुलस्त्य, अगस्त्य जैसे सप्तर्षियों की संतान कहा गया है। (म. आ. ६०.५४१)। जिस प्रकार समस्त मानवजाति का पिता मनु वैवस्वत माना जाता है, उसी प्रकार समस्त मानवेतर सृष्टि के प्रणयन का श्रेय सप्तर्षियों को दिया गया प्रतीत होता है। पुलस्त्य एवं पुलह ऋषियों का सविस्तृत वंशवर्णन वायु में प्राप्त है (वायु, ७०.३१-६३; ६४-६५)।

वानरवंश—ब्रह्मांड पुराण में वानरों को पुलह एवं हरिभद्रा की संतान कहा गया है, एवं उनके ग्यारह प्रमुख कुल दिये गये हैं:— १. द्वीपिन्; २. शरभ; ३. सिंह; ४. व्याघ्र; ५. नील; ६. शल्यक; ७. ऋक्ष; ८. मार्जार; ९. लोभास; १०. लोहास; ११. वानर; १२. मायाव (ब्रह्मांड, ३.७.१७६; ३२०)।

राक्षसवंश—वायु में राक्षसों को पुलह, पुलस्त्य एवं अगस्त्य ऋषियों की संतान कहा गया है (वायु, ७०.५१-६५)। दैत्यों में से हिरण्यकशिपु एवं हिरण्याक्ष का स्वतंत्र वंशवर्णन भी प्राप्त है (वायु, ६७; ब्रह्मांड ३.५)।

पौराणिक साहित्य में असुर, दानव, दैत्य एवं राक्षस-जातियों का स्वतंत्र निर्देश प्राप्त है (मत्स्य, २५.८; १७; ३०; ३७; २६.१७)। किन्तु आगे चल कर इन जातियों का स्वतंत्र अस्तित्व नष्ट हो कर, अनार्य एवं दुष्ट जाति के लोगों के लिए ये नाम प्रयुक्त किये जाने लगे।

कश्यप ऋषि की मानवेतर संतति

वंशविशेष	कश्यपपत्नी	संतान	वंशविशेष	कश्यपपत्नी	संतान
देवगंधर्व	(१) अरिष्टा (२) मुनि	तुंबुरु, हंस, वरेण्य आदि देवगंधर्व । अर्कपर्ण, उग्रसेन आदि सोलह देवगंधर्व ।	राक्षस, दैत्य एवं दानव	(१) खशा (२) दनु (३) दनायु (४) दिति (५) पुलोमा (६) सिंहिका (७) सुरसा (८) कालका	अकंपन, अश्व आदि राक्षस । पुलोमत्, विप्रचित्ति, हिरण्यकशिपु आदि दानव । वृत्र आदि दानव । हिरण्यश्व, वज्रांग आदि दैत्य । पौलोम एवं कालकेय राक्षससमूह । सैहिकेय असुर । यातुधानादि राक्षससमूह । कालकंज राक्षससमूह ।
अप्सरा	(१) अरिष्टा (२) खशा (३) मुनि	अनवद्या, अरुणा आदि अप्सरा । आलंबा, उल्कचोत्कुष्ठा आदि अप्सरा । अजगंधा, अनपाया आदि अप्सरा ।	पक्षी	(१) विनता (२) ताम्रा	गरुड, आरुणि आदि पक्षिराज । क्रौंची, शुभ्रिका आदि पक्षी ।
नाग	(१) कद्रू (२) सुरभि	अक्रूर, घृतराज्ञादि नागकुल । अंगारक, अहिधुन्य आदि सर्प ।	आदिभ्य	अदिति	वारह आदित्य ।

पुराणों में निर्दिष्ट राजाओं की तालिका

पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट विभिन्न वंशावलियों का निर्देश इससे पहले ही किया जा चुका है। इन राजाओं की जो जानकारी उपलब्ध है, उससे उनका निश्चित कालनिर्णय एवं उनके समकालीन अन्य राजाओं की पर्याप्त जानकारी प्राप्त होती है। इसी 'जानकारी' को मूलाधार मान कर पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट राजाओं की तालिका अगले पृष्ठ पर दी गयी है, जहाँ इन राजाओं की नामावलि सूर्य एवं सोम वंशों के विभिन्न उपशाखाओं के अनुक्रम से दी गयी है।

यह तालिका विभिन्न राजाओं के समकालीनत्व का ख्याल रख कर दी गयी है, एवं हर एक राजा की पीढ़ी का स्पष्ट रूप से निर्देश किया गया है, जहाँ वैवस्वत मनु की पीढ़ी पहली मानी गयी है। इस तालिका के निरीक्षण के लिए निम्नलिखित सूचनाएँ महत्त्वपूर्व प्रतीत होती हैं:-

(१) पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट राजाओं की तालिका संपूर्ण नहीं है, एवं उनमें बहुत सारे नाम अप्राप्य हैं। पौराणिक साहित्य में से सबसे प्रदीर्घ इक्ष्वाकु-वंश भी इस न्यूनता से अलक्षित नहीं है। पौराणिक साहित्य में अप्राप्य राजाओं के नाम तालिका में (...) इस प्रकार बताये गये हैं।

(२) जिन राजाओं की समकालीनता स्पष्टरूप से सिद्ध हो चुकी है, उनके नाम तालिका में स्पष्ट अक्षरों में दिये गये हैं, एवं जिनकी समकालीनता केवल तर्काधिष्ठित ही है, उनके नाम सादे अक्षरों में दिये गये हैं।

(३) इन राजाओं में से जिन राजाओं का निर्देश वैदिक साहित्य में प्राप्त है, उनके आगे (*) चिन्ह लगाया गया है।

(४) तालिकाओं में निर्दिष्ट प्रमुख राजाओं के समकालीनता के प्रमाण जब 'प्राचीन चरित्रकोश' में दिये गये उन व्यक्तियों के चरित्र में प्राप्त हैं, उनके नाम अधोरेखांकित किये गये हैं। इसी कारण समकालीनता का स्पष्टीकरण तालिकाओं में नहीं दिया गया है।

(५) तालिका के दाहिनी एवं बायी ओर दिये गये क्रमांक पीढ़ियों के निर्देशक नहीं, बल्कि अनुक्रम के निर्देशक हैं।

(६) पौराणिक साहित्य, रामायण एवं महाभारत में प्राप्त वंशावलियों में उन्हीं राजपुरुषों के एवं राजाओं के नाम दिये गये हैं, जो राजगद्दी पर अधिष्ठित थे। राजपरिवार के अन्य सदस्यों के, अथवा वर्णांतर से ब्राह्मण वैश्यादि हुए राजाओं के नाम वहाँ अप्राप्य हैं। इसी कारण इक्ष्वाकु, निमि एवं हैहय वंश में से अनेक राजपुरुषों के नाम इस वंशावलि में नहीं दिये गये हैं।

(७) तालिका के चौदहवें स्तंभ में दिये गये संभाव्य-काल परंपरागत पौराणिक साहित्य में प्राप्त परंपरा के अनुसार दिये गये हैं।

१	सू. इ. (अयोध्या)	सू. निमि. (मिथिला)	सू. दिष्ट. (वैशाली)	सो. अमा. (कान्यकुब्ज)	सो. पुरुरवस् (प्रतिष्ठान)	सो. तुर्वसु.
१	२	३	४	५	६	७
१	मनु	मनु	मनु	मनु	मनु	
२	* इक्ष्वाकु	* इक्ष्वाकु	* नाभानेदिष्ट	इला	इला	
३	विकुक्षि (शाखाद)	निमि		पुरुरवस्	* पुरुरवस्	
४	ककुत्स्थ			अमावसु	आयु	
५	अनेनम्	मिथि जनक	* भलेदन		* नहुप, रजि	
६	पृथुरोमन्		* वत्सप्री	भीम	ययाति	
७	विश्वरंधि				* पूरु	* तुर्वसु
८	चंद्र (आर्द्र)	उदावसु	प्रांशु		जनमेजय १.	
९	युवनाश्व १.			कांचनप्रभ	प्राचीन्वत् (अविद्ध)	
१०	शा (श्रा) वस्त		प्रजानि		प्रवीर	
११		नंदिबर्धन			अविद्ध	
१२			खनित्र	सुहोत्र १.	मनस्यु	बह्नि
१३			शुभ		अभय	
१४	बृहदश्व	सुकेतु	विश		सुष्टुभ, शुंडु	
१५	कुवलयाश्व		विशिश	बहु	वहुगवि	
१६	टटाश्व					
१७	प्रमोद	देवरात		सुहोत्र २.	संथाति	
१८	हर्यश्व १.		खनिनेत्र			भस
१९	निकुंभ			अजक	भद्राश्व (रौद्राश्व)	
२०	बहूणाश्व					
२१	(संहताश्व)			अलाकाश्व	ऋतेयु (ऋचेयु)	
२२	कृशाश्व		अतिभूति			
२३	(प्र) सेनजित्		करंधम	कुश	अन्तिनार	भोनाग
	(रेणु)			(मूर्तरय अनूर्तरजस्)		
२४	युवनाश्व २.		अविक्षित्		तंसु	
२५	* मांधात्	बृहदथ	मरुत्त	कुशाश्व-कुशिक		
२६	* पुरुकुत्स		नरिष्यन्त	* गाधि किवा		
२७	* त्रसदस्यु		दम	* गाधिन्		
२८	(संभूत)	महावीर्य	राज्यवर्धन			
२९	अनरप्य		सुपृति			
३०	त्रसदश्व		नर			
३१	हर्यश्व २.		केवल			त्रिसासु
३२	(वसुमत् और वसु- मनस्)	सुपृति	वसुमत्			करंधम
३३	त्रिधन्वन्		त्रिगवत्			
३४	* त्रैय्यारण		बुध			
३५	त्रिवंघन		तृणत्रिदु			
३६			विशाल (विश्रवस)			
३७	सत्यव्रत विशांकु	शृष्टकेतु	हेमचंद्र	विश्वामित्र		* मरुत्त

सो. दुह.	सो. सह. (हैहय) (माहिष्मती)	सो. यदु.	सो. अनु.	सो. अनु- तितिक्षु	सो. क्षत्र. (काशी)	संभाव्य काल	अन्य राजा एवं महत्त्वपूर्ण घटना	१६
८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	
...	मनु	३१००	हिरण्याक्ष, हिरण्यकशिपु	१
...	इल	...	प्रह्लाद	२
...	पुरूरवस्	...	बलि	३
...	आयु	...	विप्रचित्ति, तारक	४
...	क्षत्रवृद्ध	...	वृषपर्वा	५
...	३०००	षण्डामर्क, देवासुर-संभाम	६
दुह्यु	*यदु सहस्रजित्	*यदु क्रोष्टु	*अनु	...	सुनहोत्र, प्रति- क्षेत्र	७
...	काश्य	८
...	शंतजित्	वृजिनीवत्	काशिराज	९
...	राष्ट्र	१०
बभ्रु	हैहय	स्वाहि	समानर	...	दीर्घतपस्	११
...	धर्म	१२
...	धर्मनेत्र	रशादु	धन्वतरि	१३
...	कुंति	१४
...	साहजि	केतुमत्	१५
सेतु	महिष्मत्	चित्ररथ	कालानल	१६
...	भद्रश्रेण्य	भीमरथ	१७
...	दिवोदास १.	१८
...	अष्टारथ	१९
...	सृजय	२०
...	२१
रिपु (मांधातृ)	...	शशबिन्दु	२२
अंगार	दुर्दम	२७५०	...	२३
गांधार	पुरंजय	२४
...	...	पृथुश्रवस्	२५
धर्म	...	(तम)	जनमेजय	रावण	२६
धृत	धनक (कनक)	२७
...	...	उदानस्	महाशाल	२८
...	...	[शिनेयु]	२९
दुर्गमा	कृतवीर्य	मरुत्	महामनस्	...	हर्यश्च	३०
...	...	कैवल्यार्हिस	उशीनर	तितिक्षु	वृष जान	३१
...	...	सकमकवच	क्षिति	...	सुदेव	३२
प्रचेतस्	३३
...	कर्तवीर्य	(परावृत्त)	*दिवोदास २.	२५५०	...	३४

	सू. इ. (अयोध्या)	सू. निमि. (मिथिला)	सू. विष्ट. (वैशाली)	सो. असा. (कान्यकुब्ज)	सो. पूर. (प्रतिष्ठान)	सो. तुर्वसु
३८	* हरिश्चन्द्र		सुचंद्र			
			पुष्कराक्ष			
३९	रोहित			मधुच्छंदस		
४०	हरित, चंप			(अष्टक लौहि)		* दुष्यन्त
४१	विजय	हर्यश्च				शरथ
४२	भरुक	मरु		नय		जनापीड
४३	वृक					(आंडीर)
४४	बाहु (फलगुतेत्र)	प्रतीपक	धूम्राक्ष			पांड्यादि
४५	सगर					
४६	असमेजसु				* दुष्यन्त	
४७	...	कृतिरथ			* भरत	
४८	अंशुमत्				भरद्वाज	
४९	...				वितथ	
५०	दिलीप १.	देवमीढ			भुवन्मन्यु	
५१	...				बृहत्क्षत्र	
५२	...		संजय		सुहोत्र	
५३	...	विसृत			हस्तिन्	सो. अज.
५४	* भगीरथ अथवा				* अजमीढ	दक्षिण पांचाल
५५	भगीरथ				कक्ष, * जल्लु	बृहद्विपु
५६	श्रुत	महाधृति				बृहद्वसु
५७	नाभाग					बृहत्कर्मेन्
५८	अश्वरीष					जयदथ
५९	सिंधुद्वीप	कृतिरात	सहदेव			त्रिभुजित्
६०	अयुतायु					
६१	ऋतुपर्ण					
६२	सर्वकाम					
६३	सुदास	महारोमन्				
६४	मित्रसह कल्माषपाद					
६५	...					
६६	अश्मक					सेनाजित्
६७	मूलक					
६८	दशरथ १.	स्वर्णरोमन्	कृशाक्ष			
६९	ऐडविड					
७०	विश्वसह १.					
७१	दिलीप स्वर्णांग २.					रुचिराक्ष
७२	दीर्घबाहु	द्वस्वरोमन्				
७३	रघु					
७४	अज				संवरण	
७५	दशरथ २.	सीरध्वज	प्रमति		कुरु	

सो. नील.	सो. सह. (द्वैहय) (माहिष्मती)	सो. थदु.	सो. अनु.	सो. अनु. (तितिक्षु)	सो. क्षत्र. (काशी)	संभाव्य काल	अन्य राजा एवं महत्त्वपूर्ण घटना	
...	(वृषण)	ज्यामघ	केकय (गोपति)	३८
...	जयध्वज	विदर्भ	मद्रक	३९
...	...	ऋथ	...	वृषद्रथ	४०
...	...	कुंति	४१
...	...	धृष्ट	...	सेन	४२
...	तालजंघ वीतिहोत्र	निर्वृति	४३
...	(* वीतहन्त्र)	(विदूरथ)	४४
...	अनंत	दशार्ह	...	सुतपस्	४५
...	दुर्जय	व्योमन्	...	बलि	अलर्क	...	रावण	४६
...	सुप्रतीक	जीमूत	...	अंग	४७
...	...	विकृति	सन्नति	४८
...	...	भीमरथ	सुनीथ	४९
...	...	रथवर	५०
...	...	दशरथ	...	दधिवाहन (अनपान)	सुकेतु	५१
सो. नील	सो. द्विमीढ.	एकादशरथ	५२
उत्तर पांचाल	द्विमीढ	शकुनि	धर्मकेतु	५३
नील	यवीनर	करभक	५४
सुजाति	...	देवरात	सत्यकेतु	५५
पुरुजानु	...	देवक्षत्र	५६
रिक्ष	धृतिमत्	देवन	विशु	५७
भार्गुश्व	...	मधु	...	दिविरथ	५८
...	सत्यधृति	पुरुवस	सुविशु	५९
...	...	पुरुदत्	६०
सुद्रल (ब्रह्मिष्ठ)	दृढचेमि	सुकुमार	६१
...	धर्मेरथ	६२
...	धृष्टकेतु	६३
वध्यश्व	६४
...	सुवर्मन्	६५
...	सार्वभौम	वेणुहोत्र	६६
...	६७
...	महत्सौरव	भर्मा	६८
...	६९
* विवोदास	...	जन्तु	...	त्रिचरथ (लोमपाद)	७०

	सू. इ. (अयोध्या)	सू. निमि. (मिथिला)	सू. विष्ट. (वैशाली)	सो. मगध.	सो. कुरु.	सो. अज. (दक्षिण पांचाल)
७६	राम	कुशध्वजः	परिक्षित्	सुधन्वन्	जह्नु	पृथुसेन
७७	कुरालव	मानुमत	जनमेजय	सुहोत्र	सुरथ	
७८	अतिथि	प्रद्युम्न शतयुम्न		च्यवन	(ऋक्ष)	
७९	निषध	मुनि		कृत	सर्वभौम	
८०	नल	ऊर्जवह	सो. चैत्र.	वसु चैत्र	जयसेन	
८१	नभ	सुतद्राज	प्रत्यग्रह	बृहद्रथ	अराधित्	
८२	पुंडरीक	*कुणि (शकुनि)		(कुशाग्र)	महासत्त्व (महाभौम)	पार १.
८३	क्षेमधन्वन् (पौंडरीक)	*रंजन (अंजन)		ऋषभ	अयुतायु	
८४	देवानीक	(*उग्रदेव)		पुष्पवत्	अक्रोधन	
८५	अहीन	*ऋजित्		सत्यहित	देवातिथि	
८६	पारियात्र	अरिष्टनेमि		सुधन्वन्	ऋक्ष २.	नीप
८७	बल (दल)	श्रुतायु		ऊर्जे	भीमसेन	
८८	स्थल	सुपाश्व		नभस्	दिलीप	
८९	उक्थ	संजय		(संभव)		समर
९०	वज्रनाभ	क्षेमारि				
९१	खराण	अनेनस्				पार २.
९२	विष्टति	मीनरथ				
९३	(व्युषिताश्व	सत्यरथ				पृथु
९४	विश्वसह २.)	उपगु				
९५	हिरण्यनाभ	स्वागत				
९६	पुष्य	सुवर्चस्				सुकृति
९७	ध्रुवसंधि	श्रुत				
९८	सुदर्शन	सुश्रुत				
९९	अशिवर्ण	जय				
१००	शीघ्र	विजय			प्रतीप	ब्रह्मदत्त
१०१	मरु	ऋत				विश्वक्सेन
१०२	प्रसुश्रुत	सुतय			(ऋष्टिपेण)	उदकसेन
१०३	(सु) संधि	...			शंतनु	भल्लाट
१०४	अमर्षण	वीतहव्य	दमघोष		भीष्म	जनमेजय
१०५	सहस्वन्	जरासंध	विचित्रवीर्य	द्रुपद
१०६	विश्वसाह	धृति	शिशुपाल		(धृतराष्ट्र, पांडु)	
१०७	प्रसेनजित्			
१०८	तक्षक	बहुलाश्व	...	सहदेव	युधिष्ठिर	
१०९	बृहद्वल	कृत किंवा कृती	अमिमन्यु	धृष्टद्युम्न
११०	बृहद्रण	महावशिन	...	सोमापि	परिक्षित्	
१११	श्रुतश्रवस	जनमेजय	
११२	उरक्रिय	अयुतायु	शतानीक	

सो. सील. (उत्तर पांचाल)	सो. द्विमीठ	सो. यदु.	सो. यदु.	सो. अनु.	सो. क्षत्र.	संभाव्य काल	अन्य राजा एवं महत्त्वपूर्ण घटना	
मित्रयु	रुक्मरथ	भीम सात्वत		चतुरंग		१९५०	रावण	७६
मैत्रेय (सोम)		अंधक	भजमान, वृष्णि					७७
(संजय)	सुपाश्व	कुङ्कुर						७८
व्यवन		धृष्ट	विदूरथ					७९
* * पंचजन, (पिञ्जन)								
ॐ सुदास		(वृष्णि	शूर				दाशरथ युद्ध	८०
* सहदेव	सुमति	धृति)	शमिन्	पृथुलाक्ष				८१
ॐ सोमक		कपोतरोमन	प्रतिक्षत्र	चंप				८२
अनु-पृषत्				हर्षग				८३
	सन्नतिमत्		स्वयंभोज	भद्ररथ				८४
		(तैत्तिरि)		बृहत्कर्मान्				८५
			हृदीक	बृहद्रथ				८६
	सनति	विलोमन्		बृहद्राजु				८७
								८८
		भवं		बृहन्मनस				८९
		(नल)						९०
	कृत किंवा कृति							९१
	कृति	अभिजित्						९२
								९३
				अथद्रथ				९४
		पुनर्वसु						९५
								९६
		आहुक	देवमीदूष	बृहद्रथ				९७
								९८
								९९
								१००
								१०१
								१०२
								१०३
पृषत्	उग्रायुध कार्ति	उग्रसेन						१०४
द्रोण	क्षेम		शूर	दृढरथ				१०५
	सुवीर							१०६
	नृपंजय			जनमेजय				१०७
	बृहद्रथ		वसुदेव	अधिरथ				१०८
		कंस		कर्ण		१४००		१०९
अश्वत्थामन्			कृष्ण	वृषसेन			भारतीय युद्ध	११०
								१११
			वज्र					११२
			अचल					११३

क्र.	सू. इ.	सो. पूर.	सो. मगध.	अन्य व्यक्ति	क्र.	सू. इ.	सो. पूर.	मगध देश	अन्य व्यक्ति
११३	वत्सवृद्ध	...	निरमित्र		१४९	रणक	दंडपाणी	अजय (उदय)	
११४	सुनक्षत्र		१५०	सुरथ	निरमित्र	नन्दिवर्धन	
११५	प्रतिव्योमन्	...	बृहत्सेन		१५१	सुमित्र	क्षेमक	महानन्दि नन्द	सिकंदर
११६		१५९	सुमाल्यादि ८	(ई. पू.
११७	भानु	...	बृहत्कर्मान्		१६०	चंद्रगुप्त मौर्य	३३०-
११८	दिवाकर	असीमकृष्ण	सेनाजित्		(ई. स. पू.	३२६)
					...			३२२-१८५).	
					१६१	...	आंध्र	बिन्दुसार	
					१६२	अशोक (ई. स.	
					...			पू. २३७)	
११९	सहदेव	निमिचक्र	सुतंजय		१६३	...	शिप्रक	सुयशस	
१२०	बृहदश्व	उक्थ	विप्र		१६३	...	ई. स. पू. २४०	(संपदि)	
१२१	भानुमत्	चित्ररथ	शुचि		१६४	...	कृष्ण	दशरथ	अंटीओकस
१२२	प्रतीकाश	कविरथ	क्षेम		१६५	संगत	(सीरिया
१२३	सुप्रतीक	वृष्टिमत्	निवृत्ति		१६६	शालिशूक	और
१२४	मरुदेव	सुपेण	सुव्रत		१६६	सोमशर्मन्	बैक्ट्रिया
१२५	सुनक्षत्र	सुनीथ	धर्मसूत्र		१६७	शतधन्वन्	ई. पू.
१२६	पुष्कर	वृचक्षु	शम		१६८	...	श्रीमच्छकणि	बृहद्रथ	२०६)
१२७	अंतरिक्ष	सखीनल	सुमति		१६९	...	पूर्णसंग	पुष्यमित्र-शुंग	सिलिद
१२८	सुतपस्	परिप्लव	सुचल		१७०	खारवेल	ई. स. पू. १८४-७२	शातकणि	(मिनेन्डर)
१२९	...	सुनय	सुनीथ		...	जैन	...	अग्निमित्र	ई. पू.
१३०	...	मेधाविन	सत्यांजित्		१७१	सुज्येष्ठ	१५०)
१३१	...	नृपंजय	विश्वजित्		१७२	वसुमित्र	
१३२	पुरंजय		१७३	आद्रक	
१३३	अवेदी राजा		१७४	पुलिठक	
१३४	अमित्रजित्	दुर्व	वीतिहोत्र		१७५	घोषवसु	
१३५	बृहद्राज	...	प्रयोत		१७६	वज्रामित्र	कनिष्क
१३६	...	तिमि	पालक		१७७	...	लक्षोदर	भागवत	कुशान
१३७	बर्हि	...	विशाखयूप		१७८	...	अर्पातक	देवभूति	शक
१३८	कृतंजय	...	अजक		१७९	वसुदेव काण्व	कुशान
१३९	...	बृहद्रथ	नन्दिवर्धन		१८०	...	मेघस्वाति	(ई. स. पू.	साम्राज्य
१४०	रणजय	...	शिखुनामा		७३-२७.)	ई. स.
१४१	...	सुदाल	(ई. पू. ६४२)		१८१	...	स्वाति	भूमित्र	९०-२२०
१४२	संजय	...	काकवर्ण		१८२	...	स्कंधस्वाति	नारायण	ई. तक
१४३	क्षेमधर्मन्		१८३	...	सृगेन्द्र स्वातिकर्ण	...	
१४४	शाक्य	शतानीक	क्षेत्रज्ञ		१८४	...	कुन्तल स्वातिकर्ण	सुशर्मन्	
१४५	शुद्धोद	...	विधिसार	महावीर	१८५ स्वातिकर्ण...	...	
१४६	लांगल	...	(काण्वायन)		१८६	...	अरिक्तकर्ण	
१४७	प्रसेनजित्	उदयन	भूमिमित्र	गौतम बुद्ध	(नेमिकृष्ण)	...	
१४८	अजातशत्रु		१८७	...	हाल	...	
१४९	(ई. स. पू.		
१५०	४९१-४५९)		
१५१	शुद्रक	वहीनर	दर्भक		१८८	...	(‘गाथा सप्तशती’ का कर्ता)	मंहुलक	

क्र.	आंध्र	शक सत्रप (उज्जैन)	अन्य व्यक्ति	क्र.	आंध्र	शक सत्रप (उज्जैन)	अन्य व्यक्ति
१८९	पुरीद्रसेन	१९८	शिवलक्ष्मण
१९०	सौम्य	१९९	*यज्ञश्री	...	जयदामन्
१९१	*सुंदरशांति- कर्ण	चष्टण ई. स. ८०	...	२००	विजय	...	रुद्रसिंह
१९२	चकोर स्वातिकर्ण	२०१	चंडश्री	...	रुद्रसेन
१९३	*शिवस्वाति	संघदामन्
१९४	*गौतमीपुत्र	२०२	दामसेन
१९५	*पुलोमन्	...	जयदामन्	२०३	*पुलोमा इ. स. २११- २२५)	...	(ई. स. २२३)
१९६	*शातकणि	...	रुद्रदामन्
१९७	*शिवश्री	...	दामजदश्री

* चिह्नङ्कित राजाओं के प्रस्तरलेख अथवा सिक्के उपलब्ध हैं, जिनके कारण उनकी ऐतिहासिकता सुनिश्चित है।

परिशिष्ट ६

पुराणों में निर्दिष्ट ऋषियों के वंश

प्राचीन राजाओं की तरह, प्राचीन ऋषियों के वंश भी पौराणिक साहित्य में उपलब्ध हैं। किन्तु जहाँ राजवंश राजाओं के कुलों का अनुसरण कर तैयार किये गये हैं, वहाँ ऋषियों के वंश प्रायः सर्वत्र शिष्यपरंपरा के रूप में हैं, जो सही रूप में 'विद्यावंश' कहे जा सकते हैं।

पौराणिक साहित्य में प्राप्त ऋषियों के वंश राजाओं के वंशों जैसे परिपूर्ण नहीं हैं, एवं उनमें काफी त्रुटियाँ भी हैं। इसी कारण ऐतिहासिक दृष्टि से ऋषियों के वंश इतने महत्त्वपूर्ण प्रतीत नहीं होते हैं, जितने राजाओं के वंश माने जाते हैं।

ऋषिवंश की कल्पना का विकास—जिस प्रकार प्राचीन सभी राजवंश वैवस्वत मनु से उत्पन्न माने जाते हैं, उसी प्रकार सभी प्राचीन ऋषि वंश आठ ब्रह्मर्षि-पुत्र ऋषियों से उत्पन्न माने जाते हैं। इन ब्रह्मर्षि-पुत्रों के नाम पौराणिक साहित्य में निम्नप्रकार दिये गये

हैं:— १. भृगु; २. अंगिरस; ३. मरीचि; ४. अत्रि; ५. वसिष्ठ; ६. पुलस्त्य; ७. पुलह; ८. क्रतु।

इन आठ ब्रह्मर्षि-पुत्रों में से पुलस्त्य, पुलह एवं क्रतु की संतान मानवेतर जाति हुई, एवं उनसे कोई भी ब्राह्मण वंश उत्पन्न नहीं हुआ। बाकी बचे हुए पाँच ब्रह्मर्षि-पुत्रों में से अंगिरस, वसिष्ठ एवं भृगु इन तीन ऋषियों के द्वारा ही प्राचीन ऋषिवंशों (मूलभूत) का निर्माण हुआ। पुराणों में प्राप्त चार मूल भूतकार ऋषियों में अत्रि एवं कश्यप ऋषियों का नाम अप्राप्य है, जिससे प्रतीत होता है कि, अत्रि एवं कश्यप कुलोत्पन्न ब्राह्मण अन्य मूलभूतकार ऋषियों से काफी उत्तरकालीन थे।

उपर्युक्त पाँच प्रमुख ब्राह्मण वंशों की जानकारी नीचे दी गयी है:—

आंगिरस वंश—अंगिरस ऋषि के द्वारा स्थापित किये गये इस वंश की जानकारी ब्रह्मांड, वायु एवं मत्स्य में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.१.१०१-११३; वायु. ६५.

१७-१०८; मत्स्य. १९६)। इनमें से पहले दो ग्रंथों में इस वंशों की जानकारी दी गयी है, एवं अंतिम ग्रंथ में इस वंश के ऋषियों की एवं गोत्रकारों की नामावलि दी गयी है। इस जानकारी के अनुसार, इस वंश की स्थापना अथर्वन अंगिरस के द्वारा की गयी थी। इस वंश के निम्नलिखित ऋषियों का निर्देश प्राप्त है:— १. अयास्य आंगिरस, जो हरिश्चंद्र के द्वारा किये गये शुन-शेप के बलिदान के यज्ञ में उपस्थित था; २. उशिज आंगिरस एवं उसके तीन पुत्र उचथ्य, बृहस्पति एवं संवर्त, जो वैशाली के करंपम, अविक्षित एवं मरुत् अविक्षित राजाओं के पुरोहित थे; ३. दीर्घतमस् एवं भरद्वाज, जो क्रमशः उचथ्य एवं बृहस्पति के पुत्र थे। इनमें से भरद्वाज ऋषि काशि के दिवोदास (द्वितीय) राजा का राजपुरोहित था। दीर्घतमस् ऋषि ने अंग देश में गौतम शाखा की स्थापना की थी; ४. वामदेव गौतम; ५. शरद्वत् गौतम, जो उत्तरपंचाल के दिवोदास राजा के अहल्या नामक बहन का पति था; ६. कधीवत् दीर्घतमस औशिज; ७. भरद्वाज, जो उत्तरपंचाल के पृपत् राजा का समकालीन था।

आत्रेय वंश—अत्रिऋषि के द्वारा स्थापित किये गये इस वंश की जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.८.७३-८६; वायु. ७०.६७-७८; लिग. १.६३.६८-७८)। पौरव राजवंश से संबंधित इस वंश की जानकारी ब्रह्म एवं हरिवंश में प्राप्त है (ब्रह्म. १३.५-१४; ह. वं. ३१.१६५८; १६६१-१६६८)। इस वंश के ऋषि एवं गोत्रकारों की नामावलि मत्स्य में दी गयी है (मत्स्य. १९७)। पौराणिक साहित्य में आत्रेय वंश के आद्य संस्थापक अत्रि ऋषि एवं प्रभाकर को एक माना गया है, एवं उसे सोम का पिता कहा गया है।

इस वंश के निम्नलिखित ऋषि विशेष सुविख्यात माने जाते हैं:— १. प्रभाकर आत्रेय (अत्रि ऋषि,) जिसका विवाह पौरव राजा मद्राक्ष (रौद्राक्ष) एवं धृताची के दस कन्याओं के साथ हुआ था; २. स्वस्त्यात्रेय, जो प्रभाकर के दस पुत्रों का सामूहिक नाम था, एवं उनसे ही आगे चलकर, आत्रेयवंश के ऋषियों का जन्म हुआ था; ३. दत्त आत्रेय; ४. दुर्वासत्।

निम्नलिखित आत्रेय ऋषियों का निर्देश सूक्तद्रष्टा के नाते प्राप्त है:— १. अत्रि; २. अर्चनानस् ३, श्यावाश्व; ४. गविष्ठिर; ५. बल्लूक (अविहोत्र, कर्णक); ६.

पूर्वातिथि। पार्गिटर के अनुसार, श्यावाश्व एवं बल्लूक ये दोनों एक ही व्यक्ति के नाम थे।

अत्रिऋषि के गोत्रकार—निम्नलिखित ऋषियों का निर्देश आत्रेय वंश के गोत्रकार के नाते प्राप्त है:— १. श्यावाश्व; २. सुदल (प्रत्वस्); ३. बल्यरक (वाग्भूतक ववल्गु); ४. गविष्ठिर (मत्स्य. १४५.१०७-१०८)।

काश्यप वंश—काश्यपऋषि के द्वारा प्रस्थापित किये गये इस वंश की जानकारी चार पुराणों में प्राप्त है (वायु. ७०.२४-२९; ब्रह्मांड. ३.८.२८-३३; लिग. १.६३.४९-५५; कूर्म. १.१९.१-७)। इस वंश के ऋषियों एवं गोत्रकारों की नामावलि मत्स्य में दी गयी है (मत्स्य. १९७)।

पौराणिक साहित्य में काश्यपवंश की वंशावलि निम्न प्रकार दी गयी है:— काश्यप-वत्सार एवं असित-निधुव रैभ्य, एवं देवल। ये ही छः ऋषि आगे चल कर 'काश्यप ब्रह्मवादिन्' नाम से सुविख्यात हुए।

इस वंश के निम्नलिखित ऋषि विशेष सुविख्यात माने जाते हैं:— १. कण्व काश्यप, जो दुष्यंत एवं शकुंतला का समकालीन था; २. विमांडक काश्यप, जो ऋश्यशृंग ऋषि का पिता था; ३. असित काश्यप, जो देवल ऋषि का पिता था; ४. धौम्य; ५. याज, जो द्रुपद राजा का पुरोहित था।

भार्गव वंश—भृगुऋषि के द्वारा प्रस्थापित किये गये इस वंश की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (वायु. ६५.७२-९६; ब्रह्मांड. ३.१.७३-१००; मत्स्य १९५.११-४६)। इनमें से पहले दो ग्रंथों में भार्गववंश की सविस्तृत वंशावलि दी गयी है, एवं अंतिम ग्रंथ में इस वंश के ऋषि एवं गोत्रकारों की नामावलि दी गयी है।

महाभारत के अनुसार भृगु ऋषि के उशनस् शुक्र एवं च्यवन नामक दो पुत्र थे। उनमें से शुक्र एवं उसका परिवार दैत्यों के पक्ष में शामिल होने के कारण नष्ट हुआ। इस प्रकार च्यवन ऋषि ने भार्गव वंश की अमि-वृद्धि की। महाभारत में दिया गया च्यवन ऋषि का वंश क्रम निम्नप्रकार है:—च्यवन (पत्नी-मनुकन्या आरुषी)-और्व-ऋचीक-जमदग्नि-परशुराम।

भृगुऋषि के पुत्रों में से च्यवन एवं उसका परिवार पश्चिम हिंदुस्तान में आनर्त देश से संबंधित था। उशनस् शुक्र उत्तर भारत के मध्यविभाग से संबंधित था।

इस वंश के निम्नलिखित व्यक्ति प्रमुख माने जाते हैं:— १. ऋचीक और्व; २. जमदग्नि; ३. परशुराम; ४. इंद्रोत्त शौनक; ५. प्राचेतस वाल्मीकि।

क्षत्रिय ब्राह्मण—भार्गववंश में अनेक ब्राह्मण ऐसे भी थे कि, जो स्वयं भार्गव न हो कर भी इस वंश में शामिल हो गये थे। ये ब्राह्मण 'क्षत्रिय ब्राह्मण' कहलाते थे, एवं उनमें निम्नलिखित लोग शामिल थे:— १. मत्स्य; २. मौद्गल्यन; ३. सांक्रत्य; ४. गार्ग्यायन; ५. गार्गीय; ६. कपि; ७. मैत्रेय; ८. वध्यश्व; ९. दिवोदास (मत्स्य. १४९.९८-१००)।

भार्गव समूह --मत्स्य में निम्नलिखित भार्गववंशीय 'समूहों' (पक्ष) का निर्देश प्राप्त है:—१. वत्स; २. विद; ३. आश्रिणिग; ४. यास्क; ५. वैन्य; ६. शौनक; ७. मित्रयु (मत्स्य. १९५)। एकत्रिस भार्गव सूक्तद्रष्टाओं

का निर्देश ब्रह्मांड में प्राप्त है (ब्रह्मांड. २.३२.१०४-१०६)।

वासिष्ठ वंश—अयोध्या के राजपुरोहित के नाते काम करनेवाले वासिष्ठ वंश की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (वायु. ७०.७९-९०; ब्रह्मांड. ३.८.८६-१००; लिं. १.६३.७८-९२)। इस वंश के ऋषियों एवं गोत्रकारों की नामावलि मत्स्य में दी गयी है (मत्स्य. २००-२०१)। इस वंश में उत्पन्न निम्नलिखित ऋषि विशेष महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं:— १. देवराज; २. आपव; ३. अथर्वनिधि; ४. वारुणि; ५. श्रेष्ठभाञ्ज; ६. सुवर्चस्; ७. शक्ति; ८. मैत्रावरुणि। वासिष्ठ वंश की अन्य एक शाखा जातृकर्ण लोग माने जाते हैं।

पौराणिक ऋषिवंशों की तालिका

पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट विभिन्न ऋषिवंशों की एवं ऋषियों की तालिका नीचे दी गयी है। इस तालिका में भार्गव, आंगिरस, वासिष्ठ, एवं अन्य ऋषिवंशों में उत्पन्न ऋषियों की नामावलि उनके समकालीनत्व के अनुसार दी गयी है। तत्कालीन राजकीय इतिहास में इन ऋषियों का

संभाव्य स्थान कहाँ था, इसकी सूचना प्राप्त करने के लिए इक्ष्वाकुवंशीय राजाओं की संपूर्ण तालिका इस तालिका के साथ ही दी गयी है। इस तालिका में निर्दिष्ट इक्ष्वाकुवंशीय राजाओं की नामावलि पौराणिक राजवंशों की तालिका में से पुनरुद्धृत की गयी है।

क्र.:	समकालीन राजा (इक्ष्वाकु वंश)	भार्गव	वासिष्ठ	आंगिरस	अन्य ऋषि
१.	मनु	...	वासिष्ठ
२.	इक्ष्वाकु	च्यवन	वासिष्ठ
३.	विकुक्षि शशाद	...	वासिष्ठ
४.	अनेनस्	उशनस् शुक्र	...	बृहस्पति	...
१८.	संहताश्व	प्रभाकर आत्रेय
३०.	त्र्यैय्यारुण	ऊर्व	वरुण
३१.	...	ऋचीक और्व	आपवारुणि	...	दत्त एवं दुर्वासस् आत्रेय
३२.	सत्यव्रत त्रिशंकु	जमदग्नि, अजीगर्त	देवराज	...	विश्वामित्र
३३.	हरिश्चंद्र	मधुच्छेदस्, ऋषभ रेणु, अष्टक, कति (कत), गालव विश्वामित्र, शुनःशेप देवराज, विश्वामित्र
३४.	रोहित
३५.	हरित, चंप	परशुराम, शुनःशेप
३६.	वृक	अथर्वन्	...
३९.	बाहु (असित)	उशिञ्ज	कश्यप
४०.	...	अग्नि और्व, वीतहव्य	अथर्वनिधि (प्रथम), आपव	उचथ्य बृहस्पति, संवर्त	...

क्र.	समकालीन राजा (इक्ष्वाकु वंश)	भागव	वासिष्ठ	आंगिरस	अन्य ऋषि
४१.	सगर			दीर्घतमस्, भरद्वाज, शरद्वंत (१ ला)	...
४२.	असंमंजस		विश्वामित्र (शकुंतलापिता) कण्व काश्यप अगस्त्य (एवं लोपामुद्रा)
४३.	अंशुमत्	कक्षीवत् (१ ला)	...
४४.	दिलीप (प्रथम)	शंयु	...
४५.	श्रुत	विदथिन्-भरद्वाज (भरत ने गोद में लिया)	...
४६.	
४७.	
४९.	सिंधुद्वीप	गर्ग, नर	...
५०.	अयुतायु	उरुक्षय संकृति	...
५१.	ऋतुपर्ण	ऋजिथिन्	...
५२.	सर्वकाम	कपि	...
५४.	मित्रसह कल्माषपाद	...	श्रेष्ठभाज	भरद्वाज (अजमीद के समवेत)	...
५५.	अश्मक	कण्व	...
५६.	मूलक	भेषातिथि काण्व	...
६०.	दिलीप (खड्वांग)	...	अथर्वनिधि (२)	...	शांडिल्य-काश्यप
६१.	दीर्घबाहु	मौद्गल्य	...
६२.	रघु	वृषप्रथश्च दिनोदास
६३.	अज	पायु, शरद्वंत(द्वितीय) सौमरि-काण्व	अर्चनानस-आत्रेय विभांडक-काश्यप
६४.	दशरथ	मित्रायु, परुःशोप दैवोदासि	वासिष्ठ (दशरथ के समवेत)	...	ऋश्यशुंग एवं रेभ काश्यप, द्यावाश्व आत्रेय
६५.	राम	मैत्रेय, प्रतर्दन दैवोदासि प्रचेतस्	...	पत्रिय	अंधियु-आत्रेय
६७.	कुश	सुमित्र वाश्यश्च	वासिष्ठ (सुदास के समवेत)	...	आत्रेयः
६८.	अतिथि	...	शक्ति, शतयातु	...	विश्वामित्र (सुदास के समवेत), मिश्रुव काश्यप
६९.	निषध	...	पराशर, शाकत्य, सुवर्चस्	वामदेव	...
७०.	नल	बृहदुक्य	...
७१.	नभस्	देवापि शौनक
७३.	क्षेमधन्वन	इंद्रोत-शौनक	वैभांडकि-काश्यप

क्र.	समकालीन राजा (इक्ष्वाकुवंश)	भार्गव	वासिष्ठ	आंगिरस	अन्य ऋषि
८६.	सुदर्शन	जैगीषत्य
८७.	अग्निवर्ण	शंख एवं लिखित, कण्डरीक, बाभ्रव्य पांचाल
८९.	मरु	...	सगर
९०.	प्रसुश्रुत	...	पराशर-सागर
९१.	सुसंधि	...	जातुकर्ष्य	भरद्वाज	असित-काश्यप, विष्व- क्सेन (जातुकर्ष्य) अग्निवेश
९२.	अमर्ष-एवं सहस्वन्त	...	कृष्ण द्वैपायन- व्यास
९३.	विश्रुतयंत	...	शुक	कृप, द्रोण,	असित-देवल, धौम्य एवं याज, काश्यपवंशीय ऋषि
९४.	बृहद्बल	वैशम्पयन	भूरिश्रवस् आदि अन्य ऋषि	अश्वत्थामन्, पैल	लोमश, जैमिनि, सुमन्तु

परिशिष्ट ७

कालनिर्णयकोश

१ प्राचीन कालगणनापद्धति

पौराणिक साहित्य में तीन प्रमुख कालगणनापद्धतियों उपलब्ध हैं:— १. युगगणनापद्धति, जो सत्य, त्रेता, द्वापर, कलि आदि युगों की कल्पना पर अधिष्ठित है; २. मन्वन्तर कालगणनापद्धति—जो स्वायम्भुव, स्वरोचिष आदि चौदह मन्वन्तरो की कल्पना पर अधिष्ठित है; ३. सप्तर्षियुग की कल्पना—जो आकाश में स्थित सप्तर्षि ग्रहों के स्थिति के मापन पर आधारित है, एवं इस प्रकार खगोलशास्त्र से संबंधित है।

युगगणनापद्धति—पौराणिक साहित्य में प्राप्त युग-गणना पद्धति के अनुसार, ब्रह्मा का एक दिन एक हजार पर्यायों में विभाजित किया गया है, जिनमें से हर एक पर्याय निम्नलिखित चार युगों से बनता है:—

कृतयुग— १७,२८,००० वर्ष
त्रेतायुग— १२,९६,००० वर्ष
द्वापरयुग— ८,६४,००१ वर्ष
कलियुग— ४,३२,००० वर्ष
४३,२०,००१ वर्ष

∴ ब्रह्मा का एक दिन— ४३,२०,००१ × १,०००
= ४,३२,००,००,००१ वर्ष
(विष्णु. ३.२.४८)

एक उपपत्ति— सुप्रसिद्ध इतिहासकार जयचंद्र विद्यालंकार के अनुसार, यद्यपि पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट युगों की कल्पना शास्त्रीय एवं ऐतिहासिक है, फिर भी वहाँ दी गयी हर युग की कालमर्यादा अतिशयोक्तिपूर्ण है।

इसी कारण जयचंद्रजी ने कृतयुग, त्रेतायुग, एवं द्वापरयुग के पौराणिक कालविभाजन की समीक्षा राजनैतिक दृष्टि से करने का सफल प्रयत्न किया है। इस समीक्षा में उन्होंने वैवस्वत मनु से ले कर भारतीय युद्ध तक ९४ पीढ़ियों का परिगणन करनेवाले पार्श्वीकर के सिद्धान्त को ग्राह्य माना है, एवं उसी सिद्धान्त को भारतीय युद्ध तक कृत, त्रेता एवं द्वापरयुग समाप्त होने के जनश्रुति से मिलाने का प्रयत्न उन्होंने किया है। इन दोनों सिद्धान्तों को एकत्रित कर वे सगर राजा (४० वीं पीढ़ी) के साथ कृतयुग की समाप्ति, राम दशरथि (६५ वीं पीढ़ी) के साथ त्रेतायुग का अंत, एवं कृष्ण (९५ वीं पीढ़ी) के देहावसान के साथ द्वापरयुग की समाप्ति ग्राह्य मानते हैं। (यायु. ९९-४२९)। उनका यहीं सिद्धांत निम्नलिखित तालिका में ग्रथित किया गया है:—

युग	पीढ़ीयों	ऐतिहासिक कालमर्यादा	कालमर्यादा
कृतयुग	१-४० पीढ़ीयों	प्रारंभ से सगर राजा तक	४० × १६ = ६४० वर्ष
त्रेतायुग	४१-६५ पीढ़ीयों	सगर राजा से राम दशरथि तक	२५ × १६ = ४०० वर्ष
द्वापरयुग	६६-९५ पीढ़ीयों	रामदशरथि से कृष्ण तक	३० × १६ = ४८० वर्ष
कलियुग	—	भारतीय युद्ध के पश्चात् (१०५० वर्ष)	
कुल पीढ़ीयों - ९५		पहले तीन युगों की कालमर्यादा—१,५२० वर्ष	

जयचंद्रजी के अनुसार, कृत, त्रेता एवं द्वापर युगों की कुल कालावधि क्रमशः ६५०, ४००, एवं ४७५ साल मानी गयी है। भारतीय युद्ध का काल १४२० ई. पू. निर्धारित करते हुए वे कृतयुग, त्रेतायुग, एवं द्वापरयुग का कालनिर्णय निम्नप्रकार करते हैं:—

कृतयुग—२९५० ई. पू.—५३०० ई. पू.

त्रेतायुग—२३०० ई. पू.—१९०० ई. पू.
द्वापरयुग—१९०० ई. पू.—१४२५ ई. पू.
पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट वंशावलियाँ संपूर्ण न हो कर उनमें केवल प्रमुख राजा ही समाविष्ट किये गये हैं। इस बात पर ध्यान देते हुए, केवल उपलब्ध राजाओं के पीढ़ियों के परिगणन के आधार पर कालनिर्णय का कौनसा भी सिद्धांत व्यक्त करना अशास्त्रीय प्रतीत होता है। फिर भी पौराणिक ज्ञानकारी को तर्कशुद्ध एवं ऐतिहासिक चौखट में बिठाने का एक प्रयत्न इस नाते जयचंद्रजी का उपर्युक्त सिद्धान्त महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है।

मन्वन्तर कालगणना पद्धति—पौराणिक साहित्य में उपलब्ध अन्य एक कालपरिगणनापद्धति 'मन्वन्तर पद्धति' नाम से सुविख्यात है। इस परिमाणपद्धति के अनुसार, कुल चौदह मन्वन्तर दिये गये हैं, जिनके अधिपति राजाओं को मनु कहा गया है। चौदह मन्वन्तर मिल कर एक कल्प बन जाता है। मन्वन्तर कालगणना पद्धति के परिमाण पौराणिक साहित्य में निम्नप्रकार दिये गये हैं:—

२ वृष्टि = ३ निमेष.

२ आधा निमेष = १ निमेष.

२५ निमेष = १ काष्ठा.

३० काष्ठा = १ कला.

३० कला = १ मूर्हूर्त.

३० मूर्हूर्त = १ अहोरात्र.

२५ अहोरात्र दिन = १ पक्ष.

२ पक्ष = १ महीना.

६ महीने = १ अयन.

२ अयन = १ वर्ष.

४३ लक्ष २० हजार वर्ष = १ पर्याय

(महायुग), जिसमें कृत, त्रेता, द्वापर एवं कलि के प्रत्येकी एक युग समाविष्ट है।

७१ पर्याय = १ मन्वन्तर.

१४ मन्वन्तर = १ कल्प.

(भवि. ब्राह्म. २; मार्क. ४३; विष्णु. १.३; मत्स्य. १४२; स्कंद. ६.१५४; ७.१.१०५; पद्म. सू. ३)।

पौराणिक साहित्य के अनुसार, वराहकल्प में से स्वायंभुव, स्वरोचिष, उत्तम, तामस, रैवत एवं चाक्षुष नामक छः मन्वन्तर अब तक हो चुके हैं, एवं वर्तमान काल में वैवस्वत मन्वन्तर शुरु है। इस मन्वन्तर के पश्चात् सावर्णि, दक्षसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि, धर्मसावर्णि, रुद्रसावर्णि,

रोच्य एवं भौत्य नामक सात मन्वन्तर क्रमशः आनेवाले हैं।

पौराणिक साहित्य में प्राप्त कल्पना के अनुसार, मनु वैवस्वत को इस सृष्टि का पहला राजा माना गया है, एवं उस साहित्य में निर्दिष्ट सूर्य, सोम आदि सारे वंश उसीसे उत्पन्न माने गये हैं। यदि भारतीय युद्ध का काल १४०० ई. पू. माना जाये, तो मनु वैवस्वत का काल इस युद्ध के पहले ९५ पीढ़ीयों अर्थात् (९५ × १८ वर्ष + १४०० =) ३११० ई. पू. साबित होता है।

कल्पों की नामावलि—मन्वन्तरों के साथ-साथ कल्पान्तरो की नामावलि भी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है, किन्तु अतिशयोक्त कालमर्यादाओं के निर्देश के कारण, ये सारी नामावलियाँ अनैतिहासिक एवं कल्पनारम्य प्रतीत होती हैं। इनमें से मत्स्य में प्राप्त नामावलि विभिन्न पाठभेदों के साथ नीचे दी गयी है:— १. श्वेत (भव, भुव, भवोद्-भुव); २. नीललोहित (तप); ३. वामदेव (भव); ४. रथंतर (रंम); ५. रौरव (रौम, ऋतु); ६. देव (प्राण, ऋतु); ७. बृहत् (वहि); ८. कंदर्प (हव्यवा-वाहन); ९. सद्य (सावित्र); १०. ईशान (भुव, शुद्ध); ११. तम (ध्यान, उशिक); १२. सारस्वत (कुशिक); १३. उदान (गंधर्व); १४. गरुड (ऋषभ); १५. कौर्म (षडज); १६. नारसिंह (मार्जालिय, मज्जालिय) १७. समान (समाधि, मध्यम); १८. आग्नेय (वैराजक); १९. सोम (निषाद); २०. मानव (भावन, पंचम); २१. तत्पुरुष (सुप्तमाली, मेघवाहन) २२. वैकुण्ठ (चित्तक, चैत्रक); २३. लक्ष्मी (अर्चि, आकृति) २४. सावित्री (विज्ञाति, ज्ञान); २५. घोरकल्प (लक्ष्मी, मनस्, सुदर्श); २६. वाराह (भावदर्श, दर्श); २७. वैराज (गौरी, बृहत्); २८. गौरी (अंध, श्वेतलोहित); २९. माहेश्वर (रक्त); ३०. पितृ (पीतवासस्); ३१. सित (असित); ३२. विश्वरूप (वायु. ११; लिग. १.४; मत्स्य. २८९; स्कंद ७.१०५)।

वसंतारंभकाल—ज्योतिर्विज्ञानीय तत्त्व का आधार ले कर प्राचीन वैदिक साहित्य का कालनिर्णय करने का अद्वितीय प्रयत्न लोकमान्य तिलकजी ने किया। उन्होंने प्रमाणित आधारों पर सिद्ध किया कि, जिस समय कृत्तिका नक्षत्र में वसंतारंभ था, एवं उसी नक्षत्र के आधार पर दिन-रात की गणना की जाती थी, उस समय ब्राह्मण ग्रंथों का निर्माण हुआ था। उसी प्रकार, वैदिक मंत्रसंहिताओं की रचना भी मृगशिरा

नक्षत्र के काल में की गयी थी। खगोल एवं ज्योतिःशास्त्र के हिसाब से, कृत्तिका एवं मृगशिरा नक्षत्रों में वसंत-संपात क्रमशः आज से ४५०० एवं ६५०० सालों के पूर्व थी। इसी हिसाब से ब्राह्मणग्रंथ एवं वैदिकसंहिता का काल क्रमशः २५०० ई. पू. एवं ४५०० ई. पू. लगभग निश्चित किया जाता है।

सप्तर्षि शक—ज्योतिर्विज्ञान की कल्पना के अनुसार, आकाश में स्थित सप्तर्षि तारकापुंज की अपनी गति रहती है, एवं वे वह सौ साल में एक नक्षत्र भ्रमण करते हैं। इस प्रकार समस्त नक्षत्र मंडल का भ्रमण पूर्ण करने के लिए उन्हें २७०० साल लगते हैं, जिस कालावधि को 'सप्तर्षि चक्र' कहते हैं।

सप्तर्षिकाल एवं शक का निर्देश पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (वायु. ९९.४१८-४२२; भा. १२.२. २६-३१; ब्रह्मांड. ३.७४.२३१-२४०; विष्णु. ४.२४. ३३; मत्स्य. २७३.३९-४४)। इस शक को 'शक-काल' एवं 'लौकिक काल' नामांतर भी प्राप्त थे। काश्मीर के ज्योतिर्विदों के अनुसार, कलिवर्ष २७ चैत्रशुक्ल प्रतिपदा के दिन इस शक का प्रारंभ हुआ था। इसी कारण इस शक में क्रमशः ४६ एवं ६५ मिलाने से परंपरागत शकवर्ष एवं ई. स. वर्ष पाया जाता है। अल्बेरुनी के ग्रंथ में (शक ९५२) 'सप्तर्षि शक' का निर्देश प्राप्त है, जहाँ उस समय यह शक मुल्तान, पेशावर आदि उत्तर पश्चिमी भारत में प्रचलित होने का निर्देश प्राप्त है। आधुनिक काल में यह शक काश्मीर, एवं उसके परवर्ति प्रदेश में प्रचलित है। सुविख्यात 'राजतरंगिणी' ग्रंथ में भी इसी शक का उपयोग किया गया है।

भारतीय युद्ध का कालनिर्णय—प्राचीन भारतीय इतिहास में भारतीय युद्ध एक ऐसी महत्त्वपूर्ण घटना है कि, जिसका कालनिर्णय करने से बहुत सारी घटनाएँ सुलभ हो सकती हैं।

पुलकेशिन (द्वितीय) के सातवीं शताब्दी के ऐहोल शिलालेख में भारतीय युद्ध का काल ३१०२ ई. पू. दिया गया है। सुविख्यात ज्योतिर्विद आर्यभट्ट के अनुसार कलियुग का प्रारंभ भी उसी समय तय किया गया है।

किंतु पलीट के अनुसार, भारतीय युद्ध के कालनिर्णय की आर्यभट्ट की परंपरा काफ़ी उत्तरकालीन एवं अनैतिहासिक है। बृद्धगर्ग, वराहमिहिर आदि अन्य ज्योतिर्विद

एवं कल्हण जैसे इतिहासकार भारतीय युद्ध का काल कलियुग के पश्चात् ६५३ वर्ष, अर्थात् २४४९ ई. पू. मानते हैं। भारतीय ज्योतिषशास्त्र की इन दो परस्पर विरोधी परंपराओं से ये दोनों कालनिर्णय अविश्वसनीय प्रतीत होते हैं।

पौराणिक साहित्य में प्राप्त राजवंश एवं पीढ़ियों के आधार से भारतीय युद्ध का कालनिर्णय करने का सफल प्रयत्न पाणिंटर ने किया है। मगध देश के राजा महापद्मनंद से पीछे जाते हुए जनमेजयपौत्र अविस्मिन्कृष्ण तक छत्तीस पीढ़ियों की गणना कर, पाणिंटर ने भारतीय युद्ध का काल ९५० ई. पू. सुनिश्चित किया है (पार्मि. १७९-१८३)।

किन्तु पौराणिक साहित्य एवं महाभारत में प्राप्त निर्देशों के अनुसार परिक्षिप्त राजा का जन्म, एवं महापद्मनंद राजा के राज्यारोहण के बीच १०१५ वर्ष वीत चुके थे। महापद्मनंद का राज्यारोहण का वर्ष ३८२ ई. पू. माना जाता है। इसी हिसाब से भारतीय युद्ध का काल १०१५ + ३८२ = १३९७ ई. पू. सिद्ध होता है। इसी काल में पौराणिक राजवंशों के ९५ पीढ़ियों के काल में १७१० वर्षों का काल मिलाये जाने पर वैवस्वत मनु का काल निश्चित होता है। यह काल निश्चित करने से ययाति, मांधातृ, कार्तवीर्य अर्जुन, सगर, राम दाशरथि आदि का काल सुनिश्चित किया जा सकता है।

२. ग्रंथों का कालनिर्णय

वेद, उपवेद, उपनिषद्, स्मृति, महाभारत, पुराण आदि प्रमुख प्राचीन ग्रंथों का कालनिर्णय नीचे अकारादिक्रम से दिया गया है। इस कालनिर्णय के लिए उपयोग किये गये आधार ग्रंथों की नामावलि, एवं उनके लिए प्रयुक्त संक्षेप निम्नप्रकार हैं:—

- गी. र.—गीतारहस्य (लो. वा. गं. टिळक)
- धा. र.—धर्मरहस्य (के. ल. दत्तरी)
- पु. नि.—पुराण निरीक्षण (चं. गु. काले)
- भा. का. नि.—भारतीय युद्धकालनिर्णय (के. ल. दत्तरी)
- भा. ज्यो.—भारतीय ज्योतिषशास्त्र का इतिहास (शं. वा. दिक्षित)
- भा. सा.—भारत सावित्री
- म. उ.—महाभारत का उपसंहार (नि. वि. वैद्य)
- रा. का. नि.—रामचंद्रजन्मकालनिर्णय (के. ल. दत्तरी)
- ह. प्र.—हरप्रसादशास्त्री की प्रस्तावना (Descrip-

कई प्रमुख शक—सप्तर्षि शक के अतिरिक्त पौराणिक साहित्य में कई अन्य शकों का निर्देश पाया जाता है, जिनमें निम्नलिखित शक प्रमुख माने जाते हैं:—

१. परशुराम शक—इस शक का प्रारंभ शालिवाहन शक वर्ष ७४७ में हुआ। इसका परिगणना, एक हजार साल का एक चक्र, इस हिसाब से होती है। इस प्रकार इस शक का चतुर्थ चक्र सांप्रत चालू है। सौर पद्धति के अनुसार इस शक का परिगणन किया जाता है।

दक्षिण भारत के केरल प्रांत में मंगलोर से लेकर कन्याकुमारी तक एवं तिनोवेल्ली जिले में यह पाया जाता है। इस शक का प्रारंभ केरल प्रांत में कन्या माह से, एवं तिनोवेल्ली जिले में सिंह माह से प्रारंभ होता है। इसी सन में से ८२५ साल कम करने से परशुराम शक का हिसाब हो सकता है।

२. विक्रम संवत्—इस संवत् का प्रारंभ ई. स. पू. ५७ माना जाता है। इस संवत् का प्रचार, गुजरात एवं बंगाल के अतिरिक्त बाकी सारे उत्तर भारत में पाया जाता है। नर्मदा नदी के उत्तर प्रदेश में इस संवत् का प्रारंभ चैत्र माह में होता है, एवं माह का परिगणन पौर्णिमा तक रहता है। गुजरात प्रदेश में इस संवत् का वर्ष कार्तिक माह में शुरू होता है।

३. कलियुग संवत्—(भारतीय युद्ध संवत् अथवा युधिष्ठिर संवत्)—इस संवत् का प्रारंभ ई. पू. ३१०२ में माना जाता है। स्कंद पुराण में यह प्रयुक्त है।

tive Catalogue of Sanskrit Manuscripts in the Collections.

ध. शा.—History of Dharmashastra (डॉ. गं. वा. काणे)

भारतीय विद्याभवन—History and Culture of Indian People (भारतीय विद्याभवन)

स्मिथ—The Early History of Indian People (विह्नसेन्ट स्मिथ)

रॅक्सन—Cambridge History of India, Vol. I (ई. जी. रॅक्सन)

डॉ. वेलवलकर—Systems of Sanskrit Grammar (डॉ. वेलवलकर)

ई. पू.—ईसा पूर्व

शा. पू.—शालिवाहन शक के पूर्व

अग्नि पुराण—ई. स. ६००-९०० (हजरा); ई. स. ५००-५५० (पु. नि. १०२); ई. स. ८००-९०० (ह. प्र. १४७)।

अपरार्ककृत यज्ञवल्क्यस्मृतिभाष्य—ई. स. ११००-११३० (डॉ. काणे)।

अष्टांगहृदय—६ वीं शताब्दी।

अथर्ववेद संहिता—ई. पू. ४०००-ई. पू. १०००; कई सूक्त ई. पू. ४००० के पूर्व।

आदि पुराण—ई. स. १२०३-१२२५ (हजरा)।

आपस्तंब गृह्य, धर्म एवं श्रौतसूत्र—ई. पू. ८००-४०० (डॉ. काणे); ई. पू. ३ वीं शताब्दी के पूर्व (गी. र. ५६१-५६२); ई. पू. १४२० (चि. वि. वैद्य, संस्कृत वाङ्मय का इतिहास (अंग्रेजी), ३.७३)।

आर्यभट्टकृत 'आर्यभटीयम्'—ई. स. ४७६-५००।

आश्वलायन गृह्य एवं श्रौतसूत्र—ई. स. पू. ८००-४००; ई. स. पू. १०० (म. उ. ५३)।

ईश्वरकृष्णकृत सांख्यकारिका—ई. स. २५०-३२५।

उत्पलकृत घराहमिहिर ग्रंथों के भाष्यग्रंथ—ई. स. ७८०-८७०।

उपनिषद्—उपलब्ध उपनिषद् ग्रंथों के कालदृष्टि से तीन विभाग माने जाते हैं :-

(१) ब्राह्मण ग्रंथों के समकालीन उपनिषद् ग्रंथ—ई. पू. १००० के पूर्व; १. ऐतरेय उपनिषद्; २. कौषीतकी उपनिषद्; ३. तैत्तिरीय उपनिषद्; ४. बृहदारण्यक उपनिषद्; ५. छांदोग्य उपनिषद्; ६. केन उपनिषद्। इन उपनिषदों का काल पाणिनि के पूर्वकालीन माना जाता है।

(२) बुद्ध के पूर्वकालीन उपनिषद्—१. कठ; २. श्वेताश्वतर; ३. ईश; ४. सुण्डक; ५. प्रश्न ६. महानारायण उपनिषद्।

(३) बुद्धोत्तरकालीन उपनिषद् (सांप्रदायिक उपनिषद् ग्रंथ)—१. जाबाल उपनिषद्, २. परमहंस उपनिषद्; ३. सुबाल उपनिषद् आदि।

उपवर्षकृत पूर्वमीमांसा एवं वेदांतसूत्र—ई. पू. १००-ई. स. १००।

उशनस्स्मृति—(स्मृति देखिये)।

ऋग्वेद—प्राचीनतम सूक्त ई. पू. ४००० (डॉ. काणे); ई. पू. २००० (ब्लुमफिल्ड); ई. पू. २५००-ई. पू. २००० (विन्टरनिड्ज)। ऋग्वेदसंहिता का सर्व सामान्य

रचनाकाल ई. पू. ४०००-ई. पू. १५००; ऋक्संहिता का संहिताकरण (कृष्णद्वैपायन व्यास के द्वारा)—ई. पू. २०००-ई. पू. १५००)।

एकाम्र पुराण (ओरिसा)—१० वीं-११ वीं शताब्दी (हजरा)।

ऐतरेय ब्राह्मण—ई. पू. ४०००-ई. पू. १०००।

कपिलकृत सांख्यसूत्र—ई. पू. ६ वीं शताब्दी।

कल्कि पुराण—१८ वीं शताब्दी (हजरा)।

कपिल संहिता—ई. स. ११००-१२०० (ह. प्र. २१८)।

कल्हणकृत राजतरंगिणी—ई. स. ११५०-ई. स. ११६०।

कात्यायन वररुचिकृत वार्तिक—ई. पू. ३००-ई. पू. २०० (पाणिनिकालीन भारतवर्ष, डॉ. अग्रवाल); ई. पू. ५००-ई. पू. ४०० (पु. नि. २९१); ई. पू. ६००-ई. पू. ४०० (डॉ. वेल्बलकर)।

कात्यायन श्रौतसूत्र (पारस्कर सूत्र)—ई. पू. ८००-ई. पू. ४०० (डॉ. काणे); ई. पू. १००० (चि. वि. वैद्य, संस्कृतवाङ्मय का इतिहास)।

कात्यायन स्मृति—ई. स. ४००-७०० (डॉ. काणे, २१८)।

कालिका पुराण—ई. स. १००० (हजरा)।

काशिका (वामन एवं जयादित्य कृत)—ई. स. ६५०-६६०।

कुमारिलभट्टकृत तंत्रवार्तिक एवं श्लोकवार्तिक—ई. स. ६५०-७००।

कुल्लुककृत मनुस्मृतिभाष्य—ई. स. ११५०-१३००।

कूर्म पुराण—ई. स. २ वीं शताब्दी (ह. प्र. १८७); ई. स. ५०० के पूर्व (पु. नि. १४७)।

कौटिलीय अर्थशास्त्र—ई. पू. ३००-ई. पू. १००।

गरुड पुराण—ई. स. ६५०-ई. स. ९५० (हजरा); ई. स. ३ वीं शताब्दी (ह. प्र. १९३)।

गर्ग संहिता—ई. पू. १४५ (म. उ. ४७); ई. स. १० वीं शताब्दी (ह. प्र. २१७)।

गौडपादकृत सांख्यकारिकाटीका एवं युक्ति-दीपिका—ई. स. ७००-७५०।

गौतम धर्मसूत्र—ई. पू. ६००-ई. पू. ४०० (डॉ. काणे); ई. पू. ६०० (ध. र. २३०); ई. पू. ३५० (डॉ. जायसवाल); पुनर्संस्करण ई. पू. २००।

चरक संहिता—ई. पू. २ वीं शताब्दी, जो काल आचार्य चरक कनिष्क राजा के समकालीन होने के कारण निश्चित किया गया है। इस ग्रंथ का उपलब्ध संस्करण दृढबल बाभट्ट के द्वारा किया गया है, जिसका काल ई. पू. १ वीं शताब्दी माना जाता है।

चार्वाक दर्शन—युधिष्ठिरशक ६६१।

जातूकपर्यं स्मृति—ई. स. २००-४०० (डॉ. काणे)।

जैन सूत्र—ई. पू. ३००। इन सूत्रों में निम्नलिखित ग्रंथ समाविष्ट हैं:—१. आचारांग सूत्र; २. सूत्रकृतांग; ३. स्थानांग; ४. समवायांग; ५. भगवती सूत्र; ६. ज्ञाताधर्म-कथा; ७. उपासकदर्शांग; ८. अंतकृद्दर्शांग; ९. अनुत्तरीय-पार्तिकदर्शांग; १०. प्रश्नव्याकरण; ११. विपाक; १२. दृष्टिवाद।

जैमिनि अश्वमेध—ई. पू. १०० (पु. नि. ८२)।

जैमिनिकृत पूर्वमीमांसा—ई. पू. ४००-ई. पू. २००।

तैत्तिरीय संहिता—ई. पू. ४०००-ई. पू. १०००; कई सूक्त ई. पू. ४००० के पूर्व (डॉ. काणे); ई. पू. २३५० (लो. तिलक, ओरायन); ई. पू. १४२६ (वेद-कालनिर्णय पृष्ठ २६)।

त्रिपिटक—ई. पू. १ वीं शताब्दी। बौद्ध धर्म के ये अनुश्रुतिग्रंथ विनयपिटक (७ ग्रंथ), सुत्तपिटक (५ संकलन), अभिधम्मपिटक (७ ग्रंथ) इन तीन विभागों में विभाजित है।

देवल स्मृति—ई. स. ४००-६०० (डॉ. काणे, पृ. २२१)।

देवी पुराण—७ वीं शताब्दी का उत्तरार्ध (हजरा)।

धर्मसिंधु (काशीनाथ उपाध्याय कृत)—ई. स. १७९०।

नंदी पुराण—८ वीं-९ वीं शताब्दी (हजरा)।

नारद पुराण—ई. स. ७००-१००० (हजरा)। इस पुराण में अन्य पुराणों की एक सूची प्राप्त है, जिसका काल ई. स. ५०० के पूर्व का माना जाता है (पु. नि. ९४)।

नारद स्मृति—ई. स. १००-४०० (डॉ. काणे)।

नृसिंह पुराण—९ वीं शताब्दी (हजरा); ई. स. १४०० के पूर्व (ह. प्र.)।

निरुक्त (यास्ककृत)—ई. पू. ८००-५००

पतंजलिकृत योगसूत्र—ई. पू. १००-ई. स. ३००; १५० ई. पू. (डॉ. मांडारकर) (म. उ. ५८)।

पतंजलिकृत व्याकरण महाभाष्य—ई. पू. १५०-ई. स. १०० (म. उ. ५८); ई. पू. १४० (पु. नि. २८९)।

पद्म पुराण—ई. स. १४ वीं शताब्दी; उत्तरकाण्ड-ई. स. १००-१५०० (हजरा)।

पराशर स्मृति—ई. स. १००-५०० (डॉ. काणे, पृ. १५५)।

पाणिनिकृत अष्टाध्यायी—ई. पू. ५००-ई. पू. ३००; ई. पू. १२००-ई. पू. ६०० (पु. नि. २९१-९२); ई. पू. ४८०-४१० (डॉ. आगरवाल)।

पारस्कर गृह्यसूत्र—ई. पू. ५००; वर्तमान संस्करण-२०० ई. पू. (डॉ. जायसवाल)।

पुलस्त्य स्मृति—ई. स. ४००-७०० (डॉ. काणे, २२८)।

बृहस्पति स्मृति—ई. स. २००-४०० (डॉ. काणे, २१०); ई. स. ७ वीं शताब्दी (सेक्रेड बुक्स ऑफ दी ईस्ट, ३३.२७६)।

बौधायन धर्मसूत्र—ई. पू. ५००-२०० (डॉ. काणे, ३०)।

बौधायन श्रौतसूत्र—ई. पू. ८००-४०० (डॉ. काणे, गीतारहस्य ५६२)।

बौधायन स्मृति—ई. पू. ४०२ (स्मृति देखिये)।

ब्रह्म पुराण—मूल रचना-ई. स. ५ वीं शताब्दी के पूर्व; ई. स. १० वीं-१२ वीं शताब्दी; वासुदेवमहात्म्य अ. १७६-२१३-१३ वीं शताब्दी (हजरा)।

ब्रह्मवैवर्त पुराण—ई. स. ८००-९०० (ह. प्र. १५९)।

ब्रह्मांड पुराण—ई. स. ३००-६०० (हजरा); ई. स. ४०० के पूर्व (पु. नि. १४३); ई. स. ४ थीं-५ वीं शताब्दी (ह. प्र.)।

बृहद्धर्म पुराण—१३ वीं-१४ वीं शताब्दी।

बृहस्पति स्मृति—ई. स. ३००-५००।

भगवद्गीता—ई. पू. २०० (विंटरनिट्ज़); ई. पू. ५०० (गी. र. ५६४); ई. पू. ५००-२०० (डॉ. काणे.); ई. पू. २०००-१००० वि. वि. वैयकृत संस्कृत-शास्त्र का इतिहास); ई. पू. ११९७ (ध. र. १६६-१७२)।

भगवद्गीताकथन की तिथि—मार्गशीर्ष शुक्ल १३ (भारतसावित्री, नीलकंठी टीका); मार्गशीर्ष शुक्ल ११ (ज. स. करंदीकर); मार्गशीर्ष अमावास्या (घ. र.)।

भविष्य पुराण—६ वी-७ वी शताब्दी (हजरा)।

भविष्योत्तर पुराण—ई. स. १०० (हजरा)।

भागवत—५ वी-१० वी शताब्दी (हजरा); ५ वी शताब्दी के मध्य में (कृष्णमूर्ति शर्मा); ९ वी शताब्दी (डॉ. काणे); ई. स. ८०० के पूर्व में (पु. नि. ९०); ई. स. ३९८ (घ. र.)।

भासकृत नाट्यकृतियों—ई. स. २००-३०० (गी. र. ५५५); ई. पू. २००-३०० (पं. गणपति-शास्त्री)।

मत्स्य पुराण—ई. स. २००-४०० (हजरा); ई. स. २ वी शताब्दी के पूर्व में (ह. प्र. १९१; पु. नि. १५२)।

मनु स्मृति—ई. पू. २००-ई. स. १०० (डॉ. काणे); ई. पू. १५२ (स्मृति देखिये)।

महाभारत—ई. पू. १४०० (हिस्ट्री ऑफ इंडियन कल्चर अँड पीपल), जो कालनिर्णय पुराणों में प्राप्त कलियुगीन राजाओं की वंशावलि, एवं आचार्यों की नामावलि के आधार पर तय किया गया है। इसी ग्रंथों के आधार से पाणिटर ने भारतीय युद्ध का काल ९५० ई. पू. तय किया है। किन्तु इस कालनिर्णय की अपेक्षा ई. पू. १४०० ही अधिक सुयोग्य प्रतीत होता है।

ज्योतिषशास्त्रीय अनुमान—आर्यभट के अनुसार भारतीय युद्ध का काल ई. पू. ३१०२ तय किया गया है। बृद्धगर्ग, वराहमिहिर एवं कल्हण के अनुसार २४४९ ई. पू. माना गया है।

डॉ. जायसवाल के अनुसार महाभारत की आधारभूत सामग्री यद्यपि प्राचीन है, फिर भी उसका उपलब्ध संस्करण ई. पू. १५० में तैयार किया गया है, एवं ई. स. ५०० तक उस संस्करण में अनेकानेक नई सामग्री का जोड़ देने का कार्य शुरू था।

डॉ. सुवर्णकर के अनुसार, महाभारत की रचना सर्वप्रथम त्रिकाश्रम में हुई, एवं ई. पू. ३ वी-२ वी शताब्दी तक भृगुवंशीय ब्राह्मणों के द्वारा उसके संपादन, परिवर्तन एवं संशोधन का कार्य होता ही रहा। जि. वि. वैद्य एवं जयचन्द्र विद्यालंकार के अनुसार, महाभारत का मूल रचनाकाल ३५० ई. पू. एवं ५०० ई. पू. माना जाता है।

माठरकृत माठरवृत्ति—(सांख्यकारिकाभाष्य) ई. स. ४००-५००।

मार्कंडेय पुराण—ई. स. ३००-६०० (हजरा); 'सप्तशती' भाख्यान—ई. स. ९९८। शंकराचार्य, बाण-भट्ट एवं मयुरभट्ट ने अपने ग्रंथों में इस पुराण का निर्देश किया है।

मेधातिथिकृत मनुस्मृतिभाष्य—ई. स. ८२५-९००।

मैत्र्युपनिषद्—ई. पू. १९०० (जि. वि. वैद्यकृत संस्कृत वाङ्मय का इतिहास)।

यमस्मृति—(स्मृति देखिये)।

यास्ककृत निरुक्त—ई. पू. ७००।

याज्ञवल्क्यस्मृति—ई. पू. ३००-ई. स. १०० (डॉ. काणे, १८४); ई. पू. १०२ (घ. र. २२७)।

युक्तिदीपिका (सांख्यकारिकाभाष्य)—ई. स. ६००-६५०।

लगधकृत ऋग्वेदी वेदांगज्योतिष—ई. पू. १२६९-११८१ (जे. टिलक-ओरायन ३७-३८); ई. पू. १४०० (मा. ज्यो. ८८)।

लिखित स्मृति—ई. पू. ४०२-२०२ (डॉ. काणे, २३७)।

वररुचिकृत प्राकृतप्रकाश—ई. स. ६ वी शताब्दी।

वराह पुराण—ई. स. १ वी शताब्दी के पूर्व (हजरा)।

वराहमिहिरकृत 'बृहज्जातक', 'बृहत्संहिता', एवं 'पंचसिद्धांतिका'—ई. स. ५००-५७५।

वसिष्ठ धर्मसूत्र—ई. पू. ५००-३०० (डॉ. काणे)।

वसिष्ठ स्मृति—ई. पू. ६०० (डॉ. काणे)।

वाग्भट—ई. स. ४ वी शताब्दी।

वाचस्पतिकृत योगसूत्रभाष्य—ई. स. ८२०-९००।

वात्स्यायन कामसूत्र—ई. स. ३०० (चक्रद्वार)।

वात्स्यायन न्यायसूत्रभाष्य—ई. स. ४०० (डॉ. विद्याभूषण)।

वामन पुराण—ई. स. ६००-९०० (हजरा); ई. स. २ वी शताब्दी (ह. प्र. १८३)।

वायु पुराण—ई. स. ३५०-५५० (हजरा); मूलग्रंथ की रचना ई. पू. २०३८ (घ. र. १६४); उपलब्ध संस्करण ई. स. ६२० (पाणि. ५०); ई. स. ४०० (पु. नि. ७०)।

वाल्मीकि रामायण--वाल्मीकि कृत आदिकाव्य--
ई. पू. ३००; वाल्मीकि का प्रचलित रामायणग्रंथ--ई. पू.
२ वी शताब्दी ।

अन्य मन--डॉ. याकोबी--ई. पू. ६ वीं शताब्दी;
डॉ. मैकडोनेल--ई. पू. ६ वीं शताब्दी; डॉ. मोनियर
विल्यम्स--ई. पू. ५ वीं शताब्दी; श्री. नि. वि. वैद्य--
ई. पू. ५ वीं शताब्दी; डॉ. क्रीथ--ई. पू. ४ थीं शताब्दी;
डॉ. विंटरनिश--ई. पू. ३ वीं शताब्दी ।

विलुप्त धर्मसूत्रग्रंथ (आठक, कालानक, मौदक,
पैपल्लाद, आश्विन आगिरस)--ई. पू. ७०० ।

विश्वरूपकृत बृहदारण्यकोपनिषद्भाष्य--ई. स.
७९०-८५०; याज्ञवल्क्य स्मृतिभाष्य--ई. स. ७९०-८५० ।

विष्णु पुराण--ई. स. ३००-५०० (हजरा); ई.
स. ५ वीं शताब्दी (पार्शि. ८०); ई. स. ३ वीं शताब्दी
(ह. प्र.) ।

विष्णुधर्मसूत्र--ई. स. १००-५५० (डॉ. काणे) ।

विष्णुधर्मोत्तर पुराण--ई. स. ६००-९००
(हजरा) ।

वेदांगज्योतिष (लग्नकृत)--ई. पू. ८००-४०० ।

वेदांतसूत्र--ई. पू. १५०-१०० (म. उ. ५१) ।

उपलब्ध वेदांतसूत्रों में जैन, बौद्ध एवं पांचरात्र धर्मसिद्धांतों
का खंडन प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, इस ग्रंथ
का उपलब्ध संस्करण बुद्धोत्तरकालीन है ।

व्याडिकृत 'संग्रह' (व्याकरणग्रंथ)--ई. पू.
३०० ।

व्यासकृत योगसूत्रभाष्य--ई. स. ४००-५०० ।

व्यासस्मृति--ई. स. २००-५०० (डॉ. काणे,
२३८) ।

शंकराचार्यकृत गीता, उपनिषद्, एवं ब्रह्मसूत्र-
भाष्य--ई. स. ७८८-८२० (डॉ. काणे, २६१) ।

शंखस्मृति--ई. पू. ४०२-२०२ (डॉ. काणे,
२.३७) ।

शतपथ ब्राह्मण--ई. पू. ४०००-१००० (डॉ.
काणे); ई. पू. ३१०० (भा. ल्यो. १२८); ई. पू.
२५०० (रामायण समालोचना ८.४१); ई. पू.
१४२२ (विविधज्ञानविस्तार १९२८, पृ. २७) । इस
ग्रंथ का उत्तरार्ध काफी उत्तरकालीन माना जाता है,
जिसका काल ई. स. पू. ११२२ माना जाता है ।

शबरकृत पूर्वमीमांसाभाष्य--ई. स. २००-४०० ।

शाकटायनकृत उणादि सूत्रपाठ--ई. पू. १०००
(डॉ. वेल्बलकर) ।

शिव पुराण--ई. स. ९ वीं शताब्दी (हजरा) ।

शौनक गृह्यसमूहकृत ऋग्वेदानुक्रमणी--ई. पू.
२०५० (पु. नि. २८५-२८६) ।

संवर्त स्मृति--(स्मृति देखिये) ।

सत्याषाढ श्रौतसूत्र--ई. पू. ८००-४०० ।

सांव पुराण--ई. स. ९ वीं शताब्दी ।

सायण कृत ऋक्संहिता भाष्य--ई. स. १३००-
१३८६ ।

सुश्रुत संहिता--काल अनिश्चित, किन्तु ८ वीं
शताब्दी में इस ग्रंथ की रचयिता विदेश में पहुँची थी ।
स्कंद पुराण--ई. स. ७ वीं शताब्दी-९ वीं
शताब्दी ।

स्मृति--विभिन्न स्मृतिग्रंथों की जानकारी का अनुक्रम
से नीचे दी गयी है:--

(१) गौतम स्मृति--ई. पू. ६०२ ।

(२) वसिष्ठ स्मृति--ई. पू. ६०२ (गौतमस्मृति के
उत्तरकालीन) ।

(३) शंखलिखित स्मृति--ई. पू. ४०२-२०२ ।

(४) बौधायन स्मृति--ई. पू. ४०२ ।

(५) विष्णु स्मृति--ई. पू. १७५ ।

(६) मनु स्मृति--(भृगुप्रोक्त)--ई. पू. १५२

(७) बृहस्पति स्मृति--ई. पू. ६२७ ।

(८) वशास स्मृति--महाभारतकालीन ।

(९) अत्रिस्मृति

(१०) अंगिरसस्मृति

(११) आपस्तंबस्मृति

(१२) उज्जैनस्मृति

(१३) कात्यायनस्मृति

(१४) दशरथस्मृति

(१५) पराशरस्मृति

(१६) यमस्मृति

(१७) याज्ञवल्क्यस्मृति

(१८) शांतातपरस्मृति

(१९) हारितस्मृति

स्मृतिचंद्रिका (देवनमदकृत)--ई. स. १२००-
१२२५ ।

हरदत्तकृत गौतमसूत्रभाष्य--ई. स. ११५०-
१३०० ।

हाल सातवाहनकृत मायासप्तशती--ई. स.
९९-१०२ (पु. नि. २१९) ।

३. व्यक्तियों का कालनिर्णय

अजातशत्रु (शिशु. भविष्य.)--ई. पू. ४८८ (डॉ. दप्तरी); मृत्यु. ई. पू. ५२७ (रॉसन) ।

अधिसीम कृष्ण--(सो. पूरु. भविष्य) जनमेजय राजा के इस प्रयोग से कलियुग का प्रारंभ होता है । पाणिंदर के अनुसार, इस राजा से लेकर महापद्म नंद तक छब्बीस पीढ़ीयों ($26 \times 18 = 468$ वर्ष) बीत गयी थीं ।

कृत, त्रेता, द्वापर, एवं कलि इन चार युगों के १००० साल बीत जाने के बाद द्वादशवर्णीय सत्र किया जाता था । उनमें से द्वितीय द्वादशवर्णीय सत्र के समय यह राज्य करता था (डॉ. दप्तरी) ।

अभिमन्यु--विवाह-आपाद शुकु एकादशी, मृत्यु-मार्गशीर्षे शुकु द्वादशी (भा. का. नि.); पौष कृष्ण अष्टमी (भा. सा.) ।

अशोक--(मौर्य. भविष्य.) राज्याभिवेक--ई. पू. २७३ (गौरीशंकर ओझा) ।

आंध्र--(भविष्य.) इस राजवंश का प्रारंभ ई. पू. २४०, एवं समाप्ति ई. स. २२५ मानी जाती है (स्मिथ) । इस वंश के राजाओं ने ई. पू. ५५ में मगध देश जीत लिया था (डॉ. दप्तरी) ।

अपिशालि (व्याकरणकार)--ई. पू. ७५०-ई. पू. ७०० ।

आयु--(सो. पुरुरवम्.) ई. पू. २१८७-ई. पू. २१०० (पु. नि. ३२७); ई. पू. २१०२ (डॉ. दप्तरी ६.३) ।

इक्ष्वाकु--ई. पू. २६०० (पु. नि. ३१५); ई. पू. २१२७ (डॉ. दप्तरी) ।

इडविडा--ई. पू. १६६४ (रा. का. नि. ४६) ।

उदयन--(सो. कुरु. भविष्य.) ई. पू. ६०० (पु. नि. २७९) ।

उपवर्ष (राणिनीय परंपरा का व्याकरणकार)--ई. पू. १२००-ई. पू. ९०० ।

उलूक - वध-पौष अमावास्या (भा. सा.) ।

कंस--वध-ई. पू. १२३७ (डॉ. दप्तरी) ।

कर्ण--वध-पौष कृष्ण १४ (भा. सा.) ।

कलि (युग)--इस युग का प्रारंभ ई. पू. ३१०२ माना जाता है ।

कलिक--इस अवतार का प्रारंभ ई. पू. ४०२ में माना जाता है (डॉ. दप्तरी) ।

भा. च. १४८]

कश्यप--इस ऋषि का काल ई. पू. ५६९४ माना जावा है (पु. नि. ३०९) ।

काकवर्ण--(शिशु. भविष्य.) राज्यकाल-ई. पू. ७०० के पूर्व (पु. नि. ३२४); ई. पू. ५७२-ई. पू. ५५४ (डॉ. दप्तरी) ।

काण्व वंश--(काण्व. भविष्य.) राज्यकाल-ई. पू. ७०० के पूर्व (पु. नि. ३२४); ई. पू. १००-ई. पू. ५५ (डॉ. दप्तरी) ।

किलकिल वंश (कैनकिल)--समाप्ति-ई. स. ५५० (पु. नि. २३७) ।

कृष्ण--(सो. वृष्णि.) ई. पू. १२५१-११७५ (डॉ. दप्तरी); निर्वाण ई. पू. १२८९ । आधुनिक इतिहास की दृष्टि से कृष्ण एवं उसके परिवार का काल ई. पू. १९५०-१४०० माना जाता है ।

२. (आंध्र. भविष्य.) ई. पू. १६८-ई. पू. १५० (पु. नि. २१) ।

क्षेमक वंश--(सो. पूरु. भविष्य.) ई. पू. ३८४ (पु. नि. २७९; ३२७); समाप्ति-ई. पू. ८०१ ।

मर्ग (यादवपुरोहित)--ई. पू. ११८१ (पु. नि. २५०) ।

गुप्त वंश--राज्यकाल-ई. स. ३२९-४९९ (पु. नि. ४२७) ।

गोनर्द राजा (गोनर्द राजा)--राज्यकाल-ई. पू. १०६३ (पु. नि. २४५) । कृष्ण के द्वारा वध-ई. पू. १३१५ (राजतरंगिणी १.५०-७०) ।

२. ई. पू. ११९२-११८२ (पु. नि. २४६) ।

गौतमीपुत्र--(आंध्र. भविष्य.) राज्यकाल-ई. स. १४२-१४३ (पु. नि. २१९) ।

घटोत्कच--वध-पौष कृष्ण ११ ।

चंद्रगुप्त--(मौर्य. भविष्य.) राज्यकाल-ई. पू. ३२१-२९७ (रॉसन); राज्याभिवेक-ई. पू. ३१२ (पु. नि. १९३; २०४; ३१५; डॉ. दप्तरी) ।

चाक्षुष मनु--ई. पू. २४२२ (रा. का. नि.) ।

जनमेजय पारिक्षित (द्वितीय)--ई. पू. ११८७ (पु. नि. २७७) ।

जयद्रथ--वध-पौष कृष्ण ९ (भा. सा.) ।

जरासंध--वध-ई. पू. १२१० (डॉ. दप्तरी) ।

तृणबिंदु (राजा)--ई. पू. १६९४ (रा. का. नि. ४६) ।

दक्ष प्रजापति—ई. पू. ५७७४ (पु. नि. ३१४) ।
२. (स्वायंभुव)—ई. पू. २६५४ (डॉ. दत्तरी) ।
३. (चाक्षुष)—राज्यकाल—ई. पू. २२०६—ई. पू. २१५० ।

दिवाकर—(सू. इ. भविष्य.) ई. पू. ११०६ (घ. र. १७१) ।

दीर्घतमस् (ऋषि)—ई. पू. २००० (पु. नि. २८१) ।

दुर्योधन—वध-पौष अमावस्या (भा. सा.) ।

द्रुपद—वध-पौष कृष्ण १३ (भा. सा.) ।

द्रोण—वध-पौष कृष्ण १२ (भा. सा.) ।

धृष्टद्युम्न—वध-पौष अमावस्या (भा. सा.) ।

नंद वंश—(नंद. भविष्य.) राज्यकाल—ई. पू. ३८४-३१२ (पु. नि. २०२); ई. पू. ४२२—ई. पू. ३२२ (घ. र. २१७) ।

नारायण—(ऋष. भविष्य.) मृत्यु—ई. पू. ६५ (डॉ. दत्तरी) ।

निमि—(सू. निमि.) ई. पू. २१०२ (पु. नि. २७८) ।

पंचशिख (आचार्य)—ई. पू. २१०२ (पु. नि. २७८) ।

२. बुद्ध के समकालीन एक आचार्य (म. उ. ५९) ।

परशुराम (जामदग्न्य)—जन्म—ई. पू. १५८८ (पु. नि. २६७) । आधुनिक इतिहास की दृष्टि से परशुराम एवं उसके 'भार्गव' वंशजों का काल ई. पू. २५५०-२३५० माना जाता है (वेदिक एज, २८९) ।

परिक्षित—(सो. कुरु.) ई. पू. १२६३ (पु. नि. १९१) ।

पालक—(प्रद्योत. भविष्य.) ई. स. ४७० (पु. नि. १९२) ।

पुरूरवस्—ई. पू. २१७७ (पु. नि. २७७; २७९) ।

इसीके राज्यकाल में पहला द्वादशवर्षीय सत्र संपन्न हुआ था (घ. र. १५०) ।

पुलोमत्—(आंध्र. भविष्य.) ई. स. २४९-२५० (पु. नि. २२०); ई. स. २११-२२५ (विमथ) ।

पुष्यमित्र—(शुंग. भविष्य.) राज्यकाल—ई. पू. १७५-१३९ (पु. नि. २८९); ई. पू. १८४-१४८; जन्मकाल—ई. पू. २१३; अश्वमेधारंम ई. पू. १७५ (युग पुराण) ।

पृषदश्व—ई. पू. २१०२ (पु. नि. २७९) ।

प्रद्योत—(प्रद्योत. भविष्य.) ई. पू. ४७० (पु. नि. १९२) । आधुनिक इतिहास की दृष्टि से इसका राज्यकाल ई. पू. ९२०—ई. पू. ७८२ माना जाता है ।

प्रसेनजित्—(सू. इ. भविष्य.) ई. पू. ६०० (पु. नि. २७९) । यह बुद्ध का समकालीन राजा था ।

बलि वैरोचन—इंद्रपदप्राप्ति—ई. पू. १६७८ (डॉ. दत्तरी) ।

बुद्ध—ई. पू. ७९४—ई. पू. ५१० (पु. नि. ४६७) । आधुनिक इतिहास की दृष्टि से गौतम बुद्ध का निर्वाण काल ई. पू. ५४४ माना जाता है ।

बृहद्रथ—(सो. मगध.) ई. पू. १४०१ (डॉ. दत्तरी)

भगदत्त—वध-पौष कृष्ण १० (भा. ६) ।

भर्तृहरि—ई. स. ६१० (पु. नि. २९१) ।

भास (ऋषि)—ई. स. २००-३०० (गी. रं. ५५५) ।

भीष्म—पतन-पौष कृष्ण ८; निर्याण-फाल्गुन कृष्ण ८ ।

मगध वंश—(सो. मगध. भविष्य.) राज्यकाल—ई. पू. १९२०—ई. पू. ९२० ।

मनु (स्वायंभुव)—ई. पू. २६७० (रो. का. नि. ५५) ।

मन्द (असुर देश का शूद्र राजवंश)—राज्यकाल—ई. पू. ७००—ई. पू. ५५० (पु. नि. २९४) ।

मन्वन्तर—विभिन्न मन्वन्तरों का कालनिर्णय निम्न प्रकार है :-

मन्वन्तर	कालमर्यादा
स्वायंभुव मन्वन्तर	ई. पू. २७७०-२६६६
स्वरोचिष मन्वन्तर	ई. पू. २६६६-२६२२
उत्तम मन्वन्तर	
तामस मन्वन्तर	ई. पू. २६२२-२४२२
रैवत मन्वन्तर	
चाक्षुष मन्वन्तर	ई. पू. २४२२-२१५०
वैवस्वत मन्वन्तर	
	ई. पू. २१५० से आगे ।
	आधुनिक इतिहास की दृष्टि से वैवस्वत मनु का काल ई. पू. ३१०० माना जाता है ।

(रा. का. नि. ४६-५६)

मरु—(सू. इ.) ई. पू. १३३० (घ. र. १६५)।

महानंदिन—(शिशु. भविष्य.) ई. पू. ३८४ (पु. नि. २७९); अंत-ई. पू. ४१२ (डॉ. दप्तरी)।

महापद्म—(तंद. भविष्य.) राज्याभिषेककाल-ई. पू. ३९८ (डॉ. दप्तरी)।

महावीर—जन्म ई. पू. ५९९; निर्वाण-ई. पू. ५२७ (पु. नि. १९२-१९३)।

मांधातृ—जन्म-ई. पू. २१८० (पु. नि. २६७)। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से मांधातृ का काल ई. पू. २७५० लगभग माना जाता है।

मौर्य वंश—राज्यकाल-ई. पू. ३१२-ई. पू. १७५ (पु. नि. २१५); ई. पू. ३२२-ई. पू. १८५ (सिथ)।

ययाति—(सो. आयु.) ई. पू. २१०२ (पु. नि. २७९); ई. पू. २०४२ (घ. र. २०९)। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से ययाति का राज्यकाल ई. पू. ३००० लगभग माना जाता है।

युधिष्ठिर—ई. पू. १२६३ (पु. नि. २६३)।

युधिष्ठिर शक—पौराणिक परंपरा के अनुसार, ई. पू. ३१०२ यह युधिष्ठिर शक का प्रारंभ माना जाता है। इस शक के प्रारंभ के संबंध में अन्य कई अभ्यासकों के अभिमत निम्नप्रकार हैं—ई. पू. २२००-ज. स. करंदीकर; ई. पू. २५२६-राजतरंगिणी; ई. पू. १९२०-आर्यभट।

यौवनाश्व—ई. पू. २१७० (पु. नि. २७९)।

रजि—(सो. पुरुरवसु.) इंद्रपदप्राप्ति-ई. पू. १६५० (डॉ. दप्तरी)। इसने प्रह्लाद से इंद्रयज्ञ की प्राप्ति की थी।

राम दाशरथि—आधुनिक इतिहास की दृष्टि से राम दाशरथि एवं उसके वंशजों का काल ई. पू. २३५०-१९५० माना जाता है।

रैवत (मनु)—ई. पू. २६२२ (रा. का. नि. ५५)।

लगध (वेदांगज्योतिष का कर्ता)—ई. पू. १२६९-११८१ (लो. तिलक, ओरायन)।

वराहमिहिर—जन्म-ई. पू. ५१८८ डॉ. (दप्तरी)।

विक्रमादित्य (विलव)—(आंश्र. भविष्य.) मगध-विजय-ई. पू. १३३ (डॉ. दप्तरी)।

वृषसेन—वध-पौष कृष्ण १२ प्रातःकाल में (भा. सा.)।

वैवस्वत मनु—ई. पू. २५५० (पु. नि. २७९); ई. पू. २१५० (रा. का. नि. ४७)। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से वैवस्वत मनु का काल ई. पू. ३१०० माना जाता है (मन्वंतर देखिये)।

व्यास—जन्म-ई. पू. १२९३-२१८९ (डॉ. दप्तरी)।

२. मागवत का रचयिता, जो बुद्धोत्तर काल (ई. पू. ४००) में उत्पन्न हुआ था। महाभारत के शांति एवं अनुशासन पर्वों की रचना इसके द्वारा ही हुई थी।

शकुनि—मृत्यु-पौष अमावस्या के दिन (भा. सा.)।

शंकराचार्य—ई. स. ७८८-८२० (डॉ. काणे, २६१)। जन्म-ई. स. ६१० (गी. र. ५५९)।

शतानीक—(सो. कुरु. भविष्य.) ई. पू. ६०० (पु. नि. ३२६)।

शल्य—वध-पौष अमावस्या (भा. सा.)।

शाकटायन—(व्याकरणकार)—ई. पू. १००० (डॉ. बेलवलकर)।

शालिशुक—(मौर्य. भविष्य.) ई. पू. २१९ (पु. नि. ३१७)।

शिखंडिन—वध-पौष अमावस्या (भा. सा.)।

शिशुक—(आंश्र. भविष्य.) ई. पू. १९१-१६८ (पु. नि. २१८)।

शिशुनाग वंश—(शिशु. भविष्य.) ई. पू. ७८२-४२२; ई. पू. ६४२-३२० (सिथ)।

शुंग—(शुंग. भविष्य.) ई. पू. १८५-१७३।

शुचि—(सो. मगध. भविष्य.) ई. पू. ९६७-९३८ (घ. र. १७२)।

शौनक—(सो. क्षत्र.) ई. पू. २०५० (पु. नि. २८५-२८६)।

२. ई. पू. ११०२-१०९० (पु. नि. २८६)। यह शतानीकपुत्र जनमेजय राजा का समकालीन था।

श्रीशतकर्णि-- (आंघ्र. भविष्य.) ई. पू. १५०-१४० (पु. नि. २१८)।

श्वेतकेतु--ई. पू. २१०२ (ध. र. १७९)।

सहस्रार्जुन--(सो. सह.) ई. पू. १५८७-१५६७ (पु. नि. २८४)।

साधार्णि मनु--ई. पू. १६७८-१६७४ (ध. र. २०६)।

सुपर्ण--(सू. इ. भविष्य.) ई. पू. ९५० (ध. र. १७१)।

सुमित्र--(सू. इ. भविष्य.) मृत्यु-ई. पू. ३८४ (पु. नि. २१४; २७९); ई. पू. ६०१ (डॉ. दत्तरी)।

सृष्टि-उत्पत्तिशक्र-- पौराणिक कालगणना के अनुसार लगभग दो अब्ज (वर्षों १, ९६,०८, ५३०३४

वर्षों) के पहले इस सृष्टि की उत्पत्ति हुई थी। भूमर्माख-ज्ञों के अनुसार यही काल १॥ अब्ज-३ अब्ज वर्ष मानी गयी है।

धार्मिक संकल्प में 'अद्य ब्रह्मणो द्वितीये परार्धे, श्रीश्वेत-वाराहकल्पे, वैवस्वत मन्वन्तरे, कलियुगे इत्यादि शब्दों में इस शक का निर्देश प्राप्त है।

स्वायंभुव मनु-- ई. स. पू. ३१०२ (पु. नि. ३१५)। इसका एवं इसके वंशजों का राज्यकाल ई. पू. २६७०-२१५० माना जाता है (डॉ. दत्तरी)।

द्वाल--(आंघ्र. भविष्य.) ई. स. ९९-१०२ (पु. नि. २१९)।

हिरण्यकशिपु (असुर)-- ई. पू. १६९०-१६७८ (डॉ. दत्तरी)।

प्रमुख चरित्रों की

व्यक्तिसूचि

(इस सूचि में दी गयी जानकारी व्यक्ति, पृष्ठांक एवं उपशीर्षक इस क्रम से दी गयी है)।

अर्जुन ... ३५-४०	कश्यप की स्त्रियाँ; अदितिपुत्र; अरिष्टापुत्र; अरिष्टा- कन्या; कद्रुपुत्र; कपिलापुत्र; कालकापुत्र; कालापुत्र; काष्ठापुत्र; क्रोधवशाकन्या; खशापुत्र; ग्रावापुत्र; ताम्रा- कन्या; तिमिपुत्र; दनुपुत्र; दनायुपुत्र; दयापुत्र; दितिपुत्र; धनुपुत्र; पतंगीपुत्र; पुलोमापुत्र; प्राधापुत्र; प्रोवापुत्र; मुनिपुत्र; यामिनीपुत्र; विनतापुत्र; विश्वापुत्र; सरमापुत्र; सिंहिकापुत्र; सुरभिपुत्र; सुरसापुत्र; सूर्यापुत्र; मानसपुत्र; गोत्रकार; मंत्रकार ।
अहल्या ... ५२-५३	काव्यवीर्य अर्जुन ... १३५-१३७
जन्म; विवाह; भ्रष्टता; शाप एवं उःशाप; समर्थन; नया दृष्टिकोण; डॉ. रवींद्रनाथ टागोर का अभिमत ।	दत्त उपासना एवं वरप्राप्ति; पराक्रम; चक्रवर्तीपद; संतति ।
इंद्र ... ६८-७३	कृष्ण ... १५८-१६४
शत्रु; शस्त्रसंभार; पद्माहात्म्य; पौराणिक कल्पनाएँ; गरुड से संबंध; महाशनिवध; त्रिपुर उत्पत्ति; सुकर्माख्यान; यज्ञहविर्भाग; मरुताख्यान; सागरमंथन; वृत्रउत्पत्ति; वृत्रवध; ब्रह्महत्यामुक्ति; पुरंजयवाहन; जयापजय; पुराणों में स्थान; अधिकार; परस्परसंबाध; कृष्णसंबंध; ग्रंथनिर्मिति ।	बाललीला; कंसवध; शिक्षा; विवाह; जरासंधवध; शिशु- पालवध; यादवी; निर्याण; तत्त्वज्ञ कृष्ण; विश्वरूपदर्शन; ऐतिहासिक चर्चा ।
इंद्रजित् ... ७३-७४	गणपति ... १८०-१८१
यज्ञ; इंद्र पर जय; हनुमत् से युद्ध; विभीषण की भर्त्सना; युद्ध; मायावी युद्ध; दिव्य रथ; वध ।	अवतार; अष्टविनायक के स्थान ।
कच ... १०९-१११	गौतम ... १९५-१९६
देवकार्यार्थ गमन; गुरुसेवा; संकटपरंपरा; देवयानी- प्रणय; शाप-प्रतिशाप; गौरव ।	शाखाप्रवर्तक; धर्मशास्त्रकार; धर्मसूत्रकार ।
कर्ण ... ११७-१२१	गौतम बुद्ध ... ११२४-११२९
शिक्षा; गोवत्सहत्या; अबहेलना; कृतज्ञता; विवाह; बुद्धिभेदयत्न; भेद; गोधर्वयुद्ध; विराटनगरी में; दिग्विजय; राज्यविस्तार; औदार्य; शक्तिप्राप्ति; घटोत्कचवध; सैनापत्य; मृत्यु; परिवार ।	बुद्धों की नामावलि; जन्म; स्वरूपवर्णन; बाल्यकाल एवं तारुण्य; विराक्ति; महाभिनिष्क्रमण; तपःसाधना; परमज्ञानप्राप्ति; धर्मचक्रप्रवर्तन; बुद्ध संघ की स्थापना; गयाशीर्ष में; राजगृह में; कपिलवस्तु में; पुनश्च राजगृह में; सुद्धोदन का निधन; भ्रमणगाथा; घटनाक्रम; भ्रमणस्थल; देवदत्त से विरोध; अंतिम यात्रा; महापरिनिर्वाण; दाहकर्म; तत्त्वज्ञान; बुद्ध की चतुःसूत्री; प्रमुख बौद्ध सांप्रदाय; बौद्धधर्म के प्रमुख तीर्थस्थान; पौराणिक साहित्य में ।
कल्माषपाद ... १२४-१२५	चरक ... २०६-२०७
नामप्राप्ति; वसिष्ठकोप; संयम; अन्य मत; असुर जीवन; मुक्ति; राज्याभिषेक ।	चरक संहिता
कश्यप ... १२७-१३१	दत्त आश्रय ... २६१-२६२
गोत्रकार; कुल; क्षत्रियरक्षा; पुत्रप्राप्ति; सपों को शाप; दैत्यसंहार; तीर्थोत्पत्ति; विष्णुवाहन गरुड; पृथ्वीरक्षा; क्षत्रियाधिपति; पृथ्वीपर्यटन; परिसंवाद; ग्रंथ; परिवार;	अवतारकार्य; आत्मज्ञान एवं शिष्यपरंपरा; आश्रम;

आयु राजा को पुत्रदान; सहस्रांजुन को वरप्रदान; जन्मकाल; ग्रंथ; दत्त सांप्रदाय ।

दध्यंच आथर्वण ... २६३-२६४

प्रवर्य विद्या; मधुविद्या; अस्थिप्रदान ।

दुर्योधन ... २८०-२८५

जन्म; अन्नविद्या; पाण्डवों को विपप्रयोग; लाक्षाग्रहदाह; विवाह; अर्धराज्यप्रदान; द्यूतक्रीडा; घोषयात्रा; वैष्णव-यज्ञ; द्रौपदीसत्त्वपरीक्षा; विराट नगरी में; संजयदोष्य; कृष्णदोष्य; भारतीय युद्ध; मृत्यु; दुर्योधन का मनोगत ।

दुर्वासस् आत्रेय ... २८५-२८७

जन्मकथा; स्वरूपवर्णन; अनुग्रहकथा; क्रोधकथा;

देवी ... ३००-३०३

तात्त्विक चर्चा;

विभिन्न अवतार—दूर्गा; महिषासुरमर्दिनी एवं महा-लक्ष्मी; चामुंडा; शांकरा; सती; पार्वती, काली एवं गौरी कालिका; मातृका;

अन्य अवतार—सिद्धांतिका; तारा; भास्करा; योगेश्वरी; त्रिपुरा; कोलेत्रा; कपालेशी; सुवर्णाक्षी; चर्चिता; त्रैलोक्य-विजया; वीरा; हरसिद्धि; चेडिका; भूतमाला अथवा भूमाता;

देवीपीठ ।

द्रोण ... ३०७-३०९

जन्म; शिक्षा; हस्तिनापुर में; द्रुपदपराभव; भारतीय युद्ध; वध ।

द्रौपदी ... ३१०-३१३

जन्म; स्वयंवर; पंचपति; द्यूत; द्रौपदी का प्रश्न; वनवास; अज्ञातवास; राज्यप्राप्ति; स्वभाव ।

धन्वन्तरि ... ३१५-३१७

स्वरूपवर्णन; मनसा से युद्ध; ग्रंथ ।

नारद ... ३६०-३६६

स्वरूपवर्णन; जन्म; पुनर्जन्म; देवों का वार्ताहर; तत्त्वज्ञ नारद; संगीतकलातज्ञ; नारदनारदी; विवाह; सुवर्ण-श्रीविनूकथा; शत्रुघ्न को चेतावनी; कलियुग में; कृष्ण-कथाओं में नारद; इंद्रसभा में; धर्मशास्त्रकार; शिक्षाकार, अन्य ग्रंथ ।

नृसिंह ... ३७५-३७६

नृसिंह उपासना; नृसिंहस्थान ।

पतंजलि ... ३८२-३८६

नामान्तर; काल; जीवनचरित्र; व्याकरणमहाभाष्य; युद्ध उच्चारण का महत्त्व; पूर्वाचार्य; टीकाकार; महा-

भाष्य का पुनरुद्धरण; अन्य ग्रंथ; योगसूत्रपरिचय; योगद-शन ।

परशुराम जामदग्न्य ... ३८८-३९४

शिक्षा; शिष्य; आश्रम; रेणुकावध; अन्नविद्या; हैहयों से शत्रुत्व; कामदेवहरण; युद्ध; कार्तवीर्यवध; जमदग्नि-वध; मातृतीर्थ की स्थापना, हैहयविनाश; निःशत्रिय पृथ्वी; अश्वमेध यज्ञ; नया हत्याकाण्ड; हत्याकाण्ड से बचे क्षत्रिय; शूरारक की स्थापना; परशुरामकथा का अन्व-यार्थ; महाभारत में; रामायण में; कालविपरीत; परशुराम सांप्रदाय के ग्रंथ; परशुराम शक ।

पराशर ... ३९५-३९८

राक्षससत्र; व्यासजन्म; आदरणीय ऋषि; वेदव्यास; धर्मशास्त्रकार; ज्योतिषशास्त्रज्ञ; आयुर्वेदशास्त्रकार; पुराण-इतिहासज्ञ; पराशर वंश ।

परिक्षित् ... ३९९-४०१

जन्म; राज्य में कलिप्रवेश; शाप; तक्षकवंश; परिक्षित् कथा का अन्वयार्थ; पौराणिककाल ।

पाणिनि ... ४०५-४१०

नामान्तर; मातापिता; अध्ययन; निवासस्थान; काल; पूर्वाचार्य; अष्टाध्यायी; पाणिनीय व्याकरणशास्त्र; पाणिनि-कालीन भूगोल; सिक्के; परिमाणदर्शक शब्द; अष्टाध्यायी के वार्तिककार; अष्टाध्यायी के पूर्वाचार्य, पाणिनि के व्याकरण-ग्रंथ ।

पाण्डु ... ४१०-४१२

जन्म; शिक्षा; विवाह; राज्यप्राप्ति; शाप; पुत्रेच्छा; पुत्रप्राप्ति; मृत्यु ।

पितर ... ४१९-४२२

उत्पत्ति; प्रिय खाद्यपदार्थ; मनोविकार; पितृगण; देवी पितर; मूर्ति अथवा मानुष पितर; पितृकन्या; पितृकन्या का अन्वयार्थ; पितृवंश ।

पिप्पलाद ... ४२५-४२६

पैप्पलाद संहिता; अन्यग्रंथ; तत्वज्ञान ।

पृथु वैश्य ... ४४२-४५२

पृथ्वीदोहन अथवा नवसमाजरचना; दोहक-गण; राज्यभिक्षक; पृथु की राजप्रतिज्ञा; पुत्र; पृथुवंश ।

प्रजापति ... ४६१-४६६

सर्वप्रमुख देवता; सृष्टि आरंभ; सूर्यपूजा-अर्थ; इंद्र की उत्पत्ति; यज्ञारंभ; सृष्टिनिर्माण व व्यवस्था; कन्याविवाह; दुहितुगमन; प्रजापतियों की संख्या; प्रजापतियों की नामावलि ।

प्रह्लाद	...४७९-४८१
जन्म; विष्णुभक्ति; इंद्रपदप्राप्ति; परिवार; संवाद; पूर्व-जन्मवृत्त ।	
बक दाहभ्य	...४८७-४८८
धृतराष्ट्र से विरोध; तत्त्वज्ञान; छांदोग्य उपनिषद् में ।	
बलराम	...४९३-४९५
बाल्यकाल; जल्दबाज स्वभाव; बलराम की तीर्थयात्रा; तीर्थयात्रा का द्वितीय पर्व ।	
बलि वैरोचन	...४९७-५०१
बलिकथा का अन्वयार्थ; स्वर्गप्राप्ति; समुद्रमंथन; समुद्र-मंथन से प्राप्त हुए रत्न; इंद्रबलि-संग्राम; इंद्रपदप्राप्ति; प्रह्लाद के द्वारा शाप; वामन को दान; बलिबंधन; रावण का गर्व-हरण; संवाद; परिवार; बलि की उपासना ।	
बाण	...५०२-५०५
शिवभक्ति; उषा अनिरुद्ध प्रणय; कृष्ण से युद्ध; वर-प्राप्ति; उषा-अनिरुद्धविवाह; बाणकथा का अन्वयार्थ ।	
बादरायण	...५०५-५०६
बादरि—बादरायण भिन्नता; ब्रह्मसूत्र ।	
बृहस्पति	...५१८-५२३
जन्म; रूपवर्णन; गुणवर्णन; द्रैत्यों की पराजय; संवाद; परिवार, ग्रंथ ।	
बौधायन	...५२३-५२५
बौधायन शाखा; बौधायन सूत्र; बौधायनसूत्रों के विभाग; बौधायन धर्मसूत्र; टीकाकार; बौधायन स्मृति ।	
ब्रह्मन्	...५२६-५३१
जन्म; चतुर्मुख; शंकर से विरोध; सृष्टि का निर्माण; वेदों का निर्माण; प्रभास क्षेत्र में यज्ञ; सावित्री से शाप; गायत्री से वरदान; अन्य रचनाएँ; ब्रह्मा की कालमगना; ग्रंथ; स्थान ।	
भगीरथ	...५३४-५३५
गंगावतरण; भगीरथकथा का अन्वयार्थ ।	
भरत	...५४०-५४३
नाट्यशास्त्र की उत्पत्ति; नाट्यकला का पृथ्वी पर आगमन; भारतीय नाट्यशास्त्र; कालनिर्णय ।	
भरत 'जड'	...५४३-५४४
प्रथम जन्म; द्वितीय जन्म; तृतीय जन्म; रहूगण राजा से संवाद; परिवार ।	
भरत दशरथि	...५४४-५४७
कैकेयी का षड्यंत्र; राम की खोज; राम से भेंट; नंदियाम में; युद्धप्रसंग; तुलसी रामायण में ।	

भरत दौःषन्ति	...५४७-५४८
जन्म; परिवार; भरतवंश ।	
भरद्वाज	...५४८-५५२
वेदों का अर्थांगत्व; अर्थशास्त्रकार; अन्य ग्रंथ ।	
भागुरि	...५५४-५५५
व्याकरणशास्त्रकार; कोशकार; ज्योतिषशास्त्रकार; स्मृति-कार; साम एवं यजुःशास्त्रों का आचार्य; अलंकार-शास्त्रज्ञ; सांख्यदर्शनकार; दैवतशास्त्रज्ञ ।	
भीमसेन 'पाण्डव'	...५६१-५७१
स्वरूपवर्णन; बाल्यकाल; दुर्योधन के षड्यंत्र; नागलोक में; शिक्षा; लाक्षाग्रहदाह; हिडिंबाविवाह; वकासुरवध; द्रौपदी स्वयंवर; जरासंधवध; पूर्व दिग्विजय; राजसूय यज्ञ; द्रौपदीवस्त्रहरण; वनवास; गर्वहरण; कुबेर से विरोध; नहुषमुक्ति; दुर्योधन-चित्रसेन युद्ध; जयद्रथ से युद्ध; यक्षप्रश्न; अज्ञातवास; कीचकवध; भीम-कृष्णसंवाद; भारतीय युद्ध; प्रथम दिन; चौथा दिन; छठवाँ दिन; आठवाँ दिन; नौवा दिन; दसवाँ दिन; ग्यारहवाँ दिन; चौदहवाँ दिन; पंद्रहवाँ दिन; द्रोणवध; सोलहवाँ दिन; कर्ण से युद्ध; दुःशासन वध; अठारहवाँ दिन; दुर्योधनवध; अश्वत्थामान्मृगिग्रहण; धृतराष्ट्रविद्वेष; युवराजपद; भीमजलाकी एकादशी; गर्वपरिहार; मृत्यु; परिवार ।	
भीष्म	...५७२-५७९
ध्येयवादी व्यक्तिमत्त्व; योग्यता; जन्म; हस्तिनापुर में; भीष्मप्रतिज्ञा; संतनु की मृत्यु; उग्रायुधवध; विचित्रवीर्य का राज्यारोहण; अनाविरोध; परशुराम से युद्ध; शिखण्डिजन्म; विचित्रवीर्य की मृत्यु; धृतराष्ट्र एवं पाण्डु का जन्म; भारतीय युद्ध; कौरव पाण्डव का बलाबल; कर्ण-भीष्मविरोध; सैनापत्य; दुर्योधनआक्षेप; कृष्णभेंट; शर-शय्या; प्राणत्याग; भीष्मचरित्र का एक कलंकित क्षण; कुछ धूमिल स्थल; अन्य धूमिल स्थल ।	
भूत	...५८१-५८१
जन्म; स्वरूपवर्णन; भूतनायक; असुरों से युद्ध ।	
भृगु प्रजापति	...५८५-५८६
देवदैत्यसंग्राम; देवों की परीक्षा; परिवार ।	
भृगु वारुणि	...५८६-५९०
जन्म; वेदोत्पत्ति; नहुष को शाप; संवाद; आश्रम; तत्त्वज्ञान; परिवार; भागवतगण; क्षत्रिय ब्राह्मण; भृगु-आगिरस परिवार; विवाहसंबंध; ग्रंथ; भृगुकुल के मंत्रकार ।	

भैरव ...५९१
ब्रह्महत्या; वंश ।

सतंग ...५९८-५९९
गर्दभी से संवाद; तपस्या ।

मत्स्य ...५९९-६०१
मत्स्यावतार; पुराणों में; मत्स्यकथा का अन्वयार्थ; भौगोलिक मर्यादा ।

मनु आदिपुरुष ...६०५-६१०
मानवजाति का पिता; यज्ञसंस्था का आरंभकर्ता; यज्ञ से ऐश्वर्यप्राप्ति; समकालीन ऋषि; मन्वन्तरों का निर्माण; चौदह मन्वन्तर; उत्तम मन्वन्तर; तामस मन्वन्तर; रैवत मन्वन्तर; चाक्षुष मन्वन्तर; वैवस्वत मन्वन्तर; सावर्णि-मन्वन्तर; दक्षसावर्णि मन्वन्तर; ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर; धर्मसावर्णि मन्वन्तर; रुद्रसावर्णि मन्वन्तर; रौच्य मन्वन्तर; भौत्य मन्वन्तर ।

मनु वैवस्वत ...६११-६१३
सृष्टिप्रलय; विभिन्न साहित्यों में प्राप्त जलप्लावन कथा; प्रलयोत्तर मानवी समाज का आदिपुरुष; काल-निर्णय; परिवार; ह्यपुत्र; हिंदी साहित्य में ।

मनु स्वयंभुव ...६१३-६१५
स्मृतिकार; धर्मशास्त्र की निर्मिति; मनुस्मृति का प्रणयन; मानव-धर्मशास्त्र का पुनःसंस्करण; विषयानु-क्रमणिका; मनुस्मृति में निर्दिष्ट ग्रंथ; मनुस्मृति के भाष्य; मनुस्मृति का रचनाकाल; अन्य ग्रंथ ।

मय ...६१८-६२०
शिल्पशास्त्रज्ञ; खंडववन में; मयसभा; परिवार; ज्ञाति नाम ।

मरुत् ...६२२-६२५
जन्म; पत्नी; वस्त्र एवं अलंकार; रथ; कार्य; गायन; इंद्रावात का देवता; व्युत्पत्ति; दिति के पुत्र; इंद्र-दिति संवाद; सात मरुद्गण; मरुद्गणों के स्थान ।

मरुत् आविज्ञित कामसि ...६२५-६२६
इंद्र-मरुत् विरोध; मरुत् का यज्ञ; रावण से विरोध; राज्यवैभव; महाभारत में; परिवार ।

महावीर वर्धमान ...१११९-११२३
बुद्ध का समकालीन; जन्म; समकालीन नृप; तपस्या; प्रथम समवशरणसभा; शिष्यशास्त्रा; धर्मसंगठन; पर्यटन; निर्वाण; आचारसंहिता; अहिंसातत्त्व की महत्ता; वर्धमान का अनेकान्तवाद; वर्धमान का क्रियावाद; बौद्धधर्म से तुलना; ग्रन्थ; परंपरा; सांप्रदायभेद ।

मांडव्य ...६३५-६३६
चोरी का इत्जाम; प्रमोदिनी से विवाह; यम से संवाद; ब्राह्मण का शाप; संवाद ।

मातरिश्वन् ...६३०
अग्नि का दिव्यरूप; व्युत्पत्ति ।

मातृका ...६३२-६३९
जन्मकथा; मातृकाओं की संख्या; मातृकाओं की प्राचीनता; मातृकाओं की प्रतिमा ।

माधवी ...६४१-६४२
गालव ऋषि को दान; हयंश्व से विवाह; दिवोदास से विवाह; उशीर से विवाह; विश्वामित्र से विवाह; स्वयंवर; पुत्र; ययाति का उद्धार; ययाति को पुण्यदान; काल-विपर्यास ।

मान्धातु यौवनाश्व ...६४३-६४५
जन्म; संगोपन एवं नामकरण; पराक्रम; व्रतवैकर; संवाद; मृत्यु; परिवार ।

मार्कण्डेय ...६४७-६४९
जन्म; अमरत्व; तपस्या; श्रेष्ठता; उपदेश; मार्कण्डेय-युधिष्ठिर संवाद; ग्रन्थ; परिवार; आश्रम ।

माल्यवन् ...६५०-६५१
तपस्या; विष्णु से युद्ध; लंकाप्रवेश; परिवार ।

मुचुकुंद ...६५४-६५५
मुचुकुंद-वैश्रवणसंवाद; काल्यवन का वध; कृष्णदर्शन; संवाद; परिवार ।

मृत्यु ...६६०
ब्रह्म से संवाद; सनत्सुजात-आख्यान ।

मेधातिथि काण्व ...६६०
वैदिक ऋषि; काण्व शाखा ।

मैत्रेय कौशारव ...६६६
नाम; दुर्योधन का शाप; व्यास-मैत्रेय-संवाद; विदुर-मैत्रेय संवाद ।

मैत्रेयी ...६६६
मैत्रेयी-याज्ञवल्क्य संवाद ।

म्लेच्छ ...६६८-६६९
भाषा; महाभारत में ।

यक्ष ...६६९-६००
कुबेर के सेनापति; कुबेर की सभा में; स्वरूपवर्णन; परिवार ।

यदु ...६७२-६७४
शाप; परिवार; यादव वंश; सात्वत शाखा; अन्य-शाखाएँ; अठारह महारथ; आर्य संस्कृति का प्रचार; यादवनिन्दा।

यम वैवस्वत ...६७४-६७७
पहला राजा; निवासस्थान; दूत; मित्रपरिवार; यम-यमी-संवाद; आत्मसमर्पण; मृत्यु का देवता; व्युत्पत्ति; वेदोक्तालोपरान्त यम; यम को शाप; पितरों का प्रमुख; यम-नचिकेत संवाद; यम-गीता; महाभारत-वर्णित यम; यम की उपासना; ग्रन्थ; धर्मशास्त्रकार।

ययाति ...६७७-६८२
जन्म; देवयानी से भेंट; ययाति-देवयानी संवाद; विवाह; पुत्रप्राप्ति; शुक्र से शाप; पुत्रों को शाप; यौवन प्राप्ति; विरक्तावस्था; वानप्रस्थाश्रम; उत्तर-यायात आख्यान; वाल्मीकि रामायण में; पद्य में; अश्रुविन्दुमती से विवाह; श्रेष्ठ सम्राट; धार्मिकता; परिवार; ययातिपुत्रों के राज्य।

यवक्रीत ...६८२-६८३
तपस्या; इन्द्र से भेंट; रैब्य से विरीध; मुक्ति।

यवन ...६८३-६८४
उपनिवेश; महाभारत में।

याज्ञवल्क्य बाजसनेय ...६८५-६९३
नाम; योग्यता; यजुःशिष्यपरंपरा; कृष्ण-यजुर्वेद शुद्धीकरण; जन्मजेय की राजसभा में; शुक्रयजुर्वेद का प्रणयन; ईश उपनिषद; शतपथ ब्राह्मण;

वैशंगयन से विरोध; सूर्य से वेदप्राप्ति; कालनिर्णय; दार्शनिक समस्याओं का आचार्य; जनक के दरबार में; वादविवाद के विषय; निष्प्रपंच सिद्धान्त; पुराणों में;

याज्ञवल्क्य-मैत्रेयी संवाद; ध्येयात्मक अद्वैतवाद; अमरत्व की प्राप्ति; जनक-याज्ञवल्क्यसंवाद; मृत्युवर्णन; तत्त्वज्ञान; चरित्रचित्रण; आत्मगत मापण; परिवार;

शिष्यपरंपरा; शाखाप्रवर्तक शिष्य; ग्रन्थ; शुक्र यजुर्वेद; याज्ञवल्क्य स्मृति।

यारक ...६९४-६९५
निरुक्त; पूर्वाचार्य; भाषाशास्त्रज्ञ।

युधिष्ठिर ...६९६-७०९
तत्त्वदर्शी राजा; चिन्तनशील व्यक्तित्व; जन्म; स्वरूप-वर्णन; ध्वज एवं आयुध; शिक्षा; यौवराज्याभिषेक; लाक्षाग्रहदाह; अर्धराज्यप्राप्ति; राजसूय यज्ञ; दुर्योधन-विद्वेष; दूतपराजय; वनवास; द्रौपदी-युधिष्ठिर संवाद;

तीर्थयात्रा; नहुष-मुक्ति; घोषयात्रा; जयद्रथ की मुक्तता; यक्ष-प्रश्न; अज्ञातवास; संधि का प्रयत्न; युधिष्ठिर-कृष्ण संवाद; कृष्ण-दौत्य;

भारतीय युद्ध-पाण्डव पक्ष के योद्धा; कौरव पक्ष के देश; युद्ध-शिविर; सार्वलोकिक-गलाबल; सेनाप्रमुख एवं सेनापति; युद्धप्रारंभ; प्रारंभ में; भीष्म के बाद द्रोण; कर्णवध; युधिष्ठिर-अर्जुन संवाद; दुर्योधन-वध; बचे हुए वीर;

विरक्ति; युधिष्ठिर-अर्जुन संवाद; राज्याभिषेक; गर्वहरण; धृतराष्ट्र वनगमन; महाप्रस्थान; स्वर्गारोहण; मृत्यु; स्वर्गप्रवेश; यमधर्म से भेंट; परिवार; आयु; काल-निर्णय; तिथिनिर्णय।

रक्षस ...७११-७१४
स्वरूपवर्णन; नानाविकल्प; आहार; मनुष्यों को पीड़ा; विचरण; भय से विरोध; व्युत्पत्ति; असुरों का वैयक्तिकरण; ऋग्वेद में; ईरान में असुरपूजा; उपनिषदों में; अष्टाध्यायी में; पुराणों में; सामान्य उपाधि।

रंतिदेव सांकृत्य ...७१८-७१९
यज्ञपरायणता; दानशूरता; सांकृत्य ब्राह्मण।

राधा ...७२२-७२४
जन्म; पृथ्वी पर अवतार; कृष्ण से विवाह; राधा की उपासना।

राम दाशरथि ...७२५-७४२
आदर्श पुरुषश्रेष्ठ; वैयक्तिक सदगुणों का आदर्श; नाम; जन्म; अवतार; रूपवर्णन; नामकरण एवं शिक्षा; वसिष्ठ से उपदेशप्राप्ति; विश्रामित्रसहवास; ताटकावध; मारोच एवं सुबाहु से युद्ध; अहिल्योद्धार; सीतास्वयंवर; परशुराम से संघर्ष; यौवराज्याभिषेक; कैकेयी से संभाषण;

वनवास; दण्डकारण्यप्रवेश; राक्षसविरोध; पंचवटी में; शूर्पणखा-विरूपत्व; सीताहरण; कर्णवध; बालिआक्षेप; सीता की खोज; लंका पर आक्रमण; विभीषण से मित्रता;

सेतुबन्ध; लंका का अवरोध; दूतप्रेषण; प्रथम दिन; नामपाश; राक्षससंहार; इंद्रजित्त्वध; रावण-वध; अग्निपरीक्षा; दक्षिण की विजययात्रा; राक्षस संग्राम का तिथिनिर्णय; लंका का स्थलनिर्णय; वानर कौन थे? उत्तर काण्ड का विश्लेषण; अयोध्यागमन;

राज्याभिषेक; सीतात्याग; कुशलवज्जन्म; अश्वमेधयज्ञ; सीता का भूमिप्रवेश; देहत्याग; रामकथा का तिथि निर्णय; सर्वमान्य तिथियाँ; ताम्रपत्रों का निर्देश; 'कालनिर्णय रामायण' ग्रन्थ; चरित्र-चित्रण; राम चरित्र के दोष; परिवार;

राज्याभिषेक; सीतात्याग; कुशलवज्जन्म; अश्वमेधयज्ञ; सीता का भूमिप्रवेश; देहत्याग; रामकथा का तिथि निर्णय; सर्वमान्य तिथियाँ; ताम्रपत्रों का निर्देश; 'कालनिर्णय रामायण' ग्रन्थ; चरित्र-चित्रण; राम चरित्र के दोष; परिवार;

राज्याभिषेक; सीतात्याग; कुशलवज्जन्म; अश्वमेधयज्ञ; सीता का भूमिप्रवेश; देहत्याग; रामकथा का तिथि निर्णय; सर्वमान्य तिथियाँ; ताम्रपत्रों का निर्देश; 'कालनिर्णय रामायण' ग्रन्थ; चरित्र-चित्रण; राम चरित्र के दोष; परिवार;

वाल्मीकि रामायण; पुराणों में रामकथा; राम-भक्तिसंप्रदाय; रामभक्ति से प्रभावित उपनिषद् ग्रन्थ; रामभक्ति का विकास; सांप्रदायिक रामायण ग्रन्थ; बौद्ध एवं जैन वाङ्मय में रामकथा; आधुनिक भारतीय भाषाओं में रामकथा ।

रावण दशग्रीव ... ७४३-७४८

नाम; स्वरूपवर्णन; जन्म; तपदर्शना; अत्याचार; गर्व-हरण; विवाह; पेंदवती से शाप; विजययात्रा; पराजय; पराजय की अन्य कथाएँ; सीताहरण; रावण-सीता संवाद; रावण-विभीषण संवाद; सेनावर्णन; राम-रावण युद्ध; बंध; परिवार; चरित्रचित्रण; महापंडित रावण; तुलसी रामायण में ।

रुक्मिणी ... ७५१-७५२

श्रीकृष्ण से प्रेम; श्रीकृष्ण का आगमन; रुक्मिणी-हरण; रुक्मिण्य की पराजय; प्रासादवर्णन; पुत्र-प्राप्ति; अग्निप्रवेश; परिवार ।

रुक्मिण्य ... ७५२-७५३

श्रीकृष्ण से पराजय; भारतीय युद्ध में; परिवार ।

रुद्र-शिव ... ७५४-७६६

स्वरूपवर्णन; निवास-स्थान; तपस्यास्थान; वाहन एवं ध्वज; आयुष; पराक्रम; तैत्तिरीय संहिता में; अथर्ववेद में; ब्राह्मण ग्रन्थों में; उपनिषदों में; केन उपनिषद् में; गृह्य-सूत्रों में; महाभारत में;

उपासक गण; अष्ट रुद्र; एकादश रुद्र; विभिन्न पुराणों में; जन्मकथाएँ; पराक्रम; तामस रूप; शिवदेवता की उत्पत्ति; परिवार;

रुद्रोपासना; सुँहेंजोदड़ों में; पश्चिम अशिया में; सुमेर में; शिव के अवतार; शिव उपासना के सांप्रदाय; शिव उपासना का आर्य सांप्रदाय; द्रविड देश में शिवपूजा; शक्तिपूजा; शिवरात्रि; शिव उपासना के ग्रन्थ ।

रैब्य सयुक्ता ... ७६९-७७०

अनश्रुति से भेंट; तत्त्वज्ञान ।

रोमहर्षण सूत्र ... ७७२-७७४

कुलवृत्तांत; पुराणों की निर्मिती; शिष्यपरंपरा; पुराणों का निर्माण; पुराणकथन; मृत्यु; मृत्युतिथि; ग्रंथ; सूत्रजाति की उत्पत्ति; परिवार ।

रोहित ... ७७५

यून:शोपाख्यान; परिवार ।

लक्ष्मण दाशरथि ... ७७६-७८१

नाम; बाल्यकाल; वनगमन से पूर्व; वनवास; सीता-हरण; राम से सांत्वना; सीता की खोज; राम-रावण युद्ध; इंद्रजित् युद्ध; राक्षससंहार; रावण से युद्ध; सीतात्याग; मृत्यु; परिवार; चरित्रचित्रण; मानस में ।

लक्ष्मी ... ७८१-७८४

लक्ष्मीदेवता की उत्पत्ति; स्वरूपवर्णन; निवासस्थान; जन्म; भृगु से वरदान; भृगु का ज्ञान; लक्ष्मी के अवतार; लक्ष्मी के दोष; परिवार; लक्ष्मीप्रद सूक्त ।

लगध ... ७८४

वेदोपाख्यान; जन्मस्थान; कालनिर्णय ।

लाट्यायन ... ७८६

लाट्यायन श्रौतसूत्र; पूर्वाचार्य ।

लोपासुता ... ७८६

जन्म; अगत्य से विवाह; पुत्रप्राप्ति; दक्षिण भारत में ।

लोमश ... ७८९-७९०

इंद्र से भेंट; तीर्थयात्रा; आख्यानकथन; वरप्रदान; ग्रन्थ; लोमशकथित रामकथा; आश्रम ।

लरुचि ... ७९७

प्राकृतप्रकाश; अन्य ग्रन्थ ।

वराह ... ७९८-७९९

वैदिक साहित्य में; पुराणों में; वराहस्थान; वराह अवतार का अन्यवार्थ ।

वरुण ... ७९९-८०२

वैदिक साहित्य में; स्वरूपवर्णन; निवासस्थान; गुणचर; सृष्टि का राजा; असुर वरुण; वरुण देवता का अर्थवार्थ; जल का स्वामी; सेमेटिक साहित्य में; महाभारत में; वर-प्रदान; परिवार ।

वसिष्ठ ... ८०४-८०६

जन्म; विश्वामित्र से शत्रुत्व; परिवार; वसिष्ठ की वंशावलि; वसिष्ठकुल के गोनकार; वसिष्ठ कुल में उत्पन्न प्रमुख व्यक्ति ८०४; जातुकर्ण्य लोग; वसिष्ठकुल के मेशकार ।

वसिष्ठ ' धर्मशास्त्रकार ' ... ८०७-८०८

ग्रन्थ ।

वसिष्ठ मैत्रावरुणि ... ८०८-८१०

जन्म; विश्वामित्र से विरोध; यज्ञकर्ता आचार्य; कर्तृत्व; आश्रम; वैदिकोत्तर साहित्य में; पुराणों में; विश्वामित्र से शत्रुत्व; व्रतवैकल्य; परिवार ।

वसु ...८११-८१३	पौराणिक साहित्य में; अष्टवसु; परिवार; भागवत में; अष्टावसुओं का परिवार।
वसुदेव ...८१४-८१६	कृष्णजन्म; पराक्रम; अश्रमेधयज्ञ; मृत्यु; परिवार; पत्नियाँ; पुत्र।
वसुमनस् कौशल्य ...८१७	ययाति को पुण्यदान; संवाद।
वात्स्यायन ...८२०-८२२	व्यक्तिपरिचय; कालनिर्णय; पूर्वाचार्य; कामसूत्र; काम-सूत्र का तत्त्वज्ञान; श्रेष्ठत्व।
वानर ...८२२-८२३	राज्य एवं समाजव्यवस्था; पुराणों में; वानरसमूह; वानरवंश; जैन ग्रंथों में; वानर कौन थे।
वामदेव गौतम ...८२४-८२५	जन्म; संबंधित व्यक्ति; तत्त्वज्ञान; आत्मानुभूति।
वामन ...८२५-८२६	वैदिक साहित्य में; वामन अवतार की उत्क्रांति; शत-पथ ब्राह्मण में; पुराणों में; वामन अवतार का अन्वयार्थ; उपासना।
वायु ...८२६-८२७	जन्म एवं स्वरूपवर्णन; पुराणों में; परिवार।
वाल्खिल्य ...८२८-८२९	वैदिक साहित्य में; पौराणिक साहित्य में; स्वरूपवर्णन; इंद्रनिर्माण; तपःसामर्थ्य; परिवार।
वालिन् ...८२९-८३१	जन्म; पराक्रम; दुंदुभिवध; सुग्रीव से शत्रुत्व; राम-सुग्रीव की मित्रता; वाल्खिल्य; राम की आलोचना; अंत्यविधि; स्वभावचित्रण।
वाल्मीकि आदिकवि ...८३२-८३७	नाम; रामायण के बाल एवं उत्तरकांड में; आश्रम; आख्यायिकाएँ; अर्ध्यात्म रामायण में; आख्यायिकाओं का अन्वयार्थ; क्रौंचवध; रामायण की जन्मकथा; सीता-संरक्षण; रामसभा में; पौराणिक वाङ्मय की प्रस्थानत्रयी; व्यक्तिगुणों का आदर्श; महाभारत से तुलना; रामायण की श्रेष्ठता; रामायण की ऐतिहासिकता; आदिकवि वाल्मीकि; गेय महाकाव्य; आर्ष महाकाव्य, वाल्मीकि रामायण में प्राप्त भूगोलवर्णन; रामायण का रचनाकाल; महाभारत में प्राप्त रामायण के उद्धरण; वाल्मीकि रामायण के संस्करण।

विदुर ...८४३-८४७	विदुर का हीनकुलीनत्व-एक समस्या; जन्म; पूर्वजन्म; पांडवों की सहायता; धृतराष्ट्र का सलाहगार; विदुरनीति; विदुरतीर्थयात्रा; युधिष्ठिर के राज्यकाल में; अंतिम समय; मृत्यु; अंत्यसंस्कार; परिवार।
विदुला ...८४७	विदुला-पुत्र संवाद।
चिदेह ...८४८	वैदिक साहित्य में; महाभारत में।
विप्रचित्ति ...८५२-८५३	पराक्रम; परिवार।
विभीषण ...८५४-८५६	जन्म; तपस्या; रावण से विरोध; रावण की सभा में; शरणागत विभीषण; राम की सहायता, मायावी युद्ध; रावण का अंत्यसंस्कार; राज्याभिषेक; अश्रमेधयज्ञ; राम का आशीर्वाद; परिवार।
विराट ...८५८-८६०	पांडवों का आज्ञातवास; कीचकवध; सुशर्मन् से युद्ध; दुर्योधन से युद्ध; युधिष्ठिर का अपमान; उत्तरा-अभिमन्यु विपाह; भारतीय युद्ध में; मृत्यु; परिवार।
विरोचन ...८६०-८६१	प्रह्लाद की न्यायप्रियता; इंद्र-विरोचन संवाद; मृत्यु; परिवार।
विष्वत् ...८६२-८६३	ऋग्वेद में; निवासस्थान; देवताओं का मित्र; व्युत्पत्ति; विष्वत् देवता का अन्वयार्थ।
विशाल ...८६४-८६५	वैशालि नगरी; वैशाल राजवंश।
विश्वकर्मेन् ...८६६-८६७	वैदिक साहित्य में; स्वरूपवर्णन; गुणवर्णन; महाभारत एवं पुराणों में; शिल्पशास्त्र; अस्त्रों का निर्माण; परिवार; ग्रंथ।
विश्वरूप त्रिशिरस् त्वाष्ट्र ...८६९-८७०	वैदिक साहित्य में; महाभारत एवं पुराणों में; स्वरूप-वर्णन; देवों का पुरोहित।
विश्वामित्र ...८७०-८७३	व्युत्पत्ति; जन्म; समवर्ती लोग; राज्यप्राप्ति; वसिष्ठ से विरोध; आपत्प्रसंग; त्रिशंकु की सहायता; त्रिशंकु का राजपुरोहित; त्रिशंकु को सदेह स्वर्गारोहण; विश्वामित्र के कार्य का महत्त्व; हरिश्चंद्र के राज्य काल में; मार्कंडेय

पुराण में; ब्रह्मर्षि पदवी की प्राप्ति; सत्त्वपरीक्षा; आश्रम; परिवार; पत्नियाँ; पुत्र;

विश्वामित्रकुलोत्पन्न गोत्रनाम; विश्वामित्रकुलोत्पन्न गोत्र-कार; गाथिन् का वंशज; नदीसूक्त; वसिष्ठ से विरोध; शक्ति का वध ।

विश्वेदेव ... ८७७-८७८

वैदिक साहित्य में; नामावलि; ऐतरेय ब्राह्मण में; पुराणों में; नामावलि; ब्रह्मा की उपासना ।

विष्णु ... ८७९-८८७

वैदिक साहित्य में; स्वरूपवर्णन; निवासस्थान पराक्रम; विष्णु के तीन पग; नियमबद्ध गतिमानता; एक सौर देवता; भक्तवत्सलता; अव्ययता का देवता; व्युत्पत्ति; ब्राह्मण ग्रंथों में विष्णु का श्रेष्ठत्व; अवतारों का निर्देश; उरनिपदों में गृह्यसूत्रों में; महाभारत में;

विष्णु-उपासना के तीन स्रोत; विष्णु देवता की उक्रान्ति; पौराणिक साहित्य में स्वरूपवर्णन; विष्णु की उपासना; विष्णु के अवतार; नामावलि; विष्णु सांप्रदाय के ग्रंथ; विष्णु के तीर्थस्थान; कई प्रमुख वैष्णव सांप्रदाय ।

विष्णुगुप्त चाणक्य ... ८८७-८८९

नाम; नामांतर; जीवनवृत्तांत; कौटिलीय अर्थशास्त्र; भाषाशैली; पूर्वाचार्य; कौटिलीय अर्थशास्त्र का प्रभाव; मेगस्थेनिस के 'इंडिका' से तुलना ।

विष्णुशस्त्र कल्कि ८८९-८९०

अवतारहेतु ।

वीरभद्र ... ८९२-८९४

जन्म; दक्षयज्ञविध्वंस; वरप्राप्ति; पराक्रम; देवों का संरक्षणकर्ता; वीरक आख्यान; वृत्सिंहदमन; उपासना ग्रंथ ।

वृत्र ... ८९६-८९८

जन्म; स्वरूपवर्णन; निवासस्थान; पराक्रम; वध; व्युत्पत्ति; सामूहिक नाम; तैत्तिरीय संहिता में; ब्राह्मण ग्रंथों में; महाभारत एवं पुराणों में; तपस्या; हन्द्र से युद्ध; वध; तत्त्वज्ञ; परिवार ।

वैशंपायन ... ९११-९१३

वैदिक साहित्य में; पाणिनीय व्याकरण में; कृष्ण-यजुर्वेद का प्रवर्तन; शिष्यशास्त्रा; याज्ञवल्क्य का तिरस्कार; कृष्ण यजुर्वेद का प्रचार; महाभारत का कथन; 'भारत' ग्रंथ का निर्माण; 'भारत' ग्रंथ का कथन; वैशंपायन कृत आस्तीक पर्व; 'भारत' ग्रंथ का प्रचार; याज्ञवल्क्य से विरोध; ग्रंथ ।

व्याडि दाक्षायण ... ९१५-९१६

वंश; ऋग्वेदप्रतिशाख्य में; पाणिनीय व्याकरण का व्याख्याता; संग्रह; कालनिर्णय; ग्रंथ ।

व्यास पाराशर्य ... ९१६-९२९

सनातन हिंदुधर्म का रचयिता; वैदिक साहित्य में; पाणिनीय व्याकरण में; महाभारत एवं पुराणों में; जन्म-तिथि; विभिन्न नामांतर;

तपस्या; कौरव-पांडवों का पितामह; जनमेजय के यज्ञ मेंडप में; पांडवों का हितचिंतक; श्रुतिस्मृति-विद्या का उपदेश; भारतीय युद्ध में; भारतीय युद्ध के पश्चात्; शुकदेव को उपादेश; उपदेशक व्यास; अश्वमेध यज्ञ में; परिवार; ध्यासवंश; चिरंजीवीत्व; व्यासस्थल; अट्टाईस व्यास; व्याससहायक शिवावतार;

कर्तृत्व; वेदसंरक्षणार्थ वेदविभाग; व्यास की वैदिक शिष्यपरंपरा; ऋग्वेद की प्रमुख शाखाएँ; उपलब्ध वैदिक ग्रंथ; वैदिक संहिताओं का विशुद्ध रूप; विनष्ट हुए ब्राह्मण ग्रंथ;

पुराणग्रंथों का प्रणयन; पुराणों के प्रकार; पुराणों में चर्चित विषय; पुराणों के विभिन्न प्रकार; श्लोकसंख्या; पुराणों के कर्ता; महापुराण; महापुराणों की नामावलि; महापुराणों की तालिका; पुराणों का देवतानुसार प्रयोजन; गीताग्रंथ; व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा; रोमहर्षण शास्त्र;

महाभारत का निर्माण; इतिहास-पुराण; महाभारत की व्याप्ति; महाभारत की शिष्यपरंपरा; महाभारत के पर्व; महाभारत के उपपर्व; हरिवंश; व्यास की संशयनिवृत्ति; व्यास का जीवनसंदेश ।

शत्रुघ्न ... ९४१-९४३

राम का यौवराज्याभिमूक; पांडुकासंरक्षण; लवणवश; मथुरा की स्थापना; राम से भेट; राम का अश्वमेध यज्ञ; दिम्बिजय; मृत्यु; परिवार ।

शल्य ... ९४१-९४३

मात्री का विवाह; द्रौपदी स्वयंवर में; युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में; भारतीय युद्ध में; युद्धप्रसंग; कर्ण का सारथ्य; कर्ण-शल्य संवाद; सेनापति शल्य ।

शाकटायन ... ९५३-९५४

नाम; गुरुपरंपरा; उणादि सूत्र; देवतशास्त्र; अन्य ग्रंथ ।

शाकपूणि ... ९५४

ऋग्वेदार्थ का ज्ञान ।

शाकल	...१५५-१५६
ब्राह्मण ग्रंथों में; व्याकरण ग्रंथों में; शाकल शाखा; शाकल्य संहिता ।	
शाकल्य	...१५६
शाखाप्रवर्तक आचार्य; पदपाठ का रचयिता; व्याकरणाचार्य; पाणिनि के अष्टध्यायी में, याज्ञवल्क्य से संवर्ध; पौराणिक साहित्य में; ग्रंथ ।	
शांखायन	...१५७-१५८
शांखायन संहिता; शांखायन ब्राह्मण; शांखायन आरण्यक; शांखायन (कौषीतकि) उपनिषद्; शांखायन श्रौतसूत्र; शांखायन गृह्यसूत्र; आचार्यपरंपरा ।	
शांख्यायनि	...१५८-१५९
आचार्यपरंपरा; शांख्यायन ब्राह्मण; जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण (गात्र्युपनिषद्); शिष्यपरंपरा ।	
शांडिल्य	...१५९-१६०
यज्ञप्रक्रियों का आचार्य; शतपथ ब्राह्मण के अग्निकंड; ' बृहदारण्यक उपनिषद् ' में; तत्त्वज्ञान; आत्मा का स्वरूप; गोत्रकार आचार्य; ग्रंथ ।	
शाह्व	...१६६-१६७
जरासंधवैश्य; सौम बिमान की प्राप्ति; प्रद्युम्न से युद्ध; कृष्ण से युद्ध; भीष्म से युद्ध; भारतीय युद्ध में ।	
शिल्पिडन्	...१६७-१६८
नात्यकाल एवं विवाह; भारतीय युद्ध में; भीष्मवध; वध; भीष्मवध का पूर्ववृत्त ।	
शिखि औशीनर (औशीनरि)	...१७०-१७१
वैदिक साहित्य में; महाभारत एवं पुराणों में; औदार्य; औदार्य की अन्य कथाएँ; पुण्यशील राजा; दान का महत्त्व; मृत्यु; परिवार ।	
शिशुपाल	...१७३-१७४
जन्म; कृष्ण का विद्वेष; शिशुपाल के अनाचार; कृष्ण की निंदा; शिशुपालवध; परिवार ।	
शुक वैयासकि	...१७५-१७६
जन्म; विद्याध्ययन; विरक्ति; भागवत का कथन; व्यास-शुक संवाद; शुक-निर्वाण; व्यास से तुलना ।	
शुक उशनम्	...१७६-१७७
दैत्यों का आचार्य; संजीवनीविद्या; बार्हस्पत्यशास्त्र; परिवार ।	
शुनःशेष आजीगर्दि	...१७८-१७९
हरिश्चंद्राख्यान; पौराणिक साहित्य में; शुनःशेषकथा का अन्वयार्थ ।	

शूर	...१८०-१८१
परिवार, अन्य पत्नियों ।	
शौनक गुत्समद्	...१८५-१८७
जन्मवृत्त; पौराणिक साहित्य में; कर्तृत्व; ऋग्वेद की अनुक्रमणी; ' गृहपति ' शौनक; प्रमुख ग्रंथ; अन्य ग्रंथ; व्याकरणशास्त्रकार; शिक्षाकार शौनक; तत्त्वज्ञानी शौनक; शिष्यपरंपरा ।	
श्वेतकेतु औदालकि आरुणेय	...१९५-१९७
निवासस्थान; कालनिर्णय; बाल्यकाल; विद्यार्जन; घमण्डिपन; ' तत्त्वमसि ' उपदेश; यज्ञसंस्था का आचार्य; धर्मसूत्रों में; कामशास्त्र का प्रणयिता; महाभारत में; परिवार ।	
संवरण	...१९९-२००
राज्य से पदच्युति; तपती से विवाह; परिवार ।	
संवर्त	...२००
संवर्त स्मृति ।	
संवर्त आंगिरस	...२००
वैदिक साहित्य में; बृहदश्रुति से ईर्ष्या; देवताओं पर प्रभाव; कुणप-आख्यान् ।	
सगर	...२००१-२००२
जन्म; शिक्षा; पराक्रम; अश्वमेध यज्ञ; परिवार; पुत्र ।	
संजय गाबलगणि	...२००४-२००५
धृतराष्ट्र का प्रतिनिधित्व; धृतराष्ट्र को उपदेश; श्रीकृष्ण की महिमा; दिव्यदृष्टि की प्राप्ति; युद्ध वार्ता कथन; युद्ध में उपस्थिति; युद्धोपरांत; वनगमन ।	
सत्यकाम जाबाल	२००७-२००८
जन्म; शिक्षा; ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति; तत्त्वज्ञान; सृष्टि का आद्य आधिष्ठान; सत्यकाम-उपकोसल संवाद; अन्य निर्देश ।	
सत्यभामा	२००९-२०१०
प्रासाद; सत्राजित् का वध; पारिजात वृक्ष की प्राप्ति; द्रौपदी से उपदेश; भोजन; कृष्णनिर्वाण के पश्चात्; परिवार ।	
सत्यव्रत	...२०१३
तपस्या; मत्स्यावतार; आत्मज्ञान की प्राप्ति, सत्यव्रत-कथा का अन्वयार्थ ।	
सत्राजित् अथवा सत्राजित	...२०१४-२०१५
पूर्वजन्म; स्यमंतक मणि की प्राप्ति; श्रीकृष्ण परचोरी का दोषारोपण; स्यमंतक मणि की खोज; कृष्ण-सत्यभामा विवाह; वध; शतधन्वन् का वध; निरुक्त में; परिवार ।	

सनत्कुमार ... १०१६-१०१८ ब्रह्ममनसपुत्र; गुणवर्णन; निवासस्थान; उपदेश-प्रदान; सात्वतधर्म का उपदेश; धृतराष्ट्र से उपदेश; पृथ्वी पर अवतार; तत्त्वज्ञान; 'भूमन्' तत्त्वज्ञान; ग्रन्थ।	सुग्रीव १०४९-१०५१ वालिन् से शत्रुत्व; राम से मैत्री; वालिनवध; लक्ष्मण का क्रोध; पश्चाताप; युद्ध की तैयारी; राम-रावण युद्ध में; राम का राज्याभिषेक; चरित्रचित्रण; सुग्रीवचरित्र के दोष; मानस में।
सप्तर्षि ... १०१९-१०२० सप्तर्षि ऋषिना का विकास; ऋग्वेद सर्वात्मकमणी में; महाभारत में; दिशाओं के स्वामी।	सुदास वैजवन ... १०५६-१०५७ नाम; पुरोहित; दाशरथ्य युद्ध; त्रिपक्षीय राज; अन्य पराक्रम; परिवार।
संपानि ... १०२१-१०२२ इंद्र से युद्ध; सीताहरण; जटायुवध, परिवार।	सुत्तर्मन् त्रैगर्त प्रस्थलाधिपति ... १०३७-१०३८ विराट से युद्ध; भारतीय युद्ध में; संशप्तक थोड़ा।
सम्राज्ञ ... १०२२-१०२३ वैदिक साहित्य में।	सूर्य ... १०८१-१०८२ सूर्यदेवता की कल्पना का उद्गम; सूर्य उपासना; सूर्य उपासना के ग्रंथ।
स. मा देवशुक्ति ... १०२३-१०२४ वैदिक साहित्य में; इंद्रशैत्य; पौराणिक साहित्य में; परिवार।	सृंजय ... १०८३ वैदिक साहित्य में; निवासस्थान; ऐतिहासिक निर्देश।
सविन् ... १०२६-१०२७ उत्पत्ति; गुणवर्णन; स्वरूपवर्णन; पौराणिक साहित्य में; अनुचर; यज्ञियों; परिवार; रूपकात्मक वर्णन।	सोमक साहदेव्य (साह्यं) १०८५-१०८६ पौराणिक साहित्य में; पुत्र का नरमेध; मृत्यु के पश्चात्।
सहदेव पांडव ... १०२८-१०२९ त्रास्यकाल; दक्षिण दिग्विजय; शूतक्रीडा एवं वनवास; भारतीय युद्ध में; भारतीय युद्ध के पश्चात्; परिवार; ग्रंथ।	सोमदत्त ... १०८६ शानि यादव से शत्रुत्व; भारतीय युद्ध।
सायिक (युयुधान) ... १०३१-१०३४ स्वरूपवर्णन; विद्याध्यासंग; कृष्ण का सहायक; पाण्डवों का मित्र; पांडवों के वनवासकाल में; युद्ध का समर्थन; कौरवों की राजसभा में; भारतीय युद्ध में; द्रोण के सेनापत्यकाल में; कर्ण के सेनापत्यकाल में; भारतीय युद्ध के अठारहवें दिन; पराक्रम; भारतीय युद्ध के पश्चात्; मृत्यु; परिवार।	सौति रोमहर्षणसुत ... १०८७-१०८८ महाभारत की परंपरा; महाभारत का विस्तार; महाभारत का कथन; महाभारत का प्रारंभ; महाभारत के उपलब्ध संस्करण; हरिवंश।
साखत ... १०३४ साखत धर्म।	स्कंद ... १०९०-१०९९ जन्मकथा; महाभारत में; नामान्तर; अश्वघोषित; तारकामुरवध; अन्य पराक्रम; द्रक्षचर्यवत; परिवार; स्कंद के पापद; मातृका।
साध्व ... १०३४-१०३५ पौराणिक साहित्य में; नामावलि; महाभारत में।	स्वायंभुव मनु ... १०९१-१०९६ राज्यविस्तार; पृथ्वी का सम्राट्; परिवार; जन्मदिन की जानकारी; पौराणिक साहित्य में।
सांघ ... १०३५-१०३६ जन्म; पराक्रम; लक्ष्मणाहरण; प्रभावती का हरण; दुर्वासप् का शाप; मौसलयुद्ध; सूर्योपसना।	हनुमत् अथवा हनुमत् ... १०९८-११०२ 'हनुमत्' एक द्रविड शब्द; गुणधैरिशिष्ट; हनुमत्-देवता का मूल स्रोत; हनुमत्देवता का सत्यस्वरूप;
सावित्री ... १०३९-१०४० जन्म; विवाह; निराश्रयता; यम से आशीर्वादप्राप्ति।	हनुमत् जन्म; नामान्तर; अस्तप्राप्ति; ऋषियों से शाप; सुग्रीव का मंत्री; संभाषणचातुर्य; सीतासोध; समुद्रोद्धवन; अशोकवन में; सीता से भेंट; लंकावहन; सुग्रीव से भेंट; राम-रावण युद्ध में; अयोध्या में; ब्रह्मचर्य; चिरंजीविक; पांडित्य; परिवार; मानस में।
सीता वैदेही १०४२-१०४५ सतीत्व की साक्ष्य प्रतिमा; स्वरूपवर्णन; भूमिजा सीता; जन्मसंबंधी अन्य आख्यायिकाएँ; सीतास्वयंवर; वनवाससमन; सीताहरण; हनुमत् से भेंट; अग्निपरीक्षा; राजीपद; पुत्रजन्म; देहत्याग; चरित्रचित्रण; मानस में।	हयग्रीव ... ११०३-११०४ स्वरूपवर्णन; वैदिक साहित्य में; पौराणिक साहित्य में; हयग्रीव असुर का वध; क्रमपाठ।

विषयसूचि

(इस सूचि में विशेष महत्त्वपूर्ण विषयों का ही केवल अंतर्भाव किया गया है)।

अग्नि के तीन प्रकार—अन्वाहार्य; आहवनीय एवं गार्हपत्य (सत्यकाम जाबाल) १००८।

अयोनिसंभव (संतान)—स्त्रीगर्भ के बिना जन्म हुई व्यक्ती (धृष्टद्युम्न, द्रोण; द्रौपदी) ३०७।

—अग्नि से (सीता) १०४३; यज्ञ से (द्रौपदी, धृष्टद्युम्न ३१०); कुंभ से (अगस्त्य, एवं वसिष्ठ) ८०८; जंघा से (और्वे) १०५; द्रोण में से (द्रोण) ३०७; रक्तविंदु से (अंधक, सीता) २३; १०४३; कान की मैल से (मधुकैटभ) ६३०; अश्रुविंदुओं से (विंदुमती, मंगल) ५१० ५९६; धर्मविंदु से (अंधक, मकरप्वज, मंगल, मधुकैटभ) २३; ५९६; ६०३।

—ब्रह्मा के शरीर के विभिन्न अवयवों से (विभिन्न पशु) ५२८-५२९; ब्रह्मा के वामांग से (शतरुपा) ९४०; मृत्युक्ति के बाहिने हाथ एवं दाहिनी जंघा के मंथन से (पृथु वैभ्य, निपाद) ९०७; मल्ली से (सत्यवती) १०११; सरस्वती नदी से (सारस्वत) १०३७।

अर्थस्य पुरुषो दासः—तात्त्विक अर्थ (भीष्म) ५७८
असुर संघ—कालत्रेय १३८; त्रिपुर २५२; वृत्र ८९७; सैहिकेय १०८५।

अरत्र—अग्नि अस्त्र (सगर) १००१; आग्नेय (और्वे; द्रोण) १०५; ३०७; ऐषिक (अश्वत्थामन्) ८२;

—नारायण (अश्वत्थामन्, भीम) ४६; ५६२; ब्रह्म (रुक्मिन्, हनुमत्) ७५३; ११००;

—महावीर्य (वेदशिरस्) ९०६; मायावी (बभ्रुवाहन) ४३०; वारुण (भीम) ५६२; वैष्णव (भगदत्त) ५३४; सुदर्शन (इंद्रद्युम्न २.) ७५।

आख्यान—आख्यानकथन (लोमश) ७९०; कुणप-आख्यान (संवर्त आंगिरस) १००; यायात आख्यान (पूर्व एवं उत्तर) ६८०; वीरक आख्यान (वीरभद्र); शुनःशेष आख्यान (रोहित) ७७५; हरिश्चंद्र आख्यान (विश्वामित्र) ९७८।

आत्मसमर्पण—दधीचि २६४; यम वैवस्वत ६७५।

आत्मज्ञान (परमज्ञान) की प्राप्ति—गौतम बुद्ध ११२७; दत्त आग्नेय २६१; महावीर वर्धमान ११२०;

याज्ञवल्क्य वाजसनेय ६८९-६९०; वामदेव गौतम ८२५; शुक्र वैयासकि ९७५; सत्यकाम जाबाल १००७; सत्यव्रत १०१२।

आश्रमस्थान—जामदग्न्य ३९४; परशुराम ३९४; दत्त आग्नेय २६१; भृगु (भृगुतुंग) ५८७; लोमश ७९०; वसिष्ठ (वसिष्ठशिला; कृष्णशिला) ८०७; वामन ८२६; वाल्मीकि ८३३; विश्वामित्र ८७३; विश्ववत् ८६६; शतयूप ७०७।

आसुरी सांप्रदाय ८६१।

ऋग्वेद के सूक्त—आग्नी सूक्त (विश्वेदेव) ८७७; नदी सूक्त (विश्वामित्र) ८७६; खिल सूक्त (वालखिल्य) ८२८; निद्रा सूक्त ८०९; महामृत्युंजय सूक्त ८०९।

ऋषिसमूह—थायावर ६९४; वातरशन ८१९; वालखिल्य ८२८; विभिदुकीय ८५४; विश्वसृज ८७०; वेदव्यास ९०६; वैखानस ९०८; स्वस्त्याग्नेय १०९५।

कामशास्त्रकार—बाभ्रव्य पांचाल ५०७; वात्स्यायन ८२०-८२२; वात्स्यायन के पूर्वाचार्य—कुन्तुमार; गोणिका-पुत्र; गोमर्दीय; घोटकमुख; चारायणाचार्य; दत्तका-चार्य; नन्दिन् ८२१; श्वेतकेतु औहालकि ९९७।

कालगणना—पुराणों की १०६९-१०७०; ब्रह्मा की ५३।

कालनिर्णय—कालनिर्णयकोश ११६९-११८०; ग्रंथों का कालनिर्णय ११७२; व्यक्तियों का कालनिर्णय ११७८।

—कौटिलीय अर्थशास्त्र ८८९; पतंजलि ३८२; पाणिनि ४०६; भरत ५४३; मनुस्मृति ६६५; महाभारत १०८८; याज्ञवल्क्य वाजसनेय ६८८; लघु ७८४; वात्स्यायन ८२१; वाल्मीकि रामायण ८३६; व्याडि दाक्षायण ९१६; श्वेत-केतु औहालकि आरण्य ९९५।

कुलपासन नरेश—अजविंदु १३; अर्कज ५०१; जनमे-जय नीप (६.) २२; दुःशासन २७०; धारण ३२३; धौत-मूलक ३३२; पुरुरवस् (२.) ४३६; बाहु (३.) ५०९; वरप्र ७९७; विगाहन ८४०; शम (६.) ९४५; सहज १०२७; हयग्रीव ११०४।

कौटिलीय अर्थशास्त्र—चर्चित विषय ८८८; मापादौली ८८८; पूर्वाचार्य ८८८; कौटिलीय अर्थशास्त्र का प्रभाव ८८९; मेगस्थिनिस के इंडिका से तुलना ८८९।

अग्नित्रय ब्राह्मण—भार्गव बंशांतर्गत (भृगु वारुणि) ५८८।

गीता—अनुगीता (कृष्ण) १६३; ईश्वरगीता (व्यास) १२७; उद्धवगीता (कृष्ण) १६३; गणेशगीता (गणपति) १८०; बोध्यगीता (बोध्य) ५२३; ब्रह्मगीता (रोम-हर्षण) ७७३; भिक्षुगीता (हंस) १०९७; मंकिगीता (मंकि) ७९५; यमगीता (यम वैवस्वत) ६७६; विचरन्तु गीता (विचरन्तु) ४८०; व्यासगीता (व्यास) ९२७; शंकरगीता (परशुराम) ३९३; शंकाकगीता (शंकाक) ९४६; सूतगीता (रोमहर्षण) ७७३; सूर्यगीता (सूर्य) १०८२; हरितगीता (हरित) ११०९; हंसगीता (हंस) १०९७।

गोत्रकार—अंगिरसुकुलोत्पन्न ११; अत्रि १७; कश्यप १२७; भृगु ५८९; वसिष्ठ ८०५; विश्वामित्र ८७५।

ग्रह—चेद्र २०२; बुध ५११-५१२; बृहस्पति ५१८ ५२०; मंगल ५९६; राहु (स्वर्भाव) ७४९; १०९५; शनि ९४३-९४४।

ग्रंथ—अथर्ववेद शिक्षा (मण्डूक) ५९८; अष्टाध्यायी (पाणिनि) ४०७-४०९; आपस्तंब कल्पसूत्र (आपस्तंब) ६०; आश्वलायन गृह्यसूत्र (आश्वलायन) ६७;

—ऐतरेय ब्राह्मण एवं ऐतरेय आरण्यक (महिदास ऐतरेय) ६३१; ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी (शौनक) ९८५;

—काशिका (वामन एवं जयादित्य कृत) ४०९; कौटिलीय अर्थशास्त्र (विष्णुगुप्त चाणक्य) ८८९;

—चरक संहिता (चरक) २०७; छंदःशास्त्र (पिंगल) ४१७; जैमिनि अश्वमेध (जैमिनि) २३६; जैमिनि सूत्र (जैमिनि) २३६;

—पराशर स्मृति (पराशर) ३९७; पतंजल योगसूत्र (पतंजलि) ३८५; पारस्कर गृह्यसूत्र (पारस्कर) ४१४;

प्राकृत प्रकाश (वररुचि) ७९७; पितामह स्मृति (पितामह) ४२२; पिप्पलाद (पिप्पलाद) ४२९; पौराणिक साहित्य (व्यस पाराशर्य) ९२५-९२७; फिट्सूत्र (शान्तनव) ९६२; ब्रह्मसूत्र (वादरायण) ५०५; बौधानय सूत्र (बौधायन) ५२४; भावद्वीता (कृष्ण) १६३;

भारतीय नाट्यशास्त्र (भरत मुनि) ५४१; मनुस्मृति (स्वायंभुव मनु) ६१३-६१५; महाभारत (व्यास पाराशर्य; वैशंपायन; सौति) ९१६; ९१२; १०८७; मैत्रि उपनिषद् (मैत्रि) ६६४;

—वाक्यपदीय (भर्तृहरि) ५५२; वात्स्यायन कामसूत्र (वात्स्यायन) ८२१; वार्तिक (कात्यायन) १३२; वाल्मीकि रामायण (वाल्मीकि) ८३५-८३७; वास्तुशास्त्र (ब्रह्मन्) ५११;

—शालिहोत्र तंत्र (शालिहोत्र) ९६५; शुक्लयजुर्वेद; शतपथ ब्राह्मण एवं याज्ञवल्क्य स्मृति (याज्ञवल्क्य वाजसनेय) ६९२-६९३; शांखायन आरण्यक, उपनिषद्, ब्राह्मण, संहिता ९५७; शांखायनि ब्राह्मण; श्वेताश्वतर उपनिषद् (श्वेताश्वतर) ९४८; संग्रह (व्याडि) ९१६; सत्यापाद श्रौतसूत्र १११२; सुश्रुत संहिता (सुश्रुत) १०७८; हरिवंश (सौति) १०८८।

ग्रन्थों के प्रामाणिक संस्करण—कौटिलीय अर्थशास्त्र ८८९; पतंजलि महाभाष्य ३८५; महाभारत १०८८।

चक्रवर्तिन् सम्राट्—२०१; पृथु वैन्ध ४४२-४५२; मोघानु यौवनाश्व ६४३; ययाति ६८१; युधिष्ठिर ६९६; सगर १००१।

चरित्रदोष—मीधम ५७७-५७९; राम दाशरथि ७२९; सुग्रीव १०५०।

जैन धर्म—महावीर वर्धमान जीवनचरित्र १११३; प्रथम समवशरणसभा ११२०; शिष्यशाखा ११२०; आचार संहिता ११२१; बौद्धधर्म से तुलना ११२३; परंपरा ११२२; सांप्रदाय ११२२।

जैनधर्म ग्रंथ—महावीरकृत जैनसूत्र-११२२; ११७४। छन्दःशास्त्र—पिंगल ४१७; वैयास्क ९११।

ज्योतिषशास्त्रकार—गर्ग १८५; पराशर ३९८; भागुरि ५५५; अन्य ज्योतिषशास्त्रकार ३९८; ज्योतिषशास्त्र के पूर्वाचार्य ३९८।

तत्त्वज्ञान—अजित केशि कंबलिन (उच्छेदवाद) १११७; —कृष्ण १६२; गोशाल मंथल्लिपुत्त (संसारविशुद्धि-तत्त्वज्ञान) १११७; गौतमबुद्ध ११२८;

—चार्वाक २०९;

—पकुध काञ्चायन (अशाश्वतवाद) ११२८; पूरण कस्सप (अक्रियावाद) १११८; पतंजलि (योगदर्शन) ३८६; पंचशिख (सांख्य तत्त्वज्ञान) ३८०; पिप्पलाद ४२६; पैंग्य (पैंग्य मत) ४५५; प्रतर्दन ४६७; त्रक दाल्भ्य ४८७; भृगु ७८७; महावीर वर्धमान (अनेकान्तवाद, क्रियावाद) ११२१; मंकि ५९५;

—याज्ञवल्क्य वाजसनेय ६९०-६९१; रैक सगुबा ७७०; विदुर (विदुरनीति) ८४५; वृत्र ८९८; व्यास पाराशर्य ९२९;

—शांडिल्य ९६०; शौनक (तत्त्वमासि तत्त्वज्ञान) ९८७; मनकुमार (भूमन् तत्त्वज्ञान) १०१८; सात्वत (सात्वत धर्म) १०३४; सुपर्ण (त्रिसौपर्ण धर्म) १०६३; सुलभा १०७४।

लिखिनिर्णय—भारतीय युद्ध ७०८; राम-रावण युद्ध ७३७-७३८।

तीर्थयात्रा—अर्जुन ३६; चौम्य ३३३; बलराम ४९४; युधिष्ठिर ६९९; लोमश ७८९; विदुर ८४५।

तीर्थस्थान—गयाशिरम् १८२; ज्योतिर्लिंग २३७; देवीपीठ ३०२; प्रथूदक तीर्थ (सिधुद्वीप) १०४२; प्रभासक्षेत्र (ब्रह्मण का यज्ञस्थान) ५२९; बौद्धधर्म के तीर्थस्थान ११२९; मातृतीर्थ (रेणुकातीर्थ) ३९१; बंराहस्थान ७९९; वामनस्थान ८२६; विष्णु के तीर्थस्थान ८७९-८८७; व्यासस्थल ९१६; ९२९; शक्तिपीठ ३०१; समन्तपंचक क्षेत्र १०८८;

त्रिपुर—उत्पत्ति (इंद्र) ६९; विनाश (त्रिपुर) २५२।

दानशूरता—विभिदु ८५३; वृषदर्म ९०१; वृषादमि शैव्य ९०३; शिवि औशीनर ९७१; श्रुतवर्मन् तार्क्ष ९९२।

राशाराज्युद्ध—१०५६; विपक्षीय राजाओं की नामावलि १०५६।

द्वयामुप्यायण—दो वंशों के पिताओं का पुत्र (भरद्वाज) ५५०।

द्विविजय—अर्जुन (उत्तर) ३७; कर्ण (उत्तर) ११९; नकुल ३३८; भीमसेन (पूर्व) ५६३; रावण ७४५; सहदेव (दक्षिण) १०२८; सिकंदर ११३५-११३८।

देवता—जो वैदिक, पौराणिक एवं स्त्री देवता इन तीन उपविभागों में विभाजित है:—

—(१) वैदिकदेवता—अग्नि ५-६; अश्विनि ४८; आदित्य ५८; इंद्र ६८-७३; जित २५१; पूषन् ४४६-४४७; प्रजापति ४६१-४६५; प्रजापतियों की संख्या एवं नामावली ४६५; बृहस्पति ५१८-५२०; भग ५३२; मनु ६१८; मरुत् ६२२-६२५; मातरिश्वन् ६३८; मित्र ६५२; वरुण ७९९-८०२; वायु ८२६; विवस्वत् ८२६; सवितृ १०२६; सूर्य १०८१।

—(२) अन्यदेवता—दत्त आश्रय २६१-२६२; कृष्ण १५८-१६४; परशुराम जामदग्न्य ३८८-३९४; पितर ४१९-४२२; ब्रह्मन् ५२६-५३१; भैरव ५९१; राम वाशरथि ७२५-७४२; रुद्र-शिव ७५४-७६६; वामन ८२५-८२६; विष्णु ८७९-८८७; शनि ९४३-९४४; हनुमत् १०९८-११०२।

(३) स्त्रीदेवता—देवी ३००-३०३; मातृका ६३८-६३९; रात्रि ७२२; राधा ७२२-७२४; विद्या ८४९; लक्ष्मी ७२१-७२४।

• देवता उपासना—देवता कल्पना की उत्क्रांति (रुद्र-शिव, विष्णु) ७६१; ८८३;

—(१) ज्योतिर्लिंग उपासना २३७-२३९; ज्योतिर्लिंग स्थान २३८-२३९ (रुद्र-शिव देखिये); महाकाल ६२७; भीमशंकर ५६०।

—(२) दत्त आश्रय—आत्मज्ञान एवं शिष्यपरंपरा २६१; दत्त आश्रम २६१; दत्त जन्मकाल २६२; दत्त-मत प्रतिपादक ग्रंथ २६२; दत्त सांप्रदाय २६२।

—(३) देवी उपासना—तात्त्विक पार्श्वभूमि ३००; देवीपीठ ३०२-३०३; शक्तिपीठ ९३३;

—(४) नृसिंह उपासना—३७५-३७६; नृसिंह-स्थान ३७६।

—(५) परशुराम-परशुराम के स्थान ३९४; परशुराम-जयन्ति ३९४; परशुराम सांप्रदाय के ग्रंथ ३९४; परशुराम शक ३९४।

—(६) राम दाशरथि—रामभक्ति सांप्रदाय ७४०; राम भक्ति से प्रभावित उपनिषद् ग्रंथ ७४०; रामभक्ति का विकास ७४०; सांप्रदायिक रामायण ग्रंथ ७४०; बौद्ध एवं जैन वाङ्मय में रामकथा ७४१; आधुनिक भारतीय भाषाओं में रामकथा ७४१।

—(७) रुद्र-शिव—शिवदेवता की उत्क्रांति ७६१; शिव के अवतार ७६३; शिव उपासना के सांप्रदाय ७६४-७६५; शिवरात्री ७६५; शिव उपासना के ग्रंथ ७६५ (ज्योतिर्लिंग देखिये)।

—(८) वामन ९८४;

—(९) विष्णु—विष्णु उपासना के तीन स्रोत ८८२; विष्णु देवता की उत्क्रांति ८८३; विष्णु की उपासना ८८४; विष्णु के अवतारों की नामावलि ८८४ (विष्णु के अवतार देखिये); विष्णु सांप्रदाय के ग्रंथ ८८६; विष्णु के तीर्थस्थान ८८७; कई प्रमुख वैष्णव सांप्रदाय ८८७।

—(१०) वीरभद्र—८२६;

—(११) बेंकेश उपासना—९०४-९०५।

—(१२) सूर्य—सप्तसूर्य १०८१; सूर्य देवता की कल्पना का उद्गम १०८२; सूर्योपासना १०८२; सूर्य उपासना के ग्रंथ १०८२।

—(१३) हनुमत्—गुणवैशिष्ट्य १०९८; हनुमत् देवता का मूल स्रोत १०९८; हनुमत् देवता का सद्यःस्वरूप १०९८।

देवतासमूह—आदित्य (ग्यारह) ९८; तुषित २४८; पितर ४४९; प्रजापति (इक्कीस) ६२१; याम ६९३; यूयम ७१०; योगेश्वर ७१०; वशवर्तिन् ८०३; वसु (अष्ट) ८११-८१३; वातस्कंध ८२०; विश्वेदेव ८७७; साध्य १०३४-१०३५; सप्तर्षि १०१९; सूर्य (सप्त) १०८१।

देवासुर-संग्राम—द्वादश देवासुर संग्राम २९१; इंद्र-वृत्रयुद्ध ८९६-८९७; इंद्र-वलिद्युद्ध (समुद्रमंथन के पश्चात्) ४९८; रकंदतारकासुर-युद्ध १०९१।

देश, लोकसमूह अथवा जातिसमूह—जो वैदिक, पाणिनि-कालीन, सर्वसामान्य एवं सिकंदरकालीन, इन चार उप-विभागों में विभाजित हैं:—

—(१) पाणिनिकालीन लोकसमूह—४०८;

—(२) वैदिक लोकसमूह—अनु २१; वृसु २४९; द्रुह्यु ३०६; पक्थ ३७०; पंचजन ३७८; पंचाल ३८०; पणि ३८१; पारावत ४१४; पूरु ४४४; वह्निक ५०२; भरत ५४०; मूजवन्त ६५८; यशु ६७०; यति ६७१; यमक ६७७;

—यौगंधर ७१०; रथकार ७१७; वारशिव ७९८; विपाणिन् ८७८; वृचिवत् ८९६; वैकरण ९०८; वैतहव्य ९०९; शंडिल ८९५; शिवि ९६९;

—(३) सिकंदरकालीन लोकसमूह—अभिसार ११३२; अंबष्ट ११३२; आयेय ११३२; आश्वकायन ११३३; आश्वायन ११३३; कठ ११३३; केकय ११३३; क्षतु (शुद्रक) ११३३; गांधार (पश्चिम) ११३४; गांधार (पूर्व) ११३४; ग्लुचुकायन ११३४; गुसा ११३४; पातानप्रस्थ ११३४; ब्राह्मणक ११३४; मद्र ११३४; मालव ११३४; मूचिकर्ण ११३४; वसाति ११३५; शकस्थान ११३; शिवि ११३५; सुग्ध ११३८; सौभूति ११३८; हरउवती ११३८।

—(४) सर्वसामान्य लोकसमूह—अश्व (विश्वामित्र) ९७०; आंध्र (मनु) ६९५; आभीर (अष्टावक्र) ४०; असवसंकेत ३३२; कांबोज (मनु) ६०५; किरात (विश्वामित्र) ९७०; कुरु (कुरु ३.) १५१; कोलगिरेय (अर्जुन) ३५; कोलि (गहड़) १८३; गज (द्रावती २.) ७६; ग्रामणीय (नकुल) ३३२; चीन (मनु) ६११; जालवरायण २३४; —इसु (कायव्य) १३४; द्रविड (मनु) ६११; द्वारपाल (नकुल) ३३८; नाग (कायव्य) १३४; नैमिषीय ३७७; पक्थ (शिष्ट) ९७४; पदच्छर ३८१; पन्नग १४०; परशु ४०३; पल्लव (नकुल, विश्वामित्र) ३३८; ९७०; पांचाल ४०४; पारद ४१३; पुण्ड्र ९७०; पुलिंद ९७०; पौरवक ४५८; प्रियमेष (कर्ण, नकुल, भीम) ११७; ३३८; ५६१;

—मग (निशुम) ३६८; मगध ५९४; मत्तमयूर ५९९; मत्स्य ६००-६०१; मत्स्याहारिन् ३३८; मद्र ६०२; मल्ल ७२६; महीषक ६३४; माचेलक ६३४; मालव ६४९; मार्तिकावत ६४९; माचेलक ६५१; मैकथ ६६१; मूतिव (विश्वामित्र) ९७०;

—यमक ६७७; यवन (नकुल; मनु, विश्वामित्र) ३८३; ३३८; ६०५; ९७०; याद्र ६९३; रामट ७४२; रोमक ७७१; रोहीतक ७७५; ल्याक ७८८; ललाटाक्ष ७८५;

—दर्भक ८०३; वश ८०३; बाहीक ८३८; विदर्भ (४) ८४३; विपाणिन् (शिष्ट) ९७४; वैकर्ण ९०८; व्याध (एकलव्य) १००; शबर ९४४; शिवि ९६९;

—शक (नकुल, भीम, मनु) ३३८; ५६१; ६०५; शबर (विश्वामित्र) ९७०; शिवि ९६९; शिव (शिष्ट ९७४) शुद्र (नकुल) ३३२; श्रोणिमत् (भीम) ५६९; समसिंधु १०२०; सारस्वत १०३८; साहव १०३८; सिंहल १०४०; सिंधु १०४२; सुमित्र १०६९; सोमधेय (भीम) ५६१; सौदन्ति (विश्वामित्र) ९७५;

—हारहूण (नकुल) ३३८; हैहय (अर्षि) १०४

धनुष—गांडीव (अर्जुन) ५७; माहेंद्र (युधिष्ठिर) ५७; विजय (रुक्मिण) ७५३; वायव्य (भीमसेन) ५६१।

धर्मशास्त्र—मनु स्वार्थभुव के द्वारा धर्मशास्त्र की निर्माण ६१४; मानवधर्मशास्त्र, या पुनर्लक्ष्करण ६४०; मनुस्मृति की विषयात्मकमणिका ६१४।

धर्मशास्त्रकार—अंगिरस् ११, उदानम् ९१; नारद ३६५; पराशर ३९७; पितामह ४२२; पुलस्त्य ४३८; पैठीनसि ४५५; प्रचेतस् ४६०; प्रजापति ४६५; बुध ५१२; भरद्वाज ५५१; भागुरि ५९५; मनु स्वार्थभुव (मनुस्मृति) ६१३; यम वैवस्वत ६७७; याज्ञवल्क्य ६९३; शंख ९३६; व्यास ९१६; विश्वामित्र ८७६।

निःश्रान्ति पृथ्वी (परशुराम-हैहय संयाम) ३८९-३९२; हैहयों से शत्रुत्व ३८९; शुद्र ३९०; अर्तकीर्तवध ३९०; जमदग्निवध ३९०; हैहयविनाश ३९१; निःश्रान्ति पृथ्वी ३९१; अश्वमेध यज्ञ ३९२; नया हत्याकांड ३९२; हत्याकांड से बचे हुए क्षत्रिय ३९२; परशुरामकथा का अन्वयार्थ ३९२;

—हत्याकांड की समाप्ति, एवं परशुराम के द्वारा शूर्पारक देश की स्थापना (३९२)।

नियोगज संतति—८४१; श्रुतराष्ट्र ३२५; पाण्डु ४१०; हीनकुलीनव (विदुर) ८४४।

निर्वाण—अश्वत्थ वृक्ष के नीचे निर्वाण (कृष्ण) १६२; कुशीनगर के शालवन में महापरिनिर्वाण (गौतम बुद्ध) ११२८; पृथ्वी के विवर में प्रवेश (सीता) १०४५; महाप्रस्थान के समय देहपतन (अर्जुन, द्रौपदी, भीमसेन, नकुल एवं सहदेव) ७०७; युधिष्ठिर के दृष्टि में दृष्टि मिला कर निर्वाण (विदुर) ८४६; युद्धभूमि पर मृत्यु (कर्ण, दुर्योधन, रावण) १२१; २८४; ७४७-७४८; योगिक मार्ग से देहत्याग (बलराम) ४९५; वायुलोक से सूर्यलोक में प्रवेश (शुक) ९७६; शरशय्या पर देहत्याग (भीष्म) ५७७; संदेह स्वर्गारोहण (सत्यव्रत विशंकु, युधिष्ठिर) २५४-२५५; ७०७।

निवासस्थान—यम वैवस्वत ६७४; रावण दशग्रीव (लंका) ७३५; रुद्र-शिव ७५५; लक्ष्मी ७८२; लगध ७८४; वरुण ८००; विवस्वत ८६२; विष्णु ८७९; वृत्र; ९६; श्वेतकेतु औद्दालकि ९९५; संजय १०८३।

पक्षी—अरुण ३३; गरुड १८२-१८५; जटायु २१८; तार्क्षी २४४; भारुंड (प्रलीसमूह) ५५७; संपाति १०२१।

पतंजलि का व्याकरणशास्त्र—३८३-३८५; युद्ध उच्चारण का महत्त्व ३८४; पूर्वाचार्य ३८४; टीकाकार ३८६; महाभाष्य का पुनरुद्धार ३८५; अन्य ग्रन्थ ३८५।

पाणिनि का व्याकरणशास्त्र—४०६-४०९; पूर्वाचार्य ४०६; पाणिनि का समन्वयवाद; ४०८; लोकजीवन ४०८; पाणिनिकालीन भूगोल ४०८; सिक्के ४०९; परिमाणदर्शक शब्द ४०९;

—पाणिनि की अष्टाध्यायी ४०७; अष्टाध्यायी के वार्तिक-कार ४०९; अष्टाध्यायी के वृत्तिकार ४०९; पाणिनि के अन्य व्याकरणग्रन्थ ४०९।

पूर्वाचार्य—चाणक्य (कीटिलीय अर्थशास्त्र) ८८८; पतंजलि (व्याकरण महाभाष्य) ३८३; पाणिनि (अष्टाध्यायी) ४०६; ४०९; यास्क (निकत) ६९४; लाट्यायन (श्रौतसूत्र) ७८६; वात्स्यायन (कामसूत्र) ८२१।

पृथ्वी का पहला राजा—पृथु वैन्य ४४९-४५१; पृथ्वीदोहन ४४९; पृथु की राजप्रतिज्ञा ४५१।

—२. यम वैवस्वत ६७४।

पृथ्वीदोहन—पृथु वैन्यकृत ४४९; पृथ्वीदोहन की अन्य कथाएँ ४५०।

पौराणिक काल—व्याख्या ४०१; कलियुग का प्रारंभ ११५२।

पौराणिक साहित्य—परिचय ७२५-९२७; पुराणों का आद्यप्रवर्तक (व्यास) ९२५; आद्यनिवेदक—रोमहर्षण सूत ७७२; विभिन्न प्रकार ९२५; चर्चित विषय ९२५; श्लोक-संख्या ९२५; वक्ता ९२५; महापुराणों की तालिका ९२६; उपपुराणों की नामावलि ९२६; देवता-नुसार पृथक्करण ९२७; व्यास की पुराणशिक्ष्यपरंपरा ९२७; निर्दिष्ट राजवंश ११३९-११५६; निर्दिष्ट राजा ११६६; निर्दिष्ट ऋषिवंश ११६७।

पौराणिक नामों की व्युत्पत्ति-अगस्त्य ४; अपोद (धौम्य) ३३३; आंस्तीक ६५; गालव; (विश्वामित्र) ८७०; ८७१; वैकटेश (वैकटेश) ९७४।

पूषन् ४४८; प्रातिसुवन् ४७०; बृहस्पति ५१८; भृगु ५८५; मरुत् मातीड ६४९; मिथि जनक ६५३; सुश्रवान् ६६०; मेदिनी ६५२; यायावर ६९४; रावण ७४३; वरुण ८०१; विवस्वत् ८६३; विष्णु ८८१; वृत्र ८९७; हनुमत् १०९९।

पौराणिक कथाओं का अन्वायार्थ-अहित्या ५३; परशुराम जामदग्न्य ३९२; परिक्षित् ४०१; पितृकन्या ४२२; पृथु वैन्य ४४९; बलि वैरोचन ४९७; बाण ५०५; भगीरथ ५३५; मत्स्य ६००; वराह ७९९; वरुण ८००; वामन १२६; विवस्वत् ८६३; सत्यव्रत १०१२; सीता (भूमिजा) १०४३।

‘प्रतिग्रह’ का दोषारोप—(बुद्धिल आश्वतराशि) ५११।

प्रमुख यज्ञ—द्वादशवर्षीय सत्र (नैमिषारण्य) ७३३; ब्रह्मन् का यज्ञ (प्रभास क्षेत्र) ५२९; बलि वैरोचन का यज्ञ (भृगुकच्छ) ४९९; अनमेजय का सर्पसत्र (हस्तिनापुर) २१९-२२२।

प्राणिसृष्टि—कश्यप की संतान १२९; पक्षी—स्तंभमित्र शाड्य १०९२; हाथी-ऐरावत १०२; सुप्रतीक १०६४; —गाय—कामधेनु; (सुरमि) १०७२; नाग—धृतराष्ट्र ३२८; वासुकि ८३८।

प्राचीन कालगणनापद्धति—११६९-११७२; युग-गणना पद्धति ११६९; ब्रह्मा का एक दिन ११६९; आधुनिक उपपत्ति ११६९; मन्वन्तर कालगणनापद्धति ११७०; कल्पों की नामावलि ११७१; सप्तयुग की कल्पना ११७१।

ब्राह्मण जातिसमूह—जातृकर्ण्य ८०५; भृगु (भागव-गण) ५८८; रथीतर ७१८; रहूगण ७२०; विमित्तुकीय ८५४; व्यश्व ९१४; हिरण्यकेशिन् १११२।

ब्राह्मण शाखा—काण्वायन ६६२; चरक ६४७; मैत्रेय ६६६ ।

बौद्धधर्म—गौतमबुद्ध का जीवनचरित्र ११२४; बुद्धों की नामावलि ११२४; प्रमुख बौद्ध सांप्रदाय ११२८; तत्त्व-ज्ञान ११२८; बौद्ध धर्म के प्रसारक ११२९; बौद्ध धर्म के प्रमुख तीर्थस्थान ११२९; बौद्धधर्म ग्रन्थ-त्रिपिटक ११२४ ।

भारतीय युद्ध—५६६-६७०; ७०१ ७०६; कुष्ण-दौत्य ७०१; पांडव पक्ष के देश ७०१; कौरवपक्ष के देश ७०२; कौरव एवं पांडवसेना का बलाबल ५७५-५७६; सांख्यिक बल ७०३; युद्धशिविर ७०३; सेनाप्रमुख एवं सेनापति ७०३; युद्ध का प्रारंभ ७०४; प्रथम दिन से अठारहवें दिन तक का युद्धवृत्तान्त ५६६-५७०; युद्ध से बचे हुए वीर ७०५ ।

भौगोलिक स्थान—जिनमें निम्नलिखित विभाग प्रमुख हैं :—

—(१) द्वीप—पृथ्वी के सात द्वीप, एवं उनका संभाव्य आधुनिकस्थान १०९६; सागरोपद्वीप (सागर) १००२;

—(२) वर्ष—जंबूद्वीप के सात वर्ष (इलाहृत; रभ्यक हिरण्य; कुह, भद्राश्र, किपुरुष, नाभि) १०९६;

—(३) देश—देश, लोकसमूह, एवं गणराज्य देखिये) ।

—(४) नगर—मथुरा-९४२; लंका- ७३५; वैजयंत-३६९; वैशाली ८६४; श्रावस्ति ९९०; सांची १००१ ।

—(५) पर्वत—यश्रुकूट ५१७; हिमवत् १११० ।

मन्वंतर—मानव जाति का पिता—मनु आदिपुरुष ६०५; मन्वंतरो का निर्माण ६८६१; चौदह मन्वंतर ६०६; पाठभेद-६०७; विभिन्न मन्वंतरो के मनु, ऋषि, इंद्र आदि की जानकारी (६०७-६१०) ।

मंत्र—अश्लील (अभ्यासि ऐतशासन) २७; अष्टाक्षर (जय-विजय) २२७; उत्कर्ष (वसिष्ठ वैडव) ८१०; कन्या प्राप्ति (आद्देव) ९८९; गर्भाधान (आश्रय) ५७;

—तीन अक्षरी (सुवर्ण २.) १०७५; दीर्घायुष्य (वसुभि मालेंद्रन) ७९४; पठण (औसमभ्यव) १०४; पारीक्षित (परीक्षित्) ३९९;

—भूतखेत (कश्यप) १३१; भैरव (भैरव १.) ५९१; भोज (प्रगाथ) ४५९; (काण्व) १३१; मतभेद (भस्मासुर) ५५४; महाभूयुज्य (१ वसिष्ठ) ८०६; राम (वाल्मीकि) ८३३; वाग्भव (औत्तम; चाशुप) १०३; २०८;

—शांति (उपरि बभ्रव; कांकायन; कौरुपथि; जाटिकायन) ८८; १३१; १६९; २३२; शिव (दाशार्ह) २७०; शिव-

पंचाक्षर (धुंधुमूक) ३२४; शिवपटक्षर (धुंधुमूक) ३२४; पटक्षर (जमदग्नि) ३२३; संजीवनी (उष्णी; कन्न भृगु २.) ५८५; सामर्थ्य (परुच्छेद दैवोदासि) ४०२ ।

महाभारत—प्रणयन (व्यास, वैशंपायन; सौति) ९२७; ९१२; १०८८; महाभारत के पर्व एवं उपपर्व ९२८; व्यास की महाभारतशिक्षणपरंपरा ९२९; महाभारत का खिलपर्व (हरिवंश) ९२८;

—प्रमुख उपपर्व—आस्तीकपर्व (वैशंपायन) ९१२; प्रजागरपर्व (विदुर) ८४५; मार्कंडेयसमस्यापर्व (मार्कंडेय) ६४८; सुकानुप्रश्न (शुक) ५७६ ।

मानव (मनुष्येतर) जातिसमूह—गंधर्व १८२; देव २९०-२९२; दैत्य ३०३; नाग ३५७-३५८; पिशाच ४२६-४२८; भूत ५८०; मरुत् ६२४; यक्ष ६६९; रक्षस् ७११-७१४; वानर ८२२-८२४; विद्याधर ८४९; वैताल ९०५; सर्प १२२४;

—मानवेतर वंश ११५५ ।

मानस में प्राप्त चित्रचित्रण—भरत दाशरथि ५४७; राम दाशरथि ७४०; रावण दाशरथि ७४८; लक्ष्मण ७४०; सीता १०४५; सुमित्रा १०६९; हनुमत् ११०२;

माहात्म्य—अन्नदान (रतिविदग्धा) ७१६; अरुणाचल (नेदिन्; पार्वती; वज्रगद) ३४४; ४१५; ७९३; आकाश-दीप (बालखिल्य) ८२९;

—एकादशी—अधिक माह की एकादशी (जयशर्मन्) २३८; कार्तिकी एकादशी (अंबरीष) २८; जया एकादशी (माल्यवत्; पुष्पदंती) ६५१; ४४२; पाप-मोचनी एकादशी (मेधाविन्) ६६३; रमा एकादशी (शोभन) ९८५; विजया एकादशी (त्रक दाल्भ्य) ४८८; सफला एकादशी (लुपक) ७८७;

—कमल (लोमशा, पुष्पवाहन) ४४२; ७८९; कार्तिक (देवशर्मन्) २९८; काशी (दमन) २६५; श्रीरकुण्ड (मुद्गल) ६५७;

—गंगामहात्म्य (पद्मावती) ३८७; मही ६३३; रत्नाकर ७१६; वसु (३६.) ८१६; सागर १००२; सत्यधर्मन् १००९;

—गया नदी (युगादिदेव) ६९५;

—गीतामाहात्म्य—कुशीबल १५४; खड्गधर १७७; चंद्रशर्मन् (२.) २०४; ज्ञानश्रुति २३७; दुःशावना (२.) २७७; देवशर्मन् (६.) २९८; श्रीश्री ३२३; गिल (६.) ४८८; वसु ४८८; माधव (६.) ६४१; मित्रवत् ६५३; शंकुकर्ण (९.) ९३५; सरभभेद १०२३; सरो-

जवदना १०२४; सिद्धसमाधि १०४१; सुकर्मन् (१.) १०४६; सुन्द (२.) १०६०; सुशर्मन् (४.) १०७७;
 —गोमाहात्म्य—(कल्पाषपाद; व्यवन) १२५; २१५;
 गोदान (नचिकेतस्) ३४१;
 --गौतमीमाहात्म्य (शूरसेन) १८१; गौरौव्रत (इंद्राणी) ७६; चिताभस्ममाहात्म्य (शबर २.) १४४;
 —तुलसीमाहात्म्य (धर्मदत्त १; पवित्र १; भक्षक; शबर ३.); ३१९; ४०४; ५३२; ९४४; त्रितकूप (त्रित) २५२;
 दीप (निष्टुर १.) ३७२; दीपदान (बुध १०; वृद्ध गार्ग्य) ५१३; ८९९; देवी भागवत (लोमश. १.) ७९०; नदी (गौतम) १८५; पितापितृमाहात्म्य (नरोत्तम) ३४९;
 पातित्रय्य (इंद्र; कौशिक) ७३; १७०; पादत्राण (शंख २.) ९३७; प्रयाग (मार्कण्डेय) ६४८; ब्राह्मण (इंद्र) ६८; ७३; भागवत (वज्रनाभ ४.) ७९३; भूमिदान (भद्रमति) ५३८; माहेश्वरव्रत (शारदा २.) ९६४;
 माघस्नान (कार्तवीर्य); भद्रक (हारीत ७.) १३५; ५३७; ११०९;
 --रामनाममाहात्म्य—(अरिष्टनेमि; जीवती) ३२; २३५; रुद्र (आलंकार) ६३; वाराणसी तीर्थ (वंजुल) ७९३; वेतसी-वेत्रवती संगम (धरापाल) ३१७; वैशाल (कीर्तिमत्; रूपवती; शंख २.) १४३; ७६८; ९३७; व्याघ्रेश्वर (दुंदुभि नह्वा) २७८;
 --शर्माहात्म्य (पिंगल ९.) ४१८; शिवभक्ति (भद्रधार ३.) ५३८; शिवसहस्रनाम (तंडि) २४०;
 संगमस्नान (विष्टुर) ८४६; सत्यनारायण (लीलावती) ७८७; सरस्वती वीजमंत्र (सत्यतपस्) १००८; साभ्रमती (गंगा; विकर्तन) १७९; ८३९; सूर्योपासना (कौथुमि; भद्रेश्वर) १६९; ५३०।
 सुख-अश्वसुख (हयग्रीव) ११०३; चतुर्मुख (ब्रह्मन्) ५२७; वानरमुख (हनुमत) १०१९; षण्मुख (स्कंद) १०९०;
 मंगैस्थिनिस कृत इंडिका-कौटिलीय अर्थशास्त्र से तुलना ८८८।
 यज्ञविशेष- अग्निचयन (कालकंज, शांडिल्यायन, सीरध्वज) १३७, ९६१, १०४६; अग्निष्टोम (इंद्रजित् भोगस्वन) ७३; ५३६; अंसुग्रह (राम औषतस्विनि) ७२४; अतिरात्र (भौवायन) ५९३; अभिचार (भद्रसेन आजातशत्रव) ५३९;
 --अश्वमेध (अंबुष्य, इंद्रद्युम्न, इंद्रजित्, जनमेजय पारिषित, ऋषदस्यु पौरुत्स, जनक वैवराति, नल, बलि

वैरोचन, ब्राहु, भरत दौःपान्ति, मरुत आभिक्षित, मित्रसह कल्पाषपाद, युधिष्ठिर, राम दाशरथि, वसुदेव, विजिताश्व, शर्यात मानव, शिक, सगर, सुदास पैजडन) ६१; ७५; ७३; २२१; २५०; २९४; ३०४; ३५०; ४९९; ५०९; ५४७; ६२५; १२४; ७०७; ७३६; ८४२; ९५०; ९९९; १००१; १०५६; अश्वमेध यज्ञ का शास्त्रार्थ (मुंदिम- औदन्य) ६५६; एकोनपंचाशद्रात्र याग (वसिष्ठ मैत्रा- वरुणि) ८०९; गोमेध (इंद्रजित्) ७३; गोवर्धन याग (इंद्र) १६;
 --चतुरात्रयाग-(अत्रि जमदग्नि) १६; २२२; ज्योतिष्टोम याग-(अश्वघती, मेधातिथि) २०; ३४; ६६२; तृष्टोम क्षत्रधृति यज्ञ (वृद्धद्युम्न आभिप्रतारिण) ८९९; दाशरात्र याग-(उदक शौल्वायन) ८३;
 --सप्तरात्र याग-(कुसुर्विदु औद्दालकि) २५५; दाक्षायण याग-(देवभाग श्रौतर्ष, सहदेव साङ्ख्य) २९३, १०२९; द्विरात्रयाग-(कपिवन मौवायन, चित्ररथ) ११५, २११; धनुर्याग-(कंस, कूट, चाणूर) १०७; २५५, २०९; नरमेध (शुनःशोप, सोमक साहदेव्य) ९७८; १०८६; नवमास यज्ञ (नवग्व) ३५५; नैत्रपाति यज्ञ (रजन कोण्य) ७१५; पंचरात्र याग (शौचेय सार्वसेनि) ९८५;
 --पुत्रकामेष्टि यज्ञ (इल; जनक; दशरथ; दिवोदास) ७७; २२०; ७२६; २७२; बहुसुवर्णक यज्ञ (इंद्रजित्) ७३; माहेश्वर याग (इंद्रजित्) ७३।
 --राजसूय यज्ञ (इंद्रजित्, कृष्ण, जैत्रायण सहोजित; मांधातृ, युधिष्ठिर, हरिश्चंद्र) ७३; १६१; २३५; ६४३; ६९७; २२२; वक्तृत्व याग (बबर प्रावाहणि) ४२९; वाजपेय यज्ञ (औपावि जानश्रुतेय; सीरध्वज) १०४; १०४६; विश्वजित् यज्ञ (ऋक वाल्म्य; बलि वैरोचन; रघु) ४८७; ४९८; ७१४; वैष्णव यज्ञ (इंद्रजित्, मुद्रल) ७३; ६५७।
 --शमनीचमेद (कुपीतक सामश्रवस्) १५५; स्तोम (शुनस्कूर्ण बाष्किह) ९७९; शांसुदक (युवन् कौशिक) ७०९; सर्वमेध यज्ञ (विश्वकर्मन्) ८६७; सप्तरात्रयाग (कुसुर्विदु औद्दालकि, ऋतुजित जानकि) १५५; १७३; सोमयाग (वज्र, इयापर्णा) ७९६; ९८७, सौत्रामणि (दुष्टरितु पौस्यायन) २८७; संततिदायी यज्ञ (वीतहृद्य श्रायस) ८९१।
 युद्ध--इंद्र-बलिस्त्रंगाम (बलि वैरोचन) ४९८; तारका-सुरसंग्राम (स्कंद) १०९१; त्रिपुर संग्राम (त्रिपुर) २५३; दाशरात्रयुद्ध (सुदास) १०५६;

—परशुराम-हैहय संग्राम ३९१-३९२ (निःक्षत्रिय पृथ्वी देखिये); बाणासुर संग्राम (बाण) ५०३; भारतीय युद्ध (भीमसेन; युधिष्ठिर) ५६६-५७०; ७०१-७०६; (भारतीय युद्ध देखिये); भूरिश्रवम्-सात्यकि युद्ध (भूरिश्रवम्) ५८३; मौसल युद्ध (कृष्ण; मांत्र) १६२; १०३६; —राम-रावणयुद्ध (राम दाशरथि) ७३१-७३५; ७४७-७४८ (राम-रावण युद्ध देखिये) ।

युद्धवार्ताहर-संजय गावल्पाणि १००४-१००५; युद्धवार्ता का कथन १००५; युद्धवार्ताहर संघ-वातिक ८२० ।

योद्धा-विभिन्न श्रेणि (अतिरथ; अर्धरथ; एकरथ; चक्ररक्षक; महारथ; रथ; रथमुख्य; रथयूथयूथय; रथवर; रथसत्तम; रथिन्; रथोत्तम; रथोदार) ५७५; संशतक योद्धा (सुशर्मन्) १०७८ ।

राजसूय यज्ञकर्ता राजा-- दो प्रमुख प्रकारः--(१) देवराजन्--जो उपाधि यह यज्ञ करनेवाले देवों के राजाओं को प्राप्त होती थी [कक्षीयत (काक्षीयत) दीर्घश्रवस्; पृथु; सिंधुक्षित] २९६; (२) मनुष्यराजन्--जो उपाधि यह यज्ञ करनेवाले मनुष्यों के राजाओं को प्राप्त होती थी (देवोदास; वाःव्यश्र; वैतहव्य) ।

राजनीतिशास्त्र--मातंग ६३७; मनु प्राचेतस ६१०; विष्णुगुप्त चाणक्य ८८८-८८९; विष्णुगुप्त चाणक्य के पूर्वानाम्य ८८८-८८९; विश्वेदिन् ८७०;

राक्षससत्र-पराशरकृत ३९६;

रामरावणयुद्ध--७३१-७३५; ७४७-७४८; लंका पर आक्रमण ७३१; सेतुबंध ७३९; लंका का अवरोध ७३२; दूतप्रेषण ७३२; रावणसेना का वर्णन ७४७; प्रथम दिन से अंतिम दिन तक के युद्ध का वर्णन ७३२-७३४; रावणवध ७३४; राक्षस संग्राम का तिथिनिर्णय ७३५; ७३७-७३८ ।

रोगविशेष--अपस्मार (स्कंद) १०९२; कुष्ठरोग (घोषा, नंद, रजन कोणय, विदारुण, सांच, सुयज्ञ, सोमकान्त, सोमनाथ) २००, ३४२, ७१५, ८४३, १०३६, १०७१, १०८६, १०८७; त्वक्शोष (देवाधि अष्टिपण) ३००; राजयक्ष्मा (चंद्र, विचित्रवीर्य) २०२, ८४१; शीतज्वर (ज्वर) २३८ ।

वध--अपने ही श्राप से मृत्यु (वृद्धशत्रु) ८९९; अपने ही सर पर हाथ रख कर मृत्यु (भस्मासुर) ५५८; क्रुशदायक मृत्यु (विविस्वार श्रेणिय) ११३०; यक्षःस्थल फोड कर मृत्यु (दुःशासन) २७७; शरीर के दो टुकड़े हो

कर मृत्यु (जरासंध) २३०; सामान्य श्रापद जैसा मृत्यु (कार्त्तवीर्य अर्जुन) ३९० ।

वन--अनशन (चित्रसेन) २१३; अश्वत्थशयन (दिव्यादेवी) २७३; उपवास (च्यवन) २१६;

--एकादशी-इंदिरा (इंद्रसेन) ७६; कमला (हरिमित्र) ११०५; त्रिस्पृशा (इंद्र; मेगा) ७१; १८०; पक्षवर्षिणी (भ्रुव १; वसिष्ठ); ३३६; ८१०; पापनाशिनी (ककुत्स्थ) १०८; योगिनी (हेममादिन्) १११४;

--गौरी (इंद्राणी; पार्वती) ६०६; ४१५; त्रिरात्र (सावित्री) १०४०; दमनक (कुशाध्वज) १५२;

--द्वादशी (पुष्पवाहन; मुद्गल; मालिनी) ४४२; ६५७; ६५०; भीम (इंद्र) ६९;

--बाल (श्रीधर) ९९०; भीष्मपंचक (भृगु २०. वसिष्ठ) ५८७; ८१०; मूक (सोमश्रवस्) १०८७; राघाष्टमी (लीलावती ५.) ७८७; लक्ष्मीव्रत (श्यामशाला) ९८८; लिंगपूजा (धुंधुमूक) ३२४; सोमप्रदोष (सीमन्तिनी) १०४१;

वंश, जो राजवंश एवं ऋषियों के वंश, एवं मानववंश वंश में विभाजित है :-

—(१) राजवंश--अजमीड वंश ११४५; अनु वंश ११४५; अनेनस वंश ११४५; अंधक वंश ११४५; अमावसु वंश ११४५; आनव वंश ११४५; आंत्र वंश ११३; आयु वंश ६१; ११४५, इक्ष्वाकु वंश ११३९; उशीनर ११४६; उत्तानपाद ११५१; ऐल ११४६; --कश्यप ११४६; काण्वायन ११५३; काश्य ११४६; कुकुर ११४६; कुरु ११४६; कुशांत्र ११४६; कृष्ण ११४६; क्रोष्टु ११४६; क्षत्रवृद्ध ११४६; चेदि (चैद्य) ११४७; जह्नु ११४७; ज्यामव ११४७; तितिशु ११४७; तुर्वसु २४८; ११४७; द्रुह्यु ११४७; दिष्ट ११४०; द्विमीड ११४७; नभग ११४२; नरिष्यत ११४२; नृग ११४२; नंद ११५४; नाभि ११५१; निमि ११४१; नीप ११४८; नील ११४८;

--पुरुवरु ११४८; पुरु ४४५; ११४८; प्रतिक्षत्र ११४९; प्रद्योत ११५४; प्रियव्रत ११५१; वाल्य क्षत्रिय ११४९; वध्र ११४९; भजमान ११४९; भरत ५८८; ११४९; भोजवंश ५९१; ११४९; मगध ११४९; मनुवंश ६२२; मौर्य ११५४; यदु ६७३; ११४९; ययाति ११५०; रजि ११५०; रभ ११५१; वसुदेव ११५१; वासव ११५१; विदूरथ ११५१; विष्णु ११५१; वैशाल वंश ८६४; वृष्णि ९०३; ११५१; सहस्रजित् ११५१;

सात्वत ११५१; शर्याति ११४२; शिशुनाग ११५४;
शुंग २१५५; हैहय ११५१।

—(२) ऋषिवंश—अत्रिवंश १७; ११६६; अंगिरस् वंश
११; ११६५; काश्यपवंश १२९; ११६६; पराशरवंश ३९८;
भार्गववंश ५८८; वसिष्ठवंश ८०४; ११६७; विश्वामित्रवंश
८७४।

—(३) मानवेतर वंश—प्रमुख मानवेतर वंश ११५५;
—कश्यप वंश १२९-१३०; नागवंश ३५७; पितृवंश
४२२; पुलस्त्यवंश ४३६; पुलहवंश ४३८; मैत्रवंश
५९१; यज्ञवंश ६६९; (मणिभद्र शाखा ५९७; मणिवर
'गुह्यक' शाखा ५९७); वानरवंश ८२३; हिरण्य-
कशिपुवंश ११११;

दानर— आदिमानव ७३५; राज्य एवं समाज-
व्यवस्था ८२२; वानरवंश ८२२; जैन ग्रंथों में ८२३।

वातिक—वृत्तनिवेदन एवं वृत्तप्रसारण करनेवाला
एक लोकसमूह ८२०; संजय गवल्गण १००४।

वाल्मीकि रामायण—रामायण की जन्मकथा ८३३;
पौराणिक वाङ्मय की प्रस्थानवर्षी ८३४; व्यक्तिगुणों का
आदर्श ८३४; महाभारत से तुलना ८३४; रामायण की
श्रेष्ठता ८३४; रामायण की ऐतिहासिकता ८३५; आदि-
काव्य ८३६; गेय महाकाव्य ८३६; आर्ष महाकाव्य ८३६;
वाल्मीकि रामायण में प्राप्त भूगोलवर्णन ८३६; रामायण का
रचनाकाल ८३६; महाभारत में प्राप्त रामायण के उद्धरण
८३७; वाल्मीकि रामायण के उपलब्ध संस्करण ८३७।

वास्तुशास्त्र एवं शिल्पशास्त्र—विश्वकर्मन् ८६६-
८६७; के द्वारा निर्मित नगर ८६७; के द्वारा निर्मित अस्त्र
८६७; त्वष्टृ २५६; मय ६१८-६२०।

विद्याविशेष—अक्षहृदयविद्या (ऋतुपर्ण, नल,
बृहदश्व, युधिष्ठिर) ९७; ३५२; ५१५; अग्निशिखारत्न
(अंगारपर्ण) ९; अध्यात्मविद्या (उद्दालक, उदक
शौलवायन, धर्मारण्य) ८३; ८४; ३२२; अंतर्धानविद्या
(विभीषण) १७४; अन्नविद्या (नल);

—अश्वविद्या (ऋतुपर्ण; नकुल; नल) ९७; ३३९; अस्त्रविद्या
(ऋष, घटोत्कच, द्रोण, नकुल, शतानीक) १५७; १९९; ३३८;
३३८; ९४१; आत्मविद्या (कुशध्वज जनक, खांडिक्य कौनक)
२१९; १७८; ९४१; आयुर्वेद (हृदीवाराक्ष) ६८; उत्खनन-
विद्या (खनक) १७७;

—कर्ममार्ग (खांडिक्य) १७८; कामरूपीधरत्न
(घटोत्कच, हनुमान्) १९९; ११००; गानविद्या (उत्तरा)
८२; गारुड (आकृति) ५५; गोरति (दीर्घतमस्) २७४

चाक्षुषी (अंगारपर्ण ९); जलस्तंभनविद्या (दुर्वाधन)
२८४; देवहूति (दुर्वासस्) २८६; धनुर्वेद (युधिष्ठिर)
६९७; धनुष्य (धर्मव्याध, नहुप, युधिष्ठिर, सत्यश्रुति
सौचित्य) ३२१, ३५५, ५७, १००९;

—पंचाक्षरी (दुरासद) २९८; पश्चिनी (स्वरोचिप्)
१०९४; पर्वतस्तंभन (अगस्त्य) ४; पुष्पविद्या (उपरिचर
वंसु; नल) ८६, ३५२; प्रतिस्मृतिविद्या (व्यास) ९१८;
प्रवर्ग्यविद्या (दधीचि) २६३; प्राणविद्या (आरुण्य,
उपकौसल कामलायन, ब्रह्महृत्त चैकितानेय) ६२; ८५;
५२६; ब्रह्मविद्या (उद्दालक आरुणि; कर्मधी कात्यायन;
त्वष्टाधर; नारद; प्रतर्दन; बलराम; ब्रह्मन्; यदु; यम)
८४; ११५; २५७; ३६०; ४६६; ४९३; ५२६; १०३२; ८९२;
ब्राह्मणपरिभर १०५३; मंत्रतेज (अश्विनीसुत, धन्वन्तरि)
मधुविद्या (दध्यञ्ज) २६३; महामाया (शंकर) ९४६;

—यथेष्टगामित्व (हनुमत्) ११००; वारिविद्या (गर्ग)
१८५; विपहारीविद्या (काश्यप) १०१; वैद्यकविद्या
(पुनर्वसु आत्रेय; धन्वन्तरि) ३१५; ४३०; वैश्यविद्या
(यति) ६७१;

—शांडिल्यविद्या (शांडिल्य) ९५९; शिल्पविद्या
(त्वष्टृ) २५६; संजीवनी (कच; भृगु; शुक्र) ९७७;
—सर्ववश्यता १०४६ सप्तपरीविद्या (जमदग्नि; विश्वा-
मित्र; शक्ति) २२२; ९३४; सामविद्या (चैकिताने-
नेय) २१५; सोमविद्या (नारद १; भीमसेन) ३६१;
५६०; स्थलमापनविद्या (स्थपति) १०९२; स्थापत्य-
विद्या (जनमेजय) २२१।

विवाह—आर्य एवं अनार्य (उपज्ञानवी २) ८५;
क्षत्रिय एवं अप्सरा (आश्रीध) ५५; क्षत्रिय एवं ऋक्ष
(जांबवत् ३.) २३३; क्षत्रिय एवं गंधर्व (पुरूरवस्)
४३४; क्षत्रिय एवं देवता (तपती) २४१; क्षत्रिय एवं नाग
(आर्यक; उल्पी) ६३; ९१; क्षत्रिय एवं पितर (दिलीप
खट्वांग) १२७१; क्षत्रिय एवं ब्राह्मण (कच; गो २;
देवयानी); ११०; १९३; २९४; क्षत्रिय एवं पर्वत
(गिरिका) १९०; क्षत्रिय एवं राक्षस (भीमसेन पाण्डव)
५६३; क्षत्रिय एवं शूद्र (चंद्रगुप्त) २०३; गंधर्व एवं
राक्षस (सुकेश) १०४८;

—दानव एवं अप्सरा (मय) ६२०; देव एवं ग्वाल
(सावित्री) १८८; देव एवं नाग (गुणकेशी) १९१;
देव एवं पर्वत (गिरिका) १९०; देव एवं ब्राह्मण
(उशनस्) ९१; देव एवं राक्षस (त्वष्टृ) २५६; नदी एवं
अग्नि (गोपति ४.) १९४;

--पशुी एवं ऋषि (तार्क्षी) २४४; ब्राह्मण एवं देव (ज्येष्ठा ३.) २६७; ब्राह्मण एवं देवता (दत्त) २६१; ब्राह्मण एवं नाम (आस्तीक) ६४; ब्राह्मण एवं पर्वत (जैगीपव्य) २३५; ब्राह्मण एवं मनुआ (गण्ड) १८३-१८४; ब्राह्मण एवं शूद्र (गौतम) १९५; ब्राह्मण एवं सूत (सत्कर्मन्) १००६;

—मनुष्य एवं गंधर्व (रुचि २; शुक्र वैयासकि) ७५३; ८७५; मनुष्य एवं नदी (दधीच) २६३; मनुष्य एवं पितर (विरजा २; शुक्र वैयासकि; सुतपस्) ८७५; ९७५; १०५२; मनुष्य एवं पिशाच (वंड २.) ९३८; मनुष्य एवं राक्षस (शूर्पणखा) ९८१; मनुष्य एवं बानर (विरजा १.) ८५७; मनुष्य एवं सर्प (जनमेजय पारिक्षित; नर्मदा ३; श्रुतश्रवस् २२१; २४९; ९९२;

—राक्षस एवं ब्राह्मण (कैकसी) १६७; बानर एवं गंधर्व (नल ९.) २६१; वैश्य एवं शूद्र (श्रावण) ९८९।

विश्वरूपदर्शन—(भगवान् कृष्ण के द्वारा) १६३८; १. अक्रूर से; २. अर्जुन से; ३. उत्तंक ऋषि से; ४. दुर्योधन से; ५. भीष्म से; ६. यशोदा से।

व्याकरणकार—अन्यतरेय २४; अग्निवेश्यायन ५५; आत्रेय ५७; आपिशालि ६०; उख्य ७९; उत्तमोत्तरीय ८२; औदुंबरायण १०४; औपमन्यव १०४; और्षीवाम १०४; कामायन, कांडायन, काण्व १३१; कात्यायन १३२; काशकृष्ण १४१; काश्यप १४२; कुणरवाडव १४५; कृशाब—(स्वायव लातय्य) १५६; कौण्डरव्य १६८; कौंडिन्य १६८; क्रौष्टुकि १७४; गार्ग्य १८८; चर्मशिरस् २०८; जातुकर्ण्य २३२; दाल्भ्य २७०;

--पतेजलि ३८२-३८५; पतेजलि के पूर्वाचार्य ३८४; पाणिनि ४०५-४१०; पाणिनि के पूर्वाचार्य ४०६; पौष्कर-सादि; ४५९; प्ल्याश्यायन ४८५; प्ल्याशि ४८५; वाडभी कार (वाडवीकार) ५०२; भर्तृहरि ५५२; भागुरि ५५४; मान्वाकीय; रज्जुभार ७५६; रामकृष्ण ७४२; वरतेतु ७९७; वररुचि ७९७; वाडव ८१९; वात्स्य २०; वात्मीकि ८३१ वेदमित्र ९०६; व्याडि दाश्यायण ९१४;

--शाकटायन (उणादीसूत्रकर्ता) ९५३-९५४; शाकपूणि ९५३; शाकव्य ९५६; शांतनव ('फिट' सूत्रकार) ९६१; शैल्यायन ९८३; शौनक गृत्समद ९८५-९८७; स्फोटायन १०९३; स्थविर कौंडिन्य १०९२; स्थविर शाकव्य १०९२ हनुमत् (ग्यारहव्यां व्याकरणकार) ११०२; हारित ११०९।

वैदिक संहिता-वेदो का निर्माण ५८७; वैदिक साहित्य का अथांगत्व (मरद्वाज); वेदसंरक्षणार्थ वेदविभाग (व्यास पाराशर्य) ९१९; वेदों का विभाजन ९२०; वैदिक संहिताओं का विद्युद्ध स्वरूप ९२४; उपलब्ध वैदिक ग्रंथ ९२२; विनष्ट हुए ब्राह्मण ग्रंथ ९२४।

वैद्यकशास्त्र--अश्विनीकुमार ४८; चरक २०६; जीवक ११२९; धन्वंतरि ३१५-३१७; पतेजलि ३८५; पराशर ३९८; पालकाप्य (हस्त्यायुर्वेदतंत्रज्ञ) ४१६; पुनर्वसु आत्रेय ४३०; शालिहोत्र (पशुवैद्यकशास्त्रज्ञ) ९६५; सुश्रुत (शल्यचिकित्साशास्त्रज्ञ) १०७८।

वैदिक आचार्यपरंपरा—व्यास की ऋषिशिष्यपरंपरा (व्यास पाराशर्य) ९२०; व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा ९२३; व्यास की अथर्वशिष्यपरंपरा ९२४; व्यास की सामशिष्यपरंपरा ९२३; व्यासोत्तर वैदिक वाङ्मय का विकास ९२४।

वैद्यकशास्त्र से संबंधित देवता—अवध्यंता का देवता (विष्णु) ८८१; गर्भवृद्धि का देवता (त्वष्टृ) २५६; देवों के धन्वंतरि (अश्विनीकुमार) ४८; मृत्यु का देवता (मृत्यु) ६६०; विषत्राधा का निराकरण करनेवाली देवी (मनसा देवी) ६०४; अमृत्युप्राप्ति (सिनीवाली) १०४१;

शक—(कालगणना)—परशुराम शक ३९४; ११७२; विक्रमसंवत् ११७२; कलिसंवत् (युधिष्ठिर शक, भारतीय युद्ध संवत्) ७०८; ११७२।

शत्रुत्व—इंद्र-मरुत ६२५; कौरव-पांडव ७०१-७०५; द्रोण-दुर्य ३०८-३०९; परशुराम-कार्तवीर्य अर्जुन ३९०-३९१; वसिष्ठ-विश्वामित्र ८०८; बालिन-सुभोव ८३०।

शस्त्र--ज्ञाग एवं हिम (इंद्र) ६९; धनुष्य-बाण (मरुत्) ६२३; पाश (नरक) ३४७; फौलादी शक्ति (शृष्टकेतु) ३३१; मूसल (वलराम; जरासंध) ४९४; ५२९; वज्र (प्रजापति; इंद्र) ४६२; ६९-७०; वासवी-शक्ति (घटोत्कच; कर्ण) १९९; १२०; सुदर्शनचक्र (कृष्ण; शालव; जलेश्वर) १६१; ९६६; २३१; हल (वलराम; विजय) १४९४; २५१।

शाखाप्रवर्तक आचार्य—उख ७९; औद्भारि १०४; कठ १११; कात्यायन १३२; कापेय १३३; कौंडिन्य १६८; कौथुम पाराशर्य १६९; कौशिक १७०; कौपीतकी १८१; खडिक औद्भारि १७०; गोखल्य १९३; गोभिल १९४; गौतम १९५; चरक २०६; ल्हागलिन २१६; जैमिनी २३५; तल्यकार २४२; तित्तिरि २४५; देवदत्त २९३; देवदत्त शठ २९३; द्राह्यायणि ३०५; पुरुषासक ४३३;

मालवि ५५२; शार्दूल ९६५; (हिरण्यकेशिन्) खांडवीय ११११ ।

शिक्षाग्रथ—अमरेश २७; आत्रेय; ५७; कात्यायन ३३; जयंत पाराशर्य २२७; नारद ३६६; पाणिनि ४१०; पाराशर ४१४; ब्राह्मण्य पांचाल ५०६; मण्डूक (१.) ५९८; महर्गार्य ६२७; माध्यमिन (२.) ६४२; याज्ञवल्क्य वाजसनेय ६९२; रामकृष्ण (१.) ७४२; शौनक १.९८७ ।

शिवावतार—चार ७६३; पाँच ७६३; दस ८६३; अष्टाईस ७६३-७६४; ब्राह्म ज्योतिष्मि २३७ ।

श्राद्धविधि—का प्रवर्तक (निमि; श्रीमत्) ९९० ।

षोडश राजकीय—अंबरोप नाभाग २८; गय आमूर्त-रयस १८२; दिल्लीप ऐलविल २७१; परशुराम जामदग्न्य ३८८; प्रथु वैज्य ४४९; पौरव ४५८; भगीरथ ऐश्वक ५३४; भरत दौःषन्ति ५४५; मरुत आविश्चित ६२५; मांघातृ यौवनाश्व ६४३; ययाति नाहुष ३७७; रंतिदेव सांकृत्य ८१८; राम दाशरथि ७२५; शशर्षिदु यादव ९५२; शिबि औशीनर ९६०; सुहोत्र वैतिथिन १०८१ ।

संवाद—इंद्र के संवाद (अंबरोप; अग्नि; गौतम; दिति; प्रतर्दन; प्रह्लाद; बृहस्पति; मातलि; मांघाता; विद्युत्प्रथ; शंवर; शुक्र; सुरार्थी) १७२-७३; ६२४; ८४९; १०७२; कर्ण-शस्य संवाद ९५२;

--केशी-गौतम संवाद १११८; कौशिक-इक्ष्वाकु संवाद ६७; जनमेजय-अग्नि संवाद २२; दुर्योधन के संवाद (कृष्ण; भीष्म) २८४; धौम्य-युधिष्ठिर संवाद ३३४; --बक दाल्भ्य के संवाद (अर्जुन; इंद्र) ४८७-४८८; बलि के संवाद (इंद्र; प्रह्लाद; शुक्र) ५००; बाध्व-बाष्कलि संवाद (बाध्व २.) ५०६; बृहस्पति के संवाद (इंद्र; उपरिचर वसु; मांघातृ; युधिष्ठिर; वसुमनस्); ५२०-५२१; ६४४; भरत-रहूगण संवाद ५४४; भीम-कृष्ण संवाद ५६३; भीष्म-कर्ण संवाद ५७६; मांडव्य के संवाद (यम; विदेहराज जनक) ३३६;

--मार्कंडेय-युधिष्ठिर संवाद (मार्कंडेयसमस्या पूर्व) ६४; मुचुकुंद के संवाद (परशुराम; वैश्रवण) ६५५; ६५४; मैत्रेयी-याज्ञवल्क्य संवाद ६६६; यम के संवाद (नचिकेत; यमी) ६७६; ६७७;

--याज्ञवल्क्य के संवाद (अश्वल; उदक शौलत्रायन; उद्दालक आरुणि; उषस्त चाक्रायण; कहोल कौषीतकेय; गर्दभी-विपीत भारद्वाज; गार्गी वाचस्पती; जारस्कारव आर्तभाग; बर्कु वार्ण; भुज्यु ल्हायानि; विदग्ध शाकल्य; सत्यकाम जाबाल) ६८८-६८९;

--रावण-विभीषण संवाद ७४७; रावण-सीता संवाद ७४६;

--लक्ष्मी के संवाद (इंद्र; प्रह्लाद; रुक्मिणी) ७८२; --वसिष्ठ-कराल जनक संवाद ११७; वसुमनस् कौसल्य के संवाद (बृहस्पति; वामदेव) ८१७; विदुला-पुत्रसंवाद ८४७; विदुर के संवाद (धृतराष्ट्र; मैत्रेय) ८४५; ६६५; विरुप के संवाद (इक्ष्वाकु; विकृत) ८६०; विश्वासु-याज्ञवल्क्य संवाद ८७७; वीरद्युम्न-तनुविप्र संवाद ८९२; वृत्र-उशनस् संवाद ८९८; व्यास के संवाद (मैत्रेय; शुक्र) ६६५;

--शिशुपाल-कृष्ण संवाद ९७३; सत्यकाम-उपकोसल संवाद १००७; सनत्कुमार-नारद संवाद १०१६; सुलभा-जनक संवाद ।

सती--माद्री ६४०; रुक्मिणी ७५२; वृंदा ८९९; वसुदेव (पत्नियाँ) ८१५; वेदवती ९०६ ।

सत्यनिष्ठा--कौशिक ३.१७०; नाभाग ३६०; प्रह्लाद ४७९; सत्यकाम जाबाल १००८ ।

सत्र--(अच्युत; अंगिरस; कुण्डगयानि; गौश्रायणि दातैय; नवक; नाभाग; सरमा देवशुनी) १३; ५६; १४५; १९७; २७०; ३५५; ३६०; १०२५;

--(१) दीर्घसत्र (जनमेजय पारिक्षित; श्रुतश्रवस्) २२१; ९९२;

--(२) प्रथम द्वादशवर्षीय सत्र (अंतिनार, पुरुरवस्; रोमहर्षण; बक दाल्भ्य; सौति) २३; ४३५; ७७३; ४८७; १०८८;

--(३) ब्रह्मसत्र (नारद) ३६५;

--(४) राक्षससत्र (पराशर) ३९६;

--(५) शतसंवत्सरात्मक (श्वेतकि) ९९५;

--(६) सर्पसत्र (प्रथम) (ऐरावत; चक्र) १०२; २००; नाग ३५८;

--(७) सर्पसत्र (द्वितीय) (जनमेजय कौतस्त; चंद्र-भार्गव च्यावन; सुंडवेदांग; मुद्गर; शांलायन; शिख; श्रुतश्रवस्) २२०; २०१; ६५६; ६५७; ९५८; ९६७; ९९२; सर्पसत्र के ऋत्विज २२०-२२२;

--(८) सहस्रवार्षिक सत्र (रुसमद; निमि) १९२; ३६९ ।

सप्त चिरंजीव—अश्वत्थामन् ४५; कृपानार्य १५८; ३१० परशुराम जामदग्न्य ५; बलि वैरोचन ५७०; व्यास पाराशर्य ९१८; विभीषण ८५४; हनुमत् ११०२ ।

सप्तद्वीपा पृथ्वी--पृथ्वी के सात द्वीप जम्बुद्वीप, पुष्यद्वीप, शाल्मलिद्वीप, कुशद्वीप, क्रौंचद्वीप, शाकद्वीप,

पुष्करद्वीप (स्वार्थसुव) १०९६; इन द्वीपों का संभाव्य आधुनिक स्थान (स्वार्थसुव) १०९६ ।

समुद्र—लौहित्य (सल्लिलार्णव) ७०७ ।

समुद्रमंथन से निकले हुए रत्न—४९८ ।

सर्पसत्र—जनमेजय सर्पसत्र (प्रथम) २२१; जनमेजय सर्पसत्र (द्वितीय) २२१; मरुत् सर्पसत्र (मरुत्) ६२६; मामिनी ५५६ ।

सांख्यत धर्म—१०३४; सांख्यत धर्म का उपदेश १०१७;

साम—वत्सप्रि भालंदन ७९४;

—सामगायन से ईषित वस्तुओं का लाभ—गाय (मेधातिथि काण्व; स्वर्ग (शमद) ९४७; वैभव की प्राप्ति (गोतम) १९३; दिवोदास अतिथिग्व २०३; सिंधुक्षिन् १०४२ ।

स्वयंवर—ऋमद्यु (विमद) ८५६; कुन्ती १४६; केशिनी १६६; दनयन्ती २१५; द्रौपदी ३१०; मान्यवती ६४५; वैशालिनी ९१५; शशिकला (सुदर्शन १०.) १०५५; सीता १०४४ ।

सायणकृत वैदिक अर्थ—नगरिन् जानश्रुतेय ३४०; नम्रजित् गांधार ३४०; नमी साय्य ३४५; पणि ३८१ ।

सावित्राग्नि—देवभाष्य श्रौतर्ष २९३; प्लक्ष दद्यांपति ४८५ ।

सिक्ंदरकालीन भारतवर्ष के नगर— अग्रोदक ११३२; मस्सग ११३३; सांगल (सांकल) ११३३; सिक्ंदरिया ११३५; पुष्करावती ११३४; पातानप्रस्थ (११३४); रोस्क (११३५) ।

—नदियाँ—वितस्ता (जेहलम) ११३३; व्यास (त्रिभास) ११३३; गौरी ११३४; असिक्री ११३४; इरावती ११३४; सेतुमंत (आधु. सेलमंद) ११३५ ।

सुराज्य—अश्वपति कंकय ४७; कार्तवीर्य १३७; जनमेजय १. २२१; जालेदर २३४ ।

सूत—पुराणकथन एवं निवेदन का कार्य करनेवाले एक लोकसमूह ७७४; रोमहर्षण सूत ७७२; सौति रोमहर्षण सूत १०८७;

सेनागणनापद्धति—भारतीय युद्धकालीन (अश्वीहिणी गण, गुल्म, पत्नी, सेनामुख, वाहिनी, पृतना, चन् आनीकिनी) ७०३ ।

सौर देवता—आदित्य ५८; पूषन् ४४६; भग ५३२; विवस्वत् ८६२; विष्णु ८७९; सवितृ १०२६; सूर्य १०८१

स्वरूपवर्णन—दुर्वासस् २२६; धन्वंतरि ३१५; नारद ३६१; भूत ५२०; यक्ष ६६९; युधिष्ठिर ६९६; रक्षस् ७१२; राम दशरथि ७२६; रावण दशग्रीव ७४३; रुद्र-शिव ७५५; लक्ष्मी ७८१; वरुण ७९९; वायु ८२६; बालखित्य ८२९; विश्वकर्मान ८६६; विश्वरूप त्रिंशिष् स्वाष्ट्र ८६९; विष्णु ८७९; वृत्र ८९६; सवितृ १०२६; सात्यकि (युयुधान) १०३२; सीता वैदेही १०४६; हयग्रीव ११०३ ।

सृष्टि का निर्माण—मैथुनज सृष्टि का प्रारंभ (द प्राचेतस प्रजापति) २५९; प्रजापति ४६२-४६३; ब्रह्मन् ५२८-५२९ ।

सृष्टिप्रलय—मनु वैवस्वतकालीन सृष्टिप्रलय ६१; विभिन्न साहित्यों में जलप्लावनस्थ ६११; प्रलयोक्त मानव समाज का आदि पुरुष ६११; कालनिर्णय ६११; हिंदी साहित्य में जलप्लावनकथा ६१२ ।

हीनकुलीनत्व—कर्ण ११८; विदुर ८४४ ।

शुद्धिपत्र

रने:

ह

	पृष्ठ एवं चरित्र	अशुद्ध	शुद्ध
३	अगस्थ	रेत कमल पर स्खलित हुआ	रेत कुंभ में स्खलित हुआ
२४	अंधीगु श्यावाधि	अंधीगु श्यावाधि	अंधीगु श्यावाधि
२६	अभिमति	(भा. ६.११)	(भा. ६.६.११)
५७	आमदेव	नाम धुंधुकारी रखा	नाम धुंधुकारि रखा
८०	उद्यैःश्रवस कौपयेय	(जै. उ. ब्रा. ३.२९.१-३)	(जै. उ. ब्रा. ३.२९.१-३)
९४	ऊजा	(भा. ४.१.३८)	(भा. ४.१.४०-४१)
९६	कवीक	(ह. वं. ११.७)	(ह. वं. १.२७)
१०१	ऐतश	संभवतः ऐतश की होगी	संभवतः ऐतश की होगी
१११	कठ	२. रेवती देखिये।	२. रेवती २. देखिये।
१३४	कामकटंकटा	कामकटंका	कामकटंकटा
१४१	काशिरात्र २.	(म. आ. ६१-६७)	(म. आ. ६१.६७)
१४५	कुण्णिर्गा	गांधर्वपुत्र शुंगवत् के साथ	गालवपुत्र शुंगवत् के साथ
१५१	कुंभ कर्ग	(म. व. २७१-१७)	(म. व. २७१. १७)
१५६	कृतवर्मेज	(म. मौ. ३)	(म. मौ. ४.२७)
१६३	कृष्ण	युधिष्ठिर	युधिष्ठिर
१६८	कौंडरव्य	कौंडरव्य	कौंडरव्य
१९४	गोलेभ	(वा. रा. कि. २२.२७-३७)	(वा. रा. कि. २२.२७)
२०१	चक्रवर्तिन्	(म. शां. २८)	(म. शां. २९)
२०३	चंद्रगिरि	(स. उ.)	(स. ह.)
२०७	चक्र ३.	पृषदाच्य में प्रथम अभिचार	पृषदाच्य में प्रथम अभिचार
२४९	तैटीकि	तैटिकि	तैटीकि
२४९	तोडमान	(भीम २३ देखिये)	(भीम २४ देखिये)
२७८	दुग्धि	(म. व. २५.९.१०)	(म. व. २६०.१०)
२९९	देवसावर्णि	(भा. ८.१३;)	(भा. ८.१३; ३०)
३०५	द्विडा	(वायु. १.२४.१६)	(वायु. ८६.१६)
३२२	धर्मसूत्र	(धर्म १३. देखिये)	(धर्म १६. देखिये)
३२४	धूमोर्गा	(म. अनु. २७१.११. कुं.)	(म. अनु. १६५.११)
३२८	धृतराष्ट्र	(म. आ. १०७.२-१४)	(म. आ. १०८.२-१५)
३६७	निकुंभ	(वायु. ९०.२७.५२)	(वायु. ९२.१७-५२)
३७१	निर्वृति	निर्वृत्ति	निर्वृति
३७६	नैधुव	नैधुव	नैधुव
३७८	पंचचूडा	मीधम ने युधिष्ठिर	मीधम ने युधिष्ठिर
३९२	परशुराम जामदग्न्य	यज्ञ के लिए एकत्रिय	यज्ञ के लिए एकत्रिय
३९३	परशुराम जामदग्न्य	अंत में परशुराम ने	अंत में परशुराम ने
३९६	पराशर	पराशर के नये सत्र से	पराशर के नये सत्र को

पृष्ठ एवं चरित्र

अशुद्ध

शुद्ध

४००	परिक्षित्	महाभातर	महाभारत
४१०	पाण्डु	जन्मतः पाण्डुरोग से पीड़ित	जन्मतः पाण्डुरोग से पीड़ित
४२८	पीवरी	अग्निष्वात्त पितरों की कन्या	अग्निष्वात्त पितरों की कन्या
४२९	पुत्र	स्वारोचिष मनु के	स्वार्यभुव मनु के
४३३	पुरुमीहळ सौहोत्र	पुरुमिहळ	पुरुमीहळ
४३७	पुलस्त्य	सामूहिक नाम से	सामूहिक नाम से
४४१	पुष्कल	अश्रमेधायज्ञ का	अश्रमेधयज्ञ का
४१८	पौरव ३.	(म. द्रो. १७१-६४)	(म. द्रो. १७१.६४)
५२७	ब्रह्मन्	ब्रह्मा से भी आयु में	ब्रह्मा से भी आयु में
५३३	भगदत्त	उसका एवं उसके सात पुत्रों को	उसको एवं उसके सात पुत्रों को
५३९	भद्रा काक्षीयनी	(म. आ. १२०.३३-३६)	(म. आ. ११२.३३)
५५०	भरद्वाज	राज्याधिकारी ना कर	राज्याधिकारी बना कर
५५८	भार्गायण	(सुत्यन् कैरिशीय भार्गायण)	(सुत्यन् कैरिश्य भार्गायण)
५७०	भीमसेन	अश्वत्थाना वध	अश्वत्थामा मणिहरण
६००	मत्स्य	मकर दैत्य ने	शंख दैत्य ने
६०४	मनुच्छेदस वैश्वामित्र	(प्रातःकालिन स्तुतिस्तोत्र)	(प्रातःकालिन स्तुतिस्तोत्र)
६१७	मन्दपाल	लपिता नामावाली दक्षिणी	लपिता नामवाली पक्षिणी
६३२	महिषासुर	शाश्वतस्थान किया । प्राप्त	शाश्वतस्थान प्राप्त किया ।
७१३	रक्षसं	विरोचन दैत्य आँखों में	विरोचन दैत्य आँखों में
७२६	राम दाशरथि	पुत्रकामेष्टी यज्ञ कराया	पुत्रकामेष्टि यज्ञ कराया
७३०	राम दाशरथि	शूर्पणखावध	शूर्पणखाविरूपस्व
७३१	राम दाशरथि	मसीता को ढूँढने के लिए	सीता को ढूँढने के लिए
८१९	वातरशन	(ऋ. १०.१३३.१०२;)	(ऋ. १०.१३६.२;)
८४१	विचित्रवीर्य	भीष्म ने विक्रा एवं अंबालिका	भीष्म ने अंबिका एवं अंबालिका
८५४-८५५	विभीषण	इसीने ही किया ।	इसने ही किया था ।
८६५	विशाल ५.	जो परिक्षित् राजा की	जो अविक्षित् राजा की
८८१	विष्णु	विष्णु रुच्यते	विष्णुरुच्यते .
८९७	वृत्र	(ऋक् यजुः । साम	(ऋक्, यजुः, साम)
९२९	व्यास पाराशर्य	उर्ध्वबाहुर्विरोम्भेष	ऊर्ध्वबाहुर्विरोम्भेष
१००१	सगर	इसे सगर विपयुक्त नाम	इसे सगर (विषयुक्त) नाम
१००५	संज्ञा	छाया को यम से	छाया को सूर्य से
१००५	संज्ञा	यम को छाया का	सूर्य को छाया का
१०६२	सुंदर शांतिकर्ण	सुंदर शांतिकर्ण	सुंदर शांतिकर्ण
१०८६	सोमदत्त	भूरिश्रवस् का अत्यंत निर्घृण	भूरिश्रवस् के हाथ काट डाले
		वध किया	
११२४	गौतम बुद्ध	निम्नलिखित बृद्ध विषय से	निम्नलिखित बुद्ध विषय से
१५२८	गौतम बुद्ध	प्रमुक्त बौद्ध सांप्रदाय	प्रमुख बौद्ध सांप्रदाय

हमारे महत्त्वपूर्ण आगामी प्रकाशन

भारतवर्षीय

अर्वाचीन चरित्रकोश

(१८१८ ई.स.-१९६५ के अंत तक)

इस ग्रंथ में अर्वाचीन काल में भारत देश के हर एक प्रांत में उत्पन्न राजकारण, साहित्य, विज्ञान, समाजकारण, धर्मकारण आदि क्षेत्रों में कार्य करनेवाले व्यक्तियों के जीवनचरित्र साधारण एवं सप्रमाण रूप में एकत्रित किये गये हैं। भारतीय इतिहास के स्वातंत्र्योत्तर कालखंड में उत्पन्न हुए महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों की 'अर्वाचीन चरित्रकोश' में एकत्रित की गयी जानकारी हर एक इतिहासाभ्यासकों के उपयुक्त एवं स्फूर्तिदायक प्रतीत होगी।

'अर्वाचीन चरित्रकोश' का मराठी संस्करण लगभग बीस साल पहले मराठी में प्रकाशित हो चुका था। इसी ग्रंथ का परिवर्धित हिंदी संस्करण अब प्रकाशित हो रहा है, जिसमें मूल ग्रंथ से अधिक ६०० पृष्ठों की नयी जानकारी समाविष्ट की गयी है। इस परिवर्धित ग्रंथ की पृष्ठसंख्या 'डबल क्राऊन' साइज में लगभग १२०० होगी!

भारतवर्षीय प्राचीन चरित्रकोश

इस ग्रन्थ में वेद, स्मृति, पुराण, उपनिषद्, वेदांग, बौद्ध, जैन आदि प्राचीन भारतीय साहित्य में निर्दिष्ट व्यक्तियों के जीवन-चरित्र एवं तद्विषयक संदर्भ-सहित सामग्री अकारादि क्रम से एवं सप्रमाण प्रस्तुत की गयी है।

प्राचीन भारतीय इतिहास से संबंधित बहुतसी सामग्री प्रायः व्यक्तिचरित्रात्मक ही है। व्यक्तिचरित्रविषयक इस समस्त सामग्री को 'प्राचीन चरित्रकोश' में एकत्रित किया गया है, जो प्राचीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति के प्रत्येक विद्यार्थी, अध्ययता, संशोधक एवं सर्व-सामान्य पाठक के लिये अत्यंत उपादेय है।

'प्राचीन चरित्रकोश' का मराठी संस्करण लगभग तीस साल पहले प्रकाशित हो चुका था, जिसके संबंध से अपना अभिमत व्यक्त करते समय 'टाईम्स ऑफ इंडिया', बंबई, ने लिखा था :—

This is an extremely useful dictionary of Indian Classical Biography, and one cannot but admire the enormous labour its compilation must have entailed. An English or Hindi Edition might make it a standard reference work all over the world.

—Times of India, 23rd Dec. 1932.

मराठी में प्रसिद्ध हुए 'प्राचीन चरित्रकोश' का परिवर्धित हिंदी संस्करण अब प्रकाशित हो रहा है, जिसमें मूल मराठी ग्रन्थ से अधिक ५५० पृष्ठों की नयी जानकारी समाविष्ट की गयी है।

इतिहासोत्तमादस्मात् जायन्ते कविबुद्धयः ।

'नवीनराष्ट्रनिर्माणं संस्कृतिप्रसरस्तथा' ॥

अस्मिन्नर्थश्च धर्मश्च निखिलेनोपदिश्यते ।

इतिहासे महापुण्ये बुद्धिश्च परिनैष्टिकी ॥

उदयप्रेप्सुभिर्भृत्यैरभिजात इवैश्वरे ।

इतिहासोत्तमे ह्यस्मिन् अपि ता बुद्धिरुत्तमा ॥